चौखम्बा संस्कृत सीरीज ९८

महाभारतकोशः

सम्पादकः

डॉ० रामकुमार राय

सम्पूर्ण—रू० [illegible]-००

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा संस्कृत ग्रन्थमाला

९८

महाभारत-कोशः

(महाभारतस्य नाम्नां विषयाणां च व्याख्यात्मिका अनुक्रमणिका)

रामकुमाररायः

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी-१

१९८२

प्रकाशक : चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी
मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी
संस्करण : प्रथम, वि० सं० २०३९
मूल्य रु० चौ. सं. सी. आफिस Rs. 750/- सम्पूर्ण)

के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन
पो० बा० ८, वाराणसी–२२१००१ (भारत)
फोन : ६३१४५

प्रधान वितरक
कृष्णदास अकादमी
पो० बा० ११८
चौक, (चित्रा सिनेमा बिल्डिंग), वाराणसी–२२१००१ (भारत)

CHOWKHAMBA SANSKRIT SERIES
WORK NO. 98

MAHABHARATA-KOSHA

(A Descriptive Index to the Names and Subjects in the Mahābhārata)

Ramkumar Rai

CHOWKHAMBA SANSKRIT SERIES OFFICE
VARANASI-221001 (India)
1982

K. 37/99, Gopal Mandir Lane

Post Box 8, Varanasi–221001 (India)

Phone : 63145

First Edition

198[illegible]

Price चौ. सं. सी. आफिस Rs. 750/-

(Complete)

Also can be had from

KRISHNADAS ACADEMY

Oriental Publishers & Book–Sellers

Post Box 118

Chowk, (Chitra Cinema Building), Varanasi–221001

प्राक्कथनम्

सुविदितमेतन्महाभारत-भा-रतानां विद्वद्वराणां कियदुपादेयत्वं महाभारतकोशस्येति महता परिश्रमेणायं मया विरच्य प्रस्तूयते । महाभारतीयप्राचीनेतिहासचिन्तकानामनुसन्धित्सूनाञ्च कृतेऽयं परमोपयोगीति नास्त्यत्र कोऽपि सन्देहलेशः । महाभारतश्च प्रकाशितः पूर्वमनेकप्रकाशनसाहसरसिकैस्तेषु चित्रशालाप्रेस-प्रकाशितसंस्करणं तु दुर्लभप्रायं न भवति नयनपथगोचरमपरं क्रिटिकलसंस्करणमपूर्णत्वाद्बहुमूल्यत्वाच्च न सार्वजनीनमुपयोगित्वमावहत्यतोऽयं महाभारतकोशश्चित्रशालाप्रेसप्रकाशितनीलकण्ठीयुतसंस्करणाधारेणैव विरचितो यस्मिंश्च तदनुसारेणैव प्रत्येकसन्दर्भसङ्केतो निर्धारितः । गीताप्रेससंस्करणादपि यद्भेदस्तन्निर्देशः कृतः । क्रिटिकलसंस्करणोपयुयुक्षूणामपि न किमपि काठिन्यमेतेन तदन्तयितरसंस्करणाध्यायश्लोकानां तुलनात्मकानुक्रमसत्त्वात् ।

चित्रशालाप्रेस-गीताप्रेस-संस्करणयोरप्यस्ति किञ्चिदन्तरम्, यथोभयसंस्करणयोरध्यायसंख्यासादृश्यं नास्ति, भवतु नाम, न कापि क्षतिर्यतो हि श्लोकसंख्या न भिद्यते । अध्यायसंख्यापि केवलमेकेनैवाधिका न्यूना वेति तत्रापेक्षितसन्दर्भोऽन्वेषणीयः । यत्र यत्र गीताप्रेससंस्करणे दाक्षिणात्यपाठा उपलभ्यन्ते तत्र तत्रास्मिन् संस्करणे तदनुसारमेव सन्दर्भसङ्केताः कृता यतो हि चित्रशालाप्रेससंस्करणे ते (दाक्षिणात्यपाठाः) न सन्ति ।

सत्यामप्यकारादिक्रमव्यवस्थायां केचन प्रमुखाभिधेया अर्जुनेन्द्रादयोऽकारादिक्रमाः सपर्यायाः मूलशब्द-सम्बद्धमेव विषयमनुगच्छन्ति ।

ग्रन्थेऽस्मिन् कीदृशी सन्दर्भाङ्कानां व्यवस्थेत्युदाहरणैः स्पष्टयते—१. ६४, २४ इत्येतेनादिपर्वणश्चतुः-षष्ठितमाध्यायस्य चतुर्विंशतितमश्लोकोऽवगम्यते । १. ६४, १६–२० इत्येतेन तत्रैव षोडशतमतो विंशतितम-पर्यन्तं श्लोका अवगम्यन्ते । १. ६४, १६. १७. २० इत्येतेन च तत्रैव षोडशः, सप्तदशः, विंशश्च श्लोका अव-गम्यन्त इति ।

सन्दर्भग्रन्थस्य पारिभाषिकशब्दस्य वा कस्यापि संक्षिप्तरूपं विरलमेव प्रयुक्तम्, केवलं 'तु० की०' (तुलना कीजिए—तुलनां कुर्वन्तु), 'विष्णु पु०' (विष्णुपुराणम्) एत्येतादृशाः स्ववगमाः प्रतीकाः प्रयुक्तास्ते-नानावश्यकत्वान्न ग्रन्थादौ प्रतीकपरिचयो दत्तः ।

ग्रन्थोऽयमतिप्राचीनदुर्लभग्रन्थसम्मुद्रणबद्धपरिकरैश्चौखम्बासंस्कृतग्रन्थमालाध्यक्षैः प्राकाश्यमानीतः, शीघ्रमेव चैभिर्नीलकण्ठीयुतं चित्रशालीयसंस्करणानुरूपं सुलभं नवीनं महाभारतसंस्करणमपि प्रकाशयिष्यते। एतस्मिन् करालकालेऽप्येतादृशव्ययसाध्यबृहद्ग्रन्थप्रकाशनार्थं सहर्षतत्पराः प्रकाशकमहोदयाः सविशेषं धन्यवादार्हाः। एतैरेव नियुक्तः श्रीशिवचरणशर्मापि सन्दर्भान्वेषणादौ मम साहाय्यमाचरितवानतस्सोऽपि धन्यवादार्हः। अतिविलम्बेनायं प्रकाशमायात इत्यहमेवानेककार्यव्यापृतत्वाद् दोषभागिति क्षन्तव्यः।

उपसंहारेण च निवेद्यन्ते पाठका यज्जटिलतां कार्यस्याल्पज्ञताञ्च मदीयामवधार्य त्रुटयस्तैः सहानुभूतिपूर्वकं क्षन्तव्या अथ च सम्भवेत्तदाहं विशेषपरामर्शैरनुगृहीतव्य इति।

दीपावली
१५-११-८२

रामकुमाररायः

प्राक्कथन

अनेक वर्षों से खण्डशः प्रकाशित हो रहे 'महाभारतकोश' के इस सम्पूर्ण संस्करण को प्रस्तुत करते हुये आज अपार हर्ष का अनुभव हो रहा है। प्रारम्भ से 'दृषद्वत्' शब्द पर्यन्त इसके प्रकाशन का कार्य अत्यन्त उत्साहपूर्वक चलने के बाद जब लगभग पन्द्रह वर्षों तक रुका रहा तो मैं निराश होकर यह मान बैठा था कि अब यह कोश सम्भवतः कभी पूर्ण नहीं हो सकेगा। इस अवधि में मेरी सहायता के लिये 'चौखम्बा' द्वारा नियुक्त सहायक भी अन्यत्र चले गये। परन्तु गत वर्ष जब चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस के संचालकों ने इस रुके हुये कार्य को पूर्ण करने के प्रति दृढ़ता प्रदर्शित की तो हताश होते हुये भी मुझे सन्नद्ध होना पड़ा। फलस्वरूप, पाण्डुलिपि तैयार करने से लेकर प्रूफ संशोधन आदि तक के सपूर्ण कार्य अकेले करते हुये भी ईश्वर की कृपा से ही इस कार्य को पूर्ण करने में सफल हो सका हूँ।

कोश में शब्दों की अकारादि क्रम से व्यवस्था की गई है, किन्तु कुछ प्रमुख नाम, जैसे अर्जुन, इन्द्र, आदि, के जो अनेक अन्य नाम महाभारत में मिलते हैं, उन्हें मूल शब्द के ही अन्तर्गत अकारादि क्रम से रक्खा गया है, जिससे पाठकों को मूल शब्द से सम्बद्ध समस्त सामग्री एक ही स्थान पर उपलब्ध हो सके।

सन्दर्भ संकेतों की संख्या की व्यवस्था इस प्रकार है : किसी भी सन्दर्भ संकेत में प्रथम संख्या पर्व की द्योतक है। और उसके बाद एक बिन्दु से पृथक् दूसरी संख्या पर्वान्तर्गत अध्याय की। अध्याय की संख्या के बाद कामा से पृथक् की हुई अन्तिम संख्या अध्यायान्तर्गत श्लोक की द्योतक हैं। इस प्रकार, १. ६४, २४ का अर्थ आदिपर्व के चौंसठवें अध्याय का चौबीसवाँ श्लोक हुआ। एक श्लोक की संख्या के बाद यदि अन्य श्लोकों का भी उल्लेख अभीष्ट रहा है तो उस दशा में दो प्रकार की व्यवस्था का अनुसरण किया गया है। यदि क्रमानुसार एकाधिक श्लोकों का उल्लेख अभीष्ट रहा है तो क्रम के प्रथम और अन्तिम श्लोकों की संख्या को छोटे डैश से पृथक् करके लिखा गया है। एक के बाद कई पृथक्-पृथक् श्लोकों का उल्लेख होने की दशा में प्रथम श्लोक की संख्या के बाद अन्य श्लोकों की संख्याओं को बिन्दु से पृथक् किया गया है। इस प्रकार १६–२० से किसी अध्याय के सोलहवें से बीसवें श्लोकों का तात्पर्य है, और १६. १७. २०, का किसी अध्याय के सोलहवें, सत्रहवें और बीसवें श्लोकों से। कोश में किस सन्दर्भ-ग्रन्थ या पारिभाषिक शब्द का संक्षिप्त रूप कदाचित ही प्रयुक्त हुआ है। केवल एक ही संक्षिप्त शब्द, तु० की०, मिलेगा जिसका अर्थ 'तुलना कीजिये' है। विष्णुपुराण आदि प्रसिद्ध ग्रन्थों का यदि संक्षिप्त रूप प्रयुक्त भी हुआ है तो वह ऐसा नहीं कि समझा न जा सके, जैसे विष्णु पुराण के लिए 'विष्णु पु०' रूप यत्र-तत्र व्यवहृत हुआ है। अतः ग्रन्थ के आरम्भ में संक्षेप सारिणी नहीं दी गई है।

कोश मुख्यतः चित्रशाला प्रेस से प्रकाशित नीलकण्ठी-युक्त संस्करण पर आधारित हैं, अतः प्रत्येक सन्दर्भ-संकेत इसी के अनुसार रक्खा गया है। गीता प्रेस के संस्करण को भी सामने रक्खा गया है, और जहां इसमें तथा चित्रशाला प्रेस के संस्करण में भिन्नता है वहाँ उसका तदनुरूप निर्देश कर दिया गया है। इस सम्बन्ध में अपनी स्थिति कुछ और स्पष्ट कर देना आवश्यक है। कुछ लोगों का सुझाव था कि कोश को भण्डारकर ओरियण्टल इन्स्टिट्यूट से छपे महाभारत के 'क्रिटिकल संस्करण' पर आधारित किया जाय। किन्तु एक तो यह संस्करण अभी पूरा नहीं हो सका है, और दूसरे अत्यधिक मँहगा होने के कारण सर्वसाधारण के लिये कदाचित् ही सर्वत्र सुलभ हो। ऐसी स्थिति में कोश को सर्वोपयोगी बनाने के लिए कुछ प्रचलित तथा सर्वत्र सुलभ संस्करणों को ही आधार बनाने का निश्चय किया गया। फिर

भी, इससे उन पाठकों को कोई कठिनाई नहीं होगी जो 'क्रिटिकल संस्करण' का ही उपयोग करना चाहते हैं क्योंकि उस संस्करण के अन्त में अन्य संस्करण के अध्यायों और श्लोकों की एक तुलनात्मक सूची दी हुई है जिसके आधार पर प्रस्तुत कोश के किसी सन्दर्भ सङ्केत को 'क्रिटिकल संस्करण' में भी ढूँढ़ा जा सकता है। यहाँ कुछ सज्जन चित्रशाला संस्करण की दुर्लभता की भी चर्चा कर सकते हैं, किन्तु चौखम्बा के सञ्चालकगण शीघ्र ही नीलकण्ठी युक्त चित्रशाला जैसा महाभारत का एक नवीन संस्करण यथाशक्ति कम से कम मूल्य पर प्रकाशित करने जा रहे हैं, जिससे यह कठिनाई दूर हो जायगी। इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए यह निश्चय किया गया कि कोश को इन्हीं संस्करणों पर आधारित किया जाय।

चित्रशाला प्रेस और गीता प्रेस के संस्करणों में भी थोड़ा अन्तर है। उदाहरण के लिये, कुछ पर्वों में दोनों संस्करणों की अध्याय संख्या समान नहीं है। फिर भी, ऐसी स्थिति में केवल एक ही अध्याय का हेर फेर होने से यदि पाठकों को गीता प्रेस संस्करण में कोई सन्दर्भ न मिले तो वे एक अध्याय पहले या बाद के उसी स्थल पर उस सन्दर्भ को पा सकते हैं। जहाँ गीता प्रेस के यत्र-तत्र दाक्षिणात्य पाठों का सन्दर्भ है वहाँ तदनुसार संकेत कर दिया गया है क्योंकि चित्रशाला प्रेस के संस्करण में वे पाठ सम्मिलित नहीं हैं।

कोश में आरम्भ से लेकर 'दृषद्वत्' शब्द पर्यन्त तक की पाण्डुलिपि तैयार करने और सन्दर्भों को ढूँढ़ने में पं० शिवचरण शर्मा से बहुत अधिक सहायता मिली है, जिन्हें चौखम्बा संस्कृत सीरीज़ आफिस ने मेरी सहायता के लिये नियुक्तकर रक्खा था। अतः उन्हें धन्यवाद देना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ।

आज के कठिन समय में भी इतने बड़े ग्रन्थ के प्रकाशनार्थ सहर्ष तत्पर होने के लिये चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस के संचालक—बन्धुद्वय श्री विठ्ठलदास और व्रजमोहनदास भी विशेष बधाई के पात्र हैं। ये लोग प्रचुर व्यय के विपरीत भी जिस मनोयोग से इस कार्य को पूर्ण करने में सफल हो सके हैं वह इनकी ही क्षमता की बात है।

अन्त में, पाठकों से मेरा निवेदन है कि कार्य की जटिलता और मेरी अल्पज्ञता को देखते हुये मेरी त्रुटियों को सहानुभूतिपूर्वक ग्रहण, और यदि हो सके तो, अपने सुझावों से मुझे लाभान्वित करें।

दीपावली
१५-११-८२

रामकुमार राय

महाभारत-कोश

(महाभारत के नामों और विषयों की व्याख्यात्मक अनुक्रमणिका)

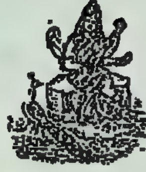

अंश, कश्यप के द्वारा अदिति के गर्भ से उत्पन्न बारह आदित्यों में से एक का नाम है (१. ६५, १५)। यह अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उपस्थित हुये थे (१. १२३, ६६)। खाण्डव-वन दाह के समय इन्द्र की ओर से युद्ध करते हुये इन्होंने अपने हाथ में शक्ति धारण की थी (१. २२७, ३५)। इन्होंने स्कन्द को पाँच पार्षद प्रदान किये थे (९. ४५, ५. ३५)। अन्य आदित्यों के साथ इनके नाम की भी गणना कराई गई है (१२. २०८, १५; १३. १५०, १४)। नवजात स्कन्द को देखने के लिये आये हुये लोगों में से एक यह भी थे (१३. ८६, १६)। तु० की० सूर्य।

अंशावतरण (मू)—देवताओं के अंशावतार ग्रहण करने का विस्तृत वर्णन आदिपर्व के ६५–६७ अध्यायों में इस प्रकार मिलता है : "इन्द्र और नारायण के परस्पर परामर्श के अनुसार देव-गण समस्त लोकों के हित तथा राक्षसों, दुष्ट गन्धर्वों, सर्पों तथा मनुष्य-भक्षी जीवों इत्यादि के संहार के लिये, पृथ्वी पर आकर ब्रह्मर्षियों तथा राजर्षियों के वंश में अवतीर्ण होने लगे। जनमेजय ने, देवता, दानव, गन्धर्व, अप्सरा, मनुष्य, यक्ष, तथा राक्षस आदि की उत्पत्ति का वर्णन सुनने की इच्छा प्रगट की, जिसका वैशम्पायन ने इस प्रकार वर्णन किया : ब्रह्मा के छः मानस पुत्र; दक्ष की तेरह कन्यायें; आदित्य-गण (इनमें विष्णु सबसे छोटे किन्तु गुणों में सर्वश्रेष्ठ हैं); दिति का पुत्र हिरण्यकशिपु तथा उसके पाँच पुत्र; हिरण्यकशिपु का ज्येष्ठ पुत्र प्रह्लाद; प्रह्लाद के तीन पुत्र—विरोचन, कुम्भ और निकुम्भ; विरोचन का पुत्र बलि और उसका पुत्र बाण (जो रुद्र का पार्षद और महाकाल के नाम से विख्यात हुआ); दनु के चालीस पुत्र (जिनमें से केवल चौंतीस के नामों की गणना कराई गई है और इन्हीं के अन्तर्गत वह सूर्या-चन्द्रमासौ भी आते हैं जो सूर्य और चन्द्रमा नामक देवताओं से भिन्न हैं); दनुपुत्रों में से दस अन्य के वंशों का उल्लेख; सिंहिका के चार पुत्र; क्रूरा के असंख्य पुत्र; दनायु के चार पुत्र; काला के पुत्र; असुरों के उपाध्याय, महर्षि भृगु के पुत्र शुक्राचार्य, जिन्हें उष्ना भी कहते हैं; उष्ना के चार पुत्र जो असुरों के पुरोहित थे; (असुरों और देवों की इस वंशावली का पुराणों में भी वर्णन है); छः विनतेय, छः काद्रवेय, देवगन्धर्व जाति के मुनि के गर्भ से उत्पन्न सोलह वंशज; प्राधा की आठ पुत्रियाँ, और दस देवगन्धर्व प्राधेयायें; देवर्षि कश्यप और प्राधा की तेरह अप्सरा-पुत्रियाँ; चारः गन्धर्वसत्तमाः, जो कि प्रत्यक्षतः प्राधा के ही पुत्र थे;—इस प्रकार सभी प्राणियों, गन्धर्वों, अप्सराओं, सर्पों, सुपर्णों, रुद्रों और मरुतों इत्यादि की उत्पत्ति का वर्णन किया गया है (१. ६५)"। 'ब्रह्मणो मानसाः पुत्रा विदिताः षण्महर्षयः' से आरम्भ होने वाले ६६ वें अध्याय में महर्षियों तथा कश्यप-पत्नियों की संतान-परम्परा का वर्णन है : "ब्रह्मा के सातवें पुत्र स्थाणु; स्थाणु के पुत्र ग्यारह रुद्र; छः महर्षियों (मरीचि, अङ्गिरा, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह और क्रतु) का नाम; अङ्गिरा के तीन पुत्र (बृहस्पति, उतथ्य और संवर्त); अत्रि के अनेक पुत्र (जिनकी गणना नहीं करायी गयी है) जिन्हें सिद्ध महर्षि कहा गया है; पुलस्त्य मुनि के पुत्र राक्षस, वानर, किन्नर, तथा यक्ष; पुलह के शरभ, सिंह, किंपुरुष, व्याघ्र, रीछ और ईहामृग जाति के पुत्र; और क्रतु के पुत्र, साठ हजार वालखिल्य ऋषियों का, जो सूर्य के आगे चलते हैं, वर्णन; ब्रह्मा के दाहिने अँगूठे से दक्ष की तथा बाँये से दक्ष के पत्नी की उत्पत्ति; दक्ष के पुत्र तो नष्ट हो गये किन्तु उनके पचास पुत्रियाँ भी थीं जिनको उन्होंने पुत्रिका बना लिया : दक्ष ने अपनी दस कन्यायें धर्म को, सत्ताईस चन्द्रमा को और तेरह कश्यप को समर्पित कीं; धर्म की दस पत्नियों (कीर्ति, लक्ष्मी, धृति, मेधा, पुष्टि, श्रद्धा, क्रिया, बुद्धि, लज्जा और मति) की गणना; सोम (चन्द्रमा) की सत्ताईस स्त्रियाँ जो नक्षत्र-वाचक नामों से युक्त हैं (नक्षत्र योगिन्यो); माता, पुत्र और पौत्रों सहित वसुओं का, तथा मुख्यतः कुमार, प्रभास, विश्वकर्मन् आदि का वर्णन; ब्रह्मा के दाहिने स्तन को विदीर्ण करके मनुष्य के रूप में धर्म की उत्पत्ति, तथा उनके तीन पुत्रों और पुत्र-वधुओं का वर्णन; मरीचि के पुत्र कश्यप तथा कश्यप से सम्पूर्ण देवताओं और असुरों की उत्पत्ति का वर्णन; अश्वी के रूप में सवितृ की पत्नी त्वाष्ट्री द्वारा अन्तरिक्ष में अश्विनीकुमारों को जन्म देना; अदिति के बारह पुत्रों का वर्णन जिनमें से विष्णु सबसे छोटे किन्तु जिनमें ही सम्पूर्ण लोक प्रतिष्ठित हैं; इसी प्रकार आठ वसु, ग्यारह रुद्र, बारह आदित्य, प्रजापति, और वषट्कार, ये सब तैंतीस मुख्य देवता हैं, जिनके पक्ष, कुल, वंश और गण आदि का इस प्रकार वर्णन किया गया है : 'तेषाम् अहं तव। अन्वयं संप्रवक्ष्यामि पक्षैश्च कुलतो गणान्। रुद्राणामपरः पक्षः साध्यानां मरुतां तथा। वसूनां भार्गवं विद्याद्विश्वेदेवांस्तथैव च॥ वैनतेयस्तु गरुडो बलवानरुणस्तथा। बृहस्पतिश्च भगवानादित्येष्वेव गण्यते॥ अश्विनौ गुह्यकान्विद्धि सर्वौषध्यस्तथा पशून्। एते देवगणा राजन्कीर्तितास्तेऽनुपूर्वशः॥ यान्कीर्तयित्वा मनुजः सर्वपापैः प्रमुच्यते।' भृगु, ब्रह्मा के हृदय का भेदन करके प्रकट हुये; भृगु के पुत्र कवि, और कवि के पुत्र शुक्रग्रह हुये जो स्वयंभू की आज्ञा से तीनों लोकों में भ्रमण करते हुये प्राणियों के जीवन की रक्षा के लिये वृष्टि, अनावृष्टि, भय तथा अभय उत्पन्न करते हैं; यही शुक्र योगाचार्य और दैत्यों के गुरु हुये, और यही योग बल से बृहस्पति के रूप में प्रगट होकर देवताओं के भी गुरु होते हैं; ब्रह्मा द्वारा शुक्र को इस प्रकार जगत् के योग-क्षेम के कार्य में नियुक्त कर दिये जाने पर भृगु ने एक दूसरे निर्दोष पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम च्यवन था : अपनी माता को संकट से

बचाने के लिये यह रोषपूर्वक गर्भ से च्युत हो गये जिससे ही च्यवन कहलाये; मनु की पुत्री आरुषी च्यवन की पत्नी थी; इनके पुत्र और्व अपनी माता आरुषि की जाँघ (उरु) फाड़कर प्रगट हुये थे इसलिये और्व कहलाये। यह वंशावली इस प्रकार और आगे बढ़ती है :

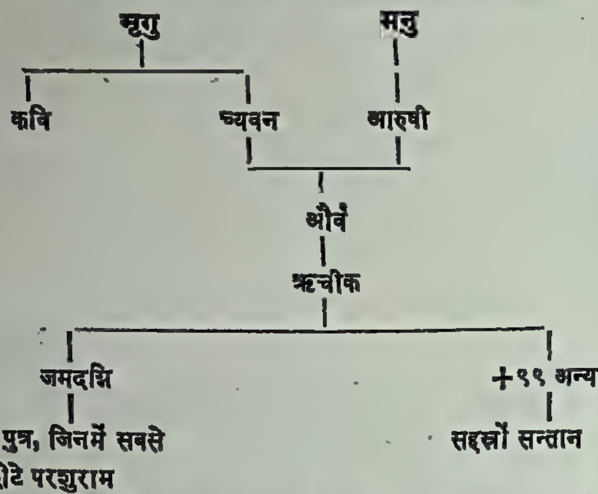

ब्रह्मा के दो पुत्र धाता और विधाता जो मनु के साथ रहते थे, और एक पुत्री लक्ष्मी हुई; शुक्र की पुत्री देवी, वरुण की ज्येष्ठ पत्नी थीं, और इनकी सन्तान बल और सुरा। अधर्म का जन्म उस समय हुआ जब भोजन के अभाव में प्राणी एक दूसरे का भक्षण करने लगे; अधर्म की पत्नी निर्ऋति हुई जिससे नैर्ऋत नामक तीन भयंकर राक्षस-पुत्र उत्पन्न हुये, जिनके नाम भय, महाभय और मृत्यु हैं; मृत्यु के पत्नी या पुत्र कोई नहीं। ताम्रा की सन्तानों का इस प्रकार वर्णन है :

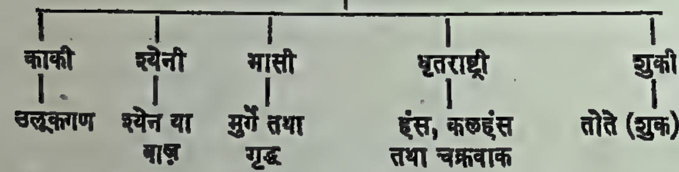

क्रोधवशा के नौ प्रकार की क्रोध-जनित कन्यायें हुई : १. मृगी (जिसकी सन्तानें मृग हैं); २. मृगमन्दा (जिसकी सन्तानें रीछ और समर हैं); ३. हरी (बन्दर, अश्व, गोलाङ्गूल हैं) ४. भद्रमनस (ऐरावत हाथी की माता); ५. मातङ्गी (जिसकी सन्तानें हाथी हैं); ६. शार्दूली (सिंह, व्याघ्र, तेंदुये तथा अन्य बलशाली जीव हैं); ७. श्वेता, जिसने शीघ्रगामी दिग्गज श्वेत को जन्म दिया; ८. सुरभि, जिसकी चार पुत्रियाँ थीं : (क) रोहिणी, जिससे गायें उत्पन्न हुयीं, (ख) गन्धर्वी जिससे अश्व उत्पन्न हुये, (ग) विमला और (घ) अनला, जिनसे सात प्रकार के ऐसे वृक्ष हुये जिनमें पिण्डाकार फल लगते हैं और शुकी नाम की एक कन्या; ९. सुरसा, जो एक बड़े पंखों वाले कङ्क पक्षी की माता हुई; अरुण की पत्नी श्येनी ने सम्पाति और जटायु को उत्पन्न किया; सुरसा ने नागों, कद्रू ने पन्नगों, और विनता ने गरुड़ तथा अरुण को जन्म दिया; (१. ६६)"। जनमेजय की इच्छा के अनुसार वैशम्पायन ने उन देवों और दानवों का वर्णन किया जो मनुष्यों के बीच अवतीर्ण हुये और यह भी बताया कि कौन मनुष्य किसका अवतार है : "यहाँ भीष्म, धृतराष्ट्र, विदुर, धृतराष्ट्र के सौ पुत्र इत्यादि, जिनके अंशावतार थे उनका वर्णन करते हुये यह बताया गया है कि दुर्योधन कलि का अंशावतार था; नकुल और सहदेव, जो अश्विनों के अंश थे, जीवों में सर्व-सुन्दर थे; अभिमन्यु के रूप में सोम के पुत्र वर्चस अवतरित हुये; द्रौपदी के पाँच पुत्रों के रूप में पाँच विश्वेदेव-गण प्रगट हुये। इसी प्रकार कुन्ती और कर्ण का भी वर्णन करते हुये कृष्ण को नारायण का, बलदेव को शेष का, प्रद्युम्न को सनत्कुमार का अवतार बताया गया है। वासुदेव की १६००० रानियाँ, रुक्मिणी, द्रौपदी और गान्धारी आदि भी जिनके अंशों से उत्पन्न हुई थीं उनका वर्णन है (१. ६७)"।

अंशावतरण-पर्व, आदिपर्व के अन्तर्गत ५९ से ६४ अध्याय तक आनेवाले उस उपपर्व का नाम है जो आदिपर्व के ही सम्भवपर्व तक के अन्तर्गत ६५ से ६७ वें अध्याय तक चला गया है। देखिये १. २, ९३; २. ३६, १२ भी।

अंशु=शिव (सहस्र नामों में से एक।)

१. अंशुमत्, कृष्णा के स्वयंवर में आने वाले राजाओं में से एक का नाम है (१. १८६, ११)।

२. अंशुमत्, राजा सगर के पौत्र तथा असमञ्जस के पुत्र का नाम है (३. १०७, ३५ : 'असमञ्जस-सुतम्')। यह राजा सगर के यज्ञ-अश्व को वापस ले आने में सफल हुये (३. १०७, ४६, ४९. ५२. ५८. ६३. ६४. ६६)।

३. अंशुमत्, एक भोज-राजा का नाम है जिसका द्रोण ने वध किया था (८. ६, १४)।

४. अंशुमत्, विश्वेदेवों में से एक का नाम है (१३. ९१, ३२।)

५. अंशुमत्=सूर्य।

६. अंशुमत्=सोम।

अकम्पन, सत्ययुग के एक राजा का नाम है (७. ५२, २०. २६)। "प्राचीनकाल में इस नाम के राजा हुये। एक बार यह युद्ध में शत्रुओं से घिर गये थे। इनके पुत्र का नाम हरि था जो उस समय शत्रुओं के हाथ रणक्षेत्र में मारा गया। अकम्पन दिन-रात अपने इसी पुत्र के शोक में मग्न रहने लगे। उस समय देवर्षि नारद ने उनके पास आकर मृत्यु की उत्पत्ति का वृत्तान्त सुनाया (७. ५३, २६-५३)"। मृत्यु की कथा सुनाने के पश्चात् नारद ने राजा अकम्पन से कहा कि धीर पुरुष मृत्यु को ब्रह्मा का विधान समझकर मरे हुये प्राणियों के लिये कभी शोक नहीं करते; यह सुनकर अकम्पन का शोक दूर हो गया (७. ५४, ५०-५२)। देखिये १२. २५६ भी।

अकर=शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अकर्कर—एक नाग का नाम ('कर्कराकर्करौ नागौ', १. ३५, १६।)

अकर्तृ=ईश्वर (१२. ३४३, १२६)

अकल=शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अकार—वर्णमाला का प्रथम अक्षर। कृष्ण ने अपने सम्बन्ध में 'अक्षराणाम् अकारोऽस्मि' (६. ३४, ३३) कहा है।

अकाल=शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अकूपार, इन्द्रद्युम्न सरोवर में रहने वाले एक चिरजीवी कच्छप का नाम है (१. १८, ११; ३. १९९, ८-९)।

अकृतव्रण, परशुराम के एक अनुचर का नाम है (३. ११५, ३. ५. ९. २६)। वनपर्व के ११५-११६ अध्यायों में अकृतव्रण द्वारा युधिष्ठिर से परशुराम जी के उपाख्यान के प्रसङ्ग में ऋचीक मुनि का गाधि-कन्या के साथ विवाह, और भृगु ऋषि की कृपा से जमदग्नि मुनि की उत्पत्ति तथा मृत्यु का वर्णन है। कृष्ण के हस्तिनापुर जाते समय मार्ग में उनसे मिलने वाले ऋषियों में यह भी थे (५. ८३, ६४ के बाद, महाभारत के गीताप्रेस संस्करण में)। तापसों के आश्रम में राजर्षि होत्रवाहन द्वारा अम्बा से वार्त्तालाप के समय इनका आगमन तथा होत्रवाहन को परशुराम जी के विषय में बताना (५. १७६, ३५. ३९. ४०. ४१-४३)। अकृतव्रण और परशुराम का अम्बा से वार्त्तालाप (५. १७७, १-९)। इन्होंने परशुराम जी के सारथि का कार्य किया था ('सारथ्यं कृतवांस्तत्रयुयुत्सोर-कृतव्रणः। सखा वेद विदत्यन्तं दयितो भार्गवस्य ह॥' ५. १७९, ९)। परशुराम के सखा के रूप में इनका उल्लेख (५. १८०, १७; १८४, १४)।

वाणशय्या पर पड़े हुये भीष्म के पास आने वाले ऋषियों में यह भी थे (१३. २६, ८)।

अकृतश्रम, वानप्रस्थ धर्म का पालन करनेवाले एक ऋषि का नाम है (१२. २४४, १७)।

अकृति, भोजराज भीष्म के भ्राता का नाम है जो मगधराज जरासन्ध का भक्त था। इसे शौर्य में राम जामदग्न्य के समान बताया गया है, (२. १४, २२) । **आकृति**—सुराष्ट्र देश के अधिपति, कौशिकाचार्य आकृति को सहदेव ने अपने अधीनस्थ किया था (२. ३१, ६१)।

१. अक्रूर—एक वृष्णि-वंशी राजा (१. १८६, १८; २१९, १०)। यह वृष्णि वीरों के सेनापति थे (१. २२१, २९)। मय द्वारा निर्मित सभा-भवन में युधिष्ठिर के प्रवेश करने के समय उपस्थित राजाओं में यह भी थे (२. ४, ३०)। एक वृष्णि योद्धा के रूप में (३. १८, २०; ५१, २८)। अभिमन्यु के विवाह के अवसर पर यह भी उपप्लव्य नगर में पधारे थे (४. ७२, २२)। आहुक और अक्रूर आपस में बैर रखते थे किन्तु यह दोनों ही श्रीकृष्ण को अपने विरोधी का पक्षपाती समझते थे, जिससे श्री कृष्ण अत्यन्त चिन्तित थे (१२. ८१,९–११. १४)। वासुदेव ने यादवों के सर्वनाश के लिये इनकी निन्दा करना उचित नहीं समझा (१६, ६, १०)। इनकी पत्नियाँ वज्र के बहुत रोकने पर भी वन में तपस्या करने के लिये चली गईं (१६. ७, ७२)। यह विश्वेदेवों के स्वरूप में मिल गये (१८. ५, १६)।

२. अक्रूर=विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अक्रूरकर्मन्=शिव (१४. ८, २५)।

अक्रोधद्रोहमोह=कृष्ण (१२. ४७, ८२)।

अक्रोधन, अयुतनायिन् और कामा के पुत्र उस पुरुवंशी का नाम है जिसने कलिङ्ग देश की राजकुमारी करम्भा से विवाह किया था; इसके पुत्र का नाम देवातिथि था (१. ९५, २१. २२)।

अक्रोश, महोत्थ देश के अधिपति उस राजर्षि का नाम है जिसको नकुल ने विजित किया था (२. ३२, ६)।

१. अक्ष, स्कन्द के योद्धाओं में एक थे (९. ४५, ५७)।

२. अक्ष=शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अक्षप्रपतन क्षेत्र के अन्तर्गत नेमिहंसपथ नामक स्थान पर कृष्ण ने गोपति और तालकेतु नामक असुरों का वध किया था (२. ३८, २९ के बाद गी० सं० के पृ० ८२४ पर देखिये)।

अक्षमाला—वसिष्ठ की पत्नी जिसे अरुन्धती के साथ समीकृत किया गया है ('वसिष्ठश्चाक्षमालया', ५. ११७, ११)। देखिये **अरुन्धती** भी।

अक्षमालिन्=शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अक्षयवट, गया-तीर्थ में स्थित विख्यात अक्षयवट का नाम है जिसके समीप जाकर पितरों के लिये दिया हुआ सब कुछ अक्षय बताया जाता है (३. ८४, ८३; ९५, १४)।

अक्षर (अनश्वर)=**कृष्ण** अथवा **परमेश्वर** (१२. ४७, ३७. ४६)। 'ऊर्ध्वरेताः प्रव्रजित्वा गच्छत्यक्षरसात्मताम्' (१२. ६१, ५. ९)। 'निराशिषो वदान्यस्य लोका ह्यक्षरसंमिताः' (१२. ६२, ७)।=हिरण्यगर्भ (१२. ३०२, १९)।=हरि (१२. ३४०, १०७)।=ईश्वर (१२. ३४२, १२५)।=शिव (१३. १७, ८०)।=विष्णु (१३. १४९,१५.६४)।=अक्षर पुरुष (६. ३९, १६)।

अक्षहृदयप्राप्ति (द्यूत-रहस्य की प्राप्ति)—'तथाऽक्षहृदयप्राप्तिस्तस्मादेव महर्षितः' (१. २, १६२)।

अक्षीण, महर्षि विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५०)।

अक्षोभ्य=विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अक्षौहिणी, चतुरङ्गिणी सेना की एक निश्चित संख्या का वाचक है। इसके अन्तर्गत रथों, अश्वों, गजों और पदातियों की संख्या निर्धारित होती थी (१. २, १४. १७. १८)। इसके अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के सैनिकों की संख्या के लिये देखिये १. २, १९–२६।

आगम=शिव (सहस्र नामों में से एक)।

१. अगस्त्य—वसिष्ठ के भ्राता और मित्रावरुण के पुत्र एक ब्रह्मर्षि। इन्हें मित्रावरुणि और कुम्भयोनि भी कहते हैं। "एक बार इन्होंने एक स्थान पर अपने पितरों को एक गड्ढे में नीचे मुख किये लटकता देखा। इन पितरों ने उस नरक से छुटकारा पाने के लिये इनसे सन्तान उत्पन्न करने का आग्रह किया। इन्होंने उनकी इच्छा पूर्ण करने का आश्वासन दिया और एक-एक जन्तु के उत्तमोत्तम अङ्गों का भावना द्वारा संग्रह करके एक सुन्दर स्त्री का निर्माण किया। इन्होंने इस स्त्री को विदर्भराज की पुत्री बना दिया। विदर्भराज की इस कन्या का नाम लोपामुद्रा रक्खा गया। जब यह कन्या बड़ी हुई तो अगस्त्य ने उसके साथ विवाह किया। विवाह के पश्चात् लोपामुद्रा के आग्रह पर अगस्त्य अपनी पत्नी के लिये धन-संग्रहार्थ तीन राजाओं, तथा उसके पश्चात् इल्वल दानव के पास गये। इल्वल ने अपने वातापि नामक भाई को बकरा बनाकर अगस्त्य मुनि को उसका मांस खिला दिया। किन्तु अगस्त्य ने उसे पचा लेने के बाद अन्त में इल्वल का भी वध कर दिया। लोपामुद्रा से अगस्त्य ने दृढस्यु अथवा इध्मवाह नामक एक पुत्र उत्पन्न किया। अगस्त्य ने अपने दक्षिण से लौटने तक विन्ध्य पर्वत को ऊँचा उठने से रोक दिया था। इन्होंने कालकेयों पर देवों की विजय को सम्भव बनाने के लिये समुद्र का शोषण भी कर लिया था (३. ९६–९८; ३. १०१–१०५)"। इन्होंने यज्ञ में विघ्न-उत्पन्न करने वाले पशुओं पर आक्रमण करके उन्हें मार डाला था (१. ११८, १४)। द्रोण के गुरु अग्निवेश ने अगस्त्य से ही धनुर्वेद की शिक्षा ली थी (१. १३९, ९)। इनके समुद्रपान का उल्लेख (१. १८८, १५)। यह दक्षिण दिशा के प्रतीक हैं ('अगस्त्यशास्तामभितो दिशं', १. १९२, ९)। यह यम की सभा में धर्मराज की उपासना करते हैं (२. ८, २९)। यह ब्रह्माजी की सेवा में उपस्थित होते हैं (२. ११, २२)। इनके द्वारा वातापि नामक राक्षस के भक्षण का उल्लेख (३. ११, ३७)। प्रयाग में इनके आश्रम का उल्लेख (३. ८७, २०)। दक्षिण में गोकर्णतीर्थ में इनके शिष्य के आश्रम का उल्लेख (३. ८८, १७)। दक्षिण के वैदूर्य पर्वत पर इनके आश्रम का उल्लेख (३. ८८, १८)। गयातीर्थ में स्थित उस ब्रह्म सरोवर का उल्लेख जहाँ यह वैवस्वत-यम से मिलने के लिये पधारे थे (३. ९५, ११; तु० की० १३. ६८, ६)। 'अगस्त्य', तथा 'अगस्त्यस्याश्रमम्' (३. ९६, १–३. १४; ९७, १. ६–८. १२; ९८, १. १२; ९९, ४. ६. ८. ११. १८. २९. ३०; १००, १–२; १०३, ११. १२; १०४, ८. १५–१६. २४)। इनके द्वारा वातापि के भक्षण का सन्दर्भ (३. १०९, २१)। लोपामुद्रा द्वारा इनकी सेवा का उल्लेख (३. ११३, २३)। सिन्धु के उस महान् तीर्थ का उल्लेख जहाँ लोपामुद्रा ने अपने पति के रूप में अगस्त्य का वरण किया था (३. १३०, ६)। अगस्त्य द्वारा कुबेर तथा उसके सखा मणिमत् नामक राक्षस को शाप देना तथा कुबेर द्वारा उससे मुक्ति पाने की कथा का वर्णन (३. १६१, ५०. ५२. ५५–६३; १६२, ३७)। अगस्त्य द्वारा नहुष को शाप देने का उल्लेख (३. १७९, १४; १८०, १४–१५; १८१, ३७)। वातापि के विनाश का उल्लेख (३. २०६, २८)। इनकी पत्नी लोपामुद्रा का उल्लेख (४. २१, १४)। इन्द्र की अनुपस्थिति में देवों के राजा नहुष को इन्होंने १०,००० वर्षों तक सर्प बने रहने का शाप दिया था (५. १७, २. २२; १८, १३; तु० की० १३. ९९–१००)। 'अगस्त्यश्चापि वैदर्भ्या' (५. ११७, १२)। दक्षिण दिशा के प्रतीक (५. १४३, ४४)। अगस्त्य ने द्रोणाचार्य को ब्रह्मास्त्र की शिक्षा दी थी (१०. १२, १३)। अगस्त्य द्वारा वातापि के भक्षण का

उल्लेख (१२. १४१, ७२)। वसिष्ठ और गौतम तथा अन्य ऋषियों के साथ अगस्त्य, ब्रह्मा की आज्ञा के अधीन रहकर, सनातन धर्म का पालन करने लगे (१२. १६६, २३)। मित्रावरुण के प्रतापी पुत्र अगस्त्य, जो दक्षिण के सप्तर्षियों में से एक हैं (१२. २०८, २९)। यह वानप्रस्थ धर्म के प्रसारकों में से एक हैं (१२. २४४, १६)। 'कुम्भयोनिर् मैत्रावरुणिः ऋषिवरो', (१२. ३४२, ५१)। अन्य ऋषियों के साथ अगस्त्य भी बाणशय्या पर पड़े भीष्म पितामह को देखने आते हैं (१३. २६, ४)। हिमालय पर देवों के यज्ञ में पधारते हैं (१६. ६६, २३)। क्षत्रियों का विनाश कर लेने के बाद परशुराम ने अपने को पवित्र करने के लिये अगस्त्य तथा अन्य ऋषियों से परामर्श किया और इन ऋषियों ने उन्हें स्वर्ण-दान करने का आदेश दिया था (१३. ८४, ३८)। ब्रह्मसर-तीर्थ में अगस्त्य जी का धर्मोपदेश सुनने के लिये इन्द्र ने इनका एक कमल पुष्प चुरा लिया था (१३. ९४, ४. ८-९. ४६)। नहुष का ऋषियों पर अत्याचार तथा उसके प्रतिकार के लिये महर्षि भृगु और अगस्त्य की बातचीत, तथा अगस्त्य के शाप से नहुष का पतन (१३. ९९-१००)। 'प्रजानां हितकामेन त्वगस्त्येन महात्मना । आरण्याः सर्वदैवत्याः प्रेक्षितास्तपसा मृगाः ॥' (१३. ११५, ५९; देखिये ११६, १७)। 'निमीराष्ट्रं च वैदर्भिः कन्यां दत्वा महात्मने। अगस्त्याय गतः स्वर्गं सपुत्रपशुबान्धवः ॥' (१३. १३७, ११)। मित्रावरुणि के पुत्र दक्षिण के सात धर्मराज ऋत्विजों में से एक हैं (१३. १५०, ३५); 'शुक्रागस्त्यबृहस्पतिप्रभृतिर्ब्रह्मर्षिभिः', (१३. १५०, ७९)। "प्राचीनकाल में असुरों ने देवताओं को परास्त करके उनका उत्साह नष्ट कर दिया था। इन दानवों ने देवताओं के यज्ञ, पितरों के श्राद्ध, तथा मनुष्यों के कर्मानुष्ठान को भी लुप्त कर दिया। ऐसी दशा में देवता-गण पृथ्वी पर इधर-उधर फिरते हुये ब्राह्मण मुनि अगस्त्य से मिले। देवताओं के निवेदन पर अगस्त्य ने दानवों को भस्म करना आरम्भ किया, जिससे सभी दानव दोनों लोकों (पृथ्वी और आकाश) का परित्याग करके दक्षिण दिशा की ओर भाग गये। उस समय राजा बलि अश्वमेध यज्ञ कर रहे थे। अतः जो दैत्य उनके साथ पृथ्वी पर थे वह, तथा जो पाताल में थे, दग्ध होने से बच गये; क्योंकि उन्हें दग्ध करने से अगस्त्य की तपस्या क्षीण हो जाती। 'अतः तुम अगस्त्य मुनि से श्रेष्ठ यदि किसी क्षत्रिय को जानते हो तो बताओ' (१३. १५५, १. ४. ७. ९. १३-१४)"। मित्रावरुण के पुत्र, दक्षिण के एक ऋषि (१३. १६५, ४०)। "प्राचीन समय में सम्पूर्ण प्राणियों के हित में रत रहनेवाले अगस्त्य मुनि ने एक समय बारह वर्षों में समाप्त होने वाले यज्ञ की दीक्षा ली। इस कार्य के लिये उन्होंने अनेक होतृ पुरोहितों को बुलाया। अगस्त्य ने यथाशक्ति आवश्यक अन्न का संग्रह किया। इनके सिवाय और भी मुनियों ने उस समय बड़े-बड़े यज्ञ किये थे। फिर भी, जब अगस्त्य ने यज्ञ आरम्भ किया तब इन्द्र ने वर्षा बन्द कर दी। यज्ञ-कर्म के बीच में अवकाश मिलने पर मुनि-गण इसी विषय पर वार्त्तालाप करने लगे। मुनियों के ऐसा कहने पर अगस्त्य ने कहा, 'यदि इन्द्र बारह वर्षों तक वर्षा नहीं करते तो मैं चिन्तन मात्र के द्वारा मानसिक यज्ञ, अथवा स्पर्श-यज्ञ, अथवा अन्य प्रकार के यज्ञों का अनुष्ठान करूँगा।' तब अगस्त्य ने अपने शब्दों द्वारा तीनों लोकों की समस्त सम्पत्ति, समस्त अप्सराओं, गन्धर्वों, किन्नरों, विश्वावसुओं, उत्तरकुरु के समस्त धन, स्वर्ग, स्वर्गवासी देवता, और धर्म आदि, सबको अपने यज्ञ स्थल पर बुला लिया। उन मुनियों ने अगस्त्य के तपोबल की प्रशंसा करते हुये कहा कि 'हम आपकी तपस्या का व्यय नहीं होने देना चाहते'। जब ऋषि-गण ऐसी बातें कह रहे थे उसी समय इन्द्र ने महर्षि का तपोबल देखकर वर्षा आरम्भ कर दी, तथा बृहस्पति के साथ स्वयं आकर अगस्त्य मुनि को मनाया। तदनन्तर यज्ञ समाप्त होने पर हर्षित अगस्त्य मुनि ने उन महामुनियों की विधिवत् पूजा तथा विदाई की (१४. ९२, ४-३८)"। तु० की० **कुम्भयोनि, मैत्रावरुणि, मित्र-वरुणयोः पुत्र।**

२. अगस्त्य—यद्यपि यहाँ 'अगस्त्यं गोत्रतश्चापि नामतश्चापि शर्मिणम्' (१३. ६८, ६) से अगस्त्य-गोत्री शर्मिन् नामक ब्राह्मण का तात्पर्य है; तथापि ३. ९५, ११, में इसके साथ 'भगवान्' उपाधि संयुक्त होने से इसे स्वभावतः अगस्त्य मुनि मानना ही अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है।

अगस्त्यतीर्थ—दक्षिण-समुद्र के समीप स्थित एक तीर्थ जो पाँच नारीतीर्थों में से एक है (१. २१६, ३; तु० की० १. २१७, १७)। पांड्यदेश में अगस्त्यतीर्थ के स्थित होने का उल्लेख (३. ८८, १३; ११८, ४)।

अगस्त्यपर्वत—इसे अत्यन्त रमणीय, श्रेष्ठ, पवित्र, और कल्याणस्वरूप बताया गया है (३. ८७, २१)।

अगस्त्यवट, हिमालय के पास स्थित एक पुण्यक्षेत्र है, जहाँ अर्जुन का आगमन हुआ था (१. २१५, २)।

अगस्त्यशिष्य, अगस्त्य का एक शिष्य है जिसके नाम का उल्लेख नहीं मिलता (३. ८८, १७)।

अगस्त्याश्रम—पञ्चवटी के पास का एक पुण्यक्षेत्र (३. ९९, १७; ३. ९६, १; देखिये ३. ८७, २०)।

अगस्त्योपाख्यान—"प्राचीनकाल में मणिमती नगरी में इल्वल नामक एक दैत्य रहता था। उसके छोटे भाई का नाम वातापि था। एक ब्राह्मण से इल्वल ने अपने लिये इन्द्र के समान एक पुत्र की याचना की किन्तु उस ब्राह्मण ने उसकी यह इच्छा पूर्ण नहीं की। परिणाम स्वरूप इल्वल क्रुद्ध होकर समस्त ब्राह्मणों की हत्या करने लगा। इल्वल की वाणी में यह शक्ति थी कि वह जिस किसी प्राणी को उसका नाम लेकर बुलाता था वह यमलोक तक से वापस चला आता था। अपनी इस शक्ति का उपयोग करते हुये इल्वल अपने भ्राता वातापि को माया से बकरा बनाकर उसका मांस किसी ब्राह्मण को खिला देता था। तदुपरान्त वह अपने भाई का नाम लेकर पुकारता था जिसको सुनकर वह वातापि नामक ब्राह्मण-शत्रु दैत्य उस ब्राह्मण की पसली को फाड़कर हँसता हुआ बाहर निकल आता था। इस प्रकार दुष्ट-हृदय इल्वल बार-बार ब्राह्मणों को भोजन कराकर अपने भाई द्वारा उनकी हिंसा करा देता था। इन्हीं दिनों अगस्त्य मुनि कहीं चले जा रहे थे। मार्ग में एक स्थान पर उन्होंने अपने पितरों को देखा जो गड्ढे में नीचे मुँह किये लटक रहे थे। उन पितरों ने अगस्त्य से सन्तान उत्पन्न करने का आग्रह किया जिससे उनको उस नरक से छुटकारा मिले। अगस्त्य ने पितरों की इच्छा पूर्ण करने का आश्वासन देते हुये सन्तानोत्पादन के लिये अपने योग्य पत्नी का अनुसन्धान किया, किन्तु उन्हें कोई स्त्री नहीं मिली। तब उन्होंने एक-एक जन्तु के उत्तमोत्तम अङ्गों का भावना द्वारा संग्रह करके उन सबसे एक परम सुन्दरी का निर्माण किया और उसे उस विदर्भराज की पुत्री के रूप में उत्पन्न कराया जो सन्तान-प्राप्ति के लिये तपस्या कर रहे थे। इस कन्या का नाम लोपामुद्रा रक्खा गया। जब यह विवाह के योग्य हुई तो यौवन, शील, तथा सदाचार से सम्पन्न होते हुये भी अगस्त्य के भय से किसी ने इसका वरण नहीं किया (३. ९६)"। "जब अगस्त्य को यह मालूम हो गया कि विदर्भ-कुमारी उनकी गृहस्थी चलाने के योग्य हो गई है तब उन्होंने विदर्भराज के पास जाकर उसे पत्नी के रूप में ग्रहण करने की इच्छा प्रगट की। अगस्त्य की इस इच्छा को सुनकर विदर्भराज तथा उनकी रानी बहुत दुःखी हुई किन्तु स्वयं लोपामुद्रा के आग्रह पर उन लोगों ने उसे अगस्त्य को समर्पित कर दिया। लोपामुद्रा को पत्नी-रूप में पाकर अगस्त्य ने उससे वस्त्र तथा आभूषण का परित्याग करके फटे पुराने वस्त्र, वल्कल और मृगचर्म धारण करने के लिये कहा। लोपामुद्रा ने भी मुनि की आज्ञानुसार ही आचरण किया। तदनन्तर अगस्त्य मुनि अपनी अनुकूल पत्नी के साथ गङ्गाद्वार में

आकर घोर तपस्या में संलग्न हो गये। लोपामुद्रा बड़ी प्रसन्नता और आदर के साथ पति-सेवा करने लगी। कुछ समय के पश्चात्, एक दिन अगस्त्य ने, ऋतु स्नान से निवृत्त हुई पत्नी लोपामुद्रा को देखा जो तपस्या के तेज से प्रकाशित हो रही थी। महर्षि ने उसके रूप-सौन्दर्य से प्रसन्न होकर उसे मैथुन के लिये अपने पास बुलाया। इस पर लोपामुद्रा ने हाथ जोड़कर अगस्त्य से कहा, 'मैं अपने पिता के घर जैसी शय्या पर शयन करती थी वैसी ही शय्या पर आप मेरे साथ समागम करें। मैं यह भी चाहती हूँ कि हम दोनों ही सुन्दर वस्त्राभूषणों से अलङ्कृत हों। साथ ही मेरी यह भी इच्छा है कि आप अपने तप और धर्म की रक्षा करते हुये ही जैसे सम्भव हो उस प्रकार मेरी इच्छा पूर्ण करें, (३. ९७)"। "अगस्त्य मुनि राजा श्रुतर्वन के पास गये और उनसे धन की याचना की। किन्तु जब उन्होंने यह देखा कि श्रुतर्वन का व्यय उनकी आय के बराबर है तो उन्होंने उनसे कुछ नहीं लिया। फिर भी, वह श्रुतर्वन को साथ लेकर राजा ब्रध्नश्व के पास गये किन्तु वहाँ भी वही परिणाम निकला। तब तीनों मिलकर इक्ष्वाकुवंशी राजा त्रसदस्यु पौरुकुत्स के पास गये, किन्तु वहाँ भी वही परिणाम हुआ। तब इन राजाओं के परामर्श के अनुसार चारों मिलकर इल्वल नामक दानव के पास गये (३. ९८)"। "इल्वल ने महर्षि सहित उन राजाओं को आता जानकर अपने मंत्रियों के साथ अपने राज्य की सीमा पर उपस्थित हो उनका स्वागत किया। उस समय इल्वल ने अपने भाई वातापि का मांस पकाकर उसके द्वारा ही इन सबका आतिथ्य किया। इसे देखकर अगस्त्य के साथ के तीनों राजर्षियों का हृदय खिन्न हो गया और वे अचेत से हो गये। इस पर उन्हें आश्वासन देते हुये अगस्त्य ने अकेले ही वातापि का सारा मांस खा लिया। जब अगस्त्य मुनि भोजन कर चुके तब इल्वल ने वातापि का नाम लेकर पुकारा। उस समय अगस्त्य की गुदा से गजरते हुये मेघ की भाँति भीषण शब्द करती हुई अधोवायु निकली, क्योंकि अगस्त्य ने उस असुर को पचा लिया था। तब दुःखी होकर इल्वल ने उन राजर्षियों तथा अगस्त्य से कहा कि 'यदि आप लोग यह जान लें कि मैं कितना धन देना चाहता हूँ तो मैं आपको अवश्य धन दूँगा।' इस पर अगस्त्य ने कहा कि 'तुम इन प्रत्येक राजाओं को दस-दस सहस्र गायें तथा इतनी ही सुवर्ण-मुद्रायें, तथा मुझे इन राजाओं की अपेक्षा दूनी गायें और स्वर्ण-मुद्रायें देना चाहते हो। साथ ही तुम मुझे एक स्वर्ण-रथ भी देना चाहते हो जिसमें विराव और सुराव नामक दो तीव्रगामी घोड़े लगे हुये हैं। वह रथ अगस्त्य सहित राजाओं को अगस्त्य आश्रम की ओर ले चला। उस समय इल्वल असुर ने मुनि के पीछे जाकर उन्हें मारने की चेष्टा की किन्तु मुनि ने उस महादैत्य को हुँकार से ही भस्म कर दिया। तदनन्तर उन वायु के समान वेगवान घोड़ों ने मुनि सहित इन राजाओं को मुनि के आश्रम पर पहुँचा दिया। तब अगस्त्य की आज्ञा लेकर राजर्षि-गण अपनी-अपनी राजधानी को चले गये तथा अगस्त्य ने भी लोपामुद्रा की समस्त इच्छायें पूर्ण कर दीं। अगस्त्य ने लोपामुद्रा से कहा कि 'मैं तुम्हारे गर्भ से एक सहस्र, अथवा प्रत्येक दस-दस के समान सौ, अथवा प्रत्येक सौ-सौ के समान केवल दस, अथवा एक सहस्र के समान केवल एक पुत्र ही, उत्पन्न कर सकता हूँ; अतः तुम जैसा पुत्र चाहती हो वह मुझसे कहो। लोपामुद्रा ने अनेक की अपेक्षा केवल एक श्रेष्ठ पुत्र की ही इच्छा प्रकट की। तदुपरान्त गर्भाधान करके अगस्त्य मुनि पुनः वन में चले गये। वह गर्भ सात वर्षों तक लोपामुद्रा के पेट में ही पलता और विकसित होता रहा। सात वर्ष व्यतीत हो जाने पर लोपामुद्रा ने उस दृढस्यु को जन्म दिया जो जन्मकाल से ही अङ्ग और उपनिषदों सहित सम्पूर्ण वेदों का स्वाध्याय-सा करता जान पड़ा। पिता के घर में रहते हुये तेजस्वी दृढस्यु बाल्यकाल से ही इध्म (समिधा) का भार वहन करके लाने लगे; अतः वह इध्मवाह नाम से विख्यात हो गये। अपने पुत्र से अगस्त्य अत्यन्त प्रसन्न हुये और उनके पितरों ने भी मनोवांछित लोक प्राप्त कर लिया (३. ९९)"। "कृतयुग में वृत्रासुर की अध्यक्षता में कालकेय नामक दैत्यों ने विविध प्रकार के आयुधों से सुसज्जित हो इन्द्र तथा अन्य देवताओं पर आक्रमण किया। तब वह सब देव-गण ब्रह्माजी के परामर्श के अनुसार भगवान नारायण को आगे करके सरस्वती के तट पर स्थित दधीच के आश्रम में आये। सब देवताओं ने महर्षि के चरणों में अभिवादन करके उनसे अपना शरीर त्यागने का निवेदन किया। यह सुनकर देवों की इच्छा के अनुसार महर्षि दधीच ने अपने प्राणों का त्याग कर दिया। महर्षि के निर्जीव शरीर से अस्थियों को एकत्र कर देवों ने त्वष्टा से एक अत्यन्त भयङ्कर वज्र का निर्माण कराया। इन्द्र को वह वज्र समर्पित करते हुये स्वयं त्वष्टा ने उनसे वृत्र का वध करने का आग्रह किया (३. १००)"। "तदुपरान्त, कालकेयों के साथ जो युद्ध हुआ उसमें देव-गण पराजित होने लगे। तब नारायण तथा अन्य ब्रह्मर्षियों ने इन्द्र को अपने-अपने तेजों से युक्त कर दिया। देवताओं सहित विष्णु तथा महर्षियों के तेज से पूर्ण होकर इन्द्र अत्यन्त बलशाली हो गये। तब उन्होंने अपने वज्र से वृत्रासुर पर प्रहार किया जो उससे आहत होकर उसी प्रकार पृथ्वी पर गिर पड़ा जिस प्रकार पूर्वकाल में विष्णु के हाथ से छूटकर मन्दराचल पर्वत पृथ्वी पर गिर पड़ा था। महादैत्य वृत्र के मारे जाने पर भी इन्द्र भय से पीड़ित होकर छिपने की इच्छा से एक तालाब में प्रवेश करने के लिये भागे। भय के कारण उन्हें यह विश्वास नहीं हुआ कि वज्र उनके हाथ से छूट चुका है और वृत्रासुर भी अवश्य मारा गया है। इधर देवताओं ने भी अन्य दैत्यों को पराजित किया जिससे वह सब भागकर समुद्र में प्रवेश कर गये। मत्स्यों और मगरों से भरे हुये उस अपार महासागर में प्रविष्ट होकर वे सब दानव तीनों लोकों का विनाश करने के लिये बड़े गर्व से मंत्रणा करने लगे। उन्होंने यह निश्चय किया कि यतः सम्पूर्ण लोक तप के प्रभाव से ही टिके हुये हैं, अतः समस्त तपस्वियों और धर्मज्ञों का वध कर डालने से सारा जगत स्वयं नष्ट हो जायगा (३. १०१)"। "दिन में समुद्र के गर्भ में छिपे रह कर रात्रि के समय वह दैत्य-गण आश्रमों तथा पुण्य स्थानों में रहने वाले मुनियों का वध करने लगे। उन्होंने वसिष्ठ के आश्रम के १९७, च्यवन के आश्रम के १००, तथा भरद्वाज के आश्रम के २० तपस्वियों का बिना दिखाई दिये ही वध कर दिया। प्रतिदिन प्रातःकाल लोग मुनियों के मृत और भग्न शरीरों तथा बिखरी हुई अग्निहोत्र की सामग्रियों को देखते थे। इस प्रकार प्रतिदिन नष्ट होनेवाले मनुष्य भयभीत हो अपनी रक्षा के लिये चारों दिशाओं में भागने लगे, और कुछ के तो भय से ही प्राण निकल गये। कुछ महान धनुर्धर इन कुकृत्यकारी दानवों के स्थान का भी पता लगाने का प्रयास करने लगे, किन्तु उन्हें इसमें सफलता नहीं मिली। तब इन्द्र सहित देव-गण नारायण के पास गये (३. १०२)"। "उन्होंने विष्णु को बताया कि न जाने कौन रात में आकर ब्राह्मणों का वध कर जाता है। विष्णु ने इस विनाश का कारण बताते हुये देवताओं से अगस्त्य मुनि के पास जाकर समुद्र का शोषण करने के लिये निवेदन करने का परामर्श दिया। उन्होंने बताया कि अगस्त्य के अतिरिक्त अन्य कोई भी इस कार्य को नहीं कर सकता। विष्णु की आज्ञा से समस्त ऋषि-गण अगस्त्य के आश्रम पर आये। देवताओं ने अगस्त्य से कहा कि 'पूर्वकाल में राजा नहुष के अन्याय से सन्तप्त लोकों की आपने ही रक्षा की थी। पर्वतों में श्रेष्ठ विन्ध्य जब सूर्य पर क्रोध करके सहसा बढ़ने लगा था और उसने समस्त जगत को अन्धकार से आच्छादित कर दिया था, तब आपने ही उसे बढ़ने से रोका था' (३. १०३)"। "देवताओं की बात सुनकर अगस्त्य मुनि देवताओं तथा ऋषियों

के साथ समुद्र तट पर गये। उस समय मनुष्य, नाग, गन्धर्व, यक्ष और किन्नर सभी उस अद्भुत दृश्य को देखने के लिये महात्मा अगस्त्य के पीछे चल पड़े (३. १०४)"। "समुद्रतट पर जाकर अगस्त्य मुनि ने लोगों के देखते-देखते ही समुद्र का पान कर लिया। तब देवताओं ने विधातृ के रूप में उनकी स्तुति की। उस समय चारों ओर गन्धर्वों के वाद्यों की ध्वनि फैल रही थी और अगस्त्य पर दिव्य पुष्पों की वर्षा हो रही थी। उन दैत्यों को, जिन्हें मुनियों ने अपनी तपस्या द्वारा पहले से ही दग्ध कर रक्खा था, देवताओं ने अपने विविध आयुधों से मार डाला। कुछ दैत्य, जो वसुन्धरा को विदीर्ण करके पाताल में चले गये, मारे जाने से बच गये। तदुपरान्त देवों ने अगस्त्य मुनि से समुद्र को पुनः जल से परिपूर्ण कर देने का आग्रह किया, किन्तु उस समय तक अगस्त्य ने समुद्र के जल को पचा लिया था। तब विष्णु सहित देव-गण समुद्र को भरने का उपाय जानने के लिये ब्रह्मा जी के पास गये (३. १०५)"। ब्रह्मा जी ने उनको बताया कि दीर्घकाल के पश्चात् उस समय समुद्र पुनः अपनी स्वाभाविक अवस्था में आ जायगा जब महाराज भगीरथ अपने पूर्वजों के उद्धार के उद्देश्य से समुद्र को आगाध जल से भर देगें।

अगावह, एक वृष्णि योद्धा का नाम है (७. ११, २७)।

अग्नि—पञ्चमहाभूतों में से एक तथा उसके अभिमानी देवता, जो भगवान् के मुख से उत्पन्न हुये। तीन अग्नियों का दृष्टान्त (१. १, ९५)। अर्जुन द्वारा खाण्डव दाह के समय अग्नि को तृप्त करना (१. १, १५२)। इन्द्र और अग्नि राजा शिबि के धर्म की परीक्षा लेने के लिये आये थे (१. २, १७३)। अर्जुन द्वारा अपना दिव्य गाण्डीव धनुष अग्नि को अर्पित करना (१. २, ३६६)। 'यः पुरुषः स पर्जन्यो योऽश्वः सोऽग्निर्यः' (१. ३, १६७)। भगवान् शौनक का अग्नि की उपासना में संलग्न होना (१. ४, ४)। "भृगु की पत्नी पुलोमा का पहले एक पुलोमन् नामक राक्षस ने वरण किया था, किन्तु बाद में भृगु के साथ उसका विवाह हो गया। एक दिन जब स्नान करने के लिये भृगु आश्रम से बाहर चले गये थे तब पुलोमा का अपहरण करने के उद्देश्य से वह राक्षस वहाँ आया। उस समय उसने अग्निहोत्र-गृह में प्रज्वलित पावक से पूछा, 'हे अग्निदेव ! मैं सत्य की शपथ देकर पूछता हूँ कि यह किसकी पत्नी है, मेरी अथवा भृगु की ?' अग्नि ने उत्तर दिया कि 'इसमें सन्देह नहीं कि पहले तुमने ही पुलोमा का वरण किया था, किन्तु उसके पश्चात् महर्षि भृगु ने मुझे साक्षी बनाकर वेदोक्त क्रिया द्वारा विधिवत् उसका पाणिग्रहण किया है।' अग्नि का यह वचन सुनकर उस राक्षस ने वराह का रूप धारण करके पुलोमा का अपहरण किया। उस समय पुलोमा की कुक्षि में निवास कर रहा गर्भ अत्यन्त रोष के कारण माता के उदर से च्युत होकर बाहर निकल आया जिसको देखते ही वह राक्षस तत्काल जलकर भस्म हो गया। ब्रह्मा ने पुलोमा के नेत्र-जल से वधूसरा नदी का निर्माण किया। भृगु ने अग्नि को यह कहते हुए शाप दिया कि 'तुम सर्वभक्षी हो जाओगे।' उस शाप से क्रुद्ध होकर अग्निदेव ने द्विजों के अग्निहोत्र, यज्ञ, सूत्र, तथा संस्कार सम्बन्धी क्रियाओं से अपने को समेट लिया जिसके फलस्वरूप समस्त प्रजाजन अत्यन्त दुःखी हो गये। तब ब्रह्मा ने मधुर वाणी में अग्नि को यह आश्वासन देते हुए प्रसन्न किया कि उनका समस्त शरीर सर्वभक्षी नहीं होगा वरन् उनके अपान देश में स्थित ज्वाला तथा उनकी क्रव्याद मूर्त्ति ही सब कुछ भक्षण करेगी। साथ ही उनकी ज्वाला से दग्ध होने पर सब कुछ शुद्ध हो जायगा (१. ५, २१. २२. २७. ३१; ६, १. १२. १४; ७, १४–१८. २२–२५. २८. २९)"। समुद्र वडवानल के प्रज्वलित मुख में सदा जलरूपी हविष्य की आहुति देता रहता है (१. २१, १३ : 'वडवामुखदीप्ताग्नेस्तोयहव्यप्रदं शिवम्')। गरुड़ प्रज्वलित अग्नि-पुञ्ज के समान भयंकर जान पड़ते थे (१. २३, ७)। देवताओं द्वारा गरुड़ के रूप में अग्नि की स्तुति (१. २३, १०. १७)। कुपित ब्राह्मण, अग्नि, सूर्य, विष और शस्त्र के समान भयंकर होता है (१. २८ ४. ६)। पूर्वकाल में देवताओं द्वारा गुफा में छिपे हुये अग्नि को खोज निकालने का उल्लेख (१. ३७, ९)। अग्निदेव द्वारा अर्जुन को गाण्डीव धनुष इत्यादि प्रदान करना (१. ६१, ४७)। यज्ञकर्म के अनुष्ठान के समय प्रज्वलित अग्नि से धृष्टद्युम्न का प्रादुर्भाव (१. ६३, १०८)। कुमार के पिता अग्नि (१. ६६, २३)। धृष्टद्युम्न को अग्नि का भाग कहा गया है (१. ६७, १२६)। अग्नि के तपने की शक्ति का उल्लेख (१. ८८, १३)। ब्रह्मा जी के पास अन्य देवताओं सहित अग्नि की उपस्थिति का उल्लेख (१. २११, ४)। धनञ्जय द्वारा अग्निहोत्र सम्पन्न करने से अग्निदेव का सन्तुष्ट होना (१. २१४, १५)। अग्निदेव से सम्बद्ध कृत्तिका नक्षत्र में कृष्ण ने सहदेव से एक पुत्र उत्पन्न किया (१. २२१, ८५)। खाण्डव वन को भस्म करते हैं (१. २२२–२३४ : १. २२३, १२; २२६, १०; २२८, ४०; २२९, २१. २३. २७; २३२, ६. ९–१०. १२–१४. २५; २३३, ९; २३४, १–२)। 'दीप्यमाना इवाग्नयः' (२. ७, ९)। 'त्रय इवाग्नयः' (२. १५, १३; २०, ३)। 'रविसोमाग्निवपुषम्' (२. २०, २३)। अर्जुन विशाल सेना के साथ अग्नि के दिये हुये रथ द्वारा प्रस्थान करते हैं (२. २५, ८)। नील की कन्या अग्निहोत्र में अग्नि को प्रज्वलित करने के लिये उपस्थित हुआ करती थी (२. ३१, २८)। सहदेव के विरुद्ध नील की सहायता और नील की पुत्री से विवाह करते हैं; सहदेव द्वारा इनकी स्तुति; सहदेव को अभयदान देते हैं; इनके (अग्नि के) नामों की गणना (२. ३१, ३६. ३८–३९. ४५–४६. ४९)। युधिष्ठिर द्वारा अग्नि के रूप में सूर्य की उपासना, जहाँ अग्नि को सूर्य के एक सौ आठ नामों में से एक बताया गया है (३. ३, ६०)। लोकपाल-गण अग्नि के साथ देवराज के समीप आये (३. ५४, २४)। अग्नि, इन्द्र, यम और वरुण, दमयन्ती के स्वयंवर में आये और नल के द्वारा इन लोगों ने दमयन्ती को अपने आने की सूचना भेजी; किन्तु दमयन्ती ने इन लोगों को अस्वीकृत कर दिया (३. ५५, ४. ६. २३; ५७, ३३. ३६)। अग्नितीर्थ का उल्लेख (३. ८३, १३८)। 'ऋषयस्तत्र देवाश्च वरुणोऽग्निः प्रजापतिः' (३. ८५, ४९)। 'आज्यभागेन तत्राग्निं तर्पयित्वा यथाविधि' (३. ८५, ५२)। 'पितरो हुताशनश्चैव नक्षत्राणि ग्रहास्तथा' (३. ९९, ५७)। 'अग्निर्मित्रो योनिरापोऽथ देव्यो विष्णोरेतस्त्वममृतस्य नाभिः।……अग्निश्च ते योनिरिडा च देहो रेतोधा विष्णोरमृतस्य नाभिः।' (३. ११४, २७–२८)। काश्मीर मण्डल का उल्लेख जहाँ उत्तर के समस्त ऋषि, नहुष-कुमार, ययाति, अग्नि और काश्यप का संवाद हुआ था (३. १३०, ११)। राजा उशीनर की परीक्षा लेने के लिये अग्नि ने कबूतर का रूप धारण किया था (३. १३०, २३)। मित्रों की भाँति सदा साथ विचरने वाले इन्द्र और अग्नि (३. १३४, ९)। 'ततो देवा वरं तस्मै ददुरग्निपुरोगमाः' (३. १३८, २०)। 'देवाग्निपुरोगमान्' (३. १३८, २३)। गङ्गा की सात धाराओं से सुशोभित रजोगुण रहित पुण्यतीर्थ का उल्लेख, जहाँ अग्निदेव सदैव प्रज्वलित रहते हैं (३. १३९, २)। 'शिक्ष मे भवनं गत्वा सर्वाण्यस्त्राणि भारत। वायोरग्नेर्वसुभ्योऽपि वरुणात् समरुद्गणात्॥' (३. १६८, २९)। 'यस्मिन्नग्निमुखा देवाः' (३. १८६, ३०)। अग्नि को नारायण का मुख बताया गया है, तथा वडवावक्त्र और समवर्त्तक अग्नि को नारायण के साथ समीकृत किया गया है (३. १८९, ७. १२)। अग्नि और इन्द्र का राजा शिबि की परीक्षा लेने के लिये उद्यत होना और अग्निदेव द्वारा कबूतर का रूप धारण करके अपना प्राण बचाने के लिये राजा के पास भागते हुये जाना (३. १९७, १–२)। सुवर्ण को अग्नि की प्रथम सन्तान कहा गया है (३. २००, १२८)। 'इन्द्रसोमाग्निवरुणा' मधुसूदन की स्तुति करते हैं (३. २०१, १८)। 'अग्नयो मांसकामाश्च इत्यपि श्रूयते श्रुतिः'

(३. २०८, ११; गी० सं० में यह श्लोक नहीं है)। शरीर में रहने वाले अग्नि (३. २१३, १)। पूर्वकाल में अङ्गिरस मुनि अपने आश्रम में रहकर अग्नि से भी अधिक तेजस्वी बनने के लिये श्रेष्ठ तपस्या करने लगे। अपने उद्देश्य में सफल होकर उन्होंने सम्पूर्ण जगत को प्रकाशित कर दिया। तब अग्नि ने सोचा कि सम्भवतः ब्रह्मा ने जगत के लिए किसी अन्य देवता का निर्माण कर लिया है। अतः यह विचार करते हुये कि 'मैं पुनः किस प्रकार अग्नि हो सकता हूँ' अग्निदेव अङ्गिरस ऋषि के पास गये। अङ्गिरस ने अग्निदेव से निवेदन किया कि 'आप स्वयं ही अग्निपद पर प्रतिष्ठित होकर मुझे अपना प्रथम पुत्र स्वीकार कर लीजिये'। अङ्गिरस की सन्तान के रूप में अनेक प्रकार के अग्नि; बृहस्पति की भी अनेक अग्नि रूपी सन्तान; पाञ्चजन्य अग्नि की उत्पत्ति तथा उसकी सन्तति इत्यादि का वर्णन (३. २१७–२२२ : विशेषतः इन श्लोकों को देखिये ३. २१७, १२–१७; २१९, २–६. १२–१४. १७; २२०, १. ७. १६. १९; २२१, १३. १५; २२२, २०. २९)। "सप्तर्षियों की पत्नी पर आसक्त होकर अग्नि उनके गार्हपत्य अग्नि में प्रविष्ट हो गये। इस प्रकार बहुत देर तक वहाँ टिके रहने पर उनका हृदय कामाग्नि से संतप्त हो उठा। वे उन ब्रह्मर्षियों की पत्नियों के न मिलने से अपने शरीर को त्याग देने का निश्चय कर चुके थे, अतः वन में चले गये। दक्षपुत्री स्वाहा अग्नि को अपना पति बनाना चाहती थी, अतः अरुन्धती को छोड़कर अन्य सप्तर्षि-पत्नियों के रूप में अग्नि के साथ समागम करने की इच्छा से सर्वप्रथम वह अङ्गिरा की पत्नी शिवा के रूप में अग्नि के सम्मुख उपस्थित हुई। शिवा के रूप में अग्निदेव के साथ समागम करके उसने उनके वीर्य को हाथ में ले लिया। अपने रहस्य को गुप्त रखने के लिये स्वाहा गरुड़ी का रूप धारण करके उस महान् वन से बाहर निकल गई। मार्ग में उसने दुर्गम श्वेत पर्वत पर जाकर एक सुवर्णमय कुण्ड में शीघ्रतापूर्वक उस वीर्य (शुक्र) को डाल दिया। इसी प्रकार स्वाहा बारी-बारी से अरुन्धती को छोड़ कर शेष सप्तर्षि-पत्नियों के रूप में अग्नि के साथ समागम करती और प्रत्येक बार के वीर्य (शुक्र) को उक्त सरोवर में डालती रही। इस प्रकार वह केवल छः बार ही अग्नि के वीर्य को वहाँ डालने में सफल हुई। यह घटना अमावस्या के दिन घटित हुई और प्रतिपदा के दिन उस स्खलित (स्कन्दित) वीर्य ने एक तेजस्वी पुत्र को जन्म दिया। वह स्कन्दित होने के कारण स्कन्द कहलाया। चतुर्थी को कुमार स्कन्द सभी अङ्गों-उपाङ्गों से सम्पन्न हो गये। सप्तर्षियों ने जब यह सुना कि उनकी छः पत्नियों के संग से अग्नि के एक महातेजस्वी पुत्र हुआ है, तब उन्होंने अरुन्धती देवी के अतिरिक्त अन्य छः पत्नियों को त्याग दिया। ब्राह्मण लोग अग्नि को रुद्र का स्वरूप बताते हैं इसलिये स्कन्द रुद्र के ही पुत्र हैं। रुद्र ने जिस वीर्य का त्याग किया था, वही श्वेत पर्वत के रूप में परिणत हो गया। रुद्र ने ही अग्नि में प्रवेश करके इस शिशु को जन्म दिया था; इसलिये रुद्र स्वरूप अग्नि से उत्पन्न होने के कारण स्कन्द को रुद्र का पुत्र कहते हैं। अग्निदेव ने स्कन्द के लिये कुक्कुट के चिह्न से अलंकृत ऊँचा ध्वज प्रदान किया, जो उनके रथ पर अरुण प्रभा से प्रलयाग्नि के समान उद्भासित होता था। सप्तर्षियों की छः त्यक्त पत्नियों ने स्कन्द के पास आकर उन्हें अपना पुत्र मान लिया। इन्द्र के निवेदन पर यह त्यक्त पत्नियाँ नक्षत्र बनकर छः कृत्तिकाओं के रूप में अभिजित् के स्थान की पूर्ति के लिये आकाश में चली गईं, वहाँ अग्निदेवता से सम्बद्ध कृत्तिका नक्षत्र सात शिरों की आकृति में प्रकाशित हो रहा है। ब्रह्मा जी ने धनिष्ठा से ही काल-गणना का क्रम निश्चित किया, जब कि पूर्वकाल में रोहिणी को ही युगादि नक्षत्र माना जाता था। स्वाहा ने स्कन्द से यह इच्छा प्रगट की कि 'मैं निरन्तर अग्निदेव के साथ ही निवास करूँ।' इस पर स्कन्द ने कहा कि 'आज से सन्मार्ग पर चलने वाले सदाचारी तथा धर्मात्मा मनुष्य देवताओं तथा पितरों के लिये अग्नि में जो कुछ भी आहुति देंगे, वह सब स्वाहा का नाम लेकर ही अर्पण करेंगे" (३. २२३–२२६; विशेषतः देखिये (३. २२२, २०. २९; २२३, १; २२४, २०. ३८; २२५, २. ४. ७. १५. २४; २२६, २५. २९; २२८, ५; २२९, २७. ३३; २३१, ४. ४७)। ब्रह्मर्षियों की ओर से ब्रह्मा के सम्मुख निवेदन करने वाले के रूप में अग्नि (३. २७६, २)। जब रामदाशरथि ने रावण के घर रहने के कारण सीता की अग्नि परीक्षा लेना चाहा था, तो उस समय ब्रह्मा, शक्र, अग्नि, वायु, यम, वरुण और कुबेर, तथा राम के मृत पिता दशरथ ने भी सीता के निर्दोष होने का प्रमाण दिया था (३. २९१, १८. २८)। अग्नि (हुताशन) ने जल में प्रवेश करके और वहीं छिपे रहकर देवताओं के कार्य को सिद्ध किया (३. ३१५, १६)। श्रीकृष्ण के साथ बैठे हुये अर्जुन के पास खाण्डव वन को जलाने की इच्छा से ब्राह्मण का रूप धारण करके साक्षात् अग्निदेव पधारे थे (४. २, ११)। 'अग्निवद्' (४. ४, २२)। जब अर्जुन ने मन ही मन अग्निदेव के प्रसाद-स्वरूप प्राप्त हुये अपने सुवर्णमय ध्वज का चिन्तन किया, तब अग्निदेव ने अर्जुन का मनोभाव जानकर उस ध्वज पर स्थित रहने के लिये भूतों को आदेश दिया (४. ४६, ४) और अर्जुन और कृपाचार्य का युद्ध देखने के लिये देवताओं के साथ अग्नि भी आकाश में विमान पर आये (४. ५६, ११)। 'एकक्षाग्निमतर्पयत्' (४. ४९, ५)। 'अग्निवंडवामुखः' (४, ५०, २६)। 'अन्नमाग्नेयमग्नेश्च वायव्यं मातरिश्वनः' (४. ६१, ३१)। जब इन्द्र के स्थान पर प्रतिष्ठित होने के पश्चात् नहुष ऋषियों को अपना वाहन बनाकर शची के पास आये, तब बृहस्पति ने इन्द्र का पता लगाने के लिये अग्नि से निवेदन किया। मन के समान तीव्र गति वाले अग्निदेव सम्पूर्ण दिशाओं, पर्वतों, वनों तथा भूतल और आकाश में इन्द्र की खोज करके पलभर में बृहस्पति के पास लौट आये। उन्होंने बृहस्पति से कहा 'मैं देवराज को इस संसार में कहीं नहीं देख पाया। केवल जल ही शेष रह गया है, जहाँ मैंने उनकी खोज नहीं की; किन्तु मैं जल में प्रवेश नहीं कर सकता।' परन्तु बृहस्पति ने उनसे जल में प्रवेश करने का भी आग्रह किया (५. १५, २७–३४)। बृहस्पति ने अग्नि की स्तुति करते हुये कहा कि 'आप समस्त देवताओं के मुख हैं। आप ही देवताओं को हविष्य पहुँचाते और समस्त प्राणियों के अन्तःकरण में साक्षी की भाँति गूढ़भाव से विचरते हैं। आप के त्याग देने पर यह सम्पूर्ण जगत् तत्काल नष्ट हो जायगा। ब्राह्मण लोग आपकी पूजा और वन्दना करके अपनी पत्नियों तथा पुत्रों के साथ अपने कर्मों द्वारा प्राप्त चिरस्थायी सुख का लाभ करते हैं। आप ही सृष्टि के समय इन तीनों लोकों को उत्पन्न तथा प्रलयकाल में पुनः प्रज्वलित हो इन सबका संहार करते हैं। मनीषी पुरुष आपको ही मेघ और विद्युत कहते हैं। आप से ही निकल कर ज्वालायें सम्पूर्ण भूतों को दग्ध करती हैं। आप में ही सारा जल संचित तथा सम्पूर्ण जगत् प्रतिष्ठित है। तीनों लोकों में कोई भी वस्तु ऐसी नहीं है जो आपको ज्ञात न हो' (५. १६, १–७; १. २२९, २३–३१)। बृहस्पति द्वारा ऐसी स्तुति करने पर अग्नि ने जल में प्रवेश करना भी स्वीकार कर लिया और अन्त में उन्होंने उस सरोवर का पता लगा लिया, जिसमें खिले हुये कमल-पुष्प की नाल में इन्द्र छिपे हुये थे (५. १६, १–१२)। अग्नि द्वारा पता लग जाने पर बृहस्पति ने इन्द्र के पास जाकर नहुष द्वारा देवताओं का राजा बन जाने की कथा का वर्णन किया। तदुपरान्त इन्द्र ने महायज्ञ में अग्नि को भी भागी बनाया (५. १६, १४–३२)। 'पञ्चाग्नयो मनुष्येण परिचर्याः प्रयत्नतः। पिता माताऽग्निरात्मा च गुरुश्च भरतर्षभ ॥' (५. ३३, ७४)। 'तस्माद्ग्निश्च सोमश्च तस्मिंश्च प्राण आततः।' (५. ४६, ११)। एक समय बृहस्पति और शुक्राचार्य ब्रह्मा की सेवा में उपस्थित हुये थे; उस समय उनके साथ इन्द्र, मरुद्गण, अग्नि, वसुगण, आदित्य, साध्य, सप्तर्षि, विश्वावसु, गन्धर्व, और श्रेष्ठ अप्सरायें भी वहाँ उपस्थित थीं (५. ४९, २)। 'त्रयस्त्रिंशत्समाऽऽहूय खाण्डवेऽग्निमत-

पैंयत् ।' (५. ५२, १०)। 'अग्निः साचिव्यकर्त्ता स्यात् खाण्डवे तत्कृतं स्मरन् ।' (५. ६०, ८)। 'यदा ह्यग्निश्च वायुश्च धर्म इन्द्रोऽश्विनावपि। कामयोगात् प्रवर्त्तेरन्' (५. ६१, ६)। जिनसे दुर्योधन द्वेष रखता था उनके सम्बन्ध में उसका कथन था कि उनकी रक्षा का साहस अश्विनीकुमार, वायु, अग्नि, इन्द्र तथा धर्म में भी नहीं है (५. ६१, १८)। 'हुताग्निः' (५. ९४, ६)। 'अत्रासुरोऽग्निः' (५. ९९, ३)। 'अग्निं जुहोतु वै धौम्यः' (५. १४०, १६)। 'उभे चाप्यग्नि मारुते' (५. १४२, ६)। 'अग्निदत्तं च ते' (५. १६०, १०५)। = कृष्ण (६. ३५, ३९; देखिये ६०, २५ भी)। 'यथेन्द्राग्नी पुरा बलिम्' (७. २५, २०)। "आदि सृष्टि के समय महातेजस्वी ब्रह्मा ने जब प्रजा की सृष्टि की तो उस समय संहार की कोई व्यवस्था नहीं थी। बहुत विचार करने पर भी ब्रह्मा को प्राणियों के संहार का कोई उपाय ज्ञात नहीं हो सका। उस समय क्रोधवश ब्रह्मा जी की इन्द्रियों से अग्नि प्रगट हो गये। वह अग्नि इस जगत् को दग्ध करने की इच्छा से सम्पूर्ण दिशाओं में फैल गये। दाह करने में समर्थ एवं अत्यन्त शक्तिशाली अग्निदेव महान् क्रोध के वेग से सबको त्रस्त करते हुये सम्पूर्ण चराचर जगत् को दग्ध करने लगे। इससे अनेक स्थावर, जंगम प्राणी नष्ट हो गये। तब रुद्र के समझाने पर प्रजा के हित के लिये ब्रह्मा ने पुनः अपनी अन्तरात्मा में उस तेज को धारण कर लिया। क्रोधाग्नि का उपसंहार करते समय ब्रह्मा जी की सम्पूर्ण इन्द्रियों से एक नारी प्रगट हुई जो काले और लाल रंग की थी और जिसकी जिह्वा, मुख और नेत्र पीले तथा लाल थे। ब्रह्मा ने उस नारी को अपने पास बुलाकर उसे सान्त्वना देते हुये मधुर वाणी में कहा 'मृत्यो इति महीपाल जहि चेमाः प्रजा इति'" (७. ५२–५४)। 'तत्राग्निशरणं दीप्तं प्रविवेश विनीतवत्' (७. ८२, १३)। 'नभसोऽग्निसमप्रभाम्' (७. १६६, ५४)। 'सुरा इव निरग्नयः' (७. १८२, ३८)। 'अग्नावग्निरिव न्यस्तो' (७. २००, ३)। 'गच्छेद्वह्निविभोरास्यं तथाऽस्त्रं भीममावृणोत् ॥ सूर्यमग्निः प्रविष्टः स्याद्यथा चाग्निं दिवाकरः।' (७. २००, ६. ७)। 'तथा वाय्वग्नी प्रमिमाणं जगच्च' (७. २०१, ६७)। 'शृंगमग्निर्वभूवास्य' (८. ३४, १८)। 'अग्नीषोमौ जगत्कृत्स्नं' (८. ३४, ४९)। 'शक्राग्निभ्यमिव' (८. ६०, ७)। 'अग्निरिन्द्रश्च सोमश्च पवनोऽथ दिशो दश। धनञ्जयस्य ते पक्षे' (८. ८७, ४७)। 'भगवानग्निर्जगद्दग्ध्वा चराचरम्' (९. १४, २०)। 'अग्निरिव' (९. १७, ४९. ५७)। 'यथा यज्ञे महानग्निर्मन्त्रपूतः प्रकाशवान्' (९. २१, ३६)। 'खाण्डवेऽग्निमिवार्जुनः' (९. ३३, ३३)। 'आनयध्वं द्वारकायामग्नीन्' (९. ३५, १७)। 'बृहस्पतिः समिद्धेऽग्नौ जुहावाग्निं यथाविधि' (९. ४५, १)। 'शक्त्या बिभेद भगवान् कार्त्तिकेयोऽग्निदत्तया' (९. ४६, ८४)। 'अग्निः प्रनष्टो भगवान्' (९. ४७, १५. १६)। 'इन्द्रोऽग्निरर्यमा चैव यत्र प्राक् प्रीतिमाप्नुवन्' (९. ५४, १५)। 'हन्तारुद्रस्तथा स्कन्दः शक्रोऽग्निर्वरुणो यमः' (१२. १५, १६)। 'वाराहोऽग्निर्बृहद्भानुर्वृषभस्तार्क्ष्यलक्षणः' (१२. ४३, ८)। 'अन्तर्भूतः पचत्यग्निः' (१२. ४७, ७२)। अर्जुनकार्त्तवीर्य से भिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् अग्निदेव ने अर्जुन के बाणों के अग्रभाग से गाँवों, गोष्ठों, नगरों, राष्ट्रों तथा आपव के सुरम्य आश्रम को जलाकर भस्म कर दिया (१२. ४९, ३८)। 'भवत्यग्निस्तथाऽऽदित्यो' (१२. ६८, ४१)। 'अब्जोऽग्निर्वरुणोमेषः......न विक्रेयाः कथञ्चन' (१२. ७८, ६ = १३. ८४, ८७)। 'भगवानिन्द्रादग्निर्विभावसुः' (१२. १२२, ४३)। 'असेरग्निश्च दैवतम्' (१२. १६६, ८२)। 'विश्वेदेवाः सपितरः साग्नयः' (१२. १७१, १५)। 'सलिलादग्निमारुतौ। अग्निमारुतसंयोगात्' (१२. १८२, १४)। 'अग्नीषोमौ तु चन्द्रार्कौ नयने तस्य' (१२. १८२, १८)। 'आहुश्चैनं केचिदग्निं केचिदाहुः प्रजापतिम्' (१२. २२४, ५२)। वृत्रासुर का वध कर देने पर इन्द्र को उससे लगी ब्रह्महत्या से मुक्त करने के लिये ब्रह्मा ने उस ब्रह्महत्या को चार भागों में विभक्त किया और उसके चतुर्थांश को अग्निदेव को भी यह कहते हुये दे दिया कि 'यदि तुम किसी स्थान पर प्रज्वलित हो रहे हो तो वहाँ पहुँच कर यदि कोई मानव तमोगुण से आवृत्त होने के कारण बीज, ओषधि अथवा रसों से स्वयं ही तुम्हारा पूजन नहीं करेगा तो उस पर तत्काल यह ब्रह्महत्या चली जायगी और उसीके भीतर निवास करने लगेगी।' (१२. २८२)। = शिव के सहस्रनामों में से एक (१२. २८२, ३४)। 'भवच्छरीरे पश्यामि सोममग्निं जलेश्वरम्' (१२. २८४, ८०)। 'अग्निषोमाविदं सर्वम्' (१२. २८८, ३३)। 'रुद्रास्तथैवाग्न्यश्विमारुताः' (१२. २९५, १६)। यदि मृत्यु के समय नेत्रों से प्राणों का उत्क्रमण हो तो व्यक्ति अग्नि देवता को प्राप्त होता है (१२. ३१७, ६)। 'तवाग्निर् आस्यम्', (१२. ३३८, ३)। 'किं च ब्रह्मा च रुद्रश्च शक्रश्च बलभित्प्रभुः। सूर्यस्ताराधिपो वायुरग्निर्वरुण एव च। आकाशं जगती चैव ये च शेषा दिवौकसः ॥ प्रलयं च विजानन्ति आत्मनः परिनिर्मितम्' (१२. ३४०, १०–१२)। अग्नि सोम के साथ संयुक्त होकर एक योनि को प्राप्त हुये, इसलिये सम्पूर्ण चराचर जगत् को अग्नि-सोम मय कहा गया है। पुराण में भी ऐसा कथन है कि अग्नि और सोम एक-योनि हैं, और अग्नि समस्त देवताओं के मुख हैं। एक-योनि होने के कारण ये एक दूसरे को आनन्द प्रदान करते हैं (१२. ३४१, ५८–५९)। अर्जुन ने मधुसूदन से पूर्वकाल में सोम और अग्नि के एक योनि हो जाने की कथा का वर्णन करने का आग्रह किया (१२. ३४२, १)। मधुसूदन ने इस कथा का इस प्रकार वर्णन किया : "प्रलयकाल के समय न दिन था न रात, न सत् था न असत्, केवल तम ही सर्वत्र व्याप्त था। उस समय मायाविशिष्ट ईश्वर से प्रगट हुये ब्रह्मयोनि पुरुष से जब ब्रह्मा जी का प्रादुर्भाव हुआ तब उस पुरुष ने प्रजा-सृष्टि की इच्छा से अपने नेत्रों द्वारा अग्नि और सोम को उत्पन्न किया। इस प्रकार भौतिक सर्ग की सृष्टि हो जाने पर प्रजा की उत्पत्ति के समय क्रमशः ब्रह्म और क्षत्र का प्रादुर्भाव हुआ। जो सोम है, वही ब्रह्म है, और जो ब्रह्म है वही ब्राह्मण। जो अग्नि है वही क्षत्र या क्षत्रिय जाति है। क्षत्रिय से ब्राह्मण जाति अधिक प्रबल है। यदि पूछा जाय कि कैसे ? तो इसका उत्तर यह है कि ब्राह्मण की इस प्रबलता का गुण सब लोगों को प्रत्यक्ष है। ब्राह्मण से बढ़कर कोई प्राणी कभी उत्पन्न नहीं हुआ। जो ब्राह्मण के मुख में भोजन देता है वह मानो प्रज्वलित अग्नि में आहुति प्रदान करता है। यही सोचकर मैं यह कहता हूँ। ब्रह्मा ने भूतों की सृष्टि की और सम्पूर्ण भूतों को यथास्थान स्थापित करके वे तीनों लोकों को धारण करते हैं। (१२. ३४२, ८–९)" इन्द्र ने अपनी ब्रह्महत्या को स्त्री, अग्नि, वृक्ष और गो—इन चार स्थानों में विभक्त कर दिया (१२. ३४२, ५३)। महर्षि भृगु के शाप से अग्निदेव सर्वभक्षी हो गये (१२. ३४२, ५५)। यह जो अग्नि और सोम सम्बन्धी ब्रह्म है उसीके द्वारा सम्पूर्ण जगत् धारण किया जाता है (१२. ३४२, ६५)। अग्नि और सोम द्वारा किये गये कर्मों द्वारा भगवान् 'हृषीकेश' कहलाते हैं (१२. ३४२, ६७)। सूर्य, चन्द्रमा, जल, वायु, इन्द, अग्नि, इत्यादि काल के द्वारा ही रचे जाते हैं, और काल ही इनका संहार कर देता है (१३. १, ५५)। राजकन्या सुदर्शना (दुर्योधन और नर्मदा द्वारा महिष्मती में उत्पन्न पुत्री) पर अग्निदेव आसक्त हो गये और ब्राह्मण का वेश धारण करके उन्होंने उस राजा से उस कन्या को माँगा (१३. २, २१)। अग्नि-पुत्र सुदर्शन (१३. २, ४९)। = शिव (१३. १४, २१. ४०८. ४१०; १६, ९)। 'साग्नि-मुनिभिर्' (१३. १८, ८)। 'नानिलोऽग्निर्न वरुणो न चान्ये त्रिदशा द्विज। प्रियाः स्त्रीणां यथा कामो' (१३. १९, ९१)। पृथ्वी, काश्यप, मार्कण्डेय और अग्नि का मत : "जो ब्राह्मण अध्ययन करके अपने को बहुत बड़ा पण्डित मानता है, अपनी विद्वत्ता पर गर्व करने लगता है और जो अपनी विद्या के बल से दूसरों के यश का नाश कर देता है; वह धर्म से भ्रष्ट होकर सत्य का पालन नहीं करता; अतः उसे नाशवान् लोकों की प्राप्ति होती है" (१३. २२, १०. १३–१५)। अग्निपुर तीर्थ में स्नान करने से

अग्निकन्यापुर का निवास प्राप्त होता है (१३. २५, ४३)। 'अयोनीन-ग्नियोनींश्च ब्रह्मयोनींस्तथैव च। सर्वभूतात्मयोनींश्च तान्नमस्याम्यहं सदा॥' (१३. ३१, २४)। अग्नि और सोम शरीर के वीर्य की सृष्टि और पुष्टि करते हैं (१३. ६३, ४०)। जो मनुष्य दूध देने वाली सुलक्षणा और कृष्ण वर्ण की गाय को वस्त्र ओढ़ाकर कृष्ण वर्ण के बछड़े के साथ दान करता है वह अग्नि लोक में प्रतिष्ठित होता है (१३. ७९, १२)। "मयाऽभिपन्ना देवाश्च मोदन्ते शाश्वतीः समाः। इन्द्रोऽग्नस्सोमश्च विष्णुरापोऽग्निरेव च। (१३. ८२, ७)"। 'अग्नीषोमात्मकमिदं सुवर्णं विद्धि निश्चये॥ अजोऽग्नि-र्वरुणो मेषः सूर्योऽश्व इति दर्शनम् (१३. ८४, ४६–४७; देखिये १२. ७८, ६ भी)। "ब्रह्मा ने तारकासुर को यह वरदान दे दिया था कि वह देवताओं, असुरों अथवा राक्षसों में से किसी के हाथ भी मारा नहीं जा सकेगा। पूर्वकाल में जब देवताओं ने रुद्राणी की सन्तति का उच्छेद कर दिया था उस समय रुद्राणी ने भी समस्त देवताओं को निःसंतान हो जाने का शाप दिया था। ऐसी स्थिति में जब तारकासुर से पीड़ित देव-गण ब्रह्मा की शरण में गये तब ब्रह्मा ने उनसे बताया कि रुद्राणी के शाप के समय अग्निदेव वहाँ उपस्थित नहीं थे, अतः देव-द्रोहियों के वध के लिये वही सन्तान उत्पन्न करेंगे। इसी सन्दर्भ में ब्रह्मा ने आगे कहा कि 'सनातन संकल्प को ही काम कहते हैं; उसी काम से रुद्र का जो तेज स्खलित होकर अग्नि में गिरा था उसे अग्नि ने धारण कर रखा है। उसी महान् तेज को वह गङ्गा में स्थापित करके द्वितीय अग्नि के समान एक बालक उत्पन्न करेंगे जो देव-शत्रुओं के वध का कारण होगा। अतः ब्रह्मा ने देवताओं से अग्निदेव की खोज करने का आग्रह किया। उन्होंने बताया कि अग्निदेव इस जगत् के पालक, अनिर्वचनीय, सर्वव्यापी, सबके उत्पादक, समस्त प्राणियों के हृदय में शयन करने वाले, सर्व समर्थ तथा रुद्र से भी ज्येष्ठ हैं। ब्रह्मा के आदेश के अनुसार देवताओं ने अग्निदेव की खोज प्रारम्भ की। किन्तु अग्निदेव छिपकर अपने आप में ही लीन थे, अतः देव-गण उनके पास तक न पहुँच सके। तब अग्नि का दर्शन करने के लिये उत्सुक और भयभीत उन देवताओं से एक जलचारी मेढक ने, जो अग्नि के तेज से दग्ध एवं क्लान्तचित्त होकर रसातल से ऊपर आया था, इस प्रकार कहा : 'देवताओ! अग्नि रसातल में निवास कर रहे हैं और मैं उनके सन्ताप से घबड़ाकर ही ऊपर आया हूँ। अतः यदि आप लोगों को अग्निदेव का दर्शन अभीष्ट हो तो आप उनसे वहीं जाकर मिलें'। इतना कहकर वह मेढक पुनः जल में चला गया। अग्निदेव ने अपना भेद खोल देने के कारण समस्त मेढकों को शाप दिया और अपने आपको प्रगट किये बिना ही अन्यत्र चले गये। देवता जब पुनः अग्निदेव की खोज के लिये इस पृथ्वी पर विचरने लगे तब उनसे एक हाथी ने यह बताया कि 'अश्वत्थ अग्नि-रूप है'। यह सुनकर क्रोध से विह्वल अग्निदेव ने समस्त हाथियों को शाप दे दिया और बिना प्रगट हुये शमी वृक्ष के भीतर जा बैठे। तदनन्तर एक तोते ने अग्निदेव का पता बता दिया जिससे कुपित होकर अग्निदेव ने तोतों को भी वाणी रहित हो जाने का शाप दिया। देवताओं ने भी मेढकों, हाथियों, तथा तोतों को अपनी ओर से वरदान दिये और शमी के गर्भ में अग्निदेव का दर्शन करने के लिये शमी वृक्ष को ही अग्नि का पवित्र स्थान नियत किया। तभी से अग्निदेव शमी के भीतर दृष्टि गोचर होने लगे। मनुष्यों ने अग्नि को प्रगट करने के लिये शमी का मन्थन करने का उपाय जाना। रसातल में अग्नि ने जिस जल का स्पर्श किया था वह अग्निदेव के तेज से सन्तप्त हो गया था, और वह जल पर्वतीय झरनों के रूप में अपनी ऊष्मा को बाहर निकालता है। अग्निदेव से मिलकर सम्पूर्ण देवता और महर्षियों ने उनसे तारकासुर का वध करने का उपाय करने के लिये आग्रह किया। देवताओं के ऐसा कहने पर 'तथास्तु' कहकर दुर्धर्ष भगवान् हव्यवाहन (अग्नि) भागीरथी गङ्गा के तट पर गये। और वहाँ उन्होंने शिव के तेज को गंगा में स्थापित किया। जिस प्रकार सूखे तिनकों अथवा लकड़ियों के ढेर में रक्खी हुई अग्नि प्रज्वलित हो उठती है उसी प्रकार वह तेजस्वी गर्भ गंगा के भीतर बढ़ने लगा। अग्नि के दिये हुये उस तेज से गंगा अत्यन्त सन्तप्त हो उठी थीं और उसे सहन करने में असमर्थ हो गईं। उसी समय किसी असुर ने वहाँ आकर सहसा अत्यन्त भयङ्कर गर्जना की। उस आकस्मिक सिंहनाद से भयभीत हुई गंगा अचेत हो गईं। अतः वह उस गर्भ को और अपने आपको भी सँभाल न सकीं। देवताओं तथा अग्नि के मना करने पर भी गंगा ने उस गर्भ को गिरिराज मेरु के शिखर पर छोड़ दिया। वह गर्भ स्वर्ण के समान और तेज में अग्निवत् ही था। उस पर्वत की भूमि तथा उसके सम्पर्क में आने वाले सभी द्रव्य स्वर्णमय दिखाई देने लगे। गंगा ने अग्नि से उस गर्भ का वर्णन किया और वहाँ से अन्तर्ध्यान हो गईं। अग्नि देव भी देवताओं का कार्य सिद्ध करके उसी समय वहाँ से अभीष्ट देश को चले गये। इन्हीं समस्त गुणों के कारण देवता तथा ऋषि अग्नि को हिरण्यरेतस् के नाम से पुकारते हैं। अग्नि-जनित हिरण्य (वसु) धारण करने के कारण पृथिवी देवी वसुमती नाम से विख्यात हुईं। अग्नि के अंश से उत्पन्न हुआ गंगा का वह महा तेजस्वी गर्भ सरकन्डों के वन में पहुँच कर बढ़ने और अद्भुत दिखाई पड़ने लगा। उस अरुण कान्ति वाले तेजस्वी बालक को कृत्तिकाओं ने देखा और उसे अपना पुत्र बनाकर अपना स्तनपान कराया। इसलिये वह परम तेजस्वी कुमार 'कार्त्तिकेय' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। शिव के स्कन्दित वीर्य से उत्पन्न होने के कारण उसका नाम स्कन्द हुआ, और पर्वत की गुहा में निवास करने के कारण 'गुह' कहलाया। इस प्रकार अग्नि से सन्तान रूप में सुवर्ण की उत्पत्ति हुई और तभी से सुवर्ण का नाम जातरूप हुआ। वह रत्नों में श्रेष्ठ रत्न और आभूषणों में श्रेष्ठ आभूषण है; वह पवित्रों में भी अधिक पवित्र तथा मंगलों में अधिक मंगलमय है: जो सुवर्ण है, वही अग्नि हैं वही ईश्वर और प्रजापति हैं। इस सुवर्ण को अग्नि और सोम रूप बताया गया है (१३. ८५, १–८६)। इसके पश्चात इसी अध्याय में वसिष्ठ ने पूर्वकाल में सुने ब्रह्मदर्शन नामक वृत्तान्त को सुनाया: "एक समय की बात है कि सर्वेश्वर, महान देवता, भगवान रुद्र, वरुण का स्वरूप धारण करके वरुण के साम्राज्य पर प्रतिष्ठित थे। उस समय उनके यज्ञ में अग्नि आदि समस्त देवता और ऋषि पधारे। पिनाकधारी महादेव ने अनेक रूप वाले उस यज्ञ में स्वयं अपने ही द्वारा अपने आपको आहुति प्रदान की। इस यज्ञ में अनेक देवाङ्गनायें भी उपस्थित थीं जिन्हें देखकर स्वयम्भू ब्रह्मा जी का वीर्य स्खलित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। तब ब्रह्माजी के वीर्य से संसिक्त धूलि कणों को भूमि से उठाकर पूषा ने उसी अग्नि में फेंक दिया। तदनन्तर ब्रह्मा का वीर्य पुनः स्खलित हुआ जिसे स्रुवे में लेकर पूषा ने मंत्र पढ़ते हुये घृत की भाँति अग्नि में डाल दिया। ब्रह्मा के उस त्रिगुणात्मक वीर्य से चतुर्विध प्राणि समुदाय उत्पन्न हुये उसके रजोमय अंश से जगत में तैजस प्रवृत्ति प्रधान जंगम प्राणियों की उत्पत्ति हुई; तमोमय अंश से स्थावर वृक्ष आदि प्रगट हुये; और उसका सात्विक अंश राजस और तामस दोनों में अन्तर्भूत हो गया। अग्नि की ज्वाला से उत्पन्न होने के कारण एक पुरुष का नाम भृगु हुआ। अग्नि के अङ्गारों से द्वितीय पुत्र अङ्गिरा, और अङ्गारों की आश्रित स्वल्प मात्र ज्वाला से कवि नामक तृतीय पुत्र का प्रादुर्भाव हुआ। मरीचियों से मरीचि, और कुशों के ढेर से वालखिल्य नामक ऋषि प्रगट हुये। अग्नि की भस्म से ब्रह्मर्षियों द्वारा सम्मानित वैखानसों की उत्पत्ति हुई, अग्नि के अश्रु से अश्विनद्वय प्रगट हुये, श्रवणादि इन्द्रियों से शेष प्रजा-पति-गण उत्पन्न हुये, तथा रोमकूपों से ऋषि, स्वेद से छन्द, और मन से वीर्य की उत्पत्ति हुई। इस कारण महर्षियों ने अग्नि को सर्वदेवमय बताया है। उस यज्ञ की समिधाओं से जो रस निकले वह सब मास, पक्ष, दिन, रात मुहूर्त्त हो गये। अग्नि के पित्त से तेज की उत्पत्ति हुई जिसे लोहित कहते हैं। अग्नि की जो लपटें थीं वही एकादश रुद्र और अत्यन्त तेजस्वी द्वादश आदित्य हुये तथा उस यज्ञ में जो अन्य अङ्गारे थे वही

आकाश-स्थित नक्षत्र-मण्डलों में ज्योति-पुंज के रूप में स्थित हैं। सर्वप्रथम जो तीन पुरुष प्रगट हुये उनमें से भृगु वरुण के, अङ्गिरा अग्नि के, और कवि ब्रह्मा के पुत्र नियत हुये, जिसके फलस्वरूप भृगु वारुण नाम से, अङ्गिरा आग्नेय नाम से, तथा कवि ब्राह्म नाम से विख्यात हुये। इस प्रकार पूर्वकाल में सृष्टि के प्रारम्भ के समय वरुण-शरीरधारी सुर-श्रेष्ठ रुद्र के यज्ञ में यह वृत्तान्त घटित हुआ। अग्नि ही ब्रह्मा, पशुपति, शर्व, रुद्र और प्रजापति रूप हैं। सुवर्ण अग्नि की सन्तान है और श्रुति के दृष्टान्त के अनुसार अग्नि के अभाव में वेद-ज्ञानी पुरुष सुवर्ण का उपयोग करता है। ब्रह्मा से अग्नि की और अग्नि से सुवर्ण की उत्पत्ति हुई। इसीलिये जो धर्मदर्शी पुरुष सुवर्ण का दान करते हैं वे समस्त देवताओं का ही दान करते हैं। सुवर्ण-दाता को परमगति, और अन्धकार रहित ज्योतिर्मय लोक मिलते हैं। सूर्योदय काल में जो सुवर्ण का दान करता है वह अपने पाप और दुःस्वप्नों को नष्ट कर डालता है, जो मध्याह्न के समय सुवर्ण-दान करता है वह अपने भावी पापों का नाश करता है, और सायंकाल सुवर्ण-दान करने वाला व्यक्ति ब्रह्मा, वायु, अग्नि और चन्द्रमा के लोकों में जाता है; इन्द्र सहित सभी लोकपालों के लोकों में उसे शुभ सम्मान प्राप्त होता है और उसकी गति का कहीं भी गतिरोध नहीं होता। सुवर्ण अक्षय द्रव्य है, अतः उसके दान-कर्त्ता को पुण्य लोकों से नीचे नहीं आना पड़ता; संसार में उसे महान यश की तथा परलोक में पुण्यलोक की प्राप्ति होती है (१३. ८५, ८७-१६०)"। अग्नि ने स्कन्द को एक गुणवान बकरा प्रदान किया (१३. ८६, २४)। 'कृत्वाऽग्नौकरणं पूर्वं मन्त्रपूर्वं तपोधन। ततोऽग्नयेऽथ सोमाय वरुणाय च नित्यशः॥ विश्वेदेवाश्च ये नित्यं पितृभिः सह गोचराः' (१३. ९१, २३-२४)। 'उदकानयने चैव स्तोतव्यो वरुणो विभुः। ततोऽग्निश्चैव सोमश्च अप्याय्याविह तेऽनघ' (१३. ९१, २६)। 'विश्वे चाग्निमुखा देवाः' (१३. ९१, २९)। "निमि ने अपने पुत्र की मृत्यु के पश्चात अशौच की निवृत्ति के लिये एक श्राद्ध का आयोजन किया जिसके बाद सभी महर्षि भी शास्त्र विधि के अनुसार पितृ यज्ञ का अनुष्ठान करने लगे। धीरे-धीरे चारों वर्णों के लोग श्राद्ध में देवताओं और पितरों को अन्न देने लगे जिसके कारण देवों और पितरों को अजीर्ण हो गया। अजीर्ण से पीड़ित पितृ-गण अपने कष्ट का निवारण कराने के लिये सर्व प्रथम सोम के पास गये, और तदुपरान्त ब्रह्मा, और वहाँ से भी अग्नि के पास। अग्नि ने देवताओं और पितरों से कहा कि अब से श्राद्ध का अवसर उपस्थित होने पर उन लोगों के साथ वह भी भोजन करेंगे। अग्नि के साथ रहने से वह सभी लोग अन्न को पचा सकने में समर्थ हो जायेंगे। यही कारण है कि श्राद्ध में सर्वप्रथम अग्नि को ही भाग अर्पित किया जाता है। अग्नि में हवन करने के बाद जो पितरों को पिण्डदान दिया जाता है उसे ब्रह्म राक्षस दूषित नहीं करते और उस स्थल से दूर भाग जाते हैं (१३. ९२, १-२२)"। 'पृष्टमेतं मया पृष्टो भगवानग्निसम्भवः' (१३. १०६, १०)। इन्द्र की सभा में अग्नि ने यह घोषणा की कि 'जो दुर्बुद्धि मनुष्य पैर उठाकर उससे गौ का, महाभाग ब्राह्मण का, अथवा प्रज्वलित अग्नि का स्पर्श करता है उसके पितृ-गण भयभीत हो उठते हैं, देवता भी उसके प्रति वैमनस्य रखते हैं और वह सौ जन्मों तक नरक में पकाया जाता है (१३. १२६, २९-३२)। अग्नि और ब्रह्मा भी ब्राह्मण हैं (१३. १५३, १३. १५)। कृष्ण ने एक बार अग्नि-स्वरूप होकर खाण्डव वन की सूखी लकड़ियों में व्याप्त हो पूर्णतः तृप्ति का अनुभव किया था ('स एकदा कक्षगतो महात्मा तुष्टो विभुः खाण्डवे धूमकेतुः', १३. १५८, २५)। भगवान शिव ने त्रिपुर में दैत्यों का वध करते समय अग्नि को बाण का शल्य बनाया था ('विष्णु शरोत्तमं, शल्यमग्निं तथा कृत्वा पुङ्खं वैवस्वतं यमम्। वेदान् कृत्वा धनुः सर्वान् ज्यां च सावित्रिमुत्तमाम्॥', १३. १६०, २८-२९)। शिव ही रुद्र हैं, वही अग्नि हैं, और वही सर्वरूप तथा सर्वविजयी हैं; १३. १६०, ३९; १६१, २। "त्रेता युग में राजा मरुत्त ने, जो बल में इन्द्र के समान थे, हिमवत पर्वत के उत्तर-स्थित मेरु पर्वत पर एक महान यज्ञ का आरम्भ किया। बृहस्पति ने अपने भ्राता संवर्त्त को अत्यन्त सन्तप्त कर रखा था, जिसके फलस्वरूप सम्वर्त घर छोड़कर वन में रहने लगे। बृहस्पति को इन्द्र ने अपना पुरोहित बना लिया था। राजा मरुत्त देवराज इन्द्र से स्पर्धा रखते थे इसलिये बृहस्पति ने उनका यज्ञ कराना अस्वीकृत कर दिया था। राजा मरुत्त ने जब यह सुना कि बृहस्पति ने मनुष्यों का यज्ञ न कराने की प्रतिज्ञा कर ली है तब उन्होंने एक महान यज्ञ का आयोजन किया और बृहस्पति से अपना यज्ञ कराने का पुनः आग्रह किया। किन्तु अमरों का यज्ञ कराने के पश्चात बृहस्पति मनुष्यों का यज्ञ करने के लिये प्रस्तुत नहीं हुये। उनके उत्तर से निराश मरुत्त जब लौट रहे थे तब मार्ग में उन्हें देवर्षि नारद का दर्शन हुआ। मरुत्त की व्यथा को सुनकर नारद ने उनको अङ्गिरा के द्वितीय पुत्र सम्वर्त्त से यज्ञ कराने का परामर्श दिया। नारद जी से संवर्त्त का पता जानकर राजा मरुत्त ने वाराणसी नगरी में आकर पागलों के वेश में भ्रमण कर रहे संवर्त्त का दर्शन किया। मरुत्त ने संवर्त्त को यह भी बताया कि नारद जी स्वयं अग्नि में प्रवेश कर गये हैं। मरुत्त के अत्यन्त आग्रह के पश्चात संवर्त्त उनका यज्ञ कराने के लिये प्रस्तुत हो गये किन्तु उन्होंने यह भी स्पष्ट कर दिया कि उन्हें धन अथवा यजमानों के संग्रह की इच्छा नहीं है, वह तो केवल बृहस्पति और इन्द्र दोनों के विरुद्ध कार्य करना चाहते हैं। राजा मरुत्त ने संवर्त्त के परामर्श के अनुसार शिव की कृपा से कुबेर की भांति उत्तम धन प्राप्त करके मुञ्जवत पर्वत पर यज्ञ-शालाओं तथा अन्य सब सम्भारों का आयोजन किया। बृहस्पति ने जब सुना कि राजा मरुत्त को देवताओं से भी बढ़कर सम्पत्ति प्राप्त हुई है तब उन्हें अत्यन्त दुःख हुआ और वह चिन्ता के कारण पीले पड़ गये। तब इन्द्र ने अग्निदेव को मरुत्त के पास यह कहने के लिये भेजा कि बृहस्पति उनका यज्ञ करायेंगे तथा उनको अमर कर देंगे। किन्तु मरुत्त ने अग्नि का प्रस्ताव ठुकराते हुये संवर्त्त से ही अपना यज्ञ कराने का दृढ़ निश्चय व्यक्त किया और संवर्त्त ने भी अग्नि को यह धमकी दी कि यदि वह पुनः बृहस्पति को मरुत्त के पास पहुँचाने के लिये आयेंगे तो उन्हें अपनी दारुण दृष्टि से भस्म कर देंगे। अन्ततोगत्वा स्वयं इन्द्र ने ही मरुत्त के यज्ञ का सञ्चालन किया। इन्द्र ने मरुत्त से अग्नि को लाल रंग की, और विश्वेदेवों को अनेक रूप-रङ्ग वाली वस्तुयें प्रदान करने के लिये कहा।" (१४. ३-१०); देखिये १४. ९, ९. १२. १४. १७. २२. २५. २८. ३१ भी। 'यत्र तद्ब्रह्म निर्द्वन्द्वं यत्र सोमः सहाग्निना। व्यवायं कुरुते नित्यं धीरो भूतानि धारयन्॥', १४. २०, १०। शरीर में सञ्चार करने वाले अन्योन्याश्रयी पाँचों प्राणवायुओं के मध्य भाग में जो समान वायु का स्थान नाभि-मण्डल है उसके बीच में स्थित होकर वैश्वानर अग्नि सात रूपों में प्रकाशमान है, १४. २०, १८। 'स वै विष्णुश्च मित्रश्च वरुणोऽग्निः प्रजापतिः।', १४. ४२, ६५। 'अग्निर्भूतपतिर्नित्यम्', १४. ४३, ८। उत्तङ्क ने नागलोक में जिस अश्व को देखा था वह अग्नि ही थे, १४. ५८, ४५. ५६। 'अग्नेर्भागं शुभं विद्धि राक्षसं तु शिखण्डिनम्', १५. ३१, १५। अग्नि द्वारा प्रदत्त विष्णु का चक्र दिव्यलोक में चला गया, १६. ३, ४। वृष्णियों के वध और कृष्ण की मृत्यु का समाचार सुनकर, द्रौपदी सहित पाँचों पाण्डवों ने एक कुत्ते को साथ लेकर संसार का परित्याग करने के लिये प्रस्थान किया। चलते-चलते जब वह लोग लाल सागर ('लौहित्यं सलिलार्णवम्', श्लोक ३३) के तट पर पहुँचे तो उन्होंने पर्वत की भाँति मार्ग रोककर सामने खड़े हुये पुरुष रूपधारी साक्षात अग्निदेव को देखा। अग्निदेव ने पाण्डवों से कहा—'अर्जुन को चाहिये कि वह अपने उत्तम आयुध गाण्डीव धनुष को त्याग कर ही वन में जायें। इसे पहले मैं ही अर्जुन के लिये वरुण से माँगकर लाया था और अब पुनः इसे वरुण को वापस कर देना चाहिये।' (१७. १, २४. ३३. ३५. ३८-४१. ४३)।

तु० की० अग्नि के निम्नलिखित नाम (*) :—

* अनिलसम्भव (वायु से उत्पन्न) : २. ३१, ४८।

* अनिलसारथि (वायु जिसके सारथि हों) : १. १५, १; ३. ८२, ५९।

* अपां गर्भ (जलों का गर्भ) : २. ३१, ४६।

* कुमारसू ('कुमार' के पिता) : २. ३१, ४४।

* कृष्णवर्त्मन् (जिसका पथ काला है) : १. ५५, १०; २३२, १९; २. ३१, ४१

* गृहपति (गृहस्वामी) : ३. २२२, ४।

* चित्रभानु (उज्ज्वलप्रकाश वाले) : १. ५५, १०; २. ३१, ४३; १२. ४९, ३९; १३. २, ३१।

* जातवेदस् : १. ५, २१. २६. २९; २३२, १६. २०; २. ३१, ४२ (वेदास् त्वदर्थं जाता वै जातवेदास् ततो ह्यसि). ४६; ५. २२, १३; ४९, १७; १२. १२२, ३१ (ईशं वसूनां); १३. ३१, ६; ५५, ५; ८४, ४२–४३ (अपत्यं जातवेदसः······सुवर्णम्); ८५, ८३; ८६, ६ (जातवेदसः गर्भम्, अर्थात् स्कन्द); ८६, ८; १०६, ३५; १०७, ७, इत्यादि; १२५, २६, इत्यादि; १४. ९, ८. २१. २७; ५८, ४५; १५. ३७, २५; १६. ७, ७३।

* ज्वलन (ज्वलामय) : १. २३१, १८; २३३, ९; २३४, १; २. ३१, ४३; ३. ८२, ५९; ५. १६, ३२; ८. ३४, ४९; ८९, १९ (ज्वलनासम् उद्यतम्); ९. ४७, १९–२१।

* तिग्मांशु (ऊष्ण ज्वालाओं वाले) : १. २३२, १८; २३३, १; २३४, ५ (भगवान्)।

* दहन (जलते हुये) : १३. २, २८।

* धूमकेतु (जिनकी ध्वजा धूम है) : २. ३१, ४८; १४. ९, १०. ११. २०।

* पाञ्चजन्य (यतः पाँच मुनिजनों ने महाव्याहृति संज्ञक पाँच मन्त्रों द्वारा ज्वालाओं से प्रज्वलित अग्नि के समान प्रकाशमान एक पुरुष को उत्पन्न किया था अतः उस देवोपम पुरुष का नाम पाञ्चजन्य हो गया। यही पाञ्चजन्य इन पाँच ऋषियों के वंश का प्रवर्त्तक हुआ) : ३. २२०, ५।

* पापहन (पाप का हनन करने वाला) : २. ३१, ४८।

* पावक : १. ५, २२–२३; २२३, ५; २२५, २. ६. २३–२४. २९. ३२; २२७, ११; २२८, ४२. ४५; २२९, २४. ३१; २३४, ६. १५. १८; २. १, २; ३१, ४०–४२ (पावनात् पावकश् चासि); ३१, ५८; ३. २१९, ८ (भरतो भरतस्याग्नेः पावकस्तु प्रजापतेः। महानत्यर्थमाहितस्तथा भरतसत्तम); २१९, १६ (यस्तु विश्वस्य जगतो बुद्धिमाक्रम्य तिष्ठति। तं प्राहुरध्यात्मविदो विश्वजिन्नाम पावकम् ॥); २१९, २३–२४ (अतुलत्वात् कृतो देवैर्नाम्ना कामस्तु पावकः ॥ संहर्षाद्धारयन् क्रोधं धन्वी स्रग्वी रथे स्थितः। समरे नाशयेच्छत्रूनमोघो नाम पावकः ॥); २२४, ४१; २२५, २. ८; २२६, ४. ११; २२७, ११; २३१, ४; ४. २, १३; ४५, ४०; ४६, ४; ५. १६, ७; १८, २; ८३, २६; १३०, ४९; १५८, ६. ३२; ७. ६, ५ (रुद्राणामिव कापाली वसूनामिव पावकः); ९. ४१, १२; ४४, ३५. ४०. ४३; १०. ६, ११ (पावको वडवामुखः); ८, १४५ (युगान्ते सर्वभूतानि भस्म कृत्वेव पावकः); १८. २१ (स जलं पावको भूत्वा शोषयति); १२. २९, ११३; ६८, ४२; ३२१, ६२; ३२७, २३; १३. २, ३४. ४२. ५९; १४, ३२२; ८४, ७६; ८५, ४६; १४. ९, १९; १५. ३१, १५; १७. १, ३६; १८. ५, २१।

* पिङ्गाक्ष (पीले नेत्रों वाले) : १. २३२, १९।

* पिङ्गेश : २. ३१, ४४।

प्रदक्षिणावर्तशिख (बायें से दाहिने ओर ज्वालाओं को घुमाते हुये) : १. ५५, १०।

* प्रदीप्त : १. ५५, १०।

* प्लवङ्ग : २. ३१, ४४।

* भगवत् : २. ३१, ४४. ४९।

* भुवनभर्तृ : ३. २२२, २।

* भूरितेजस : २. ३१, ४४।

* महासत्त्व : २. ३१, ४६।

* रुद्रगर्भ (पूना संस्करण में °धर्म और गीता प्रेस संस्करण में °गर्भ है) : २. ३१, ४४।

* लोहितग्रीव : १. २३२, १९।

* वह्नि : १. ७. १. १२. २६; २२३, ६७. ७४; २३०, १; २. ३१, २६. ३१. ३६. ५१; ३. २२१, १९ (स वह्निः स प्रजापतिः। प्राणानाश्रित्य यो देहं प्रवर्तयति देहिनाम्।); २२४, २९. ३३. ३७. ४०; २२९, ३०–३१; ४. ३०, २५; ५. १६, १०; ११७, ८ (स्वाहायां च यथा वह्निर्यथा शच्यां च वासवः); ७. १७५, ८८; ८. ८९, १९; ९. ४६, ३९; ४७, १८; ४८, २८; ६१, ३३ (यथा वह्निर्जगत्क्षये); १२. २९, ११२; २८२, २९. ३३. ३७; ३१३, ५; १३. ६५, ७. १६; ८५, २०. २६. ३६. ४३. ६६. १३५; ९२, ९; १४. ९, ११. २९; १०, १५; ४२, २९ (= वाच्)।

* वातसारथी (वात जिसके सारथि हैं) : १. २२८, ४०–४१ (तमग्निः प्रार्थयामास दिधक्षुर्वातसारथिः ॥ शरीरवाञ्जटी भूत्वा नदन्निव बलाहकः)।

* विभावसु (वैभव के आगार) : १. ५५, १०; २. ३१, ३४. ४३; ३. २७६, ४।

* वैश्वानर : १. ३, १४९; २. ७, १८ (मुनिः); ३१, ४४; ३. १४५, ३३; १९७, २५; २२१, १६; २३३, २२ (सूर्य-वैश्वानर-सोमौ); ७. १०२, ३२; ८. ९१, ४१ (°आर्कप्रतिमम्); १२. २४५, २७; ३२३, २३; १३. ८५, ७० (°प्रभं); ८५, ७६ (सूर्य °समः); १०७, १२५ (°समप्रभः); १४. २०, १८; २०, १९ (घ्राणं जिह्वा च······सप्तैता जिह्वा वैश्वानरार्चिषः।)

* शिखिन् : १. ७, २२; २. ३१, ४३. ४८; ५. ५३, १३ (लाक्षणिक रूप से = पाण्डव)।

* सप्तार्चिस् (सात ज्वालाओं वाले) : १. ५, ३०; २२५, ३५।

* सर्वप्राणिषु नित्यस्थ (सभी प्राणियों में नित्य रूप से वर्त्तमान) : २. ३१, ४८।

* सुरेश : २. ३१, ४३।

* सुरेश्वर : २. ३१, ४६।

* स्वर्गद्वारस्पृश : २. ३१, ४३।

* हव्यकव्यभुज् : १२. २८२, ३५; ३४४, १२; ३४७, ३।

* हव्यवह् : १. २२९, २३; ३. १३१, २९; ४. २, २३; ५. १६, १. ९; १५६, १३ (वसुओं में सर्वश्रेष्ठ); १३. १४, ३२४ (शक्रोऽसि मरुतां देव पितृणां हव्यवाडसि)।

* हव्यवाह : १. ५५, १७; २३२, १३; ३. २१७, ८; २२०, १५; २२२, ११; २७६, १; ५. १६, ४–५; ७. १९०, ३२; १२. २८२, ३४; १४. ९, २०. २७।

* हव्यवाहन : १. ३, १८३; २२३, १३. ७३; २२४, १. ४. १२; २२९, ३४; २. ८, ३१; ३१, २३. २७. ३२. ४२; ३. ११०, ५; १४२, २२; २१७, १०; १३. २, २३; ८५, २५. ५५।

* हिरण्यकृत् : २. ३१, ४४।

* हिरण्यरेतस् : १. ५५, १०; १३. ८५, ७९; १४. ५, २७ (=सूर्य)।

* हुतभुज् : १. ७, १८; ५५, १०; ३. २१७, ९।

* हुतवह : ३. २१७, ६; २२४, २८; १२. २९२, १२।

* हुतहव्यवह : १. ६६, २१ (धरस्य पुत्रो द्रविणो हुतहव्यवहस्तथा)।

* हुताश : १. २३४, ३; २. ३१, ४३; ३. ५६, ९।

* हुताशन : १. ७, २१; ६६, २० (पुत्रः शाण्डिल्याश्च हुताशनः); २१४, १५; २२३, ६८; २२५, १ (भगवान्धूमकेतुर्हुताशनः); २२५, २०;

२२८, ३८; २३२, १९; २३४, १४; २. ४८, ६; ३. ८४, ५८; २१७, १५; २२१, २० (शुक्लकृष्णगतिर्देवो यो बिभर्ति हुताशनम्) २२२, २९. ३१; २२४, ३०. ३२; ५. १५, २९; १६, २; ७. ११, २१; ९. ४५, ३३; ४७, १४; १२. २९, ११३; १२२, २९; १३. ६२, ४८; ८५, ८. १८. २२. २८. ३४. ६५. ९९. १३७; १४०, १४।

अग्निकन्यापुर, एक तीर्थ का नाम। इसे वह लोक भी माना गया है जो अग्निपुर-तीर्थ में स्नान करने से प्राप्त होता है ('अग्नेः पुरे नरः स्नात्वा अग्निकन्यापुरे वसेत्', १३. २५, ४३)।

अग्निज्वाल = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अग्नितीर्थ सरस्वती के तट पर स्थित एक प्रसिद्ध तीर्थ का नाम है। भृगु के शाप से भयभीत होकर अग्निदेव इसी स्थान पर शमी वृक्ष के गर्भ में छिपे थे। (९. ९७, १३. १९–२१)

अग्निधारा, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, १४६)।

अग्निपराभव—आदिपर्व के अन्तर्गत खाण्डवदहनपर्व का एक भाग (२२३ वाँ अध्याय)। जनमेजय के यह पूछने पर कि अग्नि ने खाण्डव दाह की इच्छा क्यों की, वैशम्पायन से इस प्रकार वर्णन किया : "प्राचीन काल में इन्द्र के समान बल और पराक्रम से सम्पन्न श्वेतकि नामक एक राजा थे। उस समय उनके जैसा यज्ञ करने वाला और बुद्धिमान दूसरा अन्य कोई नहीं था। वह सदैव ऋत्विजों के साथ यज्ञ ही किया करते थे। यज्ञ करते करते उनके ऋत्विजों की आँखें धूयें से व्याकुल हो उठीं जिससे वह सभी ऋत्विज् राजा को छोड़कर चले गये। राजा के अत्यन्त आग्रह पर भी जब वे ऋत्विज् नहीं लौटे तब राजा ने उनकी अनुमति से दूसरे ब्राह्मणों को ऋत्विज् बना कर अपना यज्ञ सम्पन्न किया। तदुपरान्त राजा के मन में सौ वर्षों तक चलने वाले एक यज्ञ-सत्र का आरम्भ करने की इच्छा जाग्रत हुई; किन्तु उन्हें वह यज्ञ आरम्भ करने के लिये ऋत्विज् ही नहीं मिले। ऋत्विजों ने राजा को अपना यज्ञ कराने के लिये रुद्र के आश्रय में जाने का परामर्श दिया। ब्राह्मणों का यह आक्षेप युक्त वचन सुनकर राजा श्वेतकि कैलाश पर्वत पर जाकर उग्र तपस्या में लीन हो गये। अन्ततोगत्वा भगवान शंकर (रुद्र) ने प्रसन्न होकर उन्हें दर्शन दिया। राजा का मनोरथ सुनने के पश्चात रुद्र ने राजा से यह कहा कि यदि वह एकाग्रचित्त हो ब्रह्मचर्य का पालन करते हुये बारह वर्षों तक घृत की निरन्तर अविच्छिन्न धारा द्वारा अग्नि में आहुति देते रहेंगे तब वह (रुद्र) उनका मनोरथ पूर्ण करेंगे। रुद्र के ऐसा कहने पर राजा ने तदनुसार कार्य किया। बारह वर्ष पूर्ण होने पर भगवान महेश्वर (रुद्र) ने उनके सम्मुख उपस्थित होकर सन्तोष प्रगट करते हुये यह कहा : 'शास्त्रीय विधि के अनुसार यज्ञ कराने का अधिकार ब्राह्मणों को ही है, अतः मैं तुम्हारा यज्ञ नहीं करा सकता। फिर भी, मैं अपने ही अंशभूत दुर्वासा नामक एक श्रेष्ठ द्विज से तुम्हारा यज्ञ पूर्ण कराऊँगा।' तदनन्तर राजा ने दुर्वासा से अपना यज्ञ पूर्ण कराया। दीर्घकाल के पश्चात, समय आने पर, अपने सम्पूर्ण सदस्यों तथा ऋत्विजों सहित राजा श्वेतकि स्वर्गलोक में चले गये। राजा के यज्ञ में अग्नि ने लगातार बारह वर्षों तक घृतपान किया था जिसके कारण उनके उदर में विकार हो गया। अपने को तेज से हीन देखकर अग्निदेव ने ब्रह्मा की शरण में जाकर अपने को स्वस्थ करने की याचना की। अग्निदेव की यह बात सुनकर ब्रह्मा ने अग्नि से कहा : 'तुमने बारह वर्षों तक वसुधारा की आहुति के रूप में प्राप्त घृतधारा का उपभोग किया है जिससे तुम्हें ग्लानि प्राप्त हुई है। फिर भी तुम पूर्णतः स्वस्थ हो जाओगे। पूर्वकाल में देवताओं के आदेश से तुमने दैत्यों के जिस अत्यन्त घोर निवास स्थान, खाण्डव वन, को जलाया था वहाँ इस समय अनेक प्रकार के जीव-जन्तु आकर निवास करते हैं। उन्हीं जीवों के मेद से तृप्त होकर तुम स्वस्थ हो सकोगे। अतः तुम उस वन को भस्म करने के लिये शीघ्र प्रस्थान करो।' ब्रह्मा की आज्ञा से अग्नि ने जाकर खाण्डव वन को भस्म करना चाहा। किन्तु वायु की सहायता से अग्नि ने खाण्डव वन को सात बार भस्म करने का प्रयास किया, फिर भी, प्रत्येक बार वहाँ के निवासियों ने अग्नि को बुझा दिया (अग्नि को बुझाने के लिये सहस्रों की संख्या में हाथी अपनी सूँड़ों में तथा नाग अपने मस्तकों में जल ले आते थे और अग्नि बुझा देते थे) (१. २२३)"। अग्नि पुनः ब्रह्मा की शरण में गये, किन्तु ब्रह्मा ने उन्हें नर और नारायण (अर्जुन और कृष्ण) की सहायता प्राप्त करने का परामर्श दिया (१. २२४, १–५. ८–९)।

अग्निपुत्र = स्कन्द (९. ४५, ४८–५२)।

अग्निमत्, एक अग्नि का नाम है (३. २२१, ११)।

अग्नियोनयः, एक ऋषि का नाम है (१२. १६६, २५)।

अग्निवेश, अग्नि के पुत्र का नाम है, जिन्होंने भरद्वाज से आग्नेयास्त्र प्राप्त किया था। यह द्रुपद और द्रोणाचार्य के अस्त्रविद्या-गुरु थे (१. १३०, ३९–४०; १३१, ४०; १३९, ९)। इन्होंने पूर्वकाल में महर्षि अगस्त्य से धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त की थी (१. १३९, ९)। भारत के एक जनपद का नाम (६. ५०, ५२)।

१. अग्निवेश्य = अग्निवेश (१. १७०, ३०)। युधिष्ठिर का आदर करने वाले ब्रह्मर्षियों के अन्तर्गत इनकी भी गणना कराई गई है (३. २६, २३)। देखिये ७. ९४, ६७-६८ भी, जहाँ द्रोणाचार्य ने इन्हें अपना गुरु कहा है।

अग्निशिरस्, यमुना तट पर स्थित एक तीर्थ का नाम, जहाँ सहदेव ने यज्ञ किया था (३. ९०, ५–७)।

अग्निष्वात्त, यमलोक में रहने वाले सात पितरों में से एक का नाम है (२. ८, ३०; ११, ४६)।

अग्निसुत = स्कन्द (७. १५६, ९३)।

अग्नीषोम (अग्नि और सोम को दी जाने वाली हवि) १३. ९७, १० (अग्नाषोमं वैश्वदेवं धान्वन्तर्यमनन्तरम्। प्रजानां पतये चैव पृथग्घोमो विधीयते ॥)।

अग्नीषोमीय (अग्नि और सोम का) १२. ३४२, ६५।

अग्नी-षोमौ (अग्नि और सोम) २. ७, २१; ३. २२१, १५।

अग्रज = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

१. अग्रणी = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

२. अग्रणी मनु की तृतीय पत्नी निशा के गर्भ से उत्पन्न पाँचवें पुत्र हैं जिनके द्वारा मनुष्य आदि, समस्त भूतों के लिये अन्न का अग्रभाग अर्पित करते हैं (३. २२१, १५. २२)।

अग्रयायी धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से ७७ वें पुत्र का नाम है जिसे अनुयायी भी कहते हैं (१. ११७, ११)।

अग्रवर = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अग्रह चतुर्मास्य यज्ञों में नित्य विहित अग्नेय आदि आठ हविष्यों का उद्भव स्थान, अग्रह नामक यह अग्नि, मनु की सुप्रजा और बृहद्भासा नामक पत्नियों के गर्भ से उत्पन्न होने वाले छः पुत्रों में से पाँचवाँ है (३. २२१, १४)।

१. अग्राह्य, भगवान् नारायण के दो सौ नामों में से १७१ वाँ नाम है (१२. ३३८, ३)।

२. अग्राह्य = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अघण्ट = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अघण्टिन् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अघमर्षण = वानप्रस्थ धर्म का प्रवर्त्तन करने वाले एक ऋषि का नाम है (१२. २४४, १६)।

अघोरघोररूप = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

१. अङ्ग—'अङ्ग' देश के निवासियों को इस नाम से पुकारा गया है। दुर्योधन ने कर्ण को इसी देश के राजा के पद पर अभिषिक्त किया था (१. १३६, ३६. ३८; १३७, ४. ७. १७. २३)। वङ्ग और कलिङ्ग देशों के साथ इसका उल्लेख है (१. २१५, ९)। 'वङ्गाङ्गविषयाध्यक्षम्',

(२. ४४, ९)। युधिष्ठिर को धन समर्पित करने वाले राजकुमारों के अन्तर्गत इसका उल्लेख है (२. ५२, १६)। राजा दशरथ के मित्र लोमपाद का अङ्गदेश के राजा के रूप में उल्लेख है (३. ११०, ४१)। 'ततोऽङ्गपतिर्' = लोमपाद (३. ११०, ५०)। 'अङ्गाधिपतेः' = लोमपाद (३. ११३, ८)। 'अङ्गराजम्' = लोमपाद (३. ११३, १५)। 'अङ्गपतिम्' = लोमपाद (३. ११३, १८)। 'अङ्गराजानं' = कर्ण (३. २४७, १६)। 'अङ्गान् वङ्गान् कलिङ्गांश्च शुण्डिकान् मिथिलानथ', (३. २५४, ८)। 'सूतस्य ववृधेऽङ्गेषु श्रेष्ठः पुत्रः स वीर्यवान्', (३. ३०९, १५)। भारतवर्ष के अनेक अन्य देशों के साथ इसका उल्लेख है (६. ९, ४६)। 'अङ्गपतिना' = कर्ण (६. १७, २८)। कृष्ण द्वारा अङ्ग, वङ्ग आदि देशों पर विजय (७. ११, १५)। परशुराम द्वारा अङ्ग, वङ्ग आदि अनेक देशों के क्षत्रियों का संहार (७. ७०, १२)। अङ्गदेश के सहस्रों गजरोही योद्धाओं द्वारा महाभारत युद्ध के चौदहवें दिन अर्जुन को घेरना और अर्जुन द्वारा पराभूत होना (७. ९३, ३१)। 'सुह्मानङ्गांश्च वङ्गांश्च', (८. ८, १९)। कलिङ्ग, अङ्ग, वङ्ग और निषाद देशों के वीरों द्वारा हाथियों पर सवार होकर युद्ध के सोलहवें दिन अर्जुन को घेरना (८. १७, १२)। युद्ध के १६ वें दिन अङ्गों का धृष्टद्युम्न के विरुद्ध युद्ध (८. २२, २)। युद्ध के १७ वें दिन भीम द्वारा अङ्ग, वङ्ग, आदि, लोगों का वध (८. ७०, ९)। कर्ण अङ्ग देश का तो राजा हुआ ही, साथ ही जरासन्ध का वध करके चम्पा नगर पर भी शासन करने लगा (१२. ५, ६)। मुञ्जपृष्ठ नामक तीर्थ में अङ्गराज वसुहोम और मान्धातृ के बीच वार्तालाप (१२. १२१, १)। रुचि की बड़ी बहन के साथ अङ्गराज चित्ररथ का विवाह हुआ था (१३. ४२, ७–९)। 'त्यक्त्वा महीत्वं भूमिस्तु स्पर्धयाङ्गनृपस्य ह। नाशं जगाम तां विप्रो व्यस्तंभयत कश्यपः ॥', (१३. १५३, २)। 'काशीनंगान्कोसलांश्च किरातानथ तंगणान् ।', (१४. ८३, ४)।

२. अङ्ग प्राचीन युग के एक राजा का नाम (१. १, २३३)।

३. अङ्ग (= २. अङ्ग) दीर्घतमस् के पुत्रों में से एक (१. १०४, ५३–५४)।

दीर्घतमस् ∽ सुदेष्णा

अङ्ग | वङ्ग | कलिङ्ग | पुण्ड्र | सुह्म

यह यम की सभा में उपस्थित थे (२. ८, १५)।

४. अङ्ग (= २. अङ्ग ?), एक पौरव का नाम है (७, ५७, ११)। = बृहद्रथ (१२. २९, ३१. ३५. ८८)।

५. अङ्ग, मनु के पुत्र के रूप में अवतरित श्रीकृष्ण का नाम है ('समुत्पत्स्यति गोविन्दो मनोर्वंशे महात्मनः। अङ्गो नाम मनोः पुत्रो अन्तर्धामा ततः परः ॥', १३. १४७, २३)।

६. अङ्ग—पहले की बात है, अङ्ग नामक एक नरेश ने इस पृथ्वी को ब्राह्मणों के हाथ में दान कर देने का विचार किया था (१३. १५४, १)।

७. अङ्ग, युधिष्ठिर के समय का एक अङ्ग राजा था जो मयदानव द्वारा निर्मित सभा भवन में युधिष्ठिर के प्रवेश करने के समय उपस्थित था (२. ४, २४. २५)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित महिपालों में से एक (३. ५१, २२)। इसे एक म्लेच्छ राजा कहा गया है जिसका युद्ध के बारहवें दिन भीमसेन ने वध किया था (७. २६, १४)। एक म्लेच्छ राजा जिसका युद्ध के १६ वें दिन नकुल ने वध किया था (८. २२, १२. १६. १७)।

८. अङ्ग, एक अङ्ग देश का नाम अथवा विशेषण है ('अङ्गस्याङ्गोऽभवद् देशो', १. १०४, ५४)।

९. अङ्ग, प्राचीन काल के किसी न किसी अङ्गराज का नाम ('अङ्गवङ्गादयः राजानः', २. २१, ७) है।

१०. अङ्ग, क्ली०, बहु० (°आनि) = वेदाङ्गानि : १. १, ६२ (साङ्गोपनिषदां चैव वेदानाम्)। १. २, ३८२ : ('वेदान् साङ्गोपनिषदो द्विजः')। १. ७५, १५ : (साङ्गं वेदम्)। १००, ३५ : (वेदानधिजगे साङ्गान्वसिष्ठादेष वीर्यवान्)। १. १००, ३८ : (साङ्गोपाङ्गम्)। १०३, ५ : (वेदाङ्गानि)। १०४, १२ : (षडङ्गं)। १७७, १२ : (षड्भिरङ्गैरलंकृतम्)। १७९, ४ : (षडङ्गश्चाखिलो वेद)। २. ५, ३ : (षडङ्गविद्)। ३. ६४, १७ : (साङ्गोपाङ्गाः वेदाः)। ७. १९८, १ (साङ्गावेदाः)। २०२, १०९ : (वेदाङ्गाः सोपनिषदः)। १२. ३७, ११ : (वेदान् अङ्गोपबृंहितान्)। ४६. १७ : (चतुरो वेदान् साङ्ग)। १९९, ४. ५ : (षडङ्ग)। १९९, ६६ : (वेदास्तथाऽङ्गानि)। २३१, ७ : (वेदानखिलान् साङ्गोपनिषदः)। ३३५, १ : (अङ्गतः)। २३८, १८ : (सृजते सर्वतोऽङ्गानि तथा वेदा युगे युगे)। २८४, १९२ : (वेदात्षडङ्गाद्)। २९७, ४० : (वेदाश्च षडङ्गानि)। ३१८, ५० : (साङ्गोपाङ्गान्)। ३२७, ३५ : (साङ्गेष्वपि तपस्विनः)। ३३४, २५ : (साङ्गोपाङ्गेषु वेदेषु)। ३३५, ५४ : (साङ्गोपनिषदं)। ३४०, ९२ : (साङ्ग वेदान्)। ३४१, ५५ : (वेदान् साङ्गोपाङ्गान्)। ३४३, ६१ : (वेदान् साङ्गः)। ३४९, १३ : (वेदान् साङ्ग)। १३. २२, १२ : (षड्भिरङ्गैः)। २२, ३६ : (साङ्ग चतुरो वेदाः)। ९०, २६ : (षडङ्गविद्)। १४. ८८, २६ : (नाषडङ्गविद्)।

अङ्गक (°आः) एक जाति के लोगों का नाम है, जो सम्भवतः = अङ्ग (८. ४५, ३० यहाँ युद्ध के १६ वें दिन शल्य के सम्मुख कर्ण ने इनकी प्रशंसा की है)।

१. अङ्गद, वालिन् के पुत्र एक वानर राजा का नाम (३. २८२, २८) है। वालि की पत्नी तारा इनकी माता थीं (३. २८०, १८)। इन्होंने राम की सेना की रक्षा की थी (३. २८३, १९)। राम ने इन्हें अपना दूत बनाकर रावण के पास भेजा था (३. २८३, ५४)। राम की आज्ञा से इनका लङ्का में प्रवेश, रावण के पास जाकर राम का संदेश सुनाना और वहाँ से लौटना (३. २८४, ७–२२)। इन्होंने इन्द्रजित के साथ युद्ध किया था (३. २८८, १४. १६)। इन्होंने रावण पर आक्रमण किया था (३. २९०, ३)। इन्द्रजित के विरुद्ध युद्ध के समय राम और लक्ष्मण को घेरकर उनकी रक्षा करने वाले लोगों में से एक यह भी थे (३. २८९, ४. १३)। इन्हें किष्किन्धा के युवराज के पद पर प्रतिष्ठित किया गया था (३. २९१, ५९)।

२. अङ्गद, कौरव पक्ष के एक वीर योद्धा का नाम है जिसने महाभारत-युद्ध के बारहवें दिन उत्तमौजों के विरुद्ध युद्ध किया था (७. २५, ३८)।

अङ्गपुत्र = ७. अङ्ग, जिसका नकुल ने वध किया था (८. २२, १९)।

अङ्गलुब्ध = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अङ्गविधि (चन्द्रमा के विभिन्न अङ्गों की स्थिति), १३. ११०।

१. अङ्गार एक राजा का नाम है जिसे मान्धातृ ने पराजित किया था (१२. २९, ८८. ८९)।

२. अङ्गार प्रक प्राचीन जनपद का नाम है (६. ९, ६०)।

१. अङ्गारक, मङ्गल ग्रह का नाम है (१. १३४, २०), जो ब्रह्मा जी की सभा में नित्य उपस्थित होते हैं (२. ११, २९)। इसके द्वारा एक शकुन के व्यक्त होने का उल्लेख है (५. १४३, ९; ६. ३, १४)। 'समीयतुः सुसंक्रुद्धावङ्गारकबुधाविव', (६. ४५, ४१)। 'शुक्राङ्गारकयोरिव', (६. ४५, ५७)। 'भूमावङ्गारकं यथा', (७. १०९, ३४)। 'अङ्गारकबुधाविव', (८. १५, १६)। 'अङ्गारक इव ग्रहः', (८. १९, १)। तु० की० भौम।

२. अङ्गारक = सूर्य (३. ३, १७ : धौम्यों की गणना में)।

३. अङ्गारक, एक सौवीर राजा का नाम है जो जयद्रथ के अनुगामियों में से एक था (३. २६५, १०)।

अङ्गारपर्ण, एक गन्धर्व राजा = चित्ररथ (इसके वन का भी यही

नाम है) का नाम है (१. २, २११)। अर्जुन ने इसे पराजित किया था (१. १७०, १३. १४. २५. ३८)।

अङ्गावह, युधिष्ठिर के राजसूय में पधारने वाले एक वृष्णिवंशी राजा का नाम (२. ३४, १६)।

१. अङ्गिरस्, ब्रह्माजी के छः मानस पुत्रों में से एक महर्षि का नाम है (१. ६५, १०; ६६, ४)। यह बृहस्पति, उतथ्य और संवर्त्त के पिता हैं (१. ६६, ५)। इनके पुत्र, बृहस्पति का देवताओं ने अपने पुरोहित के पद पर वरण किया (१. ७६, ६)। इनके पौत्र कच का उल्लेख (१. ७६, १९. ४९; ७७, २. ३)। 'तथैवाङ्गिरसः पुत्रः सुरासुरनमस्कृतः' (१. १००, ३७)। अर्जुन के जन्म के समय पधारने वाले लोगों में से एक यह भी थे (१. १२३, ५२)। 'अङ्गिरसः कुले', (१. १३०, ५५)। ब्रह्माजी की सभा में इनके उपस्थित रहने का उल्लेख (२. ११, १९)। 'श्रेयान्सुधन्वा त्वत्तो वै मत्तः श्रेयांस्तथाङ्गिराः', (२. ६८, ८६)। 'मुनेरङ्गिरसः सुतः', (३. ८५, ४७)। प्रयाग तीर्थ में इनके निवास का उल्लेख ('अङ्गिरः प्रमुखाः ब्रह्मर्षयः', ३. ८५, ७१)। इन्होंने सूर्य की रक्षा की थी (३. ९२, ६)। यह आकाश गङ्गा के तट पर अपना दैनिक जप करते हैं (३. १४२, ६)। यह अग्नि बनकर अपनी प्रभा से अन्धकार का निवारण करते हुये जगत को ताप देने लगे और अन्त में अग्नि ने इन्हें अपना प्रथम पुत्र स्वीकार किया (३. २१७, २. ७. ८. १२. १७, १८. २०)। 'देवी भानुमती नाम प्रथमाऽङ्गिरसः सुता', (३. २१८, ३)। 'रागाद्रागेति यामाहुर्द्वितीयाऽङ्गिरसः सुता', (३. २१८, ४)। इनकी अन्य पुत्रियों के नाम सिनीवाली, अर्चिष्मती, हविष्मती, महिष्मती, महामती और कुहू हैं (३. २१८, ५-८)। 'भानुरङ्गिरो धीरः पुत्रो', (३. २२०, ९)। 'असुरान् जनयन् घोरान् मर्त्यांश्चैव पृथग्विधान्। तपसश्च मनुं पुत्रं भानु चाप्यङ्गिराः सृजत्॥', (३. २२१, ७-८)। 'भृग्वङ्गिरादिभिर्भूयस्तपसोत्थापितस्......शिखी।' (३. २२२, १७)। 'एक एवैष भगवान् विज्ञेयः प्रथमोऽङ्गिराः', (३. २२२, ३१)। 'शिवा भार्या त्वङ्गिरसः', (३. ३. २२५, १. ३)। इन्होंने इन्द्र देवता से वरदान प्राप्त किया था (५. १८, ५-७)। 'सखा चाङ्गिरसो नृपः', (५. १५१, १७)। नारायण को समर्पित एक सूक्त में इनका उल्लेख (६. ६८, ६)। 'सोमोऽङ्गिरा यथा', (७. ६६, १०)। दुर्योधन को अभेद्य कवच से सुसज्जित करते हुये द्रोणाचार्य ने इनका आवाहन किया था (७. ९४, ४५)। इन्द्र ने वृत्रासुर का वध करने के पश्चात् इस कवच तथा इसे बाँधने की मन्त्र-युक्त विधि अङ्गिरा को दी थी और अङ्गिरा ने उसे अपने पुत्र बृहस्पति को (७. ९४, ६६. ६७)। 'इदमङ्गिरसे प्रादाद्देवेशो वर्म भास्वरम्' (७. १०३, १९)। 'अथर्वाङ्गिरसावास्तां चक्ररक्षौ महात्मनः', (८. ३४, ४४)। 'भृग्वंगिरोमन्युमवं क्रोधाग्निमतिदुःसहम्', (८. ३४. ५१)। कार्तिकेय के अभिषेक के समय आने वाले लोगों में एक यह भी थे (९. ४५, १०)। वाणशय्या पर पड़े हुये भीष्म को घेरकर खड़े होने वाले लोगों में एक यह भी थे (१२. ४७, १०)। इनके पुत्र बृहस्पति द्वारा दो श्लोकों का गायन (१२. ६९, ७१)। विष्णु ने इन्हें एक दण्ड दिया जिसको इन्होंने इन्द्र और मरीचि को दिया (१२. १२२, ३७)। ब्रह्मा ने लौकिक शरीर धारण करके मुनियों के रूप में जिन पुत्रों को उत्पन्न किया उनमें एक यह भी थे (१२. १६६, १६)। सनातन धर्म का पालन करने वाले लोगों में से एक यह भी थे (१२. १६६, २३)। ब्रह्मा के सात मानस-पुत्रों में से एक (१२. २०७, १७)। भीष्म द्वारा इस जगत में जो प्रजापति रहे हैं तथा सम्पूर्ण दिशाओं में जिन-जिन ऋषियों की स्थिति मानी गई है उनका वर्णन करते हुये ब्रह्मा के सात महात्मा पुत्रों की गणना में इनका भी उल्लेख है—इन सात पुत्रों को भीष्म के अनुसार पुराणों में सात ब्रह्मा निश्चित किया गया है (१२. २०८, ४. ५)। अङ्गिरस् को अपनी पुत्री प्रदान करके करन्धम का पुत्र मरुत स्वर्गलोक चला गया (१२. २३४, २८; तु० की० १३. १३७, १६)। मेरु पर्वत पर शिव और पार्वती की उपासना करने वाले देवर्षियों में एक यह भी थे (१२. २८३, १०)। आरम्भ में अङ्गिरस्, कश्यप, वसिष्ठ और भृगु नामक चार गोत्र ही उत्पन्न हुये (१२. २९६, १७)। प्रथम उत्पन्न इक्कीस प्रजापतियों में से एक यह भी थे (१२. ३३४, ३५)। उन प्रसिद्ध सात ऋषियों में से एक यह भी हैं जिन्होंने मेरुपर्वत पर एक मत होकर उस शास्त्र का प्रवचन एवं निर्माण किया जो चारों वेदों के समान आदरणीय और प्रमाणभूत है (१२. ३३५, २९)। 'अङ्गिरसः सुते', अर्थात् बृहस्पति (१२. ३३६, १)। ब्रह्मा द्वारा रचे गये पञ्च महाभूतों से जो आठ मूर्त्तिमान् प्राणी उत्पन्न हुये उनमें एक यह भी थे (१२. ३४०, ३४)। ब्रह्मा के उन सात मानस पुत्रों के अन्तर्गत इनकी भी गणना है जो प्रधान वेद-वेत्ता और प्रवृत्ति धर्मावलम्बी हैं (१२. ३४०, ६९–७०)। उन व्यक्तियों में एक यह भी थे जिन्हें कृष्ण ने भगवान शिव को नमस्कार करते हुये देखा था (१३. १४, ३९६)। पूर्वकाल में इनके द्वारा तीर्थ समुदाय के वर्णन का उल्लेख (१३. २५, ३. ४. ७)। इन्होंने तीर्थों के इस महात्म्य का ज्ञान कश्यप जी से प्राप्त किया था (१३. २५, ६९. ७१)। वाणशय्या पर पड़े भीष्म को देखने के लिये आने वाले महर्षियों में एक यह भी थे (१३, २६, ४)। ब्रह्मा के वीर्य की जब अग्नि में आहुति दी गई तब उससे प्रगट होने वाले तीन शरीरधारी पुरुषों में एक यह भी थे (१३. ८५, १०५)। अङ्गारों से उत्पन्न इनके नाम की व्युत्पत्ति (१३. ८५, १०७)। इन्हें अग्नि की सन्तान निश्चित किया गया है। (१३. ८५, १२४)। तेजस्वी अङ्गिरा आग्नेय तथा महा यशस्वी कवि ब्राह्म नाम से विख्यात हुये; भृगु और अङ्गिरा को दोनों लोकों में जगत की सृष्टि का विस्तार करने वाला बताया गया है (१३. ८५, १२६)। वारुण के नाम से विख्यात इनके आठ पुत्रों का उल्लेख (१३. ८५, १३०)। 'एवमङ्गिरसश्चैव कवेश्च प्रसवान्वयैः। भृगोश्च भृगुशार्दूल वंशजैः सततं जगत्॥', १३. ८५, १३५; 'जग्राहाङ्गिरसं देवः शिखी तस्माद्धुताशनः। तस्मादाङ्गिरसा ज्ञेयाः सर्व एव तदन्वयाः॥', १३. ८५, १३७। योग-वेत्ताओं के अन्तर्गत इनकी गणना (१३. ९२, २१)। प्रभास तीर्थ में एकत्र ऋषियों में एक यह भी थे (१३. ९४, ४)। इन्होंने यह शपथ खाई कि कमल पुष्प की चोरी से यह सर्वथा अनभिज्ञ हैं (१३. ९४, २०)। अङ्गिरा द्वारा पूर्वकाल में महर्षियों को बताये गये व्रतों के जिन फलों को अङ्गिरा ने भीष्म से बताया था उनका भीष्म द्वारा वर्णन (१३. १०६, ९. ११. ४८. ७०. ७१)। इन व्रत-फलों का और अधिक वर्णन (१३. १०७, ५. ५९)। इनके द्वारा एक वर्ष तक करञ्ज वृक्ष के नीचे दीप दान करने और ब्राह्मी बूटी की जड़ हाथ में लिये रहने के फल का वर्णन (१३. १२७, ८)। 'करन्धमस्य पौत्रस्तु मरुत्तोऽविक्षितः सुतः। कन्यामाङ्गिरसे दत्वा दिवमाशु जगाम सः॥', (१३. १३७, १६; तु० की० १२. २३४, २८)। मानवों के अन्तर्गत इनके पुत्र बल का उल्लेख (१३. १५०, ३०)। 'उन्मुचुः प्रमुचुश्चैव स्वस्त्यात्रेयश्च वीर्यवान्। दृढव्यश्चोर्ध्वबाहुश्च तृणसोमाङ्गिरास्तथा॥', १३. १५०, ३४। 'वृद्धैः काश्यपगोतमप्रभृतिभिर्भृग्वङ्गिरोऽव्यादिभिः। शुक्रागस्त्यबृहस्पतिप्रभृतिभिर्ब्रह्मर्षिभिः सेवितम्......सावित्रीमधिगम्य शक्रवसुभिः कृत्स्ना जिता दानवाः॥', १३. १५०, ७९। "ब्राह्मण इस मर्त्यलोक और स्वर्गलोक में भी अजेय हैं। पूर्वकाल की बात है, महात्मा अङ्गिरस् मुनि जल को दूध की भाँति पी गये थे। उस समय उन्हें पीने से तृप्ति ही नहीं हो रही थी अतः अपने तेज से वह पृथ्वी का सारा जल पी गये, और तत्पश्चात् उन्होंने जल का महान् स्रोत प्रवाहित कर पृथ्वी को जल से पूर्ण कर दिया। वह अङ्गिरस् मुनि एक बार जब वायु पर कुपित हो गये तब उनके भय से इस जगत् का परित्याग कर वायु को दीर्घकाल तक अग्निहोत्र की अग्नि में निवास करना पड़ा था। अग्नि का वर्ण पहले सुवर्ण के समान था, उसमें से धुआँ नहीं निकलता था, और उसके लपटें सदैव ऊपर की ओर ही उठती थीं, किन्तु क्रोध में भरे हुये अङ्गिरस् ऋषि के शाप से उसमें अब यह

गुण नहीं रह गये (१३.१५३, ३. ५. ८) ।" पूर्व क्षेत्र के विद्वान् ब्राह्मणों के अन्तर्गत इनका उल्लेख (१३.१६५, ३८)। अविक्षित् कारन्धम के पुरोहित के रूप में इनका उल्लेख (१४. ४, २२)। इनके बृहस्पति और संवर्त्त नामक पुत्रों का उल्लेख (१४. ५, ४)। 'पुत्रमङ्गिरसो ज्येष्ठं विप्र-ज्येष्ठं बृहस्पतिम्। याज्यस्त्वङ्गिरसः पूर्वमासीद्राजा करन्धमः॥', १४. ५, ८। 'गतोऽस्म्यङ्गिरसः पुत्रं देवाचार्यं बृहस्पतिम्।', १४. ६, १५। 'राजन्नङ्गिरसः पुत्रः संवर्तो नाम धार्मिकः।', १४. ६, १८।

२. अङ्गिरस् (सः), बहु०—अङ्गिरस् के वंशज (१. १३२, ७१)। 'अङ्गिरसां वरः', अर्थात् द्रोण (१. १३३, ११)। द्वैतवन अङ्गिरसों से परिपूर्ण हो गया (३. २६, ७)। लोमश द्वारा युधिष्ठिर से परिचित कराये गये तपस्वियों में यह भी एक थे (३. ११५, २)। 'भृगुभिश्चाङ्गिरोभिश्च हुतं', (३. २२४, १४)। 'भृग्वङ्गिरोभिः', (३. २३१, ४२)। 'अङ्गिरसां वरिष्ठे बृहस्पतौ', (५. १६, २७)। 'द्रोणमङ्गिरसां वरम्', (५. १९३, १५)। 'भृगवोऽङ्गिरसश्चैव', (७. १९०, ३४)। 'अङ्गिरसां वरिष्ठः' = अश्वत्थामा (८. १७, २३)। स्कन्द के अभिषेक के समय पधारने वालों में यह लोग भी थे (९. ४५, ८)। 'चकाराङ्गिरसां श्रेष्ठाद्धनुर्वेदं गुरोस्तदा', अर्थात् कर्ण और द्रोण (१२. २, ५. १४)। 'अश्विनौ तु स्मृतौ शूद्रौ तपस्युग्रे समास्थितौ। स्मृतास्त्वङ्गिरसो देवा ब्राह्मणा इति निश्चयः॥', (१२. २०८, २४)। 'अङ्गिरसां वरम्', = बृहस्पति (१२. ३३६, ४९)। 'बृहस्पतिं अङ्गिरसां वरम्' (१८. ५, १२)।

३. अङ्गिरस् = बृहस्पति। 'देवा वह्निरेऽङ्गिरसं मुनिम्', (१. ७६, ६)। 'बृहस्पतेरङ्गिरसः', (५. ११, २६; १८, ५–७)। इनके और वसुमना के बीच वार्तालाप (१२. ६८, ६१)। "अङ्गिरा के पुत्र बृहस्पति ने अमृत उत्पन्न करने के समय पुरश्चरण आरम्भ किया। उस समय जब वह आचमन करने लगे तब भी जल स्वच्छ नहीं हुआ, इस पर कुपित होकर उन्होंने जल को मत्स्य, मकर, और कच्छप आदि जन्तुओं द्वारा कलुषित बने रहने का शाप दिया (१२. ३४२, २७)।" इन्द्र ने इन्हें सम्पूर्ण पृथ्वी प्रदान की (१३. ६२, ९३)।

४. अङ्गिरस् = सारस्वत। 'यत्र सारस्वतो यातः सोऽङ्गिरास्तपसो निधिः', (३. ८३, १८७)।

५. अङ्गिरस् = उतथ्य। मान्धातृ यौवनाश्व को अङ्गिरस् उतथ्य द्वारा राजाओं के कर्त्तव्य का उपदेश देना (१२. ९०, १)। सोम की पुत्री भद्रा के साथ इनके विवाह का उल्लेख (१३. १५४, २३)।

६. अङ्गिरस् = विष्णु। 'विष्णुर्नामेह योऽग्निस्तु धृतिमान्नाम सोऽङ्गिराः', (३. २२१, १२)।

अङ्गिरस (म) (अङ्गिरा की सन्तति का वर्णन)—युधिष्ठिर के पूछने पर मार्कण्डेय ने एक कथा का वर्णन किया: "राजन् इस विषय पर लोग उस प्राचीन इतिहास को दुहराया करते हैं जिसमें यह स्पष्ट किया गया है कि किस प्रकार अग्निदेव कुपित हो तपस्या के लिये जल में प्रविष्ट हुये थे, और किस प्रकार स्वयं महर्षि अङ्गिरा भगवान् अग्नि बनकर अपनी प्रभा से अन्धकार का निवारण करते हुये जगत् को ताप प्रदान करने लगे। प्राचीन काल की बात है, महर्षि अङ्गिरा अपने आश्रम में ही रहकर उत्तम तपस्या करते हुये अग्नि से भी अधिक तेजस्वी होने के अपने उद्देश्य में सफल होकर सम्पूर्ण जगत् को प्रकाशित करने लगे। उस समय अग्नि, यह सोचकर अत्यन्त दुःखी हुये कि कदाचित् ब्रह्मा ने इस जगत् के लिये एक दूसरे अग्निदेवता का निर्माण कर लिया है; किन्तु अङ्गिरा मुनि ने उनसे कहा, 'हे देव! ब्रह्मा ने आपको ही अन्धकारनाशक प्रथम अग्नि के रूप में उत्पन्न किया है, अतः आप शीघ्र ही अपना स्थान ग्रहण कीजिये।' इस पर अग्नि ने अपने को द्वितीय, प्राजापत्य नामक अग्नि बने रहने देने का निवेदन किया, किन्तु अङ्गिरा ने आग्रह करते हुये उनसे इस प्रकार कहा: 'हे अग्निदेव आप प्रजा को स्वर्गलोक की प्राप्ति कराने वाला पुण्यकर्म सम्पन्न करते हुये स्वयं ही अन्धकार-निवारक अग्नि-पद पर प्रतिष्ठित हों, तथा साथ ही, मुझे अपना पहला पुत्र स्वीकार करें।' अङ्गिरा का यह वचन सुनकर अग्निदेव ने वैसा ही किया। तदुपरान्त अङ्गिरा को भी बृहस्पति नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। अङ्गिरा को अग्नि का प्रथम पुत्र जानकर सब देवता उनके पास आये और इसका कारण पूछने लगे। देवताओं के पूछने पर अङ्गिरा ने उन्हें कारण बताया और देवताओं ने अङ्गिरा के उस कथन पर विश्वास करके उसे यथार्थ मान लिया (३. २१७)।" अङ्गिरा की सन्तति का इस प्रकार वर्णन है: "अङ्गिरा ब्रह्माजी के तृतीय पुत्र हैं और उनकी पत्नी का नाम शुभा है। शुभा के गर्भ से जो सन्तानें उत्पन्न हुईं उनके अन्तर्गत बृहस्पति आदि सात पुत्र और भानुमती, रागा, सिनीवाली (जिसे इसलिये कपर्दिसुता भी कहते हैं कि अत्यन्त कृश होने के कारण वह कभी दृश्य और कभी अदृश्य प्रतीत होती थी), अर्चिष्मती, हविष्मती, महिष्मती, महामती और कुहू नामक आठ पुत्रियाँ आती हैं (३. २१८)।" आगे बृहस्पति की सन्तति का इस प्रकार वर्णन है (३. २१९):

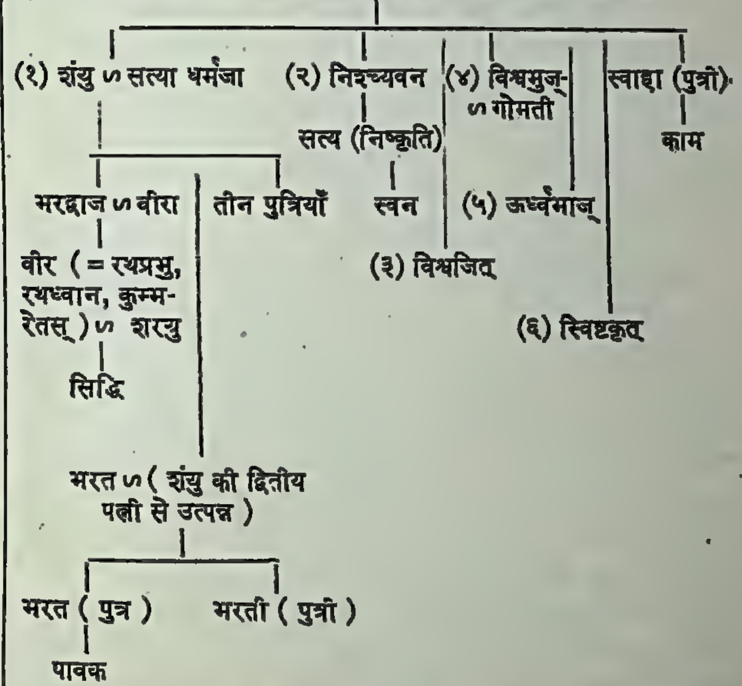

"कश्यप-पुत्र काश्यप, वसिष्ठ-पुत्र वासिष्ठ, प्राण-पुत्र प्राण, अङ्गिरा-पुत्र च्यवन और त्रिवर्चा, यह पाँच अग्नि हैं। इन्होंने पुत्र-प्राप्ति के हेतु अनेक वर्षों तक तीव्र तपस्या की। इनका उद्देश्य ब्रह्मा के समान यशस्वी और धर्मिष्ठ पुत्र प्राप्त करना था। इन पाँच अग्नि-स्वरूप ऋषियों ने महाव्याहृति-संज्ञक पाँच मंत्रों द्वारा परमात्मा का ध्यान किया जिससे उनके समक्ष अत्यन्त तेजमय, पाँच वर्णों से विभूषित, एक पुरुष प्रकट हुआ जो ज्वालाओं से प्रज्वलित अग्नि के समान प्रकाशित हो रहा था। उसका मस्तक प्रज्वलित अग्नि के समान जगमगा रहा था, दोनों भुजायें सूर्य की प्रभा के समान थीं, दोनों नेत्र तथा त्वचा सुवर्ण के समान प्रदीप्त हो रहे थे, और उसकी पिण्डलियाँ कृष्ण वर्ण दिखाई पड़ रही थीं। पाँच मुनियों द्वारा अपनी तपस्या के प्रभाव से पाँच वर्ण वाले उस पुरुष को प्रगट करने के कारण उसका नाम पाञ्चजन्य पड़ा। यह पाञ्चजन्य नामक पुरुष ही उन पाँचों ऋषियों के वंश का प्रवर्त्तक हुआ। इस पाञ्चजन्य ने अपने पितरों का वंश चलाने के लिये दस सहस्र वर्षों तक महान् तपस्या करके घोर दक्षिणाग्नि को उत्पन्न किया। उन्होंने मस्तक से बृहत् तथा मुख से रथन्तर साम को, नाभि से रुद्र को, बल से इन्द्र को, प्राण से वायु और अग्नि को, तथा दोनों भुजाओं से प्राकृत और वैकृत भेद वाले दोनों अनुदात्तों, मन, ज्ञानेन्द्रियों के समस्त देवताओं और पञ्चमहाभूतों को उत्पन्न किया। इन सबकी सृष्टि

करने के पश्चात् उन्होंने अपने पाँचों पितरों के लिये पाँच पुत्र और उत्पन्न किये जिनके नाम इस प्रकार हैं : वासिष्ठ बृहद्रथ के अंश से प्रणिधि, काश्यप के अंश से महत्तर, अङ्गिरस् च्यवन के अंश से भानु, वर्चा के अंश से सौभर, और प्राण के अंश से अनुदात्त। इस प्रकार पाञ्चजन्य के पच्चीस पुत्र हुये। तत्पश्चात् 'तप' नामधारी पाञ्चजन्य ने यज्ञ में विघ्न उत्पन्न करने वाले पन्द्रह उत्तर देवों (विनायकों) को उत्पन्न किया जिनके नाम इस प्रकार हैं : सुभीम, अतिभीम, भीम, भीमबल, अबल; सुमित्र, मित्रवत्, मित्रज्ञ, मित्रवर्धन, मित्रधर्मा; सुर प्रवीर, वीर, सुरेश, सुवर्चा, तथा सुरहन्ता (सुराणामपि हन्तारं)। इस प्रकार पाञ्चजन्य द्वारा उत्पन्न यह पन्द्रह देवोपम विनायक पृथक्-पृथक् पाँच-पाँच व्यक्तियों के तीन दलों में विभक्त हैं। (३.२२०)।" "इसके बाद अनेक अग्नियों का वर्णन है जिनमें तपस् के पाँच ऊर्जस्कर पुत्रों (पुरन्दर, उष्मन्, मनु, शम्भु, और आवसथ्य) का; और, सुप्रजा तथा बृहद्भासा सूर्यजा नामक पत्नियों से छः पुत्रों (बलद, मन्युमत्, विष्णु = धृतिमत् = अङ्गिरस्, आग्रयण, अग्रह, स्तुभ) का उल्लेख है। इसी प्रकार निशा भी भानु की पत्नी थी। उसने एक कन्या और दो पुत्रों को जन्म दिया। कन्या का नाम रोहिणी और पुत्रों का नाम अग्नि तथा सोम था। इनके अतिरिक्त निशा ने वैश्वानर, विश्वपति, सन्निहित, कपिल, और अग्रणी नामक पाँच अन्य अग्निस्वरूप पुत्रों को उत्पन्न किया। चातुर्मास्य यज्ञों में प्रधान हविष्य द्वारा पर्जन्य सहित जिसकी पूजा की जाती है वही कान्तिमान् वैश्वानर नामक अग्नि है। जिसे वेदों में सर्वलोकों का पति' कहा गया है वह विश्वपति नामक अग्नि, मनु (भानु) का द्वितीय पुत्र है। इत्यादि। (३. २२१)।"

अग्नि के वंश-क्रम का अगले अध्याय में भी वर्णन है—"मरे हुए प्राणियों के शव का दाह करने वाले अपने भरत (भर, नियत) नामक पौत्र के भय से सह नामक अग्नि समुद्र में प्रवेश कर गये। तब देवता लोग सब दिशाओं में उनकी खोज करते हुए वहाँ भी पहुँचने लगे। एक दिन अग्नि ने अथर्वा (अङ्गिरा) से इस प्रकार कहा, 'तुम देवताओं के पास उनका हविष्य पहुँचाओ। मैं अत्यन्त दुर्बल हो गया हूँ, अतः अब तुम अग्निपद पर प्रतिष्ठित होकर मेरा यह प्रिय कार्य सम्पन्न करो।' अथर्वा को इस प्रकार भेजकर अग्निदेव दूसरे स्थान पर चले गये; किन्तु मत्स्यों ने उनके स्थान को प्रगट कर दिया। इस पर कुपित होकर अग्नि (सह) ने मत्स्यों को यह शाप दे दिया कि वह नाना प्रकार के जीवों के भक्ष्य बन जायेंगे। तदुपरान्त सह नामक वह अग्नि अपने शरीर का परित्याग कर धरती में प्रवेश कर गये। वहाँ भूमि का स्पर्श करके उन्होंने पृथक्-पृथक् अनेक धातुओं की सृष्टि की : उन्होंने अपने पीब और रक्त से गन्धक और तैजस धातुओं को उत्पन्न किया; उनकी अस्थियों से देवदारु वृक्ष प्रगट हुये; उनके कफ से स्फटिक, तथा पित्त से मरकत मणि का प्रादुर्भाव हुआ; उनका यकृत् काले रङ्ग का लोहा बनकर प्रगट हुआ; उनके नख से मेघ उत्पन्न हुये; उनकी नाड़ियाँ मूँगा बन कर प्रगट हुईं; इत्यादि। इस प्रकार सह अग्नि शरीर त्याग कर अत्यन्त भारी तपस्या में लग गये। तब भृगु और अङ्गिरा आदि ऋषियों ने उन्हें तपस्या से उपरत किया। किन्तु महर्षि अङ्गिरा को सामने देख वह अग्नि भय के कारण पुनः महासागर के भीतर प्रविष्ट हो गये। इस प्रकार अग्नि के अदृश्य हो जाने पर समस्त संसार भयभीत होकर अथर्वा (अङ्गिरा) की शरण में आया तथा देवताओं ने भी इन अथर्वा का पूजन किया। तब अथर्वा ने समस्त प्राणियों के देखते-देखते ही समुद्र को मथ डाला और अग्निदेव का दर्शन करके स्वयं ही सम्पूर्ण लोकों की सृष्टि की। इस प्रकार पूर्वकाल में अदृश्य हुये अग्निदेव को भगवान् अङ्गिरा ने पुनः बुलाया, जिससे प्रगट होकर वह (अग्नि) सदा समस्त प्राणियों का हविष्य-वहन करते हैं। समुद्र के भीतर नाना स्थानों पर विचरण करते हुए सह अग्नि ने इसी प्रकार अनेक वेदोक्त अग्निदेवों तथा उनके स्थानों को उत्पन्न किया। इसके बाद अग्नियों के उत्पत्ति-स्थान के रूप में अनेक नदियों की गणना कराई गई है। अद्भुत की पत्नी प्रिया तथा उनका पुत्र विभूरसि हुआ। अग्नियों की जितनी संख्या बताई गई है उतनी ही सोमयागों की भी संख्या है। ये सब अग्नि ब्रह्मा जी के मानसिक संकल्प से अत्रि के वंश में उनकी संतान के रूप में उत्पन्न हुए। अत्रि को जब प्रजा-सृष्टि की इच्छा हुई तब उन्होंने इन अग्नियों को ही अपने हृदय में धारण किया और फिर उन ब्रह्मर्षि के शरीर से विभिन्न अग्नियों का प्रादुर्भाव हुआ। वेदों में अद्भुत नामक अग्नि के माहात्म्य के समान ही इन अग्नियों का भी माहात्म्य है क्योंकि इन सबमें एक ही अग्नि-तत्त्व वर्तमान है। प्रथम अग्नि को अङ्गिरा भी कहते हैं, और जिस प्रकार ज्योतिष्टोम यज्ञ अनेक रूपों में प्रगट हुआ है उसी प्रकार यह एक ही अग्नि-तत्त्व प्रजापति के शरीर से विभिन्न रूपों में उत्पन्न हुआ। (३.२२२)।"

अङ्गिरसिक : 'केन सङ्कल्पितं श्राद्धं कस्मिन्काले किमात्मकम्। भृग्वङ्गिरसिके काले मुनिना कतरेण वा ॥', (१३. ९१, १)। तु० की० 'आङ्गिरसे युगे', (१२. ३३५, ५४)।

अङ्गिरःसुत = बृहस्पति (१२.२८१, २९)।

अङ्घ्रिक, विश्वामित्र का पुत्र था ('आंघ्रिको नैकदृक्चैव', १३.४, ५४)।

१. अचल, धृतराष्ट्र का साला और शकुनि का भाई (२.३४,७ : 'अचलो वृषकश्चैव कर्णश्च रथिनां वरः') जो युधिष्ठिर का राजसूय देखने आया था। दुर्योधन का एक महारथी ('अचलो वृषकश्चैव सहितौ भ्रातरावुभौ"'गान्धारमुख्यौ', ५.१६८, १.२)। 'वृषकाचलौ', ७.३०,२.९ (श्यालौ तव); महाभारत युद्ध के १२ वें दिन अर्जुन ने इसका वध किया (७.३०, ११)। 'वृषकाचलौ' (८.५, ४१)। युद्ध में मारे गये अन्य लोगों के साथ इसका भी अग्नि-संस्कार किया गया (श्राद्धपर्व : ११.२६, ३५)। युद्ध में मृत अन्य लोगों के साथ इसे भी व्यास ने गंगा से बुला कर उस समय धृतराष्ट्र और गान्धारी को दिखाया था जब यह दोनों अपने जीवन के अन्तिम दिनों में व्यास के आश्रम में पधारे थे (पुत्रदर्शनपर्व : १५.३२,१२)।

२. अचल, स्कन्द का एक पार्षद (गदायुद्धपर्व : ९.४५,७४)।

३. अचल, विष्णुसहस्रनाम में आने वाला भगवान् का नाम (दानधर्मपर्व : १३.१४९, ९२)।

४. अचल, नारद द्वारा स्तुत्य भगवान् के दो सौ नामों में से १७२ वाँ नाम (मोक्षधर्मपर्व : १२.३३८)।

अचला : स्कन्द की अनुचरी मातृका (९.४६, १४)।

अचलेन्द्र (= स्कन्द) : (मार्कण्डेयसमस्यापर्व : ३.२३२, १६)।

अचलोपम = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

१. अचिन्त्य = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

२. अचिन्त्य = विष्णु : १३.१४९, १०२ (सहस्र नामों में से एक)।

अच्युतः (क) भगवान् श्रीकृष्ण का एक नाम : १.२३४, १६ (अच्युतार्जुनौ); २.२४, २७; ५.१३७, ६; ७.८४, ९ (युयुधानाच्युतार्जुनाः); १५०,९; १७२,२०; ८.३०,४१ (अच्युतार्जुनौ); १२.५०, ५ (अच्युतयुधिष्ठिरौ); १३.१४७, ६०। विष्णु को कृष्ण के साथ समीकृत किया गया है (तु०की०, केशवः, यथा, ३.१४९, ३४); ३.१४९, २४; १३.१४९, २४. ४८.७२।

(ख) एक विशेषण (जहाँ इससे उद्दिष्ट व्यक्ति का प्रसंग में स्पष्ट और विशेषतः अक्सर सम्बोधन के रूप में, उल्लेख है) के रूप में अनेक व्यक्तियों के लिये व्यवहृत हुआ है, जैसे : कृष्ण, विष्णु, बलराम, अर्जुन, भीमसेन, युधिष्ठिर, दुर्योधन, द्रोण, अश्वत्थामा, भीष्म, जनमेजय, अयोध्या के राजा परिक्षित् (३.१९२,२८), आपव (११.४९,४२), शिव (१०. ७,५५ : रुद्रं), स्कन्द (९.४४,३१ : 'कुमारवरम् अच्युतं'), उच्चतम देवता (१२.३०१,१०४ : 'ब्रह्मण्यं परमं देवमनन्तं परमच्युतम्'; ३४८, ६६ : 'देवं परमकं ब्रह्म श्वेतं चन्द्राभमच्युतम्')।

अच्युतस्थल—वर्णसंकरजातीय अंत्यजों के निवास-स्थान, एक प्राचीन ग्राम, का नाम (३.१२९,९)।

अच्युतानुज—भीमसेन : (४.८,६)।

अच्युतायुस्, एक योद्धा जिसका सदैव श्रुतायुस् के साथ साथ उल्लेख है : यह लोग अर्जुन पर आक्रमण (७.९३, ७.११) और उनको घायल (७.९३,१२) करते हैं; किन्तु अन्त में अर्जुन इनका वध कर देते हैं (७.९३,२४); इनके पुत्रों (नियतायुस् और दीर्घायुस्) ने अर्जुन से इनका प्रतिशोध लेना चाहा किन्तु अर्जुन ने इन दोनों का भी वध कर दिया (७.९३,२८); ७.९४,३० (जयद्रथवधपर्व); ८.७२,२० (कर्णपर्व); ९.२,१९.३५ (शल्यपर्व) ।

१. अज (अजन्मा) = कृष्ण २.१३,३७;३.१२,२२;५.७०,८ (न जायते जनित्राऽयम्, अजस् तस्माद्); ५.१७१, १२ (अजो भोजश्च विक्रान्तौ पाण्डवार्थे महारथौ); १२.४७, ५८; ३४२, ७४; ३४६, २१ ।

२. अज = सूर्य (३.३,१६)।

३. अज = शिव (१०.७,३; १४.८,२१.३१;१३.१७,४६)।

४. अज = ब्रह्मा (१२.२३२,२६;२३९,३३;२४०,३५)।

५. अज = विष्णु (१२.३४०,१०१;१३.१४९,२४.३५.६९, विष्णु के सहस्र नामों में से एक)।

६. अज—जह्नु का पुत्र (१२.४९, ३)।

७. अज—एक राजा (१३.११५, ७५)।

८. अज (विशेषण)—१२.२३६, २० (तस्मिन्नुपरतेऽजोऽस्य पीतशस्त्रः प्रकाशते); १२.३०२, १८; ३२१, २; ३३४, २५; ३३८, ४।

९. अज (जाः), बहु०—ऋषियों के एक वर्ग का नाम (१.२११, ५; १२.२६, ७)।

अजक, शाल्व के रूप में अवतरित एक असुर का नाम है (१.६७, १६.१७ : 'अजकस्त्ववरो राजन्य आसीद्वृषपर्वणः । स शाल्व इति विख्यातः पृथिव्यामभवन्नृपः ॥' ; (१.६५,२४)।

अजगर, एक विशालकाय सर्प का नाम है जो पूर्व जन्म में नहुष था और अगस्त्य के शाप से सर्प बनकर भूमि पर गिर पड़ा था। इसी ने भीम को पकड़ा था (३.१७८, २८; १७९, १०-२४)। इसका युधिष्ठिर के साथ संवाद (३.१८० और १८१)।

अजनाभ, एक पर्वत का नाम है (१३.१६५, ३२)।

१. अजमीढ एक प्राचीन राजा का नाम (१.५५, ५ : 'अजमीढस्य यज्ञः')। यह सुहोत्र द्वारा ऐक्ष्वाकी के गर्भ से उत्पन्न सोमवंशी क्षत्रिय थे (१.९४, ३०.३१)।

२. अजमीढ—यह विकुण्ठन और सुदेवा दाशार्ही के पुत्र थे (१.९५, ३६.३७)। देखिये १३.४, २; १८, १९, भी। १.७५, १ में **आजमीढ** = अजमीढ।

३. अजमीढ = युधिष्ठिर : १.५५, ६; १९१,२०; २.४५, ४१; १३५, ६; ५.२, १०; २२, ६; ६.८५, ३१; ८.६५, ३; १०.१०, २९; १३.१८, ७६; ७७, ३४।

४. अजमीढ = धृतराष्ट्र : २.७५, ६ (?); ५.३६, ७३; ६७, ६; ७.१४०, २२.२४; ८.८३, १२।

अजवक्त्र, स्कन्द का एक सैनिक था (९.४५, ७५)।

अजविन्दु, सुवीरों के वंश में उत्पन्न एक कुलाङ्गार राजा का नाम (५.७४, १४)।

अजातशत्रु = युधिष्ठिर : ६.८५, १९; २.१३, ९।

१. अजित, एक प्राचीन राजा का नाम है (१.१, २२६)।

२. अजित = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अजितशत्रु—२.११, २४ (ब्रह्मा की सभा में)।

अजेय, एक प्राचीन राजा का नाम है (१.१, २३४)।

अजैकपाद्, स्थाणु के पुत्र, रुद्रों में से एक का नाम है (१.६६, २; १२३, ६८)। 'अजैकपादहिर्बुध्न्यौ रक्ष्यते धनदेन च', (५.११४, ४)। तीन लोकों के अधिपति देवताओं के अन्तर्गत इसका उल्लेख है (१२.२०८, १९)। = शिव के सहस्र नामों में से एक (१३.१७, १०३)। तीन लोकों के अधिपति, ग्यारह रुद्रों में से एक (१३.१५०, १२)।

अजोदर, स्कन्द का एक सैनिक था (९.४५, ६०)।

१. अञ्जन, एक पर्वत का नाम है (२.७८, १५)।

२. अञ्जन, पातालवासी एक हाथी का नाम है जो सुप्रतीक नामक हाथी के वंश में उत्पन्न हुआ था (५. ९९, १५)। घटोत्कच के साथी राक्षस की सवारी में प्रयुक्त एक दिग्गज (६.६४, ५७)। किरातों के पास अञ्जन के कुल में उत्पन्न हुए ऐसे हाथी थे जिनका स्वभाव अत्यन्त कठोर था; इन्हें युद्ध की अच्छी शिक्षा मिली थी। इनके गण्डस्थल और मुख से मद की धारा बहती रहती थी, और यह सब सुवर्णमय कवचों से विभूषित थे; (७.११२, ३३–३४)। अञ्जन कुल के अनेक हाथियों के वध का उल्लेख (७.१२१, २५)।

अञ्जनक— ७.११२, १७ : 'कुलमाञ्जनकं नाम यत्रैते वीर्यशालिनः । आस्थिता बहुभिर्म्लेच्छैर्युद्धशौण्डैः प्रहारिभिः ॥'

अञ्जनपर्वन्, घटोत्कच के पुत्र का नाम है जो युधिष्ठिर के मित्रों में था (५.१९४, २०)। 'पौत्रेण भीमसेनस्य' (७.१५६, ८१; देखिये १५६, ८३.८७ : घटोत्कचसुतम् ; १५६, ८९) अश्वत्थामा द्वारा इसका वध (७.१५६, ९०)।

अञ्जनाभ एक ऐसे पर्वत का नाम है जिसके नाम का प्रातःकाल के समय उच्चारण करने से पाप दूर हो जाता है (१३.१६६, ३२)।

अञ्जलिकावेध, गजराज को वश में करने की उस विद्या का नाम है जिससे भीमसेन परिचित थे (७.२६, २३)।

अञ्जलिकाश्रम, एक ऐसे तीर्थ का नाम है जहाँ शाक का भोजन करते हुए चीरवस्त्र धारण कर कुछ समय तक निवास करने से कन्याकुमारी तीर्थ के दस बार सेवन का फल प्राप्त होता है (१३.२५, ५२)।

अटविक (**काः**), बहु०—९.३२, ४ (पृथिवी सर्वा सम्लेच्छाटविका)।

अटवी, सहदेव द्वारा विजित एक नगर का नाम है (२.३१, ७२)।

अटवीशिखर, भारतवर्ष के एक जनपद का नाम है (६.९, ४८)।

अठिद, दक्षिणदिशा में स्थित एक जनपद का नाम है (६.९, ६४)।

अडम्बर, स्कन्द के एक सखा का नाम है (९.४५, ३९)।

अणिमत्, वरुण के राजप्रासाद के नागों में से एक का नाम है (२.९, ९)।

अणिमन् (सूक्ष्मता)—शम्भु के गुणों के अन्तर्गत इसका उल्लेख (१२.३०२, १६)। शम्भु प्रजापति के गुणों के अन्तर्गत इसका उल्लेख (१२.३१२, १३)।

अणी, शूल के अग्रभाग का नाम है। इसको अपने शरीर के भीतर धारण किये हुए विचरने के कारण ही माण्डव्य ऋषि का नाम 'अणीमाण्डव्य' पड़ गया (१.१०८, ८)।

अणीमाण्डव्य एक ऋषि का नाम है। 'धर्मस्य नृपु संभूतिरणीमाण्डव्यशापजा', (१.२, १००)। "पूर्वकाल की बात है, वेदार्थों के ज्ञाता और महान् यशस्वी महर्षि भगवान् अणीमाण्डव्य चोर न होते हुए भी चोरी के संदेह से शूली पर चढ़ा दिये गये। परलोक में जाने पर उन महायशस्वी महर्षि ने पहले धर्म को बुलाकर इस प्रकार कहा, 'धर्मराज! पहले मैंने कभी बाल्यावस्था के कारण सींक से एक पक्षी के बच्चे का भेदन कर दिया था। मुझे केवल एक यही पाप स्मरण है। अपने किसी दूसरे पाप का मुझे स्मरण नहीं। मैंने अगणित तप किया है, फिर उस तप ने मेरे छोटे से पाप को क्यों नष्ट नहीं कर दिया? ब्राह्मण का वध समस्त प्राणियों के वध से बड़ा है। तुमने मुझे शूली पर चढ़वाकर यही पाप किया है, अतः तुम पापी हो और तुम्हें पृथ्वी पर शूद्रयोनि में जन्म लेना पड़ेगा।' अणीमाण्डव्य के इस शाप से धर्म भी शूद्रयोनि में उत्पन्न हुए (१.६३, ९२–९६)।" युधिष्ठिर द्वारा मय-निर्मित सभा भवन में प्रवेश करने के समय उपस्थित महर्षियों में यह भी थे (२.४, १२)।

अणीमाण्डव्योपाख्यान (म्)—"प्राचीनकाल में माण्डव्य नामक एक धैर्यवान्, धर्मज्ञ, सत्यनिष्ठ, और तपस्वी ब्राह्मण थे। वह अपने आश्रम के द्वार पर अपनी दोनों बाँहें ऊपर उठाये मौन व्रत धारण करके तपस्या करते थे। एक दिन कुछ लुटेरे चोरी किया हुआ सामान महर्षि के आश्रम में रखकर भय के कारण प्रजा-रक्षक सेना के आने के पहले ही भाग कर कहीं छिप गये। उनके छिप जाने पर जब रक्षक सेना वहाँ पहुँची तो उसने महर्षि को देखकर उनसे चोरों के भागने का मार्ग पूछा। रक्षकों के इस प्रकार पूछने पर भी महर्षि ने भला बुरा कुछ भी नहीं कहा। तब उन राज-पुरुषों ने उस आश्रम में ही चोरों को खोजना आरम्भ किया और वहाँ छिपे हुये चोरों तथा चोरी के माल को भी देख लिया। इस पर रक्षकों को इन महर्षि पर भी चोरी का सन्देह हुआ जिससे उन्होंने महर्षि को राजा के सम्मुख उपस्थित किया। राजा की आज्ञा से रक्षकों ने महर्षि माण्डव्य को शूली पर चढ़ा दिया। धर्मात्मा महर्षि माण्डव्य उस शूल के अग्रभाग पर बैठे रहे और भोजन न मिलने पर भी उनकी मृत्यु नहीं हुई। शूली की नोक पर तपस्या करने वाले उन महात्मा से प्रभावित होकर तपस्वी मुनियों को अत्यन्त सन्ताप हुआ और वे रात में पक्षियों का रूप धारण करके वहाँ उड़ते हुये आये और माण्डव्य से इस प्रकार शूल पर बैठकर कष्ट सहन करने का कारण पूछा (१.१०७)।" "माण्डव्य के जीवित रहने का समाचार सुनकर राजा ने शूली पर बैठे हुये उन मुनिश्रेष्ठ को प्रसन्न करने का उपाय किया। राजा ने उनसे विधिवत् क्षमा माँगी; उन्हें शूली से नीचे उतरवाकर शूल के अग्रभाग के सहारे उनके शरीर के भीतर से शूल को निकालने के लिये खींचा। खींच कर निकालने में असमर्थ होकर राजा ने उस शूल को मूलभाग में ही काट दिया। तब से वह मुनि शूलाग्र भाग को अपने शरीर के भीतर धारण किये हुये ही विचरने लगे। इस अत्यन्त घोर तपस्या के द्वारा महर्षि ने ऐसे पुण्यलोकों पर विजय पाई जो दूसरों के लिये दुर्लभ हैं। शूल के अग्रभाग को शरीर में धारण किये रहने के कारण ही मुनि का नाम अणीमाण्डव्य पड़ गया, क्योंकि शूल के अग्रभाग को अणी कहते हैं। अणीमाण्डव्य ने यह व्यवस्था दी कि धर्मशास्त्र के अनुसार जन्म से लेकर बारह वर्ष की आयु तक बालक जो कुछ भी करेगा उसमें अधर्म नहीं होगा क्योंकि उस समय तक बालक को धर्मशास्त्र के आदेश का ज्ञान नहीं हो सकेगा; और चौदह वर्ष की आयु तक किसी को भी पाप नहीं लगेगा। (१.१०८)।"

अणीयसाम् अणीयान् = कृष्ण।

अणु = शिव (सहस्र नामों में से एक), और विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अणुह, प्राचीन काल के एक व्यक्ति का नाम है (१.१, २३२)।

अण्ड = शिव (सहस्र नामों में से एक), सूर्य।

अण्डज—ब्रह्मा का छठा जन्म ब्रह्माण्ड से हुआ था अतः उसे अण्डज कहते हैं ('अण्डजं चापि मे जन्म त्वत्तः षष्ठं विनिर्मितम्', १२.३४७, ४२; देखिये ३४८, ४४ भी)।

अण्डजाः = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अण्डधर = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अण्डनाशन = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अतन्द्रित = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अतपन = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अतिकाल = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अतिकृच्छ्र = महापुरुष।

अतिदीप्त = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अतिधूम्र = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

१. अतिबल—वायु ने कार्त्तिकेय को इस नाम का एक सेवक प्रदान किया था (९.४५, ४४)।

२. अतिबल, अनङ्ग के पुत्र का नाम है जो नीतिशास्त्र का ज्ञाता होते हुये भी विशाल साम्राज्य प्राप्त कर लेने के पश्चात् इन्द्रियों का दास बन गया था (१२.५९, ९२)।

अतिबाहु, प्राधा के चार गन्धर्वसत्तमाः पुत्रों में से एक का नाम है (१.६५, ५१)।

अतिभीम, तप नामधारी पाञ्चजन्य अग्नि के पुत्र हैं जो पन्द्रह उत्तरदेवों अथवा अग्नि विनायकों में से एक थे (३.२२०, ११)।

अतियम, वरुण द्वारा स्कन्द को प्रदत्त दो पार्षदों में से एक का नाम है (९.४५, ४५)।

अतियशस् = कृष्ण (१२.३४१, ११)।

अतिरथ, पुरुवंशी राजा मतिनार के तृतीय पुत्र का नाम है (१.९४, १४)।

अतिलोमा, एक असुर का नाम है जिसका कृष्ण ने वध किया था (२.३८, २९ के बाद गीता प्रेस संस्करण में दाक्षिणात्य पाठ, पृ० ८२५ के प्रथम कॉलम में)।

अतिवर्चस्, हिमवान् द्वारा अग्निकुमार को प्रदत्त दो पार्षदों में से एक का नाम (९.४५, ४६)।

अतिवृद्ध = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अतिशृङ्ग, विन्ध्य द्वारा अग्निकुमार को प्रदान किये गये दो पार्षदों में से एक का नाम है (९.४५, ४९)।

अतिषण्ड, बलराम जी के मुख से निकले हुए श्वेत-वर्ण विशालकाय सर्प का स्वागत करनेवाले नागों में से एक का नाम है (१६.४, १६)।

अतिसार—देखिये **अभिसार**।

अतिस्थिर मेरु द्वारा कार्त्तिकेय को प्रदत्त दो पार्षदों में से एक का नाम (९. ४५, ४८)।

१. अत्रि, एक ब्रह्मर्षि का नाम है (१.२१, १३)। यह ब्रह्मा के मानस पुत्र, छः महर्षियों में से एक थे (१.१६५, १०; ६६, ४)। इनके अनेक पुत्र हुए जो सभी सिद्ध और महर्षि थे (१.६६, ६)। नीलकण्ठी के अनुसार इनके पुत्र इस लोक में विदुर के रूप में उत्पन्न हुए (१.६७, ८६ पर नीलकण्ठी)। 'यश्चोदितो भास्करेऽभूत्प्रणष्टे सोप्यत्रात्रिर्भगवानाजगाम', (१.१२३, ५१)। पराशर के राक्षस-सत्र की समाप्ति कराने की इच्छा से यह पराशर के पास आये थे (१.१८१, ८)। ब्रह्मा की सभा में उपस्थित ऋषियों के अन्तर्गत इनका भी उल्लेख है (२.११, १९)। 'वसिष्ठभृग्व-त्रिसमैस्तापसैरुपशोभितम्', (३.६४, ६२)। ब्राह्मण की महिमा के विषय में अत्रि मुनि की प्रशंसा, गौतम और अत्रि का संवाद तथा महाराज पृथु से अत्रि के उपहार आदि ग्रहण करने का उल्लेख (३.१८५)। अत्रि को जब प्रजा की सृष्टि करने की इच्छा हुई तब उन्होंने अग्नियों को ही अपने हृदय में धारण किया, जिससे उनके शरीर से विभिन्न अग्नियों का प्रादुर्भाव हुआ (३.२२२, २८)। 'अत्रेः पुत्रोऽभवत्सोमः', (७.१४४, ४)। द्रोणाचार्य को ब्रह्मलोक ले जाने की इच्छा से पधारने वाले लोगों में से एक यह भी थे (७.१९०, ३३)। पूर्वकाल में सोम ने जो राजसूय यज्ञ किया था उसमें अत्रि ने ही होता का कार्य सम्पन्न किया था (९.४३, ४७)। स्कन्द के अभिषेक के समय पधारने वाले लोगों में एक यह भी थे (९.४५, १०)। ब्रह्मा के पुत्रों में से एक के रूप में इनका उल्लेख (१२.१६६, १६)। वैदिक धर्म का पालन करने वाले लोगों के अन्तर्गत इनका उल्लेख (१२.१६६, २३)। ब्रह्मा के मानस पुत्रों में से एक के रूप में इनका उल्लेख (१२.२०७, १७; २०८, ४)। 'अत्रिवंशसमुत्पन्नो ब्रह्मयोनिः सनातनः', (१२.२०८, ६)। 'अत्रेः पुत्रश्च भगवांस्तथा सारस्वतः प्रभुः', (१२.२०८, ३१)। 'महर्षि-भगवानत्रिर्वेद तच्छुक्रसंभवम्', (१२.२१४, २३)। वेद की ऋचाओं द्वारा विष्णु की स्तुति करके सिद्धि प्राप्त करने वाले महर्षियों में एक यह भी थे (१२.२९२, १६)। इक्कीस प्रजापतियों में से एक (१२.३३४, ३५)। चित्रशिखण्डी सात प्रसिद्ध ऋषियों में से एक यह भी थे (१२.३३५,२९)।

उन आठ प्रकृतियों में से एक यह भी हैं जिन पर सम्पूर्ण लोक प्रतिष्ठित हैं (१२.३४०, ३४)। ब्रह्मा के मानस पुत्रों के अन्तर्गत इनका उल्लेख (१२.३४०, ६९)। अत्रि की पत्नी अनसूया ने एक समय रुष्ट होकर अपने पति का परित्याग कर दिया और मन में यह संकल्प करके कि 'मैं किसी प्रकार पुनः अत्रि के वशीभूत नहीं होऊँगी', महादेव की शरण में चली गई; महादेव ने अनसूया को यह वर दिया कि उसे अत्रि के सहयोग के बिना ही एक पुत्र प्राप्त होगा (१३.१४, ९५, ९८)। भीष्म को देखने के लिये उपस्थित महर्षियों में एक यह भी थे (१३.२६, ४)। 'इत्येवं भगवानत्रिः पितामहसुतोऽब्रवीत्', (१३.६५, १)। 'इमं तु देशं मुनयः पर्युपासन्ति नित्यदा। ततोऽगस्त्यश्च कण्वश्च भृगुरत्रिर्वृषाकपिः ॥', (१३.६६, २३)। कुश-समूहों से उत्पन्न ब्रह्मर्षियों में से एक यह भी थे (१३.८५, १०८)। 'स्वायंभुवोऽत्रिः कौरव्य परमर्षिः प्रतापवान्', (१३.९१, ४)। 'ततः सञ्चिन्तयामास वंशकर्त्तारमात्मनः। ध्यातमात्रस्तथा चात्रिराजगाम तपोधनः॥ अथात्रिस्तं तथा दृष्ट्वा पुत्रशोकेन कर्षितम्। भृशमाश्वासयामास वाग्भिरिष्टाभिरव्ययः ॥' (१३.९१, १८-१९)। 'इत्येवमुक्त्वा भगवान्स्ववंश्यं तमृषिं पुरा। पितामहसभां दिव्यां जगामात्रिस्तपोधनः ॥', (१३.९१, ४५)। समाधि द्वारा सनातन ब्रह्मलोक प्राप्त करने की इच्छा से तपस्या करते हुए पृथ्वी पर विचरण करने वाले ऋषियों के अन्तर्गत इनका उल्लेख (१३.९३, २१)। 'गुरूणीति विदित्वाथ न ग्राह्याण्यत्रिरब्रवीत्', (१३.९३, ४१)। 'अथात्रिप्रमुखा राजन् वने तस्मिन्महर्षयः। व्यचरन् भक्षयन्तो वै मूलानि च फलानि च ॥' (१३.९३, ६२)। 'अत्रिरुवाच' (१३.९३, ६६)। 'अत्रिः क्षुधापरीतात्मा ततो वचनमब्रवीत्' (१३.९३, ८५)। 'अत्रिरुवाच' (१३.९३, ८६.११७)। पश्चिम दिशा में रहने वाले वरुण के सात ऋत्विजों में से इनके पुत्र भी एक थे (१३.१५०, ३७)। उत्तरदिशा में रहने वाले कुबेर के सात ऋत्विजों में एक यह भी थे (१३.१५०, ३८)। सदैव गायत्री मंत्र का सेवन करने वाले ब्रह्मर्षियों के अन्तर्गत इनका भी उल्लेख है (१३.१५०, ७९)। अत्रि ने उतथ्य को बुलाकर अपनी यशस्विनी पौत्री भद्रा का हाथ उनके हाथ में दे दिया (१३.१५४, १२)। वायु ने अत्रि के महान् कर्म का वर्णन करते हुये कहा कि, "प्राचीनकाल में एक बार देवता और दानव सब घोर अन्धकार में परस्पर युद्ध कर रहे थे क्योंकि राहु ने अपने बाणों से चन्द्रमा और सूर्य को आहत कर दिया था। तब असुरों से ग्रस्त देवताओं की प्राणशक्ति क्षीण हो चली और वे भागकर अत्रि मुनि के पास गये। अत्रि ने देवताओं के निवेदन पर चन्द्रमा और सूर्य का रूप धारण करके सम्पूर्ण जगत् को अन्धकार-शून्य और आलोकित करते हुये अपने तेज से ही असुरों को दग्ध कर दिया जिससे देवताओं ने अपने पराक्रम से दैत्यों को मार डाला। अतः 'तुम बताओ कि अत्रि से श्रेष्ठ कौन क्षत्रिय है'। (१३.१५६, १.४.७-१३.१४)।" 'अत्रेः पुत्रश्च धर्मात्मा तथा सारस्वतः प्रभुः। उत्तरां दिशमाश्रित्य य एधन्ते निबोध तान्॥ अत्रिर्वसिष्ठः शक्तिश्च पाराशर्यश्च वीर्यवान्।' (१३.१६५, ४३.४४)। 'वसिष्ठः कश्यपश्चैव विश्वामित्रोऽत्रिरेव च। मार्गान्सर्वान्परिक्रम्य परिश्रान्ताः स्वकर्मभिः ॥' (१४.३५, २६)।

२. अत्रि, शुक्र के चार असुरयाजक पुत्रों में से एक का नाम है (१.६५, ३७)।

३. अत्रि = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अत्रिभार्या, महर्षि अत्रि की पत्नी अनुसूया के लिये प्रयुक्त हुआ है (१३.१४, ९५)।

अत्रिसुत = चन्द्रमा।

अतीन्द्र = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अतीन्द्रिय = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अतुल्य = शिव (सहस्र नामों में से एक), = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अत्युग्र = शिव (१०.७, ९)।

अभ्यानमस्कर्तृ = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अथर्व = शिव (१३.१४, ३०९)। बहु० = अथर्ववेद (१३.९८, ३०)।

१. **अथर्वन्**, एक ऋषि का नाम है जिन्होंने समुद्र में छिपे हुये अग्नि का पता लगाया था (३.२२२, ८.११.१८.१९.२०; ५.४३, ५०)। 'अथर्वाङ्गिरसौ', (८.३४, ४४)। 'स-बृहस्पतिः', (१३.१४, ३९७)।

२. **अथर्वन्** = अथर्ववेद। 'ऋग्वेदे सयजुर्वेदे तथैवाथर्वसामसु' (१२.३४१, ८)। 'पञ्चकल्पमथर्वाणं कृत्याभिः परिबृंहितम्', (१२.३४२, ९९)। 'अथर्वणं वेदमधीत्य विप्रः स्नायीत यः पुष्करमाददाति', (१३.९४, ४४)।

३. **अथर्वन्** (बहु०) = अथर्ववेद। 'ऋग्वेदः सामवेदश्च यजुर्वेदोऽप्यथर्वणः', (३.१८९, १४)। 'नैवर्क्षु तत्र यजुष्षु नाप्यथर्वसु न दृश्यते वै विमलेषु सामसु', (५.४४, २८)। 'ऋक्सामवर्णाक्षरतो यजुषोऽथर्वणस्तथा', (१२.२३५, १)।

अथर्ववेद—'अथर्ववेदप्रवराः पूगयज्ञियसामगाः', (१.७०, ४०)। 'अथर्ववेदश्च तथा सर्वशास्त्राणि चैव ह', (२.११, ३२)। 'अथर्ववेदप्रोक्तैश्च याश्चोपनिषदि क्रियाः', (३.२५१, २४)। 'अथर्ववेदमन्त्रैश्च देवेन्द्रं समपूजयत्', (५.१८, ५)। 'अथर्ववेदे वेदे च बभूवर्षिः सुनिष्ठितः', (१३.१०, ३८)।

१. **अथर्वशिरस्** एक उपनिषद् का नाम है (१.७०, ३९; ३.३०५, २०; १३.९०, २९)।

२. **अथर्वशिरस्**, नारद द्वारा भगवान् नारायण की दो सौ नामों से की गई स्तुति के अन्तर्गत यह ११३ वाँ नाम है।

अथर्वशीर्ष = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अथर्वाङ्गिरस् = अङ्गिरस् (५.१८, ६.८)।

अथर्वाङ्गिरस् = अङ्गिरस् (२.११, २०)। 'अथर्वाङ्गिरसो नाम वेदोऽस्मिन् वै भविष्यति', (५.१८, ७)। 'अथर्वाङ्गिरसी ह्येषा श्रुतीनामुत्तमा श्रुतिः', (८.६९, ८५)। 'कृत्यामथर्वाङ्गिरसीमिवोग्रां', (८.९१, ४८; ९.१७, ४४)।

अथर्वाङ्गिरसः (बहु०) ऋषियों के एक वर्ग का नाम है (२.११, २०)।

अथर्वाङ्गिरसः 'यजुर्ऋक्सामभिर्जुष्टमथर्वाङ्गिरसैस्तथा' (१२.३३५, ४०)।

अथर्वाण = अथर्ववेद (१२.३४२, १००)।

अथिद—देखिये **अलिन्द**।

अदम्भ = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अदान्तनाशन = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

१. **अदिति**, कश्यप को विवाहित, दक्ष की १३ कन्याओं में से एक का नाम है—इसके पुत्र बारह आदित्य हुये जो लोकेश्वर हैं (१.६५, १२.१४; १.६६, १३)। इसके इन्द्र आदि बारह पुत्रों का उल्लेख (१.६६, ३६)। 'अदित्या विष्णुना प्रीतिर्यथाभूदभिवर्धिता', (१.१२३, ३९)। 'पाञ्चाली सुषुवे वीरानादित्यानदितिर्यथा', (१.२२१, ८०)। ब्रह्मा की सभा में इसके उपस्थित होने का उल्लेख (२.११, ३९)। 'अदितेरपि पुत्रत्वमेत्य यादवनन्दन', (३.१२, २५)। पूर्वकाल में मैनाक पर्वत के कुक्षि भाग में स्थित विनशन नामक तीर्थ में अदिति ने पुत्रप्राप्ति के हेतु साध्य देवताओं के उद्देश्य से ब्रह्मौदन तैयार किया था (३.१३५, ३; तु० की० 'अदितिः पुत्रकामा साध्येभ्यो देवेभ्यो ब्रह्मौदनमपचत्', तैत्तिरीय संहिता ६.५, ६, १; और महाभारत १२.३४२, ५६)। 'अदिताः', अर्थात् विष्णु (३.२५४, २७)। इसने एक सहस्र वर्ष तक गर्भवती रहने के पश्चात् विष्णु को जन्म दिया (३.२७२, ६२)। 'विष्णुनाथशिरः प्राप्य तथाऽदित्यां निवत्स्यता', (३.३१५, १४)। प्राग्ज्योतिषपुर में निवास करने वाले भूमिपुत्र महाबली नरकासुर ने अदिति के सुन्दर मणिमय कुण्डल का अपहरण कर लिया था जिसे श्रीकृष्ण ने पुनः प्राप्त कर अदिति को समर्पित कर दिया (५.४८, ८०.८५)। 'अदित्याश्चैव यः पुत्रो ज्येष्ठः श्रेष्ठः कृतः स्मृतः', (५.९८, १३)। 'अदित्यां य इमे जाता बलविक्रमशालिनः', (५.१०५, १६)। 'यथा भृगुः पुलोमायामदित्यां कश्यपो यथा', (५.११७,

१२)। 'तुल्यो महात्मा तव कुन्तिपुत्रो जातोऽदितेर्विष्णुरिवारिहन्ता', (८.६८, १४)। 'अदितिर्देवमाता च ह्रीः श्रीः स्वाहा सरस्वती', (९.४५, १३)। 'अदित्याः सप्तधा त्वं तु पुराणो गर्भतां गतः। पृश्निगर्भस्त्वमेवैका-त्रियुगं त्वां वदन्त्यपि। (१२.४३, ६), जिसकी व्याख्या करते हुये नीलकण्ठी में यह वक्तव्य मिलता है: "सप्तधा विष्ण्वाख्य आदित्यो वामनश्चेति द्वेधा अदित्यामेव जन्म। ततोऽदिते रूपान्तरेषु पृश्निप्रभृतिषु क्रमात् पृश्निगर्भः परशुरामः दाशरथी रामः यादवौ रामकृष्णौ चेति सर्वेषु गर्भेषु एकएव त्वं न तु प्रतिगर्भं भिन्नः। त्रिषु वर्तमानाद्युगात् पूर्वेषु भवं त्रियुगन्। अन्ये तु धर्मज्ञाने वैराग्यैश्वर्ये श्रीयशसी चेति त्रीणि युग्मानि तद्वन्तमित्याहुः। (१२.४३, ६ पर नीलकण्ठी)।" 'हिरण्यवर्णं यं गर्भमदितेर्दैत्यनाशनम्। एकं द्वादशधा जज्ञे तस्मै सूर्यात्मने नमः॥' (१२.४७, ३८)। 'आदित्यान-दितिर्जज्ञे देवश्रेष्ठान्महाबलान्।', (१२.२०७, २६)। 'अदित्यां द्वादशादित्यः संभविष्यामि काश्यपात्।', (१२.३३९, ८१)। 'पुर्यामदितेर्विप्रियंकरम्', (१२.३३९, ९१)। "अदिति ने देवताओं के लिये इस उद्देश्य से भोजन तैयार किया था कि उसे खाकर देव-गण असुरों का वध करने में समर्थ होंगे। इसी समय बुध अपनी व्रतचर्या समाप्त करके अदिति के पास गये और बोले, 'मुझे भिक्षा दीजिये।' अदिति ने ऐसा विचार करके कि उसके पकाये हुए अन्न को पहले देवताओं को ही खाना चाहिये अन्य को नहीं, उसने बुध को भिक्षा नहीं दी। भिक्षा न मिलने से रोष में भरे हुए उस बुध नामक ब्राह्मण ने अदिति को यह शाप दिया: 'अण्ड नामधारी विवस्वान् के द्वितीय जन्म के समय अदिति के उदर में पीड़ा होगी।' माता अदिति के पेट का वह अण्ड उस पीड़ा द्वारा मारा गया। मृत अण्ड से प्रगट होने के कारण श्राद्धदेवसंज्ञक विवस्वान् मार्तण्ड के नाम से प्रसिद्ध हुये। (१२.३४२, ५६; तु० की० १३.८३, २६ भी।" 'वसवो अदितिः', (१३.१, ५५)। 'अदितिः कश्यपस्याथ सर्वास्ताः पतिदेवताः।', (१३.१४६, ६)।

२. **अदिति** को बालकों को कष्ट देने वाला महाभयंकर रेवती ग्रह कहा गया है ('अदितिं रेवतीं प्राहुर्ग्रहस्तस्यास्तु रैवतः। सोऽपि बालान् महाघोरो बाधते वै महाग्रहः॥', (३.२३०, २९)।

३. **अदिति** = शिव का एक व्यक्त रूप (सहस्र नामों में से एक)।

अदितिनन्दनौ (= अदिति के दो पुत्र, अर्थात् इन्द्र और विष्णु; 'शतक्रतुश्च भगवान् विष्णुश्चादितिनन्दनौ', १३.१४, ३९२)।

अदितेः पुत्र = वरुण (९.४९, १२)।

अदितेः सुत = सूर्य (सूर्य के १०८ नामों में से ९६ वाँ नाम: ३.३, २५)।

अदीन = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अहक, जरासन्ध के पुत्र का नाम है (८.७, १८)।

अदृश्य = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अदृश्यन्ती, महर्षि वशिष्ठ की पुत्र-वधू, शक्ति की पत्नी, और पराशर की माता का नाम है। "महर्षि वशिष्ठ जब नाना प्रकार के पर्वतों और बहुसंख्यक देशों में भ्रमण करते हुए पुनः अपने आश्रम के समीप आये तब उस समय उनकी पुत्रवधू अदृश्यन्ती भी उनके पीछे हो चली। मुनि को पीछे की ओर से सङ्गतिपूर्वक छहों अङ्गों से अलङ्कृत तथा स्फुट अर्थों से युक्त वेदमंत्रों के अध्ययन का शब्द सुनाई पड़ा। तब मुनि को अदृश्यन्ती के गर्भ में अपने पौत्र की स्थिति को जानकर अत्यन्त हर्ष हुआ। अपनी वंशपरम्परा का इस प्रकार लोप न होता हुआ देखकर मुनि वसिष्ठ मरने के संकल्प से विरत हो गये और अपनी पुत्रवधू के साथ अपने आश्रम की ओर लौटने लगे। मार्ग में उनका राक्षस रूपी कल्माषपाद से साक्षात्कार हुआ। उस समय अदृश्यन्ती के आग्रह पर वसिष्ठ ने अपनी हुंकार मात्र से उस राक्षस को रोकते हुए अपने योग-प्रभाव द्वारा उसे शाप-मुक्त कर दिया (१.१७७, ११.१३.१९)।" "वसिष्ठ के आश्रम में रहते हुए अदृश्यन्ती ने शक्ति के वंश की वृद्धि करने वाले एक पुत्र को जन्म दिया जिसका महर्षि वसिष्ठ ने पराशर नाम रक्खा। एक दिन ब्रह्मर्षि पराशर ने अपनी माता अदृश्यन्ती के सामने ही वसिष्ठ को 'तात' कह कर पुकारा। अपने पुत्र के मुख से परिपूर्ण अर्थबोधक 'तात' शब्द सुनकर अदृश्यन्ती के नेत्रों में अश्रु भर आये और उसने बालक से इस प्रकार कहा: पुत्र! ये तुम्हारे पिता के भी पिता हैं। तुम इन्हें तात कहकर मत पुकारो (१.१७८, १.५-७)"। 'अदृश्यन्त्यां च वासिष्ठो' (५. ११७, ११)।

१. **अद्भुत** अग्नि का एक नाम है। 'अद्भुतस्य प्रिया भार्या तस्य पुत्रो विभूरसि', (३. २२२, २७)। 'अद्भुतस्य तु माहात्म्यं यथा वेदेषु कीर्त्तितम्' (३.२२२, ३०)। 'समाहूतो हुतवहः सोऽद्भुतः सूर्यमण्डलात्', (३.२२४, २८)।

२. **अद्भुत** = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

१. **अद्रि**, एक इक्ष्वाकुवंशी राजा, विश्वगश्व, के पुत्र का नाम है (३. २०२, ३)।

अद्रिका एक अप्सरा का नाम है जो ब्रह्मा के शाप से मछली बनकर यमुना नदी में रहती थी। यमुना के प्रवास काल में इसने बाज पक्षी द्वारा गिराये हुये उपरिचर के वीर्य को ग्रहण कर लिया था। तत्पश्चात् १०वाँ मास आने पर मत्स्य-जीवी मल्लाहों ने उस मछली को जाल में फँसा लिया और उसके उदर को चीर कर एक कन्या और एक पुरुष को बाहर निकाला (१.६३, ५८-६०)। अन्य अप्सराओं के साथ यह भी अर्जुन के जन्म के समय नृत्य और गायन करती है (१.१२२, ६१)।

अद्रिजा एक नदी का नाम है (१३.१६५, २२)।

अधन = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अधर = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अधर्म की उत्पत्ति उस समय हुई जब प्रजा भूख से पीड़ित हो भोजन की इच्छा से एक दूसरे को मारकर खाने लगी। यह समस्त प्राणियों का नाश करने वाला है। इसकी स्त्री निर्ऋति हुई जिससे सदैव पापकर्म में रत रहने वाले भय, महाभय, और मृत्यु नामक तीन भयंकर राक्षस-पुत्र उत्पन्न हुये (१.६६, ५३-५५)। 'अधर्मेण न नो धर्मः संयुज्यति कथंचन', (१.१२२, ४१)। 'दर्पो नाम श्रियः पुत्रो जज्ञेऽधर्मा-दिति श्रुतिः', (१२.९०, २६)। 'स यथा दर्पसहितमधर्मं नानुसेवते', (१२.९०, २८)।

अधर्महन् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अधर्षण = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अधिदेव = कृष्ण (१३.१५८, ३०)।

अधिदैव (देवताओं के अधिपति)—'अधिदैवे नियुक्तोऽस्मि त्वया लोकेश्वरेश्वर', (१२.२५७, ११)।

अधिरथ, चम्पा के निकट रहनेवाले और धृतराष्ट्र के मित्र एक सूत का नाम है। "यह राधा का पति और कर्ण का पालक पिता था। यह कर्ण को वसुषेण के नाम से पुकारता था और उसे द्रोण द्वारा शिक्षित कराने के लिए हस्तिनापुर भेजा था (१.१११, २३-२४)।" कर्ण के अभिषेक के समय यह कर्ण को पुकारता हुआ रङ्गभूमि में आया और स्नेहविह्वल होकर कर्ण को हृदय से लगा लिया; इसे देखकर पाण्डुकुमार भीमसेन यह समझ गये कि कर्ण एक सूत-पुत्र है (१.१३७, १-५)। इसकी और धृतराष्ट्र की मित्रता का उल्लेख (३.३०९, १)। इसके तथा इसकी पत्नी राधा द्वारा बालक कर्ण की प्राप्ति, राधा द्वारा कर्ण का पालन, तथा हस्तिनापुर में द्रोण के पास कर्ण की शिक्षा-दीक्षा का उल्लेख (३.३०९)। 'सूतो हि मामधिरथो दृष्ट्वैवाभ्यानयद्गृहान्' (५.१४१, ५)। 'तथा मामभिजानाति सूतश्चाधिरथः सुतम्' (५.१४१, ८)। 'कौन्तेयस्त्वं न राधेयो न तवाधिरथः पिता', (५.१४५, २; ६.१२२, ९)।

अधिरथि = कर्ण: ३.३१०, २; ५.१४५, १; ६.१२२, ९; ७.३, ८; ३२, ५१.५४.५९; १०५, १२; १३२, ४.२३; १३४, ११.१३.१५.२१; १३५, १.३८; १३७, ८-९.१२; १३८, २७; १३९, ५१.५४.५६-५९.८२. ८९.९५; १४७, ३०; १६७, ११; १८८, १६; ८.८, १०; ९, १५, ६९;

२१, १७; २४, ३६; ३२, ४१; ३६, १८; ४१, १; ४२, १; ४६, ४०; ४८, २; ४९; ३१. ४४; ५१, ६८; ५६, ४३.५०.५४.६२.६७; ६५,२२; ६६,४६; ६८, १६; ७३, १०१; ७८, २१; ८१, ५४; ८२, ९:११.२०; ८३, १८; ८८, ५; ८९, २.६७.७४.८२.८८; ९०, ५.७५.७८; ९१, ३७; ९२, १; ९४, १३.३२; ९५, ६; ९६, ५९; ११.२३, २।

अधिराज्य, भारतवर्ष के एक जनपद का नाम है (६.९, ४४)।

अधिरोह = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अधिवङ्ग एक तीर्थ का नाम है, जहाँ पहुँचकर तीर्थयात्री इस शरीर के अन्त में गुह्यलोक में पहुँच कर आनन्द का भागी होता है (३.८४, ११५)।

अधिष्ठान = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अधृत = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अधृष्या एक नदी का नाम है (६.९, २४)।

१. अधोक्षज = कृष्ण (१.२, २४७)। 'ततस्तं निश्चितात्मानं युद्धाय यदुनन्दनः। उवाच वाग्मी राजानं जरासन्धमधोक्षजः॥ (२.२३, १)।' 'नूनमेतत्समादातुं पुनरिच्छत्यधोक्षजः।', (२.४०,११)। 'अधो न क्षीयते जातु यस्मात्तस्मादधोक्षजः।', (५.७०, १०)। 'मंस्यत्यधोक्षजो राजन् मयादर्चति मामिति।', (५.८८, ३)। 'अकृतेनैव कार्येण गतः पार्थानधोक्षजः।' (५.१५३, ९)। 'ततस्तु यादवश्रेष्ठो धृतराष्ट्रमधोक्षजः।', (९.६३, ३७)। 'यमेकं बहुधाऽऽत्मानं प्रादुर्भूतमधोक्षजम्।', (१२.४७, ३३)। 'पृथिवी-नभसी चोभे विश्रुते विश्वतोमुखे। तयोः सन्धारणार्थं हि मामधोक्षजमञ्जसा॥', (१२.३४२, ८२, और ८३-८४ वाँ श्लोक भी)। 'इह देवः सपत्नीकः समाक्रीडत्यधोक्षजः।', (१३.१४, ६९)। 'प्रत्यपश्यच्च स विमुर्ज्ञातिक्षय-मधोक्षजः।', (१६.६, ५७)।

२. अधोक्षज = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अधःशिरा, एक दिव्य महर्षि का नाम है जिसने कृष्ण के हस्तिनापुर जाते समय उनसे मार्ग में भेंट की थी (५.८३, ६४ के बाद दाक्षिणात्य पाठ में, देखिये गीता प्रेस संस्करण, पृ० २२८८)।

अध्यक्ष—'जगतोऽध्यक्षः', अर्थात् श्रीकृष्ण, १२.४७, ३७।

अध्यात्मानुगत = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

१. अनघ एक प्राचीन काल के व्यक्ति का नाम है (१.१, २३४)।

२. अनघ, एक देव गन्धर्व का नाम है जो अर्जुन के जन्मोत्सव में सम्मिलित हुआ था (१.१२३, ५५)।

३. अनघ = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

४. अनघ = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

५. अनघ = स्कन्द (३. २३२, ५)।

६. अनघ, गरुड़ के पुत्र, एक सुपर्ण का नाम है (५.१०१, १२)।

७. अनघ एक राजा का नाम है (२.८, २१)।

८. अनघ एक देश या जनपद का नाम है (२.३०, ९)।

१. अनङ्ग, कर्दम के एक पुत्र का नाम है जो प्रजारक्षक, साधु तथा दण्डनीति में निपुण था (१२. ५९, ९१-९२)।

२. अनङ्ग = काम, शिव।

अनङ्गा, एक नदी का नाम है (६.९, ३५)।

अनङ्गाङ्गहर = शिव।

१. अनन्त, एक पर्वत का नाम है जो असंख्य चमकीले रत्नों से व्याप्त तथा अपनी विशालता के कारण आकाश के समान अनन्त जान पड़ता था (१.१७, ९)।

२. अनन्त, शेषनाग का नाम है (१.१८, ७-८; ३६, २३-२४)। यह कद्रू के पुत्र थे (१:६५, ४१)। पश्चिम दिशा में इनके निवासस्थान का उल्लेख (५-११०, १८)। कृष्ण ने अपने सम्बन्ध में 'अनन्तश्चास्मि नागानाम्' कहा है (६. ३४, २९)। 'शेषं चाकल्पयद्देवमनन्तं विश्वरूपिणम्। यो धारयति भूतानि धरां चेमां सपर्वताम्॥', (६.६७, १३)। रणभूमि में अनेक नागों से घिरे हुये इरावान् ने विशाल शरीर वाले शेषनाग की भाँति बहुत बड़ा रूप धारण कर लिया (६.९०, ७४)। 'पक्षिणां वैनतेयस्त्वमनन्तो भुजगेषु च॥', (१३.१४, ३२२) 'नमोऽस्त्वनन्ताय महोरगाय', (१३.१५०, १०)। 'धर्मः कामश्च कालश्च वसुर्वासुकिरेव च। अनन्तः कपिलश्चैव सप्तैते धरणीधराः॥', (१३.१५०, १४१)। बलराम के रूप में अवतरित शेषनाग अनन्त का रसातल प्रवेश (१८.५, २३)।

३. अनन्त स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९.४५, ५७)।

४. अनन्त भगवान् सूर्य का नाम है (३.३, २४)।

५. अनन्त भगवान् श्री कृष्ण का नाम है (५.७०, १४)।

६. अनन्त भगवान् श्री विष्णु का नाम है (१३. १४९, ८३)।

७. अनन्त भगवान् शिव का नाम है (१३.१७, १३५)।

अनन्तगति = महापुरुष।

अनन्तपरिमेय = कृष्ण।

अनन्तभोग, से सम्भवतः अनन्त ही उद्दिष्ट है ('अनन्तभोगो भुजगः क्रीडन्निव महार्णवे', ४.५५, २२)। देखिये महापुरुष भी।

अनन्तरूप = शिव (सहस्र नामों में से एक); विष्णु (सहस्र नामों में से एक); स्कन्द।

अनन्तविजय, युधिष्ठिर के शङ्ख का नाम है (६.२५, १६; ५१, २६; और देखिये महाभारत गी० सं० में ९.६१, ७१ के बाद दाक्षिणात्य पाठ)।

अनन्तश्री = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अनन्ता एक माधव राजकुमारी का नाम है, जो पूरुवंशी जनमेजय की पत्नी थी (१.९५, १२)।

अनन्तात्मन् = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अनन्ताख्य = महापुरुष।

अनभिज्ञेय = कृष्ण।

अनरकतीर्थ एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से दुर्गति दूर होती है, और जहाँ नारायण आदि के साथ ब्रह्मा नित्य निवास करते हैं (३.८३, १६८)।

अनरण्य, इक्ष्वाकुवंशी एक प्राचीन नरेश का नाम है (१.१, २३६)। यह उन प्राचीन राजाओं में से एक हैं जिन्होंने कार्त्तिक मास में मांस भक्षण का निषेध किया था (१३.११५, ६८)। यह उन राजाओं में से एक हैं जिनके नामों का प्रातः सायं स्मरण करना चाहिये (१३.१६५, ५९)।

अनर्थ = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

१. अनल (अग्नि) आठ वसुओं में से एक का नाम है, जो शाण्डिली के पुत्र थे : यह स्कन्द के पिता थे (१.६६, १८-२०)।

२. अनल गरुड़ की प्रमुख सन्तानों में से एक का नाम है (५.१०१,९)।

अनलपुत्र = स्कन्द।

अनलसूनु = स्कन्द।

१. अनला के गर्भ से सात प्रकार के ऐसे वृक्ष उत्पन्न हुये जिनमें पिण्डाकार फल लगते थे। यह क्रोधवशा की नौ पुत्रियों में से एक, सुरभि, की रोहिणी नामक पुत्री के गर्भ से उत्पन्न हुई थी (१.६६, ६१.६७-६९)।

२. अनला, नाग माता सुरसा की पुत्री का नाम है जो वनस्पतियों, वृक्षों, और लतागुल्मों की जननी हुई (महाभारत गी० सं० १.६६, ७० के आगे दाक्षिणात्य पाठ)।

अनलात्मज = स्कन्द।

अनवद्या, कश्यप की पत्नी, दक्षकन्या प्राधा की सात पुत्रियों में से एक का नाम है (१.६५, ४५)। यह स्वर्ग की एक अप्सरा थी जो अर्जुन के जन्मोत्सव के समय अन्य अप्सराओं के साथ नृत्य करने आई थी (१.१२३, ६१)।

अनश्वन्, महाराज कुरु के पौत्र तथा विदुर के पुत्र का नाम है; इन्होंने मगध की राजकुमारी अमृता के गर्भ से परीक्षित को उत्पन्न किया था (१.९५, ४०-४१)।

१. अनादि = कृष्ण।

२. अनादि = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।
३. अनादि = महापुरुष (१२.३३८, ४ के बाद १३३ वाँ नाम)।
अनादिनिधन = ब्रह्मा, कृष्ण, पुरुषोत्तम, विष्णु।
अनादि-मध्य-निधन = विष्णु।
अनादि-मध्य-पर्यन्त = कृष्ण।
अनाद्य = कृष्ण।

१. अनाधृष्टि, रौद्राश्व द्वारा मिश्रकेशी अप्सरा के गर्भ से उत्पन्न 'ऋचेयु' अथवा 'अन्वग्भानु' का नाम (१.९४, ८-१२)।

२. अनाधृष्टि, कृष्ण के एक सखा का नाम है (१. २२१, ३०)। यह सात वृष्णिवंशी महारथियों में से एक थे (२.१४, ५८)। यह उपप्लव्य नगर में अभिमन्यु के विवाह के अवसर पर उसकी माता सुभद्रा के साथ पधारे थे (४.७२, २२)। कुरुक्षेत्र में श्रीकृष्ण और अर्जुन को घेर कर चलने वाले अनेक वीरों में एक यह भी थे (५.१५१, ६७)।

३. अनाधृष्टि, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम जिसको आवृत करके भीमसेन ने रथ से नीचे गिरा दिया था (६.९६, २७)।

४. अनाधृष्टि, वृद्धक्षेम के उदारचित्त पुत्र का नाम है जिसने युद्धस्थल में कलिङ्गराज की कन्या का अपहरण किया था (७.१०, ५५)। देखिये ७. २५, ५१-५२ भी।

अनाधृष्टिसुत—'अनाधृष्टिसुतस्त्वासीद्राजसूयाश्वमेधकृत्। मतिनार इति ख्यातो राजा परमधार्मिकः॥' (१. ९४, १३)।

अनाधृष्य, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१.६७, १०४; ११७, १३)।

अनामय = विष्णु (सहस्र नामों में से एक); स्कन्द।

अनालम्ब, एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से पुरुषमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है (१३.२५, ३२-३३)।

अनिकेत, कुबेर की सभा में उनकी सेवा के लिये सदैव उपस्थित रहनेवाले एक यक्ष का नाम है (२.१०, १८)।

अनिन्दित = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

१. अनिमिष, गरुड़ की सन्तानों में से एक का नाम है (५.१०१,१०)।

२. अनिमिष = शिव (सहस्र नामों में से एक); विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

१. अनिरुद्ध, प्रद्युम्न के पुत्र का नाम है (२.२, ३५)। युधिष्ठिर के अपनी सभा में प्रवेश करने के समय उपस्थित राजाओं में से एक यह भी थे (२.४, २८)। इन्होंने अर्जुन से शस्त्रविद्या सीखी थी (२.४, ३५)। 'यथाऽनिरुद्धस्य यथाऽभिमन्योर्यथा सुनीथस्य यथैव भानोः।' (३. १८३, २८)। इनकी विष्णुरूपता तथा इनके द्वारा ब्रह्मा की उत्पत्ति (६.६५, ७१)। धृतराष्ट्र द्वारा यह कथन कि 'यदि अनिरुद्ध तथा अन्य बलवान् और प्रहार-कुशल वृष्णिवंशी योद्धा महात्मा केशव के बुलाने पर पाण्डव सेना में आ जायँ और समरभूमि में खड़े हो जायँ तो हमारा सारा उद्योग संशय में पड़ जायगा, ऐसा मेरा विश्वास है', (७.११, २७-३०)। 'अस्मदर्थे च राजेन्द्र संनह्येद्यदि केशवः। रामो वाप्यनिरुद्धो वा प्रद्युम्नो वा महारथः॥' (७. ११०, ५९)। प्रद्युम्न अथवा मन से अनिरुद्ध = अहंकार = ईश्वर की उत्पत्ति (१२.३३९, ३८-४१)। अनिरुद्ध के नाभि-कमल से ब्रह्मा की उत्पत्ति (१२.३३९, ७४)। "जगत् की सृष्टि के लिये इन्हीं महापुरुष और अव्यक्त से व्यक्त की उत्पत्ति हुई जिन्हें सम्पूर्ण लोकों में अनिरुद्ध एवं महान् आत्मा कहते हैं; व्यक्त भाव को प्राप्त हुये इन्हीं अनिरुद्ध ने पितामह ब्रह्मा की सृष्टि की; यह ब्रह्मा सम्पूर्ण तेजोमय हैं और इन्हीं को अहंकार कहा गया है; पृथ्वी, वायु, आकाश, जल और तेज, ये पाँच महाभूत अहंकार से उत्पन्न हुये; (१२. ३४०, ३०-३२)।" लोकों की सृष्टि करनेवाले प्रभावशाली पुरुष को अनिरुद्ध कहा गया है, (१२. ३४०, ७१)। अनिरुद्ध भगवान् श्रीहरि ने हयग्रीव-रूप धारण करके ब्रह्मा को दर्शन दिया (१२. ३४०, ९१)। "आदि पुरुष ही अनिरुद्ध हैं। जब प्रलय-रात्रि व्यतीत हुई तब उन अमित तेजस्वी अनिरुद्ध की कृपा से एक कमल प्रकट हुआ, उसी कमल से ब्रह्मा का प्रादुर्भाव हुआ। ये ब्रह्मा भगवान् अनिरुद्ध के प्रसाद से ही उत्पन्न हुये। ब्रह्मा का दिन व्यतीत होने पर क्रोध के आवेश में आये हुये इस देव के ललाट से इनके पुत्र-रूप में संहारकारी रुद्र प्रकट हुये। (१२. ३४१, १४-१८)।" शौनक ने यह पूछा कि अनिरुद्ध-विग्रह में स्थित हुये जगन्नाथ का दर्शन करने के पश्चात् भी नारद जी शीघ्रतापूर्वक नर और नारायण के पास क्यों गये? (१२. ३४३, ६-७)। "संसार में जो लोग पुण्य और पाप से रहित एवं निर्मल हैं वे मुक्त होकर परमाणु के रूप में सूर्य में प्रवेश कर जाते हैं; फिर उनसे भी मुक्त होकर वे अनिरुद्ध में स्थित होते हैं; फिर मनोमय होकर प्रद्युम्न में प्रवेश करते हैं; इत्यादि; (१२. ३४४, १३-१६)।" "जनमेजय ने यह जानना चाहा कि श्रीहरि ने ब्रह्मा को अनिरुद्ध-रूपी हयग्रीव के रूप में क्यों प्रकट किया था? इस प्रश्न के उत्तर में वैशम्पायन ने बताया कि प्रलय के समय इस पृथिवी का जल में लय हो गया। उस समय सब ओर अन्धकार ही अन्धकार छा गया। तब तम से जगत् का कारणभूत ब्रह्म (परम व्योम) प्रकट हुआ। तम का मूल अधिष्ठानभूत अमृततत्त्व है। वही मूलभूत अमृत तम से युक्त होकर समस्त नाम-रूपों को प्रकट करता है और विराट शरीर का आश्रय लेकर रहता है। उसी विराट पुरुष को अनिरुद्ध = प्रधान = त्रिगुणात्मक अव्यक्त कहते हैं। इस अवस्था में विद्याशक्ति से सम्पन्न सर्वव्यापी भगवान् श्रीहरि ने योगनिद्रा का आश्रय लेकर जल में शयन किया और नाना गुणों से उत्पन्न होनेवाली जगत् की अद्भुत सृष्टि के विषय में विचार करने लगे। सृष्टि के विषय में विचार करते हुये उन्हें अपने महत्तत्त्व का स्मरण हो आया जिससे अहङ्कार प्रकट हुआ। यह अहङ्कार ही चतुर्मुख ब्रह्मा हैं जो सम्पूर्ण लोकों के पितामह और भगवान् हिरण्यगर्भ के नाम से प्रसिद्ध हैं। यह ब्रह्मा अनिरुद्ध की नाभि से निकले कमल से जन्म लेते हैं। (१२. ३४७, १०-२२)।" "मधु और कैटभ नामक दानवों ने चन्द्रमा के समान विशुद्ध, उज्ज्वल प्रभा से विभूषित और गौरवर्ण पुरुष को अनिरुद्ध के रूप में योग-निद्रा में प्रसुप्त देखा। उस समय शेषनाग के शरीर की शय्या निर्मित थी जो ज्वालमालाओं से आवृत प्रतीत होती थी। उसी के ऊपर विशुद्ध सत्त्वगुण से सम्पन्न मनोहर कान्तिवाले नारायण शयन कर रहे थे। उन्हें देख कर वे दोनों दानव अट्टहास करते हुये बात करने लगे, जिससे नारायण की निद्रा भंग हो गई; तदुपरान्त नारायण ने उन दानवों का वध कर दिया; इसी कारण इन्हें मधुसूदन भी कहते हैं (१२. ३४७, ६१-७०)।" ब्रह्मा-रुद्र-संवाद : विद्वान् ब्राह्मण महापुरुष को अनिरुद्ध के नाम से पुकारते हैं (१२. ३५१, १९)। "विष्णु ही विश्व के निवासस्थान और निर्गुण हैं। इन्हीं को वासुदेव, जीवभूत, सङ्कर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध कहते हैं। (१३. १५८, ३९)।" 'साम्बं च निहतं दृष्ट्वा चारुदेष्णं च माधवः। प्रद्युम्नं चानिरुद्धं च ततश्चुक्रोध भारत।' (१६. ३, ४४-४५)।

२. अनिरुद्ध, वृष्णिवंशी एक क्षत्रिय का नाम है जो प्रद्युम्न-पुत्र से भिन्न था; द्रौपदी के स्वयंवर के समय इन दोनों का आगमन हुआ था (१. १८६, १७-१९)।

३. अनिरुद्ध, आश्विन मास में मांस-भक्षण का निषेध करनेवाले राजाओं में से एक (१३. ११५, ६९; गी० सं० में १३. ११५, ६०)।

४. अनिरुद्ध = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अनिर्देश्यवपुस् = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अनिर्विण्ण = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

१. अनिल, आठ वसुओं में से एक का नाम है जो प्रजापति (?) अथवा धर्म (?) और श्वासा का पुत्र था (१. ६६, १८)। इसकी भार्या का नाम शिवा है और मनोजव तथा अविज्ञातगति नामक इसके दो पुत्र हैं (१. ६६, २५)। 'पार्थिवं धातुमासाद्य शरीरोऽग्निः कथं भवेत्। अवकाश-विशेषेण कथं वर्तयतेऽनिलः॥' (३. २१३, १)। अनिलानलौ स्कन्द के

अभिषेक के समय पधारे थे (९. ४५, ४)। आठ वसुओं में से एक का नाम (१३. १५०, १६)। तु० की० **वायु**।

२. **अनिल** = शिव, विष्णु, (सहस्र नामों में से एक)।

३. **अनिल**, गरुड़ की प्रमुख सन्तानों में से एक का नाम है (५.१०१,९)।

अनिलप्रभव = भीम (देखिये व० स्था०)।

अनिलसम्भव—देखिये अग्नि।

अनिलसारथि—देखिये अग्नि।

१. **अनिलात्मज** = भीम (देखिये व० स्था०)।

२. **अनिलात्मज** = हनूमत् (देखिये व० स्था०)।

अनिलाभ = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अनिवर्तिन् = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अनीकजित् = कृष्ण (५. ७०, ८)।

अनीकविदारण, जयद्रथ के भ्राता का नाम है (३. २६५, १२)। अर्जुन द्वारा इसके वध का उल्लेख (३. २७१, २७)।

अनीकसाह = कृष्ण (१२. ४३, ८)।

अनीति = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अनील एक नाग का नाम है (१. ३५, ७)।

अनीश = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अनु, शर्मिष्ठा के गर्भ से उत्पन्न ययाति के मझले पुत्र का नाम है (१. ७५, ३४-३५)। इन्होंने अपने पिता की वृद्धावस्था को ग्रहण नहीं किया (१. ७५, ३८-४४)। शर्मिष्ठा के गर्भ से इनके जन्म का उल्लेख (१. ८३, १०)। ययाति द्वारा अपनी वृद्धावस्था को ले लेने के लिये इनसे प्रस्ताव, इनके द्वारा इस प्रस्ताव की अस्वीकृति, और ययाति द्वारा इन्हें यह शाप देना कि यह भी वृद्धावस्था के समस्त दोषों को प्राप्त करेंगे, इनकी सन्तान जवान होते ही मर जायगी, और यह वृद्ध होकर अग्निहोत्र का त्याग कर देंगे (१. ८४, २३-२६)। शर्मिष्ठा के गर्भ से इनकी उत्पत्ति का, तथा इनकी सन्तानों से म्लेच्छ जाति की उत्पत्ति का उल्लेख (१. ८५, २१. ३४)। वृषपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा के गर्भ से द्रुह्यु, अनु, तथा पूरु की उत्पत्ति का उल्लेख (१. ९५, ९)।

अनुकम्पक = अकम्पन (देखिये व० स्था०)।

अनुकर्मन्, एक विश्वेदेव हैं (१३. ९१, ३२)।

अनुकारिन् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अनुकूल = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अनुक्रमणिकाध्याय (यः)—'अनुक्रमणिकाध्यायं वृत्तान्तानां सपर्वणाम्। इदं द्वैपायनः पूर्वं पुत्रमध्यापयच्छुकम् ॥' (१. १, १०४)। 'अनुक्रमणिकाध्यायं भारतस्येममादितः। आस्तिकः सततं शृण्वन् न कृच्छ्रेष्ववसीदति ॥' (१. १. २६२)।

अनुक्रमणिकापर्वन्, आदिपर्व में प्रथम अध्याय-पर्यन्त एक अवान्तर-पर्व का नाम है। लोमहर्षण के पुत्र सूत उग्रश्रवा (सौति) ने व्यास द्वारा रचित महाभारत का परिक्षित-पुत्र जनमेजय के नाग-यज्ञ के समय स्वयं व्यास (द्वैपायन) के निर्देशन में ही व्यास के शिष्य वैशम्पायन से श्रवण किया था। तदुपरान्त इन्होंने पवित्र तीर्थों का भ्रमण आरम्भ किया तथा समन्तपञ्चक पहुँचे। इसके पश्चात् यह नैमिषारण्य में चल रहे शौनक के बारह-वर्षीय यज्ञ-सत्र में पधारे, जहाँ इन्होंने परम् ब्रह्म विष्णु की आराधना से आरम्भ करके परम ब्रह्म से उत्पन्न ब्रह्मा, २१ प्रजापतियों, देवों आदि की सृष्टि से लेकर कुरुओं की उत्पत्ति तक के सृष्टि-क्रम का वर्णन करते हुये महाभारत का प्रवचन किया। इन्होंने बताया कि महाभारत का लघु और विस्तृत दोनों ही रूप है। कुछ लोग इस ग्रन्थ का 'मनु' आदि से (अर्थात् १. ७५, १८) से, कुछ लोग आस्तीक पर्व (अर्थात् १. १३, १) से, और कुछ उपरिचर वसु की कथा (अर्थात् १. ६३, १) से आरम्भ मानते हैं। व्यास ने अपनी तपस्या और ब्रह्मचर्य की शक्ति से इस लोकपावन महाकाव्य (महाभारत) का निर्माण किया तथा ब्रह्माजी के परामर्श से इसे गणेश जी द्वारा लिखवाया। इसके वर्णन के बाद ८८ से ९१ वें श्लोक में महाभारत के १६ पर्वों की गणना कराई गई है। व्यास द्वारा रचित साठ लाख श्लोकों की संहिता में से १,००,००० श्लोकों का आद्यमहाभारत मनुष्य-लोक में प्रतिष्ठित है। इस महाकाव्य को व्यास ने वैशम्पायन को पढ़ाया। वैशम्पायन जी ने जनमेजय के नाग-यज्ञ के बीच-बीच में इसका प्रवचन किया। इन्होंने (वैशम्पायन ने) सर्वप्रथम मुख्यतया धृतराष्ट्र और संजय के बीच संवाद के रूप में महाभारत की अनुक्रमणिका का वर्णन किया—धृतराष्ट्र को सान्त्वना देने के लिये संजय ने आरम्भ में पुत्र शोक करने वाले २४ राजाओं की उस कथा का वर्णन किया जिसे पूर्वकाल में नारद ने शैब्य को सुनाया था, तथा इसके बाद उन अन्य ६६ राजाओं की कथा का वर्णन किया जो सब मृत्यु को प्राप्त हो चुके थे। जो महाभारत के इस अध्याय ('प्रथम : अनुक्रमणिकाध्याय) का श्रवण या अध्ययन करता है वह संकटकाल में दुःख से अभिभूत नहीं होता। यह अध्याय (अथवा अनुक्रमणिकापर्व) महाभारत का मूल शरीर है। जो इसे श्रवण करता है वह समस्त पापों से मुक्त हो जाता है (१. १, १-२७५)।

अनुक्रमणी, महाभारत के आदिपर्व के प्रथम अध्याय को कहते हैं ('अनुक्रमण्या यावत्स्यादह्ना राज्या च संचितम्', १. १. २६३)।

अनुगीता—'अनुगीता ततः पर्व ज्ञेयमध्यात्मवाचकम्'; (१. २, ७९)। तु० की० **अनुगीतापर्वन्**।

अनुगीतापर्वन्, महाभारत के आश्वमेधिकपर्व के अन्तर्गत १६वें से ९२वें अध्याय में आने वाले एक अवान्तरपर्व का नाम है। जनमेजय ने कहा : "शत्रुओं का नाश करके जब श्रीकृष्ण तथा अर्जुन सभाभवन में रहने लगे, तब इन दोनों में क्या वार्तालाप हुआ ? वैशम्पायन ने बताया : अपने राज्य पर पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लेने पर अर्जुन अपने दिव्य सभाभवन में श्रीकृष्ण के साथ आनन्दपूर्वक रहने लगे। एक दिन स्वजनों से घिरे हुये ये दोनों मित्र स्वेच्छा से घूमते हुये सभामण्डप के एक ऐसे भाग में पहुँचे जो स्वर्ग के समान सुन्दर था। उस समय अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा, 'देवकीनन्दन ! युद्ध के समय आपने मुझे जो ज्ञानोपदेश दिया था वह इस समय विचलित चित्त हो जाने के कारण नष्ट हो गया है। उसी को एक बार पुनः श्रवण करने की मेरी उत्कट इच्छा है। आप शीघ्र ही द्वारका जाने वाले हैं, अतः वह सब विषय मुझे पुनः सुना दें।' अर्जुन का यह कथन कि वह उस ज्ञानोपदेश को भूल गये हैं, श्रीकृष्ण को अप्रिय लगा। श्रीकृष्ण ने उस उपदेश को दुहराने में असमर्थता प्रकट करते हुये भी उस विषय का ज्ञान कराने की दृष्टि से एक प्राचीन इतिहास का वर्णन करना आरम्भ किया : 'एक दिन एक दुर्धर्ष ब्राह्मण ब्रह्मलोक से उतर कर स्वर्गलोक में होते हुये मेरे पास आये। उनका विधिवत् पूजन करने के बाद मैंने उनसे मोक्षधर्म के सम्बन्ध में पूछा। उन्होंने मेरे प्रश्न का जो उत्तर दिया, मैं उसे ही तुमको बताऊँगा जिसे ध्यान से सुनो।' तदुपरान्त श्रीकृष्ण ने ब्राह्मण के वचन को बताया। ब्राह्मण ने कहा कि प्राचीन समय में काश्यप नाम के एक धर्मज्ञ और तपस्वी ब्राह्मण एक अन्य सिद्ध ब्राह्मण के पास गये जो धर्मविषयक सम्पूर्ण शास्त्रों को जानने वाला, भूत-भविष्य के ज्ञान में प्रवीण, लोक-तत्त्व ज्ञान में कुशल, सुख-दुःख के रहस्य को समझने वाला, जन्म-मृत्यु के तत्त्वों से परिचित, पाप-पुण्य का ज्ञाता, मुक्त की भाँति विचरने वाला, सिद्ध, शान्तचित्त और अन्तर्ध्यान हो जाने की विद्या का ज्ञाता था। यह ब्राह्मण चक्रधारी सिद्धों के साथ विचरता और उन्हीं के साथ एकान्त में बैठता था। काश्यप इस ब्राह्मण को अपना गुरु मानकर सेवा करने लगे। काश्यप की सेवा से प्रसन्न होकर इस ब्राह्मण ने अपना वृत्तान्त देते हुये परासिद्धि के सम्बन्ध में उपदेश दिया। उसने बताया कि इस लोक में बार-बार जन्म लेने और मृत्यु को प्राप्त होने से घबरा कर उसने परमात्मा की शरण ली तथा लोक-व्यवहार का त्याग कर दिया। अब उसे ऐसी सिद्धि प्राप्त हो गई है, जिसके कारण वह पुनः इस संसार में न आकर ब्रह्मलोक में चला

जायेगा। काश्यप के उत्तम आचरण से सन्तुष्ट होकर उस ब्राह्मण ने काश्यप के अभीष्ट प्रश्नों का उत्तर देना भी स्वीकार कर लिया। (१४. १६)।" श्रीकृष्ण ने कहा : "तदनन्तर काश्यप ने उन सिद्ध महात्मा से अनेक धर्मविषयक प्रश्न पूछे जिनके उत्तर में उन्होंने बताया कि संसारी जीव किस प्रकार दुःखमय संसार से मुक्त होता है; शरीर से छूट कर वह किस प्रकार दूसरे शरीर में प्रवेश करता है; मनुष्य अपने किये हुये शुभाशुभ कर्मों का फल किस प्रकार भोगता है; और शरीर न रहने पर उसके कर्म कहाँ रहते हैं; मृत्यु किस प्रकार होती है; जीव किस प्रकार गर्भ में आकर जन्म धारण करता है (१४. १७)।" "उन्होंने यह बताया कि ब्रह्माजी ने सर्वप्रथम स्वयं ही शरीर धारण करके स्थावर-जङ्गम, सबकी कर्मानुसार रचना की; उन्होंने प्रधान नामक तत्त्व की उत्पत्ति की जो देहधारी जीवों की प्रकृति कहलाता है; जो व्यक्ति सुख और दुःख दोनों को अनित्य, शरीर को अपवित्र वस्तुओं का समूह, तथा मृत्यु को कर्म का फल समझता है वह घोर और दुस्तर संसार-सागर से पार हो जाता है (१४. १८)।" "फिर उन्होंने यह बताया कि 'किस प्रकार के व्यक्ति संसार-बन्धन से मुक्त होते हैं, योग-विद्या क्या है, जीव किस प्रकार मुक्त होता है, इत्यादि।' श्रीकृष्ण ने बताया कि 'इतना प्रसंङ्ग सुना कर वह श्रेष्ठ ब्राह्मण वहीं अन्तर्ध्यान हो गये; हे अर्जुन! युद्ध के समय भी तुमने रथ पर बैठे-बैठे इसी तत्त्व को सुना था; इस जगत् में कभी किसी भी मनुष्य ने इस रहस्य का श्रवण नहीं किया है; इस धर्म का आश्रय लेकर स्त्री, वैश्य, शूद्र तथा पाप-योनि के मनुष्य भी परमगति प्राप्त कर लेते हैं; जो छः मास तक निरन्तर योग का अभ्यास करता है उसका योग अवश्य सिद्ध हो जाता है (१४. १९)।" "तदुपरान्त इसी विषय पर पति-पत्नी के संवाद के रूप में एक प्राचीन इतिहास का दृष्टान्त दिया गया है जिसका आश्वमेधिक पर्वान्तर्गत अनुगीतापर्व में 'ब्राह्मणगीता' (देखिये व० स्था०) के नाम से उल्लेख है (१४. २०-३४)।" "ब्रह्म के स्वरूप के सम्बन्ध में अर्जुन द्वारा प्रश्न करने पर श्रीकृष्ण ने इस विषय पर 'गुरु-शिष्य-संवाद' (देखिये व० स्था०) की एक प्राचीन कथा का वर्णन किया। अर्जुन के पूछने पर कृष्ण ने बताया कि वह स्वयं गुरु हैं और मन उनका शिष्य। उन्होंने यह भी बताया कि युद्धकाल में उन्होंने अर्जुन को यही उपदेश दिया था। तदुपरान्त श्रीकृष्ण ने इन शब्दों द्वारा अर्जुन से विदा लेना चाहा : 'हे अर्जुन! अब मैं पिता का दर्शन करना चाहता हूँ। यदि तुम्हारी सम्मति हो तो मैं उनके दर्शन के लिये द्वारका जाऊँ।' श्रीकृष्ण की बात सुनकर अर्जुन ने कहा, 'श्रीकृष्ण! अब हम लोग यहाँ से हस्तिनापुर चलें। वहाँ धर्मात्मा राजा युधिष्ठिर से मिलकर और उनकी आज्ञा लेकर आप अपनी पुरी को पधारें।' (१४. ३५-५१)।" वैशम्पायन ने कहा—"श्रीकृष्ण ने दारुक को रथ तैयार करने की आज्ञा दी और जब रथ जुतकर तैयार हो गया तब वह अर्जुन को साथ लेकर हस्तिनापुर के लिये चल पड़े। रथ पर बैठे हुये अर्जुन ने श्रीकृष्ण की विविध प्रकार से स्तुति करते हुये कहा, 'मैंने देवर्षि नारद, देवल, श्रीकृष्णद्वैपायन, तथा पितामह भीष्म के मुख से आपके माहात्म्य का ज्ञान प्राप्त किया है, इत्यादि।' हस्तिनापुर पहुँचने पर इन लोगों ने धृतराष्ट्र के महल में प्रवेश कर, धृतराष्ट्र, विदुर तथा युधिष्ठिर इत्यादि का दर्शन किया। श्रीकृष्ण ने अर्जुन के कक्ष में ही रात्रि व्यतीत की। प्रातःकाल यह लोग मन्त्रियों के साथ बैठे युधिष्ठिर के पास गये। श्रीकृष्ण को विदा देते हुये युधिष्ठिर ने कहा, 'महाबाहु केशव! मुझे आपका जाना इसलिये उचित प्रतीत हो रहा है कि आपने मेरे मामा वसुदेव तथा मामी देवकी (कृष्ण के माता-पिता) को बहुत दिनों से नहीं देखा है। फिर भी द्वारका जाकर आप हम सब को स्मरण रक्खें तथा अपने बन्धु-बान्धवों से मिलने के पश्चात् मेरे अश्वमेध यज्ञ में अवश्य पधारें।' युधिष्ठिर ने इस अवसर पर श्रीकृष्ण को प्रचुर उपहार तथा धन आदि देना चाहा, किन्तु श्रीकृष्ण ने ऐसा कुछ ग्रहण नहीं किया। तदुपरान्त कुन्ती से भली भाँति अभिनन्दित हो तथा विदुर आदि सब से सत्कारपूर्वक विदा लेकर चतुर्भुज भगवान् श्रीकृष्ण अपने दिव्य रथ पर बैठ कर सुभद्रा सहित हस्तिनापुर से बाहर निकले। उस समय श्रीकृष्ण के पीछे अर्जुन, सात्यकि, नकुल-सहदेव, विदुर तथा भीम आदि भी कुछ दूर तक पहुँचाने के लिये गये। तदनन्तर श्रीकृष्ण ने समस्त पाण्डवों तथा विदुरजी को लौटा कर दारुक तथा सात्यकि से कहा—'अब घोड़ों को जोर से हांको।' इस प्रकार श्रीकृष्ण आनर्तपुरी द्वारका की ओर उसी प्रकार चल पड़े, मानों प्रतापी इन्द्र अपने शत्रु समुदाय का संहार करके स्वर्ग जा रहे हों (१४. ५२)।" "इस प्रकार द्वारका जाते हुये श्रीकृष्ण को अर्जुन ने बार-बार हृदय से लगा कर विदा किया और तब तक उनकी ओर देखते रहे जब तक रथ आंखों से ओझल नहीं हो गया। इसके बाद श्रीकृष्ण की यात्रा के समय प्रकट हुये अनेक शकुनों का वर्णन है। श्रीकृष्ण ने मरुभूमि के समतल प्रदेश में पहुँच कर मुनिश्रेष्ठ उत्तङ्क का दर्शन किया। कौरवों के विनाश की बात सुन कर उत्तङ्क का कुपित होना; श्रीकृष्ण का उन्हें शान्त करना; श्रीकृष्ण का उत्तङ्क से अध्यात्मतत्त्व का वर्णन करना; तथा दुर्योधन के अपराध को कौरवों के विनाश का कारण बताना; श्रीकृष्ण का उत्तङ्क मुनि को विश्वरूप का दर्शन कराना और मरुदेश में जल प्राप्त होने का वरदान देना; उत्तङ्क की गुरुभक्ति; गुरुपुत्री के साथ उत्तङ्क का विवाह; गुरुपत्नी की आज्ञा से उत्तङ्क का दिव्य कुण्डल लाने के लिये राजा सौदास के पास जाना; फिर राजा सौदास के कहने से उत्तङ्क का रानी मदयन्ती के पास जाना, और कुण्डल लेकर लौटना; मार्ग में कुण्डलों का अपहृत हो जाना, तथा इन्द्र और अग्निदेव की कृपा से उसे पुनः प्राप्त करके गुरुपत्नी को देना; (१४. ५३-५८)।" जनमेजय के यह पूछने पर कि उत्तङ्क को वरदान देने के पश्चात् श्रीकृष्ण ने क्या किया, वैशम्पायन ने कहा, "उत्तङ्क को वर देकर श्रीकृष्ण सात्यकि के साथ अपने रथ पर पुनः द्वारका की ओर चल पड़े। मार्ग में अनेकानेक सरोवरों, सरिताओं, वनों और पर्वतों को पार करते हुये वह परम रमणीय द्वारका नगरी में जा पहुँचे। उस समय वहाँ रैवतक पर्वत पर एक अत्यन्त भारी उत्सव मनाया जा रहा था। सात्यकि को लेकर श्रीकृष्ण उसी उत्सव में पधारे। उत्सव के कारण वह पर्वत अद्भुत शोभा पा रहा था। सोने की सुन्दर मालाओं, भाँति-भाँति के पुष्पों, वस्त्रों और कल्पवृक्षों से घिरे हुये उस महान् पर्वत की अपूर्व शोभा थी—इस प्रकार पर्वत की शोभा का विस्तार से वर्णन है। वहाँ दीनों, नेत्र-हीनों, और अनाथों के लिये सुरा-मैरेयमिश्रित भोजन दिये जाते थे। उस समय देवता, गन्धर्व, और ऋषि अदृश्य रूप से श्रीकृष्ण के निकट आकर उनकी स्तुति करने लगे। इन सब से सम्मानित होकर श्रीकृष्ण ने अपने सुन्दर भवन में प्रवेश किया और अपने माता-पिता के चरणों में प्रणाम किया। विश्राम कर लेने के पश्चात् श्रीकृष्ण ने पिता के पूछने पर महायुद्ध की समस्त घटना का वर्णन किया (१४. ५९)।" "वसुदेव ने पूछा कि कौरवों तथा पाण्डवों में किस प्रकार युद्ध हुआ; इत्यादि।" वैशम्पायन ने कहा : अपनी माता की उपस्थिति में भी श्रीकृष्ण ने विस्तारपूर्वक यह बताया कि किस प्रकार कौरव योद्धा युद्ध में मारे गये। वैशम्पायन ने बताया कि रोंगटे खड़े कर देने वाली इस युद्ध-वार्ता को सुन कर वृष्णिवंशी लोग दुःख तथा शोक से व्याकुल हो गये (१४. ६०)। "पिता के सामने महाभारत युद्ध का वृत्तान्त सुनाते समय श्रीकृष्ण ने अभिमन्युवध का वृत्तान्त जान-बूझ कर छोड़ दिया। परन्तु सुभद्रा ने जब देखा कि उसके पुत्र के निधन का समाचार श्रीकृष्ण ने नहीं सुनाया तो उसकी याद दिलाती हुई वह मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ी। अपनी पुत्री को मूर्च्छित होते देख वसुदेव जी भी अचेत होकर धरती पर गिर पड़े। तदनन्तर दौहित्र-वध के शोक से आहत वसुदेव जी ने श्रीकृष्ण से अभिमन्यु-वध का सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनाने का आग्रह किया। पिता को इस प्रकार अत्यन्त दुःखी देख कर श्रीकृष्ण ने उन्हें सान्त्वना देते हुये यह वृत्तान्त सुनाया (१४. ६१)।" "वसुदेव तथा

श्रीकृष्ण इत्यादि ने अभिमन्यु का उत्तम श्राद्ध किया। श्रीकृष्ण ने साठ लाख ब्राह्मणों को विधिपूर्वक भोजन कराया और उन्हें वस्त्र पहना कर इतना धन दिया जिससे उन सब की धनविषयक तृष्णा दूर हो गई। जिस प्रकार श्रीकृष्ण, बलदेव तथा अन्य लोग अत्यन्त दुःखी थे, उसी प्रकार हस्तिनापुर में वीर पाण्डव भी अभिमन्यु से रहित होकर शान्ति नहीं पाते थे। उत्तरा ने पति के दुःख से व्याकुल होकर बहुत दिनों तक भोजन ही नहीं किया, जिससे उसके सम्बन्धियों को उसके गर्भस्थ बालक की चिन्ता होने लगी। उस समय व्यास जी ने वहाँ आकर पृथा, उत्तरा, अर्जुन, और युधिष्ठिर को सान्त्वना देते हुये यह बताया कि उत्तरा का पुत्र श्रीकृष्ण के प्रभाव तथा उनके (व्यास के) आशीर्वाद से पाण्डवों के बाद सम्पूर्ण पृथ्वी का पालन करेगा। उन्होंने यह भी बताया कि वीर अभिमन्यु अपने पराक्रम से उपार्जित किये हुये देवताओं के अक्षय लोक में चला गया है। व्यास के इस प्रकार समझाने पर अर्जुन ने शोक त्याग कर संतोष का आश्रय लिया। उत्तरा का गर्भ शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा की भाँति यथेष्ट वृद्धि पाने लगा। तदनन्तर युधिष्ठिर को अश्वमेध यज्ञ करने की आज्ञा देकर व्यास जी वहाँ से अदृश्य हो गये। व्यास जी का वचन सुन कर युधिष्ठिर ने धन लाने के लिये हिमालय-यात्रा करने का विचार किया (१४. ६२)।" "जनमेजय ने कहा : 'व्यास के इस वचन को सुन कर युधिष्ठिर ने अश्वमेध यज्ञ के सम्बन्ध में क्या किया? उन्होंने मरुत्त के रत्नों को किस प्रकार प्राप्त किया?' वैशम्पायन ने कहा : व्यास का वचन सुन कर युधिष्ठिर ने अपने सब भ्राताओं को बुला कर उन्हें मरुत्त के स्वर्ण के सम्बन्ध में व्यास, भीष्म, और श्रीकृष्ण के हितकारक वचनों का स्मरण दिलाया। युधिष्ठिर की बात से सहमत होते हुये भीम ने देवाधिदेव महादेव तथा उनके अनुचरों की आराधना करके मरुत्त के धन को लाने का परामर्श दिया, क्योंकि उस धन की रक्षा करने वाले किन्नर भगवान् शङ्कर के प्रसन्न हो जाने पर अधीनता स्वीकार कर लेंगे। भीम का यह कथन सुन कर युधिष्ठिर प्रसन्न हुये। अर्जुन आदि ने भी उन्हीं की बात का समर्थन किया। इस प्रकार रत्न लाने का निश्चय करके पाण्डवों ने ध्रुव संज्ञक नक्षत्र (ज्योतिष के अनुसार तीनों उत्तरा तथा रोहिणी ही ध्रुव-संज्ञक नक्षत्र हैं। रविवार को ध्रुव बताया गया है। उत्तरा और रविवार का संयोग होने पर अमृत सिद्धि नामक योग होता है; कदाचित् इसी योग में पाण्डवों ने प्रस्थान किया) और दिन में सेना को यात्रा के लिये तैयार होने की आज्ञा दी। तदनन्तर मिष्ठान्न, अपूप, आदि से महेश्वर को तृप्त करने के पश्चात् उनका आशीर्वाद तथा धृतराष्ट्र से आज्ञा लेकर और युयुत्सु को राजधानी में छोड़ कर पाण्डवों ने यात्रा आरम्भ की (१४. ६३)।" "यात्रा करते हुये—यात्रा का विस्तृत वर्णन है—युधिष्ठिर उस स्थान पर जा पहुँचे जहाँ मरुत्त का उत्तम द्रव्य संचित था। वहाँ एक सुखद स्थान पर युधिष्ठिर ने तप, विद्या और इन्द्रिय-संयम से युक्त ब्राह्मणों तथा वेद-वेदाङ्ग के पारङ्गत राजपुरोहित अग्निवेश्य (धौम्य) मुनि को आगे रख कर सैनिकों के साथ पड़ाव डाला। अनेक राजाओं, ब्राह्मणों और पुरोहितों ने यथोचित रीति से शान्तिकर्म करके युधिष्ठिर तथा उनके मन्त्रियों को विधिपूर्वक बीच में रख कर छावनी बनाई। उस छावनी में पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण को जाने वाले छः मार्ग तथा नौ खण्ड थे। युधिष्ठिर ने मतवाले गजराजों के रहने के लिये भी पृथक् व्यवस्था की। तदुपरान्त युधिष्ठिर द्वारा कार्यसिद्धि की शुभ लग्न पूछने पर ब्राह्मणों ने उस समय के नक्षत्र तथा उसी दिन को शुभ बताते हुये अपने को केवल जल पीकर रहने तथा युधिष्ठिर आदि को भी उपवास करने का परामर्श दिया। श्रेष्ठ ब्राह्मणों का यह वचन सुन कर समस्त पाण्डव रात में उपवास करके कुश की चटाइयों पर निर्भय होकर सोये। निर्मल प्रभात का उदय होने पर उन श्रेष्ठ ब्राह्मणों ने युधिष्ठिर से इस प्रकार कहा (१४. ६४)" : "ब्राह्मण बोले, 'नरेश्वर, अब आप भगवान् शङ्कर का पूजन कीजिये।' ब्राह्मणों की बात सुन कर युधिष्ठिर ने भगवान् शङ्कर को विधिपूर्वक नैवेद्य अर्पित किया और उनके राजपुरोहित ने विधिपूर्वक संस्कार करते हुये—संस्कारों का विस्तृत वर्णन है—शिव के पार्षदों को उत्तम बलि चढ़ाई। इसके पश्चात् यक्षराज कुबेर, मणिभद्र, तथा अन्यान्य यक्षों और भूतों के अधिपतियों की पूजा की गई। इसके बाद राजा ने ब्राह्मणों को सहस्रों गौयें देकर निशाचारी भूतों को भी बलि अर्पित की। भगवान् शिव तथा उनके पार्षदों की सब प्रकार पूजा करके महर्षि व्यास को आगे किये हुये युधिष्ठिर उस स्थान को गये जहाँ वह रत्न और सुवर्ण-राशि संचित थी। वहाँ उन्होंने कुबेर इत्यादि का एक बार पुनः पूजन करके धन को खुदवाना आरम्भ किया। शीघ्र ही बहुसंख्यक सुवर्णमय पात्र निकल आये जिनमें सुराही, कठौते, कड़ाहियाँ, कलश, आदि अनेक प्रकार के पात्र थे। इन सब को लकड़ी की बड़ी-बड़ी सन्दूकों में रक्खा गया। उस समय युधिष्ठिर के वाहन भी वहाँ उपस्थित थे जिनमें ६०,००० ऊँट, १,२०,००,००० अश्व, १,००,००० हाथी, इतने ही रथ, छकड़े और हथिनियाँ इत्यादि थीं। इन सब वाहनों पर धनराशि लदवा कर युधिष्ठिर ने पुनः महादेव जी का पूजन किया, और तब व्यास जी की आज्ञा लेकर पुरोहित धौम्य को आगे करके हस्तिनापुर को प्रस्थान किया। उस समय वाहनों पर अत्यधिक बोझ लदा होने के कारण वह प्रतिदिन दो-दो कोस चलकर विश्राम करते चलते रहे (१४. ६५)।" "वैशम्पायन ने कहा : इसी बीच श्रीकृष्ण भी वृष्णिवंशियों को साथ लेकर द्रौपदी, उत्तरा और कुन्ती आदि से मिलने तथा युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ में सम्मिलित होने के लिये हस्तिनापुर पधारे, जहाँ धृतराष्ट्र तथा विदुर ने उनका स्वागत किया। उत्तरा ने परिक्षित् को जन्म दिया किन्तु ब्रह्मास्त्र से पीड़ित होने के कारण परिक्षित् चेष्टाहीन और मृतवत् उत्पन्न हुये जिसके फलस्वरूप कुन्ती तथा अन्य सभी स्वजन विलाप करने लगे। उसी समय युयुधान के साथ श्रीकृष्ण भी अन्तःपुर में जा पहुँचे, जहाँ कुन्ती ने उनसे परिक्षित् को जीवित करने का निवेदन किया और यह भी स्मरण दिलाया कि अभिमन्यु ने उत्तरा से कहा था कि उनका पुत्र वृष्णि एवं अन्धकों से धनुर्वेद, नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्र तथा नीतिशास्त्र की शिक्षा प्राप्त करेगा। इस वचन को सुनकर श्रीकृष्ण ने कुन्ती को सहारा देकर बैठाया और उसे सान्त्वना देने लगे (१४. ६६)।" "तदुपरान्त परिक्षित् को जीवित करने के लिये सुभद्रा ने भी विलाप करते हुये श्रीकृष्ण से प्रार्थना की (१४. ६७)।" "सुभद्रा की प्रार्थना के पश्चात् श्रीकृष्ण ने प्रसूति-गृह में प्रवेश किया—प्रसूति-गृह का विस्तृत वर्णन करते हुये यह कहा गया है कि वहाँ सब ओर राक्षसों का निवारण करनेवाली नाना प्रकार की वस्तुयें रक्खी हैं। प्रसूति-गृह में श्रीकृष्ण को देखकर उत्तरा ने भी विलाप करते हुये श्रीकृष्ण से अपने पुत्र को जीवित करने के लिये प्रार्थना की (१४. ६८)।" "विलाप करती हुई उत्तरा उन्मादिनी-सी होकर पृथ्वी पर गिर पड़ी। उसे पृथ्वी पर पड़ी देखकर दुःख से आतुर कुन्ती देवी तथा भरतवंश की अन्य स्त्रियाँ भी फूट-फूटकर रोने लगीं। इस करुण विलाप को सुनकर श्रीकृष्ण ने आचमन करके अश्वत्थामा के चलाये हुये ब्रह्मास्त्र को शान्त कर दिया। तत्पश्चात् श्रीकृष्ण ने उस बालक को जीवित करने की प्रतिज्ञा करते हुये कहा, 'मैंने कंस और केशी का धर्म के अनुसार वध किया है, इस सत्य के प्रभाव से यह बालक पुनः जीवित हो जाय।' श्रीकृष्ण के ऐसा कहने पर उस बालक में चेतना आ गई और वह धीरे-धीरे अङ्ग-सञ्चालन करने लगा। (१४. ६९)।" "जब श्रीकृष्ण ने ब्रह्मास्त्र को शान्त कर दिया तब वह सूतिका-गृह परिक्षित् के तेज से देदीप्यमान होने लगा; समस्त राक्षस भी वहाँ से भाग गये; उसी समय आकाशवाणी ने कृष्ण को साधुवाद दिया; ब्रह्मास्त्र ब्रह्मलोक चला गया; श्रीकृष्ण की आज्ञा से ब्राह्मणों ने स्वस्ति वचन कहे। बालक जीवित देखकर कुन्ती, इत्यादि, अत्यन्त प्रसन्न हुईं और उन सब ने कृष्ण का गुणगान किया। तदनन्तर मल्ल, नट, ज्योतिषी, सूतों और मागधों के समुदाय इत्यादि ने भी कृष्ण का गुणगान किया। श्रीकृष्ण तथा अन्य यदुवंशियों ने उस बालक को नाना प्रकार की बहुमूल्य

भेंट दीं। श्रीकृष्ण ने बालक का नाम परिक्षित्—यहाँ परिक्षित् नाम की व्युत्पत्ति दी गई है—रक्खा। जब परिक्षित् एक मास का हो गया तो उसी समय पाण्डव लोग प्रचुर रत्न-राशि लेकर हस्तिनापुर लौटे। वृष्णिवंश के प्रमुख वीरों तथा नागरिकों ने उनका स्वागत किया तथा विदुरजी ने पाण्डवों के हित की दृष्टि से देव-मन्दिरों में विविध प्रकार से पूजा करने की आज्ञा दी। उस समय हस्तिनापुर के समस्त राजमार्ग पुष्पों से अलंकृत किये गये थे। नर्तन करते हुये नर्तकों, और गानेवाले गायकों के शब्दों से नगर की अनुपम शोभा हो रही थी। इस प्रकार हस्तिनापुर उस समय कुबेर की अलकापुरी के समान प्रतीत होने लगा—नगर की शोभा का विस्तृत विवरण (१४. ७०)।" "पाण्डवों के समीप आने का समाचार सुनकर श्रीकृष्ण भी अन्य वृष्णिवंशियों के साथ आगे बढ़कर उनकी अगवानी करने के लिये गये। श्रीकृष्ण तथा वृष्णियों से मिलने के पश्चात् पाण्डवों ने उन सब के साथ ही हस्तिनापुर में प्रवेश किया। नगर में आने के पश्चात् पाण्डवों ने राजा धृतराष्ट्र का पूजन किया। उन लोगों ने परिक्षित् के पुनरुज्जीवित किये जाने की कथा सुनी और श्रीकृष्ण का पूजन किया। कुछ दिनों के बाद व्यास जी हस्तिनापुर पधारे। पाण्डवों ने उनका भी यथोचित पूजन किया तथा वृष्णि एवं अन्धकवंशी वीरों के साथ उनकी सेवा में बैठ गये। व्यास ने युधिष्ठिर को समस्त पापों का नाश करनेवाला अश्वमेध यज्ञ करने की आज्ञा दी। तब युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण से यज्ञ सम्पन्न कराने का आग्रह किया, किन्तु श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर से स्वयं ही यज्ञ करने का निवेदन करते हुये अपने को किसी भी अन्यकाम पर नियुक्त करने के लिये कहा। श्रीकृष्ण ने यह भी बताया कि युधिष्ठिर द्वारा यज्ञ करने पर भीमसेन, अर्जुन, नकुल तथा सहदेव को भी यज्ञानुष्ठान का फल मिल जायगा (१४. ७१)।" "युधिष्ठिर ने व्यासजी से यज्ञारम्भ के उपयुक्त अवसर पर दीक्षा देने के लिये कहा। व्यास ने कहा कि यज्ञ का समय आने पर वह स्वयं, तथा पैल और याज्ञवल्क्य यज्ञ को सम्पन्न कर देंगे। युधिष्ठिर को दीक्षा के लिये उन्होंने (व्यास ने) चैत्र मास की पूर्णिमा का दिन निश्चित करते हुये कहा कि अश्वविद्या के ज्ञाता सूत और ब्राह्मणों को यज्ञार्थ सिद्धि के लिये पवित्र अश्व की भी परीक्षा कर लेनी चाहिये। व्यास का आदेश पाकर युधिष्ठिर ने समस्त आवश्यक सामग्री एकत्र कर दी। व्यास ने कहा कि 'स्फ्य' तथा 'कूर्च' स्वर्ण का होना चाहिये, और आज ही शास्त्रीय विधि के अनुसार यज्ञ-अश्व को सारी पृथ्वी पर घूमने के लिये छोड़ना चाहिये। युधिष्ठिर के पूछने पर व्यास ने अश्व की रक्षा के लिये अर्जुन की, राज्य की रक्षा के लिये नकुल की सहायता से भीमसेन की, और आमन्त्रित व्यक्तियों तथा कुटुम्बीजनों की देख-रेख के लिये सहदेव की नियुक्ति की। यज्ञ-अश्व के साथ भेजते हुये युधिष्ठिर ने अर्जुन से कहा, 'जो राजा तुम्हारे सामने आयें उनके साथ तुम पहले यथाशक्ति युद्ध न करना और उन्हें हमारे यज्ञ में पधारने का आग्रह करना (१४. ७२)।" "दीक्षा का समय आने पर ऋत्विजों ने युधिष्ठिर को अश्वमेध यज्ञ की विधिवत् दीक्षा दी, और व्यासजीने अश्वमेध के लिये चुने गये अश्वको शास्त्रीय विधि के साथ छोड़ा। अपना गाण्डीव धनुष लेकर अर्जुन उस अश्व के पीछे चले। उस समय समस्त हस्तिनापुर अर्जुन को देखने के लिये उमड़ पड़ा—भीड़ का वर्णन। याज्ञवल्क्य के एक विद्वान् शिष्य, जो यज्ञकर्म में कुशल तथा वेदों में पारङ्गत थे, विघ्न की शान्ति के लिये अर्जुन के साथ गये। इनके अतिरिक्त भी अनेक ब्राह्मण और क्षत्रिय युधिष्ठिर की आज्ञा से अर्जुन के पीछे चल रहे थे। अश्व के विचरण-काल में अनेक महान् तथा अद्भुत युद्ध लड़े गये। पृथ्वी की प्रदक्षिणा करता हुआ वह अश्व सर्वप्रथम उत्तर दिशा को गया और फिर पूर्व की ओर मुड़ गया : महाभारत युद्ध में जिनके बन्धु-बान्धव मारे गये, ऐसे जिन-जिन क्षत्रियों ने उस समय अर्जुन से युद्ध किया उनकी गणना नहीं कराई जा सकती। महाभारत युद्ध में पाण्डवों द्वारा परास्त अनेक किरात, यवन, और म्लेच्छ, और आर्य नरेशों ने भी, अर्जुन से युद्ध किया। इस प्रकार जो युद्ध हुये उनमें से कुछ प्रमुख का आगे वर्णन करने के लिये कहा गया है। (१४. ७३)।" "कुरुक्षेत्र के युद्ध में मारे गये त्रिगर्त वीरों के महारथी पुत्रों और पौत्रों ने अर्जुन पर आक्रमण किया। पहले तो अर्जुन ने उन्हें समझाते हुये युद्ध से विरत करना चाहा, किन्तु उन सब ने अर्जुन की बातों की उपेक्षा करते हुये बाण-वर्षा प्रारम्भ कर दी। त्रिगर्तराज सूर्यवर्मा का अर्जुन के साथ युद्ध और पराजय। सूर्यवर्मा के छोटे भ्राता केतुवर्मा का अर्जुन से युद्ध और अर्जुन द्वारा उसका वध। धृतवर्मा का अर्जुन के साथ युद्ध; अर्जुन का गाण्डीव छूट जाना, किन्तु शीघ्र ही उसे उठाकर अट्ठारह प्रमुख योद्धाओं का वध करना। पराजित होकर त्रिगर्तों का पलायन और अर्जुन की अधीनता स्वीकार करना। (१४. ७४)।" "भगदत्त के पुत्र, प्राग्ज्यौतिषपुर के राजा वज्रदत्त (विस्तृत वर्णन) का अपने हाथी पर आरूढ़ होकर अर्जुन पर आक्रमण करना, किन्तु तीन दिनों के भयंकर युद्ध' (१४. ७५), "के पश्चात् अर्जुन द्वारा उसके हाथी का वध तथा पराजित होकर उसका (वज्रदत्त का) अश्वमेध यज्ञ में पधारने का वचन देना (१४. ७६)।" "जयद्रथ का स्मरण करते हुये सैन्धवों ने अपने रथों पर बैठकर पैदल चल रहे अर्जुन पर आक्रमण कर दिया। उस समय प्रचण्ड वायु चलने लगी और राहु ने एक ही समय सूर्य तथा चन्द्रमा दोनों को ग्रस लिया; महापर्वत कैलास भी प्रकम्पित हो उठा; सप्तर्षियों तथा देवर्षियों को भी भय होने लगा और वह दुःख तथा शोक से सन्तप्त होकर अत्यन्त गरम गरम श्वास छोड़ने लगे। उस समय आकाश में इन्द्र-धनुष प्रकट हुआ तथा मेघ पृथिवी पर मांस तथा रक्त की वर्षा करने लगे। सैन्धवों के बाण-समूह से आच्छादित अर्जुन के हाथ से गाण्डीव धनुष तथा हस्तत्राण गिर पड़ा। अर्जुन की यह दशा देखकर सम्पूर्ण देवता मन ही मन सन्त्रस्त हो गये; सप्तर्षि, समस्त देवर्षि और ब्रह्मर्षि मिलकर अर्जुन की विजय के लिये मन्त्र-जप करने लगे। तदनन्तर देवताओं के प्रयत्न से अर्जुन का तेज पुनः उद्दीप्त हो उठा और उन्होंने सैन्धवों पर बाणों की वर्षा आरम्भ कर दी जिससे वे सब रणभूमि से भाग गये (१४. ७७)।" "किन्तु सिन्धु-देशीय योद्धा पुनः संघटित होकर खड़े हो गये। उस समय अर्जुन ने उनसे आत्मसमर्पण करने के लिये कहा, किन्तु इसका कोई परिणाम नहीं निकला, क्योंकि वह सब जयद्रथ-वध का स्मरण करके अर्जुन पर पुनः आक्रमण करने के लिये उद्यत थे। फलतः जो युद्ध हुआ उसमें अनेक सैन्धव-योद्धा मारे गये। उसी समय धृतराष्ट्र की पुत्री दुःशला अपने पुत्र सुरथ के वीर बालक को, जो उसका पौत्र था, साथ लेकर अर्जुन के पास आयी और आर्तस्वर में फूट-फूटकर विलाप करने लगी। धनुष त्यागकर अर्जुन ने अपनी बहन दुःशला का सत्कार करते हुये सुरथ के सम्बन्ध में पूछा। दुःशला ने बताया : 'मेरे पुत्र सुरथ ने पहले से सुन रक्खा था कि अर्जुन के हाथ से ही मेरे पिता जयद्रथ की मृत्यु हुई है। जब उसने यह सुना कि यज्ञ-अश्व के पीछे-पीछे तुम युद्ध के लिये यहाँ तक आ पहुँचे हो, तो पिता की मृत्यु से आतुर होकर उसने प्राणों का परित्याग कर दिया।' दुःशला ने सुरथ के पुत्र की अभिमन्यु के पुत्र परीक्षित् के साथ तुलना की। दुःशला के इस प्रकार करुणायुक्त वचन को सुनकर अर्जुन ने धृतराष्ट्र और गान्धारी का स्मरण किया, तथा शोक से पीड़ित होकर क्षत्रिय धर्म की निन्दा करते हुये उसे सान्त्वना दी। तब दुःशला ने अपने समस्त योद्धाओं को युद्ध भूमि से पीछे लौटा दिया तथा स्वयं भी अर्जुन की प्रशंसा करती हुई अपने घर को लौट गई। अन्त में विचरण करता हुआ यज्ञ-अश्व मणिपुर नरेश के राज्य में जा पहुँचा (१४. ७८)।" "मणिपुर-नरेश बभ्रुवाहन ने जब सुना कि उसके पिता अर्जुन (बभ्रुवाहन, अर्जुन की पत्नी चित्राङ्गदा का पुत्र था) आये हैं तो वह ब्राह्मणों को आगे करके और प्रचुर धन लेकर विनय पूर्वक नगर से बाहर उनका (अर्जुन का) दर्शन करने आया। किन्तु बभ्रुवाहन को इस प्रकार उपस्थित देखकर अर्जुन ने कुपित होकर उस पर क्षत्रिय-धर्म का उल्लङ्घन करने का आरोप किया। जब अर्जुन अपने पुत्र बभ्रुवाहन की

इस प्रकार भर्त्सना कर रहे थे, तो उसी समय नाग-कन्या उलूपी धरती के गर्भ से निकल कर ऊपर आ गई। उलूपी ने देखा कि उसका पुत्र बभ्रुवाहन नतमस्तक हो विचार में पड़ा है, तब उसने बभ्रुवाहन से कहा, 'बेटा मैं तुम्हारी विमाता नागकन्या उलूपी हूँ। तुम अपने पिता अर्जुन के साथ युद्ध करो।' माता द्वारा इस प्रकार प्रोत्साहित किये जाने पर बभ्रुवाहन ने अर्जुन से युद्ध आरम्भ किया—यहाँ बभ्रुवाहन के रथादि का वर्णन है—और यज्ञ-अश्व को भी पकड़ लिया। उस समय गम्भीर रूप से आहत अर्जुन ने अपने पुत्र की अत्यन्त प्रशंसा की। बभ्रुवाहन ने अर्जुन के रथ की तालवृक्ष के समान ऊँची स्वर्ण-ध्वजा को काट गिराया, तथा साथ ही रथ के विशालकाय अश्वों का भी वध कर दिया। अन्ततोगत्वा बभ्रुवाहन के बाणों द्वारा आहत अर्जुन मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर पड़े। अर्जुन के धराशायी होने पर बभ्रुवाहन भी मूर्च्छित हो गया। इस प्रकार पति तथा पुत्र की मृत्यु हुई देख कर चित्राङ्गदा ने सन्तप्त हृदय से समराङ्गण में प्रवेश किया (१४. ७९)।" "पति-वियोग के दुःख से सन्तप्त चित्राङ्गदा विलाप करती हुई मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर पड़ी। होश आने पर चित्राङ्गदा ने नागकन्या उलूपी को सामने देख कर उस पर ही बभ्रुवाहन द्वारा अर्जुन का वध कराने का दोषारोपण करते हुये उससे अर्जुन को जीवित करने का आग्रह किया। चित्राङ्गदा ने कहा, 'मैं अपने पुत्र की मृत्यु पर नहीं वरन् अपने पति की मृत्यु पर ही शोक कर रही हूँ। यदि तुम इन्हें जीवित न करोगी तो मैं आमरण उपवास करके प्राण त्याग दूँगी।' थोड़ी देर के बाद चेतना लौटने पर बभ्रुवाहन ने इस प्रकार विलाप करना आरम्भ किया : 'मुझ क्रूर और पितृघाती के लिये यहाँ यही प्रायश्चित्त है कि मैं अपने पिता के चर्म से अपने शरीर को आच्छादित करके रहूँ और अपने पिता के मस्तक एवं कपाल को धारण किये बारह वर्षों तक विचरता रहूँ; अन्यथा मैं भी अपने शरीर को त्याग दूँ।' इस प्रकार विलाप करते हुये बभ्रुवाहन ने आचमन किया और कहा, 'यदि अर्जुन जीवित होकर पुनः उठकर खड़े नहीं हो जाते तो मैं इस रणभूमि में ही उपवास करके शरीर त्याग दूँगा। पिता के वध के पाप से पीड़ित होकर मैं निश्चय ही नरक में जाऊँगा। किसी वीर क्षत्रिय का वध करके विजेता सौ गायों का दान करने से उस पाप से मुक्त हो जाता है, किन्तु पिता का वध करने के पाप से मुक्ति पाना मेरे लिये सर्वथा दुर्लभ है।' तब उलूपी ने संजीवन मणि का स्मरण किया और स्मरण करते ही वह मणि वहाँ आ गई। मणि को हाथ में लेकर उलूपी ने कहा 'बेटा बभ्रुवाहन! अर्जुन तुम्हारे द्वारा परास्त नहीं हुये हैं। यह तो अर्जुन का हित करने के लिये मैंने ही मोहिनी माया दिखाई है।' इतना कहकर उलूपी ने बभ्रुवाहन से उस संजीवन मणि को अर्जुन के वक्ष पर रखने के लिये कहा। मणि के रक्खे जाते ही अर्जुन सोकर जगे हुये मनुष्य की भाँति अपनी लाल आँखें मलते हुये पुनः जीवित हो उठे। अर्जुन के पुनः उठने पर इन्द्र ने उन पर दिव्य पुष्पों की वर्षा की। पुनः जीवित हो जाने पर अपनी दोनों पत्नियों तथा शोकपूर्ण वातावरण को देख कर अर्जुन ने अपने पुत्र से पूछा : 'यह समस्त समराङ्गण शोक, विस्मय, और हर्ष से युक्त क्यों प्रतीत होता है?' पिता के इस प्रकार पूछने पर बभ्रुवाहन ने अर्जुन को माता उलूपी से सारा वृत्तान्त पूछने के लिये कहा (१४. ८०)।" "अर्जुन के पूछने पर उलूपी ने कहा : 'महाभारत युद्ध में आपने (अर्जुन ने) भीष्म को अधर्मपूर्वक; अर्थात् शिखण्डिन् की ओट से मारा था। उस पाप का प्रायश्चित्त किये बिना ही यदि आप प्राणों का परित्याग करते तो नरक में पड़ते। अतः यह उसी पाप का प्रायश्चित्त है। पूर्वकाल में गङ्गा जी तथा वसुओं ने इस पाप की इसी रूप में शान्ति निश्चित की थी, जिसे आपने अपने पुत्र से पराजय के रूप में प्राप्त किया है। पूर्वकाल की बात है, भीष्म के मारे जाने के बाद, वसुओं ने गङ्गा तट पर आकर आपके सम्बन्ध में जो यह बात कही थी उसे मैंने अपने कानों से सुना था। उस समय गङ्गा की सम्मति से वसुओं ने आपको भीष्म के अधर्मपूर्वक वध के कारण शाप दिया था। उनके शाप को सुन कर मैंने पिता से यह सारा वृत्तान्त बताया। उसे सुन कर मेरे पिता ने वसुओं के पास जाकर उन्हें प्रसन्न किया और आपके लिये क्षमायाचना की। तब वसुओं ने बताया कि बभ्रुवाहन के बाणों से आहत होकर भूमि पर गिर पड़ने पर अर्जुन उनके शाप से मुक्त हो जायँगे। यही सुन कर मैंने आपको उस शाप से मुक्त कराया है।' अर्जुन ने उलूपी के कार्य की अत्यन्त सराहना की और बभ्रुवाहन को अपनी माताओं और मन्त्रियों के साथ अश्वमेध यज्ञ में आने के लिये कहा। यज्ञ में आने का वचन देते हुये बभ्रुवाहन ने कहा कि वहाँ आकर वह ब्राह्मणों को भोजन परोसने का कार्य करेगा। उसने अर्जुन से अपनी दोनों पत्नियों के साथ अपने नगर में ही रात्रि व्यतीत करने का आग्रह किया; किन्तु यज्ञ-अश्व का अनुसरण करते रहने की दीक्षा लिये होने के कारण अर्जुन बभ्रुवाहन का निवेदन स्वीकार नहीं कर सके। अतः उन सबसे विदा लेकर अर्जुन वहाँ से चल दिये (१४. ८१)।" "सम्पूर्ण पृथ्वी की प्रदक्षिणा कर लेने पर अश्व हस्तिनापुर की दिशा में मुँह करके लौट पड़ा। राजगृह में सहदेव के पुत्र मगधराज मेघसन्धि ने अपने रथ पर बैठ कर पैदल अश्व का अनुसरण कर रहे अर्जुन पर आक्रमण किया, किन्तु अर्जुन से पराजित हो गया। अर्जुन ने उसे मुक्त करते हुये अश्वमेध यज्ञ में आने के लिये कहा। तदनन्तर वह अश्व पुनः अपनी इच्छा के अनुसार चलते हुये समुद्र के किनारे-किनारे वङ्ग, पुण्ड्र, और कोसल आदि देशों में गया। इन देशों में अर्जुन ने केवल गाण्डीव धनुष की सहायता से म्लेच्छों की अनेक सेनाओं को पराजित किया (१४. ८२)।" "मगधराज से पूजित हो अर्जुन ने अपने अश्व सहित दक्षिण दिशा की ओर प्रस्थान किया। उनका यज्ञ-अश्व विचरते हुये चेदियों की रमणीय राजधानी शुक्ति-पुरी में आया। यहाँ शिशुपाल के पुत्र शरभ ने पहले तो अर्जुन से युद्ध किया, किन्तु बाद में स्वागत-सत्कार द्वारा अश्व का पूजन किया। तदुपरान्त वह अश्व काशी, कोसल, किरात और तङ्गण आदि जनपदों में गया, जिनमें से सभी राज्यों में पूजा ग्रहण करके अर्जुन दशार्ण देश में आये। यहाँ चित्राङ्गद नामक राजा राज्य करते थे, जिनके साथ अर्जुन का भयङ्कर युद्ध हुआ। चित्राङ्गद को वश में करके अर्जुन निषादराज एकलव्य के राज्य में गये, जहाँ एकलव्य के पुत्र के साथ उनका घोर संग्राम हुआ; किन्तु अन्त में अर्जुन ने एकलव्य कुमार को भी पराजित कर दिया। तदुपरान्त अर्जुन अपने अश्व सहित दक्षिण समुद्रतट की ओर गये जहाँ उन्होंने द्रविड़ों, आन्ध्रों, माहिषकों और कोल्लगिरेयों को पराजित किया। इसके बाद अर्जुन सौराष्ट्र, गोकर्ण, प्रभास आदि क्षेत्रों में गये, और यहाँ से द्वारवती, जहाँ यदुवंशी वीरों के बालकों ने अश्व को बलपूर्वक पकड़ कर युद्ध करने का यत्न किया, किन्तु महाराज उग्रसेन ने उन्हें रोक दिया। तदनन्तर अर्जुन के मामा वसुदेव को साथ लेकर वृष्णिराज उग्रसेन नगर के बाहर आकर अर्जुन से मिले। वहाँ से पश्चिम के समुद्र-तटवर्ती देशों में विचरण करता हुआ यज्ञ-अश्व समृद्धिशाली पञ्चनद देश में पहुँच गया। फिर वहाँ से वह अश्व गान्धार देश में गया जहाँ शकुनि के पुत्र गान्धारराज के साथ अर्जुन का घोर संग्राम हुआ (१४. ८३)।" "गान्धारराज अपने पिता शकुनि के वध का प्रतिशोध लेना चाहता था। इस युद्ध में अनेक गान्धार योद्धा मारे गये। अन्त में अर्जुन की शान्तिपूर्ण बातों की उपेक्षा करते हुये गान्धारराज ने अकेले ही अर्जुन के साथ युद्ध किया। अर्जुन ने उस शकुनि-पुत्र गान्धारराज के शिरस्त्राण को एक अर्धचन्द्राकार बाण से काट गिराया, जिससे वह तथा उसके साथी अन्य गान्धार योद्धा भाग गये। तदनन्तर गान्धारराज की माता अत्यन्त भयभीत होकर बूढ़े मन्त्रियों को आगे कर रणभूमि में आई और अपने रणोन्मत्त पुत्र को युद्ध करने से रोका तथा अर्जुन को प्रसन्न किया। अर्जुन ने भी गान्धारराज की माता का सत्कार करते हुये कहा कि उन्होंने गान्धारी और धृतराष्ट्र का विचार करके ही उसके पुत्र को

छोड़ दिया। तदुपरान्त अर्जुन ने गान्धारराज से अश्वमेध यज्ञ में आने के लिये कहा (१४. ८४)।" "तदनन्तर वह अश्व लौट कर हस्तिनापुर की ओर चला। गुप्तचरों द्वारा यह समाचार सुन कर महाराज युधिष्ठिर अत्यन्त प्रसन्न हुये। उस दिन माघ मास के शुक्ल पक्ष की द्वादशी थी। उसमें पुष्य नक्षत्र का योग पाकर युधिष्ठिर ने अपने समस्त भ्राताओं को बुलाकर भीमसेन से कहा कि अब वेद के पारङ्गत विद्वान् ब्राह्मणों को भेज कर अश्वमेध यज्ञ की सिद्धि के लिये उपयुक्त स्थान निश्चित करना चाहिये—यहाँ उपयुक्त स्थान का वर्णन है। स्थान की व्यवस्था हो जाने पर भीम ने युधिष्ठिर की आज्ञा से विभिन्न राजाओं को बुलाने के लिये अनेक दूत भेजे। निमन्त्रण पाकर वे सभी नरेश युधिष्ठिर का हित करने के लिये अनेकानेक रत्न, दासियाँ, अश्व, तथा भाँति-भाँति के अस्त्र-शस्त्र लेकर वहाँ उपस्थित हुये। ब्राह्मणों में जो श्रेष्ठ पुरुष थे वह सब भी अपने-अपने शिष्यों को साथ लेकर वहाँ पधारे। यज्ञ आरम्भ होने पर अनेक प्रवचन-कुशल और एक दूसरे को विजित करने की इच्छा रखने वाले युक्तिवादी विद्वान् वहाँ आकर तर्क की बातें करने लगे। यज्ञस्थल पर सब कुछ स्वर्ण का बना हुआ था। वहाँ प्रति दिन एक लाख ब्राह्मणों को भोजन कराया जाता था; अन्न के अनेक पर्वताकार ढेर लगे रहते थे; दही की नहरें तथा घृत के तालाब भरे हुये थे। राजा युधिष्ठिर के उस यज्ञ-स्थल पर सारा जम्बूद्वीप एकत्र हो गया था (१४. ८५)।" "युधिष्ठिर ने अश्वमेध यज्ञ में आये राजाओं का सत्कार करने के लिये भीम को नियुक्त किया। इसके बाद वृष्णियों तथा बलदेव आदि को लेकर श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर के पास आकर कहा, 'अर्जुन अनेक युद्धों में शत्रुओं का सामना करने के कारण अत्यन्त दुर्बल हो गये हैं। एक विश्वासपात्र मनुष्य ने मेरे पास आकर यह समाचार दिया, और यह भी बताया कि अर्जुन अब निकट आ गये हैं। उस व्यक्ति ने मुझ से अर्जुन का यह संदेश आप तक पहुँचाने का निवेदन किया कि राजसूय यज्ञ में अर्घ्य देते समय जो दुर्घटना हो गयी थी उसकी इस बार पुनरावृत्ति नहीं होनी चाहिये। अर्जुन ने यह भी संदेश भेजा है कि इस यज्ञ में उनका पुत्र बभ्रुवाहन आयेगा जिसका विधिपूर्वक विशेष सत्कार करना चाहिये।' श्रीकृष्ण के द्वारा अर्जुन का संदेश सुन कर युधिष्ठिर ने उसका हृदय से अभिनन्दन किया (१४. ८६)।" "युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण से यह जानना चाहा कि अर्जुन को जीवन में इतने दुःख क्यों सहन करने पड़े। श्रीकृष्ण ने बताया कि पिण्डलियाँ औसत से कुछ अधिक मोटी होने के कारण ही अर्जुन को इतना अधिक चलना तथा दुःख सहन करना पड़ता है। उस समय द्रौपदी ने श्रीकृष्ण की ओर क्रोधपूर्वक देखा, किन्तु श्रीकृष्ण ने द्रौपदी के उस प्रेमपूर्ण उपालम्भ को सानन्द ग्रहण किया। उस समय भीम तथा अन्य कौरव, आदि अर्जुन के सम्बन्ध में यह शुभ एवं विचित्र बात सुन कर अत्यन्त प्रसन्न हुये। जब उन लोगों में इस प्रकार बातें हो रही थीं, तो उसी समय अर्जुन का भेजा हुआ दूत वहाँ आ पहुँचा। दूत से अर्जुन के आगमन का समाचार जान कर युधिष्ठिर ने उसे पुरस्कार-स्वरूप प्रचुर धन दिया। दूसरे दिन अर्जुन ने नगर में प्रवेश किया—नगर-प्रवेश का विस्तृत विवरण है। अर्जुन को देख कर नगरवासियों ने उन्हें पराक्रम में महाराज सगर आदि से भी श्रेष्ठ माना। अर्जुन ने युधिष्ठिर, आदि के चरणों में प्रणाम किया। इसी समय राजा बभ्रुवाहन भी अपनी दोनों माताओं के साथ वहाँ आये और कुरुकुल के वृद्ध पुरुषों तथा अन्य राजाओं को विधिवत् प्रणाम करके कुन्ती के महल में गये (१४. ८७)।" "चित्राङ्गदा और उलूपी ने कुन्ती का चरणस्पर्श किया; बभ्रुवाहन ने धृतराष्ट्र, आदि, का चरण-स्पर्श किया। श्रीकृष्ण ने राजा बभ्रुवाहन को एक बहुमूल्य रथ प्रदान किया जिसमें दिव्य अश्व सम्बद्ध थे। तत्पश्चात् युधिष्ठिर, भीम, आदि ने भी बभ्रुवाहन का सत्कार करके प्रचुर धन और उपहार दिये। तीसरे दिन महर्षि व्यास ने युधिष्ठिर से यज्ञ आरम्भ करने के लिये कहते हुये बताया कि ब्राह्मणों को उस यज्ञ में तिगुनी दक्षिणा देनी चाहिये। व्यास जी के ऐसा कहने पर युधिष्ठिर ने अश्वमेध यज्ञ की सिद्धि के लिये उसी दिन दीक्षा ग्रहण की। तदुपरान्त उस यज्ञ का विधिवत् समापन हुआ—यज्ञ का विस्तृत विवरण दिया गया है। इस यज्ञ में जो यूप खड़े किये गये थे उनमें तीन सौ पशु बँधे गये थे जिनमें प्रधान वही अश्व रत्न था। देवर्षियों, गन्धर्वों, किन्नरों, अप्सराओं, किम्पुरुषों, और सिद्धों की उपस्थिति से उस यज्ञ की शोभा अनुपम हो गई थी। व्यास के शिष्य, श्रेष्ठ ब्राह्मण, भी उस यज्ञसभा में सदैव उपस्थित रहते थे (१४. ८८)।" "अन्य पशुओं का विधिवत् श्रपण करने के पश्चात् उन श्रेष्ठ ब्राह्मणों ने उस अश्व का भी शास्त्रीय विधि के अनुसार आलभन किया। तत्पश्चात् याजकों ने विधिपूर्वक अश्व का श्रपण करके उसके समीप द्रौपदी को बैठाया। इसके बाद ब्राह्मणों ने शान्त-चित्त हो उस अश्व की चर्बी निकाल कर उसका श्रपण करना आरम्भ किया। अपने भ्राताओं सहित युधिष्ठिर ने उस चर्बी के धूम की गन्ध को सूँघा जो समस्त पापों का नाश करने वाली थी। उस अश्व के जो शेष अङ्ग थे उनको सोलह ऋत्विजों ने अग्नि में होम कर दिया। इस प्रकार यज्ञ को समाप्त करके शिष्यों सहित व्यास ने युधिष्ठिर को बधाई दी। युधिष्ठिर ने भी ब्राह्मणों को सहस्र कोटि स्वर्ण-मुद्रायें दक्षिणा में देकर व्यास को सम्पूर्ण पृथिवी दान कर दी। किन्तु व्यास ने दान में दी हुई पृथिवी को पुनः लौटाते हुये उसके बदले उसके मूल्य की याचना की क्योंकि ब्राह्मण धन के ही इच्छुक होते हैं। तब युधिष्ठिर ने उन ब्राह्मणों से कहा, 'अश्वमेध यज्ञ में पृथिवी की दक्षिणा देने का ही विधान है। अब मैं वन में चला जाऊँगा और आप लोग चातुर्होत्र यज्ञ के प्रमाणानुसार पृथिवी का चार भाग करके उसे आपस में बाँट लें।' युधिष्ठिर के इस कथन का उनके भ्राताओं तथा द्रौपदी ने भी अनुमोदन किया। उसी समय आकाशवाणी ने भी युधिष्ठिर के इस निश्चय की सराहना की। किन्तु व्यास तथा श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर को पृथिवी अपने ही अधिकार में रखने तथा ब्राह्मणों को स्वर्ण-दान करने के लिये सहमत कर लिया। इस प्रकार युधिष्ठिर ने अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक ब्राह्मणों को यज्ञ के लिये एक-एक करोड़ की तिगुनी दक्षिणा दी। महाराज मरुत्त के मार्ग का अनुसरण करने वाले राजा युधिष्ठिर ने उस समय जैसा महान् त्याग किया, वैसा इस संसार में दूसरा कोई राजा नहीं कर सकेगा। व्यास ने वह सम्पूर्ण स्वर्ण-राशि लेकर ब्राह्मणों को दे दी और उन सब ने उसे चार-चार भाग में विभक्त करके आपस में बाँट लिया। ब्राह्मणों के ले लेने के पश्चात् जो धन वहाँ शेष रह गया उसे क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा म्लेच्छ जाति के लोग ले गये। व्यास ने अपने अंश की स्वर्णराशि को अत्यन्त आदर-पूर्वक कुन्ती को भेंट कर दिया जिसे उसने बड़े-बड़े सामूहिक पुण्य कार्यों में व्यय किया। अन्त में अवभृथ स्नान करके युधिष्ठिर ने यज्ञ में आये हुये राजाओं को भी अन्यान्य प्रकार के रत्न, हाथी, घोड़े, आभूषण, स्त्रियाँ, वस्त्र, तथा स्वर्ण आदि देकर विदा किया। इस प्रकार युधिष्ठिर का यज्ञ पूर्ण हुआ। उसमें अन्न, धन, और रत्नों के ढेर लगे हुये थे; विभिन्न प्रकार की सुराओं का सागर लहराता था; इत्यादि। अनेक देशों के निवासी उस यज्ञोत्सव की बहुत दिनों तक चर्चा करते रहे। इस प्रकार पाप-रहित और कृतार्थ होकर युधिष्ठिर ने अपने नगर में प्रवेश किया (१४. ८९)।" "जनमेजय ने कहा, 'मेरे प्रपितामह युधिष्ठिर के यज्ञ में यदि कोई आश्चर्यजनक घटना हुई हो तो उसे बताने की कृपा करें।' वैशम्पायन ने बताया कि उस यज्ञ में किस प्रकार एक नेवले ने यज्ञ में व्यवधान उत्पन्न किया था। वैशम्पायन ने इस प्रसंग में सम्पूर्ण नकुलो-पाख्यान का वर्णन करते हुये बताया कि किस प्रकार नेवला अन्तर्ध्यान हो गया और ब्राह्मण घर लौट आये। वैशम्पायन ने कहा—'हे नरेश्वर! उस यज्ञ के सम्बन्ध में ऐसी घटना सुन कर तुम्हें किसी प्रकार विस्मय नहीं करना चाहिये। सहस्रों कोटि ऐसे ऋषि हो गये हैं जो यज्ञ न करके केवल तपस्या के बल से दिव्य लोक प्राप्त कर चुके हैं। किसी भी प्राणी

से द्रोह न करना, मन में संतोष रखना, शील और सदाचार का पालन करना, सब के प्रति सरलतापूर्ण बर्ताव करना, तपस्या करना, मन और इन्द्रिय को संयमित रखना, सत्य बोलना, और न्यायोपार्जित वस्तु का श्रद्धापूर्वक दान करना—इनमें से प्रत्येक गुण बड़े-बड़े यज्ञों के समान हैं।' (१४. ९०)।" "जनमेजय ने कहा, 'राजा लोग यज्ञ में, महर्षि तपस्या में, और ब्राह्मण मनोनिग्रह में तत्पर अथवा रत रहते हैं। अतः यज्ञफल की समानता करने वाला कोई कर्म यहाँ मुझे दृष्टिगत नहीं होता। यज्ञों का अनुष्ठान करके ही इन्द्र ने देवताओं का समस्त साम्राज्य प्राप्त किया था। भीम और अर्जुन को आगे रख कर राजा युधिष्ठिर भी समृद्धि और पराक्रम की दृष्टि से देवराज इन्द्र के ही समान थे। तब उस नेवले ने युधिष्ठिर के उस अश्वमेध यज्ञ की निन्दा क्यों की?' वैशम्पायन ने कहा: प्राचीन काल में जब इन्द्र का यज्ञ हो रहा था तब पशुओं के आलम्भ का समय आने पर ऋषियों ने उन पशुओं पर दया दिखाते हुये इन्द्र से कहा कि यज्ञ में पशुवध का विधान शुभकारक नहीं है क्योंकि यज्ञ में इस प्रकार के पशुवध का शास्त्रों में विधान नहीं देखा गया है। 'उन्होंने यह भी बताया कि तीन वर्ष के पुराने जौ, गेहूँ, आदि अनाजों से यज्ञ करना महान् गुणकारक और फल की प्राप्ति कराने वाला है। किन्तु ऋषियों के कहे हुये इस वचन को इन्द्र ने अभिमानवश स्वीकार नहीं किया, और उस यज्ञ में पधारे हुये तपस्वियों में इस प्रश्न को लेकर महान् विवाद छिड़ गया। इस विवाद से खिन्न होकर ऋषियों ने इन्द्र के परामर्श से इस विषय पर राजा उपरिचर वसु से पूछा, 'महामते! हम लोग धर्म विषयक सन्देह में पड़े हैं। आप हमें बतायें कि मुख्य-मुख्य पशुओं द्वारा यज्ञ करना चाहिये अथवा बीजों एवं रसों द्वारा।' राजा वसु ने, उन दोनों पक्षों के कथन में कितना सार था इसका विचार किये बिना ही, बताया कि जो वस्तु मिल जाय उसी से यज्ञ कर लेना चाहिये। इस प्रकार असत्य निर्णय देने के कारण चेदिराज वसु को रसातल में जाना पड़ा। अतः कोई सन्देह उपस्थित होने पर स्वयं ब्रह्मा को छोड़ कर अन्य किसी बहुज्ञ पुरुष को अकेले कोई निर्णय नहीं देना चाहिये। अशुद्ध बुद्धि वाले पापी पुरुष के दिये हुये दान कितने ही अधिक क्यों न हों, वे सब अनादृत होकर नष्ट हो जाते हैं। इसी प्रकार अन्यायोपार्जित धन का संग्रह करके जो धर्म-विषयक संशय रखते हुये यजन करता है उसे धर्म का फल नहीं मिलता। इसके विपरीत, तपस्या के धनी धर्मात्मा पुरुष उञ्छ (बीना हुआ अन्न), फल, मूल, शाक और जलपात्र का ही यथाशक्ति दान करके स्वर्गलोक में चले जाते हैं। प्राणियों पर दया, ब्रह्मचर्य, सत्य, करुणा, धृति, और क्षमा—ये सनातन धर्म के मूल हैं। पूर्वकाल में विश्वामित्र आदि नरेश इसी से सिद्धि प्राप्त करने में सफल हुये थे। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्र, जो भी तपस्या का आश्रय लेते हैं दान धर्मरूपी अग्नि से तप कर स्वर्ण के समान शुद्ध हो स्वर्ग लोक को जाते हैं (१४. ९१)।" "जनमेजय ने कहा, 'धर्म के द्वारा प्राप्त धन का दान करने से यदि स्वर्ग मिलता है तो यह समस्त विषय मुझे स्पष्ट रूप से बताइये। उञ्छवृत्ति धारण करने वाले ब्राह्मण को न्यायतः प्राप्त हुये सत्तू का दान करने से जिस महान् फल की प्राप्ति हुई उसका आपने मुझ से वर्णन किया, किन्तु सभी यज्ञों में यह निश्चय किस प्रकार कार्यान्वित किया जा सकता है, इसका मुझे पूर्णतः वर्णन कीजिये।' वैशम्पायन ने अगस्त्य के महायज्ञ के समय जो कुछ हुआ था उस प्राचीन वृत्तान्त का वर्णन किया। जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन ने बताया कि वह नेवला साक्षात् धर्म था जो पितरों के शाप से नेवला बन गया था। उसके इस शाप का अन्त करने के उद्देश्य से पितरों ने उससे कहा कि धर्मराज युधिष्ठिर पर आक्षेप करके ही वह इस शाप से मुक्त हो सकेगा। इसीलिये वह नेवला उस यज्ञ में आया और युधिष्ठिर पर आक्षेप करते हुये सेर भर सत्तू के दान का माहात्म्य बताकर शाप से मुक्त हो वहाँ से अन्तर्ध्यान हो गया (१४. ९२)।"

अनुगोप्तृ, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३७)।

अनुचक्र, त्वष्टा द्वारा स्कन्द को दिये गये दो पार्षदों में से एक का नाम है (९. ४५, ४०)।

अनुचर (बहुवचन)—अनुचरों के लिये प्रयुक्त हुआ है (९. ४५, १५. १७)। अंश ने स्कन्द को पाँच अनुचर प्रदान किये (९. ४५, ३५)। विष्णु ने स्कन्द को चक्र, विक्रमक तथा संक्रमक नामक तीन अनुचर प्रदान किये (९. ४५, ३७)। देवताओं की आज्ञा से तीनों लोकों के वायु-तुल्य, वेगशाली तथा पराक्रमी पार्षद स्कन्द के अनुचर हुये (९. ४५, ११५)। 'चतुर्थमस्यानुचरं ख्यातं कुमुदमालिनम्', (९. ४५, २५)। 'ततः प्रादादनुचरौ यमकालोपमावुभौ', (९. ४५, ३०)। 'सोमोऽप्यनुचरौ प्रादान्मणिं सुमणिमेव च', (९. ४५, ३२) 'ददावनुचरौ शूरौ परसैन्यप्रमाथिनौ', (९. ४५, ३३)। 'चक्रानुचक्रौ बलिनौ मेघचक्रौ बलोत्करौ। ददौ त्वष्टा महामायी स्कन्दायानुचरावुभौ ॥' (९. ४५, ४०)। 'ददावनुचरौ मेरुरग्निपुत्राय भारत। स्थिरं चातिस्थिरं चैव मेरुरेवापरौ ददौ ॥' (९. ४५, ४८)। 'शृणु मातृगणान् राजन् कुमारानुचरानिमान्' (९. ४६, १)।

अनुत्तम = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अनुदात्त (स्वर)—पाञ्चजन्य अग्नि द्वारा अपनी दोनों भुजाओं से उत्पन्न किया गया प्राकृत और वैकृत भेदों वाला 'अनुदात्त' स्वर (३. २२०, ८)। पाञ्चजन्य द्वारा पितरों के लिये उत्पन्न किये गये पाँच पुत्रों में से एक जिसकी 'प्राण' के अंश से उत्पत्ति हुई थी (३. २२०, १०)।

अनुद्यूत से उस द्यूत का तात्पर्य है जिसे कौरवों तथा पाण्डवों ने वनवास की बाज़ी लगाकर दूसरी बार खेला था। इसका सभापर्व के इसी नाम के एक अवान्तर पर्व में उल्लेख है जो ७४ से ८१ अध्यायों में आता है। 'द्यूतपर्व ततः प्रोक्तमनुद्यूतमतः परम्' (१. २, ४९)। देखिये अनुद्यूतपर्वन् भी।

अनुद्यूतपर्वन्, सभापर्व में ७४–८१ अध्यायों में आनेवाले एक अवान्तर पर्व का नाम है। "जब पाण्डवगण अपने रथादि तथा धन के संग्रह सहित हस्तिनापुर से चले गये तब दुःशासन ने दुर्योधन से कहा कि जिस धनराशि को अत्यन्त कष्ट से प्राप्त किया गया था उसे धृतराष्ट्र ने शत्रुओं के अधीन कर दिया। यह सुनकर दुर्योधन, कर्ण, तथा शकुनि ने पाण्डवों से प्रतिशोध लेने का निश्चय किया। इन लोगों ने धृतराष्ट्र के पास जाकर उन्हें बृहस्पति द्वारा इन्द्र को दिये गये नीतिविषयक उपदेश दिलाते हुये बताया कि पाण्डवगण कौरवों से अवश्य बदला लेंगे। इन लोगों ने धृतराष्ट्र को इस बात के लिये सहमत कर लिया कि वह युधिष्ठिर को शकुनि के साथ जूआ खेलने के लिये एक बार पुनः आमन्त्रित करें। इस जूये की शर्त यह रखने के लिये कहा कि पराजित पक्ष को मृगचर्म धारण करके बारह वर्ष तक वन में निवास करना होगा और तेरहवें वर्ष किसी नगर में जाकर अज्ञातवास करना होगा। यदि तेरहवें वर्ष की अज्ञातवास की अवधि में उन्हें कोई पहचान लेगा तो पुनः बारह वर्ष वन में रहना होगा। दुर्योधन ने कहा, 'पराजित पाण्डवगण जब तक वनवास करते रहेंगे उसी बीच हम लोग अनेक मित्रों का संग्रह करके बलशाली सेना का निर्माण कर लेंगे, जिससे वनवास के बाद यदि पाण्डव लौटे भी तो उन्हें पराजित करना सरल होगा।' दुर्योधन का वचन सुनकर धृतराष्ट्र ने पाण्डवों को जूआ खेलने के लिये आमन्त्रित करने की स्वीकृति दे दी। उस समय द्रोणाचार्य, सोमदत्त, बाह्लीक, कृपाचार्य, विदुर, अश्वत्थामा, युयुत्सु, भूरिश्रवा, भीष्म तथा महारथी विकर्ण आदि ने एक स्वर से धृतराष्ट्र के इस निश्चय का विरोध किया किन्तु इसका कोई परिणाम नहीं निकला (२. ७४)।" "गान्धारी ने धृतराष्ट्र को दुर्योधन के जन्म के समय विदुर द्वारा दिये गये परामर्श का स्मरण दिलाते हुये कहा, 'महाराज विदुर का परामर्श मान कर जन्म के समय ही दुर्योधन का परित्याग कर देना चाहिये था। किन्तु उस समय आपने पुत्र-स्नेह के कारण जो नहीं किया उसे अब कर दें, और कपट-द्यूत की आज्ञा न दें अन्यथा समस्त कुरुवंश का विनाश हो जायगा।'

किन्तु धृतराष्ट्र अपने पुत्रों की इच्छा का विरोध करने के लिये सहमत नहीं हुये (२. ७५)।" वैशम्पायन ने कहा, "युधिष्ठिर इन्द्रप्रस्थ के मार्ग में अत्यन्त दूर तक चले गये थे, फिर भी धृतराष्ट्र की आज्ञा से प्रतिकामी ने उनके पास जाकर उन्हें आमन्त्रित किया। यह जानते हुये भी कि धृतराष्ट्र की आज्ञा से जूये के लिये आमन्त्रण कुल के विनाश का कारण है, युधिष्ठिर यह कहते हुये कि 'यद्यपि किसी पशु का शरीर स्वर्णमय नहीं हो सकता, तथापि श्रीराम स्वर्णमय प्रतीत होनेवाले मृग पर लुब्ध हो गये, क्योंकि जिसका पतन या पराभव निकट होता है उसकी बुद्धि भी अत्यन्त विपरीत हो जाती है,' भाइयों सहित पुनः लौट आये। तदुपरान्त उपरोक्त शर्तों पर जूआ खेला गया जिसमें युधिष्ठिर की पराजय हुई (२. ७६)।" "तदनन्तर जूये में पराजित कुन्ती के पुत्रों ने वनवास की दीक्षा ली और सबने मृगचर्म धारण किया। पाण्डवगण जब इस प्रकार मृगचर्म धारण करके वनवास के लिये प्रस्थित हुये तब दुःशासन ने उनको लक्ष्य करके अपमानजनक बातें कहते हुये द्रौपदी से पराजित और पराभूत पाण्डवों का परित्याग करके कौरवों में से किसी को अपना पति चुन लेने के लिये कहा। तब क्रुद्ध भीम ने दुःशासन के पास जाकर कहा, 'जिस प्रकार तू अपने वचन रूपी बाणों से हम लोगों के मर्मस्थान में पीड़ा पहुँचा रहा है, उसी प्रकार जब मैं युद्ध में तेरा तथा तेरे साथियों का हृदय विदीर्ण करने लगूँगा उस समय तेरी कही इन बातों का स्मरण दिलाऊँगा।' भीम की बातें सुनकर निर्लज्ज दुःशासन कौरवों के बीच उनका उपहास करते हुये नाचने और 'ओ बैल ! ओ बैल !' कह कर उन्हें पुकारने लगा। उस समय भीम ने दुःशासन का रक्तपान तथा समस्त धार्तराष्ट्रों का वध करने की शपथ को दुहराया। जब पाण्डव सभाभवन से निकले तो उस समय हर्ष में भरे दुर्योधन सिंह के समान मस्तानी चाल से चलने वाले भीमसेन की खिल्ली उड़ाते हुये उनकी चाल की नकल करने लगा। यह देखकर भीम ने कहा: 'जब कौरवों तथा पाण्डवों में युद्ध होगा उस समय मैं दुर्योधन का वध करूँगा; अर्जुन कर्ण का संहार करेंगे, और शकुनि को सहदेव मारेंगे। साथ ही अपनी गदा से दुर्योधन को मार गिराने के पश्चात् मैं उसके मस्तक को पैरों से ठुकराऊँगा, और दुःशासन की छाती के रक्त का उसी प्रकार पान करूँगा जिस प्रकार सिंह किसी मृग का रक्तपान करता है।' अर्जुन तथा सहदेव ने भीम की इस बात का अनुमोदन किया। पुरुषों में सर्वसुन्दर नकुल ने भी द्रौपदी का अपमान करनेवाले समस्त धार्तराष्ट्रों का वध करने की शपथ ली (२. ७७)।" "तब युधिष्ठिर ने भीष्म, सोमदत्त, बाह्लीक, द्रोण, कृपाचार्य, युयुत्सु और सञ्जय इत्यादि से विदा ली। कुन्ती को अपने घर में ही सत्कारपूर्वक रखने का आग्रह करते हुए विदुर जी ने युधिष्ठिर को सान्त्वना देते हुये कहा: 'पूर्वकाल में मेरुसावर्णि ने तुम्हें हिमालय पर्वत पर धर्म और ज्ञान का उपदेश दिया था; वारणावत नगर में श्रीकृष्णद्वैपायन व्यासजी ने, भृगुतुङ्ग पर्वत पर परशुरामजी ने, तथा दृषद्वती के तट पर साक्षात् भगवान् शङ्कर ने तुम्हें अपने सदुपदेशों से कृतार्थ किया था। अञ्जन पर्वत पर तुमने असित का उपदेश सुना था। कल्माषी नदी के तट पर निवास करने वाले महर्षि भृगु ने भी तुम्हें उपदेश देकर अनुगृहीत किया था। देवर्षि नारद सदा तुम्हारी देख-भाल करते हैं और तुम्हारे पुरोहित धौम्यजी तो सदैव तुम्हारे साथ ही रहते हैं।......तुम इन्द्र से मन में विजय का उत्साह प्राप्त करो। क्रोध को अपने वश में रखने का पाठ यमराज से सीखो। दान में कुबेर का और संयम में वरुण का आदर्श ग्रहण करो।' इस प्रकार विदुर के उपदेश के पश्चात् युधिष्ठिर, भीष्म तथा द्रोण को नमस्कार करके, वहाँ से प्रस्थित हुये (२. ७८)।" "जब द्रौपदी (कृष्णा) ने कुन्ती के पास जाकर वन में जाने की आज्ञा माँगी तब कुन्ती ने अत्यन्त शोकाकुल वाणी से द्रौपदी को सान्त्वना देते हुए सहदेव की विशेष रूप से देख-भाल करने के लिये कहा। जब कुन्ती ने अपने पुत्रों को हर्ष से भरे शत्रुओं के बीच मृगचर्म धारण किये देखा तो वह अत्यन्त विलाप करती हुई बोली, 'हे द्वारकावासी श्रीकृष्ण तुम कहाँ हो ! तुम इन पाण्डवों को इस दुःख से क्यों नहीं बचाते ? तुम तो आदि-अन्त से रहित हो, जो मनुष्य तुम्हारा नित्य स्मरण करते हैं उन्हें तुम संकट से अवश्य बचाते हो। अतः तुम पाण्डवों पर दया करो।...... हे माद्रीनन्दन सहदेव ! तुम मुझे अपने शरीर से भी प्रिय हो, अतः लौट आओ।' इस प्रकार विलाप करती हुई माता कुन्ती को सान्त्वना देते हुये उनका अभिवादन करने के पश्चात् पाण्डव वन को चले गये। तदुपरान्त विदुरजी कुन्ती को अपने घर ले गये। उस समय धृतराष्ट्र के महल की स्त्रियाँ भी कौरवों को धिक्कारती हुई विलाप करने लगीं। अपने पुत्रों के अन्याय का चिन्तन करके राजा धृतराष्ट्र का हृदय भी अत्यन्त उद्विग्न हो उठा। चिन्ताकुल हो कर उन्होंने विदुर जी को बुलाने के लिये संदेश भेजा (२. ७९)।" "धृतराष्ट्र के पूछने पर विदुर जी ने वन जाते हुये पाण्डवों की मनःस्थिति और दृष्टिकोण का वर्णन किया। विदुर जी ने यह भी बताया कि उस समय नगर तथा देश के लोग कौरवों की भर्त्सना करते हुये अत्यन्त शोक सन्तप्त हो गये थे। उस समय अनेक प्रकार के अपशकुन हुये। विदुर के कथन और पुरवासियों की बातों को सुन कर महाराज धृतराष्ट्र शोक से मूर्च्छित हो गये। तब दुर्योधन, कर्ण, और शकुनि ने द्रोण को अपना आश्रय मानते हुये सम्पूर्ण राज्य उनके चरणों में समर्पित कर दिया। उस समय द्रोणाचार्य ने बताया: 'देवताओं के पुत्र होने के कारण पाण्डवगण अवध्य हैं। मैं यथाशक्ति सम्पूर्ण हृदय से तुम्हारे अनुकूल प्रयत्न करता हुआ तुम्हारा साथ दूँगा। वन में रहते हुये पाण्डव बारह वर्ष तक पूर्ण रूप से ब्रह्मचर्य का पालन करके जब क्रोध और अमर्ष के वशीभूत होकर लौटेंगे तो वह प्रतिशोध अवश्य लेंगे। उस समय मैं अपनी शक्ति भर तुम सब की रक्षा करने का प्रयास करूँगा। किन्तु महाराज द्रुपद ने याज और उपयाज की तपस्या द्वारा अग्नि से जिस धृष्टद्युम्न तथा वेदी के मध्यभाग से सुन्दरी द्रौपदी को प्राप्त किया था वही धृष्टद्युम्न मेरा वध करेंगे। धृष्टद्युम्न ही द्रोण का वध करेगा, यह बात सर्वत्र प्रचलित हो चुकी है।' द्रोणाचार्य की बात सुन कर धृतराष्ट्र ने पाण्डवों को लौटाने के लिये, और यदि वह न लौटें तो उन्हें रथ, शस्त्र तथा सेना आदि के साथ ससम्मान विदा करने के लिये विदुर जी को भेजा (२. ८०)।" "संजय ने धृतराष्ट्र को उनके कृत्यों की अनैतिकता बतायी। धृतराष्ट्र ने भी शोकमग्न होकर बताया कि जिस समय कृष्णा (द्रौपदी) को घसीट कर सभा में लाया गया उस समय समस्त ब्राह्मण इतने कुपित हो उठे थे कि उन्होंने सायंकाल अग्निहोत्र तक नहीं किया। धृतराष्ट्र ने उस समय घटित अपशकुनों, इत्यादि, का भी वर्णन किया (२. ८१)।"

अनुपावृत्त, भारतवर्ष के एक जनपद का नाम है (६. ९. ४८)।

अनुमति, एक देवी का नाम है जो स्कन्द के अभिषेक के समय उपस्थित हुई थी (९. ४५, १३)।

अनुयायिन्, धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक का नाम है (१. ६७, १०२)। इसका भीम ने वध किया था (७. १५७, १८)। इसका ही एक दूसरा नाम 'अग्रयायी' है (१. ११७. ११)।

अनुराधा, एक नक्षत्र का नाम है (५. १४३, ९; १३. ६४, २२; ८९, ८)। मार्गशीर्ष मास के शुक्लपक्ष की प्रतिपदा को मूल नक्षत्र से चन्द्रमा का योग होने पर चान्द्र-व्रत का आरम्भ करना चाहिये। इस व्रत में चन्द्रमा के स्वरूप का चिन्तन करते हुये उनके नेत्रमण्डल में रेवती, पृष्ठ भाग में धनिष्ठा, अनुराधा तथा उत्तरा को स्थापित करें (१३. ११०, ५)।

अनुरुद्ध, कार्तिक मास में मांस-भक्षण का निषेध करनेवाले राजाओं में से एक का नाम है (१३. ११५, ६९)।

अनुरूप = कृष्ण।

अनुवाकाः = कृष्ण।

१. **अनुविन्द,** एक राजा का नाम है जिसे सहदेव ने अपनी दिग्विजय के समय पराजित किया था (२. ३१, १०; २. ४४, २०)। 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ' (५. ६६, ६; १६६, ६; १९५, ५)। 'विन्दानुविन्दौ' (६. १६, १५)। 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ' (६. १७, ३७; ४५, ७२; ५१,

१७; ५६, ७)। 'विन्दानुविन्दौ', (६. ५१, ७६)। 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ', (६. ८१, ३. २७)। 'इरावांस्तु ततो राजन्ननुविन्दस्य सायकैः', (६. ८३, १६)। 'त्यक्त्वाऽनुविन्दोऽथ रथं विन्दस्य रथमास्थितः', (६. ८३, १८)। 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ', (६. ८६, ३३)। 'विन्दानुविन्दौ', (६. ८६. ३७)। 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ', (६. १०२, २४; १०८, ५८; ११३, १. ६)। 'विन्दानुविन्दौ', (६. ११३, १०)। 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ', (६. ११३, २२; ११४, २२)। 'चेकितानोऽनुविन्देन', (७. १४, ४८)। 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ', (७. २५, २०; ३२. ३९; ७४, १७)। 'विन्दानुविन्दयोः', (७. ८५, १६)। 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ', (७. ९५, ४३; ९६, ४)। 'अनुविन्दः प्रतापवान्' (७. ९९, २६)। 'अनुविन्दस्तु गदया ललाटे मधुसूदनम्', (७. ९९, २८)। 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ', (८. ५, १०; ७२, १९; ११. २५, २८)।

२. **अनुविन्द,** केकय राजकुमार का नाम है जो कौरव-पक्ष का एक योद्धा था (८. १३, ६)। इसका सात्यकि ने वध किया था (८. १३. २१)।

३. **अनुविन्द,** धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक का नाम है (१. ६७, ९४; ११७, ३)। घोषयात्रा के समय दुर्योधन सहित यह भी गन्धर्वों द्वारा वन्दी बनाया गया था (३. २४२, ८)। द्रोण की सेना का भेदन करते समय भीम इसके तथा दुःशल इत्यादि के सामने से होते हुये गये थे (७. १२७. ३४)। इसका भीम ने वध किया था (७. १२७, ६६)।

अनुशासन—'विज्ञेयमनुशासनमुत्तमम्' (१. २, ३३१)। 'एतत्सुवहुवृत्तांतमुत्तमं चानुशासनम्' (१. २, ३३६)।

अनुशासनिक—(अनुशासन से सम्बद्ध)—'ततः पर्व परिज्ञेयमानुशासनिकं परम्' (१. २, ७८)।

अनुशासनपर्व—देखिये **आनुशासनिकपर्वन्।**

अनुष्टुभ = विष्णु (सहस्त्र नामों में से एक)।

अनुष्णा, भारतवर्ष की नदियों में से एक का नाम है (६. ९, २४)।

अनुह्लाद, हिरण्यकशिपु के तृतीय पुत्र का नाम है (१. ६५, १८)। शिशुपाल के पुत्र, धृष्टकेतु, के रूप में यही अवतरित हुआ था (१. ६७, ७)।

अनूचाना, एक अप्सरा का नाम है जिसने अन्य अप्सराओं के साथ अर्जुन के जन्मोत्सव के समय नृत्य किया था (१. १२३, ६१)।

अनूदर, धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक का नाम है (१. ६७, ९९; ११७, ८)।

अनूप, एक प्राचीन जनपद का नाम है (२. ५१, २४)।

अनूपक, अनूप देशवासी योद्धाओं का नाम है (६. ५०, ४८)।

अनूपदेश, एक सागर तटवर्ती प्रदेश का नाम है जिसे वेन-पुत्र राजा पृथु ने सूत को प्रदान किया था (१२. ५९, ११३)।

अनूपपति, समुद्र तटवर्ती अनूपदेश के राजा अर्जुन कार्तवीर्य के लिये प्रयुक्त हुआ है (३. ११६, १९)।

अनूपराज, उन राजाओं में से एक थे जो युधिष्ठिर के सभाभवन में प्रवेश के समय उपस्थित हुये थे ('अनूपराजो दुर्धर्षः क्रमजिच्च सुदर्शनः' २. ४, २८)।

अनृशंस = शिव।

अनेकमूर्ति = विष्णु (सहस्त्र नामों में से एक)।

१. **अनेनस्,** पुरूरवा के पुत्र राजा आयु के द्वारा स्वर्भानु के गर्भ से उत्पन्न पाँचवें पुत्र का नाम है (१. ७५, २५)।

२. **अनेनस्** इक्ष्वाकुवंशी महाराज ककुत्स्थ के पुत्र का नाम है (३. २०२, २)।

अनौपम = शिव (सहस्त्र नामों में से एक)।

अनौषध = शिव (सहस्त्र नामों में से एक)।

अन्त (:) देवानाम् = शिव (सहस्त्र नामों में से एक)।

१. **अन्तक,** चौदह यमों में से एक जो पितरों की ओर से पृथ्वी-दोहन के समय दोग्धा थे (७. ६९, २६)। 'महादेवान्तकाभ्यां च कामाक्रोधाच भारत', (१. ६७, ७२)। 'चेदीनामधिपोवीरो बलवानन्तकोपमः', (१. १८७, २४)। 'सन्धिं कृत्वैव कालेन ह्यन्तकेन पतत्रिणा', (३. ३५, १)। 'तदस्त्रं पाण्डव श्रेष्ठं मूर्तिमन्तमिवान्तकम्', (३. ४०, २०)। 'सद्योन्तकः सर्वहरो विधात्रा', (३. ४८, १८)। 'उत्पपाताथ वेगेन दण्डपाणिरिवान्तकः', (४. २२, ६६; २३, २२)। 'अन्तकः पवनो मृत्युस्तथाऽग्निर्वडवामुखः', (४. ५०, २६)। 'अर्जुनं पाण्डवं वीरं द्रौपद्याः पदवीं चर। विदितौ हि तवात्यन्तं क्रुद्धौ तौ तु यथान्तकौ ।', (५. ९०, ८०)। 'चरन्तं गदया वीरं दण्डहस्तमिवान्तकम्', (६. ५४, २)। 'दण्डपाणिरिवान्तकः', (६. ६३, १; ८२, ६२)। 'दण्डहस्त इवान्तकः', (६. १०२, ३६)। 'दण्डहस्तमिवान्तकम्', (६. १०७, ७४)। 'न हि भीष्मं दुराधर्षं व्यात्ताननमिवान्तकम्', (६. १०७, ९९)। 'प्राहिणोन्मृत्युलोकाय कालान्तकसमद्युतिः', (६. ११३, १५)। 'अभ्यद्रवन्रणे भीष्मं व्यादितास्यमिवान्तकम्', (६. ११४, ३९)। 'ततोन्तक इव क्रुद्धः सवज्र इव वासवः। दण्डपाणिरिवासह्यो मृत्युः कालेन चोदितः', (७. ८८, १५)। 'के त्वां युधि पराक्रान्तं कालान्तकयमोपमम्', (७. ११९, २५)। 'व्यादितास्यमिवान्तकम्', (७. १४५, ४५)। 'व्यात्तानन इवान्तकः' (७. १६९, १२)। 'पाशैर्युक्तामन्तकस्येव जिह्वाम्', (७. १७९, ५४)। 'व्यात्ताननमिवान्तकम्', (७. १८३, १५)। 'अन्तकस्येव भूतानि जिहीर्षोः कालपर्यये', (७. १९५, २)। 'कालान्तकयमोपमौ', (८. १५, ३१)। 'क्रुद्धमन्तकस्यान्तकोपमम्', (८. २०, ३१)। 'समाददे चान्तकदण्डसन्निभानिषून-मित्रार्तिकरांश्चतुर्दश', (८. २०, ४५)। 'समाधत्त शरं घोरं मृत्युकालान्तकोपमम्', (८. २३, १७)। 'भीमसेनं रणे दृष्ट्वा कालान्तकयमोपमम्', (८. ५१, २०)। 'यमाभ्यां ददृशे रूपं कालान्तकयमोपमम्', (८. ५६, १७)। 'कालान्तकवपुः शूरः सूतपुत्रोऽभ्यराजत', (८. ७८, ५८)। 'आशीविषशिशुप्रख्यौ यमकालान्तकोपमौ', (८. ८७, १९)। 'न्यवधीत्तावकान्सर्वान्दण्डपाणिरिवान्तकः', (९. ३, २६)। 'विनेदुः सहसा दृष्ट्वा भूतग्रामा इवान्तकम्', (९. ३, २८)। 'सर्वयुद्धविभावज्ञमन्तकप्रतिमं युधि', (९. ६, ७)। 'अतिष्ठत रणे वीरः क्रुद्धरूप इवान्तकः', (९. १०, २६)। 'प्राच्छादयदरीन्संख्ये कालसृष्ट इवान्तकः', (९. ११, २७)। 'तं दीप्तमिव कालाग्निं पाशहस्तमिवान्तकम्', (९. १२, २)। 'तमन्तकमिव क्रुद्धं परिघं प्रेक्ष्य पाण्डवः', (९. १४, ३३)। 'तथा तमरिसैन्यानि घ्नन्तं मृत्यु मिवान्तकम्', (९. १७, ७)। 'तं चापि राजानमथोत्पतन्तं क्रुद्धं यथैवान्तकमापतन्तम्', (९. १७, ३१)। 'अवधीत्तावकान्योधान्दण्डपाणिरिवान्तकः', (९. १९, ४८)। 'यदा शूरं च भीरूं च मारयत्यन्तकः सदा', (९. १९, ६१)। 'अथाप्लुत्यरथात्तूर्णं दण्डपाणिरिवान्तकः', (९. २५, ३१)। 'दण्डहस्तं यथा क्रुद्धमन्तकं प्राणहारिणम्', (९. २६, २)। 'वैरस्यान्तं परीप्सन्तौ रणे क्रुद्धाविवान्तकौ', (९. ५८, २५)। 'सुप्ताञ्जघान सुबहून्वायसान्वायसान्तकः', (१०. १, ४०)। 'रुधिरोक्षितसर्वाङ्गः कालसृष्ट इवान्तकः', (१०. ८, ४२)। 'कालसृष्ट इवान्तकः', (१०. ८, ७७)। 'एवं तेषां तथा द्रौणिरन्तकः समपद्यत', (१०. ८, ७९)। 'प्रधक्ष्यन्निव लोकांस्त्रीन्कालान्तकयमोपमः', (१०. १३, ५२)। 'पाण्डवेयानामन्तकायाभिसंहितम्', (१०. १५, १७)। 'अन्तकः सर्वभूतानां देहिनां सर्वहार्यसौ', (११. ६, ८)। 'यथाऽन्तकमनुप्राप्य जीवन्कश्चिन्न मुच्यते', (११. १२, २६)। 'शेषे ह्यवस्थिते तात पुत्राणामन्तके त्वयि', (११. १५, २३)। 'सपुत्रपौत्रान्सामात्यांस्तदा भवति सोऽन्तकः', (१२. ६८, ४४)। 'क्रूरकाल इवान्तकः', (१२. ११६, ११)। 'कालान्तक इवोद्यतः', (१२. १६६, ४५)। 'जातमेवान्तकोऽन्ताय जरा चान्वेति देहिनं', (१२. १७५, २४)। 'सत्यागमः सदादान्तः सत्येनैवान्तकं जयेत्', (१२. १७५. २९)। 'न यमोनान्तकः क्रुद्धो न मृत्युर्भीमविक्रमः', (१२. ३००, २५)। 'रसायनप्रयोगैर्वा कैर्नाप्नोति जरान्तकौ',

(१२. ३१९, २) । 'केन वृत्तेन भगवन्नतिक्रामेज्जरान्तकौ', (१२. ३१९, ५) । 'त्वमन्तकाय दारुणैः प्रयत्नमार्जवे कुरु', (१२. ३२१, ३५)। 'मरुतोऽन्तकः', (१२. ३२१, ३८)। 'पुरा शरीरमन्तको भिनत्ति रोगसारथिः', (१२. ३२१, ४२) । 'पुरा करोति सोऽन्तकः प्रमादगोमुखां चमूम्', (१२. ३२१, ६४)। 'कालान्तकोपमाः' (१३. ३, ४) । 'पाशहस्तमिवान्तकम्', (१३. १४, २७०)। 'नान्तक सर्वभूतानां', (१३, ३८, २५)। 'अन्तकः पवनो मृत्युः पातालं वडवामुखम्', (१२. ३८, २९) । 'स कालः सोऽन्तको मृत्युः स यमो राज्यहानि च', (१३. १६०, ४०)। 'कालान्तकयमोपमम्', (१४. ७४, २७)।

२. **अन्तक** = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अन्तकज्वलन, प्रलय-कालीन अग्नि के लिये प्रयुक्त हुआ है : 'तदन्तकज्वलनसमानवर्चसं पुनः पुनर्न्यपतत वेगवत्तदा', (१. १९, २३)।

अन्तकाल, प्रलयकाल के लिये प्रयुक्त हुआ है (९. ४६, ७१)।

अन्तकृत्, स्कन्द के सैनिकों में से एक का नाम है (९. ४५, ५८)।

अन्तचार, एक प्राचीन भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ६८)।

अन्तर्गिरि, हिमालय की भीतरी श्रृङ्खला का एक जनपद (६. ९ ५४)। अर्जुन ने इसे विजित किया था (२. २७, ३)।

अन्तरद्वीप—'द्वीपाश्च सान्तरद्वीपा नानाजनपदाश्रयाः' (१२. १४, २५)।

अन्तरात्मन् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अन्तरिक्षचर, अन्तरिक्ष में विचरण करने वालों के लिये प्रयुक्त हुआ है (९. ५०, २६)।

अन्तर्धान, कुबेर द्वारा अर्जुन को प्रदत्त एक दिव्यास्त्र का नाम है (३. ४१, ३८)।

अन्तर्धामन्, अङ्ग नामक मनुवंशी राजा के पुत्र का नाम है (१३. १४७, २३)। अन्तर्धामन् से अनिन्द्य प्रजापति हविर्धामन् के उत्पन्न होने का उल्लेख (१३. १४७. २४)।

अन्तर्याग, कान, त्वचा, नेत्र, इत्यादि दस होताओं द्वारा साध्य एक आध्यात्मिक यज्ञ का नाम है (१३. २१–२७)।

अन्तर्वृत्ति, स्वर्ग की प्राप्ति कराने वाली एक आन्तरिक वृत्ति का नाम है (१३. १४४, ४–१७. २९–४०)।

अन्तर्हितात्मन् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अन्तवास, एक प्राचीन देश का नाम है (२. ५१, १७)।

अन्तेवसायिन्, चाण्डाल द्वारा निषादी से उत्पन्न पुत्र को कहते हैं : 'निषादी चापि चाण्डालात्पुत्रमन्तेवसायिनम्, श्मशानगोचरं सूते बाह्यैरपि बहिष्कृतम्', (१३. ४८. २८)।

१. **अन्ध,** एक जाति के लोगों, सम्भवतः अन्धकों, का नाम है (५. २९, १७)।

२. **अन्ध,** एक नाग का नाम है (५. १०३, १६)।

३. **अन्ध,** एक नेत्र हीन हिंसक पशु के लिये प्रयुक्त हुआ है। इस पशु ने पूर्व जन्म में तप करके सम्पूर्ण प्राणियों का संहार कर डालने के लिये वर प्राप्त किया था; इसीलिये ब्रह्माजी ने इसे अन्धा बना दिया। बलाक नामक व्याध इसको मार कर स्वर्ग का अधिकारी हुआ था (८. ६९, ३९–४५)।

१. **अन्धक,** एक जाति के लोगों का नाम है। 'अन्धकवृष्णिषु', (१. ६३, १०४) । 'वृष्णयश्चान्धकश्चैव नाना देश्याश्च पार्थिवाः', (१. १६२, ११) । 'वृष्ण्यन्धकाश्च', (१. १८७, ८)। 'वृष्ण्यन्धकानाम्', (१. २१८, १८. १९)। 'वृष्ण्यन्धकानाम्' (१. २१९, १. २; २२०, १२. १४. ३२; २२१, २७. ३३. ३८. ४२. ५८. ५९. ६२) । 'कुकुरान्धकैः', (२. १९, २८) । 'क्षितावन्धकवृष्णीनाम्', (२. ३६, १७) । 'सरव्येनान्धकवृष्णयः', (२. ५२, ४९) । 'अन्धका यादवा भोजाः समेता कंसमत्यजन्', (२. ६२, ८) । 'वृष्णयश्चान्धकैः', (३. १२, १)। 'वृष्ण्यन्धकपुरे', (३. १५, १९) । 'सात्यकिं बलदेवं च ये चान्येन्धकवृष्णयः', (३. १८, २८)। 'सवृष्णिभोजान्धकयोधमुख्या', (३. १२०, २०) । 'कुकुरान्धकाश्च', (३. १८३, ३२,) । 'भजन्त्यन्धकवृष्णयः', (३. २३'१, १५)। जनार्दनः सान्धकवृष्णिवीरो महेष्वासाः केकयाश्चापि सर्वे', ३. २६८, १६)। 'वृष्ण्यन्धकाश्च', (४. ७२, २५)। 'सह वृष्ण्यन्धकैः सर्वैर्भोजैश्च शतशस्तदा', (५. ७, ३)। 'अन्धकवृष्णि राज्ये', (५. २७, २) । 'चेदयश्चान्धकाश्च', (५. २८, ११) । 'वृष्ण्यन्धकानाम्' (५. ४८, ७८) । 'नयेनान्धकवृष्णयः', (५. ५१, ३९) । 'मुख्यमन्धकवृष्णीनामपश्यं कृष्णमागतम्', (५. ५७, २) । 'संमतोऽन्धकवृष्णिषु', (५. ६५, ७) । 'वृष्ण्यन्धकाः', (५. ८६, ४)। 'भारतान्धकवृष्णयः', (५. १२८, ४०)। 'अन्धकवृष्णयः', ५. १३१, ३)। 'अन्धका वृष्णयश्च', (५. १३१, ९)। 'अन्धकवृष्णयः', (५. १४०, १३. २४) । 'द्रविडान्ध्रकाश्चयैः', (५. १६०, १०३; १६१, २१) । 'संभावितोऽस्म्यन्धकवृष्णिनाथ', (६. ५९, ९८) । 'वृष्ण्यन्धककुरूत्तमौ', (७. १०४, १)। 'वृष्ण्यन्धकव्याघ्रं', (७. १४२, ५३. ६४)। 'वृष्ण्यन्धकाः', (७. १४३, १५) । 'अन्धकवृष्णि', (७. १९८, १२. ५४)। 'वृष्ण्यन्धकवृतो महान्', (७. १९९, २६) । 'रुद्रोऽन्धकायान्तकरं यथेषुम्', (९. १७, ४८) । 'वृष्ण्यन्धक महारथौ', (९. २१, १२) । 'वृष्ण्यन्धकमहारथैः', (१०. १२, ३४) । 'वृष्ण्यन्धकपुरे वयम्', (१२. ७, ३)। 'नारदान्धकवृष्णयः', (१२. ८१, ८) । 'भोजवृष्ण्यन्धकास्तथा', (१४. ५९, १८)। 'वृष्ण्यन्धककुलं', (१४. ६६, २४)। 'सह वृष्ण्यन्धकव्याघ्रैरुपासाञ्चक्रिरे तदा', (१४. ७१, १२) । 'वृष्ण्यन्धकपतिस्तदा', (१४. ८३, १५; ८६, १३) । 'कथं विनष्टा भगवन्नन्धका वृष्णिभिः सह', (१६. १, १२) । 'क्षयं वृष्ण्यन्धका गताः', (१६. १, १४) । 'वृष्ण्यन्धकविनाशाय', (१६. १, १९) । 'येन वृष्ण्यन्धककुले पुरुषा भस्मसात्कृताः', (१६. १, २६) । 'वृष्ण्यन्धककुलेष्विह', (१६. १, २९) । 'वृष्णीनामन्धकैः' (१६. २, १)। 'वृष्ण्यन्धकविनाशाय', (१६. २, ४)। 'वृष्ण्यन्धकानां गेहेषु कपोतः व्यचरंस्तदा', (१६. २, ८) । 'वृष्ण्यन्धकनिवेशने', (१६. २, १७)। 'वृष्ण्यन्धकानखादन्त स्वप्ने गृध्रा भयानकाः', (१६. ३, २)। 'वृष्ण्यन्धकमहारथाः', (१६. ३, ७)। 'चान्धकवृष्णयः', (१६. ३, ८)। 'वृष्ण्यन्धकमहारथाः', (१६. ३, १३) । 'भोजान्धका', (१६. ३, ३०) । 'सात्यकिश्चान्धकैः', (१६. ३, ३४) । 'ततोन्धकाश्च भोजाश्च शैनेया वृष्णयस्तथा', (१६. ३, ३७) । 'कुकुरान्धकाः', (१६. ३, ४२)। 'स चिन्तयन्नन्धकवृष्णिनाशं', (१६. ४, १९)। 'सभोजान्धककौकुरान्', (१६. ५, २)। 'वृष्ण्यन्धकजलां', (१३. ५, ८)। 'शक्रप्रस्थसहं नेष्ये वृष्ण्यन्धकजनं स्वयम्', (१६. ७, १०)। 'वृष्ण्यन्धककुमारकाः', (१६. ७, २७) । 'भृत्याश्चान्धकवृष्णीनां सादिनो रथिनश्च ये', (१६. ७, ३४)। 'पुत्राश्चान्धकवृष्णीनां', (१६. ७, ३७)। 'भोजवृष्ण्यन्धकस्त्रीणां', (१६. ७, ३९) 'वृष्ण्यन्धकवरस्त्रियः', (१६. ७, ६३) । 'भोजवृष्ण्यन्धका', (१६. ८, १०) । 'वृष्ण्यन्धकमहारथाः', (१६. ८, २६) । 'वृष्ण्यन्धककुलं', (१६. ८, ३८) । 'वृष्ण्यन्धककुले', (१७. १, १) । 'वृष्ण्यन्धकमहारथान्', (१८. ४, १८) ।

२ **अन्धक,** एक असुर का नाम है, जिसका रुद्र ने वध किया था। 'पुरेव त्र्यम्बकान्धकौ', (७. ४९, ११; ५९, ६) । 'यथाऽन्धके प्रतिनिहते हरं सुराः', (७. १५५, ४४)। 'महेश्वर इवान्धकम्', (७. १५६, ९०)। 'अन्धकनिपातिने', (७. २०१, ७१) । 'यथा रुद्रेण चान्धकः', (८. ७, ५७)। 'त्र्यम्बकेनान्धको यथा', (८. २०, १९) । 'अन्धकस्याथ शुक्रस्य दुन्दुभेर्महिषस्य च ॥ यक्षेन्द्रबलरक्षःसु निवातकवचेषु च । वरदानावघाताय ब्रूहि कोऽन्यो महेश्वरात् ॥', (१३. १४, २१४. २१५)।

३. **अन्धक**—एक राजा का नाम है जो पाण्डव पक्ष की ओर से युद्धमें सहयोगार्थ निमन्त्रित किया गया था (५. ४, १२)।

४. **अन्धक,** एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से पुरुषमेध यज्ञ के फल की प्राप्ति होती है (१३. २५, ३२. ३३)।

अन्धक-घातिन् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अन्धक-भोज, जरासन्ध के आक्रमण के समय गोमन्त पर्वत के दुर्ग की रक्षा करने वाले महारथियों में से एक का नाम है (२. १४, ५९)।

अन्धकार, एक पर्वत का नाम है : 'क्रौञ्चात् परो वामनको वामनादन्धकारकः । अन्धकारात् परो राजन् मैनाकः पर्वतोत्तमः ॥' (६. १२, १८)।

अन्धकारक, क्रौञ्चद्वीप के एक जनपद का नाम है : 'उष्णात् परः प्रावरकः प्रावारादन्धकारकः । अन्धकारकदेशात्तु मुनिदेशः परः स्मृतः ॥' (६. १२, २२)।

अन्ध्र (ध्राः), दक्षिण भारत की एक जाति का नाम है (२. ३१, ७१)। कलियुग में छल से शासन करने वाले एक राजा का उल्लेख (३. १८८, ३५)। भगवान् श्रीकृष्ण ने कर्ण को समझाते हुये बताया कि द्रविड, कुन्तल, अन्ध आदि उसके सेवक होंगे (५. १४०, २६)। 'द्रविडान्ध्रकाञ्च्यैः' (५. १६०, १०३; १६१, २१) । 'आन्ध्राश्च बहवो राजन्' (६. ९, ४९) । कलिङ्ग और अन्ध्रकों को कर्ण ने परास्त किया (७. ४, ८)। क्षत्रियों का धर्म बताते हुये इन्द्र द्वारा उल्लिखित विभिन्न जाति के लोगों में इसका भी उल्लेख है (१२. ६५, १३) । निषाद स्त्री और वैदेहक पुरुष के संसर्ग से उत्पन्न एक मिश्रित जाति का नाम है (१३. ४८, २५) । दक्षिण समुद्रतट पर स्थित एक जाति के लोगों का नाम है, जिनके साथ अर्जुन का युद्ध हुआ था (१४. ८३, ११)।

अन्ध्रक—युधिष्ठिर द्वारा सभाभवन में प्रवेश करने के समय उपस्थित राजाओं में एक यह भी था (२. ४, २४)।

अन्ध्रकाः—युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में पधारने वाले राजाओं में इनकी भी गणना है (२. ३४, ११) । 'चोलद्रविडान्ध्रकाः' (३. ५१, २२)। कर्ण की सेना में पाण्ड्य ने जिनका वध किया था उनमें पुलिन्द, खस, वाह्लीक, निषाद आदि के साथ इनका भी उल्लेख है (८. २०, १०)। दुर्योधन-पक्ष की ओर से युद्ध करते हुये योद्धाओं में इनका उल्लेख है (८. ७३, २०)। दक्षिण क्षेत्र में उत्पन्न पृथिवी के पापी जीवों के अन्तर्गत इनका भी उल्लेख है (१२. २०७, ४२)।

अन्न = शिव (सहस्र नामों में से एक)। विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अन्नद = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अन्नपति = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अन्नभुज् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अन्नभोक्तृ = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अन्नस्रष्टृ = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अन्नाद = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अन्यगोचरी, स्कन्द की अनुचरी एक मातृका का नाम है (९. ४६, २७)।

अन्वग्भानु, मिश्रकेशी अप्सरा के गर्भ से उत्पन्न रौद्राश्व के १० पुत्रों में से एक का नाम है (१. ९४, ८)।

अपघनाशंकर = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अपगा, मद्रदेश में स्थित एक नदी का नाम है (८. ४४, १०)। देखिये 'आपगा' भी।

अपगासुत = भीष्म, देखिये व० स्था०।

अपगेय = भीष्म, देखिये व० स्था०।

अपर = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अपरकाशि, भारत वर्ष के एक जनपद का नाम है (६. ९, ४२)।

अपरकुन्ति, भारतवर्ष के एक जनपद का नाम है (६. ९, ४३)।

अपरनन्दा, एक नदी का नाम है, जिसका अर्जुन ने दर्शन किया था (१. २१५, ७)। युधिष्ठिर भी इस नदी के तट पर पधारे थे (३. ११०, १)। देववंश और ऋषिवंश के साथ कीर्तनीय पुण्यकारक नदियों की गणना में इसका भी नाम आता है (१३. १६५, २८)।

अपरम्लेच्छ, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ६५)।

अपरवल्लव, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ६२)।

अपरसेक, दिग्विजय के समय सहदेव द्वारा विजित एक जाति का नाम है (२. ३१, ९)।

१. अपराजित, एक नाग का नाम है (१. ३५, १३; ५. १०३, १५)।

२. अपराजित, कालेय नामक आठ दैत्यों में से द्वितीय के अंश से अवतरित एक राजा का नाम है (१. ६७, ४९)। इन्हें पाण्डवों की ओर से रणनिमन्त्रण प्राप्त हुआ था (५. ४, २१)।

३. अपराजित, धृतराष्ट्र के पुत्रों में से एक का नाम है (१. ६७, १०१; ११७, १०) । भीष्म ने इसका वध किया था (६. ८८, १५. १९. २२)।

४. अपराजित, कुरु-पौत्र जनमेजय-कुमार धृतराष्ट्र के कुण्डिक आदि ९ पुत्रों में से एक का नाम है (१. ९४, ५९)।

५. अपराजित, ग्यारह रुद्रों में से एक का नाम है (१२. २०८, २०)।

६. अपराजित=महापुरुष (विष्णु के सहस्र नामों में से एक : १३. १४९, ८९)।

अपराजिता—'षष्ठीं यां ब्राह्मणाः प्राहुर्लक्ष्मीमाशां सुखप्रदाम् । सिनीवालीं कुहूं चैव सद्वृत्तिमपराजिताम् ॥', (३. २२९, ५०)।

अपरान्त, भारतवर्ष के एक प्राचीन जनपद का नाम है (६. ९, ४७)। यह शूर्पारक-क्षेत्र का एक द्वितीय नाम है (१२. ४९, ६७)।

अपरिमित, अपरिनिर्मित, अपरिनिन्दित : महापुरुषस्तवे ।

अपवर्ग—'अपवर्गस्थभूतानां पञ्चानां परतः स्थितः', अर्थात् श्रीकृष्ण (१२. ४७, ८४)।

अपांगर्भ—देखिये अग्नि।

अपां निधि = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अपां पति = वरुण (१. १८, १०; ९. ४७, ४. १०. १६)।

अपां प्रपतन, एक तीर्थ का नाम है (१३. २५, २८)।

अपां ह्रद, एक तीर्थ का नाम है, जहाँ स्नान करने से अश्वमेध जैसा फल प्राप्त होता है (१३. २५, १४)।

१. अपान, एक प्राणवायु का नाम है जो जठरानल, मूत्राशय, और गुदा का आश्रय होकर मल एवं मूत्र को निकालता हुआ ऊपर से नीचे को घूमता रहता है (१२. १८५, ६)। तु० की० प्राण । पृथ्वी और आकाश में अदृश्य रूप से निवास करने वाले साध्यों के दुर्जय पुत्र का नाम 'समान' है; समान के पुत्र 'उदान'; उदान के पुत्र 'व्यान'; और व्यान के पुत्र 'अपान' थे; अपान से ही प्राण की उत्पत्ति हुई है (१२. ३२८, ३३)।

२. अपान = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अपान्तरतमस्—जगत के स्रष्टा ने सम्पूर्ण दिशाओं को प्रतिध्वनित करते हुये सरस्वती का उच्चारण किया, जिससे वहाँ सारस्वत का आविर्भाव हुआ। सरस्वती अथवा वाणी से उत्पन्न हुये इसी शक्तिशाली पुत्र का नाम अपान्तरतमस् हुआ (१२. ३४९, ३९) । सरस्वती-पुत्र अपान्तरतमस् मुनि को इस प्रकार विदा देते हुये भगवान् बोले : 'जाओ अपना कार्य करो' (१२. ३४९, ५८) । इन्होंने बताया कि यह भगवान विष्णु की कृपा से ही अपान्तरतमस् नाम से उत्पन्न हुये थे (१२. ३४९, ५९)। अपान्तरतमस् वेदों के आचार्य बताये जाते हैं और यहाँ कुछ लोग इनको प्राचीनगर्भ भी कहते हैं (१२. ३४९, ६६)।

अपूरण—'नागश्चापूरणस्तथा', (१. ३५, ६)। 'मणिर्नागस्तथैवापूरणः खगः', (५. १०३, १०)।

अप्रतर्क्य : महापुरुषस्तवे ।

अप्रतिरथ = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।
अप्रतिरूप = शिव (सहस्र नामों में से एक)।
अप्रमत्त = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।
अप्रमद = शिव (सहस्र नामों में से एक)।
अप्रमेय = विष्णु (सहस्र नामों में से एक), स्कन्द।
अप्रमेयात्मन् = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।
अप्रेष्य = कृष्ण (१२. ४७, ३७)।

१. अप्सरस्, प्रायः सर्वत्र बहुवचन में ही प्रयुक्त हुआ है : 'तत्रैव मोक्षयामास पञ्च सोऽप्सरसः शुभाः', (१. २, १२३) 'अप्सरा मेनका', (१. ८, ७. ८)। 'गन्धर्वाप्सरसोः सुताः', (१. ९, ८)। 'किन्नरैरप्सरोभिश्च देवैरपि च सेवितम्', (१. १८, २) । 'गन्धर्वाप्सरसां प्रियम्', (१. २७, ८) । 'विद्याधरैरप्सरसां गणैश्च', (१. ५६, ९) । 'गन्धर्वाप्सरसो नृपम्', (१. ६३, ३४)। 'ब्रह्मशापाद्वराप्सराः', (१. ६३, ५८)। 'गन्धर्वैरप्सरोभिश्च', (१. ६४, ४१) । 'गन्धर्वाप्सरसां गणान्', (१. ६४, ४९) । 'गन्धर्वाप्सरसां तथा', (१. ६५, ७) । 'इमं त्वप्सरसां वशं', (१. ६५, ४८) । 'गन्धर्वाप्सरसस्तथा', (१. ६५, ५२) । 'इति ते सर्वभूतानां सम्भवः कथितो मया । यथावत्परिसंख्यातो गन्धर्वाप्सरसां तथा ॥', (१. ६५, ५३)। 'गणस्त्वप्सरसां यो वै मया राजन्प्रकीर्तितः', (१. ६७, १६१) । 'गन्धर्वाप्सरसां तथा', (१. ६७, १५४) । 'अंशावतरणं सम्यग्गन्धर्वाप्सरसां तथा', (१. ६८, १) । 'गन्धर्वाप्सरसांग णैः', (१. ७०, १५)। 'गुणैरप्सरसां दिव्यैः', (१. ७१, २२) । 'षडेवाप्सरसां वराः', (१. ७४, ६८) । 'मेनकाऽप्सरसां श्रेष्ठा', (१. ७४, ७६) । 'सहाप्सरोभिर्विहरन्', (१. ८९, १९) । 'ततोऽन्तरिक्षेऽप्सरसो', (१. १००, ९८)। 'अथ काशिपतेर्भीष्मः कन्यास्तिस्रोऽप्सरोपमाः', (१. १०२, ३) । 'गन्धर्वाप्सरसस्तथा', (१. १२३, ५०. ५२) । 'नृत्यन्तेऽप्सरसां गणाः', (१. १२३, ५३) । 'तथैवाप्सरसो हृष्टाः सर्वालङ्कारभूषिताः', (१. १२३, ६०)। 'ददर्शाप्सरसं साक्षात्', (१. १३०, ३५)। 'सहसाप्सरोभिः', (१. १८७, ७) । 'तास्तदाऽप्सरसो', (१. २१७, २२) । 'गन्धर्वाप्सरसस्तथा', (२. ४, ३७) । 'तथैवाप्सरसो', (२. ७, २४) । 'सङ्घशश्चाप्सरोगणाः', (२. ८, ३८) । 'गन्धर्वाप्सरसां गणाः', (२. ९, २६) । 'गणैरप्सरसां वृताः', (२. १०, ९) । 'गन्धर्वाप्सरसां गणाः', (२. १०, १३. १४; ११, २८)। 'गन्धर्वाप्सरसस्तथा', (२. ११. ५६)। 'गन्धर्वाप्सरसश्चैव भगवान्', (२. १२, ३) । 'गन्धर्वाप्सरसामपि', (३. २४, ७) । 'गन्धर्वैरप्सरोभिश्च', (३. ४२, १३) । 'अप्सरोगणसंकीर्णे', (३. ४२, २८) । 'तथैवाप्सरसां गणान्', (३. ४२, ३७) । 'नन्दनं च वनं दिव्यमप्सरोगणसेवितम्', (३. ४३, ३) । गन्धर्वैरप्सरोभिश्च', (३. ४३, ९. ३१ भी)। 'प्रहितोप्सरसां वराम्', (३. ४५, २)। 'प्रवराप्सरसां वरे', (३. ४६, २०)। 'सर्वाऽप्सरःसु मुख्यासु', (३. ४६, २८)। 'तथैवाप्सरसः सर्वा विशिष्टाः स्वगृहं गताः', (३. ४६, ३०)। 'दिवि शक्रमिवाप्सरा' (३. ७८, १४) । 'गन्धर्वाप्सरसश्चैव', (३. ८२, २२) । 'गन्धर्वाप्सरसां गणाः', (३. ८२, ९४) । 'गन्धर्वाप्सरसो', (३. ८३, ६)। 'वृतामप्सरसां गणैः', (३. ८५, २२) 'गन्धर्वाप्सरसोपि च', (३. ८५, ७२) । 'अप्सरोभिश्च सेवितम्', (३. ९०, २०) । 'सत्यवती कन्या रूपेणाप्सरसोप्यति', (३. ९६, २९) । 'अप्सरोभिश्च', (३. १०८, १०)। 'वने तु तस्य वसतः कन्या जज्ञेऽप्सरःसमा । ऋचीको भार्गवस्तां च वरयामास भारत ॥', (३. ११५, २१) । 'गन्धर्वाप्सरसां प्रियम्', (३. १४३, ६) । 'अप्सरो नूपुररवैः', (३. १४६, २४) । 'तदिहाप्सरसस्तात', (३. १४८, २०) । 'गन्धर्वैरप्सरोभिश्च', (३. १५३, ८)। 'गन्धर्वाप्सरसश्चैव', (३. १५४, ५) । 'गन्धर्वैरप्सरोभिश्च', (३. १५८, १००)। 'गन्धर्वाप्सरसां गणाः', (३. १५९, १८)। 'अप्सरोभिः परिवृतः', (३. १५९, २६) । 'गन्धर्वास्तथैवाप्सरसां गणाः', (३. १६१, ३९)। 'गन्धर्वाप्सरसां गणाः', (३. १६६, ४) । 'गणाश्चाप्सरसां तत्र', (३. १६८, १०) । 'गन्धर्वाप्सरसां चैव प्रभावम्', (३. १६८, ४४) । 'पश्यंश्चाप्सरसः श्रेष्ठा', (३. १६८, ५९)। 'अप्सरसां गणाः', (३. १७५, १७) । 'अप्सरोगण सेवितान्', (३. १७८, ६) । 'अप्सरोभिः', (३. १८६, ७) । 'गन्धर्वाप्सरसो', (३. १८८, १२०) । 'अप्सरसां यथा', (३. २०१, ५) । 'सर्वैः अप्सरसां गणैः', (३. २२९, ३९) । 'या जनित्री त्वप्सरसां गर्भमास्ते प्रगृह्य सा', (३. २३०, ३९) । 'अप्सरसस्तथा', (३. २३१, २६) । 'तथैवाप्सरसां गणाः', (३. २३१, ४४) । 'गणैरप्सरसां चैव', (३. २४०, २२) । 'सहाप्सरोभिः', (३. २४६, १७) । 'गन्धर्वाप्सरसस्तथा', (३. २६१, ६) । 'वराप्सरा दैत्य वराङ्गना', (३. २६५, २)। 'गन्धर्वाप्सरसो', (३. २८१, १३) । 'यदि वाऽप्सराः', (४. ९, १४) । 'गन्धर्वाप्सरसश्चैव', (४. ५८, ७१) । 'सोऽप्सरसः', (५. ९, ९) । 'संपूज्याप्सरसः शक्रो', (५. ९, १९)। 'अप्सरोभिः परिवृतः', (५. ११, १३) । 'गन्धर्वाप्सरसां गणाः', (५. ११, १५)। 'चाप्सरसां गणाः', (५. १७, २१)। 'गन्धर्वाप्सरसां गणैः', (५. १८, ३)। 'गन्धर्वैरप्सरोभिश्च', (५. १८, १)। 'गन्धर्वयक्षाप्सरसश्च सूतः', (५ २९, १६) । 'रूपमप्सरसामभूत्', (५. ४४, २१) । 'अप्सरसो दश', (५. १११, २१) । 'सिद्धाश्चाप्सरसस्तथा', (५. १२१, ५) । 'गन्धर्वाप्सरसां गणैः', (५. १२३, ४) । 'गन्धर्वाप्सरस्तथा (५. १७६, ३१)। 'अप्सरोगणसंयुक्ता', (६. ६, १८) । 'स्त्रियश्चाप्सरसोपमाः', (६. ६, ३३)। संवृतोऽप्सरसां सङ्घैर्मोदते गुह्यकाधिपः', (६. ६, ३५) । 'स्त्रियश्चाप्सरसोपमाः', (६. ७, ८) । 'अप्सरसोऽपि च', (६. ६६, २५)। 'नृत्यन्तेऽप्सरसस्तस्य षट्सहस्राणि सप्तधा', (७. ६१, ६) । 'गन्धर्वाप्सरसोऽपि च', (७. ६९, १०) । 'पुण्यगन्धान् पञ्चपात्रे गन्धर्वाप्सरसोऽद्दुहन्', (७. ६९, २५) । 'अप्सरोभिः समाकीर्णे', (७. ८०, ३३) । 'द्रौणिमपूजयन्नप्सरसः सुराश्च', (७. १५६, १९०) । 'अप्सरसां गणाश्च', (७. १६३, १३. ३४) । 'तदप्सरोभिराकीर्णे', (७. १८८, ३८) । 'गन्धर्वाप्सरसस्तथा', (७. २०२, १२५) । 'अप्सरसां गणाः', (८. ३४, ५९) । 'तथैवाप्सरसां वृन्दैः', (८. ३४, ६०) । 'तथैवाप्सरसां गणाः', (८. ३४, ८१) । 'विमानैरप्सरः सङ्घैः', (८. ४९, ७६) । 'आरोप्यारोप्य गच्छन्ति विमानेष्वप्सरोगणाः', (८. ४९, ७७)। 'सहाप्सरोभिः', (८. ५७, १३) । 'अप्सरसां गणाः', (८. ६१, ३२)। 'अप्सरोगीतवादित्रैर्नादितं च मनोरमाम्', (८. ६९, ४३) । 'गन्धर्वाप्सरसां गणाः', (८. ८७, ५२)। 'अप्सरसां च सङ्घैः', (८. ८८, १)। 'अप्सरोगणैः', (८. ९०, १८) । 'अप्सरसां गणाः', (९. ५, ३७) । 'अप्सरोभिः', (९. ५, ३८) । 'तत्र अप्सरसः', (९. ३७, ३) । 'अप्सरसां गणः', (९. ३७, ५) । 'अप्सरसां शुभा', (९. ३७, ७)। 'अप्सरोगणाः', (९. ३८, ९) । 'गन्धर्वाप्सरसस्तदा', (९. ४२. ४०)। 'गन्धर्वैरप्सरोभिश्च', (९. ४५, ७) । 'रूपेणाप्सरसां तुल्या', (९. ४६, ३८) । 'ननृतुश्चाप्सरोगणाः', (९. ४६, ५९) 'गन्धर्वाप्सरसश्च ह', (९. ४९, १९)। 'गन्धर्वाप्सरसां गणाः', (९. ५१, १७)। 'दिवौकसामप्सरसां', (९. ५७, ६८)। 'गन्धर्वाप्सरसस्तथा', (९. ५८, ६१)। 'जगुश्चाप्सरसो', (९. ६१, ५६)। 'नूनमप्सरसां स्वर्गे', (११. २०, २६)। 'अप्सरोभिः', (११. २०, २७) । 'अप्सरोभिः शचीपतिम्', (१२. २३, ७१) । 'जगुश्चाप्सरसां गणाः', (१२. ५२, २४) । 'वराप्सरः सहस्राणि', (१२. ९८, ४६) । 'गन्धर्वाप्सरसश्चैव', (१२. १६६, १८) । 'ननृतुश्चाप्सरः संघास्तत्र' (१२. २००, १४) । 'अप्सरोभिः', (१२. २२१, १६)। 'अप्सरोभिः पुरस्कृतम्', (१२. २२८, १४) । 'जामयोऽप्सरसां लोके', (१२. २४३, १८) । 'पश्य ह्यप्सरसो दिव्या मया दत्तेन चक्षुषा', (१२. २७२, १५) । 'अप्सरोभिः समागमन्', (१२. २८१, १७) । 'आहूयाऽप्सरसो देवः', (१२. २८२, ४३) । 'अप्सरस ऊचुः', (१२. २८२, ४५) । 'अप्सरसां गणाः', (१२. २८२, ४७) । 'अप्सरोगणसंबाधः', (१२. २८३, ११)। 'गन्धर्वाप्सरसाकीर्णे', (१२. २८४, ४)।

'गन्धर्वाप्सरसस्तथा', (१२. २८४, ७)। 'यथाऽप्सरोगणाः', (१२. ३२१, ५९)। 'सिद्धाश्चाप्सरसस्तथा', (१२. ३२३, १९)। 'ननृतुश्चाप्सरोगणाः', (१२. ३२४, १४)। 'रूपेणाप्सरसां समाः', (१२. ३२५, ३५)। 'तमप्सरोगणाकीर्णं', (१२. ३२७, ४)। 'गन्धर्वाप्सरसां गणाः', (१२. ३३२, १५)। 'सर्वाप्सरोगणाः' (१२. ३३२, १८)। 'अप्सरसां गणाः', (१२. ३३३, १७. २८)। गन्धर्वैरप्सरोभिश्च', (१२. ३५०, २१)। 'सेव्यमानोऽप्सरोभिश्च', (१३. १४, १७५)। 'गन्धर्वाप्सरसस्तथा', (१३. १४, ३६५. ४०१)। 'नृत्येरन्नप्सरोगणाः', (१३. १९, ४२)। 'प्रनृत्ताप्सरसः शुभाः', (१३. १९, ४६)। 'अप्सरोभिरभिष्टुतः', (१३. २५, १०)। 'निवासेऽप्सरसां दिव्ये', (१३. २५, २३)। 'सोऽप्सरोगणैः', (१३. २५, २८)। 'अप्सरोभिरहिंसकः', (१३. २५, ४५)। 'अप्सरोभिश्च', (१३. ३२, ३२)। 'देवर्षेरप्सरोत्तमा', (१३. ३८, ७)। 'क्वचिदप्सरसां', (१३. ५४, १२)। 'अप्सरसां गणाः', (१३. ५४, २१)। 'शतमप्सरसश्चैव', (१३. ६२, ८८)। 'चरन्त्यप्सरसां लोके', (१३. ६४, १७)। 'अप्सरसां संघान्', (१३. ६४, ३०)। 'गन्धर्वाप्सरसां लोकान्दत्वा प्राप्नोति मानवः', (१३. ७९, २२)। 'गन्धर्वाऽप्सरसो', (१३. ८०, ५)। 'अप्सरसां गणाः' (१३. ८१, ३०)। 'अप्सरसो', (१३. ९३, १६)। 'अप्सरोभिश्च सततं', (१३. ९६, १९)। 'गन्धर्वयक्षैरप्सरोभिश्च जुष्टा', (१३. १०२, १८)। 'गन्धर्वाणामप्सरसां च', (१३. १०२, २३)। 'अप्सरसां', (१३. १०६, ३७)। 'शतं चाप्सरसः कन्या', (१३. १०६, ५५)। 'सोप्सरोभिर्', (१३. १०७, १२. १८)। 'तथैवाप्सरसामङ्के', (१३. १०७, २९)। 'अप्सरोगण सेवितम् (१३. १०७, ८८)। 'गन्धर्वैरप्सरोभिश्च', (१३. १०७, ९२)। 'पूज्यमानोप्सरोगणैः', (१३. १०७, १०१. १११)। गन्धर्वैरप्सरोभिश्च', (१३. १०७, ११२)। 'अप्सरोगणसंपूर्णं', (१३. १०७, १२४)। 'अप्सरोभिश्च मोदते', (१३. १०९, ९)। 'अप्सरोगणसंकीर्णे', (१३. १४०, ३)। 'प्रनृत्ताप्सरसं' (१३. १४०, १०)। 'अप्सरसां गणैः' (१३. १४२, ४२)। 'सहाप्सरोभिर्मुदिता', (१३. १४५, ६)। 'गन्धर्वाप्सरसश्चैव', (१३. १४६, ६१)। 'तं गन्धर्वाणामप्सरसां च', (१३. १५८, १५)। 'गन्धर्वाप्सरसस्तथा', (१३. १६१, १७)। उन नामों के अन्तर्गत इसका भी उल्लेख है जिनका पाप से मुक्ति के लिये प्रातःकाल, मध्याह्नकाल और सायंकाल उच्चारण किया जाता है (१३. १६५, १४)। 'गन्धर्वाप्सरसश्चैव', (१४. ८, ५)। 'यत्र नृत्येरन्नप्सरसः समस्ताः', (१४. १०, २७)। 'स्त्रीणामप्सरसस्तथा', (१४. ४३, १६)। 'नागानप्सरसश्चैव', (१४. ५४, ४)। 'प्रनृत्तोप्सरसां गणैः', (१४. ८८, ३६)। 'दिव्याश्चाप्सरसां संघाः', (१४. ९२, २५)। 'गन्धर्वाप्सरसश्चैव', (१५. ३१, ६)। 'घृताश्चाप्सरसां गणैः', (१५. ३२, १६)। बलराम और श्रीकृष्ण जिनकी सदैव पूजा करते थे उन ताल और गरुड़ के चिह्नों से युक्त दोनों विशाल ध्वजों को अप्सरायें ऊँचे उठा ले गईं और दिन रात लोगों से यह बात कहने लगीं कि 'अब तुम लोग तीर्थ यात्रा के लिये निकलो', (१६. ३, ६)। 'सहाप्सरोभिः', (१६. ४, २५. २७)। 'दिव्याश्चाप्सरो दिवि', (१८. ३, २४)। श्रीकृष्ण की १६,००० पत्नियाँ अप्सरायें बन गईं (१८. ५, २६)। 'नवस्तथैवाप्सरसां गणाः', (१८. ६, ८)। 'अप्सरोगणसंकीर्णं', (१८. ६, २६)। 'कामगं साप्सरोगणम्', (१८. ६, ३३)। 'सेवितं चाप्सरः सङ्घैः', (१८. ६, ३९)। 'अप्सरोभिश्च शोभितम्', (१८. ६, ४३)।

२. अप्सरस्, बहुधा एकवचन में और कहीं-कहीं विशेष अप्सराओं के नाम के रूप में आया है। = मेनका (१. ८, ६-८; ९, ८)। 'साप्सरा-मुक्तशापा च', (१. ६३, ६४)। 'तत्राद्रिकेति विख्याता ब्रह्मशापादप्सराः', (१. ६३, ५८)। 'उर्वशीपूर्वचित्तिश्च सहजन्या च मेनका। विश्वाची च घृताची च षडेवाप्सरसां वराः', (१. ७४, ६८)। मेनका नाम ब्रह्मयोनिर्वराप्सराः', (१. ७४, ६९)। 'मेनकाऽप्सरसां श्रेष्ठा', (१. ७४, ७६)। 'अन्वग्भानुप्रभृतयो मिश्रकेश्यां मनस्विनः। रौद्राश्वस्य महेष्वासा दशाप्सरसि सूनवः॥', (१. ९४, ८)। 'दैवी वा दानवी वा त्वं गन्धर्वी चाथ वाप्सराः', (१. ९७, ३१)। 'भूपयित्वाऽप्सरोपमाम्', (१. १०६, २४)। 'तामेकवसनां दृष्ट्वा गौतमोऽप्सरसं वने। लोकेऽप्रतिमसंस्थानां प्रोत्फुल्लनयनोऽभवत्', (१. १३०, ८)। 'ददर्शाप्सरसं साक्षाद् घृताचीमाप्लुतामृषिः। रूपयौवनसंपन्नां मदहृष्टां मदालसाम्', (१. १३०, ३५)। 'ददर्शाप्सरसं तत्र घृताचीमाप्लुतामृषिः', (१. १६६, २)। 'अप्सराऽस्मि महाबाहो देवारण्यविहारिणी', (१. २१६, १५)। 'गन्धर्वराज गच्छाथ प्रहितोप्सरसां वराम्', (३. ४५, २)। 'प्रवराप्सरसां वरे', (३. ४६, २०)। 'अन्यथा ध्यातुमप्सरः', (३. ४६. ४१)। 'शक्रमिवाप्सराः', (३. ७८, १४)। 'तस्य रेतः प्रचस्कन्द दृष्ट्वाप्सरसमुर्वशीम्', (३. ११०, ३५)। 'देवी नु यक्षी यदि दानवी वा वराप्सरा दैत्यवराङ्गना वा', (३. २६५, २)। 'दृष्ट्वामप्सरसमायान्तीम्', (९. ४८, ६५)। 'दिव्यामप्सरसं पुण्यां', (९. ५१, ७)। 'दृष्ट्वा तेऽप्सरसं रेते यत्स्कन्नं प्रागलंबुषाम्', (९. ५१, १३)। 'घृताचीं नामाप्सरसमपश्यद्भगवानृषिः', (१२. ३२४, २)। 'ऋषिरप्सरसं दृष्ट्वा सहसा काममोहितः', (१२. ३२४, ३. ५)। 'रम्भा नामाप्सराः शापाद्यस्य शैलत्वमागता', (१३. ३, ११)। 'ददर्शाप्सरसं ब्राह्मी पञ्चचूडामनिन्दिताम्', (१३. ३८, ३)। 'पप्रच्छाप्सरसं मुनिः', (१३. ३८, ४)। एतच्छ्रुत्वा वचस्तस्य देवर्षेरप्सरोत्तमा', (१३. ३८, ७)। 'इमां च देवीं पश्यामि वपुषाऽप्सरोपमाम्', (१३. ५३, ६१)।

अप्सरोगणसेवित = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अप्सुजाता, स्कन्द की अनुचरी एक मातृका का नाम है (९. ४६, ४)।

अप्सुहोम्य, युधिष्ठिर द्वारा सभाभवन में प्रवेश करने के समय उपस्थित ऋषियों में से एक का नाम है (२. ४. १२)।

अबल—अग्नि पाञ्चजन्य द्वारा उत्पन्न किये गये उन पन्द्रह यज्ञमुषः देवों में से एक का नाम है जो हवि को चुराते हैं (३. २२०, ११)।

अब्भक्षाः (पु० बहु०) (जो जल पर आश्रित रहते हैं)। देखिये राजध०। (१२. १७, ११ : एक प्रकार के तपस्वी)।

अभग्नपरिसंख्यान, महापुरुष का ११९वाँ नाम है (१२. ३३८, ४)।

अभग्नयोग, महापुरुष का ११८ वाँ नाम है (१२. ३३८, ४)।

अभय—धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। १. ६७, १०४ (८५ वाँ पुत्र)। १. ११७, १२ (८९ वाँ)। ७. १२७, ३५ (भीमसेन पर आक्रमण करता है)। ७. १२७, ६२ (भीमसेन इसका वध करते हैं)।

अभासुर—देखिये भासुर।

अभिगम्य = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अभिजित्—२८ नक्षत्रों में से २२ वाँ, जिसका पाश्चात्य नाम α लीरे (lyræ) है (देखिये ह्विटने : सूर्यसिद्धान्त ८. ९)। इस नक्षत्र को रोहिणी की छोटी बहन कहा गया है ('अभिजित् स्पर्धमाना तु रोहिण्या कन्यसी स्वसा। इच्छन्ती ज्येष्ठतां देवी तपस्तप्तुं वनं गता', ३. २३०, ८)। अभिजित् नक्षत्र के योग में श्राद्ध करने वाला भिषक् सिद्धि प्राप्त करता है (१३. ८९, ११)।

अभिजित—(क) दिन का आठवाँ मुहूर्त ('मुहूर्त्तेऽभिजितेऽष्टमे दिवामध्यगते सूर्ये', १. १२३, ६)। युधिष्ठिर का जन्म इसी मुहूर्त्त में हुआ था (१. १२३, ६-७)। (ख) एक नक्षत्र (= **अभिजित**) जिसके योग में मधु और घृत का दान करने से धर्मपरायण व्यक्ति स्वर्गलोक में सम्मान प्राप्त करता है (१३. ६४, २७)।

अभिभू—(क) काशि का एक राजा (काश्यस्याभिभुवः पुत्रं, ७. ९५, ३८; ७. २३, २६; और देखिये ५. १५१, ६३)। वसुदान के पुत्र ने इनका (काशिराजः) वध किया था (८. ६, २३)। (ख) = कृष्ण (तु० की० **विभु**, १२. ४३, ११)।

अभिमन्यु, अर्जुन और कृष्ण की भगिनी सुभद्रा का पुत्र (१. ६३,

२२१; ९५, ७८; २२१, ६५)। यह सोम के पुत्र वर्चस् के अवतार थे (१. ६७, ११२-११३) और इसीलिये अपना कर्म समाप्त करके मृत्यु के पश्चात् इन्होंने सोम में प्रवेश किया (१८. ५, १९)। इनके नाम की (अशुद्ध) व्युत्पत्ति (१. २२१, ६७)। यह पाण्डवों के वंशकर हैं (१. ९५, ८२)। पाण्डवों का वनवास आरम्भ होने के समय इनकी माता सहित इन्हें श्रीकृष्ण द्वारका ले गये (३. २२, ४७), जहाँ रौक्मिणेय (रुक्मिणी-पुत्र प्रद्युम्न) इनके संरक्षक और शिक्षक हुये (३. १८३, २८-३०; तु० की० ३. २३५, १२)। वनवास समाप्त हो जाने पर यह सुभद्रा और कृष्ण के साथ उपप्लव्य में आकर पाण्डवों के साथ हो जाते हैं (४. ७२, २०-२२, तु० की० ७२, १४) और इसी स्थान पर विराट की पुत्री उत्तरा के साथ इनका विवाह होता है (४. ७२, ३३; १. २, २१४)। यह वीरतापूर्वक महाभारत-युद्ध करते हैं, किन्तु १३वें दिन युधिष्ठिर की आज्ञा से (७. ३५, २०) यह चक्रव्यूह भेदन की प्रतिज्ञा करते हैं और चक्रव्यूह के भीतर युद्ध करते हुये जयद्रथ और अन्य ६ महारथियों द्वारा घिरकर मारे जाते हैं (७. ४९)। इनकी मृत्यु के समय इनकी पत्नी उत्तरा गर्भवती थी जिसने बाद में उस परिक्षित नामक पुत्र को जन्म दिया जो पाण्डव वंश का एकमात्र प्रवर्तक हुआ। आरम्भ में युधिष्ठिर इन्हें स्वर्ग में नहीं देख पाये थे (१८. १, २६) किन्तु बाद में उन्होंने इन्हें स्वर्ग में सोम के साथ देखा (१८. ४, १९)।

अनुक्रमणिकापर्व : १. १, १९०-१९१; १. २, ५८ (अभिमन्योश्च वैराट्याः पर्व वैवाहिकं स्मृतम्); १. २, १२६. २१४ (सौभद्रम्); १. २, २५७. २५८। अंशावतरणपर्व : १. ६३, १२१। सम्भवपर्व : १. ६७, ११३; १. ९५, ७८. ८२। हरणाहरणपर्व : १. २२१, ६६. ६७। अर्जुनाभिगमनपर्व : ३. २२, ४७; ३. ३३, १२। तीर्थयात्रापर्व : ३. १२०, २१। मार्कण्डेयसमस्यापर्व : ३. १८३, १४; १८३, २८-३०। द्रौपदीसत्यभामासंवादपर्व : ३. २३५, १२। वैवाहिक पर्व : ४. ७२, ९. १५. २०. २२. ३३. ३५। सैनोद्योगपर्व : ५. १, १. ५। यानसन्धिपर्व : ५. ४८, ३२; ५०, ४३; ५९, ४। भगवद्यानपर्व : ५. ८२, २३. ३८; १४०, २२। सैन्यनिर्याणपर्व : ५. १५१, ४७। उलूकदूतागमनपर्व : ५. १६२, १५; १६३, ३५। रथातिरथसंख्यानपर्व : ५. १७०, २। अम्बोपाख्यानपर्व : ५. १९४, २१। (क) महाभारत युद्ध का प्रथम दिन : ५. १९६, ८ (युधिष्ठिर ने प्रथम सेनादल के साथ भेजा); १९६, १४। भीष्मवधपर्व : ६. ४५, १४-१६ (बृहद्बल से युद्ध); ६. ४७, ७ (पिङ्गलवर्ण के श्रेष्ठ घोड़ों से जुते हुये रथ पर बैठकर भीष्म पर आक्रमण; इनका यह रथ कर्णिकार के चिह्न से युक्त स्वर्णनिर्मित विचित्र ध्वज से सुशोभित था); ६. ४७, ६६ (भीष्म के विरुद्ध युद्ध में श्वेत की सहायता करते हैं)। (ख) युद्ध का दूसरा दिन : ६. ५०, ५० (धृष्टद्युम्न के क्रौञ्चव्यूह के पंख-भाग में स्थित थे); ६. ५२, ३० (भीष्म के विरुद्ध अर्जुन की सहायता करते हैं); ६. ५५, १० (लक्ष्मण से युद्ध)। (ग) युद्ध का तीसरा दिन : ६. ५६, १६ (अर्जुन के अर्धचन्द्रव्यूह के मध्य में स्थित थे); ६. ५८, ७ (गान्धारों से युद्ध); ५८, ९ (सात्यकि को अपने रथ में बैठाते हैं)। (घ) युद्ध का चौथा दिन : ६. ६०, २४ (भीष्म के विरुद्ध युद्ध में अपने पिता की सहायता करते हैं); ६. ६२, १३ (शल्य पर आक्रमण करते हैं); ६२, १८. २९; ६. ६३, १० (भीमसेन की सहायता करते हैं); ६. ६४, २४. ४५ (भगदत्त के विरुद्ध युद्ध में भीमसेन की सहायता करते हैं)। (ङ) युद्ध का पांचवाँ दिन : ६. ६९, २६ (द्रोण, भीष्म, और शल्य के विरुद्ध भीमसेन की सहायता); ६. ७३, ३७ (लक्ष्मण से युद्ध)। (च) युद्ध का छठवाँ दिन : ६. ७७, ५८ (केकय राजकुमारों का नायकत्व करते हैं); ७७, ६०. ६३. ७१ (धृष्टद्युम्न को अपने रथ में बैठा लेते हैं); ६. ७८, १३ (अन्य ग्यारह महारथियों के साथ भीमसेन का अनुगमन करने के लिये जाते हैं); ७८, १८. २१ (विकर्ण से युद्ध); ६. ७९, २१ (केकय राजकुमारों सहित युद्ध करते हैं); ७९, २३. २७. २८ (विकर्ण से युद्ध)। (छ) युद्ध का सातवाँ दिन : ६. ८४, ४१ (चित्रसेन, विकर्ण, और दुर्मर्षण के साथ युद्ध); ८४, ४४। (ज) युद्ध का आठवाँ दिन : ६. ८७, २१ (धृष्टद्युम्न के शृङ्गाटकव्यूह में रक्खे गये); ६. ८९, २०; ६. ९४, ७ (दुर्योधन के विरुद्ध युद्ध में पाण्डवसेना के नायक भीमसेन की सहायता करते हैं); ९४, २८; ६. ९५, २३ (भगदत्त से युद्ध करते हैं); ९५, ४०. ७२; ६. ९६, १८ (इन पर अम्बष्ठक आक्रमण करते हैं); ९६, ३८। (झ) युद्ध का नवाँ दिन : ६. ९९, १३; ६. १००, २. १०; ६. १०१, ८. ९ (अलम्बुष से युद्ध); ६. १०१, १५. २०. २१, २४। (ञ) युद्ध का दसवाँ दिन : ६. १०९, २०; ६. ११०, १५ (भीष्म पर आक्रमण करने पर इन्हें सुदक्षिण ने रोका); ६. १११, १८; ६. ११२, ३७ (युधिष्ठिर की रक्षा करते हैं); ६. ११५, ३१ (कर्णिकारध्वजं चैव सिंहकेतुररिंदमः। प्रत्युज्जगाम सौभद्रं राजपुत्रो बृहद्बलः); ६. ११६, १ (दुर्योधन के साथ युद्ध करते हैं); ६. ११८, ४६ (भीष्म पर आक्रमण करते हैं); ६. ११९, २१ (छः अन्य महारथियोंके साथ अर्जुन की रक्षा करते हैं)। (ट) युद्ध का ग्यारहवाँ दिन : द्रोणाभिषेकपर्व ७. १०, ४९; ७. १४, ५१ (लक्ष्मण से युद्ध); १४, ५२. ५३। (ठ) युद्ध का बारहवाँ दिन : संशप्तकवधपर्वः ७. २३, ३३ (इनके अश्व पिशङ्ग-वर्ण हैं); ७. २३, ८९ (इनका ध्वज : 'शारङ्गपक्षी हिरण्मयः')। (ड) युद्ध का तेरहवाँ दिन : अभिमन्युवधपर्व : ७. ३३, १९ (यह कहा गया है कि इन्होंने द्रोण के चक्रव्यूह का भेदन किया); ७. ३४, ८. ११; ७. ३५, १२ (द्रोणाचार्य का सामना करने का युधिष्ठिर ने इन पर दायित्व रक्खा); ७. ३५, १६. १८; ७. ३६, २. ५. १२; ७. ३७, २-९; ३७, २२. २७. ३१. ३५; ७. ३९, ४. १०. २८. २९; ७. ४०, १. १२. २३. २५. २७. ३०; ७. ४१ (अभिमन्यु पराक्रम); ७. ४४, ५. ७. १९; ७. ४५, १. २. ४. १२; ७. ४६ (अभिमन्यु द्वारा लक्ष्मण और क्राथपुत्र का वध और सेना सहित छः महारथियों का पलायन); ७. ४७. ३; ७. ४८, २५. ४०. ४१; ७. ४९, ४. १२-१३ (दुःशासन का पुत्र इनका वध करता है); ७. ५०, १५; ७. ५१, ३; ७. ५४, (मृत्यु के पश्चात् पुनः चन्द्रलोक चले गये); ७. ७१, १२. १६ (योगिगण अपनी तपस्याओं द्वारा जिस अक्षय गति को प्राप्त करते हैं, उसे ही अभिन्यु ने प्राप्त किया); ७१, १७; प्रतिज्ञापर्व : ७. ७२, १९. ५७. ६९. ७६. ८०. ८१; ७. ७४, ४; ७. ७५, ८; ७. ७८, १४; जयद्रथ वधपर्व : ७. ८५, १. ५०; ७. १४३, ४३। घटोत्कचवधपर्व : ७. १८३, ४१। द्रोणवधपर्व : ७. १९१, ४४। कर्णपर्व : ८. ५, २४, ८. ६, ९; ८. ५०, १६; ८. ७३, २५ (जयत्सेन को युद्ध में मार डाला था); ७३, ७७; ७. ७४, ४४; ७. ९१, ११। शल्यपर्वः ९. ५, १३. २२। गदायुद्धपर्व : ९. ३२, ५५. ५६. ५८; ९. ६१, ४६। जलप्रदानिकपर्व : ११. १२, ९। स्त्री विलापपर्व : ११. १६, २१. २८; ११. २०, ३. ३४। श्राद्धपर्व : ११. २६, ३२; ११. २७, २२। राजधर्मानुशासनपर्व : १२. २७, १. २०; १२. ४२, ४। अनुगीतापर्व : १४. ६१, २. ३०; १४. ६२, ६.८ (अभिमन्युविक्रान्ताः), १४. ६६, २१. २२; १४. ६७, ६. ७. ८. १२. १५; १४. ६८, १२. २३; १४. ६९, २० (अभिमन्य के पुत्र, परिक्षित); १४. ७२, १८ (अभिमन्यु के पिता, अर्थात् अर्जुन); १४. ७८, ३५ (अभिमन्यु के पुत्र, परिक्षित)। आश्रमवासपर्वः १५. २१, १२; १५. २५, १५ (अभिमन्योर् भार्या, अर्थात् उत्तरा)। स्वर्गारोहणपर्व : १८. १, २६; १८. ४, १९ (सौभद्रम्); १८. ५, १८-२० (सोम के पुत्र वर्चस् का अवतार होने के कारण, यह मृत्यु के पश्चात् सोम में प्रवेश कर गये)। तु० की० **आर्जुनि, सौभद्र, कार्ष्णि, अर्जुनात्मज, अर्जुनावर, फाल्गुनि, शक्रात्मजात्मज।**

* **अभिमन्युज** (=परिक्षित), १. ४०, १९; १. ४१, ५; १४. ६७, १२. १५; ६९, २३; ७०, ११।

* **अभिमन्युजननी** (=सुभद्रा), ८. ८७, ११६।

अभिमन्युवध, १. २, ६९ (अभिमन्युवधः पर्व) = **अभिमन्युवध-पर्वन्** ।

अभिमन्युवधपर्वन्—(यह महाभारत का ७३ वां उप-पर्व है; तु० की० **अभिमन्युवध**) । युद्ध के १३वें दिन : "(७. ३३) अर्जुन द्वारा छिन्न-भिन्न कर दिये जाने तथा द्रोणाचार्य द्वारा युधिष्ठिर को वन्दी बना पाने में असफल हो जाने के फलस्वरूप कुरुओं को पराजित माना जाने लगा । इस समय चारों ओर अर्जुन और कृष्ण की ही प्रशंसा हो रही थी । तदनन्तर प्रातःकाल दुर्योधन ने युधिष्ठिर को पकड़ पाने की असफलता के लिये द्रोणाचार्य पर आक्षेप किया । इस पर द्रोणाचार्य ने कहा कि जहाँ जगत् के स्रष्टा भगवान् कृष्ण तथा अर्जुन सेनानायक हों वहाँ भगवान् शंकर के अतिरिक्त, देवता असुर, गन्धर्व, यक्ष, नाग और राक्षसों सहित सम्पूर्ण लोक भी विजय नहीं प्राप्त कर सकते । फिर भी द्रोण ने कहा कि वह आज पाण्डव पक्ष के किसी श्रेष्ठ महारथी को अवश्य मार गिरायेंगे । संशप्तकों ने दक्षिण दिशा में जाकर अर्जुन को युद्ध के लिये ललकारा । संजय ने दुःशासन के पुत्र द्वारा अभिमन्यु के मारे जाने का उल्लेख किया । इस पर धृतराष्ट्र ने शोक प्रकट किया ।" संजय द्वारा अभिमन्युवध कथन, "(७. ३४) : संजय द्वारा युधिष्ठिर इत्यादि की प्रशंसा । द्रोण द्वारा चक्रव्यूह के निर्माण का कथन : धृतराष्ट्र के पौत्र लक्ष्मण व्यूह के आगे थे, दुर्योधन मध्य भाग में, और अग्रभाग में स्वयं द्रोणाचार्य खड़े थे" "(७. ३५) : पाण्डवसेना के नायक भीमसेन और उनके साथ सात्यकि इत्यादि थे । उस समय सृञ्जयों सहित पाण्डव पक्ष के सम्पूर्ण पाञ्चाल वीर द्रोण के सम्मुख टिक नहीं सके । तब युधिष्ठिर ने चक्रव्यूह भेदन का दुःसह और महान भार अभिमन्यु पर रक्खा । भीमसेन इत्यादि अभिमन्यु के पीछे चले । युधिष्ठिर द्रोणाचार्य की सेना की प्रशंसा करते हुये यह कहते हैं कि उनकी सेना साध्य, रुद्र और मरुतों के समान वलवान, और वसुओं, अग्नि, एवं आदित्य के समान पराक्रमी है । इस पर अभिमन्यु ने अपने सारथि सुमित्र को अपने रथाश्वों को द्रोण की सेना की ओर ले चलने की आज्ञा दी ।" "(७. ३६) : अभिमन्यु (सुमित्र सहित) द्वारा कौरवों की चतुरंगिणी सेना का संहार । अभिमन्यु ने कौरवों के वनायुज, पर्वतीय, कम्बोज तथा वाल्हिक, देशीय अश्वों का वध किया जिससे उनके अलंकार कट-कट कर गिर पड़े और इससे राक्षस-गण अत्यन्त हर्षित हुये ।" "(७. ३७) : दुर्योधन और अभिमन्यु का युद्ध; द्रोण तथा अन्य महारथियों का अभिमन्यु पर आक्रमण; दुःशासन का अभिमन्यु पर आक्रमण; अभिमन्यु द्वारा अश्मक के पुत्र का, तथा सुषेण का वध; अभिमन्यु ने कर्ण को घायल और शल्य को पराजित किया; द्रोण की सेना का पलायन; पितृगण, देवता, चारण, सिद्ध तथा यक्ष, एवं भूतलवर्ती भूत समुदाय अभिमन्यु की प्रशंसा करते हैं ।" "(७. ३८) : अभिमन्यु द्वारा शल्य के छोटे भाई का वध और उनकी सेना का पलायन; अर्जुन और कृष्ण द्वारा प्राप्त आयुधों से अभिमन्यु ने सामना करने वाले सभी योद्धाओं को पराजित किया; द्रोण की सेना का पलायन" "(७. ३९) : अभिमन्यु और द्रोण का युद्ध; द्रोणाचार्य द्वारा अभिमन्यु की वीरता की प्रशंसा; दुर्योधन ने कर्ण इत्यादि से अभिमन्यु का वध करने के लिये कहा; दुःशासन और अभिमन्यु का युद्ध ।" "(७. ४०) : अभिमन्यु (द्यूत आदि का उल्लेख करते हुये) दुःशासन को फटकारता है; दुःशासन को उनका सारथि दूर भगा ले गया; पाण्डवों के सैनिक हर्ष से रणवाद्य वजाने लगे और एक साथ मिलकर द्रोणाचार्य के व्यूह पर टूट पड़े ; दुर्योधन की आज्ञा से कर्ण और (द्रोण की ओर बढ़ने की इच्छा रखने वाले) अभिमन्यु का युद्ध; जब कर्ण घायल हो गया तब उसके छोटे भाई ने अभिमन्यु का सामना किया ।" "(७. ४१) : अभिमन्यु द्वारा कर्ण के छोटे भाई का वध; कर्ण का पलायन; कौरव सेना का संहार; केवल सिन्धुराज जयद्रथ ही अभिमन्यु के सामने टिक सका ।" "(७. ४२) : युधिष्ठिर इत्यादि का अभिमन्यु के पीछे जाने का प्रयास करना; जयद्रथ इन लोगों को दिव्यास्त्रों द्वारा रोके देता है; धृतराष्ट्र संजय से जयद्रथ की शक्ति का स्रोत पूछते हैं; संजय उस वरदान का वर्णन करते हैं जो जयद्रथ ने शिव से प्राप्त किया था ।" "(७. ४३) : अपने सिन्धु-देशीय विशाल अश्वों सहित जयद्रथ, सभी पाण्डव वीरों को पराभूत करता है; सात्यकि के साथ जयद्रथ का युद्ध; भीम सात्यकि के रथ पर चढ़ जाते हैं; अभिमन्यु द्वारा बनाया हुआ मार्ग मत्स्यों के प्रयास के विपरीत भी बन्द हो जाता है और सभी पाण्डव-योद्धा जयद्रथ द्वारा रोक लिये जाते हैं ।" "(७. ४४) : अभिमन्यु वृषसेन को पराजित करता है जिससे वह युद्धस्थल से भाग जाता है; अभिमन्यु द्वारा वसातियों इत्यादि का वध ।" "(७. ४५) : अभिमन्यु ने सत्यश्रवस् को पकड़ लिया और कुरुओं को भी काल का ग्रास बनाया; अभिमन्यु और रुक्मरथ का युद्ध; रुक्मरथ तथा उनके मित्र और सौ राजकुमारों का अभिमन्यु द्वारा गन्धर्वास्त्र से वध, यद्यपि उन लोगों की रक्षा स्वयं दुर्योधन कर रहा था; तत्पश्चात् दुर्योधन का भी भयभीत होकर पलायन ।" "(७. ४६) : द्रोण इत्यादि तथा अभिमन्यु का युद्ध; अन्य लोगों का पीछे हटना तथा अभिमन्यु द्वारा लक्ष्मण का वध; दुर्योधन अपनी सेना से अभिमन्यु का वध करने के लिये कहता है; द्रोण इत्यादि अभिमन्यु को घेर लेते हैं; क्राथ-पुत्र का अभिमन्यु द्वारा वध, और अन्य कौरवों का पलायन ।" "(७. ४७) : जयद्रथ की सहायता करते हुये द्रोण और अभिमन्यु + युधिष्ठिर का युद्ध; अभिमन्यु कर्ण के एक कान को क्षति पहुँचाते और वृन्दारक तथा वृहद्वल का वध करते हैं ।" "(७. ४८) : अभिमन्यु एक बार पुनः कर्ण के कान का भेदन और मगध-राज के पुत्र, अश्वकेतु तथा मार्त्तिकावतक के राजा भोज का वध करते हैं; दुःशासन के पुत्र और अभिमन्यु का युद्ध; अश्वत्थामा और अभिमन्यु का युद्ध; अभिमन्यु और शल्य का युद्ध; अभिमन्यु द्वारा शत्रुञ्जय इत्यादि का वध; अभिमन्यु और शकुनि का युद्ध; शकुनि द्वारा दुर्योधन से अभिमन्यु के वध का उपाय ढूंढ़ने के लिये द्रोण और कृपाचार्य से परामर्श लेने का आग्रह करना; कर्ण, द्रोण से अभिमन्यु के वध का उपाय पूछता है : यह स्वीकार करते हुये कि वह अभिमन्यु की वीरता से अत्यन्त प्रभावित हैं; द्रोण ने वाणों से अत्यन्त घायल कर्ण को अभिमन्यु का धनुष इत्यादि काट डालने के लिये कहा; कर्ण ने अभिमन्यु के धनुष को, कृतवर्मा ने घोड़ों को, और कृपाचार्य ने पार्श्वरक्षकों को मार डाला; तदनन्तर छः महारथियों द्वारा एक साथ प्रहार किये जाने पर अभिमन्यु तलवार से युद्ध करने लगा जिसे द्रोण ने काट दिया, जब कि कर्ण ने अभिमन्यु की ढाल को भी काट दिया ।" "(७. ४९) : तब अभिमन्यु रथ के चक्र से और उसके वाद गदा से युद्ध करने लगे; अभिमन्यु और अश्वत्थामा का युद्ध; अभिमन्यु ने सुवल-पुत्र कालिकेय का और ७७ गान्धारों का वध किया; इसके वाद १० ब्रह्म-वसातीयों, ७ कैकयों, और १० हाथियों को भी मार डाला; अभिमन्यु और दुःशासन के पुत्र का युद्ध तथा दुःशासन के पुत्र द्वारा अभिमन्यु का वध; अदृश्य जीवों ने द्रोण और कर्ण के नेतृत्व में कुरुओं के इस कायरतापूर्ण कृत्य की भर्त्सना की; पाण्डव सेना भागती है किन्तु युधिष्ठिर उसे पुनः उत्साहित करते हैं ।" "(७. ५०) : सन्ध्या समय कुरुगण अपने शिविरों में और राक्षस तथा पिशाच इत्यादि युद्ध-भूमि में चले आते हैं ।" "(७. ५१) : अभिमन्यु की मृत्यु पर युधिष्ठिर का विलाप ।" "(७. ५२) : व्यास का आना और युधिष्ठिर को सान्त्वना देते हुये मृत्यु की प्रकृति का वर्णन और यह कथन कि देवता, दानव, गन्धर्व, कोई भी इससे नहीं वच सकता; व्यास द्वारा अकम्पन-नारद संवाद का वर्णन : 'यह कथा समस्त पापों का नाश करनेवाली है; व्यास द्वारा युधिष्ठिर से शोक का परित्याग करने का आग्रह ।" "(७. ५३) शंकर और ब्रह्मा का संवाद, मृत्यु की उत्पत्ति तथा उसे समस्त प्रजा के संहार का कार्य सौंपा जाना ।" "(७. ५४) : मृत्यु की घोर तपस्या; ब्रह्मा द्वारा उसे वर की प्राप्ति, तथा नारद-अकम्पन संवाद का उपसंहार करते हुये व्यास का यह कथन कि 'अभिमन्यु पूर्वजन्म में सोम का पुत्र था, और वह पुनः समस्त दुःखों से रहित होकर सोम में विलीन हो

गया; व्यास द्वारा युधिष्ठिर से शोक का परित्याग करने का आग्रह।" "(७. ५५-७०) व्यास द्वारा युधिष्ठिर को षोडशराजकीयोपाख्यान सुनाना।" "(७. ७१) : व्यास द्वारा यह कहना कि जिन्होंने ध्यान के द्वारा पवित्र ज्ञानमयी दृष्टि प्राप्त कर ली है वे योगी, निष्काम भाव से उत्तम यज्ञ करने वाले पुरुष, तथा अपनी उज्ज्वल तपस्याओं द्वारा तपस्वी मुनि जिस अक्षय गति को प्राप्त करते हैं, वही गति अभिमन्यु ने भी प्राप्त की है; व्यास यह कहते हैं कि 'हमें इस संसार में जीवित पुरुषों के लिये ही शोक करना चाहिये, जो स्वर्ग चला गया उसके लिये शोक करना उचित नहीं, क्योंकि शोक करने से मृतात्मा का दुःख और बढ़ता है;' इतना कहकर व्यास अन्तर्ध्यान और युधिष्ठिर भी शोक से रहित हो गये; किन्तु युधिष्ठिर दीन भाव से यह सोचने लगे कि 'मैं अर्जुन से क्या कहूँगा।'

अभिमन्योर्भार्या=**उत्तरा।**

अभिराम=**शिव** (सहस्र नामों में से एक)।

अभिरामा—देखिये **पूर्वाभिरामा।**

अभिवाद्य=**शिव** (सहस्र नामों में से एक)।

अभिषाह (=**अभीषाह**) एक जाति का नाम है जो अन्य बर्बर जातियों के साथ महायुद्ध के १०वें दिन दुःशासन के कहने पर अर्जुन पर आक्रमण करती है (६. ११७, ३४)।

अभिष्यन्त, कुरु और वाहिनी के पाँच पुत्रों में से द्वितीय का नाम है (सम्भवपर्व : १. ९४, ५०)।

अभिसार, कश्मीर की सीमा के दक्षिण-पश्चिम में बसी एक जाति (तु० की० विष्णु पु०, २. १७४-१७५) का नाम है। = **अभीसार।** अन्य बर्बर जातियों के साथ-साथ यह भी महाभारत युद्ध के १४वें दिन अर्जुन के साथ युद्ध करते हैं (जयद्रथवधपर्व: ७. ९३, ४४ : 'दार्वातिसार' पाठ है)। महायुद्ध के १७वें दिन कृष्ण ने इनका भी दुर्योधन के सहायकों के अन्तर्गत उल्लेख किया है (कर्णपर्व: ८. ७३, १९ : 'दार्वाभिसार')।

अभिसारी, एक प्राचीन नगर है, जिस पर दिग्विजय के समय अर्जुन ने विजय प्राप्त की थी (२. २७, १८; तु० की० विष्णु पु०, २. १७४)।

अभीरु, एक राजा (राजर्षिसत्तमः) था। यह 'कालेयाः' परिवार के आठ असुरों में से छठवें का अवतार था (सम्भवपर्व : १. ६७, ५३)।

अभीषाह (=गत शब्द) एक जाति : (क) यह लोग महायुद्ध के प्रथम दिन युद्ध के लिये प्रस्थान करते हुये धृतराष्ट्र के पुत्रों का अनुसरण करते हैं (भगवद्गीतापर्व : ६. १८, १२)। (ख) युद्ध के नवें दिन भीष्म की रक्षा करते हैं (भीष्मवधपर्व : ६. १०६, ८)। (ग) युद्ध के दसवें दिन यह लोग भीष्म की रक्षा कर सकने में असफल हो जाते हैं, क्योंकि इसी दिन अर्जुन ने भीष्म का वध कर दिया (भीष्मवधपर्व : ६. ११९, ८२)। (घ) युद्ध के चौदहवें दिन जयद्रथ का वध करने से अर्जुन को रोकने का प्रयास करते हैं (जयद्रथवधपर्व : ७. ९१, ३८); ये लोग अर्जुन द्वारा श्रुतायुध और सुदक्षिणा का वध कर देने पर क्रोध से अर्जुन पर आक्रमण करते हैं (७. ९३, २); दुर्योधन कहता है कि जयद्रथ की रक्षा करने में ही इनका वध हुआ (७. १५०, ३४); युधिष्ठिर इनका वध करते हैं (घटोत्कचवधपर्व : ७. १५७, २९); भीम इनका वध करते हैं (७. १६१, ४)। युद्ध के पन्द्रहवें दिन के बाद संजय, धृतराष्ट्र से इनके वध हो चुकने का वर्णन करते हैं (८. ५, ३८)।

अभीसार (=गत शब्द) की संजय ने भारतवर्ष की एक जाति के रूप में गणना कराई है (जम्बूखण्डविनिर्माणपर्व : ६. ९. ५४)।

अमध्य, महापुरुष का १३४वाँ नाम है (१२. ३३८, ४)। = श्रीकृष्ण (१२. ३४२, ९०)।

१. अमर, बहुवचन में देवों के लिये प्रयुक्त हुआ है। 'सामरानपि लोकान्', (९. ३३, २१)। 'उत्ससर्ज गिरौ रम्ये हिमवत्यमरार्चिते', (९. ४४, ९)। 'स्वाध्यायममरप्रख्यं कुर्वाणं विजने वने', (९. ५१, ४५)। 'पपात चोच्चैरमरप्रवेरितं विचित्रपुष्पोत्करवर्षमुत्तमम्', (९. ५७, ६८)। 'प्रसन्नो हि महादेवो दद्यादमरतामपि', (१०. १७, ७)। 'सोऽकम्प्यमाने भागे तु कृत्तिकावासा मखेऽमरैः', (१०. १८, ४)। 'ततो वागमरैरुक्ता ज्यां तस्य धनुषोऽच्छिनत्', (१०. १८, १९)। 'विहरन्त्यमरा इव', (११. ११, ७)। 'ध्रुवं शस्त्रजितॉंल्लोकान् प्राप्स्यस्यमरवत्प्रभो', (११. १७, ८)। 'न हि पश्यामि तं लोके योऽद्य दुर्योधनं रणे। गदाहस्तं विजेतुं वैशक्तः स्यादमरोऽपि हि॥', (९. ३३, १२)।

२. अमर = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अमरण = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अमरद्विषः, असुरों के लिये प्रयुक्त हुआ है (९. ६३, १७)।

अमरपर्वत, एक प्राचीन स्थान का नाम है जिसे नकुल ने विजित किया था (२. ३२, ११)।

अमरप्रभु = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अमरराज = इन्द्र।

अमरश्रेष्ठ = इन्द्र।

अमरह्रद, एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से मनुष्य स्वर्गलोक में प्रतिष्ठित होता है (३. ८३, १०६)।

अमराधिप = इन्द्र।

अमरावती, इन्द्र की पुरी का नाम है : 'शक्रेणेवामरावती', (१. १७७, ४२)। 'शक्रोऽमरावतीम्', (२. २, २६)। 'शक्रस्य पुरीं तामरावतीम्', (३. ४२, ४२)। 'अर्जुन ने सिद्धों और चारणों से सेवित रम्य अमरावती पुरी को देखा; अप्सराओं से सेवित नन्दनवन का भी उन्होंने सेवन किया; जिन्होंने तपस्या नहीं की है वे इस पुरी का दर्शन नहीं कर सकते, इत्यादि', (३. ४३)। 'शक्रस्य भवनमपश्यममरावतीम्' (३. १६८, ४५)। 'अमरावतिसङ्काशं तत् पुरं कामगं महत्', (३. १७३, २८)। 'देवराजस्य पुरीवर्योऽमरावती', (५. १०३, १)। 'वैनतेयं समारुह्य त्रासयित्वाऽमरावतीम्', (७. ११, २२)। 'प्रविष्टोऽप्यमरावतीम्', (७. ७७, १९)। 'गोमत्या दक्षिणे कूले शक्रस्येवामरावतीम्', (१३. ३०, १८)। 'उत्तरान्वा कुरुन्पुण्यानथवाऽप्यमरावतीम्', (१३. ५४, १६)। 'स गच्छत्यमरावतीम्', (१३. १४२, ४०)।

अमरेश्वर = इन्द्र।

अमानिन् = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अमावसी, अमावस्या के लिये प्रयुक्त हुआ है : 'अमावास्यां महातेजास्तत्रोन्मज्जन्महाद्युतिः', (९. ३५, ७९)। 'अमावास्यां महाराज नित्यशः शशलक्षणः', (९. ३५, ८५)। 'अद्यापि क्षीयते सोमोऽमावास्यान्तरगः पौर्णमासी', (१२. ३४२, ५८)।

अमावसु, पुरूरवस् द्वारा उर्वशी के गर्भ से उत्पन्न एक राजा का नाम है (१. ७५, २४)।

अमाहठ, धृतराष्ट्र नाग के कुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है, जो जनमेजय के सर्पसत्र में भस्म हुआ था (१. ५७, १६)।

अमित = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अमितध्वज, एक प्राचीन राजा का नाम है (१२. २२७, ५०)।

अमितविक्रम = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अमिताशन = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अमिताशना, स्कन्द की अनुचरी एक मातृका का नाम है (९. ४६, ७)।

१. अमितौजस्, एक पराक्रमी पाञ्चाल्य क्षत्रिय का नाम है जो केतुमत् असुर के अंश से प्रगट हुआ था (१. ६७, १२)।

२. अमितौजस, उन राजाओं में से एक का नाम है जिनके पास पाण्डवों की ओर से निमन्त्रण भेजा गया था (५. ४, १२)। पाण्डव पक्ष के महारथियों के अन्तर्गत इसकी गणना कराई गई है (५. १७१, ११)।

अमित्रजित् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अमुख = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अमुख्य = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अमूर्तरयस्, एक प्राचीन राजा का नाम है (३. ९५, १७)।

१. अमूर्तरयस, एक प्राचीन राजा का नाम है (१२. १६६, ७५)।

२. अमूर्तरयस = गय।

अमूर्त्ति = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अमूर्तिमत् = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

१. अमृत से उस सुधा का तात्पर्य है जो देवों का पेय था और जिसे पीने से व्यक्ति अमर हो जाता था (९. ४६, ५०)। 'अमृतसमैर् वाक्यैर्', (११. २, १)। 'वागमृतम्', (११. ७, १)।

२. अमृत = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

३. अमृत = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

४. अमृत, महापुरुषस्तव (१२. ३३८, ४) में १३ वाँ नाम है।

१. अमृतप, एक दानव का नाम है (१. ६५, २९)।

२. अमृतप = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अमृतपा = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अमृतमन्थन —"एक समय मेरुपर्वत पर अमृत-प्राप्ति के सम्बन्ध में विचार करने के लिये एकत्र देवताओं को सम्बोधित करते हुये भगवान् नारायण ने ब्रह्मा से देवों और असुरों को साथ लेकर अमृत-प्राप्ति के हेतु सागर-मन्थन का आदेश दिया (१. १७)।" "तदनन्तर सम्पूर्ण देवता मिलकर पर्वतश्रेष्ठ मन्दराचल को उखाड़ने के लिये उसके समीप गये। इस पर्वत की ऊँचाई ११ सहस्र योजन थी और भूमि के नीचे भी वह इतने ही सहस्र योजनों तक प्रतिष्ठित था। जब देवगण उसे उखाड़ न सके तब उन्होंने भगवान् विष्णु और ब्रह्मा से उसे उखाड़ने का आग्रह किया। देवताओं के ऐसा कहने पर भगवान् विष्णु ने नागराज अनन्त को मन्दराचल उखाड़ने की आज्ञा दी। ब्रह्मा की प्रेरणा और भगवान् नारायण के आदेश से अतुल पराक्रमी अनन्त (शेषनाग) ने मन्दराचल को वन और वनवासी जन्तुओं सहित उखाड़ लिया। पर्वत को उखाड़ने के पश्चात देवों ने समुद्र से भी उसके मन्थन की आज्ञा प्राप्त की। तदुपरान्त देवों ने कच्छपराज से मन्दराचल का आधार बनने का निवेदन किया। कच्छपराज की स्वीकृति पाने पर देवराज इन्द्र ने उस पर्वत को वज्र द्वारा दबा रखा। इस प्रकार पूर्वकाल में देवताओं, दैत्यों, और दानवों ने मन्दराचल को मथनी और वासुकि को डोरी बनाकर अमृत के लिये जलनिधि समुद्र का मन्थन आरम्भ किया। असुरों ने नागराज वासुकि के मुखभाग को पकड़ा और उसकी पूँछ की ओर देवगण खड़े हुये। भगवान् अनन्त उस ओर खड़े थे जिधर भगवान् नारायण थे और वे वासुकि के सिर को बार-बार ऊपर उठाकर झटका देते थे। बार-बार खींचे जाते हुये वासुकि नाग के मुख से निरन्तर धूम और अग्नि की लपटों के साथ गरम श्वास निकलने लगी—यहाँ मन्थन के समय की स्थिति का विस्तृत वर्णन है। थोड़े मन्थन के पश्चात बड़े-बड़े वृक्षों के भाँति-भाँति के गोंद तथा ओषधियाँ प्रचुर मात्रा में टपक-टपक कर समुद्र के जल में गिरने लगीं। उन उत्तम रसों के सम्मिश्रण से समुद्र का समस्त जल दूध बन गया और दूध से घृत भी बनने लगा, किन्तु बहुत समय व्यतीत हो जाने पर भी अमृत प्रगट नहीं हुआ। मन्थन करते हुये देव और असुरगण उस समय अत्यन्त श्रान्त हो गये थे। तब ब्रह्मा ने नारायण से देवों और असुरों को बल प्रदान करने का आग्रह किया। नारायण द्वारा बल प्राप्त करके उन लोगों ने पुनः वेगपूर्वक मन्थन करते हुये सागर की समस्त जलराशि को अत्यंत क्षुब्ध कर दिया। तब उस महासागर से श्वेतवर्ण और प्रसन्नात्मा चन्द्रमा प्रगट हुये। तदुपरान्त लक्ष्मी, सुरादेवी, श्वेत अश्व, (उच्चैःश्रवस्), और कौस्तुभमणि प्रगट हुये। ये सब सूर्य के मार्ग का आश्रय लेकर देवलोक में चले गये। तदुपरान्त दिव्य शरीरधारी धन्वन्तरि प्रगट हुये जो अमृत से परिपूर्ण श्वेत कलश लिये हुये थे। तत्पश्चात श्वेतवर्ण और चतुर्दन्त विशालकाय ऐरावत प्रगट हुआ। इसके बाद अत्यन्त वेग से मन्थन करने पर कालकूट उत्पन्न हुआ जो धूमयुक्त अग्नि की भाँति सहसा सम्पूर्ण जगत को आच्छादित करके भस्म करने लगा। ब्रह्माजी की प्रार्थना पर भगवान् शङ्कर ने लोकरक्षा के लिये उस महाविष का पान कर लिया और तब से ही शङ्कर नीलकंठ के नाम से विख्यात हुये। यह सब अद्भुत बातें देखकर दानव निराश हो गये और अमृत तथा लक्ष्मी की प्राप्ति के लिये उन्होंने देवताओं के साथ महान वैर-साधन किया। तब भगवान् विष्णु ने मोहिनी माया का आश्रय लेकर मनोहारिणी स्त्री के अद्भुत रूप में दानवों के पास पदार्पण किया। समस्त दैत्य और दानव उस मोहिनी पर आसक्त हो गये और उनका चित्त मूढ़ता से आच्छादित हो गया। अतः उन सब ने स्त्री रूपधारी विष्णु को वह अमृत सौंप दिया। भगवान् की उस मूर्तिमयी माया ने हाथ में कलश लेकर देवताओं को अमृत पिलाया और दैत्यों को उससे वंचित रक्खा जिससे वहाँ अत्यन्त कोलाहल मच गया (१. १८)।" "अमृत के हाथ से निकल जाने पर दैत्य और दानव संगठित हो गये और नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्र लेकर देवताओं पर टूट पड़े। उधर अनन्त शक्तिशाली नर सहित भगवान् नारायण ने देवताओं को अमृत से तृप्त कर दिया। जिस समय देवगण उस अमृत का पान कर रहे थे ठीक उसी समय राहु नामक एक दानव ने भी देवता का रूप धारण करके अमृत पीना प्रारम्भ कर दिया। वह अमृत उस दानव के कण्ठ तक ही पहुँचा था कि चन्द्रमा और सूर्य ने उसको पहचान लिया। तब नारायण ने अपने चक्र से उस दानव का मस्तक काट दिया जो आज भी सूर्य और चन्द्रमा के साथ अपने वैर के कारण उनको ग्रसित करता रहता है। तदुपरान्त उस खारे समुद्र के समीप देवताओं और असुरों का अत्यन्त भयंकर संग्राम छिड़ गया—युद्ध का विस्तृत वर्णन किया गया है। जब वह भयंकर युद्ध हो रहा था तब वहाँ अपने चक्र सहित नारायण, तथा अपने दिव्य धनुष सहित नर भी देवों की ओर से युद्ध कर रहे थे। इस प्रकार देवताओं के द्वारा पीड़ित दैत्यगण पृथिवी के भीतर और खारे पानी के समुद्र में प्रवेश कर गये। विजय प्राप्त करके देवताओं ने मन्दराचल को सम्मानपूर्वक उसके पूर्वस्थान पर प्रतिष्ठित कर दिया, और इन्द्र के नेतृत्व में उन्होंने अमृत की वह निधि किरीटिन् (भगवान् नर) को रक्षा के लिये सौंप दी (१. १९)।"

अमृतवपुस् = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अमृतांशूद्भव = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अमृता, मगध देश की राजकुमारी, जो अनश्वा की पत्नी और परिक्षित की माता थी (१. ९५, ४१)।

अमृताश, महापुरुषस्तव (१२. ३३८, ४) में १४ वाँ नाम है।

अमृताश = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अमृतेशय = महापुरुष का (१२. ३३८, ४ के बाद) ८०वाँ नाम)।

अमृत्यु = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अमेयात्मन् = शिव।

१. अमोघ, बृहस्पतिकुल में उत्पन्न एक अग्नि का नाम है (३. २१९, २४)।

२. अमोघ, भद्रवट-यात्रा के समय शङ्करजी के दाहिने भाग में चलने वाला एक यक्ष (३. २३१, ३५)।

३. अमोघ, स्कन्द का एक नाम है (३. २३२, ५)।

४. अमोघ = शिव (१०. ७, ६); सहस्र नामों में से एक (१३. १७, ११४)।

५. अमोघ = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अमोघा, स्कन्द की अनुचरी मातृका का नाम है (९. ४६, २१)।

अमोघार्थ = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अम्बरावृत = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

१. अम्बरीष, एक राजा का नाम है, जिन्हें संजय ने अतीतकाल में हुआ बताया है (१. १, २२७)। यमराज की सभा में इनके उपस्थित रहने का उल्लेख है (२. ८, १२)। नाभाग-पुत्र अम्बरीष ने प्राचीन काल में यमुना तट पर यज्ञ किया था और इस यज्ञ के पूर्ण होने के पश्चात् उन्होंने सदस्यों को दस पद्म मुद्रायें दान करके यज्ञ और तपस्या द्वारा परम सिद्धि प्राप्त की थी (३. १२९, २)। 'स्मृत्वानुभावं राजर्षेरम्बरीषस्य धीमतः', (३. २६३, ३३)। 'अम्बरीषस्य मान्धातुर्ययातेर्नहुषस्य च,' (५. ९०, १८; ६. ९, ६)। "नारद ने कहा कि उन्होंने सुना है कि अकेले ही दस लाख राजाओं से युद्ध करनेवाले नाभाग-पुत्र राजा अम्बरीष भी मृत्यु को प्राप्त हुये थे। शत्रुओं से घिर जाने पर राजा अम्बरीष ने शारीरिक बल, अस्त्रबल, और युद्ध सम्बन्धी शिक्षा के द्वारा शत्रुओं को पराजित करके सम्पूर्ण पृथिवी पर विजय प्राप्त की, और शास्त्रानुसार सौ अभीष्ट यज्ञों का अनुष्ठान किया—यहाँ यज्ञ का विस्तृत वर्णन है। इन यज्ञों में राजा अम्बरीष ने दस लाख यज्ञ-कर्त्ता ब्राह्मणों को दक्षिणा के रूप में दस लाख राजाओं को ही दे दिया था। यज्ञ में यजमान अम्बरीष ने उन मूर्द्धाभिषिक्त नरेशों और सैकड़ों राजकुमारों को दण्डों और कोशों के साथ ब्राह्मणों के अधीन कर दिया था। नारद ने सञ्जय से बताया कि जब अम्बरीष जैसे पुण्यात्मा भी जीवित नहीं रह सके तब दूसरों की बात ही क्या है? (७. ६४)।" पूर्वकाल में समस्त पृथिवी इनके अधीन थी (१२. ८, ३४)। 'मांधाता अम्बरीषश्च', (१२. १४, ३८)। 'अम्बरीषं च नाभागं', (१२. २९, १००. १०२)। इन्द्र और अम्बरीष के संवाद में नदी और यज्ञ के रूपों का वर्णन तथा समरभूमि में युद्ध करते हुये शूरवीरों को उत्तम लोक की प्राप्ति का कथन (१२. ९८, २. ३, ६. १४. ५१)। प्रतापी राजा अम्बरीष ने ब्राह्मणों को ग्यारह अर्बुद गायें दान में देकर देशवासियों सहित स्वर्गलोक प्राप्त किया था (१२. २३४, २३)। इन्द्र को आगे करके यात्रा के लिये निकले हुये राजर्षियों और ब्रह्मर्षियों में इनका भी उल्लेख है (१३. ९४, ५)। अगस्त्य के सम्मुख उनके कमल-पुष्प न चुराने के सम्बन्ध में इनकी शपथ (१३. ९४, २९)। अश्विनमास में मांस-भक्षण का निषेध करनेवाले राजाओं में इनकी भी गणना है (१३. ११५, ६८)। ऐश्वर्यशाली राजा अम्बरीष अमित तेजस्वी ब्राह्मण को अपना सारा राज्य सौंपकर देवलोक को प्राप्त हुये (१३. १३७, ८)। उन राजाओं के अन्तर्गत इनकी भी गणना है जिनके नामों का प्रातःकाल और सायंकाल पाठ करने से व्यक्ति धर्म के फल का भागी होता है (१३. १६५, ५३)। राजा अम्बरीष की गाई हुई आध्यत्मिक स्वराज्य-विषयक गाथा का उल्लेख (१४. ३१, ४. ५. १३)।

२. अम्बरीष, उन दिव्य नागों में से एक का नाम है जिसने बलराम जी के रसातल प्रवेश के समय उनके मुख से बाहर निकले हुये नाग का समुद्र में स्वागत किया था (१६. ४, १६)।

१. अम्बष्ठ, बहुवचन में एक जाति के लोगों का द्योतक है। पश्चिम के एक देश का भी नाम है जिसे नकुल ने विजित किया था (२. ३२, ७)। युधिष्ठिर को भेंट देने वाले लोगों में इनका भी उल्लेख है (२. ५२, १५)। भीष्म की रक्षा करने वाले राजाओं में यह भी थे (६. ८, १३)। भीष्म की सेना में इनकी उपस्थिति (६. २०, १०)। युद्ध के १० वें दिन अर्जुन द्वारा पराजित किये गये राजाओं में इनका भी उल्लेख है (६. ११७, ३४)। युद्ध के दसवें दिन भीष्म को युद्धभूमि में अकेला न छोड़ने वाले राजाओं में यह भी थे (६. ११९, ८२)। कर्ण के साथ इनका युद्ध (७. ४, ६)। द्रोण के पीछे चलने वाली सेना में यह भी थे (७. ७, १५)। युद्ध के बारहवें दिन द्रोणाचार्य द्वारा निर्मित गरुड़व्यूह के पृष्ठभाग में इनके स्थित होने का उल्लेख है (७. २०, १०)। दुर्योधन के संरक्षण में रहकर शक, कम्बोज आदि के साथ इन्होंने भी सात्यकि पर आक्रमण किया था (७. १२१, १४)। १४ वें दिन के बाद रात्रियुद्ध में युधिष्ठिर ने अम्बष्ठों का वध करना आरम्भ किया (७. १५७, २८)। भीमसेन ने अन्य लोगों के साथ-साथ इन्हें भी यमलोक भेज दिया (७. १६१, ३)। ब्राह्मण आदि चार वर्णों से अनुलोम और विलोम वर्ण की स्त्रियों के साथ परस्पर संयोग होने से उत्पन्न क्षत्रियों के अन्तर्गत इनका भी उल्लेख है (१२. २९६, ८)।

२. अम्बष्ठ, अम्बष्ठ-देश के एक राजा जो 'श्रुतायु' नाम से प्रसिद्ध थे। यह अभिमन्यु द्वारा पराजित हुये थे (६. ९६, ३९)। चेदिराज ने इन्हें युद्ध में द्रोणाचार्य के पास आने से रोक दिया (७. २५, ४९)। इन्होंने अस्थिभेदी शलाका से चेदिराज को धराशायी बना दिया (७. २५, ५०)। इन्होंने सेना के भीतर जाते हुये अर्जुन को रोका (७. ९०, ६०)। अर्जुन के साथ युद्ध करते हैं (७. ९०, ६२. ६५)। अर्जुन द्वारा इनका वध (८. ५, १८)। अम्बष्ठपुत्र का दुर्योधनपुत्र-लक्ष्मण द्वारा मारा जाना (८. ६, ११)।

अम्बष्ठक, एक राजा का नाम है, जिसने युद्ध के ८ वें दिन अभिमन्यु के साथ युद्ध किया था (६. ९६, १८)।

अम्बष्ठपति (अम्बष्ठों के अधिपति)—युद्ध के तीसरे दिन अर्जुन पर इनका आक्रमण (६. ५९, ७६)। अर्जुन द्वारा इनकी पराजय का उल्लेख (६. ५९, १३६)।

अम्बा, काशिराज की ज्येष्ठ पुत्री का नाम है जिसका सौभराजा शाल्व ने वरण किया था। अपने छोटे भाई विचित्रवीर्य के साथ विवाह करने के उद्देश्य से भीष्म ने इसका अपहरण किया। परन्तु भीष्म ने शाल्व के साथ विवाह का निश्चय देखकर इसे मुक्त कर दिया। सौभराज के द्वारा अस्वीकृत होने पर इसका शिखण्डिन् के रूप में जन्म हुआ: 'ज्येष्ठां काशिपतेः सुतां', (१. १०२, ६४)। २. ४१, २२; ५. १७६, ९–१०; १७५, २. १०; १७६, १८. ४५. ५७; १७७, ५. २७. ३५; १७८, ५. ७; 'रामाम्बयोः', (५. १७८, ८)। भीष्म के वध के लिये अम्बा को कठोर तपस्या (५. १८६, १९–२९)। गंगा द्वारा नदी होने के शाप से इसका वत्सभूमि में नदी होना (५. १८६, ४०)। देखिये ५. १८८, २०; १९२, ६४; ६. १४, ४७; ७. ७२, २५, भी।

अम्बाजन्मन्, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ८१)।

अम्बालिका—"सत्यवती के गर्भ से राजा शान्तनु के दो पुत्र हुये जिनका नाम विचित्रवीर्य और चित्राङ्गद पड़ा। इनमें से चित्राङ्गद युवावस्था में पदार्पण करने के पूर्व ही एक गन्धर्व द्वारा मारे गये, परन्तु विचित्रवीर्य जीवित रहकर राजा हुये। विचित्रवीर्य ने काशिराज की दो पुत्रियों, अम्बिका और अम्बालिका, से विवाह किया। अम्बिका और अम्बालिका की माता का नाम कौसल्या था। विचित्रवीर्य की निःसन्तान ही मृत्यु हो गई, और तब उनकी माता सत्यवती की आज्ञा से महर्षि व्यास ने इनके वंश की रक्षा के लिये धृतराष्ट्र, पाण्डु, और विदुर नामक तीन पुत्र उत्पन्न किये (१. ९५, ४९–५५)।" 'अम्बिकाम्बालिके भार्ये प्रादाद्भ्रात्रे यवीयसे। भीष्मो विचित्रवीर्याय विधिदृष्टेन कर्मणा ॥', (१. १०२, ६५)। 'अम्बालिकामथाभ्यागादृषिः', (१. १०६, १५)। 'अम्बां चैवाम्बिकां चैव तथैवाम्बालिकामपि', (५. १७३, ९. १०)। 'भगिन्यौ मम ये नीते अम्बिकाम्बालिके नृप। प्रादाद्विचित्रवीर्याय गाङ्गेयो हि यवीयसे ॥', (५. १७५, १५)। 'इयमम्बेति विख्याता ज्येष्ठा काशिपतेः सुता। अम्बिकाम्बालिके कन्ये कनीयस्यौ तपोधन ॥', (५. १७६, ४५)।

१. अम्बिका, अम्बालिका की बहन का नाम है: 'विचित्रवीर्यः खलु कौसल्यात्मजेऽम्बिका बालिके काशिराजदुहितरावुपयेमे', (१. ९५, ५१)। 'अम्बिकाम्बालिके भार्ये प्रादाद्भ्रात्रे यवीयसे। भीष्मो विचित्रवीर्याय विधिदृष्टेन कर्मणा ॥', (१. १०२, ६५)। 'ततोऽम्बिकायां प्रथमं नियुक्तः', (१. १०६, ४)। 'अम्बिके तव पौत्रस्य दुर्नयात्किल भारताः', (१. १२८, १०)। 'तथेत्युक्तात्वम्बिकया भीष्मम्', (१. १२८, १२)। 'रूपेणाप्रतिमाः, सर्वाः काशिराजसुतास्तदा। अम्बां चैवाम्बिकां चैव तथैवाम्बालिकामपि', (५. १७३, ९. १०)। 'भगिन्यौ मम ये नीते अम्बिकाम्बालिके नृप', (५. १७५, १५)। 'अम्बिकाम्बालिके कन्ये', (५. १७६, ४५)।

२. अम्बिका, उन अप्सराओं में से एक का नाम है जो अर्जुन के जन्मोत्सव पर नृत्य करने आई थीं (१. १२३, ६२)।

३. अम्बिका, स्कन्द की अनुचरी एक मातृका का नाम है (९. ४६, १२)। उन मातृकाओं में इनका भी उल्लेख है जिनके नामोच्चारण से समस्त पापों का विनाश हो जाता है (१३. १५०, २८)।

अम्बिकाभर्तृ = शिव

अम्बिकासुत = धृतराष्ट्र

अम्बुजाल = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अम्बुप = वरुण

अम्बुमती, एक नदी का नाम है (३. ८३, ५६)।

अम्बुवाहिनी, उन नदियों में से एक का नाम है जिनका प्रातः एवं सायंकाल जप किया जाता है (६. ९, २७; १३. १६५, २०)।

अम्बुवीच—कर्ण ने भीष्म और द्रोण से, 'प्रत्येक जीव की प्रसन्नतायें उसके भाग्य पर आधारित हैं न कि उसके सुहृदों पर' इत्यादि, बातें बताते हुये कहा कि राजगृह में मगधराज अम्बुवीच नामक एक राजा थे। उनका सम्पूर्ण राजकार्य उनके मन्त्री महाकर्णि के अधिकार में था और राजा स्वयं राजकार्यों पर कोई भी अंकुश नहीं रखते थे। राजा का वह मन्त्री, यद्यपि, राजा के उपभोग में आने योग्य स्त्री, रत्न, धन, तथा ऐश्वर्य का स्वयं ही भोग करता था तथापि राज्य प्राप्त करने में असफल रहा।

अम्बुशायिन् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अम्बोपाख्यान (अम्बा का आख्यान)—'अम्बोपाख्यानमत्रैव पर्व ज्ञेयमतः परम्', (१. २, ६६)। 'रथातिरथसंख्यानमम्बोपाख्यनमेव च', (१. २, २४१)।

अम्बोपाख्यानपर्वन्, उद्योगपर्व के अन्तर्गत आने वाले महाभारत के ६६वें अवान्तरपर्व का नाम है। "दुर्योधन के यह पूछने पर कि वह शिखण्डी का वध क्यों नहीं करेंगे, भीष्म ने कहा : 'शान्तनु की मृत्यु और चित्राङ्गद के भी स्वर्गवास के बाद माता सत्यवती की सम्मति से मैंने विचित्रवीर्य को राजा के पद पर सविधि अभिषिक्त कराया। तब मैंने योग्यकुल से कन्या लाकर उनका विवाह करने का निश्चय किया। उन्हीं दिनों मैंने सुना कि अम्बा, अम्बिका, और अम्बालिका नाम की काशिराज की तीन कन्याओं का स्वयंवर होने वाला है। ये तीनों कन्यायें 'वीर्यशुल्काः' नाम से विख्यात थीं। मैं स्वयंवर का समाचार पाकर एक ही रथ के द्वारा काशिराज के नगर में गया। वहाँ पहुँचकर मेरी दृष्टि आमन्त्रित होकर आये हुये सम्पूर्ण राजाओं पर पड़ी। युद्ध के लिये खड़े हुये उन समस्त राजाओं को ललकारते हुये मैंने उक्त तीनों कन्याओं को अपने रथ पर बैठा लिया। पराक्रम ही इन कन्याओं का शुल्क है, यह जानकर उन्हें रथपर चढ़ा लेने के पश्चात मैंने उन राजाओं से बार-बार अपना नाम बताया। मैंने उन सब राजाओं पर विजय प्राप्त की, और तीनों कन्याओं को अपने साथ हस्तिनापुर ले आया। हस्तिनापुर पहुँच कर मैंने उन कन्याओं को अपने भ्राता से विवाहित करने के लिये माता सत्यवती को सौंप दिया (५. १७३)।" "मेरे पराक्रम को सुनकर माता सत्यवती अत्यन्त हर्षित हुईं। जब विवाह का मुहूर्त्त उपस्थित हुआ, तब काशिराज की ज्येष्ठ पुत्री अम्बा ने कुछ लज्जित होकर बताया कि उसने अपने मन से पहले ही शाल्वराज को अपना पति चुन लिया है, और उन्होंने भी उसका एकान्त में वरण कर लिया है। उसने यह भी बताया कि उसके पिता को यह बात ज्ञात नहीं है। इस बात को बताते हुये उसने अपने ऊपर कृपा करने का निवेदन किया (५. १७४)।" "तब मैंने माता सत्यवती से आज्ञा लेकर मन्त्रियों, ऋत्विजों, और पुरोहितों का परामर्श लिया, और राजकुमारी अम्बा को जाने की आज्ञा प्रदान कर दी। आज्ञा पाकर राजकन्या अम्बा वृद्ध ब्राह्मणों के संरक्षण में और अपनी धाय के साथ शाल्वराज के नगर चली गई। जब उसने शाल्वराज से विवाह का प्रस्ताव किया तब उन्होंने उसे इसलिये अस्वीकृत कर दिया कि वह दूसरे के साथ विवाहित होने के लिये अपहृत की जा चुकी थी। शाल्वराज की बात सुनकर अम्बा ने बताया कि वह अपनी इच्छा से तथा प्रसन्नतापूर्वक भीष्म के साथ नहीं गई थी बल्कि भीष्म ने बलपूर्वक अपहरण किया था और वह रोती हुई ही उनके साथ गई थी। किन्तु भीष्म से भयभीत होने के कारण शाल्वराज ने अम्बा को किसी भी प्रकार ग्रहण नहीं किया। तब दीनभाव से रुदन करती हुई अम्बा उस नगर से निकल गयी। मार्ग में वह भीष्म, अपने पिता, स्वयं अपने को (इसलिये कि अपहरण के समय वह भीष्म के रथ से कूद क्यों नहीं गई), शाल्व, और विधाता को धिक्कारती रही। उसने भीष्म से प्रतिशोध लेने का भी निश्चय किया। नगर से बाहर निकल कर उसने तपस्वी महात्माओं के आश्रमपर रात्रि व्यतीत की। उसी आश्रम में कठोर व्रत का पालन करनेवाले शैखावत्य नाम से प्रसिद्ध एक तपोवृद्ध श्रेष्ठ ब्राह्मण रहते थे जो शास्त्र और आरण्यक आदि के आचार्य थे (५. १७५)।" "तपस्वियों ने अम्बा से अपने पिता के घर लौट जाने का आग्रह किया किन्तु अम्बा ने बताया कि उसके लिये पुनः पिता के घर लौट जाना असम्भव है, क्योंकि वहाँ उसे अपने बन्धु-बान्धवों से अपमानित होकर रहना पड़ेगा। अतः उसने उसी आश्रम में रहकर तपस्या करने की इच्छा प्रगट की। अम्बा के इस प्रस्ताव से जब तपस्वीगण चिन्तित थे तब उसी समय अम्बा के नाना राजर्षि होत्रवाहन वहाँ आये और सारा वृत्तान्त सुनने के बाद अम्बा को तपस्या-परायण राम जामदग्न्य के पास जाने का परामर्श दिया और यह बताया कि यदि भीष्म उनकी (रामजामदग्न्य = परशुराम) बात नहीं मानेंगे तो वे उन्हें युद्ध में मार डालेंगे। होत्रवाहन ने बताया कि परशुराम जी सदैव महेन्द्र पर्वत पर निवास करते हैं जहाँ वेदवेत्ता महर्षि, गन्धर्व, तथा अप्सरायें भी रहती हैं। राजा होत्रवाहन जब राजकन्या अम्बा से इस प्रकार कह रहे थे उसी समय परशुरामजी के प्रिय सेवक अकृतव्रण वहाँ प्रगट हुये। अकृतव्रण ने बताया कि दूसरे दिन प्रातःकाल परशुराम जी स्वयं उस आश्रम में आकर होत्रवाहन से मिलने वाले हैं। होत्रवाहन ने अकृतव्रण से अम्बा की सम्पूर्ण कथा का वर्णन किया (५. १७६)।" "दूसरे दिन रामजामदग्न्य अपने शिष्यों से घिरे और हाथों में धनुष धारण किये हुये सृञ्जयराज होत्रवाहन के सम्मुख उपस्थित हुये। परशुराम का सविधि स्वागत करने के पश्चात अम्बा ने उनसे भीष्म का वध करने का निवेदन किया (५. १७७)।" "परशुराम जी ने अम्बा से बताया कि वह केवल किसी वेदवेत्ता ब्राह्मण की आवश्यकता होने पर ही शस्त्र उठाते हैं। उस समय अकृतव्रण ने भी अम्बा के निवेदन की पुष्टि की। दूसरे दिन प्रातःकाल आश्रम के सब लोग अम्बा तथा परशुराम के साथ कुरुक्षेत्र आये और सरस्वती नदी के तट पर रात्रि व्यतीत की। तीसरे दिन परशुराम ने भीष्म के पास सन्देश भेजा, जिसे सुनकर ऋत्विजों तथा पुरोहितों के साथ भीष्म उनकी सेवा में उपस्थित हुये। परशुराम ने भीष्म से अम्बा को विचित्रवीर्य के साथ विवाहित कर देने का आग्रह किया किन्तु भीष्म ने इसे अस्वीकार कर दिया। तब क्रोध में आकर परशुराम ने युद्ध में भीष्म का वध कर देने की धमकी दी। भीष्म ने बताया कि उन्होंने (परशुराम ने) स्वयं ही उन्हें (भीष्म को) चार प्रकार के धनुर्वेद की शिक्षा दी है; अतः वे (परशुराम) उनके गुरु हुये। भीष्म ने मरुत्त द्वारा कहे हुये पुराण के इस श्लोक का उद्धरण दिया : 'गुरोरप्यवलिप्तस्य कार्याकार्यमजानतः। उत्पथप्रतिपन्नस्य परित्यागो विधीयते॥' तदुपरान्त परशुराम जी युद्ध की इच्छा से कुरुक्षेत्र में गये। भीष्म ने सर्वप्रथम हस्तिनापुर आकर सत्यवती से सारा समाचार बताया, और फिर अपने रथ पर आरूढ़ होकर कुरुक्षेत्र गये। उस समय गङ्गा ने इन दोनों को युद्ध से विरत करने का प्रयास किया किन्तु वह निष्फल रहीं (५. १७८)।" "भीष्म ने परशुराम से रथ पर आरूढ़ होकर युद्ध करने का आग्रह किया किन्तु परशुराम ने कहा कि पृथिवी उनका रथ है, चारों वेद ही उनके वाहन हैं, वायुदेव उनके सारथि हैं, और वेद-

मातायें ही उनके कवच हैं। यह कह कर परशुराम ने भीष्म को बाणों से आवृत्त कर दिया। उस समय भीष्म ने देखा कि परशुराम एक अद्भुत रथ—रथ का विस्तृत वर्णन किया गया है—में विराजमान हैं और अकृतव्रण उनका सारथि है। भीष्म ने पैदल जाकर परशुराम का समादर किया और उसके बाद युद्ध आरम्भ हुआ, जो कई दिनों तक चलता रहा। अन्त में श्रद्धा और दया के कारण भीष्म ने परशुराम पर प्रहार करना बन्द कर दिया और सूर्यास्त हो जाने के कारण युद्ध बन्द हो गया (५. १७९)।" "दूसरे दिन प्रातःकाल पुनः युद्ध आरम्भ हुआ। परशुराम ने भीष्म के वायव्यास्त्र को गुह्यक, और आग्नेयास्त्र को वारुणास्त्र से निष्फल कर दिया। भीष्म की एक अल्पकालिक मूर्च्छा के कारण अकृतव्रण और अम्बा इत्यादि अत्यन्त प्रसन्न हुये, किन्तु मूर्च्छा समाप्त होने के बाद भीष्म ने बाणों के प्रहार से परशुराम को अचेत कर दिया। मूर्च्छित परशुराम के धरती पर गिर पड़ने पर तपस्वियों और अम्बा ने उनको सान्त्वना दी। तदुपरान्त भीष्म और परशुराम का पुनः घोर युद्ध हुआ। संध्या समय परशुराम रणभूमि से हट गये (५. १८०)।" "दूसरे दिन युद्ध पुनः आरम्भ हुआ और संध्यासमय तक चलता रहा (५. १८१)।" "प्रातःकाल युद्ध आरम्भ होने के पश्चात् भीष्म का सारथि मारा गया और भीष्म भी बाण के आघात से घायल होकर धरती पर गिर पड़े। उस समय अग्नि के समान तेजस्वी आठ ब्राह्मण समरभूमि में आये और भीष्म को घेर कर अपनी भुजाओं पर ही उनके शरीर को धारण करके खड़े हो गये। उन ब्राह्मणों से सुरक्षित होने के कारण भीष्म को धरती का स्पर्श नहीं करना पड़ा। उस समय गङ्गा भीष्म के सारथि के स्थान पर आसीन हो गयीं और रथ के अश्वों की बागडोर अपने हाथ में ले ली। रथ पर बैठने के पश्चात भीष्म ने हाथ जोड़कर माता गङ्गा को विदा किया और स्वयं ही संध्या समय तक युद्ध करते रहे। भीष्म के प्रहार से परशुराम कुछ क्षणों के लिये अचेत हो गये। उस समय राहु ने सूर्य को ग्रसित कर लिया, साथ ही पृथिवी पर अनेक उत्पातसूचक और भयंकर अपशकुन होने लगे। संध्यासमय युद्ध पुनः बन्द हो गया। इस प्रकार प्रतिदिन संध्या के समय बन्द होकर, प्रातःकाल पुनः युद्ध आरम्भ हो जाता था। यह युद्ध २३ दिनों तक चलता रहा (५. १८२)।" "रात्रि के समय उक्त आठ ब्राह्मण स्वप्न में भीष्म के सम्मुख उपस्थित हुये और उन्होंने सान्त्वना देते हुये भीष्म को बताया कि वे परशुराम पर अवश्य विजय प्राप्त करेंगे। उन ब्राह्मणों ने भीष्म को उस प्रस्वाप नामक अस्त्र का भेद बताया जिससे स्वयं परशुराम भी अपरिचित थे, किन्तु जो भीष्म को पूर्व जन्म में ज्ञात था। उन लोगों ने यह भी बताया कि इस अस्त्र से परशुराम का विनाश नहीं होगा वरन् वह चुप-चाप प्रसुप्त हो जायेंगे। इस प्रकार इस अस्त्र के द्वारा युद्ध में विजयी होने के पश्चात सम्बोधनास्त्र के प्रयोग द्वारा परशुराम को पुनः जगाया जा सकेगा। इस प्रकार आदेश देने के पश्चात वे अष्टवसु अदृश्य हो गये (५. १८३)।" "प्रातःकाल पुनः युद्ध आरम्भ हुआ और परशुराम तथा भीष्म दोनो ने ही ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया जिसके द्वारा प्रलयकाल का दृश्य उपस्थित हो गया। उन ब्रह्मास्त्रों के तेज से पीड़ित होकर ऋषि, गन्धर्व, तथा देवता अत्यन्त संतप्त हो उठे; पर्वत, वन और वृक्षों सहित सम्पूर्ण पृथिवी हिलने लगी, और देवता, असुर, तथा राक्षसों सहित सम्पूर्ण जगत में हाहाकार मच गया। उसी समय भीष्म ने प्रस्वापनास्त्र को छोड़ने का विचार किया और तत्काल ही अष्टवसुओं के कथनानुसार उस विचित्र अस्त्र के प्रयोग सम्बन्धी मन्त्र उन्हें स्मरण हो आये (५. १८४)।" "तदनन्तर प्रस्वापनास्त्र का प्रयोग न करने के लिये आकाशवाणी हुयी। देवर्षि नारद ने भी भीष्म से परशुराम पर इस अस्त्र का प्रयोग न करने का आग्रह किया। उक्त अष्टवसुओं ने भी नारद के आग्रह की पुष्टि की जिसके फलस्वरूप भीष्म ने प्रस्वापनास्त्र को धनुष से उतार दिया। प्रस्वापनास्त्र को धनुष से उतरते देख परशुराम ने सहसा अपने को भीष्म से पराजित घोषित किया। तदुपरान्त परशुराम ने अपने पिता जमदग्नि तथा पितामह ऋचीक मुनि को देखा जिन्होंने उनसे क्षत्रियों, तथा विशेषकर भीष्म से, युद्ध न करने का आग्रह किया। उन लोगों ने यह भी बताया कि स्वयंभू ब्रह्मा ने भगवान् नर के अवतार अर्जुन के हाथों ही भीष्म के वध का विधान किया है। ऋचीक आदि मुनियों, नारद, गङ्गा, और पितरों की मध्यस्थता से युद्ध समाप्त हुआ। उक्त अष्टवसुओं ने भीष्म से अपने गुरु परशुराम के पास जाने के लिये कहा। तब परशुराम ने अम्बा को बुलाकर दीनतापूर्ण वाणी में कहा (५. १८५)।" "परशुराम ने अम्बा से कहा कि अब वे उसके लिये इससे अधिक और कुछ नहीं कर सकते। यह सुनकर रोष भरे नेत्रों वाली वह राजकन्या भीष्म के वध के उपाय का चिन्तन करती हुई तपस्या का दृढ संकल्प लेकर वहाँ से चली गई। परशुराम महर्षियों सहित विदा लेकर महेन्द्र पर्वत पर चले गये। भीष्म भी हस्तिनापुर लौटे जहाँ माता सत्यवती ने उन्हें आशीर्वाद दिया। तदुपरान्त भीष्म ने कुछ गुप्तचरों को अम्बा की गतिविधि का पता लगाने के लिये नियुक्त कर दिया। जिस दिन वह कन्या तपस्या का निश्चय करके वन गई उस दिन भीष्म व्यथित, दीन, और अचेत से हो गये, किन्तु नारद और व्यास ने उन्हें सान्त्वना दी। अम्बा ने यमुना के तट पर अत्यन्त कठोर तपस्या आरम्भ की। उसने भोजन का परित्याग कर दिया जिसके कारण अत्यन्त दुर्बल और रूक्ष हो गई। वह तपोधना कन्या छः मास तक केवल वायु पीकर निश्चल भाव से खड़ी तपस्या करती रही। तदुपरान्त एक वर्ष तक यमुना के जल में प्रवेश कर निराहार तपस्या की। इसी प्रकार बारह वर्षों तक कठोर तपस्या में संलग्न होकर अम्बा ने पृथिवी और आकाश को संतप्त कर दिया। तदनन्तर वह सिद्धों और चारणों द्वारा सेवित वत्सदेश की भूमि में गयी और वहाँ पुण्यशील तपस्वी महात्माओं के आश्रमों में विचरण करने लगी। उस समय, भीष्म का वध करने की इच्छा से तपस्या करने वाली अम्बा पर क्रुद्ध होकर गंगा ने यह कहते हुये उसे शाप दिया कि मृत्यु के पश्चात वह एक टेढ़ी-मेढ़ी नदी हो जायगी जिसमें केवल वर्षा ऋतु में ही जल दिखाई देगा। जब अम्बा ने पुनः वत्सभूमि में प्रवेश किया तो उक्त नदी बन गयी जो केवल वर्षा में ही जल से पूर्ण रहती थी। फिर भी तपस्या के प्रभाव से अम्बा का केवल आधा शरीर ही नदी बन सका जब कि उसका आधा अङ्ग वत्सदेश में ही एक कन्या के रूप में प्रगट हुआ (५. १८६)।" "वत्सभूमि के तपस्वियों से अम्बा ने बताया कि वह पुरुष शरीर की प्राप्ति के लिये दृढ़ निश्चय लेकर तपस्या में प्रवृत्त हुई है जिससे वह भीष्म से प्रतिशोध ले सके। तब भगवान् शिव ने उन महर्षियों के बीच ही अपने साक्षातरूप से प्रगट होकर अम्बा को भीष्म का वध करने में समर्थ होने का वरदान दिया। शिव ने उससे बताया कि रणक्षेत्र में वह भीष्म का अवश्य वध करेगी और इसके लिये आवश्यकतानुसार पुरुषत्व भी प्राप्त कर लेगी। साथ ही दूसरे शरीर में प्रवेश करने पर भी उसे इन सब बातों का स्मरण बना रहेगा। शिव ने उसे बताया कि वह द्रुपदकुल में उत्पन्न होकर महारथी वीर बनेगी। तदुपरान्त शिव वहाँ से अन्तर्ध्यान हो गये। इसके पश्चात् उन महर्षियों के देखते-देखते ही अम्बा यमुना-तट पर भीष्म के वध का संकल्प लेकर अग्नि में भस्म हो गई (५. १८७)।" "दुर्योधन के यह पूछने पर कि पहले कन्या के रूप में उत्पन्न होकर शिखण्डी पुनः किस प्रकार पुरुष हो गया, भीष्म ने इस प्रकार कहा: राजा द्रुपद की महिषी पुत्र-विहीन थी। उसी समय महाराज द्रुपद सन्तान की प्राप्ति और भीष्म के वध के लिये घोर तपस्या कर रहे थे। शिव के प्रगट होने पर उन्होंने एक पुत्र की याचना की जिसे सुनकर शिव ने उन्हें एक ऐसी कन्या का वरदान दिया जो बाद में पुरुष हो जायगी। कुछ समय के पश्चात् महाराज द्रुपद की पत्नी ने गर्भ धारण किया और एक सुन्दरी कन्या को जन्म दिया, जिसका द्रुपदराज ने पुत्र के रूप में प्रचलित करते हुये शिखण्डिन् नाम रक्खा। यह रहस्य सबको अज्ञात

रहते हुये भी गुप्तचरों के समाचार और नारद के कथन से भीष्म को ज्ञात हो गया (५. १८८)।" "धनुर्विद्या आदि के लिये शिखण्डी द्रोणाचार्य का शिष्य हुआ। यद्यपि शिखण्डिन् अब तक स्त्री ही था, तथापि भगवान् शिव के वचन में विश्वास करके द्रुपद ने दशार्णराज हिरण्यवर्मा की पुत्री का शिखण्डिन् के लिये वरण किया। विवाह के पश्चात पत्नी सहित शिखण्डी पुनः काम्पिल्य नगर में आया। कुछ समय के पश्चात दशार्णराज की कन्या ने यह जान लिया कि शिखण्डिन् स्त्री है। इस रहस्य के प्रगट हो जाने पर हिरण्यवर्मा के साथ भयंकर युद्ध का संकट उपस्थित हो गया (५. १८९)।" "स्वभावतः भीरु होने के कारण द्रुपद ने अत्यन्त भय का अनुभव किया और अपनी पत्नी से मिलकर संकट-निवारण का उपाय पूछा। यद्यपि राजा द्रुपद सब कुछ जानते थे, फिर भी, दूसरे लोगों में अपनी निर्दोषता सिद्ध करने के लिये महारानी से शिखण्डिन् के विषय में प्रश्न पूछा (५. १९०)।" "महारानी ने कहा कि निःसन्तान होने के कारण उसे जब कन्या उत्पन्न हुयी तो उसने सौतों के भय से उसे पुत्र ही बताया। भगवान् शंकर के वरदान-वाक्य पर दृष्टि रखकर ही उसने इस पुत्री के पुत्र होने की घोषणा की। महारानी के इस कथन के पश्चात द्रुपदराज ने अपने नगर की रक्षा की विशेष व्यवस्था की और आसन्न युद्ध को टालने के लिये महारानी के साथ-साथ देवताओं की अर्चना आरम्भ कर दी। अपने माता-पिता को इस प्रकार शोकमग्न देखकर शिखण्डिनी शोक-लज्जित होकर अपने शरीर का अन्त करने के लिये निर्जन और गहन वन में चली गई। उसी वन में कुबेर के अनुचर, महान् शक्तिशाली यक्ष, स्थूणाकर्ण का निवास-स्थान था। शिखण्डिन् को देखकर स्थूणाकर्ण ने उससे वरदान माँगने के लिये आग्रह किया। उसकी बात सुनकर शिखण्डिनी ने सारा वृत्तान्त बताते हुये केवल उतने ही समय तक पुरुष बन जाने की इच्छा प्रगट की जब तक राजा हिरण्यवर्मा उनके नगर से चले नहीं जाते (५. १९१)।" "शिखण्डिनी की यह बात सुनकर उस यक्ष ने थोड़े समय के लिये उसका स्त्रीत्व लेकर उसे अपना पुरुषत्व दे दिया। शिखण्डिनी ने हिरण्यवर्मा के लौट जाने पर उसके पुरुषत्व को लौटा देने का वचन दिया और इस प्रकार यक्ष का पुरुषत्व प्राप्त करके वह अत्यन्त हर्ष के साथ अपने पिता के नगर लौट आया। उसका वृत्तान्त सुनकर द्रुपद को अपार हर्ष हुआ और उन्हें भगवान् शिव के दिये हुये वरदान का स्मरण हो आया। तदनन्तर राजा द्रुपद ने दशार्णराज के पास दूत भेजकर यह कहलाया कि उसका पुत्र पुरुष है। इधर दुःख और शोक में डूबे हुये दशार्णराज ने पाञ्चालराज द्रुपद पर आक्रमण किया और काम्पिल्य नगर के निकट पहुँच कर एक ब्राह्मण से द्रुपद के पास यह संदेश भेजा कि वे मन्त्रियों और पुत्रों सहित द्रुपदराज का सर्वथा उन्मूलन कर देंगे। दूत से समाचार प्राप्त होने पर द्रुपदराज ने हिरण्यवर्मा के पास पुनः यह समाचार भेजा कि वे स्वयं आकर स्पष्ट रूप से परीक्षा कर लें कि उनका कुमार पुत्र है अथवा कन्या। द्रुपद का उत्तर सुनकर हिरण्यवर्मा ने अत्यन्त मनोहर रूपोंवाली कुछ श्रेष्ठ स्त्रियों को यह जानने के लिये भेजा कि शिखण्डी स्त्री है या पुरुष। उन युवतियों से वास्तविक बात जानकर राजा हिरण्यवर्मा अत्यन्त प्रसन्न हुये और अत्यन्त उल्लास के साथ कुछ समय तक द्रुपदराज के पास ही रहे। उन्होंने अपने जामाता शिखण्डी को बहुत अधिक धन आदि दिया तथा मिथ्या समाचार भेजने के लिये अपनी पुत्री की भर्त्सना की। इधर कुछ काल के पश्चात नर वाहन कुबेर लोक में भ्रमण करते हुये स्थूणाकर्ण के निवास स्थान पर पधारे। अन्य यक्षों से स्थूणाकर्ण के स्त्री रूप का समाचार पाकर क्रोध में कुबेर ने शाप देते हुये कहा कि पापी स्थूणाकर्ण का स्त्रीत्व अब वैसा ही बना रहेगा। फिर भी यक्षों के अनुनय विनय करने पर यक्षराज ने अपने शाप की सीमा का निर्धारण करते हुये कहा कि शिखण्डी की मृत्यु के पश्चात् ही स्थूणाकर्ण को पुरुषत्व पुनः प्राप्त हो सकेगा। जब शिखण्डी अपना वचन पूर्ण करने के लिये स्थूणाकर्ण के पास आया तब उसने इस शाप को बताते हुये शिखण्डिन् को उसी प्रकार वापस कर दिया। द्रुपद ने अपने पुत्र शिखण्डी को धार्त्तराष्ट्रों और धृष्टद्युम्न के साथ ही चतुष्पाद धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त करने के लिये द्रोणाचार्य के पास भेजा। इस प्रकार काशिराज की ज्येष्ठ कन्या अम्बा ही द्रुपद के कुल में शिखण्डी के रूप में उत्पन्न हुई। भीष्म ने यह प्रतिज्ञा की थी कि जो स्त्री हो, जो पहले स्त्री रह कर पुरुष हुआ हो, जिसका नाम स्त्री के समान हो, उस पर वे अस्त्र-प्रहार नहीं करेंगे (५. १९२)।" "दुर्योधन ने भीष्म से पूछा कि वे भीम आदि से युक्त पाण्डवसेना का कितने समय में विध्वंस कर सकते हैं। भीष्म ने बताया कि वे एक मास में यह कार्य कर सकते हैं; द्रोणाचार्य ने भी ऐसा ही कहा। कृपाचार्य ने दो मास की अवधि निश्चित की, जब कि अश्वत्थामा ने दस रात्रियों और कर्ण ने पाँच रात्रियों में शत्रुसेना का विनाश करने के अपने सामर्थ्य की चर्चा की। उस समय कर्ण का उपहास करते हुये भीष्म ने कहा : 'जब तक तुम कृष्ण सहित अर्जुन को रथ पर आते हुये नहीं देखते, और जब तक उनके साथ तुम्हारा युद्ध नहीं होता तब तक ही तुम इस प्रकार की अभिमान भरी बातें कह सकते हो' (५. १९३)।" "कौरवसेना में जो वार्त्तालाप हुआ उसका समाचार पाकर युधिष्ठिर ने भी अर्जुन से यह प्रश्न किया कि वे कौरवसेना का कितने समय में संहार कर सकते हैं। अर्जुन ने बताया कि श्रीकृष्ण की सहायता से युक्त होकर वे देवताओं सहित तीनों लोकों, सम्पूर्ण चराचर प्राणियों, तथा भूत, वर्त्तमान, भविष्य को भी पलक मारते-मारते नष्ट कर सकते हैं। उन्होंने यह भी बताया कि किरात-वेष में भगवान् पशुपति ने उन्हें वह अस्त्र दिया है जिससे वे (पशुपति) प्रलयकाल में समस्त प्राणियों का संहार करते हैं। इस अस्त्र से भीष्म आदि कोई भी परिचित नहीं। तदुपरान्त अर्जुन ने युधिष्ठिर के मित्र महारथियों का उल्लेख करते हुये युधिष्ठिर को बताया कि वे (युधिष्ठिर) स्वयं भी तीनों लोकों का संहार करने में समर्थ हैं (५. १९४)।" "तदनन्तर निर्मल प्रभात-काल में कौरवसेना ने युद्धक्षेत्र के लिये प्रस्थान किया। अवन्ती देश के राजकुमार विन्द और अनुविन्द आदि द्रोणाचार्य के नेतृत्व में चलने लगे। अश्वत्थामा, भीष्म, जयद्रथ आदि महारथी अपनी-अपनी सेनाओं के साथ दूसरे सैन्यदल के रूप में सुसज्जित होकर निकले। कृतवर्मा आदि महारथी दुर्योधन को आगे करके तृतीय सैन्यदल के रूप में चले। दुर्योधन की इस विशाल सेना ने जहाँ अपना शिविर बनाया, वह द्वितीय हस्तिनापुर की भाँति प्रतीत हो रहा था (५. १९५)।" "इसी प्रकार युधिष्ठिर ने भी धृष्टद्युम्न, धृष्टकेतु इत्यादि महारथियों को युद्ध के लिये प्रस्थान का आदेश दिया। युधिष्ठिर ने धृष्टद्युम्न को आगे करके उनके साथ अभिमन्यु आदि को प्रथम सैन्यदल के रूप में, और भीमसेन, अर्जुन, और सात्यकि आदि को द्वितीय सैन्यदल के रूप में भेजा। तत्पश्चात राजा विराट और द्रुपद को साथ लेकर अन्यान्य भूपालों सहित राजा युधिष्ठिर स्वयं चले। थोड़ी दूर जाने के पश्चात युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र के पुत्रों को भ्रम में डालने के लिये अपनी सेना का पुनर्संगठन किया। उन्होंने अभिमन्यु आदि के साथ भीमसेन की अध्यक्षता में प्रथम दल का संगठन किया; बीच के दल में विराट आदि को रक्खा, और जिस दल में स्वयं राजा युधिष्ठिर थे उसी में अपनी विशाल सेना के साथ चेकितान और धृष्टकेतु भी थे। युधिष्ठिर के पीछे सुचित्र के पुत्र आदि चल रहे थे (५. १९६)।"

१. अम्भोनिधि = कृष्ण

२. अम्भोनिधि = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अम्भोरुह, महर्षि विश्वामित्र के पुत्र का नाम है (१३. ४, ५९)।

अयति, ययाति के भ्राता का नाम है (१. ७५, ३०)।

अयनम् = स्कन्द (३. २३२, १२)। (अर्द्धवर्ष)।

अयवाह, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ४५)।

अयुतनायिन्—अयुत (दस हजार) पुरुषमेध यज्ञों का अनुष्ठान करने से इनका यह 'अयुतनायिन्' नाम हुआ (१. ९५, २०. २१)।

अयुताक्ष = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अयोग (एक जाति) उन जातियों में से एक का नाम है जो मुख्य चार जातियों—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्र—के सम्मिश्रण से उत्पन्न हुई (१२. २९६, ९)।

अयोध्या, इक्ष्वाकुवंशी राजाओं की राजधानी, एक नगरी का नाम है। 'ख्यातां पुरीम् इमां लोकेष्वयोध्यां', १. १७७, ३६; 'अयोध्यावासिनो जनाः', (१. १७७, ३९)। अयोध्या के महाबली नरेश दीर्घयज्ञ को भीम ने अपने वश में कर लिया था (२. ३०, २)। राजा भीम से विदा लेकर वार्ष्णेय अयोध्या नगरी को चला गया (३. ६०, २४)। ऋतुपर्ण की नगरी (३. ६६, २१; ३. ७०, २. १८)। 'गत्वा सुदेव नगरीमयोध्यावासिनं नृपम्। ऋतुपर्णं वचो ब्रूहि सम्पतन्निव कामगः', (३. ७०, २३)। 'अयोध्याधिपतिः', (३. ७१, २४)। 'योऽसावयोध्यां', (३. ७४, १७)। 'अयोध्यां जातं दाशरथिम्', (३. ९९, ४१)। 'रामस्त्वयोध्यामगमत्पुनः' (३. ९९, ४३)। दाशरथि राम की राजधानी (३. १४८, १५)। इक्ष्वाकुकुल के वीर राजा परिक्षित् यहाँ निवास करते थे (३. १९२, ३)। इक्ष्वाकु के पुत्र शशाद यहाँ निवास करते हुये पृथिवी पर शासन करते थे (३. २०२, १)। सीता को खोज करके हनुमान के लौटने पर राम पुनः अयोध्या पर शासन करने की आशा करते हैं (३. २८२, ३५)। 'पुरीं रम्यामयोध्यां', (३. २९१, ३७. ६०)। गालव इक्ष्वाकु राजा हर्यश्व के पास अयोध्या आये (५. ११५, १८)।

अयोध्याधिपति (अयोध्या का राजा) = राम दाशरथि (१२. २९, ६१)।

अयोनिज = विष्णु (१२. ३४७, ३९); सहस्र नामों में से एक (१३. १४९, ७४)।

अयोबाहु, धृतराष्ट्र के पुत्रों में से एक का नाम है (१. ६७, ९८; ११७, ६)। भीमसेन द्वारा युद्ध करते हुये इनका मारा जाना (७. १५७, १७)।

अयःशङ्कु, केकय देश में उत्पन्न हुये महादैत्यों में से एक का नाम है (१. ६७, १०)

अयःशिरस्, कश्यप-पत्नी दनु के पुत्रों में से एक का नाम है (१. ६५, २३)। यह केकय देश में एक राजकुमार के रूप में उत्पन्न हुआ था (१. ६७, १०)।

अरट्ट, उस देश का नाम है, जहाँ योद्धाओं को साथ लेकर द्रोण के मारे जाने के पश्चात कृतवर्मा ने पलायन किया था (७. १९३, १३)।

अरणीपर्वन् = आरणेयपर्वन् (१. १, ८९)। अरणीपर्व में पहुँचकर जल से भरे हुये घड़ों के दान का उल्लेख (१८. ६. ५९)।

अरणीसुत = शुक (१२. ३२७, ३१)।

१. अरण्यक से वेद के उपाङ्ग, उन आरण्यक ग्रन्थों का तात्पर्य है जिनमें अरण्य-जीवन सम्बन्धी नियमों का विधान है : 'आरण्यकं च वेदेभ्य ओषधिभ्योऽमृतं यथा', (१. १, २६५)। 'दक्षोधृतव्रतो धीमान् शास्त्रे चारण्यके गुरुः', (१. ४, ६; ५. १७५, ३८)। 'वेदवादानतिक्रम्य शास्त्राण्यारण्यकानि च। विपाट्य कदलीस्तंभं सारं ददृशिरे न ते ॥', (१२.१९, १७)। 'तत्रारण्यकशास्त्राणि समधीत्य स धर्मवित्। ऊर्ध्वरेताः प्रव्रजित्वा गच्छत्यक्षरसात्मताम् ॥', (१२. ६१, ५)। 'अहिंस्रः शुचिरक्षुद्रो निराशीः कर्मसंस्तुतः। आरण्यकपदोद्भूता भागास्तत्रोपकल्पिताः ॥', (१२. ३३६, ११)। 'शेषेभ्यश्चैव वक्त्रेभ्यश्चतुर्वेदान् गिरन्बहून्। आरण्यकं जगौ देवो हरिर्नारायणो वशी ॥', (१२. ३३९, ८)। गायन्त्यारण्यके विप्रा मद्भक्तास्ते हि दुर्लभाः', (१२. ३४२, ९८)। 'आरण्यकं च वेदेभ्यः', (१२. ३४३, १३)। 'आरण्यकेन सहितं नारायणमुखोद्भवम्। उपदिश्य ततो धर्मं ब्रह्मणेऽमिततेजसे ॥', (१२. ३४८, ३१)। 'एवमेकं सांख्ययोगं वेदारण्यकमेव च ॥ परस्पराङ्गान्येतानि पाञ्चरात्रं च कथ्यते (१२. ३४८, ८१-८२)। 'सांख्यं योगः पाञ्चरात्रं वेदारण्यकमेव च। ज्ञानान्येतानि ब्रह्मर्षे लोकेषु प्रचरन्ति ह ॥', (१२. ३४९, १)। 'तस्मै सर्वं विधिं राज्ञे राजाऽऽचख्यौ महामतिः। आरण्यकं महाराज व्यासस्यानुमते तदा ॥', (१५. १९, १३)। 'कच्चिद्बुद्धिं दृढां कृत्वा चरस्यारण्यकं विधिम् ।', (१५. २८, ४)।

२. अरण्यक = आरण्यकपर्वन् (१. २, ४९)। 'अतः परं तृतीयं तु ज्ञेयमारण्यकं महत्' = वनपर्वन् , (१. २, १४२)। अर्जुन को आरण्यक अर्थात् वनवास, के समय पर भगवान् शंकर का दर्शन और वरदान प्राप्त हुआ था, अतः आरण्यक = वनपर्वन् (७. ८१, २०)। आरण्यक (वनपर्व) में पहुँचकर श्रेष्ठ ब्राह्मणों को फल मूलों से तृप्त करे (१८. ६, ५९)।

अरण्यकपर्वन् , वनपर्व के अन्तर्गत आने वाले महाभारत के ३०वें अवान्तर पर्व का नाम है : "जनमेजय के यह पूछने पर कि जूये में पराजित होने के पश्चात पाण्डवों ने किस प्रकार वन में विचरण किया, वैशम्पायन ने कहा : अपने अस्त्र-शस्त्रों के साथ पाण्डव-गण वर्धमानपुर की दिशा में स्थित नगर-द्वार से हस्तिनापुर से बाहर निकले, और कृष्णा के साथ उत्तराभिमुख होकर यात्रा आरम्भ की। इन्द्रसेन आदि चौदह से अधिक सेवक, स्त्रियों को शीघ्रगामी रथों पर बैठाकर, उनके पीछे चल पड़े। पाण्डवों को वन की ओर जाते हुये देखकर हस्तिनापुर के निवासियों ने भी उनके साथ वन में जाने का आग्रह किया, परन्तु युधिष्ठिर ने उन्हें लौटाते हुये भीष्म, धृतराष्ट्र, विदुर, तथा कुन्ती आदि का यत्नपूर्वक पालन करने का आग्रह किया। पुरवासियों के लौट जाने पर पाण्डवगण रथों पर बैठकर गंगा के किनारे प्रमाणकोटि नामक महान् वट के समीप आये। संध्या होते-होते उस वट के निकट पहुँचकर पाण्डवों ने पवित्र जल का स्पर्श किया और रात्रि वहीं व्यतीत की। उस रात्रि में पाण्डव केवल जल पीकर ही रह गये। कुछ ब्राह्मण भी पाण्डवों के साथ स्नेहवश वहाँ तक चले आये थे जिनमें से कुछ साग्नि और कुछ निरग्नि थे। उन श्रेष्ठ ब्राह्मणों ने युधिष्ठिर को आश्वासन देते हुये रात्रि-पर्यन्त उनका मनोरंजन किया (३. १)।" "रात्रि व्यतीत होने के पश्चात जब प्रभात का उदय हुआ तब वे ब्राह्मण भी पाण्डवों के साथ वन की ओर जाने के लिये उद्यत हुये। युधिष्ठिर ने उन्हें फल-मूल और अन्न के आहार पर रहकर कष्ट उठाने की अपेक्षा वापस लौट जाने के लिये अत्यन्त प्रेरित किया, किन्तु उन ब्राह्मणों ने अपने अन्न आदि की स्वयं व्यवस्था करने तथा वन में जाने का ही निश्चय व्यक्त किया। उस समय सांख्य और योग में प्रवीण शौनक नामक एक ब्राह्मण ने युधिष्ठिर को उपदेश देते हुये बताया कि संसार से सन्यास लेना मात्र ही पर्याप्त नहीं वरन् धन की चिन्ता का परित्याग भी आवश्यक है। युधिष्ठिर ने कहा कि उन्हें इसलिये धन की चिन्ता नहीं है कि वे उससे स्वयं भोग्य पदार्थों का सेवन कर सकें। वे केवल ब्राह्मणों के भरण-पोषण के लिये ही धन चाहते थे। युधिष्ठिर ने कहा कि 'गृहस्थ का यह धर्म है कि वह अपने हाथ से भोजन न बनाने वाले सन्यासियों को पका-पकाया अन्न दे। वह केवल अपने लिये ही अन्न को न पकाये और ऐसे किसी पशु का वध न करे जिसे देवों, पितरों के लिये अर्पित न किया गया हो। उसे स्वयं भी ऐसा भोजन नहीं करना चाहिये जो देवताओं और पितरों को अर्पित न किया गया हो।' शौनक ने कहा कि यज्ञ, अध्ययन, दान, तप, सत्य, क्षमा, मन और इन्द्रियों का संयम, तथा लोभ का परित्याग, ये धर्म के आठ मार्ग हैं; जिनमें से प्रथम चार पितृयान के मार्ग में स्थित हैं, जब कि अन्तिम चार को देवयान मार्ग का स्वरूप बताया गया है। इन धर्मों का कर्त्तव्य-बुद्धि से और अभिमान का परित्याग करके पालन करना चाहिये। इन्हीं नियमों के पालन से देवगण ऐश्वर्य को प्राप्त हुये हैं, और इससे ही रुद्र, साध्य, आदित्य, वसु, तथा अश्विनीकुमार ऐश्वर्य से युक्त होकर प्रजाजनों का धारण-पोषण करते हैं। उन्होंने युधिष्ठिर से भी मन से इन्द्रियों को वश में करके तपस्या

द्वारा सिद्धि तथा योगजनक ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिये कहा। यज्ञ, युद्धादि कर्मों से प्राप्त होने वाली पितृ-मातृमयी सिद्धि युधिष्ठिर को प्राप्त हो चुकी थी, अतः शौनक ने उनसे तपस्या द्वारा योगसिद्धि प्राप्त करने का प्रयास करने के लिये कहा जिससे उनके मनोरथ पूर्ण हो सकें (३.२)।" "तब युधिष्ठिर ने अपने पुरोहित धौम्य से परामर्श किया। धौम्य ने युधिष्ठिर को सूर्य की महिमा बताते हुये सूर्य के १०८ नाम बताये, जिनके उच्चारण द्वारा व्यक्ति को स्त्री, पुत्र, धन, रत्नराशि, पूर्व जन्म की स्मृति, धैर्य तथा उत्तम बुद्धि प्राप्त होती है। धौम्य से इस प्रकार उपदेश लेने के पश्चात युधिष्ठिर ने गंगा के जल में स्नान करके पुष्प और नैवेद्य आदि उपहारों द्वारा सूर्य का पूजन आरम्भ किया। वे चित्त को एकाग्र करके इन्द्रिय-संयम के साथ केवल वायु पीकर रहने लगे। गंगा-जल का आचमन करके पवित्र हो वाणी को वश में रखकर प्राणायाम पूर्वक युधिष्ठिर ने सूर्य की उपासना आरम्भ की। युधिष्ठिर के स्तवन से प्रसन्न होकर सूर्य ने उन्हें दर्शन देकर एक ताँबे का अक्षय पात्र दिया। सूर्य ने बताया कि युधिष्ठिर के रसोईघर में इस पात्र द्वारा फल, मूल, भोजन करने के योग्य अन्य पदार्थ, तथा शाकादि जो चार प्रकार की भोजन-सामग्री तैयार होगी वह तब तक अक्षय बनी रहेगी जब तक द्रौपदी स्वयं भोजन न करके परसती रहेंगी। सूर्य ने युधिष्ठिर को उस दिन से चौदहवें वर्ष में पुनः राज्य प्राप्त करने का आशीर्वाद भी दिया। तदुपरान्त सूर्य अन्तर्ध्यान हो गये। युधिष्ठिर गंगाजी के जल से बाहर निकले और धौम्य का चरण स्पर्श करने के बाद अपने भ्राताओं को हृदय से लगाया। तदुपरान्त उसी समय युधिष्ठिर ने उस पात्र में भोजन तैयार कराया। उसमें पकाया हुआ चार प्रकार का थोड़ा सा भी भोजन उस समय तक समाप्त नहीं होता था जब तक ब्राह्मण, युधिष्ठिर के भ्राता-गण, स्वयं युधिष्ठिर और अन्त में द्रौपदी भी भोजन नहीं कर लेती थीं। द्रौपदी के भोजन कर लेने के पश्चात उस पात्र का भोजन समाप्त हो जाता था। इस प्रकार तपस्या करने के पश्चात पाण्डवगण ब्राह्मण समुदाय से घिरे हुये और पुरोहित धौम्य के साथ काम्यक वन की ओर चले (३.३)।" "धृतराष्ट्र ने विदुर से पुरवासियों की सहानुभूति और स्नेह प्राप्त करने का उपाय पूछा। विदुर ने कहाः 'हे धृतराष्ट्र, आप धर्म के मार्ग पर स्थिर रहकर यथाशक्ति अपने तथा पाण्डु के पुत्रों का पालन कीजिये। आपने पाण्डवों को जो राज्य दिया था वह सब उन्हें मिल जाना चाहिये और शकुनि का तिरस्कार करना चाहिये। यदि आपका पुत्र दुर्योधन प्रसन्नतापूर्वक पाण्डवों को उनका राज्य देने के लिये प्रस्तुत न हो तो उसे विवश करके आप युधिष्ठिर को राज्यपद पर अभिषिक्त कर दीजिये, क्योंकि ऐसा होने पर भूमण्डल के समस्त राजा वैश्यों की भाँति उपहार लेकर हम कौरवों की सेवा में उपस्थित होंगे। हे राजन्! दुर्योधन, शकुनि, तथा कर्ण को चाहिये कि वे पाण्डवों को प्रेम पूर्वक अपनायें, दुःशासन भरी सभा में भीमसेन तथा द्रौपदी से क्षमा मांगे। ऐसा करने पर आप कृत्य-कृत्य हो जायेंगे।' किन्तु विदुर की बात को न मानकर धृतराष्ट्र ने कहा, 'तुमने जो कुछ कहा है वह पाण्डवों के लिये तो हितकर है किन्तु मेरे पुत्रों के लिये अहितकर। अतः अब तुम्हारी जैसी इच्छा हो, तुम यहाँ रहो अथवा चले जाओ।' ऐसा कहकर धृतराष्ट्र सहसा उठकर महल के भीतर चले गये। विदुर भी यह कहकर कि इस कुल का नाश अवश्यम्भावी है, पाण्डवों के पास चले गये (३.४)।" "पाण्डवगण वनवास के लिये गंगा के तट से कुरुक्षेत्र गये। वहाँ से उन्होंने क्रमशः सरस्वती दृषद्वती, और यमुना नदियों का सेवन करते हुये एक अन्य वन में प्रवेश किया। इस प्रकार वे निरन्तर पश्चिम दिशा की ओर बढ़ते चले गये। तदनन्तर वे सरस्वती तट पर स्थित काम्यक वन में पहुँचे। विदुर जी भी एक मात्र रथ के द्वारा काम्यक वन में आकर पाण्डवों से मिले। विदुर को अपनी ओर आते देख युधिष्ठिर को यह शङ्का हुई कि कहीं वे उनके आयुधों को जीतने के लिये शकुनि के कहने पर पुनः जूआ खेलने का निमन्त्रण तो नहीं ला रहे हैं। विदुर ने पाण्डवों से बताया कि राजा धृतराष्ट्र ने उनका (विदुर-का) तिरस्कार किया है। तदुपरान्त विदुर ने सहायता प्राप्त करने के लिये पाण्डवों को उपदेश दिया (३.५)।" "विदुर के चले जाने के पश्चात धृतराष्ट्र को अत्यन्त पश्चाताप हुआ और वे अचेत होकर पृथिवी पर गिर पड़े। चेतना आने पर उन्होंने संजय से विदुर को लौटा लाने का आग्रह किया। विदुर के लौटने पर धृतराष्ट्र ने उनसे क्षमा याचना की (३.६)।" "विदुर के आने और धृतराष्ट्र द्वारा उनसे क्षमा याचना का समाचार सुनकर दुर्योधन संतप्त हो उठा। उसने शकुनि, कर्ण, और दुःशासन से इस विषय में परामर्श किया। यद्यपि इन तीनों ने दुर्योधन को बताया कि पाण्डवगण अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार निर्धारित समय तक वनवास अवश्य करेंगे, तथापि दुर्योधन को विश्वास नहीं हुआ। ऐसी स्थिति में कर्ण ने यह मत व्यक्त किया कि पाण्डवों का वन में ही वध कर देना चाहिये। कर्ण की बात सुनकर सभी उससे सहमत हो गये और पाण्डवों के वध का निश्चय करके एक साथ नगर से बाहर निकले। उस समय महर्षि कृष्ण द्वैपायन व्यास दिव्य दृष्टि से सब कुछ देखकर सहसा वहाँ उपस्थित हुये। उन्होंने उन सबको रोका और प्रज्ञाचक्षु धृतराष्ट्र के पास शीघ्र आकर कहा (३.७)।" "व्यास जी ने धृतराष्ट्र से दुर्योधन के अन्याय को रोकने और पाण्डवों का वध न करने देने के लिये अनुरोध किया (३.८)।" "जब धृतराष्ट्र ने अपने अविवेकी पुत्र दुर्योधन का पुत्र-स्नेह के कारण परित्याग करने में असमर्थता प्रगट की तब व्यास ने कहा: 'राजन्! प्राचीनकाल में एक बार गोमाता सुरभि स्वर्गलोक में जाकर विलाप करने लगीं। उस समय इन्द्र को उन पर अत्यन्त दया आई। इन्द्र द्वारा कारण पूछने पर सुरभि ने कहा कि उसका एक पुत्र हल में जुतकर अत्यन्त पीड़ित हो रहा है, क्योंकि उसके उस दुर्बल पुत्र को उसका किसान डंडों से मार-मार कर अत्यन्त त्रस्त कर रहा है। सुरभि ने यह भी बताया कि यद्यपि उसके सहस्त्रों पुत्र हैं और उसके हृदय में उन सब के प्रति समान भाव भी है, तथापि इस दीन-दुःखी पुत्र के प्रति उसकी दया अधिक उमड़ आई है। सुरभि की बात सुनकर इन्द्र ने किसान के कार्य में विघ्न डालते हुये सहसा भयंकर वर्षा की। इस प्रसंग में सुरभि ने जैसा कहा वह ठीक है। कौरव और पाण्डव दोनों ही तुम्हारे पुत्र हैं, परन्तु जो हीन हों उन पर ही अधिक कृपा होनी चाहिये। इसीलिये मैं पाण्डवों के लिये अधिक चिन्तित हूँ। यदि आप चाहते हैं कि समस्त कौरव यहाँ जीवित रहें तो आपके पुत्र दुर्योधन को पाण्डवों से मेल करके शान्ति पूर्वक रहना चाहिये' (३.९)।" "ऐसा कहकर व्यास जी ने धृतराष्ट्र को महर्षि मैत्रेय के आगमन की सूचना देते हुये बताया कि यदि मैत्रेय के आदेश की अवहेलना की गई तो वे दुर्योधनादि को शाप दे देंगे। मैत्रेय जी ने आकर धृतराष्ट्र और दुर्योधन से पाण्डवों के प्रति सद्भावना का अनुरोध किया, परन्तु दुर्योधन ने मैत्रेय के साथ अशिष्ट व्यवहार किया जिससे रुष्ट होकर उन्होंने उसे शाप दे दिया (३.१०)।"

अरन्तुक, कुरुक्षेत्र की एक सीमा का निर्धारण करने वाले एक द्वार-पाल का नाम है: 'तरन्तुकारन्तुकयोर्यदन्तरं रामह्रदानां च मचक्रुकस्य च। एतत्कुरुक्षेत्रसमन्तपञ्चकं पितामहस्योत्तरवेदिरुच्यते,' (३. ८३, २०८; ९. ५३, २४)। तु० की० ३. ८३, ५२।

अरविन्दाक्ष = सूर्य, विष्णु (१२. ३४८, ४०; सहस्र नामों में से एक)।

अरालि, विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ४, ५८)।

अरिमेजय, एक वृष्णिवंशी योद्धा का नाम है (७. ११, २८)।

अरिविन्दुवक्त्र = स्कन्द।

अरिष्ट, एक वृषभरूपधारी असुर का नाम है, जिसे पशुओं के हित

की कामना से भगवान् श्री कृष्ण ने मारा था (देखिये गी० सं० २. ३८, २९ के बाद दाक्षिणात्य पाठ, पृष्ठ ८०१ पर) (

१. अरिष्टनेमि (जिसकी चक्रधारा शुभ कारक है), एक ऋषि का नाम है, जिसका कभी-कभी तार्क्ष्य के साथ समीकरण और कभी-कभी उसी के साथ उल्लेख किया गया है। विनता के छः पुत्रों में इनका भी उल्लेख है (१. ६५, ४०; १२३, ७३)। यमराज की सभा में बैठने वाले ऋषियों में से एक यह भी थे (२. ८, ९. २२)। हैहयवंशी राजा परपुरञ्जय ने अज्ञानवश एक ब्राह्मण (अरिष्टनेमिके पुत्र) का वध कर दिया था। तब सभी हैहयवंशी क्षत्रिय मिलकर इन ब्रह्मर्षि के आश्रम पर आये (३. १८४, ८)। मरीचि के पुत्र कश्यप को कुछ लोग 'अरिष्टनेमि' नाम से भी सम्बोधित करते हैं (१२. २०८, ८)। भीष्म ने युधिष्ठिर से उस प्राचीन इतिहास का वर्णन किया जिसे तार्क्ष्य अरिष्टनेमि ने राजा सगर को सुनाया था (१२. २८८, २)।

२. अरिष्टनेमि —अज्ञातवास के समय सहदेव ने विराट नरेश से अपना परिचय देते हुये कहा कि 'मैं वैश्य हूँ, और मेरा नाम अरिष्टनेमि है' (४. १०, ५)।

३. अरिष्टनेमि, भगवान् श्री कृष्ण का एक नाम है (५. ७१, ५)।

अरिष्टसेन, कौरव पक्ष के एक राजा का नाम है, इन्होंने हिमालय की चौरसभूमि में शल्य, चित्रसेन आदि राजाओं के साथ रात्रि व्यतीत की थी (९. ६, ३)।

अरिष्टा, गन्धर्वराज हंस की माता का नाम है, जो कुरुवंश में व्यासपुत्र धृतराष्ट्र के नाम से पुनः उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ८३)।

१. अरिह, अवाचीन के पुत्र का नाम है (१. ९५, १८. १९)।

२. अरिह, देवातिथि के पुत्र का नाम है (१. ९५, २३. २४)।

३. अरिह, (शत्रुओं का हनन करने वाला), धृतराष्ट्र का एक पुत्र प्रतीत होता है (९. २६, ५)।

अरुज, रावण के एक योद्धा राक्षस का नाम है (३. २८५, २)।

१. अरुण (सूर्य का सारथि), कश्यप और विनता के पुत्र का नाम है। इनकी माता ने शीघ्रतावश पुत्र-दर्शन की लालसा से अंडा फोड़ दिया था जिससे ये अपुष्टाङ्ग ही निकल पड़े और क्रोधित होकर अपनी माता को शाप दे दिया। तदनन्तर ये अन्तरिक्ष में उड़ गये, तभी से प्राची में इनका दर्शन होता है (१. १६, २२. २३)। पक्षी गरुड़ अपने भाई अरुण को पीठ पर चढ़ाकर पितृ-गृह से माता के समीप महासागर के दूसरे तट पर आये। किन्तु जब सूर्य ने सम्पूर्ण लोकों को दग्ध करने का विचार किया तो गरुड़ इनको पुनः पूर्व दिशा में सूर्य के समीप रख आये (१. २४, ३. ४)।" "जब सूर्य राहु द्वारा ग्रसित होने पर पीड़ित हुये और देवों से उन्हें कोई सहायता न मिली तो वे क्रुद्ध हो गये। और अस्ताचल पर जाकर अपने तेज से लोकों को दग्ध करने लगे। तब देवगण और ऋषिगण ब्रह्मा के पास गये। ब्रह्मा ने अरुण को सूर्य का सारथि बनने तथा उनके तेज का अपहरण कर लेने की आज्ञा दी (१. २४, १६. १८-२०)।" "कश्यप ने विनता से बताया : 'बालखिल्यों की तपस्या तथा मेरे संकल्प से तुम्हें दो पुत्र प्राप्त होंगे, जो सम्पूर्ण पक्षियों के इन्द्र-पद का उपभोग करेंगे'। तदुपरान्त उन्होंने इन्द्र से कहा कि ये दोनों महापराक्रमी भ्राता उनके साहायक होंगे। कश्यप के ऐसा कहने पर इन्द्र निःशङ्क चले गये और विनता ने अरुण तथा गरुड़ नामक दो पुत्र उत्पन्न किये (१. ३१, २७–३४)।" विनता के छः पुत्रों में इनकी गणना (१. ६५, ४०)। इनकी गणना आदित्यों में की जाती है (१. ६६, ३९)। इनकी पत्नी श्येनी ने सम्पाती और जटायु नामक दो पराक्रमी पुत्रों को जन्म दिया (१. ६६, ६९)। विनता के दो पुत्र--गरुड़ और अरुण ही विख्यात हैं (१. ६६, ७१)। अर्जुन के जन्मोत्सव पर उपस्थित होने वाले वैनतेयों में यह भी थे (१. १२३, ७३)। 'कालिका-संगमे स्नात्वा कौशिक्यरुणयोर्गतः। त्रिरात्रोपोषितो राजन्सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥', (३. ८४, १५६)। 'अरुणेन यथा रविः', (७. १७५, १६)। 'अथ चन्द्रप्रभां मुष्णन्नादित्यस्य पुरः सरः। अरुणोऽभ्युदयांचक्रे ताम्रीकुर्वन्निवाम्बरम् ॥', (७. १८६, २)। 'प्राच्यां दिशि सहस्रांशोररुणेनारुणीकृतम्।', (७. १८३, ३)। 'अरुणेन यथा सार्धं तमः सूर्यो व्यपोहति।', (८. ३२, २४)। 'सूर्यारुणौ यथा दृष्ट्वा तमो नश्यति मारिष।', (८. ३२, २६)। कार्त्तिकेय के अभिषेक के समय ये भी उपस्थित थे (९. ४५, १६)। स्कन्द की बहुत सी अनुचरियों की कान्ति अरुण वर्ण की है (९. ४६, ३४)। पशुपति ने स्कन्द को जो पताका प्रदान की थी वह अरुण और सूर्य के समान प्रकाशमान थी (९. ४६, ४६)। इन्होंने स्कन्द को लाल शिखा वाले अपने पुत्र ताम्रचूड़ (मुर्ग) को समर्पित किया (९. ४६, ५१)। इन्होंने स्कन्द को अग्नि के समान वर्णवाला मुर्गा भेंट किया (१३. ८६, २२)।

२. अरुण = शिव (सहस्र नामों में से एक), इत्यादि।

३. अरुण (णाः) : 'अजाश्च पृश्नयश्चैव सिकताश्चैव भारत। अरुणाः केतवश्चैव स्वाध्यायेन दिवं गताः ॥', (१२. २६, ७ और इस पर नीलकण्ठीः 'अजादयो वालखिल्यवदृषीणां गण विशेषाः')।

४. अरुण, एक नाग का नाम है, जो परमधाम पधारने के सयय बलराम जी के स्वागत में उपस्थित हुआ था (१६. ४, १५)।

१. अरुणा, कश्यप और प्राधा की तीस अप्सरा पुत्रियों में से एक का नाम है (१. ६५, ५०)।

२. अरुणा, एक नदी का नाम है। इस नदी में स्नान करके तीन रात्रि उपवास करने वाला मनुष्य सभी पापों से मुक्त हो जाता है : 'कालिकासंगमे स्नात्वा कौशिक्यरुणयोर्गतः। त्रिरात्रोपोषितो राजन् सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥', (३. ८४, १५६)। दुर्योधन के योद्धाओं ने अरुणसलिला सरस्वती के तट पर जाकर स्नान और जलपान किया (९. ५, ५१)। महर्षियों की आज्ञा से राक्षसों को मुक्ति दिलाने के लिये सरिताओं में श्रेष्ठ सरस्वती अपनी ही स्वरूपभूता अरुणा को ले आईं, जिसमें स्नान करके वे सभी राक्षस अपने-अपने शरीर का परित्याग करके स्वर्गलोक चले गये (९. ४३, ३०)। अरुणा ब्रह्महत्या का निवारण करने वाली हैं, इस बात को जानकर देवराज इन्द्र भी श्रेष्ठ तीर्थ में स्नान करके ब्रह्महत्या के पाप से मुक्त हुये थे (९. ४३, ३१)। ब्रह्मा ने इन्द्र से कहा, 'देवेन्द्र! अरुणा तीर्थ पाप-भय को दूर करने वाला है। तुम वहाँ विधिपूर्वक यज्ञ सम्पादन करके अरुणा के जल में स्नान करो। महर्षियों ने इसके जल को परम पवित्र बना दिया है, तथा सरस्वती ने निकट आकर अरुणा को अपने जल से आप्लावित कर दिया है। सरस्वती और अरुणा का यह संगम महान पुण्यदायक तीर्थ है।' ब्रह्मा के ऐसा कहने पर इन्द्र ने सरस्वती के कुञ्ज में विधिपूर्वक यज्ञ करके अरुणा में स्नान किया और ब्रह्महत्या के पाप से मुक्त हो स्वर्ग लोक चले गये (९. ४३, ३९. ४४)। उन नदियों में से एक यह भी है जिनका प्रातः सायं, और रात्रि को जप करने से मनुष्य पापों से मुक्त हो जाता है (१३. १६५, २१)।

अरुणात्मज = जटायु (तु० की० सम्पाति)।

अरुणानुज = गरुड़।

अरुणासंगम, अरुणा और सरस्वती के पवित्र तीर्थ का नाम है, जहाँ स्नान करके मनुष्य ब्रह्महत्या तथा सभी प्रकार के पापों से मुक्त हो जाता है (९. ४३, ४२)।

अरुन्धती, महर्षि वसिष्ठकी पत्नी का नाम है : 'वसिष्ठे चाप्यरुन्धती', (१. १९९, ६)। "सप्तर्षियों में से एक, महर्षि वसिष्ठ पर उनकी पत्नी अरुन्धती ने शंका की। इस अशुभ चिन्तन के कारण अरुन्धती की अङ्ग-कान्ति धूम और अरुण के समान मन्द हो गई। ये कभी लक्ष्य और कभी अलक्ष्य रहकर प्रच्छन्न वेश में मानों कोई निमित्त देखा करती हैं (१. २३३, २८)।" ब्रह्मा की सभा में इनके उपस्थित रहने का वर्णन

(२. ११, ४२)। 'अरुन्धती वा सुभगा वसिष्ठं लोपामुद्रा वा यथा ह्यगस्त्यम्', (३. ११३, २३)। 'अरुन्धती सहायश्च वसिष्ठो भगवानृषिः', (३. १३०, १७)। सप्तर्षियों की पत्नियों में अरुन्धती ही केवल ऐसी थीं जिनकी तपस्या तथा पति-शुश्रूषा के कारण स्वाहा देवी उनका रूप धारण नहीं कर सकीं (३. २२५, १४)। सप्तर्षियों की पत्नियों में केवल एक यही ऐसी थीं जिनका परित्याग नहीं किया गया (३. २२६, ८)। 'अत्र ते ऋषयः सप्त देवी चारुन्धती तथा', (५. १११, १४)। 'अरुन्धती तयाऽप्येष वसिष्ठः पृष्ठतः कृतः ।', (६. २, ३१)। 'लक्ष्मीररुन्धती चैव कुरुतां स्वस्ति तेऽनघ', (७. ९४, ४४)। "इन्द्र ने श्रुतावती से अरुन्धती की कथा का इस प्रकार वर्णन किया : एक बार सप्तर्षियों ने इसी बदरपाचन तीर्थ में अरुन्धती को छोड़कर हिमालय पर्वत की ओर प्रस्थान किया। वहाँ पहुँच कर कठोर व्रत का पालन करनेवाले ये महर्षि जीवन निर्वाह के निमित्त फल-मूल लाने के लिये वन में गये। जब वे हिमालय के वन में निवास कर रहे थे उस समय १२ वर्षों तक उस देश में वर्षा ही नहीं हुई। वे तपस्वी मुनी वहीं आश्रम बनाकर रहने लगे। उस समय अरुन्धती भी प्रतिदिन तपस्या में लगी रहती थी। अरुन्धती की तपस्या से प्रसन्न होकर एक दिन भगवान शङ्कर ने ब्राह्मण के वेश में उसके पास आकर भिक्षा-याचना की। तब अरुन्धती ने, उन ब्राह्मण से अन्न का संग्रह समाप्त हो जाने के कारण बेर खाने का ही अनुरोध किया। शिव ने उन बेरों को पकाने के लिये कहा। यह आदेश मिलते ही उसने ब्राह्मण का हित करने की इच्छा से उन बेरों को प्रज्वलित अग्नि पर रखकर पकाना प्रारम्भ किया। उस समय उसे अत्यन्त मनोहर एवं दिव्य कथायें सुनायी देने लगीं। वह बिना खाये ही बेर पकाती और मङ्गल कथायें सुनती रही। इतने में ही बारह वर्षों की वह भयङ्कर अनावृष्टि इस प्रकार समाप्त हो गई जैसे उसकी अवधि एक दिन की ही रही हो। तदनन्तर सप्तर्षि-गण हिमालय पर्वत से फल लेकर वहाँ आये। उस समय शङ्कर ने प्रसन्न होकर अरुन्धती को आशीर्वाद और अपने स्वरूप का दर्शन दिया। तदुपरान्त उन्होंने उन सप्तर्षियों से कहा: 'आप लोगों ने हिमालय के शिखर पर जो तपस्या की है वह अरुन्धती की तपस्या से बड़ी नहीं है, क्योंकि इसने बिना भोजन और जल के ही केवल बेर पकाते हुये ही बारह वर्ष व्यतीत किये।' इसके बाद शिव ने अरुन्धती से वरदान माँगने के लिये कहा। अरुन्धती ने शिव से कहा: 'भगवान यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो यह स्थान बदरपाचन नाम से प्रसिद्ध होकर सिद्धों और देवर्षियों का प्रिय तीर्थ बन जाय। इस तीर्थ में तीन रात्रियों तक पवित्र भाव से निवास करने से मनुष्यों को बारह वर्षों के उपवास का फल प्राप्त हो।' तदनन्तर शिव अपने लोक चले गये। अरुन्धती भूख-प्यास से युक्त होने पर भी न तो थकी थी और न उसकी अङ्ग-कान्ति ही मलिन थी, अतः उसे देखकर सप्तर्षियों को अत्यन्त आश्चर्य हुआ (९. ४८, ३३-५७)।" जिसने कभी पहले अरुन्धती (नक्षत्र) को देखा हो किन्तु बाद में न देख पाता हो तो उसके जीवन का केवल १ वर्ष ही शेष मानना चाहिये (१२. ३१७, ९)। 'कश्यपोऽत्रिर्वसिष्ठश्च भरद्वाजोऽथ गौतमः । विश्वामित्रो जमदग्निः साध्वी चैवाप्यरुन्धती ॥', (१३. ९३, २१)। 'अरुन्धत्युवाच', (१३. ९३, ४९)। 'ऋषीणां गच्छ सप्तानामरुन्धत्यास्तथैव च ।', (१३. ९३, ५९)। 'अरुन्धती तु तं दृष्ट्वा सर्वाङ्गोपचितं शुभम् ।', (१३. ९३, ६४)। 'अरुन्धत्युवाच', (१३. ९३, १००. १३१)। 'भरद्वाजोऽरुन्धती वालखिल्याः', (१३. ९४, ५)। 'अरुन्धत्युवाच', (१३. ९४, ३८)। 'अरुन्धतीव नारीणां स्वर्गलोके महीयते', (१३. १२३, २०)। एक बार अरुन्धती ने ऋषियों, पितरों, और देवताओं को धर्म का रहस्य बताया। सन्तुष्ट होकर इन्होंने अरुन्धती को साधुवाद दिया और ब्रह्मा ने इन्हें वरदान दिया कि इनकी तपस्या सदा बढ़ती रहे (१३. १३०, १. ३. १२. १३)।

अरुन्धतीपति = वसिष्ठ (१. १७४, ५)।

अरुन्धतीवट, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, ४१)।

अरूपा, दक्षकन्या प्राधा की एक पुत्री का नाम है (१. ६५, ४६)।

अरौद्र = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

१. अर्क = सूर्य (१. १, ४२; ६७, १३६; १११, ८)—धौम्य द्वारा वर्णित सूर्य के १०८ नामों में से एक (३. ३, १६)। याज्ञवल्क्य ने इनसे (अर्क से) यजुर्वेद की पन्द्रह शाखायें प्राप्त कीं (१२. ३१८, २१)।

२. अर्क = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

३. अर्क, एक प्राचीन राजा का नाम है, जो पूर्व युग में हुये थे (१. १, २३६)।

४. अर्क, एक दानवराज का नाम है, जो राजर्षि ऋषिक के रूप में उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ३२)।

अर्कज, बलीह कुल में उत्पन्न एक राजा का नाम है (५. ७४, १४)।

अर्कपर्ण, कश्यप-पत्नी 'मुनि' के गर्भ से उत्पन्न ६० देवगन्धर्वों में से एक का नाम है (१. ६५, ४३)।

अर्कपुत्र = कर्ण (१. १८७, २२)।

अर्घसम्वाद=अर्घाहरण पर्वन् : 'राजसूयेऽर्घ संवादे शिशुपालवधस्तदा', (१. २, १३५)।

अर्घाभिहरण = अर्घाहरणपर्वन् (१. २, ४८)।

अर्घाहरणपर्वन्, सभापर्व के अन्तर्गत आनेवाले महाभारत के २६ वें अवान्तरपर्व का नाम है। "अभिषेचनीय कर्म के दिन सत्कार के योग्य महर्षिगण तथा ब्राह्मण लोग राजाओं के साथ यज्ञ-भवन में गये। महाराज युधिष्ठिर के उस यज्ञभवन में राजर्षियों के साथ बैठे हुये नारद आदि महर्षि उस समय ब्रह्मा की सभा में एकत्र हुये देवताओं और देवर्षियों के समान सुशोभित हो रहे थे। यज्ञ सम्बन्धी कर्मों से अवकाश पाने पर बीच-बीच में प्रतिभाशाली विद्वान आपस में 'जल्प' (वाद-विवाद) करते थे। युधिष्ठिर की यज्ञशाला के भीतर अन्तर्वेदी के आस-पास उस समय न तो कोई शूद्र था और न कोई व्रतहीन द्विज। उस समय नारद यह जान कर कि राजाओं के उस समुदाय के रूप में वास्तव में देवताओं का ही समागम हुआ है, मन-ही-मन श्रीहरि का चिन्तन कर रहे थे। उन्हें स्मरण हो आया कि पूर्वकाल में सम्पूर्ण भूतों के उत्पादक भगवान नारायण ने ही देवताओं को आदेश दिया था कि वे सब भूतल पर जन्म ग्रहण करके अभीष्ट साधन करते हुये आपस में एक दूसरे को मारकर पुनः देव लोक में आ जायँ। देवों को आदेश देने के बाद नारायण ने स्वयं भी यदुकुल में अवतार लिया और इस समय यहाँ विराजमान हैं। ये स्वयम्भू महाविष्णु ऐसे बल सम्पन्न क्षत्रियों को पुनः उच्छिन्न करना चाहते हैं। नारद जी इसी पुरातन वृत्तान्त का स्मरण करते हुये श्रीकृष्ण को ही नारायण और समस्त यज्ञों के द्वारा आराधनीय मानकर वहाँ आदरपूर्वक बैठे रहे। तत्पश्चात् भीष्मजी ने युधिष्ठिर से वहाँ उपस्थित राजाओं का अर्घ्य देकर यथायोग्य सत्कार करने के लिये कहा। उन्होंने यह भी कहा कि जो राजा सब में श्रेष्ठ और शक्तिशाली हो उसको ही सर्वप्रथम अर्घ्य समर्पित करना चाहिये। युधिष्ठिर के पूछने पर भीष्म ने श्रीकृष्ण को भूमण्डल में सबसे अधिक पूजनीय बताया। भीष्म की आज्ञा मिल जाने पर सहदेव ने श्रीकृष्ण को विधिपूर्वक अर्घ्य समर्पित किया। उस समय राजा शिशुपाल और चेदिराज ईर्ष्या के कारण भीष्म और युधिष्ठिर को उलाहना देकर श्रीकृष्ण पर आक्षेप करने लगे। (२. ३६)।" "शिशुपाल ने भीष्म और युधिष्ठिर पर गम्भीर आक्षेप करते हुये कहा कि श्रीकृष्ण राजा नहीं वरन् एक साधारण व्यक्ति हैं अतः वे पूजा के अधिकारी ही नहीं हैं। वह श्रीकृष्ण की भर्त्सना करते हुये कुछ अन्य राजाओं के साथ युधिष्ठिर की सभा से जाने के लिये उद्यत हो गया (२. ३७)।" "उस समय राजा युधिष्ठिर दौड़कर शिशुपाल के समीप गये और उसे शान्तिपूर्वक समझाते हुये मधुरवाणी में अनुनय विनय करने लगे। फिर भी, भीष्म ने श्रीकृष्ण को ही सर्वश्रेष्ठ तथा अर्घ्य का सर्वप्रथम अधिकारी घोषित किया (२. ३८)।" "सहदेव और नारद ने श्रीकृष्ण की उपासना न करने को अत्यन्त अनुचित बताया।

उस समय शिशुपाल ने क्षुब्ध होकर कुछ अन्य नरेशों को भी युद्ध के लिये उद्यत करते हुये यज्ञ को समाप्त होने के पूर्व ही भङ्ग कर देना चाहा (२. ३९)।"

अर्चयन्त्य अकर्म् अर्किणः = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अर्चित = विष्णु (सहस्र नामों से एक)।

अर्चिष्मत् = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अर्चिष्मती, अङ्गिरस् की पुत्री का नाम है : 'पश्यत्यर्चिष्मती भाभिः', (३. २१८, ६)।

अर्चिष्मन्तः, पितरों की तीन संज्ञाओं में से एक है (१२. २६९, १५)।

१. **अर्जुन** कार्तवीर्य एक हैहय राजा का नाम है। इसका (हैहयाधिपति का) परशुराम ने वध किया था (१. १०४, १. २)। 'ख्यातिं यास्यसि धर्मेण कार्तवीर्यार्जुनो यथा', (३. ८५, १३०)। "अकृतव्रण ने युधिष्ठिर को बताया कि जमदग्निपुत्र परशुराम तथा हैहयराज कार्तवीर्य का चरित्र देवताओं के समान है। परशुराम जी ने अर्जुन नाम से प्रसिद्ध जिस हैहयराज कार्तवीर्य का वध किया था उसके एक सहस्र भुजायें थीं। दत्तात्रेय की कृपा से उसने (अर्जुन ने) एक सुवर्ण-विमान प्राप्त किया था और भूतल के समस्त प्राणियों पर उसका प्रभुत्व था। उस कार्तवीर्य के रथ की गति को कोई भी रोक नहीं सकता था। उस रथ और वर के प्रभाव से कार्तवीर्य अर्जुन समस्त दिशाओं में घूमता हुआ देवताओं, यक्षों, तथा ऋषियों को पददलित, और सम्पूर्ण प्राणियों को त्रस्त करने लगा। उसके अत्याचार को देखकर देवताओं और ऋषियों ने विष्णु से उसका वध करने का निवेदन किया। एक दिन हैहयराज ने दिव्य विमान द्वारा शची के साथ क्रीड़ा करते हुये देवराज इन्द्र पर आक्रमण किया। कार्तवीर्य अर्जुन का विनाश करने के सम्बन्ध में इन्द्र से परामर्श करने के पश्चात् विष्णु ने रमणीय बदरी तीर्थ की यात्रा की, जहाँ उनका अपना ही विस्तृत आश्रम था (३. ११५, ९-१९)।" "एक दिन जमदग्नि के सब पुत्र आश्रम से बाहर गये हुये थे। उसी समय अनूपदेश का वीर राजा कार्तवीर्य अर्जुन उधर आ निकला। आश्रम में आने पर ऋषि-पत्नी रेणुका ने उसका यथोचित सत्कार किया, किन्तु उसने उस सत्कार को आदरपूर्वक ग्रहण नहीं किया और मुनि के आश्रम से होमधेनु गाय के बछड़े को बलपूर्वक हर ले गया। उसने आश्रम के बड़े-बड़े वृक्षों को भी तोड़ डाला। जब परशुरामजी आश्रम वापस आये तब स्वयं जमदग्नि ने उनसे सारा वृत्तान्त कहा। परशुरामजी ने क्रोध के वशीभूत होकर कार्तवीर्य अर्जुन पर आक्रमण किया और अपने बाणों से उसकी सहस्र भुजाओं को काट कर उसे मार डाला। पिता की मृत्यु से कुपित होकर अर्जुन के पुत्रों ने परशुराम की अनुपस्थिति में जमदग्नि पर आक्रमण किया और उन्हें बाणों से घायल करके मार डाला। जमदग्नि की मृत्यु के पश्चात् कार्तवीर्य-पुत्र आश्रम से चले गये। तदनन्तर परशुरामजी हाथों में समिधा लिये आश्रम में आये और अपने पिता को मृत देखकर विलाप करने लगे (३. ११६, १९-२९)।" "पिता की मृत्यु विलाप करने के पश्चात् परशुराम जी ने उनका समस्त प्रेतकर्म सम्पन्न किया। तदनन्तर उन्होंने सम्पूर्ण क्षत्रियों के वध की प्रतिज्ञा की और शस्त्र लेकर अकेले ही कार्तवीर्य के समस्त पुत्रों को मार डाला (३. ११७, १-७)।" "परशुराम ने महादेव से अनेक प्रकार के अस्त्र और एक अत्यन्त तेजस्वी कुठार प्राप्त किया। उस कुठार के कारण परशुरामजी सम्पूर्ण लोकों में अप्रतिम वीर हो गये। इसी समय राजा कृतवीर्य का बलवान पुत्र अर्जुन हैहय वंश का राजा हुआ। दत्तात्रेय की कृपा से अर्जुन ने एक सहस्र भुजायें प्राप्त की थीं। इस राजा ने अपने बाहुबल से पर्वतों और द्वीपों सहित इस सम्पूर्ण पृथिवी को युद्ध में जीतकर अश्वमेध यज्ञ में ब्राह्मणों को दान कर दिया था। एक समय भूखे प्यासे अग्निदेव ने अर्जुन से भिक्षा माँगी और अर्जुन ने अग्नि को वह भिक्षा दे दी। तत्पश्चात् बलशाली अग्निदेव कार्तवीर्य अर्जुन के बाणों के अग्रभाग से गाँवों, गोष्ठों, और नगरों इत्यादि को भस्म कर डालने की इच्छा से प्रज्वलित हो उठे। उन्होंने कार्तवीर्य के प्रभाव से पर्वतों और वनस्पतियों को भस्म करना आरम्भ किया। इस प्रकार प्रज्वलित होते हुये अग्निदेव ने हैहयराज को साथ लेकर आपव (=वसिष्ठ) के आश्रम को भी जलाकर भस्म कर दिया जिस पर क्रुद्ध होकर ऋषि ने यह शाप दिया कि परशुरामजी उसकी समस्त भुजाओं को काट डालेंगे। अर्जुन अत्यन्त शान्तिपरायण, ब्राह्मण-भक्त, और दानी शूर वीर था, अतः उसने उस समय ऋषि के शाप पर ध्यान नहीं दिया। फिर भी, अर्जुन के बलवान पुत्र ही उसकी मृत्यु का कारण बन गये। उसके क्रूरकर्मा और घमण्डी पुत्र जमदग्नि की होमधेनु नामक गाय के बछड़े को चुरा लाये। यद्यपि हैहयराज कार्तवीर्य को उस बछड़े के चुराये जाने की बात ज्ञात नहीं थी, तथापि उसी के लिये परशुराम के साथ उनका घोर युद्ध हुआ, जिसमें परशुराम ने उनकी भुजाओं को काट डाला और होमधेनु के बछड़े को पुनः आश्रम ले आये। तदनन्तर अर्जुन के पुत्रों ने परशुराम की अनुपस्थिति में जमदग्नि के आश्रम पर आकर उनका वध कर दिया। अपने पिता जमदग्नि की इस प्रकार मृत्यु के कारण परशुराम ने क्रोध में सम्पूर्ण पृथिवी को क्षत्रियों से रहित कर देने की भीषण प्रतिज्ञा करके अपना शस्त्र उठाया और शीघ्र ही कार्तवीर्य के समस्त पुत्रों और पौत्रों का वध कर डाला। परशुराम ने सहस्रों हैहयों का वध किया और शीघ्र ही पृथिवी को क्षत्रियों से रहित कर दिया (१२. ४९, ३३-५४)।" "भीष्म ने युधिष्ठिर से इस प्राचीन कथा का वर्णन किया : महिष्मती नगरी में सहस्रभुजधारी कार्तवीर्य अर्जुन नामक एक हैहयवंशी राजा समस्त भूमण्डल पर शासन करता था। एक समय अर्जुन ने क्षत्रिय-धर्म को सामने रखते हुये बहुत दिनों तक श्रीदत्तात्रेय की आराधना की तथा किसी कारणवश अपना समस्त धन उनकी सेवा में अर्पित कर दिया। उससे सन्तुष्ट हो कर दत्तात्रेय ने उसे तीन वर माँगने की आज्ञा दी। आज्ञा मिलने पर अर्जुन ने ये वर माँगे : 'मैं युद्ध में तो सहस्र भुजाओं से युक्त रहूँ; किन्तु घर पर मेरी दो ही बाहें रहें। रणभूमि में समस्त सैनिक मेरी एक सहस्र भुजायें देखें। मैं अपने पराक्रम से सम्पूर्ण पृथिवी को विजित कर लूँ। इस प्रकार पृथिवी को धर्मानुसार प्राप्त करके मैं उसका पालन करूँ। इन तीन वरों के अतिरिक्त मैं एक चौथा वर यह भी चाहता हूँ कि यदि मैं कभी सन्मार्ग का परित्याग करके असत्य मार्ग का आश्रय लूँ तो श्रेष्ठ पुरुष मुझे राह पर लाने के लिये शिक्षा दें। वर प्राप्त कर लेने के पश्चात् अर्जुन अभिमान वश अपने को धैर्य, वीर्य, यश, शौर्य, पराक्रम, और ओज में सर्वश्रेष्ठ मानने लगा। उस समय यह आकाशवाणी हुई कि ब्राह्मण क्षत्रिय से भी श्रेष्ठ हैं। अर्जुन ने इस आकाशवाणी का उत्तर देते हुये कहा : 'ब्राह्मण क्षत्रियों के आश्रय में रहते हैं। आज से मैं सब प्राणियों से श्रेष्ठ कहे जानेवाले ब्राह्मणों को अपने अधीन रक्खूँगा।' तब अर्जुन को चेतावनी देते हुये वायु देवता ने कहा : 'कार्तवीर्य ! तुम इस कलुषित भाव का परित्याग कर ब्राह्मणों को नमस्कार करो, अन्यथा ब्राह्मण तुम्हें शान्त कर देंगे, और यदि तुम उनके उत्साह में बाधा डालोगे तो वे तुम्हें राज्य से भी निष्कासित कर देंगे, वायु की बात को सुनकर अर्जुन ने उनसे श्रेष्ठ ब्राह्मणों का वर्णन करने का आग्रह किया (१३. १५२)।" "वायु द्वारा उदाहरण सहित ब्राह्मणों की महत्ता का वर्णन (१३. १५३; १३. १५६, १.१५; १५७, १.२३)।" "पूर्वकाल में कार्तवीर्य अर्जुन के नाम से प्रसिद्ध राजा था जिसकी एक सहस्र भुजायें थीं। उसने अपने धनुष और बाण की सहायता से समुद्रपर्यन्त पृथिवी को अपने अधिकार में कर लिया था। एक दिन जब वह समुद्र तट पर विचरण कर रहा था, उसने अपने बल के दर्प में समुद्र को सैकड़ों बाणों से अच्छादित कर दिया। तब समुद्र ने प्रगट होकर उसके सम्मुख नत मस्तक होकर यह कहा : 'तुम बाणों की वर्षा न करो क्योंकि इससे मेरे अन्दर रहने वाले प्राणियों की हत्या हो रही है।' तब कार्तवीर्य ने समुद्र से अपने समान किसी अन्य धनुर्धर का पता बताने पर समुद्र को छोड़ देने का वचन दिया। समुद्र ने अर्जुन से रामजामदग्न्य (परशुराम) का नाम बताया। तदनन्तर राजा कार्तवीर्य

अर्जुन परशुराम के पास आये और वहाँ अपने बन्धुओं के साथ परशुराम के प्रतिकूल व्यवहार करने लगे। उन लोगों ने अपने अपराधों से परशुराम को उद्विग्न कर दिया जिसके फलस्वरूप क्रुद्ध हो कर परशुराम ने अपनी कुठार से उस सहस्रभुज राजा को अनेक शाखाओं वाले वृक्ष की भाँति सहसा काट डाला। राजा को मृत देख उसके बन्धु-बान्धवों ने एकत्र हो कर परशुराम पर आक्रमण किया; किन्तु परशुराम ने जब उनका संहार आरम्भ किया तो वे सब भय से पर्वतों की गुफाओं में घुस गये। वहाँ बहुत समय तक ब्राह्मणों का दर्शन न कर सकने के कारण वे धीरे-धीरे अपने कर्म भूल कर शूद्र हो गये। इसी प्रकार द्रविड, आभीर, पुण्ड्र और शबरों के सहवास में रहकर वे क्षत्रिय होते हुये भी वृषल हो गये (१४. २९, १० १६)।" तु० की० **परशुराम;** और **अनूपपति, हैहय, हैहयेन्द्र, हैहयाधिपति, हैहयर्षभ, हैहयश्रेष्ठ,** तथा **कार्तवीर्य,** भी।

२. **अर्जुन,** एक पाण्डव का नाम है जो पाँच पाण्डवों में से तृतीय थे: १. १, १११. १२५. १२७. १२९. १३१. १५१. १५२. १५४. १६२. १६४. १६७. १७१. १७४. १८०. १८१. १८६. १८९. १९२. १९३. १९५. २१४; २, ४५. ५०. १११. ११४. १६३. १६४. १८३. २१८. २३०. २७५. ३५७; ६१, ३८. ४२. ४५। सुभद्रा नामक पत्नी से उत्पन्न इनके पुत्र का नाम अभिमन्यु था (१. ६३, १२१)। कृष्णा (द्रौपदी) नामक पत्नी से उत्पन्न इनके पुत्र का नाम श्रुतकीर्त्ति था (१. ६३, १२३)। ये इन्द्र के पुत्र थे (१. ६७, १११)। 'सोऽभिमन्युर्बृहत्कीर्त्तिरर्जुनस्य सुतोऽभवत्।', (१. ६७, ११३)। 'सोऽर्जुनेत्यभिख्यातः पाण्डोः पुत्रः प्रतापवान्', (१. ६७, ११६)। इन्द्र ने इनके हित के लिये ब्राह्मण का वेश धारण करके कर्ण से दोनों कुण्डल तथा उसके शरीर के साथ ही उत्पन्न कवच माँग लिया था (१. ६७, १४४)। कुन्ती से उत्पन्न इन्द्र के पुत्र के रूप में इनका उल्लेख (१. ९५, ६१)। कृष्णा से उत्पन्न इनके पुत्र का नाम श्रुतकीर्त्ति (१. ९५, ७५) और सुभद्रा से उत्पन्न पुत्र का नाम अभिमन्यु था (१. ९५, ७८)। "देवराज इन्द्र से पुत्र प्राप्त करने की इच्छा से महाराज पाण्डु ने महर्षियों से परामर्श लेकर शुभदायक सांवत्सर व्रत का उपदेश दिया और स्वयं भी इन्द्र की आराधना करने के लिये एक पैर से खड़े होकर तपस्या करने लगे। इस प्रकार इन्द्र को प्रसन्न करके उन्होंने कुन्ती से इन्द्र का आवाहन करने के लिये कहा। तदनन्तर देवराज इन्द्र कुन्ती के पास आये और उन्होंने अर्जुन को जन्म दिया। कुमार अर्जुन के जन्म लेते ही अत्यन्त नाद से समस्त आकाश को गुञ्जित करती हुई आकाशवाणी ने कुन्ती से इस प्रकार कहा: 'यह बालक कार्तवीर्य अर्जुन के समान तेजस्वी, शिव के समान पराक्रमी, और इन्द के समान अजेय होकर तुम्हारे यश का विस्तार करेगा। यह वीर पुत्र मद्र, कुरु, सोमक, चेदि, काशि, तथा करूष नामक देशों को वश में करेगा और उत्तर दिशा में जाकर वहाँ के राजाओं को विजित करके असंख्य धनराशि प्राप्त करेगा। इसके बाहुबल से खाण्डव वन में अग्निदेव समस्त प्राणियों के मेद का आस्वादन करके तृप्तिलाभ करेंगे। यह क्षत्रियों का नायक, और युद्ध में राजाओं को विजित करके अपने भ्राताओं के साथ तीन अश्वमेध यज्ञों का अनुष्ठान करेगा। युद्ध में शङ्कर को सन्तुष्ट करके उनसे पाशुपत नामक अस्त्र प्राप्त करेगा, और निवात-कवच नामक दैत्यों का इन्द्र की आज्ञा से संहार करेगा। यह सम्पूर्ण दिव्यास्त्रों का पूर्णज्ञाता होगा और अपनी खोई हुई सम्पत्ति को पुनः प्राप्त करेगा।' आकाशवाणी को सुनकर शतशृङ्ग निवासी तपस्वी मुनियों तथा इन्द्र आदि समस्त देवताओं को अत्यन्त हर्ष हुआ। उस समय आकाश से पुष्पों की वर्षा तथा दुन्दुभियों का तुमुल नाद हुआ। तदनन्तर अनेक प्रकार के देवगण—इनके नामों की गणना कराई गयी है जिनमें देव गन्धर्व, अप्सरायें, आदित्य, रुद्र, वैनतेय प्रमुख थे—वहाँ आकर अर्जुन की प्रशंसा करने लगे (१. १२३, २५-७५)।" "तदनन्तर अश्विनों ने माद्री से नकुल और सहदेव नामक दो यमज पुत्र उत्पन्न किये। इस प्रकार पाँच पुत्र उत्पन्न होने के पश्चात पाण्डु ने अपने पुत्रों के नामकरण तथा उपनयन आदि संस्कार कराये। इन पाण्डव-कुमारों को शर्याति के वंशज पृषत के पुत्र शुक ने धनुर्वेद की शिक्षा दी। अर्जुन इस विद्या के पारगामी विद्वान हुये। जब शुक ने यह जान लिया कि अर्जुन उन्हीं के समान धनुर्वेद के ज्ञाता हो गये हैं, तब उन्होंने प्रसन्न होकर अर्जुन को अनेक प्रकार के खड्ग, बाण, धनुष, क्षुर और नाराच आदि विविध अस्त्र प्रदान किये। इन अस्त्रों को पाकर अर्जुन अत्यन्त प्रसन्न हुये और ऐसा अनुभव करने लगे कि भूमण्डल का कोई भी नरेश अब उनकी समानता नहीं कर सकता (१. १२४)।" "शतशृङ्ग पर्वत पर पाण्डु के लिये उत्पन्न पाँच पाण्डवों—युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव—को, पाण्डु की मृत्यु तथा उनकी चिता के साथ माद्री के सती हो जाने के पश्चात, महर्षिगण हस्तिनापुर ले आये (१. १२६)।" "द्रुपद से तिरस्कृत होकर द्रोणाचार्य भी हस्तिनापुर पधारे जहाँ भीष्म ने उन्हें धार्तराष्ट्रों तथा पाण्डवों की शिक्षा के लिये नियुक्त कर लिया (१. १३१)।" "द्रोणाचार्य ने जब इन राजकुमारों को अस्त्रविद्या की शिक्षा देना आरम्भ किया तब अर्जुन अत्यधिक अभ्यास करने के कारण अन्य की अपेक्षा अत्यधिक प्रवीण हो गये जिसके कारण सूतपुत्र कर्ण अर्जुन से अत्यन्त ईर्ष्या करने लगा। एक दिन द्रोणाचार्य ने अपने शिष्यों से कहा, 'मेरे मन में एक कार्य करने की इच्छा है। अस्त्र-शिक्षा प्राप्त कर लेने के पश्चात तुम लोगों को मेरी वह इच्छा पूर्ण करनी होगी।' आचार्य की बात सुनकर सभी कौरव चुप रहे, परन्तु अर्जुन ने वह इच्छा पूर्ण करने की प्रतिज्ञा की। सतत अभ्यास के कारण अर्जुन अस्त्र-विद्या में अत्यन्त कुशल हो गये। शिक्षा के समय द्रोणाचार्य अपने समस्त शिष्यों को पानी लाने के लिये सँकरे मुह का कमण्डलु देते थे जिससे उसे भर कर लौटने में विलम्ब हो, जब कि अपने पुत्र अश्वत्थामा को चौड़े मुह का घड़ा देते जिससे उसके लौटने में विलम्ब न हो। इस प्रकार जब तक दूसरे शिष्य लौट नहीं आते तब तक की अवधि में वे अपने पुत्र अश्वत्थामा को अस्त्रविद्या की शिक्षा देते थे। अर्जुन ने इस बात को जान लिया, अतः वे वारुणास्त्र से शीघ्र ही अपना कमण्डलु भरकर आचार्यपुत्र के साथ ही गुरु के समीप आ जाते थे जिसके कारण वे आचार्यपुत्र से किसी भी बात में कम न रहे। अर्जुन को धनुषबाण के अभ्यास में निरन्तर रत देखकर द्रोणाचार्य ने रसोइये को एकान्त में बुलाकर अर्जुन को कभी भी अँधेरे में भोजन न परसने का आदेश दिया और यह भी कहा कि वह अर्जुन को इस आदेश की बात न बतायेगा। एक दिन जब अर्जुन भोजन कर रहे थे, अत्यन्त वेग से हवा के चलने के कारण वहाँ का दीपक बुझ गया, किन्तु उस समय भी अर्जुन भोजन करते रहे क्योंकि अभ्यास के कारण उनका हाथ अँधेरे में भी मुख से अन्यत्र नहीं जाता था। इसे अभ्यास का ही चमत्कार मानकर अर्जुन रात्रि के समय भी धनुर्विद्या का अभ्यास करने लगे। उनके इस प्रकार अभ्यास से प्रभावित होकर द्रोणाचार्य ने उनको अनुपम धनुर्धर बनाने का वचन दिया। द्रोणाचार्य ने अर्जुन को घोड़ों, हाथियों, रथों तथा भूमि पर रहकर युद्ध करने की भी शिक्षा दी (१. १३२, १—२९)।" "तदनन्तर निषादराज हिरण्यधनु का पुत्र एकलव्य द्रोणाचार्य के पास अस्त्रविद्या सीखने के लिये आया, किन्तु उन्होंने उसे शिष्य नहीं बनाया। एकलव्य इससे निराश नहीं हुआ और वन में जाकर द्रोणाचार्य की प्रतिमा के सम्मुख धनुर्विद्या का अभ्यास करने लगा। द्रोणाचार्य ने यह जानकर कि एकलव्य उनको ही गुरु मानकर धनुर्विद्या का अभ्यास कर रहा है, एकलव्य के पास जाकर गुरु-दक्षिणा माँगी। जब एकलव्य ने दक्षिणा देने का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया तब द्रोणाचार्य ने उससे उसके दाहिने हाथ का अँगूठा दक्षिणा के रूप में माँग लिया। द्रोणाचार्य ने अर्जुन के हित की दृष्टि से ही यह कार्य किया था, और अर्जुन को इससे अत्यन्त प्रसन्नता भी हुई। इस प्रकार अर्जुन युद्ध कलाओं में सबसे श्रेष्ठ हुये। अस्त्रों के अभ्यास तथा गुरु के प्रति अनुराग में भी अर्जुन का सर्वोच्च स्थान था। यद्यपि सभी को समान रूप से अस्त्र-विद्या का उपदेश प्राप्त होता था तथापि अर्जुन अपनी

विशिष्ट प्रतिभा के कारण समस्त कुमारों में अकेले अतिरथी हुये। धृतराष्ट्र के पुत्र भीमसेन को बल में अधिक और अर्जुन को अस्त्रविद्या में प्रवीण देखकर अत्यन्त ईर्ष्या करते थे (१.१३२, ४६-६६)।" "जब सम्पूर्ण धनुर्विद्या तथा अस्त्र-संचालन की कला में वे सब राजकुमार सुशिक्षित हो गये तब द्रोणाचार्य ने एक दिन उनकी परीक्षा लेने का आयोजन किया। उन्होंने एक कृत्रिम गिद्ध बना कर वृक्ष के अग्रभाग पर रखवा दिया, और राजकुमारों से उसी का वेधन करने के लिये कहा। सबसे पहले द्रोण ने युधिष्ठिर से उस कृत्रिम-पक्षी का वेधन करने के लिये धनुषबाण चढ़ाकर तत्पर होने के लिये कहा। जब युधिष्ठिर धनुष तान कर खड़े हुये तब द्रोणाचार्य ने उनसे पूछा कि वे क्या-क्या देख रहे हैं। युधिष्ठिर ने बताया कि वे वृक्ष को, आचार्य को, अपने भ्राताओं को, तथा गिद्ध को भी बार-बार देख रहे हैं। उनके उत्तर से अप्रसन्न होकर द्रोणाचार्य ने झिड़कते हुये उन्हें अलग हट जाने के लिये कहा। तदनन्तर द्रोणाचार्य ने उसी क्रम से दुर्योधन आदि धार्तराष्ट्रों को भी परीक्षार्थ बुलाया और सबसे उपर्युक्त बातें ही पूछीं। प्रश्न के उत्तर में सभी ने युधिष्ठिर की ही भाँति सब कुछ देखने का उत्तर दिया। यह सुनकर आचार्य ने उन सबको झिड़क कर हटा दिया (१.१३२, ६७-७९)।" "अन्त में अर्जुन की बारी आयी। जब अर्जुन लक्ष्य करके खड़े हुये तब उनसे भी द्रोणाचार्य ने वही प्रश्न किया। उत्तर में अर्जुन ने बताया कि वह केवल गिद्ध के मस्तक मात्र को ही देख रहे हैं, उसके सम्पूर्ण शरीर अथवा वृक्ष आदि को नहीं। उत्तर से प्रसन्न होकर जब द्रोणाचार्य ने उन्हें बाण चलाने की आज्ञा दी तब अर्जुन ने उस गिद्ध के मस्तक को अपने बाण से काट गिराया (१.१३३,१-१०)।" "तदन्तर द्रोणाचार्य अपने शिष्यों के साथ गंगास्नान के लिये गये। स्नान करते समय एक ग्राह ने द्रोणाचार्य का पैर पकड़ लिया जिससे मुक्त होने में अपने को असमर्थ देख उन्होंने सभी शिष्यों से ग्राह को मारकर अपने को बचाने के लिये कहा। द्रोणाचार्य का आदेश सुनते ही अर्जुन ने अमोघ बाणों से उस ग्राह का वध कर दिया जिससे आचार्य मुक्त हो गये। उस समय अन्य राजकुमार किंकर्त्तव्यविमूढ़ होकर अपने स्थानों पर ही खड़े रह गये थे। तब प्रसन्न होकर द्रोणाचार्य ने अर्जुन को इस निषेध के साथ ब्रह्मशिरस् नामक अस्त्र दिया कि वे इसका किसी अल्प तेज वाले पुरुष पर प्रयोग न करेंगे अन्यथा वह अस्त्र समस्त संसार को भस्म कर देगा। अर्जुन ने द्रोण की आज्ञा मान कर वह अस्त्र ग्रहण किया (१.१३३, ११-२२)।" "भीमसेन, दुर्योधन, तथा अर्जुन जब अस्त्रविद्या का प्रदर्शन करने के लिये उपस्थित हुये तब भीम तथा दुर्योधन के प्रदर्शन के पश्चात् द्रोणाचार्य ने अर्जुन के कौशल-प्रदर्शन की घोषणा की। तत्पश्चात् अर्जुन रङ्गभूमि में उपस्थित हुये और कुन्ती का वक्षस्थल दुग्ध मिश्रित अश्रुओं से भीग गया। उस समय रङ्गभूमि में हर्षोल्लास से कोलाहल की ध्वनि सुनकर धृतराष्ट्र ने विदुर से पूछ कर अर्जुन के रङ्गभूमि में उतरने के समाचार को जाना। अस्त्र-कौशल का प्रदर्शन करते हुये अर्जुन ने सर्वप्रथम आग्नेयास्त्र से अग्नि उत्पन्न करके वारुणास्त्र से बुझाया। फिर, वायव्यास्त्र से आँधी उत्पन्न करके पर्जन्यास्त्र से मेघों का सृजन किया। उन्होंने भौमास्त्र से पृथिवी, और पर्वतास्त्र से पर्वतों को उत्पन्न किया। अन्तर्धानास्त्र से वे स्वयं अदृश्य हो गये। इसी प्रकार अस्त्र-कौशल दिखाते हुये उन्होंने रङ्गभूमि में घूमते हुये लोहे के शूकर के मुख में एक साथ ही पाँच बाण मारे, और एक अन्य स्थान पर लटकती और हिलती हुयी गाय के सींग के छिद्र का इक्कीस बाणों से वेधन किया। इस प्रकार अर्जुन ने अपना अत्यन्त उत्कृष्ट अस्त्र-कौशल दिखाया (१.१३५, ७-२५)।" "अस्त्र-कौशल के प्रदर्शन के समय रङ्गभूमि में सहसा उपस्थित हो कर कर्ण ने अर्जुन से भी अधिक श्रेष्ठ अस्त्र-कौशल का प्रदर्शन करने की घोषणा की और उसे कर भी दिखाया। तदुपरान्त उसने अर्जुन को द्वन्द्व युद्ध के लिये ललकारा। अर्जुन ने उसकी चुनौती स्वीकार कर ली। परन्तु युद्ध आरम्भ होने के पूर्व कृपाचार्य ने जब कर्ण के माता-पिता और वंश का नाम पूछा तब उसका मुख लज्जा से झुक गया क्योंकि वह राजा नहीं था (१.१३६, १-३४)।" "रङ्गशाला में भीम द्वारा कर्ण का तिरस्कार किये जाने के पश्चात् दुर्योधन ने कर्ण का अभिषेक और सम्मान किया। उस समय दर्शकों में कोई अर्जुन की, कोई कर्ण की, और कोई दुर्योधन की प्रशंसा कर रहा था। कर्ण को मित्र के रूप में पाकर दुर्योधन के मन में अर्जुन का भय जाता रहा (१.१३७, २२. २४)।" "अर्जुन ने द्रुपद को बन्दी बनाने में द्रोणाचार्य की सहायता की, क्योंकि द्रोणाचार्य ने अर्जुन से यही गुरु-दक्षिणा माँगी थी (१.१३८, ४१.५०.५७-५९)।" "द्रोणाचार्य ने बताया कि उनके गुरु अग्निवेश ने पूर्वकाल में अगस्त्य से धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त की थी। उन्होंने यह भी बताया कि अपने इसी गुरु से सीखे हुये ब्रह्मशिरस् अस्त्र को उन्होंने अर्जुन को इस आश्वासन पर प्रदान किया कि वे किसी मानव-शत्रु पर इसका प्रयोग नहीं करेंगे। साथ ही द्रोणाचार्य ने अर्जुन से इस बात का भी वचन लिया कि वे युद्धभूमि में उनसे भी युद्ध करने से विमुख नहीं होंगे। इस प्रकार समुद्रपर्यन्त पृथिवी पर यह बात प्रचलित हो गयी कि संसार में अर्जुन के समान दूसरा कोई धनुर्धर नहीं है (१. १३९, ६-१६)।" "अर्जुन के नेतृत्व में पाण्डवों ने उस सौवीर राजा का वध किया जो गन्धर्वों के उपद्रवों के विपरीत भी निरन्तर तीन वर्षों तक बिना किसी विघ्न बाधा के यज्ञों का अनुष्ठान करता रहा। पराक्रमी राजा पाण्डु भी जिसे वश में न कर सके थे उस यवन देश के राजा को भी अर्जुन ने अपने आधीन कर लिया। सौवीर नरेश विपुल भी अर्जुन हाथ संग्राम में मारा गया। युद्ध के लिये सदैव दृढ़ संकल्प रखने वाला सौवीर निवासी सुमित्र भी अर्जुन के बाणों से मारा गया। अर्जुन ने केवल भीमसेन की सहायता से एकमात्र रथ पर आरूढ़ होकर युद्ध में पूर्व दिशा के सम्पूर्ण योद्धाओं तथा दस सहस्र रथियों को जीत लिया। इसी प्रकार एकमात्र रथ से यात्रा करके उन्होंने दक्षिण विजय भी की। उस समय पाण्डवों के अत्यन्त विख्यात बल और पराक्रम की बात सुनकर उनके प्रति राजा धृतराष्ट्र का भाव अत्यन्त दूषित हो गया और इस चिन्ता के कारण उन्हें रात्रि में निद्रा भी नहीं आती थी (१. १३९, २०-२७)।" भीम अपने भाईयों सहित अर्जुन को भी भूमि पर पड़ा हुआ देखकर शोक प्रगट करते हैं (१. १५१, ३०)। अर्जुन ने हिडिम्ब से युद्ध कर रहे भीमसेन को सहायता देने की इच्छा प्रगट की थी और हिडिम्ब का शीघ्र वध करने का निवेदन किया; हिडिम्ब के वध के बाद अर्जुन ने पाण्डवों से वन के निकट स्थित नगर की ओर प्रस्थान करने का प्रस्ताव किया (१. १५४, १३. २१. २८. ३४)। "पृथिवीमखिलां जित्वा सर्वां सागरमेखलाम्। भीमसेनार्जुनबलाद्भोक्ष्यते नात्र संशयः॥", (१. १५६, १३)। "एक ब्राह्मण ने यह वर्णन किया कि किस प्रकार भीष्म ने द्रोणाचार्य को राजकुमारों की शिक्षा के लिये नियुक्त किया था। अर्जुन तथा अन्य राजकुमारों ने द्रोणाचार्य से कोई भी गुरुदक्षिणा देने की प्रतिज्ञा की (१. १६६, १९)।" तब सभी पाण्डव भ्राता द्रुपद के नगर की ओर जाने के लिये उद्यत हुये (१. १६८, १०)। "पाण्डवगण जब पञ्चाल देश की ओर जा रहे थे उस समय उनके आगे-आगे अर्जुन प्रकाश तथा रक्षा करने के लिये जलती हुयी मशाल लेकर चल रहे थे। उस समय गन्धर्वराज चित्ररथ ने गङ्गातट पर उन सब को रोका किन्तु अर्जुन के द्वारा पराजित हुआ। पराजित गन्धर्वराज ने अर्जुन को गन्धर्वों की माया से संयुक्त किया, जिस विद्या को चाक्षुषी कहते हैं। साथ ही गन्धर्वराज ने प्रत्येक पाण्डव को सौ-सौ गान्धर्व अश्व प्रदान किये और उन लोगों से एक ब्राह्मण पुरोहित भी रखने का निवेदन किया। गन्धर्वराज को अर्जुन ने भी प्रतिदान के रूप में आग्नेयास्त्र प्रदान किया (१. १७०, १६. २७. ३७. ३९. ५५)।" यतः चित्ररथ ने अर्जुन को ताप्त्य कहकर सम्बोधित किया था अतः अर्जुन ने उससे तप्त्य-उपाख्यान का वर्णन करने के लिये कहा (१. १७१, १)। गन्धर्वराज ने बताया कि संवरण ने तपती के गर्भ से ही कुरु को उत्पन्न किया था; इसीलिये उस वंश में जन्म लेने के कारण अर्जुन आदि ताप्त्य

कहलाये (१. १७३, ५०)। चित्ररथ ने अर्जुन को वसिष्ठ की महानता का वृत्तान्त सुनाया (१. १७४, १)। चित्ररथ ने अर्जुन से विश्वामित्र और वसिष्ठ के संघर्ष तथा विद्वेष का वर्णन किया (१. १७५, १. ११)। अर्जुन के पूछने पर चित्ररथ ने यह बताया कि कल्मापपाद ने अपनी पत्नी को वसिष्ठ के पास जाने की आज्ञा क्यों दी (१. १८२, १)। चित्ररथ के परामर्श के अनुसार पाण्डवों ने धौम्य को अपना गुरु निश्चित किया और कृष्णा के स्वयंवर में जाने का निश्चय किया (१. १८३, १. ३)। पाण्डवों की पाञ्चाल यात्रा और मार्ग में ब्राह्मणों से स्वयंवर और सौन्दर्य के सम्बन्ध में वार्त्तालाप (१. १८४)। "मार्ग में पाण्डवों ने व्यास का दर्शन और तदुपरान्त द्रुपद की राजधानी में जाकर एक कुम्हार के घर पर निवास किया। तदुपरान्त वहाँ रहते हुये वे ब्राह्मण-वृत्ति का आश्रय लेकर भिक्षा पर अपना निर्वाह करने लगे जिससे कोई उनको पहचान न सका। द्रुपद के मन में सदैव यही इच्छा रहती थी कि वे किरीटिन् (अर्जुन) के साथ ही द्रौपदी का विवाह करें। इसी उद्देश्य से उन्होंने एक ऐसा दृढ़ धनुष बनवाया जिसे अर्जुन के अतिरिक्त अन्य कोई व्यक्ति झुका नहीं सकता था (१. १८५, १-९)।" जब दुर्योधन आदि धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ाने में असफल हो गये, और सफलता प्राप्त कर लेने पर भी जब सूतपुत्र होने के कारण कर्ण को द्रौपदी ने अस्वीकृत कर दिया, तब जिष्णु (अर्जुन) आगे आये (१. १८७)। "उस समय कुछ ब्राह्मण अर्जुन की प्रशंसा और कुछ भर्त्सना कर रहे थे। अर्जुन ने नतमस्तक होकर भगवान शङ्कर को प्रणाम किया और श्रीकृष्ण का मन ही मन चिन्तन करके धनुष को उठा कर उसकी प्रत्यञ्चा चढ़ा दी। तदुपरान्त कृष्णा ने अर्जुन के पास आकर उनका वरण किया। इस प्रकार अर्जुन ने उस स्वयंवर सभा में द्रौपदी को जीत लिया और उसे अपने साथ लेकर रङ्गभूमि से बाहर निकले। उस समय उनकी पत्नी द्रौपदी उनके पीछे-पीछे चल रही थी (१. १८८, १६-२८)।" "जब राजा द्रुपद ने ब्राह्मण रूपी अर्जुन को अपनी कन्या देना चाहा तब वहाँ उपस्थित राजाओं ने द्रुपद का वध करने और कृष्णा को आग में जला देने, किन्तु ब्राह्मण समझकर अर्जुन को मुक्त कर देने का निश्चय किया उस समय अर्जुन और भीमसेन ने उन सबको पराजित कर दिया। कृष्णा पाण्डवों को पहचान गयी थी (१. १८९, १५. २०)।" "ब्राह्म और पौरन्दरास्त्रों में पारङ्गत अर्जुन ने कर्ण को परास्त किया। भीम और अर्जुन कृष्णा को रङ्गभूमि से लेकर अपने निवास स्थान पर आये (१. १९०, २. १०. १४. १५. २०)।" "जब पाण्डवगण द्रौपदी के साथ घर पहुँचे तब उन्होंने माता कुन्ती से कहा, 'माँ हम लोग भिक्षा लाये हैं।' माँ ने अपने पुत्रों को देखे बिना ही उत्तर दिया कि 'तुम सब मिलकर उसका उपभोग करो।' पहले तो युधिष्ठिर ने अर्जुन को ही द्रौपदी के साथ विवाह करने के लिये कहा परन्तु बाद में इस बात के लिये सहमत हो गये कि वह समस्त पाण्डवों की पत्नी बने (१. १९१, १-११)।" "धृष्टद्युम्न ने गुप्त रूप से भीमसेन और अर्जुन का पीछा किया और उनके वार्त्तालाप से जान गये कि वे कौन हैं (१. १९२)।" "धृष्टद्युम्न ने लौटकर राजा द्रुपद से समस्त घटना का वर्णन किया। उन्होंने बताया कि विशाल और लाल नेत्रों वाले जिस ब्राह्मण व्यक्ति ने धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ाकर लक्ष्य-वेधन किया था वह अर्जुन था। उसने यह भी बताया कि ब्राह्मणों के वेश में वे सभी पाण्डव थे जो लाक्षागृह से बच निकले थे (१. १९३, १९)।" "द्रुपद ने युधिष्ठिर को पुनः उनके राजसिंहासन पर प्रतिष्ठित करने की प्रतिज्ञा की, किन्तु पाँचों भाईयों के साथ कृष्णा का विवाह करने के प्रस्ताव पर वे (द्रुपद) कुछ हिचकिचाहट में पड़ गये। इसी बीच महर्षि व्यास वहाँ पधारे (१. १९५, ९. १८. २०)।" पाण्डवों द्वारा कृष्णा को प्राप्त कर लेने का समाचार सुनकर विदुर और धृतराष्ट्र अत्यन्त प्रसन्न हुये; परन्तु दुर्योधन और कर्ण ने धृतराष्ट्र को पाण्डवों के विरुद्ध उकसाने का प्रयास किया (१. २००, २)। दुर्योधन ने पाण्डवों पर विजय प्राप्त करने के अनेक उपायों की चर्चा की (१. २०१, १३)। धृतराष्ट्र ने पाण्डवों से कुन्ती और कृष्णा सहित खाण्डवप्रस्थ में रहने का प्रस्ताव किया और साथ ही उन्हें आधा राज्य भी देने का वचन दिया (१. २०७, ३. २४)। पाण्डवगण इन्द्रप्रस्थ में सुखपूर्वक रहने लगे। वहाँ एक दिन अर्जुन ने कृष्णा से सम्बन्धित एक नियम को भङ्ग कर देने के कारण बारह वर्ष के वनवास के लिये प्रस्थान किया (१. २१३, ३४)। "जब अर्जुन गङ्गाद्वार में निवास करते हुये एक दिन स्नान के पश्चात जल से निकलना चाहते थे तब नागराज की पुत्री उलूपी उन्हें जल के भीतर खींच ले गई। वहाँ अर्जुन ने उससे एक पुत्र उत्पन्न किया। उलूपी ने अर्जुन को यह वर दिया कि वह जल में भी सर्वत्र अजेय रहेंगे (१. २१४, २१. २९. ३६)।" "अर्जुन ने अनेक तीर्थों का भ्रमण, और मणिपुर में चित्राङ्गदा से विवाह करके तीन वर्ष तक निवास किया। उन्होंने चित्राङ्गदा के गर्भ से एक पुत्र भी उत्पन्न किया (१. २१५)।" अर्जुन ने दक्षिणवर्त्ती समुद्रतट पर स्थित तीर्थों का भी भ्रमण किया जहाँ उन्होंने वर्गा आदि अप्सराओं का उद्धार किया (१. २१६, १२)। अर्जुन का प्रभास तीर्थ में श्रीकृष्ण से मिलन और श्रीकृष्ण के साथ ही रैवत पर्वत के उत्सव में जाना, सुभद्रा पर आसक्त होना, और युधिष्ठिर की अनुमति से उसके हरण का निश्चय करना (१. २१८, ६. १०; २१९, १५. १८. २३. २४)। "अर्जुन द्वारा कृष्ण की बहन सुभद्रा का हरण और बलराम जी का अर्जुन के प्रति क्रोधोद्गार (१. २२०)। श्री कृष्ण ने अर्जुन और वृष्णिवंशी यादवों के बीच सन्धि कराई। अर्जुन ने सुभद्रा के साथ विवाह कर द्वारका में ही एक वर्ष व्यतीत किया। तदुपरान्त कृष्ण अर्जुन के साथ कुछ समय तक इन्द्रप्रस्थ में रहे। सुभद्रा ने अभिमन्यु को जन्म दिया। यह बालक कृष्ण को अत्यन्त प्रिय था और इसने अपने पिता अर्जुन से धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त की। कृष्णा ने भी अर्जुन से पाँच पुत्र प्राप्त किये जिन्होंने वेदाध्ययन के पश्चात अर्जुन से समस्त दिव्यास्त्रों और मानवास्त्रों का ज्ञान प्राप्त किया (१. २२१, ७. २६. ७२. ७९. ८८)।" "कृष्ण और अर्जुन ने खाण्डव वन को भस्म करने में अग्नि की सहायता की; अग्नि ने वरुण से अर्जुन को गाण्डीव धनुष, दो अक्षय तरकस और दिव्य रथ प्रदान कराये; अग्नि ने कृष्ण को भी सुदर्शन चक्र दिया; वरुण ने कृष्ण को कौमोदकी नामक गदा प्रदान की; इन्द्र ने खाण्डव वन को भस्म होने से बचाने के लिये अत्यन्त वर्षा की। एक आकाशवाणी ने यह घोषणा की कि कृष्ण और अर्जुन प्राचीन नर और नारायण ही हैं, अतः अविजेय हैं। इन्द्र वहाँ उपस्थित हुये और उन्होंने अर्जुन से महादेव को प्रसन्न करने के लिये कहा जिसके बाद उन्होंने अपने आग्नेय और वायव्यास्त्रों को अर्जुन को प्रदान करने का वचन दिया; उन्होंने कृष्ण और अर्जुन की मित्रता को अक्षय होने का भी वरदान दिया। वरुण ने अर्जुन को जो दिव्य रथ प्रदान किया था वह अनेक प्रकार के दिव्यास्त्रों से सुसज्जित तथा देवों और असुरों दोनों से ही अविजेय था। उसकी ध्वजा पर एक विशाल कपि आसीन था; उस रथ में रजत के समान श्वेत और गन्धर्व देशीय अश्व सन्नद्ध थे, जो स्वर्णालङ्कारों से सुसज्जित और वायु अथवा मन के समान वेगवान् थे; इस रथ का वैभव अत्यन्त अतुलनीय, और उसके चक्रों से भयङ्कर ध्वनि निकलती थी; इसका अत्यन्त तपस्या के पश्चात् प्रजापति भौमन् (विश्वकर्मन्) ने निर्माण किया था; कोई भी इसके वैभव पर दृष्टिपात नहीं कर सकता था; यह वही रथ था जिस पर बैठकर सोम ने दानवों को परास्त किया था; इस रथ का ध्वज-दण्ड अत्यन्त सुन्दर और सुवर्णमय था जिसके ऊपर सिंह और व्याघ्र के समान अत्यन्त भयंकर आकृतिवाला एक वानर इस प्रकार बैठा जान पड़ता था मानो वह शत्रुओं को भस्म कर डालना चाहता हो; उस ध्वज में और भी नाना प्रकार के भयङ्कर प्राणी रहते थे जिनके गर्जन को सुनकर शत्रुओं का साहस छूट जाता था (यह सम्पूर्ण कथा १. २२१ से २३४ अध्यायों में निहित है जिनमें अर्जुन का नाम इन स्थलों पर मिलता है : १. २२४, ९. १५; २२५, २९. ३१; २२७, ६. १३. १५. ४३. ४६. ५०; २२८, १५. १८. २४. २५. २६. २८. ३३. ३८. ४३; २३४, ६. १६. १८)।" "मयासुर ने अर्जुन से कहा,

'आपने खाण्डव वन में मेरी रक्षा की है, अतः बताइये मैं अब आपकी क्या सेवा करूँ।' अर्जुन ने मयासुर से अपने लिये नहीं वरन् श्रीकृष्ण के लिये ही कुछ करने का आग्रह किया किन्तु श्रीकृष्ण ने भी अपने लिये कुछ न कराकर मयासुर से युधिष्ठिर के लिये एक अत्यन्त उत्कृष्ट सभाभवन का निर्माण करने के लिये कहा (२. १, ३-११)।" "अभीषूंत्संप्रजग्राह स्वयं कुरुपतिस्तदा उपारुत्यार्जुनश्चापि चामरव्यजनं सितम्॥", (२. २, १७) "मय ने अर्जुन को हिरण्यशृङ्ग पर स्थित विभिन्न प्रकार के रत्न भण्डारों आदि का विवरण बताया और उन्हें देवदत्त नामक उत्तम शङ्ख प्रदान किया; मय ने चौदह महीने में सभाभवन का निर्माण कर दिया (२. ३, १. २१)।" युधिष्ठिर के उस सभाभवन में युधिष्ठिर की उपासना करनेवालों में वे राजकुमार भी थे जिन्होंने अर्जुन के पास रहकर कृष्ण मृग-चर्म धारण किये धनुर्वेद की शिक्षा ली थी (२. ४, ३३)। इन्द्रप्रस्थ में आकर श्रीकृष्ण अर्जुन से मिलकर अत्यन्त प्रसन्न हुये (२. १३, ४५)। जरासन्ध का वध करने के सम्बन्ध में परामर्श (२. १५, ९)। युधिष्ठिर ने बताया कि भीम और अर्जुन दोनों उनके नेत्र हैं (२. १६, २)। श्रीकृष्ण ने बताया कि भरतवंश में उत्पन्न पुरुष और कुन्ती जैसी माता के पुत्र की जिस प्रकार की बुद्धि होनी चाहिये, अर्जुन ने उसी प्रकार की बुद्धि का परिचय दिया है (२. १७, १)। भीमसेन और कृष्ण को लेकर अर्जुन जरासन्ध का वध करने के लिये चले (२. २०, ७. ८. २०)। 'अङ्गवङ्गादयश्चैव राजानः सुमहाबलाः गौतमक्षयमभ्येत्य रमन्ते स्म पुरार्जुनः॥', (२. २१, ७)। भीम और अर्जुन दोनों ही एक रथ पर बैठे हुये थे जिसके सारथि श्रीकृष्ण थे (२. २४, १६)। जरासन्ध के बन्दीगृह से छूटे हुये राजाओं ने श्रीकृष्ण की स्तुति करते हुये उनसे कहा कि भीमसेन और अर्जुन का भी बल उनके साथ था (२. २४, ३२)। जरासन्ध-वध के पश्चात् अपने नगर में पुनः लौटने पर युधिष्ठिर ने भीमसेन और अर्जुन का प्रसन्नतापूर्वक आलिङ्गन किया (२. २४, ४९)। "श्रेष्ठ धनुष, दो विशाल अक्षय तूणीर, दिव्य रथ, ध्वज, और अद्भुत सभाभवन प्राप्त कर चुकने के पश्चात् अर्जुन ने युधिष्ठिर से उत्तर दिशा को विजित करने की आज्ञा माँगी। युधिष्ठिर की आज्ञा पाकर अर्जुन ने अग्नि से प्राप्त अपने दिव्य रथ पर बैठकर उत्तर दिशा की यात्रा की और उसे विजित किया। उनके अन्य भ्राताओं ने अन्य दिशाओं को विजित किया जब कि युधिष्ठिर इन्द्रप्रस्थ में ही रहे (२. २५)।" "वैशम्पायन जी ने अर्जुन की दिग्विजय का वर्णन करते हुये बताया कि उन्होंने सर्वप्रथम कुलिन्द देश के भूपालों को अपने वश में किया। तदुपरान्त कालकूट और आनर्त्त देश के राजाओं को विजित कर अपनी सेना सहित सुमण्डल को भी विजित किया। सुमण्डल को मित्र बनाकर और उसके साथ जाकर उन्होंने शाकलद्वीप तथा राजा प्रतिविन्ध्य पर विजय प्राप्त की। तदुपरान्त उन्होंने प्राग्ज्योतिषपुर के प्रधान राजा भगदत्त पर आक्रमण किया जिनके साथ उनका आठ दिन तक भयंकर युद्ध हुआ। राजा भगदत्त, किरात, चीन, तथा समुद्र के टापुओं में रहने वाले अनेक योद्धाओं से घिरे हुये थे। अन्त में भगदत्त ने भी अर्जुन की आधीनता स्वीकार कर ली और अर्जुन के आदेश के अनुसार युधिष्ठिर को कर देने के लिये सहमत हो गये (२. २६)।" "भगदत्त को जीतकर अर्जुन ने उत्तर दिशा की ओर प्रस्थान किया और उसके अनेक राजाओं पर विजय प्राप्त की। तत्पश्चात् उन्होंने उलूकवासी राजा बृहन्त पर आक्रमण किया। भयंकर युद्ध के पश्चात राजा बृहन्त ने अर्जुन की आधीनता स्वीकार कर ली। तदुपरान्त बृहन्त को साथ लेकर अर्जुन ने सेनाबिन्दु पर आक्रमण करके उन्हें विजित किया। युधिष्ठिर की आज्ञा से अर्जुन सेनाबिन्दु की राजधानी देवप्रस्थ में ही रह गये, जब कि सेना ने मोदापुर, वामदेव, सुदामा, सुसंकुल, उत्तरी उलूक देशों को विजित किया। इस प्रकार पर्वतीय महारथियों को परास्त करने के पश्चात् अर्जुन ने पौरव राजा विश्वगश्व को विजित किया और उनके बाद उत्सवसंकेत नाम से विख्यात सात दस्यु जातियों को अपने अधीन किया। इसके बाद लोहित, त्रिगर्त, दार्व, कोकनद, रोचमान, चित्रायुध, चोल, बाह्लीक, काम्बोज, दरद, ऋषिक, आदि राजाओं पर विजय प्राप्त की। इसके पश्चात् हिमवान् और निष्कुट प्रदेश के अधिपतियों को विजित करते हुए अर्जुन श्वेतपर्वत पर आये (२. २७)।" "श्वेतपर्वत को पार करने के पश्चात अर्जुन ने किंपुरुषों के राजा द्रुमपुत्र को विजित और समझा-बुझाकर गुह्यकों के हाटक देश को अपने आधीन किया। तदुपरान्त उन्होंने समस्त ऋषि-कुल्याओं का दर्शन किया और मानसरोवर पर पहुँच कर गन्धर्वों द्वारा सुरक्षित प्रदेश पर भी अधिकार कर लिया। गन्धर्व नगर से उन्होंने कर के रूप में तित्तिर, कल्माष और मण्डूक नामक अनेक उत्तम अश्व प्राप्त किये। तदुपरान्त आगे बढ़कर अर्जुन ने हरिवर्ष में पहुँचकर उसे विजित करने का विचार किया। उस समय विशालकाय महाबली द्वारपालों ने आकर अर्जुन से इस प्रकार कहा : 'पार्थ! तुम इस नगर को किसी भी प्रकार विजित नहीं कर सकते। यहाँ तक आ गये यही तुम्हारे लिये बहुत बड़ी विजय है, अतः तुम यहाँ से लौट जाओ। इस नगर के भीतर प्रवेश करके भी तुम किसी वस्तुको देख नहीं सकोगे, क्योंकि यहाँ मानव-शरीर से कुछ भी नहीं देखा जा सकता। यदि यहाँ तुम युद्ध के अतिरिक्त और कोई मनोरथ सिद्ध करना चाहते हो तो बताओ जिससे हम स्वयं ही उसे पूरा कर दें।' उनके वचन को सुनकर अर्जुन ने उनसे महाराज युधिष्ठिर के लिये कर के रूप में कुछ धन माँगा। उन द्वारपालों ने अर्जुन को अनेक दिव्य वस्त्र, आभूषण, आदि दिये। इस प्रकार अनेक राजाओं को विजित करने के पश्चात् अर्जुन इन्द्रप्रस्थ लौटे और उन्होंने जो कुछ भी विजित किया था उसे युधिष्ठिर को समर्पित कर दिया (२. २८)।" "युधिष्ठिर के शासन के अन्तर्गत समस्त प्रजाजन अत्यन्त प्रसन्न थे और राजकोष में भी प्रचुर धन वर्त्तमान था। ऐसी स्थिति में युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ करने का निश्चय किया। यज्ञ के लिये आवश्यक सामग्रियों को एकत्रित करने के लिये उन्होंने अनेक लोगों को नियुक्त करते हुये इन्द्रसेन, विशोक, और अर्जुन के सारथि पुरु को अन्नादि के संग्रह के लिये भेजा (२. ३३, १७. ३०)।" कृष्ण और शिशुपाल के युद्ध के समय शिशुपाल ने कहा कि श्रीकृष्ण ने जरासन्ध-वध के लिये भीमसेन और अर्जुन को साथ लेकर अत्यन्त हेय कर्म किये थे (२. ४२, २)। अर्जुन ने यज्ञसेन (द्रुपद) का अनुसरण किया (२. ४१, ४७)। "राजसूय के समय अनेक अपशकुन प्रगट हुये जिनकी व्याख्या करते हुये व्यास ने बताया कि उस दिन से तेरहवें वर्ष दुर्योधन के अपराध तथा भीम और अर्जुन के पराक्रम द्वारा क्षत्रियों का विनाश हो जायगा। इसे सुनकर जब युधिष्ठिर ने अपने जीवन का अन्त कर देने का निश्चय किया तब अर्जुन ने उन्हें इससे विरत किया (२. ४६, १२. २३)।" मयनिर्मित सभा भवन में भ्रम के कारण दुर्योधन की त्रुटियों पर भीमसेन, अर्जुन, और नकुल आदि द्वारा उसका उपहास करना (२. ४७, ९)। दुर्योधन ने धृतराष्ट्र को बताया कि उत्तर-समुद्र के समीप, जहाँ पक्षियों के अतिरिक्त मनुष्य नहीं जा सकते, वहाँ भी जाकर अर्जुन अपार धन कर के रूप में वसूल कर लाये (२. ४९, ३०)। दुर्योधन ने कहा कि अर्जुन श्रीकृष्ण से जो कहेंगे वह वे निःसन्देह पूर्ण करेंगे। श्रीकृष्ण अर्जुन के लिये स्वर्ग को भी त्याग सकते हैं (२. ५२, ३२)। "जुये में युधिष्ठिर अपने भ्राताओं, और द्रौपदी तथा स्वयं को भी दाँव पर हार गये। उस समय जब भीमसेन ने अपनी दोनों बाहें जला डालने का निश्चय किया तब अर्जुन ने उन्हें समझा कर शान्त किया (२. ६८, ७)।" "दुर्योधन ने द्रौपदी से कहा कि उसे दाँव पर रखने के अधिकार के प्रश्न का उत्तर उसके ही पति भीम, अर्जुन, आदि पर छोड़ दिया जाता है। भीम ने बताया कि बड़े भ्राता के गौरव की रक्षा, और अर्जुन के मना करने के कारण ही वे दुर्योधन का वध नहीं कर रहे हैं (२. ७०, ३. १६)।" "कर्ण ने कहा कि नकुल हार गये, भीमसेन, युधिष्ठिर, सहदेव, तथा अर्जुन भी पराजित होकर

दास बन गये। दुर्योधन ने कहा कि यदि भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव ऐसा कह दें कि वे युधिष्ठिर के अधीन नहीं तब वह द्रौपदी को मुक्त कर देगा। अर्जुन ने कहा कि युधिष्ठिर पहले तो उन्हें दाँव पर लगाने के अधिकारी थे किन्तु अपने शरीर को हार जाने के पश्चात् वे किसके स्वामी रहे, इस बात पर कौरव-गण विचार करें। उस समय भयंकर अपशकुन हुये। धृतराष्ट्र ने द्रौपदी से वर माँगने के लिये कहा और उसने (द्रौपदी ने) युधिष्ठिर तथा उनके भ्राताओं की मुक्ति का ही वरदान माँगा (२. ७१, ४. ९, २०. २१)।" भीम ने अपने समस्त शत्रुओं का तत्काल वध करने का निश्चय किया, किन्तु युधिष्ठिर और अर्जुन ने उन्हें ऐसा करने से रोका (२. ७२, ८)। धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर, उनके भ्राताओं और द्रौपदी को उनके रथों पर इन्द्रप्रस्थ भेजा और बताया कि अर्जुन में धैर्य है (२. ७३, १५)। जूये में हारने के पश्चात् जब पाण्डवों ने तेरह वर्ष के वनवास और एक वर्ष के अज्ञातवास की दीक्षा ली तब उन्होंने कहा कि अर्जुन कर्ण का वध करेंगे (२. ७७, ३०. ३२. ३३)। "वनगमन के समय अर्जुन राजा के पीछे-पीछे बालू बिखेरते हुये चल रहे थे जिससे वे शत्रुओं पर बाणवर्षा की अभिलाषा व्यक्त कर रहे थे। उस समय भयंकर अपशकुन हुये और नारद ने बताया कि उस दिन से चौदहवें वर्ष भीम और अर्जुन कौरवों का विनाश करेंगे (२. ८०, १५. ३४. ४६)।" "विदुर ने धृतराष्ट्र को बताया कि क्रोध में भरे हुये भीम और अर्जुन अपने शत्रुओं की सेना में किसी को जीवित नहीं छोड़ेंगे (३. ४, १०)।" विदुर को निष्कासित कर देने के पश्चात राजा धृतराष्ट्र ने संजय को पाण्डवों के पास विदुर को लौटा लाने के लिये भेजा। उस समय पाण्डव-आश्रम पर भीम और अर्जुन ने संजय का स्वागत किया (३. ६. १४)। "युधिष्ठिर ने किर्मीर को बताया कि वे भीम और अर्जुन इत्यादि भ्राताओं के साथ वनवास करने के उद्देश्य से उसके (किर्मीर के) निवासस्थान, काम्यकवन में आये हैं। किर्मीर के आक्रमण करने पर अर्जुन ने गाण्डीव धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ा दी परन्तु भीम ने अर्जुन को रोक कर स्वयं उस राक्षस पर आक्रमण किया (३. ११, २६. ४०)" "कुन्तीपुत्रों के अपमान को सुनकर श्रीकृष्ण जब अत्यन्त कुपित हुये तब अर्जुन ने उन्हें शान्त करने के लिये उनकी स्तुति की। श्रीकृष्ण की स्तुति करने के पश्चात् श्रीकृष्ण के आत्मस्वरूप अर्जुन चुप हो गये। तब भगवान् जनार्दन ने कहा, 'पार्थ तुम मेरे ही हो और मैं तुम्हारा ही हूँ। जो मेरे हैं वह तुम्हारे भी हैं। जो तुमसे द्वेष रखता है वह मुझसे भी द्वेष रखता है। जो तुम्हारे अनुकूल है वह मेरे भी अनुकूल है।' तदुपरान्त द्रौपदी ने श्रीकृष्ण के पास जाकर कहा कि 'जब कौरवसभा में मेरा अपमान किया गया तब गाण्डीवधारी अर्जुन तथा भीम भी मेरी रक्षा न कर सके।' द्रौपदी ने और विविध प्रकार से विलाप करते हुये श्रीकृष्ण से अपने अपमान का बदला लेने के लिये कहा। तब श्रीकृष्ण ने द्रौपदी को सान्त्वना देते हुये बताया कि एक दिन अर्जुन के बाणों से कर्ण आदि का वध होगा। श्रीकृष्ण के मुख से ऐसी बातें सुनकर द्रौपदी ने अर्जुन की ओर देखा (३. १२, ८. ११. ४४. ४५. ७७. १३२)।" कृष्ण ने अर्जुन को हृदय से लगाकर अन्य पाण्डवों से भी विदा ली और द्वारका के लिये प्रस्थान किया (३. २२, ४६)। "श्रीकृष्ण के चले जाने पर युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, आदि पाण्डवों ने द्रौपदी तथा अपने पुरोहित धौम्य के साथ रथ पर बैठकर द्वैतवन की यात्रा प्रारंभ की। उस समय अर्जुन ने प्रजाजनों को सम्बोधित करते हुये कहा कि वनवास की अवधि समाप्त होने पर राजा युधिष्ठिर अपने शत्रुओं का यश अवश्य छीन लेंगे। उन्होंने अलग-अलग श्रेष्ठ ब्राह्मणों, तपस्वियों तथा धर्मज्ञों से इस मनोरथ की सिद्धि के लिये प्रार्थना करने का भी निवेदन किया। अर्जुन के ऐसा कहने पर ब्राह्मणों तथा अन्य वर्णों के लोगों ने एक स्वर से उनकी बात का अभिनन्दन किया (३. २३, १. १५)। वनवास की अवस्था में कष्ट सहते हुये पाण्डवों को देखकर युधिष्ठिर को सम्बोधित करते हुये द्रौपदी ने अर्जुन की सहस्रभुज कार्त्तवीर्य अर्जुन के साथ तुलना की (३. २७, २४. २७)। द्रौपदी ने युधिष्ठिर से कहा, 'मुझे विश्वास है कि आप मेरे सहित भीमसेन, अर्जुन, और नकुल, सहदेव को भी त्याग देंगे किन्तु धर्म का परित्याग नहीं करेंगे' (३. ३०, ७)। युद्ध में अर्जुन के समान धनुर्धर न तो कोई है और न कोई होगा (३. ३३, ६२)। "व्यास ने युधिष्ठिर से कहा कि अर्जुन को दिव्यास्त्रों की प्राप्ति के लिये इन्द्र, रुद्र, वरुण, कुबेर तथा धर्मराज के पास जाना चाहिये। उन्होंने यह भी बताया कि नारायण जिनके सखा हैं वे पुरातन महर्षि नर ही अर्जुन हैं (३. ३६, ३१-३३)।" "युधिष्ठिर ने व्यास जी के सन्देश का स्मरण करते हुये अर्जुन से एकान्त में वार्तालाप किया और किञ्चित मुस्कराते हुये अर्जुन के शरीर को हाथ से स्पर्श किया। एकान्त में युधिष्ठिर ने अर्जुन को प्रतिस्मृति-विद्या सिखाई और दिव्यास्त्रों की प्राप्ति के लिये उन्हें इन्द्र के पास भेजा। इंद्रकील पर्वत पर पहुँचने पर अर्जुन को वृक्ष के मूलभाग में बैठे हुये एक वृद्ध तपस्वी का दर्शन हुआ। उस तपस्वी ने अर्जुन से धनुष का परित्याग करने के लिये कहा परन्तु अर्जुन ने धनुष न त्यागने का दृढ़ निश्चय कर रखा था (३. ३७, २. ४२-४८)।" इन्द्र के पास जाने के समय मार्ग में अर्जुन ने चार मास तक तपस्या की थी (३. ३८, ५. १२. १८, २१, २२)। अर्जुन का किरातवेशी शिव के साथ युद्ध, शिव का अर्जुन पर प्रसन्न होना और शिव का अर्जुन को 'चक्षुस्' प्रदान करना (३. ३९, ८. २६. ३२. ३४. ५१)। अर्जुन द्वारा भगवान् शंकर की स्तुति (३. ३९, ७४-८२)। "शिव ने अर्जुन से कहा : 'तुम पूर्व शरीर में नर नामक सुप्रसिद्ध ऋषि थे और नारायण तुम्हारे सखा हैं। तुमने बदरी तीर्थ में सहस्त्रों वर्ष तक उग्र तपस्या की है। तुमने और श्रीकृष्ण ने इन्द्र के अभिषेक के समय जिस धनुष से दानवों का वध किया था उसी गाण्डीव धनुष को मैंने अपनी माया से अपने वश में कर लिया था।' शिव द्वारा वर माँगने की आज्ञा प्रदान करने पर अर्जुन ने उनसे ब्रह्मशिरस् नामक पाशुपत अस्त्र माँगा। स्नानादि से पवित्र होने के पश्चात अर्जुन को भगवान शङ्कर ने पाशुपतास्त्र का उपदेश दिया और साथ ही वचन भी लिया कि अर्जुन इस अस्त्र का किसी मानव-शत्रु के विरुद्ध प्रयोग नहीं करेंगे, क्योंकि ऐसी दशा में यह समस्त ब्रह्माण्ड को भस्म कर देगा। अर्जुन के पाशुपतास्त्र ग्रहण करते ही, पर्वत, वन, वृक्ष, समुद्र, वनस्थली, ग्राम, नगर तथा आकारों सहित समस्त पृथिवी प्रकम्पित हो उठी। देवों और दानवों ने भी अर्जुन के पार्श्वभाग में खड़े उस मूर्तिमान अस्त्र को देखा। उस समय भगवान् शङ्कर के स्पर्श से अमित तेजस्वी अर्जुन के शरीर का समस्त अशुभ नष्ट हो गया। उस समय शङ्कर ने अर्जुन को यह आज्ञा दी कि 'तुम स्वर्ग को जाओ'। तदुपरान्त अर्जुन के देखते-देखते शङ्कर अपनी पत्नी उमा देवी के साथ आकाश मार्ग से चले गये (३. ४०, ८. २१. २६)।" "तदुपरान्त हिमवत् पर्वत पर लोकपाल आदि अर्जुन के पास आये। उन लोकपालों ने अर्जुन को ऐसी दृष्टि प्रदान की जिससे वे उन्हें देख सकें। उस समय यम ने अर्जुन को अपना दण्ड प्रदान किया और वरुण ने अपने पाश दिये। कुबेर ने यह बताते हुये कि पूर्वकल्पों में अर्जुन ने उनके साथ सदैव तपस्या की थी, अर्जुन को अपना अन्तर्धानास्त्र प्रदान किया (३. ४१, २. ८. १२. १७. ४१. ४७. ४९)।" हिमालय से विदा लेकर अर्जुन ने मातलि के साथ स्वर्गलोक के लिये प्रस्थान किया (३. ४२, १०. १५. २०. २९)। अर्जुन का इन्द्र के साथ अमरावती में निवास (३. ४३, २३)। अर्जुन पाँच वर्ष तक वहाँ रहे (३. ४४)। अङ्गों सहित चारों वेदों, उपनिषदों, और पञ्चमवेद के रूप में इतिहास और पुराणों में पारङ्गत अर्जुन पर उर्वशी का आसक्त होना (३. ४५, १३)। "कामपीडित होकर उर्वशी जब रात्रि के समय अर्जुन के अत्यन्त मनोहर भवन में उपस्थित हुई तब अर्जुन सशङ्क हृदय से उसके सम्मुख आये। अर्जुन ने उर्वशी से बताया कि वे उसको अपनी माता के समान मानते हैं। इस पर क्रुद्ध होकर उर्वशी ने अर्जुन को यह शाप दिया कि पुरुषत्व से रहित होकर उन्हें एक नर्तकी के रूप

में स्त्रियों के बीच अपना समय व्यतीत करना होगा। इन्द्र ने अर्जुन से कहा कि वनवास के तेरहवें वर्ष में उर्वशी का शाप सत्य होगा जिसके बाद वे अपना पुरुषत्व पुनः प्राप्त कर लेंगे (३. ४६, १७. २०. ३६. ३७. ५०-५२) ।" "एक दिन लोमश मुनि स्वर्गलोक में इन्द्र के पास आये। वहाँ अर्जुन को देखकर लोमश मुनि को यह आश्चर्य हुआ कि क्षत्रिय होते हुये अर्जुन ने किस प्रकार इन्द्र का आसन प्राप्त कर लिया। तब इन्द्र ने लोमश मुनि को यह बताया कि अर्जुन वास्तव में कौन हैं। इन्द्र ने कहा 'हे ब्रह्मर्षि ! नर-नारायण के नाम से प्रसिद्ध जो पुरातन मुनीश्वर हैं वे ही अर्जुन और श्रीकृष्ण के रूप में देवताओं का कार्य सिद्ध करने के लिये, भूतल पर अवतीर्ण हुये हैं। देवता अथवा महर्षि भी जिसे देखने में समर्थ नहीं हैं, और जहाँ से सिद्ध-चारण सेवित गङ्गा का प्राकट्य हुआ है वही बदरी नामक विख्यात पुण्य तीर्थ पूर्वकाल में नर और नारायण का निवास स्थान था। ये दोनों नर और नारायण मेरे ही अनुरोध पर पृथिवी का भार उतारने के लिये पृथिवी पर अवतीर्ण हुये हैं।' तदुपरान्त इन्द्र ने लोमश मुनि से काम्यकवन में जाकर युधिष्ठिर से मिलने और अर्जुन का समाचार देने के लिये कहा। साथ ही उन्होंने लोमश से तीर्थयात्रा में युधिष्ठिर की रक्षा करने के लिये भी कहा (३. ४७)।" अर्जुन की सफलताओं का वर्णन सुनकर धृतराष्ट्र ने सञ्जय से चिन्ता व्यक्त की (३. ४८, ६. १३)। किरातवेशी शिव के साथ अर्जुन के युद्ध पर धृतराष्ट्र ने विशेष रूप से चिन्ता व्यक्त की (३. ४९, २१)। काम्यकवन में अर्जुन से वियुक्त एवं उनके लिये उत्कण्ठित होकर निवास करनेवाले पाण्डवों ने पाँच वर्ष व्यतीत किये (३. ५०, १२)। धृतराष्ट्र ने सञ्जय के सम्मुख पुनः अपनी चिन्ता व्यक्त की (३. ५१, ७. २८)। "एक दिन काम्यकवन में निवास करते हुये पाण्डवगण अर्जुन के सम्बन्ध में चिन्ता करते हुये उन्हीं की बातें करने लगे। उस समय भीम ने युधिष्ठिर से कहा 'आपकी आज्ञा से ही भरत वंश का रत्न अर्जुन तपस्या के लिये चला गया। उसी समय महर्षि बृहदश्व वहाँ आ पहुँचे जिन्होंने युधिष्ठिर को राजा नल का वृत्तान्त सुनाते हुये बताया कि अपने भ्राता द्वारा छलपूर्वक जूये में पराजित हो कर राजा नल को युधिष्ठिर से भी अधिक कष्ट और दुःख सहन करना पड़ा था (३. ५२, ६. ४०. ५४)।" अर्जुन के लिये द्रौपदी सहित पाण्डवों की चिन्ता (३. ८०, १२)। इस दशा में उदास पाण्डवों को पुलस्त्य मुनि द्वारा विभिन्न तीर्थों का माहात्म्य बताना (३. ८१ और बाद)। युधिष्ठिर ने धौम्य से कहा कि अर्जुन के बिना अब वे काम्यकवन में और अधिक रहना नहीं चाहते (३. ८६, १३. १९)। इस दशा में धौम्य द्वारा युधिष्ठिर से विभिन्न क्षेत्रों के तीर्थों का वर्णन करना (३. ८७ और बाद)। महर्षि लोमश का आगमन और युधिष्ठिर को अर्जुन के पाशुपत आदि दिव्यास्त्रों की प्राप्ति का वर्णन तथा इन्द्र का सन्देश सुनाना (३. ९१, १८. २२)। लोमश ने बताया कि अर्जुन ने उनसे तीर्थयात्रा में युधिष्ठिर के साथ रहने का आग्रह किया है (३. ९२, ८)। लोमश के साथ अर्जुन के अतिरिक्त पाण्डवों ने समस्त तीर्थों की यात्रा की (३. ९३ और बाद)। नारी तीर्थ पर उन्होंने अर्जुन के पराक्रमों का वृत्तान्त सुना और उनकी प्रशंसा की (३. ११८, ५-७)। कृष्ण ने कहा कि अर्जुन इत्यादि क्षत्रिय धर्म का कभी भी परित्याग नहीं करेंगे (३. १२०, २४)। "युधिष्ठिर ने भीम से इस प्रकार कहा, 'भाई भीमसेन ! तुम द्रौपदी की रक्षा करो, क्योंकि किसी निर्जन प्रदेश में जब कि अर्जुन हमारे समीप नहीं हैं, भय का अवसर उपस्थित होने पर द्रौपदी तुम्हारा ही आश्रय लेती है (३. १३९, १९)।" "युधिष्ठिर का भीमसेन से अर्जुन को ५ वर्ष तक न देखने के कारण मानसिक चिन्ता व्यक्त करना और व्रतधारी ब्राह्मणों के साथ गन्धमादन पर्वत पर जाने का दृढ़ निश्चय करना (३. १४१, २६)।" "भीम ने सोचा, 'अर्जुन स्वर्ग लोक में चले गये हैं और मैं पुष्प लाने के लिये इधर चला आया हूँ, ऐसी दशा में युधिष्ठिर कोई कार्य कैसे करेंगे ?' (३. १४६, ३२)।" जब पाण्डवगण आर्ष्टिषेण के आश्रम पर पहुँचे तब आर्ष्टिषेण ने पाण्डवों को और आगे न बढ़कर वहीं अर्जुन की प्रतीक्षा करने के लिये कहा (३. १५९, ३१)। "अर्जुन ने कभी असत्य नहीं कहा; स्वर्ग में देवों, पितरों और गन्धर्वों, तथा यमुना-तट पर सात महान यज्ञ करने के कारण शक्र के लोक में निवास करने वाले शान्तनु ने भी उनका आदर सत्कार किया (३. १६२)।" "गन्धमादन पर्वत पर श्रेष्ठ व्रत का आश्रय लेकर निवास करते हुये अर्जुन के दर्शन की इच्छा रखने वाले पाण्डवों के मन में अत्यन्त प्रेम और आनन्द का प्रादुर्भाव हुआ। पाँच वर्ष तक इन्द्र लोक में निवास करने तथा आग्नेय, वारुण, सौम्य, वायव्य, वैष्णव, ऐन्द्र, पाशुपत, ब्राह्म, पारमेष्ठ्य, आदि, और प्रजापति, यम, धाता, सविता, त्वष्टा और कुबेर सम्बन्धी अस्त्रों को भी प्राप्त करने के पश्चात अर्जुन ने इन्द्र से विदा ली और गन्धमादन पर्वत पर आये (३. १६४, १. २०)।" "एक दिन पाण्डवों ने मातलि के साथ इन्द्र के रथ पर बैठकर अर्जुन को आकाश से उतरते देखा। अर्जुन ने इन्द्र से प्राप्त अनेक बहुमूल्य रत्न द्रौपदी को भेंट किये। दूसरे दिन प्रातः काल स्वयं इन्द्र भी पाण्डवों के पास आये (३. १६५-१६६)।" "इन्द्र के चले जाने के पश्चात् अर्जुन ने अपनी यात्रा का वर्णन किया। उन्होंने बताया कि किरात के विरुद्ध युद्ध करते हुये उन्होंने व्यर्थ ही वायव्य, स्थूणाकर्ण, जाल, और शलभास्त्र आदि का प्रयोग किया और उनका ब्रह्मास्त्र भी निष्फल हो गया, क्योंकि किरात ने इन सबको आत्मसात कर लिया (३. १६७, ३. ९)।" "अपनी यात्रा का वर्णन करते हुये अर्जुन ने उन अनेक अस्त्रों की गणना कराई, जिनके सञ्चालन की विधि बताने का स्वयं इन्द्र ने वचन दिया था। उन्होंने बताया कि मातलि को इस बात पर आश्चर्य हुआ कि इन्द्र के दिव्य रथ पर बैठकर भी वे अपने स्थान से तनिक भी हिल-डुल नहीं रहे थे, जब कि अश्वों के सर्व प्रथम अग्रसर होने के समय देवराज इन्द्र भी विचलित हुये बिना नहीं रह पाते। अर्जुन ने बताया कि इन अस्त्रों का प्रयोग सीख लेने के पश्चात् इन्द्र ने कहा कि देवगण भी उन्हें विजित नहीं कर सकते। अर्जुन ने पन्द्रह अस्त्र प्राप्त किये और उनके प्रयोग की पाँच विधियाँ सीखीं। इस शिक्षण की दक्षिणा के स्वरूप इन्द्र ने उनसे निवातकवचों का वध करने की प्रतिज्ञा करायी, और इसी उद्देश्य से उन्होंने मातलि द्वारा संचालित अपना रथ भी दिया। अर्जुन ने कहा; 'इस प्रतिज्ञा के बाद इन्द्र ने मेरे मस्तक पर उत्तम किरीट और प्रत्येक अङ्गों में उत्तम आभूषण बाँधे। उन्होंने मुझे यह अभेद्य कवच धारण कराया और मेरे गाण्डीव धनुष में यह अटूट प्रत्यञ्चा जोड़ दी। इस प्रकार युद्ध की सामग्रियों से सम्पन्न होकर मैं निवातकवचों के वध के लिये प्रस्थित हुआ।' अर्जुन ने यह भी बताया कि इन्द्र ने उन्हें देवदत्त नामक शंख प्रदान किया (३. १६८)।" "अर्जुन ने निवातकवचों पर अपनी विजय का वर्णन किया। पूर्वकाल में स्वयंभू ने इन्द्र को बताया था कि एक अन्य शरीर धारण करके वे स्वयं निवातकवचों का वध करेंगे। यतः देवगण निवातकवचों का वध करने में समर्थ नहीं थे अतः इन्द्र ने इस कार्य के लिये अर्जुन को उक्त अस्त्र प्रदान किये। तदुपरान्त अर्जुन और मातलि पुनः देवलोक को गये (३. १६९ और बाद; १७२, १२. २०)।" "देवलोक से लौटते समय अर्जुन ने पौलोमों और कालकेयों के हिरण्यपुर नामक नगर को नष्ट किया। देवगण इन असुरों का वध करने में असमर्थ थे इसीलिये ब्रह्मा ने एक मनुष्य, अर्जुन के द्वारा, इनके वध का विधान किया था। अर्जुन ने रौद्रास्त्र से इनका वध किया। मातलि अर्जुन को इन्द्रलोक में ले गया जहाँ उसने इन्द्र से अर्जुन के पराक्रमों का वर्णन किया। प्रसन्न होकर इन्द्र ने कहा कि देवगण भी युद्ध में अर्जुन का सामना नहीं कर सकेंगे (३. १७३)।" "इन्द्र ने कहा कि युद्ध-क्षेत्र में भीष्म, द्रोण, इत्यादि अर्जुन के सोलहवें भाग के बराबर भी नहीं होंगे। तदुपरान्त स्वर्णमयी माला और देवदत्त नामक शंख देने के पश्चात इन्द्र ने अर्जुन को विदा किया। अर्जुन ने यह वचन दिया कि दूसरे दिन प्रातःकाल ही वे युधिष्ठिर को अपने समस्त दिव्यास्त्र दिखायेंगे (३. १७४, ८)।" "दूसरे दिन प्रातःकाल जब अर्जुन

युधिष्ठिर को अपने दिव्यास्त्र दिखानेवाले ही थे कि पृथिवी प्रकम्पित हो उठी। वायु ने देवों द्वारा भेजे गये दिव्य हार अर्जुन को पहनाये। उस समय नारद ने वहाँ उपस्थित होकर अर्जुन को दिव्यास्त्रों के अनावश्यक प्रदर्शन से रोका, क्योंकि उनसे तीनों लोकों के विनाश की सम्भावना थी। तदुपरान्त देवों ने वहाँ से विदा ली (३. १७५, २. १९)।" पाण्डवों ने अर्जुन के साथ कुबेरकानन में पाँच वर्ष व्यतीत किये (३. १७६, २)। सर्परूपधारी नहुष द्वारा भीम के पकड़ लिये जाने पर युधिष्ठिर ने, अर्जुन को द्रौपदी की रक्षा में नियुक्त करके, धौम्य के साथ भीम की खोज के लिये प्रस्थान किया (३. १७९, ४८)। काम्यकवन में अर्जुन-सखा श्रीकृष्ण सत्यभामा आदि के साथ पधारे (३. १८३, ३)। जब पाण्डव-गण द्वैतवन के सरोवर के निकट निवास कर रहे थे तब धृतराष्ट्र को यह सोच कर अत्यन्त चिन्ता हुई कि दिव्यास्त्रों की प्राप्ति के पश्चात् अर्जुन केवल प्रतिशोध लेने के लिये ही स्वर्गलोक से लौटे हैं (३. २३६, १२. ३०)। अपने पशुओं की देख-रेख करने के बहाने वन में आकर पाण्डवों का उपहास करने के उद्देश्य से निकले दुर्योधन इत्यादि के गन्धर्वराज चित्रसेन के हाथों पराजित होकर वन्दी बना लिये जाने के पश्चात् जब कौरव सैनिकों ने युधिष्ठिर की शरण ली तब युधिष्ठिर ने अर्जुन से दुर्योधन आदि को मुक्त कराने के लिये कहा (३. २४३, ७. २२)। अर्जुन के अत्यन्त आग्रह पर भी जब गन्धर्वों ने दुर्योधन को मुक्त नहीं किया तब पाण्डवों का गन्धर्वों के साथ घोर युद्ध हुआ (३. २४४)। "गन्धर्वों ने पाण्डवों के बल आदि को छिन्न-भिन्न करने का बहुत प्रयास किया किन्तु वह निष्फल रहा। पाण्डवों, और मुख्यतः अर्जुन ने अपने आग्नेयास्त्र के द्वारा सहस्त्रों गन्धर्व-सैनिकों को यमलोक पहुँचा दिया। ऐसी स्थिति में गन्धर्वगण धार्तराष्ट्रों को लेकर आकाश में उड़ गये और वहाँ से अत्यन्त कुपित होकर अर्जुन पर गदाशक्ति और ऋष्टि आदि अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा करने लगे। फिर भी, अर्जुन ने अपने स्थूणाकर्ण, ऐन्द्रजाल, सौर, आग्नेय और सौम्य आदि अस्त्रों से गन्धर्वों का वध करना आरम्भ किया। गन्धर्वों को इस प्रकार त्रस्त हुआ देखकर गन्धर्वराज चित्रसेन ने लोहे की गदा लेकर अर्जुन पर आक्रमण किया किन्तु अर्जुन ने उसकी गदा के सात टुकड़े कर दिये। गदा के टुकड़े हो जाने के पश्चात् गन्धर्वराज चित्रसेन अन्तर्धान विद्या द्वारा अपने को छिपाकर अर्जुन से युद्ध करने लगा, किन्तु अर्जुन ने शब्दवेध की सहायता से चित्रसेन की अन्तर्धान रूपी-माया को भी नष्ट कर दिया। अन्त में चित्रसेन अर्जुन के समक्ष प्रगट हुआ और उसने अर्जुन को यह स्मरण दिलाया कि वह उनका प्रिय सखा चित्रसेन है। चित्रसेन को देख कर अर्जुन और अन्य पाण्डवों ने युद्ध बन्द कर दिया (३. २४५, ६. २३–२७)।" "चित्रसेन ने बताया कि वह दुर्योधन के उद्देश्य से परिचित था और दुर्योधन को बन्दी बनाकर लाने के लिये उससे इन्द्र ने अनुरोध किया था। अर्जुन ने चित्रसेन से दुर्योधन को मुक्त कर देने का पुनः आग्रह किया किन्तु चित्रसेन के निवेदन पर इस बात को युधिष्ठिर के निर्णय पर छोड़ दिया गया। तब युधिष्ठिर ने सभी कौरवों को मुक्त करा दिया (३. २४६)।" अर्जुन के द्वारा मुक्त कराये जाने के कारण अत्यन्त लज्जित होकर दुर्योधन ने भोजन का परित्याग कर दिया (३. २४९, १)। "पाताल के दानवों ने यह कह कर दुर्योधन को सान्त्वना दी कि कृष्ण द्वारा मारे गये नरकासुर की आत्मा कर्ण के शरीर में प्रवेश कर गई है, अतः वह (नरकासुर) उस वैर को याद करके अर्जुन और श्रीकृष्ण से अवश्य युद्ध करेगा। साथ ही, दानवों ने यह भी बताया कि राक्षसों से आविष्टचित्त होकर संशप्तक वीर भी अर्जुन को मारने की इच्छा रखते हैं। कर्ण ने भी अर्जुन के वध करने की प्रतिज्ञा की। इस प्रकार दुर्योधन का चित्त शान्त हुआ (३. २५२, १९. २०. ३५. ४२)।" पाण्डवों ने द्वैतवन से विदा होकर काम्यकवन की ओर प्रवेश किया (३. २५८)। सिन्धुराज जयद्रथ ने द्रौपदी को देखा और उसपर आसक्त हो गया (३. २६४)। कोटिकास्य ने जयद्रथ का द्रौपदी से परिचय कराया (३. २६५)। "द्रौपदी ने बताया कि उसके पतिगण अलग-अलग दिशाओं में आखेट के लिये गये हैं। उसने यह भी बताया कि अर्जुन पश्चिम दिशा की ओर गये हैं (३. २६६)।" द्रौपदी ने जयद्रथ का स्वागत किया और जयद्रथ ने द्रौपदी से विपन्न पाण्डवों का परित्याग करके अपनी पत्नी बनने का अनुरोध किया (३. २६७)। जयद्रथ की बात सुन कर द्रौपदी अत्यन्त कुपित हो उठी और कृष्ण तथा अर्जुन आदि का उल्लेख करती हुई उसे फटकारने लगी, किन्तु अन्ततोगत्वा बाध्य होकर उसे जयद्रथ के रथ में बैठना पड़ा (३. २६८)। आश्रम पर लौटकर पाण्डवों ने द्रौपदी-हरण का वृत्तान्त सुना और तत्काल जयद्रथ का पीछा किया (३. २६९)। "तदनन्तर उपवन में भीम और अर्जुन को देखकर अमर्ष में भरे हुये क्षत्रियों का अत्यन्त घोर कोलाहल सुनायी पड़ने लगा। उस समय द्रौपदी ने जयद्रथ को पाण्डवों के पराक्रम का परिचय दिया (३. २७०, १)।" "अर्जुन ने बारह सौ वीर योद्धाओं को मार डाला। जयद्रथ आदि ने पलायन किया। उस समय युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन आदि पाण्डवों को देखकर जयद्रथ के सैनिकों में भयंकर कोलाहल मच गया था। अन्त में भीम और अर्जुन जयद्रथ की खोज में निकले। अर्जुन ने जयद्रथ के अश्वों का तो वध कर दिया किन्तु, स्वयं जयद्रथ का वध करने से भीम को रोका (३. २७१, २. ४४. ५२)।" "जयद्रथ ने शिव से पाँचों पाण्डवों को युद्ध में जीतने का वर माँगा, किन्तु शिव ने उसे यह वर दिया कि वह केवल एक दिन ही युद्ध में अर्जुन के अतिरिक्त अन्य चार पाण्डवों को आगे बढ़ने से रोक सकता है। वह अर्जुन को इसलिए पराजित नहीं कर सकता कि वे पूर्वकाल के नर हैं जिन्होंने बदरी आश्रम में रहकर भगवान नारायण के साथ तपस्या की थी। साथ ही, शिव ने बताया कि अर्जुन के पास वज्र भी है और कृष्ण उनकी रक्षा करते हैं। पाण्डवगण उस समय भी काम्यकवन में निवास करते रहे (३. २७२, २९)।" "लोमश ने युधिष्ठिर से इन्द्र का यह सन्देश बताया कि : 'तुम्हें जो बड़ा भारी भय लगा रहता है, और जिसकी तुम किसी के सामने चर्चा नहीं करते उसे भी मैं अर्जुन के यहाँ से चले जाने के पश्चात् दूर कर दूँगा। पाण्डवों के वनवास का बारह वर्ष पूर्ण हो जाने पर इन्द्र ने कर्ण से उसका कवच और कुण्डल माँग लिया (३. ३००; ३०१, १७. १८; ३०२, ८. १३)।" कर्ण की सदैव यही अभिलाषा रहती थी कि वह अर्जुन से युद्ध करे और दोनों ही एक दूसरे को ललकारते रहते थे (३. ३००)। जब पाण्डवगण काम्यकवन छोड़कर द्वैतवन लौटे और एक मृग एक ब्राह्मण की अरणी और मन्थ उठा ले गया तब पाण्डवों ने उस मृग का पीछा किया, किन्तु उसे पा न सके और श्रान्त होकर भूख-प्यास से पीड़ित एक वृक्ष के नीचे बैठ गये (३. ३११)। उस समय अर्जुन ने कहा कि कर्ण के कहे हुए कठोर वचन को सुनकर भी हमने सहन कर लिया उसके कारण ही आज हमारी यह अवस्था हो गई है (३. ३१२, ३)। युधिष्ठिर ने अर्जुन आदि अपने भ्राताओं को एक-एक करके पास के सरोवर से जल लाने के लिये भेजा जहाँ वे मृत होकर धरती पर गिरते गये और अन्ततोगत्वा उस सरोवर के रक्षक यक्ष (धर्मराज) के समस्त प्रश्नों का ठीक-ठीक उत्तर देकर ही युधिष्ठिर ने अपने भ्राताओं का उद्धार किया (३. ३१३, १२४. १२७)। "अज्ञातवास आरम्भ होने का समय उपस्थित होने पर युधिष्ठिर ने अर्जुन से कहा कि वे अपनी रुचि के अनुसार कोई उत्तम निवास-स्थान चुन लें। युधिष्ठिर की बात सुनकर अर्जुन ने कुछ स्थानों के नाम बताये और युधिष्ठिर से उनमें से किसी स्थान को चुन लेने के लिये कहा। युधिष्ठिर ने विराट-नगर को चुना। अर्जुन ने उनसे पूछा कि वे विराटनगर में कौन सा कार्य करना चाहेंगे (४. १, ९. १०. २०)।" "युधिष्ठिर ने पूछा कि खाण्डववन में इन्द्र तक को पराजित करनेवाले, नागों और राक्षसों को मारकर अग्निदेव को तृप्त करनेवाले, और अपने अप्रतिम सौन्दर्य से नागराज वासुकि की बहन उलूपी को वशीभूत करके उसके साथ विवाह करनेवाले, बारहवें रुद्र, तेरहवें आदित्य, नवें वसु और दसवें ग्रह के समान श्रेष्ठ वीर अर्जुन विराट नगर में कौन सा कार्य करेंगे। अर्जुन

ने बताया कि वे विराटनगर में नपुंसक के रूप में रहेंगे (४. २, १४. २४ २५. ३०)।" "विराटनगर की ओर जाते समय जब द्रौपदी मार्ग में श्रान्त हो गईं तब अर्जुन ने उन्हें कन्धे पर उठा लिया और नगर के निकट पहुँच कर कन्धे से उतारा। राजधानी के समीप पहुँच कर युधिष्ठिर ने अर्जुन से पूछा कि वे लोग अपने अस्त्र-शस्त्रों को कहाँ छिपा कर रक्खें। अर्जुन ने बताया कि निकट ही श्मशान भूमि के पास एक टीले पर शमी का अत्यन्त सघन वृक्ष है, जिसपर अस्त्रों को छिपाकर रक्खा जा सकता है (४. ५, ८. ९. १३)।" राजा विराट ने अर्जुन के रूप और बल आदि की प्रशंसा करते हुये जब उनके नपुंसक होने पर शंका प्रगट की तब अर्जुन ने कहा कि वे वेणी-रचना, कुण्डल बनाना, तथा शृङ्गार के अन्य कामों को करना, आदि, भली प्रकार जानते हैं (४. ११, ८)। अर्जुन को विराटराज के अन्तःपुर में जो पुराने उतारे हुये बहुमूल्य वस्त्र प्राप्त होते थे, उन्हें बेचकर जो धन प्राप्त होता था उसे वे अन्य पाण्डवों को दे देते थे (४. १३, ८)। द्रौपदी ने कहा कि गाण्डीव धनुष धारण करनेवाले वीर अर्जुन को अपने सिर पर केशों की चोटी धारण किये कन्याओं से घिरा देखकर उसका हृदय विषाद से भर जाता है (४. १९, २०)। द्रौपदी के नृत्यशाला में पहुँचने पर अर्जुन सहित अन्तःपुर की अन्य कन्यायें उस निरपराध सतायी गई कृष्णा को देखने लगीं (४. २४, १८)। चौथे पर्व के १४-२४वें अध्यायों में प्रसङ्गशः विभिन्न नामों से अर्जुन का अनेक बार उल्लेख मिलता है। चौथे पर्व के २५-६९ अध्यायों का, जिनमें अर्जुन का अनेक बार उल्लेख है, सारांश इस प्रकार है : "दुर्योधन इत्यादि ने विराट देश पर आक्रमण और उसकी गायों का अपहरण किया। गोपाध्यक्ष ने विराटपुत्र उत्तर कुमार को दुर्योधन आदि से युद्ध करने के लिये उत्साहित किया। युद्ध के लिये उत्तर जब एक श्रेष्ठ सारथि की खोज करने लगा तब द्रौपदी ने, अर्जुन की सम्मति से, बृहन्नला को सारथि बनाकर राजकुमार उत्तर ने रणभूमि की ओर प्रस्थान किया। उस समय अर्जुन ने भयभीत उत्तर कुमार को आश्वासन दिया। युद्ध में द्रोणाचार्य ने अर्जुन के उत्तम पराक्रम की प्रशंसा की। अर्जुन ने शमी वृक्ष से अपने अस्त्रों को उतारने के लिये उत्तर कुमार को आदेश दिया और उसने तदनुसार पाण्डवों के दिव्य धनुषादि को उतारा। उत्तर कुमार द्वारा पाण्डवों के अस्त्र-शस्त्रों के विषय में प्रश्न करने पर बृहन्नला ने पाण्डवों के आयुधों का, और साथ ही अज्ञातवास कर रहे पाण्डवों का भी परिचय दिया। अस्त्र धारण कर अर्जुन युद्ध के लिये तत्पर हुये। जब अर्जुन ने युद्ध का शंखनाद किया, तब द्रोणाचार्य ने कौरवों से उत्पातसूचक अपशकुनों का वर्णन किया; उस समय दुर्योधन ने भी युद्ध का निश्चय, और कर्ण ने आत्मप्रशंसापूर्ण अहंकारोक्तियों को व्यक्त किया। कृपाचार्य ने कर्ण को फटकारते हुये युद्ध के विषय में अपना विचार बताया; अश्वत्थामा ने भी अपने उद्‌गार प्रगट किये; भीष्म ने सेना में शान्ति और एकता बना रखने की चेष्टा की, तथा द्रोणाचार्य ने दुर्योधन की रक्षा के लिये प्रयत्न किया। पाण्डवों के अज्ञातवास का समय समाप्त हो जाने के सम्बन्ध में भीष्म ने अपनी सम्मति प्रगट की; अर्जुन ने दुर्योधन की सेना को पराजित करके गायों को लौटा लिया; अर्जुन ने कर्ण पर भी आक्रमण किया जिससे पराजित होकर कर्ण भाग गया; कौरव सेना का संहार करते हुये अर्जुन कृपाचार्य से युद्ध करने लगे जिसे देखने के लिये आकाश में देवगण भी उपस्थित हुये; अन्ततोगत्वा कौरवपक्ष के सैनिक कृपाचार्य को रणभूमि से हटा ले गये। अर्जुन ने द्रोणाचार्य से भी भयंकर युद्ध किया जिसमें द्रोणाचार्य ने पलायन किया। अश्वत्थामा, कर्ण, और दुःशासन आदि समस्त कौरवों के साथ भयंकर युद्ध हुआ जिसमें अर्जुन को विजय मिली; भीष्म के साथ अर्जुन का अद्‌भुत युद्ध हुआ जिसमें मूर्छित हो जाने पर भीष्म को उनका सारथि रणभूमि से उठा ले गया। इस प्रकार समस्त कौरव दल ने अर्जुन से पराजित होकर स्वदेश की ओर प्रस्थान किया; विजयी अर्जुन भी उत्तर कुमार के साथ विराट नगर लौट आये—(उक्त ४. ३५-६९ अध्यायों में अर्जुन का नाम इन स्थानों पर आता है : ४. ३५, २०; ३६, ९. १०. १८; ३७, ४. ११. १९. ३४; ३८, ३४. ४१; ३९, १४; ४१, १२; ४३, २. १२. १९; ४४, २. ५. ८. ९. ११. १३. २०; ४५, २. ४. ५. १४. ३२; ४६, १०. ११. २०; ४७, २१; ४८, ८. १०; ५०, २०; ५१, १९; ५३, १. १०; ५४, २५; ५५, ८. १८. २९, ३२. ४१; ५६, ५. १३; ५७, ८. १०. १२. १३. ३२. ४०; ५८, २. १०. २०. ४७. ४९. ५०. ५४. ५७. ६१; ५९, १. ५. १५; ६०, २७; ६१, १३. १६. ३८. ४१; ६२, १. १६; ६४, १९. २९; ६५, १. १५; ६६, १६. १८; ६७, ५. ७)।" "कौरवों पर विजय प्राप्त करने के पश्चात् अर्जुन ने विराट ने सम्मुख युधिष्ठिर की प्रशस्ति की तथा अन्य पाण्डवों का भी परिचय दिया। उत्तर कुमार ने प्रत्येक पाण्डव का वर्णन करते हुये अर्जुन के पराक्रम का विशेष रूप से उल्लेख किया। विराट ने अपनी पुत्री उत्तरा का अर्जुन से विवाह करने का प्रस्ताव किया किन्तु अर्जुन ने अपने पुत्र अभिमन्यु के लिये ही उत्तरा को स्वीकार किया। अभिमन्यु और उत्तरा का विवाह उपप्लव्य नगर में सम्पन्न हुआ जिसमें अनेक अक्षौहिणी सेनाओं के साथ बहुत से राजा सम्मिलित हुये (४. ७०, ९; ७१, १. ३. ९. ११. १५. १८. ३५; ७२, २. ११)।" "अभिमन्यु और उत्तरा का विवाह हो जाने के पश्चात् आये हुये सभी राजा और पाण्डवगण रात्रि में विश्राम करके विराट की सभा में उपस्थित हुये (५. १, ५)।" "इस सभा से द्वारका लौटने के पश्चात् श्रीकृष्ण से सहायता माँगने के लिये दुर्योधन और अर्जुन दोनों ही उनके पास आये। श्रीकृष्ण के शयनागार में प्रवेश करके अर्जुन कृष्ण के चरणों की ओर खड़े हो गये (५. ७, ९. ३५)।" "युधिष्ठिर से मिलने के लिये आये हुये महाराज शल्य ने अर्जुन सहित सभी पाण्डवों को गले से लगाया। युधिष्ठिर ने कर्ण और अर्जुन के युद्ध के समय शल्य से कर्ण का सारथि बनने का आग्रह किया (५. ८, २८. ४३. ४४)।" "युधिष्ठिर को 'इन्द्र-विजय' नामक उपाख्यान सुनाने के पश्चात् शल्य ने कहा कि दुर्योधन के अपराध के कारण ही भीमसेन और अर्जुन के बल से क्षत्रियों के संहार का अवसर उपस्थित हो गया है। शल्य के आश्वासन देने पर युधिष्ठिर ने पुनः अर्जुन और कर्ण के युद्ध के समय कर्ण का सारथि बनकर उसके उत्साह का नाश करते रहने के लिये शल्य से अनुरोध किया (५. १८, १८. २३)।" "महाराज द्रुपद के पुरोहित को दूत बनाकर महाराज धृतराष्ट्र के पास भेजा गया। कौरव-सभा में जाकर दूत ने कहा : 'पाण्डवों के पास अब तक सात अक्षौहिणी सेना एकत्र हो चुकी है तथा उसमें भीम, कृष्ण, और अर्जुन जैसे महारथी वीर हैं जिनके साथ कोई भी युद्ध नहीं कर सकता।' धृतराष्ट्र ने द्रुपद के पुरोहित को पाण्डवों के पास लौटा दिया। अर्जुन की प्रशंसा करते हुये महाराज धृतराष्ट्र ने संजय को उपप्लव्य नगर में भेजा। वहाँ जाकर संजय ने धनञ्जय को नमस्कार किया। युधिष्ठिर ने बताया कि अर्जुन जब एक बार अपने हाथों से धनुष पर शर-सन्धान करते हैं तब उससे सुन्दर पङ्ख और पैनी धारवाले इकसठ तीक्ष्ण बाण प्रगट होते हैं। युधिष्ठिर ने संजय से कहा कि वे धृतराष्ट्र को इन्द्रप्रस्थ पाण्डवों को दे देने के लिये कहें। अर्जुन और दुर्योधन की तुलना करते हुये युधिष्ठिर ने पाण्डवों को एक ऐसा धर्म वृक्ष बताया जिसका तना अर्जुन थे। राजा धृतराष्ट्र को पाण्डवों का संदेश सुनाने का वचन देकर संजय ने अर्जुन आदि से विदा ली। युधिष्ठिर ने संजय को भी धनञ्जय की ही भाँति अपना प्रिय बताया। हस्तिनापुर लौटकर संजय ने धृतराष्ट्र से अर्जुन के पराक्रम का वर्णन किया (५. २०-२२; ५. २२, १४. २४; २३, २२. २७; २६, २१. २२; २७, १९; २९, ५३; ३०, २)।" ५. ४७-७१ : "दूसरे दिन प्रातःकाल संजय कौरवों के सभा भवन में उपस्थित हुये। उस समय उन्होंने युधिष्ठिर की आज्ञा से युद्ध के लिये उद्यत अर्जुन का संदेश सुनाया। उन्होंने बताया कि अर्जुन ने कहा है कि यदि दुर्योधन युधिष्ठिर का राज्य नहीं छोड़ता तो उसका भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव, कृष्ण तथा अन्य तेजस्वी वीरों से युक्त महाराज युधिष्ठिर के साथ भयंकर युद्ध होगा। संजय ने बताया कि अर्जुन ने मुझसे कहा, 'एक दिन की बात है, मैं

(अर्जुन) पूर्वाह्न काल में सन्ध्या-वन्दन करके आचमन के पश्चात् बैठा हुआ था। उस समय एक ब्राह्मण ने आकर एकान्त में मुझसे कहा कि मुझे दुष्कर कर्म करना होगा। इस सम्बन्ध में उस ब्राह्मण ने मुझसे पूछा कि मैं युद्ध के समय उच्चैःश्रवा घोड़े पर बैठ कर वज्र हाथ में लिये इन्द्र को अपने आगे-आगे शत्रुओं का संहार करते चलना पसन्द करूँगा अथवा सुग्रीव आदि अश्वों से सन्नद्ध रथ पर बैठकर श्री कृष्ण से अपनी रक्षा कराना। उस समय मैंने वज्रपाणि इन्द्र को छोड़कर इस युग में भगवान श्रीकृष्ण को अपना सहायक चुना था। इस प्रकार इन डाकुओं के वध के लिये मुझे श्रीकृष्ण मिल गये।' संजय ने बताया कि अर्जुन ने उनसे यह भी कहा कि दुर्योधन श्रीकृष्ण को बन्दी बनाकर कृष्ण और अर्जुन के बीच विभेद उत्पन्न करना चाहता है किन्तु उसका (दुर्योधन का) यह मनोरथ सिद्ध नहीं होगा। संजय ने कहा कि अर्जुन ने युद्ध में स्थूणाकर्ण, पाशुपत और ब्राह्म आदि अस्त्रों का प्रयोग करने के लिये कहा है। उस समय भीष्म ने बताया कि अर्जुन और श्रीकृष्ण नर और नारायण हैं; युद्ध में एक बाण से ही अर्जुन ने जम्भासुर का वध कर दिया था। भीष्म ने कर्ण को फटकारते हुये बताया कि विराट नगर में वह अर्जुन के द्वारा अपनी पराजय और अपने भ्राता का वध देख चुका है। संजय ने अर्जुन के खाण्डववन दाह का भी वर्णन किया। धृतराष्ट्र यद्यपि भीम से, जो ऊँचाई में अर्जुन से भी एक अङ्गुष्ठ बड़े थे, अत्यन्त भयभीत थे, तथापि उन्हें अर्जुन का भी भय था। धृतराष्ट्र ने बताया कि खाण्डववनदाह को तेंतीस वर्ष हो चुके हैं और तब से अर्जुन के पराजय की कोई भी घटना नहीं हुई। दुर्योधन ने अर्जुन का वध करने की संशप्तकों की प्रतिज्ञा का उल्लेख किया। अर्जुन के पराक्रम का वर्णन करते हुये संजय ने बताया कि विश्वकर्मा त्वष्टा तथा प्रजापति ने इन्द्र के साथ मिलकर अर्जुन के रथ की ध्वजा में अनेक प्रकार के रूपों की रचना की है। भीमसेन के अनुरोध की रक्षा के लिये हनुमानजी भी उस ध्वज में युद्ध के समय अपने रूप को स्थापित करेंगे। जिस प्रकार आकाश में बहुरंगा इन्द्रधनुष प्रकाशित होता है और समझ में नहीं आता कि वह क्या है, उसी प्रकार विश्वकर्मा द्वारा रचित अर्जुन का वह रथ विविध रूपों वाला है। उस रथ में गन्धर्व चित्ररथ द्वारा प्रदत्त सौ श्वेत अश्व सन्नद्ध रहते हैं जिनमें से यदि कोई मर भी जाय तो उसके स्थान पर नया अश्व तुरन्त उत्पन्न हो जाता है। अर्जुन ने युद्ध में जयद्रथ और कर्ण का वध करने का निश्चय किया है। संजय ने बताया कि देवगण अर्जुन की रक्षा करते हैं, और उन्होंने स्वयं भी उनके तलवों में दो सीधी रेखायें देखी हैं। खाण्डववन की ही भाँति अग्नि पुनः अर्जुन की सहायता करेंगे। कृष्ण से रक्षित होकर अर्जुन एक बार में पाँच सौ बाण धारण कर सकते हैं। एक रथ पर बैठकर उन्होंने सम्पूर्ण पृथ्वी को विजित कर लिया था। अन्त में संजय ने बताया कि अर्जुन ने उनसे कहा है कि यदि युधिष्ठिर को उनका राज्य नहीं मिल जाता तो भीष्म आदि समस्त कौरव योद्धा मृत्यु को प्राप्त होंगे (५. ४७–७१; ५. ४८, २. ७. ८; ४९, १७. २३. ४५; ५१, १४. १९. ६१; ५२, ८; ५३, ४. ६; ५४, ११. १५; ५५, ४०. ४२. ५२. ५९; ५६, २. ६; ५७, १५. १६. ६०; ५९, ७. २५. ३१; ६०, ८. २०; ६५, १६; ६६, २; ६७, १०; ६८, १; ६९, ७)।"

"अर्जुन और युधिष्ठिर युद्ध करने के लिये उद्यत नहीं थे, और अर्जुन ने कृष्ण से यथाशक्ति शान्तिपूर्वक समझौता कराने का प्रयास करने के लिये कहा। फिर भी, अर्जुन ने कहा यदि दुर्योधन पाण्डवों की माँग को स्वीकार नहीं करेगा तो वे क्षत्रिय-जाति का ही उन्मूलन कर देंगे। श्रीकृष्ण के दौत्यकार्य करने के समय कुन्ती ने अर्जुन की अर्जुन कार्तवीर्य के साथ तुलना करते हुये श्रीकृष्ण से बताया कि अर्जुन के जन्म के समय रात्रि में यह आकाशवाणी हुई थी कि अर्जुन समस्त पृथ्वी को जीत लेंगे (५. ७२–९५ : ५. ७४, २३; ७७, १८; ७८, ६; ७९, १६; ८१, ४; ८२, ३७. ४६; ८३, ३०; ९०, २८. ८०. ८१)।" अर्जुन को नर के साथ समीकृत किया गया है (५. ९६, ४६. ४९)। दुर्योधन से अर्जुन के पराक्रमों का वर्णन करते हुये श्रीकृष्ण ने बताया कि भीष्म इत्यादि युद्ध में अर्जुन और भीम का सामना नहीं कर सकते (५. १२४–१३२ : ५. १२४, ५०. ५१, ५५. ५७; १२५, १४. १६; १२६, १६; १३१, ८)। "कुन्ती ने श्रीकृष्ण से अर्जुन को उसके जन्म के समय की आकाशवाणी का स्मरण दिलाने तथा सदैव द्रौपदी के बताये हुये मार्ग पर चलने के लिये कहने का निवेदन किया। कुन्ती ने यह भी बताया कि दो यमों की भाँति भीम और अर्जुन देवताओं इत्यादि का भी वध करने में समर्थ हैं। भीष्म और द्रोण ने दुर्योधन को अर्जुन के पराक्रमों का स्मरण दिलाया। द्रोण ने कहा कि वे अर्जुन को अश्वत्थामा से भी अधिक प्रिय मानते हैं। दुर्योधन ने अर्जुन के प्रतिद्वन्दी के रूप में कर्ण को चुना था। कृष्ण ने भौमन् द्वारा दिव्य माया से रचित अर्जुन के ध्वज तथा उनके ऐन्द्र, आग्नेय, मारुत आदि अस्त्रों का वर्णन किया। कर्ण ने कुन्ती को यह वचन दिया कि वह अर्जुन के अतिरिक्त कुन्ती के अन्य किसी पुत्र का वध नहीं करेगा (५. १३७, १. २०; १३८, ५; १४०, २२; १४४, ३; १४५, ८-१०; १४६, २१-२३)।"

"महाभारत युद्ध आरम्भ होने पर अनाधृष्टि आदि ने श्रीकृष्ण और अर्जुन को घेर कर उनके साथ कुरुक्षेत्र में प्रवेश किया। कुरुक्षेत्र में पहुँचकर इन सबने अपने-अपने शंख बजाये। कौरव-सभा से श्रीकृष्ण के चले जाने पर दुर्योधन ने शकुनि से कहा कि भीमसेन और अर्जुन श्रीकृष्ण के मत के अनुसार ही रहते हैं। जब युधिष्ठिर ने अपने गुरुजनों आदि से युद्ध करने के औचित्य पर शंका प्रगट की तब अर्जुन ने उनको माता कुन्ती तथा विदुर के कहे हुये वचनों का स्मरण दिलाया। भीष्म ने बताया कि पृथिवी पर अर्जुन के अतिरिक्त अपने समान अन्य किसी योद्धा से वे परिचित नहीं हैं; किन्तु उन्होंने यह भी कहा कि अर्जुन उनसे कभी भी प्रत्यक्ष युद्ध नहीं करेंगे। कर्ण अर्जुन के साथ युद्ध तो करना चाहता था किन्तु भीष्म के वध के पूर्व वह इसके लिये उद्यत नहीं था। अर्जुन को पाण्डवसेना के समस्त नायकों का नायक बनाया गया और श्रीकृष्ण को अर्जुन का भी नायक तथा सारथि बनाया गया। रुक्मिन के पुत्र भीष्मक ने अर्जुन से कहा कि यदि वे भयभीत हों तो वह (भीष्मक) उनकी सहायता करने के लिये प्रस्तुत हैं। परन्तु अर्जुन ने अपने पराक्रमों का उल्लेख करते हुये कहा कि उन्होंने रुद्र से वरदान प्राप्त किया है, अतः यह नहीं कह सकते कि वह भयभीत होंगे (५. १५१-१५९; ५. १५३, १०; १५४, १७; १५७, ५. १५)।" "दुर्योधन ने उलूक को दूत बनाकर पाण्डवों के पास भेजा। उलूक ने अर्जुन को बताया कि कौरव सेना में कम्बोज आदि जैसे वीर सम्मिलित हैं। उसने अर्जुन तथा अन्य पाण्डवों के सम्मुख दुर्योधन की बातों को दुहराया जिस पर कुपित होकर अर्जुन ने उससे कहा कि भीष्म की सहायता भी दुर्योधन की रक्षा नहीं कर सकेगी, क्योंकि वे (अर्जुन) स्वयं भीष्म का वध करेंगे (५. १६०-१६४ : ५. १६०, ५४. १०६; १६१, २४; १६२, १. ९. ६१; १६३, ९. ५२. ५३; १६४, ३. ५)।" "स्वयंभू ब्रह्मा ने अर्जुन के हाथों ही भीष्म के वध का विधान किया है। कर्ण के यह कहने पर कि वह पाँच रात्रियों के भीतर ही भीम और अर्जुन को समाप्त कर सकता है, भीष्म ने उसका उपहास करते हुये कहा कि अर्जुन और कृष्ण का सामना करने पर वह ऐसा नहीं कह सकेगा। अर्जुन ने युधिष्ठिर से कहा कि कृष्ण की सहायता से वे देवों सहित तीनों लोकों को निमिष-मात्र में ही समाप्त कर सकते हैं। युधिष्ठिर की सेना में भीम, अर्जुन, श्रीकृष्ण और विराट इत्यादि योद्धा थे (५. १६५–१७२ : १७२, १५; १८५, १९; १९३, ३; १९४, ७)।" "युधिष्ठिर ने अर्जुन से अपने सैनिकों को महर्षि बृहस्पति के वचनानुसार सूचीमुख नामक व्यूह के अनुसार व्यवस्थित करने के लिये कहा। अर्जुन ने कहा कि वे इन्द्र द्वारा अविष्कृत वज्र-व्यूह की रचना करेंगे। अर्जुन शिखण्डिन् की रक्षा कर रहे थे। युधिष्ठिर के शोक प्रगट करने पर उनके धर्म और सत्य का उल्लेख करते हुये अर्जुन ने उन्हें सान्त्वना दी। कृष्ण के कहने पर अर्जुन ने दुर्गा की स्तुति की,

जिसके फलस्वरूप दुर्गा ने प्रगट होकर अर्जुन को विजय का वरदान दिया। अर्जुन ने श्रीकृष्ण से अपने रथ को दोनों सेनाओं के बीच में खड़ा करने के लिये कहा जिससे वह यह देख सकें कि कौन-कौन से लोग युद्ध के लिये एकत्रित हुये हैं। अपने निकट सम्बन्धियों को युद्ध के लिये उद्यत देखकर अर्जुन का हृदय करुणा से भर गया और शोकमग्न होकर उन्होंने युद्ध न करने का निश्चय किया। कृष्ण ने अर्जुन को उत्साहित करने का प्रयत्न किया किन्तु इसका कोई फल नहीं हुआ। तब श्रीकृष्ण ने नित्यानित्य वस्तुओं का विवेचन करते हुये अर्जुन को क्षत्रिय-धर्म का पालन करने के लिये भगवद्गीता का उपदेश दिया। उपदेश के पश्चात् अर्जुन का भ्रम नष्ट हो गया और उन्होंने युद्ध के लिये पुनः गाण्डीव धनुष उठाया (६. १३-४२ : ६. १९, १९. २०. २८; २०, १५. २०; २१, २. ६; २२, ९; २३, १. ३. ४. २१; २५, ४. ४७; २६, २. ४५, ५४; २७, १. ७. ३६; २८, ४. ५. ९. ३७; २९, १; ३०, १६. ३२. ३३. ३७. ४६; ३१, १६. २६; ३२, १. १६. २७; ३४, १२. ३२. ३९. ४२; ३५, १. ४७. ५०. ५१. ५४; ३६, १; ३७, १; ३८, २१; ४१, १; ४२, १. ९. ६१. ७३. ७६)।" अर्जुन को पुनः गाण्डीव धारण करते देख कर पाण्डव और सोमकादि अत्यन्त हर्षित हुये (६. ४३, १६. ३३)। "महाभारत युद्ध का प्रथम दिन : भीष्म ने अर्जुन पर आक्रमण किया; अभिमन्यु को भी अर्जुन के समान ही माना जाता था; अर्जुन ने शंख के आगे बढ़ कर भीष्म पर आक्रमण किया। शंख अर्जुन के रथ पर चढ़ गया; भीष्म ने अर्जुन को छोड़ कर द्रुपद पर आक्रमण किया। सूर्यास्त होने तक पाण्डव सेना पराजित होकर पीछे हठ गई। अर्जुन अत्यन्त उदास थे। कृष्ण ने युधिष्ठिर को सान्त्वना दी और युधिष्ठिर ने द्वितीय दिन के युद्ध के लिये क्रौञ्चारुण व्यूह का निर्माण करने का आदेश दिया। प्रातःकाल होने पर धृष्टद्युम्न ने अर्जुन को व्यूह के आगे खड़ा किया। अर्जुन के ध्वज को इन्द्र के आदेश से साक्षात् विश्वकर्मा ने बनाया था। इस प्रकार व्यूह रचना करने के पश्चात् अर्जुन ने अपना देवदत्त नामक शङ्ख बजाया (६. ४४–५१ : ६. ४५, ९; ४९, १०. १४. ३७; ५०, ३०)।" "युद्ध का द्वितीय दिन : भीष्म ने अर्जुन पर वार किया। अर्जुन ने श्रीकृष्ण से अपने रथ को भीष्म के सामने ले चलने के लिये कहा। केवल भीष्म, द्रोण और कर्ण ही अर्जुन का सामना कर सकते थे। सात्यकि आदि महारथियों से घिरे हुये अर्जुन का भीष्म के साथ युद्ध। कौरव सेना की पराजय तथा अर्जुन और कृष्ण द्वारा अपने-अपने शङ्खों को बजाना (६. ५२–५५ : ५२, १२. १६. २२. २४. ४३-४४. ४७-४८. ५२. ६९; ५५, २५. ३३. ३५)।" "युद्ध का तृतीय दिन : अर्जुन और धृष्टद्युम्न ने अर्द्ध चन्द्राकार व्यूह की रचना की जिसमें बाँयें ओर स्वयं अर्जुन खड़े हुये। अर्जुन ने द्रोणाचार्य से रक्षित कौरवों के साथ युद्ध किया परन्तु उन्हें उसी प्रकार पराजित नहीं कर सके जिस प्रकार अर्जुन और भीम के द्वारा रक्षित पाण्डव भी अपराजित थे। अन्त में भीष्म इत्यादि पाण्डव सेना में प्रवेश कर गये। उस समय इनके साथ युद्ध करते हुये अर्जुन के अलौकिक पराक्रम को देखकर देवता, दानव, गन्धर्व, पिशाच, नाग तथा राक्षस अर्जुन की प्रशंसा करने लगे। अर्जुन के पराक्रम से कौरव सेना में भगदड़ मच गई जिसे भीष्म और द्रोण रोक न सके। उस समय दुर्योधन ने अपनी सेना को रोका। कृष्ण ने अर्जुन से भीष्म के साथ युद्ध करने के लिये कहा। कृष्ण और अर्जुन दोनों को भीष्म ने घायल कर दिया और पाण्डव सेना भी पराजित हुई। भीष्म ने द्रोण से अर्जुन पर आक्रमण करने को कहा। उस समय शिनि के पौत्र (सात्यकि = युयुधान) अर्जुन की सहायता के लिये आये। उसी समय श्रीकृष्ण रथ से नीचे कूद पड़े और अपना सुदर्शन चक्र लेकर भीष्म की ओर दौड़ पड़े। अर्जुन ने श्रीकृष्ण को रोका। उस समय दुर्योधन आदि ने अर्जुन पर आक्रमण किया किन्तु अर्जुन ने माहेन्द्रास्त्र का आवाहन करके कौरव सेना को रोक दिया। तदुपरान्त अर्जुन ने रक्त की एक ऐसी नदी बहा दी जिसके दोनों ओर राक्षस खड़े थे। सूर्यास्त के समय भीष्म आदि सहित कौरव सेना पीछे हट गई, और अर्जुन ने भी अपनी सेना हटा ली। उस समय कौरव सेना में अत्यन्त हाहाकार मचा हुआ था। सब यही कह रहे थे कि अर्जुन ने श्रुतायुयों और समस्त सौवीरों का वध कर डाला है (६. ५६-५९ : ५८, २६; ५९, ५६. ७८. ८०. ११०. १२८. १३५)।" "युद्ध का चौथा दिन : भीष्म, द्रोण, इत्यादि ने अर्जुन पर आक्रमण किया। अर्जुन और कृष्ण का प्राचीन महर्षि नर और नारायण के अवतार के रूप में उल्लेख (६. ६०-६८ : ६०, ६. २४; ६१, १८)।" "युद्ध का पाँचवाँ दिन : भीष्म द्वारा मकरव्यूह और पाण्डवों द्वारा श्येन व्यूह की रचना। अर्जुन का भीष्म पर आक्रमण और दुर्योधन का भीष्म की रक्षा करना। अर्जुन का ध्वज सिंहपुच्छ के समान वानर की पूँछ से युक्त और प्रज्वलित पर्वत की भाँति दिखाई देता था। वह वृक्ष में कहीं भी अटकता नहीं था, आकाश में उदित हुये धूमकेतु सा दृष्टिगोचर होता था, और अनेक रत्नों से सुशोभित, विचित्र, दिव्य, तथा वानरचिह्न से युक्त था। कौरवगण अर्जुन के पराक्रम को देखकर भयभीत हुये। अर्जुन ने द्रोणाचार्य से युद्ध किया। उस समय दुर्योधन ने २५,००० सैनिकों को अर्जुन के वध के लिये भेजा परन्तु अर्जुन ने उन सबका वध कर डाला। मत्स्य और केकय अर्जुन तथा अभिमन्यु को घेर कर खड़े थे। संध्या समय दोनों पक्षों ने अपनी अपनी सेनाओं को पीछे हटा लिया (६. ६९-७४)।" "युद्ध का छठवाँ दिन : छठवें दिन पाण्डवों ने द्रुपद और अर्जुन के नेतृत्व में मकरव्यूह की रचना की। भीम और अर्जुन के महान पराक्रम से पराभूत होकर कौरव सेना भाग खड़ी हुई (६. ७५-८० : ७५, २७. ३४)।" "युद्ध का सातवां दिन : दूसरे दिन युधिष्ठिर ने अपनी सेना को वज्रव्यूह में व्यवस्थित किया। अनेक राजाओं ने, जिनमें भ्राताओं सहित त्रिगर्तराज भी थे, अर्जुन पर आक्रमण किया; अर्जुन ने ऐन्द्रास्त्र का आवाहन किया जिससे शत्रुसेना भाग खड़ी हुई। भीष्म ने उस समय कौरव सेना की रक्षा की। जब अर्जुन ने कौरव सेना को पराजित कर दिया और भीष्म अर्जुन के रथ की ओर बढ़े तब दुर्योधन ने अपने पक्ष के अनेक राजाओं को भीष्म की रक्षा करने के लिये कहा। अलम्बुष के साथ युद्ध करते हुये सात्यकि ने अर्जुन से प्राप्त ऐन्द्रास्त्र के व्यवहार से अलम्बुष की माया को भस्म कर दिया। अर्जुन ने श्रीकृष्ण से अपना रथ भीष्म की ओर ले चलने के लिये कहा। अर्जुन ने सुशर्मन् के साथ युद्ध और अनेक सैनिकों का वध किया। त्रिगर्तराज सहित बत्तीस अन्य राजाओं ने अर्जुन पर आक्रमण किया, किन्तु अर्जुन उनमें से अनेक का वध करके भीष्म पितामह की ओर बढ़े। उस समय जब त्रिगर्तराज ने अर्जुन पर आक्रमण किया तो अर्जुन की सहायता के लिये शिखण्डिन् आदि वहाँ आ पहुँचे। अर्जुन ने त्रिगर्त वीरों पर गाण्डीव धनुष से बाण-वर्षा की। अर्जुन के विरुद्ध भीष्म की रक्षा के लिये दुर्योधन और जयद्रथ इत्यादि आये। उस समय अर्जुन ने अनेक शत्रुओं के साथ युद्ध किया और सूर्यास्त के समय सुशर्मन् इत्यादि को पराभूत करने के पश्चात् अपने शिविर में लौट आये (६. ८१-८६ : ८१, ४२; ८२, ८; ८४, ४८. ५३; ८५, १०; ८६, ३८. ४६)।" "युद्ध का आठवाँ दिन : धृष्टद्युम्न ने शृङ्गारक व्यूह बनवाया जिसके दोनों शृङ्गों के स्थान पर भीमसेन और महारथी सात्यकि कई सहस्र रथियों, अश्वारोहियों और पदातियों के साथ उपस्थित थे। व्यूह के अग्रभाग में नरश्रेष्ठ, श्वेतवाहन अर्जुन खड़े थे। अर्जुन आदि ने दुर्योधन के नेतृत्व में युद्ध कर रहे राजाओं पर आक्रमण किया। अर्जुन-पुत्र इरावत् ने कौरवों पर आक्रमण किया, परन्तु ऋष्यशृङ्ग के पुत्र अलम्बुष नामक राक्षस ने उनका वध कर दिया। अर्जुन इत्यादि ने अनेक राजाओं का वध किया। अर्जुन ने श्रीकृष्ण से इरावान् के वध के सम्बन्ध में शोकपूर्ण उद्गार प्रगट किये। रात्रि के अन्धकार के कारण पाण्डवों और कौरवों ने अपनी-अपनी सेनाओं को युद्धभूमि से लौटने का आदेश दिया। भीष्म ने दुर्योधन से अर्जुन के पराक्रम का वर्णन किया। दुर्योधन ने दुःशासन को बताया कि अर्जुन के रथ के बाँये पहिये की रक्षा युधामन्यु और दाहिने पहिये की रक्षा उत्तमौजा करते हैं।

इस प्रकार अर्जुन के ये दो रक्षक हैं तथा अर्जुन भी शिखण्डिन् की रक्षा करते है। अर्जुन ने धृष्टद्युम्न से कहा, 'तुम पुरुषसिंह शिखण्डी को भीष्म के सामने उपस्थित करो, मैं उसकी रक्षा करूँगा' (६.८७–९८ : ८९,१९.३५; ९०, ७.९. ११.१३.१६.५२.७०.७८.८२; ९५,१२.८६;९६,३६;९८,२९.४८)।" "युद्ध का नवाँ दिन : अर्जुन ने भीष्म, द्रोण, और कृप से, तथा इनके बाद त्रिगर्तराज तथा उनके पुत्र से युद्ध किया। अर्जुन ने वायव्यास्त्र का प्रयोग किया जिसके कारण त्रिगर्तराज की सेना पराङ्मुख हो गई। दुर्योधन इत्यादि ने अर्जुन को घेर लिया किन्तु दुर्योधन का सामना करते हुये अर्जुन ने सुशर्मन् के समस्त अनुचरों का वध कर डाला। श्रीकृष्ण ने अर्जुन से भीष्म का वध कर देने के लिये कहा। श्रीकृष्ण रथ से उतर कर स्वयं भीष्म की ओर दौड़े परन्तु अर्जुन उन्हें लौटा लाये। सूर्यास्त के समय दोनों पक्षों ने अपनी-अपनी सेनायें लौटा लीं। श्रीकृष्ण ने बताया कि अर्जुन इत्यादि अजेय हैं। पाण्डवों सहित श्रीकृष्ण ने भीष्म से मिलकर उनके वध का उपाय पूछा। भीष्म ने अर्जुन को शिखण्डिन् को आगे करके युद्ध करने का परामर्श दिया। भीष्म के मारे जाने की सम्भावना पर अर्जुन को शोक हुआ, परन्तु श्रीकृष्ण ने उनको भीष्म-वध की उनकी प्रतिज्ञा का स्मरण दिलाया। तदुपरान्त पाण्डवगण प्रसन्न होकर वहाँ से लौटे (६.९९–१०७ : १०१, ६.१४.३९.५९; १०२,८.१३; १०४, १; १०६, ४८.७१; १०७,२७.३९.८२.९०.१०३)।" "युद्ध का दसवां दिन : उभय पक्ष की सेनाओं ने युद्ध के लिये प्रस्थान किया। पाण्डवों ने शिखण्डिन् को आगे करके प्रस्थान किया। उस समय भीम और अर्जुन शिखण्डी के रथ के पहियों के रक्षक बने। इस प्रकार शिखण्डिन् को आगे करके अर्जुन के नेतृत्व में पाण्डव सेना भीष्म के साथ युद्ध के लिये आगे बढ़ी। अर्जुन ने शिखण्डिन् से भीष्म का वध करने के लिये कहा और स्वयं द्रोणाचार्य इत्यादि को रोकने के लिये बढ़े। अर्जुन ने कौरव सेना को पराजित किया। दुर्योधन ने भीष्म से अर्जुन के सम्बन्ध में बताया। अर्जुन के प्रोत्साहन से शिखण्डिन् इत्यादि ने भीष्म पर आक्रमण किया। दुःशासन ने अर्जुन और शिखण्डिन् पर आक्रमण किया जिसके परिणाम स्वरूप अर्जुन दुःशासन के रथ से आगे नहीं बढ़ सके। घोर युद्ध के पश्चात् अर्जुन ने दुःशासन को लौटने के लिये विवश किया और उसके बाद कौरव सेना को पराजित किया। दुःशासन ने पुनः अर्जुन का सामना किया; अर्जुन और शिखण्डिन् ने भीमसेन से सहायता माँगी। दुर्योधन ने त्रिगर्तराज सुशर्मन से अर्जुन तथा भीमसेन का वध करने के लिये कहा। अर्जुन ने शल्य इत्यादि के साथ युद्ध किया। द्रोण इत्यादि, तथा भीष्म ने अर्जुन और भीमसेन के साथ युद्ध किया। द्रोण इत्यादि ने पार्थों, मुख्यतः अर्जुन के साथ, युद्ध किया। धृतराष्ट्र-पुत्रों ने शिखण्डिन् और अर्जुन के साथ युद्ध किया। अर्जुन ने भीष्म और भगदत्त के साथ युद्ध किया। अर्जुन ने भीष्म और भगदत्त के साथ युद्ध करते हुए शिखण्डिन् से भीष्म का वध करने के लिये कहा। कौरवों ने अर्जुन पर आक्रमण किया। अर्जुन और शिखण्डिन् को छोड़कर कोई भी महारथी भीष्म का सामना करने का साहस न कर सका। भीष्म ने शिखण्डिन् के विरुद्ध अस्त्र नहीं चलाया; अर्जुन ने शिखण्डिन् से शीघ्र ही भीष्म का वध करने के लिये कहा। दुःशासन ने अर्जुन तथा समस्त पार्थों के साथ युद्ध किया किन्तु अर्जुन द्वारा पराजित हुआ। विदेहों इत्यादि ने अर्जुन पर आक्रमण किया किन्तु अर्जुन ने अनेक दिव्यास्त्रों से सबको पराजित कर दिया। तदुपरान्त अर्जुन ने दुःशासन तथा भीष्म इत्यादि से युद्ध किया। कृष्ण ने अर्जुन से भीष्म का वध करने के लिए कहा। पञ्चाल राज धृष्टकेतु इत्यादि को भीष्म ने आहत कर दिया, परन्तु अर्जुन ने इन सबकी रक्षा की। अर्जुन से रक्षित होकर शिखण्डिन् ने भीष्म पर आक्रमण किया। भीष्म के समस्त सैनिकों का वध करने के पश्चात् अर्जुन स्वयं ही भीष्म पर टूट पड़े। दिव्यास्त्रों आदि का प्रयोग करते हुए द्रोण इत्यादि ने अर्जुन के साथ युद्ध किया। भीष्म ने दुःशासन से बताया कि अर्जुन अजेय हैं और स्वयं उनको (भीष्म को) देव, दानव, और राक्षस भी पराजित नहीं कर सकते। धृतराष्ट्र के पुत्र भीष्म को घेर कर खड़े हुए परन्तु अर्जुन के सामने वे सभी भाग गये। सूर्यास्त के थोड़े समय पहले भीष्म अपने रथ से गिर पड़े. परन्तु सूर्य के दक्षिणायन होने के कारण उन्होंने प्राणत्याग नहीं किया। दोनों ही पक्ष के लोगों ने युद्ध बन्द कर दिया। मस्तक नीचे की ओर लटका होने के कारण भीष्म ने एक तकिया मागा; उस समय अर्जुन ने गाण्डीव धनुष के द्वारा तीन अभिषिक्त बाणों से भीष्म के मस्तक को ऊँचा कर दिया, जिससे भीष्म को अत्यन्त प्रसन्नता हुई (६.१०८–१२० : १०८,१८; ११०. १.२१.२२.३२.४८; १११, ५६; ११२, १६.२१; ११३, ४७.५०.५२.५३; ११४, ८.२१.३७; ११५, ६.७; ११६, ५५.५८–६०.६२.६४.६५; ११७, ४.८,१४.१९.२१; ११९, ६०.६५.७६)।" "युद्ध का ग्यारहवाँ दिन : दूसरे दिन प्रातःकाल जब भीष्म ने जल माँगा तब अर्जुन ने अपने गाण्डीव धनुष से पार्जन्यास्त्र छोड़कर पृथिवी का भेदन किया जिससे शीतल जल की धारा बह निकली। उस समय भीष्म ने अर्जुन की प्रशंसा करते हुए कहा, 'देवर्षि नारद तक ने तुम्हें एक प्राचीन ऋषि बताया है······'। भीष्म ने दुर्योधन से बताया कि अग्नि इत्यादि के अस्त्र केवल अर्जुन और कृष्ण को ही ज्ञात हैं। भीष्म ने कर्ण को अपने सहोदर भ्राताओं का साथ देने के लिए कहा, परन्तु कर्ण ने कृष्ण से रक्षित होने के विपरीत भी अर्जुन इत्यादि से युद्ध करने का निश्चय व्यक्त किया (६.१२१-१२२ : १२१, १५.१९.२०)।" "भीष्म को बाण-शय्या पर पड़ा देखकर महातेजस्वी कर्ण अत्यन्त आर्त्त होकर रथ से उतर पड़ा और अभिवादन के पश्चात् गद्गद्वाणी में भीष्म से गाण्डीवधारी अर्जुन से उत्पन्न कौरवों के संकट का वर्णन किया। उसने शिव के साथ अर्जुन के युद्ध की चर्चा की। युद्ध आरम्भ के समय युधिष्ठिर ने क्रौञ्च व्यूह का निर्माण, और अर्जुन तथा श्रीकृष्ण को उसके शीर्ष भाग में स्थित किया। पाण्डव और सृञ्जय द्रोण से पराजित हुये। युधिष्ठिर ने अर्जुन से द्रोणाचार्य को रोकने के लिये कहा। धृतराष्ट्र ने इस बात पर खेद प्रगट किया कि दुर्योधन श्रीकृष्ण तथा अर्जुन को नहीं जान सका (७.१–११ : २,१६.३१; ३.२१; ६,१०;७.२९;८,३;१०,२२;११,३८.४१)।" "सृञ्जय ने युद्ध के ११ वें दिन का विस्तार से वर्णन करते हुए कहा : द्रोणाचार्य ने उस स्थिति में युधिष्ठिर को बन्दी बनाने का वचन दिया जब वे इन्द्र और रुद्र इत्यादि से प्राप्त अस्त्रों सहित अर्जुन से रक्षित न हों। अतः अर्जुन को युधिष्ठिर से दूर हटाना आवश्यक समझा गया। युधिष्ठिर ने अपने एक गुप्तचर के द्वारा यह जान लिया कि द्रोणाचार्य उन्हें बन्दी बनाना चाहते हैं। अर्जुन ने युधिष्ठिर को सान्त्वना दी। तदुपरान्त भयंकर युद्ध प्रारम्भ हुआ। द्रोणाचार्य और अर्जुन से रक्षित दोनों पक्ष की सेनायें एक दूसरे का कुछ नहीं बिगाड़ सकीं। युधिष्ठिर की रक्षा करने के लिए अर्जुन ने द्रोणाचार्य की सेना पर आक्रमण किया। सूर्यास्त के समय दोनों दलों ने अपनी-अपनी सेनायें पीछे हटा लीं। पाण्डवों इत्यादि ने अर्जुन की प्रशंसा की (७.१२–१६ : १२,२०;१३,७)।" "अर्जुन के साथ रहने पर युधिष्ठिर को बन्दी बनाने में द्रोणाचार्य ने अपनी असमर्थता प्रगट की। त्रिगर्तराज ने यह कहते हुए कि अर्जुन ने सदैव हम लोगों को कष्ट पहुँचाया है, कहा कि हमें इस बात की शपथ लेनी चाहिये कि या तो अर्जुन का ही वध होगा अथवा सभी त्रिगर्त मृत्यु को प्राप्त हो जायेंगे। तब उन लोगों ने अर्जुन को युद्ध क्षेत्र के दक्षिण भाग में बुलाया। सत्यजित् से युधिष्ठिर की रक्षा करने के लिये कह कर अर्जुन त्रिगर्तों के साथ युद्ध के लिए दक्षिण गये (७. १७, ८. १६. ३७. ४४)।" "युद्ध का बारहवाँ दिन : संशप्तकों ने अर्जुन के साथ युद्ध का अवसर उपस्थित होने पर हर्ष प्रगट किया परन्तु अर्जुन ने अपना देवदत्त नामक शंख बजाकर उन्हें भयभीत कर दिया। सुबाहु और सुशर्मन इत्यादि ने अर्जुन के साथ युद्ध किया, परन्तु पराजित होकर दुर्योधन के पास भाग गये। त्रिगर्तराज के द्वारा प्रोत्साहित होकर ये नारायणी सैनिकों सहित पुनः रणस्थल की ओर लौट पड़े। श्रीकृष्ण अर्जुन को संशप्तकों के सामने लाये। नारायणी सैनिकों ने अर्जुन के साथ युद्ध

किया। अर्जुन ने अपना देवदत्त नामक शंख बजाकर त्वाष्ट्रास्त्र द्वारा शत्रुओं को मोहित कर दिया जिससे वे अपने ही सैनिकों पर प्रहार करने लगे। तदुपरान्त अर्जुन ने हँसकर ललित्थ इत्यादि सैनिकों को पराजित करते हुये वायव्यास्त्र का प्रयोग किया जिसने शत्रुओं की बाण-वर्षा को नष्ट कर दिया; वायु देवता ने भी अश्व, गज, रथ, और आयुधों सहित संशप्तक समूहों को वहाँ से सूखे पत्तों के ढेर की भाँति उड़ाना आरम्भ कर दिया। जब अर्जुन संशप्तकों के साथ युद्ध कर रहे थे, द्रोणाचार्य ने युधिष्ठिर पर आक्रमण कर दिया। द्रोणाचार्य के विरुद्ध युधिष्ठिर ने मण्डलार्ध व्यूह बनाया। द्रोणाचार्य के अलौकिक व्यूह को देखकर युधिष्ठिर भयभीत होकर अपने वेगशाली अश्वों से युक्त रथ पर बैठकर युद्धस्थल से दूर चले गये। अर्जुनपुत्र श्रुतकीर्ति ने दुःशासन के पुत्र के साथ युद्ध किया। अर्जुन इत्यादि ने भगदत्त और उसकी गजसेना के साथ युद्ध किया। अर्जुन के कहने पर श्रीकृष्ण ने रथ को भगदत्त की ओर बढ़ाया। अर्जुन को जाते हुये देखकर चौदह सहस्र संशप्तक महारथी, जिनमें दस सहस्र त्रिगर्तदेशीय और चार सहस्र नारायणी थे, अर्जुन पर टूट पड़े। अर्जुन ने ब्रह्मास्त्र से इन सबको नष्ट करने के पश्चात् गजारोही भगदत्त पर आक्रमण किया। किन्तु यतः सुशर्मन् और उसके भ्राताओं ने अर्जुन को पीछे से पुनः ललकारा अतः उन्होंने पहले सुशर्मन् पर ही आक्रमण कर दिया और उसके बाद भगदत्त की ओर मुड़े। अन्त में भगदत्त ने मंत्रों से अभिषिक्त करके वैष्णवास्त्र से अर्जुन पर प्रहार किया, किन्तु श्रीकृष्ण ने उस अस्त्र को अपने वक्षःस्थल पर रोक लिया। श्रीकृष्ण के वक्षस्थल पर आकर वह अस्त्र वैजयन्तीमाला के रूप में परिणत हो गया। श्रीकृष्ण के इस प्रकार वैष्णवास्त्र को निष्फल कर देने पर अर्जुन को अत्यन्त क्लेश हुआ, जिससे उन्होंने श्रीकृष्ण से युद्ध न करने का निवेदन किया। अर्जुन की बात सुनकर श्रीकृष्ण ने वैष्णवास्त्र का इतिहास बताते हुये उनसे इस प्रकार कहा, 'यह महान् असुर अब इस श्रेष्ठ अस्त्र से रहित हो गया है, अतः देवों के शत्रु इस भगदत्त का तुम उसी प्रकार वध कर डालो, जिस प्रकार अतीत में लोक-कल्याण के लिये मैंने नरकासुर का वध किया था।' तब अर्जुन ने भगदत्त तथा उसके गज को भी मार डाला। तदुपरान्त अर्जुन ने वृष और अचल नामक दो भ्राताओं का वध किया। धृतराष्ट्र के पुत्रों ने अर्जुन पर आक्रमण तथा शकुनि ने माया द्वारा उन्हें और श्रीकृष्ण को भ्रमित करने का प्रयास किया। शकुनि ने अपनी माया से गदा तथा गदहे आदि अनेक प्रकार के अस्त्र और पशु उत्पन्न किये जिन्हें अर्जुन ने अपने दिव्यास्त्रों से नष्ट कर दिया। तदुपरान्त अर्जुन के रथ के समीप अन्धकार प्रगट हुआ और उस अन्धकार से क्रूरतापूर्ण शब्द अर्जुन को सुनाई पड़ने लगे, किन्तु अर्जुन ने अपने विशाल ज्योतिर्मय अस्त्र द्वारा उसे नष्ट कर दिया। अन्धकार के निवारण के पश्चात् भयंकर जल-प्रवाह प्रगट हुआ, जिसे अर्जुन ने आदित्यास्त्र से नष्ट किया। मायाओं का इस प्रकार नाश हो जाने के कारण शकुनि रणस्थल से भाग गया। अर्जुन ने कुरु-सेना का भयंकर संहार किया जिसके परिणामस्वरूप कुछ सेना द्रोण के पीछे भागी और कुछ दुर्योधन के। इस प्रकार दक्षिण की ओर अर्जुन और कुरुसेना में भयंकर संग्राम हुआ। पाण्डवों ने इस बात पर खेद प्रगट किया कि अर्जुन उस समय रणभूमि के दक्षिण-क्षेत्र में संशप्तकों और नारायणी सेना के संहार में लिप्त हैं। संशप्तकों का वध करने के पश्चात् अर्जुन ने आग्नेयास्त्र का प्रयोग करते हुये द्रोणाचार्य इत्यादि से युद्ध किया। अर्जुन ने कर्ण के तीन भ्राताओं का वध किया। सूर्यास्त के समय दोनों पक्ष की सेनायें अपने-अपने शिविरों में लौट आईं (७. १८-३२ : १८, ७. १२. १३. १५. १६; १९, १. ४. ११-१३. १८. २१; २३, ७०; २६, २; २७, १४. १८. २५; २८, ७. ९. १०. १६; २९, १०-१२. २१; ३०, २. ५. ११. १८. २०. २३-२५. २७. २८. ३४. ३५. ३८; ३२, ४६, ५०. ५२. ५६. ६०. ७१)।" "युद्ध का तेरहवाँ दिन : अर्जुन द्वारा पराजित होने, तथा द्रोणाचार्य द्वारा युधिष्ठिर को बन्दी बनाने में असफल हो जाने पर कौरवों को पराजित माना जाने लगा। चारों ओर अर्जुन और श्रीकृष्ण की प्रशंसा हो रही थी। दूसरे दिन प्रातःकाल दुर्योधन ने युधिष्ठिर को बन्दी बनाने में असमर्थ हो जाने के कारण द्रोणाचार्य का उपालम्भ किया। द्रोणाचार्य ने कहा कि अर्जुन तथा श्रीकृष्ण से रक्षित कोई भी सेना महादेव के अतिरिक्त अन्य किसी से पराजित नहीं हो सकती। संशप्तक-गण अर्जुन को ललकार कर युद्ध क्षेत्र के दक्षिणी भाग में ले गये। पाण्डवसेना का नायकत्व भीमसेन कर रहे थे। अभिमन्यु ने अर्जुन और श्रीकृष्ण से प्राप्त अस्त्रों द्वारा समस्त योद्धाओं को पराजित कर दिया। अन्ततोगत्वा दुःशासन के पुत्र ने उस समय अभिमन्यु का वध किया, जब अभिमन्यु के पीछे चलने वाले योद्धाओं को जयद्रथ ने रोक दिया (७. ३३-५१ : ३३, ४. १२. १४; ३५, १४. १५; ३६, ८; ४०, १६; ४५, २२; ५१, ८. १०)।" "अभिमन्यु के वध के बाद शोकमग्न युधिष्ठिर को व्यास ने सान्त्वना दी। युधिष्ठिर शोक-मुक्त तो हुये, किन्तु उन्होंने कहा कि 'हम अर्जुन से क्या कहेंगे ?' (७. ७१, १५)।" "सन्ध्या समय, असंख्य संशप्तकों का वध करने के पश्चात् अपने शिविर की ओर जाते हुये अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा कि उनका हृदय अत्यन्त दुःखी है। उन्होंने यह भी कहा कि उन्हें विपत्ति के संकेत मिल रहे हैं और अभिमन्यु भी हंसता हुआ उनका स्वागत करने के लिये शिविर से बाहर नहीं निकला, इत्यादि। उन्हें यह स्मरण हुआ कि द्रोणाचार्य ने उस दिन चक्रव्यूह का निर्माण किया था, जिसका अभिमन्यु के अतिरिक्त अन्य कोई भेदन नहीं कर सकता। किन्तु उन्होंने अभिमन्यु को यह नहीं बताया था कि भेदन के पश्चात चक्रव्यूह से बाहर कैसे निकलना चाहिये ? अर्जुन ने धृतराष्ट्र पुत्रों का दर्पपूर्ण सिंहनाद सुना और श्रीकृष्ण ने भी यह सुना कि युयुत्सु उन कौरव वीरों को अर्जुन की अपेक्षा एक बालक का वध कर देने का उपालम्भ दे रहे हैं। धार्तराष्ट्रों का उपालम्भ करने के पश्चात युयुत्सु ने कोप और दुःख से युक्त होकर अपना शस्त्र त्याग दिया और कौरवों के पास से चले गये। अर्जुन को पुत्रशोक से पीड़ित देखकर श्रीकृष्ण ने क्षत्रियधर्म तथा स्वर्ग आदि सम्बन्धी उपदेश देते हुये उन्हें सान्त्वना दी। उस समय अर्जुन की अवस्था देखकर श्रीकृष्ण अथवा युधिष्ठिर के अतिरिक्त अन्य कोई भी ऐसा नहीं था जो उनसे (अर्जुन से) बोल सकता अथवा उनकी ओर देखने का साहस करता। युधिष्ठिर ने अर्जुन को अभिमन्युवध का वृत्तान्त सुनाया, जिसे सुनकर अर्जुन ने दूसरे दिन सूर्यास्त के पूर्व ही जयद्रथवध की प्रतिज्ञा की (७. ७२)।" "अर्जुन ने कहा कि देवता, असुर, मनुष्य, पक्षी, नाग, पितर, निशाचर, ब्रह्मर्षि, देवर्षि, यह चराचर जगत तथा इसके परे जो कुछ है वह सब भी अब जयद्रथ की रक्षा नहीं कर सकते; यदि जयद्रथ रसातल में चला जाय, या उससे भी आगे बढ़ जाय, अथवा आकाश, देवलोक, या दैत्यों के नगर में जाकर छिप जाय तो भी वे उसका वध अवश्य करेंगे। प्रतिज्ञा के पश्चात् अर्जुन ने दाहिने और बाँये हाथ से भी गाण्डीव धनुष की टङ्कार की। अर्जुन के इस प्रकार प्रतिज्ञा कर लेने पर भगवान श्रीकृष्ण ने अत्यन्त कुपित होकर अपना पाञ्चजन्य शंख बजाया और अर्जुन ने भी अपना देवदत्त नामक शंख फूँका (७. ७३)" "गुप्तचरों से जब जयद्रथ को अर्जुन की प्रतिज्ञा का समाचार मिला तो उसका हृदय शोक से व्याकुल हो गया; उसने राजाओं की सभा में जाकर कहा 'द्रोणाचार्य आदि महारथी, देवता, गन्धर्व, असुर, नाग तथा राक्षस भी अब मेरी अर्जुन से रक्षा नहीं कर सकते। ऐसा कहकर जयद्रथ ने अपने घर लौट जाने की इच्छा व्यक्त की; उसे सान्त्वना देते हुये दुर्योधन ने कहा कि वह स्वयं तथा कर्णादि उसकी रक्षा करेंगे; दुर्योधन के साथ जयद्रथ ने उसी रात को द्रोणाचार्य की शरण में जाकर अपने तथा अर्जुन के अन्तर के सम्बन्ध में प्रश्न किया; द्रोणाचार्य ने कहा यद्यपि उसने तथा अर्जुन ने एक ही प्रकार की शिक्षा पाई है, परन्तु योग तथा कठिन साधना के कारण अर्जुन उससे श्रेष्ठ हैं; फिर भी, द्रोणाचार्य ने एक अभेद्य व्यूह की रचना करके जयद्रथ की रक्षा करने का वचन दिया; साथ ही उन्होंने कहा कि मृत्यु से भयभीत नहीं होना

चाहिये (७. ७४)" "श्रीकृष्ण ने शीघ्रतापूर्वक जयद्रथ-वध की प्रतिज्ञा करने पर अर्जुन से कहा 'तुमने अपने भ्राताओं का मत जाने बिना ही जो प्रतिज्ञा कर ली है उससे तुमने अत्यन्त गुरुतर भार उठा लिया है, अतः ऐसी दशा में हम लोगों के उपहास-पात्र क्यों न बन जायेंगे ?' श्रीकृष्ण ने बताया कि कौरव सेना भी सतर्क हो गई है और अर्जुन के आक्रमण के भय से युद्ध के लिये सन्नद्ध है। उन्होंने यह भी बताया कि अर्जुन की प्रतिज्ञा को सुनकर कौरव-गण जयद्रथ की यथाशक्ति रक्षा करेंगे; कर्ण आदि जयद्रथ के रथ में ही उपस्थित रहेंगे, द्रोणाचार्य ऐसा व्यूह बनायेंगे जिसका अग्रार्द्ध शकट के समान और पृष्ठार्द्ध कमल के समान होगा (७. ७५)।" "अर्जुन ने श्रीकृष्ण को यह आश्वासन दिया कि द्रोणाचार्य, साध्य, रुद्र, वसु, अश्विनी कुमार, इन्द्र सहित मरुद्गण, विश्वेदेव, देवेश्वरगण, पितर, गन्धर्व, गरुड़, समुद्र, पर्वत, स्वर्ग, आकाश, पृथिवी, दिशायें, दिग्पाल, ग्रामों तथा जंगलों में निवास करने वाले सभी प्राणी और सम्पूर्ण चराचर जीवों से रक्षित होने पर भी वे अपने गाण्डीव तथा यमादि से प्राप्त अन्य अस्त्रों द्वारा जयद्रथ का वध करने में समर्थ हैं (७. ७६)।" "इन्द्रसहित देवगण, नर और नारायण को कुपित जानकर चिन्तित हो उठे; प्रकृति में अनेक प्रकार के अपशकुन प्रगट होने लगे। श्रीकृष्ण ने अर्जुन के निवास स्थान पर जाकर क्षत्रियोचित कर्त्तव्यों का उपदेश देते हुये सुभद्रा को सान्त्वना दी (७. ७७)।" "अभिमन्यु की मृत्यु पर शोक प्रकट करते हुए सुभद्रा ने भीमसेन आदि को अभिमन्यु की रक्षा में असफल हो जाने के कारण धिक्कारा; द्रौपदी और उत्तरा भी विलाप करती हुई सुभद्रा के पास आ गईं; श्रीकृष्ण ने कहा कि अभिमन्यु ने अत्यन्त श्रेष्ठ गति प्राप्त की है; उसने अकेले ही जिस पराक्रम का परिचय दिया है उसका हम सबको अनुसरण करना चाहिये; इस प्रकार सुभद्रा, द्रौपदी तथा उत्तरा को आश्वासन देकर श्रीकृष्ण पुनः अर्जुन के पास लौट आये (७. ७८)।" "रात्रि के समय अर्जुन ने भगवान् शङ्कर का निशीथ-पूजन किया; श्रीकृष्ण भी दारुक के साथ अपने शिविर में चले गये। उस रात पाण्डवों के शिविर में कोई भी नहीं सोया; सब लोग यही चिन्ता कर रहे थे कि अर्जुन किस प्रकार अपनी प्रतिज्ञा को सफल करेंगे; श्रीकृष्ण भी उस रात्रि के मध्यकाल में जाग उठे और अर्जुन की प्रतिज्ञा का स्मरण करके दारुक से बोले, 'मैंने भी कल, यदि आवश्यक हुआ तो, युद्ध करने का निश्चय किया है, अतः तुम मेरे रथ को सुसज्जित करके युद्धस्थल में लाना; साथ ही कौमोदकी गदा, दिव्यशक्ति, और चक्र को उस पर रखकर गरुड़ध्वज के लिए भी स्थान बना लेना। उसमें बलाहक इत्यादि चार श्रेष्ठ अश्वों को सन्नद्ध रखना, और पाञ्चजन्य शंख का ऋषभ स्वर सुनते ही तत्काल मेरे पास पहुँच जाना' (७. ७९)।" "अर्जुन ने भी श्रीकृष्ण को स्वप्न में देखा, जिसमें श्रीकृष्ण ने अर्जुन को शोक न करने के लिये कहते हुए उस पाशुपत अस्त्र का उल्लेख किया जिससे शिव ने युद्ध में समस्त दैत्यों का वध किया था; श्रीकृष्ण ने कहा कि उस अस्त्र का स्मरण करने से अर्जुन दूसरे दिन जयद्रथ का वध करने में अवश्य समर्थ होंगे और यदि उन्हें उस अस्त्र का स्मरण न हो तो वे शिव की शरण लें। स्वप्न में श्रीकृष्ण के वचन को सुनकर ब्राह्म मुहूर्त्त में अर्जुन ने अपने आपको श्रीकृष्ण के साथ आकाश में जाते देखा; आकाशमार्ग से भ्रमण करते हुये अर्जुन हिमवत्, मणिमत् आदि से होकर उस शिखर पर पहुँचे जहाँ पार्वती के साथ महादेव विराजमान् थे। श्रीकृष्ण और अर्जुन ने महादेव की स्तुति की (७. ८०)।" "स्वप्न में अर्जुन ने अपने द्वारा समर्पित किए हुए रात्रिकाल के उस नैत्यिक उपहार को जिसे श्रीकृष्ण को निवेदित किया था, शिव के समीप रक्खा देखा; अर्जुन ने मन ही मन भगवान् श्रीकृष्ण और शिव का पूजन किया; शिव ने कृष्ण और अर्जुन से पास ही स्थित दिव्य और अमृतमय सरोवर से अपने धनुष और बाण को लाने के लिये कहा; शिव के आदेश को सुनकर अर्जुन और श्रीकृष्ण सरोवर के तट पर पहुँचे; वहाँ इन लोगों ने दो नागों को देखा और शतरुद्रीय मन्त्रों का पाठ करते हुए उन्हें प्रणाम किया जिससे वे दोनों नाग धनुष और बाण के रूप में परिणत हो गये; अत्यन्त प्रसन्न होकर श्रीकृष्ण और अर्जुन उस धनुष और बाण को लेकर शिव के पास आये। तब शंकर के पार्श्वभाग से एक ब्रह्मचारी प्रकट हुआ जिसने अर्जुन को उस धनुष को चलाने की विधि तथा आवश्यक मन्त्र आदि सिखाये; तत्पश्चात् भगवान् शिव ने उस धनुष और बाण को उसी सरोवर में डाल दिया; इस प्रकार स्वप्न में एक बार पुनः पाशुपत-अस्त्र को प्राप्त करके श्रीकृष्ण और अर्जुन अपने शिविर में लौट आये। (७. ७२-८१ : ७२, ९. ६१. ८६, ८७; ७३, १६. ५१; ७४, २४. २५; ७५, १९. २०. २५; ७६, १. २६; ७७, ११; ७८, ४४; ७९, १. १३. १६. १७. २१. २५. २७. २९; ८०, २३. ४९. ५३. ५४. ६५; ८१, ४. १०. २०. २४)।" "युद्ध का चौदहवाँ दिन : प्रातःकाल युधिष्ठिर ने अपने नित्यकर्म (विस्तृत विवरण) किये; श्रीकृष्ण युधिष्ठिर के पास उपस्थित हुए और उनके बाद ही महाराज विराट भी पधारे। नारद का उल्लेख करते हुये युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण से पाण्डवों को बचाने के लिये कहा। कृष्ण ने युधिष्ठिर को अर्जुन की सफलता का विश्वास दिलाया। इसी समय अर्जुन ने वहाँ आकर युधिष्ठिर को अपने स्वप्न का वृतान्त सुनाया। तदुपरान्त अर्जुन, युधिष्ठिर और श्रीकृष्ण रथ पर बैठकर अर्जुन के शिविर की ओर गये। श्रीकृष्ण ने मन्त्रों से अभिषिक्त अर्जुन के रथ को सुसज्जित किया और धनुष और बाण को अपने हाथ में लेकर अर्जुन ने रथ की परिक्रमा की। अर्जुन, युयुधान और श्रीकृष्ण रथ पर बैठे। उस समय अनेक शुभ शकुन प्रकट हुए। अपनी अनुपस्थिति में अर्जुन ने युधिष्ठिर की रक्षा का उत्तरदायित्व युयुधान पर रक्खा। युयुधान युधिष्ठिर के पास गये (७. ८२-८४ : ८३, १३. २४. २५; ८४, २. ४. ९. १०. २२. २६)।" "द्रोणाचार्य के योद्धा क्रोध से उत्तेजित होकर चिल्लाने लगे कि 'अर्जुन कहाँ है ?' मुहूर्त के उपस्थित होने पर अर्जुन भी युद्धभूमि में उपस्थित हुए। उस समय आकाश में अनेक ऐसे अपशकुन प्रकट हुए जो धार्तराष्ट्रों के लिए तो अमंगलकारी थे किन्तु अर्जुन के लिये मंगलकारी। उस समय धृतराष्ट्र-पुत्र दुर्मर्षण रथ पर आरुढ़ होकर अर्जुन के साथ युद्ध करने के लिए सामने आया। तत्पश्चात् अर्जुन ने अपने सामने खड़ी विशाल शत्रुसेना के सम्मुख, जितनी दूर से बाण मारा जा सके उतनी ही दूरी पर अपने रथ को खड़ा करके अपना शंख बजाया। उस समय श्रीकृष्ण ने भी अपना शंख बजाया। इस शंखनाद से कौरव सेना भयभीत हो उठी (७. ७५-८८ : ८५, ३९. ४५. ४७; ८६, १९; ८७, ९)।" "अर्जुन ने दुर्मर्षण के साथ युद्ध करते हुये भयंकर संहार किया। तदुपरान्त उन्होंने दुःशासन के साथ युद्ध करते हुये उसकी सम्पूर्ण सेना का संहार किया। इसके बाद अर्जुन ने द्रोणाचार्य का साक्षात्कार किया और उनसे जयद्रथ की रक्षा न करने का आग्रह किया। द्रोणाचार्य ने अर्जुन का आग्रह अस्वीकृत करते हुये उन पर भीषण बाण-वर्षा आरम्भ कर दी। अर्जुन ने भी द्रोणाचार्य से भयङ्कर युद्ध किया। अन्त में अधिक समय न व्यतीत हो जाय इसलिये श्रीकृष्ण ने अर्जुन से द्रोणाचार्य को छोड़कर आगे बढ़ने के लिये कहा। श्रीकृष्ण के परामर्श के अनुसार अर्जुन ने द्रोणाचार्य को छोड़कर कुरुसेना में प्रवेश किया; उस समय पाञ्चाल राजकुमार युधामन्यु तथा उत्तमौजा अर्जुन के रथचक्रों की रक्षा कर रहे थे। जय और अभीषाहों ने अर्जुन का विरोध किया। द्रोण के विरुद्ध अर्जुन ने ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया, और फिर उन्हें छोड़कर कृतवर्मन् तथा कम्बोजराज सुदक्षिण के साथ युद्ध करने के लिये आगे बढ़े। कृतवर्मन् ने युधामन्यु और उत्तमौजस् को अर्जुन के साथ जाने से रोक दिया किन्तु इन लोगों ने कृतवर्मन् का वध नहीं किया। श्रुतायुध ने अर्जुन पर आक्रमण किया किन्तु श्रीकृष्ण ने उसका वध कर दिया। तदुपरान्त अर्जुन ने सुदक्षिण का वध किया और उसकी समस्त सेना भाग गयी। अर्जुन ने अभीषाहों इत्यादि का और ऐन्द्रास्त्र से श्रुतायुस् और उनके बाद उनके पुत्र नियतायुस् और दीर्घायुस् का भी वध कर दिया। अर्जुन ने गजारोही अङ्गों और कलिङ्गों, तथा म्लेच्छों, और यवनों इत्यादि का भयंकर संहार किया। अर्जुन ने अम्बष्ठराज श्रुतायुस् का भी वध

किया। अर्जुन का विरोध कर सकने की अपनी अक्षमता को स्वीकार करते हुये द्रोणाचार्य ने अभेद्य कवच आदि पहन कर दुर्योधन से अर्जुन का विरोध करने के लिये कहा। दुर्योधन और त्रिगर्त आदि अर्जुन के रथ की ओर बढ़े। अर्जुन और श्रीकृष्ण धीरे-धीरे जयद्रथ की ओर बढ़ते रहे। अर्जुन ने विन्द और अनुविन्द का वध किया। जब श्रीकृष्ण अर्जुन के घोड़ों को हाँक रहे थे तब रथ पर खड़े अर्जुन ने समस्त कौरव सेना को रोक रक्खा और एक बाण से पृथिवी का भेदन कर एक जलाशय का निर्माण किया जिससे उनके अश्व पानी पी सकें। उन्होंने अपने अश्वों के विश्राम के लिये बाणों का एक अद्भुत गृह भी बना दिया। अर्जुन द्वारा निर्मित उस जलाशय का दर्शन करने के लिये उस समय वहाँ देवर्षि नारद भी उपस्थित हुये। सिद्धों और चारणों आदि ने अर्जुन के पराक्रम की प्रशंसा की। कृष्ण सहित अर्जुन की प्रगति को रोकना कौरवों के लिये असम्भव जान पड़ा। दुर्योधन ने, जिसने इन्द्र से ही अभेद्य कवच प्राप्त किया था, अर्जुन के साथ युद्ध किया। अर्जुन ने मन्त्रों से अभिषिक्त बाणों द्वारा दुर्योधन पर प्रहार किया और उसे रथ, अश्व और अस्त्र-विहीन कर दिया। जब श्रीकृष्ण ने पाञ्चजन्य शंख बजाया और अर्जुन ने अपने गाण्डीव को झुकाया तब कौरव-गण भयभीत होकर पृथिवी पर गिर पड़े। जयद्रथ के रक्षकों ने श्रीकृष्ण और अर्जुन पर आक्रमण किया। अर्जुन ने भूरिश्रवा, दुर्योधन, अश्वत्थामा से युद्ध तथा अनेक महारथियों का वध किया। अर्जुन की ध्वजा पर एक वानर का चिह्न था जिसकी पूँछ और मुख सिंह के समान थे। युधिष्ठिर ने पाञ्चजन्य की ध्वनि को सुनकर समझा कि अर्जुन की कुशल नहीं है। ऐसा विचार कर युधिष्ठिर का हृदय व्याकुल हो उठा और उन्होंने सात्यकि से अर्जुन के सहायतार्थ जाने का आग्रह किया। अर्जुन ने युधिष्ठिर से सात्यकि के गुणों का वर्णन करते हुये कहा था कि 'यदि श्रीकृष्ण इत्यादि भी हमलोगों की सहायता के लिये तत्पर रहेंगे तो भी मैं सात्यकि को अपनी सहायता के कार्य में नियुक्त करूँगा क्योंकि मेरी दृष्टि में दूसरा कोई सात्यकि के समान नहीं है।' युधिष्ठिर ने स्वयं भी तीर्थों का विचरण करते हुये द्वारका में अर्जुन के प्रति सात्यकि के भक्तिभाव को देखा था। अतः युधिष्ठिर ने बार-बार आग्रह करते हुये सात्यकि से अर्जुन की सहायता करने के लिये कहा। सात्यकि ने युधिष्ठिर के आग्रह को सुनकर कहा, 'श्रीकृष्ण तथा अर्जुन ने युद्ध के लिये जाते समय मुझसे यह कहा था कि मैं सावधानी के साथ आपकी रक्षा करता रहूँ। अतः मैं अर्जुन की रक्षार्थ जाने में संकोच का अनुभव कर रहा हूँ।' सात्यकि ने बताया कि सौवीर, सिन्धु, तथा पुरुदेश के योद्धा, और देवता, असुर, मनुष्य, राक्षस, किन्नर, तथा महान् सर्पगणों सहित यह समस्त पृथिवी भी यदि युद्ध के लिये उद्यत हो जाँय तो भी सब मिलकर युद्धस्थल में अर्जुन का सामना नहीं कर सकते। फिर भी, सात्यकि अन्त में युधिष्ठिर की आज्ञा मानने के लिये तैयार हो गये। सात्यकि ने बताया कि अर्जुन उस समय तीन योजन दूर चले गये हैं, किन्तु वे (सात्यकि) सुदृढ़ हृदय से अर्जुन के स्थान पर अवश्य पहुँच जायेंगे। सात्यकि ने युधिष्ठिर से कहा, 'आप जो सहस्रों हाथियों की सेना देखते हैं उसका नाम अञ्जनक कुल है। इन पराक्रमी गजराजों पर प्रहार-कुशल और युद्ध-निपुण अनेक म्लेच्छ योद्धा बैठे हैं। इन गजारोहियों की पराजय का वध के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं है। आप जिन सहस्रों रथियों को देख रहे हैं वे रुक्मरथ नामक महारथी राजकुमार हैं। ये सभी शूर और अस्त्र-शस्त्रों के सञ्चालनमें पारङ्गत हैं। यद्यपि ये सब योद्धा कर्ण के ही आदेश से अर्जुन की ओर से इधर लौट आये हैं और मुझ से युद्ध करने की प्रतीक्षा कर रहे हैं तथापि मैं इन सबको पराजित करता हुआ अर्जुन के पास अवश्य पहुँचूँगा।' इन शब्दों के पश्चात् सात्यकि ने रथारूढ़ होकर युधिष्ठिर से विदा ली। सात्यकि के चले जाने पर जब कुछ समय तक अर्जुन और सात्यकि का समाचार न मिला तब पुनः चिन्तित होकर युधिष्ठिर ने भीमसेन को उन लोगों के पास भेजा। भीमसेन शत्रुसेना का भेदन करते हुये अर्जुन के पास पहुँच गये और तीव्र गर्जना के साथ अर्जुन को अपने पहुँचने का समाचार दिया। अर्जुन और कृष्ण ने भी गर्जन के द्वारा भीमसेन का प्रत्युत्तर दिया। युधिष्ठिर समझ गये कि सब कुशल है, और अर्जुन के पराक्रम का स्मरण करने लगे। युद्ध में युधामन्यु और उत्तमौजस् ने अर्जुन पर आक्रमण किया। कर्ण ने भीम पर आक्रमण किया जिससे कृष्ण और अर्जुन को भीम के सम्बन्ध में चिन्ता होने लगी; परन्तु भीम ने अपने पराक्रम से अर्जुन आदि को हर्षित कर दिया। शस्त्र समाप्त हो जाने पर भीमसेन कर्ण के सामने से भाग आये और अर्जुन द्वारा मारे गये हाथियों के शरीर से अपनी रक्षा करने लगे। अर्जुन की प्रतिज्ञा का स्मरण करके भीम ने कर्ण का वध नहीं किया, और कर्ण ने भी कुन्ती को दिये अपने वचन का स्मरण करके भीम का वध नहीं किया। तदुपरान्त अर्जुन ने कर्ण और उसके बाद अश्वत्थामा को युद्ध-क्षेत्र से भगा दिया। सात्यकि ने दुःशासन के अश्वों को मार डाला जिससे कृष्ण और अर्जुन को अत्यन्त हर्ष हुआ। युधिष्ठिर की चिन्ता करते हुये अर्जुन के पास सात्यकि ने आकर कुशल समाचार सुनाया। जब भूरिश्रवा के प्रहार से सात्यकि मूर्च्छित हो गये तब कृष्ण के आदेश से अर्जुन ने उनका एक हाथ काट डाला। इस पर भूरिश्रवा ने अर्जुन को ताड़ना दी किन्तु अर्जुन ने अपने कार्य को उचित बताया। भूरिश्रवा ने अर्जुन के तर्कों को स्वीकार किया जिस पर श्रीकृष्ण और अर्जुन ने उसे आशीर्वाद दिये। भूरिश्रवा ने 'प्राय' (विस्तृत विवरण दिया गया है) में मृत्यु को प्राप्त करने की इच्छा प्रगट की। श्रीकृष्ण इत्यादि के विपरीत भी सात्यकि ने 'प्राय' में बैठे हुये भूरिश्रवा का वध कर दिया। जब अर्जुन जयद्रथ के रथ की ओर बढ़े तब दुर्योधन ने उनका सामना किया। दुर्योधन ने जयद्रथ की रक्षा करने के लिये कर्ण को सहमत कर लिया। अर्जुन ने कर्ण को रथ, अश्व, और सारथि-विहीन कर दिया। वरुणास्त्र से अर्जुन ने भयंकर संहार किया। अर्जुन ने ऐन्द्रास्त्र का भी प्रयोग किया। अर्जुन ने जयद्रथ के ध्वज को काट कर उसके सारथि का भी वध कर दिया। तब छः महारथियों ने जयद्रथ को अपने बीच में घेर लिया। श्रीकृष्ण ने अपनी माया से सूर्य को आच्छादित कर दिया जिससे अर्जुन के अतिरिक्त सब लोग यह समझने लगे कि सूर्यास्त हो गया है। श्रीकृष्ण ने तब अर्जुन से निर्विलम्ब जयद्रथ का वध कर देने के लिये कहा। अर्जुन ने इतना भयंकर नरसंहार आरम्भ किया कि समस्त योद्धागण जयद्रथ को छोड़कर भय से भाग गये। तब श्रीकृष्ण ने अर्जुन से पुनः जयद्रथ का सर काटने के लिये कहा। सामन्त-पञ्चक के बाहर तपस्या में रत जयद्रथ के पिता वृद्धक्षत्र के शाप का स्मरण दिलाते हुये श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा कि वे जयद्रथ के सर को इस प्रकार काटें कि वह सर वृद्धक्षत्र की गोद में ही गिरे अन्यथा स्वयं अर्जुन का सर सौ टुकड़ों में छिन्न-भिन्न हो जायगा। अर्जुन ने यही किया और जयद्रथ का सर वृद्धक्षत्र की गोद में गिरा जिससे घबड़ाकर उठते हुये वृद्धक्षत्र की गोद से जयद्रथ का सर भूमि पर गिर पड़ा और फलस्वरूप वृद्धक्षत्र का सर सौ टुकड़ों में विभक्त हो गया। तब श्रीकृष्ण ने माया से रचित अन्धकार को समाप्त कर दिया। कृष्ण और अर्जुन ने अपने-अपने शंख बजाये। अर्जुन ने अनेक महारथियों से युद्ध करते हुये कृपाचार्य, अश्वत्थामा और कर्ण का सामना किया। किन्तु श्रीकृष्ण ने अर्जुन को कर्ण से बचने के लिये कहा, क्योंकि उसके पास अब भी इन्द्र द्वारा प्रदत्त ब्रह्मास्त्र वर्त्तमान था। संजय ने कहा कि श्रीकृष्ण, अर्जुन, और सात्यकि यही संसार में तीन महान धनुर्धर हैं। भीमसेन ने स्वयं कर्ण का वध करने के लिये आज्ञा माँगी। अर्जुन ने कर्ण की उपस्थिति में ही उसके पुत्र वृषषेण का वध करने की प्रतिज्ञा की। कृष्ण ने अर्जुन के पराक्रम की सराहना की और अर्जुन ने श्रीकृष्ण को अपनी विजय का श्रेय दिया। श्रीकृष्ण ने अर्जुन से उस दिन के युद्ध का परिणाम बताया। श्रीकृष्ण और अर्जुन ने युधिष्ठिर को बधाई दी। तदुपरान्त भयंकर युद्ध हुआ (७. ८९-१५२ : ८९, २५. ३१; ९०, ३. ४; ९१, १४, २०, २५, ३६, ३४, ४०, ४३; ९२, ५, १०, १२,

२६. २८. ३७. ३९. ४१; ९३, ९. १०. २९. ५५. ६५. ६८; ९४. ५. २८. ३८. ७५; ९९, ३. ९. १२. १८. १९. २९. ३१. ३२. ३५. ४०. ५७–५९; १००, १२. १७; १०१, ४२; १०३, १. ५. ११. २१. ३१. ३५. ३६. ३८. ३९; १०४, १८. २३. २४. ३४; १०५, २९–३१. ३६. ३८; १०६, १; ११०, ४७. ६४. ८८. ९०. ९९. १०१; १११, २६. २७. ३०. ३४. ३६. ४२; ११२, ८०; ११४, २८. ३१. ३२. ३४. ३६. ४६; ११८, १७; ११९, १२. ५५; १२०, १. ३०; १२१, १; १२४, २३. ४६. ४८; १२६, १५. ४१. ४८; १२७, ४८. ४९; १२८, ३१; १२९, ८; १३०, १. ८. २९; १३१, ३. १९; १३७, १५; १३९, ८३. ८९. ११९. १२४; १४०, १९. २५; १४२, ५. ४८. ५०. ५२–५५. ६३. ६९; १४३, १६. ४६. ५५; १४५, २. १२. १५. ३१. ३४. ४५. ४९. ७१. ८०. ८५. ९१; १४६, ४४. ५१. ५७. ५८. ९६. ९९. १२१. १३६. १४३; १४७, २८. ९१; १४८, ७. २२. ३२; १४९, ४६; १५०, ३०; १५१, ७. २१. २४; १५२. ७. १९)।" "चौदहवें दिन की रात्रि का युद्ध : पाञ्चालों और कौरवों में भयंकर युद्ध हुआ। अर्जुन इत्यादि ने द्रोणाचार्य के साथ युद्ध किया। दुर्योधन ने शकुनि से कर्ण को साथ लेकर अर्जुन के विरुद्ध युद्ध करने के लिये कहा। द्रुपद-सेना को, जो द्रोणाचार्य के सामने से भाग गई थी, अर्जुन और भीम ने पुनः प्रोत्साहित करके युद्ध के लिये भेजा कर्ण ने अर्जुन इत्यादि का वध करने की प्रतिज्ञा की। अश्वत्थामा इत्यादि ने कर्ण की रक्षार्थ अर्जुन से युद्ध किया। अर्जुन ने कर्ण के रथाश्वों और सारथि का वध कर दिया। दुर्योधन ने अर्जुन के साथ युद्ध किया। कृपाचार्य ने अर्जुन के विरुद्ध युद्ध के लिये भेजते हुये दुर्योधन को अर्जुन का सामना करने से रोका। अर्जुन ने यौधेयों आदि का वध किया। पाञ्चाल सैनिकों ने पलायन किया किन्तु भीम और अर्जुन के प्रोत्साहन पर पुनः युद्ध के लिये सन्नद्ध हुये। कृष्ण ने युधिष्ठिर से द्रोणाचार्य के साथ युद्ध न करने के लिये कहा। दुर्योधन ने अपनी सेना को मशालें आदि जला लेने के लिये कहा। द्रोणाचार्य ने कहा कि कर्ण अर्जुन आदि को पराजित करेगा। अर्जुन ने कौरवों के विरुद्ध युद्ध किया। अलाम्बुष ने अर्जुन के साथ युद्ध किया और अर्जुन ने उसे पराजित करके द्रोणाचार्य पर आक्रमण किया। युद्ध में अर्जुन के रथ की गड़गड़ाहट और गाण्डीव की टंकार सर्वत्र सुनाई दे रही थी। दुर्योधन ने शकुनि को भी अर्जुन के विरुद्ध युद्ध के लिये भेजा परन्तु अर्जुन ने शकुनि इत्यादि को रथ-विहीन कर दिया। पाण्डव सेना जब पलायन करने लगी तब श्रीकृष्ण और अर्जुन ने उसे प्रोत्साहित किया। कर्ण ने जब धृष्टद्युम्न को रथ-विहीन कर दिया तब वह अर्जुन के रथ पर चढ़ गया। अर्जुन, श्रीकृष्ण और युधिष्ठिर ने कर्ण के साथ वार्तालाप किया। तदुपरान्त अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कर्ण की ओर चलने के लिये कहा। श्रीकृष्ण ने बताया कि अर्जुन और घटोत्कच के अतिरिक्त कोई दूसरा कर्ण का सामना नहीं कर सकता; किन्तु उन्होंने यह भी कहा कि जब तक कर्ण के पास इन्द्र द्वारा प्रदत्त अस्त्र वर्तमान है तब तक अर्जुन को उसका सामना नहीं करना चाहिये। श्रीकृष्ण और अर्जुन ने तब घटोत्कच से कर्ण के विरुद्ध युद्ध करने के लिये कहा। घटोत्कच ने अलाम्बुष का वध और कर्ण के साथ युद्ध किया। कृष्ण ने अर्जुन से द्रोणाचार्य के विरुद्ध युद्ध कर रहे भीमसेन की सहायता के लिये कहा। अर्जुन ने अनेक क्षत्रिय वीरों का संहार किया। कर्ण ने इन्द्र द्वारा प्रदत्त अपने दिव्यास्त्र से घटोत्कच का वध कर दिया। तब श्रीकृष्ण ने हर्षपूर्वक अर्जुन का आलिंगन किया क्योंकि अब कर्ण के पास कोई भी ऐसा अस्त्र नहीं रह गया था जिससे वह अर्जुन का वध कर सकता। कृष्ण की नीति यही थी कि कर्ण उस दिव्यास्त्र से अर्जुन पर कभी प्रहार न कर सके (७. १५३–१८३: १५८, ५३; १५९, ३. ८. ६५; १६५, १६; १६७, १८. ४१. ४२. ४४. ४८; १७०, ५१. ५३; १७१, २५–२७. २९. ३०; १७२, २६; १८१, १; १८२, २९; १८३, ५)।" "चौदहवें दिन की रात्रि के युद्ध का और अधिक विवरण : अर्जुन ने सैनिकों को सो जाने की आज्ञा दी। देवताओं, ऋषियों, और समस्त सैनिकों ने अत्यन्त हर्ष के साथ अर्जुन की इस आज्ञा का स्वागत किया। तदुपरान्त सभी सैनिक विश्राम के लिये सो गये। कौरव सेना ने भी अर्जुन की इस दयालुता की प्रशंसा की। चन्द्रोदय होने पर दोनों सेनायें पुनः निद्रा से उठकर युद्ध-लिप्त हो गईं। द्रोणाचार्य ने अर्जुन के पराक्रम का वर्णन किया; दुर्योधन ने उसी दिन अर्जुन का वध करने की प्रतिज्ञा की; द्रोणाचार्य ने व्यंगपूर्वक कहा कि दुर्योधन और शकुनि को अर्जुन के विरुद्ध युद्ध के लिये अवश्य जाना चाहिये (७. १८४–१८५ : १८४, ३४; १८५, १३. २१. २३. २७. ३०. ३१)।" "युद्ध का पन्द्रहवाँ दिन : तीन प्रहर रात्रि व्यतीत हो जाने के पश्चात् युद्ध एक बार पुनः आरम्भ हुआ; श्री कृष्ण के कहने पर अर्जुन, द्रोणाचार्य और कर्ण के वामभाग में चले गये; भीम ने अर्जुन से अपनी सारी शक्ति लगाने के लिये कहा; अर्जुन ने द्रोण, और कर्ण के साथ युद्ध किया, जिसमें द्रुपद ने अर्जुन की सहायता की; शीघ्र ही सूर्योदय हुआ (७. १८६)।" प्रातःकाल युद्ध पुनः आरम्भ हुआ (७. १८७)। देवों, गन्धर्वों, ऋषियों, सिद्धों, अप्सराओं, यक्षों, और राक्षसों ने द्रोणाचार्य और अर्जुन की प्रशंसा करते हुये कहा कि यह युद्ध न तो मनुष्यों का है, न असुरों का, न राक्षसों का, और न देवताओं अथवा गन्धर्वों का; यह निश्चय ही एक श्रेष्ठ ब्राह्मयुद्ध है (७. १८८)। अर्जुन ने कुरुओं पर, और द्रोणाचार्य ने पाञ्चालों पर आक्रमण किया (७. १८९)। "पाण्डवों को भय हुआ कि कहीं अर्जुन द्रोणाचार्य से युद्ध न करें; श्रीकृष्ण ने अर्जुन से धर्म का परित्याग कर द्रोणाचार्य को किसी व्यक्ति के द्वारा यह समाचार देने के लिये कहा कि अश्वत्थामा युद्ध में मारा गया; अर्जुन ने इसे स्वीकार नहीं किया किन्तु अन्य लोगों ने अपनी सहमति दी; युधिष्ठिर बड़ी कठिनता से इसके लिये सहमत हुये (७. १९०)।" धृष्टद्युम्न और द्रोणाचार्य में भयंकर युद्ध आरम्भ हुआ; सात्यकि ने धृष्टद्युम्न की रक्षा की जिस पर श्रीकृष्ण, अर्जुन, और सिद्धों इत्यादि ने उनकी प्रशंसा की (७. १९१)। धृष्टद्युम्न ने द्रोणाचार्य का मस्तक काट दिया यद्यपि अर्जुन ने इसका निषेध किया था, और अन्य लोगों ने भी इस कार्य की भर्त्सना की (७. १९२)। (७. १८६–१९२; १८६, ६. ९; १८७, २३. २६; १८८, २४. ३२. ३४. ३५, ३७; १८९, ६४; १९०, ८. ९; १९२, ६७)।" "पन्द्रहवें दिन के युद्ध का उत्तरार्द्ध : अश्वत्थामा ने अत्यन्त क्रोध में भरकर कहा कि उनके और अर्जुन के समान शस्त्रविद्या में दूसरा कोई नहीं; अश्वत्थामा ने यह भी कहा कि उनके पास एक ऐसा अस्त्र (नारायणास्त्र) है जिससे अर्जुन इत्यादि भी परिचित नहीं और जिसे नारायण ने उनके पिता को इस आशीर्वाद के साथ प्रदान किया था कि युद्ध में कोई भी उसकी समता नहीं कर सकेगा; नारायण ने यह भी कहा था कि इस अस्त्र का प्रयोग शीघ्रतावश अथवा ऐसे व्यक्तियों पर नहीं करना चाहिये जो रथ और शस्त्रविहीन हो गये हों; अश्वत्थामा ने इसी अस्त्र से पाण्डवों का संहार करने के लिये कहा (७. १९५)।" "प्रकृति में भयंकर अपशकुन दृष्टिगत होने लगे; युधिष्ठिर ने अर्जुन के साथ अश्वत्थामा के सम्बन्ध में वार्तालाप किया और अर्जुन ने अश्वत्थामा की शक्ति का वर्णन करते हुये पाण्डवों द्वारा द्रोणाचार्य के अधर्मपूर्वक वध का उल्लेख किया; अर्जुन ने कहा, 'अब हम लोगों की आयु का अधिकांश भाग व्यतीत हो चुका और अत्यन्त थोड़ा ही शेष रह गया है; इसीसे इस समय हमारी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है और हम लोगों ने यह महान पाप कर डाला; मैंने लोभवश उनके मारे जाने की उपेक्षा कर दी अतः इस पाप के कारण अब मैं नीचे सिर करके नरक में डाला जाऊँगा' (७. १९६)।" भीमसेन ने अर्जुन की भर्त्सना करते हुये इस कार्य का समर्थन किया (७. १९७)। "अर्जुन ने धृष्टद्युम्न की ओर वक्रदृष्टि से देखा; धृष्टद्युम्न ने भूरिश्रवस् का वध करने के कारण सात्यकि पर व्यङ्ग किया; सात्यकि ने कहा कि वे धृष्टद्युम्न का वध कर सकते हैं; धृष्टद्युम्न ने भी सात्यकि का वध करने के लिये भीम से आज्ञा माँगी; कृष्ण और युधिष्ठिर ने उस समय शान्ति स्थापित की (७. १९८)।" "अश्वत्थामा ने नारायणास्त्र

(वर्णन) का आवाहन किया; श्रीकृष्ण ने सभी सैनिकों को अस्त्र रख देने और रथ से नीचे उतर जाने के लिये कहा; किन्तु अकेले भीमसेन ने इस आज्ञा को मानना अस्वीकृत कर दिया। अर्जुन ने कहा कि नारायणास्त्र, सम्बन्धियों, तथा ब्राह्मणों के विरुद्ध अपने गाण्डीव का प्रयोग न करने की उन्होंने प्रतिज्ञा की है। भीम ने अश्वत्थामा पर आक्रमण किया परन्तु नारायणास्त्र की शक्ति के सम्मुख पराजित हो गये (७. १९९)।" "अर्जुन ने भीमसेन को वारुणास्त्र से ठीक दिया और तब उन्होंने तथा श्रीकृष्ण ने बलपूर्वक भीमसेन को रथ से उतार कर शस्त्र त्याग करा दिया जिससे नारायणास्त्र भी शान्त हो गया; नारायणास्त्र का दुवारा प्रयोग नहीं हो सकता था अतः अर्जुन इत्यादि ने अश्वत्थामा से युद्ध किया (७. २००)।" "अर्जुन ने अश्वत्थामा के प्रति कटुवचन का प्रयोग किया यद्यपि दोनों ही एक दूसरे को प्रेम करते थे; अर्जुन, और विशेषकर श्रीकृष्ण से अत्यन्त क्रुद्ध होकर अश्वत्थामा ने जल का स्पर्श करके आग्नेयास्त्र का आवाहन किया जिसके परिणामस्वरूप भयंकर अपशकुन प्रगट हुये तथा पाण्डवसेना का भीषण संहार हुआ; तब अर्जुन ने ब्रह्मास्त्र का आवाहन किया जिससे अन्धकार का विनाश हुआ; पाण्डवों की एक अक्षौहिणी सेना हत हुई और केवल कृष्ण तथा अर्जुन ही आहत होने से बचे रहे; अश्वत्थामा निराश होकर भाग गया और व्यास से मिला; व्यास ने नारायण का इतिहास बताते हुये कहा कि अर्जुन तथा श्रीकृष्ण ही नर तथा नारायण हैं (७. २०१)।" "अर्जुन व्यास से मिले और उनसे उस अदृश व्यक्ति के सम्बन्ध में पूछा जिसने युद्ध में उनकी सहायता की थी; व्यास ने कहा कि वह स्वयं महादेव थे; व्यास ने दक्षयज्ञ तथा त्रिपुरमर्दन की कथा का भी उल्लेख किया। (७. १९३–२०२ : १९३, ६४. ६६; १९५, २४; १९६, ९. २६; १९७, २. ३८. ४२. ४४; १९८, ६; १९९, ५२. ५३; २००, २. १०. ८०; २०१, ३६. ३९. ४३. ५४. ८६; २०२, १५४)।" "द्रोणवध के बाद की रात्रि, सोलहवें दिन के प्रातःकाल, तथा सोलहवें दिन के शेषांश और सत्तरहवें दिन के विवरण : कौरवों ने कर्ण को अपना सेनापति बनाया; कर्ण ने दो दिन तक युद्ध किया और अर्जुन के द्वारा मारा गया। सञ्जय ने धृतराष्ट्र को बताया कि सेनापति बनाये जाने के दूसरे दिन कर्ण अर्जुन के हाथों मारा गया (८. १–९ : ३, २१; ५, १२. ५४. ५७; ९, १८. ६४)।" "युद्ध का सोलहवाँ दिन : द्रोण के वध के बाद कौरव बहुत देर तक अर्जुन तथा अन्य पाण्डवों से युद्ध करते रहे; गोधूलि के समय कौरवगण अपने शिविरों में चले गये, जहाँ उन्होंने रात्रि में आपस में मन्त्रणा करने के पश्चात् कर्ण को सेनापति बनाया (८. १०)।" "युधिष्ठिर ने अर्जुन से पाण्डवसेना का व्यूह बनाने तथा कर्ण का वध करने के लिये कहा; पाण्डवसेना ने अर्द्धचन्द्राकार व्यूह बनाया, जिसके मध्य में अर्जुन स्थित हुये और युधामन्यु तथा उत्तमौजस् अर्जुन के रथ के पहियों के रक्षक बने (८. ११)।" अर्जुन ने संशप्तकों (८. १३. १६) और अश्वत्थामा (८. १६) के साथ युद्ध किया। कलिङ्ग, वङ्ग, और निषाद योद्धाओं ने गजसेना के साथ अर्जुन पर आक्रमण किया, किन्तु अर्जुन ने उन्हें छिन्न-भिन्न कर दिया; श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा कि वे अश्वत्थामा को न छोड़ें, किन्तु अन्ततोगत्वा अश्वत्थामा को उनके घोड़े दूर भगा ले गये; तब श्रीकृष्ण और अर्जुन संशप्तकों की ओर बढ़े (८. १७)। कृष्ण के कहने पर अर्जुन ने मगध-योद्धा दण्डधार का वध किया जो एक हाथी पर बैठा था, और उसके बाद उसके भ्राता दण्ड का; तदुपरान्त अर्जुन एक बार पुनः संशप्तकों की ओर बढ़े (८. १८)। अर्जुन ने संशप्तकों का संहार करते हुये उग्रायुध के पुत्र का भी वध किया; श्रीकृष्ण के कहने पर अर्जुन ने शेष संशप्तकों को भी तत्काल पराजित किया जिससे कर्णवध में अधिक विलम्ब न हो (८. १९)। कृष्ण ने अर्जुन से कहा कि वे युधिष्ठिर को नहीं देख पा रहे हैं (८. २१)। अर्जुन ने त्रिगर्तों इत्यादि के साथ युद्ध करते हुये राजा शत्रुञ्जय, सुश्रुत के पुत्र, और चन्द्रदेव का भी वध किया; राजा सत्यसेन ने श्रीकृष्ण को घायल किया किन्तु अर्जुन ने उनका वध कर दिया; अर्जुन ने तब चित्रवर्मन् और मित्रसेन इत्यादि का वध करते हुये सुशर्मन् को भी आहत किया; समस्त संशप्तकों ने अर्जुन पर एक साथ आक्रमण किया, किन्तु अर्जुन द्वारा ऐन्द्रास्त्र का आवाहन करने पर समस्त सेना भाग खड़ी हुई (८. २१)। अपराह्न में कर्ण ने पाञ्चालों का तथा अर्जुन ने त्रिगर्तों इत्यादि का संहार किया (८. २८)। अपराह्न में दैनिक जप तथा भव की उपासना करने के पश्चात् श्रीकृष्ण तथा अर्जुन ने कुरुओं का विनाश किया; अर्जुन ने दुर्योधन, अश्वत्थामा, और कर्ण के साथ युद्ध किया; सूर्यास्त के समय दोनों ही सेनायें अपने-अपने शिविर में चली आईं, और तब रुद्र के क्रीड़ास्थल के सदृश उस भयंकर युद्धभूमि में राक्षस, पिशाच और हिंसक जीवजन्तु जा पहुँचे (८. ३०)। धृतराष्ट्र ने अर्जुन के पराक्रम की सराहना की; कर्ण ने दुर्योधन को दूसरे दिन अर्जुन का वध कर देने का आश्वासन दिया, और प्रातःकाल भी उसने अपनी प्रतिज्ञा को दुहराते हुये कहा कि 'श्रीकृष्ण के साथ होने, तथा अग्नि द्वारा प्रदत्त स्वर्णभूषित दिव्य रथ, मन के समान वेगशाली अश्व, और दिव्यध्वज के कारण ही अर्जुन मुझ से श्रेष्ठ हैं'; अतः कर्ण ने शल्य को, जो कि श्रीकृष्ण से भी श्रेष्ठ थे, अपने सारथि के रूप में माँगा (८. ३१)। (८. १०–३२ : ११, ३१; १६, १. २. ७. ९. १२. १८. १९. २४. ३०–३३; १७, ३. ५–७. १५. १६. १८. २६; १८, २. ९. १०. १२. २३; १९, ५. ८. ९. ११. १९. २१. ५२; २०, ३. ५; २१, १. ४; २६, १७; २७, ५. ६; ३०, १३. १५. १९. २३. ३३. ४१; ३१, १. ९. ३६. ३९. ४५. ४८. ६१. ६५; ३२, १७. २१)।" "दुर्योधन ने, यह बताते हुये कहा कि उसने, ब्रह्मा जिस प्रकार रुद्र के और श्रीकृष्ण अर्जुन के सारथि बने, शल्य को कर्ण का सारथि बनने तथा अर्जुन के वध के बाद युद्ध करने के लिये सहमत कर लिया है (८. ३५)।" "प्रातःकाल होने पर जब दुर्योधन ने शल्य को कर्ण का सारथि बनने के लिये सहमत कर लिया, तब कर्ण ने शल्य से अपने रथ के घोड़ों को सम्हालने के लिये कहा जिससे वह अर्जुन का वध कर सके (८. ३६)।" कर्ण की अहंकारोक्तियों पर शल्य ने उसका उपहास करते हुये अर्जुन की प्रशंसा की; अपने रथ पर बैठकर कर्ण ने अर्जुन के सम्बन्ध में पूछा (८. ३७)। कर्ण ने प्रत्येक पाण्डव सैनिक से यह कहा कि जो उसे अर्जुन का पता बतायेगा उसको मुह माँगा धन दिया जायगा (७. ३८)। शल्य ने कर्ण से कहा कि बहुत खोजने का प्रयास किये बिना ही वह शीघ्र ही अर्जुन को देखेगा; शल्य ने कर्ण से अर्जुन का सामना न करने के लिये भी कहा (८. ३९)। "कर्ण ने कहा कि वह श्रीकृष्ण और अर्जुन को जानते हुये भी उनसे भयभीत नहीं है, तथा परशुराम के शाप के विपरीत भी वह अर्जुन का वध करेगा; कर्ण ने यह भी कहा : 'मैं युद्ध में अजेय तथा असीम शक्तिशाली ब्रह्मास्त्र का मन ही मन स्मरण करके विजय के लिये अर्जुन पर प्रहार करूँगा, और यदि मेरे रथ का पहिया किसी विषमस्थान में न फँस गया तो इस अस्त्र से अर्जुन रणभूमि में जीवित नहीं बच सकता; मुझे केवल विजय नामक ब्राह्मण के उस शाप का ही भय है जो उसने मुझे दिया था, और जिसके अनुसार युद्ध करते समय मेरे रथ का पहिया गड्ढे में फँस सकता है'; (८. ४२)। (८. ३६–४५ : ३६, १९; ३७, १६. २२. २९. ३४. ३५. ३९; ३८, ४–६. ८. ११. १४. १६. १९. २१; ३९, ११. १४. १६–१८. २६; ४०, ३. १४; ४१, ८४. ८६. ८७; ४२; ४५, ३९)।" "युद्ध का सत्तरहवाँ दिन : युधिष्ठिर ने अर्जुन से कौरव-सेना की व्यूह-रचना के सम्बन्ध में बताते हुये कर्ण के साथ युद्ध करने के लिये कहा; शल्य ने कर्ण को अर्जुन का रथ दिखाते हुये कहा, 'तुम जिसे बार-बार पूछ रहे थे वही अर्जुन शत्रुओं का संहार करते हुये अपने रथ के साथ आ पहुँचे; वेदमंत्रों द्वारा प्रज्वलित और सर्वप्रथम प्रगट हुये वैश्वानर अग्नि अर्जुन के उस दिव्य रथ के अश्व बने हुये हैं'। जो प्राचीन काल में क्रमशः ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्र और वरुण की सवारी में आ चुका था उसी आदि रथ पर बैठकर श्रीकृष्ण और अर्जुन शत्रुओं की ओर बढ़ने लगे। संशप्तकों

ने अर्जुन का वध करने की धमकी दी; शल्य ने कर्ण से अर्जुन का वध करने की इच्छा का परित्याग करने के लिये कहा (८. ४६)। अर्जुन ने अपनी सेना को धृष्टद्युम्न के नेतृत्व में व्यवस्थित किया; धृष्टद्युम्न की सहायता के लिये द्रौपदेय योद्धा वहाँ उपस्थित थे; अर्जुन ने संशप्तकों के साथ युद्ध किया (८. ४७)।" अर्जुन ने संशप्तकों इत्यादि और सुशर्मन् के साथ युद्ध किया। अर्जुन ने बार-बार नागास्त्र का प्रयोग किया, जिससे उत्पन्न नागों के द्वारा संशप्तकों की सेना पाशबद्ध हो जाने के कारण छिन्न-भिन्न हो गई; सुशर्मन् ने सौपर्णास्त्र का आवाहन किया जिससे अनेक पक्षी उत्पन्न होकर नागों का भक्षण करने लगे; तब अर्जुन ने ऐन्द्रास्त्र का आवाहन किया और अत्यन्त भयंकर युद्ध होने लगा (८. ५३)।" "अर्जुन ने संशप्तकों के साथ युद्ध किया और कर्ण का पराक्रम देखने के लिये श्रीकृष्ण से कहा; मध्याह्नकाल में संशप्तकों के पराजित होने पर अर्जुन ने कौरवसेना के भीतर प्रवेश किया। दुर्योधन ने एक बार पुनः अर्जुन के विरुद्ध संशप्तकों को प्रोत्साहित किया। दस सहस्र क्षत्रियों का वध करने के पश्चात् अर्जुन संशप्तकों की सेना के उस छोर पर पहुँच गये जिसकी काम्बोजगण रक्षा कर रहे थे; अर्जुन ने काम्बोजराज सुदक्षिण के अनुज का वध किया; अर्जुन ने अश्वत्थामा के साथ युद्ध किया; उस समय वहाँ सिद्ध और चारण आदि उपस्थित हुये। श्रीकृष्ण ने अर्जुन से अश्वत्थामा को न छोड़ने के लिये कहा, किन्तु मूर्च्छित अश्वत्थामा को उनका सारथि दूर भगा ले गया; अर्जुन ने कौरवसेना का संहार किया (८. ५६)।" अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा कि पाण्डवसेना कर्ण के सम्मुख पलायन कर रही है और युधिष्ठिर भी कहीं दिखाई नहीं देते; अर्जुन युधिष्ठिर की ओर गये; श्रीकृष्ण ने अर्जुन से युद्धभूमि का वर्णन किया; एक भयंकर युद्ध आरम्भ हुआ (८. ५८)। उस युद्ध में संशप्तकों में से थोड़े से लोग ही मारे जाने से बच सके; अश्वत्थामा ने धृष्टद्युम्न पर आक्रमण किया परन्तु अर्जुन ने उनकी रक्षा की; तदुपरान्त अर्जुन संशप्तकों की ओर बढ़े (८. ५९)। "कृष्ण ने अर्जुन से कहा कि अनेक धृतराष्ट्र-पुत्रों के आक्रमण के कारण युधिष्ठिर संकट में हैं; कर्ण भी शीघ्र ही दुर्योधन से रक्षित होकर अर्जुन से युद्ध के लिये आयेगा, अतः उसका वध होना चाहिये। तब अर्जुन ने अपने शेष शत्रुओं का विनाश आरम्भ किया और संशप्तक सैनिक वहाँ से भाग निकले (८. ६०)।" अर्जुन ने अश्वत्थामा के साथ युद्ध किया और कर्ण के सम्मुख आये (८. ६१–६२)। शल्य ने कर्ण को अर्जुन के साथ युद्ध करने के लिये कहते हुये अर्जुन के पराक्रम का वर्णन किया (८. ६३)। "अर्जुन ने अश्वत्थामा के साथ युद्ध किया; अश्वत्थामा ने ऐन्द्रास्त्र का प्रयोग किया किन्तु अर्जुन ने उसका इन्द्र द्वारा निर्मित एक शक्तिशाली अस्त्र से निराकरण कर दिया; अन्त में अश्वत्थामा के घोड़े उसे दूर भगा ले गये; सृञ्जयगण, अर्जुन और श्रीकृष्ण के पास आये; अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कर्ण के सम्बन्ध में कहा किन्तु श्रीकृष्ण ने सर्वप्रथम युधिष्ठिर को ढूँढ़ने के लिये कहा (८. ६४)।" अर्जुन ने भीम से मिलकर युधिष्ठिर का समाचार प्राप्त करने के लिये कहा, किन्तु अन्त में भीमसेन को ही संशप्तकों के साथ युद्ध का भार सौंप कर श्रीकृष्ण और अर्जुन स्वयं युधिष्ठिर के पास गये; इन लोगों ने देखा कि युधिष्ठिर एक शय्या पर पड़े हुये हैं (८. ६५)। अर्जुन ने उसी दिन कर्ण तथा अन्य समस्त शत्रुओं का वध करने की प्रतिज्ञा की (८. ६७)। युधिष्ठिर ने उस समय भीम को युद्धभूमि में अकेला छोड़कर चले आने पर अर्जुन की अनेक बार भर्त्सना करते हुये गाण्डीव धनुष किसी और को दे देने के लिये कहा (८. ६८)। "युधिष्ठिर के ऐसा कहने पर अर्जुन ने अत्यन्त क्रोध में आकर युधिष्ठिर का वध कर डालने के लिये अपनी तलवार खींच ली, क्योंकि उन्होंने किसी भी ऐसे व्यक्ति का वध कर डालने की प्रतिज्ञा कर रक्खी थी जो उनसे गाण्डीव धनुष किसी अन्य को दे देनेके लिये कहे; कृष्ण ने तब अर्जुन को सत्य सम्बन्धी उपदेश दिया, किन्तु अर्जुन अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहे। श्रीकृष्ण ने कहा कि 'तू' कहकर अपमानपूर्वक सम्बोधित करने मात्र से यह माना जा सकता है कि अर्जुन ने युधिष्ठिर का वध कर दिया (८. ६९)।" "श्रीकृष्ण के कहने पर अर्जुन ने एक लम्बे भाषण द्वारा युधिष्ठिर का अपमान किया और अन्त में दुःखी होकर स्वयं अपना सर काट डालने की इच्छा प्रकट की; तब श्रीकृष्ण ने अर्जुन से आत्म-प्रशंसा करने के लिये कहा, क्योंकि आत्म-प्रशंसा आत्म-विश्वास के समान ही है; आत्म-प्रशंसा करते हुये अर्जुन ने युधिष्ठिर से क्षमा मांगी और कर्ण का वध करके भीम को बचाने की प्रतिज्ञा की; श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर को स्वयं अपने तथा अर्जुन को क्षमा कर देने को कहा (८. ७०)।" इस विषय पर श्रीकृष्ण, अर्जुन, और युधिष्ठिर के सम्भाषण (८. ७१)। युधिष्ठिर की आज्ञा लेकर अर्जुन कर्ण का वध करने के लिये चले; मार्ग में श्रीकृष्ण ने उनको प्रोत्साहित किया (८. ७२)। अर्जुन ने प्रसन्नतापूर्वक कृष्ण को उत्तर दिया; सञ्जय ने अर्जुन द्वारा शत्रुसेना के वध का वर्णन किया (८. ७४–७५)। भीम ने अपने सारथि विशोक से कहा कि उन्हें युधिष्ठिर और अर्जुन के सम्बन्ध में चिन्ता हो रही है; विशोक ने भीम को बताया कि अर्जुन युद्ध के लिये लौट रहे हैं (८. ७६)। अर्जुन और भीम ने कौरव सेना पर आक्रमण किया (८. ७७)। अर्जुन ने रक्त की धारा बहा दी; अर्जुन के आग्रह पर श्रीकृष्ण उन्हें कर्ण के सम्मुख लाये; दुर्योधन ने अर्जुन पर आक्रमण किया; अर्जुन ने अश्वत्थामा, कृपाचार्य और कृतवर्मा को पराजित किया; शिखण्डिन् आदि ने अर्जुन की सहायता करते हुये शत्रुसेना को रोका (८. ७९)। कर्ण को छोड़कर अर्जुन भीम की रक्षा के लिये गये और उन्होंने भीम को युधिष्ठिर का कुशल समाचार दिया; उन्होंने धृतराष्ट्र के दस पुत्रों का वध किया (८. ८०)। जब अर्जुन कर्ण के रथ की ओर बढ़ रहे थे तब नब्बे संशप्तकों ने उन पर आक्रमण किया, जिनका अर्जुन ने वध कर दिया; इसी प्रकार अर्जुन ने अनेक कौरवों तथा १३०० गजारोही म्लेच्छों का भी वध किया; भीम भी अर्जुन की सहायतार्थ आये और कुछ बचे हुये कौरवों का वध कर दिया; तदुपरान्त भीम अर्जुन के पीछे चलने लगे (८. ८१)। कृष्ण ने अर्जुन से कर्ण का वध करने के लिये कहा, और अर्जुन भीमसेन के साथ चले (८. ८२)। भीम ने कृष्ण और अर्जुन को सम्बोधित तथा शीघ्र ही दुर्योधन का वध करने की प्रतिज्ञा करते हुये दुःशासन का रक्तपान किया (८. ८३)। भीम तथा नकुल के कहने पर अर्जुन वृषभसेन की ओर बढ़े (८. ८४)। अर्जुन ने कर्ण के पुत्र वृषभसेन का वध करते हुये कर्ण के वधकी भी धमकी दी और कहा कि भीमसेन दुर्योधन का वध कर डालेंगे; अर्जुन ने कर्ण पर आक्रमण किया (८. ८५)। कृष्ण और अर्जुन का संवाद (८. ८६)। अर्जुन और कर्ण का वर्णन; सञ्जय ने कहा कि उस समय अन्तरिक्ष में स्थित समस्त भूतों में कर्ण और अर्जुन की जय-पराजय को लेकर परस्पर आक्षेपयुक्त विवाद और मतभेद उत्पन्न हो गया; द्यौस् कर्ण की और देवी पृथिवी अर्जुन की विजय चाहने लगीं; पर्वत, समुद्र, नदियाँ, वृक्ष तथा ओषधियों ने अर्जुन का पक्ष लिया, जब कि असुर, यातुधान और गुह्यक कर्ण के पक्ष में आ गये; मुनि, चारण, सिद्ध, गरुड़, पक्षी, रत्न, निधियाँ, वेद, उपवेद, वासुकि, चित्रसेन, तक्षक, मणिक, सर्पगण, वंशजों सहित कद्रु की सन्तानें, ऐरावत आदि, वसु और मरुद्गण, साध्य, रुद्र, विश्वेदेव, अश्विनीकुमार, अग्नि, इन्द्र, सोम, पवन और दसों दिशायें अर्जुन के पक्ष में हो गये, जब कि छोटे-छोटे सर्प, इन्द्र के अतिरिक्त अन्य आदित्यगण, वैश्य, शूद्र, सूत तथा संकर जाति के लोग कर्ण को अपनाने लगे; इसी प्रकार देवता, पितर, यम, कुबेर आदि अर्जुन के, और प्रेत, पिशाच तथा राक्षस आदि कर्ण के पक्ष में हो गये; उस समय ये सब लोग विचित्र एवं गुणवान विमानों पर बैठकर कर्ण और अर्जुन का द्वैरथ युद्ध देखने के लिये आये; देव, दानव, गन्धर्व, नाग, यक्ष, पक्षी, महर्षि, पितर, तप, विद्या तथा ओषधियाँ आदि अन्तरिक्ष में स्थित हुये; जब सूर्य अपने पुत्र कर्ण की, और इन्द्र अपने पुत्र अर्जुन की विजय की कामना करने लगे तब देवता और असुरों में भी वहाँ दो पक्ष हो गये; देवताओं ने ब्रह्मा से कहा कि युद्ध में कर्ण और अर्जुन दोनों की सफलता

समान रूप से होनी चाहिये, जब कि इन्द्र ने श्रीकृष्ण और अर्जुन की विजय के लिये कहा; ब्रह्मा और शिव ने कहा कि अर्जुन और कृष्ण की ही विजय निश्चित है, किन्तु कर्ण भी द्रोणाचार्य और भीष्म के साथ वसुओं और मरुद्गणों के लोक में जायगा अथवा स्वर्गलोक ही प्राप्त करेगा; देवाधिदेव ब्रह्मा और शिव के ऐसा कहने पर इन्द्र ने सम्पूर्ण प्राणियों को बुलाकर इन दोनों की आज्ञा सुनाई; कर्ण और अर्जुन के रथों का वर्णन करते हुये कहा गया है कि अर्जुन के ध्वज में स्थित वानर ने कर्ण के ध्वज के हाथी की सांकल पर आक्रमण किया; भगवान श्रीकृष्ण और शल्य ने एक दूसरे की ओर तीव्र नेत्रों से देखा; इसी प्रकार कर्ण और शल्य ने भी एक दूसरे को देखा; शल्य ने कहा कि यदि कर्ण का वध हो जाय तो वे श्रीकृष्ण और अर्जुन दोनों का वध कर डालेंगे; श्रीकृष्ण ने कहा कि कर्ण अर्जुन का वध नहीं कर सकता, क्योंकि अन्यथा सम्पूर्ण लोकों को विनाश से बचाने के लिये वे स्वयं कर्ण और शल्य का वध कर देंगे; अर्जुन ने कहा कि उस दिन कर्ण की पत्नियाँ अवश्य विधवा हो जायेंगी (८. ८७)।" उस समय आकाश में देवता, नाग, असुर, सिद्ध, यक्ष, गन्धर्व, राक्षस, अप्सराओं के समुदाय, ब्रह्मर्षि, राजर्षि और गरुड़, सभी उपस्थित थे; दोनों का युद्ध आरम्भ हुआ और अर्जुन ने दुर्योधन इत्यादि को पराजित किया (८. ८८)।" "अर्जुन और कर्ण के युद्ध का वर्णन : "अर्जुन ने आग्नेयास्त्र का प्रयोग किया, जिसका कर्ण ने वारुणास्त्र द्वारा मेघ उत्पन्न करके निराकरण कर दिया, किन्तु अर्जुन ने भी वायव्यास्त्र द्वारा कर्ण के वारुणास्त्र का निराकरण किया; अर्जुन ने ऐन्द्रास्त्र तथा कर्ण ने भार्गवास्त्र का प्रयोग किया; कर्ण द्वारा अर्जुन के अस्त्रों का निराकरण देखकर भीम और कृष्ण ने अर्जुन से और अधिक बलप्रयोग के लिये कहा; ब्रह्मा की स्तुति करके अर्जुन ने तब उस ब्रह्मास्त्र का आवाहन किया, जिसका केवल मन के द्वारा ही व्यवहार हो सकता था, किन्तु कर्ण ने इसका भी निराकरण कर दिया। भीम के कहने पर अर्जुन ने एक दूसरे ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया जिससे कौरवसेना का भयंकर संहार हुआ; अर्जुन ने कर्ण और शल्य पर प्रहार करते हुये सभापति इत्यादि का वध किया; कौरवों ने कर्ण से अर्जुन का वध करने के लिये कहा; युधिष्ठिर भी कर्ण और अर्जुन के इस युद्ध को देखने के लिये उपस्थित हुये; अर्जुन के धनुष की प्रत्यञ्चा टूट गई; कर्ण ने अर्जुन पर बाण मारे; कर्ण ने बाणों के रूप में पाँच सर्पों का व्यवहार किया, परन्तु उनको काटते हुये अर्जुन ने दो सहस्र कौरवों का वध किया; कर्ण को अकेले ही अर्जुन के साथ युद्ध करने के लिये छोड़कर कौरव सेना भाग खड़ी हुई (८. ८९)।" "अश्वसेन नामक नाग कर्ण के तरकस में बाण के रूप में प्रविष्ट हुआ; कर्ण और अर्जुन के इस भयंकर युद्ध को देखकर अप्सराओं ने चमर डुलाकर उन दोनों को चन्दन के जल से सिञ्चित किया; इन्द्र और सूर्य ने भी अपने-अपने करकमलों से उनके मुख पोंछे; तब कर्ण ने अर्जुन को मारने के लिये सुदीर्घकाल से सुरक्षित सर्पमुख बाण द्वारा अर्जुन पर प्रहार करने का निश्चय किया; उस बाण के छूटते ही सम्पूर्ण दिशाओं सहित आकाश जाज्वल्यमान हो उठा और सैकड़ों भयंकर उल्कायें गिरने लगीं; कर्ण को यह ज्ञात नहीं था कि अश्वसेन ही उसके बाण में प्रवेश कर गया है; उस प्रज्वलित बाण को बड़े वेग से आते देख कर श्रीकृष्ण ने अपने उत्तम रथ को तत्काल पैरों से दबाकर पृथिवी में थोड़ा धँसा दिया जिससे वह बाण अर्जुन के उस किरीट में जा लगा जिसे ब्रह्माजी ने तपस्या और प्रयत्न करके स्वयं ही देवराज इन्द्र के लिये निर्मित किया था और जिसे रुद्र आदि भी नष्ट नहीं कर सकते थे; कर्ण ने पुनः उस अस्त्र का प्रयोग नहीं किया; तब उस सर्प ने स्वयं बाण का रूप धारण करके अर्जुन पर आक्रमण किया; श्रीकृष्ण के कहने पर अर्जुन ने उस सर्प को काट डाला, और तब श्रीकृष्ण ने रथ को पुनः ऊपर कर दिया; एक बार जब कर्ण मूर्च्छित हो गया तब उस संकट के समय अर्जुन ने उसे मारने की इच्छा नहीं की, किन्तु श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा कि शत्रु को कभी भी छोड़ना नहीं चाहिये। कर्ण ने ब्रह्मास्त्र का आवाहन किया। अर्जुन ने ऐन्द्रास्त्र का आवाहन किया जिसका कर्ण ने निराकरण कर दिया; श्रीकृष्ण के द्वारा उत्तम अस्त्र छोड़ने का आग्रह करने पर अर्जुन ने भयंकर ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया; कर्ण ने एक के बाद दूसरी अर्जुन के धनुष की बारह प्रत्यञ्चायें काट डालीं; कर्ण को यह पता नहीं था कि अर्जुन के धनुष में १०० प्रत्यञ्चायें हैं; श्रीकृष्ण के द्वारा श्रेष्ठ अस्त्रों का प्रयोग करने के आग्रह पर अर्जुन ने मंत्रों से अभिसन्धानित और रौद्रास्त्र के साथ सम्बद्ध करके एक अन्य दिव्यास्त्र का प्रयोग किया; उसी समय पृथिवी ने कर्ण के रथ के पहियों को अपने गर्भ में फँसा लिया. कर्ण ने अपने रथ के धँसे पहियों को ऊपर उठाने तक अर्जुन से रुकने के लिये कहा (८. ९०)।" "उस समय श्रीकृष्ण ने अर्जुन से दिव्यास्त्र द्वारा कर्ण पर प्रहार करने के लिये कहा; क्रोध से उद्दीप्त अर्जुन के रोम रोम से मानों अग्नि की ज्वालायें प्रगट होने लगीं; कर्ण और अर्जुन दोनों ने ब्रह्मास्त्रों का आवाहन किया; अर्जुन ने आग्नेयास्त्र का प्रयोग किया जिसका कर्ण ने वारुणास्त्र द्वारा चारों ओर अन्धकार उत्पन्न करके निराकरण कर दिया; अर्जुन ने वायव्यास्त्र से कर्ण के वारुणास्त्र का निराकरण किया; कर्ण के एक बाण से विद्ध होकर अर्जुन को चक्कर आ गया; इसी बीच अवसर पाकर कर्ण ने धरती में धंसे रथ के पहियों को निकालने का विचार किया; उसी समय चेतना आते ही अर्जुन ने आञ्जलिकास्त्र निकाला; कृष्ण के कहने पर अर्जुन ने पहले कर्ण के ध्वज पर प्रहार किया और उसके बाद आञ्जलिकास्त्र से उसके मस्तक को काट गिराया (८. ९१)।" अर्जुन ने कौरव महारथियों के साथ युद्ध किया और अपने शंख को बजाया; देव, गन्धर्व, मनुष्य, चारण, महर्षि, यक्ष, तथा बड़े-बड़े नागों ने भी अर्जुन की सराहना की (८. ९४)। "कृष्ण के कहने पर अर्जुन युधिष्ठिर के सम्मुख उपस्थित हुये; युधिष्ठिर ने अर्जुन और श्रीकृष्ण का स्वागत किया, और फिर दोनों को साथ लेकर कर्ण के मृत शरीर को देखने के लिये युद्धभूमि में पधारे (८. ९६)। ८. ४६–९६: ४६, ९. २५. १६. ३०. ३२. ३९. ५५. ७१. ७५. ७७. ७९. ८४; ४७, ३. ८. १०; ५०, २५. ३१; ५३, १२. ३६. ४२; ५६, ८२. ९२. ११०. ११८. १३६; ५७, ९; ५८, १. २. ३८.४२. ४७; ५९, ४७. ५८. ६२; ६०, ६४. ८०. ९०; ६१, १३; ६२, १; ६३, २३; ६४, ३. ५. ९. १६. १७. २६. २७. ५८; ६५, ८–१०. २२; ६६, १. ९. २७; ६८, ७; ६९, ३८. ६७. ८०; ७०, १. २४; ७१, ११; ७२, १३. २२; ७३, १; ७४, ४६. ५८; ७६, २२. ३९. ४०; ७७, १. २. १४–१६. १८. १९. २१; ७९, १. ३२. ३९. ४४. ७२–७४. ७८. ८१. ९१; ८०, २८; ८१, २. २३. २४. ३५. ३७. ३९; ८३, ३९; ८६, २. १७; ८७, १२. ३६. ३८. ४४. ४५. ५०. ५२. ५४. ५८. ५९. ६५. ८९. ९०. १०४. १०७; ८८, १६; ८९, १–९. १४. १६. ३६. ६८; ९०, २. ४. ५. ११–१३. ३६. ३९. ४१. ४४. ४८–५०. ५७. ६०. ६६. ६८. ७३. ७८. ८८. ९१. ९६. १०२. १०७. ११२; ९१, १८. ३३. ५९. ६२. ६६; ९२, १. ८. ११; ९३, १. १८. ३४; ९४, ११. १२. २५. ५३. ६१. ६५; ९५, १४; ९६, ९. ११. १६. २७. ३५. ४६)।" "शल्य को सेनापति बनाया गया (९. १)।" धृतराष्ट्र का विलाप (९. २)। अर्जुन महारथियों की ओर बढ़े और उन्होंने २५,००० पदातियों के साथ युद्ध किया; चेकितान इत्यादि ने अनेक सैनिकों का वध किया, और शेष पर अर्जुन ने आक्रमण किया (९. ३)। सेनाओं ने हिमवत् पर्वत के नीचे रात्रि व्यतीत की (९. ६)। कृष्ण ने कहा कि शल्य भीष्म के समतुल्य और अर्जुन से श्रेष्ठ है (९. ७)। (९. ३–७ : ३, १८. ३४; ४, २१. २२. ४८; ५, १३; ७, ३१)।" "अठारहवें दिन के पूर्वार्द्ध का युद्ध : अर्जुन ने कृतवर्मा और संशप्तकों पर आक्रमण किया (९. ८)। अर्जुन और भीमसेन ने अपने शत्रुओं को मूर्च्छित कर दिया (९. ९)। संशप्तकों का वध करने के पश्चात् अर्जुन ने शल्य का सामना किया (९. १०)। दुर्योधन ने अर्जुन के साथ युद्ध किया (९. ११)। अश्वत्थामा ने अर्जुन के साथ युद्ध किया (९. १२)। अश्वत्थामा और त्रिगर्तों के विरुद्ध युद्ध करते हुये अर्जुन ने

२,००० रथों को विनष्ट किया (९. १४)। श्रीकृष्ण और अर्जुन के देखते-देखते ही कौरवों ने पाण्डवों को पीड़ित किया; अर्जुन ने कृपाचार्य और कृतवर्मन् के साथ युद्ध किया; युधिष्ठिर ने कहा कि अर्जुन को अपनी सेना के पृष्ठभाग की भी रक्षा करनी चाहिये; अर्जुन ने कौरव-सेना का संहार आरम्भ किया (९. १६)। युधिष्ठिर ने एक दिव्यास्त्र द्वारा शल्य का वध किया (९. १७)। अर्जुन इत्यादि ने मद्रकों का संहार आरम्भ किया (९. १८)। मध्याह्न के समय तक धृतराष्ट्र के प्रायः सभी पुत्र युद्धस्थल से पराङ्मुख हो गये; अर्जुन ने रथियों के विरुद्ध युद्ध किया; उत्साहवर्धक भाषण करके दुर्योधन ने एक छोटी सेना तैयार की, जिस पर पाण्डवों तथा विशेष रूप से अर्जुन ने आक्रमण किया (९. १९)। दुर्योधन को छोड़कर उसकी समस्त सेना भाग गई (९. २१)। कुरुओं का विनाश करने की इच्छा से अर्जुन ने कौरवों की क्षति का वर्णन करते हुये श्रीकृष्ण को सम्बोधित किया, और अवशिष्ट कौरव-सेना पर आक्रमण करके उसका भीषण संहार किया (९. २४)। अर्जुन और भीम इत्यादि ने ३,००० हाथियों का वध किया; अर्जुन ने सञ्जय के सैनिकों को पीड़ित किया; भीम और अर्जुन ने गजसेना का संहार किया (९. २५)। "श्रीकृष्ण ने अर्जुन से दुर्योधन की अवशिष्ट सेना को नष्ट करने के लिये कहा; अर्जुन ने अपने रथ पर आरूढ़ होकर सुशर्मन् और शकुनि, तथा त्रिगर्तों के साथ युद्ध करते हुये सत्यकर्मन्, सत्येषु और प्रस्थलराज सुशर्मन् का वध किया; अर्जुन ने सुशर्मन् के ३५ पुत्रों का भी वध किया और उसके बाद भरत-सेना के बचे हुये सैनिकों के साथ युद्ध करने के लिये बढ़े (९. २७)। (९. ८–२८ : ८, ३१; ९, ३६; ११, ३९; १४, १. ४. ६. १०. २६. ३३. ४५–४७; १८, ७; १९, १९; २४, ५४; २५, २७. ५९; २७, २९. ३८. ४३)।" "शकुनि के अनुचरों ने पाण्डवों पर आक्रमण किया; अर्जुन और भीमसेन सहदेव की सहायतार्थ उपस्थित हुये; अर्जुन ने शत्रुओं का वध किया; दुर्योधन अपने मरे हुये घोड़े को छोड़कर और बिना किसी साथी के पैदल ही अपनी गदा लेकर एक सरोवर की ओर भागा; अर्जुन सहित पाण्डवों ने कौरवों के मनोरथ पर पानी फेर दिया; दुर्योधन की सेना में अश्वत्थामा, कृपाचार्य, और कृतवर्मा को छोड़कर कोई भी महारथी नहीं बचा (९. २९)।" सूर्यास्त के समय अर्जुन सरोवर की ओर बढ़े (९. ३०)। "युधिष्ठिर ने दुर्योधन से सरोवर के बाहर आने और युद्ध करने के लिये कहा, परन्तु इसका कोई परिणाम नहीं हुआ (९. ३१)। (९. २९–३१ : २९, २. ३३; ३०, ५२)।" "युधिष्ठिर ने दुर्योधन से कहा कि यदि वह पाण्डवों में से किसी एक का भी वध कर देगा तो वे उसे राजा बना रहने देंगे; भीमसेन ने दुर्योधन के साथ गदायुद्ध करने के लिये कहा (९. ३२; ३३, २. ३३)।" "बलराम, दुर्योधन और भीम के युद्ध को देखने के लिये उपस्थित हुये (९. ३४)।" बलराम के प्रस्ताव के अनुसार भ्राताओं सहित युधिष्ठिर तथा दुर्योधन समन्तपञ्चक की ओर गये (९. ५५)। "अर्जुन ने श्रीकृष्ण से भीम और दुर्योधन के पराक्रमों के सम्बन्ध में पूछा; कृष्ण ने बताया कि धर्म-युद्ध करते हुये भीम दुर्योधन को पराजित करने में कभी भी सफल नहीं हो सकते; भीम को दिखाकर अर्जुन ने स्वयं अपनी जाँघ पर हलका सा प्रहार किया; इस संकेत को समझकर भीम ने अपनी गदा से दुर्योधन की जाँघ पर प्रहार किया (९. ५८)।" "कृष्ण ने अर्जुन से अपना गाण्डीव तथा अक्षय तरकस उतारने और उसके पश्चात् स्वयं भी रथ से नीचे उतर जाने के लिये कहा; तदुपरान्त श्रीकृष्ण भी रथ से उतरे; ध्वज पर आसीन दिव्य वानर भी सहसा अदृश्य हो गया, और तब अश्वों सहित अर्जुन का वह रथ (द्रोण और कर्ण के द्वारा प्रहार किये गये ब्रह्मास्त्र के कारण) जल कर भस्म हो गया। श्रीकृष्ण के कहने पर पाण्डवों और सात्यकि ने शिविर के बाहर ओघवती नदी के तट पर ही रात्रि व्यतीत करने का निश्चय किया। तदुपरान्त इन लोगों ने गान्धारी के क्रोध को शान्त करने और धृतराष्ट्र को सान्त्वना देने के लिये श्रीकृष्ण को हस्तिनापुर भेजा (९. ६२)।" "दुर्योधन ने कृपाचार्य से अश्वत्थामा को कौरवसेना का सेनापति बनाने के लिये कहा; तदुपरान्त दुर्योधन को अकेला छोड़कर अश्वत्थामा और कृपाचार्य ने विदा ली (९. ६५)। (९. ३५–६५ : ५८, १; ६१, २९; ६२, १५. १८)।" "अश्वत्थामा, कृपाचार्य, और कृतवर्मा ने रात्रि के समय पाण्डवों के शिविर में उपस्थित सभी व्यक्तियों का वध कर डाला; तदुपरान्त इन लोगों ने दुर्योधन के पास जाकर इसकी सूचना दी; दुर्योधन की मृत्यु हो गई (१०. १-९ : ४, ३१; ९, ३०)।" "श्रीकृष्ण के साथ पाण्डवगण अश्वत्थामा की खोज में निकले भीमसेन और नकुल के पीछे चले : कृष्ण, अर्जुन, और युधिष्ठिर श्रीकृष्ण के ही रथ पर बैठे थे; अश्वत्थामा ने पाण्डवों के विनाश के लिये एक दिव्यास्त्र छोड़ा (१०. १३)।" श्रीकृष्ण के कहने पर अर्जुन ने ब्रह्मास्त्र छोड़ा; उस समय प्रकृति में अनेक अपशकुन प्रगट हुये और तीनों लोकों की रक्षा के लिये नारद और व्यास इन दोनों अस्त्रों के बीच खड़े हुये (९. १४)। अर्जुन ने अपना अस्त्र वापस ले लिया, किन्तु अश्वत्थामा ऐसा नहीं कर सका; व्यास ने ब्रह्मशिरस् अस्त्र का पहले प्रयोग न करने के लिये अर्जुन की सराहना की (९. १५)। "श्रीकृष्ण ने कहा कि उत्तरा का पुत्र परिक्षित् अब भी जन्म लेगा किन्तु जन्मोपरान्त वे उसे जीवित कर देंगे (१०. १६)। (१०. १०–१८ : १०, ८; १३, ६; १४, १. २; १५, ९. १०. २०)।" "धृतराष्ट्र ने कुरुकुल की महिलाओं के साथ युद्धभूमि में जाने का निश्चय किया (११. १०)। "युधिष्ठिर और उनके भ्राता श्रीकृष्ण को साथ लेकर धृतराष्ट्र से मिलने चले; मार्ग में ये कुरुकुल की विलाप करती महिलाओं से मिले और उसके बाद धृतराष्ट्र का अभिवादन किया; धृतराष्ट्र ने कुछ अनमनस्क भाव से युधिष्ठिर का आलिङ्गन किया और तदुपरान्त भीम की एक लौहप्रतिमा को तोड़ दिया (११. १२)।" "धृतराष्ट्र की आज्ञा से पाण्डवगण श्रीकृष्ण को साथ लेकर गान्धारी से मिलने गये (११. १४)। अर्जुन श्रीकृष्ण के पीछे हो गये (११. १५)। (११. १–१५ : १५, ३१)।" "पाण्डवों, श्रीकृष्ण, तथा कुरुकुल की समस्त महिलाओं को साथ लेकर धृतराष्ट्र युद्धभूमि की ओर चले; पाञ्चाल और कुरुकुल की नारियाँ अत्यन्त शोकाकुल थीं; गान्धारी ने श्रीकृष्ण को शाप दिया (११. १६–२५ : १८, २२; २३, २६; २४, ८. २१)।" "धृतराष्ट्र की आज्ञा से युधिष्ठिर ने सुधर्मा इत्यादि को मृत व्यक्तियों का विधिवत् दाहसंस्कार करने के लिये कहा; इन लोगों ने सब को चिताओं पर रखकर अग्नि-संस्कार किया; तब युधिष्ठिर और धृतराष्ट्र गङ्गातट की ओर गये (११. २६)।" "कुरुकुल की महिलाओं ने अपने मृत सम्बन्धियों के लिये गङ्गातट पर तर्पण आदि किया; अत्यन्त शोकविह्वल होकर कुन्ती ने कर्ण के जन्म की कथा बताते हुये कहा कि अर्जुन ने स्वयं अपने भ्राता का ही वध किया (११. २७, ८)।" "युधिष्ठिर ने अर्जुन के सम्मुख शोक प्रगट किया (१२. १, १३. ३४. ३६. ३९; २, २. १०; ७, २)।" नहुष इत्यादि का उदाहरण देते हुये अर्जुन ने युद्ध का औचित्य बताया तथा सम्पत्ति अर्जित करने की प्रशस्ति करते हुये युधिष्ठिर को सम्बोधित किया (१२. ८, १. ३)। अर्जुन के शब्दों से प्रभावित हुये बिना ही युधिष्ठिर ने सन्यास लेने की इच्छा प्रगट की (१२. ९)। अर्जुन ने शक्र (स्वर्णपक्षी के रूप में) और कुछ उन युवकों के बीच संवाद का वर्णन किया जो सन्यास लेना चाहते थे (१२. ११, १. २७)। अर्जुन ने राजदण्ड धारण करनेवाले की प्रशंसा की (१२. १२, १; १५, १. २)। अर्जुन ने विदेहराज जनक और उनकी महारानी के बीच संवाद का वर्णन किया जिसमें जनक की महारानी ने सन्यास लेकर भिक्षा से जीवन निर्वाह करने की निरर्थकता पर प्रकाश डाला था (१२. १८, १; १८, १. २. ३७)। युधिष्ठिर ने वन की निरर्थकता को बताते हुये अर्जुन को उत्तर दिया (१२. १९, ५. २१)। अर्जुन ने इन्द्र का उदाहरण देते हुये युद्ध में शत्रुओं के संहार को युधिष्ठिर से उचित बताया (१२. २२, १)। योग और सन्यास का जीवन व्यतीत करने की इच्छा रखते हुये युधिष्ठिर ने अर्जुन को उत्तर दिया (१२.

२७, ११)। अर्जुन ने श्रीकृष्ण से युधिष्ठिर का शोक दूर करने के लिये कहा (१२. २९, २. ५)। नारद द्वारा भीष्म से उपदेश प्राप्त करने का आग्रह करने, तथा अर्जुन के कहने पर, युधिष्ठिर अपने भ्राताओं सहित धृतराष्ट्र को आगे करके हस्तिनापुर की ओर चले; उस समय अर्जुन एक अत्यन्त उज्ज्वल छत्र धारण किये हुये थे (१२. ३३, १६; ३७, ३४)। हस्तिनापुर के नागरिकों ने युधिष्ठिर, द्रौपदी, और अर्जुन इत्यादि का स्वागत किया; युधिष्ठिर ने राजभवन में प्रवेश किया; तब ब्राह्मण का वेश बनाकर आये हुये चार्वाक नामक राक्षस को राजभवन में उपस्थित ब्राह्मणों ने अपनी हुङ्कार से नष्ट कर दिया (१२. ३८, ४)। भीम और अर्जुन दोनों युधिष्ठिर के राज्याभिषेक के समय उनके दोनों ओर खड़े हुये (१२. ४०, ३)। अर्जुन को शत्रुसेनाओं से युद्ध करने और दुष्टों को दण्ड देने के लिये नियुक्त किया गया (१२. ४१, १३)। शौरिन् और सात्यकि ने अर्जुन के महल में प्रवेश किया (१२. ४४, २. ९. १५)। श्रीकृष्ण के साथ युधिष्ठिर और अर्जुन एक ही रथ में बैठकर पितामह भीष्म को देखने गये। (१२. ४७, १०५)। कृष्ण और पाण्डव इत्यादि कुरुक्षेत्र की ओर गये—वर्णन (१२. ४८)। पाण्डवों और कृष्ण इत्यादि ने अपने रथों से उतरकर वाणशय्या पर भीष्म को घेरे हुये ऋषियों का अभिवादन किया (१२. ५०)। भीष्म का अभिवादन करने के पश्चात् पाण्डव इत्यादि हस्तिनापुर लौट आये (१२. ५२)। युधिष्ठिर ने अर्जुन से अपना रथ ठीक करने के लिए कहा; पाण्डवगण श्रीकृष्ण के आवास की ओर गये; राजागण भीष्म को देखने गये (१२. ५३, १४. १८)। पाण्डवों ने भीष्म से नीतिशास्त्र का उपदेश देने के लिये कहा (१२. ५४, ५)। अट्ठारह अक्षौहिणी सेना भी अकेले अर्जुन की समता नहीं कर सकती (१२. १५७, १४)। अर्जुन ने धर्म और काम की अपेक्षा धन को ही प्राथमिकता दी (१२. १६७, ११)। वैशम्पायन ने कहा कि अर्जुन के पूछने पर श्रीकृष्ण ने अपने नामों की जो व्युत्पत्तियाँ बताई थीं वे उनका वर्णन करेंगे (१२. ३४१, ५. ८. ५७)। "अग्नि और सोम के पूर्वकाल में एक-योनि होने के सम्बन्ध में अर्जुन के प्रश्न करने पर श्रीकृष्ण ने (गद्य में) देवों इत्यादि की कुछ प्राचीन कथाओं का वर्णन किया। रुद्र और नारायण के युद्ध के सम्बन्ध में अर्जुन के प्रश्न करने पर श्रीकृष्ण ने इस प्रकार कहा : 'महाभारत-युद्ध में जो पुरुष तुम्हारे आगे-आगे चलते थे, उन्हें तुम जटाजूटधारी देवाधिदेव रुद्र समझो; तुमने जिन शत्रुओं को मारा है वे पहले ही रुद्रदेव के हाथ से मार दिये गये थे (१२. ३४२, १. ७९. ११७)।" "जब पाण्डव और कौरव-सेना का युद्ध के लिये सन्नद्ध होने पर अर्जुन को विषाद हुआ था, तब स्वयं श्रीकृष्ण ने उन्हें भक्तिधर्म का उपदेश दिया था (१२. ३४८, ८)।" भीष्म, युद्ध में अर्जुन से पराजित होकर, वाणशय्या पर पड़े हुये अपने मृत्यु के समय की प्रतीक्षा कर रहे थे; उस समय पाण्डव इत्यादि उनकी सेवा कर रहे थे, और वे धर्म और नीति सम्बन्धी उपदेश देते जा रहे थे (१३. २६, २)। "जब युधिष्ठिर और विदुर ने कुरुनन्दन गङ्गापुत्र भीष्म के शव को रेशमी वस्त्रों और पुष्पमालाओं से सुसज्जित करके चिता पर सुलाया तब युयुत्सु ने उनके ऊपर उत्तम छत्र लगाया और भीमसेन तथा अर्जुन श्वेत चमर एवं व्यजन डुलाने लगे; भीष्म का दाह संस्कार करने के पश्चात् पाण्डवगण भागीरथी के तट पर गये और वहाँ सब ने मिलकर भीष्म को विधिवत तिलाञ्जलि दी; उस समय भगवती भागीरथी शोक से विलाप करने लगीं; भागीरथी को सान्त्वना देते हुये श्रीकृष्ण ने कहा कि भीष्म का वध शिखण्डिन् ने नहीं वरन् अर्जुन ने किया है (१३. १६८, १३)।" "जनमेजय के यह पूछने पर कि अपना राज्य पुनः जीत लेने पर श्रीकृष्ण और अर्जुन ने क्या किया, वैशम्पायन ने कहा कि पहले तो श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उनके सम्बन्धियों को मृत हो जाने के कारण सान्त्वना दी और फिर स्वयं द्वारवती जाने की इच्छा प्रगट की; अर्जुन ने दुःख के साथ श्रीकृष्ण को विदा होने की सम्मति दी (१४. १५, २५)।" "शत्रुओं का वध करने के पश्चात् जब श्रीकृष्ण और अर्जुन राजभवन में रह रहे थे तब अर्जुन ने कृष्ण से द्वारका जाने के पूर्व पुनः भगवद्गीता का उपदेश देने के लिये कहा। श्रीकृष्ण को इस बात पर असन्तोष हुआ कि अर्जुन को गीता का उपदेश स्मरण नहीं रहा, तथापि उन्होंने अर्जुन को एक ब्राह्मण से कश्यप द्वारा सुनी गई अनुगीता का उपदेश दिया (१४. १६, १. ४)।" "जब श्रीकृष्ण ब्राह्मणगीता (अनुगीता) का वर्णन कर चुके तब अर्जुन ने उनसे पूछा कि ब्राह्मणी और वह ब्राह्मण अब कहाँ हैं। कृष्ण ने कहा, 'मेरे मन को ही तुम ब्राह्मण समझो और मेरी बुद्धि को ब्राह्मणी; जिसको क्षेत्रज्ञ कहते हैं वह मैं ही हूँ (१४. ३४, ११)।' " अर्जुन द्वारा परमब्रह्म के स्वरूप की व्याख्या करने के निवेदन पर श्रीकृष्ण ने प्राचीनकाल में एक गुरु हूँ, और शिष्य के बीच हुए क्षोभ-विषयक संवाद का वर्णन किया (१४. ३५, १)। "अर्जुन के पूछने पर श्रीकृष्ण ने कहा, 'मैं ही गुरु हूँ और मेरे मन को ही शिष्य समझो; मैं अब अपने पिताजी का दर्शन करना चाहता हूँ, अतः यदि तुम्हारी सम्मति हो तो मैं द्वारका जाऊँ।' अर्जुन ने कहा, 'अब हम लोग यहाँ से हस्तिनापुर चलें, और वहाँ राजा युधिष्ठिर से आज्ञा लेकर आप अपनी पुरी को पधारें।' (१४. ५१, ४५)।" "कृष्ण और अर्जुन ने हस्तिनापुर के लिये प्रस्थान किया; अर्जुन ने श्रीकृष्ण की स्तुति की; हस्तिनापुर पहुँचकर इन लोगों ने धृतराष्ट्र इत्यादि का दर्शन किया; श्रीकृष्ण ने अर्जुन के महल में ही रात्रि व्यतीत की। प्रातःकाल अर्जुन और कृष्ण युधिष्ठिर के पास गये। तदुपरान्त श्रीकृष्ण ने हस्तिनापुर से विदा ली और अर्जुन लौट आये (१४. ५२)।" अर्जुन ने बार-बार श्रीकृष्ण का आलिङ्गन किया; मार्ग में मरुभूमि में श्रीकृष्ण ने उतङ्क का दर्शन किया (१४. ५३)। व्यास ने आकर पृथा, उत्तरा, अर्जुन, और युधिष्ठिर से यह भविष्यवाणी की कि उत्तरा का पुत्र कृष्ण और व्यास द्वारा पुनरुज्जीवित होकर चक्रवर्ती सम्राट बनेगा; अर्जुन को इससे अत्यन्त सान्त्वना मिली (१४. ६२)। युधिष्ठिर ने अपने समस्त भ्राताओं को बुलाकर अश्वमेध यज्ञ सम्पन्न करने तथा मरुत्त का धन प्राप्त करने के लिये कहा; भीमसेन ने शिव का पूजन करने के लिये कहा जिसका अर्जुन इत्यादि ने समर्थन किया (१४. ६३, ४. १७)। पाण्डव इत्यादि मरुत्त का स्वर्ण लाने चले (१४. ६४)। इन लोगों ने शिव इत्यादि का पूजन किया और फिर धन सहित हस्तिनापुर लौटे (१४. ६५)। इसी बीच कृष्ण इत्यादि भी हस्तिनापुर आये; उत्तरा ने परिक्षित् को जन्म दिया जो ब्रह्मास्त्र से पीड़ित होने के कारण चेष्टा-विहीन और मृतवत् उत्पन्न हुये थे (१४. ६६)। चेष्टाहीन परिक्षित् के जन्म पर सुभद्रा का विलाप (१४. ६७)। श्रीकृष्ण का प्रसूतिका-गृह में प्रवेश, उत्तरा का विलाप और अपने पुत्र को जीवित करने के लिये श्रीकृष्ण से प्रार्थना (१४. ६८)। श्रीकृष्ण ने आचमन करके अश्वत्थामा के चलाये हुये ब्रह्मास्त्र को शान्त करते हुये बालक परिक्षित् को जीवित कर दिया (१४. ६९)। जब परिक्षित् एक मास का हुआ तब पाण्डवगण भी मरुत्त के धन के साथ हस्तिनापुर लौटे (१४. ७०)। श्रीकृष्ण ने कहा कि युधिष्ठिर के यज्ञ करने पर भीमसेन, अर्जुन, इत्यादि को भी यज्ञानुष्ठान का फल मिलेगा (१४. ७१, २६)। व्यास के परामर्श के अनुसार अर्जुन अश्व की रक्षा के लिये नियुक्त हुये (१४. ७२, २२)। "युधिष्ठिर ने अर्जुन से कहा कि वे यथाशक्ति सभी राजाओं को क्षमादान देते हुये अश्वमेध यज्ञ के लिये आमन्त्रित करें; गाण्डीव-सहित अर्जुन अश्व के पीछे चले; समस्त हस्तिनापुर के लोग नगर के बाहर तक उनको विदा देने आये; याज्ञवल्क्य के एक शिष्य भी विघ्नों की शान्ति के लिये अर्जुन के साथ गये; इनके अतिरिक्त और भी अनेक वेदों में पारङ्गत ब्राह्मणों और क्षत्रियों ने धर्मराज की आज्ञा से अर्जुन का अनुसरण किया। अश्व द्वारा प्रदक्षिणा की अवधि में अर्जुन ने अनेक महान् और अद्भुत युद्ध किये। वह अश्व पृथिवी की प्रदक्षिणा करते हुये सर्वप्रथम उत्तर की ओर, और फिर पूर्व की ओर गया। महाभारत युद्ध में जिनके बन्धु-बान्धव मारे गये थे ऐसे जिन-जिन क्षत्रियों ने अर्जुन के साथ युद्ध

किया उनकी कोई गणना नहीं है। किरात, यवन, और म्लेच्छ आदि जो महाभारत युद्ध में पाण्डवों द्वारा परास्त हो चुके थे, अर्जुन से युद्ध के लिये आये (१४. ७३, ६. २७)।" "त्रिगर्तों ने अर्जुन पर आक्रमण किया; अर्जुन ने त्रिगर्तों को शान्तिपूर्वक समझाते हुये युद्ध रोकने की चेष्टा की, परन्तु इसका कोई परिणाम नहीं हुआ; त्रिगर्तराज सूर्यवर्मन् ने अर्जुन के साथ युद्ध किया; सूर्यवर्मन् के परास्त होने पर उसका अनुज केतुवर्मन् युद्ध के लिये आया किन्तु अर्जुन ने उसका वध कर दिया; केतुवर्मन् के मारे जाने पर महारथी धृतवर्मन् अर्जुन से युद्ध करने लगा; धृतवर्मन् के बाण से अर्जुन के हाथ में गहरी चोट आई, जिससे उन्हें मूर्च्छा आ गई और उनका गाण्डीवधनुष भी हाथ से छूट कर पृथ्वी पर आ पड़ा; परन्तु अर्जुन ने अपने हाथ से रक्त पोंछ कर पुनः गाण्डीव उठा लिया और अट्ठारह प्रमुख योद्धाओं को यमलोक पहुँचा दिया; इसके बाद त्रिगर्तों ने पलायन करते हुये अर्जुन की आधीनता स्वीकार कर ली (१४. ७४)।" प्राग्ज्यौतिषपुर में भगदत्त के पुत्र राजा वज्रदत्त ने अपने हाथी पर बैठकर अर्जुन पर आक्रमण किया, किन्तु तीन दिन के भयंकर युद्ध के पश्चात् चौथे दिन जब उसका हाथी मारा गया, उसने अर्जुन की आधीनता स्वीकार करते हुये अश्वमेधयज्ञ में आने का वचन दिया (१४. ७५, १४. १६; ७६, १. ३. १३–१५)। "रथों पर बैठकर सैन्धवों ने, जयद्रथ-वध का स्मरण करके, पैदल चल रहे अर्जुन पर आक्रमण किया। इस युद्ध में अर्जुन का गाण्डीव धनुष नीचे गिर पड़ा। अर्जुन को इस प्रकार मोह के वशीभूत हुआ जानकर समस्त देवर्षि, सप्तर्षि, और ब्रह्मर्षि मिलकर अर्जुन की विजय के लिये मन्त्रजाप करने लगे; इस प्रकार देवताओं के प्रयत्न से अर्जुन का तेज पुनः उद्दीप्त हो उठा और उन्होंने अपने दिव्य धनुष की प्रत्यञ्चा खींची। सैन्धवों ने पराजित होकर पलायन किया (१४. ७७)।" "सैन्धवों ने एक बार पुनः अर्जुन पर आक्रमण किया; अर्जुन ने उन्हें आत्मसमर्पण करने के लिये कहा परन्तु इसका कोई फल न हुआ; तब दुःशला सुरथ के पुत्र, अपने पौत्र को, गोद में लेकर अर्जुन की शरण में आई; अर्जुन ने अपना धनुष फेंक कर जयद्रथ-पुत्र सुरथ के सम्बन्ध में पूछा, जिसके उत्तर में दुःशला ने बताया कि उसने अर्जुन के आगमन का समाचार सुनकर ही शोक से अपने प्राण त्याग दिये; अर्जुन ने दुःशला को सान्त्वना दी और दुःशला भी अपने सैनिकों को युद्ध से विरत करते हुये घर लौट गई। अन्त में वह अश्व मणिपुर पहुँचा (१४. ७८, १३. २१. २७)।" "अर्जुन के आगमन का समाचार सुनकर चित्राङ्गदा से उत्पन्न अर्जुन के पुत्र बभ्रुवाहन ने नगर के बाहर आकर अर्जुन का स्वागत किया, परन्तु अर्जुन ने कुपित होकर बभ्रुवाहन पर क्षत्रिय-धर्म से विरत हो जाने का आक्षेप किया। जब अर्जुन अपने पुत्र बभ्रुवाहन पर इस प्रकार आक्षेप कर रहे थे उस समय नाग कन्या उलूपी पृथिवी को छेदकर वहाँ उपस्थित हुई। उलूपी ने देखा कि बभ्रुवाहन नीचे मुँह किये हुये सोच-विचार में पड़ा हुआ है। तब अपना परिचय देते हुये उलूपी ने बभ्रुवाहन से अपने पिता अर्जुन के साथ युद्ध करने का आदेश दिया। बभ्रुवाहन ने अर्जुन के साथ भयंकर युद्ध करके यज्ञ के घोड़े को पकड़ लिया; अर्जुन भी अत्यन्त आहत हो गये और उन्होंने अपने पुत्र की वीरता की प्रशंसा की; अन्त में अर्जुन मूर्च्छित होकर मृतवत् भूमि पर गिर पड़े और बभ्रुवाहन भी मूर्च्छित हुआ (१४. ७९, ३७)।" "अर्जुन के मृतवत् भूमि पर गिर पड़ने पर उनकी पत्नी चित्राङ्गदा ने विलाप करना आरम्भ किया। अन्त में उलूपी ने सञ्जीवनी मणि का आवाहन किया और उस मणि के उपस्थित होने पर अर्जुन के वक्षःस्थल पर रक्खा जिससे वे पुनः जीवित हो उठे (१४. ८०, ३१)।" "अन्त में उस घोड़े ने हस्तिनापुर की ओर मुख किया; राजगृह में सहदेव-पुत्र मगधराज मेघसन्धि ने अपने रथ पर बैठकर पैदल चल रहे अर्जुन पर आक्रमण किया, किन्तु उसे पराजित करने के बाद अर्जुन ने अश्वमेध यज्ञ में आने का निमन्त्रण दिया। तदनन्तर वह घोड़ा अपनी इच्छा के अनुसार समुद्रतट से होता हुआ वङ्ग, पुण्ड्र, और कोसल आदि देशों में गया, जहाँ अर्जुन ने गाण्डीव की सहायता से म्लेच्छों की अनेक सेनाओं को परास्त किया (१४. ८२, २२. २७)।" "मगधराज से पूजित होने के बाद अर्जुन ने दक्षिण दिशा की ओर प्रस्थान किया; चेदियों के सुन्दर नगर में शिशुपाल के पुत्र शरभ ने पहले तो अर्जुन से युद्ध किया, किन्तु बाद में उनकी अधीनता स्वीकार कर ली; अर्जुन ने चित्राङ्गद को एक भयंकर युद्ध के पश्चात् परास्त किया; एकलव्य के पुत्र निषादराज को भी घोर युद्ध के पश्चात् अर्जुन ने परास्त किया; तदुपरान्त वासुदेव को साथ लेकर राजा उग्रसेन अर्जुन के पास आये; वहाँ से पश्चिमी समुद्र के तटवर्ती देशों में विचरता हुआ वह घोड़ा पञ्चनद प्रदेश में जा पहुँचा; वहाँ से भी गान्धार प्रदेश में जाकर इच्छानुसार विचरने लगा; गान्धार देश में शकुनि के पुत्र गान्धारराज से अर्जुन का घोर युद्ध हुआ (१४. ८३)।" "गान्धार-राज के साथ इस युद्ध में जब अर्जुन ने उसके सैनिकों का भयंकर संहार आरम्भ किया तब उसने अर्जुन को रोका, परन्तु अर्जुन ने उससे युद्ध-विरत होने के लिये कहा; अन्त में अर्जुन ने शकुनि-पुत्र गान्धारराज के शिरस्त्राण को अर्द्धचन्द्राकार बाण से काट गिराया; इस अवस्था में गान्धार-राज युद्ध से भागने का अवसर देखने लगा; तदनन्तर गान्धारराज की माता अत्यन्त भयभीत होकर बूढ़े मन्त्रियों को आगे करके उत्तम अर्घ्य ले नगर से बाहर निकली और रणभूमि में उपस्थित हुई; उसके निवेदन पर अर्जुन ने पराजित गान्धारराज को सान्त्वना देते हुये युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ में पधारने के लिये कहा (१४. ८४, ६)।" अर्जुन के हस्तिनापुर लौटने का समाचार सुनकर युधिष्ठिर अत्यन्त प्रसन्न हुये और यज्ञ की भव्य तैयारी करने लगे (१४. ८५, २)। कृष्ण ने आकर कहा कि अर्जुन अनेक युद्धों में शत्रुओं का सामना करने के कारण दुर्बल हो गये हैं और अब हस्तिनापुर के अत्यन्त निकट आ पहुँचे हैं (१४. ८६, ७)। "युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण से पूछा कि अर्जुन सुख से वञ्चित क्यों रहते हैं। कृष्ण ने कहा कि अर्जुन की पिण्डलियाँ औसत से कुछ अधिक मोटी हैं, जिसके कारण ही उन्हें इतना अधिक चलना पड़ता है; भीमसेन आदि कौरव और यज्ञ कराने वाले ब्राह्मण अर्जुन की विजय और सकुशल लौट आने के समाचार पर अत्यन्त प्रसन्न हुये। जब ये लोग अर्जुन के सम्बन्ध में इस प्रकार की बातचीत कर रहे थे उस समय एक दूत ने आकर अर्जुन के अत्यन्त निकट आ जाने का समाचार दिया। इस शुभ समाचार को सुनकर युधिष्ठिर के नेत्रों में आनन्दाश्रु छलक पड़े और उन्होंने उस दूत को प्रचुर पुरस्कार दिया। दूसरे दिन अर्जुन ने हस्तिनापुर नगर में प्रवेश करके युधिष्ठिर का अभिवादन किया (१४. ८७, १३. १८. २०)।" तदुपरान्त अश्वमेध यज्ञ सम्पन्न हुआ (१४. ८८)। युधिष्ठिर ने यज्ञ करने वाले ब्राह्मणों को दक्षिणा और राजाओं को भेंट देकर विदा किया; उस समय युधिष्ठिर, भीम, और अर्जुन इन्द्र के समान प्रतीत हो रहे थे (१४. ८९, १२; ९१, ५)। "पन्द्रह वर्ष तक धृतराष्ट्र की आज्ञानुसार सभी पाण्डव अपने कर्त्तव्यों का पालन करते रहे। पाण्डवों में केवल भीम ही ऐसे थे जिनके हृदय से कभी भी यह बात दूर नहीं होती थी कि कपटद्यूत के समय जो कुछ भी अनर्थ हुआ था वह धृतराष्ट्र की खोटी बुद्धि का ही परिणाम था (१५. १)।" युधिष्ठिर के भय से कोई भी दुर्योधन अथवा धृतराष्ट्र की बुराई नहीं करता था। फिर भी, भीम केवल दिखाने के लिये ही धृतराष्ट्र का आदर करते थे जब कि उनका हृदय घृणा से ही भरा हुआ था (१५. २)। "पन्द्रह वर्ष के बाद, भीमसेन के वाग्बाणों से अत्यन्त त्रस्त धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर से कहा, 'अब मुझे और गान्धारी देवी को अपने हित के लिये पवित्र तप करना चाहिये, अतः इसके लिये हमें अनुमति दो; तुम्हारी अनुमति मिल जाने पर हम दोनों वन को चले जायेंगे और वहाँ चीर और वल्कल धारण करके तपस्या करते हुये तुम्हें आशीर्वाद देंगे', (१५. ३)।" युधिष्ठिर और अर्जुन ने धृतराष्ट्र के भीष्म आदि का श्राद्ध करने के विचार का अनुमोदन किया, परन्तु भीम ने इसके लिये सहमति नहीं दी; अर्जुन ने युधिष्ठिर की सहायता से भीम को शान्त करना चाहा (१५. १०, ३२. ४५; ११)।

अर्जुन नें भीमसेन से दुर्योधन के दुराचारों को भूल जाने का आग्रह किया (१५. १२, १. ६. ११)। विदुर ने धृतराष्ट्र को युधिष्ठिर, भीम, और अर्जुन के उत्तर सुनाये (१५. १३, ९)। कार्त्तिक मास की पूर्णिमा के दिन गान्धारी तथा कुल-वधुओं के साथ जब धृतराष्ट्र वन को जाने लगे तब युधिष्ठिर और अर्जुन का हृदय शोक से भर गया (१५. १५, ७)। धृतराष्ट्र और गान्धारी के साथ ही विदुर, संजय, तथा कुन्ती भी वन को चले; धृतराष्ट्र ने कृप और युयुत्सु को हस्तिनापुर में ही रहकर युधिष्ठिर के साथ रहने के लिये कहा (१५. १६, १५)। शोक-विह्वल होने के कारण पाण्डवगण राजकीय कर्त्तव्यों की ओर ध्यान नहीं दे रहे थे; अपनी माता तथा धृतराष्ट्र आदि की चिन्ता के कारण पाण्डवों ने भी वन की ओर प्रस्थान किया (१५. २२)। अर्जुन और कृपाचार्य के नेतृत्व में पाण्डवगण धीरे-धीरे पड़ाव डालते हुये वन में पहुँचे (१५. २३, १. ११)। सहदेव और कुन्ती ने गान्धारी को पाण्डवों के आगमन की सूचना दी। तदनन्तर राजा युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन तथा नकुल को देखकर कुन्ती देवी अत्यन्त व्यग्रता के साथ उनकी ओर चलीं; वे आगे आगे चलती थीं और उन पुत्र-हीन दम्पति को भी अपने साथ खींच रही थीं (१५. २४, ११)। सञ्जय ने वहाँ उपस्थित ऋषियों आदि से पाण्डवों, उनकी पत्नियों, तथा अन्यान्य स्त्रियों का परिचय कराया (१५. २५, ३. ७)। विदुर ने युधिष्ठिर के शरीर में प्रवेश किया (१५. २६)। "उस वन में पाण्डवों ने लगभग एक मास व्यतीत किया; व्यास भी वहाँ पधारे; धृतराष्ट्र ने अपने मृत-पुत्रों और सम्बन्धियों को देखने की इच्छा प्रगट की। गान्धारी का शोक पुनः उमड़ आया और उन्होंने बताया कि गत पन्द्रह वर्षों से शोक के कारण धृतराष्ट्र को कभी भी निद्रा नहीं आई; उस समय कृष्णा इत्यादि भी शोक से विह्वल हो उठीं। व्यास ने शोक-विह्वल कुन्ती से कहा, 'तुम्हें किसी कार्य के लिये यदि कुछ कहने की इच्छा हो तो उसे कहो', (१५. २८, ७; २९)।" कुन्ती ने कर्ण के जन्म का गुप्त रहस्य बताया; व्यास ने कुन्ती को कर्ण का दर्शन कराने का वचन दिया (१५. ३०)। वहाँ से वे सब लोग भागीरथी के तट पर जाकर रात्रि की प्रतीक्षा करने लगे; सूर्यास्त के समय उन लोगों ने स्नान तथा सन्ध्या के कर्म किये (१५. ३१)। रात्रि होने पर व्यास जी स्नान के लिये भागीरथी में कूद पड़े और वहाँ उन्होंने समस्त मृत-योद्धाओं का आवाहन किया, जिसके परिणाम-स्वरूप वे सब तीव्र कोलाहल के साथ जल से ऊपर उठे (१५. ३२)। परलोक से आये सभी योद्धा रात भर राग-द्वेष से रहित होकर जब एक दूसरे के साथ मिल-जुल चुके तब व्यास जी ने उन सब को क्षणमात्र में अदृश्य कर दिया (१५. ३३)। धृतराष्ट्र का शोक जाता रहा और सभी लोग घर लौट आये; पाण्डवों ने एक मास से अधिक वन में व्यतीत किया (१५. ३६, ४७)। दो वर्ष के पश्चात नारद मुनि पाण्डवों के पास आये; नारद ने बताया कि धृतराष्ट्र आदि दावानल में दग्ध हो गये हैं, जिसमें से केवल सञ्जय ही बच सके; इस शोक समाचार को सुनकर पाण्डव तथा हस्तिनापुर के समस्त नागरिक जलाञ्जलि देने के लिये गङ्गातट पर गये (१५. ३७-३९)। "द्वारका में यादवों द्वारा परस्पर संहार के पश्चात श्रीकृष्ण ने अर्जुन को शीघ्र बुलाने के लिये दारुक को हस्तिनापुर भेजा। कृष्ण ने द्वारवती में प्रवेश करके अपने पिता से अर्जुन के आने तक समस्त स्त्रियों की रक्षा करने के लिये कहा; तदुपरान्त बलराम और श्रीकृष्ण की मृत्यु हो गई (१६. ४, ३)।" "दारुक को साथ लेकर अर्जुन ने द्वारका की ओर प्रस्थान किया; कृष्ण की १६,००० रानियों ने अर्जुन को देखकर अत्यन्त विलाप करना आरम्भ किया; समस्त द्वारका नगरी अर्जुन को भयंकर वैतरणी नदी प्रतीत हुई। अर्जुन को देखकर सत्या, और रुक्मिणी भूमि पर गिर कर विलाप करने लगीं। तदुपरान्त स्त्रियों को सान्त्वना देने और श्रीकृष्ण की प्रशंसा करने के पश्चात अर्जुन वसुदेव के पास गये (१६. ५, ३. ६)।" वसुदेव ने शोक प्रगट करते हुये कहा कि वे भोजन न करते हुये मृत्यु को प्राप्त हो जायेंगे (१६. ६, ४-६. ९. २१)। "अर्जुन ने कहा कि पाण्डवों के भी इस लोक से विदा होने का समय आ गया है। फिर भी, उन्होंने वृष्णियों की स्त्रियों, उनके बच्चों, तथा वृद्ध पुरुषों को इन्द्रप्रस्थ पहुँचा देने के लिये कहा। तब उन्होंने यादवों के सुधर्मा नामक सभाभवन में प्रवेश करके नागरिकों तथा मन्त्रियों से कहा, 'मैं वृष्णि और अन्धक कुल के अवशिष्ट व्यक्तियों को शीघ्र ही दूर हटा दूँगा, क्योंकि यह नगर अब सागर से आप्लावित हो जायगा'। अर्जुन ने कृष्ण के महल में ही रात्रि व्यतीत की। प्रातःकाल वसुदेव ने योग के द्वारा परमधाम को प्राप्त किया और उनकी चार पत्नियों ने चिता में प्रवेश किया। वसुदेव और उनकी चार पत्नियों के अग्निसंस्कार के बाद अर्जुन उस स्थान पर गये जहाँ वृष्णियों का संहार हुआ था; वहाँ उन्होंने उन सब तथा राम और श्रीकृष्ण का अन्तिम संस्कार किया; सातवें दिन स्त्रियों, बच्चों, यादव सैनिकों और अन्य नागरिकों, तथा श्रीकृष्ण की १६,००० पत्नियों और वज्र के साथ अर्जुन ने प्रस्थान किया; उन सबकी संख्या बहुत अधिक थी। उन लोगों के हटने के बाद ही सागर ने द्वारका नगरी को आप्लावित कर दिया। वे सब लोग धीरे-धीरे पड़ाव डालते हुये चल रहे थे। पञ्चनद के पास आभीरों (म्लेच्छों) ने उन सबको लूटने की मन्त्रणा की; उस समय अर्जुन को अत्यन्त कठिनाई के साथ ही अपने धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ाने में सफलता मिल सकी; उनके दिव्यास्त्र भी अब उन्हें स्मरण नहीं रहे। आभीर लुटेरे सभी स्त्रियों को पकड़ ले गये; अर्जुन का अक्षय तरकस भी बाण-विहीन हो गया; अर्जुन को अत्यन्त दुःख हुआ और वह किसी प्रकार बचे हुये लोगों को कुरुक्षेत्र तक ले गये। इस प्रकार अपहरण से बची हुई स्त्रियों आदि को अर्जुन ने यत्र-तत्र बसा दिया : कृतवर्मा के पुत्र को और भोजराज के परिवार की अपहरण से बची हुई स्त्रियों को अर्जुन ने मार्तिकावत नगर में बसाया; वीर-विहीन समस्त वृद्धों, बालकों तथा अन्य स्त्रियों को साथ लेकर वे इन्द्रप्रस्थ आये और उन सबको वहाँ का निवासी बना दिया; सात्यकि के पुत्र यौयुधानि को सरस्वती के तटवर्ती देश का अधिकारी बनाकर कुछ वृद्धों तथा बालकों को उनके साथ कर दिया; वज्र को उन्होंने इन्द्रप्रस्थ का राज्य दे दिया। इसी प्रकार अन्य स्त्रियों और बच्चों की भी समयोचित व्यवस्था करके अर्जुन नेत्रों से आँसू बहाते हुये व्यास के आश्रम में चले गये (१६. ७, ७. ४८. ५१. ५४. ७६)।" "अर्जुन ने व्यास से समस्त घटना का वर्णन किया। अर्जुन की पराजय का समाचार सुनकर व्यास ने बताया कि समस्त यदुवंशी देवताओं के अंश थे; वे देवाधिदेव श्रीकृष्ण के साथ आये थे और उनके साथ ही चले गये; व्यास ने बताया कि श्रीकृष्ण की ही भाँति पाण्डवों ने अब अपना कर्त्तव्य पूरा कर लिया है, अतः अब उन्हें इस लोक से विदा होने की तैयारी करनी चाहिये। व्यास की आज्ञा लेकर अर्जुन हस्तिनापुर आये और युधिष्ठिर से मिलकर उन्हें समस्त समाचार से अवगत कराया (१६. ८, १. २. ७)।" "पाण्डवों ने तब अपने हृदय में महाप्रस्थान का निश्चय किया; उन लोगों ने अपने समस्त साम्राज्य की देखभाल का भार युयुत्सु को सौंप दिया; फिर अपने राज्य पर राजा परिक्षित् का अभिषेक करने के पश्चात् उन लोगों ने वज्र को इन्द्रप्रस्थ का शासक बनाया; कृपाचार्य को परिक्षित् का रक्षक और गुरु नियुक्त किया गया; प्रजाजनों ने यथाशक्ति पाण्डवों को रोकने का प्रयास किया; परन्तु इसका कोई परिणाम नहीं हुआ। तदनन्तर युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव तथा द्रौपदी ने आभूषणादि उतार कर वल्कल धारण कर लिया; ब्राह्मणों से विधिपूर्वक उत्सर्ग-कालिक इष्टि करवा कर पाण्डवों ने अग्नियों का जल में विसर्जन किया, और तब महायात्रा के लिये प्रस्थित हुये। पांचों पाण्डव तथा द्रौपदी और एक कुत्ता क्रमशः चलते-चलते लालसागर के तटपर जा पहुँचे। वहाँ पहुँच कर उन लोगों ने साक्षात अग्निदेव को देखा। अग्नि ने कहा कि अर्जुन को गाण्डीव धनुष का परित्याग करके ही वन में जाना चाहिये; अग्नि ने कहा कि वे स्वयं ही अर्जुन के लिये इस धनुष को वरुण से माँग कर लाये थे अतः इसे पुनः वरुण को वापस कर देना चाहिये। तब अर्जुन ने अपना गाण्डीव धनुष तथा दोनों अक्षय तरकस जल में फेंक दिया। तदुपरान्त

समस्त पृथिवी की प्रदक्षिणा करने की इच्छा से पाण्डवगण दक्षिणाभिमुख होकर चले (१७. १, २. ५. २०. ३१. ३७. ३८)। हिमवत् इत्यादि को पार करने के पश्चात् सबसे पहले द्रौपदी का मन योग से विचलित हो गया जिससे वह लड़खड़ा कर पृथिवी पर गिर पड़ीं; युधिष्ठिर ने बताया कि द्रौपदी के मन में अर्जुन के प्रति विशेष पक्षपात था इसीसे उसकी यह दशा हुई; उसके बाद सहदेव, फिर नकुल, और उनके बाद अर्जुन भी एक-एक करके गिरते गये; युधिष्ठिर ने बताया कि अर्जुन को अपनी शूरता का अभिमान था जिसके कारण उन्होंने कहा था कि वे एक ही दिन में शत्रुओं को भस्म कर डालेंगे, किन्तु ऐसा न कर सकने के कारण ही आज उन्हें धराशायी होना पड़ा (१७. २, २१)। युधिष्ठिर के धर्म की द्वितीय परीक्षा (१७. ३, २०)। युधिष्ठिर की तृतीय परीक्षा (१८. १-३)। स्वर्ग में आकर युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण को उनके ब्राह्मरूप में देखा जहाँ अर्जुन उनकी आराधना में लगे हुये थे (१८. २, १०. ४०; ४, ३-४)। तु० कीं० अर्जुन के निम्न पर्याय :

* **इन्द्रध्वज** ६. ११९, ९१।

* **इन्द्ररूप**—देखिये व० स्था०

* **इन्द्रसुत** (इन्द्र का पुत्र)—देखिये व० स्था०

* **इन्द्रात्मज** (इन्द्र का पुत्र)—देखिये व० स्था०

* **इन्द्रावरज** (८. १८, १६)—देखिये धनञ्जय।

* **ऐन्द्रि** (इन्द्र का पुत्र)—देखिये व० स्था०

* **कपिकेतन** : १४. ८२, २२।

* **कपिध्वज** (कपि या वानर से युक्त ध्वजावाले) : ५. ९६, ४७; ६. ६०, ९; ९. १०, ६२।

* **कपिप्रवर** (श्रेष्ठ कपिवाले) : १०. १२, २६।

* **कपिवरध्वज** (जिनकी ध्वजा में श्रेष्ठ वानर है) : ७. १०, २१।

* **किरीटभृत्** (किरीट पहने हुये) : १४. ८२, २।

* **किरीटमालिन्** : ३. १६५, ४; १८३, १४; ४. ५४, २९; ६१, ४६; ६४, ३१; ६. ५९, ११४; ७. १२८, ४८; १४६, १४४।

* **किरीटवत्** : ११. २४, २१।

* **किरीटिन्** (किरीटधारी) : १. १, १६५; २, १२५. १५१. १५९. १८५. १९६. २१३. २१४. २७५; १३८, ४०; १८५, ८; १९०, १९. ३२; २२१, ६४. ८३; २. २७, १२. २१; ५२, ३०; ३. ४८, २५. १८; १६४, १३; १६५, ३. १४; १७६, ३; १८३, २२; ४. ३९, १०; ४४, ९ (अर्जुन के १० नामों का वर्णन); ४४, १०. १७ (पूर्वकाल में मैंने जब दानवों से युद्ध किया था तब शक्र ने मेरे सर पर सूर्य के समान उज्ज्वल किरीट रख दिया था, अतः तब से ही मनुष्य मुझे 'किरीटिन्' कहते हैं); ५४, २. १८. २१. २४. २७. २८; ५५, २३. २७; ५८, २३; ६५, १४; ६६, २९; ६७, १४; ५. ७, ९. १०. ३४; २०, १९, २०; २१, ६; २६, २४; ४८, ३. ६. १०३; ५२, १५. १९; ६२, ११; १७१, १८; १७२, १०; ६. ३५, ३५; ५२, २९; ५५, २२; ५९, ७८. १२१, १२४. १३०. १३८. १३९; ६०, १०. २२; ६१, १३; ७१, १९; ११२, २७. ३४; ११७, ४०; ११८, ४३, ५४; ११९, १३. १६. २३. ३०. ८३; ७. २, ३०. ३२; ३, १७; ९, २७; ११, ३८; १३, २१; १६, ४५; १८. २. २०; २७, २४; २९, ४८; ३०, ३१; ३२, ६२; ३३, ११; ८४, १४; ९०, १. १२. १८. २०. ३३; ९४, २१; १००, २३; ११९, ८; १४०, ५; १४१, १५; १४३, २; १४५, १८. ४३. ४७. ९५; १४६, २२. १३२; १४८, ५८; १५०, २८. ३५; १५२, २. ११; १५७, ४५. ४८; १५९, ८२. ९३; १६१; ६. १२. १६; १९३, १८; २००, ७३; ८. ६, ४; ९, ३५; ११, ३१; १७, १४; १८, १९; १९, ५३; २१, ६; ४१, ७४; ४६, ६७; ४७, १०; ५३, ४६; ५६, १०२; ५८, ५०; ६४, २०; ७०, २६. ३९. ४२; ७१, ३९; ७६, १२. ३४. ३८; ७९, ४८. ८८; ८०, ११. १९. २८; ८१, ६. २१; ८२, १३; ८४, ४१. ४२; ८५, २४. २९. ३६. ३९; ८७, ७; ८९, ३८. ४१. ४३. ५२. ६१. ६२. ८४; ९०, ९. ३९. ५५. ७४. ८०; ९१, ३२. ३७. ४८; ९३, ५; ९. २, ५८. ६०; ३, ६; २५, ३. ५१; २७, ३१; १४. ७४, १. ४. ५; ७७, १; ७८, १७; ७९, २१; ८३, ७. ११. १६. २०; १५. ११, ९।

* **कुन्तीपुत्र** (कुन्ती का पुत्र)—देखिये व० स्था०।

* **कृष्ण**—देखिये व० स्था०

* **कृष्णसारथि** (जिसके सारथि कृष्ण हैं)—देखिये व० स्था०

* **कौन्तेय** (कुन्ती का पुत्र)

* **कौरव, कौरवश्रेष्ठ,** इत्यादि।

* **कौरवेय, कौरव्य**—देखिये व० स्था०

* **गाण्डीवधन्वन्** (गाण्डीव धनुषवाले) : १. २, २४९; २. ६१, २२; ३. ३३, ६; ४८, ८; ५२, ३७. ४८; १५८, ९; १६२, २४; २३६, २०; २६८, १९; ३१५, २४; ४. १, १९; ४५, ९; ५३, २ (गाण्डीवधन्विनम्); ५४, १६. ३२; ५५, २६; ५८, ७०; ६६, ८; ५. ३, १५; ५, १०; २२, १०. १२. १३; ४८, ७; ५२, २. ३; ५७, ६२; ६५, ५; ९०, ७०; १४१, ४१; १५६, २५; १५७, २१; १६७, ४. ३६; ६. १९, ३४; ५०, ४५; ५२, २२; ५९, १३१; ७१, ४; ७३, ३. ८. १०; १०४, १३; ११९, ६०. ६७; ७. १०, २४; १६, ४८; १७, १२; ३४, ५; ४८, २४; ७४, १०; ७८, १५; ७९, ११; ८५, ५१; ८८, ११; ९३, ६६; १०१, १०; १२२, १४; १४६, ५५; १५९, ५. ७०; १८२, ३९; १८३, ४५; १८५, २४; २०१, ४०; ८. ८, १६ (शार्ङ्गगाण्डीवधन्वानौ); ६४, १९; ६५, २२; ७०, ४९; ७२, १६. १७; ८१, ३८; ८७, ९५; ९०, ५१; ९१, ४५; ९९, १८. ४४; ९. ४, ३९; १६, ४६; ६२, ८. ११. १२. १४. २१. २३; १०. ५, २०. २१; १२, २६; १४, ७ (विराटस्य सुतां पूर्वं स्नुषां गाण्डीवधन्वनः); ११. २०, ४ (एषा विराटदुहिता स्नुषा गाण्डीवधन्वनः); २०, ५ (स्वस्रीयं वासुदेवस्य पुत्रं गाण्डीवधन्वनः); २१, ३; २३, १९; २७, १९; १२. २, ७; ५, १४; ४०, २२; ५३, २५; १३. १४८, ५५; १४. ६०, ११; ७८, १४; ८०, ३३; ८२, १५।

* **गाण्डीवधारिन्** (गाण्डीव धारण करनेवाले) : ८. ४०, ५।

* **गाण्डीवभृत्** (गाण्डीव से युक्त) : ५. २३, २७; १४. ७८, १. ५; ८२, ११।

* **गाण्डीविन्** (गाण्डीव धनुषवाले) : १३. १४८, २९ (हरिगाण्डीविविग्रहम्)।

* **गुडाकेश** १. १३९, ८; २२१, २; ३. ४२, २; ४३, २६; ४७, २७; १४०, ९; १४१, ८; १६२, ३१; १८३, ९; २७१, ३९; ३१२, २२; ४. २, १८; ५. १५७, १५; १६३, २; १६९, १६; ६. २२, १४; २५, २४; २६, ९; ३५, ७; ७. ८६, २०; ११०, ८१; १२६, ३९; १२. २३, १; २९, १; १४. १५, ११; ७४, १७. २८; ७६, ७; ८०, १३; ८४, १; ८५, १०; १५. ११, ७।

* **जय** (विजय) : २. २०, ३; ३. १२०, १२ (जयात्मजस्य, संभवतः = अभिमन्यु); १५८, २; २६६, ७; ५. ७, ३१; २३, २६; ७. २८, २ (श्वेतहयः); ८८, १७; १५१, १२; १८२, १७; ८. १६, १६; ७९, ७६; १४. ७८, ४३; ८०, ३६; ८१, २२; १६. ७, ७५।

* **जिष्णु** (विजेता) : १. १३२, १८; १८७, १० (भीमं स जिष्णुं च); १८७, २९; १८९, १८. १९; १९०, ७. ४७; १९१, ११; १९२, ३; २२७, १२; २. ६७, ३३; ३. ११, ४१; ३५, २६; ३६, ३३; ३९, १७. ४३. ४६. ५९; ४४, ३; ४७, १३; ८६, २; १६२, १६. २१; १६४. १४. १५; १७६, ६; २६८, ७; ३१३, १०; ४. ४४, ९ (अर्जुन के १० नामों

की गणना); ४४, ११. २१ (व्युत्पत्ति); ५०, १६; ५४, ३२; ५५, ६; ५७, ९; ६१, ३५. ३९; ६४, २७; ६५, ६; ६७, १२; ५. २२, १०; २४, ५; ९०, ३३; ९६, ४७; १११, ४. २०; १२४, ५५; १६१, २३; ६. ५९, १००; ८५, ८; १०७, ९६; ११४, ६. २६. २८; ११५, १८; ११९, ६७; ७. २८, १५; ३२, ४२; ८३, २८; ८४, ५; १४६, २३; १४८, २५. २७; १५०, ३; १५६, ८. ४७. ५०; १८३, ५९; ८. १९, १; २७, २७. ४२; ३३, ४५; ५६, ४८; ६७, १; ८९, ३७; ९०, ५४; १२. ३७, २७ (? देवस्थानेन जिष्णुना); ११०, २७; १४. ७२, १५; ७३, १३; ७४, ६. १६. २५. २७; ७५, १९; ८०, ४४. ५२; ८४, १९; ८६, ८ (शक्रजं); ८६, ११; ८७, ४; १५. १४, १।

* तापत्य (तपती का वंशज, तु० कीं० तपत्युपाख्यान) : १. १७०, ७९; १७१, १. २ (तपती नाम का चैषा तापत्या यत्कृते वयम्); १७१, ५; १७३, ५०।

* त्रिदशवरात्मज (इन्द्र का पुत्र); ७. २, १६।

* देवेन्द्रतनय (इन्द्र का पुत्र) : ७.।

* धनञ्जय (धन का विजेता) १. १, १६३. १७०. १९४; २, ११३. २२१. ३४१; ६२, १०; ६३, ११६; १२६, २५; १३२, ६३. ६६; १३३, १; १३८, ४५. ५७. ५९; १३९, १७. २५; १४१, २०; १४५, ८; १७०, ४. २६. ३३; १७१, ३; १८२, ४; १९०, ४१; १९१, ६; २००, ११; २०५, १६; २१३, ११; २१. २६. ३०; २१४, १५; २१५, ११. १८; २१६, १०. १३; २१७, १८; २२०, १; २२१, १०. १८. ६८. ७४; २२२, ३०; २२८, ४३; २३४, १२; २. ४, ३६ (धनञ्जयसखा चात्र नित्यमास्ते स्म तुम्बुरुः); १५, १३; २१, २६; २४, ४८; २५, ५; २६, २. ३. १०; २७, १. २. ८; ४२, ५; ४५, ४७; ४८, ६. १५; ५२, ३१. ३२; ५३, १३; ६५, १७; ६८, १०; ७१, ३२; ७२, ७; ७७, २६; ७८, १०; ३. १२, १३४; २३, १६; २४, ४. २५; ३४, ७; ३७, ३. १४. ३३. ४२. ५२. ५३; ३८, २; ३९, ३८; ४१, २२. ४६. ४८; ४५, १३; ४६, २; ४८, ६१; ४७, १०; ४८, ५; ५१, ४३; ५२, ४. ५; ७९, २५; ८१, १; ८६, ५; ९२, १. १५; १२०, २५; १४०, २९; १४१, २. ३. १०. २८; १४३, १; १६२, १९. ३१; १६४, १२; १६५, ३; १६६, १. ९. १०. १४; १६७, ८. ५३; १६८, २०. ६८; १७३, ७३; १७४, ११. १७; १७५, ३. ५. १२. २१; १७६, १; १७९, ४८; १८३, १३. २३; २३६, १८. २८; २३७, २०; २३९, १३; २४३, २०; २४४; १६, २०; २४५, ११. १३. २६. २९; २४६, ३. ६. १०; २४८, १३. १४ (धनञ्जयसखाऽऽस्मानं दर्शयामास वै तदा। चित्रसेनः पाण्डवेन समाश्लिष्य परस्परम् ॥); २४८, १६; २६८, १७; २६९, ७. २८; २७०, १२, २७१, २७. ५५, ५६; २९२, ५; ३००, २; ३१२, ३२; ३१३, ७. १०. १२; ४. २, १२; ५, ७; ११, १२. १४; १९, १६. १७. १९. २७. ३१; २०, १७; २१, ९; २४, १७; ३७, १७; ३८, ४. ३०. ३४. ३५. ३८. ४०; ३९, २; ४१, ७; ४४, ९ (अर्जुन के १० नामों की गणना); ४४, ११. १३ (व्युत्पत्ति); ४४, २४; ४६, २३; ५०, १०. १५. १७. २६. २८; ५२, १२. १४; ५३, ८; ५५, ६०; ५७, ३. ४३; ५८, ३३; ५९, २०; ६१, ४४; ६२, ९; ६३, २. ४. ५; ६४, १. १०. २०. २८. ४७; ६५, २. ७; ६६, ६. २४. २५; ७१, २९. ३४. ३५; ७२, १०. ३३; ५. ७, २. ६. १५. १७. २१; २०, १८; २१, ६; २२, ३३; २३, ४; २५, २. १४; २६, २६; ३०, ६; ४८, १. २; ४९, ३८. ३९; ५२, १. १५; ५५, ४४. ५३. ५६; ५९, २; ६२, ८; ६४, २६; ६५, ९; ६६, ३. ११. १५; ७७, १९; ८३, ५५; ८७, ११. १२; ९०, ३४. ६६. ७०. ७१. ७४; ९६, ४१. ४८; १०५, ३४; ११७, १७; १२४, ५०; १२९, ४९; १३१, ८; १३७, ९; १३८, १८; १३९, ४. ५. १९; १४१, २३; १४२, ५; १४३, ३७; १४६, ९; १५१, ३९, ४५. ६७. ६९; १५६, १८; १५७, ३०; १५८, २०; १६०, ८०. १०७; १६१, २५; १६२, ४५; १६७, १५; १६९, १९. २४; १९४, ८; १९६, ९. १८; ६. १, १७; १९, ३. १३; २१, ३; २५, १५; २६, ४९; २८, ४१; ३१, ७; ३३, ९; ३४, ३७; ३५, १४; ३६, ९; ४२, २९. ७२; ४३, ६. १४. २८; ४५, ८; ४७, १५; ४८, ११९; ४९, १५; ५०, ४२; ५१, २५; ५२, १६. ३०. ३३. ४१; ५५, १७; ५७, १; ५९, ४७. ५१. ५८. ६१. ८७. १२२. १३३. १३६; ६०, २९; ६६, ३२; ६९, १५. ३३; ७१, १. ८; ७२, २; ७४, ३३; ७५, ६; ८१, २७. ३३; ८२, ५. १०; ८५, १. ६. ७. ९. २५; ९६, १. १७; १०१, ३. ३५. ३८; १०२, १. ३; १०४, १०; १०६, ४३; १०७, ५९. ८४. ८६. १०२; १०९, १२. १९; ११०, २६; ११२, ३०; ११३, ४५. ५१; ११९, ९. ४६. ८०; १२०, ३७; १२१, १७. ४२; १२२, ३१. ३६; ७. २, १२; ३, ७; ७, २६. ३२; ८, २. २५; १०, २३. २६. २८. ३६. ४१. ४७. ४८; ११, ३६; १२, २७; १३, ४; १६, ५२; १७, ३. २८. ३५; १८, ४; १९, ७. ८. २२. २५. २७; २४, १८; २७, २७; २८, १२. २१–२५. २९. ३०; ३०, ६. २१; ३२, ५४; ३४, १०; ३५, १७. २१; ३८, १६; ४२, १८; ५१, ९; ७१, २६; ७३, १७; ७५, १. ८. १३. १५; ७६, २३; ७७, १; ७९, १५. १७. ३०; ८०, १. ३. ८. २२; ८३, २१; ८४, १. ६; ८५, ४९; ८७, ३; ८८, १२. २०; ८९, ५. २७; ९०, १. ११; ९१, २३. २८. ३७; ९३, २. ५. ७. ११. १५–१७. ४५. ५८. ६०; ९४, ७. ९. २०. २४. २६. २७. ३३; ९८, ४१; ९९, २३. ३२. ४१. ४२; १००, ३४; १०१, १. २. १५. ३६. ३९; १०२, १. ७. २८. ३०; १०३, ३३, ३४, ४५. ४८; १०४, ९. ११. १२; १०५, ९; ११०, ६२. ६३. ९४. १०२; १११, ५. ८. ३२. ४१. ४३; ११३, २१. ३२; ११४, ४१, ४५; ११६, ३६; ११९, ७. २३; १२३, २१. ३७; १२४, ४५; १२६, ११. ३६. ४६; १२७, २४. २५; १२८, ३०. ३७. ४०. ४१. ५०; १३०, १४. १६; १३१, १९; १३२, ४१; १३५, १३; १३९, ८५. ११४. ११६. ११९. १२१; १४०, २. ८; १४१, १. ११; १४२, ७. ५७; १४३, ३६. ३८; १४५, २०. २९. ५९. ६८. ७२. ८६. ८८. ९०; १४६, १. ३. १८. २०. ४५. ७१. ९१.९४. १०४; १४७, ६. ५०; १४८, ४. ६; १४९, ५. २५; १५६, ५३. १२०; १५९, ५२. ५९. ६७; १६२, ५१; १६७. ३६; १७०, ६२; १७१, ३१. ४५; १७३, २८. ३६. ४३; १७७, ३३; १८०, ११. १२; १८१, ६. १५; १८२, १८. २१. ३७. ४२.४४. ४५. ४७; १८३, ३०. ५४; १८४, ७; १८६, ७. १५; १८८, ३२; १८९, ६४; १९०, २३; १९१, ४८–५०; १९२, ५७. ६५; १९३, ५२; १९६, ११. २५; १९७, २. १७. ३१; २००, १; २०१, १. ८; २०२, २; ८. २, १८; ३, ११; ५, १६. २५; ८, १५; ९, ४९; १०, २५; ११, २२. ३०; १३, ८; १६, ५. ४६. ४७; १७, २३; १८, १२. १६ (जिघांसुर् इन्द्रावरजं धनञ्जयं; नीलकन्ठी भी देखिये जहाँ 'इन्द्रवरजम्' की कृष्ण के रूप में व्याख्या की गई है); २१, ३; २७, १८. २१. २६; २८, ४८; ३२, ६०; ३६, ५. २०. २४. २५; ३७, ३३; ३८, ३. ६. ११. १४. १८; ३९, १. २. ९. २०. २३. २५. २७.२९.३३; ४०, १०; ४१, ८२; ४२, ११. १३. १९. २६; ४६, २९. ३७. ४३; ५०, ३१; ५३, ४५; ५६, १२३. १४२; ५९, ५२. ५६. ६६; ६०, ६६; ६४, ५९. ६५. ६८; ६५, १. १०; ६६, १. १३–१५. १९; ६८, १. ९; ६९, ३. १७. ३०. ४७; ७०, २५, २९; ७१, १३. १४. १६. ३१. ३२. ३४; ७२, ३८; ७३, ४७; ७४, ५२; ७५, १; ७६, २५. ३०. ३१; ७७, ९; ७९, ३३. ४१. ७४. ७५. ८३. ९१. ९२; ८०, १. २. ४; ७. १२. १६. २४. २६; ८१, ४. ८. २२; ८४, १३. १४. ३६; ८५, २३; ८६, ३; ८७, २. ११. २३. ३९. ४७. ५७. ५९. ६१. १०१. १०५; ८८, ५. १५. १८. २२; ८९, २. २३. ३५. ६७. ७४. ८०. ८८. ९०. ९३; ९०, १. ५६. ६३; ९१, १९. २०. ३०. ४७. ५७; ९२, ५; ९३, ३०. ३२. ४२; ९४, १३. ३२. ६४; ९६, २. ३०. ५९; ९. ३, १७.

३०. ३३; ४, २३. २४; ९, ३८; १४, २. २१; १६, ४. २५; १९, २४. ३०. ६८; २४, १५; २५. १; २७, २. ३५; २९, ३. ३२; ५८, ७. १६; ५९, ९; ६२, १०. २४; १०. ८, १२५; १२, ५; १४, १२; १५, १. ५. १९. २१; ११. १३, १७; २१, ११; २३, १३; २७, १६; १२. २, ९; ७, ३६. ३९; १९, ७; २५, १; २६, १. ४. ५. ८; ४७, १०५; ५३, १६. १७; ३४२, ७७. ९१. १४२; ३४३, १९; १३. १४८, ५६ (त्रियुगौ पुण्डरीकाक्षौ वासुदेव-धनञ्जयौ); १४९, ८३ (= विष्णु, १००० नामों में से एक); १६८, ३३; १४. १५, १. २; १६, ११; ३४, १२; ५१, ४६. ५१; ५२, ५. ३४ (धनञ्जयगृहानेव); ५२. ३५; ५५, ४; ६२, १३. १८; ७३,५ ७. ९. ११; ७४, ९. १०. १२. २८. ३०. ३१; ७५, १२. १३; ७६, १९. २१. २२; ७८, १५. १६. २५. ३०. ३९. ४१. ४६; ७९, २. १८. ३५; ८०, ५. ३९. ५६. ५७; ८१, ८. १४; ८२, ४. ५. ३०; ८३, ५; ८४, १८; ८५, ७; ८६, १८; ८७, १२. १३ (यज्ञ-अश्व का अनुसरण करते समय धनञ्जय, अर्थात् अर्जुन के अभियानों का वर्णन); १५. १२, ६; १३, १४; ३१, ११ (वास्तव में = नर); १६. ४, ८; ५, १३; ६, ९. २३; ७, ६. ३४. ४४. ६०. ६४. ६८; ८, ३३; १७. १, ३४. ४२; २, ६।

* नर—देखिये व० स्था० ।

* पाकशासनि (इन्द्र का पुत्र)—देखिये व० स्था० ।

पाण्डव, पाण्डवेय, इत्यादि, पाण्डुनन्दन, इत्यादि—देखिये व० स्था० ।

पार्थ (पृथा का पुत्र)—देखिये व० स्था० ।

पौरव (पुरु का वंशज), इत्यादि—देखिये व० स्था० ।

प्रभञ्जनसुतानुज : ७. १४६, ११६ ।

फाल्गुन : १. २, १२१. ३०७; १११, २७; १३२, १९. २१; १३५, ९. १६; १३६, १९. २५. ३६; १३८, २७. ३५; १३९, १४; १५०, १७; १९०, २०; १९१, ७; २०१, १३; २. २४, ५५; २७, ७. २३; ४६, २३; ६५, २१; ३. १२, ९; ३४, १६; ३७, ५९; ३८, ३२; ३९, ८. ११. १२. ४५. ५३. ६२. ६८. ७२. ८३; ४०, २५; ४१, २४; ४२, ३७; ४५, २. १६; ४६, १६. २१. ६०. ६३; ४८, १२; ४९, ७. २२; ५१, १९; ८०, २२; १४१, १२. १९; १६२, १८ (भीमसेनाद् अवरजः); १६६, ११; १६८, १९. ७८; १८३, १०; २३८, ८; २५२, ३६; २५७, १८, २७१, ५८; २७२, ६; ३०२, ७; ३०९, १९; ४. ४, ८; २१, १; ३९, १४; ४४, ९ (अर्जुन के १० नामों की गणना); ४४, ११. १६ (उत्तराभ्यां फल्गुनीभ्यां नक्षत्राभ्यामहं दिवा । जातो हिमवतः पृष्ठे तेन मां फाल्गुनं विदुः ॥); ५७, ३८; ५८, २६. २८. ५०; ६४, १७; ६६, ३०; ६७, १७. २१; ५. २२, १६; २६, २३; २९, ४४. ५०; ५२, ८; ५४, १२; ५६, १५; ८०, ३; १६०, १११. ११२. ११७. ११९ (फाल्गुनानां शतानि वा); १६१, २९. ३५. ३७ (फाल्गुनानां शतानि वा); १६२, ३७. ६०; १६५, १; १६८, ७; १९४, ७; ६. १५, १९; १९, १३; ५२, ३८; ५८, १. ४. ६; ५९, १२८; ७३, ४. ७; ९०, ५०; ९३, १०; १००, १८ (द्विफाल्गुनमिमं लोकम्); १००, २३; १०४; १२; १०६, ७५; १०७, २९. ३३. ३७; ११२, ३८ (द्वितीय इव फाल्गुनः); ११४, २३, ११७, २६. ३०, ११८, ४२. ११९, १७. ११. २०. २५; २८. ५८. ८७; १२०, ४१. ४३; १२१, ५२; १२२, १६; ७. १२, २८; १७, ४६; १९, ९; २३, ९२; २७, २६; ३२, ४४; ३३, १. ४; ३५, १३; ७३, ५१; ७४, ८. २३; ७९, ५; ८९, २३; ९१, १२; ९२, ६१; ९३, २४; ९४, २४; १०४, २८; ११०, ७४; १११, ९. ३७; ११२, २; ११८, २; १२०, २९; १२१; १०, १२२, १५. १८; १२६, ९. २३. २४; १२७, १२. ४४; १२८, ३६. ४२. ४३. ५२; १४१, १६. १७; १४३, ३९; १४५, १९. ४७. ६५. ६७. ७४. ७६; १४६, ५७. १३८; १४७, ३; १४८, २; १५१, २५; १५२, ६. १०; १५६, ३९. ४८; १५८, ८. १८. २३. ४५; १५९, १२. १८. ४८. ५८. ७३. ७४. ७५. ७७. ७९; १६०, ५६; १७२, २३; १७३, २४; १७९, ५३; १८२, ३. ४. ३४. ४१; १८३, ३. ५८; १८४, ३१; १९८, ६३; ८. १, १६; ९, ७. ५६; १०, २७; ११, २६; २४, ५०; ३१, ५१. ६५; ३४, १२१; ३५, २५. ३८; ३९, १४; ४०, ९. १९ (फाल्गुनानां शतानि वा); ४२, ४. २८; ४९, ११; ५०, २९; ५३, ३३; ५६, १३४; ६३, १६; ६४, ३०; ६६, ३६. ४७; ६८, १; ७०, ४२; ७१, १८; ७२, ४; ७४, १९; ७९, ६८; ८०, २३; ८७, ७. १३; ८४, ४०; ८६, १८; ८७, ७२; ८८, ३३; ८९, ७६; ९०, २७; ९१, १७. ५६; ९६, ३६; ९. २७, १३; ३२, १४. ६७; ३३, १३; ६३, १९; १२. १, ३२; २, ६. १२; २०, २; ४१, १३; ५३, १४; ३४१, ३. ४; १४. १४, १२; १६, ८; ५१, ५०; ५२, ४७; ५३, २; ६६, १९; ७२, २१; ७६, ८; ७७, २०; ७८, ७. ९. २१; ७९, ३; ८२, २८; ८७, १५. २३; ८८, १०; १५. ११, ८. १६; १२, ३; १५, ८; १६. ७, २८; १७. १, ३९; २, २२; १८. ४, ४; ५, १९ (फाल्गुनस्य सुतो, अर्थात् अभिमन्यु)।

* बीभत्सु १. ६१, ४३. ४६. ४८; १२३, ५३; १३३, १४. २२; १३५, १८; १३६, ११; १३९, ८; १७०, ५७; २१८, ३; २२१, ७७; २२२, १४; २२४, १३; २२७, १. ११. २६; २. १३, १०; ५३, २०; ७०, १०; ३. १२, ९१. १२८; २३, १३; ३२, ४५; ३३, १२; ३५, १२; ४७, ३२; ५२, ८. ४९; ८६, १४. १६; ९१, १५; १४१, १५; १५५, ३४; १५८, ३; १६७, १; २३९, १४; ३१२, २०. ३४; ४. २, १९; १३, ४२; ३६, १४; ३७, ३२; ३८, ५०; ४०, ४. ८; ४४, ९ (अर्जुन के १० नामों की गणना); ४४, ११. १८ (व्युत्पत्ति); ४६, ६; ४७, ४. ५. ८. १५. २२; ४८, २. ६. २१; ५२, ५. १८; ५३, १७. २०; ५५, ३. ७. १६. २१; ६०, १७. २४; ६१, ३७. ४६; ६३, ८; ६४, ४; ६६, २१; ७२, १५; ५. २९, ४४; ५६, ३; ७२, ९१; ७७, १९; ७९, २; ८०, १२; ८३, ५०; ९०, ४९; १३७, ६; १३९, ६; १४१, ३०; ६. १९, २२; ४९, ४०; ५९, ४५; ७३, १५; ८४, ५१; १०६, ३३. ३८; १०७, ८७; ११२, १५; ११३, ४९; ११७, ३७; ११८, ४४; ११९, ४२. ४५. ५४; १२०, ५०; १२१, २७. २९; ७. १०, १४; ११, ३९; १६, ५१; १९, १६. ३५; ३०, ८; ५१, १४; ७२, ६०. ८४; ७९, ४१. ४२; ८०, ४. १०; ९१, ७. २४. ३५; ९२, ८. ३३; ९३, १९. ३७; ९९, २०; ११०, ८४; ११२, ४; १३०, ४४; १४५, १०. २१. ३७. ४०; १४६, ६७. १३१; १४८. २५; १५६, ४०. ५२; १५७, ४६; १५९, ४४. ४७. ५०; १६१, १३; १७१, ३५; १७३, ५९; १७८, ८; १८२, ४३; १८४, २५; १८६, ९; १९५, २९; १९७, २२. २४. ३४; १९९, ५२; २०१, ९. १२; ८. ६, ९; ३५, १६; ४६, ८. ५७; ५३, २२; ५८, ७; ६४, २३. ३१; ७१, २७. २९. ३०; ७४, १; ७६, १३; ७९, ६; ८०, २२; ९१, ३१; ९३, १०; ९. ३, १०; ४, १५; १४, २७; २९, ४; ११. १४, १७; २३, २८; २४, १३; १२. २३, २; २७, २१; १४. ६०, २०; ७४, १५; ७५, ८; ७७, ४. १०; ७८, ३१; ८४, ३. २०; ८७, ६; १५. ११, १५; १३, ३. ६; १६. ६, १९. २३; ७, १ ।

* बृहन्नला (वह नाम जिसे महाराज विराट के महल में अज्ञातवास करते समय अर्जुन ने धारण किया था) : ४. २, २७; ११, ९–११; २४, २०. २१. २३; ३६, १६. २०. २३; ३७, ८. १०. १२. १८. २०. २२. २५. २७. २८. ३१. ३३. ३४; ३८, १९. २६. २९. ४२. ४४; ४१, ३. ४; ४२, १८; ४३, १; ६७, १५. २३; ६८, ७. ९. १५. २१. ३७. ४२. ५२. ५४. ६६ ।

* भारत (भरत की सन्तति), व० स्था० ।

* भीमसेनानुज (भीमसेन का छोटा भाई) : ५. १६६, १२ ।

* भीमानुज (भीम का छोटा भाई) : ४. ५४, ९ ।

* महेन्द्रसूनु (इन्द्र का पुत्र), व० स्था० ।

* **महेन्द्रात्मज** (इन्द्र का पुत्र), व० स्था० ।

* **वानरकेतन** (= कपिध्वज) : १४. ८१, २९; ८२, १२ ।

* **वानरकेतु** (= कपिध्वज) : ५. १३८, ८ ।

* **वानरध्वज** (= कपिध्वज) : ६. ११७, ३१ ।

* **वानरवर्यकेतन** (= कपिध्वज) : १४. ५२, ५६ ।

* **वासवज** (इन्द्र-पुत्र) : ४. ५४, १५ ।

* **वासवनन्दन** (इन्द्र का पुत्र), देखिये **वासवज** ।

* **वासवस्यात्मज** (इन्द्र का पुत्र) : ७. ४१, २६ (वासवस्यात्मजात्मजः, = अभिमन्यु) ।

* **वासवि** (इन्द्र का पुत्र) : ५. १५१, १८; ७. २८, ५; ३१, २८; ७३, १८; ७६, २६; १२. ३३९, ९९; १६. ५, ११ ।

* **विजय** (जय) १. १३२, २२; ३. २५७, २२; ३१२. २०; ४. ५, ३५ (विराट के यहाँ अज्ञातवास करते समय युधिष्ठिर द्वारा प्रदत्त पाँच गुह्यनामों में से एक); ३३, १२ (जयो जयन्तो विजयो जयत्सेनो जयद्बलः); ४४, ९ (अर्जुन के दस नामों की गणना); ४४, १०; ४, १४ (व्युत्पत्ति); ५. ५०, २८; १५४, १९; ६. ८२, २; ९९, ११; ११७, १९; ७. १०, २०; ७९, ४४; ११०, ३८. ५४. ६९; १५६, १६९; १५९, ५३; १७२, २०; ८. ५६, १४२; ६२, २; ७१, २०; ९. १२, ३७; १२. १, ३०; २९, ४; १४. १४, ३; ६७, ३; ६९, २१; ७४, २१. २२; ७५, १८; ८०, १३; ८१, २१; ८३, ६. १२; ८५, ३; ८७, २. ३. १४; १५. १७, ७; ३८, १० (युधिष्ठिरस्य जननी भीमस्य विजयस्य च) ।

* **शक्रज** (इन्द्र का पुत्र) : १४. ८६, ८ ।

* **शक्रनन्दन** (इन्द्र का पुत्र) : ३. ४६, २७ ।

* **शक्रसुत** (इन्द्र का पुत्र) : ६. ८५, ३ ।

* **शक्रसूनु** (इन्द्र का पुत्र) : ६. १०४, ३; ७. ४५, २; ८. ६६, ३७; ७०, ३० ।

* **शक्रात्मज** (इन्द्र का पुत्र) : ३. ४२, ११; १६५, १०; ७. १५२, ६; १४. ७९, २४ ।

* **शाखामृगध्वज** (= कपिध्वज) : ७. १३९, १११ ।

* **श्वेतवाह** (श्वेत घोड़ों से युक्त) : ३. १४०, ८; ५. १६६, १२; १२. १, ३० ।

* **श्वेतवाहन** (श्वेत घोड़ों से युक्त) : १. २००, १०; ३. १२९, १९; १४०, २३; ४. ४३, ६; ४४, ९ (अर्जुन के दस नामों की गणना); ४४, १०. १९ (व्युत्पत्ति); ५३, १६; ७. ९२, २७. ३४; १५२, १६; १६४, १३; ८. ८७, १०३; १२. १, २५; १४. ७७, २; ८३, १; १७. २, १८ ।

* **श्वेतहय** (श्वेत घोड़ों से युक्त) : ५. ५४, १३; ७. २८, ३; ८. ८५, ३९ ।

* **श्वेताश्व** (श्वेत घोड़ों से युक्त) : २. ४७, २२; ३. १४१, ११; ६. ११६, ८०; ११७, १९; ७. ११९, ११; ८. २७, १; ३४, १२३; १०. १२, २६; १४. ७३, २३; ७५, ९; १५. ३, १४ ।

* **सव्यसाचिन्** : १. १, २००; २, १८४; २२७, ३. ४६; २२८, २८; २. ८०, २. ५. १६; ३. ४, १०; १२, ११५; ८०, १५; ९१, ६; १६८, १५; २५२, २२; ३०१, १६; ४. ३८, १६; ३९, ११; ४४, ९ (अर्जुन के दस नामों की गणना); ४४, १९ (व्युत्पत्ति); ५. २२, १३; ५७, ६१; ५९, २३; ६४, २३; ९०, ६५; ९५, २०; १३७, ६; १४१, १६. १८. ३१. ४६; १४२, १३; १४६, २२; १५१, १८; १५४, २३. २६; १६०, ६०; १६३, ९; ६. ३५, ३३; ५०, १६; १०८, ५१; ७. ७५, १४; ७९, १९. ३३; ८५, २; ८८, ४; ९४, २; ११४, २६; ११९, ६; १२१, २; १२८, ४०; १३०, २७; १३९, ९०; १४७, ३२; १५९, ५२; ८. ५, ३६. ३९. ४१; १७, १७; १८, २१; ४१, ७५; ७६, २३; ८९, ४०. ५४; ९. १, १; ३, ८. ४२; ४, २९; १४, २८; २४, ५१. ५५. ५६; २५, २९; २९, ५ (लोकवीरेण); ६२, २६; ११. २१, ५; १४. १५, १२; ६०, ९; ७२, २५; ७४, २३ (सव्यसाचिकरात्); ७७, ११; ८१, १४; ८२, १४. १७; १५. २, ७; २९, ५१ (मातरं सव्यसाचिनः); ३८, ११. १२; १६. ४, १२; १७. १, ५; १८. २, ३५; ३, ३८ ।

* **सुरसूनु** (देवपुत्र) : ३. ८६, ७ ।

३. अर्जुन, यम की सभा में उपस्थित एक ऋषि का नाम है (२. ८, १७) ।

अर्जुनक, एक व्याध का नाम है। इसका गौतमी, सर्प, मृत्यु और काल के साथ संवाद (१३. १, १८. २१. ३५. ६१. ६९. ७१. ७७. ७९. ८०) ।

अर्जुननन्दन = अभिमन्यु (७. ३८, १३) ।

अर्जुनदायाद = अभिमन्यु (६. ६१, १०; ७. १४, ७६) ।

अर्जुनपूर्वज = भीमसेन (६. ९६, ३४) ।

अर्जुनवनवासपर्वन्, महाभारत के १६ वें अवान्तर पर्व का नाम है जो आदिपर्व के २१३वें से लेकर २१८वें अध्यायों तक आता है। "नारद जी के आदेशानुसार द्रौपदी के सम्बन्ध में नियम बनाकर पाण्डव लोग इन्द्रप्रस्थ में रहने लगे। वे अपने अस्त्र-शस्त्र के प्रभाव से अनेक राजाओं को अपने अधीन करते रहते थे। एक दिन कुछ चोरों ने एक ब्राह्मण की गायें चुरा लीं। इससे अत्यन्त क्रुद्ध होकर वह ब्राह्मण खाण्डव-प्रस्थ में आकर उच्च स्वर से पाण्डवों को रक्षा के लिये पुकारने लगा। अर्जुन ने ब्राह्मण की पुकार सुनी। परन्तु पाण्डवों के अस्त्र-शस्त्र जहाँ रक्खे थे वहीं धर्मराज युधिष्ठिर कृष्णा के साथ एकान्त में बैठे थे, अतः अर्जुन न तो घर के भीतर प्रवेश कर सकते थे और न खाली हाथ चोरों का ही पीछा कर सकते थे। फिर भी, ब्राह्मण की आर्त पुकार सुनकर अर्जुन घर के भीतर प्रवेश करने के नियम को भङ्ग करके अन्दर चले गये और अपने धनुष को ले लिया। तदुपरान्त धनुष और कवच धारण करके अर्जुन ने ध्वजायुक्त रथ पर आरूढ़ होकर चोरों का पीछा किया और समस्त गोधन विजित कर लिया। ब्राह्मण को गोधन लौटा देने के पश्चात् अर्जुन ने नियम-विरुद्ध कक्ष में प्रवेश करने के कारण, युधिष्ठिर के रोकने पर भी, बारह वर्ष के वनवास के लिए प्रस्थान किया (१. २१३)।" "अर्जुन जब वन में जाने लगे तो अनेक वेदज्ञ ब्राह्मण उनके साथ हो लिये: वेद-वेदाङ्गों के विद्वान्, अध्यात्म-चिन्तन करने वाले, भिक्षा-जीवी ब्रह्मचारी, भगवद्भक्त, पुराणों के ज्ञाता सूत और कथा वाचक, संन्यासी, वानप्रस्थ, तथा मधुर स्वर से दिव्य कथाओं का पाठ करने वाले ब्राह्मण, आदि सभी अर्जुन के साथ गये। धीरे-धीरे चलकर वे सब लोग गंगाद्वार पहुँचे और अर्जुन ने वहीं अपना डेरा डाला। गङ्गाद्वार में ब्राह्मणों ने अनेक स्थलों पर अग्निहोत्र के लिए अग्नि प्रकट की। एक दिन गंगा में स्नान तथा पितरों का तर्पण करने के पश्चात् अग्निहोत्र के लिये जल लेकर अर्जुन ज्यों ही जल से निकलना चाहते थे कि नागराज की पुत्री उलूपी ने उनके प्रति आसक्त होकर पानी के भीतर से ही उन्हें खींच लिया। नागराज कौरव्य के परम सुन्दर भवन में पहुँचकर अर्जुन ने एकाग्रचित्त होकर देखा तो वहाँ अग्नि प्रज्वलित हो रही थी। उस समय अर्जुन ने उसी अग्नि में अपना अग्निहोत्र-कार्य सम्पन्न किया, जिससे अग्निदेव अत्यन्त सन्तुष्ट हुए। तदुपरान्त अपना परिचय देते हुये उलूपी ने अर्जुन से कहा, 'युधिष्ठिर ने धर्म की रक्षा के लिये केवल द्रौपदी को ही निमित्त बनाकर एक दूसरे के प्रवास का नियम बनाया था, अतः यहाँ आपका धर्म दूषित नहीं होता। यदि आपके इस धर्म का थोड़ा व्यतिक्रम हो भी जाय तो भी मुझे प्राणदान देने से आपको महान् धर्म होगा।' उलूपी के इस प्रकार कहने पर अर्जुन ने धर्म को ही सामने रखकर

उसका मनोरथ पूर्ण किया। वह रात्रि नागराज के भवन में ही व्यतीत करने के पश्चात् सूर्योदय होने पर उलूपी के साथ अर्जुन पुनः गङ्गाद्वार आ पहुँचे। अर्जुन से विदा लेते हुए उलूपी ने उन्हें यह वरदान दिया कि वे जल में सर्वत्र अजेय और सभी जलचर उनके वश में रहेंगे (१. २१४)।" "रात्रि की समस्त घटना को ब्राह्मणों से कहकर अर्जुन हिमवत् पर्वत के निकट चले गये। वहाँ उन्होंने अगस्त्यवट, वसिष्ठ पर्वत, तथा भृगुतुङ्ग पर शौच और स्नानादि किये तथा ब्राह्मणों को कई सहस्र गायें दान कीं। तत्पश्चात् हिमालय से नीचे उतरकर अर्जुन अनेक तीर्थों का भ्रमण करते हुए, अङ्ग, वङ्ग, और कलिङ्ग देशों के भी सभी पवित्र तीर्थों में गये। कलिङ्ग राष्ट्र के द्वार पर पहुँच कर अर्जुन के साथ चलनेवाले ब्राह्मण उनसे अनुमति लेकर वहाँ से लौट आये। कलिङ्ग देश के पश्चात् अर्जुन तपस्वी मुनियों से सुशोभित महेन्द्र पर्वत का दर्शन और समुद्र-तट के क्षेत्रों में यात्रा करते हुए धीरे-धीरे मणिपुर पहुँचे। मणिपुर में अर्जुन ने राजा चित्रवाहन की पुत्री चित्राङ्गदा के साथ विवाह किया और तीन वर्ष तक वहीं रहे। जब चित्राङ्गदा के गर्भ से एक बालक उत्पन्न हो गया तब अर्जुन पुनः अपनी यात्रा पर निकल पड़े (१. २१५)।" "तदुपरान्त अर्जुन दक्षिण समुद्र के तट पर स्थित पवित्र तीर्थों में गये। वहाँ उन दिनों तपस्वी लोग पाँच तीर्थों को छोड़ देते थे। इन तीर्थों के नाम यह हैं : अगस्त्य तीर्थ, सौभद्र तीर्थ, परम पावन पौलोम तीर्थ, अश्वमेध यज्ञ का फल देने वाला कारन्धम तीर्थ, तथा पापनाशक भारद्वाज तीर्थ। अर्जुन के उन तीर्थों के परित्याग का कारण पूछने पर मुनियों ने बताया कि इनमें पाँच घड़ियाल रहते हैं जो स्नान करनेवाले ऋषियों को जल के भीतर खींच ले जाते हैं, जिसके कारण ही मुनियों ने इनका त्याग कर दिया है। मुनियों की बात सुन कर अर्जुन महर्षि सुभद्र के उत्तम सौभद्र तीर्थ में सहसा उतर कर स्नान करने लगे। इतने ही में जल के भीतर विचरण करने वाले ग्राह ने अर्जुन का पैर पकड़ लिया, परन्तु अर्जुन उस जलचर को लिये-दिये पानी के बाहर निकल आये। पानी के ऊपर खिंच आने पर वह ग्राह समस्त आभूषणों से विभूषित एक सुन्दर नारी के रूप में परिणत हो गया। उसने बताया कि वह नन्दनवन में विहार करने वाली वर्गा नामक एक अप्सरा है। अर्जुन के उसके ग्राह बन जाने का कारण पूछने पर उसने कहा, 'मैं एक दिन अपनी चार अन्य सखियों के साथ कुबेर के घर जा रही थी। मार्ग में एक तपस्वी ब्राह्मण को देखकर हम सब (वर्गा, सौरभेयी, समीची, बुद्बुदा और लता) उनके तप में विघ्न डालने की इच्छा से वहाँ उतर पड़े। वह ब्राह्मण तपस्या से विरत नहीं हुये और साथ ही हमारी उदण्डता पर कुपित होकर हम सब को सौ वर्ष तक जल में ग्राह बनकर रहने का शाप दे दिया', (१. २१६)।" "वर्गा ने बताया कि 'हम सब उन ब्राह्मण से क्षमा माँगने के लिये गये। उन ब्राह्मण ने कहा कि शत और शतसहस्र शब्द अनन्त संख्या के वाचक हैं, परन्तु उन्होंने जिस 'शतं समाः' शब्द का प्रयोग किया है उसमें शत शब्द शतवर्ष के परिमाण का ही वाचक है अनन्त का नहीं। उन्होंने यह भी बताया कि हम सब को कोई श्रेष्ठ पुरुष जल से बाहर खींच लायेगा, उस समय हम सब को अपना दिव्य रूप पुनः प्राप्त हो जायगा। हमारा उद्धार हो जाने के पश्चात् वह स्थान नारी तीर्थ के नाम से विख्यात होगा। ब्राह्मण को प्रणाम करने के पश्चात् जब हम आगे बढे तो नारद के दर्शन हुये और उन्हीं ने हम सबको दक्षिण समुद्रतट के समीप स्थित इन पाँच तीर्थों में भेजा। नारद जी ने ही हमें यह बताया था कि अर्जुन शीघ्र ही आकर हमें इस दुःख से मुक्त करेंगे।' वर्गा की बात सुनकर अर्जुन ने अन्य चार अप्सराओं को भी मुक्त किया और तदुपरान्त चित्राङ्गदा से मिलने मणिपुर चले गये। अर्जुन ने चित्राङ्गदा के गर्भ से बभ्रुवाहन को उत्पन्न किया। तदनन्तर अर्जुन ने गोकर्ण की ओर प्रस्थान किया (१. २१७)।" "अर्जुन समस्त पश्चिम-तटवर्त्ती पुण्य तीर्थों में भ्रमण करते हुये प्रभास तीर्थ में पहुँचे। इसी तीर्थ में मधुसूदन (श्रीकृष्ण) अर्जुन से मिलने आये। दोनों ने एक दूसरे को हृदय से लगाकर कुशल समाचार पूछा। तदनन्तर वे दोनों मित्र, जो नर और नारायण के अवतार थे, एक साथ ही कुछ दिनों तक घूमते रहे। वहाँ से वे दोनों रैवतक पर्वत पर गये। श्रीकृष्ण की आज्ञा से उनके सेवकों ने पहले से ही उस पर्वत को सुसज्जित करके भोजन आदि तैयार कर रक्खा था। भोजनोपरान्त श्रीकृष्ण और अर्जुन ने वहाँ नटों और नृत्यकों के नृत्य देखे। दूसरे दिन प्रातःकाल दोनों ही द्वारका पुरी को गये। अर्जुन के द्वारका पहुँचने पर भोज, वृष्णि और अन्धक वंश के लोगों ने उनका हार्दिक स्वागत किया। इसके बाद अनेक प्रकार के रत्न तथा भाँति-भाँति के भोज्य पदार्थों से रमणीक श्रीकृष्ण के भवन में अर्जुन ने अनेक रात्रियों तक निवास किया (१. २१८)।"

अर्जुनसुत : ६. ९०, ५२ (= इरावत्); ६. १००, ५० (=अभिमन्यु)।

अर्जुनस्यवनवासः (अर्जुन का वन में निवास), १. २, ८८ (= अर्जुन वनवासपर्वन्)।

अर्जुनस्यवनेवासः (अर्जुन का वन में निवास), १. २, ४५ (= अर्जुन वनवासपर्वन्)।

अर्जुनस्याभिगमन (इन्द्र के स्वर्गलोक में अर्जुन का आगमन), १. २, ५० (पर्व = अर्जुनाभिगमनपर्वन्)।

अर्जुनाग्रज = भीमसेन (१. १३८, ३४)।

१. **अर्जुनात्मज** = अभिमन्यु (७. ३५, २८; ३७, ७; ३८, १०; ४५, ५; ४८, ९)।

२. **अर्जुनात्मज** = इरावत् (६. ९०, ९. ७८)।

अर्जुनद्वार (अर्जुन से श्रेष्ठ) : ७. ३६, १२।

अर्जुनाभिगमनपर्वन्, महाभारत के एक अवान्तर पर्व का नाम है जो वनपर्व के १२ से ३७ अध्यायों तक आता है : "पाण्डवों के वनवास का समाचार सुनकर भोज, वृष्णि, अन्धक, पञ्चाल के वंशज, चेदिराज, धृष्टकेतु, और कैकेय के भ्राता आदि उनसे मिलने के लिये आये। जब श्रीकृष्ण ने कहा कि धरती दुर्योधन के रक्त का पान करेगी, तब अर्जुन ने उनके पूर्वजन्मों का वर्णन करते हुये उन्हें शान्त किया। तदुपरान्त श्रीकृष्ण की आत्मा, अर्जुन, चुप हो गये और जनार्दन ने कहा कि वह और अर्जुन एक ही हैं। तब धृष्टद्युम्न, तथा अपने अन्य भ्राताओं से घिरी हुई पाञ्चाली ने, कृष्ण की स्तुति की। तदुपरान्त द्रौपदी ने, अपने को कौरवों के सभाभवन में घसीट कर लाये जाने के लिये श्रीकृष्ण और पाण्डवों को दोषी ठहराया। श्रीकृष्ण ने द्रौपदी को सान्त्वना देते हुये उसके अपमान का बदला दिलाने का आश्वासन दिया। धृष्टद्युम्न ने कहा कि वे द्रोणाचार्य का, शिखण्डिन् भीष्म-पितामह का, भीमसेन दुर्योधन का, और अर्जुन कर्ण का वध करेंगे; उन्होंने यह भी बताया कि राम और श्रीकृष्ण की सहायता से इन्द्र भी उन लोगों को परास्त नहीं कर सकते (३. १२)।" "श्रीकृष्ण का जूये का दोष बताते हुये पाण्डवों पर आई विपत्ति के लिये अपनी अनुपस्थिति को कारण मानना। श्रीकृष्ण ने कहा यदि वे द्वारका में उपस्थित रहे होते तो आकर जूये को अवश्य रोकते चाहे इसके लिए उन्हें धृतराष्ट्र को समझाना अथवा शक्ति का ही प्रयोग करना पड़ता। उन्होंने कहा द्वारका लौटते ही युयुधान से सारा समाचार प्राप्त कर वे तत्काल पाण्डवों से मिलने वहाँ आये (३. १३)।" "सौभवधोपाख्यान : द्यूत के समय न पहुँचने में श्रीकृष्ण के द्वारा शाल्व के साथ युद्ध करने और सौभ-विमान सहित उसे नष्ट करने का संक्षिप्त वर्णन (३. १४)।" "सौभ-नाश की विस्तृत कथा के प्रसङ्ग में द्वारका में युद्ध-सम्बन्धी रक्षात्मक तैयारियों का वर्णन (३. १५)।" शाल्व की विशाल सेना के आक्रमण का यादव सेना द्वारा प्रतिरोध, साम्ब द्वारा क्षेमवृद्धि की पराजय, वेगवान का वध, तथा चारुदेष्ण द्वारा विविन्ध्य दैत्य

का वध एवं प्रद्युम्न द्वारा सेना को आश्वासन (३. १६)। प्रद्युम्न और शाल्व का घोर युद्ध (३. १७)। मूर्च्छावस्था में सारथि के द्वारा रणभूमि से बाहर लाये जाने पर प्रद्युम्न का अनुताप और इसके लिये सारथि को उपालम्भ देना (३. १८)। प्रद्युम्न के द्वारा शाल्व की पराजय (३. १९)। श्रीकृष्ण और शाल्व का भीषण युद्ध (३. २०)। श्रीकृष्ण का शाल्व की माया से मोहित होकर पुनः सजग होना (३. २१)। शाल्ववधोपाख्यान की समाप्ति और युधिष्ठिर की आज्ञा लेकर श्रीकृष्ण, धृष्टद्युम्न, तथा अन्य सब राजाओं का अपने-अपने नगरों के लिये प्रस्थान (३. २२)। पाण्डवों का द्वैतवन में जाने के लिए उद्यत होना और प्रजावर्ग की व्याकुलता (३. २३)। पाण्डवों का द्वैतवन में जाना (३. २४)। महर्षि मार्कण्डेय का पाण्डवों को धर्म का आदेश देकर उत्तर दिशा की ओर प्रस्थान (३. २५)। दल्भपुत्र बक का युधिष्ठिर को ब्राह्मणों का महत्त्व बतलाना (३. २६)। द्रौपदी का युधिष्ठिर से उनके शत्रुविषयक क्रोध को उभाड़ने के लिए संताप-पूर्ण वचन (३. २७)। द्रौपदी द्वारा प्रह्लाद-बलि संवाद का वर्णन—तेज और क्षमा के अवसर (३.२८)। युधिष्ठिर के द्वारा क्रोध की निन्दा और क्षमाभाव की विशेष प्रशंसा (३. २९)। दुःख से मोहित द्रौपदी का युधिष्ठिर की बुद्धि, धर्म एवं ऐश्वर्य के न्याय पर आक्षेप (३. ३०)। युधिष्ठिर द्वारा द्रौपदी के आक्षेप का समाधान तथा ईश्वर, धर्म और महापुरुषों के आदर से लाभ और अनादर से हानि (३. ३१)। द्रौपदी का पुरुषार्थ को प्रधान मानकर पुरुषार्थ करने के लिए जोर देना (३. ३२)। भीमसेन का पुरुषार्थ की प्रशंसा करना और युधिष्ठिर को उत्तेजित करते हुये क्षत्रिय-धर्म के अनुसार युद्ध छेड़ने का अनुरोध (३. ३३)। धर्म और नीति की बात कहते हुए युधिष्ठिर की अपनी प्रतिज्ञा के पालन रूप धर्म पर ही डटे रहने की घोषणा (३. ३४)। दुःखित भीमसेन का युधिष्ठिर को युद्ध के लिए उत्साहित करना (३. ३५)। युधिष्ठिर का भीमसेन को समझाना, व्यासजी का आगमन और युधिष्ठिर को प्रतिस्मृति विद्या प्रदान करना तथा पाण्डवों का पुनः काम्यक वन गमन (३. ३६)। अर्जुन का सब भ्राताओं आदि से मिलकर इन्द्रकील पर्वत पर जाना तथा इन्द्र का दर्शन करना (३. ३७)।

अर्णवालय = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अर्थ (लाभ), धर्म और श्री के पुत्र का नाम है (१२. ५९, १३२. १३३)। १२. २८४, १३३ (= शिव, सहस्र नामों में से एक); १३. १७, ५३ (= शिव, सहस्र नामों में से एक); १३. १४९, ५९ (= विष्णु, सहस्र नामों में से एक)।

अर्थकर = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अर्थशास्त्र—'अर्थशास्त्रमिदं प्रोक्तं', (१. २, ३८३)। 'अर्थशास्त्रपरो राजा धर्मार्थाव्ताधिगच्छति।' (१२. ७१, १४)। 'एतौ धर्मार्थशास्त्रेषु', (१२. १३७, २३)। 'निश्चयः स्वार्थशास्त्रेषु विश्वासश्चासुखोदयः।', (१२. १३९, ७०)। 'अर्थशास्त्रविशारदः', (१२. १६७, १०)। 'यच्चार्थशास्त्रागममन्त्र-विद्भिः', (१२. २०१, ५;२०१, १०९)। 'स्त्रीणां बुद्ध्यर्थनिष्कर्षादर्थशास्त्राणि' (१३. ३९, १०)।

अर्दन = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अर्द्धचर्मन् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अर्धकील, दर्मीमुनि द्वारा प्रकट किये हुये एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १५३)।

अर्धचन्द्रव्यूह, एक व्यूह-रचना का नाम है, जिसका अर्जुन और धृष्टद्युम्न ने निर्माण किया था (६. ५६, ११)।

१. अर्धमास = स्कन्द

२. अर्धमास, स्कन्द के अभिषेक में पधारने वालों में यह भी थे (९. ४५, १५)।

१. अर्बुद, एक नाग का: नाग है जो अन्य नागों के साथ अतीतकाल से गिरिव्रज में निवास करता था (२. २१, ९)।

२. अर्बुद, एक ऐसे तीर्थ का नाम है, जहाँ पहले पृथिवी में विवर था (३. ८२, ५५)।

१. अर्यमन्, बारह आदित्यों में से एक का नाम है (१. ६५, १५)। अर्जुन के जन्मोत्सव पर इनके आगमन का उल्लेख (१. १२३, ६६)। अर्जुन और श्रीकृष्ण पर घोर परिघ द्वारा इनका आक्रमण (१. २२७, ३५)। इन्द्र की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ७, २१)। श्रीकृष्ण ने कहा कि 'मैं पितरों में अर्यमा नामक पितर हूँ' (६. ३४, २९)। स्कन्द के अभिषेक में द्वादश आदित्यों के साथ यह भी पधारे थे (९. ४५, ५)। पूर्वकाल में इन्द्र, अग्नि, और अर्यमन् ने यमुना के तट पर स्थित मित्रावरुण के पवित्र आश्रम पर अत्यधिक प्रसन्नता प्राप्त की थी (९. ५४, १५)। द्वादश आदित्यों में इनकी गणना (१२. २०८, १५)। इनके शिव द्वारा उत्पन्न हुये होने का उल्लेख (१३. १८, ७१)। बारह आदित्यों में से एक यह भी हैं (१३. १५०, १५)।

२. अर्यमन् = सूर्य : धौम्य द्वारा वर्णित सूर्य के १०८ नामों में से एक (३. ३, १६)। 'दक्षिणेन च पन्थानमर्यम्णो ये दिवं गताः। एतान् क्रिया-वतां लोकानुक्तवान्पूर्वमप्यहम्॥', (१२. २६, ९)। प्रजापतियों का वर्णन करते हुए भीष्म ने बताया कि अर्यमन् तथा उनके समस्त पुत्र सम्पूर्ण प्राणियों के शासक तथा स्रष्टा थे (१२. २०८, १०)।

३. अर्यमन् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अर्वावसु, युधिष्ठिर की सभा में विराजने वाले एक ऋषि का नाम है (२. ४, १०)। रैभ्य के, अर्वावसु और परावसु नामक दो पुत्र थे (३. १३५, १३)। अपने भ्राता परावसु के द्वारा छले जाने के कारण वन में जाकर सूर्य सम्बन्धी रहस्य-वेद का अनुष्ठान किया जिससे सूर्य ने अर्वावसु को साक्षात् दर्शन दिया (३. १३८, २. १०. ११. १४. १९)। 'अर्वावसु-परावसू', (१२. २०८, २६; ३३६, ७; १३. १५०, ३०)।

१. अर्ह = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

२. अर्ह, एक मनुष्य का नाम है। युधिष्ठिर को भेंट देने वाले लोगों में एक यह भी थे (२. ५२, ३)।

अलकनन्दा, देवलोक की गङ्गा का नाम है। गंगा जी देवलोक में विचरण करने से अलकनन्दा, पितृलोक में वैतरणी, और इस लोक में गंगा कहलाती हैं (१. १७०, २२)।

अलका, कुबेर की नगरी और पुष्करिणी का नाम है (१. ८५, ९; २. १०, ८)।

अलकाधिप = कुबेर : 'महेश्वरसखम्', (९. ११, ५५); १२. ७४, ४. १५ (= वैश्रवण)।

अलम्बतीर्थ, एक तीर्थ का नाम है जहाँ के दिव्य-वृक्ष अपनी सुवर्णमय शाखाओं से युक्त, एवं अन्य वृक्ष स्वर्ण और रजतमय फलों से सुशोभित वैदूर्यमणि की शाखाओंवाले थे (१. २९, ३९)।

अलम्बुष, एक राक्षस का नाम है जिसके वंश क्रम को विभिन्न रूपों में व्यक्त किया गया है। इसके वध का वर्णन (१. २, २६३)। 'अलम्बुषो-ग्रसेनानां', (४. ५६, १२)। 'अलम्बुषो राक्षसेन्द्रः क्रूरकर्मा महारथः', (५. १६७, ३३)। 'अलम्बुषं प्रत्युदियाद्बलं शक्र इवाहवे', (६. ४५, ४२)। 'अलम्बुषस्तु समरे', (६. ४५, ४४)। 'अलम्बुषो राक्षसो', (६. ६३, २९)। 'अलम्बुषस्तदा', (६. ८१, ३०)। 'अलम्बुषं शरैस्तीक्ष्णैर्विव्याध बलिनां वरः', (६. ८२, ३९)। 'अलम्बुषं शरैरन्यैरभ्याकिरत सर्वतः', (६. ८२, ४४)। इरावान् के द्वारा शकुनि के भ्राताओं तथा राक्षस अलम्बुष के द्वारा इरावान् का वध (६. ९०)। 'अलम्बुषो रथश्रेष्ठः', (६. ९९, ७)। 'अलम्बुषो भृशं राजन्नागेन्द्र इव चुक्रुधे', (६. १००, ४३. ४६)। 'अलम्बुषः

कथं युद्धे प्रत्ययुध्यत', (६. १०१, १)। 'अलम्बुषोऽपि संक्रुद्धः कार्ष्णि नवभिराशुगैः। हृदि विव्याध वेगेन तोत्त्रैरिव महाद्विपम् ॥', (६. १०१, १३)। 'अलम्बुषं विनिर्भिद्य प्राविशन्त धरातलम्', (६. १०१, २१)। 'राक्षसौ रौद्रकर्माणौ हैडिम्बालंबुषावुभौ', (७. १४. ४६)। 'राक्षसं राक्षसः क्रुद्धः समाजघ्ने ह्यलंबुषः', (७. २५, ६१)। 'अलम्बुषं राक्षसेन्द्रं', (७. ९५, ४७)। 'अलंबुषस्तु संक्रुद्धः', (७. ९६, १८)। 'आर्ष्यश्रृङ्गिर्महारथः' (७. १०६, १६)। 'अलम्बुषस्तु समरे', (७. १०८, १३)। 'आर्ष्यश्रृङ्गिं ततो भीमो नवभिर्निशितैः शरैः। विव्याध प्रहसन् राजन् राक्षसेन्द्रममर्षणम् ॥', (७, १०८, १५. २०. २३)। 'अलम्बुषं तथा युद्धे', (७. १०९, १)। 'अलम्बुषो भृशं क्रुद्धो घटोत्कचमताडयत्', (७. १०९, ३)। 'अलम्बुषमथो विद्ध्वा सिंहवद्व्यनदन्मुहुः। तथैवालंबुषो राजन् हैडिम्बिं युद्ध दुर्मदम् ॥', (७. १०९, ५)। 'तां तामलम्बुषो राजन्माययैव निजघ्निवान्' (७. १०९, ९)। 'अलम्बुषं राक्षसेन्द्रं दृष्ट्वाऽक्रुध्यन्त पाण्डवाः', (७. १०९, १०)। 'ह्यलम्बुषं पक्वमलम्बुषं यथा', (७. १०९, ३६)। 'अलम्बुषः सात्यकिं', (७. १४०, १२)। 'अलम्बुषः राजवरः' (७. १४०, १४)। 'अलम्बुषस्योत्तमवेगवद्भिरश्वांश्चतुर्भिर्निजघान बाणैः', (७. १४०, १७)। 'कम्बोजं निहतं दृष्ट्वा तथालम्बुषमेव च', (७. १५०, २३)। 'अलम्बुषो महाराज', (७. १६५, १६)। 'राक्षसेन्द्रो ह्यलम्बुषः', (७. १६७, ३७)। 'अलम्बुषं च कर्णं च', (७. १७४, १३)। 'राक्षस्तूर्णमलम्बुषः', (७. १७४, १४)। 'अलम्बुषस्ततः क्रुद्धो', (७. १७४, १८. २०. २७)। 'घटोत्कचालम्बुषयोः' (७. १७४, २८)। 'अलम्बुषघटोत्कचौ', (७. १७४, ३२)। 'राक्षसेन्द्रमलम्बुषम्', (७. १७४, ३५)। 'अलम्बुषो राक्षसेन्द्रः खरबन्धुरयानवान्। घटोत्कचेन विक्रम्य गमितो यमसादनम् ॥', (८. ५, ४६)। 'जलसन्धोऽथार्ष्यश्रृङ्गी राक्षसश्चाप्यलायुधः। अलम्बुषो महाबाहुः सुबाहुश्च महारथः ॥', (९. २, २०)। 'अलम्बुषस्तथा राजन् राक्षसश्चाप्यलायुधः। आर्ष्यश्रृङ्गिश्च निहतः किमन्यद्भागधेयतः ॥', (९. २, ३९)। 'घटोत्कचं राक्षसेन्द्रं बकभ्रातरमेव च। अलम्बुषं राक्षसेन्द्रं जलसन्धं च पार्थिवम् ॥', (११. २६, ३७)।

अलम्बुषा, एक अप्सरा का नाम है, जो महर्षि कश्यप और प्राधा की पुत्री थी (१. ६५, ४९)। इसने अर्जुन के जन्मोत्सव के समय अन्य अप्सराओं के साथ आकर नृत्य किया था (१. १२३, ६१)। महारानी सुदेष्णा ने अज्ञातवास के लिये विराट नगर में आयी हुई द्रौपदी से पूछा : 'तुम अलम्बुषा, मिश्रकेशी आदिक कोई अप्सरा तो नहीं हो' (४. ९, १६)। इन्द्र ने दधीच मुनि को मोहित करने के लिये इसे भेजा था (९. ५१, ७)। सरस्वती ने दधीच मुनि को उनका पुत्र समर्पित करते हुये बताया कि उनका जो रेतस् अलम्बुषा को देखकर स्कन्दित हुआ था, उसे स्वयं उसने धारण कर लिया था। अतः गर्भ से बाहर आये हुये अपने अनिन्दित पुत्र को ग्रहण कीजिये (९. ५१, १३. १४)। अष्टावक्र के स्वागत में कुबेर की आज्ञा से अन्य अप्सराओं के साथ इसने भी नृत्य किया (१३. १९, ४४)। इसका जप करने से मनुष्य पाप-भय से मुक्त हो जाता है (१३. १६५, १५)।

१. अलर्क, एक राजर्षि का नाम है। यमराज की सभा में उपस्थित होनेवाले राजर्षियों में इनका भी उल्लेख है (२. ८, १८)। ये काशि और कुरुष देश के अधिपति थे, और इन्होंने राज्य और धन का परित्याग करके धर्म का आश्रय लिया (३. २५, १३)। कभी मांस न खानेवाले राजाओं के साथ इनका उल्लेख (१३. ११५, ७३)। उन पुण्यात्मा राजाओं में से एक यह भी हैं जिनका प्रातःसायं नाम लेने से मनुष्य पापों से मुक्त हो जाता है (१३. १६५, ५२)। "पूर्वकाल की बात है, अलर्क नाम के अत्यन्त तपस्वी, धर्मज्ञ, सत्यवादी, महात्मा और दृढ़प्रतिज्ञ एक राजर्षि थे। उन्होंने अपने धनुष की सहायता से समुद्र पर्यन्त पृथिवी को जीत लिया था। इसके पश्चात उनका मन सूक्ष्म तत्व की खोज में लगा। अलर्क ने कहा, 'मुझे मन से ही बल प्राप्त हुआ है अतः वही सबसे प्रबल है। मन को जीत लेने से ही मुझे स्थायी विजय प्राप्त हो सकती है। मैं इन्द्रियरूपी शत्रुओं से घिरा हुआ हूँ, अतः बाहरी शत्रुओं पर आक्रमण न करके इन आन्तरिक शत्रुओं को ही अपने बाणों का लक्ष्य बनाऊँगा। मन, चंचलता के कारण, समस्त मनुष्यों से विविध प्रकार के कर्म कराता है अतः अब मैं मन पर ही तीक्ष्ण बाणों का प्रहार करूँगा। मन बोला, 'तुम्हारे ये बाण मुझे किसी प्रकार बींध नहीं सकते। यदि इन्हें चलाओगे तो ये तुम्हारे ही मर्म-स्थलों का भेदन कर देंगे जिससे तुम्हारी मृत्यु हो जायगी। अतः तुम अन्य प्रकार के बाणों का विचार करो, जिससे तुम मुझपर प्रहार कर सको।' इसी प्रकार नासिका, तथा जिह्वा इत्यादि से भी अलर्क का संवाद हुआ। तदुपरान्त अलर्क तपस्या के लिए निकले, किन्तु तपस्या से भी मन-बुद्धि सहित पाँचों इन्द्रियों को मारने योग्य किसी उत्तम बाण का पता न चला। तब उन्होंने ध्यान योग का साधन किया, जिससे एक ही बाण से मारकर उन्होंने सहसा सब इन्द्रियों को परास्त कर दिया। इस सफलता से अलर्क को अत्यन्य आश्चर्य हुआ और उन्होंने कहा, 'अत्यन्त कष्ट की बात है कि मैं अब तक बाह्यकर्मों में लगा हुआ राज्य की ही उपासना करता रहा। किन्तु ध्यानयोग से बढ़कर कोई दूसरा उत्तम सुख का साधन नहीं है, यह बात मुझे बहुत बाद में मालूम हुई।' (१४. ३०, २. ५. ७. ९. १०. १२. १३. १५. १६. १८. १९. २१. २२. २४–२७)।"

२. अलर्क, एक कीट का नाम है। इसने कर्ण को काट लिया था। यह मूलतः एक राक्षस था जिसने कृतयुग में भृगु-पत्नी का बलपूर्वक अपहरण कर लिया था और इसीलिए भृगु के शाप से कीट होकर पृथिवी पर गिर पड़ा था (१२. ३, १३. २०)।

अलाताक्षी, स्कन्द की अनुचरी एक मातृका का नाम है (९. ४६, ८)।

अलायुध, एक राक्षस का नाम है जो बकासुर का भाई और कौरव-पक्ष का योद्धा था। चौदहवें दिन घटोत्कच के साथ इसका युद्ध (७. ९५. ४३; ९६, २७)। इसका भाइयों सहित भीम को, जिन्होंने इसके राक्षस बान्धव बक और किर्मीर तथा मित्र हिडिम्ब का वध कर दिया था, चौदहवें दिन रात्रि-युद्ध में मार डालने के लिये दुर्योधन से आज्ञा माँगना (७. १७६, १)। इसे देखकर कौरवसेना का हर्ष (७. १७७, ३)। घटोत्कच के साथ युद्ध करते हुये कर्ण को संकट में देखकर दुर्योधन ने इसे उसका वध कर देने की आज्ञा दी (७. १७७, ८)। भीमसेन के साथ इसका युद्ध (७. १७७, १७–१९. २१. २६)। घटोत्कच के साथ इसका युद्ध (७. १७८, ३. ५. ६. १२. २७)। घटोत्कच द्वारा इसका वध (७. १७८, ३६)। इसके वध का उल्लेख (७. १७८, ४०; १७९, १. ३; १८०, २३; १८१, २४; ९. २, २०. ३९; २४, २८)। व्यास जी के प्रभाव से कुरुक्षेत्र के युद्ध में मारे गये कौरव-पाण्डव वीरों के साथ गंगाजी के जल से इसका प्रगट होना (१५. ३२, १२)।

अलुलुप—देखिये अलोलुप।

अलोल = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अलोलुप, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, १०३; ११७, १२)। भीम द्वारा मारे गये धृतराष्ट्र के दस पुत्रों में से एक यह भी था (८. ८४, ३)। = सूर्य (३. ३, २३)।

अवगाह, एक वृष्णिवंशी योद्धा का नाम है (७. ११, २७)।

अवतत = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अवन्ति (बहु० अवन्तयः, अवन्ति-निवासी मनुष्य): 'सुराष्ट्रावन्तयस्तथा,' (४. १, १२)। 'कुन्तयोऽवन्तयश्चैव', (६. ९, ४३)।

अवन्ती, एक नगरी का नाम है जिसकी राजधानी उज्जयिनी थी (३. ६१, २१)।

अवर = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अवभृथ, यज्ञान्त-स्नान का नाम है (३. ४५, ४०)।

अवर्ण=शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अवश = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अवसान, एक तीर्थ का नाम है जहाँ जाने से सहस्र गोदान का फल प्राप्त होता है (३. ८२, १२८)।

अवाकीर्ण, सरस्वती तटवर्ती एक तीर्थ का नाम है (९. ४१, १)।

अवाचीन, पूरुवंशीय राजा जयत्सेन के द्वारा विदर्भ कुमारी सुश्रवा के गर्भ से उत्पन्न एक राजा का नाम है। इनके द्वारा विदर्भ राजकुमारी मर्यादा के गर्भ से अरिह की उत्पत्ति हुई (१. ९५, १७-१८)।

अविकम्पन, एक प्राचीन राजा का नाम है जिन्हें ज्येष्ठ मुनि से सात्वत धर्म की प्राप्ति हुई थी (१२. ३४८, ४७)।

१. अविक्षित्—इनके पूर्वयुग में हुये होने का उल्लेख (१. १, २३८)। ये कुरु के पुत्र थे, इनका अश्ववान् नाम भी था तथा इनके पुत्र का नाम परिक्षित् था (१. ९४, ५१. ५२)।

२. अविक्षित्, एक राजा का नाम है जो सुवर्चस् के पुत्र थे। शत्रु द्वारा विपत्ति में पड़े हुये इनके पिता ने हाथ को मुँह से लगाकर शंख की भाँति बजाया, जिससे एक विशाल सेना उत्पन्न हुई और उसने सम्पूर्ण शत्रु नरेशों को परास्त कर दिया। इसीलिये, कर का धवन करने (हाथ को बजाने) से इनका नाम करन्धम हो गया। करन्धम (सुवर्चस्) के पुत्र होने से ये कारन्धम कहलाये। ये त्रेता युग के आरम्भ में हुये जो इन्द्र के समान पराक्रमी, सूर्य के समान तेजस्वी, पृथिवी के समान क्षमाशील, बृहस्पति के समान बुद्धिमान्। तथा हिमालय के समान सुस्थिर थे। उस समय सभी राजा इनके अधीनस्थ थे। इन्होंने सौ अश्वमेध यज्ञों का अनुष्ठान किया। स्वयं अङ्गिरा मुनि ने पुरोहित के रूप में इनका यज्ञ कराया। इनके पुत्र का नाम मरुत्त था (१४. ४, १५-२३)।

अविज्ञातगति (जिसकी गति ज्ञात न हो), अनिल नामक वसु के द्वारा शिवा के गर्भ से उत्पन्न एक पुत्र का नाम है। इनके भाई का नाम मनोजव था (१. ६६, २५)।

अविज्ञातृ = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अविज्ञेय = महापुरुष (१२. ३३८, ४ में १८० वाँ नाम है)।

अविन्ध्य, एक श्रेष्ठ राक्षस का नाम है जिसने अशोकवाटिका में त्रिजटा को सीता के पास राम का पराक्रम वर्णन करने तथा आश्वासन देने के लिये भेजा था (३. २८०, ५६)। सीता की खोज के लिये अशोकवाटिका में आये हुये हनुमान् से सीता ने कहा: 'महाबाहो! मैं अविन्ध्य के कहने से यह विश्वास करती हूँ कि तुम हनुमान् हो। अविन्ध्य राक्षस कुल में उत्पन्न होने पर भी आदरणीय है (३. २८२, ६७)।' हाथ में तलवार लेकर सीता पर प्रहार करने ने लिये दौड़े हुये रावण को मन्त्री अविन्ध्य ने समझाकर शान्त किया (३. २८९, २८. ३२)। राम द्वारा रावण के वध के पश्चात् वृद्ध मन्त्री अविन्ध्य सीता के साथ राम के पास आये (३. २९१, ६)।

अविमुक्त, वाराणसी तीर्थ का नाम है जहाँ मनुष्य देवाधिदेव महादेव जी का दर्शन करके ब्रह्महत्या से मुक्त होता है; यहाँ प्राणोत्सर्ग करके मनुष्य मोक्ष प्राप्त कर लेता है (३. ८४, ७९)।

अविमूढा: एक प्रकार के ऋषियों की संज्ञा का नाम है (१.२११,५)।

अविस्थल एक गाँव का नाम है (५. ७२, १५)। उन पाँच गाँवों में एक यह भी है जिन्हें युधिष्ठिर ने दुर्योधन से माँगा था (५. ८२, ७)।

अव्यङ्ग = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

१. अव्यक्त=कृष्ण (१२. ४७, ५२)।

२. अव्यक्त = महापुरुष (१२. ३३८, ४ में १३५ वाँ नाम—अव्यक्तमहः—है)।

३. अव्यक्त=विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

४. अव्यक्त = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अव्यक्तनिधन = महापुरुष (१२. ३३८, ४ में १३६ वाँ नाम)।

अव्यक्तयोनि=शिव (१३. १४, २)।

१. अव्यक्तरूप = शिव (१४. ८, १४)।

२. अव्यक्तरूप = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

१. अव्यय (अनश्वर) : १२. ३९, ७ (देखो = ब्रह्मन्)। = कृष्ण (१२. ४७, १९; २०९, १)। 'देवेशमव्ययम्' = ब्रह्मन्, (१२. २५८, ३२; २८९, २४)। 'ज्योतिरव्ययम्', (१२. ३०२, १६)। 'तमप्यनुपमात्मानं विश्वं शंभुः प्रजापतिः। अणिमा लघिमा प्राप्तिरीशानो ज्योतिरव्ययः॥' (१२. ३१२, १३)। 'देवानामादिः' = विष्णु (१२. ३३९, ११)। 'विश्वमूर्तिरिहाव्ययः' = विष्णु (१२. ३३९, १५)। 'हरिरव्ययः', (१२. ३४२, ६)। = शिव (१३. १४, १२७; १७, ७२. १४९)। = विष्णु: १३. १४९, १४. १७. ५९. १०९ (सहस्र नामों में से एक)। = शिव (१४. ८, २७)।

२. अव्यय, धृतराष्ट्र के कुल में उत्पन्न हुए एक सर्प का नाम है जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (१. ५७, १६)।

अशनिन् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अशिव (मार्कण्डेयसमस्यापर्व : ३. २२१,)। मार्कण्डेय की गणना में अग्नि का एक रूप (सोरेन्सन का पाठ यह है : अग्निर् यश् चाशिवो नाम शक्तिपूजा परश् च सः दुःखार्त्तानाञ् च सर्वेषां शिवकृत् सततं शिवः', जिसमें 'अशिव' शब्द आता है; किन्तु अधिक सम्भव पाठ 'अग्निर्यश्च शिवो नाम शक्तिपूजा परश्च सः' है, जिसमें 'शिव' आता है)। सोरेन्सन ने भी बम्बई संस्करण के 'अग्निर्यश्च शिवो' पाठ को ही अधिक सम्भव माना है।

१. अशोक एक क्षत्रिय राजा (सम्भवपर्व : १. ६७, १४) था जो 'अश्व' नामक विख्यात असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, १३)। यह कलिङ्गराज्य की राजधानी श्रीमद्राजपुर (राजधर्मानुशासनपर्व : १२. ४, ३) में कलिङ्ग-राज चित्राङ्गद की कन्या के स्वयंवर में भी गया (राजधर्मानुशासनपर्वः १२, ४, ७) जहाँ दुर्योधन ने कन्या का अपहरण कर लिया था (१२. ४, १३)।

२ अशोक: भीमसेन का सारथि था। इसने कलिङ्गराज श्रुतायु के साथ युद्ध करते समय रथहीन भीम के पास रथ पहुँचाया था(भीष्मवधपर्व : ६. ५४, ७०-७१)।

३ अशोक = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अशोकतीर्थ: दक्षिण में शूर्पारक क्षेत्र के अन्तर्गत एक तीर्थ (तीर्थयात्रापर्व : ३. ८८, १३)।

अश्म, बाण-शय्या पर भीष्म की स्तुति करता है (राजधर्मानुशासनपर्वः १२. ५८, २५)।

१. अश्मक, महर्षि वसिष्ठ के द्वारा कल्माषपाद की पत्नी मदयन्ती के गर्भ से उत्पन्न एक राजर्षि का नाम है (१. १२२, २२)। इन्होंने पौदन्य नगर की स्थापना की थी (१. १७७, ४७)।

२. अश्मक, भीष्म की मृत्यु-शय्या के निकट उपस्थित एक ब्राह्मण का नाम है (राजधर्मानुशासनपर्व : १२. ४७, ५)।

३. अश्मक, अश्मकों का एक राजा था जिसका अभिमन्यु ने वध किया था (अभिमन्युवधपर्व : ७. ३७, २१-२३)।

४. अश्मक (गोदावरी और महिष्मती के निकट) एक जनपद का नाम है (जम्बूखण्डे—विनिर्माणपर्व : ६. ९, ४४)।

अश्मकदायाद (अश्मकपुत्र) एक कौरवपक्षीय योद्धा का नाम है जो अभिमन्यु द्वारा मारा गया था (अभिमन्युवधपर्व : ७. ३७, २१. २३)।

अश्मका, पाण्डव सेना में सम्मिलित एक जाति के लोगों का नाम है

(जयद्रथवधपर्व : ७. ८५, ४०) जिन्हें कर्ण ने विजित करके कर वसूल किया था (कर्णपर्व ८. ८, २०)।

अश्मकी, एक यादवी का नाम है जो राजा प्राचिन्वत् की पत्नी तथा संयाति की माता थी (सम्भवपर्व : १. ९५, १३)।

अश्मकेश्वर (= अश्मकदायाद) : ७. ३७, २३ ।

अश्मकपृष्ठ, गया में स्थित एक प्रेतशिला नामक तीर्थ है, जहाँ पिण्ड देने से ब्रह्महत्या दूर होती है (राजधर्मपर्व : १३. २५, ४२)। "प्रेतशिला आज भी है, किन्तु यहाँ कोई शिला नहीं वरन् तीन-चार सौ फीट ऊँची पहाड़ी है" ग्रियर्सन ।

अश्मन्, एक ब्राह्मण था जिससे विदेहराज जनक ने परामर्श किया था। राजधर्मानुशासनपर्व : १२. २८, २ (अश्मगीतं नरव्याघ्र तन्निबोध युधिष्ठिर) ; २८, ३ (अश्मानं ब्राह्मणम्) ; २८, ५८ (अश्मानम्)।

अश्रम = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अश्लेषा, एक नक्षत्र का नाम है (अश्विनी से आरम्भ होने पर नवाँ ; इस संधितारे को δ हाइड्रा माना गया है, सूर्यसिद्धान्त, पृष्ठ १८८, जं० अ० ओ० सो०, संस्करण)। १३. ६४, ११ ('आश्लेषायां तु यो रूप्यमृषभं वा प्रयच्छति स सर्वभयनिर्मुक्तः सम्भवान् अधितिष्ठति); १३. ८९, ५ (आश्लेषायां ददच्छ्राद्धं धीरान्पुत्रान्प्रजायते)। "दिग्गजनों ने रेणुक से कहा कि कार्तिक मास के कृष्ण पक्ष में अश्लेषा नक्षत्र और मंगलमयी अष्टमी तिथि का योग होने पर जो मनुष्य आहार-संयम पूर्वक क्रोधशून्य होकर इस मन्त्र—'बलदेवप्रभृतयो ये नागा बलवत्तराः ॥ अनन्ता ह्यक्षया नित्यं भोगिनः सुमहाबलाः । तेषां कुलोद्भवा ये च महाभूता भुजङ्गमा ॥ ते मे बलिं प्रतीच्छन्तु बलतेजोऽभिवृद्धये । यदा नारायणः श्रीमानुज्जहार वसुंधराम् ॥ तद् बलं तस्य देवस्य धरामुद्धरतस्तथा ।' अर्थात् 'बलदेव आदि जो अत्यन्त शक्तिशाली नाग हैं वे अनन्त, अक्षय, नित्य फनधारी और महाबली हैं; वे तथा उनके कुल में उत्पन्न जो अन्य विशाल भुजंगम हों वे भी मेरे तेज और बल की वृद्धि के लिये मेरी दी हुई इस बलि को ग्रहण करें; जब श्रीमान् नारायण ने इस पृथिवी का एकार्णव के जल से उद्धार किया था उस समय उनमें जो बल था वह मुझे प्राप्त हो ।' (१३. १३२, ८–११)—का जाप करते हुए श्राद्ध के अवसर पर हमारे लिए गुड़मिश्रित भात देता है वह महान फल का भागी होता है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, अथवा शूद्र यदि उपवासपूर्वक एक वर्ष तक इस प्रकार हमारे लिये बलिदान करे तो उसका महान फल होता है। (१३. १३२, ७–१५)।"

अश्लेषा (= गत शब्द) : १३. ११०, ६ ; ११०, ३–१० तक एक चान्द्रव्रत का वर्णन है : "मार्गशीर्ष के शुक्लपक्ष की प्रतिपदा को मूल नक्षत्र से चन्द्रमा का योग होने पर चन्द्र सम्बन्धी व्रत आरम्भ करना चाहिये। चन्द्रमा के स्वरूप का इस प्रकार चिन्तन करना चाहिये : देवता सहित मूल नक्षत्र के द्वारा उनके दोनों चरणों की भावना करे और पिण्डलियों में रोहिणी को स्थापित करे। जाँघों में अश्विनी नक्षत्र, ऊरुओं में पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा नक्षत्र, गुह्यभाग में पूर्वा-फाल्गुनी और उत्तरा-फाल्गुनी नक्षत्र, तथा कटि-भाग में कृत्तिका की स्थिति समझे। नाभि में पूर्वा-भाद्रपदा और उत्तराभाद्रपदा को जाने, नेत्र-मण्डल में रेवती, और पृष्ठभाग में धनिष्ठा, अनुराधा तथा उत्तरा को स्थापित समझे। दोनों भुजाओं में विशाखा का, हाथों में हस्त का, अंगुलियों में पुनर्वसु का तथा नखों में अश्लेषा की स्थापना करे। ज्येष्ठा नक्षत्र से ग्रीवा की, श्रवण से दोनों कानों की, पुष्य नक्षत्र की स्थापना से मुख की, तथा स्वाती नक्षत्र से दाँतों और ओठों की भावना बताई जाती है। शतभिषज् को हास, मघा को नासिका, मृगशिरा को नेत्र और अनुराधा को ललाट समझे। भरणी को सिर और आर्द्रा को चन्द्रमा के केश समझे। इस प्रकार विभिन्न अङ्गों में नक्षत्रों की स्थापना करके तत्सम्बन्धी वेद-मन्त्रों द्वारा उन-उन अङ्गों की पूजा एवं जप आदि प्रतिदिन करे। पूर्णमासी को समा होने पर वेदों के पारङ्गत विद्वान् ब्राह्मण को घृत दान करे। ऐसा करने से मनुष्य पूर्णिमा के चन्द्रमा की भाँति परिपूर्णाङ्ग, सौभाग्यशाली, दर्शनीय तथा ज्ञान का भागी होता है।"

१. अश्व, एक दानव (१.६५, २४) जो कि दनु और कश्यप के चालीस पुत्रों में से १४ वाँ था। महाराज अशोक के रूप में अवतरित (१. ६७, १४)। इन्द्र के पूर्व पृथिवी के उन अनेक स्वामियों में से एक जिसका बलि ने उल्लेख किया है (१२. २२७, ५२)।

२. अश्व = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अश्वक, काः, एक जाति का नाम है (६. ९, ४४)।

अश्वकेतु, मगधराज के पुत्र का नाम है जिसका अभिमन्यु ने महाभारत युद्ध के १३ वें दिन वध किया था (७. ४८, ७)।

अश्वक्रन्द, एक यक्ष का नाम है जिसका गरुड़ ने वध किया था (१. ३२, १८)।

१. अश्वग्रीव, अश्व का भ्राता था (१. ६५, २५), जो राजा रोचमान के रूप में अवतरित हुआ (१. ६७, १७-१८)। बलि द्वारा उल्लिखित इन्द्र के पूर्व पृथिवी के स्वामियों में से एक (१२. २२७, ५०)।

२. अश्वग्रीव, एक राजर्षि = हयग्रीव (१२. २४, २६), जो युद्ध में हत होकर स्वर्गलोक में आनन्दपूर्वक जीवन व्यतीत कर रहा था।

अश्वचक्र—इसका शाम्ब ने वध किया था (३. १२०, १४)।

१. अश्वतर, जो कि महाभारत में केवल यौगिक शब्द 'काम्बलाश्वतरौ' में ही आता है, नागों के एक युग्म का द्योतक है जो कि कद्रू और कश्यप के पुत्र थे (१. ३५, १०)। इन्हें वरुण के प्रासाद में रहनेवाला बताया गया है (२. ९, ९)। इन्हें भोगवती में रहनेवाला भी कहा गया है (५. १०३, ९)।

२. अश्वतर—अश्वतर नाग से उपलक्षित प्रयाग का एक तीर्थ (३. ८५, ७६)।

अश्वतीर्थ—कान्यकुब्ज के निकट गङ्गा के तट पर स्थित एक तीर्थ (३, ९५, ३), जहाँ वरुण ने राजा गाधि को देने के लिये ऋचीक मुनि को सहस्र श्यामकर्ण अश्व प्रदान किये थे (३. ११५, २६-२९ ; देखिये ५. ११९, ५-७ ; १३. ४, १६-१८)।

१. अश्वत्थ, धौम्य द्वारा बताये गये सूर्य के १०८ नामों में से एक है (३. ३, २१)।

२. अश्वत्थ = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

३. अश्वत्थ = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

१. अश्वत्थामन्, द्रोण और कृपी के पुत्र थे (१. १, २१३–२१४; २, २६५–२७३; ६३, १०७–१०८)। 'महादेवान्तकाभ्यां च कामात्क्रोधाच्च भारत। एकत्वमुपपन्नानां जज्ञेशूरः परंतपः॥ अश्वत्थामा महावीर्यः शत्रुपक्षभयावहः', (१. ६७, ७२–७३)। जन्म लेते ही उच्चैःश्रवा नामक घोड़े के समान नाद करने के कारण इनका 'अश्वत्थामा' नाम रखने की भविष्य-वाणी हुई थी (१. १३०, ४७–४९)। राजकुमारों और सम्पन्न व्यक्ति के पुत्रों को दूध पीता हुआ देख कर बाल्यकाल में जब अश्वत्थामा रोते थे तो द्रोणाचार्य उन्हें चावल का आटा मिला पानी पीने के लिये देकर बहला देते थे : अश्वत्थामा इस आटे के पानी को दूध समझ कर पी जाते थे (१. १३१, ५२–५४)। द्रोण इन्हें चौड़े मुँह का कुम्भ लेकर जल लाने के लिये भेजते थे जिससे पानी लेकर लौटने में विलम्ब न हो (१. १३२, १६–१७)। धनुर्वेद के रहस्यों के ज्ञान में यह सर्वश्रेष्ठ हुये (१. १३२, ६२)। भीम और दुर्योधन को गदायुद्ध करते समय पृथक करते हैं (१. १३५, ३–५)। कृष्णा के स्वयंवर में (१. १८६, ६)। स्वयंवर के पश्चात् दुर्योधन के साथ (१. २००, ९)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में आते हैं (२. ३४, ८)। ब्राह्मणों के स्वागत-सत्कार का भार इन पर रक्खा जाता है (२. ३५, ५; २. ३७, ११; २. ४४, १४; २. ७८, २; ४. ३८, १३)। द्रोण पर आक्षेप करने पर कर्ण को फटकारते हैं (४. ५०–५१)। भीष्म

ने इन्हें अपने व्यूह के वाम-भाग की रक्षा के लिये नियुक्त किया (४. ५२, २२)। अर्जुन इनसे युद्ध नहीं करेंगे (४. ५५, ४६)। अर्जुन से युद्ध कर रहे द्रोण की रक्षा करते हैं, किन्तु अपने बाण समाप्त हो जाने के कारण अर्जुन से स्वयं पराजित हो जाते हैं और कर्ण इन्हें बचाता है (४. ५८, ७२–७६ तथा ५९, १–१९; ४. ६८, ७२; ५. २५, ११; ५. ३०, १३)। पाण्डवों के पास से लौटे हुये सञ्जय का स्वागत करने के लिये धृतराष्ट्र की सभा में उपस्थित (५. ४७, ६; ५. ५०, ३२; ५. ५५, ५१)। अर्जुन के साथ (५. ५७, १५. ३७) युद्ध नहीं करना चाहते, (५. ५६, ६. १०; ५. ६६, ५; ५. ९५, १९; ५. १२४, १८; ५. १३१, ४०; ५. १३९, ४; ५. १४३, ४२; ५. १४८, १६)। युधिष्ठिर अथवा धृष्टद्युम्न ने, नकुल को इनका विरोध करने की आज्ञा दी (५. १६४, ६)। दुर्योधन से दस दिन में ही पाण्डवसेना को नष्ट कर सकने की शक्ति का कथन (५. १९३, १८; ५. १९५, ६; ६. १७, २ : 'सिंहलाङ्गूलकेतुना' ६. २५, ८)। प्रथम दिन के युद्ध में इनका शिखण्डी के साथ युद्ध (६. ४५, ४६. ४८; ६. ५१, २. १९)। अर्जुन के विरुद्ध भीष्म की सहायता (६. ५२, ४०)। दूसरे दिन के युद्ध में शल्य और कृष्ण के साथ रहकर इनका धृष्टद्युम्न और अभिमन्यु से युद्ध करना (६. ५५, २–७)। तृतीय दिन कृप के साथ गरुड़व्यूह में शीर्ष स्थान पर खड़े थे (६. ५६, ४)। अन्य के साथ होकर अभिमन्यु को आगे बढ़ने से रोकना (६. ६१, १)। अर्जुन के साथ युद्ध, (६. ७३, ३–१६)। छठवें दिन कृप के साथ क्रौञ्चव्यूह के नेत्र में स्थित, (६. ७५, १६; ६. ८१, २)। सातवें दिन शिखण्डी के साथ युद्ध (६. ८२, २६–३८; ६. ८९, ४. ४०)। आठवें दिन घटोत्कच के साथ युद्ध कर रहे दुर्योधन की रक्षा (६. ९२, २४)। इनका नील के साथ और तदुपरान्त उस घटोत्कच के साथ युद्ध जो इन्हें अपनी माया से चकित कर देता है (६. ९४, ३५–३६)। सोमदत्त तथा अवन्ती के दोनों राजकुमारों के साथ इनका, युद्ध के नवें दिन, व्यूह के वाम भाग का संरक्षण (६. ९९, ५) सात्यकि के प्रहार से इनका मूर्छित होना (६. १०१, ४६–४७)। नवें दिन अर्जुन के साथ युद्ध, (६. १०२, २४; ६. ११०, १६)। दसवें दिन भीष्म के विरुद्ध युद्ध कर रहे विराट और द्रुपद को रोकना और आहत करना (६. १११, २२–२७)। द्रोणाचार्य इनसे अपशकुनों और अर्जुन की दुर्जेयता की चर्चा करते हैं (६. ११२)। धृष्टद्युम्न इन पर आक्रमण करते हैं (६. ११५, ३; ६. ११६, ९–१२)। नील का वध करते हैं (७. ३१, २४–२५)। बारहवें दिन युद्ध करते हैं (७. ३२, ३)। तेरहवें दिन चक्रव्यूह के अग्रभाग में खड़े सिन्धुराज के पास अन्य कौरवों के साथ स्थित (७. ३४, २२)। तेरहवें दिन अभिमन्यु को आहत करते हैं (७. ३७, २४. ३१)। तेरहवें दिन ही अभिमन्यु द्वारा आहत (७. ४७, ९. १४. १७)। तेरहवें दिन अभिमन्यु के साथ युद्ध (७. ४९, ४)। क्रीड़ा नहीं करना चाहते (७. ८५, १५; ७. ८७, १२; ७. ९१, ५; ७. ९४, १९)। दुर्योधन और कर्ण सहित अर्जुन के साथ युद्ध करते हैं (७. १०४, ४)। इनका प्रातःकालीन सूर्य के समान अरुण कान्ति से प्रकाशित ध्वज, जिसमें सिंह की पूँछ का चिह्न था और वह इन्द्रध्वज के समान प्रकाशमय, सुवर्णमय और ऊँचा था (७. १०५, १०–१२; ७. १३५, ७)। अर्जुन के विरुद्ध कर्ण की सहायता तो करते हैं, किन्तु युद्ध से अलग हट जाने के लिए विवश होते हैं (७. १३९, १२१–१२३)। चौदहवें दिन भूरिश्रवा का वध करने से सात्यकि को रोकने का निष्फल प्रयास करते हैं (७. १४३, ५२)। अर्जुन के विरुद्ध दुर्योधन, जयद्रथ इत्यादि की सहायता और कर्ण को अपने रथ में बैठा लेते हैं (७. १४५, ९. ४३. ८५)। अर्जुन के विरुद्ध जयद्रथ की सहायता करते हैं, (७. १४६)। चौदहवें दिन, जयद्रथ की मृत्यु के पश्चात् अर्जुन के विरुद्ध कृप की सहायता करते हैं (७. १४७, ११; ७. १५०, ५)। द्रोणाचार्य, दुर्योधन द्वारा इनको वीरतापूर्वक युद्ध करने का उपदेश भेजते हैं (७. १५२, ३५; ७. १५५, ३८)। चौदहवें दिन सात्यकि और घटोत्कच के साथ युद्ध करते हैं; घटोत्कच के पुत्र का वध करते हैं; घटोत्कच का रथ नष्ट कर देते हैं; घटोत्कच द्वारा भेजे गये राक्षसों से युद्ध करते हैं; भीम इत्यादि से युद्ध करते हैं; श्रुतहव्य इत्यादि सहित द्रुपद-पुत्र सुरथ का वध करते हैं; सिद्ध-गण इनकी प्रशंसा करते हैं (७. १५६, ५५–१९०)। कृप को फटकारने के कारण कर्ण को फटकारते हैं, किन्तु दुर्योधन इन्हें रोकता है; अर्जुन के विरुद्ध कर्ण की सहायता; शीघ्रतापूर्वक युद्ध में जाने से दुर्योधन को रोकना और दुर्योधन द्वारा इनकी प्रशंसा (७. १५९, १३. ८३–१००)। अश्वत्थामा का दुर्योधन को उपालम्भपूर्ण आश्वासन देकर पाञ्चालों के साथ युद्ध करते हुये धृष्टद्युम्न के रथ सहित सारथि को नष्ट करके उसकी सेना को भगाकर अद्भुत पराक्रम दिखाना (७. १६०)। युधिष्ठिर के विरुद्ध युद्ध में दुर्योधन इत्यादि द्वारा इनकी सहायता (७. १६१)। घटोत्कच को रोकते हैं (७. १६५, १२)। घटोत्कच ने इन्हें घायल कर दिया किन्तु चेतना लौटते ही यह पुनः उससे युद्ध के लिए तत्पर हो गये (७. १६६, ३०–३६)। इनकी मृत्यु के एक मिथ्या समाचार को सुनकर द्रोणाचार्य की जीवन से निराशा तथा शस्त्र आदि का परित्याग जिससे उनका वध कर दिया गया (७. १९०–१९२)। कृप द्वारा द्रोणवध का वृत्तान्त सुनते हैं (७. १९३, ५१–५७)। इनमें मानव और वारुण आदि अस्त्र सदा प्रतिष्ठित हैं, और धृष्टद्युम्न के वध के लिये ही इनका जन्म हुआ (७. १९४, २. १४)। दुर्योधन के सम्मुख युधिष्ठिर आदि का वध करने की शपथ और अपने नारायणास्त्र की प्राप्ति का रहस्य बताना और उसका प्रयोग करना, अपशकुनों का प्रकट होना (७. १९५)। अर्जुन द्वारा इनकी प्रशंसा करना (७. १९६)। दुर्योधन के सम्मुख यह अपनी शपथ दुहराते हैं (७. १९९)। श्रीकृष्ण का भीमसेन को रथ से उतार कर अश्वत्थामा द्वारा चलाये गये नारायणास्त्र को शान्त करना; अश्वत्थामा की उसके पुनः प्रयोग में असमर्थता बताना; अश्वत्थामा द्वारा धृष्टद्युम्न की पराजय; अश्वत्थामा द्वारा मालव, पौरव तथा चेदि देश के युवराज का वध एवं भीम और अश्वत्थामा का घोर युद्ध (७. २००)। अश्वत्थामा के द्वारा आग्नेयास्त्र के प्रयोग से एक अक्षौहिणी पाण्डवसेना का संहार; श्रीकृष्ण और अर्जुन पर उस अस्त्र का प्रभाव न होने से चिन्तित हुये अश्वत्थामा को व्यासजी का शिव तथा श्रीकृष्ण की महिमा बताना (८. ६, १७; ८. ९, ८३)। कर्ण को सेनापति बनाने के लिये अश्वत्थामा का प्रस्ताव (८. १०)। कर्ण के मकर-व्यूह के शीर्ष में स्थित (८. ११, १६)। भीम पर आक्रमण करते हैं (८. १३–१४)। इनका भीम के साथ अद्भुत युद्ध तथा दोनों का मूर्छित होना (८. १५)। अर्जुन का संशप्तकों तथा अश्वत्थामा के साथ युद्ध, (८. १६)। अर्जुन के द्वारा अश्वत्थामा की पराजय और कर्ण की सेना में शरण लेना (८. १७)। पाण्ड्य का वध (८. २०; ८. २१, ५; ८. ४६, २२)। कृप के विरुद्ध युद्ध कर रहे शिखण्डी की सहायता करने से युधिष्ठिर को रोकना (८. ५४, १४)। इनका घोर युद्ध, सात्यकि के सारथि का वध, और युधिष्ठिर का इन्हें छोड़कर दूसरी ओर चले जाना (८. ५५)। काम्बोजों की सेना का विनाश कर रहे अर्जुन के साथ इनका युद्ध तथा घायल हो जाने पर सारथि द्वारा इन्हें युद्धस्थल से दूर ले जाना (८. ५६, ११८–१४७)। दुर्योधन के सम्मुख धृष्टद्युम्न का वध करने की प्रतिज्ञा (८. ५७, ९–१०)। धृष्टद्युम्न और अर्जुन के साथ युद्ध तथा अर्जुन द्वारा इनकी पराजय (८. ५९)। अर्जुन इन्हें पुनः पराजित करते हैं (८. ६४; ८. ६७, ८; ८. ७३, ५५. ५९; ८. ७८, ६२)। अन्य लोगों के साथ अर्जुन पर आक्रमण करते हैं (८. ७९)। पाण्डवों के साथ सन्धि करने के लिये दुर्योधन को समझाने का निष्फल प्रयास (८. ८८, २१–२९)। कर्ण की मृत्यु पर दुर्योधन को सान्त्वना देते हैं (८. ९४, २५। ८. ९५, ८; ९. २, १७)। दुर्योधन के पूछने पर सेनापति के लिये शल्य का नाम प्रस्तावित करते हैं (९. ६, १९–२१)। धृतराष्ट्र-पुत्रों के साथ शल्य की रक्षा करते हैं (९. ८, २६)। पाञ्चाल्य वीर सुरथ का वध तथा अर्जुन के साथ युद्ध करते हैं (९. १४)। अन्य लोगों को साथ

लेकर भीम के विरुद्ध दुर्योधन की सहायता करते हैं, और शल्य को अपने रथ में बैठा कर युधिष्ठिर से उसकी रक्षा करते हैं (९. १६)। कृतवर्मा को युधिष्ठिर से बचाने के लिये अपने रथ में बैठा लेते हैं (९. १७, ८७)। भीम के साथ युद्ध करते हैं (९. २२, २०)। कृतवर्मा को अपने रथ में बैठाकर उनकी रक्षा करते हैं (९. २३, ८)। युद्ध में खो गये दुर्योधन को खोजना (९. २५, ४०–४४ ; ९. २७, ५. १७)। कृप, कृतवर्मन् तथा इन्होंने सञ्जय से यह सुना कि दुर्योधन सरोवर में प्रवेश कर गया है (९. २९, ५६–६०)। अश्वत्थामा, कृतवर्मा और कृपाचार्य का सरोवर पर जा कर दुर्योधन से युद्ध करने के विषय में वार्तालाप करना; इनकी बात कुछ व्याधों द्वारा सुन लेना तथा व्याधों द्वारा युधिष्ठिर को दुर्योधन का पता बताना; जब युधिष्ठिर आदि दुर्योधन को ढूँढ़ते हुये सरोवर के निकट आते हैं तो कृप, कृतवर्मा तथा इनका पलायन (९. ३० ; ९. ६१, ३१)। रात्रि में सोते समय पाण्डवों का वध करने की इनकी योजना से कृष्ण का अवगत होना (९. ६३, ७१–७३)। पलायन कर रहे व्यक्तियों से दुर्योधन के धराशायी होने का समाचार जानना (९. ६४, ४२)। कृतवर्मा के साथ यह पुनः दुर्योधन के पास जाते हैं और समस्त पाञ्चालों के वध का आश्वासन देते हैं; दुर्योधन की आज्ञा से कृपाचार्य ने इन्हें सेनापति बनाया (९. ६५)। पाण्डवों से भयभीत होकर कृप और कृतवर्मा के साथ यह वन में चले गये, जहाँ इन्होंने न्यग्रोधवृक्ष के नीचे रात्रि व्यतीत की; वहाँ एक उलूक द्वारा अनेक पक्षियों का विनाश देखकर इनके मन में रात्रि के समय पाण्डवों का वध करने का विचार आया (१०. १)। कृपाचार्य का अश्वत्थामा को ईश्वर की शक्ति की प्रबलता बताते हुये कर्त्तव्य के विषय में सत्पुरुषों का परामर्श लेने की प्रेरणा देना; अश्वत्थामा का कृप तथा कृतवर्मन् को उत्तर देते हुये उन्हें अपना क्रूरतापूर्ण निश्चय बताना; कृपाचार्य द्वारा दूसरे दिन प्रातःकाल युद्ध करने का परामर्श देना और अश्वत्थामा का उसी रात्रि में सोते हुये पाण्डवों को मारने का आग्रह प्रकट करना; अश्वत्थामा और कृप का सम्वाद तथा तीनों का पाण्डवों के शिविर की ओर प्रस्थान (१०. २–५)। अश्वत्थामा का शिविर-द्वार पर एक अद्भुत पुरुष को देखकर उस पर अस्त्रों का प्रहार करना और अस्त्रों के अभाव में चिन्तित हो भगवान शिव की शरण में जाना; अश्वत्थामा द्वारा शिव की स्तुति, उनके सम्मुख एक अग्निवेदिका तथा भूतगणों का प्राकट्य और उनका आत्मसमर्पण करके भगवान शिव से खड्ग प्राप्त करना (१०. ६–७)। तदुपरान्त इनके द्वारा सर्वप्रथम धृष्टद्युम्न का और फिर उत्तमौजों, युधामन्यु और द्रौपदी के पुत्रों, और शिखण्डी इत्यादि का वध, जब कि कृप और कृतवर्मा का द्वार पर खड़े होकर पलायन करनेवाले लोगों का वध, तथा समस्त शिविर में आग लगा देना, राक्षस तथा पिशाच मृत व्यक्तियों के शव का भक्षण करते हैं; जब यह लोग शिविर के समस्त पाण्डवों का वध—पाँच पाण्डव उस समय वहाँ नहीं थे—कर चुके तब वहाँ से चले गये (१०. ८)। यह लोग पुनः दुर्योधन के पास गये; वहाँ इन्होंने दुर्योधन से अपने कृत्य का वर्णन किया और उससे धन्यवाद प्राप्त किया (१०. ९ ; १०. १३, ३)। द्रौपदी के आग्रह पर नकुल को सारथी के रूप में लेकर भीमसेन द्वारा अश्वत्थामा पर आक्रमण के लिये प्रस्थान (१०. ११, २८–३१)। कृष्ण द्वारा युधिष्ठिर से यह बताना कि अश्वत्थामा ने किस प्रकार मनुष्यों पर प्रहार न करने का आश्वासन देने पर द्रोणाचार्य से ब्रह्मशिरस् अस्त्र प्राप्त किया था और किस प्रकार अश्वत्थामा ने स्वयं कृष्ण से भी सुदर्शन चक्र माँगा था किन्तु उसे उठा न सका (१०. १२)। जब अश्वत्थामा गंगा-तट पर अन्य ऋषियों के साथ महर्षि व्यास के पास बैठे थे तो उन्होंने भीम को अपनी ओर आते हुये तथा कृष्ण और अर्जुन को भीम को समझाते हुए देखा; तब अश्वत्थामा ने ब्रह्मास्त्र को इषीका नामक तृण में स्थित करके 'पाण्डवों के सम्पूर्ण विनाश' का मन्त्र पढ़ कर चलाया (१०. १३)। कृष्ण के कहने पर अर्जुन ने भी उस दिव्यास्त्र का प्रयोग किया जिसे उन्होंने द्रोणाचार्य से सीखा था; परिणामस्वरूप समस्त लोक भय से काँप उठे और पर्वत, वन और वृक्षों सहित सारी पृथिवी हिलने लगी; उस समय वहाँ नारद और व्यास एक साथ उपस्थित हुये और अश्वत्थामा तथा अर्जुन को शान्त करने के लिए उनके प्रज्वलित अस्त्रों के बीच में खड़े हो गये (१०. १४)। अर्जुन ने तत्काल अपने अस्त्र को वापस बुला लिया, किन्तु आत्मसंयम के अभाव के कारण अश्वत्थामा अपने अस्त्र का उपसंहार न कर सके; व्यास के समझाने पर उन्होंने अपने दिव्यास्त्र को पाण्डवों के गर्भस्थ शिशुओं पर गिराया और पाण्डवों से प्राण-दान प्राप्त करने के लिये उन्होंने अपनी वह मणि पाण्डवों को दे दी जो समस्त संकटों से रक्षा करती थी (१०. १५)। व्यास की स्वीकृति से श्रीकृष्ण ने यह वरदान दिया कि उत्तरा का गर्भस्थ शिशु परिक्षित मृत तो पैदा होगा, किन्तु वह पुनः जीवित हो जायेगा; जब कि भ्रूण-हत्या के पाप में अश्वत्थामा को समस्त विपन्नताओं और व्याधियों से ग्रसित हो कर तीन सहस्र वर्षों तक वन में भ्रमण करना पड़ेगा; कृष्ण के इस शाप के पश्चात् अश्वत्थामा ने मणि प्रदान करके वन-गमन किया (१०. १६)। अश्वत्थामा की सफलता का वास्तविक कारण रुद्र की सहायता थी (१०. १७ ; ११. १, ३; ११. ९, ३)। जब धृतराष्ट्र स्त्रियों सहित युद्ध क्षेत्र को देखने और मृतकों का संस्कार करने के लिये गये तो नगर के थोड़ा बाहर उनसे कृप और कृतवर्मा सहित अश्वत्थामा मिले और उन्होंने धृतराष्ट्र से रात्रि में पाण्डव-सेना के संहार का वर्णन किया; तदुपरान्त पाण्डवों के भय से यह लोग चले गये तथा अश्वत्थामा ने व्यास के आश्रम में शरण ली (११. ११ ; १२. १४, २०; १२. २७, १८; १३. ६, ३३; १३. १५०, ४२; १४. ६६, १६; १६. ६, १७)। महाभारत में अश्वत्थामा के निम्नलिखित नाम मिलते हैं जिन्हें व० स्था० पर देखिये, **आचार्यनन्दन, आचार्यपुत्र, आचार्यसुत, आचार्यतनय, आचार्यसत्तम, द्रौणि, द्रोणायनि, द्रोणपुत्र, द्रोणसुत, गुरुपुत्र, गुरोःसुत, अङ्गिरसांवरिष्ठः, भारताचार्यपुत्र।**

२. अश्वत्थामन् मालव नरेश इन्द्रवर्मन का हाथी, जिसका भीम ने द्रोणाचार्य को इस भ्रम में डालने के लिए वध किया था कि स्वयं उनका (द्रोणाचार्य का) पुत्र मारा गया (७. १९०, १५–१७. ५०–५१; ७. १९३, ५३. ५५; १२. २७, १८)।

अश्वनदी—कुन्तीभोज देश में स्थित चर्मण्वती नदी की एक सहायक। नवजात कर्ण को एक पिटारी में बन्द करके कुन्ती ने इसी नदी में बहा दिया था (३. ३०८, ७. ९. २२. २५)।

१. अश्वपति, अश्व का भ्राता था (१. ६५, २४) जो राजा हार्दिक्य के रूप में अवतरित हुआ था (१. ६७, १४–१५)।

२. अश्वपति—मद्र देश के राजा। सन्तान-प्राप्ति के लिये इन्होंने सावित्री की आराधना की थी (३. २९३, ५–१०) जिससे प्रसन्न होकर सावित्री ने इन्हें वरदान दिया (३, २९३, १३); सावित्री के वरदान से इन्हें सावित्री नामक कन्या प्राप्त हुई (३. २९३, २४); इन्होंने अपनी कन्या सावित्री को वर खोजने के लिये भेजा (३. २९३, ३३)। इन्होंने नारद जी से सत्यवान के गुण-दोषों के विषय में प्रश्न किये (३. २९४, १४. १६)। देखिये ३. २९५, १६। इन्हें मालवी के गर्भ से १०० पुत्रों की प्राप्ति हुई थी (३. २९९, १३)।

अश्वबन्ध : घोड़ों को वश में करने वाला सवार (४. ३, ३)।

१. अश्वमेध (१. १, ९१)—देखिये **आश्वमेधिकपर्व।**

२. अश्वमेध एक प्राचीन देश का नाम है। इस देश का राजा रोचमान था जिसे दिग्विजय के समय भीमसेन ने विजित किया था (२. २९, ८)।

अश्वमेधदत्त : शतानीक और वैदेही का पुत्र, तथा जनमेजय का पौत्र (१. ९५, ८६)।

अश्वमेधिक : अश्वमेध का वर्णन करने वाला आश्वमेधिकपर्व का एक अवान्तरपर्व (१४. १–१५)। देखिये 'अश्वमेधिकं समासाद्य भोजनं सार्वकामिकम्', (१८. ६, ६९)।

अश्वमेधिकपर्व : महाभारत का ९३ वाँ अवान्तरपर्व (१४. १–१५)।

"वैशम्पायन ने कहा कि जब राजा धृतराष्ट्र भीष्म को जलाञ्जलि दे चुके तब युधिष्ठिर गंगाजी के तट पर शोकमग्न होकर गिर पड़े। कृष्ण की प्रेरणा से भीमसेन ने उन्हें पकड़ लिया और अन्य पाण्डवगण उनके चतुर्दिक बैठ गये। उस समय धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर को सान्त्वना देते हुए कहा कि वास्तव में शोक तो मुझे और गान्धारी को करना चाहिये जिसके एक सौ पुत्र स्वप्न में प्राप्त हुये धन की भाँति नष्ट हो गये। इस सम्बन्ध में धृतराष्ट्र ने विदुर के उस उपदेश का भी स्मरण किया जिसमें विदुर ने दुर्योधन का परित्याग करने तथा कर्ण और शकुनि को उससे न मिलने देने के लिये सावधान किया था (१४. १)।" "कृष्ण ने भी भीष्म, व्यास, नारद और विदुर द्वारा प्रतिपादित क्षत्रियों के कर्तव्य का स्मरण दिलाते हुये युधिष्ठिर को समझाया। व्यास ने भी उन्हें समझाते हुए (१४. २), इस बात का स्मरण दिलाया कि देव और असुर यज्ञ का आयोजन करते हैं और यज्ञों द्वारा ही देवगण दानवों का विनाश करते हैं। उन्होंने राम दाशरथि तथा भरत दौष्मन्ति का उदाहरण देते हुए युधिष्ठिर को राजसूय, सर्वमेध, नरमेध तथा मुख्यरूप से अश्वमेध यज्ञ करने के लिये प्रेरित करते हुये यज्ञों के लिये हिमवत् में ऐसे उपयुक्त स्थान का निर्देश किया जहाँ करन्धम जाति के मरुत्त के यज्ञ के पश्चात् ब्राह्मणों द्वारा छोड़ी गई प्रचुर स्वर्ण-राशि उपलब्ध थी। युधिष्ठिर के पूछने पर व्यास ने मरुत्त के इतिहास का वर्णन किया (१४. ३)।" व्यास का सम्भाषण सुनने के पश्चात् उक्त सम्पत्ति से अपना यज्ञ सम्पन्न करने के लिये उद्यत होकर अपने मन्त्रियों से परामर्श किया (१४. ४, १०)। "वैशम्पायन ने कहा कि व्यास के सम्भाषण के पश्चात् युधिष्ठिर को सम्बोधित करते हुए कृष्ण ने कहा कि युधिष्ठिर ने अपने कर्त्तव्यकर्म को अभी पूरा नहीं किया है और न अभी अपने शत्रुओं पर विजय ही पाई है। कृष्ण ने युधिष्ठिर से कहा कि 'तुम अपने शरीर के भीतर बैठे अपने शत्रु से कैसे अनभिज्ञ रह सकते हो' ? तदुपरान्त उन्होंने वृत्र के साथ इन्द्र के युद्ध का वर्णन किया (१४. ११)।" "तदुपरान्त कृष्ण ने कहा कि शारीरिक व्याधियाँ और स्वास्थ्य शीत, उष्णता, और वायु के सन्तुलन पर निर्भर करते हैं; इसी प्रकार मानसिक स्वास्थ्य और व्याधियाँ अन्तःकरण के सत्व, रज और तम पर निर्भर करती हैं; हर्ष से शोक बाधित होता है और शोक से हर्ष; अतः युधिष्ठिर को अपने अतीत के दुःखों का स्मरण नहीं करना चाहिये; अब ऐसा समय आ गया है कि तुम्हें (युधिष्ठिर को) अपने मन के साथ अकेले ही युद्ध करना होगा (१४. १२)।" "केवल बाह्य पदार्थों के त्यागमात्र से सिद्धि नहीं मिलती; 'मम' ये दो अक्षर ही मृत्युरूप हैं और 'न मम' यह तीन अक्षरों का पद सनातन ब्रह्म की प्राप्ति का कारण है; यदि इस जगत की सत्ता का विनाश न होना ही निश्चित हो तो प्राणियों के शरीर का भेदन करके भी मनुष्य अहिंसा का ही फल प्राप्त करेगा; योगी पुरुष अनेक जन्मों के अभ्यास से योग को ही मोक्ष का मार्ग मानता है। कृष्ण ने काम द्वारा उच्चरित प्राचीन इस श्लोक का उद्धरण दिया कि, 'कोई भी प्राणी वास्तविक उपाय (निर्ममता और योगाभ्यास) का आश्रय लिये बिना मेरा नाश नहीं कर सकता। इस प्रकार उन्होंने युधिष्ठिर को समृद्धिशाली महायज्ञों का अनुष्ठान करने के लिये प्रेरित किया (१४. १३)।" "वैशम्पायन ने कहा कि साक्षात् विष्टरश्रवा इत्यादि के समझाये जाने पर युधिष्ठिर का मन शान्त हुआ और उन्होंने अपने बन्धु-बान्धवों का श्राद्धकर्म सम्पन्न किया। उन्होंने व्यास और नारद से कहा कि हम लोग आप लोगों को आगे करके ही हिमालय पर्वत की यात्रा करेंगे और वहाँ से धन को अपनी यज्ञशाला में ले आयेंगे। तदुपरान्त युधिष्ठिर, कृष्ण, तथा अर्जुन से विदा लेकर महर्षि वहाँ से अन्तर्धान हो गये। भीष्म की मृत्यु के पश्चात् शौच-कार्य सम्पन्न करते हुये पाण्डवों ने कुछ समय वहीं व्यतीत किया और भीष्म तथा कर्ण आदि कुरुवंशियों के निमित्त श्राद्ध में ब्राह्मणों को बड़े-बड़े दान दिये। तदुपरान्त युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र को आगे करके हस्तिनापुर में प्रवेश किया। (१४. १४)।" "जनमेजय के यह पूछने पर कि अपने राष्ट्र पर विजय पा लेने तथा सब ओर शान्ति स्थापित कर लेने के पश्चात् कृष्ण और अर्जुन ने क्या किया, वैशम्पायन ने इस प्रकार उत्तर दिया : 'जब पाण्डवों ने राष्ट्र पर विजय पा ली और राज्य में शान्ति स्थापित हो गयी तो कृष्ण और अर्जुन अत्यन्त आनन्दमग्न होकर सुरम्य स्थानों में विचरण करने लगे। नदियों के तटों और पवित्र तीर्थों में विचरण करते हुए ये दोनों आनन्दवन में विहार करनेवाले अश्विनी कुमारों के समान हर्ष का अनुभव करते थे। इन्द्रप्रस्थ लौटकर कृष्ण और अर्जुन मय-निर्मित रमणीय सभा में प्रवेश करके मनोविनोद करने लगे। बातचीत के प्रसङ्ग में ये दोनों मित्र सदैव देवताओं तथा ऋषियों के वंशों की चर्चा किया करते थे। सम्बन्धी जनों के शोक से सन्तप्त-अर्जुन को श्रीकृष्ण ने शान्त किया। तदुपरान्त अनेक समय तक बलदेव, वसुदेव तथा अन्य वृष्णिवंशी श्रेष्ठ पुरुषों के दर्शन से वंचित रहने वाले श्रीकृष्ण ने द्वारावती जाने की आज्ञा चाही और अर्जुन से अपने साथ चलकर युधिष्ठिर को यह संवाद देने का प्रस्ताव किया। उस समय अर्जुन ने अत्यन्त शोक के साथ 'तथास्तु' कहकर कृष्ण के जाने के प्रस्ताव को स्वीकार किया (१४. १५)। 'ततोऽश्वमेधिकं पर्व सर्वपाप-प्रणाशनम्', १. २, ७९; 'ततोऽश्वमेधिकं नाम पर्व प्रोक्तं चतुर्दशम्', १. २, ३३८; 'इत्याश्वमेधिकं पर्व प्रोक्तमेतन्महाद्भुतम्', १. २, ३४३।

अश्वमेधेश्वर=रोचमान, जिसका भीम ने वध किया था (२. २९, ८)।

अश्वयुज् एक मास (आश्विन्) का नाम है। जो इस मास में ब्राह्मणों को घृतदान करता है उसे प्रसन्न होकर अश्विनीकुमार रूप प्रदान करते हैं (१३. ६५, १०)।

अश्वयुज (विशेषण)=आश्विन मास का नाम। जो इस मास को एक समय ही भोजन करके व्यतीत करता है वह पवित्र, नाना प्रकार के वाहनों से सम्पन्न, तथा अनेक पुत्रों से युक्त होता है (१३. १०६, २९)।

अश्वरथा, गन्धमादन पर्वत के नीचे आर्ष्टिषेण के आश्रम के पास बहने वाली एक नदी का नाम है (३. १६०, २१)।

१. अश्वराज=उच्चैःश्रवस् (१. १७, ४) ; देखिये १. २०, ३ भी।

२. अश्वराज का कृष्ण ने वध किया था (५. १३०, ४७)।

अश्वलायन : विश्वामित्र का एक पुत्र (१३. ४, ५४)।

अश्ववती, एक नदी का नाम है (१३. १६५, २५)।

अश्वशङ्कु : अश्व का भ्राता (१. ६५, २३)।

१. अश्वशिरस्=अश्व का भ्राता (१. ६५, २३), जो कि केकयों के एक राजा के रूप में अवतरित हुआ था। देखिये १. ६७, १० भी।

२. अश्वशिरस्=विष्णु, जो कि बदरी वृक्ष के नीचे सनातन वेदों का पाठ करता है (१२, १२७, ३)। देखिये १२. ३४०. ९३; १२. ३४७, ६. ९. ५९ (वेदों का आश्रय बन गया); ३४७, ७५ (–हरिः)। यह उद्धरण शान्तिपर्व के अन्तर्गत नारायणीय (१२. ३३५–३५१) से लिये गये हैं, जहाँ यह वर्णन किया गया है कि किस प्रकार अश्व का शिरधारण करके विष्णु ने वेदों का मधु और कैटभ नामक दानवों (जिन्होंने उसी समय वेदों को ब्रह्मा के पास से अपहृत कर लिया था जब ब्रह्मा उनकी सृष्टि करने के पश्चात् लोकों की रचना करने जा रहे थे) से उद्धार किया और अपने अश्वरूपी शिर को उत्तर-पूर्वी सागर में स्थित कर दिया था, तथा मधु और कैटभ का वध करके वेदों को पुनः ब्रह्मा को अर्पित कर दिया था जिससे वह लोकों की रचना कर सकें।

३. अश्वशिरस् (क्लीव) : विष्णु का अश्वशिरस् रूप (३. ३१५, १४)।

४. अश्वशिरस् (क्लीव) : एक पवित्र स्थान जहाँ युधिष्ठिर को द्यूत-कला की शिक्षा देने के पश्चात् बृहदश्व ने स्नान किया था; नीलकण्ठी के अनुसार बृहदश्व ने युधिष्ठिर को अश्वविद्या की शिक्षा दी थी (३. ७९, २१)। — **स्थानम् :** उस स्थान का नाम है जहाँ स्वप्न में अर्जुन ने श्रीकृष्ण के साथ जाकर पाशुपत-अस्त्र प्राप्त किया था (७. ८०, ३२)।

अश्वसेन : एक सर्प जिसकी उतङ्क ने इस प्रकार स्तुति की थी 'तं

नागराजमस्तौषं कुण्डलार्थाय तक्षकम्। तक्षकश्चाश्वसेनश्च नित्यं सहचरावुभौ॥' तक्षक का पुत्र जिसकी खाण्डवदाह के समय इन्द्र ने रक्षा की थी (१. २२७, ९)। खाण्डववन-दाह के समय अर्जुन ने इसकी माता का वध किया था (१. २२७, ८); जिससे कुपित होकर यह पाताल चला गया था और वहाँ से कर्ण के साथ अर्जुन के अन्तिम युद्ध के समय अर्जुन का वध करने के लिये कर्ण के सर्पमुख बाण में प्रविष्ट होकर अर्जुन के किरीट को दग्ध किया (८. ९०, २०–२३), किन्तु कृष्ण ने इसे पहचान कर अर्जुन से इसका वध करा दिया (८. ९०, ५०–५४)। देखिये ९. ६१, ३६ भी।

अश्वातक : दुर्योधन की सेना के अन्तर्गत अश्वतक देश के सैनिक (६. ५१, १५)।

अश्विन् (द्वय) देवों के श्रेष्ठ भिषज हैं (१. ३, ५६)। अपूर्व सुन्दरता के कारण इनका बहुधा तुलनाओं में उल्लेख मिलता है (१. १०२, ६९)। यह दिव्य अण्ड से उत्पन्न हुये थे (१. १, ३४; १, १, ११४)। इन्होंने जीवरूपी पक्षी को काल के बन्धन से मुक्त किया (१. ३, ५९-६३)। इनकी 'नासत्य' नाम से प्रसिद्धि (१. ३, ६६)। उपमन्यु अपनी नेत्र ज्योति की प्राप्ति के हेतु इनकी स्तुति करते हैं (१. ३, ६७–६९. ७१. ७३)। त्वष्टा की पुत्री संज्ञा ने अश्विनीरूप धारण करके भगवान सूर्य के अंश से अन्तरिक्ष में अश्विनीकुमारों को उत्पन्न किया (१. ६६, ३५)। १. ६६, ४०; १. ६७, १११; १. ७६, ४७। माद्री के गर्भ से अश्विनीकुमारों ने नकुल और सहदेव को उत्पन्न किया (१. ९५, ६३; १. ६३, ११७, १. १२४, १६–१८; १. १२६, २६)। नकुल और सहदेव (१. १७०, ६५)। कृष्णा के स्वयंवर के समय उपस्थित (१. ८७, ६)। १. १९७, ३; १. १९७, २७; १. २२२, ३०। खाण्डवदाह के समय श्रीकृष्ण-अर्जुन से युद्ध करने के लिये आये हुये देवताओं में यह भी थे (१. २२७, ३३)। अग्नि की स्तुति करते हुये मण्डपाल अग्नि को अश्विनों के साथ समीकृत करता है (१. २२९, ३१)। ब्रह्माजी की सभा में उपस्थित (२. ११, ४४)। रुद्र, साध्य, आदित्य, वसु तथा अश्विनद्वय, योगजनित ऐश्वर्य से युक्त होकर प्राणियों का धारण-पोषण करते हैं (३. २, ८१)। सुरवीथी नाम से प्रसिद्ध नक्षत्र-मार्ग पर साध्य, विश्वेदेव, मरुद्गण, अश्विनद्वय, आदित्य, वसु, रुद्र तथा विशुद्ध ब्रह्मर्षिगण और अनेक राजर्षिगण, एवं दिलीप आदि बहुत से राजा तथा गन्धर्वों से अर्जुन मिले थे (३. ४३, १२–१४)। इन्द्रपुरी में उपस्थित (३. ४६, २४)। ३. ५१, ७; ३. ५३, २७; ३. ६२, २४; ३. ८३ १७। इन्होंने अगम्य तीर्थों में स्नान किया है (३. ८५, १०५; ३. ९०, ३३)। वसु, मरुतों, यम, आदित्य, इत्यादि के साथ अश्विनीकुमारों का पाण्डवों ने दर्शन किया (३. ११८, ११–१३)। ३. ११९, २१; ३. १२१, २१–२४। च्यवन की पत्नी और शर्याति की पुत्री सुकन्या से प्रेमाभिव्यक्ति करते हैं किन्तु सुकन्या के आग्रह पर यह अपने साथ एक सरोवर में स्नान कराकर च्यवन को पुनः युवा बना देते हैं; सुकन्या च्यवन के साथ ही रहने का वरण करती है; च्यवन ने अश्विनों को भी सोम अर्पित करने के लिए शर्याति को सहमत कर लिया और अपनी शक्ति द्वारा इन्द्र को भी इसे स्वीकृत करने के लिये विवश किया (३. १२३–१२५; तु० की० १३. १५६, में सर्वत्र)। ३. १३४, ९; ३. १३९. १५। जब देवश्रेष्ठ इन्द्र मरुद्गणों के साथ गंगातट पर आकर प्रतिदिन जप करते हैं, तब साध्य तथा अश्विनीकुमार भी उनकी परिचर्या में रहते हैं (३. १४२, ७)। ३. १६२, १७। अर्जुन ने अमरावती में वसु, रुद्र, साध्य, मरुतों, आदित्य और अश्विनीकुमारों का दर्शन किया (३. १६८, ५३)। मार्कण्डेय ने नारायण (अर्थात् कृष्ण) के शरीर में समस्त देवों, साध्य, रुद्र, आदित्य, गुह्यक, पितर, सर्प, नाग, सुपर्ण, अश्विनीकुमार, गन्धर्व, अप्सराओं तथा यक्षों इत्यादि का दर्शन किया (३. १८८, ११९)। ३. २९४, १८; ४. ५६, ३; ५. ६१, ६; ५, १०५, ३५। दुर्योधन की उपस्थिति में अग्नि, आदित्य, साध्य, वसु, अश्विनीकुमार, मरुद्गण, विश्वेदेव, यक्ष, गन्धर्व और राक्षस भी कृष्ण के मुख से प्रकट हुये (५. १३१, ६) ६. १६९, ६। ग्यारह रुद्र, बारह आदित्य, आठ वसु, साध्यगण, विश्वेदेव, अश्विनीकुमार, तथा मरुद्गण, पितृ-समुदाय, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, और सिद्ध-समुदाय इत्यादि, विस्मित होकर कृष्ण को देखते हैं (६. ३५, ६. २२)। नकुल और सहदेव हैं (६. ५९, ८७; ७. २३, ८८)। कृष्ण के कान हैं (६. ६५, ६१)। ७. ३४, ७; ७. ४०, १८। मन्धाता को उनके पिता के पेट से निकाला था (७. ६२, २)। ७. ७६, ४। मानों शर्याति के यज्ञ में इन्द्र के साथ दोनों अश्विनीकुमार आ रहे हों, (७. ८४, १८)। ८. ४६, ८३; ८. ५६, ९४; ८. ६५, १८–१९। रुद्र, वसु, आदित्य तथा दोनों अश्विनीकुमार, इत्यादि स्कन्द को घेर कर खड़े हो गये (९, ४५, ६)। स्कन्द को वर्धन और नन्दन नामक दो पार्षद प्रदान किये (९. ४५, ३८)। १०. १३, ७। साध्य, वसु, अश्विनद्वय, रुद्र, विश्वेदेव, मरुद्गण और सिद्ध पूर्वकाल में आदिदेव भगवान विष्णु के द्वारा रचे गये हैं जो क्षात्र-धर्म में ही स्थित रहते हैं (१२. ६४, ९)। आचार्य और पुरोहितगणों सहित, देवता, आदित्य, वसुगण, रुद्रगण, साध्यगण, मरुद्गण तथा अश्विनद्वय, आदि सभी सनातन वैदिक धर्म में प्रतिष्ठित हुये (१२. १६६ २२)। वरुण, कुबेर, इन्द्र और यमराज, इन चारों लोकपालों, शुक्र, बृहस्पति, मरुद्गण, विश्वेदेव, साध्यगण, अश्विनद्वय, रुद्र, आदित्य, वसु, तथा अन्य देवताओं के जो लोक हैं वे सब परमात्मा के परमधाम के सम्मुख नरक ही हैं (१२. १९८, ५)। १२. २०८, १७; १२. २२७, ९; १२. २८०, २७; १२. २८३, ८ 'भिषजां वरौ')। आदित्य, वसु, रुद्र, अग्नि, अश्विनद्वय, वायु, विश्वेदेव, साध्य, पितर, मरुद्गण, यक्ष, राक्षस, गन्धर्व, सिद्ध, तथा अन्य स्वर्गवासी देवता, तपस्या से ही सिद्धि को प्राप्त हुये हैं (१२. २९५, १६)। यदि भौंहों से प्राणों का उत्क्रमण हो तो अश्विनीकुमारों को प्राप्त होता है (१२. ३१७, ६)। अश्विनद्वय, देवगण, गन्धर्व, नारद, पर्वत गन्धर्वराज विश्वावसु, सिद्ध, तथा अप्सरायें लोकेश्वर महादेवजी की आराधना करती हैं (१२. ३२३, १९)। १२. ३४०, १०३ (अश्विभ्यां पतये चैव मरुतां पतये तथा); १२. ३४२, २४ ; १३. २, १२ ; १३. १४, १४० (रुद्रादित्याश्विनामपि)। बारह आदित्य, आठ वसु, साध्यगण, विश्वेदेव, तथा अश्विनद्वय, सम्पूर्ण स्तुतियों द्वारा महादेव की स्तुति कर रहे थे (१३. १४, ३९१)। अश्विनमास में ब्राह्मणों को घृतदान करनेवाले व्यक्ति को अश्विनद्वय प्रसन्न होकर सुन्दर रूप प्रदान करते हैं (१३. ६५, ७. १०)। आदित्य, वसु, रुद्र, मरुद्गण, अश्विनद्वय, तथा साध्य, आदि देवता ताड़कासुर नामक दैत्य के पराक्रम से संत्रस्त हो उठे (१३. ८४, ८०)। अग्नि के अङ्ग से अश्विनद्वय प्रकट हुए (१३. ८५, १०९)। स्कन्द के जन्म पर उसे देखने के लिये वरुण, वायु, आकाश, इत्यादि के साथ अश्विनद्वय भी पधारे थे (१३. ८६, १६)। इक्कीस तथा उन्तीस दिनों पर एक समय भोजन करनेवालों को अश्विनद्वय के लोकों की प्राप्ति होती है (१३. १०७, ९५. १२६)। इन्होंने देवदूत को पितरों के पास जाने की आज्ञा प्रदान की थी (१३. १२५, १९)। पूर्णिमा के दिन विशेष प्रकार से चन्द्रमा के लिये बलिअर्पण करने पर उसे अन्य देवों सहित अश्विनद्वय भी ग्रहण करते हैं जिससे चन्द्रमा तथा सागर की वृद्धि होती है (१३. १३४, ५)। नासत्य और दस्र ही अश्विनीकुमारों के नाम से प्रसिद्ध हैं जिनकी उत्पत्ति सूर्य के वीर्य से तथा अश्वरूपधारिणी संज्ञा देवी की नासिका से हुई थी (१३. १५०, १७)। इनकी स्तुति करनेवाला किसी भी व्याधि से पीड़ित नहीं होता (१३. १५०, ८२)। १३. १५६, २६, १८-१९. २१. २३. ३१–३२। अन्य देवों के साथ यह भी श्रीकृष्ण से प्रगट हुये हैं (१३. १५८, ३४)। इन्हें रुद्र के साथ समीकृत किया गया है। (१३. १६०, ३९ ; १३. १६५, १६)। मुञ्जवान् पर्वत पर रुद्र साध्य, विश्वेदेव, वसु, यम, वरुण आदि के साथ अश्विनद्वय शिव की उपासना करते हैं (१४. ८, ५)। १४. ९, ३१ ; १४. १०, ६ ; १४. १५, ४ ; १४. ५२, ३७ ; १५. ३१, १२ (यमजौ, अर्थात् नकुल और सहदेव) ; १६. ४, २५ ;

१७. ३, २३। युधिष्ठिर के नरक-दर्शन के पश्चात् उनके पास इन्द्र के साथ मरुद्गण, वसुगण, अश्विनद्वय, साध्य, रुद्र, आदित्य, तथा अन्यान्य देवलोकवासी सिद्ध तथा महर्षि उस स्थान पर आये (१८. ३, ७)। युधिष्ठिर ने नकुल और सहदेव को स्वर्ग में अश्विनीकुमारों के स्थान पर विराजमान देखा (१८. ४, ९)। १८. ६, ६। तु० की० नासत्यौ, अश्विनीसुतौ, सूर्यपुत्रौ, देवभिषजौ, अश्विभ्यां पति (=विष्णु)।

१. अश्विनी, एक नक्षत्र का नाम है। जो मनुष्य अश्विनी नक्षत्र में अश्वों सहित रथ का दान करता है, वह हाथी, अश्व और रथ से संपन्न कुल में तेजस्वी पुत्र के रूप में जन्म लेता है (१३. ६४, ३४)। इस नक्षत्र में श्राद्ध करनेवाले मनुष्य को अश्वों की प्राप्ति होती है (१३. ८९, १४)। रूप सौन्दर्य और लोकप्रियता की प्राप्ति के लिये मार्गशीर्ष मास में चान्द्रव्रत करते हुए नक्षत्रों को कथित विधि के अनुसार उन-उन अङ्गों में स्थापित करे तथा अश्विनी नक्षत्र को जाँघों में स्थापित करे (१३. ११०, ४ तु० की० अश्लेषा)। तु० की० **२. अश्विनी।**

२. अश्विनी, एक तीर्थ का नाम है जिसमें स्नान करने पर मृत्यु के पश्चात् मनुष्य को रूप और तेज की प्राप्ति होती है (१३. २५, २१)।

अश्विनीकुमारतीर्थ में स्नान करने से रूप की प्राप्ति होती है (३. ८३, १७)।

अश्विनीतीर्थ, एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से मनुष्य रूपवान् होता है (१३. २५, २१)।

अश्विनीसुतौ=नकुल और सहदेव : १२. १६७, २८ (यथार्थ रूप से = अश्विनौ देखिये **अश्विन्**)।

अश्विसुतौ=नकुल और सहदेव (१७. १, ३७)।

अष्टक, एक प्राचीन राजर्षि का नाम है। राजा ययाति, अष्टक, प्रतर्दन और शिवि से मिलकर स्वर्गलोक चले गये (१. ८६, ५)। जब ययाति स्वर्गलोग से गिरे तब अष्टक ने उन्हें देखा था (१. ८८, ६)। ययाति का, जो अष्टक के नाना थे, अहंकार आदि के विषय में संवाद हुआ था और इन्होंने अष्टक को अपना इतिहास बताया था (१. ८९, ३. १०, १२-१४)। ययाति ने अष्टक को उन व्यक्तियों के सम्बन्ध में बताया जो सदैव अपने पुण्य कर्मों का ही वर्णन करते हैं (१. ९०, १. ३. ६. ९. १२. १७. २१)। ययाति और अष्टक का आश्रम-धर्म सम्बन्धी सम्वाद (१. ९१, १. ८. १०)। ययाति ने कहा कि अपने पुण्य का क्षय होने से वे अब भौम नरक में प्रवेश करने के लिये आकाश से गिर रहे हैं (१. ९२, १. ६. ९. ११)। "अष्टक तथा अन्य राजाओं ने ययाति से कहा, 'यदि आप हम में से एक-एक के दिये हुये लोकों को प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण नहीं करते तो हम सब लोग अपने पुण्य लोकों को आपकी सेवा में समर्पित करके नरक में जाने को तैयार हैं।' किन्तु ययाति ने अष्टक आदि के इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया। उस समय आकाश में पाँच सुवर्णमय रथ दृष्टिगत हुये जिन पर बैठ कर वे पाँचों लोग स्वर्ग चले गये। ययाति ने अष्टक आदि से कहा कि वे उन लोगों के नाना हैं (१. ९३, १०. १२. १४. १७. २०. २६)।" काम्यक वन के निवासी ब्राह्मणों ने युधिष्ठिर से कहा, 'आप भी तीर्थों में स्नान कर राजा कार्तवीर्य अर्जुन, राजर्षि अष्टक, लोमपाद और भूमण्डल में सर्वत्र विदित सम्राट वीरवर भरत को मिलने वाले दुर्लभ लोकों को अवश्य प्राप्त कर लेंगे' (३. ९३, ८)। "युधिष्ठिर ने जब मार्कण्डेयजी से क्षत्रिय नरेशों के माहात्म्य का वर्णन करने के लिये कहा तब मार्कण्डेय जी इस प्रकार बोले : 'विश्वामित्र के पुत्र अष्टक के अश्वमेध यज्ञ में सभी राजा पधारे थे। एक दिन यज्ञ समाप्त होने पर अपने भाइयों सहित अष्टक रथ पर बैठकर स्वर्ग की ओर जा रहे थे। मार्ग में इन लोगों ने राजर्षि नारद को भी रथ पर बैठा लिया। तदनन्तर अष्टक के भ्राताओं ने देवर्षि नारद से पूछा : 'हम सब लोग दीर्घायु तथा सर्वगुणसंपन्न होने के कारण सदैव प्रसन्न रहते हैं। हम चारों को स्वर्गलोक में जाना है, किन्तु वहाँ से सर्वप्रथम कौन इस भूतल पर उतरेगा।' देवर्षि ने बताया कि सर्वप्रथम अष्टक ही उतरेंगे (३. १९८, १. ४. ५)।" 'अष्टकस्य शिबिश्चैव ययातिर्नहुषो गयः', (४. ५६, ९)। विश्वामित्र ने माधवी के गर्भ से अष्टक को उत्पन्न किया ; तदनन्तर अष्टक चन्द्रपुरी के समान प्रकाशित विश्वामित्र की राजधानी में गया (५. ११९, १८. २०)। "ययाति स्वर्गलोक से प्रतर्दन, वसुमना, शिवि और अष्टक आदि अपने नातियों के बीच नैमिषारण्य में गिरे। अष्टक आदि उस समय वाजपेय यज्ञ सम्पन्न कर रहे थे। अष्टक आदि ने अपने समस्त यज्ञ का फल ययाति को देने का प्रस्ताव किया (५. १२१, १०)।" 'प्रतर्दनादष्टकश्च पृषदश्वोऽष्टकादपि', (१२. १६६, ८०)। 'ऋषिस्तथा गालवोऽथाष्टकश्च', (१३. ९४, ५. ३६)। 'महाभिषश्च विख्यातो निमिराजा तथाऽष्टकः', (१३. १६५, ५६)।

अष्टजिह्व, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६२)।

अष्टवसु—दक्ष की कन्याओं के गर्भ से धर्म के आठ पुत्र उत्पन्न हुये जिनको अष्टवसु कहते हैं। अष्टवसुओं के नाम यह हैं :। धर, ध्रुव, सोम, अह, अनिल, अनल, प्रत्यूष, और प्रभास (१. ६६, १७-१८)। पुराणों में अष्टवसुओं के नामों के सम्बन्ध में कुछ मतभेद मिलता है। उदाहरण के लिये, विष्णुपुराण (१. १५, १११) में इनके नाम यह हैं : आप, ध्रुव, सोम, धर्म, अनिल, अनल, प्रत्यूष, और प्रभास। भागवतपुराण (६. ६, ११) में यह नाम मिलते हैं : द्रोण, प्राण, ध्रुव, अर्क, अग्नि, दोष, वसु, और विभावसु। हरिवंश (१. ३, ३८) के अनुसार यह नाम हैं : आप, धर, ध्रुव, सोम, अनिल, अनल, प्रत्यूष, और प्रभास। शान्तनु द्वारा गंगा के गर्भ से इनके जन्म का वर्णन (१. ९८, १२. १९)। वसिष्ठ द्वारा वसुओं को मनुष्ययोनि में जन्म लेने का शाप (१. ९९, ३२)। इन लोगों के अनुनय करने पर वसिष्ठजी ने कहा कि ये सब लोग प्रतिवर्ष एक-एक करके शाप से मुक्त हो जायँगे (१. ९९, ३८)। परशुराम से युद्ध करते समय इन लोगों ने भीष्म को प्रस्वापनास्त्र प्रदान किया था (५. १८३, ११-१२)। भीष्म ने अपनी मृत्यु का जब निश्चय किया तब आकाश में स्थित अष्टवसुओं ने भीष्म के निश्चय का समर्थन किया (६. ११९, ३६ ३७)।

अष्टविवाह—ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर, गान्धर्व, राक्षस, तथा पैशाच—ये आठ विवाह हैं (१. ७३, ८-९)।

अष्टादशावराः भोजवंश के अठारह कुलों की जातियों का नाम है जिन्होंने यह विचार किया था कि वे ३०० वर्षों में भी जरासन्ध की सेना का विनाश नहीं कर सकते (२. १४, ३५)। युद्ध में जरासन्ध के पक्ष में युद्ध करनेवाला हंस नामक एक राजा जब इनसे युद्ध कर रहा था तब वह बलराम जी के हाथों मारा गया (२. १४, ४०)। रैवत दुर्ग इन लोगों द्वारा सुरक्षित था (२. १४, ५५)।

१. अष्टावक्र—वनपर्व में अष्टावक्र के चरित्र के वर्णन का उल्लेख (१. २, १७४)। "कहोड मुनि के पुत्र अष्टावक्र और उद्दालक के पुत्र श्वेतकेतु, ये दोनों महर्षि समस्त भू-मण्डल के वेदवेत्ताओं में श्रेष्ठ थे। एक बार इन दोनों ने अपने विपक्षी वन्दी को विदेहराज के यज्ञमण्डप में शास्त्रार्थ में पराजित कर दिया। अष्टावक्र द्वारा पराजित होने पर बन्दिन् को जल में फेंक दिया गया; कहोड ने अष्टावक्र को समङ्गा नदी में स्नान करने के लिये कहा। पिता की आज्ञा के अनुसार जल में प्रवेश करते ही इनके समस्त अङ्ग सीधे हो गये (३.१३२–१३४ : १३२, ३. ५. ७. १२. १७. १८. २३; १३३, १. ३. ६. ९. ११. १७. २३. २५. २७. २९; १३४, १. ७. ९. ११. १३. १५. १७. १९. २०–२६. ३०. ३१. ३८)। अष्टावक्र के सम्बन्ध में विशेष विवरण के लिये देखिये **अष्टावक्रीय**। अष्टावक्र ने सुप्रभा का वरण किया और उत्तर दिशा की यात्रा की (१३. १९, १०. ११. १५. २६. ३७. ७३. ८८)। उत्तर दिशा की देवी ने इनकी परीक्षा ली (१३. २०, १२. १४. १६. २०. २३)। अष्टावक्र अपने आश्रम लौट आये और सुप्रभा के साथ विवाह करने के पश्चात् वहीं रहने लगे (१३. २१, २. १०. १८)।

२. अष्टावक्र, एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने के माहात्म्य का भीष्म ने वर्णन किया था (१३. २५, ४१)।

अष्टावक्र-दिक्-संवाद : (अष्टावक्र और उत्तर दिशा की देवी के बीच संवाद)—"भीष्म ने कहा; पूर्वकाल की बात है, महातपस्वी अष्टावक्र विवाह करना चाहते थे और इसके लिये उन्होंने वदान्य ऋषि से उनकी कन्या माँगी। उस कन्या का नाम सुप्रभा था। वदान्य ऋषि ने अष्टावक्र को इस प्रकार उत्तर दिया, 'मैं तुम्हें अपनी कन्या अवश्य दूँगा, परन्तु सर्वप्रथम तुम यहाँ से परमपवित्र उत्तर दिशा की ओर जाओ। वहाँ तुम्हें उसका दर्शन होगा।' वदान्य ऋषि ने उत्तर दिशा का मार्ग बताते हुये कहा, 'हिमवत् पर्वत को पार करने पर तुमको सिद्धों और चारणों से सेवित रुद्र के निवासस्थान कैलाश पर्वत का दर्शन होगा। उस स्थान से भी आगे जाने पर तुम्हें एक स्त्री का दर्शन होगा। यत्नपूर्वक उस स्त्री का दर्शन और पूजन करके लौटने के पश्चात ही तुम मेरी पुत्री का पाणिग्रहण कर सकते हो।' तदनन्तर अष्टावक्र उत्तरोत्तर दिशा की ओर चल दिये। सिद्ध और चारणों से सेवित हिमवत् पर्वत पर पहुँच कर उन्होंने बाहुदा नदी में स्नान तथा देवताओं का तर्पण किया। प्रातःकाल उठने पर वे रुद्राणी-रुद्र नामक तीर्थ में गये, और वहाँ भी सरोवर के तट पर कुछ काल तक विश्राम करते रहे। विश्राम के पश्चात् उठकर वे कैलास की ओर चल दिये। कुछ दूर जाने पर उन्होंने कुवेर की अलकापुरी को देखा। वहीं कुवेर का कमल पुष्पों से सुशोभित सरोवर भी था। उस सरोवर की रक्षा करनेवाले मणिभद्र आदि राक्षसों ने अष्टावक्र को देखकर उनका स्वागत किया। कुवेर को भी जब अष्टावक्र के आगमन का समाचार मिला तब उन्होंने आकर अष्टावक्र का स्वागत किया। कुबेर ने अष्टावक्र को अपने भवन में ले जाकर अपना आसन दिया। तदनन्तर उर्वरा, मिश्रकेशी, रम्भा, उर्वशी इत्यादि अनेक अप्सरायें नृत्य करने लगीं और गन्धर्व-गण अनेक प्रकार के वाद्य-यंत्र बजाने लगे। अष्टावक्र कुबेर के भवन में नृत्य देखते हुये एक वर्ष से कुछ अधिक समय तक रहे। तदनन्तर कैलाश और मन्दराचल पर्वत को पार करके वे किरात वेशधारी महादेव जी के उत्तम स्थान पर पहुँचे। उसके भी आगे जाने पर उन्हें एक अत्यन्त रमणीय वनस्थली का दर्शन हुआ जो सभी ऋतुओं के फल-मूलों, पक्षिसमूहों, और मनोरम वन-प्रान्तों से सुशोभित हो रही थी। वहाँ अष्टावक्र ने एक दिव्य आश्रम देखा। उन्होंने वहाँ एक दिव्य स्वर्णमय भवन भी देखा जिसमें सब प्रकार के रत्न जड़े थे। उस आश्रम के चारों ओर के मनोरम दृश्यों ने अष्टावक्र को अत्यन्त आकर्षित किया। अष्टावक्र ने वहीं ठहरने के विचार से भवन के मुखद्वार पर जाकर अपने आगमन का समाचार दिया। उनके इस प्रकार कहते ही उस भवन से सात कन्यायें निकलीं जिनके साथ भवन के भीतर प्रवेश करने पर उन्होंने एक जराजीर्ण वृद्ध स्त्री को देखा। उस वृद्धा स्त्री ने अष्टावक्र को अपने प्रेमपाश में आबद्ध करने का अत्यधिक प्रयास किया, परन्तु उसे सफलता न मिली। इस स्त्री ने अपने जीर्ण रूप को परिवर्तित करके कन्या का रूप धारण कर लिया, जिससे अष्टावक्र को अत्यन्त आश्चर्य हुआ (१३. १९-२०)।" "अष्टावक्र ने उस स्त्री से रूप-परिवर्तित करने का कारण पूछा। उस स्त्री ने अपने रूप-परिवर्तन का कारण बताते हुये अष्टावक्र से कहा, 'आप मुझे ही उत्तर दिशा समझें; आपको दृढ़ करने और आपकी परीक्षा लेने के लिए ही मैंने यह कार्य किया। आपने अपने धर्म से विचलित न होकर पुण्य लोकों को जीत लिया है। आज आपसे ब्रह्मा तथा इन्द्र सहित सम्पूर्ण देवता सन्तुष्ट हैं। आप यहाँ जिस कार्य के लिये आये थे वह सफल हो गया। वदान्य ऋषि ने आपको जिन उपदेशों के लिये मेरे पास भेजा था वह भी मैं आपको दे चुकी। अब आप कुशलपूर्वक अपने घर को लौटें। मार्ग में आपको कोई श्रम अथवा कष्ट नहीं होगा। घर पहुँचकर आपको मनोनीत कन्या प्राप्त होगी और आपके द्वारा वह पुत्रवती भी होगी।' स्त्री की बात सुनकर अष्टावक्र उसके सामने हाथ जोड़कर खड़े हो गये और तदुपरान्त अपने घर लौट आये। घर लौटने पर वदान्य ऋषि को अपनी यात्रा का समस्त विवरण बताने के पश्चात् अष्टावक्र ने वदान्य की कन्या के साथ विवाह किया और अपने आश्रम में उसके साथ आनन्दपूर्वक रहने लगे (१३. २१)।"

अष्टावक्रीय (अष्टावक्र की कथा)—'अष्टावक्रीयमत्रैव विवादो यत्र वन्दिना', (१.२, १७४)। "महर्षि उद्दालक ने अपने सेवापरायण शिष्य कहोड को वेदशास्त्र का ज्ञान प्रदान करने के साथ-साथ अपनी पुत्री सुजाता को भी पत्नीरूप में समर्पित कर दिया। कुछ काल के पश्चात् सुजाता गर्भवती हुई और उसका वह गर्भ अग्नि के समान तेजस्वी था। एक दिन स्वाध्याय में लगे हुये अपने पिता कहोड मुनि से उस गर्भस्थ बालक ने कहा, 'आप रात भर वेद-पाठ करते हैं तब भी आपका अध्ययन शुद्ध उच्चारणपूर्वक नहीं हो पाता।' महर्षि कहोड इस प्रकार का वचन सुन कर कुपित हो उठे और गर्भस्थ बालक को शाप देते हुये बोले, 'तू आठों अङ्गों से टेढ़ा हो जायगा।' इस शाप के अनुसार अष्टावक्र आठ अङ्गों से टेढ़े हो कर उत्पन्न हुए और इसीलिए उनका नाम अष्टावक्र हुआ। गर्भ जब दसवें महीने में चल रहा था तो सुजाता ने अपने पति कहोड से अपने प्रसवकाल के संकट से पार होने के लिये धन-प्राप्त करने का आग्रह किया। पत्नी का वचन सुनकर कहोड मुनि धन के लिये राजा जनक की सभा में गये। उस समय शास्त्रार्थी पण्डित बन्दी ने ब्रह्मर्षि कहोड को विवाद में परास्त करके जल में डुबा दिया। उद्दालक ने सुजाता से अपने गर्भस्थ बालक को यह वृत्तान्त न बताने के लिये कहा। फलस्वरूप जन्म लेने के बाद ही अष्टावक्र को पिता के सम्बन्ध में कुछ पता नहीं चल सका और वे अपने नाना उद्दालक को ही पिता, और श्वेतकेतु को अपना भ्राता मानते रहे। तदन्तर एक दिन बारह वर्ष की अवस्था में अष्टावक्र जब उद्दालक की गोद में बैठे थे, श्वेतकेतु ने उन्हें दूर खींचते हुये कहा, 'यह तेरे पिता की गोद नहीं है।' इस कटूक्ति को सुनकर दुःखी अष्टावक्र ने अपनी माता से अपने पिता के सम्बन्ध में पूछा। माता से सत्य का पता लगने पर अष्टावक्र ने श्वेतकेतु से राजा जनक की सभा में चलने के लिये कहा। तदुपरान्त दोनों मामा-भानजे (श्वेतकेतु और अष्टावक्र) राजा जनक के यज्ञमण्डप में गये (३. १३२)।" "उसी समय राजा जनक का मार्ग में ही अष्टावक्र से साक्षात्कार हो गया। जब उस समय राज-सेवकों ने अष्टावक्र को मार्ग से हटाना चाहा तब उन्होंने ब्राह्मणों का महत्त्व बताते हुये अपने को यज्ञ-मण्डप में जाने की अनुमति माँगी। द्वारपाल के साथ वार्तालाप के पश्चात् अष्टावक्र ने राजा जनक की ययाति के साथ तुलना करते हुये उनसे कहा, 'हमने सुना है आपके यहाँ बन्दी नामक एक प्रसिद्ध विद्वान् हैं जो ब्राह्मणों को शास्त्रार्थ में पराजित करके उन्हें पानी में डुबा देते हैं। मैं यह समाचार सुनकर अद्वैत ब्रह्म के विषय में बन्दी से शास्त्रार्थ करने के लिये उपस्थित हुआ हूँ।' तदुपरान्त अष्टावक्र ने कालचक्र, मेघ और विद्युत, मत्स्य, अण्ड, पाषाण और नदी से सम्बन्धित राजा जनक के अनेक जटिल प्रश्नों का उत्तर देकर यज्ञ-मण्डप में प्रवेश करने की अनुमति प्राप्त की (३. १३३)।" "तदुपरान्त यज्ञ-मण्डप में बन्दी के सम्मुख उपस्थित होकर अष्टावक्र ने कुपित होकर उससे इस प्रकार कहा, 'मेरे पूछे हुये प्रश्नों का तुम उत्तर दो, और तुम्हारे प्रश्नों का मैं उत्तर दूँगा।' तब बन्दी ने उनकी गणना करायी जो केवल एक हैं (जैसे अग्नि, सूर्य, इन्द्र और यम), अष्टावक्र ने इसके उत्तर में उनकी गणना कराई जो दो-दो हैं (जैसे इन्द्र और अग्नि, दो देवर्षि नारद और पर्वत, दो अश्विन्, रथ के दो चक्र तथा पति और पत्नी)। तदुपरान्त बन्दी ने उनकी गणना कराई जो तीन-तीन हैं, और अष्टावक्र ने उत्तर में ऐसों की जो चार-चार हैं (जैसे ब्राह्मणों के चार आश्रम, चार वर्ण, चार दिशायें तथा चार चरणों से युक्त वाणी)। तब बन्दी ने उनकी गणना कराई जो पाँच-पाँच हैं (जैसे ५ यज्ञाग्नि, ५ पंक्ति छन्द, ५ यज्ञ, ५ इन्द्रियाँ, ५ पञ्चचूडा अप्सरा, तथा पंचनद); इसके उत्तर में अष्टावक्र ने उनकी

गणना कराई जो छः-छः हैं (जैसे अग्नि की स्थापना के समय ६ गायों की दक्षिणा, ६ ऋतुयें, मन सहित ज्ञानेन्द्रियाँ, ६ कृत्तिकायें, तथा ६ साद्यस्क यज्ञ)। बन्दी ने तब उनकी गणना कराई जो सात-सात हैं (जैसे ७ ग्राम्यपशु, ७ वन्यपशु, ७ छन्द, सप्तर्षि, पूजन के ७ संक्षिप्त उपचार, तथा वीणा के ७ तार); उत्तर में अष्टावक्र ने उनकी गणना कराई जो आठ-आठ हैं (जैसे तराजू में लगी ८ सन की डोरियाँ, ८ पैरों वाला शरभ, अष्टवसु, तथा अष्टकोणयूप)। तब बन्दी ने उनकी गणना कराई जो नौ-नौ हैं (जैसे ९ सामधेनि ऋचा, सृष्टि के ९ तत्व, बृहती छन्द के प्रत्येक चरण के ९ अक्षर तथा गणित के ९ अंक); अष्टावक्र ने उत्तर में ऐसों की गणना कराई जो दस-दस हैं (जैसे १० दिशायें, १० सौ से मिलकर बना एक सहस्र, गर्भाधान की १० मास की अवधि, १० निन्दक, शरीर की १० अवस्थायें तथा १० पूजनीय पुरुष)। तब बन्दी ने ऐसों की गणना कराई जो ग्यारह-ग्यारह होते हैं (जैसे प्राणधारी पशुओं के ११ विषय, जीवों को प्रकाशित करनेवाली ११ इन्द्रियाँ, ११ भूप, प्राणियों के ११ विकार, तथा ११ रुद्र); अष्टावक्र ने उत्तर में ऐसों की गणना कराई जो बारह-बारह होते हैं (जैसे संवत्सर के १२ मास, जगती-छन्द के प्रत्येक पाद के १२ अक्षर, १२ दिनों का प्राकृत यज्ञ, तथा १२ आदित्य)। तदुपरान्त जब तेरह की गणना कराते हुये (जैसे त्रयोदशी तिथि, तथा १३ द्वीपों से युक्त यह पृथिवी) आधा श्लोक कहने के पश्चात् बन्दी चुप हो गया तब अष्टावक्र ने उस श्लोक के द्वितीयार्ध को पूर्ण कर दिया (एतावदुक्त्वा विरराम बन्दी श्लोकस्यार्धं व्याजहाराष्टवक्रः)। अष्टावक्र द्वारा श्लोक की पूर्ति किये जाने पर बन्दी चुप हो गया, परन्तु अष्टावक्र बोलते ही रहे। यह सब देखकर दर्शकों और श्रोताओं ने अष्टावक्र का आदर-सत्कारपूर्वक पूजन किया। अष्टावक्र ने कहा, 'इस बन्दी ने अनेक शास्त्रज्ञ ब्राह्मणों को पानी में डुबाया है अतः इसे भी पानी में डुबा देना चाहिये।' बन्दी ने कहा, 'मैं राजा वरुण का पुत्र हूँ, और मेरे पिता के यहाँ भी आपके इस यज्ञ के समान ही बारह वर्षों का यज्ञसत्र चल रहा है। उसी यज्ञ के अनुष्ठान के लिये जल में डुबाने के बहाने कुछ चुने हुये श्रेष्ठ ब्राह्मणों को मैंने वरुण लोक भेज दिया था। वे सब ब्राह्मण वरुण का यज्ञ देखने के पश्चात् यहाँ लौट कर आ रहे हैं।' तदुपरान्त बन्दी द्वारा जल में डुबाये गये समस्त ब्राह्मण वहाँ अधिक तेजस्वी रूप से उपस्थित हुये, और राजा की आज्ञा लेकर बन्दी स्वयं समुद्र के जल में समा गये। अष्टावक्र के पिता कहोड ने अष्टावक्र को समङ्गा नदी में स्नान कराया। जिससे उनके समस्त अङ्ग सीधे हो गये। समङ्गा नदी भी उसी समय से पापनाशक के रूप में प्रसिद्ध हुई (३. १३४)।"

असङ्ख्येय = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

असङ्ग (अनुराग रहित), दण्ड के नामों में से एक है (१२. १२१, २२)।

असंज्ञ = महापुरुष (१२. ३३८, ४ में ४६वाँ नाम)।

असत् = शिव (सहस्र नामों में से एक); = महापुरुष (१२. ३३८, ४ पर १८वाँ नाम); विष्णु (सहस्र नामों में से एक)। **असतः प्रभव**—इत्यादि = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

१. असमञ्जस् राजा सगर के एक पुत्र का नाम है। सगर ने असमञ्जस् के पुत्र अंशुमान को बताया कि उसके साठ हजार पुत्र कपिल की क्रोधाग्नि में स्वाहा हो गये हैं तथा उसने पुरवासियों के हित और धर्म की रक्षा करते हुये उसके (अंशुमान् के) पिता को भी त्याग दिया है (३. १०७, ३५-३७)। युधिष्ठिर के यह पूछने पर कि सगर ने किसलिये अपने दुस्त्यज वीर पुत्र असमञ्जस् का परित्याग किया था, लोमश ने इस प्रकार उत्तर दिया: "सगर का वह पुत्र, जिसे रानी शैब्या ने उत्पन्न किया था, असमञ्जस् के नाम से विख्यात हुआ। वह जहाँ-तहाँ खेल-कूद में लगे हुये पुरवासियों के दुर्बल बालकों के समीप सहसा पहुँच जाता और चीखते-चिल्लाते रहने पर भी उनका गला पकड़ कर उन्हें नदी में फेंक देता था। इस दुःख से दुःखित हो समस्त पुरवासी भय और शोक में मग्न हो राजा सगर के पास आये और हाथ जोड़कर कहने लगे कि महाराज आप असमञ्जस् के घोर भय से उनकी रक्षा करें। पुरवासियों का दुःखद समाचार सुनकर सगर ने अपने मन्त्रियों को असमञ्जस् को तत्काल नगर से बाहर निकाल देने की आज्ञा दी (३. १०७, ३८-४३)।" सगर के ज्येष्ठ पुत्र का नाम है, जिसे पुरवासियों के बच्चों को सरयू नदी में डुबा देने के अपराध में सगर ने नगर से बाहर निकाल दिया था (१२. ५७, ८. ९; २. ६२, ७)।

असमञ्जः सुत = अंशुमत् (३. १०७, ३५)।

असमाम्नाय = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

असहाय = शिव, सहस्र नामों में से एक (१६. १७, १२०)।

असह्य = शिव (१०. ७, ६)।

असि: (खड्ग, व्यक्ति): १२. १६६, ४३. ४६.. ४७. ६९। वाग्दण्ड, अर्थदण्ड, कायदण्ड, और प्राणदण्ड—ये चारों दण्ड—असि (तलवार) के ही दुर्निवार और दुर्धर्षरूप हैं (१२. १६६, ७१)। प्रजा के द्वारा धर्म का उल्लंघन होने पर असि के उपरोल्लिखित चारों दण्डों का यथोचित प्रयोग करके धर्म की रक्षा करनी चाहिये (१२. १६६, ७२)। इसके असि, विशसन, खड्ग, तीक्ष्णधार, दुरासद, श्रीगर्भ, विजय, और धर्मपाल ये आठ नाम हैं (१२. १६६, ८३. ८४)।

असिक्नी, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, २३)।

१. असित अथवा असित देवल—'नारदो श्रावयद्देवानसितो देवलः पितॄन्' (१. १, १०७)। 'असितो देवलश्चैव नारदः पर्वतस्तथा', (१. ५३, ८)। 'असितं चार्तिमन्तं च सुनीथं चापि यः स्मरेत्। दिवा वा यदि वा रात्रौ नास्य सर्पभयं भवेत्॥', (१. ५८, २३)। 'द्वौ पुत्रौ देवलस्यापि क्षमावन्तौ मनीषिणौ', (१. ६६, २६)। 'असितो ह्यपि देवर्षिः प्रत्याख्यातः पुरा मया', (१. १००, ८१)। 'यवीयान्देवलस्यैष वने भ्राता तपस्यति। धौम्य उत्कोचके तीर्थे तं वृणुध्वं यदीच्छथ॥', (१. १८३, २)। 'असितो देवलः', (२. ४, १०)। 'असितो देवलश्चैव जैगीषव्यश्च तत्त्ववित्', (२. ११, २४)। व्यास ने देवर्षि नारद, देवल, और असित मुनि को आगे करके युधिष्ठिर का अभिषेक किया (२. ५३, १०)। मुनिश्रेष्ठ असित देवल ने, जो सदा इन लोकद्वारों में भ्रमण करते रहते हैं, ऐसा कहा है कि जुआरियों के साथ शठतापूर्वक जूआ खेलना भी पाप है (२. ५९, ९)। 'त्रीणि ज्योतींषि पुरुष इति वै देवलोऽब्रवीत्।', (२. ७२, ५)। 'स्रष्टारं सर्वलोकानामसितो देवलोऽब्रवीत्', (३. १२, ५०)। 'असितो देवलश्चैव', (३. ८५, १२०)। 'असितो देवलो व्यासः स्वयं चैव ब्रवीषि मे', (६. ३४, १३)। देवास्त्वत्संभवाश्चैव देवलस्त्वसितोऽब्रवीत्', (६. ६८, ७)। द्रोणाचार्य ने दुर्योधन को अभेद्य कवच पहनाते हुये असित देवल इत्यादि का आवाहन किया था (७. ९४, ४५)। असित देवल ने आदित्यतीर्थ में महान योग-शक्ति प्राप्त की थी (९. ४९, २४)। "प्राचीनकाल की बात है, आदित्य-तीर्थ में मुनि असित देवल गृहस्थ धर्म का आश्रय लेकर निवास करते थे। ये मुनि सदा ब्रह्मचर्य पालन में तत्पर रहते थे। एक दिन जैगीषव्य मुनि, जो सन्यासी थे, योग का आश्रय लेकर उसी तीर्थ में आये। जैगीषव्य सदा योग परायण रहकर सिद्धि प्राप्त कर चुके थे और देवल के ही आश्रम में रहते थे। यद्यपि जैगीषव्य उसी आश्रम में रहते थे तथापि देवल मुनि उन्हें दिखाकर योगसाधन नहीं करते थे। बहुत दिनों के पश्चात् एक समय देवल मुनि जैगीषव्य मुनि को हर समय नहीं देख पाते थे, क्योंकि जैगीषव्य केवल भोजन या भिक्षा लेने के लिये ही देवल के पास आते थे। जैगीषव्य को देखकर देवल उनके प्रति अत्यन्त गौरव और प्रेम प्रगट करते हुये उनका पूजन किया करते थे। अनेक वर्षों तक उन्होंने ऐसा ही किया, किन्तु जैगीषव्य देवल से एक बात भी नहीं बोले। तब देवल मुनि हाथ में कलश लेकर आकाशमार्ग से समुद्रतट की ओर चल दिये। नदीपति समुद्र के पास पहुँचते ही देवल ने देखा कि जैगीषव्य वहाँ पहले से ही

विराजमान हैं। तब महर्षि असित देवल को चिन्ता के साथ-साथ आश्चर्य भी हुआ। समुद्र में विधिपूर्वक स्नान और जपादि नित्यकर्म पूर्ण करके देवल जल से भरा हुआ कलश लेकर पुनः अपने आश्रम पर लौट आये। अपने आश्रम में प्रवेश करते ही देवल मुनि ने वहाँ बैठे हुये जैगीषव्य को देखा, किन्तु जैगीषव्य ने उस समय भी उनसे कोई बात न की। तब चिन्तित होकर देवल अपने आश्रम से आकाश को उड़ चले। जैगीषव्य की परीक्षा लेने के लिये ही उन्होंने ऐसा किया। ऊपर जाकर उन्होंने अनेक अन्तरिक्षचारी एकाग्रचित्त सिद्धों को देखा। साथ ही उन सिद्धों के द्वारा पूजित जैगीषव्य मुनि का भी उन्हें दर्शन हुआ। तदनन्तर असित देवल ने जैगीषव्य को स्वर्गलोक, और वहाँ से पितृलोक, तथा उसके बाद यमलोक जाते देखा। इसी प्रकार विभिन्न लोकों में जैगीषव्य को देखते हुये देवल ने जैगीषव्य को ब्रह्मसत्र करनेवालों के लोक में भी जाते देखा। तदनन्तर देवल ने देखा कि जैगीषव्य मुनि अपने तेज से ऊपर-ऊपर के तीन लोकों को पार करके पतिव्रताओं के लोक में जा रहे हैं। इसके बाद असित ने जैगीषव्य को पुनः किसी लोक में स्थित नहीं देखा। तब असित ने उन लोकों में रहनेवाले ब्रह्मयाजी सिद्धों और साधु पुरुषों से जैगीषव्य के अदृश्य हो जाने का कारण पूछा। सिद्धों ने बताया कि जैगीषव्य मुनि सनातन ब्रह्मलोक में चले गये हैं। सिद्धों की बात सुनकर देवल मुनि ने तत्काल ऊपर उठने का प्रयास किया, किन्तु उन्हें सफलता न मिली। सिद्धों ने देवल को बताया कि जहाँ जैगीषव्य गये हैं उस लोक में जाने की उनमें (असित देवल में) शक्ति नहीं है। तदुपरान्त देवल मुनि पुनः क्रमानुसार उन समस्त लोकों में होते हुये अपने आश्रम लौट आये, जहाँ उन्होंने जैगीषव्य को पुनः देखा। तब देवल ने जैगीषव्य मुनि से कहा, 'मैं मोक्षधर्म का आश्रय लेना चाहता हूँ।' देवल की बात सुनकर जैगीषव्य ने उन्हें ज्ञान का उपदेश दिया और साथ ही योग की उत्तम विधि बताकर शास्त्रानुसार कर्तव्याकर्तव्य को भी बताया। इतना ही नहीं उन्होंने शास्त्रीयविधि के अनुसार देवल के सन्यास ग्रहण सम्बन्धी समस्त कार्य सम्पन्न किये। देवल का सन्यास लेने का विचार जानकर पितरों सहित समस्त प्राणी यह कहते हुये विलाप करने लगे कि 'अब हमें कौन विभागपूर्वक अन्नदान करेगा?' उन प्राणियों का करुणायुक्त वचन सुनकर देवल ने मोक्षधर्म को त्याग देने का विचार किया। उनके इस विचार को देखकर फल-मूल, कुश, पुष्प और ओषधियाँ आदि सहस्रों पदार्थ यह कहकर विलाप करने लगे कि, 'यह दुर्बुद्धि और क्षुद्र देवल पुनः हमारा उच्छेद करेगा। इसीलिये तो यह सम्पूर्ण भूतों को अभय दान देकर भी अब अपनी प्रतिज्ञा को स्मरण नहीं करता।' इन सब बातों पर विचार करके देवल ने गार्हस्थ्य धर्म के परित्याग तथा मोक्षधर्म के ग्रहण का निश्चय किया, और इससे ही उन्होंने परमसिद्धि तथा उत्तम योग प्राप्त कर लिया। तदनन्तर देवल ने बृहस्पति आदि समस्त देवताओं के साथ जैगीषव्य मुनि के तप की प्रशंसा की। उस समय नारद मुनि ने इसका प्रतिवाद किया (९. ५०, १. ६. ८. ९-१२. १५. १७. २२. २५. २७. ३४. ३६. ३८-४५. ४७. ४९. ५०-५५. ५८. ६०. ६२. ६३. ६६. ६८)।" निम्न स्थलों पर भी यह नाम आता है: १२. ४७, ७; २०७, ४; २२९, ३-५. ८. ११; २७५, १. २. ४; २९२, १५; ३१८, १९. ५९; १३. १८, १७; ६६, २४; १३०, ११; १६५, ४५; १६७, १३; १६८, १९; १४. ५२, १५; ९१, ३५; १५. २०, १; २९, ९; १८. ५, ५६।

२. असित मान्धातृ द्वारा विजित एक राजा का नाम है (७. ६२, ११; १२. २९, ८८)।

३. असित = कृष्ण (९. ६०, १२)।

४. असित, एक पर्वत का नाम है (३. ८९. ११)।

असितध्वज, अर्जुन के जन्मोत्सव पर पधारने वाले एक वैनतेय का नाम है (१. १२३, ७३)।

असिता, एक अप्सरा का नाम है जो अर्जुन के जन्मोत्सव पर आई थी (१. १२३, ६३)।

असिपत्रवन (एक वन का नाम है जहाँ वृक्षों की पत्तियाँ तलवार के समान हैं; एक नरक स्थान): १२. ३२१, ३२; १८. २, २३।

असिलोमन्, एक दानव जो कश्यप-पत्नी दनु के पुत्रों में से एक था (१. ६५, २३)।

असुर (बहु० राः), देवताओं के शत्रुओं के लिये प्रयुक्त हुआ है। इन्होंने अमृत-प्राप्ति के लिये देवों के साथ समुद्र-मन्थन किया था, किन्तु इन्हें अमृत पान करने का अवसर नहीं मिल पाया जिसके कारण देवों के साथ इनका भयंकर युद्ध हुआ जिसमें ये पराजित हुये। 'असुराणां वधार्थे', (१. १, १६५)। 'देवतासुरसंश्रिताः', (१. ४, ५)। 'देवैरसुरसङ्घैश्च', (१. १७, १२)। 'ब्रह्मास्तथैवासुरदानवाः', (१. १८, १४)। 'सुरासुरगणान्', (१. १८, १८. १९)। 'सुरामसुराणां च', (१. १९, ११)। 'ततोऽसुराश्चक्रभिन्ना (१. १९, १३)। 'निहताश्चमहासुराः', (१. १९, १५)। 'तानसुरगणान्यकृन्तत', (१. १९, २४. २५. २८)। 'महासुराः प्रविविशुः', (१. १९, २९)। 'असुराणां च बान्धवम्', (१. २१, ७ पर नीलकण्ठी में 'बान्धवं शरणम्',)। 'असुराणां परायणम्', (१. २१, १५)। 'पातालज्वलनावासमसुराणां तथालयम्', (१. २२, ९)। 'यूयं मन्यध्वमसुरार्दनाः', (१. २३, ११)। 'अभूतपूर्वं संग्रामे तदा देवासुरेऽपि च', (१. ३०, ३५)। 'असुरपुरविदारणाः सुरा', (१. ३०. ५१)। 'अथ देवासुराः सर्वे मन्मथुर्वरुणालयम्', (१. ३९, ३)। 'असुरा जज्ञिरे क्षेत्रे राज्ञाम्', (१. ६४, २७)। 'जज्ञिरे भुवि भूतेषु तेषु तेष्वसुरा विभो', (१. ६४, २९)। 'भूरियत्नैर्महासुरैः', (१. ६४, ३७)। 'ससुरासुरलोकानामशेषेण मनोगतम्', (१. ६४, ४४)। 'दनायुषः पुनः पुत्राश्चत्वारोऽसुरपुङ्गवाः। विक्षरो बलवीरौ च वृत्रश्चैव महासुरः॥', (१. ६५, ३३)। 'असुराणामुपाध्यायः शुक्रस्त्वृषिसुतोऽभवत्। ख्याताश्चोशनसः पुत्राश्चत्वारोऽसुरयाजकाः॥', (१. ६५, ३६)। 'असुराणां सुराणां च पुराणे संश्रुतो मया (१. ६५, ३८)। 'कश्यपस्य सुरासुराः', (१. ६६, ३४)। 'पञ्चैते जज्ञिरे राजन् वीर्यवन्तो महासुराः', (१. ६७, ११)। 'तुहुण्ड इति विख्यातो य आसीदसुरोत्तमः', (१. ६७, १९)। 'इषुपान्नाम यस्तेषामसुराणां बलाधिकः', (१. ६५, २०)। 'एकचक्र इति ख्यात आसीद्यस्तु महासुरः', (१. ६५, २१)। 'विरूपाक्षस्तु दैतेयश्चित्रयोधी महासुरः', (१. ६५, २२)। निचन्द्रश्चन्द्रवक्त्रस्तु य आसीदसुरोत्तमः', (१. ६५, २५)। 'द्वितीयः शलभस्तेषामसुराणां बभूव ह', (१. ६५, ३०)। 'असुराणां तु यः सूर्यः श्रीमांश्चैव महासुरः।', (१. ६५, ५८)। 'देवासुरमनुष्याणाम्' (१. ६५, १४६)। 'सुराणामसुराणां च', (१. ७६, ५)। 'असुरास्तु निर्जघ्नुयान्सुरान्', (१. ७६, ९)। 'असुरेन्द्रपुरे शुक्रं दृष्ट्वा वाक्यमुवाच ह', (१. ७३, १८)। 'असुरास्तत्र', (१. ७४, ३७. ४३. ५१. ५५)। 'असुरैर्हन्यमाने च', (१. ७७, १०)। 'असुरमन्दिरम्', (१. ७८, २६)। 'देवतासुराः', (१. ८०, ९)। 'यत्किञ्चिदसुरेन्द्राणां विद्यते वसु भार्गव', (१. ८०, ११)। 'शुक्रो नामासुरगुरुः सुतां जानीहि तस्य माम्', (१. ८१, ९)। 'असुरेन्द्रसुता सुभ्रूः', (१. ८१, ११)। 'तमेवासुरधर्मं त्वमास्थिता', (१. ८३, १९)। 'सुराणां संमतो नित्यमसुराणां च भारत', (१. १००, ३६)। 'यस्य हि त्वं सपत्नः स्या गन्धर्वस्यासुरस्य वा', (१. १००, ८३)। 'मनुष्यानसुरांस्तथा', (१. १०१, ७)। 'तद्युद्धमासीत्तुमुलं घोरं देवासुरोपमम्', (१. १०२, ३०)। 'रक्षत्यसुरराणिनत्यमिमं जनपदं बली', (१. १६०, ४)। 'सुपर्णनागासुरसिद्धजुष्टम्', (१. १८७, १३)। 'सर्वैः सुरासुरैः', (१. २२५, ३०)। 'ततोऽसुराः सगन्धर्वाः', (१. २२७, २४)। 'असुरसूदनः' = इन्द्र, (१. २२७, ३०)। 'यथासुरान्कालकेयान्', (२. ४, २३)। 'सुरासुरान्', (२. ५, ७)। 'येनासुरान्पराजित्य जगत्पाति शतक्रतुः', (२. २२, १९)। 'इति स्म भाषते कृष्णो जम्भत्यागे महासुरान्', (२. ६२, १२)। 'असुरनिशाचरसिद्धवन्दितम्', (३. ३, २९)। 'अधर्मरुचयः कृष्ण निहताः शतशोऽसुराः', (३. १२, २८)। 'ते हयांश्च रथं चैव तदा दारुकमेव च। छादयामासुरसुरास्तैर्बाणैर्मर्मभेदिभिः॥', (३.

२०, २३)। 'गन्धर्वासुरराक्षसाः', (३. ३१, २९) । 'निकृत्या निर्जिता देवैरसुराः पार्थिवर्षभ', (३. ३३, ६०) । 'अमित्रांस्तेजसा मृद्नन्नसुरानिव वृत्रहा', (३. ३३, ८६) । 'सुरोऽसुरः', (३. ३०, ४०) । 'अजेयस्त्वं त्रिभिर्लोकैः सदेवासुरमानुषैः', (३. ३९, ७६) । 'तदेतदस्त्रं निमुक्तं येन दग्धा महासुराः', (३. ४१, ३९) । 'उद्वृत्ता ह्यसुराः केचिन्निवातकवचा इति', (३. ४७, १५. २१) । 'धर्मं तत्यजिरेऽसुराः', (३. ९४, ६)। 'तीर्थानि देवा विविशुर्नाविशन्भारतासुराः', (३. ९४, ७)। 'लक्ष्मीस्तु देवानगमदलक्ष्मीरसुरान्नृप', (३. ९४, १०) । 'असुरोरगरक्षांसि', (३. १०७, २५)। 'सुरासुरैः', (३. १२४, २०)। 'स्वस्ति देवासुरेभ्यः', (३. १३९, १५)। 'सुरासुरनिषेवितम्', (३. १५८, ७)। 'शतशोऽसुराः', (३. १७०, १०. १४. १८)। 'तास्वसुरोत्तमाः', (३. १७१, २६) 'हतेष्वसुरसङ्घेषु दारास्तेषां तु सर्वशः', (३. १७२, २१) । 'असुरैर्नित्यमुदितैः', (३. १७३, ५)। 'महर्षियक्षगन्धर्वपन्नगासुरराक्षसैः', (३. १७३, १०)। 'रक्षितं कालकेयैश्च पौलोमैश्च महासुरैः', (३. १७३, १३) । 'प्रमग्नं पुरमासुरम्', (३. १७३, ३०) । 'सुरासुरैरसह्यं हि कर्म', (३. १७३, ५९)। 'निहत्य च महासुरान्', (३. १७३, ६७) । 'अतिदेवासुरं कर्म कृतमेव त्वया रणे', (३. १७३, ७२) । 'सयक्षासुरगन्धर्वैः', (३. १७३, ७५)। 'धनञ्जयेनासुरतर्जनेन', (३. १८३, १३)। 'मनुना च प्रजाः सर्वा सदेवासुरमानुषाः' (३. १८७, ५३) । 'नष्टे देवासुरगणे', (३. १८८, १३) । 'सदेवासुरगन्धर्वं सयक्षोरगराक्षसम्', (३. १८८, ७३. ८६) । 'सुरासुरैः', (३. १८९, ४६)। 'वृत्ते देवासुरे राजन् सङ्ग्रामे लोमहर्षणे', (३. १९३, ६) । 'वज्रपाणिरिवासुरान्', (३. २००, ७८) । 'ससुरासुरमानवाः', (३. २०१, १४)। 'देवासुरमहोरगाः', (३. २०१, १८)। 'असुराणां समृद्धानां विनाशश्च त्वयाकृतः', (३. २०१, २२)। 'देवासुराः', (३. २२३, ३)। 'सुरासुरनमस्कृतः', (३. २२४, ६) । 'असुरैर्वध्यमानं तत् पावकैरिव काननम्', (३. २३१, ६६)। 'महासुरान्', (३. २३१, ७१)। 'त्वं भावनः सर्वसुरासुराणाम्', (३. २३२, १३) । 'भीष्मद्रोणकृपादींश्च प्रवेक्ष्यन्त्यपरेऽसुराः', (३. २५२, ११) । 'कीलालजं न खादेयं करिष्ये चासुरव्रतम्', (३. २५७, १७) । 'गन्धर्वदेवासुरतो', (३. २७५, २५)। 'देवासुरैः', (३. २७६, ४)। 'स सम्प्रहारो ववृधे भीरूणां भयवर्धनः । लोमसंहर्षणो घोरः पुरा देवासुरे यथा ॥', (३. २८५, ११) । 'मानुषासुरभोगिनाम्', (३. २९१, ४८)। 'सदेवासुरगन्धर्वा', (३. २९१, ४९)। 'अस्मिन्मार्गे निषीदेयुः सेन्द्राऽपि ससुरासुराः ।', (३. २९२, ३)। 'नासुराश्च न राक्षसाः', (३. ३१३, ३३)। 'असुराणां क्षयंकरीम्', (४. ६, ३) । 'कालखञ्जाइवासुराः', (४. १३, १६)। 'देवासुरसमो', (४. ३२, ५)। 'वज्रपाणिरिवासुरान्', (४. ३५, १९)। 'सर्वैरपि सुरासुरैः', (४. ३९, ११) । 'नासुरान् न च राक्षसान्', (४. ५०, १७)। 'तयोर्देवासुरसमः सन्निपातो महानभूत्', (४. ५९, २)। 'वज्रपाणिरिवासुरान्', (४. ६१, ३०) । 'सदेवासुरमानुषम्', (५. १०, ३. १९) । 'त्रस्तं सासुरगन्धर्वं', (५. १२, २) । 'नासुरेषु न देवेषु', (५. १५, १४)। 'यद्वित्तमसुरेषु नः', (५. ३५, १८)। 'देवासुराः', (५. ४२, २) 'पुरं घोरमसुराणामसह्यम्', (५. ४८, ८०)। 'असुराणां विनाशाय', (५. ४९, ९)। 'तदा देवासुरे युद्धे भये जाते दिवौकसाम् । अयाचत महात्मानौ नरनारायणौ वरम् ॥', (५. ४९, ११) । 'अजेयौ मानुषे लोके सेन्द्रैरपि सुरासुरैः', (५. ४९, २०) । 'देवासुराणां भावानामहमेकः प्रवर्तिता', (५. ६१, १४)। 'नासुरा न च राक्षसाः', (५. ६१, २०)। 'असुराणां समृद्धानां ज्वलतामिव तेजसा ।', (५. ७४, १२) । 'सुराणामसुराणां च', (५. ७८, ७)। 'असुरा कालखञ्जाश्च तथा विष्णुपदोद्भवाः', (५. १००, ५)। 'मन्थानं मन्दरं कृत्वा देवैरसुरसंहतैः', (५. १०२, ११) । 'देवासुरेषु युद्धेषु मनसैव नियच्छति (५. १०४, ३) । 'सर्वान् सुरासुरान्', (५. १०७, १५)। 'अत्राहिताः कृतघ्नाश्च मानुषाश्चासुराश्च ये उदयंस्तान् हि सर्वान् वै क्रोधाद्धन्ति विभावसुः ॥', (५. १०८, १६) । 'असुराणां', (५. ११५, १२) । 'बहुदेवासुरालोका', (५. ११६, ३) । 'अजेयो ह्यर्जुनः संख्ये सर्वैरपि सुरासुरैः', (५. १२४, ५०) । 'सयक्षासुरपन्नगान्', (५. १२४, ५३) । 'पराभविष्यन्त्यसुराः', (५. १२८, ४३. ४४)। 'देवैर्मनुष्यैर्गन्धर्वैरसुरैरुरगैश्च यः । न सोढुं समरे शक्यस्तं न बुद्ध्यसि केशवम् ॥', (५. १३०, ३८)। 'निर्मोचने षट्सहस्राः पाशैर्बद्धा महासुराः ।', (५. १३०, ४५) । 'ससुरासुरराक्षसम्', (५. १५६, २०) । 'देवासुरेष्वपि', (५. १६५, १२) । 'जहि भीष्मं रणे राम गर्जन्तमसुरं यथा', (५. १७८, ७) 'ततो हाहाकृते लोके सदेवासुरराक्षसे । इदमन्तरमित्येवं मोक्तुकामोऽस्मि भारत ॥', (५. १८४, २२)। 'गन्धर्वासुरराक्षसाः', (६. ६, १८)। 'देवासुराणां सर्वेषां श्वेतपर्वत उच्यते ।', (६. ६, ५२)। 'सुरासुरानवस्फूर्जन्', (६. २१, १५)। 'गन्धर्वयक्षासुरसिद्धसङ्घा वीक्ष्यन्ते त्वां विस्मिताश्चैव सर्वे', (६. ३५, २२)। 'ईक्षन्त तद्रणं घोरं देवासुरसमं भुवि', (६. ४५, ८५) । 'निघ्नन्नमित्रान् समरे वज्रपाणिरिवासुरान्', (६. ४८, ३६)। 'यं बृहस्पतिरिन्द्राय तदा देवासुरेऽब्रवीत्', (६. ५०, ४०)। 'सदेवासुरगन्धर्वैर्लोकैरपि', (६. ५२, ६५) । 'यथा देवासुरं युद्धं पूर्वमासीत् सुदारुणम्', (६. ५८, १३) । 'तत्रासुरवधं कृत्वा सर्वलोकसुखाय वै', (६. ६५, ७३)। 'असुराणां वधार्थाय संभवस्व महीतले', (६. ६६, ८)। 'यथा देवासुरे युद्धे', (६. ७७, १२; ७१, २७) । 'विमथ्य तो देवमहासुरौघर्यथाऽर्णवस्यादियुगे', (६. ८०, १८)। 'वज्रपाणिरिवासुरान्', (६. ८२, ५५) । 'तमेकमना भूत्वा शृणु देवासुरोपमम्', (६. ८३, ११)। 'वज्रपाणिरिवासुरान्', (६. ८६, ३८) । 'सदेवासुरगन्धर्वं लोकं', (६. ९८, ३) । 'यथा देवासुरे युद्धे', (६. ९८, ४६; १००, ५४)। 'सेन्द्रैरपि सुरासुरैः', (६. १०७, ७५. ७६) । 'वज्रहस्तमिवासुराः', (६. १०८, ३४)। 'वज्रपाणेरिवासुरान्', (७. ३, १५) । 'जिगीषन्तोऽसुरान् संख्ये कार्तिकेयमिवामराः', (७. ५, २१) । अशक्यः स रथो जेतुं मन्ये देवासुरैरपि', (७. १०, २८) । 'सेन्द्रैरपि सुरासुरैः', (७. १२, २८)। 'यथा देवासुरे युद्धे बलशक्रौ महाबलौ', (७. १४, ४८)। कुरूणां पाण्डवानां च युद्धं देवासुरोपमम्', (७. १५, २) । 'यथाशक्ररथो राजन् युद्धे देवासुरे पुरा', (७. १९, ६) । 'सुरासुरनमस्कृतः', (७. २१, ३७)। 'युद्धमासीद्देवासुरोपमम्', (७. २५, २१)। 'पाण्ड्यमिन्द्रमिवायान्तमसुरान् प्रति दुर्जयम्', (७. २५, ५७)। 'विमुक्तं परमास्त्रेण जहि पार्थ महासुरम्', (७. २९, ३७)। 'ससुरासुरगन्धर्वाः', (७. ३३, ११) । 'यथाऽसुरबलं घोरम्', (७. ३६, ४१)। 'स्कान्दस्येवासुरैः सह', (७. ३९, २) । 'जेतुं सुरासुरैः'; (७. ४८, ३०)। 'सुरासुरैरवध्यम्', (७. ५९, ६) । 'देवासुरमनुष्याणां त्रैलोक्यविजयी नृपः', (७. ६२, १)। 'देवासुरा नरा यक्षाः', (७. ६२, १६)। 'व्यूढे देवासुरे युद्धे', (७. ६३, ५)। 'देवासुरनरोरगाः', (७. ६९, १०)। 'असुरा दुदुहुर्मायामामपात्रे तु ते तदा । दोग्धा द्विमूर्द्धा तत्रासीद्वत्सश्चासीद्विरोचनः ॥', (७. ६९, २०) । 'असुरसुरमनुष्याः', (७. ७३, ४८) । 'नासुरोरगराक्षसाः', (७. ७४, ११; ७५, १४) । 'सुरासुराश्च', (७. ७७, २६) । 'तथा भवेनानुमतौ महासुरनिघातिना । इन्द्राविष्णू यथा प्रीतौ जंभस्य वधकांक्षिणौ ॥', (७. ८१, २५)। 'विदन्त्यसुरमायां ये सुघोरा घोरचक्षुषः', (७. ९३, ४१)। 'सासुरसुराः', (७. ९४, ३६)। 'यथेन्द्रेण हतः पूर्वं जम्भो देवासुरे मृधे', (७. १०२, १७)। 'यथादेवासुरे युद्धे', (७. १०५, २२)। 'ततस्तु तुमुलस्तेषां संग्रामोऽवर्तताद्भुतः ।', (७. १०६, ४) । 'सदेवासुरमानुषम्', (७. १११, ६) । 'ससुरासुरमानुषाः', (७. १११, ३०)। 'शृणु युद्धं यथावृत्तं घोरं देवासुरोपमम्', (७. ११४, ५६; ११५, ६१) । 'देवासुररणप्रख्यः प्रावर्तत जनक्षयः', (७. १२०, २२)। 'देवासुरे पुरा युद्धे', (७. १२२, ५०)। 'शक्रेणेव महासुराः', (७. १२५, ४९) । 'तद्युद्धमासीत् सुमहद्घोरं देवासुरोपमम्', (७. १२८, १३)। 'सयक्षासुरमानुषान्', (७. १३३, २) । 'वज्रेणेन्द्र इवासुरान्', (७. १३४, १२) । 'पुरन्दर इवासुरान्', (७. १३५, ११)। 'पुरा देवासुरे युद्धे शक्रस्य बलिना यथा', (७. १४२, ८)।

'न देवासुरगन्धर्वाः', (७. १४४, २४) । 'असुरानिव देवेन्द्रो', (७. १५६, १२४) । 'असुरानिव पावकिः', (७. १५६, १२५) । 'सदेवासुरमानुषम्', (७. १५८, ४४) । 'सेन्द्रा अपि सुरासुराः', (७. १५९, ७) । 'यथा देवासुरे युद्धे शक्रस्य सह दानवैः', (७. १५९, ३४) । 'सरासुरन्यूहसमं', (७. १६३, ३६) । 'यथा देवासुरे युद्धे', (७. १६९, २४) । 'असुरानिव पावकिः', (७. १७०, ६५) । 'सुरासुरैः', (७. १८१, २२) । 'ससुरासुरगन्धर्वान्', (७. १८५, ७) । 'नासुरोरगरक्षांसि', (७. १८५, २६) । 'वर्तमाने तथा युद्धे घोरे देवासुरोपमे', (७. १९२, ११) । 'नासुरा न च राक्षसाः', (७. १९५, २३) । 'शचीपतिरिवासुरान्', (७. १९५, ४१) । 'सासुरोरगमानवान्', (७. १९७, २०) । 'ना सुरा न च गन्धर्वाः', (७. २०१, ५२. ७३) । देवासुरमहोरगाः', (७. २०१, ८१) । 'न सुरा नासुरा लोके', (७. २०२, ५१. ५५) । 'असुराणां पुराण्यासंस्त्रीणि', (७. २०२, ६४) । 'असुरान् भुवनेश्वर', (७. २०२, ७०) । 'असुराणामन्तकरः', (७. २०२, ७९) । 'वज्रहस्त इवासुरान्', (८. ९, ५) । 'देवासुरसमप्रभे', (८. १२, १) । 'वज्रहस्त इवासुरीम्', (८. १४, ३६) । 'शक्र इवासुरान्', (८. १९, ५८) । 'संग्रामं चक्रुर्देवासुरोपमम्', (८. ३०, १) । 'सुरासुराः', (८. ३१, ६९) । 'इदं युद्धे देवासुरे', (८. ३३, १) । 'देवानां असुराणां च', (८. ३३, ३. ९. ४२; ३४, ८३. ९२. ११०) । 'तान् सोऽसुरगणान् दग्ध्वा', (८. ३४, ११३) । 'देवासुरगणाध्यक्षो लोकानां विदधे शिवम्', (८. ३४, ११८) । 'भवाञ्जेतुं मच्छत्रूंस्तानिवासुरान्', (८. ३४, १२२) । 'विजेतुं महासुराः', (८. ३४, १४८) । 'यथाऽसुराश्च निहता इषुणैकेन भारत', (८. ३५, ७) । 'असुरसुरमहोरगान्नरान्', (८. ३७, ३६) । 'देवासुरमनुष्येषु', (८. ४१, ८५) । 'सुरासुरान्', (८. ४२, १७) । 'देवासुरचमूपमः', (८. ४६, २६) । 'सेन्द्रैः सुरासुरैः', (८. ४६, ७७) । 'देवासुरसमोऽभवत्', (८. ४७, २३) । 'देवासुरोपमः', (८. ४८, ४०) । 'विष्णुरिवासुरान्', (८. ५१, ५४) । 'देवासुरे पार्थमृधे देवदानवयोरिव', (८. ६०, ४८) । 'वज्रेणेन्द्र इवासुरान्', (८. ६१, ६४) । 'जित्वाऽसुरमिवामरौ', (८. ६६, ८) । 'सुरासुरैश्च', (८. ७२, ३६) । 'ससुरासुरमानुषान्', (८. ७३, ८; ७४, ५५) । 'असुरैर्यथा', (८. ७७, ५) । 'यथा सुराणामसुरैः पुराऽभवत्', (८. ८२, २८) । 'सदेवासुरगन्धर्वान्', (८. ८६, १२) । 'असुरा यातुधानाश्च', (८. ८७, ४०. ६०. ६२) । 'तद्देवनागासुरसिद्धयक्षैः', (८. ८८, १) । 'बभूव युद्धं कुरुपाण्डवानां यथा सुराणामसुरैः सहाभवत्', (८. ८८, ५) । 'सुरासुराः', (८. ८८, ९) । 'असुरश्च', (८. ८९, ४५) । 'देवासुरान्', (८. ९१, ४३) । 'देवासुररणोपमम्', (९. २, ९; ३, ६०) । 'ससुरासुरमानवान्', (९. ७, ३. ११) । 'देवासुरोपमम्', (९. ९, १) । 'देवासुरोपमे', (९. ९, ३४) । 'यथा देवासुरं युद्धं', (९. १०, ६१) । 'शक्रस्यासुरसंक्षये', (९. १५, ४३) । 'देवासुररणोपमम्', (९. २३, ४) । 'सहस्राक्ष इवासुरान्', (९. २६, ३६) । 'सुरासुरस्य जगतो गतिस्त्वमसि शूलधृत् ।', (९. ३८, ५०) । 'असुराणामभावाय', (९. ४१, २९) । 'ततोऽसुराः', (९. ४१, ३०) । 'असुराणां', (९. ४५, २१) । 'देवासुरे युद्धे', (९. ४५, २७) । 'महासुराः', (९. ५१, २७) । 'मायया निर्जिता देवैरसुरा इति नः श्रुतम्', (९. ५८, ५) । 'देवैरसुरघातिभिः', (९. ६१, ६८) । 'देवासुरे युद्धे', (९. ६३, १७) । 'महासुरान्', (१०. ४, १५) । 'असुरैर्न गन्धर्वैः', (१०. ८, १२३) । 'देवासुरं यथा', (१२. ८, २५) । 'असुराणां सहस्राणि बहूनि सुरसत्तमः । अजयद्बाहुवीर्येण भगवान्पाकशासनः ॥', (१२. २१, ६४) । 'व्यूढेनासुरयुद्धेन', (१२. २९, ९७) । 'इदं तु श्रूयते पार्थ युद्धे देवासुरे पुरा । असुरा भ्रातरो ज्येष्ठा देवाश्चापि यवीयसः ॥', (१२. ३३, २५) । 'सुरासुरगन्धर्वाः', (१२. ४७, ३५; ५०, २५) । 'उत्थानेनासुरा हताः', (१२. ५८, १४) । 'इमामुर्वी नाजयद्विक्रमेण देवश्रेष्ठः सासुरामादिदेवः', (१२. ६४, २४) । 'देवासुराः', (१२. ९०, २६) । 'ससुरासुरमानुषम्', (१२. १२१, ४) । 'लोकानां स हि सर्वेषां ससुरासुररक्षसाम् ।', (१२. १२१, ५८) । 'अपां राज्येऽसुराणां च विदधे वरुणं प्रभुम् ।', (१२. १२२, २९) । 'देवासुराः', (१२. १३९, ५५) । 'सुरासुराः', (१२. १५२, ३२) । 'नासुरैर्न महोरगैः', (१२. १५८, १४) । 'असुरसत्तमाः', (१२. १६६, ३१) । 'देवदानवगन्धर्वा दैत्यासुरमहोरगाः', (१२. १८८, ३) । 'असुरान् महासत्त्वान्', (१२. २०७, २८) । 'बलेन मत्ताः शतशो नरकाद्या महासुराः ॥ तथैव चान्ये बहवो दानवा युद्धदुर्मदाः ।', (१२. २०९, ७. ८) । 'नागासुरमनुष्यांश्च', (१२. २१०, १५) । 'सुरासुराः', (१२. २१०, २४; २११, ५) । 'तपो ह्यधिष्ठितं देवैस्तपोघ्नमसुरैस्तमः ।', (१२. २१६, १७) । 'देवासुरगुणान्विदुः', (१२. २१६, १८) । 'सर्वानेवासुरान् जित्वा बलिं पप्रच्छ वासवः', (१२. २२३, ३) । 'देवासुरं युद्धं', (१२. २२५, ३१) । 'देवासुरे युद्धे', (१२. २२५, ३२) । 'महासुरांश्च', (१२. २२६, १४) । 'देवासुरे युद्धे', (१२. २२७, ७) । 'देवासुरसमागमे', (१२. २२७, ७७) । 'त्रिजित्य सर्वानसुरान्सुराधिपो ननन्द हर्षेण बभूव चैकराट्', (१२. २२७, ११७) । 'असुरेष्ववसं पूर्वं सत्यधर्मनिबन्धना', (१२. २२८, २७) । 'असुरान्', (१२. २२८, ८४) । 'असुरप्रवीर', (१२. २८०, ४४) । 'देवासुराणां', (१२. २८१, ११) । 'दैत्यासुरनिबर्हण', (१२. २८१, २२) । 'असुराणां', (१२. २८१, ४२) । 'देवानसुरांश्च तथागनान्', (१२. २८८, ४१) । 'असुराणां प्रियकरः', (१२. २८९, २) । 'तं धर्ममसुरास्तात नामृष्यन्त जनाधिपः', (१२. २९४, १४) । 'सासुरराक्षसम्', (१२. ३२७, १३) । 'सदेवासुरगन्धर्वाः', (१२. ३३४, १६) । 'सुरासुरगणानां च', (१२. ३३९, ६३) । 'सदेवासुररक्षसाम्', (१२. ३३९, ८०) । 'सुरासुरैः', (१२. ३३९, १२७) । 'ससुरासुरमानवाः', (१२. ३४०, ७) 'सुरासुरविशिष्टा ब्राह्मणाः', (१२. ३४२, २२) । 'स्वस्त्रीयोऽसुराणाम्', (१२. ३४२, २८) । 'असुरपक्षः', (१२. ३४२, ३५) 'असुरान्', (१२. ३४२, ५६) । 'सुराश्चासुराश्च', (१२. ३४२, ९०) । 'असुरवधकरः', (१२. ३४३, १९) । 'सुरासुरैः', (१२. ३५०, २०) । 'सुरासुरगणानां च', (१२. ३६०, ३) । 'न गन्धर्वा नासुराः', (१२. ३६३, ५) । 'कश्यपस्य सुरासुराः', (१३. १२, २९. ३०) । 'असुरघ्नस्य कांश्चिद्भगवतो गुणान्', (१३. १४, २४) । 'असुरेन्द्रान्', (१३. १४. ८१) । 'मर्दिताश्चासुरैः सुराः', (१३. १४, २१३) । 'सुरासुरगुरोर्वक्त्रे कस्य रेतः पुरा हुतम्', (१३. १४, २१६) । 'सुरासुरैः', (१३. १४, २२३) । 'सुरासुराश्च', (१३. १४, ४२५) । 'देवासुरमुनीनान्', (१३. १६, ५. २९) । 'देवासुरमनुष्याणाम्', (१३. १६, ३७) । 'देवासुरनराः', (१३. १६, ३८) । 'असुरेन्द्राणां', (१३. १७, ६२) । 'देवासुरपतिः', = शिव, (१३. १७, १२०) । 'देवासुरविनिर्माता देवासुरपरायणः', = शिव, (१३. १७, १४४) । 'देवासुरगुरुर्देवो देवासुरनमस्कृतः । देवासुरमहामात्रो देवासुरगणाश्रयः ॥', = शिव, (१३. १७. १४५) । 'देवासुरगणाध्यक्षो देवासुरगणाग्रणी । देवातिदेवो देवर्षिर्देवासुरवरप्रदः ॥', = शिव १३. १७, १४६) । 'देवासुरेश्वरो विश्वो देवासुरमहेश्वरः ॥', = शिव (१३. १७, १४७) । 'देवतासुरमर्त्येषु यत्पवित्रं परं स्मृतम्', (१३. २७, ३०) । 'स निष्क्रम्य ददौ युद्धं तेभ्यो राजा महाबलः । देवासुरसमं घोरं दिवोदासो महाद्युतिः ॥', (१३. ३०, २०) । 'नासुरैर्न पिशाचैश्च', (१३. ३३, १६) । 'ब्राह्मणानां परिभवादसुराः सलिलेशयाः', (१३. ३५, १९) । 'देवासुरं पुरा', (१३. ३६, ११) । 'असुराणां', (१३. ४४, ७; ६२, ९४) । 'देवासुरसुपर्णाश्च', (१३. ८३, ८) । 'असुरसूदन', (१३. ८३, ४५) । 'असुरैर्हताः', (१३. ८४, ८१) । 'असुराणां', (१३. ८५, ६) । 'जघान तारकं चापि दैत्यमन्यांस्तथासुरान् ।', (१३. ८५, १६४) । 'राक्षसासुरसत्त्वाश्च', (१३. ८६, २६) । 'देवासुरमनुष्याणां', (१३. ८७, ४) । 'सदेवासुरमानुषम्', (१३. १२६, ६) 'त्रीन्लोकान्धारयन्तिस्म सदेवासुरमानुषन् ।', (१३. १३३, ४) । 'रोमभ्यश्च सुरासुराः', (१३. १४७, ४) । 'असुराणां', (१३. १४८, २१) । 'ससुरासुरगन्धर्वं सयक्षोरगराक्षसम् ।

जगद्वशे वर्ततेदं कृष्णस्य सचराचरम् ॥', (१३. १४९, १३५)। 'असुरैर्निर्जिता देवाः', (१३, १५५, २) । 'महासुराः', (१३. १५५, १०)। 'भूमिष्ठानसुरान्', (१३. १५५, ११)। 'असुरैः', (१३. १५६, ४. ५))। 'अग्निणा दह्यमानांस्तान्दृष्ट्वा देवा महासुरान्', (१३. १५६. ११) 'महासुराः', (१३. १५६, १२)। 'असुराणां वधाय', (१३. १५८, १३)। 'असुरा विजिता', (१३. १५८, २०) 'देवानसुरान्', (१३. १५८, ४२)। 'नासुरा नासुरः', (१३. १६०, १०. १४)। 'असुराणां पुराण्यासंस्त्रीणि वीर्यवतां दिवि ।', (१३. १६०, २५)। 'तेऽसुराः सपुरास्तत्र दग्धा रुद्रेण भारत', (१३. १६०, ३१)। 'देवासुरगुरुः', = ब्रह्मन् , (१३. १६५, ८)। 'सुरासुरनमस्कृत', (१३. १६७, ३७)। 'असुराश्चसुराश्चैव', (१४. ३, ६)। 'असुराश्चैव देवाश्च', (१४. ५, ३) । 'असुरान्', (१४. ९, ६)। 'नागाश्चाप्यसुराश्च', (१४, २६, ७)। 'असुराणां प्रवृत्तस्तु दम्भभावः स्वभावजः', (१४. २६, १०)। 'सुरासुराश्च', (१४. ४२, ६७)। 'पिशाचासुरराक्षसाः', (१४. ५१, ११) । 'देवासुररणप्रख्यम्', (१४. ७९, २०)। 'शुक्रो वाप्यसुरेषु च', (१५. २८, १३)। 'देवासुरविमिश्रिताः', (१५. २९, १४)। 'स्थावरं जंगमं चैव जगत्सर्वं सुरासुरम्', (१८. ६, ९)।

२. असुर (तु० की० १. असुर) : श्री ने इन्द्र से कहा कि देवता, गन्धर्व, असुर, और राक्षस कोई भी अकेले उसका भार सहन नहीं कर सकते (१२. २२५, १७)। एक तेजस्वी पुरुष के अपने स्वरूप में लीन हो जाने पर सूर्य ने देवों को बताया कि वह न तो वायुसखा अग्निदेव, थे, न कोई असुर, और न नाग ही, वरन् उञ्छवृत्ति से जीवन निर्वाह के व्रत का पालन करने से सिद्धि को प्राप्त हुये एक मुनि थे (१२. ३६३, १)। अग्नि के द्वारा गंगाजी में स्थापित किया हुआ वह तेजस्वी गर्भ जब बढ़ रहा था, उसी समय किसी असुर ने वहाँ आकर सहसा बड़े जोर से भयानक गर्जना की (१३. ८५, ५८)।

प्रमुख असुरों के नाम इस प्रकार हैं :

* अश्व : 'अश्व इति विख्यातः श्रीमानासीन्महासुरः', (१. ६७, १३)।

* इल्वल : 'इल्वलो नाम दैतेय आसीत्', (३. ९६, ४; ९९, १. ५. ११. १३)।

* उपसुन्द : १. २०८, २२; २०९, १८; २१०, १९. २६; २१२, १३; ९. ३१, १४ । तु० की० सुन्द ।

* एकचक्र : 'एक चक्र इति ख्यातः आसीयस्तु महासुरः', (१. ६७, २१)।

* कालेया : 'कालेयानां तु ये पुत्रास्तेषामष्टौ नराधिपाः', (१. ६७, ४७)। 'प्रवरस्तेषां कालेयानां महासुरः', (१. ६७, ४८)। 'तृतीयस्तु महातेजा महामायो महासुरः ।', (१. ६७, ५०)। 'पञ्चमस्त्वभवत्तेषां प्रवरो यो महासुरः', (१. ६७, ५२)। 'षष्ठस्तु मतिमान्यो वै तेषामासीन्महासुरः', (१. ६७, ५३)।

* कुपट : १. ६७, २८ ।

* केशिन : ३. २२३, १३; २२४, १ ।

* कैटभ : ९. ४९, २२; १२. ३४७, २६. ६० ।

* क्रथन : १. ६७, ५७ ।

* क्रोधहन्तृ : १. ६७, ४५ ।

* गविष्ठ : १. ६७, ३४ ।

* चन्द्रहन्तृ : १. ६७, ३७ ।

* जम्भ : ३. १०२, २४; ८. ६५, १९ ।

* जरासन्ध : १२. ३३९, ९६

* तारक : १३. ८४, ७९; ८५, १. ५१; ८६, २०. २९ ।

* दंश : 'प्राक् दंशो नाम महासुरः', (१२. ३, १९)।

* धुन्धु : ३. २०१, ३१; २००, २९. ३१; २०४, १७. ३३ ।

* नमुचि : ५. १६, १४

* नरक : 'नरकाद्या महासुराः', (१२. २०९, ७)

* निचन्द्र : 'असुरोत्तमः', (१. ६७, २५)।

* पीठ : ७. ११, ५

* प्रह्लाद : 'असुरेन्द्रम्', (३. २८, २)।

* बलि : ३. २६, १२; १०२, २३; १२. २२५, ३३; २२७, ११५; ३३९, ७९ ।

* बली : १. ६७, ४३ ।

* बाण : १. ६५, २० ।

* भगदत्त : ७. २९, ३८ ।

* मद : ३. १२४, १९। 'मदं नामासुरं विश्वरूपम्', (१४. ९, ३३)।

* मधु : 'महासुरम्', (६. ६७, १४)। 'असुरौ मधुकैटभौ', (९. ४९, २२)। 'महासुरः' (१२. २०७, १४)। 'असुरोत्तमौ', (१२. ३४७, २९) 'मधुकैटभौ', (१२. ३४७, ६०)।

* मय : १. ६१, ४८; २२८, ३९; २. १, ३; ३. ९, १९; ८. ३३, १६ ।

* मयूर : १. ६७, ३५ ।

* सृतपा : 'असुरोत्तमः' (१. ६७, ३३)।

* वातापि : १. २, १६७; ३. ९६, ४. ८. १०; ९९, २. ३. ८; २०६, २७; १२. १४१, ७१ ।

* विचर : 'प्रवरोऽसुरः', (१. ६७, ४१)। 'द्वितीयो विक्षरायस्तु नराधिप महासुरः', (१. ६७, ४२)।

* विनाशनः चन्द्रस्य : १. ६७, ३८ ।

* विरूपाक्ष : १. ६७, २२ ।

* विश्वरूप : ५. ९, ४ । देखिये व० स्था० ।

* वृत्र : १. ६७, ४४; ३. १०१, १६; ५. १०, २०. ३२. ३५; १७, ३; ७. १९६, १०; १२. २८०, ४४; २८१, २९. ३४; २८२, १०. ६२; २८३, ५९ ।

* वृषपर्वन् : १. ८०, १३

* शठ : १. ६५, २९

* शतमुख : १३. १४, ८६

* शरभ १. ६७, २७

* सुन्द : १. २०८, २२; २०९, १८; २१०, १९. २६; २१२, १३; ९. ३१, १४ ।

* सूर्य १. ६७, ५८

* स्वर्भानु १. ६७, १२

* हिरण्यकशिपु : १. २०९, २ ।

* हिरण्याक्ष : ९. ३१, ९

असुरद्विष् बहुवचन में महर्षियों और ब्राह्मणों के लिये प्रयुक्त हुआ है (१. २१०, ११)।

असुरराज (असुरों का अधिपति) = वक (१. १६०, ४)।

असुरश्रेष्ठ = नमुचि (९. ४३, ३६) = वृत्र (१२. २८१, ३५)।

असुरसूदन (असुरों का नाशक) = इन्द्र (१. २२७, ३०); = विष्णु (५. १०, ९)।

असुरहन् = शिव (१३. १४, २४)।

असुरा , कश्यप और प्राधा की आठ पुत्रियों में से एक का नाम है (१. ६५, ४५)।

१, असुराधिप = बलि (१२. २२३, २५; १३. ९८, १२)।

२. असुराधिप = प्रह्लाद (१२. १७९, १५)।

असुरायणि , विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५६)।

असुरार्दन (असुरों को पीड़ा पहुँचाने वाला) = इन्द्र (१. २२६, १५)।

असुरी (एक स्त्री असुर) : १. ७८, ८ (=शर्मिष्ठा); ३. १७३, ७ (=कालका महासुरी); ४. ९, १७।

असुरेन्द्र (असुरों का राजा) = बलि (१३. ९०, २०; ९८, ६५); = प्रह्लाद (१२. १२४, ५३; २२२, ३७); = वृत्र) १२. २८०, ४. ३५; २८१, १३); = मधु और कैटभ (१२. ३४७, ६९)।

असुरेन्द्रसुता = शर्मिष्ठा (१. ८१, ११)।

असूर्य (सूर्यरहित)। 'असुर्या नाम ते लोका गां दत्वा तान्न गच्छति।', (१३, ७७, ५)।

अस्त, पश्चिम दिशा के एक पर्वत का नाम है जहाँ सूर्य अस्त होता है : 'अस्ताचल', (१. ३, ५२)। 'सूर्यो ह्यस्तमभ्यगमद्गिरिम्', (१. २४, १०; ४७, २६; १०२, ७१; १२१, १९)। 'प्रागस्तगमनाद्रवेः', (१. १५५, १७)। 'अस्तं गिरिवरश्रेष्ठम्', (३. १६२, ३२)। 'अस्तं पर्वतराजानम्', (३. १६३, १०)। 'अस्तं प्राप्य', (३. १६३, ३०; २९६, १७; ३१३, ४५. ४६; ४. ५५, ३४; ५. १७९, ३९; १८१, १६; १८२, २९)। 'अस्तं गिरिश्रेष्ठं', (६. ५५, ४०)। 'अस्तं गच्छति', (६. ५५, ४३)। 'अस्तं गिरिम्', (६. ८६, ४२)। 'सूर्यास्तमनवेलायां', (६. ९४, ५०)। 'दिवाकरेऽस्तं गिरिम्', ७. ३२, ८०)। 'अस्तमुपेत्य पर्वतम्', (७. ५०, ३)। 'अप्राप्तेऽस्तं दिनकरे', (७. ७९, २६)। 'अस्तं शिखरं', (७. ९९. १)। 'अस्तं', (७. १३४, ३१; १४५, ४. ६; १४६, ६८)। 'अस्तं महीधरश्रेष्ठं', ७. १४६, १०५)। 'अस्तं गच्छति', (७. १४६, १४०)। 'सहस्रांशुरस्तं गिरिमुपाद्रवत्', (७. १४८, २४)। 'अस्तं', (७. १५३, १०; २००, ४; ८. १८, १९; ३०, ३७; ९०, ३८. ७७; ९१, ६०; ९. २९, ८७)। 'अस्तं पर्वतश्रेष्ठं', (१०. १, २४; १२. २५, १२)। 'अस्तमिते भीष्मे', (१२. ४६, २३)। 'उपैति सविता ह्यस्तं', (१२. ५८, २८)। 'अस्तमेवाभ्यवर्तत', (१२. ३१८, १२)। 'आदित्यो ह्यस्तमभ्येति', (१२. ३३१, ७)। 'अस्तं गच्छन्ति रात्रयः', (१२. ३३१, ८)। 'गिरिवरमस्तमभ्यगमद्रविः', (१५. ३१, २५)।

अस्ति, मगध नरेश जरासन्ध की पुत्री का नाम है जो सहदेव की बहन तथा कंस की पत्नी थी (२. १४, ३१)।

अस्त्रदर्शन—"जब द्रोणाचार्य ने देखा कि धृतराष्ट्र और पाण्डव अस्त्रविद्या की शिक्षा समाप्त कर चुके हैं तब उन्होंने कृपाचार्य सोमदत्त, बाह्लीक, भीष्म, व्यास, तथा विदुर की उपस्थिति में राजा धृतराष्ट्र से कहा : 'आपके कुमार अस्त्र-विद्या की शिक्षा समाप्त कर चुके हैं, अतः यदि आपकी अनुमति हो तो वे अपने सीखे हुये अस्त्र-कौशल का प्रदर्शन करें।' धृतराष्ट्र ने इसकी सहर्ष आज्ञा प्रदान की। तब विदुर ने द्रोणाचार्य से रङ्गमण्डप की भूमि को पसन्द कराके उसका नाप कराया, और कुन्ती, गान्धारी इत्यादि, तथा प्रजाजन राजकुमारों के अस्त्र-कौशल को देखने के लिये वहाँ उपस्थित हुये। उस समय द्रोणाचार्य और अश्वत्थामा ने रङ्गभूमि में इस प्रकार प्रवेश किया मानो मेघरहित आकाश में चन्द्रमा ने मंगल के साथ पदार्पण किया हो। धनुष-बाण लिये हुये राजकुमारों के उस समुदाय को गन्धर्व नगर के समान अद्भुत देखकर समस्त दर्शक चकित हो गये। विदुर धृतराष्ट्र को, और कुन्ती गान्धारी को उन राजकुमारों की सारी चेष्टायें बताती जाती थीं (१. १३४)।" "जब दुर्योधन और भीमसेन रङ्गभूमि में गदायुद्ध का प्रदर्शन करने लगे, उस समय दर्शक-जनता उनके प्रति पक्षपातपूर्ण स्नेह करने के कारण प्रायः दो दलों में विभक्त हो गई। इससे समस्त रङ्गभूमि में क्षुब्ध महासागर के समान हलचल मच गई, जिसे देखकर द्रोणाचार्य ने अपने पुत्र अश्वत्थामा से भीम और दुर्योधन को पृथक् करने के लिये कहा। तदुपरान्त अर्जुन ने अद्भुत अस्त्रकौशल दिखाया। अस्त्र-कौशल का अधिकांश कार्य जब समाप्त हो गया तब पाँचों पाण्डवों से घिरे हुये आचार्य द्रोण पाँच तारों वाले हस्त नक्षत्र से संयुक्त चन्द्रमा की भाँति सुशोभित होने लगे। उस समय दुर्योधन भी उठकर खड़ा हो गया, और अश्वत्थामा सहित उसके सौ भ्राताओं ने आकर उसे चारों ओर से घेर लिया। हाथ में आयुध उठाये खड़े हुये अपने भ्राताओं से घिरा हुआ गदाधारी दुर्योधन पूर्वकाल में दानव-संहार के समय देवताओं से घिरे देवराज इन्द्र के समान शोभा पाने लगा (१. १३५)।" "उसी समय कर्ण ने रङ्गमण्डप में प्रवेश करके अर्जुन को प्रतिस्पर्धा के लिये ललकारा। धृतराष्ट्रों ने कर्ण का पक्ष लिया जब कि द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, और भीष्म अर्जुन के पक्ष में रहे। रङ्गभूमि के पुरुषों और स्त्रियों में भी कर्ण और अर्जुन को लेकर दो दल हो गये। कुन्ती को अत्यन्त चिन्ता के कारण मूर्च्छा आ गई, और विदुर ने दासियों द्वारा चन्दन-मिश्रित जल छिड़कवाकर कुन्ती की मूर्च्छा दूर की। कृपाचार्य ने कर्ण को प्रतिस्पर्धा करने की अनुमति नहीं दी, किन्तु दुर्योधन ने उसी समय कर्ण को अङ्गदेश के राजा के रूप में अभिषिक्त कर दिया (१. १३६)।" "सूर्यास्त होने पर दुर्योधन कर्ण को रङ्गभूमि से बाहर ले गया, और पाण्डवगण भी द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, तथा भीष्म के साथ अपने-अपने घरों को लौट गये (१. १३७)।"

अस्नेहन = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अहंकार : १२. ३११, ७. १० (परमेष्ठी); १२. ३१२, १२ (भूतात्मा प्रजापतिः); १२. ३४०, ३१, इत्यादि; १३. १५३, १८ (=ब्रह्मन्)।

अहंयाति, पुरुवंशी राजा संयाति तथा रानी वराङ्गी के पुत्र का नाम है। इनके द्वारा भानुमती के गर्भ से सार्वभौम नामक पुत्र की उत्पत्ति हुई (१. ९४, १४–१५)।

अहः = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अहन्, एक तीर्थ का नाम है जिसमें स्नान करने से सूर्य लोक की प्राप्ति होती है (३. ८३, १००)।

१. अहस् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

२. अहस् = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

अहर् (दिन)। अष्टवसुओं में से एक का नाम है (१. ६६, १८)। इनकी माता का नाम रता था (१. ६६, २०)। इनके चार पुत्र हुये—ज्योति, शम, शान्त तथा मुनि (१. ६६, २३)। स्कन्द के अभिषेक के समय इनकी उपस्थिति का उल्लेख (९. ४५, १५)।

अहल्या, गौतम ऋषि की पत्नी का नाम है। देवेश्वर नहुष ने इन्द्र के विषय में देवताओं से इस प्रकार कहा : "देवताओ! जब इन्द्र ने पूर्वकाल में यशस्विनी ऋषि-पत्नी अहल्या का उसके पति गौतम के जीते-जी सतीत्व नष्ट किया था, उस समय आप लोगों ने उन्हें क्यों नहीं रोका (५. १२, ६)।" अहल्या पर बलात्कार करने के कारण गौतम के शाप से इन्द्र को हरिश्मश्रु (हरी दाढ़ी-मूछों से युक्त) होना पड़ा (१२. ३४२, २३)। इनका उत्तङ्क से गुरुदक्षिणा के रूप में सौदास की रानी मदयन्ती के कुण्डल लाने के लिये कहना (१४. ५६, २७. २९)। गौतम ने इनसे कहा कि नरभक्षी राक्षसभाव को प्राप्त हुये सौदास के पास उत्तङ्क को भेजकर उसने उचित नहीं किया। इस पर उत्तर देते हुये इन्होंने कहा : 'भगवन्! मैं इस बात को नहीं जानती थी, इसलिये उत्तङ्क को ऐसा काम सौंप दिया। मुझे विश्वास है कि आपकी कृपा से उसे वहाँ कोई भय प्राप्त नहीं होगा (१४. ५६, ३४)।' उत्तङ्क का कुण्डल लेकर इनके पास लौटना (१४. ५८, १७)।

अहल्याह्रद, महर्षि गौतम के तपोवन में स्थित एक तीर्थ का नाम है जिसमें स्नान करने से परमगति प्राप्त होती है (३. ८४, १०९)।

अहश्चर = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

अहिच्छत्र, एक देश का नाम है जिसे कर्ण ने विजित किया था (३. २५४, ९)।

अहिच्छत्र, उन सम्पन्न सुविस्तृत प्रदेशों में इसकी भी गणना है जो कौरवों की सेनाओं से घिर गये थे (५. १९, ३०)।

अहिच्छत्रा, एक राज्य का नाम है जिसे अर्जुन ने द्रुपद को विजित करके द्रोणाचार्य को दिया था (१. १३८. ७७)।

अहिर्बुध्न्य, स्थाणु के पुत्र ग्यारह रुद्रों में से एक का नाम है (१. ६६, २)। अर्जुन के जन्मोत्सव पर ग्यारह रुद्रों के साथ इनके आगमन का उल्लेख (१. १२३, ६८)। गरुड़ ने गालव से कहा : "द्विजश्रेष्ठ ! पूर्वाभाद्रपद और उत्तराभाद्रपद इन दो नक्षत्रों में से किसी एक के साथ शुक्रवार का योग हो तो अग्निदेव कुबेर के लिये अपने संकल्प से धन का निर्माण करके उसे मनुष्यों को दे देते हैं। पूर्वाभाद्रपद के देवता अजैकपाद, उत्तराभाद्रपद के देवता अहिर्बुध्न्य और कुबेर हैं और ये तीनों उस धन की रक्षा करते हैं (५. ११४, ३-४)।" ग्यारह रुद्रों में इनकी गणना (१२. २०८, १९; १३. १५०, १२)। = शिव (१३. १७, १०३ = सहस्र नामों में से एक)।

अहोरात्र = शिव : १२. २८४, १६४; १३. १७, १११ (सहस्र नामों में से एक)।

अहोवीर्य, वानप्रस्थ धर्म का पालन करने वाले ब्राह्मणों में से एक यह भी थे (१२. २४४, १७)।

आ

आकर्ष, युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में पधारने वाले राजाओं में से एक का नाम है (२. ३४, ११)।

आकाश : ३. २९१, २४, इत्यादि।

आकाश-गङ्गा : १.२, ३७१। "लोमश ने तीर्थदर्शी पाण्डवों को बताया कि 'मदराचल पर्वत के समीप देवताओं और ऋषियों का आवास है; बदरिकाश्रम से गंगा प्रवाहित होती हैं जो देवर्षियों के समुदाय से सेवित हैं; आकाशचारी महात्मा वालखिल्य, गन्धर्वगण, तथा सामगान करनेवाले विद्वान् इनकी पूजा करते हैं; मरीचि, पुलह, भृगु तथा अङ्गिरस् भी इनके पावन तट पर प्रतिदिन जप एवं स्वाध्याय करते हैं; साध्य, अश्विनीकुमार, चन्द्रमा, सूर्य, ग्रह, और नक्षत्र दिन-रात के विभाग पूर्वक इस पुण्यनदी की यात्रा करते हैं; गंगाद्वार में भगवान् शंकर ने इनके पावन जल को जनता की रक्षा के लिये अपने मस्तक पर धारण किया है।' लोमश के इस कथन को सुनकर समस्त पाण्डवों ने संयतचित्त होकर आकाश-गङ्गा को प्रणाम किया और पुनः सम्पूर्ण ऋषि-मुनियों के साथ हर्षपूर्वक आगे बढ़े (३. १४२, २-११; १२. ३२८, ४६; ३४२, ५४; १८. ३, २८)।"

आकाशजननी—परकोटे में बने हुये छोटे-छोटे छिद्र, जिसके रास्ते तोपों से गोलियाँ छोड़ी जाती हैं (१२. ६९, ४३)।

आकृति, मय द्वारा निर्मित सभाभवन में धर्मराज युधिष्ठिर के प्रवेश के समय उनकी सभा में उपस्थित एक राजा का नाम है (२. ४, ३१)। भोजवंशी राजा भीष्मक, जो जमदग्नि-पुत्र परशुराम के समान शौर्यसम्पन्न और जरासन्ध के अधीनस्थ हैं (२. १४, २२)। (सुराष्ट्र देश के अधिपति) इनको सहदेव ने अपने आधीन कर लिया था (२. ३१, ६१)।

आकृतीपुत्र–'आकृती' नामवाली माता का पुत्र, जिसका नाम रुचिपर्वा है। यह पाण्डवपक्षीय योद्धा था जिसका भगदत्त ने वध किया (७. २६, ५०–५२)।

आक्रोश, महोत्थ देश के एक राजा का नाम है जिसे नकुल ने विजित किया था (२. ३२, ६)।

आखण्डल = इन्द्र : 'आखण्डलधनुः प्रख्यमुल्लिखन्तमिवाम्बरम्। पश्य कर्णं समायान्तं धृतराष्ट्रप्रियैषिणम्', (८. ८६, ६)। 'इराम्बुपाखण्डलवित्तगोप्तृभिः', (८. ९०, ३५)। 'दिवमाखण्डलो यथा', (१२. ३३६, ४)। = महापुरुष (१२. ३३८, ४ पर १२३ वाँ नाम)।

१. आगस्त्य—अगस्तवंशी ब्राह्मण जो द्वैतवन में युधिष्ठिर के आश्रम में निवास करते थे (३. २६, ८)।

२. आगस्त्य = अगस्त्योपाख्यान (१. २, १६७)

३. आगस्त्य-सरस्, एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, ४४)।

आग्निवेश्य, धौम्य ऋषि का नाम है जिन्हें पाण्डवों ने अपना पुरोहित नियुक्त किया था (१४. ६४, ८)।

१. आग्नेय : 'आग्नेयं कीर्त्यते यत्र रुद्रमाहात्म्यमुत्तमम्', (१. २, २९६)। 'इत्येवं मन्त्रमाग्नेयं पठन्यो जुहुयाद्विभुम्। ऋद्धिमान्सततं दान्तः सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥', (२. ३१, ५०)। 'रौद्रमाग्नेयकौबेरं याम्यं गिरिशमेव च। पञ्चानां द्रौपदेयानां धनूरत्नानि भारत ॥', (७. २३, ९४)।

२. आग्नेय, एक अस्त्र का नाम है : 'आग्नेयेनासृजद्वह्निम्', (१. १३५, १९)। गन्धर्वराज चित्ररथ ने अर्जुन से इस अस्त्र को ग्रहण किया (१. १७०, ५७)। अग्निदेव द्वारा श्रीकृष्ण का आग्नेयास्त्र को ग्रहण करना (१. २२५, २४)। अर्जुन ने देवेन्द्र इन्द्र से अन्य दिव्यास्त्रों के साथ-साथ आग्नेयास्त्र को भी ग्रहण किया (३. १६४, १८; ४. ६१, ३१; ६४, २३)। भीष्म का इस अस्त्र के द्वारा परशुराम पर प्रहार (५. १८०, १२)। उन दिव्यास्त्रों के साथ इसका उल्लेख है जिन्हें अर्जुन और श्रीकृष्ण के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं जानता (६. १२१, ४०)। खाण्डववन में अर्जुन के साथ अग्निदेव को संतुष्ट करके श्रीकृष्ण ने इस दुर्धर्ष अस्त्र को प्राप्त किया था (७. ११, २१)। द्रोणाचार्य ने युधिष्ठिर पर वारुण आदि दिव्यास्त्रों के साथ इसका भी प्रयोग किया (७. १५७, ३४)। 'वारुणेयाग्नम्', (७. १९४, २)। अश्वत्थामा द्वारा आग्नेयास्त्र के प्रयोग से पाण्डवों की एक अक्षौहिणी सेना का संहार (७. २०१, १६)। अर्जुन द्वारा कर्ण पर शत्रुनाशक आग्नेयास्त्र का प्रयोग (८. ८९, १७)। पाशुपत अस्त्र आग्नेयास्त्र से भी अधिक शक्तिशाली है (१३. १४, २६१)।

३. आग्नेय, एक नक्षत्र (कृतिका) का नाम है, जिसमें श्राद्ध करने का निषेध किया गया है (१३. १०४, १२७)।

४. आग्नेय : 'आग्नेयं वै लोहितमालभन्तां वैश्वदेवं बहुरूपं हि राजन्। नीलं चोक्षाणां मेध्यमप्यालभन्तां चलच्छिद्रइनं संप्रदिष्टं द्विजाग्र्याः ॥', (१४. १०, ३०)।

५. आग्नेय, स्कन्द की अनुचरी मातृकाओं में से एक का नाम है (९. ४६, ३७)।

६. आग्नेय स्कन्ददेव अग्नि के पुत्र हैं (१. १३७, १३; ३. २३२, ३)।

७. आग्नेय, सुदर्शन का नाम है जो अग्निद्वारा उत्पन्न हुये (१३. २, ३६)।

८. आग्नेय, अङ्गिरस् का नाम है जो आग्नेय नाम से प्रसिद्ध हुये (१३. ८५, १२६)।

९. आग्नेय, एक जाति के लोगों का नाम है जिन्हें कर्ण ने विजित किया था (३. २५४, २०)।

आग्रयण, मनु के चौथे पुत्र एक अग्नि का नाम है (३. २२१, १३)।

आङ्गरिष्ठ, एक प्राचीन नरेश का नाम है। मोहवश पाप हो जाने के कारण उसके प्रायश्चित्त के विषय में कामन्दक मुनि से इनका प्रश्न (१२. १२३, ११. १२)।

१. आङ्गिरस् = बृहस्पति (१. ७६, ६)। सत्यवती द्वारा आङ्गिरस् के समान भीष्म के ज्ञान का उल्लेख (१. १०३, ६)। अग्निदेव ने इन्हें प्रथम पुत्र के रूप में स्वीकार किया (३. २१७, १८)। द्रुपद के पुरोहित बुद्धि में आङ्गिरस् के समान थे (५. ६, ४)। 'सेनापतिः स्यादन्योऽस्माच्छुक्राङ्गिरसदर्शनात्', (७. ५, १८)। इनके मुख से भूमिदान का महात्म्य सुनकर इन्द्र ने धन और रत्नों से भरी हुई यह पृथिवी इनको ही दान में दे दी (१३. ६२, ९३)। जब राजा मरुत्त ने यह सुना कि इन्होंने मनुष्यों का यज्ञ न कराने की प्रतिज्ञा की है तब उन्होंने एक महान् यज्ञ का आयोजन किया (१४. ६, २)। भरद्वाज इत्यादि महर्षि अपने कर्मों द्वारा

समस्त मार्गों में भटकते-भटकते जब बहुत थक गये, तब आङ्गिरस् को आगे करके ब्रह्मलोक गये (१४. ३५, २७)।

२. आङ्गिरस = उतथ्य (१३. १५४, २८)।

३. आङ्गिरस = संवर्त (१४, १०, २१)।

४. आङ्गिरस = कच (१. ८०, ४)।

५. आङ्गिरस = सुधन्वन् (२. ६८, ६५. ६६)।

६. आङ्गिरस = च्यवन (३. २२०, १)।

७. आङ्गिरस = वल (१२. २०८, २७)।

८. आङ्गिरस = बृहस्पति ग्रह (८. १७, १)।

९. आङ्गिरस = अङ्गिरस् के वंशज। अग्नि अथवा अङ्गिरस् के वंशज आङ्गिरस कहलाते हैं (१३. ८५, १३७)।

१०. आङ्गिरस : द्रोणाचार्य का आङ्गिरस नामक दिव्य धनुष द्वारा धृष्टद्युम्न के साथ युद्ध (७. १९१, १२)। अश्वत्थामन् ने शिव से कहा : 'भगवन्! आज मैं आङ्गिरस कुल में उत्पन्न हुये अपने शरीर की प्रज्वलित अग्नि में आहुति देता हूँ। आप मुझे हविष्य रूप में ग्रहण कीजिये', (१०. ७, ५६)। तु० की० ७. आङ्गिरस = वल (१२. २०८, २७)। 'अत्राप्युदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम्। चिरकारेस्तु यत्पूर्वं वृत्तमाङ्गिरसे कुले ॥', (१२. २६६, २)। 'उत्पन्नेऽङगिरसे चैव युगे प्रथमकल्पिते', (१२. ३३५, ५४) तु० की० अङ्गिरसिके काले (१३. ९१, १)। 'भार्गवाङ्गिरसौ लोके लोकसन्तानलक्षणौ', (१३. ८५, १२६)। 'उतथ्यस्य जातस्याङ्गिरसे कुले', (१३. १५४, ९)।

११. आङ्गिरस : 'पतिव्रतायाश्चाख्यान तथैवाङ्गिरसं स्मृतम् (१. २, १९४)।

१२. आङ्गिरस , इन्होंने नीपवंशी राजाओं को पराजित किया था (१३. ३४, १७)।

१. आङ्गिरसी (अङ्गिरस् की एक स्त्री वंशज), एक ब्राह्मण की पतिव्रता पत्नी का नाम है। इसका पति को भक्षण कर लेने वाले राक्षस भावापन्न कल्माषपाद को शाप देना (१. १८२, २२)।

२. आङ्गिरसी (अङ्गिरस् की पुत्री) : 'महामखेष्वाङ्गिरसी दीप्तिमत्सु महामते। महामतीति विख्याता सप्तमी कथ्यते सुता ॥', (३. २१८, ७)।

आङ्गिरसोपाख्यान, देखिये ११. आङ्गिरस।

आङ्घ्रिक, विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ४, ५४)।

आङ्गी एक प्राचीन रानी का नाम है जो अरिह की पत्नी तथा महाभौम की माता थी (१. ९५, १९)।

आङ्गेयी = सुदेवी (१. ९५, २४)।

१. आचार्य = द्रोण : १. १, २०१; २, २५४; १३४, २०; १३६, ६५; ३. २९, ४७; ४८, १०; ४. २८, २; ३०, १६; ४७, २०. २४. २८; ५१, ५. ११. १६; ५२, २२; ५५, ४३. ४६; ५८, १४ ('आचार्यशिष्यौ', अर्थात् द्रोण और अर्जुन); ६६, १३, (आचार्यशारद्वतयोः); ६८, ७१; ५. ५२, ५; १२७, ४; १४४, १४. १५; १६७, १५; १६९, २४; १९३, ५; ६. २५, २. ३; ४३, ५०. ६३. ७३; ४९, ८; ५१, २; ५८, ३९; ६९, १८; ७७, ७५; ८८, ४१; ९२, १८. ३१; ९४, १२; १०२, २; ७. ५, २१; ८, ३३; ९, २८; १२, ५. ७. १५; १३, ७. ९; १७, ४८; २१, ३. २४; ३४, १३; ३६, ४; ३९, १६; ४८, २६. ३१; ७३, १; ७४, २४; ७५, २५; ९१, ७. १५; ९४, २७. ७३; ९८, १८. ४९; १११, २३. ३५; ११९, ३०; १२५, ६. ६९; १२७, ४२. ४४; १३०, २५; १४१, १९. ३६; १५०, १२; १५२, १५. २०; १५४, १; १५९, ८६; १६४, २३; १६९, २३; १७०, १२; १८३, १६; १८८, ४२. ४५; १९१, ८. ४५; १९२, २८. ३०. ५३. ६१. ६६; १९३; ६५; १९४, ३. १५; १९५, १३; १९६, १०. ३८. ४३; १९७, ४३; १९९, ५. ३०; २००, ६३; ८. २६, ८; ७३, ५९; ९. ६१, ३२; १०. ९, ४३; १२, ५. ७; १२. २७, १३।

२. आचार्य = कृप : ७. १४७, २४; ९. ११, ४३ (गौतम); ६५, ३९।

३. आचार्य = परशुराम : ११. २१, ११।

आचार्यतनय = अश्वत्थामा : ७. २०१, १३; ८. १०, १८।

आचार्यनन्दन = अश्वत्थामा : ७. २०१, १६

आचार्यपुत्र = अश्वत्थामा : १. १३२, १९; १४३, १३; ४. ५१, ५. ११; ५८, ७२; ६८, ७२; ६. १७, ३९; ७. ३१, २७; १६०, २६; १९६, ४१; २००, ३०; २०१, ८; ८. १०, १२; १६, २३; २०, ३२; ६७, ५; १०. ८, २०; १४, ५।

आचार्यमुख्य = द्रोण : ७. १९१, २६. ४६

१. आचार्यसत्तम = कृप : १. १३४, १३

२. आचार्यसत्तम = अश्वत्थामा : ८. २०, २१ (द्रौणिः)।

आचार्यसुत = अश्वत्थामा : ७. १६०, २८; ८. १६, ४९; ९. ११, ४५।

आचार्यौ = द्रोण और कृप : ४. ४७, २।

१. आजगर = आजगरपर्वन् : ?. २, ५३

२. आजगर , अजगरवृत्ति से रहनेवाले एक मुनि जिनके साथ प्रह्लाद का संवाद हुआ था (१२. १७९, २. २५. २८-३४)। तु० की० 'अजगरचरितम् व्रतम्', (१२. १७९, ३७)।

आजगरपर्वन् , महाभारत के चालीसवें अवान्तर पर्व का नाम है। "अर्जुन के साथ पाण्डवों ने कुबेर के उपवनों में चार वर्ष व्यतीत किये। इस अवधि के पूर्व वे वनों में ६ वर्ष पहले ही व्यतीत कर चुके थे, जिसे जोड़कर अब तक की उनके वनवास की अवधि दस वर्ष हो गई। ग्यारहवें वर्ष के आरम्भ होने पर भीम के परामर्श से युधिष्ठिर ने कुबेर के निवासस्थान उस गन्धमादन पर्वत की प्रदक्षिणा की, और फिर वहाँ के भवनों, नदियों, सरोवरों, तथा समस्त राक्षसों से विदा लेकर, जिस मार्ग से आये थे उसकी ओर देखने लगे। युधिष्ठिर ने गन्धमादन पर्वत से इस प्रकार प्रार्थना की : 'मैं शत्रुओं को जीतकर अपना खोया हुआ राज्य पाने के बाद सुहृदों के साथ अपना समस्त कार्य सम्पन्न करके पुनः तपस्या के लिये लौटने पर आपका दर्शन करूँगा।' तत्पश्चात समस्त भ्राताओं और ब्राह्मणों से घिरे हुये युधिष्ठिर उसी मार्ग से नीचे उतरने लगे। जहाँ दुर्गम पर्वत और निर्झर पड़ते थे, वहाँ घटोत्कच अपने गणों सहित आकर पहले की ही भाँति उन सबको अपनी-अपनी पीठों पर बैठाकर पार कर देता था। महर्षि लोमश ने जब पाण्डवों को वहाँ से प्रस्थान करते देखा तब जिस प्रकार दयालु पिता अपने पुत्रों को उपदेश देता है, वैसे ही उन्होंने प्रसन्नचित्त होकर सबको उत्तम उपदेश दिया। तदुपरान्त मन ही मन प्रसन्नता का अनुभव करते हुये महर्षि लोमश देवताओं के परम पवित्र स्थान को चले गये। इसी प्रकार राजर्षि आर्ष्टिषेण ने भी उन सबको उपदेश दिया। तत्पश्चात् पवित्र तीर्थों, मनोहर तपोवनों तथा अन्य बड़े-बड़े सरोवरों का दर्शन करते हुये पाण्डव-गण आगे बढ़े (३. १७६)।" "कैलास पर्वत को पार करने के पश्चात् पाण्डवों ने वृषपर्वन् के आश्रम में एक रात्रि व्यतीत की। तदुपरान्त वे विशालापुरी के बदरिकाश्रम में आकर कुछ दिन रहे; फिर नर-नारायण के क्षेत्र में आकर उन लोगों ने कुबेर की उस प्रिय पुष्करिणी का दर्शन किया, जिसका सेवन देवता और सिद्ध पुरुष करते हैं। एक मास तक वहाँ विहार करने के पश्चात् कुलिन्द के तुषार, दरद आदि सम्पन्न देशों को पार करते हुये हिमालय के दुर्गम स्थानों के आगे वे किरातराज सुबाहु के देश में पहुँचे, जहाँ वे विशोकादि अपने सारथियों, इन्द्रसेन आदि परिचारकों, अग्रगामी सेवकों, तथा रसोइयों से भी मिले। वहाँ एक रात्रि व्यतीत करने के पश्चात् अनुचरों सहित घटोत्कच को विदा करके पाण्डवों ने उस पर्वत की ओर प्रस्थान किया जो यमुना का उद्गम-स्थान था। उस पर्वत के ऊपर विशाखयूप नामक वन में पहुँचकर उन्होंने एक वर्ष तक निवास किया। वहाँ हिंस्र पशुओं को मारना ही पाण्डवों का कार्य था। वहीं एक दिन पर्वत की कन्दरा में भूख से पीड़ित एक अजगर ने भीमसेन के सम्पूर्ण शरीर को लपेट लिया, किन्तु युधिष्ठिर ने उस अजगर को उसके प्रश्नों के उत्तर द्वारा सन्तुष्ट करके भीम को छुड़ा

लिया। अब पाण्डवों के वनवास का बारहवाँ वर्ष आ पहुँचा। इस बारहवें वर्ष को भी वन में व्यतीत करने की इच्छा से पाण्डव-गण मरुभूमि के पास सरस्वती के तट पर गये, और वहाँ से निवास करने की इच्छा से द्वैतवन के द्वैतसरोवर के समीप पहुँचे (३. १७७)।" "जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन ने उनसे यह बताया कि वृषपर्वा के आश्रम से आने पर किस प्रकार हिमवत् पर्वत पर आखेट करते हुये भीम को एक विशाल अजगर ने पकड़ लिया था, जिसके पाश से वह अपने को छुड़ा नहीं सके, क्योंकि उस अजगर को एक वर प्राप्त था (३. १७८)।" "वैशम्पायन ने बताया कि वह अजगर आयु के पुत्र राजर्षि नहुष थे, जिन्हें अगस्त्य ने अजगर बन जाने का शाप दे दिया था। उन्होंने यह भी बताया कि दयावश अगस्त्य ने उस अजगर रूपी नहुष को यह वरदान भी दिया कि जो व्यक्ति उसके (अजगर के) प्रश्नों का उत्तर देगा, वही उसे अजगर-योनि से मुक्त भी करेगा, और यह भी कि वह अजगर जिसे पकड़ लेगा वह व्यक्ति चाहे कितना भी बलवान हो उसकी शक्ति समाप्त हो जायगी। जब भीमसेन उस अजगर के पाश में आबद्ध थे तब उसने बताया कि दिन के छठवें भाग में कोई भैंसा अथवा हाथी ही क्यों न हो, उसकी पकड़ में आ जाने पर किसी भी प्रकार बच नहीं सकता। उसने यह भी बताया कि उसे अपनी पूर्व स्थिति का पूरा स्मरण है। उसके पाश में आबद्ध भीम अनेक प्रकार से विलाप करने लगे। उस समय युधिष्ठिर अनिष्टसूचक भयंकर उत्पातों को देखकर अत्यन्त व्याकुल हो उठे, और द्रौपदी से भीमसेन के सम्बन्ध में पूछा। द्रौपदी के यह बताने पर कि भीमसेन बहुत देर से लौटे नहीं, युधिष्ठिर महर्षि धौम्य को साथ लेकर उनकी खोज में निकल पड़े। जाते समय उन्होंने अर्जुन को द्रौपदी की, और नकुल तथा सहदेव को ब्राह्मणों की रक्षा करने की आज्ञा दी। तदनन्तर उस महान वन में भीमसेन के पद-चिह्नों का अनुसरण करते हुये युधिष्ठिर पर्वत की उस कन्दरा में पहुँचे जहाँ भीमसेन अजगर के पाश में आबद्ध होकर चेष्टा-शून्य हो गये थे (३. १७९)।" "यद्यपि उस अजगर ने युधिष्ठिर को अपना परिचय देते हुये भीम के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार के आहार को अस्वीकृत कर दिया तथापि उसने अपने प्रश्नों का संतोषजनक उत्तर प्राप्त होने की दशा में भीम को मुक्त कर देने का भी वचन दिया। तदुपरान्त अजगर ने प्रश्न करने आरम्भ किये और युधिष्ठिर ने उन सबका संतोषजनक उत्तर दिया। अन्त में अजगर ने युधिष्ठिर से कहा, 'तुम जानने योग्य समस्त बातों के विज्ञ हो। मैंने तुम्हारी बातें अच्छी तरह सुन लीं, अतः अब मैं तुम्हारे भ्राता भीमसेन का कैसे भक्षण कर सकता हूँ ?' (३. १८०)।" "तदुपरान्त युधिष्ठिर ने उस सर्प से मोक्ष प्राप्ति, नीति तथा दर्शन, मन और बुद्धि के अन्तर इत्यादि के सम्बन्ध में कुछ प्रश्न, और नहुष के पतन का कारण भी पूछा। उस अजगर रूपी नहुष ने बताया कि पूर्वकाल में अभिमान से उन्मत्त होकर वह किसी को कुछ नहीं समझता था। उस समय ब्रह्मर्षि, देवता, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, और नाग आदि उसे कर देते थे। उसने बताया कि उन दिनों वह जिस प्राणी की ओर आँख उठाकर देखता था, उसके तेज का तत्काल हरण कर लेता था। उसी समय अगस्त्य जब उसकी पालकी को अपने कन्धे पर लेकर चल रहे थे तभी उसके लात मारने के कारण उन्होंने (अगस्त्य ने) उसे शाप दे दिया, जिससे वह अजगर होकर पृथिवी पर गिर पड़ा। भूमि पर गिरते देखकर उन्हीं महर्षि ने दया से द्रवित होकर यह बताया कि युधिष्ठिर उसे इस पाप से मुक्त करेंगे। तदनन्तर उस सर्प ने भीम को मुक्त कर दिया और दिव्य शरीर धारण करके पुनः स्वर्गलोक को चला गया। तदुपरान्त धौम्य और भीम के साथ लौटकर युधिष्ठिर ने आश्रम पर एकत्र ब्राह्मणों को समस्त वृत्तान्त सुनाया। उस समय पाण्डवों के हित की इच्छा से उन श्रेष्ठ ब्राह्मणों ने भीमसेन के दुःसाहस की निन्दा करते हुये इनसे कहा, 'अब कभी ऐसा मत करना।' (३. १८१)।"

१. आजगव महाराज पृथु वैन्य के धनुष का नाम है (७. ६९, १३)।

२. आजगव, अर्जुन के धनुष का नाम है (७. १४५, ९४)।

३. आजगव महाराज मान्धातृ के धनुष का नाम है (३. १२६, ३४)।

१. आजमीढ़=अजमीढ़ : १. ७५, १

२. आजमीढ़=युधिष्ठिर : १. ५५, ५; १९१, २०; २. ४५, ४१; ३. ११३, २४; ११४, २५; १३४, ४१; १३५, ६; ५. २, १०; २२, ६; ६. ८५, १; ८. ६५, ३; १०. १०, २९; १३. १८, ७६; ७७, ३४।

३. आजमीढ़ = नकुल : ५. ५६, १६

४. आजमीढ़ = धृतराष्ट्र : २. ७५, ६; ५. ३६, ७३; ६७, ६; ७. १४०, २२. २४; ८. ८३, १२।

५. आजमीढ़ = विदुर : ३. ५, १०

६. आजमीढ़ (द्वौ) = दुर्योधन और अर्जुन : ४. ६५, ५

७. आजमीढ़ = संवरण : १. ९४, ४८।

८. आजमीढ़ : 'आजमीढाजमीढानाम्', (२. ४५, ४१)। 'आजमीढकुलं प्राप्ता स्नुषा पाण्डोर्महात्मनः। गृहिणी पाण्डुपुत्राणां पद्मेन्द्रसमवर्चसाम् ॥', (५. ८२, २२; ९०, ९१)।

आजानेय—घोड़ों की एक उत्तम जाति (३. २७०, १०)।

आज्यपाः (घृत पान करनेवाले) : १२. २८४, ८; १३. १८, ७५।

आञ्जनककुल, गजराजों की सेना का नाम है (७. ११२, १७–१८)।

आटवीपुरी, एक प्राचीन नगर का नाम है जिसे सहदेव ने जीता था (२. ३१, ७२)।

आडम्बर, धाता द्वारा स्कन्द को दिये गये पाँच पार्षदों में से एक का नाम है (९. ४५, ३९)।

आतक, कौरवकुल के उन नागों में से एक का नाम है, जो यज्ञाग्नि में जल मरे थे (१. ५७, १३)।

आतिथिन् : 'सुगोत्रं चैवातिथिनं मृतं सृञ्जय शुश्रुम', (१२. २९, २५)। 'अस्मयदथोऽतिथिः', (१२. २९, २८)।

१. आत्मन् : ९. ४१, ३५

२. आत्मन् = शिव (सहस्र नामों में से एक); कृष्ण (१४. ५२, १४)।

आत्मनिरालोक = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

१. आत्मयोनि = कृष्ण : १२. ४७, ३६ ; १३. १५८, ३९. ४२।

२. आत्मयोनि = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

आत्मवत् = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

आत्मसंभव = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

आत्मस्थ = कृष्ण : १२. ४७, ५३

१. आत्रेय (अत्रि के वंशज) : एक प्राचीन ऋषि, जो जनमेजय के सर्पसत्र के सदस्य थे (१. ५३, ८)। दल्भपुत्र-बक ने युधिष्ठिर से कहा कि 'आपके द्वारा सुरक्षित होकर वासिष्ठ, आत्रेय आदि श्रेष्ठ व्रत का पालन करने वाले ब्राह्मण इस पुण्यशील द्वैतवन में आकर आपसे मिले हैं (३. २६, ८)।' तीर्थयात्रा के लिये युधिष्ठिर की प्रतीक्षा करनेवाले महर्षियों में से एक यह भी थे (३. ८५, ११९)। ये महर्षि वामदेव के शिष्य थे (३. १९२, ४३)। 'आत्रेयस्य च संवादं साध्यानां चेति नः श्रुतम् ।', (५. ३६, १)। शरशय्या पर पड़े भीष्म को घेर कर खड़े होनेवाले महर्षियों में इनका उल्लेख है (१२. ४७, ७)। उत्तरदिशा में निवास करनेवाले सात ऋषियों में से एक (१२. २०८, ३२)। अत्रिवंशज बुद्धिमान् राजा इन्द्रदमन ने एक योग्य ब्राह्मण को नाना प्रकार के धन का दान करके अक्षय लोक प्राप्त किये थे (१२. २३४, १८)। अत्रिवंश में उत्पन्न महातेजस्वी सांकृती अपने शिष्यों को निर्गुण ब्रह्म का उपदेश देकर उत्तम लोकों को प्राप्त हुये थे (१२. २३४, २२)। दान और तपस्या से स्वर्लोक जानेवाले पवित्र राजाओं में इनका भी उल्लेख है (१३. १३७, ३)। बलराम ने तीनों लोकों की रक्षा तथा दुर्वासा (आत्रेय) के वचन का पालन करने के लिये अपने परमधाम पधारने का उपयुक्त समय प्राप्त हुआ समझकर अपनी सम्पूर्ण इन्द्रिय-वृत्तियों का निरोध किया (१६. ४, २०)।

२. आत्रेय—पूर्व तथा उत्तर की जातियों में इसका उल्लेख (६.९,६८)।

१. आत्रेयी—वरुण की सभा में स्थित उन नदियों में से एक, जो वरुण की उपासना करती हैं (२. ९, २२)।

२. आत्रेयी (ऋतुमती स्त्री)—जो मनुष्य जान-बूझकर आत्रेयी (गर्भिणी स्त्री) की हत्या करता है, उसे उस गर्भिणी-वध के कारण दो ब्रह्म-हत्याओं का पाप लगता है (१२. १६५, ५५)।

आथर्वण : ५. ३७, ५८। स्वप्न में श्रीकृष्ण सहित शिवजी के पास जाते हुये अर्जुन इनके स्थान पर गये थे (७. ८०, ३२)। 'आथर्वणेन मन्त्रेण यथा शान्तिः कृता मया', (८. ४०, ३३)। 'आथर्वणा द्विजाः', (८. ९०, ४)।

आदान, पृथिवी का एक नाम है (१३. ६२, १२)।
आदि = शिव (सहस्र नामों में से एक)।
आदिकर = विष्णु : १२. ३४७, ६२।
आदितेय, देव (अदिति के पुत्र) : १२. २०९, ११।

१. आदित्य (बहु०), अदिति और कश्यप से उत्पन्न देवों के एक वर्ग का नाम है। 'कृत्वा द्वादशधात्मानं द्वादशादित्यतां गतः; (३. ३, ५९)। इनकी संख्या बारह बताई गई है जिनके नाम ये हैं : १. धातृ, २. मित्र, ३. अर्यमन्, ४. शक्र, ५. वरुण, ६. अंश, ७. भग, ८. विवस्वत्, ९. पूषन्, १०. सवितृ, ११. त्वष्टृ, और १२. विष्णु (१. ६५, १४–१६)। अन्यत्र बारह आदित्यों की गणना कराते हुये इस तालिका के कुछ नामों को छोड़ने और कुछ नये नामों को संयुक्त करते हुये बारह के स्थान पर तेरह आदित्यों का इस प्रकार उल्लेख है : १. धातृ, २. अर्यमन्, ३. मित्र, ४. वरुण, ५. अंश, ६. भग, ७. इन्द्र, ८. विवस्वान्, ९. पूषन्, १०. त्वष्टृ, ११. सवितृ, १२. पर्जन्य, तथा १३. विष्णु (१. १२३, ६६–६७ : यहाँ यद्यपि तेरह नामों की गणना कराई गई है तथापि यह कहा गया है कि आदित्यों की संख्या बारह ही है। ऐसा प्रतीत होता है कि यहाँ बारह मासों के लिये बारह आदित्य और तेरहवें अथवा मलमास के लिये विष्णु की गणना कराई गई है)। आदित्यों की अन्यत्र इस प्रकार की विविध गणनायें मिलती हैं : १. भग, २. अंश, ३. अर्यमन्, ४. मित्र, ५. वरुण, ६. सवितृ, ७. धातृ, ८, विवस्वान्, ९. त्वष्टृ, १०. पूषन्, ११. इन्द्र, १२. विष्णु (१२. २०८, १५–१६); १. अंश, २. भग, ३. मित्र, ४. वरुण, ५. धातृ, ६. अर्यमन्, ७. जयन्त, ८. भास्कर, ९. त्वष्टृ, १०. पूषन्, ११ इन्द्र, १२. विष्णु (१३. १५०, १४–१५)। इनमें से सबसे महत्वपूर्ण, किन्तु कनिष्ठतम विष्णु हैं (१. ६५, १४)। इनमें से इन्द्र को प्रमुख कहा गया है (१. ६६, ३६)। 'आदित्यश्चैव यः पुत्रो ज्येष्ठः श्रेष्ठः कृतः स्मृतः', (५.९८, १३)। भिन्न-भिन्न आदित्यों के वर्ष के प्रत्येक मास में सूर्य के रथ के अधिष्ठाता होने का विष्णु पुराण में उल्लेख है, जहाँ आदित्यों के नाम इस प्रकार हैं : १. धातृ, २. अर्यमन्, ३. मित्र, ४. वरुण, ५. इन्द्र, ६. विवस्वान्, ७. पूषन्, ८. पर्जन्य, ९. अंश, १०. भग, ११. त्वष्टृ, और १२. विष्णु (विष्णु० पु० २. १०, २–१८)। यद्यपि छः, सात, अथवा आठ आदित्यों की प्राचीन धारणा का महाभारत में कोई संकेत नहीं मिलता तथापि एक स्थल (१२. ४३, ६) पर इसका कुछ आभास देखा जा सकता है। अग्नि की जो लपटें होती हैं वे ही एकादश रुद्र तथा अत्यन्त तेजस्वी द्वादश आदित्य हैं (१३. ८५, १४४)। अनेक स्थलों पर आदित्यों का अन्य देवगणों इत्यादि के साथ उल्लेख है, जैसे : विश्वेदेव, वसु-गण, तथा अश्विनी कुमारों के साथ इनका उल्लेख (१. १, ३४); वसुओं, रुद्रों, साध्यों, मरुद्गणों, तथा अन्य देवताओं के साथ इनका उल्लेख (१. ३०, ३३–३४)। गरुड़ से पराजित होकर आदित्यगण पश्चिम दिशा की ओर भागे तथा अश्विनी कुमारों ने उत्तर दिशा का आश्रय लिया (१. ३२, १७)। अदिति के पुत्रों (देवताओं) द्वारा दैत्यगण अनेक बार युद्ध में पराजित हो चुके थे (१. ६४, २८)। 'अदित्यां द्वादशादित्या :…सर्वेषामादित्यानां गुणाधिकः', (१. ६५, १४–१६)। विनतानन्दन गरुड़, बलवान अरुण, तथा भगवान बृहस्पति की गणना भी आदित्यों में ही की गई है (१. ६६, ३९)। 'मारीचः कश्यपस्त्वस्यामादित्यान्समजीजनत्', (१. ७१, १०)। 'आदित्या द्वादश स्मृताः', (१. १२३, ६७)। रुद्र और आदित्यगण कृष्णा के स्वयंवर के समय उपस्थित थे (१. १८७, ६; १९७, ४०)। द्रौपदी ने अपने पाँच वीर महारथी पुत्रों को उसी प्रकार जन्म दिया जैसे अदिति ने बारह आदित्यों को (१. २२१, ८०)। आदित्यों के वरुण के भवन में उपस्थित होने का वर्णन (२. ९, ७)। ब्रह्मा के भवन में उपस्थित होने का वर्णन (२. ११, ३०. ४४)। रुद्र, साध्य, आदित्य, वसु तथा अश्विनीकुमार योग-जनित ऐश्वर्य से युक्त होकर प्रजाजनों का धारण-पोषण करते हैं (३. २, ८१)। अर्जुन की शान्ति के लिये द्रौपदी ने वसु, रुद्र, आदित्य, मरुद्गण, विश्वेदेव, तथा साध्य आदि देवताओं की शरण ली (३. ३७, ३४)। अर्जुन ने इन्द्रलोक में अन्य देवगणों के साथ आदित्यों को भी विराजमान देखा (३. ४३, १३)। काम-पीड़ित उर्वशी ने अर्जुन से बताया कि उनके शुभागमन के उपलक्ष में स्वर्गलोक में एक महान् उत्सव मनाया गया था, जिसमें रुद्र, आदित्य, अश्विनीकुमार, तथा वसुगण भी उपस्थित थे (३. ४६, २४)। राजा नल ने कहा कि आदित्य, वसु, रुद्र इत्यादि दमयन्ती की रक्षा करें (३. ६२, २४)। जनमेजय ने कहा कि आदित्यों में जैसे विष्णु हैं वैसे ही पाण्डवों में अर्जुन (३. ८०, २)। 'आदित्या वसवो रुद्राः साध्याश्च समरुद्गणाः', (३. ८२, २२)। 'आदित्या वसवो रुद्रा जनार्दनमुपासते', (३. ८४, १२४)। 'एतानि वसुभिः साध्यैरादित्यैर्मरुदश्विभिः', (३. ८५, १०५; ९०, ३३)। 'आदित्यान्सवसून्रुद्रान्साध्यांश्च समरुद्गणान्', (३. ९९, ५७)। 'वैवस्वतादित्यधनेश्वराणामिन्द्रस्य विष्णोः सवितुर्विभोश्च', (३. ११८, ११)। 'द्वादशादित्यान्कथयन्तीह धीराः', (३. १३४, १९)। अर्जुन ने आदित्यों को इन्द्रलोक में देखा (३. १६८, ५३)। मार्कण्डेय ने आदित्यों को विष्णु की कुक्षि में देखा (३. १८८, ११९)। कर्ण को एक पिटारी में रखकर नदी में बहाते हुये कुन्ती ने आदित्यों, वसुओं, रुद्रों, साध्यों, विश्वेदेवों, इन्द्र सहित मरुद्गणों आदि से उसकी रक्षा करने की स्तुति की (३. ३०८, १४)। युधिष्ठिर ने कहा कि वे अर्जुन को तेरहवाँ आदित्य मानते हैं (४. २, २१)। एक समय जब बृहस्पति और शुक्राचार्य ब्रह्मा की सेवा में उपस्थित हुये तब विभिन्न देवगणों के साथ आदित्यगण भी वहाँ विराजमान थे (५. ४९, ३)। जैसे आदित्य, वसु, तथा रुद्रगण बृहस्पति की बुद्धि का आश्रय लेते हैं उसी प्रकार वृष्णि और अन्धक वंश के लोग श्रीकृष्ण की बुद्धि पर आश्रित रहते हैं (५. ८६, ४)। सम्पूर्ण आदित्यों में एकमात्र विष्णु ही अजेय, अविनाशी, नित्य विद्यमान, सर्वसमर्थ, और सनातन परमेश्वर हैं (५. ९७, ३)। श्रीकृष्ण ने धृतराष्ट्र को बताया कि जब देवासुर संग्राम में समस्त संसार दो भागों में विभक्त हो गया था तब ब्रह्माजी ने कहा कि आदित्य, वसु, तथा रुद्र आदि देवता ही विजयी होंगे (५. १२८, ४३)। जब कौरव सभा में श्रीकृष्ण ने विराट स्वरूप प्रगट किया तब आदित्य और साध्य आदि समस्त देवगण उनके विभिन्न अङ्गों में स्थित दिखाई पड़े (५. १३१, ६)। जनमेजय ने पूछा कि जब दुर्योधन ने श्रीकृष्ण द्वारा रक्षित तथा आदित्यों से घिरे हुये और युद्ध के लिये सन्नद्ध युधिष्ठिर के समाचार को सुना तब उसने क्या किया (५. १५३, ३)। श्रीकृष्ण ने बताया कि वे ही अदिति के बारह पुत्रों (आदित्यों) में विष्णु हैं (६. ३४, २१; ३५, ६)। अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा कि आदित्य, रुद्र, तथा अन्य देवगण उन्हें (कृष्ण को) विस्मित होकर देखते हैं (६. ३५, २२)। आदित्यगण अर्जुन के विरुद्ध कर्ण का पक्ष लेते हैं (८. ८७,

४७)। स्कन्द के अभिषेक के समय आदित्यगण शिव को घेर कर खड़े थे (९. ४४, ३०)। 'रुद्रैर्वसुभिरादित्यैरश्विभ्यां च वृतः प्रभुः' (९. ४५, ६)। 'मैत्रावरुणयोर्लोकानादित्यानां तथैव च', (९. ५०, ३९)। देवस्थान मुनि ने युधिष्ठिर को बताया कि धर्म का आश्रय लेकर ही रुद्रों, आदित्यों, साध्यों इत्यादि ने स्वर्ग प्राप्त किया था (१२. २१, २०)। 'तस्मिन् धर्मे स्थिता देवाः सहाचार्य पुरोहिताः। आदित्या वसवो रुद्राः ससाध्या मरुदश्विनः ॥', (१२. १६६, २२)। विभिन्न देवताओं सहित आदित्यों के लोकों को भी परमात्मा के परमधाम की तुलना में नरक कहा गया है (१२. १९८, ६)। 'आदित्यानदितिर्जज्ञे देवश्रेष्ठान्महाबलान्', (१२. २०७, २६)। 'द्वादशादित्याः कश्यपस्यात्मसंभवाः', (१२. २०८, १६)। 'आदित्याः क्षत्रियास्तेषाम्', (१२. २०८, २३)। द्वादशानां तु भवतामादित्यानां महात्मनाम्', (१२. २२४, ४१)। बलि ने कहा कि उसने पहले आदित्यों, रुद्रों, साध्यों, विश्वेदेवों और मरुद्गणों को पराजित किया है (१२. २२७, ९. ७६)। आदित्यगण अन्य देवों के साथ दक्ष के यज्ञ में उपस्थित हुये थे (१२. २८४, ७)। आदित्यों, वसुओं, तथा अन्य देवों ने तपस्या से ही सिद्धि प्राप्त की (१२. २९५, १६)। जब शिव हिमालय पर तपस्या कर रहे थे तो उस समय अन्य देवों के साथ आदित्य भी उनकी आराधना करते थे (१२. ३२३, १८)। 'द्वादशैव तथाऽऽदित्यान् वामपार्श्वे समास्थितान्', (१२. ३३९, ५२)। श्रीकृष्ण ने बताया कि शंकर के कर्मों की गति का ज्ञान अशक्य है, क्योंकि ब्रह्मा, इन्द्र आदि देवता, महर्षि, तथा सूक्ष्मदर्शी आदित्य भी उनके निवासस्थान को नहीं जानते (१३. १४, २२)। उपमन्यु ने बताया कि शिव ही आदित्यों में विष्णु हैं (१३. १४, ३२२)। बारह आदित्य, आठ वसु, साध्यगण इत्यादि द्वारा शिव की स्तुति का वर्णन (१३. १४, ३९१)। 'आदित्या इव दीप्यन्ते तेजसा भुवि मानवाः', (१३. ६२, ४६)। 'आदित्या वसवो रुद्रा मरुतोऽथाश्विनावपि', (१३. ८४, ८०)। 'अर्चिषो याश्च ते रुद्रास्तथाऽऽदित्या महाप्रभाः', (१३. ८५, ११३)। जो बारह महीनों तक प्रति बारहवें दिन केवल हविष्यान्न ग्रहण करता है उसे अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है और उसके लिये बारह आदित्यों के समान तेजस्वी विमान प्रस्तुत किया जाता है (१३. १०७, ५६)। जो लगातार बारह महीने तक पूरे बीसवें दिन पर एक बार भोजन करता, सत्य बोलता, व्रत का पालन करता, मांस नहीं खाता, ब्रह्मचर्य का पालन करता तथा समस्त प्राणियों के हित में तत्पर रहता है वह आदित्यों के विशाल और रमणीय लोक में जाता है (१३. १०७, ९२)। जो लगातार बारह महीनों तक अग्निहोत्र करता हुआ चौबीसवें दिन एक बार हविष्यान्न ग्रहण करता है वह दिव्यमाला, दिव्यवस्त्र, दिव्यगन्ध, तथा दिव्य अनुलेपन धारण करके दीर्घकाल तक आदित्यलोक में सानन्द निवास करता है (१३. १०७, १०३)। पूर्णमासी के दिन चन्द्रोदय के समय ताँबे के बर्त्तन में मधु-मिश्रित पकवान लेकर जो चन्द्रमा के लिये बलि अर्पण करता है, उसकी दी हुई उस बलि को साध्य, रुद्र, आदित्य, विश्वेदेव, अश्विनीकुमार, मरुद्गण और वसुगण ग्रहण करते हैं तथा उससे चन्द्रमा और समुद्र की वृद्धि होती है (१३. १३४, ३–७)। हिमालय पर्वत पर भूतगणों सहित शिव की शोभा का वर्णन करते हुये नारद ने बताया कि शिव के तृतीय नेत्र से जो अग्नि की लपटें निकल रही थीं वह बारह आदित्यों के समान प्रकाशित होकर द्वितीय प्रलयाग्नि के समान प्रतीत होती थीं (१३. १४०, ३४)। आदित्यों को श्रीकृष्ण से उत्पन्न बताया गया है (१३. १५८, ३३)। सुरक्षा के लिये इनका आवाहन करना चाहिये (१३. १६५, १६)। आदित्यगण मुञ्जवत् पर्वत पर शिव की उपासना करते हैं (१४. ८, ६)। 'स्वेन सैन्येन संवीता यथादित्याः स्वरश्मिभिः', (१४. ६४, २)। मृत्यु के पश्चात् स्वर्गलोक में आने पर श्रीकृष्ण का आदित्यगण स्वागत करते हैं (१६. ४, २५)। नरक से लौटते हुये युधिष्ठिर का स्वागत करते हैं (१८. ३, ८)। 'द्वादशादित्य सदृशम्', (१८. ४, ६)। 'अत्र रुद्रास्तथा साध्या विश्वेदेवाश्च शाश्वताः। आदित्याश्चाश्विनौ देवौ लोकपाला महर्षयः ॥', (१८. ६, ६)। तु० की० **काश्यपेयाः**।

२. आदित्य : विनता-नन्दन गरुड़, बलवान् अरुण, तथा भगवान् बृहस्पति की गणना आदित्यों में की जाती है (१. ६६, ३९)। आदित्यों में एकमात्र भगवान विष्णु ही अजेय, अविनाशी, नित्य-विद्यमान एवं सर्वसमर्थ सनातन परमेश्वर हैं (५. ९७, ३)। देवताओं ने मानसरोवर के तट पर यज्ञ आरम्भ किया; वहाँ खली नामक दानवों से इनका युद्ध हुआ, किन्तु वसिष्ठ ने उन समस्त दानवों को अपने तेज से दग्ध कर दिया (१३. १५५, १६–२२)। रुद्र, साध्य आदि के साथ इनका भी कीर्त्तन करने से मनुष्य पापों से मुक्त हो जाता है (१८. ६, ६)।

३. आदित्य—जहाँ का जल सात आदित्यों द्वारा सोख लिया गया है वहाँ संवर्तक नामक प्रलयकालीन अग्नि वायु के साथ उन सम्पूर्ण लोकों में फैल जाती है (३. १८८, ६९)।

४. आदित्य, सूर्य : 'आदित्य इव दुष्प्रेक्ष्यः', (१. १, १२८)। 'आदित्यवर्चसम्', (१. ६, ३)। 'आदित्यरथमध्यास्ते', (१. १६. २३)। 'आदित्यपथमाश्रिताः', (१. १८ ३७)। 'आदित्ये लोहितायति', (१. १९, १६)। 'आदित्य इव', (२. २४, २५; ३. ३, ६२)। 'आदित्यस्याश्रमो', (३. ८३, १८४)। 'आदित्य लोकम्', (३. ८३, १८५)। 'यमवैश्रवणादित्यमहेन्द्रवरुणोपमम्', (७. १०, ४१)। 'आदित्यस्यार्चिषा तुल्यं', (९. ६, १०)। 'आदित्यमण्डलम्', (९. १८, ३१)। 'आदित्यसन्निभाः', (९. ३६, ८; ४६, ४६; ५५, ४७)। 'राहुश्चाग्रसदादित्यमपर्वणि विशांपतेः', (९. ५६, १०)। 'चक्रमादित्यगोचरम्', (९. ६५, ६)। 'रथेनादित्यवर्चसा', (१०. ११, ४)। 'आदित्योदयवर्णस्य', (१०. १३, २)। 'एतान्यादित्यवर्णानि तपनीयनिभानि च। रोपरोदनताम्राणि वक्त्राणि कुरुयोषिताम् ॥', (११. १६, ४५) 'ध्वजांश्चादित्यवर्चसः', (११. १८, १७)। 'आदित्यशशितारकम्', (१२. ११, २४)। 'चन्द्रादित्यौ', (१२. २८, ३३)। 'विकीर्णांशुरिवादित्यो', (१२. ४७, ४)। 'आदित्यं पतितं यथा', (१२. ५३, २७; ५४, ६)। 'कुरुते पञ्चरूपाणि कालयुक्तानि यः सदा। भवत्यग्निस्तथाऽऽदित्यो मृत्युर्वैश्रवणो यमः ॥', (१२. ६८, ४१)। 'तथादित्यस्य रश्मयः', (१२. १०२, ६)। 'यथाऽऽदित्यः प्रातरुद्यंस्तमः सर्वं व्यपोहति। कल्याणमाचरन्नेवं सर्वपापं व्यपोहति ॥', (१२. १५२, ३७)। 'आदित्योऽयं स्थितो मूढाः', (१२. १५३, १९)। 'यावदादित्यः', (१२. १५३, १०४)। 'ऊर्ध्वं गतेरधस्तात्तु चन्द्रादित्यौ न दृश्यतः', (१२. १८२, २४)। 'नेक्षेतादित्यमुद्यन्तं', (१२. १९३, १७)। 'प्रत्यादित्यं न मेहेत (१२. १९३, २४)। 'सर्वलोकान्यदादित्य एकस्थस्तापयिष्यति।', (१२. २२५, ३२)। 'आदित्यो नैव तपिता कदाचिन्मध्यतः स्थितः', (१२. २२५, ३४)। 'प्रसीदन्ति च संस्थाय तदा ब्रह्म प्रकाशते। विधूम इव दीप्तार्चिरादित्य इव दीप्तिमान् ॥', (१२. २४०, १९)। 'उदयन्तमथादित्यम्', (१२. २६१, ४०)। 'पञ्चेन्द्रियेषु भूतेषु सर्वं वसति दैवतम्। आदित्यश्चन्द्रमा वायुर्ब्रह्मा प्राणः क्रतुर्यमः ॥', (१२. २६२, ४०)। 'अग्नौ प्रास्ताहुतिर्ब्रह्मन्नादित्यमुपगच्छति। आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः ॥', (१२. २६३, ११)। 'चन्द्रादित्यौ चक्षुषी ते हृदयं च पितामहः', (१२. २८४, १६४)। 'अद्वैधमनसं युक्तं शूरं धीरं विपश्चितम्। न श्रीः सन्त्यजते नित्यमादित्यमिव रश्मयः ॥', (१२. २९८, ४३)। 'अन्तकाल इवादित्यः कृत्स्नं संशोषयेज्जगत्', (१२. ३००, २१)। 'रश्मिजालमिवादित्यः', (१२. ३०३, ३२)। 'विधूम इव सप्तार्चिरादित्य इव रश्मिवान्। वैद्युतोऽग्निरिवाकाशे दृश्यतेऽऽत्मा तथाऽऽत्मनि ॥', (१२. ३०६, २०)। 'ततः शतसहस्रांशुरव्यक्तेनाभिचोदितः। कृत्वा द्वादशधाऽऽत्मानमादित्यो ज्वलदग्निवत् ॥', (१२. ३१२, ४)। 'मयाऽऽदित्यादवाप्तानि यजूंषि मिथिलाधिप', (१२. ३१८, २)। 'शश्वदादित्यस्तव भाषिता', (१२. ३१८, ६६)।

'यथाऽऽदित्यान्मणेः', (१२. ३२०, १२४)। 'मध्यं गतमिवादित्यं दृष्ट्वा', (१२. ३२५, २८)। 'आदित्यो ह्यस्तमभ्येति पुनः पुनरुदेति च', (१२. ३३१, ७)। 'अतो मे रोचते गन्तुमादित्यं दीप्त तेजसम्', (१२. ३३१, ५७)। 'आदित्येनाचिरोदिते', (१२. ३३२, ३)। 'विद्यासहायवन्तं च आदित्यस्थं समाहितम्। कपिलं प्राहुराचार्याः सांख्यनिश्चितनिश्चयाः ॥', (१२. ३३९, ६८)। प्राहुरादित्यवर्णं तं पुरुषं तमसः परम्', (१२. ३४०, ५७)। 'आदित्यस्थं सनातनं कपिलं प्राहुराचार्याः', (१२. ३४२, ९५)। 'आदित्यदग्धसर्वाङ्गा अदृश्याः केनचित्क्वचित् ॥ परमाणुभूता भूत्वा तु तं देवं प्रविशन्त्युत।', (१२. ३४४, १४. १५)। 'आदित्ये सवितुर्ज्येष्ठे', (१२. ३४८, ५०)। 'प्रत्यादित्यप्रतीकाशः सर्वतः समदृश्यत।', (१२. ३६२, १२)। 'आदित्याभिमुखो', (१२. ३६२, १३)। 'आदित्यतां गतम्', (१२. ३६२, १६)। 'आदित्यश्चन्द्रमा विष्णुरापो वायुः शतक्रतुः। अग्निः खं पृथिवी मित्रः पर्जन्यो वसवोऽदितिः ॥ सरितः सागराश्चैव भावाभावौ च पन्नगः। सर्वे कालेन सृज्यन्ते ह्रियन्ते च पुनः पुनः ॥', (१३. १, ५५–५६)। 'ब्रह्मविष्णुसुरेन्द्राणां रुद्रादित्याश्विनामपि। विश्वेषामपि देवानां वपुर्धारयते भवः ॥', (१३. १४, १४०)। 'नम आदित्यवक्त्राय आदित्यनयनाय च। नम आदित्यवर्णाय आदित्यप्रतिमाय च ॥', (१३. १४, २९६. २९७)। 'अयं स देवयानानामादित्यो द्वारमुच्यते', (१३. १६, ४४)। 'चन्द्रादित्यौ', (१३. १६, ५२)। 'आदित्यचन्द्रौ', (१३. १८, ७१)। 'आदित्यसमतेजसम्', (१३. २६, १)। 'उपतस्थुर्यथोक्तमादित्यं मन्त्रकोविदाः', (१३. २६, १५)। 'दिवि ज्योतिर्यथाऽऽदित्यः पितॄणां चैव चन्द्रमाः', (१३. २६, ७४)। 'वायुमादित्यम्', (१३. ३१, ६)। 'आदित्यश्चन्द्रमा वायुरापो भूरम्बरं दिशः ॥ सर्वे ब्राह्मणमाविश्य सदाऽन्नमुपभुञ्जते।', (१३. ३४, ६–७)। 'आदित्यो वरुणो', (१३. ६२, ४८)। 'आदत्ते च रसान्भौमानादित्यः स्वगभस्तिभिः। वायुरादित्यतस्तांश्च रसां देवः प्रवर्षति ॥', (१३. ६३, ३७)। 'तरुणादित्यवर्णानि (१३. ६३, ४७; ७१, २४)। 'कालज्ञानं विप्र गवान्तरं हि दुःखं ज्ञातुं पावकादित्यभूतम्', (१३. ७३, ३८)। 'तरुणादित्यसंकाशैः (१३. ८१, २१)। 'आदित्योदयसंप्राप्ते', (१३. ८५, १५४)। 'आदित्योदयनं प्रति', (१३. ८५, १६०)। 'षडाननं कुमारं तु द्विषडक्षं द्विजप्रियम् ॥ पीनांसं द्वादशभुजं पावकादित्यवर्चसम्।', (१३. ८६, १९)। 'आदित्यो रुचिरां प्रभाम्', (१३. ८६, २३)। 'बालादित्यवपुःप्रख्यैः पुष्करैरुपशोभिताम्', (१३. ९३, ७६)। 'आदित्यदेवस्य पदम्', (१३. १०२, ३२)। 'एवमेवापरां सन्ध्यां समुपासीत वाग्यतः। नेक्षेतादित्यमुद्यन्तं नास्तं यान्तं कदाचन ॥', (१३. १०४, १७)। 'प्रत्यादित्यं प्रत्यनलं प्रति गां च प्रति द्विजान्। ये मेहन्ति च पन्थानं ते भवन्ति गतायुषः ॥', (१३. १०४, ७५)। 'चन्द्रादित्यौ', (१३. १०७, ८२)। 'आदित्यतेजसा', (१३. १२५, ४५)। 'ऐन्द्रीं सन्ध्यामुपासित्वा आदित्याभिमुखः स्थितः। सर्वतीर्थेषु स स्नातो मुच्यते सर्वकिल्बिषैः ॥', (१३. १२६, १५)। 'पर्वकाले च यत्किञ्चिदादित्यं चाधितिष्ठति ॥ प्रेतलोकं गते मर्त्ये तत्तत्सर्वं विभावसुः। प्रतिजानाति पुण्यात्मा तच्च तत्रोपयुज्यते ॥', (१३. १३०, १६–१७)। 'यथादित्यः', (१३. १३०, २८)। 'मांसप्रतिगृहे चैव मधुनो लवणस्य च। आदित्योदयनं स्थित्वा पूतो भवति ब्राह्मणः ॥', (१३. १३६, ५)। 'सम्भूतं नेत्रमादित्यसन्निभम्', (१३. १४०, ३०)। 'नष्टादित्ये तथा लोके', (१३. १४०, ४४)। 'दाक्षायण्यास्तथाऽऽदित्यो मनुरादित्यतस्तथा', (१३. १४७, २६)। 'आदित्यसन्निभाः', (१३. १५०, ३६)। 'आदित्यवंशप्रभवं महेन्द्रसमविक्रमम्', (१३. १५०, ४८)। 'सोमादित्यान्वयाः सर्वे राघवाः कुरवस्तथा', (१३. १५०, ७७)। 'आदित्यवर्चसम्', (१३. १५५, ४)। 'चन्द्रादित्याविमावुभौ', (१३. १५६, ५)। 'तस्यादित्यो भामुपयुज्य भाति', (१३. १५८, २२)। 'चन्द्रादित्यौ', (१३. १५८, ३३)। 'आदित्यवर्णेन', (१३. १६०, ३१)। 'चन्द्रादित्यौ प्रभाकरौ', (१३. १६५, १६)। 'दृष्ट्वा निवृत्तमादित्यं प्रवृत्तं चोत्तरायणम्', (१३. १६७, ६)। 'आदित्य सदृशः', (१४. ४, २०)। 'बालादित्यसमद्युतिः', (१४. ८, ८)। 'उपप्लुतमिवादित्यम्', (१४. ११, २)। 'ज्योतिराकाशमादित्यो', (१४. ३५, ४१)। 'दृष्ट्वा त्वादित्यमुद्यन्तं कुचराणां भयं भवेत्। अध्वगाः परितप्येयुरुष्णतो दुःखभागिनः ॥ आदित्यः सत्वमुद्रिक्तं कुचरास्तु तथा तमः। परितापोऽध्वगानां च रजसो गुण उच्यते ॥ प्राकाश्यं सत्त्वमादित्यः सन्तापो रजसो गुणः। उपप्लवस्तु विज्ञेयस्तामसस्तस्य पर्वसु ॥ एवं ज्योतिष्षु सर्वेषु निवर्तन्ते गुणास्त्रयः।', (१४. ३९, १३–१६)। 'चक्षुःस्थश्च सदादित्यो रूपज्ञाने विधीयते', (१४. ४७, ३१)। 'भूमिरादित्यस्तु गन्धानां रसानामपि एव च। रूपाणां ज्योतिरादित्यः स्पर्शानां वायुरुच्यते ॥', (१४. ४४, ३)। 'आदित्यो ज्योतिषामादिर्', (१४. ४४, ५)। 'राहुरग्रसदादित्यं युगपत्सोममेव च', (१४. ७७, १५)। 'रथेनादित्यवर्चसा', (१५. २३. ११)। 'आदित्यसन्निभम्', (१४. २९, ५०)। 'द्विधा कृत्वाऽऽत्मनो देहमादित्यं तपतां वरम्। लोकांश्च तापयानं वै विद्धि कर्णं च शोभने ॥', (१५. ३१, १४)। 'आदित्यो रजसा राजन् समवच्छन्नमण्डलः। विरश्मिरुदये नित्यं कबन्धैः समदृश्यत ॥', (१६. १, ४)। 'रथं दिव्यमादित्यवर्णं', (१६. ३, ५)। 'भ्राजमानमिवादित्यं', (१८. १, ५)। 'आदित्यतनयं', (१८. ३, २०)। 'आदित्य सहितो याति', (१८. ४, १७)। 'उदितादित्यसंकाशम्', (१८. ६, ३०)।

५. आदित्य, एक विश्वेदेव का नाम है : १३. ९१, ३६।

६. आदित्य = वरुण : १. २२५, २; १३. ४, १३. १५।

७. आदित्य = विष्णु : १३. १४९, १८. ७३।

८. आदित्य = शिव : १२. २८४, ८०; १३. १७, ६८. १४०।

९. आदित्य (विशेषण) : 'आदित्यं द्वादशे तस्य विमानं संविधीयते', (१३. १०७, ५६)।

आदित्यकेतु—धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से ७४वाँ (१. ६७, १०२; ११७, ११)। अपने भ्राता सुनाभ की भीम द्वारा हुई मृत्यु का बदला लेने के लिये अन्य छः भ्राताओं के साथ इनका भीमसेन पर आक्रमण (६. ८८, १५. १८)। भीमसेन द्वारा इनका वध (६. ८८, २८)।

१. आदित्यतनय (सूर्यपुत्र) = मनु : १२. १२२, ३९।

२. आदित्यतनय = कर्ण : १८. ३, २०।

आदित्यतीर्थ, सरस्वती तटवर्त्ती एक प्राचीन तीर्थ का नाम है जहाँ ज्योतिर्मय सूर्य ने यज्ञ करके ज्योतियों का आधिपत्य एवं प्रभुत्व प्राप्त किया था। इन्द्र आदि सम्पूर्ण देवता, विश्वेदेव, मरुद्गण, गन्धर्व, अप्सरायें, द्वैपायन व्यास, शुकदेव, मधुसूदन श्रीकृष्ण, यक्ष, राक्षस, पिशाच तथा सहस्रों की संख्या में पुरुष भी इस तीर्थ में योग-सिद्ध हो गये हैं। भगवान् विष्णु ने पहले मधु और कैटभ नामक असुरों का वध करके यहाँ स्नान किया था। धर्मात्मा व्यास ने भी इसी तीर्थ में स्नान करके परम योग के द्वारा सिद्धि प्राप्त कर ली थी। ऋषि असित देवल ने भी इसी तीर्थ में स्नान करके योग में लीन होकर सिद्धि प्राप्त की (९. ४९, १७–२४)।

आदित्यनन्दन = कर्ण : ६. १२२, २२।

आदित्यनयन = शिव : १३. १४, २९६।

आदित्यपति (सूर्य का स्वामी) = विष्णु : १२. ३४०, १०२।

आदित्यपथ = आकाश : १. १८, ३७।

आदित्यपर्वत, शिव का निवासस्थान, जो प्रज्वलित अग्नि से चारों ओर से घिरा है (१२. ३२७, २२)।

आदित्यप्रतिम = शिव : १३. १४, २९६।

आदित्यवक्त्र = शिव : १३. १४, २९६।

आदित्यवर्ण = शिव : १३. १४, २९७।

१. आदिदेव = सूर्य : धौम्य द्वारा वर्णित सूर्य के १०८ नामों में से ९५वाँ नाम है (३. ३, २५)।

२. आदिदेव = विष्णु : १२. ६४, १०. १६. १९-२१. २५; ३३५, ४; ३३८, ४ (महापुरुषस्तव में २०वाँ नाम); १३. १४७, ४८; १३. १४७, ४८; १४९, ४९. ६५ (सहस्र नामों में से एक)।

३. आदिदेव = कृष्ण : १३. १४८, २४; १५८, २०।

आदिपर्वन् : महाभारत का पहला पर्व : १. २, ८९. १२९।

आदिराज, अविक्षित् के तृतीय पुत्र तथा कुरु के पौत्र का नाम है (१. ९४, ५२)। उन राजर्षियों की गणना में इनका भी उल्लेख है, जिनका प्रातःसायं नामोच्चारण करने से मनुष्य धर्म का भागी होता है (१३. १६५, ५५)।

१. आदिर्देवानाम् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

२. आदिर्देवानाम् = विष्णु : १२. ३४९, ४०।

आदिर्विश्वस्य = कृष्ण : १२. ४७, ७९।

१. आदिवंशावतरण (वंशावली), आदिवंशावतरणपर्व के अन्तर्गत पाँचवाँ अध्याय जिसमें वसु उपरिचर तथा उनके पुत्रों, गिरिका, मत्स्य, व्यास तथा उनके शिष्यों, भीष्म, अणीमाण्डव्य, संजय, कर्ण, कृष्ण वासुदेव, सात्यकि, कृतवर्मन्, द्रोण, कृपी, कृप, अश्वत्थामन्, धृष्टद्युम्न, द्रौपदी, नग्नजित, सुबल, शकुनि, गान्धारी, धृतराष्ट्र, पाण्डु, विदुर, युधिष्ठिर आदि पाण्डव, १०१ धार्तराष्ट्र, अभिमन्यु, घटोत्कच, शिखण्डिन्, इत्यादि के जन्म और वंश का वर्णन है (१. ६३)।

२. आदिवंशावतरण = अंशावतारणपर्वन्—'पौष्यं पौलोममास्तीकमादिरंशावतारणम्', (१. २, ४२)। 'अंशावतरणं चात्र देवानां परिकीर्त्तितम्', (१. २, ९३)।

आदिवंशावतरणपर्वन्—महाभारत के आदि पर्व में ५९-६४ अध्यायों तक आने वाले एक अवान्तर पर्व का नाम है। "कथानुबन्ध : सर्पयज्ञ से अवकाश मिलने पर अन्य ब्राह्मण तो वेदों की कथायें कहते थे, परन्तु व्यास जी अतिविचित्र महाभारत की कथा सुनाया करते थे। (१. ५९)।" "कथानुबन्ध : जब व्यास ने यह सुना कि राजा जनमेजय सर्पयज्ञ की दीक्षा ले चुके हैं तब वे (व्यास : इनके जन्म, विकास, अध्ययन, वेदों का चार भाग में विभाजन, तथा इनके द्वारा पाण्डु इत्यादि की उत्पत्ति का विस्तृत वर्णन है) अपने शिष्यों सहित यज्ञ में उपस्थित हुये। वहीं कुरुओं और पाण्डवों के सम्बन्ध में प्रश्न करने पर व्यास ने जनमेजय को महाभारत की कथा सुनाने के लिये अपने शिष्य वैशम्पायन को आज्ञा दी (१. ६०)।" "भारतसूत्र : वैशम्पायन ने कौरवों तथा पाण्डवों में फूट, और युद्ध होने के वृत्तान्त का सूत्र रूप में वर्णन किया (१. ६१)।" "महाभारतप्रशंसा : जनमेजय ने सम्पूर्ण महाभारत को विस्तार से श्रवण करने की इच्छा प्रगट की। वैशम्पायन ने महाभारत की प्रशंसा करते हुये बताया कि प्रतिदिन प्रातःकाल उठकर इस ग्रन्थ का निर्माण करने वाले महामुनि श्रीकृष्णद्वैपायन व्यास ने महाभारत नामक अद्भुत इतिहास को तीन वर्षों में पूर्ण किया। उन्होंने यह भी बताया कि धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष के सम्बन्ध में जो बात इस ग्रन्थ में है वही अन्यत्र भी है; जो इसमें नहीं है वह कहीं भी नहीं है। जो वाचक को यह महाभारत दान करता है उसके द्वारा समुद्र से घिरी हुई सम्पूर्ण पृथिवी का दान सम्पन्न हो जाता है (१. ६२)।" ६३वें अध्याय के विषयवस्तु का ऊपर 'आदिवंशावतरण' शब्द के अन्तर्गत उल्लेख किया जा चुका है। "इक्कीस बार पृथिवी से क्षत्रिय-जाति का उन्मूलन करने के पश्चात् जमदग्नि-नन्दन परशुराम ने महेन्द्र पर्वत पर तपस्या आरम्भ की। उस समय अवशिष्ट क्षत्री नारियों और ब्राह्मणों के संयोग से एक नवीन क्षत्रिय जाति का उदय हुआ—कृतयुग का विस्तृत वर्णन। तदुपरान्त उन्हीं दिनों अदिति के पुत्रों द्वारा दैत्यगण अनेक बार युद्ध में पराजित हुये और स्वर्ग के ऐश्वर्य से भ्रष्ट होकर पृथिवी पर असुरों के रूप में इतनी अधिक संख्या में जन्म लेने लगे कि कच्छप और दिग्गज आदि की संगठित शक्तियाँ तथा शेष नाग भी पृथिवी को धारण करने में असमर्थ हो गये। तब असुरों के भार से आतुर तथा भयभीत पृथिवी ने समस्त भूतों के पितामह भगवान् ब्रह्मा की शरण में याचना की। ब्रह्मलोक में जाकर पृथिवी ने ब्रह्माजी का दर्शन किया जो उस समय देवताओं, द्विजों, महर्षियों, अप्सराओं, तथा गन्धर्वों से घिरे हुये थे। ब्रह्मा ने पृथिवी का मनोरथ पहले से ही जान लिया था, अतः उन्होंने पृथिवी से बताया कि उसकी सिद्धि के लिये वे सम्पूर्ण देवताओं को नियुक्त कर रहे हैं। तदनन्तर ब्रह्माजी ने देवताओं को अपने-अपने अंशों से पृथिवी के विभिन्न भागों में पृथक्-पृथक् जन्म ग्रहण करने तथा असुरों को समाप्त करने का आदेश दिया। ब्रह्मा के इस आदेश को शिरोधार्य करते हुये देवताओं ने वैकुण्ठलोक में जाकर भगवान् नारायण को भी पृथिवी पर अवतार लेने के लिये सहमत कर लिया (१. ६४)।"

आदिष्टी उसे कहते हैं जिसे गुरु ने नियत वर्षों तक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने का आदेश दिया हो (१३. २२, १७)।

१. आद्य = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

२. आद्य = विष्णु : १२. ३४२, १३०।

३. आद्य, सरस्वती-तट पर स्थित एक तीर्थ का नाम है (९. ३५, ८९)।

आद्यकठ, एक प्राचीन ऋषि, जो राजा उपरिचर के यज्ञ के एक सदस्य थे (१२. ३३६, ९)।

आद्यः पुरुषः = विष्णु : १. १, २२।

आद्यस्तुति = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

आधारनिलय = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

आनकदुन्दुभि = वसुदेव।

१. आनन्द, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६५)।

२. आनन्द = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

१. आनर्त्त, एक देश का नाम है जिसे अर्जुन ने विजित किया था (२. २६, ४)। श्रीकृष्ण ने पाण्डवों को बताया कि यदि वह आनर्त्त देश में उपस्थित होते तो उन पर द्यूतजनित संकट न आने देते (३. १३, १४)। शाल्व का श्रीकृष्ण के साथ युद्ध करने की इच्छा से आनर्त्तवासियों से उनका परिचय पूछना (३. १४, ९)। श्रीकृष्ण का उन पर आक्षेप करनेवाले तथा आनर्त्तदेश में महान् संहार मचानेवाले शाल्व को युद्ध के लिये खोजना (३. १४, १८)। धनसंग्रह की रक्षा करनेवाले यादवों ने आनर्त्तदेशीय नटों, नर्त्तकों तथा गायकों को शीघ्र ही नगर से बाहर कर दिया (३. १५, १४)। युधिष्ठिर का राजसूय यज्ञ समाप्त होने पर श्रीकृष्ण शाल्व से विमुक्त आनर्त्तनगर—द्वारका—में गये (३. २०, १)। अर्जुन ने आनर्त्तदेश से श्रीकृष्ण के साथ अभिमन्यु तथा दशार्हवंश के अन्य सम्बन्धियों को उपप्लव्य नामक नगर में बुलवा लिया (४. ७२, १५)। युधिष्ठिर ने आनर्त्तदेश के सम्मानित वीर श्रीकृष्ण से कुन्ती के कष्टों का वर्णन किया (५. ८३, ४५)। भारत के जनपदों की गणना के अन्तर्गत इसका उल्लेख (६. ९. ५१)। संजय ने धृतराष्ट्र को कौरव-पक्ष के मारे गये प्रमुख वीरों का परिचय देते हुये बताया कि महाबली राजकुमार विविंशति रणभूमि में सैकड़ों आनर्त्तदेशीय योद्धाओं को मार कर मरा है (८. ५, ७)। धृतराष्ट्र के लिये युद्ध करनेवाले लोगों में इनका उल्लेख (८. ७, ८)। युधिष्ठिर ने द्वारका जाते हुये श्रीकृष्ण से कहा : 'महाबाहु श्रीकृष्ण ! आनर्त्तदेश की प्रजा, अपने माता-पिता तथा वृष्णिवंशी बन्धु-बान्धवों से मिलकर पुनः मेरे अश्वमेध यज्ञ में पधारियेगा (१४. ५२, ४८)।' सात्यकि के साथ श्रीकृष्ण का आनर्त्तपुरी द्वारका की ओर प्रस्थान (१४. ५२, ५८)।

२. आनर्त्त : 'आनर्त्तमेवाभिमुखाः शिवेन गत्वा धनुर्वेदरतिप्रधानाः।

तवात्मजा वृष्णिपुरं प्रविश्य न देवतेभ्यः स्पृहयन्ति कृष्णे ॥', (३. १८३, २६)। 'आनर्त्तं च दुराधर्षं शितैर्बाणैरवारयत्। तं परे नाभ्यवर्तन्त मर्त्या मृत्युमिवागतम्' = सात्यकि, (९. १७, ८४)।

आन्ध्र—दक्षिण का एक देश जिसे सहदेव ने दूतों द्वारा ही विजित कर लिया था (२. ३१, ७१)।

आप, एक अग्नि का नाम है जिनकी मुदिता नाम की पत्नी के गर्भ से अद्भुत नामक अग्नि उत्पन्न हुये (३. २२२, १)।

आपः (जल)—मनुष्य के भले बुरे आचार-व्यवहार को जानने वालों में इनका भी उल्लेख है (१. ७४, ३०); = सूर्य (३. ३, १७); मनुष्य के आचरण को जाननेवाले सूर्य-चन्द्रमा इत्यादि के साथ इनकी गणना (३. २९१, २४)। वेद के अनुसार दृष्टि रखनेवालों का कथन है कि जल अधिदैवत है (१२. ३१३, ८)।

आपगा—नदी एवं तीर्थ, जहाँ एक ब्राह्मण को भोजन कराने से कोटि ब्राह्मणों को भोजन कराने का फल प्राप्त होता है (३. ८३, ६८)।

आपद्धर्म : 'आपद्धर्मश्च पर्वोक्तम्', (१. २, ७६) । 'आपद्धर्मांश्च', (१. २, ३२७)।

आपद्धर्मपर्वन्, शान्तिपर्व के अन्तर्गत १३१–१७३ अध्यायों तक आनेवाले महाभारत के ८९ वें अवान्तरपर्व का नाम है । "युधिष्ठिर ने भीष्म से पूछा कि जिसकी सेना और धन-सम्पत्ति क्षीण हो गई हो, जो आलसी तथा अत्यन्त कष्ट में हो उस राजा को अपने संकट से मुक्त होने के लिये क्या करना चाहिये ? भीष्म ने बताया कि उसे शान्ति का आश्रय लेना तथा अपना कुछ खोकर भी सन्धि कर लेना चाहिये । जहाँ तक सम्भव हो राजा को चाहिये कि वह अपने आप को किसी भी प्रकार शत्रु के हाथ में न फँसने दे। यदि आक्रामक राजा धर्मपरायण हो तो उसके साथ शीघ्रतापूर्वक सन्धि कर लेनी चाहिये अन्यथा उसके साथ वीरतापूर्वक युद्ध करना चाहिये, चाहे उसमें उसकी मृत्यु भी हो जाय (१२. १३१)।" "युधिष्ठिर ने पूछा कि संकट-काल उपस्थित होने पर ब्राह्मण को किस वृत्ति से जीवन-निर्वाह करना चाहिये। उत्तर में भीष्म ने आपत्ति-काल की नैतिकता का वर्णन करते हुये कहा कि ऐसे समय में राजा को चाहिये कि वह दुष्टों से उनका धन इत्यादि बलपूर्वक लेकर श्रेष्ठ पुरुषों को दे दे, क्योंकि ऐसे समय में निन्द्यकार्य भी निन्द्य नहीं होते। चाहे कितनी भी आपत्ति का समय क्यों न हो राजा को चाहिये कि वह ब्राह्मणों को पीड़ित न करे। किसी की निन्दा करना अथवा निन्दा सुनना भी नहीं चाहिये। धर्मज्ञ पुरुष आचार को ही धर्म का प्रधान लक्षण मानते हैं, किन्तु जो शंख और लिखित मुनि के प्रेमी हैं वे इसे स्वीकार नहीं करते (१२. १३२)।" "राजा को कोश-संग्रह करने तथा मर्यादा की स्थापना करने की आवश्यकता बताते हुये भीष्म ने अमर्यादित दस्युवृत्ति की निन्दा की (१२. १३३)।" "भीष्म ने बताया कि क्षत्रिय के लिये धर्म और अर्थ ये दो ही प्रत्यक्ष हैं। उन्होंने बल की महत्ता और पाप से छूटने का प्रायश्चित्त भी बताया (१२. १३४)।" "मर्यादा का पालन करनेवाले कायव्य नामक दस्यु की सद्गति से सम्बद्ध प्राचीन इतिहास का वर्णन (१२. १३५)।" "राजा किसका धन लें और किसका न लें, तथा किसके साथ कैसा बर्त्ताव करें, इसका विचार (१२. १३६)।" "आने वाले संकट से सावधान रहने के लिये दूरदर्शी, तत्कालज्ञ, और दीर्घसूत्री मत्स्यों के दृष्टान्त से सम्बद्ध शाकुलोपाख्यान (१२. १३७)।" "शक्तिशाली शत्रुओं से घिरे हुये राजा के कर्त्तव्यों के विषय में प्राचीन मार्जार-मूषिक संवाद तथा उससे प्राप्त उपदेशों का वर्णन (१२. १३८)।" "भीष्म ने, शत्रु से सदैव सावधान रहने के विषय में राजा ब्रह्मदत्त और पूजनी पक्षी के संवाद—ब्रह्मदत्त पूजन्योः संवाद—का वर्णन किया (१२. १३९)।" "धर्म का क्षय हो जाने पर राजा को किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिये, इसके सम्बन्ध में भारद्वाज और राजा शत्रुञ्जय के बीच संवाद की प्राचीन कथा—कणिकोपदेश—का वर्णन (१२. १४०)।" "भयंकर संकट-काल में ब्राह्मण के जीवन-निर्वाह के सम्बन्ध में विश्वामित्र मुनि तथा चाण्डाल के संवाद का उल्लेख करते हुये भीष्म ने बताया कि सत्ययुग, त्रेता, द्वापर, और कलियुग आदि का मूलकारण राजा ही होता है। उन्होंने बताया कि त्रेता के अन्त और द्वापर के आरम्भ में दैववश संसार में बारह वर्षों तक भयंकर अनावृष्टि रही, जिसके कारण प्रलयकाल जैसा दृश्य उपस्थित हो गया। उस समय इन्द्र ने वर्षा बन्द कर दी, बृहस्पति प्रतिलोम हो गया और चन्द्रमा (सोम) विकृत होकर दक्षिण मार्ग पर चला गया—उस समय का विस्तृत वर्णन। ब्राह्मणों के स्वाध्याय का लोप हो गया; वषट्कार और माङ्गलिक उत्सवों का कहीं नाम भी नहीं रह गया; यूप और यज्ञों का आयोजन समाप्त हो गया, तथा बड़े-बड़े उत्सव नष्ट हो गये। अग्नि के उपासक ऋषिगण नियम और अग्निहोत्र का परित्याग करके अपने आश्रमों से निकल कर भोजन के लिये यत्र-तत्र भटकने लगे। इन्हीं दिनों महर्षि विश्वामित्र ने अपनी पत्नी और पुत्रों को किसी जन-समुदाय में छोड़ दिया और स्वयं अग्निहोत्र और आश्रम का परित्याग करके भक्ष्य और अभक्ष्य में समान भाव रखते हुये विचरने लगे। एक दिन गिरते पड़ते वे वन के भीतर स्थित प्राणियों का वध करने वाले हिंसक चाण्डालों की बस्ती—विस्तृत वर्णन—में जा पहुँचे। उस बस्ती में भूख से पीड़ित महर्षि विश्वामित्र ने देखा कि एक चाण्डाल के घर में शस्त्र द्वारा सद्यः मृत कुत्ते की जांघ के मांस का एक बड़ा टुकड़ा पड़ा हुआ है। मुनि ने उसे चुरा लेने का निश्चय किया, क्योंकि आपत्तिकाल में प्राणरक्षा के लिये ब्राह्मण को श्रेष्ठ, समान, तथा हीन मनुष्य के घर से चोरी कर लेना भी शास्त्रानुकूल है। चोरी का निश्चय करके रात्रि के प्रगाढ़ अन्धकार में विश्वामित्र ने जब चाण्डाल की कुटिया में प्रवेश किया तब रुक्ष स्वभाववाले उस चाण्डाल ने उन्हें क्रुद्ध स्वर में सम्बोधित किया। विश्वामित्र द्वारा अपना परिचय देने पर चाण्डाल घबड़ाकर अपनी शय्या से उठा और उनके निकट आकर नेत्रों से अश्रु बहाते हुये बोला, 'आप ऐसा कार्य करें जिससे आपका धर्म नष्ट न हो। मनीषी पुरुषों ने कहा है कि कुत्ता शृगाल से भी अधम होता है और कुत्ते के शरीर में भी उसकी जाँघ का भाग सबसे अधम होता है।' विश्वामित्र के अत्यन्त आग्रह पर चाण्डाल ने पुनः कहा, 'ब्राह्मण, क्षत्रिय, और वैश्य के लिये पाँच नख वाले पाँच प्रकार के ही प्राणी आपत्ति काल में भक्ष्य बताये गये हैं, अतः यदि आप शास्त्र को प्रमाण मानते हैं तो अभक्ष्य पदार्थ की ओर मन न ले जाइये।' विश्वामित्र ने कहा, 'अग्निदेव देवताओं के मुख हैं तथापि वे जिस अवस्था के अनुसार सर्वभक्षी हो गये उसी प्रकार मैं ब्राह्मण होकर भी सर्वभक्षी बनूँगा।.........इन्द्रदेव का जो पालन रूप धर्म है वही क्षत्रियों का भी है, और अग्निदेव का जो सर्वभक्षित्व नामक गुण है वह ब्राह्मणों का है; मेरा बल वेदरूपी अग्नि है, अतः मैं क्षुधा-शान्ति के लिये सब कुछ भक्षण करूँगा, क्योंकि मरने से जीवित रहना श्रेष्ठ है, और जीवित पुरुष पुनः धर्म का आचरण कर सकता है ।.........भूखे हुये महर्षि अगस्त्य ने वातापि नामक असुर का भक्षण कर लिया था।' इस प्रकार, चाण्डाल के निषेध के विपरीत भी विश्वामित्र कुत्ते की जाँघ उठा ले गये और वन में उसे अपनी पत्नी सहित खाने का विचार करने लगे। इतने में ही उनके मन में कुत्ते की जाँघ के मांस को देवताओं को अर्पित करने के पश्चात् ही भक्षण करने का विचार आया। ऐसा विचार करके मुनि ने वेदोक्त विधि से अग्नि की स्थापना की और इन्द्र तथा अग्नि देवता के उद्देश्य से स्वयं ही चरु पकाकर तैयार किया। तदनन्तर उन्होंने देवकर्म और पितृकर्म आरम्भ किया तथा इन्द्र आदि देवताओं का आवाहन करके उनके लिये भी क्रमशः विधिपूर्वक पृथक्-पृथक् भाग अर्पित किया। इसी समय इन्द्र ने समस्त प्रजा को जीवनदान देते हुये वर्षा आरम्भ की और उससे अन्न आदि ओषधियों को उत्पन्न किया। विश्वामित्र ने अपने कर्म समाप्त करके उस हविष्य का आस्वादन किये बिना ही देवताओं और

पितरों को संतुष्ट कर दिया तथा उन्हीं की कृपा से पवित्र भोजन प्राप्त करके उसके द्वारा अपने जीवन की रक्षा की (१२. १४१)।" "भीष्म के द्वारा महापुरुषों के लिये ऐसे भयंकर कर्मों का विधान सुनकर युधिष्ठिर अत्यन्त विषाद-ग्रस्त हो गये। भीष्म ने कहा कि राजा को इधर-उधर से नाना प्रकार के मनुष्यों के सान्निध्य द्वारा विभिन्न प्रकार की बुद्धियाँ सीखनी चाहिये और एक ही शाखा वाले धर्म को लेकर बैठे नहीं रहना चाहिये। जो लोग शास्त्रादेशों पर आक्षेप करते हैं उन्हें विद्या का व्यापार करनेवाला तथा राक्षसों के समान परद्रोही समझना चाहिये। भीष्म ने कहा, 'हमने सुना है कि केवल वचन अथवा बुद्धि द्वारा ही धर्म का निश्चय नहीं होता, अपितु शास्त्रवचन और तर्क दोनों के समुच्चय द्वारा उसका निर्णय होता है, यही बृहस्पति का मत है जिसे स्वयं इन्द्र ने बताया है। प्राचीन काल में उशनस् ने दैत्यों को इस सत्य का उपदेश दिया था कि वेदशास्त्र के द्वारा अनुमोदित तर्क बुद्धि से जो बात कही जाती है उसी से शास्त्र की प्रशंसा होती है। अवध्य मनुष्य का वध करने में जो दोष माना गया है वही वध्य का वध न करने में भी है। शुक्राचार्य ने कहा है कि आपत्तिकाल में भी सदा दुष्टों का दमन और शिष्टों का पालन करना राजा का कर्त्तव्य होता है', (१२. १४२)।" "युधिष्ठिर ने शरणागत की रक्षा करने वाले प्राणी को प्राप्त होने वाले धर्म के सम्बन्ध में पूछा। भीष्म ने बताया कि शिवि आदि महात्मा राजाओं ने शरणागत की रक्षा करके ही परम सिद्धि प्राप्त कर ली थी। उन्होंने उस कपोत-लुब्धक संवाद का भी वर्णन किया जिसमें एक कबूतर ने शरण में आये हुये शत्रु का यथायोग्य सत्कार और अपना मांस खाने के लिये निमन्त्रित किया (१२. १४३–१४९)।" "युधिष्ठिर के यह पूछने पर कि अनजान में पापकर्म कर बैठनेवाला व्यक्ति उससे किस प्रकार मुक्त हो सकता है, भीष्म ने ऋषियों द्वारा प्रशंसित उस प्राचीन प्रसङ्ग—इन्द्रोत पारिक्षितीय संवाद—का उपदेश किया जिसे शुनकवंशी विप्रवर इन्द्रोत ने राजा जनमेजय से कहा था (१२. १५०–१५२)।" "युधिष्ठिर के यह पूछने पर कि क्या उन्होंने किसी ऐसे मनुष्य को देखा या सुना है जो मृत्यु के पश्चात पुनरुज्जीवित हो उठा, भीष्म ने गृद्ध्र और शृगाल के उस प्राचीन वार्तालाप—गृद्ध्र-गोमायु संवाद—का उल्लेख किया जो नैमिषारण्य में हुआ था (१२. १५३)।" "युधिष्ठिर ने भीष्म से पूछा कि यदि कोई छोटा राजा मोहवश किसी बड़े राजा से वैर बाँध ले, और वह बड़ा तथा बलवान राजा कुपित होकर उस दुर्बल राजा पर आक्रमण कर दे तब वह छोटा राजा क्या करे? भीष्म ने इस सम्बन्ध में प्राचीन पवन-शाल्मली-संवाद बताते हुये कहा, 'जो व्यक्ति अपने से श्रेष्ठ बल वाला हो उसके द्वारा किये गये प्रतिकूल व्यवहार को भी क्षमा कर देना चाहिये। इसी प्रकार बालक, जड़, अन्ध, और बधिर की बातों को भी क्षमा करना चाहिये।' (१२. १५४–१५७)।" "लोभ ही समस्त अनर्थों और पापों का कारण होता है। देवता, गन्धर्व, असुर, बड़े-बड़े नाग, और सम्पूर्ण भूतगण भी लोभ के यथार्थ स्वरूप को नहीं जान पाते (१२. १५८)।" "अज्ञान और लोभ को एक दूसरे का कारण बताकर दोनों की एकता और दोनों को ही समस्त दोषों का कारण सिद्ध करते हुये भीष्म ने बताया कि जनक, युवनाश्व, वृषादर्भि, प्रसेनजित तथा अन्य नरेश लोभ का नाश करके ही दिव्यलोक में गये हैं (१२. १५९)।" "महर्षियों ने अपने-अपने ज्ञान के अनुसार धर्म की एक नहीं अनेक विधियाँ बताई हैं, परन्तु उन सबका आधार दम (मन और इन्द्रियों का संयम) ही है। दान, यज्ञ, और वेदाध्ययन से भी दम का महत्व अधिक है (१२. १६०)।" "तप ही सम्पूर्ण जगत का मूल है; तप से ही प्रजापति ने समस्त संसार की सृष्टि की; तप से ही ऋषियों ने वेद का ज्ञान प्राप्त किया; तपस्या से ही ऋषियों ने अणिमा आदि अष्टविध ऐश्वर्य को प्राप्त किया। संन्यास ही सर्वश्रेष्ठ तप है (१२. १६१)।" "सत्य के लक्षण, स्वरूप, और महिमा का वर्णन करते हुये भीष्म ने बताया कि देवता, पितर, तथा ब्राह्मण भी सत्य की प्रशंसा करते हैं। सत्य ही धर्म, तप, और योग है; सत्य ही सनातन ब्रह्म है; सत्य को ही परम यज्ञ कहा गया है; तथा सत्य पर ही सब कुछ टिका हुआ है। १००० अश्वमेध यज्ञों की अपेक्षा भी सत्य अधिक महत्वपूर्ण है (१२. १६२)।" "काम, क्रोध आदि तेरह दोषों का निरूपण और उनके नाश का उपाय बताते हुये भीष्म ने कहा कि ये सभी दोष धृतराष्ट्र के पुत्रों में वर्त्तमान थे (१२. १६३)।" "नृशंस तथा अत्यन्त नीच पुरुषों का लक्षण बताते हुये भीष्म ने कहा कि विज्ञ पुरुषों को चाहिये कि वे सदा ऐसे व्यक्तियों से बचकर रहें (१२. १६४)।" "अनेक प्रकार के पापों और उनके प्रायश्चित्तों का वर्णन करते हुये भीष्म ने बताया कि ब्राह्मणों को उनकी योग्यता के अनुसार सब प्रकार के रत्नों का दान करना चाहिये। प्रति वर्ष किया जाने वाला आग्रयण यज्ञ यदि न किया जा सके तो उसके स्थान पर प्रतिदिन वैश्वानरी इष्टि समर्पित करना चाहिये। मुख्य कर्म के स्थान पर जो गौण कर्म किया जाता है उसे अनुकल्प कहते हैं और धर्मज्ञ पुरुषों ने अनुकल्प को भी परमधर्म कहा है, क्योंकि विश्वेदेव, साध्य, ब्राह्मण, और महर्षि, इन सब ने मृत्यु से भयभीत होकर आपत्तिकाल के विषय में प्रत्येक विधि का प्रतिनिधि नियत कर दिया है। परिहास में स्त्री के पास, विवाह के अवसर पर, गुरु के हित के लिये, अथवा अपना प्राण बचाने के लिये बोला गया असत्य पाप नहीं होता। ऐसे भी तीन पाप होते हैं जिनका प्रायश्चित्त नहीं हो सकता। नीच कुल से भी उत्तम स्त्री को ग्रहण करना, विष के स्थान से अमृत उपलब्ध होने पर उसका पान कर लेना, धर्मतः दूषणीय नहीं हैं। इसी प्रकार आगे भी अनेक प्रकार के पापों और उनके प्रायश्चित्तों का उल्लेख है (१२. १६५)।" "नकुल के पूछने पर भीष्म ने खड्गोत्पत्ति विषयक कथा का वर्णन किया (१२. १६६)।" "भीष्म जी के चुप हो जाने पर युधिष्ठिर घर लौट आये और अपने चार भ्राताओं तथा विदुर जी से तीन विषयों (त्रिवर्ग : धर्म, अर्थ, और काम) पर प्रश्न किये। विदुर ने धर्म को प्रधानता दी; अर्जुन ने अर्थ को, तथा नकुल और सहदेव ने अर्थ तथा धर्म दोनों को। भीष्म ने काम को प्रधानता देते हुये कहा कि कामना से संयुक्त होकर ही ऋषिगण तपस्या में रत होते है, फल, मूल, और पत्ते चबाकर रहते हैं, तथा वायु का पान करते हुये इन्द्रियों का संयम करते हैं। युधिष्ठिर ने धर्म, अर्थ, और काम तीनों से ही अनासक्ति की प्रशंसा करते हुये मोक्ष प्राप्त करने को प्रधानता दी। उन्होंने कहा कि 'हम लोग मोक्ष के विषय में जानते ही नहीं; ब्रह्मा का कथन है कि जिसके मन में आसक्ति होती है उसे कभी भी मोक्ष प्राप्त नहीं होता।' युधिष्ठिर की बात को सुनकर वहाँ सभी लोग अत्यन्त प्रसन्न हुये और समस्त राजाओं ने युधिष्ठिर की भूरि-भूरि प्रशंसा की। तदनन्तर युधिष्ठिर ने पुनः भीष्म के पास आकर उनसे प्रश्न किया (१२. १६७)।" "युधिष्ठिर के यह पूछने पर कि किस प्रकार के व्यक्ति की मित्रता आनन्ददायक होती है, भीष्म ने उन्हें मित्र बनाने और न बनाने योग्य पुरुषों के लक्षण बताये तथा कृतघ्न गौतम की प्राचीन कथा—कृतघ्नोपाख्यान—का वर्णन किया। अन्त में भीष्म ने कृतघ्नता सम्बन्धी अपने मत भी व्यक्त किये (१२. १६८–१७३)।"

आपव = वसिष्ठ। वसु का इनके शाप से मुक्त हो चुकने का उल्लेख (१. ९८, २३)। इनके विषय में शान्तनु का गंगा से परिचय पूछना (१. ९९, १)। गंगा ने शान्तनु को बताया कि वसिष्ठ नामक मुनि ही आपव के नाम से विख्यात हैं (१. ९९, ५)। सुन्दर पूँछवाली कामधेनु गाय का अपहरण करनेवाले वसुओं को इन्होंने शाप दिया कि वे सब-के-सब मनुष्य-योनि में जन्म लेंगे (१. ९९, ३३)। महर्षि आपव समस्त धर्मों के ज्ञान में निपुण थे, उनको प्रसन्न करने की पूरी चेष्टा करने पर भी वे वसु उन मुनि श्रेष्ठ से उनका कृपा प्रसाद न पा सके (१. ९९, ३७)। "वायु का सहारा पाकर उत्तरोत्तर प्रज्वलित होते हुये अग्नि देव

ने हैहयराज को साथ लेकर महात्मा आपव के सूने एवं सुरम्य आश्रम को जलाकर भस्म कर दिया। कार्त्तवीर्य के द्वारा अपने आश्रम के जला दिये जाने पर शक्तिशाली आपव मुनि को बड़ा रोष हुआ, अतः उन्होंने कार्त्तवीर्य अर्जुन को शाप देते हुये कहा : 'अर्जुन ! तुमने मेरे इस विशाल वन को भी जलाये बिना नहीं छोड़ा, इसलिये संग्राम में तुम्हारी इन भुजाओं को परशुराम जी काट डालेंगे (१२. ४९, ४१-४३)।"

आपवोपाख्यान ('आपव' अर्थात् वसिष्ठ का उपाख्यान)—"जह्नु-पुत्री गङ्गा ने शान्तनु से वसिष्ठ (आपव) द्वारा वसुओं को शाप देने की कथा का वर्णन किया। जब पृथु (अथवा 'धर') इत्यादि वसुगण अपनी-अपनी पत्नियों के साथ, देवर्षियों से सेवित वसिष्ठाश्रम में विचरण कर रहे थे तब उन वसुओं में से एक की पत्नी ने वसिष्ठ की उस होमधेनु (नन्दिनी) नामक गाय को देखा जिसे कश्यप ने दक्षपुत्री सुरभि से उत्पन्न किया था। सम्पूर्ण कामनाओं को प्रदान करनेवाली इस नन्दिनी नामक गाय को देखकर उस वसु-पत्नी ने अपने पति द्यौस् को उसे दिखाया। द्यौस् ने उस गाय को देखते ही कहा, 'यह वरुणनन्दन-वसिष्ठ की सुन्दर गाय है। जो मनुष्य इसके स्वादिष्ट दुग्ध का पान कर लेगा वह दस सहस्र वर्षों तक जीवित रहेगा और उतने ही समय तक उसकी युवावस्था स्थिर रहेगी।' द्यौस् की बात सुनकर उनकी पत्नी ने अपनी एक सखी के लिये उस गाय को चुराने का आग्रह किया। पत्नी का वचन सुनकर द्यौस् नामक वसु ने पृथु आदि अपने भ्राताओं की सहायता से उस गाय का अपहरण कर लिया। वसिष्ठ ने आश्रम पर लौट कर जब अपनी गाय को वहाँ उपस्थित नहीं देखा तब उन्होंने दिव्य दृष्टि से यह जान लिया कि वसुओं ने उसका अपहरण किया है। फलस्वरूप क्रोध में आकर महर्षि ने वसुओं को मनुष्य-योनि में जन्म लेने का शाप दे दिया। शापग्रस्त होकर वसुओं ने वसिष्ठ के आश्रम पर आकर उन्हें प्रसन्न करने की चेष्टा की। उस समय वसिष्ठ ने उनसे कहा, 'मैंने धर आदि तुम सब वसुओं को शाप दे दिया है, किन्तु तुम लोग तो प्रतिवर्ष एक-एक करके शाप से मुक्त हो जाओगे, फिर भी, यह द्यौस्, जिसके कारण तुम सब को शाप मिला है, मनुष्य लोक में अपने कर्मानुसार अविवाहित रहकर दीर्घकाल तक निवास करेगा।' तदनन्तर गङ्गा देवी अपने नवजात शिशु को लेकर वहीं अन्तर्धान हो गईं। द्यौस् ने ही उस बालक के रूप में जन्म लिया था जिसका नाम देवव्रत हुआ जिसे कुछ लोग गाङ्गेय (भीष्म) भी कहते हैं। शान्तनु भी शोक से आतुर हो पुनः अपने नगर को लौट गये। इस उपाख्यान का वर्णन करने के पश्चात् वैशम्पायन ने बताया, मैं अब उन भारत शान्तनु के महान सौभाग्य का वर्णन करूँगा जिनका उज्ज्वल इतिहास महाभारत के नाम से विख्यात है (१. ९९)।"

आपस्तम्ब—एक ब्राह्मण। सत्यवान के लिये चिन्तित द्युमत्सेन को आश्वासन देने वाले ब्राह्मणों में इनका उल्लेख (३. २९८, १८)। तिलों का दान करके दिव्य लोक को प्राप्त हुये महर्षियों में इनका भी उल्लेख है (१३. ६६, १२)।

आपूरण—कश्यप का वंशज एक नाग : १. ३५, ६; ५. १०३, १०।

आपोद—देखिये आयोद।

आप्त—एक नाग, कश्यप का वंशज (१. ३५, ८; ५. १०३, १०)।

आभासुराः—देवों का एक वर्ग (१३. १८, ७५)। देखिये आनुशासनिकपर्वन्।

आभिषेचनिक (म्) पर्व, (१. २, ७५ : 'आभिषेचनिकं : पर्व धर्मराजस्य धीमतः') अर्थात् युधिष्ठिराभिषेक (१२. ४०, ९)।

आभीर, भारत के पश्चिमी भाग में सिन्धु नदी के तट पर बसी एक जाति के लोग थे (२. ३२, १० : शूद्राभीर), जिन्हें नकुल ने विजित किया था (वही)। ये लोग युधिष्ठिर के पास भेंट लेकर आये थे (द्यूतपर्व : २. ५१, ११-१३)। मार्कण्डेय जी यह भविष्यवाणी करते हैं कि कलियुग में आभीर, शक आदि म्लेच्छगण भारतवर्ष के विभिन्न भागों के राजा होंगे (मार्कण्डेयसमस्यापर्व : ३. १८८, ३६)। भारतवर्ष की विभिन्न जातियों की गणना के अन्तर्गत संजय द्वारा आभीरों का उल्लेख (जम्बूखण्डविनिर्माणपर्व : ६. ९, ४७; ९, ६७ : 'शूद्राभीर' । तु० की० विलसन : विष्णु पुराण, फिट्ज़वार्ड हॉल द्वारा सम्पादित, भाग २, १३३, १६७, १८४)। द्रोण द्वारा निर्मित सुपर्णव्यूह में आभीरों को ग्रीवा-भाग में खड़ा किया गया था (संशप्तकवधपर्व : ७. २०, ६; 'शूराभीरा')। शूद्रों और आभीरों से घृणा करने के कारण विनशन-तीर्थ में सरस्वती नदी अदृश्य हो गई थी (गदायुद्धपर्व : ९. ३७, १-२ : 'शूद्राभीरा')। आभीरगण पहले क्षत्रिय थे किन्तु परशुराम के भय से क्षत्रियोचित कर्त्तव्यों का परित्याग करके शूद्र बन गये थे (अनुगीतापर्व : १४. २९, १६ : 'द्रविडाऽऽभीरा')। द्वारका पर विपत्ति आने के पश्चात् स्त्रियों और बच्चों को द्वारका से इन्द्रप्रस्थ ले जाते समय इन्हीं आभीरों ने अर्जुन पर पंचनद के निकट आक्रमण करके अधिकांश स्त्रियों का अपहरण कर लिया था (मौसलपर्व : १६. ७, ४७-६३; ८, १७)।

आमरथ—भारतवर्ष का एक जनपद (६. ९, ५४)।

आम्बिकेय = धृतराष्ट्र।

आयाति, ययाति के भ्राता का नाम है (१. ७५, ३०)।

१. आयुस्, पुरूरवस् के द्वारा उर्वशी के गर्भ से उत्पन्न एक राजा, जिन्होंने स्वर्भानवी के गर्भ से नहुष आदि को जन्म दिया (१. ७५, २४. २६)। 'आयुषो नहुषः', (१. ९५, ७)। 'नहुषो नाम राजर्षिर्व्यक्तं ते श्रोत्रमागतः। तवैव पूर्वः पूर्वेषामायोर्वंशधरः सुतः ॥', (३. १७९, १३)। 'आयुषो नहुषः सुतः', (७. १४४, ५)। खड्ग-प्राप्ति की परम्परा में इनका उल्लेख, इन्हें पुरूरवस् से खड्ग की प्राप्ति हुई थी (१२. १६६, ७४) इन्होंने तपोबल से ही समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त की थी (१२. २९६, १५)। देवताओं और ऋषियों द्वारा इनके पुत्र नहुष का देवराज के पदपर अभिषिक्त किया जाना (१२. ३४२, ४४)। मांस-भक्षण का निषेध करने वाले राजाओं में इनका उल्लेख (१३. ११५, ६८)। पुरूरवस् के पुत्र तथा नहुष के पिता होने का इनका उल्लेख (१३. १४७, २७)। उन राजर्षियों में इनका भी उल्लेख है, जिनका प्रातः सायं नाम लेने से मनुष्य धर्मफल का भागी होता है (१३. १६५, ५६)।

२. आयुस्, एक मण्डूकराज, जो सुन्दरी सुशोभना का पिता था। इसने इक्ष्वाकुवंशी राजा परिक्षित् को अपनी कन्या अर्पित की थी (३. १९२, ३२)।

३. आयुस् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

आयुधिन् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

आयुर्वेद : 'आयुर्वेदस्तथाष्टाङ्गो', (२. ११, २५)। 'आयुर्वेदमधीयानाः केवलं सपरिग्रहाः। दृश्यन्ते बहवो वैद्या व्याधिभिः समभिप्लुताः ॥', (१२. २८, ४५)। 'आयुर्वेदविदो जनाः', (१२. २२४, ४६)। 'आयुर्वेदे तथैव च', (१२. ३४१, ९)। 'आयुर्वेदविदः', (१२. ३४२, ८७)।

आयोगव—शूद्र यदि वैश्य जाति की स्त्री के साथ मैथुन का आश्रय लेता है तो उससे आयोगव जाति का पुत्र उत्पन्न होता है : 'शूद्रादायोगवश्चापि वैश्यायां ग्राम्यधर्मिणः', (१३. ४८, १३)। 'वाह्यानामनुजायन्ते सैरन्ध्र्यां मागधेषु च। प्रसाधनोपचारज्ञमदासं दासजीवनम् ॥ अतश्चायोगवं सूते वागुरावन्धजीवनम् ।', (१३. ४८, १९. २०)। 'आयोगवीषु जायन्ते हीनवर्णास्तु ते त्रयः', (१३. ४८, २५)।

आयोद-धौम्यः = आयोदः धौम्यः (व० स्था०) : 'अथापरः शिष्यस्तस्यैवायोदस्य धौम्यस्योपमन्युर्नाम ।', (१. ३, ३३)। 'अथापरः शिष्यस्तस्यैवायोदस्य धौम्यस्य वेदो नाम', (१. ३, ७८)। इनके दाँत काले लोहे के समान थे (१. ३, ७१)।

आयोदः धौम्यः, एक ऋषि, जो परिक्षित-पुत्र जनमेजय के राज्यकाल में निवास करते थे। इनके, उपमन्यु, आरुणि पाञ्चाल, तथा वेद, तीन शिष्य थे (१. ३, २१. २५)।

आरट्ट, एक जाति के लोगों का नाम है। इस देश के घोड़े बहुत सुन्दर होते हैं (६. ९०, ३)। 'लोहिताक्षं महाबाहुं वृहन्तं तमरट्टजाः। महासत्त्वा महाकायाः सौवर्णस्यन्दने स्थितम्॥', (७. २३, ७७)। द्रोणाचार्य के मारे जाने पर कृतवर्मा भी कलिङ्ग, अरट्ट और वाह्लिकों की विशाल वाहिनी को साथ लेकर भाग निकला (७.१९३, १३)। 'आरट्ट नाम ते देशा नष्टधर्मा न तान्व्रजेत्', (८. ४४, ३३)। 'आरट्टा नाम वाहीका वर्जनीया विपश्चिता', (८. ४४, ३८)। 'आरट्टा नाम वाहीका न तेष्वार्यो द्व्यहं वसेत्', (८. ४४, ४१)। 'आरट्टा नाम ते देशा वाहीकं नाम तज्जलम्। ब्राह्मणापसदा यत्र तुल्यकालाः प्रजापतेः॥', (८. ४४, ४५)। 'प्रस्थला मद्रगांधारा आरट्टा नामतः खशाः। वसातिसिन्धुसौवीरा इति प्रायोऽतिकुत्सिताः॥' (८. ४४, ४७)। प्राचीन काल में लुटेरे डाकुओं ने आरट्ट देश से किसी सती स्त्री का अपहरण कर लिया था जिससे इसने उन्हें शाप दे दिया: 'सती पुरा हृता काचिदारट्टात्किल दस्युभिः' इत्यादि, (८. ४५, ११)। 'आरट्टानां पञ्चनदान् धिगस्तु,' (८. ४५, ३०. ३८)।

१. आरणेय=शुक: 'आरणेयस्ततो दिव्यं प्राप्य जन्म महाद्युतिः', (१२. ३२४, २१)। 'आरणेयस्तु शुद्धात्मा निःसंदेहः स्वकर्मकृत्', (१२. ३२५, ३९)। 'आरणेयो विशुद्धात्मा नभसीव दिवाकरः', (१२. ३२७, २९)।

२. आरणेय=आरणेयपर्वन्: 'आरणेयं ततः पर्व वैराटं तदनन्तरम्', (१. २, ५७)। =आरणेयमुपाख्यान: 'आरणेयमुपाख्यानं यत्र धर्मोऽन्वशात्सुतम्', (१. २, २०२)।

आरणेयपर्वन्, वनपर्व के ३११-३१५ अध्यायों तक आने वाले महाभारत के ५१ वें अवान्तरपर्व का नाम है। —"जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन ने यह बताया कि जयद्रथ से कृष्णा को छुड़ाने के पश्चात् पाण्डवों ने क्या किया। पाण्डव कृष्णा के साथ काम्यक वन को छोड़ कर द्वैतवन लौट आये। एक दिन एक ब्राह्मण के लिये पाण्डवों को ऐसा क्लेश उठाना पड़ा जो भविष्य के लिये सुखदायक सिद्ध हुआ। एक तपस्वी ब्राह्मण का वृक्ष में टँगा हुआ अरणि सहित मन्थन-काष्ठ एक मृग की सींग में अटक गया और वह उसे लेकर वहाँ से भाग गया। उस ब्राह्मण ने पाण्डवों से अपनी रक्षा के लिये कहा। ब्राह्मण की बात सुनकर पाण्डव तीव्र गति से उसके पीछे दौड़े। कुछ दूर जाने पर उन्हें वह मृग दिखाई पड़ा। वे सभी लोग उस पर कर्णि, नालीक, और नाराच नामक बाण छोड़ने लगे, परन्तु एक भी बाण उस मृग को बींध न सका और वह मृग सहसा अदृश्य हो गया। हतोत्साहित होकर पाण्डव-गण उस गहन वन में एक शीतल छाया वाले बरगद के नीचे बैठ गये। उस समय भीम ने कहा, 'जब प्रतिकामी के स्थान पर दूत बनकर गया हुआ दुःशासन द्रौपदी को कौरवों की सभा में दासी की भाँति बलपूर्वक खींच लाया, उस समय मैंने जो उसका वध नहीं किया उसी के कारण हम लोग ऐसे धर्म-संकट में पड़ गये हैं।' इसी प्रकार अर्जुन ने कर्ण का, और सहदेव ने शकुनि का वध न कर देने को ही वर्तमान धर्मसंकट का कारण बताया। प्यास से त्रस्त पाण्डवों के लिये युधिष्ठिर ने नकुल को किसी वृक्ष पर चढ़कर जल का पता लगाने के लिये कहा। ऐसे वृक्षों को जो जल के किनारे होते हैं, देखकर तथा सारसों की बोली भी सुनकर आसपास किसी जलाशय का नकुल को जब विश्वास हो गया तब युधिष्ठिर ने उन्हें जल लाने के लिये भेजा। सरोवर पर जाकर नकुल को उसका जल पीने की इच्छा हुई। उसी समय पहले प्रश्नों का उत्तर देकर जल पीने की आकाशवाणी हुई। नकुल ने उस वाणी की उपेक्षा करके वहाँ का जल पी लिया और पीते ही अचेत होकर गिर पड़े। इसी प्रकार सहदेव, अर्जुन, और भीम भी क्रमशः जल लाने के लिये गये और एक के बाद एक अचेत होते गये। अन्त में स्वयं युधिष्ठिर गये और उन्होंने आकाशवाणी करने वाले यक्ष के ३४ प्रश्नों का उत्तर देकर नकुल को जीवनदान देने की याचना की। युधिष्ठिर की बात सुनकर यक्ष ने कहा, 'तुमने अर्थ और काम से भी अधिक दया और समता का आदर किया है, अतः तुम्हारे समस्त भ्राता जीवित हो जायँ।' यक्ष के ऐसा कहने पर सभी पाण्डव उठ खड़े हुये और एक क्षण में ही उनकी भूख-प्यास जाती रही। अन्त में उस यक्ष ने धर्म के रूप में प्रगट होकर बताया कि वह युधिष्ठिर के पिता धर्मराज हैं। युधिष्ठिर से प्रसन्न होकर धर्म ने उनसे वर माँगने के लिये कहा। युधिष्ठिर ने कहा, 'पहला वर मैं यह माँगता हूँ कि जिस ब्राह्मण के अरणि सहित मन्थन-काष्ठ को मृग लेकर भाग गया है उसके अग्निहोत्र का लोप न हो।' धर्म ने यह बताते हुये कि उन्हीं ने मृगरूप से अरणि को चुराया था, मन्थनकाष्ठ और अरणि वापस कर दी। तदनन्तर युधिष्ठिर ने दूसरा वर अज्ञातवास की अवधि में अज्ञात बने रहने के लिये माँगा। धर्म ने उनसे कहा कि तेरहवाँ वर्ष पाण्डवगण विराट नगर में व्यतीत करेंगे और उन्हें कोई भी पहचान नहीं सकेगा। अन्त में धर्म ने युधिष्ठिर से कहा, 'तुम मेरे पुत्र हो, और विदुर ने भी मेरे ही अंश से जन्म लिया है; तुम स्वयं धर्मस्वरूप हो अतः तुम दान, तप, और सत्य आदि गुणों से सदैव संपन्न, और लोभ, मोह, तथा क्रोध को भी जीतने में सफल रहोगे। तदनन्तर धर्म अन्तर्धान हो गये और पाण्डवों ने तपस्वी ब्राह्मण को उसकी अरणि तथा मन्थनकाष्ठ वापस दे दिया। तदुपरान्त तेरहवें वर्ष अज्ञातवास करने की इच्छा से पाण्डवों ने अपने साथ रहनेवाले ब्राह्मणों से कहा, 'इस वर्ष हम लोग अज्ञात रहना चाहते हैं, इसके लिये हमें आज्ञा दें। दुष्टात्मा दुर्योधन, कर्ण, शकुनि स्वयं तथा अपने गुप्तचरों के द्वारा हम लोगों का अज्ञातवास की अवधि में पता लगाने का प्रयास करेंगे, अतः आप सब हम लोगों को अब आज्ञा दीजिये।' युधिष्ठिर की बात सुनकर धौम्य आदि ने उन्हें सान्त्वना देते हुए कहा, 'देवों को भी (इन्द्र, विष्णु, अग्नि, और्व, विवस्वत्) शत्रुओं के निग्रह के लिये अनेक बार प्रच्छन्न रहकर विपत्तियों को सहन करना पड़ा है।' तदनन्तर यति-मुनि, आदि ब्राह्मण अपने-अपने घर चले गये, और धौम्य तथा कृष्णा सहित पाण्डवगण अज्ञातवास के लिये निकले। दूसरे दिन वे सब एक कोस दूर जाकर रुक गये और अज्ञातवास आरम्भ करने लिये आपस में मन्त्रणा करने लगे (३. ३११-३१५)।"

आरण्यशास्त्र—वानप्रस्थ आश्रम सम्बन्धी विधियाँ (१. ११९, ३७)।

आरालिक—मतवाले हाथियों को वश में करनेवाला गजशिक्षक (४. २, ९)।

१. आरुणि, आयोद धौम्य ऋषि के शिष्य पाञ्चाल्य का नाम है। ये क्यारी की टूटी हुई मेड की जगह स्वयं लेट गये जिससे वहाँ का बहता हुआ जल रुक गया। गुरु द्वारा पुकारे जाने पर ये क्यारी की मेड को विदीर्ण करके उठे, इसी से इनका नाम उद्दालक पड़ा (१. ३, २२-२५. २८. ३०. ३१)।

२. आरुणि, वैनतेयों में से एक का नाम है (१. ६५, ४०)। अर्जुन केजन्मोत्सव पर इनके पधारने का उल्लेख (१. १२३, ७३)।

३. आरुणि, धृतराष्ट्र के कुल में उत्पन्न नागों में से एक का नाम है (१. ५७, १९)।

४. आरुणि—एक कौरवपक्षीय महारथी वीर, जिसने शकुनि के साथ होकर अर्जुन पर आक्रमण किया था (७. १५६, १२२)।

आरुषी, मनु की पुत्री, च्यवन मुनि की पत्नी का नाम है। इसके पुत्र का नाम और्व था। ये अपनी माँ के ऊरु से प्रगट हुये, अतः और्व कहलाये (१. ६६, ४४)।

आरोचक, भारतवर्ष के एक जनपद और वहाँ के निवासियों का नाम है (६. ५१, ७)।

आरोहण = शिव (सहस्र नामों में एक)।

आर्चीकपर्वत, एक पवित्र स्थान का नाम है। यहाँ मरुतों के उत्तम स्थान तथा देवताओं के अनेकानेक मन्दिर हैं। यहीं चन्द्रतीर्थ है जिसकी अनेक ऋषि गण उपासना करते हैं। वालखिल्य नामक वैखानस महात्मा यहीं रहते हैं जो वायुभक्षी तथा परमपावन हैं। यहाँ तीन पवित्र शिखर और तीन झरने हैं। राजा शान्तनु, शुनक, और नर-नारायण भी इस नित्य धाम में गये हैं। आर्चीकपर्वत पर निवास करते हुये महर्षियों सहित देवताओं और पितरों ने तपस्या की (३. १२५, १६-२०)।

आर्जव—इन्होंने शकुनि इत्यादि भाइयों के साथ युद्ध के आठवें दिन इरावान् पर आक्रमण किया (६. ९०, २७)।

१. आर्जुनि = अभिमन्यु : १. २२१, ६७; ६. ४७, १७; ५५, ७. १५ ; ५७, ३९ ; ६२, १५ ; ७३, २७ ; ७८, २३ ; ८१, २९ ; १००, ३१; १०१, १. ३० ; १०४, १९ ; १११, १९ ; ११६, ३१ ; ७. १४, ५२. ५४. ६२ ; ३५, ३ ; ३६, १२ (तु० की० अर्जुनावरः). १५. १९. २६. ४१ ; ३७, १३ ; ३८, १. ४. ९. १५ ; ३९, १४ ; ४१, १२. २३ ; ४३, ६ ; ४४, २. ७ ; ४५, १. १६. १९ ; ४६, ८. २०. २३-२५ ; ४७, १४ ; ४८, १३. १४. २४. ३६ ; ४९. ३७ ; १४. ६६, २३ ।

२. आर्जुनि = श्रुतकीर्ति : ३. २३५, १० (श्रुतकर्मा) ; ७. २५, ३२ (श्रुतकीर्तिन् तु द्रौपदेयम्) ; १०८, ७ ।

३. आर्जुनि = इरावत् : ७. ४१, २३ ।

आर्तायनि = शल्य ।

आर्तिमत्, एक मन्त्र का नाम है। जो, आसित, आर्तिमत् और सुनीथ मन्त्रों का दिन अथवा रात के समय स्मरण करेगा, उसे साँपों से कोई भय नहीं होगा (१. ५८, २३)।

आर्द्रा, एक नक्षत्र का नाम है। 'आर्द्रायां कृसरं दत्वा तिलमिश्रमुपोषितः। नरस्तरति दुर्गाणि क्षुरधारांश्च पर्वतान् ॥,' (१३. ६४, ८)। आर्द्रा नक्षत्र में श्राद्ध करने वाला मनुष्य क्रूरकर्मा होता है (१३. ८९, ३)। चन्द्रव्रत में इसकी गणना (१३. ११०, ९)।

आर्यक, एक प्रमुख नाग का नाम है (१. ३५, ७)। ये पृथा के पिता के नाना थे और इन्होंने भीमसेन को आठ कुण्डों का रस प्रदान किया था (१. १२८, ६४)। नागलोक के नामों के वर्णन में इनका भी उल्लेख (५. १०३, ११)। नागराज सुमुख आर्यक कौरव्य के पौत्र थे (५. १०३, १९. २३)। इन्होंने नारद को बताया कि इनका पुत्र मारा गया, और पौत्र का भी उसी प्रकार मृत्यु ने वरण किया है, अतः वह मातलिकन्या गुणकेशी को वहू बनाने की इच्छा कैसे करें (५. १०४, १४)।

१. आर्या, शिशु की माता। सप्त मातृकाओं में से एक (३. २२८, १०)। "आर्या स्त्रियों में उत्तम मानी गई हैं, ये कुमार कार्त्तिकेय की जननी हैं। मनुष्य अपनी अभीष्ट सिद्धि के लिये इनका उपर्युक्त ग्रहों से पृथक् पूजन करते हैं (३. २३०, ४१-४२)।"

२. आर्या = उमा, देखिये व० स्था०।

आर्याः—'नार्या म्लेच्छन्ति भाषाभिर्मायया न चरन्ति', (२. ५९, ११)। 'आर्या म्लेच्छाश्च', (६. ९, १३)। 'म्लेच्छाश्चार्याश्च', (६. ४३, १०८)। 'म्लेच्छाश्चान्ये बहुविधा पूर्वं ये निकृता रणे ॥ आर्याश्च पृथिवीपालाः प्रहृष्टनरवाहनाः ।', (१४. ७३, २५. २६)।

आर्यावर्त, भारतवर्ष का नामान्तर अथवा एक भारतीय प्रदेश है (१२. ३२५, १५)। (स्मृतियों के अनुसार विन्ध्य तथा हिमालय के बीच का भूभाग आर्यावर्त है)।

आर्श्यशृङ्गि—देखिये आर्ष्यशृङ्गि।

आर्ष से ऋषियों का तात्पर्य है (१२. १२, १७)।

आर्षभ—पाञ्चजन्य शंख के ऋषभ स्वर का नाम है (७. ७९, ३९)।

आर्ष्यशृङ्ग = अलम्बुष : 'आर्ष्यशृङ्गिं महेष्वासं मायाविनमरिन्दमम्', (६. ९०, ४९)।

आर्ष्यशृङ्गि, ऋष्यशृङ्ग के पुत्र अलम्बुष का नाम है। इनके द्वारा इरावत् का वध (६. ९०, ६९)। = अलम्बुष (६. १००, २३)। द्रौपदी के पाँचों पुत्रों और अभिमन्यु के साथ इनका युद्ध (६. १००, ४१; १०१, २. १०. १२. १८)। अर्जुन ने शिखण्डी से कहा कि वह द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा, तथा आर्ष्यशृङ्गि आदि को रणक्षेत्र में इस प्रकार रोक देगा जिस प्रकार तटभूमि समुद्र को आगे बढ़ने से रोक देती है (६. १०८, ५९)। इन्होंने भीष्म के साथ युद्ध करने के लिये उद्यत सात्यकि को रोका (६. १११, १)। इनका भीमसेन के साथ उसी प्रकार संग्राम हुआ जिस प्रकार राम और रावण का हुआ था (७. १०६, १६; १०८, १५)। उन राजाओं के साथ इनका भी उल्लेख है जो प्राणों तथा धन का मोह छोड़कर दुर्योधन के हितार्थ युद्ध के लिये तत्पर थे (९. २, २०)। इनकी मृत्यु पर धृतराष्ट्र का विलाप (९. २, ३९)।

१. आर्ष्टिषेण, एक ऋषि का नाम है। 'आर्ष्टिषेणाश्रमे चैषां गमनं वास एव च', (१. २, १८१)। 'भरद्वाजः कौणकुत्स्य आर्ष्टिषेणोऽथ गौतमः', (१. ८, २५)। 'अतिक्रम्य च तं पार्थं त्वार्ष्टिषेणाश्रमे वसेः', (३. १५६, १६)। 'पारगं सर्वधर्माणामार्ष्टिषेणमुपागमन्', (३. १५८, १०३)। 'आर्ष्टिषेण उवाच', (३. १५९, १६)। 'आर्ष्टिषेणाश्रमे तस्मिन् मम पूर्वपितामहाः', (३. १६०, १)। 'तत्र ह्यायाति धनद आर्ष्टिषेणो यथाब्रवीत्', (३. १६०, ६)। 'आर्ष्टिषेणाश्रमे तेषां वसतां वै महात्मनाम्', (३. १६०, १२)। 'द्रौपदीमार्ष्टिषेणाय संप्रधार्य महारथाः', (३. १६१, ३)। 'आर्ष्टिषेणस्य राजर्षेः प्राप्य भूयस्तमाश्रमम्', (३. १६२, १०)। 'आर्ष्टिषेणेन सहितः पाण्डवानभ्यवर्तत ॥ तेऽभिवाद्यार्ष्टिषेणस्य पादौ धौम्यस्य चैव ह ।', (३. १६३, १. २)। 'तेनार्ष्टिषेणेन तथानुशिष्टास्तीर्थानि रम्याणि तपोवनानि (३. १७६, २३)। 'कपालमोचन तीर्थ में आर्ष्टिषेण ने घोर तपस्या की थी (९. ३९, २५)। बलभद्र जी उस तीर्थ में भी गये जहाँ लोकपितामह ब्रह्मा ने सृष्टि की थी और जहाँ मुनिश्रेष्ठ आर्ष्टिषेण ने तपस्या करके ब्राह्मणत्व प्राप्त किया था (९. ३९, ३६)। जनमेजय के यह पूछने पर कि आर्ष्टिषेण ने तपस्या करके किस प्रकार ब्राह्मणत्व प्राप्त किया, वैशम्पायन ने बताया कि सतयुग में द्विजश्रेष्ठ आर्ष्टिषेण सदैव गुरुकुल में निवास करते हुये निरन्तर वेदशास्त्रों के अध्ययन में लिप्त रहते थे, फिर भी, न तो उनकी विद्या समाप्त हुई और न वे सम्पूर्ण वेद ही पढ़ सके। खिन्न होकर आर्ष्टिषेण ने उसी तीर्थ में जाकर अत्यन्त तपस्या की और तप के प्रभाव से उत्तम वेदों का ज्ञान प्राप्त करके वे विद्वान् ऋषि, वेदज्ञ, और सिद्ध हो गये। उस तीर्थ से प्रसन्न होकर आर्ष्टिषेण ने उसे तीन वर दिये जो इस प्रकार है : (१) जो व्यक्ति महानदी सरस्वती के इस तीर्थ में स्नान करेगा उसे अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होगा; (२) आज से इस तीर्थ में किसी को सर्प से भय नहीं होगा; (३) थोड़े समय तक ही इस तीर्थ के सेवन से मनुष्य को बहुत अधिक फल प्राप्त होगा। ऐसा कहकर आर्ष्टिषेण मुनि स्वर्ग चले गये (९. ४०, १. ३. ९)। 'गौतमस्यार्ष्टिषेणस्य गर्गस्य च महात्मनः', (१२. ३१८, ६०)। 'उद्दालक उपस्पृश्य आर्ष्टिषेणस्य चाश्रमे', (१३. २५, ५५)।

२. आर्ष्टिषेण, यम की सभा में उपस्थित रहनेवाले एक ऋषि का नाम है (२. ८, १४)।

आलम्ब, युधिष्ठिर के सभा-प्रवेश के समय उपस्थित रहनेवाले ऋषियों में से एक का नाम है (२. ४, १४)।

आलम्बायन, इन्द्र के सखा का नाम है। आलम्ब गोत्रीय चारुशीर्ष ही आलम्बायन नाम से प्रसिद्ध हुये हैं (१३. १८, ५)।

आवन्त्य (अवन्तिराज अथवा अवन्ती के निवासी)—'आवन्त्यस्त्वाभिषेकार्थमापो बहुविधास्तथा', (२. ५३, ८)। 'प्राग्ज्योतिषाधिपः शल्य

आवन्त्यौ च जयद्रथः', (५. ५५, ६३) । 'आवन्त्यकालिङ्गजयद्रथेषु चेदिध्वजे तिष्ठति बाह्लिके च', (५. ६२, १६) । 'शकुनिः सौबलः शल्यः आवन्त्योऽथ जयद्रथः । विन्दानुविन्दौ कैकेयाः काम्बोजस्य सुदक्षिणः ॥', (६. १६, १५) । 'आवन्त्यः काशिराजेन', (६. ७१, २०) । 'आवन्त्यः स बृहद्बलः', (६. ९२, २३) । 'चतुर्भिरथ नाराचैरावन्त्यस्य महात्मनः । जघान चतुरो वाहान् क्रोधसंरक्तलोचनः ॥', (६. ९२, ४०) । 'आवन्त्यः सह सौवीरैः क्रुद्धरूपमवारयत्', (७. ९५, ४५) । 'आवन्त्योऽथ जयद्रथः', (९. २, १६) । 'आवन्त्यं भीमसेनेन भक्षयन्ति निपातितम्', (११. २२, १) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ सैन्येन महता वृतौ' (२. ३१, १०) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ पाण्ड्यं श्वेतमथोत्तमम्', (२. ४४, २०) 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ दुर्मुखं चापि कौरवम्', (५. ६६, ६) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ संमतौ रथसत्तमौ (५. १६६, ६) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ केकया बाह्लिकैः सह (५. १९५, ५) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ', (६. १७, ३७; ४५, ७२; ५१, १७; ५६, ७) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ बाह्लीकः सः बाह्लिकैः', (६. ८१, ३) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्याविरावन्तमभिद्रुतौ', (६. ८१, २७) । 'आवन्त्यौ समरे क्रुद्धावभ्ययात्स परंतपौ', (६. ८६, ३३) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ बाह्लिकः सह बाह्लिकैः', (६. १०२, २४) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ काम्बोजं च सुदक्षिणम्', (६. १०८, ५८) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ सैन्धवश्च जयद्रथः', (६. ११३, १) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ पञ्चभिः पञ्चभिः शरैः', (६. ११३, ६) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ चित्रसेनश्च संयुगे', (६. ११३, २२) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ काम्बोजश्च सुदक्षिणः', (७. २०, ९) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ विराटं मत्स्यमार्च्छताम्', (७. २०, २५) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ द्रोणो द्रोणिश्च सौबलः', (७. ७४, १७) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ क्षेमधूर्तिश्च वीर्यवान्', (७. ९५, ३६) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ विराटं मत्स्यमार्च्छताम्', (७. ९५, ४३) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ राजपुत्रौ महारथौ', (८. ५, १०) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ काम्बोजं च सुदक्षिणम्', (८. ७२, १९) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ पतितौ पश्य माधवः', (११. २५, २८) । 'आवन्त्यौ च महीपालौ', (५. १९, २४) । 'आवन्त्यौ तु महेष्वासौ महासेनौ महाबलौ', (६. ८३, १२) । 'आवन्त्यौ समरे क्रुद्धावभ्ययात्स परंतपौ', (६. ८६, ३६) । 'आवन्त्यौ च महेष्वासौ कौरवं पर्यवारयन्', (६. ९४, १४) । 'अश्वत्थामा सोमदत्तश्चावन्त्यौ च महारथौ', (६. ९९, ५) । 'दुर्मर्षणं च राजेन्द्र ह्यावन्त्यौ च महारथौ', (६. १४४, ३) । 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौ नाजहुः संयुगं तदा', (६. ११४, २२) । 'एतस्मिन्नन्तरे वीरावावन्त्यौ भ्रातरौ नृप', (७. ९९, १७) । 'आवन्त्यो निहतो यत्र त्रैगर्तश्च जनाधिपः', (९. २, ३८) । 'आवन्त्यांश्च वशे कृत्वा साम्ना च भरतर्षभ', (३. २५४, १७) । 'मालवैर्दाक्षिणात्यैश्च आवन्त्यैश्च समन्वितः', (६. ८७, ६) । 'आवन्त्यान् दाक्षिणात्यांश्च', (७. ११, २६) । 'एतदालोक्यते सैन्यमावन्त्यानां महाप्रभम्', (७. ११३, ३६) । 'योऽजयत्सर्वकाम्बोजानावन्त्यान् केकयैः सह', (८. ८, १८) । 'आवन्त्येषु च वीरेषु नैवाशाम्यत वैशसम्', (९. २४, २७) ।

आवर्तन = विष्णु (सहस्र नामों में से एक) ।

आवशीराः, एक पूर्वी देश का नाम है जिसे कर्ण ने विजित किया था (३. २५४, ९) ।

आवसथ्य, तपस् के पुत्र एक अग्नि का नाम है (३. २२१, ५) ।

आवह, वायु के सात भेदों में से द्वितीय का नाम है, जो अत्यन्त तीव्र आवाज के साथ बहता है । यह सदैव सोम, सूर्य आदि ग्रहों का उदय एवं उद्भव करता है । मनीषी पुरुष शरीर के भीतर इसे 'उदान' नाम से सम्बोधित करते हैं (१२. ३२८, ३७) ।

आवेदनीय = शिव (सहस्र नामों में से एक) ।

आवेश = शिव (सहस्र नामों में से एक) ।

१. आशावह : १. १, ४२ (अनुक्रमणिकापर्व) : नीलकण्ठ की व्याख्या के अनुसार वायु जो आकाश (द्यौस् = माया, नीलकण्ठ) के बारह पुत्रों में से दसवाँ, और विवस्वत् (अर्थात् ब्रह्मन्, नील०) अर्थात् दस इन्द्रियों और मनस् के देवता, तथा ब्रह्म का पर्याय है, जो सभी 'आकाश के पुत्र' (दिवः पुत्रो) के ही रूप हैं, अथवा अधिक सम्भवतः यह सूर्य का एक रूप अथवा विवस्वत् है और ऐसी दशा में इस शब्द का रूप अनियमित प्रथमा बहुवचन होगा ।

२. आशावह (स्वयंवरपर्व : १. १८६, १९) : एक राजा (वृष्णिवंशी कहा गया है) था जो कृष्णा के स्वयंवर में उपस्थित हुआ था ।

आश्रमनिवास :—स्वर्गारोहणपर्व : १८. ६, ६९ ('तथाश्रमनिवासे तु हविष्यं भोजयेद्द्विजान्') ।

आश्रमपूजित = शिव (सहस्र नामों में से एक) ।

१. आश्रमवास (आश्रम का आवास) = आश्रमवासपर्वन् : १. २, ८० आश्रमवासाख्यं पर्व) ।

२. आश्रमवास = आश्रमवासिकपर्वन् : १. २, ३५१ (आश्रमवासाख्यं पर्व) ।

आश्रमवासपर्वन् (आश्रम-वास के वृत्तान्त से सवन्धित पर्व), आश्रमवासिकपर्व के १-२८ अध्यायों तक आनेवाले महाभारत के ९५ वें अवान्तरपर्व का नाम है । "जनमेजय के यह पूछने पर कि राज्य पर अधिकार प्राप्त कर लेने के पश्चात् पाण्डवगण महाराज धृतराष्ट्र के प्रति कैसा व्यवहार करते थे, स्वयं धृतराष्ट्र तथा गान्धारी किस प्रकार का जीवन व्यतीत करते थे, और उनके पूर्व पितामह कितने समय तक अपने राज्य पर प्रतिष्ठित रहे, वैशम्पायन ने इस प्रकार उत्तर दिया : पाण्डवगण राजा धृतराष्ट्र को ही आगे रखकर पृथ्वी का पालन करने लगे; विदुर संजय और युयुत्सु सदैव धृतराष्ट्र की सेवा में उपस्थित रहते थे; उन लोगों ने वृद्ध राजा धृतराष्ट्र के परामर्श से १५ वर्ष तक राज्य किया; कुन्ती देवी भी सदा गान्धारी की सेवा में लगी रहती थीं; द्रौपदी और सुभद्रा इत्यादि वृद्ध राजा और उनकी महारानी के प्रति अत्यन्त आदर का भाव रखती थीं; राजा युधिष्ठिर तथा अन्य पाण्डवों ने धृतराष्ट्र और उनकी रानी को प्रत्येक प्रकार के वस्त्राभूषण, सुख के साधन और भोज्यपदार्थ उपलब्ध कर दिये थे । कृपाचार्य सदैव धृतराष्ट्र ही की सेवा में रहते थे; व्यास भी नित्य प्रति उनके पास आकर बैठते और उन्हें प्राचीन देवर्षियों, पितरों और राक्षसों की कथायें सुनाया करते थे; धृतराष्ट्र की आज्ञा से विदुर उनके समस्त धार्मिक और व्यावहारिक कार्य कराया करते थे; विदुर की श्रेष्ठ नीति के कारण पाण्डव-गण अपने सामन्तों और अनुगामियों से अनेक प्रकार की श्रेष्ठ सेवायें पाते थे; धृतराष्ट्र बंदियों को मुक्त कर देते थे और प्राण-दण्ड पाये हुये अपराधियों को भी क्षमा-दान देते थे; देशाटन के समय राजा धृतराष्ट्र को युधिष्ठिर समस्त मनोवांछित वस्तुओं की सुविधा देते थे; जो विभिन्न राजा हस्तिनापुर आते थे वे पहले की ही भाँति धृतराष्ट्र की सेवा में उपस्थित होते थे; कुन्ती इत्यादि दासियों की भाँति गान्धारी की सेवा में लगी रहती थीं; केवल भीमसेन के हृदय से ही यह बात कभी दूर नहीं होती थी कि द्यूत के समय जो कुछ भी अनर्थ हुआ था वह धृतराष्ट्र की ही कुबुद्धि का परिणाम था (१५. १) ।" "धृतराष्ट्र पूर्ववत् ऋषियों द्वारा आदृत थे, ब्राह्मणों को अग्रहार (माफ़ी ज़मीन) देते थे, और पुत्रों तथा समस्त सुहृदों के श्राद्ध कर्म में जितना धन खर्च करना चाहते थे उसकी उन्हें सुविधा थी; धृतराष्ट्र पाण्डवों के प्रति अत्यधिक स्नेह रखते थे और गान्धारी भी उनका अनुसरण करती थीं; गान्धारी ने अपने पुत्रों के निमित्त विभिन्न प्रकार के श्राद्ध कर्म किये; मन्दबुद्धि दुर्योधन का स्मरण करके धृतराष्ट्र सदैव पश्चाताप करते थे और प्रतिदिन प्रातःकाल स्नान, संध्या और गायत्री जप कर लेने के पश्चात् पवित्र होकर सदैव पाण्डवों को समर में विजयी होने का आशीर्वाद देते थे । युधिष्ठिर चारों जातियों के प्रिय बन गये और धृतराष्ट्र के पुत्रों ने उनको जो कष्ट दिया था उसे भी भूल गये; युधिष्ठिर के भय से कोई भी मनुष्य कभी राजा धृतराष्ट्र और दुर्योधन

के कुकृत्यों की चर्चा नहीं करता था। फिर भी भीमसेन धृतराष्ट्र के प्रति केवल दिखावटी श्रद्धा रखते थे क्योंकि उनका हृदय सदैव धृतराष्ट्र से विमुख ही रहता था (१५. २)।" "यद्यपि युधिष्ठिर और धृतराष्ट्र के बीच जो पारस्परिक प्रेम था उसमें किसी ने कोई भी अन्तर नहीं देखा, तथापि धृतराष्ट्र भीमसेन के प्रति मन ही मन दुर्भावना रखते थे। अपने शत्रु दुर्योधन, कर्ण, और दुःशासन का स्मरण करके भीम भी अमर्ष भरे स्वरों में दुर्योधन तथा उसके भ्राताओं के प्रति आक्षेप किया करते थे। गान्धारी इन कठोर वचनों से विचलित नहीं हुई। १५ वर्षों के पश्चात्, भीमसेन के वाग्बाणों से पीड़ित धृतराष्ट्र को खेद एवं वैराग्य हुआ; युधिष्ठिर इत्यादि को इसका पता नहीं था। धृतराष्ट्र ने अपने मित्रों से अपने हृदय की बात कही; इस समय वह एक व्रत का पालन कर रहे थे जिसे उन्होंने युधिष्ठिर को नहीं बताया था; इस व्रत में वह भूमि पर सोते और मृगचर्म धारण करते थे; गान्धारी भी इसी प्रकार का व्रत कर रही थीं; ऐसे समय में उन्होंने युधिष्ठिर से अपनी रानी गान्धारी सहित वन में जाकर तपस्या करने की अनुमति माँगी। इस पर युधिष्ठिर ने विलाप करना आरम्भ किया और कहा: 'युयुत्सु को ही राजा बना दिया जाय; मैं स्वयं वन को चला जाता हूँ'। किन्तु धृतराष्ट्र का निश्चय अपरिवर्त्तित रहा; धृतराष्ट्र ने संजय और कृपाचार्य को भी युधिष्ठिर को समझाने के लिये कहा। गान्धारी का सहारा लेकर खड़े धृतराष्ट्र निर्जीव से हो गये। युधिष्ठिर को इससे अत्यन्त दुःख हुआ और उन्होंने जल से शीतल किये हुये धृतराष्ट्र के वक्ष और मुख को धीरे-धीरे पोंछा; युधिष्ठिर के रत्नौषधि सम्पन्न उस पवित्र एवं सुगन्धित कर-स्पर्श से राजा धृतराष्ट्र की चेतना लौट आई। धृतराष्ट्र ने कहा कि युधिष्ठिर का स्पर्श अत्यन्त सुख-दायक है और उन्होंने युधिष्ठिर का आलिङ्गन करके उनके मस्तक को सूँघा। यह करुण दृश्य देखकर विदुर, कुन्ती इत्यादि विलाप करने लगीं; गान्धारी ने अपने दुःख को धैर्यपूर्वक सहन किया। धृतराष्ट्र ने अपनी प्रार्थना पुनः दुहराई; उसी समय वहाँ व्यास जी आ गये (१५. ३)।" "व्यास जी ने युधिष्ठिर से धृतराष्ट्र को प्राचीन राजर्षियों के पथ का अनुसरण करने की अनुमति देने का आग्रह किया। युधिष्ठिर ने व्यास की आज्ञा मान ली; व्यास ने धृतराष्ट्र के वनगमन के कारणों पर प्रकाश डाला और उसके पश्चात् वन को चले गये। युधिष्ठिर ने कहा कि वह व्यास की आज्ञा मानेंगे, इत्यादि (१५. ४)।" "युधिष्ठिर की अनुमति पाकर धृतराष्ट्र, गान्धारी के साथ अपने भवन में गये और थोड़ा भोजन किया। तदुपरान्त धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर को राजनीति का उपदेश देना आरम्भ किया (१५. ५)।" "राजनीति के उपदेश का ही क्रम (१५. ६)।" "राजनीति का ही प्रसङ्ग: धृतराष्ट्र ने बताया कि उशनस् को ज्ञात शकट, पद्म अथवा वज्र नामक व्यूह का निर्माण करना चाहिये; और यह कहा कि तुमको भीष्म, कृष्ण, और विदुर ने कर्त्तव्यों का जो उपदेश दिया है वह एक सहस्र अश्वमेध यज्ञों और धर्मपूर्वक प्रजापालन करने के फल के बराबर है (१५. ७)।" "युधिष्ठिर ने विनम्र भाव से धृतराष्ट्र के उपदेशों को ग्रहण किया। धृतराष्ट्र ने शीघ्र विदा होने की इच्छा प्रकट की और गान्धारी ने उन्हें यह स्मरण दिलाया कि व्यास की आज्ञा मिल चुकी है और युधिष्ठिर ने भी अपनी अनुमति दे दी है अतः वे वन के लिये कब प्रस्थान करेंगे। धृतराष्ट्र ने वन जाने के पहले अपने मृत-पुत्रों और सम्बन्धियों के पारलौकिक दान के लिये कुछ धन-दान की इच्छा प्रगट की; इसके लिये उन्होंने समस्त प्रजाजनों को एकत्रित किया और राजा युधिष्ठिर ने दान की सभी सामग्रियाँ प्रस्तुत कर दीं; धृतराष्ट्र ने चारों जातियों के समस्त उपस्थित प्रजाजनों के वृहद समूह से मार्मिक शब्दों में विदा ली (१५. ८)।" "उन्होंने इस समय शान्तनु से लेकर अपने समय तक के इतिहास का सिंहावलोकन किया (१५. ९)।" "नागरिक-गण धृतराष्ट्र का मार्मिक भाषण सुनकर अत्यन्त शोकमग्न हो गये और अपनी ओर से शाम्ब नामक ब्राह्मण को धृतराष्ट्र से अपने हृदय की बात कहने का उत्तरदायित्व दिया। शाम्ब ने कहा: 'राजा दुर्योधन ने हम लोगों के साथ कोई अनुचित व्यवहार नहीं किया; हम लोग उनके द्वारा भली प्रकार शासित और रक्षित थे; हम लोगों ने राजा युधिष्ठिर के राज्य में भी सहस्त्रों वर्षों तक सुखपूर्वक जीवन व्यतीत किया; युधिष्ठिर प्राचीन काल के राजर्षि कुरु, संवरण तथा भरत के व्यवहारों का अनुसरण करते हैं; कुरुक्षेत्र के मैदान में जो भयंकर नर-संहार हुआ उसमें भी दुर्योधन, कर्ण, शकुनि अथवा आपका नहीं वरन् दैवी विधान का हाथ था जिसने १८ दिनों में भीष्म आदि के द्वारा १८ अक्षौहिणी सेना का विनाश करा दिया; पाण्डव-गण आपकी अथवा किसी भी अन्य व्यक्ति की सहायता के बिना भी शासन करने में समर्थ हैं; कुन्ती इत्यादि भी कभी प्रजाजनों के प्रतिकूल व्यवहार नहीं करेंगी।' इसके पश्चात् धृतराष्ट्र ने धीरे-धीरे उस जन-समुदाय को विदा किया और गान्धारी के साथ अपने भवन में चले गये (१५. १०)।" "तदनन्तर उस रात के व्यतीत हो जाने पर धृतराष्ट्र ने विदुर के द्वारा युधिष्ठिर को यह सूचित किया कि वह कार्त्तिक पूर्णिमा के दिन वन की यात्रा करेंगे। उन्होंने विदुर के माध्यम से युधिष्ठिर से भीष्म आदि का श्राद्ध करने के लिये धन की भी याचना की। युधिष्ठिर और अर्जुन ने विदुर के शब्दों की सराहना की, किन्तु भीम को दुर्योधन के अत्याचारों का स्मरण हो आया और उन्होंने विदुर की बातों को अस्वीकार कर दिया। अर्जुन ने भीमसेन को शान्त करने का प्रयास किया जिसकी युधिष्ठिर ने प्रशंसा की। भीमसेन ने यह कहा कि 'भीष्म इत्यादि के लिये हम लोगों को स्वयं श्राद्ध करना चाहिये और कर्ण के लिये माता कुन्ती को।' अपने भाईयों को उन अपमानों का स्मरण कराते हुये जो धृतराष्ट्र के पुत्रों द्वारा किया गया था, भीमसेन ने यह कहा 'दुर्योधन आदि भारी से भारी कष्ट में पड़ जाँय।' इस पर युधिष्ठिर ने भीमसेन को डाँट कर चुप रहने के लिये कहा (१५. ११)।" "अर्जुन ने भीम को पिछले आघात भूल जाने के लिये कहा। युधिष्ठिर ने विदुर को यह बताया कि वह भीष्म आदि के श्राद्ध के लिये धृतराष्ट्र को जितना भी धन चाहिये वह सब देने के लिये प्रस्तुत हैं। उन्होंने विदुर द्वारा धृतराष्ट्र के पास यह भी संदेश भेजा कि वह भीमसेन पर क्रोध न करें (१५. १२)।" "विदुर ने युधिष्ठिर, अर्जुन, और भीम की बातें बताया। धृतराष्ट्र ने अपना सन्तोष व्यक्त किया और कार्त्तिक-पूर्णिमा के दिन बहुत बड़ा दान करने का निश्चय किया (१५. १३)।" "धृतराष्ट्र ने भीष्म तथा अपने पुत्रों के श्राद्ध के लिये सहस्त्रों सुयोग्य और श्रेष्ठ ब्रह्मर्षियों तथा सुहृदों को निमन्त्रित किया। तत्पश्चात् उन्होंने द्रोण, भीष्म, दुर्योधन इत्यादि सबका नामोच्चारण करके सबके निमित्त पृथक्-पृथक् दान किया; युधिष्ठिर की आज्ञा से हिसाब लगाने और लिखने वाले अनेक कार्यकर्त्ता वहाँ निरन्तर उपस्थित रहकर धृतराष्ट्र से यह पूछते रहते थे कि प्रत्येक याचक को क्या दिया जाय; युधिष्ठिर के आदेश से जहाँ सौ देना था वहाँ हजार दिया गया और जहाँ हजार देना था वहाँ दस हजार। इस प्रकार धृतराष्ट्र ने पुत्रों, पौत्रों, और पितरों का तथा अपना और गान्धारी का भी श्राद्ध किया। इस प्रकार लगातार दस दिनों तक दान देकर धृतराष्ट्र पुत्रों और पौत्रों के ऋण से मुक्त हो गये (१५. १४)।" "कार्त्तिक-पूर्णिमा को धृतराष्ट्र (और गान्धारी) ने पाण्डवों को बुलाया और उनका यथायोग्य अभिनन्दन किया। तत्पश्चात् विद्वान् ब्राह्मणों से यात्राकालोचित संस्कार सम्पन्न कराकर, वल्कल और मृगचर्म धारण कर, तथा अग्निहोत्र को आगे करके पुत्र-वधुओं से घिरे हुये राजा धृतराष्ट्र राजभवन से बाहर निकले। साथ की समस्त महिलायें जोर-जोर से रोने लगीं; युधिष्ठिर और अर्जुन दुःसह दुःख से सन्तप्त हुये; कुन्ती अपने कन्धे पर गान्धारी का हाथ रक्खे हुये चल रही थीं; धृतराष्ट्र गान्धारी के पीछे थे और उनके कन्धे पर अपना हाथ रखे हुये थे; कृष्णा इत्यादि सभी धृतराष्ट्र के साथ चल पड़ीं। सभी वर्ग के नागरिक उसी प्रकार दुःखी थे जिस प्रकार अतीत में वह लोग द्यूत-क्रीड़ा के समय कौरव सभा से निकल कर वनवास के लिये पाण्डवों के प्रस्थान करने पर दुःखी हुये थे (१५. १५)।"

"धृतराष्ट्र प्रधान द्वार से नगर के बाहर निकले और वहाँ पहुँच कर उन्होंने साथ आये जन समूह को आग्रहपूर्वक विदा किया। विदुर और संजय ने धृतराष्ट्र के साथ ही वन में जाने का निश्चय कर लिया। धृतराष्ट्र ने कृप और युयुत्सु को युधिष्ठिर के हाथ सौंप दिया। कुन्ती धृतराष्ट्र के साथ ही वन को जाने लगीं, यद्यपि युधिष्ठिर ने उनको रोकने का प्रयास किया। कुन्ती ने युधिष्ठिर से सहदेव पर कभी अप्रसन्न न होने का निवेदन किया और कहा कि 'सहदेव सदा मेरे और तुम्हारे प्रति भक्ति रखता आया है।' कुन्ती ने युधिष्ठिर को कर्ण इत्यादि का भी स्मरण दिलाया। युधिष्ठिर ने भी कुन्ती को यह स्मरण दिलाया कि जब वह लोग नगर से बाहर जाने को उद्यत थे तब उसने ही विदुला की कथा का वर्णन किया था और उन लोगों ने कृष्ण के मुख से उसके ही विचार को सुनकर इस राज्य को प्राप्त किया। भीम ने भी कुन्ती को रोकते हुये यह कहा कि 'जब आपको वन में जाना ही था तब आप हमको और दुःख शोक में डूबे हुये उन माद्री कुमारों को बाल्यावस्था में वन से नगर में क्यों ले आईं'। किन्तु इसका भी कुछ प्रभाव नहीं हुआ। द्रौपदी और सुभद्रा, तथा पाण्डव भी अपने सेवकों और अन्तःपुर की स्त्रियों के साथ कुन्ती के पीछे चलने लगे। इस पर कुन्ती ने पुत्रों को सम्बोधित करते हुये (१५. १६) अपने वन जाने के कारणों पर प्रकाश डाला (१५. १७)।" "कुन्ती का वचन सुनकर पाण्डव और द्रौपदी वन जाने से विरत हुये और धृतराष्ट्र की परिक्रमा तथा अभिवादन करके घर वापस आने के लिये प्रस्थान किया। धृतराष्ट्र ने (गान्धारी और विदुर के साथ) एक बार पुनः कुन्ती को वन चलने से विरत करने का प्रयास किया किन्तु असफल रहे। पाण्डवों को निराश लौटते देख कुरुकुल की समस्त स्त्रियाँ फूट-फूट कर रोने लगीं। हस्तिनापुर नगर शोक में डूब गया; वहाँ कोई भी उत्सव नहीं मनाया जाता था। पाण्डव उत्साहविहीन हो गये। धृतराष्ट्र सन्ध्या समय गङ्गातट पर पहुँचे और वहाँ उन ब्राह्मणों के बीच विश्राम किया जिन्होंने उन्हीं की भाँति अपनी-अपनी पवित्र अग्नियों को प्रज्वलित किया था। विदुर इत्यादि की शय्या की व्यवस्था की गई। यज्ञ करने वाले ब्राह्मण तथा धृतराष्ट्र के साथ आये हुये अन्य द्विज भी यथास्थान सोये। वह रात्रि उन लोगों को ब्राह्मी-निशा के समान आनन्ददायक प्रतीत हो रही थी। रात्रि व्यतीत होने पर पूर्वाह्न काल के कृत्यों को सम्पन्न करके धृतराष्ट्र आदि अपनी यात्रा में अग्रसर हुये (१५. १८)।" "विदुर का परामर्श मानकर धृतराष्ट्र ने भागीरथी के तट पर अपना आवास बनाया; चारों वर्णों के अनेक लोग वहाँ उनसे मिलने आये और धृतराष्ट्र ने वहाँ उन सबको अपने शब्दों से प्रसन्न किया। संध्या-समय धृतराष्ट्र इत्यादि ने गङ्गा में स्नान किया; कुन्ती धृतराष्ट्र और गान्धारी देवी को गङ्गा-तट पर ले आईं। तदुपरान्त धृतराष्ट्र कुरुक्षेत्र में स्थित राजर्षि शतयूप के आश्रम पर पहुँचे। शतयूप ने उनका यथोचित सत्कार किया। शतयूप के साथ धृतराष्ट्र व्यास के आश्रम पर गये जहाँ उन्होंने व्यास द्वारा वनवास की दीक्षा ली। वहाँ से लौटकर धृतराष्ट्र पुनः शतयूप के आश्रम में रहने लगे जहाँ शतयूप ने व्यास जी की आज्ञा से धृतराष्ट्र को वन में रहने की सम्पूर्ण विधि बतलायी। धृतराष्ट्र इत्यादि तपस्या करने लगे (१५. १९)।" "वहाँ नारद इत्यादि आये और उन्होंने धार्मिक कथाओं द्वारा धृतराष्ट्र के मन को हर्षित किया। देवर्षि नारद ने उन राजाओं (सहस्रचित्य, शैलालय, पृषध्र, पुरुकुत्स, शशलोमन) का वर्णन करते हुये जिन्होंने उसी आश्रम में रहकर स्वर्ग प्राप्त किया था, धृतराष्ट्र से इस प्रकार कहा, 'गान्धारी सहित तुम भी व्यास की कृपा से यहाँ तपस्या करके दुर्लभ सिद्धि प्राप्त कर लोगे। इन्द्र के साथ रहते हुये पाण्डु सदैव तुम्हें स्मरण करते रहते हैं, और वह निश्चय ही तुम्हें कल्याण का भागी बनायेंगे। तुम्हारी और गान्धारी की सेवा करने से कुन्ती अपने पति-लोक में पहुँच जायगी। यह सब हम अपनी दिव्य दृष्टि से देख रहे हैं। विदुर महात्मा युधिष्ठिर के शरीर में प्रवेश करेंगे और संजय यहाँ से सीधे स्वर्ग चले जायेंगे।' धृतराष्ट्र इत्यादि ने नारद की प्रशंसा और स्तुति की। शतयूप ने नारद से पूछा कि राजा धृतराष्ट्र किस लोक में जायेंगे। नारद ने कहा, 'एक बार इन्द्रलोक में जाकर मैंने वहाँ राजा पाण्डु को भी देखा; वहाँ इन्द्र के मुख से मैंने सुना कि तीन वर्ष के पश्चात् धृतराष्ट्र और गान्धारी कुबेर के लोक में जायेंगे और वहाँ कुबेर से सम्मानित हो इच्छानुसार चलने वाले विमान पर बैठ कर देव, गन्धर्व, तथा राक्षसों के लोक में स्वेच्छया विचरते रहेंगे; यह देवताओं का अत्यन्त गुप्त विचार है।' यह सुनकर सभी उपस्थित सज्जन और धृतराष्ट्र भी अत्यन्त प्रसन्न हुये। इस प्रकार वे मनीषि महर्षि-गण अपनी कथाओं से धृतराष्ट्र को सन्तुष्ट करके सिद्ध गति का आश्रय ले विभिन्न स्थानों को चले गये (१५. २०)।" "धृतराष्ट्र के वन में चले जाने के पश्चात् पाण्डव तथा पुरवासी उनके लिये चिन्तित रहने लगे; केवल परिक्षित् ही किसी प्रकार उन लोगों को धैर्य बँधा पाते थे (१५. २१)।" "शोकग्रस्त होने के कारण पाण्डवों को किसी भी बात में आनन्द नहीं आता था; वह प्रतिदिन के राजकीय कार्यों से भी विरक्त हो गये थे; उन्हें सदैव कुन्ती और गान्धारी की ही चिन्ता रहती थी; इस प्रकार उन्होंने चिन्ता का निवारण करने के लिये धृतराष्ट्र के दर्शन की इच्छा से वन में जाने का निश्चय कर लिया। सहदेव ने कुन्ती की दशा पर दुःख प्रगट करते हुये उसे देखने के लिये वन में जाने का प्रस्ताव किया। कुन्ती गान्धारी और धृतराष्ट्र को देखने की इच्छा प्रगट करते हुये द्रौपदी ने भी सहदेव का अनुमोदन किया। इस प्रस्ताव को सुनकर युधिष्ठिर ने अपनी सेना को कूच करने की आज्ञा दी और रनिवास की स्त्रियों को भी वन में ले चलने के लिये विभिन्न प्रकार के वाहन और पालकियों को तैयार करने का आदेश दिया। उन्होंने यह घोषणा की कि कल सब लोग वन के लिये प्रस्थान करेंगे; नगरवासियों को भी साथ चलने की स्वीकृति दे दी गई। दूसरे दिन प्रातःकाल वे लोग वन के लिये चल पड़े और नगर के बाहर जाकर पुरवासियों की प्रतीक्षा करते हुये सब लोग पाँच दिनों तक एक ही स्थान पर रुके रहे और तदुपरान्त सब को साथ लेकर वन में गये (१५. २२)।" "उन लोगों का नायकत्व अर्जुन और कृप कर रहे थे; भीम एक विशाल हाथी पर चल रहे थे; नकुल और सहदेव द्रुतगामी अश्वों पर सवार थे, महिलायें शिविकाओं में बैठी दीन दुःखियों को असंख्य धन बाँटती हुई चल रही थीं; स्त्रियों का नेतृत्व द्रौपदी कर रही थीं। इस समय युयुत्सु और धौम्य युधिष्ठिर की आज्ञा से हस्तिनापुर में ही रहकर राजधानी की रक्षा करते रहे। सब लोग कुरुक्षेत्र पहुँचे; उन्होंने यमुना पार की और धृतराष्ट्र के आश्रम में जा पहुँचे (१५. २३)।" "वहाँ पहुँच कर पाण्डव-गण और उनके अनुगामी रथों से उतर कर पैदल चलने लगे। वहाँ के तपस्वियों ने उन्हें बताया कि उस समय धृतराष्ट्र यमुना-स्नान के लिये गये हुये हैं। तपस्वियों से यमुना का रास्ता पूछ कर सब लोग उधर बढ़े। सहदेव बड़े वेग से दौड़कर कुन्ती के पास चले गये और दोनों एक दूसरे को देखकर हर्ष के आँसू बहाते हुये रो पड़े। कुन्ती ने लोगों के आने की सूचना गान्धारी को दी और शीघ्रतापूर्वक उन पुत्र-हीन दम्पति को खींचती हुई युधिष्ठिर इत्यादि की ओर बढ़ीं। पाण्डव-गण उन्हें देखकर पैरों पर गिर पड़े और उसके बाद उन लोगों ने धृतराष्ट्र इत्यादि के हाथ से जल के भरे हुये कलश स्वयं ले लिये। युधिष्ठिर ने अपने साथ के प्रत्येक व्यक्ति को उसका नाम और गोत्र बताते हुये धृतराष्ट्र से परिचित कराया। धृतराष्ट्र परिचय पाकर अत्यन्त प्रसन्न हुये और सब को लेकर सिद्धों और चारणों से सेवित अपने आश्रम पर आये (१५. २४)।" "उस समय अनेक देशों से आये हुये तपस्वी-गण पाण्डवों के दर्शन के लिये उत्सुक थे। उन सबसे संजय ने पाण्डवों का परिचय कराया। तदुपरान्त धृतराष्ट्र ने पाण्डवों से उनका कुशल समाचार पूछना आरम्भ किया (१५. २५)।" "धृतराष्ट्र ने पाण्डवों का कुशल और उनकी पितरों तथा देवताओं के प्रति भक्ति के सम्बन्ध में पूछना आरम्भ किया। युधिष्ठिर ने भी उत्तर देने के पश्चात् विदुर के सम्बन्ध में पूछा। धृतराष्ट्र ने उन्हें बताया कि

विदुर जी कठिन तपस्या में लिप्त हैं; वह निरन्तर उपवास करते और केवल वायु पीकर ही रहते हैं। उसी समय मुख में पत्थर का टुकड़ा लिये जटाधारी कृष्णकाय विदुर दूर से आते दिखायी दिये; वह वस्त्रहीन थे और उनके समस्त शरीर में मैल जमी हुयी थी। आश्रम की ओर देखते ही विदुर जी वापस लौट पड़े और युधिष्ठिर अकेले ही उनके पीछे दौड़े। अन्त में विदुर एक स्थान पर योग अवस्था में खड़े हो गये और योग बल से उन्होंने युधिष्ठिर के शरीर में प्रवेश किया। युधिष्ठिर ने विदुर के अपने शरीर में प्रवेश करने के पश्चात् अपने में विशेष बल और गुणों का अनुभव किया; उनको अपने समस्त पुरातन स्वरूपों तथा व्यास जी के बताये योग धर्म का भी स्मरण हो आया। तदनन्तर युधिष्ठिर ने विदुर के शरीर का दाह संस्कार करने का निश्चय किया किन्तु इतने में ही यह आकाशवाणी हुई कि विदुर का दाह संस्कार करना उचित नहीं, क्योंकि उनके शरीर में युधिष्ठिर का शरीर भी है; और विदुर को सान्तानिक नामक लोक की प्राप्ति होगी। यह सुनकर युधिष्ठिर वहाँ से लौट आये और उन्होंने धृतराष्ट्र से सारी बातें कहीं। विदुर के देह त्याग का अद्भुत समाचार सुनकर वहाँ के सब लोग अत्यन्त विस्मित हुये। वह रात सब लोगों ने वृक्षों के ही नीचे व्यतीत की (१५. २६)।" "दूसरे दिन प्रातःकाल युधिष्ठिर इत्यादि धृतराष्ट्र तथा अन्य लोगों के आश्रमों को घूम-घूम कर देखने लगे। युधिष्ठिर ने तपस्वियों को अनेक प्रकार के उपहार दिये। आश्रमों में घूमने के पश्चात् युधिष्ठिर पुनः धृतराष्ट्र के आश्रम में लौट आये। कुरुक्षेत्र में रहनेवाले अनेक महर्षि, शतयूप, और व्यास भी वहाँ पधारे (१५. २७)।" "व्यास ने धृतराष्ट्र इत्यादि का कुशल समाचार पूछने के पश्चात् उन्होंने माण्डव्य मुनि के शाप से धर्म के ही विदुर के रूप में अवतीर्ण होने की कथा का वर्णन किया। उन्होंने बताया कि विदुर बृहस्पति और शुक्र से भी श्रेष्ठ थे; पूर्वकाल में ब्रह्मा की आज्ञा से व्यास ने ही विचित्रवीर्य के क्षेत्र में विदुर को उत्पन्न किया था; मन के द्वारा धर्म का धारण और ध्यान करने के कारण ही विदुर धर्म के नाम से विख्यात थे; युधिष्ठिर की उत्पत्ति भी धर्म से ही हुई थी। तदुपरान्त व्यास ने कहा कि 'मैं आज अपनी तपस्या का वह आश्चर्यजनक फल दिखाऊँगा जो अभी तक कोई भी महर्षि नहीं कर पाया है : तुम लोग यह बताओ कि मुझ से कौन सी अभीष्ट वस्तु पाना चाहते हो और किसको देखने, सुनने अथवा स्पर्श करने की तुम्हारी इच्छा है' (१५. २८)।"

आश्रमवासिकपर्व (आश्रम में निवास करने से सम्बन्धित महाभारत का १५ वाँ पर्व) : तु० की **आश्रमनिवास, आश्रमस्थान, आश्रमवास**।

आश्रमस्थ = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

आश्रमस्थान (आश्रम का आवास) : अनुक्रमणिकापर्वः १. १, ९१ (आश्रमस्थानसंश्रय)।

आश्राव्य—इन्द्र की सभा में विराजमान् होने वाले मुनि, २. ७. १८।

आश्वमेधिकपर्वन्—'ततोऽश्वमेधिकं पर्व सर्वपापप्रणाशनम्', (१. २, २९)। 'ततोऽश्वमेधिकं नाम पर्व प्रोक्तं चतुर्दशम्', (१. २, ३३८)।

आश्वलायन, विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ४, ५४)।

आश्विन् (विशेषण)—यह वैशाख से आरम्भ होनेवाले सौर वर्ष का छठवाँ मास अथवा चैत्र से आरम्भ होनेवाले वर्ष का सातवाँ मास है। आश्विन मास की द्वादशी तिथि को दिन रात उपवास करके पद्मनाभ नाम से भगवान की पूजा करनेवाला पुरुष सहस्र गोदान का पुण्यफल प्राप्त करता है (१३. १०९, १३)।

१. आश्विनेय = नकुल और सहदेव (१. १८९, २३, जहाँ 'आश्विनेय' पाठ है; ५. १३८, १७)।

२. आश्विनेय = सहदेव (२. ३१, १०)।

१. आषाढ, एक क्षत्रिय राजा था जो क्रोधवशसंज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ६३)। इसे पाण्डवों के पक्ष से रण-निमन्त्रण प्राप्त हुआ था (५. ४, १७)।

२. आषाढ = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

३. आषाढ एक मास का नाम है। इस मास में एक समय भोजन करने से स्त्री और पुरुष पुत्र और धन-धान्य से सम्पन्न होते हैं (१३. १०६, २६)। आषाढ़ मास में द्वादशी तिथि को जो उपवास करता है तथा रात-दिन वामन की पूजा करता है, वह नरमेध यज्ञ का फल प्राप्त करता हुआ महान पुण्य का भागी होता है (१३. १०९, १०)।

४. आषाढ, एक नक्षत्र का नाम है। जो मनुष्य पूर्वाषाढ-उत्तराषाढ में उपवास करके कुलीन ब्राह्मण को दधि-दान करता है, वह गोधन सम्पन्न कुल में जन्म ग्रहण करता है (१३. ६४, २५. २७)। उत्तराषाढ में पितृयज्ञ करने वाला मनुष्य शोक-शून्य होकर पृथिवी पर विचरण करता है (१३. ८९, १०)। चान्द्रव्रत में पूर्वाषाढ तथा उत्तराषाढ की स्थिति ऊरुओं में समझना चाहिये (१३. ११०, ४)।

आषाढी, आषाढ की पूर्णिमा का नाम है (१२. १७१, १७)।

आसुर : 'अष्टावेव समासेन विवाहा धर्मतः स्मृताः। ब्राह्मो दैवस्तथैवार्षः प्राजापत्यस्तथासुरः॥ गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमः स्मृतः।', (१. ७३, ८. ९)। 'विट्शूद्रेष्वासुरः स्मृतः', (१. ७३, ११)। 'पैशाच आसुरश्चैव न कर्त्तव्यौ कदाचन', (१. ७३, १२) 'आसुरीं दारुणीं मायाम्', (३. १९, १६)। 'पुरमासुरम्', (३. १७३, ३०)। 'व्यूहं दैवं गान्धर्वमासुरम्', (५. ५७, ११)। 'अस्त्रासुरोऽग्निः सततं दीप्यते', (५. ९९, ३)। 'मानुषं व्यूहं दैवं गान्धर्वमासुरम्', (६. १९, २; २०, १८)। 'राक्षसीमासुरीं चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः', (६. ३३, १२)। 'संपदमासुरीम्', (६. ४०, ४)। 'निबन्धायासुरीमता', (६. ४०, ५)। 'द्वौ भूतसर्गौ लोकेऽस्मिन् दैव आसुर एव च', (६. ४०, ६)। 'प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च जना न विदुरासुराः', (६. ४०, ७)। 'आसुरीष्वेव योनिषु', (६. ४०, १९)। 'आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मनिजन्मनि', (६. ४०, २०)। 'तान्विद्ध्यासुरनिश्चयान्', (६. ४१, ६)। 'आसुरीमिव वृत्रहा', (६. ७२, ३२)। 'दिवसे दिवसे प्राप्ते भीष्मः शान्तनवो युधि। आसुरानकरोद्व्यूहान्पैशाचानथ राक्षसान्॥', (६. १०८, १६)। 'आसुरीव यथा सेना', (७. १, २६)। 'आसुरीम् चमूम्', (७. ३६, ४३; १५९, ४३)। 'सेनामासुरीं मघवानिव', (७. १७१, ४९)। 'अस्त्राणि दिव्यानि राक्षसान्यासुराणि च', (७. १७३, ४०)। 'नैवेदं मानुषं युद्धं नासुरं न च राक्षसम्', (७. १८८, ४१)। 'चमूं वज्रहस्त इवासुरीम्', (८. १४, ३६)। 'सेनामासुरीं मघवानिव', (८. ४६, ४; ४८, ९; ४९, ६०; ७३, ५४)। 'शक्रेणेवासुरे बले', (९. १९, २१)। 'आसुरश्चैव विजयः', (१२. ५९, ३९)। 'आसुरीं योनिम्', (१२. १८०, ४६)। 'आसुरी प्रजा', (१२. २०७, २७)। 'आसुरौ गुणौ', (१२. २१६, १८)। 'आसुरीं,' (१२. २२५, ४)। 'देवासुरैः' (१२. २८१, १५)। 'आसुरो भावो', (१२. २९४, २१)। 'आसुराण्येव कर्माणि', (१२. २९४, २२)। 'आसुरान्विषयान्', (१२. ३०१, ८)। 'धर्मः प्राजापत्योऽथवाऽऽसुरः', (१३. १९, २; ४४, ७; ४५, ८. १६)। 'आसुरम्', (१३. ९०, १९)। 'आसुराणि च मास्थाभिः', (१३. ९८, २४)।

आसुरायण, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५६)।

आसुरि, एक प्राचीन ऋषि का नाम है जो सांख्यदर्शन के आचार्य कपिल एवं पञ्चशिख के गुरु थे। इन्होंने मुनियों को ब्रह्मज्ञान का उपदेश दिया था। इनकी पत्नी का नाम कपिला था (१२. २१८, १०–१९)। अन्य ऋषियों के साथ इनका उल्लेख (१२. ३१८, ६१)।

आस्तीकम् = आस्तीकपर्वन्—'पौलोमास्तीकमूलवान्', (१. १, ८८)। 'पौलोममास्तीकं चादितः स्मृतम्', (२. २, ३४)। 'पौलोममास्तीकमादिरंशावतारणम्', (१. २, ४२. ८५)। 'आस्तीके सर्वनागानां गरुडस्य च संभवः॥ क्षीरोदमथनं चैव जन्मोच्चैःश्रवसस्तथा। यजतः सर्पसत्रेण राज्ञः

पारिक्षितस्य च ॥', (१. २, ९०. ९१) । "आस्तीक (पर्व) की कथा के समय ब्राह्मणों को मधु और घी से युक्त खीर का भोजन कराना चाहिये; उस भोजन में फल-मूल की अधिकता रहनी चाहिये; और तदुपरान्त गुड़ौदन का दान करना चाहिये (१८. ६, ५७)।" देखिये १. १५, १०. ११ भी।

आस्तीक (म्) आख्यान (म्), से आस्तीक की कथा (तु० की० आस्तीकपर्वन्) का तात्पर्य है : १. १३, ४. ९; १५, ११; १६, ४; ५८, २९. ३२ ।

आस्तीकः—कुछ लोग आस्तीकपर्व से महाभारत का आरम्भ मानते हैं (१. १, ५२)। राजा जनमेजय के सर्पसत्र में तपस्या के बल-वीर्य से सम्पन्न, वेदवेदाङ्ग में पारङ्गत विद्वान् विप्रवर आस्तीक नामक ब्राह्मण के द्वारा भयभीत सर्पों की प्राण-रक्षा हुई (१. ११, १९)। 'आस्तीकेन द्विज-श्रेष्ठ श्रोतुमिच्छाम्यशेषतः', (१. १२, २)। 'श्रोष्यसि त्वं रुरो सर्वमास्तीक-चरितं महत्', (१. १२, ३)। 'आस्तीकश्च द्विजश्रेष्ठः किमर्थं जयतां वरः', (१. १३, २)। 'आस्तीकस्य पुराणर्वेर्ब्राह्मणस्य यशस्विनः', (१. ३५, ५) । 'इदमास्तीकमाख्यानं तुभ्यं शौनक पृच्छते', (१. १३, ९) । आस्तीक के पिता का नाम जरत्कारु था (१. १३, १०. ११) । इनकी माता नाग प्रवर वासुकि की बहन थी (१. १५, ३)। जनमेजय के सर्पसत्र में उपस्थित होकर महा-तपस्वी आस्तीक ने नागों को मृत्यु से बचाया था (१. १५, ६) । 'आस्तीकस्य कवेः साधोः', (१. १६, १)। ब्रह्माजी ने कहा कि जरत्कारु से विवाहित वासुकि की बहन के गर्भ से आस्तीक नाम का महातेजस्वी पुत्र उत्पन्न होगा जो जनमेजय के सर्पसत्र को बन्द कराकर धार्मिक सर्पों को अग्नि में जलने से बचायेगा (१. ३८, १३)। 'यथा तु जातो ह्यास्तीक एतदिच्छामि वेदितुम्', (१. ४०, ६)। आस्तीक का जन्म और पालन-पोषण वासुकि के घर में हुआ था। इनके नाम की व्युत्पत्ति का भी वर्णन है : 'आस्तीत्युक्त्वा गतो यस्मात्पिता गर्भस्थमेव तम्। वनं तस्मा-दिदं तस्य नामास्तीकेति विश्रुतम्', (१. ४८, १९. २०)। सर्पयज्ञ में किस प्रकार उपस्थित होकर इन्होंने बचे हुये सर्पों की रक्षा की थी, इसका वर्णन इन स्थलों पर है : १. ५३, २५; ५४, ३. १७. २३. २४. २७. २८; ५५, १; ५६, २१. २४. २५। "जनमेजय के सर्पयज्ञ में जब तक्षक नाग आकाश में ही ठहर गया तब महाराज जनमेजय को अत्यन्त चिन्ता हुई। उग्रश्रवा ने इसका कारण बताते हुये कहा कि इन्द्र के हाथ से छूटने पर नागप्रवर तक्षक भय से थर्रा उठा और उसकी चेतना लुप्त हो गई । उस समय आस्तीक ने उसे लक्ष्य करके तीन बार 'ठहर जा, ठहर जा, ठहर जा', कहा जिससे वह आकाश में उसी प्रकार ठहर गया जैसे कोई मनुष्य आकाश और पृथिवी के बीच में लटक रहा हो। तदनन्तर सभासदों के बार-बार प्रेरित करने पर राजा जनमेजय ने कहा कि आस्तीक ने जो कुछ कहा है, वही होगा और यह यज्ञकर्म समाप्त किया जाता है । तदनन्तर उस यज्ञ में पधारे हुये ऋत्विजों और सदस्यों आदि को राजा जनमेजय ने प्रचुर दक्षिणा दी। लोहिताक्ष सूत तथा शिल्पी को भी, जिसने यज्ञ के पूर्व ही यह बता दिया था कि सर्पसत्र को बन्द करने में एक ब्राह्मण निमित्त बनेगा, प्रभावशाली जनमेजय ने बहुत धन दिया। उस समय आस्तीक ने भी जनमेजय के अश्वमेध यज्ञ में सदस्य के रूप में उपस्थित होने का वचन देते हुये राजा जनमेजय से घर जाने के लिये विदा ली। यज्ञ से बचे हुये नाग, जो वासुकि के भवन में उपस्थित थे, यज्ञ बन्द होने का समाचार सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुये और आस्तीक से वर माँगने के लिये कहा। आस्तीक ने यह वर माँगा कि 'लोक में जो ब्राह्मण अथवा अन्य मनुष्य प्रसन्नचित्त होकर मेरे इस धर्ममय उपाख्यान का पाठ करे, उसे आप लोगों से कोई भय न हो।' नागों ने आस्तीक को यह वर देते हुये कहा, 'जो कोई असित, आर्तिमान, और सुनीथ मंत्रों का दिन अथवा रात्रि के समय स्मरण करेगा, उसे सर्पों से कोई भय न होगा। साथ ही जो तुम्हारा स्मरण करेगा उसे भी सर्प नहीं डसेंगे।' इस प्रकार सर्पसत्र से नागों का उद्धार करके द्विजश्रेष्ठ आस्तीक ने विवाह किया और पुत्र-पौत्रादि उत्पन्न करने के पश्चात् समय आने पर मोक्ष प्राप्त कर लिया (१. ५८, १. ५. ७-९. १५. १७. १९. २१. २४-२६. ३१)।" "जहाँ इस बात का वर्णन किया गया है कि नेत्र-ज्योति प्राप्त करके धृतराष्ट्र ने किस प्रकार अपने पुत्रों को देखा वहीं यह कथन है कि व्यास ने स्वर्ग से परीक्षित् को लाकर जनमेजय को उनका दर्शन कराया। उस समय जनमेजय ने आस्तीक मुनि से इस प्रकार कहा, 'मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मेरा यह नाना प्रकार के आश्चर्यों का केन्द्र हो रहा है, क्योंकि आज मेरे शोकों का नाश करने वाले मेरे पिता भी यहाँ उपस्थित हो गये थे।' जनमेजय की बात को सुनकर आस्तीक ने महर्षि व्यास को इसका श्रेय देते हुये सर्पसत्र का उल्लेख किया (१५. ३५, १०-१२) ।" "सौति ने कहा : यज्ञसत्र के बीच-बीच में महाभारत को सुनते हुये महाराज जनमेजय आश्चर्यचकित हो गये। सर्पों की रक्षा करने में सफल हो जाने के कारण आस्तीक भी अत्यन्त प्रसन्न हुये (१८. ५, ३२)।"

आस्तीकपर्वन्, आदिपर्व के १३-५८ अध्यायों तक आनेवाले महा-भारत के ५वें अवान्तरपर्व का नाम है। "सौति ने यह बताया कि ऋषि जरत्कारु ने किस प्रकार नागराज वासुकि की बहन से विवाह करके आस्तीक नामक उस पुत्र को उत्पन्न किया जिसने मातृशाप से ग्रसित सर्पों की जनमेजय के सर्पसत्र में भस्म होने से रक्षा की (१. १३-१५)।" "नागों, तथा गरुड और अरुण की उत्पत्ति की कथा (१. १६)।" "उच्चैः श्रवस् की उत्पत्ति की व्याख्या करते हुये सौति ने अमृत-मन्थन तथा उसके फलस्वरूप विविध रत्नों के साथ अमृत की उत्पत्ति की कथा का वर्णन किया (१. १७-१९)।" "कद्रू और विनता ने उच्चैःश्रवस् के पूँछ के रंग के सम्बन्ध में आपस में बाज़ी लगाई; अरुण के द्वारा अभिशप्त होकर विनता को कद्रू की दासी बनना पड़ा। कद्रू ने कुटिलता और छल का आश्रय लेकर अपने सहस्र पुत्रों को आज्ञा दी कि वे काले रंग के बाल बनकर उच्चैःश्रवस् की पूँछ में लग जाँय, जिससे वह काली प्रतीत होने लगे और उसे विनता की दासी न बनना पड़े। उस समय जिन सर्पों ने कद्रू की आज्ञा न मानी उन्हें उसने शाप दिया कि 'तुम सब जनमेजय के सर्पयज्ञ में भस्म हो जाओगे।' इस प्रकार कद्रू विनता से जीत गई, और पराजित विनता को कद्रू की दासी बनना पड़ा। गरुड़ अपनी माता (विनता) की सहायता के बिना ही अण्डा फोड़कर बाहर निकल आये थे। जन्म लेने पर गरुड़ की देवताओं ने स्तुति की। गरुड़ के द्वारा अपने तेज और शरीर का संकोच तथा सूर्य के क्रोधजनित तीव्र तेज की शान्ति के लिये अरुण का उनके रथ पर स्थित होना। उस समय सूर्य के ताप से मूर्च्छित हुये सर्पों की रक्षा के लिये कद्रू ने सूर्यदेव की स्तुति की, और इन्द्र द्वारा की गई वर्षा से नागों को अत्यन्त प्रसन्नता हुई। गरुड़ ने अपनी माता को दास्य-वृत्ति से मुक्त करने के लिये नागों से उपाय पूछा। नागों ने बताया कि यदि गरुड़ उनके लिये अमृत ला दें तो वे तथा उनकी माता विनता दास्य-वृत्ति से मुक्त हो जायेंगी। सर्पों की बात सुनकर गरुड़ ने अमृत के लिये प्रस्थान किया और अपनी माता की आज्ञा के अनुसार निषादों का भक्षण किया। कश्यप जी ने गरुड़ को गज और कच्छप के पूर्व जन्म की कथा सुनाई। गरुड़ ने उस हाथी और कच्छप को पकड़ कर एक वटवृक्ष की बड़ी शाखा पर लाकर रक्खा किन्तु गरुड़ के असह्य वेग से वृक्ष की वह शाखा टूट गई। उस शाखा को तोड़कर गरुड़ जब प्रसन्न मुद्रा में उसकी ओर देखने लगे, तब उनकी दृष्टि उसी शाखा में अधोमुख लटक रहे वालखिल्य नामक महर्षियों पर पड़ी। उन महर्षियों की रक्षा के लिये गरुड़ कच्छप तथा गज के साथ ही साथ उस वृक्ष की शाखा को लेकर उड़ते हुये अपने पिता कश्यप से मिले। कश्यप की प्रार्थना से वालखिल्य ऋषियों ने वृक्ष की शाखा को छोड़ कर तप के लिये प्रस्थान किया, और गरुड़ ने उस शाखा को एक निर्जन पर्वत पर ले जाकर छोड़ दिया। पूर्वकाल में वाल-खिल्यों के द्वारा इन्द्र के अभिशप्त होने के कारण देवताओं के सम्मुख

अनेक भयकारक अपशकुन प्रगट होने लगे। गरुड़ ने देवताओं के साथ युद्ध करके उन्हें पराजित किया, और अमृत लेकर लौट आये। मार्ग में उन्होंने विष्णु से वर प्राप्त किया। गरुड़ ने इन्द्र से भी मित्रता की और अमृत सहित नागों के पास आकर विनता को दासीभाव से मुक्त कराया। उसी समय इन्द्र ने अमृत का पुनः अपहरण कर लिया (१. २०–३४)।" मुख्य नागों के नाम (१. ३५)। शेषनाग की तपस्या, ब्रह्माजी से वर-प्राप्ति, तथा पृथिवी को सिर पर धारण करना (१. ३६)। माता के शाप से बचने के लिये वासुकि आदि नागों का परस्पर परामर्श (१. ३७)। वासुकि की बहन जरत्कारु का जरत्कारु मुनि के साथ विवाह करने का निश्चय और ब्रह्मा की आज्ञा से वासुकि का जरत्कारु मुनि के साथ अपनी बहन को विवाहित करने के लिये प्रयत्नशील होना (१. ३८–३९)। जरत्कारु की तपस्या; राजा परिक्षित् का उपाख्यान तथा राजा द्वारा मुनि के कन्धे पर मृतक सर्प रखने के कारण दुःखित कृश का शृङ्गी को उत्तेजित करना (१. ४०)। शृङ्गी ऋषि का राजा परिक्षित् को शाप देना, और शमीक का अपने पुत्र को शान्त करते हुये शाप को अनुचित बताना (१. ४१)। शमीक का अपने पुत्र को समझाना तथा गौरमुख को राजा परिक्षित् के पास भेजना; राजा द्वारा आत्मरक्षा की व्यवस्था तथा तक्षक नाग और काश्यप का वार्तालाप (१. ४२)। तक्षक का धन देकर काश्यप को लौटा देना और छल से राजा परिक्षित् के समीप पहुँच कर उन्हें डँसना (१. ४३)। जनमेजय का राज्याभिषेक और विवाह (१. ४४)। जरत्कारु को अपने पितरों का दर्शन और उनसे वार्तालाप (१. ४५)। जरत्कारु का शर्त के साथ विवाह के लिये उद्यत होना, और नागराज वासुकि का जरत्कारु नाम की कन्या को लेकर आना (१. ४६)। जरत्कारु मुनि का नागकन्या के साथ विवाह; नागकन्या जरत्कारु द्वारा पतिसेवा तथा पति का उसे त्याग कर तपस्या के लिये गमन (१. ४७)। वासुकि नाग की चिन्ता, बहन द्वारा उसका निवारण तथा आस्तीक का जन्म एवं विद्याध्यन (१. ४८)। राजा परिक्षित् के धर्ममय आचार तथा उत्तम गुणों का वर्णन; राजा का आखेट के लिये प्रस्थान करना और उनके द्वारा शमीक मुनि का तिरस्कार (१. ४९)। शृङ्गी ऋषि का परिक्षित् को शाप; तक्षक का काश्यप को लौटाकर छल से परिक्षित् को डँसना और पिता की मृत्यु का वृत्तान्त सुनकर जनमेजय की तक्षक से प्रतिशोध लेने की प्रतिज्ञा (१. ५०)। जनमेजय के सर्पयज्ञ का उपक्रम (१. ५१)। सर्पसत्र का आरम्भ और उसमें सर्पों का विनाश (१. ५२)। सर्पयज्ञ के ऋत्विजों की नामावली; सर्पों का भयंकर विनाश; तक्षक का इन्द्र की शरण में जाना तथा वासुकि का अपनी बहन से आस्तीक को यज्ञ में भेजने के लिये कहना (१. ५३)। माता की आज्ञा से मामा (वासुकि) को सान्त्वना देकर आस्तीक का सर्पयज्ञ के लिये प्रस्थान (१. ५४)। आस्तीक के द्वारा यजमान, यज्ञ, ऋत्विज, सदस्यगण, और अग्निदेव की स्तुति-प्रशंसा (१. ५५)। राजा का आस्तीक को वर देने के लिये तैयार होना; तक्षक नाग की व्याकुलता तथा आस्तीक का वर माँगना (१. ५६)। सर्पयज्ञ में दग्ध हुये प्रधान सर्पों का नामोल्लेख (१. ५७)। यज्ञ की समाप्ति एवं आस्तीक का सर्पों से वर प्राप्त करना (१. ५८)।

आह्वायक—पाँच प्रकार के ब्राह्मण-चाण्डालों में से एक (१२. ७६, ६)।

आहिण्डक—वैदेह जाति की स्त्री के साथ निषाद का सम्पर्क होने पर आहिण्डक का जन्म होता है (१३. ४८, २७)।

१. आहुक, एक यादव राजा का नाम है। इसे कृष्ण का पिता (?) कहा गया है (२. २, ३४)। युधिष्ठिर के सभा-भवन में प्रवेश करने के समय उपस्थित राजाओं में यह भी था (२. ४, ३०)। कृष्ण ने इसकी पुत्री का अक्रूर के साथ विवाह कराया (२. १४, ३३)। इनके सौ पुत्र थे जिनमें से प्रत्येक एक-एक देवता के समान पराक्रमी थे (२. १४, ५६)। शाल्व के विरुद्ध इन्होंने द्वारका की रक्षा की (३. १५, २३)। जब श्रीकृष्ण ने शाल्व का पीछा किया तब उन्होंने द्वारका की रक्षा का भार इन्हें ही सौंपा था (३. २०, ७; देखिये ३. २१, ११. १२ भी)। कौरवों से प्रतिशोध लेने के लिये मित्रों की गणना कराते हुये श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर से इनके नाम का भी उल्लेख किया था (३. ५१, २८)। यह उग्रसेन के पिता थे (५. १२८, ३९)। जब युद्ध में सहायता देने के लिये बलराम ने पाण्डवों के शिविर में प्रवेश किया तब अन्य राजाओं के अतिरिक्त आहुक भी उनके साथ थे (५. १५७, १८)। 'स्यातां यस्याहुकाक्रूरौ किं नु दुःखतरं ततः' (१२. ८१, १०)। 'पितुः समीपं नरसत्तमस्य मातुश्च राजश्च तथाऽऽहुकस्य', (१३. १४, ४१)। 'आहुक की आज्ञा से मदिरा आदि का निर्माण निषिद्ध कर दिया गया (१६. १, २८)।

२. आहुक, एक जाति का नाम है : 'आहुकानामधिपतिः पुरोगः सर्वसात्वताम्, महामना महावीर्यो महासत्त्वो जनार्दनः', (५. ८६, २)।

१. आहुति—जागरूथी नगरी में श्रीकृष्ण द्वारा इसकी पराजय का उल्लेख करते हुये अर्जुन का श्रीकृष्ण की स्तुति करना (३. १२, ३०)।

२. आहुति, महापुरुषस्तव में नारायण का १२. ३३८, ४ पर ९२ वाँ नाम है।

आहुतिमय = शिव : १२. २८४, १२६ (सहस्र नामों में से एक)।

इ

इक्षुमती, कुरुक्षेत्र में बहनेवाली एक नदी का नाम है जहाँ तक्षक और अश्वसेन नामक दो नाग रहा करते थे (१. ३, १४१ : कुरुक्षेत्रं च वसतां नदीमिक्षुमतीमनु । जघन्यजस्तक्षकश्च श्रुतसेनेति यः सुतः ॥)।

इक्षुमालवी, एक नदी का नाम है (६. ९, १७)।

इक्षुला, एक नदी का नाम है (६. ९, १७)।

१. इक्ष्वाकु, मनु वैवस्वत के पुत्र अथवा प्रपौत्र, एक प्राचीन राजा का नाम है। 'ययातीक्ष्वाकुवंशश्च राजर्षीणां च सर्वशः। संभूता बहवो वंशा भूतसर्गाः सुविस्तराः ॥', (१. १, ४७)। 'मरुत्तं मनुमिक्ष्वाकुं गयं भरतमेव च', (१. १, २२७)। 'ब्राह्मणा मानवास्तेषां साङ्गं वेदमधारयन् । वेनं धृष्णु नरिष्यन्तं नाभागेक्ष्वाकुमेव च ॥', (१. ७५, १५)। 'इक्ष्वाकुवंशप्रभवो राजासीत्पृथिवीपतिः । महाभिषः इति ख्यातः सत्यवाक्सत्यविक्रमः ॥', (१. ९६, १)। 'कल्माषपाद इत्येवं लोके राजा बभूव ह । इक्ष्वाकुवंशजः पार्थ तेजसाऽसदृशो भुवि ॥', (१. १७६, २)। अपत्यमीप्सितं मह्यं दातुमर्हसि सत्तम । शीलरूपगुणोपेतमिक्ष्वाकुकुलवृद्धये ॥', (१. १७७, ३४)। 'ऐलस्येक्ष्वाकुवंशस्य प्रकृतिं परिचक्षते । राजनः श्रेणिबद्धाश्च तथान्ये क्षत्रिया भुवि ॥', (२. १४, ४)। इक्ष्वाकुकुलजः श्रीमन्मित्रं चैव भविष्यति । भविष्यसि यदाऽक्षज्ञः श्रेयसा योक्ष्यसे तदा ॥', (३. ६६, २२)। 'यथा मनुर्यथेक्ष्वाकुर्यथा पूरुर्महायशाः। यथा वैन्दो महाराज तथा त्वमपि विश्रुतः ॥', (३. ८५, १२७) 'यथा चेक्ष्वाकुरभवत्सपुत्रजनबान्धवः', (३. ९४, २०)। 'इक्ष्वाकुवंशप्रभवो युवनाश्वो महीपतिः', (३. १२६, ५)। 'अयोध्यायामिक्ष्वाकुकुलोद्वहः पार्थिवः परिक्षिन्नाम मृगयामगात्', (३. १९२, ३)। 'इक्ष्वाकौ संस्थिते राजन् शशादः पृथिवीमिमाम्। प्राप्तः परमधर्मात्मा सोऽयोध्यायां नृपोऽभवत् ॥', (३. २०२, १)। 'अजो नामाऽभवद्राजा महानिक्ष्वाकुवंशजः', (३. २७४, ६)। 'पृथोस्तु राजन् वैन्यस्य तथेक्ष्वाकोर्महात्मनः', (६. ९, ६)। 'इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम्। विवस्वान्मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत् ॥', (६. २८, १, तु० की १२. ३४८, ५२)। 'मनुः प्रजानां रक्षार्थं क्षुपाद प्रददावसिम्। क्षुपाज्जग्राह चेक्ष्वाकुरिक्ष्वाकोश्च पुरूरवाः ॥', (१२. १६६, ७३)। 'इक्ष्वाकुवंशजस्तस्मा-

द्धरिणाश्वः प्रतापवान्', (१२. १६६, ७८)। 'कालमृत्युयमानां ते इक्ष्वाको-र्ब्राह्मणस्य च। विवादो व्याहृतः पूर्वं तन्नवान्वक्तुमर्हति ॥', (१२. १९९, १)। 'इक्ष्वाकोः सूर्यपुत्रस्य यद्वृत्तं ब्राह्मणस्य च', (१२. १९९, २)। 'इक्ष्वाकुरगमत्तत्र समेता यत्र ते विभो', (१२. १९९, ३५)। 'त्रेतायुगादौ च ततो विवस्वान्मनवे ददौ। मनुश्च लोकभूत्यर्थं सुतायेक्ष्वाकवे ददौ ॥ इक्ष्वाकुना च कथितो व्याप्य लोकानवस्थित।', (१२. ३४८, ५१. ५२; देखिये १२. ३४८, २९. ३४ भी)। 'मनोः प्रजापते राजन्निक्ष्वाकुरभवत्सुतः। तस्य पुत्रशतं जज्ञे नृपतेः सूर्यवर्चसः ॥ दशमस्तस्य पुत्रस्तु दशाश्वो नाम भारत।', (१३. २, ५. ६)। 'इक्ष्वाकुवंशजो राजा सौदासो वदतां वरः', (१२. ७८, १)। 'इक्ष्वाकुणा शम्भुना च श्वेतेन सगरेण च', (१३. ११५, ७४)। 'अजः प्राचीनबर्हिश्च तथेक्ष्वाकुर्महायशाः', (१३. १६५, ५८)। 'प्रसन्धेरभवत्पुत्रः क्षुप इत्यभिविश्रुतः। क्षुपस्य पुत्र इक्ष्वाकुर्महीपालो-ऽभवत्प्रभुः ॥', (१४. ४, ३)। 'तांस्तु सर्वान्महीपालानिक्ष्वाकुरकरोत्प्रभुः। तेषां ज्येष्ठस्तु विंशोऽभूत्प्रतिमानं धनुष्मताम् ॥', (१४. ४, ४)।

२. इक्ष्वाकु (बहु० काः)—इक्ष्वाकु के वंशजों और एक जाति के लोगों का नाम है। 'इक्ष्वाकवो महीपाला लेभिरे पृथिवीमिमाम', (१. १७४, १०)। 'इक्ष्वाकूणां च येनाहमनृगः स्यां द्विजोत्तम। तत्त्वतः प्राप्तमिच्छामि सर्ववेदविदांवर ॥', (१. १७७, ३३)। 'ऐलवंश्याश्च ये राजंस्तथैवेक्ष्वाकवो नृपाः। तानि चैकशतं विद्धि कुलानि भरतर्षभ ॥', (२. १४, ५)। 'अर्चयित्वा यथान्यायमिक्ष्वाकू राजसत्तमः', (३. ९८, १४)। 'इक्ष्वाकूणां विशेषेण बाहुवीर्ये न कत्थनम्', (३. ९९, ४८)। 'इक्ष्वाकूणां कुले जातः सगरो नाम पार्थिवः', (३. १०६, ७)। 'इक्ष्वाकवो यदि ब्रह्मन् दलो वा विधेया मे यदि चेमे विशोऽपि। नोत्स्रक्ष्येऽहं वामदेवस्य वाम्यौ नैवंविधाः कर्मशीला भवन्ति ॥', (३. १९२, ५८)। 'इक्ष्वाकवो हन्त चरामि वः प्रियम्', (३. १९२, ६५)। 'इक्ष्वाकवः पश्यत मां गृहीतं न वै शक्नोम्येष शरं विमोक्तुम्। न चास्य कर्तुं नाशमभ्युत्सहामि आयुष्मान् वै जीवतु वामदेवः ॥', (३. १९२, ६७)। 'इक्ष्वाकुराज्यं सुमहच्चाप्यनिन्द्ये', (३. १९२, ७०)। 'दृढाश्वः कपिलाश्वश्च चन्द्राश्वश्चैव भारत। तेभ्यः परम्परा राजन्निक्ष्वाकूणां महात्मनाम् ॥', (३. २०४, ४०)। 'इक्ष्वाकुराश्वः सुमवस्य पुत्रः स एव हन्ता द्विषतां सुगात्रि', (३. २६५, ९)। 'शिवीनिक्ष्वाकुमुख्यांश्च त्रिगर्तान् सैन्धवानपि। जघानातिरथः सङ्ख्ये बाणगोचरमागतान् ॥', (३. २७१, २८)।

३. इक्ष्वाकु (इक्ष्वाकु का वंशज अथवा इक्ष्वाकुओं का राजा) = कुवलाश्व (३. २०१, ६. १०)।

४. इक्ष्वाकु = बृहदश्व (३. २०१, ३२)।

५. इक्ष्वाकु = हर्यश्व (५. ११५, १८)।

इक्ष्वाकुकन्या (इक्ष्वाकुओं के राजा की पुत्री) = सुवर्णा (१. ९५, ३४)।

१. इक्ष्वाकुनन्दन (इक्ष्वाकुओं के राजा का पुत्र)=लक्ष्मण, दशरथ के पुत्र (३. २९०, १० : सौमित्रिः)।

२. इक्ष्वाकुनन्दन=राम, दशरथ के पुत्र (३. २८९, ८; २९१, ८)।

इक्ष्वाकुवर=मित्रसह (कल्माषपाद) (१४. ५८, १)।

इच्छा=शिव (सहस्र नामों में से एक)।

इज्य=विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

इडा (जल अथवा पृथिवी) : ३. ११४, २८।

१. इतिहास (प्राचीन कथा, प्राचीन विवरण, इतिहास)—'भारतस्येतिहासस्य', (१. १, १९)। 'इतिहासाः', (१. १, ५०)। 'इतिहासपुराणानाम्', (१. १, ६३)। इतिहासानाम्', (१. १, २६६)। 'इतिहासपुराणाभ्यां', (१. १, २६७)। 'इतिहासः', (१. २, ३६. ३९)। 'साङ्गान्सेतिहासान्', (१. ६०, ३)। 'इतिहासं', (१. ६०, २३; ६२, १९)। 'इतिहासपुराणज्ञः', (२. ५. २)। 'इतिहासं पुरातनं', (३. २८, १; २१७, ६; ४. ५१, १०; ५. ९, २, इत्यादि; ७. ५२, २०)। 'इतिहासयजुर्वेदौ', (८. ३४, ४५)। 'इतिहासपुराणार्थाः', (१२. ५०, ३६)। 'इतिहासाश्च', (१२. ५९, १४१)। वेदान् सेतिहासान्', (१२. ३२४, २५)। 'इतिहासकथनात्', (१२. ३४०, १४. ३४२, २०; १३. ५, २; ६, २, इत्यादि; १४. ६, १, इत्यादि)। तु० की० १४. जय।

२. इतिहास = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

इध्मवाह = दृढदस्यु : ३. ९९, २७; १२. २०८, २९ (दक्षिण के ऋषियों में से एक)।

इन्दु = सोम (चन्द्रमा), व० स्था०।

१. इन्द्र, देवों के अधिपति और वर्षा के देवता का नाम है जिन्हें विविध तथा विशेष रूप से 'शक्र' (देखिये व० स्था०) नाम से सम्बोधित किया गया है : अर्जुन के पिता शक्र (१. १, ११४)। 'शक्रात्साक्षाद्दिव्यमस्त्रं यथावत्', (१. १, १६३)। 'चन्द्रसूर्यौ', (१. १, १८७ ('नीलकण्ठी में शक्रसूर्यौ' पाठ है)) 'यदाश्रौषं देवराजेन दत्तां दिव्यां शक्तिं व्यंसितां माधवेन। घटोत्कचे राक्षसे घोररूपे तदा नाशंसे विजयाय संजय', (१. १, १९९) 'कर्णस्य परिमोक्षोऽत्र कुण्डलाभ्यां पुरन्दरात्', (१. २, १६६)। 'इन्द्राग्नी यत्र धर्मश्चाप्यजिज्ञासच्छिवि नृपम्', (१. २, १७३)। 'कर्णस्य परिमोक्षोऽत्र कुण्डलाभ्यां पुरन्दरात्', (१. २. २०१)। 'अकथयच्चेन्द्रविजयं', (१. २, २२४)। 'इन्द्रविजयं', (१. २, २२५)। 'अनुदर्शितश्च धर्मेण देवराज्ञा च पाण्डवः', (१. २, ३७४)। 'पूजिताः सर्वैः सेन्द्रैः', (१. २, ३७६)। १. ३, १३१. १६८. १६९ (१. ३, १४६ और बाद के श्लोकों द्वारा स्तुति करने पर इन्द्र ने तक्षक द्वारा अपहृत कर्णकुण्डलों को प्राप्त करने में उतङ्क की सहायता की)। 'देवैः सेन्द्रैः', (१. ५, ५)। जब देवों ने समुद्र-मन्थन आरम्भ किया तब इन्होंने मन्दराचल पर्वत को कच्छप की पीठ पर रक्खा (१. १८, १२)। 'वारिणा मेघजेनेन्द्रः शमयामास सर्वशः', (१. १८, २५)। समुद्र-मन्थन के समय जो ऐरावत नामक गज प्रगट हुआ उसे वज्रभृत् ने प्राप्त किया (१. १८, ४०)। 'ददौ च तं निधिममृतस्य रक्षितुं किरीटिने बलभिदथामरैः', (१. १९, ३१)। गरुड़ को इन्द्र के साथ समीकृत किया गया है (१. २३, १६)। १. २५, ७–१७ (इन मंत्रों के द्वारा कद्रू ने इन्द्र की स्तुति की)। 'हरिवाहन', (१. ३०, ३२. ३९, ४५। "प्राचीन समय में वालखिल्यों का अपमान करने के कारण इन्द्र को उन लोगों ने यह शाप दिया था कि द्वितीय इन्द्र का आविर्भाव होगा। फिर भी, कश्यप ने वालखिल्यों को शान्त किया और वे इस बात के लिये सहमत हो गये कि आगत इन्द्र (गरुड़) केवल पक्षियों के ही इन्द्र होंगे (१. ३१, १३. १४. १८. २२. ३३)।" अमृत का अपहरण करने पर इन्होंने गरुड़ पर अपने वज्र का प्रहार किया था (१. ३३, १८. १९)। पुरन्दर ने गरुड़ के साथ मित्रता करके अमृत को पुनः प्राप्त किया (१. ३४, १)। इन्होंने तक्षक की रक्षा की (१. ५३, १६)। 'शक्रस्य यज्ञः शतसंख्य उक्तः', (१. ५५, २)। 'प्रभुत्वमिन्द्रत्वसमं', (१. ५५, १४)। 'इन्द्रस्य भवने राजंस्तक्षकः', १. ५६. ५। १. ५६, ७। 'इन्द्रस्य भवने विप्रा यदि नागः स तक्षकः। तमिन्द्रेणैव सहितं पातयध्वं विभावसौ', (१. ५६, ११)। इन्होंने तक्षक को मुक्त कर दिया (१. ५६, १५)। 'इन्द्रहस्ताच्च्युतो नागः ख एव यदतिष्ठत', (१. ५८, २)। 'इन्द्रहस्ताद्विनिस्त्रस्तं', (१. ५८, ५)। "वसु ने इन्द्र से एक विमान और एक इन्द्रमाला प्राप्त की; साथ ही इन्होंने एक बाँस का स्तम्भ भी प्राप्त किया जिसे इन्होंने इन्द्र की स्तुति में खड़ा किया, और तभी से सभी राजा इन्द्र की स्तुति के लिये ऐसा ही स्तम्भ स्थापित करते हैं (१. ६३, २. ४. ६)।" उसी स्तम्भ के नीचे इन्द्र हंसरूप से प्रगट हुये (१. ६३, २१)। 'इन्द्रप्रीत्या चेदिपतिश्चकारेन्द्रमहं वसुः', (१. ६३, २९)। 'वसन्तमिन्द्रप्रासादे', (१. ६३, ३३) अर्जुन के पिता (१. ६३, ११६)। इन्द्र सहित देवताओं ने नारायण को अवतार ग्रहण करने के लिये सहमत कर लिया (१. ६४, ५४)। १. ६५, १। शक्र, आदित्यों में चतुर्थ हैं (१. ६५, १५)। 'द्वादशैवादितेः पुत्राः शक्रमुख्या नराधिपः (१. ६६, ३६)। अर्जुन के पिता (१. ६७, १११)। ब्राह्मण के वेश में इन्द्र ने

कर्ण से उसके कर्ण-कुण्डल और कवच की याचना की तथा उसके बदले कर्ण को शक्ति प्रदान की (१. ६७, १४४)। विश्वामित्र की तपस्या से भयभीत होकर इन्द्र ने (१. ७१, २०) मेनका नामक अप्सरा को उन्हें मोहित करने के लिये भेजा (१. ७१, ७२)। 'इन्द्रादीन्वीर्यसम्पन्नान्', (१. ७५, ११)। 'कारयामास चेन्द्रत्वमभिभूय दिवौकसः', (१. ७५, २९)। 'सेन्द्राः देवाः', (१. ७६, ४७)। 'कं ब्रह्महत्या न दहेदपीन्द्रम्', (१. ७६, ५२)। १. ७६, ५८। जब ये असुरों को पराजित करने के लिये निकले तब इन्होंने अपने को वायु के रूप में परिणत करके कुछ स्नान कर रहीं स्त्रियों के वस्त्रों को इधर-उधर उड़ा दिया, जिससे देवयानी और शर्मिष्ठा के बीच विवाद उठ खड़ा हुआ (१. ७८, २)। 'योगक्षेमकरस्तेऽहमिन्द्रस्येव बृहस्पतिः', (१. ८०, १०)। 'सोमस्येन्द्रस्य विष्णोर्वा यमस्य वरुणस्य च। तव वा नाहुषगृहे कः स्त्रियं द्रष्टुमर्हति ॥', (१. ८२, १२)। 'ययातिः पालयामास साक्षादिन्द्र इवापरः', (१. ८५, ५)। १. ८६; ८८, १. ३. ५। 'इन्द्रसमप्रभावः', (१. ८८, ११) 'शक्राच्च लब्धो हि वरो मयैषः', (१. ९२, ८)। 'इन्द्रप्रतिमप्रभावः', (१. ९३, ९)। 'कौतुकेनेन्द्रकल्पम्', (१. ९३, २०) 'इन्द्रविक्रमः', (१. ९४, ११)। अर्जुन के पिता (१. ९५, ६१)। 'इन्द्रो ब्राह्मणो भूत्वा भिक्षार्थी समुपागमत्', (१. १११, २७) 'देवाः सेन्द्रा देवर्षिभिः सह', (१. १२१, ८)। 'अमाद्यदिन्द्रः सोमेन दक्षिणाभिर्द्विजातयः। व्युषिताश्वस्य राजर्षेस्ततो यज्ञे महात्मनः', (१. १२१, ९)। 'इन्द्रो हि राजा देवानां प्रधान इति नः श्रुतम्', (१. १२३, २२)। अर्जुन के जन्मोत्सव पर उपस्थित देवों सहित इन्द्र को अत्यन्त हर्ष हुआ (१. १२३, ४८)। आदित्यों में सप्तम (१. १२३, ६७)। 'प्राप्याधिपत्यमिन्द्रेण यज्ञैः', (१. १२४, ११)। अर्जुन के पिता (१. १२६, २५)। शरद्वत की तपस्या से भयभीत होकर इन्द्र ने जानपदी नामक एक अप्सरा को उन्हें मोहित करने के लिये भेजा (१. १३०, ५)। 'सार्कः सेन्द्रायुधतडित्ससंध्य इव तोयदः', (१. १३५, ९)। 'ततः सविद्युत्स्तनितैः सेन्द्रायुधपुरोगमैः। आवृतं गगनं मेघैर्बलाकापंक्तिहासिभिः ॥', (१. १३६, २३)। 'हरिहयं दृष्ट्वा', (१. १३१, २४)। 'व्यक्षोभयेतां तौ सैन्यमिन्द्रवैरोचनाविव', (१. १३८, ४६)। 'धर्मादिन्द्राच्च वाताच्च सुषुवे शम्भु तानिमान्', (१. १५१, २७)। 'विक्रमं वे यथेन्द्रस्य', (१. १५३, १०)। इन्द्र ने घटोत्कच का जन्म कराया जिससे कर्ण अपने दिव्यास्त्र का घटोत्कच के ही वध के लिये प्रयोग कर ले और अर्जुन उससे बचे रह जाँय (१. १५६, ४६)। अर्जुन के पिता (१. १७०, ६५)। 'पार्थं च शक्रप्रतिमं', (१. १८८, २७)। 'शिविरिन्द्रः'. (१. १९७, २९)। 'शक्रात्मजं चेन्द्ररूपम्', (१. १९७, ४१)। शिव ने इन्हें मूर्च्छित करके पूर्वकाल के अन्य चार इन्द्रों के साथ एक गुफा में डाल दिया और यही पाँच इन्द्र पाँच पाण्डवों के रूप में अवतरित हुये (१. १९७, १२)। 'विक्रमेण च लोकांस्त्रीञ्जितवान्पाकशासनः', (१. २०२, १७)। 'इन्द्रकल्पैः', (१. २०७, ५१)। इन्द्र किस प्रकार सहस्रनेत्र हुये (१. २११, २७)। 'इन्द्रे त्रैलोक्यमाधाय ब्रह्मलोकं गतः प्रभुः', (१. २१२, २५)। 'लोकेषु सेन्द्ररुद्रेषु', (१. २२१, ९)। खाण्डव-वन की रक्षा करते हुये इन्द्र तथा अन्य देवताओं ने अग्नि की सहायता कर रहे अर्जुन तथा कृष्ण के साथ युद्ध किया (१. २२२–२२८ : १. २२३, ६; २२४, २०)। शिव को सन्तुष्ट कर लेने पर अर्जुन को इन्होंने दिव्यास्त्र प्रदान करने का वचन दिया (१. २३४, ९)। इन्द्र ने विन्दुसरस् में यज्ञ किया (२. ३, १३)। यम आदि के साथ इनकी दिव्य सभा का उल्लेख (२. ६, ११)। इन्द्रसभा का विस्तृत वर्णन (२. ७, २१)। ये ब्रह्माजी की सभा में पधारते हैं (२. ११, ५१)। राजसूय नामक महायज्ञ का अनुष्ठान करने वाले राजागण इन्द्र के साथ रहकर आनन्द भोगते हैं (२. १२, २०)। 'चतुर्थभाङ्महाराज भोजं इन्द्रसखो बली', (२. १४, २१)। वसु ने इन्द्र से एक रथ प्राप्त किया (२. २४, २८)। इन्द्रसखा भीष्मक (२. ३१, ६३)। इन्द्र आदि सम्पूर्ण देवता हरि की उपासना करते हैं (२. ३६, १८)। 'इन्द्रायुधनिभान्', (२. ५१, २२)। 'अद्रोहसमयं कृत्वा चिच्छेद नमुचेः शिरः। शक्रः साभिमता तस्य रिपौ वृत्तिः सनातनी ॥', (२ ५५, १३)। 'इन्द्रकल्पाः', (२. ६७, ३६)। 'धर्मसुतो महात्मा स्वयं चेदं कथयत्विन्द्रकल्पः', (२. ७०, ५)। ३. ९, ५। 'सुरभ्याश्चैव संवादमिन्द्रस्य च', (३. ९, ६)। ३. ९, ७. ८। इन्द्र का सुरभि के साथ वार्तालाप (३. ९, १७)। कृष्ण ने शचीपति इन्द्र को सर्वेश्वरत्व प्रदान किया (३. १२, २०)। 'विष्णुरिति विख्यात इन्द्रादवरजः', (३. १२, २५)। 'इन्द्राशनिसमस्पर्शं', (३. १२, १०६)। 'यथेन्द्रभवनं', (३. १५, १८)। 'देवाः सर्वे सेन्द्राः', (३. १९, २१)। 'ततोऽहमिन्द्रदयितं सर्वपापाणभेदनम्। वज्रमुद्यम्य तान्सर्वान्पर्वतान्समशातयम् ॥', (३. २२, १७)। 'इन्द्रप्रतिमाः', (३. २५, १)। 'देवा इवेन्द्रमुपजीवन्ति चैनम्', (३. ३४, २१)। इन्द्र आदि से अर्जुन दिव्यास्त्र प्राप्त करेंगे (३. ३६, ३४)। "यतः वृत्रासुर के भय से सम्पूर्ण देवताओं ने अपनी शक्ति इन्द्र को समर्पित कर दी थी; अतः अर्जुन को उनसे ही दिव्यास्त्र प्राप्त करने के लिये कहा गया। स्वर्गलोक के मार्ग में अर्जुन इन्द्र से मिले किन्तु इन्द्र ने उन्हें पहले शिव को सन्तुष्ट करने के लिये कहा (३. ३७, १४. ४९. ५७)।" जब अर्जुन ने शिव को संतुष्ट कर लिया तब इन्द्राणी के साथ इन्द्र ऐरावत पर बैठकर वहाँ आये (३. ४१, १३)। "इन्द्र द्वारा भेजे गये रथ में बैठकर अर्जुन स्वर्गलोक को गये, जहाँ उन्होंने इन्द्र के महल में प्रवेश करके इन्द्र से दिव्यास्त्र प्राप्त किये; लोमश ने अर्जुन को इन्द्र के साथ बैठे हुये देखा (३. ४२–४७ : ३. ४२, ११; ४३, १२; ४७, ४)।" नारद ने इन्द्र को दमयन्ती के स्वयंवर का समाचार दिया जिसे सुनकर लोकपालों सहित इन्द्र वहाँ गये (३. ५४)। इन्द्रादि देवों ने दूत के रूप में नल को दमयन्ती के पास भेजा (३. ५५, ४)। 'देवाश्चेन्द्रपुरोगमाः', (३. ५६, २०)। इन्द्र ने नल को एक वरदान दिया (३. ५७, ३६)। ३. ५८, ४। 'इन्द्रसमवीर्येण', (३. ८०, ३)। अर्जुन को इन्द्र से अस्त्र प्राप्त करने के लिये भेजा गया (३. ८६, ७)। 'एतस्मिन्नेव चार्थेऽसौ इन्द्रगीता युधिष्ठिर। गाथा चरति लोकेऽस्मिन्गीयमाना द्विजातिभिः ॥', (३. ९०, ६)। इन्द्र ने देवों सहित विशाखयूप में तप किया (३. ९०, १५)। अर्जुन ने इनसे अस्त्र प्राप्त किये (३. ९१, १३)। 'इन्द्रस्य वचनात्', (३. ९२, ८)। 'इन्द्र तुल्यम्', (३. ९६, ५)। देवों के तेज से युक्त होकर इन्द्र ने त्वष्टा द्वारा दधीचि की अस्थियों से निर्मित वज्र से वृत्रासुर का वध किया (३. १००–१०३ : ३. १०१, १६)। 'ददर्श पुत्रं दिवि देवं यथेन्द्रम्', (३. ११३, १९)। अर्जुन कार्तवीर्य ने इन्द्र को युद्ध के लिये ललकारा जिससे भयभीत होकर इन्द्र ने विष्णु के साथ कार्तवीर्य के विनाश के सम्बन्ध में परामर्श किया (३. ११५, १७)। युधिष्ठिर ने इन्द्रायतन का दर्शन किया (३. ११८, ११)। "देवगणा यथेन्द्रम्', (३. ११८, २१)। 'अस्त्रार्थमिन्द्रस्य गतं च पार्थं निवेशनं हृष्टमनाः शशंस', (३. ११८, २२)। देवों सहित इन्द्र ने यज्ञ किये (३. १२१, २)। अश्विभ्यां सह कौशिकः (३. १२१, २२)। "शर्याति के यज्ञ में च्यवन ऋषि ने इन्द्र पर कुपित होकर उनके वज्र को स्तम्भित कर दिया और उनको मारने के लिये मदासुर को उत्पन्न किया। मदासुर इन्द्र का भक्षण करने के लिये उनकी ओर दौड़ा, जिससे भयभीत होकर इन्द्र ने अश्विनीकुमारों को भी यज्ञभाग प्राप्त करने में सम्मिलित कर लिया (३. १२४, ८. ९. १२. १६)। 'एतत्प्रस्रवणं पुण्यमिन्द्रस्य', (३. १२५, २३)। मान्धातृ ने इन्द्र की तर्जनी को चूसने के पश्चात् इन्द्र का आधा सिंहासन प्राप्त कर लिया (३. १२६, ३१. ३८)। 'ययातिर्बहुरत्नैर्यैत्रेन्द्रो मुदमभ्यगात्', (३. १२९, १२)। बाज के रूप में इन्द्र और कपोत के रूप में अग्नि ने उशीनर की परीक्षा ली (३. १३०, २३; १३१, २९)। 'इन्द्रोऽपि नित्यं नमते ब्राह्मणानाम्', (३. १३३, २)। 'द्वाविन्द्राग्नी चरतो वै सखायौ', (३. १३४, ९)। यवक्रीत की तपस्या से भयभीत होकर इन्द्र ने एक ब्राह्मण का रूप धारण करके उन्हें तपस्या से विरत कर दिया (३. १३५, १७. १८. २२. ३०. ३६. ३८. ४१)। 'देवाः सेन्द्रपुरोगमाः', (३. १३८, २७)। 'इन्द्रस्य जाम्बूनदपर्वताद्रे शृणोमि घोषं

तव देवि गंगे', (३. १३९, १६)। इन्द्र के लिये विष्णु ने इन्द्रपद की अभिलाषा रखने वाले नरकासुर का वध किया (३. १४२, १७. १८)। 'लाङ्गूलमिन्द्राशनिसमस्वनम्', (३. १४६, ७०)। 'इन्द्रायुधमिवोच्छ्रितम्', (३. १४७, २०)। 'सेन्द्राशनिरिवेन्द्रेण विसृष्टा वातरंहसा', (३. १६०, ७५)। 'देशकालान्तरप्रेप्सुः कृत्वा शक्रः पराक्रमम्। संप्राप्तस्त्रिदिवे राज्यं वृत्रहा वसुभिः सह ॥', (३. १६२, ५)। इन्द्र और कुबेर मन्दराचल पर्वत पर निवास करते हैं (३. १६३, ५)। इन्द्र के प्रासाद में अर्जुन ने दिव्यास्त्र प्राप्त किये (३. १६४, १६)। अर्जुन इन्द्र के रथ में बैठकर स्वर्गलोक से लौटे; दूसरे ही दिन इन्द्र भी पाण्डवों के पास आये (३. १६५, ७. १३)। इन्द्र की आज्ञा से अर्जुन ने निवातकवचों का तथा हिरण्यपुर निवासियों का विनाश किया (३. १६७; १६८, ९. २५. २८; १६९, २४; १७०, २८; १७१, ७)। इन्द्र ने अर्जुन को एक सुवर्णहार, देवदत्त नामक शङ्ख, और एक अभेद्य कवच प्रदान किया (३. १७४, ५. ७. ९)। 'वनेषु तेष्वेव तु ते नरेन्द्राः सहार्जुनेनेन्द्रसमेन वीराः', (३. १७६, २)। 'अयमेव विधाता हि यथैवेन्द्रः प्रजापतिः', (३. १८५, १६)। 'अग्निमुखा देवाः सेन्द्राः सह मरुद्गणाः', (३. १८६, ३०)। 'त्रयाणामपि लोकानामिन्द्रो लोकाधिपोऽभवत्', (३. १९३, ६)। इन्द्र ने एक बाज़ के रूप में और अग्नि ने एक कपोत के रूप में राजा शिवि की परीक्षा ली (३. १९७, १. २. १४)। सोम, अग्नि, और वरुण के साथ, इन्द्र ने विष्णु की पूजा की (३. २०१, १८)। 'इन्द्रोऽप्येषां प्रणमते', (३. २०६, २२)। 'शिवं नाभ्यां बलादिन्द्रं वाय्वग्नी प्राणतोऽसृजत्', (३. २२०, ७)। 'इन्द्रेण सहितं यस्य हविराग्रयणं स्मृतम्', (३. २२१, १३)। केशिन् से देवसेना को मुक्त करके उसे ब्रह्मा के पास ले गये और ब्रह्मा ने स्कन्द को देवसेना का पति बनाया (३. २२३; २२४, ५. ७. १०)। स्कन्द का सामना करने का इन्द्र ने साहस नहीं किया (३. २२६, १७)। स्कन्द को देखकर इन्द्र भयभीत हुये और करबद्ध उनकी शरण में गये (३. २२७, १८)। "स्कन्द के पूछने पर ऋषियों ने बताया कि सन्तुष्ट होने पर इन्द्र समस्त प्राणियों को बल, तेज, सन्तान और सुख की प्राप्ति कराते हैं; सूर्य के अभाव में वे स्वयं ही सूर्य होते हैं, और चन्द्रमा के न रहने पर स्वयं ही चन्द्रमा बनकर उनके कार्य का सम्पादन करते हैं; आवश्यकता पड़ने पर वे ही अग्नि, वायु, पृथिवी, और जल का स्वरूप धारण कर लेते हैं। शक्र के नेतृत्व में देवताओं ने स्कन्द से देवों का इन्द्र बनने के लिये कहा, किन्तु स्कन्द ने केवल देव-सेनापति बनना ही स्वीकार किया और देवसेना के साथ विवाह किया (३. २२९, ७-९. १२-१४. १६. १९. २०)।" 'एवं सेन्द्रं जगत् सर्वं श्वेतपर्वतसंस्थितम्', (३. २३१, २७)। 'विद्युता सहितः सूर्यः सेन्द्रचापे घने यथा', (३. २३१, ३२)। जब देव-दानव युद्ध में स्कन्द ने महिषासुर का वध कर दिया, तब इन्द्र ने उनकी प्रशंसा की (३. २३१, ८६. १०४)। स्कन्द को इन्द्र के साथ समीकृत किया गया है (३.२३२,१६)। 'धर्मानिलेन्द्रप्रभवान् यमौ च', (३.२३६,५)। इन्द्र की आज्ञा से गन्धर्वों ने धार्तराष्ट्रों को बन्दी बनाया (३.२४४,१५)। 'उवाच सुरेश्वरः', (३. २४६, ५)। 'इन्द्रः सहितो देवैः', (३. २६०, ७)। 'विजह्रुरिन्द्रप्रतिमाः कञ्चित्कालमरिन्दम', (३.२६४, ३)। 'सन्नह्यध्वं सर्व इवेन्द्रकल्पा', (३.२६९, १८)। 'पार्थाः पञ्च पञ्चेन्द्रकल्पाः', (३.२७०, २१)। इन्द्र तथा अन्य देवों ने पृथिवी पर अवतार लेकर वानरों और रीछों को जन्म दिया (३.२७६, ६)। 'तयोर्युद्धमभूद्घोरं हरिराक्षसवीरयोः। जिगीषतोर्युधाऽन्योन्यमिन्द्रप्रह्लादयोरिव', (३. २८६, १२)। 'जित्वा वज्रधरं सङ्ख्ये सहस्राक्षं शचीपतिम्', (३. २८८, ३)। 'असकृद्धि त्वया सेन्द्रास्त्रासितास्त्रिदशा युधि', (३.२८९, ३१)। 'शूलमिन्द्राशनिप्रख्यं', (३.२९०,२१)। 'शक्रश्चाग्निश्च', (३. २९१, १८)। 'अस्मिन्मार्गे निषीदेयुः सेन्द्राऽपि ससुरासुराः', (३. २९२, ३)। जब सूर्य को यह निश्चित रूप से पता चल गया कि इन्द्र कर्ण से उसका कवच और कुण्डल माँगना चाहते हैं तब उन्होंने कर्ण को इन्द्र से एक दिव्यास्त्र माँगने का परामर्श दिया (३. ३०१, १८)। इन्द्र ने ब्राह्मण के वेश में जाकर कर्ण से उसका कवच और कुण्डल माँगने के पश्चात् उसे एक दिव्यास्त्र दिया (३. ३०९, २५; ३१०, ३१)। इन्द्र ने निषध पर्वत पर जाकर उस समय तक गुप्त रूप से निवास किया जब तक कि उन्होंने अपने समस्त शत्रुओं का विनाश नहीं कर लिया (३. ३१५, १३)। ७) 'इन्द्रो वृत्रवधेनैव महेन्द्रः समपद्यत', (५. १३४, २४)। 'जयन्वा वध्यमानो वा प्राप्नोतीन्द्रसलोकताम्', (५. १३५, १४)। 'इन्द्रायुधसवर्णश्च', (५. १४१, २६)। 'इन्द्रकेतुप्रकाशाः', (५.१४२, ४)। 'इन्द्रस्यापि भयं ह्येते जनयेयुर्महाहवे', (५. १५१, ४१)। 'देवान् सेन्द्रानपि समागमे', (५.१५३, ५)। 'साक्षादिन्द्रसखस्य वै', (५.१५८, १)। 'पराक्रमं यथेन्द्रस्य', (९. १६६, २)। 'देवाः सेन्द्रगणास्तथा', (५. १७८, ८३)। 'इन्द्राशनिसमस्पर्शा', (५. १८४, ५)। इनका बिन्दुसरस् में यज्ञ करने का उल्लेख (६. ६, १९)। 'तत्रेष्ट्वा तु गतः सिद्धिं सहस्राक्षो महायशाः', (६. ६, ४५)। 'अत्रते कीर्तयिष्यामि वर्षं भारत भारतम्। प्रियमिन्द्रस्य देवस्य मनोर्वैवस्वतस्य च ॥', (६. ९, ५)। 'इन्द्रसमकर्माणं', (६. १४, ४८)। देव, पितर, गन्धर्व आदि इन्द्र के साथ युद्ध देखने के लिये युद्धभूमि में आये (६. ४३, १०)। 'व्यूहः क्रौञ्चारुणो नाम सर्वशत्रुनिबर्हणः। यं बृहस्पतिरिन्द्राय तथा देवासुरेऽब्रवीत् ॥', (६.५०, ४०)। 'इन्द्रायुधसवर्णाभिः पताकाभिरलङ्कृतः', (६ ५०, ४४)। 'यथेन्द्रस्य महाराज महत्या देवसेनया', (६. ५४, ११)। 'व्यचरत्समरे मृद्नन् गजानिन्द्रो गिरीनिव', (६. ६२, ४९)। 'यमदण्डोपमां गुर्वीमिन्द्राशनिसमस्वनाम्। अपश्याम महाराज रौद्रां विशसनीं गदाम् ॥', ६. ६२, ६१; ६३, १९। 'इन्द्राशनिसमस्वनम्', (६. ६४, ६२)। 'सेन्द्रैः सुरैः सर्वैः', (६. ६६, १८)। 'इन्द्रायुधसवर्णं तु विस्फार्य सुमहद्धनुः', (६. ७४, ९)। 'यथेन्द्रस्य रणपूर्वं नमुचिर्दैत्यसत्तमः', (६. ८३, ४०)। 'अभिदुद्रुवतुर्हृष्टौ तव सैन्यं विशांपते। यथा दैत्यचमूं राजन्निन्द्रोपेन्द्राविवामरौ ॥', (६. ८३, ५७)। चापमिन्द्राशनिसमप्रभम्', (६. ९१, २३)। 'बाणमिन्द्राशनिसमप्रभम्', (६. ९२, १६)। चापमिन्द्राशनिसमस्वनम्', (६. ९४, २)। 'धनुश्चित्रमिन्द्राशनिसमस्वनम्', (६. ९४, ३३)। 'राक्षसं क्रूरकर्माणं यथेन्द्रस्तारकं पुरा', (६. ९५, १८)। 'चापमिन्द्राशनिसमप्रभम्', (६. ९५, ७०)। 'रणे जेतुं सेन्द्रानपि सुरासुरान्', (६. ९७, ३७)। 'सेन्द्रानपि रणे देवान् जयेयं जयतां वर', (६. १०७, ४३)। 'सेन्द्रैरपि सुरासुरैः', (६.१०७, ७५.७६)। 'इन्द्रध्वज इवोत्सृष्टः केतुः सर्वधनुष्मताम्', (६. ११९, ९१)। 'संपूज्यमानः कुरुभिर्महात्मा रथर्षभो देवगणैर्यथेन्द्रः', (७. २, ३५)। 'जहीन्द्रो दानवानिव', (७.६, ८)। 'सेन्द्रैर्देवासुरैरपि', (७. १२, २१)। अर्जुन ने इन्द्र इत्यादि से अस्त्र प्राप्त किये (७. १२, २३)। 'सेन्द्रैरपि सुरासुरैः', (७. १२, २८)। 'इन्द्रध्वजाविव', (७. १५, २९)। 'सैन्यमिन्द्रवैरोचनाविव', (७. २१, ४) 'दानवा इवेन्द्रेण वध्यमानाः', (७. २१, ६५)। 'इन्द्रायुधसवर्णास्तु कुन्तीभोजो हयोत्तमैः', (७; २३, ४६)। 'इन्द्राशनिसमस्पर्शा इन्द्रगोपकसन्निभाः', (७. २३, ५६)। 'सेन्द्रा इव दिवौकसः', (७. २३, ८०)। 'सहानीकं यथेन्द्राग्नी पुरा बलिम्', (७. २५, २०)। 'पाड्यमिन्द्रामिवायान्तमसु ान् प्रति दुर्जयम्', (७. २५, ५७)। 'इन्द्रादनवरः संख्ये', (७. २७, ४)। इन्द्र इव प्रभुः', (७. २८, २४)। 'लोकेषु सेन्द्ररुद्रेषु', (७. २९, ३६)। निहत्य तं नरपतिमिन्द्रविक्रमं सखायमिन्द्रस्य तदैन्द्रिराहवे', (७. २९, ५१)। 'प्रियमिन्द्रस्य सततं सखायम्', (७. ३०, १)। 'भृशं विजघ्नतुः पार्थमिन्द्रं वृत्रबलाविव', (६. ३०, ९)। 'इन्द्रध्वजाविवोत्सृष्टौ रणमध्ये परन्तपौ', (७. ४९, १२)। 'इन्द्रविष्णुसमद्युतिः', (७. ५२, ३४)। इन्द्र सहित देवगण मरुत्त का यज्ञ देखने के लिये आये (७. ५५, ३९)। 'शक्रेण प्रजाः कृत्वा निरामयाः', (७.५५, ४७)। 'तस्य सेन्द्रैः सुरगणैर्दैवैर्यज्ञः स्वलङ्कृतः', (७. ६०, ९)। 'सेन्द्रा देवाः समागमम्', (७. ६१, ३)। मान्धातृ ने इन्द्र की अँगुलियों से प्रगट हुये अमृतमय दुग्ध का पान किया (७. ६२, ६. ८)। 'सार्द्धं सेन्द्रैर्देवैः समुच्छ्रितः', (७. ६८, १३)। 'मरुतश्च सहेन्द्रेण', (७. ७६, ४)। 'वरुणादिन्द्राद्रुद्राच्च', (७. ७६, १३)। 'इन्द्राविष्णू

यथा प्रीतौ जंभस्य वधकांक्षिणौ', (७. ८१, २५)। 'देवा गोप्तारः सेन्द्राः सर्वे', (७. ८३, २७)। 'शर्यातेर्यज्ञमायान्तं यथेन्द्रं देवमश्विनौ', (७. ८४, १८)। 'आकाशमुच्छ्रितेन्द्रध्वजोपमैः', (७. ८७, ७)। 'चिच्छेदेन्द्रध्वजाकारौ शिरश्चान्येन पत्रिणा', (७. ९३, ६९)। 'इन्द्रध्वज इवोत्सृष्टो यन्त्रनिर्मुक्तबन्धनः', (७. ९३, ७०)। 'हृततेजोबलाः सर्वे तदा सेन्द्रा दिवौकसः', (७. ९४, ५०)। 'रक्ष्या मे सततं देवाः सहेन्द्रा द्विजातयः', (७. ९४, ५३)। शिव ने इन्द्र को मन्त्रों से अभिषिक्त एक कवच दिया जिससे रक्षित होकर इन्द्र ने वृत्रासुर का वध किया और उसके बाद इस कवच और मन्त्रों को अङ्गिरस् को दे दिया (७. ९४, ६२)। 'नेन्द्रस्य न तु रुद्रस्य', (७. ९९, ११)। इन्द्रायुधसवर्णाभाः पताकाः (७. १०५, ७)। 'धनुश्चेन्द्रध्वजोपमम्', (७. १०६, ४१)। 'धेनुर्घोरमिन्द्राशनिसमस्वनम्', (७. १०९, १३)। बाणानपरानिन्द्राशनिसमस्वनान्', (७. ११७, ५)। 'वृत्रेन्द्रयोर्युद्धमिवामरौघाः', (७. ११८, ७)। 'नप्ता शिनेन्द्रसमानवीर्यः', (७. ११८, १३)। 'विक्रान्तमिन्द्रस्येव महामृधे', (७. १२०, १७)। 'ब्रह्मेशानेन्द्रवरुणानवहथः पुरा रथः', (७. १२७, १)। 'कण्ठत्राणेन च बभौ 'सेन्द्रायुध इवांबुदः', (७. १२७, १९)। 'इन्द्राशनिरिवेन्द्रेण प्रविद्धा', (७. १२८, ५)। 'गदया भारतः क्रुद्धो वज्रेणेन्द्र इवासुरान्', (७. १३४, १२)। 'वर्षास्विवोदीर्णजलः सेन्द्रधन्वांबुदो महान्', (७, १४६, २२)। 'इन्द्राशनिसमप्रख्यं', (७, १४६, २०१)। 'इन्द्राशनिसमस्पर्शं', (७, १४६, १२०)। 'सुरैरिवासुरवधे शक्रं शक्रानुजाहवे', (७. १४९, १२)। 'सुरेशत्वं गतः शक्रो हत्वा दैत्यान्सहस्रशः', (७. १४९, १५)। 'इन्द्रविक्रमैः', (७. १५६, २३)। 'रुद्रोपेन्द्रेन्द्रविक्रमः', (७. १५६, ८२)। 'नीलः सेन्द्रायुधो दिवि', (७. १५६, १०८)। 'पौलस्त्यैर्यातुधानैश्च तामसैश्चेन्द्रविक्रमैः', (७, १५६,११३)। 'पार्थिवैश्चेन्द्रविक्रमैः' (७. १५६, ११६)। 'धनुर्घोरं समादाय महदिन्द्रायुधोपमम्', (७. १५६, १६१)। 'सम्बन्धिनश्चेन्द्रवीर्याः', (७. १५८, ३८)। 'सेन्द्रा अपि सुरासुराः', (७, १५९, ७) 'इन्द्रो दैत्यवधे यथा', (७. १६०, १)। 'यथेन्द्र हरयो राजन्पुरा दैत्यवधोद्यतम्', (७. १६२, ४)। 'यथेन्द्रभयवित्रस्ता दानवाः', (७. १६८, २९)। 'यथेन्द्रः समरे राजन्प्राह विष्णुं', (७. १७०, ६१)। 'महावीर्याविन्द्रवैरोचनाविव', (७. १७४, २९) इन्द्रशम्बरयोरिव', (७. १७५, २५)। 'रुद्रोपेन्द्रविक्रमः', (७. १७५, ४९)। 'सेन्द्रायुधो दिवि', (७. १७५, ७५)। 'इन्द्रायुधमिवोच्छ्रितम्', (७. १७५, ८५)। 'सेन्द्राः देवाः घ्नन्ति नः पाण्डवार्थे', (७, १७९, ४१)। कर्ण ने इन्द्र द्वारा प्रदत्त दिव्यास्त्र का घटोत्कच के विरुद्ध प्रयोग किया (७. १७९, ५३)। 'तं न वित्तपतिर्नेन्द्रो', (७. १८५, २५)। 'सेन्द्रानप्येष लोकांस्त्रीन् ग्रसेत्', (७. १९६, २३)। 'सेन्द्रान्देवान्समागतान्', (७, १९७, २०)। 'सुदर्शनस्येन्द्रकेतुप्रकाशौ', (७. २००, ८३)। इन्द्र असुरों की तीन पुरियों को विनष्ट करने में असफल रहे, अतः शिव को उन्हें विनष्ट करना पड़ा; शिव ने इन्द्र को मूर्च्छित किया (७. २०२, ६४–८४)। इन्द्र को शिव के साथ समीकृत किया गया है (७. २०२, १०२)। 'तेन्द्रादिषु च देवेषु', (७.२०१,२१३)। 'ब्रह्माणमिन्द्रं', (७. २०२, १३७)। 'पराजयमिवेन्द्रस्य', (८. ८, ४)। 'क्ष्यमिन्द्रोपमं वीरं मृत्युर्युद्धे समस्पृशत्', (८.९, ४२)। 'वायुरिन्द्रमिवाध्वरे', (८. १६, २६)। 'स्रवन्तौ धनदेन्द्रकल्पौ', (७. १७, १९)। विश्वकर्मा ने इन्द्र के लिये 'विजय' नामक धनुष का निर्माण किया; बाद में इस धनुष को इन्द्र ने रामजामदग्न्य को दिया (८. ३१, ४२)। 'शक्रो मरुद्भृतः', (८. ३३, ३६)। 'विद्युदिन्द्रधनुर्नद्धं रथं', (८. ३४, ३५)। 'इन्द्राग्नी स्तूयमानाविवाध्वरे', (८, ३६, १४)। 'पाण्डवमिन्द्रकल्पम्', (८. ४२, २७)। 'ब्रह्मेशानेन्द्रवरुणान्', (८, ४६, ३९)। 'असाविन्द्र इवासह्यः सात्यकिः', (८. ४६, ८६)। 'भूमिष्ठो गदया जघ्ने वज्रेणेन्द्र इवाचलान्', (८. ५१, ४८)। 'यथेन्द्रः समरे दैत्यान्', (८. ५३, २६)। 'इन्द्रजालावततं समीक्ष्य पार्थः', (८. ६४, २४)। 'जालमथेन्द्रमुक्तं पार्थः', (८. ६४, २५)। वृत्रे हतेऽसौ भगवानिवेन्द्रः', (८. ६६, ४८)। 'इन्द्रवृत्राविव क्रुद्धौ', (८. ८७, १९)। 'तावुभौ प्रजिहीर्षन्ताविन्द्रावृत्राविव', (८. ८७, ३५)।

कर्ण और अर्जुन के युद्ध में अर्जुन का पक्ष लिया (८. ८७, ४७)। इन्द्र ने ब्रह्मा और ईशान से अर्जुन के विजयी बनाने की कामना की जिसे इन लोगों ने स्वीकार किया (८, ८७, ८६)। इन्द्र ने अर्जुन को जो किरीट दिया था उसे कर्ण ने एक ही बाण से भग्न कर दिया (८. ९०, ३२)। 'परः शतैः पत्रिभिरिन्द्रविक्रमस्तथा यथेन्द्रोबलमोजसा रणे', (८. ९०, ६१)। 'इन्द्राशनिसमान् घोरान्', (८. ९०, ८९)। 'इन्द्रकार्मुकतुल्याम- 'इन्द्रादनवरः', (४.२, १९)। 'इन्द्रसमाः', (४.२०, १९)। 'पोथितं भीमसेनेन तमिन्द्रेणेव दानवम्', (४.२३, ३)। 'सुता विराटस्य यथेन्द्रलक्ष्मीः', (४.३७,४)। 'इन्द्रेण वा समम्', (४.४५,१०)। 'इन्द्राशनि समस्पर्शं महेन्द्रसम तेजसम् ।अर्दयिष्याम्यहं पार्थमुल्काभिरिव कुञ्जरम् ॥', (४.४८, १२) 'इन्द्रोऽपि हि न पार्थेन संयुगे योद्धुमर्हति', (४.४९, १२)। 'शक्रः सुरगणैः समारुह्य सुदर्शनम्', (४.५६,३)। 'इन्द्रस्यवचनात्' (४.६१,२५)। 'इन्द्रदृढां मुष्टिं', (४.६१, २६)। 'गाण्डीवमभवदिन्द्रायुधमिवानतम्', (४.६३, १०)। 'इन्द्रस्यार्धासनं राजन्नयमारोढुमर्हति', (४.७०, ९)। 'तत्रातिष्ठान्महाराजो रूपमिन्द्रस्य धारयन्। स्नुषां तां प्रतिजग्राह कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः ॥', (४.७२,३४)। 'इन्द्रेण श्रूयते राजन् सभार्येण महात्मना', (५.८, ५४)। इन्द्र ने त्वष्टा के पुत्र विश्वरूप त्रिशिरस् का वध कर दिया जिससे कुपित होकर त्वष्टा ने वृत्रासुर को उत्पन्न किया। वृत्रासुर ने इन्द्र पर आक्रमण किया (५.९,१–३.७.१७.३१.३३.४८)। इन्द्र ने समुद्रीफेन के प्रहार द्वारा वृत्रासुर का वध कर डाला और उसके वध को ब्रह्महत्या के समकक्ष समझ कर स्वयं जल में छिप गये (५.१०, ३९-४७)। देवताओं तथा ऋषियों के अनुरोध से नहुष इन्द्रपद पर अभिषिक्त हुये, और इन्द्र-पत्नी शची पर आसक्त हुये (५.११,१८.२४)। इन्द्र ने अहल्या का उसके पति गौतम के जीवित रहते हुये ही सतीत्व नष्ट किया था (५.१२,५–६)। ५.१२,७.१३ । 'सेन्द्राः देवाः प्रहरन्त्यस्य वज्रम्', (५.१२,२१)। इन्द्र ब्रह्महत्या के पाप से विमुक्त हुये (५.१३)। शची द्वारा इन्द्र-प्राप्ति (५.१४,१३)। ५.१५,११;१६,२२। अग्नि ने इन्द्र से यज्ञभाग प्राप्त करने का अधिकार पाया तथा इन्द्र ने लोकपालों से वार्तालाप किया; ऋषियों के शाप से नहुष स्वर्ग से नीचे गिर पड़े (५.१७,४)। इन्द्र पुनः देवों के अधिपति हुये (५.१८,९.१०.१९)। 'गाण्डीवधन्वा प्रजिगाय सेन्द्रान्', (५.२२,१३)। 'पाण्ड्यश्च राजा समितीन्द्रकल्पो', (५.२२,२३)। कुरून् सञ्जय निर्दहेतामिन्द्राविष्णू दैत्यसेनां यथैव', (५.२२,३२)। 'पाण्डोः सुताः सर्वं एवेन्द्रकल्पाः', (५.२४,८)। 'ससात्यकीन् विषहेत प्रजेतुं लब्ध्वाऽपि देवान् सचिवान् सहेन्द्रान्', (५,२५,१०)।५.२६,२६;२९,३०। 'पाण्डोः पुत्राः पञ्च पञ्चेन्द्रकल्पाः', (५.३३,१२२)। 'इन्द्राय स प्रणमते', (५.३४,३७)। 'भीष्मस्य कोपस्तव चैवेन्द्रकल्प', (५.३७,४३)। 'युधिष्ठिरेणेन्द्रकल्पेन', (५.४८,९)। 'इन्द्रो वा ते हरिवान् वज्रहस्तः', (५.४८,६८)। 'देवानपीन्द्रप्रमुखान्', (५.४८,१०८)। इन्द्र ने नर और नारायण की पूजा की; संतुष्ट होकर नर और नारायण ने दैत्य और दानवों के संहार में उनकी सहायता की; नर अर्थात् अर्जुन ने पौलोम और कालखञ्ज नामक दानवों का संहार किया (५.४९,१४)। खाण्डवदाह के समय अर्जुन ने इन्द्र सहित सम्पूर्ण देवताओं को विजित किया था (५.४९, १७)। 'सेन्द्रैरपि सुरासुरैः', (५.४९,२०)। यथेन्द्रस्य जयः', (५.५२,१२)। 'सेन्द्रानिमाँल्लोकानिच्छन् (५.५३,३)। वृत्रशत्रुं यथेन्द्रम्', (५.५६,१६)। 'येषामिन्द्रोऽप्यकामानां न हरेत् पृथिवीमिमाम्', (५.५७,३४)। 'इन्द्रोऽपि सहितोऽमरैः', (५.५७,३८)। इन्द्रविष्णुसमावेतौ', (५. ५९, ११)। 'इन्द्रवीर्योपमः कृष्णः', (५. ५९, १५)। ५. ६१, ६। 'सेन्द्रान् गर्हयते देवान्', (५. ७२, १०)। 'इन्द्रज्येष्ठा इव', (५. ७४, ९)। 'इन्द्रेणापि सहामरैः', (५. ९२, २०; ९५, १८)। 'नैते शक्रेण', (५. २००, ४)। निवातकवच आदि दानवों को शक्र पराजित नहीं कर सके (५. २००, ७)। मातलि सुमुख को इन्द्र के पास ले गये और इन्द्र ने उसे दीर्घायु प्रदान किया (५. १०४, २९)। इन्द्र द्वारा सुमुख नाग को दीर्घायु प्रदान करने के वृत्तान्त को जान कर

गरुड़ इन्द्र पर अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे, किन्तु विष्णु ने गरुड़ के गर्व का भञ्जन कर दिया (५. १०५, २)। इन्होंने दिति के गर्भ का उच्छेद किया, जिससे मरुद्गणों की उत्पत्ति हुई (५. ११०, ८)। 'प्रसह्य पुरुषव्याघ्रमिन्द्रो वैरोचनिं यथा'. (५. १३०, ५)। स्वर्ग से परिजातहरण करते समय श्रीकृष्ण ने शचीपति इन्द्र को जीता। (५. १३०, ४९)। श्रीकृष्ण के विराटरूप के समय इन्द्र सहित मरुद्गण भी उनके अङ्गों में विराजमान थे (५. १३१, मिन्द्रकेतुमिवोच्छ्रितम्', (९. ४, १६)। 'इन्द्रसद्मसुऽधिष्ठिताः', (९. ५, ४२)। 'इन्द्रध्वजाविव', (९. १२, २४)। 'इन्द्रध्वज इवोच्छ्रितः', (९. १७, ५३)। 'चापमादायेन्द्रधनुष्प्रभम्', (९. १७, ५८)। 'वृत्रवधे यथेन्द्रम्', (९. १७, ९१)। 'नागेन्द्रमैरावणमिन्द्रवाह्यम्', (९. २०, १२)। 'इन्द्राशनिसमस्पर्शौ', (९. २४, ५७)। 'इन्द्राशनिसमस्पर्शानविषह्यान्', (९. २५, २)। 'इन्द्राशनिसमस्पर्शैः', (९. २७, ५३)। 'इन्द्रेण निहता दैत्यदानवाः', (९. ३१, ८)। 'इन्द्रेण त्रिदिवं भुज्यते', (९. ३१. १४)। 'इन्द्रोऽपि तवाश्रयः' (९. ३२, ३४)। 'ब्राह्मणमिव देवेशमिन्द्रोपेन्द्रौ मुदान्वितौ', (३. ३४, १८)। "पूर्वकाल की बात है, इन्द्र से भयभीत होकर नमुचि सूर्य की किरणों में समा गया। तब इन्द्र ने उसके साथ मित्रता करके यह प्रतिज्ञा की : 'असुर श्रेष्ठ ! मैं न तो तुम्हें गीले आयुध से मारूँगा न सूखे; न दिन में मारूँगा न रात में। मैं सत्य की सौगन्ध खाकर तुमसे यह प्रतिज्ञा करता हूँ।' इस प्रकार प्रतिज्ञा करके भी देवराज इन्द्र ने चारों ओर कुहरा छाया देखकर पानी के फेन से नमुचि का सिर काट दिया। तब वह नमुचि का कटा हुआ सिर इन्द्र के पीछे लग गया और बार-बार यह कहने लगा, 'ओ मित्रघाती पापात्मा इन्द्र ! तू कहाँ जाता है ?' उस मस्तक के द्वारा बार-बार इन बातों के पूछने के कारण संतप्त इन्द्र ब्रह्मा की शरण में गये। ब्रह्मा ने इन्द्र को विधिपूर्वक यज्ञ करके अरुणा के जल में स्नान करने का परामर्श दिया। इस प्रकार इन्द्र ब्रह्महत्या के पाप से मुक्त होकर स्वर्ग लौट आये। नमुचि का वह कटा हुआ मस्तक भी उसी पवित्र जल में गिर पड़ा और मनोवाञ्छित फल देनेवाले अक्षयलोक में चला गया (९. ४३, ३४–४५)।" इन्द्र भी नवजात स्कन्द को देखने के लिये पधारे (९. ४४, ३१)। इन्द्र और विष्णु स्कन्द के अभिषेक के समय उपस्थित हुये (९. ४५, ४) इन्द्र ने स्कन्द को दो पार्षद दिये (९. ४५, ३६)। इन्द्र (पाकशासन) ने स्कन्द को एक ध्वज और दिव्य बाण दिया (९. ४६, ४४)। बदरपाचन तीर्थ में स्रुतावती ने पाँच बेरों को पकाने के लिये जब समस्त ईंधन के समाप्त हो जाने पर अपने दोनों पैरों को भी जला दिया तब इन्द्र उससे अत्यन्त प्रसन्न हुये और उसे पत्नी के रूप में ग्रहण कर लिया (९. ४८)। इन्द्रतीर्थ में इन्द्र ने सौ यज्ञ किये थे, जिसके कारण ही इनका शतक्रतु नाम पड़ा (९. ४९, ४)। दधीच की तपस्या से भयभीत होकर इन्द्र ने अलंबुषा नामक अप्सरा को दधीच को मोहित करने के लिये भेजा; दधीच ने अलंबुषा से सारस्वत नामक पुत्र उत्पन्न किया, और अपनी अस्थियों को इन्द्र को दान कर दिया जिससे इन्द्र का वज्र बना (९. ५१)। इन्द्र ने कुरुक्षेत्र को पवित्र किया (९. ५३, ५)। 'इन्द्रोऽग्निर्यमो', (९. ५४, १५)। 'यथाऽन्योन्यमिन्द्रप्रह्लादयोरिव', (९. ५७, ३)। 'इन्द्राशनिमिवोद्यताम्', (९. ५७, १२)। 'इन्द्राशनिसमां घोरां', (९. ५७, २८)। 'इन्द्रेणेव हि वृत्रस्य वधं', (९. ६१, ८)। 'इन्द्रकेतुनिभां गदाम्', (१०. ६, १६)। 'इन्द्रोपमान् पार्थिवपुत्रपौत्रान्', (१०. १०, २३)। 'इन्द्रमपि शातयेत्', (१०. १७, ७)। 'इन्द्रस्यातिशयः', (११. २, १५)। सुवर्णपक्षी के रूप में इन्द्र ने ऋषियों के साथ वार्तालाप किया (१२. ११, ३)। 'इन्द्रो वृत्रवधेनैव महेन्द्रः समपद्यत', (१२. १५, १५)। १२. १५, १६। 'इन्द्रत्वं प्राप्य विभ्राजते', (१२. २०, ११)। 'इन्द्रेण समये पृष्टः', (१२. २१, १)। 'इन्द्रो वै ब्राह्मणः पुत्रः', (१२. २२, ११)। इन्द्रत्वं समापेदे देवानाम्', (१२. २२, १२)। 'यथैवेन्द्रो', (१२. २२, १३)। १२. २९, १९। 'अमाद्यदिन्द्रः सोमेन', (१२. २९, ३६)। 'इन्द्रविक्रमात्', (१२. २९, ४३)। 'इन्द्रो वितते यज्ञे', (१२. २९, ६३)। 'मामेव धास्यतीत्येवमिन्द्रोऽथाभ्युपपद्यत। मांधातेति ततस्तस्य नाम चक्रे शतक्रतुः॥', (१२. २९, ८४)। 'पाणिरिन्द्रस्य चास्तम्भत्', (१२. २९, ८५)। 'तं पिबन्पाणिमिन्द्रस्य शतमह्ना व्यवर्धत', (१२. २९, ८६)। 'शूरमिन्द्रसमं युधि', (१२. २९, ८७)। 'शक्राद्दरं लेभे', (१२. २९, १२०)। 'उवाचेन्द्रपेक्षया', (१२. ३१, १९)। यथेन्द्रो विजयी पुरा', (१२. ३३, ४६)। 'देवान्सर्वानिन्द्रपुरोगमान्'. (१२. ३७, ८)। 'यथेन्द्रस्त्रिदिवं', (१२. ३८, ११)। 'अतिवाय्विन्द्रकर्माणम्', (१२. ४७, ३१)। 'गाधिर्नामाऽभवत्पुत्रः कौशिकः पाकशासनः', (१२. ४९, ६)। सहस्राक्षो महेन्द्रश्च', (१२. ५८, २)। इन्द्र (पुरन्दर) ने वैशालाक्ष नामक शास्त्र को संक्षिप्त करके बाहुदन्तक नाम दिया (१२. ५९, ८३)। 'पुरुषः उत्पन्नो रूपेणेन्द्र इवापरः', (१२. ५९, ९८)। पृथुवैन्य को धन प्रदान किया (१२. ५९, ११८)। १२. ६४, १६. २१; ६५, १. १७. २४। इन्द्रमेव प्रवृणुते', (१२. ६७, ४)। १२. ६७, ११। 'इन्द्र तर्पय सोमेन', (१२. ७१, ३३)। 'इन्द्रो राजा', (१२. ७२, २५)। इन्द्र और बृहस्पति के बीच वार्तालाप (१२. ८४)। १२. ९०, २४। 'इन्द्रविषयं विजिगीषन्ति पार्थिवाः', (१२. ९६, १९)। 'इन्द्रसलोकताम्', (१२. ९७, ९)। 'देवा इन्द्रपुरोगमाः', (१२. ९७, २१)। 'इन्द्रस्य सालोक्यं', (१२. ९७, ३१)। 'अम्बरीषस्य संवादमिन्द्रस्य च', (१२. ९८, २)। १२. ९८, १२. १५। 'इन्द्रधनूंषि', (१२. १०२, ६)। 'बृहस्पतेश्च संवादमिन्द्रस्य च', (१२. १०३, २)। १२. १०३, ४. ४५। 'देवता नित्यमिन्द्रे परिवदन्ति', (१२. १२१, ३८)। 'देवानामीश्वरं चक्रे देवं दशशतेक्षणम्', (१२. १२२, २७)। १२, १२२, ३७। 'इन्द्रो जागर्ति भगवानिन्द्रादग्निर्विभावसुः', (१२. १२२, ४३)। "पूर्वकाल में एक बार दैत्यराज प्रह्लाद ने शील का ही आश्रय लेकर इन्द्र के राज्य का अपहरण कर लिया; तब ब्राह्मण का रूप धारण कर इन्द्र ने प्रह्लाद से उपदेश ग्रहण किया; उन्हें प्रसन्न करके उनका 'शील' माँग लिया, जिससे अन्ततोगत्वा स्वयं उन्हें अपना सब कुछ खोना पड़ा (१२. १२४)।" 'देवानिन्द्रादीन्', (१२. १४१, ९६)। 'आजन्तमिन्द्रवत्', (१२. १४९, १३)। १२. १५५, १०। ऋषियों ने इन्द्र को एक खड्ग दिया और यही खड्ग इन्द्र से लोकपालों के पास गया (१२. १६६, ६६–६७)। 'विरूपाक्ष से राजधर्मन् के शापग्रस्त होने की कथा का वर्णन किया, और गौतम को पुनः जीवित कर दिया (१२. १७३, ७)। 'इन्द्रकाश्यपसंवादं', (१२. १८०, ४)। इन्द्रः शृगालरूपेण बभाषे', (१२. १८०, ७)। 'देवत्वादिन्द्रतामपि', (१२. १८०, २४)। 'इन्द्रत्वं', (१२. १८०, २५)। 'देवानां देवमिन्द्रशचीपतिम्', (१२. १८०, ५३)। 'त्रिदशेश्वरः', (१२. २००, ९)। 'वासवं सर्वदेवानामध्यक्षमकरोत्प्रभुः', (१२. २०७, ३६)। आदित्यों में से एकादश (१२. २०८, १६)। 'त्रिबीजमिन्द्रदैवत्यं तस्मादिन्द्रियमुच्यते', (१२. २१४, २३)। 'प्रह्लादस्य च संवादमिन्द्रस्य च', (१२. २२२, ३)। इन्द्र और बलि के बीच संवाद (१२. २२५, ३७)। इन्द्र (शतक्रतु) और नमुचि-संवाद (१२. २२६)। 'सुरेन्द्रमिन्द्रं', (१२. २२७, १२)। इन्द्र और बलि-संवाद (१२. २२७, ६७. ७१. ७२. ७४)। इन्द्र और श्रीसंवाद (१२. २२९)। 'त्रिलोकेशः पुरन्दरः', (१२. २६६, ४७)। गौतम-पत्नी अहल्या का सतीत्व भ्रष्ट किया (१२. २६६, ५०)। 'रथेनेन्द्रः प्रयान्तो वै सार्धं देवगणैः पुरा', (१२. २८१, ७)। वृत्रासुर के साथ इन्द्र का युद्ध, इन्द्र द्वारा वृत्रासुर का वध, और ब्रह्महत्या से इन्द्र की मुक्ति (१२. २८२, ४४)। 'इन्द्रेण सहिताः सर्वे आगताः यज्ञभागिनः', (१२. २८४, ८)। 'मोहेन च सेन्द्रदेवाः', (१२. २८४, २५)। 'इन्द्रोऽथ धनदः', (१२. २८९, ८)। इन्द्रस्तत्राधिदैवतम्', (१२. ३१३, ४)। नाभि अथवा दोनों भुजाओं से यदि प्राण का निष्क्रमण हो तो इन्द्रपद की प्राप्ति होती है (१२. ३१७, ४)। शुक को एक कमण्डलु दिया (१२. ३२४, १९)। वसु उपरिचर से प्रसन्न होकर इन्द्र (देवराट्) उन्हें अपने साथ एक शय्या और एक आसन पर बैठाया करते थे (१२. ३३५, २२)। नारायण ने यह भविष्यवाणी की कि बलि इन्द्र के राज्य को छीन लेंगे किन्तु विष्णु उसे

पुनः इन्द्र को दिला देंगे (१२. ३३९, ८०) । "अहल्या का सतीत्व नष्ट करने के कारण जब गौतम ने इन्द्र को शाप दिया तब इन्द्र को हरी दाढ़ी-मूछों से युक्त होना पड़ा। कौशिक के शाप से इन्द्र को अपना अण्डकोश खो देना पड़ा जिससे उन्हें मेढ़ के अण्डकोश लगाये गये (१२. ३४२, २३) । अश्विनीकुमारों के लिये नियत यज्ञभाग का निषेध करने के लिये जब इन्द्र ने वज्र उठाया तब इनकी दोनों भुजाओं को महर्षि च्यवन ने स्तम्भित कर दिया (१२. ३४२, २४) । "इन्द्र ने विश्वरूप की तपस्या में विघ्न डालने के लिये अनेक सुन्दरी अप्सराओं को नियुक्त किया। जब इन अप्सराओं को देखकर विश्वरूप का मन चञ्चल हो गया तब अप्सराओं ने इन्द्र के पास लौटना चाहा। विश्वरूप के आग्रह पर भी जब अप्सरायें नहीं रुकीं तब उन्होंने कहा कि आज ही इन्द्र आदि सम्पूर्ण देवताओं का आभाव हो जायगा। इस प्रकार कह कर विश्वरूप मंत्रों का जप करने लगे जिससे उनकी शक्ति अत्यन्त बढ़ गई। इसे देखकर देवताओं सहित इन्द्र को अत्यन्त चिन्ता हुई और वे लोग ब्रह्मा के पास गये। ब्रह्मा ने इन्द्र सहित देवताओं को दधीच की अस्थियाँ प्राप्त करके उससे एक वज्र बनाने के लिये कहा। ब्रह्मा के आदेश के अनुसार दधीच की अस्थियाँ प्राप्त करके इन्द्र ने धाता से वज्र का निर्माण कराया और उससे विश्वरूप तथा वृत्रासुर का भी वध किया। इससे इन्द्र के पीछे दो ब्रह्महत्यायें पड़ गईं और उनके भय से वे देवराज के पद का त्याग करके अणुमात्र के रूप में मानसरोवर के एक कमलनाल की ग्रन्थि में छिप गये। तब देवताओं ने आयु के पुत्र नहुष को देवराज के पद पर अभिषिक्त किया, परन्तु नहुष भी जब अगस्त्य के शाप से पृथिवी पर गिर पड़े तब देवताओं ने विष्णु से इन्द्र के उद्धार का निवेदन किया। विष्णु के आदेश के अनुसार इन्द्र ने अश्वमेध का अनुष्ठान किया और पुनः इन्द्रपद प्राप्त किया (१२. ३४२, २५-५२) ।" नारद ने इन्द्र को उञ्छवृत्त्युपाख्यान सुनाया (१२.३५२-३६५) । 'इन्द्रसमवीर्यस्य', (१३. २, १३) । इन्द्र और शुक्र के बीच संवाद (१३. ५) । इन्द्र और भङ्गास्वन के बीच संवाद (१३. १२, ४. ५. ७. ३१. ३२. ३९-४२. ४५. ४८) । 'देवाः सेन्द्राः', (१३. १४, २२) । मन्दार ने एक अर्बुद वर्षों तक इन्द्र के साथ युद्ध किया (१३. १४, ७४) । वालखिल्यों का अनादर किया (१३. १४, ९१) । शिव ने शक्र, अर्थात् इन्द्र, का रूप धारण किया (१३. १४, १७२) । 'यक्षेन्द्रवलरक्षःसु', (१३. १४, २१५) । 'मूहीन्द्र परमं स्थानं', (१३. १४, २१८) । ब्रह्मेन्द्रहुताशविष्णुसहिता देवाः', (१३. १४, २२९) । 'इन्द्रायुधसवर्णाभं धनुः', (१३. १४, २५६) । 'इन्द्रायुधपिनद्धाङ्गं', (१३. १४, ३८३) । 'मनोरिन्द्राग्निमरुतां विश्वस्य ब्रह्मणो गतिम्', (१३. १६, ९) । स्कन्देन्द्रौ सविता यमः', (१३. १६, २२) । 'इन्द्रकरपेन', (१३. १७, १७०) । ब्रह्मा ने शक्र, अर्थात् इन्द्र, को शिव के सहस्र नाम बताये, जिन्हें पुनः इन्द्र ने मृत्यु को बताया (१३. १७, १७५) । इन्द्र (शक्र) ने असित देवल को शाप दिया (१३. १८, १८) । 'देवैः सेन्द्रैश्च', (१३. २६, ६८. ८३) इन्द्र और मतङ्ग के बीच संवाद (१३. २७-२९) । 'गृत्समदः पुत्रो रूपेणेन्द्र इवापरः', (१३. ३०, ५८) । 'सेन्द्रास्त्रयोलोकाः', (१३. ३२, ३०) । 'तथा भगसहस्रेण महेन्द्रः परिचिह्नितः ॥ तेषामेव प्रभावेन सहस्रनयनो ह्यसौ ।', (१३. ३४, २७-२८ तु० की० १३. ४१, २१) । इन्द्र और शम्बर के बीच संवाद (१३. ३६) । इन्द्र के विरुद्ध विपुल द्वारा देवशर्मन की पत्नी रुचि की रक्षा का वृत्तान्त (१३. ४०-४३) । 'इन्द्रः प्रीयतां', (१३. ६०, १७) । इन्द्र और बृहस्पति के बीच संवाद (१३. ६२, ५१ और बाद) । गायों के लोक और गोदान विषयक युधिष्ठिर तथा इन्द्र के प्रश्न (१३. ७२) । ब्रह्माजी का इन्द्र से गोलोक और गोदान की महिमा बताना (१३. ७३-७४) । 'इन्द्रो विवस्वान्सोमश्च', (१३. ८२, ७) । 'पितामहस्य संवादमिन्द्रस्य च', (१३. ८३, ६) । 'इन्द्रः पप्रच्छ देवेशं', (१३. ८३, १२) । 'सेन्द्रेषु चैव लोकेषु', (१३. ८५, १५७) । 'देवैः सेनापतित्वेन वृतः सेन्द्रैर्गुहश्च', (१३. ८५, १६३) । इन्द्र (वासव) स्कन्द को देखने आये (१३. ८६, १६) । इन्द्र (सुरेन्द्र) ने स्कन्द को सिंह आदि दिये (१३. ८६, २५) । स्कन्द ने इन्द्र को पुनः देवराज के पद पर प्रतिष्ठित कराया (१३. ८६, ३०) । शुनःसख के रूप में इन्द्र ने सप्तर्षियों की परीक्षा ली (१३. ९३) । १३. ९४. ४७ । 'अथेन्द्रोऽहमिति ज्ञात्वा अहंकारं समाविशत्', (१३. ९९, १०) । 'रथे योक्ष्यति देवराट्', (१३. ९९, २३) । 'अचेन्द्रं स्थापयिष्यामि पश्यतस्ते शतक्रतुम्', (१३. ९९, २४) । नहुष ने इन्द्रपद प्राप्त किया परन्तु शापग्रस्त होकर सर्प के रूप में पृथिवी पर गिर पड़े (१३. १००, १) । धृतराष्ट्ररूपधारी इन्द्र और गौतम का संवाद (१३. १०२) । 'इन्द्रस्य लोकाः', (१३. १०२, २८) । इन्द्रेण गुह्यं निहितं वै गुहायां', (१३. १०३, ३९) । 'इन्द्रकन्याभिरूढं च विमानं लभते नरः', (१३. १०७, २१) । १३. १२५, ४८; १२६, ९ । 'इन्द्रत्वं', (१३. १४१, ५) । 'इन्द्रेण च पुरा वज्रं क्षिप्तं', (१३. १४१, ८) । 'सेन्द्रा देवास्त्रयस्त्रिंशत्', (१३. १४८, २४) । आदित्यों में से ग्यारहवें (१३. १५०, १५) । 'महेन्द्रगुरवः सप्त', (१३. १५०, ३३) । अहल्या का सतीत्व नष्ट करने के कारण गौतम ने इन्द्र को शाप तो दिया, किन्तु उन्हें किसी प्रकार आहत नहीं किया (१३. १५३, ६) । सेन्द्रा वसिष्ठेन रक्षितास्त्रिदिवौकसः', (१३. १५५, २५) । च्यवन ने इन्द्र की भुजाओं को स्तम्भित करके मद उत्पन्न किया, जिसके पश्चात् इन्द्र ने अश्विनों को सोमभाग प्राप्त करने दिया (१३. १५६, १७. २१. २४. २६) । जब इन्द्र सहित सम्पूर्ण देवता मद के मुख में चले गये तब च्यवन ने उनके अधिकार की समस्त भूमि का अपहरण कर लिया; इससे त्रस्त होकर इन्द्र सहित देवगण ब्रह्मा की शरण में गये, और ब्रह्मा ने उनसे ब्राह्मणों की शरण में जाने के लिये कहा (१३. १५७, २. ५) । शिव ने इन्द्र की भुजाओं को स्तम्भित किया (१३. १६०, ३३) । शिव को इन्द्र के साथ समीकृत किया गया है (१३. १६०, ३९) । बृहस्पति, संवर्त और मरुत्त के साथ इन्द्र के सम्बन्ध का वर्णन (१४. ४, १७. १९; ५, ७. १९; ७, २६; ९, १. ३. ५. ८. १२. २४. २९; १०, १. १८. १९. २२. २४. २८) । इन्द्र का वृत्रासुर के साथ युद्ध (१४. ११, ६) । 'इन्द्रः', (१४. २१, ४; ३५, ४१) । इन्द्र (शक्र) को दोनों भुजाओं का अधिदेवता कहा गया है (१४. ४२, २८) । 'मरुतामिन्द्र उच्यते', (१४. ४३, ७) । "इन्द्र ने चाण्डाल के रूप में उत्तङ्क को अमृत पिलाना चाहा परन्तु उत्तङ्क ने उसे अस्वीकृत कर दिया (१४. ५५, १६-३४) । ब्राह्मण के रूप में इन्द्र ने उत्तङ्क की सहायता की (१४. ५८, ३०-३५) । इन्द्र के यज्ञ के समय ऋषियों में परस्पर विवाद (१४. ९१) । अगस्त्य ने इन्द्र को वर्षा कराने के लिये विवश किया (१४. ९२, २२. २३) । 'इन्द्रसमाः', (१५. १७, ४) । कृष्ण का स्वर्गलोक में स्वागत किया (१६. ४) । युधिष्ठिर की परीक्षा ली (१७. ३, १०. १३; १८, २, १०) । 'इन्द्रः कथयामास देवराट्', (१८. ४, ११) ।

इन्द्र के निम्नलिखित पर्याय मिलते हैं :

*** अखण्डल** , व० स्था० ।

*** अदितिनन्दन** : १३. १४, ३९२ ।

*** अमरराज** : 'ततः प्रहायामरराजजुष्टान्', (१. ८८, ६) । 'अमरराजकल्प', (१. ८८, १२) । 'यादृक् पुरावृत्तं शम्बरामरा त्रयोः', (७. २५, ६२) । 'यथापूर्वं महद्युद्धं शम्बरामरराजयोः', (७. ९६, ३०) । 'त्रिदशमिवामरराजरक्षितम्', (८. ३७, ३४) । 'अमरराजतेजसा', (८. ७६, ३७) । 'सदृशौ युद्धे शम्बरामरराजयोः', (८. ८७, २५) । 'यादृशो वै पुरावृत्तः शम्बरामरराजयोः', (९. १५, ३२) । ९. ४९, २ ।

*** अमरश्रेष्ठ** : १. १८, २५; ३. ४२, १२; १३. ८३, २७ ।

*** अमराधिप** : 'अमराणां ह्रदे स्नात्वा समभ्यर्च्यामराधिपम्', (३. ८३, १०६) । 'बलमसुरामरसैन्यप्रभवम्', (८. ३, ८) । १२. १०३, ३२; २२४, ४४; २८१, ३३ ।

*** अमरेश** : ६. २२, ८ ।

*** अमरेश्वर** : १. २२६, १४; २२८, २२; ७. ८४, ३१; ८. २०, ५१; १२. १०३, ५२ ।

*** अमरोत्तम** : १. २५, ९।

*** असुरार्दन, असुरसूदन** , व० स्था०।

*** ईश्वर** , व० स्था०।

*** काश्यप** , व० स्था०।

*** किरीटिन्** , व० स्था०।

*** कुशिकोत्तम** , व० स्था।

*** कौशिक** , व० स्था०।

*** गोशब्दात्मज** , व० स्था०।

*** जगदीश्वर** , व० स्था।

*** त्रिदशाधिप** : ३. ९, ९; ३७, ५४; १०१, १३; ५. ६२, ९; ८. ८९, ८८; १२. १०३, ५१; १३. १२, ५३; ४१, ९; ६६, ४६।

*** त्रिदशाधिपति** : ९. ४८, ६।

*** त्रिदशेन्द्र** : ५. ३३, ७१; ९. ४६, ४४; १२. २८२, २३; १३. ८५, १६४; ९३, १४४।

*** त्रिदशेश, त्रिदशेश्वर** , व० स्था०।

*** त्रिदिवेश्वर** : १. ३४, १०; ९. ४३, ४५।

*** त्रिभुवनेश्वर** : ९. ४८, १०. २९; १३. ८३, ७।

*** त्रिलोकराज** : ५. ९७, १२।

*** त्रिलोकेश** , व० स्था०।

*** त्रैलोक्यपति** : १२. २२२, ३७।

*** त्रैलोक्यराज** : ५. १०५, ९।

*** दशशतनयन** : ८. ९०, २४।

*** दशशताक्ष** : ७. १८४, ४७; १३. ५, १५।

*** दशशतेक्षण** : १२. १२२, २७।

*** दानवशत्रु, दानवघ्न, दानवारि, दानवसूदन** , व० स्था०।

*** देवगणेश्वर** , व० स्था०।

*** देवपति** : 'देवपतिर्यथा', (३. ५३, २)। 'सधार्तराष्ट्रं जहि सानुबन्धं वृत्रं यथा देवपतिर्महेन्द्रः', (३. १२०, ६)। 'अजयद्देवपतिर्बलिं वैरोचनिं पुरा', (३. १६८, ७७)। 'वृत्रं देवपतिर्यथा', (४. २२, ३२)। 'जघान समरे वृत्रं देवपतिः स्वयम्', (७. ९४, ६६)। १२. १२, २८; १०३, ३; १३. १६७, १२।

*** देवराज्** : 'देवराडिव नन्दने', (३. ७९, ३)। 'देवराड्विगतज्वरः', ३. ८५, १२८; १९३, १४; २४६, १८; ५. १०, ३३; १८, ४। 'मुञ्चन् देवराडशनीमिव', (५. ६५, ६)। 'वज्रपाणिश्च देवराड्', (६. १०७, १६)। 'योधयेदपि देवराट्', (१०. ४, ८)। १२. ३३५, २२; ३४२, ५३। 'वृत्रं हत्वा देवराट्', (१३. १, ३२)। १३. ९४, ४२; १८. ४, ११।

*** देवराज** : १. १, १५२। 'देवराजेन दत्तां दिव्यां शक्तिं', (१. १, १९९)। १. ३१, १३। 'देवराजः शतक्रतुः', (१. ३१, १५)। १. ३१, १६. २०। 'देवराजसमद्युतिः', (१. ६७, ६८)। देवराजस्य चार्जुनम्', (१. ६७, १११)। 'देवराजप्रतिमं', (१. ६९, १३)। १. ७१, ४०। 'देवराजसमद्युतिः', (१. ७६, ३)। १. ८८, ४। 'देवराजसमद्युतिः', (१. ९७, २५)। 'देवराजसमद्युतेः', (१. ९८, ९) 'देवराजसदृशो', (१, १००, १३)। 'देवराजसमः', (१. १००, ३५)। 'देवराजसमप्रभम्', (१. १०५, ५३)। 'देवराजपराक्रमाः', (१. ११८, ३)। १. १२३, ३१; १३०, ५; १९७, १५. १६. २२; २२४, ११; २२६, १९; २२७, १३; २२८, २४. २५; २. ६, १७; ७, ८। 'देवराजं शतक्रतुम्', (२. ७, २५)। २. ४९, ३५; ५०. ९; ३. ३८, ३; ४१, ४२। देवराजरथं', (३. ४२, १)। 'देवराजं शतक्रतुम्', (३. ४३, १५)। ३. ४७, २। 'देवराजसमद्युती', (३. ५१, ५)। 'देवराजस्य भवनं', (३. ५४, १४)। ३. ५४, २४। 'देवराजसमद्युतिः', (३. ६४, ८०)। 'मातलिरयं देवराजस्य सारथिः', (३. ७१, २६)। 'जातिस्मरं ह्रदे स्नात्वा भवेज्जातिस्मरो नरः। यत्र क्रतुशतैरिष्ट्वा देवराजो दिवं गतः ॥', (३. ८५, ३८)। 'स्मरेद्धि देवराजोयं', (३. ९२, १४)। 'देवराजसुतामिव', (३. १२३, २)। ३. १२३, २३; १२५, २; १३४, ८; १३५, २७. २८; १३९, ८; १६६. ४. ६. ७. ९. ११. १२; १६७, ३. ७; १६८, १४. ३३. ३९. ५५. ६९. ७८; १६९, ९। दयितं देवराजस्य', (३. १७०, २०)। ३. १७१, १८। 'देवराजस्य दयितं', (३. १७२, १३)। ३. १७३, ७१; १७४, १; १७९, ३३। 'वकदाल्भ्यौ महात्मानौ श्रूयेते चिरजीविनौ। सखायौ देवराजस्य तावृषी लोकसम्मतौ', (३. १९३, ४)। 'देवराजः शतक्रतुः', (३. १९३, ९)। ३, २४६, ७; ३०१, १४। 'शक्तिर्देवराजस्य', (३. ३०२, १७)। ३. ३१०, १। ४. ४५, ३८। 'विमानं देवराजस्य', (४. ५६, ७)। 'विमाने देवराजस्य', (४. ५६, १०)। ४. ६४, ३७. ४४; ५. ८, ५४; ९, १८; २०, ३३; १०, ५०। देवराजस्य दयिताम्', (५. ११, २१)। ५. १५, ५. २८. ३१; १६, १६; १७, १। 'देवराजः शतक्रतुः', (५. १८, ४. ८)। 'यथा नूनं देवराजस्य देवाः शुश्रूषन्ते', (५. ४८, ६)। देवराजश्च सहपुत्रः शचीपतिः', (५. १००, ८)। 'यादृशी देवराजस्य पुरीवर्याऽमरावती', (५. १०३, १)। 'शक्रमासीनं देवराजं', (५. १०४, २२)। ५. १०४, ३०; १०५, ६; १२१, ६ . 'देवराजमिवामराः', (६. १९, ११)। 'देवराजनिवेशने', (६. ९०, १५)। 'देवराजोपमः', (७. ३४, २०)। ७. ७५, २२,। 'यथाश्वेतो महानागो देवराजचमूं', (७. १०५, २६)। 'देवराजप्रतिमं', (७. १४६, १९)। 'स देवशत्रूनिव देवराजः किरीटमाली', (७. १४६, १४४)। 'देवराजमिवाहवे', (७. १७३, ३५)। 'देवराजस्य धर्मात्मा प्रियो बहुमतः सखा', (८. ५, १५)। ८. १९, ५३। 'यथा दैत्यचमूं राजन् देवराजो ममर्द ह', (८. २५, ४३)। ८. ४२, ४। 'देवराजः शतक्रतुः', (९. ४३, ३१)। ९. ४८, ३; ११. २६, १२; १२. ५, १३; २०, १३। 'देवराजसमद्युतिम्', (१२. ३१, १५)। १२. ३१, १६। 'देवराजसमद्युतिः', (१२. ३१, १७)। 'देवराजसमद्युतिम्', (१२. ३१, ३०)। 'देवराजस्य मायया', (१२, ३१, ३४)। 'देवराजगृहोपमम्', (१२. ३८, १३)। 'देवराजोऽपि', (१२. ४६, १२)। 'देवराजसमीपतः', (१२. ५२, ५)। १२. ९८, १०; १७३, ६; २४४, ३७. ४१. ५६। 'देवराजे शतक्रतौ', (१२. २२७, ८)। 'देवराजालयं', (१२. ३५२, ६)। १२. ३६५, ५। 'देवराज इवापरः'. (१३. २, ११)। १३. ५, १४। 'देवराजः शतक्रतुः', (१३. १२, २८)। इनके वचनों को सुनकर शिव का मन प्रसन्न नहीं हुआ (१३. १४, १७७)। 'देवराजश्च कौशिक', (१३. १४, २८४)। १३. ४०, ३८. ४२; ४१, १६। 'देवराजवत्', (१३. ५३, ६५)। 'देवराजः शतक्रतुः', (१३. १२५, ५८)। १४. ५, १५; ६, २. ६; ७, १६; ८, ३८; ९, २. १३. १७; १०, २०. २१. २५. ३१। 'देवराजमिव', (१४. ५२, ३७)। 'देवराजोऽपि (१४. ८१, २०)। 'देवराजः सहस्राक्षः', (१४. ९१, ४)। 'सदृशो देवराजेन', (१४. ९१, ५)। 'देवराजः पुरन्दरः', (१४. ९२, ३५; १७. ३, ३२)। १८. २, १३। 'देवराजः शतक्रतुः', (१८. २, ५३)। 'देवराजेन महेन्द्रेण', (१८. ३, ३६)।

***देवराजन्** : १. २, ३७४; ५. ११, २४। 'अस्त्रं दयितं देवराज्ञः', (८. ८९. २३)। १४. ५, २२; ९, १४।

***देवश्रेष्ठ, देवदेव**, व० स्था०।

*** देवाधिप** : ५. १०, ७। वज्रेण देवाधिपचोदितेन', (९. २०, २७)।

*** देवेन्द्र** : १. ३०, ४०; ३४, ६; १२३, ३४। अर्जुन के पिता के रूप में इनका उल्लेख (१. १२३, ३५)। १. २२७, ३१; २. ११, ५१; १२, ६। 'महेन्द्रमिव देवेन्द्रं', (२. ५३, १२)। ३. ९, ११। युक्ता देवेन्द्रमृषयो यथा', (३. ३६, ४२)। ३. ४३, २१। 'दधीच इव देवेन्द्रं', (३. ४३, २१)। ३. ९२, ६; ११७, ११; १३५, २४; १४२, २६; १६८, ५; १७३, ६८; १९३, १५. ३७; २२४, ४. २५; २२६, १८; ४. ३८, ३५; ५. ९, २५. ४७. ५१; १०, ४५. ४६; १६, ११; १७, २; १८, ५। 'देवेन्द्रसेनेव', (६. २०, ५)। ६, १२१, ३२। 'देवेन्द्रमपि', (७. ११०, ७९)। 'असुरानिव देवेन्द्रः', (७. १५६, १२४)। 'देवानामिव देवेन्द्रः', (७, १७०, ६५)। 'शेते निहतो वीरो देवेन्द्रेण इवाचलः', (८. ९, १९)। 'जम्भं जिघांसुं प्रगृहीतवज्रं

जयाय देवेन्द्रमिव', (८. ७७, ३)। ९. ४३, ४०. ४२; १२. ३१, २५; ६७, ३४; १०३, २०; १२४, २२; २२५, १९; २२७, ६७. ६९; २२८, ८१; २८२, १७. २०. ५६। देवेन्द्रस्य निवेशने', (१२. ३६५, ४)। १३. १२, २७. ५०। शिव का देवेन्द्र के रूप में उल्लेख (१३. १४, १७६. २२७. २३८)। १३. ४०, ३९; ४१, १। 'देवेन्द्रत्वं', (१३. ५५, २९)। १३, ६२, ५६. ८६. ८८। 'देवेन्द्र तन्निबोध शचीपते', (१३. ८३, ३५)। १४. ५, २६; ९, ७. २८; ५५, २८. ३०। 'देवेन्द्रस्येव', (१४. ८५, २८)। १७. ३, २६; १८. ३, ३०।

* देवेश, व० स्था०।

* दैत्यनिवर्हण : १७. ३, ३७।

* दैत्यासुरनिवर्हण : १२. २८१, २२।

* नमुचिघ्न : १. २५, ८।

* नमुचिहत् : १. २२६, २१।

* पर्जन्य : १. ३, १६७। 'कालवर्षी च पर्जन्यः', (१. ६८, १०)। 'यथर्तुवर्षी पर्जन्यः', (१. १०९, २)। द्वादश आदित्यों में इनका उल्लेख (१. १२३, ६७)। 'निकामवर्षी पर्जन्यः', (२. ३३, २)। 'पर्जन्यमिव भूतानि', (२. ४५, ६५)। 'प्रवर्षत्पर्जन्यः', (३. ११०, ४५. ४८)। 'अकालवर्षी पर्जन्यः', (३.१९०, ७०)। 'कालवर्षी च पर्जन्यः', (३. १९०, १९१)। ३. १९३,७। 'पर्जन्यसहितः श्रीमानग्निर्वैश्वानरः', (३, २२१, १६)। ३. २३१, ४६। 'पर्जन्यो वर्षतां वरः', (४. २, १६)। 'पर्जन्यः सम्यग्वर्षी', (४.२८, १९)। पर्जन्य इव वृष्टिमान्', (४. ५८, ७४)। 'यथा वर्षति पर्जन्ये', (४. ६३, ११)। 'पर्जन्यनाथाः पशवः', (५, ३४, ३८)। 'निकामवर्षी पर्जन्यः (५, ६१, १७)। 'पर्जन्यः प्रावर्षत्', (५, ८४, ५)। 'पर्जन्य इव वृष्टिमान्', (६. ६३, २५) 'अभ्यवर्षच्च पर्जन्यः', (६. ११९, ९३)। 'पर्जन्य इव', (७. १०, १४)। 'यस्मै ववर्ष पर्जन्यो हिरण्यं परिवत्सरान्', (७. ५६, ५)। 'कामान् वर्षति पर्जन्यः', (७. ५६, ७)। 'पर्जन्य इव वृष्टिमान्', (.७. ८९, ४)। शिव को इनके साथ समीकृत किया गया है (७. २०२,१०३)। 'पर्जन्यस्तद्राष्ट्रं नाभिवर्षति', (१०, १५, २३)। 'कालवर्षी च पर्जन्यः'. (१२. २९, ५३)। 'पर्जन्यमिव घर्मान्ते नाथमाना उपासते', १२. ३७, २२)। 'कालवर्षी च पर्जन्यः', (१२. ९१, १)। 'पर्जन्यादिव जीवनम्', (१२. ९७, १५)। इन्द्र से भिन्न (१३. १, ५५)। १३. ३१, ६। 'वर्षति पर्जन्ये', (१३. १३७, १३)। 'पर्जन्यो ववृषे', (१३. १४८, २)। 'न च वर्षति पर्जन्यः', (१४. ९२, १३)। निकामवर्षी पर्जन्यः', (१४. ९२, ३७)।

* पाकशसन : 'लोकांश्चाजितवान्पाकशासनः', (१. २०२, १७)। १. २२७, ४५. ४७ ; २२८, ४६। 'प्रववर्ष च तत्रैव सहसा तोयमुल्बणम्। कर्षतस्याचरान्विघ्नं भगवान्पाकशासनः', (३, ९, १८)। ३. ४२, १४। देवेशं पितरं पाकशासनम्', (३. ४३, १६)। 'नावर्षत्पाकशासनः', (३. ११०, ३०)। ३. १२१, २३; १३५, २०. ३९। 'यथर्तुवर्षी भगवान्न तथा पाकशासनः', (३. १८८, ५०)। ३. २२३, ११; २२४, ३; २४६, ८; ३००, १४; ३१०, १३; ५. ९, २५; १३, १४। 'महेन्द्रः पाकशासनः', (५. १६, ३३)। 'समयवर्षीव गगने पाकशासनः', (४. ५९, ३०)। भगदत्त के मित्र के रूप में इनका उल्लेख (५. १६७, ३७)। ९. ४६, ४४; ४८, ५. १८; ५१, ७; १२. २९, ६४। 'मरुद्भिः सह जित्वाऽरीन्भगवान्पाकशासनः। एकैकं क्रतुमाहृत्य शतकृत्वः शतक्रतुः ॥', (१२. ३३, ३९)। 'गाधिर्नामाऽभवत्पुत्रः कौशिकः पाकशासनः', (१२. ४९, ६)। १२. ९०, २४; १२४, २८; २२५, २; २२७, ८८; २२८, ८४; २८१, २८; १३. ५, ९. २७; ४०, १८. २८. ३८. ४३. ४६; १५६; १६; १४. ५, २५; ८०, ५४।

* पुरन्दर : १. २, १६६. २०१; ३, १४९; २५, ९; ३१, १०। सहस्राक्षः पुरंदरः', (१. ३३, २४)। 'पुरंदरनिवेशनम्', (१.५३, १४)। १. ५३, १५; ५६, १३. १४; ६०, ८; ७१, २१; ७८, २। 'यथा देवं पुरंदरम्', (१. १००, २६)। 'पौरवस्तु पुरीं गत्वा पुरंदरपुरोपमाम्', (१. १००, ४१)। 'पुरंदरमिवापरम्' (१. ११२, ६)। 'देवेष्विव पुरंदरम्', (१. ११३, ३२)। 'बभौ यथा दानवसंक्षये पुरा पुरंदरो देवगणैः समावृतः', (१. १३५, ३२)। 'पुरन्दरगृहोपमम्', (१.२२१, ३९)। 'पुरंदरपुरोपमम्', (१. २२२, १८)। १. २२८, २४; २३४, ७; २. ११, ५१। 'देवैरिव पुरंदरः', (३. ६, १३)। 'पुरंदरमिवर्षयः', (३. २६, २५)। 'देवं पुरंदरम्', (३. ३७, १६)। ३. ३७, १८। 'पुरंदरनिवेशनम्', (३. ४४, २)। ३. ४४, ५; ४७, १; १००, ५. १५। 'सहस्राक्षः पुरंदरः', (३.१०१,८)। 'देवः साक्षात्पुरंदरः', (३. १०१, ९)। ३. १२१, १; १२४, ११; १२५, ८; १४१, २१। 'देवराजः पुरंदरः', (३. १६६, ६)। ३. १६६, ९। 'देवराजः पुरंदरः', (६, १६६, १३)। 'यथा देवं पुरंदरम्', (६. १६८, ८०)। 'पुरंदरपुरात्', (३. १७२, २७)। 'सहस्राक्षः पुरंदरः', (३. १७३ ७०)। 'लोकमाप्नोति पुरंदरस्य', (३. १८६, १५)। अग्नि का एक नाम (३. २२१, ३)। ३. २२३, ४. ८। 'देवः पुरंदरः', (३. २३१, ६८)। ३. २३१, १०४; ३००, १७; ३०१, १५। 'देवेशममोघार्थं पुरंदरम्', (३. ३०२, १४)। 'विबुधाः सर्वे पुरन्दर मुखा दिविः (३. ३०६, १९)। ४. ८, ५; ५. ८, १३। 'देवः शचीमाह पुरन्दरः', (५. १४, १३)। 'अजयत्तः पुरा वीरो युध्यमानं पुरन्दरम्', (५. ५०, २६)। 'अपि साक्षात् पुरंदरः', (५. ५९, २४)। 'पुरंदरगृहोपमम्', (५. ९६, २)। ५. १०४, २४. २६। 'अपि साक्षात्पुरन्दरः', (५. १२४, ५६)। 'जहि भीष्मं महाबाहो यथा वृत्रं पुरन्दरः', (५. १७७, ४२)। 'वधाकांक्षी वृत्रस्येव पुरन्दरः', (६. ८४, २६)। 'पुरन्दरसमः', (६.९५,१६)। 'अवारयत्ततः शूरो भूय एव पराक्रमी। शरैः सुनिशितैः पार्थं यथा वृत्रं पुरंदरः ॥', (६. ११०, ४७. ४८)। 'अपि शक्यो रणे जेतुं वज्रहस्तः पुरंदरः', (७. ९४, २८)। 'जहि नं त्वं महाबाहो यथा वृत्रं पुरंदरः', (७. १०२, १०)। ७. १०३, १९। 'शक्तिं विसृज्य राधेयः पुरंदर इवाशनिम्', (७. १३३, २२)। 'अजयत्समरे कर्णं पुरंदर इवासुरम्', (७. १३५, ११)। 'साक्षादपि पुरन्दरः', (७. १५०, ७)। 'वृत्रहत्ये यथा देवाः परिवव्रुः पुरंदरम्', (७. १५३, ३७)। 'निचखान महाबाहुः पुरंदर इवाशनिम्', (७. १५७, १४)। ७. १५८,५। 'पुरन्दसमः', (७. १९४, ८)। 'संक्रुद्धो हि पुरंदरः', (७. २००, ३१)। ७. २०२, ८९; ८. ९, ४३। 'पुरंदरं देवगणा इवाब्रुवन्', (८. १८, २३)। 'पुरंदरसमं', (८. ३१, १४)। ८. ३३, ३७। 'वज्रहस्तं पुरन्दरं', (८. ३५, २२)। 'विष्णुपुरंदरोपमम्', (८. ३७, २०)। 'पुरंदरसमे क्रुद्धे', (८. ६०,८६)। 'जहि कर्णमाहवे पुरन्दरो वृत्रमिवात्मवृद्धये', (८. ७१, ४०)। 'पुरन्दरधनुः प्रख्या', (८. ८७, ९३)। ८. ९०, ३४। 'व्यसृजच्छरवर्षाणि वर्षाणीव पुरन्दरः', (८. ९०, ९०)। 'देवेष्विव पुरंदरः', (९. ३३, ५४)। 'साक्षादपि वज्री पुरन्दरः', (९. ६२, २९)। 'देवराजं पुरन्दरम्', (१२. २९, २०)। 'सहस्राक्षः पुरंदरः', (१२. ४९, ५)। १२. ५९, ८३; ९०, २४; १०३, ६. ११. ३६. ५३; १७३, ११; २२३, ३०; २२४, २६; २२५, १७. ३७; २२६, २; २२७, ११. ४८। 'त्रिलोकेशः पुरंदरः', (१२. २२६, ४७; २८०, २७; ३४२, २४। शिव के इन्द्र के रूप में (१३. १४, १९७. २०८)। १३. २७, २७; २९, १९. २३; ४०, १९. २३; ४१, १६. १८. २०। 'लोकमाप्नोति पुरंदरस्य', (१३. ५७, ३२)। १३. ६२. ६०. ६७. ७७. ९१; ८३, ३३; ५३, १४४। 'लोकानवाप्नोति पुरंदरस्य', (१३. १२६, ४०)। 'अथ शप्तश्च भगवान् गौतमेन पुरंदरः। अहल्यां कामयन', (१३. १५३, ६)। 'बृहस्पतिपुरन्दरौ', (१४. ७, २०)। १४. ९, ३२; १०, ६। 'देवतानां पुरंदरः', (१४. ४३, ११)। 'वज्रपाणिः पुरंदरः', (१४. ५५, २७)। ववर्ष धनुषा पार्थो वर्षाणीव पुरंदरः', (१४. ७७, २७)। १४. ९१, १३। 'देवराजः पुरंदरः', (१४. ९२, ३५)। 'पुरंदरस्य संस्थानं', (१५. २०, ८)। १७. ३, ४। 'देवराजः पुरंदरः', (१७. ३, ३२) 'पुरंदरपुरे', (१८. ६, ४७)।

* पुरुहूत : 'पुरीम् पुरुहूतस्य', (१. ८९, १६)। अर्जुन के पिता के रूप में इनका उल्लेख (१. १२६, २५)। 'पुरुहूत इवारिहा', (२. ४०, २)। ३. ९१, ८। 'शासनात् पुरुहूतस्य निर्मितो विश्वकर्मणा', (६. ५०,

४३) । १२. २८२, ५१ । 'पुरुहूतनमस्कृत', (१३. १६, १३) । 'पुरुहूतमिवेश्वरा:', (१३. १८, ६१) । १४. ९, ९; १०, २२; १६. ४, २८ ।

* पुष्करेक्षण : १३ ८३, ४४ ।

* पूषानुज : ८. ३०, २९ ।

* बलभिद्, बलहन्, बलहन्तृ, बलजित्, बलनाशन, बलनिसूदन, बलसूदन व० स्था० ।

* बलवृत्रघ्न, बल-वृत्रहन्, बल-वृत्रनिसूदन, बल-वृत्रसूदन, व० स्था ।

* भूतभव्येश, व० स्था ।

* मघवत् : १. ६३, २६. २८; ७८, ३ । इन्होंने अनुपम पराक्रमी कर्ण की शक्ति का आघात सहन करने के लिये घटोत्कच की सृष्टि की थी (१. १५५, ४६) । जो पाँच इन्द्र पाण्डवों के रूप में उत्पन्न हुये था, उनमें से एक यह भी थे (१. १९७, २७) । 'मघवतापि', (१. २०५, १६) । 'मघवानिव', (१. २२१, ७७) । 'रक्षिता चैव त्रिदिवं मघवानिव', (३. ४५, १०) । 'मघवा', (३. ५४, १९) । ३. ५४, १६. २०; ५५, ३; १२४,१०;१२६,३५;१३५,२८ । 'निहत्य समरे सर्वान् दानवान् मघवानिव', (३. १६१, ६) । 'साक्षान्मघवता सृष्टः संभाष्यति धनंजयः', (३. १६२, ३१) । 'मघवानपि देवेशः', (३. १६८, १९) । 'मघवा जितवान् शम्बरं युधि', (३. १६८, ८१) । 'पुरेव मघवा वशी', (३. १६८, ८३) । ३. १७४, ४ । 'मघवानिव पौलोम्या सहितः', (३. १८३, ७) । ३. १९३, २९ । 'सोऽभिषिक्तो मघवता सर्वैर्देवगणैः सह', (३. २२९, २३) । 'मघोनः स्यन्दनोत्तमः', (३. २९०, १३) । ३. ३००, ३९ । 'सृष्टो मघवता वज्रः प्रयतन्निव पर्वते', (४. ५७, ११) । ४. ५८, ७१; ५. ९, ४३; १०, ५ । 'देवराज्यं मघवान् प्राप मुख्यम्', (५. २९, १४) । 'स योत्स्यति हि विक्रम्य मघवानिव दानवैः', (५. १७२, ४) । 'व्यदारयत संग्रामे मघवानिव दानवान्', (६. ४५, ६४) । 'तमजेयं राक्षसेन्द्रं संख्ये मघवता अपि', (६. ८२, ४६) । 'स बाणवर्षं सुमहदसृजत् पार्षतं प्रति ॥ मघवान् समभिक्रुद्धः सहसा दानवानिव ।', (७. ७, ५१. ५२) । 'विसृजञ्छरजालानि वर्षाणि मघवानिव', (७. १०. १५) । 'न शक्यमेतत्कवचं बाणैर्भेत्तुं कथञ्चन । अपि वज्रेण गोविन्द स्वयं मघवता युधि ॥', (७. १०३, १३) । 'पृष्ठतोऽनुययुः शूरा मघवन्तमिवामराः', (७. १२७, ३२) । 'व्यधमत्कौरवीं सेनामासुरीं मघवानिव', (७. १७१, ४९) । 'न शक्तस्तानि मघवान् भेत्तुं सर्वायुधैरपि', (७. २०२, ६६) 'व्यधमत्पाण्डवीं सेनामासुरीं मघवानिव', (८. ४६,४) । 'जघान पाण्डवीं सेनामासुरीं मघवानिव', (८. ४८, ९) । 'हत्वा कर्णं रणे कृष्ण शम्बरं मघवानिव', (८. ७४, ४८) । 'पुरा जिघांसुर्मघवेव जम्भम्', (८. ८४, १९) । 'तदुपश्रुत्य मघवा प्रणिपत्य पितामहम्', (८. ८७, ६६) । 'जहि रणे शल्यं मघवानिव शम्बरम्', (९. ७, ३५) । 'असृजद्बाणवर्षं धर्मान्ते मघवानिव', (९. ११, २३) । 'ववर्ष शरवर्षेण शम्बरं मघवा इव', (९. १६, ३३) । 'ववर्ष मघवान्', (९. ५८, ५२) । 'सूदयिष्यामि विक्रम्य मघवानिव दानवान्', (१०.३,२८) । १०.९,५५ । 'जहि तं पापकर्माणं शम्बरं मघवानिव', (१०. ११, २३) । 'मामभ्युद्धृतवाञ्छक्त्या पौलोमीं मघवानिव', (१०. ११, २६) । 'अनाधृष्यः परैर्युद्धे शत्रुभिर्मघवानिव', (११. २१, ८) । 'ववृषे मघवा परिवत्सरम्', (१२. २९, २५) । 'मघवा', (१२. २९, २७) । 'मघवानिव', (१२. ४४, ७) । 'बार्हस्पत्यं ज्ञानं प्रोवाच मघवा स्वयम्', (१२. १४२, १७) । १२. २२३, ८; २२४, १५. २८; २२८, १७ । 'लक्ष्मीसहितमासीनं मघवन्तं', (१२. २२८, ८८) । 'वृत्रं तु हत्वा मघवा दानवारिः', (१२. २८२, १०) । १२. ३२०, ८२ । 'वालखिल्या मघवता ह्यवज्ञाताः पुरा किल', (१३. १४, ९१) । शिव इन्द्र के रूप में (१३. १४, १९९, २११) 'मघवा', (१३. ६२, ५२. ५३; ९४, ४३; १०२, ५६) । 'नाशक्तस्तानि मघवा जेतुं सर्वायुधैरपि', (१३. १६०, २६) । १४. ९, ४. ७ ।

*मरुत्पति (मरुतों के अधिपति) : 'यथा शक्रो मरुत्पतिः', (१. ७४, १२९) । 'यथा शच्या मरुत्पतिः', (१. १७३, ४८) । 'सहदेवैर्मरुत्पतिः', (१. २३४, १४) । 'मरुद्भिः सहितो राजन्नपि साक्षान्मरुत्पतिः', (२. ६२, १७) । 'मरुद्गणैः परिवृतः साक्षादपि मरुत्पतिः',(४. ६८, ४२) । 'तदाहनिः व्यत्केशवः कर्णमुग्रं मरुत्पतिर्वृत्रमिवात्तवज्रः', (८. ६८, २७) । 'हन्यादपि मरुत्पतिः', (१०. ८, १५५) । 'मरुत्पति समाः', (१२. ४९, ८३) । 'इन्द्र मरुत्पतिं', (१२. ३४२, ५२) ।

* मरुत्वत् (मरुतों के समान) : ततो मरुत्वान् हरिभियुक्तैर्वाहैः', (३. १६८, १२) । 'यथा मरुत्वान् बलभेदने पुरा', (८. ७७, ९) ।

* महेन्द्र : 'महेन्द्रलोकगमनम्', (१. २, १५९) । 'शचीव महेन्द्रेण', (१. ६१, ४४) । 'स तां पूजां महेन्द्रस्तु दृष्ट्वा देवः कृतां शुभाम्', (१. ६३, २२) । 'महेन्द्रेण', (१. ६३, २५) । 'परस्पराश्लिष्टशाखैः पादपैः कुसुमान्वितैः । अशोभत वनं तत्तु महेन्द्रध्वजसंनिभैः ॥', (१. ७०, १४) । 'महेन्द्रपुरसन्निभम्', (१. ८२, १; १०९, ९) । 'त्वरमाणोऽभिदुद्राव महेन्द्रं शम्बरो यथा', (१. १३८, ४३) । 'महेन्द्रस्य वज्रं', (१. १७०, ५०) । 'महेन्द्रकर्मा', (१. १८९, १८) । 'महेन्द्रस्यापि नेत्राणां पृष्ठतः पार्श्वतोऽग्रतः', (१. २११, २७) । 'रक्ष्यमाणं महेन्द्रेण', (१. २२३, १२) । 'महेन्द्रस्य पूर्वैः सह सलोकताम्', (२. १२, २८) । 'सखा महेन्द्रस्य', (२. २६, १२) । 'महेन्द्रमिव देवेन्द्रं दिवि सप्तर्षयो यथा', (२. ५३, १२) । 'सोपेन्द्राः समहेन्द्राश्च', (३. ३, ४१) । 'अस्त्रहेतोर्महेन्द्रं च रुद्रं चैवाभिगच्छतु', (३. ३६, ३१) । 'प्रत्युवाच महेन्द्रस्तं प्रीतात्मा प्रहसन्निव', (३. ३७, ५२) । 'महेन्द्रोपि', (३. ४०, १६) । 'महेन्द्रवरुणोपगः', (३. ४५, १२) । 'महेन्द्रस्य नियोगेन', (३. ४५, १६) । 'महेन्द्रस्य वर्तमाने', (३. ४६, २३) । 'प्रियं कुरु महेन्द्रस्य मम चैवात्मनश्च ह', (३. ४६ ३२) । 'एवमुक्ते महेन्द्रेण बीभत्सुरपि लोमशम्', (३. ४७, ४५) । 'लोकपाला महेन्द्राद्याः', (३. ५५, ५) । 'महेन्द्रं सर्वदेवानां', (३. ५७, ११) । 'महेन्द्रप्रमुखान् सुरान्', (३. १००, ४) । 'समहेन्द्राश्च', (३. १०२, १८) । सधार्तराष्ट्रं जहि सानुबन्धं वृत्रं यथा देवपतिर्महेन्द्रः', (३. १२०, ६) । 'महेन्द्रस्य', (३. १२१, २२) । 'महेन्द्रं', (३. १२६, २९) । 'यथा महेन्द्रः प्रवरः सुराणां', (३. १३४, ६) । 'एतदाहुर्महेन्द्रस्य राज्ञो वैश्रवणस्य च', (३. १६३, ६) । 'महेन्द्रवाहं', (३. १६५, १) । 'महेन्द्रवाहाद', (३. १६५, ४) । 'महेन्द्रानुचराः', (३. १६८, ११) । 'महेन्द्राश्वप्रचोदितैः', (३. १७१, २) । 'महेन्द्रेण', (३. १७२, ३४) । 'महेन्द्रो वै प्रजापतिः', (३. १८५, १५) । 'महेन्द्र इव वज्रभृत', (३. २४०, १५) । 'महेन्द्रकल्पान्', (३. २६८, २) । 'महेन्द्रोपमविक्रमाणां', (३. २६९, २७) । 'महेन्द्र इव पौलोम्या भार्यया स समेयिवान्', (३. २९१, ४०) । 'महेन्द्र इव वीरश्च', (३. २९१, ४०) । 'महेन्द्रस्य', (३. ३००, ६) । 'महेन्द्रेण', (३. ३०८, १४) । 'सुतं महेन्द्रस्य', (४. ११, ३) । 'महेन्द्रसकतेजसम्', (४. ४८, १२) । 'विष्णुमहेन्द्रकल्पौ', (४. ७१, १६) । 'सुतामिव', (४. ७२, ३२) । 'महेन्द्र', (५. १०, ४१) । 'महेन्द्र', (५. ११, १२) । 'महेन्द्रस्य महात्मनः', (५. १३, १८) । 'महेन्द्र दानवान् हत्वा', (५. १६, १६) । 'महेन्द्रबलम्', (५. १५, १८) ('महेन्द्रम्', (५. १६, २८) । 'महेन्द्रः', (५. १६, २९) । 'महेन्द्रः पाकशासनः', (५. १६, ३३) । 'महेन्द्रकल्पनम्', (५. २३, ३) । 'देवैर्महेन्द्रप्रमुखैः', (५. ४८, ९३) । 'महेन्द्र इव वज्रेण दानवान्', (५. ५१, ४२) । 'ति शच्यर्थं महेन्द्रेण याचितः स परंतपः', (५. ५५, ५१) । 'महेन्द्रोतेन्द्रचिक्रमम्', (५. ६०, २०) । 'यां चाव शक्तिं त्रिदशाधिपस्ते ददौ महात्मा भगवान् महेन्द्रः', (५. ६१, ९) । 'महेन्द्रसमविक्रमः', (५. ९०, ३०) । 'महेन्द्रसदनप्रख्यां प्रविवेश सभा ततः', (५. ९४, ३२) । 'महेन्द्रसदृशी', (५. ९८, ७) । 'महेन्द्रः प्रवर्षति', (५. ९९, ७) । 'इन्द्रोवृत्रवधेनैव महेन्द्रः समपद्यत', (५. १३४, २४) । 'महेन्द्रमिवचादित्यैरभिगुप्तं महारथैः', (५. १५३, ३ । 'महेन्द्रमिव', (५. १५७, ३) । 'हनिष्यति चमूं तेषां महेन्द्रो दानवानिव', (५. १६५, २६) । 'महेन्द्रेणेव', (५. १७२, १०) । 'महेन्द्रसदृशः शौर्ये', (६. १३, ८) । 'महेन्द्रकेतवः शुभ्रा महेन्द्रसदनेष्विव', (६. १६,

१३; १८, ७)। 'महेन्द्रादीन् दिवौकसः', (६. २१, ९)। 'महेन्द्रप्रतिमानकल्पम्', (६. २२, १२)। 'महेन्द्रसमवीर्येण', (६. ५९, ३६)। 'यथा, देवासुरे युद्धे महेन्द्रं प्राप्य', (६. ७७, १२)। 'दैत्येषु यद्वत्समरे महेन्द्रः', (६. ७७, ४५) 'महेन्द्रसमविक्रमाः', (६. ८१, ९)। 'महेन्द्रप्रतिमप्रभावः', (६. ८५, २८)। 'जहि पाण्डुसुतान्वीरान्महेन्द्र इव दानवान्', (६. ९७, ३८)। 'महेन्द्रप्रतिमं कार्ष्णिम्', (६. १०१, १९)। 'महेन्द्रसमवीर्येण', (६. १०६, २७)। महेन्द्रस्येव', (६. १०७, ३१)। 'यथा वृत्रमहेन्द्रयोः', (६. १११, ४४)। 'महेन्द्रेणेव मैनाकमसह्यं भुवि पातितम्', (७. ३, ४)। 'यमवैश्रवणादित्यमहेन्द्रवरुणोपमम्', (७. १०, ४१)। महेन्द्रभवनाद्धीरः पारिजातमुपानयत्', (७. ११, २२)। 'महेन्द्रमिव', (७. १३, २७)। 'महेन्द्रशत्रवो येन हिरण्यपुरवासिनः', (७. ५१, १७)। 'महेन्द्रप्रतिमौजसाम्', (७. ७१, २५)। 'महेन्द्राशनिसन्निभान्', (७. १०६, ७)। 'महेन्द्र इव शम्बरम्', (७. १०७, ९)। 'महेन्द्रो दानवेष्विव', (७. १२४, २)। 'महेन्द्रस्येव', (७. १३५, १४)। 'जयाजयौ महेन्द्रस्य लोके दृष्टौ पुरातनैः', (७. १३९, १०७)। 'महेन्द्राभः पुत्र आसीत्पुरूरवाः', (७. १४४, ४)। 'महेन्द्रचापप्रतिमं च गाण्डिवम्', (७. १४५, ९७)। 'महेन्द्राशनिनिःस्वनः', (७. १५४, ३१)। 'महेन्द्रेण यथा वृत्रो', (८. ५, ५४)। 'यथा महेन्द्रः', (८. ७, २३)। 'शत्रोरपि महेन्द्रस्य', (८. ८, ११)। 'वृषो महेन्द्रो देवेषु', (८. ८, २३)। 'वरो महेन्द्रो देवानाम्', (८. ८, २५)। 'महेन्द्रो दानवानिव', (८, १०, ३४)। 'महेन्द्र इव दानवान्', (८. १९, १६)। 'महेन्द्रवज्राभिहतम्', (८. २०, ४४) महेन्द्रो नमुचिं यथा', (८. २६, २१)। 'जहि पार्थात्रणे सर्वान्महेन्द्रो दानवानिव', (८. ३५, ३३)। 'महेन्द्रादपि वज्रपाणेः', (८. ३७, १३)। 'महेन्द्र-विष्णूप्रतिमौ', (८. ३७, १४)। 'वराखमादाय महेन्द्रसृष्टम्', (८. ६४, २४)। 'शरं सूर्यमरीचिसप्रभं सुवर्णवज्रोत्तमरत्नभूषितम्। महेन्द्रवज्राशनिपातदुःसहम्', (८. ८२, ३५)। 'महेन्द्रवज्रप्रहतोऽभ्युदागमे यथा जलं गैरिकपर्वतस्तथा', (८. ८५, १४)। 'महाहवे वीतभयौ समीयतुर्महेन्द्रजम्भाविव', (८. ८८, १२)। 'उभौ महेन्द्रस्य समानविक्रमावुभौ महेन्द्रप्रतिमौ महारथौ। महेन्द्रवज्रप्रतिमैश्च सायकैर्महेन्द्रवृत्राविव संप्रजघ्नतुः ॥', (८. ८९, ७)। महेन्द्रशखाभिमुखान्विमुक्तांश्चिरवा कर्णः पाण्डवस्येषुसंघान्', (८. ८९, २७)। 'महेन्द्रकर्मा', (८. ८९, २८)। 'महेन्द्रवज्रः शिखिरोत्तमं यथा', (८. ९०, ३९)। 'महेन्द्रवज्रानलदण्डसन्निभम्', (८. ९१, ४०)। शिरो जहार वृत्रस्य वज्रेण यथा महेन्द्रः', (८. ९१, ५०)। 'महेन्द्रवाहप्रतिमेन तावुभौ महेन्द्रवीर्यप्रतिमानपौरुषौ', (८. ९४, ५६)। 'महेन्द्रसदृशप्रभम्', (९. ४, २३। महेन्द्रो दानवानिव', (९. ६, ३०)। 'महेन्द्रवज्राशनितुल्यनिःस्वनः', (९. १७, १५)। 'यथा महेन्द्रो नमुचिम्', (९. १७, २२)। 'महेन्द्रवाहप्रतिमः', (९. १७, ५२)। 'महेन्द्रवज्रप्रतिमैः', (९. २०, ५)। 'यथा महेन्द्रस्य गजं समीपे', (९. २०, ७)। 'महेन्द्रस्य', (९. ४५, ३६)। 'महेन्द्रेण', (१०. ४, ३१)। 'निहत्यशत्रून्सर्वान्महेन्द्रं सुखमेधमानम्', (१०. १०, २२)। 'इन्द्रोवृत्रवधेनैव महेन्द्रः समपद्यत', (१२. १५, १५)। 'सहस्राक्षो महेन्द्रश्च', (१२. ५८, २)। 'उत्थानेन महेन्द्रेण श्रैष्ठ्यं प्राप्तं दिवीह च', (१२. ५८, १४)। 'अनुयास्यन्ति महेन्द्रमिव देवताः', (१२. ६७, २५)। 'महेन्द्रस्येव', (१२. ६७ ३१; ७८, १०) 'महेन्द्रप्रतिमप्रभावः', (१२. ११२, २१)। 'प्रह्रादेन हृतं राज्यं महेन्द्रस्य महात्मनः', (१२. १२४, २०)। 'महेन्द्रः', (१२. १६६, ६७; २२३, १२)। 'महेन्द्रेण', (१२. २७९, २८; ३५२, ६)। 'महेन्द्राय नमोऽस्तु ते', (१३. १४, २९४)। 'महेन्द्रस्य दयितः', (१३. १८, ४४)। 'चोदितस्तु महेन्द्रेण मतङ्गः प्राब्रवीदिदम्', (१३. २९, २२)। 'महेन्द्रवचनम्', (१३. २९, २६)। 'तथा भगसहस्रेण महेन्द्रः परिचिह्नितः। तेषामेव प्रभावेन सहस्रनयनो ह्यसौ ॥', (१३. ३४, २८)। 'इन्द्रत्वम्', (१३. ३६, १९)। 'महेन्द्रेण', (१३. ९४, ५०)। 'स्तुवन्ति मां यथा देवा महेन्द्रं प्रियवादिनः', (१३. ११८, १६)। 'महेन्द्रगुरवः सप्त प्राचीं दिशिमाश्रिताः', (१३. १५०, ३३)। 'महेन्द्रसमविक्रमम्', (१३. १५०, ४८)। 'स महेन्द्रः स्तूयते वै महाध्वरे विप्रैरेको ऋक्सहस्रैः पुराणैः', (१३. १५८, २८)। 'महेन्द्रम्', (१४. ९, १६)। 'महेन्द्रः', (१४. ९, ३१)। 'महेन्द्रं देवश्रेष्ठम्', (१४. १०, ७)। 'व्यक्तं वज्रं मोक्ष्यते ते महेन्द्रः', (१४. १०, ८)। 'महेन्द्रप्रतिमाः', (१४. ६१, २१)। 'महेन्द्रवज्रप्रतिमैरायसैर्बहुभिः शरैः', (१४. ७४, २९)। 'महेन्द्र इव वज्रभृत्', (१४. ७७, ३१)। 'महेन्द्रानुगता देवाः', (१४. ८८, ३०)। 'शुशुभे महेन्द्रस्त्रिदशैरिव', (१४. ८९, ३०)। 'महेन्द्रसदने', (१५. २०, ९)। 'महेन्द्रसदनम्', (१५. २०, १०)। 'महेन्द्रस्य सलोकताम्', (१५. २०, २७)। 'विष्णुमहेन्द्रकल्पौ', (१५. २५, ८)। 'महेन्द्र', (१७. ३, ११)। 'महेन्द्र इव', (१८. २, ४६)। 'देवराजेन महेन्द्रेण', (१८. ३, ३६)। 'पाण्डुर्महेन्द्रसदनं ययौ', (१८. ५, १५)। 'भवनं च महेन्द्रस्य', (१८. ५, २९)।

* **मुकुटिन्** : 'मुकुटी बद्धकुण्डलः', (१३. ४०, २९)।

* **लोकत्रयेश** : 'लोकत्रयेशाय पुरन्दराय', (१. ३, १४९)।

* **लोकेश्वरेश्वर** : १२. ४९, ४।

* **वज्रधर** : १. २२४, १५। 'सततं कम्पयामास यवनानेक एव यः। बलपौरुषसंपन्नान्कृतास्त्रानमितौजसः। यथासुरान्कालकेयान्देवो वज्रधरस्तथा ॥', (२. ४, २३)। ३. ४३, २५। 'यथा शची वज्रधरस्य', (३. ११३, २३)। ३. १२१, ३। 'अपि वज्रधरस्य', (३. १४१, १४)। 'अभिदुद्राव संरब्धो वलिर्वज्रधरं यथा', (३. १५७, ५२)। 'धनञ्जयो वज्रधरप्रभावः', (३. १६५, ३)। 'देवा वज्रधरं त्यक्त्वा ततः शान्तिमुपागताः', (३. २२७, १४)। 'जित्वा वज्रधरं संख्ये', (३. २८८, ३)। 'अपि वज्रधरः साक्षात् किम्', (५. २१, ७)। 'यथा वज्रधरः', (६. १७, ३६)। 'यथा वज्रधरः पूर्वं सङ्ग्रामे तारकामये', (६. ८३, २६)। 'शक्यो वज्रधरो जेतुम्', (६. १०७, ७४)। 'अपि वज्रधरः स्वयम्', (६. १०७, ९९)। 'वज्रं वज्रधरो यथा', (७. ९७, ३१)। 'यथा पुरावज्रधरः प्रसह्य बलस्य संख्ये', (७. ११८, १५)। 'नदन्यथा वज्रधरस्तपान्ते', (७. १४०, १०)। 'वज्रधरस्येव निनादः', (७. १९६, २३)। 'यथा वज्रधरः पुरा बलेः', (८. ७७, ८७)। 'स्वयं वज्रधरः', (८. ९, ४७)। 'यथा पुरा वज्रधरस्य दैत्याः', (९. २०, ६)। 'गते वज्रधरे', (९. ४८, ६०)। 'अथेङ्गितं वज्रधरस्य नारदः', (१२. २२८, ९०)। 'यथा पुरा ब्रह्मपुरे सवत्सा शतक्रतोर्वज्रधरस्य यज्ञे', (१३. १२६, ३८)। 'वज्रधरोपमः', (१५. २०, ११)।

* **वज्रधारिन्** : 'यथा देवासुरे युद्धे त्रिदशा वज्रधारिणम्', (६. ९८, ४६)।

* **वज्रधृक्** : १२. २२४, ९; १३. ४०, २९।

* **वज्रपाणि** : 'शक्रः साक्षाद्वज्रपाणिः', (१. ५५, १२)। 'वज्रपाणिं स्म मेनिरे', (१. ६९, १०)। 'वज्रपाणिरिव', (१. १४६, ४)। १. १९७, २१. २८। 'मिषतो वज्रपाणिनः', (३. १२६, ४२)। ३. १६७, ८। 'साक्षादपि वज्रपाणिः', (३. १७६, १४) 'निहन्युर्मन्युना विप्रा वज्रपाणिरिवासुरान्', (३. २००, ७८)। 'संहत्य निहतो वृत्रो मरुद्भिर्वज्रपाणिना', (३. २९२, ४)। 'रणे जित्वा कुरून्सर्वान् वज्रपाणिरिवासुरान्', (४. ३५, १९)। 'वज्रपाणिमिव', (४. ४९, २२)। 'वज्रपाणिरिवासुरान्', (४. ६१, ३०)। 'एष व्यूहामि ते व्यूहं राजसत्तम दुर्जयम्। अचलं नाम वज्राख्यं विहितं वज्रपाणिना ॥', (६. १९, ७)। ६. ५०, ७। 'यथा देवासुरे युद्धे वज्रपाणिर्महासुरान्', (६. ७९, २७)। 'न्यहनत्तावकं सैन्यं वज्रपाणिरिवासुरान्', (६. ८२, ५५)। 'अयोधत संग्रामे वज्रपाणिरिवासुरान्', (६. ८६, ३८)। 'वज्रपाणिश्च देवराट्', (६. १०७, १६)। 'यथा शक्रो वज्रपाणिर्दारयन् पर्वतोत्तमान्', (६. ११६, ३७)। 'वज्रपाणेरिवासुराः', (७. ३, १५)। 'वज्रपाणिरिवापरः', (८. ३६, २०)। 'महेन्द्रादपि वज्रपाणेः', (८. ३७, १३)। 'जघान दैत्यानिव वज्रपाणिः', (९.

२४, ६६)। 'वज्रपाणिरपि स्वयं', (१०. ४, १. १७)। 'सहस्राक्षस्तदा भूत्वा वज्रपाणिर्महायशाः (१३. १४, १७२)। 'वज्रपाणिः पुरन्दरः' (१४. ५५, २७)। 'वज्रपाणिः', (१४. ५८, ३०. ३४)।

* वज्रभृत् : १. १८, ४०; ५६, १९। 'अपि वज्रभृता स्वयम्', (१. २०३, १७)। 'परिरक्षति वज्रभृत्', (१. २२३, ७)। 'अपि वज्रभृता स्वयम्', (३. २१, २०)। 'नमस्कृत्य च वज्रभृत', (३. १४२, २४)। 'महेन्द्र इव वज्रभृत्', (३. २४०, १५)। 'पश्य कर्णं महेष्वास अदितिं वज्रभृद्यथा', (३. २५४, २८)। 'विनासयित्वा सङ्ग्रामे दानवानिव वज्रभृत्', (४. ३६, ७)। 'अपि वज्रभृता गुप्तम्', (४. ५२, १०)। 'वज्रभृच्छुशुभे तत्र', (४. ५६, १८)। 'त्रिदशानिव वज्रभृत्', (५. १६०, २५)। 'अपि निघ्नन् पररथान् वीरो दानवानिव वज्रभृत्', (६. १४, २८)। 'अपि वज्रभृतः स्वयम्', (६. २३, १९)। 'यथोक्तः स नृदेवेन विष्णुर्वज्रभृता यथा', (६. ५०, ४२)। अपि वज्रभृता स्वयम्', (६. ६४, ७५)। 'वज्रभृता अपि', (६. ११९, ५७)। 'वज्रभृत् स्वयम्', (७. १३. ११; ८. ९, ४०)। 'हतो वज्रभृता वृत्रः', (८. ९६, २)। 'वज्रभृत्स्वयम्', (९. ३१, ५)। 'महेन्द्र इव वज्रभृत्', (१४. ७७, ३१)।

* वज्रहस्त : 'वज्रहस्तः शचीपतिः', (३. १९७, २५)। 'यथा देवराजस्य देवाः श्रूयन्ते वज्रहस्तस्य सर्वे', (५. ४८, ६)। 'इन्द्रो वा ते हरिवान् वज्रहस्तः', (५. ४८, ६८)। 'वज्रहस्तान्महेन्द्रात्', (५. ४८, ६९)। 'मोदयित्वा पाण्डवाः समवर्तन्त वज्रहस्तमिवासुराः', (६. १०८, ३४)। 'मोदयित्वा रणे पार्थान् वज्रहस्त इवासुरान्', (८. ९, ५)। 'व्यद्रावयत्तव चमूं वज्रहस्त इवासुरीन्', (८. १४, ३६)। 'वज्रहस्तं पुरन्दरम्', (८. ३५, २२)। 'न्यहनत्पाण्डवीं सेनां वज्रहस्त इवासुरीम्', (८. ४९, ६०)। 'नमस्ते वज्रहस्ताय', (१३. १४, ८८)।

* वज्रायुध : ५. १५८, ३४; ६. ६२, ५८।

* वज्रिन् : 'वज्री चेन्द्र प्रतापवान्', (१. ३०, ४५)। 'वज्रीव', (१. १९३, ३)। १. १९७, १२; २०७, २५; २२५, ३०; २२७, ९। 'ईशानं सर्वलोकस्य वज्रिणं समुपासते', (२. ७, १५)। 'यथा वज्रीदानवशत्रुरेकः', (२. ६१, २४)। 'वज्री वज्रेण प्रहरिष्यति', (२. ६८, ७०)। ततः स वज्री बलिभिर्देवतैरभिरक्षितः', (३. १०१, १)। ३. १२६, ३०; २२३, १०; २५२, २२। 'य इमे वज्रिणः सेनां जयेयुः', (३. २९२, ७)। ३. ३०२, १०. ११; ३१४, ३। 'द्रवतस्तांस्तु संप्रेक्ष्य स वज्री दानवानिव', (४. २३, २७)। 'अपि देवेन वज्रिणा', (४. ४७, १८)। ५. १३, १४। 'वज्री वा बलभित् स्वयम्', (५. ७६, १०)। ७. ७२, ७८; २०२. १००। 'त्रैलोक्यविजये यद्वद्दैत्यानां सह वज्रिणा', (८. १६, १७)। 'वज्रिवज्रप्रमथिता यथैवाद्रिचयास्तथा', (८. १६, ४४)। 'निर्बिभेद महावेगैस्त्वरन्वज्रीव पर्वतम्', (८. १६, ४८)। 'त्रैलोक्यविजये याद्वद्दैत्यानां सह वज्रिणा', (८. १९, ६)। वज्रीवजहतानीव शिखराणि', (८. ६०, ७८)। 'दुःसहं वज्रिणा संख्ये', (८. ६४, ७०)। 'संख्ये वृत्रेण वज्रीव', (८. ६७, १९)। 'साक्षादपि वज्री पुरन्दरः', (९. ६२, २९)। १२. २२४, ३५; २२७, ११. २६। 'वज्रीशम्बरपाकहा', (१२. २२८, ७)। १२. २८२, १५; १३. ४०, २९; १०२, ६२; १४. १०, ११; ६१, २९।

* वरद, द० स्था०।

* वासव : 'वर्षति वासवे', (१. २६, २६)। 'वर्मिणे विबुधाः सर्वे नानाशैरवाकिरन्। पट्टिशैः परिघैः शूलैर्गदाभिश्च सवासवाः॥', (१. ३२, १२)। 'नियोगाद्वासवस्य च', (१. ६७, ७४. १५४)। १. ८८, २। 'वासवतुल्यरूपः', (१. ८८, ७)। देवानामिव वासवः', (१. ९४, १२)। वासवविक्रमः', (१. ९९, १३)। १. १२३, २८. ३०। 'वासुकिं वासवोपमम्', (१. १२८, ६०)। 'मरुद्भिरिव वासवः', (१. २१४, ४)। १. २२६, १८; २२८, १७. २१। 'वासवं देवराजम्', (२. ६, १७)। 'वृत्रवासवयोरिव', (२. २३, २५)। 'लेभे वासवाद्राजा', (२. २४, १८)। 'वासवप्रतिमः', (२. ४४, ११)। 'राजा चित्ररथो नाम गन्धर्वो वासवानुगः', (२. ५२, २३)। ३. ९, १२। 'वृत्रवासवयोरिव', (२. १२, १०८)। 'वृत्रवासवयो राजन्यथा', (३. १६, २३)। 'वलिवासवयोरिव', (३. १७, ११)। 'अपि देवैः सवासवैः', (३. ३६, १७)। 'युद्धमभवल्लोमहर्षणम्। मुजप्रहारसंयुक्तं वृत्रवासवयोरिव', (३. ३९, ५८)। 'द्वितीय इव वासवः', (३. ४३, २२)। ३. ४५, १; ४७, २। 'वासवोपमः', (३. ८५, १११)। 'वासवसंमितम्', (३. ९६, ६)। 'वर्धयामास वासवम्', (३. ११०, २४)। ३. ११५, १७; १२१, २२; १३०, २२। 'सवज्र इव वासवः', (३. १५७, ३७)। 'स्तूयमानो द्विजाग्र्यैस्तु मरुद्भिरिव वासवः', (३. १५७, ७२)। ३. १६०, २२; १६४, १६; १६८, ५६। 'ते यान्तमनुगच्छन्ति देवाः सर्वे सवासवाः', (३. २००, ६२)। ३. २२३, ९. १२. १५; २२६, १७; २२७, ८; २३०, ७। 'मरुद्भिरिव वासवः', (३. २३७, ११)। 'पुरा जित्वेव वासवम्', (३. २८८, ७)। ३. ३०२, २१; ३१०, २०–२२. ३८। 'वृत्रवासवयोरिव', (४. १३, ३१)। 'वासवप्रतिमः', (४. ३९, १२)। 'नित्यं वर्षति वासवः', (४. ४७, २६)। 'युद्धामहेऽर्जुनं संख्ये दानवा इव वासवम्', (४. ४९, २३)। 'वासवतुल्यवीर्याः', (४. ५४, १५)। 'तत्र देवास्त्रयस्त्रिंशत्तिष्ठन्ति सहवासवाः', (४. ५६, ८)। 'वृत्रवासवयोरिव', (४. ५८, ४४)। 'बलिवासवयोरिव', (४. ५८, ५९)। 'सन्निपातो महानभूत्। किरतोः शरजालानि वृत्रवासवयोरिव', (४. ५९, २)। 'सर्वे देवाः सवासवाः', (४. ६४, ३६)। 'युद्धं वृत्रवासवयोः', (५. ९, ५५)। ५. १०, १८. ४२; १३, १२. २०; १७, १०. १२। 'वासवेनापि साक्षात्', (५. २२, १५)। 'देवानामिव वासवः', (५. ५०, ४६)। 'जेतुं समग्रां सेनां मे वासवोऽपि न शक्नुयात्', (५. ५५, २९)। 'ऋषीणामिव वासवः', (५. ८३, ८; ९०, ३४)। 'मरुद्भिरिव वासवः', (५. ९१, ४१)। 'दैतेया निवसन्ति स्म वासवेन हतश्रियः', (५. ९९, ११)। ५. १०४, २. ४। 'वासवस्य शचीमिव', (५. १०४, ९)। ५. १०४, १९; १०५, २. ७. ९. १५। 'देवैः सवासवैः', (५. १११, ६)। 'रेमे स तस्यां राजर्षिः प्रभावत्यां यथा रविः। स्वाहायां च यथा वह्निर्यथा शच्यां च वासवः॥', (५. ११७, ८)। 'देवैरपिसवासवैः', (५. १३०, ३७)। 'नमस्कुर्वन्ति च सदा वसवो वासवं यथा', (५. १४६, १२)। 'वासविर्वासवसमः', (५. १५१, १८)। देवानामिव वासवः', (५. १५६, १२)। 'मरुद्भिरिव वासवः', (५. १५७, १९)। 'ऐरावतगतो राजा देवानामिव वासवः', (५. १६७, ३८)। 'भयाद्वासवस्यापि', (५. १७८, ४६)। 'ततो नित्यमुपादत्ते वासवः परमं जलम्', (६. ११, १७)। 'वर्षति वासवः'. (६. ११, ३४)। 'वासवोपमः', (६. १४, १)। 'देवानामस्मि वासवः', (६. ३४, २२)। 'अयुध्येतां महात्मानौ यथोभौ वृत्रवासवौ', (६. ४८, ५१)। 'देवैरपि सवासवैः', (६. ५३, ४; ५८, ४२)। 'निघ्नन्तं मा रिपून् पश्य दानवानिव वासवम्', (६. ७७, ३१)। 'देवैरपि सवासवैः', (६. ८१, ८)। 'संग्रामे समतिष्ठेतां यथा वै वृत्रवासवैः', (६. ९०, ५९)। 'वसवो वासवं यथा', (६. ९६, १६)। 'त्रिदशा इव वासवम्', (६. ९७, २४)। 'वासवेनापि', (६. ९८, १३)। 'सवज्र इव वासवः', (६. १००, १२)। 'मयं जित्वेव वासवः', (६. १००, २०)। 'युद्धं वृत्रवासवयोरिव', (६. १००, ५१)। 'अर्जुनं समरे योद्धुं नोत्सहेतापि वासवः', (६. ११०, २२)। 'देवैरपि सवासवैः', (६. ११२, २३)। 'यथा देवासुरे युद्धे बलिवासवयोरभूत्', (६. ११६, ३६)। 'वसूनामिवपावकः', (७. ६, ५)। 'मरुतामिव वासवः', (७. ६, ५)। 'देवान् सवासवान्', (७. ७, २१)। 'ते व्यध्यमाना द्रोणेन वासवेनेव दानवाः', (७. ७, ४७)। 'वासवस्येव', (७. २७, २८; २८, ११)। ७. ४१, २६; ६२, ५। 'द्वितीय इव वासवः', (७. ६३, ७)। 'देवाः सवासवाः', (७. ७७, २)। 'मातलिर्वासवस्येव वृत्रं हन्तुं प्रयास्यतः', (७. ८४, १९)। 'देवाः सवासवः', (७. ८७, १५)। 'सवज्र इव वासवः', (७.

८८, १५)। 'वर्षति वासवे', (७. ९३, ५२)। 'देवाः 'सवासवाः', (७. ९८, ४३)। 'बलं हत्वेव वासवः', (७. १०९, ३५)। 'वासवस्येव मातलिः', (७. ११२, ६०)। 'वलिवासवयोरिव', (७. ११७, २)। 'मुण्डानेतान् हनिष्यामि दानवानिव वासवः', (७. ११९, २६)। 'देवैरपिसवासवैः', (७. १३३, ९)। 'वासवस्यापि', (७. १४८, ९)। 'देवैरपि सवासवैः', (७. १५१, ३२)। 'वासवस्येव पावकिः', (७. १५८, ७)। देवैरपि सवासवैः', (७. १५८, ५०)। 'जेष्याभि शक्त्या वासवदत्तया', (७. १५८, ५१)। 'देवाः सवासवाः', (७. १५९, ९७)। 'वासवस्येव संयुगे', (७. १६०, ५५)।, 'यादृशं ह्यभवद्राजन् जंभवासवयोः पुरा', (७. १६७, २४)। 'वलिवासवयोरिव', (७. १७०, ३२)। 'वासवस्येव नर्दतः', (७. १६७, ४७)। 'वासवाशनिनिर्घोषं दृढज्यमतिविक्षिपन् ॥ व्यक्तं किष्कुपरीणाहं द्वादशारत्निकार्मुकम् ।', (७. १७५, १८. १९)। 'घृतं घटोत्कचं क्रूरैर्मरुद्भिरिव वासवम्', (७. १७५, ८२)। 'शक्त्या जहि त्वं दत्तया वासवेन', (७. १७९, ५०)। 'वासवो वा कुवेरो वा', (७. १८०, १६)। 'वासवेन महाबाहो क्षिप्ता', (७. १८०, २१)। 'देवानामिव वासवः', (७. १८२, ३७)। 'देवैरपि सवासवैः', (७. १८३, २)। 'नैनमाशंसिरे जेतुं दानवा वासवं यथा', (७. १८६, २७)। 'देवैरपि सवासवैः', (७. १९०, १०)। 'वासवस्येव निर्जयम्', (७. १९३, ७) व्यक्तमभ्येति वासवः', (७. १९६, २४)। देवाः सवासवाः', (७. २०२, ६७)। 'विष्णुवासवयोरिव', (८. ३, १५)। 'देवैरपि सवासवैः', (८. ९, ६७)। 'वृत्रवासवयोरिव', (८. १४, ३९)। 'देवा अपि सवासवाः (८. ३१, ६६)। 'यमवरुणकुबेरवासवा वा', (८. ३७, ३१)। सवज्राद्वापि वासवात्', (८. ४२, ३६)। 'देवताः सर्वा योधयेयुः सवासवाः', (८. ४३, ३)। 'दानवानिव वासवः', (८. ५६, १०७)। 'अश्विनाविव वासवम्', (८. ६५, १८)। 'देवैरपि सवासवैः', (८. ६६, ६)। 'वासवविक्रमः', (८. ६८, १०)। 'देवैरपि सवासवैः', (८. ७२, ३२)। 'वासवोपमः', (८. ७३, ९)। 'वृत्रः प्राप्येव वासवम् (८. ७३, ४२)। 'वासवाशनितुल्यस्य मेघौघस्येव मारिष', (८. ७९, १६)। 'सूर्यस्य चैवासीद्विवादो वासवस्य च', (८. ८७, ६०)। 'सुरासुराः शम्बरवासवाविव', (८. ८८, ९)। 'कुवेरवैवस्वतवासवानां तुल्यप्रभावाः', (८. ९२, १३)। 'समानयानाविव विष्णुवासवौ', (८. ९४, ५७) 'सदस्यहूताविव विष्णुवासवौ', (८. ९४, ६६)। 'जहि चैनं महाबाहो वासवो नमुचिं यथा', (९. ७, ३८)। 'सवज्रमिव वासवम्', (९. १२, २)। 'अजेयौ वासवेनापि', (९. १६, २०)। ऐरावणस्थस्य चमूविमर्दे दैत्याः पुरा वासवस्येव राजन्', (९. २०, ६)। 'यादृशं समरे पूर्वं जम्भवासवयोर्युधि', (९. २६, २५)। 'यथा बिभेद समयं नमुचेर्वासवः पुरा। नमुचिर्वासवाद्भीतः सूर्यरश्मिं समविशत् ॥', (९. ४३, ३४)। 'चिच्छेदास्य शिरो राजन्नपां फेनेन वासवः', (९. ४३, ३६)। 'देवाः सर्वे सवासवाः', (९. ४५, २९)। ददावनलपुत्राय वासवः', (९. ४५, ३६)। 'सर्वे देवाः सवासवाः', (९. ४६, ५९)। 'सर्वे देवाः सवासवाः', (९. ४७, १८)। 'देवाः सर्वे नरव्याघ्र बृहस्पति पुरोगमाः ॥ ज्वलनं तं समासाद्य प्रीताऽभूवन्सवासवाः', (९. ४७, २०. २१)। 'सर्वे देवाः सवासवाः', (९. ४९, १९)। 'उभौ सदृशकर्माणौ यमवासवयोरिव', (९. ५५, २८)। 'एवं तदभवद्युद्धं घोररूपं परंतप। परिवृतेऽहनि क्रूरं वृत्रवासवयोरिव ॥'' (९. ५७, २४. ३८)। 'अपि देवेषु वासवः', (१०. ४, ७)। 'अशोभेतां महात्मानौ दाशार्हमभितः स्थितौ। रथस्थं शार्ङ्गधन्वानमश्विनाविव वासवम् ॥', (१०. १३, ७)। 'कर्णार्जुनसहायोऽहं जयेयमपि वासवम्', (१२. १, ३९)। 'वासवानुमते', (१२. ३१, ४१)। 'वासवोपमः', (१२. ५०, २६)। 'ब्राह्मणमिव वासवः', (१२. ५३, २६)। 'एतद्वृत्तं वासवस्य', (१२. ९१, ५६)। १२. ९८, ५. ९। 'बृहस्पतिं देवपतिरभिवाद्य कृताञ्जलिः। उपसंगम्य पप्रच्छ वासवः परवीरहा ॥', (१२. १०३, ३)। 'सुखं स्वपिति वासवः', (१२. १०३, १२)। १२. १६६, ६७; १७३, १२। 'वासवं सर्वदेवानामध्यक्षमकरोत्प्रभुः', (१२. २०७, ३६)। 'वासवस्य च संवादं बलेः', (१२. २२३, २)। १२. २२३, ३. ११. २६; २२४, २९. ४२. ५५; २२५, २. ४. ८. १५। 'बलिवासवसंवादम्', (१२. २२७, ७। १२. २२७, ४६. ७०. ७४. ११९। 'वृत्रहन्ता च वासवः', (१२. २२८, ८६)। 'ववर्ष वासवः', (१२. २२८, ९२)। १२. २८१, २७. ३३. ३८; २८२, ५८. ५९; २८३, २। 'ततोऽभिषिच्य राज्येन देवानां दिवि वासवं। सप्तर्षयश्चान्वयुञ्जन्नराणां दण्डधारणे ॥', (१२. २९४, १९)। १२. ३२३, १८। 'ववर्ष वासवस्तोयं रसवच्च सुगन्धि च', (१२. ३३३, ७)। 'विषये वासवस्तस्य सम्यगेव प्रवर्षति', (१३. २, १४)। 'वासवोऽप्याजगाम', (१३. २, ८९)। 'वासवस्य च संवादं शुकस्य च महात्मनः', (१३. ५, २)। 'वासवस्य', (१३. ५, ११)। 'द्वितीय इव वासवः', (१३. ६, ३४)। १३. १२, ४४. ५०। वासवः = शिव, सहस्रनामों में से एक (१३. १७, ६४) 'देवाः सवासवाः', (१३. २१, ६)। 'देवैः सवासवैः', (१३. २६, ४७)। १३. २९, ७. २५; ३३, ७; ३४, ३; ४१, २३; ६२, ६२. ९३; ७३, ६; ८३, १७. २१. २३. ४१. ४२; ८६, २६; ९३, १४२। 'सोऽभिषिक्तो भगवता देवराज्ये च वासवः', (१३. १००, ३७)। 'गौतमस्य मुनेस्तात संवादं वासवस्य च', (१३. १०२, ३)। 'यज्ञं बहुसुवर्णं वा वासवप्रियमाचरेत्', (१३. १०७, १०)। १३. १२५, १८. ५१. ६२। 'अश्वमेध चतुर्भागं फलं सृजति वासवः', (१३. १२९, ७)। 'वासवं च शचीपतिम्', (१३. १३२, १) 'विश्वेदेवाः सवासवाः', (१३. १४०, १४)। 'देवाः शरणं वासवं ययुः', (१३. १५५, २०)। 'सर्वे देवाः सवासवाः', (१३. १५६, २९)। 'वासवोऽप्यसुरान्सर्वान्विजित्य च निपात्य च। इन्द्रत्वं प्राप्य लोकेषु ततो वव्रे पुरोहितम् ॥', (१४. ५, ७)। 'वासवतुल्यः', (१४. ५, १४)। 'वासवोऽपि मरुत्तेन स्पर्धते', (१४. ५, १५)। १४. ७, ९. १३. १७; ९, २५; १०, ३. ८. ९। 'कामान्सर्वान् वर्षतु वासवो वा', (१४. १०, १५)। 'ववर्ष वासवः', (१४. ५३, ६)। १४. ५५, ३३। 'कृत्वा नसुकरं कर्म दानवेष्विव वासवः', (१४. ५९, १८)। 'देवैः सवासवैः', (१४. ८०, ४४)। 'यदि द्वादशवर्षाणि न वर्षिष्यति वासवः', (१४. ९२, १७. १९)। 'वासवोपमः', (१५. १७, ५. ७)। 'दिवं प्राप्तं वासवोऽथाश्विनौ च', (१६. ४, २५)।

* विबुधश्रेष्ठ : ३. १६४, १७; १२. ३३, ४१।

* विबुधाधिप : ३. १६८, २७; ९. ४८, १९; १२. २२४, ५९।

* विबुधाधिपति : 'नीतिं विबुधाधिपतेः, (१. १३९, १८) ३. १६७, १४।

* विबुधेश्वर : ३. १६४, १७; १२. ३३, ४१।

* विश्वभुज् : ३. २१, १७।

* वृत्रनिषूदन : १. ६३, १७; ३. ४७, ६; ५. १४, ४; १८, ३। 'चकार साहाय्यमथार्जुनस्य विष्णुर्यथा वृत्रनिषूदनस्य,' (६. ५९, ८०)।

* वृत्रशत्रु : ३. ४३, २३; ५. ५६, १६।

* वृत्रहन् : 'वृत्रहणः क्रतुं यथा', (१. ५५, ८)। 'विक्रमं वृत्रहा जघ्नात्', (१. १०३, १८)। 'तच्छ्रुत्वा वृत्रहा तेभ्यः', (१. २२६, १७)। 'अपि वृत्रहणा युद्धे', (३. १२, १३५)। 'मृद्गन्नसुरानिव वृत्रहा', (३. ३३, ८६)। ३. ३७, ५६; ४३, २६। 'यथा च वृत्रहा सर्वान्सपत्नान्निर्दहन्पुरा', (३. ८५, १२८)। 'संप्राप्तश्च दिवे राज्यं वृत्रहा वसुभिः सह', (३. १६२, ५)। 'मरुतो वृत्रहा यथा', (३. २४९, २४)। 'मरुद्भिः सह वृत्रहा', (५. ६१, १८)। 'न्यहनत् पाण्डवीं सेनामासुरीमिव वृत्रहा', (६. ७२, ३२)। 'महोदरस्तु समरे भीमं विव्याध पत्रिभिः। नवभिर्वज्रसङ्काशैर्नमुचिं वृत्रहा यथा ॥', (६. ८८, १७)। 'हित्वा वृत्रहेवासुरीं चमूम्', (७. ११७, ४५)। 'अपि वृत्रहणा', (७. १९३, ४९)। 'जहि कर्णं महाबाहो नमुचिं वृत्रहा यथा', (८. ८६, १६)। 'बभूवाद्भुतविक्रान्तो जम्भो वृत्रहणा

यथा', (९. १२, ६६) । १२. २८२, १५ । 'वृत्रहा पाकशासनः', (१३. ४०, १८) । १३. ६२, ५५ । 'शतक्रतुं वृत्रहणं', (१३. ९४, ६; १०२, ५५) ।

* वृत्रहन्तृ : 'भवनाद्वृत्रहन्तुः', (३. १७६, १) । 'वृत्रहन्ता च वासवः', (१२. २२८, ८६) ।

* वृषाकपि : १२. २२७, ११८ ।

* शक्र : १. १, ११४ (अर्जुन के पिता)। १०१ १६१ । 'शक्रसूर्यौ', (नील कण्ठी में, १. १, १८७) । 'शक्रप्रतिमतेजसः', (१. १, २२४) । 'भगदत्तो महाराजो यत्र शक्रसमो युधि', (१. २, २५६) । कद्रू द्वारा इनकी स्तुति (१. २५, ७-१७) । १. ३०, ४३; ३१, ६. ७. ११. ३१; ३३, २५; ३४, ४. ११. १३. २० । 'उवास भवने तस्मिञ्छक्रस्य मुदितः सुखी', (१. ५३, १८) । 'शक्रस्य यज्ञः शतसंख्यः', (१. ५५, २) । 'शक्रः साक्षाद्वज्रपाणिः', (१. ५५, १२) । 'आसनं कल्पयामास यथा शक्रो बृहस्पतेः', (१. ६०, ११) । 'यथा शक्रः सुखावहः', (१. ६१, १५) । 'देवाः शक्रपुरोगाः', (१. ६३, ३) । १. ६३, १८. २६ । 'शक्रोत्सवेन', (१. ६३, २७) । 'शक्रादयः सर्वे', (१. ६४, ५०) । १. ६५, २ । बारह आदित्यों में से एक (१. ६५, १५) । 'द्वादशैवादिते पुत्राः शक्रमुख्या', (१. ६६, ३६) । १. ६८, १४५; ७१, २०; ७२, १ । 'शक्रसंसदम्', (१. ७२, ११) । 'यथा शक्रो मरुत्पतिः', (१. ७४, १२९) । १. ७८, ३८ । 'शक्रविष्णू इवापरौ', (१. ८३, ९) । १. ८६, ३; ८७, ३. ४; ८८, ४. ९ । 'बलहाऽपि शक्रः', (१. ८६, ११) । १. ९२, ८ । 'शक्रप्रतिमतेजसः', (१. ९४, ४) । 'शक्रादर्जुनमिति', (९. ९५, ६१) । 'शक्रप्रतिमतेजसा', (१. १००, ९) । १. १११, २८; १२३, २८ । 'एवमुक्ता ततः शक्रमाजुहाव यशस्विनी । अथाजगाम देवेन्द्रो जनयामास चार्जुनम् ॥', (१. १२३, ३५) । १. १२३, ३८. ४५ । पाण्डु के साथ इनका उल्लेख (१. १७०, ६५) । 'शक्रध्वजमिवोच्छ्रितम्', (१. १७३, ३) । 'अशोभत तदा तेन शक्रेणेवामरावती', (१. १७७, ४२) । 'शक्रप्रतिमम्', (१. १८८, २७) । १. १९७, ३. १३. १६. १८ । 'शक्रस्यांशः पाण्डवः सव्यसाची', (१. १९७, ३४) । 'शक्रप्रख्यान्', (१. १९७, ३९) । 'शक्रस्य तेजसा', (१. २२३, ८) । 'शक्रायुधसमावुभौ', (१. २२५, १४) । १. २२७, २७. ४०. ४३. ४४. ४९; २३४, ९ । 'शक्र इवामरैः', (२. २, ९) । 'स्वां पुरीं प्रययौ हृष्टो यथा शक्रोऽमरावतीम्', (२. २, २६) । 'शक्रो यथा', (२. ४, ८) । 'शक्रस्यैति सलोकताम्', (२. ५, ११८) । 'शक्रस्य सभा', (२. ७, १) । 'तथा देवर्षयः सर्वे पार्थ शक्रमुपासते', (२. ७, ९) । 'शक्रस्य तु सभायाम्', (२. १२, ५) । 'सह शक्रेण स्पर्द्धते', (२. १२, ७) । 'शक्रस्य संसदि', (२. १२, २६) । 'प्रत्युद्ययौ महातेजाः शक्रं बल इवासुरः', (२. २३, ८) । 'शक्रविष्णू हि संग्रामे चेरतुस्तारकामये', (२. २४, १७) । १. २४, १९ । 'शक्रादनवरः', (२. २६, १२) । 'शक्रस्येव त्रिविष्टपे', (१. ३३, ५३) । 'यथा शक्रस्य', (२. ४७, २३) । 'यथैव मधु शक्राय', (२. ४९, २६) । 'अद्रोहसमयं कृत्वा चिच्छेद नमुचेः शिरः । शक्रः साभिमता तस्य रिपौ वृत्तिः सनातनी', (२. ५५, १३) । 'शक्रस्य नीतिम्', (२. ७४, ७) । 'शक्रेणापि समः', (२. ७८, १३) । 'शक्रप्रतिमतेजसः', (३. १, ३) । 'एतमक्षा ददौ पूर्वं शक्राय सुमहात्मने । शक्राच्च नारदः प्राप्तो धौम्यस्तु तदनन्तरम्', (३. ३, ७८) । 'दीनस्य तु सतः शक्र पुत्रस्याभ्यधिका कृपा', (३. ९, १६) । 'ब्रह्मशंकरशक्राद्यैर्देववृन्दैः', (३. १२, ५४) । 'शक्र इव', (३. २४, २१) । 'शक्रस्य समप्रभावः', (३. २५, ११) । ३. ३३, ६; ३५, १४. १५. ४९. ५० । 'शक्रं सुरेश्वरं', (३. ३८, ११) । 'शक्राशनिसमैर्मुष्टिभिः', (३. ३९, ५६) । 'शक्राभिषेके', (३. ४०, ३) । ३. ४१, १३; ४२, १३ । 'शक्रस्य पुरींताममरावतीम्', (३. ४२, ४२) 'शक्रस्य दयितां पुरीम्', (३. ४३, ७) । 'शक्रासने', (३. ४३, २०) । 'शक्रासनम्', (३. ४३, २२) । ३. ४४, १. ४. ६; ४५, १. १३; ४६, ३१ । 'शक्रतुल्यम्', (३. ४६, ३३) । ३. ४६, ५४. ६०; ४७, ३ । 'शक्रासनमवाप्तवान्', (३. ४७, ४) 'शक्रो वृत्रनिषूदनः', (३. ४७, ६) । ३. ५४. २०. २२; ५५, ६. ७. ११. २३ । 'शक्रः प्रीयमाणः शचीपतिः', (३. ५७, ३६) । 'शक्रः संप्रेक्ष्य बलवृत्रहा', (३. ५८, २) ३. ५८, ३ 'मामुपस्थास्यति व्यक्तं दिवि शक्रमिवाप्सराः', (३. ७८, १४) । ३. ८६, ७. १४ । 'शक्रमिवामराः', (३. ९१, २) । 'शक्रस्य भवनम्', (३. ९१, ५) । ३. ९१, ६; १००, २४; १०१, १०. ११. १२ । 'स शक्रवज्राभिहतः पपात', (३. १०१, १५) । ३. १०१, १६; १०२, २६ । 'देवाः शक्रपुरोगमाः', (३. ११०, १३) । ३. ११०, २८; ११५, १७; १२४, १३; १२५, ७. ९ । 'यथा मान्धातृशब्दश्च तस्य शक्रसमद्युतेः' (३. १२६, ३) । 'शक्रसमं सुतम्', (३. १२६, ११) । ३. १२६. २६. २९. ३० । 'प्रदेशिनीं शक्रदत्तामास्वाद स शिशुस्तदा', (३. १२६, ३२) । ३. १२६, ३५ । 'शक्रस्यार्धासनम्', (३. १२६, ३८) । 'स्पर्धमानस्य शक्रेण', (३. १२९, ४) ; ३. १३५, २३. ३२. ३३ । 'शक्रादनवरः', (३. १४१, ११) । ३. १४२, २०. २५ । 'शक्रसदनप्रख्यं', (३. १४५, ३९) । 'शक्रध्वजमिवोच्छ्रितम्', ३. १४६, ७०) । 'शक्रवत्', (३. १५४, २३) । 'शक्रतुल्यपराक्रमः', (३. १६०, २३) । 'देशकालान्तरप्रेप्सुः कृत्वा शक्रः पराक्रमम् । संप्राप्तस्त्रिदिवे राज्यं वृत्रहा वसुभिः सह', (३. १६२, ५) । 'शक्रसद्मनि', (३. १६२, २२) । 'गते तु तस्मिन् नरदेववर्यः शक्रात्मजः शक्ररिपुप्रमाथी । शक्रेण दत्तानि ददौ महात्मा महाधनान्युत्तमरूपवन्ति ॥', (३. १६५, १०) । ३. १६५, १२; १६६, १६; १६७, १. ५; १६८, २४. ३१. ४१ । 'ततः शक्रस्यभवनमपश्यममरावतीम्', (३. १६८, ४५) । ३. १६८, ५५ । 'शक्रस्य भवने', (३. १६८, ५९) । ३. १६८, ८४; १७२, ३२; १७३, ६८; १७४, ६. ८ । 'पतता हि विमानाग्रान्मया शक्रासनाद्धुताम् । कुरुशापान्तमित्युक्तो भगवान् मुनिसत्तमः', (३. १७९, १८) । 'राजा वै प्रथितो धर्मः प्रजानां पतिरेव च । स एव शक्रः शुक्रश्च स धाता च बृहस्पतिः ॥', (३. १८५, २६) । 'शक्रादींश्चापि पश्यामि कृतस्नान् देवगणानहम् ।', (३. १८८, ११८) । 'शक्रश्चाहं सुराधिपः', (३. १८९, ५) । 'बकशक्रसमागमम्', (३. १९३, ५) । 'त्रयस्त्रिंशद्यथा देवाः सर्वे शक्रपुरोगमाः', (३. २१४, १९) । ३. २२३, ११; २२४, १६; २२६, १७-१९; २२७, ६. १४; २२९, १३-१५. २०; २३०, ७. ११ । 'ऐरावतं समास्थाय शक्रश्चापि सुरैः सह', (३. २३१, ३३) । ३. २३१, ४७. ७१. ७२ । 'दैतेया इव शक्रेण विषादमगमन् परम्', (३. २४५, १८) । 'शक्र इवामरैः', (३. २४६, २६) । 'यथा शक्रो', (३. २५५, ३) । 'शक्रस्य का त्वं सदनात्', (३. २६५, ४) । ३. २७१, ४२ । 'ददौ शक्राय च महीं विष्णुर्देवः सनातनः', (३. २७२, ६९) । ३. २७६, ६ । 'शक्रप्रभृतयश्चैव सर्वे ते सुरसत्तमाः', (३. २७६, ११) ॥ 'शक्रादनवरम्', (३. २७७, १०) । 'शक्रप्रतिमतेजसा', (३. २८०, ५८) । 'अतीव चित्रमाश्चर्यं शक्रप्रह्लादयोरिव', (३. २८९, १८) । ३. २९०, १३ । 'जहृषुर्देवगन्धर्वा दृष्ट्वा शक्रपुरोगमाः', (३. २९०, २७) । ३. २९१, १८ । 'देवैः शक्रपुरोगमैः', (३. २९१, ४१) । 'देवाः सर्वे शक्रपुरोगमाः', (३. २९१, ४७) । ३. ३००, ५. २६; ३०१, १८; ३०२, १६; ३१०, १६-१८. ३४. ३९ । 'शक्रप्रतिमगौरवान्', (३. ३१३, १) । 'वज्रं प्रविश्य शक्रस्य', (३. ३१५, १७) । 'त्रिदशानां यथा शक्रो', (४. २, २३) । 'बिभ्रती विपुलौ बाहू शक्रध्वजसमुच्छ्रयौ', (४. ६, १०) । अर्जुन ने ८५ वर्ष तक गाण्डीव धारण किया (शक्रोऽशीति पञ्च च, ४. ४३, ६) । 'पुरा शक्रेण मे दत्तं युध्यतो दानवर्षभैः । किरीटं मूर्ध्नि सूर्याभं तेनाहुर्मां किरीटिनम् ॥', (४. ४४, १७) । 'यथा शक्रस्य मातलिः', (४. ४५, १९) । ४. ४५, ४० । 'एकश्च पञ्चवर्षाणि शक्रादस्त्राण्यशिक्षत', (४. ४९, ८) । 'शक्रः सर्वामरैः सह', (४. ५५, २८) । 'ततः शक्रः सुरगणैः समारुह्य सुदर्शनम्',

(४. ५६, ३) । ४. ६०, १३ । अर्जुन ने शक्र से दिव्यास्त्रों की शिक्षा प्राप्त की थी (४. ६१, ३१) । 'शक्रवैश्रवणोपमः', (४. ७०, १४) । 'शक्रमिवर्पयं', (४. ७०, २०) । ५. ९, ७. १३. १९. २३. २७. ३४. ३५. ४४. ४६. ५०. ५२. ५५. ५७. ५८; १०, ७. १२–१४. १६. १९. २२. २६. ३०. ३२. ३७. ४४; ११, ४ । शक्रस्य महिषी प्रिया', (५. ११, १७) । ५. ११, २५ । 'एतदेवं विजानन् वै न दास्यामि शचीमिमाम् । इन्द्राणीं विश्रुतां लोके शक्रस्य महिषीं प्रियाम् ॥', (५. १२, २२) । ५. १२, ३०; १३, ५. ९ । 'शक्रः सुरगणेश्वरः', (५. १३, ११) । ५. १३, १४. १७. २३; १४, ४. १७; १५, २४. २७. २८; १६, १०. १४. १५. २३. २४. २८. २९. ३१. ३२. ३४; १७, ७. १८; १८, १. ३. १२. १६ । 'शक्रसमो धनञ्जयः', ५. २२, ३३) । ५. २९, १३ । 'देवाः सशक्राः', (५. ३७, ४२) । 'विविशुस्तां सभां राजन् सुराः शक्रसदो यथा', (५. ४७, १०) । 'देवा सह शक्रेण', (५. ४८, ८१) । इनके द्वारा अर्जुन को अस्त्र प्रदान करने का उल्लेख (स्थूणाकर्णं पाशुपतं महास्त्रं ब्राह्मं चास्त्रं यच्च शक्रोऽप्यदान्मे', (५. ४८, १०६) । ५. ४९, १०. १२. १३ । 'शक्रप्रतिमतेजसः', (५. ५१, ४) । ५. ५५, ५२ । 'भीमनः सह शक्रेण', (५. ५६, ७) । शक्रमिवामराः', (५. ९४, ९) । ५. १००, ४. ७ । 'सूतोऽयं मातलिर्नाम शक्रस्य दयितः सुहृत्', (५. १०४, १) । शक्रस्यायं सखा चैव मन्त्री सारथिरेव च', (५. १०४, २) । 'सखा शक्रस्य', (५. १०४, १४) । ददृशुः शक्रमासीनं देवराजं महाद्युतिम्', (५. १०४, २२) । ५. १०४, २८; १०५, १ । 'विष्णुर्वायुश्च शक्रश्च धर्मस्तौ चाश्विनावुभौ 'एते देवास्त्वया केन हेतुना वीक्षितुं क्षमाः', (५. १०५, ३५) । 'अतो मूलं सुराणां श्रीर्यत्र शक्रोऽभ्यषिच्यत', (५. १०८, ७) । 'अत्र वृत्तेन वृत्रोऽपि शक्रशत्रुत्वमीयिवान्', (५. १०९, १३) । 'अत्र देवीं दितिं सुस्नामास्मप्रसवधारिणीम् । विगर्भामकरोच्छक्रो यत्र जातो मरुद्गणः', (५. ११०, ८) । 'शक्रो बलनिषूदनः', (५. १२०, १७) । 'शक्रसमान् ज्ञातीन्', (५. १२४, ३०) । 'त्रिदशा इव शक्रस्य साधु तस्येह जीवितम्', (५. १३३, ४४) । सप्तमाश्चापि दिवसादमावास्या भविष्यति । संग्रामो युज्यतां तस्यां तमाहुः शक्रदेवताम् ॥', (५. १४२, १८) । 'शक्रेणेव दिवौकसः', (५. १५६, १४) । ५. १५८, ३२ । 'क्रोधार्थं पुरुषं पश्येत्तथा शक्रसमद्युते', (५. १९४, २२) । 'पतन्त्युल्काः सनिर्घाताः शक्राशनिसमप्रभाः', (६. ३, ३५) । मेरुपर्वत पर यज्ञ करने का उल्लेख (६. ६, १९) । 'शक्र इव', (६. १३, १२; १४, १५ । शक्रस्य ब्रह्मणः सहलोकताम्', (६. १७, ८) । 'शक्रदिभिः सुरैः', (६. २१, १६) । 'शक्रेणेव धनुष्मता', (६. २२, ४) । 'शक्र इवामरेशः', (६. २२, ८) । 'शक्राशनिसमस्वनम्', (६. ४४, ११) । 'बलं शक्र इवाहवे', (६. ४५, ४२) । 'शक्रचापसमप्रभम्', (६. ४८, ५) । 'शङ्खः क्रोधात् प्रजज्वाल हविषा हव्यवाडिव । स विस्फार्य महच्चापं शक्रचापोपमं बली ॥', (६. ४९, २६) । 'शक्राशनिसमस्पर्शम्', (६. ५३, ९) । 'शक्रप्रतिमप्रभावमिन्द्रात्मजम्', (६. ६०, २२) । 'शक्रस्येवाभिगर्जतः', (६. ७१, ६) । 'शक्रसमः', (६. ७३, २५) । देवाः शक्रपुरोगमाः', (६. ७७, २९) । 'यथा शक्रस्त्रिविष्टपे', (६. ८१, १९) । 'यथा शक्रो महाराज पुरा विव्याध दानवम् । विप्रचित्तिं दुराधर्षं देवतानां भयङ्करम् ॥', (६. ९४, ३१) । 'महाशनिर्यथा भ्रष्टा शक्रमुक्ता नभो गता', (६. ९५, ६३) । 'शक्रस्येवामरा दिवि', (६. ९७, २६) । 'तयोः समागमो घोरो बभूव कटुकोदयः ॥ यथा देवासुरे युद्धे शक्रशम्बरयो पुरा ।', (६. १००, ५३. ५४) । 'मयं शक्र इवाहवे', (६. १०१, २२) । 'शक्राशनिसमद्युतिम्', (६. १०१, ४३) । 'शक्रसमाः', (६. १०३, २२) । 'यथोवाच पुरा शक्रं महाबुद्धिर्बृहस्पतिः', (६. १०७, १००) । 'शक्राशनिसमस्पर्शान्', (६. १०८, ३५) 'शक्रचापोपमम्', (६. १०८, ३६) । 'मयशक्रो यथा पुरा', (६. ११०, ३१) । 'यथा शक्रो वज्रपाणिर्दारयन् पर्वतोत्तमान्', (६. ११६, ३७) । 'यथा दैत्यचमूं शक्रस्तापयामास संयुगे', (६. ११८, ३३) । 'शक्रस्येव', (६. १२१, २६) । 'शक्रमुखाः सुराः', (७. ७, ६) । 'दिवि शक्रमिव', (७. ९, २२. २३) । ७. ११, २३ । 'यथा देवासुरे युद्धे बलशक्रौ महाबलौ', (७. १४, ४८) । 'शक्राशनिरवोपमः', (७. १५, २४) । 'यथा शक्रयः', (७. १९, ६) । 'शक्राशनिहताः द्रुमवन्त इवाचलाः', (७. १९, ३०) । 'शक्रस्यातिथितां गताः', (७. १९, ३६) । 'शक्रो देवगणैरिव', (७. २०, २०) । 'पञ्चानां द्रौपदेयानां प्रतिमाध्वजभूषणम् । धर्ममारुतशक्राणामश्विनोश्च महात्मनोः ॥', (७. २३, ८८) । ७. २७, २९ । 'शक्रोपमाः', (७. ३४, १३) । ऐरावतगतं शक्रं सहामरगणैरहम्', (७. ३६, ६) । 'धर्ममारुतशक्राणामश्विनोः प्रतिमास्तथा । धारयन्तो ध्वजाग्रेषु द्रौपदेया महारथाः ॥', (७. ४०, १८. १९) । 'स शक्र इव विक्रान्तः शक्रसूनोः सुतो बली । अभिमन्युस्तदानीकं लोडयन् समदृश्यत ॥', (७. ४५, २) । 'कृष्णार्जुनसमः कार्ष्णि शक्रलोकं गतो ध्रुवम्', (७. ४९, ३८) । 'शक्रसमं महाबलं रणेऽभिमन्युं ददृशुस्तदा जनाः', (७. ५०, १५) । 'तस्य पुत्रो हरिर्नाम नारायणसमो बले । श्रीमान् कृतास्त्रो मेधावी युधि शक्रोपमो बली ॥', (७. ५२, २७) । 'शक्रप्रतिमविक्रमाः', (७. ५५, २) । 'शक्रेण प्रजाःकृता निरामयाः', (७. ५२, ४७) । 'अर्जुन के पिता के रूप में इनका उल्लेख (७. ७४, ४) । 'शक्रसूर्यगुणोदयम्', (७. ८०, ४७) । 'शक्रादींश्च सुरोत्तमान्', (७. ९४, ५२) । ७. ९४, ६२ । 'शक्रजंभौ यथा पुरा', (७. ९६, २०) । शक्रो देवगणैः सह', (७. १०१, १७) । 'शक्रध्वजसमप्रभम्', (७. १०५, ११) । 'प्रह्लादं समरे जित्वा यथा शक्रं मरुद्गणाः', (७. १०८, ४४) । 'शक्रशम्बरयोरिव', (७. १०९, २) । 'शक्रतुल्यपराक्रमैः', (७. ११२, ५०) । 'शक्रप्रतिमोऽपि सात्यकिः', (७. ११८, ९) । 'मल्लेन शक्राशनिसन्निभेन', (७. ११८, १४) । 'त्रैलोक्य कांक्षिणोरासीच्छक्रप्रह्लादयोरिव', (७. १२२, ६५) । 'शक्रतुल्यबलः', (७. १२४, २) । 'यथा वृत्रवधे देवाः पुरा शक्रं महर्षयः', (७. १२४, ४०) । 'ते बध्यमाना द्रोणेन शक्रेणेव महासुराः', (७. १२५, ४९) । ७. १२७, ४८ । 'शक्रवैरोचनी यथा', (७. १३६, ३४) । 'शक्रचापमिवापरम्', (७. १३९, ४०) । 'पुरा देवासुरे युद्धे शक्रस्य बलिना यथा', (७. १४२, ८) । 'शक्राशनिस्फोटसमं सुघोरम्', (७. १४६, १) । 'तत्र वीर्यं बलं चैव रुद्रशक्रान्तकोपमम्', (७. १४८, ३०) । 'सुरैरिवासुरवधे शक्रं शक्रानुजाहवे', (७. १४९, १२) । 'सुरेशत्वं गतः शक्रो हत्वा दैत्यान्सहस्रशः', (७. १४९, १५) । 'अथ प्रववृते युद्धं द्रौणिराक्षसयोर्मृधे । विभावर्यां सुतुमुलं शक्रप्रह्लादयोरिव', (७. १५६, १२७) । 'शक्रोपमाश्च बहवः पञ्चालानां च रथव्रजाः', (७. १५८, ४) । 'तस्यामोघां विमोक्ष्यामि शक्तिं शक्रविनिर्मिताम्', (७. १५८, ८) । 'मम ह्यमोघा दत्तेयं शक्तिः शक्रेण वै द्विज', (७. १५८, ५२) । 'शक्रतुल्यबलः', (७. १५८, ६१) । 'शक्रो देवगणैरिव', (७. १५९, २०) । 'शक्रं दैत्यगणा इव', (७. १५९, ३२) । 'तथा देवासुरे युद्धे शक्रस्य सह दानवैः', (७. १५९, ३४) । 'शक्रं दैत्यचमूमिव', (७. १५९, ४७) । 'शक्रप्रह्लादयोरिव', (७. १६६, ३०) । 'शक्रोदेवगणेष्विव', (७. १७१, ५२) । 'शक्रप्रह्लादयोरिव', (७. १७३, ६८) । 'यं वै प्रादात्सुत्राय शक्रः शक्तिं श्रेष्ठां कुण्डलाभ्यां निमाय', (७. १७९, ५३) । 'शक्रशक्त्या', (७. १७९, ५८) । 'ततः कर्णः कुरुभिः पूज्यमानो यथा शक्रो वृत्रवधे मरुद्भिः', (७. १७९, ६४) । 'उत्कृत्य कवचं यस्मात् कुण्डले विमले च ते । प्रादाच्छक्राय कर्णो वै तेन वैकर्तनः स्मृतः ॥', (७. १८०, १९) । 'प्राप्तो विमुक्तः शक्रदत्तया', (७. १८०, ३०) । 'शक्रमुक्ता यथाशनिः', (७. १८१, ९) । 'शक्रदत्ता', (७. १८१, २८) । 'ततो द्वैरथमानीय फाल्गुनं शक्रदत्तया', (७. १८२, ४) । 'पार्थं वा शक्रकल्पे', (७. १८३, ९) । 'यथा क्रुद्धो रणे शक्रो दानवानां क्षयं पुरा', (७. १९०, १) । 'अश्वत्थामेति विख्यातो गजः शक्रगजोपमः', (७. १९०, ५०) । 'पराक्रमस्ते कौन्तेय शक्रस्येव शचीपतेः', (७. १९७, ६) । 'शक्रो यथा अप्रतिद्वन्द्वो दिवि',

(७. १९९, ५०)। 'शक्रचापमिवापरम्', (७. २००, ११५)। 'शक्रस्य वज्रेग', (७. २०२, ८५)। 'शक्रो देवगणैर्वृतः', (७. २०२, ८६)। 'शक्रादींश्च सुरोत्तमान्', (७. २०२, ९१)। 'प्रसादं कुरु शक्रस्य त्वया क्रोधार्दितस्य वै', (७.२०२, ९८)। 'शक्रसमानवीर्यः शल्यः', (८. ७, १०)। 'घटोत्कचं राक्षसेन्द्रं शक्रशक्त्या निजघ्निवान्', (८. ९, ४९)। 'यथा देवासुरे युद्धे जम्भशक्रौ महाबलौ', (८. १३, ३०)। 'शक्र इवासुरान्', (८. १९, ५८)। 'यथैव चासितो मेघः शक्रचापेन शोभितः', (८. २४, ४७)। 'जिष्णुः शक्रतुल्यपराक्रमः', (८. २७, २७)। 'कर्णस्य भुजयोः वीर्यं शक्रविष्णुसमं युधि', (८. ३१, १९)। 'शक्रशक्तिविनाकृतम्', (८. ३१, ३८)। 'तद्भार्गवाय प्रायच्छच्छक्रः परमसंमतम्', (८. ३१, ४४)। 'देवतानामपि रणे सशक्राणाम्', (८. ३२, २९)। 'शक्रो मरुद्वृतः', (८. ३३, ३६)। 'देवाः शक्रपुरोगमाः', (८. ३३, ४६)। 'शक्रस्य सारथ्ये योग्यो मातलिवत्', (८. ३५, ४७)। 'धनुषी श्रेष्ठे शक्रचापनिभे', (८. ५६, १२)। 'अन्तकप्रतिमो वेगे शक्रतुल्यपराक्रमः। असौ गच्छति कौरव्यः द्रौणिः शस्त्रभृतां वरः ॥', (८. ५८, ४८)। 'पश्य सात्वतभीमाभ्यां निरुद्धाधिष्ठिताः पुनः। जिहीर्षवोऽमृतं दैत्याः शक्राग्निभ्यामिवासकृत् ॥', (८. ६०, ७)। ८. ६०, ११। 'शक्रेणेव यथा दैत्यान् हन्यमानान्महाहवे', (८. ६०, ३३)। 'शत्रुं जित्वा यथा शक्रो देवसंघैः समावृतः', (८. ६०, ३५)। 'शक्रस्यातिथितां गत्वा विशोका ह्यभवंस्तदा', (८. ६०, ९१)। 'तावभ्यनन्दद्राजाऽपि विवस्वानश्विनाविव। हते महासुरे जंभे शक्रविष्णू यथा गुरुः ॥', (८. ६५, १९)। 'शक्रतुल्यबलः युद्धे', (८. ६६, २४)। 'शौर्येण शक्रस्य', (८. ६८, १३)। 'शक्रतुल्यपराक्रमाः', (८. ७२, १८)। 'शक्रतुल्यपराक्रमौ', (८. ७३, १२)। 'आसुरीव पुरा सेना शक्रस्येव पराक्रमैः', (८. ७३, ५४)। 'प्रयच्छ मेदिनीं राज्ञे शक्रायैव हरिर्यथा', (८. ७३, ५८)। 'शक्रेणेव यथाऽशनिम्', (८. ७४, ६)। 'शक्रस्तूर्णं यज्ञ इवोपहूतः (८. ७६, २२)। 'शक्रचापप्रतिमेन धन्वना', (८. ८२, २०)। 'मरुद्गणाः शक्रमिवारिनिग्रहे', (८. ८२, २७)। 'उदग्रयोः शम्बरशक्रयोर्यथा', (८. ८२, ३१)। 'विद्ध्वेव शक्रं नमुचिः', (८. ८५, २७)। ८. ८७, ५८. ७०। 'शक्रशम्बरयोरिव (युद्धं)', (८. ८७, ९१)। 'शक्रो नमुचेरिवारेः', (८. ८९, ४६)। 'लोकपालाः सशक्राः', (८. ९०, २३)। 'धनुश्च तच्छक्रशरासनोपमम्', (८. ९०, ६९)। 'स सायकः कर्णभुजप्रमुक्तः शक्राशनिप्रख्यरुचिः शिताग्रः', (८. ९१, २९)। 'शक्रतुल्यबलाः', (९. १, १७)। 'यथाशक्रस्त्वजैरिव', (९ ९, २१)। 'शक्राशनिरिवोत्सृष्टः', (९. १४, ४२)। 'यथापूर्वं शक्रस्यासुरसंक्षये', (९. १५, ४३)। 'हते दुर्योधने युद्धे शक्रेणेवासुरे बले', (९. १९, २१)। 'ततस्तु तं वै द्विरदं महात्मा प्रत्युद्ययौ त्वरमाणो जयाय। जम्भो यथा शक्रसमागमे वै नागेन्द्रमैरावणमिन्द्र वाह्यम् ॥', (९. २०, १२)। 'योधयञ्शुशुभे राजन्बलिं शक्र इवाहवे', (९. २२, ३२)। ९. ३२, ३२। शक्रो वृत्रमिवाह्वयन्', (९. ३३, ३७)। ९. ४३, १२. ३८. ४०; ४४, ३१। 'शक्रवीर्योपमाः', (९. ४६, ३९)। 'यथास्मान् सुरराट् शक्रो भयेभ्यः पाति सर्वदा', (९. ४७, ६)। ९. ४८, ९. १०; ५१, ६. २६. २७. ३१; ५३, ४. ७. ९. १०. १२. १४. १६। 'स्वयं शक्रो जगौ गाथां सुराधिपः', (९. ५३, २१)। ९. ५३, २६; ५५, ८। 'वृत्रशक्रौ यथाऽऽहवे', (९. ५५, ५१)। 'युद्धाय शक्रो वृत्रमिवाह्वयन्', (९. ५६, २८)। 'विरोचनस्तु शक्रेण मायया निर्जितः स वै', (९. ५८. ५)। ९. ५८, १६; ६१, १५। 'शक्रविस्पर्धिनः', (९. ६५, २०)। 'यथा शक्रः सूदयित्वा महासुरान्', (१०. ४, १५)। 'शक्रस्य त्वद्विना यथा', (११. २३, १२)। 'तापसैः सह संवादं शक्रस्य', (१२. ११, १)। 'त्रिदिवं प्राप्य शक्रस्य', (१२. ११, २६)। 'शक्रो देवपतिर्यथा', (१२. १२, २८)। 'निहत्य शत्रूंस्तरसा समृद्धान् शक्रो यथा दैत्यबलानि संख्ये', (१२. १२, ३७)। १२. १५, १६; २०, १३. १४। 'शक्रोपमः', (१२. २८, ५९)। 'शक्रं देवराजं पुरन्दरम्', (१२. २९, २०)। 'देवाः कर्म कुर्वाणाः शक्रज्येष्ठाः', (१२. २९, ७४)। १२. २९, १२०; ३१, २९। 'मरुद्गणैर्वृतः शक्रः', (१२. ३३, ४०)। भीष्म ने इनसे अस्त्र प्राप्त किये थे ('रामादस्त्राणि शक्राच्च प्राप्तवान्पुरुषर्षभः', १२. ३७, १३)। 'शक्रस्येव', (१२. ५०, २)। 'देवानुवाच संहृष्टः सर्वाञ्छक्रपुरोगमान्', (१२. ५९, ७५)। १२. ५९, ११६. ११८। 'बृहस्पतेश्च संवादं शक्रस्य च', (१२. ८४, १)। १२. ८४, २–४. ८. ११। 'शक्रस्यैति सलोकताम्', (१२. ९७, ३०)। १२. ९८, ३. ५१; १०३, २४; १२०, ४६; १२१, ३८। 'तं कदाचिददीनात्मा सखा शक्रस्य मानिता। अभ्यगच्छन्महीपालो मान्धाता शत्रुकर्शनः ॥', (१२. १२२, ६)। १२. १२४, २१. ४९. ६०। 'शक्रस्यैति सलोकताम्', (१२. १३१, ११)। 'देवाः शक्रपुरोगमाः', (१२. २०९, २३)। १२. २२२, ८. २८. ३०. ३२–३४. ३६; २२३, १०. ११. १४; २२४, १. २. ५. ६. २५. २६. ३३–३५. ४५. ५६. ५७. ६०; २२५, ३. ५. ८–११. १५. १६. १८. २०. २२–२९. ३३; २२६, ५; २२७, १०. २१. २६. २८. ३३. ३९. ६४. ७७. ८१. ८२. ८७। 'श्रिया शक्रस्य संवादम्', (१२. २२८, ३)। १२. २२८, १९. २८। 'शक्रप्रमुखैश्चदेवतैः', (१२. २२८, ९५)। 'बले शक्रः', (१२. २२९, ८)। १२. २८१, ४. ५. १०. १२. १३. २२. २४. २६. ३४. ३८. ३९. ४३. ४४; २८२, ५. ६. ८. १६. १९. २१. २८. ३१. ५७. ६२। शक्रकथाम्', (१२. २८२, ६४)। १२. २८२, ६५। देवाः सर्वे शक्रपुरोगमगाः', (१२. २८३, २०)। 'देवाः शक्रपुरोगमाः', (१२. २८३, २३)। १२. २८३, ५९; ३०१, २०। 'शक्रपुरोगाश्च लोकपालाः', (१२. ३२४, १६)। 'देवेश्वरः शक्रः', (१२. ३२४, १९)। १२. ३३९, ८०। विष्णु शक्र को राज्य प्रदान करेंगे ('ततो राज्यं प्रदास्यामि शक्रायामिततेजसे', १२. ३३९, ८२)। 'शक्रतुल्यपराक्रमाः', (१२. ३३९, ८७)। १२. ३४०, १०; ३४२, ४६; ३५२, ४। 'शक्रप्रतिस्पर्धी', (१२. ३६०, १५)। १३. ५, १०. १२. २०। 'शक्रसलोकताम्', (१३. ५, ३१)। १३. ६, ३६; १२, २. ७. ४४. ४७. ५०. ५२। 'तस्यैव पुत्रप्रवरो मंदारो नाम विश्रुतः। महादेववराच्छक्रं वर्षार्बुदमयोधयत् ॥', (१३. १४, ७४)। 'उन्होंने पूर्वकाल में वाराणसी में शिव की आराधना की ('शक्रेण तु पुरा देवो वाराणस्यां जनार्दन', १३. १४, १०५)। 'शिव ने उपमन्यु की परीक्षा लेने के लिये इनका (शक्र का) रूप धारण किया था 'शक्ररूपं स कृत्वा', (१३. १४, १७२)। १३. १४, १७७. १७९. १८१. १८६. १९२. २०२. २१०. २१२. २२६. २२८। 'गच्छ वा तिष्ठ वा शक्र यथेष्टं बलसूदन', (१३. १४, २३६)। 'शक्रतुल्यपराक्रमः', (१३. १४, २६८)। 'शक्राद्या देवताः', (१३. १४, २८०)। १३. १४, २८४। 'नमो देवाधिदेवाय महादेवाय ते नमः। शक्ररूपाय शक्राय शक्रवेषधराय च ॥', (१३. १४, २८७-२८८)। 'शक्रोऽसि मरुताम्', (१३. १४. ३२४)। 'सप्रजापतिशक्रान्तं जगत्', (१३. १४. ४०४)। इन्होंने ब्रह्मा से शिव के सहस्रनामों को सीखा 'ब्रह्मा प्रोवाच शक्राय', १३. १७, १७५)। 'चारुशीर्षस्ततः प्राह शक्रस्य दयितः सखा', (१३. १८, ५)। 'शापाच्छक्रस्य' (१३. १८, १८)। 'ऋषिर्गृत्समदो नाम शक्रस्य दयितः सखा', (१३. १८, १९)। 'शक्रत्वं', (१३. १८, ६४)। १३. १८, ७२। 'पराक्रमे शक्रसमम्', (१३. २६, १)। १३. २८, २; २९, २. ४. ८. १७. २४। 'दिवोदासस्तु विज्ञाय वीर्यं तेषां यतात्मनाम्। वाराणसीं महातेजा निर्ममे शक्रासनात् ॥', (१३. ३०, १६)। 'शक्रास्येनामरावतीम्', (१३. ३०, १८) 'शक्रस्त्वमिति यो दैत्यैर्निगृहीतः किलाभवत्', (१३. ३०, ५९)। 'शक्रशम्बरसंवादम्', (१३. ३६, १)। १३. ३६, ३. १९; ४०, २६। 'मायां शक्रस्य', (१३. ४०, २७)। १३. ४०, ३७. ४४; ४१, ९. १९. २१. २५. २७. ३१; ६२, ६८. ७०. ८४. ८५। 'शक्रो वर्षति', (१३. ६३, ३६)। 'मुदितो वसति प्राज्ञः शक्रेण सह पार्थिव', (१३. ६६, २८)। 'शक्रेण सह मोदते', (१३. ६६, ५४)। १३. ७२, ६; ७३, २. १०. १८. २३. २८; ७४, ९। 'यथा शक्रो', (१३. ७५, ३८)। 'शक्रखि-

भुवनेश्वरः', (१३. ८३, ७) शक्रं बलनिषूदनम्', (१३, ८३. १५)। १३. ८४, २२. ४४। 'देवाः शक्रपुरोगमाः', (१३. ८४, ७९)। १३. ९४, ४४। 'प्राच्यां शक्राय', (१३, ९७, १२)। १३. १००, ३४. ३६; १०२, ६। 'शक्रो वर्षति', (१३. १०२, २६)। १३. १०२, ५९। 'शक्रतुल्यप्रभावाणाम्', (१३. १०३, २२)। १३. १२५, ४५. ४८. ६५; १५०, ७५। सावित्रीमधिगम्य शक्रवसुभिः कृत्स्ना जिता दानवाः', (१३. १५०, ७९)। १३. १५५, २०; १५६. ३०। कृष्ण को शक्र के साथ समीकृत किया गया है (१३. १५८, १३)। 'शक्रं वज्रं प्रहरन्तं निरास', (१३. १५८, २८)। १३. १६०, ३३। 'शक्रादिषु च देवेषु', (१३. १६१, २७)। 'शक्रः शचीपतिः', (१३. १६५, ११)। १४. ५, १६. २८; ७, १४. २५. २७; ९, १४. २०. २६. २८. ३७; १०, १२. १३. २६. २८। 'शक्रो ब्राह्मणैः पूज्यमानः', (१४. १०, ३१)। १४. ११, १८. २०। 'शक्रो गतः सर्वलोकामरत्वम्', (१४. २६, ४)। १४. ४२, २८। शक्रागृहोपमम्', (१४. ५२, २५)। 'कृष्ण को शक्र के साथ समीकृत किया गया है (१४. ५४, १४)। 'शक्रसद्मप्रतीकाशः', (१४. ५९, १६)। 'सदृशं रूपं शक्रचापस्य', (१४. ७४, २३)। १४. ८०, ४८। 'शक्रसमकर्माणम्', (१४.८४,११)। 'शक्रतेजसः', (१४. ८९, ६)। १४. ९१, ८. १२. १७। 'शक्रयज्ञे', (१४. ९१, १८)। १४. ९१, २०। शक्रसदो गत्वा शक्रं शचीपतिम्', (१५. २०, ३०)। १५. २०, ३२। 'शक्र तेजसि', (१७. २, १९)। १७. ३, १. ५. ८. १६. २३; १८. २, ८। देवाः शक्रपुरोगमाः', (१८. ३, १)। १८. ३, ७। 'शक्रः सुरपतिः', (१८. ३, ९)। 'भवने शक्रस्य', (१८. ६, ३१)। 'शक्रेण सह मोदते', (१८. ६, ४७)।

* शचीपति : १. २५, ८; १९०, १९; २२४, ७; २२७, ८; २. ३, १३; ३. १२, २०; ४७, ६; ५७, ३६; १२४, १७; १३५, २;। 'वज्रहस्तः शचीपतिः', (३. १९७, २५)। ३. २३१, ११०; ५. ९, २८; १३, २२; १७. १९। 'निर्भयो देवराजश्च सहपुत्र शचीपतिः', (५. १००, ८)। ५. १३०, ४९। 'द्रोणं च बलिनां श्रेष्ठं शचीपतिसमं युधि', (५. १६०, ९६; १६१, १४)। 'शचीपतिरिवासुरान्', (७. १९५, ४१)। 'शक्रस्येव शचीपतेः', (७. १९६, ६)। ९. ३३, २७; १२. ३३, ४१; १८०, ५३; २२३, ९; २२४, २२. ३१. ४५. ५५; २२७, ७७; २२८, ८१; ३३९, ८१; ३४२, ४३; ३५२, ७; १३. ५, २१; ४१, १२; ७३, २०. २२; ८३, ३५; १२५, ५४. ६१। 'वासवं च शचीपतिम्', (१३. १३२, १)। १३. १६५, ११; ५५, २९; 'यदृच्छया शक्रसदो गत्वा शक्रं शचीपतिम्', (१५. २०, ३०)।

* शतक्रतु : १. ३०, ३८. ४० ; ३१, १५. ३० ; ३३, २१. ३४, २। 'तथा धर्मपरे क्षेत्रे सहस्राक्षः शतक्रतुः। स्वादु देशे च काले च वर्षेणापालयत्प्रजाः ॥', (१. ६४, १६)। १. ७८, २। 'साक्षादपि शतक्रतुः' (१. १००, ७८)। 'गुरुर्मान्यः शक्रतो :', (१. १७०, २९)। १. २२४, १४। 'शतक्रतुं सहस्राक्षं देवेशम्', (१.२२६, १५)। १. २२७, ४७; २२८, १४. १६ ; २. ७, ६। 'देवराजं शतक्रतुम्', (२. ७, २५)। 'शतक्रतोर्मखवाहो', (२. ७, ३०)। 'शतक्रतुरिवापरः', (२. १७, १४)। 'येनासुरान्पराजित्य जगत्पति शतक्रतुः', (२. २२, १९)। 'अपि शतक्रतुः', (२. ७०, १५)। 'अमरश्रेष्ठः पिता तव शतक्रतुः', (३. ४२, १२)। 'देवराजं शतक्रतुम्', (३. ४३, १५)। 'देवा इव शतक्रतुम्', (३. ७८, ३३)। 'देवैरिव शतक्रतुः', (३. ८१, ४)। ३. १००, ११ ; १२४, २५ ; १२५, १। 'यथा देवाः शतक्रतुम्', (३. १११, ३९)। अर्जुन ने इनसे दिव्यास्त्रों को प्राप्त किया था। (३. १६४, १९)। ३. १६७, ६. ९। 'देवराजः शतक्रतुः', (३. १९३, ९)। ३. १९३, १२. ३३। 'तृप्ताः शासनेन शतक्रतुः', (३. २००, ६८)। ३. २२३, १३ ; २२४, १३. २४। देवाः शतक्रतु पुरोगमाः', ३. २२४, २७)। ३. २२९, ४४ ; २४१, ३। (देवा इव शतक्रतुम्', ३, २४९, २४)। 'यस्याद्य कर्म द्रक्ष्यसे मूढसत्त्व शतक्रतोर्वा दैत्यसेनासु सङ्ख्ये', (३. २७०, १६)। 'साक्षादपि शतक्रतुः', (३. २८९, ३१)। ३. ३०२, १२। 'देवं वाऽपि शतक्रतुम्', (४. ४५, १३)। ४. ५२, १९ ; ५. ९, ५१; १४, ११. १५; १६, १०. १५; १८, ४. ८। 'शासनाद्वा शतक्रतोः', (५. ९८, २)। ५. १२२, १६। 'देवा इव शतक्रतुम्', ५. १३१, २६; १३३, ४२)। 'शक्रतुल्यपराक्रमम्', (६. १४, २१)। ऋषयश्च महाभागाः पुरस्कृत्य शतक्रतुम्। समीयुस्तत्र सहिता द्रष्टुं तद्वैशसं महत् ॥', (६. ४३, १०)। 'साक्षादपि शतक्रतुः', (६. ४३, ४६)। देवैरिव शतक्रतुः', (६. ९७, १८)। 'शतक्रतुमिवाचिन्त्यं पुरा वृत्रेण निर्जितम्', (७. ३, ५)। ७. ७२, ४६। 'साक्षादपि शतक्रतुः', (७. ७५, २०)। 'शतक्रतौ चापि च देवसत्तमे', (७. १४८, ५७)। 'अपि शतक्रतुः', (७. १९६, ४८)। 'देवैरिव शतक्रतुः', (८. १०, ४२)। 'क्रुद्धस्येव शतक्रतोः', (८. ३०, २४)। 'येन दैत्यगणान्राजञ्जितवान्वै शतक्रतुः', (८. ३१, ४३)। 'अपि सन्तनयेयुर्वै भयं साक्षाच्छतक्रतोः', (८. ३६, २९)। देवैरिव शतक्रतुः', (८. ४६, २२)। 'शतक्रतुं वृत्रनिजघ्नुषं यथा', (८. ७९, ९१)। 'यथा पुरा वृत्रवधे शतक्रतुः', (८. ९४, ५४)। 'शतक्रतोर्यथा पूर्वं महत्या दैत्यसेनया', (९. १४, ४८)। 'देवराजः शतक्रतुः', (९. ४३, ३१)। 'यथा देवान्शतक्रतुः', (९. ४७, १२)। 'तान् क्रतून् भरतश्रेष्ठ शतकृत्वो महाद्युतिः। पूरयामास विधिवत्ततः ख्यातः शतक्रतुः', (९. ४९, ४)। ९. ५३, ६. ८। 'साक्षादपि शतक्रतुः', (१०. १५, ६)। 'माया च शतक्रतोः', (१२. ५, ११)। १२. २९, ८४। 'क्रतुमाहृत्य शतक्रतवः शतक्रतुः', (१२. ३३, ३९)। 'देवैरिव शतक्रतुम्', (१२. ५०, ७)। 'देवानिव शतक्रतुः', (१२. ६७, २८)। १२. ९८, १४; १२४, २६; १४३, २०; २२४, ३६; २२५, ३२। 'शतक्रतोश्च संवादं नमुचेश्च', (१२. २२६, १)। 'देवराजे शतक्रतौ', (१२. २२७, ८)। १२. २२७, १३। 'सर्वैः क्रतुशतैरिष्टं न त्वमेकः शतक्रतुः', (१२. २२७, ५६)। १२. २२७, ८९. ११७; २८१, २१. ३२। 'यथा देवः शतक्रतुरमित्रहा', (१२. २८२, ६३)। 'सलोकतां बृहस्पतेः शतक्रतोः (१२. ३२१, ६१)। १३. १, ५५। 'देवराजः शतक्रतुः', (१३. १२, २८)। 'शतक्रतुश्च भगवान् विष्णुश्चादितिनन्दनौ', (१३. १४, ३९२)। १३. १४, ४२७; १६, १५. ६८। शतक्रतोरचिन्त्यस्य सूत्रे वर्षसहस्रिके', (१३. १८, २०)। १३. २९, १४; ३४, २८; ४०, ३३। पुरि शतक्रतोरपि', (१३. ५३, ६८)। 'शतक्रतुमिवामराः', (१३. ६१, ३८)। १३. ६२, ५४; ७२, ५; ७३, १. १६. ३२. ५०; ७४, १०; ८३, २३। 'शतक्रतुं वृत्रहणम्', (१३. ९४, ६)। १३. ९९, २४; १००, ३१। 'वृत्रहणं शतक्रतुम्', (१३. १०२, ५५)। १३. १०२,५६. ५८. ६०; १२५, ५१। 'देवराजः शतक्रतुः', (१३. १२५, ५८)। यथा पुरा ब्रह्मपुरे सवत्सा शतक्रतोर्वज्रधरस्य यज्ञे', (१३. १२६, ३८)। 'साक्षादपि शतक्रतुः', (१३. १६८, ३४)। 'शतक्रतुरिवौजस्वी धर्मात्मा', (१४. ५, ९)। १४. ११, ८. ११. १३. १५. १७। 'साक्षादपि शतक्रतोः', (१४. १९, ३२)। 'यथा निहत्यारिगणं शतक्रतुर्दिवम्', (१४. ५२, ५८)। 'देवा इव शतक्रतुम्', (१४. ५९, १९)। 'वृत्रेणेव शतक्रतोः', (१४. ७६, १)। १४. ९१, १७। 'देवराजः शतक्रतुः', (१८. २, ५३)।

* शतमन्यु : शतमन्युविक्रमः', (८. ७०, ६)।

* शम्बर-पाकहन् : 'सहस्रनयनश्चापि वज्री शम्बरपाकहा', (१२. २२८, ७)।

* शम्बरहन् : 'भुङ्क्ष्वेमां पृथिवीमेको दिवि शम्बरहा यथा', (३. २३७, २)। 'यथा शम्बरहा पुरा बलिम्', (८. ९०, ७३)।

* सर्वदानवसूदन : १०. ४, ९६।

* सर्वदेवेश : १. २५, ७।

* सर्वलोकामर : १४. २६, ४।

* सुरगणेश्वर : १. ७१, २०; ३. १३५, ४०; ५. १३, ११।

* सुरपति : १. १११, २९। 'यत्प्राप्य सुरतां प्राप्ताः सुराः सुरपतेः सखे', (५. ९८, १४)। 'त्रिलोकेशं सुरपतिं गत्वा पश्यतु वासवम्', (५. १०४, १९)। 'यथा सुरपतिः शक्रस्त्रासयामास दानवान्', (६. ८३, २८)। ७. १०३, २०। 'सुरपतिसमविक्रमः', (८. ३०, ९)। ८. ३३, ३८। 'सुरपतिवीर्यसमप्रभावतः', (८. ३७, ३५)। 'शक्रः सुरपतिः', (१८. ३, ९)।

* सुरपुंगव : ३. १६८, २७।

* सुरराज् : 'सुरराडिव', (६. ५१, ११)। 'सुरराट् शक्रः', (९. ४७, ६)।

* सुरराज : ३. १४२, १७। 'सुरराजतुल्यम्', (३. १६५, ८)। 'यमौ च वीरौ सुरराजकल्पौ', (३. १७६, ६)। 'सुरराजकल्पः', (६. ८५, ३५; ७. ११८, १६)।

* सुरर्षभ, सुरसत्तम, सुरेश, सुरेश्वर, व० स्था०।

* सुरश्रेष्ठ, व० स्था०।

* सुराणां पतिः : 'सुरान्सुप्रेतविचानां पतीन्', (८. ३४, ३२)।

* सुरधिप : ३. ९, ११; ८६, ७। 'कच्चित् सुराधिपः प्रीतो रुद्रो वाऽस्त्राण्यदात्तव ॥ यथा दृष्टश्च ते शक्रो भगवान् वा पिनाकधृक् ।', (३. १६७, ४-५)। ९. ५३, २१; १२. २२४, ६; २२७, ११७; २८१, २४. २५; १३. ८३, २०; १४. ५, २०।

* सुरारिहन् : 'यथा पूर्वं सुरारिहा', (१. १७३, ४५)। ५. ९, ४४।

* सुरेन्द्र : १. ७१. ४०। 'प्रवर्षणे सुरेन्द्रस्य', (३. ११०, ४४) ३. ११५, १८। 'सुरेन्द्रकल्पम्', (४. ६६, १९)। ७. १६०, ६०; १२. ५, ८; १२४, ६१; २२७, १२; ३५२, १०। 'ब्रह्मविष्णुसुरेन्द्राणां रुद्रादित्याश्विनामपि। विश्वेषामपि देवानां वपुर्धारयते भवः ॥', (१३. १४, १४०)। १३. ४०, ४३. ४९; ६२, ५४. ६४। 'सुरेन्द्रद्विरदोपमः', (१३. ८५, ३४)। १३. ८६, २५. ३०। 'सुरेन्द्र नागम्', (१३. १०२, ५७)। १३. १०२, ५९; १२६, १; १४. १०, २३. २५।

* सुरोत्तम : १. २५, १२; १२. १०३, २४. ३२।

* सहस्रदृश् : ३. १६, १२; ४३, २६। 'अकालवर्षी भगवान् भविष्यति सहस्रदृक्', (३. १९०, ७९)। 'वर्षन्निव सहस्रदृक्', (९. ११, २०; १४. ८२, १०)।

* सहस्रनयन : 'सहस्रनयनश्चापि वज्री', (१२. २२८, ७)। 'सहस्रनयनोपमः', (१२. ३६०, १७)। शिव का इन्द्र के रूप में उल्लेख (१३. १४, २०८)। 'तथा भगसहस्रेण महेन्द्रः परिचिह्नितः। तथामेव प्रभावेण सहस्रनयनो ह्यसौ ॥', (१३. ३४, २७-२८)।

* सहस्रनेत्र : १. २११, २८। 'सहस्रनेत्रप्रतिमः', (३. २५, १०; ४. ८, ८)। 'सहस्रनेत्रप्रतिमप्रभावम्', (७. ११८, ५)। 'वृत्रं निहत्येव सहस्रनेत्रः', (८. ८३, ५२)। 'सहस्रनेत्राशनितुल्यवीर्यम्', (८. ९१, ४२)। 'सहस्रनेत्रप्रतिमानकर्मणः', (८. ९१, ६७)। 'सहस्रनेत्रप्रतिमप्रभावः', (९. १७, १९)। 'सहस्रनेत्रस्य च याति लोकम्', (१३. १२६, १४१)। १७. ३, ९।

* सहस्रलोचन : १२. २२८, ८९।

* सहस्राक्ष : १. २६, ८. १३; ३२, ८। 'सहस्राक्षः पुरन्दरः', (१. ३३, २४)। १. ३४, १०। 'सहस्राक्षः शतक्रतुः', (१. ६४, १६)। 'न ववर्ष सहस्राक्षो', (१. १७३, ३८)। 'प्रववर्ष सहस्राक्षः', (१. १७३, ४६)। १. २२७, १२। 'सहस्राक्षः शचीपतिः', (२. ३, १३)। 'सहस्राक्षसमं', (२. ४४, ९)। 'सहस्राक्षमिवामराः', (२. ४५, ६६)। ३. ३७. ५०. ५३; ४३, २२। 'सहस्राक्षः पुरन्दरः', (३. १०१, ८)। ३. १०३, ८। 'न ववर्ष सहस्राक्षः', (३. ११०, ४३)। 'सहस्राक्ष निवेशने', (३. १६४, २७)। 'सहस्राक्षादभिवाद्य शतक्रतुम्', (३. १६४, १९)। ३. १६६, ६. १५। 'देवराजं सहस्राक्षम्', (३. १६८, ५५)। ३. १६८, ६१। 'सहस्राक्षः पुरन्दरः', (३. १७३. ७०)। 'सहस्राक्षं शचीपतिम्', (३. २८८, ३)। ३. ३०२, १५। 'सहस्राक्षादनवरः', (३. ३१३, ८)। 'सहस्राक्षस्य वेश्मनि', (४. २, २०)। 'देवात् सहस्राक्षात्', (४. ५३, १८)। 'सहस्राक्षसमः', (५. १३७, २)। ६. ६, ४४। 'सहस्राक्षमिवामराः', (७. ४, ३; ८३, १०; १२६, ३९)। 'सहस्राक्षसमम्', (७. १४३, ५६)। 'पीडयामास तान्सर्वान्सहस्राक्ष इवासुरान्', (९. २६, ३६)। 'देवः सहस्राक्षः', (९. ४८, ५९)। ९. ५३, १०। 'सहस्राक्षसमः', (१२. ४९, ४)। 'सहस्राक्षः पुरन्दरः', (१२. ४९, ५)। 'सहस्राक्षो महेन्द्रः', (१२. ५८, २)। १२. ९१, ४५। 'न ववर्ष सहस्राक्षः', (१२. १४१, १५)। १२. २२५, ३८। 'सहस्राक्षो भगवान्पाकशासनः', (१२. २२७, ८८)। 'सहस्राक्षसमद्युतिः', (१३. ४, ५)। १३. ५, २६; ४१, १७; ६२, ६३. ८०; ७३, ५. ४७; ८३, ४०. ४६। 'सहस्राक्षो देवराट्', (१३. ९४, ४२)। 'देवराजः सहस्राक्षः', (१४. ९१, ४)। १४. ९१, १६। न ववर्ष सहस्राक्षः', (१४. ९२, ११)। १७. ३, २।

* हरि : 'भिन्धि त्वमेनं नमुचिं यथा हरिः', (८. ९०, ७२)।

* हरिमत् : ५. ४८, ६८; १४. १०, ३१।

* हरिवाहन : १. २६, १; २२६, १७; ३. ४६, ५४; १६८, ६१; १२. १८०, ५४; १३. २७, २४; १४. ५, १७।

* हरिश्मश्रु : १२. ३४२, २३।

* हरिहय : 'हरिहयोपमः', (१. ६७, ४९)। १. १३६, २४; १९०, १७। 'यथेन्द्राणी हरिहये', (१. १९९, ५)। 'हरिहयोपमः', (१. २२३,१७)।

१. इन्द्र (बहु०) 'पञ्चेन्द्राणामुपाख्यानम्', (१. २, ११७)। 'पूर्वेन्द्राः', (१. १९७, २७)। 'एवमेते पाण्डवाः संबभूवुर्ये ते राजन्पूर्वमिन्द्रा बभूवुः', (१. १९७, ३५)। 'पूर्वेन्द्रानभिवीक्ष्याभिरूपान्', (१. १९७, ४१)। 'बहूनीन्द्रसहस्राणि समतीतानि', (१२. २२४, ५५)। 'इन्द्र सहस्रेषु', (१२. २२४, ५९)। 'मार्गमिन्द्रशतैर्गतम्', (१२. २२७, ३९)। 'बहूनीन्द्रसहस्राणि दैवतानां युगे युगे', (१२. २२७, ४१)। 'गीर्भिरिन्द्राः स्तुवन्ति', (१३. १५८, १८)।

२. इन्द्र = स्कन्द (३. २३२, १६)।

३. इन्द्र = सूर्य (३. ३, १८)।

४. इन्द्र = शिव (सहस्रनामों में से एक)।

इन्द्रकर्मन् = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

इन्द्रकील, एक पर्वत का नाम है। अन्य पर्वतों के साथ कुबेर की सभा में इनकी उपस्थिति (२. १०, १२)। इन्द्रलोक जाते समय अर्जुन हिमालय और गन्धमादन को पार करने के पश्चात् इन्द्रकील पर्वत पर पहुँचे (३. ३७, ४२)। 'मयैष प्रार्थितः पूर्वमिन्द्रकीलसमप्रभः', (३. ३९, १२)।

इन्द्रजाल, एक दिव्यास्त्र का नाम है। 'स्थूलाकर्णेन्द्रजालं च सौरं चापि तथाऽर्जुनः', (३. २४५, १७)। 'इन्द्रजालं च मायां वै कुहका वाऽपि भीषणा', (५. १६०, ५५. ११८; १६१, ३६)। 'स्थूलाकर्णेन्द्रजालेन पार्थपाशुपतेन च', (८. ६०, २२)। 'तस्येन्द्रजालावततं', (८. ६४, २४)। 'तदिन्द्रजालप्रतिमं बाणजालमित्रहा', (१४. ७७, ३१)।

इन्द्रजित्, राक्षसराज रावण के पुत्र का नाम है। इसका लक्ष्मण के साथ युद्ध (३. २८५, ८)। इन्होंने पूर्वकाल में इन्द्र को विजित किया था (३. २८८, २)। लक्ष्मण और अङ्गद के साथ इनका युद्ध (३. २८५, १५. १८. १९)। लक्ष्मण द्वारा इनका वध (३. २८९, २. १५. १९)।

इन्द्रजियुद्ध(म्)—"रावण ने राम, लक्ष्मण, और सुग्रीव के साथ युद्ध करने के लिये उस इन्द्रजित् को भेजा जिसने इन्द्र को पराजित करके वरदान के रूप में अनेक दिव्यास्त्र प्राप्त किये थे। इसने सर्वप्रथम लक्ष्मण से युद्ध किया, फिर अङ्गद से, और उसके बाद अदृश्य होकर भी युद्ध करता रहा। (३. २८८)।"

इन्द्रजिद्वध—"इन्द्रजित ने राम और लक्ष्मण को उन बाणों के जाल में आबद्ध कर दिया जिन्हें उसने वरदान के रूप में प्राप्त किया था। सुग्रीव, अन्य वानरगण तथा सुषेण इत्यादि उन लोगों को घेर कर खड़े हुये। विभीषण ने आकर उन्हें प्रज्ञास्त्र से उठा दिया; सुग्रीव ने उनके शरीर में बिंधे हुये बाणों को खींच कर घावों पर विशल्य नामक औषधि लगाई; श्वेत पर्वत से कुबेर के एक गुह्यक ने ऐसा जल लाकर दिया जिसे आँख में लगा लेने पर सभी अदृश्य प्राणी दृश्य हो जाते हैं। राम, लक्ष्मण, सुग्रीव इत्यादि ने अपनी आँखों में उस जल को लगाया। रावण को सूचित करके इन्द्रजित् अपना दैनिक जप समाप्त किये बिना ही लौट आया; विभीषण से एक संकेत पाकर लक्ष्मण ने इन्द्रजित् का वध कर दिया। क्रुद्ध रावण ने सीता का वध कर देना चाहा परन्तु अविन्ध्य ने उसे विरत किया। (३. २८९)।"

इन्द्रतापन, एक असुर का नाम है जो दैत्यों और दानवों के साथ वरुण की सभा में उपस्थित होता था (२. ९, १५)।

इन्द्रतीर्थ, सरस्वती तटवर्ती एक तीर्थ का नाम है (९. ४८, १८)। बलराम जी ने इस तीर्थ में स्नान किया (९. ४९, १)। इन्द्र ने इस तीर्थ में सौ अश्वमेध यज्ञों का अनुष्ठान किया तथा बृहस्पति को प्रचुर धन दिया, इत्यादि। सौ बार विधिपूर्वक यज्ञों को पूर्ण करने के कारण इन्द्र 'शतक्रतु' के नाम से तथा यह तीर्थ इन्द्रतीर्थ के नाम से प्रसिद्ध हुआ (९. ४९, २–५)।

इन्द्रतोया, एक नदी का नाम है। गन्धमादन के समीप इन्द्रतोया तथा कुरङ्गस्थित करतोया में स्नान करके तीन रात्रिपर्यन्त उपवास करने वाला व्यक्ति अश्वमेध के फल का भागी होता है (१३. २५, ११)।

इन्द्रदमन, अत्रि के वंशज एक राजा का नाम है। इन्होंने एक योग्य ब्राह्मण को धन-दान देकर अक्षय लोक प्राप्त किया था (१२, २३४, १८)।

इन्द्रदर्शन(म)—"कुछ समय के पश्चात् युधिष्ठिर ने व्यास जी के सन्देश का स्मरण करके अर्जुन को एकान्त में प्रतिस्मृति-विद्या (जिसके विधिवत् प्रयोग से समस्त जगत् भली प्रकार और यथावत् स्पष्ट दिखाई पड़ने लगता है) का उपदेश किया। उन्होंने अर्जुन से कठिन तपस्या करने के लिये भी कहा। उन्होंने अर्जुन को बताया कि भीष्म, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, कर्ण और अश्वत्थामा आदि में चतुष्पाद धनुर्वेद और ब्रह्मास्त्रादि प्रतिष्ठित हैं। उन्होंने यह भी बताया कि इन्द्र को समस्त दिव्यास्त्रों का ज्ञान प्राप्त है, क्योंकि वृत्रासुर के भय से सम्पूर्ण देवताओं ने अपनी समस्त शक्ति इन्द्र को ही समर्पित कर दी थी। अतः युधिष्ठिर ने अर्जुन से इन्द्र की शरण लेने के लिये कहा। धर्मराज की आज्ञा से इन्द्र का दर्शन करने की इच्छा मन में रखकर अर्जुन ने अग्नि में आहुति दी और गाण्डीव धनुष धारण कर वहाँ से प्रस्थित हुये। अर्जुन को वहाँ से धनुष लेकर जाते हुये देखकर सिद्धों, ब्राह्मणों, तथा अदृश्य भूतों ने उन्हें आशीर्वाद दिया। उस समय द्रौपदी ने अर्जुन से इस प्रकार कहा : 'आर्या कुन्ती ने आपके जन्म के समय अपने मन में जो-जो इच्छायें की थीं तथा आप स्वयं भी अपने हृदय में जो मनोरथ रखते हों वे सब आप को प्राप्त हों। हम लोगों में से कोई भी क्षत्रिय कुल में उत्पन्न न हो; उन ब्राह्मणों को नमस्कार है जिनका भिक्षा से ही निर्वाह हो जाता है। मुझे सबसे बढ़कर दुःख इस बात का है कि दुर्योधन ने भरी सभा में मेरी ओर देखकर मुझे गाय (अर्थात् अनेक पुरुषों के उपभोग में आनेवाली) कह कर मेरा उपहास किया। दीर्घकाल के लिये आपके प्रवासी हो जाने के कारण मेरे मन को अत्यन्त दुःख होगा, किन्तु मैं आपको विदा देती हूँ।' तदुपरान्त द्रौपदी ने अर्जुन के विजयी होने के लिये धाता, विधाता, ह्री, श्री, कीर्ति, द्युति, पुष्टि, उमा, लक्ष्मी, सरस्वती, वसुगण, रुद्र, आदित्य, मरुद्गण, विश्वेदेव और साध्यों आदि की स्तुति की। उसने आन्तरिक्ष तथा दिव्य भूतों और मार्ग में विघ्न डालनेवाले अन्य प्राणियों से भी रक्षित रहने का अर्जुन को आशीर्वाद दिया। तदनन्तर अर्जुन ने अपना सुन्दर धनुष हाथ में लेकर सभी भाईयों और धौम्य मुनि को दाहिने करके वहाँ से प्रस्थान किया। अर्जुन के यात्रा के समय समस्त प्राणी उनके मार्ग से दूर हट जाते थे, क्योंकि वे इन्द्र से मिला देनेवाली प्रतिस्मृति नामक योगविद्या से युक्त थे। योगयुक्त होने के कारण अर्जुन मन के समान तीव्र वेग से चलने में समर्थ हो गये और एक ही दिन में अनेक पर्वतों को पार करते हुये हिमवत् पर्वत पर जा पहुँचे। तदुपरान्त उन्होंने गन्धमादन को पार किया, तथा आलस्य-रहित हो दिन-रात चलते हुये इन्द्रकील पर्वत पर पहुँचे। वहाँ आकाश में उच्च स्वर से गूँजती हुई वाणी सुनाई पड़ी जिसे सुनकर अर्जुन ने अपने चारों ओर दृष्टिपात किया। इतने ही में उन्हें वृक्ष के मूलभाग में बैठे हुये एक तपस्वी महात्मा का दर्शन हुआ, जो ब्रह्मतेज से उद्भासित हो रहे थे। उन ब्राह्मण ने अर्जुन से कहा : 'तात तुम कौन हो, जो धनुष-बाण, कवच, तलवार तथा हस्तत्राण से युक्त होकर यहाँ आये हो ? यहाँ अस्त्र-शस्त्र की आवश्यकता नहीं, क्योंकि यह तो क्रोध और हर्ष को विजित किये हुये तपस्या में तत्पर शान्त ब्राह्मणों का स्थान है। अतः तुम अपने अस्त्रों को फेंक दो, क्योंकि अब तुम उत्तम गति को प्राप्त हो चुके हो।' इस प्रकार उन ब्रह्मर्षि के अनेक बार आग्रह करने पर भी अर्जुन ने अपने अस्त्रों का परित्याग नहीं किया और दिव्यास्त्र प्राप्त करने के अपने निश्चय पर दृढ़ रहे। इस पर प्रसन्न होकर उन ब्राह्मण ने बताया कि वह स्वयं इन्द्र हैं। अर्जुन ने इन्द्र का दर्शन करके उनसे पुनः दिव्यास्त्र माँगे, किन्तु इन्द्र ने उनसे कहा कि शिव (त्र्यक्ष, शूलधर, भूतेश, परमेष्ठिन्) का दर्शन कर लेने के पश्चात् ही दिव्यास्त्र प्राप्त होंगे। अर्जुन से ऐसा कह कर इन्द्र अदृश्य हो गये और अर्जुन योग-युक्त होकर वहीं रहने लगे। (३. ३७)।"

१. इन्द्रद्युम्न, एक राजर्षि का नाम है। यम की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ८, २१)। कृष्ण द्वारा इनका वध (३. १२, ३२)। ये कीर्ति का लोप हो जाने के कारण स्वर्ग से भूतल पर गिर पड़े किन्तु चिर-जीवी कच्छप द्वारा अपनी कीर्ति का श्रवण करके पुनः स्वर्ग लोक पहुँच गये (३. १९९, २. ६–९. १२. १८)। युधिष्ठिर ने मार्कण्डेय के मुख से इन्द्रद्युम्न की पुनः स्वर्ग-प्राप्ति का वृत्तान्त सुना (३. २००, १; २०१, १)।

२. इन्द्रद्युम्न, एक ब्राह्मण का नाम है। युधिष्ठिर की पूजा करनेवाले ब्राह्मणों में एक यह भी थे (३. २६, २२)।

३. इन्द्रद्युम्न, एक सरोवर का नाम है। इन्द्रद्युम्न ने यहाँ यज्ञों का अनुष्ठान किया, तथा दक्षिणा के रूप में ब्राह्मणों को दी हुई गौओं के आने-जाने से यह सरोवर बन गया (३. १९९, ७)।

इन्द्रद्युम्नसरस्, गन्धमादन के समीपवर्ती एक सरोवर का नाम है। यहाँ पत्नियों सहित पाण्डु का आगमन हुआ (१. ११९, ५०)।

इन्द्रद्युम्नोपाख्यान(म)—"पाण्डवों ने मार्कण्डेय से पूछा : 'क्या कोई आपसे भी अधिक वृद्ध हैं ?' मार्कण्डेय ने कहा : 'एक समय स्वर्ग से च्युत हो जाने पर राजर्षि इन्द्रद्युम्न ने मेरे पास आकर यह बताते हुये कि उनकी कीर्ति नष्ट हो गई है, मुझसे यह पूछा कि क्या मैं उन्हें पहचानता हूँ। जब मैंने उन्हें पहचानने में अपनी असमर्थता प्रगट की तब उन्होंने एक अश्व का रूप धारण किया और मुझे हिमवत् पर्वत पर उस प्रावारकर्ण नामक उलूक के पास ले गये जो मुझसे भी वृद्ध था। उस उलूक को हम लोग इन्द्रद्युम्न सरोवर में निवास करनेवाले उस नाडीजङ्घ नामक बक के पास ले गये जो उस उलूक से भी वृद्ध था। उस बक ने हम लोगों को उसी सरोवर में निवास करनेवाले अकूपार नामक कच्छप की ओर संकेत किया। अकूपार इन्द्रद्युम्न को जानता था अतः उसने बताया कि इन्द्रद्युम्न ने १,००० बार यूप की स्थापना की थी और इन्द्रद्युम्न नामक सरोवर उन गायों के पैरों से खुदकर बना है जिन्हें इन्होंने ब्राह्मणों को दान में दिया था। तदुपरान्त आकाश से एक रथ आया और एक दिव्य वाणी ने इन्द्रद्युम्न को पुनः स्वर्ग लोक में बुलाया (इस विषय में ये श्लोक कहे गये हैं : 'दिवं स्पृशति भूमिं च शब्दः पुण्यस्य कर्मणः। यावत् स शब्दो भवति तावत् पुरुष

उच्यते ॥ अकीर्तिः कीर्त्यते लोके यस्य भूतस्य कस्यचित। स पतत्यधमाँल्लोकान् यावच्छब्दः प्रकीर्त्यते॥ तस्मात् कल्याणवृत्तः स्यादनन्ताय नरः सदा। विहाय चित्तं पापिष्ठं धर्ममेव समाश्रयेत्॥ ३. १९९, १३–१५)। तदुपरान्त उन्होंने मुझे तथा उलूक को अपने-अपने स्थानों पर पहुँचाया और फिर उसी रथ पर बैठ कर चले गये।' पाण्डवों ने इन्द्रद्युम्न को पुनः स्वर्ग प्राप्त कराने के लिये मार्कण्डेय की प्रशंसा की। मार्कण्डेय ने बताया कि कृष्ण ने भी राजर्षि नृग को नरक से छुड़ा कर स्वर्ग में पहुँचा दिया था। (३. १९९)।"

इन्द्रद्वीप, एक द्वीप का नाम है, जिसे पहले सहस्रबाहु ने विजित करके अपने अधिकार में कर लिया था (३. ३८, २९ के बाद गीताप्रेस के संस्करण के पृ० ७९२ पर दाक्षिणात्य पाठ)।

इन्द्रपर्वत, एक पर्वत का नाम है। इसके समीप भीमसेन ने सात , किरात नरेशों को विजित किया था (२. ३०, १५)।

इन्द्रप्रभव = अर्जुन (३. २३६, ५)।

इन्द्रप्रस्थ, पाण्डवों की राजधानी का नाम है (१. १, १५१)। 'तत् त्रिविष्टपसंकाशमिन्द्रप्रस्थं व्यरोचयत्', (१. २०७, ३६)। 'राज्यं तदिन्द्रप्रस्थं', (१. २०८, १)। 'धर्मराजाय तत् सर्वमिन्द्रप्रस्थगताय वै', (१. २१९, २५)। 'अर्जुनः पाण्डवश्रेष्ठमिन्द्रप्रस्थगतं तदा', (१. २२१, २६)। 'इन्द्रप्रस्थे वसन्तस्ते जघ्नुरन्यान्नराधिपान्', (१. २२२, १)। 'इन्द्रप्रस्थमगात्', (२. १३, ४२)। 'इन्द्रप्रस्थगतं पार्थम्', (२. १३, ४३)। 'इन्द्रप्रस्थमुपागम्य पाण्डवाभ्यां सहाच्युतः', (२. २४, ४६)। 'इन्द्रप्रस्थगतम्', (२. ३२, १९)। 'इन्द्रप्रस्थं पुरोत्तमम्', (२. ७३, १८)। 'समृद्धिः पार्थानामिन्द्रप्रस्थे बभूव', (३. ५१, २१)। 'इन्द्रप्रस्थनिवासिनः', (३. २३३, ५०)। 'इन्द्रप्रस्थगते', (३. २३७, ५)। 'इन्द्रप्रस्थे युधिष्ठिरम्', (४. १८, १६)। 'इन्द्रप्रस्थे निवसतः', (४. १८, २६)। ४. ५०, ११; ५. २६, २९; ५५, ४; ९५, ५७; ६. १२१, ५३; १२. १२४, ५। 'इन्द्रप्रस्थे महात्मानौ रेमतुः कृष्णपाण्डवौ', (१४. १५, ५)। १६. ७, ५। अर्जुन ने अनिरुद्ध के पुत्र वज्र को इन्द्रप्रस्थ में यादवों के राजा के रूप में नियुक्त किया (१६. ७, ७२)।

म० की इन्द्रप्रस्थ के निम्न पर्याय :

* **खाण्डवप्रस्थ** : १. २. ११९; ६१, ३३–३५; २०७, २४. २६. २८. ५०; २०८, ५; २१३, ६; २२१, १५. ३३; २. २, १; २५, ११; ३२, २; ४९, ५८; ७३, १६; ३. २६६, ५; ४. ३६, १९; ५. १२४, ५४।

* **शक्रपुरी** : ५. ३०, ४९।

* **शक्रप्रस्थ** : ३. २३, ११।

* **शतक्रतुप्रस्थ** : १. २२१, ६३; २. २८, २०; १६. ७, १०. ११; १७. १, ९।

इन्द्र-मतङ्ग-संवाद—"भीष्म ने बताया कि पूर्वकाल में किसी ब्राह्मण को मतङ्ग नामक एक पुत्र प्राप्त हुआ जो (अन्य वर्ण के पुरुष से उत्पन्न होने पर भी ब्राह्मणोचित संस्कार के प्रभाव से) उनके समान वर्ण का ही समझा जाता था और समस्त सद्गुणों से सम्पन्न था। एक दिन अपने पिता के भेजने पर मतङ्ग किसी यजमान का यज्ञ कराने के लिये गधों से जुते हुये शीघ्रगामी रथ पर बैठ कर चला। रथ का बोझ ढोते हुये एक छोटी अवस्था के गधे को उसकी माता के निकट ही मतङ्ग ने बार-बार चाबुक से मारकर उसकी नाक में घाव कर दिया। पुत्र का भला चाहने वाली गधी ने उस गधे को सान्त्वना देते हुये कहा : 'पुत्र शोक मत करो। तुम्हारे ऊपर ब्राह्मण नहीं चाण्डाल सवार है। ब्राह्मण में इतनी क्रूरता नहीं होती।' मतङ्ग के पूछने पर गधी ने बताया कि उसका (मतङ्ग का) पिता शूद्र जातीय नाई था जिसने यौवन के मद से मदोन्मत्त ब्राह्मणी के पेट से उसे उत्पन्न किया था। गर्दभी ने कहा : 'इसीलिये तुम जन्म से चाण्डाल हो।' मतङ्ग ने घर लौट कर जो कुछ उसने गधी से सुना था अपने पिता को बताया और उसके बाद वन में जाकर ब्राह्मणत्व प्राप्त करने की इच्छा से इतनी घोर तपस्या में संलग्न हुआ कि उससे देवगण संतप्त हो उठे। इन्द्र ने उसके सम्मुख प्रगट होकर उससे वर मागने का आग्रह किया। जब मतङ्ग ने यह बताया कि वह ब्राह्मणत्व प्राप्त करने की इच्छा से तपस्या कर रहा है तब इन्द्र ने उससे कहा कि तपस्या से ब्राह्मणत्व प्राप्त नहीं हो सकता। (१३. २७)।" "तदुपरान्त मतङ्ग ने सौ वर्षों तक एक पैर पर खड़े होकर तपस्या की। इन्द्र ने एक बार पुनः उपस्थित होकर उससे कहा : 'तात! ब्राह्मणत्व दुर्लभ है उसे माँगकर तुम प्राप्त नहीं कर सकते। पशु-पक्षी की योनि में पड़े हुये सभी प्राणी यदि कभी मनुष्य योनि में जाते हैं तो सर्वप्रथम पुल्कस या चाण्डाल के रूप में जन्म लेते हैं : तदनन्तर एक सहस्र वर्ष व्यतीत होने पर वह चाण्डाल या पुल्कस शूद्र योनि में जन्म लेकर अनेक जन्मों तक चक्कर लगाता रहता है। इसके पश्चात् ३०,००० वर्षों के बाद वह वैश्य होता है; इसका भी साठ गुना समय व्यतीत होने पर क्षत्रिय और उसके बाद इससे भी साठ गुना समय व्यतीत होने पर गिरे हुये ब्राह्मण के घर में जन्म लेता है। इसके पश्चात् इसकी दो सौ गुना अवधि व्यतीत होने पर अस्त्र-शस्त्रों से जीविकोपार्जन करनेवाले ब्राह्मण के यहाँ जन्म होता है; इसके तीन सौ गुना समय व्यतीत होने पर वह गायत्री आदि मन्त्रों का जाप करनेवाले ब्राह्मण के घर में जन्म लेता है; इसके पश्चात् अन्ततः चार सौ गुना और अधिक समय व्यतीत होने पर वह वेदवेत्ता ब्राह्मण-कुल में जन्म लेता है। (१३. २८)।" "तदुपरान्त मतङ्ग अपने मन को और भी दृढ़ तथा संयमशील बनाकर एक सहस्र वर्षों तक एक पैर से ध्यान लगाये खड़ा रहा। इन्द्र ने पुनः उसके सम्मुख उपस्थित होकर वही बातें कहीं। तब मतङ्ग गया तीर्थ में जाकर अँगूठे के बल पर सौ वर्षों तक खड़ा रहा। इस दुर्धर्ष योग के अनुष्ठान द्वारा उसका समस्त शरीर क्षीण होकर केवल त्वचा से ढकी हुई अस्थियों का ढाँचा मात्र रह गया। उस अवस्था में अपने को सभाँल न सकने के के कारण वह भूमि पर गिर पड़ा। गिरते देखकर इन्द्र ने उसे दौड़कर पकड़ लिया। अब इन्द्र के आग्रह करने पर मतङ्ग ने उनसे यह वर माँगा : 'पुरन्दर! आप ऐसी कृपा करें जिससे मैं इच्छानुसार विचरण तथा रूपधारण करने वाला आकाशचारी देवता बन जाऊँ। ब्राह्मण और क्षत्रियों के विरोध से रहित होकर मैं सर्वत्र पूजा एवं सत्कार प्राप्त करूँ और मेरी कीर्ति का अक्षय विस्तार हो।' इन्द्र ने कहा : 'तुम स्त्रियों के पूज्यनीय होगे; छन्दोदेव के नाम से तुम्हारी ख्याति होगी और तीनों लोकों में तुम्हारी अनुपम कीर्ति का विस्तार होगा।' इस प्रकार वर देकर इन्द्र अन्तर्धान हो गये। (१३. २९)।"

इन्द्रमार्ग, एक तीर्थ का नाम है, (१३. २५, ९; ३. ८३, १८१, जहाँ 'रुद्रमार्ग' आता है)।

इन्द्रमाला, उस माला का नाम है जिसे इन्द्र ने अपने चिह्न के रूप में वसु उपरिचर को दिया था (१. ६३, १६)।

इन्द्रलोक, इन्द्र के लोक का नाम है (१. १९७, २६)। सुन्द और उपसुन्द ने इसे विजित किया था (१. २१०, ७)। भ्रमण करते हुए नारद और पर्वत यहाँ पधारे थे (३. ५४, १३)। महाबाहु धनञ्जय ने भी कुछ समय तक यहाँ निवास किया था (३. २३९, १३; ६. ९०, ११)। अर्जुन ने इन्द्रलोक में जाकर असंख्य कालकेय नामक दैत्यों का संहार किया था (८. ७९, ६०)। जो राजा अपने नगर और राष्ट्र की प्रजा के साथ धर्मपूर्ण व्यवहार करता है वह इन्द्रलोक प्राप्त करता है (१२. ७७, ३४)। अतिथि इन्द्रलोक के और ऋत्विज देवलोक के स्वामी हैं (१२. २४३, १८)। जो मनुष्य दूध देने वाली, सुलक्षणा, और श्वेतवर्ण की गाय को वस्त्र पहनाकर श्वेतवर्ण के बछड़े सहित दान करता है वह इन्द्रलोक प्राप्त करता है (१३. ७१, ११)। "गौतम ने कहा : 'इन्द्रलोक रजोगुण और शोक से रहित है।' धृतराष्ट्र ने कहा : 'जो सौ वर्ष तक जीनेवाला शूरवीर मनुष्य वेद का स्वाध्याय करता हुआ यज्ञ में तत्पर रहता है और कभी प्रमाद नहीं

करता वही इन्द्रलोक (शक्रलोक) में जाता है।' (१३. १०२, ३८. ३९)।" जो मनुष्य नित्य अग्नि में होम करता हुआ अग्नि की उपासना करता है वह हंस और सारसों से जुते हुये विमान को पाता है और इन्द्र-लोक में सुन्दरी स्त्रियों से घिरा हुआ निवास करता है (१३. १०७, १५. ३४)।

इन्द्रलोकाभिगमन से अर्जुन की इन्द्रलोक की यात्रा का तात्पर्य है (१. २, ५१.)। देखिये **इन्द्रलोकाभिगमनपर्वन्**।

इन्द्रलोकाभिगमनपर्वन्, महाभारत के वनपर्व में ४२ से ५१ अध्यायों तक आनेवाले महाभारत के ३४ वें अवान्तरपर्व का नाम है। "लोकपालों के चले जाने पर अर्जुन ने देवराज इन्द्र के रथ का चिन्तन किया। उनके चिन्तन करते ही मातलि सहित वह महातेजस्वी रथ वहाँ आ गया। उस रथ में तलवार, भयङ्कर शक्ति, गदा, प्रास, वज्र, अशनि और भारी चक्र युक्त गोले रक्खे हुये थे। उसमें अत्यन्त भयङ्कर तथा प्रज्वलित मुख वाले विशालकाय सर्प भी विद्यमान थे। वह वायु के समान वेगशाली दस सहस्र श्वेत-पीत वर्ण अश्वों से युक्त था जिस पर वैजयन्त नामक इन्द्रध्वज फहरा रहा था। रथ से उतर कर मातलि ने अर्जुन से रथारूढ़ होने का निवेदन करते हुये बताया कि ऋषियों, गन्धर्वों, तथा अप्सराओं से घिरे हुये इन्द्र उन्हें (अर्जुन को) देखना चाहते हैं। अर्जुन ने पहले मातलि से उस रथ पर बैठने का निवेदन करते हुये कहा : 'यह सैकड़ों राजसूय और अश्वमेध यज्ञों द्वारा भी नहीं प्राप्त हो सकता; दक्षिणा देनेवाले महान् सौभाग्यशाली और यज्ञ-परायण भूपालों, देवताओं, अथवा दानवों के लिये भी इस उत्तम रथ पर आरूढ़ होना कठिन है; जिन्होंने तपस्या नहीं की है वे इस महान् दिव्य रथ का दर्शन या स्पर्श भी नहीं कर सकते; अतः आप पहले इस रथ पर आरूढ़ होकर अश्वों को नियन्त्रित कर लें, तब मैं इस पर बैठूँगा।' तदनन्तर अर्जुन ने गङ्गा में स्नान करके पवित्र हो विधि-पूर्वक मंत्र जाप किया और पितरों का तर्पण करके शैलराज हिमालय से विदा ली। इसके पश्चात् अर्जुन उस दिव्य रथ में बैठकर ऊपर की ओर जाने लगे। ऊपर जाकर उन्होंने सहस्रों अद्भुत विमान देखे। वहाँ न सूर्य प्रकाशित होते हैं और न चन्द्रमा। अग्नि की प्रभा भी वहाँ काम नहीं देती। वहाँ स्वर्ग के निवासी अपने पुण्यकर्मों से प्राप्त हुई अपनी ही प्रभा से प्रकाशित होते हैं। उन्होंने वहाँ प्रकाशमान तारों के रूप में छोटे और बड़े प्रकाश-पुञ्जों को भी देखा जो अपने-अपने अधिष्ठानों में अपनी ही ज्योति से देदीप्यमान थे। उन लोकों में वे सिद्ध राजर्षि वीर निवास करते थे जो युद्ध में प्राण देकर वहाँ पहुँचे थे। सूर्य के समान प्रकाशमान सहस्रों गन्धर्वों, गुह्यकों, ऋषियों, तथा अप्सराओं के समूहों को और उनके स्वतः प्रकाशित होनेवाले लोकों को देखकर अर्जुन को अत्यन्त आश्चर्य हुआ। मातलि ने बताया कि ये तारे वे ही पुण्यात्मा पुरुष हैं जो अपने-अपने लोकों में निवास करते हैं। तदनन्तर अर्जुन ने स्वर्ग के द्वार पर खड़े हुये गजराज ऐरावत को देखा, जिसके चार दाँत बाहर निकले हुये थे और जो कैलाश पर्वत के समान सुशोभित था। सिद्धों के लोकों से होते हुये और आगे बढ़कर महायशस्वी अर्जुन ने इन्द्रपुरी अमरावती का दर्शन किया। (३. ४२)।" "अमरावती पुरी में प्रवेश करने पर देवताओं, गन्धर्वों, सिद्धों, और महर्षियों ने अत्यन्त प्रसन्न होकर अर्जुन का स्वागत-सत्कार किया। अर्जुन ने उन सबसे विधिपूर्वक मिल कर देवराज इन्द्र का दर्शन किया। जब अर्जुन ने अभिवादन कर लिया तब इन्द्र ने उन्हें अपने पास सिंहासन पर बैठा लिया। जिस प्रकार कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को उदित हुये सूर्य और चन्द्रमा आकाश की शोभा-वृद्धि करते हैं उसी प्रकार एक सिंहासन पर बैठे हुये देवराज इन्द्र और अर्जुन देवसभा को सुशोभित कर रहे थे। उस समय वहाँ तुम्बुरु आदि श्रेष्ठ गन्धर्व-गण सामगान के नियमानुसार अत्यन्त मधुर स्वर में गाथा-गान करने लगे। घृताची, मेनका, रम्भा, उर्वशी आदि सत्तरह प्रमुख अप्सराओं के साथ सहस्रों अन्य अप्सरायें इन्द्रसभा में नर्तन करने लगीं। (३. ४३)।" "इन्द्र का अभिप्राय जानकर देवताओं और गन्धर्वों ने उत्तम अर्घ्य लेकर अर्जुन का यथोचित पूजन किया और उसके बाद देवताओं ने उन्हें इन्द्रभवन में पहुँचा दिया। वहाँ रहकर अर्जुन अस्त्रों की शिक्षा-ग्रहण करने लगे। उन्होंने इन्द्र के हाथ से वज्र तथा अशनि ग्रहण किया। अस्त्रों की शिक्षा ग्रहण कर लेने पर इन्द्र के विशेष अनुरोध से अर्जुन वहाँ पाँच वर्षों तक रहे। उन्होंने चित्रसेन से सङ्गीत और नृत्य की शिक्षा भी ग्रहण की। चित्रसेन, जो कि अर्जुन के मित्र थे, अर्जुन को शिक्षा तो दे रहे थे किन्तु अर्जुन शीघ्र ही अपने भ्राताओं और माता के पास लौट जाने के लिये व्यग्र रहते थे। (३, ४४)।" "इन्द्र ने अर्जुन के नेत्रों को उर्वशी के प्रति आसक्त जानकर चित्रसेन गन्धर्व को आज्ञा दी कि वे उर्वशी को अर्जुन की सेवा में भेज दें। उर्वशी ने अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक अर्जुन का अपने प्रेमी के रूप में वरण किया। (३. ४५)।" "इन्द्र की आज्ञा पाकर शृङ्गार आदि करके अप्सरा उर्वशी अर्जुन के भवन में आई। उर्वशी को देखकर अर्जुन के नेत्र लज्जा से झुक गये और उन्होंने उसका गुरुजनोचित सत्कार किया। अर्जुन के व्यवहार को देखकर हतप्रभ उर्वशी ने इस प्रकार कहा : 'देवराज इन्द्र के इस मनोरम निवास स्थान में तुम्हारे शुभागमन के उपलक्ष में जब उस महान् उत्सव का आयोजन किया गया जिसमें रुद्र, आदित्य, अश्विन्, वसुगण, महर्षि, राजर्षि, सिद्ध, चारण, यक्ष और सर्पगण उपस्थित थे और गन्धर्वगण वीणावादन तथा अप्सरायें नृत्य कर रही थीं, तब तुम्हारे नेत्रों को मुझ पर आसक्त जानकर इन्द्र ने चित्रसेन के द्वारा मुझे तुम्हारे पास आने की आज्ञा दी। मैं स्वयं भी तुमसे अत्यधिक प्रेम करती हूँ।' अर्जुन ने कहा : 'मैं तुम्हें अपनी माता के समान समझता हूँ और मैं तुम्हें केवल इसीलिये देख रहा था क्योंकि तुम पौरव वंश की माता हो।' उर्वशी ने बताया कि पूरुवंश के जितने भी वंशज तपस्या करके स्वर्ग-लोक में आते हैं वे बिना किसी पाप के अप्सराओं के साथ रमण करते हैं। किन्तु अर्जुन ने पुनः शपथपूर्वक कहा कि वे उर्वशी को अपनी माता के समान ही मानते हैं। इस पर क्रुद्ध होकर उर्वशी ने अर्जुन को यह शाप दिया कि उन्हें पुरुषत्वहीन होकर स्त्रियों के बीच नर्तकी के रूप में समय व्यतीत करना पड़ेगा। यह शाप देने के पश्चात् उर्वशी वहाँ से चली गई। इन्द्र ने अर्जुन को बताया कि वनवास के तेरहवें वर्ष अज्ञातवास के समय उर्वशी का शाप सत्य होगा, किन्तु एक वर्ष के पश्चात् वे अपना पुरुषत्व पुनः प्राप्त कर लेंगे। अर्जुन के इस अत्यन्त दुष्कर और पवित्र चरित्र को सुन-कर मद, दम्भ, तथा विषयासक्ति आदि से रहित होकर श्रेष्ठ मानव स्वर्ग लोक को प्राप्त करते हैं। (३. ४६)।" "एक दिन ब्रह्मर्षि लोमश भ्रमण करते हुये इन्द्रभवन में पधारे। लोमश को इस बात पर आश्चर्य हुआ कि क्षत्रिय होते हुये भी अर्जुन ने किस प्रकार देव-पूजित शक्र के स्थान को प्राप्त कर लिया है। उनके मनोभाव को जानकर शक्र ने बताया कि वास्तव में अर्जुन कौन हैं। उन्होंने यह भी बताया कि दनुपुत्र, निवातकवच नामक असुरगण, जो पाताल में निवास करते हैं, देवों का विनाश करने की योजना बना रहे हैं और कृष्ण अथवा अर्जुन के अतिरिक्त कोई अन्य व्यक्ति उन असुरों का वध नहीं कर सकता। और यतः एक नगण्य कार्य होने के कारण मधुसूदन श्रीकृष्ण से यह कार्य सम्पन्न करने का निवेदन नहीं किया जा सकता क्योंकि उनकी शक्ति सम्पूर्ण विश्व को भस्म कर डालेगी, अतः अर्जुन ही असुरों का वध करेंगे। इन्द्र के निवेदन तथा अर्जुन के अनुमोदन पर महर्षि लोमश ने काम्यक वन में जाकर युधिष्ठिर को अर्जुन का संवाद दिया। लोमश ने कहा कि उनके द्वारा रक्षित होकर युधिष्ठिर तीर्थों में भ्रमण करें। (३. ४७)।" "जब धृतराष्ट्र ने व्यास के मुख से इन्द्रलोक में निवास करने के पश्चात् अर्जुन के लौटने का समाचार सुना तब संजय से अपने पुत्रों के लिये चिन्ता प्रगट की। (३. ४८)।" "किरातवेशी शिव के सम्बन्ध में अर्जुन और धृतराष्ट्र का संवाद। (३. ४९)।" "अर्जुन की पाँच वर्ष की अनुपस्थिति की अवधि में पाण्डवों ने अपने को तथा १०,००० ऐसे स्नातक ब्राह्मणों को भोजन कराया जिनमें से कुछ अग्निहोत्री और

कुछ अग्निहोत्र-रहित थे। भोजन के लिये राजा युधिष्ठिर पूर्वदिशा में, भीमसेन दक्षिण दिशा में, तथा नकुल, सहदेव पश्चिम एवं उत्तर दिशा में हिंसक पशुओं का संहार किया करते थे। (३. ५०)।" "पाण्डवों का वह अद्भुत एवं अलौकिक चरित्र सुनकर धृतराष्ट्र ने संजय के सम्मुख अपनी चिन्ता व्यक्त की। उन्हें भीम की लौहगदा का विशेष भय था। संजय ने यह भी बताया कि पाण्डवों के द्यूत में पराजित होने का समाचार सुनकर कृष्ण, धृष्टद्युम्न, विराट, धृष्टकेतु और कैकेयगण भी काम्यक वन में आकर पाण्डवों से मिले। संजय ने गुप्तचरों से उन लोगों के बीच हुये वार्तालाप को जान लिया था और उसे धृतराष्ट्र को बता भी चुके थे। संजय ने यह भी बताया कि श्रीकृष्ण ने अर्जुन का सारथि होना तथा युद्ध में पाण्डवों की सहायता करना स्वीकार कर लिया है। बलराम, अक्रूर, गद, शाम्ब, प्रद्युम्न, आहुक, धृष्टद्युम्न, शिशुपाल का पुत्र, युयुधान, कैकेय, पाञ्चाल, मत्स्य आदि ने भी कृष्ण के साथ यह घोषणा की है कि हस्तिनापुर में रह कर अपने भ्राताओं के साथ युधिष्ठिर शासन करेंगे। (३. ५१)।"

इन्द्रवर्मन्, एक मालव राजा का नाम है जिसके अश्वत्थामा नामक हाथी का भीमसेन ने वध किया था (७. १९०, १५. ४९; १९३, ५६)।

इन्द्रविजय—"युधिष्ठिर के यह पूछने पर कि इन्द्र और शची ने कैसे भयंकर दुःख प्राप्त किया था, शल्य ने कहा : पूर्वकाल में प्रजापति त्वष्टा ने इन्द्र के प्रति द्रोह-बुद्धि रखने के कारण एक तीन सिरवाला पुत्र उत्पन्न किया, जिसका नाम विश्वरूप था। वह अपने एक मुख से वेदों का स्वाध्याय करता था, दूसरे से सुरापान करता था, और तीसरे से दिशाओं की ओर इस प्रकार देखता था, मानों उन्हें आत्मसात कर लेगा। उस अमित तेजस्वी बालक का तपोबल देखकर इन्द्र सशङ्क हो उठे और उसे मोहित करने के लिये अप्सराओं को आज्ञा दी। अप्सराओं के अनेक प्रयत्न करने पर भी वह बालक अपने तप से विचलित नहीं हुआ। तब इन्द्रने अपने वज्र के प्रहार से उसका वध कर दिया। यद्यपि वज्र के प्रहार से वह त्रिशिरा बालक मरकर पृथ्वी पर गिर पड़ा तथापि इन्द्र को शान्ति नहीं मिली, क्योंकि वे उसके तेज से संतप्त हो रहे थे। तब इन्द्र ने एक बढ़ई को त्रिशिरा के मस्तकों के टुकड़े-टुकड़े कर देने की आज्ञा दी। बढ़ई के बहुत समझाने पर इन्द्र ने कहा कि वे त्रिशिरा के वध से लगी ब्रह्महत्या से अपनी शुद्धि के लिये किसी अनुष्ठान का आयोजन करेंगे। उन्होंने बढ़ई से यह भी कहा कि त्रिशिरा के मस्तकों को काट देने पर मनुष्यगण हिंसा प्रधान तामस यज्ञों में पशु के सिर को बढ़ई के भाग के रूप में प्रस्तुत करेंगे। यह सुनकर बढ़ई ने अपनी कुठार से त्रिशिरा के तीनों सिरों को काट दिया। कट जाने पर उनके अन्दर से तीन प्रकार के पक्षी—कपिञ्जल, तीतर, और गौरैये—निकले। तब त्वष्टा ने वृत्र को उत्पन्न किया जो इन्द्र को निगल गया। तब देवताओं ने जृम्भिका की सृष्टि की। जम्हाई लेते समय जब वृत्रासुर ने अपना मुख फैलाया तब इन्द्र बाहर निकल आये। उसी समय से सब लोगों के प्राणों में जृम्भाशक्ति का निवास हो गया। त्वष्टा ने वृत्रासुर के तेज और बल की वृद्धि की जिससे त्रस्त होकर इन्द्र विमुख हो गये। उस समय सब देवता मन्दराचल के शिखर पर ध्यानस्थ होकर वृत्रासुर के वध की इच्छा से भगवान् विष्णु का स्मरण करने लगे। (५. ९)।" "ऋषियों और सम्पूर्ण देवताओं को लेकर इन्द्र भगवान् विष्णु की शरण में गये। विष्णु ने इन्द्र सहित देवताओं से कहा : 'तुम लोग ऋषियों और गन्धर्वों के साथ वहाँ जाओ जहाँ विश्वरूपधारी वृत्रासुर विद्यमान् है; तुम लोग उसके साथ सन्धि कर लो तभी उसे पराजित कर सकोगे।' विष्णु की आज्ञा पाकर देवताओं सहित इन्द्र ने वृत्रासुर के पास जाकर सन्धि का प्रस्ताव किया। वृत्रासुर ने सन्धि करने की शर्त के रूप में कहा : 'मैं देवताओं सहित इन्द्र के द्वारा न सूखी वस्तु से, न गीली वस्तु से, न पत्थर से, न लकड़ी से, न शस्त्र से, न अस्त्र से, न दिन में और न रात में ही मारा जाऊँ। इसी शर्त पर देवेन्द्र के साथ सदा के लिये मेरी सन्धि हो सकती है।' देवताओं ने इस शर्त को स्वीकार कर लिया और तब से वे लोग सदैव वृत्रासुर से मिलने लगे। एक दिन समुद्रतट पर सन्ध्या समय वृत्रासुर को देखकर इन्द्र ने वज्र सहित समुद्र के फेन में प्रवेश करके वृत्रासुर को नष्ट कर डाला। वृत्रासुर की मृत्यु हो जाने पर देवता, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, महानाग, तथा ऋषि इन्द्र की स्तुति करने लगे। परन्तु वृत्रासुर के मारे जाने पर विश्वासघात रूपी असत्य से अभिभूत होकर इन्द्र मन ही मन बहुत दुःखी हुये। त्रिशिरा के वध से उत्पन्न हुई ब्रह्महत्या ने उन्हें पहले ही घेर रक्खा था। फलस्वरूप इन्द्र बेसुध और अचेत होकर जल में विचरने वाले सर्प की भाँति छिपकर जल में ही निवास करने लगे। जब इन्द्र इस प्रकार अदृश्य हो गये तब पृथिवी के वृक्ष उजड़ गये, जङ्गल सूख गये, नदियों का स्रोत छिन्न-भिन्न हो गया, और सरोवरों का जल सूख गया। सब जीव अनावृष्टि के कारण क्षुब्ध हो उठे और जगत् में अराजकता के कारण अत्यन्त उपद्रव होने लगे। (५. १०)।" "तब ऋषियों, देवताओं, और देवेश्वरों ने मिलकर नहुष को अपनी-अपनी तपस्याओं से संयुक्त करके इन्द्र-पद पर अभिषिक्त किया। उन लोगों ने नहुष से कहा : 'देवता, दानव, यक्ष, ऋषि, राक्षस, पितर, गन्धर्व, और भूत जो भी आपके नेत्रों के सम्मुख आयेगा उसे देखते ही आप उसके तेज का हरण करके स्वयं समृद्ध हो जायेंगे।' इन्द्र पदपर अभिषिक्त हो जाने पर नहुष कामभोग में आसक्त हो गये। वे देवोद्यानों में, नन्दन वन के उपवनों में, कैलाश में, हिमालय के शिखर पर मन्दराचल, श्वेतगिरि, सह्य, महेन्द्र तथा मलय पर्वत पर, एवं समुद्रों और सरिताओं में अप्सराओं तथा देवकन्याओं के साथ भाँति-भाँति की क्रीड़ायें करने लगे। विश्वावसु, नारद, गन्धर्व, और अप्सराओं के समुदाय तथा छः ऋतुयें शरीर धारण करके देवेन्द्र नहुष की सेवा में उपस्थित रहने लगीं। एक दिन नहुष ने इन्द्राणी शची को भी अपने महल में उपस्थित होने की आज्ञा दी। इस पर अत्यन्त दुःखी होकर शची ने बृहस्पति की शरण ली। बृहस्पति ने शची को शीघ्र ही इन्द्र से मिला देने का आश्वासन दिया। (५. ११)।" "यह सुनकर कि शची बृहस्पति की शरण में गई हैं, नहुष अत्यन्त क्रुद्ध हुये जिससे असुर, गन्धर्व, किन्नर, और महानागों सहित सम्पूर्ण जगत् भयभीत हो उठा। देवताओं ने नहुष से शची का विचार त्यागने का निवेदन किया, जिस पर नहुष ने इन्द्र द्वारा पूर्वकाल में गौतम-पत्नी अहल्या के सतीत्व नष्ट करने का स्मरण दिलाते हुये शची को अपनी सेवा में उपस्थित करने की आज्ञा दी। अन्ततः देवताओं ने नहुष को यह आश्वासन दिया कि वे इन्द्राणी को उनकी सेवा में उपस्थित करेंगे। परन्तु ब्रह्मा के कथन का उल्लेख करते हुये बृहस्पति ने शची को अपनी शरण से नहुष के पास जाने की आज्ञा नहीं दी। फिर भी, बृहस्पति ने शची को नहुष से कुछ समय की अवधि माँगने का परामर्श दिया जिससे देवगण भी सहमत हुये। (५. १२)।" "शची नहुष से थोड़ी और अवधि प्राप्त करके बृहस्पति के पास लौट आईं। तब अग्नि को आगे करके देवगण विष्णु की शरण में गये। विष्णु ने कहा : 'इन्द्र यज्ञों द्वारा मेरी आराधना करें; वे अश्वमेध यज्ञ के द्वारा मेरी आराधना करके निर्भय होकर पुनः इन्द्रपद प्राप्त कर लेंगे।' विष्णु की बात सुनकर देवता, ऋषि और बृहस्पति उस स्थान पर गये, जहाँ इन्द्र छिपकर रहते थे। वहाँ इन्द्र की शुद्धि के लिये एक महान् अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान हुआ जो ब्रह्महत्या को दूर करने वाला था। इन्द्र ने वृक्ष, नदी, पर्वत, पृथिवी, और स्त्री समुदाय में ब्रह्महत्या को वितरित कर दिया। इस प्रकार समस्त भूतों में ब्रह्महत्या का विभाजन करके शुद्ध हुये इन्द्र जब अपना स्थान ग्रहण करने के लिये स्वर्गलोक में गये तो वहाँ नहुष को देख कर अत्यन्त भयभीत हुये और पुनः सबकी आँखों से ओझल होकर विचरण करने लगे। इन्द्र के इस प्रकार पुनः अदृश्य हो जाने पर शची ने निशा देवी की उपासना की, जिससे उपश्रुति नामक देवी प्रगट हुई; शची ने पुनः उपश्रुति की स्तुति की (५. १३)।" "शची को अपने साथ लेकर उपश्रुति अनेक पर्वतों तथा हिमालय को लाँघकर उसके उत्तरभाग में जा पहुँची। तदनन्तर अनेक योजनों तक फैले हुये समुद्र के पास पहुँचकर

उन्होंने एक महाद्वीप में प्रवेश किया। वहाँ उन्हें एक सरोवर मिला जिसमें सहस्रों कमल खिले हुये थे। उस सरोवर के मध्यभाग में खिले एक कमल की नाल को चीरकर इन्द्राणी सहित उपश्रुति ने उसके भीतर प्रवेश किया और वहाँ एक तन्तु में घुसकर छिपे हुये शतक्रतु इन्द्र को देखा। शची ने इन्द्र की स्तुति करके उनसे नहुष का वध तथा पुनः इन्द्रलोक प्राप्त कर लेने का निवेदन किया। (५. १४)।" "इन्द्र ने शची को बताया कि ऋषियों के हव्य और कव्य ने नहुष की शक्ति को अत्यधिक संवर्धित कर दिया है। उन्होंने शची से कहा : 'तुम एकान्त में नहुष के पास जाकर उनसे ऋषियान पर बैठकर अपने पास आने का निवेदन करो।' इन्द्र की आज्ञा से शची ने नहुष को इस प्रकार का आमन्त्रण दिया जिससे वे सहमत हो गये। तदुपरान्त शची ने बृहस्पति से इन्द्र का पता लगाने का आग्रह किया। बृहस्पति ने इन्द्र की प्राप्ति के लिये विधिपूर्वक अग्नि को प्रज्वलित किया और उसमें हविष्य की आहुति देकर अग्निदेव से इन्द्र का पता लगाने के लिये कहा। मन के समान तीव्रगति वाले अग्नि इन्द्र की खोज करके पलभर में बृहस्पति के पास लौट आये और बोले : 'मैं देवराज को संसार में कहीं नहीं देख रहा हूँ; केवल जल ही शेष रह गया है जहाँ मैंने उनकी खोज नहीं की है, क्योंकि जल में मेरी गति नहीं है। जल से अग्नि, ब्राह्मण से क्षत्रिय, तथा पत्थर से लोहे की उत्पत्ति हुई है। इनका तेज सर्वत्र तो काम करता है, किन्तु अपने कारणभूत पदार्थों में आकर बुझ जाता है। अतः मुझसे जल में प्रवेश करने के लिये न कहें।' (५. १५)।" "तब बृहस्पति ने अग्नि की स्तुति करके वेदमन्त्रों द्वारा उनकी बलवृद्धि की। तदुपरान्त अग्नि ने इन्द्र का पता लगाकर बृहस्पति को सूचना दी। बृहस्पति ने देवर्षि और गन्धर्वों के साथ इन्द्र के पास जाकर उनके पुरातन कर्मों (नमुचि, शम्बर, बल, और वृत्र के वध से सम्बन्धित) का वर्णन करते हुये उनकी स्तुति की। तब इन्द्र धीरे-धीरे बढ़ने लगे और अन्त में अपने पूर्व-शरीर को प्राप्त करके बल-पराक्रम से सम्पन्न हो गये। अपने पूर्व-शरीर को प्राप्त करके इन्द्र ने पूछा कि विश्वरूप तथा वृत्रासुर का वध कर देने के पश्चात् अब और कौन सा कार्य बचा है। बृहस्पति ने बताया कि देवता और ऋषियों की शक्ति से संवर्धित होकर नहुष किस प्रकार महर्षियों को अपना वाहन बनाकर समस्त लोकों में भ्रमण करता है। बृहस्पति जब ऐसा कह रहे थे उसी समय लोकपाल कुबेर, यम वैवस्वत, और सोम तथा वरुण भी वहाँ आ पहुँचे। इन लोगों ने विश्वरूप तथा वृत्र के वध पर प्रसन्नता प्रगट की और नहुष के विरुद्ध इस शर्त पर इन्द्र की सहायता करने के लिये प्रस्तुत हुये कि वे भी यज्ञभाग के अधिकारी बना दिये जायँ। इन लोगों की बात सुनकर इन्द्र ने अग्नि को यज्ञभाग का अधिकारी, वरुण को जल का स्वामी तथा यम और कुबेर को उनके अपने-अपने स्थानों का अधिपति बना दिया। (५. १६)।" "जब इन्द्र देवताओं तथा लोकपालों के साथ बैठकर नहुष के वध का उपाय सोच रहे थे उसी समय महर्षि अगस्त्य ने वहाँ आकर इन्द्र से कहा : 'सौभाग्य की बात है कि आप विश्वरूप के विनाश और वृत्रासुर के वध से निरन्तर अभ्युदयशील हो रहे हैं। यह भी सौभाग्य की बात है कि आज नहुष भी देवताओं के राज्य से च्युत हो गये।' इन्द्र द्वारा नहुष के पतन का सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनाने का आग्रह करने पर अगस्त्य ने कहा : 'बल के दर्प में भरा दुराचारी नहुष देवताओं पर सवारी करता था। निर्मल अन्तःकरण वाले महर्षि पापी नहुष का बोझ ढोते-ढोते अत्यन्त त्रस्त हो उठे थे। एक दिन महर्षियों ने नहुष से गायों के प्रोक्षण-विषयक वैदिक मन्त्रों की प्रामाणिकता के सम्बन्ध में प्रश्न किया जिस पर उसने कहा कि वह वेद-मंत्रों को प्रमाण नहीं मानता। नहुष के ऐसा कहने पर ऋषियों ने बताया कि पूर्वकाल में महर्षियों ने वेद-मन्त्रों को प्रमाणभूत बताया है। यह सुनकर नहुष ने मुनियों के साथ विवाद करते हुये मेरे मस्तक पर पैर से प्रहार किया जिससे उसका समस्त तेज नष्ट हो गया। अतः मैंने उसे स्वर्ग से भ्रष्ट होकर दस सहस्र वर्षों तक महान् सर्प के रूप में पृथिवी पर पड़े रहने का शाप दे दिया। मैंने उससे यह भी बताया कि इस अवधि के पूर्ण हो जाने पर वह पुनः स्वर्ग प्राप्त कर लेगा।' तदनन्तर ऋषियों से घिरे हुये देवता, पितर, यक्ष, नाग, राक्षस, गन्धर्व, देवकन्यायें, अप्सरायें, सरितायें, सरोवर, शैल, और समुद्र अत्यन्त प्रसन्न और सन्तुष्ट हुये (५. १७)।" "तत्पश्चात्, गन्धर्वों और अप्सराओं से स्तुति सुनते हुये इन्द्र ऐरावत पर बैठे। अग्नि, बृहस्पति, यम, वरुण, कुबेर, तथा सम्पूर्ण देवता, गन्धर्व और अप्सरायें भी उनके साथ चले। इन्द्र ने भगवान् अङ्गिरा का दर्शन किया और अङ्गिरा ने भी अथर्ववेद के मन्त्रों से इन्द्र का पूजन किया। अङ्गिरा से प्रसन्न होकर इन्द्र ने उन्हें यह वर दिया : 'आप इस अथर्ववेद में अथर्वाङ्गिरस् नाम से विख्यात होंगे और आपको यज्ञभाग भी प्राप्त होगा।' इस प्रकार देवराज इन्द्र ने शची को प्राप्त करके पुनः धर्मपूर्वक प्रजा का पालन करना आरम्भ किया। (५. १८)।"

इन्द्रसुत=अर्जुन (५. १०५, ३४)।

१. **इन्द्रसेन**, राजा परिक्षित् के पाँचवें पुत्र का नाम है (१. ९४, ५५)

२. **इन्द्रसेन**, युधिष्ठिर के सारथी का नाम है। इसे युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण को लाने के लिये भेजा था (२. १३, ४२)। युधिष्ठिर ने इसे अन्न आदि के संग्रह का कार्य सौंपा (२. ३३, ३०)। इसका पाण्डवों के साथ वनगमन (३. १, ११)। जब ऋषियों को नमस्कार करके पाण्डव तीर्थ-यात्रा के लिये प्रस्थित हुये तब इन्द्रसेन आदि चौदह से अधिक सेवक रथ लेकर उनके पीछे-पीछे चलने लगे (३. ९३, २८)। पाण्डवों ने इसे राजा सुबाहु की राजधानी में ही छोड़ दिया (३. १४०, २७)। राजा सुबाहु की राजधानी में लौटकर पाण्डवगण इन्द्रसेन आदि परिचारकों से भी मिले (३. १७७, १४)। 'इन्द्रसेनादिभिः सूतैः', (३. २४३, ९)। 'इन्द्रसेनादिभिः', (३. २५८, १५)। सारथि के रुप में इसका उल्लेख (३. २६९, १०. १६; २७१, १५) युधिष्ठिर ने कहा कि इन्द्रसेन आदि सेवकगण केवल रथों को ही लेकर शीघ्र द्वारका चले जाँय (४. ४, ३. ५८)। अभिमन्यु और उत्तरा के विवाह के समय इन्द्रसेन आदि सारथि भी रथ सहित वहाँ उपस्थित हुये (४. ७२, २३)। 'इन्द्रसेनमुखांश्चैव भृत्यान्', (११. २६, २५)। 'इन्द्रसेनादयस्तथा', (११. २६, २७)।

३. **इन्द्रसेन**, नल और दमयन्ती के पुत्र का नाम है (३. ५७, ४६; ६०, २३; ७२, ३४)।

४. **इन्द्रसेन**, एक कुरु-योद्धा का नाम है (७. १५६. १२२)।

१. **इन्द्रसेना**, नल और दमयन्ती की पुत्री का नाम है (३. ५७, ४६; ६०, २३; ७५, २४)।

२. **इन्द्रसेना**, नारायण की पुत्री और मुद्गल की पत्नी का नाम है (३. ११३, २४)। अपने सौन्दर्य के लिये विख्यात नारायण की पुत्री इन्द्रसेना ने अपने उस पति का अनुसरण किया जो १,००० वर्ष का था(४. २१, ११)

इन्द्राणी = शची, द० स्था०।

इन्द्रात्मज = अर्जुन (६. ६०, २२)।

इन्द्रानुज = कृष्ण (विष्णु), द० स्था०।

इन्द्राभ, धृतराष्ट्र के सातवें पुत्र का नाम है (१. ९४, ५९)।

इन्द्रावरज = कृष्ण (विष्णु), द० स्था०।

इन्द्रियं सर्वदेहिनां=शिव (सहस्र नामों में से एक)।

इन्द्रोत- शुनकवंशी ऋषि का नाम है : 'इन्द्रोतः शौनको विप्रः', (१२. १५०, २)। 'इन्द्रोतं शौनकम्', (१२. १५०, ८)। इन्होंने पारिक्षित जनमेजय को धर्मोपदेश देकर उनसे अश्वमेध यज्ञ कराया (१२. १५२, ३८)।

इन्द्रोत-पारिक्षितीय (म)—"भीष्म ने कहा : पूर्वकाल में परिक्षित् के पुत्र राजा जनमेजय (ये परिक्षित् और जनमेजय अर्जुन के पौत्र और प्रपौत्र नहीं वरन् प्राचीनकाल के राजा हैं) बड़े पराक्रमी थे, किन्तु उन्हें बिना जाने ही ब्रह्महत्या का पाप लग गया। इस बात को जानकर पुरोहित सहित सभी ब्राह्मणों ने जनमेजय को त्याग दिया। राजा चिन्ता से जलते हुये वन में चले गये। प्रजा ने भी उन्हें गद्दी से उतार दिया था जिससे वे

वन में दुःख से दग्ध होते हुये भी दीर्घकाल तक तपस्या में लगे रहे। राजा पृथिवी के प्रत्येक देश में घूम-घूम कर अनेक ब्राह्मणों से ब्रह्महत्या के निवारण का उपाय पूछने लगे। एक दिन राजा जनमेजय अपने पापकर्म से दग्ध वन में विचरते हुये कठोर व्रत का पालन करने वाले इन्द्रोत शौनक के पास जा पहुँचे। इन्द्रोत शौनक ने ब्रह्महत्या के कारण राजा की भर्त्सना करते हुये उन्हें यमलोक में जाकर अपनी शङ्का का समाधान करने के लिये कहा। (१२. १५०)।" "मुनिवर इन्द्रोत के ऐसा कहने पर भी जनमेजय ने विनम्रतापूर्वक कहा : 'निश्चय ही मुझे यमराज से घोर भय प्राप्त होने वाला है और यह बात मेरे हृदय में काँटे की भाँति चुभ रही है। मैं यह भी जानता हूँ कि जो क्षत्रिय अपने पाप के कारण यज्ञ के अधिकार से वंचित हो जाते हैं वे पुलिन्दों और शबरों की भाँति नरक में पड़े रहते हैं। अतः आप मेरी बाल-बुद्धि पर ध्यान न देकर जैसे पिता पुत्र पर स्वभावतः संतुष्ट होता है, उसी प्रकार मुझ पर भी प्रसन्न हों।' शौनक ने कहा : 'तुम्हें ब्राह्मणों की शक्ति का ज्ञान है; वेदों और शास्त्रों में जो उनकी महिमा उपलब्ध होती है उसका भी तुम्हें पता है; अतः तुम शान्तिपूर्वक ऐसा प्रयत्न करो जिससे ब्राह्मण जाति तुम्हें शरण दे सके। तुम्हें धर्मोपदेश देने की बात सुनकर मेरे सुहृद मुझ पर अत्यन्त रोष से जल उठेंगे और मुझे अधर्मज्ञ कहेंगे। अतः तुमसे मैं केवल यही प्रतिज्ञा करने के लिये कहूँगा कि भविष्य में तुम ब्राह्मणों से कभी द्रोह नहीं करोगे।' जनमेजय ने शपथपूर्वक यह वचन दिया कि वे मन, वाणी, और क्रिया द्वारा अब कभी ब्राह्मणों से द्रोह नहीं करेंगे। (१२. १५१)।" "इन्द्रोत ने पश्चाताप कर रहे उस राजा जनमेजय को हत्या के पाप से मुक्त होने की विधियों का उपदेश दिया। उन्होंने कुरुक्षेत्र के माहात्म्य के सम्बन्ध में ययाति के एक श्लोक, मनु के एक कथन, और सत्यवत् के एक श्लोक का उद्धरण देते हुये जनमेजय को महासरस् नामक तीर्थ में जाने का परामर्श दिया। उन्होंने बताया कि महासरस् नामक तीर्थ इतना अधिक पवित्र है कि भ्रूणहत्या का अपराधी उससे सौ योजन दूर रहने पर भी पाप-मुक्त हो जाता है। मनु ने बताया है कि अघमर्षण नामक मंत्र का जप करते हुये जो इस तीर्थ के जल में तीन बार गोता लगाता है उसे अश्वमेध यज्ञ में अवभृथ स्नान करने का फल मिलता है। प्राचीन काल में देवताओं और असुरों को देवगुरु महर्षि वसिष्ठ ने पापमुक्त होने की विधि पर उपदेश दिया था। तदुपरान्त इन्द्रोत ने राजा जनमेजय से विधिपूर्वक अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान कराकर उनके पापों को नष्ट कराया। (१२. १५२)।"

१. **इरा**, कुबेर की सभा में उपस्थित होनेवाली एक अप्सरा का नाम है (२. १०, ११)।

२. **इरा**, ब्रह्मा के सभाभवन में उपस्थित होनेवाली एक देवी का नाम है (२. ११, ३९)।

इरामा, एक नदी का नाम है जिसका मार्कण्डेयजी ने भगवान् बालमुकुन्द के उदर में दर्शन किया था (३. १८८, १०४)।

इरावत्, अर्जुन के एक पुत्र का नाम है जिसने श्रुतायु के साथ युद्ध किया था (६. ४५, ६९)। पाण्डवसेना में इनके भी सम्बद्ध रहने का उल्लेख है (६. ५६, १६; ७५, १२)। विन्द और अनुविन्द ने इन पर आक्रमण किया; इन्होंने विन्द और अनुविन्द के साथ युद्ध करते हुये उन्हें पराजित किया (६. ८१, २७; ८३, १२. १३. १६. १९. २१. २३)। "इरावान् को अर्जुन ने नागराज कौरव्य की पुत्री के गर्भ से उत्पन्न किया था। नागराज की यह पुत्री सन्तान हीन थी। उसके मनोनीत पति का जब गरुड ने वध कर डाला तब कौरव्य ने उसे अर्जुन को समर्पित कर दिया। नागकन्या के गर्भ से उत्पन्न होने के कारण इरावत् सदैव मातृकुल में ही रहा, जहाँ उसकी माता ही उसका पालन-पोषण करती रही। इरावत् के किसी दुरात्मा वयोवृद्ध सम्बन्धी ने अर्जुन के प्रति द्वेष रखने के कारण उनके इस पुत्र को त्याग दिया था। इरावत् ने बड़े होने पर जब सुना कि उसके पिता अर्जुन देवलोक गये हुये हैं तब वह भी शीघ्र इन्द्रलोक में जा पहुँचा। और स्वर्ग में अर्जुन को अपना परिचय दिया जिससे प्रसन्न होकर अर्जुन ने कहा : 'मेरे शक्तिशाली पुत्र ! युद्ध के अवसर पर तुम हम लोगों की सहायता करना।' अर्जुन की आज्ञा सुनकर इरावत् स्वर्ग से लौट आया और महाभारत युद्ध के समय पाण्डव पक्ष की ओर से युद्ध करने के लिये पुनः उपस्थित हुआ। (६. ९०, ७-१७)।" "इसने शकुनि के भ्राताओं के साथ युद्ध किया, और वृषभ को छोड़ कर अन्य सबका वध कर दिया। अलम्बुष ने इस पर आक्रमण करके इसका वध कर दिया जिस पर पाण्डव अत्यन्त दुःखी हुये। (६. ९०, ३०. ३२. ३४. ३६. ३८. ४१. ४२. ५४. ५५. ६०. ६२. ६३. ६७. ७०. ७२. ७३. ७६. ७७; ९१, १. २; ९६, १)।"

इरावती, एक नदी, वर्तमान रावी, का नाम है। वरुण की सभा में उपस्थित होने वाली नदियों में से एक यह भी है (२. ९, १९)। कृष्ण ने इसके तट पर भोज का वध किया था (३. १२, ३३)। भारतवर्ष की नदियों में इसका भी उल्लेख है (६. ९, १६)। 'रम्याभिरावतीम्', (८. ४४, १७)। उन नदियों के साथ इसका भी उल्लेख है जिनसे उमा ने परामर्श किया (१३. १४६, १८)। तु० की० ८. ४४, ३२।

१. **इला**, मनुर्वैवस्वत की पुत्री तथा पुरूरवस् की माता का नाम है। यह मनुर्वैवस्वत की आठवीं सन्तति थी (१. ७५, १६)। एक समय, इनको पुरूरवस् की माता तथा पिता दोनों ही कहा गया है (१. ७५, १८)। मनु की पुत्री तथा पुरूरवस् की माता होने का उल्लेख (१. ९५, ७)। इसने कार्तिकेय को फल-फूलों की भेंट अर्पित की थी (१३. ८६, २४)। इला बुध की पत्नी तथा पुरूरवस् की माता थी (१३. १४७, २६)।

२. **इला**, एक नदी का नाम है जिसमें युधिष्ठिर ने ब्राह्मणों सहित स्नान किया था (३. १५६, ८)।

इलावृत, जम्बूद्वीप के मध्यवर्ती एक वर्ष (भूभाग) का नाम है (६. ६, ३८; गी० सं० में देखिये २. २८, ६ के बाद दाक्षिणात्य पाठ)।

इलास्पद, एक तीर्थ का नाम है, जिसमें स्नान करने से दुर्गति का निवारण तथा वाजपेय यज्ञ का पुण्य फल प्राप्त होता है (३. ८३, ७७)।

इलिल, एक पूरुवंशी राजा का नाम है। ये दुष्यन्त के पिता थे (गी० सं० में १. ७१, ७ के बाद दाक्षिणात्य पाठ)। इनकी माता का नाम रथन्तर्या था (१. ७४, १२५ के बाद दाक्षिणात्य पाठ)। दुष्यन्त के पिता तथा माता के ये नाम दाक्षिणात्य पाठ के अनुसार दिये गये हैं। उदीच्य पाठ के अनुसार इनके पिता का नाम 'ईलिन' तथा माता का नाम 'रथन्तरी' था (१. ९४, १७)।

इलोपहूत = कृष्ण (विष्णु), १२. ३४२, ६८।

इल्वल, एक असुर का नाम है, जो वातापि का भ्राता और मणिमती नगर का निवासी था (३. ९६, ४. ७. ११)। यह वातापि के मांस को ब्राह्मणों को खिला कर उनका वध कर दिया करता था (३. ९६, १३)। यह एक भयंकर दानव था, किन्तु अगस्त्य का वध करने में असफल रहा क्योंकि उन्होंने वातापि को पूर्णतया पचा लिया था; फलस्वरूप इसने अगस्त्य को प्रचुर धन का दान किया (३. ९८, १९. २०; ९९, १, ५. ६. ९. ११. १३)। उन असुरों में से एक जिनका छलपूर्वक वध किया गया था (९. ३१, १३)। तु० की० असुर, दैतेय, दैत्य, दैत्येन्द्र, दानव।

इषुप—देखिये इषुपाद्।

इषुपाद्, एक असुर का नाम है। दनु के पुत्रों में से एक (१. ६५, २५)। यह नग्नजित् के रूप में उत्पन्न हुआ था (१. ६७, २०)।

इष्ट = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

इष्टीकृत, एक यज्ञ का नाम है (३. १२९, १; २६०, ४)।

इष्वस्त्रोत्तमभर्तृ = शिव (१०. ७, १०)।

ई

ई = शिव (सहस्रनामों में से एक)।

ईजिक, भारत के एक जनपद का नाम है (६. ९, ५२)।

ईड्य = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

ईरिन् , (बहु०) एक वंश, यमराज की सभा में सौ ईरियों के उपस्थित होने का उल्लेख (२. ८, २३)।

ईलिन् , पूरुवंशी महाराज तंसु के पुत्र का नाम है (१. ९४, १६)। इनकी पत्नी का नाम रथन्तरी था। उसके गर्भ से इनके दुष्यन्त, शूर, भीम, प्रवसु, तथा वसु नामक पाँच पुत्र उत्पन्न हुये थे (१. ९४, १७-१८)। तंसु और कालिङ्गी के पुत्र (१. ९५, २७)। इनकी पत्नी का नाम रथन्तरी था, तथा दुष्यन्त आदि इनके पाँच पुत्र थे (१. ९५,२८)।

१. ईश = ब्रह्मन् (१. ६४, ४५; ६. ३५, १५; १२. ३००, ५८)।

२. ईश = शिव (३. २३१, ५३; ४. ५६, ११; ७. ११३, १०; १२. २८४, १६; १३. १४, १. २२. १३८. १९२. २३१. २३३. ३३८. ३४८)।

३. ईश = विष्णु (नारायण, कृष्ण) 'ईशे च देवे नारायणे तथा', (१२. ३०१, २३)। १२. ३३५, ५। कृष्ण ने कहा 'मैं ईश हूँ', (१२. ३४२, ९०)। १२. ३४२, १२५; ३४३, १४। 'धार्यते स्वयमीशेन राजन्नारायणेन च', (१२. ३४८, १०)। १६. ४, २८।

४. ईश, सर्वेश्वर के लिये प्रयुक्त हुआ है (५. ४६, २६)।

५. ईश, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३५)।

१. ईशान = ब्रह्मन् : १२. ३०२, १६। 'ईशानो ज्योतिरव्ययः', (१२. ३१०, १३)।

२. ईशान = शिव : 'तत्रेशानं समभ्यर्च्य', (३. ८५, २७)। 'शंकरं भवमीशानम्', (३. १०६, १२)। ३. १०९, ७। कुबेर के मित्र (३. २७४, १६)। ७. ८०, ४४. ५६। 'ब्रह्मेशानेन्द्रवरुणान्', (७. १२७, १)। ७. २०१, ६३. ७१; २०२, १०. ११. १०३; 'ब्रह्मेशानाविव', (८. १६, १९)। 'स्थाणुमीशानम्', (८. ३३, ४५)। ८. ३४, ३६. ७७; ३५, ४४। 'ब्रह्मेशानेन्द्रवरुणान्', (८. ४६, ३९)। ८. ८६, १४। 'ब्रह्मेशानौ', (८. ८७, ६८)। 'ब्रह्मेशानानुशासनम्', (८. ८७, ८४)। ९. १७, ४५; १०. ७, २। 'रुद्राणामपि चेशानं गोप्तारम्', (१२. १२२, ३०)। १२. २८१, ४३; २८४, ५७। सहस्रनामों में से एक (१२. २८४, ११६)। १२. ३४१, २४; ३४२, १३२; १३. १४, ६९. १३८. २३५. ३१६. ३३१. ३६३. ४०३. ४२०; १६, ६. ६६। सहस्र नामों में से एक (१३. १७, ७५)। १३. १७, १६१; १८, ९. ३६. ६२; १६०, ४०; १४. ८; २९।

३. ईशान = विष्णु (नारायण, कृष्ण) : १. १, २२। 'सोऽनिरुद्धः स ईशानः', (१२. ३३९, ४०)। १२. ३३९, ११७; ३४०, ५७; ३४२, ६७; ३४७, ३१; ३४९, ५८। सहस्र नामों में से एक (१३. १४९, २१)। १४. ४०, ५ (= महान् आत्मा)।

४. ईशान : ३. ३०, २२; ५. ३१, २; ४६, १५; १२. ३१६, १७।

ईशानाध्युषित, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, ८)।

ईशः पशूनां = कृष्ण (१३. १५८, १८)।

१. ईश्वर = ब्रह्मन् : 'ईश्वरो दण्डमुद्यम्य स्वमेव प्रजापतिः', (६. १२, २९)। विश्वेदेवाः सहेश्वराः', (७. ७६, ४)। १२. ५९, २५।

२. ईश्वर = शिव : १. २, ५०; १६९, १०। गोपतिमीश्वरम्', (१. १७३, ३२)। १. १९७, ४५. ४६; २१५, २१; २. ४२, १३; ३. ४०, २८; २५२, ८; ७. ८१, २२; २०१, ६१; २०२, ४०. ११४. ११७. १४३; ८. ३४, ५१; ३५, ४; १०. ७, २. ६८। 'रुद्रं च प्रभुमीश्वरम्', (१२. १६६, १६; ३४१, २८)। 'ईशानमीश्वरम्', (१३. १४, ६९)। 'अनीश्वरभक्तः', (१३. १४, १८१)। १३. १४, २३४. २४६। विष्णु को उत्पन्न किया (१३. १४, ३४७)। १३. १४, ३६७ 'पुरुषमधिष्ठातारमीश्वरम्', (१३. १६, ४)। १३. १६, ११. ३२; १७, १०. १८. २२। 'सहस्र नामों में से एक (१३. १७, ७५)। १३. १८, ६३; ७७. २९; ८५, १२३ (वरुण); १३. ८५, १२४; १६१, २८. २९; १४. ८, ३०।

३. ईश्वर = इन्द्र : 'हंसरूपेण चेश्वरः', (१. ६३, २१)। १. १७७, ३७; ९. ४३, ३६; १२. २२२, ३७; २२७, ११८. ११९। 'देवेन्द्रमेवंवादिनमीश्वरम्', (१७. ३, ३६)।

४. ईश्वर = स्कन्द : 'अनलात्मजमीश्वरम्', (९. ४४, ११)। ९. ४६, ७५; १३. ८६, २६।

५. ईश्वर = विष्णु (नारायण, कृष्ण), : 'हरिं', (२. ३६, २०)। ३. १६३, २६; २०१, २९। 'केशवः', (३. २६३, १८)। 'हरिरीश्वरः', (३. २६३, २५)। 'विष्णुः', (५. ९७, ३)। 'केशवः', (१२. २०५, ७)। 'कृष्णं', (१२. २०९, १)। १२. २०९, ३६। 'हरिः', (१२. ३३७, ४०)। ईश्वर के रूप में अनिरुद्ध (१२. ३३९, ४१)। १२. ३४०, ३०। 'हरिः', (१२. ३४०, १०९)। १२. ३४६, २१; ३४७, १२; १३. १८, ६१; १२६, १। सहस्र नामों में से एक (१३. १४९, १७. २२)। १४. ५५, १४।

६. ईश्वर : ३. ३०, २१. २४. २५. २८. ३०. ३२. ४२; ३२, १. २१; ५. ३७, ४०; १०५, ४०; ६. ३७, २८; ३९, ८. १७; ४०, ८. १४। दण्ड के नामों में इनकी गणना (१२. १२१, ४१)। १२. २३१, ३०; २३२, २६; २३३, १; २८५, १३। 'अनीश्वरः', (१२. ३००, ३)। १२. ३०५, ३२; ३०६, ४१; ३१२, १५; १४. ३, २।

७. ईश्वर , राजा पूरु के द्वारा पौष्टी के गर्भ से उत्पन्न द्वितीय पुत्र का नाम है (१. ९४, ५)।

८. ईश्वर , एक राजा, जो क्रोधवश नामक दैत्यों में से किसी के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ६५)।

९. ईश्वर , ग्यारह रुद्रों में से एक; ब्रह्माजी के पौत्र एवं स्थाणु के ११ पुत्रों में से एक (१. ६६, ३)। अर्जुन के जन्मोत्सव के समय रुद्रों के साथ इनकी उपस्थिति का वर्णन (१. १२३, ६९)।

१०. ईश्वर , एक विश्वेदेव (१३. ९१, ३७)।

ईश्वरेश्वर = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

ईहामृग (बहु०), पुलह के वंशजों के लिये प्रयुक्त हुआ है (१. ६६, ८)।

उ

उक्थ , एक अग्नि : 'उक्थो नाम महाभाग त्रिभिरुक्थैरभिष्टुतः', (३. २१९, २५)।

उक्थयज्ञ = कृष्ण (१२. ४३, १३)।

उक्षा , ऋषभकन्द का नाम (३. १९७, १७)।

१. उग्र , धृतराष्ट्र के पुत्रों में से एक (१. ६७, १०३; ११७, १२)। भीमसेन द्वारा इसका वध (६. ६४, २९. ३४)।

२. उग्र , एक यादव राजकुमार, जिसे पाण्डवों की ओर से रणनिमन्त्रण भेजा गया था (५. ४, १२)।

३. उग्र , कवि पुत्रों में से आठवें पुत्र का नाम है (१३. ८५, १३३)।

४. उग्र = शिव (१३. १७, १००), व० स्था०।

५. उग्र = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

उग्र , बहुवचन में प्रयुक्त एक जाति के लोगों का नाम है (१२. २९६, ८; १३. ४८, ७)।

उग्रक , एक नाग (१. ३५, ७)।

१. उग्रकर्मा , शाल्व देश के राजा का नाम है। इनका भीमसेन ने वध किया था (८. ५, ४२)।

२. उग्रकर्मा, केकय राजकुमार विशोक के सेनापति का नाम है जिसका कर्ण ने वध किया था (८. ८२, ४-५)।

उग्रतीर्थ, क्रोधवश दैत्य के अंश से प्रगट हुये एक क्षत्रिय राजा का नाम है (१. ६७, ६५)।

१. उग्रतेजस्, एक नाग, जो बलराम जी के परमधाम पधारने के समय उनके स्वागत के लिये आया था (१६. ४, १६)।

२. उग्रतेजस् = शिवः (सहस्र नामों में से एक १३. १७ ५७)।

उग्रदण्ड = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

उग्रधन्वन् = स्कन्द (३. २३२, १७)।

उग्रयायिन्- धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, ११)।

१. उग्रश्रवस् लोमहर्षण के पुत्र थे, जिन्होंने शौनक को महाभारत सुनाया था : इन्हें सौति भी कहते हैं (१. १, १)। 'लोमहर्षणपुत्र उग्रश्रवाः सौतिः', (१. ४, १)। १. ४०, ५। उत्तरीय ऋषियों में से एक यह भी थे (१३. १६५, ४७)।

उग्रश्रवस् के निम्नलिखित पर्याय मिलते है :

* पौराणिक, व० स्था०।

* लोमहर्षपुत्र : १. १, १; ४, १।

* लौमहर्षणि (लोमहर्षण का पुत्र):१. १, ५. ८; २.८४; ४. ३; ५, १।

* सौति, सूत, सूतज, सूतनन्दन, सूतपुत्र, व० स्था०।

२. उग्रश्रवस्—धृतराष्ट्र का एक पुत्र (१. ६७, १००; ११७, ९)। भीमसेन द्वारा इसका वध (७. १५७, १८)।

१. उग्रसेन, जनमेजय के एक भाई का नाम है (१. ३, १)।

२. उग्रसेन—एक देवगन्धर्व, मुनि नामक कश्यप की पत्नी का एक पुत्र है (१. ६५, ४२)। अर्जुन के जन्मोत्सव पर इनकी उपस्थिति (१. १२३, ५५)। युद्ध देखने के लिये आये (४. ५६, १२)।

३. उग्रसेन, एक राजा का नाम है जो स्वर्भानु नामक असुर के अंश से अवतरित हुये थे (१. ६७, १३)।

४. उग्रसेन, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, १००, ११७, ९)

५. उग्रसेन, सोमवंशीय राजा अविक्षित् के पौत्र तथा परिक्षित् के पुत्र का नाम है (१. ९४, ५४)।

६. उग्रसेन, इनका दूसरा नाम आहुक था, ये वृष्णियों के राजा तथा कंस के पिता थे (१. २१९, ८)। 'पूज्यमानो यदुश्रेष्ठैरुग्रसेनमुखैः', (२. २, ३३)। वे ही (?) युधिष्ठिर की सेवा में उपस्थित हुये थे (३. १५, १२)। 'वृष्ण्यन्धका उग्रसेनादयः', (५. २८, १२)। जब श्रीकृष्ण ने कंस का वध कर दिया तब उग्रसेन मथुरा के राजा बने (५. ४८, ७८)। इनका दूसरा नाम आहुक था (५. १२८, ३८)। 'बभ्रूग्रसेनयो राज्यं नाप्तुं शक्यं कथञ्चन', (१२. ८१, १७)। 'उग्रसेनस्य संवादं नारदे केशवस्य च', (१२. २३०, २. ३)। 'प्रययुस्तांस्तदा राजन्नुग्रसेनो न्यवारयत्। ततः पुराद्विनिष्क्रम्य वृष्ण्यन्धकपतिस्तदा ॥', (१४. ८३, १५)। उन व्यक्तियों में से एक हैं जिन्होंने मृत्यु के पश्चात् देवलोक में स्थान पाया (१८. ५, १७)।

७. उग्रसेन = जनक (३. १३४, १)।

उग्रसेनसुत = कंस (१. ६७, ६७; ५. १२८, ३८)

उग्रसेनानी = कृष्ण (१२. ४३, ९)।

उग्रात्मन् = कृष्ण (१२. ४७, ८१)।

१. उग्रायुध, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९९; ११७, ७)। ये द्रौपदी के स्वयंवर में गये थे (१. १८६, २)।

२. उग्रायुध, पाण्डवपक्षीय एक पाञ्चाल्य योद्धा का नाम है, जिसे कर्ण ने घायल किया था (८. ५६, ४४)

३. उग्रायुध, कौरवपक्ष के एक योद्धा का नाम है, जो युद्धक्षेत्र में मारा गया था (९. २, ३७)।

४. उग्रायुध = शिव (७. २०२, ४५; १२. २८९, १८)।

५. उग्रायुध, एक दुर्धर्ष चक्रवर्ती नरेश का नाम है, जिसका भीष्मजी ने किसी समय वध किया था (१२. २७, १०)।

उग्रायुधसुत—कौरवपक्ष का एक संशप्तक योद्धा, जिसका अर्जुन ने वध किया था (८. १९, ७)।

उग्रेश = शिव (३. १०६, १२)।

१. उच्चैःश्रवस्, एक दिव्य अश्व का नाम है। 'क्षीरोदमथनं चैव जन्मोच्चैःश्रवसस्तथा', (१. २, ९१)। 'मथ्यमानेऽमृते जातमश्वरत्नमनुत्तमम्', (१. १७, १०२)। समुद्र-मन्थन के समय प्रगट हुआ था (१. १८, ३५)। उच्चैःश्रवस् के वर्ण के विषय में कद्रू और विनता की होड़ (१. २०, २)। 'जग्मतुस्तुरगं द्रष्टुमुच्चैःश्रवसमन्तिकात्', (१. २१, २)। 'उच्चैःश्रवा सोऽश्वराजः', (१. ५४, ६)। 'व्यनदद्यथैवोच्चैःश्रवा हयः', (१. १३०, ४७)। समुद्र-मन्थन से इनकी उत्पत्ति (५. १०२, १२) 'उच्चैःश्रवसमश्वानां विद्धि माममृतोद्भवम्', (६. ३४, २७)। 'उच्चैःश्रवस्तुल्यबलं वायुवेगसमं जवे। जघान हयराजं तं यमुनावनवासिनम् ॥', (७. ११, ३)। 'जातमात्रेण वीरेण येनोच्चैःश्रवसा यथा ॥ ह्रेषिता कम्पिता भूमिर्लोकाश्च सकलास्त्रयः ।', (७. १९६, ३०-३१)। 'उच्चैःश्रवा वरोऽश्वानां', (८. ८, २४)। 'उच्चैश्रवा हयश्रेष्ठः', (९. ४५, १६)। 'उच्चैःश्रवसमप्यश्वं प्रापणीयं सतां विदुः', (१२. २३४, १५)। 'अभितो वर्तमानस्य यथोच्चैःश्रवस्तथा', (१४. ८७, १८)। तु० की० अश्वराज।

२. उच्चैःश्रवस्, अविक्षित के छठवें पुत्र का नाम है (१. ९४, ५३)।

उच्छिख, तक्षककुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है जो जनमेजय के सर्पसत्र में भस्म हो गया था (१. ५७, ९)।

उच्छ्रृङ्ग, विन्ध्य द्वारा स्कन्द को प्रदान किये गये एक पार्षद का नाम है (९. ४५, ४९)।

उञ्छवृत्ति : 'शिलोञ्छवृत्तिः', (३. २६०, ३)। 'उञ्छवृत्तिव्रते सिद्धः', (१२. ३६३, १)। 'उञ्छवृत्तेर्वदान्यस्य कुरुक्षेत्रनिवासिनः', (१४. ९०, ७)।

उञ्छवृत्त्युपाख्यानम्—"भीष्म ने कहा कि महर्षि नारद वायु के समान निर्बाध रूप से समस्त लोकों में भ्रमण करते रहते हैं। एक समय जब वे देवराज इन्द्र के यहाँ पधारे तब इन्द्र ने उनसे पूछा कि उन्होंने कोई आश्चर्यजनक घटना देखी है, अथवा नहीं। उस समय नारद ने इस कथा का वर्णन किया (१२. ३५२)।" "गङ्गा के दक्षिण तट पर महापद्म नामक नगर में एक सोमवंशी ब्राह्मण निवास करता था। वह एकाग्रचित्त और सौम्य-स्वभाव का मनुष्य था। अनेक पुत्रों को उत्पन्न करने के पश्चात् लौकिक कार्य से विरक्त होकर उसने तीन प्रकार के धर्मों—वेदोक्त, शास्त्रोक्त तथा शिष्टाचीर्ण—पर मन ही मन विचार करना आरम्भ किया। किसी भी निर्णय पर न पहुँच सकने के कारण जब वह एक दिन अत्यन्त खिन्न हो गया था तब उसके यहाँ एक परम धर्मात्मा ब्राह्मण अतिथि के रूप में आये (१२. ३५३)।" "ब्राह्मण ने अतिथि से पूछा : 'मैं गृहस्थधर्म को अपने पुत्रों के अधीन करके सर्वश्रेष्ठ धर्म का पालन करना चाहता हूँ। अतः आप बतायें कि मेरे लिये कौन सा मार्ग श्रेयस्कर है। भिक्षा-वृत्ति पर आधारित संन्यास धर्म में मेरी आस्था नहीं रह गई है।' अतिथि ने कहा : 'मेरा भी ऐसा ही मनोरथ है। मैं भी आपकी ही भाँति श्रेष्ठधर्म का आश्रय लेना चाहता हूँ, परन्तु स्वर्ग के अनेक द्वार (साधन) होने के कारण किसका आश्रय लिया जाय यह निश्चय नहीं कर पा रहा हूँ।' (१२. ३५४)।" "अतिथि ने कहा : 'मेरे गुरु ने इस विषय में जो तात्त्विक बातें बताई हैं उन्हीं का मैं तुमको उपदेश करूँगा। पूर्व कल्प में जहाँ प्रजापति ने धर्मचक्र प्रवर्तित किया था, सम्पूर्ण देवताओं ने जहाँ यज्ञ किया था, तथा जहाँ राजाओं में श्रेष्ठ मान्धाता यज्ञ करने में इन्द्र से भी आगे बढ़ गये थे उसी नैमिषारण्य में गोमती के तट पर नागपुर नामक एक नगर है। उसी नगर में पद्म नामक महानाग निवास करता है। यह पद्म नामक नाग मन, वाणी और क्रिया द्वारा कर्म, उपासना और ज्ञान के तीन मार्गों का आश्रय

लेकर सम्पूर्ण भूतों को प्रसन्न रखता है। तुम उसी के पास जाकर विधिपूर्वक अपना मनोवाञ्छित प्रश्न पूछो।' (१२. ३५५)।" "ब्राह्मण अतिथि की बात सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ और रात भर अतिथि के साथ मोक्षधर्म के सम्बन्ध में वार्त्तालाप करता रहा। दूसरे दिन अतिथि को विदा करके पद्म नामक नाग के आवास की ओर चल दिया। (१२. ३५६)।" "मार्ग में उसे एक मुनि ने नाग के घर का पता बताया। जब वह नाग के घर पर पहुँचा तब नागराज की परम सुन्दरी पतिव्रता पत्नी ने उसका स्वागत किया। नागपत्नी ने उसे बताया कि नागराज उस समय सूर्य का रथ ढोने के लिये गये हैं। प्रतिवर्ष उन्हें एक मास तक यह कार्य करना पड़ता है। उसने बताया कि नाग के लौटने में अब कुछ दिन ही शेष रह गये हैं। नागपत्नी की बात सुनकर उस श्रेष्ठ ब्राह्मण ने इस अवधि को गोमती के तट पर रहकर व्यतीत करने का निश्चय किया। (१२. ३५७)।" "वह ब्राह्मण गोमती के तट पर रहता हुआ निराहार तपस्या करने लगा। उसके भोजन न करने से वहाँ रहने वाले नागों को अत्यन्त दुःख हुआ। तदनन्तर नागराज के बन्धु-बान्धवों और स्त्री-पुत्रों आदि ने मिलकर उस ब्राह्मण से भोजन ग्रहण करने का आग्रह किया। वह उसकी तपस्या का छठा दिन था और उसने यह प्रण किया था कि वह आठ दिन तक निराहार रहेगा; उसके बाद भी यदि नागराज न आये तो वह अपना व्रत भङ्ग कर देगा। ब्राह्मण का वचन सुनकर वे सब नाग अपने घर लौट गये। (१२. ३५८)।" "नागराज के वापस लौटने पर उनकी पत्नी ने ब्राह्मण के आगमन के सम्बन्ध में उन्हें सूचना दी। (१२. ३५९)।" "पत्नी की बात सुनकर नागराज ने पूछा : 'वे ब्राह्मण कोई मनुष्य हैं या देवता ?' नागपत्नी ने कहा : 'अत्यन्त क्रोधी स्वभाव वाले वायुभोजी नागराज! उन ब्राह्मण की सरलता से तो मैं यही समझती हूँ कि वे देवता नहीं हैं। आप अपने सहज रोष का परित्याग करके उन ब्राह्मण देवता का दर्शन कीजिये।' नाग ने कहा : 'मुझ में अहंकार के कारण अभिमान नहीं है, अपितु जाति दोष के कारण महान् रोष भरा हुआ है। तुमने मेरे उस रोष को वाणी रूपी अग्नि से जलाकर भस्म कर दिया है। रोष से बढ़कर मोह में डालने वाला मैं कोई दूसरा दोष नहीं देखता। इन्द्र से भी टक्कर लेनेवाला ब्राह्मण रोष के अधीन होकर ही श्रीराम के हाथ से मारा गया; कार्त्तवीर्य अर्जुन भी रोष के कारण ही परशुराम के द्वारा मारे गये। अतः मैं अपने क्रोध पर नियन्त्रण करके उन ब्राह्मण देवता का दर्शन करने जाता हूँ।' (१२. ३६०)।" "ब्राह्मण के पास जाकर नागराज ने उनकी तपस्या का कारण पूछा। ब्राह्मण ने बताया कि उसका नाम धर्मारण्य है और वह नागराज पद्म का दर्शन करने के लिये तपस्या कर रहा है। ब्राह्मण ने कहा : 'मैंने पद्म के स्वजनों से सुना है कि वे यहाँ से दूर गये हैं, अतः मैं इसलिये वेदों का पारायण कर रहा हूँ कि वे क्लेशरहित और सकुशल घर लौट आयें।' पद्म के यह बताने पर कि वही नागराज हैं, ब्राह्मण ने कहा : 'मैं विषयों से निवृत्त हो अपने आप में ही स्थित रहकर जीवात्माओं की परमगति स्वरूप परमब्रह्म परमात्मा की खोज कर रहा हूँ, परन्तु महान् बुद्धि युक्त गृह में आसक्त हुये इस चंचल चित्त की ही उपासना करता हूँ। इस समय मेरे मन में जो प्रश्न उठ रहे हैं आप उनका समाधान करें।' (१२. ३६१)।" "ब्राह्मण ने नागराज से पूछा : 'आप सूर्य के एक पहिये के रथ को खींचने के लिये जहाँ प्रतिवर्ष जाते हैं वहाँ आपने किसी आश्चर्यजनक वस्तु को देखा है या नहीं।' नागराज ने उन समस्त आश्चर्यों का वर्णन किया जिनके स्रोत सूर्य हैं। किन्तु उन्होंने बताया कि सर्वाधिक आश्चर्य की जो बात उन्होंने देखी थी वह यह थी कि पूर्वकाल में मध्याह्न के समय द्वितीय सूर्य के समान एक अत्यन्त तेजस्वी पुरुष आकाश को चीरता हुआ आकर सूर्य में समा गया। (१२. ३६२)।" "नागराज ने कहा कि उस व्यक्ति के सम्बन्ध में पूछने पर सूर्य ने बताया कि वे तेजस्वी व्यक्ति उञ्छवृत्ति से जीवन निर्वाह के व्रत का पालन करने से सिद्धि को प्राप्त हुये एक मुनि थे जो दिव्य धाम में आ पहुँचे हैं। सूर्य ने बताया : 'उन दिव्य ब्राह्मण ने संहिता के मंत्रों द्वारा भगवान् शंकर का स्तवन किया था और उञ्छवृत्ति से प्राप्त अन्न को ही ग्रहण करते थे, इसीलिये उन्होंने उस गति को प्राप्त किया जो देवता, गन्धर्व, असुर और नाग भी प्राप्त नहीं कर सकते।' सूर्य के कथन का उल्लेख करते हुये नागराज ने बताया कि उञ्छवृत्ति से सिद्ध हुआ वह व्यक्ति अपनी इच्छानुसार सिद्ध-गति को प्राप्त हुआ और सूर्य के साथ रहकर समस्त पृथिवी की परिक्रमा करता रहता है। (१२. ३६३)।" "नागराज की बात सुनकर ब्राह्मण उञ्छव्रत का पालन करने का निश्चय करके वहाँ से विदा हुआ। (१२. ३६४)।" "नागराज से विदा लेकर उस ब्राह्मण ने च्यवन मुनि से उञ्छवृत्ति की दीक्षा ली। च्यवन ने राजा जनक के दरबार में महात्मा नारद से इस पवित्र कथा का वर्णन किया था। नारद ने इन्द्र से और तत्पश्चात् पूर्वकाल में समस्त श्रेष्ठ ब्राह्मणों से भी इस शुभ कथा का वर्णन किया था। भीष्म ने बताया कि परशुराम के साथ युद्ध करने के समय वसुओं ने उनसे इस कथा का वर्णन किया था। उन्होंने यह भी बताया कि नागराज के उपदेश के अनुसार अपने कर्त्तव्य को समझकर वह ब्राह्मण दूसरे वन में जाकर उञ्छशिलवृत्ति से प्राप्त हुये परिमित अन्न का भोजन करता हुआ यम-नियम का पालन करने लगा। (१२. ३६५)।"

उज्जयन, विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ४, ५८)।

उज्जयन्त, सौराष्ट्र (काठियावाड़) के पिण्डारक क्षेत्र के अन्तर्गत एक महान् सिद्धिदायक पर्वत का नाम है (३. ८८, २१)।

उज्जानक, एक तीर्थ का नाम है : 'एष उज्जानको नाम पावकिर्यत्र शान्तवान्। अरुन्धतीसहायश्च वसिष्ठो भगवानृषिः॥', (३. १३०, १७)। उज्जानक तीर्थ में स्नान करके और आर्ष्टिषेण के आश्रम तथा पिङ्ग के आश्रम में स्नान करने से मनुष्य सभी पापों से मुक्त हो जाता है (१३. २५, ५५)।

उज्जालक, मरुप्रदेश में स्थित एक समुद्र का नाम है : 'ममाश्रमसमीपे वै समेषु मरुधन्वसु। समुद्रो वालुकापूर्ण उज्जालक इति स्मृतः॥', (३. २०२, १६)। समुद्रे 'वालुकापूर्णे उज्जालक इति स्मृते', (३. २०४, ७)।

उडुप (ताराओं के अधिपति) = सोम : 'अपश्यद्वदनं तस्य रश्मिवन्तमिवोडुपम्', (३, १४६, ८०)।

उडुपति = सोम (९. ३५, ६२; ५१, १)।

उडुराज् = सोम। 'नक्षत्राणामिवोडुराट्' (२. ३६, १७)। 'शुक्लपक्ष इवोडुराट्' (५. ३४, ५५)। 'यत्रोडुराड्यक्ष्मणा क्लिश्यमानः', (९. ३५, ४१)। 'घनैर्मुक्त इवोडुराट्', (१२. ५२, १८)। 'बालचन्द्रमिव', (१३. १४, २५२)। 'पौर्णमास्यमिवोडुराट्', (१४. ६४, ३)।

उड्र, दक्षिण भारत के एक जनपद का नाम है जिसे सहदेव ने विजित किया था (२. ३१, ७१)। उड्रनिवासी युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भेंट लेकर उपस्थित हुये थे (३. ५१, २२)। तु० की० ओड्र।

उड्रराज (उड्रों के अधिपति), युधिष्ठिर की सेवा में उपस्थित हुए थे (२. ४, २४)।

उढर, देखिये उड्र।

उतङ्क, देखिये उत्तङ्क।

उतथ्य, एक ऋषि का नाम है जो अङ्गिरस् के द्वितीय पुत्र थे। (१. ६६, ५)। यह ममता के पति (१. १०४, ९), बृहस्पति के ज्येष्ठ भ्राता (१. १०४, १०) और दीर्घतमस् के पिता थे : जब दीर्घतमस् गर्भ में थे तब बृहस्पति ने ममता का सतीत्व भ्रष्ट किया था (१. १०४, २५)। एक अङ्गिरा के रूप में इनका उल्लेख है (१२. ९०, १-३; ९१, १. ५९; ३४१, ४९-५०; १३. ८५, १३०)। "वायु ने कहा : 'सोम ने अपनी पुत्री भद्रा को अङ्गिरस् वंशी उतथ्य को देने का निश्चय किया था। भद्रा को इसके लिए कठिन तपस्या करनी पड़ी थी। तदुपरान्त सोम के पिता अत्रि ने उतथ्य को आमन्त्रित करके भद्रा को उन्हें सौंप दिया। परन्तु पूर्वकाल

से ही वरुण इस बालिका पर आसक्त थे, अतः उन्होंने एक दिन जब वह यमुना में स्नान कर रही थी, उसका अपहरण कर लिया। अपहृत करके वरुण उसे अपने अद्भुत नगर में लाये जो ६,००,००० सरोवरों तथा अनेक भवनों और अप्सराओं इत्यादि से सुशोभित था। नारद से यह समाचार पाकर उतथ्य ने उनसे (नारद से) वरुण को अपनी पत्नी लौटा देने का सन्देश भेजा। वरुण के अस्वीकृत कर देने पर नारद ने उतथ्य को बताया 'वरुण ने मेरा गला पकड़ कर मुझे अपने भवन से बाहर निकाल दिया।' इस पर क्रुद्ध होकर उतथ्य ने जलों को रोक कर उनका पान कर लिया, पृथिवी को ६,००,००० सरोवरों को शुष्क करने के लिए विवश किया, सरस्वती को अदृश्य कर दिया और वरुणलोक को अपवित्र हो जाने का शाप दिया।' तब भयभीत होकर वरुण ने भद्रा को लौटा दिया जिससे प्रसन्न होकर उतथ्य ने लोकों और वरुण को कष्टमुक्त कर दिया। 'अतः तुम किसी ऐसे क्षत्रिय का नाम बताओ जो उतथ्य से श्रेष्ठ हो।' (१३. १५४, ९–१२. १६. १७. २०. २१. २५. २९. ३०. ३२)। तु० की० ५. अङ्गिरस् और २. अङ्गिरस।

उतथ्यपुत्र = दीर्घतमस् (१. १०४, २१)।

उत्कल, भारतवर्ष के एक जनपद का नाम है। 'मेकलाश्चोत्कलैः सह', (६. ९, ४१)। कर्ण ने दुर्योधन के लिए इस जनपद को विजित किया था (७. ४. ८)। 'मेकलोत्कलकालिङ्गाः', (८. २२, २१)।

उत्कोचक, एक प्राचीन तीर्थ का नाम है, जहाँ धौम्य का आश्रम था (१. १८३. २)। 'उत्कोचकं तीर्थम्', (१. १८३, ६)।

उत्क्राथिनी, स्कन्द की अनुचरी एक मातृका का नाम है (९. ४६, १६)।

उत्क्रोश, इन्द्र द्वारा प्रदत्त स्कन्द के एक पार्षद का नाम है (९. ४५, ३५)।

उत्तङ्क, एक ऋषि का नाम है (१. २, ८९) "एक समय की बात है—ब्रह्मवेत्ता आचार्य वेद ने यजमान के कार्य से बाहर जाने के लिये उद्यत हो अपने उत्तङ्क नामक शिष्य को अग्निहोत्र आदि के कार्य में नियुक्त करते हुए कहा : 'मेरे घर में मेरे बिना जिस किसी वस्तु की कमी हो जाय उसकी तुम पूर्ति कर देना।' आचार्य के बाहर चले जाने पर उत्तङ्क सेवा-परायण के रूप में गुरु-गृह में रहने लगे। एक दिन गुरु-पत्नी के आग्रह पर भी उन्होंने उसके साथ संसर्ग करना अस्वीकृत कर दिया। कुछ समय के पश्चात् जब आचार्य वेद अपने घर लौट आये तो उन्हें उत्तङ्क का वृत्तान्त मालूम हुआ जिससे वे अत्यन्त प्रसन्न हुये। वेद ने उत्तङ्क को अपने घर लौट जाने की आज्ञा दी, परन्तु गुरु-दक्षिणा दिये बिना उत्तङ्क घर नहीं लौटना चाहते। उन्होंने गुरु से पूछा : 'मैं कौन सी वस्तु गुरु दक्षिणा में अर्पित करूँ।' गुरु ने कहा : 'तुम मेरी पत्नी से पूछो और जो वह बतायें वही वस्तु उन्हें भेंट कर दो।' गुरुपत्नी से पूछने पर उसने बताया कि वह राजा पौष्य की क्षत्राणी पत्नी के कुण्डलों को ही स्वीकार करेंगी। गुरुपत्नी की आज्ञा पाकर कुण्डल प्राप्त करने के लिये उत्तङ्क वहाँ से चल दिये। मार्ग में उन्होंने एक अत्यन्त विशालकाय बैल (ऐरावत) और उस पर बैठे एक विशालकाय पुरुष (इन्द्र) को देखा। उस पुरुष की आज्ञा से उत्तङ्क ने उस बैल का गोबर तथा मूत्र ग्रहण किया, क्योंकि उनके आचार्य भी पूर्वकाल में उसे खा चुके थे। पौष्य के भवन में आकर जब उत्तङ्क ने राजा की आज्ञा से क्षत्राणी का दर्शन करना चाहा तब वह उन्हें दिखाई नहीं पड़ी, क्योंकि गोबर और मूत्र ग्रहण करने के पश्चात् उन्होंने अपने को भली प्रकार स्वच्छ नहीं किया था। पौष्य ने जब उनको इस त्रुटि का स्मरण दिलाया तब उन्होंने सविधि आचमन आदि करने के पश्चात् पुनः अन्तःपुर में प्रवेश किया। इस बार उन्हें क्षत्राणी के दर्शन हुये और उससे उसके दोनों कुण्डल माँगकर उत्तङ्क गुरुगृह की ओर चले। मार्ग में नागराज तक्षक ने एक भिक्षुक के रूप में उत्तङ्क के कुण्डलों को चुरा लिया और उन्हें लेकर नागलोक चला गया। तब इन्द्र ने अपने वज्र से पृथिवी में एक छिद्र बनाया, जिससे होकर उत्तङ्क नागलोक तक पहुँचने में समर्थ हो सके। नागलोक में उत्तङ्क ने नागों की स्तुति की परन्तु जब वे उन दोनों कुण्डलों को प्राप्त न कर सके तो उन्हें वहाँ दो स्त्रियाँ दिखाई दीं जो सुन्दर करघे पर सूत के ताने में वस्त्र बुन रही थीं। उस ताने में उत्तङ्क मुनि ने काले और सफेद दो प्रकार के सूत और बारह अरों का एक चक्र भी देखा जिसे छः कुमार घुमा रहे थे। वहीं उन्होंने एक श्रेष्ठ पुरुष को भी देखा जो एक दर्शनीय अश्व पर बैठा था। उत्तङ्क ने उस पुरुष की स्तुति की जिससे प्रसन्न होकर उसने उत्तङ्क से कहा : 'इस अश्व की गुदा में फूँक मारो।' तदनुसार आचरण करने पर उस अश्व के समस्त छिद्रों से अग्नि की लपटें निकल कर नागलोक को भस्म करने लगीं। तब तक्षक ने उत्तङ्क को वह कुण्डल दे दिए और उसी अश्व पर बैठकर उत्तङ्क अपने गुरु के घर आये। उनके गुरु ने उन सब बातों की व्याख्या की जो उन्होंने अपनी यात्रा में देखी थी। तदुपरान्त उत्तङ्क ने हस्तिनापुर में आकर जनमेजय से कहा : 'नागराज तक्षक ने आपके पिता की हत्या की है, अतः आप उस दुरात्मा से प्रतिशोध लीजिये। उसने आपके पिता को तो डसा ही साथ ही उस काश्यप नामक ब्राह्मण को भी लौटा दिया जो आपके पिता का उपचार करने के लिये आ रहे थे।' इस प्रकार उत्तङ्क ने राजा जनमेजय को सर्पयज्ञ करने के लिये प्रेरित किया (१. ३, ८३–८५. ८९. ९२–९४. ९६. ९८–१०२. १०७–१०९. ११३. ११५–११७. १२४. १२६–१२८. १३०. १३३. १४३. १५३. १५४, १५६–१६१. १७०. १७१. १७४. १७८. १८६–१८८)।" एक ऋषि के रूप में इनका उल्लेख (१. ५०, ३१. ५४; ३. २०१; ११. १२. १४. २४. २५)। इन्होंने भगवान् विष्णु को सन्तुष्ट करके उनसे वर प्राप्त किया (३. २०१, २७)। एक महर्षि के रूप में इनका उल्लेख (३. २०२, ९–११)। उन्होंने बृहदश्व से धुन्धु का वध करने का निवेदन किया परन्तु बृहदश्व ने इन्हें कुवलाश्व के पास भेज दिया (३. २०३, १. ५)। इनके आश्रम के निकट धुन्धु के आवास का उल्लेख है (३. २०४, ८. १०)। जब कुवलाश्व धुन्धु का वध करने चला तब उत्तङ्क भी उसके साथ हो लिये (३. २०४, ११. १३. ३८)। "जब श्रीकृष्ण ने हस्तिनापुर से द्वारका लौटते समय मरुभूमि में प्रवेश किया तो उन्हें मुनिश्रेष्ठ उत्तङ्क का दर्शन हुआ। उत्तङ्क ने श्रीकृष्ण से पूछा कि क्या वे कौरवों और पाण्डवों के घर जाकर उनमें परस्पर भ्रातृभाव स्थापित कर आये या नहीं। श्रीकृष्ण ने मुनि को बताया कि कौरवों और पाण्डवों में सन्धि नहीं हो सकी और समस्त कौरव गण बन्धु-बान्धवों सहित युद्ध में मारे गये। श्रीकृष्ण की बात सुनकर उत्तङ्क मुनि अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे और कृष्ण को शाप देना चाहा। कृष्ण ने उत्तङ्क से कहा : 'मैं नहीं चाहता कि आप की तपस्या नष्ट हो। आपका तप और तेज बहुत बढ़ा हुआ है और बाल्यावस्था से ही आपने ब्रह्मचर्य का पालन किया है, अतः आप मुझे शाप देकर अपनी तपस्या नष्ट न करें और मैं जो कुछ कहता हूँ उसे विस्तारपूर्वक सुनें।' (१४. ५३, ७. ९. १९. २०)।" "उत्तङ्क ने श्रीकृष्ण से अध्यात्म तत्त्व का वर्णन करने के लिये कहा जिसके उत्तर में श्रीकृष्ण ने अपने को सृष्टि और प्रलय का कारण बताया। श्रीकृष्ण ने कहा : 'दैत्य, यक्ष, गन्धर्व, राक्षस, नाग और अप्सरायें मुझ से ही उत्पन्न हुये हैं; सत्-असत्, व्यक्त-अव्यक्त, क्षर-अक्षर सब मेरे ही स्वरूप हैं; चारों आश्रमों के चार धर्म और वेदोक्त कर्म मेरे ही रूप हैं; सम्पूर्ण प्राणियों पर दया रूपी जो धर्म है वह मेरा परम प्रिय ज्येष्ठ पुत्र है और मेरे मन से उसका प्रादुर्भाव हुआ है; मैं ही ब्रह्मा, विष्णु और इन्द्र हूँ; मैं जिस योनि में जन्म लेता हूँ उसमें धर्म और मर्यादा की स्थापना करता हूँ।' (१४. ५४)।" "उत्तङ्क ने श्रीकृष्ण से अपना चिरन्तन विश्वरूप दिखाने का अनुरोध करते हुये उनकी स्तुति की। श्रीकृष्ण ने प्रसन्न होकर उत्तङ्क को अपने वैष्णव स्वरूप का दर्शन कराया और तदुपरान्त उन्हें यह वर दिया कि उन्हें जब जल की इच्छा होगी वे श्रीकृष्ण का नाम स्मरण करते ही उसे प्राप्त कर लेंगे। तत्पश्चात् एक दिन उत्तङ्क मुनि को

अत्यन्त प्यास लगी और वे जल की इच्छा से उस मरुभूमि में चारों ओर घूमने लगे। घूमते-घूमते उन्होंने भगवान् श्रीकृष्ण का स्मरण किया। इतने ही में मुनि को मरुप्रदेश में कुत्तों के झुण्ड से घिरा हुआ एक नग्न चाण्डाल दिखाई पड़ा जिसके शरीर में मैल और कीचड़ जमा हुआ था। वह चाण्डाल अत्यन्त भयंकर था। उसने कमर में तलवार और हाथों में धनुष-बाण धारण कर रक्खा था। उसके नीचे पैरों के समीप एक छिद्र से प्रचुर जल की धारा गिर रही थी जिसे पीने के लिये उसने मुनि को आमन्त्रित किया। मुनि ने उस जल को अस्वीकृत करते हुये श्रीकृष्ण पर भी आक्षेप किया। इतने में वह चाण्डाल कुत्तों सहित वहाँ से अन्तर्धान हो गया। उसी समय श्रीकृष्ण ने वहाँ उपस्थित होकर उत्तङ्क को बताया कि उन्होंने इन्द्र को आज्ञा दी कि वे उत्तङ्क को अमृत पिलायें। परन्तु उन्होंने बताया कि इन्द्र चाण्डाल का रूप धारण करके ही उत्तङ्क को अमृत प्रदान करेंगे। तदुपरान्त श्रीकृष्ण ने उत्तङ्क को वरदान देते हुये कहा: 'आपको जब जल पीने की इच्छा होगी तब मरुप्रदेश में जल से भरे हुये मेघ प्रगट होकर आपको सरस जल प्रदान करेंगे। पृथिवी पर इस प्रकार के मेघ उत्तङ्कमेघ के नाम से प्रसिद्ध होंगे।' (१४.५५, १. ७. १०. १३–१५. १८. २२. २४. २६. २८. ३७)।" "महात्मा उत्तङ्क की तपस्या के सम्बन्ध में जनमेजय के प्रश्न करने पर वैशम्पायन ने कहा: 'उत्तङ्क मुनि अत्यन्त तेजस्वी और गुरुभक्त थे। उनके गुरु महर्षि गौतम ने अपने सहस्रों शिष्यों को विद्याध्ययन समाप्त करने के पश्चात् अपने-अपने घर जाने की आज्ञा दे दी, परन्तु उत्तङ्क पर अधिक प्रेम होने के कारण वे उन्हें घर जाने की आज्ञा देना नहीं चाहते थे। क्रमशः उत्तङ्क गुरुगृह में ही वृद्धावस्था को प्राप्त हो चले, परन्तु यह नहीं जान सके कि उनकी वृद्धावस्था आ गई है। एक दिन वन से लकड़ियों का भारी बोझ लेकर उत्तङ्क जब लौटे तो वे अत्यन्त श्रान्त हो गये। आश्रम में आकर जब वे उस बोझ को भूमि पर गिराने लगे तब चाँदी के समान उनकी श्वेत जटा भी लकड़ी में लिपट कर भूमि पर गिर पड़ी। अपनी उस अवस्था को देखकर उत्तङ्क अत्यन्त आर्तस्वर से रोने लगे। तब गुरु की पुत्री अपने पिता की आज्ञा पाकर विनम्रभाव से वहाँ आई और उसने मुनि के आँसुओं को अपने हाथों में ग्रहण कर लिया। परन्तु अश्रुबिन्दुओं से उसके दोनों हाथ जल गये जिससे उसने उन्हें पृथिवी पर गिरा दिया, किन्तु पृथिवी भी उन अश्रुबिन्दुओं को धारण करने में असमर्थ हो गई। गौतम के पूछने पर उत्तङ्क ने अपनी स्थिति का वर्णन किया। गौतम ने उन्हें अपने घर जाने की अनुमति दे दी। उत्तङ्क के गुरु दक्षिणा देने का आग्रह करने पर गौतम ने कहा कि वे उनकी सेवा तथा गुरुभक्ति के अत्यन्त आभारी हैं। फिर भी, गौतम ने कहा यदि उत्तङ्क सोलह वर्ष के युवक हो सकें तो वे उनके साथ अपनी पुत्री का विवाह कर देंगे। उत्तङ्क ने पुनः युवा बन कर गौतम पुत्री को पत्नी के रूप में ग्रहण किया। तत्पश्चात् गुरु की आज्ञा पाकर गुरु-पत्नी से पूछा कि उन्हें क्या गुरुदक्षिणा दें। गुरु-पत्नी अहल्या ने कहा: 'मैं तुम्हारी भक्ति से संतुष्ट हूँ। फिर भी यदि तुम राजा सौदास की रानी के दो दिव्यकुण्डल लाकर मुझे दो तो उससे तुम्हारी दक्षिणा पूर्ण हो जायगी।' गुरु-पत्नी की आज्ञा स्वीकार करके उत्तङ्क नरभक्षी राक्षस भाव को प्राप्त हुये राजा सौदास से उन कुण्डलों की याचना करने के लिये वहाँ से शीघ्रतापूर्वक प्रस्तुत हुये। उनके चले जाने पर गौतम को जब यह पता लगा तो उन्होंने अपनी पत्नी से कहा: 'तुमने यह अच्छा नहीं किया। राजा सौदास शापवश राक्षस हो गये हैं, अतः वे उस ब्राह्मण को अवश्य मार डालेंगे।' अहल्या ने यह बताते हुये कि उसने अनजान में ही उत्तङ्क को ऐसी आज्ञा दी, गौतम से उनकी रक्षा करने का निवेदन किया। उधर उत्तङ्क निर्जन वन में जाकर राजा सौदास से मिले। (१४.५६, १. २. ४. ६. ८. १४. १५. २०. २८. ३१. ३२. ३५)।" "वैशम्पायन ने बताया कि राजा सौदास राक्षस होकर अत्यन्त भयंकर दिखाई देते थे। उनकी मूँछ और दाढ़ी अत्यन्त बढ़ी हुई थी तथा मनुष्य के रक्त से रँगे हुये वे साक्षात् यम प्रतीत हो रहे थे। उत्तङ्क को देखकर सौदास ने कहा: 'बड़े सौभाग्य की बात है कि दिन के छठे भाग में आप स्वयं ही मेरे पास चले आये हैं, क्योंकि मैं इस समय आहार ही ढूँढ़ रहा हूँ।' उत्तङ्क ने कहा कि जो व्यक्ति गुरु-दक्षिणा एकत्र करने के लिये उद्योगशील हो उसकी हिंसा नहीं करनी चाहिये। अन्त में राजा सौदास इस बात पर सहमत हो गये कि गुरु-दक्षिणा के रूप में कुण्डलों को गुरु-पत्नी के पास पहुँचाकर उत्तङ्क पुनः उनके पास लौट आयेंगे। तदुपरान्त सौदास ने उत्तङ्क को अपनी रानी मदयन्ती के पास भेजा जो वन में किसी निर्झर के पास विद्यमान थीं। उन्होंने यह भी बताया कि दिन के छठे भाग में, जब वे आहार की खोज में होते हैं, अपनी महारानी से नहीं मिलते। राजा की आज्ञा से उत्तङ्क ने महारानी मदयन्ती के पास जाकर कुण्डलों की याचना की। मदयन्ती ने कहा: 'आपको महाराज के पास से चिह्न स्वरूप कोई प्रमाण लाना चाहिये क्योंकि ये मेरे दोनों कुण्डल दिव्य हैं और देवता, यक्ष और महर्षि इसे प्राप्त करने की इच्छा करते हैं। साथ ही यदि इन कुण्डलों को पृथिवी पर रख दिया जाय तो नाग इन्हें हड़प लेंगे। अपवित्र अवस्था में धारण कर लेने पर इन्हें यक्ष उड़ा ले जायेंगे, और यदि इन्हें पहन कर नींद लेने लग जाँय तो देवतागण बलात् छीन लेंगे। अतः जो देवता, राक्षस और नागों की ओर से सतर्क रहता है वही इन्हें धारण कर सकता है। ये दोनों कुण्डल रात-दिन सोना टपकाते रहते हैं और रात के समय ये नक्षत्रों की प्रभा को भी छीन लेते हैं। इन्हें धारण कर लेने पर भूख, प्यास, विष, अग्नि और हिंसक जन्तुओं का भी भय नहीं रहता। छोटे मनुष्य इन कुण्डलों को पहन लेने पर छोटे हो जाते हैं बड़े डील डौल वाले मनुष्य बहुत बड़े हो जाते हैं। अतः आप महाराज की आज्ञा से ही इन्हें लेने आये हैं इसका प्रमाण प्रस्तुत कीजिये।' (१४.५७, ४. ६. १२. १४. १५. १७. १९. २०)।" "उत्तङ्क रानी की बात सुनकर सौदास के पास लौट आये। तब सौदास ने उन्हें एक चिह्न दिया जिसे लेकर उन्होंने कुण्डल प्राप्त किये। तदुपरान्त उत्तङ्क ने एक बार पुनः सौदास के पास आकर पूछा: 'राजन्! आपके उन गूढ़ वचनों का क्या अभिप्राय था जिन्हें आपने मुझे चिह्न स्वरूप रानी से कहने की आज्ञा दी थी।' उत्तङ्क की बात सुनकर सौदास ने कहा: 'मैं ब्राह्मणों को प्रणाम किया करता था किन्तु एक ब्राह्मण के शाप से ही मेरी यह दुर्गति हुई है। मैं मदयन्ती के साथ यहाँ रहता हूँ परन्तु मुझे इस दुर्गन्ति से मुक्ति पाने का कोई उपाय दिखाई नहीं देता। कोई भी राजा ब्राह्मण का विरोध करके न इस लोक में सुखी रह सकता है और न परलोक में। यही मेरे गूढ़ संदेश का तात्पर्य है।' उत्तङ्क ने राजा से कहा: 'आज यहाँ मेरा मनोरथ सफल हो गया और आप नरभक्षी राक्षस हैं, अतः ऐसी दशा में आपके पास मेरा पुनः लौटकर आना उचित है अथवा नहीं?' सौदास ने कहा कि यदि उचित बात ही कहनी हो तो वे यह कहेंगे कि उत्तङ्क को पुनः लौटकर नहीं आना चाहिये। कुण्डल लेकर उत्तङ्क जब गौतम के आश्रम की ओर बढ़ रहे थे तो उन्हें अत्यन्त जोर से भूख लगी। अतः उन्होंने उस काले मृगचर्म को जिसमें कुण्डल बँधे थे एक वृक्ष की शाख पर लटका दिया और स्वयं एक बेल के पेड़ पर चढ़ कर बेल तोड़-तोड़ कर गिराने लगे। एक बेल के आघात से वह मृगचर्म भूमि पर गिर पड़ा जिससे उसकी गाँठ खुल गई और ऐरावत वंशी एक नाग उन कुण्डलों को मुँह में लेकर एक बाँबी में घुस गया। सर्प द्वारा कुण्डलों का अपहरण होता देख उत्तङ्क वृक्ष से कूद पड़े और लकड़ी का डण्डा हाथ में लेकर उस बाँबी को पैंतीस दिनों तक खोदते रहे। उत्तङ्क नागलोक में जाने का मार्ग बनाने के लिये निश्चय करके धरती को खोदते जा रहे थे कि वहाँ ब्राह्मण के वेश में इन्द्र उपस्थित हुये जो उत्तङ्क के दुःख से दुःखी थे। उन्होंने बताया कि नागलोक वहाँ से सहस्रों योजन दूर

है, परन्तु उत्तङ्क इससे विचलित नहीं हुये। तब इन्द्र ने उत्तङ्क के डण्डे के अग्रभाग में अपने वज्र का संयोग कर दिया जिसके प्रहार से विदीर्ण होकर पृथिवी ने नागलोक का मार्ग प्रगट कर दिया। उस मार्ग से नागलोक में पहुँच कर उत्तङ्क ने वहाँ की विशालता देखी और उससे अत्यन्त हतोत्साहित हो गये। उसी समय उनके समक्ष एक अश्व प्रकट हुआ जिसकी पूँछ काली और सफेद, तथा मुख और नेत्र का रंग लाल था। उस अश्व ने उत्तङ्क से कहा: 'विप्रवर! तुम मेरे इस अपानमार्ग में फूँक मारो। इस कार्य से तुम घृणा न करो क्योंकि गौतम के आश्रम में रहते तुमने यह कार्य किया था।' वह अश्व अग्नि थे, अतः उत्तङ्क ने उनकी आज्ञा का पालन किया जिसके परिणाम स्वरूप समस्त नागलोक गहनधूम से व्याप्त हो गया। त्रस्त होकर नागराज वासुकि सहित नागों ने उत्तङ्क को कुण्डल दे दिया, जिसे लाकर उन्होंने अहल्या को समर्पित किया। (१४. ५८, ३. १०. १२. ३१. ३३. ४०. ४४. ४७. ५६. ६०; ५९, १. २)। तु० की० **भार्गव, भृगूद्वह, भृगुकुलोद्वह, भृगुनन्दन**।

१. उत्तम, एक राजा का नाम है (२. ४४, २०)।

२. उत्तम (बहु०), एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ४१)।

उत्तमपूरुष, परमात्मा के लिये प्रयुक्त हुआ है (१२. २१६, ८)।

उत्तमौजस् एक पञ्चाल राजा का नाम है जो युधामन्यु का भ्राता था (५. ५७, ३२): 'उत्तमौजा युधामन्युः', (५. १४१, २५)। 'गौतमायोत्तमौजसम्', (५. १६४, ६)। 'उत्तमौजास्तथा राजन् रथोदारो', (५. १७०, ५)। 'युधामन्यूत्तमौजसौ', (५. १९४, १८; १९६, ३. १७)। अर्जुन के रथ के दाहिने पहिये की रक्षा करते हैं (६. १९, १९; १९, २०)। 'उत्तमौजाश्च वीर्यवान्', (६. २५, ६)। अर्जुन के रथ के दाहिने चक्र की रक्षा करते हैं (६. ९८, ४७)। 'उत्तमौजसमाहवे', (७. १०, ४०)। 'उत्तमौजाश्त्रिभिर्बाणैः', (७. २१, ५०)। 'विंशत्या चोत्तमौजसाम्', (७. २१, ५५)। उत्तमौजा के द्रोण के विरुद्ध युद्ध करने के लिये बढते हुये इनके अश्वों का वर्णन (७. २३, ८)। अङ्गद के साथ इनका युद्ध (७. २५, ३८)। 'उत्तमौजाश्च दुर्धर्ष', (७. ३५, ४)। 'पाञ्चाल्यं चोत्तमौजसम्', (७. ८३, ६; ८५, ३९)। 'चक्ररक्षौ पाञ्चाल्यौ युधामन्यूत्तमौजसौ', (७. ९१, ३६)। 'चतुर्भिश्चोत्तमौजसम्', (७. ९२, २९)। 'उत्तमौजास्त्रिभिस्तथा', (७. ९२, ३०)। 'चक्ररक्षौ तु पाञ्चाल्यौ युधामन्यूत्तमौजसौ', (७. १३०, २६)। 'उत्तमौजा संक्रुद्धः', (७. १३०, ३५)। 'पाञ्चास्यस्योत्तमौजसः', (७. १३०, ३६)। युधामन्यु के भ्राता (७. १३०, ३७)। दुर्योधन द्वारा इनका पराजित होना (७. १३०, ४१)। 'उत्तमौजा युधामन्युः', (७. १३७, १५; १४६, १३७)। 'चक्ररक्षावपि तदा युधामन्यूत्तमौजसौ', (७. १४७, ४९)। 'षड्भिरुत्तमौजसमाहवे', (७. १५६, ३७)। 'युधामन्यूत्तमौजसौ', (७. १७७, ३४; १७९, ५)। अन्य योद्धाओं के साथ अनेक शूरवीरों का वध करके ये कौरवों द्वारा मारे गये (८. ६, २४)। 'चक्ररक्षौ तु पाञ्चाल्यौ युधामन्यूत्तमौजसौ', (८. ११, ३१)। 'उत्तमौजा युयुत्सुश्च', (८. ३०, २७)। कृतवर्मा ने इन पर आक्रमण किया (८. ६१, १४)। इन्होंने कृतवर्मा को अपने बाणों से आच्छादित कर दिया (८. ६१, ५७)। कृतवर्मा द्वारा इनकी पराजय का उल्लेख (८. ६१, ५९)। 'पृष्ठरक्षौ च शूरस्य युधामन्यूत्तमौजसौ', (८. ६३, २४; ६७, १८)। इन्होंने सुषेण के साथ युद्ध किया (८. ७५, ९)। इनके द्वारा सुषेण का वध (८. ७५, १३)। 'युधामन्यूत्तमौजसमेव च', (८. ७९, ३६)। 'उत्तमौजा जनमेजयश्च', (८. ८२, १६)। 'शरैः षड्भिरथोत्तमौजसम्', (८. ८२, ८३)। 'उत्तमौजा युधामन्युः', (९. १, ३१; ३०, ५३)। अश्वत्थामा द्वारा इनका वध (१०. ८, ३५)। अन्य राजाओं के साथ इनका दाह (११. २६, ३४)। 'भ्रातरौ च महात्मानौ युधामन्यूत्तमौजसौ', (१८. २, १)। तु० की० **पाञ्चाल्य, सृञ्जय**।

१. उत्तर (इन्हें भूमिञ्जय भी कहते हैं) विराट के पुत्र का नाम है। ये द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुये थे (१. १८६, ८)। 'उत्तर उवाच', (४. ३६, १)। 'उत्तरं ब्रूहि कल्याणि', (४. ३६, १२)। 'उत्तर उवाच', (४. ३६, २०; ३७, २२)। 'स्वमेवोत्तरस्ततः', (४. ३७, २५)। 'उत्तरोऽयं संग्रामे विजेष्यति', (४. ३७, ३१)। 'उत्तरं वीक्ष्य रथोत्तमे स्थितम्', (४. ३७, ३३)। सहोत्तरेणाथ तदस्तु मङ्गलम्', (४. ३७, ३४)। 'उत्तर उवाच', (४. ३८, १०. २६)। 'उत्तर: सारथिं कृत्वा', (४. ३८, ३७)। 'व्यवसितुं किंचिदुत्तरम्', (४. ३८, ३९)। 'उत्तरं तु प्रधावन्तमभिद्रुत्य धनञ्जय', (४. ३८, ४०)। 'उत्तर उवाच', (४. ३८, ४२)। 'समाश्वास्य मुहूर्तं तमुत्तरं भरतर्षभ', (४. ३८, ५०)। 'शमीमभिमुखं यान्तं रथमारोप्य चोत्तरम्', (४. ३९, १)। क्षिप्रं धनूंष्यवहरोत्तर', ४. ४०, २)। 'उत्तर उवाच', (४. ४१, १; ४२, १; ४४, १. ७. १०)। 'अहं भूमिञ्जयो नाम नाम्नाऽहमपि चोत्तरः', (४. ४४, २३)। 'उत्तर उवाच', (४. ४५, १)। 'अर्जुनस्य वचः श्रुत्वा त्वरावानुत्तरस्तदा', (४. ४५, ५)। 'उत्तर उवाच', (४. ४५, १०. १६. ३३)। 'उत्तरं सारथिं कृत्वा', (४. ४६, १)। 'प्रणिधाय शमीमूले प्रायादुत्तरसारथिः', (४. ४६, २) उत्तरश्चापि संत्रस्तः', (४. ४६, ९)। 'उत्तरं च परिष्वज्य समाश्वासयदर्जुनः', (४. ४६, १०)। 'उत्तर उवाच', (४. ४६, १४)। 'उत्तरश्चापि संलीनः', (४. ४६, २२)। 'उत्तरं मार्गमाणानाम्', (४. ४७, ८)। 'दिव्ययोगाच्च पार्थस्य हयानामुत्तरस्य च', (४. ५५, ६)। 'रथे तिष्ठन्तमुत्तर', (४. ५५, ४१) 'अर्जुनः जयतां श्रेष्ठ उत्तरं वाक्यमब्रवीत् (४. ५८, २)। क्षिप्रमुत्तर वाहय', (४. ५८, ९)। 'उत्तरश्च महारथः', (४. ६०, २७)। 'अब्रवीदुत्तरः पार्थम्', (४. ६१, ३)। 'अर्जुनः रथिनां श्रेष्ठ उत्तरं वाक्यमब्रवीत्', (४. ६१, १६)। 'दुःशासनस्तु भल्लेन विद्ध्वा वैराटिमुत्तरम्', (४. ६१, ३८)। 'उत्तर उवाच', (४. ६७, ११)। 'जग्राह रश्मीन् पुनरुत्तरस्य', (४. ६७, १५)। 'अथोत्तरस्त्वरमाणः स दूतानाज्ञापयद्वचनात् फाल्गुनस्य', (४. ६७, २१)। 'उत्तरं परिपप्रच्छ', (४. ६८, ६)। 'उत्तरस्य परीप्सार्थम्', (४. ६८, ११)। 'अथोत्तरेण प्रहिता दूताः', (४. ६८, १७)। 'उपयान्तं तथोत्तरम्', (४. ६८, १८)। 'उत्तरः सह सूतेन कुशली', (४. ६८, १९)। 'अथोत्तरः शुभैर्गन्धैर्माल्यैश्च', (४. ६८, ५०)। बृहन्नलासहायश्च पुत्रो द्वार्युत्तरः स्थितः', (४. ६८, ५२)। 'उत्तरः प्रविशत्येको न प्रवेश्य बृहन्नला', (४. ६८, ५४)। 'पप्रच्छ पितरं त्वरमाण इवोत्तरः', (४. ६८, ५९)। 'उत्तर उवाच', (४. ६८, ६१)। 'कौरव्यं रणादुत्तरमागतम्', (४. ६८, ६७)। 'उत्तर उवाच', (४. ६९, १. १४)। जब कुरुगण विराट के पशुओं को लेकर भाग रहे थे तब अज्ञातवासी अर्जुन को अपना सारथि बनाकर उत्तर ने उनपर आक्रमण किया। अर्जुन ने यह बताते हुये कि वह कौन हैं सारथि के स्थान पर उत्तर को बैठाकर कुरुओं को पराजित कर दिया (४. ६९, १८)। 'पार्थान् दर्शयामास चोत्तरः', (४. ७१, १२)। 'उत्तर उवाच', (४. ७१, १३. १९)। 'उत्तरं प्रत्युवाच', (४. ७१, २२)। 'उत्तर उवाच', (४. ७१, २४)। 'यदा विराटः परवीरघाती ममत्तरे शत्रुचमूं प्रवेष्टा', (५. ४८, ३७ पर नीलकण्ठी देखिये)। 'विराटः सह पुत्राभ्यां शंखेनैवोत्तरेण च', (५. ५७, ६)। 'वैराटिरुत्तरः', (५. ५७, ३२; १७१, १)। 'वीरबाहुश्च ते पुत्रो वैराटि रथसत्तमम्। उत्तरं योधयामास विव्याध निशितैः शरैः ॥', (६. ४५, ७७)। 'उत्तरश्चापि तं वीरं विव्याध निशितैः शरैः', (६. ४५, ७८)। 'अभ्यद्रवत राजानं मद्राधिपतिमुत्तरः', (६. ४७, ३५)। 'उत्तरं वै हतं दृष्ट्वा वैराटिर्भ्रातरं तदा', (६. ४७, ४३)। 'विराटपुत्रः शङ्खस्तु उत्तरश्च महारथः', (८. ६, ३७)। 'उत्तरं चाभिमन्युं च', (११. २०, ३४)। 'शङ्खश्चैवोत्तरस्तथा', (१८. ५, १)। उन व्यक्तियों में से एक जो मृत्यु के पश्चात् देवत्व को प्राप्त हुये थे (१८. ५, १७)। तु० की० **भूमिञ्जय, कैकेयीनन्दिवर्धन, मत्स्य, मात्स्य, मत्स्यपुत्र, मत्स्यवीर, पृथिवीञ्जय, वैराटि, विराटपुत्र**।

२. उत्तर, उन राजाओं में से एक का नाम है जिनका अपने से श्रेष्ठों का अनादर करने के कारण विनाश हो गया था (२. २२, २४)।

३. उत्तर = विष्णु (सहस्रनामों में से एक)।

४. उत्तर = उपनिषद : 'वेदः सखिलः सोत्तरो द्विजः', (१२. ३१८, १०)।

५. उत्तर, उत्तर भारत के एक जनपद का नाम है (६. ९, ६५)।

उत्तर कोशल, भीमसेन द्वारा विजित एक भारतीय देश का नाम है (२. ३०, ३)।

उत्तरज्योतिष, नकुल द्वारा विजित पश्चिम दिशा के एक नगर का नाम है (२. ३२, ११)।

उत्तरण = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

उत्तरपाञ्चाल, एक जनपद का नाम है, जहाँ पृषत् की मृत्यु के बाद द्रुपद को राजा बनाया गया था (१. १३०, ४३)। कुछ समय के पश्चात् उत्तरपाञ्चाल एवं उसकी राजधानी अहिच्छत्रा पर द्रोण का अधिकार हो गया। यह प्रदेश गङ्गा के तट पर स्थित था (१. १३८, ७०-७६)।

उत्तरपारियात्र, उस पर्वत का नाम है जहाँ अर्जुन के लिये शुभाशंसा की गई थी (३. ३१३, ८)।

उत्तरमानस, एक पवित्र सरोवर का नाम है। 'महासरः पुष्कराणि प्रभासोत्तरमानसे', (१२. १५२, १२. २८)। यहाँ की यात्रा करने पर भ्रूण हत्यारा भी पाप से मुक्त हो जाता है (१३. २५, ६०)।

उत्तर-ययात्युपाख्यान(म्), देखिये **ययाति**।

१. उत्तरा, विराट की पुत्री, अभिमन्यु की पत्नी और परिक्षित् की माता का नाम है (१. १, १७१; २, २१४)। इसने परिक्षित् को जन्म दिया (१. ४९, १४)। 'विराट की पुत्री और अभिमन्यु की पत्नी (१. ९५, ३८; ४. ११, ८)। बृहन्नला (अर्जुन) को उत्तर का सारथि बनने के लिये सहमत करती है (४. ३७, २३. २८; ६६, १२; ६८, २६)। कौरवों के वस्त्र प्राप्त करती है (४. ६९, १६)। अभिमन्यु के साथ इसका विवाह हुआ (४. ७१, २३. ३४; ७२, ७. ३२)। 'उत्तरायै ददौ वस्त्रम्', (६. ९८, १२)। अभिमन्यु की मृत्यु पर श्रीकृष्ण ने इसे सान्त्वना दी (७. ७८, ४३)। देखिये ११. २०, ३०; १४. ६१, २८. ३६; ६२, ११; ६६, ५. १८. २२; ६७, ३; ६९, १. ५. १८; ७०, ६. ९; १५. १५, १०; २५, १५। तु० की० **वैराटी, विराटदुहितृ, विराटतनया, अभिमन्योर्भार्या**।

२. उत्तरा, उत्तर दिशा के लिये प्रयुक्त हुआ है (५. १११, १. २७)।

उत्तराग्नि, एक अग्नि का नाम है (३. २२१, २९)।

उत्तरापथ (उत्तर दिशा) : १२. २०७; ४३। बहु० में उत्तर दिशा के निवासियों के लिये प्रयुक्त हुआ है (६. १५, १७)।

उत्तरा : अषाढ़ाः, देखिये **आषाढ़**।

उत्तराः कुरवः, उत्तर कुरु नामक एक जाति का नाम है (१. १०९, १०)। इस जाति में स्त्रियों को लैङ्गिक स्वतंत्रता थी (१. १२२, ७)। उत्तर की यात्रा करते समय अर्जुन इनकी सीमा पर आये थे (२. २८, ११)। 'उत्तरेभ्यः कुरुभ्यश्चाप्यपोढं माल्यमम्बुभिः', (२. ५२, ६)। 'तेऽवतीर्य बहून्देशानुत्तरांश्च कुरूनपि', (३. १४५, १७)। 'उत्तराः कुरवस्तेन गच्छन्त्यत्र यथासुखम्', (३. २३१, ९८)। अर्जुन ने इन्हें पराजित किया (५. २२, १२)। "नीलगिरि के दक्षिण तथा मेरुपर्वत के उत्तर भाग में उत्तर कुरुवर्ष है जहाँ सिद्ध पुरुष निवास करते हैं। वहाँ के वृक्ष सदा पुष्प और स्वादिष्ट फल से सम्पन्न रहते हैं। वहाँ के कुछ वृक्ष ऐसे हैं जो मनोवांछित फल प्रदान करते हैं; कुछ क्षीरी नामक वृक्ष हैं जो सदा अमृत के समान स्वादिष्ट दूध बहाते रहते हैं और उनके फलों में भी इच्छानुसार वस्त्र और आभूषण प्रगट होते हैं। वहाँ के बालू के कण सुवर्णमय और भूमि मणिमय है। वहाँ की समस्त ऋतुयें सुखदायक होती हैं और भूमि पर कहीं भी कीचड़ का नाम नहीं होता। वहाँ देवलोक से भूतल पर आये हुये पुण्यात्मा ही जन्म ग्रहण करते हैं। ये सभी उत्तम कुल से सम्पन्न और देखने में अत्यन्त प्रिय होते हैं। वहाँ स्त्री-पुरुषों के जोड़े भी उत्पन्न होते हैं। वहाँ की स्त्रियाँ अप्सराओं के समान सुन्दर होती हैं और सभी लोग निरोग तथा प्रसन्नचित्त रहते हुये ११,००० वर्षों तक जीवित रहते हैं। वहाँ भारुण्ड नामक महाबली पक्षी होते हैं जिनकी चोंच अत्यन्त तीक्ष्ण होती है। ये पक्षी वहाँ के मृत निवासियों का शव उठाकर ले जाते हैं और उन्हें कन्दराओं में फेंक देते हैं। जम्बू के फलों का जो रस नदी के जलों के रूप में परिणत हो जाता है वह मेरुगिरि की प्रदक्षिणा करता हुआ उत्तर कुरुवर्ष में पहुँचता है (६. ६, ११; ७, २. १३. २४)।" मृतयोद्धा-गण इसी क्षेत्र को प्राप्त होते हैं (११. २६, १७)। 'उत्तरान्वा कुरून्पुण्यानथवाऽप्यमरावतीम्', (१३. ५४, १६)। 'लोकाः कुरुषूत्तरेषु', (१३. ५७, ३३)। "गौतम ने कहा : 'जहाँ रमणीय आकृति वाले उत्तर कुरु के निवासी अपूर्व शोभा पाते हुये देवताओं के साथ रहकर-आनन्द का भोग करते हैं; अग्नि, जल और पर्वत से उत्पन्न हुये दिव्य मानव जिस देश में निवास करते हैं; जहाँ इन्द्र सम्पूर्ण कामनाओं की वर्षा करते हैं और जहाँ की स्त्रियाँ इच्छानुसार विचरण करने वाली होती हैं; जहाँ स्त्रियों और पुरुषों में ईर्ष्या का सर्वथा अभाव है वहाँ जाकर मैं तुमसे अपना हाथी वापस लूँगा।' धृतराष्ट्र ने कहा : 'महर्षे! जो समस्त प्राणियों में निष्काम हैं, जो मांसाहार नहीं करते, जो किसी भी प्राणी को दण्ड नहीं देते, स्थावर-जङ्गम प्राणियों की हिंसा नहीं करते, जिनके लिये समस्त प्राणी अपने आत्मा के ही तुल्य हैं, जो कामना, ममता और आसक्ति से रहित हैं, लाभ, हानि, निन्दा तथा प्रशंसा में जो सदैव समभाव रखते हैं, ऐसे लोगों के लिये ही यह उत्तर कुरु नामक लोक है; परन्तु धृतराष्ट्र को वहाँ भी नहीं जाना है।' (१३. १०२, २५-२८)।" 'अदृश्यन्निव तदा कुरूत्वै दक्षिणोत्तरान्', (१४. ७०, २१)। 'उत्तरेभ्यः कुरुभ्यश्च यत्किंचिद्वसु विद्यते', (१४. ९२, २६)। 'केचिच्चाप्युत्तरान्कुरून्', (१५. ३३, १६)।

उत्तराः फल्गुन्यः, देखिये **फल्गुनी**।

उत्तराः प्रोष्ठपदाः, देखिये **प्रोष्ठपदा**।

१. उत्तराण = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

२. उत्तराण = शिव (१४. ८, १५)।

उत्तेजनी, स्कन्द की अनुचरी एक मातृका का नाम है (९. ४६, ६)।

उत्थानः सर्वकर्मणाम् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

उत्थित = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

उत्पलावन, पूर्व में पाञ्चाल देश में स्थित इस स्थान पर विश्वामित्र ने एक यज्ञ किया था (३. ८७, १५)। यहाँ स्नान करने के फल का वर्णन है (१३. २५, ३४)।

उत्पलिनी, एक नदी का नाम है जहाँ तीर्थ यात्रा करते समय अर्जुन आये थे (१. २१५, ६)।

उत्पातक, एक तीर्थ का नाम है, जहाँ स्नान करने, पितरों को पिण्डदान करने, और बारह दिनों तक उपवास करने से अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है (१३. २५, ४१)।

उत्सङ्ग = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

१. उत्सवसङ्केत (बहु०), एक जाति के लोगों का नाम है जिन्हें अर्जुन ने पराजित किया था (२. २७, १६)। नकुल ने इन्हें पराजित किया (२. ३२, ९)। तु० की० **ध्वजिन्युत्सवसङ्केत**।

२. उत्सवसङ्केत, दक्षिण दिशा के एक जनपद का नाम है (६. ९, ६१)।

उदकक्रीडन, एक स्थान नाम है (१. १२८, ३३)।

उदकपति = वरुण (५. ९८, १०)।

उदग्र = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

उदधि = समुद्र (५. ११७, १०)।

उदपान, एक अथवा एकाधिक तीर्थों का नाम है (३·८४, ११०)। "श्रीकृष्ण के ज्येष्ठ भ्राता बलराम ने उदपान तीर्थ के लिये प्रस्थान किया, जो मङ्गलकारी आदि-तीर्थ है। उदपान वह तीर्थ है। जहाँ उपस्थित होने मात्र से महान फल की प्राप्ति होती है। सिद्ध पुरुष वहाँ औषधियों की स्निग्धता और भूमि की आर्द्रता को देखकर अदृश्य हुई सरस्वती को भी जान लेते हैं (९. ३५, ८९·९०)।" "बलराम जी सरस्वती नदी के जल में स्थित त्रित मुनि के उदपान तीर्थ में गये। इसी स्थान पर महातपस्वी त्रित मुनि ने उस कूप में ही रहकर जिसमें उनके दो भाई उन्हें छोड़कर चले गये थे, सोमपान किया था। त्रित ने अपने दोनों भ्राताओं को शाप दिया था। जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन ने इस कथा का वर्णन किया: 'पूर्वयुग में तीन सहोदर भ्राता थे जो तीनों ही मुनि थे। इनके नाम एकत, द्वित और त्रित थे। ये सभी महर्षि सूर्य के समान तेजस्वी, प्रजापति के समान सन्तानवान् और ब्रह्मवादी थे। इन लोगों ने तपस्या द्वारा ब्रह्मलोक पर विजय प्राप्त कर ली थी। इनकी तपस्या और त्याग से संतुष्ट रहकर दीर्घकाल के पश्चात् इनके पिता गौतम स्वर्गलोक चले गये। गौतम के यजमान जो राजा थे वे सब उनके स्वर्गवासी हो जाने पर उनके पुत्रों का ही आदर सत्कार करने लगे। एक बार यज्ञ करने के विचार से इन तीन महर्षियों ने अपने यजमानों से पशु आदि प्राप्त कर लेने के पश्चात् पूर्व दिशा की ओर प्रस्थान किया। त्रित मुनि आगे-आगे चल रहे थे और एकत तथा द्वित पीछे रहकर पशुओं को हाँकते जाते थे। पशुओं को देखकर एकत और द्वित के मन में यह विचार उठा कि त्रित को छोड़कर वे दोनों ही पशुओं को प्राप्त कर लें। रात्रि के समय जब तीनों भ्राता मार्ग में चले जा रहे थे तो उन्हें एक भेड़िया दिखाई दिया। भेड़िये को देखकर भागते हुये त्रित सरस्वती के तट पर स्थित एक अगाध कूप में गिर पड़े। त्रित के आर्तनाद को सुनकर भी उनके दोनों भ्राता उन्हें वहीं छोड़ कर चले गये। उस कूप में अपने को गिरा देख मृत्यु से भयभीत और सोमपान से वंचित त्रित ने कूप में जल की भावना करके उसी में संकल्प द्वारा अग्नि की स्थापना की और होता आदि के स्थान पर अपने को ही प्रतिष्ठित किया। तत्पश्चात् उन्होंने ऋक्, यजुस् और साम मंत्रों का पाठ करते हुये यज्ञ किया। वेदमंत्रों के उस तुमुल नाद को सुनकर बृहस्पति ने देवताओं से त्रित के पास जाने के लिये कहा, अन्यथा क्रुद्ध होकर त्रित दूसरे देवताओं की सृष्टि कर लेंगे। त्रित ने यथोचित मंत्रों के साथ देवों का भाग उन्हें समर्पित किया। देवताओं ने त्रित को वरदान दिया। त्रित ने यह वरदान मांगा: 'मुझे आप लोग इस कूप से बचायें, तथा जो मनुष्य इसमें आचमन करे उसे यज्ञ में सोमपान करने वालों की गति प्राप्त हो।' त्रित के इतना कहते ही कूप में तरङ्ग-मालाओं से सुशोभित सरस्वती लहरा उठीं और अपने जल के वेग से मुनि को ऊपर उठा दिया जिससे वे बाहर निकल आये। तदुपरान्त त्रित ने देवताओं का पूजन किया। घर लौटकर त्रित ने अपने दोनों भ्राताओं को कठोर वाणी में शाप दिया देते हुये कहा: 'तुम दोनों महाभयंकर भेड़ियों का शरीर धारण करके इधर-उधर भटकते फिरोगे और तुम्हारी सन्तानों के रूप में गोलाङ्गूल, रीछ और बानर आदि पशुओं की उत्पत्ति होगी।' (९.३६. १.५.२९.५४)।"

उदय उस पर्वत का नाम है जहाँ सूर्योदय होता है (६.६९, १८; ८४, १६; ८.१२, २२; ६०, ४०; ९.१६, ३२; २०, ४०; १२.४५, १५) तु० की० उदयाचल, उदयगिरि।

उदयगिरि = उदय (१२.२९३, ४)।

उदयाचल = उदय (७.१८४, ४७)।

उदयेन्दु, कुरुओं के एक नगर का नाम है जहाँ श्रुतसोम का जन्म हुआ था (७.२३, २९)।

उदरशाण्डिल्य, इन्द्र की सभा में उपस्थित एक ऋषि का नाम है (२.७, १३)।

उदराक्ष, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९.४५, ६३)।

१. उदान, प्राण-वायुओं में से एक का नाम है: 'उदानमिति तं प्राहुः', (३.२१३, ८)। 'समानोदानयोर्मध्ये प्राणापानौ समाहितौ', (३.२१३, १२)। 'उदानादुच्छ्वसिति', (१२.१८४, २५)। 'उदान इति तं प्राहुः', (१२.१८५, ७)। 'प्राणापानौ तथोदानौ समानं व्यानमेव च', (१२.२००, १७)। 'व्यानोदानौ समानश्च', (१२.२१३, १७)। देखिये: ३०१, २७; ३२८, ३३.३८; १४.२०, १४.१६; २१, २५; २३, २.५.९.१२.१५.२०; २४, २.७.१३–१५.१७; ४२, ८ भी।

२. उदान = शिव (सहस्रनामों में से एक)।

उदापेक्षिन्, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३.४, ५९)।

उदारधी = विष्णु (सहस्रनामों में से एक)।

उदीच्य (बहु०), एक जाति के लोगों का नाम है। 'प्राच्योदीच्या दाक्षिणात्याश्च शूराः', (५.३०, २४; १६०, १०३; १०३; १६१, २१)। 'प्राच्योदीच्याश्च', (५.१९५, ७)। 'प्रतीच्योदीच्यमालवाः', (६.१०६, ७; ११७; ३३; ११९, ८१; ७.७, १५)। 'उदीच्या दाक्षिणात्याश्च', (७. १११, २९)। 'उदीच्याः कृतवर्मा च', (७.१५६, १२१)। युद्धभूमि में अर्जुन द्वारा इनका वध (८.५, ४९; ४५, ३०)। 'हता उदीच्या निहताः प्रतीच्या', (८.७०, २०.३३; ९.१, २८)।

उदीर्ण = विष्णु (सहस्रनामों में से एक)।

उदुम्बर = विष्णु (सहस्रनामों में से एक)।

उद्दालक एक ऋषि का नाम है। = आरुणि पाञ्चाल्य, जिसके कारण इनका उद्दालक आरुणि नाम पड़ा (१.३, ३१)। इनके नाम का उल्लेख (१.८, २५)। जनमेजय के सर्प-सत्र के समय सदस्यों में से एक यह भी थे (१.५३, ७)। यह श्वेतकेतु के पिता थे (१.१२२, ९.२१)। शक्र की सभा में इनकी उपस्थिति का उल्लेख (२.७, १२)। उन मुनियों में से एक जो युधिष्ठिर की प्रतीक्षा कर रहे थे (३.८५, १२०)। इनके शिष्य कहोड ने इनकी पुत्री सुजाता के साथ विवाह किया था (३.१३२, ८.१६)। यह श्वेतकेतु के पिता थे (३. १३२, १७)। इनके यज्ञ के समय सरस्वती मनोरमा नदी के रूप में प्रगट हुई थी (९.३८, २४)। इन्होंने अपने एक शिष्य से श्वेतकेतु को उत्पन्न कराया (१२.३४, २२)। अपने पुत्र श्वेतकेतु को निर्वासित कर दिया (१२.५७, १०)।

उद्दालकि एक ऋषि का नाम है जो नचिकेता के पिता थे इन्होंने अपने पुत्र नचिकेता को यम के पास जाने के लिये कहा (१३.७१, २.३.७)।

उद्धव, एक ऋषि का नाम है। ये द्रौपदी के स्वयंवर में पधारे थे (१. १८६, १८)। रैवतक पर्वत के उत्सव में इनकी उपस्थिति का उल्लेख (१.२१९, ११)। ये सुभद्रा के लिये दहेज लेकर इन्द्रप्रस्थ गये थे (१.२२१, ३०)। 'उद्धवो वा महाबुद्धिर्वृष्णीनामर्चितो नृप', (२.५०, ११)। शाल्व के चढ़ाई करने पर इनके द्वारा द्वारका नगरी की रक्षा का उल्लेख (३.१५, ९)। 'सहाक्रूरप्रभृतिभिर्गदसाम्बोद्धवादिभिः', (५.१५७, १७)। वृष्णि-वंशियों से विदा लेकर उद्धव जी अपने तेज से पृथिवी आकाश को व्याप्त करते हुये प्रभास क्षेत्र से अन्यत्र चले गये। वृष्णिकुल के भावी विनाश को जानने वाले भगवान् श्रीकृष्ण ने उन्हें वहाँ नहीं रोका (१६.३, ११–१३)।

१. उद्भव, एक राजा का नाम है जिन्हें पाण्डवों की ओर से रण-निमन्त्रण भेजा गया था (५.४, २३)।

२. उद्भव = विष्णु (सहस्र नामो में से एक)।

उन्नस, एक जाति के लोगों का नाम है। नकुल और सहदेव इन्हें साथ लेकर धृष्टद्युम्न द्वारा निर्मित क्रौञ्चव्यूह की बाईं पाँख के स्थान में खड़े हुये थे (६.५०, ५३)।

उद्भिजाः = शिव (सहस्रनामों में से एक)।

उद्भिद् = शिव (सहस्रनामों में से एक)।

उद्यत्, एक पर्वत का नाम है (३.८४, ९३)।

उद्योग = उद्योगपर्वन्। 'अरणीपर्वरूपाढ्यो विराटोद्योगसारवान्', (१. १, ८९)। 'उद्योगः सैन्यनिर्याणम्', (१. २, ६३)। ६. ९८, ३७; १८. ६, ६१। तु० की० ६. ४३, ८६।

उद्योगपर्वन्, महाभारत के पाँचवें अवान्तरपर्व का नाम है। १. २, ५९ = सैन्योद्योगपर्वन्। १. २, २१७, २४२।

उद्रपारक, धृतराष्ट्र नाग के कुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हो गया था (१. ५७, १७)।

१. उद्वह, क्रोधवश संज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न एक क्षत्रिय राजा का नाम है (१. ६७, ६४)।

२. उद्वह, एक वायु का नाम है। जो सोम आदि ग्रहों का उदय करता है, मनीषी पुरुष शरीर के भीतर जिसे उदान कहते हैं, और जो चारों समुद्रों से जल को ऊपर उठाकर जीमूत नामक मेघों में स्थापित करता है तथा जीमूत नामक मेघों को जल से संयुक्त करके उन्हें पर्जन्य के हवाले कर देता है, वह महान् वायु उद्वह कहलाता है (१२. ३२८, ३८-४०)।

उन्मत्तवेशप्रच्छन्न = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

उन्माथ, यमराज द्वारा स्कन्द को प्रदान किये गये दो पार्षदों में से एक का नाम है (९. ४५, ३०)।

१. उन्माद, पार्वती द्वारा स्कन्द को दिये गये पार्षदों में से एक का नाम है (९. ४५, ५१)।

२. उन्माद = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

उन्मादन = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

उन्मादःसर्वभूतानां = कृष्ण (१२. ४७, ५१)।

उन्मुच, दक्षिण दिशा में रहने वाले एक ब्रह्मर्षि का नाम है (१२. २०८, २८) तु० की० उन्मुचु।

उन्मुचु, धर्मराज के सात ऋत्विजों में से प्रथम का नाम है (१३. १५०, ३४)।

उन्मेश = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

उपकार = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

उपकीचक (बहु०), कीचक के सेवकों के लिये प्रयुक्त हुआ है (= कीचक, (बहु०)) : ४. २३ ३३।

उपकृष्णक, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ५७)।

उपचय = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

उपगहन, विश्वामित्र के पुत्र का नाम है (१३. ४, ५६)।

उपचित्र, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९५; ११७, ४)। भीमसेन द्वारा इसका वध (७. १३६, २२)।

उपजला, एक नदी का नाम है। इसके तट पर यज्ञ करके उशीनर ने इन्द्र से भी ऊँचा स्थान प्राप्त किया था (३. १३०, ३१)।

उपत्यक, पर्वत की तराई में स्थित एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ५५)।

उपदेशकर = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

१. उपनन्द, एक मृदङ्ग का नाम है : 'यस्य ध्वजाग्रे नदतो मृदङ्गौ नन्दोपनन्दौ', (३. २७०, ६)। तु० की० ३. उपनन्दक।

२. उपनन्द, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है जिसका भीमसेन ने वध किया था (८. ५१, १९)।

१. उपनन्दक, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९१; ११७, ५; ६. ५१, ८; ७९, २२; ८. ५१, ७)। तु० की० उपनन्द।

२. उपनन्दक, एक नाग का नाम है (५. १०३, १२)।

३. उपनन्दक, एक मृदङ्ग का नाम है : 'मृदङ्गौ चात्र विपुलौ दिव्यौ नन्दोपनन्दकौ', (७. २३, ८५)।

४. उपनन्दक, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६४)।

उपनिषद् : 'साङ्गोपनिषदां चैव वेदानां विस्तरक्रिया', (१. १, ६२)। 'मात्रोरभ्युपपत्तिश्च धर्मोपनिषदं प्रति', (१. १, ११४)। 'चतुरो वेदान्साङ्गोपनिषदः', (१. २, ३८२)। 'साङ्गोपनिषदान्वेदान्', (१. ६४, १९)। 'गृहस्थोपनिषत्पुराणी', (१. ९१, ३)। 'वेदोपनिषदां वेत्ता ऋषिः सुरगणार्चितः', (२. ५, २)। 'कृष्णाद्वैपायनात्तात गृहीतोपनिषन्मया', (३. ३७, १०)। 'साङ्गोपनिषदान्वेदांश्चतुराख्यानपञ्चमान्', (३. ४५, ८)। 'साङ्गोपनिषदान्वेदान्', (३. ९९, २६)। 'वेदाश्च सोपनिषदः', (३. ९९, ५९)। 'साङ्गोपनिषदः वेदान्', (३. २०६, ७)। 'वेदस्योपनिषत् सत्यं सत्यस्योपनिषद्दमः। दमस्योपनिषत् त्यागः शिष्टाचारेषु नित्यदा॥', (३. २०७, ६७)। 'अथर्ववेदप्रोक्तैश्च याश्चोपनिषदि क्रियाः', (३. २५१, २४)। 'वेदाः साङ्गोपनिषदः', (७. २०२, १०९)। 'रत्नानि निधयः सर्वे वेदाश्चाख्यानपञ्चमाः। सोपवेदोपनिषदः सरहस्याः ससंग्रहाः॥', (८. ८७, ४२)। 'निषत्सूपनिषत्सु', (१२. ४७, २६)। 'राजोपनिषदं ययातिः स्माह', (१२. ९३, १९)। 'न सामदण्डोपनिषत्प्रशस्यते', (१२. १०३, ४०)। 'वेदानखिलान् साङ्गोपनिषदः', (१२. २३१, ७)। 'चतुर्थश्चोपनिषदो धर्मः', (१२. २४४, १५)। 'वेदस्योपनिषत्सत्यं सत्यस्योपनिषद्दमः। दमस्योपनिषद्दानं दानस्योपनिषत्तपः॥ तपस्योपनिषत्त्यागस्त्यागस्योपनिषत्सुखम्। सुखस्योपनिषत्स्वर्गः स्वर्गस्योपनिषच्छमः॥', (१२. २५१, ११-१२)। 'चतुर्थो ह्युपनिषद्धर्मः', (१२. २७०, ३०)। 'वेदोपनिषदां गणैः', (१२. २८४, १२६)। 'वेदस्योपनिषत्सत्यं सत्यस्योपनिषद्दमः। दमस्योपनिषन्मोक्ष एतत्सर्वानुशासनम्॥', (१२. २९९, १३)। १२. ३१८, ३४। 'उपनिषदमुपाकरोत्', (१२. ३१८, ११२)। 'ननु नाम त्वया मोक्षः कृत्स्नः पञ्चशिखाच्छ्रुतः। सोपायः सोपनिषदः सोपासङ्गः सनिश्चयः।', (१२. ३२०, १६२-१६३)। 'साङ्गोपनिषदं शास्त्रम्', (१२. ३३५, ५४)। 'पुराणे सोपनिषदे', (१२. ३४१, ८)। 'सहोपनिषदान्वेदान्', (१२. ३४८, ५)। 'गवामुपनिषद्विद्वान्', (१३. ७८, ४)। 'वेदोपनिषदश्च', (१३.८४, ५)। 'वेदाश्च सोपनिषदः', (१३. ८५, ९२)। तु० की० महोपनिषद्।

१. उपप्लव, उत्पात (७. ११०, ६५)।

२. उपप्लव = शिव (सहस्रनामों में से एक)।

उपप्लव्य विराट राज्य के एक उपनगर का नाम है जो राजधानी के समीप स्थित था। 'उपप्लव्ये निविष्टेषु पाण्डवेषु जिगीषया', (१. २, २१८)। 'आगम्य हस्तिनापुरादुपप्लव्यम्', (१. २, २३७)। 'उपप्लव्यं विराटस्य', (४. ७२, १४)। 'उपप्लव्यं स गत्वा', (५. ८, २५)। 'पाण्डुपुत्रान् उपप्लव्ये', (५. २२, १)। 'उपप्लव्यं ययौ द्रष्टुं पाण्डवानमितौजसः', (५. २३, १)। 'उपप्लव्याद्यथागम्य', (५. ८४, १८)। 'उपप्लव्यादिह क्षत्तरुपायातो जनार्दनः', (५. ८६, १)। 'जग्मुरुपप्लव्ये शार्ङ्गधन्वानम्', (५. १३७, ३२)। 'उपप्लव्ये निविष्टोऽपि धर्ममेव युधिष्ठिरः', (५. १४४, ४)। 'आगम्य हस्तिनापुरादुपप्लव्यमरिन्दमः', (५. १४७, १)। 'उपप्लव्ये तु पाञ्चाली द्रौपदी', (५. १५१, ६०)। 'प्रतिज्ञातामुपप्लव्ये यत्तत्पार्थेन पूर्वतः', (६. १०७, ३५)। 'उपप्लव्याच्छान्तिमिच्छन् जनार्दनः', (७. ८५, २१)। 'उपप्लव्ये निविष्टेषु पाण्डवेषु महात्मसु', (९. ३५, ५)। 'आगच्छत महाबाहुरुपप्लव्यं जनाधिप', (९. ३५, ८)। 'उपायातमुपप्लव्यं सह गाण्डीवधन्वना', (९. ६२, २३)। 'उपप्लव्ये महर्षिमें कृष्णद्वैपायनोऽब्रवीत्', (९. ६२, ३१)। 'उपप्लव्यं गता सा तु श्रुत्वा महदप्रियम्', (१०. ११, ५)। 'उपप्लव्ये मया सार्धं दिष्टया त्वं न स्मरिष्यसि', (१०. ११, १२)। 'उपप्लव्यगतां दृष्ट्वा प्रतवान्ब्राह्मणोऽब्रवीत्', (१०. १६, २)। 'यदैवाकृतकामस्त्वमुपप्लव्यं गतः पुनः', (११. २५, ३४)। तु० की० उपप्लव।

१. उपमन्यु, आयोद धौम्य के शिष्य एक ब्राह्मण का नाम है (१.

३, २२)। "आयोद धौम्य ने अपने शिष्य उपमन्यु को गायों की रक्षा करने का आदेश दिया जिसका वह पालन करने लगा। उपमन्यु प्रतिदिन यह कार्य करते हुये सन्ध्या समय आकर गुरु को नमस्कार करता था। गुरु ने देखा कि वह काफी हृष्ट-पुष्ट हो गया था। गुरु के पूछने पर जब उसने बताया कि वह भिक्षा के द्वारा जीवन-निर्वाह कर रहा है। तब गुरु ने उससे कहा, 'मुझे अर्पण किये बिना ही तुम्हें भिक्षा का अन्न अपने उपयोग में नहीं लाना चाहिये।' उपमन्यु गुरु की आज्ञा का पालन करने लगा, परन्तु गुरु उसकी समस्त भिक्षा ले लेते थे और वह भिक्षा के बिना भी गायों की रक्षा करता हुआ हृष्ट-पुष्ट बना रहा। उपमन्यु ने बताया कि भिक्षा अर्पित करने के पश्चात् वह दोबारा भिक्षा लेकर अपनी जीविका चलाता है। गुरु ने उससे दूसरी बार भिक्षा लेने का भी निषेध कर दिया। इसी प्रकार गुरु ने क्रमशः गायों के दूध से जीविन-निर्वाह करने, बछड़ों द्वारा अपनी माताओं के स्तनों का दूध पीते समय उगले हुये फेन का पान करने का निषेध कर दिया। तदुपरान्त भूखे रहकर गायों की रक्षा करते हुये उपमन्यु ने एक दिन अर्क के पत्तों का भक्षण कर लिया जिससे उसकी आँख की ज्योति जाती रही और वह अन्धा होकर इधर-उधर भटकता हुआ एक कुयें में गिर पड़ा। उसे ढूँढ़ते हुये आकर जब गुरु ने उसकी दशा देखी तब उसे अश्विनी कुमारों की स्तुति करने का परामर्श दिया। अश्विनी कुमारों की स्तुति करने पर वे उपमन्यु के सम्मुख प्रगट हुये और उसे एक अपूप खाने के लिये दिया। उपमन्यु ने अपने गुरु को निवेदन किये बिना उस अपूप को खाना स्वीकार नहीं किया। अश्विनी कुमारों ने बताया कि उसके गुरु ने भी एक बार उनकी स्तुति करके वैसा ही अपूप प्राप्त किया था, परन्तु उसे अपने गुरु को निवेदन किये बिना ही खा लिया था। अश्विनी कुमारों के यह कहने पर भी उपमन्यु ने गुरू को निवेदन किये बिना अपूप खाना स्वीकार नहीं किया। उसकी गुरु-भक्ति से प्रसन्न होकर अश्विनी कुमारों ने कहा: 'तुम्हारे उपाध्याय के दाँत काले लोहे के समान हैं परन्तु तुम्हारे दाँत स्वर्णमय हो जायेंगे; तुम्हारे नेत्रों की ज्योति भी लौट आयेगी और तुम कल्याण के भागी होगे।' अश्विनी कुमारों से इस प्रकार वरदान पाकर उपमन्यु ने गुरु के सम्मुख आकर उन्हें नमस्कार किया। (१. ३, ३३. ३४. ३६. ४०. ४४. ४७. ५२. ५३. ५६. ७७)।"

२. उपमन्यु वैयाघ्रपद्य, एक ऋषि का नाम है (१३. १४, ४५)। श्रीकृष्ण इनके आश्रम पर आये थे और इन्होंने कृष्ण को शिव के सन्तुष्ट करने का परामर्श, और शिव के वरदान देने का वर्णन किया (१३. १४, ६५ और बाद)। "उपमन्यु ने कहा: 'सत्ययुग में एक महा यशस्वी ऋषि हो गये हैं जिनका नाम व्याघ्रपाद था। मैं उन्हीं का पुत्र हूँ और मेरे छोटे भाई का नाम धौम्य है। एक दिन धौम्य के साथ खेलते हुये मैं पवित्रात्मा मुनियों के आश्रम पर आया। वहाँ मैंने जीवन में सर्वप्रथम दुही जा रही एक गाय के दूध को देखा जो स्वाद में अमृत के समान होता है। घर लौट कर मैंने बाल-स्वभाववश अपनी माता से दूध-भात खाने के लिये माँगा परन्तु घर में दूध का अभाव होने के कारण मेरी माता को अत्यन्त दुःख हुआ। फिर भी, माता पानी में आटा घोल कर लाई और उसे ही दूध कहकर हम दोनों भाइयों को पीने के लिये दे दिया। मैं अमृत के समान स्वादिष्ट दूध के स्वाद को जान चुका था, अतः मैं समझ गया कि वह दूध नहीं है। माता से ऐसा कहने पर उसने मुझे हृदय से लगाकर कहा: 'जो सदा वन में रहकर कन्दमूल और फल खाकर निर्वाह करते हैं उन पवित्रात्मा मुनियों को क्षीरौदन कहाँ मिलेगा। जो बालखिल्यों द्वारा सेवित दिव्य गंगा नदी के आश्रय तथा पर्वतों और वनों में रहते हैं उन मुनियों को दूध कहाँ मिलेगा। यहाँ सुरभि गाय की कोई सन्तान नहीं है, अतः इस जंगल में दूध का सर्वथा अभाव है और हम ऋषि-मुनियों के भगवान् शंकर ही एक मात्र आश्रय हैं।' तदुपरान्त मेरी माता ने मुझे शंकर की आराधना करने का आदेश दिया। मेरे पूछने पर मेरी माता ने मनीषियों के वचनानुसार भगवान शिव के अनेक रूपों का वर्णन किया। माता का उपदेश सुनकर मैं तपस्या का आश्रय लेकर भगवान् शंकर को संतुष्ट करने का प्रयास करने लगा। एक सहस्र दिव्य वर्षों तक तपस्या करने के पश्चात् भगवान् शंकर शक्र के रूप में महान् गजराज ऐरावत पर बैठकर मेरे सम्मुख प्रगट हुये। उन शक्र (इन्द्र) रूपी शिव ने जब मुझसे वर माँगने के लिये कहा तब मैंने महादेव के अतिरिक्त अन्य किसी से वर लेना स्वीकार नहीं किया। इन्द्र के कारण पूछने पर मैंने उनसे बताया: 'ब्रह्मवादी महात्मा जिन्हें सत्-असत्, व्यक्त-अव्यक्त, नित्य, एक और अनेक कहते हैं मैं उन्हीं शिव से वर प्राप्त करूँगा, क्योंकि उनसे श्रेष्ठ कोई अन्य नहीं है। भूलोक से लेकर महर्लोकों तक समस्त लोक-लोकान्तरों में, पर्वत के मध्यभाग में, सम्पूर्ण द्वीप स्थानों में, तत्त्वदर्शी पुरुष महादेवजी को ही स्थित बताते हैं। देवता, यक्ष, नाग और राक्षस, इनमें जब संघर्ष होता है और परस्पर एक दूसरे से विनाश का अवसर उपस्थित होता है तो उन्हें अपने स्थान और ऐश्वर्य की प्राप्ति कराने वाले भगवान् शिव ही होते हैं। अन्धक आदि को वरदान देने और उनका विनाश करने में भगवान् महेश्वर को छोड़कर दूसरा कौन समर्थ है। भगवान् शंकर के लिङ्ग का ब्रह्मा आदि भी पूजन करते हैं और ब्रह्मा तथा पार्वती के लिङ्गों को ही धारण करते हैं। अतः मैं शंकर से ही वर अथवा मृत्यु प्राप्त करने की इच्छा रखता हूँ। मुझे महेश्वर से चाहे वर प्राप्त हो अथवा शाप मिले वह मुझ स्वीकार होगा परन्तु किसी अन्य देवता से सम्पूर्ण मनोवाञ्छित फल भी मिलें तो मैं उसे स्वीकार नहीं करूँगा।' जब मैंने अपने ये वचन समाप्त किये तब एक क्षण में ही वही ऐरावत हाथी वृषभ के रूप में प्रगट हो गया जिसके पीठ पर महादेव और उमा (शिव और उनके अस्त्रों, तथा पिनाक आदि का वर्णन है) विराजमान थे। शिव का पाशुपत अस्त्र अन्य अस्त्रों, जैसे ब्राह्म, नारायण, ऐन्द्र इत्यादि से भी श्रेष्ठ है। शंकर का त्रिशूल भी समस्त पृथिवी को विदीर्ण, सागर को सुखा और समस्त संसार का संहार कर सकता है। शंकर उस समय वह कुठार भी धारण किये हुये थे जिसे उन्होंने एक राम जामदग्न्य को दे दिया था। उस समय उनके चारों ओर ब्रह्मा आदि देवता खड़े हुये उनकी स्तुति कर रहे थे। मैंने भी उनकी स्तुति करके अर्घ्य समर्पित किया जिससे प्रसन्न होकर शिव ने मेरे समस्त मनोरथ पूर्ण होने का वरदान दिया। एक बार मैंने पुनः शिव की स्तुति करके उनसे यह वरदान माँगा कि मेरे मित्र और सम्बन्धी सदैव दूध के साथ भोजन प्राप्त करते रहें। शिव ने इसे स्वीकार करते हुये कहा कि एक कल्प व्यतीत होने के बाद मुझे भी शिव का सखत्व प्राप्त होगा। यह कह कर देवगण वहाँ से अन्तर्धान हो गये। (१३. १४, ६५. १९३. २८७. ३३५. ३३९. ३७१; १५, १०. ११; १६, १. ६७. ७२; १७, २)।" "उपमन्यु ने श्रीकृष्ण को उन मंत्रों का उपदेश दिया जिनसे उन्हें शिव का दर्शन प्राप्त करने में सफलता मिली। तदुपरान्त उपमन्यु ने श्रीकृष्ण को शिव के उन सहस्र नामों का उपदेश किया जिन्हें उन्होंने तण्डि से सुना था (१३. १८, ६१ और बाद)।"

उपयाज, एक ब्रह्मर्षि का नाम है (१. १६७, ७. १०. ११. १४. २१. ३२. ३३)। याज और उपयाज ने द्रुपद को पुत्र प्राप्त कराने के लिये एक यज्ञ किया था (१. १६७, ३८)। 'याजोपयाज तपसा पुत्रं लेभे स पावकात्', (२. ८०, ४३)।

उपरिचर = चेदिराज वसु। कुछ लोग महाभारत का आरम्भ उपरिचर वसु की कथा से ही मानते हैं (१. १, ५२)। एक राजा के रूप में इनका उल्लेख (१. ६३, १)। चेदिराज उपरिचर वसु इन्द्र के दिये हुये स्फटिक मणिमय विमान में रहते हुये आकाश में ही निवास करते थे, और इस प्रकार ऊपर ही ऊपर चलने के कारण इनका नाम उपरिचर पड़ गया (१. ६३, ३४)। एक राजा के रूप में इनका उल्लेख (१. ६१, ६३)। यम के सभा भवन में इनके उपस्थित होने का उल्लेख (२. ८, २०)। "भीष्म ने कहा: 'पहले की बात है इस पृथिवी पर इन्द्र के मित्र और भगवान् नारायण के विख्यात भक्त राजा उपरिचर पृथिवी पर शासन

करते थे। इन्होंने भगवान् नारायण के वरदान से भूमण्डल का साम्राज्य प्राप्त कर लिया था। ये उस सात्वत विधि से भगवान् नारायण का पूजन करते थे जो पहले सूर्य के मुख से प्रगट हुआ। इन्द्र इन्हें अपने साथ एक शय्या और एक आसन पर बैठाया करते थे। इनके घर में पाञ्चरात्र शास्त्र के मुख्य-मुख्य विद्वान् सदैव निवास करते थे। चित्रशिखण्डी नाम से विख्यात सप्तर्षियों (मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु और वसिष्ठ) ने मेरु पर्वत पर एकमत हो कर एक उत्तम शास्त्र का निर्माण किया। ये सातों ऋषि प्रकृति (महत्, अहङ्कार इत्यादि) के रूप और आठवें ब्रह्मा (अर्थात् मूल प्रकृति) हैं। ये सब मिलकर ही इस सम्पूर्ण जगत् को धारण करते हैं। इन ऋषियों ने अन्य ऋषियों के साथ एक सहस्र दिव्य वर्षों तक तपस्या करके भगवान् नारायण की तपस्या की जिससे प्रसन्न होकर नारायण ने सरस्वती को इन लोगों के शरीर में प्रवेश करने की आज्ञा दी। तब इन तपस्वी ब्राह्मणों ने शास्त्र की रचना की और उसे करुणामय भगवान् को सुनाया। पुरुषोत्तम ने इस शास्त्र को चारों वेदों के समान प्रमाणभूत होने का आशीर्वाद दिया। नारायण ने कहा : 'जैसे मेरे प्रसाद से उत्पन्न ब्रह्मा प्रमाणभूत हैं, और जैसे क्रोध से उत्पन्न रुद्र, तुम सब प्रजापति, सूर्य, चन्द्रमा, वायु, भूमि, जल, अग्नि, सम्पूर्ण नक्षत्र, तथा अन्यान्य भूत नामधारी पदार्थ, और ब्रह्मवादी ऋषिगण अपने-अपने अधिकार के समान व्यवहार करते हुये प्रमाणभूत माने जाते हैं, उसी प्रकार तुम लोगों का यह शास्त्र भी प्रमाणभूत होगा। तुम्हारे इसी ग्रन्थ के अनुसार मनु स्वायम्भुव धर्मों का उपदेश करेंगे। शुक्राचार्य और बृहस्पति भी जब प्रगट होंगे तो वे इसी शास्त्र का प्रवचन करेंगे। तदुपरान्त प्रजापालक उपरिचर वसु बृहस्पति से तुम्हारे इसी शास्त्र का अध्ययन करेंगे, परन्तु इस राजा के दिवंगत होने के पश्चात् यह सनातनशास्त्र सर्वसाधारण की दृष्टि से लुप्त हो जायगा।' इतना कह कर नारायण अन्तर्धान हो गये। फिर आदि कल्प के प्रारम्भिक युग में, जब बृहस्पति का प्रादुर्भाव हुआ तब उन्हें साङ्गोपाङ्ग वेद और उपनिषदों सहित इस शास्त्र को इन ऋषियों ने प्रचारित करने के लिये पढ़ाया और इसके बाद ये ऋषिगण तपस्या का निश्चय करके अपने अभीष्ट स्थान को चले गये। (१२. ३३५)।"

"बृहस्पति के नाम की व्युत्पत्ति। राजा वसु उपरिचर बृहस्पति के प्रमुख शिष्य हुये और उन्होंने चित्र शिखण्डियों के बनाये हुये तन्त्रशास्त्र का बृहस्पति से विधिवत् अध्ययन किया। वसु उपरिचर के अश्वमेध यज्ञ में बृहस्पति होता, और प्रजापति के पुत्र एकत, द्वित तथा त्रित सदस्य बने। इस यज्ञ में किसी भी पशु की बलि नहीं हुई। सन्तुष्ट होकर हरि ने केवल वसु से दृश्य तथा अन्य से अदृश्य रह कर यज्ञ में आकर अपना यज्ञ-भाग ग्रहण किया। इस पर क्रुद्ध हो कर बृहस्पति ने बड़े वेग से स्रुवा आकाश में फेंक दिया और बोले, 'मैंने जो यह भाग प्रस्तुत किया है उसे भगवान् को मेरे नेत्रों के सम्मुख प्रगट होकर ग्रहण करना चाहिये।' युधिष्ठिर ने पूछा कि भगवान् हरि ने क्यों अदृश्य रह कर ही अपना भाग ग्रहण किया। भीष्म ने कहा : 'राजा वसु और उनके सदस्य सब मिल कर क्रुद्ध बृहस्पति को गनाने लगे। उन लोगों ने कहा कि सतयुग में किसी को क्रोध नहीं करना चाहिये; भगवान् हरि भी क्रोध नहीं करते; हरि का दर्शन वही कर सकता है जिस पर वे कृपा करते हैं। तदुपरान्त ऋषिगण एकत, द्वित और त्रित ने बताया कि उन लोगों ने एक बार मेरु पर्वत के उत्तर और क्षीर सागर के तट पर सहस्रों वर्षों तक नारायण का दर्शन प्राप्त करने के लिये तपस्या की थी। उस समय एक शरीर रहित वाणी ने उन लोगों से क्षीर सागर के उत्तर भाग में स्थित उस श्वेत द्वीप में जाने के लिये कहा जहाँ के निवासी केवल नारायण के ही भक्त हैं। वहाँ पहुँच कर वहाँ के देवताओं के वैभव के चकाचौंध में कुछ भी दिखाई नहीं पड़ा। तदुपरान्त उन लोगों ने पुनः एक सौ वर्षों तक तपस्या की जिससे उन्होंने उस द्वीप के निवासियों (पाञ्चरात्र आदि व्रतों से परिचित इन निवासियों का वर्णन किया गया है) का दर्शन किया। उस समय एक अशरीरी आकाशवाणी ने उनसे कहा : 'तुम लोगों ने श्वेत द्वीप के श्वेतकाय और इन्द्रियों से रहित पुरुषों का दर्शन किया। इन श्रेष्ठ द्विजों का दर्शन होने से साक्षात् भगवान् का ही दर्शन हो जाता है। तुम लोग जैसे आये हो वैसे ही शीघ्र लौट जाओ। इस युग के व्यतीत होने पर जब धर्म में किञ्चित व्यतिक्रम आ जायगा और त्रेतायुग का आरम्भ होगा तब देवताओं के कार्य की सिद्धि के लिये तुम लोगों को ही सहायक होना पड़ेगा।' तदुपरान्त एकत आदि लौट आये। इस कथा को सुनकर बृहस्पति ने यज्ञ को पूर्ण किया। राजा वसु यज्ञ को पूर्ण करके प्रजा का पालन करने लगे। कुछ दिनों के पश्चात् एक ब्राह्मण के शाप से भ्रष्ट होकर ये पृथिवी के भीतर रसातल में समा गये, किन्तु वहाँ भी निरन्तर नारायण-मंत्र का जप करते हुये भगवान् की आराधना में तत्पर रहे। अतः नारायण की कृपा से वे पुनः ऊपर को उठे और भूतल से ब्रह्म-लोक में चले गये। (१२. ३३६)।" "युधिष्ठिर के यह पूछने पर कि नारायण के भक्त होते हुये भी राजा वसु स्वर्ग लोक से गिर कर पृथिवी के नीचे रसातल में क्यों चले गये, भीष्म ने ऋषियों और देवताओं के बीच हुये संवाद-रूपी प्राचीन इतिहास को उद्धृत किया। उन्होंने बताया कि एक बार देवताओं ने कुछ ब्राह्मणों से कहा कि अज (बकरा) के द्वारा यज्ञ करना चाहिये। ऋषियों ने कहा कि श्रुति के अनुसार बीजों का ही नाम अज है; सत्ययुग में पशुओं का वध कैसे किया जा सकता है। उस समय वसु आकाश मार्ग से अपनी सेना और वाहनों के साथ कहीं जा रहे थे। उन्हें देखकर देवताओं और ऋषियों ने अपने संवाद में उन्हें मध्यस्थ बनाया। दोनों पक्षों से उनका मत ग्रहण करने के पश्चात् वसु ने देवों का पक्षपात करते हुये यह निर्णय किया कि अज का अर्थ बकरा है और उसी के द्वारा यज्ञ करना चाहिये। इस पर अत्यन्त क्रुद्ध हो कर ऋषियों ने वसु को स्वर्ग से नीचे गिराकर पृथिवी के भीतर रसातल में प्रवेश करने का शाप दे दिया। ऋषियों के शाप से वसु उपरिचर तत्काल पृथ्वी के विवर में प्रवेश कर गये। परन्तु नारायण की आज्ञा से उनकी स्मरणशक्ति ने उनका साथ नहीं छोड़ा। राजा की यह दशा देख कर देवताओं ने उनके पास आकर यह कहा : 'तुम जितने समय तक पृथिवी के विवर में रहोगे तब तक एकाग्रचित्त ब्राह्मणों द्वारा यज्ञ में दी हुई वसुधारा की आहुति तुम्हें प्राप्त होती रहेगी, जिससे तुम्हें भूख और प्यास का कष्ट नहीं होगा।' तदुपरान्त देवता तथा ऋषिगण अपने-अपने स्थान को चले गये। वसु उपरिचर ने भगवान् विश्वक्सेन की पूजा आरम्भ की और नारायण के मुख से प्रगट हुये जपनीय मंत्रों का निरन्तर जप करने लगे। इस प्रकार पाताल के विवर में रहते हुये राजा उपरिचर पाँच समय पाँच यज्ञों द्वारा देवेश्वर श्रीहरि की आराधना करते थे। उनकी भक्ति से प्रसन्न होकर विष्णु ने गरुड़ को आज्ञा दी कि वे वसु को पुनः ब्रह्मलोक में पहुँचा दें। गरुड़ ने नारायण की आज्ञा का पालन करते हुये वसु को ब्रह्मलोक में पहुँचा दिया। (१२. ३३७)।" इनके नाम के संदर्भों के लिये देखिये १२. ३३५, १७; ३३६, ३. १५; ३३७, १७. २१. ३८।

उपवेणा, अग्नि की माता, एक नदी का नाम है (३. २२२, २४)।

उपवेद (बहु०): ब्रह्मा की सभा में इनकी उपस्थिति का उल्लेख (२. ११, ३३)। शिव ने उपवेदों को लगाम बनाया (७. २०२, ७५)। 'सोपवेदोपनिषदः', (८. ८७, ४२)। 'वेदोपवेदेषु', (१२. १६७, ३१)।

उपशान्त=शिव (सहस्र नामों में से एक)।

उपश्रुति, एक देवी का नाम है (५. १३, २६. २७; १४, १. ३)। देवी उपश्रुति ने एक सरोवर के अन्दर स्थित कमलनाल के तन्तु में प्रविष्ट हुये इन्द्र को प्राप्त किया (५. १४, १२)। बृहस्पति ने शची को बताया कि वह उपश्रुति देवी का आह्वान करें, क्योंकि देवी उपश्रुति ही उन्हें इन्द्र का दर्शन करायेंगी (१२. ३४२, ४८)।

उपसुन्द, सुन्द के भ्राता एक राक्षस, का नाम है। 'सुन्दोपसुन्दयोस्त-द्वदाख्यानं परिकीर्तितम्', (१. २, १२०)। 'सुन्दोपसुन्दौ हि पुरा भ्रातरौ', (१. २०८, १९)। 'सुन्दोपसुन्दावसुरौ', (१. २०८, २२)। 'सुन्दोपसुन्दौ दैत्येन्द्रौ', (१. २०९, ३)। 'सुन्दोपसुन्दौ तौ भ्रातरौ', (१. २०९, १८)। 'सुन्दोपसुन्दावूचतुः (१. २०९, २४)। 'जग्मुर्विषादं तत्कर्म दृष्ट्वा सुन्दोप-

सुन्दयोः', (१. २१०, २६)। 'सुन्दोपसुन्दयोः कर्म सर्वमेव शशंसिरे', (१. २११, ७)। ब्रह्मा ने सुन्द और उपसुन्द को मोहित करने के लिये उन दोनों के पास तिलोत्तमा को भेजा (१. २११, २०)। सुन्द और उपसुन्द ने समस्त विश्व को अपने अधिकार में कर लिया था, किन्तु कुछ समय के पश्चात् तिलोत्तमा के कारण युद्ध करते हुये ये दोनों भ्राता एक दूसरे के हाथ से मारे गये (१. २१२, १३. १६)। 'सुन्दोपसुन्दावसुरौ क्रिययैव निषूदितौ', (९. ३१, १४)। 'उभौ सदृशकर्माणौ यथा सुन्दोपसुन्दयोः', (९. ५५, ३०)।

उपाङ्ग, : 'साङ्गोपाङ्गम्', (१. १००, ३८)। 'साङ्गोपाङ्गानपि यदि यश्च वेदानधीयते', (१२. ३१८, ५०)। 'वेदेषु सपुराणेषु साङ्गोपाङ्गेषु गीयसे', (१२. ३३४, २५)। 'वेदानवाप्य चतुरः साङ्गोपाङ्गान्सनातनान्', (१२. ३४१, ५५)।

उपावृत्त, भारतवर्ष के एक जनपद का नाम है (६. ९, ४८)।

उपेन्द्र = विष्णु : 'देवाः सोपेन्द्राः', (३. ३, ४१)। 'महेन्द्रोपेन्द्रविक्रमम्', (५. ६०, २०)। 'इन्द्रोपेन्द्राविवामरौ', (६. ८३, ५७)। 'उपेन्द्रसदृशः', (६. ११२, ३८)। 'उपेन्द्रसदृशम्', (७. ७२, २३)। 'रुद्रोपेन्द्रविक्रमः', (६. १५६, ८२; १७५, ४९)। = कृष्ण (८. ३७, ३४)। 'रुद्रोपेन्द्रसमम्', (८. ७३, ३४)। 'ब्रह्माणमिव देवेशमिन्द्रोपेन्द्रौ मुदान्वितौ,' (९. ३४, १८)। १३. १०९, १६; १४९, ३० (सहस्र नामों में से एक)।

उपेन्द्रा, एक नदी का नाम है (६. ९, २७)।

१. उमा, एक देवी, हिमवत् की पुत्री, शिव की पत्नी का नाम है। 'चकाशिरे पर्वतराजकन्यामुमां यथा देवगणाः समेताः', (१. १८७, ४)। 'महादेवः सहोमोऽत्र सदा गच्छति सर्वशः', (२. ११, ५१)। जाते हुये अर्जुन से द्रौपदी ने कहा कि ह्री, श्री, तथा उमा आदि देवियाँ मार्ग में उनकी रक्षा करें (३. ३७, ३३)। 'देव्या सहोमया श्रीमान्', (३. ३९, ४)। 'ततः शुभं गिरिवरमीश्वरस्तदा सहोमया', (३. ४०, २८)। 'सहोमया च भवति दर्शनं कामरूपिणः', (३. १३०, १५)। 'उमासहायो व्यालधृग्बहुरूपः पिनाकधृक्', (३. १६७, ४४)। 'उमायोन्यां च रुद्रेण शुक्रं सिक्तं महात्मना', (३. २३१, १०)। 'तस्मिन् रथे पशुपतिः स्थितो भात्युमया सह', (३. २३१, ३१)। 'उमा चैव महाभागा देवाश्च', (३. २३१, ६१)। उमापतिः पशुपतिर्येब्रह्मा त्रिपुरार्दनः', (३. २७२, ७८)। युधिष्ठिर ने दुर्गा = उमा की स्तुति की, जिसके फलस्वरूप उमा देवी ने प्रत्यक्ष होकर वर प्रदान किया (४. ६)। 'अत्र कामश्च रोषश्च शैलश्चोमा च संवसुः', (५. १११, १०) 'उमासहायो भगवान् रमते भूतभावनः', (६. ६, २५)। = दुर्गा (व० स्था०), अर्जुन द्वारा इनकी स्तुति का उल्लेख (६. २३, ९)। 'उमा जिज्ञासमाना वै कोऽयमित्यब्रवीत्सुरान्', (७. २०२, ८४)। 'उमया सार्द्धं युष्माभिरमितद्युतिः', (७. २०२, ९२)। भगवान शिव उमा सहित देवताओं पर प्रसन्न हो गये जिससे इन्द्र की भुजा ठीक हो गई (७. २०२, १००)। उमा शची 'सिनीवाली', (९. ४५, १३)। 'उमा ददौ विरजसी वाससी रविसप्रभे', (९. ४६, ४९)। 'केचिन्महेश्वरसुतं केचित्पुत्रं विभावसोः। उमायाः कृत्तिकानां च गंगायाश्च वदन्त्युत', (९. ४६, ९९)। 'उमाभूषणतत्परम्', (१०. ७, ९)। यज्ञों में देवों द्वारा शिव को भाग देने का निषेध जानकर उमा को अत्यन्त सन्ताप हुआ (१२. २८३, २५. २८)। दक्ष के यज्ञ का विनाश करने के लिये शिव ने उमा के समक्ष अपने मुख से एक भयंकर प्राणी प्रगट किया (१२. २८४, २९)। 'ततः प्रणम्य वरदं देवं देवीमुमां तथा', (१२. २८९, ३७)। 'हिमवतो गिरेर्दुहितरमुमां कन्यां रुद्रश्चकमे भृगुरपि च', (१२. ३४२, ६२)। 'पुल्लिङ्गं सर्वमीशानं स्त्रीलिङ्गं विद्धि चाप्युमाम्', (१३. १४, २३५)। 'भगवान् देवदेवः सहोमया', (१३. १४, २४४)। 'शिरसा वन्दिते देवे देवी प्रीता ह्युमा तदा', (१३. १४, ४०६)। 'निरीक्ष्य भगवान् देवीं ह्युमाम्', (१३. १४, ४२७)। 'उवाचोमा प्रणिहिता', (१३. १५, ४. ७)। 'उमया सहितः प्रभुः', (१३. १६, ६७)। वर के रूप में शिव को प्राप्त करने के लिये उमा ने तपस्या की (१३. १९, २०)। 'ते महादेवमासीनं देवीं च वरदामुमाम्', (१३. ८४, ६२)। देवताओं ने शिव से अपने अमोघवीर्य को रोक लेने के लिये कहा जिससे कुपित होकर पार्वती ने उन्हें शाप दे दिया (१३. ८४, ६४) 'शङ्करस्योमया सार्धं संवादं प्रत्यभाषत', (१३. १४०, १)। देखिये १३. १४०, ३७. ४०. ४६; १४१, ९. १३. २०. २८. ३४. ६१. ९१; १४२, १. २०. ३४; १४३, १; १४४, १. १८. २८. ४१; १४५, १. ४३. ५४. ५८; १४६, १३. २२. ३३ भी। शिव और उमा का संवाद (१३. १४८, ५)। 'शंकरस्योमया सार्धं संवादः', (१३. १४८, ५१)। 'उमा जिज्ञासमाना', (१३. १६०, ३२)। 'ततः प्रसादयामासुरुमां रुद्रं च ते सुराः', (१३. १६०, ३६)। उमा सहायो भगवान्यत्र नित्यं महेश्वरः', (१४. ८, ३)। 'उमा देवीं विजानीध्वं नारीणामुत्तमां शुभाम्', (१४. ४३, १६)।

तु० की० उमा के निम्न पर्याय :

* **अम्बिका** : १३. १५०, २८।

***आर्या** : ३. २३०, ४२।

* **काली** : १०. ८. ६९।

* **गिरिवरात्मजा** : ९. ४४, ३९।

* **गिरिसुता** : १३. १४०, ३१।

* **गौरी** : ३. ८४, १५१; ४. ७१, १७।

* **त्रिभुवनेश्वरी** : ४. ६, १।

* **दुर्गा**, व० स्था०।

* **देवी** : महाभारत में इनकी प्रशंसा की गई है (१. ६२, ३४)। कुबेर की सभा में इनकी उपस्थिति (२. १०, २२)। 'देव्या सहोमया', (३. ३९, ४)। अर्जुन ने शिव के साथ इनका दर्शन किया (३. ४०, ७२)। भीमा के उत्तम स्थान में स्नान करनेवाला व्यक्ति देवी का पुत्र हो जाता है (३. ८२, ८४–८५)। 'गत्वा मधुवटीं चैव देव्यास्तीर्थे नरः शुचिः', (३. ८३, ९४)। ३. ८४, ९५। 'देव्यास्तीर्थे नरः स्नात्वा गोसहस्रफलं लभेत्', (३. ८३, १०२)। 'सानिध्यं तत्र राजेन्द्र रुद्रपत्न्याः कुरूद्वह। अभिगम्य च तां देवीं न दुर्गतिमवाप्नुयात् ॥', (३. ८३, १७०)। 'देव्याः स्थानं सुदुर्लभम्', (३. ८४, १३)। ३. ८४, १५. १८। एक तीर्थ (३. ८४, २३ ?) 'विश्वेश्वरं दृष्ट्वा देव्या सह', (३. ८४, १३५)। 'श्रीपर्वते महादेवो देव्याः सह महाद्युतिः',) ३. ८५, १९)। 'भगवान् स्थाणुर्देव्या सह', (३. १७४, १२)। 'आगम्य मनुजव्याघ्र सह देव्या परंतप। अर्चयामास सुप्रीतो भगवान गोवृषध्वज ॥', (३. २२९, २६–२७)। 'दुर्योधन का नाभि से नीचे का, आधा शरीर पार्वती देवी ने पुष्पमय बनाया है (३. २५२, ७.८)। 'देवीं दुर्गाम्', (४. ६, १)। युधिष्ठिर द्वारा इनकी स्तुति (४. ६, ४. ६. ८. १२. १५. २२. २५)। ४. ६, २७. ३५। शिव को प्राप्त करने के लिये इन्होंने तपस्यायें कीं (५. १११, ९)। अर्जुन द्वारा इनकी स्तुति (६. २३, १८)। ७. २०२, ८३। 'अब्रवीत्तस्य बहुशो गुणान्देव्याः समीपतः', (८. ३४, ३७)। 'देवी गिरिवरात्मजा', (९. ४४, ३९)। ९. ४४, ४३; १२. १५३, १११; २८३, ३०; २८४, २. १४. १५. २३. २४. २७. ३१. ३४. ५१. ५४. २०६; २८९, ३४. ३७; २९२, १४। 'शैलराजसुता चैव देवी तत्राभवत्पुरा', (१२. ३२३, १२)। १२. ३२४, १८; १३. १४, ७२. २३४। 'स्कन्दो मयूरमास्थाय स्थितो देव्याः समीपतः', (१३. १४, २७८)। १३. १४, ३८४। 'देव्याः सह महेश्वरः', (१३. १४, ३८५)। 'देवी प्रीता ह्युमा तदा', (१३. १४, १०६)। 'निरीक्ष्य भगवान् देवीं ह्युमाम्', (१३. १४, ४२७)। १३. १५, ९। 'तत्र देव्या तपस्तप्तं शङ्करार्थं सुदुश्चरम् अतस्तद्दिष्टं देवस्य तथोमाया इति श्रुतिः ॥', (१३. १९, २०)। 'देव्या विवाहे निर्वृत्ते रुद्राण्या भृगुनन्दन। समागमे भगवतो देव्याः सहमहात्मनः ॥', (१३. ८४, ६१)। 'महादेवमासीनं देवीं च वरदामुमाम्', (१३. ८४, ६२)। 'अयं समागमो देवो देव्याः सह तवानघ', (१३. ८४, ६३)। 'अमोघ तेजास्त्वं देव देवी चेयमुमा तथा (१३. ८४, ६४)। १३. ८४, ७०. ७६; १४०, ४५। 'ततो मुनिगणः सर्वस्तां देवीं प्रत्यपूजयत्। वाग्भिर्ऋग्भूषितार्थाभिः स्तवैश्चार्थं विशारदैः ॥', (१३. १४१, २४)। 'शैलराजसुतां देवीम्', (१३. १४६, २५) 'उमां देवीं विजानीध्वं नारीणामुत्तमां शुभाम्', (१४. ४३, १६)।

* देवेशी : १२. २८४, २८।

* पर्वतराजकन्या : ३. १८७, ४।

* पार्वती : 'रथेनादित्य वर्णेन पार्वत्या सहितः प्रभुः', (३. २३१, २९)। गौरी इत्यादि के द्वारा इनका अनुगमन (३. २३१, ४९)। सहितं देवम्', (७. ८०, ४०)। 'पार्वत्या सहितं प्रभुम्', (७. २०१, ७०)। ७. २०२, ८८. ९३। 'पार्वत्या च महेश्वरः', (१०. ७, ४६)। 'माहेश्वरी महादेवी प्रोच्यते पार्वती हि सा', (१४. ४३, १५)।

* महाकाली : १२. २८४, ३१।

* महादेवी , व० स्था०।

* महाभीमा : १२. २८४, ३१।

* महेश्वरी : १२. २८४, ३१।

* माहेश्वरी : १४. ४३, १५।

* रुद्रपत्नी : ३. ८३, १७०।

* रुद्राणी : ब्रह्मा की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ११, ४१)। 'यथा रुद्रश्च रुद्राण्याम्', ५. ११७, १०)। १३. १९, ३१; ८४, ६१. ७३; ८५, ७; १३९, ९।

* शर्वाणी : १३. १५, ४।

* शाकम्भरी, व० स्था०।

* शैलपुत्री : ९. ४४, २३. ३५; १३. १४०, ५०; १४८, ४४।

* शैलराजसुता : १२. २८३, ७. २२; ३२३, १२; १३. १४०, ३६; १४६, २५।

दो पृथक् सूक्तों, ४. ६, ७–२६ और ६. २३, ४–१६, में उमा (दुर्गा) के निम्नलिखित नाम मिलते हैं :

आर्या, कपिला (६. २३, ४)। कराली, कात्यायनी (६. २३, ६)। कापाली (६. २३, ४)। काली (४. ६, १७; ६. २३, ४)। कुमारी (४. ६, ७; ६. २३, ४)। कृष्णाच्छविसमा (४. ६, ९)। कृष्णपिङ्गला (६. २३, ४)। कृष्णा (४. ६, ७. ९; ६. २३, ९)। कैटभनाशिनी (६. २३, ९)। कोकमुखा, कौशिकी (६. २३, ८)। चण्डा, चण्डी (६. २३, ५)। जया (४. ६, १६; ६. २३, ६)। जातवेदसी (६. २३, १०)। तारिणी (६. २३, ५)। दुर्गा (४. ६, २०. २६; ६. २३, ११)। धूम्राक्षी (६. २३, ९)। पीतवासिनी (६. २३, ८)। ब्रह्मण्या (६. २३, १०)। ब्रह्मविद्या (६. २३, ११)। मन्दरवासिनी (६. २३, ४)। महाकाली (४. ६, १७; ६. २३, ५)। महादेवी (४. ६, २२; ६. २३, १३)। महिषासुरनाशिनी (४. ६, १५)। विजया (४. ६, १६) वरवर्णिनी (६. २३, ५)। विरूपाक्षी (६, २३, ९)। शाकम्भरी, श्वेता (६. २३, ९)। सावित्री (६. २३, १२)। सिद्धसेनानी (६. २३, ४)। स्कन्दमातृ (६. २३, ११)। हिरण्याक्षी (६. २३, ९)।

२. उमा=सावित्री (९. ४२, ३२)।

उमाधव, उमाकान्त=शिव (सहस्र नामों में से एक)।

उमापति=शिव, व० स्था०।

उमा-महेश्वर-संवाद : "नारद ने कहा : 'एक बार शिव उस हिमवत् पर्वत पर तपस्या कर रहे थे जहाँ सिद्ध और चारण निवास करते थे, जो नाना प्रकार की ओषधियों से सम्पन्न था, तथा जहाँ झुण्ड की झुण्ड अप्सरायें विचरण करती रहती थीं (वहाँ निवास करने वालों का विस्तृत वर्णन)। उस समय उमा (वर्णन) सम्पूर्ण तीर्थों के जलों से भरा हुआ सोने का कलश लिये हुये शिव के पास आईं और आते ही उन्होंने मनोरंजनार्थ अपने दोनों हाथों से शिव के दोनों नेत्र बन्द कर दिये। शिव के दोनों नेत्रों के आच्छादित होते ही सम्पूर्ण जगत् सहसा अन्धकारमय हो गया। तदनन्तर क्षणभर में ही समस्त जगत् का अन्धकार दूर हो गया। भगवान् शिव के ललाट से अत्यन्त दीप्तिशालिनी महाज्वाला प्रगट हुई, क्योंकि उनके ललाट पर एक तृतीय नेत्र का आविर्भाव हो गया। उस तृतीय नेत्र से प्रगट हुई ज्वाला ने हिमालय पर्वत को जलाकर मथ डाला। पर्वत को दग्ध हुआ देखकर गिरिजा कुमारी उमा दोनों हाथ जोड़कर भगवान् शंकर की शरण में गईं। उनकी ऐसी दशा देख कर भगवान् शंकर ने हिमवान् पर्वत की ओर प्रसन्नतापूर्ण दृष्टि से देखा जिससे वह पर्वत पुनः अपने पूर्वरूप में आ गया। उमा ने भगवान् शंकर से ये प्रश्न किये : (१) आपके ललाट में तृतीय नेत्र क्यों प्रगट हुआ ? (२) आपका पूर्वदिशा का मुख चन्द्रमा के समान कान्तिमान् और देखने में प्रिय तथा उत्तर और पश्चिम दिशा के मुख भी इसी प्रकार कान्ति से युक्त हैं, परन्तु आपका दक्षिण दिशा का मुख इतना भयंकर क्यों है ? (३) आपके मस्तक पर कपिल वर्ण की जटायें कैसे उत्पन्न हुईं ? (४) आपका कण्ठ मोर के पंख के समान नीला कैसे हो गया ? (५) आपके हाथ में सदा पिनाक क्यों वर्तमान रहता है ? और (६) आप सदैव जटाधारी ब्रह्मचारी के वेश में क्यों रहते हैं ? शिव ने इन प्रश्नों का उत्तर देना स्वीकार कर लिया। (१३. १४०)।" "शिव ने कहा : 'पूर्वकाल में ब्रह्माजी ने एक तिलोत्तमा नामक नारी की सृष्टि की जो मेरी परिक्रमा करने के लिये आई। वह सुन्दरी परिक्रमा करती हुई जिस-जिस दिशा की ओर गई उस-उस दिशा की ओर मेरा मनोरम मुख प्रगट होता गया। मैं तिलोत्तमा के रूप का दर्शन करने की इच्छा से योगबल से चतुर्मूर्ति एवं चतुर्मुख हो गया। अपने पूर्वदिशा वाले मुख से मैं इन्द्रपद का अनुशासन करता हूँ। उत्तरवर्ती मुख के द्वारा तुम्हारे (उमा के) साथ वार्तालाप के सुख का अनुभव करता हूँ। पश्चिम दिशा का मेरा मुख सौम्य और सम्पूर्ण प्राणियों को सुख देने वाला है, तथा दक्षिण दिशा का मुख भयानक और रौद्र है, जो समस्त प्रजा का संहार करता है। मैं लोक हित के लिये जटाधारी ब्रह्मचारी के वेश में रहता हूँ और देवताओं के हित के लिये अपने हाथों में पिनाक रखता हूँ। पूर्वकाल में इन्द्र ने मेरी श्री प्राप्त करने की इच्छा से मुझ पर वज्र का प्रहार किया था। वह वज्र मेरा कण्ठ दग्ध करके चला गया जिससे मेरी श्रीकण्ठ नाम से ख्याति हुई। प्राचीन काल के दूसरे युग में सागर-मन्थन के समय मैंने तीनों लोकों के हित के लिये मन्थन से प्रगट विष का पान कर लिया और तभी से मैं नीलकण्ठ कहा जाने लगा।' पार्वती ने पूछा : 'अनेक आयुधों के रहते हुये आप पिनाक क्यों धारण करते हैं ?' शिव ने कहा : 'युगान्तर में कण्व नाम से प्रसिद्ध एक महामुनि ने दिव्य तपस्या आरम्भ की। मुनि की तपस्या से प्रसन्न होकर ब्रह्मा जब उन्हें वर देने के लिये गये तब वहाँ उन्होंने एक बाँस देखा। उसी बाँस से उन्होंने दो धनुष बनाकर मुझे और विष्णु को दिया। मेरे धनुष का नाम पिनाक हुआ और विष्णु के धनुष का शार्ङ्ग। उस वेणु के अवशिष्ट भाग से एक तृतीय धनुष भी बना जिसका नाम गाण्डीव पड़ा।' पार्वती के यह पूछने पर कि उन्होंने अपने वाहन के रूप में वृषभ को क्यों चुना, शिव ने कहा : 'प्राचीन काल में ब्रह्मा ने सुरभि नामक एक गाय की सृष्टि की। एक दिन उसके बछड़े के मुँह से निकला हुआ फेन मेरे शरीर पर पड़ गया जिससे मैंने गायों को ताप देना आरम्भ किया और मेरे रोष से दग्ध हुई गायों के रंग नाना प्रकार के हो गये। तब उस समय ब्रह्मा ने मुझे शान्त किया और ध्वज चिह्न तथा वाहन के रूप में यह वृषभ मुझे प्रदान किया।' उमा के यह पूछने पर कि वह अनेक सुरम्य स्थानों को छोड़कर श्मशान भूमि (वर्णन) में क्यों निवास करते हैं, शिव ने बताया : 'मुझे श्मशान से बढ़कर अन्य कोई पवित्र स्थान दिखाई नहीं पड़ता और मेरे भूतगण भी श्मशान में ही रमते हैं।' उमा के यह पूछने पर कि उनके सिर पर जटा, कमर में बाघम्बर क्यों हैं और उनका रूप भी ऐसा रौद्र, भयानक, तथा घोर किसलिये है, शिव ने कहा : 'जगत् के समस्त पदार्थ शीत और उष्ण तत्त्वों में गुथे हुये हैं। सौम्य गुण की स्थिति विष्णु में है और आग्नेय की मुझ में। इस प्रकार विष्णु और शिव रूपी शरीर से सदा समस्त लोकों की रक्षा करता हूँ। मेरा भयानक आकृति वाला आग्नेय रूप सम्पूर्ण जगत् के हित में तत्पर रहता है।' उमा द्वारा धर्म का लक्षण पूछने पर शिव ने उसे बताया। उमा द्वारा चारों वर्णों के धर्म के सम्बन्ध में प्रश्न करने पर शिव ने उसकी विस्तृत व्याख्या की। शिव ने बताया : 'जब-जब लोकों की सृष्टि होती है

ब्रह्मा तीन प्रकार के धर्म का विधान करते हैं जिनमें से प्रथम वेदोक्त धर्म है, जो सर्वोत्कृष्ट है, दूसरा स्मार्त धर्म है, और तीसरा शिष्ट पुरुषों द्वारा आचरित शिष्टाचार धर्म। ये तीनों धर्म सनातन हैं। सन्यासी चार प्रकार के होते हैं--कुटीचक, बहूदक, हंस, और परमहंस, जिनमें से प्रत्येक में उत्तरोत्तर श्रेष्ठता है।' उमा द्वारा ऋषिधर्म की व्याख्या करने का आग्रह करने पर शिव ने कहा : 'प्रथम प्रकार के फेनप ऋषियों का धर्म उस अमृत के फेन को एकत्र करके पान करना है जिसका पूर्वकाल में यज्ञ करते समय ब्रह्मा ने पान किया था। द्वितीय प्रकार के वालखिल्य नामक ऋषि होते हैं जो सूर्य-मण्डल में निवास करते हैं। ये उञ्छवृत्ति का आश्रय लेकर पक्षियों की भाँति एक-एक दाना बीन कर जीवन-निर्वाह करते हैं; मृगछाला, चीर और वल्कल इनके वस्त्र होते हैं; इनमें से प्रत्येक का शरीर अङ्गुष्ठाग्र के बराबर होता है; ये लोग तपस्या से सम्पूर्ण पापों को दग्ध करके अपने तेज से समस्त दिशाओं को प्रकाशित करते हैं। एक अन्य प्रकार के ऋषियों को चक्रचर कहते हैं जो सोमलोक तथा पितृलोक के निकट निवास करते हैं। ये उञ्छवृत्ति से अपनी जीविका चलाते हैं। कुछ अन्य ऋषियों को सम्प्रक्षाल, अश्मकुट्ट और दन्तोलूखलिक कहते हैं जो सोमप और उष्णप होते हैं और देवताओं के निकट रहकर अपनी स्त्रियों सहित उञ्छवृत्ति से जीवन-निर्वाह करते हैं, इत्यादि (शिव ने ऋषिधर्म का विस्तार से वर्णन किया)।' (१३. १४१)।" "उमा द्वारा वानप्रस्थ धर्म के सम्बन्ध में प्रश्न करने पर शिव ने कहा : 'नियमों का पालन करते हुये वनवासी वानप्रस्थ साधु को नदी और वन से युक्त तीर्थों में जाकर ऋषिधर्म की दीक्षा ग्रहण करने के पश्चात् एक चित्त होकर परिचर्या आरम्भ करना चाहिये। सवेरे उठना, शौचाचार का पालन, देवताओं को नमस्कार, शरीर में गोबर का लेप लगाकर स्नान, दोष और प्रमाद का त्याग, अग्निहोत्र, शाक और मूल आदि का संकलन, आदि से इस धर्म की सिद्धि होती है। वानप्रस्थ को योगसाधन में तत्पर तथा वस्तुओं का न्यायानुकूल सेवन करना चाहिये। उसे वीर आसन में बैठना और चबूतरे पर सोना चाहिये। वानप्रस्थ मुनियों को शीततोयाग्नियोग का आचरण करना चाहिये। वानप्रस्थ को सदा वन में ही रहना और अग्निहोत्र और पञ्चमहायज्ञों का सेवन करना चाहिये, इत्यादि। इस प्रकार के वानप्रस्थ पुण्यमय ब्रह्मलोक तथा सनातन सोमलोक में जाते हैं।' उमा द्वारा मुनिधर्म के सम्बन्ध में प्रश्न करने पर शिव ने बताया : 'सभी वानप्रस्थ तपस्या में संलग्न रहते हैं, जिनमें से कुछ स्वच्छन्द विचरने वाले और कुछ अपनी-अपनी स्त्रियों के साथ रहने वाले होते हैं। स्वच्छन्द विचरने वाले मुनि सिर मुड़ाकर गेरुआ वस्त्र पहनते हैं, और जो स्त्री के साथ रहते हैं वे रात्रि के समय अपने आश्रम में ही निवास करते हैं। इन दोनों प्रकार के ऋषियों का महान् कर्त्तव्य तीन समय जल में स्नान करना, अग्नि में आहुति डालना, समाधि लगाना, सन्मार्ग पर चलना और शास्त्रोक्त कर्मों का अनुष्ठान करना होता है। मैंने ऊपर जो वानप्रस्थियों का धर्म बताया है उन सबका पालन करने से इन्हें तपस्या का पूर्ण फल मिलता है (विस्तृत वर्णन)।' उमा द्वारा यायावरों के धर्म के सम्बन्ध में प्रश्न करने पर शिव ने उसका वर्णन किया। इसी प्रकार उमा ने वानप्रस्थ ऋषियों के अन्तर्गत चक्रधर ऋषियों और वैखानसों के धर्म के सम्बन्ध में प्रश्न और शिव ने इनका विस्तार से वर्णन किया। वालखिल्यों का परिचय सुनने के उमा के आग्रह पर शिव ने कहा : 'वालखिल्यगण मृगचर्म पहनते हैं और शीत-उष्ण आदि द्वन्द्वों के प्रभावों से रहित हैं। तपस्या ही उनका धर्म है। उनके शरीर की लम्बाई एक अँगूठे के बराबर है। ये लोग समस्त प्रजावर्ग तथा सम्पूर्ण लोकों के हित के लिये तपस्या करते हैं।' उमा ने आश्रमधर्म में रत तपस्वी, राजकुमार, निर्धन, महाधनी आदि के कर्मों के सम्बन्ध में प्रश्न और शिव ने उसका विस्तृत समाधान किया। (१३. १४२)।" "उमा के प्रश्न करने पर शिव ने ब्राह्मणादि वर्णों की प्राप्ति में मनुष्यों के शुभाशुभ कर्मों की प्रधानता का प्रतिपादन किया। (१३. १४३)।" "उमा के प्रश्न करने पर शिव ने बन्धन-मुक्ति, स्वर्ग, नरक एवं दीर्घायु और अल्पायु प्रदान करने वाले शरीर तथा वाणी और मन द्वारा किये जाने वाले शुभाशुभ कर्मों का वर्णन किया। (१३. १४४)।" "उमा के प्रश्न करने पर शिव ने स्वर्ग और नरक, तथा उत्तम और अधम कुल में जन्म की प्राप्ति कराने वाले कर्मों की वर्णन करते हुये कहा : 'जो व्यक्ति ब्राह्मणों का सम्मान, दीन-दुःखियों को भोजन-वस्त्र आदि प्रदान करता है वह देवलोक में जन्म लेता है, और चिरकाल तक नन्दन वन में अप्सराओं के साथ रमण करता है। जो लोग दूसरों को दान देने में कृपण होते हैं, दीन-दुःखियों को देखकर उस स्थान से हट जाते हैं ऐसे अकर्मण्य और लोभी व्यक्ति नरक में पड़ते हैं। बहुत वर्षों के बाद नरक से छुटकारा पाने पर ये लोग स्वपाक और पुल्कस आदि निन्दित मनुष्यों के कुल में जन्म लेते हैं।' तदुपरान्त उमा के प्रश्न करने पर शिव ने बताया कि कुछ लोग बुद्धिमान् और कुछ अन्धे तथा रुग्ण आदि क्यों हो जाते हैं। उन्होंने यह भी बताया कि कौन से कर्म निर्दोष हैं और कौन से सदोष। (१३. १४५)।" "नारद ने कहा : 'ऐसा कहकर शिव जी स्वयं भी पार्वती के मुख से कुछ सुनने की इच्छा करने लगे।' शिव ने पार्वती से कहा : 'तुम भूत और भविष्य की ज्ञाता और धर्म का आचरण करने वाली हो, अतः तुम मेरे प्रश्नों का उत्तर दो। तुमने ब्रह्मा की पत्नी सावित्री, इन्द्र-पत्नी शची, विष्णु-पत्नी लक्ष्मी तथा अन्यान्य देव-पत्नियों का संग किया है; अतः मुझे स्त्री-धर्म का उपदेश करो।' उमा ने कहा : 'मैं स्त्री-धर्म का वर्णन कर सकती हूँ परन्तु ये नदियाँ सम्पूर्ण तीर्थों के जल से सम्पन्न होकर आपके चरणों का स्पर्श करने के लिये यहाँ आ रही हैं, उनसे परामर्श करने के पश्चात् मैं स्त्रीधर्म का वर्णन करूँगी (नदियों का विस्तृत वर्णन)।' ऐसा कहकर उमा ने स्त्रीधर्म के ज्ञान में निपुण गंगा आदि उन समस्त श्रेष्ठ सरिताओं से स्त्रीधर्म के विषय में प्रश्न किया। उमा की इस उदारता पर गंगा ने उनकी प्रशंसा की। तदनन्तर उमा ने विस्तार से स्त्रीधर्म का वर्णन करते हुये कहा : 'धर्मपरायण स्त्री को अपने पति की देवता के समान सेवा और परिचर्या करनी चाहिये। जो सुन्दरी नारी पति के अतिरिक्त पुरुष नामधारी चन्द्रमा, सूर्य, और किसी वृक्ष की ओर भी दृष्टि नहीं डालती वही पातिव्रत धर्म का पालन करने वाली होती है। जो नारी अपने दरिद्र, रोगी, दीन अथवा रास्ते के थकावट से खिन्न पति की पुत्र के समान सेवा करती है वह धर्मफल की भागिनी होती है।' नारद ने कहा कि स्त्रीधर्म का विस्तार से वर्णन सुनने के पश्चात् शिव ने उमा की प्रशंसा की और वहाँ उपस्थित लोगों को विदा होने की आज्ञा दी। (१३. १४६)।" ऋषियों के पूछने पर शिव ने वासुदेव श्रीकृष्ण के माहात्म्य का वर्णन किया (१३. १४७)। "नारद ने कहा कि शिव द्वारा अपना सम्भाषण समाप्त करते ही आकाश में बिजली की गड़गड़ाहट और मेघों की गम्भीर गर्जना के साथ महान् शब्द होने लगा। उस समय उस रमणीय और सनातन देवगिरि पर ऋषियों को न तो शंकर दिखाई दिये और न भूतों का समुदाय ही। तब ब्राह्मणों ने तीर्थ यात्रा के लिये प्रस्थान किया और अन्य लोग जहाँ से आये थे वहीं लौट गये। (१३. १४८, १-४)।

उम्लोचा, एक अप्सरा का नाम है जो अर्जुन के जन्मोत्सव पर नर्तन-गायन के लिये आई थी (१.१२३, ६५)।

१. उरग: 'मनुष्योरगगन्धर्वकथा वेद च सर्वशः', (१. ४, ५)। १. ५२, ३. ९; ५६, २१। 'गन्धर्वोरगरक्षसाम्', (१. ६७, १.१४६)। 'गन्धर्वोरगराक्षसान्', (१. ७५, २७)। 'गन्धर्वोरगराक्षसाम्', (१. १११, ३०)। 'निश्वासोरगो यथा', (१. १५१, २०)। 'पिशाचोरगदानवाः', (१. १७०, ६१)। 'तयोर्भयाद्दुद्रुवुस्ते वैनतेयादिवोरगाः', (१.२२०,१७)। 'पादस्पर्शमिवोरगः', (१. २२०, ३०)। 'व्यात्ताननमिवोरगम्', (१.२२१, ७५)। 'पिशाचोरगराक्षसान्', (१. २२८, ११)। 'देवगन्धर्वमनुष्योरगराक्षसान्', (३. ५३, २९)। 'पञ्चशीर्षा इवोरगाः', (३. ५७, ६)। तां तु दृष्ट्वा तथा ग्रस्तामुरगेणायतेक्षणाम्', (३. ६३, २७)। 'पिशाचोरगराक्षसान्', (३. ६४, ७)। 'पञ्चशीर्षाविवोरगौ', (३. ८०, १९)। 'मनुष्योरगगन्धर्व', (३. १०४, २१)। 'असुरोरगरक्षांसि', (३. १०७, २५)।

'गन्धर्वोरगयक्षाश्च', (३. १०९, ८)। 'गन्धर्वोरगरक्षांसि', (३.१५७,१५)। 'सुपर्णश्चोरगादयः', (३. १५९, १९)। 'गन्धर्वोरगरक्षांसि', (३. १६०, २२)। 'गन्धर्वोरगरक्षसाम्', (३. १६८, ३०)। ३. १८०, ९। 'सयक्षोरगराक्षसम्', (३. १८८, ७३)। 'गन्धर्वोरगराक्षसान्', (३. १८९, ३०)। 'मनुष्योरगरक्षसाम्', (३. २०१, ४)। 'क्रुद्ध इवोरगः', (३. २१६, २४)। 'किन्नरोरगरक्षसाम्', (३. २२४, ८)। 'वपुष्मतीवोरगराजकन्या', (३. २६५, ३)। 'कृष्णोरगौ तीक्ष्णमुखौ', (३. २६८, ८)। 'सरः सुपर्णेन ह्रतोरगं यथा', (३. २६९, ५)। 'पिशाचोरगमानुपान्', (३. २७२, ४६)। 'तीक्ष्णविषो यथोरगः', (४. ७, २)। 'पञ्चशीर्षाविवोरगौ', (४.२२,५६)। 'श्वसमानानिवोरगान्', (४. ६४, ६)। 'चेष्टमान इवोरगः', (५.१०,४६)। 'किन्नरोरगराक्षसाः', (५. १५, १८)। 'तृणैश्छन्न इवोरगः', (५.७४,७)। 'गन्धर्वोरगराक्षसाः', (५. १२८, ४४)। भग्नदंष्ट्रा इवोरगाः', (५.१३०,६)। ५. १३०, ३८। 'दीप्तास्यानुरगानिव', (५. १५१, २५)। 'मनुष्येपूरगेषु च', (५. १६९, १७)। 'जीर्णा स्त्वचमिवोरगः', (५. १७५, १९)। 'सर्वांनुरगांश्च दिव्यान्', (६. ३५, १५)। 'पिशाचोरगराक्षसाः', (६. ४८, १३)। 'दण्डाहत इवोरगः', (६. ५४, ७४)। 'पिशाचोरगराक्षसाः', (६. ५८, ६)। 'खात् पतन्तमिवोरगम्', (६. ६१, २६)। 'गन्धर्वाश्च सहोरगैः', (६. ८१, ४१)। 'भयकरा उरगा इव', (६. ८७, २७)। 'पादस्पृष्टा इवोरगाः', (६. १०३, ६)। 'व्याकुलीकृतमाचार्यं पिपीलैरुरगं यथा', (७. ९, २८)। 'उरगोत्तमम्', (७. १४, ७९)। 'सयक्षोरगराक्षसाः', (७. ३३, ११)। 'दण्डाहत इवोरगः', (७. ४६, १४)। 'उरगसन्निभम्', (७. ४६, १६)। 'गन्धर्वोरगपक्षिणः', (७. ६२, १६)। 'देवासुरनरोरगाः', (७. ६९, १०)। ७. ७३, ४८। 'नासुरोरगराक्षसाः', (७. ७४, ११; ७५, १४)। 'निःश्वसन्ताविवोरगौ', (७. ७७, १)। 'पिशाचोरगराक्षसाः', (७. ७९, ३२)। 'सयक्षोरगराक्षसाः', (७. ९४, ३६)। 'भग्नदंष्ट्रा इवोरगाः', (७. १००, १८)। 'उरगसन्निभाः', (७. १०६, ३२)। 'पञ्चशीर्षाविवोरगौ', (७. ११५, ५२)। 'उरगसंकाशैः', (७. १२१, ३७)। 'निःश्वसन्तविवोरगौ', (७. १३२, १०)। 'चेष्टमानं यथोरगम्', (७. १३३, ४२)। 'यक्षोरगराक्षसाः', (७. १४४, २४; १४७, ४२)। 'भग्नदंष्ट्र इवोरगः', (७. १५०, २)। 'रराज वसुधा कीर्णा विसर्पद्भिरिवोरगैः', (७. १५६, १७१)। 'निःश्वसद्भिरिवोरगैः', (७. १५८, ३)। 'मनुष्योरगरक्षसाम्', (७. १५८, ३५)। 'पिशाचोरगराक्षसैः', (७. १५८, ५१)। 'उरगसन्निभैः', (७. १५९, ८०)।' पदाक्रान्त इवोरगः', (७. १६०, ३०)। 'निःश्वसन्पन्नगो यथा', (७. १६०, ४१)। 'सयक्षोरगकिन्नराश्च', (७. १६३, १४)। 'पादस्पर्शमिवोरगः', (७, १७३, ३३)। 'संक्रुद्ध इव चोरगः', (७. १७६, ५)। 'सराक्षसोरगाः', (७. १८१, १९)। 'श्वसद्भिर्महोरगौ', (७. १८४, ४१)। 'नासुरोरगरक्षांसि', (७. १८५, २६)। 'संघट्टित इवोरगः', (७. १८८, ११)। 'वैनतेय इवोरगम्', (७. १९१, ३५)। 'पदाहत इवोरग',(७. १९३, ६८)। निःश्वसन्नुरगो यद्वल्लोहिताक्षोऽभवत्तदा', (७. १९३, ७०)। 'नासुरा न च राक्षसाः', (७. १९५, २३)। 'सासुरोरगमानवान्', (७. १९७, २०)। 'बिलमिवोरगः', (७. २००, ६७)। 'पञ्चास्यैरुरगैरिव', (८. १२, ६)। 'पञ्चास्योरगसन्निभान्' (८. १६, ७)। 'तार्क्ष्यहताविवोरगौ', (८. २०, ४७)। 'पादाक्रान्ता इवोरगाः', (८. ३१, ७)। 'सुपर्णवातप्रहता यथोरगाः', (८. ८५. २०)। 'पिशाचोरगराक्षसाः', (८. ८७, ३७)। 'तार्क्ष्यत्रस्ता भूमिमिवोरगास्ते', (८. ८९, २६)। 'उरगोत्तमः', (८. ९१, ३०)। 'भग्नदंष्ट्रा इवोरगाः', (८. ९३, ७)। 'शीर्णदंष्ट्रा इवोरगाः', (९. ३, ७)। 'वमन्तावुरगाविव', (९. ५५, ३३)। निश्वसन्नुरगो यथा(९. ६४, ५)। 'बिलादीप्तमिवोरगम्', (१०. ६, १५)। 'देवदानवगन्धर्वमनुष्यपतगोरगाः', (१०. १२, १७)। 'गन्धर्वोरगराक्षसाः', (१२. ७२, २०)। 'भग्नपृष्ठादिवोरगात्', (१२. ८२, ५५)। 'मनुष्योरगरक्षांसि', (१२. ८९, २५)। 'समनुष्योरगवताम्', (१२. १२१, ५८)। 'गन्धर्वोरगराक्षसाः', (१२. २२४, २९)। पशुमृगोरगान्', (१२. २३२, १५)। 'मुक्तत्वच इवोरगः', (१२. २५०, ११)। 'पिशाचोरगराक्षसाः', (१२. २८४, ६)। 'पिशाचोरगराक्षसैः', (१२. २८३, ६३)। १२. ३००, ६०। 'पिशाचोरगराक्षसान्', (१२. ३३१, ५९)। 'उरगश्रेष्ठम्', (१२. ३६५, १)। 'सयक्षोरगरक्षसाम्', (१३. १४, २१३)। 'विषमिवोरगः', (१३. ३०, ५७)। 'मनुष्योरगरक्षसाम्', (१३. ३३, १५)। 'पितरोरगराक्षसाः', (१३. ५८, ८)। 'किन्नरोरगरक्षांसि', (१३. ५८, २९)। 'जीर्णं त्वचमिवोरगः', (१३. ६२, ६९)। 'किन्नरोरगराक्षसाः', (१३. ८३, ८)। 'देवाः सर्पिमहोरगाः', (१३. ८३, ३०)। गन्धर्वोरगराक्षसाः' (१३. ८४, ५०)। 'गन्धर्वोरगराक्षसाम्', (१३. ८७, ४)। १३. ९८, २५। 'देवयक्षोरगनृणाम्', (१३. ९८, ५५)। 'सयक्षोरगराक्षसम्', (१३. १४९, १३५)। 'दैत्यानुरगान्दानवांश्च', (१३. १५८, १७)। 'राक्षसानुरगांश्च', (१३. १५८, २५)। 'गन्धर्वोरगरक्षसाम्', (१४. ४३, १४)। 'देवदानवभूतानां पिशाचोरग रक्षसाम्। नरकिन्नरयक्षाणां सर्वेषामीश्वरः प्रभुः', (१४. ४४, १५)।

२. उरग, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ५४)।

उरगा, एक नगर का नाम है : 'उरगवासिनं चैव रोचमानम्', (२, २७, १९)।

उरगपति = कौरव्य (१४. ८१, ५)।

उरगात्मजा, नागराज की पुत्री उलूपी का नाम है (१४. ७९, १०)।

उरुक्रम = विष्णु (कृष्ण) : 'हृषीकेश उरुक्रमः', (३. १८९, ३५)। = कृष्ण (१२. ४३, ८)।

उर्वरा, एक अप्सरा का नाम है जिसने कुबेर-भवन में अष्टावक्र के स्वागत में नृत्य किया था (१३. १९, ४४)।

१. उर्वशी, पुरूरवस् की पत्नी एक, अप्सरा का नाम है। 'यथोर्वशीं प्राप्य पुरा पुरूरवा', (१. ४४, १०)। प्रधान अप्सराओं के साथ इसका उल्लेख (१. ७४, ६८)। पुरुरवस् की पत्नी के रूप में इसका उल्लेख (१. ७५, २३)। उर्वशी के गर्भ से पुरूरवस् द्वारा आयु, धीमान्, अमावसु, दृढायु, वनायु, और शतायु नामक छः पुत्र उत्पन्न हुये (१. ७५, २५)। अर्जुन के जन्मोत्सव पर इसने गायन किया था (१. १२३, ६६)। कुबेर की सभा में नृत्यगान करनेवाली अप्सराओं में से एक यह भी है (२. १०, ११)। इन्द्र की सभा में इसकी उपस्थिति (३. ४३, २९)। उर्वशी अर्जुन पर आसक्त हो गई परन्तु अर्जुन के अस्वीकृत करने पर उसने उन्हें स्त्री होने का शाप दे दिया (३. ४५, १. २. ४. १४; ४६, १. १७. १९. २१. २२. ४२. ४८. ४९. ५१. ५२. ५६)। 'तस्य रेतः प्रचस्कन्द दृष्ट्वाप्सरसमुर्वशीम्', (३. ११०, ३५)। 'उर्वश्यां च पुरूरवाः', (५. ११७, १४)। 'तथा भागीरथी गंगा उर्वशी चाभवत् पुरा', (७. ६०, ६; १२. २९, ६८)। 'उर्वशी पूर्वचित्तिश्च', (१२. ३३२, २१)। 'उर्वश्या वचनं श्रुत्वा शुकः परमधर्मवित्', (१२. ३३२, २५)। कुबेर के आवास में इनका अन्य अप्सराओं के साथ उल्लेख (१३. १९, ४४)। 'उर्वशी मेनका रंभा', (१३. १६५, १५)।

२. उर्वशी, एक तीर्थ का नाम है (१३. २५, ४६)। तु० की० **उर्वशीतीर्थ**।

३. उर्वशी, भगीरथ के ऊरु पर बैठने के कारण गंगाजी का एक नाम है (७. ६०, ६)।

उर्वशी तीर्थ, एक तीर्थ का नाम है जहाँ यात्रा करने पर मनुष्य पूजित होता है (३. ८४, १५७)।

उर्वी, पृथिवी का एक नाम है (१२. ४९, ७३)।

१. उलूक, शकुनि के पुत्र, कैतव्य का नाम है। 'उलूकस्य प्रेषणम्', (१. २, २४०)। ये द्रौपदी के स्वयंवर में पधारे थे। (१. १८६, २२)। 'कर्ण उलूकोऽथ विविंशति', (५. ४७, ९)। नकुल ने इनके साथ युद्ध करने की इच्छा प्रकट की थी (५. ५७, २३)। 'उलूक गच्छ कैतव्य पाण्डवान् सहसोमकान् (५. १६०, ६)। 'उलूक मद्वचो ब्रूहि असकृद्भीमसेनकम्', (५. १६०, ६५)। 'उलूक नकुलं ब्रूहि' (५. १६०, ७०)। 'शिखण्डिनमथो ब्रूहि उलूक वचनान्मम', (५. १६०, ७८)। 'प्रहस्योलूकमब्रवीत्', (५. १६०, ८०)। 'उलूक न भयं तेऽस्ति', (५. १६१, ३)। 'उलूक उवाच', (५. १६१, ६)। 'उलूकस्त्वर्जुनं भूयो यथोक्तं वाक्यमब्रवीत्', (५. १६२,

१. ९)। 'उलूकस्य तु तद्वाक्यं पापं दारुणमीरितम्। श्रुत्वा विचुक्षुभे पार्थो ललाटं चाप्यमार्जयत्', (५. १६२, ११)। 'हस्तं हस्तेन निष्पिष्य उलूकं वाक्यमब्रवीत्', (५. १६२, १९)। उलूकश्च न ते वाच्यः परुषं पुरुषोत्तम', (५. १६२, ३८)। 'उलूके प्रापयिष्यामि यद्वक्ष्यति सुयोधनम्', (५. १६२, ४३)। 'उलूकं भरतश्रेष्ठ सामपूर्वमथोर्जितम्', (५. १६२, ४८)। 'उलूक गच्छ कैतव्य ब्रूहि तात सुयोधनम्', (५. १६२, ५२; १६३, २४)। ५. १६३, ३१–३७. ४१. ४२. ४५.४९-५१। दुर्योधन ने इन्हें राजदूत बनाकर पाण्डवों के पास भेजा (५. १६४, १)। इन्होंने चेदिराज के साथ युद्ध किया (६. ४५, ७८. ७९)। 'सहदेव का इन पर आक्रमण (६. ७२, ५)। 'उलूकस्य समादेशं यद्दासि च हृष्टवद्', (६. ७९, ७)। अर्जुन द्वारा विद्ध होते हैं (७. १७१, ३६)। अर्जुन से युद्ध करते हुये शकुनि इनके रथ पर आरूढ हो गये (७. १७१, ३९)। युद्धस्थल में द्रोणाचार्य के मारे जाने पर अन्य योद्धाओं के साथ ये भी समराङ्गण से विमुख हो गये (७. १९३, १४)। 'कैतव्यानामधिपः', (८. ७, १९)। कर्ण द्वारा निर्मित मकरव्यूह के नेत्रों के स्थान में शकुनि तथा उलूक स्थित थे (८. ११, १५)। युयुत्सु के साथ इनका युद्ध हुआ (८. २५, १–३. ६. ८. ९. १२)। गान्धारदेशीय योद्धाओं से सेवित शकुनि और उलूक व्यूह की रक्षा कर रहे थे (८. ४६, १२)। पतत्रि के भ्राता होने का उल्लेख (८. ४८, ३०)। 'उलूकः सौबलश्चैव', (८. ५४, १)। सहदेव द्वारा इन पर आक्रमण (८. ६१, १२. ४२)। उलूक रथ से कूद कर त्रिगर्तों की सेना में सम्मिलित हो गया (८. ६१, ४४)। सात्यकि द्वारा अश्वों के वध कर देने पर शकुनि उलूक के रथ पर सवार हो गये (८. ६१, ४९)। मृतक योद्धाओं के साथ इनका उल्लेख (९. १, २६)। सेना सहित नकुल और सहदेव युद्धभूमि में शकुनि और उलूक का सामना करने के लिये उपस्थित थे (९. ८, ३३)। अन्य योद्धाओं के साथ शल्य की रक्षा करते हैं (९. ११, ३५) नकुल के साथ युद्ध करते हैं (९. २२, २८. २९)। दुर्योधन की सेना के वीर सैनिकों में इनकी गणना का उल्लेख (९. २७, १७)। शकुनि के साथ भीमसेन और सहदेव पर आक्रमण करते हैं (९. २८, ३. २९)। सहदेव द्वारा इनकी मृत्यु (९. २८, ३३)।

तु० की० निम्नलिखित पर्याय :

* **कैतव** : १. १८६, २२; ५. १६३, २४।

* **कैतव्य** : ५. ५७, २३; १६०, ६; १६१, १; १६२, २. ५. ६. ५०. ५१; १६३, १. २. ९. २४. २९. ४५. ५४; ९. १, २६ (इनकी मृत्यु); २, ४१; ८, २८।

* **शकुनि** : ८. २५, ५

२. उलूक, एक नाग (नीलकण्ठ के अनुसार एक यक्ष) का नाम है जिसके साथ गरुड ने युद्ध किया था (१. ३२, १९)।

३. उलूक एक या एकाधिक ऋषियों का नाम है। 'उलूकाश्रमे', (५. १८६, २६। शरशय्या पर पड़े हुये भीष्म को घेर कर खड़े होने वाले लोगों में से एक यह भी थे (१२. ४७, ११)। ये विश्वामित्र के पुत्र थे (१३. ४, ५१)।

४. उलूक, उलूकों के राजा बृहन्त का नाम है। 'उलूक सहितो', (२. २७, १०)।

५. उलूक, उत्तर में स्थित एक भारतीय जनपद का नाम है (२. २७, ५)। अर्जुन ने इसे विजित किया था (२. २७, ११)।

६. उलूक (बहु०), काकी की सन्तति से तात्पर्य है (१. ६६, ५७)।

उलूकदूतागमन : 'उलूकदूतागमनं पर्वामर्पविवर्धनम्', (१. २, ६५)।

उलूकदूतागमनपर्वन्, महाभारत के ६४वें अवान्तर पर्व का नाम है जो उद्योग पर्व के १६० से १६४ अध्यायों तक आता है। "जब पाण्डवों ने हिरण्यवती के तट पर अपना पडाव डाला तब कौरवों ने भी विधिपूर्वक दूसरे स्थान पर शिविर बनाया। उस समय दुर्योधन ने कर्ण, दुःशासन तथा शकुनि को बुलाकर गुप्त मन्त्रणा की और शकुनि-पुत्र उलूक को सोमकों और केकयों सहित पाण्डवों के पास अपमानजनक सन्देश लेकर जाने के लिये कहा। दुर्योधन ने उलूक से कहा : 'तुम युधिष्ठिर के सामने जाकर कहना कि धर्मात्मा होते हुये वह अधर्म में लिप्त हैं। वह धर्म की पृष्ठभूमि में सम्पूर्ण जगत का विनाश देखना चाहते हैं। इस सम्बन्ध में तुम उनसे उस दुष्ट बिलाव की कथा भी कहना जो धर्माचरण के बहाने अपने आश्रित समस्त चूहों का भक्षण करने लगा।' इसी प्रकार दुर्योधन ने पाण्डवपक्ष के अन्य लोगों के लिये भी अपमानजनक संदेश दिये। (५. १६०)।" "उलूक ने पाण्डवों के शिविर में पहुँच कर भरी सभा में दुर्योधन का संदेश सुनाया। (५. १६१)।" "उलूक की बातों को सुनकर पाण्डवगण अत्यन्त क्रुद्ध हुये। श्रीकृष्ण ने उलूक से चले जाने के लिये कहा, परन्तु उसने एक बार पुनः अपने शब्दों को दुहराया जिससे पाण्डवगण और भी क्रुद्ध हो उठे तथा भीम ने दुःशासन का रक्त पीने की प्रतिज्ञा की। इसी प्रकार सहदेव आदि ने भी दुर्योधन के लिये अपना रोष-पूर्ण संदेश दिया। सहदेव ने कहा कि वे शकुनि के सामने ही उलूक की हत्या करने के पश्चात् शकुनि का भी वध कर डालेंगे (५. १६२)।" "अर्जुन ने कहा कि भीष्म का आश्रय लेकर युद्ध का आवाहन करने वाले दुर्योधन को उसमें सफलता नहीं मिलेगी, क्योंकि वे स्वयं भीष्म का वध करेंगे। शिखण्डी ने भी कहा कि उसका जन्म ही भीष्म के विनाश के लिये हुआ। धृष्टद्युम्न ने बताया कि वे मित्रों तथा अनुचरों सहित द्रोणाचार्य का वध करेंगे। उलूक ने लौट कर दुर्योधन से पाण्डवों का संदेश कहा। कर्ण और दुर्योधन ने अपनी सेना को सूर्योदय के साथ ही युद्ध के लिये सन्नद्ध हो जाने का आदेश दिया। (५. १६३)।" "पाण्डवों की सेना का भी युद्ध-भूमि में पदार्पण और धृष्टद्युम्न के द्वारा योद्धाओं की अपने-अपने योग्य विपक्षियों के साथ युद्ध करने के लिये नियुक्ति। (५. १६४)।"

उलूत, एक जनपद का नाम है (६. ९, ५४)।

उलूपी, नागराज कौरव्य की पुत्री और अर्जुन की पत्नी का नाम है। वनवास के अवसर पर मार्ग में ही अर्जुन और उलूपी का संगम हो गया था (१. २, १२२)। उलूपी अर्जुन पर आसक्त होकर उन्हें कौरव्य के प्रासाद में ले गई (१. २१४, १३. १६. १८. २४)। 'अमृष्यमाणा भित्त्वौर्वीमुलूपी समुपागमत्', (१४. ७९, ८)। 'उलूपी प्राह वचनम्', (१४. ७९, १०)। 'उलूपी मां निबोध त्वं मातरं पन्नागात्मजम्', (१४. ७९, ११)। 'उलूपीं पन्नगसुतां दृष्ट्वेदं वाक्यमब्रवीत्', (१४. ८०, २)। 'उलूपी पश्य भर्तारं शयानं निहितं रणे', (१४. ८०, ३)। 'देवीमुलूपीं पन्नगात्मजाम्', (१४. ८०, ८)। 'उलूपि साधु पश्येमं पतिं निपतितं भुवि', (१४. ८०, १२)। 'पश्य नागोत्तमसुते', (१४. ८०, ३१)। 'उलूपी चिन्तयामास तदा सञ्जीवनं मणिम्', (१४. ८०, ४२) 'उलूप्या सह तिष्ठन्तीम्', (१४. ८०, ५७)। 'नागेन्द्रदुहिता चेयमुलूपी', (१४. ८०, ५९)। उलूपी ने अर्जुन को पुनरुज्जीवित कर दिया (१४. ८०, ६१)। 'उलूपी नागकन्या', (१५. १, २३; १०, ४६)। उलूपी गंगा में प्रविष्ट हो गई (१७. १, २७)। अनुमानतः यह इरावत् की माता थीं (६. ९०)। तु० की० **भुजगात्मजा, भुजगेन्द्रकन्या, भुजगोत्तमा, कौरवी, कौरव्यदुहितृ, कौरव्यकुलनन्दिनी, पन्नगनन्दिनी, पन्नगसुता, पन्नगात्मजा, पन्नगेश्वरकन्या, पन्नगी, उरगात्मजा** : तु० की० **कौरव्य** भी (देखिये बहु०, नाग)।

उल्मुक, एक वृष्णिवंशी राजकुमार का नाम है जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में सम्मिलित हुआ था (२. ३४, १६)। प्रभासक्षेत्र में पाण्डवों से मिलने के लिये आये हुए वृष्णिवंशियों में यह भी थे (३. १२०, १९)। धृतराष्ट्र को युद्ध में उल्मुक आदि वृष्णिवंशी वीरों के आने की सम्भावना से भय हुआ (७. ११, २८) 'सारणेन च वीरेण निशठेनोल्मुकेन च', (१४. ६६, ४)।

उल्मुचु, देखिये **उन्मुचु**।

उशङ्गव, यम की सभा में बैठनेवाले एक राजा का नाम है (२.८,२६)।

उशनस्, देखिये **१. शुक्र**।

१. उशीनर, एक प्राचीन राजा का नाम है जिनका संजय ने वर्णन किया है (१. १, २३३)। 'उशीनरस्य पुत्रोऽयं तस्माच्छ्रेष्ठो हि वः शिबि,' (१. ९३, १८)। 'उशीनरस्य राजर्षेः', (१. ९९, २२)। यम की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ८, १४)। 'उशीनरो वै यत्रेष्ट्वा वासवादित्यरिच्यत',

(३. १३०, २१)। बाजरूपी इन्द्र और कबूतर रूपी अग्नि ने उशीनर की परीक्षा ली; तु० की० **शिवि** द्वारा कथित प्रमुख कहानियाँ (३. १३१, २३. २७. ३२)। इन्होंने भोजनगर में निवास करते हुए ययातिकन्या माधवी के गर्भ से शिबि नामक पुत्र उत्पन्न किया (५.११८,९.१६.१७)। इन्होंने शुनक से खड्ग प्राप्त किया तथा इनसे भोज ने उस खड्ग को प्राप्त किया (१२.१६६,७९)। इन्हें गोदान से स्वर्ग की प्राप्ति हुई (१३.७६,२५)। तु० की० २. **उशीनर**।

२. **उशीनर** = वृषदर्भ (१३.३२,२२)।

३. **उशीनर**, एक वृष्णिवंशी राजकुमार का नाम है, जो द्रौपदी के स्वयम्वर में उपस्थित हुआ था (१.१८६, २०)।

४. **उशीनर**, एक जाति के लोगों का नाम है, जिनका अर्जुन ने वध किया था (८.५,४८)। ये लोग सभी प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों में कुशल एवं बलशाली होते हैं (१२.१०१,४)। उशीनर देश के क्षत्रिय ब्राह्मणों की कृपादृष्टि से वञ्चित होने के कारण शूद्र हो गये (१३.३३,२२)।

उशीनर सुत = ८. शैव्य (= शिवि) : ७.१०,६६।

उशीरबीज, युधिष्ठिर इत्यादि के द्वारा लाँघे गये उत्तर दिशा में स्थित एक पर्वत का नाम है (३.१३९,१)। उशीरबीज में सुवर्णमय सरोवर स्थित हैं जहाँ मरुत्त ने यज्ञ किया था (५.१११,२३)।

उषा, बाणासुर की पुत्री का नाम है। इसके साथ गुप्त रूप से अनिरुद्ध का विहार, बाणासुर द्वारा अनिरुद्ध का निग्रह तथा श्रीकृष्ण द्वारा बाणासुर को जीत कर अनिरुद्ध एवं उषा का द्वारका आनयन (गीता सं० २.३८,२९ के बाद दाक्षिणात्य पाठ पृ० ८२१ से ८२४ तक)।

१. **उषङ्गु**, पश्चिम दिशा में निवास करने वाले एक ऋषि का नाम है (१२.२०८,३०;१३.१६५,४१)।

२. **उषङ्गु** = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

३. **उषङ्गु**, देखिये **ऋषङ्गु**।

उष्ट्रकर्णिक, एक भारतीय जनपद का नाम है जिसे सहदेव ने दूतों द्वारा ही वश में कर लिया था (२.३१,७१)।

उष्ट्रजिह्व, स्कन्द के एक योद्धा का नाम है (९.४५,६२)।

उष्ण, क्रौञ्चपर्वत के निकट स्थित एक देश का नाम है (६.१२,२१)।

उष्णप, देखिये **उष्मप**।

उष्णरश्मि = सूर्य (३.३०३,१)।

उष्णीगङ्ग, एक तीर्थ का नाम है (३.१३५,७)।

उष्णीनाभ, एक विश्वेदेव का नाम है (१३.९१,३४)।

उष्णीपिन् = शिव (१३.१७,४४;१४.८,१६)।

उष्मन्, एक अग्नि का नाम है (३. २२१, ४) तु० की० : 'ऊष्मा चाग्निरिति ज्ञेयो योऽन्नं पचति देहिनाम्', (३. २१३, ११; १२. १८५, १२ भी)।

उष्मपाः, पितरों और ऋषियों के एक वर्ग का नाम है (२.८,२१)। 'उष्मपानां देवानां निवासः', (५. १०९, २)। 'मरुतश्चोष्मपाश्च', (६.३५, २२)। 'उष्मपाः सोमपाश्चैव', (१२. २८४, ८; १३. १८, ७४; १४१, १०५)।

ऊ

ऊर्जयोनि, विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ४,५९)।

ऊर्जस्कर, अग्नि के लिए प्रयुक्त हुआ है (३. २२१, ६)।

ऊर्जस्पति = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

ऊर्जित, ऊर्जितशासन = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

ऊर्णनाभ, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९६; ११७, ५)।

ऊर्णायुस्, एक देव गन्धर्व का नाम है, जो अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उपस्थित हुआ था (१. १२३, ५५)। इसका मेनका के प्रति अनुराग (५. ११७, १६)।

ऊर्ध्वं खम् इव मेनिरे = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

ऊर्ध्वकेश = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

ऊर्ध्वग = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

ऊर्ध्वगात्मन् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

ऊर्ध्वदंष्ट्रकेश = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

ऊर्ध्वबाहु, एक ऋषि का नाम है, जो धर्मराज के सात ऋत्विजों में से पाँचवे थे (१३. १५०, ३४)। दक्षिण दिशा में निवास करने वाले ऋषियों में से एक यह भी थे (१३. १६५, ४०)।

ऊर्ध्वभाज्, एक अग्नि का नाम है, जो बृहस्पति के पाँचवे पुत्र थे (३. २१९, २०) = बडवाग्नि ?

१. **ऊर्ध्वरेतस्** = युधिष्ठिर का सम्मान करने वाले एक ऋषि का नाम है (३. २६, २४)।

२. **ऊर्ध्वरेतस्** = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

ऊर्ध्वलिङ्ग = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

ऊर्ध्ववर्त्मन् = कृष्ण (१२. ४३, ११ 'कृष्णवर्त्मन्' पाठ है)।

ऊर्ध्ववेणीधरा, स्कन्द की अनुचरी मातृका का नाम है (९.४६, १८)।

ऊर्ध्वशायिन् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

ऊर्ध्वसंहनन = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

ऊर्मिला, यम की पत्नी का नाम है : 'धूमोर्णया यमः', (५. ११७, ९)।

ऊर्व, एक तेजस्वी भृगुवंशी ऋषि का नाम है, जिन्होंने त्रिलोकी के विनाश के लिए एक भयंकर अग्नि की सृष्टि की और उसे समुद्र में डाल कर बुझा दिया। ये च्यवन के पुत्र और ऋचीक के पिता थे (१३. ५६, ४) तु० की० **और्व**।

ऊष्मप, एक गण का नाम है, जो यमसभा में यमराज की उपासना करता है (२. ८, ३०)।

ऊष्मा, पाञ्चजन्य नामक अग्नि के पुत्र का नाम है (३. २२१, ४)।

ऋ

ऋक्षसहस्रमितेक्षण = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

१. **ऋक्ष**, धूमिनी के गर्भ से उत्पन्न अजमीढ के एक पुत्र का नाम है। ये संवरण के पिता थे (१. ९४, ३२. ३४)।

२. **ऋक्ष**, अरिह द्वारा आङ्गेयी सुदेवा के गर्भ से उत्पन्न एक राजा का नाम है (१. ९५, २४)। इनकी पत्नी का नाम ज्वाला तथा पुत्र का नाम मतिनार था (१. ९५, २५)।

३. **ऋक्ष** (बहु०), मृगमन्दा की सन्तान (रीछों) के लिये प्रयुक्त हुआ है (१. ६६.६२)।

४. **ऋक्ष** (बहु०) नक्षत्र-मण्डल के लिये प्रयुक्त हुआ है (१३. १४, ३७ ; १४. ४४, २)।

ऋक्षदेव, शिखण्डी के पुत्र का नाम है। इनके घोड़े सफेद और लाल रंग के सम्मिश्रण से पद्म के समान वर्ण वाले थे (७. २३, २४. २५)।

ऋक्षपुत्र, = संवरण (१. १७१, १२)।

ऋक्षवत्, दक्षिण दिशा में स्थित एक पर्वत का नाम है (३.६१,२१)। भारतवर्ष के सात कुलपर्वतों में इसकी गणना (६. ९, ११)। 'अस्ति पौरवदायादो विदूरथसुतः प्रभो। ऋक्षैः संवर्धितो विप्र ऋक्षवत्यथ पर्वते ॥', (१२. ४९, ७६)। 'पुरश्च पश्चाच्च यथा महानदी तमृक्षवन्तं गिरिमेत्य नर्मदा', (१२. ५२, ३२)।

१. **ऋक्षा**, सोमवंशीय महाराज आजमीढ की चतुर्थ पत्नी का नाम है (१. ९५, ३७)।

२. ऋचा, स्कन्द की अनुचरी एक मातृका का नाम है (९. ४६, १२)।

ऋग्यजुःसामधामन् = कृष्ण (१२. ४७, १२)।

ऋग्वेद : ये ब्रह्मा की सभा में उपस्थित होते थे (२. ११, ३२)। इनकी नारायण से उत्पत्ति हुई है (३. १८९, १४)। शिव के रथ के पीछे चलने वालों में एक यह भी थे (८. ३४, ४४)। ऋग्वेद में कृष्ण के नामों की गणना कराई गई है (१२. ३४१, ८)। इनको कृष्ण के साथ समीकृत किया गया है (१२. ३४२, ९७)। 'ऋग्वेदपाठपठितं व्रतमेतद्धि दुश्चरम्', (१२. ३४८, २२)। 'ऋग्वेदे वर्तते चाग्र्या श्रुतिर्यस्य महात्मनः', (१३. ३०, ५९)। 'ऋग्वेदश्चागमस्तत्र पदक्रमविभूषितः', (१३. ८५, ९०)।

ऋच् (बहु०), (ऋग्वेद के श्लोक) : 'ऋचो यजूंषि सामानि', (१. १, ६६; २९, ३५)। 'ऋचो बह्वृचमुख्यैश्च प्रेर्यमाणाः पदक्रमैः', (१. ७०, ३७)। ३. २६, ३। 'ऋग्यजुःसामसंभवे', (३. ४३, १८)। ३. ८२, ९६। 'न सामऋग्यजुर्वर्णाः क्रिया नासीच्च मानवी', (३. १४९, १४)। 'अनृचः', (३. १४९, २८)। 'ऋगेका वृणुते यज्ञम्', (३. ३१३, ५४)। ५. ४३, ३. ४)। 'अनृचः', (५. ४३, ४२)। ५. ४४, २८। 'ऋक् साम यजुरेव च', (६. ३३, १७)। ९. ३६, ३४; ११. २६, ४०। 'ऋग्यजुःसामसहितैर्वचोभिः', (१२. ५२, २२)। 'ऋग्यजुःसामविद्', (१२. ६०, ४३)। 'अनृग्यजुरसामा च', (१२. ६०, ४४)। १२. ६०, ४७। 'ऋग्यजुःसामसंपन्नाः', (१२. ७६, ३)। 'ऋक्सामसंधान्', (१२. २०१, ८)। १२. २०६, १६. १८। 'अनृचः', (१२. २२८, ६६)। १२. २३२, ३३। 'ऋक्सामवर्णाक्षरतः', (१२. २३५, १)। 'अनृचो द्विजः', (१२.२३६,६)। 'ऋक्सामसु', (१२. २३८, ८)। 'ऋक्सहस्राणि', (१२. २४६, १४)। १२. २५१, २; २६८, २६. ३७; २९२, १३. १७। 'ऋग्यजुःसामगः', (१२. ३०९, १९)। 'यजुर्ऋक्सामभिः', (१२. ३३५, ४०)। चतुर्वेदोद्गताभिस्तमृग्भिः', (१२. ३४०, १११)। 'ऋग्भिर्यमनुशासन्ति तत्त्वे कर्मणि बह्वृचाः', (१३. १६, ४७)। १३. ९३, २५। 'वाग्भिर्ऋग्भूषितार्थाभिः', १३. १३९, ४६; १४१, २४)। १४. २५, १६; १६. ४, २८। तु० की० ऋग्वेद।

१. ऋचीक, विवस्वान् के स्वरूपभूत द्वादश सूर्यों में से एक का नाम है (१. १, ४२)।

२. ऋचीक, एक ऋषि का नाम है जो भृगु के वंशज तथा जमदग्नि और शुनःशेफ के पिता थे (१. २, ६)। इन्हें और्व का पुत्र और जमदग्नि का पिता कहा गया है (१. ६६, ४७)। इन्होंने वरुण से प्राप्त करके एक सहस्र अश्वों का दहेज देकर सत्यवती के साथ विवाह किया था (३. ११५, २१. २५. ३०)। रामजामदग्न्य के पितरों के रूप में इनका उल्लेख (३. ११७, १०)। सत्यवती के साथ इनके रमण का उल्लेख (५. ११७, १४)। इन्होंने सत्यवती के लिये एक सहस्र अश्वों को दहेज में दिया (५. ११९, ४. ६)। ऋचीक सहित रामजामदग्न्य के पितरों ने परशुराम को भीष्म के साथ युद्ध करने से विरत करने का प्रयास किया (५. १८५, २३)। "गाधि ने अपनी कन्या सत्यवती का भृगुपुत्र ऋचीक के साथ विवाह कर दिया। भृगुवंशी ऋचीक ने अपनी पत्नी सत्यवती को एक चरु खाने को दिया, और तपस्या में तत्पर हो गये। इसी समय तीर्थयात्रा करते हुए राजा गाधि अपनी पत्नी के साथ ऋचीक के आश्रम पर आये। सत्यवती ने भूल से अपना चरु अपनी माता को दे दिया और माता का चरु स्वयं खा लिया, परिणामस्वरूप सत्यवती ने एक ऐसा गर्भ धारण किया जो क्षत्रियों का विनाश करने वाला था। उस गर्भगत बालक को देखकर भृगुश्रेष्ठ ऋचीक ने सत्यवती को बताया कि उसका पुत्र अत्यन्त क्रोधी और क्रूरकर्मा होगा। उन्होंने यह भी बताया कि उनका संकल्प इस प्रकार का पुत्र उत्पन्न करने का नहीं था। सत्यवती ने ऋचीक से कहा कि उसका पौत्र तो भले ही उग्र स्वभाव का हो जाय परन्तु पुत्र शान्त स्वभाव का ही मिलना चाहिये। ऋचीक ने उसे यह वरदान दिया जिससे सत्यवती से जमदग्नि ने जन्म लिया और जमदग्नि से क्षत्रिय-हन्ता परशुराम उत्पन्न हुए (१२. ४९, ७. ९. १२. १३. १७. २३. २५. २८. ३१)।" इन्हें जमदग्नि का पिता कहा गया गया है (१२. २०८, ३३)। राजा द्युतिमत ने ऋचीक को अपना साम्राज्य देकर स्वर्गलोक प्राप्त किया (१२. २३, ३३)। इनके आत्मज के रूप में शुनःशेफ का उल्लेख (१३. ३, ६)। इन्होंने वरुण से प्राप्त एक सहस्र अश्वों को दहेज में देकर सत्यवती से विवाह किया; जमदग्नि और विश्वामित्र की उत्पत्ति (१३. ४, ८. ९. ११. १६. १८. २४. २९. ६१)। च्यवन ने भविष्यवाणी की कि ऊर्व से उत्पन्न होकर ऋचीक गाधि की पुत्री सत्यवती से विवाह करेंगे (१३. ५६, ७)। द्युतिमत् ऋचीक को अपना साम्राज्य देकर सर्वोत्तम लोकों को चले गये (१३. १३७, २३; १५०, ७९)। ऋचीक आदि पितरों ने रामजामदग्न्य को क्षत्रियों का संहार करने से विरत करने का प्रयास किया (१४. २९, २०)। तु० की० **भार्गव, भार्गवर्षभ, भृगुशार्दूल, भृगुनन्दन, भृगुपुत्र, भृगुसत्तम, भृगुसुत, ब्रह्मर्षि, विप्रर्षि।**

३. ऋचीक, भूमन्यु के छठवें पुत्र का नाम है। इनकी माता का नाम पुष्करिणी था (१. ९४, २४)।

ऋचीकनन्दन = रामजामदग्न्य (३. ९९, ४२)।

ऋचीकपुत्र = जमदग्नि (३. ११८, १० (?); १२९, ७ (?); १३. १६५, ४५)।

१. ऋचीकतनय = शुनःशेफ (१२.२९२,१३)। तु० की० १३. ३, ६।

२. ऋचीकतनय = जमदग्नि (१३. १५०, ३९)।

ऋचेयु, रौद्राश्व के दस पुत्रों में से प्रथम पुत्र, एक राजा, का नाम है (१. ९४, १०)। = अनाधृष्टि, ये मतिनार के पिता थे तथा ये ही भूमण्डल के सम्राट् हुये (१. ९४, १२)। (१. ९४, ८ में ये अन्वग्भानु के साथ एकात्मक प्रतीत होते हैं)।

ऋण्मय = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

ऋत, एकादश रूद्रों में से एक का नाम है (१३. १५०, १२)।

ऋतम् = कृष्ण (१२. ४७, ३५)।

१. ऋतधामन् = महापुरुष (१२. ३३८ में १९ वाँ नाम)।

२. ऋतधामन् = कृष्ण (नारायण) : १२. ३४२, ६९।

ऋतवः पट् = स्कन्द (३. २३२, १२)।

ऋतस्य कर्तृ = स्कन्द (३. २३२, १७)।

ऋता = सरस्वती (?) : 'ऋता ब्रह्मसुता सा मे सत्या देवी सरस्वती' (१२. ३४२, ७५)।

१. ऋतु = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

२. ऋतु = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

३. ऋतु (बहु०) : 'ऋतवः', (९. ४५, ११. १५)।

४. ऋतु (बहु०) = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

ऋतुपर्ण, अयोध्या के एक राजा का नाम है (३. ६०, २५)। ये नल को द्यूतक्रीडा की शिक्षा देंगे (३. ६६, २०)। इन्होंने वाहुक बने हुए नल को अपने यहाँ अश्वाध्यक्ष के पद पर नियुक्ति की (३. ६७, १. ४. ५. ८)। ये दमयन्ती के द्वितीय स्वयंवर में आमन्त्रित किये गये थे (३. ७०, ३-५. २३. २७)। इनका अपने सारथि नल के साथ दमयन्ती के द्वितीय स्वयंवर में विदर्भदेश को प्रस्थान (३. ७१, १. ८. १२. १८. ३५)। नल को अक्ष-विद्या की शिक्षा देते हैं (३. ७२, १८. २८. २९)। इनका कुण्डिनपुर में प्रवेश तथा भीम के द्वारा इनका स्वागत (३. ७३, १. १७. १९. २०. २३. ३५; ७४, ११; ७५, १०)। 'कोसलायामृतुपर्णनिवेशने', (३. ७६, २८)। वाहुक वेशधारी नल का दमयन्ती से मिलन सुनकर ऋतुपर्ण अत्यन्त प्रसन्न हुये (३. ७७, ८)। इन्होंने नल से अश्वविद्या की शिक्षा प्राप्त की (३. ७७, १८)। ऋतुपर्ण के अयोध्या चले जाने पर राजा नल ने कुछ समय तक कुण्डिनपुर में निवास किया (३. ७७, २०)।

ऋतुस्थला, स्वर्ग की प्रधान ग्यारह अप्सराओं में से एक का नाम है। इसने अर्जुन के जन्मोत्सव पर नृत्य किया था (१. १२३, ६५)।

ऋतेयु, एक ऋषि, वरुण के सात ऋत्विजों में से एक का नाम है (१३. १५०, ३६)।

ऋत्वन्, अर्जुन के जन्मोत्सव पर पधारने वाले एक देवगन्धर्व का नाम है (१. १२३, ५७)।

ऋद्ध = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

ऋद्धि, कुबेर की पत्नी का नाम है : 'यथा ऋद्ध्यां धनेश्वरः', (५. ११७, ९)। 'ऋद्धिर्वैश्रवणस्य च', (१३. १४६, ४)। 'सह ऋद्ध्या धनेश्वरः', (१३. १६५, ११)।

ऋद्धिमान्, गरुड़ द्वारा मारे गये एक महानाग का नाम है (३. १६०, १५)।

ऋभु से ऋभु नामक देवताओं के गण से तात्पर्य है; ये देवताओं द्वारा भी आराधित होते हैं (३. २६१, १९)। 'ऋभवो मरुतश्चैव देवानां चोदितो गणः', (१२. २०८, २२)।

ऋश्यशृङ्ग, देखिये ऋष्यशृङ्ग.

ऋषद्‌गु, एक राजा, वृजिनीवत के पुत्र तथा चित्ररथ के पिता, का नाम है (१३. १४७, २९)। पूना संस्करण में 'उषङ्गु' पाठ है।

१. ऋषभ, धृतराष्ट्र के कुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ५७, १७)।

२. ऋषभ, एक प्राचीन तपस्वी ऋषि का नाम है। ब्रह्मा की सभा में इनकी उपस्थिति का उल्लेख (२. ११, २४)। ये ऋषभकूट पर निवास करते थे (३. ११०, ८)। 'इतिहासं सुमित्रस्य निर्वृत्तमृषभस्य च', (१२. १२५, ८)। 'ऋषभो नाम विप्रर्षिः', (१२. १२७, १)। 'ऋषभ उवाच', (१२. १२८, ३)। ऋषभ और सुमित्रा के बीच संवाद (१२. १२८, २५)।

३. ऋषभ, एक वृषभरूपधारी राक्षस का नाम है। बृहद्रथ ने गिरिव्रज में इसका वध किया तथा इसकी खाल से तीन नगाड़े बनाये गये (२.२१,१६)।

४. ऋषभ, एक तीर्थ का नाम है (३. ८५, १०)।

५. ऋषभ, दक्षिण समुद्र-तटवर्ती एक पर्वत का नाम है (३. ८५, २१)। 'तत्रैव ऋषभो नाम पर्वतः सागरान्तिके', (५. ११२, २२)। यहाँ शाण्डिली निवास करता था (५. ११३, १)।

६. ऋषभ, एक प्राचीन राजा का नाम है। इन्हें भारतवर्ष बहुत प्रिय रहा है (६. ९, ७)। शासनकर्ता प्राचीन असुर राजाओं में इनका भी उल्लेख है (१२. २२७, ५१)।

७. ऋषभ, एक राजकुमार का नाम है जो द्रोणनिर्मित गरुडव्यूह के हृदय-स्थान में खड़ा किया गया था (७. २०, १२)।

८. ऋषभ = शिव (७. २०१, ६३)।

९. ऋषभ, एक द्वीप का नाम है (९. ३८, २६)। तु० की० ऋषभद्वीप।

ऋषभकूट = हेमकूट (३. ११०, ८)।

ऋषभकेतु = शिव (१२. २६६, ४५)।

ऋषभद्वीप, एक स्थान का नाम है : 'ऋषभद्वीपमासाद्य मेध्यं क्रौञ्चनिषूदनम्', (३. ८४, १६०)।

ऋषयःसप्त, देखिये बहुवचन में सप्तर्षि।

१. ऋषिक, एक राजर्षि का नाम है जो दानवों के सरदार, 'अर्क', के अंश से उत्पन्न हुये थे (१. ६७, ३२. ३३)।

२. ऋषिक, एक उत्तरीय जनपद का नाम है। अर्जुन ने इसे अपना दिग्विजय के समय विजित किया था (२. २७, २५-२७)। 'कम्बोजा ऋषिका', (५. ४, १८)। 'ऋषिका विदगाः', (६. ९, ६४)। इसे कर्ण ने मुख्यतया दुर्योधन को कर देने की दृष्टि से विजित किया था (८.८,२०)।

ऋषिकुल्या (बहु०), एक नदी एवं प्राचीन तीर्थ का नाम है (२. २८, ४ ; ३. ८४, ४८. ४९ ; ६. ९, ४७ ; १३. १६५, २६)।

ऋषिगिरि, मगध की राजधानी गिरिव्रज के समीपवर्ती एक पर्वत का नाम है (२. २१, २)।

ऋषिलोक—पाणिखात में स्नान करने से व्यक्ति को ऋषिलोक की प्राप्ति होती है (३. ८३, ९०)। ऋषिकुल्या में स्नान करने वाला व्यक्ति भी ऋषिलोक को प्राप्त करता है (३. ८४, ४९)। 'ऋषिलोकं च सोऽगच्छत् भगीरथ इति श्रुतम्', (१३. १०३, ५)।

ऋष्यमूक, एक पर्वत का नाम है। इसके शिखर पर मार्कण्डेय ने श्रीराम और लक्ष्मण का दर्शन किया था (३. २५, ९)। राज्य से बाली द्वारा निष्कासित सुग्रीव से राम का मिलन इसी पर्वत पर हुआ (३. १४७, ३०)। इसी के समीप पम्पासरोवर स्थित है (३. २७९, ४४)। ऋष्यमूक पर्वत पर सुग्रीव के साथ राम की मैत्री हुई (३. २८०, ९)।

ऋष्यशृङ्ग, एक मुनि का नाम है जो विभाण्डक के पुत्र थे। 'ऋष्यशृङ्गस्य चरित्रम्', (१. २, १६८)। ब्रह्मा की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ११, २३)। "कश्यप गोत्रीय महात्मा विभाण्डक के पुत्र ऋष्यशृङ्ग ने अपनी तपस्या के प्रभाव से इन्द्र द्वारा वर्षा कराई थी। तेजस्वी ऋष्यशृङ्ग मृगी के पेट से उत्पन्न हुए थे। इन्होंने राजा लोमपाद के राज्य में वर्षा कराकर राजा को प्रसन्न किया, जिससे प्रसन्न होकर राजा ने अपने पुत्री शान्ता का इनके साथ विवाह कर दिया (३. ११०, २३-२६)।" "युधिष्ठिर द्वारा ऋष्यशृङ्ग के जन्म के सम्बन्ध में प्रश्न करने पर लोमश ने कहा : कश्यप गोत्रीय विभाण्डक मुनि ने एक बड़े कुण्ड में प्रविष्ट होकर घोर तपस्या आरम्भ की। एक दिन जब वे जल में स्नान कर रहे थे तब उर्वशी नामक अप्सरा को देखकर उनका वीर्य स्खलित हो गया। उसी समय प्यास से व्याकुल एक मृगी ने जल सहित उस वीर्य का पान कर लिया और गर्भवती हो गई। वह मृगी पूर्व जन्म में एक देवकन्या थी। ब्रह्मा ने उसे यह वचन दिया था कि वह मृगी होकर एक मुनि को जन्म देने के पश्चात् उस योनि से मुक्त हो जायगी। इसीलिये विभाण्डक के पुत्र ऋष्यशृङ्ग का जन्म मृगी के पेट से हुआ। ऋष्यशृङ्ग के सर पर एक सींग थी इसलिये उनका यह नाम पड़ा। ऋष्यशृङ्ग ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए सदैव वन में ही निवास करते थे और उन्होंने अपने पिता के अतिरिक्त अन्य किसी भी मनुष्य को पहले कभी नहीं देखा था। इन्हीं दिनों अङ्गराज लोमपाद का एक ब्राह्मण के साथ मिथ्या व्यवहार करने के कारण समस्त ब्राह्मणों ने त्याग कर दिया था और इसीलिये इन्द्र ने उनके राज्य में वर्षा भी बन्द कर दी थी। एक श्रेष्ठ ब्राह्मण के परामर्श से इन्होंने अपने पापों का प्रायश्चित करके ब्राह्मणों को प्रसन्न किया। तदनन्तर राजा ने मन्त्रियों को बुलाकर उनसे ऋष्यशृङ्ग को अपने राज्य में बुलाने के सम्बन्ध में परामर्श किया। मन्त्रियों के परामर्श के अनुसार राजा लोमपाद ने एक वेश्या तथा अनेक सुन्दर स्त्रियों आदि को वन में ऋष्यशृङ्ग के पास भेजा (३. ११०, २७-५८)।" "उस वेश्या ने नाव पर एक सुन्दर आश्रम बनाया जिसके चारों ओर सुन्दर फल-पुष्पों के वृक्ष थे। उसने उस नाव पर स्थित आश्रम को विभाण्डक मुनि के आश्रम से थोड़ी दूर पर बाँध दिया। जब उसे यह पता लग गया कि विभाण्डक मुनि आश्रम पर नहीं हैं तब उसने अपनी वेश्या-पुत्री को मुनि के आश्रम पर भेजा। मुनि के आश्रम पर जाकर उसने ऋष्यशृङ्ग से कुशल समाचार पूछा और ऋष्यशृङ्ग ने उसे सत्कारपूर्वक आसन पर बैठाया, और फल इत्यादि खाने के लिये दिया। वेश्या ने बताया कि वह अपने धर्म के अनुसार मुनि के अर्घ्य और पाद्य का स्पर्श नहीं करेगी। फिर भी, उसने बताया कि वह उनका आलिङ्गन करेगी। तदनन्तर उस वेश्या ने ऋष्यशृङ्ग को अत्यन्त सुन्दर और अमूल्य भक्ष्य-पदार्थ, सुगन्धित मालायें, सुन्दर वस्त्र और अच्छी श्रेणी के पेय आदि प्रदान किये। साथ ही मुनि के साथ क्रीडा तथा आलिङ्गन आदि के द्वारा उसने ऋष्यशृङ्ग के हृदय में काम का संचार कर दिया और तदुपरान्त अग्निहोत्र का बहाना बना कर धीरे-धीरे वहाँ से चली गई। उसके चले जाने पर ऋष्यशृङ्ग अत्यन्त व्यथित हो उठे। थोड़ी देर के पश्चात् विभाण्डक मुनि ने आकर ऋष्यशृङ्ग की खिन्न दशा को देखा और उनसे पूछा कि आश्रम में कौन आया था (३. १११)।" ऋष्यशृङ्ग ने बताया कि आश्रम में एक जटाधारी ब्रह्मचारी आया था जिसका शरीर सुवर्ण के समान और नेत्र कमल के सदृश थे। उसकी सारी जटायें एक सुनहली रस्सी में गुथीं हुई थीं। उसके शरीर पर सुन्दर आभूषण थे। ऋष्यशृङ्ग ने वेश्या का पूर्ण वर्णन

करते हुए विभाण्डक से उसी के पास जाने की अनुमति माँगी (३.११२)।" "विभाण्डक ने अपने पुत्र की बात सुनकर उससे बताया कि वह आगन्तुक एक राक्षस था। तदनन्तर विभाण्डक स्वयं उस आगन्तुक की तीन दिनों तक स्वयं खोज करते रहे किन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली। इसके बाद जब विभाण्डक मुनि विधि के अनुसार पुनः फल लाने के लिये आश्रम से बाहर गये तब वेश्या ऋष्यशृङ्ग को लुभाने के लिये उनके आश्रम पर आई। उसे देखते ही ऋष्यशृङ्ग ने कहा : 'मेरे पिता जी जब तक लौटकर नहीं आते तब तक हम दोनों आपके आश्रम पर चलें।' इस प्रकार उस वेश्या ने ऋष्यशृङ्ग को नाव पर लाकर नाव को खोल दिया और उन्हें महाराज लोमपाद के पास ले आई। लोमपाद ने एक नाव्याश्रम का निर्माण करके ऋष्यशृङ्ग को उसी में रखा। इस प्रकार, राजा लोमपाद ने विभाण्डक-पुत्र ऋष्यशृङ्ग को अन्तःपुर में ठहरा दिया। सहसा उसी क्षण इन्द्र देव ने वर्षा आरम्भ कर दी। प्रसन्न होकर लोमपाद ने अपनी पुत्री शान्ता का ऋष्यशृङ्ग के साथ विवाह कर दिया। जब विभाण्डक मुनि ने आश्रम पर लौटकर अपने पुत्र को नहीं देखा तो उन्होंने राजा लोमपाद पर सन्देह करके राजा तथा उसके नगरवासियों को भस्म कर देने के उद्देश्य से चम्पा नगरी की ओर प्रस्थान किया। उनके क्रोध को शान्त करने के लिये राजा ने मार्ग में स्थान-स्थान पर बहुत से गाय-बैल रखवा दिये और किसानों द्वारा खेतों की जुताई आरम्भ करा दी। विभाण्डक मुनि के आगमन-पथ में राजा ने अनेक पशु तथा वीर पशुरक्षक भी नियुक्त कर दिये और उन्हें आदेश दिया कि जब महर्षि विभाण्डक उनसे पूछें तब वे सब हाथ जोड़ कर महर्षि को यह उत्तर दें : 'ये सब आपके पुत्र के ही पशु हैं ; खेत भी उन्हीं के जोते जा रहे हैं ; और हम सब लोग भी आपके आज्ञापालक दास हैं।' इस प्रकार विभाण्डक मुनि को प्रसन्न किया गया। राजधानी में आकर विभाण्डक ने अपने पुत्र को देवराज इन्द्र के समान ऐश्वर्य-सम्पन्न देखा। उन्होंने अपने पुत्र को आज्ञा दी कि वह एक पुत्र उत्पन्न करके पुनः आश्रम में आ जाय। ऋष्यशृङ्ग ने पिता की आज्ञाका पालन किया और ज्यों ही उनके एक पुत्र उत्पन्न हुआ वे पिता के आश्रम में लौट आये। शान्ता भी उनके साथ आश्रम पर आई और उसी प्रकार अपने पति की सेवा करती रही जिस प्रकार नारायणी इन्द्रसेना महर्षि मुद्गल की सेवा करती थी। (३. ११३)।" ऋष्यशृङ्ग के नाम के लिये देखिये : ३. ११०, २३. २७. ३१. ३३. ३८. ३९. ४७. ५१. ५३. ५७ ; १११, ८. ९. १३. १४. १६-१९ ; ११२, १ ; ११३, ६. ७. ११. २२. २४। 'लोमपादश्च राजर्षिः शान्तां दत्वा सुतां प्रभुः। ऋष्यशृङ्गाय विपुलैः सर्वकामैरयुज्यत ॥', (१२. २३४, ३४)। 'ऋष्यशृङ्गश्च काश्यपः', (१२. २९६, १४)। १३. १३७, २५ (= कुछ अन्तर के साथ १२. २३४, ३४)।

ए

एक = हिरण्यगर्भ (१२. ३०२, १९)।

एकचक्र, कश्यप और दनु के पुत्र एक असुर का नाम है (१. ६५ २५)। ये पृथिवी पर प्रतिविन्ध्य नाम से विख्यात राजा हुए (१. ६७. २१)।

एकचक्रा, एक प्राचीन नगरी का नाम है (१. २, १०७ ; ६१, २६. २७ ; ९५, ७२. ७३ ; १६५, ११)। एकचक्रा नगरी में कुन्ती देवी ने अपने पाँचों पुत्रों के साथ कुछ समय तक एक ब्राह्मण के यहाँ निवास तथा भीम ने बकासुर का वध किया (१. १५७, १. २ ; १६४, १२)। 'आगतानेकचक्रायाः सोदर्यानेकचारिणः', (१. १८४, ४)। 'एकचक्रायाभिमुखाः संवृता ब्राह्मणव्रजैः', (३. १२, १११)। 'ततोऽगच्छन्नेकचक्रां पाण्डवाः संशितव्रताः', (३. १२, ११२)। 'मात्रा सहैकचक्रायां ब्राह्मणस्य निवेशने', (५. १२८, १४)।

एकचन्द्रा, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ३०)।

एकचूडा, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ५)।

एकजट, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ५८)।

एकत, एक ऋषि का नाम है जो द्वित और त्रित के भ्राता थे—९. ३६, ८. १४. २०. २१. २८ ; १२. २०८, ३१ ; ३३६, ६. २०. ६० ; ३३९, १२. ८६ ; ३४१, ४६। बाण-शय्या पर पड़े हुए भीष्म को देखने के लिए उपस्थित हुये ऋषियों में से एक यह भी थे (१३. २६, ७)। देखिये १३. १५०, ३६ ; १६५, ४२ भी।

एकत्वचा, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २४)।

१. एकपद् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

२. एकपद् = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

एकपर्वतक (?), एक पर्वत का नाम है : 'एक पर्वतके नद्यः क्रमेणैति', (२. २०, २७)।

एकपाद (बहु०), एक जनपद का नाम है (२. ५१, १८)।

एकलव्य, एक निषाद राजकुमार का नाम है जो क्रोधवशगणों से उत्पन्न अवतारों में से एक था (१. ६७, ६३)। "उन सहस्रों राजकुमारों में से निषादराज हिरण्यधनुस् का पुत्र एकलव्य भी एक था जो धनुर्वेद की शिक्षा के लिये द्रोणाचार्य के पास आये थे। एक नैषादि होने के कारण जब द्रोणाचार्य ने इसे शिष्य के रूप में ग्रहण नहीं किया तब इसने वन में जाकर द्रोण की एक मिट्टी की प्रतिमा के सम्मुख शस्त्र चलाने की कला का अभ्यास आरम्भ किया और उसमें अत्यन्त प्रवीण हो गया। एक दिन राजकुमारों का कुत्ता भोंकता हुआ इसके समीप आया तो इसने उसके मुख में सात बाण मार दिये। इस प्रकार मुख में सात बाणों से विद्ध वह कुत्ता जब पाण्डवों के पास लौटा तो उन लोगों ने उसे मारने वाले धनुर्धर के लक्ष्य-वेध की शुद्धता की अत्यन्त प्रशंसा की। यह धनुर्विद्या में अर्जुन से आगे न बढ़ जाय इसलिये द्रोणाचार्य ने गुरुदक्षिणा के रूप में इससे इसके दाहिने हाथ का अगूँठा माँग लिया (१. १३२, ३१, ४५. ४७. ५१. ५२. ५४. ५५. ५७)। देखिये २. ३७, १४ भी। उन राजाओं में से एक जो राजसूय के समय युधिष्ठिर की सेवा में उपस्थित हुये थे (२. ५३, ८)। उन राजाओं में से एक जिनके पास पाण्डवों को निमन्त्रण भेजना था (५. ४, १७)। भगवान् कृष्ण उस निषादराज एकलव्य को, जो दूसरों के लिये अजेय था, सदैव युद्ध के लिये ललकारा करते थे। वही एकलव्य श्रीकृष्ण के हाथ मारा जाकर प्राणशून्य हो उसी प्रकार रण-शय्या में सो गया जैसे जम्भ नामक दैत्य स्वयं ही वेगपूर्वक पर्वत पर आघात करके प्राण-शून्य हो महानिद्रा में निमग्न हो गया था (५. ४८, ७७)। श्रीकृष्ण ने निषादों सहित इसका वध किया (७. १८०, ३२)। 'एकलव्यं हि साङ्गुष्ठमशक्ता देवदानवाः', (७. १८१, १९)। 'निषादराज्ञो विषयमेकलव्यस्य जग्मिवान्', (१४. ८३, ७)। 'नैषादिमेकलव्यं च चन्द्रे कालिङ्गमागधान्', (१६. ६, ११)। तु० की० **नैषादि, निषाद, निषादराज।**

एकलव्यसुत, एकलव्य के पुत्र का नाम है। इसे अर्जुन ने विजित किया था (१४. ८३, ८)।

एकव्यूहविभाग = विष्णु (नारायण) : १२. ३४८, ५७।

एकशीर्षन् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

१. एकशृङ्ग, पितरों के एक वर्ग का नाम है। ये ब्रह्मा जी की सभा में उपस्थित होते थे (२. ११, ४७)।

२. एकशृङ्ग = विष्णु (कृष्ण) : १२. ३४०, १०६। विष्णु का यह नाम होने की व्युत्पत्ति : 'एकशृङ्गः पुरा भूत्वा वराहो नन्दिवर्धनः। इमां चोद्धृतवान्भूमिमेकशृङ्गस्ततो ह्ययम् ॥' (१२. ३४२, ९२)।

एकहंस, एक तीर्थ का नाम है। यहाँ स्नान करने से सहस्र गोदान का फल प्राप्त होता है (३. ८३, २०)।

१. एकाक्ष, कश्यप और दनु के पुत्र, एक असुर का नाम है (१. ६५, २९)।

२. एकाक्ष, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ५८)।

३. एकाक्ष = शिव (१३. १६१, २)।

एकात्मन् = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

एकानङ्गा, यशोदा की पुत्री तथा श्रीकृष्ण की बहन का नाम है। इसी के निमित्त श्रीकृष्ण ने कंस का वध किया था (गीता प्रेस संस्करण : २. ३८, २९ के बाद दाक्षिणात्यपाठ, पृष्ठ ८२० कालम २)।

एकानंशा = कुहू (३. २१८, ८)।

एकान्तदर्शन = महापुरुष (१२. ३३८ में १९९ वाँ नाम है)।

एकासन.—युधिष्ठिर को कर देने वाले जनपदों में इसका भी उल्लेख है (२. ५२, ३)।

एडी, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १३)।

एतावर्णौ = नर और नारायण : 'एतावर्णाववर्णौ च विश्रुतौ', (३. ९०, १३)। नीलकण्ठी में इस प्रकार अर्थ किया गया है : 'एता कृष्णसृगी तद्वर्णौ कृष्णौ नरनारायणवित्यर्थः। वस्तुतस्त्ववर्णौ वर्णा लोहितशुक्लकृष्णाः रजःसत्वतमांसि तद्रहितौ'।

एरक, कौरव्य कुलोत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ५७, १३)।

एलपत्र = एलापत्र (५. १०३, १०)। शिव ने एलपत्र और पुष्पदन्त को अपने रथ के जूये को कीलें बनाया (७. २०२, ७३)।

एलपुत्र, देखिये एलपत्र।

एलापत्र, एक नाग का नाम है : १. ३५, ६; ३८, १. १७; ३९, १. ८. ११।

एलविल, देखिये ऐलविल।

ऐ

ऐक्ष्वाकी, सुहोत्र की पत्नी तथा आजमीढ की माता का नाम है (१. ९४, ३०)। तु० की० सुवर्णा इक्ष्वाकुकन्या।

१. ऐक्ष्वाकु = भगीरथ (१२. २९, ६९)।

२. ऐक्ष्वाकु = सगर (१२. २९, १३०)।

३. ऐक्ष्वाकु = त्रिशङ्कु (१३. ३, ९)।

ऐन्द्र : 'ऐन्द्रे चन्द्रसमायुक्ते मुहूर्तेऽभिजितेऽष्टमे', (१. १२३, ६)। 'ततः प्रहस्य बीभत्सुर्दिव्यमैन्द्रं महारथः', (४. ६३, ८)। 'देवा भीताः शक्रमकामयन्त त्वया त्यक्तं महदैन्द्रं पदं तत्', (५. १६, २३)। 'समासेन्द्रीम्', (११. ८, २१)। 'ऐन्द्रो राजन्य उच्यते', (१२. ६०, २०)। 'ऐन्द्रो धर्मः क्षत्रियाणाम्', (१२. १४१, ६४)। 'अहमैन्द्राच्च्युतः स्थानात्त्वमिन्द्रः प्रकृतो दिवि', (१२. २२७, ७१)। 'ऐन्द्रं समाविशद्वज्रं लोकसंरक्षणे रतः', (१२. २८१, ३२)। 'ऐन्द्रीं तु दिशमास्थाय शैलराजस्य धीमतः', (१२. ३२७, २५)। 'नहुष ऐन्द्रं पदमध्यास्ते', १२. ३४२, ४७)। 'ब्रह्मान्नारायणच्चैन्द्राद्राग्नेयादपि वरुणात्', (१३. १४, २६१)। 'ऐन्द्रात् स्थानात्', (१३. ९९, २४; १०७, ७९)। जो व्यक्ति प्रातःकाल की संध्या—ऐन्द्रीं सन्ध्याम्—करके सूर्य के सम्मुख खड़ा होता है उसे समस्त तीर्थों में स्नान करने का फल प्राप्त होता है और साथ ही वह सब पापों से छुटकारा पा जाता है (१३. १२६, १५)। 'ऐन्द्रं वाक्यम्', (१४. १०, ४)।

ऐन्द्रद्युम्न आख्यान : १. २, ५५. १९३।

ऐन्द्रद्युम्नि = जनक (३. १३३, ४)।

ऐन्द्राग्न (इन्द्र और अग्नि से सम्बन्धित) : 'ऐन्द्राग्न्योर्वै भागः', (५. १६, ३२)।

ऐन्द्राग्नेय : १२. १४१, ९५।

ऐन्द्राग्न्य : 'ऐन्द्राग्न्येन विधानेन', (१२. ६०, ३९)।

ऐन्द्रि = अर्जुन : 'ऐन्द्रिर्नरस्तु भविता यस्य नारायणः सखा', (१. ६७, ११६)। 'ऐन्द्रिरिन्द्रानुजसमः स पार्थो दृश्यतामिति', (१. १३५, ७)। 'ऐन्द्रिरिन्द्रावरजप्रभाव.', (१. १८८, २०)। 'ऐन्द्रिः स्थिरमना', (३. ३८, १३)। 'सम्मोहनं शत्रुसहोऽन्यदस्त्रं प्रादुश्चकारैन्द्रिरपारणीयम्', (४. ६६, ८)। 'ऐन्द्रिमिन्द्रानुजसमं महेन्द्रसदृशं बले', (६. ४९, १६)।

ऐन्धन, धौम्य द्वारा वर्णित सूर्य के १०८ नामों में से एक (३. ३, १९)।

१. ऐरावण, इन्द्र के हाथी का नाम है। 'ऐरावणो महानागोऽभवद्वज्रभृता धृतः', (१. १८, ४०)। 'हस्तिष्वैरावणो वरः', (४. २, १७)। 'ऐरावणो नागराजो', (५. ९९, १५)। 'ऐरावणसमा युधि', (७. ११२, ३५)। 'ऐरावणस्थस्य चमूविमर्दे दैत्याः पुरा वासवस्येव राजन्', (९. २०, ६)। 'नागेन्द्रमैरावणमिन्द्रवाह्यम्', (९. २०, १२)। 'चतुर्दन्तं सुदान्तं च वारणेन्द्रं श्रिया वृतम्। आरुह्यैरावतं शक्रस्त्रैलोक्यमनुसंययौ॥' (१२. २२७, १०)। तु० की० ऐरावत।

२. ऐरावण, कुबेर की सभा में उपस्थित होने वाले एक सर्प का नाम है (२. ९, ८)।

१. ऐरावत, इन्द्र के हाथी ना नाम है। 'ऐरावतो नागराट्', (१. ३, १६७)। 'ऐरावतः सुतस्तस्या देवनागो महागजः', (१. ६६, ६३)। 'ततो मुहूर्ताद्भगवानैरावतशिरोगतः। आजगाम सहेन्द्राण्या शक्र सुरगणैर्वृतः', (३. ४१, १३)। 'ऐरावतं चतुर्दन्तं कैलासमिव शृङ्गिणम्', (३. ४२, ४०)। 'ऐरावतं समास्थाय', (३. १९३, ९)। 'महानागो चित्रश्चैरावतश्च', (३. २२५, २३ (?))। 'आरुह्यैरावतस्कन्धं प्रययौ', (३. २२७, ३)। इसकी दो घंटियों का नाम वैजयन्ती है (३. २३१, १८)। ऐरावतं समास्थाय शक्रश्चापि सुरैः सह', (३. २३१, ३३)। 'ऐरावतं समारुह्य द्विपेन्द्रं लक्षणैर्युतम्', (५. १८, १)। ऐरावत पाताल से शीतल जल लेकर मेघों में स्थापित करता है, जिसे देवराज इन्द्र भूतल पर बरसाते हैं (५. ९९, ७)। 'ऐरावतगतो राजा देवानामिव वासवः', (५. १६७, ३८)। 'दिग्गजा भरतश्रेष्ठ वामनैरावतादयः', (६. १२, ३३)। 'ऐरावतं गजेन्द्राणाम्', (६. ३४, २७)। 'नागथोऽथ महीपालो गजमैरावणोपमम्', (६. ६२, ४६)। विश्व के हाथियों में से एक यह भी है (६. ६४, ५६)। 'ऐरावतस्थो मघवान् वारिधारा इवानघ', (६. ९५, ३४)। 'ऐरावतकुले', (७. १२१, २६)। 'नागानैरावतोपमान्', (७. १४८, ४९)। 'कुञ्जरमैरावतप्रख्यम्', (९. २०, २)। 'ऐरावतः सानुचरः', (९. ४५, १९ (?))। 'ऐरावतस्कन्धमधिरुह्य श्रिया वृतः', (१२. २२३, १२)। 'तमैरावतमूर्धस्थं प्रेक्ष्य', (१२-२२७, १२)। अपश्यं क्षणेनैव तमैवैरावतम्', (१३. १४, २३९)। इनको कृष्ण के साथ समीकृत किया गया है (१३. १५८, ३८)।

२. ऐरावत, एक नाग का नाम है। 'य ऐरावतराजानः सर्पाः समितिशोभनाः', (१. ३, १३४)। 'ऐरावतोऽद्भुवा', (१. ३, १३५)। 'इच्छेत्कोऽकौशुसेनायां चर्तुमैरावतं विना', (१. ३, १३७)। 'ऐरावतज्येष्ठभ्रातृभ्यो', (१. ३, १३९)। 'ऐरावतस्तक्षकश्च', (१. ३५, ५)। 'ऐरावतप्रभृतिभिः', (१. ३७, २)। 'ऐरावतकुलाद्', (१. ५७, १२)। 'ऐरावतकुले जातः कौरव्यो नाम पन्नगः', (१. २१४, १८)। 'पिंजरको नागश्चैरावतस्तथा', (५. १०३, ११)। सुमुख नामक नाग ऐरावत कुल में उत्पन्न हुआ था (५. १०३, २३)। ५. १०४, १०। 'नागेन तथैवैरावतेन च', (५. १०९, २०)। 'ऐरावतेन सा दत्ता अनपत्या महात्मना', (६. ९०, ८)। 'प्रदोसमैरावतवंशसंभवम्', (८. ९०, २२)। 'ऐरावत कुल में उत्पन्न एक नाग (१४. ५८, २५)। 'ऐरावतसुतेनेह तवानीते हि कुण्डले', (१४. ५८, ४२)। 'ऐरावतनिवेशनम्', (१४. ५८, ५०)।

३. ऐरावत (बहु०), ऐरावत के प्रकार के नागों का नाम है जो अर्जुन के पक्ष में थे (८. ८७, ४४)।

४. ऐरावत, एक वर्ष का नाम है (६. ६, ३७)। "श्रृङ्गवान् पर्वत के उत्तर समुद्र के किनारे ऐरावत नामक वर्ष है। अतः इन शिखरों से संयुक्त यह वर्ष अन्य वर्षों की अपेक्षा उत्तम है। वहाँ सूर्यदेव ताप नहीं देते और न वहाँ के मनुष्य वृद्ध ही होते हैं। नक्षत्रों सहित चन्द्रमा वहाँ ज्योतिर्मय होकर सर्वत्र व्याप्त सा रहता है। वहाँ के मनुष्य कमल की सी कान्ति तथा

वर्ण वाले होते हैं। उनके विशाल नेत्र कमल दल के समान सुशोभित होते हैं। वहाँ के मनुष्यों के शरीर से विकसित कमलदलों के समान सुगन्ध प्रगट होती है। उनके शरीर से पसीना नहीं निकलता, तथा उनकी सुगन्ध प्रिय लगती है। वे आहार-रहित और जितेन्द्रिय होते हैं। वे सभी देवलोक से च्युत हैं। उनमें रजोगुण का सर्वथा अभाव होता है। वे १३,००० वर्षों की आयु तक जीवित रहते हैं। (६. ८, ११-१४)।"

ऐरावतपथ, चन्द्रमा के उत्तरी भाग का नाम है (३. १६२, ३४)।

१. ऐल=पुरूरवस् : इनके छः पुत्र उत्पन्न हुये (१. ७५, २४)। 'ऐल-वंशविवर्धनाः', (१. ९४, ६४)। यमराज की सभा में इनकी उपस्थिति का उल्लेख (२. ८, १६)। 'ऐलस्येक्ष्वाकुवंशस्य प्रकृतिं परिचक्षते', २. १४, ४)। 'ऐलवंश्याश्च ये राजंस्तथैवेक्ष्वाकवो नृपाः', (२. १४, ५)। 'पुरुरवसमैलम्', (२. ७८, १७)। 'ऋषभस्य तथैलस्य', (६. ९, ७)। 'पुरुरवस ऐलस्य संवादं मातरिश्वनः', (१२. ७२, २)। 'ऐल उवाच', (१२. ७२, ९)। 'ऐलकश्यपसंवादम्', (१२. ७३, ६)। 'ऐल उवाच', (१२. ७३, ७)। 'पापैः पापे क्रियमाणे हि चैल ततो रुद्रो जायते देव एष', (१२. ७३, १७)। 'ऐल उवाच', (१२. ७३, १८. २०. २२. २४)। 'पृथुरैलो मयो भौमः', (१२. २२७, ४९)। ये ब्राह्मणों के आशीर्वाद देने पर स्वर्गलोक को प्राप्त हुये थे (१३. ६, ३१)। कार्तिक मास में मांस का भक्षण न करने वाले राजाओं के साथ इनका उल्लेख है जिसके फलस्वरूप इन्होंने ब्रह्मलोक प्राप्त किया (१३. ११५, ७४)। सफलता के लिये जिनके नामों का कीर्त्तन करना चाहिये उनमें से एक यह भी हैं (१३. १५०, ४९)। प्रातः-सायं स्मरण करने योग्य राजाओं के साथ इनका उल्लेख (१३. १६५, ५२. ५७)।

२. ऐल : १३. ३४, १७ ; तु० की० **ऐन**।

ऐलवंश : १. ९४, ६४।

१. ऐलविल=कुबेर। 'उत्तरां मातले धर्म्यां तथैलविलसंज्ञिताम्', (५. १०२, १०)। कैलास पर्वत पर निवास करते हैं (५. १११, २०)। 'तमैलविलमासाद्य धर्मराजो व्यराजत', (५. १३९, १४)। इन्होंने कुबेरतीर्थ में महान् तपस्या करके धनाध्यक्ष का पद प्राप्त किया और वहीं उनके पास धन और निधियाँ पहुँच गई', (९. ४७, २५)।

२. ऐलविल=दिलीप (७. ६१, १)।

३. ऐलविल, एक प्राचीन राजा का नाम है जिन्होंने भरत से खड्ग प्राप्त करके उसे धुन्धुमार को दे दिया था (१२. १६६, ७६)।

ऐश्वर : 'रूपमैश्वरम्', (१२. ३३, १८)। 'रूपं वरदमैश्वरम्', (१२. ३४७, ७५)। 'सर्वेषामाश्रयो विष्णुरैश्वरं विधिमास्थितः', (१२. ३४७, ९४)।

१. ऐषीक, विशेषण 'नाश्वत्थाम्ना परमास्त्रं प्रयुक्तम्। क्रुद्धेनैषीकमवधीयन गर्भम्', (१. १, २१३)।

२. ऐषीक—महाभारत-वृक्ष की, स्त्रीपर्व और ऐषीकपर्व, छाया हैं (१. १, ९०)। 'ऐषीकं पर्व', (१. २, ७३)। 'सौप्तिकैषीके संबद्धे पर्वण्युत्तम-तेजसी', (१. २, ३१२)।। 'घृतौदनं पुरस्ताच्च ऐषीके दापयेत्पुनः', (१८. ६, ६७)।

ऐषीकपर्वन्, महाभारत के ८४ वें अवान्तर पर्व का नाम है। "धृष्ट-द्युम्न के सारथि ने, रात्रि को सोते समय जो संहार किया गया था, उसका समाचार धर्मराज युधिष्ठिर को सुनाया। पुत्रों और पाञ्चालों के वध का समाचार सुनकर युधिष्ठिर अचेत होकर भूमि पर गिर पड़े। उन्हें इस प्रकार गिरते देखकर सात्यकि ने पकड़ लिया। भीम आदि ने भी युधिष्ठिर को सहारा दिया। चेतना लौटने पर शोकाकुल युधिष्ठिर ने विलाप करते हुए नकुल से कहा : 'जाकर मन्दभागिनी राजकुमारी द्रौपदी को उसके मातृपक्ष की स्त्रियों के साथ यहाँ लिवा लाओ।' नकुल को इस प्रकार आज्ञा देकर युधिष्ठिर विलाप करते हुये पुत्रों के उस युद्धस्थल में गये जो भूतगणों से भरा हुआ था। उस अमङ्गलमय स्थान में प्रवेश करके उन्होंने अपने पुत्रों, सुहृदों और सखाओं को रक्त-रञ्जित हो पृथिवी पर पड़े देखा। इस करुण दृश्य को देखकर उनकी संज्ञा लुप्त हो गई और वे अपने साथियों सहित पृथिवी पर गिर पड़े (१०. १०)।" "उसी समय उपप्लव्य नगर से द्रौपदी नकुल के साथ वहाँ आई और विलाप करती हुई युधिष्ठिर के सम्मुख भूमि पर गिर पड़ीं। भीम ने द्रौपदी को सान्त्वना दी। उस समय रोती हुई द्रौपदी ने युधिष्ठिर से कहा : 'यदि आप आज रणभूमि में पराक्रम प्रकट करके सम्बन्धियों सहित पापाचारी अश्वत्थामा का वध नहीं कर देते तो मैं प्राय (अनशन) करके अपना प्राण त्याग दूँगी।' युधिष्ठिर ने द्रौपदी को अपना दुःख भूलने के लिये कहा और बताया कि अश्वत्थामा भाग कर दुर्गम वन में चला गया है। द्रौपदी ने अश्वत्थामा को मारकर उसके मस्तक में जन्म के साथ ही स्थित मणि को लाने पर पुनः जोर देते हुये भीमसेन से उसका वध करने का विशेष अनुरोध किया। भीमसेन, नकुल को अपना सारथि बना कर अश्वत्थामा के रथ-चक्रों के चिह्न का अनुसरण करते हुये उसे ढूँढ़ने निकले (१०. ११)।" "कृष्ण ने युधिष्ठिर से भीमसेन की रक्षा-व्यवस्था करने का आग्रह किया क्योंकि अश्वत्थामा के पास ब्रह्मशिरस् नामक ऐसा अस्त्र था जो समस्त शत्रुओं का विनाश कर सकता था। (१०. १२)।" "कृष्ण को साथ लेकर पाण्डवगण भीमसेन के पीछे चले। उस समय अर्जुन और युधिष्ठिर श्रीकृष्ण के रथ में ही बैठे थे। उस रथ में काम्बोज अश्व सन्नद्ध थे : शैब्य दाहिनी ओर, सुग्रीव बाई ओर, मेघपुष्प और बलाहक पार्श्व भाग में स्थित थे। उसका ध्वज विश्वकर्मा द्वारा निर्मित और माया के समान ऊँचा उठा हुआ था जिस पर गरुड़ विराजमान थे। ये तीनों नरश्रेष्ठ शीघ्र ही भीम के पास जा पहुँचे, परन्तु क्रोध से प्रज्वलित भीम को रोक नहीं सके। भीम भागीरथी के तट पर गये जहाँ उन्होंने व्यास आदि अनेक महर्षियों के साथ अश्वत्थामा को बैठे हुये देखा। क्रुद्ध भीम तथा उनके पीछे कृष्ण, युधिष्ठिर और अर्जुन को आते देख अश्वत्थामा ने एक सींक उठा कर दिव्यास्त्र का स्मरण किया और 'यह अस्त्र समस्त पाण्डवों का विनाश कर डाले', ऐसा कहकर उसने उस दिव्यास्त्र को छोड़ दिया। (१०. १३)।" "उस समय कृष्ण ने अर्जुन को द्रोणाचार्य से प्राप्त उस ब्रह्मास्त्र का प्रयोग करने का आग्रह किया जो समस्त अस्त्रों का निवारण कर सकता था। उस समय प्रकृति में भयंकर अपशकुन प्रगट होने लगे। उन दोनों अस्त्रों के तेज के बीच उस समय नारद तथा व्यास लोकों की रक्षा करने के लिये खड़े हो गये। (१०. १४)।" "अर्जुन ने अपने अस्त्र को लौटा लिया ; परन्तु अश्वत्थामा अपने अस्त्र को लौटाने में असमर्थ रहा, क्योंकि वह अस्त्र ब्रह्मतेज से प्रगट हुआ था। जिसने ब्रह्मचर्य का पालन नहीं किया है वह यदि उसका एक बार प्रयोग करके उसे पुनः लौटाने का प्रयास करे तो वह अस्त्र सगे सम्बन्धियों सहित उसके ही सर को काट लेगा। व्यास ने पहले ब्रह्मशिरस् अस्त्र का प्रयोग न करके अर्जुन की सराहना करते हुये कहा : 'जिस देश में एक ब्रह्मास्त्र को दूसरे उत्कृष्ट ब्रह्मास्त्र से दबा दिया जाता है उसमें बारह वर्षों तक वर्षा नहीं होती।' व्यास ने अश्वत्थामा से कहा : 'तुम्हारे सर में जो मणि है उसे पाण्डवों को दे दो जिसके बदले में तुम्हें पाण्डव भी प्राणदान दे देंगे।' अश्वत्थामा ने वह मणि पाण्डवों को दे दी जिसको धारण करने पर शस्त्र, व्याधि, क्षुधा, देवता, दानव अथवा नाग, किसी से भी किसी तरह का भय नहीं रहता। साथ ही अश्वत्थामा ने अपने ब्रह्मास्त्र को पाण्डवों के गर्भस्थ शिशुओं पर गिरा दिया (१०. १५)।" "श्रीकृष्ण ने बताया कि उपप्लव्य में एक व्रतवान् ब्राह्मण ने उत्तरा से यह कहा था : 'जब कौरववंश परिक्षीण हो जायगा, तब तुम्हें एक पुत्र प्राप्त होगा और इसीलिये उस शिशु का नाम परिक्षित होगा।' अश्वत्थामा ने कहा कि उसका वचन झूठा नहीं हो सकता। कृष्ण ने बताया कि उत्तरा का गर्भस्थ बालक मृत ही जन्म लेगा, किन्तु बाद में उसे लम्बी आयु प्राप्त हो जायगी। उन्होंने यह भी बताया कि अश्वत्थामा को ३००० वर्षों तक अकेले ही पृथिवी पर भ्रमण करना होगा और उसे किसी के साथ भी बातचीत करने का सुख नहीं मिल सकेगा ; उसके शरीर से पीब और रक्त की दुर्गन्ध निकलती रहेगी, जिसके कारण उसे दुर्गम स्थानों का ही आश्रय लेना पड़ेगा और वह समस्त रोगों से पीड़ित होकर इधर-उधर भटकता रहेगा। परिक्षित दीर्घ आयु प्राप्त करके

कृपाचार्य से सम्पूर्ण अस्त्र-शस्त्रों का ज्ञान प्राप्त करेगा और धर्म में स्थित होकर ६० वर्षों तक पृथिवी का पालन करेगा। कृष्ण ने बताया कि अश्वत्थामा के ब्रह्मास्त्र से दग्ध हुये उत्तरा के पुत्र को वे स्वयं जीवित कर देंगे। श्रीकृष्ण ने अश्वत्थामा को जो शाप दिया उसका व्यास ने समर्थन किया। तदनन्तर पाण्डवों को मणि देकर अश्वत्थामा उदास मन से उन सबके देखते-देखते वन में चला गया। पाण्डव-गण भी मणि लेकर कृष्ण, व्यास, और नारद के साथ द्रौपदी के पास आये जो प्राय में स्थित थीं। भीम ने द्रौपदी को सान्त्वना दी। द्रौपदी ने युधिष्ठिर से अश्वत्थामा की मणि को अपने मस्तक पर रखने के लिये कहा (१०. १६)।" "युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण से पाण्डवों की सेना का विनाश करने में अश्वत्थामा की सफलता का रहस्य पूछा। कृष्ण ने बताया कि महादेव अश्वत्थामा की सहायता करते थे। कृष्ण ने कहा कि जब ब्रह्मा ने सृष्टि-रचना की इच्छा की तब उन्होंने रुद्र को देखा और उनसे ही समस्त भूतों की सृष्टि करने का आग्रह किया। ब्रह्मा का निवेदन सुनकर रुद्र ने अपनी स्वीकृति प्रदान की और जल में प्रवेश करके महान् तप करने लगे। इधर दीर्घकाल तक उनकी प्रतीक्षा करके ब्रह्मा ने अपने संकल्प से दूसरे सर्वभूत स्रष्टा को उत्पन्न किया। इस स्रष्टा ने दक्ष आदि प्रजापतियों तथा सात प्रकार के प्राणियों को उत्पन्न किया। सृष्टि होते ही समस्त प्रजा क्षुधा से पीड़ित होकर प्रजापति को ही खा जाने की इच्छा से उनकी ओर दौड़ी। जब प्रजा प्रजापति को अपना आहार बनाने के लिये उद्यत हुई तब वे ब्रह्मा की शरण में आये। ब्रह्मा ने उन प्रजाओं को अन्न और ओषधि आदि स्थावर वस्तुयें जीवन-निर्वाह के लिये दीं और अत्यन्त बलवान् हिंसक जन्तुओं के लिये दुर्बल जङ्गम प्राणियों को ही आहार निश्चित कर दिया। तदनन्तर प्रजा उत्तरोत्तर बढ़ने लगी। जब प्राणि-समुदाय की भली-भांति वृद्धि हो गई, और ब्रह्मा भी सन्तुष्ट हो गये तब रुद्र जल से बाहर निकले और प्रजा की सृष्टि हुई देखकर अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे। उन्होंने अपना लिङ्ग काटकर फेंक दिया जो उसी रूप में पृथिवी पर प्रतिष्ठित हो गया। रुद्र ने ब्रह्मा से बताया कि उन्होंने जल में तपस्या करके प्रजा के लिये अन्न प्राप्त किया है, और वे अन्न रूप ओषधियाँ प्रजाओं के ही समान निरन्तर विभिन्न अवस्थाओं में परिणित होती रहेंगी। ऐसा कह कर क्रोध में भरे हुये महा तपस्वी महादेव उदास मन से मुञ्जवान् पर्वत पर तपस्या के लिये चले गये। (१०. १७)।" "सत्ययुग बीत जाने पर देवताओं ने वैदिक प्रमाण के अनुसार यज्ञ की कल्पना की। उस समय देवता भगवान् रुद्र को यथार्थ रूप से नहीं जानते थे, अतः उन्होंने रुद्र के भाग की कल्पना नहीं की। रुद्र ने पाँच प्रकार के यज्ञों में से दो से एक धनुष का निर्माण किया और उसे लेकर ब्रह्मचारी के वेश में देवताओं के यज्ञ-स्थल पर आये। उस समय पृथिवी को अत्यन्त व्यथा हुई और पर्वत भी काँपने लगे। रुद्र ने भयंकर बाण के द्वारा उस यज्ञ के हृदय में आघात किया जिससे अग्नि सहित यज्ञ मृग का रूप धारण करके वहाँ से भाग निकला। रुद्र ने आकाश में भी उस यज्ञ का पीछा किया। यज्ञ के वहाँ से हट जाने पर देवताओं की चेतना लुप्त हो गई। उस समय कुपित हुये त्र्यम्बक (रुद्र) ने अपने धनुष की कोटि से सविता की दोनों भुजायें काट डालीं, भग की आँखें फोड़ दीं, और पूषा के सारे दाँत तोड़ डाले। त्रस्त देवताओं द्वारा प्रेरित हुई वाणी ने रुद्र के धनुष की प्रत्यञ्चा काट डाली। तदनन्तर देवता यज्ञ को साथ लेकर धनुष रहित रुद्र की शरण में गये जिससे प्रसन्न होकर रुद्र ने अपने क्रोध को समुद्र में स्थापित कर दिया। वही क्रोध बड़वानल बनकर निरन्तर समुद्र के जल का शोषण करता रहता है। तदुपरान्त रुद्र ने भग को आँखें, सविता को दोनों भुजायें, पूषा के दाँत और देवताओं को यज्ञ प्रदान कर दिया। देवताओं ने भी समस्त हविष्यों में से रुद्र के लिये भाग निश्चित कर दिया। (१०. १८)॥"

ओ

ओघरक्षस्, (कृष्ण वासुदेव) : 'मुरं हत्वा विनिहत्यौघरक्षो निर्मोचनं चापि जगाम वीरः', (५. ५८, ८३)।

अघोरथ, २. ओघवत् के पुत्र का नाम है (१३. २, ३८)।

१. ओघवत्, कौरव पक्ष के एक योद्धा का नाम है जो युद्ध में मारा गया था (८. ५, ४२)।

२. ओघवत्, नृप के पितामह का नाम है। ये ओघरथ और ओघवती के पिता थे (१३. २, ३८)।

१. ओघवती, एक नदी का नाम है (६. ९, २२)। सात सरस्वतियों में से एक (९. ३८, ४)। कुरु के यज्ञ के समय कुरुक्षेत्र में सरस्वती नदी ओघवती नदी के नाम से प्रसिद्ध हुई (९. ३८, २७)। पाण्डवों ने इसके तट पर निवास किया था (९. ६२, ३९)। भीष्म जी ओघवती के तट पर बाण शय्या पर पड़े थे (१२. ५०, ७)। तु० की० **२. ओघवती।**

२. ओघवती, २. ओघवत् की पुत्री, तथा सुदर्शन की पत्नी का नाम है। इन्होंने कुरुक्षेत्र में निवास किया (१३. २, ३८-४०)। इन्होंने अतिथिसत्कार के लिये ब्राह्मण-रूपधारी धर्म को आत्मसमर्पण कर दिया (१३. २, ४२. ४७. ४९.५२. ५९)। येअपने शरीर से ओघवती नामक नदी हो गईं (१३. २, ८४)।

१. ओङ्कार=महापुरुष (महापुरुषस्तवे)।

२. ओङ्कार=शिव (सहस्रनामों में से एक)।

१. ओजस्= विष्णु (सहस्रनामों में से एक)।

ओड्र एक देश का नाम है, जहाँ के राजा भेंट देने के लिये युधिष्ठिर के यज्ञ में पधारे थे, (२. ५१, २३) तु० की० उड्र (बहु०)।

१. ओषधी, (बहु०), देवगणों का नाम है (१. ६६, ४०)।

२. ओषधी =शिव (सहस्रनामों में से एक)।

ओषधीपति=सोम (३. ३, ७)।

औ

औक्थ्य, एक साम का नाम है (३. १३४, ३६)।

औड्र (बहु०), भारतवर्ष के एक जनपद का नाम है (६. ९, ५७)।

औतङ्क (विशेषण : 'औतङ्कीं गुरुवृत्तिं' (१४. ५६, ३)।

औत्तानपाद : 'ध्रुवस्यौत्तानपादस्य', (१३. ३, १५)।

औदका, उस स्थान का नाम है, जहाँ नरकासुर ने सोलह सहस्र कन्याओं को कैद कर रक्खा था। नरकासुर का यह अन्तःपुर मणिपर्वत पर बना था। जल की सुविधा से सम्पन्न होने के कारण इस स्थान का नाम 'औदका' रक्खा गया था। मुर दानव इसका संरक्षण करता था (गी० सं० में २. ३८ पर दाक्षिणात्य पाठ पृ० ८०५, कालम १)।

औदुम्बर (बहु०), युधिष्ठिर को भेंट देने वाले क्षत्रिय जाति के लोगों का नाम है (२. ५२, १३)।

औद्दालक, एक तीर्थ का नाम है (३. ३. ८४, १६१)।

औद्दालकि : श्वेतकेतु का नाम है (३. १३२, १. ३)। एक ऋषि का नाम है (९. ३८, २२)। उत्तर के ऋषियों में से एक यह भी हैं (१३. १६५, ४५)।

औद्भिद, कुशद्वीप के प्रथम वर्ष का नाम है (६. १२, १२)।

औद्र (बहु०), अर्जुन द्वारा विजित एक जाति के लोगों का नाम है (१४. ८३, ११)।

औपनिषद : 'चतुर्थश्चौपनिषदो धर्मः', (१२. २४४, १५)।

औरग—'विषयानौरगान्', (१२. ३०१, ६)।

औरसिक (बहु०), एक जाति के लोगों का नाम है जिन्हें श्रीकृष्ण ने विजित किया था (७. ११, १६)।

औौर्व, एक ऋषि का नाम है (१. ५५, १६)। ये च्यवन मुनि और आरुषी के पुत्र थे। अपनी माता की ऊरु (जाँघ) फाड़कर प्रगट होने के कारण ये और्व कहलाये (१. ६६, ४६)। इनके जमदग्नि आदिक सौ पुत्र थे (१. ६६, ४९)। 'और्व इति विप्रर्षिरुरुं भित्वा व्यजायत', (१. १७९, ८)। 'और्व उवाच', (१. १८०, १)। इन्होंने अपनी क्रोधाग्नि को समुद्र में डाल दिया (१. १८०, २१)। महर्षि और्व ने माता के ऊरु में गुप्त रूप से निवास करते हुए देवकार्य सिद्ध किया (३. ३१५, १८)। भृगु के सात पुत्रों में से ये चतुर्थ हैं (१३. ८५, १२८)। वायु ने कहा : 'तालजङ्घ नामक महान् क्षत्रिय वंश का अकेले तपस्वी ब्राह्मण और्व ने संहार कर दिया।' (१३. १५३, ११)।

और्व आख्यान : १. २, ११२।

औौर्वोपाख्यान (म्)—अपने पिता की मृत्यु का समाचार सुनकर कुपित हुये शक्ति-नन्दन पराशर को शान्त करने के लिये वसिष्ठ ने उन्हें और्वोपाख्यान सुनाया : "भृगुवंशी ब्राह्मणों के यजमान राजा कृतवीर्य ने सोमयज्ञ की समाप्ति पर उन अग्रभोजी भार्गवों को विपुल धन और धान्य देकर सन्तुष्ट किया। कृतवीर्य के स्वर्गवासी हो जाने पर उनके वंशजों को किसी तरह द्रव्य की आवश्यकता आ पड़ी। भृगुवंशी ब्राह्मणों के पास धन है यह जानकर वे सभी राजपुत्र भार्गवों के पास याचक बनकर गये। उस समय कुछ भार्गवों ने अपनी धनराशि को धरती में गाड़ दिया था, और कुछ ने क्षत्रियों से भय समझकर अपना धन ब्राह्मणों को दे दिया। तदनन्तर किसी क्षत्रिय ने अकस्मात् धरती खोदते-खोदते किसी भृगुवंशी के घर में गड़ा हुआ धन पा लिया। इस पर क्रुद्ध होकर क्षत्रियों ने तीखे बाणों से समस्त भार्गवों, तथा उनके गर्भस्थ बालकों का भी संहार करना आरम्भ किया। उस समय भय से त्रस्त होकर एक भार्गव-स्त्री अपने गर्भ को जाँघ में छिपाकर हिमवत् पर्वत में जा छिपी (१७९, ३ के अनुसार इसने १०० वर्षों तक अपने गर्भ को जाँघ में छिपाकर रक्खा था)। भयभीत होकर एक ब्राह्मण स्त्री ने यह समाचार क्षत्रियों को बता दिया। इस पर क्षत्रिय लोग उस गर्भ की हत्या करने के लिये उसके पास गये। ब्राह्मणी का वह गर्भस्थ शिशु जाँघ फाड़कर बाहर निकल आया और मध्याह्न के प्रचण्ड सूर्य की भाँति उसके तेज ने क्षत्रियों के नेत्रों की ज्योति का हरण कर लिया। इन क्षत्रियों ने अपनी खोई हुई दृष्टि को पुनः प्राप्त करने के लिये उस शिशु की माता से प्रार्थना की और अपने पापकर्म से विरत होने का आश्वासन दिया (१. १७८)।" "उस ब्राह्मणी ने क्षत्रियों से अपनी दृष्टि-प्राप्ति के लिये उसी शिशु से प्रार्थना करने के लिये कहा। क्षत्रियों ने उस बालक से अपनी ज्योति पुनः प्राप्त की और वहाँ से चले गये। इसी बालक का नाम और्व पड़ा, क्योंकि वह अपनी माता के ऊरु को फाड़कर उत्पन्न हुआ था। और्व ने अपने पूर्वजों का सम्मान करने के लिये समस्त लोकों का विनाश करने का निश्चय किया। इन्होंने अत्यन्त घोर तपस्या द्वारा अपनी शक्ति की वृद्धि करते हुये देवता, असुर और मनुष्यों सहित लोकों को संतप्त कर दिया। तदनन्तर उनके समस्त पितरों ने पितृलोक से आकर और्व से इस प्रकार कहा : 'अपना क्रोध रोको और समस्त लोकों पर प्रसन्न हो जाओ। अपनी आयुयों में अत्यन्त वृद्धि हो जाने पर जब हम लोग खिन्न हो गये तब हम लोगों ने स्वयं ही क्षत्रियों से अपना वध कराने की इच्छा की। आत्महत्या करनेवाला पुरुष शुभ लोकों को प्राप्त नहीं करता, अतः हमने विचार करके अपने ही हाथों अपना वध नहीं किया।' (१. १७९)।" "जब और्व ने बताया कि उनकी प्रतिज्ञा मिथ्या नहीं होनी चाहिये तब पितरों ने उनसे कहा : 'तुम्हारे क्रोध से उत्पन्न हुयी जो यह अग्नि समस्त लोकों को अपना ग्रास बनाना चाहती है उसे तुम जल में छोड़ दो, क्योंकि समस्त लोक जल में ही प्रतिष्ठित हैं।' तब और्व ने अपनी क्रोधाग्नि को समुद्र में डाल दिया, जो आज भी विशालकाय अश्वी के मुख की आकृति धारण करके महासागर के जल का पान करती रहती है। (१. १८०)।" "यह सुनकर विप्रर्षि पराशर ने अपने क्रोध को समस्त लोकों का पराभव करने से रोक लिया। तदनन्तर पराशर ने राक्षस-सत्र का अनुष्ठान किया और राक्षस जाति के वृद्धों तथा बालकों को उसमें भस्म करने लगे। महर्षि वसिष्ठ ने, यह सोचकर कि उनकी दूसरी प्रतिज्ञा को भङ्ग करना उचित नहीं है, उन्हें राक्षसों के वध से नहीं रोका। उस यज्ञ को समाप्त करने की इच्छा से महर्षि अत्रि वहाँ पधारे। पुलस्त्य, पुलह, क्रतु और महाक्रतु ने भी राक्षसों के जीवन की रक्षा के लिये वहाँ पदार्पण किया। यह देखकर कि अनेक राक्षसों का विनाश हो चुका है, पुलस्त्य ने कहा : 'तुम्हारे पिता शक्तिधर्म के ज्ञाता थे परन्तु उनकी मृत्यु उनके अपने अपराध से ही हुई। कोई भी राक्षस उनका भक्षण नहीं कर सकता था। अपने शाप से ही उन्हें अपनी मृत्यु देखनी पड़ी। विश्वामित्र तथा राजा कल्माषपाद भी इसमें निमित्तमात्र ही थे। इस समय तुम्हारे पिता, शक्ति, स्वर्ग में जाकर आनन्द प्राप्त कर रहे हैं। अतः अब इस यज्ञ को छोड़ दो।' तब पराशर ने उसी समय अपने यज्ञ को समाप्त कर दिया और यज्ञाग्नि को उत्तर दिशा में हिमालय के निकट विशाल वनों में छोड़ दिया। वह अग्नि आज भी वहाँ सदैव प्रत्येक पर्व के अवसर पर राक्षसों, वृक्षों और पत्थरों को जलाती हुई देखी जा सकती है (१. १८१)।"

औौशनस : 'औशनसं गच्छेत्त्रिषु लोकेषु विश्रुतम्', (३. ८३, १३५)। 'ततस्त्वौशनसं तीर्थमाजगाम हलायुधः। कपालमोचनं नाम यत्र मुक्तो महामुनिः) ९. ३९, ४)। 'सरस्वत्यास्तीर्थवरं ख्यातमौशनसं तदा', (९. ३९, १६)। 'औशनसेतीर्थे', (९. ३९, १८)। 'औशनसं शास्त्रम्', (१२. १२२, ११; ३३५, ४६)। 'लोकमौशनसं दिव्यम्', (१३. १०७, ९४)।

औौशनसी = देवयानी (१. ८१, १८; ७. ६३, ६)।

औौशिज, एक प्राचीन धर्मज्ञ मुनि का नाम है जो युधिष्ठिर की सभा में विराजते थे (२. ४, १७)।

१. औौशीनर = शिवि। 'शिविरौशीनरः', (१. ९३, ६. १७; १८६, १६; ३, ९४, १७; १९४, २। 'औशीनरः साधुशीलो भवतो वै महीपतिः', (३. १९४, ५)। 'शिविमौशीनरम्'. (३. १९७, १)। 'शिविरौशीनरः', (३. १९८, २; २०८, ७)। 'शिविरौशीनरो यथा', (३. २९४, १७)। 'शिवेरौशीनरस्य', (५. ९०, १९; १२१, १०; १२२, ८; ६. ९, ७)। 'औशीनराच्छैब्यात्', (७. १०, ६९)। 'शिविमौशीनरम्', (७. ५८, १)। 'तावतीरददद्गा वै शिविरौशीनरोऽध्वरे', (७. ५८, ७)। 'गच्छ पुण्यकृतॉल्लोकाञ्छिविरौशीनरो यथा', (७. १४३, ४७)। 'शिविमौशीनरम्', (१२. २९, ३९)। 'तावतीः प्रददौ गाः स शिविरौशीनरोऽध्वरे' (१२. २९, ४२)। इन्होंने किसी ब्राह्मण की रक्षा के लिये अपने शरीर और अपने प्रिय पुत्र का दान कर दिया था, जिससे ये स्वर्गलोक चले गये (१२. २३४, १९)। 'शिविरौशीनरेण', (१३. ११५, ७०)। 'शिविरौशीनरः प्राणान् प्रियस्य तनयस्य च। ब्राह्मणार्थमुपाकृत्य नाकपृष्ठमितोगतः', (१३. १३७, ४ तु० की० १२. २३४, १९) 'शिविरौशीनरो नृपः', (१४. ९०, १००)।

२. औौशीनर (उशीनरों से सम्बन्धित) : 'जगाम भोजनगरं द्रष्टुमौशीनरं नृपम्', (५. ११८, २)।

औौशीनरि, उशीनर के पुत्र शिवि का नाम है जो यमराज की सभा में उपस्थित होते थे (२. ८, १४)।

औौशीनरी, उशीनर देश की एक शूद्र जातीय कन्या का नाम है। गौतम ने इसके गर्भ से काक्षीवत् आदि पुत्रों को उत्पन्न किया (२. २१, ५)।

औौषदश्वि : १. ९३, १. २६।

औौषध = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

औौषधि (बहु०) : 'वृक्षाश्चौषधिभिः सह', (९. ४५, १६)। 'औषधिभिः फलैस्तथा', (१३. १०, २२)।

औौषिज = काक्षीवत्। 'औशिजश्चैव कक्षीवान्', (१२. २०८, २७; १३. १५०, ३०; १६५, ३७)।

औौष्णीक, एक प्राचीन देश का नाम है, जहाँ के राजा युधिष्ठिर के पास भेंट लेकर आये थे (२. ५१, १७)।

कं

कंस, मथुरा के राजा का नाम है जो उग्रसेन का पुत्र और श्रीकृष्ण का शत्रु था। इसके वध का उल्लेख (१. २, ८२)। यह कालनेमि नामक असुर का अवतार था (१. ६७, ६७)। इसने अस्ति और प्राप्ति नामक जरासन्ध की पुत्रियों से विवाह किया (२. १४, ३०)। श्रीकृष्ण और बलराम ने कंस तथा उसके भ्राता सुनामन् का वध किया (२. १४, ३४)। कंस की विधवा पत्नी ने जरासन्ध से मथुरा पर आक्रमण करने का आग्रह किया (२. १४, ४६)। कृष्ण के द्वारा अपने जामाता कंस के मारे जाने पर कृष्ण के साथ जरासन्ध का वैर बहुत बढ़ गया (२. १९, २२)। कृष्ण ने बताया कि सेवकों सहित कंस की मृत्यु हो चुकी है (२. २०, १)। 'यस्य चानेन धर्मज्ञ भुक्तमन्नं बलीयसः। स चानेन हतः कंसः इत्येतन्न महाद्भुतम् ॥', (२. ४१, ११)। अन्धकों, यादवों और भोजों ने कंस का साथ छोड़ दिया जिसके पश्चात् श्री कृष्ण ने उसका वध कर दिया (२. ६२, ८)। 'कंसविद्रावणकरीम्', (४. ६, ३)। 'कंस चैषु च माधवः', (५. ६८, ४)। 'उग्रसेनसुतः कंसः परित्यक्तः स बान्धवैः ज्ञातीनां हितकामेन मया शस्तो महामृधे ॥', (५. १२८, ३८)। 'कंसमेकं। परित्यज्य कुलार्थे सर्वयादवाः', (५. १२८, ४०)। 'निहृतः कंसः', (५. १३०, ४७) 'कंसमृत्यै', (५. १६०, ६४)। 'तथा कंसो महातेजा जरासन्धेन पालितः', (७. ११, ६)। 'भ्राता कंसस्य वीर्यवान्', (७. ११, ७) 'कंसदासस्य दायादः', (९. ६१, २७)। 'प्रादुर्भावः कंसहेतोर्मथुरायां भविष्यति', (१२. ३३९, ९०)। 'कंसस्य पुण्डरीकाक्षो ज्ञातित्राणार्थ कारणात्', (१३. १४८, ५७)। 'यथा कंसस्य केशी', (१४. ६९, २३)। 'केशिनं यस्तु कंसं च विक्रम्य जगतः प्रभुः', (१६, ६, १०)। 'कंसश्चैवोग्रसेनश्च', (१८. ५, १७)। तु० की० **भोजराज उग्रसेन सुत।**

कंस-केशिनिसूदन = कृष्ण (३. १४, १०)।

कंसनिसूदन = कृष्ण (३. २६३, ८)।

१. क = ब्रह्मन् (ये अण्ड से प्रगट हुये थे) : १. १, ३२।

२. क = दक्ष (१२. २०८, ७)।

३. क = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

ककुत्स्थ., अयोध्या के एक प्राचीन राजा का नाम है। सञ्जय द्वारा वर्णित विभिन्न राजाओं के साथ इनका उल्लेख (१. १, २३२)। ये शशाद के पुत्र तथा अनेनस् के पिता थे (३. २०२, २)।

ककुभ = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कक्ष, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९,)।

कक्षक, वासुकि के कुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ५७, ६)।

कक्षसेन, एक या एकाधिक राजाओं का नाम है। ये परिक्षित् के प्रथम पुत्र थे (१. ९४, ५४)। युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित होने का उल्लेख (२. ४, २२)। यम की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ८, १८)। इनका आश्रम पश्चिम दिशा में असित नामक पर्वत पर स्थित था (३. ८९, १२)। इन्होंने वसिष्ठ को सर्वस्व समर्पण करके स्वर्गलोक गमन किया (१३. १३७, १५)। प्रातः सायं स्मरण करने योग्य राजर्षियों के साथ इनका उल्लेख (१३. १६५, ५९)। ये न्यायोपार्जित धन के दान और सत्यभाषण के द्वारा परम सिद्धि को प्राप्त हुये थे (१४. ९१, ३५)।

कक्षीवत्, पूर्व में स्थित महेन्द्र गुरुओं में से एक ऋषि का नाम है (१३. १५०, ३०; १६५, ३७)।

कक्षेयु, रौद्राश्व और मिश्रकेशी अप्सरा के पुत्र का नाम है (१. ९४, १०)। प्रातःसायं स्मरणीय राजाओं के साथ इसका उल्लेख (१३. १६५, ५६)।

१. कङ्क, एक प्राचीन राजा का नाम है (१. १, २३३)।

२. कङ्क, वृष्णिकुल के एक महारथी का नाम है। यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुआ था (१. १८६, १९)। वृष्णि वंशी सात महारथियों में से एक (२. १४, ५९)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में इसकी उपस्थिति का उल्लेख (२. ३४, १५)।

३. कङ्क, युधिष्ठिर का एक नाम है जिसे इन्होंने अज्ञातवास के समय ब्राह्मण के रूप में विराट की नगरी में निवास करते समय धारण किया था। (४. १, २४)। 'युधिष्ठिरस्यासमहं पुरा सखा वैयाघ्रपद्यः पुनरस्मि विप्रः। अक्षान् प्रयोक्तुं कुशलोऽस्मि देविनां कङ्केति नाम्नाऽस्मि विराट विश्रुतः ॥" (४. ७, १२)। 'कङ्को यथाऽहं विषये प्रभुस्तथा', (४. ७, १५)। 'सभायां देविता राज्ञः कङ्को भूते युधिष्ठिरः', (४. १८, २५)। ४. २१, ३३. ३४; ३१, २१; ६८, ३०. ३३. ५७. ६६; ७०, ६। तु० की० **वैयाघ्रपद्य।**

४. कङ्क, एक पक्षी का नाम है जो सुरसा की सन्तान है (१. ६६, ६९)।

५. कङ्क, युधिष्ठिर को भेंट लाने वाले एक जाति के लोगों का नाम है (२. ५१, ३०)। असभ्य और निम्नकोटि की जातियों के साथ इसकी गणना (१२. ६५, १३)।

कङ्कणा, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १६)।

कच, एक ब्राह्मण का नाम है जो बृहस्पति का पुत्र था। "जनमेजय के यह पूछने पर कि ययाति ने किस प्रकार देवयानी को प्राप्त किया, वैशम्पायन ने कहा : "देवों और असुरों के बीच हुये अनेक युद्धों में बृहस्पति आङ्गिरस देवताओं के और उशनस् काव्य (शुक्राचार्य) असुरों के पुरोहित थे। उन युद्धों में देवगण जिन असुरों का वध करते थे उन्हें शुक्राचार्य अपनी संजीवनी विद्या द्वारा पुनः जीवित कर देते थे। इसके विपरीत असुर जिन देवताओं का वध करते थे उन्हें पुनरुज्जीवित करने में बृहस्पति सफल नहीं होते थे। इससे खिन्न होकर देवताओं ने बृहस्पति के ज्येष्ठ पुत्र कच के पास जाकर उनसे कहा, 'आप शुक्राचार्य की आराधना करके उन्हें तथा अपनी सेवाओं से उनकी पुत्री देवयानी को प्रसन्न करके संजीवनी विद्या प्राप्त करें।' देवताओं का निवेदन सुनकर कच तत्काल दानवराज वृषपर्वा के नगर में जाकर शुक्राचार्य से मिले। कच ने शुक्राचार्य से कहा, 'आप मेरे गुरु हैं। मैं आपके समीप रहकर एक सहस्र वर्षों तक ब्रह्मचर्य का पालन करूँगा। इसके लिये आप मुझे अनुमति दें।' शुक्राचार्य ने कच की प्रार्थना स्वीकार कर ली। कच नवयुवक थे और गायन, नर्तन तथा विभिन्न प्रकार के वादनों द्वारा वे देवयानी को संतुष्ट रखने लगे। ५०० वर्ष व्यतीत होने पर दानवों को यह पता लग गया कि कच कौन हैं, और उनका उद्देश्य क्या है। इस पर क्रुद्ध होकर दानवों ने कच का वध कर डाला। कच को मारने के पश्चात् दानवों ने उनके शरीर के टुकड़े-टुकड़े करके उसे शृगालों और कुत्तों को बाँट दिया, परन्तु देवयानी के आग्रह पर शुक्राचार्य ने अपनी संजीवनी विद्या से कच को जीवित कर दिया। कुछ दिनों के पश्चात् जब कच वन में देवयानी के लिये पुष्प लाने गये तब दानवों ने उन्हें पीस कर समुद्र के जल में घोल दिया। इस बार भी देवयानी के आग्रह पर शुक्राचार्य ने कच को जीवित कर दिया। तत्पश्चात् असुरों ने तीसरी बार कच को मार कर उनके शव को आग में जला दिया और उसकी राख को मदिरा में मिलाकर शुक्राचार्य को ही पिला दिया। जब देवयानी ने अपने पिता से कच को पुनः जीवित करने का आग्रह किया तब उसके पिता उशनस् (शुक्राचार्य) ने इस प्रकार कहा, 'मैंने अपनी विद्या से कच को कई बार जीवित किया किन्तु प्रत्येक बार उनका वध होता रहा अतः अब मैं क्या करूँ। तुम्हें तो वेद, ब्राह्मण, इन्द्र सहित समस्त देवता, वसुगण, आश्विनी कुमार, दैत्य तथा सम्पूर्ण जाति के प्राणी मेरे प्रभाव से तीनों सन्ध्याओं के समय मस्तक झुकाकर प्रणाम करते हैं; अतः तुम जैसी शक्तिशालिनी स्त्री को किसी मरने वाले के लिये शोक नहीं करना चाहिये।' देवयानी ने जब पुनः अपने पिता से आग्रह किया तब उन्होंने कच को पुकारा। अब शुक्राचार्य ने संजीवनी विद्या का प्रयोग करके कच को बुलाया तो उनके उदर में बैठे हुये भयभीत कच ने धीरे से कहा : 'असुरों ने मुझे मारकर मेरे शरीर को जलाया और चूर्ण बनाकर उसे मदिरा में मिला दिया। आपने उसी मदिरा का पान किया है जिससे मैं आपके उदर में स्थित हो गया हूँ।' शुक्राचार्य ने तब कच को संजीवनी विद्या का उपदेश किया जिससे वे

शुक्राचार्य का उदर फाड़कर बाहर निकले और फिर संजीवनी विद्या से ही शुक्राचार्य को जीवित कर दिया। उस समय शुक्राचार्य ने यह घोषणा की कि जो ब्राह्मण मदिरा-पान करेगा वह धर्म से भ्रष्ट होकर ब्रह्महत्या का भागी बनेगा। कच ने एक सहस्र वर्षों तक गुरु के समीप रहकर अपना व्रत पूर्ण किया (१. ७६)।" "जब कच अपना व्रत पूर्ण करके देवताओं के पास लौटने लगे तब देवयानी ने उनसे कहा : 'मैं आपसे प्रेम करती हूँ अतः आप मुझे पत्नी के रूप में स्वीकार करें।' जब कच ने देवयानी को अपनी बहन मानते हुये उसके आग्रह को अस्वीकृत कर दिया तब क्रुद्ध होकर देवयानी ने कच को यह शाप दिया, 'तुम्हारी संजीवनी विद्या कभी सिद्ध नहीं हो सकेगी।' कच ने उसके शाप को स्वीकार करते हुये कहा : 'कोई भी ऋषिकुमार तुम्हारा पाणिग्रहण नहीं करेगा। साथ ही, मेरी संजीवनी विद्या चाहे सफल न हो परन्तु जिसे मैं यह विद्या पढ़ा दूँगा उसकी विद्या अवश्य सफल होगी।' इस प्रकार देवयानी को शाप देकर कच शीघ्रतापूर्वक इन्द्रलोक चले गये जहाँ देवताओं ने उनका स्वागत करते हुये उन्हें यह आशीर्वाद दिया : 'तुमने हम लोगों के हित के लिये अत्यन्त अद्भुत कार्य किया है, अतः तुम्हारे यश का कभी लोप नहीं होगा और तुम यज्ञ का भाग प्राप्त करने के अधिकारी होंगे।' (१. ७७)।" इन दोनों अध्यायों में तथा अन्यत्र कच के नाम के लिये देखिये : १. ७६, ११. १७. १९. २१. २२. २७. ३०-३४. ३७. ४१. ४४-४६. ५०. ५४. ५६-५८. ६१. ६२. ६५. ७०. ७२; ७७, ६. १०. १२. १६. १७. २१. २२; ७८, १; ८०, ४; १२. ४७, ९; १३. २६, ८। तु० की० **आङ्गिरस पौत्रः, आङ्गिरस, और बृहस्पति सुत।**

कच्छ (बहु०), एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ५६)।

कच्छपी, नारद की वीणा का नाम है (९. ५४, १९)।

कटंकट = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कटङ्कट = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कठ, एक ऋषि का नाम है (१. ८, २५)। युधिष्ठिर की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ४, १८)। वसु उपरिचर के यज्ञ के समय उपस्थित सदस्यों में से एक यह भी थे (१२. ३३६, ९)।

कणिक, धृतराष्ट्र के मंत्री का नाम है (१. १४०, २. ३. २५. ४२. ९३; १४२, १)।

कणिकवाक्यम्—"जब धृतराष्ट्र ने अपने मंत्री कणिक से परामर्श किया तो उसने नीति-सम्बन्धी अनेक सिद्धान्तों का प्रतिपादन करने के पश्चात् श्रृगाल, सिंह, चूहे, भेड़िये और नेवले की कथा का वर्णन किया और अन्त में यह परामर्श दिया कि पाण्डवों का विनाश कर देना चाहिये (१. १४०)।"

कणिकोपदेश—"सौवीरराज शत्रुञ्जय ने ऋषि भारद्वाज कणिक से धनार्जन इत्यादि के सम्बन्ध में प्रश्न किया और कणिक ने उन्हें उपदेश देते हुए बताया कि राजा को सर्वदा दण्ड देने के लिये उद्यत रहना चाहिये, और सदैव ही पुरुषार्थ प्रकट करना चाहिये, इत्यादि। कणिक के उपदेशों को प्राप्त करके राजा शत्रुञ्जय ने समृद्धि प्राप्त की (१२. १४०)।"

कण्टकिनी, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १६)।

कण्डरीक, एक ब्राह्मण का नाम है। 'कण्डरीकोऽथ राजा च ब्रह्मदत्तः प्रतापवान्। जातीमरणजं दुःखं स्मृत्वा पुनः पुनः॥ सप्त जातिषु मुख्यत्वाद्योगानां संपदं गतः। पुराऽहमात्मजः पार्थ प्रथितः कारणान्तरे॥', (१२. ३४२, १०५-१०६)। तु० की० हरिवंश १२५६।

कण्डूति, स्कन्द की अनुचरी मातृका का नाम है (९. ४६, १४)।

कण्व, एक ऋषि का नाम है। 'महर्षेराश्रमपदे कण्वस्य च तपस्विनः', (१. २, ९५)। 'महर्षिं काश्यपं द्रष्टुमथ कण्वं तपोधनम्', (१. ७०, ३१)। 'ऋषिं कण्वमुपासितुम्', (१. ७१, ८)। शकुन्तला ने दुष्यन्त को बताया कि वह कण्व की पुत्री मानी जाती है (१. ७१, १५)। 'कण्व उवाच' (१. ७१, २०)। इन्होंने एक ब्राह्मण को दत्तक शकुन्तला के जन्म की कथा का वृत्तान्त बताया (१. ७२, १)। 'सुतां कण्वस्य मामेवं विद्धि त्वं मनुजाधिप', (१. ७२, १८)। 'कण्वं हि पितरं मन्ये पितरं स्वमजानती', (१. ७२, १९)। 'कण्वोऽप्याश्रममागमत्', (१. ७३, २४)। 'कण्वो दिव्यज्ञानो महतपाः', (१. ७३, २५)। 'कण्व उवाच', (१. ७३, ३३)। 'कण्वः शिष्यानुवाच', (१. ७४, ५)। 'कण्वाश्रमनिवासिनः', (१. ७४, ७)। 'कण्वः शिष्यानुवाच', (१. ७४, १०)। 'कण्वाश्रमपदम्', (१. ७४, १८)। जब शकुन्तला ने भरत को जन्म दिया तब कण्व ने इन्हें दुष्यन्त के पास भेजा। महर्षि कण्व ने आचार्य होकर भरत से 'गोवितत' नामक अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान करवाया जिसके फलस्वरूप भरत ने इनको १,००० पद्म स्वर्ण-मुद्रायें दक्षिणा के रूप में समर्पित कीं (१. ७४, ३६. १२९. १३०)। 'कण्वोऽपि भगवानृषिः', (५. ९७, १)। इन्होंने दुर्योधन को समझाते हुये मातलि का उपाख्यान सुनाया (५. ९७, २)। 'कण्व उवाच', (५. ९७, १८; ९८, १; १०३, १८. २२; १०४, १२. १८; १०५, १. १८. ३३)। दुर्योधन ने इनके वचन की अवहेलना की (५. १०५, ३९)। 'नारदश्च कण्वः', (६. २३, २७)। भरत ने कण्व को १,००० पद्म स्वर्ण मुद्रायें दक्षिणा के रूप में प्रदान कीं (७. ६८, ११)। रामानारदकण्वाद्यैर्हितमुक्तं सभातले', (८. २, ७)। युधिष्ठिर को देखने के लिये आये हुये ऋषियों में से एक यह भी थे (१२. १, ४)। 'सहस्रं यत्र पद्मानां कण्वाय भरतो ददौ', (१२. २९, ४९)। पूर्व दिशा के ऋषियों में से एक (१२. २०८, २७, तु० की० २. बर्हिषद्)। वसु उपरिचर के सदस्यों में से एक यह भी थे (१२. ३३६, ९)। अन्य ऋषियों के साथ यह भी भीष्म को देखने के लिये पधारे थे (१३. २६, ७; ६६, २३)। इन्हें मेधातिथि का पुत्र और पूर्व दिशा में रहने वाला बताया गया है (१३. १५०, ३१; १६५, ३८, तु० की० २. बर्हिषद्)। पूर्व के देवताओं के अन्तर्गत इनका उल्लेख (१३. १६५, ३८)। वृष्णियों ने विश्वामित्र, कण्व और नारद को छलने का प्रयास किया जिससे इन लोगों ने शाम्ब इत्यादि का शाप दिया (१६. १, १५)।

कण्वाश्रम, एक तीर्थ का नाम है जहाँ प्रवेश करने मात्र से मनुष्य पाप-मुक्त हो जाता है (३. ८२, ४५)।

कथक, स्कन्द के एक योद्धा का नाम है (९. ४५, ६७)।

कथित = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

कद्रु = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कद्रू, दक्ष की पुत्री का नाम है जो कश्यप-पत्नी और नागों की माता थी। "इसने कश्यप के साथ विवाह करने के पश्चात् एक सहस्र नागों को पुत्र के रूप प्राप्त करने की इच्छा की। बहुत समय के पश्चात् इसने एक सहस्र अण्डे दिये जिनसे ५०० वर्षों के पश्चात् एक सहस्र नाग उत्पन्न हुये (१. १६, ६. १२. १३. १५)।" "एक समय कद्रू और विनता ने उच्चैःश्रवा नामक अश्व के रंग के सम्बन्ध में आपस में बाजी लगाई और यह वचन दिया कि इसमें जिसकी हार होगी वह दूसरे की दासी बन जायगी। विनता ने कहा कि वह घोड़ा सर्वथा श्वेत है, जब कि कद्रू ने कहा कि उसकी पूँछ काली है। कद्रू ने अपने एक सहस्र पुत्रों को आज्ञा दी कि वे काले बाल बनकर उस घोड़े की पूँछ में लग जाँय। उस समय जिन सर्पों ने उसकी आज्ञा को स्वीकार नहीं किया उन्हें इसने यह शाप दे दिया कि वे सब जनमेजय के सर्पयज्ञ में भस्म हो जायेंगे। इस शाप को ब्रह्माजी ने भी सुना, परन्तु सर्पों की बढ़ती हुई संख्या देखकर प्रजा-हित की दृष्टि से उन्होंने कद्रू के शाप का अनुमोदन किया; सम्पूर्ण देवता भी इससे सहमत हुये। इसके पश्चात् ब्रह्मा ने कश्यप को बुलाकर इस प्रकार कहा: 'तुम्हारे सर्प-पुत्रों को उनकी माता ने शाप दे दिया है अतः तुम उस पर क्रोध मत करना। यज्ञ में सर्पों का नाश होने वाला है, यह पुराण-वृत्तान्त तुम्हारी दृष्टि में भी है।' ऐसा कहकर ब्रह्मा ने कश्यप को सर्पों का विष उतारने की विद्या प्रदान की (१. २०, २. ४. ६. ९. १३)।" प्रातः काल कद्रू और विनता उच्चैःश्रवा नामक अश्व को निकट से देखने के लिये गईं (१. २१, १)। "नागों ने अपनी माता की आज्ञा के अनुसार उच्चैःश्रवा की पूँछ को काला कर दिया। इसी बीच कद्रू और विनता भी समुद्र-दर्शन करती हुईं उच्चैःश्रवा की ओर चलीं (१. २२, ५)।" उच्चैःश्रवा के पास

पहुँच कर जब विनता ने देखा कि उसकी पूँछ काली है, तब उसने हार मानकर कद्रू की दासी बनाना स्वीकार कर लिया (१. २३, १. ३)। "कुछ समय के पश्चात् कद्रू ने विनता से कहा : 'समुद्र के भीतर एक निर्जन प्रदेश में अत्यन्त रमणीय तथा मनोहर नागों के निवास स्थान हैं, वहीं मुझे ले चल।' तब गरुड़ की माता विनता ने कद्रू को अपनी पीठ पर बैठाया और माता की आज्ञा से गरुड़ ने सर्पों को वहन करना स्वीकार किया। गरुड़ सूर्य के अत्यन्त निकट होकर चलने लगे जिससे संतप्त होकर उनकी पीठ पर बैठे नाग मूर्च्छित हो गये। अपने पुत्रों को इस दशा में देख कर कद्रू ने इन्द्र की स्तुति की (१. २५,३.७)।" स्तुति से प्रसन्न होकर इन्द्र ने वर्षा कराई जिससे सन्तुष्ट हुये नाग अपनी माता के साथ रमणीक द्वीप में आ गये (१. २६, १)। कद्रू के प्रमुख पुत्रों की गणना (१. ३५, २)। कद्रू के पुत्र शेष ने कद्रू का साथ छोड़ कर कठोर तपस्या आरम्भ की (१. ३६, २)। देवों ने बताया कि क्रूर कद्रू को छोड़ कर और कौन स्त्री अपने पुत्रों को शाप दे सकती है (१. ३८, ७)। सम्पूर्ण नागों की माता के रूप में कद्रू का उल्लेख (१. ५४, ५)। दक्ष-कन्या और कश्यप की पत्नी के रूप में कद्रू का उल्लेख (१. ६५, १३)। सुरसा ने नागों को और कद्रू ने पन्नगों को जन्म दिया (१. ६६, ७०) ब्रह्मा की सभा में इसकी उपस्थिति का उल्लेख (२. ११, ४१) कद्रू ने सूक्ष्म रूप से एक गर्भवती स्त्री के उदर में प्रवेश करके गर्भ की हत्या कर दी और उस स्त्री से एक नाग का जन्म कराया (३. २३०, ३७)।

कद्रूज, बहु० (कद्रू के पुत्र) = नाग) १३. १६५, १८)। तु० की० बहु०, काद्रवेय, बहु० कद्रु पुत्र।

कद्रुपुत्र = नाग। 'द्वौ पुत्रौ विनता वव्रे कद्रूपुत्राधिकौ बले', (१. १६, ९)। 'ततः पञ्चशते काले कद्रूपुत्रा विनिःसृताः', (१. १६, १५)। 'नाना पक्षिरुतं रम्यं कद्रूपुत्र प्रहर्षणम्', (१. २७, ९)। 'कद्रूपुत्रान्', (१. ३४, १२)। तु० की० बहु० काद्रवेय, बहु० कद्रूज।

कश्मोर, प्रातः और सायं स्मरण करने योग्य एक राजर्षि का नाम है (१३. १६५, ५३)।

कनक = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कनकध्वज, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, १४)। यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुआ था (१. १८६, ३)। भीमसेन ने इसका वध कर दिया (६. ९६, २७)।

कनकपर्वत, सुवर्ण पर्वत महामेरु का नाम है (१२. ५९, ११९)।

कनकाक्ष, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७४)।

कनकाङ्गद, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, १०५)। तु० की० कनकध्वज।

कनकाङ्गदिन् = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

कनकापीड, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६६)।

कनकायुस्, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९९)। तु० की० करकायु।

कनकावती, स्कन्द की अनुचरी एक मातृका का नाम है (९. ४६, ८)।

कनखल, एक तीर्थ का नाम है, जहाँ स्नान करके तीन रात उपवास करने वाला व्यक्ति अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त करता है (३. ८४, ३०; ८५, ८८; ९०, २२; १३. २५, १३)।

कनिष्ठ = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कन्दरा, स्कन्द की अनुचरी एक मातृका का नाम है (९. ४६, ९)।

कन्दर्प = काम, व० स्था०।

कन्यकागुण, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ५२)।

कन्या, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, १३७)।

कन्याकूप, एक तीर्थ का नाम है। कन्याकूप और बलाका तीर्थ में तर्पण करने वाला पुरुष देवताओं में कीर्ति पाता है और अपने यश से प्रकाशित होता है (१३. २५, १९)।

कन्यातीर्थ, एक या एकाधिक तीर्थों का नाम है। यहाँ स्नान करने वाला व्यक्ति सहस्र गोदान का फल प्राप्त करके पाप से मुक्त हो जाता है (३. ८३, ११२; ८५, २३)। युधिष्ठिर ने तीर्थयात्रा के समय इसका दर्शन किया था (३. ९५, ३)।

कन्याभर्तृ = स्कन्द।

कन्याश्रम, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १८९)।

कन्यासंवेद्य, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, १३६)।

कन्याह्रद, एक तीर्थ का नाम है (१३. २५, ५३))।

कप, दानवों के एक वर्ग का नाम है। "वायु ने कहा : जब इन्द्र सहित सम्पूर्ण देवता मद के मुख में पड़ गये तब च्यवन ने उनके अधिकार की समस्त भूमि का अपहरण कर लिया, और कपों ने उनके स्वर्गलोक पर अधिकार कर लिया। ब्रह्मा ने इन्द्र सहित देवताओं को ब्राह्मणों की शरण में जाने के लिये कहा। तदनन्तर ब्राह्मणों ने कप-विनाशक कर्म आरम्भ किया। यह समाचार सुन कर कपों ने ब्राह्मणों के पास धनी नामक दूत भेजा। धनी ने ब्राह्मणों से कहा : 'समस्त कप नामक दानव यज्ञों का अनुष्ठान करते हैं; सबके सब सत्य-प्रतिज्ञ और महर्षियों के तुल्य हैं...... इस प्रकार कप-गण अनेक गुणों से सम्पन्न हैं, अतः आप अपने कार्यों से निवृत्त हों, क्योंकि निवृत्त होने से ही आप लोगों को सुख मिलेगा।' परन्तु ब्राह्मणों ने धनी की बातों को अस्वीकृत कर दिया जिस पर क्रुद्ध होकर कपों ने ब्राह्मणों पर आक्रमण किया। फिर भी ब्राह्मणों ने अग्नि को उत्पन्न करके दानवों का संहार कर डाला, किन्तु उस समय उन्हें यह नहीं मालूम हो सका कि कपों का विनाश हो गया या नहीं। उस समय नारद ने ब्राह्मणों को बताया कि कपों का भी विनाश हो गया है। तदनन्तर देवताओं के तेज और पराक्रम की वृद्धि होने लगी और उन्होंने तीनों लोकों में सम्मानित होकर अमरत्व प्राप्त कर लिया (१३. १५७, ४. ६-९. १४. १६-२०)।"

कपट, कश्यप-पत्नी दनु के पुत्र, एक दानव का नाम है (१. ६५, २६)।

१. कपर्दिन् = शिव; व० स्था०।

२. कपर्दिन् = विष्णु (१२. ३४०, १०६)।

३. कपर्दिन (बहु०) = रुद्र (१२. २८४, २०)।

कपर्दिसुता = सिनीवाली (३. २१८, ५)।

कपालमालिन् = शिव (१०. ६, ३४; १४. ८, २४)।

कपालमोचन, एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने वाला व्यक्ति सम्पूर्ण पापों से मुक्त हो जाता है (३. ८३, १३७; ९. ३९, ४.८. २२)।

कपालवत् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कपालहस्त = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

१. कपालिन् = शिव, व० स्था०।

१. कपालिन्, स्थाणु के पुत्र एकदश रुद्रों में से एक का नाम है (१. ६६, ३) अर्जुन के जन्मोत्सव पर अन्य रुद्रों के साथ ये भी उपस्थित थे (१. १२३, ६९)।

कपि = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

कपिञ्जल, एक प्रकार के पक्षी, जो मरे हुए त्रिशिरा के वेदपाठी मुख से उत्पन्न हुये थे (५. ९, ४०)।

कपिञ्जली, एक नदी का नाम है (६. ९, २६)।

कपिध्वज, कपिकेतन = अर्जुन व० स्था०।

कपिप्रवरकेतन = अर्जुन, व० स्था०।

कपिराजकेतु = अर्जुन (६. ६०, ७. २१. २७. २८)।

१. कपिल, एक ऋषि का नाम है जो सांख्य-दर्शन के प्रवर्त्तक थे। 'कपिलो नाम देवोसौ भगवानजितो हरिः॥ येन पूर्वं महात्मानः खनमाना रसातलम्। दर्शनादेव निहताः सगरस्यात्मजा विभो॥', (४. ४७, १८-१९)। सगर के पुत्र जब यज्ञाश्व को ढूँढ़ते हुये पाताल में पहुँचे तो अपनी आज्ञा का उल्लङ्घन कर देने के कारण कपिल ने उन समस्त राजकुमारों को भस्म कर दिया (३. १०७, २९-३२)। "अंशुमान ने समुद्र में प्रवेश करके महात्मा कपिल तथा यज्ञाश्व को देखा। अंशुमान ने कपिल का दर्शन करके

उन्हें प्रमाण किया। उनसे प्रसन्न होकर कपिल ने उन्हें यज्ञाश्व प्रदान करते हुये यह आशीर्वाद दिया कि स्वर्ग से गंगा के अवतरण तथा उनके जल से पवित्र होकर सगर के समस्त भस्म पुत्र स्वर्गलोक चले जायेंगे (३. १०७, ५०–५७)।" 'कपिलेन महात्मना', (३. १०८, २)। 'एवमुक्तः प्रत्युवाच राजा हैमवतीं तदा। पितामहा मे वरदे कपिलेन महानदि ॥', (३. १०८, १६)। 'कपिलं देवमासाद्य', (३. १०८, १८)। 'कपिल प्रमुः', (३. २०४, २७)। 'कपिलं परमर्षिं च यं प्राहुर्यतयः सदा। अग्निः स कपिलो नाम सांख्ययोगप्रवर्तकः ॥', (३. २२१, २१)। 'अत्र चक्रधनुर्नाम सूर्याज्जातो महानृषिः ॥ विदुर्यं कपिलं देवं येनार्ताः सगरात्मजाः ।', (५. १०९, १७–१८)। 'सिद्धानां कपिलो मुनिः', (६. ३४, २६)। कृष्ण को कपिल के साथ समीकृत किया गया है (१२. ४३, १२)। भीष्म को घेर कर खड़े होने वाले अन्य ऋषियों के साथ यह भी थे (१२. ४७, ८)। 'यमाहुः कपिलं सांख्याः परमर्षिं प्रजापतिम्', (१२. २१८, ९)। 'कपिलमित्यैव मैथिलः', (१२. २१९, ५२)। 'कपिलश्च गोश्च संवादम्', (१२. २६८, ५)। १२. २६८ ७। 'कपिल उवाच', (१२. २६८ ११; २६९, १. २०. ४०; २७०, १. ३५. ३८)। 'शृणु मे त्वमिदं सूक्ष्मं सांख्यानां विदितात्मनाम्। विहितं यतिभिः सर्वैः कपिलादिभिरीश्वरैः', (१२. ३०१, ३)। 'कपिलस्य शुकस्य च', (१२. ३१८, ६०)। 'ऋषिश्रेष्ठश्च कपिलः', (१२. ३३६, ८) 'विद्यासहायवन्तं च आदित्यस्थं समाहितम्। कपिलं प्राहुराचार्याः सांख्यनिश्चितनिश्चयाः ॥', (१२. ३३९, ६८)। ब्रह्मा के सात मानस पुत्रों में इनकी गणना (१२. ३४०, ७२)। 'विद्यासहायवन्तं मामादित्यस्थं सनातनम्। कपिलं प्राहुराचार्याः सांख्या निश्चित निश्चयाः ॥', (१२. ३४२, ९५)। 'सांख्यस्य वक्ता कपिलः परमर्षिः स उच्यते', (१२. ३३९, ६५)। 'ऋषिभिः कपिलादिभिः', (१२, ३५०, ६)। 'महानृषिश्च कपिलः', (१३. ४, ५६)। 'सांख्यानां कपिलो ह्यसि', (१३. १४, ३२३)। 'कपिलश्च ततः प्राह सांख्यर्षिर्देवसंमतः', (१३. १८, ४)। 'अनन्तः कपिलश्चैव सप्तैते धरणीधराः', (१३. १५०, ४१)। सुवर्णधारिणा नित्यमवशासा द्विजातिना', (१३. १५३, ९)।

२. कपिल, एक नागराज का नाम है जिनका कपिलतीर्थ प्रसिद्ध है। कपिल के उस तीर्थ में स्नान करने से सहस्र कपिला-दान का फल होता है (३. ८४, ३२)।

३. कपिल, सूर्य का एक नाम है (३. ३, २४)।

४. कपिल = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

५. कपिल = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)। तु० की० १. कपिल

कपिलवट, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, ३१)।

कपिलस्य केदार, एकतीर्थ का नाम है। 'केदारे चैव राजेन्द्र कपिलस्य महात्मनः', (३. ८३, ७२)

१. कपिला, दक्ष की पुत्री तथा कश्यप की पत्नी का नाम है (१. ६५, १२)। अमृत, ब्राह्मण, गायें, गन्धर्व, अप्सरायें ये सब पुराण में कपिला की सन्तति बताई हैं (२. ६५, ५२)।

२. कपिला, अग्नियों की माता नदियों में से एक का नाम है (३. २२२, २५)। भारतवर्ष की नदियों में इसकी गणना (६. ९, २८)।

३. कपिला = दुर्गा (उमा) : ६. २३, ४।

४. कपिला, आसुरि नामक एक ब्राह्मण-पत्नी का नाम है। पञ्चशिख कपिला के स्तनों का दुग्धपान करने के कारण कापिलेय कहलाये (१२. २१८, १५)।

कपिला गाय की उत्पत्ति तथा दान का वर्णन (१३. ७७; १३०, १९–२०)।

कपिलाचार्य = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

कपिलातीर्थ, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ४७)।

कपिलाश्व, कुवलाश्व धुन्धुमार के द्वितीय पुत्र का नाम है (३. २०४, ४०)। ये पृथिवी के उन प्राचीन शासकों में से एक हैं जो पृथिवी का परित्याग करके स्वर्गलोक चले गये थे (१२. २२७, ५१)।

कपिलाह्रद, वाराणसी के अन्तर्गत एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से राजसूय यज्ञ का फल प्राप्त होता है (३. ८४, ७८)।

कपिवरध्वज = अर्जुन, व० स्था०।

कपिष्ठलस्य केदार, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ७४)।

कपिश = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कपीन्द्र = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

कपीन्द्रपुत्री = जाम्बवती (१३. १४, ४२)।

१ कपोत, गरुड की प्रमुख सन्तानों में से एक का नाम है (५. १०१, १३)।

२. कपोत = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कपोतरोमन, एक या एकाधिक राजाओं का नाम है जो यमराज की सभा में उपस्थित होते थे (२. ८, १७)। ये शिवि औशीनर के पुत्र थे (३. १९७, २७)। 'कपोतरोमाणं शिबिनौद्भिदं पुत्रं प्राप्स्यसि', (३. १९७, २८)। कलिङ्गराज चित्राङ्गद की पुत्री के स्वयंवर में इनके पधारने का उल्लेख', (१२. ४, ६)।

कपोत-लुब्धक-संवाद—"मुनि ने कहा : एक समय की बात है, किसी महान् वन में एक निर्दय लुब्धक जब वन में विचर रहा था तब चारों ओर से बड़ी भयंकर आँधी उठी और भयंकर वर्षा से वन के समस्त मार्ग जल के प्रवाह में डूब गये। बहेलिये के सारे अंग जाड़े से ठिठुर रहे थे जिससे वह न तो चल पाता था और न खड़ा ही हो पाता था। उसी समय उसने शीत से व्याकुल भूमि पर गिरी हुई कबूतरी को देखा और उसे उठाकर अपने पिंजड़े में डाल लिया। बादलों के हट जाने के पश्चात् उस व्याध ने एक सघन वृक्ष के नीचे ही रात्रि व्यतीत करने का निश्चय किया। तदनन्तर उसने हाथ जोड़ कर प्रणाम करके कहा : 'इस वृक्ष पर जो-जो देवता हों मैं उनकी शरण लेता हूँ।' ऐसा कहकर उसने पृथिवी पर पत्ते बिछा दिये और एक शिला पर सर रखकर वहीं सो गया (१२. १४३)।" उसी वृक्ष की एक शाखा पर बैठा हुआ एक कबूतर अपनी भार्या के खो जाने पर विलाप कर रहा था। (१२. १४४)। पिंजड़े में बन्द कबूतरी ने विलाप कर रहे अपने पति, उस कबूतर से शरणागत बहेलिये की सेवा करने की प्रार्थना की (१२. १४५)। "कबूतर ने उस बहेलिये का आतिथ्य सत्कार किया। बहेलिया शीत से ठिठुर रहा था अतः कबूतर ने वहाँ अग्नि प्रज्वलित की। बहेलिया बहुत भूखा था, अतः उसकी क्षुधा की तृप्ति के लिये उस कबूतर ने स्वयं अग्नि में प्रवेश किया। कबूतर ने ऐसा करने के पहले बहेलिये को बताया कि ऋषियों, देवताओं, पितरों तथा महात्माओं ने भी आतिथ्य सत्कार को महान् धर्म कहा है। कबूतर को आग के भीतर प्रविष्ट हुआ देखकर व्याध अत्यन्त चिन्तित, और अपने क्रूर कर्मों पर लज्जित होकर अनेक प्रकार से विलाप करने लगा (१२. १४६)।" कबूतर के इस आत्मत्याग को देखकर बहेलिये को अत्यन्त वैराग्य हुआ और उसने पिंजड़े में बन्द कबूतरी को भी मुक्त कर दिया (१२. १४७)। अपने पति के वियोग में कबूतरी ने विलाप करते हुये अग्नि में प्रवेश किया और अन्त में कबूतर और कबूतरी दोनों स्वर्गलोक चले गये (१२. १४८)। "बहेलिये ने कठिन तपस्या आरम्भ की। उपवास के कारण अत्यन्त दुर्बल बहेलिये ने घोर वन में प्रवेश किया किन्तु घुसते ही कटीली झाड़ियों में फँस गया। इधर उस वन में भयंकर आग लग गई, जिससे बहेलिया उसमें जल गया। थोड़ी ही देर में उसने देखा कि वह बड़े आनन्द से स्वर्गलोक में विराजमान, तथा अनेक यक्ष, सिद्ध और गन्धर्वों के बीच इन्द्र के समान शोभा पा रहा है (१२. १४९)।"

१. कबन्ध, एक राक्षस का नाम है (३. २७९, २८)। राम और लक्ष्मण द्वारा इसका वध कर दिये जाने पर इसके मृतक शरीर से विश्वावसु गन्धर्व प्रगट हुआ जो एक ब्राह्मण के शापवश राक्षसयोनि में आ गया था (३. २७९, ३९. ४०)।

२. कबन्ध, राहु के स्कन्ध का नाम है : 'कबन्धान्तर्हितो भानुरुदयास्तमने तदा', (३. १९०, ७९)। 'अत्र मध्ये समुद्रस्य कबन्धः प्रति दृश्यते', (५. ११०, ११)।

१. कमठ, युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित होनेवाले कम्बोजराज का नाम है (२. ४, २२)।

२. कमठ, एक ऋषि का नाम है जिन्होंने तपस्या द्वारा सिद्धि प्राप्त की थी (१२. २९६, १४)।

कमण्डलुधर = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

१. कमण्डलुनिपङ्ग = कृष्ण (१२. ४७, ७९)।

२. कमण्डलुनिपङ्ग = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कमला, स्कन्द की अनुचरी एक मातृका का नाम है (९, ४६, ९)।

१. कमलाक्ष, कौरव पक्ष के एक योद्धा का नाम है जिसे दुर्योधन ने अर्जुन पर आक्रमण करने लिये शकुनि के साथ भेजा था (७. १५६, १२३)।

२. कमलाक्ष, एक असुर का नाम है जो असुरों के त्रिपुरों में से सुवर्णमयपुर का अधिपति था (७. २०२, ६५)। यह तारक का द्वितीय पुत्र था (८. ३३, ५) । रजतमय पुर का अधिपति था (८. ३३, २२)।

कमलाक्षी, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ६)।

१. कम्प, एक वृष्णिवंशी राजकुमार का नाम है जो मृत्यु के पश्चात् विश्वेदेवों में मिल गया था (१८. ५, १६)।

२. कम्प = शिव (सहस्र नामों से एक)।

कम्पन, एक राजा का नाम है जो युधिष्ठिर की सभा में विराजमान होता था (२. ४, २२)।

कम्पना, एक नदी का नाम है। इसमें स्नान करने से पुण्डरीक यज्ञ का फल प्राप्त होता है (३. ८४, ११६)। भारतवर्ष की एक नदी के रूप में इसका उल्लेख (६. ९, २५)।

१. कम्बल. एक नाग का नाम है (१. ३५, १०)। ये वरुण की सभा में विराजमान होते हैं (२. ९, ९)। मातलि के उपाख्यान में ये कश्यप के वंशज कहे गये हैं (५. १०३, ९)।

२. कम्बल, एक तीर्थ का नाम है (३. ८५, ७६)। तु० की०

३. कम्बल, कुशद्वीप के चौथे वर्ष का नाम है (६. १२, १३)।

करंजनिलया, वृक्षों की माता अनला या वीरुधा का नाम है जो करंज नामक वृक्ष पर निवास करती है। यह वरदायिनी तथा प्राणियों पर कृपा करनेवाली है, अतः पुत्रार्थी मनुष्य करंज वृक्ष को इसके उद्देश्य से प्रणाम करते हैं (३. २३०, ३५–३६)।

करक, भारत के दक्षिण दिशा में स्थित एक जनपद का नाम है (६. ९, ६०)।

करकर्ष, चेदिराज के भ्राता, शरभ के छोटे भाई का नाम है। यह अपने भ्राताओं के साथ पाण्डवों की सहायतार्थ आये थे (५. ५०, ४७)। इन्होंने युद्ध के मैदान में आगे बढ कर चेकितान को अपने रथ पर बैठा कर उनकी रक्षा की थी (६. ८४, ३२–३३)।

करकाक्ष, कौरव पक्ष के एक योद्धा का नाम है जो द्रोणनिर्मित गरुड-व्यूह के ग्रीवा-स्थान में खड़ा किया गया था (७. २०, ६)।

करकायुस्, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है। यह अपने भ्राताओं के साथ द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुआ था (१. १८६, २) तु० की० कनकायुस्।

करट (बहु०), भरतवर्ष के दक्षिण में स्थित एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ६३)।

१. करण (किसी मिश्रित जाति का एक व्यक्ति) = युयुत्सु (१. ६३, ११८; ११५, ४३)।

२. करण (बहु०), उन जातियों में से एक का नाम है जो ब्राह्मण आदि चार वर्णों से अनुलोम तथा विलोम वर्ण की स्त्रियों के साथ परस्पर संयोग होने से उत्पन्न होते हैं (१२. २९६, ९)।

१. करण (मू) = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

२. करण (मू) = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

करतोया, एक नदी का नाम है। अन्य नदियों के साथ वरुण की सभा में इसकी उपस्थिति का उल्लेख (२. ९, २२)। यहाँ तीन रात्रि उपवास करने से अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है (३. ८५, ३)। भारतवर्ष की नदियों में से एक (६. ९, ३५)। 'करतोयां कुरङ्गं च', (१३. २५, १२)। अन्य नदियों के साथ इसका उल्लेख (१३. १६५, २०)। तु० की० करतोयिनी।

करतोयिनी, एक नदी (= करतोया) का नाम है (१३. १०२, ४५)।

करन्धम, मरुत के पितामह (= सुवर्चस्) एक प्राचीन राजा का नाम है। यम की सभा में इनकी उपस्थिति का उल्लेख (२. ८, १६)। 'करन्धमस्य पुत्रस्तु कृतात्मामरुतस्तथा', (१२. २३४, २८)। 'करन्धमस्य पौत्रस्तु मरुत्तोऽविक्षितः सुतः', (१३. १३७, १६)। इनका मुख्य नाम सुवर्चस् था। इनके करका धमन (हाथ को बजाने) करने से एक विशाल सेना प्रगट हो गई थी, इसीलिये ये करन्धम कहलाये (१४. ४, १६)। अङ्गिरा पहले करन्धम के पुरोहित थे (१४. ५, ८)। 'संकल्प्या मनसा यज्ञं करन्धमसुतात्मजः', (१४. ६, ३)।

करभ, एक राजा का नाम है जो जरासन्ध के आगे नतमस्तक रहता था (२. १४, १३)।

करभञ्जक, भारतवर्ष के उत्तर-पूर्वी जनपद का नाम है (६. ९, ६९)।

करम्भा, कलिङ्गराजकी पुत्री, अक्रोधन की पत्नी तथा देवातिथि की माता का नाम है (१. ९५, २२)।

१. करवीर, एक नाग का नाम है (१. ३५, १२; ५. १०३, १४)।

२. करवीर, द्वारका के समीपवर्ती एक वन का नाम है (गी० सं०, २. ३८, २९ के बाद, पृष्ठ ८१३ कालम १)।

करवीरपुर, एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से मनुष्य ब्रह्मरूप हो जाता है (१३. २५, ४४)।

करहाटक, दक्षिण भारत के एक देश का नाम है जिसे सहदेव ने अपनी दिग्विजय के प्रसङ्ग में विजित किया था (२. ३१, ७०)।

१. कराल, अर्जुन के जन्मोत्सव पर उपस्थित होने वाले एक देवगन्धर्व का नाम है (१. १२३, ५७)।

२. कराल, शिव (७. २०२, २९; १४. ८, १३)।

३. कराल = कृष्ण (विष्णु) : १३, १५८, १४।

४. कराल = करालजनक (१२. ३०८, ३८)।

करालजनक, एक राजा का नाम है। 'वसिष्ठस्य च संवादं करालजनकस्य च', (१२. ३०२, ७)।

करालदन्त, इन्द्र की सभा में विराजमान होने वाले एक महर्षि का नाम है (२. ७, १४)।

करालाक्ष, स्कन्द के सैनिक का नाम है (९. ४५, ६१)।

कराली = दुर्गा (उमा) : ६. २३, ६।

करीति, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ४४)।

करीपक, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ५५)।

करीषिणी, एक नदी का नाम है (६. ९, १७. २३)।

करुणान्वित = सूर्य (३. ३, २७)।

१.करूष, एक देश का नाम है। अर्जुन चेदि, काशि तथा करूष देशों को विजित करेंगे (१. १२३, ४०)। 'अलर्कमाङ्गनेरवर्यं सन्तं सत्यव्रतं काशिकरूपराजम्', (३. २५, १३)। युधिष्ठिर के मित्र-राष्ट्रों में से एक (५. ६२, ५)। 'चेदिकाशिकरूषाणां नेतारं दृढविक्रमम्', (५. १९६, २)। 'चेदिमत्स्यकरूषाश्च', (६. ९, ४०)। 'चेदिकाशिकरूषेषु', (६. ४७, ४)। चेदिमत्स्यकरूषाश्च भीमसेनपदानुगाः', (६. ५४, ८)। युद्ध में धृष्टकेतु का अनुगमन करते हैं (६. ५६, १४)। 'चेदिपाञ्चालकरूषमत्स्याः', (६. ५९, १२९; ९७, ३९)। अन्य लोगों के साथ भीष्म द्वारा करूषोंका वध (६. १०६,

१८; ११६, ७५)। अन्य वात्स्य, गार्ग्य आदि देशवासियों के साथ ये भी कृष्ण द्वारा पहले ही विजित कर लिये गये थे (७, ११, १५)। इन लोगों को कर्ण ने युद्धभूमि में आगे बढने से रोका (८. ५४, १६)। महाभारतयुद्ध में भीष्म द्वारा इनका वध (८. ७३, २९)। तु० की० बहु० कारूष।

२. करूष, करूष देश के अधिपति का नाम है : 'वक्रः करूषाधिपतिर्मायायोधी महाबलः', (२. १४, १२)।

३. करूष, एक प्राचीन राजा का नाम है। कार्तिक मास में मांसभक्षण न करने वाले राजाओं के साथ इनका उल्लेख (१३. ११५, ६४)। तु० की० १. कारूष।

करूषक ये लोग युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में पधारे (५. २२, २५)।

करूषराज, इन्होंने शिशुपाल का सम्मान किया (५. २२, २७)।

करूषाधिपति, युधिष्ठिर के सभा-भवन में उपस्थित रहने वाले करूष देश के राजा का नाम है (२. ४, २९)। ये जरासन्ध के समक्ष हाथ जोड़े खड़ा रहता था (२. १४, १२)।

करेणुमती, चेदिराज शिशु की पुत्री, नकुल की पत्नी तथा नरमित्र की माता का नाम है (१. ९५, ७९)।

कर्कखण्ड, पूर्वीय भारत के एक जनपद का नाम है जिसे कर्ण ने दिग्विजय के समय विजित किया था (३. २५४, ८)।

कर्कर, एक प्रमुख नाग का नाम है (१. ३५, १६)।

१. कर्कोटक, कश्यप और कद्रू की संतानों में प्रमुख एक नाग का नाम है (१. ३५, ५)। यह अर्जुन के जन्मोत्सव पर उपस्थित हुआ (१. १२३, ७१)। वरुण की सभा में विराजमान होता है (२. ९, ९)। 'नाग' कर्कोटकम्', (३. ६६, ४)। 'नागः पुनः कर्कोटकोऽब्रवीत', (३. ६६, १०)। इसका राजा नल को डस कर उनका रूप विकृत करना, (३. ६६, १४)। नल के शरीर से कलियुग प्रगट हुआ जो कर्कोटक नाग के तीक्ष्ण विष को अपने मुख से बार-बार उगल रहा था (३. ७२, ३०)। 'कर्कोटकस्य नागस्य', (३. ७९, १०)। अन्य नागों के साथ इसे भी शिव के रथ के घोड़ों के केश बाँधने की रस्सी बनाया गया था (८. ३४., २९)। बलराम जी के स्वधाम-गमन के समय स्वागत के लिये यह भी उपस्थित हुआ (१६.४,१५)।

२. कर्कोटक, एक जाति के लोगों का नामहै जिनका धर्म दूषित होता है (८. ४४, ४३)।

१. कर्ण, कुन्ती के गर्भ से सूर्य द्वारा उत्पन्न पुत्र का नाम है जिसका सूत अधिरथ तथा उसकी पत्नी राधा ने पुत्र के रूप में पालन-पोषण किया, और जो बाद में दुर्योधन का मित्र बन गया (१. १, ११०. १४१. १६७. १७६. १७९. १९७. १९८. २००. २०५)। 'कर्णः परबलार्दनः', (१. २. ३१)। 'ज्ञेयं विवादपर्वात्र कर्णस्यापि', (१. २, ६४)। 'शल्यकर्णौ" (१. २, ११४)। 'कर्णप्रोत्साहनात्', (१. २, १४७)। 'कर्णस्य परिमोक्षोऽत्र कुण्डलाभ्यां पुरंदरात्', (१. २, १६६. २०१)। 'कर्णदुर्योधनादीनाम्', (१. २, २३५)। 'कृष्णेन यत्र कर्णोऽनुमन्त्रितः', (१. २, २३६)। 'कर्णपर्व', (१. २, २७०) 'संवादः कर्णशल्ययोः', (१. २, २७२)। 'ततो दुर्योधनः क्रूरः कर्णश्च सह सौबलः', (१. ६१, ८)। "कुन्ती के गर्भ से सूर्य के अंश द्वारा कर्ण की उत्पत्ति हुई। वह बालक जन्म के साथ ही कवच और कुण्डल से युक्त था (१. ६३, ९८)।" "सूर्य ने कुन्ती के उदर में एक ऐसा गर्भ स्थापित किया जिसने बाद में कवच और कुण्डल के साथ ही जन्म लिया। उस समय कुन्ती ने पिता-माता तथा अन्य बान्धवों के भय से उस यशस्वी कुमार को एक पेटी में रख कर जल में छोड़ दिया। जल में छोड़े हुये उस बालक को राधा के पति अधिरथ सूत ने लाकर राधा की गोद में दे दिया और उसे अपना पुत्र मानते हुये उसका नाम वसुषेण रक्खा। बड़ा होने पर वह बालक अत्यन्त बलवान्, अस्त्र-शस्त्रों के संचालन में प्रवीण और वेदाङ्गों के अध्ययन में पारंगत हुआ। जिस समय वह जप में लगा होता था उस समय उस महात्मा के पास ऐसी कोई वस्तु नहीं थी जिसे वह ब्राह्मणों को माँगने पर दान न दे दे। इन्द्र ने अपने पुत्र अर्जुन के हित के लिये ब्राह्मण का रूप धारण करके कर्ण से उसके दोनों कुण्डल तथा शरीर के साथ ही उत्पन्न कवच माँग लिया। विस्मित इन्द्र ने भी कर्ण को एक शक्ति प्रदान की और कहा : 'दुर्धर्ष वीर ! तुम देवता, असुर, मनुष्य, गन्धर्व, नाग, और राक्षसों में से जिस पर भी इस शक्ति का प्रहार करोगे उसकी मृत्यु हो जायगी।' कवच और कुण्डल से रहित हो जाने के कारण कुन्ती का यह पुत्र उस समय से वैकर्तन कर्ण के नाम से विख्यात हुआ। कर्ण दुर्योधन का मित्र बन गया (१. ६७, १३७–१५०)।" 'कर्णः सर्वलोकेषु विश्रुतः', (१. १११, १९)। 'स्वशरीरात्समुत्कृत्य कवचं स्वं निसर्गजम्। विप्ररूपाय शक्राय ददौ कर्णः कृताञ्जलिः ॥', (१. १११, २८)। 'कर्णो वैकर्तनश्चैव कर्मणा तेन सोऽभवत्', (१. १११, ३१)। 'दुर्योधनः कर्णः', (१. १२९, ४०)। 'सूतपुत्रश्च राधेयः', (१. १३२, ११)। "जब अस्त्रदर्शन का अधिकांश कार्य समाप्त हो गया तो उसी समय द्वार की ओर से किसी का अपनी भुजाओं पर ताल ठोंकने का भारी शब्द सुनाई पड़ा जो ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो वज्र आपस में टकरा रहे हैं। आश्चर्यचकित द्वारपालों ने जब उस व्यक्ति को भीतर जाने का मार्ग दे दिया तो शत्रुओं की राजधानी पर विजय प्राप्त करने वाले कर्ण ने उस विशाल रंगमण्डप में प्रवेश किया। जन्म के साथ ही उत्पन्न दिव्य कवच और कुण्डल को धारण किये हुये कर्ण ने वहाँ पहुँच कर द्रोणाचार्य और कृपाचार्य को प्रणाम किया। तदुपरान्त कर्ण ने अर्जुन से मेघ के समान गंभीर वाणी में कहा : 'तुमने इन दर्शकों के समक्ष जो भी कौशल दिखाये हैं मैं उनसे भी अद्भुत कर्म करूँगा। अतः तुम अपने पराक्रम पर गर्व मत करो।' कर्ण के इन वचनों को सुन कर दुर्योधन अत्यन्त प्रसन्न हुआ। द्रोणाचार्य की आज्ञा लेकर कर्ण ने उन सब अस्त्र-कौशलों का प्रदर्शन किया जो अर्जुन कर चुके थे। उस समय अपने भ्राताओं सहित दुर्योधन ने अत्यन्त प्रसन्नता के साथ कर्ण को हृदय से लगा लिया। कर्ण ने अर्जुन के साथ द्वन्द्व-युद्ध करने की इच्छा प्रगट की जिस पर अर्जुन ने भी उसकी चुनौती को स्वीकार किया। द्रोणाचार्य ने इस द्वन्द्व की स्वीकृति प्रदान की। उस समय बक-पंक्तियों के व्याज से हास्य की छटा बिखेरने वाले मेघों ने बिजली की चमक, गड़गड़ाहट और इन्द्रधनुष के साथ समस्त आकाश को आच्छादित कर दिया। अर्जुन के प्रति स्नेह होने के कारण इन्द्र को रङ्गभूमि का अवलोकन करते देख सूर्य ने भी अपने समीप के मेघों को छिन्न-भिन्न कर दिया जिसके कारण अर्जुन तो मेघ की छाया में छिपे हुये दिखाई देने लगे, जब कि कर्ण सूर्य की प्रभा से प्रकाशित रहा। उस समय कृपाचार्य ने कर्ण से इस प्रकार कहा : 'अर्जुन कुरुवंश के रत्न हैं जो तुम्हारे साथ द्वन्द्व-युद्ध करेंगे। इसी प्रकार तुम भी अपने कुल का परिचय दो। तुम्हारे कुल का परिचय मिल जाने पर ही इसका निश्चय होगा कि अर्जुन तुम्हारे साथ युद्ध करें या नहीं, क्योंकि राजकुमार नीच कुल और हीन आचार-विचार वालों के साथ युद्ध नहीं करते।' कृपाचार्य की बात सुन कर कर्ण का मुख लज्जा से झुक गया परन्तु उसी समय दुर्योधन ने कहा : 'शास्त्रों के अनुसार राजाओं की तीन योनियाँ होती हैं—उत्तम कुल में उत्पन्न पुरुष, शूरवीर, तथा सेनापति।' यह कह कर दुर्योधन ने कर्ण को अङ्गदेश के राज्य पर अभिषिक्त कर दिया (१. १३६, १. ३. १२. १३. १५. १७–१९. २२. २५. २६. ३४. ३७. ४१)।" "तदन्तर काँपता हुआ अधिरथ रङ्गभूमि में आया। अपने पिता को देख कर कर्ण सिंहासन से नीचे उतर आया और अधिरथ के चरणों में सर रख कर प्रणाम किया। अधिरथ ने भी कर्ण को हृदय से लगा लिया जिसे देख कर भीमसेन ने सूतपुत्र कह कर कर्ण का तिरस्कार किया। भीम की बातों को सुन कर क्रोध से मदोन्मत्त दुर्योधन ने इस प्रकार कहा : 'क्षत्रियों में बल की ही प्रधानता है ; बलवान् होने पर हीन क्षत्रिय से भी युद्ध करना चाहिये। शूरवीर और नदियों की उत्पत्ति के वास्तविक कारण को जानना बहुत कठिन है। जगत् को व्याप्त करने वाला अग्नि जल से प्रगट हुआ; दानवों का संहारक वज्र दधीचि की हड्डियों से निर्मित हुआ, और स्कन्द देव को अग्नि, कृत्तिका, रुद्र, तथा गंगा का पुत्र कहते हैं। अनेक ब्राह्मण क्षत्रियों से उत्पन्न हुये और विश्वामित्र आदि क्षत्री अक्षय ब्राह्मणत्व प्राप्त कर चुके हैं। आचार्य द्रोण का जन्म कलश से हुआ है और कृपाचार्य की

उत्पत्ति सरकण्डों के समूह से हुई।' सूर्य के अस्ताचल की ओर चले जाने पर दुर्योधन, कर्ण का हाथ पकड़ कर उसे रङ्गभूमि से बाहर ले गया। दिव्य लक्षणों से लक्षित अपने पुत्र अङ्गराज कर्ण को पहचान कर कुन्ती मन ही मन बड़ी प्रसन्न हुई, परन्तु उसने अपना भाव प्रगट नहीं किया। कर्ण को मित्र के रूप में पाकर दुर्योधन का भी अर्जुन से होने वाला भय शीघ्र दूर हो गया (१. १३७, २. ८. २०. २२. २४. २५)।" उन समस्त राजकुमारों तथा द्रोण के अन्य शिष्यों में कर्ण भी एक था जिन्होंने द्रुपद की राजधानी पर आक्रमण करके उन्हें बन्दी बनाया (१. १३८, ६. २१)। 'दुःशासनश्च कर्णश्च', (१. १४१, १)। 'कर्ण शकुनिश्च', (१. १४१, २१)। 'दुर्योधनश्च कर्णश्च', (१. १४२, २)। १. १४९, ९; १५१, ३९। 'सह हि सृष्टो मघवता शक्तिर्ईतोर्महात्मना। कर्णस्याप्रतिवीर्यस्य प्रतियोद्धा महारथः॥', (१. १५५, ४६)। दुर्योधन आदि कुरुवंशी कर्ण के साथ द्रौपदी के स्वयंवर में पधारे (१. १८५, १३; १८६, ४)। १. १८७, १५. २१। 'अर्कपुत्रम्', (१. १८७, २२)। द्रौपदी ने सूतपुत्र कर्ण का वरण करने से इन्कार कर दिया (१. १८७, २३)। १. १८८, १९; १९०, ५. ७। 'कर्ण वैकर्त्तनम्', (१. १९०, १०. १४)। १९०, १६. २०। 'राधेयो युद्धात्कर्णो न्यवर्तत', (१. १९०, २२)। 'पातिते भीमसेनन शल्ये कर्णे च शङ्किते', (१. १९०, ३०)। १. २००, ९; २०२, १; २०४, १३. २७; २०५, ३. २९। दिग्विजय के अवसर पर भीमसेन ने कर्ण को विजित किया (२. ३०, १८–२०)। वे युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में पधारे (२. ३४, ७)। 'तं च कर्णमतिक्रम्य कथं कृष्णस्त्वयार्चितः', (२. ३७, १६)। 'वङ्गाङ्गविषयाध्यक्षं सहस्राक्षसमं बले। स्तुहि कर्णमिमं भीष्म महाचापविकर्षणम्॥', (२. ४४, ९)। दुर्योधन के सहायकों में इनकी गणना (२. ४८, ११)। इनके द्यूतक्रीड़ा में सम्मिलित होने का उल्लेख (२. ५८, २३; ६५, ४४)। २. ६७, ४५। कर्ण ने कहा कि द्रौपदी भी जूये में जीती हुई मान ली जाय (२. ६८, २७)। कर्ण ने द्रौपदी को दासी घोषित करते हुये दुःशासन से उसे घसीटने के लिये कहा (२. ६८, ८९)। कर्ण द्रौपदी से अन्य पति चुनने के लिये कहते हैं (२. ७१, १)। 'कर्ण उवाच', (२. ७२. १)। २. ७४, ५। अर्जुन कर्ण का वध करेंगे (२. ७७, २६)। २. ८०, ३६. ३७; ८१, १७; ३. १, १४। कर्ण ने पाण्डवों के वध का परामर्श दिया और दुर्योधन आदि के साथ इसकार्य के लिये प्रस्थित भी हुआ परन्तु मार्ग में व्यास ने इन सबको चेतावनी दी (३. ७, २. १२. १४. १५)। ३. १२, ५. १२६. १३४. २३, १०. २७, ८; ३६, ९. १८; ३७, ४; ४०, १०। अर्जुन कर्ण का वध करेंगे (३. ४१, २२)। ३. ४८, ९. १०. ४९, ३. १४। 'ये चास्य सचिवाः मन्दाः कर्णसौबलकादयः', (३. ४९, १७)। ३. ५१, २९; ५२, १२. १८। 'कर्णः सूतपुत्रः'; (३. ८६, ९)। 'संरब्धः शरधाराभिः सुदीप्तं कर्णपावकम्। अर्जुनोदीरितो मेघः शमयिष्यति संयुगे॥', (३. ८६, १३)। ३. ९१, २०. २३; १२०, ११, १७४, ३; २३६, ३१; २३७, १. २३; २३८, १. ३. १०. १७. १८; २३९, २३; २४०, ३; २४१, १९. २७; २४२, १. २४५, ३; २४६, ३; २४७, ९. १६; २४९, १२. २३. ३६; २५०, १. १३। घोषयात्रा के समय गन्धर्वों से पराजित होकर कर्ण भाग गया; पाण्डवों की सहायता से दुर्योधन आदि जब मुक्त हुये तब इसने दुर्योधन के संसार से विरक्ति की भावना की भर्त्सना की (३, २५१, २. १२)। 'हतस्य नरकस्यात्मा कर्णमूर्तिमुपाश्रितः', (३. २५२, २०)। इन्द्र कर्ण के कर्ण-कुण्डल और कवच प्राप्त करेंगे (३. २५२, २२)। ३. २५२, ३२। 'कर्णोऽप्याविष्टचित्तात्मा नरकस्यान्तरात्मना', (३. २५२, ३४)। नरकासुर की अन्तरात्मा से आविष्टचित्त होकर कर्ण ने दुर्योधन को अर्जुन के वध का परामर्श दिया (३. २५२, ३८)। इन्होंने अर्जुन के मारने की प्रतिज्ञा की (३. २५२, ५०)। ३. २५३, २. ८. ९. १२ १७. २४. २७; २५४, १. ११. १४. २४. २६. २८. ३१। कर्ण ने दुर्योधन के लिये पृथिवी को पराभूत किया (३. २५४, ३६)। ३. २५५, २. ४. ७. ११. २२; २५६, ५. २७; २५७, १३. १६। दुर्योधन को राजसूय यज्ञ का परामर्श देते हुये कर्ण ने यह शपथ ली कि वह स्वयं अर्जुन का वध करेंगे (३. २५७, १८)। 'अभेद्य कवचं मत्वा कर्णमद्भुतविक्रमम्', (३. २५७, २३)। 'सूतपुत्रेण कर्णेन', (३. २५७, २६)। ३. २६२, ४. ६. १८. २५. २६; ३००, ३. ५. ६. ९. १८. २०. २१. २३; ३०१, १. १५. १८। "स्वप्न में कर्ण के सम्मुख उपस्थित होकर सूर्यदेव ने कर्ण को अपना अक्षय कवच और कुण्डल इन्द्र को देने से विरत करने का प्रयास किया; परन्तु जब कर्ण ने सूर्य की इस आज्ञा को अस्वीकार कर दिया तब सूर्य ने कर्ण को इन्द्र से शक्ति लेकर ही उन्हें कवच और कुण्डल देने का परामर्श दिया (४. ३०२, १. ४. १६. १८. २०)।" "जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन ने इस गुप्त रहस्य का वर्णन किया जिसे सूर्य ने कर्ण पर प्रगट नहीं किया था। वैशम्पायन ने बताया कि वासुदेव की बहन और वृष्णि सूर की पुत्री पृथा को, जिसे राजा कुन्तिभोज ने गोद लिया था, कुन्तिभोज ने एक क्रोधी ब्राह्मण की सेवा करने की आज्ञा दी। अपने पिता कुन्तीभोज की इस आज्ञा का पालन करते हुये पृथा (कुन्ती) ने उस ब्रह्मर्षि की चर्या आरम्भ की (३. ३०३-३०४)।" एक वर्ष के पश्चात् कुन्ती की सेवा से सन्तुष्ट होकर उस तपस्वी ब्राह्मण ने कुन्ती को एक ऐसे मन्त्र का उपदेश किया जिसके द्वारा वह किसी भी देवता का आवाहन कर सकेगी (३. ३०५)। "उस ब्राह्मण के चले जाने पर कुछ दिनों के पश्चात् कुन्ती ने अपने शरीर में ऋतु का प्रादुर्भाव देखा। तदनन्तर एक दिन जब उसने प्रातःकालीन उगते हुये सूर्य को देखा तो उसको दृष्टि दिव्य हो गई। उसने उस समय कवच और कुण्डल से विभूषित सूर्य को देखा और कौतूहल वश ब्राह्मण के मंत्र की परीक्षा लेने के लिये उसने सूर्य का आवाहन किया। इस समय सूर्य ने अपनी योग-शक्ति से अपना दो स्वरूप बना लिया। एक स्वरूप से वह आकाश में तपते रहे और दूसरे से कुन्ती के सम्मुख प्रगट हुये। सूर्य को इस प्रकार अपने सम्मुख देखकर कुन्ती भयभीत हो गई परन्तु सूर्य ने उसे आश्वस्त किया (३. ३०६)।" "कुन्ती ने सूर्य से अपने स्थान पर चले जाने के लिये अनेक प्रकार से प्रार्थना की परन्तु सूर्य ने उससे कहा: 'मेरे साथ समागम करके तुम कन्या ही बनी रहोगी और तुम्हें एक ऐसा महायशस्वी पुत्र प्राप्त होगा जो ऐसे कवच और कुण्डल से विभूषित होगा जिसे माता अदिति ने मुझे प्रदान दिया है।' सूर्य के इस आश्वासन पर कुन्ती ने अपनी स्वीकृति दी। सूर्य ने भी अपनी योग-शक्ति के द्वारा कुन्ती के भीतर प्रवेश करके अपना तेजोमय वीर्य स्थापित कर दिया। इस प्रकार कुन्ती का कन्याभाव अछूता ही रहा (३. ३०७)।" "वह घटना वर्ष के ११ वें मास के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को घटित हुई। कुन्ती की एक धाय के अतिरिक्त अन्य किसी को भी इसका पता नहीं चल सका। उसे बालक पैदा हुआ तो उसने अपनी धाय से परामर्श करके बालक को एक पिटारी में बन्द कर अश्व नदी में छोड़ दिया। उस समय उसने उस बालक की रक्षा के लिये आदित्य, वसु, रुद्र, विश्वेदेव, इन्द्र सहित मरुद्गण, दिक्पालों सहित दिशाओं, तथा समस्त देवताओं आदि की स्तुति की। बालक को लेकर वह पिटारी अश्वनदी से चर्मण्वती नदी में गई, और उससे यमुना तथा गंगा में होकर चम्पापुरी के निकट अङ्गों के देश में पहुँची (३. ३०८)।" "उस समय धृतराष्ट्र का मित्र अधिरथ सूत, जो सन्तान-हीन था, अपनी पत्नी राधा के साथ गंगा नदी के तट पर आया। नदी की धारा में पिटारी को देखकर राधा ने उसे कौतूहलवश अपने सेवकों के द्वारा पानी से बाहर निकलवाया। पिटारी के बालक को उस सूत-दम्पति ने अपना पुत्र बना लिया और उसका वसुषेण और वृष नाम रक्खा (कर्ण नाम बाद में पड़ा)। कर्ण को गोद लेने के पश्चात् अधिरथ को अन्य पुत्र भी उत्पन्न हुये। बड़ा होने पर कर्ण को अधिरथ ने हस्तिनापुर भेजा, जहाँ द्रोण, कृप, और परशुराम से चारों प्रकार की अस्त्र-विद्या सीखकर वह महान् धनुर्धर के रूप में विख्यात हुआ। कर्ण, दुर्योधन का मित्र बन गया और सदैव अर्जुन के साथ स्पर्धा रखने लगा। युधिष्ठिर इससे भयभीत रहते थे। दोपहर के समय जल में खड़े होकर जब कर्ण भगवान् सूर्य की स्तुति करता था तो उस समय बहुत से ब्राह्मण धन के लिये उसके पास आते थे। उस समय उस अवसर पर उसके पास ऐसी कोई वस्तु नहीं थी जो ब्राह्मणों को अदेय हो (३. ३०९, २०. २१. २३)।" "एक ब्राह्मण का वेश बनाकर

इन्द्र ने कर्ण के पास आकर उससे उसका कवच और कुण्डल माँग लिया और बदले में उसे एक अमोघशक्ति दी। इन्द्र ने बताया कि वह अमोघशक्ति दैत्यों का संहार करते समय शत्रुओं का वध करके पुनः उनके पास लौट आती है। कर्ण से उन्होंने कहा : 'यह शक्ति तुम्हारे हाथ में जाकर किसी एक तेजस्वी, ओजस्वी, प्रतापी तथा गर्जना करनेवाले शत्रु को मार कर पुनः मेरे ही पास आ जायेगी। फिर भी, इस समय तुम जिस शत्रु को लक्ष्य करके यह शक्ति माँग रहे हो उसका यह वध नहीं कर सकेगी। क्योंकि वह श्री कृष्ण के द्वारा रक्षित है।' इन्द्र का यह वचन सुन कर कर्ण ने अपने शरीर से काटकर कवच कुण्डल इन्द्र को दे दिया। इन्द्र ने कर्ण को यह वरदान दिया कि कवच और कुण्डल के कट जाने पर भी उसका शरीर वीभत्स नहीं होगा। जब कर्ण ने कवच और कुण्डल देने लिये अपने शरीर को काटना आरम्भ किया तो उस समय देवता, मनुष्य और दानव सिंहनाद करने लगे। कर्ण के इस कर्णन (कर्तन) रूपी कर्म से उसका नाम कर्ण पड़ गया। पाण्डवों को इस समाचार से अत्यन्त प्रसन्नता हुई परन्तु धार्तराष्ट्र अत्यन्त दुःखी हुये। वैशम्पायन ने कहा : 'द्रौपदी को पाकर तथा जयद्रथ को काम्यकवन से भगाकर ब्राह्मणों सहित समस्त पाण्डवों ने मार्कण्डेय जी के मुख से पुराण कथा और देवताओं तथा ऋषियों के विस्तृत चरित्र सुनते हुये इस कथा को भी सुना था।' (३. ३१०, ६. ७. १३. १९–२३. २६. २९. ३१. ३२. ३४. ३६–४०)।" ३. ३१५, ६; ४. २१, ६; २५, ६; २६, ८। कर्ण ने पाण्डवों का गुप्तचरों द्वारा पता लगाने की सम्मति प्रदान की (४. २६, १५)। ४. ३०, ३. ७. १४। 'वैकर्तनस्य कर्णस्य क्षिप्रमाज्ञापयत स्वयम्', (४. ३०, १९)। ४. ३५, २। 'कर्णं वैकर्तनम्', (४. ३६, ६)। ४. ३८, ८. १३; ३९, १४; ४७, २। इन्होंने अर्जुन का वध करने की प्रतिज्ञा की (४. ४८, १)। ४. ४९, ११. १७. २१; ५०, १; ५१, १. ५. १७; ५२, १८। दुर्योधन की सेना में कर्ण कवच धारण करके आगे रहे (४. ५२, २३)। ४. ५३, १२; ५४, ७. २३. २५. २७। 'वैकर्तनं पूजयतां कुरूणाम्', (४. ५४, २६)। ४. ५४, ३१. ३२। अर्जुन द्वारा पराजित (४. ५४, ३४)। ४. ५५, ३७. ३८। अर्जुन ने उत्तर को बताया कि जिसकी ध्वजा के अग्रभाग पर हाथी या उसकी सांकल के चिह्न से युक्त पताका फहरा रही है, वही विकर्तन पुत्र कर्ण है (४. ५५, ५२)। ४. ५९, ७. १६. १८। अर्जुन ने कर्ण पर धावा किया (४. ५९, २०)। ४. ६०, १. २. ८. ९. १७. १८. २१. २२। अर्जुन ने प्रज्वलित बाण द्वारा कर्ण के वक्षस्थल पर आघात किया। (४. ६०, २५)। ४. ६३, १. ४; ६६, ३। अर्जुन ने इसको मूर्च्छित कर दिया और उत्तर से कहा कि वह इसके शरीर के पीले रंग के वस्त्र को उतार ले (४. ६६, १३)। ४. ६८, ८। 'पदं पद्मसहस्रेण यश्चरंश्चापराङ्मुखाद। तेन कर्णेन तात कथमासीत समागमः॥', (४. ६८, ६९)। 'सगणः सह कर्णेन', (४. ७०, २६)। 'गान्धारराजं च ससूतपुत्रम्', (५. २, ५)। ५. ३, २०। 'राधेयसौबलौ', (५. ४, २)। शल्य युधिष्ठिर से कर्ण की शक्ति का ह्रास करने की प्रतिज्ञा करते हैं। जब कर्ण और अर्जुन के द्वैरथ-युद्ध का अवसर प्राप्त होगा तो वे (शल्य) कर्ण के सारथि का पद ग्रहण करेंगे (५. ८, ४३)। ५.१८, १४. २३; २१, ८; २२, ७; २३, ११। 'राधेयमुग्रान् सह भूमिपालैः', (५. २५, ११)। ५. २६, २१. २२; २७, २५; २९, ४४. ५२; ३०, ३०; ३३, १४; ३५, ७६; ३७, ४४; ४७, ९। 'दुरात्मनः सूतपुत्रस्य', (५. ४८, ४)। धार्तराष्ट्रान् सकर्णान्', (५. ४८, ९७)। रामेण चैव शस्तस्य कर्णस्य', (५. ४९, २७)। ५. ४९, २८. २९. ३३; ५२, ४. ५; ५५, ४३. ५४। 'विकर्तनः कर्णः', (५. ५५, ६३) 'अर्जुनस्य तु भागेन कर्णो वैकर्तनो मतः', (५. ५७, १५)। ५. ५७, ३७. ५०। 'सूतपुत्रम्', (५. ५७, ५८)। ५. ५८, ९. १२. १५; ५९, ११। "ब्राह्मण के रूप में रामजामदग्न्य से ब्रह्मास्त्र प्राप्तकरने के कारण उन्होंने कर्ण को शाप दिया। कर्ण के पास इन्द्र की दी हुई अमोघ शक्ति तथा एक सर्पमुख बाण भी है जिसकी वह पुष्प मालाओं से पूजा करते हैं। कर्ण के दर्पयुक्त वचन को सुन कर जब भीष्म ने उसकी भर्त्सना की तो उसने यह शपथ ली कि जब तक भीष्म शान्त नहीं हो जायेंगे वह युद्ध नहीं करेगा (५. ६२, १. ७. १०–१२. १८)।" 'वैकर्तनः कर्णः', (५. ६३, ५)। ५. ६६, ४। 'शकुनिः सूतपुत्रश्च', (५. ७९, ८)। ५. ८३, १३; ९०, ८२; ९१, ५. १३; ९२, ७. ८. १०. २५; ९३, ९; ९४, ३४. ४८; ९५ १९; १२४, ४५. ४९; १२७, १४; १२८, १२. ४८; १३०, ३. ३३; १३७, २६. २९; १३८, ९; १४०, ३. ७. ९। 'विजयं वसुषेणस्य घोषयन्तु च पाण्डवाः', (५. १४०, २७)। 'कर्ण उवाच', (५. १४१, १)। 'नाम वै वसुषेणेति कारयामास वै द्विजैः', (५. १४१, १०)। ५. १४२, १. २. १६। कर्ण और कृष्ण का वार्तालाप जिसमें कर्ण, यह जानते हुये भी कि वह कुन्ती का पुत्र है, पाण्डवों से युद्ध करना चाहता है (५. १४३, १. ४६. ४८. ५०)। ५. १४४, ६. १५. १८. २९; १४५, १। 'कौन्तेयस्त्वं न राधेयो न तवाधिरथः पिता। नासि सूतकुले जातः कर्ण तद्विद्धि मे वचः॥', (५. १४५, २)। ५. १४५ ४। अथ पश्यन्ति कुरवः कर्णार्जुनसमागमम्', (५. १४५, ९)। कुन्ती कर्ण को यह बताती हैं कि वह उनका पुत्र है (५. १४५, १०. ११)। ५. १४६, १–३. २३. २५। कर्ण अर्जुन के अतिरिक्त अन्य पाण्डवों की रक्षा करने की प्रतिज्ञा करते हैं (५. १४६, २७)। 'राधेयम्', (५. १५०, १२)। ५. १५३, ८; १५४, ३. ९. १२; १५५, ३३। 'सूतपुत्रः', (५. १५६, २४)। ५. १५६, २५. ३५; १५८, २३; १६०, ४. ५। 'सूतपुत्रम्', (५. १६०, ९५)। 'कर्णशल्यझषावर्तम्', (५. १६०, १२२)। 'सूतपुत्रम्', (५. १६१, १३)। ५. १६०, ४० (= ५. १६०, १२२)। 'सूतपुत्रस्य', (५. १६२, २१)। 'सूतपुत्रे', (५. १६३, २१)। ५. १६३, ५४. ५६. ५७। 'अर्जुनं सूतपुत्राय', (५. १६४, ५)। 'कर्णो वैकर्तनः', (५. १६८, ४)। भीष्म ने कहा कि कर्ण न तो अतिरथी है और न रथी ही, जिस पर क्रुद्ध होकर कर्ण ने यह शपथ ली कि वह तब तक युद्ध नहीं करेगा जब तक भीष्म जीवित रहेंगे (५. १६८, ५)। ५. १९३, ६। इस बात का प्रण किया कि वह पाण्डव-सेना का पाँच रात्रि में विनाश कर देगा (५. १९३, २०)। ६. १४, ६९। 'स तु वैकर्तनः कर्णः सामात्यः सह बन्धुभिः। न्यासितः समरे शस्त्रं भीष्मेण भरतर्षभ॥', (६. १७, १३)। ६. २५, ८ 'सूतपुत्रः', (६. ३५, २६)। ६. ३५, ३४। शल्य युधिष्ठिर को यह आश्वासन देते हैं कि कर्ण की शक्ति को कम करने का प्रयास करेंगे (६. ४३, ८६)। 'श्रुतं मे कर्ण भीष्मस्य द्वेषात्किल न योत्स्यसे। अस्मान्वरय राधेय यावद्भीष्मो न हन्यते॥', (६. ४३, ९०)। 'कर्ण उवाच', (६. ४३, ९२)। 'कर्णस्य मतम्', (६. ४९. १२)। 'कर्णोऽपि न्यस्तशस्त्रः', (६. ५२, ३७)। ६. ५८, ३९। 'कृष्णस्य मतम्', (६. ७९, ६)। 'क्षत्रिया निर्धनं यान्ति कर्णदुर्मन्त्रितेन च', (६. ९६, ७)। ६. ९७, ५. ७. १४. १६। कर्ण उस समय तक युद्ध नहीं करेगा जब तक भीष्म युद्ध करने से अवकाश नहीं ले लेते (६. ९७, ४२)। 'सूतपुत्रे च राधेये पर्याप्तं तन्निदर्शनम्', (६. ९८, ८)। ६. १२०, २१; १२२, ९। कर्ण ने दुर्योधन के लिये कन्या लाने के निमित्त अकेले ही काशीपुर में जाकर धनुष की सहायता से ही वहाँ गये हुये समस्त राजाओं को परास्त कर दिया था; जरासन्ध भी युद्ध में इसकी समता नहीं कर सकता था (६. १२२, १७)। 'कर्ण उवाचः कौन्तेयोऽहं न सूतजः', (६. १२२, २३)। जब भीष्म शान्त हो गये तब कर्ण ने उनसे क्षमा माँगी (६. १२२, ३४, ३८)। ७.१, ३२. ३३. ३५. ३६. ४१. ४३. ४६. ४८, ४९ (वैकर्तनं कर्णम्)। कर्ण ने दस दिनों तक युद्ध नहीं किया; जब भीष्म घायल होकर युद्धभूमि में गिर पड़े तब कौरवों ने कर्ण पर ही अपनी आशा केन्द्रित कर ली (७. १, ५१. ५२)। ७. २, १. २. ४. ८। इन्होंने युद्ध के लिये प्रस्थान किया (६. २, ३६)। ७. ४, ५. ७. ९। 'ययौ वैकर्तनः कर्णः समीपं सर्वधन्विनाम्', (७. ४, १५)। भीष्म ने कर्ण के कौशलों की गणना कराई (७. ४, १८)। ७. ५, १. ३. ६. ९। इन्होंने द्रोण को सेनानायक बनाने का परामर्श दिया (७. ५, १३)। ७. ६, १। 'ययौ वैकर्तनः कर्णः प्रमुखे सर्वधन्विनाम्', (७. ७, १८)। ७. ७, १९. २१। (कर्णो हि समरे शक्तो जेतुं देवान् सवासवान्) २३. २४. ३२. ३३; १२, ५। 'वैकर्तनं तु समरे विराटः प्रत्यवारयत', (७. १४, ३८)। 'तत्र पौरुषमभूत् तत्र सूतपुत्रस्य दारुणम्', (७. १४, ३९)। ७. १६, १५।

द्रोणाचार्य द्वारा निर्मित गरुड़-व्यूह के पुच्छ भाग में अपने पुत्र, जाति के लोगों, तथा बान्धवों सहित खड़े थे (७. २०, ११ ।। ७. २२, १०. १६. १८। 'अस्त्रैः समत्वं संप्राप्य रुक्मिकर्णार्जुनाच्युतैः', (७. २३, ७०)। इन्होंने केकयों के साथ युद्ध किया (७. २५, ४२. ४४)। ७. २७,१६; ३२, १;३. ५। (भीमसेन के साथ संघर्ष) ३८. ५१. ५६, ६०. ६१ (अर्जुन द्वारा इनके ज्येष्ठ भ्राता का वध) ६४. ६५. ६७. ६९। 'कर्णमेवाभ्यधावन्त त्रास्यमानाः प्रहारिणः', (७. ३२, ७१)। ७. ३४. २०; ३७, ५. २४. २७. २९। अभिमन्यु के साथ संघर्ष करते हैं (७. ३७, ३१)। ७. ३९, ५. १५; ४०, २५. २८. ३२–३६। अभिमन्यु द्वारा इनके ज्येष्ठ भ्राता का वध (७. ४१, ५)। ७. ४१, ६. ८; ४६, ६. १९; ४७. ४. १०. १८; ४८, १. ३. ५. १७ (वैकर्तनः) २४. २६. ३१ (वैकर्तनः)। द्रोणकर्णमुखैः षड्भिर्धार्तराष्ट्रैर्महारथैः', (७. ४९, २२)। ७. ७२, ४९; ७३, १०; ७४, .४ ७, १५ (वैकर्तनः); ७५, २६; ७९, २९; ८५, २६ (कर्णस्यमतम्), ४३. ५२। 'दुर्योधनस्य कर्णस्य शकुनेश्चान्वमा मतम्', (७. ८६, ९)। ७. ८७, १२। 'द्रोण द्वारा निर्मित चक्रशकट व्यूह में इनकी स्थिति का उल्लेख (७. ८७, २६)। 'कर्णेन विजिताः पूर्वं संग्रामे शूरसंगताः', (७. ९१, ४०)। सूतपुत्र कर्ण जयद्रथ के बायें चक्र की रक्षा करते थे (७. ९५, ४९)। ६. ९६, २२. १०४, ४. २५. २७। अर्जुन के साथ संघर्ष (७. १०४, ३०)। "अधिरथ पुत्र कर्ण का ध्वज हाथी की सुवर्णमयी रस्सी के चिह्न से युक्त था। वह संग्राम में आकाश को भरता हुआ दिखाई देता था। युद्धस्थल में कर्ण के ध्वज पर सुवर्णमयी माला से विभूषित पताका वायु से आन्दोलित हो रथ की बैठक पर नृत्य सा कर रही थी (७. १०५, १२. १३)।" 'कर्णमुखाः', (७. १११, २९)। ७. ११२, ११. २३. २४. ३९; ११३, ३८। 'दक्षिणत्याश्च बहवः सूतपुत्रपुरोगमाः', (७. ११३, ४१)। ७. ११३, ४३. ४५। 'जलसन्धमहाग्राहं कर्णचन्द्रोदयोद्धतम् ॥ गते सैन्यार्णवं भित्त्वा तरसा पाण्डवर्षभे ।', (७. ११४, १५–१६)। ७. १२९, १०. ११. १३. १४. २०–२५. २८. ३०. ३२. ३४। भीमसेन से युद्ध किया और उसमें रथहीन हो गये (७. १२९, ३५)। ७. १३१, ३. ४. ६. ८. ११. १२. २२. २४. २६. २९. ३१. ३४–४१. ४६. ४८. ५०. ५२. ५३. ५५. ५६। भीमसेन से युद्ध करते हैं और पुनः रथहीन हो जाते हैं (७. १३१, ५७)। ७. १३२, १. २. ४. १५. १८. २१. २२. २६. २८. २९। इन्होंने पुनः भीमसेन के साथ युद्ध किया (७. १३२, ३२)। 'यत्कर्णं योधयामास समरे लघुविक्रमम्', (७. १३३, १)। 'त्रिदशानपि वा युक्तान्सर्वशस्त्रधरान्युधि। वारयेद्यो रणे कर्णः सयक्षासुरमानुषान् ॥', (७. १३३, ३) कर्ण और भीमसेन के बीच घमासान युद्ध; कर्ण पुनः रथ-विहीन हो जाते हैं (७. १३३. ५–८. १५. १६. २४. २७. ३६. ३७. ३९. ४३. ४४)। ७. १३४, १. ३. ५. १४. १८. १९. २३. ३३ (भीमसेन द्वारा विजित); १३५, २. ३. ६. ७. १०. ११. १७. १९. २९. ३५. ४०; १३६, १०. ३. ५. ७. १०. १३. १७. २३. २९. ३६–३९ (कर्ण का भीमसेन के साथ लगातार संघर्ष); १३७, ४–७. ११–१३. १८. ४३; १३८, ४–६. ११–१३. १९. २९; १३९, १. ३. ४. ९–१२. १४. २२. ३०. ३६. ३८. ४४. ४९. ५४. ५७. ६१. ६३. ६६. ६७. ७१. ७३–७५. ७८. ८२. ८६–८८. ९०. ९२. ९३. १०६. १०९. ११०. ११३. ११५. ११६. ११८. ११९ (कर्ण और भीमसेन के युद्ध की समाप्ति; कर्ण ने उन्हें विजित किया किन्तु उसका वध नहीं किया); १४०, २. ९; १४३, ५३. १४५, ९. १२. १३. १६. १८. २३. ३३. ४२. ५५. ६२–६५. ७०. ७४. ७६. ८१ (अर्जुन के साथ युद्ध); १४६, ५४. ७४. ९५. ९८; १४७, ३३. ३४. ३६. ३७. ५६–५९. ६२. ६५. ६८. ७०. ७३. ७८. ८९ (अपने पुत्र वृषसेन की सहायता प्राप्त करते हुये कर्ण ने सात्यकि से युद्ध किया)। अर्जुन कर्ण को फटकारते तथा वृषसेन के वध की प्रतिज्ञा करते हैं (७. १४८, २. ४. ७. ८. ३१)। ७. १४९, ५७; १५०, ८. ९. ३१; १५१, २०. २२; १५२, २. १५। भीमसेन पर आक्रमण करते हैं (७. १५५, २५)। ७. १५५, २९. ३०. ३८; १५६, १८. ७१. १२०। 'कर्णस्य दयितं पुत्रं वृषसेनमवाकिरत् । ततो वृकरथो नाम भ्राता कर्णस्य विश्रुतः ॥', (७. १५७, २१)। ७. १५८, १. २. ५. १२–१४. १६. १७. २०. २३. २५. ३४. ४७। कर्ण ने उस अमोघ शक्ति से अर्जुन का वध करने का वचन दिया जिसे उसने इन्द्र से प्राप्त किया था (७. १५८, ४९)। ७. १५९, २. ९. ११. १४. २०. २१. २३. ३३. ३७. ३९. ४१–४४. ४८. ४९. ५१–५४. ६०. ६१; १६०, ४; १६३, ३; १६४, २९; १६५, ७; १६७, १. ३–६. ८–१०. १४. १९. २१ (सहदेव के साथ युद्ध); १७०, १३. १५. २५, २७. ३२. ३३. ३५–३८. ४०–४१. ६१ (इन्होंने धृष्टद्युम्न और सात्यकि के साथ युद्ध किया); १७१, ५४; १७२, २. १२.–२२. २४. ३१. ३३. ३४; १७३, १. ४. ६. ८. ९. ११. १२. १४. १६. २०. २१. २३ (धृष्टद्युम्न और पाञ्चालों को पराजित किया). २५. २६. २८.३०–३२. ३४. ३५. ४१. ४७. ४८. ५६. ५८. ६१–६३. ६६। अर्जुन के कहने पर घटोत्कच कर्ण की ओर बढ़ा (७. १७३, ६८)। ७. १७४, १–५. ९. १३. २०. ४३. ४४ (घटोत्कच के साथ युद्ध); १७५, १. २०. २३. २५. ३२. ३४. ४१. ४३. ४७. ४९. ५१. ५२. ५४. ५६. ५७. ६६. ६९–७१. ७३. ७४. ७७. ७९. ८२–८६. ९८. १००–१०२. १०५. १०८. ११०. १११. ११४ ।'कर्णराक्षसयोर्मृधे', (७. १७६, १)। 'कर्णराक्षसयोर्नक्तं दारुणप्रतिदर्शने', (७. १७७, ४)। ७. १७७, ७–९. १२. १४. १६. ३५. ३८; १७८, ३. ४. ९. १०. १२; १७९, ३. १८. २२. २९. ४३. ४५. ४८. ५०. ५१. ५६। कर्ण ने इन्द्र द्वारा प्रदत्त अमोघ शक्ति से घटोत्कच का वध कर दिया (७. १७९, ६४)। ७. १८०, १२. १३. १५. १६. १९–२१. २४. २८; १८१, २५. ३०; १८२, ८. ९. ११. १३. १८. २१, २६. ३१.३३–३७. ३९. ४६; १८३, १. ३. ५. ८. ११. १६. १९. २३. ३५. ३८. ४३. ४७. ५०. ५८; १८४, १. ३०; १८५, २२. ३२. ३३; १८६, ७. १२. १४. ४८; १८७, २६. ३४ (भीमसेन के साथ युद्ध किया); १८८, ९–११. १४. १७–१९. २१; १८९. ५०. ५१. ५३. ५५; १९१, ४६. ४७; १९२, २. ४. ४३; १९३, ३०;२००, ५०. ५१। 'द्रोणिकर्णं कृपैर्गुप्ताम्', (७. २०२, २०)। ८. १, ११. १५. १९. २१; २, १. २०; ३, १०। 'कर्णं चक्रे सेनापतिं तदा', (८. ३,१७. १८)। 'अर्धं निहत्य सैन्यस्य कर्णो वैकर्तनो हतः', (८. ५, ६)। इसके पुत्र वृषसेन का वध हो चुका था (८. ५, २३)। 'कर्णार्जुन समागमे', (८. ५, ५४)। 'कर्णः प्रहरतां वरः', (८. ५, ५८)। 'तेजोवधं सूतपुत्रस्य संख्ये प्रतिश्रुत्याजातशत्रोः पुरस्तात्', (८. ७, १०)। ८. ८, १. ३. ७. १४. २२. २३. २५. २७; ९, ३. ७–९. १३. १८. ३५. ४१. ५३. ७१. ७९. ८३ ८५. ८७.८९. ९०. ९५.९७; १०, १६.१८. १९. २२. ३८–४०। 'सैनापत्येन सत्कर्तुं कर्णं स्कन्दमिवामराः', (८. १०, ४३)। ८. १०, ५५. ५६; ११, १. ३. .११–१३. १५. २२. २३। 'एको ह्यत्र महेष्वासः सूतपुत्रो विराजते', (८. ११, २५)। ८. ११, ३४. ३९, ४१; १३, १. २. ४। नकुल ने आक्रमण किया (८. १३, ५)८. १७, २४; १९, २३; २०, ३. ६. ३७; २१, १. ५. १०. १८–२०. २४. २५; २२, ३०; २४, १. २. १०. १२. १३. १५. १८. २०. २६. २९. ३४. ३८. ४४. ४८. ५४. ७३. ७४; २८, ८. ४८; ३०, १. २३–२६. २९–३३; ३१, ८. १९. २०. २२. २३. २६. ३४। कर्ण ने कहा कि या तो वे स्वयं ही अर्जुन का वध कर देंगे अन्यथा अर्जुन द्वारा मारे जायेंगे; अपना सारथि बनाने के लिये शल्य से प्रार्थना करते हैं (८. ३१, ३५. ७०–७२)। ८. ३२, ३. ६. ७. ९. १६. १७. १९. २३–२५. २७. २८. ३३. ५५. ५९–६१। शल्य कर्ण के समक्ष शर्त रखते हैं कि वे अपनी इच्छानुसार कर्ण से वार्तालाप कर सकते हैं (८. ३२, ६५)। ८. ३४, १२१, १२३–१२५. १५७. १५८. १६०. १६२; ३५, ३. १३. २६. ३१–३४. ३७. ३८. ४३. ४४; ३६, १. ५. ६. ८. १०. ११. १४. १५; ३७, १. ३. ७. ३३. ४२. ४३; ३८, १. २२। कर्ण की शक्ति का ह्रास करने के पक्ष में शल्य अर्जुन की प्रशंसा करते हैं (८. ३९, ११. १३. १७. २०. २२. २३. २५. २७. २८. ३१)। मद्रदेश के निवासियों की निन्दा करते हैं (८. ४०, २)। ८. ४०, ५६; ४१, १. ५. १०। शल्य का कर्ण को हंसकाकीयोपाख्यान सुनाना (८. ४१, ४८)। ८. ४१, ७१. ७२. ७६–७८. ८३। कर्ण का शल्य से अपने को परशुराम द्वारा और

ब्राह्मण द्वारा प्राप्त हुये शापों की कथा सुनाना (८. ४२, १)। ८. ४३, ६। कर्ण के द्वारा मद्र आदि बाह्लीक देशवासियों की निन्दा (८. ४४, १-३)। ८. ४५, १. ४०. ४२. ४६. ४७; ४६, १. ५. १६ (अपने पुत्र सहित व्यूह के मुहाने पर बीचो-बीच खड़े थे). २९. ३०. ४२. ४४. ४५. ४८. ५१. ५३. ५५. ५६. ७०। शल्य अर्जुन की प्रशंसा कर्ण की शक्ति का ह्रास करने के लिये करते हैं (८. ४६, ७४)। युधिष्ठिर पर आक्रमण करते हैं (८. ४७, १. २१) ८. ४८, २. ३. ९. १०. १४. १८. (सुषेण और सत्यसेन के पिता). १९ (वृषसेन के पिता) .२६ (भानुसेन के पिता). ३१. ३३. ३५. ४९. ५०. ५२. ५७. ६५ (पुत्रों सहित कर्ण पाण्डवों पर आक्रमण करते हैं। ८. ४९, १. ४. ५. ७. १०. ११. १४. २०. २३. २९. ३२. ३५. ३७. ३९. ४१. ४६. ४७। कर्ण के दोनों हाथ वज्र, छत्र, अङ्कुश, मत्स्य, ध्वज, कूर्म और कमल आदि शुभ लक्षणों से युक्त थे (८. ४९, ५०)। ८. ४९, ५३. ५९। कर्ण द्वारा युधिष्ठिर की पराजय और तिरस्कार (८. ४९. ६२)। ८. ५०, ४. ५. ७. ११. १५. १६. १८. ३०. ३३. ३५. ३६. ३८. ३९. ४२. ४५. ४६. ४८ (भीमसेन द्वारा पराजित हुए), ५१, १. २. २३. २५. २७. २९. ३२-३७. ३९. ४२-५९. ६३. ६४. ६८ (वे भीमसेन तथा युधिष्ठिर के साथ युद्ध करके उनको विजित कर लेते हैं) ८. ५४, १. १६; ५६, २. ३. ५. ३७. ४०. ४१. ४३. ४६. ५१. ५२. ५७-६१. ६३. ६६। इनका हाथी की रस्सी के चिह्न से युक्त ध्वज है; पाञ्चाल इत्यादि का वध करते हैं (८. ५६, ८५-८७)। ८. ५७, १. २; ५८, १. ३. ४५. ४७; ५९, २. ४-६. १२. १४. १६. १९ ६१ (धृष्टद्युम्न इत्यादि के साथ युद्ध करते हैं); ६०, १३. १४. १८. २१. २५. २७. २९. ३०. ३४. ३६. ४०. ४२. ४५. ४९. ५६. ७४; ६१, ५. ११. १६. १७. १९-२४ (शिखण्डिन् के साथ युद्ध करते हैं); ६२, ९. १९. २१-२३. २७. २९ (युधिष्ठिर के साथ युद्ध करते हैं); ६३, १-४. ८. १८. २०. २४। कर्ण, युधिष्ठिर तथा नकुल-सहदेव के साथ युद्ध का परित्याग करके दुर्योधन की रक्षा के लिये दौड़े (८. ६३, ३१. ३२)। ८. ६४, ३५. ४०. ५३. ५४. ५९. ६३. ६६. ६७ (कर्ण द्वारा भार्गवास्त्र से पाञ्चालों का संहार); ६५, ४. ५. ७. २०; ६६, २. ८. १२. १७-१९. २१. २३. २७. २८. ३०. ३७-३९. ४२. ४३. ४७; ६७, १२-१४. १६. १७. २०. २१; ६८, १. २. ४. ५. १७. १८; ६९, ७६-७९. ८८; ७०, ३६. ३७ (अर्जुन कर्ण के वध की प्रतिज्ञा करते हैं); ७१, ९. १७. २२. २३. २५-२८. ३१. ३५-३८. ४०; ७२, ९. १०. १५. २६. २८. ३४. ३९. ४०; ७३, १. ५५. ६२. ६५. ६७. ६८. ७०. ७१. ७६. ७७. ८१. ८३. ९०. ९२. ९४-९६. १००. १०२. १०४. ५,१०१. १०८. १२२. ११३. ११५. ११६. ११८-१२१. १२४. १२५ (श्रीकृष्ण का अर्जुन को कर्ण वध के लिये उत्तेजित करना); ७४, २. ४-८. १३. १६. १८. २२. २४. २६. २७. २९. ३०. ३३. ३५. ३७. ३९. ४२. ४८. ५०. ५२. ५८ (अर्जुन द्वारा कर्ण-वध की प्रतिज्ञा); ७५, १. ९. ११ (धृष्टद्युम्न ने कर्ण पर आक्रमण किया) : १४ (उत्तमौजस् ने कर्णपुत्र सुषेण का वध कर दिया); ७७, ९. ७६. ७८; ७८, २. ४. ६. ८. ९. १४. १७. १९. २७. ३१. ३३-३७. ३९. ४०. ४३. ४६. ४९. ५४. ५८. ६०; ७९. ७. ८. १२. १४. १८. १९. २१. ३१. ४३. ४९. ५३. ५४. ५५. ७०, ७४; ८१, ३. ४ (संशप्तकों द्वारा रक्षित). ४३. ४५. ४७. ४८. ५०-५३. ५५. ५६; ८२, १. ५ (कर्ण ने केकय राजकुमार विशोक तथा उग्रकर्मन् का वध कर दिया). ७ (कर्ण-पुत्र प्रसेन का वध). ८. १०. १४. १६. १७. २३-२५; ८३,१६. ४०; ८४, ७. ९. २०. २२. २३. ३६; ८५, ३०. ३१. ३९ (अर्जुन द्वारा कर्ण-पुत्र वृषसेन का वध); ८६, ३. ५. ६. ९. १२. १६. १८. १९. २३; ८७, २. ६. ९. १२. २३. २९. ३१. ३८. ४५. ४७. ५४. ५७-५९. ६१. ६२. ६५. ७०. ८२. ८९. ९०. ९३. ९५. १००. १०२. १०५. १०६. १०८. ११२. ११४. १५० (कर्ण और अर्जुन का युद्ध आरम्भ हुआ; कुछ देवताओं ने कर्ण का और कुछ ने अर्जुन का पक्ष लिया; ब्रह्मा ने कहा कि कर्ण अवश्य मारा जायगा किन्तु उसे भी वसुओं और मरुतों का लोक प्राप्त होगा); ८८, १२. २७. ३२. ३३; ८९, ८. १०.-१२. १५-१७. १९. २२. २५-२७. ३०. ३२-३५. ४०. ४३-४५. ५२. ५६. ६२. ६३. ६५. ६७. ६८. ७३. ७९-८४. ८६. ८७. ८९. ९१-९३. ९६. ९७; ९०. २. ४. ६. ११. १३-१५. १९-२१. २५. २६. २८. ४३-४५. ४७-४९. ५६. ५८. ६०. ६२, ६६-६८. ७२-७४. ७६. ७७. ७९. ८१. ८५. ९०. ९३. ९४. ९६. ९८-१००. १०४. १०६ (कर्ण के बाण में अश्वसेन नामक नाग प्रविष्ट हो गया; रामजामदग्न्य के शाप के कारण कर्ण ब्रह्मास्त्र का स्मरण नहीं कर सका, और रथ का पहिया भी एक ब्राह्मण के शाप के कारण पृथिवी में धँस गया); ९१, २. ४. ७. १०. १५. २०. २३. २९. ४०. ४७. ४९. ५४-५६ (अर्जुन ने कर्ण का मस्तक काट दिया). ५९-६३. ६५-६७; ९२, १. ३. ५। 'हते कर्णे त्रासयन् धार्तराष्ट्रान्', (८. ९२, ६)। 'कर्णो हतः', (८. ९२, ८)। ८. ९२. ११; ९३, १. ३ (कर्णे हते). ४. १८; ९४, ११. २४. २८. २९. ४०. ४२ (सपुत्रः समरे कर्णः). ४४ (हतौ वैकर्तनः कर्णः सपुत्रः). ४९. ५२ (हते कर्णे). ५३. ५४. ६५. ६७; ९५, १ (हते वैकर्तने). २ (निहतम्). १३ (निपातितम्). १४. १६ (हते कर्णे); ९६, १ (निपातितते कर्णे). २ (हतः). ३. ५ (वधं कर्णस्य). ६. १६ (कर्णस्य निधनम्). ३२. ३३ (हते). ३६. ३७. ३९. ४३ (हते राधात्मजे). ४८ (निहतम्). ५५ (कर्णस्य निधनम्); ९. १, १ (निपातिते). ४ (हते कर्णे). ५. २४ (कर्णस्य निधनम्); २, २६. ५९ (हतः कर्णः सूतपुत्रः). ६४ (कर्णे निपातिते); ३, ३. ५ (हते कर्णे). १९; ४, ११ (हते). ३९; ५, ४०; ६, ४ (कर्णे हते); ७, २१. २९. ४०. ४५; ८. १९. ३५; १६, १६; १९, २७; २४, २४ (निहते...... राधेये); २७, १४ (कर्णो वैकर्तनो हतः); ३१, ३१. ४७ (निहते); ३२, २०; ३३, ४७ (हतः कर्णः); ५४ २६ (हतो वैकर्तनः कर्णः पुत्राश्चास्य महारथाः); ५६, ३४ (हतः); ६०, ४५ (राधेयः शकुनिश्चैव हताः); ६१, ३५. ३७ (पतितः समरे कर्णश्चक्रव्यग्रोऽग्रणीर्नृणाम्). ४१ (कर्णश्च निहतः). ५९; ६२, १३ (द्रोणकर्णाभ्याम्). २८ (प्रमुक्तं द्रोणकर्णाभ्यां ब्रह्मास्त्रमरिमर्दन); ६४, ७. १२. ३१; ६५, १५; १०. ३, ३३ ;५,२० (कर्णश्च पतिते चक्रे रथस्य रथिनांवर। उत्तमे व्यसने मग्नो हतो गाण्डीवधन्वना ॥); ९, ५४; १०. १६; ११. १, १६ (कर्णस्य विपर्ययम्). २७ (दुर्योधन का परामर्श दाता); ८, ३१ दुर्योधन का परम सखा; १४, १६; १६, २१. २८; १८, २१; २०, १८; २१, २ (वैकर्तनम्). १० (कर्णस्य पत्नीं त्वं वृषसेनस्य मातरम्). १२ (सुषेण का पिता). १४ (इसकी मृत्यु पर शोक प्रगट किया गया); २५, ३० (वैकर्तनात्); २६, ३६ (इसके शव को जलाया गया)। २७, १४. २० (कुन्तीसुतात्), २२. २४. २७ (कुन्ती ने बताया कि कर्ण उसका पुत्र था) १२. १, ३४ (हते). ३८-४०. ४२। "जब द्रोण ने कर्ण को ब्रह्मास्त्र की शिक्षा देना अस्वीकृत कर दिया तब कर्ण ने रामजामदग्न्य की शरण में जाकर अपने को एक ब्राह्मण बताया और उनसे शिक्षा ली। जब कर्ण ने अनजान में एक ब्राह्मण की गाय का वध कर दिया तो उस ब्राह्मण ने कर्ण को यह शाप दिया कि अर्जुन से युद्ध करते समय उसके रथ का पहिया भूमि में धँस जायगा (१२. २, २. ९. १२. १७. २१. २९)।" "कर्ण ने रामजामदग्न्य से ब्रह्मास्त्र की शिक्षा ली, परन्तु जब उन्हें यह पता लगा कि वह ब्राह्मण नहीं है तब उन्होंने यह शाप दिया कि उसे मृत्यु का समय निकट आ जाने पर ब्रह्मास्त्र का स्मरण नहीं हो सकेगा (१२. ३, १. ३-६. ९. १२. २४. २६. २७)।" "कलिङ्गराज की पुत्री के स्वयंवर में इसने साथ जाकर दुर्योधन की सहायता की (१२. ४, १. ४. १४. १६. १७. १९. २१)।" "कर्ण ने जरासंध को पराजित किया और जरासन्ध ने उसे मालिनी (= चम्पा)नगरी प्रदान की। अङ्गराज कर्ण ने तब दुर्योधन की इच्छानुसार चम्पा नगरी पर भी शासन करना प्रारम्भ किया (१२. ५, १. ४-७. १४)।" १२. ७, १; १४, २०; २७, १९ (अघातयं च यत्कर्णं समरेष्वपलायिनम्); ४२, ३ (कर्ण इत्यादि के लिये युधिष्ठिर ने पर्याप्त धन का दान किया); १२४, ७ (कर्ण सहितं दुर्योधनम्); १३. १४८, ६१; १४. १, १३; २, १३; १४, १५ (महादानानि विप्रेभ्यो ददामौर्ध्वदेहिकम्। भीष्म कर्ण पुरोगाणां कुरूणां कुरुसत्तम ॥); ५२, २० (कर्णवधोपायः); ६०, ३. १९.

२२; ६१, १३. १८. २२; १५. ३, ६; १०, २८. ३०. ३५; ११, १८; १६, ११. १२ (सूर्यजम्). १३ (सूर्यजः). १४ (सूर्यजस्य); २१, १२; ३०, १५ (कर्ण के जन्म का वर्णन किया गया है); ३१, २. १४ (कर्ण आदित्य का एक अंश था); ३२, ९ (उन मृत-योद्धाओं में से एक जो व्यास के आवाहन पर गंगा नदी से प्रगट हुये थे); ३३, ४. ५; १८. १, २३ (कौन्तेयम्); २, १ (राधेयम्), ६. ८. ४०. ४३; ३, १९. ३८; ४, ६. १६ (अयं ते पूर्वजो भ्राता कौन्तेयः पावकद्युतिः । सूतपुत्राग्रजः श्रेष्ठो राधेय इति विश्रुतः ॥); ५, २० (मृत्यु के पश्चात् सूर्य में प्रविष्ट हो गये)।

तु० की ० कर्ण के निम्नलिखित पर्याय :

* **अङ्गराजन्** : ३. २४७, १६ ।

* **अङ्गेश्वर** : १. १३७, २३ ।

* **अर्कपुत्र** : १. १८७, २२ ।

* **आदित्यतनय** : ३. ९१, २२; १८. ३, २० ।

* **आदित्यनन्दन** : ६. १२२, २२ ।

* **आधिरथि** , व० स्था० ।

* **कुरूद्वह** , (केवल कलकत्ता संस्करण में), **कुरुपृतनापति, कुरुवीर, कुरुयोध**, व० स्था० ।

* **कौन्तेय, कुन्तीसुत** , व० स्था० ।

* **गोपुत्र** , व० स्था०

* **पार्थ** , व० स्था० ।

* **पुरुषर्षभ** : ८. ३६, ३१ ।

* **पूषात्मज** : ८. ८९, ७६ ।

* **रविसूनु** : ७. १७९, १७; ८. ९०, ४८ ।

* **राधात्मज** : ८. ९६, ४३ ।

* **राधासुत** : १. १९०, ३२; २०५, ३; ८° ८६, ४ ।

* **राधेय** : १. १३२, ११; १८८, १९; १९०, ११. २२; २००, २७; २०१, ३. १३. १७. २०; २०२; २२; २. ४८, ११; ६८, २६; ७१, १२; ३. २३९, ३. ८; २४१, १२. १३; २४८, १; २५४, ५; ३०१, ११; ३०२, २१; ३०९, २५; ३१०, ९; ४. ३९, १५; ४९, १; ५५, १. ५३; ५९, १७; ६०, ४. ६. १५. २३; ५. ४, २; २१, १६. १८; २५, ११; १३७, ३०; १४०, २. ५. ६; १४३, ५१; १४५, १. २; १५०, १२; १६८, १०; १९३, २२; ६. ४३, ८९–९१; ९८, ८; १२२, २. ५. ९. ३९; ७. १, ३४. ४९; २, ९; ७, २४; २२, ११. २९; ३२, ५६. ६०. ७०; ४०, २३. २७. ३०; ४८, २. २९. ३८; १२९, ३९; १३१, २. ४. १९. २०. ४२. ४५; १३२, ७; १३३, २१. २२. ३८; १३४, १४. १६. २८; १३५, ३३; १३६, ४. ५. १९; १३७, १. १९. ३६; १३९, २६. ६०. ६५. ७६. ८४. ९४; १४४, १; १४५, ११. १९. २४. ८०; १४७, २८. २९. ४९. ५०; १४८, ९; १५०, ५; १५२, ४; १५८, १३. २१. ४८; १५९, १५. २४. ३२. ३७. ६६; १६७, २. १५; १७०, २४. ३०; १७३, १३. २९. ३९; १७५, २३; १८२, ४०; १८७, ३६; १८८, १२. १५. २२; ८. ३, १५; ५, ४७; ७, ३; ८, २१; १०, २१. २५. ४८. ५०. ५३. ५४; २१, २१; २४, ४५; ३०, २२; ३१, १७. ७०; ३२, ६. ८. ३३; ३२, ५९. ६४; ३४, १२०; ३५, ५. २९.३९; ३६, ५. १७. २०. २१. २४. ३०; ३८, २६; ३९, २. २९; ४०, १. ५६; ४१, ३३; ४३, १; ४५, ४७. ४८; ४६, ५. १०. ३४. ५२. ७२; ४८, २१. ६०. ६२. ६४; ४९, २५. ५०-५०, १०. १८. १९. २७; ५१, ३–५.५८, ६२; ५६, ४७. ६४. ७०; ५९, ७. ३७; ६०, १५. ३२. ३७. ४४. ५०; ६१. ६. ४२; ६२, ११. १२. १५; ६३, ३. ७. ९. ११. १५. १८. २२. २७. २९; ६४, ४३; ६६, २६; ६८, २७; ७०, ५४; ७१, ३५; ७२, ३२; ७३, ११४. १२२; ७४, २५. ४१; ७८, ४. ६. १७. २०. २२. ३७. ४६. ४७. ५३; ७९, १३. ३१. ४१; ८३, ४७; ८४, ९. १६; ८६, ८; ८७, ४८. १११; ९०, ९५. १०४. १०५. १०७; ९१, १. ६. ८. १०. २५; ९४, ३३; ९६, १४. ४२; ९. ८, १३; २४, २४; ६०, ४५; ११. १; २७, ८; १२. १, २३; ३, २७; १८. २, १; ४, १६ ।

* **वसुषेण** : १. ६७, ४१. ४७; ३. ३०९, १३. १४; ५. १४०, २७; १४१, १०; ७. १३३, २८; १३५, ४; ८. ३०, ११; ४९, ३५; ५६, १४५ ।

* **वृष** : १. ६१, १७; १३६, ३९; ३. ३०२, १९; ३०९, १४; ५. १४४, ३१; ६. १२२, ४; ७. ३७, ५३; १३९, १०३; १४५, ८०; १४७, ३२; १७५, ७७; १८०, २२. २४; १८२, ४; ८. १, १६; ८, २२. २८; ३४, ६२; ४१, ३; ४८, १४. ३२; ४९, २; ५०, ३६; ८१, ५४; ९०, ३६. ५९. ९८; ९१, ३३; ९४, ४५; ९६, २८; १४. ६०, १४ ।

* **वैकर्तन** : १. ६७, १४७; १११, ३१; १९०, १०. १४; २४१, २०. २६; २५२, ३८; २५३, २; ४. ३०, १९; ३६, ६; ५४, १८–२१. २६. २८. २९. ३६; ५५, ५२; ६१, १; ६८, ४१; ५. ३०, ३०; ५५, ६३; ५७, १३; ६२, १७; ६३, ५; १२८, २४; १४४, ३१ १६८, ४; ६. १७, १३; ५२, २३; ७. १, ४९; ४, १५; ७, १८; १४, ३८; ४८, १७. ३१; ७४, १५; १२९, १२; १३१, ४८; १३२, ८; १३३, १७. १८. २०. ३६; १४०, ९; १४५, १२. ६५; १५९, ४९. ५१. ५२; १६५, ७; १६७, १. ७; १७४, ४; १७५, १. ७७. ११४; १७७, ९. १२. ३८; १७९, ९–११. १३. ५४; १८०, १९; १८१, ३०; १८२, ९; १९१, ४३; ८. ३, १०; ४, १५; ५, २. ६; ८, २२; ९, ७२. ८१. ८६. ८८; ११, १; २४, १. १६; ३१, १६. १८; ३२, २८. ६५; ३४, १६२; ३५,१३. ३०; ३७, ११; ४८, १४; ४९, ७; ५०, ३६; ५४, १६; ५६, १; ६२, ९; ७२, ४०; ८९ १. ६०; ९१, ५१; ९४, ३८; ९५, १; ९६, २०; ९. २७, १४; ५४, २६; ११. २१, १. २; २५, ३०; २६ ३६; १२. ५, १४ ।

* **वैवस्वत** , व० स्था० ।

* **सावित्र, सावित्रिन्, सूर्यज, सूर्यपुत्र, सूर्यसम्भव**, व० स्था० ।

* **सूत, सूतनन्दन, सूतपुत्र, सूतसूनु, सूतसुत, सूततनय, सूतात्मज**, व० स्था० ।

* **सौति** , व० स्था० ।

२. कर्ण , धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९५; ११७, ३)। धृतराष्ट्र के उन पुत्रों में से एक का नाम है जिन पर भीमसेन ने आक्रमण किया (६. ७७, ८) ।

कर्ण-दिग्विजय—"जब दुर्योधन हस्तिनापुर चले आये तब भीष्म ने, जैसा कि वे पहले भी कह चुके थे, दुर्योधन से कहा : 'मैं इस राजा से प्रसन्न नहीं हुआ हूँ, और मैं चाहता हूँ कि तुम पाण्डवों से सन्धि कर लो ।' भीष्म के ऐसा कहने पर दुर्योधन हँस पड़ा और शकुनि के साथ वहाँ से अन्यत्र चला गया। कर्ण तथा दुःशासन आदि ने भी दुर्योधन का अनुसरण किया। इन सबको वहाँ से प्रस्थान करते देखकर भीष्म लज्जित हुये और अपने आवास स्थान को चले गये। भीष्म के चले जाने पर दुर्योधन पुनः उसी स्थान पर लौट आया और अपने मन्त्रियों के साथ गुप्त मन्त्रणा करने लगा। कर्ण ने पाण्डवों की प्रशंसा तथा कौरवों की निन्दा करते रहने का भीष्म पर आरोप करके दुर्योधन के लिये दिग्विजय करने का प्रण किया। दुर्योधन ने कर्ण की बात को स्वीकार करते हुये शुभ लग्न में उसे दिग्विजय के लिये विदा किया। (३. २५३)।" "अपनी विशाल सेना के साथ कर्ण ने सर्वप्रथम राजा द्रुपद तथा उनके अनुयायियों को अपने अधीन करके उन सब से कर वसूल किया। तत्पश्चात् उसने उत्तर दिशा में राजा भगदत्त तथा हिमवत् प्रदेश के अन्य राजाओं को विजित किया। उसने पूर्व में अङ्ग, वङ्ग, कलिङ्ग, शुण्डिक, मिथिला. मगध, कर्कखण्ड, आवशीर, योध्य, और अहिच्छत्र आदि देशों को विजित किया। वत्स भूमि को जीतकर उसने केवला, मृत्तिकावती, मोहन, पत्तन, त्रिपुरी, तथा कोसला को विजित किया। दक्षिण में उसने रुक्मिन्, पाण्ड्यपर्वत, केरल, नील, वेणुदारिपुत्र, शिशुपाल, अवन्ति और वृष्णि आदि पर अधिकार किया। पश्चिम में उसने यवन, बर्बर आदि को पराजित करके उनसे कर लिया। इस प्रकार पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण, इन सब दिशाओं को

समस्त पृथिवी को विजित करके कर्ण म्लेच्छ, वनवासी, पर्वतीय, भद्र, रौहितक, आग्नेय, मालव, शशक, नग्नजित् आदि को अपने अधीन करते हुये हस्तिनापुर लौटा। उस समय कर्ण को आया हुआ जान कर पिता, माता, भ्राताओं और बन्धु-बान्धवों सहित दुर्योधन ने कर्ण की अत्यन्त प्रशंसा की (३. ३५४)।"

कर्णनिर्वाक, वानप्रस्थ धर्म का पालन करके स्वर्ग को प्राप्त हुये एक मुनि का नाम है (१२. २२४, १८)।

कर्णपर्वन्, महाभारत के ८ वें पर्व का नाम है—'कर्णपर्वसितैः पुण्यैः', (१. १, ९०)। 'कर्णपर्व ततः ज्ञेयम्', (१. २, ७१. २७०)। 'एकोनसप्ततिः प्रोक्ता अध्यायाः कर्णपर्वणि', (१. २, २७८)। "द्रोणाचार्य के मारे जाने के पश्चात् दुर्योधन आदि राजाओं का मन उद्विग्न हो गया और वे सब एक साथ आकर अश्वत्थामा के चारों ओर बैठ गये। अश्वत्थामा को सान्त्वना देने के पश्चात् रात्रि होने पर ये समस्त भूपाल अपने-अपने शिविरों में चले गये। अपने शिविरों में भी ये युद्ध-जन्य घोर विनाश का चिन्तन करते रहे जिसके कारण इन्हें नींद नहीं आई। कर्ण, दुःशासन, शकुनि आदि दुर्योधन के शिविर में ही रहे। प्रातःकाल होने पर शास्त्रोक्त विधि के अनुसार शौच, संध्यावंदन आदि कार्य पूर्ण करके कौरवों ने कर्ण को अपना सेनापति बनाया और युद्ध के लिये बाहर निकले। कर्ण ने दो दिन तक भीषण संग्राम किया परन्तु अन्त में अर्जुन के हाथ से मारा गया। तदनन्तर संजय ने हस्तिनापुर में जाकर धृतराष्ट्र को कर्ण की मृत्यु का समाचार दिया। जनमेजय ने कर्ण की मृत्यु के इस समाचार, और धृतराष्ट्र की दशा का विस्तारपूर्वक वर्णन करने के लिये कहा (८. १)।" "वैशम्पायन ने कहा कि कर्ण के मारे जाने पर अत्यन्त दुःखी होकर संजय उसी रात हस्तिनापुर जा पहुँचे। हस्तिनापुर में धृतराष्ट्र और संजय का, युद्ध और उसके परिणामों से सम्बन्धित संवाद हुआ। धृतराष्ट्र ने संजय से पूरा वृत्तान्त कहने का निवेदन किया। (८. २)।" "संजय ने द्रोणाचार्य की मृत्यु के पश्चात् कौरव-सेना के हतोत्साहित और विषादग्रस्त हो जाने का वर्णन करते हुये बताया कि दुर्योधन ने अपनी सेना को उत्साहित करने का प्रयास और कर्ण को सेनापति बनाकर युद्ध का निश्चय किया। परन्तु दूसरे दिन अर्जुन ने कर्ण का वध कर दिया (८. ३)।" "युद्ध में कर्ण की मृत्यु का समाचार सुन कर धृतराष्ट्र व्याकुल हो पृथिवी पर गिर पड़े जिससे महल की स्त्रियों ने उद्विग्नता के कारण घोर विलाप आरम्भ किया और गान्धारी सहित सभी मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर पड़ीं। तदनन्तर विदुर ने जल छिड़क कर धृतराष्ट्र को होश में लाने की चेष्टा की। इस प्रकार धृतराष्ट्र और अन्तःपुर की स्त्रियों को मूर्च्छा दूर हुई। होश में आने पर धृतराष्ट्र ने सञ्जय से पूछा कि दुर्योधन अभी जीवित है अथवा नहीं। सञ्जय ने बताया कि कर्ण का वध तो हो ही गया, भीमसेन ने रणभूमि में दुःशासन को मार कर क्रोधपूर्वक उसके रक्त का पान भी कर लिया (८. ४)।" "धृतराष्ट्र के कहने पर सञ्जय ने उन योद्धाओं का नाम बताया जो युद्ध में मारे जा चुके थे तथा जो अब भी जीवित थे। इन सब वर्णनों को सुन कर धृतराष्ट्र पुनः मूर्च्छित हो गये (८. ५-७)।" "पुनः चेतना लौटने पर धृतराष्ट्र ने अपने पुत्रों तथा कर्ण आदि के वध पर विलाप किया (८. ८)।" "धृतराष्ट्र ने विलाप करते हुये कर्ण-वध का विस्तृत वृत्तान्त पूछा और सञ्जय ने उन्हें सान्त्वना दी (८. ९)।" युद्ध का सोलहवाँ दिन : "द्रोण की मृत्यु के पश्चात् कौरव-सेना ने जब पलायन किया तो दुर्योधन ने उसे पुनः उत्साहित करके बहुत देर तक पाण्डवों के साथ युद्ध किया। सन्ध्या होने पर कौरव-सेना अपने शिविरों में लौट आई। रात में दुर्योधन ने अपने परामर्शदाता राजाओं से भावी कार्यक्रम के सम्बन्ध में परामर्श किया। अश्वत्थामा ने कर्ण को सेनापति बनाने का प्रस्ताव किया जिसको सुन कर दुर्योधन ने कर्ण का इस पद के लिये अभिषेक किया। सेनापति का पद स्वीकार करते हुए कर्ण ने यह वचन दिया कि वह पाण्डवों का वध कर डालेगा। तदनन्तर शास्त्रीय विधियों के अनुसार विविध सामग्रियों द्वारा ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों, तथा सम्मानित शूद्रों ने कर्ण का अभिषेक किया। अभिषेक सम्पन्न हो जाने पर कर्ण अपनी प्रभा तथा रूप से दूसरे सूर्य के समान प्रकाशित होने लगा। कर्ण ने सेनापति का पद प्राप्त करके समस्त कौरव-सेना को सूर्योदय के समय युद्ध के लिये तैयार होने की आज्ञा दी (८. १०)।" "सेनापति के रूप में कर्ण को देख कर कोई भी कौरव, भीष्म, द्रोण तथा अन्य महारथियों के मारे जाने के दुःख का अनुभव नहीं कर रहा था। कर्ण ने अपनी सेना को मकर व्यूह में व्यवस्थित किया। मकर व्यूह के मुख भाग में स्वयं कर्ण, नेत्रों के स्थान पर शकुनि और उलूक, शीर्ष स्थान में अश्वत्थामा, ग्रीवा भाग में दुर्योधन के समस्त भ्राता, कटि प्रदेश में विशाल सेना सहित स्वयं राजा दुर्योधन, बायें पैर के स्थान पर नारायणी सेना के गोपाल तथा कृतवर्मा, दाहिने पैर के स्थान में त्रिगर्तों और दाक्षिणात्यों सहित कृपाचार्य, इत्यादि खड़े हुये। युधिष्ठिर ने अर्जुन से भी अपनी सेना का व्यूह रचने का आग्रह किया जिस पर अर्जुन ने पाण्डव सेना को अर्द्ध चन्द्राकार व्यूह में व्यवस्थित किया। युधिष्ठिर ने कहा कि कौरवों की सेना में कर्ण अब भी विराजमान है, और उसे देवता, असुर, गन्धर्व, किन्नर, नाग तथा चराचर प्राणियों सहित तीनों लोकों के लोग भी मिल कर नहीं जीत सकते। पाण्डवों के चन्द्राकार व्यूह में बायें भाग में भीमसेन, दाहिने में धृष्टद्युम्न, मध्य में युधिष्ठिर और धनञ्जय, तथा युधिष्ठिर के पृष्ठ भाग में नकुल और सहदेव खड़े हुये। युधामन्यु और उत्तमौजा अर्जुन के चक्ररक्षक बने और इन लोगों ने एक पल के लिये भी उनका साथ नहीं छोड़ा। तदनन्तर दोनों पक्षों के बीच भयंकर युद्ध आरम्भ हुआ (८. ११)।" "दोनों ओर से भयंकर संहार हुआ जिसका विस्तृत वर्णन है। भीमसेन के नेतृत्व में पाण्डवों ने कौरव-सेना का भीषण संहार किया। कौरवों की ओर से क्षेमधूर्ति ने भीम का सामना किया परन्तु भीमसेन के हाथ मारा गया (८. १२)।" "दोनों ओर से घोर युद्ध हुआ : नकुल और कर्ण, भीमसेन और अश्वत्थामा, राजा चित्रसेन और श्रुतकर्मा, प्रतिविन्ध्य और चित्र, दुर्योधन और युधिष्ठिर, अर्जुन और संशप्तक, धृष्टद्युम्न और कृप, शिखण्डी और कृतवर्मा, श्रुतकीर्ति और शल्य, सहदेव और दुःशासन का भीषण युद्ध हुआ। सात्यकि ने विन्द और अनुविन्द का वध किया। इन दोनों का वध करके सात्यकि युधामन्यु के रथ पर चढ़ गये और केकयों की विशाल सेना का संहार करने लगे जिससे समस्त सेना रणक्षेत्र से भाग गई (८. १३)।" "द्रौपदी-पुत्र श्रुतकर्मा और प्रतिविन्ध्य ने क्रमशः चित्रसेन और चित्र का वध किया; कौरव सेना ने पलायन किया; अश्वत्थामा और भीम का भयंकर युद्ध हुआ (८. १४)।" "अश्वत्थामा और भीमसेन का अद्भुत युद्ध हुआ जिसमें देवता, सिद्ध, चारण और महर्षि दोनों की प्रशंसा करने लगे। युद्ध में दोनों ही एक दूसरे के प्रहार से मूर्च्छित हुये और उनके सारथिगण उन्हें युद्धभूमि से दूर हटा ले गये (८. १५)।" "अर्जुन का संशप्तकों के साथ भयंकर युद्ध हुआ जिसमें सिद्धों, देवर्षियों और चारणों ने अर्जुन के पराक्रम की सराहना की। संशप्तकों के साथ युद्ध करते हुये अर्जुन पर जब अश्वत्थामा ने भी आक्रमण किया तब अर्जुन (+कृष्ण) ने उसके साथ भी अद्भुत युद्ध किया (८. १६)।" "अश्वत्थामा को पराजित करके अर्जुन पुनः संशप्तक-सेना की ओर बढ़े। उस समय कलिङ्ग, अङ्ग, वङ्ग और निषाद देशों के वीरों ने गजसेना के साथ अर्जुन पर आक्रमण किया। परन्तु अर्जुन ने उनके हाथियों के कवच, चर्म, सूँड, और ध्वजा आदि को काट डाला। तत्पश्चात् अर्जुन ने अश्वत्थामा को बाणों से ढक दिया परन्तु अश्वत्थामा ने अर्जुन तथा कृष्ण पर दस उत्तम नाराचों से प्रहार करके उन्हें आहत कर दिया। उस समय श्रीकृष्ण ने अर्जुन से अश्वत्थामा का वध कर देने के लिये कहा। अर्जुन के प्रहार से विदीर्ण अश्वत्थामा को उसके अश्व रणभूमि से बहुत दूर भगा ले गये। अश्वत्थामा तदुपरान्त कर्ण की सेना में प्रविष्ट हो गया और श्रीकृष्ण तथा अर्जुन पुनः संशप्तकों की ओर बढ़े (८. १७)।" "मगधराज दण्डधार ने पाण्डव-सेना का भयंकर संहार आरम्भ किया। श्री कृष्ण के कहने पर अर्जुन ने गजारूढ़ दण्डधार के साथ युद्ध करते हुये उसका वध किया। तदनन्तर अर्जुन (+कृष्ण)

का दण्डधार के भ्राता दण्ड के साथ युद्ध हुआ जिसमें दण्ड मारा गया। दण्ड और दण्डधार का वध हो जाने पर उनकी सेना ने पलायन किया और अर्जुन एक बार फिर संशप्तकों की ओर बढ़े (८. १८)।" "अर्जुन ने संशप्तकों का संहार किया। उग्रायुध के पुत्र ने अर्जुन के साथ युद्ध किया परन्तु अन्त में मारा गया। श्रीकृष्ण ने अर्जुन से शेष संशप्तक सेना का शीघ्र वध करके कर्ण की ओर बढ़ने के लिये कहा। श्रीकृष्ण ने अर्जुन को बुलाकर युद्धस्थल का दृश्य दिखाते हुये उनके पराक्रम की प्रशंसा की। पांड्य नरेश ने कौरव-सेना के साथ युद्ध किया। (८. १९)।" "पांड्य नरेश अपने को भीष्मादि योद्धाओं से भी श्रेष्ठ मानते थे, और इस समय वे कर्ण तथा पुलिन्दों इत्यादि की सेना का संहार कर रहे थे। अश्वत्थामा और पांड्य के बीच भयंकर युद्ध हुआ। उस समय अश्वत्थामा रूपी मेघ द्वारा की गई बाण-वर्षा को पांड्यराजरूपी वायु ने वायव्यास्त्र से छिन्न-भिन्न कर डाला। दूसरी ओर कर्ण ने पांडवों की गज सेना का संहार आरम्भ किया। अश्वत्थामा द्वारा रथहीन कर दिये जाने पर पांड्य एक महावत रहित हाथी पर बैठ गये और अश्वत्थामा के साथ युद्ध करते हुये उनके मुकुट को काट डाला। तदनन्तर अश्वत्थामा ने पाँच उत्तम बाण मार कर पांड्य के हाथी के छः टुकड़े कर दिये और फिर तीन बाण से राजा के भी चार टुकड़े कर डाले। इस प्रकार दोनों मिल कर दस भाग में विभक्त हो गये। जिस प्रकार पितरों को प्रिय चिताग्नि मृत शरीर को पाकर प्रज्वलित हो उसे भस्म करती है तथा अन्त में जल का अभिषेक पा शान्त हो जाती है, उसी प्रकार पांड्य नरेश, उनके घोड़े, हाथी और मनुष्यों के टुकड़े-टुकड़े करके उन्हें प्रचुर मात्रा में राक्षसों के लिये भोजन देकर अन्त में अश्वत्थामा के बाण सदा के लिये शान्त हो गये। उस समय दुर्योधन ने अपने सुहृदों सहित आकर अश्वत्थामा का पूजन किया (८. २०)।" "कृष्ण ने अर्जुन से कहा : 'मैं युधिष्ठिर को नहीं देख रहा हूँ; युद्ध से हटे हुये अन्य पाण्डव भी नहीं दिखाई पड़ रहे हैं; कर्ण ने सृञ्जयों का संहार कर डाला।' कृष्ण की बात सुन कर अर्जुन ने अपने रथ को शीघ्र बढ़ाने के लिये कहा। उस समय भीमसेन के नेतृत्व में पाण्डवों, तथा कर्ण के नेतृत्व में कौरवों के बीच भयंकर युद्ध हो रहा था जिसमें कर्ण ने पाण्डवों, सृञ्जयों, और पाञ्चालों का भयंकर संहार किया। उस समय पाञ्चालराज धृष्टद्युम्न, द्रौपदी के पुत्र तथा नकुल, सहदेव और सात्यकि ने कर्ण पर आक्रमण किया; दोनों दलों के बीच भयंकर युद्ध हुआ (८. २१)।" "धृष्टद्युम्न और अङ्ग, वङ्ग इत्यादि देशों के बीच युद्ध हुआ जिसमें पाण्डव तथा पाञ्चालगण धृष्टद्युम्न की सहायता के लिये उपस्थित हुये। नकुल इत्यादि अपने हाथियों पर प्रचुर मात्रा में अस्त्र-शस्त्र रख कर युद्ध में आये। सात्यकि ने अङ्गराज के हाथी और उसके महावत को मार डाला। पुण्ड्र के साथ युद्ध करते हुये सहदेव ने उसके हाथी का वध कर दिया और उसके बाद अङ्गराज की ओर बढ़े। अङ्गराज का नकुल ने वध कर दिया। अङ्गों + मेकलों इत्यादि की गजसेना ने नकुल पर आक्रमण किया; उस समय पाण्डव इत्यादि नकुल की रक्षा के लिये दौड़ पड़े। सहदेव ने आठ और नकुल ने अनेक हाथियों का वध किया। धृष्टद्युम्न इत्यादि ने अपने हाथियों पर प्रचुर मात्रा में आयुध रख लिये। शत्रुसेना के पलायन करने पर पाण्डव योद्धा कर्ण की ओर बढ़े (८. २२)।" "सहदेव और दुःशासन के बीच भयंकर युद्ध हुआ जिसमें पराजित दुःशासन को उनका सारथि रणभूमि से दूर भगा ले गया। सहदेव ने दुर्योधन की सेना को भी पराजित किया (८. २३)।" "कर्ण और नकुल के बीच भयंकर युद्ध हुआ। सोमकों और कुरुओं दोनों का भयंकर संहार हुआ। कर्ण से पराजित होकर नकुल पैदल ही भाग चले। कर्ण ने नकुल का पीछा किया और उनके गले में प्रत्यञ्चा सहित अपना धनुष डाल दिया, परन्तु कुन्ती को दिये गये अपने वचन का ध्यान करके कर्ण ने नकुल का वध नहीं किया। अत्यन्त लज्जित नकुल जाकर युधिष्ठिर के रथ में बैठ गये। मध्याह्न के समय कर्ण ने पाञ्चालों और सृञ्जयों की सेना का भयंकर संहार करते हुये उसका पीछा किया (८. २४)।" "उलूक और युयुत्सु का युद्ध हुआ जिसमें पराजित होकर युयुत्सु ने पलायन किया और एक दूसरे रथ पर बैठ गये। उलूक ने पाञ्चालों और सृञ्जयों का वध किया। धृतराष्ट्र-पुत्र श्रुतकर्मा और शतानीक के बीच भयंकर युद्ध हुआ जिसमें दोनों ही रथविहीन होकर युद्धभूमि से हट गये। श्रुतकर्मा विविंत्सु के और शतानीक प्रतिविन्ध्य के रथ पर बैठे। शकुनि और सुतसोम का भयंकर युद्ध हुआ जिसमें शकुनि ने सुतसोम को रथविहीन कर दिया। उस समय सुतसोम पैदल ही रथारूढ शकुनि के साथ युद्ध करने लगे जिस पर सिद्धों आदि ने उनकी अत्यन्त प्रशंसा की। तदनन्तर सुतसोम श्रुतकीर्ति के रथ पर चले गये। शकुनि ने पाण्डवसेना का भयंकर विनाश किया (८. २५)।" "कृपाचार्य और धृष्टद्युम्न का युद्ध हुआ जिसमें व्याकुल होकर धृष्टद्युम्न ने अपने सारथि से अपने को भीमसेन के पास ले चलने के लिये कहा। उस समय कृपाचार्य ने उसका पीछा किया। भोजराज, कृतवर्मा और शिखण्डी के बीच भी भयंकर युद्ध हुआ जिसमें मूर्च्छित शिखण्डी को उनका सारथि युद्धभूमि से दूर हटा ले गया। उस समय पाण्डवसेना ने भी पलायन किया (८. २६)।" "अर्जुन और त्रिगर्तों इत्यादि का युद्ध हुआ। अर्जुन ने श्रुतञ्जय, सौश्रुति, और चन्द्रदेव का वध किया। राजा सत्यसेन ने श्रीकृष्ण को आहत किया परन्तु अर्जुन ने सत्यसेन का वध कर दिया। तदनन्तर अर्जुन ने चित्रवर्मन्, सहस्रों संशप्तकों और मित्रसेन का वध करते हुये सुशर्मन् को आहत किया। समस्त संशप्तकों ने एक साथ ही अर्जुन पर आक्रमण किया। उस समय अर्जुन ने ऐन्द्रास्त्र का आवाहन किया जिससे समस्त शत्रुसेना भाग खड़ी हुई (८. २७)।" "दुर्योधन और युधिष्ठिर का युद्ध हुआ जिसमें दुर्योधन रथहीन हो गया। उस समय कर्ण आदि दुर्योधन की सहायता के लिये दौड़ पड़े; पाण्डु के पुत्रगण युधिष्ठिर को घेर कर खड़े हुये। पाञ्चालों और कौरवों का युद्ध हुआ। कर्ण ने पाञ्चालों का, अर्जुन ने त्रिगर्तों का, तथा भीमसेन ने कुरुओं तथा उनकी गजसेना का संहार किया। इस प्रकार सूर्यदेव के अपराह्नकाल में जाते-जाते कौरवों और पाण्डवों ने एक दूसरे का अत्यधिक विनाश किया (८. २८)।" "दूसरे रथ पर बैठ कर दुर्योधन ने पुनः युधिष्ठिर से युद्ध किया। दुर्योधन आहत होकर मूर्च्छित हो गया परन्तु भीमसेन ने युधिष्ठिर को दुर्योधन का वध करने से रोका। अपराह्न में कृतवर्मा और भीमसेन का युद्ध हुआ (८. २९)।" "कर्ण के नेतृत्व में कुरुओं तथा सात्यकि सहित पाण्डवसेना के बीच युद्ध हुआ। उस समय कर्ण की सहायता के लिये अनेक कौरव आये किन्तु द्रुपदकुमार के नेतृत्व में युद्ध कर रही पाण्डवसेना के सामने से भाग खड़े हुये। अपना दैनिक जप और भव की उपासना करने के पश्चात् अर्जुन और कृष्ण ने कौरवों का विनाश आरम्भ किया। दुर्योधन और अर्जुन के बीच युद्ध हुआ। अर्जुन और अश्वत्थामा + कृप इत्यादि का युद्ध हुआ। सात्यकि ने कर्ण के साथ युद्ध किया परन्तु पराजित हुये। तदनन्तर अर्जुन ने कर्ण के साथ युद्ध किया। कौरवसेना ने पलायन किया। सन्ध्या समय दोनों सेनायें अपने-अपने शिविर में चली आईं और युद्धभूमि में राक्षस तथा पिशाच जा पहुँचे (८. ३०)।" "धृतराष्ट्र ने अर्जुन के पराक्रम की प्रशंसा की। दुःखी कौरवों ने एक दूसरे से परामर्श किया। कर्ण ने दुर्योधन को यह आश्वासन दिया कि वह प्रातःकाल अर्जुन का वध करेगा। प्रातःकाल कौरवों ने देखा कि युधिष्ठिर ने बृहस्पति और उशना के मतानुसार अपनी सेना का दुर्जय व्यूह बना रक्खा है। दुर्योधन तथा उसकी सेना का कर्ण के पराक्रम में पूर्ण विश्वास था। उस समय धृतराष्ट्र अत्यन्त दुखी हुये, परन्तु सञ्जय ने उन्हें उनके पापकर्मों का स्मरण दिलाते हुये, उनकी भर्त्सना की। प्रातःकाल कर्ण ने अर्जुन के वध की अपनी प्रतिज्ञा को दुर्योधन के सम्मुख पुनः दुहराते हुये कहा : 'मेरे तथा अर्जुन के पास दिव्यास्त्रों का समान बल है; अस्त्रकौशल तथा शारीरिक बल में अर्जुन मेरे समान नहीं हैं; मेरे धनुष का नाम विजय है जिसकी विश्वकर्मा ने इन्द्र के लिये रचना की थी। इन सब दृष्टियों से तो मैं अर्जुन से बड़ा हूँ परन्तु अर्जुन मुझसे इस-लिये बढ़ कर हैं कि श्रीकृष्ण उनके सारथि हैं, उनके पास अग्नि द्वारा प्रदत्त

दिव्य रथ है; उनके घोड़े मन के समान वेगशाली हैं, और उनकी ध्वजा पर अद्भुत वानर आरूढ़ है। श्रीकृष्ण जगत् के सृष्टा हैं और वे अर्जुन के रथ की रक्षा करते हैं।' कर्ण ने शल्य को (जो कृष्ण से श्रेष्ठ थे) अपना सारथि बनाने की इच्छा प्रगट की; दुर्योधन ने शल्य से इसके लिये प्रार्थना की (८. ३१)।" "दुर्योधन की प्रार्थना सुनकर शल्य ने इसका घोर विरोध किया परन्तु जब दुर्योधन ने उनको श्रीकृष्ण के समान बताते हुये उनकी प्रशंसा की तो उन्होंने इस आधार पर कर्ण का सारथि बनना स्वीकार किया कि वे जो चाहेंगे कर्ण के सम्मुख उसका उच्चारण करेंगे (८. ३२)।" "दुर्योधन ने शल्य को वह त्रिपुराख्यान सुनाया जिसका मार्कण्डेय मुनि ने धृतराष्ट्र को वर्णन किया था। (८. ३३)।" "दुर्योधन ने कहा कि देवताओं के आग्रह पर जब रुद्र दानवों के वध के लिये रथारूढ़ हुये तब स्वयं ब्रह्मा ने रुद्र का सारथि बनना स्वीकार किया। अतः उसने शल्य से भी कर्ण का सारथि बनने की प्रार्थना की। दुर्योधन ने कहा: 'कर्ण युद्ध-क्षेत्र में रुद्र के समान हैं और आप भी नीति में ब्रह्मा के तुल्य हैं।' तदनन्तर दुर्योधन ने परशुराम की एक कथा का वर्णन किया जिसे एक धर्मज्ञ ब्राह्मण ने धृतराष्ट्र को सुनाया था। दुर्योधन ने कहा कि, 'स्वयं परशुराम ने कर्ण को धनुर्वेद की शिक्षा दी है और मैं इस बात पर विश्वास नहीं करता कि कर्ण सूतकुल में उत्पन्न हुआ है। मैं कर्ण को क्षत्रिय कुल में उत्पन्न देवपुत्र मानता हूँ, जिसे, मेरा विश्वास है कि उसकी माता ने अपने गुप्त रहस्य को छिपाने के लिये शिशु-अवस्था में सूतकुल में छोड़ दिया होगा।' (८. ३४)।" "उक्त उपाख्यानों को सुनाते हुये दुर्योधन ने कहा: 'सर्वलोक-पितामह भगवान ब्रह्मा ने सारथि का कार्य किया जब कि रुद्र रथी थे, क्योंकि सारथि उसे ही बनना चाहिये जो रथी से श्रेष्ठ हो। जिस प्रकार देवताओं ने ब्रह्मा का वरण किया था उसी प्रकार हम लोगों ने कर्ण से भी अधिक बलवान होने के कारण आपका सारथि-कार्य के लिये वरण किया है।' शल्य ने कहा: 'मैंने भी देवश्रेष्ठ ब्रह्मा और महादेव के इन अलौकिक उपख्यानों को सुना है, और श्रीकृष्ण को भी यह विदित होगा जिसे जानकर ही वे अर्जुन के सारथि बने हैं। यदि अर्जुन का वध हो गया तो श्रीकृष्ण स्वयं ही युद्ध करेंगे।' दुर्योधन ने कर्ण की प्रशंसा की, और शल्य को (नाम की व्युत्पत्ति बताते हुये) कृष्ण से श्रेष्ठ बताया। शल्य ने अपने प्रण और शर्त को पुनः दुहराया। दुर्योधन ने कर्ण का आलिङ्गन किया और शल्य की स्वीकृति मिल जाने पर अत्यन्त प्रसन्न हुये। दुर्योधन का आलिङ्गन करते हुये शल्य ने कहा कि वे उन शब्दों के लिये क्षमा चाहेंगे जो वे कर्ण के भले के लिये कहेंगे। शल्य ने कर्ण से कहा: 'मैं तुम्हें विश्वास दिलाने के लिये जो अपनी आत्म प्रशंसा कर रहा हूँ उसका कारण यह है कि मैं सावधानी, अश्वसंचालन, ज्ञान, विद्या, चिकित्सा आदि सद्गुणों की दृष्टि से इन्द्र के सारथि-कर्म में नियुक्त मातलि के समान हूँ। मैं तुम्हारा सारथि अवश्य बनूँगा। (८. ३५)।" "दुर्योधन ने कर्ण से कहा: 'मद्रराज शल्य तुम्हारा सारथ्य करेंगे। देवराज इन्द्र के सारथि मातलि के समान ये श्रीकृष्ण से भी श्रेष्ठ-संचालक हैं।' प्रातःकाल होने पर दुर्योधन ने एक बार पुनः शल्य से कर्ण का सारथि बनने के लिये उनकी स्वीकृति ली। तदनन्तर कर्ण ने पुरोहितों द्वारा पहले से ही अभिषिक्त अपने रथ की विधिपूर्वक पूजा और प्रदक्षिणा की और फिर शल्य के साथ उस पर आरूढ़ हुआ। उस समय दुर्योधन ने पुनः कर्ण को सम्बोधित किया। कर्ण ने शल्य से कहा: 'महाबाहो! मेरे घोड़ों को बढ़ाईये जिससे मैं अर्जुन आदि का वध कर सकूँ।' शल्य ने पाण्डवों की प्रशंसा करके कर्ण में भय उत्पन्न करने का प्रयास किया (८. ३६)।" 'कर्ण और कौरवयोद्धाओं के प्रस्थान करते ही अनेक अपशकुन प्रगट हुये। फिर भी, कर्ण तथा कौरव-योद्धाओं के उत्साह में इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। कर्ण ने अपने सम्बन्ध में अहंकारोक्तियाँ कीं और शल्य ने उसका उपहास करते हुये अर्जुन की प्रशंसा की। तदनन्तर श्वेत घोड़ों से युक्त और शल्य द्वारा संचालित कर्ण का वह विशाल रथ अन्धकार का विनाश करने वाले सूर्यदेव के समान शत्रुओं का संहार करता हुआ आगे बढ़ा। व्याघ्र-चर्म से आच्छादित और श्वेत अश्वों से युक्त उस रथ के द्वारा कर्ण अत्यन्त प्रसन्नता के साथ प्रस्थित हुआ। उसने सामने ही पाण्डवों की सेना को खड़ी देख बड़ी उतावली के साथ धनञ्जय का पता पूछा (८. ३७)।" "पाण्डव-सैनिकों को देखकर कर्ण प्रत्येक से यह पूछने और कहने लगा: 'जो आज मुझे अर्जुन को दिखा देगा उसे अभीष्ट धन दूँगा।' दुर्योधन तथा उसके सैनिक अत्यन्त प्रसन्न हुये। उस समय शल्य ने कर्ण का उपहास करते हुये हँसकर उससे कहा (८. ३८)।" "शल्य ने कहा: 'तुम अवश्य ही अर्जुन को देखोगे, और इसके लिये तुम्हें कोई विशेष प्रयास करना नहीं होगा। यदि तुम कल्याण प्राप्त करना चाहते हो तो व्यूह रचनापूर्वक खड़े हुये समस्त सैनिकों के साथ सुरक्षित होकर अर्जुन से युद्ध करो।' कर्ण ने अर्जुन के साथ युद्ध करने के अपने निश्चय को पुनः दुहराया, और शल्य ने एक लम्बा भाषण देते हुये कर्ण का अपमान किया (८. ३९)।" "कर्ण ने शल्य को फटकारते हुये मद्रदेश के निवासियों की निन्दा की और शल्य को मार डालने की धमकी दी (८. ४०)।" "कर्ण को उत्तर देते हुये शल्य ने अपनी तथा अपने सारथ्य-कर्म की प्रशंसा करते हुये एक हंस और कौये (हंसकाकीयोपाख्यान, देखिये व० स्था०) का उपाख्यान सुना कर कहा: 'पूर्वकाल में जिस प्रकार सबका जूठन खाकर पले उस कौये ने अपने से श्रेष्ठ व्यक्तियों को नगण्य समझा था, उसी प्रकार धृतराष्ट्र के पुत्रों के जूठन पर पले हुये तुम अपने समान तथा अपने से श्रेष्ठ पुरुषों का भी अपमान कर रहे हो।' (८. ४१)।" "कर्ण ने कहा कि वह कृष्ण और अर्जुन से भलीभाँति परिचित होते हुये भी उन लोगों से भयभीत नहीं है। फिर भी, उसने बताया कि परशुराम के शाप से वह अत्यधिक चिन्तित है। उसने कहा: 'कुछ समय पूर्व दिव्यास्त्र प्राप्त करने की इच्छा से मैं ब्राह्मण का वेष बनाकर परशुराम के पास रहने लगा था। उस समय जब मेरे ऊरुओं पर अपना सर रखकर परशुराम सो रहे थे तो इन्द्र ने एक कीड़े के भयंकर शरीर में प्रवेश करके मेरे ऊरु को काट कर उसमें बड़ा घाव कर दिया। ऊरु में घाव हो जाने के कारण मेरे शरीर से गाढ़े रक्त का महान् प्रवाह वह चला परन्तु गुरु के जागने के भय से मैं तनिक भी विचलित नहीं हुआ। जागने पर परशुराम ने मेरे धैर्य के कारण यह जान लिया कि मैं ब्राह्मण नहीं हूँ। इस पर क्रुद्ध होकर उन्होंने मुझे शाप दिया कि मैं अपनी मृत्यु के समय को छोड़ कर अन्य अवसरों पर ब्रह्मास्त्र का स्मरण नहीं कर सकूँगा। मैं उस अस्त्र का स्मरण नहीं कर सकता किन्तु इसके विपरीत भी अर्जुन का वध करूँगा।' कर्ण ने शल्य पर पाण्डवों का गुप्त हितैषी होने का संदेह किया। उसने बताया कि यदि उसके रथ का पहिया पृथिवी में न धँस गया तो वह ब्रह्मास्त्र का अवश्य प्रहार करेगा जिससे अर्जुन किसी भी प्रकार बच नहीं सकते। कर्ण ने बताया कि वह दण्डधारी यमराज, पाशधारी वरुण, गदाधारी इन्द्र अथवा अन्य किसी की शत्रु से भयभीत नहीं हो सकता। उसने कहा: 'एक समय शस्त्रों के अभ्यास के लिये घूमते हुये अपने विजय नामक धनुष से मैंने अनजान में ही एक ब्राह्मण की होमधेनु के बछड़े को मार डाला, जिस पर क्रुद्ध होकर ब्राह्मण ने मुझे यह शाप दिया कि जिस समय युद्धक्षेत्र में युद्ध करते हुये मैं अत्यन्त संकट में होऊँगा उसी समय मेरे रथ का पहिया पृथिवी में धँस जायगा। उस समय मैंने ब्राह्मण को एक सहस्र गायें और छः सौ बैल देना चाहा परन्तु उसका कृपाप्रसाद प्राप्त न कर सका। इत्यादि।' (८. ४२)।" "कर्ण ने आत्मप्रशंसापूर्वक शल्य को फटकारते हुये कहा कि उसमें भय का संचार करना व्यर्थ है (८. ४३)।" "कर्ण ने कहा कि धृतराष्ट्र के समीप आकर ब्राह्मण विभिन्न प्राचीन काल के देशों और राजाओं के सम्बन्ध में जो अनेक प्रकार के विवरण देते थे वे इस प्रकार हैं: एक वृद्ध ब्राह्मण ने बाहीक और मद्र देश के निवासियों की निन्दा करते हुये कहा था कि जो प्रदेश हिमालय, गंगा, सरस्वती, यमुना और कुरुक्षेत्र की सीमा के बाहर हैं और सिन्धु तथा उसकी सहायक नदियों के बीच स्थित हैं उन्हें बाहीक कहते हैं और वहाँ के निवासियों को धर्म-बाह्य और अपवित्र होने के कारण त्याग देना चाहिये। कर्ण ने कहा: 'मैं

अत्यन्त गुप्त कार्यवश कुछ दिनों तक वाहीक देश में रह चुका हूँ और इसलिये वहाँ के निवासियों के आचार-व्यवहार के सम्बन्ध में बहुत कुछ जानता हूँ। वहाँ शाकल नामक एक नगर और आपगा नामक एक नदी है जहाँ अत्यन्त निन्दित चरित्र वाले जरतिक नामक वाहीक निवास करते हैं (एक ऐसे वाहीक का उदाहरण दिया गया है जो कुरुजांगल देश में निवास करता था, और एक ऐसी राक्षस स्त्री का जो शाकल नगर में रहती थी)। शतद्रु इत्यादि नदियों का क्षेत्र, जो हिमालय की सीमा से बाहर है, आरट्ट नाम से विख्यात और वहाँ के लोगों का धर्म-कर्म नष्ट हो गया है। देवता, पितर, और ब्राह्मण ऐसे पतित लोगों से कोई भी द्रव्य ग्रहण नहीं करते जो शूद्रों द्वारा अन्य कन्याओं से उत्पन्न होते हैं। ये लोग उन वाहीकों से भी कुछ ग्रहण नहीं करते जो विधर्मी, अपवित्र तथा यज्ञादि कर्मों से रहित होते हैं।' कर्ण ने तीन अपवित्र स्थानों का उल्लेख किया। उसने बताया कि विपाशा नदी में वहि और हीक नामक दो पिशाच निवास करते थे और वाहीक उन्हीं दो पिशाचों की सन्तान हैं। ब्रह्मा ने इनकी सृष्टि नहीं की है। कारस्कार, माहिषक इत्यादि देशों के लोगों का भी, आचार-व्यवहार दूषित होने के कारण, त्याग कर देना चाहिये। किसी राक्षसी ने तीर्थयात्री के घर में एक रात रहकर उससे कहा था कि जहाँ वेद-विरुद्ध आचरण करने वाले नीच ब्राह्मण निवास करते हैं वही आरट्ट नामक देश हैं और वहाँ के जल का नाम वाहीक है। इन अधम ब्राह्मणों को न तो वेद-ज्ञान है न वे यज्ञादि ही करते हैं। प्रस्थल, मद्र, गान्धार, आरट्ट, खश, वसाति, सिन्धु तथा सौवीर नामक देश अत्यन्त निन्दित हैं (८. ४४)।" "वाहीकों (गान्धारों और मद्रकों) की हीनता का वर्णन करते हुये कर्ण ने बताया कि आरट्टों को एक सती स्त्री ने शाप दिया था। कौरव इत्यादि सनातन धर्म को जानते हैं। पञ्चनद निवासियों की ब्रह्मा जी ने सत्ययुग तक में निन्दा की थी। कर्ण ने कल्माषपाद नामक एक राक्षस द्वारा राक्षसों के उपद्रव से त्रस्त अथवा विष के प्रभाव से मृत लोगों के निवारण के लिये बताये गये कथन का उल्लेख किया। कर्ण ने पाञ्चालों इत्यादि, तथा अङ्ग इत्यादि का भी वर्णन किया। शल्य ने अङ्गों की निन्दा की। दुर्योधन ने कर्ण तथा शल्य का बीच-बचाव करते हुये दोनों को शान्त किया (८. ४५)।" युद्ध का सत्तरहवाँ दिन : "धृष्टद्युम्न के नेतृत्व में व्यूह-बद्ध पार्थों की सेना को देखकर कर्ण स्वयं भी आगे बढ़ा। उसने युधिष्ठिर को घायल करके दाहिने कर दिया। धृतराष्ट्र द्वारा अपने पक्ष की सेना के सम्बन्ध में पूछने पर सञ्जय ने कौरवों की व्यूह रचना का वर्णन करते हुये उसके दाहिने, बायें, मध्य आदि भागों तथा उन की रक्षा करने वाले योद्धाओं की गणना कराई। उन्होंने बताया कि अपने पुत्रों सहित कर्ण व्यूह के मुख भाग में, दुःशासन पृष्ठभाग में, और उनके पीछे मद्रकों और केकयों से रक्षित भ्राताओं सहित दुर्योधन स्थित हैं। उनके पीछे अश्वत्थामा तथा गजारूढ़ म्लेच्छ सैनिक हैं। सञ्जय ने बताया कि कौरवों का व्यूह बृहस्पति के अनुसार निर्मित है। कर्ण की सेना को देख कर युधिष्ठिर ने अर्जुन को कर्ण के, भीमसेन को दुर्योधन के, नकुल को वृषसेन के, सहदेव को शकुनि के, शतानीक को दुःशासन के, सात्यकि को कृतवर्मा के, पांड्य को अश्वत्थामा के, द्रौपदेयों सहित शिखण्डी को शेष धार्तराष्ट्रों के विरुद्ध युद्ध करने का आदेश देते हुये स्वयं कृपाचार्य से युद्ध करने का निश्चय किया। शल्य ने कर्ण को अर्जुन का रथ दिखाते हुये उसका वर्णन किया। साथ ही उन्होंने उस समय प्रगट होनेवाले अपशकुनों का भी वर्णन किया। शल्य ने कर्ण से अर्जुन के संशप्तकों के वध का वर्णन करते हुये कहा : 'अर्जुन को कोई भी विजित नहीं कर सकता, अतः तुम उनके वध का विचार त्याग दो।' शल्य और कर्ण जिस समय इस प्रकार की बातें कर ही रहे थे, उसी समय कौरवों और पाण्डवों की दोनों सेनायें गंगा और यमुना के समान एक दूसरे से जा मिलीं (८. ४६)।" "धृतराष्ट्र ने सञ्जय से अर्जुन, संशप्तकों, और कर्ण के विषय में पूछा। सञ्जय ने कहा कि अर्जुन ने धृष्टद्युम्न के नेतृत्व में अपनी सेना की व्यूह-रचना की है और धृष्टद्युम्न के साथ ही और द्रौपदेय भी हैं। अर्जुन संशप्तकों से युद्ध कर रहे हैं। पांचाल इत्यादि कुरुओं से, कृप इत्यादि कोशलों से संघर्षरत हैं। वह युद्ध क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के शरीर, पाप, और प्राणों का विनाश करने वाला, संहारकारी, धर्मसंगत, स्वर्गदायक तथा यश की वृद्धि करने वाला है। उस युद्ध में कर्ण अपने तीक्ष्ण बाणों से युधिष्ठिर को त्रस्त करने लगा। इस प्रकार मनुष्यों, अश्वों और हाथियों का विनाश करने वाला कौरवों तथा सृञ्जयों का युद्ध देवासुर संग्राम के समान भयंकर था (८. ४७)।" "धृतराष्ट्र ने कर्ण और युधिष्ठिर के युद्ध के सम्बन्ध में पूछा। सञ्जय ने कहा : कर्ण ने पाञ्चालों (प्रभद्रकों और चेदियों) पर आक्रमण करके घोर संहार किया। अन्य के साथ-साथ उसने पाँच पाञ्चाल मानुदेवों का भी वध किया। कर्ण के रथ के पहियों की रक्षा उसके दो पुत्र, सुषेण और चित्रसेन, कर रहे थे। कर्ण के ज्येष्ठ पुत्र वृषसेन पृष्ठ-रक्षक थे। धृष्टद्युम्न इत्यादि तथा कर्ण+कर्ण के पुत्रों का युद्ध हुआ। सुषेण और भीमसेन का युद्ध हुआ। भीमसेन ने कर्ण के पुत्र भानुसेन का वध कर दिया। भीमसेन और कृपाचार्य, भीमसेन और सुषेण+कर्ण, सुषेण और नकुल+सहदेव के बीच युद्ध हुये। सात्यकि और वृषसेन का युद्ध हुआ जिसमें रथहीन होने पर वृषसेन दुःशासन के रथ पर बैठ कर युद्धभूमि से अलग चला गया और पुनः दूसरे रथ पर बैठ कर द्रौपदेयों से युद्ध करने लगा। युयुधान और दुःशासन का, और कर्ण और धृष्टद्युम्न का युद्ध हुआ। कर्ण ने अपने शत्रुओं को पराजित किया और उसके बाद युधिष्ठिर तथा चेदियों से युद्ध करने लगा (८. ४८)।" "कर्ण ने द्रविणों के साथ युद्ध करके उन्हें पराजित किया। कर्ण और युधिष्ठिर का भीषण युद्ध हुआ जिसमें युधिष्ठिर ने क्रोधपूर्वक कर्ण को सम्बोधित करते हुये कहा : 'आज तुम्हारे पास जितना बल हो, पराक्रम हो उसे दिखाओ। आज मैं तुम्हारे युद्ध के हौसले को मिटा दूँगा।' युधिष्ठिर के वार से कर्ण को मूर्च्छा आ गई किन्तु मूर्च्छा दूर होते ही उसने युधिष्ठिर के रथचक्र के रक्षकों, पाञ्चाल राजकुमार चन्द्रदेव और दण्डधार का वध कर दिया। युधिष्ठिर ने सुषेण और सत्यसेन पर प्रहार किया। सात्यकि और कर्ण का युद्ध हुआ जिसमें उसने ब्रह्मास्त्र का आवाहन किया। कर्ण ने युधिष्ठिर को रथहीन कर दिया जिससे वे सफेद रंग और काली पूँछवाले घोड़ों से युक्त एक अन्य रथ पर बैठ कर रणभूमि से विमुख होकर अपने शिविर की ओर चले आये। उस समय कर्ण ने युधिष्ठिर का पीछा किया और अपने हाथ से उनके कन्धे का स्पर्श करके उन्हें बलपूर्वक पकड़ने का प्रयास करने लगा। उसी समय उसे कुन्ती को दिये हुए वचन का स्मरण हो आया, और शल्य ने भी उससे युधिष्ठिर को हाथ न लगाने के लिये कहा। फिर भी, कर्ण ने युधिष्ठिर का अपमान करके ही जाने दिया। चेदियों की सेना ने भी युधिष्ठिर का अनुगमन किया। कर्ण ने पाण्डव-सेना का भयंकर संहार किया। युधिष्ठिर ने भीम और सात्यकि के नेतृत्व में कर्ण के विरुद्ध अपनी सेना को अग्रसर होने का आदेश दिया। कौरवसेना ने पराजित होकर पलायन किया (८. ४९)।" "दुर्योधन ने भागती हुई सेना को रोकने का निरर्थक प्रयत्न किया। शकुनि+कर्ण ने भीमसेन के साथ युद्ध किया और भीमसेन ने सात्यकि तथा धृष्टद्युम्न को युधिष्ठिर की रक्षा करने को कहा। शल्य ने कर्ण को भीम को दिखाया। कर्ण ने शल्य का उत्तर दिया। युद्ध में कर्ण मूर्च्छित हो गया जिसके कारण शल्य उसे युद्धभूमि से बाहर हटा ले गये (८. ५०)।" "धृतराष्ट्र के पूछने पर सञ्जय ने बताया : दुर्योधन के कहने पर अनेक कौरव-योद्धाओं ने भीमसेन पर आक्रमण किया। भीम ने छः धृतराष्ट्र पुत्रों का वध किया। धृतराष्ट्र के अन्य पुत्रों ने पलायन किया। कर्ण और भीमसेन का घोर युद्ध हुआ जिसमें कर्ण ने भीम को रथहीन कर दिया। रथहीन भीम ने गदा हाथ में लेकर अनेक हाथियों और मनुष्यों का वध किया। भीम ने शकुनि के बावन हाथियों तथा १,००० अश्वारोहियों का संहार किया। तदनन्तर एक अन्य रथ पर बैठ कर भीमसेन कर्ण के साथ युद्ध के लिये बढ़े। कर्ण और युधिष्ठिर का युद्ध हुआ जिसमें युधिष्ठिर का सारथि-रहित रथ रणभूमि में इधर-उधर घूमने लगा और कर्ण भी बाणों की वर्षा करता हुआ उनका पीछा करने करने लगा। युधिष्ठिर पर कर्ण को आक्रमण करते देख भीमसेन

ने कर्ण के साथ युद्ध आरम्भ किया; सात्यकि ने भी कर्ण से युद्ध किया। शकुनि, कर्ण, और कृपाचार्य इत्यादि को देख कर कौरव-सैनिक फिर लौट आये और दोनों पक्षों में भयंकर युद्ध होने लगा (८. ५१)।" "दोनों सेनाओं का घोर युद्ध और कौरव-सेना का व्यथित होना (८. ५२)।" "अर्जुन और संशप्तकों का, तथा अर्जुन (+कृष्ण) और सुशर्मन् का युद्ध हुआ। अर्जुन ने नागास्त्र का बारम्बार प्रयोग करके संशप्तकों के पैर बाँध दिये; सुशर्मन् ने सौपर्णास्त्र का आवाहन किया जिससे अनेक गरुड़ पक्षी प्रगट होकर नागों का भक्षण करने लगे। सुशर्मन् के प्रहार से आहत होकर अर्जुन रथ के पृष्ठ भाग में बैठ गये। चेतना लौटने पर अर्जुन ने ऐन्द्रास्त्र का आवाहन किया; घोर युद्ध होने लगा (८. ५३)।" "कृतवर्मा इत्यादि ने भयंकर युद्ध आरम्भ किया। कृपाचार्य और शिखण्डी (+सृञ्जयों) का युद्ध हुआ; शिखण्डिन् रथहीन होकर निष्क्रिय हो गये। धृष्टद्युम्न कृपाचार्य के विरुद्ध युद्ध के लिये बढ़े। कृतवर्मा और धृष्टद्युम्न का युद्ध हुआ। कृपाचार्य के रथ की ओर बढ़ते हुये युधिष्ठिर और अश्वत्थामा का युद्ध हुआ। दुर्योधन और नकुल तथा सहदेव का, कर्ण और भीमसेन इत्यादि का, चित्रकेतु के पुत्र सुकेतु और कृपाचार्य का, युद्ध हुआ। शिखण्डी पराजित होकर हट गये। कृपाचार्य ने सुकेतु का वध किया और उसके सैनिक भी भाग गये। कृतवर्मा और धृष्टद्युम्न का युद्ध हुआ जिसमें कृतवर्मा पराजित हुये (८. ५४)।" "अश्वत्थामा और युधिष्ठिर इत्यादि के युद्ध का वर्णन; प्रतिविन्ध्य और अश्वत्थामा इत्यादि का युद्ध हुआ। सात्यकि के सारथि का वध हो गया। अश्वत्थामा को छोड़ कर युधिष्ठिर दूसरी ओर चले गये; अश्वत्थामा ने भी वह स्थान छोड़ दिया (८. ५५)।" "कर्ण और भीमसेन का युद्ध हुआ जिसमें कर्ण से बचते हुये उन्होंने कौरव-सेना पर आक्रमण किया। अर्जुन और संशप्तकों, भीमसेन और कौरवों, कर्ण और पाञ्चालों, दुर्योधन और नकुल तथा सहदेव, नकुल तथा सहदेव को बचाने के लिये धृष्टद्युम्न और दुर्योधन के बीच युद्ध हुआ। दुर्योधन के भ्राताओं ने दुर्योधन की रक्षा की और दण्डधार उसे अपने रथ पर बैठा कर दूर हटा ले गये। सात्यकि को पराजित करके दुर्योधन की रक्षा करने के लिये उत्सुक कर्ण और धृष्टद्युम्न+सात्यकि (जो कर्ण का पीछा कर रहे थे)+पाञ्चालों का युद्ध हुआ। मध्याह्न के समय दोनों दल की सेनाओं के बीच भयंकर संग्राम प्रारम्भ हुआ। कर्ण और व्याघ्रकेतु, युधिष्ठिर इत्यादि और कर्ण के युद्धों का वर्णन। भीमसेन ने कौरवों तथा बाह्लीकों का वध किया। कर्ण ने भीषण युद्ध आरम्भ किया जिसे देख कर अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कर्ण के पराक्रम की प्रशंसा की। संशप्तकों को पराजित करके अर्जुन और श्रीकृष्ण कौरव सेना के बीच घुस गये। दुर्योधन ने एक बार पुनः संशप्तकों को अर्जुन के विरुद्ध युद्ध करने के लिये उत्साहित किया। १०,००० क्षत्रियों का वध करने के पश्चात् अर्जुन संशप्तकों की सेना के दूसरे छोर पर पहुँच गये जिसकी रक्षा काम्बोज-गण कर रहे थे। अर्जुन ने काम्बोज के सुदक्षिण के भ्राता का वध किया। अन्य काम्बोज सैनिक भी मारे गये। अश्वत्थामा और अर्जुन (+कृष्ण) का युद्ध हुआ जिसको देखने के लिये सिद्ध और चारण वहाँ उपस्थित हुये। श्रीकृष्ण ने अर्जुन से अश्वत्थामा को न छोड़ने के लिये कहा; मूर्च्छित अश्वत्थामा को उनका सारथि युद्ध-भूमि से बाहर हटा ले गया। अर्जुन ने कौरव सेना का वध किया। अर्जुन ने संशप्तकों का, भीमसेन ने कुरुओं का, और कर्ण ने पाञ्चालों का संहार किया। अपने घावों के कष्ट से व्यथित युधिष्ठिर युद्धस्थल से एक कोस पीछे हट गये (८. ५६)।" "दुर्योधन ने कुरुसेना के नायकों से वार्तालाप किया। अश्वत्थामा ने प्रतिज्ञा की कि वे धृष्टद्युम्न का वध किये बिना अपना कवच नहीं उतारेंगे : तदनन्तर दोनों पक्षों में भीषण युद्ध होने लगा जिसे देखने के लिये देवताओं तथा अप्सराओं सहित समस्त प्राणी वहाँ एकत्र हो गये। उस समय अप्सराओं ने दिव्य पुष्पहारों, रत्नों, और विविध सुगन्धित पदार्थों की वर्षा की (८. ५७)।" "अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा कि पाण्डव-सेना पलायन कर रही है, कर्ण उनके योद्धाओं का संहार कर रहा है और युधिष्ठिर भी कहीं दिखाई नहीं दे रहे हैं। उस समय दिन का तृतीयांश अभी शेष था। अर्जुन, युधिष्ठिर (+सृञ्जयों) की ओर बढ़े। श्रीकृष्ण ने अर्जुन से युद्धभूमि का वर्णन किया। भयंकर युद्ध आरम्भ हुआ (८. ५८)।" "कर्ण के नेतृत्व में कौरवों तथा युधिष्ठिर के नेतृत्व में पार्थों और सृञ्जयों का युद्ध हुआ। संशप्तकों की थोड़ी सी सेना ही बच रही। धृष्टद्युम्न+पाण्डव तथा उनके पक्ष के समस्त राजाओं का कर्ण के साथ युद्ध हुआ। सात्यकि और कर्ण, अश्वत्थामा और पाञ्चालों इत्यादि के बीच हुआ। अश्वत्थामा ने धृष्टद्युम्न को आहत कर दिया परन्तु अर्जुन ने धृष्टद्युम्न की रक्षा करके अश्वत्थामा के साथ युद्ध किया। सहदेव अपने रथ पर बैठा कर धृष्टद्युम्न को पुनः युद्धभूमि में लाये। अश्वत्थामा अपने रथ पर ही मूर्च्छित हो गये जिससे उनका सारथि उन्हें युद्धभूमि से दूर हटा ले गया। अर्जुन संशप्तकों की ओर बढ़े (८. ५९)।" "कृष्ण ने अर्जुन से कहा कि दुर्योधन के नेतृत्व में अनेक धार्तराष्ट्र युधिष्ठिर का पीछा कर रहे हैं, जब कि पाञ्चाल-गण युधिष्ठिर की रक्षा के लिये जा रहे हैं। श्रीकृष्ण ने कहा कि यद्यपि सात्यकि और भीम ने कौरवों को रोक रक्खा है तथापि युधिष्ठिर महान् संकट में हैं क्योंकि दुर्योधन इत्यादि पर्वतों को तोड़ देने में भी समर्थ हैं। श्रीकृष्ण ने कहा : 'युधिष्ठिर उपवास करने के कारण अत्यन्त दुर्बल हो गये हैं; वे ब्राह्मबल में स्थित तथा क्षात्रबल प्रगट करने में समर्थ नहीं हैं। कौरव महारथी, स्थूणाकर्ण, इन्द्रजाल, पाशुपत तथा अन्य प्रकार के शस्त्र समूहों से युधिष्ठिर को आच्छादित कर रहे हैं। कर्ण ने नकुल-सहदेव इत्यादि के देखते-देखते ही युधिष्ठिर के ध्वज को काट डाला। पाण्डव-सेना का विनाश करते हुये कर्ण भीमसेन की ओर दौड़ रहा है। पाञ्चालों का वध करके दुर्योधन से रक्षित कर्ण जब तुम्हारे पास आये तब तुम अवश्य मार डालना।' पाञ्चालों का उन्मूलन करने की इच्छा से कर्ण धृष्टद्युम्न की ओर बढ़ा। कृष्ण की शंका के विपरीत भी युधिष्ठिर जीवित थे। भीम (+सृञ्जय और सात्यकि) तथा पाञ्चाल वीर अब पलायन कर रहे कौरवों को विजित कर रहे थे। कृपाचार्य और कर्ण इत्यादि दुर्योधन के नेतृत्व में पाञ्चालों को रोकने का प्रयास कर रहे थे। युधिष्ठिर के विरुद्ध युद्ध के लिये बढ़ रहे गजारोही निषाद राजकुमार का भीम ने वध किया। भीम ने दुर्योधन की तीन अक्षौहिणी सेना को रोक दिया। अर्जुन ने अपने बचे हुये शत्रुओं को भी नष्ट कर दिया। संशप्तकों ने पलायन किया (८. ६०)।" "धृतराष्ट्र के पूछने पर सञ्जय ने कहा : कर्ण इत्यादि और भीमसेन+पाण्डव इत्यादि, शिखण्डी और कर्ण, धृष्टद्युम्न और दुःशासन, नकुल और वृषसेन, युधिष्ठिर और चित्रसेन, सहदेव और उलूक, सात्यकि और शकुनि, द्रौपदेयों और कौरवों, अश्वत्थामा और अर्जुन, कृपाचार्य और युधामन्यु, तथा कृतवर्मा और उत्तमौजा के बीच युद्ध हुये। कर्ण द्वारा शिखण्डी रथ विहीन होकर पराजित हुये; धृष्टद्युम्न तथा अनेक पाञ्चालों का दुःशासन के साथ युद्ध हुआ जिस पर सिद्धों और अप्सराओं ने आश्चर्य प्रगट किया। कर्ण ने धार्तराष्ट्रों की पलायन करने वाली सेना को पुनः सन्नद्ध करने का प्रयास किया। कर्ण के चले जाने पर नकुल ने कौरवों पर आक्रमण किया। कर्ण का पुत्र नकुल के साथ युद्ध बचाते हुये अपने पिता के रथचक्रों की रक्षा के लिये चला गया। सहदेव द्वारा सारथि-विहीन कर दिये जाने पर उलूक ने त्रिगर्तों की सेना में शरण ली। शकुनि को उलूक अपने रथ पर बैठा कर सात्यकि से दूर हटा ले गये जिसके पश्चात् सात्यकि ने कौरव-सेना का संहार किया। दुर्योधन और भीमसेन का युद्ध हुआ जिसमें रथ और धनुष से रहित होकर दुर्योधन ने पलायन किया। सम्पूर्ण कौरव-सेना ने भीमसेन पर आक्रमण किया परन्तु छिन्न-भिन्न हो गई। युधामन्यु ने अपने रथ को स्वयं हाँकते हुये पलायन किया। उत्तमौजा को उनका सारथि दूर हटा ले गया। सम्पूर्ण कौरव सेना ने भीमसेन पर आक्रमण किया। दुःशासन और शकुनि की गजसेना के साथ भीमसेन का युद्ध हुआ जिसमें भीमसेन ने दुर्योधन को पराजित करके अपने दिव्यास्त्रों के आवाहन द्वारा सम्पूर्ण गजसेना को छिन्न-भिन्न कर दिया (८. ६१)।" "कृष्ण के साथ रथ पर आरूढ़ अर्जुन वहाँ आ पहुंचे। युधिष्ठिर को बन्दी बनाने की इच्छा से अपनी आधी सेना को लेकर दुर्योधन ने युधिष्ठिर को चारों ओर से घेर लिया। शत्रुओं की इस दुर्भावना को जान कर एक अक्षौहिणी सेना

के साथ पाण्डवगण युधिष्ठिर की रक्षा के लिये दौड़ पड़े। कर्ण ने उस समय पाण्डव-सेना को रोक दिया। सहदेव और दुर्योधन का युद्ध हुआ। कर्ण ने युधिष्ठिर और धृष्टद्युम्न के सैनिकों का संहार करके उन्हें पलायन करने के लिये विवश किया। कर्ण और युधिष्ठिर का युद्ध हुआ जिसमें युधिष्ठिर ने अपने सारथि को युद्धभूमि से दूर हट चलने का आदेश दिया। दुर्योधन और धार्तराष्ट्रों ने युधिष्ठिर का पीछा किया परन्तु १,७०० कैकेय सैनिकों तथा पाञ्चालों ने उन्हें रोक दिया। दुर्योधन और भीम के बीच युद्ध हुआ (८. ६२)।" "कर्ण से युद्ध में पराजित होकर कैकेय सैनिकों ने भीमसेन की शरण ली। नकुल और सहदेव द्वारा अपने रथचक्रों की रक्षा में युधिष्ठिर जब धीरे-धीरे पाण्डव शिविर की ओर जा रहे थे तब कर्ण ने उन पर आक्रमण किया। नकुल तथा सहदेव और कर्ण के बीच युद्ध हुआ जिसमें कर्ण ने युधिष्ठिर तथा नकुल के दोनों घोड़ों को मार डाला। फलस्वरूप युधिष्ठिर तथा नकुल सहदेव के रथ पर बैठ गये। इन दोनों के बचाने की दृष्टि से शल्य ने कर्ण को अर्जुन के साथ युद्ध करने के लिये ललकारा, परन्तु उसका कोई फल नहीं हुआ। शल्य ने एक बार फिर कर्ण को अर्जुन का स्मरण दिलाते हुये बताया कि भीमसेन के साथ युद्ध कर रहे दुर्योधन के लिये जीवन का संकट उपस्थित है। इस पर युधिष्ठिर, नकुल तथा सहदेव को छोड़ कर कर्ण दुर्योधन की रक्षा के लिये दौड़ पड़ा। लज्जित युधिष्ठिर सहदेव के रथ पर बैठ कर अपने शिविर में लौट आये और वहाँ से उन्होंने नकुल तथा सहदेव को भीमसेन की सहायता के लिये भेजा (८. ६३)।" "अश्वत्थामा और अर्जुन का युद्ध हुआ जिसमें अश्वत्थामा ने ऐन्द्रास्त्र का प्रयोग किया परन्तु अर्जुन ने भी इन्द्र द्वारा रचित एक अन्य शक्तिशाली अस्त्र से उसका निराकरण कर दिया। सारथि का वध हो जाने पर अश्वत्थामा ने अपने रथ को स्वयं हाँकते हुये युद्ध किया परन्तु पराजित होकर युद्धभूमि से हट गया। पाँण्डवों ने बार-बार कौरव-सेना पर आक्रमण किया जिससे भयभीत होकर धार्तराष्ट्रों के देखते-देखते ही उनकी सम्पूर्ण सेना भाग खड़ी हुई। दुर्योधन ने कर्ण से अपनी सेना को पुनः सन्नद्ध कराया। भार्गवास्त्र के प्रयोग से कर्ण ने पाञ्चालों और चेदियों का संहार आरम्भ किया। कर्ण के इस भयंकर संहार से त्रस्त सृञ्जय-गण बार-बार अर्जुन और वासुदेव को पुकारने लगे। उस समय अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कर्ण के पराक्रम का वर्णन किया। श्रीकृष्ण ने अर्जुन को युधिष्ठिर से मिलने का स्मरण दिलाया (८. ६४)।" अर्जुन ने भीमसेन से मिलकर उन्हें युधिष्ठिर का समाचार प्राप्त करने के लिये कहा, परन्तु युद्धभूमि से हट जाने पर कायर कहे जाने के भय से भीम ने अर्जुन से स्वयं जाकर युधिष्ठिर का समाचार प्राप्त करने के लिये कहा। संशप्तकों के रोकने का भीमसेन द्वारा आश्वासन पाकर अर्जुन स्वयं युधिष्ठिर से मिलने के लिये पाण्डव-शिविर की ओर गये। वहाँ जाकर अर्जुन और श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर को शय्या पर पड़े देखा। उनकी उपस्थिति से कृष्ण ने कर्ण को मृत समझा (८. ६५)।" "कर्ण का वध हुआ जान कर युधिष्ठिर ने भी श्रीकृष्ण और अर्जुन को बधाई दी (८. ६६)।" "अर्जुन ने युधिष्ठिर से अपने शिविर में आने का प्रयोजन बताते हुये यह शपथ ली कि वे कर्ण तथा समस्त कौरव-सेना का उसी दिन वध कर डालेंगे (८. ६७)।" "युधिष्ठिर ने यह सोचकर कि भीम को अकेले युद्धभूमि में छोड़ कर अर्जुन ने पलायन किया है, अर्जुन की तीव्र भर्त्सना और अनेक बार उनसे गाण्डीव धनुष दूसरे को दे देने के लिये कहा (८. ६८)।" "अपनी शपथ के कारण कि जो कोई उनसे गाण्डीव धनुष दूसरे को दे देने के लिये कहेगा उसका वे वध कर डालेंगे, अर्जुन ने युधिष्ठिर का मस्तक काट देने के लिये अपनी तलवार निकाल ली। उस समय श्रीकृष्ण ने बलाक और कौशिक की कथा का उदाहरण देते हुये अर्जुन को सत्य की प्रकृति का उपदेश दिया। अर्जुन ने कहा कि वे अपने प्रण का अवश्य पालन करेंगे। इस पर श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा कि युधिष्ठिर को 'तू' कह कर अपमानजनक सम्बोधन मात्र में ही यह मान लिया जायगा कि उन्होंने युधिष्ठिर का वध कर दिया (८. ६९)।" "भगवान श्रीकृष्ण के कहने पर अर्जुन ने एक लम्बे भाषण द्वारा युधिष्ठिर का अपमान किया किन्तु उसके बाद अत्यन्त खिन्न होकर अपना सर काट देने की ही इच्छा प्रगट की। कृष्ण ने अर्जुन को आत्म-प्रशंसा करने के लिये परामर्श देते हुये बताया कि आत्म-प्रशंसा आत्म-विनाश के ही तुल्य होती है। अर्जुन ने आत्म-प्रशंसा करने के बाद युधिष्ठिर से क्षमा माँगी और कर्ण का वध तथा भीम की रक्षा करने का प्रण करके उन्हें सन्तुष्ट किया। युधिष्ठिर ने दुःख प्रगट करते हुये कहा कि भीमसेन ही राजा होने के योग्य हैं। श्रीकृष्ण ने उन्हें सान्त्वना देते हुये अर्जुन तथा स्वयं अपनी ओर से क्षमा माँगी (८. ७०)।" "अर्जुन को श्रीकृष्ण ने उपदेश दिया; अर्जुन और युधिष्ठिर एक दूसरे से प्रसन्नतापूर्वक मिले; अर्जुन ने कर्ण-वध की प्रतिज्ञा करके युधिष्ठिर का आशीर्वाद प्राप्त किया (८. ७१)।" "युधिष्ठिर से विदा लेकर अर्जुन और श्रीकृष्ण कर्ण के वध के लिये रणभूमि की ओर अग्रसर हुये। दारुक ने उनके रथ को अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित कर दिया था। मार्ग में अनेक शुभ शकुन प्रगट हुये। श्री कृष्ण ने अर्जुन को प्रोत्साहित किया (८. ७२)।" "भीष्म और द्रोण के पराक्रम का वर्णन करते हुये अर्जुन के बल की प्रशंसा करके श्री कृष्ण ने कर्ण और दुर्योधन के अन्याय का स्मरण दिलाया तथा अर्जुन को कर्ण-वध के लिये उत्तेजित किया (८. ७३)।" "श्रीकृष्ण का भाषण सुनकर अर्जुन ने वीरोचित उद्गार प्रगट किये (८. ७४)।" "धृतराष्ट्र के पूछने पर सञ्जय ने युद्ध का वर्णन किया : अर्जुन ने अनेक योद्धाओं का वध किया। कृपाचार्य और शिखण्डी, सात्यकि और दुर्योधन, श्रुतश्रवा और अश्वत्थामा, युधामन्यु और चित्रसेन, उत्तमौजा और कर्णपुत्र सुषेण, सहदेव और गान्धारराज शकुनि, नकुल-पुत्र शतानीक और कर्ण-पुत्र वृषसेन, नकुल और कृतवर्मा, पाञ्चालराज धृष्टद्युम्न और कर्ण, संशप्तकों सहित दुःशासन और भीम, के बीच भीषण युद्ध हुये। उत्तमौजा ने सुषेण का वध किया। कर्ण और उत्तमौजा का युद्ध हुआ जिसमें उत्तमौजा के रथाश्व मारे गये और वे शिखण्डी के रथ पर बैठ गये। उत्तमौजा ने कृपाचार्य को भी रथ-विहीन कर दिया था अतः शिखण्डी ने उन पर वार नहीं किया। अश्वत्थामा ने कृपाचार्य की रक्षा की। भीम ने अपने बाणों से कौरव-सेना को सन्तप्त किया (८. ७५)।" "भरत-सैनिक भीम के सामने से पलायन करने लगे। भीम ने अपने सारथि, विशोक, से कहा कि वे युधिष्ठिर और अर्जुन के लिये चिन्तित हैं। भीम के कहने पर विशोक ने उनके रथ में रक्खे हुये अस्त्र-शस्त्रों के परिणाम का अनुमान करके बताया। भीम ने एक बार पुनः अपने सारथि, विशोक, से कहा कि वे उसी दिन या तो समस्त कौरव-सेना का वध कर देंगे अथवा स्वयं मृत्यु को प्राप्त होंगे। विशोक ने भीम को बताया कि अर्जुन युद्धभूमि में लौट रहे हैं। विशोक से अर्जुन के आगमन का समाचार सुन कर भीम अत्यन्त प्रसन्न हुये और इस शुभ संवाद को सुनाने के कारण उन्होंने विशोक को चौदह ग्राम, सौ दासियाँ तथा बीस रथ पारितोषिक के रूप में देने का वचन दिया (८. ७६)।" "अर्जुन और भीम ने मिल कर कौरव-सेना पर आक्रमण किया। अपनी सेना का भीषण संहार होते देख कर दुर्योधन ने सैनिकों से भीम का वध कर देने के लिये कहा। दुर्योधन के कहने पर अपने भ्राताओं सहित शकुनि ने भीम से युद्ध किया परन्तु पराजित हो गया। दुर्योधनादि धार्तराष्ट्र सेना सहित भाग कर कर्ण के आश्रय में चले गये (८. ७७)।" "धृतराष्ट्र के पूछने पर सञ्जय ने कहा : अपराह्न में कर्ण ने सोमकों पर और भीम ने पाञ्चालों पर आक्रमण किया। शिखण्डी इत्यादि का कर्ण के साथ युद्ध हुआ जिसमें कर्ण विजयी हुआ। चेदियों और मत्स्यों को भी कर्ण ने रोक दिया। देवता, सिद्ध और चारण कर्ण के पराक्रम से अत्यन्त प्रसन्न हुये। पलायन करती हुई पाण्डव-सेना पर धार्तराष्ट्र धनुर्धरों ने आक्रमण किया। दुर्योधन अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उसने अनेक पाण्डव-योद्धाओं का वध किया। इसी प्रकार पाण्डव-योद्धाओं और धृष्टद्युम्न ने कौरवों का भी संहार किया (८. ७८)।" "अर्जुन ने कौरव-सेना का विनाश करके खून की नदी बहा दी और अपना रथ कर्ण के पास ले चलने के लिये श्रीकृष्ण से कहा। श्रीकृष्ण और अर्जुन को आते देख शल्य ने कर्ण को सम्बोधित किया और कर्ण ने उनका उत्तर दिया। कर्ण के रहने पर दुर्योधन इत्यादि ने अर्जुन तक पहुंचने

के लिये कर्ण को मार्ग देते हुये अर्जुन पर आक्रमण कर दिया। अर्जुन ने कौरव सेना का विध्वंस किया। अश्वत्थामा और कृपाचार्य ने मिल कर कृतवर्मा और अर्जुन से युद्ध किया परन्तु पराजित हुये। शिखण्डी इत्यादि भी अर्जुन की सहायता के लिये बढ़े। सृञ्जयों और कौरवों ने एक दूसरे का भीषण संहार किया। (८. ७९)।" "कर्ण को बचाकर अर्जुन भीम की रक्षा के लिये बढ़े। कौरवसेना भाग खड़ी हुई। अर्जुन ने भीम को बताया कि युधिष्ठिर सुरक्षित हैं। तदनन्तर अर्जुन युद्ध करते हुये आगे बढ़े। दुःशासन से छोटे दस धार्तराष्ट्रों ने अर्जुन को घेर लिया परन्तु अर्जुन ने उन सबका वध कर दिया (८. ८०)।" "कर्ण के रथ को ओर बढ़ते समय अर्जुन पर नब्बे संशप्तक वीरों ने आक्रमण किया परन्तु अर्जुन ने उन सबको मार गिराया। अनेक कौरव वीरों ने अर्जुन पर आक्रमण किया, परन्तु उन्होंने उन सबका विनाश कर दिया। तदनन्तर दुर्योधन के नेतृत्व में १,३०० गजारोही म्लेच्छों ने अर्जुन पर आक्रमण किया परन्तु अर्जुन ने उनका भीषण संहार किया। कौरव-सेना के बचे हुये सैनिकों को छोड़ कर भीमसेन अर्जुन की सहायातार्थ बढ़े और अर्जुन के पीछे-पीछे चलने लगे। कर्ण के सैनिकों ने कर्ण का साथ छोड़ दिया। परन्तु तदन्तर धार्तराष्ट्र भाग कर कर्ण के रथ के पास आ गये। कर्ण ने पाञ्चालों पर आक्रमण किया (८. ८१)।" "कर्ण ने जनमेजय के सारथि और रथाश्वों को गिरा दिया और सुतसोम तथा शतानीक के धनुष को भी काट दिया। कर्ण और धृष्टद्युम्न का युद्ध हुआ। कैकेय सैनिकों के सेनापति उग्रकर्मा और कर्ण-पुत्र प्रसेन का युद्ध हुआ जिसमें कर्ण ने उग्रकर्मा का वध कर दिया। सात्यकि ने कर्ण-पुत्र प्रसेन का वध किया। सात्यकि+शिखण्डी और कर्ण का युद्ध हुआ। कर्ण ने धृष्टद्युम्न के पुत्र का वध करके सुतसोम पर आक्रमण किया। श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कर्ण का वध करने के लिये कहा। भीमसेन को साथ लेकर अर्जुन आगे बढ़े। उत्तमौजों और कर्ण का युद्ध हुआ जिसमें कर्ण ने उन सबको पराजित किया। सात्यकि और दुर्योधन+कृप, तथा दुःशासन और भीम का युद्ध हुआ (८. ८२)।" "कर्ण इत्यादि को सम्बोधित करते हुये भीम ने दुःशासन का वध करके दुर्योधन और कर्ण के देखते-देखते ही उसका रक्तपान किया। कर्ण के भ्राता चित्रसेन तथा अन्य उपस्थित जन भीम को एक राक्षस जान कर वहाँ से भाग खड़े हुये। युधामन्यु ने चित्रसेन का पीछा करके उसका वध कर दिया। कर्ण और नकुल का युद्ध हुआ। दुःशासन का रक्तपान करते हुये भीमसेन ने कृष्ण और अर्जुन को सम्बोधित करते हुये शीघ्र दुर्योधन का वध करने की शपथ ली (८. ८३)।" "दस धार्तराष्ट्रों ने भीमसेन पर आक्रमण किया परन्तु उन्होंने उन सबका वध कर दिया। उस समय कर्ण अत्यन्त भयभीत हुआ परन्तु शल्य ने उसे प्रोत्साहित किया। कर्ण-पुत्र वृषसेन और भीम+नकुल का युद्ध हुआ जिसमें वृषसेन ने नकुल के रथ के घोड़ों का वध कर दिया। रथहीन नकुल अर्जुन के देखते-देखते भीमसेन के रथ पर आरूढ़ हो गये। भीम और नकुल के कहने पर अर्जुन वृषसेन की ओर बढ़े (८. ८४)।" "हिमवत् क्षेत्र के गजारोही कुलिन्द वीर और ग्यारह योद्धाओं ने कृतवर्मा के साथ युद्ध किया। कृपाचार्य ने कुलिन्दराज के पुत्रों का वध किया। भोजराज कृतवर्मा और शतानीक का युद्ध हुआ। अश्वत्थामा ने तीन हाथियों का वध किया। कुलिन्दराज के छोटे भाई से भी जो छोटा था उसने दुर्योधन के साथ युद्ध किया जिसमें कुलिन्द राजकुमार का हाथी मारा गया। उस कुलिन्द राजकुमार ने दूसरे हाथी पर बैठ कर क्राथ पर आक्रमण किया परन्तु क्राथ ने उस हाथी का भी वध कर दिया। इसी प्रकार कौरव वीरों और कुलिन्द राजकुमारों में भीषण युद्ध हुआ जिसमें कुलिन्दों और उनके हाथियों का संहार हुआ। कर्ण के पुत्र वृषसेन और शतानीक+अर्जुन का युद्ध हुआ। उस समय अर्जुन ने कर्ण तथा दुर्योधन और अश्वत्थामा सहित समस्त कौरव-वीरों को सम्बोधित करते हुये कहा कि वे सर्वप्रथम वृषसेन का वध करेंगे और उसके पश्चात् कर्ण का। अर्जुन ने वृषसेन का वध किया। कर्ण और अर्जुन (+कृष्ण) का युद्ध हुआ (८. ८५)।" "कृष्ण ने अर्जुन को सम्बोधित किया और अर्जुन ने भी उनका उत्तर दिया (८. ८६)।" "कर्ण और अर्जुन का द्वैरथ युद्ध में समागम हुआ। दोनों की जय-पराजय के सम्बन्ध में संसार के समस्त प्राणियों ने संशय प्रगट किया। देवता, दानव, गन्धर्व, पिशाच, नाग और राक्षस, इन सबने कर्ण और अर्जुन के युद्ध के विषय में पक्ष और विपक्ष ग्रहण कर लिया। आकाश की अधिष्ठात्री देवी कर्ण के और भूदेवी अर्जुन के पक्ष में हो गईं। पर्वत, समुद्र, नदियाँ, वृक्ष तथा ओषधियाँ अर्जुन के, और असुर, यातुधान तथा गुह्यक कर्ण के पक्ष में आ गये। मुनि, चारण, सिद्ध, गरुड़, पक्षी, रत्न, निधियाँ, उपवेद, उपनिषद, रहस्य, संग्रह, इतिहास-पुराण सहित सम्पूर्ण वेद, वासुकि, मणिक, सम्पूर्ण सर्पगण, कद्रू की वंशजों सहित समस्त सन्तान, विषैले नाग, ऐरावत, सौरभेय और वैशालेय सर्प, ये सब अर्जुन का, तथा छोटे-छोटे सर्प कर्ण का साथ देने लगे। विभिन्न प्रकार के मृग, सिंह तथा व्याघ्र, वसु, मरुद्गण, साध्य, रुद्र, विश्वेदेव, अश्विनीकुमार, इन्द्र, सोम, पवन और दशों दिशायें अर्जुन के, तथा अन्य आदित्यगण, वैश्य, शूद्र, सूत तथा संकर जाति के लोग कर्ण के पक्ष में हो गये। गणों और सेवकों सहित देवता, पितर, यम, कुबेर और वरुण अर्जुन के, तथा प्रेत, पिशाच, मांसभोजी पशु-पक्षी तथा जलजन्तु कर्ण के पक्ष में हो गये। देवर्षि, ब्रह्मर्षि, राजर्षि, तुम्बुर आदि गन्धर्व अर्जुन के, तथा अन्तकाल में विपरीत भाव का आश्रय लेने वाले पुरुष में मृत्यु की घड़ी निकट आने पर जो भाव प्रगट होते हैं वे तथा रिष्ट कर्ण के ओर हो गये। इत्यादि। इन्द्र ने कहा कि अर्जुन विजयी होंगे। सूर्य ने कहा कि कर्ण अर्जुन को पराजित करेगा। देवताओं ने ब्रह्मा से कहा कि अर्जुन और कर्ण दोनों को समान रूप से सफलता मिलनी चाहिये जब कि इन्द्र ने अर्जुन और कृष्ण के विजय की कामना की। ब्रह्मा और ईशान ने यह बताते हुये कि अर्जुन की विजय निश्चित है, कहा : 'पुरुषप्रवर वैकर्तन कर्ण, द्रोणाचार्य और भीष्म के साथ वसुओं और मरुद्गणों के लोक में जाय अथवा स्वर्ग लोक प्राप्त करें'। ब्रह्मा और महादेव के ऐसा कहने पर इन्द्र ने सम्पूर्ण प्राणियों को बुलाकर उन दोनों की आज्ञा सुनाई। अर्जुन की ध्वजा का महान् वेगशाली वानर अपने स्थान से उछल कर कर्ण की ध्वजा पर बैठे हाथी की साकल पर प्रहार करने लगा। श्रीकृष्ण और शल्य ने एक दूसरे की ओर तीक्ष्ण नेत्रों से दृष्टिपात किया। अर्जुन और कर्ण ने भी ऐसा ही किया। कर्ण ने शल्य से हँसते हुये पूछा : 'यदि आज रणभूमि में अर्जुन मुझे मार डालें तो तुम क्या करोगे।' शल्य ने कहा : 'तब मैं एक मात्र रथ के द्वारा श्री कृष्ण और अर्जुन दोनों का वध कर डालूँगा।' अर्जुन ने भी उसी प्रकार श्रीकृष्ण से पूछा, परन्तु श्रीकृष्ण ने बताया कि कर्ण अर्जुन का वध नहीं कर सकता, और यदि ऐसा हो गया हो संसार उलट जायगा और वे स्वयं अपनी दोनों भुजाओं से युद्धभूमि में कर्ण तथा शल्य को मसल डालेंगे। अर्जुन ने कहा कि उसी दिन कर्ण की पत्नियाँ विधवा हो जायेंगी (७. ८७)।" "उस समय आकाश में देवता, नाग, असुर, सिद्ध, यक्ष, गन्धर्व, राक्षस, अप्सरायें, ब्रह्मर्षि और गरुड, सभी एकत्र थे। युद्ध आरम्भ हुआ। दुर्योधन इत्यादि ने अर्जुन (+कृष्ण) पर आक्रमण किया परन्तु अर्जुन ने सबको पराजित कर दिया। उस समय आकाश से पुष्प-वर्षा हुई। अश्वत्थामा ने दुर्योधन को संधि करने का परामर्श दिया परन्तु निष्फल हुआ। दुर्योधन ने अपने सैनिकों को युद्ध करने का आदेश दिया (८. ८८)।" "अर्जुन और कर्ण के युद्ध का वर्णन : अर्जुन ने आग्नेयास्त्र का प्रयोग किया जिसका कर्ण ने वारुणास्त्र द्वारा मेघ उत्पन्न करके निराकरण किया। अर्जुन ने वायव्यास्त्र द्वारा उन मेघों को विसर्जित कर दिया। अर्जुन ने ऐन्द्रास्त्र तथा कर्ण ने भार्गवास्त्र का प्रयोग किया। पाञ्चालों और सोमकों ने कर्ण पर आक्रमण किया परन्तु उसने उन सबका वध कर दिया। कर्ण द्वारा अर्जुन के अस्त्रों को नष्ट हुआ देख कर भीम ने तथा श्री कृष्ण ने भी अर्जुन से अपना पराक्रम दिखाने के लिये कहा। अर्जुन ने ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया परन्तु कर्ण ने उसको भी नष्ट कर दिया। भीम के कहने पर अर्जुन ने पुनः एक अन्य दिव्यास्त्र का प्रयोग किया जिससे शत्रु-सेना का भीषण संहार आरम्भ हुआ। कर्ण और भीमसेन इत्यादि का युद्ध हुआ। अर्जुन ने कर्ण

और शल्य पर प्रहार तथा सभापति का वध किया। कौरवों ने कर्ण से अर्जुन का वध करने के लिये कहा। कर्ण और अर्जुन के इस युद्ध को देखने के लिये युधिष्ठिर भी युद्धस्थल में पधारे। युद्ध में अर्जुन के धनुष की प्रत्यञ्चा सहसा टूट गई। इस अवसर का लाभ उठा कर कर्ण ने अर्जुन पर सौ बाण मारे। कर्ण ने श्रीकृष्ण को मार डालने की इच्छा से उनके शरीर में प्रज्वलित सर्पों के समान पाँच बाण घुसा दिये। वे वेगशाली बाण कृष्ण के कवच को विदीर्ण करके वेगपूर्वक धरती में समा गये और पाताल-गंगा में स्नान करके पुनः कर्ण की ओर जाने लगे परन्तु अर्जुन ने उनके टुकड़े-टुकड़े कर डाले। ये पाँच बाण नहीं, तक्षक पुत्र अश्वसेन के पक्षपाती पाँच विशाल सर्प थे। तदनन्तर अर्जुन ने बाण-समूहों का एक ऐसा जाल बिछाया जिससे सूर्य की प्रभा और कर्ण का रथ कुहरे से ढके हुये आकाश की भांति अदृश्य हो गया। दुर्योधन के द्वारा प्रोत्साहित २,००० सैनिकों का भी अर्जुन ने वध कर दिया। अर्जुन के पराक्रम से भयभीत होकर समस्त कौरव-योद्धा कर्ण को अकेले छोड़ कर युद्धभूमि से भाग गये (८. ८९)।"

"अर्जुन कर्ण का वध करने के लिये जिन-जिन अस्त्रों का प्रयोग करते थे कर्ण उन्हें काट देता था। दोनों ही योद्धा एक दूसरे पर घोर बाण-वर्षा कर रहे थे। उस समय घमासान युद्ध में पाताल-निवासी अश्वसेन नामक नाग, जो अर्जुन के साथ वैर रखता था और खाण्डवदाह के समय जीवित बच कर पृथिवी के भीतर घुस गया था, बाण का रूप धारण करके कर्ण के तरकस में प्रवेश कर गया। कर्ण और अर्जुन के युद्ध के समय आकाश में खड़ी हुई अप्सराओं ने दिव्य चँवर डुला कर दोनों को चन्दन के जल से सिंचित किया। तदुपरान्त सूर्य और इन्द्र ने अपने-अपने कर कमलों से क्रमशः कर्ण और अर्जुन के मुख पोंछे। अर्जुन के प्रहार से संतप्त कर्ण ने सर्पमुख बाण का संधान किया। कर्ण ने अर्जुन को मारने के लिये दीर्घकाल से सोने के तरकस में चन्दन के चूर्ण में लिप्त इस बाण को सुरक्षित रक्खा था। उसने धनुष पर चढाकर इस बाण से ही अर्जुन पर प्रहार किया। यह प्रज्वलित बाण ऐरावत कुल में उत्पन्न अश्वसेन ही था। धनुष पर उस नाग का प्रयोग होते ही सैकड़ों भयंकर उल्कायें गिरने लगीं और इन्द्रसहित सम्पूर्ण लोकपाल हा-हा कार कर उठे। कर्ण को यह पता नहीं था कि उसके इस बाण में अपने योगबल से अश्वसेन नामक नाग ही प्रवेश कर गया है। उस समय शल्य ने कर्ण को उस बाण का पुनः सन्धान करने के लिये कहा जिस पर क्रुद्ध होकर कर्ण ने उत्तर दिया : 'कर्ण दो बार बाण का सन्धान नहीं करता। मेरे जैसे वीर कपटपूर्वक युद्ध नहीं करते।' उस प्रज्वलित बाण को बड़े वेग से आते देख कृष्ण ने अर्जुन के रथको अपने पैर से दबाकर पृथिवी में थोड़ा धँसा दिया जिससे वह बाण अर्जुन के उस किरीट में जा लगा जिसे इन्द्र ने उन्हें प्रदान किया था। कर्ण के उस बाण ने अर्जुन के मस्तक से उस किरीट को नीचे गिरा दिया जो सूर्य, चन्द्रमा और अग्नि के समान कान्तिमान् तथा ब्रह्मा जी द्वारा तपस्या और प्रयत्नपूर्वक देवराज इन्द्र के लिये निर्मित था। अश्वसेन ने कर्ण के सम्मुख उपस्थित होकर पुनः उसी बाण का प्रहार करने के लिए कहा परन्तु कर्ण ने दूसरे की सहायता लेना तथा एक ही बाण को दो बार चलाना अस्वीकार कर दिया। कर्ण की बात सुनकर उस सर्प ने स्वयं ही अर्जुन पर प्रहार किया। उस समय श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा : 'खाण्डव वन में जब तुम अग्नि देव को तृप्त कर रहे थे तो उस समय यही सर्प अपनी माता के मुख में रक्षित होकर आकाश में उड़ गया था। तुमने उस समय केवल एक ही सर्प जानकर इसकी माता का वध कर दिया था। उसी वैर का स्मरण करके यह आज तुम्हारे ऊपर आक्रमण कर रहा है।' अर्जुन ने उस सर्प को काट कर टुकड़े-टुकड़े कर दिये और श्रीकृष्ण ने अपनी दोनों भुजाओं से अर्जुन के धँसे रथ को पुनः ऊपर कर दिया। एक बार जब अर्जुन के बाण से मूर्च्छित होकर कर्ण निष्क्रिय हो गया तो सत्पुरुषों के व्रत में स्थित रहनेवाले अर्जुन ने कर्ण को मारने की इच्छा नहीं की। उस समय श्रीकृष्ण ने कहा : 'विद्वान पुरुष दुर्बल से दुर्बल शत्रु को भी नष्ट करने के लिये किसी अवसर की प्रतीक्षा नहीं करते।' जब कर्ण के वध का समय आ पहुँचा तब काल अदृश्य रह कर ब्राह्मण के क्रोध से कर्ण के वध की सूचना देता हुआ इस प्रकार बोला : 'अब भूमि तुम्हारे रथ के पहियों को निगलना ही चाहती है।' उस समय परशुराम द्वारा प्रदत्त भार्गवास्त्र कर्ण को विस्मृत हो गया और पृथिवी भी उसके रथ के पहियों को ग्रसने लगी। उस अवस्था में संकटों को सहन न कर सकने के कारण कर्ण खिन्न हो उठा और धर्म की निन्दा करने लगा। कर्ण ने ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया और अर्जुन ने ऐन्द्रास्त्र का जिसे कर्ण ने काट दिया। उत्तम अस्त्र छोड़ने के लिये कृष्ण द्वारा सम्बोधित किये जाने पर अर्जुन ने ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया। कर्ण ने एक के बाद एक करके अर्जुन के धनुष की बारह प्रत्यञ्चाओं को काट दिया परन्तु उसे यह मालूम नहीं था कि अर्जुन के धनुष में सौ प्रत्यञ्चायें हैं। कृष्ण द्वारा उच्च अस्त्रों का प्रयोग करने के लिये कहे जाने पर अर्जुन ने रौद्रास्त्र के साथ संयुक्त कर के एक अन्य दिव्यास्त्र का मन्त्रों से अभिषेक किया। इसी समय पृथिवी ने कर्ण के रथ के एक पहिये को ग्रस लिया। शीघ्रतापूर्वक रथ से उतर कर कर्ण ने अपनी भुजाओं से पकड़ कर धँसी हुई पहिया को ऊपर उठाने का प्रयास किया। कर्ण ने रथ को ऊपर उठाते समय ऐसा झटका दिया कि सप्तद्वीपों से युक्त, पर्वत, वन और काननों सहित वह समस्त पृथिवी चक्र को ग्रसित किये हुये ही चार आंगुल ऊपर उठ गई। पहिया फस जाने के कारण क्रोधाश्रु बहाते हुये कर्ण ने अर्जुन से उस समय तक रुकने के लिये कहा जब तक वह पहिये को बाहर न निकाल ले (८-९०)।" कर्ण द्वारा धर्म और नीति की दुहाई देने पर श्रीकृष्ण ने उस पर व्यंग करते हुये उसके और उसके परामर्श के अनुसार दुर्योधन द्वारा पाण्डवों पर किये गये अत्याचार का स्मरण दिलाया। कर्ण ने लज्जा से अपना मस्तक झुका लिया और कोई उत्तर न देकर युद्ध करता रहा। श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कर्ण पर दिव्यास्त्र प्रहार करने का आग्रह किया। कृष्ण के ऐसा कहने पर अर्जुन के मन में कर्ण के पिछले कुकृत्यों का स्मरण करके भयंकर क्रोध जागृत हुआ। कुपित होने पर अर्जुन के शरीर के सभी छिद्रों से अग्नि की चिनगारियाँ निकलने लगीं। उस समय यह एक अद्भुत सी बात हुई। कर्ण और अर्जुन दोनों ने ब्रह्मास्त्रों का प्रयोग किया और कर्ण अपने धँसे हुये रथ के पहियों को एक बार पुनः निकालने का प्रयास करने लगा। अर्जुन ने आग्नेयास्त्र का प्रयोग किया परन्तु कर्ण ने वारुणास्त्र के प्रयोग द्वारा मेघों को उत्पन्न करके उस आग्नेयास्त्र को बुझा दिया। उस समय मेघों की घटा घिर जाने से चारों ओर अन्धकार छा गया। अर्जुन ने वायव्यास्त्र के प्रयोग द्वारा उन मेघों को विसर्जित कर दिया। अर्जुन का वध करने के उद्देश्य से कर्ण ने ज्वलन्त अग्नि के समान एक भयंकर बाण हाथ में लिया। उस उत्तम बाण को धनुष पर चढाते ही सम्पूर्ण पृथिवी डगमगाने लगी और स्वर्ग के देवताओं में भी हा-हाकार मच गया। कर्ण के हाथ से छूट कर वह बाण अर्जुन के वक्षस्थल में समा गया जिससे उन्हें चक्कर आने लगा, गाण्डीव धनुष पर रक्खा हुआ उनका हाथ ढीला पड़ गया और वे पर्वत के समान काँपने लगे। इस बीच मौका पाकर कर्ण ने अपने रथ के पहियों को बाहर निकालने का एक बार पुनः प्रयास किया। चेतना लौटते ही अर्जुन ने अञ्जलिक नामक बाण हाथ में लिया। श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा : 'कर्ण जब तक रथ पर नहीं चढ़ जाता तब तक ही अपने बाण के द्वारा उसके मस्तक को काट डालो।' कृष्ण की आज्ञा को शिरोधार्य करके अर्जुन ने सर्वप्रथम कर्ण के रथ के ध्वज को नष्ट कर दिया। उसके पश्चात् अर्जुन ने एक अन्य अञ्जलिक बाण का सन्धान किया। उस समय समस्त चराचर जगत् काँप उठा और ऋषिगण भी जोर-जोर से कहने लगे कि 'जगत् का कल्याण हो!' तत्पश्चात् कर्ण के रथ पर चढ़ने के पूर्व ही अर्जुन ने उसका मस्तक काट दिया। कर्ण का वह मस्तक-विहीन शरीर धरती पर गिर पड़ा और उसमें से एक तेज निकल कर सूर्य-मण्डल में विलीन हो गया। पाण्डव उस समय अत्यन्त प्रसन्न हुये (८. ९१)।"

"कौरव पक्ष अत्यन्त शोक-विह्वल हो उठा। भीम के हर्षित गर्जन ने कौरवों को भयभीत कर दिया। शल्य ने जब दुर्योधन को कर्ण की मृत्यु का समा-

चार दिया तो वह मानों चेतना-शून्य हो गया (८, ९२)।" "धृतराष्ट्र के पूछने पर संजय ने कर्णवध के पश्चात् कौरव सेना की स्थिति का वर्णन किया। दुर्योधन ने एक बार पुनः युद्ध करने का निश्चय किया। भीमसेन और धृष्टद्युम्न ने दुर्योधन और उसके सैनिकों के साथ युद्ध किया जिसमें भीमसेन ने दुर्योधन के २५,००० हजार पदातियों का वध कर दिया। अर्जुन ने कौरवों की रथ सेना का विध्वंस किया। पराजित कौरव सेना भाग खड़ी हुई, जिस पर चेकितान आदि ने अपने-अपने शंख बजाये। दुर्योधन ने अत्यन्त वीरतापूर्वक युद्ध करते हुये अपनी अवशिष्ट सेना को सन्नद्ध होने के लिये कहा परन्तु उसके आग्रह करने के विपरीत भी उसकी सेना ने पलायन किया (८. ९३)।" "शल्य ने दुर्योधन से रणभूमि के भयंकर संहार का वर्णन किया और कहा कि सेना को रात्रिकालीन शिविर में बुला लेना चाहिये। उस समय अश्वत्थामा तथा अन्य सभी नरेश दुर्योधन को सान्त्वना देने के पश्चात् अपने-अपने शिविरों में चले गये। मृत कर्ण का शरीर उस अवस्था में भी सूर्य के समान सुशोभित हो रहा था। सूर्य रक्त से भीगे हुये कर्ण के शरीर का किरणों द्वारा स्पर्श करके रक्त के समान ही लाल रूप धारण करके पश्चिम समुद्र की ओर जा रहे थे। वहाँ उपस्थित देवता तथा ऋषिगण अपने-अपने स्थानों को चले गये। कर्ण के मारे जाने पर नदियों का प्रवाह रुक गया, सूर्यदेव अस्ताचल को चले गये और मंगल एवं सोमसुत बुध तिर्यक् होकर उदित हुये। श्रीकृष्ण और अर्जुन ने हर्ष में भर कर अपने-अपने शंख बजाये जिसको सुनते ही कौरव योद्धा, शल्य और दुर्योधन को छोड़ कर युद्धभूमि से भागने लगे। कर्ण के मारे जाने पर देवता, गन्धर्व, मनुष्य, चारण, महर्षि, यक्ष तथा बड़े-बड़े नागों ने अर्जुन और श्रीकृष्ण का आदर किया (८. ९४)।" "शिविर की ओर पलायन करनेवाले कौरवों का वर्णन (८. ९५)।" "श्रीकृष्ण ने अर्जुन से महाराज युधिष्ठिर के पास चलकर कर्णवध का सामाचार देने का प्रस्ताव करते हुये धृष्टद्युम्न आदि पाण्डवयोद्धाओं से शत्रुओं का सामना करने के लिये प्रयत्नपूर्वक डटे रहने का आदेश दिया। तदनन्तर श्रीकृष्ण और अर्जुन ने युधिष्ठिर का दर्शन किया। इन लोगों को हर्षित देख कर युधिष्ठिर समझ गये कि कर्ण का वध हो गया, अतः उन्होंने शय्या से उठकर श्रीकृष्ण और अर्जुन को हृदय से लगा लिया। श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर को बधाई दी परन्तु युधिष्ठिर ने पाण्डवों की सफलता का श्रीकृष्ण के प्रभाव को ही श्रेय दिया। तदनन्तर अर्जुन और श्रीकृष्ण के साथ युधिष्ठिर रणभूमि में कर्ण के शरीर को देखने के लिये आये। उस समय पाण्डव पक्ष के महारथी युधिष्ठिर से मिल कर उनका हर्ष बढ़ाने लगे। नकुल-सहदेव, भीमसेन, सात्यकि, धृष्टद्युम्न और शिखण्डी आदि अर्जुन की प्रशंसा करने लगे। कर्णवध के दुःखद समाचार को सुन कर धृतराष्ट्र और गान्धारी शोक-विह्वल होकर मूर्च्छित हो गये। उस समय विदुर, संजय तथा कुरु-कुल की स्त्रियाँ धृतराष्ट्र और गान्धारी को सान्त्वना देने लगे (८. ९६)।" कर्णपर्व के श्रवण तथा पाठ की महिमा का वर्णन (८. ९६, ५९-६५)। १८. ६; ६४ : 'कर्ण पर्वण्यपि तथा भोजनं सार्वकामिकम्।'

१. कर्णपुत्र = वृषसेन : ५. १६८, २३; ७. १६८. १५. १९. २१. २४; ८. ४८, ४६; ६१, ३६; ७५, १०; ८४, २९, ३१. ३९. ४२; ८५, २८; ९. १, ३२। तु० की० कर्णसुत, कर्णात्मज, कार्णि।

२. कर्णपुत्र = भानुसेन : ८. ४८, २७। तु० की० कर्णसुत।

३. कर्णपुत्र = प्रसेन : ८. ८२, ४। तु० की० कर्णात्मज।

४. कर्णपुत्र = सुषेण : ९. १०, ४१. ४५. ४७।

कर्णप्रावरण, दक्षिण समुद्रतट पर निवास करनेवाली एक जाति का नाम है। सहदेव ने इस जाति के लोगों को परास्त किया था (२. ३१, ६७)। ये लोग युधिष्ठिर को भेंट देने के लिये आये थे (२. ५२, १९)। दुर्योधन की सेना में इनकी उपस्थिति (६. ५१, १३)।

कर्ण प्रावरणा, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २५)।

कर्णवेष्ट, क्रोधवश संज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न एक क्षत्रिय राजा का नाम है (१. ६७, ६०)। उन राजाओं में से एक यह भी थे जिन्हें पाण्डवों की ओर से रण-निमन्त्रण भेजा गया था (५. ४, १५)।

कर्णश्रवस्, युधिष्ठिर का सत्कार करनेवाले एक ब्राह्मण का नाम है (३. २६, २३)।

कर्णसम्भव—कर्ण के जन्म की कथा; इन्द्र द्वारा उस के कवच और कुण्डलों को माँगना (१. १११)।

१. कर्णसुत = वृषसेन : ७. १४७, ६६; १४८, २२; १६८, २९; ८. ८५, २६. ३६। तु० की० कर्णपुत्र, कर्णात्मज, कार्णि।

२. कर्णसुत = भानुसेनः ८. ४८, २९। तु० की० कर्णपुत्र।

३. कर्णसुत, द्वि० व०, : ८. ७, २२।

कर्णाटक, एक दक्षिण भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ५९)।

कर्णाट्ट : ३. २८४, ३०।

१. कर्णात्मज = वृषसेन : ७. १६, ८. ९; ८. ८४, २०. २१. ३०; ८५, २९। तु० की० कर्णपुत्र, कर्णसुत, कार्णि।

२. कर्णात्मज = सत्यसन्धः ८. ७, २१।

३. कर्णात्मज = सुषेण : ८. ७५, १३। तु० की० कर्णपुत्र।

४. कर्णात्मज = प्रसेन : ८. ८२, ४। तु० की० कर्णपुत्र।

कर्णिका, एक अप्सरा का नाम है जिसने अर्जुन के जन्मोत्सव पर नृत्य-गान किया था (१. १२३, ६४)।

कर्णिकारध्वज = अभिमन्यु : ६. ११५, ३१।

कर्णिकारमहास्त्रग्विन् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कर्णिकारस्रजप्रिय = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

१. कर्तृ = विश्वदेव (१३. ९१, ३५)।

२ कर्तृ = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

३. कर्तृ = विष्णु : १३. १४९, ४७. ५४ (सहस्र नामों में से एक); १६५, ९।

१. कर्दम, एक नाग का नाम है (१. ३५, १६)।

२. कर्दम, एक प्रजापति का नाम है। ब्रह्मा की सभा में इनकी उपस्थिति का उल्लेख (२. ११, १९)। ये कीर्तिमत् के पुत्र तथा अनङ्ग के पिता थे (१२. ५९, ९०–९१)। इक्कीस प्रजापतियों के वर्णन में इनकी गणना (१२. ३३४, ३६)।

कर्दमिल, समङ्गा के निकट के एक पवित्र क्षेत्र का नाम है, जहाँ भरत का अभिषेक हुआ था (३. १३५, १)।

कर्पट, देखिये पञ्चकर्पट।

कर्मकालविद् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कर्मन् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कर्मिन्, शुक्र के एक पुत्र का नाम है : 'द्वावन्यौ रौद्रकर्मिणौ' (१. ६५, ३७)।

कर्वट, पूर्व में स्थित एक देश का नाम है जिसे भीम ने दिग्विजय करते समय विजित किया था (२. ३०, २४)।

कल = पितरों का एक गण है। ये ब्रह्माजी की सभा में उपस्थित रहकर ब्रह्मा जी की उपासना करते हैं (२. ११, ४७)।

कलकल = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

१. कलविङ्क, एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से अनेक तीर्थों में स्नान का फल मिलता है (१३. २५, ४३)।

२. कलविङ्क, एक प्रकार का पक्षी जिसकी उत्पत्ति मरे हुये त्रिशिरा के सुरापायी मुख से हुई थी (५, ९, ४२)।

कलश, एक कश्यप-वंशी नाग का नाम है (५. १०३, ११)।

कलशपोतक, एक नाग का नाम है (१. ३५, ७)।

कलशी, एक तीर्थ का नाम है जहाँ आचमन करने से अग्निष्टोमयज्ञ का फल प्राप्त होता है (३. ८३, ८०)।

कलशोदर, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७२)।

कलसोदर, देखिये कलशोदर।

कलहंस, धृतराष्ट्री की संतति का नाम है (१. ६६, ५८)।

१. कला = सूर्य (३. ३, २०)।

२. कला = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कलाप, एक महातेजस्वी ऋषि का नाम है जिनका राजसूय यज्ञ के अन्त में राजा युधिष्ठिर ने पूजन किया (२.४५, ३८ के बाद दाक्षिणात्य पाठ पृष्ठ ८४३, कालम १)।

१. कलि. चतुर्थ युग का नाम है। 'अन्तरे चैव सम्प्राप्ते कलिद्वापरयोरभूत', (१.२, १३)। 'कलौ युगे; (३.१८८, ६३)। 'कले प्रवर्तनाद्राजा पापमत्यन्तमश्नुते', (५. १३२, १९)। 'दण्डनीतिं परित्यज्य यदा कार्त्स्न्येन भूमिपः। प्रजाः क्लिश्नात्ययोगेन प्रवर्तेत तदा कलिः॥', (१२.६९, ९१)। 'कलावधर्मो भूयिष्ठं', (१२.६९, ९२)। 'कलेः प्रवर्तनाद्राजा पापमत्यन्तमश्नुते', (१२.६९, १००)। 'कृतं त्रेता द्वापरं च कलिश्च भरतर्षभ। राजवृत्तानि सर्वाणि राजैव युगमुच्यते', (१२.९१, ६)। 'कृतं त्रेता द्वापरं च कलिश्च भरतर्षभ। राजमूला इति मतिर्मम नास्त्यत्र संशयः॥', (१२. १४१, १०)। १२० २३१, १९. २७.२८; २३८, ७। 'द्वापरे विप्लवं यान्ति वेदाः कलियुगे तथा। दृश्यन्ते नापि दृश्यन्ते कलेरन्ते पुनः किल॥', (१२. २३८, १५)। १२. २६७, ६। 'द्वापरस्य कलेश्चैव सन्धौ पार्यवसानिके', (१२. ३३९, ८९)। 'कलौ त्वधर्मः क्षितिमेवाजगाम', (१३. १५८, १०)। तु० की० कलियुग।

२. कलि. पासे में प्रयुक्त एक पारिभाषिक शब्द है और सामान्य रूप से दुर्भाग्य का भी द्योतक है। दुर्योधन कलि के अंश से उत्पन्न हुए थे (१. ६७, ८७)। 'जगतो यस्तु सर्वस्य विद्विष्टः कलिपूरुषः', (१०६७, ८८)। 'कलिद्वारमुपस्थितम्', (२.४९, ५२)। ३. ५८, १–३. ५.७.११–१४; ५९, १–३.६.९) इसने नल को आक्रान्त किया जिससे वे पासे में पराजित हुये (३.५९,१७)। ३.६२,१५. २५. २६. २८. २९; ७२, ३०–३३.३९. ४१। जब नल ने पासे की विद्या का ज्ञान प्राप्त कर लिया तब कलि ने उनको छोड़ दिया (३. ७२, ४३)। ३. ७६, १७. १९; ७८, २२; ७९, ११। 'दानवान्कलिना हतान्', (३. ९४, ११)। 'द्यूतजं कलिम्', (३. १७४, ९)। 'युद्धे कृष्ण कलिर्नित्यं प्राणाः सीदन्ति संयुगे', (५. ७२. ४९)। 'पर्यायकाले धर्मस्य प्राप्ते कलिरजायत', (५. ७४, १२)। 'कलिं पुत्रप्रवादेन सञ्जय त्वामजीजनम्', (५. १३३, ३०)। 'कलिर्महान्', (५. १५४, २१)। दुर्योधन कलि के अंश से उत्पन्न हुआ था (११. ८, ३०)। 'अशरण्यः प्रजानां यः स राजा कलिरुच्यते', (१२. १२, २९)। राजकलयः', (१२. १२, ३१)। कलिपूर्वम्', (१३. २३, ४,)। 'विमुच्यते कलिकलुषेण मानवः', (१३. ७७, ३२)। 'भिन्नभाण्डे कलिं प्राहुः', (१३. १२७, १६)। 'कलिं दुर्योधनं विद्धि', (१५. ३१, १०)। तु० की० १. कलि।

३. कलि, कश्यप-पत्नी मुनि के पुत्र १६ देवगन्धर्वों में से १५ वें का नाम है (१. ६५, ४४)। ये अर्जुन के जन्मोत्सव में पधारे थे (१. १२३, ५७)।

४. कलि = सूर्य (३. ३, २०)।

५. कलि = शिव, सहस्रनामों में से एक (१३. १७, ७९)।

१. कलिङ्ग, राजा बलि की पत्नी रानी सुदेष्णा के गर्भ से दीर्घतमस् द्वारा उत्पन्न पुत्र का नाम है (१. १०४, ५३, ५४)।

२. कलिङ्ग, युधिष्ठिर के समय में कलिङ्गों के राजाओं के लिये प्रयुक्त हुआ है। द्रौपदी के स्वयंबर के समय भी ये उपस्थित थे (१. १८६, १३)। ये दुर्योधन की सेना में थे (५. ९५, २०; ६. ५४, १, १८. ६७. ६८. ७२)। ये द्रोणाचार्य के व्यूह के दाहिने भाग में स्थित थे (७. ७, ११) ये जयद्रथ की रक्षा करेंगे (७. ७४, १७)। इन्होंने अर्जुन पर आक्रमण किया (७. ९३, ३२)। इन्होंने भीमसेन के साथ युद्ध किया (७. १५५, २३)। 'उभौ कलिङ्गवृषकौ भ्रातरौ युद्धदुर्मदौ', (८. ५, ३४)। तु० की०

३. कलिङ्ग, स्कन्द के एक योद्धा का नाम है (९. ४५, ६४)।

४. कलिङ्ग, बहु०, एक जनपद का नाम है। क्रोधवश नामक दैत्यगण से उत्पन्न हुये अन्य राजाओं के साथ कलिङ्ग नरेश कुहर का उल्लेख (१. ६७, ६५)। 'कलिङ्गविषयश्चैव कलिङ्गस्य च स स्मृतः', (१. १०४, ५४)। अर्जुन द्वारा विजित (१. २१५, ९)। 'कलिङ्गराष्ट्र द्वारेषु ब्राह्मणाः पाण्डवानुगाः' (१-२१५, १०) 'कलिङ्गान्', (१. २१५, १२)। अपने दिग्विजय के अवसर पर सहदेव ने इन्हें विजित किया (२. ३१, ७१)। युधिष्ठिर को भेंट देने वाले लोगों में से एक यह भी थे (२. ५२, १८)। तीर्थयात्रा करते समय युधिष्ठिर कलिङ्ग देश में पधारे (३. ११४, ३. ४)। दिग्विजय करते हुये कर्ण ने इन्हें विजित किया (३. २५४, ८)। उन राजकुमारों में से एक जिनके पास पाण्डवों को दूत भेजना चाहिये (५. ४, २४)। सहदेव ने दन्तकूर में कलिङ्गों को विजित किया (५. २३, २४)। कृष्ण दन्तकूर में कलिङ्गों का विनाश कर चुके थे (५. ४८, ७६)। भीमसेन ने इन पर विजय प्राप्त की (५. ५०, १९)। सहदेव द्वारा विजित (५. ५०, ३१)। शिखण्डी द्वारा विजित (५. ५०, ३६)। ६-९, ४२. ४६. ६९ (भारत वर्ष के उत्तर-पूर्व में स्थित)। दुर्योधन की सेना में इनकी उपस्थिति (६. १७, ३२)। भीमसेन पर आक्रमण किया (६. ५३, ३८. ४१)। ६. ५४, ४ (कलिङ्गानां महाचमूम्) ५. ७ (कलिङ्गानां नराधिप) १५. १६. १८. २५. ३६. ६६. ६७. ६९. ७८. ७९. ८१. ८२. ९६. १०३। श्रुतायु को आगे करके इन्होंने भीमसेन पर आक्रमण किया, भीम ने इनका वध कर दिया (६. ५४, १०४)। भीष्म के गरुडव्यूह में इनकी उपस्थिति (६. ५६, ८)। इन्होंने भगदत्त का अनुगमन किया (६. ८७, ८)। अर्जुन पर आक्रमण किया (६. ११७, ३२)। ये कर्ण द्वारा पहले से ही विजित थे (७. ४. ८)। कृष्ण ने इन्हें पहले ही विजित कर लिया था (७. ११. १५)। द्रोण द्वारा निर्मित गरुडव्यूह के ग्रीवा भाग में इनकी स्थिति का उल्लेख (७. २०, ६)। गरुडव्यूह के पृष्ठ भाग में स्थित (७. २०, १०)। ये रामजामदग्न्य द्वारा विजित कर लिये गये थे (७. ७०, १२)। इन्होंने सात्यकि के साथ युद्ध किया (७. १४१, १०. ११)। कलिङ्गराजकुमार और भीमसेन का युद्ध हुआ; भीमसेन ने पहले उनके पिता का, तत्पश्चात् कलिङ्ग राजकुमार का भी वध कर दिया (७. १५५, २१. २३)। इन्होंने कृतवर्मा का अनुगमन किया (७, १९३, १३)। 'उभौ कलिङ्ग वृषकौ भ्रातरौ युद्धदुर्मदौ', (८. ५, ३४)। ये कर्ण द्वारा पूर्व समय से ही विजित थे (८. ८, २०)। अर्जुन पर आक्रमण करते हैं (८. १७, १२)। धृष्टद्युम्न पर आक्रमण करते हैं (८. २२, ३)। नकुल पर आक्रमण करते हैं (८. २२, २१)। आकाशवाणी ने घोषित किया कि अर्जुन कलिङ्गों आदि का वध कर डालेंगे (८, ६८, ११)। भीमसेन द्वारा मारे गये (८, ७०, ९)। युद्धभूमि में मृत हुये (९. ३३, २५)। चित्राङ्गद द्वारा अनुशासित (१२. ४, २)। ब्राह्मणों की कृपा दृष्टि से वञ्चित होने के कारण शूद्र हुये क्षत्रियों के साथ इनका भी उल्लेख है (१३. ३३, २२)। तु० की० बहु० कालिङ्ग।

कलिङ्गक (= श्रुतायुध ?) : ६. १७, ३४। तु० की० कालिङ्ग।

कलिङ्गराज : ६. ५४, १२१ (भीम द्वारा इसका वध)।

कलिङ्गाधिप—ये द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुए थे (१. १८७, १६)।

कलिङ्गाधिपति—इन्होंने शकुनि की सहायता की (६. ७१, १४)। तु० की० कालिङ्ग।

कलिन्द. बहु० (१३. ३३, २२)। देखिये, बहु० कालिङ्ग।

कलियुग, चौथे युग का नाम है। कलियुग में गंगा को पवित्र कहा गया है (३. ८५, ९०)। कलियुग में धर्म का चतुर्थांश ही शेष रह जाता है और नारायण का रंग काला हो जाता है, अतः इसे तामस युग कहते हैं (३. १४९, ३३–३८)। इसकी अवधि एक सहस्र दिव्य वर्ष होती है (३. १८८, २५)। "इस युग में छल से शासन करनेवाले शक, अन्ध्र, पुलिन्द, कम्बोज, बाह्लीक, शौर्य सम्पन्न आभीर आदि राजा होते हैं। इस युग में प्रायः सभी मिथ्यावादी और पापाचारी हो जाते हैं। वर्णाश्रम का लोप

हो जाता है तथा मनुष्यों की शारीरिक क्षमता भी घट जाती है (३. १८८, २७. ३० और बाद)।" कलियुग में नारायण कृष्णवर्ण हो जाते हैं (३. १८९, ३२)। यह तामस युग होता है (३. १९०. ३. ११)। इस युग की स्थिति, मनुष्यों के धर्म और व्यवहार आदि का विस्तृत वर्णन किया गया है (३. १९०, १९. २७. ४४. ६५)। 'आदौ कलियुगस्य', (६. ६६, ४०)। 'प्राप्तं कलियुगम्', (९. ६०, २५)। 'तथा कलियुगे राजन् द्वन्द्वमापेदिरे जनाः', (१२. २०७. ४०)। १२. २३१, २७। 'यज्ञाः कलियुगे', (१२. २३२, ३२)। 'दृश्यन्ते न च दृश्यन्ते वेदाः कलियुगेऽखिलाः', (१२. २३२, ३६)। १२. २३८, १५; २६०, ८। 'कलियुगे प्राप्ते राज्ञो दुश्चरितेन ह। भवेत्कालविशेषेण कला धर्मस्य षोडशी ॥', (१२. २६७, ३४)। 'इदं कलियुगं प्राप्य मनुष्याणां सुखावहः', (१३. १२९, ९)। तु० की० १. कलि।

कल्कल, दक्षिण में स्थित एक जनपद का नाम है (६. ९, ६२)।

कल्किन्, एक ब्राह्मण का नाम है। "जब सूर्य, चन्द्रमा तथा बृहस्पति आदि ग्रह एक साथ ही पुष्य नक्षत्र में प्रवेश करेंगे तो कृतयुग का पुनः आरम्भ होगा और उस समय काल की प्रेरणा से सम्भल नामक ग्राम में किसी ब्राह्मण के मङ्गलमय गृह में एक महान् शक्तिशाली ब्राह्मण प्रगट होगा, जिसका नाम होगा विष्णुयशा कल्किन्। महान् बुद्धि एवं पराक्रम से सम्पन्न वह महात्मा, सदाचारी, प्रजावर्ग का हितैषी, तथा चक्रवर्ती राजा होगा। वही सम्पूर्ण कलियुग का संहार करके नूतन सत्ययुग का प्रवर्तक होगा। वह ब्राह्मणों से घिरा हुआ सर्वत्र विचरेगा और भूमण्डल में सर्वत्र फैले हुए नीच स्वभाववाले सम्पूर्ण म्लेच्छों का संहार कर डालेगा (३. १९०, ९०-९७)।" "तदनन्तर यह कल्किन् नामक ब्राह्मण चोरों और डाकुओं का विनाश करके अश्वमेध का अनुष्ठान करेंगे, और उसमें यह समस्त पृथिवी ब्राह्मणों को दान में देकर सत्ययुग की पुनः स्थापना करेंगे (३. १९१, १-७)।" ये विष्णु के दसवें अवतार हैं (१२, ३३९, १०४)।

१. कल्प : 'पुराकल्पविशेषवित्', (२. ५, २)। 'पुराकल्पेषु नित्यशः', (३. ४१, ३५)। 'पुरा कल्पे', (५. ३७, १९)। 'कल्पसंक्षेपतत्पर', (६. ६५, ५६)। 'कल्पान्ते', (७, २१, ३८)। 'पूर्वकल्पे यथातथम्', (९. ४७, ५)। 'युगं द्वादशसाहस्रं कल्पं विद्धि चतुर्युगम्। दशकल्पशतावृत्तमहस्त द्ब्राह्ममुच्यते', (१२. ३०२, १४)। 'अतीते महाकल्पे', (१२. ३३६, १)। 'कल्पादौ', (१२. ३३९, ६१)। 'कल्पादिषु', (१२. ३३९, ७५)। 'महाकल्पसहस्राणि महाकल्पशतानि च समतीतानि', (१२. ३३९, ११५)। 'यथा वृत्तं हि कल्पादौ', (१२. ३४०, २८)। 'यावत्कल्पक्षयाद', (१२, ३४०, ६८)। 'यत्राविशन्ति कल्पान्ते सर्वे ब्रह्मादयः सुराः', (१२. ३४३, १५)। 'पुराकल्पे', (१३. ६३, ३१)। 'महाकल्पम्', (१३. १०७, ७७)। 'पुराकल्पविदः', (१४. ३१, ४)। 'पुराकल्पं सनातनम्', (१४. ३५, २३)।

२. कल्प = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कल्पवृक्ष : ३. २८१, ५; ७. १६८, १८; १६९, ६; ८. ९४; ४४; १४. ५९, ६।

१, कल्माष, एक नाग का नाम है (१. ३५, ७)।

२. कल्माष, चितकबरे रंग के एक उत्तम अश्व का नाम है। यह अश्व अर्जुन ने दिग्विजय के समय हाटक देश के निकटवर्ती गन्धर्व नगर से प्राप्त किया था (२. २८, ६)।

कल्माषपदसरस् (८. ४५, २२); देखिये **कल्माषपाद**

कल्माषपाद, अयोध्या के राजा और मदयन्ती के पति का नाम है, जिन्हें सौदास भी कहते हैं। पुत्र रहित होने के कारण इन्होंने अपनी रानी मदयन्ती को पुत्र-प्राप्ति के लिये वसिष्ठ के पास भेजा और वसिष्ठ ने उसे अश्मक नामक पुत्र प्रदान किया (१. १२२, २१-२२)। "ये इक्ष्वाकु वंशी एक तेजस्वी राजा थे। एक दिन ये शिकार से थक कर जब नगर की ओर लौट रहे थे तो एक संकीर्ण पथ पर आ पहुँचे जहां केवल एक व्यक्ति ही एक समय में चल सकता था। उस समय वसिष्ठ के ज्येष्ठ पुत्र, शक्ति, सामने से आ रहे थे। उन्हें देखकर इन्होंने उनसे मार्ग से हट जाने के लिये कहा परन्तु जब वे नहीं हटे तो इन्होंने उन पर कोड़े से प्रहार किया। उस समय क्रुद्ध शक्ति ने इन्हें राक्षस हो जाने का शाप दे दिया। इन्हीं दिनों विश्वामित्र इनके पास आये। जब शक्ति ने इन्हें शाप दे दिया तो उन्हें पहचान कर ये उनकी स्तुति करने लगे। उस समय अदृश्य रूप से उपस्थित विश्वामित्र ने किंकर नामक एक राक्षस को इनके भीतर प्रवेश करा दिया। उस राक्षस से आविष्ट होकर इन्हें किसी भी बात की सुध-बुध नहीं रह गई। एक दिन किसी ब्राह्मण ने इनसे मांस-सहित भोजन माँगा जिस पर इन्होंने उससे कुछ क्षण तक प्रतीक्षा करने के लिये कहा। तदनन्तर घूम फिर कर जब ये अन्तःपुर में लौटे तो अर्धरात्रि के समय इन्हें ब्राह्मण को भोजन देने की प्रतिज्ञा का स्मरण हुआ। उस समय इन्होंने अपने रसोइये से ब्राह्मण को मांस-भोजन द्वारा तृप्त करने के लिए कहा। जब रसोइये को कोई मांस नहीं मिला तो इनकी, जिन पर राक्षस का आवेश था, आज्ञा से उसने उस ब्राह्मण को मनुष्य का मांस ही पकाकर प्रस्तुत किया। इस पर क्रुद्ध होकर उस ब्राह्मण ने इन्हें यह शाप दिया कि ये मनुष्यों के मांस में आसक्त हो समस्त प्राणियों के उद्वेग पात्र बनकर पृथिवी पर विचरण करेंगे। तदनन्तर एक दिन शक्ति को देखकर इन्होंने उनका भक्षण कर लिया। शक्ति की मृत्यु के बाद विश्वामित्र की प्रेरणा द्वारा इनके शरीर में प्रविष्ट राक्षस से प्रेरित होकर इन्होंने वसिष्ठ के अन्य पुत्रों का भी भक्षण कर लिया (१. १७६, १-४२)।" "एक दिन जब महर्षि वसिष्ठ अपनी पुत्रवधू के साथ आश्रम की ओर लौट रहे थे तो उन्होंने निर्जन वन में बैठे हुए राजा कल्माषपाद को देखा। उस समय भयानक राक्षस से आविष्ट राजा कल्माषपाद ने वसिष्ठ का भी भक्षण करने की इच्छा की (१. १७७, १७-१८)।" "इनके राक्षस रूप को देखकर जब वसिष्ठ की पुत्रवधू भयभीत हुई तो उन्होंने इनका परिचय देते हुए अपनी हुंकार से रोककर इन्हें शापमुक्त भी कर दिया। उस समय वसिष्ठ के मन्त्रपूत जल के प्रभाव से इनके भीतर स्थित राक्षस ने भी इन्हें छोड़ दिया। इन्होंने इस प्रकार शापमुक्त होने के पश्चात् वसिष्ठ से कहा : 'मैं आपका यजमान सौदास हूँ, अतः आप आज्ञा दें मैं आपकी क्या सेवा करूँ।' वसिष्ठ के कहने पर इन्होंने ब्राह्मणों के प्रति आदर भाव रखने का वचन दिया और अपने लिये एक श्रेष्ठ गुण सम्पन्न पुत्र की याचना की। वसिष्ठ ने इन्हें मनोवांछित पुत्र प्रदान करने का वचन दिया। तदनन्तर महर्षि वसिष्ठ ने यथा समय इनकी पत्नी, मदयन्ती, के गर्भ से अश्मक नामक एक पुत्र उत्पन्न किया (१. १७७, २३-४७)।" 'राजा कल्माषपादश्च दिवमारुह्य मोदते', (१, १८१, १७)। १. १८२, १। 'कल्माषपादं राजर्षिमशापद्ब्राह्मणी रुषा', (१. १८२, १८)। 'सौदासेन तदा राज्ञा मानुषा भक्षिता,, (३. २०८, १६)। 'कल्माषपादः सरसि निमज्जन्राक्षसोऽब्रवीत्'. (८. ४५, २२)। 'सौदासस्याभिरक्षितः', (१२. ४९, ७७)। 'महर्षि शापात्सौदासः पुरुषादत्वमागतः', (१३. ६, ३२)। 'राजा मित्रसहश्चापि वसिष्ठाय महात्मने। मदयन्तीं प्रियां दत्वा तया सह दिवं तः ॥', (१२. २३४, ३०)। 'इक्ष्वाकुवंशजो राजा सौदासो वदतां वरः', (१३. ७८, १)। 'सौदास उवाच', (१३-७८, ३)। 'राजा मित्रसहश्चैव वसिष्ठाय महात्मने। मदयन्तीं प्रियां भार्यां दत्वा च त्रिदिवं गतः ॥', (१३, १३७, १८)। 'सौदासपत्न्या विधृते दिव्ये ये मणिकुण्डले', (१४. ५६, २९)। 'सौदासं पुरुषादम्,' (१४. ५६, ३१)। 'सौदास उवाच', (१४. ५७, ११. १३, १८), 'सौदासवचनम्', (१४. ५७, २०)। 'स मित्रसहम्', (१४. ५८, १)। सौदास उवाच', (१४. ५८, २. ५. ११. १५)। तु० की० **इक्ष्वाकुवर, कोशलाधिप, मित्रसह, राक्षस, सौदास।**

कल्माषी, एक नदी (= यमुना, नीलकण्ठी में) का नाम है। 'अमितः सोऽथ कल्माषीं गंगाकूले परिभ्रमत्', (१. १६७, ५)। 'कल्माषीतीरसंस्थस्य गतस्त्वं शिष्यतां भृगोः', (२. ७८, १६)।

कल्याणी, स्कन्द की अनुचरी एक मातृका का नाम है (९. ४६, ७)।

कवचिन्, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, १०३; ११७, ११)। इसका भीमसेनपर आक्रमण (८. ५१, ७)। भीमसेन द्वारा इसका वध (८. ८४, २)।

कवष, पश्चिम दिशा में निवास करनेवाले एक ऋषि का नाम है (१२. २०८, ३०)।

१. कवि, भृगु के पुत्र और उशनस् (शुक्र) के पिता, एक ऋषि का नाम है (१. ६६, ४२, ४२; तु० कौ० १. ७६, २२ पर नीलकण्ठी)। ये भृगु और अङ्गिरा आदि के साथ ब्रह्मा के वीर्य की अग्नि में आहुति से उत्पन्न हुये (१३, ८५, १०६)। इन्होंने वारुण संज्ञक आठ पुत्र प्राप्त किये जिनके नाम कवि, काव्य, धृष्णु, बुद्धिमान् शुक्राचार्य, भृगु, विरजा, काशी, तथा धर्मज्ञ उग्र हैं। इनके आठ पुत्रों द्वारा समस्त जगत व्याप्त है (१३. ८५, १३२–१३६)। 'कविश्च विद्वांस्तथा ह्यागस्त्यः', (१३. ९४, ४)। 'कविरुवाच', (१३, १४, ३२)।

२. कवि = शुक्र (उशनस्) : १. ७६, १४ (?)।

३. कवि, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३६)।

४. कवि, कवि के प्रथम पुत्र का नाम है (१३. ८५, १२६)।

५. कवि = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

६. कवि, अङ्गिरस् द्वारा शापित एक अग्नि का नाम है (१३.१५३,८)।

कविपुत्र = शुक्र (उशनस्) : १. ७६, २२।

कविसुत = शुक्र (उशनस्) : १. ६६, २२।

कशेरक, कुवेर के सभाभवन में उपस्थित होनेवाले एक यक्ष का नाम है (२. १०, १५)।

कश्यप, एक महर्षि का नाम हैं जो मरीचि के पुत्र और एक प्रजापति थे। "सौति ने कहा : प्रजापति की दो पुत्रियों, कद्रू और विनता, को उनके पति महर्षि कश्यप ने यह वर दिया कि कद्रू को एक सहस्र नागरूपी पुत्र, तथा विनता को दो ऐसे पुत्र प्राप्त होंगे जो कद्रू के एक सहस्र पुत्रों से श्रेष्ठ होंगे। इस प्रकार वर देकर कश्यप वन चले गये। बहुत समय के पश्चात् कद्रू ने एक सहस्र और विनता ने दो अण्डे दिये। पाँच सौ वर्षों के पश्चात् कद्रू के एक सहस्र अण्डों ने फूट कर नागों को उत्पन्न किया परन्तु विनता के अण्डे नहीं फूटे। उस समय विनता ने एक अण्डे को फोड़ा, जिससे अरुण उत्पन्न हुये। अरुण के शरीर के नीचे का आधा अङ्ग अभी अविकसित था जिस पर क्रुद्ध होकर उन्होंने अपनी माँ, विनता, को पाँच सौ वर्षों तक कद्रू की दासी बने रहने का शाप दे दिया। उन्होंने यह भी कहा कि यदि वह धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करेगी तो द्वितीय अण्डे से उत्पन्न द्वितीय पुत्र उसे शाप-मुक्त कर देगा (१. १६, ६. ७. १०. १३)।" जब कद्रू ने अपने पुत्रों को शाप दिया तब ब्रह्मा ने इन्हें बुलाकर कद्रू पर क्रोध न करने का अनुरोध करते हुये इन्हें सर्पों का विष उतारने की विद्या प्रदान की (१, २०, १४. १६)। 'ऋषेः सुतस्त्वमसि दयावतः प्रभो महात्मनः खगवर कश्यपस्य ह', (१. २३, २४)। 'कश्यपस्य सुतो धीमानरुणेत्यभिविश्रुतः', (१. २४, १६)। १. २९, ८. १३; ३०, १०. १४-१७. १९. २१. ४१। "शौनक के यह पूछने पर कि गरुड किस प्रकार कश्यप के पुत्र हुये, सौति ने बताया कि एक समय कश्यप ने पुत्र की कामना से यज्ञ आरम्भ किया जिसमें इन्द्र ने वालखिल्यों का उपहास किया। इन्द्र पर क्रुद्ध होकर वालखिल्यों ने यह विचार करके अग्नि में आहुति दी कि इन्द्र से भी श्रेष्ठ एक द्वितीय इन्द्र का प्रादुर्भाव हो। इसी के अनुसार कश्यप ने विनता के गर्भ से पक्षियों के इन्द्र, गरुड, को जन्म दिया (१. ३१, २. ५. ६. १५-१७. २१. २५. २८)।" 'कश्यपस्य महात्मनः', (१. ३६, ११; ३७, ३२)। 'मरीचेः कश्यपः पुत्रः कश्यपात्तु इमाः प्रजाः', (१. ६५, ११)। इन्होंने दक्ष की तेरह कन्याओं के साथ विवाह किया (१. ६६, १३)। ये मरीचि के पुत्र थे और इनसे ही समस्त देवता तथा असुर उत्पन्न हुये (१. ६६, ३४)। इन्होंने दक्ष की तेरह कन्याओं के साथ विवाह किया (१. ७५, ९)। इन्होंने दक्ष की पुत्रियों में से सर्वश्रेष्ठ, अदिति, के गर्भ से आदित्यों को उत्पन्न किया (१. ७५, १०)। दक्ष की एक अन्य पुत्री, सुरभि, के गर्भ से इन्होंने वसिष्ठ की होमधेनु को जन्म दिया (१. ९९, ८)। अर्जुन के जन्म के समय उपस्थित सात महर्षियों में से एक यह भी थे (१. १२३, ५१)। राम जामदग्न्य ने इन्हें सम्पूर्ण पृथिवी दान कर दी थी (१. १३०, ६२)। ब्रह्मा की सभा में उपस्थित प्रजापतियों में से एक यह भी थे (२. ११, १८) इन्होंने प्रह्लाद के प्रश्न का उत्तर दिया (२. ६८, ७१. ७४. ८५)। इन्होंने कृष्ण का पूजन किया (३. १२, ५२)। ३. ३१, ३९। उन महर्षियों में से एक यह भी थे जो युधिष्ठिर की प्रतीक्षा कर रहे थे (३. ८५, ११९)। ब्रह्मा ने दक्षिणा के रूप में पृथिवी इन्हें दान कर दी परन्तु इस पर क्रुद्ध होकर जब पृथिवी रसातल में प्रवेश कर गई तब इन्होंने पृथिवी को प्रसन्न किया (३. ११४, १८. २१)। राम ने इन्हें पृथिवी दान कर दी (३. ११७, १२–१४)। प्रजापति के रूप में इन्हें नारायण के साथ समीकृत किया गया है (३. १८९, ६)। इन्होंने विष्णु के वामन रूप को अदिति के गर्भ से उत्पन्न किया (३. २७२, ६२)। इन्होंने विनता के गर्भ से पक्षियों को उत्पन्न किया (५. १०१, ४)। ये सर्पों के प्रवर्त्तक हैं (५. १०३, १७)। गरुड और इन्द्र दोनों ही इनके पुत्र हैं (५. १०५, १०)। इनके पुत्र सर्वप्रथम पूर्व में प्रवृद्ध हुये (५. १०८, ६)। इन्होंने वरुण का पश्चिम के अधिपति के रूप में अभिषेक किया (५. ११०, ३. १९)। 'अदित्यां कश्यपो यथा', (५. ११७, १२)। 'कश्यपश्च प्रजापतिः', (६. ६, २१)। "राम जामदग्न्य ने पृथिवी, तथा एक सुवर्ण-वेदिका को इन्हें दान कर दिया। उन्होंने सुवर्ण आभूषणों से विभूषित एक लाख हाथी भी इन्हें दिये। तदनन्तर इन्होंने परशुराम को पृथिवी छोड़ देने का आदेश दिया (७. ७०, १८. १९. २२)।" ७. ९४, ४५; १९०, ३३। स्कन्द के अभिषेक के समय उपस्थित होकर इन्होंने भी उनका अभिषेक किया (९–४५, १०. २३)। इन्होंने राम जामदग्न्य का यज्ञ कराकर सागरों सहित यह पृथिवी उनसे दक्षिणा के रूप में प्राप्त की (९. ४९, ८)। "जब राम जामदग्न्य ने दक्षिणा के रूप में पृथिवी इन्हें दान कर दी तो इन्होंने उन्हें पृथिवी छोड़ कर दक्षिण सागर के तट पर चले जाने का आदेश दिया जिसका पालन करते हुये वे शूर्पारक में जाकर निवास करने लगे। इन्होंने पृथिवी ब्राह्मणों को दे दी। जब पृथिवी रसातल में प्रवेश करने लगी तो इन्होंने उनको अपने ऊरु में धारण किया जिससे पृथिवी ऊर्वी कहलाईं। पृथिवी द्वारा एक राजा की याचना करने पर इन्होंने जीवित क्षत्रियों को खोज कर उन्हें राजा बना दिया (१२. ४९, ६४–६८. ७३. ७४. ८८)।" ऐल–कश्यप संवाद (१२. ७३, ६. ८. १८. १९. २१. २३. २५)। 'कश्यपस्यात्मसम्भवः', (१२-१६९, १९)। 'कश्यपस्य पुत्रोऽहं माता दाक्षायणी', (१२-१७०, २)। मरीचि के पुत्र का नाम है जिन्होंने दक्ष की तेरह कन्याओं के साथ विवाह किया (१२. २०७, १८. २१)। कुछ लोग इन्हें अरिष्टनेमि भी कहते हैं और ये बारह आदित्यों के पिता हुये (१२. २०८, ८, १६)। इन्होंने विष्णु के वराह अवतार का वर्णन किया (१२-२०९, ६)। १२. २९६, १७। 'कश्यपस्य पितुः', (१२. ३१८, ६२)। नारायण ने कहा कि वे कश्यप और अदिति के यहाँ बारहवें आदित्य के रूप में जन्म लेंगे (१२. ३३९, ८१)। इन्होंने दक्ष की तेरह कन्याओं के साथ विवाह किया (१२. ३४२, ५७)। 'तस्माद् वृषाकपिं प्राह कश्यपो मां प्रजापतिः', (१२. ३४२, ८९)। 'कश्यपस्य सुरासुराः', (१३. १२, २९)। 'कश्यपस्य सुराश्चैव असुराश्च सुतास्तथा', (१३. १२, ३०)। १३. १४, ३९७; ४७, ६१। 'महर्षेः कश्यपस्यैते गात्रेभ्यः प्रसृतास्तिलाः', (१३. ६६, १०)। 'मारीचः काश्यपो ह्यभूत', (१३. ८५, १०७)। १३. ९३, २१। 'कश्यप उवाच', (१३. ९३, ४४. ६९. ९०. १२०)। १३-९४, ४। 'अदितिः कश्यपस्य', (१३. १४६, ६)। 'कश्यपस्यात्मजः', (१३. १४७, ५८)। उत्तर में धनेश्वर के सात गुरुओं में से एक यह भी थे (१३. १५०, ३८)। "एक समय राजा अङ्ग के साथ स्पर्धा होने के कारण पृथिवी की अधिष्ठात्री देवी अपनी लोकधर्म धारण-रूप शक्ति का परित्याग करके अदृश्य हो गई। उस समय विप्रवर कश्यप ने अपने तपोबल से इस स्थूल पृथिवी को धारण किया (१३. १५३, २)।" "वायु ने कहा : एक समय राजा अङ्ग ने पृथिवी को ब्राह्मणों को दान देने का विचार किया। उनके इस विचार से चिन्तित होकर पृथिवी, जो ब्रह्मा की पुत्री हैं, भूमित्व का त्याग करके अपने पिता के लोक चली गईं। उस

समय महर्षि कश्यप योग के आश्रय द्वारा अपने शरीर का त्याग करके भूमि के स्थूल विग्रह में प्रविष्ट हो गये और आलस्य-शून्य होकर ३०, ००० दिव्य वर्षों तक पृथिवी के रूप में स्थित रहे। तत्पश्चात् पृथिवी ब्रह्म लोक से लौट कर कश्यप की पुत्री बन गई और तभी से पृथिवी का नाम काश्यपी हुआ (१३. १५४, ४. ७. ८)।', 'मारीचः काश्यपः', (१३. १६५, १७)। 'वसिष्ठः कश्यपश्चैव', (१४. ३५, २६) । तु० की० **देवर्षि, काश्यप, महर्षि, मारीच,** और **प्रजापति**।

कश्यपद्वीप, जम्बूद्वीप के कश्यपद्वीप और नागद्वीप दो कर्ण हैं (६. ६, ५५)।

कसेरुमत्, कृष्ण द्वारा वध किये गये एक यवनराज का नाम है (३. १२, ३२)।

कहोड, एक ब्राह्मण का नाम है जो अष्टावक्र के पिता थे। ये उद्दालक के शिष्य थे और उद्दालक की पुत्री सुजाता के साथ ही विवाह करके इन्होंने अष्टावक्र को उत्पन्न किया (३. १३२, ८)। ये जनक के यज्ञ में उपस्थित हुये जहाँ शास्त्रार्थ में पराजित करके वन्दिन् ने इन्हें जल में डुबा दिया (३. १३२, १५)। जब अष्टावक्र ने बन्दिन् को शास्त्रार्थ में पराजित कर दिया तो ये जल से ऊपर उठे (३. १३४, ३१)। 'कहोड उवाच', (३. १३४, ३३)।

कहोडसूनु = अष्टावक्र (३. १३२, ३)।

काक, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ६४)।

१. काकी, ताम्रा की पुत्री का नाम है (१, ६६, ५६)। इसने उल्लुओं को जन्म दिया था (१. ६६, ५७)।

२. काकी, शिशुओं की सप्त-मातृकाओं में से एक का नाम है (६. २२८, १०)।

१. काकुत्स्थ, (ककुत्स्थ का पुत्र) = अनेनस् (३. २०२, २)।

२. काकुत्स्थ (ककुत्स्थ का वंशज) = दशरथपुत्र राम : ३. २७८, १३; २७९, १९. २४. ३५; २८०, १४. ३८; २८२, २५; २८३, ४४; २८४, १; २९०, १३. १७. २६; २९१, ७. २८. ३०।

३. काकुत्स्थ = दशरथपुत्र लक्ष्मण (३. २८२, ११)।

काकुदिक, एक अस्त्र का नाम है जिसका अर्जुन प्रयोग करेंगे (५. ९६, ४२)।

काक्षीव = काक्षीवत् : 'शूद्रायां गौतमो यत्र महात्मा संशितव्रतः। औशीनर्यामजनयत्काक्षीवाद्यान्सुतान्मुनिः', (२. २१, ५)। तु० की० १. १०४, ४७।

काक्षीवत् = कक्षीवत्। उन प्राचीन राजाओं में से एक जिनका नारद ने वर्णन किया था (१. १, २२६)। काक्षीवत् आदि एकादश पुत्रों को दीर्घतमस् ने शूद्रा के गर्भ से उत्पन्न किया था (१. १०४, ४७-४९)। ये युधिष्ठिर की सभा में विराजमान होते थे (२. ४, १७)। इन्द्र की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ७, १८)। 'अथ काक्षीवतः पुत्रं गौतमस्य महात्मनः। शुश्राव तपसि श्रान्तमुदारं चण्डकौशिकम् ॥', (२. १७, २२)। 'ततो राजगृहं गच्छेत्तीर्थसेवी नराधिप। उपस्पृश्य ततस्तत्र काक्षीवानिव मोदते॥', (३. ८४, १०५)। पूर्वदिशा के ऋषियों में से एक (१२. २०८, २७)। इन्होंने विष्णु की तपस्या करके परम सिद्धि प्राप्त की थी (१२. २९३, १५)। तपस्या का आश्रय लेने से ही अपनी-अपनी प्रकृति को प्राप्त हुये ऋषियों में से एक यह भी थे (१२. २९६, १४)।

काक्षीवती (कक्षीवत् की स्त्रीवंशज) = भद्रा (१. १२१, १७)।

काञ्चन, मेरु द्वारा स्कन्द को दिये गये दो पार्षदों में से एक का नाम है (९. ४५, ४७)।

काञ्चनच्छविस् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

काञ्चनवर्मन् = हिरण्यवर्मन् (५. १८९, २०; १९२, २०)।

काञ्चनष्ठीविन् = सुवर्णष्ठीविन् (१२. ३०, १. ३; ३१, २४)।

काञ्चनाक्ष, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ५७)।

काञ्चनाक्षी, नैमिषारण्य में बहनेवाली सरस्वती का नाम है (९. ३८, ४. १९)।

काञ्च्य, एक जाति के लोगों का नाम है। ये दुर्योधन की सेना में विद्यमान थे (५. १६०, १०३; १६१, २१)। युधिष्ठिर की सेना में इनकी उपस्थिति का उल्लेख (८. १२, १९)।

कात्यायनी = दुर्गा (उमा) : ६. २३, ६।

काद्रवेय (बहु०), (कद्रू के पुत्र और वंशज) = नाग। इन्होंने सर्पों के विनाश के लिये होनेवाले जनमेजय के सर्पसत्र में भस्म होने से बच निकलने का परामर्श किया (१. ३७, १०)। छः काद्रवेयों की गणना (१. ६५, ४१)। अर्जुन के जन्मोत्सव पर इनकी उपस्थिति का उल्लेख (१. १२३, ५०)। ये अर्जुन के पक्ष में थे (८. ८७, ४२)।

कानन (बहु०) : १२. ३३२, ३०।

१. कान्त = स्कन्द (३. २३२, ४)।

२. कान्त = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

३. कान्त = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

कान्तारक, एक जनपद का नाम है (२. ३१, १३)।

कान्ति, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ४०)।

कान्यकुब्ज, गाधि की राजधानी का नाम है (१. १७५, ३)। यहाँ पर कौशिक और विश्वामित्र ने इन्द्र के साथ सोमपान किया था (३. ८७, १७)। गाधि की राजधानी होने का उल्लेख (३. ११५, २०)। 'गंगायां कान्यकुब्जे वै ददौ सत्यवतीं तदा', (३. ११५, २८)। 'पुरा हि कान्यकुब्जे वै गाधेः सत्यवतीं सुताम्', (५. ११९, ४)। 'अदूरे कान्यकुब्जस्य गंगायास्तीरमुत्तमम्। अश्वतीर्थं तदद्यापि मानवैः परिचक्ष्यते ॥', (१३. ४. १७)।

कान्वशिरस्, एक जाति का नाम है, जो पहले क्षत्रिय थी; किन्तु ब्राह्मणों से ईर्ष्या रखने के कारण नीच भाव को प्राप्त हो गई (१३.३५,१७)।

कापालिन् = शिव, व० स्था०।

कापाली = दुर्गा (उमा) : ६. २३, ४।

१. कापिल, एक वर्ष का नाम है (६. १२, १४)।

२. कापिल : 'कापिलं तेज आसाद्य मत्कृते निधनं गताः', (३. १०७, ३७)। 'कापिलं मण्डलम्', (१२. २१८, ११)। 'योगशास्त्रं च निखिलं कापिलं चैव भारत', (१२. ३२५, ४)। 'विरञ्चि इति यत्प्रोक्तं कापिलं ज्ञानचिन्तकैः', (१२, ३४२, ९४)।

३. कापिल = साङ्ख्य (१२. ३०१, ५४. ८५)।

कापिलेय = पञ्चशिख। इनका इसलिये यह नाम पड़ा, क्योंकि इन्होंने कपिला का स्तनपान किया था (१२. २१८, ६. १६. १७. १९)।

कापी, एक भारतीय नदी का नाम है (६. ९, २४)।

कापोति, उञ्छवृत्ति वाले एक ब्राह्मण का नाम है (देखिये इस पर नीलकण्ठी : 'कापोतिः कपोतवदेकैकं कणं आदत्ते स कापोतिः', (४. ९०, २४)।

१. काम, धर्म के पुत्र और रति के पति का नाम है (१. ६६, ३२-३३)। महादेव, अन्तक, काम और क्रोध के सम्मिलित अंश से अश्वत्थामा की उत्पत्ति हुई (१. ६७, ७२)। काम और क्रोध वसिष्ठ जी के चरण दबाते रहे हैं (१. १७४, ६)। 'कामवश्यौत्सुक्यकरान् कामस्येव शरोत्करान्', (३. १५८, ६७)। 'कामबाणाभिसन्तप्तः', (३. २८०, ३)। 'कामबाणार्तः', (३. २८१, २)। 'अत्र कामश्च रोषश्च शैलश्चोमा च संबभुः', (५. १११, १०)। 'विश्वेश्वर उमापतिः काममभिवर्तमानमनङ्गत्वेन शममनयत्', (१२. १९०, १०)। 'काम क्रोधौ', (१२. १९९, ११५. ११६)। 'क्रोधं कामस्य देवेशः सहायं चासृजत्प्रभुः', (१३. ४०, १०)। 'असज्जन्त प्रजाः सर्वाः कामक्रोधवशं गताः', (१३. ४०, ११)। 'सनातनो हि संकल्पः काम इत्यभिधीयते। रुद्रस्य तेजः प्रस्कन्नमग्नौ निपतितं च यत् ॥', (१३. ८५, ११)। सात धरणीधरों में से एक यह भी हैं (१३. १५०, ४१)। 'गाथाः कामगीताः', (१४, १३, १२)।

तु० की० काम के निम्नलिखित पर्याय :

*अनङ्ग : ३. १५८, ६८; ४. १४, १७; ५. १७५, १०; १२. १९०, १० (नाम की व्युत्पत्ति); १३. १४, २१७; ४१, ८ ।

*कन्दर्प : १. १८७, ५. १२; २९४. २०; ३. ५३, १५; २८१, ३; ६. ३४, २८ (कृष्ण के साथ समीकृत) ।

*जगत्पति, व० स्था० ।

*मकरध्वज, व० स्था० ।

*मनोभव, १. १९१, १३ ।

*मन्मथ : १. ७१, ४१; १५४, ८; १७१. ४०; १७३, २८; ३. ४६, ३. १०; ५४, २८; ६८, १२; १५८, ६५; ४. १४, २६. ४० ।

*सङ्कल्पज : १. १८७, ३ ।

*स्मर : ७. १८४, ४८ ।

२. काम, एक अग्नि का नाम है (३. २१९, २३) ।

३. काम, स्थाणु द्वारा प्रदत्त स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, २६) ।

४. काम = शिव (सहस्र नामों में से एक) ।

५. काम = विष्णु (सहस्र नामों में से एक) ।

कामकृत् = विष्णु (सहस्र नामों में से एक) ।

कामक्रोधौ = शिव (सहस्र नामों में से एक) ।

कामघ्न = शिव (सहस्र नामों में से एक) ।

कामचरी, स्कन्द की अनुचरी एक मातृका का नाम है (९. ४६, २३) ।

कामजित् = स्कन्द (३. २३२, ४) ।

कामठक, धृतराष्ट्र के कुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है जो जनमेजय के सर्पसत्र में जल मरा था (१. ५७, १६) ।

१. कामद = सूर्य (३. ३, २४) ।

२. कामद = स्कन्द (३. २३२, ४) ।

३. कामद = शिव (सहस्र नामों में से एक) ।

कामदा, स्कन्द की अनुचरी एक मातृका का नाम है (९. ४६, २७) ।

कामदुघ : 'लोकाः कामदुघाः', (३. २६१, २०) । 'सर्वाः कामदुघा गावः', (७. ६९, ४) । 'लोकान्कामदुघान्', (९. ४३, ४५; ११. २, १५) । 'सर्वकामदुघां धेनुं सर्वकामगुणान्विताम् । ददाति यः सहस्राक्ष स्वर्गं याति स मानवः;, (१३. ६२, ६३) ।

कामदुह् : 'सर्वकामदुहां वरा', (१. ९९, ९) । 'नन्दिनीं नाम राजेन्द्र सर्वकामधुगुत्तमाम्', (१. ९९, १४) । 'कामधुग्धेनुर्वसिष्ठस्य', (१.१७५,९)। ३. ५४, १८ । 'धेनुः कामधुक्', (६. ९, ७१) । 'धेनूनामस्मि कामधुक्', (६. ३४, २८) । ७. ६९, ४; १३. ५१, ३३; १४. २१, १५ ।

कामदुह : 'तैस्तैर्गुणैः कामदुहाथऽश्च भूत्वा नरं प्रदातारमुपैति सा गौः', (३. १८६, ११; १३. ५७, २८) ।

कामदेव = विष्णु (सहस्र नामों में से एक) ।

कामनाशक = शिव (सहस्र नामों में से एक) ।

कामन्द, एक ऋषि का नाम है (१२. १२३, १२) । इनका आङ्गरिष्ठ के साथ संवाद (१२. १२३, १५) ।

कामन्दक = कामन्द । 'कामन्दकस्य संवादमाङ्गरिष्ठस्य चोभयोः', (१२. १२३, ११) ।

कामपाल = विष्णु (सहस्र नामों में से एक) ।

कामप्रद = विष्णु (सहस्र नामों में से एक) ।

कामशास्त्र : १. २, ३८३; १२. २५४, ८ ।

कामहन् = विष्णु (सहस्र नामों में से एक) ।

कामा, पृथुश्रवस् की पुत्री का नाम है जो अयुतनायी की पत्नी तथा अक्रोधन की माता थीं (१. ९५, २१) ।

कामाख्य, एक तीर्थ का नाम है : 'कामाख्यं तत्र रुद्रस्य तीर्थं देवनिषेवितम्', (३. ८२, १०५) ।

कामाङ्गनाश = शिव (१३. १४, ३१४) ।

कामात्मन् = कृष्ण (१२. ४७, ६३) ।

कामारि = शिव (सहस्र नामों में से एक) ।

कामिन् = विष्णु (सहस्र नामों में से एक) ।

काम्पिल्य — दक्षिण पाञ्चाल का एक नगर जो द्रुपद की राजधानी था (१. १३८, ७३) । विवाह के पश्चात् काम्पिल्य नगर में शिखण्डी का आगमन (५. १८९, १३) । दशार्णराज ने एक समय इसके निकट पहुँच कर किसी ब्राह्मण को दूत बनाकर वहाँ भेजा था (५. १९२, १४) । प्राचीनकाल में यहाँ राजा ब्रह्मदत्त राज्य करते थे, जिनके यहाँ पूजनी नामक चिड़िया थी (१२. १३९, ५) ।

*काम्बोज, पश्चिमोत्तर भारतखण्ड का एक जनपद और वहाँ के निवासियों का नाम है (१. ६७, ३२) । अर्जुन ने दरदों सहित यहाँ के निवासियों को विजित किया था (२. २७, २३. २५) । युधिष्ठिर के रथ में काम्बोज देश में उत्पन्न (काबुली) घोड़े जोते गये (२. ५३, ५) । यह भविष्यवाणी कि काम्बोज-देशीय म्लेच्छगण कलियुग में राजा होंगे (३. १८८, ३६) । 'काम्बोजा ऋषिका', (५. ४, १५) । काम्बोज-योद्धा दुर्योधन के सैनिक थे (५. १६०, १०३; १६१, २१) । महाभारतकाल में इस देश का राजा सुदक्षिण था, जो महारथी माना गया था (५. १६६, १०३) । उत्तर दिशा में इसकी स्थिति (६. ९, ६५) । दुर्योधन के आगे-आगे चले (६. १७, २७) । 'सुदक्षिणं तु राजेन्द्र काम्बोजानां महारथम्', (६. ४५, ६६) । 'श्रुतकर्मा ततः क्रुद्धः काम्बोजानां महारथम्' (६. ४५, ६८) । भीष्म-निर्मित गरुडव्यूह के पुच्छस्थान में काम्बोज खड़े किये गये थे (६. ५६, ७) । भीष्म के व्यूह में (६. ७५, १७) । काम्बोज योद्धा युद्ध में त्रिगर्त का अनुगमन कर रहे (६. ८७, १०) । राजपुर जाकर कर्ण ने काम्बोजों को विजित किया था (७. ४, ५) । ये द्रोण के व्यूह में स्थित थे (७. ७, १४) । कृष्ण ने इन्हें पहले ही विजित कर लिया था (७. ११, १७) । द्रोण द्वारा निर्मित गरुडव्यूह के ग्रीवा भाग में इनके उपस्थित होने का उल्लेख (७. २०, ७) । काम्बोज-योद्धा धृष्टद्युम्न का अनुगमन कर रहे थे (७, २३, ४२. ४३) । अर्जुन पर आक्रमण करते हैं (७. ९१, ३७) । इनका राजा सुदक्षिण युद्ध में मारा जाता है (७. ९२, २६) । 'एते दुर्वारणा नाम काम्बोजा यदि ते श्रुताः', (७. ११२, ४३) । ७. ११२, ४८ । सात्यकि द्वारा आक्रमण (७. ११३, ६१) । ७. ११९, १४. २०. २७. ४५ (सात्यकि ने सहस्रों काम्बोजों आदि का वध कर दिया) । 'काम्बोजसैन्यम्', (७. ११९, ५२) । 'जित्वा यवनकाम्बोजान्', (७. १२०, १) । 'काम्बोजानां च वाहिनीम्', (७. १२०, ९) । शक, काम्बोज आदि सात्यकि पर आक्रमण करते हैं (७. १२१, १३) । 'नदीजकाम्बोजवनायुजैश्च', (८. ७, ११) । कर्ण इन्हें पहले ही विजित कर चुके थे जिस कारण ये लोग दुर्योधन को भेंट अर्पित करते थे (८. ८, १८; ९, ३३) । कर्ण-व्यूह में इनकी स्थिति (८. ४६, १५) । 'प्रत्यक्षं च समासाद्य पार्थः काम्बोजरक्षितम्' (८. ५६, १०७) । सुदक्षिण के भ्राता का वध (८. ५६, ११५) । 'काम्बोजानामयुतम्', (८. ७०, ४) । कर्ण ने काम्बोजों को पहले ही विजित कर लिया था (८. ७९, ४६) । इन्होंने अर्जुन पर आक्रमण किया (८. ८८, १७) । ये युद्ध में मारे जा चुके थे (९. १, २७) । 'अश्वत्थामा पृष्ठतोऽभूत्काम्बोजैः परिवारितः', (९. ८, २६) । काम्बोज और यवन स्त्रियाँ मृत जयद्रथ को घेरकर खड़ी थीं (११. २२, ११) । बर्बर और असभ्य जातियों में इनकी गणना (१२. ६५, १४) । ये मल्लयुद्ध में निपुण थे (१२. १०१, ५) । उत्तर दिशा की असभ्य जातियों में इनकी गणना (१२. २०७, ४३) ये शूद्र के रूप में च्युत हो गये थे (१३. ३३, २१) ।

१. काम्बोज (काम्बोजों का अधिपति) = सुदक्षिण । 'सुदक्षिणश्च काम्बोजः', (१, १८६, १५) काम्बोजराज ने काले, नीले और लाल रंग के कदली मृग के चर्म तथा अनेक बहुमूल्य कम्बल युधिष्ठिर के लिये भेंट में भेजे थे (२. ४९, १९; ५१, ३) । ५. १९, २१; ५८, १०; ९५, २०; १५५, ३३; १६०, १२२, १६१, ४० (दुर्योधन की सेना में इनकी स्थिति); १६६, १; ६. १६, १५; ५१, १८; ६५, ३१; ९९, २; १०२, २४; १०८, ५८;

११०, १५; ७. २०, ९; ७४, १६; ८७, २६; ९१, ३७; ९२, १७. ७०. ७६ (अर्जुन द्वारा इनका वध); १५०, २३ (काम्बोजं निहतं); ८. ७२, १९; ९. २, १८ (दुर्योधन के पक्ष में); २४, २९; २०, ३४ (मृत व्यक्तियों के साथ इनका उल्लेख); २५, १। तु० की० काम्बोजराज।

२. काम्बोज = सुदक्षिण का पिता : 'काम्बोजस्य च दायादे हते राजन् सुदक्षिणे', (७. ९४, २)। तु० की० काम्बोजराज।

३. काम्बोज (काम्बोजराज का पुत्र) = सुदक्षिण के लघुभ्राता का नाम है जो अर्जुन के द्वारा मारा गया (८. ५६, ११३)।

४. काम्बोज, एक प्राचीन राजा का नाम है जिसने धुन्धुमार से खड्ग ग्रहण किया। मुचुकुन्द को इनसे खड्ग की प्राप्ति हुई (१२. १६६, ७७)।

५. काम्बोज : 'अथ काम्बोजजैरश्वैर्महद्भिः शीघ्रगामिभिः', (३. ७१, १३)। 'काम्बोजमुख्यानां नदी जानां च वाजिनाम्', (६. ९०, ३)। काम्बोज देशीय अश्व नकुल को वहन करते हुये कौरव-सैनिकों की ओर दौड़े (७. २३, ७)। धृष्टकेतु काम्बोज देशीय चितकबरे अश्वों द्वारा युद्धभूमि की ओर लौटा (७. २३, २३)। 'युक्तैः परमकाम्बोजैर्जवनैर्हेममालिभिः', (७. २३, ४२)। 'काम्बोजानथ बाल्हिकान्' (७. ३६, ३६)। 'काम्बोजास्तरणोचिताः', (७. ९२, ७३)। 'काम्बोजान्... हयवरान्', (७. १२१, २७)। 'काम्बोजैर्जवनैर्हयैः', (७. १२५, २५)। 'युक्तं परमकाम्बोजैस्तुरगैर्हेममालिभिः', (१०. १३, २)। 'काम्बोजं पश्य दुर्धर्षं काम्बोजास्तरणोचितम्', (११. २५, १)। 'शतं वै यस्तु काम्बोजान्ब्राह्मणेभ्यः प्रयच्छति। नियतेभ्यो महीपाल स च पापात्प्रमुच्यते॥', (१२. ३५, १४)।

१. काम्बोजराज = सुदक्षिण (३. १०८, १४; १११, १८)।

२. काम्बोजराज = सुदक्षिण-पिता : 'ततः काम्बोजराजस्य पुत्रः शूरः सुदक्षिणः', (७. ९२, ६१)। 'पुत्रः काम्बोजराजस्य', (७. ९२, ७५)।

काम्य = शिव (७. २०२, ३०)।

१. काम्यक, एक वन का नाम है। 'गमनं काम्यके', (१. २, १५७)। 'काम्यकागमनम्', (१. २, १८९)। 'काम्यके काननश्रेष्ठे', (१. २, १९७)। 'प्रययुः काम्यकं वनम्', (३. ३, ८६)। 'काम्यकं नाम ददृशुर्वनं मुनिजनप्रियम्', (३. ५, ३)। ३. ५, ५. ६; ६, ११। 'काम्यकं नाम तद्वनम्', (३. ११, ३)। ३. २२, ५३: ३६, ४१. ४३; ४७, २४. ३४; ५०, १२; ५१, १६; ५२, २; ८०, १. ४. ४५. २६. ३०; ८६, १७. २१; ९२, ९२, २७; ९३, १९। 'काम्यके पुनराश्रमे', (३. १४६, ६)। 'काम्यकं पुनराश्रमम्', (३. १४६, ७)।' 'काम्यकात् प्रव्रजिताः', (३. १६४, १५)। 'स्वस्ति प्राप्नुहि कौन्तेय काम्यकं पुनराश्रमम्', (३. १६६, १३)। ३. १६७, ११; १८२, १८; १८३, १। 'रम्यं काम्यकं काननोत्तमम्', (३. २५८, १३)। ३. २५८, १६; २६४, १. ७; २६८, २२; २६९, ५; २७२, ८१; २९९, १६; ३१०, ४२; ३११, २; ७. १८३, ३०।

२. काम्यक, एक सरोवर का नाम है (२. ५२, २०)।

काम्यकवनप्रवेश—"युधिष्ठिर ने कहा : 'भूरिश्रवा, शल, जलसन्ध, भीष्म, द्रोण, कर्ण, अश्वत्थामा, दुर्योधन तथा अन्य धार्तराष्ट्र, सभी अस्त्रविद्या के ज्ञाता हैं। हमने जिन राजाओं तथा भूपालों को युद्ध में कष्ट पहुँचाया है वे सभी कौरव-पक्ष में मिल गये हैं और उनकी सैन्य शक्ति तथा कोष भी सम्पन्न हैं। दुर्योधन ने अपने समस्त सैनिकों को हर प्रकार की उपभोग सामग्री प्रदान की है जिससे वे सब उसके लिये अपना प्राण दे देंगे। यद्यपि भीष्म, द्रोण तथा कृप का आन्तरिक स्नेह धार्तराष्ट्रों तथा हम लोगों के प्रति समान ही है, तथापि वे दुर्योधन का अन्न खा रहे हैं अतः उसका ऋण अवश्य चुकायेंगे।' जब युधिष्ठिर इस प्रकार कह रहे थे तो उसी समय व्यास वहाँ उपस्थित हुये और युधिष्ठिर को एकान्त में ले जाकर उन्हें प्रतिस्मृति नामक विद्या का उपदेश दिया। व्यास ने बताया कि उस विद्या के द्वारा अर्जुन, महेन्द्र, रुद्र, वरुण, कुबेर और यम आदि से दिव्यास्त्र प्राप्त कर सकते हैं। व्यास ने युधिष्ठिर आदि को उस स्थान पर निवास करने वाले तपस्वियों की असुविधा का निवारण तथा वहाँ के मृगों और वृक्षों आदि का विनाश न करने की दृष्टि से अन्यत्र चले जाने का परामर्श दिया। इस प्रकार उपदेश करके व्यास अन्तर्धान हो गये। तदनन्तर अनेक ब्राह्मणों के साथ पाण्डवों ने सरस्वती के तट पर स्थित काम्यक वन में प्रवेश किया और धनुर्वेद, पितृयज्ञ, और देवों तथा ब्राह्मणों की सेवा में रत रहते हुये निवास करने लगे (३. ३६)।"

काम्या, एक स्वर्गीय अप्सरा का नाम है जो अर्जुन के जन्मोत्सव में नृत्य करने आई थी (१. १२३, ६४)।

कायव्य, एक डाकू का नाम है (१२. १३५, ३. १३. २३-२४)। 'कायव्यचरितम्', (१२. १३५, २५)।

कायव्यचरित (मू)—"कायव्य नामक एक निषादपुत्र ने दस्यु होने पर भी सिद्धि प्राप्त कर ली थी। वह क्षत्रिय पिता और निषाद जातीय माता के गर्भ से उत्पन्न हुआ था, अतः क्षत्रिय धर्म का निरन्तर पालन करता था। वह प्रहार-कुशल, शूरवीर, बुद्धिमान्, शास्त्रज्ञ, क्रूरतारहित, ब्राह्मण भक्त और गुरुपूजक था। प्रतिदिन प्रातःकाल और सायंकाल के समय वह मृगों के शिकार के लिये जाया करता था। वह पारियात्र पर्वत पर निवास करनेवाले समस्त प्राणियों के धर्मों का ज्ञाता और सम्पूर्ण निषादों में सर्वाधिक निपुण था। वह अकेला ही सैकड़ों सैनिकों को विजित कर लेता था और उस वन में रहकर अपने अन्धे तथा बहरे माता-पिता की सेवा-पूजा किया करता था। एक दिन कई सहस्र डाकूओं ने उसे अपना नायक बनाया। इसने उन दस्युओं से यह वचन लिया कि वे स्त्रियों और ब्राह्मण आदि को क्षति नहीं पहुँचायेंगे। इस प्रकार कायव्य ने अपने पुण्यकर्म से सिद्धि प्राप्त कर ली और अन्य दस्युओं को भी पाप से बचा लिया (१२. १३५)।"

कायशोधन, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ४२)।

१. कारण (मू) = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

२. कारण (मू) = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

१. कारन्धम, पञ्चनारीतीर्थों में से एक का नाम है जिसका अर्जुन ने दर्शन किया (१. २१६, ३)।

२. कारन्धम, करन्धमपुत्र आविक्षित् का नाम है (१४. ३, २३)। इसकी उत्पत्ति त्रेतायुग के आरम्भ में हुई (१४. ४, १७)। 'कारन्धमात्मज', मरुत (१४. ८; ३४)।

कारपवन, सरस्वती नदी सम्बन्धी एक तीर्थ का नाम है जहाँ बलराम पधारे थे (९. ५४, १२)। 'तं देशं कारपवनाद्यमुनायां जगाम ह', (९. ५४, १५)।

कारस्कर, एक जाति के लोगों का नाम है। अन्य लोगों के साथ ये भी युधिष्ठिर की सेवा में लगे रहते थे (२. ५०, २०)। धर्महीन लोगों के साथ इनका उल्लेख (८. ४४, ४३)।

कारावर, एक जाति का नाम है (१३. ४८, २६)।

कारीषि, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५५)।

१. कारूष, वैवस्वत मनु के छठे पुत्र का नाम है (१. ७५. १६)।

२. कारूष, करुप देश के अधिपति का नाम है। शिशुपाल ने विशालनरेश की कन्या भद्रा का करूपराज के वेश में उपस्थित होकर अपहरण कर लिया था (२. ४५, ११)।

३. कारूष, एक देश का नाम है : 'कारूषे च समुद्रान्ते', (२. ५२, ८)।

४. कारूष (पाः), बहु०, एक जनपद = **करूष** (बहु०)। ये लोग भीष्म के गरुडव्यूह के बाँयें पंख के स्थान में खड़े थे (६. ५६, ९)। द्रोण को व्याकुल कर देने का इनका उल्लेख (७. ९, २८)। 'चेदिकारूपकोसलाः', (७. २१, २३)। द्रोण ने इनको विजित किया था (७. २१, २९.) इन्होंने भी अन्य लोगों के साथ युद्ध में अर्जुन और भीमसेन का अनुसरण किया (७. १५६, ५१)। 'कारूपाः कोसलाः', (८. १२, १९)। 'चेदिकारूषमत्स्यानाम्', (८. ३०, २७)। ८. ४७, १७।

इन्होंने भी अन्य लोगों के साथ वसुषेण को घायल किया (८. ४९, ३४)। कर्ण ने इनका संहार किया (८. ५६, २)। ८. ७३, ६; ७८, १०।

कारूपक, भी अन्य राजाओं के साथ क्रोधवश नामक दैत्यों से उत्पन्न हुये थे (१. ६७, ६४)। उन राजाओं में एक यह भी थे जिनके पास पाण्डवों ने दूतों द्वारा रणनिमन्त्रण भेजना आवश्यक समझा (५. ४, १८)।

कारूषाधिपति—ये चोर डाकुओं को मारने वाले थे। अन्य राजाओं के साथ ये भी द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुये (१. १८६, १६)।

कार्णि, कर्णपुत्र = वृषसेन (८. ८४, ४०)। तु० की० **कर्णपुत्र, कर्णसुत, कर्णात्मज।**

कार्तयुग: 'कार्तयुगप्रधान', (ययाति के लिये प्रयुक्त हुआ है : १. ९०, १)। 'कार्तयुगाने तान्धर्मान्', (१२. ६९, ८६)। 'कार्तयुगधर्माणो भागाः', (१२. ३४०, ५६)।

कार्तवीर्य, हैहयराज कृतवीर्य के पुत्र अर्जुन का नाम है। 'कार्तवीर्यवधः', (१. २, १६९)। 'कार्तवीर्यसमः', (१. १२३, ३८)। यम की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ८, ११)। ये तपोबल से सम्राट हुये थे (२. १५, १५)। उन राजाओं में से एक यह भी थे जो अपने से बड़ों का अपमान करके सेनासहित नष्ट हो गये थे (२. २२, २४)। इन्होंने तपस्या, योग और समाधि में स्थित होकर भयङ्कर आपत्तियों से प्रजा की रक्षा की (३. ३, ११)। 'ओजः कार्तवीर्यसमः', (३. १२, ३३)। 'कार्तवीर्यार्जुनो यथा', (३. ८५, १३०)। 'नरेन्द्रस्य कार्तवीर्यस्य', (३. ९३, ८)। 'हैहयाधिपतेश्चैव कार्तवीर्यस्य', (३. ११५, १०)। ३. ११६, १९. २३. २७; ११७, १। 'कार्तवीर्यसमं युधि......फाल्गुनम्', (३. १४१, १९)। 'सदृशं बाहुवीर्येण कार्तवीर्यस्य पाण्डवम्', (५. ६०, १९)। 'इष्वस्त्रे सदृशो राज्ञः कार्तवीर्यस्य पाण्डवः', (५. ९०, २९)। राम जामदग्न्य ने इनका वध कर दिया (७. ७०, ३)। ७. ९८, ४१। 'शूरः कार्तवीर्यसमो युधि', (७. १४४, ८)। 'कार्तवीर्यसमो वीर्ये', (७. १९४, ८)। 'कार्तवीर्यश्च रामेण भार्गवेण यथा हतः', (८. ५, ५५)। 'कार्तवीर्यसमं वीर्ये कर्णम्', (८. ३१, १५)। 'कार्तवीर्यसमौ चोभौ', (८. ८७, २६)। 'कार्तवीर्यसमो युधि', (८.९०, ११४)। १२. ४९, ४०. ४२. ४७। राम जामदग्न्य द्वारा इनका वध (१२. ४९, ५२)। 'कार्तवीर्यसुता हताः', (१२. ३६०, १६)। 'जामदग्न्येन रामेण सहस्रनयनोपमः। संयुगे निहतो रोषात्कार्तवीर्यो महाबलः ॥', (१२. ३६०, १७)। 'कार्तवीर्यो हतो येन चक्रवर्ती', (१३. १४, २७२)। इन्होंने भी कार्तिक मास में मांसभक्षण का निषेध किया था (१३. ११५, ६९)। 'सहस्रभुजभृच्छ्रीमान्कार्तवीर्योऽभवत्प्रभुः। अस्य लोकस्य सर्वस्य माहिष्मत्यां महाबलः ॥', (१३. १५२, ३)। 'कार्तवीर्यस्य संवादं समुद्रस्य', (१४. २९, १)। 'कार्तवीर्यार्जुनो नाम राजा बाहुसहस्रवान्। येन सागरपर्यन्ता धनुषा निर्जिता मही ॥', (१४. २९, २)।

कार्तस्वर, एक दैत्य का नाम है जो पृथिवी का प्राचीन अधिपति था (१२. २२७, ५२)।

कार्तिक, एक मास का नाम है। 'कार्तिकस्य तु मासस्य प्रवृत्तं प्रथमेऽहनि', (२. २३, २९)। 'अलक्ष्यः प्रभया हीनः पौर्णमासीं च कार्तिकीम्', (६. २, २३)। 'कार्तिकं तु नरो मासं यः कुर्यादेकभोजनम्', (१३. १०६, ३०)। 'द्वादश्यां कार्तिके मासि', (१३. १०९, १४)। 'कार्तिके मासि', (१३. १३२, ७)। तु० की० **कौमुद।**

कार्तिकी, कार्तिक मास में जिस दिन पूर्ण चन्द्र रहता है उस तिथि, पूर्णिमा, का नाम है : ३. ८२, ११. ३७. ११५; १८२, १६; १२. १७१, ९. १८; १५. ११, ३; १३, १५; १५, २। तु० की० **कौमुदी।**

कार्तिकेय = स्कन्द, व० स्था०।

कार्तिकेयस्तव (कार्तिकेय की स्तुति)—युधिष्ठिर के पूछने पर मार्कण्डेय ने स्कन्द के नामों की गणना कराते हुये फल आदि का वर्णन किया (३. २३२)।

कार्पासिक, एक प्राचीन देश का नाम है जहाँ निवास करने वाली दासियाँ युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में सेवा-कार्य करती थीं (२. ५१, ८)।

कार्य (म्) = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कार्यस्मन् = कृष्ण (१२. ४७, ६३)।

कार्ष्ण—'कार्ष्णं वेदम्', (१. १, २६४; ६२, १८; १८. ५, ४१)।

१. कार्ष्णि, एक देवगन्धर्व का नाम है। इसने भी अन्य गन्धर्वों के साथ अर्जुन के जन्मोत्सव के समय गायन किया था (१. १२३, ५६)।

२. कार्ष्णि (कृष्ण [वासुदेव] का पुत्र) = प्रद्युम्न (३. ११८, २०; १२०, १२; ५. २२, २४)। 'यदि कार्ष्णिर्धनुष्पाणिरिह स्यान्मकरध्वजः', (७. ११११, २५)।

३. कार्ष्णि (कृष्णपुत्र) = अभिमन्यु (६. ४७, १५. १९-२१; ६०, २४; ६१, ३. ११; ६२, १४. ४८; ७८, २४; १००, २३. ३०; १०१, १२. १३. १९; ११६, २. ३; ७. १४, ६४. ६५. ७५. ७९; २५, ३३; ३४, १७; ३८, १६; ४१, ३; ४६, १२; ४८, १०; ४९, ३. ३८)। 'प्राप्य दौःशासनिं कार्ष्णिः प्राप्तो वैवस्वतक्षयम्', (७. ५१, ७)। ११. २०, ३। 'अस्य गात्रगतान् बाणान् कार्ष्णि बाहुबलार्पितान्। उद्धरन्त्यसुखाविष्टा मूर्छमाना पुनः पुनः ॥', (११. २५, ११)

४. कार्ष्णि = शुक (१२. ३२५, ४५; ३२६, ५)।

१. काल: 'कालवशं गतान्', (१. १, २२५)। कालमूलमिदं सर्वं भावाभावौ सुखासुखे ॥ कालः सृजति भूतानि कालः संहरते प्रजाः। संहरन्तं प्रजाः कालं कालः शमयते पुनः ॥ कालो हि कुरुते भावान्सर्वलोके शुभाशुभान्। कालः संक्षिपते सर्वाः प्रजा विसृजते पुनः ॥ कालः सुप्तेषु जागर्ति कालो हि दुरतिक्रमः। कालः सर्वेषु भूतेषु चरत्यविधृतः समः ॥ अतीतानागता भावा ये च वर्तन्ति साम्प्रतम्। तान्कालनिर्मितान्बुध्वा न संज्ञां हातुमर्हसि ॥', (१. १, २४७-२५१)। 'कालेनाद्भुतकर्मणा', (१. २, २९)। 'कालदन्डोपमम्', (१. ९, २२)। 'काल इवान्तकोऽपरः', (१. २८, १७)। 'कालकल्पाः', (१. ६५, ३४)। ये ध्रुव के पुत्र थे : 'ध्रुवस्य पुत्रो भगवान्कालो लोकप्रकालनः', (१. ६६, २१)। 'कालरूपधृत्', (१. १३४, ३१)। 'कालेनेव हतम्', (१. २१०, १८)। 'कालदण्डं यमः', (१. २२७, ३२)। 'कालवत्', (१. २२८, १०)। 'कालहता इव', (१. २२८, ३०)। इन्द्र के सभाभवन में इनकी उपस्थिति (२. ७, १४; ८, २९)। 'कालस्येव जिघत्सतः', (२. ४२, १२)। 'कालेन निर्मितः', (२.४६, २३)। 'कालो दण्डमुखम्य', (२. ८१, ११)। इनको कृष्ण के साथ समीकृत किया गया है (३. १२, २२)। 'कालान्तकयमोपमम्', (३. २२, ३१)। 'कालान्तकयमोपमः', (३. २७, २५)। 'कालेन हयन्तकेन'. (३. ३५, १)। ३. ३५, २। 'निसृष्ट इव कालेन युगान्ते ज्वलनो महान्', (३. ८६, ११) 'कालान्तकयमोपमम्', (३. १३७, १३)। 'कालेनाद्भुतकर्मणा', (३. १५७, ४४)। 'कालान्तकोपमः', (३. १५७, ५०)। 'कालेनैते हताः', (३. १६१, ४४)। 'कालरूपाः', (३. १७०, ५)। 'कालान्तकयमोपमम्', (३. १७८, २७)। ३. २७३, ६। 'कालान्तकयमाद्वते', (३. ३१३, २७)। ३. ३१३, ११८। 'कालान्तकयमोपमम्', (४. ३३, २५)। 'कालमर्जुनरूपेण संहरन्तमिव प्रजाः', (४. ५५, २९)। 'युगान्ते कालनिर्मिताम्', (४. ६२, १७)। 'यमकालोपमद्युती', (५. ३, १६)। 'कालासूर्यानलोपमान्', (५. ३, १९)। 'व्यात्ताननः काल इव', (५. ४८, ६०)। 'कालवशं गताः', (५. ५१, ५९)। 'युयुजे कालधर्मणा', (५. १२०, १२)। 'कालसम्मितम्', (५. १८०, २३)। 'कालोत्सृष्टां प्रज्वलितामिवोल्काम्', (५. १८१, ५)। 'कालान्तकोपमम्', (५. १८४, १०)। ६. ३, ५१. ५४; ८, २०; १४, ६०। 'कालः कर्षयतामहम्', (६. ३४, ३०)। 'कालदण्डोपमम्', (६. ४५, ८)। 'कालदण्डमिवापरम्', (६. ४५, ३२)। 'कालदण्डोपमाम्', (६. ४८, ८१)। 'कालान्तकयमोपमः', (६. ५४, ४७)। ६. ५४, १०५। 'कालान्तकयमोपमम्', (६. ५५, ३८)। 'कालेनेव युगक्षये', (६. ५७, २)। 'कालोत्सृष्टमिवान्तकम्', (६. ६१, २६)। 'युगान्ते कालवत्', (६. ६३, १३)। 'कालस्येव युगक्षये', (६. ६३, २०)। 'कालमृत्युसमप्रभम्', (६. ६४,

२२)। 'कालोत्सृष्ट इवान्तकः', (६. ६४, ४९)। कालसूर्यसुसमाद्युभौ', (६.६४, ६५)। 'कालमिवान्तकाले', (६. ७८, ३८)। 'व्यत्ताननो यथा-कालः', (६. ८४, १९)। ६. ८५, २२। 'कालसंमितम्', (६. ८६, ११)। 'क्रुद्धः काल इवापरः', (६. ८९, २६)। 'कालान्तकयमोपमः', (६. ९१, ८)। 'कालसृष्टमिवान्तकम्', (६. ९१, २४)। 'कालान्तकयमोपमौ', (६. ९४, २१)। ६. ९६, २९। 'कालेमेव युगक्षये', (६. १०२, १४; १०४, ४)। 'कालासृष्टमिवान्तकम्', (६. १०८, ४१)। 'कालवत्', (६. १०९, १३)। 'कालान्तकसमद्युतिः', (६. ११३, १५)। 'कालवत्', (७. ८, १५) 'कालेन वलिना हताः', (७. ७४, ३२)। 'कालनिर्मिता', (७. ७७, १२)। ७. ८०, ६। 'कालकोयम्', (७. ८०, ४७)। ७. ८५, २६। 'मृत्युः कालेन चोदितः', (७. ८८, १५)। 'कालकल्पाः', (७. ९३, ४३)। ७. ९५, २८। 'कालकल्पैः', (७. ११२, ५१)। 'कालसन्निभा', (७. ११७, २१)। 'कालान्तकयमोपमम्', (७. ११९, २५)। 'कालवत्', (७. ११९, ४९)। 'कालदण्डमिवान्तकः', (७. १२७, ५२)। ७. १२९, ३. ७। 'कालशक्तिमिवापराम्', (७. १३३, २१)। 'यमकालान्तकोपमम्', (७. १३५, ९)। ७. १३५, २२। 'कालान्तकयमोपमम्', (७. १५९, ४८)। 'विक्रमं पार्थाः कालस्येव युगक्षये', (७. १५९, ७०)। 'कालदण्डोग्रधारिणम्', (७. १७५, ३७)। ७. १७९, ४०; १८३, ६२; १८९, २९। 'कालसृष्ट इवान्तकः', (७. १९९, १)। 'कालवत्', (७. १९९, ४६)। ७. २०१, ५१। कृष्ण के साथ समीकृत (७. २०१, ७४; २०२, १०४)। ८. ९, २१। 'कालान्तकयमोपमौ', (८. १५, ३१)। 'कालचक्रवत्', (८. १८, ७)। 'कालदण्डैरिव', (८. २१, २८)। 'मृत्युकालान्तकोपमम्', (८. २३, १७)। 'कालदण्डोपमम्', (८. २५, ३०)। ८. २८, १७। 'कालदण्डः', (८. ३४, ४३)। ८. ३४, ४८। 'कालोविग्रहवानिव', (८. ४७, ५)। 'कालान्तकयमोपमम्', (८. ५१, २०; ५६, १७)। ८. ५९, २५। 'कालसंमितम्..... कालदण्डमिवापरम्', (८. ५९, ५९)। 'काल इवात्तदण्डः', (८. ७६, ८)। ८. ७६, ९। 'कालस्येव युगक्षये', (८. ७७, २८)। 'कालान्तकवपुः', (८. ७८, ५८)। ८. ७८, ५९। 'कालदण्डोधतं यमम्', (८. ८१, ३१)। ८. ८४, ५। 'कालमिवात्तदण्डम्', (८. ८४, १८)। 'यमकालान्तकोपमौ', (८. ८७, १९)। 'कालपाशोपमायसी', (८. ८७, ९७)। ९. १, ३८। 'कालः क्रुद्धः प्रजास्विव', (९. ७, ३२)। 'कालसृष्ट इवान्तकः', (९. ११, २७)। 'कालोदण्डमिवोद्यम्य', (९. ११, ४२. ४६)। 'कालो यमश्च मृत्युश्च', (९. ४५, १७)। 'यमकालोपमौ', (९. ४५, ३०)। ९. ५५, ३१। 'कालेनापीह दण्डिना', (९. ६१, ६६)। 'कालोपसृष्टेन', (९. ६३, ४५)। ९. ६४, ९. १०; १०. ७, ६५; ८, ८। 'कालसृष्ट इवान्तकः', (१०. ८, ४२)। 'कालवत्', (१०. ८, ४७)। 'कालसृष्ट इवान्तकः', (१०. ८, ७७)। १०. ९, २१. २२। 'कालान्तकयमोपमः', (१०. १३, २२)। ११. २, ५, इत्यादि. २३, इत्यादि;३,८; ४, १०; ६, ८; ७, १२; ९, १३, इत्यादि। 'युगान्त इव कालेन पतितं सूर्यम्', (११. २३, १५)। 'हन्ता कालः', (१२. १५, १७)। 'कालो यथागतः', (१२. १५, २२)। 'कालधर्ममुपेयिवान्', (१२. ३१, ४५)। 'अपानभूमिं कालस्य', (१२. ४८, ५)। 'कालसृष्टम्', (१२. ६९, ८०)। 'काल इवान्तकः', (१२. ११६, ११)। 'कालं सर्वेशम्', (१२. १२२, ३३)। १२. १२२, ५२। 'कालसंमितः', (१२. १४३, १०. ११)। 'कालधर्ममुपागतः', (१२. १५३, १२)। 'कालवशं याति', (१२. १५३, ४३)। १२. १५३, ४४। 'कालान्तक इवोद्यतः', (१२. १६६, ४५)। १२. १८१, ११. १२; १९६, ६; १९८, ९; १९९, १, इत्यादि; २०६, ११. १२. १४; २२३, १; २२४, १९, इत्यादि; २२७, २९, इत्यादि; २३३. १५; २७५, ४–६. ९; २८०, ३५; २८५, १३. १८; ३०२, १३; ३२०, १०८; ३२१, ७६. ९२; ३४२, १३९ (= रुद्र)। 'कालमन्युवशं गताः', (१३. १, ७)। १३. १, १६. ५०. ५१, इत्यादि. ७०। 'कालान्तकोपमाः', (१३. ३, ४)। १३. १४८, ३९-४० (कृष्ण के साथ समीकृत); १५०, २०. ४१ (सात धरणीधरों में से एक); १६०, ४० (= रुद्र)। 'समयुज्यत कालेन', (१३. १६८, १०)। 'कालाधर्मणा', (१४. ५४, २२; ६१, २३)। 'कालान्तकयमोपमम्', (१४. ७४, २७)। 'कालाधर्मणा', (१६. ३, ३२)। 'कालपाशग्रहां भीमां नदीं वैतरणीमिव', (१६. ५, १०)। १६. ८, ३३, इत्यादि। 'कालपाशम्', (१७. १, ३)। तु० की० अन्तक, मृत्यु, यम।

२. काल = सूर्य (३. ३, १६)।

३. काल = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

४. काल = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

कालकञ्ज, कालखञ्ज (°ञ्जाः), बहु०, असुरों की एक जाति का नाम है। वरुण के सभाभवन में इनकी उपस्थिति (२. ९, १२)। ये हिरण्यपुर में निवास करते थे (३. १७३, २. १२)। अर्जुन ने इनका विनाश किया (३. १७३, १५)। 'महाकाया महावीर्याः कालखञ्जा इवासुराः', (४. १३, १६)। अर्जुन ने इनको विजित किया था (४. ४९, १०; ६१, २५; ५. ४९, १४)। 'असुराः कालखञ्जाश्च तथा विष्णुपदोद्भवाः', (५. १००, ५)। तु० की० बहु० कालकेय।

कालकटङ्कट = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कालकच्छ, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६९)।

कालकण्ठ, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६९)।

कालकवृक्षीय, एक मुनि का नाम है। ये इन्द्र की सभा में उपस्थित होते थे (२. ७, १८)। इन्होंने क्षेमदर्शिन् को उपदेश दिया (१२. ८२, ५)। 'मुनिः कालकवृक्षीयः', (१२. ८२, ६. ८२)। ये क्षेमदर्शिन् के पुरोहित हो गये (१२. ८२, ६७)। इनके द्वारा क्षेमदर्शिन् को उपदेश (१२. १०४, ११)।

कालका, महान् असुर-कुल की कन्या का नाम है। इसने कालकेयों को जन्म दिया (१३. १७३, ७)। तु० की० काला।

कालकाक्ष, एक दैत्य का नाम है जिसका गरुड ने वध किया था (५. १०५, १२)।

कालकीर्ति, सुपर्ण नामक असुर के अंश से उत्पन्न एक राजा का नाम है (१. ६७, ३७)।

१. कालकूट, समुद्र-मन्थन से प्रगट हुये एक भयानक विष का नाम है जिसका शिव ने पान कर लिया था (१. १८, ४१)। दुर्योधन ने भीमसेन के भोजन में कालकूट मिलाया था। (३. १२, ८०)। 'पीत्वा महाराज कालकूट सुदुर्जरम्', (७. १३५, २७)। तु० की० कालकूटक।

२. कालकूट, एक पर्वत का नाम है। शतशृङ्ग जाते समय पाण्डु ने इसे मार्ग में पार किया (१. ११९, ४८)। श्रीकृष्ण आदि ने इन्द्रप्रस्थ से गिरिव्रज जाते समय मार्ग में इसे लाँघा था (२. २०, २६)। यहाँ दुर्योधन की सेना ने पड़ाव डाला था (५. १९, ३०)।

३. कालकूट, उत्तराखण्ड में कालकूट पर्वत के आस-पास के प्रदेश का नाम है जिसे अर्जुन ने उत्तर-दिग्विजय के समय विजित किया था (२. २६, ४)।

कालकूटक, एक विष=कालकूट, का नाम है जिसे दुर्योधन ने भीमसेन के भोजन में मिलाया था (१. १२८, ४५. ५७)।

कालकेय (बहु०), असुरों की एक जाति का नाम है (१. १, १६४; २, १८५)। ये काला के पुत्र थे : 'विनाशनश्च क्रोधश्च क्रोधहन्ता तथैव च। क्रोधशत्रुस्तथैवान्ये कालकेया इति श्रुताः ॥', (१. ६५, ३५)। 'यथासुरान्कालकेयान्देवो वज्रधरस्तथा', (२. ४, २३)। इन्होंने वृत्र का अनुसरण किया (३. १००, ३; १०१, २)। हिरण्यपुर में इनकी स्थिति का उल्लेख (३, १७३, ११. १३)। अर्जुन ने इन्हें विजित किया था (५. १५८, ३०)। अर्जुन ने इनका वध कर दिया (७. ५१, १६; १२८, ४६; ८. ७९, ६०. ६२)। 'पूर्वं देवैरजितं कालकेयैः', (८. ८९, ३८)। 'प्रमाजमेयं कालकेयान्पृथिव्याम्', (१४. ९, ३०)। तु० की० बहु० कालकञ्ज।

कालकोटि, नैमिषारण्य के अन्तर्गत एक तीर्थ का नाम है। युधिष्ठिर ने तीर्थयात्रा करते समय इसका दर्शन किया (३. ९५, ३)।

कालखञ्ज (बहु०), देखिये बहु० कालकञ्ज।

कालघट, वेदविद्या के पारंगत एक ब्राह्मण का नाम है जो जनमेजय के सर्पसत्र के सदस्य बने थे (१. ५३, ८)।

कालचक्र (क्रः) = सूर्य (३. ३, २१)।

कालज्ञान : ९. ३७, १५. १७।

कालज्वलन = कालाग्नि। 'कालज्वलनसन्निभाः', (७. ९९, ७)। 'काल ज्वलनसन्निभैः', (७. १६६, ३१)।

कालञ्जर, एक पर्वत का नाम है जहाँ देवह्रद में स्नान से सहस्र गोदान का फल प्राप्त होता है (३. ८५, ५६. ५७)। 'हिरण्यबिन्दुः कथितो गिरौ कालंजरे महान्', (३. ८७, २१)। 'सत्त्वे चित्तं समावेश्य ततः कालंजरो भवेत्', (१२. २४६, ९)। 'गंगायमुनयोस्तीर्थे तथा कालञ्जरे गिरौ। दशाश्वमेधानाप्नोति तत्र मासं कृतोदकः ॥', (१३. २५, ३५)।

कालतीर्थ, अयोध्या के एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से ग्यारह वृषभदान का फल प्राप्त होता है (३. ८५, ११)।

कालतोयक, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ४७)।

कालद, एक जनपद का नाम है (६. ९, ६३)।

कालदन्तक, वासुकि-कुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ५७, ६)।

कालनाथ = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कालनेमि, एक महाबली दानव का नाम है जो इस पृथिवी पर कंस के रूप में उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ६७)।

कालनेमिहन् = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

कालपथ, विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ४, ५०)।

कालपर्वत, एक पर्वत का नाम है। रावण लङ्का से त्रिकूट और कालपर्वत को पार करने के पश्चात् समुद्र के समीप आया (३. २७७, ५४)। श्रीकृष्ण और अर्जुन ने शिव के पास जाते हुये मार्ग में इसे पार किया (७. ८०, ३१)।

कालपुष्पफलप्रदः = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कालपूजित = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कालपृष्ठ, उन नागों में से एक का नाम है जो शिव के घोड़ों के बालबन्धन बनाये गये थे (८. ३४, २९)।

कालमुख, बहु०, एक जाति के लोगों का नाम है जो मनुष्य और राक्षस दोनों के संयोग से उत्पन्न हुये थे। सहदेव ने दक्षिण-दिग्विजय के समय इन्हें विजित किया (२. ३१, ६७)।

कालयवन, गर्गाचार्य के तेज से उत्पन्न एक शक्तिशाली असुर नरेश का नाम है। इसका नारायण (श्रीकृष्ण) ने वध कर दिया (१२. ३३९, ९५)।

कालयोगिन् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कालरात्रि : 'कालरात्रिर्यथा', (६. १०४, ३४)। 'कालरात्रिमिवोद्यताम्', (७. १२५, ३२)। 'कालरात्रिनिभा', (७. १६९, २७)। 'कालरात्रिरिवोद्यता', (७. १८३, ८)। ८. ३४, ४८। 'कालरात्रिमिवात्युग्राम्', (८. ८१, २५)। 'कालरात्रीव दुर्दशा', (८. ८१, २९)। 'कालरात्रिमिवोद्यताम्', (९. ११, ५०)। 'कालरात्रिमिव पाशहताम्', (९. १७, ४३)। 'कालरात्रीमिवोद्यताम्', (९. २८, ४०)। १०. ८, ७०. ८४। 'कालरात्रिर्गुणोत्तरा', (१२. ३४७, ५३)। १३. १९, २१। 'कृत्या कालरात्रीव', (१३. ९३, ५८)।

कालवह्नि = कालाग्नि (१२. २२७, ८१)।

कालविङ्क, एक तीर्थ का नाम है (१३. २५, ४३)।

कालवेग, वासुकि कुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ५७, ६)।

कालशैल, एक पर्वत का नाम है (३. १३९, १)। युधिष्ठिर आदि ने गन्धमादन के मार्ग में इसे पार किया (३. १३९, ४)। तु० की० कालपर्वत।

कालसाह्वय, एक नरक का नाम है (१३. ४४, १९)।

कालसूर्य : ५. ९, ४१; ७. ८, २९; १६, १५; १०१, ७; ११७, ३६; ८. २४, २५; ९. ५५, ३८; १३. १४, २७०।

काला, दक्ष प्रजापति की पुत्रियों में से एक और कश्यप की पत्नी का नाम है (१. ६५, १२)। इन्होंने (चार प्रकार के) कालकेयों को उत्पन्न किया (१. ६५, ३४)।

कालाख्य = शिव (१३. १६, १७)।

कालाग्नि : 'कालाग्निसमतेजसम्', (१. ५४, २५)। 'कालाग्निसन्निभम्',) (३. १२४, २३)। 'कालाग्निरिव लोहितः', (३. २२९, ३३)। 'युगान्तकाले सम्प्राप्ते कालाग्निर्दहते जगत्', (३. २७२, ३२)। ४. ५५, ७; ५. ८३, १५। 'कालाग्निसमतेजसम्', (५. १७६, २६)। 'नाम्ना संवर्तको नाम कालाग्निः', (६. ७, २८)। 'कालाग्निमिव', (६. १४, १३)। 'कालाग्निसमतेजसम्', (६. ९२, १५)। 'दीप्तमिव कालाग्निम्', (७. १५, ५)। 'कालाग्न्यनिलवर्चसम्', (७. ४०, ११)। 'शरं कालाग्निसंयुक्तम्', (७. २०२, ८३)। 'कालाग्निसमवर्चसम्', (१२. १६६, ५१)। 'कालाग्निसदृशोपमः', (१२. २८२, ८) । 'कालाग्निसदृशोपमा', (१२. २८४,४७)। १२. ३१२, ८; १३. १५५, ७। 'कालाग्निसमतेजसा', (१३. १६०, ३१)।

कालात्मन् = कृष्ण (१२. ४७, ६६)।

कालाध्यक्ष = सूर्य (३. ३, २२)।

कालानल = कालाग्नि : 'कालानलविषाः', (१. ५७, २२)। ३. १४२, ६०। 'कालानलसमद्युतिः', (३, २०४, २३; २२७, १७)। 'शरं कालानलोपमम्', (५. १८२, २८)। 'कालानलन्निभानि', (६. ३५, २५)। 'कालानलसमप्रभम्', (६. ८२, ३६)। 'कालानलसमौ', (६. १००, ५३)। 'कालानलसंनिभेन', (७. ११८, १४)। 'कालानलद्युतिः', (७. १३९, ६४)। 'मल्लेन कालानलसन्निभेन', (७. १४०, १८)। 'कालानलसमम्', (७. १९७, ३५)। 'कालानलसमप्रख्यम्', (७. २०१, ७)। 'कालानलोपमः', (१२. २८३, ३१)। 'कालानलसमद्युतिः', (१३. १४, २५८)।

कालाप, युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित होने वाले एक मुनि का नाम है (२. ४, १८)।

कालाम्र, भद्राश्ववर्ष के शिखर पर स्थित एक महान् वृक्ष का नाम है (६. ७, १४)। इसका वर्णन (६. ७, १५–१८)।

कालार्क = कालसूर्य (५. १८१, ६)।

कालिक, एक पार्षद का नाम है जिसे पूषा ने स्कन्द को प्रदान किया था (९. ४५, ४३)।

१. कालिका, एक देवी का नाम है जो अन्य देवियों के साथ ब्रह्मा की सभा में उपस्थित होती थीं (२. ११, ४०)।

२. कालिका, एक नदी (?) का नाम है : 'कालिकासंगमे स्नात्वा कौशिक्यरुणयोर्गतः। त्रिरात्रोपोषितो राजन्सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥', (३. ८४, १५६)।

३. कालिका—स्कन्द की अनुचरी एक मातृका का नाम है (९. ४६, १४)।

कालिकाश्रम, विपाशा नदी पर स्थित एक तीर्थ का नाम है (१३. २५, २४)।

कालिकासङ्गम – देखिये २. कालिका।

कालिकेय, सुबल के पुत्र एक कुरुयोद्धा का नाम है जिसे अभिमन्यु ने पराजित किया था (७. ४९, ७)।

१. कालिङ्ग, कालिङ्गराज श्रुतायुध या श्रुतायुस् का नाम है। ये युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित होते थे (२. ४, २६)। 'कालिङ्गं च महारथम्', (२. ४४, २१)। 'आवन्त्यकालिङ्गजयद्रथेषु', (५. ६२, १६)। ये दुर्योधन की सेना में एक अक्षौहिणी सेना के अधिनायक थे (६. १६, १६)। ये भी पाँच प्रधान महारथियों के साथ दुर्योधन के आगे-आगे चल रहे थे (६. १७, २६)। 'योधयामास समरे कालिङ्गः सह सेनया', (६. ५४, २)। इन्होंने भीम से युद्ध किया (६. ५४, २०. २८. ३१. ७२)।

भीम ने इनका वध कर दिया (६. ५४, ७५)। तदनन्तर इनके चक्र-रक्षकों का भी भीम ने वध कर दिया (६. ५४, ७६)। मृतक योद्धाओं के साथ इनका उल्लेख (११. २५, ६)। तु० की० **कलिङ्ग, कलिङ्गाधिप, कलिङ्गाधिपति, कलिङ्गक, कालिङ्गक, कलिङ्गराज।**

२. कालिङ्ग (कलिङ्गराज पुत्र) = शक्रदेव (६. ५४, १२१)।

३. कालिङ्ग, (बहु०) = बहु० कलिङ्ग, एक जाति के लोगों का नाम है। 'सर्वे कालिङ्गसैन्यानां मनांसि समकंपयत', (६. ५४, ८६)। 'सर्वकालिङ्गयोधेषु', (६. ५४, ९१)। ६. ५४, ९९. १००. १०५। 'हत्वा सर्वकालिङ्गान्', (६. ५४, ११७)। ६. ५४, १२१। ये दुर्योधन का अनुसरण करते थे (६. ७०, २८)। इन लोगों ने शकुनि की मदद की (६. ७१, १४)। इन लोगों ने अभिमन्यु पर आक्रमण किया (७. ४६, २२)। अधार्मिक लोगों के साथ इनका उल्लेख (८. ४४, ४३)। ये लोग शाश्वत धर्म के ज्ञाता थे (८. ४५, १४)। कृष्ण ने इनका विनाश किया (१६. ६, ११)।

कालिङ्गक (कलिङ्ग-नरेश)—ये युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में पधारे थे (२. ३४, ११)।

२. कालिङ्गी (कालिङ्ग-नरेश की पुत्री) = करम्भा, जो अक्रोधन की पत्नी थी (१. ९५, २२)।

२. कालिङ्गी, तंसु की पत्नी और ईलिन की माता का नाम है (१. ९५, २७)।

कालिन्दी = यमुना (२. ९, १८; ४. ५, १)।

कालिय, एक नाग का नाम है (१. ३५, ६; ५. १०३, ९)।

१. काली = शान्तनु की पत्नी सत्यवती, जिसने व्यास को जन्म दिया : 'जनयामास यं काली शक्तेः पुत्रात्पराशरात्', (१. ६०, २)। १. १०५, ३; ५. १४७, १९. ३०; १७५, १ (गन्धवती); ६. ११९, ३४।

२. काली = दुर्गा (उमा) : ४. ६, १७; ६. २३, ४; १०. ८, ६९।

कालीयक, एक नाग का नाम है (१. ३५, १०)।

कालेय (बहु०) एक असुर-जाति का नाम है। इनके पुत्रों में से आठ के अंश से आठ पराक्रमी राजा हुये (१. ६७, ४७)। उन आठ पराक्रमी राजाओं में से एक मगध देश में जयत्सेन नामक राजा हुआ (१. ६७, ४८) 'बृहन्नामाष्टमस्तेषां कालेयानां नराधिप', (१. ६७, ५५)। ब्रह्मा की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ११, ५६)। इन्होंने देवताओं को पराजित कर दिया (३. १०१, ६)। इनके भय से त्रस्त होकर इन्द्र ने नारायण की शरण ली (३. १०१, ९)। इन्होंने समुद्र का आश्रय लिया और मुनियों का भक्षण किया (३. १०२, १)। 'कालोपसृष्टाः कालेयाः', (३. १०२, ७)। 'कालेयभयपीडितम्', (३. १०२, १२)। 'कालेय इति विख्यातो गणः परमदारुणः', (३. १०३, ७)। ३. १०४, १६. १८। जब अगस्त्य ने समुद्र का पान कर लिया तो मृत्यु से बचे हुये कुछ कालेयों ने वसुधा को विदीर्ण करके पाताल में प्रवेश किया (३. १०५, १२. १४)। मार्कण्डेय ने नारायण के उदर में इन्हें देखा (३. १८८, १२०)। तु० की० **असुर,** बहु० **कालकेय।**

कालेहिका, स्कन्द की अनुचरी एक मातृका का नाम है (९. ४६, २३)।

कालोदक, एक तीर्थ का नाम है। कालोदक, नन्दिकुण्ड, और उत्तर-मानस आदि तीर्थों में स्नान करने से मनुष्य भ्रूणहत्या के भय से मुक्त हो जाता है (१२. १५२, १२; १३. २५, ६०)।

कावेरी, एक नदी का नाम है। यह वरुण की सभा में उपस्थित होकर उनकी उपासना करती थी (२. ९, २०)। इसमें स्नान करने से सहस्र गोदान का फल मिलता है (३. ८५, २२)। मार्कण्डेय ने इसे अन्य नदियों के साथ नारायण के उदर में देखा था (३. १८८, १०५)। अग्निमाताओं में से एक (३. २२२, २५)। भारतीय नदियों में से एक (६. ९, २०)। १३. १६५, २०. २२।

१. काव्य, कवि प्रजापति के आठ वारुणसंज्ञक पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ८५, १३३)।

२. काव्य = शुक्र, व० स्था०।

काशकुशादयः, काश के अभिमानी देवता का नाम है जो यम की सभा में धर्मराज की उपासना करते हैं (२. ८, ३२)।

काशपौण्ड्र, एक जनपद का नाम है (८. ४५, १४)।

काशि० बहु, एक स्थान के निवासियों का नाम है जिन्हें पाण्डु ने विजित किया (१. ११३, २९)। अर्जुन द्वारा इस देश के विजित होने की भविष्यवाणी हुई (१. १२३, ४०)। भीमसेन ने यहाँ के निवासियों को विजित कर लिया था (५. ५०, १९)। सहदेव ने इन्हें पराजित किया था (५. ५०, ३१)। ये युधिष्ठिर के पक्ष में थे (५. ५७, ३३; ७२, १४)। दिवोदास इनका राजा था (५. ११७, १)। 'काशिनगरम्', (५. १७६, १२)। 'चेदि काशिकरूपाणां नेतारं दृढविक्रमम्। सेनापतिममित्रघ्नं धृष्टकेतुमथादिशत्॥', (५. १९६, २)। 'काशयोऽपरकाशयः', (६. ९, ४२)। 'काशिपुर्याम्', (६. १३, ६)। युधिष्ठिर की सेना में स्थित इन पर भीष्म ने आक्रमण किया (६. ४७, ४)। इन्होंने धृष्टकेतु का अनुसरण किया (६. ५६, १४)। भीष्म ने इनका वध कर दिया (६. १०६, १८; ११६, ७५)। 'काशिपुरम्', (६. १२२, १७)। कर्ण द्वारा विजित (७. ११, १५)। इन्होंने द्रोण पर आक्रमण किया (७. १२५, ५३)। कर्ण ने इन्हें विजित किया जिससे इन्होंने दुर्योधन को भेंट अर्पित की (८. ८, १९)। महायुद्ध में भीष्म ने इन पर विजय प्राप्त की (८. ७३, २९)। 'विषये काशिराजस्य', (१३. ५, ३)। इस देश पर हर्यश्व, सुदेव और उनके बाद दिवोदास ने शासन किया (१३. ३०, १०)। 'विषयः काशीनाम्', (१३. ३०, ५१)। वृषदर्भ उशीनर ने इस पर राज्य किया (१३. ३२, ९)। 'काशीनागीश्वरः', (१३. ३२, ३७)। अम्बा आदि के स्वयंवर के अवसर पर भीष्म ने इन्हें पराजित किया (१३. ४४, ३८)। 'काशिपुर्याम्', (१३. १६८, २६)। यज्ञाश्व इस जनपद में भी गया (१४. ८३, ४)। तु० की० बहु० **काशिक,** बहु० **काश्य।**

१. काशिक, युधिष्ठिर के एक उदार रथी का नाम है (५. १७१, १५)।

२. काशिक (बहु०) = बहु० काशि, एक जाति के लोगों का नाम है जो दुर्योधन के पक्ष में थे (७. २४, ७)। इन्होंने अभिभूः का अनुसरण किया (८. ६, २३)।

काशिकन्या = अम्बा। इसने शिखण्डिन् के रूप में पुनर्जन्म ग्रहण किया (५. ५०, ३४)। ५, १७८, ६. १७; १८०, १७; १८६, २५. २९. ३७।

काशिकरूपराज = अलर्क (३. २५, १३)।

काशिन्, प्रजापति कवि के आठ वारुणसंज्ञक पुत्रों में से सातवें का नाम है (१३. ८५, १३३)।

काशिनगर = वाराणसी (५. १७६, १२)।

काशिनन्दन, काशिराज के पुत्र सुदेव का नाम है (१३. ३०, १४)।

काशिप, काशी के राजा सुवर्णनामन् का नाम है जो जनमेजय पारिक्षित की पत्नी वपुष्टमा के पिता थे (१. ४४, ८)।

१. काशिपति, काशि के राजा का नाम है जो अम्बा, अम्बिका और अम्बालिका के पिता थे। भीष्म ने इनकी पुत्रियों का अपहरण करके विचित्रवीर्य के साथ विवाह कर दिया (१. १०२, ३)। 'काशिपतेः सुता', (१. १०२, ६०)। 'ज्येष्ठामम्बां काशिपतेः सुताम्', (१. १०२, ६४)। 'काशिपतेः सुता', (१. १०६, २४)। 'काशिपतेः पुरीम्', (५. १७३, ११)। इनकी कन्याओं के भीष्म द्वारा अपहृत होने का उल्लेख (५. १७४, २)। 'ज्येष्ठा काशिपतेः सुता', (५. १७४, ४; १७५, १९. २१; १८६, ३९)। 'ज्येष्ठा काशिपतेः कन्या अम्बानामेति विश्रुता', (५. १९२, ६४)। तु० की० **काशिराज।**

२. काशिपति, काशिदेश के अधिपति महारथी नरेश का नाम है जो वाराणसी पुरी में निवास करते थे। ये युधिष्ठिर के पक्ष में थे (५. ५०, ४१)। इन्होंने द्रोण पर आक्रमण किया (७. ८, २५)। तु० की० **५. काशिराज; २. काश्य।**

३. **काशिपति** = प्रतर्दन (१२. २३४, २०; १३. १३७, ५)।

काशिपुर = वाराणसी (६. १२२, १७)।

काशिपुरी = वाराणसी (६. १३, ६; १३. १६८, २६)।

१. **काशिराज** से एक और एकाधिक राजाओं का तात्पर्य है। ये दीर्घजिह्व नामक दानवराज के अंश से उत्पन्न हुये थे (१. ६७, ४०)। 'यः पुत्रं काशीराजस्य वाराणस्यां महारथम्। समरे सोपु गृध्यन्तं भल्लेनापाहरद्रथात्॥', (७. १०, ६०)। कृष्ण ने इनका वध कर दिया (१६. ६, १२)।

२. **काशिराज**, अम्बा, अम्बिका और अम्बालिका के पिता का नाम है। इन्होंने स्वयंवर का आयोजन किया जिसमें भीष्म ने आकर इनकी तीनों पुत्रियों का अपहरण कर लिया (१. १०२, १८)। 'काशिराजस्वयंवरे', (५, १६८, ३५)। तु० की० **१. काशिपति**।

३. **काशिराज**, बृहद्रथ की दोनों पत्नियों के पिता का नाम है (२. १७, १७)।

४. **काशिराज** = सुबाहु। भीम ने अपनी दिग्विजय के अवसर पर इसे विजित किया था (२. ३०, ६)।

५. **काशिराज**—ये एक अक्षौहिणी सेना के साथ युधिष्ठिर के पास आये (४. ७२, १६)। युधिष्ठिर के सहायकों में इनकी गणना (५. ८०, १४)। ५. ८३, ३०। युधिष्ठिर की सेना में इनकी उपस्थिति का उल्लेख (६. २५, ५)। ये युधिष्ठिर के क्रौञ्चव्यूह में स्थित थे (६. ५०, ५७; ५१, २७)। इन्होंने आवन्त्य के साथ युद्ध किया (६. ७१, २०)। ७. ८, २८। वसुदान के पुत्र ने इनका वध कर दिया (८. ६, २३)। तु० की० **अभिभू**; **२. काशिपति**; **२. काश्य**।

६. **काशिराज** = सुदेव (१३. ३०, १३)।

काशिराजदुहितरौ, काशिराज की दो पुत्रियों=अम्बिका और अम्बालिका का नाम है (१. ९५, ५१)।

काशिराजन्=२. काशिराज (५. १७६, १८)।

काशिराजसुता = अम्बा (५. १७६, ४४; १७७, २२; १७८, २८. ९१)।

काशिराजसुताः = अम्बा, अम्बिका और अम्बालिका (५. १७३, ९)।

१. **काशिराजसुते** = अम्बिका और अम्बालिका (१. १०३, ९)।

२. **काशिराजसुते**, बृहद्रथ की दो पत्नियों का नाम है (२. १७, ५०)।

काशिसुता = अम्बा (५. १८६, १८; १८७, १९)।

काशिसुते = अम्बिका और अम्बालिका (१. १०९, २४)।

१. **काशीश**, काशि के एक राजा का नाम है जो दुर्योधन के पक्ष में थे (९. २, १७)।

२. **काशीश** = दिवोदास (१३. ३०, १५)।

काशीश्वरस्य तीर्थ (म्रृ), एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ५७)।

काशेयी, (काशिराज की पुत्री) = सुनन्दा।

१. **काश्मीर** (बहु०), एक जनपद का नाम है। यहाँ के निवासियों ने युधिष्ठिर को भेंट दी (२. ५२, १४)। 'काश्मीरेष्वेव नागस्य भवनं तक्षकस्य च। वितस्ताख्यमिति ख्यातं सर्वपापप्रमोचनम्॥', (३. ८२, ९०)। ६. ९, ५३. ६७। राम जामदग्न्य ने इन्हें पराजित किया (७. ७०, ११)। तु० की० बहु० **काश्मीरक**।

२. **काश्मीर** (वि०): 'काश्मीरीव तुरङ्गमी', (४. ९, ११)।

१. **काश्मीरक** (वि०)—इन लोगों को अर्जुन ने अपने दिग्विजय के समय विजित किया (२. २७, १७)। ये लोग युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित हुये (२. ३४, १२)।

२. **काश्मीरक** (बहु०), एक जनपद = बहु० काश्मीर। यहाँ के लोग युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में सम्मिलित हुये (३. ५१, २६)। कृष्ण ने इन्हें विजित किया (७. ११, १६)।

काश्मीरमण्डल—यहाँ अग्नि और काश्यप, तथा नहुषकुमार ययाति और उत्तर के समस्त ऋषियों के बीच संवाद हुआ था (३. १३०, १०–११)। सिन्धु में गिरने वाली यहाँ की चन्द्रभागा, वितस्ता और महानद नदियों, तथा सिन्धु में स्नान करके मनुष्य मृत्यु के पश्चात् स्वर्गगामी होता है (१३. २५, ७–८)।

१. **काश्य**, काशि के एक राजा, अम्बा, अम्बिका और अम्बालिका, का नाम है (१. १०२, ५६)। 'सुतां काश्यस्य', (५. १७८, ४१)।

२. **काश्य**, युधिष्ठिर के समय के काशिराज का नाम है जो युधिष्ठिर के राजसूय-यज्ञ में उपस्थित हुये थे (२. ५३, ९)। इनके और अन्य राजाओं के दिये गये धन को युधिष्ठिर जूये में हार गये (२. ६८, २)। इन्हें पाण्डवों की ओर से रणनिमन्त्रण भेजा गया था (५. ४, १९)। इनके पुत्र का नाम अभिभू था (५. १५१, ६३)। ये युधिष्ठिर की सेना में महारथी थे (५. १७१, २२)। 'पुत्रः काश्यस्य वा विभुः', (५. १९६, २८)। ये युधिष्ठिर की सेना में उपस्थित महाधनुर्धर थे (६. २५, १७)। 'पुत्रः काश्यस्य चाभिभूः', (६. ५१, २०; ९३, १३)। 'काश्यस्याभिभुवः पुत्रं सुकुमारं महारथम्', (७. २३, २७)। 'पुत्रः काश्यस्य चाभिभूः', (७. २३, ४१)। धृतराष्ट्रपुत्र जय के साथ इनका युद्ध (७. २५, ४५)। 'पुत्रः काश्यस्य चाभिभूः', (७. ८५, ४१)। शैव्य गोवासन ने इन पर आक्रमण किया (७. ९५, ३८; ९६, ११)। तु० की० **अभिभू**, **२. काशिपति**, **५. काशिराज**।

३. **काश्य** = ७. बभ्रु (५. २८, १३)।

४. **काश्य**, एक प्राचीन ऋषि का नाम है जो शरशय्या पर पड़े भीष्म के पास आये थे (१२. ४७, १० । १३. १४, ३९७ ।

५. **काश्य** (बहु०), एक जनपद = बहु० काशि (८. ४७, १७)।

१. **काश्यप**, एक ब्रह्मर्षि का नाम है (१. ३, १८२)। १. ४२, ३३. ३६. ३८. ४१। "ये सर्पदंशन से पीड़ित हुये परिक्षित् का प्राण बचाने के लिये हस्तिनापुर जा रहे थे। मार्ग में इनकी तक्षक से भेंट हुयी और इन्होंने तक्षक के डसने से भस्म हुये वृक्ष को अपने मन्त्रबल से पुनः पूर्ववत् हरा-भरा कर दिया जिस पर तक्षक ने इन्हें प्रचुर धन दिया और ये वहाँ से लौट आये (१. ४३, १. ३. ४. ६. ११. १६,१८–२०)।" १. ५०, १७–१९. २३. २४. २७. ३४. ३८ (संवादं पन्नगेन्द्रस्य काश्यपस्य च). ५०–५२। ये भी अन्य लोगों के साथ युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित होते थे (३. २६, २३)। इनकी कुछ गाथाओं का उल्लेख किया गया है (३. २९, ३५–४५)। 'अग्नेश्चैवात्र संवादः काश्यपस्य च', (३. १३०, ११)। ३. १८५, २१; २२०, १। भीष्म को घेर कर खड़े होने वाले ऋषियों में एक यह भी थे (१२. ४७, १०)। 'इन्द्रकाश्यपसंवादम्', (१२. १८०, ४)। 'ऋषिसुतं काश्यपम्', (१२. १८०, ५)। १२. १८०, ९. १९. ३९. ५२. ५४; २९६, १४; १३. २२, १०. १२। पृथिवी, अग्नि, काश्यप और मार्कण्डेय का संवाद (१३. २२, १५)। अन्य लोगों के साथ ये भी भीष्म को देखने के लिये आये (१३. २६, ५)। १३. ४७, ६१। राम जामदग्न्य ने दक्षिणा के रूप में इन्हें पृथिवी समर्पित की थी (१३. ६२, ३४)। राम जामदग्न्य ने इनसे प्रश्न किया (१३. ८४, ३८)। ये श्रीकृष्ण के तप को देखने के लिये आये (१३. १३९, ११)। १३. १५०, ७९। पश्चिम के ऋषियों में से एक (१३. १६५, ४२)। १४. १६, १९. २३. २६. ४६; १७, २। तु० की० **कश्यप** और निम्नलिखित शीर्षक।

२. **काश्यप** (कश्यप का पुत्र या वंशज) = कण्व (१. ७०, २७)। 'महर्षिं काश्यपं द्रष्टुमथ कण्वं तपोधनम्', (१. ७०, ३१)। १. ७०, ३३. ५०. ५१; ७३, २२।

३. **काश्यप** = विभाण्डक : 'आश्रमश्चैव पुण्याख्यः काश्यपस्य महात्मनः', (३. ११०, २३)। 'काश्यपस्य सुतः', (३. ११०, २५)। ३. ११०, ३४; १११, ४. ५. २१; ११३, ६. ८. १६।

४. **काश्यप** = राजधर्मन् (१२. १७०, ९. ११; १७१, ७)।

५. **काश्यप** = विश्वावसु (१२. ३१८, ५५. ७९. ८२)।

६. **काश्यप** = इन्द्र (?) (१३. १४, ३६)।

७. **काश्यप**, एक अग्नि का नाम है (३. २२०, १. ९)।

८. **काश्यप** (द्वि०) = याज और उपयाज (१. १६७, ८)।

९. **काश्यप** (बहु०) युधिष्ठिर के साथ इनकी उपस्थिति (३. २६, ७)। ३. ११५, २; १२. १६६, २३।

काश्यपद्वीप, एक द्वीप, जो चन्द्रमा में प्रतिबिम्बित खरगोश की आकृति में एक कान के रूप में दृष्टिगोचर होता है (६. ६, ५५)।

काश्यपनन्दन (बहु०) = देवता (१३. ६६, २२)।

काश्यपपुत्र = ऋष्यशृङ्ग (३. १११, ११)।

काश्यपात्मज = ऋष्यशृङ्ग (३. ११०, २७)।

काश्यपि = राजधर्मन् (१२. १७०, ५)।

काश्यपी (कश्यप-पुत्री) = पृथिवी (१३. ६२, ६२; ९१, ३५; १५४, ६. ७)।

१. काश्यपेय (कश्यप-पुत्र) = गरुड (१. २३, १३)।

२. काश्यपेय (कश्यप का वंशज) = दारुक (७. १४७, ५५)।

३. काश्यपेय बहु०, (कश्यप के पुत्र) = आदित्य (१३. १५०, १६)।

काष्ठ, कुबेर की सभा में उपस्थित होनेवाले शिव के एक सेवक (?) का नाम है (२. १०, ३५)।

१. काष्ठाः बहु० (कालपरिमाण)–स्कन्द के अभिषेक के समय इसकी उपस्थिति (९. ४५, १५)।

२. काष्ठाः = सूर्य (३. ३, २०)।

३. काष्ठा = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

काहलि = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

किं = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

किंजप्य, कुरुक्षेत्र के अन्तर्गत एक तीर्थ का नाम है (२. ८३, ७९)।

किंदत्त, एक कूपमय तीर्थ का नाम है जहाँ सेर भर तिल दान करने से मनुष्य तीनों प्रकार के ऋणों से मुक्त हो जाता है (३. ८३, ९८)।

किंदम, एक मुनि का नाम है। मृगरूपधारिणी पत्नी के साथ मृगरूप धारण करके मैथुन करते समय पाण्डु ने इनका वध कर दिया जिस पर इन्होंने पाण्डु को शाप दे दिया (१. ११८, २८)।

किंदान, कुरुक्षेत्र के अन्तर्गत एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ७९)।

१. किङ्कर एक राक्षस का नाम है जो कल्माषपाद में प्रविष्ट हो गया था (१. १७६, २१)।

२. किङ्कर': 'यमः साक्षादुपागच्छत् सकिङ्करः', (३. २९८, ३८)। 'किंकरोद्यतदण्डेन मृत्युना', (८. ५०, २४)। 'अन्तकाले यथा क्रुद्धो मृत्युः किंकरदण्डभृत्', (३. ५६, १२०)। 'वैवस्वतमिव क्रुद्धं किंकरोद्यतपाणिनम्', (९. ३२, ५०)। 'मृत्युर्वैकिङ्करो दण्डः', (१३. ६२, २७)।

३. किङ्कर, बहु०, एक राक्षस जाति का नाम है (२. २, १३२)। 'किंकरैः सह रक्षोभिः', (२. ३, १९)। ये युधिष्ठिर के भवन की रक्षा करते थे (२. ३, २८)। 'तेन चैव मयेनोक्ताः किंकरा नाम राक्षसाः। वहन्ति तां सभां भीमास्तत्र का परिवेदना ॥', (२. ४८, ९)। युधिष्ठिर ने इन्हें बलि दी (१४. ६५, ६)।

किङ्किणीकाश्रम, एक तीर्थ का नाम है (१३. २५, २३)।

१. कितव = शकुनि (१. २, १३७; ७. ३४, २३)।

२. कितव = दुःशासन (१. १, १५८)।

३. कितव = उलूक (५. १६३, ५४ = कैतव्य)।

४. कितव = (बहु०), एक जाति के लोगों का नाम है। इन्होंने युधिष्ठिर को भेंट अर्पित किया (२. ५१, १२)। इन्होंने भीष्म की रक्षा की (६. १०६, ७)। इन्होंने भीष्म का साथ नहीं छोड़ा (६. ११९, ८१)। ये दुर्योधन की सेना में सम्मिलित थे (७. ७, १६)।

किन्नर (बहु०) : 'किन्नरैरप्सरोभिश्च देवैरपि च सेवितम्', (१. १८, २)। ये पुलस्त्य की संतान हैं (१. ६६, ७)। 'सेवितं वनमत्यर्थं महद्वानरकिंनरम्', (१. ७०, १५)। 'किंनरोद्गीतमापिणि', (१. १७२, १०)। ये कृष्ण और अर्जुन का सत्कार करते हैं (१. २२८, २१)। ये युधिष्ठिर के सभा-भवन में गायन करते थे (२. ४, ३८)। कुबेर के भवन में इनकी उपस्थिति (२. १०, १४)। इन्होंने वडवा तीर्थ में विष्णु की प्रसन्नता के लिये चरु अर्पित किया (३. ८२, ९४)। ये सौगन्धिक वन में निवास करते हैं (३. ८४, ५)। गोकर्ण तीर्थ में इनकी उपस्थिति का उल्लेख (३. ८५, २५)। गंगाद्वार इनका निवासस्थान है (३. ९०, २०)। हिमालय पर्वत पर इनकी स्थिति (३. १०८, १०)। कैलास पर्वत पर कुबेर के भवन में ये लोग निवास करते थे (३. १३९, १२)। 'किन्नरचरितं गिरिम्', (३. १४३, ६)। 'वानरकिन्नरैः', (३. १४५, १४)। 'गिरिं च चारारिहरः किन्नराचरितं शुभम्', (३. १४६, १५)। ये कुबेर के सरोवर का सेवन करते थे (३. १५३, ९)। 'किन्नरसेविताम्', (३. १५८, ९९)। ३. १६०, ३६। ये कुबेर के अनुगामी थे (३. १६२, ११)। 'नगोत्तमं प्रस्रवणैरुपेतं दिशां गजैः किन्नरपक्षिभिश्च', (३. १७७, १)। 'कथां वेत्सि मुने दिव्यां मनुष्योरगरक्षसाम् ॥ देवगन्धर्वयक्षाणां किन्नराप्सरसां तथा ।', (३. २०१, ४. ५)। 'देवदानवयक्षाणां किन्नरोरगरक्षसाम् ।', (३. २२४, ८)। सर्पकिन्नरभूतेभ्यः', (३. २७५, २५)। 'देवदानवकिन्नराः', (३. २९०, २८)। 'गन्धर्वयक्षप्रवराः सकिन्नरमहोरगाः', (४. ७०, १२)। 'सकिन्नरमहोरगम्', (५. १२, २)। 'किन्नरोरगराक्षसाः', (५. १५, १८)। 'मन्दरस्य प्रदेशांश्च किन्नरोद्गीतनादितान्', (७. ८०, २९)। किन्नरैश्चोपशोभितम्', (७ ८०, ३३)। 'सकिन्नरमहोरगा', (७. १११, ३१)। ७. १६३, १४; ९. ४६, ८८। 'यक्षकिन्नरसेवितम्', (७. १६९, ७)। 'किन्नरयक्षराक्षसाः', (१२. २२८, ९३)। 'नरकिन्नररक्षांसि', (१२. २३२, १५)। 'सकिन्नरमहोरगं', (१२. ३०२, ३१)। हिमवत् पर्वत पर इनकी उपस्थिति (१२. ३२७, ४)। 'सकिन्नरमहोरगाः', (३. ३३४, १६)। 'गीतैस्तथा किन्नराणामुदारैः', (१३. १४, ५३)। कुबेर के सभाभवन में इनके उपस्थित होने का उल्लेख (१३. १९, ४१)। 'किन्नरोरगरक्षांसि', (१३. ५८, २९)। 'किन्नरोरगराक्षसाः', (१३. ८३, ८)। 'पिशाचकिन्नराणाम्', (१३. ८७, ४)। 'किन्नरराजजुष्टम्', (१३. १०२, २३)। १३. १४०, ७। 'नरकिन्नरयक्षाणाम्', (१४. ४३, १४; ४४, १५)। 'किन्नरा रौद्रदर्शनाः', (१४. ६३, १५)। ये युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ में उपस्थित हुये (१४. ८८, ३७)। 'गन्धर्वाश्च सकिन्नराः', (१४. ९२, २५)।

किन्नरी (एकव० और बहु०)—रैभ्य मुनि की पुत्रवधू किन्नरी के समान आश्रम में विचर रही थी (३. १३६, २)। गन्धमादन पर्वत पर किन्नरियाँ क्रीड़ा करती थीं (३. १५८, ३९)। सुदेष्णा ने द्रौपदी से पूछा कि वह किन्नरी अथवा रोहिणी आदि तो नहीं है (४. ९, १५)। 'किन्नरीगीतजुष्टम् (१३. १०२, २०)।

किम्पुना, एक नदी का नाम है जो अन्य नदियों के साथ वरुण की सभा में उपस्थित होती है (२. ९, २०)। मार्कण्डेय ने इसका नारायण के उदर में दर्शन किया (३. १८८, १०५)।

किम्पुरुष (बहु०), एक जाति का नाम है जो पुलह की सन्तान हैं (१. ६६, ८)। अर्जुन ने अपनी दिग्विजय के समय उत्तर दिशा में इन्हें विजित किया था (२. २८, १)। ये अगस्त्य द्वारा समुद्रपान का अद्भुत दृश्य देखने के लिये आये (३. १०४, २१)। ये माणिभद्र की उपासना में लगे रहते थे (३. १३९, ६)। उत्तरदिशा में इनकी स्थिति का उल्लेख (३. १४५, १४)। ये कुबेर के क्रीडास्थलरूप सरोवर की रक्षा करते थे (३. १५३, ९)। ये गन्धमादन पर निवास करते थे (३. १५८, ३८. ९७)। ३. १५९, १७। इन्हों ने भी कुबेर के साथ गन्धमादन पर निवास किया (३. २७५, ३३)। 'देवदानवगन्धर्वयक्षकिम्पुरुषैः', (३. २८१, ३)। ७. १९९, २; १२. १६९, ५। इनकी उत्पत्ति कश्यप की पत्नी के गर्भ से हुई (१२. २०७, २५)। युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ में ये भी उपस्थित थे (१४. ८८, ३७)।

किम्पुरुषसिंह = द्रुम (५. १५८, ३)।

किम्पुरुषाचार्य = द्रुम (२. ३७, १३; ४४, १६)।

किम्पुरुषेश = द्रुम (२. १०, २९)।

१. किरात (बहु०), एक असभ्य जाति के लोगों का नाम है जिनकी वसिष्ठ की गाय के पार्श्वभाग से सृष्टि हुई (१. १७५, ३७)। 'वङ्गपुण्ड्रकिरातेषु', (२. १४, २०)। इन्होंने भगदत्त का अनुसरण किया (२.

२६, ९)। भीमसेन ने पूर्वदिशा के किरातों के सात राजाओं को विजित किया (२. ३०, १५)। पश्चिम दिशा में नकुल ने इन्हें विजित किया (२. ३२, १७)। इन्होंने युधिष्ठिर को भेंट अर्पित की (२. ५२, ९)। ये युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित थे (३. ५१, २४)। गंगाद्वार में इनकी स्थिति का उल्लेख (३. ९०, २०) । 'किराततङ्गणाकीर्णम्', (३. १४०, २५)। ये भगदत्त की अक्षौहिणी में सम्मिलित थे (५. १९, १५)। ५. ६४, १६. २१। ये दुर्योधन की सेना में सम्मिलित थे (५. १९५, ७)। ६. ९, ५१. ५७। उत्तरपूर्व में इनकी स्थिति (६. ९, ६९)। इन्होंने युद्ध में कृप का अनुसरण किया (६. २०, १३)। ये युधिष्ठिर की सेना में सन्नद्ध थे (६. ५०, ४८)। कर्ण ने इन्हें दुर्योधन के लिये विजित किया था (७. ४, ७)। "ये जिन हाथियों पर चढ़े हुये थे वे वही थे जिन्हें दिग्विजय के समय अपनी प्राणरक्षा की इच्छा से किरातों ने अर्जुन को भेंट किया था। रणदुर्मद किरात उन हाथियों के महावत और उन्हें शिक्षा देने में कुशल थे। इनके हाथी अञ्जन नामक दिग्गज के कुल में उत्पन्न हुये थे जिनका स्वभाव अत्यन्त कठोर था। उन्हें युद्ध की अच्छी शिक्षा मिली थी; उनके गण्डस्थल और मुख से मद की धारा बहती रहती थी; वे सबके सब सुवर्ण कवचों से विभूषित थे और युद्ध में वे सब-के-सब ऐरावत के समान पराक्रम प्रगट करते थे। उन गजराजों पर तीक्ष्ण स्वभाव वाले लुटेरे और डाकू आरूढ़ थे, जिन्होंने लोहे के कवच आदि धारण कर रक्खे थे (७. ११२, २८. ३०. ३२–४९)।" ये सब विविध प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित होकर सात्यकि के विरुद्ध युद्ध करने के लिये सन्नद्ध थे (७. ११९, १५)। सात्यकि ने सहस्रों किरातों का वध कर दिया (७. ११९, ४६)। अर्जुन ने इन्हें पराजित किया (८. ७३, २०)। बर्बर जातियों के अन्तर्गत इनकी गणना कराई गई है (१२. ६५, १३; २०७, ४३)। शिव ने किरात का रूप धारण किया (१३. १४, १४१)। इनका शूद्रों के रूप में पतन हो गया था (१३. ३५, १८)। अश्वमेध यज्ञ के घोड़े के साथ दिग्विजय करते समय अर्जुन ने इन्हें पराजित किया था (१४. ७३, २५)। 'काशीनंगान्कोसलांश्च किरातानथ तंगणान्', (१४. ८३, ४)।

२. किरात, अर्जुन से युद्ध करते समय किरातवेषधारी शिव का नाम है : 'देवदेवं किरातरूपं त्र्यम्बकम्', (१. १, १६२)। 'महादेवेन युद्धं च किरातवपुषा सह', (१. २, १५८)। 'किरातवेषसंच्छन्नः', (३. ३९, ५)। ३. ३९, ११. १३. १७. २२. २८. ३२. ३६. ५४–५७. ५९. ६६; १६७, २२. ४३। 'किरातरूपेण स्थितं रुद्रम्', (४. ४९, ७)। 'किरातरूपेण स्थितं शर्वम्', (८. ३१, ३)।

किरातराज (किरातों के अधिपति) पुलिन्द युधिष्ठिर की सेवा में उपस्थित रहते थे (२. ४, २४)। किरातराज सुमना (?) युधिष्ठिर की सभा में उनकी सेवा के लिये बैठते थे (२. ४, २५)। इन्होंने अर्जुन को भेंट में हाथी प्रदान किये (७. ११२, २८)।

किरातराजन् = सुबाहु (३. १७७, ११)।

किरीटकौस्तुभधर = कृष्ण (विष्णु, नारायण) : ३. २०३, १८; ६. ६६, २२।

किरीटभृत्, **किरीटमालिन्**, **किरीटवत्** = अर्जुन, स्था व०।

किरीटितनयात्मज (किरीटिन् का पौत्र) = परिक्षित (१४. ६७, ११)।

१. किरीटिन् = अर्जुन, व० स्था०।

२. किरीटिन् = नर (१. १९, ३१)।

३. किरीटिन् · इन्द्र (१. २९, ६; २. ७, ५)। इन्द्र की आकृति में शिव (१३. १४, १७४)। १३. ४०, २९)।

४. किरीटिन् = शिव (१३. १४, ३८७)।

५. किरीटिन्, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७१)।

किर्मीर, एक राक्षस का नाम है। 'किर्मीरस्य वधश्चात्र भीमसेनेन संयुगे', (१. २, १५०)। भीमसेन ने इसका वध किया था (३. १०, २३)। 'किर्मीरः कथं भीमेन पातितः', (३. १०, ३७)। 'किर्मीरवधसंविग्नः', (३. १०, ३९)। 'किर्मीरस्य वधम्', (३. ११, १)। 'अहंबकस्य वैभ्राता किर्मीर इति विश्रुतः', (३. ११, २३)। ३. ११, २८. ४६। भीम ने इसका वध कर दिया (३. ११, ६९)। 'किर्मीरं रक्षसां वरम्', (३. ११, ७५)। यह अलायुध का सखा एक महातेजस्वी योद्धा था (७. १७६, ४)। 'हिडिम्बबककिर्मीरा निहता मम बान्धवाः', (७. १७६, ७) 'राक्षसेन्द्रा हिडिम्बकिर्मीरबकप्रधानाः', (७. १८०, ३३)। 'हिडिम्बबक किर्मीरा भीमसेनेन पातिताः', (७. १८१, २३)।

किर्मीरवध : १. २, ४९।

किर्मीरवधपर्वन्, महाभारत के ३१ वें अवान्तरपर्व का नाम है। "धृतराष्ट्र के पूछने पर विदुर ने बताया कि उन्होंने भीमसेन के द्वारा किर्मीरवध के भयङ्कर कर्म के सम्बन्ध में पाण्डवों के कथाप्रसङ्ग में बार-बार सुना था। विदुर ने धृतराष्ट्र को बताया कि जूए में पराजित पाण्डव तीन दिन और तीन रात में हस्तिनापुर से काम्यकवन जा पहुँचे। उस वन में भयंकर राक्षस विचरण करते रहते थे। जब पाण्डवों ने उस वन में प्रवेश किया तो किर्मीर नामक राक्षस उनका मार्ग रोक कर खड़ा हो गया : किर्मीर का विस्तृत वर्णन। युधिष्ठिर के पूछने पर किर्मीर ने कहा : 'मैं बकासुर का भाई, किर्मीर हूँ ।······आज सौभाग्यवश देवताओं ने यहाँ मेरे बहुत दिनों के मनोरथ को पूर्ति कर दी है। भीम मेरे भाई का हत्यारा है। इसी प्रकार भीम ने मेरे मित्र हिडिम्ब का भी वध करके उसकी बहन हिडिम्बा का अपहरण कर लिया। अब आज मैं अपने इन पुराने वैरों का प्रतिशोध लूँगा।' किर्मीर की बात सुन कर यद्यपि अर्जुन भी क्रुद्ध हो उस पर पर प्रहार करने के लिये उद्यत हुये, तथापि भीमसेन ने उन्हें रोकते हुये उस राक्षस से स्वयं ही युद्ध करने की इच्छा प्रगट की। भीम और किर्मीर में उसी प्रकार भीषण मल्ल युद्ध हुआ जिस प्रकार प्राचीन काल में वालिन् और सुग्रीव में हो चुका था। अन्ततोगत्वा भीम ने उस राक्षस किर्मीर को उठा कर भूमि पर पटक दिया और उसका वध कर दिया। तदनन्तर द्रौपदी को आगे कर पाण्डव वहाँ से द्वैतवन की ओर गये और उस वन को निष्कण्टक बना कर द्रौपदी सहित वहीं रहने लगे। विदुर ने कहा : 'मैंने महान् वन में जाते और आते समय मार्ग में मर कर गिरे हुये उस भयंकर राक्षस, किर्मीर, के शव को देखा था जो भीमसेन के बल से मारा गया था, और उस वन के ब्राह्मणों के मुख से भीमसेन के इस महान् कर्म का वर्णन भी सुना था।' (३. ११)।"

किलकिल = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

किष्किन्धा, एक पुरी का नाम है जहाँ सहदेव ने वानरराज द्विविद और मैन्द के साथ युद्ध किया था (२. ३१, १७)। ३. २८०, १५. १६. ३९ (वालिन् और सुग्रीव की राजधानी); २८२, ५. ७. १३; २९१, ५७. ५८।

किष्किन्ध्या—देखिये किष्किन्धा।

१. कीचक, विराट के साले और सेनापति का नाम है। 'दुष्टात्मनो वधो यत्र कीचकस्य वृकोदरात्', (१. २, २०८)। 'कीचकस्तु महाबलः', (४. १४, ४)। ४. १४, ५. ११. ३८. ४६. ५१. ५२; १५, १. २. ९. १०. १४. १७. १८; १६, १. ५. ७. ९-११. १३. १४. ३१. ३२. ३६. ४९. ५०; १८, ५। 'योऽयं राज्ञो विराटस्य कीचको नाम भारत। सेनानीः पुरुषव्याघ्रः श्यालः परमदुर्मतिः ॥', (४. १८, ७)। ४. २१, ३. ४. २१. २२. २४. २७. २९. ३५ (विराटस्य कीचको नाम सारथिः). ४३. ४६. ४८. ५१; २२, १. ७. १२. १४. १८. १९. २३. २५–२७. ३२. ३३–३९. ४३. ५७. ६१. ६५. ६६. ६९. ७३. ७८. ८०. ८६–९०. ९२; २३, १. २. ५ (कीचको हतः)। यह द्रौपदी के कारण ही मारा गया था (४. २३, ७)। ४. २५, १. २. ४। इसने त्रिगर्तों को विजित और उनका वध कर दिया (४. २५, २०)। इसने त्रिगर्तों के राजा सुशर्मन् को अनेक बार विजित किया (४. ३०, २)। ४. ३०, ४। 'कीचके तु हते', (४. ३१, ३)। ५. ८, ५१; ९०, २३। 'कीचको निहतो यथा', (७. १३९, १०८)। 'कीचकः सगणो हतः', (८. ५०, २३)। 'तथा विराटनगरे कीचकेन मृशार्दिताम्', (१०. ११, २५)। 'कीचकेन पदा वधम्', (१२. १६, २१; १४. १२, ११)।

२. कीचक (बहु०), एक जाति का नाम है। 'कीचकानां वधः पर्व', (१. २, ५८)। 'मत्स्यांस्त्रिगर्तान्यत्रालान्कीचकान्तरेण च', (१. १५६, २)। 'कीचकानां तु मुख्यस्य', (४. २२, ५४)। ४. २३, ९. १९। भीमसेन ने एकसौ पाँच कीचकों का वध कर दिया (४. २३, ३३)। ४. २४, ७। द्रौपदी के लिये बहुत से कीचक मारे गये (४. ४४, ६)। 'हन्ता कीचकानाम्', (४. ७१, ५)। 'सैरन्ध्री द्रौपदी राजन् यस्यार्थे कीचका हताः', (४. ७१, ८)। तु० की० बहु० सूत; बहु० सूतपुत्र।

कीचकवधपर्वन्, महाभारत के ५४ वें अवान्तर पर्व का नाम है। "पाण्डवों ने मत्स्यराज के नगर में प्रच्छन्न रूप से रहते हुये दस मास व्यतीत किये। जब वर्ष पूर्ण होने में कुछ ही समय शेष रह गया तब एक दिन राजा विराट का सेनापति, महाबली कीचक, द्रौपदी को देख कर उस पर आसक्त हो गया। कीचक ने द्रौपदी से प्रणय-याचना की परन्तु द्रौपदी ने उसे फटकारते हुये कहा : 'मैं वीर गन्धर्वों द्वारा सुरक्षित होने के कारण तेरे लिये सर्वथा दुर्लभ हूँ।...यदि तू मेरा अपमान करेगा तो मेरे पति, गन्धर्व, तेरा वध कर देंगे।' परन्तु कीचक ने द्रौपदी की बातों की परवाह नहीं की (४. १४)।" "जब द्रौपदी ने कीचक की प्रार्थना अनसुनी कर दी तो कीचक ने अपनी बहन, विराट की महारानी सुदेष्णा, से द्रौपदी को मदिरा लाने के लिये अपने पास भेजने की प्रार्थना की। जब सुदेष्णा ने द्रौपदी को कीचक के पास जाने की आज्ञा दी तो भयभीत द्रौपदी मन ही मन भगवान् सूर्य की आराधना करती हुई मदिरा लाने के लिये एक पात्र लेकर कीचक के भवन की ओर चली। द्रौपदी की प्रार्थना सुन कर उसकी रक्षा के लिये सूर्य ने अदृश्यरूप से एक राक्षस को नियुक्त कर दिया। (४. १५)।" "द्रौपदी को देख कर कीचक ने ज्यों ही उसे पकड़ना चाहा, उसने उसे धक्का देकर भूमि पर गिरा दिया और स्वयं भाग कर युधिष्ठिर के पास आ गई। द्रौपदी के पीछे-पीछे कीचक भी आया और द्रौपदी का केश पकड़ कर खींचने लगा, किन्तु उसी क्षण द्रौपदी की रक्षा कर रहे अदृश्य राक्षस ने कीचक को ऐसा धक्का दिया कि वह भूमि पर मूर्छित होकर गिर पड़ा। उस समय अपना भेद खुल जाने के भय से युधिष्ठिर ने भीमसेन को शान्त किया। द्रौपदी ने विलाप करते हुये मत्स्यनरेश महाराज विराट से रक्षा की प्रार्थना की परन्तु उसे सुन कर भी जब मत्स्यराज बलाभिमानी कीचक पर शासन करने में असमर्थ रहे तब उनकी इस अकर्मण्यता को देख कर उन्हें फटकारते हुये द्रौपदी ने सभासदों से अपनी दीन दशा का निवेदन किया जिस पर सभासदों ने द्रौपदी की प्रशंसा तथा कीचक की निन्दा की। उस समय युधिष्ठिर ने द्रौपदी को रानी सुदेष्णा के पास चले जाने का परामर्श देते हुये कहा : 'सैरन्ध्री ! अब तू रानी सुदेष्णा के पास जा। मैं समझता हूँ कि तुम्हारे सूर्य के समान तेजस्वी पति, गन्धर्वगण, अभी क्रोध करने का अवसर नहीं देखते। तुम्हारे पतियों के कुपित होने पर वृत्रहन्ता इन्द्र भी युद्ध में उनका सामना नहीं कर सकते। इस समय तुम चली जाओ। गन्धर्व तुम्हारा प्रिय करेंगे। जिसने तुम्हारा अपमान किया हैं उसे मार कर वे तुम्हारा दुःख अवश्य दूर कर देंगे।' द्रौपदी ने आकर रानी सुदेष्णा को सारा वृत्तान्त बताया जिसे सुनकर रानी ने कहा : 'यदि तुम्हारी सम्मति हो तो मैं कीचक को मरवा डालूँ।' सुदेष्णा की बात सुन कर द्रौपदी ने कहा : 'उसे दूसरे ही लोग मार डालेंगे, जिनका वह अपराध कर रहा है।' (४. १६)।" उस रात कृष्णा ने भीमसेन के समीप आकर अपने दुःख कर निवेदन किया (४. १७)। द्रौपदी ने भीमसेन के प्रति अपने दुःख के उद्गार प्रकट किये (४. १८)। पाण्डवों के दुःख से दुःखित द्रौपदी ने भीमसेन के सम्मुख विलाप किया (४. १९–२०)। भीमसेन और द्रौपदी का संवाद जिसमें भीमसेन ने कीचक-वध की प्रतिज्ञा की (४. २१)। "द्रौपदी की बातें सुनकर भीमसेन ने कहा : 'मैं आज ही कीचक का उसके बन्धु-बान्धवों सहित वध कर दूँगा। तुम आगामि-रात्रि के प्रदोषकाल में कीचक से मिलो और उसे नृत्यशाला में लाओ, किन्तु इस कार्य में तुम्हें कोई पहचानने न पाये।' भीम के परामर्श पर द्रौपदी कीचक को नृत्यशाला में लाई, जहाँ भीमसेन ने उसका वध कर दिया। उस समय नृत्यशाला के रक्षकों को द्रौपदी ने बताया कि उसके पति, गन्धर्वों ने कीचक का वध कर दिया (४. २२)।" "कीचक के सम्बन्धियों ने विराट से द्रौपदी को भी कीचक के शव के साथ भस्म कर देने की अनुमति प्राप्त कर ली। तदनन्तर वे द्रौपदी को बाँध कर श्मशान-भूमि की ओर जाने लगे। मार्ग में द्रौपदी ने अपने पतियों, जय, विजय, इत्यादि को पुकारा। द्रौपदी की वाणी सुन कर भीमसेन वहाँ उपस्थित हुये और उन्होंने १०५ उप-कीचकों का वध कर दिया (४. २३)।" "कीचक तथा अन्य सूतपुत्रों के वध से भयभीत राजा विराट ने अपनी रानी, सुदेष्णा से कहा कि वे द्रौपदी को राज्य छोड़ देने की आज्ञा दें। सुदेष्णा, के तदनुसार आज्ञा देने पर द्रौपदी ने तेरह दिन तक और निवास करने की अनुमति माँगी जिसे रानी ने स्वीकार किया (४. २४)।"

कीट : 'द्वैपायनस्य संवादं कीटस्य च', (१३. ११७, ६)। १३. १०७, ७. ८. १०. १५, इत्यादि।

कीटक, क्रोधवशसंज्ञक दैत्यों के अंश से उत्पन्न एक राजा का नाम है (१. ६७, ६०)।

कीटोपाख्यान—'भीष्म ने युधिष्ठिर से कहा : पूर्वसमय की बात है, ब्रह्मस्वरूप व्यासजी कहीं जा रहे थे। उन्होंने एक कीड़े को गाड़ी की लीक से अत्यन्त तेजी के साथ भागते देखा। सर्वज्ञ व्यास ने, जो सभी प्राणियों की भाषा समझते थे, उस कीड़े से उसके भागने का कारण पूछा। कीड़े ने बताया : 'यह जो बहुत बड़ी बैलगाड़ी आ रही है उसी से दब जाने के भय से मैं भाग रहा हूँ। प्राणियों के लिये मृत्यु अत्यन्त दुःखदायिनी होती है। अपना जीवन सबको अत्यन्त दुर्लभ प्रतीत होता है। अतः मैं भय से भाग रहा हूँ।' जब व्यास ने कीड़े से कहा कि उस योनि में जीवित रहने से उसका मर जाना ही उत्तम है तब कीड़े ने उत्तर दिया : 'जीव सभी योनियों में सुख का अनुभव करते हैं। मुझे भी इस योनि में सुख मिलता है, और यही सोचकर जीवित रहना चाहता हूँ। पूर्वजन्म में मैं एक मनुष्य था। उस योनि में एक शूद्र और निर्दय था। मैं इतना स्वार्थी तथा कृपण था कि बिना किसी अतिथि या आश्रित को भोजन दिये ही स्वयं भोजन कर लेता था। उस समय मैं दानादि भी नहीं करता था। दूसरों के सुख को देखकर मुझे ईर्ष्या होती थी। अपने उस पूर्वजन्म के निर्दयतापूर्ण कार्यों का स्मरण करके अब मुझे अत्यन्त पश्चाताप होता है। पूर्वजन्म में मैंने केवल अपनी वृद्धा माता की सेवा की, तथा एक दिन अपने घर आये अतिथि का स्वागत-सत्कार किया। उसी पुण्य के प्रभाव से आजतक मेरी पूर्वजन्म की स्मृति सुरक्षित है। अब, मैं किसी शुभकर्म द्वारा भविष्य में पुनः सुख पाने की आशा रखता हूँ। वह कल्याणकारी कर्म क्या है, इसे मैं आप से सुनना चाहता हूँ।' (१३. ११७)।" "व्यास ने कहा : 'तुम जिस शुभकर्म के प्रभाव से तिर्यग्योनि में जन्म लेकर भी मोहित नहीं हुए। वह मेरा ही कर्म है। मेरे दर्शन के प्रभाव से ही तुम्हें मोह नहीं हो रहा है। मैं अपने तपोबल से केवल दर्शनमात्र दे कर तुम्हारा उद्धार कर दूँगा, क्योंकि तपोबल से श्रेष्ठ और कोई बल नहीं है। अपने पूर्वकृत पापों के कारण तुम्हें कीटयोनि में आना पड़ा है, फिर भी, यदि इस समय तुम्हारी धर्म के प्रति श्रद्धा है तो तुम्हें धर्म अवश्य प्राप्त होगा। एक जगह एक श्रेष्ठ ब्राह्मण रहते हैं। वे जीवन में सदा सूर्य और चन्द्रमा की पूजा करते हैं। तुम उन्हीं के यहाँ पुत्र रूप से जन्म लेकर अनासक्त भाव से विषयों का उपभोग करोगे। उस समय मैं तुम्हारे पास आकर ब्रह्मविद्या का उपदेश करूँगा और तुम जिस लोक में जाने की इच्छा करोगे, तुम्हें पहुँचा दूँगा।' व्यास जी के इस प्रकार कहने पर वह कीट पुनः मार्ग में आकर रुक गया और उसी समय बैलगाड़ी के आ जाने से उसके नीचे दबकर मर गया। तत्पश्चात वह क्रमशः शाही, गोधा, सूअर, मृग, पक्षी, चाण्डाल, शूद्र और वैश्य की योनि में जन्म लेता हुआ क्षत्रिय जाति में उत्पन्न हुआ। क्षत्रियकुल में जन्म लेने के पश्चात वह व्यास जी का दर्शन करने के लिये उनके पास आया और उनकी स्तुति की। उसने कहा : 'आप सत्य-प्रतिज्ञ हैं, अमित तेजस्वी हैं; आपके प्रसाद से ही मैं आज कीड़े से राजपूत हो गया हूँ।'

व्यास ने कहा : 'अभी तुम्हारे पूर्वजन्मों के पाप का सर्वथा नाश नहीं हुआ। आज जो तुम ने मेरी पूजा की है उसके फलस्वरूप तुम क्षत्रिय के पश्चात् ब्राह्मणत्व प्राप्त करोगे। तुम नाना प्रकार के सुख भोगकर अन्त में गौ और ब्राह्मणों की रक्षा के लिये संग्राम-भूमि में अपने प्राणों की आहुति दोगे। तदनन्तर ब्राह्मण-रूप में पर्याप्त दक्षिणावाले यज्ञों का अनुष्ठान करके स्वर्ग-सुख का उपभोग करोगे। तत्पश्चात् विनाशी ब्रह्मरूप होकर अक्षय आनन्द का अनुभव करोगे। तिर्यग्योनि में पड़ा हुआ जीव जब ऊपर की ओर उठता है तो वहाँ से सर्वप्रथम शूद्र-भाव को प्राप्त होता है। तदुपरान्त शूद्र > वैश्य > क्षत्रिय > ब्राह्मण > स्वर्ग का क्रम होता है।' (१३. ११८)।" "तदनन्तर उस क्षत्रिय ने घोर तपस्या आरम्भ की जिसे देखकर व्यास ने उसके पास आकर कहा : 'प्राणियों की रक्षा करना ही क्षात्रधर्म है जिसका पालन करके तुम अगले जन्म में ब्राह्मण हो जाओगे।' व्यास का वचन सुनकर उस भूतपूर्व कीट ने प्रजा-पालन आरम्भ किया। तत्पश्चात् वह पुनः वन में जाकर थोड़े समय में परलोकवासी हो प्रजापालन-रूप धर्म के प्रभाव से ब्राह्मण-कुल में जन्म पा गया। उस समय व्यास ने उसके पास आकर कहा : 'अब तुम्हें किसी प्रकार व्यथित नहीं होना चाहिये। हाँ तुम्हें धर्म के लोप का भय अवश्य होना चाहिये। अतः उत्तम धर्म का आचरण करते रहो।' तदनन्तर उस भूतपूर्व कीट ने ब्राह्मणत्व प्राप्तकर पृथिवी को सैकड़ों यज्ञ-यूपों से अंकित कर दिया और ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ होकर उसने ब्रह्मलोक में जा कर सनातन ब्रह्म को प्राप्त किया। व्यास के आदेशानुसार उसे स्वधर्म का पालन कर के सनातन पद प्राप्त करने में सफलता मिली। इसी प्रकार जो प्रमुख-प्रमुख क्षत्रिय अपनी शक्ति का परिचय देते हुए इस रणभूमि में मारे गये हैं, वे भी पुण्यमयी गति को प्राप्त हुए हैं। अतः हे युधिष्ठिर उनके लिए शोक मत करो। (१३. ११९)।"

कीर्ति, दक्ष प्रजापति की एक पुत्री और धर्म की पत्नी का नाम है (१. ६६, १४)। ये ब्रह्मा की सभा में उपस्थित होती थीं (२. ११, ४२)। ३. ३७, ३३।

कीर्तिधर्मन्, पाण्डवों के एक योद्धा का नाम है (७. १५८, ३९)।

१. **कीर्तिमत्**, विरजा के पुत्र और कर्दम के पिता का नाम है (१२. ५९, ९०)।

२. **कीर्तिमत्**, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३१)।

कीर्त्यावास = महापुरुष (महापुरुषस्तव में)।

कुकुण, एक काश्यपवंशी नाग का नाम है (५. १०३, १४)।

१. **कुकुर**, एक काश्यपवंशी नाग का नाम है (५. १०३, १४)।

२. **कुकुर**, एक प्राचीन राजा का नाम है (१३. १६५, ५३)।

३. **कुकुर** (बहु०), यादवों की एक जाति का नाम है (२. १९, २८; ३. १८३, ३२)। इन्होंने कृतवर्मन् का अनुसरण किया (५. १९, १७)। इन्होंने कृष्ण का अनुसरण किया (५. २८, ११)। ६. ९, ६०; १२. ८१, २९। ये कुकुर और अन्धकवंश के लोग मौसल युद्धमें परस्पर मतवाले होकर युद्ध करते थे (१६. ३, ४२)।

कुकुराधिप = उग्रसेन (१२. २३१, ४)।

कुक्कुटिका, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६,१५)।

१. **कुक्कुर**, एक मुनि का नाम है जो युधिष्ठिर की सभा में विराजते थे (२. ४, १८)।

२. **कुक्कुर** (बहु०), एक जनपद का नाम है। ये लोग युधिष्ठिर के लिये भेंट लाये (२. ५२, १६)। दक्षिण दिशा में इनकी स्थिति (६. ९, ४२)। ये भीष्म की रक्षा करते थे (६. ५१, ७)। तु० की० बहु० कुक्कुर।

१. **कुक्षि**, एक दानवराज का नाम है जो मेरुगिरि के समान तेजस्वी और विशाल 'पार्वतीय' नामक राजा हुआ (१. ६७, ५६)।

२. **कुक्षि**, रैम्य के पुत्र का नाम है (१२. ३४८, ४३)।

१. **कुञ्जर**, एक नाग का नाम है (१. ३५, १५; १६. ४, १५)।

२. **कुञ्जर**, सौवीर देश के एक राजकुमार का नाम है जो जयद्रथ का अनुगामी था (३. २६५, १०)।

कुञ्जरकेतन = भोज (७. ४८, ८)।

कुञ्जल, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७६)।

कुटीमुख, कुबेर के सभाभवन में स्थित शिव के एक अनुगामी (?) का नाम है (२. १०, ३५)।

कुठर, एक नाग का नाम है (१. ३५, १५)।

कुठार, धृतराष्ट्रकुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ५७, १५)।

कुणि = गर्ग (९. ५२, ३-४)।

१. **कुण्ड**, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, ११)।

२. **कुण्ड**, एक नाग का नाम है जो अर्जुन के जन्मोत्सव पर उपस्थित हुआ था (१. १२३, ७१)।

३. **कुण्ड** = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कुण्डक, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है जो द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुआ था (१. १८६, ३)।

कुण्डज, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, १०५)।

कुण्डजठर, एक ऋषि, आत्रेय (?), का नाम है जो जनमेजय के सर्पसत्र के सदस्य हुये थे (१. ५३, ८)। ये भी अन्य ऋषियों के साथ युधिष्ठिर की तीर्थयात्रा के लिये प्रतीक्षा कर रहे थे (३. ८५, ११९)।

१. **कुण्डधार**, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, ७. ११)। धृतराष्ट्र के उन सात पुत्रों में से एक यह भी था जिसका भीमसेन ने वध कर दिया (६. ८८, १५. १८. २३)।

२. **कुण्डधार**, वरुण की सभा में उपस्थित होनेवाले दो नागों का नाम है (२. ९, ९. १०)।

३. **कुण्डधार**, एक मेघ का नाम है : १२. २७१, २. ६ [जलधरं मेघं कुण्डधारं नामतः, 'नीलकण्ठी']. १३. १७–२०. २३. २४. २८. ४१–४३. ४५. ४८. ५२. ५३ (इनका ब्राह्मण के साथ संवाद)।

कुण्डभेदि, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है जिसका भीमसेन ने वध कर दिया था (६. ९६, २७)। तु० की० कुण्डभेदिन्।

कुण्डभेदिन्, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, १०४; ११७, १३)। अभिमन्यु ने इसका वध कर दिया (७. ३७, २५. ३०)। इसने भीमसेन पर आक्रमण किया (७. १२७, ३३)। भीमसेन द्वारा इसका वध (७. १२७, ६०)। ७. १५६, १२१।

कुण्डर = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

१. **कुण्डल**, कौरवकुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ५७, १३)।

२. **कुण्डल** (बहु०), एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ६३)।

कुण्डलाहरण : (१. २, ५७)।

कुण्डलाहरणपर्वन्, वनपर्व के अन्तर्गत महाभारत के पचासवें अवान्तर पर्व का नाम है। जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन ने कहा : "जब पाण्डवों के वनवास के बारह वर्ष व्यतीत हो गये तो इन्द्र ने युधिष्ठिर को दिये गये अपने वचन के अनुसार अर्जुन के हित के लिये कर्ण से उसका कवच और कुण्डल माँगने का निश्चय किया। उस समय सूर्य ने स्वप्न में कर्ण को दर्शन देकर उसे इन्द्र को कुण्डल और कवच न देने के लिये सचेत किया परन्तु कर्ण ने आग्रहपूर्वक कुण्डल और कवच देने का ही निश्चय किया (३. ३००–३०१)।" सूर्य-कर्णसंवाद; सूर्य की आज्ञा के अनुसार कर्ण ने इन्द्र से शक्ति लेकर ही उन्हें कुण्डल और कवच देने का निश्चय किया (३. ३०२)। कुन्तिभोज के यहाँ ब्रह्मर्षि दुर्वासा का आगमन तथा राजा का उनकी सेवा के लिये पृथा को आवश्यक उपदेश देना (३. ३०३)। कुन्ती का पिता से वार्तालाप तथा ब्राह्मण की परिचर्या (३. ३०४)। कुन्ती की सेवा से सन्तुष्ट होकर तपस्वी ब्राह्मण का उसको मन्त्र का उपदेश देना (३. ३०५)। कुन्ती के द्वारा सूर्य का आवाहन तथा कुन्ती-सूर्यसंवाद (३. ३०६)। सूर्य द्वारा कुन्ती के उदर में गर्भस्थापन (३. ३०७)। कर्ण का जन्म, कुन्ती का उसे पिटारी में रखकर जल में बहा देना, और

विलाप करना (३. ३०८)। अधिरथ सूत तथा उसकी पत्नी राधा को बालक कर्ण की प्राप्ति; राधा के द्वारा उसका पालन; हस्तिनापुर में उसकी शिक्षा-दीक्षा, तथा कर्ण के पास इन्द्र का आगमन (३. ३०९)। इन्द्र का कर्ण को अमोघ शक्ति देकर बदले में उसका कवच-कुण्डल लेना (३. ३१०)।

१. **कुण्डलिन्**, गरुड़ की संतानों में से एक का नाम है (५. १०१, ९)।

२. **कुण्डलिन्**, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (६. ९६, २४)।

३. **कुण्डलिन्** = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

कुण्डली, एक भारतीय नदी का नाम है (६. ९, २१)।

कुण्डशायिन्, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, १०)।

कुण्डारिका, स्कन्द की अनुचरी एक मातृका का नाम है (६.४६,१५)।

कुण्डाशिन्, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, १४)।

कुण्डिक, धृतराष्ट्र के एक पुत्र (प्रथम) का नाम है (१. ९४, ५८)।

कुण्डिन् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

१. **कुण्डिन**, धृतराष्ट्र के एक पुत्र (पञ्चम) का नाम है (१.९४,५८)।

२. **कुण्डिन**, विदर्भदेश की राजधानी का नाम है (३. ६०, १९; ७३, २. २१; ७७, २०)। रुक्मिन्, श्रीकृष्ण से पराजित होने के कारण लज्जित हो पुनः कुण्डिनपुर को नहीं लौटा और वहीं भोजकट नामक उत्तम नगर बसाया (५. १५८, १४)।

कुण्डीविष, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ५०, ५०)।

कुण्डीवृष (बहु०) देखिये **कौण्डीवृष** (बहु०)।

कुण्डोद, एक पर्वत का नाम है, जहाँ राजा नल को जल और शान्ति मिली (३. ८७, २५)।

१. **कुण्डोदर**, एक प्रमुख नाग का नाम है । १. ३५, १६)।

२. **कुण्डोदर**, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९७)।

३. **कुण्डोदर**, जनमेजय के छठें पुत्र का नाम है (१. ९४, ५५)।

कुनदीक, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ५८)।

१. **कुन्तल**, कुन्तल देश के राजा का नाम है जो युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित हुये थे (२. ३४, ११)।

२. **कुन्तल** (बहु०), एक जनपद का नाम है (५. १४०, २६; ६. ९, ५२. ५९)। इन्होंने द्रोण का अनुसरण किया (६. ५१, १२)। कर्ण का अनुसरण करते हुये इन पर पांड्यनरेश ने आक्रमण किया (८.२०,'०)।

१. **कुन्ति**, कुन्ति देश के एक राजा का नाम है जो युधिष्ठिर की सेवा में उपस्थित रहते थे (२. ४, २४)।

२. **कुन्ति**, सात महारथी वृष्णियों में से एक का नाम है (२.१४,५९)।

३. **कुन्ति** (बहु०), एक जाति के लोगों का नाम है जो जरासन्ध के भय से भाग गये थे (२. १४, २६)। ४. १, १३; ६. ९, ४०। राम जामदग्न्य ने इनका वध कर दिया (७. ७०, ११)। भीष्म ने युद्धभूमि में इनका वध कर दिया (८. ६, २)।

कुन्तिकन्या = कुन्ती (१. ६३, ९८)।

कुन्तिभोज, एक क्षत्रिय राजा का नाम है जो शूरसेन के फुफेरे भ्राता थे। शूरसेन ने इन्हें अपनी पुत्री पृथा (कुन्ती) को गोद दिया (१. ६७, १३१; १११, ३)। 'दुहिता कुन्तिभोजस्य पृथा', (१. ११२, १)। १. ११२, ४। 'कुन्तिभोजस्य दुहित्रा', (१. ११२, १०)। १. ११२, ११। सहदेव ने अपने दक्षिण दिग्विजय के समय इन्हें विजित किया (२. ३१, ६)। ये युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में पधारे थे (२. ३४, १२)। ३. ३०३, ४. ६. ९; ३०४, १३। इन्होंने अपनी पुत्री कुन्ती को एक तपस्वी ब्राह्मण की सेवा में लगा दिया (३. ३०५, ११. २१)। शूर ने कुन्ती को इन्हें प्रदान कर दिया था (५. ९०, ६३. ६४)। युधिष्ठिर के सहायकों में एक यह भी थे (५. १४१, २६)। कुन्ती के पिता के रूप में इनका उल्लेख (५. १४४, २०)। युधिष्ठिर के साथ चल रहे थे (५. १५१, ६५)। युधिष्ठिर के महारथियों में से एक (५. १७२, २)। ये युधिष्ठिर की सेना में सम्मिलित थे (६. २५, ५)। इन्होंने अपने पुत्र सहित विन्द और अनुविन्द के साथ युद्ध किया (६. ४५, ७२. ७४. ७५)। ये और शैब्य धृष्टद्युम्न के क्रौञ्चव्यूह के अक्षिभाग में स्थित थे (६. ५०, ४७)। धृष्टद्युम्न के मकरव्यूह में ये और शतानीक पद्भाग में स्थित थे (६. ७५, ११)। ६. ८९, १८; ९९, १२; ११०, ५; ११८, ४१। 'इन्द्रायुधसवर्णैस्तु कुन्तिभोजो हयोत्तमैः', (७. २३, ४६)। ७. ३५, २। अलम्बुष के साथ इनका युद्ध (७. ९५, ४७; ९६, १८. १९)। ७. १११, ४६। अश्वत्थामा ने इनके दस पुत्रों का वध कर दिया (७. १५६, ८३-८४)। 'द्रुपदस्यात्मजान् दृष्ट्वा कुन्तिभोजसुतांस्तथा। द्रोणपुत्रेण निहतान् राक्षसांश्च सहस्रशः ॥', (७. १५७, १)। 'पुरुजित् कुन्तिभोजश्च मातुलौ सव्यसाचिनः। संग्रामनिर्जितॉंल्लोकान् भीमतौ द्रोणसायकैः' (८. ६, २२-२३)। ९. २, २३। तु० की० **कुन्ति**, **कुन्तिराज**, **पुरुजित्**।

कुन्तिभोजजा, (कुन्तिभोज की पुत्री) = कुन्ती (१५. १९, ६)।

कुन्तिभोजसुता = कुन्ती (१. ११२, ६; १३६, २७; १५. १, ८)।

कुन्तिभोजसुतासुत—कौन्तेय, बहु० (१. २०३, १४)।

कुन्तिभोजात्मजापुत्र = अर्जुन (१. २२१, ७)।

कुन्तिराज = कुन्तिभोज (५. १४५, ३)।

कुन्तिराजसुता = कुन्ती (१. १११, १७; १२४, ५; १५०, १२; १५१, २४)।

कुन्तिराजात्मजा = कुन्ती (३. ३०७, २७)।

कुन्तिवर्धन = पुरुजित् (२. १४, १७)।

कुन्तिसुता = कुन्ती (१. १२४, ६)।

कुन्ती, (कुन्तिराज की पुत्री), शूर की पुत्री का नाम है जिसे कुन्तिभोज ने गोद ले लिया था। यह सूर्य द्वारा कर्ण की माता, पाण्डु की पत्नी और युधिष्ठिर, भीमसेन तथा अर्जुन की माता हुई। इसका वास्तविक नाम पृथा था (१. १, १००. १५३. १७७; २, ३२१. ३४६)। "वासुदेव के पिता का नाम शूरसेन था। उनके पृथा नामक जब एक कन्या उत्पन्न हुई तो उन्होंने अपनी प्रतिज्ञानुसार उस कन्या को अपने फुफेरे भाई कुन्तिभोज को गोद दे दिया। पिता के घर रहते समय पृथा को अतिथियों का स्वागत-सत्कार करने का कार्य सौंपा गया। एक दिन जब दुर्वासा उसके यहाँ पधारे तो अपनी सेवा से उसने उन्हें सन्तुष्ट किया। उससे प्रसन्न होकर दुर्वासा ने उसे एक ऐसा मन्त्र दिया जिसके प्रयोग से वह किसी भी देवता का आवाहन कर सकती थी। पृथा ने कौतूहलवश अपनी कुमारी अवस्था में ही उस मंत्र द्वारा सूर्य का आवाहन किया जिससे सूर्य ने आकर उसमें एक गर्भ स्थापित कर दिया। पृथा का वह बालक कवच और कुण्डल के साथ ही उत्पन्न हुआ परन्तु माता-पिता के भय से पृथा ने उस बालक को एक पेटी में रखकर जल में छोड़ दिया (१. ६७, १२९-१३९)।" 'स कर्ण इति विख्यातः पृथायाः प्रथमः सुतः', (१. ६७, १४८)। ये सिद्धि के अंश से उत्पन्न हुई थीं (१. ६७, १६०)। ये, पृथा, पाण्डु की पत्नी थीं (१. ९५, ५८)। 'कुन्तीमुवाच सा तथोक्ता पुत्रानुत्पादयामास। धर्माद्युधिष्ठिरं मारुताद्भीमसेनं शक्रादर्जुनमिति ॥', (१. ९५, ६१)। १. ९५, ६२. ६५. ६६. ८३। ये शूरसेन की पुत्री थीं जिन्हें कुन्तिभोज ने गोद ले लिया था (१. १११, १)। १. १११, ८. ११. १७। 'सा वार्ष्णेयी दीनमानसा', (१. १११, २१)। इन्होंने सूर्य द्वारा कर्ण को उत्पन्न किया (१. १११, २२)। 'दुहिता कुन्तिभोजस्य पृथा', (१. ११२, १)। 'कुन्तिभोज सुता', (१. ११२, ६)। इनका पाण्डु से विवाह हुआ (१. ११२, ८. ११. १३)। १. ११३, २०; ११४, ६. ९; ११५, २। इन्होंने वन जाते समय पाण्डु का अनुसरण किया (१. ११९, २३. २६)। १. १२०, २७. २८. ३२. ३६. ३८; १२१, १. ३२; १२२, २। 'एवमुक्ता ततः कुन्ती पाण्डुं परपुरञ्जयम्', (१. १२२, ३२)। पाण्डु की आज्ञा से इन्होंने अपने मन्त्र द्वारा धर्म, वायु और इन्द्र का आवाहन किया जिससे इन्होंने युधिष्ठिर, भीम, और अर्जुन को उत्पन्न किया (१. १२३, १. ४. ७. १२. १६. २५. ३१. ३७. ३८. ४३)। इन्होंने सौरी में ही आकाशवाणी सुनी (१. १२३, ४७)। इन्होंने तीन पुत्रों से और अधिक सन्तान उत्पन्न करने से पाण्डु को विरत किया (१. १२३, ७६)। १. १२४, ४-६. ९. २५। इन्होंने माद्री को मंत्र का उपदेश दिया जिससे माद्री ने दो पुत्र प्राप्त किये (१. १२४, २६)। १.

१२५, १५. १७. २३। माद्री ने अपने कारण हुई पाण्डु की मृत्यु का इनसे उल्लेख किया (१. १२५, २८)। 'पुरुहूतादयं जज्ञे कुन्त्यामेव धनञ्जय', (१. १२६, २५)। इन्होंने माद्री और पाण्डु का मृतकसंस्कार किया (१. १२७, ३. २६)। इन्होंने पाण्डु के लिए अमृतस्वरूप स्वधामय श्राद्धदान किया (१. १२८, १)। 'आर्यकेण च दृष्टः स पृथाया आर्यकेण च', (१. १२८, ६४)। १. १२९, ५. १०. १३. १९; १३४. १५; १३५, १३। 'पृथारणिसमद्भूतैस्त्रिभिः पाण्डववह्निभिः', (१. १३५, १७)। 'कन्यागर्भः पृथुयशाः पृथायाः', (१. १३६, ३)। १. १३६, २७. २८। 'अयं पृथायास्तनयः कनीयान्पाण्डुनन्दनः', (१. १३६, ३१)। अपने पुत्र, कर्ण, को पहचान कर कुन्ती के मन में बड़ी प्रसन्नता हुई (१. १३७, २३)। १. १४१, २. ४. ५. ८; १४२, १५; १४४, १३; १४५, २९; १४८, ५. ६; १५०, १२. १४. १७; १५१, १२. २४; १५२, १६; १५४, २; १५५, ४; १५६, ३. ११; १५७, ५. ८–११. १८; १५९, २४; १६०, १; १६१, १. १३. १९. २०; १६२, ४. १२; १६५, ५; १६८, २. ३. १० ११; १६९, १६; १८९, २३. २४; १९०, ४६। जब पाण्डव द्रौपदी को जीत लाये तो इन्होंने सबसे उसका उपभोग करने के लिये कहा (१. १९१, १–४. ६)। १. १९२, ४. ९; १९४, ३. ९; १९५, १०. १८. ३२; १९६, १८. २२; १९९, २. ४; २००, ६; २०३, १३. १५; २०४, ८; २०६, ५. १४. २३. २६; २०७, ११; २२१, २१. २५; २. २, २; १७, १; २४, ५४; ४५, ५७; ७८, ५; ७९, १. ३. १०. १३. ३०. ३१; ३. ३७, २४; ४४, ११; ४६, ३८. ४६. ५५; ४७, ८। 'कौरवः सोमवंशीयः कुन्त्यागर्भेण धारितः। पाण्डवो वायुतनयो भीमसेन इति श्रुतः॥', (३. १४७, ३)। 'वातेन कुंत्या बलवान सुजातः', (३. १५४, १९)। ३. १८३, २७; २३३, ४०। 'कुंत्याः प्राणैरिष्टतमो नृवीरः', (३. २७०, १९)। ३. ३०३, १०. १२. २२. २७. २८; ३०४, १३. २०; ३०५, ५. १२. १५. २३; ३०६, १०. १२. २५; ३०७, ८. १७. १९. २२. २३. २७; ३०८, १. ९. २२. २३; ३, ३०९, १५। शूर की पुत्री पृथा, कुन्ती, को कुन्तिभोज ने गोद ले लिया था; इन्होंने एक ब्राह्मण की सेवा की जिसने इन्हें एक मंत्र दिया जिसके प्रभाव से ये अपनी इच्छानुसार किसी भी देवता का आवाहन कर सकतीं थीं; इन्होंने सूर्य का आवाहन किया जिससे सूर्य ने इन्हें कर्ण प्रदान किया और इन्होंने नवजात कर्ण को नदी में बहा दिया (३. ३०९, २१)। ३. ३१३, ८. १३१. १३२; ४. ४, ५२; १९, २५. ४०; २०, २५; ५. ३१, १६; ९०, १. ३. ९०. १००; १०१; ९१, १। इन्होंने कृष्ण से युधिष्ठिर को युद्ध करने के लिये कहा (५. १३२, ५)। ५. १३३, १। इन्होंने श्रीकृष्ण से युधिष्ठिर को विदुलापुत्र-शासन करने के लिये कहा (५. १३६, १६)। इन्होंने कृष्ण को समाचार देकर पाण्डवों के पास भेजा (५. १३७, १. २)। ५. १३८, १. २; १४०, २८; १४१, ४। 'कुन्त्याः प्रथमजं पुत्रम्', (५. १४१, २१)। ५. १४४, १. १०. २६. २९–३१; १४५, २; १४६, २. २४। "कृष्ण ने कर्ण को बताया कि वह कुन्ती का पुत्र था। कुन्ती ने कर्ण से अपने को उसकी माता बताते हुये पाण्डवों से संधि करने के लिये कहा। कर्ण ने अर्जुन के अतिरिक्त अन्य पाण्डवों की रक्षा करने की प्रतिज्ञा की (५. १४६, २७)।" ५. १५४, ४. २४; ६. ७९, ४। 'अवकीर्णस्त्वहं कुन्त्या सूतेन च विवर्धितः', (६. १२२, २४)। ७. १२७, २३; १३१, १०। 'कुन्त्याः पुत्रस्य सदृशं नेदं पाण्डवनन्दन', (७. १३१, २३)। 'कुन्तीमपुत्राम्', (७. १३२, १४)। 'कर्णः कुन्त्या वचः स्मरन्', (७. १३९, ९२)। 'कुन्त्याः स्मृत्वा वचो राजन्', (७. १६७, २०; ८. २४, ५१)। 'कुंतीवाक्यं च सोऽस्मरत', (८. ४९, ५२)। 'स्नेहस्त्वया पार्थ कृतः पृथाया गर्भं समाविश्य यथा न साधु', (८. ६८, ३)। ८. ६८, १०। अर्जुन के जन्म के समय कुंती ने आकाशवाणी सुनी (८. ६८, १४)। 'गर्भे आमविष्यः पृथायाः', (८. ६८, २९)। ८. ६९, ३०; ७०, ३७; ८७, ११६। 'पाण्डोः कुन्त्याश्च संतति', (९. ३३, १६)। ये युद्धभूमि को देखने गईं (११. १०, २. ४)। ११. १४, १५; १५, ३४. ३८। इन्होंने पाण्डवों को बताया कि कर्ण उसका पुत्र था (११. २७, ६)। 'कुन्त्या दुःखेन योजितः', (१२. १, १८)। 'गूढोत्पन्नः सुतः कुन्त्या भ्राताऽस्माकमसौ किल', (१२. १, २१)। 'कुन्ती कथयामास सूर्यजम्', (१२. १, २२)। 'ज्येष्ठपुत्रः कुन्त्या', (१२. १, २४)। १२. १, २६. २७. ३१. ३५. ३६. ३८. ४२। कर्ण इसलिये मारा गया कि उसने कुन्ती को अर्जुन के अतिरिक्त अन्य चार भ्राताओं की रक्षा का वरदान दिया था (१२. ५, ११)। 'कुन्ती शोकपरीताङ्गी दुःखोपहतचेतना', (१२. ६, ३)। १२. ३७, ४१; ४०, ४। 'न क्षेतामाशिषं पाण्डुर्न च कुन्ती त्वयाचत', (१२. ७५, २२)। १२. ७५, २३; १३. १६७, ९; १४. १५, १७; ५२, २८. ३०; ६१, ३२. ३७. ३९। इन्होंने उत्तरा को सान्त्वना दी (१४. ६१, ४१)। १४. ६२, १०; ६३, २३; ६६, ५। 'ततः कृष्णं समासाद्य कुन्ती भोजसुता तदा', (१४. ६६, १४)। १४. ६६, २७. २९; ६७, १. ९; ६९, २; ७०, ६; ७१, ७; ८७, २८; ८८, २. ५; ८९, २८. २९; १५. १, ८. ११. २३; ३, १४. ५१. ७८; ५, ५; १०, ४६; ११, १८; १५, ९; १६, ७. ९. १०. २४. २५; १७, १; १८, १–३. ९. १०. १५। इन्होंने वन के लिये धृतराष्ट्र और गान्धारी का अनुसरण किया (१५. १८, २१)। १५. १९, ६. १५; २०, ३; २१, ३. ५; २२, ५. ११. १३. १५. १७; २४, ८. ११. १९; २५, ८; २७, १७; २८, ६; २९, १. १३. १८. ३६. ४९. ५२; ३०, १. २३; ३१, २. ३; ३६, २७. ३९. ४२; ३७, ७. ११. १४. १७. २९, ३१. ३५. ४३; ३८, ७. १६; ३९, १३। ये वन की अग्नि से जल गईं (१५. ३९, १८)। स्वर्ग में पाण्डु के साथ इनको उपस्थिति (१८. ४, २०)।

१. कुन्तीनन्दन = अर्जुन (१४. ८७, ६)।

२. कुन्तीनन्दन = युधिष्ठिर (५. १६९, ३)।

१. कुन्तीपुत्र = अर्जुन (धनञ्जय) : १. १७१, ३; २१३, ११. २२; २१४, १५; २१५, ११. १८; २१६, १०. १३; २१८, १६; २. २७, २; ८०, १५; ३. ४१, ४६; २४४, १६; २४५, ११. १८. २०; ४. ३७, १७; ५०, १७; ५७, ४३; ६४, ४७; ७२, १०; ५. ७, २. २१; ६६, ३; ९६, ४८; १३८, १६; १५६, १८; १५८, २०; ६. ४३, १४; ११९, ८०; १२०, ४७; ७. १२, २७; १९, ८; २८, १३; ३०, २१; ८०, १. ५; १४५, ८८; १४६, ८२; १४७, ६; १८२, ३७; १८६, १५; १८८, २९; १९०, १३; १९२, ६५; १९३, ५२; २०१, १; २०२, २; ८. ३, ११; ४१, ८२; ४२, १५. २१; ६४, ६०; ८७, १०१; ९. २४, १५; २७; २. ३५; ११. २३, १३; १२. ५३, १७; १४. ७३, ११।

२. कुन्तीपुत्र = भीमसेन (वृकोदर) : १. १२८, २७; १६३, १४; ३. १५७, ५४; ४. ३३, १८; ५. ५०, २१. २२; ५५, ३१; १६२, १७; ६. ९६, ३१; ७. १३९, ७३; १९९, ५५।

३. कुन्तीपुत्र = युधिष्ठिर : १. १३१, २६; १३९, ३; १४७, ७; १९१, १५; १९५, २. १६. १७; २०१, ६; २०७, ३; २२१, ४२. ६९; २. ४, ३३; ३३, ४३; ४५, ६४; ४९, २१; ५२, ४९; ५६, २; ५७, ५; ८०, ४; ३. २, २; ३, १; ३६, १. ३९; १५७, ३१; १६१, १३; १६६, १०, १५; १७३, ७५; २३३, ४९; २४६, ११. २५; २५९, ९; २६७, १२. १५; ३११, ५; ३१२, ९. १४. २०. ३३; ४. ५, २८; २२, ३४; ३३, ११. ३३; ७१, १. २६; ७२, १५. ३४; ५. ६, ५. ६; ८, १५; १८, २२; २२, ३३. ३८; २३, २; ५०, ५; ८३, ३०; १२८, २३; १३८, १६; १४०, २०; १४२, ८; १५१, ५७; १५२, ३; १६४, १; १९६, ३३; ६. १, ६; १९, २४; २१, १; २५, १६; ४३, ८७; ४५, २९; ५१, २६; ७. १६, २९; २१, ४६; ५२, १. १९; ८६, ४; १०६, ४७; १२६, ३०; १५७, ४१; १६२, ४६; १९०, ४२; १९९, ५; ८. ६०, १०; ६२, ५. ७; ६४, ६६; ९६, ४८; ९. ११, २१; १२, ५६; १६, ७. ४८; २३, १३; ५५, ११; १०. १०, ७; १२, १; ११. २६, २४; २७, १४; १२. ३७, ३१; ४०, १५; ४५, ४; १३. १६७, २४; १५. ३, १३; ५, ७; ९, १०; १०, २२. ४३; ११, २५; १२, ३; १४, १०; २७, २३।

४. कुन्तीपुत्र (द्विव०) = भीमसेन और अर्जुन (३. ३१३, १२)।

५. कुन्तीपुत्र (बहु०) = कौन्तेय : १. १२४, १. २०; १५७, १. २; २०१, ४; २०६, २; ५, ५०, १३. १५; १७०, ६; ७. ७९, २७; १५. १०, ४८।

१. कुन्तीमातृ = अर्जुन (१. २२२, १६; २. २६, १६; ३. ४१, ४३)।

२. कुन्तीमातृ = भीमसेन (३. १८०, २)।

कुन्तीविवाह—पृथा (कुन्ती) ने अपने स्वयंवर के अवसर पर पति के रूप में पाण्डु का वरण किया (१. ११२)।

१. कुन्तीसुत = अर्जुन (१. १३५, ११; १८७, २९; १८८, २; २१५, २६; ३. ४२, १२; २७०, १३; ४. ६५, ६; ६. १०६, ४९; ७. २७, १९; ७९, २५; ८३, २४; ८. ४६, ५७।

२. कुन्तीसुत = भीमसेन (३. १५३, ५; ८. ४६, ८०)।

३. कुन्तीसुत = कर्ण (११. २७, २०)।

४. कुन्तीसुत = युधिष्ठिर (१. २१५, १०. १५; १९१, २०; २. ४७, ३६; ६७, ४९; ७१, २१; ३. ४, ५; ९२, २७; ३१२, ४१; ५. २, ७; ३, ६; ७. १२, ८; १२. २८, ५९; ४०, १; १३. १४८, ४१; १६७, १; १५. २, २; ८, १८; १८. २, १५।

५. कुन्तीसुत (द्वि०) = भीमसेन और अर्जुन (१. १९०, ३८)।

६. कुन्तीसुत (बहु०) = कौन्तेय : १. १९४, १५; १९७, ३७; २०७, १९; २. ६८, ५६; ५. १, १८; २, २; १७२, २१; ७. १७६, ९; १९०, ९।

१. कुन्द, स्कन्द के एक पार्षद का नाम है (९. ४५, ३९)।

२. कुन्द = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

कुन्दापरान्त (बहु०), एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ४९)।

कुपट, दनु के पुत्र, एक असुर का नाम है (१. ६५, २६)। पृथिवी पर राजा सुपार्श्व इसी के अंश से उत्पन्न हुये थे (१. ६७. २८–२९)।

कुबलाश्व—देखिये कुवलाश्व।

कुबेर, धन के अधिपति; उत्तर दिशा के दिग्पाल, गुह्यकों, राक्षसों और यक्षों के राजा, तथा रिद्धि के पति, का नाम है। 'कुबेरस्य', (१. ७४, ८५)। 'उद्यानानि कुबेरस्य', (१. १२०, ११)। 'कुबेरस्य प्रियः सखा', (१. १७०, १३)। 'कुबेरः', (१. १९७, ३)। अर्जुन-कृष्ण के विरुद्ध देवों के साथ युद्ध करते हुये धनेश्वर, अर्थात् कुबेर ने अपनी गदा से कृष्ण पर प्रहार किया (१. २२७, ३२)। 'कुबेरं', (२. ६, १७)। 'कुबेरस्य सभां', (२. ९, ३०)। इनकी सभा का वर्णन, जहाँ इनके सखा, भगवान शङ्कर, भी कभी-कभी पदार्पण करते हैं (२. १०)। 'स राजगृहमासाद्य कुबेर-भवनोपमम्', (२. ५८, ३)। व्यास जी ने युधिष्ठिर से कहा कि वे अर्जुन को इनके तथा अन्य देवों के पास दिव्यास्त्र प्राप्ति के लिये भेजें (३. ३६, ३२)। ये अपने अनुचरों, यक्षों, के साथ अर्जुन के पास आये (३. ४१, ८)। दिव्यास्त्र प्रदान करने के पश्चात् इन्होंने अर्जुन को आशीर्वाद दिया (३. ४१, ३३)। 'कुबेरेण यथा हीनं वनं चैत्ररथं तथा', (३. ८०, ६)। 'जज्ञे धनपतिर्यत्र कुबेरो नरवाहनः', (३. ८९, ५)। अर्जुन ने इनसे दिव्यास्त्र प्राप्त किये (३. ९१, १३)। ये मन्दराचल पर्वत पर निवास करते थे। (३. १३९, ५)। लोमश ने युधिष्ठिर से कहा कि वे कुबेर के सचिवों तथा अन्य राक्षसों का सामना करने के लिये तैयार हों (३. १३९, १०)। 'कुबेरनलिनीं रम्यां राक्षसैरभिसेविताम्', (३. १४१, २४)। भीमसेन ने इनके भवन के समीप एक रमणीय सरोवर देखा जो इनका क्रीडास्थल था (३. १५३, २. ८; १५४, ४. ११)। 'कुबेरस्य नलिन्याः', (३. १५५, २१)। पाण्डवगण इनकी अनुमति से इनके सरोवर के समीप कुछ समय तक रहे (३. १५५, ३३)। इन्होंने गन्धमादन पर्वत पर आकर युधिष्ठिर से भेंट की (३. १६१)। इन्होंने युधिष्ठिर आदि को उपदेश और सान्त्वना देने के पश्चात् अपने भवन के लिये प्रस्थान किया (३. १६२)। 'कुबेरो नरवाहनः', (३. १६८, १३)। 'कुबेरात्', (३. १७६, १३)। 'कैलासं·····कुबेरकान्तं', (३. १७७, २)। 'कुबेरकान्तां नलिनीं', (३. १७७, ९)। चित्रसेन इनके भवन से द्वैतवन सरोवर के पास आये (३. २४०, २१)। ये पुलस्त्य जी के पुत्र थे (३. २७४, १२)। "ये (वैश्रवण) अपने पिता को छोड़कर पितामह ब्रह्मा की सेवा में रहने लगे। इससे इन पर क्रुद्ध होकर इनके पिता पुलस्त्य ने अपने आधे शरीर से एक अन्य द्विज, विश्रवा, को प्रगट किया। विश्रवा वैश्रवण से प्रतिशोध लेने के लिये उन पर कुपित रहता था। परन्तु ब्रह्मा इन पर (वैश्रवण पर) प्रसन्न थे अतः उन्होंने इन्हें अमरत्व प्रदान करते हुये इन्हें धन का स्वामी और लोकपाल बना दिया। ब्रह्मा ने ही इनको शिव से भी मैत्री कराई और राक्षसों से परिपूर्ण लङ्का नगरी को इनकी राजधानी बनाया। साथ ही उन्होंने इन्हें पुष्पक विमान भी दिया (३. २७४, १२–१७)।" जब इन्हें यह पता लगा कि इनके पिता इन पर क्रुद्ध रहते हैं तो ये उन्हें प्रसन्न रखने का यत्न करने लगे (३. २७५, २)। ये लङ्का में रहते थे (३. २७५, ३)। एक दिन जब ये अपने पिता के साथ विराजमान थे तो रावण आदि ने इन्हें महान् ऐश्वर्य से युक्त देखा (३. २७५, १४)। "ब्रह्मा से वर प्राप्त कर लेने पर रावण ने सर्वप्रथम इन्हें परास्त करके और लङ्का से बहिष्कृत कर दिया। रावण ने इनका पुष्पक विमान भी छीन लिया। तदनन्तर ये गन्धमादन पर्वत पर आकर निवास करने लगे (३. २७५, ३३–३४)।" इन्होंने रावण को शाप दिया (३. २७५, ३५)। विभीषण से सन्तुष्ट होकर इन्होंने उसे यक्ष तथा राक्षसों का सेनापति बना दिया (३. २७५, ३७)। इनकी आज्ञा से एक गुह्यक अभिमन्त्रित जल लेकर श्वेतपर्वत से श्रीराम के पास आया (३. २८९, १०)। रावण का वध करने के पश्चात् श्रीराम ने पुष्पक विमान इन्हें लौटा दिया (३. ९१, ६९)। अर्जुन और कृपाचार्य का युद्ध देखने के लिये ये भी उपस्थित हुये (४. ५६, ११)। 'लोकपालः कुबेरः', (५. १६, २७)। इन्द्र ने इन्हें इनके पद पर प्रतिष्ठित किया (५. १६, ३१)। इन्द्र ने इन्हें सम्पूर्ण यक्षों तथा धन का अधिपति बना दिया (५. १६, ३३) अन्य देवताओं सहित इनसे घिरे हुये इन्द्र ने स्वर्गलोक के लिये प्रस्थान किया (५. १८, २)। 'वैश्रवणः कुबेरो', (५. २९, १६)। गन्धमादन पर्वत पर एक दुर्गम गुफा में एक मधुकोष था जिसका मधु इन्हें अत्यन्त प्रिय था (५. ६४, १९)। द्रोणाचार्य ने दुर्योधन को बताया कि कुबेर के भवन में जाकर पाण्डवों ने विविध प्रकार के रत्न प्राप्त किये हैं (५. १३९, १५)। ये यक्षों के रक्षक हैं (५. १५६, १२)। भीम ने उलूक से कहा कि यदि कुबेर भी दुर्योधन की रक्षा करें तो भी वह अब बच नहीं सकता (५. १६२, २७)। लोक में भ्रमण करते हुये स्थूलकर्ण के घर पर आये (५. १९२, ३३)। कुबेर शुक्राचार्य से धन का चतुर्थ भाग प्राप्त करके उसका उपभोग करते हैं और उस धन का सोलहवाँ भाग मनुष्यों को देते हैं (६. ६, २३)। गन्धमादन पर्वत पर गुह्यकों के स्वामी, कुबेर, निवास करते हैं (६. ६, ३४)। इन्हें युद्ध में जीतना सरल है परन्तु भीष्म को जीतना अशक्य (६. ५०, ७)। ये यक्षों में श्रेष्ठ हैं (७. ६, ५)। 'कुबेरसदनेष्वपि', (७. ६७, १५)। 'कुबेरतनयोपमः', (७. ७१, ९)। अर्जुन ने इनसे प्राप्त अस्त्रों के प्रयोग की घोषणा की (७. ७६, १३)। 'कुबेरस्य विहारे च नलिनीं पद्मभूपिताम्', (७. ८०, २७)। कवच और कुण्डल से सम्पन्न कर्ण का ये भी युद्ध में सामना नहीं कर सकते थे (७. १८०, १६)। कर्ण ने युद्ध में इन्हें भी विजित कर सकने की गर्वोक्ति की (८. ३७, ३१)। शल्य ने दुर्योधन को सान्त्वना देते हुए उससे कहा कि उसकी सेना में कुबेर आदि जैसे पराक्रमी योद्धा थे (८. ९२, १३)। "बलराम उस कुबेरतीर्थ में आये जहाँ पूर्वकाल में तपस्या करके कुबेर ने अनेक वर प्राप्त किये। इसी तीर्थ में कुबेर ने रुद्र के साथ मित्रता, धन का स्वामित्व, देवत्व, लोकपालत्व, और नलकूबर नामक पुत्र अनायास ही प्राप्त कर लिये। यहीं कुबेर को पुष्पक विमान मिला और वे यक्षों के राजा बने (९. ४८, २८–३१)।" अर्जुन ने इनसे दिव्यास्त्र प्राप्त किये थे (१२. ५, १३)। 'कुबेरभवनप्रख्यं', (१२. ४४, १०)। 'कुबेर इव नैरृतान्', (१२. ६७, २६)। मुचकुन्द के साथ इनका संवाद (१२. ७४)। 'धनानां राक्षसानां च कुबेरमपि चेश्वरम्', (१२. १२२, २८)। 'इष्टेषु विसृजन्नर्थान्कुबेर इव कामदः', (१२. १३९, १०६)। 'कुबेरः सर्वयक्षाणां क्रतूना विष्णुरुच्यते', (१३. १४, ३१९)। उत्तर दिशा की ओर जाते समय अष्टावक्र मुनि का मार्ग में इन्होंने स्वागत किया (१३. १९, ३२–५३)। 'कुबेरमिव रक्षांसि', (१३. ६१, ३८)। 'कुबेरश्च

सहानुगः', (१४. ८, ४)। 'कुबेरानुचरैः', (१४. ८, ७)। 'कुबेरस्य', (१४. ८, ११. १२)। 'कुबेरः सर्वरक्षानां राजा', (१४. ४३, ११)। 'यक्षेन्द्राय कुबेराय', (१४. ६५, ६)। 'कुबेरभवनं', (१५. २०, ३३)। 'कुबेरस्य भवनं', (१८. ५, २९)।

तु० की० कुबेर के निम्नलिखित पर्याय :

*अलकाधिप—देखिये वस्था०।

*कैलासनिलय : २. ६, ११; ३. ४१, ३३; १२. २८६, ९।

*गदाधर : ६. ५०, ७।

*गुह्यकाधिप, गुह्यकाधिपति—देखिये वस्था०।

*द्रविणाधिपति : ३. १६०, ४१।

*धनद : २. १०, १३. १५. २१. ३३; ११, ५१; २५, ४; २७, २ (उत्तरां तस्माद्दिशं धनदपालिताम्); ३. १५०, २२; १५१, ५; १५६, १६; १६९, २९; १६०, ६; १६१, ३५; १६२, १ (धनद उवाच). २७; १६४, ६; १७८, २; ५. १००, ४; १११, ११; ११४, ४; १९२, ४५; ७. २७, ३९; २०२, ३७; ८. १७, १९; ६८, १३; ९. ४६, ३९; १२. ४४, १३; ७४, ९ (धनद उवाच); २८०, २८; २८९, ८. १०; १३. १९, १६. ३२. ४२. ६१।

*धनदेश्वर : २. १०, २९।

*धनाधिगोप्तृ : ५. १९२, ३४।

*धनाधिप : ३. १६१, २७. ३७. ४०; १३. १९, ५२।

*धनाधिपति : ३. १६१, ३०; १६२, ३५. ३६; ९. ४७, ३०।

*धनाध्यक्ष : १. १७९, १८; २०७, ३८; ३. ४१, ३३; १६२, २९; २८१, १२; १०. ९, १९; १४. ६५, ११।

*धनानां ईश्वरः : २. १०, २८. १३; ३. ४१, ८।

*धनपति : १. २१६, १६; २. १०, ३८; १२, ३; २५, ९; ५. ११४, ३; ८. ४२, ३६; १२. २८९, ९।

*धनेश : ३. २३१, ३२; २७४, १५; ७. ७२, ४६; १८. ५, १४।

*धनेश्वर : १. १८७, ६; २२७, ३२; २. १०, २७. ३८. ३९; ३. १९, २१; ११८, ११; १५४, ६. ९. २७; १६०, ६१; १६१, १८. २२. ३३. ३६. ५४ (धनेश्वर उवाच). ६०; १६६, १६; २६५, ३; २७५, ३२. ३७; २८१, २४; ४. ७०, २१; ५. १८, २; ११७, ९; १९१, २५; ६. १०७, १७; ७. ४६, १२; १३३, १०; १२. ७४, १२; २०७, ३५; १३. १६. २२; १९, ५१; १५०, ३९; १६५, ११।

*नरवाहन : ३. ८९, ५; १५९, २६; १६१, ४२; १६८, १३; २३१, ३३; २७५, १४; ५. १९२, ३३; १२. ५९, ११९।

*निधिप : १२. २०७, ३५।

*पौलस्त्य—देखिये वस्था०।

*यक्षपति, यक्षप्रवर, यक्षरक्षोधिप, यक्ष-राक्षसभर्तृ, यक्षराज्, यक्षराज, यक्षराजन्, यक्षाधिप, यक्षाधिपति—देखिये वस्था०।

*राक्षसाधिपति, राक्षसेश्वर, राजराज, राजराजन्—देखिये वस्था०।

*वित्तगोप्तृ : ८. ९०, ३५।

*वित्तपति : ७. १८५, २५।

*वित्तानां पतिः : ८. ३४, ३२।

*वित्तेश : ६. ३४, २३; १४. १०, ३४।

*वैश्रवण : १. १, १६६; २, १८३; ५५, ४; १९९, ६; २. १०, २; १७, १५; ३. १२, २२; ६५, २३; १५३, ९; १५४, १२; १५६, १२. १३; १५९, २६. २८; १६०, ५. ३७. ५९. ६१; १६१, १५; १६३, ५. ६; १६४, १९; १७६, ४. १८; १८९, ५; २७४, १२. १४. १५; २७५, १. १४. ३४; २९१, ६९; ४. १३, ३८; ४५, ४०; ७०, १४; ५. २९, १६; १३२, ९. १०; १५८, ३२; १९२, ४८. ५५; ६. ६, ४१; १०३, २२; १२०, ५२; ७. १०, ४१; २३, ४२; ६९, २४; ९९, ११; २०२, ४३; ८. ८, २४; ३९, २; ७०, ७; ८७, ४९; ९. ५५, २९; १२. १५, १७; ५७, १८; ६८, ४१. ४७; ७४, ३. ५. ८. १६. १९; १३९, १०३; १५५, १०; २८३, ८; १३. १३, ३५. ३७. ४८. ५१; ५३, ४९; १०२, १८; १४६, ४; १४. ७०, १९; ८९, ३३; १५. १०, ४२।

कुब्जाम्रक, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, ४०)।

१. कुमार = स्कन्द, देखिये वस्था०।

२. कुमार, एक राजा का नाम है जिनको पाण्डवों ने आमन्त्रित किया (५. ४, २४)।

३. कुमार, गरुड के पुत्र, एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, १३)।

४. कुमार, एक पाञ्चाल राजा का नाम है जो युधिष्ठिर के चक्ररक्षक थे। द्रोण ने इनका वध किया (७. १६, २१-२५)।

५. कुमार = सनत्कुमार (५. ४१, २. ५; १२. ३७, १२ : 'पितामहसुतं ज्येष्ठं कुमारं दीप्ततेजसम्')।

६. कुमार (बहु०) एक जाति के लोगों का नाम है जिन्हें अपनी दिग्विजय के समय भीमसेन ने पराजित किया था (२. ३०, १)। ये लोग युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये (२. ५२, १४)।

७. कुमार, स्कन्द के पार्षदों के एक वर्ग का नाम है (३. २२८, ३)। ये स्कन्द से उत्पन्न हुये थे (३. २३०, ३१)।

१. कुमारक, कौरव्य जाति के एक नाग का नाम है (१. ५७, १३)।

२. कुमारक (बहु०) = ७. कुमार (३. २२८, १)।

कुमारकोटि, एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, १७)।

कुमारधारा, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, १४९)।

१. कुमारी, केकय देश की एक राजकुमारी का नाम है जो पूरुवंशीय राजा भीमसेन की पत्नी और प्रतिश्रवा की माता थीं (१. ९५, ४३)।

२. कुमारी, धनंजय नामक नाग की पत्नी का नाम है (५. ११७, १७)।

३. कुमारी, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, ३६)।

४. कुमारी, शाकद्वीप की एक नदी का नाम है (६. ११, ३२)।

५. कुमारी = दुर्गा (उमा) : ४. ६, ७।

६. कुमारी, एक तीर्थ का नाम है जो पाण्ड्य देश में स्थित था (३. ८८, १४)।

७. कुमारी, स्कन्द से उत्पन्न ग्रहों का नाम जो गर्भस्थ बालकों का भक्षण करने वाले थे (३. २३०, ३१)।

१. कुमारपितृ = स्कन्द (३. २२८, ५)।

२. कुमारपितृ = शिव (८. ३३, ६०; १०. ७, ९)।

कुमारसू (कुमार के पिता) = अग्नि (२. ३१, ४४)।

कुमारिका, एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, ८१)।

१. कुमुद, एक प्रमुख नाग का नाम है (१. ३५, १५; ५. १०३, १३; १६. ४, १५)।

२. कुमुद, एक वानर का नाम है जो सुग्रीव का अनुगामी था (३. २८९, ४)।

३. कुमुद, सुप्रतीक के कुल में उत्पन्न एक गजराज का नाम है (५. ९९, १५)।

४. कुमुद, गरुड के पुत्र, एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, १२)।

५. कुमुद, कुशद्वीप के एक पर्वत का नाम है (६. १२, १०)।

६. कुमुद, धाता द्वारा स्कन्द को प्रदान किये गये पाँच पार्षदों में से एक का नाम है (९. ४५, ३९)।

७. कुमुद, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ५६)।

८. कुमुद = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

कुमुदमालिन्, ब्रह्मा द्वारा स्कन्द को दिये गये चार पार्षदों में से एक का नाम है (९. ४५, २५)।

कुमुदाक्ष, एक प्रमुख नाग का नाम है (१. ३५, १५)।

कुमुदोत्तर, शाकद्वीप का एक वर्ष जो जलद के निकट स्थित था (६. ११, २५)।

१. कुम्भ, प्रह्लाद के द्वितीय पुत्र, एक असुर का नाम है (१. ६५, १९)।

२. कुम्भ = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

कुम्भक, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७५)।

१. **कुम्भकर्ण**, रावण के भ्राता, एक राक्षस का नाम है (३. २०४, २९)। "विश्रवा द्वारा राक्षसकन्या पुष्पोत्कटा के गर्भ से उत्पन्न एक पुत्र जो रावण का छोटा सहोदर भाई था। यह अत्यन्त शक्तिशाली और मायावी था। इसने सर नीचे करके घोर तपस्या की और ब्राह्मा से निद्रा का वरदान माँगा (३. २७५, १–७. २८)।" त्रिजटा ने इसे देखा (३. २८०, ६६)। रावण ने इसे निद्रा से जगवाया (३. २८६, १९. २०. २२)। इसे श्रीराम के विरुद्ध युद्ध के लिये भेजा (३. २८६, २८. २९)। युद्ध में लक्ष्मण ने इसका वध किया (३. २८७, १. ६. ८. ९. ११. १३. १५. २०)। हतं'''कुम्भकर्णं', (३. २८८, १)। 'कुम्भकर्णेन', (३. २८८, ६)। तुकी० राक्षस्, राक्षसेश्वर, राक्षसेन्द्र।

२. **कुम्भकर्ण** = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कुम्भकर्णादिवध—"कुम्भकर्ण ने बल, चण्डबल, वज्रबाहु, तथा अन्य वानरों का भक्षण कर लिया। तदनन्तर वह सुग्रीव और लक्ष्मण से युद्ध करने लगा। जब उसकी भुजायें काटी जाती थीं तो उसकी दूनी भुजायें पुनः प्रगट हो जाती थीं। अन्त में लक्ष्मण ने एक ब्रह्मास्त्र से इसका वध कर दिया जिससे भयभीत होकर सभी राक्षस भाग चले। लक्ष्मण ने वज्रवेग और प्रमाथिन् से भी युद्ध किया। हनुमान ने वज्रवेग का और नल ने प्रमाथिन् का वध किया (३. २८७)।

कुम्भकर्णाश्रम, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, १५७)।

१. **कुम्भयोनि**, इन्द्र की सभा में नृत्य करने वाली एक अप्सरा का नाम है (३. ४३, ३०)।

२. **कुम्भयोनि** = अगस्त्य (३. ९८, २)।

३. **कुम्भयोनि** = द्रोण (७. १५७, २७. ३६; १८४, ३. ६. १०; १९२, १२)।

कुम्भरेतस्, शंयु के प्रथम पुत्र, भरद्वाज, की पत्नी वीरा के गर्भ से उत्पन्न वीर नामक अग्नि का नाम है जिन्हें सोम देवता के साथ द्वितीय आज्य-भाग प्राप्त होता है। इन्हें 'रथप्रभु', 'रथध्वान', और 'कुम्भरेतस्' भी कहते हैं (३. २१९, ९–१०)।

कुम्भवक्त्र, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७५)।

कुम्भध्वजा, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २६)।

कुम्भसम्भव = द्रोण (७. १५७, ३६; १९२, १५)।

कुम्भाण्डकोदर, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६९)।

कुम्भिका, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १५)।

कुम्भीनसि, एक असुर का नाम है (१३. ३९, ७)।

कुम्भीनसी, गन्धर्वराज चित्ररथ की पत्नी का नाम है जिसने चित्ररथ को जीवन-रक्षा के लिये युधिष्ठिर से प्रार्थना की थी (१. १७०, ३५)।

कुरङ्ग, एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान और त्रिरात्र-उपवास के फल का वर्णन किया गया है (१३. २५, १२)।

१. **कुरु**, कुरुओं के पूर्वज, एक प्राचीन राजा का नाम है जो संवरण के पुत्र थे। सञ्जय ने पूर्वकाल के राजाओं के अन्तर्गत इनकी गणना कराई (१. १, २३२)। 'भरतस्य कुरोः पुरोराजमीढस्य चानघ', (१. ७५, १)। ये संवरण द्वारा तपती के गर्भ से उत्पन्न हुये थे (१. ९४, ४८)। इन्होंने वाहिनी के गर्भ से अश्ववान्, अभिष्यन्त, चैत्ररथ, मुनि एवं जनमेजय नामक पुत्र उत्पन्न किये, और इन्हीं के नाम से कुरुजाङ्गल देश की प्रसिद्धि है (१. ९४, ५०–५१)। इन्होंने दशार्ह की राजकुमारी शुभाङ्गी से विवाह और उससे विदुर को उत्पन्न किया (१. ९५, ३९–४०)। ये संवरण और तपती के पुत्र थे (१. १७३, ५०)। 'कुरोर्वै यज्ञशीलस्य क्षेत्रमेतन्महात्मनः', (३. १२९, २२)। इनके यज्ञ के समय कुरुक्षेत्र में सरस्वती नदी ओघवती के नाम से प्रगट हुई (९. ३८, २६–२७)। कुरुक्षेत्र की भूमि जोतते समय इनका इन्द्र के साथ संवाद (९, ५३, २–४. ६–१५)। 'कुरुः' (१२. ४७, ८; १३. १६५, ५४; १५. १०, २४)।

२. **कुरु** = दुर्योधन (७. १८९, २०)।

३. **कुरु** (बहु० कुरवः), कुरु के वंशजों या एक जाति के लोगों का नाम है। बहुधा पाण्डु के वंशजों और अनुगामियों के विपरीत इसका धृतराष्ट्र के पुत्रों और उनके अनुगामियों के लिये प्रयोग किया गया है : १. १, १३. १७५; २, १३ (कुरुपाण्डवसेनयोः). २८. ३० (कुरुवाहिनीम्). ६४. ७४. २१२. २१३. २८१; ४१, १४; ४२, ३८; ४९, १४. १८; ६०, १८. २२. २४; ६१, ४. ७; ६२, १. ३०; ६३, १२६; ६७, ७५. ८७; ६८, २; १००, १२. १९; १०१, १२; १०२, ५७. ७३; १०६, ३. ११; १०८, १९; १०९, १. १०. ११. १६; ११०, १८; ११३, २२. २९. ३१. ३८; ११५, ३०; १२१, १; १२२, २४. ४२; १२३, ४०; १२४, २२; १२६, ३४; १२७, २८; १२८, २; १२८, ३८. ४३; १३०, २६. ३१; १३१, १३. ७५. ७८; १३२, १. ३६; १३५, ११; १३८, ६१; १३९, २२. २५; १४५, ३. ५; १४६, २५; १६६, १६; १७०, ६५. ८०; १७१. १२; १७२, ३; १७३, २८; १८५, १३; १९०, ४४; १९१, ५. १८. २१; १९२, ९. १०; १९४, ३. ४; २००, १७; २०३, ३. ४; २०४, २८; २०६, २२. २४; २१३, ४; २२१, ५९. ६०. ६१. ६२; २. ५, २६; १३, ५; २०, २६; २६, १४; ३७, २८; ४६, ५; ५०, १०; ५८, ८. २६. ३६; ६२, १०; ६६, १०. १२; ६७, २३. २७. ३९. ४०. ५२; ६८, ४३; ६९, २. ७. १७; ७१, १७. १८. १९. २१. २५; ७२, ४; ७३, १४; ७६, १९; ७७, १२. १९; ७९, ६. ३३; ८०, २३. २४. ३३; ८१, १७. ३५; ३. ३, १३; ४, ९; १०, २. १०. २०; १२, ६२; १३, ११; २३, ७. ९; २७, ९. २३; २८, ३५; ३३, ७६; ३४, ११. १२. १४. १९; ५१, ४५; ८०, २०; ८५, १६; १२०, ११. २३; १५४, २७; १५५, ३३; १५९, ४. ५; १६२, २२; १६५, ११; १७६, १२. २१; १७७, १३. २०; १८३, ७. २१; १९१, २१. ३०; १९४, २; २३३, ३; २३५, ८; २३६, २९; २३७, ११; २४१, ६; २४६, २०; २४८, ८; २६८, २२; २६९, ८. १२; ३११, ७; ३१३, ६; ४. १, १२; ६, ३५; ९, २०; १०, ५; २०, १२; २१, ६; ३१, ३०; ३५, ५. १०. १४. १९; ३६, ५. ८. ९. २२; ३७, ८. १२. १८. २९. ३२. ३४; ३८, १. २. ५. १०. ११. १५. २१. २५. २६. ३२. ३९. ४९. ५०; ३९, २; ४५, ६. ३२; ४८, २३; ४९, ५. ८; ५३, १०. १५; ५४, २. ४. ८. १२. २२. २६. ३२; ५५, ३१; ५६, १३; ५७, १. ५. ६. १०; ५९, १२; ६०, ४. ८; ६१, ५. १९. २१. २८. २९. ३४; ६३, ९; ६४, १३. १९; ६६, ८. ११. १२. १९. २२. २५. २६. २९. ३०; ६७, १. २. ७. ८. १०. १२. १४. १६. २३; ६८, ७. १०. १६. १८. १९. २०. ३६. ७५; ६९, ३. १०. १२; ७०, १६. १८. २१; ७१, २१; ५. १, १; २, ४. ५; ५, ३. ८. १४. १६. १८; १९, १४; २०, १२. १४. १६; २१, १५; २२, ३२; २३, ११. १९. २०; २४, १; २५, ३. ८. ९. ११. १४; २६, ८. १३. १६. १७. १९. २२. २३; २७, २; २९, ३१. ३२. ३६. ३७. ३८. ४८. ४९; ३०, १६. १८. २१. २२. २७. ३९. ४८; ३१, ४. ५. ११. १२. १३. १४. १५. २१. २२; ३२, २१. २२. २८. ३१. ३२; ३४, २. ५; ३६, ७२. ७३; ४८, ३. १४. ९६. ९७. १०९; ४९, २५. ३९. ४८; ५०, १०. १४. ३६; ५१, ७. ३९. ५९; ५३, १४; ५४, ७; ५५, ४. १०; ५७, ५८; ५८, ४. ८. २८; ६०, ४. ८. २१. २२. २३; ६२, १४; ६५, १२; ७२, ७९. ८१. ८२. ८७. ९०; ७३, १२. ३४. ३६; ७४, १. ९. १८. २१; ७७, १७; ७८, ७. ८; ७९, १; ८०, ११; ८१, २; ८२, ३८; ८३, १. ५. २९. ४८. ६९; ८५, १८; ८७, १५; ८९, २०. २१. २२; ९०, २१. ३१. ५१. ५२. ५७. ६६. ८३; ९१, ४. ११. १२. ३५. ३६. ३८; ९३, ८. ९. १६. १९. २०; ९४, ८. १५. २५. २७. ३३. ४०; ९५, ३. ६. ८. ११. २२. ३१; ९६, ३; ९७, १. ८; १२७, १; १२८, १. १०. २२. ३४; १२९, ५०; १३०, १८; १३१, ३३. ३५. ३७. ४१; १३२, १; १३७, ३. ४. २३. २७; १३९, २२; १४३, ४. १०; १४४, १. ८. ९; १४५, ९; १४७, ११. १४; १४८, ३. ४. २१. २७. ३०. ३६; १४९, ३; १५०, ७. १९; १५१, २; १५३, ७; १५८, ३१; १५९, १. ३; १६०, ८. ९. ४९. १०३; १६१, ६. २१; १६२, २३. ३२; १६३, १२; १६६, २; १६८, १४. ३७; १८२, ११; १९४, ६; ६. १, २. ३. २६. ३३; २, १३. १५; ३, १२. २३. ५२. ६२; ९, ३९. ७५; १४,

१. ४. ४०. ८०; १५, १३; १६, ४. २३; १७, १८; १८, ९; १९, १०. १४; २०, ५. ७; २५, २५; ४४, १. २५; ४५, २; ४६, ३. ४८; ४८, १. २७. ३२. ११७; ५०, ४१; ५१, ३०; ५५, २१; ५९, ८४. ९४. १०३. १०६. १०७. १२८. १२९. १३२. १३४. १३९; ६०, ६. २९; ६१, ३४; ६३, ३०; ६४, ८०; ७०, १२; ७२, १२. १५; ७३, १२. ४१; ७४, ८. ३८. ३९; ७७, ४६; ७८, ३१; ८५, ३६; ८६, ५३; ८७, १. ३७; ८९, २८; ९६, ३. ७९. ८०; ९७, २६; १०३, ४४; १०४, १५. ३८; १०६, ७८; १०७, ९; १०८, ११. ६०; ११५, २. ३. ६. ४२; ११७, ५०; ११९, ६९. ८०. ८४. १०९. १११. ११४; १२०, २. १०. ११. २१. २५. २८. ३१. ६२; १२१, ६. २६. २८; १२२, १३; ७. १, ९. १०. १३. २५. ३२; २, १. ३. ७. १३. १५. २२. ३५; ३, १२. १३. १४. १५. १६; ४, ११. १४. १७. १८; ७, २०. ४२. ५०; ११, ३४. ३७. ४७; १२, ७; १३, १९; १५, २. १०; १६, १२. ४४; २१, ४१. ६३; २२, २५; २३, २९; ३१, ६. ७. १९; ३२, ४६. ५०; ४७, १२; ४९, १२; ७४, ३१; ८२, ३; ८५, २. १४; ८६, ६. २३; ८७, ३१; ९१, २२; ९५, ३; ९६, १; ९७, ४; १००, १८. २३; १०२, ३२; १०३, ४७; १०४, ९; १०५, २८. ३८; १०६, १. २. ४; ११०, ८३; १११, १३; ११२, ४२; ११४, १९. ३२. ५३; ११५, ६१; १२१, ३२; १२४, १८; १२७, २३. ६१; १३०, १८; १३५, १७. ३५; १३७, १६; १३९, २३. ७७; १४०, २०; १४१, २२. २६. २८. ४६. ६७; १४५, ५. ९१. ९३. ९५; १४६, ३९; १४७, १५; १५०, ११; १५१, २. १९. ४०; १५३, ८; १५५, १२; १५६, ९७; १५७, ३८; १५८, ६९; १६२, १०; १६७, ७८; १७०, ५८; १७४, १३. २०. २१; १७५, ६१; १७७, १; १७९, २१. ४०. ४२. ४८. ६४; १८३, १२; १८४, १३. २८; १८६, १. ४. ६; १८८, ५०; १८९, ६४; १९२, ७४; १९३, १. २०. ३८; १९६, ८. ११. २१. २९; १९९, ९. १२. १३. ५१; ८. १, १४. १५; ५, ३; ९, ६०; २१, ९. २६; २४, ४; २५, १६; २८, ४९; ३७, १. ३७; ४१, ७६; ४३, ३१. ३९; ४५, १४. १६. ३०. ३५; ४६, २२; ४७, २०. २३; ४८, ६७; ४९, ६३; ५०, ३; ५१, ६९. ७६; ५६, ८१. १४५; ५७, १२; ५९, १; ६१, २. १५; ६४, ४; ६६, ३८; ६७, २. ५; ६८, ११; ६९, ७९; ७३, २१; ७४, ५६; ७६, ३. २०; ७८, ४; ७९, ४५. ९४; ८०, १. ४. २१. २२; ८१, १. ७. ९. ३९. ४१. ४३. ४५. ४८; ८२, १; ८४, ३८; ८५, ९. २३; ८७, १०; ८८, ५. १३; ८९, ४३. ६७. ६८. ८४. ९५. ९६. ९७; ९०, १. ३. ७. १६; ९१, ३८. ६६; ९२, ५; ९३, १; ९४, ११. २७. ६३; ९५, १. १३. १४. १७; ९. १, १. ९. ३४. ४१; ३, १; ८, २७. ३६; ९, १. ३२; १०, ७; १६, ३०; १७, १८. ४१. ४२. ६८; २१, ४; २३, १४. १५. ४५; २८, ६३; २९, ८०. ९०; ३१, ४४; ३३, ३. २५; ३५, १०. १६. २१; ५४, २२. २३; ५८, ११; ५९, १७; १०. १, २९; ८, ७३; ९, ६१; १०, २७; १६, ३; ११. ८, १७; १०, ७. १८. २०; १४, १. १६; १६, १. १०. १५. १७. २६. ४४. ४५; २३, २४. २५. २९; २४, ४; २५, ४१. ४३; २७, ३. २३; १२. ७, ४. २०; ३७, ३९. ४१; ५५, ४; ७५, ३५; १६८, १; २२८, ९६; ३४८, ८; ३४९, ४४; १३. ७, २७; ३९, १३; ५७, ४; ७६, २८; १४८, ६१; १६८, १८. २४; १४. १४, १५; १५, ३३; ५२, ७. ५७; ५३, १०. २०. २२; ५४, २१; ६०, ५. १०; ६१, २७; ६२, १७; ६३, ५; ६७, २; ७०, २१; ७१, १७; ७५, ४; ८०, ९; ८७, १२. २७; ८८, ३; १५. ३, १६; ८, १५; १०, २८. ३०. ३५; १७, १२. २१; १८, ११; २३, १४; २४, २; २५, ४; ३२, ६; ३३, ८. १८; १६. ४, २. ३. १९; ५, १; १७. १, ३८; १८. ४, १; ५, ३० । तुकी० कौरव; बहु० कुरूद्वह; बहु० कुरुजाङ्गल; बहु० कुरुकुल; कुरुवंश; और उत्तराः कुरवः ।

कुरुकर्तृ = शिव (सहस्र नामों में से एक) ।

कुरुकुल—१. ४२, ३८; ४९, १८; ५. ३६, ७३; १५. ३६, २५ ।

१. कुरुकुलश्रेष्ठ = अर्जुन (१४. ३५, १४; ८७, २२) ।

२. कुरुकुलश्रेष्ठ = भीष्म (३. ८१, २२; ८३, ८९) ।

३. कुरुकुलश्रेष्ठ = धृतराष्ट्र (७. १८३, ४; १५. ११, ४१) ।

४. कुरुकुलश्रेष्ठ = दुर्योधन (९. ५७, ५७) ।

५. कुरुकुलश्रेष्ठ = जनमेजय (१५. ३५, १२) ।

६. कुरुकुलश्रेष्ठ = युधिष्ठिर (१२. ८९, ९; ९२, २१; १५. ११, ४) ।

१. कुरुकुलाधम = भीष्म (२. ४१, १२; ३. २५३, २१) ।

२. कुरुकुलाधम = दुर्योधन (४. ५३, १०; ९. ५६, १८) ।

३. कुरुकुलाधम = परिक्षित (१. ४१, १८) ।

१. कुरुकुलोद्वह = अर्जुन (३. ३७, ५०; १४. ५१, ४४. ४७; ७८, ३४) ।

२. कुरुकुलोद्वह = भीमसेन (३. १४९, ९) ।

३. कुरुकुलोद्वह = भीष्म (३. ८३, ५३; ५. १७८, १५; ६. ११९, १००; १२. ३०२, ६; १३. ३०, १; ८६, ४; १६८, १४) ।

४. कुरुकुलोद्वह = धृतराष्ट्र (६. ११, ३३; १२, २१; ७. २०१, ४९; १५. २, १४) ।

५. कुरुकुलोद्वह = जनमेजय (९. ४८, ४; १४. ६३, १०) ।

६. कुरुकुलोद्वह = पाण्डु (१. १२६, ३३) ।

७. कुरुकुलोद्वह = विचित्रवीर्य (५. १४७, २१) ।

८. कुरुकुलोद्वह = युधिष्ठिर (२. ४६, ५; ३. १७, ९; २२, ३; १९०, ६१; २१८, १; १४. ७२, २१; १५. ३, ७३; १७. ३. २५) ।

कुरुक्षेत्र (कुरुओं का क्षेत्र)—जनमेजय ने यहाँ एक यज्ञ किया था (१. ३, १) । नागराज तक्षक इसी क्षेत्र में इक्षुमती नदी के तट पर निवास करता था (१. ३, १४०–१४१) । महातपस्वी कुरु ने अपनी तपस्या से इस क्षेत्र को पवित्र बना दिया था (१. ९४, ५०) । शान्तनु-पुत्र चित्राङ्गद ने चित्राङ्गद नाम के एक गन्धर्व के साथ यहीं युद्ध किया था (१. १०१, ८) । 'तेषु त्रिषु कुमारेषु जातेषु कुरुजाङ्गलम् । कुरवोऽथ कुरुक्षेत्रं त्रयमेतदवर्धत ॥', (१. १०९, १) । सम्पूर्ण दिशाओं को विजित करने के पश्चात् सुन्द और उपसुन्द यहीं निवास करने लगे (१. २१०, २७) । तक्षक खाण्डव से कुरुक्षेत्र चला आया था (१. २२७, ४; २२८, १७) । पाण्डवगण गङ्गातट से यहाँ आये (३. ५, १) । "पुलस्त्य जी ने बताया कि कुरुक्षेत्र के दर्शन मात्र से समस्त जीव पाप-मुक्त हो जाते हैं । 'मैं कुरुक्षेत्र में जाऊँगा; कुरुक्षेत्र में निवास करूँगा', इस प्रकार जो कहता है वह सब पापों से मुक्त हो जाता है । वायु द्वारा लायी गई कुरुक्षेत्र की धूल भी शरीर पर पड़ जाय तो मनुष्य को परमगति प्राप्त हो जाती है । जो सरस्वती के दक्षिण और दृषद्वती के उत्तर कुरुक्षेत्र में वास करते हैं वे मानो स्वर्गलोक में ही रहते हैं—कुरुक्षेत्र की सीमा में स्थित अनेक तीर्थों की महत्ता का वर्णन । (३. ८३, १–४. ७–८. २४. ११०. १४५. २०३. २०५. २०६) ।" 'तरन्तुकारन्तुकयोर्यदन्तरं रामह्रदानां च मचक्रुकस्य च । एतत्कुरुक्षेत्रसमन्तपञ्चकं पितामहस्योत्तरवेदिरुच्यते ॥', (३. ८३, २०८) । 'कुरुक्षेत्रसमा गङ्गा', (३. ८५, ८८) । 'द्वापरेऽपि कुरुक्षेत्रं गङ्गा कलियुगे स्मृता', (३. ८५, ९०) । 'पुष्करे तु कुरुक्षेत्रे', (३. ८५, ९१) । कुरुक्षेत्र के ही एक पवित्र स्थान पर मान्धाता ने यज्ञ किया था (३. १२६, ४५) । 'द्वारमेतत्तु कौन्तेय कुरुक्षेत्रस्य भारत', (३. १२९, ११) । मुद्गल नामक एक जितेन्द्रिय ऋषि इसी क्षेत्र में निवास करते थे (३. २६०, ३) । ४. ५, २०; ५. १४१, ५३; १५०, ३. १९ । पाण्डवसेना ने कुरुक्षेत्र में पदार्पण किया (५. १५१, ६८. ६९) । 'सरितं पुण्यां कुरुक्षेत्रे हिरण्वतीम्', (५. १५२, ७) । 'सन्निविष्टं कुरुक्षेत्रे', (५. १५३, १) । 'शिबिराणि कुरुक्षेत्रे क्रियन्तां वसुधाधिपाः', (५. १५३, १४) । दुर्योधन की सेना ने कुरुक्षेत्र के लिये प्रस्थान किया (५. १५६, ३४) । ५. १५९, १; १६०, ९३; १६१, ११ । भीष्म और परशुराम का युद्ध यहीं हुआ था (५. १७८, २२. ५७. ५९. ६६. ७२. ७९. ८१) । ५. १९५, ११; ६. १, २. ३. २३ । 'धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे', (६. २५, १) । 'बहिष्कृता हिमवता गङ्गया च बहिष्कृताः । सरस्वत्या यमुनया कुरुक्षेत्रे चापि ये ॥', (८. ४४, ६) । 'रमणीये कुरुक्षेत्रे', ९. २३, २५) । 'कुरुक्षेत्रमुदारवृत्तिः', (९. ३५, ३७) । 'कुरुश्रेष्ठ कुरुक्षेत्रे कुरुष्व महतीं क्रियाम्', (९. ३७, ५७) । सरस्वती नदी यहाँ ओघवती के नाम से प्रगट हुई (९. ३८, २६–२७) । ९. ५२, २८–२९ ।

महात्मा कुरु ने इस क्षेत्र को बहुत वर्षों तक जोता था अतः इसका नाम कुरुक्षेत्र प्रसिद्ध हो गया; इसे समन्तपञ्चक भी कहते हैं (९. ५३, १–२)। इसकी सीमा और महिमा का वर्णन (९. ५३)। 'तरन्तुकारन्तुकयोर्यदन्तरं रामह्रदानां च मचक्रुकस्य च। एतत्कुरुक्षेत्रसमन्तपञ्चकं प्रजापतेरुत्तरवेदिरुच्यते ॥', (९. ५३, २४)। बलराम ने इस क्षेत्र का दर्शन किया (९. ५४, १)। भीमसेन और दुर्योधन का युद्ध यहीं हुआ था (९. ५५, ७. १६)। 'पृथिवीपालाः कुरुक्षेत्रं समागताः', (११. ८, २७)। 'समासाद्य कुरुक्षेत्रं', (११.·१६, ११)। भीष्म ने यहीं परशुराम से युद्ध किया था (१२. २७, ८)। भीष्म यहीं पर बाण-शय्या पर पड़े रहे (१२. ४८, २. ३. ६. १४; ५३, २३; ५९, २)। 'पुण्यमाहुः कुरुक्षेत्रं कुरुक्षेत्रात्सरस्वतीम्', (१२. १५२, ११)। अग्निपुत्र सुदर्शन अपनी पत्नी, ओघवती, के साथ यहीं रहते थे (१३. २, ४०)। एक तीर्थ (१३. १२५, ४८; १६५, २४; १६७, १२)। 'उञ्छवृत्तेर्वदान्यस्य कुरुक्षेत्रनिवासिनः', (१४. ९०, ७. २१)। 'धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे', (१३. ९०, २४)। 'कुरुक्षेत्राश्रमं', (१५. २२, २१)। 'कुरुक्षेत्रमवातरत', (१५. २३, १६)। 'कुरुक्षेत्रनिवासिनः', (१५. २७, २१)। 'कुरुक्षेत्रे रणाजिरे', (१५. ३१, ७)। 'कुरुक्षेत्रात्पिता', (१५. ३७, १०)। 'कुरुक्षेत्रमवातरत', (१६. ७, ६७)। तुकी० ब्रह्मक्षेत्र, ब्रह्मवेदी, धर्मक्षेत्र, समन्तपञ्चक।

कुरुक्षेत्रकथन (म)—"ऋषियों ने बलराम से कहा : समन्तपञ्चक-क्षेत्र सनातन तीर्थ है। इसे प्रजापति की उत्तरावेदी कहते हैं। यहाँ प्राचीन काल में देवताओं ने बहुत बड़े यज्ञ का अनुष्ठान किया था। राजर्षिप्रवर महात्मा कुरु ने इस क्षेत्र को अनेक वर्षों तक जोता था जिससे यह कुरुक्षेत्र के नाम से प्रसिद्ध हो गया। बलराम के यह पूछने पर कि कुरु ने इस क्षेत्र को क्यों जोता था, ऋषियों ने कहा : पूर्वकाल में जब कुरु इस क्षेत्र को जोत रहे थे तो इन्द्र ने उनसे इसका कारण पूछा। कुरु ने कहा : 'जो मनुष्य इस क्षेत्र में मृत्यु को प्राप्त करेंगे वे पुण्यात्माओं के पापरहित लोक में जायेंगे।' कुरु का वचन सुनकर इन्द्र उनका उपहास करके चले गये परन्तु कुरु इस क्षेत्र को जोतते ही रहे। इन्द्र भी अपने कार्य से विरत न होनेवाले कुरु के पास बार-बार आते और उनसे पूछ-पूछ कर प्रत्येक बार उनकी हँसी उड़ाकर चले जाते थे। जब कुरु तपस्यापूर्वक कुरुक्षेत्र की भूमि को जोतते ही रहे तो इन्द्र ने देवताओं को भी कुरु की चेष्टा से अवगत कराया। देवताओं ने वरदान देकर कुरु को अपने अनुकूल करने का परामर्श दिया। तब इन्द्र ने आकर कुरु से कहा : 'नरेश्वर ! आप व्यर्थ कष्ट क्यों उठाते हैं ? जो मनुष्य और पशु-पक्षी यहाँ निराहार रहकर देहत्याग करेंगे अथवा युद्ध में हत होंगे वे स्वर्गलोक के भागी होंगे।' कुरु ने कहा 'ऐसा ही हो'। इस प्रकार प्राचीनकाल में राजर्षि कुरु ने इस क्षेत्र को जोता और इन्द्र तथा ब्रह्मा आदि देवताओं ने इसे वर देकर अनुगृहीत किया। भूतल का कोई भी स्थान इससे अधिक फलदायक नहीं होगा। जो मनुष्य यहाँ रहकर तपस्या करेंगे वे देहत्याग के पश्चात् ब्रह्मलोक जायेंगे। जो पुण्यात्मा मानव यहाँ दान देंगे उनका वह दान शीघ्र ही सहस्रगुना हो जायगा। जो मानव शुभ की इच्छा रखकर यहाँ नित्य निवास करेंगे उन्हें कभी यम का राज्य नहीं देखना पड़ेगा। जो नरेश्वर यहाँ यज्ञ करेंगे वे, जब तक पृथिवी रहेगी, स्वर्ग में निवास करेंगे। इन्द्र ने इस क्षेत्र की महिमा के सम्बन्ध में इस प्रकार कहा है : 'कुरुक्षेत्र से वायु द्वारा उड़ायी हुई धूल भी यदि किसी पर पड़ जाय तो वह मनुष्य परम पद प्राप्त करता है। ब्राह्मण शिरोमणि तथा नृग आदि मुख्य-मुख्य पुरुषसिंह यहाँ महान् यज्ञ करके देहत्याग के पश्चात् उत्तम गति को प्राप्त हुये। तरन्तुक, अरन्तुक, रामह्रद, तथा मचक्रुक—इनके बीच का जो भूभाग है वही समन्तपञ्चक एवं कुरुक्षेत्र है। इसे प्रजापति की उत्तरावेदी कहते हैं। यह महान् पुण्यप्रद, कल्याणकारी, देवताओं का प्रिय और सर्वगुण सम्पन्न तीर्थ है। अतः यहाँ रणभूमि में मारे गये सम्पूर्ण नरेश सदा पुण्यमयी अक्षय गति प्राप्त करेंगे।' ब्रह्मा आदि देवताओं सहित साक्षात् इन्द्र ने ऐसी बातें कही थीं, और ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव ने इन बातों का अनुमोदन किया था। (९. ५३)।"

१. **कुरुजाङ्गल**, भारतवर्ष के एक जनपद का नाम है जिसकी कुरु के नाम से ही प्रसिद्धि हुई (१. ९४, ४९)। इस देश की उन्नत दशा का वर्णन (१. १०९, १ और बाद)। १. १२६, ९। 'कुरुजाङ्गलमुख्येषु राष्ट्रेषु नगरेषु च', (१. १९९, ९)। कृष्ण, अर्जुन, और भीमसेन गिरिव्रज जाते हुये कुरु देश से प्रस्थित हो कुरुजाङ्गल के बीच से होते हुये पद्मसरोवर पहुँचे (२. २०, २६)। ३. १०, ९; ५. १९, २९; १५३, ४; ६. ४, ६। सुहोत्र ने इस प्रदेश में यज्ञ किये थे (७. ५६, ९)। ८. १, १७; ८. ४४, १५. १७। सुहोत्र ने यहाँ एक यज्ञ किया था (१२. २९, २९)। युधिष्ठिर की राजधानी (१२. ३७, २३)।

२. **कुरुजाङ्गल** (बहु० °लाः), कुरुजाङ्गल प्रदेश के निवासियों का द्योतक है : ३. १०, ९; २३, ५. ६; १८३, २०; १३. १६७, २२; १५. ८, ११. २३; १०, ६। तुकी० बहु० जाङ्गल; बहु० कुरु।

कुरुतीर्थ, कुरुक्षेत्र में स्थित एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है (३: ८३, १६५. १६६)।

१. **कुरुनन्दन** = अभिमन्यु (६. १०१, २५)।

२. **कुरुनन्दन** = अर्जुन : १. १७४, ११; १७७, ४२; १९२, १ (°नौ = भीमसेन और अर्जुन); १९५, २०; २१४, २०; २१६, ६. ७; २२१, १६; २२२, २७ (कुरुदाशार्हनन्दनौ = अर्जुन और कृष्ण); २३४, ११; २. ३, ५; २७, १९. २१; २८, ४; ३. ३९, ५२; ४०, ५; ४१, २१. ४१; ४२, २०. ३१; ४३, १५; १७५, २०; २४५, १७; ४. २, १२; ५. ७, ७ (°नौ = अर्जुन और दुर्योधन); १५१, १८; ६. २६, ४१; ३०, ४३; ३८, १३; ११०, २१; ७. १४६, ७९. १०२; ८. ८१, ९; १४. ६२, १६; ७९, ३४; ८०, ११।

३. **कुरुनन्दन** = भीमसेन : १. १२९, २८; १९२, १ (°नौ=भीमसेन और अर्जुन); २. २३, ३५; २९, ९; ३. १४८, २१; २४३, १६।

४. **कुरुनन्दन** = भीष्म : २. ३६, २६; ३७, ८. ९; ३. ८२, २१. ६७. ११७; ८३, ७६; ८४, ७३; ८५, ९. १७; ५. १७८, ४१; १७९, ४; १२. ३०२, २; १३. ३९, ३; १०६, ११; १६८, ३५।

५. **कुरुनन्दन** = धृतराष्ट्र : १. २०५, १०; २. ५६, ८; ३. १०, १७; ५. ९५, ३३; १३१, १९; १५६, २२; ६. ५, १३; ११, ८; १२, ४४; ४३, २०; ४८, ३२; १००, ३; १०९, ३२; ११०, २१; १०. ८, ५४; १५. १०, २७।

६. **कुरुनन्दन** = दुर्योधन : १. २०३, १७; २. ४७, २; ६४, २०; ३. २४०, ६; २४६, २३; २४७, ११; ४. २६, १८; ५२, १६; ५. ७, ७ (°नौ = दुर्योधन और अर्जुन). २७. ३३; ८५, ३; १०६, ६; १६६, ५; १८०, २६; १८८, ११; १९२, ४५; ७. ७५, १६; ८. ३२, ३५; ९. ६१, ३।

७. **कुरुनन्दन** = जनमेजय : १. १०५, २३. २५; २. ३६, १३; ३. ४१, २६; ५. १९, १६; १२. ३४८, ६२. ८४।

८. **कुरुनन्दन** = पाण्डु : १. ११२, १०; ११३, १९; ११९, ४१; १२१, ४; १२४, ३; १२५, १२; १४५, ११।

९. **कुरुनन्दन** = परिक्षित : १. ४२, २३।

१०. **कुरुनन्दन** = प्रतीप : १. ९७, १८।

११. **कुरुनन्दन** = सहदेव : २. ३१, २५. ५३; ४. १०, ३; ५. १५१, ८।

१२. **कुरुनन्दन** = विदुर : ३. ६, १७।

१३. **कुरुनन्दन** = युधिष्ठिर : १. १६८, ५; १९५, २७; २. १४, ६९; ३७, ११; ४५, ५२; ३. १४, १५; २१, १७; ३३, ४३. ८०; ७२, १८; ७४, २३; ७५, २२; ८५, १७; ९१, १३; ९२, ९; ९५, २९; १२८, ६; १२९, ८; १६३, २७; १६७, १२; १७३, २५; १८७, ४८; २७७, १३; ३११, २०; ५. ८, २९; ६. ४३, ४२. ४४. ४९; १०७, ५२; ७. ७२, ४७; ८२, २८; ९. ७, ३४; १७, ५२; ३१, ३. ४४; १२. १०, १२; २४, ७; ४१, ९; ४९, ८; ५६, २०; ६९, ६. २५. ६३. ६५; ७३, २४; १२२, १०; २७३, ७;

२८२, १५. ६१; २८३, १७; ३१८, १०६; १३. २१, १३; ४२, ४; ४७, २६. ३५. ४७. ५१; ५२, ३५; ५३, १४; ५७, ४२; ७०, ३०; ८४, ३; ९३, २४; ९६, २; ११५, ७. ९; १५९, ३; १४. ८८, १६; १५. ३, ३३. ५६; ४, १; ५, ८; ३७, १०; १७. ३, ३४; १८. ४, ६. ९ ।

१४. कुरुनन्दन (बहु० °नाः) = पाण्डु के पुत्र : ४. १, १९. २३; १३, १. २; ५. २१, ३ ।

१. कुरुपति = भीष्म : ६. ४९, ४ ।

२. कुरुपति = दुर्योधन : ६. ७९, १५; ८. ५६, ३५ ।

३. कुरुपति = पाण्डु : १५. २५, २ ।

४. कुरुपति = युधिष्ठिर : २. २, १७; ११. २७, २८; १४. ८५, १८; ८८, २८ ।

कुरु-पाण्डवसत्तम = अर्जुन : ३. ४२, ४० ।

कुरु-पाण्डवाग्र्य = युधिष्ठिर : २. ६७, ५१ ।

१. कुरुपुङ्गव = अभिमन्यु : ६. ५८, २५ ।

२. कुरुपुङ्गव = अर्जुन : १. १३९, १५; ४. ५, १८; ५९, १८; १४. ५२, ३८ (°वौ = कृष्ण और अर्जुन); ७८, १२; १६. ६, १; ८, ३१ ।

३. कुरुपुङ्गव = भीमसेन : १. १२९, २३ ।

४. कुरुपुङ्गव = भीष्म : २. ३७, ६; ७. २, ११; १३. ५८, १; ५९, १ ।

५. कुरुपुङ्गव = भूरिश्रवस् : ७. १४२, ४६. ५६ ।

६. कुरुपुङ्गव = धृतराष्ट्र : २. ६७, २८ ।

७. कुरुपुङ्गव = दुर्योधन : ५. ५, ८; १७०, ११; १९२, ६०; ६. ११६, ८; ७. १५८, १३ ।

८. कुरुपुङ्गव = सोमदत्त : ७. १५६, २८; १६२, ७ ।

९. कुरुपुङ्गव = युधिष्ठिर : २. ३७, ६; ७. १६२, ४६; ८. ९६, २२; ९. १७, २१. ९०; १२. ३१, १०; १३. ११६, ४२ ।

१०. कुरुपुङ्गव, बहु० (°वाः) = बहु० कुरु (देखिये वस्था०)

कुरुपुङ्गवाग्रज = जनमेजय : १. ४४, ७ ।

कुरुपुङ्गवाग्र्य = सात्यकि : ७. ११८, १ ।

कुरुपृतनापति = कर्ण : ८. ३७, ४१ ।

१. कुरुप्रवीर = अर्जुन : ६. ३५, ४८; ८. ६५, १०; ९१, ३९ ।

२. कुरुप्रवीर = भीष्म : ५. २, ५; १२. ५१, १४ ।

३. कुरुप्रवीर = धृतराष्ट्र : २. ५३, २६; ८. ७, १३ ।

४. कुरुप्रवीर = दुर्योधन : ४. ६५, १२; ६६, २२; ८. ७९, ७१ ।

५. कुरुप्रवीर = जनमेजय : १. ४४, ६. ९ ।

६. कुरुप्रवीर = पाण्डु (?) : १. १९२, १८ (विचित्रवीर्यस्य सुतस्य कश्चित् कुरुप्रवीरस्य ध्रियन्ति पुत्राः) ।

७. कुरुप्रवीर = पुरुमित्र : ८. ७, १४ ।

८. कुरुप्रवीर = विकर्ण : ४. ५४, ९ ।

९. कुरुप्रवीर = युधिष्ठिर : १. १९१, ६. २२; ३. २३, ८; ३. १९२, ७२; २३२, १०; ५. २, ९; १२. १६७, ४९ ।

१०. कुरुप्रवीर, (बहु० °राः) = कुरु, बहु० (देखिये वस्था०) ।

कुरुभूत = शिव (सहस्र नामों में से एक) ।

१. कुरुमुख्य = अर्जुन : १४. ८०, २७ ।

२. कुरुमुख्य = भीमसेन : ६. ४५, १९ (°ख्यौ = भीमसेन और दुर्योधन); ९. ५८, १ ।

३. कुरुमुख्य = भीष्म : १. १००, ७४; ५. ५९, १८; १४८, ३४; ६. १०७, १०६; ११८, ३८ ।

४. कुरुमुख्य = चित्राङ्गद : १. १०१, ८ ।

५. कुरुमुख्य = धृतराष्ट्र : २. ४८, २३ ।

६. कुरुमुख्य = दुर्मुख : ७. २०, ३० ।

७. कुरुमुख्य=दुर्योधन : ६. ४५, १९ (°ख्यौ=भीमसेन और दुर्योधन); ९. ५८, १ (°ख्यौ = भीमसेन और दुर्योधन) ।

८. कुरुमुख्य = युधिष्ठिर : ८. ३१, १३; १४. ८०, ९ ।

कुरुयोध=कर्ण : ८. ८७, ६४ (कुरुपाण्डवयोधयोः=कर्ण और अर्जुन) ।

१. कुरुराज = शान्तनु : ९. ५६, २५ ।

२. कुरुराज = धृतराष्ट्र : २. ५८, ७; ७. १४४, २९; १५. २०, ६; २०, २४; २९, ६; ३७, ३४ ।

३. कुरुराज=दुर्योधन : १. १३५, १. २; २. ७०, ७; ५. ४७, ९; १५३, २७; ६. ७३, १९; १२२, १७; ७. ३९, २३; ११६, १२. १४. २३; १३०, २८; १४२, ४; १५९, २; ८. ७, २३; ९३, १९. ४५; ९. ३, १९. ४५; ६, २८; ५५, १४; ५६, ७. २४; ६१, ५४; ६२, ७; १०. ९, १५. ५६; ११. १७, ३० ।

४. कुरुराज = परिक्षित : १०. १७, १५; १७. १, ८ ।

५. कुरुराज = युधिष्ठिर : १. २, ५२. ३३२; १७०, ३७; २. ४५, ३७; ३. १७६, ७; १८३, ५३; ४. ३, ४; १०, १२; ६८, ५४; ७१, १३; ७. २३, ८४; ८. ९६, ४; ९. १६, ३३; १०. १३, ६; ११. २६, ४४; १३. १४८, ४८; १६६, ६; १४. १५, ३०; ६०, २४; ७१, १७; ८३, १४; ८९, २१. ३६; ९०, १३; १५. १, १८; २३, ७; २५, ५; २८, १८; २९, १०; ३७, २; १६. १, ७; १७. ३, २७; १८. १, १९; ३, २. ४३ ।

१. कुरुराजन् = दुर्योधन : १४. ७८, ३५ ।

२. कुरुराजन् = युधिष्ठिर : १५. २३, ५ ।

कुरुराजपुत्र, (द्विव० °त्रौ) और (बहु० °त्राः) : १. १८९, १५ (अर्जुन और भीमसेन); ३. १६५, ८ (पाण्डव) ।

कुरुराजर्षिसत्तम = भीष्म : १२. ३२०, १ ।

कुरुवंश : १. १, ४६. ९९; ८६, ८; १०६, १२. ३२; १७०, ६१; ५. १५०, १४; ९. ४४, ४; ११. २३, २४; १२. ३०२, ५; १४. ७०, ८ ।

कुरुवंशकर = व्यास : १३. १८, ४३ ।

कुरुवंशकेतु = भीष्म : ६. २२, १५ ।

कुरुवंशविवर्धन = धृतराष्ट्र : १. ६७, ८३ ।

कुरुवंशविवर्धन, (बहु० °नाः) : १. १०६, ३२ (धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुर); १२४, २९ (पाण्डव); ३२ (पाण्डु और धृतराष्ट्र के पुत्र) ।

कुरुवरश्रेष्ठ = भीष्म : १. ८२, ७१. ७७ ।

कुरुवर्णक, (बहु० °काः), भारतवर्ष की एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ५६) ।

१. कुरुवर्धन = दुर्योधन : १. २०२, १; ६. १०, ३ ।

२. कुरुवर्धन = युधिष्ठिर : ३. १३, ११; १४. १५, ३२; ८५, २० ।

कुरुवासिन् = शिव (सहस्र नामों में से एक) ।

कुरुविन्द, (बहु० °न्दाः) एक जाति के लोगों का नाम है (६. ८७, ९) ।

१. कुरुवीर = अर्जुन : १४. ७४, २०; ८०, २५ ।

२. कुरुवीर = भीमसेन : ३. १४७, ४ ।

३. कुरुवीर = धृतराष्ट्र : १५. २, ९; १८, २० ।

४. कुरुवीर = कर्ण : ८. ८७, ६३ ।

५. कुरुवीर = युधिष्ठिर : ५. ३३, १० ।

कुरुवीरमुख्य, (द्विव० °यो) = अर्जुन और कर्ण : ८ ।

१. कुरुवृद्ध = भीष्म : ४. ३०, १६; ५. १३९, १०; १४७, ७; १६३, १२; १६५, ५; ६. २५, १२; ५१, २२; १०७, ३०. ९१; ११२, २०; १२१, ५; १२२, ६; ७. ४, १; ११. १, २८ ।

२. कुरुवृद्ध = धृतराष्ट्र : ५. २३, ७ ।

कुरुवृद्धतम, (द्विव० °मावुभौ)=भीष्म और धृतराष्ट्र : २. ६८, १३ ।

कुरुवृद्धवर्य = धृतराष्ट्र : १५. २५, १८ ।

कुरुवृष = भीमसेन : २. २९, १३ (कुरुचेदिवृषौ = भीमसेन और शिशुपाल) ।

कुरुवृषभ = युधिष्ठिर : ३. २५, ५ ।

१. कुरुशार्दूल = अर्जुन : १. १७०, ६५; ६. ४५, १० (°लौ = अर्जुन और भीष्म); १२. ३४२, १०७; ३४८, ४१; १४. १५, ३२; १६. ६, ८; ८, २७ ।

२. कुरुशार्दूल = भीमसेन : २. ४४, ४।

३. कुरुशार्दूल : भीष्म : ५. १७७, ७; ६. ४५, १० (°लौ = भीष्म और अर्जुन); १३. ९०, १; १६८, ३।

४. कुरुशार्दूल = दुःशासन : ५. १६६, १६; ७. ३९, २१।

५. कुरुशार्दूल = धृतराष्ट्र : ९. ६३, ५२।

६. कुरुशार्दूल = जनमेजय : १२. ४७, २।

७. कुरुशार्दूल = लक्ष्मण (दुर्योधन का पुत्र) : ५. १६६, १६।

८. कुरुशार्दूल = युधिष्ठिर : २. १४ ५३; ४०, ६; ३. २५, १०; ९०, ७; ५. ८, ४७; १४. १, ८; १५. ३, ७१।

१. कुरुश्रेष्ठ = अर्जुन : ३. १४१, ९; ४. ७२, १०; ६. ३४, १९; १२०, ४१; ७. २८, २; १४६, १८; ८. ९६, ४६; १४. ६२, १५; ७३, ९; ७९, १२; ८३, १६।

२. कुरुश्रेष्ठ = भीमसेन : १. १९०, २८; ३. १५०, २२; १५१, ५; ९. ५५, ३८ (°ष्ठौ = भीमसेन और दुर्योधन)।

३. कुरुश्रेष्ठ = भीष्म : ३. ८२, ३; ८५, १८; ५. १६५, १४; १७४, ९; १७७, ३२; ६. ८२, ५; १०६, ४२; १२०, ४०; १२२, ५; १२. ९२, १; १२५, ७; १३८, ३; १३. ३९, १४; ४९, १; ६९, १; १६८, १८।

४. कुरुश्रेष्ठ = भूरिश्रवस् : ७. १४२, ५९।

५. कुरुश्रेष्ठ = धृतराष्ट्र : ६. १२, ४३; ५१, ५१; ८३, ७; १०६, ४२; १०७, ६; ८. ९६, २७; ९. ३१, २; ६३, ७२; १५. ५, ६; १३, १२; ३६, ४४।

६. कुरुश्रेष्ठ = दुर्योधन : २. ७०, ८; ३. २५२, १६; २५५, ८; ५. १२४, २१; १९२, ६३; १९३, ८; ७. १४५, ३३; ९. ५५, ३८ (°ष्ठौ = दुर्योधन और भीमसेन); १०. ९, १८. ४१।

७. कुरुश्रेष्ठ = जनमेजय : १. ३७, ५८; ५१, ३०।

८. कुरुश्रेष्ठ = नकुल : २.३२, १७।

९. कुरुश्रेष्ठ = परिक्षित : १. ५०, १९।

१०. कुरुश्रेष्ठ = सेनाबिन्दु : ८. ६, ३२।

११. कुरुश्रेष्ठ = युधिष्ठिर : २. ४, ६; ३७, १७; ३. १, ४६; १२, ४; १३, १५; १५, १६; २३, ५; २६, ६; ८९, ४. १७; ११०, १९; ११४, २९; १४४, २१; १५९, ८; २९२, १३; ५. २४, १; ७. १२६, ३४; ८. ६५, १२; १०. १२, ११; १२. ५६, १२. ४६; ५९, ५९; १३०, २९; १५९, १४; २०७, ४७; १३. ६६, १६; ११५, ८४; १६६, १७; १४. ६५, १४; ८७, १४; ८९, १९; १५. ६, ३; ७, २०; १७, २१।

कुरुश्रेष्ठतम = युधिष्ठिर ('कुरुश्रेष्ठतमं वदन्ति युधिष्ठिरं धर्मसुतं पतिं मे : ३. २७०, ७)।

१. कुरुसत्तम = अर्जुन : १. १७४, २; १७६, २०; २१५, ३. ६; ६. २८, ३१; ७. ९२, १८; १४६, ६६; ८. ८१, ७।

२. कुरुसत्तम = भीमसेन : ३. १६१, ४७; ९. ५५, ५१ (°मौ = भीमसेन और दुर्योधन); ५७, २१ (°मौ = भीमसेन और दुर्योधन)।

३. कुरुसत्तम = भीष्म : १. १४१, १६; २०५, २; २. ४२, २०; ३. २३८, १५; ५. ३०, १५; ५५, २१; ६. १२१, २; ८. ७, २ (°मौ = भीष्म और द्रोण); १२. ३७, १०; ३००, १; १३. २६, १४ (गाङ्गेय)।

४. कुरुसत्तम = चित्राङ्गद : १.१०१, ९।

५. कुरुसत्तम = शान्तनु : १. ९७, २०।

६. कुरुसत्तम = धृतराष्ट्र : १. १३४, ३; १४०, ५; ३. २३६, ५; २३८, २४; ५. ५५, ९; ९५, ८; ६. १०, ५; ७. १७५, ५८; १९२, १०; ८. ५३, ११; ९५, १४; ९. ५८, ३८; ११. २, ८. २३; ८, १; ९, १४।

७. कुरुसत्तम = द्रोण : ८. ७, २ (°मौ० = द्रोण और भीष्म)।

८. कुरुसत्तम = दुर्योधन : २. ४२, २०; ३. २५२, १३; २५६, १०; ५. १२४, ८; ६. १२१, ४५; ७. १५३, ४३; १५९, ११; ८. ३१, ६५; ९. ५५, ५१ (°मौ = दुर्योधन और भीमसेन); ५७, २१ (°मौ = दुर्योधन और भीमसेन); ५७, ५०; ५९, १३. २३; १२. १२४, ६८।

९. कुरुसत्तम = जनमेजय : १. १०७, ५; ११२, ११; २. ३३, ३१; ३. २४०, १६; ३११, १०; ४. ३८, ७; ९. ४४, १४; १५. १, ५।

१०. कुरुसत्तम = युधिष्ठिर : ३. २७, ९; ८१, ४; १२०, २१; १६३, २२; १८३, ६४; ५. ९, ५१; ८. ६५, ५; १२. १, ५; २४, ९; ३१, २५; ५५, २२; ५८, २४. २७; ७५, ३५; २५९, २७; २७९, २. ३; ३२३, १३; १३. ८, २३; ५९, २८; ६७, ११; १५९, २; १४. १४, १५; १५. १, ५।

कुरुसत्तमाः (बहु०) = कुरु (बहु०) : देखिये वस्था०।

१. कुरुसिंह = भीष्म : ६. १२०, ५।

२. कुरुसिंह = दुर्योधन : ७. १८९, ३५ (प्रववृते युद्धं कुरुमाधवसिंहयो)।

कुरुसिंहाः (बहु०) = कुरु (बहु०) : देखिये वस्था०।

१. कुरूत्तम = अर्जुन : ७. १०४, १ (°मौ = कृष्ण और अर्जुन)।

२. कुरूत्तम = दुर्योधन : ७. १४५, २५।

३. कुरूत्तम = युधिष्ठिर : ३. २२५, १५; ६. २२, ८; १३. ८, १४।

कुरूत्तमाः (बहु०) = कुरु (बहु०) : देखिये वस्था०।

१. कुरूद्वह = अर्जुन : ३. ४६, २८; १६८, ३१. ६६; ८. ६९, ८४; १४. १५, १६।

२. कुरूद्वह = बाह्लिक : १५. २९, ४४।

३. कुरूद्वह = भीष्म : १. ११३, ५; २. ४१, ३७; ३. ८३, ८. ४१. ५१. ९९. १०९. १४८. १६५; ८४, ७९; ५. १७८, ८७; १८५, १६; १२. १६०, ३८।

४. कुरूद्वह = भूरिश्रवस् : ७. १४३, ५५।

५. कुरूद्वह = धृतराष्ट्र : १. १४०, ९०; ७. २७, १४; १८२, १३; ८. ५०, ४७; १५. २. २, २३; ३, ६१; १९, ११; ३६, १२; ३७, ७।

६. कुरूद्वह = दुर्योधन : ५. १८३, ८; १८४, ६; ७. १५२, ३१; १२. १२४, २२।

७. कुरूद्वह = जनमेजय : २. ३१, ३७; ४७, १७; १५. ३५, १।

८. कुरूद्वह = कर्ण : ८. ५०, ४७।

९. कुरूद्वह = युधिष्ठिर : ३. १२८, २१; १२. ५६, १३; ६६, २१; ८२, १५; १५८, १२; १६३, १२; १३. ७०, १; ७१, ११; १६५, १; १५. २, १७; ५, २७. ३८; १६, १५।

कुरूद्वह, (बहु० °हाः) : १. १२८, ५० (पाण्डव और धार्तराष्ट्र); ३. ११, ७ (पाण्डव); १४५, ५३ (पाण्डव); १५५, ३४ (पाण्डव); २५२, ५२ (धार्तराष्ट्र); ३१४, १८ (पाण्डव); ६. २२, २ (पाण्डव); १३. १६८, १८; १४. ५२, ३२; ६३, ८; ६५, २३; ७१, ११।

कुलकर्तृ = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कुलत्थ, (बहु० °त्थाः), एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ६६)।

कुलधर्म—सनातन काल से चला आ रहा कुलाचार (६. २५, ४०)।

कुलपांसन—कुलाङ्गार और नराधम राजाओं के लिये प्रयुक्त हुआ है (५. ७४, १७)।

कुलम्पुन, एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से मनुष्य अपने समस्त कुल को पवित्र कर देता है (३. ८३, १०४)।

कुलम्पुना, एक नदी का नाम है (१३. १६५, २०)।

कुलपर्वत—महेन्द्र, मलय, सह्य, शुक्तिमान्, ऋक्षवान्, विन्ध्य, और पारियात्र, ये सात कुलपर्वत हैं (६. ९, ११)।

कुलहारिन् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कुलाद्य (बहु०)—देखिये कुशाद्य (बहु०)।

कुलिक, एक नाग-प्रमुख का नाम है जो कद्रू का पुत्र था (१. ६५, ४१)।

कुलिङ्ग (बहु०)—देखिये कुलिन्द (बहु०)।

१. कुलिन्द, (बहु० °न्दाः), एक जाति के लोगों का नाम है (२. १४, २६)। अपनी दिग्विजय के समय अर्जुन ने उत्तर में निवास करनेवाली इस जाति को पराजित किया था (२. २६, ४)। ये लोग भी

युधिष्ठिर के सम्मुख भेंट लेकर उपस्थित हुये (२. ५२, ३)। इनके राजा का नाम सुबाहु था (३. १४०, २६. २८)। ये उत्तर में निवास करते थे (६. ९, ६३)। इन्होंने सात्यकि पर आक्रमण किया (७. १२१, ४३)। कर्ण ने इन्हें पराजित किया था (८. ८, १९)। इन लोगों ने दुर्योधन की सेना के साथ युद्ध किया (८. ८५, ४. ८. १९)।

२. कुलिन्द (कुलिन्दों का राजा) = सुबाहु (३. १७, १२)।

कुलिन्दज = २. कुलिन्दपुत्र, जिसका शकुनि ने वध किया (८. ८५, १९)।

१. कुलिन्दपुत्र, कुलिन्दराज के एक पुत्र का नाम है जिसका कृप ने वध किया था (८. ८५, ६. ७)।

२. कुलिन्दपुत्र, कुलिन्दराज के एक अन्य पुत्र का नाम है जिसका शकुनि ने वध किया था (८. ८५, १५)।

कुलिन्दराजावरज = २. कुलिन्दपुत्र (८. ८५, १३)।

कुलिन्दाधिपति = कुलिन्दराज सुबाहु (३. १४०, २८; २६५, ७)।

कुलिन्दोपत्यक, (बहु० °काः), एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ५५)।

कुलूत, (बहु० °ताः), एक जाति के लोगों का नाम है (८. १२, ४५)।

कुलूताधिपति = क्षेमधूर्ति (८. १२, ३५)।

कुल्या, एक तीर्थ का नाम है जहाँ उपवास करने से अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है (१३. २५, ५६)।

कुवलयापीड, ऐरावत-कुलोत्पन्न कंस के शक्तिशाली गजराज का नाम है जिसका श्री कृष्ण ने वध किया था (गीप्रे० सं० २. ३८, २९ के बाद दा० पाठ, पृ० ८०१)।

कुवलाश्व, अयोध्या के एक इक्ष्वाकुवंशी राजा का नाम है (३. २०१, ६. ७)। ये धुन्धुमार के नाम से विख्यात थे (३. २०१, १०)। ये बृहदश्व के पुत्र थे (३. २०१, ३३)। इनके २१,००० पुत्र हुये (३. २०२, ५)। कुवलाश्व उत्तम गुणों में अपने पिता से बढ़कर थे (३. २०२, ६)। इनके पिता ने उचित समय इनका राज्याभिषेक कर दिया (३. २०२, ७)। बृहदश्व ने उत्तङ्क से इनकी वीरता की प्रशंसा की (३. २०३, २)। "महर्षि उतङ्क के साथ ये अपने २१,००० पुत्रों को लेकर धुन्धु के वध के लिये प्रस्थित हुए। इनके पुत्रों ने सात दिनों तक खुदाई करने के पश्चात् बालुकामय समुद्र में छिपे महाबली धुन्धु को देखा। इन्होंने अपने पुत्रों सहित धुन्धु पर आक्रमण किया परन्तु धुन्धु ने इनके पुत्रों को भस्म कर दिया। तब इन्होंने ब्रह्मास्त्र के प्रयोग द्वारा धुन्धु का वध कर दिया। इस युद्ध में इनके तीन पुत्र, दृढाश्व, कपिलाश्व, और चन्द्राश्व, ही शेष रहे। धुन्धु का वध करने से इनका नाम धुन्धुमार पड़ा (३. २०४, ११. १२. १८. २०. २३. २९. ३२. ३३. ४०. ४१. ४२)।" तुकी० धुन्धुमार; इक्ष्वाकु।

कुवलेशय = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

कुवीरा, एक नदी का नाम है (६. ९, २७)।

कुश, एक प्राचीन काल के महर्षि का नाम है, जो अग्निदेव के समान प्रतापी थे। ये ब्रह्मा के पुत्र और विश्वामित्र के प्रपितामह थे (गी० प्रे० सं० १. ७४, ६९ के बाद दाक्षिणात्य पाठ)।

कुशचीरा, एक नदी का नाम है (६. ९, २३)।

कुशद्वीप, सुप्रसिद्ध सात द्वीपों में से एक का नाम है (६. ११, २)। इसका विशेष वर्णन (६. १२, ६–१६)। शिव ने इसे दानव विद्युत्प्रभ को दे दिया (१३. १४, ८४)।

कुशधारा, एक नदी का नाम है (६. ९, २४)।

कुशनाभ, महर्षि कुश के धर्मात्मा पुत्र का नाम है जो गाधि के पिता और विश्वामित्र के पितामह थे (गी० प्रे० सं० १. ७४, ६९ के बाद दाक्षिणात्य पाठ)।

कुशप्लवन, एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान और तीन रात निवास से अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है (३. ८५, ३६)।

कुशबिन्दु, भारतवर्ष की एक जाति का नाम है (६. ९, ५६)।

कुशल, क्रौञ्चद्वीप के अन्तर्गत एक क्षेत्र का नाम है (६. १२, २१)।

कुशल्य, भारत की एक जाति का नाम है (६. ९, ४०)।

कुशवत्, एक झील का नाम है (३. १३०, १८)।

कुशावती, देवलोक की एक नगरी का नाम है (३. १६१, ५४)।

कुशबिन्दु, भारत के एक जनपद का नाम है (६. ९, ५६)।

कुशस्तम्ब, एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करनेवाला मनुष्य स्वर्ग में अप्सराओं द्वारा सेवित होता है (१३. २५, २८)

कुशस्थली = द्वारका : २. १४, ५०। 'कुशस्थलीं करिष्यामि निवेशं द्वारकां पुरीम्', (१२. ३३९, ९१)।

कुशाद्य, भारत के एक जनपद का नाम है (६. ९, ४४)।

कुशाम्ब, राजा वसु उपरिचर के तृतीय पुत्र का नाम है, जिसका एक दूसरा नाम मणिवाहन था (१. ६३, ३१)।

कुशावर्त, एक तीर्थ का नाम है (१३. २५, १३)।

कुशिक, एक प्राचीन राजा का नाम है (१. ८, २४)। ये कान्यकुब्ज देश के राजा गाधि के औरस पुत्र थे (१. १७५, ३)। ये यम की सभा में उपस्थित थे (२. ८, १०)। 'कुशिकस्याश्रमम्', (३. ८४, ३१)। कृष्ण की उपासना करनेवाले ऋषियों में से एक यह भी थे (५. ८३, २७)। 'कुशिकस्य', (६. ९, ८)। ये जह्नु के पौत्र और अज के पुत्र थे (१२. ४९, ३)। ये वल्लभ के पुत्र, बलाकाश्व के पौत्र और गाधि के पिता थे (१३. ४, ५. ६)। इन्होंने अपनी रानी के साथ महर्षि च्यवन की सेवा की (१३. ५२, ७. ९. १०. १३. १९. २३. २६. ३२)। इनके तथा इनकी रानी के धैर्य की परीक्षा लेने के बाद इनकी सेवा से प्रसन्न हो च्यवन मुनि ने इन्हें आशीर्वाद दिया (१३. ५३, १४. १५. २७. ५८. ६३. ६६)। महर्षि च्यवन के प्रभाव से इन्हें तथा इनकी रानी को अनेक आश्चर्यमय दृश्यों का दर्शन हुआ, और महर्षि च्यवन ने प्रसन्न होकर इन्हें वर माँगने के लिये कहा (१३. ५४, २. २३. २४. ३७)। इनके पूछने पर च्यवन ने इनके घर में अपने निवास का कारण बताया और इन्हें वरदान दिया (१३. ५५, २. ३५)। महर्षि च्यवन ने भृगुवंशी और कुशिकवंशियों के सम्बन्ध का कारण बताया (१३. ५६, १५)। तुकी० कुशिकर्षि।

कुशिक (बहु० °काः), कुशिक के वंशजों के लिये प्रयुक्त हुआ है। ये जह्नु से उत्पन्न हुये (१. ९४, ३३)। विश्वामित्र के वंश का नाम (१. १७४, ७)। 'कुलं····कुशिकानां', (१३. ५२, ९)। 'चिकीर्षन्कुशिकोच्छेदं', (१३. ५५, १३)। 'भृगूणां कुशिकानां च अभिसम्बन्धकारणम्', (१३. ५६, २०)।

कुशिकनन्दन = गाधि : १२. ४९, ३०।

कुशिकर्षि = कुशिक (१) : १३. ६६, १५।

कुशिकवंश—'महान्कुशिकवंशश्च ब्रह्मर्षिशतसङ्कुलः', (१३. ३, ५)।

कुशिकाश्रम, एक आश्रम का नाम है जो कौशिकी नदी के तट पर स्थित था (३. ८४, ३१. ३२)।

कुशिकोत्तम = इन्द्र : १३. १४, २०९।

१. कुशेशय, कुशद्वीप के एक पर्वत का नाम है (६. १२, ११)।

२. कुशेशय = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

कुसुम, धाता द्वारा स्कन्द को दिये गये पाँच पार्षदों में से एक का नाम है (९. ४५, ३९)।

कुसुम्भि, द्वारका के समीपवर्ती एक वन का नाम है (गी० प्रे० सं० २. ३८, २९ के बाद दाक्षिणात्य पाठ, पृ० ८१३)।

कुस्तुम्बरु, कुबेर की सभा के एक यक्ष का नाम है (२. १०, १६)।

कुहन, सौवीर देश के एक राजकुमार का नाम है जो जयद्रथ का अनुगामी था (३. २६५, ११)।

१. कुहर, कलिङ्ग देश के एक राजा का नाम है जो क्रोधवश नामक दैत्यों के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ६५)।

१. कुहुर, एक नाग का नाम है (५. १०३, १५)।

१. कुहू, अङ्गिरा की आठवीं पुत्री का नाम है (३. २१८, ८)। यह स्कन्द के जन्म के समय उपस्थित हुई थी (९. ४५, १३)।

२. कुहू = देवसेना : ३. २२९, ५०।

कूटमोहन = स्कन्द : ३. २३२, ५।

१. कूप, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ७६)।

२. कूप = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कूर्चामुख, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५३)।

कूर्म, कद्रू के पुत्र, एक नाग का नाम है (१. ६५, ४१)।

कूर्मराजन्, उस कूर्म का नाम है जिसने अमृतमंथन के समय मन्दराचल को अपनी पीठ पर धारण किया था (१. १८, ११)।

कूष्माण्ड, एक मन्त्र का नाम है (१३. १३६, १७)।

कूष्माण्डक, एक प्रमुख नाग का नाम है (१. ३५, ११)।

कृकणेयु, रौद्राश्व द्वारा मिश्रकेशी नामक अप्सरा के गर्भ से उत्पन्न दस पुत्रों में से एक (१. ९४, १०)।

कृच्छ्र = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

कृत, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३१)।

१. कृतम्, एक युग—कृतयुग—का नाम है (१. १०९, ५) । सूर्य का भी एक नाम है (३. ३, २०)। 'कृते युगे', (३. १४९, १८)। 'कृतयुगं', (३. १४९, २३)। 'चत्वार्याहुः सहस्राणि वर्षाणां तत् कृतं युगम्', (३. १८८, २२)। 'क्षीणे कलियुगे चैव प्रवर्त्तति कृतं युगम्', (३. १८८, २७)। ३. १९०, ५. ९; १९१, ३. ७. ९; ५. १३२, १७ (राजा कृतयुगस्रष्टा)। 'न तदा भविता त्रेता न कृतं द्वापरं न च', (५. १४२, ७. ९. ११. १३. १५)। 'चत्वारि भारते वर्षे युगानि'''कृतं त्रेता द्वापरं च तिष्यं च', (६. १०, ३)। १२. ६५, २५; ६९, ९९; ९१, ६; १४१, १०; २३१, १९. २०. २३. २५; २३२, ३२. ३७; २३८, ७. ८; ३३४, ९; ३३९, १०५; ३४८,४१; १३. १४, ११; १६, १; १३३, ६; १५०, ५०; १५८, १०; १४. ४४, ९। तुकी० कृतयुग।

२. कृतम्—पासे के खेल से सम्बद्ध एक शब्द : 'नाक्षान् क्षिपति गाण्डीवं न कृतं द्वापरं न च', (४. ५०, २४)।

कृतक्षण, विदेह देश के एक राजा का नाम है जो युधिष्ठिर की सभा में विराजते थे (२. ४, २७)। इन्होंने राजा युधिष्ठिर को चौदह सहस्र घोड़े भेंट में दिये थे (गीप्रे० सं० २. १५, ७ के बाद दाक्षिणात्य पाठ, पृ० ८६१)।

कृतघ्नोपाख्यानम्—"भीष्म ने कहा : मध्यदेश का एक ब्राह्मण, जिसने वेद बिल्कुल नहीं पढ़ा था, एक सम्पन्न ग्राम देखकर उसमें भिक्षा माँगने के लिए गया। उस ग्राम में एक धनी डाकू रहता था जो ब्राह्मणों का भक्त था। उक्त ब्राह्मण ने, जिसका नाम गौतम था, इसी डाकू के घर जाकर भिक्षा की याचना की। दस्यु ने ब्राह्मण को निवास, वस्त्र तथा एक युवती दासी भी दी। इस प्रकार समस्त वस्तुयें प्राप्त करके ब्राह्मण अत्यन्त प्रसन्न हुआ और दासी के कुटुम्ब की सहायता करता हुआ वहीं रहने लगा। उसने वाण चला-कर लक्ष्य वेधने का वहाँ बड़े यत्न के साथ अभ्यास किया और वन में घूम कर पशुओं का शिकार करने लगा। दस्युओं के सम्पर्क में रहने से गौतम भी पूरा दस्यु ही बन गया। एक दिन वेदों का पारङ्गत विद्वान् और संयमी एक अन्य ब्राह्मण उसी गाँव में आया जहाँ गौतम निवास करता था। वह ब्राह्मण शूद्र का अन्न नहीं खाता था, अतः ब्राह्मण के घर को ढूँढ़ता हुआ गौतम के घर पहुँचा। उसी समय गौतम भी कन्धे पर मारे हुए हंस को लटकाये वन से लौटा। ब्राह्मण ने देखा कि गौतम भी ब्राह्मणत्व से भ्रष्ट हो चुका है। यह देखकर ब्राह्मण ने गौतम को पहचान कर उससे घृणित जीवन का परित्याग करने के लिये कहा। उस हितैषी ब्राह्मण की बात सुनकर गौतम ने पश्चाताप करते हुये दूसरे दिन प्रातःकाल वह गाँव छोड़ देने की इच्छा व्यक्त की। वह दयालु ब्राह्मण, गौतम के अनुरोध पर रात भर वहीं रहा किन्तु उसने किसी भी वस्तु को स्पर्श करना, और भूखा होने पर भी अन्न ग्रहण करना अस्वीकार कर दिया (१२. १६८, ३०–५२)।" "दूसरे दिन प्रातःकाल उस श्रेष्ठ ब्राह्मण के वहाँ से चले जाने पर गौतम भी समुद्र की ओर चल दिया। मार्ग में उसे वैश्यों का एक दल मिला और वह उन्हीं के साथ चलने लगा। सहसा एक मत्त गज ने उस दल पर आक्रमण करके अनेक व्यक्तियों को मार डाला। गौतम भी भय से भाग चला। दल के सदस्यों का साथ छूट जाने के कारण वह मार्ग-भ्रष्ट होकर वन में किंपुरुष के समान इधर-उधर घूमने लगा। अन्त में एक मार्ग से चलकर वह एक ऐसे रमणीय वन में पहुँचा जो नन्दन वन के समान सुंदर, यक्षों और किन्नरों से सेवित, शाल, ताल और तमाल आदि वृक्षों तथा भारुण्ड नामक पक्षियों से युक्त था। उस रमणीय प्रदेश में गौतम ने एक विशाल वट-वृक्ष देखा और उसी के नीचे विश्राम करने लगा। सूर्यास्त होने पर उस वट-वृक्ष पर निवास करनेवाला एक बक आया जिसका नाम नाडीजङ्घ था। वह बक कश्यप का पुत्र और ब्रह्मा का सखा था। वह बकों का राजा, महाबुद्धिमान, तथा दिव्य दीप्ति से देदीप्यमान था। गौतम ने उस राजधर्मा बक को मार डालने की इच्छा की जिस पर राजधर्मा ने निकट आकर गौतम से कहा : 'आपका स्वागत है। यह मेरा घर है। आप यहाँ मेरे अतिथि हैं। आप रात में मेरा आतिथ्य स्वीकार करके कल प्रातःकाल यहाँ से प्रस्थान कीजियेगा।' (१२. १६९)।" "ऐसा कहकर राजधर्मा ने शास्त्रीय विधि के अनुसार गौतम का सत्कार किया, शाल के पुष्पों का आसन बना कर उसे बैठने के लिये दिया, और भागीरथी में मिलनेवाले बड़े-बड़े मत्स्य उसे भोजन के लिये दिये। गौतम ने जब यह बताया कि वह धन के लिये समुद्रतट जाने की इच्छा लेकर घर से चला है, तब राजधर्मा ने कहा : 'आपका कार्य सिद्ध हो जायगा। बृहस्पति के मतानुसार अर्थ सिद्धि के चार प्रकार होते हैं, जिसमें से एक प्रकार मित्र के सहयोग से धन प्राप्त करना भी होता है।' तदनन्तर राजधर्मा ने गौतम को अपने एक मित्र, राक्षसराज विरूपाक्ष, के पास जाने का परामर्श दिया जिसका नगर उस स्थान से केवल तीन योजन दूर था। राजधर्मा के परामर्शानुसार गौतम ने प्रातःकाल विरूपाक्ष की नगरी, मेरुव्रज के लिये प्रस्थान किया। नगर में पहुँचने पर विरूपाक्ष ने गौतम का स्वागत किया। (१२. १७०)।" "विरूपाक्ष ने गौतम से उसके गोत्र, शाखा और स्वाध्याय के विषय में प्रश्न पूछा किन्तु गौतम केवल अपनी जाति ही बता सका। गौतम के परिचय से असन्तुष्ट होने पर भी विरूपाक्ष ने ब्राह्मण होने के नाते उसे भी कार्त्तिक पूर्णिमा को एक सहस्र ब्राह्मणों को दिये जाने वाले भोज में सम्मिलित किया। आषाढ़ और माघ की पूर्णिमा को तथा विशेषतः कार्त्तिक-पूर्णिमा को विरूपाक्ष अनेक ब्राह्मणों को भोजन कराता और उन्हें रत्नादि दान करता था। अतः उस समय भोजन कराने के पश्चात् विरूपाक्ष ने राक्षसों को हिंसा करने से रोक कर ब्राह्मणों से कहा : 'विप्रगण ! आज एक दिन के लिये आप लोगों को राक्षसों की ओर से कोई भय नहीं है। अतः आनन्द कीजिये और शीघ्र ही अपने-अपने अभीष्ट स्थान को चले जाइये।' यह सुनकर सब ब्राह्मण-समुदाय चारों ओर भाग चला। गौतम भी सुवर्ण का भारी भार लेकर उसी वट-वृक्ष के पास आया। राजधर्मा ने उसको पुनः भोजनादि दिया। तदनन्तर गौतम ने सोचा कि अभी उसे बहुत दूर जाना है, और मार्ग में भोजन करने के लिये उसके पास कुछ भी नहीं है। ऐसा सोचकर उस कृतघ्न ने राजधर्मा को मारकर भोजन के लिये अपने साथ ले चलने का निश्चय किया (१२. १७१)।" "ऐसा निश्चय करके उस कृतघ्न ब्राह्मण गौतम ने राजधर्मा का वध कर दिया। तदनन्तर उस मृत पक्षी के पंख और बाल नोच कर आग में पकाया तथा उसे साथ ले सुवर्ण का बोझ सिर पर उठा कर वह ब्राह्मण शीघ्रता से वहाँ से चल दिया। दो दिन व्यतीत हो जाने पर भी जब राजधर्मा विरूपाक्ष से मिलने नहीं आया तब उसे चिन्ता हुई, क्योंकि ब्रह्मलोक से लौटते समय राजधर्मा नियमित रूप से प्रतिदिन विरूपाक्ष से मिले बिना अपने घर नहीं जाता था। विरूपाक्ष को गौतम पर सन्देह हुआ और उसने अपने पुत्र को राजधर्मा की खोज करने के लिये भेजा। वट-वृक्ष के पास आकर विरूपाक्ष के पुत्र तथा अन्य राक्षसों ने जब राजधर्मा के पंख तथा पैर की अस्थियाँ देखीं तब वे शीघ्र ही गौतम को पकड़ने चले। कुछ दूर जाकर उन सब ने

राजधर्मा का मांस लेकर जाते हुये गौतम को देखा और उसे पकड़ कर विरूपाक्ष के सम्मुख लाये। विरूपाक्ष ने अपने पुत्र को आज्ञा दी कि वह गौतम का वध करके उसका मांस राक्षसों को दे दे। राक्षसराज के आदेश पर भी राक्षसों ने कृतघ्न गौतम का मांस खाना अस्वीकार कर दिया। तदनन्तर विरूपाक्ष ने उसके मांस को दस्युओं को देने के लिये कहा परन्तु उन दस्युओं ने भी उस मांस को ग्रहण नहीं किया क्योंकि मांसाहारी जीव-जन्तु भी कृतघ्न का मांस ग्रहण नहीं करते (१२. १७२)।" "तदनन्तर विरूपाक्ष ने बकराज के लिये एक चिता तैयार कराई और उस पर उसके शव को रखकर विधिपूर्वक मित्र का दाहकर्म किया। उसी समय दिव्य धेनु, दक्षकन्या सुरभि, वहाँ आकर आकाश में ठीक चिता के ऊपर खड़ी हो गई। उसके मुख से दूध मिश्रित फेन राजधर्मा की चिता पर गिरा और वह जीवित हो उठा। उस समय इन्द्र ने वहाँ उपस्थित होकर विरूपाक्ष को बताया कि एक दिन राजधर्मा ब्रह्मा की सभा में उपस्थित नहीं हो सके जिस पर ब्रह्मा ने शाप दिया कि शीघ्र ही उन्हें वध का कष्ट भोगना पड़ेगा। इन्द्र ने बताया कि ब्रह्मा के उसी शाप के कारण गौतम ने राजधर्मा का वध किया और पुनः अमृत छिड़ककर ब्रह्मा ने ही उनको जीवन दान दिया। तदनन्तर राजधर्मा के आग्रह पर इन्द्र ने अमृत छिड़ककर गौतम को भी जीवित कर दिया। राजधर्मा ने उस पापाचारी ब्राह्मण को धन सहित विदा किया। इसके बाद बकराज यथोचित रीति से ब्रह्मा की सभा में गये और ब्रह्मा ने भी उनका स्वागत किया। गौतम भी पुनः शबरों के उसी गाँव में जाकर रहने लगा। वहाँ उसने शूद्र जाति की स्त्री के गर्भ से अनेक पापाचारी पुत्रों को उत्पन्न किया। तब देवताओं ने गौतम को शाप देते हुये कहा कि 'वह पापी कृतघ्न है और शूद्रजातीय स्त्री के गर्भ से सन्तान उत्पन्न कर रहा है, अतः घोर नरक में पड़ेगा।' भीष्म ने युधिष्ठिर से कहा : 'यह सारा प्रसङ्ग (कृतघ्नोपाख्यान) पूर्वकाल में मैंने महर्षि नारद से सुना था, और अब उसे स्मरण करके मैंने तुम्हें यथार्थ रूप से सुना दिया है।' (१२. १७३)।"

कृतकर्मन् = विष्णु (सहस्र नाम)।

कृतचेतस्, युधिष्ठिर की सेवा में उपस्थित रहनेवाले एक ब्राह्मण का नाम है (३. २६, २२)।

कृतज्ञ = विष्णु (सहस्र नाम)।

कृतबन्धु, एक प्राचीन नरेश का नाम है (१. १, २३८)।

कृतयुग, चार युगों में से प्रथम का नाम है : १. ६४, २६; ३. ८५, ९०; १००, ३; १४५, ३५; १४९, ७। "हनुमान् ने भीम को बताया : तात ! सबसे प्रथम कृतयुग है। उसमें सनातन धर्म की पूर्ण स्थिति रहती है। उसका कृतयुग नाम इसलिये पड़ा है कि उस उत्तम युग के लोग अपने सब कर्त्तव्य कर्म सम्पन्न ही कर लेते थे। उनके लिये कुछ करना शेष नहीं रहता था। उसमें धर्म और प्रजा का ह्रास नहीं होता था। उसमें देवता, दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस और नाग नहीं थे। ऋक्, साम और यजुर्वेद के मन्त्र वर्णों का पृथक्-पृथक् विभाग नहीं था। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, सभी शम-दम आदि शुभ लक्षणों से सम्पन्न थे। उस युग में चारों वर्णों का यह सनातन धर्म चारों चरणों से सम्पन्न था। (३. १४९, ८-२३)।" कृतयुग में सब मनुष्य धैर्यवान्, अपने-अपने कार्य में कुशल तथा पराक्रम-विधि के ज्ञाता थे (३. १६२, २)। कृतयुग में नारायण का वर्ण श्वेत होता है (३. १८९, ३२)। ३. १९१, १४; ५. १३२, १५. १७; ६. १०, ३. ४. ९; ७. ५२, २६; ८. ३४, २१; ९. ३७, ४१; ४०, ३; ४७, ५; १२. ३९, २; ५९, १३; ६९, ८०; २०७, ४५; २३१, २५. २७; २५६, ७; २६०, ८; २६७, ३२; ३३६, १८. ५६; ३३७, ५; ३४०, ८२; ३४८, १७. २९. ३४. ६३; १३. १४, १११; १४. ४, २। तुकी० देवयुग; कृतम्।

कृतलक्षण = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

कृतवर्मन्, यदुकुल के अन्तर्गत भोजवंशी हृदिक के पुत्र का नाम है : १. १, १९८. २०६; २, २९२। ये श्रीकृष्ण के अनुरागी एवं आज्ञापालक थे (१. ६३, १०५)। ये मरुतों के अंश से उत्पन्न हुये थे (१. ६७, ८१)। ये द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुये (१. १८६, १८)। ये सुभद्रा के साथ अर्जुन के विवाह के अवसर पर उपस्थित हुये (१. २२१, ३१)। ये युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित रहते थे (२. ४, ३०)। ये वृष्णिवंश के सात महारथियों में से एक थे (२. १४, ५८)। श्रीकृष्ण को शाल्व का वध करने का अवसर देने के लिये इन्होंने शाल्व से युद्ध नहीं किया (३. १८, २५)। ये अभिमन्यु और उत्तरा के विवाह के समय उपप्लव्य नगर में उपस्थित हुये (४. ७२, २१)। पाण्डवों की ओर से इन्हें रण-निमन्त्रण भेजा गया (५. ४, १२)। दुर्योधन के माँगने पर इन्होंने उसे एक अक्षौहिणी सेना दी (५. ७, ३२)। इनका एक अक्षौहिणी सेना के साथ दुर्योधन की सहायता में जाना (५. १९, १७)। ५. ४७, ६; ५७, २१। इन्होंने श्रीकृष्ण का अनुसरण किया (५. ९४, १८. ३४, ४८)। श्रीकृष्ण की रक्षा के लिये ये सेनासहित कौरवसभा के द्वार पर सन्नद्ध हो गये (५. १३०, ११)। 'कृतवर्मा महारथः', (५. १३१, ३०)। 'कृतवर्मा···सात्वतः', (५. १४३, ४२)। इन्होंने दुर्योधन की एक अक्षौहिणी सेना का सञ्चालन किया (५. १५५, ३२)। शैव्य ने इनके साथ युद्ध किया (५. १६४, ६)। ये कौरव-पक्ष के अतिरथी वीर थे (५. १६५, २४)। 'कृतवर्मा···महारथः', (५. १९५, ९)। 'कृतवर्मा···सात्वतः', (६. १६, १६)। इन्होंने प्रथम दिन के युद्ध में सात्यकि के साथ युद्ध किया (६. ४५, ११. १२) अभिमन्यु ने इन्हें आहत किया (६. ४७, १०. १९)। भीम ने इन्हें बाण से आहत किया (६. ४७, ३४)। मद्रराज शल्य इनके रथ पर चढ़ गये (६. ४७, ४२)। ये रणभूमि में भीष्म को घेर कर खड़े हो गये (६. ४८, ६३)। शङ्ख ने शल्य को इनके साथ रथ पर बैठे हुये देखा (६. ४९, २५)। ये अपनी सेना के साथ कौरव सेना के पृष्ठ भाग में खड़े हुये (६. ५१, १९)। 'कृतवर्मा···सात्वतः', (६. ५६, ३)। भीष्म की आज्ञा से ये भी अर्जुन से युद्ध करने गये (६. ५९, ७५)। धृष्टद्युम्न ने इनके पृष्ठरक्षक का वध कर दिया (६. ६१, १९)। 'कृतवर्मा···हार्दिक्यः', (६. ६५, ३१)। इन्होंने धृष्टद्युम्न पर आक्रमण किया (६. ७१, २३)। भीष्म द्वारा निर्मित क्रौञ्चव्यूह में ये मस्तक-स्थान पर स्थित हुये (६. ७५, १७)। कौरव सेना इनसे सुरक्षित थी (६.७६,१७)। 'कृतवर्मा···सात्वतः', (६. ८१, २)। इन्होंने भीमसेन से युद्ध किया (६. ८२, ५६. ५७)। 'सात्वतः', (६. ८६, ५०)। ६. ८९, ४०। 'सात्वतः', (६. ९५, १३)। भीष्म द्वारा रचित सर्वतोभद्र व्यूह में भी ये प्रमुख स्थान पर स्थित हुये (६. ९९, २)। सात्यकि ने इन्हें आहत किया (६. १०४, १६. २८)। इन्होंने भगदत्त का अनुसरण किया (६. १०८, १३)। इन्होंने धृष्टद्युम्न के साथ द्वन्द्वयुद्ध किया (६. ११०, १०)। ६. ११३, १. ४. ९. २२. ३३. ३४; ११४, ३. २२; ११९, १५; ७. ७, १३। सात्यकि ने इन पर बाण-प्रहार किया (७. १४, ३५)। इन्होंने शल्य की रक्षा की (७. १५, ३०. ३२)। ये द्रोणाचार्य के गारुडव्यूह के नेत्र-भाग में स्थित हुये (७. २०, ५)। इन्होंने सात्यकि के साथ युद्ध किया (७. २५, ९)। ७. ३७, ५. १७. ३१; ४६, ६. २०; ४७, ४. ८. १८। जिन छः महारथियों ने अभिमन्यु का वध करने के लिये उसे घेर लिया उनमें से एक यह भी थे (७. ७३, १०)। ये द्रोणाचार्य के सूचीव्यूह के मुख-भाग में स्थित हुये (७. ८७, २५)। ७. ९१, ३७; ९२, १७. २२. २४. २५. २६. २८. २९. ३३. ३५; ९७, २; १११, ४७; ११३, ४६. ४८. ४९. ५२. ५४. ५५. ५६. ६४ (हार्दिक्य); ११४, १५ (कृतवर्मा महाहृदम). ५८. ६१. ६३. ६५. ६९. ७२. ७३. ८३. ८५. ९४. ९८. ९९; ११५, ३. ४ (हार्दिक्य). ६. ७. १३; ११६, २६. २९. ३२. ३९. ४३; १२१, ९; १३०, २६; १४१, १६; १४४, १; १४७, ७४; १५६, १२१; १६५, ५. २३. २५. ४१; १७१, २३; १८३, ४४; १८७, २८; १८९, ६; १९३, १३; २००, ५१; ८. २, २०; ७, ८; ९, ८०; ११, १७; १३, ९; २६, २२. २८. २९. ३४; २९, ३४. ३५; ४६, ११; ४७, १६; ५१, ६८; ५४, १. १३. ३१. ३४. ३७. ३९; ६१, २४. ५९; ७३, १३. ५५. ६०; ७५, ११; ७८, २. ४२; ७९, ९. ८६; ८३, १६; ८५, ११; ९५, ५। दुर्योधन की सेना के बचे हुये तीन योद्धाओं में से एक यह भी थे (९. १, ३६; २, ६१)। 'सात्वतः', (९. ६, २)। ९. ८, ७।

ये शल्य के व्यूह के बायें भाग में खड़े हुये (९. ८, २५)। ९. ११, ३५. ३७. ४७; १२, ३४; १५, ७; १६, ४. ४५। सात्यकि ने इन्हें रथविहीन कर दिया (९. १७, ७९)। ९. १७, ८६; २१, २. १६. १७. २०. २१. २२. २६. २८. ३०; २२, ३१; २३, ७; २५, ४०. ४८. ६१; २७, ५. १७; २९, ३६. ५६; ३०, २. ९. ६१; ५४, २९; ६४, ८. २८; ६५, २; १०. १, १६. २८; ४, ३. ८. १२. १७. १८; ६, २; ८, ५. १०७; ९, ६. ३४. ४९; १०, ३. ६; ११. ११, १. १८; २५, ३१; १४. ६६, ३; ८६, ५; १६. ३, १६. १७. २०. २७. २८। ये मार्तिकावत के राजा बनाये गये (१६. ७, ६९)। मृत्यु के बाद इन्होंने मरुद्गणों में प्रवेश किया (१८. ५, १३)।

तुकी० इनके निम्नलिखित पर्याय :

* आनर्त्तवासिन् : ८. ७, ८।
* भोज, भोजराज—देखिये वस्था०।
* माधव—देखिये वस्था०।
* वार्ष्णेय, वृष्णि, वृष्णिसिंह—देखिये वस्था०।
* सात्वत—देखिये वस्था०।
* हार्दिक्य (हृदिक के पुत्र) : १. २, ३२; १८६, १८; २१९, ११; ३. २०, ५; ४. ७२, २१; ५. १९, १७; १३०, १०; १३१, २४. ३०; ६. ६५, ३१; ८१, २८; ९०, १; ९६, १८. ४०; १११, ४०. ४१; ७. १४, ५५; ४६, २०; ४७, ३; ९२, २७. ३१; ९४, २९; १०१, १२. २४; ११३, ५६. ५७. ६४; ११४, ५९. ६०. ६२. ६४. ६८. ७४. ७६. ८६. ९६. ९७. १०१-१०३; ११५, १. ४; ११६, ४६; ११८, १; ११९, ७; १२०, ९; १२८, २६; १४९, ५५; १५९, ४६; १६०, ४; १६४, २१; १६५, ५. २३. २४. २६. ३३. ३६. ३९; १६८, १२; १८९, ६; ८. ९, ८१; २६, २२. २५. ३८; ३०, २२; ४६, ३५; ४८, २९; ५४, ३३. ३८; ६१, ५७; ९. ४, ३०; ८, ३१; १७, ७१. ७२. ७५. ७७. ८५. ८७; २१, ९. १३. ३७; २३, ८; १०. ८, १०९; ११. ११, २२; १६. ३, १८. १९; ६, ९; १८. ५, १३।
* हृदिकसुत : ८. ८५, ३।
* हृदिकात्मज : ३. १८, २६; २०, ३; ७. ११४, ८८; ८. ७, ८; ५४, ३३; ९. २१, १५।

कृतवाच्, युधिष्ठिर का आदर करनेवाले एक महर्षि का नाम है (३. २६, २४)।

१. कृतवीर्य, सोमवंशी राजा अहंयाति के श्वसुर, भानुमती के पिता का नाम है (१. ९५, १५)।

२. कृतवीर्य, एक प्राचीन राजा का नाम है जिसका संजय ने उल्लेख किया (१. १, २२८)। ये कार्तवीर्य के पिता और वेदज्ञ भृगुवंशियों के यजमान थे (१. १७८, ११. १२)। ये यमराज की सभा के एक सदस्य थे (२. ८, ९)। महिष्मती नगरी के राजा अर्जुन इन्हीं के ज्येष्ठ पुत्र थे (२. ३८, २९ के बाद गी० प्रे० सं० में पृ० ७९१ पर दाक्षिणात्य पाठ।

कृतवीर्यदुहितृ=भानुमती, जो अहंयाति की पत्नी थी (१. ९५, १५)।

कृतवीर्यात्मज = अर्जुन कार्तवीर्य : 'कृतवीर्यात्मजो बली अर्जुनो नाम तेजस्वी क्षत्रियो हैहयाधिपः', (१२.४९, ३५)। 'कृतवीर्यात्मजो मुनिम्', (१३. १५२, ६)।

कृतवेग, एक पुण्यात्मा और बहुश्रुत राजर्षि का नाम है जो यमसभा को सुशोभित करते थे (२. ८, ९)।

कृतशौच, कुरुक्षेत्र के अन्तर्गत एक तीर्थ का नाम है जहाँ जाने और तीर्थ-सेवन से पुण्डरीक यज्ञ का फल प्राप्त होता है (३. ८३, २१)।

कृतश्रम, युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित रहनेवाले एक मुनि का नाम है (२. ४, १४)। इनको वानप्रस्थ-धर्म के पालन से स्वर्गलोक की प्राप्ति हुई (१२. २४४, १८)।

कृताकृत = विष्णु (सहस्र नाम)।

कृतागम = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

कृतान्त = यम : 'युगान्तकाले संप्राप्ते कृतान्तस्येव रूपिणः', (२. ७२, १५)। 'कृतान्तविधि', (३. १८३, ७९)। 'कृतान्तवत्', (७. २१, ४६)। 'कृतान्तस्य गतिम्', (९. ६५, १६)। 'कृतान्तस्य', (११. ८, ४३)। 'कृतान्तविधि', (१२. ३३, १५)। 'कृतान्तबल', (१२. ३३, ४७)। 'कृतान्तविहिते', (१२. १५३, १३)। 'कृतान्त', (१२. १५३, ५०)। 'कृतान्तः', (१२. १७५, २०; २१८, २७)। 'कृतान्तवश्यानि', (१२. २८६, १०)।

कृतान्तकृत = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

कृताक्ष, युधिष्ठिर की सेवा में उपस्थित रहनेवाले एक राजा का नाम है (२. ४, ३२)।

१. कृति, एक प्राचीन राजा का नाम है जो यम की सभा में उपस्थित रहते थे (२. ८, ९)।

२. कृति, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३५)।

३. कृति = विष्णु (सहस्र नामों में से एक) : १३. १४९, २२।

कृतिन्, शूकरदेश के एक राजा का नाम है जिन्होंने युधिष्ठिर को भेंट दिया था (२. ५२, २५)।

कृतीसुत (कृति के पुत्र) = रुचिपर्वन : ७. २६, ५१।

१. कृत्तिका, एक तीर्थ का नाम है जहाँ की यात्रा करने से अतिरात्र-याग का फल मिलता है (३. ८४, ५१)।

२. कृत्तिका, एक नक्षत्र मण्डल का नाम है : 'कृत्तिकाभ्युपपत्तेश्च कार्तिकेय इति स्मृतः', (१. ६६, २४)। इनकी संख्या छः है (३. १३४, १३)। 'रुद्राच्च सम्भूतो गङ्गायां कृत्तिकासु च', (३. २१७, ४)। 'पावकस्येन्द्रियं श्वेते कृत्तिकाभिः कृतं नगे', (३. २२९, २८)। '…त्रिदिवं कृत्तिका गताः। नक्षत्रं सप्तशीर्षाभं भाति तद्वह्निदैवतम् ॥', (३. २३०, ११)। 'स्वाहामहीकृत्तिकानां', (३. २३२, १५)। 'कृत्तिकां पीडयंस्तीक्ष्णैर्नक्षत्रं', (६. ३, ३०)। 'कृत्तिकायोगयुक्तेन पौर्णमास्यामिवेन्दुना', (७. २०, १८)। इन्होंने स्कन्द का पालन किया (९. ४४, १०. १३)। 'कृत्तिकानां', (९. ४६, ९९)। 'कृत्तिकास्तस्य नक्षत्रमसेरस्मिश्च दैवतम्', (१२. १६६, ८२)। 'महागङ्गामुपस्पृश्य कृत्तिकाङ्गारके तथा। पक्षमेकं निराहारः स्वर्गमाप्नोति निर्मलः ॥', (१३. २५, २२)। 'कृत्तिकायोगे', (१३. २५, ४६)। इस नक्षत्र में भोजन-दान करने का फल (१३. ६४, ५)। कृत्तिकाओं ने स्कन्द का पालन किया जिसके कारण ही उनका नाम कार्तिकेय पड़ा (१३. ८६, ५. ८. १०, १३)। 'कृत्तिकायोगे', (१३. ८९, २)। चान्द्रव्रत के वर्णन में कृत्तिका की स्थिति का उल्लेख (१३. ११०, ४)।

कृत्तिकापुत्र = स्कन्द : १. १३७, १३; ३. २३१, १०३)।

कृत्तिकाश्रम, एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान और पितरों का तर्पण करनेवाला व्यक्ति पापमुक्त होकर स्वर्ग प्राप्त करता है (१३. २५, २५)।

कृत्तिकासुत = स्कन्द : ३. २३१, ५४।

कृत्तिवासस् = शिव : देखिये वस्था०।

कृत्य = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

१. कृत्या, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९. १८)।

२. कृत्या, दैत्यों द्वारा आभिचारिक यज्ञ से उत्पन्न की गई एक राक्षसी का नाम है जो आमरण उपवास के लिए बैठे हुये दुर्योधन को वन से उठा कर रसातल में ले गई (३. २५१, २६. २८; २५२, २९; १३. ९३, ५८. ८९)।

१. कृप, एक ब्राह्मण का नाम है जो शरद्वत् के पुत्र और कृपी के भ्राता थे : १. १, १४०. १९८; १. २, २९२. ३०१; ६३, १०७ (किसी समय गौतमगोत्रीय शरद्वान् का वीर्य सरकण्डे के समूह पर गिरा और दो भागों में बँट गया। उसी से एक कन्या और एक पुत्र का जन्म हुआ। कन्या का नाम कृपी था, जो अश्वत्थामा की जननी हुई। पुत्र महाबली कृप के नाम से विख्यात हुआ।); ६७, ७७ (ये रुद्रों के अंश से उत्पन्न हुये)। भीष्म ने इन्हें राजकुमारों को धनुर्वेद की शिक्षा के लिये नियुक्त किया (१. १२९, ४३)। "जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन ने बताया कि शरद्वान् का वीर्य स्खलित होकर सरकण्डों के समूह पर गिर पड़ा और दो भागों में बँट गया। उसी वीर्य से एक पुत्र और एक कन्या की उत्पत्ति हुई। उसी दिन महाराज शान्तनु वहाँ आये और उन दोनों, बालक और बालिका, को अपने

साथ लाये। तदनन्तर शान्तनु ने ही उन दोनों का पालन-पोषण किया। शान्तनु ने ही उनका नाम क्रमशः कृप और कृपी रक्खा। अपने पुत्र को इस प्रकार पल कर बड़ा हुआ देखकर गौतम शरद्वान् ने गुप्त रूप से उसे उसका गोत्र आदि बताया और धनुर्वेद का भी उपदेश कर दिया। तदनन्तर, धृतराष्ट्र के पुत्रों, पाण्डवों और यादवों, सभी ने इन्हीं कृपाचार्य से धनुर्वेद की शिक्षा ली (१. १३०, १–२३)।" १. १३१, १५. २६; १३४, २; १३६, ६. २६. ३०; १३७, २१; १४२, २१ (कृपः शारद्वतश्चैव); १४३, १३; १४५, २; १५०, ५; १९०, ३३ (शरद्वतः); २००, ९; २०७, १३ (गौतमं); २. ३३, ५५; ३४, ८ (युधिष्ठिर के राजसूय के समय उपस्थित हुये)। उत्तम वर्ण के स्वर्ण तथा रत्नों को परखने, रखने और दक्षिणा देने के कार्य में इनकी नियुक्ति की गई (२. ३५, ७)। 'कृपे च भारताचार्ये', (२. ३७, १२)। 'वृद्धं च भारताचार्यं तथा शारद्वतं कृपम्', (२. ४४, १७)। २. ५८, २३; ६०, २; ६५, ४१; ६८, १४; ७८, २; ७९, २६; ८१, २६; ३. ८, ६; १३, ३; २९, ४७; ३६, १५; ३७, ४; ४०, १०. १३; ८६, ८; ११९, ९; १२०, ११; १७४, ३; २४९, १५; २५२, ११. ३६; २५३, २; २५४, २५; २५६, ५; २५७, ८. २६; ३०९, १८; ४. २५, ७; २९, १ (शारद्वतः); ३०, १६; ३५, २; ३६, ६; ३८, ८. १३; ३९, १७; ४५, ४०; ४७, १. १६; ४९, १; ५१, १. ६. १७; ५२, २२ (शारद्वतः); ५३, १२. १६; ५४, २८; ५५, ३७ (शारद्वतः). ४१–४२ (लोहिताश्वमरिष्टं यं वैयाघ्रमनुपश्यसि। नीलां पताकामाश्रित्य रथे तिष्ठन्तमुत्तर॥ कृपस्यैतदनीकाग्र्यं प्रापयस्वैतदेवयाम्), ६०; ५६, ५; ५७, २. ७. १२. १६ (शारद्वतः). २१. २३. ३८. ४०. ४१. ४३; ५८, १; ५९, ७; ६३, १. ४; ६६, ५. २६; ६८, ८. ४१. ७३; ५. २, ५; ५, ७; ६, १०; २२, २४; २३, १०. १९; २५, ११; २७, २५; ३०, १४; ४७, ६; ४८, १०९; ५१, ४५; ५५, ७. १७. ४३. ४६. ४९. ५३; ५७, ३७. ५०; ५८, ७. १०; ६०, १०. १७; ६१, २८; ६३, ४; ६५, १२; ६६, ४; ७३, ७; ८३, ४७; ८९, ३, १४. १७; ९०, ५२; ९१, ३५; ९२, ७; ९५, १९; १२४, १७. ४९; १२७, १४; १२८, २६; १२९, २०. ४९. ५१; १३१, ३६. ४०; १४१, ४०; १४२, १२. १६; १४३, ४२; १५५, ३२; १५८, २३. ३२; १६०, ५२; १६५, २१; १६६, २०. २१; १७१, २१; १९३, ५. १९; ६. १४, १९; १७, २८. ३९; २५, ८; ४३, ६८. ७०. ७६; ४५, ५२; ४७, २. १३. १९. ३४; ४८, ४६. १०१; ४९, ९; ५०, ३७; ५१, २. १९; ५२, १४. २४. २७; ५५, २. ६. ७; ५६, ४; ५८, ३५. ३६. ३९; ५९, ७५. १३७; ६०, २३; ६५, १३. ३१; ७१, २३; ७२, २; ७५, १६. २८; ७६, १८; ७९, १८; ८१, ३२; ८४, २१; ८५, १८; ८६, ५०; ८७, १३; ८९, १. ३. ४०; ९२, २३. ३४; ९४, १३; ९५, १३; ९६, १७; ९७, ४; ९८, ४२; ९९, २; १००, १६; १०२, २३; १०३, ४३; १०८, १३. ५७; ११०, १३; १११, २८. २९; ११३, १. ४. ९. २२. ३१. ३९; ११४, २. ६. २२; ११७, ४५. ४६; ११८, ५; ११९, ११२; ७. ७, १३; १४, ३३. ३४; १६, १५; २३, ७० (पाण्ड्यराज सारङ्गध्वज ने इनसे शस्त्रास्त्र प्राप्त किये थे); २५, ५१ (शारद्वतः). ५२ (वार्द्धक्षेमि से युद्ध करते हैं); ३२, ३८; ३४, २०; ३७, ५. १६ (शारद्वतः). २४; ३९, ५. ९; ४६, ६. १९; ४७, ४. ८. १८ (शारद्वतः); ७२, ४९; ७३, १०. २३; ७४, ७; ७५, २६; ८५, २८ (इन्होंने द्यूतक्रीड़ा को उचित नहीं माना). ३४; ८७, १२; ९५, ४८. ५०; १०४, ४. २७; १०५, १५ (इनकी ध्वजा पर वृषभ बना था); ११२, ११. ३९; ११९, १९; १३५, ७; १३७, १५; १४३, ६. ५२; १४५, ९. २०. ४३; १४६, ७४. ९५; १४७. २ (शारद्वतः). १२ (शारद्वतः). २४; १५०, ५; १५१, २२. ३०; १५५, ३८; १५६, १२०; १५८, १२ (शारद्वतः). ३३. ४९ (शारद्वतं); १५९, १०. १४. १७. १८. ४६. ६५. ६६; १६०, ४; १६३, ३; १६५, १० (शारद्वतः); १६९, २१. २८. ३२ (शिखण्डी को पराजित करते हैं); १७७, ३; १८३, १६; १८७, २८; १९१, ४७; १९२, २. ४३; १९३, ३७; २००, ५० (शारद्वतः). ५९; २०२, २२; ८. २, २१; ९, ८० (शारद्वतः); १३, ९ (धृष्टद्युम्न से युद्ध करते हैं); २०, ३; २६, १. १० (शारद्वतः, धृष्टद्युम्न से युद्ध करते हैं); २८, ८; ३०, २१; ३२, ९; ४१, ७३; ४६, ११ (शारद्वतः). ३५; ४७, १६; ४८, २९; ५२, ६८; ५४, १. ४. ६–८. १२. १७. २०; ६०, ७४; ६१, ५५; ६६, २२; ७३, १३. ५५. ५९; ७५, ८. १५. १६; ७८, २. ६१; ७९, ९. ४२ (संमानो ह्यसि भीष्मेण द्रोणद्रौणिकृपेण च). ७१. ७९. ८६. ८७. ८८; ८२, २५; ८३, १६; ८४, १२; ८५, ३ (कृपहार्दिक्यसुतौ). ६; ८८, १४; ९५, ७ (शारद्वतः); ९६, ३२; ९. १, ३६; २, १६. ६९; ४, ५. ५१; ५, २; ६, २; ८, ७; ११, ३५; १२, २६. ३४; १६, ४. ४५; १७, २४. ७८ (शारद्वतः); २१, २९; २५, ४०. ४८. ६१; २७, ५. १७; २९, ३६. ५६ (शारद्वतं). ६३; ३०, २. ९. ६१. ६४. ६८; ५४, २९ (धार्तराष्ट्रबले शेषास्त्रयः समितिमर्दनाः। कृपश्च कृतवर्मा च द्रोणपुत्रश्च वीर्यवान्). ३०; ६१, २०; ६३, ४६; ६४, २९; ६५, २. १०. २२. ३८. ४३; १०. १, १६. २८. ३१. ५७; २, १; ३, १; ४, १. ८; ५, १. ३८; ६, १. २. १९; ८, १. ५. १०७. १०९; ९, ७. १०. ३४. ३६. ४९. ५४; १०, ३ (गौतमेन); १६, १४; ११. १, २. २९; ९, २; ११, १. ५. १८. २१; २०, १८; २५, ३०; १२. ५, १३; १४, २०; ४५, ८; ४७, १०६; ४८, १; ५२, २८; ५८, २५. २९; १६६, ८१; २९७, १४; १४. ६०, ३. १४. ३३; ६१, १३; १५. १, १३; ३, २०. ५९; ४, २०; ५, ३; १०, ३०; १६, ५; २३, ६; १७. १, १४ (ये परिक्षित के गुरु बने)।

इनके नाम के निम्नलिखित पर्याय भी देखिये :

* आचार्य, आचार्य सत्तम—देखिये वस्था०।

* गौतम—देखिये वस्था०।

* ब्रह्मर्षि—देखिये वस्था०।

* भारताचार्य—देखिये वस्था०।

* शरद्वत् : १. १९०, ३३; ५. १४१, ४०; १६५, २१; ११. १, २९।

* शरद्वत्सुत (शरद्वत के पुत्र): ८. ८५, ६।

* शारद्वत (शरद्वत के पुत्र): १. १, १४०; ४९, १३; १३६, ३०; १४२, २१; २. ४४, १७; ४. २९, १; ३०, १६; ५२, २२; ५५, ३७; ५७, २. १२. १६. ३०. ४१; ६६, १३; ६९, ४; ५. ३०, १४; ४८, ९०; ५१, ४५; १६०, १२१; १६१, ३९; १६६, २०; १९३, १९; ६. २०, १३; ४३, ६७; ४५, ५२; ६१, १८; ८४, २१; ८७, १३; ९८, ११; ११०, १३; १११, २८. ३२; ७. २५, ५१; ३७, १६; ४७, १८; १४५, ५३. ८६. ८९; १४६, ९९; १४७, २. ७. ९. ११. १२; १५८, १२. २४. ४९; १५९, ७६; १६५, १०; १६९, २१. ३२; १९१, ४३; १९३, १२. ३५. ३६; २००, ५१; ८. ७, १२; ९, ८४; २६, ५. १०; ४६, ११; ५४, १३. १४. १७. २१; ६०, १३; ७८, ६१; ९५, ७; ९. ४, ५१; ५, २; १७, ७८. ८८; २३, ७. ८; २५, ५३; २९, ५६; ६४, २९; ६५, ४३; १०. ५, ३१; ९, ४९; १६, १४; ११. ११, १. ५. २१; १२. ५०, ८; ५२, २८; १५. ५, ३।

२. कृप, एक प्राचीन राजा का नाम है (१३. ११५, ७२)।

कृपी, कृपाचार्य की भगिनी, द्रोण की पत्नी, और अश्वत्थामा की माता का नाम है (१. ६३, १०७–१०८)। "शरद्वत का वीर्य सरकण्डे के समुदाय पर गिर कर दो भागों में विभक्त हो गया। उसी से एक पुत्र और एक पुत्री की उत्पत्ति हुई। महाराज शान्तनु ने इन बालकों को जंगल में पाया और घर लाकर पालन-पोषण करने लगे। यह सोच कर कि 'मैंने इन बालकों को कृपापूर्वक पाला-पोसा है' राजा ने दोनों का वही नाम—अर्थात कृप और कृपी—रख दिया (१. १३०, १४—१९)।" इसका द्रोणाचार्य के साथ विवाह हुआ और इसने अश्वत्थामा नामक पुत्र उत्पन्न किया (१. १३०, ४६–४७)। ११. २३, ३४. ३७. ४२।

१. कृमि, एक नदी का नाम है (६. ९, १७)।

२. कृमि (बहु०), एक जाति के लोगों का नाम है (५. ७४, १२)।

१. कृश, शृङ्गीऋषि के एक मित्र का नाम है जो धर्म के लिये कष्ट उठाते रहने के कारण सदैव कृश ही रहा करते थे (१. ४०, २७–२८)। इन्होंने शृङ्गी ऋषि को उत्तेजित किया (१. ४०, २९–३२)। इन्होंने शृङ्गी ऋषि को बताया कि उनके पिता के कन्धे पर राजा परिक्षित ने सर्प डाल दिया है (१. ४१, ३. ५–९)।

२. कृश, ऐरावत कुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है जो जनमेजय के सर्पयज्ञ में दग्ध हो गया था (१. ५७, ११)।

३. कृश, एक दिव्य महर्षि का नाम है जो शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म को देखने के लिये उपस्थित हुये थे (१३. २६, ७)।

४. कृश = शिव : १२. २८४, ९१. ११३।

कृशक, एक कश्यपवंशी नाग का नाम है (५. १०३, १५)।

कृशनाश, कृशाङ्ग = शिव (सहस्र नामों के अन्तर्गत)।

कृशानु = अग्निः ८. ६८, ३०।

कृशाश्व, यम की सभा में उपस्थित रहनेवाले एक नरेश का नाम है (२. ८, १७)। कृपाचार्य तथा अन्य कौरवों के विरुद्ध अर्जुन के युद्ध को देखने के लिये ये इन्द्र के विमान पर बैठ कर आये थे (४. ५६, १०)। प्रातः सायं इनका स्मरण-कीर्तन करनेवाला मनुष्य धर्म का भागी होता है (१३. १६५, ४९)।

कृषीवल, इन्द्र की सभा में बैठ कर उनकी उपासना करनेवाले एक प्राचीन महर्षि का नाम है (२. ७, १३)।

१. कृष्ण (वासुदेव), वसुदेव और देवकी के पुत्र, रुक्मिणी के पति, प्रद्युम्न, शाम्ब इत्यादि के पिता, एक दाशार्ह (वृष्णि, माधव, यादव) राजा का नाम है जो विष्णु के अवतार थे। 'विष्णुं···हृषीकेशं,' (१. १, २४)। 'मूलं कृष्णो ब्रह्म च ब्राह्मणाश्च,' (१. १,१११)। 'यदाश्रौषं नरनारायणौ तौ कृष्णार्जुनौ वदतो नारदस्य,' (१. १, १७४)। १. १, १७५. १८१. १९६. २०७। 'कृष्णस्य समाप्रवेशः', (१. २, ६३)। १. २, ११५. १२४. १२६. १३४. १५२. १५३. २१९. २२१. २३१, २३२. २३५. २३६. २४८. २४९. २६६. ३०१. ३०७. ३१३. ३१९. ३४०। 'कृष्णो यथा सर्वगुणोपपन्नः,' (१. ५५, १५)। 'अनुजां वासुदेवस्य सुभद्रां भद्रभाषिणीन्। सा शचीव महेन्द्रेण श्रीः कृष्णेनेव संगता ॥,' (१. ६१, ४४)। भगवान् विष्णु जगत के जीवों पर अनुग्रह करने के लिये वसुदेव द्वारा देवकी के गर्भ से प्रगट हुये (१. ६३, ९९)। अर्जुन द्वारा सुभद्रा के गर्भ से अभिमन्यु का जन्म हुआ अतः वह कृष्ण का भानजा था (१. ६३, १२१)। देवताओं ने नारायण (विष्णु) की कृष्ण के रूप में पृथिवी पर अवतार लेने के लिये स्तुति की (१. ६४, ५१)। 'नारायणः,' (१. ६७, ११६)। 'नरनारायणाभ्यां', (१. ६७, ११९)। 'यस्तु नारायणो नाम देवदेवः सनातनः। तस्यांशो मानुषेष्वासीद्वासुदेवः प्रतापवान् ॥,' (१. ६७, १५१)। 'भगिनीं वासुदेवस्य सुभद्रां भद्रभाषिणीं···अभिमन्युमतीव गुणसंपन्नं दयितं वासुदेवस्य,' (१. ९५, ७८)। 'पुरुषोत्तमस्य वासुदेवस्य,' (१. ९५, ८३)। अश्वत्थामा के अस्त्र की अग्नि से झुलसकर परीक्षित असमय में ही उत्पन्न हो गया था, परन्तु श्रीकृष्ण ने उसे अपने तेज से जीवित कर दिया (१. ९५, ८४)। ये द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुये (१. ८६, १७)। १. ८७, ८. ९। 'कृष्णं च मनसा कृत्वा जगृहे चार्जुनो धनुः,' (१. १८८, १८)। 'दामोदरः', (१. १८९, १९)। 'कृष्णाद्वा देवकीपुत्रात्', (१. १९०, ३३)। १. १९१, १९. २०. २२। "भगवान नारायण ने अपने मस्तक से दो केश निकाले जिनमें एक श्वेत था और दूसरा श्याम। ये दोनों केश देवकी और रोहिणी के भीतर प्रविष्ट हुए। उनमें रोहिणी के बलदेव प्रगट हुए जो नारायण के श्वेत केश थे। दूसरे केश से, जो श्याम था और देवकी में प्रविष्ट हुआ था, कृष्ण प्रगट हुये (१. १९७, ३३)।" इन्होंने पाण्डवों को बहुमूल्य उपहार दिये (१. १९९, १६; २०२, १६)। जनार्दनः', (१. २०५, १९)। 'यतः कृष्णस्ततः सर्वे यतः कृष्णस्ततो जयः,' (१. २०५, २६)। 'वासुदेवं,' (१. २०६, ११)। 'रामकृष्णौ च धर्मज्ञौ,' (१. २०७)। 'पाण्डवाश्चैव कृष्णश्च,' (१. २०७, १०)। 'कृष्ण पुरोगमाः' (१. २०७, २८)। 'केशवः ययौ द्वारवतीं,' (१. २०७, ५२)। 'कृष्णपाण्डवौ,' (१. २१८, ४)। नरनारायण, अर्थात् अर्जुन और कृष्ण (१. २१८, ५)। १. २१८, ८. ९. २१; २१९, १५. २४। इनकी आज्ञा से अर्जुन ने इनकी बहन, सुभद्रा, का हरण किया (१. २२०, २)। ये सुभद्रा और अर्जुन के विवाह के अवसर पर उपस्थित हुए (१. २२१, ३४)। इन्होंने पाण्डवों को एक सहस्र रथ आदि दिये (१. २२१, ४६)। इन्होंने अभिमन्यु के जन्म से ही उसके लालन-पालन की सुन्दर व्यवस्था की (१. २२१, ७१)। शूरता, पराक्रम, रूप तथा आकृति में अभिमन्यु इनके ही समान था (१. २२१, ७७)। १. २२२, १४. २२. ३३। 'कृष्णपाण्डवौ (अर्जुन और कृष्ण),' (१. २२३, ३)। नर और नारायण ने ही अर्जुन और कृष्ण के रूप में पृथिवी पर अवतार लिया (१. २२४, ९)। हव्यवाहन अग्नि ने इनसे और अर्जुन से अपने कार्य का निवेदन किया (१. २२४, १२)। अर्जुन ने अग्नि को बताया कि श्रीकृष्ण के पास भी कोई आयुध नहीं है (१. २२४, १९)। अग्नि ने इन्हें एक चक्र दिया (१. २२५, २३)। १. २२७, २०. २१. २५. २७. ३७. ३९; २२८, ३. ५. ८. १०. १३. १८. ३३. ३८. ४६। इन्होंने इन्द्र से कहा कि वे इनके और अर्जुन के साथ शाश्वत मैत्री स्थापित कर लें (१. २३४, १३)। २. १, २. ८. १०. १५. १९; २, ४. ९. १५. ११. २२. २४. २७. २९। इन्होंने बिन्दुसर नामक तीर्थ में यज्ञ और दानादि किया था (२. ३, १६. १७)। २. १३, ३६. ३७. ३९. ४०. ४६. ४८; १४, १; १५, १३. १४; १६, १; १७, ११. १२. २७. ५०; १८, ९; १९, १. २२. २४; २०, १९. २०; २१, २६. ३३. ४८. ४९; २२, ७. २८. २९; २३, २. ९. ३४; २४, १–३. १२–१३ (जब भीमसेन ने जरासन्ध का वध कर दिया तब इन्होंने जरासन्ध के दिव्य रथ को जोता और भीम तथा अर्जुन को उस पर बैठा कर वहाँ आये जहाँ इनके बान्धवस्वरूप अनेक राजा बन्दी थे। इन्होंने उन सब राजाओं को मुक्त कर दिया जिससे उन सबने इन्हें विविध रत्नों के उपहार दिये). १५ १७. २०. २१. २३. ४२–४३. ४५. ४९. ५७–५८। 'ततश्चर्मण्वतीकूले जम्भकस्यात्मजं नृपम्। ददर्श वासुदेवेन शेषितं पूर्ववैरिणा ॥,' (२. ३१, ७)। 'प्रीतिपूर्वं महाराज वासुदेवमवेक्ष्य च', (२. ३१, ६४)। 'वासुदेवजितामाशां,' (२. ३२, १)। २. ३३, १०. १५. १७. २२. २५. २६; ३५, १० (ब्राह्मण का चरण-प्रक्षालन किया)। 'पुण्डरीकाक्षं······ हरिं,' २. ३६, १३। भीष्म ने कृष्ण को अर्घ्य देने के लिये सहदेव को आज्ञा दी (२. ३६, २७. २९. ३१)। २. ३७, ६. ८–१२. १४. १६. २१. २४ (शिशुपाल इनके प्रथम आदर प्राप्त करने को सहन नहीं कर सका और इनकी भर्त्सना करने लगा); ३८, ४–६. १०. ११. १७. २३, २५. २६–२९. ३०; ३९, २. ९, ११. १८; ४१, २०; ४२, ३. ५; ४३, १९. २० (शिशुपाल की माता श्रीकृष्ण की बूआ थीं). २२ (श्रीकृष्ण ने शिशुपाल की माता को आश्वासन दिया कि वे शिशुपाल को सौ बार क्षमा करेंगे); ४४, १. ३. ४३; ४५, ३–५ (शिशुपाल के कुकृत्यों की गणना कराते हैं). १६. १८. २७ (इन्होंने अपने चक्र से शिशुपाल का सर काट दिया). २९. ३४. ६६. ६७; ४७, २७; ४८, ४. १५; ४९, २७; ५०, ३०; ५२, ३१–३३; ५३, १६ (राजसूय के समाप्त होने पर इन्होंने युधिष्ठिर को स्नान कराया). १९; ६२, ८; ६७, ३३; ६८, ४१–४६ (ये द्वारका से द्रौपदी की रक्षा के लिये आये); ६९, १०; ७९, २३; ८१, ३२। "अर्जुन ने कृष्ण की इस प्रकार स्तुति की : '(१) पूर्वकाल में गन्धमादन पर्वत पर आपने यत्रसायंगृह मुनि के रूप में दस हजार वर्षों तक विचरण किया। (२) पूर्वकाल में कभी इस धरा पर अवतीर्ण हो आपने ग्यारह हजार वर्षों तक पुष्करतीर्थ में केवल जल पी कर रहते हुये निवास किया। (३) आप बदरिकाश्रम में दोनों भुजाओं को ऊपर उठाये हुये केवल वायु के आहर पर एक सौ वर्षों तक एक पैर से खड़े रहे हैं। (४) आप सरस्वती नदी के तट पर उत्तरीय वस्त्र तक का त्याग करके द्वादश वार्षिक यज्ञ करते समय तक शरीर से अत्यन्त दुर्बल हो गये थे। (५) आप पुण्यात्माओं के निवास योग्य प्रभास तीर्थ में जाकर एक सहस्र दिव्य वर्षों तक एक ही पैर पर खड़े रहे। (६) आप क्षेत्रज्ञ, सम्पूर्ण भूतों के आदि और अन्त, तपस्या के अधिष्ठान, यज्ञ और सनातन पुरुष हैं। (७) भूमि पुत्र नरकासुर को मार कर अदिति के दोनों मणिमय कुण्डल आप ही ले आये थे, एवं आपने ही सृष्टि के आदि में उत्पन्न होने वाले यज्ञ के उपयुक्त घोड़ों की रचना की थी। (८) आपने समस्त दैत्यों और दानवों का युद्ध स्थल में वध करके इन्द्र को सर्वेश्वरपद

प्रदान किया और तदनन्तर मनुष्यों में प्रगट हुये। (९) आप ही पहले नारायण होकर फिर हरि रूप में प्रगट हुये; ब्रह्मा, सोम, सूर्य, धर्म, धाता, यम, अनल, वायु, कुवेर, रुद्र, काल, आकाश, पृथिवी, दिशायें, चराचरगुरु तथा सृष्टिकर्त्ता एवं अजन्मा आप ही हैं । (१०) आपने चैत्ररथवन में अनेक यज्ञों का अनुष्ठान किया और उनमें से प्रत्येक यज्ञ में एक-एक करोड़ स्वर्ण मुद्रायें दक्षिणा में दीं। (११) आप अदिति के पुत्र और इन्द्र के छोटे भाई होकर सर्वव्यापी विष्णु के नाम से विख्यात हैं। (१२) आपने ही वामनावतार लेकर अपने तेज से तीन पगों द्वारा द्युलोक, अन्तरिक्ष और भूलोक, तीनों को नाप लिया। (१३) आपने सूर्य के रथ पर स्थित होकर, द्युलोक तथा आकाश में व्याप्त होकर अपने तेज से भगवान भास्कर को भी अत्यन्त प्रकाशित किया है। (१४) आपने सहस्रों अवतार धारण किये हैं, और उन अवतारों में सैकड़ों असुरों का वध किया है। (१५) आपने मुरु दैत्य के पाश काट दिये; निसुन्द और नरकासुर को मार डाला, तथा पुनः प्राग्ज्योतिषपुर के मार्ग को सकुशल यात्रा करने-योग्य बना दिया। (१६) आपने जारूथी नगरी में आहुति, क्राथ, साथियों सहित शिशुपाल, जरासन्ध, शैब्य और शतधन्वा को परास्त किया। (१७) मेघ के समान घर्घर शब्द करने वाले सूर्यतुल्य रथ के द्वारा कुण्डिनपुर में जाकर आपने रुक्मी को परास्त किया और रुक्मिणी को अपनी भार्या बनाया। (१८) आपने इन्द्रद्युम्न और कसेरुमान् का वध किया। (१९) आपने सौभपति शाल्व को भी यमलोक पहुँचा दिया। (२०) आपने इरावती के तट पर कार्तवीर्य अर्जुन के सदृश पराक्रमी भोज को युद्ध में मार गिराया। (२१) आपने ही गोपति और तालकेतु को भी मार डाला। (२२) भोग सामग्रियों से सम्पन्न तथा ऋषि-मुनियों की प्रिय अपने अधीन की हुई पुण्यमयी द्वारका नगरी को आप अन्त में समुद्र में विलीन कर देंगे। (२३) प्रलय-काल में समस्त भूतों का संहार करके इस जगत् को स्वयं ही अपने ही भीतर रखकर आप अकेले ही रहते हैं। (२४) सृष्टि के प्रारम्भ में आपके नाभिकमल से ब्रह्मा उत्पन्न हुये। (२५) जब ब्रह्मा उत्पन्न हुये, उस समय मधु और कैटभ नामक दो भयंकर दानव उनका प्राण लेने को उद्यत हो गये। दानवों का यह अत्याचार देखकर आपके ललाट से शम्भु का प्रादुर्भाव हुआ जिनके हाथों में त्रिशूल था। उनके तीन नेत्र थे। इस प्रकार ब्रह्मा और शिव आपके शरीर से ही उत्पन्न हुये हैं। (२६) आपने बाल्य-काल में जो-जो महान् कर्म किये हैं उन्हें पूर्ववर्ती अथवा परवर्ती पुरुषों ने न तो किया है और न करेंगे। (२७) आप ब्राह्मणों के साथ कुछ काल तक कैलास पर्वत पर भी रहे हैं।' अर्जुन की स्तुति समाप्त होने के बाद कृष्ण ने अर्जुन से इस प्रकार कहा : 'तुम मेरे ही हो, मैं तुम्हारा ही हूँ। जो मेरे हैं, वे तुम्हारे भी हैं। जो तुमसे द्वेष रखता है, वह मुझसे भी रखता है। तुम नर हो, मैं नारायण हूँ और इस समय हम दोनों ने पृथिवी पर अवतार लिया है। तुम मुझसे अभिन्न हो, और मैं तुमसे पृथक् नहीं हूँ। हम दोनों का भेद जाना नहीं जा सकता।' तदनन्तर द्रौपदी ने कृष्ण से कहा : '(१) ऋषिगण आपको ही सम्पूर्ण जगत् का प्रजापति कहते हैं, और महर्षि असित-देवल का यही मत है। (२) जामदग्नि परशुराम का कथन है कि आप ही विष्णु हैं, आप ही यज्ञ हैं, और आप ही यजमान हैं। (३) महर्षिगण आपको क्षमा और सत्य का स्वरूप कहते हैं; सत्य से प्रगट हुये यज्ञ भी आप ही हैं। (४) नारद ने कहा है कि आप साध्य देवताओं तथा रुद्रों के अधीश्वर हैं। जैसे बालक खिलौनों से खेलता है उसी प्रकार आप ब्रह्मा, शिव, तथा इन्द्र आदि देवताओं से बारम्बार क्रीड़ा करते रहते हैं। (५) स्वर्गलोक आपके मस्तक से, पृथिवी आपके चरणों से व्याप्त है; ये समस्त लोक आपके उदर-स्वरूप हैं और आप सनातन पुरुष हैं। (६) आत्मज्ञान से तृप्त महर्षियों में आप ही परम श्रेष्ठ हैं। (७) राजर्षियों के आप ही आश्रय हैं।..................लोक, लोकपाल, नक्षत्र, दसों दिशायें, आकाश, चन्द्रमा और सूर्य आप में ही प्रतिष्ठित हैं।' इस प्रकार स्तुति के पश्चात्, द्रौपदी ने अपनी विपत्तियों का कृष्ण से निवेदन किया (३. १२, ११. १२. १४. १५. १७. २३. २६. २८. ४२. ४४. ६१. ६५. ७४. ७८. ८२. ८४. ११५. ११७. १२१. १२७. १३५। ३. १४, १. २; १६, १; १९, २४ (देवकीनन्दनः); २२, २१. ४७. ४८। ३. १५-२२ अध्यायों में श्रीकृष्ण ने शाल्व के साथ हुये युद्ध का वर्णन किया जिसमें इन्होंने शाल्व का वध कर दिया। ३. २९, ४६ (देवकी पुत्रः); ३३, १२। 'त्वयि वा परमं तोजो विष्णौ वा पुरुषोत्तमे। युवाभ्यां पुरुषाग्रयाभ्यां तेजसा धार्यते जगत् ॥ शक्राभिषेके सुमहद्धनुर्जलदनिःस्वनम् । प्रगृह्य दानवाः शस्तास्त्वया कृष्णेन च प्रभो ॥', (३. ४०, २. ३)। 'नरनारायणौ यौ तौ पुराणावृषिसत्तमौ । ताविमावनुजानीहि हृषीकेशधनंजयौ ॥', (३. ४७, १०)। 'योसौ भूमिगतः श्रीमान्विष्णुर्मधुनिषूदनः । कपिलो नाम देवोसौ भगवानजितो हरिः ॥', (३. ४७, १८) । 'जनार्दनः, हरिस्त्रैलोक्यनाथः', (३. ४९, २०)। ३. ५१, ११. २०. ४३; ५२, १२; ८०, २८; ८३, १९। 'कृष्णानिलोद्धूतः', (३. ८६, १२) । 'महात्मानं कृष्णं धर्मं सनातनम्', (३. ८८, २५)। 'वासुदेवेति यं प्राहुः कपिलं मुनि पुङ्गवम्', (३. १०७, ३२)। ये पाण्डवों से मिलने के लिये प्रभासतीर्थ में आये (३. ११८, २०)। ३. ११९, ५; १२०, १७. २७. ३१; १२५, २१; १७६, १५; १८६, ६. ८. २८. ३९. ४०; १८८, १८; १८९, ५४; १९०, ६; १९१, ३४। 'देवकीपुत्रेणापि कृष्णेन नरके मज्जमानो राजर्षिर्नृगस्तस्मात् कृच्छ्रात् पुनः समुत्धृत्य स्वर्गं प्रापितः।', (३. १९९, १८)। 'सत्यभामा कृष्णस्य महिषी प्रिया', (३. २३३, ३) । 'येन कृष्णो भवेन्नित्यं मम कृष्णो वशानुगः', (३. २३३, ८)। 'कृष्णस्य महिषी प्रिया', (३. २३३, ११)। 'कृष्णमाराधय', (३. २३४, ४) । 'जानातु कृष्णस्तव', (३. २३४, ७) । 'कृष्ण-महिषी', (३. २३५, १७) । 'केशवार्जुनौ', (३. २५२, २०) । जब दुर्वासा आदि पाण्डवों के पास आये तो द्रौपदी की स्तुति पर कृष्ण ने द्रौपदी की सहायता की (३. २६३, ८. २०. २६. ४२)। 'स एवं भगवान् विष्णुः कृष्णेति परिकीर्त्यते। अनाद्यन्तमजं देवं प्रभुं लोकनमस्कृतम् ॥ यदेवं विदुषो गान्ति तस्य कर्माणि सैन्धव। यमाहुरजितं कृष्णं शङ्खचक्रगदाधरम् ॥ श्रीवत्सधारिणं देवं पीतकौशेयवाससम्। प्रधानं सोऽस्त्रविदुषां तेन कृष्णेन रक्ष्यते ॥', (३. २७२, ७२-७४) । 'यमाहुर्वेदविद्वांसो + वराहमपराजितम्।......तेन कृष्णेन रक्ष्यते ॥', (३. ३१०, २८) । 'वासुदेवस्य भगिनीं, अर्थात् दुर्गा (४, ६, ४)। 'सत्यभामां कृष्णस्य महिषीं प्रियाम्', (४. ९, १९)। 'कृष्णं च माधवम्', (४. ४५, ४०) । 'कृष्णामवाजयत्', (४. ४९, ७)। 'कृष्णाद्वा देवकी सुतात्', (४. ५३, १८; ६४, २१) । 'स्वस्रीयो वासुदेवस्य', (४. ७२, ८)। 'जनार्दनम्', (४. ७२, १५) । ५. १, ८. १०; ५, १२; ७, ३. ७-९. ११. १५. २१. २२. २४. ३१. ३४. ३९.। 'बुद्धिमत्त्वं च कृष्णस्य बुद्ध्वा युध्येत को नरः', (५. २०, २०)। 'दामोदरेण', (५. २१, २) । 'प्रसह्य कृष्णस्तरसा' संममर्द', (५. २२, २६)। शिशुपाल के साथ इनके युद्ध का उल्लेख (५. २२, २८-३०) । 'सनातनो वृष्णिवीरश्च विष्णुः', (५. २२, ३३)। 'कृष्णो विद्वांश्चैषां कर्मणि नित्ययुक्तः', (५. २२, ३९) । 'वासुदेवं च शौरिं', (५. २५, २) । 'राजन्यभोजाननुशास्ति कृष्णः', (५. २८, ९)। 'वृष्ण्यन्धका ह्युग्रसेनादयो वै कृष्णप्रणीताः', (५. २८, १२) । 'कृष्णं भ्रातरमीशितारम्', (५. २८, १३)। 'साधुतमश्च कृष्णो', (५. २८, १४) । अभिमन्यु इनके समान पराक्रमी और अस्त्रविद्या में निपुण था (५. ४८, ३२) । 'सुग्रीवयुक्तेन रथेन वा ते पश्चात् कृष्णो रक्षतु वासुदेवः', (५. ४८, ६८)। 'अयुद्ध्यमानो मनसाऽपि यस्य जयं कृष्णः पुरुषस्याभिनन्देत्', (५. ४८, ७०) । 'जो युद्ध के द्वारा श्रीकृष्ण को जीतने की इच्छा करता है, वह मानो अत्यन्त अपार जलनिधि समुद्र को दोनों बाहों से तैरकर पार करना चाहता है (५. ४८, ७१)। जो युद्ध के द्वारा श्रीकृष्ण को जीतना चाहता है वह मानो प्रज्वलित अग्नि को दोनों हाथों से बुझाने की चेष्टा करता है (५. ४८, ७३)। 'श्रीकृष्ण ने एकमात्र रथ की सहायता से भोजवंशी राजाओं को पराजित करके रुक्मिणी को पत्नी रूप में ग्रहण किया। रुक्मिणी से ही प्रद्युम्न का जन्म हुआ। श्रीकृष्ण ने गान्धारदेशीय योद्धाओं और राजा नग्नजित के समस्त पुत्रों को पराजित करके राजा सुदर्शन को मुक्त किया।

इन्होंने ही पाण्ड्य नरेश को किवाड़े के पल्ले से मार डाला और कलिङ्गदेशीय योद्धाओं को कुचल दिया। इन्होंने ही काशीपुरी को जला दिया। इन्होंने दूसरों के लिये अजेय, निषादराज एकलव्य, का वध कर दिया जिससे वह उसी प्रकार रणशय्या में सो गया जैसे जम्भ नामक दैत्य स्वयं ही वेगपूर्वक पर्वत पर आघात करके प्राणशून्य हो महानिद्रा में निमग्न हो गया। इन्होंने ही उग्रसेन के दुष्ट पुत्र, कंस, का वध करके मथुरा का राज्य उग्रसेन को दे दिया। इन्होंने सौम नामक विमान पर बैठे हुये आकाश में स्थित शाल्वराज के साथ युद्ध किया और सौम विमान के द्वार पर लगी शतघ्नी को अपने दोनों हाथों से पकड़ लिया। प्राग्ज्योतिषपुर नाम से प्रसिद्ध एक भयंकर और अजेय पुर था, जहाँ नरकासुर निवास करता था। इस असुर ने अदिति के कुण्डलों को अपहरण करके उन्हें यहीं छिपा दिया था। जब देवता सहित इन्द्र भी नरकासुर को पराजित नहीं कर सके तो उन सब ने इनसे (कृष्ण से) उसका वध करने का निवेदन किया। उस समय इन्होंने निर्मोचन नगर में जाकर छः हजार लोहमय पाश काट दिये और मुर दैत्य तथा अन्य राक्षसों का नाश करके नरकासुर के साथ युद्ध किया। इनके हाथों से मारा जाकर नरकासुर आँधी के वेग से उखड़े कनेर के वृक्ष की भाँति सदा के लिये रणभूमि में सो गया। नरक और मुरु का वध करने के पश्चात् इन्होंने अदिति के कुण्डलों को प्राप्त कर लिया। उस समय देवताओं ने इन्हें यह वर दिया: 'युद्ध करते समय आपको कभी थकावट न हो, आकाश और जल में भी आप अप्रतिहत गति से विचरें; और, आपके अंगों में कोई भी अस्त्र-शस्त्र क्षति न पहुँचा सकें।' (५. ४८, ७७. ८१. ८४. ८५. ८७-८९)। 'एष नारायणः कृष्णः फाल्गुनश्च नरः स्मृतः', (५. ४९, २०)। 'शङ्खचक्रगदाहस्तं यदा द्रक्ष्यसि केशवम्', (५. ४९, २३)। 'कृष्ण द्वितीयो विक्रम्य तुष्ट्यर्थं जातवेदसः', (५. ५०, २६)। 'कृष्णसदृशो वीर्ये', (५. ५०, ४३)। 'हृषीकेशः', (५. ५२, ११)। 'स्रष्टा जगतः कृष्णः', (५. ५३, ३)। 'कृष्णप्रधानाः', (५. ५५, ५)। 'मुख्यमन्धकवृष्णीनामपश्यं कृष्णमागतम्', (५. ५७, २)। 'कृष्णधनञ्जयौ', (५. ५९, २)। 'इन्द्रवीर्योपमः कृष्णः', (५. ५९, १५)। 'कृष्णद्वितीयेन धनञ्जयेन', (५. ६२, ८)। 'पुण्डरीकाक्षं', (५. ६५, ८)। 'अर्जुनो वासुदेवश्च धन्विनौ परमार्चितौ', (५. ६८, १)। 'चक्रं तद्वासुदेवस्य मायया वर्तते विभो', (५. ६८, २)। 'यतः कृष्णस्ततो जयः', (५. ६८, ९)। 'हरिः', (५. ६८, १४)। 'त्रियुगं मधुसूदनम् कर्तारमकृतं देवं', (५. ६९, ३)। 'हृषीकेशं', (५. ६९, १२)। 'संजय ने धृतराष्ट्र को कृष्ण के नाम की व्युत्पत्ति बताते हुये कहा: 'भगवान समस्त प्राणियों के निवास स्थान हैं, तथा वे सब भूतों में वास करते हैं, इसलिये 'वसु' हैं। देवताओं की उत्पत्ति के स्थान होने से और समस्त देवता उनमें वास करते हैं, इसलिये उन्हें 'देव' कहा जाता है। अतएव उनका नाम 'वासुदेव' है ऐसा जानना चाहिये। बृहत् अर्थात् व्यापक होने के कारण ही वे 'विष्णु' कहलाते हैं।' इसी प्रकार संजय ने श्रीकृष्ण के अन्य नामों, जैसे माधव, कृष्ण, पुण्डरीकाक्ष, जनार्दन, सात्वत, आर्षभ, वृषभेक्षण, अज, दामोदर, हृषीकेश, अधोक्षज, नारायण, पुरुषोत्तम, जिष्णु, अनन्त, गोविन्द आदि की व्युत्पत्ति बताया (५. ७०)।" धृतराष्ट्र ने श्रीकृष्ण का गुणगान किया (५. ७१)। ५. ७२, ६. १०. २०. २९. ३४. ४४. ४९. ५४. ५६. ६४. ७२. ७६. ७३. ८२. ८३. ८९. ९२; ७४, ५. २०; ७५, १. २; ७६, ७; ७८, ६. ११. १५; ८०, ७; ८१, ३. ४; ८२, ९. १०. १३. १५. १९. २१. २३. ३०-३२. ३५. ३७; ८३, २०. २८. २९. ३५. ४३. ४६. ४९; ८४, ३; ८५, ५. ८; ८६, १-३; ८७, ६. ७. १२; ८८, १. ५. १६. २१; ८९, १. ६. २४; ९०, २. ४. २१. २८. ३४. ३६. ५४. ५८. ६१. ६७. ६८. १०१. १०२; ९१, १२. ४० (दूत के रूप में कृष्ण ने दुर्योधन के भवन में पदार्पण किया परन्तु वहाँ कुछ भी ग्रहण न करके विदुर के गृह पर भोजन किया); ९२, १६. १७. २५. ३०; ९३, १६; ९४, ३. ७. ८. १५. १७. १८. २०. २३. २९. ३०. ३४. ३८. ४७; ९५, १ (धृतराष्ट्र के साथ इनका संवाद); ९६, १ (केशवः), ४६ (नारायणः). ४७ (जनार्दनः). ४८ (ये और अर्जुन नर तथा नारायण हैं); १०५, ३७ (चक्रगदाधरः); १०७, १४ (विबुधश्रेष्ठं त्रिभुवनेश्वरं, विष्णुं). १५ (कृष्णं योगिनमव्ययम्); १११. ४ (नारायणः कृष्णो जिष्णुश्चैव नरोत्तमः); ११७, १७ (रुक्मिण्यां च जनार्दनः); १२४, २ (केशव). ३; १२५, २. १२. १५. १६. २४; १२७, १०. १३; १२८, १; १२९, १. ३. ३७. ३८; १३०, १२. २०. ४२-५३ (विदुर ने श्रीकृष्ण के गुणों का वर्णन किया); १३१, १०. ११ (इन्होंने अपना दिव्य रूप दिखाया); १३२, २ (कुन्ती के साथ इनका संवाद); १३७, ८. १३. २५; १३८, २; १३९, १० (वासुदेवः). १९ (मंत्री जनार्दनो यस्य); १४०, ३ (कर्ण के साथ इनका वार्तालाप); १४१, २. ४. ११. १३. १५. १६. २८. ३०. ४४-४६; १४२, १; १४३, १. ४. १०. १६. २३. २८. ३६. ३७. ३८; १४४, १. ३; १४६, ९ (कृष्णेन सहितात् धनञ्जयात्); १४७, ४. १४; १५१, ३४ (दशार्हः). ३६. ३७. ४१; १५२, ५ (इन्होंने पाण्डवों के शिविर की व्यवस्था की); १५४, ६. ७; १५७, ५. ९. ३२; १५८, ६. १४; १६०, ४९. ६२; १६१, ४; १६२, ८. १०. १३. ५७; १६३, ३; १६५, २ (वासुदेवसहायेन पार्थेन); १६९, १६ (गुडाकेशो नारायणसहायवान्); १९३, २२ (पार्थं वासुदेवसमायुक्तं); १९४, ८. १० (वासुदेवसहायवान्); १९६, १८ (वासुदेव धनञ्जयौ); ६. १, १६ (वासुदेवः). १७ (वासुदेव-धनञ्जयौ); २१, १२-१६; २२, १०; २३, १. २१ (कृष्णार्जुनावेकरथौ). २६. २८ (यतो धर्मस्ततः कृष्णो यतः कृष्णस्ततो जयः); २५, २८. ३२. ४१; २९, १; ३०, ३४. ३७. ३९; ३५, ३५. ४१; ४१, १; ४२, ७५. ७८। (जब युद्ध क्षेत्र में अर्जुन विषादग्रस्त हो गये तो श्रीकृष्ण ने उन्हें भगवद्गीता का उपदेश दिया: ६. २५-४२)। ६. ४३, २५. ३३. ६० (= ६. २३, २८). ९३; ४९, १४ (कृष्णसहितः पार्थः); ५०, ४. १०. ३५; ५२, ३५ (कृष्णेन-सहितः); ५५, १६ (कृष्णतुल्यपराक्रमः). ३७; ५९, ४१. ६३. ८९. ९० (महेन्द्रावरजः). ९२. ९३ (महेन्द्रावरजं). ९७ (देवेश जगन्निवास नमोऽस्तु ते माधव चक्रपाणे). ९८. ९९. १०३. १०४; ६५, ६५. ७० (सृष्ट्वा संकर्षणं देवं स्वयमात्मानमात्मना, कृष्ण त्वमात्मनास्राक्षीः)। भीष्म ने बताया कि देवताओं के आग्रह पर ब्रह्मा ने नारायणावतार श्रीकृष्ण की महिमा का प्रतिपादन किया (६. ६६, ४-३८)। ६. ६६, ३५ (= ६. २३, २८)। भीष्म ने वासुदेव की महिमा का वर्णन किया (६. ६७, २-२५)। भीष्म ने वासुदेव की स्तुति में ब्रह्मा द्वारा कहे गये एक श्लोक (६. ६८, २) को उद्धृत किया (६. ६८, १७)। ६. ७३, ७; ८२, ११; ९६, ६। 'जगद्गोप्ता शङ्खचक्रगदाधरः॥ वासुदेवोऽनन्तशक्तिः सृष्टिसंहारकारकः। सर्वेश्वरो देवदेवः परमात्मा सनातनः॥', (६. ९८, १४. १५)। ६. १०६, ५८. ६४. ६६; १०७, १३. १८. १९, २५. ४९. ८६. ९५; १२०, ६९; १२१, ४२. ४५; १२२, १६। 'वासुदेवः', (७. २, ३१)। 'यथा वायुर्नरव्याघ्र तथा कृष्णः', (७. ३, १९)। 'नारायणः', (७. १०, ७६)। धृतराष्ट्र ने श्रीकृष्ण की लीलाओं का संक्षिप्त वर्णन करते हुये श्रीकृष्ण की महिमा बताया (७. ११, ६. २३. २५. ३८. ४०. ४१)। ७. १७, ४ (कृष्णपाण्डवौ); १८, ४; १९, ४. ८. २१; २३, ३३ (यमाहुरघ्यर्धगुणं कृष्णात् पार्थाच्च संयुगे। अभिमन्युं). ६९; २५, ३२; २७, २. ९. १९. ३१; २८, १. ३. २६। जब भगदत्त के वैष्णवास्त्र के प्रहार को श्रीकृष्ण ने अपने वक्ष पर धारण कर लिया तो अर्जुन ने उपालम्भ किया परन्तु श्रीकृष्ण ने अर्जुन को अपने चार स्वरूपों का वर्णन करने के बाद बताया कि उन्होंने ही पूर्वकाल में उस अस्त्र को किस प्रकार नरकासुर को प्रदान किया था (७. २९, २५-३८)। 'विश्वसृग्यत्र गोविन्दः', (७. ३३, १२)। 'सकृष्णाः पाण्डवाः', (७. ३४, १)। 'कृष्णस्य चरितैः', (७. ३४, ९)। ये चक्रव्यूह-भेदन करना जानते थे (७. ३५, १५)। 'विष्णुं मातुलं', (७. ३६, ७)। 'विष्णोः स्वसुर्नन्दकरः', अर्थात् अभिमन्यु (७. ४९, १)। 'कृष्णार्जुनसमः', (७. ४९, ३८)। ७. ७२, १०. ६०. ६४. ६७. ७५; ७३, २१; ७५, १; ७६, ७. १९. २७; ७७, २ (नरनारायणौ). ९ (सुभद्रा को सान्त्वना दी); ७८, ३८. ४४; ७९, ५. ९ (दारुक

को अपना रथ सुसज्जित करने की आज्ञा दी); ८०, २. ३. ५. १३. १४. १७. २२. ३४. ३६. ४७. ५०. ५५ (ये अर्जुन के स्वप्न में प्रगट हुये और फिर दोनों ने साथ-साथ ही शिव की स्तुति की)। अर्जुन ने मन ही मन इनकी और शिव की पूजा की (७. ८१, ३) । 'नरनारायणवृषौ', (७. ८१, ९)। जब अर्जुन ने शिव से पाशुपत अस्त्र प्राप्त कर लिया तो अर्जुन और इन्होंने शिव को प्रणाम किया (७. ८१, १२) । ७. ८२, १; ८३, ८. ११. १५. १८ (नमस्ते देवदेवेश सनातन विशातन । विष्णो जिष्णो हरे कृष्ण वैकुण्ठ पुरुषोत्तम ॥) । इन्होंने अर्जुन को विजय का विश्वास दिलाया (७. ८३, २१-२८) । 'केशवस्य प्रसादनम्', (७. ८४, ५)। इन्होंने एक सारथि के समान अर्जुन के रथ को सुसज्जित करने के पश्चात् अर्जुन को इसकी सूचना दी (७. ८४, ११. १३) । ७. ८५, ३६; ८६, ११. १२. १९ (कृष्णार्जुनौ); ८८, २१; ८९, ५ (कृष्णधनञ्जयौ); ९१, २. ४. ११. ३१; ९२, २५. ५३ (शौरिं); ९३, १६. ५७; ९४; २०. ३७; ९८, ३६ (दशार्हः); ९९, ३७; १००, १४. १९. २३ (इन्होंने अर्जुन के रथाश्वों को पानी पिलाया); १०१, १५ (कृष्णधनञ्जयौ). ३२. ३८ (कृष्णपार्थौ). ४२; १०२, ३३ (कृष्णपाण्डवौ); १०३, ५. ११. १२. १४. १६. २६ (कृष्णपाण्डवौ). ४८ (कृष्णधनञ्जयौ); १०४, ११ (वासुदेव-धनञ्जयौ). ३३ (हरेः); ११०, ४५ (कृष्णतुल्यपराक्रमः). ५२. ८८ (दाशार्हं गोप्तारं जगतः पतिम्); ११२, ८ (कृष्णपाण्डवौ); ११४, २१ (कृष्णपाण्डवौ). ३१ (दाशार्हम्). ४१ (कृष्णधनञ्जयौ). ५०; ११७, ६ (दाशार्हः); ११८, २ (केशवफाल्गुनाभ्याम्); १२२, २१; १२६, ४९; १२७, ४६; १२८, ३३; १२९, ८. ३८; १३०, १४; १३१, १९; १३२, ४०; १३५, २०; १३७, १५; १३९, ११; १४०, ३. २५; १४१, २८; १४२, ११. ५३; १४३, १४. ३६. ४७. ५२; १४५, ३. ६. ८७। "योगी, योगयुक्त, योगीश्वर कृष्ण ने सूर्य को छिपाने के लिये अन्धकार की सृष्टि की। जब इन्होंने अन्धकार उत्पन्न कर दिया तो कौरव योद्धा अर्जुन का विनाश निकट देख कर हर्षमग्न हो गये । उस समय जब जयद्रथ सामने प्रगट हुआ तो इन्होंने अर्जुन से उसका मस्तक काट देने के लिये कहा (७. १४६, ६७-७३)।" ७. १४७, २१. ४०; १४८, ३५. ३६. ५८; १४९, ३. ६. १३ (५ से २४ श्लोकों में युधिष्ठिर ने कृष्ण की स्तुति की); १५२, २ (कृष्णसहायेन पाण्डवेन). १८; १५६, १९ (शपेऽहं कृष्णचरणैः). ४७ (गोविन्दम्); १५८, १८. २९. ३१. ३२. ३५. ५३, १५९, ७; १६२, ४६; १६७, ३६; १७३, २९. ४३ (कर्ण से युद्ध करने के लिये घटोत्कच को भेजा); १७७, ३७; १७८, १; १८०, २; १८१, २; १८२, १३. १५. १६. २२-२५. ३१. ३३; १८३, ७. ९. २४. २६. २७. ३०. ४०. ४१. ४५; १८६, ८; १९०, ५४ (इन्होंने यह प्रस्ताव किया कि द्रोणाचार्य से कहा जाय कि अश्वत्थामा का वध हो गया); १९१, ५०; १९२, ५८; १९५, २९ (ये नारायणास्त्र को नहीं जानते थे); १९८, ७. ५०; २००, १३. १८; २०१, १५. ६८. ८०. ८५. ९५; २०२, १४६ । 'यथा कृष्णेन नरको मुरुश्च नरकारिणा', (८. ५, ५५) । 'नरनारायणौ', (८. १६, २०) । 'अश्वत्थामा सुसंयत्तः कृष्णावभ्यद्रवद्रणे', (८. १६, २१) । 'एवमुक्तोऽवहत्यार्थं कृष्णो द्रोणात्मजान्तिके', (८. १६, २६) । ८. १७, ५; १८, २. १६; १९, २४. ५३. ५५; २१, ४; २४, ५०; २७, १५. १८; ३०, १३. २३; ३१, ५७. ६१. ६४; ३२, १९. २१. २२. ६१; ३४, १२१; ३५, ७-९. २५. २६. ३९; ३६, १; ४०, ४. ९. ११. १४; ४६, १५. ५९ (एतच्चक्रे गदा शार्ङ्गं शङ्खः कृष्णस्य धीमतः); ५३, २०. २२; ५६, ८५. ८८. ९०. १२३. १३३. १३४. १३९; ५८, ३. ७. ४२. ४४; ५९, ५२. ६६; ६०, १; ६२, १; ६४, २६. ६१. ६२. ६५; ६५, १२; ६६, ३९; ६९, ८. १६. ६९; ७०, २३. २९. ३५. ५६; ७१, २. २३; ७२, ५. ६; ७३, १; ७४, ४. ६. ८. १०. १३. ३३. ३६. ४२. ४६; ७६, ३५; ७९, ७. ११. १५. ४१. ४८. ५३. ६४-६७; ८१, ३; ८२, १०; ८३, ४९; ८४, ४२; ८५, २४. २८. ३९; ८६, १७. २१. २२; ८७, १६. ७९. १०४. १०७. १०९; ८८, २२; ८९, ६१. ७७. ९१; ९०, ५०. ५२. ७९. ८८. १०२ (इन्होंने रथ को भूमि में थोड़ा धँसा कर अश्वसेन से अर्जुन को बचा लिया); ९१, ५७; ९४, ६१; ९६, ९. १७. २८. ३०. ३५। उन सात पाण्डव वीरों में एक यह भी थे जो युद्ध के बाद भी जीवित बच रहे (९. १, ३६) । 'कृष्णसारथिं……रथं', (९. ३, ३४) । 'कृष्णनेत्रः' (९. ४, १५)। ९. ४, २१. ४९; ५, ८. १०; ७, २७; ११, ३९; १३, ३८; १६, ३. १६; १७, ३७. ३८; १९, १९. २६; २४, ३०; २७, १३-१५. २०. २४. २५; ३०, ४६; ३१, ३ । जब दुर्योधन बारंबार गर्जना करने लगा तो इन्होंने युधिष्ठिर को इस बात के लिये फटकारा कि उन्होंने दुर्योधन से यह क्यों कहा कि वह पाण्डवों में से किसी एक को ही मार कर राजा बन सकता है (९. ३३, १-१६. १९. २२)। ९. ३४, ५; ३५, ८. ९. ११. १२; ४९, २०; ५४, ३२; ५५, ४४ । इन्होंने भीम को दुर्योधन से कपट युद्ध करने का परामर्श दिया जिस पर भीमसेन ने गदा-प्रहार से दुर्योधन का ऊरु भंग कर दिया (९. ५८, १)। ९. ६०, २४. ३५. ४७; ६१, ३. २३. ६०; ६२, ११ (जब कृष्ण रथ से उतर गये तब अर्जुन का वह रथ जल कर भस्म हो गया). २४. २७. ३२ (यतो धर्मस्ततः कृष्णो यतः कृष्णस्ततो जयः); ६३, २. ४. २१. २३ (दुर्योधन की मृत्यु के पश्चात् ये धृतराष्ट्र और गान्धारी को सान्त्वना देने के लिये हस्तिनापुर आये); ६५, २९ । 'यथावदहमाराद्धः कृष्णेनाक्लिष्टकर्मणा । तस्मादिष्टतमः कृष्णादन्यो मम न विद्यते ॥', (१०. ७, ६३) । 'असान्निध्यात्……केशवस्य', (१०. ८, १५४) । १०. ९, २४. ३०. ४९; १२, १. १३. ३६; १३, १ (इनके रथ का वर्णन); १४, १ (दाशार्हः); १६, ७ (अश्वत्थामा के ब्रह्मशिरस अस्त्र द्वारा हत उत्तरा के गर्भ को इन्होंने जीवित कर देने का वचन दिया). ३७; १७, २; ११. १, १४. २९; १२, १५. १६ (जब धृतराष्ट्र भीमसेन का आलिङ्गन करने आये तो इन्होंने भीमसेन के स्थान पर उनकी लौह मूर्त्ति रखवा दी); १३, १२. १४; १५, ४३; १६, १८; १७, १७. २२. २५; १८, १०. २३; १९, ८. ९. १३. १७; २०, ३. ५. ९; २२, ५. १३. १५; २३, ५. १५; २४, २७; २५, ३०. ३४. ३९-४६ (गान्धारी ने इन्हें शाप दिया कि समस्त कुरुवंश के विनाश के कारण ये भी बन्धु-बान्धवों के विनाश के बाद अनाथ के समान वन में विचरण करते हुये मृत्यु को प्राप्त होंगे)। गान्धारी के शाप को सुन कर इन्होंने कहा कि विधि का ही ऐसा विधान है (११. २५, ४७-५०) । इन्होंने गान्धारी को बताया कि सारे विनाश का मूल स्वयं उसका पाप ही है (११. २६, १-६) । १२. १, १३. १६ (हरिं); ७, ३१; २७, २२ (पुण्डरीकाक्षं); २९, ८ (युधिष्ठिर को षोडशराजोपाख्यान सुना कर सान्त्वना दी); ३०, ४ (नारद और पर्वत की कथा सुनाया); ३७, २६. ३९ (रथं……शैब्यसुग्रीवयोजितम्…… समास्थाय); ३९, १ (देवकीपुत्रः सर्वदर्शी जनार्दनः); ४०, १६ । युधिष्ठिर ने इनकी स्तुति की (१२. ४३, २. ५. १०. १५. १६)। १२. ४५, १३; ४६, १० (वासवानुजः). २७ (कर्ता लोकानां). ३२ (केशवस्य); ४७, १४. १५ (योगेश्वरं पद्मनाभं विष्णुं जिष्णुं जगत्पतिम्). १६. ९१. ९२. ९४. १००. १०१ (१२. ४७, १६-९९ में भीष्म ने कृष्ण की विष्णु के रूप में स्तुति की है जिसके बाद कृष्ण ने भीष्म को दिव्य ज्ञान प्रदान किया)। १२. ४८, १५; ४९, २९ (वासुदेव; राम जामदग्न्य की कथा बताया); ५०, १२; ५१, २-९ (भीष्म ने इनकी स्तुति की); ५२, १. २ (लोकनाथ महाबाहो शिव नारायणाच्युत). १३. २२; ५३, ३ (विश्वकर्माणं वासुदेवं प्रजापतिम्). ९. ११. १३. १९ । कृष्ण की अनुकम्पा से भीष्म धर्मोपदेश देने के योग्य हो गये (१२. ५४, ५. १२. १४-१६. १९) । १२. ५५, १४; ५६, १०; ५८, २५; ६०, ६; ८१, १३. १७. २७ (नारद और कृष्ण का संवाद); ११०, २५ (पद्मरक्ताक्षः पीतवासा महाभुजः । सुहृद्भ्राता च मित्रं च सम्बन्धी च तथाऽच्युतः). २६ (गोविन्दः पुरुषोत्तमः); २०७, ३१. ४८; २०९, १ (अव्ययम् ईश्वरम्). ३२ (= विष्णु); २१०, ९ (वासुदेव = विष्णु, नारायण). १३ (वार्ष्णेयम्); २३०, २ (केशवः). ४ (उग्रसेन और कृष्ण का संवाद); २८०, ६० (जनार्दनः). ६२ (केशवमच्युतम्); ३३४, ८ (नारायण के एक रूप का

धर्म के पुत्र के रूप में जन्म हुआ). १८; ३३९, १०४ (ये विष्णु के नवें अवतार हैं); ३४२, ६७ और बाद (इन्होंने अर्जुन से अपने नामों की व्याख्या की); ३४६, १७ (शृण्वतोः कृष्णभीष्मयोः); ३४८, ११ (शृण्वतोः कृष्णभीष्मयोः). ६५ (शृण्वतोः कृष्णभीष्मयोः). ८८ (कृष्ण एव हि लोकानां भावनो मोहनस्तथा। संहारकारकश्चैव कारणं च विशांपते ॥) । 'कृष्णस्यापि विशांपते', (१३. ९, १७) । 'देवकीपुत्रसन्निधौ', (१३. ११, २) । 'गरुडध्वजस्य', (१३. ११, ५) । १३. १४, १० (इन्होंने बदरी तीर्थ में शिव की उपासना की थी). १३ (ये प्रत्येक युग में शिव की उपासना करते हैं). १४ (हरिरच्युतः). १८ (सुरासुरगुरो देव विष्णो). ६८. ८९ (शिव से एक पुत्र प्राप्त करने की इच्छा से ये उपमन्यु के आश्रम पर आये). ११२. २७७. ३३६. ३६४. ३६५. ३७७. ४०५. ४०७. ४२८. ४२९; १५, १; १६, ७३ (यादवेश्वर); १७, १. १८ (शिव ने इन्हें पुत्रप्राप्ति का वरदान दिया). १७०; १८, ३१. ६०. ७०. ७१; ३१, २५; ३४, २० (इनका और पृथिवी का संवाद); ७०, ६. १०. २८. २९ (इन्होंने नृग का उद्धार किया जो शापवश छिपकिली बन गये थे); ७२, ३; ९७, २१ (इनके और पृथिवी के बीच संवाद)। उन बारह नामों के उल्लेख जिनसे कृष्ण (विष्णु) की उपासना की जानी चाहिये (१३. १०९)। "एक समय श्रीकृष्ण ने बारह वर्षों तक एक व्रत किया। उस समय उनके मुख से अग्नि निकला जो उनका तेज था। श्रीकृष्ण ने उपस्थित ऋषियों को बताया कि अग्नि रूप में उनका तेज ही प्रगट हुआ और ब्रह्मा का दर्शन करने के लिये उनके लोक में गया। उन्होंने आगे कहा : 'ब्रह्मा ने मेरे प्राण को यह संदेश देकर भेजा है कि साक्षात् भगवान शंकर अपने तेज के आधे भाग से मेरे पुत्र होंगे।' तदनन्तर श्रीकृष्ण ने ऋषियों को उपदेश दिया (१३. १३९)।" "ऋषियों के पूछने पर श्रीकृष्ण का माहात्म्य बताते हुये शिव ने कहा : सनातन पुरुष श्रीकृष्ण ब्रह्मा से भी श्रेष्ठ हैं। उनकी दस भुजायें हैं। वे महान् तेजस्वी हैं। देवद्रोहियों का नाश करने वाले श्रीवत्सभूषित हृषीकेश सम्पूर्ण देवताओं द्वारा पूजित होते हैं। ब्रह्मा उनके उदर से और मैं उनके मस्तक से प्रगट हुआ हूँ। उनके केशों से नक्षत्र और तारा, और उनकी रोमावलियों से देवता तथा असुर प्रगट हुये हैं। समस्त ऋषि और सनातन लोक उनके श्रीविग्रह से उत्पन्न हुये हैं।...वे देवताओं का कार्य सिद्ध करने के लिये पृथिवी पर मानव शरीर धारण करके प्रगट होंगे और समस्त राजाओं का संहार करायेंगे। देवताओंको रक्षा और उनके कार्यसाधन में संलग्न रहनेवाले भगवान वासुदेव ब्रह्मस्वरूप हैं। वे ही ब्रह्मर्षियों को शरण देते हैं। ब्रह्मा उनके शरीर के और शिव भी उनके श्रीविग्रह के भीतर सुखपूर्वक निवास करते हैं। शार्ङ्गधनुष, सुदर्शनचक्र, और नन्दक नामक खड्ग उनके आयुध हैं। उनकी ध्वजा में गरुड़ का चिह्न सुशोभित है। वे योगमाया से सम्पन्न और हजारों नेत्रवाले हैं। परम बुद्धि से सम्पन्न भगवान् गोविन्द यहाँ देवताओं की उन्नति के लिये प्रजापति के शुभमार्ग पर स्थित हो मनु के कुल में अवतार लेंगे। मनुकुल का वंशवृक्ष इस प्रकार होगा : मनु > अङ्ग > अन्तर्धामन् > हविर्धामन् (प्रजापतिरनिन्दितः) > प्राचीनबर्हिस् > प्रचेतस् (+ नौ अन्य पुत्र) > दक्ष प्रजापति > दाक्षायणी > आदित्य > मनु > इला (= सुद्युम्न) > बुध > पुरूरवस् > आयु > नहुष > ययाति > यदु > क्रोष्टृ > वृजिनीवत् > उषङ्गु > चित्ररथ > शूर (छोटा पुत्र) > वसुदेव आनकदुन्दुभि > [कृष्ण] वासुदेव। कृष्ण के चार भुजायें होंगी। वे ब्राह्मण-प्रिय होंगे। वे मगधराज जरासन्ध के वन्दी समस्त राजाओं को बन्धन से छुड़ायेंगे। वे अपने-अपने बल-पराक्रम द्वारा अजेय तथा समस्त राजाओं के राजा होंगे। श्रीकृष्ण शूरसेन देश में अवतीर्ण होकर वहाँ से द्वारका जाकर रहेंगे और समस्त राजाओं को जीत कर पृथिवी का पालन करेंगे। जो मेरा और ब्रह्मा का दर्शन करना चाहता है उसे प्रतापी भगवान् वासुदेव का दर्शन करना चाहिये क्योंकि उनके दर्शन से हम लोगों का भी दर्शन हो गया समझना चाहिये। जिस पर कमलनयन श्रीकृष्ण प्रसन्न होंगे उस पर ब्रह्मा आदि देवताओं का समुदाय भी प्रसन्न हो जायगा। श्रीकृष्ण ने प्रजा का हित करने की इच्छा से धर्म का अनुष्ठान करने के लिये करोड़ों ऋषियों की सृष्टि की है। हम सब देवता उनके श्रीविग्रह में निवास करते हैं। अतः उनका दर्शन करने से तीनों देवताओं (ब्रह्मा, विष्णु, और शिव) का दर्शन हो जाता है। उनके ज्येष्ठ भ्राता हलधर और बलराम के नाम से विख्यात होंगे। पृथिवी को धारण करनेवाले शेषनाग ही बलराम के रूप में अवतीर्ण होंगे। जो विष्णु हैं वे ही पृथिवी को धारण करने वाले अनन्त हैं। जो बलराम हैं वे ही कृष्ण हैं; जो कृष्ण हैं वे ही भूमिधर बलराम हैं। (१३. १४७)।" १३. १४८, ७. ९. १०. १६. १९. २३. २७-२९. ३४. ३५. ४३. ६३; १४९, २०. ७२. १३५। "भीष्म ने कृष्ण की महिमा का वर्णन करते हुये कहा : श्रीकृष्ण ही पृथिवी, आकाश और स्वर्ग के स्रष्टा हैं। उन्हीं की नाभि से सृष्टि के आरम्भ में एक कमल उत्पन्न हुआ और उसी के भीतर ब्रह्मा स्वतः प्रगट हुये। सत्य युग में श्रीकृष्ण सम्पूर्ण धर्मरूप से विराजमान थे; त्रेता में पूर्ण ज्ञान या विवेक रूप में स्थित थे; द्वापर में बलरूप से स्थित हुये; और, कलियुग में अधर्मरूप से पृथिवी पर आयेंगे। उन्होंने ही प्राचीन काल में दैत्यों का संहार किया और वे ही दैत्य सम्राट बलि के रूप में प्रगट हुये। श्रीकृष्ण ही विश्वकर्मा, विश्वरूप, विश्वभोक्ता, विश्वविधाता और विश्वविजेता हैं। सैकड़ों गन्धर्व, अप्सरायें, तथा देवता सदा इनकी सेवा में उपस्थित रहते हैं। राक्षस भी इनसे सम्मति लिया करते हैं। स्तोता, रथन्तर, और ब्राह्मण आदि इन्हीं का स्तवन करते हैं। इन्होंने ही दैत्यों, दानवों, तथा नागों को विक्षुब्ध करके इस पृथिवी का रसातल से उद्धार किया। ये ही वायु; अश्व, अंशुमाली सूर्य, और आदि देवता हैं। ये महातेजस्वी और सर्वत्र व्याप्त रहनेवाले सर्वसिंह कृष्ण ही सम्पूर्ण जगत् को धारण करते हैं। इन्होंने ही एक बार अग्निरूप होकर खाण्डव वन को भस्म किया था। ये ही राक्षसों और नागों को जीतकर अग्नि में होम देते हैं। इन्होंने ही अर्जुन को एक श्वेत अश्व प्रदान किया था। वज्र का प्रहार करने के लिये उद्यत इन्द्र को मार डालने के लिये इन्होंने ही कितनी सरिताओं को लाँघा और इन्द्र को परास्त किया। इनके अतिरिक्त अन्य कोई ऐसा नहीं है जो दुर्वासा को अपने घर में ठहरा सके। इनको ही अद्वितीय पुरातन ऋषि कहते हैं। तीनों लोक, तीनों लोकपाल, त्रिविध अग्नि, तीनों व्याहृतियाँ और सम्पूर्ण देवता ये श्रीकृष्ण ही हैं। संवत्सर, ऋतु, पक्ष, दिन-रात, कला, काष्ठा, मात्रा, मुहूर्त, लव और क्षण, इन सबको श्रीकृष्ण का ही स्वरूप समझना चाहिये। रुद्र, आदित्य, वसु, अश्विनीकुमार, साध्य, विश्वेदेव, मरुद्गण, प्रजापति, अदिति और सप्तर्षि—ये सबके सब श्रीकृष्ण से ही प्रगट हुये हैं। वासुदेव, जीवभूत, संकर्षण, प्रद्युम्न, और अनिरुद्ध भी इन्हीं को कहते हैं। तीनों लोकों में जो कुछ भी उत्तम, पवित्र, तथा शुभ या अशुभ वस्तु है वह सब अचिन्त्य भगवान् श्रीकृष्ण का ही स्वरूप है। श्रीकृष्ण से भिन्न कुछ नहीं है। श्रीकृष्ण की ऐसी ही महिमा है। बल्कि ये इससे भी अधिक प्रभावशाली हैं। ये ही परम पुरुष अविनाशी नारायण हैं। ये ही स्थावर-जङ्गम जगत् के आदि, मध्य और अन्त हैं, तथा संसार में जन्म लेने की इच्छा वाले प्राणियों की उत्पत्ति के कारण भी ये ही हैं। इन्हीं को अविकारी परमात्मा कहते हैं। (१३. १५८; कृष्ण तथा इनके अन्य नाम इस अध्याय के ५-७. १०. १२. २४. ३४. ४४. ४६, आदि श्लोकों में आते हैं)।" "श्रीकृष्ण ने प्रद्युम्न को ब्राह्मणों की महिमा बताते हुये दुर्वासा के चरित्र का वर्णन किया और यह समस्त प्रसंग युधिष्ठिर को सुनाया। श्रीकृष्ण ने बताया कि दुर्वासा की खीर पैर के तलवे में न लगाने के कारण ही उनका तलवा अमर नहीं हो सका। अतः इसी अंग में चोट लगने से उनकी मृत्यु होगी। (१३. १५९)।" श्रीकृष्ण ने भगवान् शङ्कर के माहात्म्य का वर्णन किया (१३. १६०-१६१)। 'देवकीनन्दने', (१३. १६२, १)। 'कृष्णेन धीमता', (१३. १६६, ७)। 'देवदेवेश सुरासुरनमस्कृत', (१३. १६७, ३७)। 'वासुदेवो हिरण्यात्मा पुरुषः सविता विराट् ।...कृष्ण वैकुण्ठ पुरुषोत्तम ॥', (१३. १६७, ३८. ३९)। 'यतः कृष्णस्ततो धर्मो, यतो धर्मस्ततो जय', (१३. १६७, ४१)। 'नरनारायणौ = कृष्ण और

अर्जुन', (१३. १६७, ४४.) । इन्होंने भीष्म को प्राणत्याग की अनुमति देते हुये उन्हें बताया कि उनको वसु-लोक की प्राप्ति होगी (१३. १६७, ४५) । १३. १६८, २०. ३६. ३७ । इन्होंने युधिष्ठिर को सान्त्वना दी (१४. २, १) । इन्होंने इन्द्र और वृत्र के युद्ध का प्रसंग सुनाया (१४. ११-१३) । 'कृष्णफाल्गुनौ', (१४. १४, १२) । 'कृष्णपाण्डवौ', (१४. १५, ५) । १४. १६, २. ४. ८. १७; १९, ५३; ३४, ११; ५१, ४५ । अर्जुन के अनुरोध पर कृष्ण ने अनुगीता का उपदेश दिया (१४. १६-५१) । १४. ५२, १. ४. १५. ३४. ३५; ५३, ३. १९. २३ (उतङ्क ने इन्हें शाप देना चाहा) । इन्होंने उतङ्क को अपने दिव्य स्वरूप का दिग्दर्शन कराया (१४. ५४) । उतङ्क ने इनके दिव्य रूप को देखा (१४. ५५, ६. ७. ११. १२. २३. ३७) । १४. ५६, १; ५९, १५; ६०, ५ (द्वारका लौटते हुये इन्होंने युद्ध की घटनाओं का स्मरण किया); ६१, ५. ७. १२ (अर्जुन की मृत्यु का वर्णन किया); ६२, ४ (अभिमन्यु के अन्तिम संस्कारादि किये). १६; ६६, ७ (हस्तिनापुर आये). ११. १४. २२; ६७, ७-९. १८; ६८, ११. १९-२१. २३; ६९, १६; ७०, १. १० (जड़वत उत्पन्न परिक्षित को जीवित किया); ७१, १०. १४; ७२, १; ८६, १४ (युधिष्ठिर के अश्वमेध के समय उपस्थित हुये); ८७, १. ५. १०-१२. २३; ८८, ८. ९; ८९, १८. ३७; १५. ७, २१; १६, २१; २५, १२; २९, १९. ४२; ३१, १२ । 'जरा कृष्णं महात्मानं शयानं भुवि भेत्स्यति', (१६. १, २१) । द्वारका में भयंकर उत्पात देख कर और गान्धारी के शाप का स्मरण करके इन्होंने यदुवंशियों को तीर्थयात्रा के लिये आदेश दिया (१६. २) । १६. ३, ४. १२. १६. ३५. ३७ (इन्होंने प्रभासतीर्थ में वृष्णियों का विनाश करा दिया); ४, २. ६. १०. २१. २६. २७ (एड़ी में जरस का बाण लगने से ये मृत्यु को प्राप्त होकर अपने लोक चले गये); ५, ७. १०, १२; ६, ८. २८; ७. ३८, ७४. ७६; ८, ८. १३. १५. २४. २७. ३० । 'कृष्णे दिवं गते', (१७. १, १) । 'हरिं', (१७. १, १२) । 'चक्ररत्नं तु यत्कृष्णे स्थितमासीन्महात्मनि । गतं तच्च पुनर्हस्ते कालेनैष्यतितस्य ह ॥', (१७. १, ४०) । 'गोविन्दं ब्राह्मेण वपुषाऽन्वितम्', (१८. ४, २) । 'यः स नारायणो नाम देवदेवः सनातनः । तस्यांशो वासुदेवस्तु कर्मणोऽन्ते विवेश ह ॥ षोडश स्त्रीसहस्राणि वासुदेव परिग्रहः ।···ताश्चैवाप्सरसो भूत्वा वासुदेवमुपाविशन् ॥', (१८. ५, २४-२६) ।

तुकी० द्विव० कृष्ण, नारायण, विष्णु, तथा निम्नलिखित पर्याय :—

* अच्युत—देखिये वस्था० ।

* अज—देखिये वस्था० ।

* अनन्त—देखिये विष्णु ।

* अनादि—देखिये विष्णु ।

* अनादिनिधन—देखिये विष्णु ।

* अनादिमध्यपर्यन्त—देखिये विष्णु ।

* अन्धक-वृष्णिनाथ (अन्धकों और वृष्णियों के अधिपति) : ६. ५९, ९८ ।

* अधिदेव—देखिये वस्था० ।

* अधोक्षज—देखिये वस्था० ।

* अमध्य—देखिये विष्णु ।

* अव्यक्त—देखिये वस्था० ।

* अव्यय—देखिये वस्था० ।

* असित : 'सितासितौ यदुवरौ', (९. ६०, १२) ।

* आत्मन्—देखिये वस्था० ।

* आदिदेव—देखिये वस्था० ।

* आहुकानाम् अधिपति : ५. ८६, २ ।

* इन्द्रानुज, इन्द्रावरज—देखिये वस्था० ।

* ईश, ईशः पशूनां, ईशान, ईश्वर—देखिये वस्था० ।

* कंस-केशिनिषूदन (कंस और केशिन् का वध करनेवाले) : ३. १४, १० ।

* कंस-निषूदन (कंस का वध करनेवाले) : ३. २६३, ८ ।

* कपिल—देखिये वस्था० ।

* किरीट-कौस्तुभधर—देखिये वस्था० ।

* केशव : १. १, १७६. १७७. २१५; २, ११८. ३५६; ६१, ४६; ६२, ३३; १९७, ३३; २०६, १५; २०७, ९. ५२; २२०, २९; २२१, २७. ३८. ४०. ६५; २२८, ७. १५. २५; २३४, ७; २. २, ३. १९. २३. २७. ३३; ३, १७; १५, १०; ३३, ११; ३८, १९. २९; ३९, २; ४१, ५. १५; ४२, २; ४३, १६; ४४, ६. १७. १८. २२. २५; ४५, ३३. ३८. ५९; ५३, १९; ६८, ४२; ३. १२, ४. ९. १७. २०. ४८. १२७. १३६; १८, १८; २१, १२; २२, २२; ५१, ३३. ३५; ८२, ९६. ९७. १२६ ('सरस्वत्यां महापुण्यं केशवं समुपासते); १२०, २८; १४९, ३४ (कलियुग में विष्णु काले [कृष्ण] हो जाते हैं); १८३, ६. ३७. ३८. ३९. ४०. ४४; २०३, २२. ३०; २३५, २. १४; २५२, २० (केशवार्जुनौ); २६३, १८. २४. ४५; ४. २८, ७; ४५, १० (केशवेनापि संग्रामे साक्षादिन्द्रेण वा समम्); ५. ७, २१. २८; २२, ९. १०. २८. ३०; २५, १०; २८, १०. १४; ४८, २. ५१. ८१; ४९, २३; ५४, १२; ५९, ७. १४. ३१; ६२, ९; ६३, ८; ६५, १०; ६७, ७; ६८, १५; ६९, २. ६. ७. २१; ७०, २; ७२, ६३. ९३; ७५, १; ८०, ५. १२; ८२, ८. २०. २४. २८. ४४; ८३, २. १४. ३५. ४५. ४९. ५७. ६०. ६८; ८४, २०. २९; ८५, १८; ८६, १०. ११. १५; ८७, १५; ८८, ३. ८; ८९, १२; ९०, ७. १०. २८; ९१, ७. १२. ३९; ९२, १. ११; ९४, ४. २८; ९६, १. ४९; १२४, २; १२५, १. ३. ४. ७. १०. २५. २७; १२७, २. ६. २२. २५; १२९, ३८; १३०, ८. १३. २३. ३८. ३९. ४१; १३१, १. ४. १३. ३३. ३४; १३२, ५; १३७, १. २७; १४१, १. ५०. ५३. ५७; १४२, १; १४३, १. १४. १७. ४१. ५०. ५२; १४४, ८; १४७, १. १२; १५१, १. २. ३३; १५२, ५. ८. ९; १५७, २०. ३२; १५८, २४; १६०, ९३. ११७; १६१, ११. ३५; १६२, ४. ७; १६३, २, ५३; ६. १२, ५; २०, २०; २२, १०; २६, ५४; २७, १; ३४, १४; ३५, ३५; ३७, १; ४२, ७६; ४३, ३१. ९२; ५०, ९. १४; ५९, ६८. १०२. १०३; ६७, २०. २३. २५; ६८, १२. १३. १४; ८१, ३६; ९५, ८६; ९६, १३; १०६, ६७. ७२. ७३; १०७, २४; १२०, ७०; ७. १०, ३८; ११, ३०. ३८. ३९. ४०; १६, ५३; १८, १५; १९, १८; २३, ६९; २९, १८. १९. ३९; ३३, ४; ७२, ४. २५. २६. ३४. ६१; ७६, ८. १५. २६; ७८, १. २०; ८०, ११. १५. २३. २५; ८१, २४; ८४, ५; ८५, २४; ८९, २; ९१, ३१; ९२, ५७; ९३, १२. २०. ६३. ६४; ९९, १३. २०. ३९. ४०; १०२, ३७; १०३, १४. २४. ४०; १०४, १२. १८; ११०, ४५. ५९; ११८, २ (केशवफाल्गुनाभ्याम्); १३५, २३; १३६, ३९; १३७, १५; १३९, ११२; १४१, १३. २६. २७. ३२. ३५; १४२, ५. ५२; १४६, ६७. ७३. १३६; १४७, ३२. ४६. ८६; १४८, १५. ३३; १४९, ४४; १७२, २६; १७३, ५९; १८२, २९; १८३, ५. १०; १८६, १२; १९०, ९; १९१, ५०; २०१, ७. ३९. ४०. ४३. ५४. ९५ (केशवो रुद्रसंभव). ९९; ८. २, ६; ६, ७; १६, १८. १९. २७. ३०. ३२; १७, ६. २६; १८, २; ३०, १३; ३१, २२; ३५, १०. ४४; ३८, २१; ४१, ७८. ८६; ४३, ३; ४५, ३९; ४६, १६. ३९; ५३, १५. १६. १९; ५६, ९०. ९२; ५९, ५१; ६४, ६८; ६५, १३. २२; ६८, २६. २७; ६९, २. ७३. ७४; ७०, २४; ७१, २४; ७३, १; ७४, १. २. १८. ३८. ४१. ४६; ७६, ३३; ७९, १४. ६५. ९१; ८३, ४९; ८४, ४२; ८९, ४९; ९४, ५७. ६८; ९६, ८. २४. २७; ९. ५, १२; ७, ४२. ४३; ११, २९; २८, ६७; २९, ९५; ३२, ४६; ३४, ३; ३५, १, २; ५८, २१; ५९, ९; ६०, ११. १३. २६; ६२, ८. २०; ६३, ३१. ३२. ३३. ३७. ६६. ६७. ६९. ७१. ७४ (केशिसूदनम्); १०. ८, ५४; १२, ३८; १४, ४; १६, ६. २५; १४, १; १६, ४३. ५९; १७, १८; २०, १; २३, १६. ३२. ३६; २४, १२; १२. १, ३०; २९, ५; ३१, ३. ४६; ४३, १५; ४६, ३२; ४७, १०३. १०५; ५०, १२; ५२, २८. ३०; ५४, १४. २१; ५५, १६; ५८, २९; ८१, २५; १२२, २३; २०७, २;

* त्रैलोक्यनाथ : ३. ४९, २० ।

* दशार्हनाथ : ८. १७, २० ।

* दशार्हभर्तृ : ३. १८३, २३ ।

* दशार्हसिंह : ३. १८३, २२ ।

* दशार्हाधिपति : ३. २३, १ ।

* दामोदर : १. १८९, १९; २. ४३, १७; ३. ४९, २२; ५. २१, २। 'देवानां स्वप्रकाशत्वाद्दमाद्दामोदरो विभुः', (५. ७०, ८)। १२. ४३, ७। 'दमात्सिद्धिं पराप्सन्तो मां जनाः कामयन्ति ह । दिवं चोर्वी च मध्यं च तस्माद्दामोदरो ह्यहम् ॥', (१२. ३४१, ४४) । १३. २०९, १४; १४९, ५३ (विष्णु सहस्रनाम); १६८, ३० ।

* दाशार्ह : १. २०७, ७; २२१, ५२; २२५, ३४; २२८, ४५; २. २४, ३९; ३३, २०. २१; ३७, ५; ३. १२, ३५; २२, ४९; १८३, १०; ४. २, ११; ५. ७२, १. ४८; ७६, ३; ८१, २; ८२, १. ६. ९. १६. १९; ८३, ५०. ६६; ८४, ३. २७; ८५, ५. ८. १८; ८६, ५. १४; ८७, ६. १६; ८९, १३. २३. २७; ९१, ६. २०. २३. ३८; ९४, ५. ७. ११. १६. २१. २४. ३६. ४१. ४२. ५१; १२८, १. २२. ३३; १३७, ७. २७; १३८, १८; १४७, ४; १५१, ३४. ३६; १५३, ८. १०; १६२, ५; ६. ७९, ७; ७. ११, ४१; २८, ६; २९, २; ८५, २५; ८८, २९; ९८, ३६; ९९, ६. ३५; १००, २४. ३२; १०२, ३०; ११०, ८८; ११४, ३१. ५०; ११७, ६; १५६, ४८; १७३, ४४; १८२, २६; १९९, ३७; ८. ३१, ५५. ६२; ५६, २२; ५८, ४; ५९, ६७; ६९, ७२; ७३, ६९; ८६, २; ९६, १. २४; ९. २४, ५१. ५४; २७, २७; १०. १२, १४; १३, ७. ८; १४, १; १६, २३; १७, १; ११. १२, ३; २०, १; २५, ५०; १२. ४०, १२. १५; ४३, १; ५३, ७; १४. ६२, ६; ६६, २०. २३; ६९, १७; ७१, २१; १६. ३, ४७ ।

* दाशार्हकुलवर्धन : १२. ५२, ९ ।

* दाशार्हनन्दन : १. २२२, २७ ।

* दाशार्हवीर : ५. ९२, २६ ।

* देवकीतनय : १३. १३९, १३ ।

* देवकीनन्दन : ३. २६३, ८ ।

* देवकीपुत्र : १. १९०, ३३; ३. २९, ४६; १८३, ७. ५५; १९९, १८; ५. ६९, ७; १२५, १६; १५४, २४; ६. ११८, ३४; १२१, ४२; ७. २९, ४. ५; १४७, ३०; १८३, ९; ८. ३२, ६३; ३५, २८; ४०, ९; ९. २४, १५; २७, २; १०. १६, १८; ११. १३, १२; १२. ३९, १; ५४, १२; १३. ११, २; १५८, ३१ ।

* देवकीमातृ : ७. १८, ५; ८. ६६, १; १४. १६, ५ ।

* देवकीसुत : २. २, ३०; ३३, १९; ४. ५३, १८; ६४, २१; ७. २, १७; ८३, १; १८३, ३. ७; १३. १४७, ५० ।

* देवदेव, देवदेवेश, देवदेवेश्वर—देखिये वस्था० ।

* पद्मनाभ—देखिये वस्था० ।

* परमात्मन्, परमेश्वर, परमेष्ठिन्—देखिये वस्था० ।

* पिनाकशूलहस्त—देखिये वस्था० ।

* पीतवासस् : १. ६४, ५२; ३. १८८, १८. १२९; १८९, ५६; ५. ९४, ५२; १२. ११०, २५ ।

* पुण्डरीकाक्ष, पुण्डरीकेक्षण—देखिये वस्था० ।

* पुरुष, पुरुष श्रेष्ठ, पुरुषसत्तम, पुरुषोत्तम, पुष्कराक्ष, पुष्करेक्षण—देखिये वस्था० ।

* प्रजापति, प्रजापतिपति, प्रभु—देखिये वस्था० ।

* भूतपति, भूतात्मन्, भूतानाम् ईश्वरः, भूतेश—देखिये वस्था० ।

* भोजराजन्यवर्धन : १४. ८७, ७ ।

* मधुघातिन्, मधुनिहन्, मधुप्रवीर, मधुसूदन, मधु-(कैटभ) हन्—देखिये वस्था० ।

* महाबाहु—'बाहुभ्यां रोदसी बिभ्रन्महाबाहुरिति स्मृतः', (५. ७०, ९) । १२. ५२, २ ।

* महावराह—देखिये वस्था० ।

* महेन्द्रावरज, महेश्वर—देखिये वस्था० ।

* माधव, माधवर्षभ—देखिये वस्था० ।

* यदुकुलनन्दन, यदुकुलश्रेष्ठ, यदुकुलोद्वह, यदुनन्दन, यदुपुङ्गव, यदुप्रवीर, यदुवंशविवर्धन, यदुवर, यदुवीर, यदुवीरमुख्य, यदुशार्दूल, यदुश्रेष्ठ, यदुसुखावह, यदूत्तम, यदूद्वह—देखिये वस्था० ।

* यादव, यादवनन्दन, यादवशार्दूल, यादवश्रेष्ठ, यादवाग्र्य, यादवेश्वर—देखिये वस्था० ।

* योगिन्, योगीश, योगीश्वर, योगेश्वर—देखिये वस्था० ।

* रमानाथ : २. ६८, ४२ ।

* रामानुज : ५. ७५, २ ।

* लोककर्तृ, लोककृत, लोकनाथ, लोकभावन, लोकयोनि, लोकसाक्षिन्—देखिये वस्था० ।

* वज्रपाणि : ६. ४८, ३६ ।

* वराह—देखिये वस्था० ।

* वसुदेवपुत्र : ६. ५९, ८८ ।

* वसुदेवसुत : ३. १४, ८; ६. १२२, २५ ।

* वसुदेवात्मज : ८. ७९, ६६ ।

* वामन, वाराह—देखिये वस्था० ।

* वार्ष्णेय—देखिये वस्था० ।

* वासवानन्तरज, वासवानुज, वासवावरज—देखिये वस्था० ।

* वासुदेव : १. १, १०० (वासुदेवस्य माहात्म्यं). १३१. १३६. १७३. १७८. १८०. १९४. २१०. २११. २५६; २, १२५. १५२. १९०. २१८. २२७. २३०. २४६. ३५९; ६१, ४४. ४६; ६३, १२१; ६७, १५१. १५३. १५५; ९५, ७८ (भगिनीं वासुदेवस्य सुभद्रां). ८३. ८४; १८६, १७; १८९, २०; १९१, २०. २२. २३; २०६, ११; २०७, ६. ८; २१८, ६. १०; २१९, १३. १८. २१; २२०, २. २५; २२१, १. १२. ६३. ७०; २२२, १६. ३०. ३३; २२३, १; २२४, ९; २२५, ५; २२७, ११; २२८, १८. २५. ४२; २३४, १३ १८; २. १, १. ९; ३, १६; १७, १; १९, २२; २०, १; २१; १; २४, ४१; ३१, ७. ६४; ३२, १. १३. २०; ३६, ३१. ३२; ३७, ७. ३०; ३९, १५; ४५, १. १६. ५१. ६३; ४७, २७; ४८, ४. १५; ४९, २७; ५२, ३०; ६९, १०; ८१, ३२; ३. १०, २६; १२, ४. ५. २८. १३६; १३, १; १४, ८; १५, १. २; १७, १; १८, १; १९, १. ७; २०, १; २१, १; २२, १; ४९, २३; ५१, १०. ३६. ४२; ५२, ७. ११; ८०, २८; ८६, ३. ५; १०७, ३२; १२०, १६. २३; १४१, १९. २०; २३४, ८; २३५, १७; २६३, ९. १९. ३५; ४. २, १९; ६, ४; ४५, १९; ५०, १९; ७२, ८. १३. २५; ५. ५, १; ७, २९. ३८; ८, ४२. ४६; २०, १९; २२, २४. २९. ३४. ३८; २५, १. १३. १४; २७, १९; २८, १०. ११. १३; २९, १; ४८, ३. ८. ६४. ६८. ६९. ७१. ७३ ८२. ८७. ९४; ४९, १९; ५०, ४६; ५१, ३७; ५५, ८. ४०; ५९, १. १८; ६१, २५; ६२, ११; ६५, १०; ६६, २. ३. ११; ६७, १०; ६८, १. २; ७०, २. ३; ७१, १; ७४, २२; ७६, १; ८३, २४. ५९; ८८, १०; ८९, ७. १०; ९०, ७३. ९१; ९१, ३४; ९४, ३४; १०५, ३६; १२५, १४. २६; १२७, १; १३१, २०; १३२, २; १३७, ४; १३८, ३. ६; १३९, १०; १४०, ६; १४७, ६. १४; १४८, १. १७; १४९, १; १५०, १; १५१, ६७. ६९; १५३, १. ५. १०. १२; १५४, १. ३. १६. २३. २६; १५७, ६. २३. २४. २८. ३१; १५८, ११. १८. २५. २७; १६०, ७. ९. ५२. ५३. ८०. १०८. ११७. ११९; १६१, २६. ३५. ३७; १६२, ४१. ४२; १६३, २०. २८. ५२; १६५, २. २७. १६९, १९, २६; १७०, २; १७१, ३०; १७२, ८. १५; १९३, २२; १९४, ८. १०; १९६, १८; ६. १, १६. १७; २२, १५; २३, ३; ३१, १९; ३४, ३७; ३५, ५०; ४२, ७४; ४३, १५. २१. ८९. ९७; ४९, ९; ५०, ३१. ३२; ५२, १६. ५१; ५५, ३५; ५९, ३५. ४७. ५३. ६०. ६१. ७८. ८८; ६५, ४७. ६९. ७२; ६६, ८. १३. १८. २०. २३.

२६. २८. २९. ३०. ३८. ४१; ६७, १. २; ७३, ६; ८१, ९; ८४, ४५; ९५, ४; ९६, २; ९८, १५; १०१, ३३; १०४, २; १०६, ३६. ४४. ५१. ५३. ५६. ६०; १०७, १२. ५६. ९२. ९६; ११०, ३२; ११२, ३१. ३३; ११४, २९; १२१, ३१; १२२, २९; ७. २, ११; ७, ३०; १०, ३५. ४८; ११, १. ३२; १९, १; २७, ११; २८, ९; २९, १०. २५; ३५, १३; ३८, १६; ४८, ४०; ७२, ७. ९, ५४. ६६. ८६; ७५, १. २०. २३; ७७, १. ११. १२; ७८, १५; ८०, १०. ४३. ५३. ६५; ८१, २. ४; ८३, ३; ८४, ३१. ३४; ८५, २३; ९१, २५. २८. २९. ३०; ९२, १३. २०. ६४; ९३, १७. ६८; ९४, ३४; ९९, ३; १००, २. ९; १०१, १; १०२, १. २९; १०३, २. ४५; १०४, ११. १३. २३; ११०, ३७. १००. १०१; १११, ९. १०; ११२, २४; ११४, ५३; १२६, २४. ३६; १२८, ३३. ४१. ५०; १४२, ४८. ५६. ६३. ६६. ६९. ७१; १४३, १३. ४८; १४५, २. ४९. ८६; १४६, १३१. १३२. १३३; १४७, ७८; १४९, ५; १६२, ४६. ५२; १६७, ३६; १७१, ४५; १७३, ३५. ४५; १७६, ९; १७८, १; १८०, २. ११; १८१, २; १८२, ६. ८. ३५; १८३, ५४; १९२, ५८; १९७; १७; १९८, ४९. ६७; १९९, २७. ४३; २००, १०. १५. २८. ८०; २०१, ६८; ८. ९, ७१; १६, ३०. ३२; १७, ५. १५; १९, २३; २०, ५; २१, ६; २७, १८; ३२, ७. ६०. ६२; ३५, २६; ३७, २२; ४०, १०. १९; ४१, ८१. ८३; ४२, १. ३४; ४६, ४३. ६०. ७१; ५६, ८२; ५८, २. ५०; ५९, ५०. ६६; ६४, ३. ८. ५८. ६०; ६७, ९; ६९, ३९. ७६; ७०, ४८; ७१, ३; ७२, १७; ७३, ६९; ७९, ६. ४८. ६६. ६७; ८७, ९०. १००; ८९, ४२. ७६; ९०, ११६; ९१, १. १५. १७. ३३; ९६, १६; ९. १, ३६; २, २७. ६४; ५, २०; ७, १५. २७; १४, २७; २७, ३८; ३१, ३. ६. १६; ३२, १४; ३३, १. २२; ३५, १५; ५५, २९; ५८, १. ३; ६०, २०. ३२. ३३. ३९. ४०; ६१, २५. २७. ३९. ५८. ७०; ६२, १८. ३७. ३८. ४३; ६३, १४. ६५. ७६. ७७; ६५, ३६; १०. ४, ३१; ९, ४९; १६, २८; ११. १२, २२; १४, १९; १५, ३२; १६, १०; १८, १६; २४, २०; २५. ४७; २६, ६; १२. २, ७; ५, १०. १२; १६, २९; २९, ८; ३०, ४४; ३७, २१; ३९, २; ४०, २; ४५, ३. १२; ४६, ११. २४; ४७, १६; ४९, १. २९. ८८; ५१, १. १०; ५२, १४; ५३; ३. १२. २१. २२; ५४, १५. २५; ५५, ११; ५६, ९; ५८, २५; ८१, २. ३. २०; २१०, ९ (वासुदेवः परमिदं विश्वस्य ब्रह्मणो मुखम्); २३०, ४; ३३८, ४ (१४७ वाँ नाम); ३३९, २५. ३२. ३३. ४०. १२६; ३४१, ४१; ३४३; १९; ३४४, १८. १९; ३४७; ९४ (सर्वभूतकृतावासः); १३. १४, १७. २२. २६. ३६८; १५, ९; १७, १; १८, ३०. ६१; ३१, २ (नारदस्य च संवादं वासुदेवस्य चोभयोः); ३४, २० (संवादं वासुदेवस्य पृथ्व्याश्च भरतर्षभ). २१; ७०, ७. २५. ३०; ९७, २ (वासुदेवस्य संवादं पृथिव्याश्चैव). ३. ४. २४; १३९, ३०; १४७, १. ३२. ३८; १४८, ५४. ५६ (त्रियुगौ पुण्डरीकाक्षौ वासुदेवधनञ्जयौ); १४९, ४९ (विष्णु के सहस्रनामों में से एक). ८७. ८९. १२५. १३०. १३१. १३४. १३६; १५८, ३९; १५९, २; १६०, ३; १६१, १; १६७, २१. ३६. ३८. ४१. ४६; १६८, ५; १४. ११, १. ४; १२, १; १३, १; १५, १. २. १२; १६, ९; १७, १; १९, ५४; २०, १; ३५, २. १३; ५१, ४३. ४६; ५२, ५. ५१; ५४, २; ६०, ६; ६१, १. ३३; ६२, २. ६. १२; ६६, १. १२. १५. २८; ६९, २४; ७१, १. ९. १८. २३; ८९, १८; १५. ३, १८; १६, २१; १७, १८; ३६, ३४; १६. १, ८. १०. १२. १९; २, २३; ४, १७; ५, ६ (षोडश स्त्रीसहस्राणि वासुदेवपरिग्रहः); ७, ३१. ३८; ८, २९ (पुराणर्षिर्वासुदेवश्चतुर्भुजः); १७. १, १० । 'यः स नारायणो नाम देवदेवः सनातनः । तस्यांशो वासुदेवस्तु कर्मणोऽन्ते विवेश ह ॥ षोडश स्त्रीसहस्राणि वासुदेवपरिग्रहः, (१८. ५, २४. २५) । 'वासुदेवमुपाविशन्', (१८. ५, २६) ।

* विधु—देखिये वस्था० ।

* विरञ्चि, विराज्—देखिये वस्था० ।

* विश्व, विश्वकर्मन्, विश्वकृत्, विश्वक्सेन, विश्वयोनि, विश्वरूप, विश्वसम्भव, विश्वसृज्, विश्वात्मन्, विश्वावसु, विश्वावास, विश्वेश, विश्वेश्वर—देखिये वस्था० ।

* वृष, वृषदर्भ, वृषभ, वृषाकपि—देखिये वस्था० ।

* वृष्णिकुलोद्वह, वृष्णिनन्दन, वृष्णिपति, वृष्णिपुङ्गव, वृष्णिप्रवर, वृष्णिप्रवीर, वृष्णिवीर, वृष्णिशार्दूल, वृष्णिश्रेष्ठ, वृष्णिसत्तम, वृष्णिसिंह, वृष्ण्यन्धकपति, वृष्ण्यन्धकोत्तम—देखिये वस्था० ।

* वेधस्—देखिये वस्था० ।

* वैकुण्ठ—देखिये वस्था० ।

* व्रजनाथ : २. ६८, ४२ ।

* शङ्खचक्रगदाधर : ३. ४८, २७; १८९, ४०; २७२, ७३; ६. ६६, १४; ९८, १४; ७. ८३, १७; १३. १६७, ३७; १४. ५५, २३; १६. ८, १९ ।

* शङ्खचक्रगदापाणि : ८. ३५, ११ ।

* शङ्खचक्रगदाहस्त : ५. ४९, २३ ।

* शङ्खचक्रासिपाणि : ८. ७९, ६६ ।

* शम्भु—देखिये वस्था० ।

* शार्ङ्गगदापाणि : ८. ४६, ६० ।

* शार्ङ्गगदासिपाणि

* शार्ङ्गचक्रगदाधर : २. ४५, ३९; १६. ३, ४६ ।

* शार्ङ्गचक्रासिपाणि : १२. ४३, १६ ।

* शार्ङ्गधनुर्धर : ६. ६५, ५० ।

* शार्ङ्गधन्वन् : ३. ३, ४८; १२०, ६; १९१, ३४; ५. ७५, २; १३७, ३२; ६. ६५, ४०; ७. १०, ७५; ८. ८, १६; १०. १३, ७. १०; १२. २०७, ६; १३. १४९, १२०; १४. ५३, ६; १६. १, १०; ८, १४ ।

* शार्ङ्गिण् : ७. ८३, १९; १७. १, १३ ।

* शूलभृत्, शूलिन्—देखिये वस्था० ।

* शैव्य-सुग्रीववाहन—देखिये वस्था० ।

* शौरि (शूर के वंशज) : १. २२१, २८; २. २, २८; २०, १४; २२, २५. ३४; ३८, १२; ४५, ३९; ३. १८३, ३; २३५, १८; ५. २५, २; ७५, २; ८३, २१; ९०, ९०; ९१, १, १; ९४, १५. २२. ३१. ५१; १२५, २३; १३०, ४३. ५१; १३१. ४. २७. ३१. ३९; १४७, २; ६. ५२, १७; ७. ९२, ५३; १००, १७; १०१, ३३; १५८, ४६. ४८; ८. ३१, ५८; ४२, २; ६४, २; ११. २५, ३८; १२. २९, ६; ४४, १५; १४. १५, ९; ५३, १० ।

* सङ्कर्षणानुज (संकर्षण, अर्थात् बलराम, के अनुज) : २. ७९, २३; ५. १५७. १६ ।

* सत्य—'सत्यात्सत्यं तु गोविन्दस्तस्तस्मात्सत्योऽपि नामतः', (५. ७०, १३) । १२. ४३, ९; ४७, २६ ।

* सनातन—देखिये वस्था० ।

* सर्व, सर्वज्ञ—देखिये वस्था० ।

* सर्वदाशार्हभर्तृ : ६. ५९, ८३ ।

* सर्वनागरिपुध्वज : १३. १४७, १५ ।

* सर्वभूतपितामह, सर्वभूतात्मन्, सर्वभूतादि, सर्वभूतेश, सर्वभूतेश्वर—देखिये वस्था० ।

* सर्वयादवनन्दन : १०. १३, १ ।

* सर्वविद्, सर्वलोककृत्, सर्वलोकगुरु, सर्वलोकपितामह, सर्वलोकेश्वर, सर्वात्मन्—देखिये वस्था ।

* सात्वत, सात्वतप्रवर, सात्वतमुख्य, सात्वतश्रेष्ठ, सात्वतीपुत्र—देखिये वस्था ।

* सुपर्णकेतु : ३. १७६, १५ ।

* सुरराज, सुरासुरगुरु, सुरोत्तम—देखिये वस्था० ।

* हंस—देखिये वस्था० ।

* हयशिरस्—देखिये वस्था० ।

* हरि—देखिये विष्णु ।

*हलधरानुज : २. २२, ३६ ।

* हिरण्यगर्भ—देखिये वस्था० ।

* हृषीकेश : १. १, २४; ६१, ४३; ६४, ५३; २२१, ४४; २२५, ३१; २. २, ४; २२, २५; २४, ३६; ३३, २५; ३८, २२; ३. ४७, १०; १८९, ३५; २०१, २४; २०३, २४; ५. ७, २७; ५२, ११; ५९, ३०; ६९, ६. १२. १६; ७०, ९ (हर्षात् सुखात् सुखैश्वर्याद्धृषीकेशत्वमश्नुते). ५३; ८४, २६; ८८, १८; ८९, ४. ८; १२४, ५; १३०, ५; १४१, १८. २३; १४३, ३६. ३७; १४७, ७; १५८, ९; १६२, २३; ६. २५, १५. २१. २४; २६, ९. १०; ४२, १; ५१, २५; ६६, १९; ६७, २१; १०६, ७०; ७. ११, २० (युधिपञ्चजनं हत्वा दैत्यं पातालवासिनम् । पाञ्चजन्यं हृषीकेशो दिव्यं शङ्खमवाप्तवान्). २६. ३६; १९, २; ५१, ९; ७६, २०. २६; ८२, ३३; ८४, ११; ८९, १; ९९, १०; १००, १२; १०१, ३६; १०२, २४; १४३, १७; १४८, २४; १४९, १६. १८. २०; १७७, ४७; १८३, ५६; ८. २१, ७. ८; ६५, १३. १५; ७०, ५६; ८६, १८. २२; ९. ४, ४८; ५, ९; १९, २९; १०. १३, ६; १६, १; ११. १७, ५; २५, २३. २५; १२. २९, १; ४३, ७; ४५, २ (हृषीकेशस्त्रैलोक्यस्य परो गुरुः); ४७, ८६; ५१, २; ५४, १२; ५६, १; २०७, २; ३३६, ४४; १३. १०९, १२; १३९, ४९; १४७, ३. ८. ६०; १४९, १९ (विष्णुसहस्रनाम); १५८, २७; १४. ६८, ८; ८७, २. ७; १५. ३१, १२; १६. १, २४; २. १८; ३, २९; ६, २५ ।

[टिप्पणीः—उक्त पर्यायों के अतिरिक्त भी महाभारत में श्रीकृष्ण की अनेक अन्य उपाधियाँ प्रायः सर्वत्र मिलती हैं। विशेषतः निम्न स्थलों को देखिये : १. १, २२-२४; ६३, ९९-१०२; २. ३३, १०-१२; ६८, ४१-४३; ३. १२, १०. ५०-६०; ८८, २४-२७; १८८, १७-२०; १८९, ५२-५७; २६३, ८-१५; ५. ७०; ६. ६५, ४७-७५; ६६, ६-४१; ६७, २-२५; ६८, २-८; ७. १४९, ७-२४; १२. ४३, ४-१६; ४७, २३-१०७; ५१, २-९; ५२, २-१३; ३४१, १ और बाद; ३४२, ३७ और बाद; १३. १४७, २ और बाद; १५८, ५-४६; १४. ५२, ८-१७; ५४, १ और बाद; ५५, ८-९ ।]

२. कृष्ण=व्यास : १. १, ६०; २, ३४८; ५५, ७ (सात्यवत्याः सुतः); ६०, १३ (पितामहाय कृष्णाय); ६२, ४१. ४३; १०५, १५; ११०, ३; १९६, १. ३; २. ४६, ६; ७८, १४; ७. १९२, ७३; ९. ६३, २९. ३६; ११. १६, ३; १२. ३२३, २५; ३३१, ६२; १३. ९, १७ (देखिये नीलकण्ठी); १८, ४२; १२०, ५. ६; १४. १४, २; ६३, ५; ८९, १६; १८. ५, ३६ ।

३. कृष्ण, एक नाग का नाम है जो वरुण की सभा में उपस्थित रहता था (२. ९, ८) ।

४. कृष्ण = अर्जुन पाण्डव : २. ५०, ३०; ४. ४४, ९ (अर्जुन के दस नामों की गणना के अन्तर्गत). ११. २२ (कृष्ण इत्येव दशमं नाम चक्रे पिता मम । कृष्णावदातस्य ततः प्रियत्वाद्बालकस्य वै ॥); १४. ७७, ८ ।

५. कृष्ण, कुशद्वीप के पर्वत का नाम है जो 'गौर' नामक मानशिल पर्वत से पश्चिमभाग में स्थित एवं नारायण को विशेष प्रिय है (६. १२, ४) ।

६. कृष्ण, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६१) ।

७. कृष्ण, एक महर्षि का नाम है जो बाण-शय्या पर पड़े भीष्म के चारों ओर खड़े ऋषियों में एक थे (१२. ४७, ११) ।

८. कृष्ण = शिव : १२. २८४, ३५ (सहस्रनाम); १३. १७, ४५ (सहस्रनाम); १४. ८, २४ (महादेवाय कृष्णाय) ।

१. कृष्ण (द्वि० °णौ) = कृष्ण वासुदेव तथा अर्जुन पाण्डव : १. २२२, २८. ३३; २२७, २१; २२८, ३; २. २०, १४. २४; ३. ८६, ४; २६८, १४; ५. २२, ३१; ४९, २४; ५२, १२; ५९, ४; १२६, २; ६. ५९, ६३; ७३, १२; ८१, ४०. ४१; ७. १९, १९; २९, ३; ३०, १५; ३८, १६; ३९, २४; ८१, ७; १००, ३७; १०१, ६. १२. १७. १८. २५. २९. ४०; १०२, ३३; १०३, २५. ४९; १११, ३२; ११६, ४९; १२७, १; १३९, १०५; १४३, ३७; १४७, ४३. ७६; १४९, ४; १५८, ३४; १७०, ६४; २००, १२; २०१, ५१; ८. १६, २१; १७, ४; ३८, २१; ३९, ५. ३०; ४०, १८. १९. ५६; ४१, ७९; ४२, ३; ५६, १२७; ६३, २२; ६४, ४. २९; ६५, १८; ७९, ४१. ५.१ ६६. ६७. ७०; ८७, ६७. ७८. ८२; ८९, ३४. ८२; ९२, ११; ९३, ५३; ९६, ५२; ९. ३, ५२; ४, २६; ५, ११; ७, २; १४, ६; १९, ५८; ३४, ९ ।

२. (कृष्ण द्वि० °णौ)—'भीमार्जुनौ कृष्णौ स्वस्रीयौ च यमावुभौ' =नकुल और सहदेव (?), (५. ८, २८) ।

कृष्णकर्णी, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २४) ।

कृष्णकेश, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६१) ।

कृष्णगङ्गा, एक नदी का नाम है (१३. १०२, ४६) ।

कृष्णगति = अग्नि (९. २४, ६३) ।

कृष्णच्छविसमा = दुर्गा (उमा) : ४. ६, ९ ।

कृष्णद्वैपायन = व्यास (देखिये वस्था०) ।

कृष्णनेत्र = शिव : १४. ८, २१ ।

कृष्णपिङ्गल = शिव (सहस्र नामों में से एक)

कृष्णपिङ्गला = दुर्गा (उमा) : ६. २३, ४ ।

कृष्णरक्तेक्षण = शिव (सहस्र नामों में से एक । ।

कृष्णवर्ण = शिव (सहस्र नामों में से एक) ।

१. कृष्णवर्त्मन् = अग्नि, जिनका आस्तीक ने जनमेजय के सर्पसत्र में अग्नि की स्तुति करते हुये उच्चारण किया था (१. ५५, १०) ।

२. कृष्णवर्त्मन् = कृष्ण : १२. ४३, ११ ।

कृष्णवेणा, दक्षिण भारत की एक नदी का नाम है (२. ९, २०) । 'देवह्रदेरण्ये कृष्णवेणाजलोद्भवे', (३. ८५, ३७) । मार्कण्डेय ने इसे नारायण के उदर में देखा (३. १८८, १०४) । उन नदियों में से एक है जो अग्नि की मातायें हैं (३. २२२, २५) । ६. ९, २८; १३. १६५, २२ ।

कृष्णवेणी, कृष्णवेण्वा—देखिये कृष्णवेणा ।

कृष्णसारथि = अर्जुन : १. ६२, १०; ५. १४२, ६; ६, ९५, ७९; १०९, १६; ११६, ८०; ११७, १९; ७. १०४, २९; १०५, ३४; ११९, ११; १२८, ४८; १५२, २१; ८. ३४, १२३; ४६, ४१. ७०; ५३, ३८; ७९, १८. १९; ९३, ३३; ९. २५, २७ ।

१. कृष्णा = द्रौपदी : १. १, १२७. १५०. १६९; २, १०९. १५५; ६१, ३०; ६२, ७; ६३, ११०; १६५, ८. १०; १६७, ४८. ५३ (कृष्णेत्येवाभ्रुवन्कृष्णां कृष्णाऽभूत्सा हि वर्णतः); १६९, १५; १८४, १८; १८५, ८. ३३; १८५, २४; १८७, ३. ११. २०; १८८, २७; १९०, ४२; १९१, २. १२; १९२, ९. १२. १४. १६; १९३, १. ४. ६. ८. ९. १०. २५; १९४, १. ३. ९; १९५, ४. १०. १८. २२. २६; १९६, १२; १९७, ५१; १९८, ३. ४. ५. ६. ११; १९९, ३; २००, २०; २०१, ९. १६; २०२, ७. ८; २०६, ४. २४. २६; २०७, ११; २०८, ३. ४. ५. १३. १७; २१३, २. १३; २२१, १८. २३. ८५; २. २, ७; २४, ५४; ६५, ३२; ६६, ४; ६७, २१. २४. २७. ३१. ३३. ३५. ४३. ४४. ४६; ६८, २४. २८. ३०. ३१. ८८. ८९; ७१, ९. २६; ७२, २; ७३, १८; ७६, १२; ७९, १. २१. ३२; ८०, ७; ८१, १७. २०. २७. २९; ३. १, १०; ११, १६. ५५. ६८; १२, १२२. १३१; २३, १; २४, २५; २५, ६; २७, १. २; २९, १४. २९. ३५. ४१; ३१, ३. ५. २३. ३०. ३२. ४०. ४२; ३५, २८; ३७, २४. ३६; ४९, २. १४; ५१, ३७; ५२, २. ३; ७९, ८; ८१, १; ८६, १७; ९१, ९; ९३, २४; ९९, ३७; ११८, ६. १६; १२०, २४; १२५, २२; १३९, १८. १९; १४०, ३. १०. २०. २१. २९; १४३, १४; १४४, १२. १९. २२; १४५, ६. ८. ३९. ४५. ५४; १५५, ९. १२. १७; १५६, १; १५७, ३. ४४; १५८, ३५; १५९, २; १६०, १९; १६१, २. ४८; १६५, ५; १६७, १; १७५, २५; १८३, १. १५. २०. २२-२६. २८; २३३, ६०; २३५, ४. ९. १७; २३६, ६. ११. १३; २३७, २१; २३८, ८; २४६, १०; २६२, २; २६३, १. १७. २०-२३; २६६, ५; २६७, १. ५. ९. २१. २२; २६८, १०. ११. २५; २६९, १५. १७; २७०, ३; २७१, ३२. ४७. ५१; २७२, ७; २७३,

१. २; २९२, १०; २९३, २; ३१०, ४२; ३११, १. २. ४; ३१२, २; ३१५, २९; ४. ३, १५. २२; ४, ८; ५, ५; ९, २. २०. ३६; १३, ११. १३; १४, ११; १५, ४. २१; १६, १३. ३४. ३६. ३९. ४६; १७, १. २. ६. २०; २०, २७; २१, ४. ४९; २२, १८. ४२. ७६. ८३. ८९; २३, ४. ९. ११. १५. ३०; २४, ११. १८; २५, १६; ३६, १२; ४४, ४; ४९, ७; ५०, १२. २२; ७१, ४. १७; ७२, ३१; ५. ८, ३०. ५०; २३, ५; २९, ३९. ४१. ४२. ४६; ३१, १३. १६; ५०, २४; ५९, ४. ७. २२; ८२, १. ४२. ४४. ४९; ९०, ४९. ५७. ८१. ८७. ९८; ९५, ५९; १३७, १२. १९. २२. २३; १६०, ७१. ८२. ८८. ९०. ११२; १६१, ७. ३०; ६. ९१, २७; १०७, २२; ७. ४०, ९; १०२, १४. २१; १३२, १४. १७; १३७, ४४. ४५; १५१, १५; १९८, ४०; १९९, ३२; ८. १. ७; ९, ६०. ६२; ६६, ३८; ७३, ८४. ८६; ७४, २२; ८७, ११७; ८९, ३९; ९१, ७–९; ९६, २१; ९. ५, १०. १७. २०. २१; ६१, ४५; १०. ११, ४. ६. ९. १६. २१; १६, ३७; ११. २२, १२; १२. १६, १८; ३७, ४१; ३८, ६; ४०, १४; १४. १२, ८; १४, ३; ५२, २८; ८७, ११; ८८, २; १५. १५, १०; २४, १९; २५, ९; २९, ४२; १७. १, २४; २, ५. १२; ३, ५. १४; १८. ३, १८. ३९।

२. कृष्णा = दुर्गा (उमा) : ४. ६, ७. ९; ६. २३, ९।

३. कृष्णा, एक नदी का नाम है (६. ९, ३३)।

४. कृष्णा, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २२)।

कृष्णाजिनोत्तरीय = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कृष्णात्रेय, एक प्राचीन ऋषि का नाम है जिन्होंने तपोबल द्वारा चिकित्साशास्त्र का सबसे पहले ज्ञान प्राप्त किया (१२. २१०, २१)।

कृष्णानुभौतिक, एक महर्षि का नाम है जो उत्तरायण के आरम्भ में शरशय्याशायी भीष्म के दर्शन के लिये उपस्थित हुये थे (१२. ४७, ११)।

कृष्णौजा, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७५)।

केकय, एक जनपद, उसके निवासियों, तथा उन पाँच केकय राजकुमारों का द्योतक है जो पाण्डव-पक्ष में सम्मिलित हुये—शेष केकय कौरव पक्ष में सम्मिलित हुये थे। अयःशिरा, अश्वशिरा, वीर्यवान अयःशङ्कु, गगनमूर्धा, और वेगवान्—ये पाँच पराक्रमी महादैत्य केकय देश के प्रधान-प्रधान महात्मा राजाओं के रूप में उत्पन्न हुये (१. ६७, १०. ११)। केकय राजकुमार भी युधिष्ठिर की सेवा में उपस्थित रहते थे (२. ४, ३१)। इन लोगों ने युधिष्ठिर को धन समर्पित किया (२. ५२, १४)। धृतराष्ट्र-पुत्रों की निन्दा करते हुये केकयराजकुमार पाण्डवों से मिलने के लिये वन में आये (३. १२, २)। इन राजकुमारों ने युधिष्ठिर से विदा लेकर अपने नगर की ओर प्रस्थान किया (३. २२, ५१)। इन राजकुमारों ने पाण्डवों से भेंट की (३. ५१, १७)। ये भी पाण्डवों के राजसूय यज्ञ में आमन्त्रित थे (३. ५१, २६)। श्रीकृष्ण ने इनके पराक्रम की चर्चा की (३. १२०, २६)। द्रौपदी ने कहा कि केकयराजकुमार भी उसकी रक्षा करेंगे। (३. २६८, १६)। द्रुपदराज ने पाण्डवों को इन्हें आमन्त्रित करने का परामर्श दिया (५. ४, ८)। 'केकयाश्च नरव्याघ्राः सोदर्याः पञ्च पार्थिवा', (५. १९, २५)। पाँच केकय राजकुमार, जो भाई थे, पाण्डवों की ओर से युद्ध कर रहे थे (५. २२. २०)। दुर्योधन की सेना में केकयों की उपस्थिति (५. ३०, २३)। 'पाञ्चालाः केकया मत्स्याः प्रतिनन्दन्ति पाण्डवम्', (५. ५०, ७)। 'राजपुत्रा भ्रातरः पञ्च केकयाः', (५. ५०, ३८)। ये पाण्डवों की विजय चाहते थे (५. ५३, २)। ये पाण्डव-पक्ष में मिल गये थे (५. ५४, १७)। ५. ५५, ३। 'केकया भ्रातरः पञ्च सर्वे लोकहितकध्वजाः', (५. ५७, ९)। 'राजपुत्रा भ्रातरः पञ्च केकयाः', (५. ५७, १७)। ५. ६१, २५; ८३, ३२। 'केकया भ्रातरस्तथा', (५. १४१, २६)। ये पाण्डवों के सहायक थे (५. १४४, ३)। ये भी युधिष्ठिर के साथ-साथ चल रहे थे (५. १५१, ६३)। ये पाण्डवों के साथ रणक्षेत्र में उपस्थित हुये (५. १५३, २)। ५. १६०, ११; १६२, १४। 'केकयाः पञ्च राजेन्द्र भ्रातरो दृढविक्रमाः', (५. १७१, १४)। ५. १९५, ५; ६. ९, ४८ (भारतवर्ष की एक जाति); १८, १३; २०, १२; ४५, ७६ (केकया भ्रातरः पञ्च); ४७, ३०। भीष्म ने इनका वध किया (६. ४९, ४२)। इन्होंने विराट का अनुसरण किया (६. ५०, ५६)। इन्होंने भीष्म का अनुसरण किया (६. ५२, २१)। 'केकयाश्च महारथाः', (६. ५६, १७)। ६. ६१, १२. १६; ७२, ८; ७४, ३५ (केकयाश्च धनुर्वेदविशारदाः); ७५, ९ (केकया भ्रातरः पञ्च). १९. ३३; ७७, ५८; ७८ (केकयान पञ्च मारिष); ७९, २१. ५४. ५६; ८९, १८; ९५, ४०. ७२. ८५; ९७, ३९; ९९, १४ (केकया भ्रातरश्चैव); १०३, १३ (केकया भ्रातरः पञ्च); १०८, ९ (केकया भ्रातरः पञ्च); ११७, ३४; ११८, ४०; ११९, ८२; ७. ८, ४. २४; ९, २८; १४, ८३; १६, ११. ३२; २०, ७; २१, २३. २९. ६१. ६५। द्रोणाचार्य ने इन लोगों को पराजित किया (७. २२, ७)। इन लोगों ने भीमसेन का अनुसरण किया (७. २२, २३)। ये मत्स्यराज विराट के पीछे-पीछे चल रहे थे (७. २३, १४)। ७. २३, १७; २४, ७; २५, २१. ४२; ३५, ५. २२; ४०, १६. २०; ४२, ३; ४३, ८. १८; ४९, ८; ७८, १३; ८३, ५; ८५, १७. ४०; ९१, ३९; ९५, १३; ९८, ५४; १०६, ७ (केकयानां महारथः); ११०, ३१. ३२ (केकयांश्च नराधिप); १११, ४५ (केकया भ्रातरः पञ्च); ११४, १००; १२५, २३ (केकयानां महारथे); १५३, २४; १५४, १०; १५५, १४. ४४; १५६, ५१ (केकयाश्च महारथाः); १५७, ४७; १५८, ३; १५९, ९३; १६०, १२; १६६, ६३; १८४, ७; १८६, ४३; १९३, २६. ४१; १९५, ४०; ८. ३, १९; ५, २८. ४७; ८, १८; ९, ३३; १२, १९; १३, २२. २५. ३५. ३७. ३८; ३०, २७; ४६, २१; ४७, १७; ४८, २१; ४९, ९. ३४; ५४, १६; ५६, १. ४. ७०; ६२, ३२; ६३, १; ६८, ११; ७३, २९. ३५; ९. २१, ३४; ५५, ४५। जब जयद्रथ ने द्रौपदी का अपहरण किया तो केकयों ने भी जयद्रथ का अनुसरण किया (११. २२, १२)। इन पाँच भ्राताओं का द्रोणाचार्य ने वध किया (११. २५, १५)। इनका अग्नि-संस्कार (११. २६, ३६)। 'केकयानामधिपतिम्', (१२. ७७, ७)। १२. ७७, ३०। शतयूप केकयों के शासक थे (१५. १९, १०)। देखिये कैकेय।

केकयराजपुत्र : ८. ७, १३। बहु० ३. ५१, ४३।

केकयाधिपति = सहस्रचित्य : १५. २०, ६।

१. केतु, एक दानव (ग्रह) का नाम है : 'राहुकेतू यथा', (८. ८७, ९२)।

२. केतु = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

केतु (बहु०) एक प्रकार के ऋषियों का नाम है जिन्होंने स्वाध्याय द्वारा स्वर्ग की प्राप्ति की थी (१२. २६, ७)।

१. केतुमत्, एक असुर का नाम है जो दनु का पुत्र था (१. ६५, २४)। यही अमितौजा नामक पञ्चाल क्षत्रिय वीर के रूप में उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ११)।

२. केतुमत्, विभिन्न राजाओं के लिये प्रयुक्त हुआ है। युधिष्ठिर की सभा में विराजमान होनेवाले एक राजा (२. ४, २७. ३२)। कलिङ्गराज श्रुतायुध के मित्र और कौरवपक्षीय योद्धा के रूप में इनका उल्लेख (६. १७, ३२. ३५. ३७; ५१, २०)। इन्होंने कलिङ्गराज श्रुतायुध का अनुसरण किया (६. ५४, ५. ६)। भीमसेन ने इनका वध किया (६. ५४, ७७)। 'योऽवधीत् केतुमान् वीरो राजपुत्रं दुरासदम्। अपरान्तगिरिद्वारे द्रोणात् कर्त्तं न्यवारयत ॥', (७. १०, ४४)।

३. केतुमत्, द्वारकापुरी में श्रीकृष्ण के एक प्रासाद का नाम जिसमें उनकी पत्नी सुदत्ता निवास करती थीं (२. ३८, २९, के बाद गीप्रे० सं० में दाक्षिणात्य पाठ, पृ० ८१५)।

केतुमाल, जम्बूद्वीप के नौ वर्षों में से एक नाम है जो देवोपम पुरुषों और सुन्दरी स्त्रियों की निवासभूमि था—इसे अर्जुन ने विजित किया (२. २८, ६ के बाद गीप्रे० सं० में दाक्षिणात्य पाठ)। "यह द्वीप या वर्ष मेरु पर्वत के पश्चिम भाग में है और यहीं जम्बूखण्ड प्रदेश है। यहाँ के निवासियों की आयु १०,००० वर्ष होती है। यहाँ के पुरुषों का वर्ण सुनहला

होता है और स्त्रियाँ अप्सराओं के समान सुन्दरी होती हैं। इन्हें कभी रोग-शोक नहीं होता (६. ६, १३. ३१-३३)।"

केतुमाला, पश्चिम में जम्बूमार्ग के अन्त में स्थित एक तीर्थ का नाम है (३. ८९, १५)।

केतुमालिन् = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

केतुवर्मा, त्रिगर्तराज सूर्यवर्मा के अनुज का नाम है जिसका अर्जुन ने वध कर दिया (१४. ७४, १४–१६)।

केतुश्रृङ्ग, सञ्जय द्वारा उल्लिखित एक प्राचीन नरेश का नाम है जो काल के अधीन हो चुके थे (१. १, २३७)।

१. केदार, कुरुक्षेत्र के अन्तर्गत एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से पुण्य की प्राप्ति होती है (३. ८३, ७२)।

२. केदार (रः) कपिलस्य—देखिये कपिलस्य केदार (रः)।

३. केदार (रः) कपिष्ठलस्य—देखिये कपिष्ठलस्य केदार (रः)।

४. केदार (रः) मतङ्गस्य—देखिये मतङ्ग।

१. केरल (बहु० °लाः), एक जाति के लोगों का नाम है जिनकी वसिष्ठ की गाय के मुख-फेन से सृष्टि हुई (१. १७५, ३८)।

२. केरल, दक्षिण भारत के एक जनपद का नाम है। यहाँ के निवासियों को भी 'केरल' कहा गया है, जिन्हें सहदेव ने पराजित किया (२. ३१, ६९. ७१; ६. ९, ५८)। केरल नरेश ने राजा युधिष्ठिर को चन्दन, अगुरु, मोती, वैदूर्य तथा चित्रक नामक रत्न भेंट किये (२. ५१, ४ के बाद गीप्रे० सं० में दाक्षिणात्य पाठ)। कर्ण ने दिग्विजय के समय यहाँ के राजा को विजित किया और दुर्योधन के लिये 'करद' बनाया (३. २५४, १५-१६)। युधिष्ठिर की सेना में इनकी उपस्थिति (८. १२, १५)। ८. ४४, ४३।

केलिकल = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

केवला, एक नगरी का नाम है जिसे कर्ण ने अपनी दिग्विजय के समय विजित किया था (३. २५४, १०–११)।

केशयन्त्री, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९.४६,१७)।

केशव = कृष्ण (देखिये वस्था०)।

केशवनन्दन = प्रद्युम्न : ३. १८, ७; १९, ५।

केशवपूर्वज = बलराम : ९. ३४, १९; ५१, ५३; ५५, ४८।

केशवाग्रज = बलराम : ९. ३५, ८९।

१. केशिन्, एक असुर का नाम है जो दनु का पुत्र था (१. ६५, २३)। इसने विष्णु के साथ तेरह दिनों तक युद्ध किया था (३. १३४, २०)। जब इसने देवसेना नामक कन्या का केश पकड़कर खींचना आरम्भ किया तब वहाँ इन्द्र ने उपस्थित होकर इससे युद्ध करके देवसेना को मुक्त कराया (३. २२३, ८. ११–१४)। "अपना परिचय देते हुये देवसेना ने कहा : 'मैं प्रजापति की पुत्री हूँ। मेरी बहन का नाम दैत्यसेना है जिसका केशी ने पहले ही हरण कर लिया था। जब मैं अपनी बहन के साथ मानस पर्वत पर क्रीड़ा-विहार के लिये आया करती थी तो यह केशी हम लोगों को अपने साथ चलने के लिये कहता था। दैत्यसेना इसे चाहती थी परन्तु मेरा इस पर प्रेम नहीं था।' (३. २२४, १–३)।"

२. केशिन्, एक दैत्य का नाम है जो कंस का अनुगामी था। "इसके शरीर में दससहस्र हाथियों का बल था। यह घोड़े की आकृति में रहता था। कंस की प्रेरणा से यह श्रीकृष्ण का वध करने आया परन्तु स्वयं ही मारा गया (गीप्रे० सं० में २. ३८, पृ० ८०१, कालम १)। श्रीकृष्ण ने धर्मपूर्वक इसका वध किया था ऐसा उन्होंने शपथपूर्वक घोषित किया है (१४. ६९, २३)। श्रीकृष्ण द्वारा केशिवध की चर्चा (१६. ६, २०)।

केशिनिसूदन, केशिसूदन = कृष्ण (देखिये वस्था०)।

१. केशिनी, एक अप्सरा का नाम है जो कश्यप द्वारा प्राधा के गर्भ से उत्पन्न हुई थी (१. ६५, ५०)।

२. केशिनी, महाराज अजमीढ़ की तृतीय पत्नी का नाम है जिसके गर्भ से अजमीढ़ ने तीन पुत्र—जह्नु, व्रजन, रूपिण—उत्पन्न किये (१. ९४, ३२)।

३. केशिनी, दमयन्ती की दासी का नाम है। बाहुक के साथ इसका संवाद (३. ७४)। दमयन्ती के आदेश से इसने बाहुक की परीक्षा ली (३. ७५, १. २. ४. ६. ८. १९. २२. २४. २६)। इसने दमयन्ती को राजा नल के सम्बन्ध में सूचना दी (३. ७६, १-२)।

४. केशिनी, उमा (पार्वती) की अनुगामिनी, एक सहचरी का नाम है (३. २३१, ४८)।

५. केशिनी, एक सुन्दरी कन्या का नाम है जिसके सम्बन्ध में विरोचन और सुधन्वा में संवाद हुआ था (५. ३५, ५–१०. १२. १३)।

केशिहन्, केशिहन्तृ = कृष्ण (विष्णु)—देखिये वस्था०।

केसर, शाकद्वीप के एक पर्वत का नाम है जहाँ की वायु केसर की सुगन्ध से भीनी रहती है (६. ११, २३)।

केसरिन्, एक वानरराज का नाम है जिनके क्षेत्रभूत अञ्जना देवी के गर्भ से वायु द्वारा हनुमान् का जन्म हुआ था (३. १४७, २७)। इनके पुत्र, हनुमान्, अर्जुन की ध्वजा पर स्थित थे (८. ६८, ३०)।

१. कैकेय (एक या एकाधिक केकय राजाओं के लिये प्रयुक्त) : ३. ३३, ८९; ६. १६, १५ (कैकेयाः); १९, २१; ४७, ३० (केकयाः). ६७; ४८, १०१; ५२, ८; ५६, ४; ६९, ११; ७७, ६५; ७. १०, ५६; १५८, ३; १६०, १९; १८६, ३४; ८. ६, १८. १९; ५६, ६०; ८२, ४; १२. ७७, २९।

२. कैकेय = बृहत्क्षत्र : ६. ४५, ५२; ७. २३, २३; १०७, १. ३; १२५, १३. १६. १७. १९।

३. कैकेय = विन्द : ८. १३, २७. ३२. ३३। द्विव० °यौ = विन्द और अनुविन्द : ८. १३, ६. ११।

कैकेयपुत्र = विशोक : ८. ८२, ३।

कैकेयराज : १२. ७७, ६।

१. कैकेयी (केकयराज की पुत्री) = सुनन्दा, जो सर्वभौम की पत्नी और जयत्सेन की माता थी (१. ९५, १६)।

२. कैकेयी (केकयराज की पुत्री), अजमीढ़ की पत्नी के लिये प्रयुक्त हुआ है (१. ९५, ३७)।

३. कैकेयी = कुमारी, जो भीमसेन पारिक्षित की पत्नी और प्रतिश्रवा की माता थी (१. ९५, ४३)

४. कैकेयी, महाराज दशरथ की पत्नी का नाम है जो भरत की माता हुई (३. २७४, ८)। इसने महाराज दशरथ को इस बात के लिये विवश किया कि वे राम को वनवास और भरत को राज्य दें, यद्यपि भरत ने साम्राज्य लेना अस्वीकार करके उसे श्रीराम के लिये सुरक्षित रक्खा (३. २७७, १६. १७. ३१. ३६)।

५. कैकेयी = सुदेष्णा, जो विराट की पत्नी थी (४. ९, ६)। ४. १५, २; १९, ६-७; २१, २०. २८।

६. कैकेयी = सुमना : १३. १२३, २।

कैकेयीनन्दिवर्धन = उत्तरा : ४. ६८, ६८।

कैटभ, एक दानव का नाम है। मधु और कैटभ नामक दानवों ने ब्रह्मा का वध करने का प्रयास किया (३. १२, ३९)। 'मधुकैटभयोः पुत्रो धुन्धुर्नाम सुदारुणः', (३. २०२, १८)। 'मधुश्च कैटभश्चैव'; (३. २०३, १७)। 'मधुकैटभयोः', (३. २०३, २०)। 'मधुकैटभावूचतुः', (३. २०३, २८)। 'मधुकैटभयो', (३. २०३, ३५)। "जब विष्णु प्रलय के उपरान्त एकार्णव जल में शेषनाग पर शयन कर रहे थे तो उनकी नाभि से एक कमल निकला और उसी में ब्रह्मा प्रगट हुये। उस समय मधु और कैटभ नामक दो भयंकर असुरों ने ब्रह्मा का वध करने की इच्छा की। जब ये असुर ब्रह्मा को बार-बार डराने लगे तब ब्रह्मा ने अपनी कमल-नाल को हिलाया जिससे विष्णु कि निद्रा भंग हो गई और उन्होंने इन असुरों को देखा। इन असुरों ने विष्णु को वर देने की इच्छा की जिस पर विष्णु ने यह वर माँगा कि वही इन दोनों का वध करने वाले हों। इन असुरों ने भी विष्णु से निवेदन किया कि वे इनका खुले आकाश में ही वध करें। उन्होंने यह भी कहा कि वे दोनों विष्णु के ही पुत्र हों। तदनन्तर विष्णु ने अपनी

दोनों जाँघों को अनावृत देखकर मधु और कैटभ के मस्तकों को उन्हीं पर रखकर चक्र से काट दिया (३. २०३, '१२–३५)।" 'मधुकैटभयोः पुत्रो धुन्धुः', (३. २०४, ९)। 'धुन्धुर्नाम'''मधुकैटभयोः सुतः', (३. २०४, ४२)। 'एकार्णवे च स्वपता निहतौ मधुकैटभौ', (५. १३०, ५०)। 'हत्वा पुरा विष्णुरसुरौ मधुकैटभौ', (९. ४९, २१)। 'मधुकैटभयोर्युधि', (९. ५५, ३०)। "सृष्टि के आदि में ब्रह्मा जिस कमल से प्रगट हुये उसी के पत्ते पर पड़ी दो बूँदों से मधु और कैटभ नामक दानवों की उत्पत्ति हुई। इन दो दैत्यों ने ब्रह्मा के पास से वेदों का हरण कर लिया। ब्रह्मा के निवेदन पर विष्णु ने दोनों दानवों का वध करके वेदों का उद्धार किया (१२. ३४७, २६. ६०. ७०)।" देखिये असुर, दानव (द्वि०) भी।

२. कैटभ, एक दानव का नाम है जो प्राचीन समय में इस पृथिवी का अधिपति था, किन्तु इसे छोड़कर चल बसा (१२. २२७, ५३)।

कैटभनाशिनी = दुर्गा (उमा) : (६. २३, ९)।

१. कैतव, शकुनिपुत्र उलूक का नाम है (१. १८६, २२)।

२. कैतव (बहु० °वाः), एक भारतीय जनपद तथा वहाँ के निवासियों के लिये प्रयुक्त हुआ है (६. १८, १३)।

१. कैतव्य—देखिये उलूक।

२. कैतव्य (बहु० °व्याः), एक जाति के लोगों का नाम है जो दुर्योधन की सेवा में सम्मिलित हुये (८. ७, १९)।

१. कैरात, वि० (कैरातों का)—'पर्व कैरातसंज्ञितम्', (१. २, ५०)। 'कैरातं वेषमास्थाय', (३. ३९, २; ४९, ५)। 'भूतं महत् कैरातसंस्थितम्', (३. १६७, २०)। 'कैराते द्वन्द्वयुद्धे', (५. १९४, १२)। 'कैरातं स्थानमुत्तमम्', (१३. १९, ५४)।

२. कैरात (बहु० °ताः), एक जाति के लोगों का नाम है जो युधिष्ठिर के लिये भेंट लेकर उपस्थित हुये (२. ५२, १३)।

कैरातक (वि०)—'कैरातकीनामयुतं दासीनाम्', (२. ५२, ११)। 'कैरातकं मधु', (७. १२७, १४)। देखिये कैलातक भी।

कैरातपर्वन्, महाभारत के ३३वें अवान्तर पर्व का नाम है जिसमें अर्जुन की इन्द्रलोक की यात्रा से सम्बद्ध घटनाओं का वर्णन है। "वैशम्पायन ने यह बताया कि काम्यकवन से अर्जुन किस प्रकार घोर वन्य प्रदेश (वर्णन) को पार करके उत्तर दिशा की ओर चले। उस घोर वन में अनेक सिद्ध और चारण निवास करते थे। उस वन को पार करके अर्जुन हिमवत् पर्वत (वर्णन) की ओर अग्रसर हुये। हिमवत् पर्वत के रमणीय प्रदेश में थोड़े समय तक विचरण करने के पश्चात् अर्जुन ने कठोर तपस्या (वर्णन) आरम्भ की। जब अर्जुन चार महीने तक घोर तपस्या करते रहे तब उनके विषय में निवेदन करने के उद्देश्य से वहाँ रहनेवाले सभी महर्षि पिनाकधारी शिव के पास आये। शिव ने महर्षियों के भय का निवारण करके उन्हें विदा किया और बताया कि वे (शिव) अर्जुन के मनोरथ को जानते हैं (३. ३८)।" "तदनन्तर शिव ने किरात का वेष धारण किया और अपने साथ देवी उमा तथा अनेक प्रकार के वेष धारण किये हुये भूतगणों को लेकर उस स्थान पर आये जहाँ मूक नामक दानव सूअर का रूप धारण करके अर्जुन को मार डालने का उपाय सोच रहा था। उस सूअर को देख कर अर्जुन और किरातरूपधारी शिव ने एक साथ ही उस पर बाण से प्रहार किया। दोनों बाणों के आघात से सूअररूपी दानव फिर अपने भयानक राक्षस रूप को प्रकट करते हुये मृत्यु को प्राप्त हुआ। उस समय किरातवेशधारी शिव और अर्जुन में सूअर को मारने की प्राथमिकता के सम्बन्ध में विवाद छिड़ गया। शीघ्र ही दोनों के बीच युद्ध होने लगा। दोनों में पहले बाण-युद्ध हुआ और फिर क्रमशः खड्ग, शूल, वृक्ष, शिलाओं का प्रयोग किया गया। तदनन्तर दोनों में मल्लयुद्ध होने लगा। शिव के अंगों से अवरुद्ध हो अर्जुन अपने पीड़ित अवयवों के साथ मिट्टी के लोंदे से दिखाई पड़ने लगे। उनकी श्वास-क्रिया भी बन्द हो गई जिससे वे चेष्टाहीन हो भूमि पर गिर पड़े। थोड़ी देर के बाद जब अर्जुन की मूर्च्छा दूर हुई तो उन्होंने मिट्टी की वेदी बना कर उस पर पार्थिव शिव की स्थापना और पुष्पमालाओं से उनका पूजन किया। उस समय अर्जुन ने पार्थिव शिव पर जो माला चढ़ाई थी वह उन्हें किरात के मस्तक पर दिखाई पड़ी। यह देख कर अर्जुन सारा रहस्य समझ गये और किरात वेशधारी शिव के चरणों पर गिर पड़े। उनके ऊपर प्रसन्न हो शिव ने कहा : 'तुम्हारा तेज और पराक्रम आज मेरे समान सिद्ध हुआ है। मैं तुम पर अत्यन्त प्रसन्न हूँ। मैं तुम्हें दिव्य चक्षु प्रदान करता हूँ। तुम युद्ध में अपने शत्रुओं पर, वे चाहे सम्पूर्ण देवता ही क्यों न हों, विजय पाओगे। मैं तुम्हें अपना पाशुपत नामक अस्त्र भी दूँगा जिसकी गति कोई रोक नहीं सकता।' तदनन्तर अर्जुन ने देवी उमा (पार्वती) सहित शिव का दर्शन और उनके चरणों में प्रणाम करके 'महादेवस्तव' से उन्हें प्रसन्न किया। शिव ने अर्जुन को सान्त्वना देते हुये उन्हें अपने हृदय से लगा लिया। (३. ३९)।" "शिव ने अर्जुन को 'नर' नामक सुप्रसिद्ध ऋषि बताते हुये उनका गाण्डीव धनुष और अक्षय तुणीर आदि लौटा दिया। शिव ने अर्जुन को वर माँगने के लिये भी कहा जिस पर अर्जुन ने उनसे पाशुपतास्त्र, जिसका नाम 'ब्रह्मशिरस्' भी है, माँगा। शिव ने इस शर्त पर वह अस्त्र देना स्वीकार किया कि उसका प्रयोग किसी पुरुष या अल्पशक्ति योद्धा पर नहीं किया जायगा क्योंकि ऐसा करने पर सम्पूर्ण जगत् का नाश हो जायगा। तदनन्तर पवित्र हो कर अर्जुन ने शिव से उस अस्त्र को ग्रहण किया। उस समय वन, वृक्ष, समुद्र, वनस्थली, ग्राम, नगर, तथा आकारों सहित समस्त पृथिवी काँप उठी। वह भयंकर अस्त्र उस समय मूर्तिमान होकर अर्जुन के पार्श्वभाग में खड़ा हो गया। शिव के स्पर्श से अर्जुन के शरीर में जो कुछ भी अशुभ था वह नष्ट हो गया। उस समय शिव ने अर्जुन से कहा : 'तुम स्वर्गलोक को जाओ।' ऐसा कह कर पार्वती सहित शिव आकाशमार्ग से चले गये (३. ४०)।" "अर्जुन इस बात पर आश्चर्य करने लगे कि उन्हें साक्षात् शिव के दर्शन हुये। उसी समय वैदूर्यमणि के समान अङ्गकान्ति वाले, जल के स्वामी, वरुणदेव, नागों, नद और नदियों के देवताओं, दैत्यों, तथा साध्य देवताओं के साथ वहाँ उपस्थित हुये। तदनन्तर स्वर्ण के समान शरीरवाले भगवान् कुबेर महातेजस्वी विमान द्वारा वहाँ आये। उनके साथ बहुत से यक्ष भी थे। इसी प्रकार हाथ में दण्ड लिये हुये सम्पूर्ण भूतों का विनाश करनेवाले धर्मराज भी वहाँ उपस्थित हुये। उनके साथ मानव शरीरधारी विश्वभावन पितृगण भी थे। उस समय धर्मराज अपने विमान से तीनों लोकों, गुह्यकों, गन्धर्वों, तथा नागों को प्रकाशित कर रहे थे। तत्पश्चात् इन्द्राणी के साथ ऐरावत पर बैठ कर इन्द्र वहाँ आये। अनेक देवता उनके साथ थे और ऋषियों और गन्धर्वों का समुदाय उनकी स्तुति कर रहा था। इस प्रकार उपस्थित सभी लोकपालों ने वहाँ हिमवत् पर्वत पर अपना-अपना आसन ग्रहण किया। तदनन्तर यमराज ने दक्षिण दिशा में स्थित हो अर्जुन से कहा : 'हम सब लोकपाल यहाँ उपस्थित हैं। हम तुम्हें दिव्य दृष्टि देते हैं जिससे तुम हमारा दर्शन कर सको। तुम भीष्म, द्रोणाचार्य, निवातकवच आदि पर विजय प्राप्त करोगे।' तदनन्तर यम ने अपना दण्डास्त्र अर्जुन को समर्पित किया। इसके पश्चात् वरुण ने पश्चिम दिशा में खड़े हो कर अर्जुन को सम्बोधित कर अपने वारुण-पाश उन्हें समर्पित किये। इसके बाद कुबेर ने कहा : 'अर्जुन! पूर्वकल्प में मेरे साथ तुमने सदा तप के द्वारा परिश्रम उठाया है। आज मैं तुम्हें अपना अन्तर्धानास्त्र प्रदान करता हूँ जिससे तुम मानवेतर प्राणियों तक को जीत सकोगे।' अन्त में इन्द्र ने अर्जुन से कहा : 'मैं शीघ्र ही अपना रथ, उसके सारथि, मातलि, के साथ तुम्हारे पास भेजूँगा जिस पर बैठ कर तुम स्वर्ग लोक आना। वहाँ मैं तुम्हें दिव्यास्त्र प्रदान करूँगा।' तत्पश्चात् अर्जुन ने वहाँ उपस्थित लोकपालों का विधिवत् पूजन कर उन्हें विदा किया। उस समय देवताओं से दिव्यास्त्र प्राप्त करके अर्जुन को अत्यन्त प्रसन्नता हुई और वे अपने आप को कृतार्थ तथा पूर्ण मनोरथ मानने लगे (३. ४१)।"

कैलातक (वि०)—'कैलातकं मधु', (७. ११२, ६२)। देखिये कैरातक भी।

कैलास, एक पर्वत का नाम है जो कुबेर ,और शिव का निवास स्थान है। 'कैलासारोहणं', (१. २, १८२) । 'कैलासमिव गुह्यकाः', (१. १४६, १२)। 'कैलासशिखरप्रख्यैः', (१. १८५, १९) । 'कैलासशिखरोपमः', (१. २२०, २०)। राजा श्वेतकि ने शिव को प्रसन्न करने के लिये इसी पर्वत पर तपस्या की थी (१. २२३, ३६)। पूर्वकाल में दैत्यों ने जब कैलास पर्वत से उत्तर स्थित मैनाक पर्वत पर यज्ञ करना चाहा तो उस समय मयासुर ने एक रमणीय मणिमय भाण्ड तैयार किया था (२. ३, २)। 'उत्तरेण कैलासान्मैनाकं पर्वतं प्रति', (२. ३, ९) । 'कैलासनिलयस्य', (२. ६, ११)। 'कैलासशिखरोपमा', (२. १०, २)। उन पर्वतों में से एक जो कुबेर की सभा में उपस्थित रहता था (२. १०, ३१)। 'कैलासशिखरप्रख्यान्', (२. ३४, २०)। 'कैलासकूटप्रतिमं', (२. ४६, १५) । 'कैलासं पर्वतं प्रति', (२. ४६, १७)। व्यास यहाँ आये (२. ४६, १८)। 'उत्तरादपि कैलासादोषधीः', (२. ५२, ६)। 'कैलासभवने', (३. १२, ४३)। 'कैलासनिलयो धनाध्यक्षः', (३. ४१, ३३) । 'कैलासमिव शृङ्गिणम्', (३. ४२, ४०)। सगर ने यहाँ आकर शिव को प्रसन्न करने के लिये तपस्या की (३. १०६, १०)। भगीरथ ने यहाँ आकर शिव को प्रसन्न करने के लिये तपस्या की (३. १०८, २६)। यह शिव का निवास-स्थान है (३. १०९, १७) । "इस पर्वत की ऊँचाई छः योजन है। यहाँ देवता आया करते हैं। इसी के निकट विशालापुरी (बदरिकाश्रम तीर्थ) है। यहीं कुबेर का भवन है जहाँ अनेक यक्ष, राक्षस, किन्नर, नाग, सुपर्ण, तथा गन्धर्व निवास करते हैं (३. १३९, ११. १२)।" 'कैलासं पर्वतं प्रति', (३. १४०, ३) । 'कैलासशिखरोपमम्', (३. १४२, १५) । 'कैलासं पर्वतोत्तमम्', (३. १४५, १८) । 'कैलासशिखराभ्याशे', (३. १५३, १)। भीमसेन के प्रहारों से पीड़ित हो क्रोधवश नामक राक्षसों ने भाग कर इसी पर्वत-शिखर पर शरण ली (३. १५४, २२)। वृषपर्वा के आश्रम की ओर जाते समय पाण्डवों ने इसका दर्शन किया (३. १५८, १७)। "इस कैलास के शिखर को लाँघ जाने पर परम सिद्ध देवर्षियों की गति प्रकाशित होती है। चपलतावश इससे आगे के मार्ग पर जानेवाले मनुष्य को राक्षसगण लोहे के शूलों आदि से मारते हैं (३. १५९, २४. २५)।" अरिष्टषेण के आश्रम से जाते समय पाण्डवों ने इसका दर्शन किया (३. १७७, २. ६)। 'कैलासे हिमवत्पृष्ठे मन्दरे श्वेतपर्वते', (५. ११, १२)। 'कैलासशिखरोपमात्', (५. ९४, ३१)। इसी पर्वत पर कुबेर का राक्षसों, यक्षों, और गन्धर्वों के अधिपति के रूप में अभिषेक हुआ था (५. १११, ११) । 'कैलासमित्युक्तं स्थानमैलविलस्य', (५. १११, २०) । 'कैलासशिखरोपमः', (५. १५७, १९) । 'कैलासमन्दराभ्यां तु तथा हिमवता विभो॥ सहस्रशो महाशब्दः शिखराणि पतन्ति च।', (६. ३, ३७. ३८)। गुह्यकों के साथ कुबेर यहाँ निवास करते थे (६. ६, ४१)। 'अस्त्युत्तरेण कैलासे मैनाकं पर्वतं प्रति', (६. ६, ४२)। 'कैलासमिव शृङ्गिणम्', (६. ६२, ३३; ९४, २३) । 'कैलासशिखरोपमः', (७. ११, ३१)। 'कैलासभवने', (९. ११. ५५) । सशृङ्गमिव कैलासं', (९. १२, २)। 'कैलासमिव शृङ्गिणम्', (९. ३३, ३९. ४२)। 'कैलासशृङ्गसङ्काशौ', (९. ४५, ३२) । 'कैलासमि शृङ्गिणम्', (९. ५६, २८)। 'मुमुदे तच्च लब्ध्वाऽसौ कैलासं धनदो', (१२. ४४, १३)। 'कैलासशिखरे दृष्ट्वा दीप्यमानं महौजसम्। भृगुं महर्षिमासीनं भरद्वाजोऽन्वपृच्छत॥', (१२. १८२, ६)। 'वैश्रवणः···कैलासनिलयः', (१२. २८३, ८. ९) । 'कैलासपृष्ठम्', (१२. ३३१, ६५)। 'कैलासपृष्ठात्', (१२. ३३२, १०)। यह कुबेर का निवास है (१३. १९, ३१) । अष्टावक्र ने इसे पार किया (१३. १९, ५४)। देवगन्धर्वसेवित इस पर्वत पर सुरभि ने तपस्या की (१३. ८३, २९)। 'कैलासं प्रस्थितां चैव नदीं गङ्गां', (१३. १५५, २३)। 'कैलासस्य महागिरेः', (१४. ७७, १६)। 'कलासशिखराकारं···विमानम्', (१८. ६, ३२. ३३)।

कैलासक, एक नाग का नाम है (५. १०३, ११)।

कैलासगिरिवासिन्=शिव (सहस्र नामों में से एक)।

कैलासनिलय=कुबेर : २. ६, ११; ३. ४१, ३३; १२. २८३, ९।

कचर्त (बहु० °र्ताः), एक जाति के लोगों का नाम है (१३. ५०, १५; ५१, ५. ३९)।

कशिक (बहु० °काः) एक जाति के लोगों का नाम है जिन्हें भीष्मक ने पराजित किया था (२. १४, २१)।

१. कोकनद, स्कन्द के विभिन्न सैनिकों का नाम है (९. ४५, ६०. ६१. ७४)।

२. कोकनद (बहु० °दाः) एक जनपद के निवासियों का नाम है जिन्हें दिग्विजय के समय अर्जुन ने पराजित किया था (२. २७, १८)।

कोकवक (बहु० °काः), दक्षिण के एक जनपद के निवासियों का नाम है (६. ९, ६१)।

कोकमुखा=दुर्गा (उमा) : ६. २३, ८।

कोकामुख, एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से पूर्वजन्म की स्मृति जाग्रत होती है (३. ८४, १५८; १३. २५, ५२)।

कोकिलक, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है। (९. ४५, ७३)।

कोङ्कण, (बहु०), दक्षिण-भारतीय एक जनपद के निवासियों का नाम है (६. ९, ६०)।

कोटरक, एक नाग का नाम है (५. १०३, १२)।

कोटरा, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १४. १७)।

कोटिकास्य (**कोटिक**), शिबि नरेश सुरथ के पुत्र का नाम है जो जयद्रथ का साथी था (३. २६४, १२. १६. १७; २६५, १. ६; २६६, ४; २६७, २; २७१, ५)। भीमसेन ने इसका वध किया (३. २७१, २४)।

कोटितीर्थ, एक तीर्थ (तीर्थों ?) का नाम है : 'महाकालं ततो गच्छेन्नियतो नियताशनः। कोटितीर्थमुपस्पृश्य हयमेधफलं लभेत्॥', (३. ८२, ४९)। 'ततः पञ्चनदं गत्वा नियतो नियताशनः॥ कोटितीर्थमुपस्पृश्य हयमेधफलं लभेत्।', (३, ८३, १६. १७)। 'अभिवाद्य ततो यक्षं द्वारपालं मचक्रुकम्। कोटितीर्थमुपस्पृश्य लभेद्बहु सुवर्णकम्॥', (३. ८३, २००)। 'तत्राभिषेकं कुर्वीत कोटितीर्थे समाहितः॥ पुण्डरीकमवाप्नोति कुलं चैव समुद्धरेत्।', (३. ८४, २७. २८)। 'कोटितीर्थे नरः स्नात्वा अर्चयित्वा गुहं नृप। गोसहस्रफलं विद्यात्तेजस्वी च भवेन्नरः॥' (३. ८४, ७७)। 'कोटितीर्थे नरः स्नात्वा गोसहस्रफलं लभेत्', (३. ८५, ६१)।

कोटिश, वासुकि-कुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ५७, ५)।

कोण्वशिर (बहु °राः) एक जनपदवासियों का नाम है जो शूद्र हो गये थे (१३. ३५, १७ : 'काण्वशिराः' है)।

कोपवेग, एक महर्षि का नाम है जो युधिष्ठिर की सभा में विराजते थे (२. ४, १६)।

कोलगिरि, दक्षिण भारत के एक पर्वत का नाम है जहाँ के निवासियों को सहदेव ने दिग्विजय के समय विजित किया था (२. ३१, ६८)।

कोलाहल, प्राचीन काल के एक सचेतन पर्वत का नाम है जिसने कामवश दिव्यरूपधारिणी शुक्तिमती नदी को रोक लिया था (१. ६३, ३५)। उपरिचर वसु ने इस पर पैरों से प्रहार किया (१. ६३, ३६)। इसके द्वारा शुक्तिमती नदी के गर्भ से यमज सन्तान की उत्पत्ति (१. ६३, ३७)।

कोलिक, बिडालोपाख्यान में आये हुए एक चूहे का नाम है (५. १६०, ३८)।

कोलिसर्प, एक जाति का नाम है जो पहले क्षत्रिय थी, किन्तु ब्राह्मणों की कृपादृष्टि न मिलने से शूद्रत्व को प्राप्त हो गई (१३. ३३, २२)।

कोल्लगिरेय, दक्षिण के एक देश का नाम है जिसे अर्जुन ने अश्वमेध यज्ञ की रक्षा के समय विजित किया था (१४. ८३, ११)।

कोशल, कोशलराज, कोशला, कोशलाधिप, कोशलाधिपति, कोशलेन्द्र, कोशलेश्वर—देखिये कोस°।

कोषा, भारत की एक नदी का नाम है (६. ९, ३४)।

कोष्ठवान्, एक पर्वत का नाम है जिसे अन्य अनेक पर्वतों का अधिपति कहा गया है (१४. ४३, ५)।

१. कोसल (बहु० °लाः) एक जाति के लोगों का नाम है। ये जरासंध के सामने से भाग खड़े हुए (२. १४, २७ : 'कोशलाः)। 'पूर्वांश्च कोसलान् ; (२. १०, २८) अपनी दिग्विजय के समय भीमसेन ने इन्हें विजित किया था (२. ३०, ३)। अपनी दिग्विजय के समय सहदेव ने इन्हें विजित किया था (२. ३१, १३)। 'गच्छति कोसलान,' (३. ६१, २३)। 'कांतिकोसलाः,' (६. ९, ४०)। 'कोसलराजा,' (६. ४५, १५)। दुर्योधन की सेना में इनकी उपस्थिति (६. ५१, १५)। कृष्ण ने इन्हें पराजित किया था (७. ११, १५)। मत्स्यों आदि के साथ इन्होंने भी द्रोण पर आक्रमण किया (७. २१, २३)। इन्होंने युधिष्ठिर का पक्ष लिया था (७. २४, ७)। 'कोसलानामधिपः,' (७. ४७, २०)। 'कोसलराजस्तु विरथः', (७. ४७, २१)। 'कोसलानामधिपं राजपुत्रं बृहद्बलम् ,' (७. ४७, २२)। इन लोगों ने द्रोण पर आक्रमण किया (७. १२५, ५३)। द्रोण के विरुद्ध युद्ध में इन लोगों ने अर्जुन का अनुसरण किया (७. १५६, ५१)। इनके अधिपति, बृहद्बल, का अभिमन्यु ने वध किया (८. ५, २१)। दुर्योधन के लिये कर्ण ने इन्हें पराभूत किया (८. ८, १९) युधिष्ठिर की सेना में इनकी उपस्थिति (८. १२, १९)। इन लोगों ने धृष्टद्युम्न पर आक्रमण किया (८. २२, ३ : 'कोशलाः')। ये लोग शाश्वतधर्म के ज्ञाता थे (८. ४५, १४)। 'प्रेक्षितशाश्च कोसलाः', (८. ४५, ३४)। इन लोगों ने कर्ण पर आक्रमण किया (८. ४९, ३४)। अर्जुन ने इन लोगों का वध किया (८. ५३, २)। 'कोसलानामधिपतिं राजपुत्रं बृहद्बलम् ', (११. २५, १०)। क्षेमदर्शी इनके शासक थे (१२. ८२, ६)। अम्बा के स्वयंवर के समय भीष्म ने इन लोगों को पराभूत किया था (१३. ४४, ३८)। 'पुण्ड्रान्सकोसलान्', (१४. ८२, २९)। यज्ञाश्व की रक्षा करते हुये अर्जुन ने इन्हें पराजित किया था (१४. ८३,, ४)। तुकी बहु० कौसल्य।

२. कोसल = ऋतुपर्ण : ३. ७४, ८।

कोसलराज = बृहद्बल (७. ४७, २१)।

कोसला = अयोध्या : २. २०, २८; ३. ६१, २३। यह ऋतुपर्ण की राजधानी थी (३. ७६, २८)। 'ऋषभं तीर्थमासाद्य कोशलायां नराधिप', (३. ८५, १०)। 'कोशलां तु समासाद्य कालतीर्थमुपस्पृशेत्', (३. ८५, ११)। अपनी दिग्विजय के समय कर्ण ने इसे विजित किया (३. २५४, १०)। 'वैदेह्या समेतं कोसलागतम्', (३. २७९, ३३)। यहीं उद्दालक ने यज्ञ किया और उस समय सरस्वती नदी मनोरमा के रूप में प्रगट हुई (९. ३८, २३)।

१. कोसलाधिप = क्षेमदर्शी : १२. १०४, ३२।

२. कोसलाधिप = सौदास (कल्माषपाद) : १३. ६, ३२।

३. कोसलाधिप = ऋतुपर्ण (३. ७३, २५)।

कोसलाधिपति (कोसलों के अधिपति)—द्रौपदी के स्वयंवर के समय इनकी उपस्थिति (१. १८६, २२)। अपनी दिग्विजय के समय भीमसेन ने कोसलाधिपति बृहद्बल को पराजित किया था (२. ३०, १)। अपनी दिग्विजय के समय सहदेव ने इन्हें पराजित किया था (२. ३१, १२)। 'कोसलाधिपतेः पुत्रं सुक्षत्रम्', (७. २३, ५७)।

१. कोसलेन्द्र = राम दाशरथी (३. २८४, १०. २२)।

२. कोसलेन्द्र = बृहद्बल (६. ११६, ३१. ३२)।

कोसलेश्वर = सुदास (१३. १६५, ५७)।

कोहल, वेदविद्या में पारङ्गत एक ऋषि का नाम है जो जनमेजय के सर्पसत्र के सदस्य थे (१. ५३, ९)। राजा भगीरथ ने इन्हें एक लाख सवत्सा गायें दान देकर इनका आशीर्वाद प्राप्त किया था (१३. १३७, २७)। ये उत्तर दिशा में निवास करते थे (१३, १६५, ४५)।

कौकुट्टक (बहु० °काः), दक्षिण की एक जाति का नाम है (६. ९,६०)।

कौकुर (बहु० °राः) एक जाति = कुकुर। ये दासों के रूप में युधिष्ठिर के भवन में निवास करते थे (२. ५०, २०)। ये युधिष्ठिर के लिये भेंट लाये (२. ५२, १५)। 'वार्ष्णेयान् सभोजान्धककौकुरान्', (१६. ५, २)।

कौकुलिका, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६,२५)।

कौणप, वासुकि के कुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है जो माता के शाप से पीड़ित हो विवशतापूर्वक सर्पसत्र की अग्नि में जल गया (१. ५७, ६)। बहु० °पाः (१. १७०, १५)।

कौणकुत्स्य, एक वनवासी द्विजश्रेष्ठ का नाम है जो सर्पदंशन से मृत प्रमद्वरा को देखने के लिये आये थे (१. ८, २५)।

कौणपाशन, एक प्रमुख नाग का नाम है (१. ३५, १४)।

कौण्डिन्य, एक मुनि का नाम है जो युधिष्ठिर की सभा में विराजते थे (२. ४, १६)।

कौत्स, एक विद्वान् ब्राह्मण का नाम है जो जनमेजय के सर्पसत्र में उद्गाता बनाये गये थे (१. ५३, ६)। राजा भगीरथ ने अपनी कन्या, हंसी, को इन्हें दान देकर अक्षय लोक प्राप्त किया था (१३. १३७, २६)।

१. कौन्तेय (कुन्ती के पुत्र)=अर्जुन : १. ६१, ४५; १३२, २४. ४७; १३८, १४, २८. ४१. ५६; १४५, ८; १७०, ६९; १७१, १२. २२; १७८, ५; १८५, ९; २१३, १४; २१४, ८. ११. १६. ३१. ३३; २१५, २. १०; २१६, ११; २१८, ४. १३. १७; २२०, ७; २२१, ५. १३. १७; २२५, २३; २. १, ३; २७, ३. ९. १८; २८, १२; ३. ३७, २१–२३. २५. ३१. ५८; ३८, १६; ३९, १८. ५०; ४१, २३. २९; ४२, २०; ४३, १९; ४४, ५. ६; ७९, २६; ९१, १५; १६७, ४७; १६८, ७३. ८३; १७३, ७५; १७५, २. ६; ३१२, २४. २७; ४. १, ९; २, १२; ३८, ३०; ४५, ३४; ४६, ६. १०; ४८, ७. १७; ५१, ६; ५५, ३; ५७, ३०; ५८, १७. ५९; ५९, २१; ६०, १४. २५; ६१, ४२. ४६; ६२, ९; ६४, ९. ३१. ३४; ६९, १८; ७२, ३३; ५. ७, ६; ५६, ३; ७९, ३; ९०, ६६; १४१, ५७; १५८, २६; १६०, ९५. ११५; १६१; ३३; १६९, २६; ६. १४, ११; २३, २०; २५, २७; २६, १३. ३७. ६०; २७, ३९; २९, २२; ३०, ३५; ३१, ८; ३२, ६. १६; ३३, ७. १०. २३. २७. ३१; ३७, १. ३१; ३८, ४. ७; ४०, २२; ४२, ४८. ५०. ६०; ४९, १५; ५९, ४५; ७३, १६; ८१, ३८; ८४, ४५. ४७. ४९; १०१, ५८; १०६, ३६; ११६, ६०; ११७, ४५. ६३; ७. ९, ३२; १६, ४२. ४६; १७, ६; २७, २; ५१, ८; ७५, २३; ८८, ७; ८९, १२; ९२, १६. २४; ९३, २८; ९४, १. ८. ३४. ३७; ९९, ४; १००, १, ४. ३३; १०२, २७; १०४, १२; १०५, ३४; १३९, १२२; १४१, २१. २६; १४३, ४; १४५, १४. ८५; १४६, ४७. ४८. ५२. ५३. ७९; १४७, ९; १४८, ५; १५९, ४७; १७२, २६; १७३, ३५; १८२, १६; १८५, १३. २८; १९७, २. ६; २०१, ९; २०२, २८. ३७. १५३; ८. ४९, ५६; ६०, १ (कौन्तेयं धर्मराजं युधिष्ठिरम्). १०; ६३, १२. ३२; ६५. २३; ९६, ५०; ९. ११, २९ (अजातशत्रु युधिष्ठिरम्); १६, ४९. ५६; १९, १६; २३, १०; ३०, ४५; ३१, १७. ४१; १०. १०, ९; ११. ८, ३८; १२. १४, १; १५, २९. ५३; २०. ६; २१. ६. १३; २३, १ (पाण्डवः). १३; २४, १ (अजातशत्रुम्). ६; २५, १; २७, ३४; ३२, १६. २४; ३३, ४८; ३४, ६. १८. २१; ३७, १७; ३८, १७. २७; ४९, १. १५. ३८; ६६, ४. ७. ९. २०. २७. २९. ३१; ७१, ३१; ७५, २६; ८३, ३; ८४, ११; ८६, २; ८९, ५; १२४, ७१; १२८, २६; १३३, १; १३७, ३; १४१, १०२; १५८, ३२; १६९, १६; २०७, ४१; २६४, २३; २७३, २४; २८०, ५९; २८२, ६३, ३००, १६. ३४. ५६; ३०१, ४१. ७६. ९९. १००. १०६; ३३७, ३९; ३४१, ५१; १३. १, १७; १४, ३८६; १८, ११. १८; २६, १०४; २७, ९; ३१, ३६; ४०, ८; ४७, ५२; ५९, १२; ६६, ४. ६. ५६; ६७, ७. १७; ९५, २०; १०३, ३; १०५, ५; १०६, ७. २०. ४३. ७१; ११५, ३८; १३५, २१; १३८, ४; १४८, ५४. ५८; १५९, ५५; १६६, १५; १६७, ८. २६; १४. १, ८. १८; ३, २१; १२, ७. १५; ७२, ३; ८६, ८. १०. १८; ८८, १२. ३५; १५. २, २७; ३, ६२. ७४; ४, १८; ५, ९; ६, ४. ७; ८, ४; २८, २२; १७. २, ११; १८. २, २५; ४, ४।

२. कौन्तेय (बहु० °याः और द्वि० °यौ), अर्थात् कुन्ती के पुत्र : १. १, १८७; ६१, २०; १४१, १२; १४२, १७; १४६, ३; १६८, १;

१७१, २; २००, ५; २०१, १६ (एकैकः……कौन्तेयः); २०२, ४. ९; २०४, २. ६; २०६, २६; २०७, ८; २. ३७, २५; ८०, २७; ३. १, १९; ९२, ६; १४३, ५३; १५८, २९; २४२, २१; ४. ३४, ३; ५२, ७; ५. ३, ११; ८, २४; १८, २५; १९, २८; १२४, ३१; १२८, १०; १३८, ३; ६. १४, २८; ६५, ३४; ११४, ८ (°यौ = अर्जुन और भीमसेन). ११ (वही); ७. ९, ३२; १५६, १२५; १७०, ६५; ८. २, १४; ९, ६३. ९७; ३२, १५. २६; ५७, ११; ११. १४, १५ ।

कौबेर (वि०)—'विसर्गे कौबेरे', (२. ७८, १९)। 'कौवेरम्…… अस्त्रम्', (३. ४१, ४१)। 'अस्त्रग्रामः……कौवेर', (५. १६९, २१)। 'कौवेर्योऽथ महाबलाः', (९. ४६, ३६)। कौबेरं प्रययौतीर्थम्', (९. ४७, २५)। 'कौवेरे काननोत्तमे', (९. ४७, २७)। 'कौवेरा यक्षगन्धर्वकिन्नराः', (१३. १९, ४१) 'कौवेरं लोकमश्नुते', (१३. ७९, १६)। 'कौवेरमाप्नुवन्', (१५. ३३, १५)। 'रौद्रमाग्नेयकौवेरं याम्यं गिरिशमेव च', (७. २३, ९४)।

१. कौमार (वि०)—आगस्त्य सर में फल और शाक खा कर निवास करनेवाला कौमार, अर्थात् स्कन्द, पद प्राप्त करता है (३. ८२, ४५)। 'मङ्गलानि च सर्वाणि कौमाराणि त्रयोदश:', (३. २२६, १३)। 'वायव्यश्चाथ कौमार्यो ब्राह्मश्च भरतर्षभ', (९. ४६, ३७)।

२. कौमार, शाकद्वीप के एक वर्ष का नाम है (६. ११, २६)।

कौमुद, एक मास (कार्त्तिक) का नाम है : 'कौमुदेमासि', (५. ८३, ७)। 'कौमुदे शुक्लपक्षे', (१३. ६६, ६२)। 'कौमुदे……शुक्लपक्षे', (१३. ११५, ६३)। 'मासं तु कौमुदं पक्षं', (१३. ११५, ६७)। 'शारदं कौमुदं मासं', (१३. ११५, ७६)।

कौमुदी, कौमुद (कार्त्तिक) मास की पूर्णमासी का नाम है (१३. १३०, ३२)।

कौमोदकि, श्रीकृष्ण की गदा का नाम है : 'वरुणश्च ददौ तस्मै गदामशनिनिःस्वनाम्। दैत्यान्तकरणीं घोरां नाम्ना कौमोदकीं प्रभुः ॥', (१. २२६, २८)। 'गदां कौमोदकीं दिव्यां', (७. ७९, ३५)।

१. कौरव = अर्जुन : १. १३६, ३१; १७१, २०; ३. ४१, ४५; ७. १३५, ३३ ।

२. कौरव = बभ्रुवाहन : १४. ८०, ४६ ।

३. कौरव = भीमसेन : ३. १४७, ३; २७२, ६; ७. १३७, ४५ ।

४. कौरव = भीष्म : १. १०२, ४७. ४८; २. ३८, ५; ३. ८४, ६८; ५. १६०, ७८ (गाङ्गेयः); १६५, १५; १६८, १६. ४२; १७४, ७; १७९, १६; १८३, १४; ६. ५८, ३४; ८६, १८; १०७, ४८; १२२, २६; ७. १, ३९; १२. ४६, २९; ५४, २५; ५६, ४; २३१, १; ३०१, ८१; १३. ३, १६; ६६, ५; १६७, ३६; १६८, १२ ।

५. कौरव = भूरि : ७. १६५, ६; १६६, ३ ।

६. कौरव = भूरिश्रवस् : ६. ६४, २; ७. १४२, १८. ६९; १४३, ३; १४५, १ ।

७. कौरव = शान्तनु : १३. ४४, ४० ।

८. कौरव = धृतराष्ट्र : १. ६७, ९; २००, ७; २. ५६, ७; ३. ११, ६९; १३, ३; २३९, ४; ५. ६, ४; १२४, २; ६. ६५, २९; ८. ४, ८; ९. ४, ४९; ६३, ७२; ११. १३, ५; १२. ४०, ५; १५. ३, २. २९. ६२; ११, १०. १८; १२, ४; २७, २०; २९, ३६; ३६, १३ ।

९. कौरव = दुःशासन : ६. १२०, २६; ७. १२२, १४; १२३, ५; ८. २३, ९ ।

१०. कौरव = दुर्मुख : ५. ६६, ६ ।

११. कौरव = दुर्योधन : १. १३६, ३९; १४४, १८; २०३, ११; ३. २४०, ३०; २५१, २; २५२, २५; २५३, १७; २५५, २; २५६, ११; २५७, १४; २६२, २६; ४. ५२, १२; ५. ४८, २७; ७९, ११; ८५, १६; ९१, १०. १३; ९७, १०; १३८, ३; १५४, १३; १५६, ३५; १६२, ५४; १६३, २९; १६९, ११; १८०, २७, ३६; १८८, १२; १९२, २; १९५, १९; ६. ४३, ४१. ५६. ५७; ६५, ३५; ९२, २२; ९४, १४. २३; ९५, १०; ७. ३७, ३; ९४, ७६; १५१, ७; १५८, १४; १५९, ७८; १६०, २. ९; १६६, ४९. ५५; १८५, १४; १९३, ३२; १९५, १७; ८. ३२, ६३; ९. १, २; ७, २०; १६, १७; २४, ६; ३०, २७. ६७; ५४, २७; ५५, २३; ५७, ६७. ६९; ५८, २०; ५९, २७; ६५, ३८ ।

१२. कौरव = जनमेजय : १. १०२, १; १३०, ६; २. १२, ३४; ३. २४०, १७; १४. ८५, ५; १५. १, १२ ।

१३. कौरव = पाण्डु : १. ११३, २१; १२३, ३०; १२७, १२; १९३, १८ ।

१४. कौरव = सोमदत्त : १. १४३, १२; ७. १५६, १२. १६; १६२, १६ ।

१५. कौरव = सुहोत्र : ३. १९४, ४ ।

१६. कौरव = विचित्रवीर्य : १. १०२, ४७ ।

१७. कौरव = विदुर : ५. ८६, ७ ।

१८. कौरव = युधिष्ठिर : ३. १३, ३; १४, १८; १५, २०; १६, ९; २२, ४४; २६, ९; ६६, २६; २०१, ११; ४. ४३, २१ (धर्मराजस्य); ५. १९४, २२; ७. ११२, २६; ११. १, २ (राजा धर्मपुत्रः); ९, २ (कौरवो राजा धर्मपुत्रो महामनाः); १२. ४२, ११; १४. ७२, १०; ८५, २३; १५, ९, १० (राजा कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः); १७. १, २; १८. ३, २२ ।

१९. कौरव = युयुत्सु : ११. २६, २५ ।

२०. कौरव = (वि०) : १. १३८, १५; ३. ३६, ११ (कौरवं पक्षं); ५. १४७, ३४ (वंशम्); १४८ (वंशः); १४९, ३२ (कुलस्य); ६. ४३, ३२ (सैन्यं); ५८, १९ (°वीं सेनां). २७ (सैन्यं); ७. १३८, ११ (सैन्यं सिन्धुसौवीर कौरवम्); १६०; ५ (°वीं सेनां); १६४, ३३ (सैन्यं); ८. २३, २२ (°वीं सेना); ५२, ४२ (°वो सेनां); ५६, ३ (सैन्यं); ७३, ८; ७६, २५; ९. १०, ६२; १९, १४; ३१, २३ (वंशे)।

२१. कौरव = (बहु० °वाः); कुरु के वंशजों अथवा बहु० कुरु का द्योतक है; अक्सर इसका प्रयोग पाण्डु के पुत्रों और उनके अनुगामियों के विरुद्ध धृतराष्ट्र के पुत्रों और उनके अनुगामियों के लिये किया गया है : १. १, ११८; २, २९. २२४. २९० (कौरवाणां यशोभृता = व्यास). ३१६; ४०, १०; ७५, २; ११०, १६; ११३, २५ (पाण्डुनां नरसिंहेन कौरवाणां यशोभृता). ४२; १२७, २७; १२९, १; १३०, २७. ३०; १३२, २ (धृतराष्ट्र और पाण्डु के पुत्र). ४. २९; १३८, ११. १५. १६; १३९, ८ (संसदि); १४३, १७; १४६, २४; १५०, ५; १८९, २४ (°वाग्र्यैः); १९८, ९ (राजपुत्राः = पाण्डु के पुत्र). १३ (°वंशवर्धनाः); २०६, २४. १८. २०; २०७, १२; २१४, १ (°वाणां यशस्करम्); २२०, ३१; २. ५८, ३१; ६१, ३ (कौरवाणां कुलकरं ज्येष्ठं पाण्डवमच्युतम् = युधिष्ठिर); ६३, ७ (संसदि °वाणाम्); ६७, १४. १६; ६८, ५. १९. ४२ (°वार्णवमग्नां माम् = द्रौपदी). ५७; ६९, ११–१३; ७०, ८; ७७, २५; ८०, ३४. ४७; ३. ४, २; ५, १३. १६; ८, १; १३, २; २५, १८; ३६, १३ (°सैन्यस्य); ९५, ३; १९०, ५७ °वर्षभाः, अर्थात् पाण्डव); २४१, १. ८; २४३, १. १८. २०. २२; २४४, ५; २४६, २. १८; २५६, २१; २५७, १४; ४. ६, २८ (°वाहिनीम्); २६, ५; ३०, ७. ११. २१. २७; ३९, १२; ४५, ३४; ४८, २२; ५२, २० (राजा °वाणाम् = दुर्योधन); ५३, १; ५५, १३; ६२, १; ६८, ७१; ५. २, १३; ६, १९; १९, ३३; २३, १७; २६, २८; २९, १७. १९, ३५; ३२, १० (°वाणां राजा, अर्थात् युधिष्ठिर); ३६, ७३ (मेढीभूतः कौरवाणां त्वम्, अर्थात् धृतराष्ट्र). ७४; ४७, १५; ४८, २७. ३९ (°वाणां प्रवीरे, अर्थात् भीष्म); ५७, ५३; ६२, १; ६६, ८; ६८, ३; ७२, ४३. ८९; ७३, ३७; ९१, ३७, १२४, ५९; १२८, २३; १३१, २६; १४३, १९; १४६, २५; १५०, ५; १५४, १५; १५५, २७ (अक्षौहिण्यो दशैका च कौरवाणामभूद्बलम्); १५८, २६; १६५, ४ (भीष्म); १७२, १८ (चित्राङ्गदं कौरवाणामाधिपत्येऽभ्यषेचयम्); ६. १, ३. २६; ३, ५८; १६, २७; ४३, ३०. ४१. ५७. ७१. ८२. ८५; ५०, ३४; ५२, १९ (°वानीकम्). ५९; ५७, ८; ५९, ७०. ८५. १०९; ६४, ७८; ७५, १४. २३. ३७; ८७, ४; ८८, ३५; ८९, १२. २०. २१; ९४, २३. २५. ४४. ८३; ९६, ४; ९७, २६; १०३, ४६;

११४, २३. ४३; १२०, २२ (°वाणां पितामहः, अर्थात् भीष्म); ७. १, ५१ (भीष्मे कौरवाणामपाकृतम्); ४; ४. १०; ७, ४२; ११, ३५; १२, ३; २२, ९; ३०, २९; ५१, १९; ७५, ७; ८६, १५. १९. २२; १००, ९; ११०, ४०. ५८. ६८; ११४, ४२; ११९, २८. २९. ३२. ३७; १२४, २०; १२८, ४५; १३७, ४५; १४१, १५. २१; १४३, ६९; १४५, ५०; १४६, ८; १४९, ४६. ५१; १५४, १९; १५८, १७; १६०, ३७; १६२, ५१; १६३, १७; १६४, ९ (°वाणामनीकिनीम्). ३३. ३५; १७२, १३. २१. ४१; १८३, ६५; १८७, २४; १९२, ३३; १९३, ८. ६६; १९६, २४. २५; १९८, ४५. ६३; १९९, १०. ४०; २००, १६; २०१, ३. ९९; २०२, २; ८. ८, २७ (यादवकौ°न्); ९, ९६; १०, २; ११. १२. १३; २७, २; २८, ११; ३०, ४०; ३१, ७; ३७, ९; ४१, ७३; ५१, ८०; ५४, ४१; ५५, ३४; ५६, ५. ८९; ५८, ४७; ६०, ३८. ५९; ६१, १३. ४१; ६६, ३४. ४० (समागमे सृञ्जयकौरवाणाम्). ४४; ६७, ४; ७०, १९; ७३, ४. ७. २७. १२४; ७४, ५३; ७६, २६; ७९, ७६; ८३, ५१; ८९, ८३; ९३, ५९; ९४, ६१; ९. ३, ५७; ५, ५०; ८, १२; ११, २०; १७, ६९; १९, ६५; २०, ११; ३०, १५. २७ (कौरवाणां महारथान्, अर्थात् अश्वत्थामा, कृप, और कृतवर्मा); ६३, २; ६५, १ (कौरवाणां महारथाः, अर्थात् अश्वत्थामा, कृप, और कृतवर्मा); १०. १५, २८; ११. ८, ३८. ४२; २७, २५; १२. ४२, १०; ४६, २३ (भीष्मे कौरवाणां धुरंधरे); ५०, ११; ५२, १४; ५४, ४; १३. १३७, ३१ (कौरवाणां धुरंधर, अर्थात् युधिष्ठिर); १६८, २२; १४. ५३, १३. १५; ६०, ८; ७६, ९ (कौरवाणां महारथम्, अर्थात् अर्जुन); ७९, ३५ (कौरवाणां धुरन्धरे, अर्थात् अर्जुन); ८७, १७ (कौरवाणां धुरन्धरे, अर्थात् अर्जुन); १५. ३, १७. १८; १५, ४ (स्त्रियः कौरवपाण्डवानां⋯⋯कौरवराजवंश्याः). १२; ३२, ५; ३६, ५० (°योषितः) ।

कौरवदायाद = भूरिश्रवस् : ६. ७४, १४; ८. ५, १७ ।

१. कौरवनन्दन = अर्जुन : १. १७७, ३; ६. १२१, ३०; १४. ७४, ३३; ७७, २६ ।

२. कौरवनन्दन = भीमसेन : ३. १५०, ६ ।

३. कौरवनन्दन = भीष्म : १२. ५५, १ ।

४. कौरवनन्दन = धृतराष्ट्र : १२. १२४, ६४; १५. १९, १२; २९, २०; ३६, ६ ।

५. कौरवनन्दन = दुर्योधन : ५. १८५, १; १९२, ६७; ९. ३१, ६२ ।

६. कौरवनन्दन = जनमेजय : ३. ९१, १ ।

७. कौरवनन्दन = पाण्डु : १. ११२, १३; ११९, ३८ ।

८. कौरवनन्दन = युधिष्ठिर : २. १२, २३; ३. ९६, ४; ५. १८, १२; १२. ८९, ९; ११९, १९; १३. ४३, २६; ११६, १०. २०; १४८, ४१; १६. १, १ ।

९. कौरवनन्दन = (बहु० °नाः) = पाण्डु के पुत्र : २. ५८, ३०; ३. १४०, २९; ४. ५२, ८ ।

कौरवराज = धृतराष्ट्र (?) : १५. १५, ४ (स्त्रियः⋯कौरवराजवंश्याः) ।

कौरवराजपत्नी = द्रौपदी : १. १९४, ९ ।

कौरवराजपुत्र = अर्जुन : ८. ७९, ५५ ।

१. कौरवर्षभ = अर्जुन : ३. ४९, ६ ।

२. कौरवर्षभ = पाण्डु : १. ११३, १६ ।

३. कौरवर्षभ = युधिष्ठिर : १४. ८६, १५ ।

कौरववंशभृत् = धृतराष्ट्र : १५. २४, ५ ।

कौरववंशवर्धन = युधिष्ठिर : ४. ७, २ ।

कौरवशार्दूल = देखिये पौरवशार्दूल ।

१. कौरवश्रेष्ठ = अर्जुन : १४. ७७, ३२ ।

२. कौरवश्रेष्ठ = भीमसेन : ३. १७९, १७ ।

३. कौरवश्रेष्ठ = श्रेणिमान् : ५. १७१, २७ ।

४. कौरवश्रेष्ठ = धृतराष्ट्र : ६. १२, ४० ।

५. कौरवश्रेष्ठ = दुर्योधन : ३. २५५, १४; ७. १६६, ४६ ।

६. कौरवश्रेष्ठ = युधिष्ठिर : ३. १४, २; १७, २५; ५०, ९; २०३, १ ।

१. कौरवसत्तम = अर्जुन : ६. ५९, १०४ ।

२. कौरवसत्तम = युधिष्ठिर : ६. ६०, ११ (धर्मराजा) ।

१. कौरवाग्र्य = भीष्म : १३. १६७, ५ ।

२. कौरवाग्र्या = युधिष्ठिर : १०. १०, ३१ ।

कौरवाचार्यमुख्य = द्रोण : १. १६७, २४ (भारद्वाजस्य) ।

कौरवात्मज = दुर्योधन : ४. ६९, ६ ।

कौरवाधम = भीष्म : २. ४१, १५ ।

कौरवी = उलूपी : १५. १५, १० ।

१. कौरवेन्द्र = वाह्लीक : ८. ६, ३० ।

२. कौरवेन्द्र = धृतराष्ट्र : ६. ११, २३; ७. ८, २९; १७९, २५; ८. ८९, ३४; १५. १, २२; ३, ८१; १५, १३; २०, २१; २१, १ ।

३. कौरवेन्द्र = दुर्योधन : ५. १७२. १४; १८२, १६; १९२, २९; ६. ११२, ११; १२१, ३८. ५३; ९. ५६, १७; ५९, ३; ६१, ७; १४. ६०, १३. ३४ ।

४. कौरवेन्द्र = जनमेजय : १८. ३, ३० ।

५. कौरवेन्द्र = युधिष्ठिर : ३. १८३, ९५; ६. ८६, ११; ७. १५९, ५४; १२. ३०८, ४६; १३. ९४, ४२; १५८, ६; १८. ३, ३० ।

१. कौरवेय = अर्जुन : ७. १४३. १२ ।

२. कौरवेय = भूरिश्रवस् : ७. १४२, १४; १४३, ५४; १४४, २ ।

३. कौरवेय = दुर्योधन : ३. २४६, २५; २५२, ३९; ५. १५५, २६; ७. १५८, ६३; ९. २४, ३२ ।

४. कौरवेय = सोमदत्त : ७. १५६, ११ ।

५. कौरवेय, वि० (= वि० कौरव) । ७. १२१, ५३; १५८, ५८ ।

६. कौरवेय, बहु० = बहु० कौरव : १. १३२, ७; १४२, १८. १९; २. ६९, ९; ७०, ६; ३. ८, ३; २३६, ४ (अर्थात् पाण्डव); ४. ३४, ७; ५. ६, १८; १९, ३२; ४८, ६५; ८८, १८; १६०, १; ६. ५७, ५; ६०, ९; ८९, २६; ७, ८६, २१; ९७, १; १०२, ३१; १२७. ७१; १६०, ६०; १७९, ६३; १८७, ३०; १८९, ६५; ८. २, २३; ४५, २८; ५१, २९; ९. २३, १२; २८, १६ ।

१. कौरव्य = अर्जुन : १. १७०, ६८; १७१, १६; ५. ७, २ (कुन्तीपुत्रो धनञ्जयः); ७. १४७, २५; ८. ५८, ४८; १४. १५, २०. २७; ७८, ५; ८१, ७; १६. ५, ७; ७, २९. ६८ ।

२. कौरव्य = भीमसेन : ४. २२, २४; १४. ८५, १२; १५. २, ३० ।

३. कौरव्य = भीष्म : १. १०२, १९; १३१, ४४. ५५; २. ४२, ५; ३. ८५, १०६. १०९; ५. २३, ८; १७८, ४१. ६६. ७०; १८३, ९. १७; १८६, ३९; ६. ५९, ५५; १०६, ४६; ११५, ५; ७. १, ३८; १२. २७, ८; १६४, ३; ३२१, २; १३. १०६, १६; १६७, १८; १६८, ११; १४. ६०, ८ ।

४. कौरव्य = भूरिश्रवस् : ७. १४२, २; १४७, ५८ ।

५. कौरव्य = शान्तनु : १. १०२, ५४; १०३, ३ ।

६. कौरव्य = धृतराष्ट्र : १. ११३, २२; १४०, ९३; १४१, १. १५; १४५, ७, २. ५२, २५; ३. ४, ६; ९, १७; १०, ६; ५. २१, २१; ६४, ५; ८३, ४६; ९५, ९. ११. १३; ६. ९, १३. ५५; ११, १६. २४. २७. ३२; १२, १. १०. ३१. ३३. ४९; १०९, ८; ७. १, ४. ५; १२४, ३८; १२५, ३४; १२८, २३. ३३; १३२, १६; १३५, २५; १७३, ५९; १९१, ३७; ८. १, २०; ४९, ६४; ९. २, १४; १५, २७; २३, ६४; १०. १, ३६; ८, ४५; ११. १२, २७; १५. २, ६; १०, ४५; १४, १७; २७, २३; ३६, ४८ ।

७. कौरव्य = दुःशासन : ३. २४९, ३६ (°यौ = दुःशासन और दुर्योधन); ७. ४०, ९; ८. २३, २१ ।

८. कौरव्य = दुर्योधन : २. ४८, २०; ३. २४०, १९; २४२, २०; २४९, ३६ (°यौ = दुर्योधन और दुःशासन); २५०, २; ४. २५, ७ (राजानं धृतराष्ट्रजम्). २२; २८, ३३; ५. १९, २२. २३. २६; २०, १; ६४, १५; १५४, ७; १५५, १८; १६३, ३७ (धार्तराष्ट्रं सुयोधनम्). ३८; १७५, २३;

१८०, १९; १८२, २६; १८६, २८. ३०; १९२, ७० (राजा दुर्योधनः); १९५, १४; ६. ७९, १८; ११४, ३१; ७. ९४, ३३; १०३, १८; १४५, ३०; १५१, २२. ३१; १५८, १०; १५९, ८४; १८५, १२; १९५, १४. ३०; ८. ३२, ३६; ९. २४, ४; ३६, ३; ३२, २४; ३४, ५; ५७, ४२; १०. ९, २७; १२. ४, १२; १४. ५२, १८ ।

९. कौरव्य = जनमेजय : १. ६७, ३९. ६१; ११९, ४७; १२५, १०; १४९, २; २३३, १; २. २१, ४२; ३. १७५, २५; १८३, १; २४०, २४; ४. १७, १०; ८. १, ४; ९. ३९, ३६; ४२, २५; ४६, ९. २१; १३. १६७, १८; १६८, १; १४. ५८, ४१; ६४, ८; ७१, १७; ७६, ५; ७७, ११; ८०, ४३; ८२, १६; ८३, १९; १५. १०, १; २३, १७; १७. १, २७. २९; १८. ३, १; ५, १० ।

१०. कौरव्य = जयत्सेन : ९. २६, १२ ।

११. कौरव्य = पाण्डु : १. ११८, २१; १२३, २५; ५. १४८, ५ ।

१२. कौरव्य = सहदेव : २. ३१, २. ५४ ।

१३. कौरव्य = सोमदत्त : १. १८६, १४; २. ३४, ८ ।

१४. कौरव्य = सुहोत्र : ३. १९४, ४. ७ ।

१५. कौरव्य = विचित्रवीर्य : १. १०२, ७१ ।

१६. कौरव्य = युधिष्ठिर : १. १५०, १६; २. ७, १; ३५, १२; ३७, १; ३. १३, १०. १४; १४, १६. १७; १५, १५; १६, ७. २९; १७, १३. २१; १८, ११; ३३, ५७; ५१, २८; ५७, ३०; ८७, १५. २२; ९०, २२; ९८, १; ९९, २; २०४, १९; २२३, १; २३०, ३१; २६७, १२; ४. १६, ४०; १९, ३१; ४४, २; ६८, ६७; ७१, १; ६. १, १२; ८६, ४. ४७; १२०, ६६; ७. २०, २३; १११, ३८; १२. १६, १७; २३, १; ५६, २३; ५९, ४२; ६६, २१; ६९, ५५. १०५; १२१. ९. ३३; १४२, ५; १५८, १६. २१; १६०, १७; १६५, ६२; २६६, ७२; २८१, १२; २८२, ११. १९. ६२; ३२४, ११. १३; १३. ३४, ३०; ४०, १; ४२, ३. २८. ३२; ५९, १५; ६०, ८; ६८, ३४; ८६, ३४; ९१, ४; १४८, ६२; १६७, १०. ३२; १४. ५, २२; १४, ६; ५२, ५१; ७२, २०; १५. २, १७; २९, ४; ३६, ४६; १७. १, १९ (राजा धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः); १८. २, ३५; ३, ६ ।

१७. कौरव्य = युयुत्सु : ७. ८३, ६; १. ४. ६०, ३३; ६३, २४ (युयुत्सुं धृतराष्ट्रजम्) ।

१८. कौरव्य = एक नाग का नाम है (१. ३५, १३)। 'कौरव्यकुलजान्नागान्', (१. ५७, १२)। 'कौरव्यकुलजास्त्वेते प्रविष्टा हव्यवाहनम्', (१. ५७, १४)। 'कौरव्यस्याथ नागस्य भवने', (१. २१४, १४)। 'ऐरावतकुले जातः कौरव्यो नाम पन्नगः', (१. २१४, १८)। 'कौरव्यस्यनिवेशनात्', (१. २१४, ३४)। नागों की गणना के अन्तर्गत इसका उल्लेख (५. १०३, १५. १९)। 'कौरव्यस्यात्मजा', अर्थात् उलूपी (१४. ८८, २) ।

१९. कौरव्य (बहु० °व्याः) = बहु कौरव : १. १, ९५ (धृतराष्ट्र, पाण्डु, और विदुर); १२६, १८; १३८, २३; १५१, ११; २. ४१, ३; ३. १, २; ९, २३; १०, ३; २३३. ५७; २४१, २२. २३; २५८, १७; ४. ४, ११; ५. १५७, ३४; ५. ९, ५५ (धृतराष्ट्र); ४३, १०० (धृतराष्ट्र के पुत्र); १११, १६ (दुर्योधन के भ्राता); ७. २२, १४; २८, १२; ३६, १२; १४१, २५; १८१. ३३; १९७, २९; ८. २९, २; ६०, ३६; ६२, ६; ११. १४, १८; १४. ६०, २२ ।

कौरव्यकुलनन्दिनी = उलूपी : १४. ८१, १ ।

कौरव्यदायाद = पाण्डु : १. १२६, २२ ।

कौरव्यदुहितृ = उलूपी : १४. ८१, २३ ।

कौरव्यपत्नी = कुन्ती : ५. १४४, २९ (कौरव्यपत्नी वार्ष्णेयी पद्ममालेव शुष्यती) ।

कौरव्यमुख्य = भूरिश्रवस् : ७. १४१, ३४ ।

कौशल्य, बहु० कौशल्य, कौशल्या, कौशल्यात्मज, कौशल्यानन्दवर्धन,, कौशल्यानन्दिवर्धन, कौशल्यामातृ—देखिये कौस° ।

१. कौशिक (कौशिक के वंशज) = विश्वामित्र : १. ७१. ४२; १७५, ४८; ३. ८४, १४२. १४३; ८७, १५. १७; ५. १०६, ९. १५; ११७, १३; ११९, २०; १८६, २७; ९. ४०, ११. १३; ४२, २७; १२. ४७, ७; १४१ ३४. ३५. ४९, ९२; २०८, ३३; ३४२, २३; १३. १८, ५३; ५५, ३१; १५०, ३८ ।

२. कौशिक = अष्टक : ५. १२२, १२ ।

३. कौशिक = गाधि : ९. ४०, १३; १३. ५५, ३१ ।

४. कौशिक = चण्डकौशिक : २. १९, २१ ।

५. कौशिक = इन्द्र : ३. ९, ९; १२१, २१; १३५, २०; १२. ४९, ६ (गाधिर्नामाऽभवत्पुत्रः कौशिकः पाकशासनः); १३. १४, २३६, २८४ (देवराजः); ७३, ३६. ४६ ।

६. कौशिक = कुशिक के वंशज, अनेक ब्राह्मणों के लिये प्रयुक्त हुआ है : २. ४, १२; २१, १० (मणिमांश् च : इन्होंने मगधों के देश पर अनुकम्पा की = चण्डकौशिक (?), = विश्वामित्र (?); ३. २०६, १. ४८ । "कौशिक नामक एक ब्राह्मण नदियों के संगम पर बसे एक गाँव में निवास करता था। उसने सदा सत्य बोलने का व्रत ले रखा था। एक दिन कुछ लोगों ने डाकुओं के भय से छिपने के लिये उसी वन में शरण ली जहाँ कौशिक रहता था। जब डाकुओं ने वहाँ आकर छिपे व्यक्तियों का कौशिक से पता पूछा तो उन्होंने डाकुओं को सत्य बात बता दी। तदनन्तर उन निर्दयी डाकुओं ने सब छिपे व्यक्तियों का पता लगाकर उनका वध कर दिया। इस प्रकार वाणी का दुरुपयोग करने के कारण कौशिक को महान पाप लगा और उन्हें नरक का कष्ट भोगना पड़ा। (८. ६९, ३७. ४६. ४९. ५०. ५१. ५२)। १२. १०९, ८; १९९, ४ (पैप्पलादिः स कौशिकः) ।

७. कौशिक, जरासंध के एक सेनापति का नाम है (२. २१, १०) ।

८. कौशिक (वि०) : ३. १५७, ११ (खड्गं); ७. ४८, ३५ (मार्गैः कौशिकाद्यैः); १९१, ३९; ५७, ४९ (मार्गान्); १३. ५२, ४ (वंशात्) ।

९. कौशिक (बहु० °काः) १. १७६, ४४ ।

कौशिकाचार्य = आकृति : २. ३१, ६१ ।

१. कौशिकी, एक नदी का नाम है जिसका सृजन करने के बाद विश्वामित्र ने उसका नाम पारा रक्खा (१. ७१, ३०)। १. २१५, ७; २. ३०, २२ (कौशिकीकच्छनिलयं राजानं च महौजसम्); ३. ८३, ९५; ८४, १३२. १४३. १५६; ८७, १३ (विश्वामित्र ने यहीं ब्राह्मणपद प्राप्त किया था); ११०, २०. २२; ११४, १; १८८, १०२ (उन नदियों में एक जिन्हें मार्कण्डेय ने नारायण के उदर में देखा था); २२२, २३; ६. ९, १८. २९; ७. ५४, २२; १२. २५८, २१; १३. ३, १०; २५, ३१; ९४, ६; १०२, ४७; १४६, १८; १६५, २७ ।

२. कौशिकी = दुर्गा (उमा) : ६. २३, ८ ।

कौशिक = महापुरुष (महापुरुषस्तव) ।

१. कौसल्य, कोसलों के राजा, बृहद्बल, के लिये प्रयुक्त हुआ है : ५. १६६, १८; ६. १६, १६ (कौश°); ८१, ४; ८७, ९; ११४, ३८; ११६, ३३; ७. ४९, ३८ (अभिमन्यु ने इसका वध किया था); ७३, १० (अभिमन्यु के साथ इसके युद्ध का उल्लेख); ११. २६, ३५ (इनका शवदाह) ।

२. कौसल्य = बृहद्रथ : ५. १९५, १० ।

३. कौसल्य = वसुमनस् : १२. ६८, ३. ७. ६१ ।

४. कौसल्य = क्षेमदर्शिन् : १२. ८२, ५. १२. ६८; १०४, ११. २७. २९. ४०; १०५, २०; १०६, २३. २७ ।

१. कौसल्या, पूरु की पत्नी का नाम है जो जनमेजय की माता थीं : १. ९५, ११ ।

२. कौसल्या = अम्बिका : १. १०५, ४७. ४८. ५०; १०६, २. १३ ।

३. कौसल्या = अम्बालिका : १. ११४, ३. ४; ११९, २४; १२६, १६; १२७, २४; १२८, ११ ।

४. कौसल्या, राजा दशरथ की पत्नी और श्रीराम की माता का नाम है : ३. २७४, ८; २७७, १८. ३६ ।

५. कौसल्या, राजा जनक की पत्नी का नाम है : १२. १८, १२ ।

कौसल्यात्मजा (द्वि जे) = अम्बिका और अम्बालिका : १. ९५, ५१।

१. कौसल्यानन्दवर्धन (कौसल्या का पुत्र) = पाण्डु : १. ११३, ४३।

२. कौसल्यानन्दवर्धन = राम दाशरथी : ३. २७७, १३।

कौसल्यामातृ = राम दाशरथी : ३. २८३, ३४; २९१, ४२।

कौस्तुभ, श्रीकृष्ण द्वारा धारण की गई एक मणि का नाम है। देवताओं ने जब क्षीरसागर का मन्थन किया तब इस दिव्य मणि की उत्पत्ति हुई (१. १८, ३६)। यह श्रीकृष्ण का भूषण थी (३. २६३, १३)। श्रीकृष्ण इस मणि को धारण करते थे (५. ९४, १४)। क्षीरसागर के मन्थन से इसकी उत्पत्ति (५. १०२, १२)। 'अत्यर्थं भ्राजते कृष्णे कौस्तुभस्तु मणिस्ततः', (८. ४६, ५९)। 'कौस्तुभं च जाज्वल्यमानं', (८. ७६, ३५)। 'कौस्तुभेनोरसिस्थेन मणिनाऽभिविराजितम्', (१२. ४५, १५)। तुकी० किरीट-कौस्तुभधर।

१. क्रतु, ब्रह्मा के छठवें मानस-पुत्र, एक महर्षि का नाम है (१. ६५, १०; ६६, ४)। इनके पुत्र पतङ्गसहचारी थे (१. ६६, ९)। अर्जुन के जन्म के समय ये भी उपस्थित हुये (१. १२३, ५२)। राक्षसों की रक्षा करने के लिये ये पराशर के राक्षस-यज्ञ के समय उपस्थित हुये (१. १८१, ९)। इन्द्र की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ७, १७)। ब्रह्मा की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ११, १९)। स्कन्द के अभिषेक के समय ये भी उपस्थित हुये (९. ४५, १०)। उन महर्षियों में एक यह भी थे जो भीष्म को घेर कर खड़े हुये (१२. ४७, १०)। ये ब्रह्मा के पुत्र थे (१२. १६६, १६)। १२. २०७, १७; २०८, ४। जीवों में निवास करने वाले देवताओं में एक यह भी हैं (१२. २६२, ४०)। इक्कीस प्रजापतियों में एक यह भी हैं (१२. ३३४, ३५)। सप्तर्षियों में एक यह भी हैं (१२. ३३५, २९)। आठ प्रकृतियों में एक यह भी हैं (१२. ३४०, ३४)। सप्तर्षियों में एक यह भी हैं (१२. ३४०, ६९)। १३. १४, ९६। भीष्म को देखने के लिये उपस्थित हुये (१३. २६, ४)। इन्हें महायोगेश्वर कहा गया है (१३. ९२, २१)।

२. क्रतु = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

१. क्रथ, एक क्षत्रिय राजा का नाम है जो क्रोधवशसंज्ञक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ६१)।

२. क्रथ, एक राजा का नाम है जिसे भीमसेन ने अपनी दिग्विजय के समय परास्त किया था (२. ३०, ७)।

३. क्रथ, एक महर्षि का नाम है जिन्होंने शान्ति-दूत बनकर हस्तिनापुर जाते हुये श्रीकृष्ण की परिक्रमा की थी (५. ८३, २७)।

४. क्रथ, एक कौरव योद्धा का नाम है (७. १२०, १०-११)।

५. क्रथ, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७०)।

६. क्रथ, एक प्राचीन देश और उसके निवासियों (क्रथाः) का नाम है जिन पर भीष्मक ने विजय प्राप्त की थी (२. १४, २१)।

१. क्रथन, एक यक्ष का नाम है जिसके साथ पक्षिराज गरुड़ ने युद्ध किया था (१. ३२, १८)।

२. क्रथन, एक असुर का नाम है जो भूतल पर राजा सूर्याक्ष के रूप में उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ५७)। वरुण की सभा में उपस्थित असुरों में एक यह भी था (२. ९, १३)।

३. क्रथन, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, ११)।

४. क्रथन = शिव : ८. ३३, ५८।

१. क्रम, वेदों के उच्चारण की एक विधि के लिये प्रयुक्त हुआ है : १२. ३४२, १०२ (क्रमाक्षरविभागवित्). १०३ (क्रमपारगः); १३. ८५, ९० (पदक्रमविभूषितः)।

२. क्रम = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

३. क्रम = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

क्रमजित्, एक क्षत्रिय नरेश का नाम है जो युधिष्ठिर की सभा में विराजते थे (२. ४, २८)।

१. क्रव्याद = बहु० राक्षस : २. १०, २०; ७. ३६, ३८; ७६, १६; ७७, ६; १९५, ४; ८. ८७, ५०; १०. ८, १३९; १३. ११५, २७।

२. क्रव्याद, पितरों के तीन गणों में से एक का नाम है (१२. २६९, १५)।

१. क्राथ, पूरुवंशी महाराज कुरु के प्रपौत्र एवं धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ९४, ५८)।

२. क्राथ, सिंहिकाकुमार राहु के अंश से उत्पन्न एक प्रसिद्ध राजा का नाम है (१. ६७, ४०)। यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुआ था (१. १८७, १५)। जारूथी नगरी में श्रीकृष्ण ने इसे पराजित किया था (३. १२, ३०)। यह दुर्योधन की सेना में सम्मिलित हुआ (७. २०, १३)। इसने अभिमन्यु पर आक्रमण किया (७. ३७, २५)। अभिमन्यु ने इसके पुत्र का वध किया (७. ४६, २५-२६)। 'क्राथदेवावृधौ', (८. ८५, ३)। कुलिन्दराज ने इसका वध किया (८. ८५, १५)। तुकी० क्राथाधिप, क्राथपुत्र।

३. क्राथ, एक वानर-सेनापति का नाम है (३. २८३, १९)।

४. क्राथ, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (८. ५१, ७)। भीम ने इसका वध किया (८. ५१, १६)।

५. क्राथ = शिव : ८. ३३, ५८।

६. क्राथ, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५७०)।

७. क्राथ, एक नाग का नाम है (१६. ४, १६)।

क्राथपुत्र, एक नरेश का नाम है। उन नरेशों में से एक जिनको आमन्त्रित करने के लिये पाण्डवों को दूत भेजना था (५. ४, १९)। अभिमन्यु ने इसका वध किया (७. ४६, २२. २५)।

क्राथाधिप = २. क्राथ, जिसका कुलिन्दराज ने वध किया (८. ८५, १६)।

१. क्रिया, दक्ष प्रजापति की पुत्री और धर्म की पत्नी का नाम है (१. ६६, १४)।

२. क्रिया = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

क्रियावस्था = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

क्रीत, एक प्रकार का अबन्धुदायाद पुत्र जिसका धन आदि के द्वारा क्रय कर लिया गया हो (१. १२०. ३४)।

क्रूर, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ६५)।

क्रूरा, दक्ष प्रजापति की पुत्री और कश्यप की पत्नी का नाम है। यह 'क्रोधवश' संज्ञक असुरों की जननी हुई (१. ६५, १२. ३२; ६६, १३)।

१. क्रोध, एक असुर का नाम है जो कश्यप-पत्नी काला का पुत्र था (१. ६५, ३५)।

२. क्रोध (मूर्तिमान क्रोध का संवेग)—अश्वत्थामा की उत्पत्ति महादेव, अन्तक, काम और क्रोध के सम्मिश्रण से हुई थी (१. ६७, ७२)। काम के साथ ये भी वसिष्ठ का पाद-प्रक्षालन करते थे (१. १७४, ६)। 'नारी क्रोधसमुद्भवा', (३. २२६, २७)। विरूप और विकृत के रूप में काम और क्रोध (१२. १९९, १६)। इक्कीस प्रजापतियों में से एक यह भी हैं (१२. ३३४, ३६)। 'क्रोधं कामस्य देवेशः सहायं चासृजत्प्रभुः', (१३. ४०, १०)। धर्म ने क्रोध का स्वरूप ग्रहण किया (१४. ९२, ४४. ४७. ५२)।

क्रोधकृत = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

क्रोधज = शिव : १२. ३३५, ४१ (रुद्रः); ३४२, ३९. ४२।

१. क्रोधन, एक ऋषि का नाम है जो इन्द्र की सभा में विराजते थे (२. ७, ११)।

२. क्रोधन = शिव : १४. ८, २५।

क्रोधना, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ६)।

क्रोधवर्धन, एक असुर का नाम है जो दण्डधार नामक राजा के रूप में पृथ्वी पर उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ४६)।

१. क्रोधवश राक्षसों के एक गण का नाम है (३. १५३, ११)। ये

कुबेर के सौगन्धिक कमलों वाले सरोवर की रक्षा करते, परन्तु भीमसेन ने इनमें से सौ का वध कर दिया (३. १५४, १८. २५)। 'क्रोधवशान हत्वा पर्वते गन्धमादने', (४. ७१, ४)। 'कृष्णायां चरता प्रीतिं येन क्रोधवशा हताः', (५. ५०, २४)। 'शूरः क्रोधवशानां', (५. ९०, २३)। 'स्वर्गलोके श्ववतां नास्ति 'धिष्ण्यमिष्टापूर्तं क्रोधवशा हरन्ति', (१७. ३, १०)।

२. क्रोधवश, एक राक्षस का नाम है जो रावण की सेना में सम्मिलित था (३. २८५, २)।

क्रोधवशा—'क्रोधवशा नारीः प्रजज्ञे क्रोधसंभवाः', (१. ६६, ६०)।

क्रोधवशः गणः, क्रूरा के पुत्र, राक्षसों के एक गण का नाम है (१. ६५, ३२)। ये मद्रक आदि राजाओं के रूप में उत्पन्न हुये। (१. ६७, ५९)।

क्रोधशत्रु, एक असुर का नाम है जो कश्यप-पत्नी काला का पुत्र था (१. ६५, ३५)।

क्रोधहन् = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

१. क्रोधहन्तृ, एक असुर का नाम है जो कश्यप-पत्नी काला का पुत्र था (१. ६५, ३५)। यह वृत्रासुर के छोटा भाई और राजा दण्ड के रूप में उत्पन्न हुआ (१. ६७, ४५)।

२. क्रोधहन्तृ, पाण्डवपक्षीय राजा सेनाविन्दु का दूसरा नाम है (५. १७१, २०)।

क्रोधा, दक्ष प्रजापति की पुत्री का नाम है जिसे क्रूरा और क्रोधवशा भी कहते हैं (१. ६५, १२. ३२; ६६, ६०)।

क्रोधात्मन् = कृष्ण : १२. ४७, ६४।

क्रोशना, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १७)।

क्रोष्टु, श्रीकृष्ण के पूर्वज, महासत्त्व के पुत्र, और वृजिनीवत् के पिता का नाम है (१३. १४७, २८)।

१. क्रौञ्च, हिमवत् के पुत्र, एक पर्वत का नाम है जिसे स्कन्द ने विदीर्ण किया था (३. २२५, ३३)। 'स्कन्दशक्त्या यथा क्रौञ्चः पुरा नृपतिसत्तम', (६. १११, ४७)। 'हंसाः क्रौञ्चमिवाविशन्', (७. १३९, १३)। 'क्रौञ्चमग्निसुतो यथा', (७. १५६, ९३)। 'क्रौञ्चमिवाद्रिमग्निजः', (८. ९०, ६८)। 'क्रौञ्चो यथा स्कन्दहतो महाद्रिः', (९. १७, ५१)। 'क्रौञ्चं पर्वतम्', (९. ४६, ८२)। 'क्रौञ्चं शरणमीयिवान्', (९. ४६, ८३)। 'क्रौञ्चं महामन्युः क्रौञ्चनादनिनादितम्', (९. ४६, ८४)। 'बिभेद क्रौञ्चं', (९. ४६, ९१)। 'क्रौञ्चस्तेन विनिर्भिन्नो दैत्याश्च शतशो हताः', (९. ४६, ९४)।

२. क्रौञ्च, क्रौञ्चद्वीप के एक पर्वत का नाम है (७. १२, १७. १८. २१)।

३. क्रौञ्च, एक प्रकार के युद्ध-व्यूह का नाम है (६. ५१, १)। भीष्म ने इसका निर्माण किया (६. ७५, १५–२२)। युधिष्ठिर ने इसका निर्माण किया (७. ७, २५)।

क्रौञ्चद्वीप, एक द्वीप का नाम है जिसमें क्रौञ्च और महाक्रौञ्च पर्वत स्थित थे (६. ११, ३; १२, ६)। इस पर युधिष्ठिर का शासन था (१२. १४, २२. २३)।

क्रौञ्चनिषूदन, सरस्वती-सम्बन्धी एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से विमान लाभ होता है (३. ८४, १६०)।

क्रौञ्चपदी, एक तीर्थ का नाम है जहाँ पिण्डदान करने से मनुष्य तीन ब्रह्महत्या के पापों से मुक्त हो जाता है (१३. २५, ४२)।

क्रौञ्चपर्वत = १. क्रौञ्च : (९. ४६, ८२)।

क्रौञ्चारुण, एक प्रकार के व्यूह (सम्भवतः क्रौञ्चव्यूह) का नाम है जिसका धृष्टद्युम्न ने निर्माण किया (६. ५०, ४०)।

१. क्षण = सूर्य : ३. ३, २०।

२. क्षण (बहु० °णाः) = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

क्षणभोजिन्, एक राजा ना नाम है जो दुर्योधन की बची-खुची सेना में उपस्थित था (८. ७, १८)।

क्षत्तृ = विदुर (देखिये वस्था०)।

क्षत्रञ्जय, धृष्टद्युम्न के एक वीर पुत्र का नाम है (७. १०, ५३)। द्रोणाचार्य ने इनका (द्रुपद के पौत्र का) वध किया (७. १८६, ३३. ३४)।

क्षत्रदेव, शिखण्डी के पुत्र का नाम है (५. ५७, ३२)। ये पाण्डव-पक्ष के एक वीर रथी थे (५. १७१, १०)। ५. १९६, २५। इन्होंने भीमसेन का अनुसरण किया (६. ९३, १४)। ६. ९५, २३. ४०. ७३; ७. १०, ५३। इन्होंने लक्ष्मण के साथ युद्ध किया (७. १४, ४९)। इन्होंने द्रोण के साथ युद्ध किया (७. २१, ५०)। 'क्षत्रदेवं तु भल्लेन रथनीडादपातयत्', (७. २१, ५६)। इनके अश्वों का वर्णन (७. २३, ६. २५)। लक्ष्मण ने इनका वध किया (८. ६, २६. २७)।

क्षत्रधर्मन्, धृष्टद्युम्न के पुत्र, एक अर्धरथी का नाम है (५. १७१, ५)। ६. ९३, १४; ७. २३, ५; ३५, ३; ८५, ४०; १२५, ६३. ६६ (द्रोणाचार्य ने इनका वध कर दिया); ८. ६, २५ (द्रोण ने इनका वध किया था)। तुकी० धृष्टद्युम्नसुत, क्षत्रवर्मन्, सौमकि।

क्षत्रवर्मन्, धृष्टद्युम्न के एक वीर पुत्र का नाम है जिन्होंने द्रोण पर आक्रमण किया (७. १०, ५३)। ७. २५, १०–१२ (इन्होंने जयद्रथ के साथ युद्ध किया)।

क्षत्रियाः (बहु०) = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

क्षपणक, एक भिक्षु का नाम है (१. ३, १२६. १२७)।

१. क्षपाः = सूर्य : ३. ३, २०।

२. क्षपाः (बहु०) = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

क्षपाचर (रजनीचर) = राक्षस (बहु०) : ३. २९०, ९। = रावण : ३. २८९, ३३। = स्थूण : ५. १९२, ५२।

क्षम, क्षाम = विष्णु (सहस्र नाम)।

क्षमाक्षमे = शिव (सहस्र नामों में से एक)।

क्षमिणं वरः = विष्णु (सहस्र नामों में से एक)।

क्षय = शिव : ८. ३३, ५८; १२. २८४, ९४ (१,००० नाम)।

क्षर = विष्णु (कृष्ण) : १२. ३४०, १०७; १३. १४९, ६४ (१,००० नाम)।

क्षान्त = शिव (१,००० नाम)।

क्षितिकम्पन स्कन्द के एक सेनापति का नाम है (९. ४५, ५९)।

क्षितिपति = शिव : १४. ८, ३३।

क्षितिसुख = शिव : १०. ७, ८।

क्षितीश = विष्णु (१,००० नाम)।

क्षीरनिधि (क्षीरसागर)—'यस्याः क्षीरस्य धाराया निपतन्त्या महीतले। ह्रदः कृतः क्षीरनिधिः पवित्रं परमुच्यते ॥', (५. १०२, ४)।

क्षीरपा = शिव (१,००० नाम)।

क्षीरवती, एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करके देवपूजन में लगा हुआ व्यक्ति वाजपेय-यज्ञ का फल प्राप्त करता है (३. ८४, ६८. ६९)।

क्षीरसागर (क्षीरनिधि)—इसकी उत्पत्ति (५. १०२, ४)। अन्य नामों द्वारा इसका उल्लेख : क्षीरोद (१. २, ९१; ६. ११, १०; १२. ३३६, २३; ३४०, ४५; १३. १४, २४०); क्षीरोदधि (१२. ३३६, २७)।

१. क्षीरोद (क्षीरसागर)—इसका मन्थन (१. २, ९१)। 'क्षीरोदमथ सागरम्', (३. २८३, २१)। ६. ११, १०। 'मेरोरुत्तरभागे तु क्षीरोदस्यानुकूलतः', (१२. ३३६, २३)। 'क्षीरोदममृताशयम्', (१२. ३३९, २६)। क्षीरोदस्यानुकूलतः' (१२. ३४०, २६)। 'क्षीरोदस्योत्तरं कूलं' (१२. ३४०, ४५)। 'क्षीरोदस्य समुद्रस्य', (१२. ३५०, ९)। 'क्षीरोदमिव सागरम्', (१३. १४. २४०)। 'क्षीरोदः सागराणाम्', (१३. १४, ३२५)। 'क्षीरोदः सागरः', (१३. १४, ३५८)। देखिये क्षीरोदधि भी।

२. क्षीरोद = शिव (१,००० नाम)।

क्षीरोदधि (क्षीरसागर)—'क्षीरोदधेर्योत्तरतो हि द्वीपः श्वेतः', (१२. ३३५, ८)। 'क्षीरोदधेरुत्तरतः श्वेतद्वीपो महाप्रभः', (१२. ३३६, २७)।

क्षीरी, उत्तरकुरु-वर्ष के कुछ वृक्षों का नाम है जो सदैव षड्विध रसों से युक्त अमृत के समान दूध का प्रस्रवण करते रहते हैं; इनके फलों में इच्छानुसार वस्त्र तथा आभूषण भी प्रगट होते हैं (६. ७, ४. ५)।

क्षुत = शिव (१,००० नाम)।

१. क्षुद्र, एक जाति का नाम है (१३. ४८, २५)।

२. क्षुद्र = शिव (१,००० नाम)।

क्षुद्रक (बहु० °काः), एक देश तथा उसके निवासियों का नाम है (२. ५२, १५)। ये दुर्योधन की सेना में सम्मिलित थे (६. ५१, १६)। 'क्षुद्रकमालवाश्च', (६. ५९, ७६. १३६)। इन लोगों ने भीष्म का अनुसरण किया (६. ८७, ७)। पूर्व समय में राम ने इनका वध किया था (७. ७०, ११)। अर्जुन ने इनका वध किया (८. ५, ४८)।

क्षुद्रलुब्ध = शिव (१,००० नाम)।

क्षुप, एक ऋषि का नाम है जो यम की सभा में उपस्थित रहते थे (२. ८, १३)। "ब्रह्मा ने अनेक वर्षों तक अपने मस्तक पर एक गर्भ धारण किया। जब एक सहस्र वर्ष व्यतीत हो गये तब ब्रह्मा को छींक आयी और वह गर्भ नीचे गिर पड़ा। उससे जो बालक प्रगट हुआ उसका नाम क्षुप रखा गया। ब्रह्मा के यज्ञ में यही प्रजापति क्षुप ऋत्विज हुये (१२. १२२, १६. १७)।" शिव ने इन्हें समस्त प्रजाओं का अधिपति बना दिया (१२. १२२, ३५)। लोकपालों ने शिव के दण्ड को इन्हें दिया और इन्होंने उसे सूर्यपुत्र मनु को दे दिया (१२. १२२, ३८. ३९)। प्रजा की रक्षा के लिये मनु ने लोकपालों से प्राप्त खड्ग इन्हें दिया और इन्होंने उसे इक्ष्वाकु को दिया (१२. १६६, ७३)। उन राजाओं में एक यह भी थे जो कार्त्तिक मास में मांस-भक्षण नहीं करते थे (१३. ११५, ७५)। 'क्षुपश्च राजर्षिः', (१३. १६५, ५६)। ये प्रसन्धि के पुत्र और इक्ष्वाकु के पिता थे (१४. ४, ३)। तुकी० प्रजानाम् अधिपः, प्रजापति।

क्षुब्ध = शिव (१,००० नाम)।

क्षुभा—'क्षुभया सहिता मैत्री याश्चान्या भूतमातरः। ताश्च सर्वा नमस्यामि पान्तु मां शरणागतम् ॥', (३. ३, ६९)।

क्षुर = शिव (१,००० नाम)।

क्षुरकर्णी, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २५)।

क्षेत्र—देहधारियों का यह शरीर (६. ३७, १)। इसका वर्णन (६. ३७, ५. ६)।

क्षेत्रज्ञ—इस शरीर को जाननेवाला जीवात्मा जिसे बहुधा कृष्ण (विष्णु) के साथ समीकृत किया गया है : १. ७४, ३१; ९०, १३; ९२, ९; ९३. १. ६; ३. १२, १७ (= कृष्ण); ८८, २७ (= कृष्ण); २१३, २०; ५. ३३, १००; ६. ३७, १–३ (= कृष्ण). २६; १२. ४७. ५२ (क्षेत्रे क्षेत्रज्ञमासीनं = कृष्ण); १८७, २५; २४१. १८; ३१३, १३; ३१४. १४; ३३४, ३० (= पुरुष). ४१; ३३८, ३ (पाँचवा नाम = महापुरुष); ३३९, २८. ४० (वासुदेव); ३४०. ७५; ३४४, १८ (वासुदेव); ३४८, ५८ (हरिः); ३५१. ६ (= पुरुष); १३. १४९, १५ (= विष्णु, १,००० नाम); १४. ३४. १२ (= कृष्ण); ४३, ३६ (= पुरुष)।

क्षेत्रात्मन् = कृष्ण : १२. ४७. ५२।

क्षेम, एक क्षत्रिय राजा का नाम है जो क्रोधवशसंज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७. ६५)। द्रोणाचार्य ने इसका वध किया था (७. २१. ५३)।

१. क्षेमक, कश्यप और कद्रू से उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ३५, ११)।

२. क्षेमक, एक राजा का नाम है जो युधिष्ठिर की सभा में विराजमान होते थे (२. ४, २२)। पाण्डवों की ओर से इन्हें भी रण-निमन्त्रण भेजा गया था (५. ४. २३)।

क्षेमकृत् = विष्णु (१,००० नाम)।

क्षेमङ्कर, जयद्रथ के साथी, त्रिगर्तदेश के एक राजा का नाम है जिसका कोटिकास्य ने द्रौपदी को परिचय दिया (३. २६५, ६. ७)। नकुल ने इसका वध किया (३. २७१, १६)।

क्षेमदर्शिन्, कोसलराज का नाम है (१२. ८२, ६)। कालकवृक्षीय मुनि ने इसे उपदेश दिया जिसके बाद इसने उन्हें अपना पुरोहित बनाया (१२. ८२, १७; १०४. ३)। 'क्षेमदर्शीय इतिहासः', (१२. १०४. २)।

क्षेमधन्वन्, एक कौरव-पक्षीय प्रधान रथी का नाम है जो दुर्योधन के अनुगामी सहायकों में था (६. १७. २७)। उन मृत योद्धाओं में एक यह भी था जिसका शवदाह किया गया (११. २६. ३३)।

१. क्षेमधूर्ति, एक या अधिक राजाओं का नाम है। क्रोधवश संज्ञक गण के अंश से उत्पन्न राजाओं में से एक (१. ६७. ६४)। इसे पाण्डवों की ओर से रणनिमन्त्रण भेजे जाने का विचार (५. ४. १८)। इसने सात्यकि से युद्ध किया (७. २५, ४७)। इसने धृतराष्ट्र के तीन पुत्रों का समर्थन किया (७. ९५, ३६)। इसने बृहत्क्षत्र पर आक्रमण किया (७. १०६, ८)। बृहत्क्षत्र ने इसका मस्तक काट दिया (७. १०७, १. ३. ५)। भीमसेन ने इसका वध किया (८. ५, ४४)। कुलूत राज क्षेमधूर्ति का भीमसेन ने वध किया था (८. १२, २५. ३२, ३९. ४१. ४३)।

२. क्षेमधूर्ति, एक कौरव योद्धा का नाम है जिसका सात्यकि ने वध किया था (९. २१, ८)।

क्षेममूर्ति, धृतराष्ट्र के पुत्र का नाम है (१. ६७, १००)।

क्षेमवाह, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६६)।

क्षेमवृद्धि, राजा शाल्व के मंत्री और सेनापति का नाम है जो साम्ब द्वारा पराजित हुये थे (३. १६, ११. १३. १४. १६)।

क्षेमशर्मन्, एक कौरव योद्धा का नाम है जो द्रोण द्वारा निर्मित गरुड़-व्यूह के ग्रीवाभाग में स्थित थे (७. २०, ६)।

क्षेमा, एक दिव्य अप्सरा का नाम है जो अन्य अप्सराओं के साथ अर्जुन के जन्मोत्सव पर नृत्य करने के लिये उपस्थित हुई थी (१. १२३, ६२)।

क्षेमि, क्षेमकुमार सत्यधृति का नाम है। इन्हें चितकबरे, विशालकाय, वश में किये हुये, सुवर्ण की माला से विभूषित, ऊँचे और शुभलक्षण अश्वों ने युद्धभूमि में पहुँचाया (७. २३, ५८)।

क्षेम्य = शिव : १४, ८. १५।

१. क्षोभण = शिव (१,००० नाम)।

२. क्षोभण = विष्णु (१,००० नाम)।

क्षौद्र, एक जाति का नाम है (१३. ४८, २१)।

ख

१. खं = सूर्य : ३. ३, १७।

२. खं = कृष्ण : ३. १२, २२।

३. खं = शिव (१,००० नाम)।

१. खग, एक कश्यप-वंश में उत्पन्न नाग का नाम है (५. १०३, १०)।

२. खग = शिव (१,००० नाम)।

खगम, पूर्वकाल के एक तपोबल सम्पन्न ब्राह्मण का नाम है जो सहस्रपाद ऋषि के मित्र थे। (१. ११, १)। इनके शाप से सहस्रपाद ऋषि 'डुण्डुभ' सर्प हो गये (१. ११, २–४)।

खगराज् = गरुड़ : ९. १७, ५९।

खगेश्वर = गरुड़ : १. २३, २२।

खचर = शिव (१,००० नाम)

खचारिन् = स्कन्द : ३. २३२, ८।

१. खट्वाङ्ग, एक प्राचीन राजा का नाम है (१. ५५, १३)।

२. खट्वाङ्ग, इलविला के पुत्र महाराज दिलीप का दूसरा नाम है (७. ६१, १०)।

खट्वाङ्गधारिन् = शिव : १०. ७, ४।

खट्वाङ्गिन् = शिव (१,००० नाम)।

खड्ग, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६७)।

खड्गजिह्व = शिव (१,००० नाम)।

खड्गिन् = शिव (१,००० नाम)।

खड्गोत्पत्तिकथन (म्)—"नकुल ने भीष्म से पूछा कि खड्ग और धनुष में से कौन श्रेष्ठ शस्त्र है; खड्ग का किस प्रकार और किसने सर्वप्रथम निर्माण किया था; और इसके प्रयोग की शिक्षा देनेवाला कौन प्रथम शिक्षक था। भीष्म ने कहा : "पूर्वकाल में यह सम्पूर्ण जगत् एक महासागर था। उसी में पितामह ब्रह्मा का प्रादुर्भाव हुआ। ब्रह्मा ने तब वायु, अग्नि, आकाश, सूर्य, भूमि और राक्षस-समूह की रचना की। तदनन्तर उन्होंने लौकिक शरीर धारण करके मरीचि आदि पुत्रों को उत्पन्न किया। प्रचेताओं के पुत्र दक्ष ने साठ कन्याओं को जन्म दिया जिन्हें ब्रह्मर्षियों ने पत्नी-रूप में प्राप्त किया। इन्हीं कन्याओं से सम्पूर्ण स्थावर-जङ्गम जगत् उत्पन्न हुआ। ब्रह्मा ने इन समस्त प्राणियों की सृष्टि करके उनके ऊपर वेदोक्त सनातन धर्म के पालन का भार रक्खा। आचार्य और पुरोहितगणों सहित देवता, आदित्य, वसुगण, रुद्रगण, साध्यगण, मरुद्गण तथा अश्विनीकुमार आदि सभी उस सनातन धर्म में प्रतिष्ठित हुये। भृगु, अत्रि, अङ्गिरा प्रभृत सिद्ध मुनि, वसिष्ठ, गौतम, अगस्त्य, नारद, पर्वत, वालखिल्य, आदि ऋषि, वानप्रस्थ तथा पृश्निगण, सभी ब्रह्मा की आज्ञा के अधीन रहकर सनातनधर्म का पालन करने लगे। परन्तु हिरण्यकशिपु, हिरण्याक्ष, विरोचन, शम्बर आदि दानवों और दैत्यों ने धर्म-मर्यादा का उल्लङ्घन करते हुए अधर्म करने का ही निश्चय किया। वे सभी दैत्य और दानव साम, दाम और भेद इन तीनों उपायों का अतिक्रमण करके केवल दण्ड द्वारा समस्त प्रजाजनों को पीड़ित करने लगे। तदनन्तर ब्रह्मर्षियों सहित ब्रह्मा हिमालय के शिखर पर उपस्थित हुये और जगत का कार्य सिद्ध करने के लिये वहीं ठहर गये। कई सहस्र वर्ष व्यतीत होने पर ब्रह्मा ने वहाँ एक यज्ञ आरम्भ किया। उसी यज्ञमण्डप में अग्नि को इधर-उधर बिखेर कर एक भयंकर भूत प्रगट हुआ। उसे देखकर ब्रह्मा ने महर्षियों, देवताओं, तथा गन्धर्वों से कहा : 'मैंने ही इस भूत का चिन्तन किया था। यह असि नामधारी प्रबल आयुध है जिसे मैंने सम्पूर्ण जगत की रक्षा तथा असुरों के वध के लिये प्रगट किया है।' तदनन्तर वह भूत अपने रूप का परित्याग कर तीस अङ्गुल से कुछ बड़े खड्ग के रूप में प्रकाशित होने लगा। उस खड्ग को ब्रह्मा ने भगवान रुद्र को दिया। रुद्र ने उस खड्ग से दैत्यों और दानवों का भीषण संहार किया। उस समय कितने ही दानव धरती में घुस गये, अनेक पर्वतों में छिप गये, कुछ आकाश में उड़ चले, तथा बहुत से जल में समा गये। उस समय महर्षियों और देवताओं ने महादेव का पूजन किया। महादेव रुद्र ने उस दानवों के रक्त से रंजित खड्ग को अत्यन्त सत्कार के साथ विष्णु को दे दिया। विष्णु ने उसे मरीचि को, मरीचि ने महर्षियों को, और महर्षियों ने उसे इन्द्र को दिया। इन्द्र ने उसे लोकपालों को और लोकपालों ने सूर्यपुत्र मनु को दिया। मनु से वह खड्ग क्षुप, इक्ष्वाकु, पुरूरवा, आयु, नहुष, ययाति, पूरु, अमूर्तरया, भूमिशय, और भरत के पास होता हुआ ऐलविल के पास पहुँचा। फिर उनके पास से धुन्धुमार, काम्बोज, मुचुकुन्द, मरुत्त, रैवत, युवनाश्व, रघु, हरिणाश्व, शुनक, उशीनर, भोज, शिबि, प्रतर्दन, अष्टक और पृषदश्व के पास से होता हुआ द्रोणाचार्य को प्राप्त हुआ। उन्हीं द्रोणाचार्य से वह पुनः कृपाचार्य को मिला और उनसे पाण्डवों तथा नकुल को प्राप्त हुआ। भीष्म ने नकुल को बताया कि उस खड्ग का नक्षत्र कृत्तिका, देवता अग्नि, गोत्र रोहिणी, तथा गुरु रुद्र है। उसके आठ गोपनीय नाम हैं : १. असि; २. विशासन; ३. खड्ग; ४. तीक्ष्णधार; ५. दुरासद, ६. श्रीगर्भ; ७. विजय; और ८. धर्मपाल। सब आयुधों में खड्ग ही श्रेष्ठ है। रुद्र ने सर्वप्रथम इसका संचालन किया। पृथु ने सर्वप्रथम धनुष का उत्पादन किया था। युद्धविशारद पुरुषों को सदैव ही खड्ग का पूजन करना चाहिये। खड्ग-प्राप्ति का यह उत्तम प्रसङ्ग सब प्रकार से सुनकर पुरुष इस संसार में कीर्ति प्राप्त करता है और देहत्याग के पश्चात् अक्षय सुख का भागी होता है। (१२. १६६)।"

खण्डखण्डा, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २०)।

खण्डपरशु = विष्णु। शब्द की व्युत्पत्ति : 'मन्त्रैश्च संयुयोजाशु सोऽभवत्परशुर्महान्॥ क्षिप्तश्च सहसा तेन खण्डनं प्राप्तवांस्तदा। ततोऽहं खण्डपरशुः स्मृतः परशुखण्डनात्॥', (१२. ३४२, ११६. ११७)। १३. १४९, ७४ (१,००० नाम)।

खनक (खोदनेवाला) : १. १४७, १. १६. २०।

खनीनेत्र, एक राजा का नाम है जो विविंश के ज्येष्ठ पुत्र और सुवर्चस् के पिता थे। ये पराक्रमी होने और अकण्टक राज्य पाने पर भी प्रजा के अनुरागभाजन नहीं हो सके। अतः इन्हें राज्यच्युत करके इनके पुत्र सुवर्चस् को गद्दी पर बैठाया गया (१४. ४, ६–९)।

१. खर, एक राक्षस का नाम है जो विश्रवा का पुत्र और शूर्पणखा का सहोदर भ्राता था (३. २७५, ८)। यह धनुर्विद्या में विशेष प्रवीण तथा ब्राह्मणद्रोही था (७. २७५, १२)। रावण, कुम्भकर्ण तथा विभीषण की तपस्या के समय यह अपनी बहन शूर्पणखा सहित उनकी सेवा करता था (३. २७५, १९)। शूर्पणखा के कारण इसने राम दाशरथी के साथ युद्ध किया (३. २७७, ४२)। श्रीराम ने तपस्वीजनों की रक्षा के लिये खर आदि चौदह सहस्र राक्षसों का संहार किया (२. ३८, २९ के बाद गीप्रे० सं० में पृ० ७९४ पर दाक्षिणात्य पाठ)। राम दाशरथी द्वारा इसके वध का उल्लेख (७. १०७, २८)।

२. खर, राक्षसों के एक दल का नाम है जिसने वानर-सेना पर आक्रमण किया था (३, २८५, २)।

खरकर्णी, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २६)।

खरजङ्घा, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २२)।

खरी, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ६)।

१. खलिन् = शिव (१,००० नाम)।

२. खलिन् (बहु० ॰नाः), दानवों के एक समुदाय का नाम है जिसे वसिष्ठ ने अपने तेज से दग्ध कर दिया था (१३. १५५, १७. २२. २४)।

खलु, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, २८)।

खश (बहु ॰शाः), खस भी, एक बर्बर जाति का नाम है जो वसिष्ठ की गाय के मूत्र से उत्पन्न हुये थे (१. १७५, ३७)। ये युधिष्ठिर के लिये भेंट लाये (२. ५२, ३)। ये दुर्योधन की सेना में सम्मिलित थे (५. १६०, १३०: 'खश')। ५. १६१, २१ (खश); ७. ११, १८ (खश); १२१, ४२ (सात्यकि से युद्ध किया); ८. २०, १०; ४४, ४७ (खश); ७३, १९ (खश)।

खाण्डव, यमुना-तटवर्ती एक वन का नाम है (१. १, १५२)। 'दहनं खाण्डवस्य', (१. २, ८८)। 'खाण्डवस्य दाहनम्', (१. २, १२८)। तक्षक पहले खाण्डववन तथा कुरुक्षेत्र में निवास करता था (१. ३, १३९)। १. ६१, ४५; १२३, ४१; २२३, १. ६ (यह इन्द्रसखा तक्षक का निवास-स्थान था अतः इन्द्र इसकी रक्षा करते थे). १० (अग्नि ने इसका दहन करने की इच्छा की). १२–१६. ७५. ७८. ७९ (अग्नि ने सात बार इसे जलाने का निष्फल प्रयास किया था); २२४, ७. ९. १० (ब्रह्मा ने अग्नि को अर्जुन तथा श्रीकृष्ण की सहायता लेने का परामर्श दिया). १४; २२५, ३५ (खाण्डवं दावं); २२६, २ (प्राणिनः खाण्डवालयाः). ४. १२. १९; २२७, २. ५२ (प्राणिनः खाण्डवालयाः); २२८, १ (॰वालयाः). १७. २२. २७ (॰वालयान् : श्रीकृष्ण और अर्जुन ने इस वन में निवास करने वाले प्राणियों को बचकर भागने से रोका; इन्द्र तथा देवों आदि ने अर्जुन और श्रीकृष्ण पर आक्रमण किया परन्तु पराजित हुये; तक्षक का पुत्र अश्वसेन और मयासुर बच गये); २२९, २०. २१. ३३. ३४; २३१, १६; २३२,

२५ (इसमें निवास करनेवाले शार्ङ्गकों का वृत्तान्त); २३४, ५; ३. ३९, ४६; ४८, १४; ४९, २२; ४. २, ११; १९, १५; ३६, १८; ३७, १६. ३४; ४५, ३७; ५. २२, १३; ५२, १० (अर्जुन द्वारा अग्नि को तृप्त हुये तैंतीस वर्ष व्यतीत हो गये); ६०, ८; ६२, ८; १५८, ६. ९८, ६; ७. ११, २१; १८५, १५; ८. ४२, २४; ४६, ९; ६८, ११; ७९, ५८; ८७, ६९; ८९, ४१; ९०, १३. ५२; ९. ३३, ३३; ५६, १७; १३. १५८, २५; १५. ३८, ११; १७. १, ३८।

खाण्डवदाह (खाण्डव वन का दाह)—'खाण्डवदाहाख्यम्', (१. २, ४६)।

खाण्डवदाहपर्व (न्), महाभारत के १९वें अवान्तर पर्व का नाम है जो आदिपर्व के २२२ से २२७ अध्यायों के अन्तर्गत आता है। "धृतराष्ट्र और भीष्म की आज्ञा से इन्द्रप्रस्थ में रहते हुये पाण्डवों ने अन्य अनेक राजाओं को अपने अधीन कर लिया। युधिष्ठिर के आश्रय में समस्त प्रजा सुखपूर्वक निवास करती थी। एक बार ग्रीष्म ऋतु में अर्जुन तथा श्रीकृष्ण यमुनातट पर द्रौपदी और सुभद्रा आदि रानियों के साथ विहार के लिये गये। जब ये लोग यमुनातट पर बैठे थे तो उस समय एक तेजस्वी ब्राह्मण वहाँ उपस्थित हुआ (१. २२२)।" 'वह ब्राह्मण वेश में स्वयं अग्निदेव थे। उन ब्राह्मण ने अर्जुन और कृष्ण से कहा: 'इन्द्र सदा इस खाण्डववन की रक्षा करते हैं अतः मैं इसे जला नहीं पाता। इस वन में इन्द्र का सखा, तक्षक नाग, अपने परिवार सहित सदा निवास करता है; उसी के लिये वज्रधारी इन्द्र सदैव इसकी रक्षा करते हैं। आप दोनों अस्त्रविद्या में पूर्ण प्रवीण हैं, अतः आप इस वन को भस्म करने में मेरी सहायता कीजिये।' जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन ने यह बताते हुये कि अग्नि क्यों खाण्डववन को भस्म करना चाहते थे, राजा श्वेतकि की कथा का वर्णन किया। अर्जुन ने अग्नि की प्रार्थना स्वीकार करके उनसे एक दिव्य धनुष एवं रथ आदि माँगा। साथ ही उन्होंने श्रीकृष्ण के लिये भी एक ऐसे शस्त्र की याचना की जिससे वे नागों और निशाचरों का वध कर सकें (१. २२३–२२४)।" "अर्जुन के ऐसा कहने पर अग्नि ने वरुणदेव का चिन्तन किया और उनके प्रगट होने पर उनसे गाण्डीव धनुष, दो अक्षय तरकस, तथा अश्वों से सन्नद्ध एक रथ लेकर अर्जुन को दिया। तदनन्तर अग्नि ने श्रीकृष्ण को सुदर्शन चक्र, तथा वरुण ने कौमोदकी नामक गदा प्रदान किया। इस प्रकार श्रीकृष्ण और अर्जुन आयुधों से सुसज्जित होकर युद्ध के लिये सन्नद्ध हो गये और अग्नि ने खाण्डववनदाह आरम्भ किया (१. २२५)।" "जब खाण्डववन जलने लगा तो उसमें से भगाने का प्रयास करनेवाले जीवों को अर्जुन और कृष्ण रोकने लगे। उस समय देवता भी भयभीत होकर इन्द्र की शरण में गये। इन्द्र ने मेघ-वर्षा कराकर अग्नि को बुझाने का प्रयास किया। आरम्भ में वह समस्त वर्षाजल अग्नि के ताप से आकाश में ही सूख गया (१. २२६)।" "जब इन्द्र ने और अधिक वर्षा की तो अर्जुन ने अपने अस्त्रों से उसे विसर्जित कर दिया। उस समय तक्षक, जो कुरुक्षेत्र गया था, वन में उपस्थित नहीं था। परन्तु उसका पुत्र, अश्वसेन, वहीं था। उसकी माता सर्पिणी ने उसे निगल कर अग्नि से बचाने का प्रयास किया परन्तु अर्जुन ने उस सर्पिणी का मस्तक काट दिया। उस समय अश्वसेन को बचाने की इच्छा से इन्द्र ने आँधी और वर्षा द्वारा अर्जुन को मोहित कर दिया, जिससे तक्षक का पुत्र अश्वसेन संकट से मुक्त होने में सफल हो गया। तब अर्जुन ने उस नाग को शाप देते हुए कहा: 'तू आश्रयहीन हो जायगा।' अग्नि और श्रीकृष्ण ने भी अर्जुन का अनुमोदन किया। इन्द्र ने कुपित होकर आकाश में मेघ उत्पन्न किये परन्तु अर्जुन ने वायव्यास्त्र द्वारा उसे विसर्जित कर दिया। तदनन्तर इन्द्र ने शिलाओं और मन्दराचल के शिखर द्वारा अर्जुन पर आक्रमण किया परन्तु सब निष्फल हुआ। गरुड़, नागों, असुरों, गन्धर्वों, यक्षों, तथा राक्षसों ने भी अर्जुन पर आक्रमण किया परन्तु सब पराजित हो गये। श्रीकृष्ण ने अपने चक्र से दैत्यों और दानवों को पराजित कर दिया। तब देवताओं के महाराज इन्द्र ने अपने वज्र को अर्जुन और कृष्ण पर फेंका। उस समय यम ने कालदण्ड, कुबेर ने गदा, वरुण ने पाश, स्कन्द ने शक्ति, अश्विनीकुमारों ने चमकीली ओषधियाँ, धाता ने धनुष, जय ने मुसल, त्वष्टा ने पर्वत, अंश ने शक्ति, मृत्यु ने फरसा, अर्यमा ने परिघ, मित्र ने चक्र, तथा पूषा, भग और सविता ने धनुष और खड्ग लेकर अर्जुन तथा श्रीकृष्ण पर आक्रमण किया। रुद्र, वसु, मरुद्गण, विश्वेदेव, साध्यगण, तथा अनेक अन्य देवता नाना प्रकार के अस्त्रों को लेकर अर्जुन तथा कृष्ण पर टूट पड़े। इस प्रकार भयंकर युद्ध होने लगा (१. २२७)।" "श्रीकृष्ण ने अपने चक्र से दानवों, निशाचरों, दैत्यों, पिशाचों, पक्षियों, नागों, और पशुओं का संहार किया। जब देवतागण श्रीकृष्ण और अर्जुन के बल से खाण्डववन की रक्षा करने तथा अग्नि को बुझाने में असफल हो गये तो वहाँ से पलायित हो गये। देवताओं को विमुख हुआ देखकर श्रीकृष्ण और अर्जुन की प्रशंसा करते हुये इन्द्र अत्यन्त प्रसन्न हुये। उस समय इन्द्र को सम्बोधित करके यह आकाशवाणी हुई: 'तुम्हारे सखा, नागप्रवर तक्षक इस समय यहाँ नहीं हैं। वासुदेव और अर्जुन को किसी भी प्रकार युद्ध में जीता नहीं जा सकता क्योंकि ये दोनों पुरातन देवता नर और नारायण हैं। खाण्डववन के इस विनाश को तुम प्रारब्ध का ही कार्य समझो।' आकाशवाणी सुनकर इन्द्र क्रोध तथा अमर्ष का त्याग कर के स्वर्गलोक लौट गये। तदनन्तर खाण्डववन का प्रबल दाह आरम्भ हुआ। उसमें निवास करनेवाले पशुओं के आर्तनाद से गङ्गा तथा सागर में निवास करनेवाले मत्स्य भी भयभीत हो उठे। वन में निवास करनेवाले विद्याधरों की भी यही दशा थी। इस प्रकार अरण्य जन्तुओं के मांस, रुधिर, और मेदे के समूह से अत्यन्त तृप्त होकर अग्निदेव ऊपर आकाशचारी हो धूमरहित हो गये। श्रीकृष्ण और अर्जुन द्वारा दिया हुआ वह इच्छानुसार भोजन पाकर अग्निदेव अत्यन्त प्रसन्न और तृप्त हुए। इसी समय तक्षक के निवासस्थान से निकलकर सहसा भागते हुये मयासुर पर श्रीकृष्ण की दृष्टि पड़ी। अग्नि ने उस असुर को भस्म कर देने की इच्छा की जिसपर श्रीकृष्ण ने उसे मारने के लिये अपना चक्र उठा लिया। उस समय मयासुर अर्जुन की शरण में गया जिसपर अर्जुन ने उसकी रक्षा की। अग्नि उस वन को पन्द्रह दिनों तक जलाते रहे और उस दाह से उन्होंने केवल छः व्यक्तियों को ही बचा रहने दिया जिनके नाम ये हैं: अश्वसेन, मय, और चार शार्ङ्गक (१. २२८)।"

खाण्डवप्रस्थ = इन्द्रप्रस्थ (देखिये यथा०)।

खाण्डवायन, परशुराम द्वारा दी हुई स्वर्णवेदी को खण्ड-खण्ड करके आपस में बाँटने वाले ब्राह्मणों का नाम है (३. ११७, १३)।

खाशीर, पूर्वोत्तर भारत के एक जनपद का नाम है (६. ९, ६८)।

खिल, महाभारत के परिशिष्ट भाग, हरिवंश, का दूसरा नाम (१. २, ८२. ८३. ३७९. ३८०)।

खेचर, देवदूत के लिये प्रयुक्त हुआ है (१. ९. १०. १२)।

ख्याता, स्कन्द की अनुचरी एक मातृका का नाम है (९. ४६, २०)।

ग

गगनमूर्धन्, कश्यप और दनुवंशीय एक विख्यात दानव का नाम है (१. ६५, २४)। यह पाँच केकय-राजकुमारों में से एक के रूप में उत्पन्न हुआ था (१. ६७, १०)।

१, गङ्गा, एक प्रसिद्ध नदी का नाम है: 'गङ्गाकूले' (१. २, १११)। 'नागवेश्मानि गङ्गायास्तीर उत्तरे', (१. ३, १३६)। 'गङ्गायाः', (१. ६१, ११)। यह भीष्म की माता थीं (१. ६३, ९१)। शान्तनु द्वारा गङ्गा के गर्भ से पुत्रों के रूप में अष्टवसुओं का जन्म हुआ (१. ६७, ७४)। 'नरनारायणस्थानं गङ्गयेवोपशोभितम्', (१. ७०, २९)। ययाति ने गङ्गा और यमुना के बीच के समस्त प्रदेश को पुरु को दे दिया (१. ८७, ५)। 'शान्तनुः खलु गङ्गा भागीरथीमुपयेमे तस्यामस्य जज्ञे देवव्रतो नाम यमाहु'

मोंध्यमिति', (१. ९५, ४७) । 'गङ्गा सरिच्छ्रेष्ठा समुपायात्पितामहम्', (१. ९६, ४) । महाभिप तथा गङ्गा को मनुष्यों के बीच जन्म लेने का शाप दिया गया (१. ९६, ७) । 'गङ्गोवाच', (१. ९६, १७. १८. २०) । 'गङ्गया वसवः सह', (१. ९६, २३) । इन्होंने प्रतीप से कहा कि ये उनके पुत्र, शान्तनु, के साथ विवाह करेंगी (१. ९७, १. २) । 'गङ्गामनुचचारैक-सिद्धचारणसेविताम्', (१. ९७, २६) । त्रिपथगामिनी दिव्यरूपिणी देवी गङ्गा ही अत्यन्त सुन्दर मनुष्य देह धारण करके शान्तनु को पत्नी-रूप में प्राप्त हुई (१. ९८, ८) । 'जातं जातं च सा पुत्रं क्षिपत्यम्भसि भारत । प्रीणाम्यहं त्वामित्युक्त्वाः गङ्गा स्रोतस्यमज्जयत् ॥', (१. ९८, १३) । 'गङ्गा जह्नुसुता महर्षिगणसेविता', (१. ९८, १८) । गङ्गा से विवाह करने के पश्चात् शान्तनु ने उनसे जो पुत्र उत्पन्न किये उनमें से सात को गङ्गा ने जल में फेंक दिया था, परन्तु आठवें पुत्र, भीष्म, को शान्तनु ने बचा लिया (१. ९८, २४) । 'जाह्नवी', (१. ९९, ४) । "शान्तनु के पूछने पर गङ्गा ने बताया कि पूर्वकाल में वरुण ने जिन्हें पुत्र रूप में प्राप्त किया था वे वसिष्ठ नामक मुनि ही 'आपव' के नाम से विख्यात हैं । तदनन्तर गङ्गा ने यह बताया कि किस प्रकार वसिष्ठ द्वारा वसुओं को शाप प्राप्त हुआ (१. ९९) ।" 'गङ्गामनुसरन्नदीम्', (१. १००, २३) । 'नदीं गङ्गा', (१. १००, २७) । १. १००, ३०. ३१. ३३-३९ (इन्होंने भीष्म को शान्तनु को दे दिया) । १. १०४, ३९; १२७, १६; १२८, २९; १३०, ३४; १३३, ११; १३८, ७३ (माकन्दीमथ गङ्गयास्तीरे); १४९, ११. १३-१५; १५०, १९; १६६, २; १६७, ५; १७०, ३. ५. १४. १७. १९ । "प्राचीन काल में हिमालय के स्वर्णशिखर से निकली हुई गङ्गा सात धाराओं में विभक्त हो समुद्र में जाकर मिल गई । जो पुरुष गङ्गा, यमुना, प्लक्ष की जड़ से प्रगट हुई सरस्वती, रथस्था, सरयू, गोमती, और गण्डकी नामक सात नदियों का जल पीते हैं उनके पाप तत्काल नष्ट हो जाते हैं । यह गङ्गा अत्यन्त पवित्र नदी है । आकाश ही इसका तट है । आकाशमार्ग से विचरती हुई गङ्गा देवलोक में अलकनन्दा नाम धारण करती है । यही वैतरणी होकर पितृलोक में बहती है । वहाँ पापियों के लिये इसे पार करना अत्यन्त कठिन होता है । इस लोक में आकर इसका नाम गङ्गा होता है । ऐसा श्रीकृष्णद्वैपायन व्यास का कथन है, (१. १७०, १९-२२) ।" १. १९७, १०. ११; २१४, ११; २१५, ७; २२८, ३२ (गङ्गोदधिचराश्चपाः); २. ३, ११ (भागीरथी); १७, २० (गङ्गायमुनयोर्मध्ये); २०, २९; ४२, ११ (त्रिकूटस्थां गङ्गां त्रिपथगामिव); ३. १२, ८२; ४२, २०; ४७, १३ (गङ्गा सिद्धचारणसेविता); ८३, १०१; ८४, ३५ (गङ्गायमुनयोर्मध्ये). ३८ (गङ्गायाश्च नरश्रेष्ठ सरस्वत्याश्च संगमे). ८१ (गोमतीगङ्गयोश्चैव संगमे); ८५, ४ (गङ्गायास्तत्र'''सागरस्य च संगमे). ६९. ७५ (यमुना गङ्गया सार्धं संगतालोकपावनी । गङ्गायमुनयोर्मध्यं पृथिव्या जघनं स्मृतम्). ८५ (गङ्गायमुनसंगमे). ८७-९० (गङ्गा कलियुगे स्मृता). ९२ (गङ्गायां मगधेषु). ९४. ९६. ९७; ८७, १४ (गङ्गा यत्र नदी पुण्या यस्यास्तीरे भगीरथः). १८ (गङ्गायमुनयोर्वीर संगमं लोकविश्रुतम्); ८८, ९; ९०, २१ (विभेद तरसा गङ्गा गङ्गाद्वारं). २६ (उष्णतोयवहा गङ्गा शीततोयवहा पुरा); ९३, १०; ९५, ५ (गङ्गायमुनयोश्चैव संगमे) । "अगस्त्याश्रम के समीप ही देवगन्धर्वसेवित पुण्यसलिला भागीरथी है जो आकाश में वायु की प्रेरणा से फहरानेवाली श्वेत पताका के समान सुशोभित है । यह (गङ्गा) क्रमशः नीचे-नीचे के शिखरों पर गिरती हुई सदा तीव्र गति से बहती हुई शिलाखण्डों के नीचे इस प्रकार समाती जाती है जैसे भयभीत सर्पिणी विवर में घुसी जा रही हो । पहले भगवान शङ्कर की जटा से गिरकर प्रवाहित होनेवाली समुद्र की प्रियतमा यह गङ्गा सम्पूर्ण दक्षिण दिशा को इस प्रकार आप्लावित कर रही है जैसे माता अपनी सन्तान को नहला रही हो (३. ९९, ३१-३३) ।" ३. १०७, ६७; १०८. ४. १४. १५ (गङ्गोवाच). २१. २७; १०९, ६. ८ (हिमवतः सुता). ९ (गगनमेखलाम्) । "भूतल पर पहुँचकर गङ्गा ने भगीरथ से कहा : 'मैं किस मार्ग से चलूँ ? तुम मुझे मार्ग बताओ । मैं तुम्हारे लिये ही इस भूतल पर उतरी हूँ ।' यह सुनकर भगीरथ, जहाँ महात्मा सगरपुत्रों के शरीर पड़े थे, वहाँ गङ्गा के जल से उन शरीरों को प्लावित करने के लिये उस स्थान से प्रस्थित हुये । भगवान शङ्कर गंगा को मस्तक पर धारण करके देवताओं के साथ कैलास पर्वत चले गये । भगीरथ ने गङ्गा के साथ समुद्रतट पर जाकर वरुणालय समुद्र को बड़े वेग से भर दिया और गङ्गा को अपनी पुत्री बना लिया । इस प्रकार लोमश जी ने त्रिपथगा (स्वर्ग, पाताल और पृथिवी पर गमन करनेवाली) गङ्गा के अवतरण का प्रसङ्ग सुनाया । (३. १०९, १४-१९) ।" ३. ११४, २ (ये सागर में गिरती हैं); ११५, २८; १३४, ६ (नदीषु गङ्गा प्रवरा यथैव); १३५, ७. ३२. ३६; १३९, २ (सप्तविधा : यहाँ सदा अग्नि प्रज्वलित रहते हैं, परन्तु इस अद्भुत तीर्थ को कोई मनुष्य नहीं देख सकता). १४. १६; १५८, ९८ (महागङ्गा'''पुण्यां देवनदीं शुभाम्); १८७, १९ (समुद्रमहिषीं). २१. २३. २४; १८८, १०२ (मार्कण्डेय ने इन्हें भी नारायण के उदर में देखा); २१७, ४ (यथा रुद्राक्ष सम्भूतो गङ्गायां कृत्तिकासु); २२२, २२ (अग्नि की माता नदियों में एक यह भी है); २५२, ४६ (गङ्गौघप्रतिमा); ३०८, २५. २६ (कर्ण जिस मंजूषा में बन्द था वह यमुना से गङ्गा में बह कर आगई); ५. १९, ३०; ५१, ३५; १११, ८ (अथ गङ्गां महादेवः पतन्तीं गगनाच्च्युताम् । प्रतिगृह्य ददौ लोके मानुषे ब्रह्मवित्तम); १२०, १ (गङ्गायमुनसङ्गमे); १२१, १२ (गङ्गां गामिव गच्छन्तीमालम्ब्य); १३५. १८ (गत्वा गङ्गेव सागरम्); १३९, ११; १४४, २७; १५१, ५४; १५८, १३ (गङ्गयेव प्रवृद्धया); १६०, १६; १६६, १० (मकरा इव'''गङ्गाविक्षोभयिष्यन्ति); १७८, ९४ (राम जामदग्न्य से युद्ध करने से विरत करने के लिये ये भी भीष्म के पास आईं); १९६, १२ । "पर्वत शिखर से उतरने के बाद भागीरथी गङ्गा चन्द्रमस् सरोवर में गिरती हैं । शिव ने गङ्गा को १,००,००० वर्षों तक अपने मस्तक पर धारण किया (६. ६, २९-३१) ।" ६. ९, १४. ३६; ११, ३१; १८, १८; १९, १४; ८३, ५ (गङ्गायाः सुरनद्या वै स्वादु भूत्वा यथोदकम्); ११९, ९७ (हिमवतः सुता); ७. १०, ६६; १७, ४९; ३०, ३०; ५४, २४; ६०, १. ५-६ (तस्यांके निषसाद ह । तथा भागीरथी गङ्गा उर्वशी चाभवत् पुरा). ८; ६८, ८; ८०, २७; १५६, ६७; ८. २८, ४४ (उम्मत्तगङ्गाप्रतिमम्); ३४, २४; ४४, ६; ४६, ८७; ६०, ७३; ९. १८, ११; ३७, ४९; ४४, ८. ९. १४. २०. ३५. ४०; ४६, ५०. ९९; ११. ११, १९; १२, ५; १४, ४; २३, ४२; २६, ४४; २७, १. ५. ६. ३०; १२. १, २३; २९, ४६. ६८ (यस्याङ्के निषसाद ह । गङ्गा भागीरथी तस्यादुर्वशी चाभवत्पुरा). ११८ (यावत्यः सिकता'''गङ्गाः); ४६, १६; ४९, ८१; १०९, ८; ११३, ७. ८ (गङ्गोवाच); १७०, ४ (देशान् गङ्गानिषेवितान्); २२८, ६; २५८, २२; २८३, १७ (गङ्गा च सरितां श्रेष्ठा सर्वतीर्थजलोद्भवा); ३२४, १२ (सरिता श्रेष्ठा मेरुपृष्ठे); ३४७, ५० (गङ्गा और सरस्वती नारायण के कूल्हे हैं); ३५३, १ (महापद्मे पुरोत्तमे । गङ्गाया दक्षिणे तीरे); ३५५, ११; १३. ४, ३. १६. १७ (कान्यकुब्ज के पास गङ्गातट पर वह अश्वतीर्थ स्थित है जहाँ वरुण के वरदान के अनुरूप ऋचीक के चिन्तन करते ही गङ्गा के जल से चन्द्रकान्ति के समान एक सहस्र अश्व प्रगट हो गये थे); २५, १५ (यत्र भागीरथी गङ्गा पततेदिशमुत्तराम्); २६, २६. २७. ३०. ३२-५३. ५६-७२. ७४-८४. ८६. ८८-९२. ९४-९६. ९८. १००. १०१. १०३-१०६ (छब्बीसवें अध्याय के इन श्लोकों में गङ्गा का अत्यन्त विस्तृत वर्णन है); ३०, ११. १८; ३५, २०; ४३, १८; ५०, ६. ८. १५; ५३, ५६. ५४, २२; ६८, ३ (ग्रामः'''गङ्गायमुनयोर्मध्ये यामुनस्य गिरेरधः); ७३, ४२ (यथा हि गङ्गा सरितां वरिष्ठा); ७७, ८; ८५, ११-१२ (रुद्रस्य तेजः प्रस्कन्नमग्नौ निपतितं च यत् । तत्तेजोऽग्निर्महद्भूतं द्वितीयमिति पावकम् ॥ वधार्थं देवशत्रूणां गङ्गायां जनयिष्यति). ५५ (गङ्गां भागीरथीं). ५७-५९. ७०. ७२ (गङ्गोवाच); १०२, ४६; १०३, २४ (स्रोतश्च यावद्गङ्गायाः). २७ दीर्घकालं हिमवति गङ्गायाश्च दुरुत्सहाम् । मूर्ध्ना धारां महादेवः शिरसायामधारयत्); १२५, ४८; १४६, १९ (गगनाद्गां गता देवी गङ्गा). २१ (गङ्गावाः सरितां वराः). २४ देवनदी गङ्गा). (२६. ३२; १५५, २३; १६५,

१२. २०; १६८, ३०; १४. १, ३; ४४, १४ (त्रिपथगा गङ्गा नदीनामग्रजा स्मृता); ८१, ११; १५. १९, ५. ६; ३१, २०. २२; ३७, ५. ६. १८. ३३; ३९, ११; १८. ३, ३९ (गङ्गा त्रिलोकगाम्). ४१ (गङ्गादेवनदीं)। तुकी० **अकाशगङ्गा, भगीरथसुता, भागीरथी, शैलराजसुता, शैलसुता, देवनदी, हिमवती, जाह्नवी, जह्नुकन्या, जह्नुसुता, समुद्रमहिषी, त्रिपथगा, त्रिपथगामिनी।**

२. गङ्गा = शिव (१,००० नाम)।

गङ्गातोयार्द्रमूर्धज = शिव (१,००० नाम)।

गङ्गाद्वार, उस स्थान का नाम है जहाँ गङ्गा पर्वतमालाओं से निकलकर समतल भूमि या मैदानों में प्रवेश करती हैं; इसी स्थान पर प्रतीप ने तपस्या की थी (१. ९७, १)। भरद्वाज का आश्रम यहीं था (१. १३०, ३३)। अपनी तीर्थयात्रा के समय अर्जुन यहाँ पधारे थे (१. २१४, ६. १०. ३५) 'गङ्गाद्वारे महाभाग देवगन्धर्वसेविते; (३. ८१, १४)। ३. ८४, २७; ८९, १५; ९०, २१ (शैलं···बिभेद तरसा गङ्गा गङ्गाद्वारं); ९७, ११; १४०, ७; १४२. ९ (एतस्याः सलिलं मूर्ध्नि वृषाङ्क पर्यधारयत), १५६, ९; २७२, २५; ९. ३८, २८; १२. २८३, २१; २८४, ३। "गङ्गाद्वार, कुशावर्त, बिल्वक तीर्थ, नील पर्वत, तथा कनखल में स्नान करके पापरहित हुआ व्यक्ति स्वर्गलोक को जाता है। जहाँ उत्तर दिशा में भागीरथी गङ्गा गिरती हैं और जहाँ उनका स्रोत तीन भागों में विभक्त हो जाता है, वहीं भगवान् महेश्वर का त्रिस्थान नामक तीर्थ है। जो मनुष्य एक मास तक निराहार रहकर वहाँ स्नान करता है उसे देवताओं का प्रत्यक्ष दर्शन होता है। सप्तगङ्ग, त्रिगङ्ग, और इन्द्रमार्ग में पितरों का तर्पण करनेवाला व्यक्ति यदि पुनर्जन्म लेता है तो उसे अमृत-भोजन मिलता है (१३. २५, १३–१७)।" भीष्म ने इसी स्थान पर शान्तनु का श्राद्ध-कर्म किया था (१३. ८४. ११)। 'पुण्या गङ्गाद्वारमथापि च; (१३. १६५, २६)। 'गङ्गाद्वारं ययौनृप; (१५. ३७, १०)। इसी स्थान पर धृतराष्ट्र, कुन्ती और गान्धारी ने अग्नि में प्रवेश किया था (१५. ३९, १४. १५)।

गङ्गामहाद्वार, गङ्गोत्तरी से भी आगे उस स्थान का नाम है जहाँ हिमालय के शिखर से गङ्गा उतरती हैं। एक सत्यवादी महात्मा, धामामुनि, इसकी रक्षा करते हैं। उनकी मूर्ति, आकृति, तथा संचित तपस्या का परिणाम किसी को ज्ञात नहीं होता। इस स्थान से आगे जानेवाला व्यक्ति हिमराशि में गल जाता है। नरनारायण को छोड़कर अन्य कोई व्यक्ति कभी गङ्गामहाद्वार से आगे नहीं गया (५. १११, १६–२०)।

गङ्गा-यमुनयोस तीर्थम्, एक तीर्थ का नाम है। यहाँ तथा कालञ्जर तीर्थ में एक मास तक स्नान और तर्पण करने से दस अश्वमेध यज्ञों का फल प्राप्त होता है (१३. २५, ३५)।

गङ्गावतरण(म्)—"राजा सगर ने अपने पौत्र, अंशुमान, से कहा : 'यज्ञ में विघ्न पड़ जाने से मैं मोहित और दुःख से पीड़ित हूँ। तुम अश्व को लाकर नरक से मेरा उद्धार करो।' महात्मा सगर के ऐसा कहने पर अंशुमान् उस स्थान पर गये जहाँ पृथिवी विदीर्ण की गई थी। उन्होंने उसी मार्ग से समुद्र में प्रवेश किया और महात्मा कपिल तथा यज्ञिय अश्व को देखा। उन्होंने कपिल मुनि को अपने आने का प्रयोजन बताया। प्रसन्न होकर कपिल ने अंशुमान् से वर माँगने के लिये कहा। अंशुमान् ने पहले तो यज्ञकार्य की सिद्धि के लिये वहाँ उस अश्व के लिये प्रार्थना की और दूसरा वर अपने पितरों को पवित्र करने की इच्छा से माँगा। महर्षि कपिल ने अंशुमान् को वह यज्ञिय अश्व प्रदान करते हुये कहा : 'तुम्हारा पौत्र शङ्कर को सन्तुष्ट करके सगरपुत्रों को पवित्र करने के लिये स्वर्गलोक से गङ्गा को ले आयेगा।' अंशुमान् उस अश्व को लेकर सगर के यज्ञमण्डप में आये और अपने पूर्वजों के विनाश का जो दृश्य देखा था उसे भी बताया। तदनन्तर अंशुमान् की प्रशंसा करते हुए सगर ने अपने यज्ञ को पूर्ण किया। देवताओं ने भी सगर का सत्कार किया। सगर ने वरुणालय को अपना पुत्र माना और दीर्घकाल तक शासन करने के पश्चात् अपने पौत्र, अंशुमान् को, राज्यभार सौंपकर स्वर्गलोक चले गये। अंशुमान् राज्य करने के पश्चात् अपने पुत्र दिलीप को राज्य सौंपकर परलोकवासी हुये। दिलीप ने गङ्गा को भूतल पर उतारने के लिये महान प्रयत्न किया परन्तु कोई फल नहीं हुआ। दिलीप को एक पुत्र हुआ जिसका नाम भगीरथ पड़ा। भगीरथ का राज्याभिषेक करने के पश्चात् दिलीप वन चले गये (३. १०७)।" "अपने पितरों के विनाश की कथा सुनकर भगीरथ ने अपने मन्त्री को अपना राज्य सौंप दिया और स्वयं हिमालय के शिखर पर तपस्या करने के लिये चले गये। भगीरथ ने फल-मूल, और जल का आहार करते हुये सहस्र वर्षों तक घोर तपस्या की। तदनन्तर गङ्गा ने साकार हो उन्हें दर्शन दिया। भगीरथ के निवेदन पर गङ्गा ने पृथिवी पर उतर कर सगर-पुत्रों की भस्मराशि को पवित्र करना स्वीकार कर लिया परन्तु भगीरथ से यह भी कहा कि वे तपस्या द्वारा शिव को प्रसन्न करें क्योंकि शिव के अतिरिक्त अन्य कोई उनके (गङ्गा के) स्वर्ग से गिरने के वेग को सहन नहीं कर सकेगा। गङ्गा का आदेश पाकर भगीरथ कैलास पर्वत पर जाकर शिव की आराधना करने लगे। कुछ समय के पश्चात् उन्होंने शिव को प्रसन्न करके उनसे गङ्गा के वेग को धारण करने का निवेदन किया (३. १०८)।" "भगीरथ की प्रार्थना सुनकर शिव, भाँति-भाँति के अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित अपने भयंकर पार्षदों से घिरे हुये हिमालय पर आये। तदनन्तर उन्होंने भगीरथ से गङ्गा को भूतल पर उतारने के लिये प्रार्थना करने का आदेश दिया। भगीरथ के प्रार्थना करने पर और शङ्कर को खड़ा देख पुण्यसलिला रमणीय गङ्गा सहसा आकाश से नीचे गिरीं। उन्हें गिरते देख दर्शन के लिये उत्सुक महर्षियों सहित देवता, गन्धर्व, नाग तथा यक्ष वहाँ उपस्थित हुए। आकाश की मेखलारूप गङ्गा को शिव ने अपने ललाट देश में पड़ी हुई मोतियों की माला की भाँति धारण कर लिया। नीचे गिरती हुई गङ्गा तीन धाराओं में बँट गईं। गङ्गा के कहने पर भगीरथ उनको मार्ग दिखाते हुये उस स्थान पर लाये जहाँ सगर-पुत्रों के शरीर पड़े थे। शिव भी गङ्गा को धारण करने के बाद देवताओं के साथ कैलास पर्वत पर चले गये। राजा भगीरथ ने गङ्गा के साथ समुद्रतट पर जाकर वरुणालय समुद्र को अत्यन्त वेग से भर दिया और गङ्गा को अपनी पुत्री बनाया। तदनन्तर उन्होंने पितरों के लिये जलदान किया और पितरों का उद्धार होते ही सफल-मनोरथ हो गये (३, १०९)।"

गङ्गासुत = स्कन्द : ३, २३२, १५।

गङ्गाह्रद, एक तीर्थ का नाम है। कुरुक्षेत्र की सीमा में स्थित यौवन-तीर्थ के अन्तर्गत गङ्गाह्रद नामक एक कूप है जिसमें तीन करोड़ तीर्थों का वास है। इसमें स्नान करनेवाला व्यक्ति स्वर्गलोक में जाता है (३. ८३, १७६. २०१; १३, २५, ३४)।

गङ्गोद्भेद, एक तीर्थ का नाम है जिसमें तीन रात उपवास-व्रत करनेवाला व्यक्ति वाजपेय यज्ञ का फल पाता है (३. ८४, ६५)।

१. **गज**, एक महापराक्रमी वानरराज का नाम है जो एक अरब सेना के साथ श्रीराम के पास आये थे (३. २८३, ३)।

२. **गज**, सुबलपुत्र शकुनि के छोटे भ्राता का नाम है जिसने अन्य भ्राताओं को साथ लेकर पाण्डव-सेना के दुर्जय व्यूह में प्रवेश किया था (६. ९०, २७–३०)। इरावान् ने इसका वध किया (६. ९०, ४५–४६)।

गजकर्ण, कुबेर की सभा में उपस्थित रहनेवाले उनके सेवक, एक यक्ष, का नाम है (२. १०, १६)।

गजपुर—हास्तिनपुर : १३. १६७, ६।

गजराज : ऐरावत : १२. २२७, १७।

गजशिरस्, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६०)।

गजसाह्वय = हास्तिनपुर : १. ४१, ९; ७४, १३; १०९, २४; ११३, १७. ३६. ४५; १२९, १; १३१, १६; २. ४७, १५; ८०, २८; ३. १, ९; ३३, ८५; ५. १७७, १०; १७८, ७९; १४. ५१, ५१; ५२, २; १५. १६, ३; २४, १८; ३६, १५; १७. १, २५।

गजहन् = शिव (१,००० नाम)।

गजाह्वय = हास्तिनपुर : २. ७९, १७; ८०, २१; ३. ६, १८; ५. १७६, ४८; १२. ५८, ३०; १४. १४, १७; १५. १५, १२; १८. ५, ३४।

गजेन्द्र = ऐरावत (?) : ९. २०, ९।

गजेन्द्रकर्ण, कुबेर की सेवा में उपस्थित रहनेवाले एक यक्ष का नाम है (२. १०, १६)।

१. गण = शिव (१,००० नाम)।

२. गण, सेनागणना का एक पारिभाषिक शब्द है : तीन गुल्मों का एक गण होता है (१. २, २१)।

गणकर्तृ = शिव (१,००० नाम)।

गणकार = शिव (१,००० नाम)।

गणनायक = गणेश : १. १, ७७।

गणा, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ३)।

गणाधिप = शिव (१,००० नाम)।

गणाध्यक्ष = शिव : १०. ७, ८; १२. २८४, १४७ (१,००० नाम)।

गणित, एक सनातन विश्वेदेव का नाम है जो काल की गति के ज्ञाता हैं (१३. ९१, ३६)।

१. गणेश = महाभारत को लिपिवद्ध करनेवाले विघ्नेश्वर भगवान गणनायक गणेश (१. १, ७४. ७५-७९. ८३)।

२. गणेश = शिव (१,००० नाम)।

गणेशान = १. गणेश : १. १. ७५।

गणेश्वर = विष्णु (१,००० नाम)।

गण्डक (बहु०), एक देश और उसके निवासियों का नाम है जिन्हें अपनी दिग्विजय के समय भीमसेन ने पराजित किया था (२. २९, ४)।

गण्डकण्डू, कुबेर की सेवा करनेवाले एक यक्ष का नाम है (२. १०, १५)।

गण्डकी, एक नदी का नाम है जो गङ्गा की सात धाराओं में से एक है। इसका जल पीनेवाले मनुष्य तत्काल पापरहित हो जाते हैं (१. १७०, २०-२१)। श्रीकृष्ण, अर्जुन और भीमसेन ने इन्द्रप्रस्थ से गिरिव्रज जाते समय इसे पार किया था (२. २०, २७)। गण्डकी नदी सब तीर्थों के जल से उत्पन्न है और यहाँ जाने से तीर्थयात्री अश्वमेध यज्ञ का फल पाता और सूर्यलोक में जाता है (३. ८४, ११३)। अग्नि की उत्पत्ति की स्थानभूता नदियों में गण्डकी (?) की भी गणना है (३. २२२, २२)। हिरण्यवती, अर्थात् गण्डकी, भारतवर्ष की प्रधान नदियों में से एक है (६. ९, २५)।

गण्डलिन् = शिव (१,००० नाम)।

गण्डसाह्वया, उन नदियों में से एक का नाम है जिन्हें अग्नि की उत्पत्ति का स्थान कहा गया है (३. २२२, २२)।

गण्डा, सप्तर्षियों की सेविका, एक दासी का नाम है जो शूद्र पशुसख की पत्नी थी (१३. ९३, २२)। इसने वृषादर्भि से प्रतिग्रह के दोष बता कर उससे भय प्रगट किया (१३. ९३, ५०)। इसने यातुधानी से अपने नाम का अभिप्राय बताया (१३. ९३, १०२)। इसने मृणाल की चोरी के विषय में शपथ खायी (१३. ९३, १३३. १३४)।

गतागत = शिव (१,००० नाम)।

गताध्वर = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

गति = शिव (१,००० नाम)।

गतितालिन्, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६७)।

गतिसत्तम = विष्णु (१,००० नाम)।

गद, श्रीकृष्ण के अनुज का नाम है जो द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुये थे (१. १८६, १७)। ये भी रैवत पर्वत के उत्सव में उपस्थित थे (१. २१९, १०)। अर्जुन और सुभद्रा के लिये दहेज ले कर ये द्वारका से इन्द्रप्रस्थ आये (१. २२१, ३२)। श्रीकृष्ण के द्वारका आने पर इन्होंने उनका स्वागत किया (२. २, ३५)। युधिष्ठिर के मयनिर्मित सभाभवन में प्रवेश करने के समय ये भी वहाँ उपस्थित थे (२. ४, ३०)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में ये भी पधारे थे (२. ३४, १६)। शाल्व के आक्रमण के विरुद्ध इन्होंने द्वारका नगरी की रक्षा-व्यवस्था में सहयोग दिया था (३. १५, ९)। 'गदाग्रजो दुराधर्षः''''''माधवः', (३. १८, १७)। 'गदसारणौ', (३. १८, २०)। अक्रूर और साम्ब के साथ-साथ ये भी युद्ध में पाण्डवों की सहायता करेंगे (३. ५१, २८)। 'गदोमुल्कौ', (३. १२०, १९)। 'गदाग्रजाय', (३. १८३, १४)। 'गदपूर्वजस्य', अर्थात् श्रीकृष्ण (५. २, १)। 'गदप्रद्युम्नसाम्बांश्च', (५. ३, १९)। 'गदसाम्बोद्धवादिभिः', (५. १५७, १७)। 'गदाग्रजः', (६. ४३, ८९)। 'गदश्च साम्बश्च', (७. ११, २७)। 'गदो वा सारणो वापि', (७. ११०, ६०)। इन्होंने श्रीकृष्ण के चक्र के लिये कभी भी प्रार्थना नहीं की (१०. १२, ३३)। 'सौकुमार्यं पुनर्गदे', (१२. ८१, ७)। १३. १४, ४२; १४. ६६, ३; ८६, ५ (युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ में आये); १६. ३, १६. ४५ (मौसल युद्ध में गद को मारा गया देख कर विरोधियों पर श्रीकृष्ण को अत्यन्त क्रोध हुआ)।

गदपूर्वज = कृष्ण : ५. २, १।

१. गदाग्रज = कृष्ण (देखिये वस्था०)।

२. गदाग्रज = विष्णु (१,००० नाम)।

१. गदाधर = विष्णु (१,००० नाम)।

२. गदाधर = कुबेर : ६. ५०, ७।

गदापर्वन्, से गदायुद्धपर्व का तात्पर्य है (१८. ६, ६६)।

गदायुद्ध, से भी गदायुद्धपर्व के गदायुद्ध का तात्पर्य है (१. २, ७१)।

गदा[युद्ध]पर्वन्, शल्यपर्वान्तर्गत तीसरे अवान्तर पर्व का नाम है जिसमें गदायुद्ध का वर्णन किया गया है। "जब पाण्डुपुत्रों ने समराङ्गण में समस्त सेनाओं का संहार कर डाला तो अत्यन्त खिन्न होकर अश्वत्थामा, कृतवर्मा, और कृपाचार्य उस सरोवर के पास गये जहाँ दुर्योधन छिपा था। वहाँ उन लोगों ने युद्ध करने के विषय में दुर्योधन से बातचीत की। इसी समय व्याधों को दुर्योधन के छिपने के स्थान का पता लग गया और उन्होंने पाण्डवों को इसकी सूचना दी। पता पा कर युधिष्ठिर सेना सहित उस सरोवर पर आये। उन्हें देख कर कृपाचार्य आदि दूर हट गये (९. ३०)।" "पाण्डव उस द्वैपायन सरोवर पर आये जहाँ दुर्योधन छिपा था। वहाँ युधिष्ठिर और श्रीकृष्ण का, और तालाब में छिपे दुर्योधन के साथ युधिष्ठिर का संवाद हुआ (९. ३१)।" "युधिष्ठिर ने दुर्योधन से कहा कि वह सरोवर से बाहर निकल कर किसी एक पाण्डव के साथ गदायुद्ध के लिये तैयार हो। धृतराष्ट्र के पूछने पर संजय ने बताया कि दुर्योधन एक बार में अपने किसी एक विपक्षी के साथ युद्ध करने के लिये तैयार हो गया। युधिष्ठिर ने उसकी यह प्रार्थना स्वीकार करते हुये कहा कि यदि वह पाँच पाण्डवों में से किसी एक का भी वध कर देगा तो वह राजा बना रहेगा। तदनन्तर दुर्योधन ने सरोवर से बाहर निकल कर पाण्डवों को ललकारा। उस समय युधिष्ठिर ने उस पर अभिमन्यु को छल से मारने का व्यङ्ग किया (९. ३२)।" "श्रीकृष्ण ने इस प्रकार एकमात्र द्वन्द्वयुद्ध के दाँव पर ही सब कुछ लगा देने की जल्दीबाज़ी पर युधिष्ठिर की भर्त्सना की। भीम ने श्रीकृष्ण को आश्वासन दिया कि दुर्योधन गदायुद्ध में उनकी समता नहीं कर सकता। श्रीकृष्ण ने भीम की प्रशंसा करते हुये उन्हें दुर्योधन के साथ युद्ध करने तथा उसका वध कर देने के लिये प्रोत्साहित किया। सात्यकि ने भी भीमसेन की प्रशंसा की। भीमसेन ने दुर्योधन और युधिष्ठिर के समक्ष गर्वोक्ति की। दुर्योधन ने इसके विपरीत अत्यन्त मर्यादित उत्तर दिया जिस पर पाण्डवों तथा सृञ्जयों ने उसकी प्रशंसा की। उस समय हाथी चिग्घाड़ने और घोड़े हिनहिनाने लगे। पाण्डवों के शस्त्र भी अपनी ज्योति से प्रदीप्त हो उठे (९. ३३)।" "भीमसेन और दुर्योधन का गदायुद्ध जब आरम्भ होने ही को था कि बलराम जी अपने दो शिष्यों के बीच युद्ध होने के समाचार को सुनकर वहाँ उपस्थित हुये। पाण्डवों और श्रीकृष्ण आदि ने बलराम का पूजन किया। बलराम जी ने कहा : 'तीर्थयात्रा के लिये निकले हुये मुझे आज बयालीस दिन हो गये। मैं पुष्य नक्षत्र में चला था और श्रवण नक्षत्र में पुनः वापस आया हूँ। मैं अपने दोनों शिष्यों का गदायुद्ध देखना चाहता

हूँ।' तदनन्तर वहाँ उपस्थित पाण्डवों और श्रीकृष्ण आदि ने बलराम का पूजनादि करके उन्हें गदायुद्ध देखने के लिये निमन्त्रित किया। उन लोगों के आग्रह पर बलराम वहाँ राजाओं के बीच बैठ गये। उस समय नीलाम्बर-धारी गौर कान्तिवाले बलराम आकाश में नक्षत्रों से घिरे चन्द्रमा की भाँति सुशोभित हो रहे थे (९. ३४)।" "जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन ने बताया कि बलराम जी तीर्थयात्रा के लिये निकल गये और यह कहा कि वे न तो पाण्डवों की सहायता करेंगे और न कौरवों की। बलराम ने मार्ग में ही रह कर अपने सेवकों को द्वारका जाकर वहाँ से तीर्थयात्रा में काम आनेवाली वस्तुयें, अग्निहोत्र की अग्नि तथा पुरोहितों आदि को ले आने के लिये कहा। तदनन्तर वे कुरुक्षेत्र से सरस्वती के स्रोत की ओर तीर्थयात्रा के लिये चल पड़े। उनके साथ ऋत्विज, सुहृद, अन्यान्य श्रेष्ठ ब्राह्मण, रथ, हाथी, घोड़े और सेवक, सभी थे। वे मार्ग में विभिन्न देशों के लोगों को उनकी मनोवाञ्छित वस्तुयें तथा निर्धनों को भोजन आदि देते चलते थे। तीर्थयात्रा समाप्त करने के बाद वे पुनः कुरुक्षेत्र आये। जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन ने बलदेवतीर्थयात्रा (देखिये वस्था०) का वर्णन किया (९. ३५-५४)।" "धृतराष्ट्र के पूछने पर संजय ने कहा :- बलराम को देख कर दुर्योधन अत्यन्त प्रसन्न हुआ। बलराम के प्रस्ताव पर युधिष्ठिर आदि पाण्डव और दुर्योधन सरस्वती के दक्षिण स्थित समन्तपञ्चक आये। देवताओं, और चारणों ने दुर्योधन को साधुवाद दिया—दुर्योधन और भीमसेन का वर्णन। तदनन्तर दुर्योधन ने अतिपराक्रमी बलराम, श्रीकृष्ण, पाञ्चाल, सृञ्जय, केकयगण, तथा अपने भ्राताओं के साथ खड़े युधिष्ठिर से कहा कि वे सब लोग अब उसका और भीमसेन का गदायुद्ध देखें। दुर्योधन की बात सुनकर वहाँ उपस्थित सभी राजा बैठ गये और उनके बीच श्रीकृष्ण तथा नीलाम्बरधारी श्वेतकान्ति वाले बलराम भी बैठे। दुर्योधन और भीमसेन गदा हाथ में लेकर एक दूसरे के सम्मुख डट गये (९. ५५)।" "उस समय दुर्योधन के लिये अनेक अपशकुन प्रगट हुये। भीमसेन अत्यन्त उत्साह में भरे थे। भीम का दुर्योधन के साथ पहले वाग्युद्ध हुआ जिसमें दुर्योधन ने व्यर्थ गर्वोक्तियाँ करने की अपेक्षा युद्ध करने का आह्वान किया। सोमकों आदि ने दुर्योधन की प्रशंसा की। दुर्योधन की बात सुनकर भीमसेन ने गदा हाथ में लेकर युद्ध आरम्भ किया। उस समय हाथी बारंबार चिग्घाड़ने लगे, घोड़े हिनहिनाने लगे, तथा पाण्डवों के अस्त्र-शस्त्र प्रदीप्त हो उठे (९. ५६)।" "दुर्योधन और भीमसेन के गदायुद्ध का वर्णन : उसे देखकर देव, गन्धर्व, और मनुष्य चकित हो रहे थे। पाण्डव और सोमक भी भयभीत थे। युद्ध में दुर्योधन ने कौशिक मार्गों का आश्रय लेकर बार-बार उछल कर भीमसेन को धोखा देते हुये उनके वक्षस्थल पर प्रहार किया जिससे भीम मूर्च्छित हो गये। तदनन्तर उठ कर भीमसेन ने भी दुर्योधन की पसलियों पर प्रहार किया जिससे वह भूमि पर गिर पड़ा। उस समय सृञ्जय और पाण्डवगण हर्षनाद करने लगे। दुर्योधन ने भी शक्ति बटोर कर भीमसेन पर प्रहार किया जिससे उनका कवच छिन्न-भिन्न हो गया और वे भूमि पर गिर पड़े। दो घड़ी में पुनः चैतना लौटने पर भीमसेन रक्त से रंजित हुये अपने मुख को पोंछते हुये उठे और बलपूर्वक अपने को संभाल कर धैर्यपूर्वक पुनः युद्ध के लिये सन्नद्ध हो गये (९. ५७)।" "अर्जुन के पूछने पर दुर्योधन तथा भीमसेन के बलाबल के सम्बन्ध में श्रीकृष्ण ने बताया—'दोनों की शिक्षा समान है, परन्तु बल में भीमसेन श्रेष्ठ हैं। दुर्योधन कौशल में चतुर है और उसका अभ्यास भी श्रेष्ठ है। धर्मयुद्ध में भीम उसे कभी पराजित नहीं कर सकते परन्तु छल का आश्रय लेने पर वे उसका उसी प्रकार वध कर देंगे जैसे देवताओं ने असुरों का तथा इन्द्र ने विरोचन और वृत्रासुर का वध कर दिया था। भीम ने दुर्योधन की जाँघे तोड़ देने की प्रतिज्ञा की थी। अतः आज वे अपनी उसी प्रतिज्ञा का पालन करते हुये मायावी दुर्योधन को माया से ही नष्ट कर डालें।' श्रीकृष्ण का यह वचन सुन कर अर्जुन ने भीमसेन को दिखाते हुये अपनी बायीं जाँघ को ठोंका। भीमसेन ने अर्जुन के संकेत को समझ लिया। स्थान नामक पैंतरे का आश्रय लेकर दुर्योधन ज्योंही ऊपर उछला, भीमसेन ने अपनी गदा से उसकी जाँघ पर प्रहार किया जिससे वह टूट गई। दुर्योधन के भूमि पर गिरते ही वहाँ बिजली की गड़गड़ाहट के साथ प्रचण्ड हवा चलने लगी, धूल की वर्षा होने लगी, और वृक्षों, वनों, एवं पर्वतों सहित पृथिवी काँपने लगी। इन्द्र ने आकाश से धूल एवं रक्त की वर्षा की। आकाश में यक्षों, राक्षसों, तथा पिशाचों का कोलाहल व्याप्त हो गया—अन्य अपशकुनों का वर्णन। इन अद्भुत उत्पातों को देख कर पाण्डवों सहित समस्त पाञ्चाल मन-ही-मन अत्यन्त उद्विग्न हो उठे। देवता, गन्धर्व, और अप्सराओं के समूह उस अद्भुत युद्ध की चर्चा करते हुये अपने-अपने अभीष्ट स्थानों को चले गये (९. ५८)।" "उस समय पाण्डव तथा सोमकगण अत्यन्त हर्षित हुये। भीमसेन ने दुर्योधन के कुकृत्यों की चर्चा करते हुये अपने बायें पैर से उसके मस्तक में ठोकर मारी और उसे छली तथा कपटी कहा। भीम के इस कार्य की श्रेष्ठ और धर्मात्मा सोमकों ने निन्दा की। युधिष्ठिर ने भी भीमसेन की इसके लिये निन्दा की और दुर्योधन के लिये विलाप करने लगे (९. ५९)।" "दुर्योधन पर नाभि के नीचे प्रहार हुआ देख कर भीमसेन पर बलराम अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे और उनका वध कर देने के लिये उद्यत हुये। उस समय श्रीकृष्ण ने बलराम को समझा कर शान्त किया। बलराम (बलदेव) ने दुर्योधन की प्रशंसा करते हुये भीमसेन को शाप दिया और अपने रथ पर बैठ कर द्वारका चले गये। पाञ्चालादि भी अत्यन्त खिन्न हो गये थे। श्रीकृष्ण, युधिष्ठिर, भीमसेन, इत्यादि ने दुर्योधन के साथ विगत घटनाओं के सम्बन्ध में वार्तालाप किया (९. ६०)।" "पाण्डव सैनिकों ने भीमसेन की अत्यन्त प्रशंसा की। श्रीकृष्ण ने दुर्योधन के कुकृत्यों का उल्लेख करते हुये उस पर और अधिक आक्षेप करना निरर्थक बताया। 'श्रीकृष्ण की बात सुनकर क्रुद्ध दुर्योधन ने युद्ध में किये गये श्रीकृष्ण के कपट-व्यवहारों का उल्लेख किया। श्रीकृष्ण ने भी दुर्योधन को उसके कुकृत्यों का स्मरण दिलाते हुये बताया कि उन्हीं पापकर्मों के कारण उसका यह दुःखद अन्त हुआ है। दुर्योधन ने अपनी मृत्यु के सम्बन्ध में गर्वोक्ति करते हुए उसे अत्यन्त गौरवपूर्ण बताया। उस समय दुर्योधन के मस्तक पर पुष्पों की वर्षा हुई और गन्धर्वों, अप्सराओं, तथा सिद्धों ने उसकी स्तुति की। पाण्डव और श्रीकृष्ण अपने वचनों पर लज्जित हुये। कौरव योद्धाओं के वध के लिये अपनाये गए कपट-व्यवहारों का श्रीकृष्ण ने समर्थन किया (९. ६१)।" "पाण्डवगण तब कौरव-शिविर में आये जो सूना और शोभाहीन हो रहा था। श्रीकृष्ण ने अर्जुन को अपना गाण्डीव और अक्षय तरकस लेकर रथ से उतरने के लिये कहा। तदनन्तर श्रीकृष्ण भी रथ से उतर गये जिसके बाद रथ के ध्वज पर बैठा वानर अन्तर्धान और रथ भी अश्वों आदि सहित अग्नि में भस्म हो गया, क्योंकि वह कर्ण और द्रोणाचार्य के ब्रह्मास्त्रों के तेज से पहले ही दग्ध था, परन्तु श्रीकृष्ण के आसीन होने के कारण भस्म नहीं हुआ था। श्रीकृष्ण के रथ से उतरते ही वह अश्वों आदि सहित जलकर राख हो गया। श्रीकृष्ण ने युद्ध में विजय के लिये युधिष्ठिर को बधाई दी, परन्तु युधिष्ठिर ने इसका सारा श्रेय श्रीकृष्ण को ही दिया। पाण्डवों को कौरव-शिविर में प्रचुर सम्पत्ति मिली। श्रीकृष्ण के परामर्श पर पाण्डव तथा सात्यकि रात भर शिविर के बाहर ओघवती नदी के तट पर ही रहे। तदनन्तर उन लोगों ने गान्धारी के क्रोध को शान्त करने तथा धृतराष्ट्र को सान्त्वना देने के लिये श्रीकृष्ण को हस्तिनापुर भेजा। श्रीकृष्ण दारुक को रथ पर बैठा कर स्वयं भी उस पर बैठे और धृतराष्ट्र के पास चल पड़े। उनके रथ में शैब्य और सुग्रीव नामक अश्व सन्नद्ध थे (९. ६२)।" "जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन ने बताया कि युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण को हस्तिनापुर इस लिये भेजा क्योंकि उन्हें भय था कि दुर्योधन को छलपूर्वक मारने के कारण अपनी तपस्या के प्रभाव से गान्धारी कहीं समस्त पाण्डवों को शाप से भस्मीभूत न कर दें। जब श्रीकृष्ण हस्तिनापुर पहुँचे तो उनके पहले ही व्यास वहाँ पहुँच चुके थे। उन्होंने धृतराष्ट्र और गान्धारी को सान्त्वना दी। धृतराष्ट्र ने अपने चित्त के शान्त हो जाने का उन्हें आश्वासन दिया। तदनन्तर श्रीकृष्ण ने अश्वत्थामा के मन में जो भीषण संकल्प हुआ था उसका स्मरण किया।

वे सहसा उठकर खड़े हो गये और धृतराष्ट्र से विदा माँगी। धृतराष्ट्र ने श्रीकृष्ण को विदा करते हुये कहा: 'आप शीघ्र जाकर पाण्डवों की रक्षा कीजिये।' श्रीकृष्ण ने पाण्डवों के पास लौट कर उन्हें समस्त वृत्तान्त बताया और उन्हीं के साथ सावधान होकर रहे (९. ६३)।" "धृतराष्ट्र के पूछने पर संजय ने युद्ध भूमि में जाँघ टूट जाने से आहत पड़े दुर्योधन के विलापों का वर्णन किया। दुर्योधन का संदेश सुनाते हुये संजय ने कहा: 'उसने कहा है कि मेरे माता-पिता युद्ध-धर्म के ज्ञाता हैं। वे दोनों मेरी मृत्यु के समाचार से आतुर हो जायँगे। उन्हें सान्त्वना देते हुये कहियेगा कि मेरे समान सुन्दर अन्त किसका हुआ होगा। भीमसेन ने गदायुद्ध की मर्यादा का उल्लङ्घन करके मुझे मारा है। यह बात आप अश्वत्थामा, कृतवर्मा तथा कृपाचार्य को भी बता दें। पाण्डवों ने अधर्म में प्रवृत्त होकर अनेक वार युद्ध की मर्यादा को भङ्ग किया है, अतः आप लोग कभी भी उनका विश्वास न करें।' संजय ने बताया कि इसके बाद दुर्योधन ने संदेशवाहक दूतों को संदेश दिया। दुर्योधन का विलाप सुनकर सहस्रों मनुष्यों की आँखों में आँसू भर आये और वे दसों दिशाओं में भाग चले। उस समय समस्त दिशायें मलिन हो गईं और पृथिवी काँपने लगी। उन संदेशवाहकों ने आकर अश्वत्थामा को दुर्योधन का संदेश सुनाया और फिर अपने-अपने स्थान को चले गये (९. ६४)।" "अश्वत्थामा इत्यादि तब उस स्थान पर आये जहाँ आहत दुर्योधन पड़ा था। उसे चारों ओर से मांसभक्षी भूतों ने घेर रक्खा था। उसकी दशा देखकर अश्वत्थामा अत्यन्त विषादग्रस्त हो गये। दुर्योधन ने भी अपनी दशा का वर्णन करते हुए विलाप किया। अश्वत्थामा ने यह प्रतिज्ञा की कि वे सम्पूर्ण पाञ्चालों का वध कर डालेंगे। दुर्योधन ने अश्वत्थामा की बात सुनकर कृपाचार्य से जल मँगवाया और उससे अश्वत्थामा का कौरव सेनापति के रूप में अभिषेक किया। तदनन्तर दुर्योधन को वहीं छोड़कर अश्वत्थामा आदि लौट आये (९. ६५)।"

गदावसान, मथुरा के एक स्थान का नाम है। श्रीकृष्ण के द्वारा अपने जामाता कंस के मारे जाने पर अत्यन्त कुपित हो मगधराज जरासंध ने श्रीकृष्ण को मारने की दृष्टि से निन्यानबे बार अपनी गदा घुमाकर गिरिव्रज से मथुरा की ओर फेंका। वह गदा निन्यानबे योजन दूर मथुरा में गिरी। जिस स्थान पर वह गदा गिरी उसीका नाम गदावसान पड़ा (२. १९, २२-२५)।

गदिन् = शिव (१,००० नाम)।

१. गन्ध = 'रूपंरसो गन्धश्च', (२. ११, २१)।

२. गन्ध = शिव (१,००० नाम)।

गन्धकाली, सत्यवती का दूसरा नाम है। भीष्म ने अपने पिता का प्रिय करने की इच्छा से उनका गन्धकाली से विवाह कराया (१. ९५, ४८)।

गन्धधारिन् = शिव (१,००० नाम)।

गन्धपाः, देवों के एक वर्ग का नाम है (१३. १८; ७५)।

गन्धपालिन् = शिव (१,००० नाम)।

१. गन्धमादन, एक पर्वत का नाम है (१. २, १७६. १७७. १८७)। यहीं कश्यप ने तपस्या की (१. ३०, ९)। यहीं शेष ने तपस्या की (१. ३६, ३)। हिमवत् पर्वत को पार करके पाण्डु इस पर्वत पर आये (१. ११९, ४८)। उन मूर्तिमान पर्वतों में से एक जो कुबेर की सभा में उपस्थित रहता था (२. १०, ३२)। श्रीकृष्ण ने १०,००० वर्षों तक इस पर्वत पर निवास किया था (३. १२, ११)। इन्द्रलोक जाते समय अर्जुन ने हिमवत तथा इस पर्वत को पार किया था (३. ३७, ४१)। पाण्डवगण इस पर्वत की ओर चल पड़े (३. १४०, २२)। "युधिष्ठिर ने बताया कि यह वही पर्वत है जहाँ विशाल बदरी और नरनारायण का आश्रम है। इस पर यक्षगण निवास करते हैं। इसके क्षेत्र में सवारी से नहीं जाया जा सकता। जो क्रूर, लोभी और अशान्त हैं वे भी इस स्थान पर नहीं पहुँच सकते। जो अपने मन तथा इन्द्रियों पर संयम नहीं रखता उस मनुष्य को यहाँ आने पर मक्खी, मच्छर, सिंह, व्याघ्र, तथा सर्पों आदि का सामना करना पड़ता है। परन्तु जो संयमी होता है उसे इन जीवों का दर्शन तक नहीं होता। अतः हम लोग भी अर्जुन को देखने की इच्छा से अपने मन को संयम में रखकर गन्धमादन पर्वतमालाओं में प्रवेश करेंगे (३. १४१, २२-२८)।" इस पर्वत पर ऋषि, सिद्ध, देवता, गन्धर्व, अप्सरायें और किन्नर निवास करते हैं (३. १४३, २-७)। 'पाञ्चाल्या गच्छेयं गन्धमादनम्', (३. १४५, २)। यह पर्वत किन्नरों, यक्षों, गन्धर्वों, देवों, ब्रह्मर्षियों तथा अप्सराओं से सेवित है, और यहीं भीमसेन हनुमान से मिले थे (३. १४६, १६. २०. ३१. ५०)। इसी के निकट भीमसेन ने क्रोधवशों का वध किया था (३. १५२, १)। 'गन्धमादनसानुषु', (३. १५५, ३४)। ३. १५८, १७. १९ (वृषपर्वा का आश्रम इसी के निकट हिमवत के ढालों पर स्थित था). ३८-४० (वर्णन). ४८. ५९, ७७. ८०. ८५; १५९, २९; १६०, २. ४२ (भीम ने यहीं मणिमत् आदि का वध किया था); १६१, २९; १६४, २० (अर्जुन इन्द्रलोक से यहीं आये); १७४, १०; १८८, ११३ (मार्कण्डेय ने इसे भी नारायण के उदर में देखा); २४४, ९; २७५, १३ (यहीं विश्रवस् का निवास था). ३३७ (लङ्का का साम्राज्य छिन जाने पर कुबेर इसी पर्वत पर निवास करने लगे); २८३, ५। 'कृष्णायां चरता प्रीतिं येन क्रोधवशा हताः। प्रविश्य विषमं घोरं पर्वतं गन्धमादनम् ॥', (५. ५०, २४)। 'कुञ्जभूतं गिरिं सर्वमभितो गन्धमादनम्। दीप्यमानौषधिगणं सिद्धगन्धर्वसेवितम् ॥', (५. ६४, १७)। नर और नारायण ने इसी पर्वत पर तपस्या की थी (५. ९६, १५)। 'किंपुरुषसिंहस्य गन्धमादनवासिनः', (५. १५८, ३)। 'आरुरुक्षुर्यथा मन्दः पर्वतं गन्धमादनम्', (५. १६०, ९४; १६१, १२)। 'परं माल्यवतः पर्वतो गन्धमादनः', (६. ६, ९)। "गन्धमादन पर्वत के शिखरों पर गुह्यकों के स्वामी कुबेर राक्षसों के साथ रहते और अप्सराओं के समुदायों के साथ आमोद-प्रमोद करते हैं। इस पर्वत के अन्यान्य पार्श्ववर्ती पर्वतों पर दूसरी-दूसरी नदियाँ हैं, जहाँ निवास करने वाले लोगों की आयु ११,००० वर्ष होती है। यहाँ के पुरुष हृष्ट-पुष्ट, तेजस्वी, और महाबली होते हैं। यहाँ की सभी स्त्रियाँ कमल के समान कान्तिवाली और देखने में अत्यन्त मनोरम होती हैं (६. ६, ३४-३६)।" देवों, ऋषियों इत्यादि ने यहीं पितामह की स्तुति की थी (६. ६५, ४२)। 'आशीविषा इव क्रुद्धाः पर्वते गन्धमादने', (६. ९२, ४)। 'महामेघो यथा वर्षं विमुञ्चन्गन्धमादने', (७. १२५, ६)। 'गन्धमादनयात्रायां दुर्गेभ्यश्च स्म तारिताः। पाञ्चाली च परिश्रान्ता पृष्ठेनोढा महात्मना ॥', (७. १८३, ३१)। 'त्रिपुर पर आक्रमण करते समय शिव ने गन्धमादन और विन्ध्यपर्वतों को अपना वंशध्वज बनाया (७. २०२, ७१)। यह गुह्यकों द्वारा रक्षित था (८. ४५, ३३)। राम ने यहीं तपस्या द्वारा महादेव को संतुष्ट किया था (१२. ४९, ३३)। 'महामेरोर्गिरेः शृङ्गात्प्रच्युतो गन्धमादनम्' (१२. ३३४, १३)। नर-नारायण ने यहीं तपस्या की थी (१२. ३४२, १०८; ३४३, ३३)। यह उत्तर में स्थित है (१३. २१, १५)। 'गन्धमादनसन्निधौ', (१३. २५, ११)। सनत्कुमार आदि यहीं निवास करते हैं (१३. १४७, ४४)। 'पर्वतो गन्धमादनः', (१३. १६५, ३२)।

२. गन्धमादन, एक वानर-प्रमुख का नाम है जो गन्धमादन पर्वत पर निवास करता था। यह दस खरब सेना लेकर श्रीराम के पास आया (३. २८३, ५)।

३. गन्धमादन = रावण (?): 'राक्षसाधिपतिश्चैव महेन्द्रो गन्धमादनः', (२. १०, ३०)।

गन्धमादन-प्रवेश—'युधिष्ठिर ने भीम से कहा कि वह सहदेव, धौम्य, सारथि, रसोइयों, सेवकों, आदि को लेकर गङ्गाद्वार लौट जाँय और नकुल, तथा लोमश ही उनके साथ आगे गन्धमादन क्षेत्र की ओर जाँय। परन्तु भीम लौटने के लिये तैयार नहीं हुये। द्रौपदी ने भी कहा कि वह मार्ग के कष्टों का सहन करने की क्षमता रखती है, अतः वह लौटेगी नहीं। भीमादि की इस प्रकार उत्साहपूर्ण बातों को सुनकर अन्ततोगत्वा युधिष्ठिर सबके साथ आगे बढ़े। कुछ दूर जाने पर उन लोगों को कुलिन्दराज सुबाहु

का राज्य दिखाई पड़ा। उस राज्य में किरातों, तङ्गणों, एवं कुलिन्द आदि जंगली जातियों का निवास था। सुबाहु ने पाण्डवों का स्वागत किया। दूसरे दिन प्रातःकाल इन्द्रसेन आदि सेवकों, रसोइयों, और द्रौपदी के सारे सामानों को सुबाहु को सौंपकर पाण्डवगण द्रौपदी के साथ गन्धमादन की ओर अग्रसर हुये (३. १४०)।" "युधिष्ठिर ने भीम से कहा कि पाँच वर्षों से अर्जुन को न देख पाने के कारण वह अत्यन्त चिन्तित हैं। अर्जुन के गुणों का वर्णन करते हुये युधिष्ठिर ने कहा कि वे लोग दृढ़व्रती ब्राह्मणों के साथ अब गन्धमादन क्षेत्र में प्रवेश करेंगे (३. १४१)।" "जब पाण्डवगण मन्दराचल पर्वत की ओर चलने को उद्यत हुये तब लोमश जी के कहने पर सबने गङ्गा की वन्दना की। तदनन्तर ऋषियों आदि के साथ आगे बढ़ने पर सबने एक श्वेत पर्वत के समान पड़ी नरकासुर की अस्थियों को देखा। लोमश ने नरकासुर के वध और भगवान् वाराह द्वारा वसुधा के उद्धार की कथा सुनाया (३. १४२)।" "पाण्डवों ने ब्राह्मणों आदि के साथ ज्योंही गन्धमादन क्षेत्र में प्रवेश किया, त्योंही प्रबल आँधी चलने लगी। उसके बाद ही बिजली की गरज और भीषण वर्षा आरम्भ हुई। उस समय सबने वृक्षों आदि के नीचे शरण ली। सहदेव अग्निहोत्र की अग्नि ले कर चल रहे थे। आँधी-पानी के समाप्त होने पर जब पुनः सूर्य प्रगट हुआ तब सब आगे की यात्रा के लिये चले (३. १४३)।" "अभी सब लोग एक ही कोस चले थे कि द्रौपदी को मूर्च्छा आ गई। नकुल ने दौड़ कर उन्हें सहारा दिया। अन्य लोग भी वहाँ आ गये। द्रौपदी को अपनी गोद में लेकर युधिष्ठिर विलाप करने लगे। धौम्य आदि ब्राह्मणों ने युधिष्ठिर को सान्त्वना दी और तत्पश्चात् वे राक्षसों का विनाश करनेवाले मन्त्रों का जप तथा शान्तिकर्म करने लगे। महर्षियों द्वारा शान्ति के लिये मन्त्रपाठ होते समय पाण्डवों ने अपने शीतल हाथों से बार-बार द्रौपदी के अङ्गों को सहलाया। इस प्रकार उपचार से द्रौपदी की चेतना लौट आई। तब पाण्डवों ने उन्हें मृगचर्म पर सुलाया। उस समय नकुल और सहदेव अपने हाथों से उनका पैर दबाने लगे। युधिष्ठिर ने द्रौपदी को आश्वासन दिया। भीम ने कहा कि वहाँ ऊँचे-नीचे पर्वतीय प्रदेश में वे अकेले ही अन्य पाण्डवों तथा द्रौपदी को उठाकर ले चलेंगे। उन्होंने यह भी कहा कि घटोत्कच भी सबको अपनी पीठ पर बैठाकर ले चलेगा। युधिष्ठिर के कहने पर भीम ने घटोत्कच का स्मरण किया। पिता के स्मरण करते ही धर्मात्मा घटोत्कच हाथ जोड़े हुये वहाँ उपस्थित हुआ और अपने योग्य कार्य की आज्ञा माँगी। भीमसेन ने उसे अपने हृदय से लगा लिया (३. १४४)।" "घटोत्कच ने द्रौपदी को अपनी पीठ पर बैठाया तथा सैकड़ों अन्य राक्षस पाण्डवों और ब्राह्मणों को लेकर आकाश मार्ग से चलने लगे। उस समय महर्षि लोमश अपने ही प्रभाव से दूसरे सूर्य की भाँति सिद्ध मार्ग, अर्थात् आकाशमार्ग से चल रहे थे। इस यात्रा में सब ने म्लेच्छों से भरे हुये ऐसे देश देखे जो विविध प्रकार के रत्नों की खानों से भरे थे। उन पर्वत-शिखरों पर अनेक विद्याधर, वानर, किन्नर, किम्पुरुष, और गन्धर्व चारों ओर निवास करते थे। पाण्डवों ने उत्तम समृद्धि से सम्पन्न अनेक देशों को लाँघकर कैलास का दर्शन किया। उसी के निकट नर-नारायण का आश्रम था। वहीं मनोरम बदरी भी दिखाई पड़ा। उस बदरी वृक्ष के निकट पहुँच कर पाण्डव तथा ब्राह्मण राक्षसों के कन्धों से उतर गये। उस स्थान की शोभा अनुपम (वर्णन) थी। पाण्डव उस अत्यन्त दुर्गम देवर्षिसेवित प्रदेश में प्रतिदिन तर्पण और जप आदि करते हुये निवास करने लगे (३. १४५)।"

१. गन्धर्व (बहु °र्वाः), दिव्य गायकों और वादकों का नाम है। महाभारत के १४ लाख श्लोकों का गन्धर्वों के लोक में पाठ होता है (१. १, १०६)। श्रीशुकदेव जी ने गन्धर्वों, यक्षों तथा राक्षसों को महाभारत की कथा सुनाया (१. १, १०८)। 'बन्धं गन्धर्वैर्मोक्षणं चार्जुनेन', (१. १, १६७)। १. २, ९४. १९५; ४, ५ (मनुष्योरगगन्धर्वकथावेद); १७, ६ (मेरुं…देवगन्धर्वसेवितम्); २७, ८ (गन्धर्वाप्सरसां प्रियम्); ३१, ५; ३२, १६ (साध्याः प्राचीं सगन्धर्वा); ६३, ३४ (ये वसु उपरिचर की उपासना करते थे); ६४, ४१ (ये ब्रह्मा की वन्दना करते हैं). ४९ इन्होंने भी मनुष्यों में जन्म लिया); ६५, ५–७. ५१ (प्राधा के चार गन्धर्व-पुत्रों की गणना). ५२ (अमृतं ब्राह्मणा गावो गन्धर्वाप्सरसस्तथा). ५३ (संभवः…गन्धर्वाप्सरसां तथा); ६७, १ (गन्धर्वोरगरक्षसाम…सम्भवः). १४६ (गन्धर्वोरगरक्षसाम). १६१ (गन्धर्वाप्सरसां…अंशावतरणं). १६४ (अंशावतरणं श्रुत्वा देवगन्धर्वरक्षसाम); ६८, १ (अंशावतरणं…गन्धर्वाप्सरसां); ७०, १५ (गन्धर्वाप्सरसां गणैः); ७५, २७ (गन्धर्वोरगराक्षसान्); ८८, २. ४; १११, ३०; १२०, ११ (आक्रीडभूमि देवानां गन्धर्वाप्सरसां तथा); १२३, ५० (अर्जुन के जन्मोत्सव के समय ये भी उपस्थित हुये). ५२. ५४; १३९, २० (त्रिवर्षकृतयज्ञस्तु गन्धर्वाणामुपप्लवे…सौवीरः); १५२, ३५; १७०, ९ (मुहूर्तं…विहितं कामचाराणां यक्षगन्धर्वरक्षसाम्). ४८ (°जानामश्वानाम्). ४९ (देवगन्धर्ववाहास्ते). ५४ (गन्धर्वजाः…हयाः). ६१ (यक्षराक्षसगन्धर्वाः); १७३, ३३ (गिरिश्रेष्ठे देवगन्धर्वसेविते); १८७, ७ विश्वावसुर्नारदपर्वतौ च गन्धर्वमुख्याः). १३ (देवर्षिगन्धर्वसमाकुलम्); २१२, २ (देवगन्धर्वयक्षाणां… …सर्वरत्नानि); २१९, ७. ८. १२; २२५, ९ (देवदानवगन्धर्वैः पूजितम्); २२७, २४; २२८, २१; २. ४, ३७ (चित्रसेन के साथ ये भी युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित थे); ५, १ (युधिष्ठिर की सभा में इनकी उपस्थिति); ७, २४ (इन्द्र की सभा में); ८, ३८ (यम की सभा में); ९, २६ (वरुण की सभा में). १०, ९ (कुबेर की सभा में) १३. १४. २०. २५. २७. ३०; ११, २८ (ब्रह्मा की सभा में). ५६; १२, ३ (कुबेर की सभा में). ५ (इन्द्र की सभा में); २८, ५ (उत्तर में अर्जुन ने इन्हें विजित किया); ३. ३, ४० (ये भी सूर्य के रथ के पीछे-पीछे चले); २४, ७; ३१, २९; ४२, १३ (ये इन्द्र के साथ गये); ४३, ९ (इन्द्रलोक में). १०. २८ (गन्धर्वास्तुम्बुरुश्रेष्ठाः); ४४, १; ४६, १४. २७; ८२, २२. ९४; ८३, ६; ८४, ५. ४६; ८५, २६ (गोकर्ण में). ७२ (प्रयाग में); ९०, २०; ९९, ३१. ५८; १०४, २१. २४; १०५, ६; १०७, ६; १०९, ८; १३९, ६; १४३, ६; १४५, १४. २३; १४६, २१. ३०; १४८, २०; १४९, १३ (देवदानवगन्धर्वयक्षराक्षसपन्नगा… …नासन्कृतयुगे); १५३, ८ (आक्रीडं राजराजस्य कुबेरस्य… …गन्धर्वैरप्सरोभिश्च देवैश्च परमार्चितम्); १५४, ५; १५८, ९६. १००; १५९, १८; १६०, २२. ४७; १६१, २७. ३४. ३९; १६२. ११. २२; १६४, २; १६६, ४; १६८, १०. ३०. ४४. ५४. ५६; १७३, ४९. ७५; १७४, ७; १७५, १४. १७; १७७, २४; १७८, ५ (वनं रम्यं देवगन्धर्वसेवितम्); १७९, ३२; १८१, ३४; १८८, ७३. १२०; १८९, ३०; २०१, ५; २०२, २१; २०४, ३. ३८; २२९, ३९; २३०, ३८ (गन्धर्वाणां तु या माता सा गर्भं गृह्य गच्छति). ५१ (गन्धर्वाश्चापि यं दिव्याः संविशन्ति नरं भुवि। उन्मादयति स तु क्षिप्रं ग्रहो गान्धर्व एव सः); २३१, २६. ४३; २४०, २०. २५. २७. ३१; २४१, २. ६. ७. ९. १०. १२, १४–१६. २०–२२. २४. २७. ३१; २४२, १. ३. ४. ७. ९. ११. १२. १५. १७; २४३, १०. २१; २४४, ७. १३. १६. १९. २१, २२; २४५, १–४. ६–८. १०. १३. १५. १६. १८. २०; २४६, १. १३. १७. १८; २४७, १०. १२; २४८, १. २. ७. १०. ११. १६; २४९, ५. ९ (चित्रसेन के नेतृत्व में गन्धर्वों ने कौरवों को बन्दी बना लिया परन्तु पाण्डवों ने कौरवों को मुक्त कराया); २५३, ७; २६१, ६; २७५, २५. ३३; २७६, ८; २८१. ३. १०. १३; २९०, २७. ३१; २९१, ३. २०. ४८. ४९; ३१३, ३३; ४. ८, ५ (विराट ने भीमसेन को गन्धर्वराज या पुरन्दर समझा); ९, ३० (द्रौपदी ने बताया कि वह पाँच गन्धर्वों की पत्नी है). ३१ (पुत्रा गन्धर्वराजस्य महासत्त्वस्य कस्यचित्). ३२. ३४; १२, १२; १४, ४८; १६, ४२. ४४; २१, २३–२५; २२, १३. १७. २८. ९०; २३, १४; २४, १. ४. ९. १०. १३. १५. २८. २९; २५, ३. २१; ३०, ५; ४३, ४; ४५, १३. ३६; ५०, १७; ५६, ८. १२ (भीष्म और अर्जुन के युद्ध को देखने के लिये आये); ५८, ७१; ७०, १२; ५. १०, ११. १३. २१. ४१; ११, ७. १५; १२, २. १२. २४; १५, १८; १६, १३. २३; १७, २१; १८, १; २९, १६; ३०, १३; ४४, २१; ६१, २०; ६४, १७; ९७, १८; १०९, ९; १११, ६. १०; ११६, ३; १२०, ३; १२०, ३; १२३, ४; १२४, ५०. ५३;

१२८, ४४; १३०, ३८; १३१, ७; १५८. २८; १६७, १८; १७६, ३१; १८४, १९ (भीष्म और रामजामदग्न्य के युद्ध के समय ये भी उपस्थित थे); ६. ६, १८. ५२; ११, १५; १२, १४. २४; ३४, २६; ३५, २२; ४३, ९; ४८, ११३; ५२, ६३. ६५; ५८, ६; ६५, ६४; ६६, ३. ५. २५; ८३, २७; ८४, ९; ९५, ६७; ९८, ३; ७, ३३, ११; ४५, २२ (अर्जुन ने तपस्या करके इनसे गान्धर्वास्त्र प्राप्त किया); ५२, ११ (देवदानवगन्धर्वान् मृत्युर्हरति); ५७, ४ (नट-नर्तक-गन्धर्वैः); ६०, ७; ६२, १६ (ये मान्धाता के यज्ञों में उपस्थित हुये); ६९, १०. २५ (पुण्यगन्धान् पद्मपात्रे गन्धर्वाप्सरसोऽदुहन् । वत्सश्चित्ररथस्तेषां दोग्धा विश्वरुचिः प्रभुः); ७४, ११; ७५, १४; ७६, ५; ७९, ३२; ८२, २८; ९८, ४४; ११०, ३४; ११९, ५५; १२६, ३०; १३९, ५५; १४४, २२. २४; १४७, ४२. ५५; १५६, १९०; १५८, १६ (ह्रियमाणे तदा कर्णं गन्धर्वैर्धृतराष्ट्रजे). ३५. ५१; १६३, १३. ३४; १६४, ४; १७०, १२; १८५, १४. १७; १८८, ३७; १९५, २३; १९६, ५; २०१, ५२. ७३. ८०, ८१; २०२, ५१. १२५ (इन लोगों ने शिवलिङ्ग की अर्चना की); ८. ३४; ८१; ४१, ७६. ७७; ७२, २२; ८६, १२; ८७, ३७. ५२ (प्रालेयाः सहमौनेया गन्धर्वाप्सरसां गणाः). ५४. ८८; ८८. ३; ९४, ५४. ६७; ९. १३, ४६; ३७, ४. ५. ९. १०; ३८, ९ (पुष्कर में ब्रह्मा के यज्ञ के समय ये भी उपस्थित थे); ४१, ३९; ४२, ४०; ४४, १८. ३१. ४७. ५३; ४५, ७ (स्कन्द के अभिषेक के समय ये भी उपस्थित हुये); ४६, ५९. ९७; ४९, १९; ५१, १७; ५७, ९; ५८, ६१; ६१, ५५; १०. ८, १२३; १२, १४ (अस्त्रं ब्रह्मशिरो नाम देवगन्धर्वपूजितम). १७; ११. २६, १३; १२. २, १७ (महेन्द्र पर्वत पर); २९, २४. ३७. ७५ (दिलीप के यज्ञ के समय इन लोगों ने नृत्य किया); ४७, २०. ३५. ७४; ५०, २५; ७२, २०; ९१, ५८; ९९, ४; १४९, १३; १५८, १४; १६६, १८ (ब्रह्मर्षियों द्वारा दक्ष कन्याओं से उत्पन्न लोगों में ये भी थे). ४१; १८८, ३ (ब्रह्मा ने इनकी सृष्टि की); २०७, २५ (ये दक्ष की एक पुत्री से उत्पन्न हुये थे); २२३, २२; २२४, २९; २२७, १०; २२९, २५; २६७, २१; २७२, १५; २८१, १७; २८४, ४. ६. ७. ६३; २९०, १३; २९५, १७; ३००, ६१; ३०२, ३१; ३२३, १९; ३२४, १४; ३२८, १५; ३३१, ५९; ३३२, १५; ३३३, १३. १४. ३२; ३४३, १६. ६२; ३५०, २१; ३६३, ५; १३. १४, ४५. १५०. १७५. २०९. २२२. ३६५. ४०१; १८, ७६; १९, ४१ (कुबेर की सभा में). ४६; २६, ५८; ३२, ३२; ३३, १६; ४०, १७; ५४, १२; ५८, ८; ६२, ८७; ७९, २२; ८०, ५; ८३, ८. २९ (कैलासशिखरे रम्ये देवगन्धर्वसेविते); ८४, ५०; ८५, ९; ८६, १८; ८७, ४; ९३, १६; ९८, २९; १०२, १८. २३; १०३, ७; १०७, ६४. ८९. ९२. ११२. १२४; ११५, ७७; १४०, ७; १४२, ३८; १४६, ६१; १४९, १३५; १५८, १५; १६०, १०; १६१, १७; १४. ७, २५; ८, ५ (मुञ्जवत् पर्वत पर शिव की उपासना करते हैं); १०, २७; ४३, १४; ५१, ११; ५४, ४. १८ (यदा त्वहं देवयोनौ वर्तामि भृगुनन्दन । तदाऽहं देववत्सर्वमाचरामि न संशय); ८८, ३६. ४० (गन्धर्वागीतकुशला नृत्येषु च विशारदाः); ९०, ४८; ९२, २५; १५. २०, ३५ (लोकांश्च देवगन्धर्वरक्षसाम); २९, २०; ३१, ६ (महाभारत के अनेक योद्धाओं के रूप में इन लोगों ने जन्म लिया था); ३२, १६; १६. ४, २५. २७; १८. ३, २४; ४, १४ (द्रौपदी के पाँच पुत्र मृत्यु के पश्चात् गन्धर्व हो गये). २२; ६, ७. ३९. ४३ (गन्धर्वैर्गीतकुलैः). ४६ तुकी० बहु० देवगन्धर्व ।

२. गन्धर्व (द्वि० °र्वौ) = हाहा और हूहू (३. ४३, १४; १२. २८४, ६; ३२४, १६)।

३. गन्धर्व (एक०)—'यस्य हि त्वं सपत्नः स्या गन्धर्वस्यासुरस्य वा । न स जातु चिरं जीवेत्त्वयि क्रुद्धे परंतप ॥', (१. १००, ८३)। ३. २३३, २३। ऐसा माना गया कि कीचक का वध किसी गन्धर्व ने कर दिया (४. २२, ९४)। भीमसेन को लोगों ने एक गन्धर्व माना (४. २३, २४)। 'गन्धर्व एष वै हन्ता कीचकानां दुरात्मनाम्', (४. ७१, ५)। ययाति से पूछा गया कि वे गन्धर्व तो नहीं हैं (५. १२१, १६)। 'क्रीडन्तमिव गन्धर्वं देवकन्याः सहस्रः', (११. १९, १८)। 'नैव देवो न गन्धर्वो नासुरो न च राक्षसः । यो मामेको विपहितुं शक्तः कश्चित्पुरंदर ॥', (१२. २२५, १७)। विभिन्न गन्धर्वों के निम्नलिखित नाम मिलते हैं :—

* अङ्गारपर्ण (चित्ररथ) : १. १७०, १३. १४. २५. ३८। देखिये चित्ररथ भी, वस्था० ।

* चित्ररथ—देखिये वस्था० ।

* चित्रसेन—३. ४६, २२. ६१; २४२, ६; २४६, ३. ९; २४९, १–३; ४. ६४, ३७; १२. २००, १२ ।

* चित्राङ्गद—१. ९५, ५०; १०१, २. ५. ६. १० ।

* तुम्बुरु : २. ५२, २४; ४. ५६, १२ ।

* धृतराष्ट्र : १४. १०, ४. ८ ।

* विश्वावसु : १. ९, ८ (गन्धर्वाप्सरसोः सुता); ३. २७९, ४२; १२. २८३, ११; ३१८, २७. ३६. ४८. ६९ (गन्धर्वसत्तम); ३२३, १९; ३२४, १५ ।

४. गन्धर्व = शिव (१,००० नाम)।

गन्धर्वतीर्थ, सरस्वती के तट पर स्थित एक प्राचीन तीर्थ का नाम है जहाँ विश्वावसु आदि गन्धर्व नृत्य आदि का आयोजन करते रहते हैं। बलराम ने इसकी यात्रा की थी (९. ३७, ९–१३)।

गन्धर्वनगर, गन्धर्वों के नगर के लिये प्रयुक्त हुआ है : 'गन्धर्वनगराकारं तथैवान्तर्हितम्', (१. १२६, ३५)। 'कुमारवलं······गन्धर्वाकारम्', (१. १३४, २७)। यहाँ अर्जुन ने उपहार के रूप में अश्व प्राप्त किये थे (२. २८, ६)। 'दानवपुरं······गन्धर्वनगराकारम्', (३. १७३, ६५)। 'गन्धर्वनगरं भानुमत्समुपस्थितम्', (५. १४३, २२)। 'केतुः······गन्धर्वनगरोपमः', (६. ५०, ४४)। 'रथाः······गन्धर्वनगरोपमाः', (६. १०३, २०)। 'गन्धर्वनगराकारान्······रथान्', (७. १९, २८; ३६, ३१)। 'गन्धर्वनगराकारं······रथम्', (७. ४३, ३)। 'गन्धर्वनगराकारान् रथान्', (८. १६, ४५)। 'गन्धर्वनगराकारं घोरमायोधनम्', (८. २७, ३६)। 'जैत्रं रथवरं गन्धर्वनगरोपमम्', (८. ३६, ७)। 'गन्धर्वनगराकारा रथाः', (८. ४६, ६६)। 'रथाः······गन्धर्वनगराकाराः', (८. ८१, १८)। 'गन्धर्वनगराकारः', (१२. २६०, १३)। 'प्रासादं······गन्धर्वनगरोपमम्', (१३. ५४, २)।

१. गन्धर्वपति = देवक : १. ६७, ६८ ।

२. गन्धर्वपति = हंस : १. ६७, ८३ ।

३. गन्धर्वपति = अङ्गारपर्ण (चित्ररथ) : १. १७४, ४ ।

१. गन्धर्वराज् = चित्रसेन : ३. २४३, १७ ।

२. गन्धर्वराज् = धृतराष्ट्र : १४. ९, २५ ।

१. गन्धर्वराज = विश्वावसु : १. ८, ६; ९, १३ ।

२. गन्धर्वराज = चित्राङ्गद : १. १०१, ७ ।

३. गन्धर्वराज = अङ्गारपर्ण (चित्ररथ) : १. १७०, ५ ।

४. गन्धर्वराज = चित्रसेन : ३. ४५, २. ४; २४०, २१; २४१. ८; २४३, २१; २४४, १०. १७; २४५, २४; ७. १२८, ४७ ।

५. गन्धर्वराज = धृतराष्ट्र : १५. ३१, ८ ।

१. गन्धर्वराजन् = चित्रसेन : ४. ४९, ९ ।

२. गन्धर्वराजन् = धृतराष्ट्र : १८. ४, १५ ।

गन्धर्वलोक—'स हि गन्धर्वलोकस्थानुर्वश्या सहितो विराट् ॥ आनिनाय क्रियार्थेऽग्नीन्यथावद्विहितांस्त्रिधा; (१. ७५, २३. २४)।

गन्धर्वास्त्र (म्), गन्धर्वों के प्रसिद्ध अस्त्र का नाम है जिसका अभिमन्यु ने प्रयोग किया (७. ४५, २१)।

१. गन्धर्वी, सुरभि की पुत्री और अश्वों की माता का नाम है (१. ६६, ६७)।

२. गन्धर्वी, गन्धर्व-स्त्रियों के लिये प्रयुक्त हुआ है। गङ्गा से पूछा गया कि वे गन्धर्वी तो नहीं हैं (१. ९७, ३१)। १. १७०, ३५ (गन्धर्वी शरणं प्राप्ता नाम्ना कुम्भीनसी)। १. १७१, ८. ३८; ४. ९, १४. १७ ।

गन्धर्वेन्द्र = विश्वावसु : १२. ३१८, ३७ ।

गन्धवती = देखिये सत्यवती वस्था०।

गन्धवतीसुत = व्यास : १२. ३४६, ८।

गभस्ति = शिव (१,००० नाम)।

गभस्तिनेमि = विष्णु (कृष्ण) : १२. ४३, १४; १३. १४९, ६५ (१,००० नाम)।

गभस्तिमत् = सूर्य : ३. ३, १६।

गभीर = विष्णु (१,००० नाम)।

गभीरात्मन् = विष्णु (१,००० नाम)।

गम = शिव (१,००० नाम)।

गम्भीर = शिव (१,००० नाम)।

गम्भीरघोष = शिव (१,००० नाम)।

गम्भीरबलवाहन = शिव (१,००० नाम)।

१. गय, एक प्राचीन राजा का नाम है जिसकी नारद ने मृत राजाओं के अन्तर्गत गणना कराई (१. १, २२७)। 'यज्ञविभूतिश्च गयस्य', (१. २, १६६)। 'गयस्ययज्ञः', (१. ५५, ४)। 'अनवरौ········गयात्', १. २०५, ६)। यम की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ८, १८)। इन्होंने तपस्यायें तथा तीर्थयात्रायें कीं (३. ९४, १८)। 'राजर्षिणा पुण्यकृता गयेनानुपमद्युते', (३. ९५, ९)। 'अमूर्तरयसः पुत्रो गयो राजर्षिसत्तमः', (३. ९५, १८)। 'गयो यदकरोद्यज्ञे राजर्षिरमितद्युतिः', (३. ९५, २६)। "अमूर्तरया के पुत्र गय राजर्षियों में श्रेष्ठ थे। उन्होंने ब्रह्मसरोवर के निकट बड़ा भारी यज्ञ किया था। उस यज्ञ में अन्न के सहस्रों पर्वत लग गये थे; घी के कई सौ कुण्ड थे, और दही की नदियाँ बहती थीं। उस यज्ञ में दक्षिणा देते समय जो वेदमन्त्रों की ध्वनि होती थी उसके समान कोई अन्य शब्द सुनायी नहीं पड़ता था। अमिततेजस्वी राजर्षि गय ने अपने यज्ञ में जो व्यय किया था वह पहले के राजाओं ने भी नहीं किया था और भविष्य में भी कोई दूसरे कर सकेंगे ऐसा सम्भव नहीं है। इस प्रकार के अनेक यज्ञ गय ने ब्रह्मसरोवर के समीप सम्पन्न किये थे (३. ९५, १८–२९)।" ३. १२१, ७. (इन्होंने यज्ञ किये थे). १०. १३; ४. ५६, ९ (भीष्म और अर्जुन का युद्ध देखने के लिये आये); ५. ८३, २७ (उन ऋषियों में से एक जो श्रीकृष्ण की उपासना करते हैं); ७. ६२, १० (ये मान्धाता द्वारा पराजित हुये)। "राजा अमूर्तरया के पुत्र गय ने सौ वर्षों तक नियमपूर्वक अग्निहोत्र करके होमावशिष्ट अन्न का ही भोजन किया। इससे प्रसन्न होकर अग्निदेव ने उन्हें वर देने की इच्छा प्रगट की। गय ने अग्नि से यह वरदान माँगा :—'मैं तप, ब्रह्मचर्य, व्रत, नियम और गुरुजनों की कृपा से वेदों का ज्ञान प्राप्त करना चाहता हूँ। दूसरों को कष्ट दिये बिना ही धर्मपूर्वक अक्षय धन चाहता हूँ। मैं ब्राह्मणों को दान देता रहूँ और अपने वर्ण की कन्याओं से मेरा विवाह हो। मेरे धर्म सम्बन्धी कार्यों में विघ्न न आवे, इत्यादि।' अग्नि ने तदनुसार वर दिया। इन्होंने सौ वर्षों तक विभिन्न प्रकार के यज्ञ किये—यज्ञ तथा उसमें दी गई दक्षिणाओं आदि का वर्णन : यज्ञ में खाने-पीने से बचे हुये अन्न के पचीस पर्वत शेष रह गये। रसों को प्रवाहित करने वाली कितनी ही छोटी-छोटी नदियाँ, तथा वस्त्राभूषण आदि भी बच गये। उस यज्ञ के प्रभाव से राजा गय तीनों लोकों में विख्यात हो गये। साथ ही पुण्य को अक्षय्य करनेवाला अक्षयवट तथा पवित्र तीर्थ ब्रह्मसरोवर भी उनके कारण प्रसिद्ध हो गये (७. ६६)।" ९. ३८, २० (इन्होंने गया में यज्ञ किया); १२. २९, ८८ (मान्धाता ने इन्हें पराभूत किया). १११ (गयं···अमूर्तरयसम्). ११२. ११८; २३४, २६ (इन्होंने ब्राह्मणों को पृथिवी दान की); १३. ११५, ६८ (उन राजाओं में एक यह भी थे जो कार्त्तिकमास में मांस-भक्षण नहीं करते थे)। तुकी० आमूर्तरयस (३. ९५, १७; १२१, ३; ७. ६६, १; १२. २९, १११. ११८)।

२. गय, एक पवित्र पर्वत का नाम है : 'तस्यां गिरिवरः पुण्यो गयो राजर्षिसत्कृतः', (३. ८७, ८)। 'यस्य प्रभावाच्च गयस्त्रिपु लोकेपु विश्रुतः। वटश्चाक्षय्यकरणः पुण्यं ब्रह्मसरश्च तत्॥', (७. ६६, २०)। तुकी० गया, गयशिरस्।

३. गय (बहु० जाः), गया के निवासियों का नाम है। ये लोग भी युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये (२. ५२, १६)। ९. ३८, २०।

गयशिरस्, गया के निकट स्थित एक पर्वत का नाम है। 'महानदी च तत्रैव तथा गयशिरो नृप। यत्रासौ कीर्त्यते विप्रैरक्षय्यकरणो वटः॥', (३. ८७, ११) 'नगो गयशिरो', (३. ९५, ९)।

गया, एक पवित्र तीर्थ (आधुनिक गया) का नाम है। अर्जुन इस तीर्थ में आये थे (१. २१५, ७) 'ततो गयां समासाद्य ब्रह्मचारी समाहितः', (३. ८४, ८२)। 'तत्र अक्षयवटो नाम त्रिपुलोकेपु विश्रुतः', (३. ८४, ८३)। 'कृष्णशुक्लावुभौ पक्षौ गयायां यो वसेन्नरः। पुनात्यासप्तमं राजन्कुलं नास्त्यत्र संशयः॥', (३. ८४, ९६)। 'एष्टव्या बहवः पुत्रा यद्येकोपि गयां व्रजेत्। यजेत वाश्वमेधेन नीलं वा वृषमुत्सृजेत्॥', (३. ८४, ९७; ८७, ९. १०)। 'अश्मपृष्ठे गयायां', (१३. २५, ४२)। 'अध्यतिष्ठद्गयां गत्वा', (१३. २९, ५)। 'एष्टव्या बहवः पुत्रा यद्येकोऽपि गयां व्रजेत्। यत्रासौ प्रथितो लोकेष्वक्षय्यकरणो वटः॥', (१३. ८८, १४)। 'कुरुक्षेत्रं गयां गङ्गां प्रभासं पुष्कराणि च', (१३. १२५, ४८)। 'गयाऽथ फल्गुतीर्थं च धर्मारण्यं सुरैर्वृतम्। तथा देवनदी पुण्या सरश्च ब्रह्मनिर्मितम्॥', (१३. १६५, २९)।

गरिष्ठ, एक प्राचीन मुनि का नाम है जो इन्द्र की सभा में उपस्थित रहते थे (२. ७, १३)।

१. गरुड, कश्यप और विनता के पुत्र का नाम है, जो विष्णु के वाहन बने (१. २, ९०; १६, २४)। "गर्भ में समय पूर्ण हो जाने पर ये माता की सहायता के बिना ही अण्डा फोड़कर बाहर निकल आये। ये महान साहस से सम्पन्न थे, और अपने तेज से दिशाओं को प्रकाशित कर रहे थे। इनका शरीर थोड़ी ही देर में बढ़कर विशाल हो गया और ये आकाश में उड़ चले। इन्हें देखकर देवतागण अग्नि की शरण में गये। अग्नि ने देवों को सान्त्वना देते हुये गरुड को तेज में अपने ही समान बताया। अग्नि की बात सुनकर देवता तथा ऋषि गरुड़ के पास आये और उनकी स्तुति करने लगे। ऋषियों और देवताओं की स्तुति सुनकर इन्होंने उस समय अपने तेज को समेट लिया (१. २३, ५–२७)।" "देवताओं और ऋषियों की स्तुति पर इन्होंने अपने तेज तथा शरीर को समेट लिया। तदनन्तर ये अपने भाई, अरुण, को पीठ पर बैठाकर पिता के घर से माता के समीप, महासागर के दूसरे तटपर आये। जब सूर्य ने अपने तेज के द्वारा सम्पूर्ण लोकों को दग्ध करने का विचार किया उस समय ये महान तेजस्वी अरुण को पुनः पूर्व दिशा में लाकर सूर्य के समीप रख आये (१. २४, १–४)।" "तदनन्तर ये समुद्र के दूसरे ओर अपनी माता के समीप आये। वहाँ अपनी माता की आज्ञा से ये सर्पों को अपनी पीठ पर चढ़ाकर ले चले। ये आकाश में सूर्य के अत्यन्त निकट से उड़ रहे थे जिससे इनकी पीठ पर बैठे सर्प सूर्य की किरणों से संतप्त हो मूर्च्छित हो गये (१. २५, १–६)।" "इन्होंने अपनी माता से पूछा कि इन्हें क्यों सर्पों की आज्ञा का पालन करना पड़ता है। इनकी माता, विनता, ने इनको उन परिस्थितियों से अवगत कराया जिनमें वह सर्पों की माता, कद्रू, की दासी बनने को बाध्य हो गई। माता के दुःख से दुखी होकर इन्होंने सर्पों से माता की मुक्ति का उपाय पूछा। सर्पों ने बताया कि यदि ये अमृत लाकर दें तो वे इनकी माता को मुक्त कर देंगे (१. २७, ११–२१)।" "अमृत लाने के लिये प्रस्थान करने के पूर्व इन्होंने अपनी माता से अपनी भोजन सामग्री के संबन्ध में पूछा। इनकी माता ने इन्हें निषादों का भक्षण करने परन्तु ब्राह्मणों को न मारने का आदेश दिया। माता ने इन्हें ब्राह्मणों को पहचानने का उपाय भी बताया। माता ने कहा, 'जो तुम्हारे कण्ठ में पड़ने पर अंगारे की तरह जलने लगे, उसे तुम ब्राह्मण समझना।' माता की बात सुनकर गरुड आकाशमार्ग से उन निषादों के पास आये और अपना मुख बड़ा करके उनके मार्ग में खड़े हो गये। जिस प्रकार आंधी से कम्पित वृक्ष वाले वन में पवन और धूल से विमोहित सहस्रों पक्षी आकाश में उड़ने लगते हैं उसी प्रकार हवा और धूल की वर्षा से बेसुध हुये सहस्रों निषाद गरुड के खुले हुए अत्यन्त विशाल मुख में समा गये। तदनन्तर

गरुड ने उनका विनाश करने के लिए अपना मुख संकुचित कर लिया (१. २८)।" "एक ब्राह्मण भी, जो निषाद था, अपनी पत्नी के साथ गरुड़ के मुख में प्रवेश कर गया परन्तु वहाँ जाकर वह अंगारे की भाँति जलन उत्पन्न करने लगा। गरुड़ ने उसे पहचान लिया और उसकी पत्नी सहित उसे मुक्त कर दिया। ब्राह्मण को मुक्त करके गरुड़ आकाश में उड़े। उन्हें अपने पिता कश्यप का दर्शन हुआ। यतः गरुड़ की क्षुधा अभी शान्त नहीं हुई थी अतः कश्यप ने सुप्रतीक नामक गज तथा विभावसु नामक कछुये का भक्षण करने का परामर्श दिया। तदनन्तर वे उस कछुये और गज को अपने पंजे से पकड़कर आकाश में उड़ गये। बिना विश्राम किये उड़ते हुये वह अलम्बतीर्थ में जा पहुँचे। वहाँ एक अत्यन्त विशाल वटवृक्ष था। उस वट ने गरुड़ से कहा कि उसकी सौ योजन तक फैली हुई जो सबसे बड़ी शाखा है उसी पर बैठकर वह उस हाथी और कछुये का भक्षण करें। पर्वत के समान विशाल शरीरवाले गरुड़ उस महान वृक्ष को कम्पित करते हुए जब उसकी विशाल शाखा पर बैठे तो वह टूट गई (१. २९, १–१४. ३३–४४)।" "गरुड़ के पैरों का स्पर्श होते ही उस वृक्ष की वह महाशाखा टूट गई परन्तु उन्होंने उसे भी पकड़ लिया। इतने में ही उनकी दृष्टि वालखिल्य नामक महर्षियों पर पड़ी जो नीचे मुख किये उसी शाखा से लटक रहे थे। उन मुनियों की रक्षा के विचार से गरुड़ ने, जो अपने पंजे में, सुप्रतीक नामक गजराज और विभावसु नामक कछुये को पकड़े हुये थे, अपनी चोंच से उस शाखा को भी पकड़ लिया। यहाँ गरुड़ के नाम की इस प्रकार व्युत्पत्ति की गई है: 'गुरुं भारं समासाद्योड्डीन एव विहंगमः। गरुडस्तु खगश्रेष्ठस्तस्मात्पन्नगभोजनः।' तत्पश्चात्, उस शाखा में लटके हुए वालखिल्यों पर दयाभाव होने के कारण वे कहीं बैठ नहीं सके और उड़ते-उड़ते गन्धमादन पर्वत पर जा पहुँचे। वहाँ उन्होंने अपने पिता कश्यप को तपस्या करते हुए देखा। अपने पुत्र को देखकर और उन्हें वालखिल्यों के शाप से बचाने के लिए कश्यप ने वालखिल्यों को प्रसन्न किया। कश्यप के इस प्रकार अनुरोध करने पर वे वालखिल्य-मुनि उस शाखा को छोड़कर तपस्यार्थ हिमवत् पर्वत पर चले गए। कश्यप के परामर्श के अनुसार तब गरुड़ एक लाख योजन दूर एक निर्जन पर्वत पर आये। वहाँ उन्होंने उस शाखा को फेंक दिया और गज तथा कछुये का भक्षण किया। तदनन्तर वे पुनः आकाश में उड़ गये। उस समय अनेक अपशकुन होने लगे। देव-लोक में भी उस समय अनेक अपशकुन होने लगे जिन्हें देखकर बृहस्पति ने बताया कि इन्द्र के द्वारा वालखिल्यों का अपमान और उनकी ही तपस्या के प्रभाव से गरुड़ एवं अरुण की उत्पत्ति हुई है। उन्हीं में से गरुड़ अब अमृत लेने के लिए इन्द्रलोक में आ रहे हैं। इन्द्र ने तब देवों को आज्ञा दी कि वे अमृत की रक्षा करें (१. ३०)।" "उग्रश्रवा ने बताया कि किस प्रकार इन्द्र ने वालखिल्यों का अपमान किया था और किस प्रकार वालखिल्यों की तपस्या के प्रभाव से पक्षियों में इन्द्र के समान गरुड़ की उत्पत्ति हुई (१. ३१)।" "अमृत के लिए जब गरुड़ देवताओं के पास पहुँचे तो देवताओं से उनका भयंकर युद्ध छिड़ गया। भौमन (विश्वकर्मा), जो अमृत की रक्षा कर रहे थे, गरुड़ के प्रहार से आहत होकर मृतकतुल्य हो गये। तदनन्तर गरुड़ ने अपने पंखों की प्रचण्ड वायु से बहुत धूल उड़ाकर देवताओं को आच्छादित और विमोहित कर दिया। उस समय साध्य और गन्धर्व पूर्व दिशा में, वसु और रुद्र दक्षिण दिशा में, आदित्य पश्चिम में और अश्विन उत्तर दिशा में भागे। तदनन्तर गरुड़ ने अश्वक्रन्द आदि नौ यक्षों का, जो अमृत की रक्षा कर रहे थे, वध कर दिया। अमृत के चारों ओर अग्नि प्रज्वलित हो रही थी। उस समय गरुड़ ने ८१०० मुख प्रकट करके अनेक नदियों से उसमें जल लेकर आग को बुझा दिया। तदनन्तर उन्होंने अमृत के पास पहुँचने की इच्छा से अत्यन्त लघु रूप धारण कर लिया (१. ३२)।" "गरुड़ ने देखा कि अमृत के निकट एक लौह-चक्र घूम रहा है जिसके चारों ओर तीक्ष्ण धार वाले छूरे लगे हैं। उस चक्र के भीतर एक छोटा छिद्र था जिसमें से संकुचित रूप धारण करके गरुड़ प्रवेश कर गये। चक्र के नीचे अमृत की रक्षा के लिए दो श्रेष्ठ सर्प नियुक्त थे। गरुड़ ने उन सर्पों के शरीर को बीच से काट डाला। तदनन्तर अमृत के पात्र को वहाँ से उठाकर तीव्र गति से उड़ चले। उन्होंने स्वयं अमृत का पान नहीं किया। मार्ग में विष्णु ने प्रगट होकर उन्हें वर देने की इच्छा व्यक्त की। गरुड़ ने विष्णु से दो वर माँगे। पहले वर के अन्तर्गत उन्होंने अपने को विष्णु के ध्वज में स्थित होने की इच्छा प्रकट की और दूसरे में बिना अमृत का पान किये ही अजर-अमर होने की। वर प्राप्त करने के पश्चात् गरुड़ ने स्वयं विष्णु को भी वर देने की इच्छा व्यक्त की। विष्णु ने गरुड़ से कहा कि वे उनका वाहन होना स्वीकार कर लें। इसके पश्चात् गरुड़ वहाँ से आगे बढ़े। मार्ग में इन्द्र ने रोष में भरकर उन पर अपने वज्र से प्रहार किया। वज्राहत गरुड़ ने इन्द्र से कहा: 'जिनकी अस्थियों से यह वज्र बना है उन महर्षि का मैं अवश्य सम्मान करूँगा। अतएव मैं अपना एक पंख, जिसका तुम कहीं अन्त नहीं पा सकोगे, त्याग देता हूँ। उस सुन्दर पंख को देखकर लोगों ने कहा कि जिसका वह सुन्दर पंख (पर्ण) है वह पक्षी सुपर्ण नाम से विख्यात हो। गरुड़ के पराक्रम को देखकर इन्द्र ने उनसे मैत्री स्थापित करने की इच्छा प्रकट की (१. ३३)।" "इन्द्र और गरुड़ की मित्रता स्थापित हो गई। तदनन्तर इन्द्र ने गरुड़ से अमृत वापस माँगा। गरुड़ ने कहा: 'मैं किसी कारणवश ही यह अमृत ले जा रहा हूँ। इसे किसी को भी पीने के लिए नहीं दूँगा। मैं स्वयं इसे जहाँ रख दूँ वहाँ से तत्काल तुम उठा ले जा सकते हो।' गरुड़ ने इन्द्र से यह वर माँगा कि सर्प उनका भोजन हो जाय। तदनन्तर गरुड़ ने अमृत को सर्पों के निकट लाकर रख दिया और अपनी माता को दासत्व से मुक्त करा लिया। इसी बीच इन्द्र वह अमृत लेकर पुनः स्वर्गलोक चले गये। अमृतपान करने की इच्छा से जब स्नान और जप आदि कर्म करने के पश्चात् सर्पगण पुनः उस स्थान पर लौटे तो उन्हें विदित हुआ कि अमृत का किसी ने हरण कर लिया है। यह समझकर कि जहाँ अमृत रखा था वहाँ उसका कुछ अंश लगा होगा, सर्पों ने उस स्थान के कुशों को चाटना आरम्भ किया। ऐसा करने से सर्पों की जिह्वा दो भागों में विभक्त हो गई। उसी समय से अमृत का स्पर्श होने के कारण कुशों की संज्ञा 'पवित्री' हो गई। उस समय से गरुड़ अपनी माता के साथ प्रसन्नतापूर्वक निवास करने लगे (१. ३४)।" १. ६५, ४०; ६६, ३९ (वैनतेयस्तु गरुडो). ७१ (द्वौ पुत्रौ विनतायास्तु विख्यातौ गरुडारुणौ); १२३, ७३ (अर्जुन के जन्म के समय उपस्थित हुए); २०७, ३२ (द्विपक्षगरुडप्रख्यैर्द्वारैः); २. २४, २२. २३ (इन्होंने कृष्ण के ध्वज पर स्थान ग्रहण किया); ३८, २८ (गरुडः पततां मुखम्); ३. २४१, १८ (स्वैर्गरुडनिःस्वनैः); ४. २, २४ (गरुडः पतताम् इव); ५. ७१, ५ (कृष्ण को अरिष्टनेमि, गरुड और सुपर्ण से समीकृत किया गया है); १०१, १५ (गरुडात्मजाः); १०५, १. ३. ३१. ३२; १०७, १६ (गरुडो विनतात्मजः); ११२, ४ (यह गालव के मित्र थे और इन्होंने एक सहस्र अश्वों को खोजने में गालव की सहायता की थी); ६. ३, ८४ (वैनतेयो गरुडः प्रशंसति महाजनं); ६, १४. (विहगः सुमुखो यस्तु सुपर्णस्यात्मजः); ७. ३६, २७ (पन्नगैरिछन्नैर्गरुडेनेव); ३७, २१ (गरुडानिलरंहोभिर्यन्तुर्वाक्यकरैर्हयैः); १०९, २८ (उद्बबर्ह...पन्नगं गरुडो यथा); १४३, ४८ (गरुडोत्तमाङ्गयानः); १७४, ३० (गरुडतक्षकौ); २०१, २३ (गरुडानिलरंहसै); ८. १२, ६ (गरुडप्रहितैरुग्रैः पन्नगैरुरगैरिव); १८, २ (तुरगान् गरुडानिलरंहसः); ४१, १६ (गरुडस्य गतौ तुल्याः); ५९, ४७ (गरुडस्येव पततो जिघृक्षोः पन्नगोत्तमम्); ६५, १५ (वाजिभिर्गरुडोपमैः); ७७, २२ (गरुडस्येव पततः पन्नगार्थे यथा पुरा); ८७, ९६ (गरुडः पन्नगं यथा); ९०, ५१ (नागः स्वयं य आयाद्गरुडस्य वक्त्रम्); ९. ४५, १६ (ये भी स्कन्द के अभिषेक के समय उपस्थित हुये). ८३ (गरुडाननाः); ४६, ५२ (इन्होंने अपने पुत्र, मयूर, को स्कन्द को प्रदान किया); १२. ३३७, ३५ (ये उपरिचर को गुप्त विवर तक ले गये); १३. १४, ९३ (वालखिल्यों ने अपनी तपस्या द्वारा इन्हें—सुपर्णं सोमहर्तारं को—उत्पन्न किया); १४. ८८, ३२ (रुक्मपक्षो निचितस्त्रिकोणो गरुडाकृतिः)। तुकी० अरुणानुज, भुजगारि, गरुत्मत्, काश्यपेय, खगराज्, पक्षिराज,

पक्षिराज, पतगपति, पतगेश्वर, सुपर्ण, तार्क्ष्य, वैनतेय, विनतानन्द-वर्धन, विनतासूनु, विनतासुत, विनतात्मज।

२. गरुड एक व्यूह का नाम है जिसका भीष्म ने निर्माण किया था (६. ५६, ३)।

३. गरुड (बहु० °डाः), गरुड-जाति के पक्षियों के लिये प्रयुक्त हुआ है (३. १७३, ४८)। 'गरुड-पिशाच-सयक्षराक्षसान्,' (८. ३७, ३६)। 'गरुडानिव,' (४. ४६, ५०)।

गरुडध्वज — कृष्ण (विष्णु) : २. २, १०; ७. ८०, २; १३. ११, ५; १४९, ५१ (सहस्रनाम)।

गरुडी, स्वाहा के लिये प्रयुक्त हुआ है (३. २२५, ९; २२६, ५)।

१. गरुत्मत् = गरुड : १. ३३, १६. २३; २२७, २१; २. २, ३०; २४, २३. २४ (इन्होंने कृष्ण के ध्वज पर स्थान ग्रहण किया); ३. १२, ९० (वैनतेयो यथा पक्षी गरुत्मान्पततां वरः); १६०, ७४ (अभिदुद्राव तं हन्तुं गरुत्मानिव पन्नगम्); ४. ४८, १३ (गरुत्मानिव पन्नगम्); ५०, १८; ५४, २१ (नागं गरुत्मानिव चित्रपक्षः); ५. १०५, १९. ३०; ११२, १; ६. ६४, ३२ (गरुत्मानिव वेगितः); ७. १२५, ३६ (छिन्नौ सर्पाविव गरुत्मता); १३९, ११७ (गरुत्मानिवाकाशे प्रार्थयन् भुजगोत्तमम्); ८. ५६, ६७ (गरुत्मात्पन्नगानिव); ९. ५५, १९ (सदृशं हि गरुत्मतः) ५८, २६ (°न्तौ); १२. ३२७, ७ (पक्षिराजो गरुत्मांश्च); ३३७, ३२. ३६।

२. गरुत्मत् (बहु० °ताः) = बहु० गरुड : ६. १०५, १२।

१. गर्ग, एक ऋषि का नाम है। 'गर्गेण वृद्धेन……ज्योतिषां च व्यतिक्रमः ॥ उत्पाता दारुणाश्चैव शुभाश्च', (९. ३७, १४. १५)। 'गर्गस्रोत इति स्मृतम……तत्र गर्गं महाभागं ऋषयः सुव्रता नृप', (९. ३७, १६. १७)। 'कुणिर्गर्गो महायशाः', (९. ५२, ३. ४)। 'महर्षिर्भगवान्गर्गः', (१२. ५९, १११)। इन्होंने विश्वावसु को उपदेश दिया (१२. ३१८, ६०)। "इन्होंने बताया कि इन्होंने सरस्वती के तट पर मानस यज्ञ करके भगवान् शिव को प्रसन्न किया था, जिससे उन्होंने इन्हें चौंसठ कलाओं का अद्भुत ज्ञान प्रदान किया। साथ ही शिव ने इन्हें इन्हीं के समान एक सहस्र ब्रह्मवादी पुत्र दिये और इनके पुरोहितों सहित इनकी आयु भी दस लाख वर्ष नियत कर दी (१३. १८, ३८. ३९)।"

२. गर्ग (बहु०) गर्ग के वंशजों के लिये प्रयुक्त हुआ है (७. १९०, ३४)।

गर्गस्रोतस्, सरस्वती के तट पर स्थित एक तीर्थ का नाम है। यहाँ तपस्या से पवित्र अन्तःकरण वाले महात्मा वृद्ध गर्ग ने काल का ज्ञान, काल की गति, ग्रहों और नक्षत्रों के उलट-फेर, दारुण उत्पात तथा शुभलक्षण आदि समस्त बातों का ज्ञान प्राप्त किया था; अतः महर्षि गर्ग के नाम से ही यह तीर्थ गर्गस्रोतस कहलाता है। यहाँ उत्तम व्रत का पालन करनेवाले ऋषियों ने कालज्ञान की प्राप्ति के लिये महाभाग गर्गमुनि की सेवा की थी (९. ३७, १४ १७)।

गर्दभि, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५९)।

गर्भचारिन् = शिव (१,००० नाम)।

गर्भमांसशृगाल = शिव (१,००० नाम)।

गवय, एक वानरराज का नाम है जो एक अरब सेना के साथ श्रीराम के पास आया (३. २८३, ३)।

गवल्गण, सञ्जय के पिता का नाम है (१. ६३, ९७)।

१. गवाक्ष, एक गान्धार वीर का नाम है जो सुबल के पुत्र और शकुनि के भ्राता थे (६. ९०, २७)। इन्होंने पाण्डव-सेना के दुर्जय व्यूह में प्रवेश किया (६. ९०, २८–३०)। इरावान् ने इनका वध किया (६. ९०, ४५–४६)। 'शकुनेर्भ्रातरो वीरा गवाक्षः शरभो विभुः', (७. १५७, २४)।

२. गवाक्ष, एक गोलांगूल जाति के वानर का नाम है जो देखने में अत्यन्त भयंकर था। यह अपने साथ साठ सहस्र कोटि (६ खरब) सेना लेकर श्रीराम के पास आया (३. २८३, ४)।

गवां—'गवां मेधमवाप्नोति वासुकेर्लोकमुत्तमम्। वेणायाः संगमे स्नात्वा वाजिमेध फलं लभेत ॥', (३. ८५, ३४)।

गवाम्-अयन्, एक यज्ञ का नाम है (३. ८४, १०२)।

गवांतीर्थ, एक तीर्थ का नाम है (३. ९५, ३)।

गवां पतिः = शिव : ७. २०२, ३४. ४८; ८. ३३, ६१; १३. १७, ७२ (१,००० नाम)।

गवां भवनम्, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ५०)।

गवां लोक — देखिये गोलोक।

गविज, एक गोजात मुनि का नाम है (१३. ५१, ४२. ४५)।

गविजात = गविज : १३. ५१, १५. २१।

गविष्ठ, एक विख्यात दानव का नाम है (१. ६५, ३०)। यह द्रुमसेन के रूप में प्रगट हुआ था (१. ६७, ३४–३५)।

गवेषण, एक वृष्णि राजा का नाम है जो द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुये थे (१. १८६, १९)।

गहन = विष्णु (१,००० नाम)।

गाङ्ग (वि०)—'गाङ्गो ह्रद इव', (५. ३३, २६)। 'गाङ्गं यथा वेगम्', (५. १६०. १०४; १६१, २२)। 'गाङ्ग इवावर्तो', (६. ११९, ७६; ७. ३६, १३)। 'यावत्यः सिकता गाङ्ग्यः', (७. ५८, ७)। 'गाङ्गमिवोदकम्', (१२. १७७, २८)।

१. गाङ्गेय—देखिये भीष्म।

२. गाङ्गेय = स्कन्द : १. १३७, १३; ९. ४४, १६; १३. ८५, ८०।

३. गाङ्गेय = (वि०)—'गाङ्गेयं वार्युपस्पृश्य', (३. ३, ३५)। 'गाङ्गेयैस्तोयैः', (१३. २६, २८. २९)। 'गाङ्गेयैः', (१३. २६, ३१)। 'गाङ्गेयं… जलम्', (१३. २६, २६)।

गाण्डीव, अर्जुन के प्रसिद्ध धनुष का नाम है (१. १, १८०)। १. २, ३६०. ३६७ (गाण्डीवं धनुरुत्तमम्)। इसे अग्नि ने अर्जुन को दिया था (१. ६१, ४७)। "राजा सोम ने यह धनुष वरुण को दिया था। अग्नि ने वरुण से माँग कर इसे अर्जुन को दिया। यह धनुष अद्भुत था और इसमें अत्यन्त शक्ति थी। किसी भी अस्त्र-शस्त्र से यह टूट नहीं सकता था, और दूसरे अस्त्र-शस्त्रों को नष्ट कर डालने की इसमें शक्ति थी। इसका आकार समस्त आयुधों से बढ़कर था। शत्रुओं की सेना को विदीर्ण करनेवाला यह एक ही धनुष दूसरे लाख धनुषों के बराबर था। देवताओं, दानवों, और गन्धर्वों ने अनन्त वर्षों तक इसकी पूजा की थी (१. २२५, ४–९)।" पूर्वकाल में ब्रह्मा ने इसका निर्माण किया था (१. २२५, १९–२०)। अग्नि के कहने पर वरुण ने इसे अर्जुन को दिया (१. २२५, ३२)। 'भीमस्य गाण्डीवं भवतो यथा', (२. ३, ७)। अर्जुन ने इसे अग्नि से प्राप्त किया था (२. ४८, ६; ७४, १२)। 'गाण्डीवनिर्घोषम्', (२. ८१, ३४)। 'धनुर्वेषां गाण्डिवं लोकसारम्', (३. ४, १०)। ३. ५, ९; ११, ४० (गाण्डीवं निष्पत्रमकरोत्तदा); १२, ६७ (धिक्पार्थस्य च गाण्डिवम्). ७७; ३३, ८७; ३७, १८; ३९, ९. २६. ३९ (किरातवेशी शिव ने इसे छीन लिया); ४०, ४. २७ (किरातवेशी शिव ने इसे अर्जुन को वापस दिया); ५१, १३; ८६, १२; १६०, २२; १६८, ७६ (अजरां ज्यामिमां चापि गाण्डीवे समयोजयत); १७०, ६. २३; १७१, २३; १७२, २. १४; १७३, ४४. ५६; १७५, ६; २३६, ३०; २६८, १७. १८; ४. ५, ११. १९; २१, १; ४०, ५; ४२, ९; ४३, १–७ (अर्जुन का यह धनुष शत्रुओं की सेना के लिये कालस्वरूप और अन्य आयुधों से विशाल था—विस्तृत वर्णन। पूर्वकाल में ब्रह्मा ने इसे एक सहस्र वर्षों तक धारण किया था। तदनन्तर प्रजापति ने पाँच सौ तीन वर्षों तक इसे अपने पास रक्खा। उनके बाद इन्द्र ने पचासी वर्षों तक, सोम ने पाँच सौ, तथा वरुण ने सौ वर्षों तक इसे धारण किया। तत्पश्चात् अर्जुन इसे पैंसठ वर्षों से धारण करते चले आ रहे हैं); ४४, १९ (उभौ मे दक्षिणौ पाणी गाण्डीवस्य विकर्षणे। तेन देवमनुष्येषु सव्यसाचीति मां विदुः); ४५, २९; ४६, १९. २२; ५०, २४. २५; ५३, २. ५. २४; ५४, २७. ३५; ५५, ४; ५७, १७. २२; ५८, ३१. ६४; ५९, ९; ६०, २३; ६१, ८. १९ (सुवर्ण पृष्ठं गाण्डीवम्); ६२, १०. २२; ६३, ८ (ततः प्रहस्य बीभत्सुर्दिव्यमैन्द्रं महारथः। अस्त्रमादित्यसङ्काशं गाण्डीवे समयोजयत). १०,

१२ (दश दिशः सर्वाः पतद्गाण्डीवमावृणोत्); ६४, १४. ३४. ४०; ६५, १२; ६६, ९. २७; ५. २३, २१; २६, २५; ४८, ५२. ५५. ६१. ६४. १०२; १२; ५२, १२. १७; ५४, १. १२; ५७, २७; ५९, २३; ६०, १२; ९६, ४१; ९८, १९ (एष गाण्डीमयश्चापो लोकसंहारसंमृतः । रक्ष्यते दैवतैर्नित्यं यतस्तद्गाण्डिवं धनुः); १२६, २; १३८, ५. २७; १४१, ३१; १४२, ७; १४३, ४५; १५८, ४–६ (यह द्युलोक में विचरनेवाले देवताओं के तीन धनुष—गाण्डीव, विज और शार्ङ्ग—ही दिव्य माने गये हैं। खाण्डवदाह के समय इन्द्रकुमार अर्जुन ने अग्निदेव से इसे प्राप्त किया था). २७. ३३; १६०, १०८. १११. ११२; १६१, २६. २९. ३०; १६२, ४४; १६९, २०; ६. २२, १०; २५, ३०; ४५, ९; ४७, १६; ५९, १०८. ११३. ११६–११९; ६०, २६; ६९, ९; ७१, २. ५. १२; ७८, ३०; ८५, ११; ११२, १४; ११७, ३८; ११९, ४५; १२०, ४४; १२१, २०; ७. ३, १४. १५. १९; ७, २९; १०, २०. २२. २७; १९, ९; ३०, ३२. ३३; ७३, ५०; ७५, २०; ७६, १२. २०; ८८, २०; ९०, १५. १७; ९२, ६३; ९३, ५. ३३; ९९, ४१; १०३, ७. ३८; १०५, ३२. ३५; ११०, ३८; ११४, १८; ११९, ११; १२६, ६; १२९, ३८; १३९, ११३. ११८. १२२; १४२, ७१; १४५, ५३. ९३. ९७; १४६, ४२. १०२. १२२; १५२, १८; १७०, ४४. ४५. ४७. ५०; १८०, १७; १९९, ५२. ५३; ८. ९, ६४. ६५; १६, ४२; १७, २२; ३०, १५; ३१, ४६; ३६. ३०; ३९, ३१; ४०, १४; ४६, ६१. ७२; ४७, ८; ५३, १; ५६, १३६; ५९, ५४; ६४, २४; ६६, ४१; ६८, २५. २८. ३०; ६९, ९. ७२; ७०, ४९; ७२, २४; ७३, ९२; ७४, २. ८. १५. २४. ४७. ५६; ७६, २८; ७९, २०. ७६. ८१; ८०, १५. १७; ८१, १६; ८२, १२; ८९, १४. २३. २४. ५५; ९०, ९२; ९१, ३० (श्लथहस्तगाण्डिवः). ४५; ९३, ३३. ४३; ९४, २९; ९. ३, ३३; ४, १७. १८. ३४; १४, २७; १८, ६; १९, ६८; २४, ५७. ५९; २५, १; २८, ६६; २९, ३. ३२; ६२, ९; १४. ७३, ८. १५; ७४, २२; ७५, ४. ५. १४; ७६, १०; ७७, २१; ७९, २७; ८२, ११. ३०; ८४, ६. १६; १६. ७, ५४. ६०; ८, २२; १७. १, ३४. ३९. ४१ (अग्नि ने अर्जुन से गाण्डीव धनुष तथा अक्षय तरकसों को सागर में फेंकने के लिये कहा जिससे वे सब वरुण के पास लौट जाँय)।

गाण्डीवधन्वन्, गाण्डीवधारिन्, गाण्डीवभृत्, गाण्डीविन् = अर्जुन (देखिये वरथा०)।

गाधि (न्), एक कान्यकुब्ज राजा का नाम है जो कुशिक के पुत्र और विश्वामित्र एवं सत्यवती के पिता थे। 'कान्यकुब्जे महानासीत्पार्थिवो भरतर्षभ । गाधीति विश्रुतो लोके कुशिकस्यात्मसंभवः ॥', (१. १७५, ३)। 'कान्यकुब्जे महानासीत्पार्थिवः सुमहाबलः । गाधीति विश्रुतोलोके वनवासे जगाम ह ॥', (३. ११५, २०)। ऋचीक ने एक सहस्र अश्वों की भेंट देकर इनकी पुत्री के साथ विवाह किया (३. ११५, २१–२३)। 'कान्यकुब्जे वै गाधेः सत्यवतीं सुताम्', (५. ११९, ४)। 'कुशिकस्य च दुर्धर्ष गाधेश्चैव महात्मनः', (६. ९, ८)। ये विश्वामित्र के पिता थे (९. ४०, १२. १५)। विश्वामित्र को सिंहासन पर बैठाकर ये स्वर्गलोक को चले गये (९. ४०, १६)। 'गाधिर्नामाऽभवत्पुत्रः कौशिकः पाकशासनः', (१२. ४९, ६)। इनकी पुत्री सत्यवती का ऋचीक के साथ विवाह हुआ (१२. ४९, ७)। 'गाधेः', (१२. ४९, ८)। 'गाधिः', (१२. ४९, १३)। इनके पुत्र के रूप में विश्वामित्र का जन्म हुआ (१२. ४९, ३०)। 'कुशिकस्यात्मजः श्रीमान गाधिर्नाम जनेश्वरः', (१३. ४, ६)। 'गाधिः शत्रुनिबर्हणः', (१३. ४, ९)। 'गाधिरुवाच', (१३. ४, १२)। 'गाधये', (१३. ४, १८)। १,००० अश्व देने पर ऋचीक ने इनकी पुत्री सत्यवती को विवाह में प्राप्त किया (१३. ४, १९)। इनकी पत्नी से विश्वामित्र का जन्म हुआ (१३. ४, ४७)। 'गाधेर्दुहितरं', (१३. ५६, ११)। 'विश्वामित्रं तव कुले गाधेः पुत्रं सुधार्मिकम्', (१३. ५६, १२)। तुकी० कौशिक।

गाधिज = विश्वामित्र : ९. ४०, २२. २७; ४२, ३७।

गाधिनन्दन = विश्वामित्र : १. १७५, १५।

गाधिसुता = सत्यवती : ३. ११५, २९।

गाधेयी = सत्यवती : १३. ४, ४३।

१. गान्धार (राः), एक जाति के लोगों का नाम है : 'गान्धाराणां यशोहर', अर्थात् शकुनि (२. ७७, ३९)। 'गान्धारराजः शकुनिर्गान्धारै-रभिरक्षितः', (५. ९४, ४९)। भारतवर्ष की एक जाति के रूप में इनका उल्लेख (६. ९, ५३)। 'गान्धारैर्याति गान्धारराजः', (६. २०, ८)। पाँच गान्धारों ने पाँच केकयों के विरुद्ध युद्ध किया (६. ४५, ७६)। इन लोगों ने भीष्म का अनुसरण किया (६. ५१, १४)। इन लोगों ने सात्यकि और अर्जुन से युद्ध किया (६. ५८, ७; ७१, १४)। गज आदि गान्धार शकुनि के भ्राता थे (६. ९०, ३०)। पहले कर्ण ने इन्हें पराजित किया था (७. ४, ६)। ये लोग द्रोणाचार्य के गरुडव्यूह के पृष्ठ भाग में स्थित हुये (७. २०, ११)। 'गान्धारानाकुलांश्चक्रे', (७. ३०, ५)। अर्जुन ने ५०० गान्धारों का वध किया (७. ३०, ६)। कालिकेय के अनुचर, ७७ गन्धारों का अभिमन्यु ने वध किया (७. ४९, ७)। इन लोगों ने जयद्रथ का अनुसरण किया (७. ८७, १६)। कर्ण ने इन लोगों को पराजित तथा दुर्योधन को कर देने के लिये बाध्य किया (८. ८, १८; ९, ३४)। 'मद्रगान्धारा', (८. ४४, ४७)। 'गान्धारा……धर्मसंकरकारकम्', (८. ४५, ८. ९)। कर्ण ने इन्हें पराजित किया था (८. ७१, ४७)। 'गान्धाराणां सहस्रेण शकुनिः परिवारितः', (८. ९५, ६)। मृत योद्धाओं के अन्तर्गत इनका उल्लेख (९. ३३, २५)। 'यवना किराता गान्धाराः', (१२. ६५, १३)। 'गान्धाराः सिन्धुसौवीराः नखरप्रासयोधिनः', (१२. १०१, ३)। 'उत्तरापथजन्मानः……यौनकाम्बोजगान्धाराः', (१२. २०७, ४३)। 'गान्धार-विषयं', (१४. ८३, १९)। 'शकुनेस्तनयो वीरो गान्धाराणां महारथः', (१४. ८४, १)। 'निरुध्यमानस्तैश्चापि गान्धारैः', (१४. ८४, ७)। 'गान्धारेषु समंततः', (१४. ८४, ८)। अर्जुन ने इन्हें पराजित करके कर देने के लिये विवश किया (१४. ८४, १४)। 'गान्धारविषये', (१४. ८५, ३)। कृष्ण ने इन्हें पराजित किया था (१६. ६, १२)। तुकी० बहु० गान्धारक, बहु० गान्धारि।

२. गान्धार : ४. १७, १४; १२. १८४, ३९; १४. ५०, ५३।

३. गान्धार = शकुनि : २. ७७, ३९; ४. ५०, २३; ९. २७, २२।

४. गान्धार = शिव (१,००० नाम)।

५. गान्धार (द्वि० °रौ) = अचल और वृषक : ७. ३०, १०।

१. गान्धारक (बहु० °काः), गान्धार जाति के लोगों का नाम है (७. ७, १३)। 'गान्धारकैः सप्तशतैश्चापशक्त्यसिपाणिभिः', (७. ९५, ४२)। 'मद्रकेषु च संसृष्टं शौचं गान्धारकेषु च', (८. ४०, ३०)।

२. गान्धारक (पि०)—'गान्धारकैर्गुप्तं पुष्टैरश्वैर्जये धृतम्', (९. २८, ४६)।

गान्धारपति = शकुनि : ८. ८५, १९।

गान्धारमुख्य (द्वि० °ख्यौ) = अचल और वृषक : ५. १६८, २

गान्धारराज् = शकुनि : ७. ३७, २४।

१. गान्धारराज = शकुनि : १. १, १४८; ३. २३८, २१; ३१३, २३; ५. २, ५; २९, ४६; ३०, २९; ९४, ४९; १९५, ७; ६. २०, ८ (शकुनिः पार्वतीयैः सार्धं गान्धारैर्याति गान्धारराजः); ७. ३४, २३; १९३, ९; ८. ७, ११; ७५, ९; ९३, ३८; ९. ३, ३९; २३, ३०. ३१; ११. २४, २३।

२. गान्धारराज = सुबल : १. ११०, ११।

३. गान्धारराज = गान्धारी के पिता (७. ११, १०)।

४. गान्धारराज = शकुनि का पुत्र : १४. ८३, २०; ८४, २९।

गान्धारराजदुहितृ = गान्धारी : १. ११६, २।

१. गान्धारराजपुत्र = शकुनि : १. ६३, ११२।

२. गान्धारराजपुत्र = शकुनि का पुत्र : १४. ८४, १४।

गान्धारराजस्य पुत्रः = शकुनि : १. ११०, १५; ९. १८, १८; २३, २६।

गान्धारराजस्य सुतः = शकुनि : ५. २, ९।

गान्धाराधिपति, गान्धारों के एक राजा का नाम है जिसका मान्धाता ने वध किया था (३. १२६, ४३)।

१. गान्धारि—देखिये दुर्योधन।

२. गान्धारि (बहु० °रयः) = गान्धार जाति के लोग, जिन्होंने शकुनि तथा उलूक का अनुसरण किया (८. ४६, १३)।

१. गान्धारी, गान्धारराज सुबल की पुत्री, धृतराष्ट्र की रानी और दुर्योधन आदि धार्तराष्ट्रों की माता का नाम है (१. १, ९९. २१६)। १. २, ३१७. ३१९. ३४५; ६३, ११२ (दुर्योधनस्य जननी); ६७, १६० (मतिस्तु सुबलात्मजा); ९५, ५६ (तत्र धृतराष्ट्रस्य राज्ञः पुत्रशतं बभूव गान्धार्यां वरदानात् द्वैपायनस्य); ११०. ९. १०. १२. १३. १८ (इन्होंने शिव से यह वरदान प्राप्त किया था कि इनके सौ पुत्र हों। धृतराष्ट्र के साथ विवाह होने पर इन्होंने भी अपनी आँखों में पट्टी बाँध ली थी क्योंकि इनके पति अन्धे थे); ११५, १. ३. ४. ८. ९. १२. १५. ४१ (ये सौ पुत्रों की माता बनीं); ११६, ८; १२३, १; १२४, ३; १२६, १६; १३४, १५. ३५; १४३, १४; २. ५८, २७. २८; ७५, १. ११ (इन्होंने भी दुर्योधन का परित्याग कर देने का धृतराष्ट्र को परामर्श दिया); ८१, १९; ३. ९, २; २५४, २८. ३४; २५६, ५; २७१, ४३; ५. ६७, ६. ८; ६९. ८. ९; १२४, ५; १२५, १९; १२९, २. ६. ७. ९. १०. १८; १४१, ५१; १४७, ८. ४२; १४९, १; १५०, १. ७; ६. ४९, ९; ८८, ४०; ८९, ७; ८. ४, ५; ६, ५५. ५७; ९. १, २३. ४१. ५०. ५१; ६२, ४५. ४६; ६३, १. १०. ११. १३. २३. २७–२९. ३७. ५२. ५९. ६५. ६९. ७०. ७४; ६४, ३७; १०. २, ३२; ९, २९. ३२; ११. १, २८; ८, ३०; १०, २. ४; ११, ५; १४, १. २. ७. ९. १०. १३. १४; १५, १. १२. २०. २१. २४. २८. ३३. ४० (अपनी क्रोधदृष्टि से इन्होंने युधिष्ठिर के पाँव के अंगूठे के नख को भस्म कर दिया); १६, १ (अपनी दिव्य दृष्टि से इन्होंने कौरवों के संहार को देखा); १७, १. ३; १८, १; १९. १; २०, १; २१, १; २२, १; २३, १; २४, १; २५, १. ३७. ३८. ३९. ४७ (मृत कौरवों के लिये विलाप करने के पश्चात् इन्होंने यह शाप दिया कि श्रीकृष्ण तथा उनके वंश का ३६ वर्ष बाद उन्मूलन हो जायगा); २६, १. ६; १२. ३७, ४०; ४०, ६; ४२, ९; ४५, ११; १३. १६६, १६; १६७, ९; १४. १, १०; ५२, २८. २९. ३०; ७१, ६; ७८, ४२; ८४, ३; १५. १, २. ८. ११; २, १२. १६. १९. २८; ३, ६. १२. २१. २६. २८. ३२. ३५. ३७. ५१. ६१. ६६. ७७; ४, ३. १६; ५, १. ५; ८, ५. ६. ८. १७. २०; ९, ९. १८; १०, ५. ५३; १४, १५; १५, २. ९; १६, ९. १६; १८, ४. ८. २०; १९, ४. ६. १५; २०, १६. १८. ३३; २१, ३. ८; २२, ७. १७; २४, १०. १४. १९; २७, १६; २८, ४; २९, १३. १७. ३५. ४९; ३१, १; ३२, ३. १९; ३६, २५. २७. २८. ४८; ३७, ७. ११. १४. १७. २९. ३१. ३५. ३९. ४४ (धृतराष्ट्र और कुन्ती के साथ-साथ ये भी दावाग्नि में भस्म हो गईं); ३८, ६; ३९, १३. १८; १६. २, २१; ४, १८; ६, १५; १८. ५, १४।

इनके नामों के निम्न पर्याय मिलते हैं :—

* गान्धारराजदुहितृ—देखिये वस्था०।

* सुबलजा : १५. १, २५।

* सुबलस्य पुत्री : ५. १४८, २८।

* सुबलस्यात्मजा : १. ११०, ५।

* सुबलात्मजा : १. ६७, ६०; ११०, ९; २. ७१, २३; ११. १६, १६।

* सौबली : १. ११५, २३; ११६, १५।

* सौबलेयी : १. ११५, १४. १७; ११६, ४; ९. ६३, ५९; १५. २, १६; १८, ९।

२. गान्धारी, अजमीढ की पत्नी का नाम है (१. ९५, ३७)।

३. गान्धारी, एक देवी का नाम है जिन्होंने पार्वती का अनुसरण किया (३. २३१, ४८)।

४. गान्धारी, कृष्ण की पत्नी का नाम है : 'तथा गान्धारराजस्य सुतां वीरः स्वयंवरे। निर्जित्य पृथिवीपालानावहत् पुष्करेक्षणः॥ अमृष्यमाणा राजानो यस्य जात्या हयाइव। रथे वैवाहिके युक्ताः प्रतोदेन कृतव्रणा॥', (७. ११, १०. ११)। श्रीकृष्ण की उन पत्नियों के अन्तर्गत इनकी गणना जो उनके साथ सती हो गईं (१६. ७, ७३)।

गान्धारीपुत्र—देखिये दुर्योधन, वस्था०।

गान्धारीपुत्रोत्पत्ति—"जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन ने कहा : एक समय महर्षि व्यास जब परिश्रम और क्षुधा से खिन्न होकर धृतराष्ट्र के यहाँ आये तो उस समय गान्धारी ने भोजन तथा विश्राम की व्यवस्था द्वारा उन्हें सन्तुष्ट किया। जब व्यास ने गान्धारी को वर देने की इच्छा की तो उन्होंने अपने पति के समान ही सौ पुत्र माँगे। तदनन्तर समयानुसार गान्धारी ने गर्भ धारण किया, परन्तु दो वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी उन्हें प्रसव नहीं हुआ। इसी बीच कुन्ती के गर्भ से एक तेजस्वी पुत्र के जन्म का समाचार सुनकर उन्हें अत्यन्य दुःख हुआ जिससे खिन्न हो उन्होंने अपने उदर पर आघात किया। इससे उनके गर्भ से एक मांस-पिण्ड का प्रसव हुआ जो लोहे के समान कड़ा था। दो वर्ष गर्भ में धारण करने के पश्चात् भी उस पिण्ड को इतना कड़ा देखकर जब उन्होंने उसे फेंक देने का विचार किया तो उसी समय व्यास ने प्रकट होकर उस मांस-पिण्ड को ठण्डे जल से सींचने के लिए कहा। उस समय सींचे जाने पर उस पिण्ड के एक सौ टुकड़े हो गये। वे अलग-अलग अंगूठों के पोर के बराबर एक सौ एक गर्भों के रूप में परिणत हुए। तत्पश्चात् गान्धारी ने उन सभी पृथक् भागों को घृत से भरे कुण्डों में पृथक्-पृथक् रखवाया। उन कुण्डों के ढक्कन को पूरे दो वर्षों के पश्चात् ही खोलने का आदेश देकर महर्षि व्यास तपस्या के लिए हिमालय चले गये। दो वर्ष व्यतीत होने पर जिस क्रम से वे गर्भ उन कुण्डों में स्थापित किए गए थे उसी क्रम में उनमें सर्व-प्रथम दुर्योधन उत्पन्न हुआ। जिस दिन दुर्योधन का जन्म हुआ उसी दिन भीमसेन भी उत्पन्न हुये। दुर्योधन ने जन्म लेते ही गदहे जैसी बोली में रोना आरम्भ किया। उस समय प्रकृति में भी अनेक अशुभ उत्पात होने लगे। विदुर ने धृतराष्ट्र से कहा कि वे अपने इस पुत्र का परित्याग कर दें परन्तु धृतराष्ट्र इसके लिए सहमत नहीं हुए। एक मास के भीतर ही उन कुण्डों से धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों और एक पुत्री का जन्म हुआ। जिन दिनों गान्धारी गर्भवती थीं उन्हीं दिनों धृतराष्ट्र ने अपनी सेविका, एक वैश्य जातीय स्त्री से, एक अन्य पुत्र को जन्म दिया जो युयुत्सु के नाम से विख्यात हुए (१. ११५)।"

१. गायत्री, एक छन्द तथा एक पवित्रतम मन्त्र का नाम है : 'गायत्री छन्दसां मुखम्', (२. ३८, २७)। ३. ८५, ३०। 'गायत्रीं वेदमातरम्', (३. २००, ८३)। 'चतुर्विंशतिरुद्दिष्टा गायत्री लोकसंमता॥ य एतां वेद गायत्रीं पुण्यां सर्वगुणान्विताम्। तत्त्वेन भरतश्रेष्ठ स लोके न प्रणश्यति॥', (६. ४, १५. १६)। श्रीकृष्ण ने कहा कि वे गायत्री छन्द के समान हैं (६. ३४, ३५)। शिव ने गायत्री और सावित्री को प्रग्रह बनाया (८. २०२, ७५)। शिव ने गायत्री को अपने रथ के ऊपरी भाग का बन्धन रज्जु बनाया (८. ३४, ३५)। 'गायत्र्या कन्यया दिवि', (१३. १५२, २०)।

२. गायत्री = शिव (१,००० नाम)।

गायत्र्याः स्थान—'गायत्र्याः स्थानं त्रैलोक्यपूजितम्', (३. ८५, २८)।

गाथन, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६७)।

गायन्ति त्वां गायत्रिणः = शिव (१,००० नाम)।

१. गार्ग्य, एकाधिक ऋषियों का नाम है : १२. २१०, २१ (देवर्षिचरितं गार्ग्यम्)। 'कालयवनः ख्यातो गर्गतेजोभिसंवृतः', (१२. ३३९, ९५)। ये विश्वामित्र के पुत्र थे (१३. ४, ५५)। 'वृद्धगार्ग्यो', (१३. १२५, ७७)।

२. गार्ग्य (बहु० °ग्याः), एक जाति के लोगों का नाम है जिन्हें श्रीकृष्ण ने पराभूत किया था (७. ११, १५)।

गार्त्समद (वि०)—'कथितो वंशोमया गार्त्समदस्तव', (१३. ३०, ६७)।

गार्हपत्य (बहु० °त्याः) पितरों के एक वर्ग का नाम है (२. ११, ४६)।

गालव, एक ऋषि का नाम है : 'चरितं गालवस्य', (१. २, ६१)। 'महर्षेश्चापि चरितं कथितं गालवस्य', (१. २, २३४)। युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित मुनियों में एक यह भी थे (२. ४, १५)। इन्द्रसभा में इनकी

उपस्थिति (२. ७, १०)। उन ब्रह्मर्षियों में एक यह भी थे जो युधिष्ठिर की प्रतीक्षा में रुके रहे (३. ८५, १२०)। ५. १०६, ७. १४. १९. २०. २५. २६. २७; १०७, १. २. १९; १०८, १. २. १८; १०९, १४. १६. २१; ११०, १४. २०; १११, २. १०. १४. १८. १९. २६; ११२, १. ४. ५. १९. २२; ११३, २. ५. १९. २२. २३; ११४, १. ११. १५; ११५, २. १२. १५. १६. १७. २०; ११६, ४. ७. ९. १०. १४; ११७, १. ६. १९. २१; ११८, १. २. ९. १२. १६. १७. २१; ११९, १. ३. ५. ९. ११. १५. १६. २१. २४; १२१, २८; १२३, १९; ९. ५०, ६५; १२. ४७, १० (उन महर्षियों में एक यह भी थे जो वाण-शय्या पर पड़े भीष्म को घेर कर खड़े हुये); २८७, ३ (गालवस्य च संवादं देवर्षेर्नारदस्य च). ४. १२; ३४२, १०२–१०४ (वामादेशितमार्गेण मत्प्रसादान्महात्मना ॥ पाञ्चालेन क्रमः प्राप्तस्तस्माद्भूतात्सनातनात् । बाभ्रव्यगोत्रः स बभौ प्रथमं क्रमपारगः । नारायणाद्वरं लब्ध्वा प्राप्य योगमनुत्तमम् । क्रमं प्रणीय शिक्षां च प्रणयित्वा स गालवः); १३. ४, ५२; १८, ५२; २६, ६; ९४, ५. ३७ । तुकी० पञ्चाल, पाञ्चाल ।

गालवचरित (मू)—"पूर्वकाल में एक बार साक्षात् धर्मराज, महर्षि वसिष्ठ का रूप धारण करके तपस्या में लगे हुये विश्वामित्र के पास उनकी परीक्षा लेने के लिए आये। उस समय उन्होंने भूख से अत्यन्त पीड़ित होने के कारण भोजन की इच्छा प्रकट की। विश्वामित्र ने अत्यन्त शीघ्रता के साथ उनके भोजन के लिए चरूपाक बनाना आरम्भ किया परन्तु वे अतिथि-देवता उनकी प्रतीक्षा नहीं कर सके। फलस्वरूप जब उन्होंने दूसरे तपस्वियों का दिया हुआ अन्न खा लिया तब विश्वामित्र भी अत्यन्त उष्ण भोजन लेकर उनकी सेवा में उपस्थित हुये। उस समय धर्म ने कहा : 'मैंने भोजन कर लिया है। अब तुम यहीं प्रतीक्षा करो।' तदनन्तर धर्म वहाँ से चले गये परन्तु विश्वामित्र भोजन-पात्र को हाथ में लिए हुये निश्चेष्ट खड़े रहे। केवल वायु के आहार पर जीवित रहते हुए उन्हें इस प्रकार खड़े-खड़े सौ वर्ष व्यतीत हो गये। इस अवधि में गालवमुनि उनकी सेवा-शुश्रूषा करते रहे। सौ वर्ष पूर्ण होने पर वसिष्ठ के रूप में धर्म ने पुनः प्रगट होकर उस भोजन को ग्रहण किया जो तत्काल बने हुए भोजन के समान अब भी गर्म था। भोजन करने के पश्चात् धर्म ने कहा : 'विप्रर्षे ! मैं आप पर अत्यन्त प्रसन्न हूँ।' अपने को ब्राह्मण के रूप में संबोधित देखकर विश्वामित्र अत्यन्त प्रसन्न हुये। उन्होंने गालवमुनि की सेवा पर प्रसन्न होकर उन्हें इच्छानुसार कहीं भी चले जाने के लिए कहा। गालव ने विश्वामित्र से कहा : 'मैं आपको गुरुदक्षिणा के रूप में क्या दूँ ?' उनके इस निवेदन पर भी विश्वामित्र ने उन्हें जाने के लिए ही कहा। फिर भी गालव जब अत्यन्त आग्रह ही करते रहे तो विश्वामित्र को कुछ क्रोध आ गया और उन्होंने इस प्रकार कहा : 'तुम मुझे चन्द्रमा के समान श्वेतवर्ण ऐसे आठ सौ अश्व दो जिनके कान एक ओर से श्यामवर्ण हों।' (५. १०६)।" "विश्वामित्र के इस प्रकार कहने पर गालव मुनि तब से न कहीं बैठते, न सोते और न भोजन ही करते थे। वे चिन्ता और शोक में पड़े रहने के कारण इतने क्षीण हो गए कि उनके शरीर में केवल अस्थि और चर्म मात्र ही शेष रहा। उस समय वे विष्णु की शरण में जाने का विचार करने लगे। उसी समय उनके मित्र गरुड़ ने उनके समक्ष उपस्थित होकर उनसे कहा : 'मैंने विष्णु से पहले ही तुम्हारी ओर से निवेदन कर दिया है। अतः वे तुम्हारा मनोरथ पूर्ण करेंगे। मैं तुम्हें सुखपूर्वक ऐसे देश में पहुँचा दूँगा जो पृथ्वी के अन्तर्गत तथा समुद्र के उस पार है।' (५. १०७)।" "गालव से गरुड़ ने पूर्वदिशा का वर्णन करते हुए कहा : जिस दिशा में सम्पूर्ण जगत् को उत्पन्न एवं प्रभावित करने वाले सूर्य उदित होते हैं, जिस दिशा में सन्ध्या के समय साध्यगण तपस्या करते हैं, धर्म के युगल नेत्र स्वरूप चन्द्रमा और सूर्य सर्वप्रथम जिस दिशा में उदित होते हैं, जहाँ धर्म प्रतिष्ठित हुआ है, तथा जिस दिशा में हवन करने पर आहुति सम्पूर्ण दिशाओं में व्याप्त हो जाती है वही यह पूर्व दिशा दिवस एवं सूर्य मार्ग का द्वार है। इसी दिशा में प्रजापति दक्ष की अदिति आदि कन्याओं ने सर्वप्रथम प्रजावर्ग को उत्पन्न किया था और इसी में कश्यप की सन्तानों ने वृद्धि प्राप्त की है। इसी में इन्द्र का देवसम्राट् के पद पर प्रथम अभिषेक हुआ है और इसी दिशा में देवताओं ने तपस्या की है। अत्यन्त पूर्वकाल में सर्वप्रथम यही दिशा देवताओं से आवृत्त हुई थी। अतः इसे 'पूर्वा' अर्थात् आदि दिशा कहते हैं। ब्रह्मा ने सर्वप्रथम इसी दिशा में वेदों का गायन किया था और सविता ने ब्रह्मवादी मुनियों को यहीं सावित्री मन्त्र का उपदेश किया था। इसी दिशा में सूर्य ने महर्षि याज्ञवल्क्य को शुक्ल यजुर्वेद के मन्त्र प्रदान किये थे और इसी दिशा में देवगण सोम-रस का पान करते हैं। यहीं वरुण ने पाताल का आश्रय लेकर लक्ष्मी को प्राप्त किया था। पुरातन महर्षि वसिष्ठ की उत्पत्ति भी इसी दिशा में हुई थी। इसी दिशा में वेद की सहस्रों शाखायें प्रकट हुईं और इसी में धूमपायी महर्षिगण हविष्य के धूम का पान करते हैं। इसी दिशा में उदित होने वाले सूर्य कृतघ्न मनुष्यों एवं असुरों का विनाश करते हैं। यह पूर्व दिग्विभाग ही त्रिलोकी का, स्वर्ग का, और सुख का भी द्वार है। इस प्रकार वर्णन करने के पश्चात् गरुड़ ने गालव से पूछा कि वे पूर्व दिशा में ही चलेंगे या अन्य दिशाओं का भी वर्णन सुनेंगे। (५. १०८)।" "दक्षिण दिशा का वर्णन करते हुए गरुड़ ने कहा : यह प्रसिद्ध है कि पूर्वकाल में सूर्य ने वेदोक्त विधि के अनुसार यज्ञ करके आचार्य कश्यप को दक्षिणा स्वरूप इस दिशा का दान किया था इसीलिए इसे दक्षिण दिशा कहते हैं। तीनों लोकों के पितरों, ऊष्मप नामक देवताओं, और विश्वदेवों का निवास इसी दिशा में है। विद्वान् पुरुष इसी दिशा को धर्म का द्वार कहते हैं। यहीं त्रुटि और लव आदि सूक्ष्मतर कालांशो पर दृष्टि रखते हुए प्राणियों की आयु की निश्चित गणना की जाती है। देवर्षि, पितृ-लोक के ऋषि, तथा समस्त राजर्षिगण इसी दिशा में निवास करते हैं। मृत प्राणी तथा उनके कर्म इसी दिशा का आश्रय लेते हैं। इस दिशा में प्रतिकूल स्वभाव वाले सहस्रों राक्षसों की ब्रह्मा ने सृष्टि की है। गन्धर्वगण, मन्दराचल के कुञ्जों और महर्षियों के आश्रमों में, मन तथा बुद्धि को आकर्षित करने वाली गाथाओं का इसी दिशा में गायन करते हैं। यहीं राजा रैवत गाथाओं के रूप में सामगान का श्रवण करते-करते अपनी स्त्री, मन्त्री तथा राज्य से भी वियुक्त होकर वन में चले गये थे। इस दिशा में सावर्णि मनु तथा यवक्रीत के पुत्र ने सूर्य की गति के लिए मर्यादा स्थापित की थी जिसका सूर्य कभी उल्लंघन नहीं करते। यहीं पुलस्त्यवंशी रावण ने तपस्या द्वारा देवताओं से अवध्य होने का वरदान प्राप्त किया था। इसी दिशा में घटित घटना के कारण वृत्रासुर इन्द्र का शत्रु बन बैठा। इसी दिशा में वह वैतरणी नदी है जो पापियों से घिरी रहती है। इसी दिशा में लौटने पर सूर्यदेव सुस्वादु जल की वर्षा करते हैं और तदनन्तर वसिष्ठ द्वारा सेवित उत्तर दिशा में पहुँचकर वे हिमपात करते हैं। यहीं मैंने भूख से पीड़ित होकर दो विशाल प्राणी, एक हाथी और एक कछुआ, भोजन के लिए प्राप्त किये थे। महर्षि कर्दम से उत्पन्न चक्रधनु नामक महर्षि भी इसी दिशा में रहते हैं जो कपिल के नाम से विख्यात हैं। यहीं शिव नाम से प्रसिद्ध और वेदों के पारङ्गत कुछ सिद्ध ब्राह्मण निवास करते हैं। दक्षिण में ही वासुकि-पालित तथा तक्षक एवं ऐरावत नागों द्वारा सुरक्षित भोगवती नामक पुरी है। मृत्यु के पश्चात् इस दिशा में जाने वाले प्राणी को ऐसे घोर अन्धकार का सामना करना पड़ता है जो अग्नि एवं सूर्य के लिये भी अभेद्य है। (५. १०९)।" "गरुड़ ने पश्चिम दिशा का वर्णन करते हुए कहा : पश्चिम दिशा वरुण का आश्रय और उत्पत्ति-स्थान है। दिन के पश्चात् सूर्य इसी दिशा में स्वयं अपनी किरणों का विसर्जन करते हैं इसलिए यह पश्चिम के नाम से विख्यात है। पूर्वकाल में कश्यप ने जल-जन्तुओं के आधिपत्य के लिए इसी दिशा में वरुण का अभिषेक किया था। चन्द्रमा वरुण के निकट रहकर शुक्लपक्ष की प्रतिपदा को इसी दिशा में नूतनता प्राप्त कर उदित होते हैं। वायु ने इसी दिशा में युद्ध करके दैत्यों को पराजित किया था। प्रतिदिन सूर्यदेव को ग्रहण करनेवाला अस्ताचल यहीं स्थित है। निद्रा एवं रात्रि इसी दिशा से प्रकट होती हैं। पश्चिम दिशा में ही इन्द्र ने गर्भवती दिति देवी के गर्भ का उच्छेद किया था जिससे मरुद्गण जन्मे। हिमालय, मन्दराचल और

क्षीर-सागर इसी दिशा मे स्थित हैं। पश्चिम दिशा में ही समुद्र के भीतर राहु का धड़ दृष्टिगत होता है। मुनिवरों का सामगान इसी दिशा में होता है। हरिमेधा मुनि की कन्या ध्वजवती यहाँ निवास करती हैं। वायु, अग्नि, जल और आकाश—ये सब इसी दिशा में रात्रि और दिन के दुःखदायी स्पर्श का परित्याग करते हैं। इसी दिशा से सूर्यदेव वक्रगति से चक्कर लगाना आरम्भ करते हैं। अभिजित् सहित अट्ठाईस नक्षत्रों में से प्रत्येक अट्ठाइसवें दिन सूर्य के साथ विचरण करके अमावस्या के बाद फिर सूर्य-मण्डल से पृथक् हो जाता है। अधिकांश नदियाँ यहीं से प्रकट होकर समुद्र में विलीन होती हैं। यहीं नागराज अनन्त का निवास तथा भगवान् विष्णु का सर्वोत्कृष्ट स्थान है। यहीं वायु का भवन और महर्षि कश्यप का आश्रम है (५. ११०)।" "उत्तर-दिशा का वर्णन करते हुए गरुड़ ने कहा : इस मार्ग से जाने पर मनुष्य का पाप से उद्धार हो जाता है अतः इस 'उत्तारण' के कारण इसे उत्तर दिशा कहते हैं। यह दिशा उत्कृष्ट सुवर्ण आदि निधियों का अधिष्ठान है। इसी दिशा में बदरिकाश्रमतीर्थ है। उत्तर में ही हिमालय पर भगवान् शंकर उमा के साथ अवस्थित हैं। चन्द्रमा का द्विजराज के पद पर अभिषेक इसी दिशा में हुआ था और यहीं पर गंगा को शिव ने मस्तक पर धारण किया था। पार्वती के तप का स्थान यही दिशा है। उत्तर-दिशा में ही शिव ने काम को भस्म किया था। कुबेर का अभिषेक इसी दिशा में हुआ था। चैत्ररथवन और वैखानस ऋषियों का आश्रम इसी दिशा में है। मन्दाकिनी नदी और मन्दराचल यहीं स्थित हैं। राक्षस गण सौगन्धिक वन की रक्षा करते हैं। कदलीवन और कल्पवृक्ष इसी दिशा में हैं। अरुन्धती देवी और सप्तर्षि यहीं प्रकाशित होते हैं। स्वाती नक्षत्र का निवास इसी में है। यज्ञानुष्ठान में प्रवृत्त ब्रह्मा जी इसी दिशा में निवास करते हैं। इसी दिशा में धाम नाम से प्रसिद्ध मुनि श्री गंगामहाद्वार की रक्षा करते हैं। कैलासपर्वत, जो कुबेर का स्थान है, यहीं स्थित है। इसी दिशा में विद्युत्प्रभा नाम से प्रसिद्ध दस अप्सरायें उत्पन्न हुई थीं। विष्णु ने त्रिलोक नापते समय चरण इसी दिशा में रखा था। उत्तर दिशा के उशीरबीज नामक स्थान में राजा मरुत ने यज्ञ किया था। इसी दिशा में महात्मा जीमूत के समक्ष हिमालय की स्वर्णनिधि प्रकट हुई थी। समस्त शुभ कर्मों के लिए यह दिशा उत्तम मानी गई है, इसीलिए इसे उत्तर-दिशा कहते हैं (५. १११)।" "गालव के निवेदन करने पर गरुड़ उन्हें पश्चिम दिशा की ओर लेकर चले—वर्णन। गरुड़ के अत्यन्त तीव्र वेग को सहन न कर सकने के कारण गालव ने उनसे गति को कुछ मन्द करने का निवेदन किया। गालव ने यह भी कहा कि गुरु को उनकी आज्ञानुसार घोड़े दिये जाने का कोई मार्ग उपलब्ध न होने के कारण वे अपने जीवन का परित्याग कर देना चाहते हैं। गालव के इस दीन वचन को सुनकर गरुड़ चलते हुए ही हँसने लगे। तदनन्तर ऋषभ नामक पर्वत पर पहुँचकर दोनों कुछ समय के लिए विश्राम करने लगे (५. ११२)।" "ऋषभ पर्वत के शिखर पर गालव और गरुड़ ने शाण्डिली नामक एक तपस्विनी ब्राह्मणी को देखा। उस तपस्विनी ने उन्हें सिद्धान्न अर्पित किया जिससे तृप्त होकर वे लोग निद्रा-लीन हो गये। दो घड़ी के पश्चात् जागकर गरुड़ ने देखा कि वह अपने दोनों पंखों से रहित हो गये हैं। जब गालव ने उनसे इस प्रकार पंखहीन होने का कारण पूछा तो उन्होंने कहा : 'मैंने तो अपने मन में केवल इतना ही विचार किया था कि इस तपस्विनी को वहाँ पहुँचा दूँ जहाँ ब्रह्मा, महादेव और विष्णु आदि निवास करते हैं।' तदनन्तर गरुड़ द्वारा क्षमा-याचना करने पर शाण्डिली ने उन्हें पुनः पंखों से युक्त कर दिया। साथ ही उसने उन्हें किसी भी स्त्री का अपमान न करने की चेतावनी भी दी। तदनन्तर गरुड़ और गालव जैसे आये थे वैसे ही चले गये। फिर भी, वे श्याम-कर्ण अश्व नहीं प्राप्त कर सके। गालव को आया देखकर विश्वामित्र ने उनसे कहा : 'तुमने मुझे जो देने की प्रतिज्ञा की थी उसका समय समाप्त हो चुका है परन्तु मैं इतने ही समय तक और प्रतीक्षा करूँगा।' (५. ११३)।" "तदनन्तर गरुड़ ने हिरण्य और धन की व्युत्पत्ति तथा दुर्लभता बताते हुए कहा कि अजैकपाद, अहिर्बुध्न्य तथा कुबेर धन की रक्षा करते हैं जिससे धन प्राप्त नहीं हो सकता, और विना धन के श्यामकर्ण अश्वों की भी प्राप्ति नहीं होगी। गरुड़ के परामर्श पर धन प्राप्ति के लिए गालव तथा गरुड़ दोनों प्रतिष्ठानपुर में नहुष-पुत्र राजर्षि ययाति के पास गये। गरुड़ ने गालव की कठिनाई का ययाति से वर्णन किया और साथ ही ययाति से कहा : 'आप से भिक्षा ग्रहण करके गुरु को पूर्वोक्त धन देने के पश्चात् गालव तपस्या में संलग्न हो जायेंगे और अपनी तपस्या के एक अंश से ये आप को भी संयुक्त करेंगे। हे नरेश्वर ! यहाँ दान किये हुए घोड़े के शरीर में जितने रोयें होते हैं, दान करने वाले को उतने ही घोड़े प्राप्त होते हैं। अतः गालव को दान देने से आपके दान की शोभा होगी' (५. ११४)।" "सहस्रों यज्ञों का अनुष्ठान करने वाले दाता, दान-पति, प्रभावशाली तथा राजोचित तेज से प्रकाशित महाराज ययाति ने अपने मन में सोचा कि गालव और गरुड़ सूर्यवंश में उत्पन्न हुए अनेक राजाओं को छोड़कर उनके पास आये हैं, यह उनका सौभाग्य है। फिर भी अपने क्षीण वैभव को ध्यान में रखकर ययाति ने कहा : 'मैं अब पहले जैसा धन-सम्पन्न नहीं रह गया हूँ। इस दशा में भी मैं आपके आगमन को निष्फल नहीं करना चाहता।...... अतः मेरी पुत्री को ही महर्षि गालव ग्रहण करें। मेरी पुत्री के रूप-सौन्दर्य से आकृष्ट होकर देवता, मनुष्य तथा असुर इसे प्राप्त करने की अभिलाषा रखते हैं। इसके शुल्क के रूप में राजा लोग निश्चय ही अपना राज्य भी आपको दे देंगे।' तब गरुड़ सहित गालव उस माधवी नामक कन्या को लेकर वहाँ से चल दिये। इसके पश्चात् गरुड़ भी यह कहकर कि अश्वों की प्राप्ति का द्वार प्राप्त हो गया है, गालव से विदा लेकर चले गये। गालव उस कन्या को लेकर अयोध्यापति, इक्ष्वाकुवंशी हर्यश्व के पास आये और उनसे अपनी अभिलाषा व्यक्त की (५. ११५)।" "गालव की बात सुनकर महाराज हर्यश्व ने गालव के साथ आई ययाति-कन्या माधवी को ग्रहण करना स्वीकार कर लिया। परन्तु गालव ने कहा कि वह आठ सौ श्यामकर्ण अश्व प्राप्त करने के पश्चात् ही कन्या को प्रदान करेंगे। उस समय महाराज हर्यश्व ने कहा कि उनके पास वैसे केवल दो सौ अश्व ही हैं। उन्होंने यह भी कहा कि वे उस कन्या से केवल एक ही सन्तान उत्पन्न करेंगे। हर्यश्व की बात सुनकर कन्या ने महर्षि गालव से कहा : 'मुझे यह वरदान प्राप्त है कि मैं प्रत्येक प्रसव के पश्चात् पुनः कन्या हो जाया करूँगी, अतः आप दो सौ श्यामकर्ण अश्व लेकर मुझे राजा को सौंप दें। इस प्रकार चार राजाओं से दो-दो सौ अश्व लेने पर आपके आठ सौ अश्व पूरे हो जायेंगे।' कन्या की बात सुनकर गालव ने नियत शुल्क का चौथाई भाग लेकर राजा हर्यश्व को केवल एक पुत्र उत्पन्न करने के के लिए वह कन्या सौंप दी। राजा ने उस कन्या से वसुमना नामक पुत्र उत्पन्न किया। तदनन्तर माधवी पुनः कन्या होकर गालव के पास आ गई और वे उसे लेकर राजा दिवोदास के यहाँ गये (५. ११६)।" "राजा दिवोदास के यहाँ भी हर्यश्व जैसी ही व्यवस्था हुई। उन्होंने भी ययाति-कन्या माधवी के गर्भ से हर्यश्व की ही भाँति अपने लिए प्रतर्दन नामक पुत्र उत्पन्न किया (५. ११७)।" "तदनन्तर गालव उस कन्या को लेकर भोज नगरी में राजा उशीनर के यहाँ आये। यहाँ भी पहले जैसी व्यवस्था हुई और राजा उशीनर ने उस कन्या के गर्भ से अपने लिये शिवि नामक पुत्र उत्पन्न किया। तत्पश्चात् गालव जब उस कन्या को वहाँ से लेकर चले तो उन्हें मार्ग में गरुड़ का दर्शन हुआ (५. ११८)।" "गरुड़ ने गालव को बताया कि अब शेष दो सौ श्यामकर्ण अश्व अप्राप्य हैं। उन्होंने यह भी बताया कि पूर्वकाल में कान्यकुब्ज राजा गाधि की कुमारी पुत्री सत्यवती को अपनी पत्नी बनाने के लिए जब ऋचीक मुनि ने राजा से उसे मांगा तो राजा ने ऋचीक से ऐसे ही एक सहस्र श्यामकर्ण अश्व मांगे थे। ऋचीक ने वरुण-लोक में जाकर अश्व-तीर्थ से वैसे घोड़े प्राप्त किये और उन्हें राजा गाधि को दे दिया। गाधि ने पुण्डरीक नामक यज्ञ करके उन सभी अश्वों को दक्षिणा के रूप में ब्राह्मणों को बाँट दिया। उक्त तीन राजाओं ने उन्हीं से दो-दो सौ अश्व क्रय करके अपने-अपने पास रख लिए थे। शेष चार सौ घोड़े वितस्ता नदी के उस पार ले जाये जाते समय नदी की धारा

में बह गये। इस प्रकार अब इस देश में केवल छः सौ श्यामकर्ण अश्व ही विद्यमान हैं। अतः गरुड़ ने गालव को यह परामर्श दिया कि वे शेष दो सौ अश्वों के बदले में ययाति-कन्या माधवी को ही विश्वामित्र को समर्पित कर दें। गरुड़ के इस परामर्श को ग्रहण करके महर्षि गालव ने विश्वामित्र से तदनुसार प्रस्ताव किया। विश्वामित्र ने भी उस कन्या को ग्रहण करके उससे अष्टक नामक एक पुत्र उत्पन्न किया। तदनन्तर विश्वामित्र उस कन्या को गालव को लौटाकर स्वयं वन में चले गये। गालव ने भी गुरु-दक्षिणा देकर मन ही मन प्रसन्नता का अनुभव किया और फिर गरुड़ से आज्ञा लेकर उस राज-कन्या को पुनः उसके पिता ययाति के यहाँ लौटा आये। इस प्रकार गुरु-ऋण से उऋण होकर गालव वन में चले गये (५. ११९)।" "तदनन्तर राजा ययाति माधवी के स्वयंवर का विचार करके गङ्गा-यमुना के संगम पर स्थित अपने आश्रम में आकर रहने लगे। उस कन्या के साथ उसके दो भ्राता, पूरू और यदु भी उनके आश्रम पर आये। स्वयंवर में नाग, यक्ष, मनुष्य, गन्धर्व, पशु-पक्षी तथा पर्वत, वृक्ष और वनों में निवास करने वाले प्राणियों का शुभागमन हुआ। उसमें ब्रह्मा के समान अनेक तेजस्वी ब्रह्मर्षि भी उपस्थित हुए। माधवी ने अन्य समस्त वरों को छोड़कर तपोवन का ही वर के रूप में वरण कर लिया। इसके पश्चात् ययाति-नन्दिनी माधवी तपोवन में आकर नियमों का पालन करती हुई शुद्ध मन से मृगी के समान विचरण करने लगी। ययाति भी अनेक सहस्र वर्षों की आयु पूर्ण करके मृत्यु को प्राप्त हुए। उनके दोनों पुत्र, पुरु और यदु, अभ्युदयशील थे। नहुष-पुत्र ययाति लोक-परलोक में प्रतिष्ठित हुए। ययाति महर्षियों के समान पुण्यात्मा और तपस्वी थे अतः स्वर्ग में जाकर उन्होंने सहस्रों वर्षों तक श्रेष्ठतम फल का उपभोग किया। ययाति का चित्त अपना स्वर्गीय-वैभव देखकर कुछ मोहित हो उठा जिससे वे राजर्षियों, देवताओं, मनुष्यों तथा महर्षियों की अवहेलना करने लगे। इन्द्र ने ययाति की इस अवस्था का अनुमान कर लिया। अन्य राजर्षिगण भी ययाति को धिक्कारने लगे। इसका परिणाम यह हुआ कि समस्त स्वर्गवासियों की बुद्धि पर पर्दा पड़ गया जिससे वे राजा ययाति को पहचान नहीं सके। फिर तो दो ही घड़ी में राजा ययाति का तेज नष्ट हो गया (५. १२०)।" कथा के आगे के अंशों के लिए देखिये **ययाति**।

गालवसम्भव (गालव से उत्पन्न) : ९. ५२, १४।

गालवि (गालव के पुत्र) : ९. ५२, १७।

गावल्गनि = सञ्जय (देखिये वस्था०)।

गिरयः, मूर्तिमान पर्वतों के लिये प्रयुक्त हुआ है जिन्होंने स्कन्द को सैनिक प्रदान किये (९. ४५, ५४)।

गिरिक = शिव (१,००० नाम)।

गिरिकप्रिय = शिव (१,००० नाम)।

गिरिका, वसु उपरिचर की पत्नी का नाम है जो कोलाहल द्वारा शुक्तिमती के गर्भ से उत्पन्न हुई थी (१. ६३, ३९. ४२. ४६. ५५)।

गिरिगह्वर, पूर्वोत्तर भारत के एक जनपद का नाम है (६. ९, ६८)।

गिरिप्रस्थ, निषधदेश के एक पर्वत का नाम है जिसके आश्रय में रहकर इन्द्र ने अपना कार्य सिद्ध किया था (३. ३१५, १३)।

गिरिराज् : ६. ७८, ७।

गिरिराज (हिमवत्) : ८. ८५, १७।

गिरिरुह = शिव (१,००० नाम)।

गिरिवरात्मजा = उमा : ९. ४४, ३९।

गिरिवृक्षालय = शिव (१,००० नाम)।

गिरिव्रज, मगधदेश की राजधानी का नाम है (१. २, १३४)। जरासन्ध ने पराजित राजाओं को यहीं बन्दी बना कर रक्खा था (२. १४, ६३)। जरासन्ध ने यहाँ से मथुरा की ओर अपनी गदा फेंका (२. १९, २३ : *प्रजाद है)। यह चारों ओर से पाँच पर्वतों द्वारा सुरक्षित थी (२. २१, ३ [*प्रजम है]. १४)। कृष्ण, अर्जुन और भीमसेन यहाँ आये और भीम ने यहाँ जरासन्ध का वध करके बन्दी राजाओं को मुक्त कराया (२. २४, २४. २९)। भीमसेन ने जरासन्ध के पुत्र को यहाँ पराजित किया (२. ३०, १७)। 'गिरिव्रजगताश्चापि नग्नजित्प्रमुखा नृपाः', (७. ४, ६)। यह जरासन्ध की राजधानी थी (१२. ३३९, ९७)। राजर्षि धुन्धुमार देवताओं के वरदान को त्याग कर यहाँ सोये थे (१३. ६, ३९), तुकी० राजगृह।

गिरिव्रजेश्वर = दण्डधार : ८. १८, ११।

१. **गिरिश** = शिव (देखिये वस्था०)।

२. **गिरिश** = एक धनुष का नाम है : ७. २३, ९४।

गिरिसाधन = शिव (१,००० नाम)।

गिरिसुता = उमा : १३. १४१, ३१।

गिरिणां शिखराणि = शिव (१,००० नाम)।

गिरीश = शिव (देखिये वस्था०)।

गीतप्रिया, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ७)।

गीतवादनकप्रिय = शिव (१,००० नाम)।

गीतवादित्रतत्त्वज्ञ = शिव (१,००० नाम)।

गीतवादित्रशालिन् = शिव (१,००० नाम)।

गुडाकेश, अर्जुन का एक नाम है (१. १३९, ८)। देखिये अर्जुन भी।

गुणकेशी, इन्द्र सारथि, मातलि, की कन्या का नाम है (५. ९७, १३. २०; १०३, २१; १०४, ५. ८)।

गुणबुद्धि = शिव (१,००० नाम)।

गुणभृत = विष्णु (१,००० नाम)।

गुणमुख्या, एक अप्सरा का नाम है जिसने अर्जुन के जन्म के समय नृत्य किया था (१. १२३, ६१)।

गुणाकर = शिव (१,००० नाम)।

गुणात्मन् = कृष्ण (विष्णु) : १२. ३४१, १२।

गुणाधिक = शिव (१,००० नाम)।

गुणावती, एक नदी का नाम है जिसके उत्तर प्रान्त में परशुराम ने क्षत्रियों का संहार किया था (७. ७० ८)।

गुणावरा, एक अप्सरा का नाम है जिसने अर्जुन के जन्म के समय नृत्य किया था (१. १२३, ६१)।

गुणौषद = शिव (१,००० नाम)।

गुप्त = विष्णु (१,००० नाम)।

गुप्तक, सौवीर देश के राजकुमार का नाम है जो जयद्रथ का साथी था (३. २६५, १०)।

१. **गुरु** = बृहस्पति। इन्द्र की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ७, २२)। 'शक्रविष्णू यथा गुरुः', (८. ६५, १९)। 'प्रतिलोमोऽभवद्गुरुः', (१२. १४१, १५)।

२. **गुरु** = द्रोण : १. २, ३०५; ७. १५५, ४५; १६२, ४९; ८. ७९, ७२; १०. १२, ८; १६, ३५; १७, ५। तुकी० आचार्य।

३. **गुरु** = शिव : १३. १४, २०७; १७, १३२ (१,००० नाम)।

४. **गुरु** = विष्णु (१,००० नाम)।

गुरुतम = विष्णु (१,००० नाम)।

१. **गुरुपुत्र** = अश्वत्थामा : १. १३५, ५; ६. १०१, ५७; ८. १६, ३७; ८८, ३३; ९. ६, १८; १४, २८; १०. १६, ३४।

२. **गुरुपुत्र** : शुक्र : १२. ३२६, २. ४।

गुरुभार, गरुड़ की प्रमुख सन्तानों में से एक (५. १०१, १३)।

गुरुशक्तिधारिन् = स्कन्द : ३. २३२, १५।

गुरुशिष्यसंवाद—"अर्जुन ने श्रीकृष्ण से परब्रह्म के स्वरूप की व्याख्या करने को कहा। श्रीकृष्ण ने कहा : इस विषय को लेकर गुरु और शिष्य में मोक्ष विषयक जो संवाद हुआ था, मैं वही प्राचीन इतिहास तुम्हें बता रहा हूँ। एक दिन उत्तम व्रती एक ब्रह्मवेत्ता आचार्य के किसी बुद्धिमान् शिष्य ने उनसे प्रश्न किया कि 'मैं कहाँ से आया हूँ और आप

कहाँ से आये हैं ? जगत के चराचर जीव कहाँ से उत्पन्न हुए हैं ? इत्यादि ।' शिष्य के प्रश्नों को सुनकर आचार्य ने कहा : 'तुम्हारे पूछे हुये इन समस्त प्रश्नों का उत्तर ब्रह्मा ने वेद-विद्या का आश्रय लेकर पहले से ही दे रक्खा है। जिसमें भूत-वर्तमान और भविष्य आदि के स्वरूप का निश्चय किया गया है, जो सिद्धों के समुदाय को भलीभाँति ज्ञात है, जिसका पूर्वकाल में निर्णय किया गया था और बुद्धिमान् पुरुष जिसे जानकर सिद्ध हो जाते हैं, मैं उसी परम, उत्तम और सनातन ज्ञान का तुमसे वर्णन करता हूँ। पूर्वकाल में एक समय जब प्रजापति दक्ष, भरद्वाज, गौतम, शुक्र, वसिष्ठ, कश्यप, विश्वामित्र और अत्रि आदि महर्षि अपने कर्मों द्वारा समस्त मार्गों में भटकते हुये अत्यन्त श्रान्त हो गये, तब एकत्रित हो उन सब मुनियों ने अङ्गिरा को आगे करके ब्रह्म-लोक में जाकर सत्य तथा पाप-कर्मों के संबंध में ब्रह्मा से प्रश्न किया। ब्रह्मा ने तब उन सब के समक्ष सनातन धर्म का उपदेश किया। ब्रह्मा ने बताया कि श्रद्धा ही धर्म का मुख्य लक्षण है। जो मनुष्य उत्तम व्रत का आश्रय लेकर धर्मों का दृढ़तापूर्वक पालन करते हैं वे काल-क्रम से सम्पूर्ण प्राणियों के जन्म और मरण को प्रत्यक्ष देखते हैं। अव्यक्त प्रकृति, महत्तत्व, अहङ्कार, दस इन्द्रियाँ, एक मन, पञ्चमहाभूत और उनके शब्द आदि विशेष गुण—इन चौबीस तत्वों का सनातन सर्ग है। इसके अतिरिक्त एक जीवात्मा है जिसको मिलाकर तत्वों की संख्या पच्चीस बताई गई है। तत्वों की उत्पत्ति और उनके लय का सम्यक् ज्ञान रखने वाला व्यक्ति कभी मोह में नहीं पड़ता और बन्धनमुक्त होकर सम्पूर्ण दिव्य-लोकों के सुख का अनुभव करता है।' (१४. ३५)।" "ब्रह्मा ने कहा : 'तीनों गुणों की साम्यावस्था का नाम अव्यक्त प्रकृति है। तीन गुणों में जब विषमता आती है तब वे पञ्चभूत का रूप धारण करते हैं और उनसे नौ द्वारवाले नगर (शरीर) का निर्माण होता है। इस पुर में जीवात्मा को विषयों की ओर प्रेरित करने वाले मन, सहित ग्यारह इन्द्रियाँ हैं। बुद्धि इस नगर की स्वामिनी है और ग्यारहवाँ मन, दस इन्द्रियों से श्रेष्ठ है।' तदनन्तर ब्रह्मा ने तमोगुण तथा उसके कार्य और फल का वर्णन किया। उन्होंने बताया कि देवता, ब्राह्मण और वेद की सदा निन्दा करना, दान न देना, अभिमान, मोह, क्रोध, असहनशीलता और प्राणियों के प्रति मात्सर्य—ये सब तामस व्यवहार हैं। इसके प्रभाव में पड़कर ऋषि मुनि और देव-गण भी मोहित हो जाते हैं। तम, मोह, महामोह, क्रोधसंज्ञक तामिस्र और मृत्युरूप अन्धतामिस्र—ये पाँच प्रकार की तामसी प्रकृतियाँ हैं। जो मनुष्य उक्त गुणों को ठीक-ठीक जानता है वह सम्पूर्ण तामसिक गुणों से सदा मुक्त रहता है (१४. ३६)।" "तदनन्तर ब्रह्मा ने रजो-गुण की प्रकृति और उसके कार्यों का वर्णन करते हुए उसके ज्ञान का फल बताया (१४. ३७)।" "ब्रह्मा ने सत्व-गुण की प्रकृति तथा उसके कार्यों का वर्णन करते हुए उसके ज्ञान का फल बताया (१४. ३८)।" "सत्वादि गुणों और प्रकृति के नामों का वर्णन करते हुए ब्रह्मा ने कहा कि सत्व आदि गुणों का सर्वथा पृथक् रूप से वर्णन करना असम्भव है क्योंकि तीनों गुण अविच्छिन्न देखे जाते हैं। ऐसा होने पर भी इन गुणों में से किसी की न्यूनता और किसी की अधिकता हो सकती है। प्रकृति को तम, व्यक्त, शिव, धाम, रज, योनि, सनातन, प्रकृति, विकार, प्रलय, प्रधान, प्रभव, अव्यय, अनुद्रिक्त, अनून, अकम्प, अचल, ध्रुव, सत्, असत्, अव्यक्त और त्रिगुणात्मक कहते हैं। आध्यात्मतत्त्व का चिन्तन करनेवाले लोगों को इन नामों का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। जो मनुष्य प्रकृति के इन नामों, सत्त्वादि गुणों और सम्पूर्ण विशुद्ध गतियों को ठीक-ठीक जानता है, वह गुण-विभाग के तत्त्व का ज्ञाता है (१४. ३९)।" "ब्रह्मा ने कहा : पहले अव्यक्त प्रकृति से महान् आत्म-स्वरूप महाबुद्धि तत्त्व उत्पन्न हुआ। महान् आत्मा, मति, विष्णु आदि पर्यायवाची नामों से इसकी पहचान होती है। यह परमात्मा संसार में सबको व्याप्त करके स्थित है। अणिमा, लघिमा और प्राप्ति आदि सिद्धियाँ इसी की स्वरूप हैं। यह सब का शासक, ज्योतिर्मय और अविनाशी है। यही आदि सर्ग है (१४. ४०)।" "ब्रह्मा ने कहा : जो पहले महत्तत्व उत्पन्न हुआ था वही अहङ्कार है। जब वह अहं रूप में प्रादुर्भूत होता है तब वह अहङ्काररूपी द्वितीय सर्ग कहलाता है। यह अहङ्कार भूत आदि विकारों के कारण वैकारिक है। यह रजो-गुण का स्वरूप और इसलिए तैजस है। इसका आधार चेतन आत्मा है। समस्त प्रजा की सृष्टि इसी से होती है इसलिए इसको प्रजापति कहते हैं। यह सम्पूर्ण जगत अहङ्कार-स्वरूप है (१४. ४१)।" "ब्रह्मा ने कहा : अहङ्कार से पृथिवी, आकाश, वायु, जल और तेज—ये पाँच महाभूत उत्पन्न हुये। प्राण आदि तथा ग्यारह इन्द्रियाँ भी इसी से उत्पन्न हुईं :—

भूत	अध्यात्म	अधिभूत	अधिदैवत
१. आकाश	श्रोत्र	शब्द	दिशायें
२. मारुत	त्वचा	स्प्रष्टव्य	विद्युत
३. ज्योति	चक्षु	रूप	सूर्य
४. आपः	जिह्वा	रस	सोम
५. पृथिवी	घ्राण	गन्ध	वायु
६.	पाँव	गन्तव्य	विष्णु
७. अपान	पायु	विसर्ग	मित्र
८.	उपस्थ	शुक्र	प्रजापति
९.	हाथ	कर्म	शक्र (इन्द्र)
१०.	वाच् : वैश्वदेवी	वक्तव्य	वह्नि (अग्नि)
११.	मानस	संकल्प	चन्द्रमा
१२.	अहङ्कार : सर्वसंसार-कारक	अभिमान	रुद्र
१३.	बुद्धि : षडिन्द्रियवि-चारिणी	मन्तव्य	ब्रह्मा

प्राणियों के रहने के तीन स्थान हैं : जल, थल और आकाश। देहधारियों का जन्म चार प्रकार का होता है—अण्डज, उद्भिज, स्वेदज और जरायुज। ब्रह्म-योनि की प्राप्ति के दो हेतु, तपस्या और पुण्य-कर्म, हैं। इसी प्रकार ब्रह्मा ने निवृत्ति, शरीर, काल-चक्र आदि का वर्णन करते हुए कहा कि जैसे एक दीप से सैकड़ों दीप जला लिये जाते हैं उसी प्रकार एक ही परमात्मा यत्र-तत्र अनेक रूपों में उपलब्ध होता है। वास्तव में वही परमात्मा विष्णु, मित्र, वरुण, अग्नि, प्रजापति आदि तथा सर्वव्यापी और महान् आत्मा के रूप में प्रकाशित है। ब्राह्मण-समुदाय, देवता, असुर, यक्ष, पिशाच, पितर, पक्षी, राक्षस, भूत और सम्पूर्ण महर्षि भी सदा उसी परमात्मा की स्तुति करते हैं (१४. ४२)।" "ब्रह्मा ने बताया कि मनुष्यों में क्षत्रिय, वाहनों में हाथी, वनवासियों में सिंह, पशुओं में भेड़, बिलवासियों में सर्प, गायों में बैल और स्त्रियों में पुरुष प्रधान है। न्यग्रोध, जामुन, पीपल, सेमल, शीशम और बांस, वृक्षों में प्रधान हैं। इसी प्रकार हिमवान् आदि पर्वतों में प्रधान हैं। गणों के मरुद्गण, ग्रहों के सूर्य और नक्षत्रों के चन्द्रमा अधिपति हैं। इसी प्रकार ब्रह्मा ने पितरों, सरिताओं, भूतों, ब्राह्मणों, ओषधियों, मनुष्यों, किन्नरों, यक्षों आदि विभिन्न वर्गों के प्रधानों और अधिपतियों का वर्णन किया। तदनन्तर उन्होंने धर्म आदि के लक्षणों, विषयों की अनुभूति के साधनों, तथा क्षेत्रज्ञ की विलक्षणता का वर्णन किया (१४. ४३)।" "ब्रह्मा ने समस्त पदार्थों के आदि-अन्त का एवं ज्ञान की नित्यता का वर्णन करते हुए कहा कि पहले दिन है और फिर रात्रि है, अतः दिन-रात्रि का आदि है। इसी प्रकार शुक्ल-पक्ष मास का, श्रवण नक्षत्रों का, और शिशिर ऋतुओं का आदि है—इत्यादि (१४. ४४)।" "ब्रह्मा ने देह रूपी काल-चक्र तथा गृहस्थ एवं ब्राह्मण के धर्म का वर्णन किया (१४. ४५)।" "ब्रह्मा ने ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी और संन्यासी के धर्मों का वर्णन किया (१४. ४६)।" "ब्रह्मा ने मुक्ति के साधनों का तथा देहरूपी वृक्ष और ज्ञान-खड्ग से उसे काटने का वर्णन किया (१४. ४७)।" "ब्रह्मा ने कहा कि इस अव्यक्त, उत्पत्तिशील और अविनाशी सम्पूर्ण वृक्ष को कोई ब्रह्म-स्वरूप मानते हैं और कोई महान् ब्रह्म-वन। कितने ही इसे अव्यक्त-वन और कितने ही परम अनामय मानते हैं। जो व्यक्ति अन्तःकरण को शुद्ध कर लेता है वह

जो-जो चाहता है उस वस्तु को प्राप्त कर लेता है। अन्तर्यामी परमात्मा सत्व-स्वरूप आत्मा में स्थित है। इस तत्व को समझे विना परम पुरुष को प्राप्त करना संभव नहीं है। कुछ विद्वानों का कथन है कि क्षेत्रज्ञ और सत्व की एकता युक्तिसंगत नहीं है। उनका कहना है कि उस क्षेत्रज्ञ से सत्व पृथक् है क्योंकि यह सत्व अविचार-सिद्ध है। ये दोनों एक साथ रहने वाले होने पर भी तत्वतः अलग-अलग हैं—ऐसा समझना चाहिए। इसी प्रकार दूसरे विद्वानों का निर्णय दोनों के एकत्व और नानात्व को स्वीकार करता है; क्योंकि मशक तथा उदुम्बर की एकता तथा पृथक्ता देखी जाती है। जल से मछली भिन्न है, तो भी मछली और जल दोनों का संयोग देखा जाता है, एवं जलविन्दुओं का कमल के पत्ते से संवन्ध देखा जाता है (१४. ४८)।" "ऋषियों ने संशय में पड़कर ब्रह्मा से पूछा कि जगत में समस्त धर्मों में कौन सा धर्म अनुष्ठान करने के लिए सर्वोत्तम माना गया है। उन लोगों ने क्षेत्रज्ञ और सत्व के सम्बन्ध को जानने की भी जिज्ञासा प्रकट की (१४. ४९)।" "ब्रह्मा ने कहा : अहिंसा ही सर्वोत्तम कर्त्तव्य है। यह साधन उद्वेगरहित, सर्वश्रेष्ठ, और धर्म को लक्षित करने वाला है। क्षेत्रज्ञ और सत्व में विषय-विषयि भाव का संवन्ध माना गया है। मनीषी पुरुष सत्व को द्वन्द्व-युक्त कहते हैं और क्षेत्रज्ञ निर्द्वन्द्व, निष्कल, नित्य और निर्गुण स्वरूप है। जैसे कमल का पत्ता निर्लिप्त रहकर जल को धारण करता है वैसे ही क्षेत्रज्ञ सदा सत्व का उपभोग करता है। जैसे कोई मनुष्य दीपक लेकर अन्धकार में चलता है वैसे ही परम तत्व को चाहने वाला साधक सत्वरूप दीपक के प्रकाश में साधन-मार्ग पर चलता है। इस प्रकार सत्व-गुण तो व्यक्त है और पुरुष अव्यक्त माना गया है। ऐसा विचार करके ही किसी उपाय से धर्म के साधन का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। क्योंकि उपाय को जानने वाला मेधावी पुरुष अत्यन्त सुख का भागी होता है। गन्ध-रस-रूप-स्पर्श और शब्द से जो युक्त नहीं है तथा मुनिगण बुद्धि के द्वारा जिसका मनन करते हैं वह प्रधान कहलाता है। प्रधान का दूसरा नाम अव्यक्त है। अव्यक्त का कार्य महत्तत्व है और प्रकृति से उत्पन्न महत्तत्व का कार्य अहङ्कार है। अहङ्कार से पञ्चमहाभूतों को प्रकट करनेवाले गुणों की उत्पत्ति हुई है। पञ्चमहाभूतों के गुण इस प्रकार हैं :—

पञ्चभूत	गुण				
आकाश	शब्द				
वायु	शब्द	स्पर्श			
ज्योति	शब्द	स्पर्श	रूप		
आपः	शब्द	स्पर्श	रूप	रस	
पृथिवी	शब्द	स्पर्श	रूप	रस	गन्ध
	१ षड्ज	१ रूक्ष	१ शुक्ल	१ मधुर	१ इष्ट
	२ ऋषभ	२ शीतल	२ कृष्ण	२ अम्ल	२ अनिष्ट
	३ गान्धार	३ उष्ण	३ रक्त	३ कटु	३ मधुर
	४ मध्यम	४ स्निग्ध	४ नीला	४ तिक्त	४ अम्ल
	५ पञ्चम	५ विशद	५ पीला	५ कसैला	५ कटु
	६ निषाद	६ कठिन	६ अरुण	६ लवणात्मक	६ निर्हारी
	७ धैवत	७ चिकना	७ ह्रस्व		७ मिश्रित
	८ इष्ट	८ श्लक्ष्ण	८ दीर्घ		८ स्निग्ध
	९ अनिष्ट	९ पिच्छिल	९ कृश		९ रूक्ष
	१० संहत (क्लिष्ट)	१० कठोर	१० स्थूल		१० विषद
		११ मृदु	११ चौकोर		
		१२ ?	१२ गोल		

आकाश सब भूतों में श्रेष्ठ है, और उसके ऊपर > अहङ्कार > बुद्धि > आत्मा > अव्यक्त > पुरुष। जो मनुष्य सम्पूर्ण भूतों की श्रेष्ठता और न्यूनता का ज्ञाता, समस्त कर्मों की विधि में कुशल, और प्राणियों को आत्मभाव से देखनेवाला है वह अविनाशी परमात्मा को प्राप्त होता है (१४. ५०)।" "ब्रह्मा ने कहा : जिस प्रकार उन पाँचों महाभूतों की उत्पत्ति और नियमन करने में मन समर्थ है, उसी प्रकार स्थितिकाल में भी मन ही भूतों का आत्मा है। उन पञ्चमहाभूतों का नित्य आधार भी मन ही है। बुद्धि जिसके ऐश्वर्य को प्रकाशित करती है, वह क्षेत्रज्ञ कहा जाता है। जैसे सारथि अच्छे घोड़ों को अपने वश में रखता है, उसी प्रकार मन सम्पूर्ण इन्द्रियों पर शासन करता है। इन्द्रिय, मन और बुद्धि—ये सदा क्षेत्रज्ञ के साथ संयुक्त रहते हैं। जिसमें इन्द्रियरूपी घोड़े जुते हुए हैं, जिनका बुद्धिरूपी सारथि के द्वारा नियन्त्रण हो रहा है, उस देहरूपी रथ पर सवार होकर वह भूतात्मा (क्षेत्रज्ञ) चारों ओर दौड़ लगाता रहता है। ब्रह्ममय रथ सदा रहने वाला और महान् है, इन्द्रियाँ उसके घोड़े, मन सारथि, और बुद्धि चाबुक है। इस प्रकार जो विद्वान् इस ब्रह्ममय रथ का सदा ज्ञान रखता है, वह समस्त प्राणियों में धीर है और कभी मोह में नहीं पड़ता। यह जगत एक ब्रह्म-वन है। अव्यक्त प्रकृति इसका आदि है। पाँच महाभूत, दस इन्द्रियाँ और एक मन—इन सोलह विशेषों तक इसका विस्तार है। यह चराचर प्राणियों से भरा हुआ है। सूर्य और चन्द्रमा आदि के प्रकाश से प्रकाशित है। ग्रह और नक्षत्रों से सुशोभित है। नदियों और पर्वतों के समूह से सब ओर विभूषित है। नाना प्रकार के जल से सदा ही अलङ्कृत है। यह सम्पूर्ण भूतों का जीवन और सम्पूर्ण प्राणियों की गति है। इस ब्रह्म-वन में क्षेत्रज्ञ विचरण करता है। इस लोक में जो स्थावर-जङ्गम प्राणी हैं, वे ही पहले प्रकृति में विलीन होते हैं, उसके बाद पाँच भूतों के कार्य लीन होते हैं, और कार्यरूप गुणों के बाद पाँच भूत लीन होते हैं। इस प्रकार यह भूत समुदाय प्रकृति में लीन हो जाता है। देवता, मनुष्य, गन्धर्व, पिशाच, असुर, राक्षस सभी स्वभाव से रचे गये हैं, किसी क्रिया से या कारण से इनकी रचना नहीं हुई है। विश्व की सृष्टि करनेवाले ये मरीचि आदि ब्राह्मण समुद्र की लहरों के समान वारंवार पञ्चमहाभूतों से उत्पन्न होते हैं; और उत्पन्न हुए ये फिर समयानुसार उन्हीं में लीन हो जाते हैं। इस विश्व की रचना करनेवाले प्राणियों से पञ्चमहाभूत सब प्रकार परे है। जो इस पञ्चमहाभूतों से छूट जाता है वह परम गति को प्राप्त होता है। शक्ति-सम्पन्न प्रजापति ने अपने मन के ही द्वारा सम्पूर्ण जगत की सृष्टि की है तथा ऋषि भी तपस्या से ही देवत्व को प्राप्त हुए हैं। फल-मूल का भोजन करनेवाले सिद्ध महात्मा यहाँ तपस्या के प्रभाव से ही चित्त को एकाग्र करके तीनों लोकों की बातों का क्रमशः प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं। आरोग्य की साधनभूत ओषधियाँ और नाना प्रकार की विद्यायें तप से ही सिद्ध होती हैं। सारे साधनों की जड़ तपस्या ही है। जिसको पाना, जिसका अभ्यास करना, जिसे दवाना और जिसकी संगति लगाना नितान्त कठिन है, वह तपस्या के द्वारा साध्य हो जाता है; क्योंकि तप का प्रभाव दुर्लङ्घ्य है। शराबी, ब्रह्म-हत्यारा, चोर, गर्भनष्ट करनेवाला और गुरु-पत्नी की शैय्या पर सोने वाला महापापी भी भलीभाँति तपस्या करके ही इन महान् पापों से छुटकारा पा सकता है। मनुष्य, पितर, देवता, पशु, मृग, पक्षी तथा अन्य जितने चराचर प्राणी हैं, वे सब नित्य तपस्या में संलग्न होकर ही सदा सिद्धि प्राप्त करते हैं। तपस्या के बल से ही महामायावी देवता स्वर्ग में निवास करते हैं। जो लोग आलस्य त्यागकर, अहंकार से युक्त हो, सकाम कर्म का अनुष्ठान करते हैं, वे प्रजापति के लोक में जाते हैं। जो अहंता-ममता से रहित हैं, वे महात्मा विशुद्ध ध्यान-योग के द्वारा महान् उत्तम लोकों को प्राप्त करते हैं। जो ध्यान-योग का आश्रय लेकर सदा प्रसन्न चित्त रहते हैं, वे आत्म-वेत्ताओं में श्रेष्ठ पुरुष सुख के राशि-भूत अव्यक्त परमात्मा में प्रवेश करते हैं। किन्तु जो ध्यान-योग से पीछे लौटकर अर्थात् ध्यान में असफल होकर ममता और अहंकार से रहित जीवन व्यतीत करता है, वह निष्काम पुरुष भी महापुरुषों के उत्तम अव्यक्त लोक में लीन होता

है। फिर स्वयं भी उसकी समता को प्राप्त होकर अव्यक्त से ही प्रकट होता है और केवल सत्त्व का आश्रय लेकर तमोगुण एवं रजोगुण के बन्धन से छुटकारा पा जाता है। जो सब पापों से मुक्त रहकर सबकी सृष्टि करता है, उस अखण्ड आत्मा को क्षेत्रज्ञ समझना चाहिए। जो मनुष्य उसका ज्ञान प्राप्त कर लेता है, वही वेद-वेत्ता है। मुनि को उचित है कि चिन्तन के द्वारा चेतना (सम्यग्ज्ञान) पाकर मन और इन्द्रियों को एकाग्र करके परमात्मा के ध्यान में स्थित हो जाय; क्योंकि जिसका चित्त जिसमें लगा होता है, वह निश्चय ही उसका स्वरूप हो जाता है—यह सनातन गोपनीय रहस्य है। अव्यक्त से लेकर सोलह विशेषों तक सभी अविद्या के लक्षण बताये गये हैं। ऐसा समझना चाहिए कि यह गुणों का ही विस्तार है। दो अक्षर का पद 'मम' (यह मेरा है—ऐसा भाव) मृत्यु रूप है और तीन अक्षर पद 'न मम' (यह मेरा नहीं है—ऐसा भाव), सनातन ब्रह्म की प्राप्ति करानेवाला है। कुछ मन्द-बुद्धियुक्त पुरुष (स्वर्गादि फल प्रदान करने वाले) काम्य कर्मों की प्रशंसा करते हैं, किन्तु वृद्ध महात्मा जन उन कर्मों को उत्तम नहीं बतलाते, क्योंकि सकाम कर्म के अनुष्ठान से जीव को सोलह विकारों से निर्मित स्थूल शरीर धारण करके जन्म लेना पड़ता है और वह सदा अविद्या का ग्रास बना रहता है। इतना ही नहीं, कर्मठ पुरुष देवताओं के भी उपभोग का विषय होता है। इसलिए जो कोई पारदर्शी विद्वान् होते हैं, वे कर्मों में आसक्त नहीं होते; क्योंकि यह पुरुष (आत्मा) ज्ञानमय है, कर्ममय नहीं। जो इस प्रकार चेतन आत्मा को अमृत-स्वरूप, नित्य, इन्द्रियातीत, सनातन, अक्षर, जितात्मा एवं असङ्ग समझता है, वह कभी मृत्यु के बन्धन में नहीं पड़ता। जिसकी दृष्टि में आत्मा अपूर्व (अनादि), अकृत (अजन्मा), नित्य, अचल, अग्राह्य और अमृताशी है, वह इन गुणों का चिन्तन करने से स्वयं भी अग्राह्य (इन्द्रियातीत), निश्चल एवं अमृत-स्वरूप हो जाता है। जो चित्त को शुद्ध करनेवाले सम्पूर्ण संस्कारों का संपादन करके मन को आत्मा के ध्यान में लगा देता है वही उस कल्याणमय ब्रह्म को प्राप्त करता है, जिससे बड़ा कोई नहीं है। सम्पूर्ण अन्तःकरण के स्वच्छ हो जाने पर साधक को शुद्ध प्रसन्नता प्राप्त होती है। जैसे स्वप्न से जगे हुए मनुष्य के लिए स्वप्न शान्त हो जाता है उसी प्रकार चित्तशुद्धि का लक्षण है। ज्ञान-निष्ठ, जीवन-मुक्त महात्माओं की यही परमगति है, क्योंकि वे उन समस्त प्रवृत्तियों को शुभाशुभ फल देनेवाला समझते हैं। यही विरक्त पुरुषों की गति है, यही सनातन धर्म है, यही ज्ञानियों का प्राप्तव्य स्थान है और यही अनिन्दित सदाचार है। जो सम्पूर्ण भूतों में समभाव रखता है, लोभ और कामना से रहित है, तथा जिसकी सर्वत्र समान दृष्टि रहती है, वह ज्ञानी पुरुष ही इस परम गति को प्राप्त कर सकता है। गुरु ने कहा : 'ब्रह्मा के इस प्रकार उपदेश देने पर उन महात्मा मुनियों ने इसी के अनुसार आचरण करके उत्तमलोक की प्राप्ति की।' श्रीकृष्ण ने बताया कि गुरुदेव के ऐसा कहने पर उस शिष्य ने समस्त उत्तम धर्मों का पालन करते हुए मोक्ष प्राप्त किया (१४. ५१)।"

गुरुस्कन्ध, एक पर्वत का नाम है (१४. ४३, ५)।

१. गुह = स्कन्द (देखिये वस्था०)।

२. गुह = शिव (१,००० नाम)।

३. गुह = विष्णु (१,००० नाम)।

४. गुह = (बहु० हाः), एक बर्बर जाति का नाम है जो दक्षिण में निवास करती थी (१२. २०७, ४२)।

गुहापालः प्रवेशिनाम् = शिव (१,००० नाम)।

गुहावासिन् = शिव (१,००० नाम)।

१. गुह्य = शिव (१,००० नाम)।

२. गुह्य = विष्णु : १२. ३४०, १०७; १३. १४९, ७१ (१,००० नाम)।

३. गुह्य = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

४. गुह्य (बहु०) = गुह्यक (बहु०) : ३. ३, ४०; १५. ३१, ६।

१. गुह्यक (बहु० काः), कुबेर के अनुचरों का नाम है : १. १, ३५; ६६, ४०; १२६, ३४; १४६, १२ (विविशुः सपरिच्छदाः···कैलासमिव-गुह्यकाः); १५५, २९ (भीमसेन ने गुह्यकों के स्थान में हिडिम्बा के साथ क्रीड़ा-विहार किया); १८७, ७ (ये लोग भी द्रौपदी के स्वयंवर में आये); २. १०, ३; ११, ४९ (ब्रह्मा की सभा में इनकी उपस्थिति); १२, ३ (कुबेर की सभा में इनकी उपस्थिति); २८, ३ (हाटकं नाम देशं गुह्यक रक्षितम्); ३. ३, ४०; ४१, ११; ४२, ३७; ८२, ९४; ८४, ११५ (अधिवङ्ग धर्मज्ञ समाविश्य ततोवनम्। गुह्यकेषु महाराज मोदते); १७३, ५०; १८८, ११९ (मार्कण्डेय ने इन्हें भी नारायण के उदर में देखा); ५. १९२, ४५; ६. ६, ४१. ५१; ८. ४५, ३३; ८७, ४०; ९. ११, ५६ (भीमसेन ने गन्धमादन पर इनका वध किया); ११. २६, १४; १२. २८३, ८ (वैश्रवणो राजा गुह्यकैर् अभिसंवृतः); १३. १४, ४०१; १४२, ४९. ५० (आत्मानमुप-जीवन्यो दीक्षां द्वादशवार्षिकीम्। अश्मना चरणौ भित्त्वा गुह्यकेषु स मोदते); १८. ४, २३ (युद्ध में मृत कुछ राजाओं ने इनकी गति प्राप्त की); ६, ७। तुकी० बहु० गुह्य।

२. गुह्यक—भीम ने हनुमान से पूछा कि वे गुह्यक तो नहीं हैं (३. १४७, २४)। कुबेर के दूत के रूप में एक गुह्यक उपस्थित हुआ (३. २८९, ९)। = स्थूणाकर्ण (५. १९१, २४. ३०)।

३. गुह्यक, एक यक्ष का नाम है जो कुबेर की सभा में उपस्थित था (२. १०, १५)।

गुह्यकाधिप, गुह्यकों के राजा, अर्थात् कुबेर के लिये प्रयुक्त हुआ है (३. १६२, ३२; ६. ६, ३५)।

गुह्यकाधिपति = कुबेर (२. ४९, ३५)।

गुह्यकास्त्र, गुह्यकों के एक अस्त्र का नाम है जिसका राम जामदग्न्य ने प्रयोग किया (५. १८०, ११)।

गुह्यतपस् = शिव (१,००० नाग)

गूढव्रत = शिव (१,००० नाम)।

गृत्समद, एक महर्षि का नाम है। वरिष्ठ के शाप से एक मृग बन जाने पर ये शिव की शरण में गये (१३. १८, १९ और बाद)। "ये वीतहव्य के पुत्र तथा रूप में इन्द्र के समान थे। एक समय दैत्यों ने इन्हें इन्द्र मान कर पकड़ लिया था। इनके पुत्र का नाम सुचेता था। ये अत्यन्त तेजस्वी और ब्रह्मचारी थे (१३. ३०, ५८–६१)।"

गृध्र, एक पक्षीविशेष का नाम है जो भासी की सन्तान थे (१. ६६, ५७)।

गृध्रकूट, एक पर्वत का नाम है जहाँ लंगूरों ने मगधराज बृहद्रथ की रक्षा की थी (१२. ४९, ८२)।

गृध्र-गोमायु-संवाद :—"भीष्म ने कहा : एक ब्राह्मण का पुत्र बाल-ग्रह से बाल्यावस्था में ही मृत्यु को प्राप्त हुआ। उसके दुःखी बान्धव उसके शव को लेकर श्मशान की ओर चले। श्मशान-भूमि में उसे छोड़कर वे लोग लौटने में अपने को असमर्थ पा रहे थे क्योंकि बालक की स्मृतियों से उनका हृदय अभिभूत था। उन सबके रोने के शब्द को सुनकर एक गृध्र वहाँ आया और इस प्रकार कहने लगा : 'मनुष्यो! अपने इस इकलौते पुत्र के शव को यहाँ छोड़कर लौट जाओ। इसमें विलम्ब मत करो। यहाँ सहस्रों स्त्री-पुरुष काल के द्वारा लाये जा चुके हैं और उन सबको उनके बन्धु-बान्धव छोड़कर चले जाते हैं। अपना प्रिय हो या द्वेष-पात्र, कोई भी मृत्यु को प्राप्त कर पुनः जीवित नहीं हुआ है। सूर्य अस्ताचल को जा रहे हैं और जगत् के सब जीव दैनिक कार्य समाप्त करके अब उससे विरत हो रहे हैं। अतः तुम लोग भी अब अपने पुत्र का स्नेह छोड़कर घर लौट जाओ।' गृध्र की बात सुनकर वे सब बन्धु-बान्धव और ज़ोर-ज़ोर से विलाप करते हुए अपने पुत्र के शव को भूतल पर छोड़कर घर की ओर जाने के लिए मार्ग पर आकर खड़े हुए। इतने में ही कौये के पंख के समान काले रंग का एक गीदड़ अपनी माँद से निकल कर वहाँ आया और उसने उन लौटते हुए बान्धवों से कहा : 'तुम लोग अत्यन्त निर्दयी हो। अभी तो सूर्यास्त भी नहीं हुआ है अतः भयभीत मत हो। अनेक प्रकार का मुहूर्त आता रहता है, और संभव है, किसी शुभ घड़ी में तुम्हारा वह बालक पुनः

जीवित हो उठे। तुम्हारे बालक की कमल जैसी चञ्चल एवं विशाल आँखें कितनी सुन्दर हैं। इसका शरीर स्नान एवं पुष्पमाला आदि से विभूषित नये-नये विवाह करके आये वर के समान है। ऐसे मनोहर बालक को छोड़कर जाने के लिए तुम्हारे पैर कैसे उठ रहे हैं।' करुणाजनक विलाप करते हुये शृगाल की बात सुनकर वे सभी मनुष्य उस मृत बालक के शरीर की देख-रेख के लिए पुनः लौट आये। उन्हें लौटा देखकर गृध्र ने पुनः उन लोगों को वापस जाने का उपदेश दिया। उसने कहा : 'विद्वान् हो या मूर्ख, धनवान हो या निर्धन, सभी अपने शुभ या अशुभ कर्मों के साथ काल के अधीन हो जाते हैं। अतः इस मृतक के लिए क्यों शोक करते हो।' गृध्र की बात सुनकर शृगाल ने पुनः कहा : 'मनुष्यों! क्या इस मन्द-बुद्धि गृध्र ने तुम्हारे स्नेह को शिथिल कर दिया है। यह बालक तुम्हारे अपने ही रक्त-मांस से बना हुआ है अतः इसे वन में छोड़कर कहाँ जाओगे। अच्छा, इतना ही करो कि जब तक सूर्यास्त न हो तब तक यहाँ रुके रहो; फिर अपने इस पुत्र को ले जाना अथवा यहीं बैठे रहना।' उस समय गृध्र ने कहा : 'मुझे जन्म लिये आज एक सहस्र वर्ष से अधिक हो गये, परन्तु मैंने कभी किसी स्त्री-पुरुष या नपुंसक को मृत्यु के पश्चात् पुनः जीवित होते नहीं देखा। मनुष्यों! मैं बुद्धि और विज्ञान से युक्त तथा दूसरों को भी ज्ञान प्रदान करने वाला हूँ। मैंने तुम्हें विवेक उत्पन्न करनेवाली अनेक बातें बताई हैं। अब तुम लोग लौट जाओ।' गृध्र की बात सुनकर जब उस मृत बालक के बन्धु-बान्धव पुनः लौटने लगे तब शृगाल ने वहाँ आकर कहा : 'इस बालक को छोड़कर जाने में तुम्हारा संताप और बढ़ जायगा। ऐसा सुना जाता है कि श्रीरामचन्द्र जी से शम्बूक नामक शूद्र के मारे जाने पर उस धर्म के प्रभाव से एक मृत ब्राह्मण-बालक जीवित हो उठा था। इसी प्रकार राजर्षि श्वेत का बालक भी मर गया था, परन्तु धर्मनिष्ठ श्वेत ने उसे पुनः जीवित कर दिया था। अतः सम्भव है कोई मुनि या देवता तुम पर दया करके तुम्हारे बालक को जीवित कर दे।' शृगाल के कहने पर जब बान्धव पुनः लौटने लगे तब गृध्र ने उनसे कहा : 'दुराग्रहवश बारंबार लौटकर शोक का बोझ धारण करने से कोई लाभ नहीं है। भगवान् शिव, कुमार कार्तिकेय, ब्रह्मा और भगवान् विष्णु ही वर दें तो यह बालक जीवित हो सकता है।' गृध्र की बात सुनकर वे लोग पुनः लौट पड़े। तब शृगाल ने कहा : 'सुख के बाद दुःख और दुःख के बाद सुख आता है। अतः तुम लौटो नहीं। मैं तो अपने मन से इस बालक को जीवित देख रहा हूँ। इसका नाश नहीं होगा। तुम्हें अवश्य सुख मिलेगा।' भीष्म ने कहा : 'वह शृगाल सदैव श्मशान भूमि में ही निवास करता था और अपना कार्य सिद्ध करने के लिये रात्रिकाल की प्रतीक्षा कर रहा था। अतः उसने धर्म-विरोधी, मिथ्या, तथा अमृत-तुल्य वचन कहकर उस बालक के बान्धवों को बीच में ही अटका दिया। उस समय गृध्र ने उन लोगों को पुनः लौट जाने का उपदेश दिया। परन्तु शृगाल ने भी उन लोगों से सूर्यास्त होने तक रुकने के लिये कहा। गृध्र और शृगाल दोनों ही भूखे थे और अपने-अपने उद्देश्य की सिद्धि के लिये मृतक के बन्धु-बान्धवों से बातें करते थे। गृध्र कहता था कि सूर्यास्त हो गया परन्तु शृगाल कहता था कि नहीं। इनमें से एक पशु था और एक पक्षी। दोनों ही ज्ञान की बातें जानते थे। इन दोनों के अमृतरूपी वचनों से प्रभावित होकर मृतक के सम्बन्धी कभी ठहर जाते थे और कभी आगे बढ़ते थे। इस प्रकार जब उन दोनों में ज्ञान-विज्ञान की बातें चल रही थीं और मृतक के बान्धव वहीं भ्रमित हो खड़े थे, उसी समय पार्वती की प्रेरणा से भगवान् शिव वहाँ प्रगट हुये। मृतक के बन्धु-बान्धवों ने शिव से वर माँगा जिस पर शिव ने उस बालक को जीवित कर के उसे सौ वर्ष की आयु प्रदान की। इतना ही नहीं, शिव ने गृध्र और शृगाल को भी उनकी भूख मिट जाने का वर दिया। तब वे सब लोग शिव को प्रणाम करके वहाँ से चले गये। धर्म, अर्थ, और मोक्ष से युक्त इस शुभ इतिहास को सदा सुनने से मनुष्य इहलोक और परलोक में आनन्द का अनुभव करता है।' (१२. १५३)।"

गृध्रपत्र, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७४)।

गृध्रवट, महादेव के स्थान का नाम है जहाँ भस्मस्नान कर्त्तव्य है। यहाँ यात्रा करने से ब्राह्मण को व्रत के पालन का पुण्य-फल प्राप्त होता है तथा अन्य वर्ण वालों के समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं (३. ८४, ९१)।

गृहदेवी, राक्षसी जरा का नाम है जिसे ब्रह्मा ने इस नाम से उत्पन्न किया था (२. १८, १-२)। "दानवों के विनाश के लिये इसकी सृष्टि हुई है। यह दिव्य रूप धारण करने वाली है। जो अपने गृह की दीवार पर अनेक पुत्रों से घिरी हुई युवती स्त्री के रूप में इसका चित्र अंकित करता है उसके घर में सदा वृद्धि होती है (२. १८, ३-४)।

गृहपति = अग्नि (देखिये वस्था०)।

गृहयज्ञ—'लोकयज्ञः क्रियायज्ञो गृहयज्ञः सनातनः। पञ्चभूतनृयज्ञश्च ज्ञेयं सर्वमिदं जगत्॥', (१०. १८, ५)।

गृहाणां प्रविभागः—'प्रविभागो गृहाणां', (१. २, ७५)।

गेरू, एक पर्वतीय धातु का नाम है (३. १५८, ९५)।

१. गो (गौ)—महर्षि पुलस्त्य की भार्या का नाम गो या गौ था। इनके गर्भ से वैश्रवण नामक पुत्र उत्पन्न हुआ जो पिता को छोड़कर पितामह ब्रह्मा की सेवा में रहता था (३. २७४, १२)।

२. गो (बहु० गावः), कपिला की सन्तान का नाम है (१. ६५, ५२)। रोहिणी की सन्तानों के अन्तर्गत इसका उल्लेख (१. ६६, ६८)। तुकी **सुरभि**।

१. गोकर्ण, एक प्राचीन तीर्थ का नाम है जहाँ शेष ने तपस्या की थी (१. ३६, ३)। अपनी तीर्थयात्रा के समय अर्जुन यहाँ भी आये थे (१. २१७, ३४)। यहाँ ब्रह्मा आदि ने शिव की उपासना की (३. ८५, २४)। यह दक्षिण में स्थित है (३. ८८, १५)। यहीं मरीच का निवास था (३. २७७, ५५)। भारत के उत्तर में स्थित पर्वतों के अन्तर्गत इसकी भी गणना कराई गई है (६. ६, ५१ ?)। मृत्यु यहाँ आये (७. ५४, २६)। यहाँ चारुशीर्ष ने शिव का पूजन किया (१३. १८, ६)। यज्ञ का घोड़ा यहाँ से प्रभास की ओर बढ़ा (१४. ८३, १३)।

२. गोकर्ण = शिव (१,००० नाम)।

गोकर्णा, सुमुखि नामक एक सर्पिणी के लिये प्रयुक्त हुआ है (८. ९०, ४२)।

गोकर्णासनमर्दन = अर्जुन (८. ९०, ४२)।

गोकर्णी, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २५)।

गोकुल, एक स्थान का नाम है। यहाँ पले हुये ग्वालों को सव्यसाची अर्जुन ने मारा था (गीप्रे. सं. में २. ३८ के बाद दाक्षिणात्य पाठ, पृ० ७९९-८००; ८. ५, ३९)।

गोग्रहण—एक पर्व, गोहरणपर्व, के लिये प्रयुक्त (१. २, ५८)।

गोचर = शिव (१,००० नाम)।

गोचर्मवसन = शिव (१,००० नाम)।

गोतम, एक ऋषि का नाम है (१. १३०, २)। देखिये **गौतम**।

गोतीर्थ, एक तीर्थ का नाम है जहाँ पाण्डवगण तीर्थयात्रा के समय गये थे (३. ९५, ३)।

गोदावरी, एक नदी का नाम है। वरुण की सभा में इसकी उपस्थिति (२. ९, २०)। 'गोदावरीं प्राप्य नित्यं सिद्धनिषेविताम्', (३. ८५, ३३)। यह दक्षिण में स्थित है (३. ८८, २)। 'गोदावरीं सागरगामगच्छत्', (३. ११८, ३)। मार्कण्डेय ने इसको भी नारायण के उदर में देखा (३. १८८, १०३)। उन नदियों के अन्तर्गत इसकी भी गणना है जो अग्नि की मातायें थीं (३. २२२, २४)। इसके तट पर श्रीराम दाशरथी ने कुछ समय तक निवास किया था (३. २७७, ४१)। भारतवर्ष की नदियों के अन्तर्गत इसकी गणना (६. ९, १४)। इसका उल्लेख (१३. १६५, २२)।

गोधर्म—दीर्घतमस ने सौरभेय से गोधर्म का ज्ञान प्राप्त किया (१. १०४, २६)।

गोधा, पूर्वोत्तर भारत के एक जनपद का नाम है (६. ९, ४२)।

गोनन्द, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६५)।

गोनर्द = शिव (१,००० नाम)।

गोनामन्—'गोनाम्ना पुष्करेण च', (२. ९, २९)।

गोप (बहु० °पाः) = नारायण (६. ७१, १३)।

१. गोपति, मुनि के गर्भ से उत्पन्न एक देवगन्धर्व का नाम है (१. ६५, ४२,)। उन गन्धर्वों में एक एक यह भी थे जो अर्जुन के जन्म के समय उपस्थित हुये (१. १२३, ५५)।

२. गोपति = सूर्य : १.१७३, ३२; २. ११, ६; ३. ३००, २३; ३०२, १. २; ३०६, २२।

३. गोपति, एक राजा का नाम है जिसका श्रीकृष्ण ने वध किया (३. १२, ३४)।

४. गोपति = वरुण : ५. ९८, ११; ११०, १।

५. गोपति = शिबि के एक पुत्र का नाम है (१२.४९, ७९)।

६. गोपति = शिव (१,००० नाम)।

७. गोपति = विष्णु (१,००० नाम)।

गोपराष्ट्र, पूर्वोत्तर भारत के एक जनपद का नाम है (६. ९, ४४)।

गोपायन, गोपों की सेना का नाम है (६. ७१, १३)।

१. गोपाल (बहु °लाः) = नारायण (बहु०) : ७. १८, ३१; ९१, ३९; ८. ११, १७।

२. गोपाल = कृष्ण : ३. २६३, १०।

१. गोपालकक्ष, एक पूर्वीय देश का नाम है जिसे भीमसेन ने दिग्विजय के समय जीता था (२. ३०, ३)।

गोपालकक्ष (बहु० °क्षाः), गोपालकक्ष के निवासियो के लिये प्रयुक्त हुआ है (६. ९, ५६)।

गोपालि = शिव (१,००० नाम)।

१. गोपाली, एक अप्सरा का नाम है जिसने अर्जुन के सम्मानार्थ इन्द्र-सभा में नृत्य किया था (३. ४३, ३०)।

२. गोपाली, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ४)

गोपीजनप्रिय = कृष्ण : २. ६८, ४१।

गोपुत्र = कर्ण : ८. ९०, ४२ (देखिये नीलकण्ठी भी)।

गोपेन्द्र = कृष्ण : ६. २३, ७।

१. गोप्तृ = शिव : १३. १४, २१।

२. गोप्तृ = विष्णु (१,००० नाम)।

गोप्त्रात्मन् = कृष्ण : १२. ४७, ७०।

१. गोप्रतार, सरयू नदी के एक तीर्थ का नाम है जहाँ भृत्य, सेना, और वाहनों के साथ श्रीराम परमधाम को पधारे थे (३. ८४, ७०-७३)।

२. गोप्रतार = शिव (१,००० नाम)।

गोभवन, कुरुक्षेत्र की सीमा में स्थित एक पवित्र तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से सहस्र गोदन का फल मिलता है (३. ८३, ५०)।

गोमती, एक नदी का नाम है (१. १७०, २०)। यह वरुण की सभा में उपस्थित रहती है (२. ९, २३)। 'रामतीर्थे नरः स्नात्वा गोमत्या', (३. ८४, ७३)। 'गोमतीगङ्गयोश्चैव सङ्गमे लोकविश्रुते', (३. ८४, ८१)। यह पूर्व में स्थित है (३. ८७, ७)। तीर्थयात्रा के समय युधिष्ठिर यहाँ आये (३. ९५, २)। यह विश्वभुक् नामक अग्नि की पत्नी है (३. २१९, १९)। जारूथी में गोमती के तट पर श्रीराम दाशरथी ने दश अश्वमेध यज्ञ किये थे (३. २९१, ७०)। 'सा लतेव महाशालं फुल्लं गोमतितीरजम्', (४. १७, १२)। भारतवर्ष की नदियों के अन्तर्गत इसका गणना (६. ९, १८)। 'नैमिषे गोमतीतीरे', (१२. ३५५, २)। 'गोमत्यां पुलिने शुभे', (१२. ३५७, १२)। 'गोमत्यास्त्वेव पुलिने', (१२. ३५९, १४)। 'गोमतीतीरे', (१२. ३६१, ४)। दिवोदास की नगरी का एक छोर गङ्गा के उत्तर तट पर था और दूसरा गोमती के दक्षिणी तट तक फैला हुआ था (१३ ३०, १८) एक तीर्थ (१३. १०२, ४७) 'कौशिकी गोमती तथा', (१३. १४६, १८)।

गोमतीमन्त्र, एक मन्त्र का नाम है जिसे गौओं के बीच में खड़े होकर मन-ही-मन जपा जाता है। ऐसा करनेवाला पुरुष शुद्ध एवं निर्मल हो जाता है (१३. ८१, ४२-४५)।

१. गोमन्त, एक पर्वत का नाम है जो द्वारका के निकट था (२. १४, ५४)।

२. गोमन्त, क्रौञ्चद्वीप के एक पर्वत का नाम है ((६. १२, ८)।

३. गोमन्त, (बहु० °न्ताः) एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ४३)।

गोमहिपन्दा, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका, का नाम है (९. ४६, २८)।

गोमार्ग = शिव (१,००० नाम)।

१. गोमुख, क्रोधवश संज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न एक राजा का नाम है (१. ६७, ६३-६६)।

२. गोमुख, इन्द्र सारथि मातलि के पुत्र का नाम है (५. १००, ८)।

गोरथ, गिरिव्रज के निकट स्थित एक पर्वत का नाम है (२. २०, ३०)।

गोलांगूल, हरी की सन्तान, बन्दरों (लंगूरों) की एक जाति का नाम है, (१. ६६, ६४)।

गोलोक, एक दिव्य लोक का नाम है। 'गवांलोकम्' (९. ५०, ४१)। 'गोलोकं च सनातनम्', (१२. ३४२, १३७)। 'गोलोको ब्रह्मलोकश्च ओघावास्तां', (१२. ३४७, ५२)। 'गवां लोकम्', (१३. ७२, ४)। 'लोकं गवाम्', (१३. ७३, १३)। 'गवां लोकं पुण्यकृतां निवासम्', (१३. ७३, १५)। 'गवां लोक', (१३. ८३, १३)। 'गोलोकः', (१३. ८३, ३७) 'गोलोकः पुष्करेक्षण', (१३. ८३, ४४)। 'गोलोके', (१३. ९६, २१)। "गौतम ने कहा कि प्रजापति-लोक के परे जो पवित्र गन्ध से परिपूर्ण, रजोगुणरहित तथा शोकशून्य सनातन लोक प्रकाशित होते हैं उन्हें गोलोक कहते हैं। धृतराष्ट्र ने कहा कि जो सहस्र गौओं का स्वामी होकर प्रतिवर्ष सौ गौओं का दान करता है, सौ गौओं का स्वामी होकर यथाशक्ति दस गौओं का दान करता है, जिसके पास दस ही गौयें हैं वह यदि उनमें से एक गाय का दान करता है, अथवा जो दानशील पाँच गौओं में से एक गाय का दान करता है, वह गोलोक में जाता है। जो ब्राह्मण ब्रह्मचर्य का पालन करते-करते वृद्ध हो जाते हैं, जो वेदवाणी की सदा रक्षा करते हैं, तथा जो मनस्वी ब्राह्मण तीर्थयात्रा में तत्पर रहते हैं वे ही गोलोक में आनन्द प्राप्त करते हैं। प्रभास, मानसरोवर आदि तीर्थों में जो व्रतधारी महात्मा जाते हैं वे ही गोलोक प्राप्त करते हैं तथा कल्याणमय स्वरूप और पवित्र सुगन्ध से व्याप्त होकर वहाँ निवास करते हैं। (१३. १०२, ४२-४८)।" 'गवांलोकम्', (१३. १०३, ५)।

१. गोवर्धन ब्रजमण्डल के एक सुप्रसिद्ध पर्वत का नाम है (गीप्रे० सं० में २. ३८ के बाद दक्षिणात्य पाठ, पृ० ८०१; २. ४१, ९)। 'गोवर्धनो धारितश्च गवार्थे', (५. १३०, ४६)।

२. गोवर्धन, वाहीक-देश के राजभवन के द्वार पर स्थित एक वट वृक्ष का नाम है (८. ४४, ८)।

१. गोवासन, शिबि देश के राजा का नाम है जिनकी पुत्री ने स्वयंवर में युधिष्ठिर को अपना पति चुना था (१. ९६, ७६)। 'गोवासनः शैब्यः', (६. १७, २०)। इन्होंने एक सहस्र योद्धाओं को साथ लेकर काशिराज अभिभू के पुत्र का सामना किया था (७. ९५, ३८; ९६, ११)।

२. गोवासन (बहु० °नाः), एक देश के निवासियों का नाम है जो युधिष्ठिर के लिए भेंट लेकर उपस्थित हुए थे (२. ५१. ५) 'गोवासदासमीयानां वसातीनां च भारत', (८. ७३, १७)।

गोविकर्ता, महाबली बैलों को नाथने वाले के लिए प्रयुक्त हुआ है (४. २, ९)।

गोवितत, एक यज्ञ का नाम है : गोविततं नाम वाजिमेधः', (१. ७४, १३०)।

१. गोविन्द = कृष्ण (विष्णु), देखिये वस्था०।

२. गोविन्द, क्रौञ्चद्वीप के एक पर्वत का नाम है (६. १२, १९)।
३. गोविन्द = शिव (१,००० नाम)।
गोविन्दां पतिः = विष्णु (१,००० नाम)।
गोवृष = शिव (१,००० नाम)।
गोवृषध्वज = शिव (देखिये वस्था०)।
गोवृषभाङ्क = शिव (देखिये वस्था०)।
गोवृषेश्वर = शिव : (१३. १७, १४०)।
गोवृषेश्वरवाहन = शिव (१,००० नाम)।
गोवृषोत्तमवाहन = शिव (देखिये वस्था०)।
गोव्रज, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६६)।
गोव्रत, गोव्रतधारी पुरुष को कहते हैं : 'यत्रतत्रशयो नित्यं येन केनचिदाशितः। येन केनचिदाच्छन्नः स गोव्रत इहोच्यते ॥', (५. ९९, १४)।
गोशब्दात्मज = इन्द्र : ८. ९०, ४२ ।
गोश्रृङ्ग; दक्षिण के एक पर्वत का नाम है (२. ३१, ५)।
गोष्ठ = शिव : १४. ८, १९ ।
गोसव, एक महायज्ञ का नाम है (३. ३०, १७)।
गोस्तनी, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका, का नाम है (९. ४६, ३)।
गोहरणपर्वन्, महाभारत के ५५वें अवान्तर पर्व का नाम है : "अज्ञात-वास की अवस्था में पाण्डवों का पता लगने के लिए दुर्योधन द्वारा भेजे गये गुप्तचरों ने हस्तिनापुर में लौटकर दुर्योधन से बताया कि वे पाण्डवों का पता लगाने में असमर्थ रहे हैं। उस समय दुर्योधन, द्रोण, कर्ण, कृपाचार्य, भीष्म, अपने भाइयों और महारथी त्रिगर्तों के साथ राजसभा में बैठा था। गुप्तचरों ने बताया कि विराट की महारानी सुदेष्णा का ज्येष्ठ भ्राता कीचक, जो अत्यन्त शूरवीर और महापराक्रमी था, एक स्त्री के कारण गन्धर्वों द्वारा मार डाला गया (४. २५)।" "दुर्योधन ने अपने सभासदों से पाण्डवों का पता लगाने के विषय में परामर्श किया। उस समय कर्ण तथा दुःशासन ने अन्य गुप्तचरों को भेजने का परामर्श दिया (४. २६)।" "द्रोणाचार्य ने कहा कि पाण्डव-गण शूरवीर, विद्वान्, बुद्धिमान्, जितेन्द्रिय, धर्मज्ञ और कृतज्ञ हैं, अतः ऐसे महापुरुष न तो नष्ट होते हैं और न तिरस्कृत ही होते हैं। ब्राह्मण, गुप्तचर, सिद्ध-पुरुष अथवा जो अन्य लोग उन्हें पहचानते हों उनके द्वारा पुनः उन सबकी खोज करानी चाहिए (४. २७)।" "युधिष्ठिर की महिमा का वर्णन करते हुए भीष्म ने द्रोणाचार्य के मत की प्रशंसा की और अपनी सम्मति दी (४. २८)।" "कृपाचार्य ने अपनी सम्मति देते हुए दुर्योधन को सावधानीपूर्वक ही कोई कार्य करने का परामर्श दिया (४. २९)।" "त्रिगर्तराज सुशर्मा ने कर्ण की सहमति से विराट् नगर पर आक्रमण करके वहाँ की गौओं आदि का अपहरण करने का परामर्श दिया। उन्होंने कहा कि कीचक के नेतृत्व में 'मत्स्यों' ने पहले जो आक्रमण किये थे, उनका प्रतिशोध लेने का अब समय आ गया है। त्रिगर्तराज के इस कथन का कर्ण ने भी समर्थन किया। उन सबकी बात सुनकर दुर्योधन ने अपने अनुज, दुःशासन, से सेना को प्रस्थान कराने के लिए आज्ञा दी। तदनन्तर पूर्व-योजना के अनुसार सुशर्मा ने विराट् की गौओं का अपहरण करने के लिए कृष्ण-पक्ष की सप्तमी को अग्निकोण की ओर से विराटनगर पर चढ़ाई की। दूसरे दिन, अष्टमी को, दूसरी ओर से कौरवों ने आक्रमण किया और सहस्रों गौओं पर अधिकार कर लिया (४. ३०)।" "कीचक की मृत्यु के पश्चात् विराट युधिष्ठिर के प्रति अत्यन्त आदर बुद्धि रखने लगे। सुशर्मा ने तीव्र आक्रमण करके गौओं को अपने अधिकार में कर लिया। गोप ने आकर विराटराज को इसका समाचार दिया। यह सुनकर राजा ने मत्स्य-देश की सेना एकत्र की। राजा तथा राजकुमारों ने पृथक् पृथक् कवच धारण किये। विराट् के छोटे भ्राता शतानीक और मदिराक्ष ने भी सुन्दर कवच धारण किये। राजा विराट ने तथा उनके ज्येष्ठ पुत्र शंख ने भी अपने-अपने सुदृढ़ कवच धारण किये। राजा विराट ने कङ्क, बल्लव, तन्तिपाल और ग्रन्थिक को भी युद्ध करने की स्वीकृति दी। कङ्क, बल्लव तन्तिपाल तथा ग्रन्थिक, ये चारो नाम क्रमशः युधिष्ठिर, भीमसेन, नकुल और सहदेव के छद्म नाम थे। इस प्रकार पूर्णतया सन्नद्ध होकर विराट की सेना त्रिगर्तों से युद्ध करने के लिए प्रस्थित हुई (४. ३१)।" "नगर से निकलकर मत्स्यदेशीय वीर योद्धाओं ने सूर्य के ढलते-ढलते त्रिगर्तों को पकड़ लिया। तदनन्तर दोनों के बीच भयङ्कर युद्ध होने लगा। उस युद्ध में शतानीक और विशालाक्ष ने सैकड़ों त्रिगर्त-योद्धाओं को मारकर उनकी सेना में प्रवेश किया। विराट ने भी सुशर्मा के साथ द्वैरथ-युद्ध किया (४. ३२)।" "सूर्यास्त हो जाने के कारण सैनिक युद्ध बन्द करके कुछ देर तक खड़े रहे। चन्द्रोदय होने के पश्चात् पुनः घोर युद्ध प्रारम्भ हो गया। त्रिगर्तराज सुशर्मा ने अपने छोटे भाई को साथ लेकर विराट पर आक्रमण किया और उन्हें बन्दी बना लिया। विराट के बन्दी हो जाने के पश्चात् मत्स्यदेशीय सैनिक भयभीत होकर पलायन करने लगे। युधिष्ठिर की आज्ञा से भीमसेन ने जब विराट को मुक्त कराने के लिए एक विशाल वृक्ष को उखाड़कर उसी से शत्रुओं का संहार करना चाहा तो युधिष्ठिर ने उन्हें ऐसा करने से रोका क्योंकि इसमें उनके पहचाने जाने का भय था। युधिष्ठिर के उक्त आदेश का अनुसरण करते हुए भीम ने नकुल और सहदेव को अपने रथ-चक्र-रक्षकों के रूप में लेकर सुशर्मा पर प्रबल आक्रमण किया। उन्होंने भयङ्कर पराक्रम दिखाते हुए त्रिगर्तों की सेना का अत्यधिक संहार किया जिससे सुशर्मा अत्यन्त भयभीत हो उठा। भीम के पराक्रम को देखकर मत्स्य-वाहिनी भी पुनः उत्साहित होकर लौट पड़ी और त्रिगर्तों के साथ युद्ध करने लगी। भीम ने सुशर्मा के निकट पहुँच कर उसके रथाश्वों और सारथि का वध कर दिया जिससे सुशर्मा रथहीन हो गये। उसी समय विराट के चक्र-रक्षक, सुप्रसिद्ध वीर मदिराक्ष भी भीम की सहायता के लिए आ गये। राजा विराट भी सुशर्मा के रथ से कूद पड़े और उसकी गदा लेकर उसी की ओर दौड़े। भीम ने सुशर्मा को पकड़ लिया और उसका वध करना ही चाहते थे कि युधिष्ठिर ने उसे मुक्त करा दिया (४. ३३)।" "सुशर्मा को मुक्त करके पाण्डव युद्ध के मुहाने पर ही रात भर सुखपूर्वक रहे। राजा विराट ने अतिमानुष पराक्रम करनेवाले इन पाण्डवों का अत्यन्त सत्कार किया। तदनन्तर युधिष्ठिर के कहने पर महाराज विराट ने दूतों के द्वारा उसी रात को अपनी विजय की घोषणा करने के लिए राजधानी भेज दिया (४. ३४)।" "इसी बीच कौरवों ने उत्तर दिशा की ओर से आकर विराट की गौओं का अपहरण कर लिया। इसका समाचार देने के लिए गोप शीघ्र ही मत्स्यराज्य के पुत्र, उत्तर, के पास आया और उन्हें कौरवों से युद्ध के लिए उत्साहित करने लगा। उस समय राजकुमार उत्तर अन्तःपुर में स्त्रियों के बीच में बैठा था। उसने तब अपनी प्रशंसा करते हुए इस प्रकार कहा (४. ३५)" "उत्तर ने कहा : 'मेरा धनुष तो बहुत दृढ़ है। यदि मेरे पास कोई कुशल सारथि हो तो मैं आज गौओं को वापस लाने के लिये अवश्य युद्ध करूंगा।' उत्तर की बात सुनकर अर्जुन ने द्रौपदी से कहा कि वह बृहन्नला को ही सारथि बनाने का उत्तर को परामर्श दें (४. ३६)।" "राजकुमार उत्तर ने अपनी बहन उत्तरा को बृहन्नला के पास सारथि बनने का प्रस्ताव लेकर भेजा। बृहन्नला रूपी अर्जुन उत्तरा के सामने पहले तो अनभिज्ञता सूचक कार्य करने लगे जिससे वहाँ उपस्थित राजकुमारियाँ हँस पड़ीं और स्वयं उत्तर ने उन्हें कवच धारण करने में सहायता की। इस प्रकार बृहन्नला को सारथि के रूप में तैयार करके राजकुमार उत्तर युद्ध के लिए प्रस्थित हुआ। उस समय उत्तरा और उसकी सखियों ने बृहन्नला से कहा : 'तुम युद्ध-भूमि में आये भीष्म, द्रोण आदि प्रमुख कौरव-वीरों को पराजित करके हमारी गुड़ियों के लिए उनके कोमल और रंग-बिरंगे सुन्दर वस्त्र ले आना।' बृहन्नला ने कहा कि यदि राजकुमार उत्तर रणभूमि में उन महारथियों को परास्त कर देंगे तो वह अवश्य उनके दिव्य और सुन्दर वस्त्र ले आयेगी। इस प्रकार विदा होकर अर्जुन और उत्तर रण-भूमि की ओर चले (४. ३७)।" "राजकुमार उत्तर की आज्ञा से अर्जुन उस रथ को वहाँ ले गये जहाँ कौरवों की विशाल सेना खड़ी थी। कौरवों की उस असीम सेना

को देखकर राजकुमार उत्तर भयभीत होकर रथ से कूद पड़े और भागने लगे। उस समय अर्जुन ने दौड़कर उसे पकड़ लिया और आश्वासन देकर कहा कि यदि वह युद्ध से विरत होगा तो वे स्वयं कौरवों से युद्ध करेंगे। किसी प्रकार समझा-बुझाकर अर्जुन ने उत्तर को सारथि बनने के लिए तैयार कर लिया और स्वयं गाण्डीव धनुष लाने के लिये शमीवृक्ष की ओर गये (४. ३८)।" "नपुंसक-वेष में रथ पर बैठे हुए नर-श्रेष्ठ अर्जुन को, जो उत्तर को रथ पर बैठाकर शमी वृक्ष की ओर जा रहे थे, भीष्म, द्रोण आदि कौरव महारथियों ने देखा। उन्हें देखकर अर्जुन के होने की आशङ्का से वे सब मन ही मन भयभीत हो उठे। उस समय अनेक अपशकुनों की व्याख्या करते हुए द्रोणाचार्य ने कहा कि धनुर्धर अर्जुन ही आ रहे हैं इसमें सन्देह नहीं। उस समय कर्ण और दुर्योधन ने कहा कि पहचान लिए जाने के कारण पाण्डवों को पुनः बारह वर्षों तक वन में भटकना पड़ेगा (४. ३९)।" "शमीवृक्ष के निकट पहुँच कर अर्जुन ने उत्तर को आज्ञा दी कि वह वृक्ष पर चढ़कर वहाँ छिपाये हुये पाण्डवों के अस्त्र-शस्त्र को ले आये (४. ४०)।" "उत्तर ने कहा : 'मैंने तो सुन रक्खा था कि इस वृक्ष में कोई शव बँधा हुआ है अतः ऐसी दशा में मैं उसका स्पर्श नहीं कर सकता।' अर्जुन ने उसको बताया कि वह शव नहीं, पाण्डवों के अस्त्र हैं। अर्जुन की आज्ञा पर उत्तर ने वे अस्त्र आदि उतारे (४. ४१)।" "उत्तर ने बृहन्नला से पाण्डवों के अस्त्र-शस्त्र के विषय में प्रश्न किया और बृहन्नला ने उसे पाण्डवों के आयुधों का परिचय दिया (४. ४२-४३)।" "अर्जुन ने उत्तर-कुमार को अपना तथा अपने भाइयों का परिचय दिया। उन्होंने अपने कथन की सत्यता को प्रमाणित करने के लिए अपने दस नामों को भी बताया (४. ४४)।" "अर्जुन ने अपने आभूषणों आदि को उतार दिया और एकाग्र-चित्त हो अपने अस्त्रों का ध्यान किया। तदनन्तर उन समस्त अस्त्रों ने प्रकट होकर अर्जुन से कहा : 'हम लोग तुम्हारे परम उदार किंकर हैं।' इस प्रकार अपने अस्त्र-शस्त्रों को अनुकूल करके अर्जुन ने अत्यन्त वेग से अपने गाण्डीव धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ाई और उस पर टङ्कार दी। उस धनुष की टङ्कार को सुनकर कौरवों ने समझ लिया कि वे अर्जुन ही हैं। अर्जुन ने अपने पूर्व-पराक्रमों का वर्णन करके उत्तर को आश्वस्त करते हुए कहा : 'मैं गुरुवर द्रोणाचार्य, इन्द्र, कुबेर, यमराज, वरुण, अग्निदेव, कृपाचार्य, श्रीकृष्ण और शङ्कर, इन सबका आश्रय पा चुका हूँ अतः तुम्हें चिन्ता नहीं करनी चाहिए।' (४. ४५)।" "उत्तर को सारथि बनाकर अर्जुन ने युद्ध के लिए प्रस्थान किया। उन्होंने मन ही मन अपने सुवर्णमय ध्वज का चिन्तन किया जिस पर अग्निदेव ने उस ध्वज पर स्थित होने के लिए भूतों को आदेश दिया। तत्पश्चात् उनका ध्वज आकाश से रथ पर आ गया जिस पर हनुमान विराज रहे थे। उस समय द्रोणाचार्य ने विभिन्न प्रकार के शकुनों के आधार पर कहा कि अर्जुन ही युद्ध के लिए आ रहे हैं (४. ४६)।" "दुर्योधन ने भीष्म, द्रोण तथा कृप से अपना और कर्ण का यह मत कहा कि अर्जुन ने अपनी प्रतिज्ञा भंग कर दी है। उसने भीष्म से कहा कि वे समय की गणना करके बतायें कि अज्ञातवास का समय समाप्त हो गया है कि नहीं। अर्जुन की प्रशंसा करने के कारण कर्ण ने द्रोणाचार्य पर आक्षेप किया (४. ४७)।" "आत्म-प्रशंसापूर्ण अहंकारोक्तियाँ करते हुए कर्ण ने कहा कि वह उसी दिन अर्जुन को रथ से विरथ करके उन्हें पराजित कर देगा (४. ४८)।" "कृपाचार्य ने कर्ण को फटकारते हुए अर्जुन के पराक्रमों का वर्णन किया और कहा कि अकेले कर्ण ही नहीं वरन् समस्त कौरव महारथियों को मिलकर ही अर्जुन से युद्ध करना चाहिए (४. ४९)।" "अश्वत्थामा ने कर्ण पर आक्षेप करते हुए उसकी अहंकारोक्तियों की भर्त्सना की और कहा कि वे अर्जुन से युद्ध नहीं करेंगे (४. ५०)।" "भीष्म ने एक ओर अश्वत्थामा और कृप तथा दूसरी ओर कर्ण के बीच मध्यस्थता करते हुए कहा कि यह परस्पर विवाद का समय नहीं है और सबको मिलकर अवश्य युद्ध करना चाहिए। उन्होंने कहा : 'ब्रह्मास्त्र और वेद हमारे आचार्यों के अतिरिक्त अन्यत्र कहीं नहीं। अतः हम सब मिलकर यहाँ आये हुए अर्जुन से युद्ध करेंगे।' अश्वत्थामा और दुर्योधन ने भीष्म का समर्थन किया। तब द्रोणाचार्य ने कहा : 'अब ऐसी नीति से कार्य करना चाहिए कि अर्जुन इस युद्ध में दुर्योधन के निकट न पहुँच सकें।' तदनन्तर उन्होंने भीष्म से पूछा कि वे अज्ञातवास का समय पूर्ण हो जाने के संबन्ध में अपना निर्णय दें (४. ५१)।" "भीष्म ने कहा कि तेरह वर्ष पूर्ण होने के पश्चात् भी पाण्डवों के पाँच महीने और बारह दिन अधिक व्यतीत हो चुके हैं। उन्होंने कहा कि इस प्रकार पाण्डवों ने अपनी प्रतिज्ञाओं का यथावत पालन कर लिया है। इस पर दुर्योधन ने कहा : 'मैं पाण्डवों को राज्य नहीं दूँगा।' भीष्म ने दुर्योधन से कहा : 'तुम एक चौथाई सेना लेकर हस्तिनापुर की ओर जाओ तथा दूसरी एक चौथाई सेना गौओं को साथ लेकर जाय। शेष आधी सेना लेकर मैं, द्रोणाचार्य, कर्ण, अश्वत्थामा तथा कृपाचार्य अर्जुन के साथ युद्ध करेंगे।' यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया। अपनी सेना की व्यूह-रचना करते हुए भीष्मने द्रोणाचार्य को मध्य में, अश्वत्थामा को वाम-भाग में, कृपाचार्य को दक्षिणभाग में, कर्ण को अग्र-भाग में स्थित किया और स्वयं पृष्ठ-भाग में स्थित हुए (४. ५२)।" "अर्जुन को निकट आया देखकर द्रोणाचार्य ने उनके ध्वज आदि को पहचान लिया। अर्जुन ने उत्तर को आज्ञा दी कि वह रथ को कौरव सेना के समीप ले जाय जिससे वे देख सकें कि दुर्योधन कहाँ है। अर्जुन की आज्ञा पाकर उत्तर ने रथ को उस ओर बढ़ाया जिधर दुर्योधन गया था। अर्जुन शीघ्र ही दुर्योधन के पास पहुँच गये और असंख्य बाणों की वर्षा करने लगे। उस बाण-समूह से आच्छादित होकर यद्यपि कौरव-सैनिक धराशायी हो रहे थे तथापि उनको वहाँ से भागने की इच्छा भी नहीं होती थी। अर्जुन के शंख-नाद, गाण्डीव धनुष की टङ्कार, तथा ध्वज में निवास करने वाले मानवेतर भूतों के भयङ्कर कोलाहल से पृथ्वी कांप उठी। उस समय गौयें भी सब ओर से लौटकर दक्षिण-दिशा की ओर भाग चलीं (४. ५३)।" "जब गौयें मत्स्य देश की राजधानी की ओर भाग गईं और अर्जुन अपने कार्य में सफल होकर दुर्योधन की ओर बढ़े तो समस्त कौरव वीर वहाँ आ पहुँचे। उस समय कर्ण, चित्रसेन, संग्रामजित, शत्रुसह, जय और विकर्ण ने अर्जुन पर आक्रमण किया। अर्जुन के प्रत्याक्रमण से पराजित होकर विकर्ण भाग गया। अर्जुन ने शत्रुंतप और संग्रामजित का वध कर दिया। कर्ण भी अन्ततोगत्वा अर्जुन के बाणों से संतप्त होकर युद्ध-भूमि से भाग गया (४. ५४)।" "दुर्योधन आदि ने अर्जुन पर आक्रमण किया। अर्जुन ने भी द्रोण, दुःसह, अश्वत्थामा, दुःशासन और कृपाचार्य पर बाणों से प्रहार किया और भीष्म, दुर्योधन तथा कर्ण को आहत कर दिया। तदनन्तर अर्जुन ने उत्तर से कृपाचार्य, द्रोण, अश्वत्थामा, दुर्योधन, कर्ण तथा भीष्म आदि के ध्वजों का वर्णन किया। उन्होंने अपने रथ को कृपाचार्य के पास ले चलने को कहा (४. ५५)।" "अर्जुन और कृपाचार्य के युद्ध को देखने के लिए उस समय देवों सहित इन्द्र, विश्वे-देव, अश्विन, मरुद्गण, यक्ष, गन्धर्व, महोरग, नाग, राक्षस, सर्प, पितृगण तथा महर्षि उपस्थित हुए। इनके अतिरिक्त राजा वसुमना आदि भी तेजस्वी रूप धारण करके इन्द्र के विमान में ही उपस्थित हुए। अग्नि, ईश, सोम, वरुण, प्रजापति, धाता, विधाता, कुबेर, यम, अलम्बुष, उग्रसेन तथा तुम्बुरु आदि गन्धर्व भी उस अद्वितीय युद्ध को देखने के लिए उपस्थित हुए (४. ५६)।" "उत्तर अर्जुन की आज्ञानुसार रथ को कृपाचार्य के समीप लाया। तब अर्जुन ने अपना नाम सुनाकर अपने उत्तम शंख, देवदत्त को बजाया। तदनन्तर कृपाचार्य और अर्जुन का भीषण-युद्ध आरम्भ हुआ जिसमें अनन्तोगत्वा कौरव-सैनिक कृपाचार्य को युद्ध-भूमि से अलग हटा ले गये (४. ५७)।" "तदनन्तर द्रोणाचार्य ने अर्जुन पर आक्रमण किया। उस समय अर्जुन ने आचार्य को संबोधित करते हुए कहा : 'मैं आप पर उसी समय प्रहार करूँगा जब पहले आप मुझ पर प्रहार कर लेंगे।' अर्जुन की बात सुनकर आचार्य ने उन पर बाणों से प्रहार आरम्भ किया। अर्जुन ने द्रोणाचार्य के ऐन्द्रास्त्र, वायव्यास्त्र और आग्नेय आदि अस्त्रों को अपने अस्त्रों से स्तंभित और नष्ट कर दिया। जब अर्जुन और द्रोण का इस प्रकार तुमुल-युद्ध हो रहा था तो उसी समय आकाश में देवताओं का यह शब्द गूँज उठा : 'द्रोणाचार्य का यह अत्यन्त दुष्कर

कार्य है कि वे अब तक अर्जुन के समक्ष युद्ध में डटे हैं।' अर्जुन ने उस समय द्रोणाचार्य पर भीषण बाण-वर्षा करके उन्हें व्यथित कर दिया। इसी समय अश्वत्थामा ने भी आकर अर्जुन पर आक्रमण किया। ज्यों ही अर्जुन अश्वत्थामा से युद्ध के लिए अग्रसर हुए त्यों ही अवसर पाकर आहत आचार्य द्रोण युद्ध-भूमि से भाग निकले (४. ५८)।" "अश्वत्थामा ने अर्जुन के साथ युद्ध करते हुए उनके गाण्डीव-धनुष को प्रत्यञ्चा काट दी जिस पर देवों तथा आचार्य द्रोण, भीष्म, कर्ण और कृपाचार्य ने उनकी प्रशंसा की। अर्जुन ने अपने धनुष में दूसरी प्रत्यंचा लगाकर अश्वत्थामा पर पुनः आक्रमण किया। कुछ समय के पश्चात् अश्वत्थामा के बाण समाप्त हो गये अतः उनकी सहायता के लिए उपस्थित होकर कर्ण ने अर्जुन पर आक्रमण किया (४. ५९)।" "कर्ण को उपस्थित देखकर अर्जुन ने उससे कहा : 'आज रण-भूमि में मेरा सामना कर और अपने पराक्रम को दिखा। मेरे साथ युद्ध का जो तेरा उत्साह है वह अभी-अभी प्रकट हुआ है, अतः तू अब मेरा बल स्वयं देख।' कर्ण ने भी गर्वोक्ति के साथ अर्जुन का उत्तर देते हुए उन पर आक्रमण किया। भीषण युद्ध के पश्चात् कर्ण आहत होकर युद्ध-भूमि को छोड़ उत्तर-दिशा की ओर भाग गया (४. ६०)।" "तदनन्तर अर्जुन ने उत्तर को अपना रथ भीष्म की ओर ले चलने की आज्ञा दी। उस समय उत्तर अत्यन्त भयभीत हो उठा और रथ-संचालन करने में असमर्थता प्रगट करने लगा। अर्जुन ने उसे सान्त्वना देते हुए अपने अस्त्र-शस्त्रों तथा पूर्व-पराक्रमों का वर्णन किया। तदनन्तर दुःशासन, विकर्ण, दुःसह और विविंशति आदि ने मिलकर अर्जुन पर आक्रमण किया। युद्ध में पराजित होकर दुःशासन तो भाग गया और विकर्ण रथ से नीचे गिर पड़ा। दुःसह और विविंशति भी अत्यधिक आहत हुए जिससे उनके सेवकों ने उन्हें युद्ध-भूमि से अन्यत्र हटा दिया (४. ६१)।" "अर्जुन ने तदनन्तर समस्त कौरव-योद्धाओं और महारथियों के साथ युद्ध किया जिसमें उन्होंने कौरव-सेना का भीषण संहार किया (४. ६२)।" "अर्जुन पर समस्त कौरवपक्षी महारथियों ने आक्रमण किया। उस समय दुर्योधन, कर्ण और दुःशासन आदि भी अर्जुन को परास्त करने में असफल रहे। अर्जुन के भयंकर प्रहारों से पीड़ित होकर समस्त कौरव-सेना भाग गयी (४. ६३)।" "तदनन्तर अर्जुन और भीष्म के बीच अद्भुत युद्ध आरम्भ हुआ। इस युद्ध में प्राजापत्य, आग्नेय, रौद्र, कौबेर, वारुण, याम्य तथा वायव्य आदि दिव्यास्त्रों का प्रयोग हुआ। गन्धर्वराज चित्रसेन ने उस समय इन दोनों महावीरों के युद्ध की ओर इन्द्र का ध्यान आकर्षित किया। देवराज इन्द्र ने दिव्य पुष्पों की वर्षा करके अर्जुन और भीष्म के इस अद्भुत संग्राम के प्रति आदर प्रकट किया। अनन्तोगत्वा अर्जुन के बाणों से आहत होकर भीष्म भी मूर्च्छित हो गये और उनका सारथि उन्हें संग्राम-भूमि से दूर हटा ले गया (४. ६४)।" "तदनन्तर दुर्योधन और विकर्ण ने अर्जुन पर आक्रमण किया। पराजित होकर विकर्ण तथा दुर्योधन अपने योद्धाओं सहित युद्ध-भूमि से भाग निकले (४. ६५)।" "अर्जुन की ललकार और कटु वचन को सुनकर दुर्योधन पुनः उनसे युद्ध करने के लिये लौट पड़ा। उस समय कर्ण, भीष्म, द्रोण, कृप, विविंशति और दुःशासन भी दुर्योधन की रक्षा के लिए लौट आये। अर्जुन ने इन्द्र से प्राप्त सम्मोहनास्त्र का प्रयोग करके शंखनाद किया जिससे समस्त कौरव चेतना-शून्य हो गये। कौरव महारथियों के इस प्रकार अचेत हो जाने पर अर्जुन ने उत्तर से कहा : 'अभी ये कौरव मूर्छित हैं अतः तुम द्रोण, कृप, कर्ण, अश्वत्थामा, दुर्योधन आदि के शरीर पर जो सुन्दर वस्त्र हैं उन्हें उतार लो। परन्तु पितामह भीष्म के, जो कि सम्मोहनास्त्र के निवारण की विधि से परिचित और अभी पूर्ण चेतनायुक्त हैं, घोड़ों को बायें ओर छोड़कर जाना. क्योंकि जिनकी चेतना लुप्त नहीं हुई है उनके निकट से इसी प्रकार जाना चाहिए।' अर्जुन की आज्ञानुसार उत्तर कौरव महारथियों के वस्त्रों को लेकर पुनः रथ पर आ गया। अर्जुन जब रण-भूमि से बाहर निकलने लगे तब भीष्म ने उन पर आक्रमण किया परन्तु अर्जुन ने उन्हें भी आहत कर दिया। कौरवों की चेतना लौटने के पश्चात् भीष्म ने दुर्योधन से कहा : 'अब तू शीघ्र ही कुरु-देश को लौट चल और अर्जुन भी गायों को जीतकर लौट जाँय।' पितामह की बात मानकर समस्त कौरव लौट पड़े। उस समय अर्जुन ने लौटकर पितामह भीष्म और गुरु द्रोणाचार्य के चरणों में प्रणाम किया। तदनन्तर उन्होंने अश्वत्थामा, कृपाचार्य तथा अन्य माननीय कौरवों को बाणों की विचित्र रीति से नमस्कार किया और फिर एक बाण मारकर दुर्योधन के रत्नजटित मुकुट को काट डाला। इसके पश्चात् उन्होंने अपना देवदत्त नामक शंख बजाया और उत्तर को लौटने की आज्ञा दी। वहाँ उपस्थित देवगण भी यथा-स्थान चले गये (४. ६६)।" "जब अर्जुन उत्तर की राजधानी की ओर लौट रहे थे तो घने जंगलों में छिपे हुए अनेक कौरव-सैनिक बाहर निकलकर करबद्ध हो अर्जुन से क्षमा-याचना करने लगे। अर्जुन ने उन्हें अभय-दान दिया। तदनन्तर अर्जुन ने उत्तर से कहा : 'तुम नगर में प्रवेश करके पाण्डवों की प्रशंसा मत करना। अपने पिता के समीप जाने पर तुम यह कहना कि तुमने ही कौरवों की विशाल सेना पर विजय प्राप्त की है।' तदनन्तर अर्जुन श्मशान-भूमि में उसी शमी-वृक्ष के समीप आकर खड़े हुये। वहाँ अग्नि के समान तेजस्वी महावानर ध्वज-निवासी भूतगणों के साथ आकाश में उड़ गया और उसके स्थान पर उत्तर के रथ में पुनः सिंह-ध्वज लग गया। अर्जुन ने पाण्डवों के समस्त आयुधों को शमी-वृक्ष पर पूर्ववत् रख दिया। इसके पश्चात् राजकुमार उत्तर ने पुनः बृहन्नला रूपी अर्जुन को अपने रथ के सारथि के रूप में बैठाकर राजधानी में प्रवेश किया। नगर के निकट पहुँचकर अर्जुन ने कुछ विश्राम करने का प्रस्ताव करते हुए उत्तर से कहा : 'तुम्हारे द्वारा भेजे हुए ये गोपाल नगर में जाकर तुम्हारे विजय की घोषणा कर दें और हमलोग अपराह्न-काल में विराट्नगर चलें।' इस प्रकार राजकुमार उत्तर और अर्जुन ने पुनः अपने पुराने वेश धारण कर लिए और नगर की ओर प्रस्थित हुए (४. ६७)।" "राजा विराट ने दक्षिण गोष्ठ की गौओं को जीतकर नगर में पाण्डवों के साथ प्रवेश किया। उस समय मत्स्य देश की प्रजा ने उन सबका अत्यन्त आदर किया। महाराज विराट् को जब यह पता लगा कि भीष्म, कृपाचार्य, कर्ण, दुर्योधन, द्रोणाचार्य तथा अश्वत्थामा आदि द्वारा गोधन का हरण कर लिए जाने के कारण उनसे युद्ध करने के लिए राजकुमार उत्तर बृहन्नला को सारथि बनाकर अकेले ही चले गये हैं तो उन्हें अत्यन्त चिन्ता हुई। राजा विराट को चिन्तित देखकर युधिष्ठिर ने उन्हें आश्वस्त करते हुए बताया कि बृहन्नला द्वारा रक्षित होने पर कौरव तो क्या देवता, असुर, सिद्ध और यक्ष भी राजकुमार पर विजय नहीं प्राप्त कर सकते। इसी बीच उत्तर के दूतों ने आकर उसके विजय की सूचना महाराज विराट् को दी। यह समाचार सुनकर राजा विराट् ने समस्त नगर को पताकाओं आदि से अलंकृत तथा राजकुमार का वीरोचित स्वागत करने की आज्ञा दी। तत्पश्चात् विराट् युधिष्ठिर के साथ पासा खेलने लगे। इस खेल के बीच ही जब मत्स्यराज विराट् ने अपने पुत्र उत्तर की प्रशंसा की तो युधिष्ठिर ने कहा कि बृहन्नला जिसका सारथि हो वह युद्ध में क्यों नहीं जीतेगा। युधिष्ठिर की बात सुनकर मत्स्यराज अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे परन्तु जब फिर भी युधिष्ठिर ने बारम्बार बृहन्नला की ही प्रशंसा की तो विराट् ने पासा उठाकर युधिष्ठिर के मुँह पर जोर से मारा। पासे के आघात से युधिष्ठिर की नाक से रक्त की धारा बहने लगी परन्तु उस रक्त को पृथ्वी पर गिरने से पूर्व ही युधिष्ठिर ने उसे अपने दोनों हाथों में रोक लिया। उस समय युधिष्ठिर का संकेत पाकर द्रौपदी ने उस समस्त रक्त को एक सुवर्ण-पात्र में रोक लिया। इसी बीच द्वारपाल ने आकर बृहन्नला तथा राजकुमार उत्तर के आगमन की सूचना दी। जब मत्स्यराज ने सेवक को उन दोनों को भीतर बुलाने की आज्ञा दी तो जाते हुए सेवक के कान में युधिष्ठिर ने धीरे से कहा कि वह केवल राजकुमार उत्तर को ही भीतर ले आवे क्योंकि बृहन्नला का यह निश्चित व्रत है कि जो युद्ध-भूमि के अतिरिक्त अन्य किसी स्थान पर उनके—युधिष्ठिर के—शरीर में घाव कर देगा वह किसी प्रकार जीवित नहीं रहने पायेगा। तदनन्तर राजा विराट् के पुत्र उत्तर ने भीतर प्रवेश करके अपने पिता तथा कङ्क—युधिष्ठिर—को भी

प्रणाम किया। उत्तर ने कङ्क रूपी युधिष्ठिर के नाक से रक्त-स्राव होते देख अपने पिता से उसका कारण पूछा। कारण का पता लगने पर उसने अपने पिता से कहा कि वे कङ्क से क्षमा मांगें। जब विराट् ने तदनुसार क्षमा मांग ली तो युधिष्ठिर ने कहा : 'मैंने चिरकाल से क्षमा का व्रत ले रखा है अतः आपका यह अपराध क्षमा हो चुका है। यदि मेरी नाक से बहनेवाला यह रक्त धरती पर गिर जाता तो आप अपने समस्त राष्ट्र के साथ नष्ट हो जाते।' जब युधिष्ठिर की नाक से रक्त-स्राव बन्द हो गया तो बृहन्नला ने राज-सभा में प्रवेश करके विराट् को तथा कङ्क को भी प्रणाम किया। उस समय विराट् ने अपने पुत्र की प्रशंसा प्रारम्भ की और उत्तर से उसके पराक्रम का वर्णन पूछा (४. ६८)।" "पिता को सम्बोधित करके उत्तर ने कहा : 'मैंने गौओं को स्वयं नहीं जीता है और न मैंने शत्रुओं पर विजय ही प्राप्त की है। यह सब कार्य तो एक देव-पुत्र ने किया है और तदनन्तर वह वहीं अन्तर्धान हो गया।' महाराज विराट की आज्ञा से बृहन्नला रूपी अर्जुन ने विराट-कन्या उत्तरा को कौरवों के सुन्दर वस्त्र समर्पित किये जिसे पाकर वह अत्यन्त प्रसन्न हुई। तदनन्तर उन्होंने राजकुमार उत्तर के साथ राजा युधिष्ठिर आदि को प्रगट करने के विषय में परामर्श करके समस्त योजना निश्चित की (४. ६९)।"

गोहित = विष्णु (१,००० नाम)।

१. गौतम, गोतम के वंशज, एकाधिक महर्षियों का नाम है। ये मृत प्रमद्वरा को देखने के लिये उपस्थित हुये (१. ८, २५)। ये दीर्घतमस और प्रद्वेषी के ज्येष्ठ पुत्र थे (१. १०४, २४)। अपने भ्राताओं को साथ लेकर इन्होंने दीर्घतमस को गङ्गा में फेंकवा दिया (१. १०४, ३९)। अर्जुन के जन्म के समय उपस्थित सप्तर्षियों में एक यह भी थे (१. १२३, ५१)। युधिष्ठिर के सभाभवन में प्रवेश करने के समय ये भी उपस्थित थे (२. ४, १७)। इन्द्र की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ७, १८)। ब्रह्मा की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ११, १९)। 'काक्षीवतः पुत्रं गौतमस्य महात्मनः', (२. १७, २२)। राजगृह के निकट इन्होंने शूद्रा औशीनरी से काक्षीव आदि को उत्पन्न किया (२. २१, ५-८)। 'ब्रह्मर्षेर्गौतमस्य वनं प्रियम्', (३. ८४, १०८)। उन ऋषियों में एक यह भी थे जो युधिष्ठिर की प्रतीक्षा कर रहे थे (३. ८५, ११९)। ३. १८५, ८. ९. १५-१७. २२; २९८, ११. ३३; ७. १९०, ३३; ९. ३६, १० (एकत, द्वित और त्रित के पिता); १२. ४७, १० (उन ऋषियों में एक यह भी थे जो भीष्म को घेर कर खड़े हुये); ४९, ८१ (दधिवाहनवैत्रिस्तु पुत्रो दिविरथस्य च। गुप्तः स गौतमेनासीद्गङ्गाकूलेऽभिरक्षितः); १२९, ३. ४. ६. ९; १६६. २३; १६८, ३४. ३६-३८. ४१. ४३; १६९, १. ११. १४. १६. २२; १७०, १. ५. ७. ९. १०. १७. २१. २२. २५; १७१, ५. २७. २९. ३१; १७२, १०. १३. १५; १७३, १०. १२. १३. १६; २०८, ३३; २२६, १९ (नीलकण्ठीः 'न मुषोऽहं गौतम इति पाठे अहल्याजारस्य इन्द्रस्य त्रपाजननार्थं मर्मोद्घाटनं गौतमस्य च दारापहारेऽपि धैर्यवर्णनम्। स्थानादहल्यायाः शप्तत्वेन शिलारूपत्वात् गार्हस्थ्याच्च्युतः न त्वत्सदृशोऽहमजितचित्तोऽस्मि किं तु गौतमवज्जितचित्तोऽस्मीति भावः); २६६, ४ (चिरकारिन् के पिता). ८. ४५ (मेधातिथिः). ५९. ६१. ६६. ६८ (जब इन्द्र ने इनकी पत्नी, अहल्या, का सतीत्व हरण किया तब इन्होंने अपने पुत्र, चिरकारिन्, को अहल्या का वध कर देने की आज्ञा दी, परन्तु वह पुत्र कुछ संकोच करने लगा। इसी बीच इन्हें भी ऐसी आज्ञा दे देने पर पश्चाताप हुआ); ३१८, ६० (इन्होंने विश्वावसु को उपदेश दिया); ३४२, २३ (अहल्या का सतीत्व हरण करने के कारण इन्होंने इन्द्र को यह शाप दिया कि उनकी दाढ़ी हरे रंग की हो जाय); १३. १७, १७७ (शुक्र ने इन्हें शिव के १,००० नाम बताये); २५, ४. ६९; २६, ४ (उन ऋषियों में एक यह भी थे जो भीष्म को घेर कर खड़े हुये); ४१, २१ (गौतमेनासि यन्मुक्तो भगाङ्कपरिचिह्नितः); ६६, १२; ९३, २१. ४६. ७१. ९४. १२६; ९४, ४. १९; १०२, ३. ४. ७. १२. १४. १६. १८. २०. २३. २५. २९. ३२. ३५. ३८. ४०. ४२. ४९. ५४. ५७. ५९. ६२. ६३; १०६, ६९; १५०, ३८; १५३, ६ (सप्तश्च भगवान् गौतमेन् पुरन्दरः। अहल्यां कामयानो वै धर्मार्थं च न हिंसितः); १६५, ४२; १४. ३५, २५; ५६, ३. ५. १४. १८. २१. ३२. ३५; ५८, १८. ४३. ५७।

२. गौतम = गोतमपुत्र शरद्वत : १. ६३, १०७; १३०, २. ५. ७. १४. १९. २०; ५. ५५, ४९; १६६, २१।

३. गौतम (गोतम के पौत्र) = कृप : १. २, ३२; १२९, ४२; १३१, १४; १३७, १५; १४२, १७; २०७, १३; २. ४८, ११; ७१, २३; ७४, २५; ३. १, १२; ४. ५७, २४. २५. २९; ५. १६४, ६; १९४, ५. १४; ६. २०, १३; ४३, २२. ७४. ७६; ४५, ५३; ७३, ३८; ८४, २०. २४. २५. २६-२९. ३४; ९६, ३६; १०१, ४१. ४२. ४४; ११३, १२. १४. ३५; ७. २०, ५; ४८, ३२; १०४, ३२; १०५, १५; १४७, २६; १५८, ३१. ५४. ५५; १६९, २२. २७. ३०. ३१; १९२, ४; ८. ७, १२; ९, ८२; ११, १८; २६, २. ३. ५. ७. ११. २०; ५४. ५. १९. २२. २४. २६. ३०; ६१, १४; ९६, ३२; ९. २, १९; ५, १; ८, २६. ३२; ११, ४३; १५, ७; १७, ८६; २२, ३५; २९, ३६; ६४, ८; १०. ३, ३५; १०, ३; १५. १५, ८; २३. ६।

४. गौतम = शिव (१,००० नाम)।

१. गौतमी, गोतम के एकाधिक स्त्री वंशजों के लिये प्रयुक्त हुआ है। ब्रह्मा की सभा में इसकी उपस्थिति (२. ११, ४०)। 'महर्षीनिव गौतमी', (१२. ३८, ५)। गौतमी-लुब्धक-व्याल-मृत्यु-कालसंवाद (१३. १, १६-१८. २१. २६. २९. ३०. ३१. ३३. ७७. ७८. ८०)।

२. गौतमी = जटिला, जिसने सप्तर्षियों से विवाह किया (१. १९६, १४)।

३. गौतमी = कृपी : १. १३०, ४६. ४७; १३१, ५०।

४. गौतमी, एक नदी का नाम है (१३. १६५, २१)।

गौतमी-लुब्धक-व्याल-मृत्यु-कालसंवाद—"भीष्म ने कहा : पूर्वकाल में गौतमी नामक एक वृद्धा ब्राह्मणी के एकमात्र पुत्र की सर्पदंश से मृत्यु हो गई। इतने ही में अर्जुनक नामक एक व्याध उस सर्प को ताँत के फाँस में बाँधकर गौतमी के पास लाया। गौतमी ने सर्प को मुक्त कर देने के लिये कहा। उसने बताया कि होनहार को कोई रोक नहीं सकता अतः सर्प का वध कर देने से पुत्र जीवित नहीं होगा। ब्राह्मणों को क्रोध नहीं होता। शत्रु को बन्दी बना कर वध कर देने से भी कोई लाभ नहीं है। गौमती की बात सुन कर व्याध ने कहा : 'वृत्रासुर का वध करके इन्द्र श्रेष्ठ पद के भागी हुये और शिव ने दक्ष यज्ञ का विध्वंस करके उसमें अपने लिये भाग प्राप्त किया। अतः देवों के व्यवहार का अनुसरण करते हुये सर्प को शीघ्र मार डालना चाहिये।' व्याध की बात सुनकर सर्प ने कहा : 'मृत्यु ने मुझे विवश करके इस बालक को डँसने के लिये प्रेरित किया है।' सर्प के इस प्रकार अपने को निर्दोष बताने पर मृत्यु ने उपस्थित होकर सर्प से कहा : 'काल से ही प्रेरित होकर मैंने तुझे इस बालक को डँसने की प्रेरणा दी थी। अतः इसके विनाश में न तू कारण है और न मैं। समस्त स्थावर-जङ्गम पदार्थ काल के ही अधीन हैं। चन्द्रमा, सूर्य, जल, वायु, इन्द्र, अग्नि आदि सभी काल के द्वारा रचे जाते हैं और काल ही इनका संहार कर देता है।' तब काल ने उपस्थित होकर कहा : 'न तो मैं, न यह मृत्यु, और न यह सर्प ही इस जीव की मृत्यु के अपराधी हैं। इस बालक ने जो कर्म किया है वही इसकी मृत्यु में प्रेरक हुआ है।' गौमती ने काल की बात का समर्थन किया और कहा : 'मैंने भी वैसा कर्म किया था जिससे मेरा पुत्र मर गया। अतः काल और मृत्यु अपने-अपने स्थान को पधारें तथा, अर्जुनक ! तू इस सर्प को छोड़ दे।' (१३. १, १६-८०)।"

गौतमीनन्दन = कृपीपुत्र अश्वत्थामा (७. १५६, ११८)।

गौतमीसुत = अश्वत्थामा (७. १५६ १२८; १५९, ८९; १६०, १९)।

गौर, एक पर्वत का नाम है (६. १२, ४)।

गौरपृष्ठ, एक प्राचीन राजा का नाम है जो यम की सभा में उपस्थित रहते थे (२. ८, २१)।

गौरमुख, शमीक ऋषि के एक शिष्य का नाम है। इन्होंने गुरु की

आज्ञा से राजा परीक्षित को शृङ्गी ऋषी के शाप का समाचार सुनाया (१. ४२, १४. १६. १७. २७. २८; ५०, १३)।

गौरवाहन, एक राजा का नाम है जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में पधारे थे (२. ३४, १२)।

गौरशिरस्, एक मुनि का नाम है जो इन्द्र की सभा में उपस्थित रहते थे (२. ७, ११)। 'गौरशिरा मुनिः', (१२. ५८, ३)।

गौराश्व, एक प्राचीन राजा का नाम है जो यम की सभा में विराजते थे (२. ८, १८)।

१. गौरी = उमा : 'शिखरं वै महादेव्या गौर्यास्त्रैलोक्यविश्रुतम', (३. ८४, १५१)। 'मूर्तिमतीव गौरी', (४. ७१, १७)।

२. गौरी, उमादेवी की अनुगामिनी और सहचरी का नाम है (३. २३१, ४८)।

३. गौरी, वरुण की पत्नी का नाम है (५. ११७, ९)। 'वरुणः सह गौर्या', (१३. १६५, ११)।

४. गौरी, एक नदी का नाम है (६. ९, २५)।

५. गौरी = पृथिवी : १३. १४६, १० ('गौर्यां भूमौगच्छति अनादिपरंपरया चलति', नीलकण्ठी)।

गौरीश = शिव : १४. ८, ३० ।

गौरीहृदयवल्लभ = शिव : १०. ७, ८ ।

ग्रन्थिक, विराटनगर में अज्ञातवास के समय नकुल द्वारा गृहीत नाम है (४. ३, ४; १२, ८)।

१. ग्रह (बहुधा बहु० ह्याः)—'गहनक्षत्रताराणां', (१. १, ६६)। 'चन्द्रादित्यौ ग्रहास्तारा नक्षत्राणि', (१. २१०, २६)। 'ग्रहास्तोमाश्च', (२. ७, २३)। 'प्रपतन्दृश्यते ह स्म क्षीणपुण्य इव ग्रहः', (३. २१, २४)। 'ग्रहा न विपरीताः', (३. ६५, २४)। 'नक्षत्राणि ग्रहाः', (३. ९९, ५७)। 'चन्द्रमाः सह सूर्येण ...ग्रहैः सह', (३. १४२, ८)। 'ग्रहनक्षत्रसङ्घैश्च', (३. १८२, १२)। 'ग्रहा दीप्ता दिशः', (३. २२६, २)। 'ग्रहाः सोपग्रहाश्चैव', (३. २२७, १)। 'नक्षत्राणि ग्रहाः', (३. २३१, ४४)। 'ग्रहनक्षत्रवर्जिते', (३. २७२, ३६)। 'ग्रहनक्षत्रताराभिः', (३. २८२, २)। 'वृतौ......ग्रहैरिव', (३. २८३, १७)। 'ग्रहाणां दशमम्', (४. २, २१)। 'नक्षत्राणि ग्रहास्तथा', (४. ५२, १)। 'नाप्यत्तेलोको नक्षत्राणि ग्रहैरिव', (५. ३४, ५४)। 'ग्रहास्तारागणाः'. (५. ९७, ४)। 'नक्षत्रं ग्रहस्तीक्ष्णो महाद्युतिः', (५. १४३, ८)। 'ग्रहानष्टाविवोदितान्', (५. १८५, ३२)। 'ग्रहाः प्रज्वलिता', (५. १९६, ५)। 'चन्द्रादित्यौग्रहं तथा', (६. ११, ४)। 'सम्पेतुर्दिवि सप्त महाग्रहाः', (६. १७, २)। 'सूर्यो ग्रहैरिव .समावृतः', (६. ७३, २०)। 'ग्रहैर्द्यौरिव संवृताः', (६. ७५, २८)। 'ग्रहनक्षत्रशबला द्यौरिवासीद्वसुन्धरा', (६. ९६, ७७)। 'चन्द्रमायुक्तो दीप्तैरिव महाग्रहैः', (६. ९७, ३२)। 'दुद्रुवुः संख्ये ग्रहाः पञ्च रविं यथा', (६. १००, ३७)। 'सोमं ग्रहगणान्वितम्', (७. २३, ८४)। 'ग्रहनक्षत्रसोमानाम्', (७. ८०, ३७)। 'दिग्गजाश्चैव चत्वारः क्षितिश्च गगनं ग्रहाः', (७. ९४, ४७)। 'वसुधा तत्र द्यौर्ग्रहैरिव', (७. १२१, २४)। 'पीडयन्......प्रजासंहरणे राजन्सोमं सप्त ग्रहाइव', (७. १३७, २२)। 'द्यौरिवग्रहैः', (७. १३८, २५)। 'द्यौरिवोदितचन्द्रार्का ग्रहाकीर्णा युगक्षये', (७. १५६, १७२)। 'द्यौरिवादित्यचन्द्राद्यैर्ग्रहैः', (७. १६१, ९)। 'द्यौरिव ग्रहैः', (७. १६८, २७)। 'सर्वैर्ग्रहैर्गृहीतान्वै सर्वपापसमन्वितान्', (७. २०२, ११)। 'ग्रहाविव', (८. ६, २०; १७, २)। 'विकचो यथा ग्रह ', (८. १८, ५)। 'अर्कचन्द्रग्रहपावकत्विषं', (८. २०, ४४)। 'अनुकर्ष ग्रहा', (८. ३४, २६)। 'ग्रहनक्षत्रताराभिः', (८. ३४, ३१)। 'सप्त महाग्रहाः', (८. ३७, ४)। 'ग्रहैर्द्यौरमलप्रदीप्तैः', (८. ९४, १०)। 'ग्रहा व्याप्ता घनैरिव', (९. २५, २६)। 'ऋतवश्च ग्रहाश्चैव', (९. ४५, ११)। 'ग्रहनक्षत्रताराभिः', (१०. १, २५)। 'सार्केन्दुग्रहनक्षत्रां द्यां', (१०. ७, ४०)। 'ग्रहास्तन्वभ्रसंवृताः', (११. २६, ४१)। 'क्रूरग्रहाभिशमनमायुर्वर्धनमुत्तमम्', (१२. २९, १७)। 'वृतश्चन्द्र इव ग्रहैः', (१२. ४७, १३)। 'नक्षत्राणामिव ग्रहः', (१२. ८७, ११)। 'नक्षत्राण्युपितिष्ठन्त ग्रहा', (१२. ९०, ३७)। 'नक्षत्राणि ग्रहांस्तथा', (१२. १६६, १४)। १२. २८०, २३; २८४, ३९; १३. १४, ३७. ७५. ७९. ८०. ३२०. ३८४; १६, ५२; ८६, १६; १५८, ३३; १६०, ४२; १६२, ५१; १६५, ३४; १४. ४३, ६; ५१, ७; ८९, ३१; १६. २, १६; १८. ६, ८ ।

अलग-अलग ग्रहों के नाम :

* बुध —'सोमस्य पुत्रः', (८. ९४, ४९)।

* राहु : १. २४, ८; ६७, ४० (ग्रहं तु सुषुवे यं तु सिंहिकार्केन्दुमर्दनम्); १७७, २७ (ग्रस्त आसीद्ग्रहेणेव पर्वकाले दिवाकरः); ६. ३, १७ (परुषग्रहः); १२, ४० (स्वर्भानुः); १३. १७, ३८ (शिव के सहस्रनामों के साथ समीकृत); १३६, ११; १४. ३२, ६ (आगच्छद्भानुमन्तमिव ग्रहः)।

* शनैश्चर : ३. २८१, ६; ५. १४३, ८; ९. १६, १० ।

* शुक्र : १. ६६, ४२ (शुक्रः कविसुतो ग्रहः)।

* श्वेत : ५. ३७, ४३; ६. ३, १२. १६ ।

२. ग्रह (एक० और बहु०), व्याधियों के लिये प्रयुक्त हुआ है। 'स्कन्देन सोऽभ्यनुज्ञातो रौद्ररूपोऽभवद्ग्रहः', (३. २३०, २५)। 'स्कन्दापस्मारमित्याहुर्ग्रहं', (३. २३०, २६)। 'शकुनि ग्रहः', (३. २३०, २६)। 'पूतनाग्रहम्', (३. २३०, २७)। 'रेवतीं प्राहुर्ग्रहः', (३. २३०, २९)। ३. २३०, ३१ (महाग्रहाः). ३६ (अष्टादशान्ये वै ग्रहा). ४२ (कुमाराणां यथा प्रोक्ता महाग्रहाः). ४३ (मातृगणाः प्रोक्ताः पुरुषाश्चैव ये ग्रहाः). ४४ (स्कन्दग्रहा). ४६ (षोडशाद्वर्षाये भवन्ति ग्रहा). ५० (राक्षसो ग्रहः). ५१. ५२. ५७. ५८. ५९ (विभिन्न व्याधि-ग्रहों के नाम); २३१, ५० (राक्षसो ग्रहः); ११. ४, ६; १२. १५३, ३ ।

३. ग्रह = शिव (१,००० नाम)।

ग्रहगणेश्वर = सोम (चन्द्रमा) : १३. ६७, १२ ।

१. ग्रहपति = सोम (चन्द्रमा) : १२. ११८, १५; १६८, २५ ।

२. ग्रहपति = शिव (१,००० नाम)।

ग्राम = शिव (१,००० नाम)।

१. ग्रामणी = विष्णु (१,००० नाम)।

२. ग्रामणी = शिव के एक गण का नाम है (१३. १५०, २५)।

ग्रामणीय, ग्रामशासक क्षत्रियों के वंशजों का नाम है, जिन्हें दिग्विजय के समय नकुल ने विजित किया था (२. ३२, ९)।

घ

घट, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ६३)।

घटजानुक, एक प्राचीन ऋषि का नाम है जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित रहते थे (२. ४, १३)। हस्तिनापुर जाते समय मार्ग में श्रीकृष्ण ने इनसे भेंट की (५. ८३, ६४ के बाद गीप्रे-सं. में दाक्षिणात्य पाठ)।

घटसृञ्जय (बहु० ज्याः), दक्षिण की एक जाति का नाम है (६. ९, ६३)।

घटिन् = शिव (१,००० नाम)।

घटोत्कच, एक राक्षस का नाम है जो हिडिम्बा के गर्भ से भीमसेन द्वारा उत्पन्न हुये थे। 'देवराजेन दत्तां दिव्यां शक्तिं व्यंसितां माधवेन। घटोत्कचे राक्षसे घोररूपे', (१. १, १९९)। 'कर्णघटोत्कचाभ्यां युद्धे', (१. १, २००)। १. २, १०६. २६४; ६१, २५ (हिडिम्बा और भीमसेन के पुत्र); ६३, १२४; ९५, ८१; १५५, ३८ (घटो हास्योत्कच इति माता तं प्रत्यभाषत। अब्रवीत्तेन नामास्य घटोत्कच इति स्म ह). ३९. ४१; ३. १२, ११० (हिडिम्बामग्रतः कृत्वा यस्मां जातो घटोत्कचः); १४४, २४. २५; १४५, ३. ६. ८; १५५, १७; १५७, ७; १६०, २०; १७६, २१ (अपने अनुचरों सहित इन्होंने पाण्डवों तथा ब्राह्मणों को वहन किया); १७७, २५;

५. १४१, ४३; १६२, १४; ६. ४५, ४२; ५७, ३३. ३७; ५८, १४ (दुर्योधन के साथ युद्ध किया); ६४, ५४. ५९ (भगदत्त के साथ युद्ध में माया की रचना की). ७८. ८०. ८३; ७२, ९; ७५, ७; ८३, ३२ (भगदत्त के साथ युद्ध किया); ८७, २१; ९१, २. ९ (दुर्योधन के साथ युद्ध किया); ९२, १०. १६ (वंगादि राजाओं से युद्ध किया); ९३, १६. १९; ९४, ६. ३७. ४१. ४७. ४९; ९५, २. ६. २३. ५८. ८०; ९९, ११; १०१, ३; १०९, २१; १११, ३७ (दुर्मुख के साथ युद्ध किया); ११८, ४०; ११९, २१; ७. ८, ४; १०, ७३; २३, ७५ (इन्होंने द्रोण के विरुद्ध युद्ध के लिये प्रस्थान किया : इनके अश्वों का वर्णन). ९० (इनके ध्वज पर गृध्र बना था). ९३ (इनके धनुष का नाम पौलस्त्य था); २५, ६० (अलम्बुष से युद्ध किया); ३५, ३; ९५, ४६ (अलायुध ने इन पर आक्रमण किया); ९६, २७ (अलायुध से युद्ध किया); १०९, ३ (अलम्बुष के साथ युद्ध). ४. ८. २४. ३१ (अलम्बुष का वध किया). ३६; १११, ४५; ११४, ६३; १५३, २५; १५४, १२; १५६, ६६. ६८. ७२. ७३. ७६. ७९. ९२. १०१. १०४. १११. १२८. १३०. १३७. १३८. १५३. १८५ (अश्वत्थामा ने इनके पुत्र का वध तथा इन्हें भी पराजित किया); १५८, ४३; १६६, १५. १८. २१. ३०. ३६. ४० (अश्वत्थामा ने इन्हें पराजित किया); १७३, ३६. ३९. ४१. ४५. ५४. ५९. ६०. ६३ (श्रीकृष्ण ने इन्हें कर्ण से युद्ध करने के लिये भेजा); १७४, १. १०. १२. १४. १७. १९. २२. २३. २६–२८. ३२. ३४. ३६; १७५, १. ३३. ३४. ३७. ४२. ४५. ४८. ५०. ५५. ७०. ७२. ७८. ८०. ८२. ८३. ९१; १७६, १४. १८. १९; १७७, १२. १३. १७. १९; १७८, १. ४. १२. २०; १७९, १. १२. १८. ३१. ३९ (इन्होंने कर्ण से युद्ध किया जिसमें कर्ण ने इन्द्र से प्राप्त दिव्यास्त्र से, जिससे वह अर्जुन का वध करना चाहता था, इनका वध कर दिया); १८०, ७. १२. १४. २१. ३३; १८१, २५; १८२, ६. ७. ९. १०. १२. ४२; १८३, १०. १८. १९. ३३; १८४, २; ८. ३, १३; ५, ४६; ९, ४९; ३५, १५; ५०, १६; ९. २, २३; ६१, ३४; ११. २६, ३७; १५. ३२, ८; १८. ५, ३. २७ (मृत्यु के पश्चात् इन्होंने यक्षों का लोक प्राप्त किया)।

तुकी० घटोत्कच के निम्न पर्याय :—

* **भीमसुत, भीमसूनु, भीमसेनसुत, भीमसेनात्मज, भैमसेनि, भैमि**—देखिये वस्था० ।

* **रक्षस्, रक्षाधिप, राक्षस, राक्षसपुङ्गव, राक्षसेन्द्र, राक्षसेश्वर**—देखिये वस्था० ।

* **हैडिम्ब** (हिडिम्बा का पुत्र) : ३. १४४, २४;१४५, ४; १५५, २१; ६. ५८, १५; ६४, ६४. ७४; ८१, २९; ८३, २५. २७. ४०; ८९, २०; ९१, ३०; ९२, १९; ९३, ११. १५; ९४, ५०; ९५ १७. १११. ३८; ७. १४, ४६; १०९, ५. १७. २१. २४; १६६, ३९; १८१, २४; १८२, ८; १८३, १२. २२. ३९ ।

* **हैडिम्बि** (हिडिम्बा का पुत्र) : ७. १०९, १. २७; १५६, ९४. १६९. १७९; १७३, ४४. ४७. ५३. ६६; १७४, १३. २५; १७५, ११४; १७६, ९; १७७, ४८; १७८, १९. ३१ ।

घटोत्कचवध—घटोत्कच के वध का वर्णन, अर्थात् घटोत्कचवधपर्वन् (१. २, ६९)।

घटोत्कचवधपर्वन्, महाभारत के ७६ वें अवान्तरपर्व का नाम है जो द्रोणपर्व के अन्तर्गत आता है : "युद्ध के चौदहवें दिन रात्रिकालिक युद्ध : कौरवों और पाञ्चालों के बीच भीषण संग्राम छिड़ गया । उस समय दुर्योधन ने पाण्डव-सेना के बीच प्रवेश कर भयंकर नरसंहार किया । भीमसेन आदि तथा दुर्योधन आदि का युद्ध हुआ । युधिष्ठिर ने एक भयंकर बाण मार कर दुर्योधन को मूर्च्छित कर दिया । उस समय दुर्योधन की रक्षा करने के लिये द्रोणाचार्य उसके पास आ गये । पाण्डवों तथा द्रोणाचार्य का युद्ध छिड़ गया (७. १५३)।" "रात्रियुद्ध में पाण्डव-सैनिकों ने द्रोणाचार्य पर आक्रमण किया और द्रोणाचार्य ने भी पाण्डवों का संहार किया—उस भयंकर रात्रि का वर्णन (७. १५४)।" "धृतराष्ट्र ने संजय से युद्ध के सम्बन्ध में पूछा । संजय ने वर्णन किया : द्रोणाचार्य ने कैकेयों तथा धृष्टद्युम्न के पुत्रों और शिबि का वध किया । जब शिबि ने द्रोणाचार्य के सारथि को मार दिया तो दुर्योधन ने उनके लिये दूसरा सारथि भेजा । कलिङ्गराजकुमार ने भीम तथा उनके सारथि, विशोक, पर आक्रमण किया परन्तु भीमसेन ने केवल घूँसों की मार से ही कलिङ्गराजकुमार को मार डाला । तदनन्तर कर्ण तथा कलिङ्गराजकुमार के भ्राता, ध्रुव, ने मिलकर भीमसेन पर आक्रमण किया परन्तु भीम ने पुनः घूँसों की मार से ध्रुव का वध कर दिया । फिर उन्होंने जयरात को भी थप्पड़ों से मार डाला । शकुनि ने आकर कर्ण को बचाया । तदनन्तर भीम और धृतराष्ट्र के पुत्रों में युद्ध होने लगा । जब भीमसेन ने दुर्मद के सारथि और घोड़ों को बाणों से मार डाला तब दुर्मद दुष्कर्ण के रथ पर जा बैठा । उस समय कर्ण, अश्वत्थामा, दुर्योधन, कृपाचार्य, सोमदत्त और बाह्लीक आदि के देखते-देखते ही भीमसेन ने दुर्मद और दुष्कर्ण के रथ को लात मारकर धरती में धँसा दिया और उन दोनों को भी घूँसों से मार डाला । भीमसेन के पराक्रम को देखकर कौरव सेना के सब राजा रणभूमि से पलायन करने लगे । कौरव सैनिकों के भाग जाने पर, रात्रि के प्रथम प्रहर में, भीमसेन युधिष्ठिर के पास आये । इसी समय समस्त धार्तराष्ट्र विशाल सेना तथा द्रोणाचार्य को लेकर उपस्थित हुये और भीमसेन से युद्ध करने लगे (७. १५५)।" "सोमदत्त ने, प्राय के लिये बैठे भूरिश्रवा का वध कर देने पर, सात्यकि की भर्त्सना की । सात्यकि ने भी सोमदत्त का क्रोधपूर्वक उत्तर दिया । सोमदत्त और सात्यकि का युद्ध होने लगा जिसमें दुर्योधन सोमदत्त की रक्षा कर रहा था । शकुनि भी सोमदत्त की ओर से युद्ध करने के लिये आ गये । सात्यकि को इस प्रकार कौरवों से घिरा देखकर उनकी रक्षा तथा सहायता के लिये धृष्टद्युम्न वहाँ आ गये । सात्यकि के बाणों से आहत होकर सोमदत्त मूर्च्छित हो गया और उसका सारथि उसे रणभूमि से दूर हटा ले गया । द्रोणाचार्य और सात्यकि+युधिष्ठिर इत्यादि का युद्ध हुआ । द्रोणाचार्य ने भीषण नरसंहार आरम्भ किया जिससे पाण्डव सैनिक इधर-उधर भागने लगे । अर्जुन+भीम+विशोक+पाञ्चालों इत्यादि का द्रोणाचार्य+अश्वत्थामा के साथ युद्ध हुआ । अश्वत्थामा के साथ घटोत्कच—इसके रथ का वर्णन—तथा राक्षसों ने युद्ध करना आरम्भ किया—राक्षसों के युद्ध का वर्णन । घटोत्कच के मायावी युद्ध से त्रस्त होकर धार्तराष्ट्र तथा कर्ण आदि तो भाग गये, परन्तु अश्वत्थामा डटे रहे और उन्होंने शीघ्र ही उस माया को विसर्जित कर दिया । अश्वत्थामा ने घटोत्कच तथा उसके पुत्र, अञ्जनपर्वन्, से युद्ध करते हुये अञ्जनपर्वन् का वध कर दिया । घटोत्कच ने पुनः माया उत्पन्न की । अश्वत्थामा ने वज्रास्त्र और फिर वायव्यास्त्र का संधान किया । उस समय घटोत्कच की ओर से पौलस्त्य और यातुधान युद्ध कर रहे थे । इस भीषण संग्राम को देखकर दुर्योधन विषादग्रस्त हो गया परन्तु अश्वत्थामा ने उसे आश्वस्त किया । तदनन्तर अश्वत्थामा ने अर्जुन के विरुद्ध युद्ध करने के लिये शकुनि तथा कर्ण आदि को भेजा और स्वयं भीम इत्यादि का वध करने की प्रतिज्ञा की । शकुनि शीघ्र ही एक विशाल सेना लेकर अर्जुन की ओर बढ़ा । अश्वत्थामा तथा घटोत्कच का भयंकर युद्ध होने लगा जिसमें अश्वत्थामा ने एक अक्षौहिणी राक्षस-सेना का वध करने के बाद घटोत्कच के रथ को भी छिन्न-भिन्न कर दिया । घटोत्कच दौड़कर धृष्टद्युम्न के रथ पर बैठ गया । भीम+घटोत्कच+धृष्टद्युम्न इत्यादि ने मिलकर अश्वत्थामा से युद्ध किया जिसमें अश्वत्थामा ने राक्षसों का संहार करते हुये रक्त की नदी बहा दी और फिर द्रुपदकुमार सुरथ तथा सुरथ के छोटे भ्राता, शत्रुञ्जय, इत्यादि का भी वध कर दिया । तदनन्तर अश्वत्थामा ने एक भयंकर बाण मार कर घटोत्कच को मूर्च्छित कर दिया जिससे धृष्टद्युम्न घटोत्कच को रणभूमि से दूर हटा ले गये । अश्वत्थामा के इस महान् पराक्रम को देखकर युधिष्ठिर के सैनिक पराङ्मुख हो गये और वहाँ सिद्ध, गन्धर्व, पिशाच, नाग, सुपर्ण, पितर, पक्षी, राक्षस, भूत, अप्सरायें तथा देवता, सभी द्रोणपुत्र अश्वत्थामा की प्रशंसा करने लगे (७. १५६)।" "अश्वत्थामा के द्वारा द्रुपद तथा कुन्तिभोज के पुत्रों और सहस्रों राक्षसों को मारा गया देख कर युधिष्ठिर, भीमसेन, धृष्टद्युम्न तथा

युयुधान ने भी सावधान होकर युद्ध में ही मन लगाया। युयुधान + भीम ने सोमदत्त से युद्ध करते हुये उसे मूर्च्छित कर दिया और तदनन्तर प्रतीप के पुत्र बाह्लीक तथा धृतराष्ट्र के दस पुत्रों का भी वध कर दिया। नागदत्त से युद्ध करते हुये भीम ने उसका भी वध किया। कर्ण के भ्राता, वृकरथ, के साथ युद्ध करते हुये उसका वध करने के पश्चात् भीम ने शकुनि के पाँच भ्राताओं और सात रथियों का भी संहार कर दिया। युधिष्ठिर और द्रोणाचार्य का युद्ध हुआ जिसमें युधिष्ठिर ने अम्बष्ठों, मालवों, त्रिगर्तों तथा शिबिदेशीय सैनिकों का संहार किया। द्रोणाचार्य ने वायव्यास्त्र से युधिष्ठिर पर प्रहार किया परन्तु युधिष्ठिर ने भी अपने दिव्यास्त्र से उसको नष्ट कर दिया। तदनन्तर द्रोणाचार्य ने क्रमशः वारुण, याम्य, आग्नेय, त्वाष्ट्र और सावित्र नामक दिव्यास्त्रों का युधिष्ठिर के विरुद्ध प्रयोग किया परन्तु युधिष्ठिर ने इन सब अस्त्रों को दिव्यास्त्रों द्वारा नष्ट कर दिया। तब द्रोणाचार्य ने युधिष्ठिर पर ऐन्द्र और प्राजापत्य नामक अस्त्रों का प्रयोग किया जिस पर युधिष्ठिर ने भी माहेन्द्र अस्त्र प्रगट करके इन दिव्यास्त्रों को नष्ट किया। इसके पश्चात्, युधिष्ठिर और द्रोण, दोनों ने एक दूसरे पर ब्रह्मास्त्र चलाया। द्रोणाचार्य के प्रहारों से त्रस्त होकर पाञ्चाल सैनिक पलायन करने लगे परन्तु अर्जुन और भीम ने उन्हें आश्वस्त किया जिससे वे लौट पड़े। तदनन्तर अर्जुन ने द्रोणाचार्य के दाहिने पार्श्व में और भीमसेन ने बायें पार्श्व में महान् बाण-समूहों की वर्षा आरम्भ की। उस समय केकय, सृञ्जय, पाञ्चाल, मत्स्य तथा यादव सैनिकों ने भी अर्जुन और भीम का अनुसरण करते हुये द्रोणाचार्य पर आक्रमण किया। इस प्रकार त्रस्त कौरव-सेना अन्धकार और निद्रा से पीड़ित हो तितर-बितर हो गई। द्रोणाचार्य और दुर्योधन के रोकने पर भी उनकी सेना उस समय रोकी नहीं जा सकी (७. १५७)।" "दुर्योधन ने कर्ण को उत्साहित करते हुये उससे पाण्डवों को पराजित करने के लिये कहा। कर्ण ने अर्जुन आदि का वध करने की प्रतिज्ञा की जिस पर कृपाचार्य ने उसका उपहास करते हुये कहा कि वह अर्जुन का कभी भी वध नहीं कर सकेगा। इस पर क्रुद्ध होकर कर्ण ने पुनः गर्वोक्ति की परन्तु कृपाचार्य ने पाण्डव पक्ष के वीरों के पराक्रम का उल्लेख करते हुये कर्ण का प्रतिवाद और उपहास किया। कृपाचार्य की बातें सुन कर कर्ण ने उनसे कहा : 'यदि तुम पुनः यहाँ इस प्रकार मुझे अप्रिय लगनेवाली बात बोलोगे तो मैं अपनी तलवार से तुम्हारी जिह्वा काट लूँगा।""""दुर्योधन, द्रोण, शकुनि, दुर्मुख, जय, दुःशासन, वृषसेन, शल्य, स्वयं तुम, सोमदत्त, भूरि, अश्वत्थामा और विविंशति आदि युद्धकुशल वीर जहाँ खड़े होंगे वहाँ कौन उनके सामने टिक सकेगा। यदि भीष्म आज बाणों से विद्ध होकर रणभूमि में पड़े हैं तो यह विधि का ही विधान है। इसमें दैव संयोग के अतिरिक्त और कोई कारण नहीं। मैं दुर्योधन के हित के लिये यथाशक्ति युद्ध करूँगा। विजय तो दैव के अधीन है।' (७. १५८)।" "क्रुद्ध होकर अश्वत्थामा कर्ण को मारने के लिये उद्यत हुये। दुर्योधन और कृपाचार्य ने कर्ण और अश्वत्थामा को शान्त किया। पाण्डवों + पाञ्चालों ने कर्ण पर आक्रमण किया परन्तु कर्ण ने अपने पराक्रम से उन सब को पराजित कर दिया। उस समय अर्जुन कौरव सेना की ओर बढ़े और इधर अश्वत्थामा, कृपाचार्य, शल्य तथा कृतवर्मा, कर्ण की रक्षा करने लगे। भीषण बाणयुद्ध में अर्जुन ने कर्ण के धनुष को बीच से काट कर उसके घोड़ों और सारथि का भी वध कर दिया। उस समय कर्ण कृपाचार्य के रथ पर चढ़ गया। अर्जुन के आक्रमण से कौरव-सेना भागने लगी परन्तु उसे रोक कर दुर्योधन ने अर्जुन पर आक्रमण किया। कृपाचार्य ने दुर्योधन की सहायता के लिये अश्वत्थामा को भेजा। अश्वत्थमा ने शीघ्र ही दुर्योधन के पास आकर उसे अर्जुन से युद्ध करने से विरत करते हुये स्वयं अर्जुन से युद्ध करने का प्रस्ताव किया। दुर्योधन ने तब अश्वत्थामा से पाञ्चालों और सोमकों आदि का वध करने के लिये कहा (७. १५९) " "अश्वत्थामा ने कहा : 'मैं, कर्ण, शल्य, कृप और कृतवर्मा निमेषमात्र में ही पाण्डव-सेना का संहार कर सकते हैं।' इस प्रकार कहकर उन्होंने पाण्डवों और पाञ्चालों इत्यादि से युद्ध करने का आश्वासन दिया। तदनन्तर उन्होंने प्रबल पराक्रम दिखाकर समस्त पाञ्चाल सेना को पराजित करके धृष्टद्युम्न से घोर युद्ध प्रारम्भ किया। उस घोर युद्ध को देखकर सिद्ध, चारण तथा वायुचारी गरुड़ आदि ने उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की। अश्वत्थामा ने धृष्टद्युम्न के धनुष, रथ, सारथि और अश्वों को नष्ट कर दिया। अश्वत्थामा के इस पराक्रम से त्रस्त होकर समस्त पांचाल और सृञ्जय-सैनिक या तो नष्ट हो गये अथवा युद्ध-भूमि से भाग गये (७. १६०)।" "युधिष्ठिर, भीम तथा अर्जुन आदि ने अश्वत्थामा + दुर्योधन के साथ घोर युद्ध किया जिसमें युधिष्ठिर ने अम्बष्ठों इत्यादि का, भीम ने अभीषाहों आदि का, और अर्जुन ने यौधेयों आदि का वध किया। द्रोणाचार्य ने वायव्यास्त्र का प्रयोग किया। जब पांचाल सैनिक रण-भूमि से भागने लगे तो उन्हें प्रोत्साहित करके भीम और अर्जुन ने दोनों ओर से द्रोणाचार्य पर आक्रमण किया। उस समय समस्त कौरव-सेना भागने लगी और दुर्योधन तथा द्रोणाचार्य के रोकने पर भी रुकी नहीं (७. १६१)।" "सात्यकि + भीमसेन ने बाह्लीक के पुत्र, सोमदत्त, के साथ युद्ध किया जिसमें सात्यकि ने सोमदत्त का वध कर दिया। युधिष्ठिर + पाण्डव + प्रभद्रकों ने द्रोणाचार्य के साथ युद्ध किया। द्रोण और युधिष्ठिर ने एक दूसरे पर वायव्यास्त्र का प्रयोग किया। श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर को द्रोणाचार्य से दूर रहने का आदेश दिया। तदनन्तर, जब युधिष्ठिर श्रीकृष्ण के कहने के अनुसार वहाँ से हट गये तब श्रीकृष्ण के साथ अर्जुन और भीम द्रोणाचार्य से युद्ध करने लगे (७. १६२)।" "जिस समय कौरवों और पाण्डवों का यह भयंकर युद्ध चल रहा था उस समय सम्पूर्ण जगत् अन्धकार और धूल से आच्छादित था। एक ओर द्रोण, कर्ण और कृपाचार्य थे और दूसरी ओर भीमसेन धृष्टद्युम्न और सात्यकि। दोनों ही पक्ष की सेनायें उस समय एक दूसरे के प्रहारों से त्रस्त और खिन्न हो गईं। जितनी सेनायें मृत्यु से बच गई थीं उन सबको एकत्र करके दुर्योधन ने पुनः व्यूह का निर्माण करवाया। उस व्यूह के अग्रभाग में द्रोणाचार्य, मध्य में शल्य, तथा पार्श्व-भाग में अश्वत्थामा और शकुनि थे। स्वयं दुर्योधन रात्रि के समय अपनी सेना की रक्षा करते हुए आगे बढ़े। दुर्योधन की आज्ञा से उनकी समस्त सेना ने हाथों में जलती हुई मशालें ले लीं। उस समय आकाश में स्थित देवता, ऋषि, गन्धर्व, देवर्षि, विद्याधर, अप्सराओं के समूह, नाग-यक्ष-सर्प और किन्नर आदि ने भी हाथों में प्रदीप ले लिए। दिशाओं की अधिष्ठात्री देवियों की ओर से भी सुगन्धित तेलों से भरे हुए दीप वहाँ उतरते दिखाई दिये। नारद और पर्वत नामक मुनियों ने कौरवों और पाण्डवों की सुविधा के लिए वे दीप जलाये थे—रात्रिकालीन उस सेना का विस्तृत वर्णन। उन दोनों सेनाओं द्वारा धारण किया हुआ प्रकाश पृथ्वी, आकाश तथा सम्पूर्ण दिशाओं को लाँघकर स्वर्गलोक तक फैल गया जिससे उद्योषित होकर देवता, गन्धर्व, यक्ष, असुर और सिद्धों के समुदाय तथा सम्पूर्ण अप्सरायें भी युद्ध देखने के लिए वहाँ उपस्थित हुईं। उस समय दोनों सेनाओं में भीषण-युद्ध होने लगा (७. १६३)।" "जब दोनों सेनाओं के बीच घमासान युद्ध आरम्भ हुआ तब दुर्योधन ने अपने भ्राता, विकर्ण, इत्यादि को द्रोणाचार्य की रक्षा करने का आदेश दिया। दुर्योधन ने कृतवर्मा को द्रोणाचार्य के दाहिने पहिये की और शल्य को बायें पहिये की रक्षा करने का आदेश दिया। त्रिगर्तों को उसने द्रोणाचार्य के आगे-आगे चलने के लिए कहा। दुर्योधन ने धृष्टद्युम्न से द्रोणाचार्य की विशेष रूप से रक्षा करने के लिए कहा। दुर्योधन ने यह आशा प्रकट की कर्ण अर्जुन का वध कर डालेगा तथा वह स्वयं भीमसेन और अन्य पाण्डवों को पराजित कर देगा। उस समय अर्जुन और कौरवों के बीच, अश्वत्थामा और पांचाल राज के बीच, तथा द्रोण और संजयों के बीच युद्ध होने लगा (७. १६४)।" "युधिष्ठिर ने अपने समस्त योद्धाओं को द्रोणाचार्य पर आक्रमण करने का आदेश दिया। पांचालों और सुमुखों ने द्रोण पर आक्रमण किया। द्रोणाचार्य की ओर बढ़ रहे युधिष्ठिर से कृतवर्मा युद्ध करने लगे। युयुधान ने भूरि के साथ युद्ध किया। द्रोणाचार्य की ओर बढ़ते हुए सहदेव से कर्ण ने युद्ध किया। उस समय दुर्योधन का भीम से, शकुनि का नकुल से, कृप का शिखण्डी से, दुःशासन का प्रतिविन्ध्य से, अश्वत्थामा का घटोत्कच

से, वृषसेन का द्रुपद से, शल्य का विराट से, चित्रसेन का नकुल कुमार शतानीक से, अलम्बुष का अर्जुन से, द्रोण का धृष्टद्युम्न से युद्ध आरम्भ हुआ। उस समय कृतवर्मा से पराजित होकर युधिष्ठिर पीछे हट गये, और कृतवर्मा पुनः द्रोणाचार्य के रथ-चक्र की रक्षा करने लगे (७. १६५)।" "भूरि का सात्यकि से युद्ध हुआ जिसमें सात्यकि ने भूरि का वध कर दिया। अश्वत्थामा और सात्यकि ने भी एक दूसरे से युद्ध किया और उसके पश्चात घटोत्कच ने अश्वत्थामा पर आक्रमण करके उन्हें मूर्च्छित कर दिया। चेतना लौटने पर अश्वत्थामा ने भी घटोत्कच को मूर्च्छित कर दिया जिससे उसका सारथि उसे युद्ध-भूमि से दूर हटा ले गया। भीम ने दुर्योधन के सारथि, अश्वों तथा रथ का मर्दन कर दिया। उस समय भयभीत दुर्योधन भागकर नन्दक के रथ पर जा बैठा। समस्त कौरव-सैनिकों तथा युधिष्ठिर ने भी दुर्योधन को मारा गया मान लिया। युधिष्ठिर शीघ्रता से भीमसेन के पास आ गये और पांचाल, मत्स्य, केकय तथा सृंजय, द्रोणाचार्य पर टूट पड़े (७. १६६)।" "कर्ण और सहदेव का युद्ध हुआ जिसमें कर्ण ने सहदेव को पराजित कर दिया। जब सहदेव युद्ध-भूमि से भागने लगे तो कर्ण ने उनका पीछा करके अपनी धनुष से उन्हें पीड़ा दी परन्तु कुन्ती को दिये हुए अपने वचन का स्मरण करके उनका वध नहीं किया। उस समय खिन्न होकर सहदेव पांचाल राजकुमार जनमेजय के रथ पर आरूढ़ हो गये। विराट और शल्य का भी युद्ध हुआ जिसमें शल्य ने विराट को रथ-विहीन करके उनके भ्राता शतानीक का भी वध कर दिया। विराट ने शतानीक के रथ पर बैठकर पुनः आक्रमण किया परन्तु शल्य ने उन्हें मूर्च्छित कर दिया जिसपर उनका सारथि उन्हें युद्ध-भूमि से बाहर ले गया। उस समय शल्य के प्रहारों से पीड़ित होकर विराट की सेना भी भाग खड़ी हुई। सेना को भागता देखकर अर्जुन और श्रीकृष्ण शल्य की ओर बढ़े। उस समय राक्षसराज अलम्बुष आठ पहियोंवाले रथ पर अर्जुन और कृष्ण की ओर बढ़ा। अलम्बुष के रथ में घोड़ों के समान मुखवाले भयंकर पिशाच जुते हुए थे—अलम्बुष के रथ आदि का वर्णन। अर्जुन ने अलम्बुष को पराजित कर दिया जिससे वह युद्ध-भूमि से भाग गया। तदनन्तर भीषण नरसंहार करते हुये अर्जुन शीघ्रतापूर्वक द्रोणाचार्य की ओर बढ़े। अर्जुन के प्रहार से त्रस्त होकर समस्त कौरव-सेना भाग चली (७. १६७)।" "धार्तराष्ट्र चित्रसेन ने नकुल-पुत्र शतानीक से युद्ध किया परन्तु पराजित हुआ। शतानीक भागकर कृतवर्मा के रथ पर बैठ गया। वृषसेन से युद्ध करते हुए द्रुपद मूर्च्छित हो गये और उनका सारथि उन्हें रण-भूमि से दूर हटा ले गया। पांचालों और सोमकों का संहार करते हुए वृषसेन युधिष्ठिर की ओर बढ़ा। धार्तराष्ट्र दुःशासन ने प्रतिविन्ध्य से घोर युद्ध किया (७. १६८)।" "नकुल और शकुनि का युद्ध हुआ जिसमें पराजित शकुनि को उनका सारथि दूर हटा ले गया। तदनन्तर नकुल द्रोणाचार्य की ओर बढ़े। शिखण्डी और कृप का युद्ध हुआ जिसमें शिखण्डी को उनका सारथि दूर हटा ले गया। पांचालों और सोमकों ने शिखण्डी की रक्षा करना आरम्भ की जब कि धार्तराष्ट्र द्रोणाचार्य के चारों ओर खड़े हो गये। दोनों पक्ष में घोर युद्ध आरम्भ हुआ (७. १६९)।" "धृष्टद्युम्न (+पाण्डव तथा पाञ्चाल) और द्रोण का युद्ध हुआ। जब धृष्टद्युम्न ने द्रोणाचार्य पर एक भयंकर बाण छोड़ा तब उसे देखकर देवता, गन्धर्व तथा मनुष्य, सभी द्रोणाचार्य के कल्याण की कामना करने लगे। उस समय कर्ण ने उस बाण को काट दिया। द्रुमसेन के साथ युद्ध करते हुये धृष्टद्युम्न ने उसका वध कर दिया। तदनन्तर छः श्रेष्ठ महारथियों ने धृष्टद्युम्न से युद्ध करना आरम्भ किया। धृष्टद्युम्न की रक्षा करने के लिये सात्यकि ने कर्ण पर आक्रमण किया। धार्तराष्ट्र+कर्ण+कर्णपुत्र वृषसेन, तथा धृष्टद्युम्न+सात्यकि का युद्ध हुआ। इसी समय वहाँ गाण्डीव धनुष की गम्भीर टङ्कार-ध्वनि बड़े ज़ोर से सुनायी देने लगी। अर्जुन के रथ का गम्भीर घोष और गाण्डीव धनुष की टंकार सुनकर कर्ण ने दुर्योधन से धृष्टद्युम्न तथा सात्यकि को घेर कर वध कर देने के सम्बन्ध में परामर्श किया। दुर्योधन ने एक विशाल सेना के साथ शकुनि और दुःशासन को अर्जुन का वध करने के अभिप्राय से भेजा। एक भयंकर संग्राम छिड़ गया जिसमें शकुनि इत्यादि ने सात्यकि से, और द्रोण ने धृष्टद्युम्न+पाञ्चालों से युद्ध किया (७. १७०)।" "कौरव सेना के अनेक वीरों ने सात्यकि को घेर लिया। दुर्योधन और युयुधान का युद्ध हुआ जिसमें दुर्योधन भाग गया। अर्जुन ने शकुनि तथा उसके पुत्र उलूक से युद्ध करते हुये शकुनि को रथविहीन कर दिया जिससे वह उलूक के रथ पर बैठ गया। अर्जुन ने कौरव-सेना का भीषण संहार किया। तदनन्तर श्रीकृष्ण और अर्जुन ने अपने-अपने शङ्ख बजाये। द्रोणाचार्य से युद्ध करते हुये धृष्टद्युम्न ने उनके रथ को अवरुद्ध और उनकी सेना का भयंकर संहार किया। धृष्टद्युम्न आदि ने तब विजय सूचक अपने-अपने शङ्ख बजाये (७. १७१)" "दुर्योधन के उपालम्भ करने पर द्रोणाचार्य और कर्ण ने घोर युद्ध आरम्भ किया। इन लोगों के प्रहार से पाण्डव-सेना भयभीत होकर पलायन करने लगी। उस समय भीमसेन के देखते-देखते ही पाण्डव योद्धा अपनी मशालों आदि को फेंककर भागने लगे और द्रोणाचार्य ने उन सब का पीछा किया। अर्जुन, भीमसेन तथा श्रीकृष्ण ने अपनी सेना को लौटाया। तदनन्तर कौरवों (विशेषतः द्रोणाचार्य और कर्ण) तथा पाण्डवों (विशेषतः युधिष्ठिर) में घोर संग्राम होने लगा (७. १७२)।" "धृष्टद्युम्न से युद्ध करते हुये कर्ण ने उन्हें रथविहीन कर दिया। उस समय अर्जुन के रथ पर बैठ कर धृष्टद्युम्न ने पुनः कर्ण से युद्ध करने की इच्छा प्रगट की परन्तु युधिष्ठिर ने उन्हें रोक दिया। कर्ण ने पाञ्चालों को पराजित किया जिन्होंने सोमकों के साथ पुनः कर्ण पर आक्रमण किया। इसी बीच कर्ण के सारथि ने सिन्धुदेशीय दूसरे श्वेत घोड़ों को रथ में जोत लिया। इस प्रकार पुनः सन्नद्ध होकर कर्ण ने पाञ्चालों पर भयंकर आक्रमण किया जिससे सृञ्जयों आदि सहित समस्त पाञ्चाल योद्धा भाग खड़े हुये। युधिष्ठिर, कृष्ण और अर्जुन ने कर्ण के पराक्रम का सामना करने के सम्बन्ध में आपस में परामर्श किया। अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कर्ण की ओर चलने का निवेदन किया। श्रीकृष्ण ने कहा कि केवल अर्जुन और घटोत्कच के अतिरिक्त अन्य कोई कर्ण का सामना नहीं कर सकता। परन्तु अर्जुन को उस समय तक कर्ण का सामना न करने का उन्होंने परामर्श दिया जब तक इन्द्र द्वारा प्राप्त शक्ति कर्ण के पास सुरक्षित है। अतः उन्होंने घटोत्कच को ही पहले कर्ण से युद्ध करने के लिये भेजने को कहा क्योंकि घटोत्कच के पास भी राक्षसों और असुरों के अनेक दिव्यास्त्र थे। तदनन्तर सबने मिलकर घटोत्कच को कर्ण से युद्ध करने के लिये तैयार किया। अर्जुन ने घटोत्कच से कहा 'तुम, महाबाहु सात्यकि, तथा भीमसेन ही सम्पूर्ण सेनाओं में तीन श्रेष्ठ वीर हैं। अतः तुम इस निशीथकाल में कर्ण के साथ द्वैरथ युद्ध करो जिसमें सात्यकि तुम्हारे पृष्ठरक्षक होंगे।' इस प्रकार सबके निवेदन और प्रोत्साहन से उत्साहित हो घटोत्कच ने कर्ण से युद्ध आरम्भ किया (७. १७३)।" "दुर्योधन ने घटोत्कच के विरुद्ध युद्ध कर रहे कर्ण की सहायता करने के लिये दुःशासन से कहा। इसी समय जटासुर के पुत्र, एक श्रेष्ठ राक्षस, ने दुर्योधन के पास आकर कहा : 'मैं पाण्डवों का वध करना चाहता हूँ क्योंकि मेरे पिता, जटासुर, का पाण्डवों ने वध किया था। मैं अपने पिता के उस वध का प्रतिशोध लेना चाहता हूँ।' दुर्योधन ने इस राक्षस से घटोत्कच का वध करने के लिये कहा। इस राक्षस का नाम अलम्बुष था। अलम्बुष और घटोत्कच का युद्ध आरम्भ हुआ जिसमें दोनों ही राक्षसों ने अपनी-अपनी माया का आश्रय लिया। घटोत्कच ने अलम्बुष का वध करके उसके मस्तक को दुर्योधन के रथ पर फेंक दिया और कहा : 'यह है तेरा सहायक बन्धु जिसे मैंने मार डाला। अब तू कर्ण की तथा अपनी भी ऐसी ही अवस्था देखेगा।' इस प्रकार कह कर घटोत्कच कर्ण से युद्ध करने लगा (७. १७४)।" "धृतराष्ट्र के पूछने पर संजय ने घटोत्कच के स्वरूप, रथ, आयुध और कवच आदि का वर्णन करने के पश्चात् कर्ण के साथ उसके युद्ध का वर्णन आरम्भ किया। उन्होंने कहा कि माया का आश्रय लेकर युद्ध करते हुये घटोत्कच ने कर्ण के दिव्यास्त्र को भी नष्ट कर दिया। तदनन्तर वह काला मेघ बन कर कर्ण पर भयंकर पत्थरों की वर्षा करने लगा। कर्ण ने वायव्यास्त्र द्वारा उस काले मेघ को नष्ट कर दिया। तब घटोत्कच ने पुनः

माया प्रगट की जिससे कर्ण ने देखा कि वह राक्षस, सिंहों, शार्दूलों और गजराजों से घिरा हुआ उसकी ओर आ रहा है। घटोत्कच के साथ के राक्षस नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों और आभूषणों से युक्त थे। कर्ण ने भीषण पराक्रम दिखाना आरम्भ किया। उस समय घटोत्कच हाथी जैसे बलवान् और पिशाचों के मुखवाले प्रखर गधों से जुते रथ पर बैठ कर कर्ण की ओर बढ़ा। उसने कर्ण पर रुद्रनिर्मित अशनि चलाया जिसकी ऊँचाई दो योजन और लम्बाई-चौड़ाई एक-एक योजन थी। कर्ण ने उस अशनि को पकड़ कर पुनः घटोत्कच पर ही चला दिया जिससे वह घटोत्कच के रथ को भस्म करती हुई धरती में समा गई। तत्पश्चात् घटोत्कच ने अपने अनेक रूप बना लिये और स्वयं अन्तर्धान हो गया। उस समय अनेक राक्षस, पिशाच, यातुधान, कुत्ते, भेड़िये आदि कर्ण को काटने के लिये सब ओर से उस पर टूट पड़े। कर्ण ने अपने दिव्यास्त्र से घटोत्कच की माया को नष्ट कर दिया (७. १७५)।" "इसी बीच अलायुध नामक राक्षस युद्ध-भूमि में दुर्योधन के पास आया। उसके साथ अनेक रूप धारण करनेवाले वीर राक्षस थे। वह पूर्व वैर का स्मरण करके वहाँ आया था। उसके कुटुम्बी, एक ब्राह्मण-भक्षी राक्षस, बकासुर, का भीम ने वध किया था। उसके सखा, हिडिम्ब तथा किर्मीर, को भी भीम ने ही मारा था। इन्हीं सब पहले के वैरों का स्मरण कर उसने पाण्डवों, विशेषकर भीम, कृष्ण, घटोत्कच आदि का वध करने की इच्छा प्रगट की। दुर्योधन ने अलायुध से भीमसेन का वध करने के लिये कहा। अलायुध का स्वरूप, उसके रथादि; तथा आयुध बहुत कुछ घटोत्कच के ही समान थे (७. १७६)।" "घटोत्कच से युद्ध कर रहे कर्ण के सम्बन्ध में अत्यन्त चिन्तित दुर्योधन सहित कुरुओं और द्रोणाचार्य ने अलायुध का स्वागत किया। अलायुध से युद्ध करने के लिये घटोत्कच कर्ण को छोड़कर उसकी ओर आया। उधर भीमसेन कर्ण से युद्ध करने लगे। तदनन्तर कर्ण के आक्रमण की उपेक्षा करते हुये भीम ने अलायुध से युद्ध किया जो घटोत्कच को छोड़कर उनकी ओर आया था। अलायुध के साथ के राक्षसों ने गजसेना, पाञ्चालों तथा सृञ्जयों पर आक्रमण किया। उस समय के भयंकर युद्ध को देख कर श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा : 'तुम अलायुध के विरुद्ध युद्ध कर रहे भीमसेन के मार्ग का अनुसरण करो। धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, युधामन्यु, उत्तमौजा तथा द्रौपदी के पाँच पुत्र कर्ण पर आक्रमण करें। नकुल, सहदेव और सात्यकि अन्य राक्षसों का वध करें।' अर्जुन स्वयं द्रोणाचार्य से युद्ध करने लगे। श्रीकृष्ण ने घटोत्कच को भीम की सहायता के लिये भेजा (७. १७७)।" "कर्ण को छोड़कर घटोत्कच, बकासुर के भ्राता, अलायुध, से युद्ध करने लगा। इसी बीच युयुधान इत्यादि और अलायुध के राक्षसों में भी युद्ध छिड़ गया। अर्जुन ने अनेक क्षत्रियों का संहार किया। कर्ण ने भी धृष्टद्युम्न और शिखण्डी के नेतृत्व में युद्ध कर रहे अनेक पाञ्चाल सैनिकों का वध किया। राक्षसों का वध करने के पश्चात् भीम+नकुल ने कर्ण से युद्ध किया। पाञ्चालों ने भी द्रोणाचार्य का सामना किया। अलायुध और घटोत्कच, दोनों ने युद्ध में अपनी-अपनी माया का आश्रय लिया, परन्तु अन्त में घटोत्कच ने अलायुध का वध करके उसके मस्तक को दुर्योधन के सामने फेंक दिया। यह देखकर दुर्योधन अत्यन्त चिन्तित हो उठा, जब कि पाञ्चाल तथा पाण्डव सिंहों के समान गर्जना करने लगे (७. १७८)।" "कर्ण ने पाञ्चालों पर भीषण आक्रमण किया। उसने अनेक श्रेष्ठ आयुधों से शत्रुओं का संहार किया। यह देख घटोत्कच कर्ण से युद्ध करने लगा। कर्ण ने एक भयंकर अस्त्र से घटोत्कच के रथ को, घोड़े तथा सारथि सहित नष्ट कर दिया। इस प्रकार रथहीन होने पर घटोत्कच वहाँ से अदृश्य हो गया और उसके बाद एक भयंकर माया की सृष्टि की— वर्णन। घटोत्कच की इस माया से त्रस्त होकर कौरव-सेना भागने लगी। उस समय केवल कर्ण ही अपने पराक्रम से युद्ध-भूमि में डटा रहा। तब सिन्धु और बाह्लीक देश के योद्धा भयभीत होकर कर्ण की ओर देखने लगे। घटोत्कच ने पुनः कर्ण के घोड़ों को मारने के पश्चात् अपनी माया से उसके दिव्यास्त्र को भी स्तम्भित कर दिया। उस समय कौरवों ने कर्ण से कहा कि वह भीम आदि की परवाह किये बिना ही इन्द्र से प्राप्त शक्ति द्वारा घटोत्कच का वध कर दे। जब कर्ण ने उस इन्द्र-शक्ति को हाथ में लिया तो भयभीत होकर घटोत्कच भागने लगा। आकाश में स्थित अनेक प्राणी तीव्र चीत्कार कर उठे। कर्ण ने उस शक्ति द्वारा घटोत्कच का वध कर दिया; परन्तु पाण्डवों का हित करने के दृष्टि से, रणभूमि में गिरते समय भी घटोत्कच ने विशाल रूप धारण कर लिया था जिससे उसके शरीर के नीचे पूरी एक अक्षौहिणी कौरव-सेना दब कर मर गई। घटोत्कच का वध होते ही कौरव सिंहनाद करने लगे। कर्ण भी दुर्योधन के रथ पर बैठकर कौरव सेना के समक्ष उपस्थित हुआ (७. १७९)।" "पाण्डवगण अत्यन्त विषाद-ग्रस्त हो गये। केवल श्रीकृष्ण ही अत्यन्त प्रसन्न होकर विजयघोष करने लगे। अर्जुन का आलिङ्गन करते हुये श्रीकृष्ण ने अपनी प्रसन्नता का कारण बतलाया और कहा कि इन्द्र से प्राप्त शक्ति के घटोत्कच पर प्रहार कर देने के कारण कर्ण के पास अब ऐसा कोई श्रेष्ठ अस्त्र शेष नहीं रहा जिससे वह अर्जुन का वध कर सके। श्रीकृष्ण ने अर्जुन को बताया कि किस प्रकार उन्होंने पाण्डवों के समस्त शत्रुओं का क्रमशः वध करा दिया है (७. १८०)।" "श्रीकृष्ण ने अर्जुन को जरासन्ध आदि धर्मद्रोहियों के वध करने का कारण बताया (७. १८१)।" "धृतराष्ट्र के यह पूछने पर कि कर्ण ने इन्द्र से प्राप्त शक्ति से अर्जुन पर प्रहार क्यों नहीं किया, सञ्जय ने बताया कि कर्ण यद्यपि उस शक्ति से अर्जुन का ही वध करना चाहता था, तथापि श्रीकृष्ण की नीति के कारण वह ऐसा नहीं कर सका। उस शक्ति को नष्ट करने के लिये ही श्रीकृष्ण ने कर्ण के साथ द्वैरथ युद्ध में घटोत्कच को लगाया। संजय ने बताया : 'प्रतिदिन रात को दुर्योधन, शकुनि, दुःशासन, तथा मेरा भी कर्ण से यही आग्रह रहता था कि समस्त सेना को छोड़ कर कर्ण अर्जुन को ही मार डाले। परन्तु श्रीकृष्ण अर्जुन को सदा कर्ण से बचाकर रखते थे।' सात्यकि के यह पूछने पर कि कर्ण ने अपनी अमोघ शक्ति का अर्जुन पर प्रयोग क्यों नहीं किया, श्रीकृष्ण ने कहा : 'दुःशासन, कर्ण, शकुनि तथा जयद्रथ सदा ही यह गुप्त मन्त्रणा करते और यह निश्चय करते थे कि अर्जुन के अतिरिक्त अन्य किसी पर भी कर्ण अपनी अमोघशक्ति को न छोड़े। कर्ण ने भी ऐसा ही करने की प्रतिज्ञा की थी। परन्तु मैं ही कर्ण को मोहित किये रहता था। आज जब उसने वह शक्ति घटोत्कच पर छोड़ दी तब मैंने समझ लिया कि अर्जुन मौत के मुख से निकल गये हैं।' (७. १८२)।" "संजय द्वारा कर्ण की शक्ति के घटोत्कच पर छोड़ देने से अर्जुन के वध की सम्भावना समाप्त हो जाने का वृत्तान्त सुनकर धृतराष्ट्र ने कहा : 'मैं समझता हूँ कि श्रीकृष्ण की नीति के कारण ही वह शक्ति घटोत्कच को मारने चली गई। मेरे समस्त पुत्र तथा अन्य भूपाल उसी दुर्नीति के कारण मृत्यु को प्राप्त हुये।' अब घटोत्कच के मारे जाने पर कौरवों तथा पाण्डवों का युद्ध किस प्रकार आरम्भ हुआ इसका वर्णन करो।' धृतराष्ट्र के इस प्रकार पूछने पर संजय ने कहा : 'घटोत्कच की मृत्यु के पश्चात् समस्त कौरव-सैनिक सिंहनाद करते हुये पाण्डवों का वध करने लगे। उस समय युधिष्ठिर अत्यन्त दुःखी हो गये। उन्होंने भीम से कहा : 'तुम दुर्योधन की सेना को रोको।' इस प्रकार भीम को आदेश देकर युधिष्ठिर स्वयं बारंबार सिसकते हुये अपने रथ पर जा बैठे। उन्हें व्यथित देखकर श्रीकृष्ण ने सान्त्वना दी। फिर भी घटोत्कच की सहायता का स्मरण करके युधिष्ठिर शोक करते ही रहे। उन्होंने कहा : 'अभिमन्यु के वध में यद्यपि जयद्रथ का बहुत कम अपराध था, तथापि अर्जुन ने जयद्रथ को मार डाला। यदि पाण्डवों के लिये अपने शत्रु का वध करना न्यायसंगत है तो पहले कर्ण तथा द्रोणाचार्य को ही मार डालना चाहिये। अतः अब मैं स्वयं ही कर्ण का वध करने के लिये युद्ध भूमि में जाऊँगा। भीमसेन इस समय द्रोणाचार्य की सेना से युद्ध कर ही रहे हैं।' ऐसा कह कर युधिष्ठिर अत्यन्त शीघ्रतापूर्वक वहाँ से चल दिये। उनके पीछे रथी, गजारोही, अश्वारोही, तथा पाञ्चाल और प्रभद्रकों की सेना लेकर शिखण्डी चल पड़े। युधिष्ठिर को इस प्रकार कर्ण के वध की इच्छा से जाते हुये देख कर महर्षि व्यास वहाँ प्रगट हुये और कहा : 'बड़े सौभाग्य की बात है कि संग्राम में कर्ण का सामना करके भी अर्जुन जीवित हैं। यह हर्ष का विषय है कि

युद्ध में कर्ण ने घटोत्कच पर ही इन्द्र की शक्ति को चला दिया। तात आज के पाँचवें दिन यह समस्त पृथिवी तुम्हारी हो जायगी।' ऐसा कह कर व्यास वहीं अन्तर्धान हो गये (७. १८३)।"

घटोत्कचसुत = अञ्जनपर्वन् : ७. १५६, ८०।

घटोदर, एक दैत्य या दानव का नाम है जो वरुण की सभा में उपस्थित रहता था (२. ९, १३)।

घण्ट = शिव (१,००० नाम)।

घण्टाकर्ण, ब्रह्मा द्वारा स्कन्द को प्रदत्त चार पार्षदों में से तीसरे का नाम है (९. ४५, २३–२४)।

घण्टामालाप्रिय = शिव (१,००० नाम)।

घण्टिन् = शिव (१,००० नाम)।

घनौपम = शिव (१,००० नाम)।

घुष्य = शिव (१,००० नाम)।

घूर्णिका, शुक्राचार्य की पुत्री और देवयानी की धाय का नाम है (१. ७८, २५. २६)।

घृतपा (बहु० पाः) घृत पीकर रहनेवाले ऋषियों के एक वर्ग का नाम है जो ब्रह्मा की आज्ञा के अधीन रहते हुये सनातन धर्म का पालन करते हैं (१२. १६६, २४)।

घृतर्चिस् = कृष्ण (विष्णु) : १२. ४३, ७।

घृतवती, एक नदी का नाम है (६. ९, २३. ३१)।

घृताची, एक अप्सरा का नाम है जिसके गर्भ से महर्षि प्रमति ने रुरु को उत्पन्न किया (१. ५, ९; ८, २)। यह छः प्रधान अप्सराओं में से एक है (१. ७४, ६८)। इसने भी अर्जुन के जन्मोत्सव पर नृत्य किया (१. १२३, ६५)। इसके दर्शन से स्खलित हुये भरद्वाज मुनि के वीर्य से द्रोणाचार्य का जन्म हुआ (१. १३०, ३५–३८; १६६, २)। उन अप्सराओं में एक यह भी थी जो कुबेर की सभा में उपस्थित रहती थी (२. १०, १०)। इन्द्र की सभा में नृत्य करनेवाली अप्सराओं में एक यह भी थी (३. ४३, २९)। इसे देख कर स्खलित हुये भरद्वाज के वीर्य से श्रुतावती नामक कन्या का जन्म हुआ (९. ४८, ६५–६७)। इसके दर्शन से स्खलित हुये व्यास के वीर्य से शुकदेव का जन्म हुआ (१२. ३२४, २. ४. ७)। इसने अष्टावक्र के स्वागत-सत्कार के लिये कुबेर की सभा में नृत्य किया था (१३. १९, ४४)। यह प्रमति की पत्नी और रुरु की माता थी (१३. ३०, ६४)। इसका उल्लेख (१३. १६५, १५)।

१. घोर, एक आयुध का नाम है (५. ९६, ४२)।

२. घोर, महर्षि अङ्गिरा के वारुण-संज्ञक पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ८५, १३१)।

३. घोर = शिव (१,००० नाम)।

घोरक, पश्चिमोत्तर भारत के एक जनपद का नाम है जहाँ के लोगों ने राजा युधिष्ठिर को भेंट दी (२. ५२, १४)।

घोरघोरतर = शिव (१,००० नाम)।

घोरतपस् = शिव (१,००० नाम)।

घोरात्मन् = कृष्ण : १२. ४७, ५६।

घोष = शिव (१,००० नाम)।

१. घोषयात्रा, घोषयात्रा पर्व में वर्णित आख्यान : १. १, १६७; २, १९५; ३. २३८, २०. २३; ४. ४५, ३६; ५. २३, २६; ४९, ४०; १३८, ९; १५८, २८; ७. १८५, १७।

२. घोषयात्रा = घोषयात्रपर्वन् : १. २, ५४।

घोषयात्रापर्वन्, महाभारत के ४३ वें अवान्तरपर्व का नाम है जो वनपर्व के २३६ से २५७ वें अध्याय तक आता है। "द्वैतवन के पूर्वोक्त सरोवर पर आकर पाण्डवों ने अपने निवास के लिए कुटी बनाई और वहीं रह कर समीपवर्ती प्रदेशों में विचरण करने लगे। उस समय पाण्डवों के पास अनेक वेदवेत्ता ब्राह्मण आते थे और पाण्डव उनकी यथोचित सेवा करते थे। तदनन्तर कथावार्ता में कुशल एक ब्राह्मण पाण्डवों के पास आया और उनसे मिलने के पश्चात् विचरण करता हुआ राजा धृतराष्ट्र के पास जा पहुँचा। उस ब्राह्मण ने पाण्डवों का समाचार देते हुये कहा : 'इस समय पाण्डव हवा और गर्मी आदि का कष्ट सहन करने के कारण अत्यन्त कृश हो गये हैं, और उनकी पत्नी, द्रौपदी, भी अनेक प्रकार के क्लेश सहन कर रही है।' ब्राह्मण की बातें सुन कर धृतराष्ट्र अत्यन्त दुखी और द्रवित हो उठे। उन्होंने कहा : 'जो मेरे समस्त पुत्रों में ज्येष्ठ, सत्यवादी, पवित्र और सदाचारी हैं, जो पहले रङ्कु मृग के चर्म से बने कोमल बिछौनों पर सोते थे, वे ही युधिष्ठिर आज भूमि पर कैसे शयन करते होंगे। जिन्हें कभी मागधों और सूतों का समुदाय प्रतिदिन स्तुति-पाठ करके जगाता था, जो साक्षात् इन्द्र के समान तेजस्वी और पराक्रमी हैं, वे अब भूमि पर सोते और पक्षियों के कलरव को सुनकर जागते होंगे।' इसी प्रकार धृतराष्ट्र अन्य पाण्डवों के लिये चिन्ता प्रकट करते हुए विचार करने लगे कि उनके प्रति कौरवों ने जो दुर्व्यवहार तथा छल किये हैं उनके कारण वे अवश्य प्रतिशोध लेंगे। उन्होंने कहा : 'अर्जुन अत्यन्त शक्तिशाली हैं। इन्द्रलोक में जाकर वे वहाँ से दिव्यास्त्रों का ज्ञान प्राप्त करके पुनः इस संसार में इसीलिये लौट आये हैं कि कौरवों से प्रतिशोध ले सकें।' धृतराष्ट्र की ये समस्त बातें सुनकर शकुनि ने दुर्योधन और कर्ण के पास जाकर उन्हें ये बातें बता दीं जिन्हें सुनकर दुर्योधन कुछ चिन्तित हो उठा (३. २३६)।" शकुनि और कर्ण ने दुर्योधन की प्रशंसा करते हुये उसे पाण्डवों के पास द्वैतवन चलने के लिए उकसाया (३. २३७)। "दुर्योधन ने कर्ण और शकुनि के प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार करते हुए यह भय प्रकट किया कि धृतराष्ट्र कहीं उन लोगों को द्वैतवन जाने की अनुमति न दें क्योंकि वे (धृतराष्ट्र) यह समझते हैं कि अपनी तपस्याओं के कारण पाण्डव अत्यन्त शक्तिशाली हो गये हैं। फलतः दुर्योधन ने दुःशासन से कोई कुशल बहाना ढूँढ़ने के लिए कहा जिससे धृतराष्ट्र की अनुमति प्राप्त हो सके। दूसरे दिन प्रातःकाल दुर्योधन, कर्ण और शकुनि इस बात पर सहमत हुये कि धृतराष्ट्र से गौओं को देखने के लिए द्वैतवन जाने की अनुमति प्राप्त की जाय (३. २३८)।" "दुर्योधन आदि धृतराष्ट्र से अनुमति लेने के लिये आये। इन लोगों ने समङ्ग नामक एक ग्वाले को पहले से ही आदेश दे रक्खा था कि वह धृतराष्ट्र से यह कहे कि उनकी गौयें समीप ही आ गई हैं। तदन्तर कर्ण और शकुनि ने धृतराष्ट्र से निवेदन किया कि वे दुर्योधन को गौओं को देखने के लिये द्वैतवन जाने की अनुमति दें। धृतराष्ट्र ने कहा कि दुर्योधन आदि के जाने की अपेक्षा किसी विश्वास-पात्र व्यक्ति को ही भेजना उचित होगा, क्योंकि वहाँ जाने पर यदि पाण्डवों से सामना हो गया तो युधिष्ठिर चाहे न भी क्रुद्ध हों परन्तु भीम और द्रौपदी अवश्य क्रुद्ध होकर आक्रमण कर देंगे। इस पर शकुनि ने धृतराष्ट्र को यह आश्वासन दिया कि दुर्योधन आदि उस स्थान पर नहीं जायेंगे जहाँ पाण्डव-गण निवास कर रहे हैं। ऐसा कहने पर धृतराष्ट्र ने स्वीकृति प्रदान कर दी। इस प्रकार आज्ञा पाकर कर्ण, दुःशासन, शकुनि, अन्य भ्राताओं, तथा सहस्रों स्त्रियों आदि को लेकर दुर्योधन द्वैतवन सरोवर की ओर प्रस्थित हुआ। उस समय दुर्योधन के साथ साठ हजार रथ, तीस हजार हाथी, सहस्रों पदाती और नौ सहस्र घोड़े भी गये। नगर से दो कोस दूर जाकर दुर्योधन ने पड़ाव डाल दिया और फिर वहाँ से वाहनों के साथ द्वैतवन की ओर चला (३. २३९)।" "द्वैतवन में पहुँच कर सबने पड़ाव डाला। तदनन्तर दुर्योधन ने गौओं, बछड़ों, आदि का निरीक्षण करने के बाद उन पर चिह्न आदि बनवा दिये। इसके बाद वहाँ विहार करते हुए दुर्योधन आदि द्वैतवन सरोवर के समीप जा पहुँचे। उस समय युधिष्ठिर अपनी पत्नी, द्रौपदी, के साथ साद्यस्क राजर्षियज्ञ कर रहे थे। वहाँ दुर्योधन की आज्ञा से जब सेवकगण क्रीडामण्डपों का निर्माण करने लगे तब गन्धर्वों ने उन्हें रोका। उस समय वहाँ गन्धर्वराज चित्रसेन पहले से ही आये हुये थे। अतः अप्सराओं और अनेक सेवकों सहित चित्रसेन ने उस सरोवर को घेर रक्खा था। जब सेवक लौट आये तब दुर्योधन ने उन्हें पुनः जाकर गन्धर्वों को मार भगाने की आज्ञा दी। जब सेवकों ने जाकर गन्धर्वों को दुर्योधन की आज्ञा से अवगत कराया तो वे सब हँसने लगे। उन लोगों ने दुर्योधन के सेवकों को डरा-

धमका कर पुनः लौटा दिया (३. २४०)।" "दुर्योधन की आज्ञा से गन्धर्वों तथा कौरव-सैनिकों में युद्ध छिड़ गया। उस समय गन्धर्वराज चित्रसेन स्वयं गन्धर्वों का नेतृत्व कर रहे थे। गन्धर्वों ने कौरव-सैनिकों को पराजित कर दिया परन्तु कर्ण उनसे युद्ध करता रहा और सैकड़ों को मार गिराया। दुर्योधन, शकुनि, दुःशासन और विकर्ण भी लौट कर कर्ण की सहायता करने लगे, जिससे पुनः गम्भीर युद्ध छिड़ गया। उस समय चित्रसेन ने माया प्रगट की जिससे प्रत्येक कौरव-सैनिक को ऐसा प्रतीत होने लगा कि वह दस-दस गन्धर्वों से घिरा है। फलतः कर्ण को छोड़कर समस्त कौरव सेना पुनः भाग गई। तब गन्धर्वों ने कर्ण के रथ को ध्वस्त कर दिया जिससे वह विकर्ण के रथ पर बैठकर भाग गया (३. २४१)।" "कर्ण तथा समस्त सैनिकों के भाग जाने पर भी दुर्योधन वहाँ डटा रहा। गन्धर्वों ने दुर्योधन को रथहीन करके बन्दी बना लिया। दुर्योधन के रथ पर बैठे दुःशासन को भी गन्धर्वों ने पकड़ लिया। इसी प्रकार अन्य गन्धर्वों ने धृतराष्ट्रपुत्र चित्रसेन, विविंशति, विन्द, अनुविन्द तथा राजकुल की स्त्रियों को भी बन्दी बना कर अपने अधिकार में ले लिया। कौरवों के इस प्रकार बन्दी हो जाने पर उनके भागे हुये कुछ सैनिक युधिष्ठिर की शरण में गये। उनकी बात सुनकर भीमसेन ने क्रुद्ध होकर कौरवों के प्रति अनेक कटुवचन कहे, परन्तु युधिष्ठिर ने उन्हें शान्त किया (३. २४२)।" "युधिष्ठिर ने कहा कि गन्धर्वों द्वारा दुर्योधन को बन्दी बना लेने के कारण उनकी कुल-मर्यादा को ठेस लगी है, अतः उन सब को मुक्त कराना ही चाहिये। उन्होंने कहा : 'इस जगत में कौन ऐसा श्रेष्ठ पुरुष है जो शरण में आये हुये शत्रु को भी देख कर उसकी रक्षा के लिये दौड़ नहीं पड़ेगा। वरदान, राज्यप्रदान, पुत्र की प्राप्ति कराना, तथा शत्रु का संकट से उद्धार करना, इन चार वस्तुओं में से प्रारम्भ के तीन और अन्त का एक समान हैं।' यज्ञ में रत होने के कारण युधिष्ठिर ने स्वयं दुर्योधन की सहायता करने में अपनी असमर्थता प्रगट की, जिस पर अर्जुन ने यह कार्य करने का आश्वासन दिया (३. २४३)।" "युधिष्ठिर को छोड़कर शेष चार पाण्डवों ने कवच आदि धारण किया और दुर्योधन को मुक्त कराने के लिये तीव्रगामी रथों पर बैठ कर चले। जब अर्जुन के निवेदन करने पर भी गन्धर्वों ने कौरवों को मुक्त करना अस्वीकार कर दिया, तब पाण्डवों और गन्धर्वों में भीषण संग्राम छिड़ गया (३. २४४)।" "गन्धर्वों ने पाण्डवों को चारों ओर से घेर कर उनके रथों को ध्वस्त कर देने का प्रयास आरम्भ किया। उस समय वे अनेक तेजोमय बाणों की वर्षा कर रहे थे। अर्जुन ने भी क्रोध में आकर दिव्यास्त्रों के प्रयोग द्वारा दस लाख गन्धर्वों को यमलोक पहुँचा दिया। इस प्रकार पाण्डवों के अस्त्रों से पीड़ित होकर गन्धर्वगण धार्तराष्ट्रों को साथ लेकर आकाश में उड़ गये और वहाँ से गदा, शक्ति, और ऋष्टि आदि अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा करने लगे। उस समय अर्जुन ने भी स्थूणाकर्ण, इन्द्रजाल, सौर, आग्नेय तथा सौम्य नामक दिव्यास्त्रों का प्रयोग किया। अपने सैनिकों को त्रस्त हुआ देख कर गन्धर्वराज चित्रसेन ने लोहे की गदा लेकर अर्जुन पर आक्रमण किया। जब अर्जुन ने चित्रसेन की गदा को छिन्न-भिन्न कर दिया तब वह अन्तर्धानविद्या द्वारा अपने को छिपा कर अर्जुन से युद्ध करने लगा। अर्जुन ने तब शब्दवेध का सहारा ले कर चित्रसेन की अन्तर्धानरूपी माया को भी नष्ट कर दिया। तदनन्तर चित्रसेन ने अर्जुन के समक्ष प्रगट होकर बताया कि वे उनके प्रिय सखा हैं। चित्रसेन को पहचान कर अर्जुन ने अपने समस्त दिव्यास्त्रों को समेट लिया और युद्ध समाप्त हो गया (३. २४५)।" "अर्जुन के पूछने पर चित्रसेन ने कहा : 'देवराज इन्द्र को दुर्योधन आदि के दुर्विचारों का पता लग गया था अतः उन्होंने मुझे आज्ञा दी कि मैं दुर्योधन तथा उसके मन्त्रियों को बाँध कर उनके समक्ष उपस्थित करूँ। अतः अब मैं कौरवों को देवलोक में इन्द्र के पास ले जाऊँगा।' चित्रसेन की बात सुन कर अर्जुन ने दुर्योधन आदि को मुक्त कर देने का निवेदन किया। चित्रसेन के कहने पर सब लोग युधिष्ठिर के पास गये। युधिष्ठिर ने दुर्योधन आदि को मुक्त कर देने का निर्णय किया। युधिष्ठिर की बात सुनकर गन्धर्वों ने दुर्योधन आदि को मुक्त कर दिया तथा अप्सराओं आदि के साथ लौट गये। इन्द्र ने अमृत की वर्षा करके वहाँ मृत गन्धर्वों को जीवित कर दिया। तदनन्तर बन्धनमुक्त हुये दुर्योधन से युधिष्ठिर ने प्रेमपूर्वक वार्तालाप करते हुये कहा कि दुःसाहस करनेवाले मनुष्य कभी सुखी नहीं होते। उस समय अपने कुकृत्यों पर अत्यन्त लज्जित हो दुर्योधन ने अपनी राजधानी की ओर प्रस्थान किया (३. २४६)।" "जब दुःखी और लज्जित दुर्योधन अपनी सेना सहित लौटते हुये हस्तिनापुर के समीप पहुँचा तो कर्ण ने गन्धर्वों पर विजय प्राप्त करने के लिये दुर्योधन की प्रशंसा की। उसने कहा : 'महाराज दुर्योधन! इस युद्ध में तुमने जो पराक्रम दिखाया वह इस संसार में अन्य कोई नहीं दिखा सकता।' कर्ण की बात सुन कर दुर्योधन ने अश्रुगद्गद वाणी से उसे सम्बोधित किया (३. २४७)।" "दुर्योधन ने कर्ण को अपनी पराजय तथा पाण्डवों की दया से गन्धर्वों द्वारा मुक्त होने का समाचार बताया (३. २४८)।" "अपनी ग्लानि का वर्णन करते हुये दुर्योधन ने कर्ण के समक्ष आमरण अनशन करने का निर्णय व्यक्त किया। उसने कहा कि दुःशासन को राजा मान कर कर्ण आदि हस्तिनापुर जाँय। दुःशासन ने अत्यन्त दुःखी होकर दुर्योधन द्वारा प्रदत्त राज्य लेना अस्वीकार कर दिया। कर्ण ने कहा कि, पाण्डवों ने, जो दुर्योधन के राज्य और आश्रय में हैं, दुर्योधन आदि को बचा कर अपने कर्त्तव्य का ही पालन किया है, अतः इसमें ग्लानि की कोई बात नहीं। इस प्रकार कर्ण ने दुर्योधन को समझाने का प्रयास किया (३. २४९)।" "कर्ण के इस प्रकार बहुत समझाने पर भी दुर्योधन अपने आमरण अनशन करने के निश्चय पर दृढ़ रहा (३. २५०)।" "शकुनि ने दुर्योधन को समझाते हुये कहा : 'तुम अपनी अल्पबुद्धि के कारण ही प्राणत्याग करने के लिये उद्यत हो। पाण्डवों ने तुम्हारा सत्कार किया है, तब तो तुम्हें शोक हो रहा है। यदि वे तुम्हारा तिरस्कार करते तो तुम्हारी क्या दशा होती?' शकुनि के बहुत समझाने पर भी दुर्योधन अपने निश्चय पर अडिग रहा और आचमन करके पवित्र हो पृथिवी पर कुश का आसन बिछा और वल्कल धारण कर प्राणत्याग की इच्छा से बैठ गया। दुर्योधन के इस निश्चय को जानकर पातालवासी दैत्यों और दानवों ने, जो पूर्वकाल में देवताओं से पराजित हो चुके थे, उसे अपने पास बुलाने के लिये बृहस्पति तथा शुक्राचार्य द्वारा वर्णित और अथर्ववेद में प्रतिपादित मन्त्रों से अग्निविस्तारसाध्य यज्ञ का अनुष्ठान किया। तब दृढ़तापूर्वक व्रत का पालन करनेवाले वेद-वेदाङ्ग के पारंगत ब्राह्मण एकत्र हो उनके यज्ञ का सञ्चालन करने लगे। कर्म की सिद्धि होने पर यज्ञकुण्ड से एक अद्भुत कृत्या ने प्रगट होकर अपने लिये आज्ञा माँगी। दैत्यों ने उससे कहा कि वह प्रायोपवेशन करते हुये दुर्योधन को उनके पास लाये। तदनुसार कृत्या ने रात्रि के समय दुर्योधन को लाकर दैत्यों के समक्ष उपस्थित कर दिया (३. २५१)।" "दानवों ने दुर्योधन को समझाते हुये कहा : 'आत्महत्या जैसे अशुभ कर्मों में आपके समान बुद्धिमान पुरुष प्रवृत्त नहीं होते। अतः आप इससे विरत हों। हम आपको एक रहस्य की बात बताते हैं। पूर्वकाल में हम लोगों ने तपस्या द्वारा भगवान् शंकर की आराधना करके आपको प्राप्त किया था। आपके शरीर का पूर्वभाग, जो नाभि से ऊपर है, वज्रसमूह से बना हुआ है। उसी प्रकार आपकी नाभि के नीचे के शरीर को पार्वती ने पुष्पमय बनाया है। इस प्रकार महादेव और पार्वती द्वारा निर्मित होने के कारण आप दिव्य पुरुष हैं। आपकी सहायता के लिये अनेक दानव भूतल पर प्रकट हो चुके हैं। दानवों का आवेश होने पर भीष्म, द्रोण आदि की अन्तरात्मा पर भी उन दानवों का अधिकार हो जायगा जिससे युद्ध करते समय वे लोग पुत्रों, भ्राताओं, पितृजनों, बान्धवों, शिष्यों, कुटुम्बियों, बालकों और वृद्धों किसी को भी नहीं छोड़ेंगे।...दैत्यों तथा राक्षसों के समुदाय क्षत्रिय योनि में उत्पन्न हुये हैं, जो आपके शत्रुओं के साथ युद्ध करेंगे। हम लोगों ने अर्जुन के वध का उपाय कर लिया है। श्रीकृष्ण ने जिस नरकासुर का वध किया है उसकी आत्मा कर्ण के शरीर में प्रवेश कर गई है, अतः वही नरकासुर अपने वैर का स्मरण करके अर्जुन तथा श्रीकृष्ण से युद्ध करेगा जिससे कर्ण को

अवश्य विजय प्राप्त होगी। इन्द्र इस बात को समझ कर अर्जुन की रक्षा के लिये कर्ण के अभेद्य कवच तथा कुण्डल छलपूर्वक माँग लेंगे। हम लोगों ने एक लाख दैत्यों और राक्षसों को आपकी सहायता के लिये लगा रखा है जो संशप्तक नाम से विख्यात हैं। अतः आप विषाद न करें। आपके नष्ट हो हो जाने पर तो हमारे पक्ष का ही नाश हो जायगा। देवताओं ने पाण्डवों का आश्रय ले रक्खा है, परन्तु हमारी गति तो सदा आप ही हैं।' इस प्रकार दुर्योधन को समझा कर दानवों और दैत्यों ने उसे हृदय से लगाया और विदा किया। दैत्यों के विदा करने पर कृत्या ने दुर्योधन को पुनः उसी स्थान पर पहुँचा दिया जहाँ वह आमरण उपवास के लिए बैठा था। दुर्योधन ने दैत्यों के साथ हुई बातों को सत्य माना और उन्हें किसी पर प्रगट भी नहीं किया। दूसरे दिन प्रातःकाल कर्ण ने उपस्थित होकर दुर्योधन को पुनः उत्साहित किया। तदनन्तर दैत्यों के वचनों का स्मरण करके दुर्योधन ने हस्तिनापुर लौटने का निर्णय किया। इस प्रकार कर्ण, दुःशासन, शकुनि, भूरिश्रवा, सोमदत्त, बाह्लीक आदि समस्त कौरवों के साथ दुर्योधन ने अपनी राजधानी, हस्तिनापुर, में प्रवेश किया (३. २५२)।" "भीष्म ने कर्ण की निन्दा करते हुये दुर्योधन को पाण्डवों से सन्धि करने का परामर्श दिया। कर्ण इस पर अत्यन्त क्रुद्ध हो उठा। कर्ण ने गर्वोक्तियाँ करने के पश्चात् दिग्विजय के लिये प्रस्थान किया (२. २५३)।" कर्ण द्वारा समस्त पृथिवी पर दिग्विजय और हस्तिनापुर में उसका सत्कार (३. २५४)। कर्ण और पुरोहित के परामर्श से दुर्योधन की वैष्णवयज्ञ के लिए तैयारी (३. २५५)। दुर्योधन के यज्ञ का आरम्भ एवं उसकी समाप्ति (३. २५६)। "दुर्योधन के यज्ञ के विषय में लोगों ने अपने-अपने मत व्यक्त किये। कर्ण ने अर्जुन का वध करने की प्रतिज्ञा की। यह सब समाचार सुनकर युधिष्ठिर उद्विग्न हो उठे और द्वैतवन छोड़कर अन्यत्र चले जाने का विचार करने लगे। इधर दुर्योधन अपने भ्राताओं के साथ रह कर भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य, कर्ण तथा शकुनि आदि से मिलकर पृथिवी का शासन करने लगा। वह अपने अधीनस्थ राजाओं तथा ब्राह्मणों का भी स्वागत-सत्कार करता रहा। (३. २५७)।"

घ्राणश्रवस्, स्कन्द के एक सैनिक तथा पार्षद का नाम है (९.४५,५७)।

च

१. चक्र, नागराज वासुकि से उत्पन्न एक नाग का नाम है जो सर्पसत्र में भस्म हो गया था (१. ५७, ६)।

२. चक्र, विष्णु द्वारा स्कन्द को प्रदत्त तीन पार्षदों में से एक का नाम है (९. ४५, ३७)।

३. चक्र, श्रीकृष्ण के सुप्रसिद्ध अस्त्र, सुदर्शन चक्र का नाम है जिसे अग्निदेव ने उन्हें प्रदान किया था (१. २२५, २३; १८. ४, ३)।

४. चक्र, त्वष्टा द्वारा स्कन्द को प्रदत्त दो अनुचरों में से दूसरे का नाम है (९. ४५, ४०)।

५. चक्र, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ४५)।

चक्रक, विश्वामित्र के पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ४, ५४)।

१. चक्रगदाधर = कृष्ण (देखिये वस्था०)।

२. चक्रगदाधर = विष्णु (१,००० नाम)।

चक्रगदाभृत् = कृष्ण (देखिये वस्था०)।

चक्रचर, ऋषियों के एक वर्ग का नाम है जो प्रयाग में निवास करते थे (३. ८५, ७२; १३. १४१, १०३. १०७)।

चक्रदेव, एक वृष्णिवंशी अतिरथी वीर का नाम है (२. १४, ५७)।

चक्रद्वार, एक पर्वत का नाम है जो सुलभा के पूर्वजों के यज्ञों में देवराज इन्द्र के सहयोग से यज्ञ-वेदी में ईंट की जगह चुना गया था (१२. ३२०, ८२)।

चक्रधनुस्, महर्षि कर्दम से उत्पन्न कपिल मुनि का नाम है जो दक्षिण-दिशा में निवास करते थे। इन्होंने ही सगर-पुत्रों को भस्म किया था (५. १०९, १७)।

चक्रधर (वि०): १४. १६, २३।

चक्रधर्मन्, विद्याधरों के अधिपति का नाम है जो अपने अनुजों के साथ कुबेर की सभा में उपस्थित होकर उनकी उपासना करते हैं (२. १०, २७)।

चक्रधारिन् = कृष्ण (देखिये वस्था०)।

चक्रनेमि, स्कन्द की अनुचरी, एक मात्रिका का नाम है (९. ४६, ५)।

चक्रपाणि = कृष्ण (देखिये वस्था०)।

चक्रमन्द, एक नाग का नाम है जो बलराम के परमधाम पधारने के समय उनके स्वागत के लिए उपस्थित हुआ था (१६. ४, १६)।

चक्रवाक, धृतराष्ट्री से उत्पन्न एक प्रकार के पक्षियों का नाम है (१. ६६, ५८)।

चक्रव्यूह, द्रोण-निर्मित एक सैन्य-व्यूह का नाम है जिसका भेदन करना पाण्डव-दल में अर्जुन ही जानते थे। अभिमन्यु इसमें प्रवेश करके बाहर निकलना नहीं जानता था, अतः इसमें वह मारा गया (१. ६७, ११९; ७. ३३, १९; ३४, १३; ३५, १४. १५; ८७, २२)।

चक्राति, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ४५)।

चक्रायुध = विष्णु और कृष्ण।

१. चक्रिन् = विष्णु (१,००० नाम)।

२. चक्रिन् = शिव (१३. १४, १५४)।

चक्षुराज्य = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

चक्षुर्वर्धनिका, शाक-द्वीप की एक नदी का नाम है (६. ११, ३३)।

१. चक्षुस्, दिवःपुत्र आदि बारह सूर्यों में से एक का नाम है (१. १, ४५)।

२. चक्षुस् = शिव (१४. ८, १८)।

१. चणूर, एक राजा का नाम है जो युधिष्ठिर के सभाभवन में प्रवेश करने के समय उनकी सेवा में उपस्थित थे (२. ४, २६)।

२. चणूर, एक राजा का नाम है जिसका श्रीकृष्ण ने वध किया था (५. १३०, ४७)।

चणूरान्ध्रनिषूदन = विष्णु (१,००० नाम)।

१. चण्ड = स्कन्द (३. २३२, ४)।

२. चण्ड = शिव (१,००० नाम)।

चण्डकौशिक, काक्षीवत् के पुत्र, एक मुनि का नाम है (२. १७, २२)। इनकी कृपा से मगध नरेश, बृहद्रथ, को पुत्र की प्राप्ति हुई जो जरासन्ध नाम से विख्यात हुआ (२. १९, १)।

चण्डतुण्डक, गरुड़ की सन्तानों में से एक का नाम है (५. १०१, ९)।

चण्डधार = शिव (१,००० नाम)।

चण्डबल, एक वानर का नाम है जिसका कुम्भकर्ण ने भक्षण कर लिया (३. २८७, ३)।

चण्डभार्गव, एक वेदवेत्ता ब्राह्मण का नाम है, जो च्यवन मुनि के वंश में उत्पन्न हुये थे। ये जनमेजय के सर्पसत्र में होता बने (१. ५३, ५)।

चण्डा = दुर्गा (उमा): ६. २३, ५।

१. चण्डाल, एक जाति के लोगों का नाम है (१३. ३, १९; २७, ३०; २९, ४; ४०, ३०)। वैदेही के गर्भ से चण्डाल द्वारा उत्पन्न पुत्र सौपाक कहा जाता है (१३. ४८, २७)। इसे श्राद्ध से वंचित रखना चाहिये (१३. ९१, ४३)।

२. चण्डाल = मतङ्ग (१३. २७, ११. १५–१७; २८, ६)।

चण्डिकघण्ट = शिव (१,००० नाम)।

चण्डी = दुर्गा (उमा): ६. २३, ५।

चतुरश्व, एक राजर्षि का नाम है जो यम की सभा में उपस्थित रह कर सूर्य पुत्र यम की उपासना करते थे (२. ८, ११)।

चतुरस्त्र = विष्णु (१,००० नाम)।

१. चतुरात्मन् = कृष्ण (१२. ४७, २७)।

२. चतुरात्मन् = विष्णु (१,००० नाम)।

चतुर्गति = विष्णु (१,००० नाम)।

१. चतुर्दंष्ट्र = स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६२)।

२. चतुर्दंष्ट्र = विष्णु (१,००० नाम)।

चतुर्बाहु = विष्णु (१,००० नाम)।

चतुर्भाव = विष्णु (१,००० नाम)।

१. चतुर्भुज = विष्णु (१,००० नाम)।

२. चतुर्भुज = कृष्ण (५. ६६, १५)।

१. चतुर्मुख = ब्रह्मा (३. २०३, १५; २७२, ४४; २९१, १७; १२. २४७, २१)।

२. चतुर्मुख = शिव (१,००० नाम)।

१. चतुर्मूर्ति = ब्रह्मा (३. २०३, १५)।

२. चतुर्मूर्ति = विष्णु (१,००० नाम)।

चतुर्मूर्तिधृत् = विष्णु (१२. ३४०, १०६)।

चतुर्युग = शिव (१,००० नाम)।

चतुर्वक्त्र = ब्रह्मा (१२. ३३९, ५०; ३५०, ११)।

चतुर्वर्ण्यकर = शिव (१,००० नाम)।

१. चतुर्वेद, सात पितरों में से एक का नाम (२. ११, ४७)।

२. चतुर्वेद = ब्रह्मा (४. २०३, १५)।

३. चतुर्वेद = शिव (१,००० नाम)।

चतुर्वेदविद् = विष्णु (१,००० नाम)।

चतुर्व्यूह = विष्णु (१२. ३४८, ५७; १३. १४९, २८)।

चतुष्कर्णी, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६ २५)।

चतुष्पथ = शिव (१,००० नाम)।

चतुष्पथनिकेता, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २५)।

चतुष्पथरता, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९.४६,२७)

चत्वरवासिनी, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९; ४६, १२)।

चन्दन = शिव (१,००० नाम)।

चन्दनिन् = शिव (१,००० नाम)।

१. चन्द्र = शिव (१,००० नाम)।

२. चन्द्र = चन्द्रमा (१. २१०, २६; ३. ११८, १२)। देखिये सोम।

३. चन्द्र, एक दैत्य का नाम है जो, चन्द्रमा के समान सुन्दर और चन्द्रवर्मा नाम से विख्यात, काम्बोज देश का राजा हुआ (१. ६७, ३१. ३८)।

चन्द्रक, विडालोपाख्यान में वर्णित एक उलूक का नाम है (१२. १३८, ३३)।

चन्द्रकुण्ड (चन्द्रह्रद), एक कुण्ड का नाम है जिसमें मेरु पर्वत से गङ्गा गिरती है (६. ६, २९)।

चन्द्रकेतु, कौरव पक्ष के एक योद्धा का नाम है जिसका अभिमन्यु ने वध किया था (७. ४८, १५)।

चन्द्रतीर्थ, एक प्राचीन तीर्थ का नाम है जहाँ वालखिल्य नामक वैखानस मुनि निवास करते हैं। यहाँ तीन पर्वत और तीन झरने हैं (३. १२५, १७)। देखिये चन्द्रमस्।

१. चन्द्रदेव, एक कौरव-योद्धा का नाम है जिसका अर्जुन ने वध कर दिया (८. २७, ३. ११. १३)।

२. चन्द्रदेव, पाण्डव-पक्ष के एक पाञ्चाल योद्धा का नाम है जिसका कर्ण ने वध किया (८. ४९, २७)।

चन्द्रप्रमर्दन, दक्षकन्या सिंहिका के पुत्र का नाम है। यह कश्यप का पुत्र था (१. ६५, ३१)।

चन्द्रभ, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७५)।

चन्द्रभागा, पञ्जाब की एक नदी का नाम है जिसे आजकल चेनाब कहते हैं। यह वरुण की सभा में उपस्थित थी (२. ९, १९)। मार्कण्डेय ने इसे भी नारायण के उदर में देखा (३. १८८, १०२)। ६. ९, १५. १९ (वेत्रवती); ८. ४४, ३२ (यह आरट्टों के देश में बहती है)। इसमें सात दिन तक स्नान करने से मनुष्य मुनि के समान निर्मल हो जाता है (१३. २५, ७)। १३. १४६, १८; १६५, १९।

१. चन्द्रमस् = चन्द्रमा (देखिये सोम)।

२. चन्द्रमस्, एक असुर का नाम है जो दनु का पुत्र था (१. ६५, २६. २७)।

चन्द्रमसस्-तीर्थम्, एक तीर्थ का नाम है (३. १२५, १७)।

चन्द्रमसी, बृहस्पति की पत्नी का नाम है (३. २१९, १)।

चन्द्रमा, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, २९)।

चन्द्रमौलि विभूषण = शिव (१०. ७, ११)।

चन्द्रवक्त्र = शिव (१,००० नाम)।

चन्द्रवत्स, एक जाति के लोगों का नाम है (५. ७४, १६)।

चन्द्रवर्मन्, एक राजा का नाम है जो चन्द्र नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ३२; ७. ३२, ६६)।

चन्द्रविनाशन, एक असुर का नाम है जो भूतल पर 'जानकि' नामक राजा हुआ (१. ६७, ३७- ३८)। देखिये चन्द्रस्य विनाशनः।

चन्द्रशीता, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६. ११)

१. चन्द्रसेन, एक राजा का नाम है जो समुद्रसेन का पुत्र था। यह द्रौपदी के स्वयंवर में आया (१. १८६, ११)। पूर्व में भीमसेन ने समुद्रसेन के साथ-साथ इसे भी पराजित किया था (२. ३०, २४)। यह भी पाण्डवों का एक रथी वीर था (५. १७१, १९)। यह द्रोणाचार्य के विरुद्ध युद्ध के लिये चला—इसके घोड़ों का वर्णन (७. २३, ६०)। अश्वत्थामा ने इसका वध किया (७. १५६, ८३)। इसका उल्लेख (७. १५८, ३९)।

२. चन्द्रसेन, एक कौरव योद्धा का नाम है जिसका (?) युधिष्ठिर ने वध किया (८. २७, ८; ९. १२, ५२)।

चन्द्रस्य विनाशनः, एक असुर का नाम है जो भूतल पर 'जानकि' नामक राजा हुआ (१. ६७, ३७–३८)।

चन्द्रहन्तृ, एक असुर का नाम है जो राजर्षि शुनक के रूप में पृथिवी पर उत्पन्न हुआ (१. ६७, ३७)।

चन्द्रहर्ता, दक्षकन्या सिंहिका के पुत्र का नाम है (१. ६५, ३१)।

चन्द्रानन = स्कन्द (३. १३२, ५)।

चन्द्रार्धकृतशीर्ष = कृष्ण (११. ४७, ८१)।

चन्द्रावर्त = शिव (१,००० नाम)।

चन्द्राश्व, कुवलाश्व के पुत्र का नाम है जो धुन्धुमार की क्रोधाग्नि में दग्ध होने से बच गये थे (३. २०४, ४०)।

चन्द्रांशु = विष्णु (१,००० नाम)।

चन्द्रोदय, एक पाण्डव योद्धा का नाम है (७. १५८, ४२)।

चपल, एक प्राचीन राजा का नाम है (१. १, २३८)।

चपलाक्ष = अभिमन्यु (१४. ६८, २०. २१)।

चपलेक्षण = अभिमन्यु (१४. ६९, १३)।

चमस (चमसोद्भेद), एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से अग्निष्टोम का फल मिलता है (३. ८२, ११२)।

चमसोद्भेद (= चमस), एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से अग्निष्टोम का फल मिलता है (३. ८२, ११२; १३०, ५; ९. ३५, ८७)।

चमसोद्भेदन (= चमसोद्भेद), एक तीर्थ का नाम है जो सुराष्ट्र देश में स्थित है (३. ८८, २०)।

चमू, सैन्यगणना का एक पारिभाषिक शब्द है। तीन पृतना का एक चमू होता है (१. २, २१)।

चमूस्तम्भन = शिव (१,००० नाम)।

चमूहर, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३५)।

चम्पकारण्य, एक अरण्य तीर्थ का नाम है जहाँ एक रात निवास करने से सहस्र गोदान का फल मिलता है (३. ८४, १३३)।

चम्पा, अङ्गदेश की एक प्रधान नगरी का नाम है। 'अथ चम्पां समासाद्य भागीरथ्यां कृतोदकः। दण्डार्तममभिगत्वा तु गोसहस्रफलं लभेत् ॥', (३. ८४, १६३)। 'तथा चम्पां समासाद्य भागीरथ्यां कृतोदकः। दण्डाख्यमभिगम्यैव गोसहस्रफलं लभेत् ॥', (३. ८५, १४. १५)। त्रेतायुग में राजा लोमपाद इसी नगरी में निवास करते थे (३. ११३, १५)। द्वापर में यह अधिरथ सूत की राजधानी थी (३. ३०८, २६)। कर्ण इस पर शासन करता था (१२. ५, ७)। देवशर्मा यहाँ निवास करता था (१३. ४२, १६. ३३)।

चराचरस्यप्रतिहर्तृ = शिव (१,००० नाम)।

चराचरस्य स्रष्टृ = शिव (१,००० नाम)।

१. चराचरात्मन् = शिव (१,००० नाम)।

२. चराचरात्मन् = सूर्य (३. ३, २७)।

चरुचेलिन् = शिव (१,००० नाम)।

चर्मकार, एक जाति के लोगों का नाम है (१३. ४८, २६)।

चर्ममण्डल, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ४७)।

चर्मवत्, शकुनि के भ्राता का नाम है जिसका इरावत् ने वध किया (६. ९०, २७)।

चर्मण्वती, एक नदी का नाम है जिसे अब चम्बल कहते हैं। इस पर द्रुपद का शासन था (१. १३८, ७४)। वरुण की सभा में उपस्थित होनेवाली नदियों के अन्तर्गत इसकी गणना (२. ९, २१)। २. २०, २८; ३१, ७ (इसके तट पर सहदेव ने जम्भक के पुत्र को पराजित किया था); ३. ८२, ५४ (इसमें स्नान का फल); १८८, १०२; २२२, २३ (अग्नि की माता नदियों के अन्तर्गत इसकी गणना); ३०८, २५; ६. ९, १९; ७. ६७, ५ (इसके नाम की व्युत्पत्ति); १२. २९, १२३; १३. ६६, ४३; १६५, २७।

चर्मवासस् = शिव (८. ३३, ५९)।

चर्मिन् = शिव (१,००० नाम)।

१. चल = शिव (१,००० नाम)।

२. चल = विष्णु (१,००० नाम)।

चलाचल = शिव (१,००० नाम)।

चशाति (°तयः), एक जाति के लोगों का नाम है (५. ३०, ३३)।

१. चाक्षुष, एक मनु का नाम है (१३. १८, २०)।

२. चाक्षुष (वि०)—'चाक्षुषं वै द्वितीयं मे जन्म', (१२. ३४७, ४०)। 'चाक्षुषं जन्म द्वितीयं ब्राह्मणः', (१२. ३४८, १६)।

चाक्षुषी, एक प्रकार की गान्धर्व-विद्या का नाम है जिसे चित्ररथ ने अर्जुन को प्रदान किया। मनु ने इस विद्या को सोम को प्रदान किया, सोम ने विश्वावसु को दिया, और विश्वावसु ने चित्ररथ को। इस विद्या को किसी शक्ति-हीन व्यक्ति को प्रदान करने पर इसका प्रभाव नष्ट हो जाता है। तीनो लोकों में जो भी वस्तुयें हैं उनमें से जिस वस्तु को आँखों से देखने की इच्छा हो, उसे इस विद्या के प्रभाव से देखा जा सकता है, और जिस रूप में देखना चाहे उसी रूप में वह वस्तु देखी जा सकती है (१. १७०, ४३–४५)।

१. चाण्डाल, एक जाति के लोगों का नाम है : ५. ९२, १४; १२. ७६, ६; १८०, ३८; २९६, ९; २९७, ३१; ३०२, ३२; १३. ४७, ३६; ४८, ११ (ब्राह्मणी से उत्पन्न शूद्र-पुत्र). २१ (चाण्डाल द्वारा सैरन्ध्री से उत्पन्न पुत्र श्वपाक हो जाता है). २४ (चाण्डाल द्वारा निषादी से उत्पन्न पुत्र पाण्डुसौपाक हो जाता है). २६. २८; ४९, ९ (ब्राह्मणी से उत्पन्न शूद्र-पुत्र); १४. ३६, ३०; ५५, ३४।

२. चाण्डाल, अलग-अलग चाण्डालों के लिए प्रयुक्त हुआ है।= परिख : १२. १३८, २३. ९७. ११७. १२३. १२४. १९९ (उस चाण्डाल के लिए प्रयुक्त हुआ जिसका विश्वामित्र से संवाद हुआ)। १२. १४१, १२. ३५. ३७. ४३. ४४. ४५. ४८. ५५. ५८। एक क्षत्र-बन्धु से चाण्डाल का संवाद (१३. १०१, २ और बाद)।

चाण्डालिकाश्रम, एक तीर्थ का नाम है जहाँ कोकामुख में स्नान करके चीर-वस्त्र धारण किये हुये कुछ काल तक निवास करने वाले व्यक्ति को दस बार कन्या-कुमारी तीर्थ के सेवन का फल प्राप्त होता है (१३. २५, ५२)।

चातुराश्रम्यनेतृ = शिव (१,००० नाम)।

चातुर्महाराजिक = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

चातुर्मास्य, एक व्रत का नाम है। पाण्डवों ने गया में इस व्रत को ग्रहण करके वेदादि के स्वाध्याय द्वारा भगवान् की आराधना की थी (३. ९५, १३)।

चातुर्वर्ण्य, के अन्तर्गत ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र आते हैं (६. २८, १३; १२. २०७, ३३)।

चातुर्विद्य, चारो वेदों के लिए प्रयुक्त हुआ है (१२. ४६, २२; ५०, ३२)।

चातुर्होत्रप्रवर्तक = शिव (१,००० नाम)।

चान्द्रमसी, बृहस्पति की पत्नी तारा का नाम है जिसने छः अग्नि-स्वरूप पुत्रों और एक स्वाहा नामक पुत्री को जन्म दिया (३. २१९, १)।

चान्द्रव्रत, एक व्रत का नाम है जिसे मार्गशीर्ष मास की शुक्ल प्रतिपदा को मूल नक्षत्र से चन्द्रमा का योग होने पर आरम्भ किया जाता है (१३. ११०)।

चापिन् = शिव (१,००० नाम)।

चाम्पेय, विश्वामित्र के पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ४, ५८)।

चारण (बहु० °णाः), व्यक्तियों के एक वर्ग का नाम है : १. ६३, ६६; ७०, १५; ९७, २६; १०९, १०; १२०, १; १२६, ११; १८७, ७; २१०, ४; ३. ३, ४०; २४, २२; ३८, १५; ४३, १; ४६, १४; ४७, १३; ८३, ५; ८४, ५; ८५, २६; ८९, ४; १५६, १५; १५८, ३८; १६०, १३; २९०, ३१; ५. १२३, ५; १८६, २४; ६. ६, ५; ७, १५. २०; ११, ७. २९; १२, २३; २३, १६; ४३, ९; ४५, ८५; ५२, ६३; १२०, १५; ७. ३७, ३७; ८०, २४; ८७, ३२; ९८, ३४. ४५; १००, ३; १०७, १३; ११९, ५५; १२४, १०; १३७, १४; १३८, २६; १३९, ७७; १४३, ५६; १४५, ७८; १६०, ४५; ८. १५, ३४; १६, १७; ५६, १२६; ७८, ३२; ८७, २८. ४१. ६१. ८०; ९४, ६७; ९. ७. १७; २२, २८; ५५, १४; ५८, ६२; १२. ३०२, ३१; ३२७; ३; ३४०, २२; १३. १०, ७; १४, १५०; १८, ७६; १९, १६. २७; २५, ६२; १३०, ११; १४०, २; १५. २४, २०; १६. ४, २७।

चारित्र = कृष्ण (१२. ४३, १४)।

चारुचित्र, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, ४)। ६. ७७, ८; ७. १३६, २० (धृतराष्ट्र के उन छः पुत्रों में एक यह भी था जिसका भीमसेन ने वध किया था)। तुकी० चारुचित्राङ्गद।

चारुचित्राङ्गद, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९५)। तुकी० चारुचित्र।

चारुदेष्ण, श्रीकृष्ण द्वारा रुक्मिणी के गर्भ से उत्पन्न एक पुत्र का नाम है जो द्रौपदी के स्वयंवर के समय उपस्थित हुये (१. १८६, १७)। १. २१९, १०; २२१, ३२; २. २, ३५; १४, ५७ (सात वृष्णि रथियों में से एक यह भी थे); ३४, १६ (युधिष्ठिर के राजसूय के समय ये भी उपस्थित हुये)। ३. १६, ९ (इन्होंने शाल्व से युद्ध किया). २२. २३ (इन्होंने विविन्ध्य से युद्ध किया); १८, २०; २१, १८; १२०, १९; ५. १५७, १८; ७. [illegible] २७; १३. १४, २९. ३३ (श्रीकृष्ण और रुक्मिणी के पुत्रों के अन्तर्गत इनका उल्लेख); १४. ६६, ३; १६. ३, ४४ (इनका वध)।

चारुनेत्र, कुबेर की सभा में उपस्थित होकर उनकी सेवा करनेवाली एक अप्सरा का नाम है (२. १०, १०)।

चारुमत्स्य, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५९)।

चारुयशस्, श्रीकृष्ण द्वारा रुक्मिणी के गर्भ से उत्पन्न एक पुत्र का नाम है (१३. १४, ३३)।

चारुलिङ्ग = शिव (१,००० नाम)।

चारुवक्त्र, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७३)।

चारुवेष, श्रीकृष्ण द्वारा रुक्मिणी के गर्भ से उत्पन्न एक पुत्र का नाम है (१३. १४, ३३)।

चारुशीर्ष, एक आलम्बगोत्रीय मुनि का नाम है जिन्होंने शिव-महिमा के विषय में युधिष्ठिर को अपने अनुभव सुनाये (१३. १८, ५)।

चारुश्रवस्, श्रीकृष्ण द्वारा रुक्मिणी के गर्भ से उत्पन्न एक पुत्र का नाम है (१३. १४, ३३)।

चार्वाक, दुर्योधन के मित्र, एक राक्षस का नाम है (१. २, ७४)। वह दुर्योधन की मृत्यु का प्रतिशोध लेगा (९. ६४, ३८)। १२. ३८, २२. २६. ३३; ३९, २. १०।

चापवक्त्र, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७६)।

चिकुर, नागराज आर्यक के पुत्र एवं सुमुख के पिता का नाम है जिसे गरुड़ ने अपना ग्रास बनाया (५. १०३, २४)।

चितिभस्मप्रिय = शिव (१,००० नाम)।

१. चित्र, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९५. ९७; ११७,४)। धृतराष्ट्र के उन सात पुत्रों में एक यह भी था जिसका भीमसेन ने वध किया (७. १३६, २०; १३७, ३०)।

२. चित्र, वरुण की सभा में उपस्थित होनेवाले एक नाग का नाम है (२. ९, ८; ३. २२५, २३)।

३. चित्र, एक पाण्डव-योद्धा का नाम है जिसने द्रोणाचार्य पर आक्रमण किया—इसके अश्वों आदि का वर्णन (७. २३, ६४. ६६)।

४. चित्र, अभिसार राजा चित्रसेन के भ्राता का नाम है जो कौरवों के मकर-व्यूह में स्थित हुआ और प्रतिविन्ध्य द्वारा मारा गया (८. ११, २१; १३, ७; १४, २०. २१. २६. २८. २९. ३१. ३४)।

५. चित्र, एक पांचाल-योद्धा का नाम है जिसका कर्ण ने वध किया (८. ५६. ४४. ४९)।

१. चित्रक, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है जिसका भीमसेन ने वध किया (१. ६७, १०५)।

२. चित्रक, एक जाति के लोगों का नाम है जो युधिष्ठिर की सभा में उनके सेवक के रूप में उपस्थित रहते थे (२. ५०, २०)।

चित्रकुण्डल, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, ६. १३)।

चित्रकूट, एक पर्वत का नाम है जहाँ मन्दाकिनीतीर्थ स्थित है (३. ८५, ५८)। वनवास के समय श्री राम ने यहाँ निवास किया था (३. २७७, ३८)। ३. २८२, ७०। जो चित्रकूट, जनस्थान तथा मन्दाकिनी के जल में स्नान करके उपवास व्रत करता है वह व्यक्ति राज-लक्ष्मी से सेवित होता है (१३. २५, २९)। १३. १६५, ३२।

१. चित्रकेतु, गरुड के पुत्र, एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, १२)।

२. चित्रकेतु, एक पाण्डव-योद्धा का नाम है जो पांचलराज वीरकेतु के भ्राता थे और जिनका द्रोणाचार्य ने वध किया (६. ९५, ४१; ७. १२२, ४३)।

चित्रकेतुसुत = सुकेतु (८. ५४, २१)।

चित्रगुप्त, धर्मराज के मन्त्री का नाम है (१३. १२५, ६)। इनके द्वारा धर्म के रहस्य का वर्णन (१३. १३०, १४. १८. २०; ३४. ३५)।

चित्रचाप, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९८)।

चित्रदेव, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७१)।

चित्रधर्मन्, विरूपाक्ष नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न एक नरेश का नाम है (१. ६७, २३)। पाण्डवों की ओर से इन्हें रण-निमन्त्रण भेजा गया था (५. ४, १३)।

चित्रपुष्प, विचित्रपुष्पों से भरे हुये एक वन का नाम है जो द्वारका के पश्चिमवर्ती सुकक्ष नामक रजत पर्वत पर सुशोभित था (गोप्रे० सं० २. ३८ के बाद, पृ० ८१२)।

चित्रबर्ह, गरुड़ के पुत्र, एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, १२)।

चित्रबर्हिन्, गरुड़ के पुत्र का नाम है जिसको उन्होंने स्कन्द को प्रदान किया (९. ४६, ५१)।

चित्रबाहु, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९७)।

१. चित्रभानु = अग्नि (देखिये वस्था०)।

२. चित्रभानु = शिव (१,००० नाम)।

१. चित्ररथ, मुनि-पुत्र एक गन्धर्वराज का नाम है (१. ६५, ४३)। अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उपस्थित देव-गन्धर्वों में एक यह भी थे (१. १२३, ५६)। ये अंगारपर्ण के नाम से भी विख्यात हैं (१. १७०, १३. ४०)। ये भी कुबेर की सभा में उपस्थित रहते थे (२. १०, २६)। इन्होंने युधिष्ठिर को चार सौ अश्व प्रदान किये (२. ५२, २३)। इन्होंने अर्जुन को भी अश्व प्रदान किये (२. ६१, २२; ५. ५६, १३)। श्रीकृष्ण ने अपने को गन्धर्वों में चित्ररथ कहा (६. ३४, २६)। जब गन्धर्वों ने पृथिवी का दोहन किता तो ये बछड़ा बने (७. ६९, २५)। देखिये अंगारपर्ण, दग्धरथ, गन्धर्वराज।

२. चित्ररथ, मर्तिकावत देश के राजा का नाम है जिसकी अपनी पत्नी के साथ की हुई जल-क्रीड़ा को जमदग्नि-पत्नी रेणुका ने देखा था (३. ११६, ६)।

३. चित्ररथ, एक अंग देश के राजा का नाम है जो प्रभावती के पति थे (१३. ४२, ८)। तुकी० अंगपति, अंगेश्वर, अंगेन्द्र।

४. चित्ररथ, पांचालराज वीरकेतु के भ्राता का नाम है जिसका द्रोणाचार्य ने वध किया (७. १२२, ४३)।

५. चित्ररथ, श्रीकृष्ण के प्रपितामह का नाम है जो शूर के पिता और उपङ्गु के पुत्र थे (१३. १४७, २९)।

चित्ररथा, एक नदी का नाम है (६. ९, ३४)।

चित्रलेखा, इन्द्रलोक की एक अप्सरा का नाम है (३. ४३, ३०)।

१. चित्रवर्मन्, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९७; ११७, ६)। भीमसेन ने इसका वध किया (७. १३६, २१)।

२. चित्रवर्मन्, एक पाञ्चाल राजकुमार का नाम है (५. ४, १३)।

३. चित्रवर्मन्, वीरकेतु के भ्राता का नाम है जिसका द्रोणाचार्य ने वध किया (७. १२२, ४३)।

४. चित्रवर्मन्, सुचित्र के पुत्र का नाम है जिसका द्रोणाचार्य ने वध किया (८. ६, २७)

चित्रवाण, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका नाम का है(१.११७,६)।

चित्रवाहन, मणिपुर नरेश, चित्राङ्गद, के पिता का नाम है (१. २१५, १५)।

चित्रवाहा, भारत की एक नदी का नाम है (६. ९, १७)।

चित्रवेणिक, धृतराष्ट्र के कुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ५७, १८)।

१. चित्रशिखण्डिन् = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

२. चित्रशिखण्डिन्, सप्तर्षियों (मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, वसिष्ठ) की संज्ञा है (१. ३३५, २७. २९; ३३६, ३. २०)।

चित्रशिला, एक नदी का नाम है (६. ९, ३०)।

१. चित्रसेन, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६३, ११९)। १. ९५, ५७; १८६, ३ (यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुआ); २०७, १३ (इसने पाण्डवों का स्वागत किया); २. ५८, १३; ३. २४२, ६ (गन्धर्वों ने इसे भी बन्दी बनाया); ४. ३५, ३; ५४, ७ (इसने अर्जुन पर आक्रमण किया); ५. ३०, २८ (दुर्जयो देवितव्येन); ४७, ८; ५५, ६४; ६६, ६; ६. १७, २१ (इसने अश्वत्थामा का अनुसरण किया); १८, ११ (इसने भीष्म की रक्षा की); ४४, १६ (भीमसेन पर आक्रमण किया);

४८, ६४ (श्वेत पर आक्रमण किया); ५१, ९; ५९, १३६ (अर्जुन ने इसे पराजित किया); ६०, २; ६१, १ (अभिमन्यु से युद्ध किया); ६२, १६. २६; ७१, २१ (शिखण्डी से युद्ध किया); ७३, २४. २६. २७ (अभिमन्यु से युद्ध किया); ७७, ७; ७८, ११. २२; ८१, ४. १७. २८; ८४, ४०; ८५, १८. ३७; ८६, १; ८७, ३; ९२, २४. ३४ (घटोत्कच ने इस पर आक्रमण किया); ९४, १४; १०४, १९ (अभिमन्यु से युद्ध किया); १०८, ५७; ११०, ८ (चेकितान से युद्ध किया); १११, ५३. ५५; ११३, २. ५. ११. १८. २२ (भीमसेन से युद्ध किया); ११४, ३. ५. ७; ११६, ४. ७. २५; ११८, ५; ७. ७, १३; ७४, १५; ८५, ११; ९५, ३५; ९६, ३१ (भीमसेन से युद्ध किया); ११६, ४. ७. २५; १२०, १०. ३३. ३७ (सात्यकि से युद्ध कया); १२७, ३३; १३७, १३०. १५१ (इसका भीमसेन ने वध किया); १५२, १४; १५८, ६५; १६५, १५; १६८, १. २. ३. ८. ९. १०; ८. ७, १७; ११. १, २७ (यह भी दुर्योधन का एक परामर्शदाता था); १९, १० (मृत धार्तराष्ट्रों के अन्तर्गत इसका उल्लेख)।

२. चित्रसेन, पूरुवंशी राजा अविक्षित के पौत्र और परीक्षित के तृतीय पुत्र का नाम है (१. ९४, ५४)।

३. चित्रसेन, एक गन्धर्व का नाम है जो युधिष्ठिर की सभा में आये (२. ४, ३७)। इन्द्र की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ७, २२)। कुबेर की सभा में उपस्थित गन्धर्वों में एक यह भी हैं (२. १०, २६)। अर्जुन ने इनसे नृत्य और संगीत की शिक्षा ली और इनके मित्र बन गये (३. ४४, ६. ८)। ३. ४५, १. १४; ४६, २२. ३१. ५२–५४. ६१ (इन्होंने उर्वशी को अर्जुन के पास भेजा); १६८, ५७ (ये अर्जुन के मित्र बन गये); २४१, ८. ९. १५. १७. २२. २३; २४२, ६; २४५, २०. २८. ३०; २४६, १. ३. ९. १०. १७ (इनके नेतृत्व में गन्धर्वों ने दुर्योधन आदि कौरवों को बन्दी बना लिया पर पाण्डवों के अनुरोध पर सब को मुक्त कर दिया); २४८, १५; ४. ४९, ९ (अर्जुन ने इन्हें पराजित किया था); ६४, ३७ (इन्होंने अर्जुन की प्रशंसा की); ७. १८५, १७ (इन्हें अर्जुन ने विजित किया था); ८. ४१, ७७; १२. १६, २०; २००, १२; १३. १६५, १४; १४. १२, १०; ८८, ३९ (युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के समय उपस्थित गन्धर्वों में एक यह भी थे); १५. २९, ९। तुकी० गन्धर्व, गन्धर्वराज्, गन्धर्वराज, और गन्धर्वराजन्।

४. चित्रसेन, जरासन्ध के मन्त्री, डिम्भक, का एक नाम है (२. २२, ३२)।

५. चित्रसेन, एक राजा का नाम है जिसका समुद्रसेन ने वध किया (८. ६, १५)।

६. चित्रसेन, अभिसार देश के राजा और कौरवपक्ष के एक योद्धा का नाम है जो चित्र का भ्राता था (८. ११, २१)। इसने श्रुतकर्मा से युद्ध किया (८. १३, ७)। युद्ध में श्रुतकर्मा ने इसका वध किया (८. १४, १. ३. ६. ७. १५. १६)।

७. चित्रसेन, एक पाञ्चाल योद्धा का नाम है जिसका कर्ण ने वध किया (८. ४८, १५)।

८. चित्रसेन, कर्ण के भाई का नाम है जिसका युधामन्यु ने वध किया (८. ७५, ८; ८३, ३७. ४०)।

९. चित्रसेन, एक नाग का नाम है (८. ८७, ४३)।

१०. चित्रसेन, कर्ण के पुत्र का नाम है जिसका नकुल ने वध किया (९. १०, ९. १२. १८. २०. २१)।

११. चित्रसेन, विभिन्न कौरव-योद्धाओं का नाम है : ८. ७, २०; २७, ३ (=श्रुतसेन ?); ६१, १२ (युधिष्ठिर ने इस पर आक्रमण किया); ९. ६, २।

१. चित्रसेना, कुबेर की सभा में उपस्थित रहनेवाली एक अप्सरा का नाम है (२. १०, १०)। इसने इन्द्र की सभा में नृत्य किया (३. ४३, ३०)।

२. चित्रसेना, एक भारतीय नदी का नाम है (६. ९, १७)।

३. चित्रसेना, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १४)।

१. चित्रा, एक अप्सरा का नाम है जिसने अष्टावक्र के सम्मानार्थ कुबेर की सभा में नृत्य किया (१३. १९, ४४)।

२. चित्रा, एक नक्षत्र का नाम है (५. १४३, १०; ६. ३, १२)। इस नक्षत्र में वृषभ और सुगन्धियों का दान करनेवाला व्यक्ति अप्सराओं का लोक प्राप्त करता है (१३. ६४, १७)। इस नक्षत्र में श्राद्ध करने से व्यक्ति सुन्दर सन्तान प्राप्त करता है (१३. ८९, ७)। चान्द्रव्रत के लिये इसका उल्लेख (१३. ११०, ८)।

चित्राक्ष, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९५; ११७, ४)। भीमसेन ने इसका वध किया (७. १३६, २०)।

चित्राङ्ग, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, ६)।

१. चित्राङ्गद, शान्तनु द्वारा सत्यवती के गर्भ से उत्पन्न पुत्र का नाम है (१. २, ९९)। इनके भ्राता का नाम विचित्रवीर्य था (१. ९५, ५०)। शान्तनु के स्वर्गवास के पश्चात् ये राजा बने (१. १०१, २. ५. ६. १०)। १. १०२, १; ५. १७२, १८; १७३, ५; १५. १०, १९।

२. चित्राङ्गद, एक राजा का नाम है जो द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (१. १८६, २२)।

३. चित्राङ्गद, एक कौरव-योद्धा का नाम है जिसको अवशिष्ट कौरवों के अन्तर्गत गणना कराई गई (८. ७, २०)।

४. चित्राङ्गद, एक कलिङ्ग राजा का नाम है (१२. ४, २)।

५. चित्राङ्गद, एक दशार्ण राजा का नाम है। यज्ञ के घोड़े की रक्षा करते हुये अर्जुन ने इसे पराजित किया था (१४. ८३, ६)।

१. चित्राङ्गदा, चित्रवाहन की पुत्री तथा बभ्रुवाहन की माता का नाम है (१. २, ३४१)। "यह चित्रवाहन की एकमात्र सन्तान थीं अतः इनके पिता ने इन्हें पुत्रिका बना लिया था। इनका अर्जुन से विवाह हुआ (१. २१५, १५)।" अर्जुन द्वारा इनके गर्भ से उत्पन्न पुत्र, बभ्रुवाहन, को मणिपुर का राजा बनाया गया (१. २१७, २३)। १४. ७९, ३८; ८०, ८; ८१, ४. २३; ८८, २ (अर्जुन और बभ्रुवाहन के युद्ध में दोनों ही मूर्च्छित होकर गिर पड़े। बभ्रुवाहन की मूर्च्छा दूर होने पर चित्राङ्गदा ने उलूपी को अर्जुन की चेतना दूर करने के लिये कहा); १५. १, २३ (इन्होंने गान्धारी की सेवा की); १५, १० (धृतराष्ट्र और गान्धारी के साथ यह भी वन गईं); २५, ११; १७. १, २८ (ये मणिपुर के लिये प्रस्थित हुईं)। तुकी० चैत्रवाहनी।

२. चित्राङ्गदा, एक अप्सरा का नाम है (१३. १९, ४४)।

चित्राङ्गदात्मज = बभ्रुवाहन (१४. ७९, २५)।

चित्राङ्गदासुत = बभ्रुवाहन (१४. ७९, ३६; ८१, २९)।

चित्राङ्गदोपाख्यान—"शान्तनु से सत्यवती के दो पुत्र, चित्राङ्गद और विचित्रवीर्य, उत्पन्न हुये। विचित्रवीर्य के वयस्क होने के पूर्व ही शान्तनु स्वर्ग चले गये, अतः भीष्म ने चित्राङ्गद को राजगद्दी पर बैठाया। चित्राङ्गद किसी को भी, यहाँ तक कि देवताओं तथा असुरों को भी, अपने समान नहीं समझते थे। फलस्वरूप गन्धर्वों के इसी नाम के राजा ने इनसे सरस्वती के तट पर तीन साल तक युद्ध करते हुये इनका वध कर दिया। तदनन्तर गन्धर्व भी स्वर्ग चला गया। ऐसी परिस्थिति में विचित्रवीर्य के वयस्क न होते हुये भी भीष्म ने उन्हें राजा बनाया और स्वयं उनकी ओर से शासन करने लगे (१. १०१)।" आगे की कथा के लिये देखिये विचित्रवीर्योपाख्यान।

१. चित्रायुध, एक अथवा एकाधिक ऐसे राजाओं का नाम है जो पाण्डवों के पक्ष में सम्मिलित हुये। अर्जुन के साथ एक रथी के रूप में उपस्थित (५. १७१, १७)। ये द्रोण के विरुद्ध युद्ध के लिये चले—इनके अश्वों का वर्णन (७. २३, ५६. ६४)। विकर्ण ने इनका वध किया (८. ६, १७)। कर्ण ने इनका वध किया (८. ५६, ४९)।

२. चित्रायुध, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, ८)।

दुर्योधन की सेना में इसकी उपस्थिति (५. १६०, १२३)। धृतराष्ट्र के उन सात पुत्रों में एक यह भी था जिसका भीमसेन ने वध किया (७. १३६, २१; १३७, ३०)।

३. चित्रायुध, एक राजकुमार का नाम है जो द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुआ (१. १८६, १०)।

४. चित्रायुध, एक कौरव योद्धा का नाम है (८. ७, १८)।

चित्राश्व = सत्यवान् (३. २९४, १३; १३. १६५, ४९)।

चित्रोपला, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, ३४)।

चिन्त्यद्योता, देवों के एक गण का नाम है (१३. १८, ७६)।

चिबुक, वसिष्ठ की गाय द्वारा उत्पादित एक म्लेच्छ जाति का नाम है (१. १७५, ३८)।

चिरकारि, चिरकारिक, चिरकारिन्, गोतम ऋषि के पुत्र का नाम है (१२. २६६, २-५. ९. ४४. ५३-६०)।

चिरान्तक, गरुड़ की प्रमुख सन्तानों में से एक का नाम है (५. १०१, १३)।

१. चीन, वसिष्ठ की गाय के मुख से उत्पन्न एक जाति का नाम है (१. १७५, ३८)। 'स किरातैश्च चीनैश्च वृतः प्राग्ज्योतिषोऽभवत्', (२. २६ ९)। ये युधिष्ठिर के लिये भेंट लाये (२. ५१, २३. २६)। ये युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित थे (३. ५१, २५)। हिमालय से राजा सुबाहु के देश में जाते समय पाण्डवगण इनके देश से होकर गुजरे (३. १७७, १२)। इन लोगों ने भगदत्त का अनुसरण किया (५. १९, १५)। 'चीनानां धौतमूलकः', (५. ७४, १४) । 'अजिनानां सहस्राणि चीनदेशोद्भवानि च', (५. ८६, १०)। यह उत्तर में निवास करनेवाली एक म्लेच्छ जाति थी (६. ९, ६५)। 'चीनाः शबरबर्बराः', (१२. ६५, १३)। 'देशरन्विविधान्यवंशीनहूणनिषेवितान्', (१२. ३२५, १५)।

चीरक, एक देश या जनपद का नाम है जिसे जीत कर के कर्ण ने दुर्योधन का करद बनाया (८. ८, १९)।

१. चीरवासस्, एक क्षत्रिय राजा का नाम है जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ६१)।

२. चीरवासस्, कुबेर की सभा में उपस्थित रहने वाले एक यक्ष का नाम है (२. १०, १८)।

३. चीरवासस् = शिव (७. २०२, ११; १३. १७, ४७; १४. ८, १७)।

चीरिणी, एक नदी का नाम है जिसके तट पर वैवस्वत मनु ने भीगे चीर और जटा धारण करके तपस्या की थी (३. १८७, ६)।

चुलुका, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, २०)।

चूचुक, दक्षिण भारत की एक म्लेच्छ जाति का नाम है (१२. २०७, ४२)।

चूचुप, दक्षिण भारत के एक जनपद का नाम है (५. १४०, २६; ६. ७५, २१)।

१. चेकितान, एक वृष्णिवंशीय यादव का नाम है जो द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुये (१. १८६, ११)। युधिष्ठिर के सभाभवन में प्रवेश करने के समय ये भी उपस्थित थे (२. ४, २७)। इन्होंने युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित होकर उनके लिये एक तरकस भेंट किया (२. ५३, ९)। ५. २५, २. १०; ३०, २; ५७, २. २१; ८३, ३१; १४१, २६; १५१, ५. ६७; १६४, ८; १९६, २३; ६. १९, २१; २५, ५; ४५, ६०-६२; ५७, ३३; ७१, २२; ७२, ८; ७५, १० (युधिष्ठिर के मकरव्यूह में दाहिने पार्श्व में स्थित हुये); ८१, ३२ (कृपाचार्य से युद्ध किया); ८४, २०. २१. २६. २८. ३३; ८९, १९; ९९, १२; १०८, ६; १०९, २०; ११०, ८ (चित्रसेन ने इन पर आक्रमण किया); १११, ५३. ५४. ५५ (चित्रसेन से युद्ध किया); ११८, ४०. ४५; ७. ८, ५; १०, ५४; १४, ४८; २१, ५१. ६२; २३, ४५ (द्रोणाचार्य से युद्ध के लिये चले—इनके अश्वों का वर्णन); २६, ५४; ३५, २; ४०, १९; ८३, ५; ८५, ४१; ९५, ४१ (संजय से युद्ध किया); १२५, ६८. ७१ (द्रोण पर आक्रमण किया परन्तु द्रोणाचार्य ने इनके सारथि का वध कर दिया); ८. १२, १४; २२, ९; ३०, २८; ४९, ३३; ९३, ३९; ९. ३, ४०; १२, ३१. ३२ (दुर्योधन ने इनका वध किया); १५. ३२, १२ (उन मृत योद्धाओं में एक यह भी थे जो गङ्गा में प्रगट हुये)। तुकी० सात्वत, वार्ष्णेय।

२. चेकितान = शिव (७. २०१, ६३; १३. १७, १०२)।

चेदि (बहु० °दयः) एक प्राचीन देश तथा वहाँ के निवासियों का नाम है। इसे वसु उपरिचर ने जीता था (१. ६३, २. ९. १२)। अर्जुन इसे अपने अधीन करेंगे (१. १२३, ४०)। 'चेदीनाम् अधिपः', (१. १८७, २४)। 'पुरुषोत्तमविज्ञातो योसौ चेदिषु दुर्मतिः', (२. १४, १८)। 'चेदिराजकुले जातः', (२. ४३, १)। शिशुपाल के वध के पश्चात् उसका पुत्र, धृष्टकेतु, यहाँ का राजा हुआ (२. ४५, ३६)। यह राजा सुबाहु की राजधानी थी (३. ६५, ४५. ४७; ६८, ७)। 'पाञ्चालाश्चेदिमत्स्याश्च शूरसेनाः पटच्चराः', (४. १, १२)। चेदिराज धृष्टकेतु एक अक्षौहिणी सेना लेकर युधिष्ठिर के पास आया (५. १९, ७)। ये पाण्डव पक्ष में सम्मिलित हुये (५. २२, २५)। 'चेदयश्चान्धकाश्च', (५. २८, ११)। युधिष्ठिर के पक्षवर्तियों के अन्तर्गत इनका उल्लेख (५. ५७, ३३)। ५. ७२, १४; ७४, १६ (चेदिमत्स्यानां); १४०, १८; १४४, ३. १२; १९६, २ (चेदिकाशिकरूषाणां नेतारं दृढविक्रमम्). २३ (धृष्टकेतुश्च चेदीनां प्रणेता); ६. ९, ४० (चेदिमत्स्यकरूषाश्च); ४७, ४. ६७; ५२, ९; ५४, ५. ८. १५. १६; ५६, १४; ५९, १२९; १०६, १८; ११५, २६; ११६, ७५; ११८, ५२; ७. ९, २८ (इन्होंने द्रोणाचार्य पर आक्रमण किया); १०, ४३ (एकोपसृत्य चेदिभ्यः पाण्डवान्यः समाश्रितः। धृष्टकेतुं समायान्तं द्रोणं कर्त्तुं न्यवारयत्); २१, २३. २९; २२, ७; २३, २२; २४, ७; ३२, ४१; ७८, १३; १०६, ९; १०८, ३५; ११४, १००; १२५, २६. ५३. ५४. ५६. ५७. ७२; १५३, २४; १५६, ५१; १६०, १३; १८६, ३३. ३४. ४४; १९३, २३; २००, ७३. ८६; ८. ६, ३०; १२, १९; ३०, २७; ४५, १५ (ये सनातनधर्म के ज्ञाता थे); ४७, १५. २०; ४८, २१. ६३; ४९, ६१; ५६, १. २. ५०. ६०. ६७; ६०, २६; ६४, ५४; ७३, ६. २९. ३५; ७८, १०. २६. २७. २८; ९. १, ३१; २, २३; ७, १५; १२, ५४; १४. ८३, २; ९१, २३; १५. ३६, ३४।

चेदिक = चेदि (८. ४८, १२)।

चेदिध्वज : ५.६२, १६।

चेदिप, चेदियों के एक राजा का नाम है (१. ६३, ९; ३. १२, २; ५. ८०, १४; ८३, ३१; ६. ९५, २४. ४१; ७. ३५, ३; ८३, ५; २००, ८६)।

चेदिपति, चेदियों के राजाओं के लिये प्रयुक्त हुआ है = वसु (१. ६३, २४. २९)। = शिशुपाल (२. ३८, ५; ४०, १३. १५; ४२, २०; ४१, १; ४५, २६)। = धृष्टकेतु (२. ५३, ६)। = सुबाहु (३. ६८, ४५)। = धृष्टकेतु (३. १२०, २६)। = शिशुपाल (५. २२, २८)। = धृष्टकेतु (५. ५०, ४७; १७१, ९; ११. २५, २२)। = वसु (१३. ११५, ५७)।

१. चेदिपुङ्गव = शिशुपाल (२. ३९, १३; ४०, ९)।

२. चेदिपुङ्गव = धृष्टकेतु (११. २५, २०)।

चेदिराज्—२. ३८, ३१ (शिशुपाल); ४४, ४ (शिशुपाल); ४५, १ (शिशुपाल); ३. २२, ५० (धृष्टकेतु); ५. ५७, ८ (धृष्टकेतु); ६. ४५, ७८ (धृष्टकेतु)।

चेदिराज (चेदियों के राजा)—शिशुपाल (२. २९, १२. १४; ३६, ३२; ३८, १४; ४०, १२; ४२, १८; ४४, ३; ४५, १६. २५)। सुबाहु (३. ६४, १३२; ६५, ४५)। धृष्टकेतु (५. १७१, ८; ६. ४५, ४०; ११६, २३)। शिशुपाल (७. ११, १३)। धृष्टकेतु (७. २५, ४९; १०७, १५; १२५, ४०)। शिशुपाल (७. १८०, ३२; १८१, २. ५. २१)। धृष्टकेतु (११. २५, २३. २४)।

चेदिवृष = शिशुपाल (२. २९, १३)।

१. चैत्य, गिरिव्रज के निकट स्थित एक पर्वत का नाम है (२ २१, १८)।

२. चैत्य = देव-वृक्ष (१. १५१, ३३)।

चत्यक (= १. चैत्य)—'शुभाद्‌चैत्यकपद्रमाः', (२. २१, २)। 'मागधानां तु रुचिरं चैत्यकान्तरमाद्रवन्', (२. २१, १५)। 'मागधानां सुरुचिरं चैत्यकं तं समाद्रवन्', (२. २१, १९)। 'चैत्यकस्य गिरेः शृङ्गम्', (२. २१, ४५)।

चैत्र, एक मास का नाम है (३. ८२, १२७; १३०, १५)। जो इस सम्पूर्ण मास-पर्यन्त प्रतिदिन केवल एक समय ही भोजन करके व्रत रखता है, वह संपन्न परिवार में जन्म प्राप्त करता है (१३. १०६, २३)। जो चैत्र शुक्ल द्वादशी को पूरे दिन और रात व्रतपूर्वक विष्णु के रूप में श्रीकृष्ण की उपासना करता है वह पौण्डरीक-यज्ञ का फल और देव-लोक प्राप्त करता है (१३. १०९, ७)।

१. चैत्ररथ, चित्ररथ के वन का नाम है। १. ६३, ४५ (वलं चैत्ररथोपमम्); ७०, ३० (चैत्ररथप्रख्यं); ७५, ४८ (चैत्ररथे वने); ७८, ४ (वने चैत्ररथोपमे); ११९, ४८ (यह उत्तर में स्थित है जहाँ पाण्डु आये थे); ३. १२, २३ (यहाँ श्रीकृष्ण ने यज्ञ किया था); ८०, ६ (वनं चैत्ररथं तथा); १७७, १७ (चैत्ररथप्रकाशं). २० (चैत्ररथप्रकाशात्); २२६, ४ (वने ये तु तस्मिंश्चैत्ररथे जनाः); २५७, २० (प्रविवेश गृहं श्रीमान् यथा चैत्ररथं प्रभुः); ५. १११, ११ (उत्तर में स्थित है); ८. ५३, ११ (यथा चैत्ररथं वनम्); १२. ३२५, ३१ (चैत्ररथोपमम्)।

२. चैत्ररथ, कुरु और वाहिनी के पुत्र का नाम है (१. ९४, ५०)।

३. चैत्ररथ = शशविन्दु (१२. २९, १०५)।

चैत्ररथपर्वन्, महाभारत के ग्याहरवें अवान्तर पर्व का नाम है। "वकासुर का वध करने के पश्चात् पाण्डवगण ब्राह्मण के ही घर में रहने लगे। कुछ दिनों के पश्चात् वहाँ एक ब्राह्मण अतिथि के रूप में उपस्थित हुये। ये ब्राह्मण भी पाण्डवों के साथ वहीं अतिथि के रूप में रहने लगे। उन ब्राह्मण ने धृष्टद्युम्न और शिखण्डी की उत्पत्ति और द्रुपद के महायज्ञ में बिना माता के गर्भ के ही यज्ञ की वेदी से कृष्णा (द्रौपदी) के अद्‌भुत जन्म का वृत्तान्त सुनाया। उन्होंने कहा कि द्रुपद-पुत्र धृष्टद्युम्न का यज्ञाग्नि से और कृष्णा का यज्ञ-वेदी के मध्यभाग से अद्‌भुत जन्म हुआ था। पाण्डवों ने उनसे यह भी पूछा कि धृष्टद्युम्न ने किस प्रकार द्रोणाचार्य से अस्त्रों की शिक्षा प्राप्त की, द्रुपद और द्रोण में किस प्रकार मैत्री हुई, और किस कारण उनमें वैर पड़ गया (१. १६५)।" "पाण्डवों के पूछने पर ब्राह्मण ने द्रोणाचार्य के जन्म, द्रुपद के साथ उनकी मैत्री, परशुराम से ब्रह्मास्त्र की प्राप्ति, और द्रुपद के साथ उनकी मैत्री के टूटने का वृत्तान्त सुनाया। ब्राह्मण ने यह भी बताया कि किस प्रकार भीष्म ने अपने सभी पौत्रों को द्रोणाचार्य के अधीन अस्त्र-विद्या सीखने की व्यवस्था की। अस्त्र-विद्या की शिक्षा देने के लिए अर्जुन तथा अन्य सभी राजकुमारों ने द्रोणाचार्य को उनकी आज्ञानुसार कोई भी दक्षिणा देने का वचन दिया। तदनन्तर उसने यह बताया कि द्रोणाचार्य ने किस प्रकार द्रुपद का अपमान किया (१. १६६)।" "ब्राह्मण ने बताया कि अमर्ष में भरकर राजा द्रुपद ने सन्तान प्राप्ति के लिए दो ब्रह्मर्षियों की सेवा की और उनकी आज्ञा से याज नामक श्रेष्ठ ब्राह्मण के पास उपस्थित हुए। याज ने द्रुपद की अभीष्ट सिद्धि के लिए आवश्यक यज्ञ करना आरम्भ किया। उसी यज्ञ से धृष्टद्युम्न तथा यज्ञ-वेदिका से कृष्णा का जन्म हुआ। ब्राह्मण ने बताया कि उसी द्रुपद-कुमारी कृष्णा का स्वयंवर होने वाला है (१. १६७)।" "उस ब्राह्मण की बात सुनकर कुन्ती-पुत्रों का मन विचलित हो गया। कुन्ती ने भी अपने पुत्रों का मन उस स्वयंवर की ओर आकृष्ट देखकर युधिष्ठिर से कहा कि वे सब पांचाल-देश में जायें क्योंकि उस देश को पहले कभी नहीं देखा था। युधिष्ठिर ने इसकी स्वीकृति दी और भीम, अर्जुन, नकुल तथा सहदेव ने भी युधिष्ठिर का अनुमोदन किया। फलस्वरूप अपने पुत्रों सहित कुन्ती ने आगन्तुक ब्राह्मण से विदा ली और द्रुपद की रमणीय नगरी की ओर जाने की तैयारी आरम्भ कर दी '(१. १६८)।" "पाण्डवगण जब गुप्त रूप से वहाँ निवास कर रहे थे तो महर्षि व्यास उनसे मिलने वहाँ आये। व्यास ने कहा : पूर्व-काल की बात है, तपोवन में एक ऋषि-कन्या रहती थी जो रूपवती और सदाचारिणी होते हुए भी पति नहीं प्राप्त कर सकी। पति के लिए दुःखी होकर उसने भगवान् शंकर को प्रसन्न किया और शंकर का दर्शन प्राप्त होने पर उसने श्रेष्ठ पति प्राप्त करने का वर मांगा। उसने अपनी इस इच्छा को पाँच वार दुहराया अतः शंकर ने उसे दूसरे जन्म में पाँच पति प्राप्त करके का वरदान दिया। वही देवरूपिणी कन्या द्रुपद-कुल में कृष्णा के नाम से उत्पन्न हुई है और पाण्डवों के लिए ही पत्नी के रूप में नियत की गई है। तदनन्तर व्यास ने पाण्डवों को पाञ्चाल-नगर में जाकर रहने और द्रौपदी को प्राप्त करने का आदेश दिया (१. १६९)।" "व्यास के चले जाने पर पाण्डव प्रसन्न होकर अपनी माता के साथ पाञ्चाल-देश की ओर चले। वे लोग दिन-रात चलते हुए उत्तर-दिशा में स्थित सोमाश्रयायण नामक तीर्थ में जा पहुँचे। उस समय उनके आगे-आगे अर्जुन उजाला तथा रक्षा करने के लिए जलती हुई मशाल लेकर चल रहे थे। उस तीर्थ के गंगा के जल में गन्धर्वराज अपनी स्त्रियों के साथ क्रीड़ा कर रहे थे। पाण्डवों को अपनी माता के साथ वहाँ देखकर गन्धर्वराज चित्ररथ अपने धनुष को टंकारते हुए इस प्रकार बोले : 'रात्रि प्रारम्भ होने के पहले पश्चिम दिशा में सन्ध्या की जो लालिमा छा जाती है उस समय ८० लव को छोड़कर सारा मुहूर्त इच्छानुसार विचरनेवाले यक्षों, गन्धर्वों तथा राक्षसों के लिए निश्चित बताया जाता है। शेष दिन का सब समय मनुष्यों के कार्यवश विचरण के लिए निश्चित माना गया है। जो मनुष्य लोभवश हम लोगों की बेला में इधर घूमते हुये आ जाते हैं उन मूर्खों को हम गन्धर्व और राक्षस बन्दी बना लेते हैं। इसीलिए वेद-वेत्ता-पुरुष रात्रि के समय जल में प्रवेश करनेवाले मनुष्यों और राजाओं की भी निन्दा करते हैं। अतः तुम दूर ही खड़े रहो। मैं गन्धर्वराज अङ्गारपर्ण गंगा के जल में उतरा हूँ अतः तुम लोग मुझे भली प्रकार जान लो। मैं अपने ही बल पर निर्भर रहनेवाला, स्वाभिमानी, ईर्ष्यालु तथा कुवेर का मित्र हूँ। मेरा यह वन भी अङ्गारपर्ण नाम से विख्यात है। मेरी उपस्थिति में यहाँ राक्षस, शृङ्गिणि, देवता अथवा मनुष्य, कोई भी नहीं आने पाते; अतः तुम लोग कैसे आ रहे हो ?' अर्जुन ने कहा : 'समुद्र, हिमालय की तराई और गंगा के तट पर रात-दिन अथवा सन्ध्या के समय किसी का भी अधिकार सुरक्षित नहीं है। हम लोग शक्ति-सम्पन्न हैं अतः तुम्हें असमय में भी कुचल सकते हैं।' अर्जुन के इस प्रकार के निर्भय बचन को सुनकर अङ्गारपर्ण क्रुद्ध हो उठा और धनुष उठाकर अर्जुन पर बाण-वर्षा करने लगा। अर्जुन ने उसके बाण को व्यर्थ करते हुए कहा : 'मैं तुम्हारे साथ दिव्यास्त्र से युद्ध करूँगा। यह आग्नेय अस्त्र पूर्व-काल में इन्द्र के गुरु बृहस्पति ने भरद्वाज मुनि को दिया था। भरद्वाज से अग्निवेश्य ने, अग्निवेश्य से मेरे गुरु द्रोणाचार्य ने और उनसे मैंने प्राप्त किया है।' ऐसा कहकर अर्जुन ने उस अस्त्र से गन्धर्वराज के रथ को भस्म कर दिया। रथ-हीन हुआ गन्धर्व व्याकुल हो गया और अस्त्र के तेज से मूढ़ होकर नीचे मुख किये हुये गिरने लगा। उस समय अर्जुन ने उसका केश पकड़ लिया और घसीटकर अपने अन्य भ्राताओं के पास लाये। उस गन्धर्व की पत्नी कुम्भीनसी, ने अपने पति के जीवन की रक्षा के लिए युधिष्ठिर की शरण ली। युधिष्ठिर ने तब अर्जुन से उस गन्धर्व को मुक्त करा दिया। तब गन्धर्व ने कहा : 'मैं अपने पूर्व नाम अङ्गारपर्ण को छोड़ देता हूँ। आज की पराजय से मुझे सबसे बड़ा लाभ यह हुआ है कि मैंने दिव्यास्त्रधारी अर्जुन को मित्र के रूप में प्राप्त कर लिया है। इनके दिव्यास्त्र की अग्नि से मेरा यह विचित्र एवं उत्तम रथ दग्ध हो गया है। पहले मैं विचित्र-रथ के कारण चित्ररथ कहलाता था परन्तु मेरा नाम अब दग्धरथ हो गया। मैंने पूर्वकाल में तपस्या के द्वारा जो विद्या प्राप्त की है उसे मैं आज अपने मित्र अर्जुन को समर्पित करूँगा।' तदनन्तर गन्धर्वराज ने अर्जुन को चाक्षुषी नामक विद्या प्रदान की जिसके प्रभाव से तीनों लोकों में जिस किसी भी वस्तु को कोई देखने की इच्छा करे वह उसे देख सकता है और जिस रूप में देखना चाहे उसी रूप में देखेगा। गन्धर्वराज ने अर्जुन तथा उनके अन्य भ्राताओं

को अलग-अलग गन्धर्व-लोक के ऐसे सौ-सौ घोड़े भेंट किये जो मन के समान वेगशाली और आवश्यकता के अनुसार दुबले-मोटे हो सकते थे किन्तु उनका वेग कभी भी कम नहीं होता था। गन्धर्वराज ने बताया कि वे घोड़े इन्द्र के वज्र-स्वरूप हैं। प्रत्युपहार के रूप में अर्जुन ने भी गन्धर्वराज को आग्नेय-अस्त्र देते हुए उनसे पूछा कि उन लोगों को मनुष्यों से क्यों भय प्राप्त होता है। गन्धर्व ने कहा : 'आप लोग विवाहित न होने के कारण त्रिविध अग्नियों की सेवा नहीं करते, और आपके आगे कोई ब्राह्मण-पुरोहित भी नहीं है, इन्हीं कारणों से मैंने आप पर आक्रमण किया। यक्ष, राक्षस, गन्धर्व, पिशाच, नाग और दानव कुरु-कुल की यशोगाथा का वर्णन करते हैं। नारद आदि देवर्षियों के मुख से भी मैंने आपके बुद्धिमान पूर्वजों का गुण-गान सुना है। ब्रह्मचर्य सबसे बड़ा धर्म है और वह तुममें निश्चित रूप से विद्यमान है। इसीलिए मैं युद्ध में तुमसे परास्त हो गया हूँ। यदि कोई कामासक्त क्षत्रिय रात्रि में मुझसे युद्ध करने आये तो वह किसी प्रकार भी जीवित नहीं बच सकता। कामासक्त होने पर भी यदि कोई पुरुष ब्राह्मण को आगे करके चले तो वह समस्त निशाचरों पर विजय प्राप्त कर सकता है क्योंकि उस दशा में उसका समस्त भार पुरोहित पर होता है। अतः हे तापत्य ! मनुष्यों को इस लोक में इन्द्रियों को वश में रखनेवाले पुरोहितों की नियुक्ति करनी चाहिए। छः अंगों सहित वेद के स्वाध्याय में तत्पर, ईमानदार, सत्यवादी, धर्मात्मा और कृतात्मा ब्राह्मण को ही राजाओं का पुरोहित होना चाहिए। अतः आप यह जान लें कि जहाँ विद्वान् ब्राह्मणों की प्रधानता हो उसी राज्य की दीर्घकाल तक रक्षा की जा सकती है' (१. १७०)।" "गन्धर्व ने सूर्य-कन्या तपती को देखकर राजा संवर्ण के मोहित होने का वृत्तान्त सुनाया (१. १७१)।" "गन्धर्व ने तपती और संवर्ण की बातचीत का वर्णन किया (१. १७२)।" "गन्धर्व ने बताया कि वसिष्ठ की सहायता से किस प्रकार राजा संवर्ण को तपती की प्राप्ति हुई (१. १७३)।" "वसिष्ठ की महत्ता बताते हुये गन्धर्व ने किसी श्रेष्ठ ब्राह्मण को पुरोहित बनाने का अर्जुन से आग्रह किया (१. १७४)।" "गन्धर्व ने वसिष्ठ के अद्भुत क्षमा-बल के आगे विश्वामित्र के पराभव का वृत्तान्त सुनाया (१. १७५)।" "शक्ति के शाप से कल्माषपाद के राक्षस होने, विश्वामित्र की प्रेरणा से राक्षस द्वारा वसिष्ठ के पुत्रों के भक्षण करने, और वसिष्ठ के शोक का गन्धर्व ने वर्णन किया (१. १७६)।" "गन्धर्व ने बताया कि किस प्रकार कल्माषपाद का शाप से उद्धार और वसिष्ठ द्वारा उन्हें अश्मक नामक पुत्र प्राप्त हुआ (१. १७७)।" "गन्धर्व ने शक्ति-पुत्र पराशर के जन्म का वर्णन करते हुए बताया कि पिता की मृत्यु का समाचार सुनकर जब पराशर कुपित हुए तो उन्हें शान्त करने के लिए वसिष्ठ ने और्वोपाख्यान सुनाया (१. १७८)।" "पितरों द्वारा और्व के क्रोध का निवारण (१. १७९)।" "और्व तथा पितरों की बातचीत और और्व का अपनी क्रोधाग्नि को वड़वानल रूप से समुद्र में त्यागना (१. १८०)।" "पुलस्त्य आदि महर्षियों के समझाने से पराशर के द्वारा राक्षस-सत्र की समाप्ति (१. १८१)।" "राजा कल्माषपाद को ब्राह्मणी आंगिरसी का शाप (१. १८२)।" "पाण्डवों का धौम्य को अपना पुरोहित बनाना (१. १८३)।"

चैत्रवाहिनी = चित्राङ्गदा (१. २१५, १६; १४. ८०, १८; ८१, ४)।

१. चैत्रसेनी, एक राजा का नाम है जिसे द्रोणाचार्य ने पराजित किया था (७. २१, ६२)।

२. चैत्रसेनी, चित्रसेन के पुत्र का नाम है (७. २५, २७)।

चैत्री, चैत्र मास की पूर्णिमा का नाम है (१२. १००, १० ; १४. ७२, ४)। इसी दिन युधिष्ठिर का अश्वमेध यज्ञ हुआ (१४. ७६, २५; ८१, २३; २२, २७; ८४, २४)।

चैद्य, चेदियों के राजा का नाम है। शिशुपाल (१. १, १३१; २. ४४, ५; ४५, २९; ४६, ९; ५. ६८, ४)। धृष्टकेतु (५. १४१, २५; ७. ८५, ४१; १२५, ३१)। शिशुपाल (१६. ६, ११)।

चैद्या = करेणुमती, जो नकुल की पत्नी थी (१. ९५, ७९)।

चैद्याधिपति = धृष्टकेतु (५. ४, १४)।

१. चोल (बहु० °लाः), वर्तमान तञ्जौर की एक जाति के लोगों का नाम है जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित हुए (३. ५१, २२)। ये दक्षिण में निवास करते थे (६. ९, ६०)। इन्हें श्रीकृष्ण ने पराजित किया था (७. ११, १७)। इन्होंने पाण्डवों के पक्ष में होकर युद्ध किया (८. १२, १५)।

२. चोल, चोल देश के राजा का नाम है जो युधिष्ठिर के लिए भेंट लाये (२. ५२, ३५)।

चौर, क्षत्रियों की एक प्राचीन जाति का नाम है जो ब्राह्मणों के रोष से शूद्रत्व को प्राप्त हो गई (१३. ३५, १७)।

१. च्यवन, एक महर्षि का नाम है जो भृगु के पुत्र थे। 'सौकन्यमपि चाख्यानं च्यवनो यत्र भार्गवः। शर्यातियज्ञे नासत्यौ कृतवान्सोमपीतिनौ ॥', (१. २, १७०)। ये भृगु के पुत्र और प्रमति के पिता थे (१. ५, ८. ९. १२)। ये अपनी माता, पुलोमा के गर्भ से च्युत हो गये थे इसीलिये इनका च्यवन नाम पड़ा (१. ६, २. ४. ९)। 'पुलोम्नश्च विनाशोऽयं च्यवनस्य च संभवः', (१. ७, २९)। इन्होंने सुकन्या से प्रमति नामक पुत्र उत्पन्न किया (१. ८, १)। ये आस्तीक के गुरु थे (१. ४८, १८)। जनमेजय के सर्पसत्र के समय इन्हीं का एक वंशज होता पुरोहित बना (१. ५३, ५)। ये भृगु द्वारा पुलोमा के गर्भ से उत्पन्न हुये थे और मनु की पुत्री, आरुषी इनकी पत्नी बनी (१. ६६, ४५)। ये ब्रह्मा की सभा में उपस्थित रहते थे (२. ११, २२)। इनका आश्रम दक्षिण में स्थित था (३. ८९, १२)। इनके आश्रम में कालकेयों ने १०० मुनियों का वध कर दिया (३. १०२, ४)। ३. १२१, २२; १२२, १. २३. २६. २९ (इन्होंने राजा शर्याति की कन्या, सुकन्या, से विवाह किया); १२३, ४. १०. १२. १५. १६. २१. २४ (अश्विनों की कृपा से इन्हें पुनः युवावस्था प्राप्त हुई); १२४, १. ५. ७. ८. १०. १८ (शर्याति के यज्ञ में जब इन्होंने अश्विनीकुमारों को देने के लिये सोम हाथ में उठाया तो इन्द्र ने इन्हें रोका और इनके न रुकने पर इन पर वज्र चलाया, तब इन्होंने इन्द्र के हाथ को स्तम्भित करके उनके वध के लिये मद नामक महादैत्य को उत्पन्न किया); १२५, २ (भयभीत होकर इन्द्र ने अश्विनीकुमारों को सोमपान का अधिकारी बना दिया); २२०, १; ३०४, ९; ४. २१, १०; ५. ११७, ११; १८६, २६; १२. ३७, ११; ४७, ८ (बाण-शय्या पर पड़े भीष्म को घेर कर खड़े होने वाले ऋषियों में एक यह भी थे); ३४२, २४ (अश्विनोर्ग्रहप्रतिषेधोद्यतवज्रस्य पुरन्दरस्य च्यवन स्तंभितो बाहू); ३६५, १; १३. ४, ८ ('च्यवनस्यात्मसंभवः ऋचीक इति विख्यातः). १३; २६, ५; ५०, २. ३. १९. २५; ५१, १. २. ५. ७. ९. ११. १३. २४. २६. ३८. ४२. ४५ (जब ये मत्स्यों के साथ मछुओं के जाल में फँस गये तो इनका मूल्य एक गाय के बराबर निर्धारित किया गया); ५२, ७. ८. १०. १३. १५. १९. ३५; ५३, ३. २१. २२. २६. २९. ५५. ६३; ५४, १९. २७. २९. ३०; ५५, १. १०; ५६, १. १५. १६. १९ (ये कुशिक के वंश का विनाश कर देना चाहते थे परन्तु कुशिक की निष्ठा से प्रसन्न होकर उन्हें मुक्त करते हुये यह वरदान दिया कि उनके वंश की तीसरी पीढ़ी में उत्पन्न विश्वामित्र ब्राह्मणपद प्राप्त करेंगे); ८५, १२८ (ये भृगु के सात पुत्रों में से प्रथम थे); १०६, ६९ (इन्होंने तपस्या द्वारा स्वर्ग प्राप्त किया)। "वायु ने बताया कि अश्विनों को वचन देने के कारण इन्होंने इन्द्र को उन्हें सोमपान का अधिकारी बनाने की आज्ञा दी। इन्द्र ने इनकी आज्ञा को यह कह कर अस्वीकार कर दिया कि अश्विनद्वय देवताओं के बराबर नहीं हैं। परन्तु इन्होंने कहा कि सूर्य के पुत्र होने के कारण अश्विनद्वय भी देवता हैं। तदनन्तर यज्ञ द्वारा अश्विनों को सोमपान का अधिकार दिलाने का प्रयास किया। इस पर जब क्रुद्ध होकर इन्द्र ने इन पर वज्र से प्रहार करना चाहा तो इन्होंने उनकी भुजाओं को स्तम्भित कर दिया। इतना ही नहीं, इन्होंने इन्द्र का वध कर देने के लिये मद नामक दैत्य को उत्पन्न किया। उत्पन्न होते ही मद ने अपने मुख को खोला, जिसमें इन्द्र सहित समस्त देवता प्रवेश कर गये। तब दुखी होकर देवताओं ने इन्द्र से इनकी

आज्ञा मानने का आग्रह किया। इन्द्र ने देवों के आग्रह को मान कर इनकी आज्ञा स्वीकार कर ली। तदनन्तर इन्होंने जूआ, शिकार, मदिरा, और स्त्रियों में मद को बाँट दिया। वायु ने कहा 'बताओ कौन सा क्षत्रिय ब्राह्मण से श्रेष्ठ है।' (१३. १५६, १५. १६. १९. २२. २३. २४. २५. ३१. ३२. ३५)।" इन्द्रसहित सम्पूर्ण देवता जब मद के मुख में पड़ गये तब इन्होंने देवों के अधिकार को समस्त पृथिवी को अपने अधिकार में कर लिया (१३. १५७, २.४)। उत्तर के ऋषियों के अन्तर्गत इनकी गणना (१३. १६५, ४७)। १४. ९, ३१. ३२। तुकी० आङ्गिरस, भार्गव, भृगु, **भृगुशार्दूल भृगूद्वह, भृगुकुलकीर्तिवर्धन, भृगुकुलोद्वह, भृगुमुख्य, भृगुनन्दन, भृगुसुत।**

च्यवन-कुशिक-संवाद—"युधिष्ठिर के पूछने पर भीष्म ने कहा, पूर्वकाल में च्यवन को यह बात मालूम हुई कि उनके वंश में कुशिकवंशी कन्या के सम्बन्ध से क्षत्रियत्व का महान् दोष आने वाला है। यह जान कर कुशिकों के समस्त कुल को भस्म कर डालने की इच्छा से उन्होंने कुशिक के पास जाकर कहा : 'मेरे मन में कुछ काल तक तुम्हारे साथ रहने की इच्छा हुई है।' कुशिक तथा उनकी रानी ने च्यवन का स्वागत किया। तदनन्तर जब च्यवन सोये तो उनकी आज्ञा के अनुसार कुशिक दम्पति उनकी सेवा करने लगे। उस समय च्यवन मुनि एक ही करवट इक्कीस दिन तक सोते रहे और राजा कुशिक तथा उनकी रानी मुनि को बिना जगाये उनका पैर दबाते रहे। राजदम्पति ने इस अवधि में अन्न-जल तक ग्रहण नहीं किया। बाइसवें दिन च्यवन स्वयं उठे और राजा से कुछ कहे बिना ही महल से बाहर निकल गये। राजा तथा रानी भूख से पीड़ित और निर्बल होते हुये भी मुनि के पीछे-पीछे गये परन्तु थोड़ी ही देर में च्यवन अन्तर्धान हो गये। इससे अत्यन्त दुखी होकर राजा पृथिवी पर गिर कर मूर्च्छित हो गये। तदनन्तर अपने को सँभाल कर वे पुनः मुनि को ढूँढने का प्रयास करने लगे (१३. ५२)।" "कुशिक-दम्पति महर्षि च्यवन को ढूँढ पाने में असमर्थ होकर अपनी पुरी में लौट आये। राजा ने सूने मन से जब अपने भवन में प्रवेश किया तब च्यवन को पुनः उसी शैय्या पर सोते देखा। मुनि के दर्शन से कुशिक-दम्पति की थकावट दूर हो गई और वे पुनः मुनि का पैर दबाने लगे। इस बार भी मुनि इक्कीस दिनों तक सोते रहे और जब उठे तब उन्होंने राजा और रानी को अपने शरीर में तेल की मालिश करने की आज्ञा दी। यद्यपि राजा और रानी भूख-प्यास से दुर्बल और पीड़ित थे तथापि उन्होंने मुनि की आज्ञा का पालन किया। तदनन्तर महर्षि च्यवन ने स्नानागार में प्रवेश किया और वहाँ राजा के देखते-देखते अन्तर्धान हो गये। इसके पश्चात् च्यवन मुनि को राजा और रानी ने स्नान करके सिंहासन पर बैठे देखा। मुनि की आज्ञा से राजा ने भोजन-सामग्री —वर्णन—प्रस्तुत की परन्तु च्यवन ने समस्त भोजन को भस्म कर दिया और स्वयं अन्तर्धान हो गये। उस समय राजर्षि कुशिक अपनी स्त्री के साथ रात भर वहीं खड़े रहे और उनके मन में क्रोध का लेश-मात्र भी आवेग नहीं हुआ। प्रतिदिन भांति-भांति का भोजन तथा अनेक प्रकार के वस्त्र च्यवन की सेवा में समर्पित किये जाते थे। च्यवन मुनि जब इन समस्त कार्यों में कोई छिद्र न देख सके तो वे राजा कुशिक से बोले : 'तुम स्त्री सहित रथ में जुत जाओ और मैं जहाँ कहूँ वहाँ मुझे ले चलो।...तुम्हारा जो युद्धोपयोगी रथ हो उसे ही तैयार करो और उसमें नानाप्रकार के अस्त्र-शस्त्रों को रक्खो।' च्यवन की आज्ञा-पालन करते हुए राज-दम्पति ने च्यवन से पूछा कि वे रथ कहाँ ले चलें। च्यवन ने कहा : 'तुम बहुत धीरे-धीरे एक-एक पग उठाकर चलो जिससे मुझे कष्ट न हो और सब लोग मुझे देख सकें।' राज-दम्पति मुनि की आज्ञानुसार रथ को लेकर चले। उस समय सारा नगर आर्त होकर हाहाकार करने लगा। इतने में ही मुनि ने सहसा चाबुक उठाकर राजा और रानी पर अत्यन्त तीक्ष्ण प्रहार किया परन्तु वे दोनों निर्विकार-भाव से रथ ढोते ही रहे। पचास रात तक उपवास करने के कारण यद्यपि राजा और रानी अत्यन्त दुर्बल हो गये थे और उनका सारा शरीर काँप रहा था तथापि वे किसी प्रकार साहस एकत्र करके उस विशाल रथ का बोझ ढोते रहे। इतने पर भी राजा और रानी के मन में कोई विकार न देखकर च्यवन-मुनि राजा का समस्त धन लुटाने लगे। परन्तु इस कार्य में भी राजा कुशिक प्रसन्नता-पूर्वक ऋषि की आज्ञा का पालन करते रहे। इस पर च्यवन ने प्रसन्न होकर राज दम्पति को वर देने की इच्छा प्रगट की। च्यवन दोनों सुकुमार राज-दम्पति की आहत और रक्तरंजित पीठ पर स्नेहवश कोमल हाथ फेरने लगे जिससे राजा और रानी की समस्त थकावट दूर हो गई और वे सुख का अनुभव करने लगे। उस समय राजा और रानी दोनों की तरुण अवस्था हो गई तथा उनका शरीर भी सुन्दर और बलवान प्रतीत होने लगा। च्यवन वहीं गंगा-तट पर रुक गये और राजा तथा रानी को दूसरे दिन प्रातःकाल उपस्थित होने की आज्ञा दी। राजा और रानी के चले जाने के बाद महर्षि च्यवन ने गंगा-तट के तपोवन को अपने संकल्प द्वारा नानाप्रकार के रत्नों से सुशोभित, समृद्धशाली एवं नयनाभिराम बना दिया। वैसा कमनीय-कानन इन्द्रपुरी अमरावती में भी नहीं था (१३. ५३)।" "दूसरे दिन प्रातःकाल राजा कुशिक ने अपनी रानी के साथ तपोवन में आकर एक सुवर्ण का सुन्दर राजप्रासाद देखा-वर्णन। वहाँ की शोभा देखकर राजा को अत्यन्त आश्चर्य हुआ और वे सोच-विचार करने लगे कि कहीं वे उत्तर-कुरु अथवा अमरावती पुरी में तो नहीं आ गये। उसी समय उन्हें एक बहुमूल्य तथा दिव्य पर्यङ्क पर महर्षि च्यवन विराजमान दिखाई दिये। राजा ज्यों ही हर्ष-पूर्वक च्यवन की ओर बढ़े त्यों ही महर्षि पुनः अन्तर्धान हो गये और साथ ही वह उनका पर्यङ्क भी अदृश्य हो गया। तदनन्तर राजा ने अन्यत्र महर्षि को कुशासन पर बैठकर जप करते हुये देखा। एक ही क्षण में अप्सरायें, गन्धर्व और वृक्ष आदि सब अदृश्य हो गये तथा गंगा का तट शब्द-रहित प्रतीत होने लगा। राजा और रानी को देखकर च्यवन ने उन्हें अपने समीप बुलाकर आशीर्वाद दिया। जब च्यवन ने राजा से वर माँगने के लिये कहा तो राजा बोले : 'मैं आपके निकट उसी प्रकार रहा हूँ जैसे कोई प्रज्वलित अग्नि के बीच खड़ा हो; परन्तु उस अवस्था में भी मैं जलकर भस्म नहीं हुआ, यही मेरे लिए बहुत बड़ी बात है। यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मेरे मन के एक सन्देह का समाधान करने की कृपा करें (१३. ५४)।" "राजा ने मुनि से उनके विचित्र व्यवहारों के सम्बन्ध में प्रश्न किया तो च्यवन ने कहा : 'पूर्व-काल की बात है, एक दिन देवताओं की सभा में मैंने ब्रह्मा को यह कहते सुना था कि ब्राह्मण और क्षत्रिय में विरोध होने के कारण दोनों कुलों में संकरता आ जायगी। इसे ही सुनकर मैं तुम्हारे कुल का मूलोच्छेद कर डालना चाहता था, और इसी उद्देश्य से मैं तुम्हारे नगर में उपस्थित हुआ था; किन्तु तुम्हारे घर में रहकर भी मैंने तुममें कोई दोष नहीं देखा। इसीलिए तुम जीवित हो।......इस वन में जो तुमने दिव्य दृश्य देखे हैं वह स्वर्ग की एक झांकी थी। तुमने अपनी रानी के साथ इसी शरीर से कुछ देर तक स्वर्गीय-सुख का अनुभव किया है। इन सब बातों को देखने पर तुम्हारे मन में जो इच्छा हुई है वह भी मुझे ज्ञात है। तुम सम्राट और देवराज के पद की अवहेलना करके ब्राह्मणत्व पाना चाहते हो और तप की भी अभिलाषा रखते हो। तुम्हारी यह इच्छा पूर्ण होगी। तुमसे कौशिक नामक ब्राह्मण-वंश प्रचलित होगा और तुम्हारी तीसरी पीढ़ी ब्राह्मण हो जायगी। भृगु-वंशियों के तेज से तुम्हारा वंश ब्राह्मणत्व को प्राप्त होगा, और तुम्हारा पौत्र अग्नि के समान तेजस्वी तथा तपस्वी ब्राह्मण बनेगा। तुम्हारे मन में जो इच्छा हो उसे अब वर के रूप में मांग लो क्योंकि अब मैं तीर्थ-यात्रा को जाऊँगा।' कुशिक ने कहा : 'आज आप प्रसन्न हैं, यही मेरे लिए बहुत बड़ा वर है। मेरा कुल किस प्रकार ब्राह्मणत्व को प्राप्त होगा? मेरा वह पौत्र कौन होगा जो सर्वप्रथम ब्राह्मण होनेवाला है' (१३. ५५)।" "च्यवन ने कहा : 'क्षत्रिय लोग समस्त भृगुवंशियों का संहार कर डालेंगे। तदनन्तर मेरे वंश में ऊर्व नामक एक महा तेजस्वी बालक होगा जो भार्गव-गोत्र की वृद्धि करेगा। वह बालक तीनो लोकों का विनाश करने के लिए क्रोध-जनित अग्नि की सृष्टि करेगा जिससे पर्वतों और वनों सहित समस्त पृथ्वी भस्म हो जायगी। कुछ काल

के पश्चात् वह मुनि-श्रेष्ठ ऊर्व उस अग्नि को समुद्र में स्थित वडवावक्त्र में डालकर बुझा देगा। उस ऊर्व के पुत्र ऋचीक होंगे। ऋचीक की सेवा में सम्पूर्ण धनुर्वेद मूर्तिमान होकर उपस्थित होगा। ऋचीक क्षत्रियों के संहार करने के लिए उस धनुर्वेद को ग्रहण करके अपने पुत्र जमदग्नि को उसकी शिक्षा देंगे। वे ऋचीक तुम्हारे कुल की कन्या का पाणि-ग्रहण करेंगे। तुम्हारी पौत्री एवं गाधिकी पुत्री को पाकर ऋचीक क्षत्रिय धर्म वाले ब्राह्मण जातीय पुत्र को उत्पन्न करेंगे। वे ऋचीक मुनि तुम्हारे कुल में गाधि को एक महान तपस्वी पुत्र प्रदान करेंगे जिसका नाम होगा विश्वामित्र। वंश-वृक्ष इस प्रकार होगा:

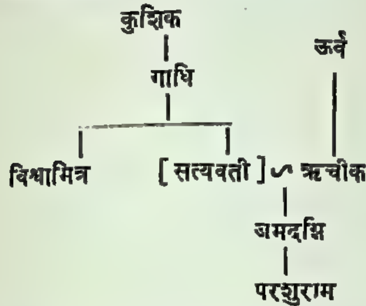

च्यवन की बात सुनकर कुशिक अत्यन्त प्रसन्न हुये। च्यवन भी तीर्थ-यात्रा को चले गये। आगे चलकर च्यवन मुनि के कथनानुसार भृगु-कुल में परशुराम का और कुशिक वंश में विश्वामित्र का जन्म हुआ (१३.५६)।"

च्यवनोपाख्यानम्—"भीष्म ने कहा: पूर्व काल की बात है, भृगु-पुत्र च्यवन महान व्रत का आश्रय लेकर बारह वर्षों तक जल के भीतर रहे। वे गंगा-यमुना के संगम पर प्रविष्ट हुये थे। दोनों नदियों के वेग को सहन करते हुए वे एक काष्ठ-स्तम्भ की भांति स्थित रहे—वर्णन। एक समय वे मल्लाहों के जाल में फंस गये और मल्लाहों ने उन्हें भी बाहर खींच लिया। जाल के आकर्षण से अत्यन्त खेद, श्वास और स्थल का स्पर्श होने के कारण उसमें फंसे हुए अनेक मत्स्य मृत्यु को प्राप्त हुये। वेदों के पारङ्गत विद्वान् महर्षि च्यवन को देखकर मल्लाहों ने उनसे क्षमा मांगी। मल्लाहों के पूछने पर च्यवन ने कहा: 'मैं इन मत्स्यों के साथ ही अपने प्राणों का त्याग या रक्षण करूँगा। मैं बहुत दिनों तक इनके साथ जल में रह चुका हूँ, अतः मैं इन्हें त्याग नहीं सकता।' मुनि की बात सुनकर निषाद अत्यन्त भयभीत होकर कांपने लगे और उसी अवस्था में जाकर उन सब ने राजा नहुष से समाचार का निवेदन किया (१३.५०)।" "निषादों से महर्षि च्यवन के आगमन का समाचार सुनकर राजा नहुष अपने पुरोहितों, और मंत्रियों को साथ लेकर तत्काल मुनि के पास आये। नहुष के पूछने पर च्यवन ने कहा: 'राजन्! मत्स्यों से जीविकोपार्जन करने वाले इन निषादों ने आज अत्यन्त परिश्रम से मुझे अपने जाल में फँसाकर निकाला है; अतः आप इन मछलियों के साथ साथ मेरा भी मूल्य चुका दीजिये।' नहुष ने च्यवन के मूल्य के रूप में निषादों को प्रचुर धन दिया, परन्तु च्यवन ने कहा कि वह धन अथवा राजा का समस्त साम्राज्य भी उनके मूल्य के बराबर नहीं है। च्यवन का यह वचन सुनकर नहुष चिन्तित हो उठे और अपने पुरोहित तथा मन्त्रियों से परामर्श करने लगे। इतने ही में एक गोजात वनवासी मुनि ने वहाँ उपस्थित होकर कहा कि वे च्यवन को सन्तुष्ट करने का उपाय जानते हैं। उन्होंने बताया: 'ब्राह्मण और गौओं का कोई मूल्य नहीं लगाया जा सकता, अतः आप च्यवन मुनि का मूल्य एक गाय प्रदान करके दे सकते हैं।' जब नहुष ने च्यवन को एक गाय के बदले क्रय करने का प्रस्ताव किया तो उन्होंने इसे स्वीकार कर लिया। च्यवन ने कहा: 'गौएँ लक्ष्मी की मूल हैं।··· स्वाहा और वषट्कार सदा गौओं में ही प्रतिष्ठित होते हैं।···गौओं से श्रेष्ठ कुछ नहीं।' निषादों से गाय का उपहार स्वीकार करके च्यवन ने उन्हें भी मछलियों के साथ ही स्वर्ग जाने का आशीर्वाद दिया। उस समय मल्लाहों और मत्स्यों को स्वर्गलोक जाते हुये देखकर राजा नहुष को आश्चर्य हुआ। तदनन्तर गोजात मुनि तथा च्यवन, दोनों ने नहुष को अनेक वर दे कर कृतार्थ किया। वर देने के पश्चात् दोनों मुनि अपने-अपने निवास-स्थान तथा राजा नहुष अपनी राजधानी चले गये (१३.५१)।" "युधिष्ठिर द्वारा परशुराम के सम्बन्ध में पूछने पर भीष्म ने पूर्व-काल में हुआ च्यवन और कुशिक का संवाद (देखिये च्यवन-कुशिक-संवाद) सुनाया (१३.५२–५६)।"

छ

छत्रवती, अहिच्छत्रदेश की राजधानी, अहिच्छत्रा, का दूसरा नाम है (१.१६६, २१)।

छन्नम = शिव (१,००० नाम)।

छत्रोपानहोत्पत्ति—भीष्म ने कहा: पूर्वकाल की बात है एक दिन भृगुनन्दन जमदग्नि धनुष चलाने की क्रीड़ा कर रहे थे। उस समय उनके चलाये हुये बाणों को उनकी पत्नी, रेणुका, ला-लाकर दिया करती थीं। इस प्रकार क्रीड़ा करते-करते ज्येष्ठ मास के सूर्य मध्याह्न में आ पहुँचे। उस समय जमदग्नि के बाणों को वापस लाने के लिए जाते समय रेणुका छाया का आश्रय लेती हुई रुक-रुककर चल रही थीं। जब उसके लौटकर आने में विलम्ब हुआ तो जमदग्नि ने उससे इसका कारण पूछा। रेणुका ने कहा: 'मेरा सर तप गया है, दोनों पैर भी जलने लगे हैं और सूर्य के प्रचण्ड तेज ने मुझे आगे बढ़ने से रोक दिया। इसीलिए थोड़ी देर तक मैं वृक्ष की छाया में विश्राम करके लौटी हूँ।' रेणुका की बात सुनकर जमदग्नि ने क्रुद्ध हो सूर्य को ही अपने बाणों से नीचे गिरा देने का निश्चय किया। उस समय सूर्य-देव ब्राह्मण का स्वरूप धारण करके जमदग्नि के पास आये और बोले: 'सूर्य पृथ्वी पर वर्षा करते हैं जिससे अन्न उत्पन्न होता है, और अन्न ही प्राण है यह बात वेद-विहित है।······अतः सूर्य को गिराने से आपका क्या लाभ होगा?' (१३.९५)।" "युधिष्ठिर के पूछने पर भीष्म ने कहा: जब जमदग्नि किसी भी प्रकार अपने क्रोध का परित्याग करने के लिए प्रस्तुत नहीं हुये तब ब्राह्मण ने कहा: 'सूर्य सदैव गतिशील रहते हैं। अतः निरन्तर यात्रा करते हुए सूर्य रूपी चंचल लक्ष्य का आप किस प्रकार भेदन करेंगे?' जमदग्नि ने कहा: 'हम ज्ञानचक्षु से जान गये हैं कि तुम्हीं सूर्य हो। तुम मध्याह्न के समय आधे निमेष के लिए रुक जाते हो, अतः उसी समय हम तुम्हारा भेदन करेंगे।' जमदग्नि की बात सुनकर सूर्य ने क्षमा-याचना करते हुये अपने को जमदग्नि की शरण में समर्पित कर दिया। सूर्य की बात सुनकर जमदग्नि ने उन्हें सान्त्वना देते हुए कहा: 'ब्राह्मणों में जो सरलता है, पृथिवी में जो स्थिरता है, सोम का जो सौम्यभाव है, सागर की जो गंभीरता है, अग्नि की जो दीप्ति है, मेरु की जो चमक और सूर्य का जो प्रताप है उन सबका वह व्यक्ति उल्लंघन कर जाता है जो शरणागत का वध करता है। इत्यादि।' जब जमदग्नि इस प्रकार कहकर चुप हो गये तब सूर्य ने उन्हें शीघ्र ही छत्र और उपानह देते हुए कहा: 'आज से इस जगत में इन दोनों वस्तुओं का प्रचार होगा और पुण्य के समस्त अवसरों पर इनका दान उत्तम एवं अक्षय फल देने वाला होगा।' इस प्रकार भीष्म ने युधिष्ठिर को छत्र और उपानह के दान का सम्पूर्ण फल बताया (१३.९६)।"

छद = शिव (१,००० नाम)।

१. **छन्दस्** = शिव (१,००० नाम)।

२. **छन्दस्** = विष्णु (१,००० नाम)।

छन्दोदेव, मतङ्ग को इन्द्र के वरदान से जन्मान्तर में मिलनेवाला नाम है (१३.२९, २४)।

छागमुख, बकरे के समान मुख धारण करनेवाले स्कन्द का नाम है (३. २२८, १२)।

छागवक्त्र = स्कन्द (३. २२८, १२)।

छाय = शिव (१,००० नाम)।

छिन्नतृष्ण = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

१. छिन्नसंशय = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

२. छिन्नसंशय = विष्णु (१,००० नाम)।

छेत्तृ = शिव (१,००० नाम)।

ज

जगत् = शिव (१,००० नाम)।

जगतः कोषः = कृष्ण (१२. ४७, ३४)।

जगतः प्रभवाव्यय = कृष्ण (विष्णु) : १२. ११०, २४।

जगतः प्रभुः = कृष्ण (१६. १, २५; ६, १०. १६)।

जगतः सेतु = विष्णु (१,००० नाम)।

जगती, पृथिवी देवी का नाम है जो नरक की माता हैं (७. २९, ३२)।

जगत्काल = शिव (१,००० नाम)।

१. जगत्पति = ब्रह्मा (१. २२३, ७०; ९. ४४, ४३; १२. ३९, ४; २०९, २८; ३४८, २७; १३. ८५, ७. १७; १०३, २४)।

२. जगत्पति = शिव (७. २०२, ९८; ९. ४३, १५; १२. २८१, २३. ३०; १३. १४, १. ९२. ३३७; १७, १५५)।

३. जगत्पति = काम (१३. ८५, १७)।

४. जगत्पति = कृष्ण (१२. ४७, १५; ३४५, ८; १३. १४७, ५२; १४. ८६, ८)।

५. जगत्पति = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

६. जगत्पति = नहुष (५. १५, ४. ९)।

जगत्प्रकृति = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

१. जगत्प्रभु = ब्रह्मा (३. २७५, २०; १२. २५७, २)।

२. जगत्प्रभु = विष्णु (१३. १४९, ४)।

जगदन्वय = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

जगदादिज = विष्णु (१,००० नाम)।

जगदीश्वर = इन्द्र (१. ३, १४९)।

१. जगन्नाथ = ब्रह्मा (७. ५३, १४; १२. २५७, १२; १३. १६५, ९)।

२. जगन्नाथ = कृष्ण (विष्णु) : १२. ३४१, ५; ३४३, ६; ३४६, १०; १३. १४९, १२।

३. जगन्नाथ=शिव : ७. २०२, १७; १२. २४८, १६१ (१,००० नाम)।

जगुड, एक जाति के लोगों का नाम है जो युधिष्ठिर के राजसूय के समय उपस्थित हुये (३. ५१, २५)।

जङ्गम = शिव (१,००० नाम)।

जङ्घारि, विश्वामित्र के पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ४, ५७)।

जङ्घाबन्धु, एक प्राचीन मुनि का नाम है जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित रहते थे (२. ४, १६)।

१. जटाधर, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६१)।

२. जटाधर = शिव : ३. ३९, ७४; १३. १७, १२८ (१,००० नाम)।

जटायुस्, एक गृध्र का नाम है जो अरुण और श्येनी के पुत्र तथा सम्पाति के भ्राता थे (१. ६६, ७०)। रावण ने इनका वध किया (३. २७४, २)। 'गृध्रोऽजटायुः', (३. २७८, ४३)। इन्होंने रावण से सीता को मुक्त कराने का प्रयास किया परन्तु रावण ने इनका वध कर दिया (३. २७९, १)। "एक बार अपने ज्येष्ठ भ्राता, सम्पाति, के साथ प्रतिस्पर्धा करते हुये ये आकाश में सूर्य की ओर उड़े। उस समय सम्पाति के पंख जल गये परन्तु इनके पंख बचे रहे (३. २८२, ४६–५३)।

जटालिका, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २३)।

१. जटासुर, एक राक्षस का नाम है (१. २, १८०)। यह पाण्डवों के अस्त्र-शस्त्र, तथा द्रौपदी, युधिष्ठिर, नकुल और सहदेव को लेकर भाग रहा था परन्तु भीमसेन ने इसे रोक कर इसका वध कर दिया (३. १५७, ५. ७१)। ४. २१, ४४; ५. ८, ५१; ७. १७४, ७ (यह अलम्बुष का पिता था); १२. १६, २०; १४. १२, १०। देखिये रक्षस्, राक्षस।

२. जटासुर, एक राक्षसराज का नाम है जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित रहते थे (२. ४, २४)।

जटासुरवध—जटासुर के वध का उल्लेख (१. २, ५२)।

जटासुरवधपर्वन, महाभारत के ३७ वें अवान्तरपर्व का नाम है। "एक दिन, जब घटोत्कच आदि राक्षस विदा हो चले गये थे और पाण्डवगण आनन्दपूर्वक गन्धमादन पर अर्जुन के आगमन की प्रतीक्षा करते हुये निवास कर रहे थे, तब, भीम की अनुपस्थिति में जटासुर नामक एक राक्षस ने युधिष्ठिर, नकुल, सहदेव, तथा द्रौपदी को हरण कर लिया। वह राक्षस ब्राह्मण के वेश में प्रतिदिन पाण्डवों के साथ ही रहता था और अपने को सम्पूर्ण शास्त्रज्ञों में श्रेष्ठ बताता था। वह पाण्डवों के आयुधों तथा द्रौपदी का हरण करना चाहता था। एक दिन जब उस राक्षस ने देखा कि भीमसेन आश्रम के बाहर चले गये हैं, घटोत्कच आदि ने भी किसी अज्ञात दिशा का अनुसरण कर लिया है, और लोमश आदि ऋषि ध्यानस्थ हैं, तब उसने विकराल रूप धारण करके पाण्डवों के आयुधों तथा द्रौपदी सहित युधिष्ठिर, नकुल और सहदेव का हरण कर लिया। उस समय सहदेव किसी प्रकार प्रयत्न करके उस राक्षस की पकड़ से मुक्त हो गये और पराक्रम करके अपनी कुशिक नामक तलवार भी उसे छुड़ा ली। तदनन्तर वे, भीम जिस मार्ग से गये थे उसी मार्ग पर जाकर, भीम को जोर-जोर से बुलाने लगे। इधर युधिष्ठिर ने, जिनका वह राक्षस हरण किये हुये जा रहा था, उस राक्षस से कहा : 'राक्षस विशेष रूप से धर्म का विचार रखते हैं क्योंकि वे धर्म के मूल हैं। इस बात का विचार करके तुझे हम लोगों के समीप ही रहना चाहिये था। देवता, ऋषि, सिद्ध, पितर, गन्धर्व, नाग, राक्षस, पशु, पक्षी, तिर्यग्योनि के प्राणी, और कीड़े-मकोड़े आदि भी मनुष्यों के आश्रित हो जीवन निर्वाह करते हैं।…तू हमारा अन्न खाकर हमारा ही हरण करने की कैसे इच्छा करता है?…आज तूने मानव स्त्री का स्पर्श करके जो पाप किया है वह भयंकर विष है।' इस प्रकार उस राक्षस की भर्त्सना करके युधिष्ठिर बहुत भारी हो गये। इधर सहदेव ने राक्षस पर आक्रमण करने का निश्चय किया, परन्तु उसी समय भीमसेन गदा हाथ में लिये हुये वहाँ उपस्थित हो गये। भीम को देखकर उस राक्षस ने युधिष्ठिर आदि को भूमि पर रख दिया और भीम से युद्ध करने लगा। दोनों का उसी प्रकार घोर युद्ध होने लगा जैसा पूर्वकाल में वालि और सुग्रीव का युद्ध हुआ था। पहले दोनों ने वृक्षों का आयुधों के रूप में प्रयोग किया, और फिर शिलाओं से एक दूसरे पर प्रहार करने लगे। तदनन्तर दोनों ने मल्लयुद्ध प्रारम्भ किया। अन्ततोगत्वा भीमसेन ने अपनी मुष्टिका द्वारा राक्षस की ग्रीवा पर प्रहार किया। इसके बाद उस राक्षस को दोनो हाथों से उठाकर पृथिवी पर पटक दिया और फिर उसके समस्त अंगों को चूर-चूर करने के पश्चात उसके मस्तक को भी धड़ से पृथक् कर दिया। इस प्रकार जटासुर को मार कर भीमसेन युधिष्ठिर के पास आये (३. १५७)।"

जटासुरसुत = अलम्बुष (७. १७४, ५)।

१. जटिन् = शिव (देखिये वस्था०)।

२. जटिन्, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६१)।

जटिल = शिव (१३. १४०, ४८)।

जटिला, गोतम की एक स्त्री-वंशज का नाम है जो सात ऋषियों की

पत्नी हुई (१. १९९, १४)। द्रौपदी की पति-सेवा के विषय में इनका दृष्टान्त दिया गया (१२. ३८, ५)। देखिये गौतमी।

१. जठर, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ४२)।

२. जठर, एक वेदविद्या के पारंगत ब्राह्मण का नाम है जो जनमेजय के सर्पसत्र के सदस्य बने (१. ५३, ८)।

जतुगृहपर्वन्, महाभारत के आठवें अवान्तरपर्व का नाम है। "वैशम्पायन ने सौबल, दुर्योधन, दुःशासन, कर्ण और धृतराष्ट्र आदि की कुन्ती सहित पाण्डवों को लाक्षागृह में भस्म कर देने की दुरभिसंधि तथा पाण्डवों के उससे मुक्त हो जाने का संक्षेप में वर्णन किया। तदनन्तर जनमेजय के पूछने पर उन्होंने विस्तार से वर्णन आरम्भ किया : पाण्डवों ने जब जैसा संकट आया उसका निवारण किया और विदुर के परामर्श के अनुसार कभी भी कौरवों के षड्यन्त्रों का भंडा-फोड़ नहीं किया। उन पाण्डवों को सर्वगुणसम्पन्न देख कर नगरवासी जहाँ कहीं भी एकत्र होते वहीं युधिष्ठिर को राज्यप्राप्ति के योग्य बताते और कहते कि नेत्रहीन होने के कारण जब धृतराष्ट्र पहले ही राज्य नहीं प्राप्त कर सके तो अब वे कैसे राजा हो सकते हैं। दुर्योधन ने पुरवासियों की बात सुनकर राजा धृतराष्ट्र से कहा कि यदि युधिष्ठिर को राज्य मिल गया तो उसे (दुर्योधन को) सदैव के लिये राज्य से वंचित रह जाना होगा। साथ ही आगे भी युधिष्ठिर के ही वंशज राज्य के उत्तराधिकारी होते रहेंगे। इस प्रकार धृतराष्ट्र अथवा उनके पुत्रों को कभी भी राज्य नहीं मिल सकेगा (१. १४१)।" "दुर्योधन, कर्ण, शकुनि तथा दुःशासन ने परस्पर मन्त्रणा की जिसके पश्चात् दुर्योधन ने धृतराष्ट्र को इस बात के लिये सहमत कर लिया कि वे पाण्डवों से वारणावत जाने के लिये कहें। जब धृतराष्ट्र ने दुर्योधन के प्रस्ताव को मानने में कुछ संदेह प्रगट किया तो दुर्योधन ने कहा : 'भीष्म तो सदा ही मध्यस्थ हैं, द्रोणपुत्र अश्वत्थामा मेरे पक्ष में हैं; द्रोणाचार्य उधर ही रहेंगे जिधर उनका पुत्र रहेगा; कृपाचार्य भी वहीं रहेंगे जहाँ द्रोण तथा अश्वत्थामा। विदुर हमारे आर्थिकबन्धन में हैं, यद्यपि वे प्रच्छन्न रूप से शत्रुओं के स्नेहपाश में आबद्ध हैं। फिर भी वे अकेले पाण्डवों के हित के लिये हमें बाधा पहुँचाने में समर्थ नहीं हो सकेंगे। इसलिये आप निश्चिन्त होकर पाण्डवों को वारणावत भेज दीजिये।' (१. १४२)।" "दुर्योधन तथा उसके छोटे भाइयों ने धन देकर और आदर-सत्कार द्वारा अमात्य आदि प्रकृतियों को क्रमशः अपने वश में कर लिया। इधर धृतराष्ट्र ने पाण्डवों को वारणावत जाकर उत्सव देखने का परामर्श दिया। युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र के अभिप्राय को जानकर भी उनकी आज्ञा का पालन करना स्वीकार कर लिया। तदनन्तर युधिष्ठिर ने भीष्म, विदुर, द्रोण, बाह्लिक, सोमदत्त, कृपाचार्य, अश्वत्थामा, भूरिश्रवा, तथा अन्यान्य मन्त्रियों, ब्राह्मणों, और गान्धारी आदि से विनम्रतापूर्वक आशीर्वाद प्राप्त करके भ्राताओं सहित वारणावत नगर के लिये प्रस्थान किया (१. १४३)।" "दुर्योधन ने पुरोचन को आदेश दिया कि वे एक वेगशाली रथ पर बैठ कर उसी दिन वारणावत नगर जाँय और वहाँ एक लाक्षागृह का निर्माण करके पाण्डवों को कुन्ती सहित उसी में भस्म कर दें (१. १४४)।" "जब पाण्डव यात्रा के लिये प्रस्थित हुये तो नगरवासियों ने उनके लिये दुःख प्रगट करते हुये धृतराष्ट्र की भर्त्सना की परन्तु युधिष्ठिर ने पुरवासियों को समझा-बुझाकर शान्त किया। उस समय विदुर ने युधिष्ठिर को एक गुप्त भाषा में उपदेश दिया जिसे केवल युधिष्ठिर ही समझ सके—'प्राज्ञः प्राज्ञप्रलापज्ञः प्रलापज्ञमिदं वचः। प्राज्ञं प्राज्ञः प्रलापज्ञः प्रलापज्ञं वचोऽब्रवीत्'। युधिष्ठिर ने विदुर की बातों को समझ कर उसे कुन्ती को भी समझा दिया। तदनन्तर पाण्डवों ने फाल्गुन शुक्ला अष्टमी के दिन रोहिणी नक्षत्र में यात्रा आरम्भ की (१. १४५)।" "वारणावत नगर के निवासियों ने पाण्डवों का हार्दिक स्वागत किया। पुरोचन ने पाण्डवों को एक सुन्दर भवन में ठहराया। दस दिनों तक उसी भवन में सुखपूर्वक निवास करने के पश्चात् पुरोचन ने पाण्डवों से एक नूतन गृह की चर्चा की जो कहने को तो 'शिवभवन' था परन्तु वास्तव में अशिव, अर्थात् अमंगलकारी, था। उस नूतन भवन में पहुँच कर युधिष्ठिर ने भीम से कहा : 'यह भवन तो अग्नि-प्रज्वलित करने वाली वस्तुओं से निर्मित प्रतीत होता है।' जब भीम ने उस भवन को छोड़ देने का परामर्श दिया तो युधिष्ठिर ने कहा : 'हम लोगों को यहाँ अपनी बाह्य चेष्टाओं से मन की बात प्रगट न करते हुये और यहाँ से भाग निकलने के लिये मनोनुकूल निश्चित मार्ग का पता लगाते हुये सावधानीपूर्वक यहीं रहना चाहिये।' तदनन्तर युधिष्ठिर ने उस भवन से बच निकलने के विषय पर वार्तालाप किया (१. १४६)।" "विदुर द्वारा भेजे हुये एक खनक ने आकर युधिष्ठिर को बताया कि पुरोचन उस लाक्षागृह में कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को आग लगायेगा। तदनन्तर उसने उस लाक्षागृह के भीतर एक सुरंग खोद दी जिससे होकर उस गृह से बाहर निकला जा सकता था। विदुर के मन्त्री तथा उस खनक को छोड़ कर नगर का कोई भी व्यक्ति उस सुरंग के सम्बन्ध में कुछ भी जान नहीं पाया (१. १४७)।" "पाण्डव उस लाक्षागृह में एक वर्ष तक रहे। तदनन्तर एक दिन रात्रि के समय कुन्ती ने दान देने के निमित्त ब्राह्मण-भोजन कराया। उसी समय एक भीलनी अपने पाँच बेटों के साथ भोजन की इच्छा से वहाँ आई। मदिरा के नशे में होने के कारण वह भीलनी अपने पुत्रों के साथ उसी भवन में रात्रि के समय सो गई। रात्रि के समय पाण्डवों के निश्चयानुसार भीमसेन ने उस भवन में आग लगा दी और भ्राताओं तथा कुन्ती सहित स्वयं सुरंग के मार्ग से बाहर निकल गये। इस प्रकार भीलनी तथा उसके पाँच पुत्र और पुरोचन तो उसी भवन के साथ भस्म हो गये परन्तु पाण्डव बच निकले। नगरवासियों को वस्तुस्थिति का पता नहीं चला और उन्होंने समझा कि कुन्ती सहित पाँचों पाण्डव ही जल कर भस्म हो गये (१. १४८)।" "विदुर ने एक कुशल नाविक को पाण्डवों के पास भेजा। वह नाविक उन सब को नाव पर बैठाकर गंगा के उस पार ले गया (१. १४९)।" "सुरंग खोदनेवाले खनक ने सुरंग के छिद्र को धूल से ढँक दिया जिससे दूसरे लोग उसे देख नहीं सके। नगरवासियों ने भीलनी तथा उसके पाँच पुत्रों की भस्मराशि को कुन्ती और पाँचों पाण्डवों की भस्म राशि समझ कर अत्यधिक शोक प्रगट किया। फलस्वरूप धृतराष्ट्र के पास इस आशय का समाचार भेजा गया कि कुन्ती सहित पाण्डव तथा पुरोचन अग्नि में भस्म हो गये। धृतराष्ट्र ने पाण्डवों के लिये अत्यन्त शोक प्रगट करते हुये उनको आत्मा को जलाञ्जलि दी। इधर पाण्डव भी गङ्गा पार करके रात्रि के सघन अन्धकार में चलते हुये दक्षिण की ओर स्थित एक घोर वन में पहुँचे। रात्रि के समय सतत यात्रा करते रहने के कारण वे सब अत्यन्त थक गये थे। युधिष्ठिर ने भीम से निवेदन किया कि वे कुन्ती सहित सभी भ्राताओं को उठा कर चलें। भीम ने तदनुसार सब को उठा लिया और शीघ्रतापूर्वक चलने लगे (१. १५०)।" "भीमसेन के चलते समय उनके महान् वेग से आन्दोलित हो वैसे ही जोर-जोर से हवा चलने लगी जैसे ज्येष्ठ और आषाढ़ मास के सन्धिकाल में चलती है। भीम जिस मार्ग से चल रहे थे उसकी लताओं और वृक्षों को पैरों से रौंदते और धराशायी करते चलते थे। संध्या होते-होते वे सब वन के ऐसे भयंकर प्रदेश में जा पहुँचे जहाँ फल-मूल तथा जल अत्यन्त अल्प मात्रा में ही उपलब्ध था। फिर भी थके होने के कारण पाण्डवों ने उसी नीरस वन में एक विशाल पीपल के वृक्ष के नीचे विश्राम करने का निश्चय किया। कुन्ती उस समय प्यास से व्याकुल हो रही थीं, अतः भीम लगभग दो कोस (गव्यूति) जाकर अपने वस्त्र में पानी लाये। लौट कर जब भीम ने अपनी माता तथा भ्राताओं को थक कर भूमि पर सोते देखा तो अत्यन्त शोक करने लगे। उन्होंने मन ही मन कहा : 'पापाचारी दुर्योधन! मैं आज ही जाकर मंत्रियों, कर्ण, छोटे भाइयों और शकुनि सहित तुझे यमलोक भेज सकता हूँ; किन्तु क्या करूँ, युधिष्ठिर अब भी तुझ पर कोप नहीं कर रहे हैं।' इस प्रकार मन ही मन क्रोध से जलते हुये भीम वहीं बैठ कर और जागते हुये अपने भ्राताओं की रक्षा करने लगे (१. १५१)।"

जनक, मिथिला के एक अथवा एकाधिक राजाओं का नाम है। 'जनकस्याध्वरे', (१. २, १७४)। यम की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ८, १९)।

अपनी दिग्विजय के समय भीमसेन ने इन्हें पराजित किया (२. ३०, १३)। इनके द्वारा गाये गये कुछ श्लोकों का उद्धरण (३. २, २०)। 'जनकस्य तु राजर्षेः कूपः', (३. ८४, १११)। ३. १३२, ५.१५. २१. २३; १३३, ४ (जनकेन्द्रम्); १३४, २२. २४. २८. २९. ३२. ३४. ३६. ३७ (जनक के यज्ञ की घटनाओं का उल्लेख); १४८, ७ (सुतां जनकराजस्य सीताम्); २०७, ६. २८. २९. ३७ (जनक के पुण्यकर्मों का उल्लेख); २७४, ९ (ये सीता के पिता थे); ४. २१, १२; ६. २७, २० (कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः); १२. १७, १८ (इनके द्वारा गाई गई एक गाथा का उल्लेख); १८, ४. ३७ (तत्त्वज्ञो जनको राजा); २८, ३. ४; ९९, २. ३ (इनके और प्रतर्दन के बीच युद्ध); १०५–६ (क्षेमदर्शी का इनके साथ सम्बन्ध); १५९, १३ (इन्होंने लोभ पर विजय द्वारा स्वर्ग प्राप्त किया); १७७, १५ (प्रतिष्ठिता महारण्यं जनकस्य निवेशनात्); १७८, १ (इनके द्वारा गाये गये पुरातन इतिहास का कथन); २१८, १. ३. १८. १९; २१९, १ (जनको जनदेवस्तु ज्ञपितः परमर्षिणा). २; २९०, ३; २९६, १. १०. ११. ३१. ३५; २९८, १, २. ४७; ३०२, ७. ८. १०; ३०५, १; ३०६, १; ३०८, ३८ (कराल); ३१०, ३. ४. ५; ३१४, १३; ३१८, १०९. ११२; ३१९, ३ (पञ्चशिखस्येह संवादं जनकस्य च). ४ (पंचशिख के साथ इनका संवाद); ३२०, ३. ४. ९. १८. २०; ३२५, ६. १९; ३२६, १. ६. १०. १४. २२; ३२७, ३२; ३६५, ३; १३. ४५, ६; ११५, ७३ (ये भी उन राजाओं में से एक थे जो कार्त्तिक मास में मांस-भक्षण नहीं करते थे); १६५, ५०। "ब्राह्मण ने कहा : एक समय राजा जनक ने किसी अपराध में पकड़े गये ब्राह्मण को अपने राज्य से बहिष्कृत कर दिये जाने का दण्ड दिया। राजा का आदेश सुन कर ब्राह्मण ने राजा से उनके देश की सीमा पूछा। ब्राह्मण के प्रश्न को सुन कर जनक अत्यन्त मोह में पड़ गये। थोड़ी देर चुप रहने के पश्चात् उन्होंने कहा : 'यद्यपि पूर्वजों के समय से ही मिथिला-प्रान्त के राज्य पर मेरा अधिकार है, तथापि विचार दृष्टि से देखने पर समस्त पृथिवी पर कहीं भी मुझे अपना देश दृष्टिगत नहीं होता।...... मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि कहीं भी मेरा राज्य नहीं है, अथवा सर्वत्र मेरा ही राज्य है। एक दृष्टि से यह शरीर भी मेरा नहीं है, और दूसरी दृष्टि से यह समस्त पृथिवी ही मेरी है।......अतः हे द्विजोत्तम ! अब आपकी जहाँ इच्छा हो वहाँ रहिये।' ब्राह्मण के पूछने पर जनक ने बताया कि वे किस प्रकार इस निष्कर्ष पर पहुँचे। उन्होंने कहा : 'मेरे समस्त कार्यों का आरम्भ देवता, पितर, भूत और अतिथियों के निमित्त होता है।' जनक की बातें सुनकर ब्राह्मण हँसा और फिर बताया कि वह स्वयं धर्म है जो राजा की परीक्षा लेने के लिये उपस्थित हुआ है (१४. ३२, १. २. ८. १५. २५)।" इन्होंने दान द्वारा परमसिद्धि प्राप्त की (१४. ९१, ३५)।

जनक के नामों के निम्न पर्याय भी देखिये :—

* ऐन्द्रद्युम्नि : ३. १३३, ४।

* कराल, करालजनक—देखिये वस्था०।

* दैवराति : १२. ३१०, ४।

* धर्मध्वज : १२. ३२०, ४।

* मिथिलाधिप : ३. २१८, १ (जनको मिथिलाधिपः); २९८, १ (जनको मिथिलाधिपः); ३१८, २ (= जनक दैवराति). ९७।

* मिथिलाधिपति : १२. ३१८, ९४।

* मिथिलेश्वर : १२. ३०६, १४; ३१७, ७; ३२०, ८. १२।

* मैथिल ३. १३४, ५; १२. ९९, १–३; १०६, २३; २१९, ५०. ५२; ३०७, ४१; ३०८, १९; ३१६, १०. १४; ३२०, ४. ११७. १२७. १६०. १७२. १८९।

* विदेहराज, वैदेह—देखिये वस्था०।

जनक (बहु० °काः), जनक के परिवार के लिये प्रयुक्त हुआ है (३. १३३, १७)।

जनकनृप, जनकराज—देखिये जनक।

जनकात्मज = वसुमत् (१२. ३०९, १)।

जनकात्मजा = सीता (देखिये वस्था०)।

जनकेन्द्र—देखिये जनक।

जनजन्मादि = विष्णु (१,००० नाम)।

जनदेव (१२. २१८, ३; २६९, १)—देखिये जनक।

जनन = विष्णु (१,००० नाम)।

१. जनमेजय, माद्रवती से उत्पन्न राजा परिक्षित् का नाम है। इनकी पत्नी का नाम वपुष्टमा था। इनके सर्प-सत्र के समय वैशम्पायन ने सर्वप्रथम महाभारत का उच्चारण किया। १. १, ९. २०. ९७; २, ३३; ३, १ (पारिक्षितः). २. ४. ७. १० (श्रुतसेन, उग्रसेन, और भीमसेन आदि इनके भ्राताओं सहित इन्हें भी सरमा ने शाप दिया). १२. १४. १६. १९ (इन्होंने सोमश्रवा को अपना पुरोहित बनाया). ८२ (इन्होंने वेद को अपना उपाध्याय बनाया). १७१. १७५. १७६ (हस्तिनापुर आकर उत्तङ्क ने इन्हें यह स्मरण दिलाते हुये कि तक्षक नाग ने परिक्षित् को डँस लिया था, इनसे सर्प-पत्र का आयोजन करने के लिये कहा) ; ११, १८; १२, १; १३, १; १५, १ (इनके सर्पपत्र में सर्प भस्म हो जायेंगे); २०, ८; ३७, ९. ११; ३८, २; ४४, ६ (परिक्षित् के इन अल्पवयस्क पुत्र को राजा बनाकर काशिराज की कन्या, वपुष्टमा से इनका विवाह हुआ); ४९, १. ३. ५. १३. १९; ५०, १५ (इनके मन्त्रियों ने इन्हें बताया कि किस प्रकार तक्षक ने इनके पिता, परिक्षित् को डँसने के बाद काश्यप नामक ब्राह्मण को परिक्षित् की सहायता भी नहीं करने दिया). ३२. ४४. ४८ (इन्होंने मन्त्रियों से काश्यप तथा तक्षक के बीच हुई बातों और घटनाओं के सम्बन्ध में पूछने के पश्चात् अपने पिता की मृत्यु का प्रतिशोध लेने का निश्चय किया)। "जनमेजय ने सर्पसत्र के आयोजन के सम्बन्ध में ऋत्विजों से परामर्श किया। ऋत्विजों के कहने पर इन्होंने तदनुसार सर्पयज्ञ का अनुष्ठान करने की आज्ञा दी। यज्ञ के लिये जब यज्ञमण्डप का निर्माण कराकर ऋत्विजों ने इन्हें दीक्षा दी और यज्ञ प्रारम्भ करनेवाले ही थे कि वहाँ वास्तुशास्त्र के पराङ्गत विद्वान्, सूत्रधार शिल्पवेत्ता सूत ने उपस्थित होकर कहा : 'जिस स्थान पर और समय में यह यज्ञमण्डप मापने की क्रिया आरम्भ हुई उसे देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि एक ब्राह्मण को निमित्त बनाकर यह यज्ञ पूर्ण नहीं हो सकेगा।' यह सुनकर जनमेजय ने सेवकों को आज्ञा दे दिया कि उन्हें सूचित किये बिना किसी अपरिचित व्यक्ति को यज्ञमण्डप में प्रवेश न करने दिया जाय (१. ५१)।" १. ५३, १. १४; ५४, ७. २०. २७; ५५, १७; ५६, १. ४. ११. १२. १७. २१ (इन्होंने आस्तीक को एक वर माँगने के लिये कहा और आस्तीक ने इनसे सर्प-सत्र बन्द कर देने का वर माँगा) ; ५८, २. १० (इस प्रकार इनका यज्ञ रुक गया). २५; ५९, ६; ६०, १. ७. ८. १०. १४. १७. १८ (जनमेजय के पूछने पर सर्पसत्र के समय व्यास ने वैशम्पायन से महाभारत सुनाने के लिये कहा); ६२, १ (इन्होंने विस्तार के साथ महाभारत सुनने की इच्छा प्रगट की); ६४, १; ६५, ७; ६७, १. ९२; ६८, १; ६९, १; ७४, २; ७५, ८; ७६, १. ४; ८६, ६; ९४, १. १८; ९५, १ (ये परिक्षित और माद्रवती के पुत्र, वपुष्टमा के पति तथा शतानीक और शङ्कुकर्ण के पिता थे); १०२, २२; १०७, १; ११६, १; ११७, १; ११८, १; १२३, १; १३०, १. ३१; १४१, १७; १५७, १; १६५, १; १८५, १. ९; २०८, १; २१४, ७; २१८, १३. १६; २२०, १; २२१, २५; २२३, १२; २२९, १; २३२, २५; २. १२, ३३; २१, ३२; २६, १; २९, ११; ३१, २५. २६. ७८; ५०, १; ७४, १; ३. १, १; ३, १३; ३८, १; ४८, १; ५०, १; ५२, १; ८०, १. ७; ९३, २९; ११४, १; ११९, १; १७५, १०; १७६, १; १७८, १; १८२, १६; २३६, १; २३७, २३; २३९, १; २४७, १; २५३, १; २५८, १; २६२, १; २७३, १; ३००, १; ३०३, १; ३१०, ४१; ३११, १; ४. १, १; ९, ३७; १३, १; १४, २; ८४, ३; १०६, १; १५३, १; १५७, १; १५९, १; ६. १, १; ७. १, १; ८. १, १८; ४, १५; ८, १; ९. १, १. २४; ३५, १. ३८. ४३. ९०; ३६, ५; ३७, १५. ३९. ५४; ३८, १; ३९, ८; ४०, १; ४१, १९; ४२, १; ४३, ३२. ४३; ४४, १. ४; ४५, ७८. ७९; ४७, १. १६; ४८, ६१;

४९, १५; ५०, ९. १९; ५१, ४; ५२, १; ५४, १; ५५, १; ५६, १; ६३, १; १०. ११, १; ११. ९, १; १२. ४५, १; ४७, १; ५४, १; १७३, २६; २८४, १; ३३९, १३३. १३९; ३४०, ५. ६. ७; ३४१, १; ३४३, ९; ३४७, १०; ३४८, १. ७७. ७९; ३४९, १. ६; ३५०, १; १३. १६६, १; १४. १५, १; १६, १; ५५, १०; ५६, १. २. ३. ३०; ५७, २०; ५८, ३५. ५२. ५८. ५९; ५९, १; ६३, १; ६६, ८; ९०, १; ९१, १; ९२, १. ३७. ३९; १५. १, १; १३, १५; २९, १. ३५; ३३, ६; ३४, १. ३; ३५, ४. ७. ९. १७ ((इनकी प्रार्थना पर व्यास ने इन्हें इनके पिता का दर्शन कराया); ३६, १; १६. १, १२. १४; ७, ६३; १७. १, १; १७. १, १. २५। "सौति ने कहा : यज्ञकर्म के बीच-बीच में जो अवसर प्राप्त होते थे उन्हींमें इस महाभारत के आख्यान को सुनकर राजा जनमेजय को बड़ा आश्चर्य हुआ। तदनन्तर उनके पुरोहितों ने यज्ञकर्म सम्पन्न कराया। सर्पों को प्राण संकट से मुक्त करा कर आस्तीक मुनि को भी अत्यन्त प्रसन्नता हुई। ब्राह्मण आदि को दक्षिणा देने के बाद राजा जनमेजय तक्षशिला से हस्तिनापुर चले आये (१८. ५, ३१-३४)।" १८, ६. १-२।

जनमेजय के निम्न पर्याय भी मिलते हैं :—

***कुरुकुलश्रेष्ठ, कुरुकुलोद्वह, कुरुनन्दन, कुरुपुङ्गवाग्रज, कुरुप्रवीर, कुरुसत्तम, कुरुशार्दूल, कुरुश्रेष्ठ, कुरूद्वह, कौरव, कौरवनन्दन, कौरव्य, कौरवशार्दूल, कौरवेन्द्र**—देखिये वस्था०।

***पाण्डव, पाण्डवनन्दन, पाण्डवेय**—देखिये वस्था०।

***पारिक्षित्** : १. २, ९१ (सर्पसत्रेण राज्ञः पारिक्षितस्य); ३, १. १२. १४; ५१, २; ५३, १०. २३; ५५, १-७; ५६, २२. २५; ५८, १. १० (पाण्डवेयस्य राज्ञः); ६२, ५१; ३. ११८, २; १२. ३४३, ७; ३४७, ९।

***पौरव**—देखिये वस्था०।

***भरतर्षभ, भरतशार्दूल, भरतश्रेष्ठ, भरतसत्तम, भारत, भारताग्र्य**—देखिये वस्था०।

२. जनमेजय, एक अथवा एकाधिक प्राचीन राजाओं का नाम है। संजय ने मृत राजाओं के अन्तर्गत इनकी गणना कराई (१. १, २८८)। यम की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ८, २३)। (मान्धाता ने इन्हें पराजित किया (७. ६२, १०)। इन्होंने तीन रात्रियों में ही संसार को विजित कर लिया (१२. १२४, १६)। इन्होंने ब्राह्मण के लिये अपने शरीर का दान करके स्वर्ग प्राप्त किया (१२. २३४, २४)। 'शक्रस्योद्गम्य चरणं प्रस्थितो जनमेजयः। द्विजस्त्रीणां वधं कृत्वा किं दैवेन न वारितः ॥', (१३. ६, ३६)। 'सावित्रः कुण्डलं दिव्यं यानं च जनमेजयः। ब्राह्मणाय च गा दत्वा गतो लोकाननुत्तमान् ॥', (१३. १३७, ९)।

३. जनमेजय, महाभारत युद्ध के समकालीन एक राजा का नाम है (१. ६७, ६२)। उन राजाओं में एक यह भी थे जिन्हें पाण्डवों की ओर से रण-निमन्त्रण भेजना था (५. ४, १६)।

४. जनमेजय, कुरु और वाहिनी के पांचवे पुत्र का नाम है (१. ९४, ५१)।

५. जनमेजय, पूर्वकालीन परिक्षित् के पुत्र का नाम है (१. ९४, ५३)। इनके पुत्र का नाम धृतराष्ट्र (पूर्वकालीन) था (१. ९४, ५५)।

६. जनमेजय, पूरु और कौशल्या के पुत्र, अनन्ता के पति, और प्राचिन्वान् के पिता का नाम है (१. ९५, ११. १२)।

७. जनमेजय, नीपों के एक राजा का नाम है (५. ७४, १३)।

८. जनमेजय, युधिष्ठिर की सेना में सम्मिलित एक अथवा एकाधिक पाञ्चाल राजाओं का नाम है : ७. २३, ५१; १५८, ३९; १६७, २२; १८४, ५; ८. ४८, २०; ४९, ३५; ५६, ६५; ७३, १०४; ८२, २. १६। तुकी० पाञ्चाल्य।

९. जनमेजय, युधिष्ठिर की सेना में सम्मिलित पर्वतीय राजा का नाम है जिनका दुर्मुख ने वध किया (८. ६, १९)।

१०. जनमेजय—इन्द्रोत-पारीक्षितीय : १२. १५०, २. ३. ७; १५१, १. १५; १५२, ४. ८. ३८ (जनमेजय ने एक ब्राह्मण का वध कर दिया परन्तु इन्द्रोत शौनक ने उन्हें प्रायश्चित् का उपाय बताया। तदनन्तर इन्द्रोत ने उनके अश्वमेध यज्ञ में सहायता दी)।

जनमेजय (बहु० °याः)—यम की सभा में अस्सी जनमेजयों की उपस्थिति (२. ८, २३)।

१. जनार्दन = कृष्ण (विष्णु) : देखिये वस्था०।

२. जनार्दन (बहु० °नाः) : १०. ६, १८।

जनार्दनि = प्रद्युम्न : ३. १८, ७।

जनस्थान, एक स्थान का नाम है जहाँ से रावण ने सीता का हरण किया था (३. १४७, ३३; २७७, ४२)। यहाँ राम ने राक्षसों का वध किया था (७. ५९, ३. १८)। यहाँ श्रीराम ने जिस राक्षस का वध किया उसका मस्तक महोदर की जाँघ पर जाकर गिरा (९. ३९, १०)। यह एक तीर्थ का नाम है (१३. २५, २९)।

जनेश्वर = विष्णु (१,००० नाम)।

जन्तु, राजा सोमक के पुत्र का नाम है (३. १२७, ४. ६. ७. १४. १९. २१; १२८, २. ८)।

जन्तूपाख्यान (जन्तु से सम्बद्ध उपाख्यान)—'जन्तूपाख्यानमत्रैव यत्र पुत्रेण सोमकः', (१. २, १७२)। "युधिष्ठिर के पूछने पर लोमश ने कहा : राजा सोमक के सौ रानियाँ थीं परन्तु दीर्घकाल तक वे उन रानियों के गर्भ से कोई भी पुत्र न प्राप्त कर सके। अन्त में जब वे रानियों सहित अत्यन्त वृद्ध हो गये तब उनकी एक रानी के गर्भ से एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम जन्तु रखा गया। उसके जन्म लेने के पश्चात् सभी मातायें काम-भोग की ओर से मुख मोड़कर सदा उस बच्चे को घेरकर बैठी रहती थीं। एक दिन एक चींटी ने जन्तु के कटि भाग में डस लिया जिसकी पीड़ा से वह बालक रोने लगा। उस समय उसकी मातायें भी जोर-जोर से रोने लगीं। रानियों का आर्तनाद सुनकर जब राजा सोमक ने समस्त वृत्तान्त का पता लगाया तो उन्हें अपने एकमात्र पुत्र के कष्ट पर अत्यन्त चिन्ता होने लगी। उन्होंने अपने ऋत्विज से किसी ऐसे यज्ञ अथवा कृत्य के संबन्ध में पूछा जिससे उन्हें सौ पुत्र प्राप्त हो सकें। ऋत्विज ने तब, पहले राजा से पुत्र प्राप्ति का कर्म सम्पन्न कराने का आश्वासन लिया, और उसके पश्चात् कहा : 'मैं एक यज्ञ आरम्भ करूँगा जिसमें तुम अपने पुत्र जन्तु की आहुति देकर यजन करो। जिस समय तुम्हारे पुत्र जन्तु के चर्बी की आहुति दी जायगी, उस समय उसके धूम को सूँघ लेने पर तुम्हारी समस्त रानियाँ गर्भवती होकर पराक्रमी पुत्रों को जन्म देंगी। तुम्हारा पुत्र जन्तु भी पुनः अपनी माता के ही पेट से उत्पन्न होगा और उसके बायीं पसली में एक सुनहरा चिन्ह बना रहेगा' (३. १२७)।" "राजा की सहमति मिल जाने पर ऋत्विज ने सोमक से जन्तु की बलि दिलवाकर यज्ञ को प्रारम्भ किया। उस समय राजा सोमक की समस्त रानियाँ आर्तनाद कर उठीं परन्तु इसके विपरीत भी जन्तु की बलि देकर यज्ञ सम्पन्न हुआ। विधिपूर्वक जन्तु की चर्बियों की आहुति के समय सोमक की समस्त रानियाँ गन्ध-धूम को सूँघकर गर्भवती हो गईं। दस मास व्यतीत होने पर उन सौ रानियों के गर्भ से सोमक के सौ पुत्र उत्पन्न हुए। ज्येष्ठ पुत्र जन्तु अपनी माता के ही गर्भ से उत्पन्न हुआ और वही सब रानियों का विशेष प्रिय भी बना। जन्तु की दाहिनी पसली में पूर्वोक्त सुवर्ण चिन्ह था और वह अन्य पुत्रों की अपेक्षा अवस्था तथा गुण में भी श्रेष्ठ सिद्ध हुआ। तदनन्तर कुछ काल के पश्चात् सोमक के पुरोहित, और उनके भी कुछ दिनों के बाद राजा सोमक परलोकवासी हो गये। यमलोक में पहुँच कर सोमक ने देखा कि उनके पुरोहित घोर नरक की अग्नि में दग्ध हो रहे हैं। राजा के पूछने पर पुरोहित ने बताया कि उनका ही यज्ञ करवाने के पाप के कारण उन्हें यह यातना सहन करनी पड़ रही है। द्रवित होकर राजा ने धर्मराज से निवेदन किया कि वह पुरोहित के स्थान पर स्वयं राजा को ही दण्ड दें। धर्म ने कहा : 'कर्ता के अतिरिक्त अन्य कोई उसके किये हुये कर्मों का फल नहीं भोगता।' धर्म की बात सुन कर राजा सोमक ने पुरोहित के साथ रह कर ही यातना सहन करने का निश्चय किया। धर्मराज ने राजा

की बात सुनकर कहा : 'यदि तुम्हारी ऐसी ही इच्छा है तो पुरोहित के साथ रहकर उतने ही समय तक तुम भी पाप-कर्मों का फल भोगो। इसके बाद तुम्हें उत्तम गति प्राप्ति होगी।' तब सोमक ने धर्मराज के कथनानुसार समस्त कार्य किये और भोग द्वारा पाप नष्ट हो जाने पर पुरोहित के साथ नरक से मुक्त हो गये। लोमश ने पाण्डवों को बताया कि उन्हीं सोमक के पवित्र आश्रम में छः रात निवास करने से मनुष्य उत्तम गति प्राप्त कर लेता है। अतः लोमश ने पाण्डवों को वहाँ छः रात तक मन और इन्द्रियों पर संयम रखते हुए निवास करने का आदेश दिया (३. १२८)।"

जन्ममृत्युजरातिग = विष्णु (१,००० नाम)।

जन्य = शिव (१,००० नाम)।

जमदग्नि, एक ऋषि का नाम है। ये ऋचीक के पुत्र थे (१. ६६, ४७)। ये चार पुत्रों के पिता हुये जिनमें परशुराम सबसे छोटे थे (१. ६६, ४८)। 'और्वस्यासीत्पुत्रशतं जमदग्निपुरोगमम्', (१. ६६, ४९)। उन सात ऋषियों में एक यह भी थे जो अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उपस्थित हुये (१. १२३, ५१)। ब्रह्मा की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ११, २२)। 'वेदी शूर्पारके तात जमदग्नेर्महात्मनः', (३. ८८, १२)। 'ऋषिर्महान्महाभागो जमदग्निर्महायशाः। पलाशकेषु पुण्येषु रम्येष्वयजत प्रभुः॥', (३. ९०, १६)। 'यजमानस्य वै देवाञ्जमदग्नेर्महात्मनः', (३. ९०, १९)। "इसी समय (देखिये अर्जुन कार्तवीर्य) कान्यकुब्ज देश के राजा गाधि के, जो वनवास कर रहे थे, एक कन्या, सत्यवती, ने जन्म लिया। विवाह के योग्य होने पर इस कन्या को भृगुपुत्र ऋचीक मुनि ने पत्नी के रूप में ग्रहण किया। उस समय राजा गाधि ने ऋचीक से अपनी कन्या के लिये एक सहस्र श्यामकर्ण अश्व माँगे। तब ऋचीक ने वरुण से इस प्रकार के श्यामकर्ण अश्व लेकर गाधि को समर्पित कर दिया और गङ्गातट पर कान्यकुब्ज नगर में सत्यवती के साथ विवाह किया। उस समय देवता बराती थे। विवाह के पश्चात् पत्नी सहित ऋचीक को देखने के लिये महर्षि भृगु उनके आश्रम पर आये। सत्यवती से प्रसन्न होकर भृगु ने उसे पुत्र प्राप्ति का वर देते हुये कहा : 'ऋतुकाल में स्नान करने के पश्चात् तुम और तुम्हारी माता पुत्र-प्राप्ति के लिये दो भिन्न-भिन्न वृक्षों का आलिङ्गन करें। तुम्हारी माता पीपल के वृक्ष का और तुम उदुम्बर वृक्ष का आलिङ्गन करना। मैंने विराट् पुरुष का चिन्तन करके तुम लोगों के लिये दो चरु तैयार किये हैं। तुम दोनों अपने-अपने चरु का भक्षण करना।' इतना कह कर भृगु अन्तर्धान हो गये। इधर सत्यवती और उसकी माता ने वृक्षों के आलिङ्गन तथा चरु-भक्षण में उलट-फेर कर दिया। भृगु अपनी दिव्यज्ञान शक्ति से सब बातें जानकर पुनः वहाँ आये। भृगु ने अपनी पुत्रवधू, सत्यवती, से कहा : 'तुमने चरुभक्षण और वृक्षों के आलिङ्गन में जो उलट-फेर कर दिया है उसके कारण तुम्हारा पुत्र ब्राह्मण होकर भी क्षत्रियोचित आचार-विचार वाला, तथा तुम्हारी माता का पुत्र क्षत्रिय होकर भी ब्राह्मणोचित आचार का पालन करनेवाला होगा।' तब सत्यवती के बारंबार प्रार्थना करने पर भृगु ने उसे यह वर दिया कि उसका पुत्र नहीं वरन् पौत्र क्षत्रिय स्वभाव वाला हो। तत्पश्चात् सत्यवती ने जमदग्नि नामक पुत्र को जन्म दिया जो बड़े होकर वेदाध्ययन में अन्य अनेक ऋषियों से आगे बढ़ गये। जमदग्नि की बुद्धि में सम्पूर्ण धनुर्वेद तथा चारों प्रकार के अस्त्र स्वतः स्फुरित हो गये (३. ११५, १९-४५)।" "जमदग्नि ने वेदाध्ययन में तत्पर होकर तपस्या आरम्भ की। उन्होंने शौच-सन्तोष आदि नियमों का पालन करते हुये सम्पूर्ण देवताओं को अपने वश में कर लिया। फिर राजा प्रसेनजित् के पास जाकर जमदग्नि ने उनकी पुत्री, रेणुका, को पत्नी के रूप में प्राप्त किया और अपने आश्रम पर रह कर उसके साथ तपस्या करने लगे। एक दिन रेणुका स्नान करने के लिये नदी तट पर गई। जब वह स्नान करके लौटने लगी तब उसकी दृष्टि मार्तिकावत देश के राजा चित्ररथ पर पड़ी जो अपनी पत्नी के साथ जल में क्रीड़ा कर रहे थे। उस समृद्धिशाली नरेश को देखकर रेणुका ने उसकी इच्छा की। रेणुका के लौटने पर जमदग्नि सब बातें जान गये। इसी समय जमदग्नि के ज्येष्ठ पुत्र रुमण्वान्, और फिर क्रमशः सुषेण, वसु, तथा विश्वावसु वहाँ आ गये। जमदग्नि ने बारी-बारी से अपने इन सभी पुत्रों को रेणुका का वध करने की आज्ञा दी, परन्तु मातृ स्नेह उमड़ आने से वे कुछ भी बोल नहीं सके। इस पर क्रुद्ध होकर जमदग्नि ने इन पुत्रों को शाप दिया जिससे सब अपनी चेतना खो कर मृग एवं पक्षियों के समान जड़-बुद्धि हो गये। इसके बाद अपने सबसे छोटे पुत्र, परशुराम, के आश्रम पर आने पर जमदग्नि ने उन्हें भी वही आज्ञा दी जिसका पालन करते हुये उन्होंने कुठार से अपनी माता रेणुका का मस्तक काट दिया। इससे प्रसन्न हो कर जमदग्नि ने परशुराम को वर देने की इच्छा प्रगट की। परशुराम ने अपनी माता के जीवित तथा चारों ज्येष्ठ भ्राताओं के स्वस्थ हो जाने का वर माँगा। उन्होंने यह भी कहा कि माता को उनके द्वारा मारे जाने की बात का स्मरण न रहे, और वे स्वयं इतने शक्तिशाली हो जायँ की युद्ध में कोई उनका सामना न कर सके। जमदग्नि ने परशुराम को ये सब वर प्रदान किये। एक दिन जब जमदग्नि के समस्त पुत्र आश्रम से बाहर गये हुये थे, तो अर्जुन कार्तवीर्य वहाँ आये। ऋषिपत्नी रेणुका के सत्कार को ग्रहण न कर अर्जुन कार्तवीर्य ने मुनि का आश्रम तहस-नहस कर डाला और उनकी होमधेनु के बछड़े का हरण कर लिया। परशुराम के लौटने पर जमदग्नि ने उनसे सारी बातें कहीं। परशुराम ने अत्यन्त क्रुद्ध होकर अर्जुन कार्तवीर्य पर आक्रमण कर दिया। तीक्ष्ण बाणों के प्रहार से परशुराम ने अर्जुन की सहस्र-भुजाओं को काट कर अन्ततः उसका वध कर डाला। पिता की मृत्यु से अर्जुन के पुत्र परशुराम पर कुपित हो उठे और परशुराम की अनुपस्थिति में आश्रम पर आ कर जमदग्नि की हत्या कर दी। ब्राह्मण होने के कारण जमदग्नि युद्ध में प्रवृत्त नहीं हुये और राम, राम, चिल्लाते रहे। कार्तवीर्य अर्जुन के पुत्रों के चले जाने के पश्चात् परशुराम ने आश्रम पर आकर पिता को मृत अवस्था में देखा (३. ११६)।" ७. १९०, ३३; १२. ४९, २९ (ये सत्यवती से उत्पन्न ऋचीक के पुत्र थे). ३१ (ये परशुराम के पिता थे). ४६. ५० (अर्जुन कार्तवीर्य के पुत्रों ने इनका वध कर दिया); २०८, ३४ (उत्तर दिशा के ऋषियों के अन्तर्गत इनका उल्लेख); २९२, १६ (इन्होंने विष्णु की स्तुति की थी); १३. ४, ४६ (इनका जन्म); २५, ४८ (महाह्रद में स्नान करने से मनुष्य को इनकी गति मिलती है); ५६, ९ (ये ऋचीक के पुत्र हो कर धनुर्वेद के ज्ञाता होंगे); ९३, २१. ४८. ६८. ९८ (इनके नाम की व्युत्पत्ति). १२४; ९४, ४. २५; ९५, ६; ९६, १. २. ५. ८ (सूर्य ने इन्हें एक छत्र और उपानह प्रदान किया); १०६, ६९ (उन ऋषियों में एक यह भी थे जिन्होंने उपवास द्वारा दिव्यलोक प्राप्त किया था); १२७, १७; १५०, ३९ (उत्तर में धनेश्वर के गुरुओं में एक यह भी थे); १६५, ४४ (उत्तर के ऋषियों में से एक); १४. २९, ७ (ये परशुराम के पिता थे)। "पूर्वकाल की बात है, एक दिन जमदग्नि ऋषि ने श्राद्ध करने का संकल्प किया। उस समय उनकी होमधेनु स्वयं ही उनके पास आई और मुनि ने स्वयं उसका दोहन किया। जमदग्नि ने जिस पात्र में दूध रक्खा उसमें क्रोध का रूप धारण करके धर्म ने प्रवेश किया। धर्म जमदग्नि की परीक्षा लेना चाहते थे इसीलिये क्रोध के स्पर्श से उन्होंने दूध को दूषित कर दिया। जमदग्नि ने उस क्रोध को पहचान लिया किन्तु उस पर क्रुद्ध नहीं हुये। तब क्रोध ने ब्राह्मण का रूप धारण किया और जमदग्नि से कहा : 'मैंने सुना था कि भृगुवंशी ब्राह्मण अत्यन्त क्रोधी होते हैं; परन्तु यह प्रवाद आज मिथ्या सिद्ध हुआ क्योंकि आपने मुझे जीत लिया। मैं आज आपके वश में हूँ, अतः आप मुझे क्षमा करें।' क्रोध की बात सुनकर जमदग्नि ने कहा : 'मैंने पितरों के लिये इस दूध का संकल्प किया है वे ही इसके स्वामी हैं, अतः तुम उन्हीं के पास जाओ।' जमदग्नि के कहने पर क्रोध रूपी धर्म भयभीत होकर वहाँ से अदृश्य हो गये और पितरों के शाप से उन्हें नेवला बनना पड़ा। शाप का अन्त होने के उद्देश्य से जब धर्म ने पितरों को प्रसन्न किया तब पितरों ने कहा : 'धर्मराज युधिष्ठिर पर आक्षेप करके इस शाप से मुक्त हो जाओगे।' तदनन्तर वह युधिष्ठिर की निन्दा के उद्देश्य से उनके यज्ञ में पहुँचा। वहाँ युधिष्ठिर पर आक्षेप करते

हुये एक सेर सत्तू के दान का माहात्म्य बताकर क्रोधरूपधारी धर्म शाप से मुक्त हो गया (१४. ९२, ४१-५६) ।" तुकी० आर्चीक, ऋचीकतनय, ऋचीकपुत्र, भार्गव, भार्गवनन्दन, भृगुशार्दूल, भृगुश्रेष्ठ, भृगूत्तम।

जमदग्निसुत = १. राम (५. १७६, ३४)।

१. जम्बुक, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७४)।

जम्बुपर्वत—'अष्टादश सहस्राणि योजनानि विशाम्पते। षट्शतानि च पूर्णानि निष्कम्पो जम्बुपर्वतः ॥', (६. ११, ५)।

जम्बू—"नीलगिरि के दक्षिण और निषध के उत्तर सुदर्शन नामक जम्बू-वृक्ष है जो सदा स्थिर रहनेवाला है। वह समस्त मनोवाञ्छित फलों को देनेवाला, पवित्र, तथा सिद्धों और चारणों का आश्रय है। उसी के नाम पर यह सनातन प्रदेश जम्बूद्वीप के नाम से विख्यात है। उस वृक्षराज की ऊँचाई ग्यारह सौ योजन है जो स्वर्गलोक को स्पर्श करती प्रतीत होती है। उसके फलों में जब रस आ जाता है तब वे अपने आप टूट कर गिर जाते हैं। उन फलों की लम्बाई ढाई हज़ार अरत्नि मानी गई है। वे फल इस पृथिवी पर गिरते समय भारी धमाके की आवाज़ करते हैं और भूतल पर सुवर्ण सदृश रस बहाया करते हैं। उस जम्बू के फलों का रस नदी के रूप में परिणत होकर मेरुगिरि की प्रदक्षिणा करता हुआ उत्तरकुरुवर्ष में पहुँचता है। फलों के उस रस का पान कर लेने पर वहाँ के निवासियों के मन में पूर्ण शान्ति और प्रसन्नता रहती है। उन्हें पिपासा अथवा वृद्धावस्था कभी नहीं सताती। उस जम्बू नदी से जाम्बू नामक सुवर्ण प्रगट होता है जो देवताओं का आभूषण है। वह इन्द्रगोपक के समान लाल और अत्यन्त चमकीला होता है (६. ७, १९-२६; देखिये गीताप्रे० सं० २. २८, ६ के बाद दाक्षिणात्य पाठ, पृष्ठ ७४७ भी)।" 'मेरोरग्रे यद्वनं भाति रम्यं सुपुष्पितं किन्नरीगीतजुष्टम्। सुदर्शना यत्र जम्बूर्विशाला तत्र त्वाहं तस्तिनं यातयिष्ये॥', (१३. १०२, २०)।

जम्बूक, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७६)।

जम्बूखण्ड = जम्बूद्वीप (६. ६, ३२; ११, १)।

जाम्बूखण्डविनिर्माण, जम्बूखण्डविनिर्माणपर्व के लिये प्रयुक्त हुआ है (१. २, ६७. २४५)।

जम्बूखण्डविनिर्माणपर्वन्, महाभारत के ६७ वें अवान्तर पर्व का नाम है। "जनमेजय ने पूछा कि कौरवों, और पाण्डवों तथा सोमकों ने कुरुक्षेत्र में किस प्रकार युद्ध किया। वैशम्पायन ने युद्ध का वर्णन आरम्भ किया। पाण्डवों के योद्धा कौरवों की सेना के सम्मुख जाकर पश्चिमभाग में पूर्वाभिमुख होकर ठहर गये। सूर्य जम्बूद्वीप के जितने भाग को अपनी किरणों से तपाते हैं उतनी दूर की सेनायें युद्ध के लिये आ गईं। युधिष्ठिर और दुर्योधन ने अपनी-अपनी सेनाओं के लिये संकेत-चिन्ह निश्चित किये। दुर्योधन (वर्णन) को देखकर पाञ्चालों ने प्रसन्न हो शंख बजाये। अर्जुन और कृष्ण ने भी क्रमशः अपने-अपने देवदत्त तथा पाञ्चजन्य नामक शंख बजाये जिसे सुनकर कौरव सशंकित हो उठे। उस समय प्रकृति में अनेक अपशकुन प्रकट हुये। दोनों ही दलों ने युद्ध सम्बन्धी नियम बनाये तथा युद्ध-धर्म की मर्यादा स्थापित की (६. १)।" "व्यास ने धृतराष्ट्र के पास जाकर उन्हें दिव्य नेत्र प्रदान करने के लिये कहा जिससे वे युद्ध के दृश्य को देख सकें, परन्तु धृतराष्ट्र ने अपने बन्धु-बान्धवों के संहार को देखने की इच्छा प्रगट नहीं की। तब व्यास ने संजय को दिव्य नेत्र प्रदान करते हुये कहा : 'संजय आपको (धृतराष्ट्र को) दिव्य दृष्टि से सम्पन्न होकर युद्ध की बातें बतायेंगे। कोई भी बात प्रगट हो या अप्रगट, दिन में हो या रात में, अथवा मन में ही क्यों न सोची गई हो, संजय सब कुछ जान लेंगे। इन्हें कोई शस्त्र काट नहीं सकेगा। इन्हें परिश्रम या थकावट की बाधा भी नहीं होगी। यह युद्ध से भी जीवित बच रहेंगे।' तदनन्तर व्यास ने धृतराष्ट्र को अपशकुनों के सम्बन्ध में बताते हुये उनसे शान्ति का वरण करने के लिये कहा। इस पर धृतराष्ट्र ने कहा कि उनके पुत्र उनके वश में नहीं हैं। व्यास ने उन शकुनों का वर्णन किया जो विजयसूचक होते हैं। इसके बाद उन्होंने पाण्डवों के साथ समझौता कर लेने के लिये कहा क्योंकि कौरवों की विजय अनिश्चित प्रतीत हो रही थी (६. २-३)।" "व्यास इस प्रकार उपदेश देकर वहाँ से चले गये। तब धृतराष्ट्र ने संजय से पूछा : 'ये अनेक शूरवीर इस भूमि के लिये ही अपने जीवन का बलिदान करने वाले हैं।...मैं ऐसा मानता हूँ कि यह भूमि बहुसंख्यक गुणों से विभूषित है। इसलिये, हे संजय! तुम मुझसे इस भूमि के गुणों का वर्णन करो। साथ ही कुरुक्षेत्र में जो असंख्य वीर एकत्र हैं, उनके देशों और नगरों के यथार्थ परिमाण आदि के सम्बन्ध में भी मैं सुनना चाहता हूँ।' तब संजय ने भूमि के विभिन्न गुणों तथा पृथिवी पर निवास करनेवाले विभिन्न प्राणियों का वर्णन किया। उन्होंने बताया कि स्थावर-जङ्गमरूप उन्नीस प्राणी हैं। इनके साथ पञ्चमहाभूतों को भी गिन लेने पर सबकी संख्या चौबीस हो जाती है। गायत्री के भी चौबीस अक्षर हैं। इसलिये इन चौबीस भूतों को भी लोकसम्मत गायत्री कहा गया है। संजय ने यह भी कहा कि जिसके अधिकार में भूमि है, उसी के अधिकार में सम्पूर्ण चराचर जगत है। इसलिये भूमि के प्रति आसक्ति रखने वाले राजा एक दूसरे को मारते हैं (६. ४)।" "धृतराष्ट्र ने पृथिवी के पर्वतों, नदियों तथा प्रदेशों के नाम और परिमाण आदि का वर्णन करने के लिये संजय से अनुरोध किया। संजय ने पञ्चमहाभूतों का वर्णन करते हुये पृथिवी को उसमें सर्वप्रमुख बताया। तदनन्तर उन्होंने सुदर्शन द्वीप का संक्षिप्त वर्णन किया (६. ५)।" "धृतराष्ट्र के पूछने पर और विस्तार से वर्णन करते हुये संजय ने कहा : पूर्व दिशा से पश्चिम की ओर विस्तृत छः वर्ष पर्वत हैं जो दोनों ओर, पूर्व तथा पश्चिम में, समुद्र में प्रविष्ट हैं। इन पर्वतों के नाम ये हैं : हिमवान्, हेमकूट, निषध, वैदूर्यमणि, नीलगिरि, श्वेतगिरि, तथा शृङ्गवान्। ये छः पर्वत सिद्धों और चारणों के निवासस्थान हैं। इनके बीच के सहस्रों योजन के विस्तार में भिन्न-भिन्न वर्ष और उनमें पवित्र जनपद हैं। इन्हीं में से एक भारतवर्ष है। इसके बाद हिमालय से उत्तर हैमवतवर्ष है। हेमकूट से आगे हरिवर्ष है। नीलगिरि के दक्षिण और निषध पर्वत के उत्तर-पूर्व से पश्चिम की ओर फैला हुआ माल्यवान् नामक पर्वत है। माल्यवान से आगे गन्धमादन है। इन दोनों के बीच सुवर्णमय मेरु पर्वत है जो प्रातःकाल के सूर्य के समान प्रकाशमान और अग्नि के समान कान्तिमान है—विस्तृत वर्णन। मेरु के पार्श्व भाग में ये चार द्वीप बसे हैं : भद्राश्व, केतुमाल, जम्बूद्वीप तथा उत्तर कुरु। इस पर्वत पर सुनहरे शरीर वाले कौवों को देखकर सुमुख नामक पक्षी ने इसका त्याग कर दिया। इस पर्वत पर देवता, गन्धर्व, असुर, राक्षस, तथा अप्सरायें क्रीड़ा करती रहती हैं। ब्रह्मा, रुद्र, तथा इन्द्र इस पर एकत्र हो नाना प्रकार के यज्ञों का अनुष्ठान करते हैं। उस समय तुम्बुरु, नारद, विश्वावसु, हाहा-हूहू नामक गन्धर्व इन देवेश्वरों की स्तुति करते हैं। सप्तर्षि और कश्यप प्रत्येक पर्व पर इस पर्वत पर पधारते हैं। इसी मेरुपर्वत के शिखर पर दैत्यों के साथ शुक्राचार्य निवास करते हैं। ये सब रत्न और रत्नमय पर्वत शुक्राचार्य के ही अधिकार में हैं। कुबेर उन्हीं से धन का चतुर्थ भाग प्राप्त करते हैं और सोलहवाँ भाग मनुष्यों को देते हैं। सुमेरु के उत्तर में कर्णिकार वन है जहाँ दिव्य भूतों से घिरे हुये पशुपति कनेर की माला धारण किये हुये भगवती उमा के साथ विहार करते हैं। उनके तीनों नेत्रों द्वारा ऐसा प्रकाश फैलता है मानों तीन सूर्य उदित हुये हों। सिद्ध पुरुष ही वहाँ भगवान् पशुपति का दर्शन करते हैं। दुराचारी लोगों को उनका दर्शन नहीं हो सकता। उस सुमेरु के शिखर से गङ्गा अत्यन्त प्रबल वेग से चन्द्रकुंड में गिरती हैं। मेरु के पश्चिम में केतुमाल द्वीप है जहाँ जम्बूखण्ड नामक प्रदेश और गन्धमादन है। नील पर्वत से उत्तर श्वेत वर्ष, और उसके भी उत्तर में हिरण्यकवर्ष है। तत्पश्चात् शृङ्गवान पर्वत से आगे ऐरावत नामक वर्ष है। दक्षिण और उत्तर के क्रमशः भारत और ऐरावत नामक दो वर्ष धनुष की दो कोटियों के समान स्थिति हैं और बीच में पाँच वर्ष (श्वेत, हिरण्यक, इलावृत, हरिवर्ष तथा हैमवत) हैं। भारत से आरम्भ करके ये सभी वर्ष आयु के प्रमाण, आरोग्य, धर्म, अर्थ, और काम, इन समस्त दृष्टियों में गुणों से उत्तरोत्तर बढ़ते गये हैं। विशाल हेमकूट ही

कैलास नाम से प्रसिद्ध है जहाँ कुबेर गुह्यकों के साथ निवास करते हैं। कैलास के उत्तर मैनाक और उसके भी उत्तर में हिरण्यशृङ्ग हैं। उसी के पास विन्दुसरोवर है जहाँ राजा भगीरथ ने गङ्गा का दर्शन करने के लिये अनेक वर्षों तक निवास किया था। इसी विन्दुसरोवर से गङ्गा सात धाराओं में विभक्त हो गई जिनके नाम ये हैं: वस्वोकसारा, नलिनी, सरस्वती, जम्बूनदी, सीता, गङ्गा, और सिन्धु। हिमालय पर राक्षस, हेमकूट पर गुह्यक, और निषध पर्वत पर सर्प तथा नाग निवास करते हैं। गोकर्ण तपोवन है। श्वेत पर्वत देवताओं और असुरों का निवास है। निषध पर गन्धर्व, तथा नीलगिरि पर ब्रह्मर्षि निवास करते हैं। शृङ्गवान केवल देवताओं का विहार-स्थल है। इस प्रकार स्थावर और जङ्गम सम्पूर्ण प्राणी इन सात वर्षों में विभागपूर्वक स्थित हैं। पहले जिन्हें दक्षिण और उत्तर में स्थित (भारत और ऐरावत) बताया गया है वे ही दोनों उस शश के दो पार्श्व भाग है। नागद्वीप तथा काश्यपद्वीप उसके दोनों कान हैं। ताम्रवर्ण के वृक्षों और पत्रों से सुशोभित मलय पर्वत ही उसका सर है। इस प्रकार सुदर्शन द्वीप का दूसरा भाग शश (खरगोश) के आकार में दृष्टिगोचर होता है (६. ६)।" "धृतराष्ट्र ने सञ्जय से मेरु के उत्तर तथा पूर्व भाग के स्थानों का वर्णन करने के लिये कहा। साथ ही उन्होंने माल्यवान् पर्वत के विषय में भी जानना चाहा। सञ्जय ने धृतराष्ट्र को उत्तर कुरुओं के विषय में बताने के बाद मेरु के पूर्व में स्थित भद्राश्व का और फिर जम्बू वृक्ष और माल्यवान् का वर्णन किया (६. ७)।" "धृतराष्ट्र ने सभी वर्षों और पर्वतों का तथा उन पर निवास करनेवाले लोगों का नाम बताने के लिये कहा। सञ्जय ने तब रमणक, हिरण्यक, शृङ्गवान् तथा ऐरावत आदि का वर्णन किया। सञ्जय का वर्णन सुनकर धृतराष्ट्र अपने पुत्रों के सम्बन्ध में चिन्ता करने लगे। कुछ देर के पश्चात् उन्होंने कहा: 'इसमें सन्देह नहीं कि काल ही सम्पूर्ण जगत् का संहार करता है। फिर वही सब की सृष्टि करता है।''''''भगवान् नर और नारायण समस्त प्राणियों के सुहृद एवं सर्वज्ञ हैं। देवता उन्हें वैकुण्ठ और मनुष्य उन्हें विष्णु कहते हैं।' (६. ८)।" "धृतराष्ट्र ने सञ्जय से उस भारतवर्ष के सम्बन्ध में पूछा जिसके लिये दुर्योधन और पाण्डव युद्ध के लिये सन्नद्ध हैं। सञ्जय ने कहा कि पाण्डवों को भारतवर्ष के साम्राज्य का लोभ नहीं है। परन्तु दुर्योधन और शकुनि ही उसके लिये अत्यन्त लुब्ध हैं। तदनन्तर सञ्जय ने उस भारतवर्ष का वर्णन किया जो इन्द्रदेव और वैवस्वत मनु का प्रिय देश है। सञ्जय ने भारत के राजाओं, नदियों-पर्वतों और जनपदों आदि का विस्तार से वर्णन किया। फिर उन्होंने भारतवर्ष के विभिन्न भागों में निवास करनेवाली आर्य और म्लेच्छ जातियों का वर्णन किया (६. ९)।" "धृतराष्ट्र ने सञ्जय से भारतवर्ष, हिमवत वर्ष और हरिवर्ष के मनुष्यों की आयु तथा गुणों के सम्बन्ध में पूछा। सञ्जय ने चारों युगों—सत्ययुग, त्रेता, द्वापर, और कलियुग—का वर्णन करते हुये इनमें से प्रत्येक में मनुष्यों की आयु तथा गुणों का निरूपण किया। उन्होंने कहा कि द्वापर में गुणों की न्यूनता होती है। भारतवर्ष की अपेक्षा हैमवत और हरिवर्ष में उत्तरोत्तर अधिक गुण हैं (६. १०)।"

जम्बूनदी, गङ्गा की सात धाराओं में से एक का नाम है (६. ६, ४८)।

जम्बूमार्ग, एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, ४०. ४३)। यह पश्चिम में स्थित है (६. ८९, १३)। १३. २५, ५१; १६५, २४।

१. जम्भ, एक असुर का नाम है। 'इति स्म भाषते काव्यो जम्भत्यागे महासुरान्', (२. ६२, १२)। 'असुरश्च महेष्वासो जम्भ इत्यभिश्रुतः', (३. १०२, १४)। 'वेगेनैव शैलमभिहत्य जम्भः शेते स कृष्णेन हतः परासुः', (५. ४८, ७७)। 'जम्भनस्य ग्रसमानस्य तदा ह्यर्जुन आहवे', (५. ४९, १५)। श्रीकृष्ण ने इसका वध किया (७. ११, ५)। 'इन्द्राविष्णू यथा प्रीतौ जम्भस्य वधकांक्षिणौ', (७. ८१, २५)। 'शक्रजम्भौ यथापुरा', (७. ९६, २०)। 'यथेन्द्रेण हतः पूर्वं जम्भो देवासुरे मृधे', (७. १०२, १७)।' 'यथा देवासुरे युद्धे जम्भशक्रौ महाबलौ', (८. १३, ३०)। 'हते महासुरे जम्भे शक्रविष्णू यथा मुदः', (८. ६५, १९)। 'जम्भं जिघांसुं प्रगृहीतवज्रं जयाय देवेन्द्रमिवोग्रमन्युम्', (८. ७७, ३)। 'पुरा जिघांसुमघवेव जम्भम्', (८. ८४, १९)। 'महेन्द्रजम्भाविव कर्णपाण्डवौ', (८. ८८, १२)। 'जम्भो वृत्रहणा यथा', (९. १२, ६३)। 'जम्भो यथा शक्रसमागमे वै नागेन्द्रमैरावणमिन्द्रवाह्यम्', (९. २०, १२)। 'यादृशं समरे पूर्वं जम्भवासवयोर्युधि', (९. २६, २५)। इन्द्र ने इसका वध किया (१२. ९८, ४९)। तुकी० असुर।

२. जम्भ, रावण के अनुचर, एक राक्षस का नाम है (३. २८५, २)।

जम्भक, एक राजा का नाम है जिसका, दलबल सहित, श्रीकृष्ण ने वध कर दिया था। उस समय इसका केवल पुत्र ही बच गया था जिसको सहदेव ने दक्षिण-दिग्विजय के समय पराजित किया था (२. ३१, ७. ८)।

१. जय, धृतराष्ट्र के एक महारथी पुत्र का नाम है। धृतराष्ट्र के ग्यारह महारथी पुत्रों के अन्तर्गत इसकी गणना (१. ६३, १२०)। २. ५८, १३; ४. ५४, ७ (अर्जुन पर आक्रमण करता है); ५. ५८, ७; ६. १८, ११; २०, १५; ४४, १६; ७७, ७; ७. २०, १२; २५, ४५ (धृतराष्ट्र का पुत्र); ७४, १६; ८५, २८; ९१, ३७; १३५, ३० (धृतराष्ट्र का पुत्र); ७४, १६; ८५, २८; ९१, ३७; १३५, ३० (धृतराष्ट्र का पुत्र); १५६, १२२; १५८, ५९. ६५; ८. ७, १८।

२. जय, एक देवता का नाम है, जिन्होंने देवों और अर्जुन तथा कृष्ण के युद्ध के समय हाथ में गदा लेकर अर्जुन आदि पर आक्रमण किया (१. २२७, ३४)। तुकी० जयन्त।

३. जय, एक प्राचीन राजा का नाम है जो यम की सभा में विराजते थे (२. ८, १५)।

४. जय = सूर्य (३. ३, २४)।

५. जय = अर्जुन (देखिये वस्था०)।

६. जय, उन पाँच गुप्त नामों में से एक, जो अज्ञातवास के पूर्व युधिष्ठिर ने पाण्डवों को दिये (४. ५, ३५)। द्रौपदी ने इन्हीं पाँच नामों—जय, जयन्त, विजय, जयत्सेन, जयद्बल—से अपने दुःखों का निवेदन किया (४. २३; १२)।

७. जय, एक नाग का नाम है (५. १०३, १६)। इसे वासुकि ने स्कन्द को प्रदान किया (९. ४५, ५२)।

८. जय, एक पाण्डवयोद्धा का नाम है जिसका अश्वत्थामा ने वध किया (७. १५६, १८१)।

९. जय, एक पाञ्चाल राजा का नाम है जिन्होंने कर्ण से युद्ध किया (९. ५६, ४४)।

१०. जय, मूर्तिमान विजय का नाम है (९. ४६, ६४)।

११. जय = शिव (१,००० नाम)।

१२. जय = विष्णु (१,००० नाम)।

१३. जय, एक मुहूर्त का नाम है (५. ६, १७)।

१४. जय, महाभारत के लिये प्रयुक्त हुआ है: 'जयो नामेतिहासोऽयं', (१. ६२, २०; ५. १३६, १८; १८. ५, ४९. ५१; ६, २३)।

१. जयत्सेन, एक मगध राजा का नाम है जो जरासन्ध का पुत्र था। यह कालकेय नामक असुरों में से सबसे ज्येष्ठ असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ४८)। यह द्रौपदी के स्वयंवर के समय उपस्थित हुआ (१. १८६, ८)। २. ४४, १९; ५. ४, ८; १९, ८ (एक अक्षौहिणी सेना के साथ युधिष्ठिर के पास आया); ५०, ४८ (इसने युधिष्ठिर का पक्ष लिया); ६६, ६ (इसी ? ने दुर्योधन का पक्ष लिया); १९६,१६ (युधिष्ठिर की सेना में इसकी उपस्थिति)। इसने धृतराष्ट्र के एक पुत्र से युद्ध किया (७. २५, ४५)। इसका वध (११. २५, ५)। १८. ५, २। तुकी० जरासन्धि, मागध।

२. जयत्सेन, एक कौरव-पक्ष के राजा का नाम है जो मगधनिवासी जरासन्ध का पुत्र था (५. ६६, ६)। यह एक अक्षौहिणी सेना के साथ दुर्योधन की सेना में सम्मिलित हुआ (६. १६, १६)। दुर्योधन की सेना में (६. १०८, १४)। इसने भीमसेन से युद्ध किया (६. ११४, ३२)। अभिमन्यु ने इसका वध किया (८. ५, ३१; ७३, २४)। ९. ६, ३ ?।

३. जयत्सेन, सार्वभौम के द्वारा केकयकुमारी सुनन्दा के गर्भ से उत्पन्न एक राजा का नाम है। इसकी पत्नी का नाम सुश्रवा और पुत्र का अवाचीन (१. ९५, १६-१७)।

४. जयत्सेन, युधिष्ठिर द्वारा रक्खे गये पाण्डवों के पाँच गुप्त नामों में से एक नाम है (४. ५, ३५; २३, १२)।

५. जयत्सेन, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (६. ७९, ४०. ४१. ४४)। इसने श्रुतकीर्ति तथा शतानीक से युद्ध किया (६. ७९, ४५)। इसने पौरव की रक्षा की (६. ११६, २५)। भीमसेन पर आक्रमण करने वाले धृतराष्ट्र के ग्यारह पुत्रों में एक यह भी था (९. २६, ५)। भीमसेन ने इसका वध किया। (९. २६, ११) तुकी० कौरव।

जयत्सेना, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ६)।

जयद्बल, युधिष्ठिर द्वारा रखे गये पाण्डवों के पाँच गुप्त नामों में से एक नाम है (४. ५, ३५; २३, १२)।

१. जयद्रथ, एक सिन्धु-राजा का नाम है (१. २, ९८. २५८. २५९)। धृतराष्ट्र की पुत्री, दुःशला, का इसके साथ विवाह हुआ (१. ६७, ११०; ११७, १८)। यह द्रौपदी के स्वयंवर के समय उपस्थित हुआ (१. १८६, २१)। यह युधिष्ठिर के राजसूय के समय उपस्थित हुआ (२. ३४, ८)। २. ३५, ८; ४४, १६; ५८, २६ (द्यूत क्रीड़ा के समय उपस्थित); ३. २६४, ११; २६५, १२; २६७, ८. १६; २६८, १०. २४. २६; २६९, १७. २७; २७०, २; २७१, ३२. ३५. ३६. ३७ (द्रौपदी को देखकर उसका अपहरण कर लिया परन्तु पाण्डवों ने इसका पीछा करके द्रौपदी को को मुक्त करा लिया); २७२, १. १२. १५. २०. २४ (भीमसेन ने इसे पकड़ लिया परन्तु बाद में मुक्त कर दिया). ८१ (इसने शिव को प्रसन्न किया और शिव ने इसे यह वर दिया कि यह अर्जुन को छोड़कर अन्य सभी पाण्डवों को पराजित कर देगा); २७३, २. ९; २९३, २; ४. २१, ४५; ५. १९, १९ (एक अक्षौहिणी सिन्धुओं और सौवीरों की सेना लेकर दुर्योधन के पास आया); ४७, ६; ५५, ४३. ६३; ५७, १५. ३७. ५८; ६२, १६; ६६, ७; ९२, ७; ९५, २०; १२४, ४९; १४२, १२; १४४, ६; १५५, ३२ (यह दुर्योधन की एक अक्षौहिणी सेना का नायक बना); १६०, १२३; १६१, ४१; १६४, ७; १९५, ६; ६. १६, १५ (दुर्योधन की एक अक्षौहिणी सेना का नायक); १७, २९ (इसकी ध्वजा पर एक चाँदी का वराह बना था); २५, ८; ३५, ३४; ४५, ५५ (द्रुपद से युद्ध किया); (५०, ३७; ५६, ६ (भीष्म के गारुडव्यूह के ग्रीवा में स्थित हुआ); ५७, ३१; ५९, ७५; ६०, २; ६५, १३; ७१, १५; ७६, १८; ७९, २०; ८५, १२. ३२ (भीमसेन से युद्ध किया); ९२, २३. ३९; ९४, १४; ९९, २ (भीष्म के सर्वतोभद्र व्यूह में स्थित); १००, १६; १०८, ५७; ११३, १. ११; ११४, २. ५. २२; ११६, ४२; ११९, १५; ७. ७, ११; १४, ६२. ७२. ७६ (अभिमन्यु द्वारा पराजित); २०, १२ (द्रोण के गारुडव्यूह में स्थित); २५, १० (क्षत्रवर्मा से युद्ध किया); ३२, ३८. ६९; ३४, २२. २४; ४२, ७. १५. १६. १८ (इसने शिव से यह वर प्राप्त किया था कि यह अर्जुन को छोड़कर अन्य पाण्डवों को रोक सकेगा); ५२, ५ (इसने पाण्डवों को अभिमन्यु की रक्षा करने से रोक दिया); ७३, ९. २०. २१. २२. २९. ३१. ३४. ३७. ४४; ७४, १; ७५, १०. २७. २९ (कौरवों के छः रथियों ने इसकी रक्षा का वचन दिया); ७६, २. २४; ७७, १८. २०; ७९, २२. २३. २६; ८०, ११. २०; ८७, ११. १६. १८ (इसके अश्वों का वर्णन); ९१, ७. ३५. ४४; ९४, ६. ८. १७; १००, २४. ३४; १०१, १५. ३०. ३१; १०३, ४२; १०४, ४. २२. २७; १०५, २१. ३६; ११०, ७५; १११, ८. ११. १२. १६; ११२, १०. १२; १२४, ११. १७; १२८. ४९; १३७, १५; १४१, ३१; १४३, ५३; १४५, ३. ७. ११. १२. १८. २०. २२; १४६, ४४. ४८. ५२. ७०. ७६. ७७ (अर्जुन ने इसके सभी रक्षकों को पराजित कर दिया). १०७. ११३ (जयद्रथ के पिता वृद्धक्षत्र ने यह शाप दे रक्खा था कि जो व्यक्ति जयद्रथ के मस्तक को भूमि पर गिरा देगा उसका मस्तक टूटकर टुकड़े-टुकड़े हो जायगा). ११५. १३५ (अर्जुन ने इसका मस्तक काट दिया और श्रीकृष्ण के प्रभाव से वह कटा हुआ मस्तक वृद्धक्षत्र की गोद में जाकर गिरा; फिर वृद्धक्षत्र की गोद से भूमि पर गिरने के कारण वृद्धक्षत्र का मस्तक भी चूर-चूर हो गया); १४८, ५८; १४९, ३६; १५०, ८. १४. ३४; १५२, १३; १५८, ६५ (मृत योद्धाओं के अन्तर्गत इसका उल्लेख); १५९. ५; १८२, ३५; १९७, ३७; ८. ५, ११. १२ (सिन्धुराष्ट्रमुखानीह दश राष्ट्राणि यानिह। वशे तिष्ठन्ति वीरस्य यः स्थितस्तव शासने॥ अक्षौहिणीर्दशैकां च विनिर्जित्य शितैः शरैः। अर्जुनेन हतो राजन्महावीर्यो जयद्रथः॥); ७३, ४३ (यह द्रोणाचार्य द्वारा रक्षित था). ४८; ९. २, १६ (इसने दुर्योधन का पक्ष लिया था). ३४; ४, १२. ३१. ३३; ५, ४०; २४, २८; २७, १५; ३२, २०; ६१, ४५; ६४, ३३; ११. १२, ८; १६, २८; २०, १८; २२, ८. ९. १२. १३; २६, ३२ (इसका शवदाह किया गया); १४. ७७, ११ (इसकी मृत्यु का प्रतिशोध लेने के लिये सिन्धुओं ने अर्जुन पर आक्रमण किया); ७८, १७. ३५; ८४, १२; १५. १४, ६ (युधिष्ठिर ने इसका श्राद्ध आदि कराया); १८. ५, ३।

तुकी० इसके नाम के निम्नलिखित पर्याय भी :—

*वार्द्धक्षत्रि (वृद्धक्षत्र का पुत्र) : ४. २६४, ६. ११; ६. २०, १२, ७. ४२, ८; ११. २२, ७।

***सिन्धुपति, सिन्धुराज्, सिन्धुराज, सिन्धुराजन्, सिन्धु-सौवीरभर्तृ**—देखिये वस्था०।

***सुवीर, सुवीरराष्ट्रप**—देखिये वस्था०।

***सैन्धव, सैन्धवक**—देखिये वस्था०।

***सौवीर, सौवीरक, सौवीरराज**—देखिये वस्था०।

२. जयद्रथ, एक प्राचीन राजा का नाम है जो यम की सभा में विराजते थे (२. ८, २६)।

जयद्रथवध, जयद्रथवधपर्वन् के लिये प्रयुक्त हुआ है (१. २, ६९)।

जयद्रथवधपर्वन्, महाभारत के ७५ वें अवान्तरपर्व का नाम है जो द्रोणपर्व के ८५-१५२ अध्यायों के अन्तर्गत आता है। "अपने पक्ष के वीरों के वध पर विलाप करते हुये धृतराष्ट्र ने अतीत की सुखद स्थितियों का स्मरण किया। उन्होंने कहा : 'पहले मैं सोमदत्त के भवन में बैठा हुआ उत्तम शब्द सुना करता था। परन्तु आज पुण्यहीन मैं अपने पुत्रों के भवन को उत्साहशून्य एवं आर्तनाद से गूँजता हुआ देख रहा हूँ। विविंशति, दुर्मुख, चित्रसेन और विकर्ण के भवनों से भी अब पूर्ववत् आनन्दपूर्ण ध्वनि नहीं सुनी जाती।' इसी प्रकार अपने पक्ष के अन्य वीरों के सम्बन्ध में सोच-सोचकर विलाप करते हुए धृतराष्ट्र ने श्रीकृष्ण के दूत के रूप में दिये परामर्श को अस्वीकार कर देने और कपट-द्यूत आदि का उल्लेख किया। उन्होंने कहा : 'मैं जूआ खेलना नहीं चाहता था। विदुर भी उसकी प्रशंसा नहीं करते थे। इसी प्रकार जयद्रथ और भीष्म भी इसके लिये सहमत नहीं थे।...पाण्डव पृथिवी का राज्य भोगने और उसे प्राप्त करने में भी समर्थ हैं। उन्हें यदि आदेश दिया जाय तो वे सदा धर्ममार्ग पर स्थित रहेंगे। शल्य, सोमदत्त, भीष्म, द्रोण, विकर्ण, बाल्हीक, कृपाचार्य, तथा अन्य भरतवंशी यदि पाण्डवों से कुछ कहेंगे तो वे उसे अवश्य स्वीकार करेंगे।' तदनन्तर धृतराष्ट्र ने पाण्डवपक्ष के वीरों के पराक्रम का वर्णन करते हुये उन्हें अजेय बताया और कहा : 'दुर्योधन, कर्ण, शकुनि और दुःशासन के अतिरिक्त कोई ऐसा वीर नहीं जो पाण्डवों के वेग का सहन कर सके।' इसके पश्चात् धृतराष्ट्र ने संजय से आगे की घटनाओं का वर्णन करने के लिये कहा (७. ८५)।" "संजय ने धृतराष्ट्र का उपालम्भ करते हुये उन्हें ही युद्ध तथा कौरवों के विनाश के लिये दोषी बताया (७. ८६)।" "प्रातःकाल द्रोणाचार्य ने कौरव सेना की व्यूह-रचना आरम्भ की। कौरव-सैनिक भी उत्साह में भर कर चिल्ला रहे थे कि 'अर्जुन कहाँ है?' अपने सैनिकों के व्यूहबद्ध हो जाने के पश्चात् द्रोणाचार्य ने जयद्रथ से कहा : 'तुम, भूरिश्रवा, कर्ण, अश्वत्थामा, शल्य, वृषसेन तथा कृपाचार्य सेना -वर्णन—लेकर मुझसे छः कोस की दूरी पर जाकर सन्नद्ध हो जाओ। वहाँ रहने पर इन्द्र आदि सम्पूर्ण देवता भी

तुम्हारा सामना नहीं कर सकते।' जयद्रथ ने इस आदेश का पालन किया। द्रोणाचार्य ने शकट-व्यूह का निर्माण किया था, जिसकी लम्बाई बारह गव्यूति और पृष्ठ भाग की चौड़ाई पाँच गव्यूति थी। इस व्यूह के पृष्ठभाग में पद्म नामक एक गर्भव्यूह भी बनाया गया जो अत्यन्त दुर्भेद्य था। इस पद्म व्यूह के मध्यभाग में एक अन्य सूची व्यूह बना था जो अत्यन्त गूढ़ था। सूचीमुख व्यूह के प्रमुख भाग में कृतवर्मा को खड़ा किया गया। कृतवर्मा के पीछे काम्बोजराज और जलसंध स्थित हुये, तथा इनके बाद दुर्योधन और कर्ण। इन सबके पीछे एक लाख वीर तथा उनके भी पीछे एक विशाल सेना लेकर जयद्रथ खड़े हुये। शकट-व्यूह के मुखभाग में स्वयं द्रोणाचार्य—इनके रथादि का वर्णन—खड़े हुये। इस महाव्यूह को देखकर सिद्धों और चारणों को अत्यन्त विस्मय हुआ। उस समय दुर्योधन भी व्यूह को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ (७. ८७)।" 'तब रौद्र-मुहूर्त के उपस्थित होने पर युद्धभूमि में अर्जुन दिखाई दिये। उस समय प्रकृति में अनेक अपशकुन भी प्रगट हुये। तदनन्तर नकुलपुत्र शतानीक और द्रुपद-कुमार धृष्टद्युम्न ने पाण्डव सेना की व्यूह-रचना की। दुर्मर्षण (धार्तराष्ट्र) ने अर्जुन से युद्ध करने का उत्साह प्रगट किया। अर्जुन भी—इनके आयुधों आदि का वर्णन—तब श्रेष्ठ रथ में बैठकर युद्धभूमि में सन्नद्ध हो गये। तदनन्तर जब अर्जुन और श्रीकृष्ण ने अपने-अपने शंख बजाये तब कौरव सेना भयभीत हो उठी (७. ८८)।" "चौदहवें दिन का युद्ध : अर्जुन और दुर्मर्षण का युद्ध हुआ जिसमें अर्जुन ने शत्रु सेना का भीषण संहार किया। अर्जुन के इस पराक्रम से त्रस्त होकर दुर्मर्षण की समस्त सेना भाग चली (७. ८९)।" "अर्जुन और दुःशासन का युद्ध हुआ जिसमें अर्जुन द्वारा भयंकर संहार किये जाने से दुःशासन की सेना ने पलायन किया। दुःशासन ने भी भागकर द्रोणाचार्य के पास शरण ली (७. ९०)।" "अर्जुन ने द्रोणाचार्य के पास आकर उनसे जयद्रथ का वध करने की अनुमति माँगी, परन्तु द्रोणाचार्य ने ऐसी अनुमति देना अस्वीकार करते हुये अर्जुन पर आक्रमण कर दिया। द्रोणाचार्य को पराजित करना कठिन देखकर अर्जुन और समय नष्ट न करने की दृष्टि से उन्हें छोड़ते हुये आगे बढ़े। अर्जुन कौरव सेना के भीतर घुस गये। उस समय पाञ्चाल राजकुमार युधामन्यु और उत्तमौजा उनके चक्ररक्षक थे। जय इत्यादि तथा अभीषाहों ने अर्जुन का प्रतिरोध किया। इन समस्त वीरों ने द्रोणाचार्य को आगे करके अर्जुन पर आक्रमण किया और उन्हें और आगे बढ़ने से रोक दिया (७. ९१)।" "अर्जुन और द्रोणाचार्य का युद्ध होने लगा जिसमें द्रोणाचार्य ने ब्रह्मास्त्र प्रगट किया। अर्जुन ने भी ब्रह्मास्त्र द्वारा ही आचार्य के अस्त्र को रोक दिया। तदनन्तर द्रोणाचार्य को छोड़कर अर्जुन भोजों का वध करते हुये कृतवर्मा और काम्बोजराज सुदक्षिण के बीच में आकर डट गये। अर्जुन और कृतवर्मा का युद्ध हुआ जिसमें कृतवर्मा मूर्च्छित हो गये। तब अर्जुन ने काम्बोजों के साथ युद्ध आरम्भ किया। कृतवर्मा और युधामन्यु + उत्तमौजा का युद्ध हुआ जिसमें इन लोगों को अर्जुन के पीछे जाने से कृतवर्मा ने रोक दिया। अर्जुन (+ कृष्ण) और श्रुतायुध का युद्ध हुआ। श्रुतायुध ने अपनी गदा से श्रीकृष्ण पर प्रहार किया परन्तु उस गदा ने लौटकर श्रुतायुध का ही वध कर दिया। श्रुतायुध को मृत देखकर कौरव-सेना में हाहाकार मच गया। काम्बोजराज सुदक्षिण और अर्जुन का युद्ध हुआ जिसमें अर्जुन ने सुदक्षिण का वध कर दिया। इस प्रकार श्रुतायुध और सुदक्षिण को मारा गया देखकर कौरव-सेना यत्र-तत्र भागने लगी (७. ९२)।" "अर्जुन ने अभीषाहों इत्यादि का संहार आरम्भ किया। श्रुतायु, अच्युतायु और अर्जुन का युद्ध हुआ जिसमें अर्जुन ने इन दोनों का ऐन्द्रास्त्र से वध कर दिया। श्रुतायु और अच्युतायु के पुत्र नियतायु + दीर्घायु का अर्जुन से युद्ध हुआ जिसमें अर्जुन ने इन दोनों का वध कर दिया। गजसेना सहित अङ्गों + गजारोही कालिङ्गों इत्यादि और अर्जुन का युद्ध हुआ परन्तु अर्जुन ने इन सबका तथा म्लेच्छों और यवनों इत्यादि का भी भीषण संहार किया। अम्बष्ठराज श्रुतायु और अर्जुन (+ कृष्ण) का युद्ध हुआ जिसमें अर्जुन ने श्रुतायु का वध कर दिया (७. ९३)।" "दुर्योधन ने द्रोणाचार्य का उपालम्भ किया जिसे सुन कर द्रोणाचार्य ने वृद्धावस्था के कारण अर्जुन का सामना करने में अपनी असमर्थता प्रगट की। तदनन्तर उन्होंने दुर्योधन के शरीर में मंत्रों से अभिमन्त्रित एक दिव्य कवच बाँधा और उसी से अर्जुन से युद्ध करने के लिये कहा। द्रोणाचार्य ने बताया कि उस दिव्य कवच से रक्षित होने पर उसे असुरों, देवताओं, यक्षों, नागों, राक्षसों और मनुष्यों, किसी का भी भय नहीं रहेगा। यह वही दिव्य कवच था जिसे शिव ने इन्द्र को दिया था। इसे पहन कर इन्द्र ने वृत्र का वध किया। इन्द्र > अङ्गिरा > बृहस्पति > अग्निवेश्य से होता हुआ यह कवच द्रोणाचार्य को प्राप्त हुआ। द्रोणाचार्य ने इसे ब्रह्मसूत्र से दुर्योधन के शरीर में बाँधा। पूर्वकाल में ब्रह्मा ने विष्णु के शरीर में भी इस कवच को इसी प्रकार बाँधा था। इसी प्रकार तारकामय संग्राम में भी ब्रह्मा ने इन्द्र के शरीर में इसे बाँधा था। दुर्योधन + त्रिगर्त इत्यादि ने तब अर्जुन के रथ की ओर प्रस्थान किया (७. ९४)।" "धृष्टद्युम्न के नेतृत्व में पाण्डवों + सोमकों का द्रोणाचार्य से युद्ध हुआ। द्रोणाचार्य का धृष्टद्युम्न से भयंकर संग्राम होने लगा। द्रोण की सेना तीन भागों में विभक्त हो गई, जिसमें से एक भाग कृतवर्मा की ओर, दूसरा जलसन्ध की ओर, और तीसरा स्वयं द्रोण की ओर चला गया। तब विविंशति इत्यादि तथा भीमसेन का, गोवासन प्रधान शैब्य तथा काशिराज का, माद्रराज शल्य तथा युधिष्ठिर का, दुःशासन तथा सात्यकि का, संजय तथा चेकितान का, शकुनि (+ ७०० गान्धार) तथा सहदेव का, विन्द और अनुविन्द तथा विराट का, वाल्हीकराज तथा शिखण्डी का, अवन्ती के एक वीर + सौवीरों + प्रभद्रकों तथा धृष्टद्युम्न का, अलायुध तथा घटोत्कच का, और अलम्बुष तथा कुन्तिभोज का, युद्ध होने लगा। उस समय सिन्धुराज जयद्रथ सम्पूर्ण सेना के पीछे कृपाचार्य आदि रथियों से सुरक्षित था। जयद्रथ के दाहिने चक्र की अश्वत्थामा तथा बायें चक्र की कर्ण रक्षा कर रहे थे। भूरिश्रवा आदि वीर जयद्रथ के पृष्ठ भाग की रक्षा कर रहे थे। साथ ही कृपाचार्य, वृषसेन, शल तथा शल्य आदि भी जयद्रथ की रक्षा करने में संलग्न थे (७. ९५)।" "अपने व्यूह के आगे स्थित होकर द्रोण ने पार्थों से युद्ध किया। विन्द और अनुविन्द का विराट के साथ, शिखण्डी का वाल्हीक के साथ, गोवासनराज शैब्य का काशिराज के साथ, वाल्हीकराज का द्रौपदेयों के साथ, दुःशासन का सात्यकि के साथ, कुन्तिभोज का अलम्बुष के साथ, नकुल + सहदेव का शकुनि के साथ, घटोत्कच का अलायुध के साथ, युधिष्ठिर का शल्य के साथ, और विविंशति इत्यादि का भीमसेन के साथ युद्ध हुआ (७. ९६)।" "भीमसेन का द्रोणाचार्य के साथ, युधिष्ठिर का कृतवर्मा के साथ और धृष्टद्युम्न का द्रोणाचार्य के साथ युद्ध हुआ। धृष्टद्युम्न अपने रथ को लाँघकर द्रोणाचार्य के रथ पर चढ़ गये। उन्होंने द्रोणाचार्य का वध कर देने का प्रयास किया परन्तु द्रोणाचार्य ने उनके आयुधों आदि को नष्ट कर दिया। तदनन्तर द्रोणाचार्य ने धृष्टद्युम्न के रथ और सारथि को भी नष्ट कर दिया। इस प्रकार द्रोणाचार्य के वश में हुये धृष्टद्युम्न को उस समय सात्यकि ने बचा लिया (७. ९७)।" "सात्यकि (युयुधान) का द्रोणाचार्य के साथ युद्ध हुआ जिसे देखने के लिये ब्रह्मा और सोम के साथ देवता, सिद्ध, चारण, विद्याधर तथा नाग वहाँ उपस्थित हुये। द्रोणाचार्य ने सात्यकि के पराक्रम की परशुराम, कार्तवीर्य अर्जुन, और भीष्म आदि के साथ तुलना करते हुये उनकी प्रशंसा की। इन्द्र आदि देवताओं, सिद्धों और चारणों ने भी सात्यकि की प्रशंसा की। द्रोणाचार्य ने आग्नेयास्त्र का संधान किया और सात्यकि ने वारुणास्त्र का। अभी द्रोण और सात्यकि का यह अद्भुत युद्ध चल ही रहा था कि सूर्य अस्ताचल को चले गये। सात्यकि की रक्षा करने की दृष्टि से युधिष्ठिर इत्यादि ने द्रोणाचार्य तथा दुःशासन इत्यादि से युद्ध किया (७. ९८)।" "इधर अर्जुन और श्रीकृष्ण तीव्र गति से कौरव-सेना में प्रवेश करते हुये जयद्रथ की ओर बढ़ने लगे। विन्द और अनुविन्द ने अर्जुन से युद्ध किया परन्तु अर्जुन ने दोनों का वध कर दिया। तदनन्तर अर्जुन ने अपने रथ के घोड़ों को थोड़ा विश्राम देने के सम्बन्ध में श्रीकृष्ण से परामर्श किया। श्रीकृष्ण ने जब घोड़ों को

विश्राम देना आरम्भ किया तो रथ से नीचे उतर कर अर्जुन ने अकेले ही कौरव-सेना को रोक लिया। अर्जुन ने भूमि में एक बाण मार कर वहीं घोड़ों को पानी पीने के लिये एक जलाशय का निर्माण किया। उस समय उन्होंने घोड़ों के विश्राम के लिये वहीं बाणों का अद्भुत घर भी बना दिया। श्रीकृष्ण ने अर्जुन के इन पराक्रमों की सराहना की (७. ९९)।" "जब श्रीकृष्ण घोड़ों की परिचर्या करने लगे तो सिद्धों और चारणों ने उन्हें साधुवाद दिया। जब अर्जुन पैदल ही युद्ध करने लगे तो कौरव-सेना ने उन पर भीषण आक्रमण किया परन्तु अर्जुन ने सबको पीछे हटा दिया। उस समय समस्त कौरव-सैनिक अर्जुन के पराक्रम की प्रशंसा करते हुये दुर्योधन की भर्त्सना करने लगे। घोड़ों को भोजन आदि कराने के पश्चात् श्रीकृष्ण ने उन्हें पुनः रथ में सन्नद्ध किया। तदनन्तर अर्जुन और श्रीकृष्ण तीव्रगति से जयद्रथ की ओर बढ़ने लगे (७. १००)।" "श्रीकृष्ण तथा अर्जुन की प्रगति देखकर कौरव-सैनिक निराश हो गये। श्रीकृष्ण तथा अर्जुन भी द्रोण आदि कौरव महारथियों से युद्ध करते हुये जयद्रथ के निकट आ गये। उस समय दुर्योधन एकमात्र रथ की सहायता से युद्धभूमि में आया और श्रीकृष्ण के सामने डट गया। दुर्योधन को इस प्रकार सन्नद्ध देखकर कौरव-सेना हर्षित हो उठी (७. १०१)।" "श्रीकृष्ण ने दुर्योधन की ओर संकेत करते हुये अर्जुन की प्रशंसा की। उन्होंने अर्जुन से कहा : 'देवता, असुर, और मनुष्यों सहित तीनों लोक भी रणक्षेत्र में तुम्हें जीत नहीं सकते; फिर अकेले दुर्योधन की तो बात ही क्या। अतः आज तुम दुर्योधन का वध कर डालो।' इस प्रकार श्रीकृष्ण के वचनों से प्रोत्साहित होकर अर्जुन ने दुर्योधन का वध कर डालने का वचन दिया। तदनन्तर उनका दुर्योधन के साथ भयंकर संग्राम होने लगा (७. १०२)।" "अर्जुन दुर्योधन को आहत नहीं कर सके क्योंकि उसने अभेद्य कवच बाँध रक्खा था। तब अर्जुन ने श्रीकृष्ण को उस कवच के सम्बन्ध में बताते हुये कहा : 'ब्रह्मा ने वह तेजस्वी कवच अङ्गिरा को दिया, और उनसे बृहस्पति <इन्द्र से होता हुआ मुझे प्राप्त हुआ।' तदनन्तर अर्जुन ने अभिमन्त्रित बाणों से दुर्योधन पर प्रहार किया परन्तु अश्वत्थामा ने उन्हें काट दिया। अर्जुन इस अस्त्र का दो बार प्रयोग नहीं कर सकते थे क्योंकि ऐसा करने पर यह अस्त्र स्वयं अर्जुन को ही मार डालता। अर्जुन ने दुर्योधन के रथ, अश्वों तथा आयुधों आदि को नष्ट कर दिया। तब दुर्योधन युद्धभूमि से भाग गया। जब श्रीकृष्ण ने अपना पाञ्चजन्य नामक शंख बजाया तथा अर्जुन ने अपने गाण्डीव धनुष पर टंकार दी तो कौरव भयभीत होकर भूमि पर गिर पड़े। जयद्रथ के रक्षकों ने श्रीकृष्ण तथा अर्जुन पर आक्रमण किया (७. १०३)।" "भूरिश्रवा, शल, कर्ण, वृषसेन, कृपाचार्य, शल्य तथा अश्वत्थामा ने अर्जुन पर आक्रमण किया। अर्जुन और कृष्ण ने उस समय अपने-अपने शंख बजाये। दुर्योधन+भूरिश्रवा का अर्जुन से युद्ध हुआ। अश्वत्थामा ने भी अर्जुन (+कृष्ण) से युद्ध किया (७. १०४)।" "संजय ने धृतराष्ट्र से अर्जुन और कौरव-महारथियों के ध्वजों का वर्णन किया। अर्जुन ने अकेले ही नौ कौरव महारथियों से युद्ध किया (७. १०५)" "अपराह्नकाल में पाञ्चाल सैनिकों ने द्रोणाचार्य का वध करने का निश्चय किया। बृहत्क्षत्र और द्रोणाचार्य का, क्षेमधूर्ति और बृहत्क्षत्र का, धृष्टकेतु और क्षेमधूर्ति का वीरधन्वा और धृष्टकेतु का, युधिष्ठिर और द्रोण का, विकर्ण (धार्तराष्ट्र) और नकुल का, दुर्मुख और सहदेव का, व्याघ्रदत्त और सात्यकि का, भूरिश्रवा और द्रौपदेयों का, अलम्बुष और भीमसेन का, तथा युधिष्ठिर और द्रोणाचार्य का, भयंकर युद्ध हुआ। युधिष्ठिर ने महान पराक्रम प्रगट किया। द्रोणाचार्य तथा युधिष्ठिर, दोनों ने ब्रह्मास्त्र का संधान किया। फिर भी, युधिष्ठिर का रथ भंग हो गया और वे सात्यकि के रथ पर बैठ कर युद्ध-भूमि से पलायन कर गये (७. १०६)।" "क्षेमधूर्ति और केकयराज बृहत्क्षत्र का युद्ध हुआ जिसमें केकयराज ने क्षेमधूर्ति का वध कर दिया। वीरधन्वा और धृष्टकेतु का युद्ध हुआ। सिद्ध और चारण भी इस अद्भुत युद्ध से चकित थे। धृष्टकेतु ने वीरधन्वा का वध कर दिया। दुर्मुख (धार्तराष्ट्र) और सहदेव का युद्ध हुआ जिसमें भाग कर दुर्मुख निरमित्र के रथ पर चढ़ गया। सहदेव ने निरमित्र का वध कर दिया। नकुल और विकर्ण का युद्ध हुआ जिसमें विकर्ण की पराजय हुई। मगधराज व्याघ्रदत्त और सात्यकि का युद्ध हुआ जिसमें सात्यकि ने व्याघ्रदत्त का वध कर दिया। तदनन्तर मगध वीरों ने सात्यकि से युद्ध किया परन्तु सात्यकि ने उनका भीषण संहार किया। इस प्रकार कौरव-सेना प्रायः पराजित हो गई। तब द्रोणाचार्य ने सात्यकि से युद्ध आरम्भ किया (७. १०७)।" "भूरिश्रवा और द्रौपदेयों का तथा नकुल-पुत्र शतानीक और भूरिश्रवा का युद्ध हुआ। सहदेव के पुत्र ने शल का वध कर दिया। अलम्बुष और भीमसेन का युद्ध हुआ जिसमें अलम्बुष ने माया का आश्रय लेकर युद्धक्षेत्र में रक्त की नदी बहा दी जो चारों ओर से राक्षसों से घिरी थी। तब भीमसेन ने त्वाष्ट्र नामक अस्त्र का संधान किया जिससे त्रस्त होकर अलम्बुष द्रोणाचार्य की सेना में भाग गया (७. १०८)।" "घटोत्कच और अलम्बुष का युद्ध हुआ जिसमें दोनों ने अपनी-अपनी माया का प्रयोग किया। भीमसेन इत्यादि पाण्डवों ने भी अलम्बुष से युद्ध किया। अन्ततः घटोत्कच ने अलम्बुष का वध कर दिया (७. १०९)।" "युयुधान और द्रोणाचार्य का युद्ध हुआ। युधिष्ठिर ने धृष्टद्युम्न से भीमसेन के नेतृत्व में एक बड़ी सेना लेकर युयुधान की रक्षा करने के लिये कहा। युधिष्ठिर ने अपनी सम्पूर्ण सेना लेकर द्रोणाचार्य से युद्ध किया परन्तु द्रोणाचार्य ने अनेक पाण्डवों को पराजित कर दिया। युधिष्ठिर ने पाञ्चजन्य की ध्वनि सुनकर समझा कि अर्जुन कष्ट में हैं। उन्होंने सात्यकि को अर्जुन का कुशल-समाचार लाने के लिये भेजा। उन्होंने सात्यकि की प्रशंसा करते हुये कहा : 'अर्जुन तुम्हारा भाई, मित्र और गुरु हैं। अतः तुम उसकी सहायता के लिये प्रयत्न करो। स्वयं अर्जुन ने भी तुम्हारी प्रशंसा की है।' इस प्रकार सात्यकि के अनेक गुणों की चर्चा करने के पश्चात् युधिष्ठिर ने उनसे अर्जुन की रक्षा करने के लिये कहा (७. ११०)।" "सात्यकि ने युधिष्ठिर का आदेश शिरोधार्य करते हुये कहा : 'स्वयं अर्जुन ने मुझे आपकी रक्षा का आदेश दिया है।' सात्यकि ने यह भी कहा कि सौवीर, सिन्धु, पूरुदेश के योद्धा, तथा कर्ण आदि महारथी भी अर्जुन की सोलहवीं कला के बराबर नहीं हैं, अतः अर्जुन के लिये कोई भय नहीं। देवता, असुर, मनुष्य, राक्षस, किन्नर, सर्पगण तथा सम्पूर्ण स्थावर-जङ्गम प्राणी भी अर्जुन का सामना नहीं कर सकते। सात्यकि के इस प्रकार कहने पर भी युधिष्ठिर ने उन्हें अर्जुन की रक्षा के लिये जाने पर जोर देते हुये कहा कि सात्यकि की अनुपस्थिति में भीमसेन उनकी रक्षा करेंगे (७. १११)।" "सात्यकि ने युधिष्ठिर की आज्ञा का पालन करना स्वीकार करते हुये कहा : 'अर्जुन इस समय यहाँ से तीन योजन दूर हैं। यह आप जो गजसेना देखते हैं, इसका नाम है अञ्जनककुल है और इस पर अनेक म्लेच्छ योद्धा आरूढ़ हैं। बध के अतिरिक्त अन्य किसी उपाय से इस सेना की पराजय नहीं हो सकती। आप जिन रथियों को देख रहे हैं वे सब रुक्मरथ नामक महारथी राजकुमार हैं।'......'ये सब योद्धा कर्ण के वश में हैं। कर्ण ही इन्हें अर्जुन की ओर से इधर लौटा लाया है जिससे ये मुझसे युद्ध कर सकें। मैं इन सब को मथ कर अर्जुन के पास जाऊँगा। जो दूसरे सात सौ गज आप देख रहे हैं उन पर किरात आरूढ़ हैं। ये सब दुर्योधन की आज्ञा से मेरे साथ युद्ध युद्ध के लिये सन्नद्ध हैं। मैं इन समस्त किरातों का वध करके अर्जुन के पास जाऊँगा। दुर्योधन की ये अनेक अक्षौहिणी सेनायें मुझसे युद्ध के लिये सन्नद्ध हैं, परन्तु मैं इन सब को मथ कर अर्जुन के पास अवश्य पहुँचूँगा।' इस प्रकार उत्साहपूर्ण वचन कहने के पश्चात् सात्यकि आयुधों से भरे अपने रथ को लेकर अर्जुन से मिलने के लिये चले। सात्यकि को अपने भीतर प्रवेश करने के लिये सन्नद्ध देखकर कौरव-सेना पर पुनः मोह छा गया (७. ११२)।" "सात्यकि जब कौरव-सेना की ओर बढ़े तब युधिष्ठिर भी द्रोणाचार्य से युद्ध करने के लिये सात्यकि के पीछे-पीछे ही गये। धृष्टद्युम्न और राजा वसुदान ने सैनिकों से सात्यकि की रक्षा करने का आह्वान किया। सात्यकि के पराक्रम को देखकर कौरव-सेना भाग खड़ी हुई। सात्यकि और द्रोणाचार्य का युद्ध हुआ, परन्तु सात्यकि ने

द्रोणाचार्य को छोड़कर अवन्ति-सैनिकों की ओर बढ़ने का अपने सारथि को आदेश दिया। तदनन्तर कर्ण को सेना का संहार करते हुये सात्यकि ने कृतवर्मा से युद्ध किया और उसके सारथि का वध कर दिया। कृतवर्मा तब भीमसेन से युद्ध करने लगे और सात्यकि ने काम्बोजों का साक्षात्कार किया। द्रोणाचार्य ने सात्यकि का पीछा करने का प्रयास किया परन्तु पाण्डव-सैनिकों ने उन्हें रोक दिया। भीमसेन के नेतृत्व में पाण्डवों का कृतवर्मा से युद्ध हुआ (७. ११३)।" "धृतराष्ट्र ने सञ्जय के समक्ष यह आश्चर्य प्रगट किया कि उनकी इतनी पराक्रमी सेना का भी कैसे इस प्रकार संहार हुआ। विदुर के उपदेशों का स्मरण दिलाते हुये सञ्जय ने धृतराष्ट्र की भर्त्सना की और उसके बाद कहा: भीमसेन के नेतृत्व में पार्थों ने कृतवर्मा से युद्ध किया। शिखण्डी को उनका सारथि युद्ध-भूमि से दूर हटा ले गया। कृतवर्मा ने पार्थों आदि को पराजित कर दिया (७. ११४)।" "सात्यकि ने लौट कर कृतवर्मा से युद्ध करते हुये उनको रथविहीन कर दिया। तदनन्तर सेना का भेदन करते हुये सात्यकि अर्जुन की ओर चले। दुर्योधन की आज्ञा से द्रोणाचार्य की सेना के बायें ओर रुक्मरथ तथा गजारोही त्रिगर्त्त योद्धा सात्यकि से युद्ध करने के लिये सन्नद्ध थे, परन्तु सात्यकि के पराक्रम को देखकर यह गजसेना भाग खड़ी हुई। मगधराज जलसन्ध ने सात्यकि पर आक्रमण किया परन्तु सात्यकि ने उसका वध कर दिया। यह देखकर कौरव-सेना भागने लगी। द्रोणाचार्य और सात्यकि का युद्ध हुआ (७. ११५)।" "द्रोण इत्यादि ने सात्यकि से युद्ध किया। पराजित दुर्योधन चित्रसेन के रथ पर बैठ कर युद्ध भूमि से भाग गया। कृतवर्मा ने सात्यकि से युद्ध किया परन्तु पराजित हो गया (७. ११६)।" "द्रोणाचार्य और सात्यकि का युद्ध हुआ जिसमें सात्यकि ने द्रोणाचार्य के सारथि को आहत कर दिया। द्रोणाचार्य ने भी सात्यकि के सारथि पर प्रहार किया जिससे वह मूर्च्छित हो गया। सात्यकि ने तब स्वयं अपने रथ का सारथि बन कर द्रोणाचार्य से युद्ध किया। सात्यकि ने द्रोणाचार्य को आहत कर दिया जिससे वे पुनः भाग कर अपने व्यूह की ही रक्षा करने लगे। कौरव-सेना ने भी पलायन किया (७. ११७)।" "राजा सुदर्शन और सात्यकि का युद्ध हुआ जिसमें सात्यकि ने सुदर्शन का वध कर दिया (७. ११८)।" "सात्यकि के सारथि ने उनकी प्रशस्ति की। सात्यकि ने सारथि से रथ को काम्बोजों की ओर ले चलने के लिये कहा। यवनों ने सात्यकि से युद्ध किया परन्तु पराजित होकर भाग गये। इसी प्रकार सात्यकि ने सहस्रों काम्बोजों का भी वध कर दिया। उस समय चारण और गन्धर्वों आदि ने सात्यकि को साधुवाद दिया (७. ११९)।" "सात्यकि—युयुधान—ने अर्जुन की ओर बढ़ना प्रारम्भ किया परन्तु दुर्योधन आदि ने उनका पीछा करके उन पर आक्रमण कर दिया। सात्यकि ने दुर्योधन की सेना का भीषण संहार आरम्भ किया। दुर्योधन को उसका सारथि रणभूमि से दूर हटा ले गया और शेष कौरव-सेना ने भी पलायन किया। तब युयुधान पुनः अर्जुन की ओर चले (७. १२०)।" "धृतराष्ट्र ने सात्यकि की वीरता पर आश्चर्य प्रगट करते हुये सञ्जय से आगे के युद्ध का समाचार पूछा। सञ्जय ने युद्धजन्य विनाश को धृतराष्ट्र की ही खोटी बुद्धि का परिणाम बताते हुये इस प्रकार वर्णन किया: 'दुर्योधन के नेतृत्व में गजसेना और शकों, काम्बोजों, यवनों आदि के सेना ने सात्यकि पर आक्रमण किया। दुःशासन ने भी दस्युओं की सेना लेकर सात्यकि से युद्ध किया। सात्यकि ने गजसेना तथा समस्त अश्वसेना का संहार करने के पश्चात् दस्युओं का भी संहार आरम्भ किया। उस समय सात्यकि के प्रहारों से अञ्जन तथा वामन नामक दिग्गज के कुल में उत्पन्न पर्वताकार श्रेष्ठ गजराज भी धराशायी हो गये। वनायु, काम्बोज और वाह्लीक देशों में उत्पन्न अश्वों तक को सात्यकि ने मार गिराया। दरद, तंगण, खस, लम्पाक, और कुलिन्ददेशीय म्लेच्छों ने जब सात्यकि पर पाषाणों से आक्रमण किया तो उन्होंने उनका भी संहार कर डाला। सात्यकि के प्रहारों से त्रस्त कौरव-सेना का कोलाहल सुनकर द्रोणाचार्य ने अपना रथ सात्यकि के पास ले चलने के लिये सारथि से कहा। सारथि ने बताया कि पाञ्चाल तथा पाण्डव द्रोणाचार्य की ओर ही आ रहे हैं। इसी समय सहसा सात्यकि भी वहाँ उपस्थित हुये। उन्हें देख कर छिन्न-भिन्न कौरव-सेना तथा दुःशासन आदि सभी भयभीत होकर द्रोणाचार्य की सेना की ओर भाग आये (७. १२१)।" "द्रोणाचार्य ने दुःशासन की कायरता पर उसकी भर्त्सना की। उन्होंने उसके द्रौपदी के सम्मुख कहे शब्दों को भी उद्धृत करते हुये कहा कि वह पाण्डवों से सन्धि कर ले। तब म्लेच्छों की सेना लेकर दुःशासन ने सात्यकि से युद्ध किया। द्रोणाचार्य ने पाञ्चालों + पाण्डवों इत्यादि से युद्ध किया। द्रोणाचार्य ने वीरकेतु, चित्रकेतु, सुधन्वा, चित्रवर्मा, और चित्ररथ आदि पाञ्चालों का वध कर दिया। द्रोणाचार्य से घोर युद्ध करते हुये धृष्टद्युम्न उनके रथ पर चढ़ गये, परन्तु फिर धृष्टद्युम्न का सारथि उन्हें युद्धभूमि से दूर हटा ले गया। पाण्डवों का भीषण संहार करने के पश्चात् द्रोणाचार्य पुनः अपने व्यूह की रक्षा करने लगे (७. १२२)।" "दुःशासन और सात्यकि का युद्ध हुआ जिसमें दुःशासन के सैनिकों ने पलायन किया। दुर्योधन ने ३,००० त्रिगर्त्तों को युयुधान—सात्यकि—से युद्ध के लिये भेजा परन्तु सात्यकि ने ५०० त्रिगर्त्तों का वध कर दिया जिससे शेष सैनिक द्रोण की शरण में भाग गये। जब सात्यकि अर्जुन की ओर बढ़ने लगे तो दुःशासन ने उन पर पुनः आक्रमण किया। सात्यकि के प्रहारों से त्रस्त होकर दुःशासन त्रिगर्तराज के रथ पर चढ़ गया। भीमसेन के प्रण का स्मरण करके सात्यकि ने दुःशासन का वध नहीं किया और शीघ्रतापूर्वक अर्जुन से मिलने के लिये बढ़े (७. १२३)।" "सात्यकि के महान पराक्रम की देवता तथा चारण, सब ने सराहना की। भीमसेन इत्यादि का कौरवों के साथ युद्ध हुआ। सात्यकि अर्जुन की ओर चले गये। दुर्योधन ने पाण्डवों के साथ युद्ध करते हुये भीषण नर-संहार किया। दुर्योधन की रक्षा करने के उद्देश्य से द्रोणाचार्य ने पाञ्चालों से युद्ध किया। उस समय भीषण नर-संहार होने लगा। इसी समय उस स्थान पर तीव्र कोलाहल होने लगा जहाँ अर्जुन थे (७. १२४)।" "अपराह्न: द्रोणाचार्य का सोमकों (+ पाण्डवों) से युद्ध हुआ। केकयराज बृहत्क्षत्र और द्रोणाचार्य का युद्ध हुआ जिसमें दोनों ने ब्रह्मास्त्र का संधान किया। द्रोणाचार्य ने अन्ततः बृहत्क्षत्र का वध कर दिया। तदनन्तर द्रोणाचार्य ने चेदिराज धृष्टकेतु (जो शिशुपाल का पुत्र और काम्बोजदेशीय अश्वसेना लेकर युद्ध कर रहा था), और फिर धृष्टद्युम्नकुमार क्षत्रधर्मा तथा जरासन्ध-पुत्र सहदेव का भी वध कर दिया। चेदियों ने भी द्रोणाचार्य से युद्ध किया जिसमें द्रोणाचार्य ने अनेक प्रमुख चेदियों का वध कर दिया। द्रोणाचार्य के प्रहारों से त्रस्त होकर पाञ्चाल सैनिक काँप उठे और भीमसेन तथा धृष्टद्युम्न को पुकारने लगे। द्रोणाचार्य से पराजित होकर चेकितान भी युद्धभूमि से भाग गया। उस समय द्रुपद ने कहा: 'दुर्बुद्धि पापी दुर्योधन अत्यन्त कष्टप्रद लोक में जायगा क्योंकि उसी के कारण अनेक क्षत्रियशिरोमणि वीरों का वध हुआ है।' ऐसा कहकर राजा द्रुपद ने पार्थों को आगे करके द्रोणाचार्य पर आक्रमण कर दिया (७. १२५)।" "सात्यकि और अर्जुन का कोई समाचार न मिलने के कारण युधिष्ठिर ने अत्यन्त चिन्तित होकर भीमसेन को सात्यकि का पता लगाने के लिये भेजने का निश्चय किया। उन्होंने भीम को भेजते हुये कहा: 'जब तुम श्रीकृष्ण, अर्जुन तथा सात्यकि को सकुशल देखना तब उच्च स्वर में सिंहनाद करके मुझे इसकी सूचना देना' (७. १२६)।" "भीम ने धृष्टद्युम्न से युधिष्ठिर की रक्षा करने के लिये कहा और स्वयं सात्यकि तथा अर्जुन का समाचार लाने के लिये प्रस्थित—वर्णन—हुये। पाञ्चजन्य की भयंकर ध्वनि सुन पड़ी जिससे युधिष्ठिर अत्यन्त चिन्तित हो उठे। भीम अपने सारथि, विशोक, द्वारा संचालित रथ पर आरूढ़ होकर कौरव सेना का भेदन करते हुये चले। उनके पीछे पाञ्चाल तथा सोमक वीर भी थे। उस समय दुःशल आदि धार्तराष्ट्रों ने भीमसेन पर प्रबल आक्रमण किया परन्तु भीमसेन अपने वेग से उन सब को लाँघ कर द्रोणाचार्य की सेना पर टूट पड़े। द्रोणाचार्य के साथ घोर युद्ध करते हुये भीमसेन ने अपनी गदा से उनके रथ को सारथि सहित चूर-चूर कर दिया। द्रोणाचार्य, जो रथ से पहले ही उतर पड़े थे, किसी प्रकार बच गये। भीमसेन ने कुण्डभेदी इत्यादि ग्यारह धार्तराष्ट्रों का

वध कर दिया। इस प्रकार त्रस्त होकर धृतराष्ट्र के पुत्र अपनी सेना सहित भाग खड़े हुये और भीमसेन द्रोणाचार्य की सेना की ओर अग्रसर हुये (७. १२७)।" "भीम और द्रोणाचार्य का युद्ध हुआ जिसमें भीमसेन ने द्रोणाचार्य के रथ को आठ बार फेंक दिया। इस प्रकार द्रोणाचार्य तथा अन्य कौरव-योद्धाओं को पराजित करते हुये भीमसेन ने सात्यकि को देखा और तीव्रगति से उनके पास आ गये। वहाँ अर्जुन तथा श्रीकृष्ण को भी देखकर भीमसेन ने भयंकर गर्जना की। अर्जुन तथा श्रीकृष्ण ने भी प्रत्युत्तर देते हुये गर्जना की, जिसे सुन कर युधिष्ठिर ने समझ लिया कि सब कुशल है। इससे प्रसन्न होकर युधिष्ठिर अर्जुन के पराक्रम के सम्बन्ध में अनेक प्रकार से विचार करने लगे (७. १२८)।" "भीमसेन ने कर्ण से घोर युद्ध किया। भीमसेन ने कर्ण के सारथि तथा अश्वों आदि का वध कर दिया जिससे भागकर कर्ण वृषसेन के रथ पर जा बैठा। इस प्रकार कर्ण को पराजित करके भीमसेन ने महान् सिंहनाद किया जिसे सुनकर युधिष्ठिर अत्यन्त प्रसन्न हुये। इसी समय अर्जुन ने गाण्डीव धनुष की टंकार की तथा श्रीकृष्ण ने पाञ्चजन्य शङ्ख बजाया (७. १२९)।" "द्रोणाचार्य को देखकर दुर्योधन ने उनको उपालम्भ देते हुये कहा कि उन्होंने ही सात्यकि तथा भीमसेन को आगे बढ़कर अर्जुन की सहायता के लिये जाने दिया। द्रोणाचार्य ने दुर्योधन को परामर्श दिया कि जयद्रथ की रक्षा करने की प्रभावशाली व्यवस्था की जानी चाहिये। जयद्रथ की ओर जाते समय दुर्योधन ने दो पाञ्चाल राजकुमारों, युधामन्यु तथा उत्तमौजा, को देखा जो पहले अर्जुन के चक्र-रक्षक थे परन्तु जिन्हें अर्जुन के कौरव-सेना में प्रवेश कर लेने के विपरीत कृतवर्मा ने रोक दिया था। अब ये पाञ्चाल वीर कौरव-सेना के दूसरे किनारे से अर्जुन के पास पहुँचने का प्रयास कर रहे थे। उत्तमौजा शीघ्रतापूर्वक युधामन्यु के रथ पर चढ़ गये परन्तु दुर्योधन ने उस रथ को अपनी गदा से भूमि में धंसा दिया। उत्तमौजा आदि ने दुर्योधन को भी रथविहीन कर दिया जिससे वह मद्रराज के रथ पर चढ़ गया। तब उत्तमौजा और युधामन्यु भी अन्य दो रथों पर बैठकर अर्जुन के समीप चले गये (७. १३०)।" "कर्ण ने भीमसेन पर आक्रमण किया। भीम ने कर्ण को छोड़कर अर्जुन के समीप चले जाने का प्रयास किया परन्तु कर्ण ने भीमसेन का अपमानपूर्वक आह्वान किया जिससे भीमसेन ने पीछे मुड़कर कर्ण से युद्ध आरम्भ कर दिया। कर्ण तथा भीमसेन में उस समय भीषण युद्ध होने लगा जिसमें भीमसेन ने कर्ण को रथविहीन करके पराजित कर दिया (७. १३१)।" "कर्ण दूसरे रथ पर बैठ कर भीमसेन से युद्ध करने लगा। कपट-द्यूत तथा वनवास काल में विराट नगर में जो दुःख प्राप्त हुआ था उन सब बातों का स्मरण करके भीमसेन अपने जीवन से विरक्त हो उठे और अपने जीवन का मोह छोड़ कर कर्ण पर आक्रमण करने लगे। उस रणक्षेत्र में पाण्डुनन्दन भीमसेन को अपने बाणों से आच्छादित करते हुये कर्ण ने रीछ के समान रंगवाले अपने काले घोड़ों को भीमसेन के हंस-सदृश श्वेतवर्ण वाले उत्तम घोड़ों के साथ मिला दिया। भीमसेन को कर्ण से युद्ध करते देख कर श्रीकृष्ण और अर्जुन चिन्तित हो उठे। भयंकर युद्ध चलता रहा जिसमें हाथियों, घोड़ों और मनुष्यों का भीषण संहार हुआ (७. १३२)।" "धृतराष्ट्र ने भीमसेन के पराक्रम की प्रशस्ति करते हुये सञ्जय से पूछा कि जो कर्ण रणक्षेत्र में देवताओं, यक्षों, असुरों, और मनुष्यों का भी निवारण कर सकता था, वह युद्ध में भीमसेन को कैसे नहीं लाँघ सका। सञ्जय ने वर्णन करते हुये कहा : भीमसेन ने पुनः कर्ण को सारथि और अश्वों से रहित करके दुर्जय का भी वध कर दिया। उस समय कर्ण शोकार्त होकर विलाप करने लगा, परन्तु भीमसेन के सामने से भागा नहीं (७. १३३)।" "दूसरे रथ पर चढ़कर कर्ण ने पुनः भीमसेन का सामना किया परन्तु भीम ने उसे इस बार भी रथहीन कर दिया। दुर्योधन ने अपने भ्राता, दुर्मुख, को कर्ण की रक्षा के लिये भेजा। भीम ने दुर्मुख का भी वध कर दिया। कर्ण अत्यन्त विलाप करने लगा और अपने रथ पर बैठ कर युद्धभूमि से भाग गया (७. १३४)।" "भीम की विजय के सम्बन्ध में खेदपूर्वक चर्चा करते हुये धृतराष्ट्र ने कहा : 'मैं तो दैव को ही बड़ा मानता हूँ जिसके सामने पुरुषार्थ व्यर्थ है। कर्ण हर प्रकार का प्रयत्न करके भी युद्ध में भीम को जीत नहीं सका।' सञ्जय ने इस सब विनाश का धृतराष्ट्र को ही कारण बताते हुए कहा कि कर्ण को पराजित हुआ देख कर दुर्मर्षण आदि पाँच धार्तराष्ट्रों ने भीम पर आक्रमण किया परन्तु भीम ने उन सबका वध कर दिया। तदनन्तर भीमसेन कर्ण से युद्ध करने लगे (७. १३५)।" "कर्ण अपने जीवन से अत्यन्त विरक्त हो गया। भीमसेन ने कर्ण को पुनः रथ, सारथि तथा आयुधों से रहित कर दिया। तब कर्ण पैदल ही युद्धभूमि से भाग निकला। दुर्योधन ने अपने अन्य सात भ्राताओं को भीम से युद्ध करने के लिये भेजा परन्तु भीम ने उन सबका वध कर दिया। विदुर के शब्दों का स्मरण करके कर्ण रोने लगा। तदनन्तर एक अन्य रथ पर बैठकर वह पुनः भीम से युद्ध के लिये उपस्थित हुआ। उस समय भीमसेन रणक्षेत्र में अर्जुन, कृष्ण, सात्यकि, चक्ररक्षक युधामन्यु और उत्तमौजा को आनन्दित करते हुये कर्ण से युद्ध करने लगे (७. १३६)।" "कर्ण ने अत्यन्त शोकपूर्वक दुर्योधन के मृत भ्राताओं को देखा। भीमसेन ने कर्ण को अत्यन्त त्रस्त कर दिया जिस पर चारणों तथा भूरिश्रवा आदि ने भीमसेन को साधुवाद दिया। दुर्योधन ने अपने अन्य सात भ्राताओं को कर्ण की रक्षा के लिये भेजा परन्तु भीम ने इन सबका भी वध कर दिया। इस प्रकार मृत धार्तराष्ट्रों में विकर्ण पाण्डवों को अत्यन्त प्रिय था अतः भीमसेन ने उसके लिये शोक प्रगट किया। दुर्योधन के सात भाइयों का वध करने के पश्चात् भीमसेन ने भयंकर सिंहनाद किया जिससे युधिष्ठिर ने उनके विजयी होने की कल्पना कर ली। अपने इकत्तीस भ्राताओं को भीमसेन के हाथों मारा गया देखकर दुर्योधन ने विदुर के शब्दों का स्मरण किया (७. १३७)।" "भीमसेन और कर्ण का भयंकर युद्ध हुआ। दोनों ने ही एक दूसरे की सेनाओं का संहार किया। इस युद्ध को देखकर सिद्ध और चारण चकित थे (७. १३८)।" "भीम और कर्ण का युद्ध चलता रहा। देवर्षियों, सिद्धों, गन्धर्वों तथा विद्याधरों आदि ने दोनों ही वीरों की प्रशंसा की। कर्ण के बाण से आहत होकर भीमसेन का सारथि सात्यकि के रथ में चला गया। कर्ण ने भीमसेन के शस्त्रों को भी काट दिया। उस समय भीमसेन ने उछल कर कर्ण को पकड़ना चाहा परन्तु कर्ण अपने रथ में छिप गया। कौरवों और चारणों ने भीमसेन के इस पराक्रम की सराहना की। जब कर्ण ने भीमसेन के समस्त अस्त्र-शस्त्र नष्ट कर दिये तो वे रथ के मार्ग को अवरुद्ध कर देने के लिये अर्जुन के मारे हुये हाथियों के समूह के भीतर प्रवेश कर गये। ऐसा करके भीम केवल अपना प्राण बचाने की इच्छा करने लगे। उन्होंने अर्जुन की प्रतिज्ञा का स्मरण करके कर्ण पर प्रहार नहीं किया। कर्ण ने भी कुन्ती को दिये अपने वचन का स्मरण करके भीमसेन का वध नहीं किया। उसने केवल अपने धनुष से भीमसेन को छूते हुये अपमानपूर्ण वचन मात्र कहा। तब अर्जुन ने कर्ण पर प्रहार करके उसे पलायन करने के लिये विवश कर दिया। जब कर्ण भागने लगा तब अर्जुन ने उस पर एक भयंकर बाण छोड़ा जिसे अश्वत्थामा ने काट दिया। तदनन्तर अर्जुन ने अश्वत्थामा से युद्ध करके उसे भी पलायन करने के लिये विवश कर दिया (७. १३९)।" "धृतराष्ट्र अत्यन्त शोकग्रस्त होकर विलाप करने लगे। सञ्जय ने कहा : सात्यकि ने भीमसेन का अनुसरण किया। राजा अलम्बुष ने सात्यकि से युद्ध किया परन्तु सात्यकि ने उनका वध कर दिया। तदनन्तर जब सात्यकि अर्जुन की ओर बढ़ने लगे तब दुःशासन तथा अन्य धार्तराष्ट्रों ने उन पर आक्रमण किया। सात्यकि ने दुःशासन के घोड़ों का वध कर दिया जिस पर अर्जुन और श्रीकृष्ण अत्यन्त हर्षित हो उठे (७. १४०)।" "पचास त्रिगर्तदेशीय राजकुमारों ने सात्यकि पर आक्रमण किया परन्तु सात्यकि ने उन सबको पराजित कर दिया। तदनन्तर शूरसेनों तथा कलिङ्गों के बीच से होते हुये सात्यकि अर्जुन के निकट आ गये। श्रीकृष्ण ने सात्यकि की प्रशंसा की। परन्तु सात्यकि की उपस्थिति से अर्जुन प्रसन्न नहीं हुये क्योंकि उन्हें युधिष्ठिर की चिन्ता होने लगी (७. १४१)।" "भूरिश्रवा और सात्यकि ने एक दूसरे से रोषपूर्ण सम्भाषण और युद्ध किया। दोनों ने एक दूसरे

को रथविहीन कर दिया जिसके बाद दोनों मुष्टि-युद्ध करने लगे। श्रीकृष्ण ने अर्जुन से थके हुये सात्यकि की भूरिश्रवा के विरुद्ध रक्षा करने के लिये कहा। भूरिश्रवा युद्धस्थल में सात्यकि को घसीटते हुये खेल-सा कर रहा था। अर्जुन ने भूरिश्रवा के पराक्रम की सराहना करने के पश्चात् सात्यकि की रक्षा करने के उद्देश्य से भूरिश्रवा की दाहिनी भुजा को काट गिराया (७. १४२)।" "इस अधर्म के लिये भूरिश्रवा ने अर्जुन को उपालम्भ दिया परन्तु अर्जुन ने अपने कार्य को उचित बताया। तदनन्तर भूरिश्रवा प्राय—वर्णन—के लिये बैठ गये। उन्होंने अर्जुन के तर्कों के औचित्य को स्वीकार किया जिस पर श्रीकृष्ण तथा अर्जुन ने उन्हें आशीर्वाद दिया। यद्यपि श्रीकृष्ण ने निषेध किया तथापि सात्यकि ने प्राय के लिये बैठे भूरिश्रवा का वध कर दिया। उस समय योद्धाओं ने सात्यकि की प्रशंसा नहीं की। सिद्धों, चारणों, मनुष्यों तथा देवताओं ने भूरिश्रवा की ही प्रशस्ति की। वहाँ उपस्थित सैनिकों ने इसे विधि का विधान ही माना। सात्यकि ने वाल्मीकि का उद्धरण देते हुये अपने कार्य को उचित बताया (७. १४३)।" "धृतराष्ट्र ने सात्यकि के भूरिश्रवा द्वारा अपमानित होने का कारण पूछा। सञ्जय ने शिनि और सोमदत्त का इतिहास बताते हुये वृष्णि वीरों की प्रशंसा की। उन्होंने बताया कि देवता, असुर, गन्धर्व, यक्ष, नाग और राक्षस भी वृष्णि वीरों पर विजय नहीं प्राप्त कर सकते (७. १४४)।" "अर्जुन जयद्रथ के रथ की ओर बढ़े। दुर्योधन ने अर्जुन से युद्ध किया और कर्ण से कहा कि वह जयद्रथ की रक्षा करे। कर्ण ने यथाशक्ति जयद्रथ की रक्षा का आश्वासन दिया। दुर्योधन इत्यादि तथा अश्वत्थामा ने अर्जुन + भीमसेन और युयुधान से युद्ध किया। सिद्धों, चारणों और पन्नगों ने कर्ण तथा अर्जुन की प्रशंसा की। अर्जुन ने कर्ण को सारथि, रथ तथा अश्वों से रहित कर दिया। उस समय अश्वत्थामा ने कर्ण को अपने रथ पर बैठा लिया। अर्जुन ने वारुणास्त्र का संधान करके भीषण संहार किया (७. १४५)।" "अर्जुन ने ऐन्द्रास्त्र इत्यादि अस्त्रों—वर्णन—का प्रयोग किया। अर्जुन और जयद्रथ का युद्ध हुआ जिसमें अर्जुन ने उसके ध्वज को काटकर सारथि का वध कर दिया। उस समय छः महारथियों ने जयद्रथ को अपने बीच में छिपा कर अर्जुन से युद्ध करना आरम्भ किया। श्रीकृष्ण ने अपनी योग-शक्ति से सूर्य को ढँक दिया जिससे अर्जुन के अतिरिक्त अन्य सब ने समझ लिया कि सूर्यास्त हो गया। जब जयद्रथ बार-बार मुंह ऊँचा करके सूर्य को देखने लगा तब श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उसका वध कर देने की आज्ञा दी। श्रीकृष्ण की बात सुनकर अर्जुन ने कौरव-सेना का भयंकर संहार आरम्भ किया जिससे त्रस्त होकर समस्त योद्धा जयद्रथ को छोड़कर भाग गये। श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा कि वे बिना और विलम्ब किये जयद्रथ का मस्तक काट डालें। श्रीकृष्ण ने कहा : 'सिन्धुराज जयद्रथ के पिता वृद्धक्षत्र इस समय समन्तपञ्चक से बाहर घोर तपस्या कर कर रहे हैं। तुम किसी भयंकर दिव्यास्त्र से जयद्रथ का कुण्डलसहित मस्तक काट कर उसे वृद्धक्षत्र की गोद में गिरा दो। यदि जयद्रथ का मस्तक तुम भूमि पर गिरा दोगे तो वृद्धक्षत्र के शाप के कारण तुम्हारे मस्तक के भी सौ टुकड़े हो जायेंगे।' अर्जुन ने ऐसा ही किया। जयद्रथ का कटा हुआ मस्तक वृद्धक्षत्र की गोद में जा कर गिरा और जब वृद्धक्षत्र घबरा कर सहसा उठे तो गोद से वह मस्तक भूमि पर गिर पड़ा जिससे स्वयं वृद्धक्षत्र के मस्तक के सौ टुकड़े हो गये। इसके बाद श्रीकृष्ण ने सूर्य को पुनः प्रगट करके अन्धकार को विसर्जित कर दिया। अर्जुन और श्रीकृष्ण ने विजय घोष करते हुये अपने-अपने शङ्ख बजाये और भीमसेन ने प्रबल सिंहनाद करके युधिष्ठिर को इस विजय की सूचना दी। सूर्यास्त के बाद भी युधिष्ठिर और द्रोणाचार्य का युद्ध चलता रहा। इधर अर्जुन ने भी अनेक महारथी वीरों से युद्ध किया (७.१४६)।" "कृपाचार्य+अश्वत्थामा ने अर्जुन से युद्ध किया जिसमें कृपाचार्य को उनका सारथि युद्ध-भूमि से दूर हटा ले गया और अश्वत्थामा ने स्वयं पलायन किया। अर्जुन के बाणों से जब कृपाचार्य मूर्च्छित हो गये तो अर्जुन ने अत्यन्त खेद प्रगट किया। कर्ण ने अर्जुन+सात्यकि+पाञ्चाल चक्ररक्षकों से युद्ध किया। श्रीकृष्ण ने अर्जुन को कर्ण से बच कर रहने के लिये कहा क्योंकि कर्ण के पास इन्द्र द्वारा प्रदत्त शक्ति अभी भी वर्तमान थी। धृतराष्ट्र ने सञ्जय से पूछा कि सात्यकि, जो रथहीन हो चुके थे, किस प्रकार पुनः युद्ध के लिये उपस्थित हुये! सञ्जय ने बताया : श्रीकृष्ण पहले ही यह जान गये थे कि सात्यकि को भूरिश्रवा से परास्त होना पड़ेगा। इसलिये उन्होंने अपने सारथि, दारुक, को बुलाकर यह आज्ञा दे दी थी कि वह उनका रथ तैयार रक्खे। श्रीकृष्ण तथा अर्जुन को देवता, गन्धर्व, यक्ष, नाग, राक्षस या मनुष्य, कोई भी परास्त नहीं कर सकते। सात्यकि को रथहीन देखकर श्रीकृष्ण ने अपने शङ्ख को ऋषभस्वर से बजाया जिसे सुनकर दारुक रथ ले कर वहाँ उपस्थित हो गया। सात्यकि उसी रथ पर आरूढ़ हुये। उस रथ में शैब्य, सुग्रीव, मेघपुष्प, बलाहक नामक श्रेष्ठ अश्व सन्नद्ध थे। सात्यकि ने रथारूढ़ होकर कर्ण से युद्ध आरम्भ किया। उस समयय चक्ररक्षक युधामन्यु और उत्तमौजा ने भी अर्जुन का रथ छोड़कर कर्ण पर ही आक्रमण किया। जैसा युद्ध होने लगा वैसा इस पृथिवी पर, अथवा स्वर्ग में देवताओं, गन्धर्वों, असुरों, और राक्षसों ने भी नहीं सुना था। उसे देखने के लिये आकाश में स्थित देवता, गन्धर्व, और दानव भी सावधान हो गये। सात्यकि ने कर्ण को रथविहीन कर दिया। तब कर्ण पुत्र वृषसेन, शल्य तथा अश्वत्थामा ने सात्यकि से युद्ध आरम्भ किया। कर्ण भी दुर्योधन के रथ पर चढ़ गया। सात्यकि ने दुःशासन इत्यादि धार्तराष्ट्रों का भीमसेन की प्रतिज्ञा का ध्यान रखकर वध नहीं किया। सात्यकि ने एकमात्र धनुष से अश्वत्थामा, कृतवर्मा, तथा अन्यान्य महारथी वीरों को परास्त कर दिया। सञ्जय ने बताया कि इस संसार में केवल तीन ही वास्तविक धनुर्धर हैं और वे हैं श्रीकृष्ण, अर्जुन तथा सात्यकि। धृतराष्ट्र ने पूछा कि सात्यकि क्या किसी दूसरे रथ पर भी आरूढ़ हुये थे? सञ्जय ने कहा : दारुक का एक छोटा भाई था जो एक दूसरा सुसज्जित रथ लाया। इस रथ पर विविध प्रकार के अस्त्र-शस्त्र रक्खे हुये थे—वर्णन। सात्यकि ने इस रथ पर आरूढ़ होकर कौरव-सेना पर आक्रमण किया और दारुक इच्छानुसार श्रीकृष्ण के निकट चले गये। कर्ण के लिये भी एक नवीन रथ लाया गया। सञ्जय ने धृतराष्ट्र को बताया कि भीमसेन ने इकतीस धार्तराष्ट्रों का वध कर दिया (७. १४७)।" "कर्ण द्वारा अपमानित होने पर भीमसेन ने स्वयं कर्ण का वध करने के लिये अर्जुन से आज्ञा मांगी। अर्जुन ने कर्ण को फटकारते हुये उसके सामने ही उसके पुत्र, वृषसेन, का वध करने की प्रतिज्ञा की। श्रीकृष्ण ने अर्जुन को बधाई दी परन्तु अर्जुन ने श्रीकृष्ण को ही अपनी विजय का श्रेय दिया। तदनन्तर श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उस दिन के युद्ध का वृत्तान्त सुनाया और फिर पाञ्चजन्य नामक शङ्ख बजाकर युधिष्ठिर को सूचित करने के लिये चले (७. १४८)।" "श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर को बधाई दी परन्तु युधिष्ठिर ने सारा श्रेय श्रीकृष्ण को ही दिया। श्रीकृष्ण तथा अर्जुन ने एक बार पुनः युधिष्ठिर को बधाई दी। युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण की स्तुति की और फिर सात्यकि, भीम, एवं अर्जुन का अभिनन्दन करते हुये सब का आलिङ्गन किया (७. १४९)।" "व्याकुल हुये दुर्योधन ने खेद प्रगट करते हुये द्रोणाचार्य को उपालम्भ दिया। दुर्योधन ने द्रोणाचार्य पर अर्जुन के प्रति पक्षपात का लांछन करते हुये कहा : 'मैं कर्ण को ही ऐसा देखता हूँ जो सच्चे हृदय से मेरी विजय चाहता है।' (७. १५०)।" "दुर्योधन को उत्तर देते हुये द्रोणाचार्य ने अपना कवच उतारने के पूर्व समस्त पाञ्चालों का वध करने की प्रतिज्ञा की। उन्होंने दुर्योधन से कहा कि वह अश्वत्थामा को प्राणों की चिन्ता किये बिना ही सोमकों इत्यादि से प्रतिशोध लेने की आज्ञा दे। तदनन्तर द्रोणाचार्य ने पाण्डवों से युद्ध के लिये प्रस्थान किया (७. १५१)।" "दुर्योधन ने द्रोणाचार्य की निष्ठा के प्रति अपनी शंका को कर्ण से बताया। कर्ण ने दुर्योधन की शंका का समाधान करते हुये कौरवों की पराजय में भाग्य को ही दोषी ठहराया। इसी बीच पाण्डव सेना युद्ध के लिये उपस्थित हुई और दोनों पक्षों में भयंकर युद्ध होने लगा (७. १५२)।"

जयद्रथविमोक्षणम्, जयद्रथविमोक्षणपर्वन् के लिये प्रयुक्त हुआ है (१. २, ५५)।

जयद्रथविमोक्षणपर्वन्, महाभारत के ४७ वें अवान्तरपर्व का नाम है।

"भीम ने जयद्रथ का केश पकड़ कर उसे उठा लिया और फिर भूमि पर पटक कर इस बात पर खेद प्रगट करने लगे कि युधिष्ठिर ने उन्हें इसका वध करने की अनुमति नहीं दी। तदनन्तर भीम ने अपने बाण से जयद्रथ के सर के बालों को काट कर केवल पाँच बाल ही छोड़ दिये। फिर उन्होंने जयद्रथ को सार्वजनिक रूप से यह कहने का प्रण कराया कि 'मैं पाण्डवों का दास हूँ'। इसके बाद जयद्रथ को बाँध कर रथ में भीम आदि उसे युधिष्ठिर के पास लाये। युधिष्ठिर और द्रौपदी ने जयद्रथ को उसकी सेना सहित मुक्त करा दिया। तब जयद्रथ ने गङ्गाद्वार में जाकर शिव को प्रसन्न करने के लिये तपस्या की। शिव के प्रगट होने पर जयद्रथ ने उनसे यह वर मांगा कि वह पाँचो पाण्डवों को युद्ध में पराजित कर दे। शिव ने इसे असम्भव बताते हुये अर्जुन को अपराजेय तथा कृष्णरूपी विष्णु द्वारा रक्षित बताया। फिर भी शिव ने कहा : 'तुम अर्जुन को छोड़ कर युधिष्ठिर की सेना तथा उनके भ्राताओं को एक दिन के लिये पराजित कर सकोगे।' इस प्रकार वर देकर उमा सहित शिव अन्तर्धान हो गये। जयद्रथ भी अपने घर लौट आया। पाण्डव उस समय काम्यक वन में ही निवास करते रहे (३. २७२)।"

१. जयन्त, इन्द्र और शची के पुत्र का नाम है (१. ११४, ४; २२१, ६५)।

२. जयन्त, युधिष्ठिर द्वारा रक्खे गये पाण्डवों के पाँच गुप्त नामों में से एक नाम है (४. ५, ३५; २३, १२)।

३. जयन्त, एक पाञ्चाल महारथी का नाम है जो युधिष्ठिर की सेना में सम्मिलित हुआ (५. १७१, ११)।

४. जयन्त, एक रुद्र का नाम है (१२. २०८, २०)।

५. जयन्त = विष्णु (१,००० नाम)।

६. जयन्त, आदित्यों में से एक का नाम है (१३, १५०, १५)।

जयन्ती, एक नदी का नाम है जिसमें स्नान करने से राजसूययज्ञ का फल मिलता है (३. ८३, १९)।

जयप्रिया, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६,१२)।

जयरात, एक कौरव-योद्धा का नाम है जिसका भीमसेन ने वध किया (७. १५५, २८)।

जयवर्मन्, एक कौरव-योद्धा का नाम है (७. १५६, १२३)।

जयसेन, एक मगध राजकुमार का नाम है जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित रहता था (२. ४, २६)।

जया = दुर्गा (उमा) : ४. ६, १६; ६. २३, ६।

जयाजयौ = शिव (१,००० नाम)।

जयात्मज = अर्जुन (३. १२०, १२)।

१. जयानीक, एक पाण्डव योद्धा का नाम है जिसका अश्वत्थामा ने वध किया (७. १५६, १८१)।

२. जयानीक, विराट के भ्राता का नाम है (७. १५८, ४२)।

जयावती, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ४)।

१. जयाश्व, विराट के भ्राता का नाम है (७. १५८, ४२)।

२. जयाश्व, द्रुपद के एक पुत्र का नाम है जिसका अश्वत्थामा ने वध किया (७. १५६, १८१)।

जयिन् = विष्णु (१,००० नाम)।

१. जरत्कारु, यायावरसंज्ञक ब्राह्मणों के घर में उत्पन्न एक ऊर्ध्वरेता और महान् ऋषि का नाम है जो आस्तीक के पिता थे। "सौति ने कहा : महर्षि जरत्कारु जब तपस्या करते हुये विचरण कर रहे थे तो उन्होंने एक दिन अपने पूर्वजों, यायावरों, को देखा जो पैर ऊपर और सर नीचे किये हुये एक विशाल गड्ढे में खस नामक तृण को पकड़ कर लटक रहे थे। उस खस का चूहों ने सब ओर से प्रायः भक्षण कर लिया था। जरत्कारु के पूछने पर उन यायावरों ने कहा : 'अपनी सन्तान-परम्परा का नाश होने से हम नीचे, पृथिवी पर गिरना चाहते हैं। हमारी एक संतान ही बच गई है जिसका नाम जरत्कारु है। हम भाग्यहीनों की वह अभागी सन्तान केवल तपस्या में ही संलग्न है और विवाह करके पुत्र उत्पन्न नहीं करना चाहता।' पूर्वजों की बात सुनकर जरत्कारु ने अपना परिचय देते हुये अपने नाम की ही कन्या से विवाह करने का वचन दिया (१. १३, ११. १६. १९. २३. २७)।" उन्होंने वासुकि नाग की बहन, जरत्कारु, से विवाह किया (१. १४, ४. ५. ६)। १. १५, १०. ११; ३८, १२. १३. १४ (ब्रह्मा ने ऐसा विधान किया था कि जरत्कारु, वासुकि नाग की बहन जरत्कारु, के साथ विवाह करके आस्तीक नामक पुत्र उत्पन्न करेंगे); ३९, १०. १३. १४; ४०. १. २. ३. ४ (जरेति क्षयमाहुर्वै दारुणं कारुसंज्ञितम्। शरीरं कारु तस्यासीत्तत्स धीमाञ्छनैः शनैः॥ क्षपयामास तीव्रेण तपसेत्यत उच्यते। जरत्कारुरिति ब्रह्मन्वासुकेर्भगिनी तथा॥). ७; ४५, १. १९. २७. ३१; ४६, १. २. ३. ५. १९; ४७, १. ४. ७. १४-४३ (एक दिन ये अपनी पत्नी की गोद में सर रख कर सो गये। कुछ समय के पश्चात् जब सूर्य अस्ताचल को जाने लगे तब इनकी पत्नी ने इन्हें जगा दिया जिससे ये सूर्यास्त के पूर्व अपना सन्ध्या-वन्दन आदि कर लें। उस समय ये अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे और कहा कि सूर्य में इतनी शक्ति नहीं कि वे उनके सोते रहने पर अस्त हो जाँय। अतः इस प्रकार जगा दिये जाने को इन्होंने अपना अपमान माना और क्रुद्ध होकर पुनः तपस्या के लिये चले गये); ५३, २४; ५४, १. ५; ५८, २४; ५. ११७, १६।

२. जरत्कारु वासुकि नाग की बहन का नाम है जो जरत्कारु की पत्नी और आस्तीक की माता हुई (१. १४,५; ३८, १६. १८; ३९, २; ४०, ४; ४७, २०. २७. ३३)। इसने अपनी गोद में सोते हुये अपने पति को जगा दिया जिस पर इसके पति क्रुद्ध हो उठे (१. ४७, २०. २७. ३३. ४१)। इसने वासुकि से अपने पति के चले जाने तथा अपने गर्भ से एक पुत्र उत्पन्न करने की बात कहा (१. ४८, १. ९. १०)। इसने अपने पुत्र, आस्तीक, से सर्पों के शापग्रस्त होने की बात बताकर यह इच्छा व्यक्त की कि वह (आस्तीक) उन सब को शापमुक्त करायेगा (१. ५४, १. ४. ५. १३)। १. ५८, २४; ५. ११७, १६।

जरत्कारुसुत = आस्तीक (१५. ३५, १०)।

जरस्, उस व्याध का नाम है जिसने मृग के भ्रम से श्रीकृष्ण के पाँव में बाण मारा था। श्रीकृष्ण इसे सान्त्वना देकर स्वर्गलोक चले गये (१६. ४, २२-२४)।

जरायु, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १९)।

जरायुजाः (बहु०) = शिव (१,००० नाम)।

जरा, एक राक्षसी का नाम है जिसने जरासन्ध के शरीर के दोनों टुकड़ों को जोड़ा था (२. १७, ३९)। "पूर्वकाल में ब्रह्मा ने गृहदेवी के नाम से इसकी सृष्टि की थी और इसे दानवों के विनाश के लिये नियुक्त किया था। जो अपने घर की दीवार पर इसे अनेक पुत्रों सहित युवती के रूप में अंकित करता है उसके घर में सदा वृद्धि होती है। मगधराज बृहद्रथ के घर में इसकी सविधि पूजा होती थी, अतः इसने प्रसन्न होकर दो टुकड़ों में उत्पन्न हुये शिशु, जरासन्ध, को जोड़कर बृहद्रथ को समर्पित कर दिया था (२. १८, १-७)।" "बलराम और जरासन्ध के युद्ध के समय जरासन्ध ने गदा का प्रहार किया। वह गदा जहाँ गिरी वहीं यह रहती थी। जरासन्ध की गदा और बलराम के स्थूणाकर्ण नामक अस्त्र के गिरने से यह अपने पुत्र तथा बन्धु-बान्धवों सहित मृत्यु को प्राप्त हुई (७. १८१, १२-१४)। जरासन्ध के साथ युद्ध करते समय कर्ण जरा द्वारा जोड़े गये जरासन्ध के दोनों टुकड़ों को चीर कर अलग करने ही वाला था (१२. ५, ४)। तुकी० गृहदेवी, राक्षसी।

१. जरासन्ध, मगध के राजा का नाम है जो बृहद्रथ का पुत्र था (१. १, १३१. १५५)। यह विप्रचित्ति नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ४)। यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुआ (१. १८६, २२)। 'राजा महावीर्यो जरासंधो महाबलः', (१. १८७, २६)। "इसकी महान् शक्ति तथा इसके मित्रों का वर्णन। इसके भय से अनेक लोग भाग गये। कंस ने इसकी दो पुत्रियों, अस्ति और प्राप्ति, से विवाह किया। जब श्रीकृष्ण ने कंस का वध कर दिया तो उसकी दोनों पत्नियों ने, अपने

इस पिता से श्रीकृष्ण का वध करने के लिये कहा। जब जरासन्ध ने मथुरा पर आक्रमण किया तो समस्त यादव भागकर द्वारका चले गये। इसने अनेक राजाओं को पराजित करके उन्हें गिरिव्रज में वन्दी बना रक्खा था (२. १४, ७. १०. १३. १८. २४. २५. २९. ३५. ३८. ४४. ४६. ५३. ६२. ६४. ६७. ६८)।" इसने बलिदान करने के लिये वन्दी राजाओं को एक शिव-मन्दिर में रख छोड़ा था, अतः श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर से कहा कि विना इसका वध किये राजसूय यज्ञ पूर्ण नहीं होगा (२. १५, ७. १८. २०. २२. २५. २६)। २. १६, ३. १५; १७, ११. १२ (बृहद्रथ की दो पत्नियों में से प्रत्येक ने एक-एक शिशु के आधे भाग को जन्म दिया; जरा नामक राक्षसी ने इन दोनों भागों को जोड़ दिया); १८, ११ (जरा द्वारा जोड़े जाने के कारण इसका नाम जरासन्ध पड़ा); १९, १७–१९. २१ (कंस-वध हो जाने पर इसने क्रोध में आकर मथुरा की ओर अपनी गदा को फेंका); २०, १. ११. २४ (इसका वध करने के लिये श्रीकृष्ण, अर्जुन, और भीम गिरिव्रज के लिये प्रस्थित हुये); २१, ११. १९. २२–२४. २७. ३१. ३७. ३८. ४०. ४२ (इसने ब्राह्मणवेशी श्रीकृष्ण, अर्जुन तथा भीम का स्वागत किया); २२, १. १२. २७. ३१. ३५ (जब भीम ने इसे युद्ध लिये ललकारा तो इसने अपने पुत्र, सहदेव, को राजसिंहासन पर बैठा दिया); २३, १. ३–५. ८. ९. ३४. ३५ (इसने भीमसेन से मल्ल-युद्ध किया); २४, १. ३–५. ९ (भीमसेन ने अन्ततः इसका वध कर दिया). १२ (इसके रथ का वर्णन). ३३. ४७. ५०. ५३. ५४; ३७, २३; ४२, १–३. ५; ४४, ११ (कर्ण ने इसे मल्लयुद्ध में पराजित किया था); ८१, ३६ (भीमसेन ने इसका वध किया था); ३. १०, २६; १२, ३०; ५. ५१, ३७. ३८ (इसने सम्पूर्ण पृथिवी को अपने अधिकार में कर लिया था परन्तु भीमसेन ने इसका वध कर दिया); १३०, ४८; ६. १२२, १८ (यह कर्ण को पराजित नहीं कर सका); ७. ११, ६. १२; १८०, ३२; १८१, १. ५. ८. १२. १३. १५. १६ (इसने बलराम पर अपनी गदा फेंका परन्तु बलराम ने स्थूणाकर्ण अस्त्र से उसे रोक दिया। वह गदा तब भूमि पर गिरी और उससे दब कर उसी जरा नामक राक्षसी की बन्धु-बान्धवों सहित मृत्यु हो गई जिसने इसे जोड़ा था। गदा से रहित हो जाने पर बाद में भीमसेन ने इसका वध कर दिया); १२. ४, ६ (यह कलिङ्गराज चित्राङ्गद की पुत्री के स्वयंवर में उपस्थित हुआ); ५, १ (इसने कर्ण को मल्लयुद्ध के लिये ललकारा परन्तु कर्ण से पराजित हो गया। तदनन्तर इसने कर्ण को मालिनी नामक नगर प्रदान किया); ३३९, ९६ (कृष्ण के रूप में अवतार लेकर नारायण इसका वध करेंगे); १३. १४७, ३४ (इसे पराजित करके श्रीकृष्ण इसके द्वारा वन्दी बनाये गये राजाओं को मुक्त करायेंगे); १५. २५, १३। तुकी० **बार्हद्रथ, मागध, मगधाधिप, मगधाधिपति, मगधेश्वर**।

२. जरासन्ध, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, १००; ११७, ९)।

जरासन्धवध, जरासन्धवधपर्व के लिये प्रयुक्त हुआ है (१. २, ४७. १३३)।

जरासन्धवधपर्वन्, महाभारत के २३ वें अवान्तर पर्व का नाम है जो सभापर्व के २०–२४ अध्यायों तक आता है। "श्रीकृष्ण ने कहा कि यद्यपि जरासन्ध के नाश का उचित अवसर आ पहुँचा है तथापि युद्ध में तो सम्पूर्ण देवता तथा असुर भी उसे पराजित नहीं कर सकते। अतः श्रीकृष्ण ने बाहुयुद्ध के द्वारा उसे पराजित करने का निश्चय किया। उन्होंने सोचा : 'मुझ में नीति है, भीमसेन में बल है, और अर्जुन हम दोनों की रक्षा करने वाले हैं; अतः जैसे तीन अग्नियाँ यज्ञ की सिद्धि करती हैं उसी प्रकार हम तीनों मिलकर जरासन्ध के वध का कार्य पूर्ण कर लेंगे। जब हम तीनों उससे एकान्त में मिलेंगे तो वह अपने बाहुबल के दर्प में चूर होने के कारण निश्चय ही भीमसेन के साथ युद्ध करने को उद्यत होगा।' यह सोचकर श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर से तदनुसार स्वीकृति प्राप्त की और फिर अर्जुन तथा भीमसेन को लेकर उन्होंने जरासन्ध की राजधानी के लिए प्रस्थान किया। इन तीनों लोगों ने स्नातक ब्राह्मणों के वेश में यात्रा आरम्भ की। ये तीनों कुरु प्रदेश से प्रस्थित हो कुरु जाङ्गल के बीच से पद्मसरोवर पहुँचे। तदनन्तर कालकूट पर्वत को लाँघकर गण्डकी, महाशोण, सदानीरा एवं एकपर्वतक की समस्त नदियों को क्रमशः पार करते हुए आगे बढ़े। इसके पूर्व उन्होंने मार्ग में सरयू नदी पार करके पूर्वी कोसल प्रदेश में भी पदार्पण किया था। कोसल को पार करके, अनेक नदियों का अवलोकन करते हुये वे सब मिथिला पहुँचे। गंगा और शोणभद्र को पार करके वे तीनों पूर्वाभिमुख होकर चलने लगे। उन लोगों ने कुश एवं चीर से अपने शरीर को ढँक रखा था। अन्त में उन लोगों ने गोरथ पर्वत पर पहुँच कर मगध की राजधानी को देखा (२. २०)।" "मगध की राजधानी गिरिव्रज, विपुल, वराह, वृषभ, ऋषिगिरि तथा चैत्यक नामक पर्वतों के बीच स्थित थी। यहाँ गौतम ने शूद्रजातीय कन्या के गर्भ से काक्षीवान आदि पुत्रों को उत्पन्न किया था। ये गौतम मुनि यहीं आश्रम में निवास करते हैं और पूर्वकाल में अङ्ग-वङ्ग आदि नरेश भी उनके अतिथि रहा करते थे। यहीं अरबुद, शक्रवापी, स्वस्तिक और मणि नामक नाग भी निवास करते हैं। मनु ने मगध देश के निवासियों को मेघों के लिए अपरिहार्य कर दिया है। चण्डकौशिक तथा मणिमान् नाग भी मगध देश पर अनुग्रह कर चुके हैं। श्रीकृष्ण, अर्जुन और भीम को लेकर, गिरिव्रज के निकट स्थित चैत्यक नामक पर्वत पर गये। उस स्थान पर बृहद्रथ ने ऋषभ नामक एक मांस-भक्षी राक्षस का वध करके उसके चर्म से तीन बड़े-बड़े नगाड़े बनवाये थे। जहाँ वे नगाड़े बजते थे वहाँ दिव्य-पुष्पों की वर्षा होने लगती थी। कृष्ण आदि ने इन नगाड़ों को फाड़कर चैत्यक पर्वत के परकोटे पर आक्रमण किया और उसे ध्वस्त कर मगध की राजधानी गिरिव्रज में प्रवेश कर गये। उसी समय अनेक अपशकुनों को देखकर वेदों के पारगामी ब्राह्मणों ने जरासन्ध को उनके विषय में सूचित किया। पुरोहितों ने जरासन्ध को हाथी पर बैठाकर उसके चारो ओर प्रज्वलित अग्नि घुमाया। जरासन्ध ने भी अग्नि की शांति के लिए व्रत की दीक्षा लेकर नियमपूर्वक उपवास किया। इधर श्रीकृष्ण, भीमसेन और अर्जुन स्नातक ब्राह्मणों के वेश में अस्त्र शस्त्रों का परित्याग करके और केवल अपनी भुजाओं का ही आयुधों के रूप में प्रयोग करते हुए नगर में प्रविष्ट हुए। फूल-मालाओं की अलंकृत दूकानों को देखकर श्रीकृष्ण आदि ने बलपूर्वक अनेक मालायें छीन लीं। उन सबके वस्त्र अनेक रंग के थे और उन लोगों ने गले में हार तथा कानों में चमकीले कुण्डल धारण कर रक्खे थे। ये लोग नर-श्रेष्ठों से भरी-हुई तीन ड्योढ़ियों को पार करके जरासन्ध के निकट पहुँचे। इन्हें देखकर जरासन्ध ने विधि-पूर्वक अतिथ्य-सत्कार किया। श्रीकृष्ण ने जरासन्ध को बताया कि उनके साथ के दो व्यक्ति (भीम, अर्जुन) एक व्रत ले चुके हैं अतः वे अर्धरात्रि के पूर्व वार्तालाप नहीं करेंगे। तब जरासन्ध उन लोगों को यज्ञशाला में ठहराकर स्वयं राजभवन चला गया। अर्धरात्रि होने पर उन लोगों के स्वागत-सत्कार के लिए पुनः उपस्थित हुआ। जरासन्ध का यह नियम भूमण्डल में विख्यात था कि वह स्नातक ब्राह्मणों के आगमन का समाचार सुनकर अर्धरात्रि के समय भी उनके सत्कार के लिए उपस्थित हो जाता था। श्रीकृष्ण के अपूर्व वेश को देखकर जरासंध को अत्यन्त विस्मय हुआ। उसने उन लोगों की निन्दा करते हुए कहा : 'ब्राह्मणों ! मानव-जगत में सर्वत्र विख्यात है कि स्नातक ब्राह्मण समावर्तन आदि विशेष निमित्त के बिना चन्दन और मालायें आदि नहीं धारण करते। आप के गले में पुष्प मालाये हैं, और भुजाओं में धनुष की प्रत्यञ्चा की रगड़ का चिह्न स्पष्ट परिलक्षित हो रहा है। चैत्यक पर्वत के शिखर को तोड़कर आप लोग नगर में क्यों घुस आये हैं ? मेरे यहाँ उपस्थित होकर, विधिपूर्वक अर्पित की हुई इस पूजा को भी आप लोग ग्रहण क्यों नहीं करते ?' जरासन्ध के इस प्रकार पूछने पर श्रीकृष्ण ने कहा : 'तुम हमें वेश के अनुसार स्नातक-ब्राह्मण समझ सकते हो, परन्तु स्नातक तो ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य तीनों वर्गों के लोग हो सकते हैं। स्नातकों में कुछ विशेष नियम का पालन करने वाले होते हैं और कुछ साधारण।"... "हम अपने कार्य से तुम्हारे समक्ष उपस्थित हुये हैं अतः शत्रु से पूजा नहीं ग्रहण कर सकते।' (२. २१)।" "जरासन्ध ने जब यह कहा कि उन लोगों के साथ उसे किसी वैर का स्मरण नहीं है

तब श्रीकृष्ण ने उससे कहा : 'तुमने अनेक क्षत्रियों को बन्दी बना रक्खा है। अतः ऐसे अपराध का आयोजन करके भी तुम अपने को निरपराध कैसे मानते हो ?' तदनन्तर श्रीकृष्ण ने अपना तथा भीम और अर्जुन का परिचय देने के पश्चात् जरासन्ध को युद्ध के लिए ललकारा। उन्होंने कहा : 'देवता की पूजा के लिए मनुष्यों का वध कभी नहीं देखा गया। अतः तुम कल्याणकारी देवता शिव की पूजा में बन्दी राजाओं की बलि कैसे कर सकते हो ? तुम भी उसी वर्ण के हो जिस वर्ण के वे राजा लोग। क्या तुम अपने ही वर्ण के लोगों को पशु मानकर उनकी हत्या करोगे ?...... दम्भोद्भव, कार्तवीर्य अर्जुन, उत्तर तथा बृहद्रथ, ये सभी नरेश अपने से बड़ों का अपमान करके अपनी सेना सहित नष्ट हो गये हैं। अतः या तो तुम समस्त राजाओं को छोड़ दो अथवा यम-लोक की राह लो।' श्रीकृष्ण की बात सुनकर जरासन्ध ने उन तीनों में से किसी एक से अथवा एक-एक करके प्रत्येक से युद्ध करने का प्रस्ताव किया। ऐसा कहकर राजा जरासन्ध ने अपने पुत्र, सहदेव, के राज्याभिषेक की आज्ञा दे दी। तदनन्तर उसने अपने सेनापति कौशिक और चित्रसेन का स्मरण किया जो पूर्व समय में हंस और डिम्भक के नाम से विख्यात थे। श्रीकृष्ण ने दिव्यदृष्टि से यह बात जान ली थी कि जरासन्ध को युद्ध में दूसरे वीर का भाग नियत किया गया है। यदुवंशियों में से किसी के हाथ से उसकी मृत्यु नहीं हो सकती थी अतः ब्रह्मा के आदेश की रक्षा करने के लिए उन्होंने स्वयं उसका वध करने की इच्छा नहीं की (२. २२)।" "जरासन्ध ने भीमसेन के साथ युद्ध करने का निश्चय किया। जरासन्ध को युद्ध के लिए उत्सुक देखकर उसके पुरोहित गोरोचन, माला, अन्यान्य मांगलिक वस्तुयें तथा उत्तम ओषधियाँ लेकर उसके पास आये। यशस्वी ब्राह्मण के द्वारा स्वस्ति वाचन संपन्न हो जाने के पश्चात् जरासन्ध युद्ध के लिये सन्नद्ध हुआ। भीमसेन भी श्रीकृष्ण से परामर्श लेकर स्वस्तिवाचन के अनन्तर युद्ध की इच्छा से जरासन्ध के पास आ गये। दोनों का युद्ध आरम्भ हुआ जिसमें दोनों ने केवल अपनी भुजाओं का ही आयुध के रूप में प्रयोग किया। दोनों ही मल्ल-युद्ध की शिक्षा में प्रवीण थे और इसलिए विभिन्न प्रकार के दावों का आश्रय लेकर दोनों ने भयंकर युद्ध आरम्भ किया। दोनों का युद्ध कार्तिक मास के प्रथम दिन आरम्भ हुआ और अविराम गति से त्रयोदशी तक चलता रहा। चतुर्दशी की रात्रि में मगध-नरेश जरासन्ध क्लेश से थककर युद्ध से निवृत्त सा होने लगा। उसकी दशा को देखकर श्रीकृष्ण ने भीम से कहा : 'शत्रु यदि थक गया हो तो उसे युद्ध में अधिक पीड़ा देना उचित नहीं है और यदि उसे पूर्णतः पीड़ा दी जाय तो वह अपने प्राण त्याग देगा।' श्रीकृष्ण के ऐसा कहने पर भीमसेन ने जरासन्ध को थका हुआ जानकर उसके वध का विचार किया (३. २३)।" "श्रीकृष्ण के कहने पर भीम ने जरासन्ध को उठाकर आकाश में वेग से घुमाना आरम्भ किया। तब श्रीकृष्ण ने जरासन्ध का वध कराने की इच्छा से भीमसेन की ओर देखकर एक नरकट हाथ में ले लिया और उसे दो टुकड़ों में बीच से चीर डाला। यह जरासन्ध को मारने के लिए एक संकेत था। उस संकेत को समझ कर भीमसेन ने जरासन्ध को सौ बार घुमाकर भूमि पर पटक दिया और फिर उसकी पीठ को धनुष की तरह मोड़कर उसकी रीढ़ तोड़ डाला। तदनन्तर भीम ने जरासन्ध के एक पैर को पकड़कर और दूसरे पर अपना पैर रखकर उसे दो भागों में चीर डाला। उस समय जरासन्ध के दोनों टुकड़े पुनः आपस में जुड़ गये और जरासन्ध उठकर युद्ध करने लगा। तब श्रीकृष्ण ने पुनः संकेत किया जिसे समझकर भीम ने मगधराज को दो टुकड़ों में चीर डाला और उन दोनों को विपरीत दिशाओं में फेंक दिया। जरासन्ध का इस प्रकार वध करके भीम ने भीषण सिंहनाद किया जिसे सुनकर मगध निवासी भयभीत हो उठे। उस समय स्त्रियों के गर्भ तक गिर गये। तदनन्तर वे तीनों वीर जरासन्ध के शव को राजभवन के द्वार पर छोड़कर वहाँ से चल दिये। श्रीकृष्ण ने जरासन्ध के ध्वजा-पताकामंडित दिव्य रथ को संनद्ध कर लिया और उस पर भीम तथा अर्जुन को बैठाकर उस स्थान पर गये जहाँ उनके बान्धव-स्वरूप समस्त राजा बन्दी थे। राजाओं को मुक्त कराने के पश्चात् उन्हें लेकर श्रीकृष्ण, अर्जुन और भीम जरासन्ध के दिव्य रथ पर बैठकर बाहर निकले। उस रथ का नाम सोदर्यवान था—विस्तृत वर्णन। यह वही रथ था जिस पर बैठकर इन्द्र ने निन्यानबे दानवों का वध किया था। इस रथ को राजा वसु ने इन्द्र से प्राप्त किया था और फिर क्रमशः यह वसु से बृहद्रथ को और बृहद्रथ से जरासन्ध को प्राप्त हुआ। श्रीकृष्ण ने गरुड़ का स्मरण किया जो अनेक भयंकर भूतों के साथ रथ की ध्वजा पर स्थित हो गये। मुक्त राजाओं ने आभार प्रकट करते हुए श्रीकृष्ण की स्तुति की। श्रीकृष्ण ने उन राजाओं को युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में सहायता करने के लिए कहा। जरासन्ध का पुत्र, सहदेव, भी उस समय पुरोहितों को आगे करके नगर से निकलकर श्रीकृष्ण की शरण में आया। श्रीकृष्ण ने सहदेव को मगध का राज्य सौंप दिया। तदनन्तर श्रीकृष्ण आदि इन्द्रप्रस्थ आये। वहाँ युधिष्ठिर से विदा लेकर उसी दिव्य रथ पर बैठकर श्रीकृष्ण अपने नगर के लिए प्रस्थित हुये। उस समय युधिष्ठिर आदि पाण्डवों ने श्रीकृष्ण की परिक्रमा की (२. २४)।"

जरासन्धसुत, जरासन्ध के पुत्र के लिये प्रयुक्त हुआ है जिसका द्रोणाचार्य ने वध किया (७. १२५, ४२)।

जरासन्धसुता, जरासन्ध की पुत्री के लिये प्रयुक्त हुआ है जिसका सहदेव (पाण्डव) के साथ विवाह हुआ था (१५. १, २४)।

जरासन्धात्मज (जरासन्ध का पुत्र) = सहदेव (२. २४, ४०. ४३)। तुकी० जारासन्धि।

जरिता, मन्दपाल की पत्नी, एक शार्ङ्गिका का नाम है : १. २२९, १६. १९; २३०, २. ३. १६; २३१, १. ५. ११; २३३, १३. १७. २१. २४।

जरितारि, पक्षिरूपधारी मन्दपाल ऋषि के द्वारा जरिता के गर्भ से उत्पन्न एक पक्षी मुनि का नाम है। इन्होंने खाण्डववन में अग्नि की स्तुति करके अभयदान प्राप्त किया था (१. २३०, ९; २३१, १८; २३२. १. ७; २३३, ६)।

जर्जरानना, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १९)।

जर्तिक, वाहीकों की एक जाति का नाम है जिसका चरित्र अत्यन्त निन्दित कहा गया है (८. ४४, १०)।

जल, जल-तत्त्व के अभिमानी देवता का नाम है जो ब्रह्मा की सभा में उपस्थित रहते हैं (२. ११, २०)।

जलचर = शिव (१,००० नाम)।

जलजकुसुमयोनि = ब्रह्मा (८. ९०, २४)। तुकी० पद्मयोनि।

जलद, शाकद्वीप के एक पर्वत का नाम है, जिसके निकट कुसुदोत्तर वर्ष है (६. ११, २५)।

जलधार, शाकद्वीप के एक पर्वत का नाम है (६. ११, १६. २५)।

जलन्धम, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ५७)।

जलप्रदानिक, से जलप्रदानिक पर्व का तात्पर्य है (१. २, ७३)।

जलप्रदानिकपर्वन्, महाभारत के ८५ वें अवान्तर पर्व का नाम है जो स्त्री पर्व के १–१५ अध्यायों तक आता है। "जनमेजय ने वैशम्पायन से पूछा कि दुर्योधन की मृत्यु के पश्चात् धृतराष्ट्र आदि ने क्या किया। वैशम्पायन ने बताया कि अपने सौ पुत्रों की मृत्यु पर शोक प्रकट करते हुए धृतराष्ट्र की स्थिति अत्यन्त दयनीय हो गई थी। वे पुत्र शोक से संतप्त होकर घोर विलाप कर रहे थे। सञ्जय ने उनकी यह दशा देखकर सान्त्वना देते हुए उन्हें मृत बन्धु बान्धवों का प्रेतकर्म संपन्न कराने का आदेश दिया। इस पर भी धृतराष्ट्र विलाप करते ही रहे। उनकी यह दशा देखकर सञ्जय ने उन्हें पुनः सान्त्वना देने का प्रयास किया। सञ्जय ने धृतराष्ट्र की कटु शब्दों में भर्त्सना भी की क्योंकि उन्होंने ही अपने पुत्रों को कुमार्ग का अनुसरण करने से रोका नहीं (११. १)।" "विदुर ने राजा धृतराष्ट्र को समझाकर उनको शोक का परित्याग करने के लिए कहा (११. २)।" "विदुर ने शरीर की अनित्यता बताते हुए धृतराष्ट्र को शोक का परित्याग करने के लिए कहा। विदुर के उपदेशों पर मुग्ध होकर धृतराष्ट्र ने उनसे

मानव-जीवन को अनित्यता के सम्बन्ध में और विस्तार से बताने का निवेदन किया। विदुर ने धृतराष्ट्र की इच्छा पूर्ण करते हुए उन्हें तदनुसार उपदेश दिया (११. ३)।" "दुःखमय संसार के गहन स्वरूप का वर्णन करते हुए विदुर ने उससे मुक्त होने का उपाय बताया (११. ४)।" "गहन-वन के दृष्टान्त द्वारा विदुर ने संसार के भयङ्कर स्वरूप का वर्णन किया (११. ५)।" "विदुर ने मोक्ष-धर्म के साथ तुलना करते हुए संसार रूपो वन के स्वरूप का और अधिक स्पष्टीकरण किया (११. ६)।" "धृतराष्ट्र के निवेदन करने पर विदुर ने संसार-चक्र का वर्णन किया और रथ के रूपक से संयम तथा ज्ञान आदि को मुक्ति का उपाय बताया (११. ७)।" "विदुर के वचनों को सुनकर राजा धृतराष्ट्र पुत्र शोक से संतप्त एवं मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़े। उस समय महर्षि व्यास ने उन्हें सन्त्वना देते हुए संहार को अवश्यंभावी बताया और कहा : 'पूर्व-काल में एक समय मैं इन्द्र की सभा में गया। उस समय वहाँ नारद आदि समस्त देवर्षि भी उपस्थित थे। उसी समय पृथ्वी ने वहाँ एकत्र हुए देवताओं से अपना भार कम कराने का निवेदन किया। तब विष्णु ने पृथ्वी को आश्वासन देते हुए बताया कि दुर्योधन नामक व्यक्ति पृथ्वी पर जन्म लेकर पृथ्वी के कार्य को सिद्ध करेगा। उस दुर्योधन के लिए समस्त भूपाल कुरुक्षेत्र में एकत्र और एक-दूसरे के साथ युद्ध करते हुए मृत्यु को प्राप्त होंगे।' इस प्रकार दुर्योधन आदि की मृत्यु को पूर्व निर्दिष्ट और अवश्यंभावी बताते हुए व्यास ने धृतराष्ट्र को सान्त्वना दी। व्यास के उपदेश को सुनकर धृतराष्ट्र ने कहा : 'आपका यह वचन सुनकर कि सब कुछ देवताओं की प्रेरणा से हुआ है, मैं अपना प्राण धारण करूँगा और यथाशक्ति इस बात का भी प्रयास करूँगा कि मुझे शोक न हो।' धृतराष्ट्र का यह वचन सुनकर व्यास वहीं अन्तर्धान हो गये (११. ८)।" "जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन ने कहा : 'दुर्योधन तथा उसकी सम्पूर्ण सेना का वध हो जाने के पश्चात् सञ्जय की दिव्य-दृष्टि समाप्त हो गई और वे धृतराष्ट्र की सभा में उपस्थित हुए। उन्होंने युद्ध में मृत समस्त योद्धाओं का वर्णन करते हुए धृतराष्ट्र से उन सबका प्रेत कर्म कराने का निवेदन किया। उनकी बात सुनकर धृतराष्ट्र मूर्च्छित हो गये। तब विदुर ने उपस्थित होकर उन्हें सान्त्वना देते हुए कहा : 'कालः कर्षति भूतानि सर्वाणि विविधानि च। न कालस्य प्रियः कश्चिन्न द्वेष्यः कुरुसत्तम ॥' विदुर ने और भी दृष्टान्त देते हुए धृतराष्ट्र को सान्त्वना दी (११. ९)।" "धृतराष्ट्र ने स्त्रियों तथा प्रजाजनों को साथ लेकर रणभूमि में जाने का निश्चय किया। तब समस्त स्त्रियों को रथ में बैठाकर तथा प्रजाजनों के साथ धृतराष्ट्र और विदुर आदि हस्तिनापुर से बाहर निकले (११. १०)।" "धृतराष्ट्र आदि अभी एक कोस की दूरी पर ही पहुँचे थे कि उन्हें अश्वत्थामा, कृपाचार्य, कृतवर्मा दिखाई पड़े। कृपाचार्य ने गान्धारी से कहा : 'आपके समस्त पुत्र निर्भय होकर और बहुसंख्यक शत्रुओं का संहार करते हुये मृत्यु को प्राप्त हुये हैं। भीमसेन ने आपके पुत्र, दुर्योधन, को अधर्मपूर्वक मारा है। यह समाचार जानकर हम लोगों ने पाण्डव-शिविर पर रात्रि के समय आक्रमण कर पाण्डव-वीरों का संहार कर डाला।' तदनन्तर कृपाचार्य आदि ने पाण्डवों के क्रोध से अपने को बचा रखने के लिये धृतराष्ट्र से विदा माँगी और तत्काल ही गङ्गातट की ओर अपने घोड़े हाँक दिये। गङ्गातट पर तीनों महारथियों ने आपस में विदा ली। कृपाचार्य हस्तिनापुर चले गये; कृतवर्मा अपने देश की ओर चले गये; और अश्वत्थामा ने व्यास-आश्रम की राह ली। पाण्डवों का अपराध करके भय से पीड़ित ये तीनों वीर सूर्योदय के पूर्व ही अपने-अपने अभीष्ट स्थानों की ओर चले गये। तदनन्तर पाण्डवों ने द्रोणपुत्र अश्वत्थामा के पास पहुँचकर उसे बलपूर्वक युद्ध में पराजित किया (११. ११)।" "श्रीकृष्ण को साथ ले कर युधिष्ठिर आदि पाण्डव धृतराष्ट्र से मिलने के लिये चले। मार्ग में ये लोग विलाप करती हुई कुरुकुल की स्त्रियों से मिले। तदनन्तर इन लोगों ने धृतराष्ट्र के सम्मुख उपस्थित होकर उनका अभिवादन किया। धृतराष्ट्र ने कुछ संकोचपूर्वक युधिष्ठिर का आलिङ्गन किया। इसके बाद धृतराष्ट्र ने भीमसेन से मिलने की इच्छा प्रगट की, परन्तु उनके मन के कुटिल भाव को जानकर श्रीकृष्ण ने भीमसेन की लोह मूर्ति ही धृतराष्ट्र के सम्मुख प्रस्तुत की। उस प्रतिमा को ही भीम समझकर धृतराष्ट्र ने उसका आलिङ्गन करते हुये उसे तोड़ दिया। धृतराष्ट्र के शरीर में दस हजार हाथियों का बल तो था, फिर भी, लोहमयी प्रतिमा को तोड़ने से उनका वक्षस्थल व्यथित हो उठा तथा उनके मुख से रक्त निकल गया जिससे वे मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर पड़े। उस समय उनके सारथि, संजय, ने उन्हें सान्त्वना देकर उठाया। तदनन्तर अपने द्वारा भीम का वध हुआ जानकर धृतराष्ट्र पुनः शोक करने लगे। तब श्रीकृष्ण ने वस्तुस्थिति को स्पष्ट करते हुये उन्हें क्रोध का परित्याग करने का उपदेश दिया (११. १२)।" "श्रीकृष्ण ने धृतराष्ट्र के कुकर्मों पर उनको भर्त्सना करते हुये उनके क्रोध को शान्त किया और बताया कि पाण्डव निर्दोष हैं। श्रीकृष्ण की बातों से आश्वस्त होकर धृतराष्ट्र ने पाण्डवों को सस्नेह हृदय से लगाया (११. १३)।" "धृतराष्ट्र की आज्ञा से श्रीकृष्ण को साथ लेकर पाण्डवगण गान्धारी के दर्शन के लिये उपस्थित हुये। उस समय जब गान्धारी युधिष्ठिर आदि को शाप देने के लिये उद्यत हुई तब महर्षि व्यास ने उनकी इस दुर्भावना को जान लिया। महर्षि व्यास दिव्य दृष्टि से अपने मन को समस्त प्राणियों के साथ एकाग्र करके उनके आन्तरिक भाव को समझ लेते थे। फलस्वरूप गान्धारी के पापपूर्ण संकल्प को जानकर मन के समान वेगशाली व्यास ने गङ्गा के जल से आचमन किया और तदनन्तर गान्धारी के समक्ष उपस्थित हो गये। व्यास ने गान्धारी को क्रोध से विरत होने के लिये समझाते हुये कहा : 'गत अट्ठारह दिनों में विजय की अभिलाषा रखनेवाला तुम्हारा पुत्र प्रतिदिन तुमसे जब आशीर्वाद लेने के लिये आता था तब तुम कहती थीं कि 'यतो धर्मस्ततो जयः', अर्थात् जहाँ धर्म है वहीं विजय है।' व्यास की बातों को सुनकर गान्धारी ने यह स्वीकार किया कि पाण्डवों की रक्षा करना ही अब उनका तथा धृतराष्ट्र का कर्त्तव्य है। उन्होंने कहा : 'कुन्ती के ये पुत्र जिस प्रकार कुन्ती के द्वारा रक्षणीय हैं उसी प्रकार मुझे भी इनकी रक्षा करनी चाहिये। महाराज धृतराष्ट्र का भी कर्त्तव्य है कि इनकी रक्षा ही करें। कुल का संहार तो दुर्योधन, शकुनि और दुःशासन के अपराध के ही कारण हुआ है। परन्तु भीमसेन ने गदायुद्ध की मर्यादा का उल्लङ्घन करके दुर्योधन को मारा है। अतः उनका यह व्यवहार मेरे क्रोध को उद्दीप्त कर रहा है।' (११. १४)।" "भीमसेन ने अपने अमर्यादित युद्ध के लिये गान्धारी से क्षमायाचना की। उन्होंने कहा : 'आपके उस महाबली पुत्र को कोई भी धर्मानुकूल युद्ध करके मार नहीं सकता था, इसीलिये मैंने विषमतापूर्ण व्यवहार किया। पहले उसने भी अधर्म से ही राजा युधिष्ठिर को जीता था; इसलिये मैंने भी उसके साथ विषम व्यवहार किया।' भीम की बातें सुनकर गान्धारी ने उनसे कहा : 'वृषसेन ने जब नकुल के घोड़ों को मारकर उसे रथहीन कर दिया था तो उस समय तुमने युद्ध में दुःशासन को मार कर उसका जो रक्तपान किया वह सत्पुरुषों द्वारा निन्दित और नीच पुरुषों द्वारा सेवित घोर क्रूरतापूर्ण कर्म है।' भीमसेन ने दुःशासन के रक्तपान करने के तथ्य को अस्वीकार करते हुये कहा : 'दुःशासन का रक्त मेरे दाँतों और ओठों को लाँघकर आगे नहीं जा सका था। इस बात को सूर्यपुत्र यमराज जानते हैं कि केवल मेरे दोनों हाथ रक्त से रंजित थे। वृषसेन के द्वारा नकुल के अश्वों को मारा गया देखकर जो दुःशासन के समस्त भ्राता हर्ष से उल्लसित हो उठे थे उन्हीं के मन में त्रास उत्पन्न करने के लिये मैंने वह दुष्कर्म किया। द्यूतक्रीड़ा के समय जब द्रौपदी का केश खींचा गया तो उस समय क्रोध में भरकर मैंने जो प्रतिज्ञा की थी उसी की स्मृति मेरे। मन में सदैव बनी रहती थी। यदि मैं उस प्रतिज्ञा को पूर्ण न करता तो मैं क्षत्रिय-धर्म से च्युत हो जाता, इसलिये मैंने दुःशासन का वध किया।' भीम की बातें सुनकर पुत्र-पौत्रों के वध से पीड़ित गान्धारी ने युधिष्ठिर के सम्बन्ध में पूछा। युधिष्ठिर ने उपस्थित होकर विनम्रतापूर्वक कहा : 'देवि! आप के पुत्रों का संहार करानेवाला क्रूरकर्मा युधिष्ठिर मैं ही हूँ। मैं आपके शाप के योग्य हूँ अतः आप मुझे शाप दीजिये।' इस प्रकार क्षमायाचना

करते हुये युधिष्ठिर ने गान्धारी का चरण-स्पर्श करना चाहा। इतने ही में गान्धारी ने अपने नेत्रों पर बँधी पट्टी के भीतर से ही युधिष्ठिर के पैरों के नखों को देख लिया जिससे उनके नख भस्म हो गये। उनकी यह अवस्था देखकर अर्जुन भगवान् श्रीकृष्ण के पीछे छिप गये। पाण्डवों को इस प्रकार भयभीत देखकर गान्धारी का क्रोध शान्त हो गया। तदनन्तर पाण्डव अपनी माता कुन्ती के पास आये। कुन्ती ने अपने पुत्रों के शरीर पर घावों के चिह्न आदि देखकर विलाप किया। द्रौपदी ने अपने पुत्रों तथा अभिमन्यु के लिये विलाप किया। उस समय विदुर की भविष्यवाणियों का उल्लेख करते हुये कुन्ती और गान्धारी ने द्रौपदी को सान्त्वना दी (११. १५)।"

१. जलसन्ध, एक मगध राजा का नाम है (१. २; २६३)। यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुआ (१. ८६, १२)। इसने दुर्योधन का पक्ष ग्रहण किया (३. ३६, ९; ५. ६, ७)। दुर्योधन की सेना में इसकी उपस्थिति (५. १६७, १४; ७. ८७, २६; ९५, २१)। भीमसेन ने इस पर आक्रमण किया (७. ९७, २)। ७. ११४, १५; ११५, ३०. ३६. ३७. ३९. ४१. ४३. ४६. ५०. ५१. ५४. ५५. ५८; ११९, ४; १२०, ९; १४१, २४; १४७, ५८; १५८, ६५ (मृत योद्धाओं के अन्तर्गत इसका उल्लेख); ८. ५, ४५; ९. २, २० (इसने दुर्योधन का पक्ष ग्रहण किया था); २४, २६; ६४, ३२; ११. २६, ३७ (इसका शवदाह किया गया); १५. ३२, १० (उन मृत योद्धाओं में एक यह भी था जो व्यास के आवाहन पर गङ्गा से प्रगट हुये)। तुकी० मगध।

२. जलसन्ध, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९४; ११७, २; १३८, ६)। धृतराष्ट्र के उन चौदह पुत्रों में एक यह भी था जिन्होंने भीमसेन पर आक्रमण किया (६. ६४, २८)। भीमसेन ने इसका वध किया (६. ६४, ३३)। भीमसेन पर आक्रमण करनेवाले धृतराष्ट्र के बीस पुत्रों में एक यह भी था (८. ५१, ८)।

जला, यमुना की पार्श्ववर्तिनी एक नदी का नाम है जहाँ उशीनर ने यज्ञ करके इन्द्र से भी उच्च पद प्राप्त किया था (३. १३०, २१)।

जलाधिप = वरुण (देखिये वरुण०)।

जलेयु, पूरु-पुत्र रौद्राश्व द्वारा मिश्रकेशी नामक अप्सरा से उत्पन्न एक पुत्र का नाम है (१. ९४, १०)।

जलेला, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १६)।

जलेशय = शिव (१,००० नाम)।

१. जलेश्वर = वरुण (देखिये वरुण०)।

२. जलेश्वर = शिव (१,००० नाम)।

जलेश्वरी, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १३)।

जलोद्भव = शिव (१,००० नाम)।

जल्प, एक प्रकार के वाद का नाम है (२. ३६, ३)।

जवन, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७५)।

१. जह्नु, अजमीढ द्वारा केशिनी के गर्भ से उत्पन्न एक प्राचीन राजा का नाम है जिनके वंशज कुशिक के नाम से प्रसिद्ध हुये (१. ९४, ३२. ३३)। ये अज के पिता हुये—इनका वंश-परम्परा का वर्णन (१२. ४९, ३; १३. ४, ३)। 'जाह्नविसेवितः', (१३. १६५, ५४)।

२. जह्नु = विष्णु (१,००० नाम)।

जह्नुकन्या = गङ्गा (१३. १४, ५५)।

जह्नुसुता = गङ्गा (१. ९८, १८)।

जागुड = एक भारतीय जनपद का नाम है जहाँ के राजा, युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित हुए थे (३. ५१, २५)।

जाङ्गल, एक जाति का नाम है (५. ५४, ७; ६. ९, ३९. ५६)। तुकी० बहु० कुरुजाङ्गल।

जाजलि, एक प्राचीन ऋषि का नाम है : १२. २६१; १. २. ९. ११. १२. १४. २५. २७. ३२, ३३. ३५. ३७. ३८. ४१. ४२; २६२, १. २. ५. ६. ९. १०. १२. २१. ३३. ३५. ४६. ५०. ५२. ५३; २६३, १. ४. ७. २. २८. ३०. ३५. ३६. ४१. ४२; २६४, ४. ५. १९।

जाटासुरि (जटासुर का पुत्र) = अलम्बुष (७. १७४, १२. २२. २४. २६)।

१. जाठर, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६२)।

२. जाठर = सूर्य (३. ३, १९)।

जातवेदस् = अग्नि (देखिये वस्था०)।

जातवेदसी = दुर्गा (उमा) : ६. २३. १०।

जातिस्मर, एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से मनुष्य के शरीर एवं मन की शुद्धि हो जाती है (३. ८४, १२८)।

जातिस्मरकीट, एक कीड़े का नाम है जिसे, शुभ कर्मों के प्रभाव से, अपने पूर्वजन्मों की बातों का स्मरण बना रहा। व्यासजी की कृपा से इसकी उन्नति और मुक्ति हुई (१३. ११७–११९)।

जातिस्मरह्रद, एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से मनुष्य को पूर्वजन्मों की स्मृति प्राप्त होती है (३. ८५, ३८)।

जातूकर्ण्य, एक जितेन्द्रिय मुनि का नाम है जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित होते थे (२. ४, १४)।

जानकि, एक राजा का नाम है जो चन्द्रविनाशन असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ३९)। पाण्डवों की ओर से इसे रण-निमन्त्रण भेजा गया (५. ४, २०)।

जानकी = सीता (देखिये वस्था०)।

जानपदी, एक अप्सरा का नाम है जो इन्द्र की आज्ञा से शरद्वान् की तपस्या में विघ्न उत्पन्न करने के लिये उपस्थित हुई (१. १३०, ६)।

जानुजङ्घ, एक प्राचीन राजा का नाम है (१. १, २३६; १३. १६५, ५९)।

जापकोपाख्यानम्—"युधिष्ठिर ने भीष्म से यह जानने की इच्छा प्रगट की कि जप करनेवालों को फल की प्राप्ति कैसे होती है। तब भीष्म ने जप तथा ध्यान की महिमा और उसके फल का वर्णन किया (१२. १९६)।" "भीष्म ने जापक में दोष आने के कारण उसे नरक की प्राप्ति के सम्बन्ध में उपदेश दिया (१२. १९७)।" "भीष्म ने यह प्रतिपादित किया कि परमधाम के अधिकारी जापक के लिए देवलोक भी नरक तुल्य है (१२. १९८)।" "युधिष्ठिर के पूछने पर काल, मृत्यु, यम, इक्ष्वाकु और ब्राह्मण के विवाद के प्रसङ्ग की चर्चा करते हुए भीष्म ने कहा : हिमालय पर्वत की निकटवर्ती पहाड़ियों पर एक महायशस्वी और धर्मात्मा ब्राह्मण निवास करता था। यह ब्राह्मण वेद के छहों अङ्गों का ज्ञाता, परम बुद्धिमान्, जप में तत्पर रहनेवाला और कौशिक के वंश में उत्पन्न पिप्पलाद का पुत्र था। इन्द्रियों को संयम में रखकर नियमपूर्वक जप-तप करते हुए इस ब्राह्मण को एक सहस्र वर्ष व्यतीत हो गये। ब्राह्मण के जप से प्रसन्न होकर देवी सावित्री ने उसे दर्शन दिया। जब सावित्री ने उसे वर देने की इच्छा प्रकट की तब ब्राह्मण ने कहा : 'शुभे! इस मन्त्र (गायत्री मन्त्र) के जप में मेरी इच्छा बराबर बढ़ती रहे तथा मेरे मन की एकाग्रता में भी प्रतिदिन वृद्धि हो।' सावित्री ने तब ब्राह्मण से इस प्रकार कहा : 'तुमने मुझसे जो प्रार्थना की है वह पूर्ण होगी। तुम नियमपूर्वक एकाग्रचित्त होकर जप करो। धर्म स्वयं तुम्हारी सेवा में उपस्थित होगा। काल, मृत्यु और यम भी तुम्हारे निकट पधारेंगे; तुम्हारा उन सबके साथ यहाँ धर्मानुकूल वाद-विवाद भी होगा।' तदनन्तर वह ब्राह्मण शत-दिव्यवर्षों तक पूर्ववत् जप में संलग्न रहा। बुद्धिमान् ब्राह्मण का वह नियम पूर्ण होने पर साक्षात् धर्म ने उसे दर्शन देकर कहा : 'तुमने दिव्य और मानुष सभी लोकों पर विजय प्राप्त कर ली है। अब तुम अपने प्राणों का परित्याग करो और अभीष्ट लोकों में जाओ। ब्राह्मण ने उत्तर दिया : 'इस शरीर के साथ मैंने अनेक दुःख और सुख उठाये हैं, अतः मैं इसका त्याग नहीं कर सकता।' तब धर्म ने कहा कि शरीर का त्याग आवश्यक है। ब्राह्मण के यह पूछने पर कि क्या वह सशरीर स्वर्ग नहीं जा सकता, धर्म ने कहा : 'यदि तुम शरीर नहीं छोड़ना चाहते तो देखो, ये काल, मृत्यु, और यम तुम्हारे पास आये हैं।' तदनन्तर वैवस्वत यम, काल, और मृत्यु, तीनों

ने ब्राह्मण से कहा कि वे सब उसे स्वर्ग ले जाने के लिए आये हैं। ब्राह्मण ने अर्घ्य और पाद्य देकर सबका स्वागत किया। इसी समय तीर्थयात्रा के लिये आये हुये राजा इक्ष्वाकु भी उस स्थान पर उपस्थित हुए। ब्राह्मण ने इक्ष्वाकु का भी अर्घ्य और पाद्य से स्वागत किया। इसके पश्चात् ब्राह्मण ने अपनी शक्ति के अनुसार इन आगन्तुकों की सेवा करने की इच्छा प्रकट की। इक्ष्वाकु ने कहा : 'मैं क्षत्रिय हूँ और आप ब्राह्मण, अतः मैं आपको कुछ धन देना चाहता हूँ। मैं केवल 'युद्ध' ही माँग सकता हूँ, अन्य कुछ नहीं। फिर भी, आप अपने जप का फल मुझे दे दीजिये।' जब ब्राह्मण ने जप का फल देने की अनुमति दी तब राजा ने पूछा कि जप का फल क्या मिलेगा। ब्राह्मण ने कहा : 'जप का फल क्या मिलेगा यह मैं नहीं जानता; परन्तु मैंने जो कुछ जप किया था वह सब आपको दे दिया।' जब राजा ने अज्ञात तथा सन्दिग्ध फल लेना अस्वीकार कर दिया तब ब्राह्मण ने बताया कि उसने जप करते समय कभी किसी फल की कामना नहीं की अतः वह नहीं जानता कि क्या फल मिलेगा। तदनन्तर ब्राह्मण ने सत्य की प्रकृति तथा महत्त्व पर उपदेश देते हुए जप के फल को स्वीकार करने का राजा से आग्रह किया। उसने कहा : 'जो पहले देने की प्रतिज्ञा करके फिर देना नहीं चाहता, तथा जो याचना तो करता है किन्तु मिलने पर उसे लेना नहीं चाहता, वह मिथ्यावादी होता है। अतः आप अपनी तथा मेरी बात मिथ्या न कीजिये।' तब धर्म ने हस्तक्षेप करते हुए कहा : 'ब्राह्मण देवता दान के फल से युक्त हो जायँ तथा राजा भी सत्य के फल से सम्पन्न हों।' स्वर्ग ने भी धर्म की बातों का अनुमोदन किया। तब राजा ने अपने समस्त पुण्यकर्मों का फल ब्राह्मण को देना चाहा और कहा : 'यदि आपने अपने जप का उत्तम फल मुझे दे ही दिया तो ऐसा कीजिये कि हम दोनों के जो भी पुण्यफल हों उन्हें एकत्र करके हम दोनों साथ ही उपभोग करें—हम दोनों का उन पर समान अधिकार रहे।' इसी समय वहाँ विकराल वेषधारी दो पुरुष उपस्थित हुये जिनमें से एक का नाम विरूप तथा दूसरे का विकृत था। विरूप बोला : 'मैं विकृत के एक गोदान का फल ऋण के रूप में अपने पास रखता रहा हूँ। आज उस ऋण को वापस देने पर विकृत उसे ग्रहण नहीं कर रहा है।' इस पर विकृत ने कहा कि उसका विरूप पर कोई ऋण नहीं है। इक्ष्वाकु के पूछने पर विरूप ने कहा : 'विकृत ने धर्म की प्राप्ति के लिए एक तपस्वी ब्राह्मण को एक दूध देने वाली उत्तम गाय दी थी। मैंने इनके घर जा कर उसी गोदान का फल इनसे माँगा था और इसने शुद्ध हृदय से मुझे वह दे दिया था। तदनन्तर मैंने भी अपनी शुद्धि के लिये दो अधिक दूध देनेवाली कपिला गौएँ, जिनके साथ उनके बछड़े भी थे, एक उञ्छवृत्ति वाले ब्राह्मण को दान कर दिया। उसी गोदान का फल मैं पुनः इसे वापस करना चाहता हूँ।' इस पर विकृत ने कहा कि विरूप उसका ऋणी नहीं है। विवाद के निर्णय के लिए दोनों ने इक्ष्वाकु से निवेदन किया। राजा अभी कोई निर्णय नहीं दे सके थे कि ब्राह्मण ने उनसे कहा : 'जो वस्तु आपने मुझसे माँगी थी उसे शीघ्र ले लें अन्यथा मैं शाप दे दूँगा।' तब राजा ने ब्राह्मण से कहा : 'मेरे हाथ पर यह संकल्प का जल है। मेरा और आपका समस्त पुण्य हम दोनों के लिये समान हो, इस उद्देश्य से आप मेरा दिया हुआ यह दान भी ग्रहण करें।' राजा की बात सुनकर विरूप तथा विकृत ने अपने को क्रमशः काम तथा क्रोध बताया। विरूप ने कहा : 'यह मेरा साथी कुछ भी धारण नहीं करता और मुझ पर भी इसका कोई ऋण नहीं है। यह सब आयोजन आपकी परीक्षा के लिये किया गया था। काल, धर्म, मृत्यु, काम, क्रोध तथा आप दोनों—सब के सब एक दूसरे की कसौटी पर कसे गये हैं। अब आप अपने कर्म से जीते हुये लोकों में जाइये।' भीष्म ने कहा : 'संहिता का स्वाध्याय करनेवाला द्विज ब्रह्मा को प्राप्त होता है, अथवा अग्नि या सूर्य में समा जाता है। यदि जापक तैजस शरीर से इन लोकों में रमण करता है तो राग से मोहित होकर इनके गुणों को भी धारण कर लेता है। इसी प्रकार जप करनेवाला पुरुष रागयुक्त होने पर सोम, वायु, भूमि तथा अन्तरिक्ष लोकों के योग्य शरीर धारण करके वहाँ निवास करता है। यदि जापक वहाँ से विरक्त हो जाय तो वह उत्कृष्ट एवं अविनाशी मोक्ष की इच्छा रखता हुआ परमेष्ठी ब्रह्मा में प्रवेश कर जाता है। अन्य लोकों की अपेक्षा परमेष्ठिभाव की प्राप्ति अमृत-रूप है। उससे भी उत्कृष्ट कैवल्यरूपी अमृत को प्राप्त होकर शान्त, अहङ्कारशून्य, निर्द्वन्द्व, सुखी, शान्तिपरायण, तथा रोग-शोक से रहित ब्रह्म-स्वरूप हो जाता है (१२. १९९)।'' ''भीष्म ने कहा : तब 'बहुत अच्छा' कहकर ब्राह्मण ने धर्म, यम, काल, मृत्यु, तथा स्वर्ग का पूजन किया और कहा कि वह पुनः जप में संलग्न हो जायेगा। इक्ष्वाकु के पूछने पर ब्राह्मण ने उनके साथ समान फल का भागी होना स्वीकार कर लिया। उस समय साध्यों, विश्वेदेवों, मरुतों, देवताओं, और लोकपालों आदि के साथ इन्द्र ने उपस्थित हो कर कहा कि ब्राह्मण तथा इक्ष्वाकु दोनों ही सिद्ध हो गये। तदनन्तर ब्राह्मण और राजा, दोनों ने एक साथ ही अपने मन को विषयों की ओर से हटा लिया तथा प्राण, अपान, उदान, समान, और व्यान संज्ञक पञ्चप्राणवायुओं को हृदय में स्थापित किया। दोनों ने मन को प्राण और अपान के साथ मिला लिया—वर्णन। इसी समय ब्राह्मण के ब्रह्म-रन्ध्र का भेदन करके एक ज्वाला निकली और स्वर्ग की ओर चली गई। ब्रह्मा ने उस तेजोमय पुरुष का स्वागत करते हुये कहा : 'योगियों को जो फल मिलता है वही फल जापक को भी प्राप्त होता है। किन्तु जापकों को योगियों से भी श्रेष्ठ फल मिलता है यही सूचित करने के लिये मैंने उठकर तुम्हारा स्वागत किया है। तुम सुखपूर्वक मेरे भीतर निवास करो।' इतना कहकर ब्रह्मा ने उसे पुनः तत्त्वज्ञान प्रदान किया। आज्ञा पाकर वह ब्राह्मण-तेज ब्रह्मा के मुख में प्रविष्ट हो गया। राजा इक्ष्वाकु भी ब्राह्मण की ही भाँति ब्रह्मा के मुख में प्रविष्ट हुये। देवताओं ने जापक की सद्गति पर हर्ष प्रगट किया। ब्रह्मा ने देवताओं से कहा : 'जो महास्मृति तथा अनुस्मृति का पाठ करता है वह भी इसी विधि से मेरा सालोक्य प्राप्त कर लेता है। जो योग का भक्त है वह भी देहत्याग के पश्चात् इसी विधि से मेरा लोक प्राप्त करता है।' ऐसा कहकर ब्रह्मा वहीं अन्तर्धान हो गये। देवता भी अपने-अपने स्थानों को चले गये (१२. २००)।''

जावालि, विश्वामित्र के पुत्र, एक ऋषि का नाम है (३. ८५, १२१)। विश्वामित्र के पुत्रों के अन्तर्गत इनकी गणना (१३. ४, ५५)।

जामदग्नि, एक ऋषि का नाम है। यह भी उन ऋषियों में एक थे जो बाण-शय्या पर पड़े भीष्म को घेर कर खड़े हुये (१३. २६, ८)।

१. **जामदग्न्य** = राम (देखिये वस्था०)।

२. **जामदग्न्य** = रुमण्वत् (३. ११६, १०)।

जामदग्न्यम् उपाख्यानम्, पर्वसंग्रह के अन्तर्गत रामजामदग्न्य के आख्यान के लिये प्रयुक्त हुआ है (१. २, ६२)।

जाम्बवत्, रीछों के राजा का नाम है (३. २८०, २३)। ये दस खरब काले रीछों की सेना लेकर श्रीराम के पास उपस्थित हुये (३. २८३, ८)। ३. २८९, १३; २९०, ३।

जाम्बवती, श्रीकृष्ण की पत्नी तथा शाम्ब की माता का नाम है (१३. १४, २८)। श्रीकृष्ण के परमधाम चले जाने के पश्चात् ये भी सती हो गईं (१६. ७, ७३)।

जाम्बवतीसुत = शाम्ब (३. १२०, १३)।

जाम्बवत्याः सुतः = शाम्ब (३. १६, १२)।

जाम्बूनद, पूरुवंशी महाराज कुरु के पौत्र एवं जनमेजय के पाँचवें पुत्र का नाम है (१. ९४, ५६)।

जाम्बूनदपर्वत, एक पर्वत (= मेरु : नीलकण्ठी) का नाम है (३. १३९, १६)।

जाम्बूनदं सरस्, उशीरबीज नामक स्थान पर स्थित एक सरोवर का नाम है (५. १११, २३)।

जाम्बूनदी, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, ३०)।

जाया—'आत्मा हि जायते तस्यां तस्माज्जाया भवत्युत। भर्ता च भार्यया रक्ष्यः कथं जायान्ममोदरे ॥', (३. १२, ७०)।

जारासन्धि (जरासन्ध का पुत्र) = सहदेव अथवा जयत्सेन। सहदेव

का राजा के पद पर अभिषेक किया गया (२. २४, ४४)। अपनी दिग्विजय के समय भीमसेन ने सहदेव को पराजित किया (२. ३०, १८)। जयत्सेन ने युधिष्ठिर का पक्ष ग्रहण किया (५. १९, ८)। 'जारासन्धिः सहदेवो जयत्सेनश्च तावुभौ', (५. ५०, ४८)। 'जारासन्धिर्मागधश्च', (५. ५७, ८)। द्रोण ने इनका वध किया (७. १२५, ४५)। अभिमन्यु ने जयत्सेन का वध किया (८. ५, ३१)। दुर्योधन की सेना में इसकी उपस्थिति (८. ७, १८)। उन मृत योद्धाओं में एक यह भी था जो व्यास के आवाहन पर गङ्गा से प्रगट हुये (१५. ३२, १०)। तुकी० जरासन्धसुत, जरासन्धात्मज।

जारुधि, एक प्राचीन देश का नाम है (गीता. प्रेसं. में २. ३८, ३९ के बाद दाक्षिणात्य पाठ)।

जारूथी, एक नगर का नाम है जहाँ श्रीकृष्ण ने आहुति, क्राथ, शिशुपाल, जरासन्ध, शैव्य, तथा शतधन्वा को परास्त किया था (३. १२, ३०)।

जाल, एक दिव्यास्त्र का नाम है जिसका अर्जुन ने प्रयोग किया (३. १६७, ३३)।

जाल्य = शिव (१,००० नाम)।

जाह्नवी (जह्नु की पुत्री) = गङ्गा : १. ९९, ३. ४; ३. १, ४१; ५, १; ८५, ६९. ७३; ३०९, १. ४; ५. ११७, १०; १७८, ६७; ६. ३४, ३१; ७. ९५, ८; १३. २६, ५४. ५५. ९३; ८४, १२; ८५, ६०; १०३, १०; १०७, ६८; १६५, ५४; १५. ३३, १९. २०; ३९, ५।

जाह्नवीश्रक् = शिव (१,००० नाम)।

जाह्नवीपुत्र = भीष्म (देखिये वस्था०)।

जाह्नवीय (वि०)—१३. २६, ९९।

जाह्नवीसुत = भीष्म (देखिये वस्था०)।

१. जित = शिव (१,००० नाम)।

२. जित = विष्णु (१,००० नाम)।

जितकाम = शिव (१,००० नाम)।

जितक्रोध = विष्णु (१,००० नाम)।

जितमन्यु = विष्णु (१,००० नाम)।

जितवती, राजर्षि उशीनर की सुन्दरी पुत्री का नाम है जो द्यौ नामक वसु की पत्नी की सखी थी (१. ९९, २२।

जितात्मन्, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३१)

जितामित्र = विष्णु (१,००० नाम)।

जितारि, पूरुवंशी महाराज कुरु के पौत्र एवं अविक्षित् के पुत्र का नाम है (१. ९४, ५३)।

जितेन्द्रिय = शिव (१,००० नाम)।

जिह्मिक, दक्षिण की एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ५९)।

१. जिष्णु = अर्जुन (देखिये वस्था०)।

२. जिष्णु = विष्णु (कृष्ण) : ५. ७०, १३; ६. ५०, ४२; ७. ८३, १८; १२. ४३, ५; ४७, १५; १३. १५०, २८; १४. ४०, २।

३. जिष्णु, पाण्डवपक्षीय चेदि देश के एक योद्धा का नाम है जिसका कर्ण ने वध किया (८. ५६, ४८)।

जिष्णुकर्मन्, चेदि देश के एक पाण्डवपक्षीय योद्धा का नाम है (८. ५६, ४८)।

१. जीमूत = सूर्य (३. ३, २२)।

२. जीमूत = एक मल्ल का नाम है जिसका मल्लयुद्ध में भीमसेन ने वध कर दिया (४. १३, २३)।

३. जीमूत, एक ब्रह्मर्षि का नाम है जिनके सामने हिमालय की वह निधि प्रगट हुई जिसे जैमूत कहते हैं (५. १११, २३)।

जीर्णदंष्ट्र = शिव (१,००० नाम)।

१. जीव = शिव (१,००० नाम)।

२. जीव = विष्णु (१,००० नाम)।

१. जीवन = सूर्य (३. ३, २२)।

२. जीवन = शिव (१,००० नाम)।

३. जीवन = विष्णु (१,००० नाम)।

जीवजीवक, एक पक्षिविशेष का नाम है (१२. १३९, ६)।

जीवल, अयोध्या नरेश ऋतुपर्ण के सारथि का नाम है जिसने बाहुकवेशी राजा नल के साथ वार्तालाप किया (३. ६७, ७. ८. ११)।

जृम्भक (बहु० का:), एक प्रकार के प्राणियों का नाम है जिन्होंने रुद्र का अनुसरण किया (३. २३१, ३४)।

जृम्भिका, जंभाई का नाम है जिसे देवताओं ने वृत्रासुर के मुख से इन्द्र को निकालने के लिये उत्पन्न किया (५. ९, ५३. ५४)।

जृम्भित = शिव (१,००० नाम)।

जेता रिपूणां = स्कन्द (३. २३२. १७)।

जेतृ = विष्णु (१,००० नाम)।

जैगीषव्य, एक मुनि का नाम है : २. ११, २४; ९. ५०, ६; ७. ९. १६. २०. २३. २५–२७. २९. ३६. ३८. ३९. ४२–४४. ४६. ४८. ५०. ५२–५४. ६५–६८। असित देवल के साथ इनका संवाद (१२. २२९, ३. ४. ७)। इन्होंने विश्वावसु को उपदेश दिया (१२. ३१८, ५९)। शिव ने इन्हें अष्टाङ्ग शक्ति प्रदान की (१३. १८, ३७)।

१. जैत्र, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है जिसका भीमसेन ने वध किया (९. २६, ४. १४)।

२. जैत्र एक रथविशेष का नाम है : २. १२, १२; २४, १८; ६१, ५; ३. २९०, १३; ५. १०४, ३; ७. ७२, ३; ८. ७०, ३५।

जैमिनि, एक ब्रह्मर्षि का नाम है जो व्यास के शिष्य थे। ये जनमेजय के सर्पसत्र के समय उद्गाता बने (१. ५३, ६)। व्यास ने इन्हें वेदों की शिक्षा दी (१. ६३, ८९)। युधिष्ठिर की सेवा करनेवाले मुनियों के अन्तर्गत इनकी गणना (२. ४, ११)। बाण-शय्या पर पड़े भीष्म को घेर कर खड़े होनेवाले मुनियों में एक यह भी थे (१२. ४७, ६)। १२. ३१८, २०; ३२७, २७; ३४०, १९; ३४९, ११।

ज्ञानगम्य = विष्णु (१,००० नाम)।

ज्ञानपावन, एक प्राचीन तीर्थ का नाम है जिसके सेवन से मनुष्य अग्निष्टोम यज्ञ का फल प्राप्त करता है (३. ८४, ३)।

ज्ञानं उत्तमम् = विष्णु (१,००० नाम)।

ज्ञानात्मन् = कृष्ण (१२. ४७, ७७)।

ज्ञेयात्मन् = कृष्ण (१२. ४७. ४०)।

१. ज्येष्ठ, सामवेद के पारङ्गत एक प्राचीन ऋषि का नाम है जिन्होंने बर्हिषद नामक ऋषियों से सात्वत धर्म का उपदेश प्राप्त किया था (१२. ३४८, ४६. ४७)।

२. ज्येष्ठ = शिव (१,००० नाम)।

३. ज्येष्ठ = विष्णु (१,००० नाम)।

ज्येष्ठपुष्कर, एक तीर्थ का नाम है (३. २००, ६६; १३. १३०, ७. ३२)। तुकी० पुष्कर।

ज्येष्ठसामन्, एक साम का नाम है जिसकी उपासना का ज्येष्ठ मुनि ने व्रत लिया था (१२. ३४८, ४६; १३. १४, २८३; ९०, २७)।

ज्येष्ठस्थान, एक तीर्थ का नाम है जहाँ महादेव का दर्शन-पूजन करने से मनुष्य चन्द्रमा के समान प्रकाशित होता है (३. ८५, ६२)।

ज्येष्ठा, एक नक्षत्र का नाम है। 'कृत्वा चाङ्गारको वक्रं ज्येष्ठायाम्', (५. १४३, ९)। 'श्वेतो ग्रहः प्रज्वलितः सधूम इव पावकः। ऐन्द्रं तेजस्वि नक्षत्रं ज्येष्ठामाक्रम्य तिष्ठति ॥', (६. ३, १६)। इस नक्षत्र में दान का महत्त्व (१३. ६४, २३)। इस नक्षत्र में श्राद्ध करने का महत्त्व (१३. ८९, ९)। 'मध्याह्नमारूढे ज्येष्ठामूले दिवाकरे', (१३. ९५, ९)। 'ज्येष्ठामूलं तु यो मासमेकं', (१३. १०६, २५)। चान्द्रव्रत का वर्णन (१३. ११०, ७)। तुकी० ऐन्द्र।

ज्येष्ठिल, एक तीर्थ का नाम है जहाँ एक रात्रि निवास करने से मानव सहस्र गोदान का फल प्राप्त करता है (३. ८४, १३४)।

ज्येष्ठिला, एक नदी का नाम है जो वरुण की सभा में उपस्थित होती है (२. ९, २१)।

ज्यैष्ठ, एक मास का नाम है (१३. १०९, ९)।

ज्योतिक, एक नाग का नाम है (१. ३५, १३)। तुकी० ज्योतिष्क।

ज्योतिरथा, भारतवर्ष की एक प्रमुख नदी का नाम है (६. ९, २६)।

ज्योतिरथ्या, एक नदी का नाम है जिसका शोणभद्र से सङ्गम हुआ है। इस सङ्गम पर स्नान करने से मनुष्य अग्निष्टोम यज्ञ का फल पाता है (३. ८५, ८)।

ज्योतिषाम् अयनम् = शिव (१,००० नाम)।

ज्योतिषां निधिः = शिव (१,००० नाम)।

१. ज्योतिष्क, एक नाग का नाम है (५. १०३, १५)।

२. ज्योतिष्क, एक आयुध का नाम है जिसके द्वारा अर्जुन ने अन्धकार का विसर्जन किया (७. ३०, २४)।

३. ज्योतिष्क, मेरु पर्वत के एक शिखर का नाम है (१२. २८३, ५)।

१. ज्योतिस्, अहः नामक वसु के पुत्र का नाम है (१. ६६, २३)।

२. ज्योतिस्, अग्नि द्वारा स्कन्द को प्रदत्त दो पार्षदों में से एक का नाम है (९. ४५, ३३)।

३. ज्योतिस् = कृष्ण (१२. ४७, ५४)।

४. ज्योतिस् = विष्णु (१,००० नाम)।

५. ज्योतिस् (बहु०)—३. १९०, ७७; ६. ३४, २१; ९. ३७, १५; ४५, ११; ४९, १८; १२२, ४६. ४७; ३४७, ८६; १३. ९८, ५४; १४. ४३, ८।

ज्योत्स्नाकाली, सोम की द्वितीय पुत्री का नाम है जो सूर्य की भार्या बनी (५. ९८, १३)।

ज्वर, रोगविशेष का नाम है। भगवान् शङ्कर के स्वेद से इसकी उत्पत्ति के प्रकारों का वर्णन (१२. २८३, ४७. ५१. ५४. ५६. ५७, ६२)।

ज्वरोत्पत्तिः—"युधिष्ठिर द्वारा ज्वरोत्पत्ति के सम्बन्ध में जानने की इच्छा प्रगट करने पर भीष्म ने कहा : 'पूर्वकाल में मेरु पर्वत का ज्योतिष्क नामक एक शिखर था जिसे सविता से सम्बद्ध होने के कारण सावित्र भी कहते थे। उस शिखर पर पार्वती-सहित शिव विराजमान होते थे। देवता, वसुगण, अश्विनीकुमार, शङ्खनिधि, पद्मनिधि, शुक्राचार्य, तथा ऋद्धि और गुह्यकों से घिरे हुये कुबेर, ये सभी शिव की सेवा करते थे—शिव की सेवा-उपासना करनेवाले अन्य लोगों का वर्णन। कुछ काल के अनन्तर प्रजापति दक्ष ने यज्ञ आरम्भ किया। इन्द्र आदि समस्त देवता शिव की आज्ञा से अपने-अपने विमानों पर बैठकर गङ्गाद्वार आये। देवताओं को प्रस्थित हुआ देख कर पार्वती ने शिव से पूछा : 'हे महादेव ! इस दक्ष के यज्ञ में आप क्यों नहीं पधार रहे हैं ?' महादेव ने उत्तर दिया : 'देवताओं ने ही पहले ऐसा निश्चय किया था कि मेरे लिये किसी भी यज्ञ में कोई भी भाग निश्चित नहीं होगा। इसी नियम के अनुसार देवगण मुझे यज्ञभाग अर्पित नहीं करते।' शिव की बात सुनकर पार्वती ने कहा : 'यज्ञ में जो इस प्रकार आपको भाग देने का निषेध किया गया है उससे मुझे अत्यन्त दुःख हुआ है। इस अपमान से मेरा समस्त शरीर काँप रहा है।' पार्वती के क्रोध को समझ कर शिव ने नन्दी को वहीं खड़े रहने की आज्ञा दी। तदनन्तर शिव ने योगबल का आश्रय ले अपने भयानक सेवकों द्वारा उस दक्ष-यज्ञ को सहसा नष्ट करा दिया : यज्ञ के विध्वंस का वर्णन। तब वह यज्ञ मृग का रूप धारण करके आकाश की ओर भाग चला, परन्तु शिव ने भी धनुष हाथ में लेकर उसका पीछा किया। उस समय शिव के ललाट से एक स्वेदबिन्दु पृथिवी पर गिरा जिससे अग्निपुञ्ज का प्रादुर्भाव हुआ। उस अग्नि से एक नाटा-सा पुरुष उत्पन्न हुआ जो अत्यन्त भयंकर था। इस पुरुष ने यज्ञ को दग्ध करने के पश्चात् देवताओं तथा ऋषियों पर आक्रमण किया। उसे देखकर सब देवता भयभीत हो दसों दिशाओं में भाग गये, और जगत् में हाहाकार मच गया। तब ब्रह्मा ने शिव को प्रसन्न करके उनके लिये यज्ञ भाग निश्चित कर दिया। ब्रह्मा ने कहा : 'आपके स्वेद से जो यह पुरुष प्रगट हुआ है उसका नाम होगा ज्वर। यह ज्वर जबतक एक रूप में रहेगा तब तक पृथिवी इसे धारण करने में समर्थ नहीं हो सकेगी। अतः इसे अनेक रूपों में विभक्त कर दीजिये।' ब्रह्मा की स्तुति सुनकर शिव ने ज्वर को अनेक रूपों में विभक्त कर दिया—वितरण और विभाजन का वर्णन। जो ज्वरोत्पत्ति की इस कथा को सदैव पढ़ता है वह रोगमुक्त, सुखी एवं प्रसन्न होकर कामनाओं को प्राप्त कर लेता है (१२. २८३)।"

ज्वलन = अग्नि (देखिये वस्था०)।

ज्वलनसूनु = स्कन्द (९. ४५, ५२।

ज्वलनात्मज = स्कन्द (९. ४४, १०; १३. ८६, १७)।

ज्वलनास्त्र, एक आग्नेयास्त्र का नाम है जिसका अर्जुन ने प्रयोग किया (८. ८९, १९)।

ज्वलिन् = शिव (१,००० नाम)।

ज्वाला, तक्षक नाग की पुत्री का नाम है जो ऋक्ष की पत्नी तथा मतिनार की माता थी (१. ९५, २५)।

१. ज्वालाजिह्व, अग्नि द्वारा स्कन्द को दिये गये दो पार्षदों में से एक का नाम है (९. ४५, ३२)।

२. ज्वालाजिह्व, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६१)

झ

झर्झरिन् = शिव (१,००० नाम)।

झल्लि, एक वृष्णिवंशी यादव का नाम है जो द्वारका के सात मुख्य मन्त्रियों में से एक था (गोप्रे. सं. में २. १४, ६० के बाद दाक्षिणात्य पाठ)।

१. झिल्लिन्, एक वृष्णिवंशी योद्धा का नाम है जो द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुआ (१. १८६, २०)। यह सुभद्रा के लिये दहेज लेकर खाण्डवप्रस्थ आया (१. २२१, ३२)। धृतराष्ट्र द्वारा इसके पराक्रम का वर्णन (७. ११, २८)।

२. झिल्लिन्, एक कीट—झिल्लिका—का नाम है (३. ६४, १)।

ट

टिट्टिभ, एक दैत्य या दानव का नाम है जो वरुण की सभा में उपस्थित होता था (२. ९, १५)।

ड

डम्बर, धाता द्वारा स्कन्द को दिये गये दो पार्षदों में से एक का नाम है (९. ४५, ३९)।

डिण्डिक, बिडालोपाख्यान में आनेवाले एक चूहे का नाम है (५. १६०, ३४)।

डिम्भक, जरासन्ध के एक मन्त्री का नाम है जो हंस का भ्राता था (२. १४, १३. ३७. ४१)। हंस की मृत्यु का एक मिथ्या समाचार सुनकर इसने आत्महत्या कर ली (२. १४, ४२. ४३)। यह जरासन्ध का अनुगामी था (२. १९, २६)। २. २०, १; २२, ३३।

कुण्डुभ, एक सर्प का नाम है जिनका रुरु के साथ संवाद हुआ (१. ९, ६१ से १. १०, ७ तक)। ब्राह्मण मित्र के शाप से इनके सर्प होने की कथा (१. ११, १–९)। महर्षि रुरु के दर्शन से इनका सर्पयोनि से मुक्त होना (१. ११, १२)। इन्होंने अहिंसा-धर्म की श्रेष्ठता का रुरु को उपदेश दिया (१. ११, १३–१९)।

त

तंसु, एक पूरुवंशी राजा का नाम है जो मतिनार के पुत्र थे (१. ९४, १४–१६)। इनके पुत्र का नाम ईलिन था (१. ९५, २६)।

तक्षक, एक श्रेष्ठ नाग का नाम है (१. ३, १११. ११२. १२९. १३०. १४० (यस्य वासः कुरुक्षेत्रे खाण्डवे चाभवत्पुरा ॥ तं नागराजमस्तौषं कुण्डलार्थाय तक्षकम् । तक्षकश्चाश्वसेनश्च नित्यं सहचरावुभौ ॥). १४१. १५३. १६१. १७०. १७८. १८१. १८६ (एक भिक्षुक के रूप में इसने उत्तङ्क से उनके कुण्डल ले लिये परन्तु बाद में पुनः लौटाने के लिये बाध्य हुआ); ३५, ५; ४१, १३. १८; ४२, २०. ३४. ३६. ३८. ४०; ४३, २. ११. १८. २०. २१. २४. २५. ३३. ३५. ३६ (शृङ्गी ऋषि के शाप के अनुसार इसने परिक्षित् को काटने का निश्चय किया, परन्तु काटने के पहले इसने कश्यप को परिक्षित् की सहायता करने से विरत कर दिया); ४४, ३. ५; ५०, १०. १५–१७. १९. २१. २२. २४. २५. २७. ३४. ३६. ४३. ४८. ५३ (परिक्षित् के पुत्र, जनमेजय, ने इससे प्रतिशोध लेने का निश्चय किया); ५१, ३. ५. ८ (जनमेजय ने सर्पसत्र का आयोजन किया); ५३, १४. १६; ५६, २. ३. ४. ५. १०–१५. १८. २० (मन्त्रों की शक्ति द्वारा यह यज्ञाग्नि के निकट आ गया); ५७, ८ (सर्प-सत्र में दग्ध हुये इसके वंश के नागों की गणना). १०; ५८, ३. ४ (आस्तीक ने रुकने के लिये तीन बार कहा और यह पृथिवी और आकाश के बीच में ही रुक गया); ६५, ४१ (कद्रू की सन्तान के रूप में इसका उल्लेख); ९५, २५; २२३, ७ (यह इन्द्र का सखा और खाण्डववन में निवास करता था); २२७, ४. ५; २२८, १६. ३९; २. ९, ८ (वरुण की सभा में); ३. ८२, ९० (काश्मीरेष्वेव नागस्य भवनं तक्षकस्य वितस्ताख्यम्); ५. १०३, ९; १०९, २०; ६. १०७, १५; ७. ६९, २२ (जब नागों ने पृथिवी का दोहन किया तो यह बछड़ा बना); १७४, ३०; २०२, ७३ (यह शिव के रथ का अवनाह बना); ८. ८७, ४३; १५. ३५, १४; १६. ४, १५। तुकी० नाग, नागराज, नागेन्द्र, पन्नग, पन्नगेश्वर, पन्नगेन्द्र।

तक्षकपुत्र = अश्वसेन (८. ८९, ९०)।

तक्षशिला, एक नगर का नाम है जिसे जनमेजय ने विजित किया (१. ३, २०. १७२)। सर्पसत्र के पश्चात् जनमेजय यहाँ से हस्तिनापुर लौट आये (१८. ५, ३४)

तङ्गण (बहु० °णाः) एक जाति के लोगों का नाम है जो युधिष्ठिर के लिये भेंट लाये (२. ५२, ३)। ये भी युधिष्ठिर के राजसूय के समय उपस्थित हुये (३. ५१, २५)। 'किराततङ्गणाकीर्णम्', (३. १४०, २५)। 'तङ्गणाः परतङ्गणाः', (६. ९, ६४)। युधिष्ठिर की सेना में इनकी उपस्थिति (६. ५०, ५१)। दुर्योधन की सेना में (७. १२१, १४. ४२)। कर्ण ने इन्हें पराजित किया था (८. ८, १८)। अर्जुन ने इन्हें पराजित किया (८. ७३, १९)। राजसूय का अश्व इनके देश में भी गया (१४. ८३, ४)।

तट, तटानां पति, तट्य = शिव (१,००० नाम)।

तडित्प्रभा, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १७)।

तण्डि, एक ऋषि का नाम है जिन्होंने शिव-सहस्रनाम का स्तवन किया (१३. १४, १९)। इन्होंने कृतयुग में शिव की उपासना की (१३. १६, १)। १३. १६. १२. ६६. ६७. ७४. ७६ (इन्होंने उपमन्यु को शिव-सहस्रनाम का उपदेश किया); १७, ३. २३ (इन्होंने स्वर्गलोक से शिव-सहस्रनाम को प्राप्त किया था). २४. १७० (इन्होंने शिव-सहस्रनाम द्वारा शिव का स्तवन किया). १७६. १७७ (इन्होंने शुक्र को सहस्रनाम का उपदेश किया)। तुकी० ब्रह्मयोनि।

तण्डुलिकाश्रम, एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, ४३)।

तत्त्व, तत्त्वविद्, तद् (अथवा यत-तद्) = विष्णु (१,००० नाम)।

तनयाल, दक्षिण की एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ६३)।

तनय (बहु० °याः), एक जाति के लोगों का नाम है जो दक्षिण में निवास करते थे (६. ९, ६४)।

तनु, एक प्राचीन ऋषि का नाम है, जिन्होंने राजा वीरद्युम्न को उनके पुत्र के विषय में बताया था (१२. १२७, ६. १२. १८)। तनु के रूप में धर्म ने वीरद्युम्न की परीक्षा ली (१२. १२८, २१)। तुकी० देवर्षि।

तनुवासस् = शिव (१०. ७, ९)।

तन्तिपाल, विराटनगर में निवास करने के समय सहदेव का नाम है (४. ३, ९; १०, १०)।

तन्तु, विश्वामित्र के एक ब्रह्मवादी पुत्र का नाम है (१३. ४, ५५)।

तन्तुवर्धन = विष्णु (१,००० नाम)।

तप—"काश्यप, वसिष्ठ, प्राणक, च्यवन, तथा त्रिवर्चा नामक पाँच मुनियों की तपस्या से प्रगट हुये एक तेजस्वी पुत्र का नाम है जो पाँच रंगों से युक्त होने के कारण पाञ्चजन्य नाम से विख्यात हुये। यही पाञ्चजन्य नामक अग्नि उक्त पाँचों ऋषियों के वंश प्रवर्तक हुये। घोर तपस्या के कारण इनका नाम तप पड़ा। ये बृहदुक्थ, रथन्तर आदि के पिता हुये (३. २२०, ११–१३. १९)।" ये पाँच अग्नियों के पिता हुये (३. २२१, ३. ६.८)। ये उन पाँच कुमारियों के पिता थे जो मातृकायें बनीं (३.२२८,६)।

तपतां गति = शिव (१०. ७, ७)।

तपती, सूर्य की पुत्री और संवर्ण की पत्नी का नाम है। यह कुरु की माता बनी (१. ९४, ४८; ९५, ३८)। १. १७१, २. ६. १५. २०; १७२, ४. २०. २६; १७३, १५. २२. २५. २६. २७. २९. ३३. ४५. ४८. ४९ (संवर्ण द्वारा इसे पत्नी के रूप में प्राप्त करने की कथा)। तुकी० सौरी, सावित्र्यवरजा, वैवस्वती।

१. तपन = सूर्य : १. ३, १६ (गरुड़ का सूर्य के साथ समीकरण); १११, १८; १७१, २०; १७३, २६; ३. ३, ६२; ८५, ७४; ३०८, १३; ५. १४५, ४।

२. तपन, एक नाग का नाम है (१. ३२, १८)।

३. तपन, एक पाञ्चाल योद्धा का नाम है जिसका कर्ण ने वध किया (८. ४८, १५)।

४. तपन = शिव (१,००० नाम)।

१. तपस् = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

२. तपस् = शिव (१,००० नाम)।

३. तपस् = कृष्ण (विष्णु) : १२. ३४२, १३।

तपस्विन् = शिव (१,००० नाम)।

तपःसक्त = शिव (१,००० नाम)।

तपःसुत = युधिष्ठिर (३. ३१३, १९)।

तपिष्णु = सूर्य (१२. ३१८, ३)।

तपोदान = एक तीर्थ का नाम है (१३. १६५, २४)।

तपोनित्य = शिव (१,००० नाम)।

तपोनिधि = शिव (१,००० नाम)।

तपोनिष्ठ = शिव (१०. ७, ७)।

तपोमय = शिव (१,००० नाम)।

तपोरत = शिव (८. ३३, ५९)।

तप्ततपस् = शिव (१४. ८, २५)।

तप्य = शिव (१,००० नाम)।

१. तमस्, एक ब्राह्मण का नाम है जो श्रुवा के पुत्र और प्रकाश के पिता थे (१३. ३०, ६३)।

२. तमस् = शिव (१,००० नाम)।

तमसा, एक नदी का नाम है। यह भी अग्नि की माताओं में से एक है (३. २२२, २४; ६. ९, ३१)।

तमसी, एक नदी का नाम है (६. ९, ३२)।

तमोघ्न = सूर्य (३. ३, ६३; ७. १४६, १४४)।

तमोनुद = सूर्य (३. ३, २२; १६४, १०; ३०७, २; ६. १२१, ४)।

तमोन्तकृत, स्कन्द के एक योद्धा का नाम है (९. ४५, ५८)।

तरन्तुक, एक द्वारपाल तथा उसी के एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १५. २०८; ९. ५३, २४)।

तरङ्गविद्, तरङ्गाङ्कितकेश = शिव (१,००० नाम)।

तरल (बहु० °लाः), एक जाति के लोगों का नाम है (८. ८, २०)।

१. तरु = शिव (१,००० नाम)।

२. तरु = विष्णु (१,००० नाम)।

तरुण, एक गन्धर्व का नाम है जो इन्द्र की सभा में उपस्थित रहता था (२. ७, २२)।

तरुणक, धृतराष्ट्रकुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है जो सर्पसत्र की अग्नि में भस्म हुआ (१. ५७, १९)।

तर्कशास्त्र, स्वनामधन्य शास्त्र का नाम है (१२.२४६, १८; २६९, ४३)।

तल = शिव (१,००० नाम)।

तस्थुषां पतिः = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ३७)।

ताडकायन, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५६)।

ताण्ड्य, एकाधिक ऋषियों का नाम है। इन्द्र की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ७, १२; १२. २४४, १७)। ये उपरिचर वसु के यज्ञ में सदस्य थे (१२. २९६, १४; ३३६, ७)।

१. तापत्य (बहु०), तपती के वंशजों के लिये प्रयुक्त हुआ है (१. १७१, १. २)।

२. तापत्य = अर्जुन (१. १७०, ७४. ७९; १७३, ४८–५०)।

३. तापत्य (वि०) : १. २, ११७।

तापत्य-उपाख्यानम्—"तपतीनन्दन के रूप में संबोधित किये जाने पर अर्जुन ने चित्ररथ से इसका कारण पूछा। तब चित्ररथ ने कहा : सूर्य के एक तपती नामक पुत्री हुई जो सावित्री की छोटी बहन थी। वह तपस्या में संलग्न रहने के कारण तपती नाम से विख्यात हुई। तपती के बड़े होने पर जब सूर्यदेव उसके विवाह के सम्बन्ध में विचार कर रहे थे, तब उन्हीं दिनों ऋक्ष के पुत्र, राजा संवरण ने सूर्य की आराधना आरम्भ की। संवरण अत्यन्त कृतज्ञ और धर्मज्ञ थे, अतः सूर्यदेव ने उन्हें तपती के लिये योग्य वर माना। एक दिन संवरण जब वन में पशुओं का आखेट कर रहे थे तो उसी समय भूख-प्यास से पीड़ित होकर उनका अश्व मृत्यु को प्राप्त हुआ। संवरण पैदल ही विचरते हुये एक स्थान पर आये जहाँ उन्होंने तपती को सर्वथा अकेले देखा। तपती के अद्वितीय सौन्दर्य—वर्णन—को देखकर संवरण ने उसके सम्बन्ध में जिज्ञासा प्रगट की। संवरण की बातें सुनकर भी तपती कुछ बोली नहीं और वहीं अन्तर्धान हो गई। संवरण उसकी खोज में समस्त वन में इधर-उधर घूमने लगे परन्तु उसे न पाकर अन्ततः विलाप करते हुये मूर्च्छित हो गये (१. १७१)।" "तपती के अदृश्य हो जाने पर संवरण अचेत होकर भूमि पर गिर पड़े। राजा की इस दशा को देख कर तपती पुनः वहाँ प्रगट हो गई और उन्हें समझाने लगी। राजा ने तपती से गान्धर्व-विवाह करने का आग्रह किया। तपती ने राजा के प्रति अपना प्रेम प्रगट करते हुये अपने पिता की स्वीकृत लेने का आग्रह किया और कहा : 'आप यथासमय नमस्कार, तपस्या, तथा नियम के द्वारा मेरे पिता आदित्य को प्रसन्न करके उनसे मुझे माँग लीजिये।' (१. १७२)।" "इस प्रकार कह कर तपती ऊपर आकाश में चली गई, और संवरण वहीं मूर्च्छित होकर गिर पड़े। इधर राजा के मन्त्री, सेना और अनुचरों के साथ, उस स्थान पर आये जहाँ राजा मूर्च्छित पड़े थे। उन सब ने राजा के मुख पर जल का छींटा दिया जिससे उनकी मूर्च्छा दूर हुई। चेतना लौटने पर संवरण ने एकमात्र अपने मन्त्री के अतिरिक्त अपनी समस्त सेना आदि को लौटा दिया और वहीं पर्वत-शिखर पर बैठकर सूर्य की आराधना करने लगे। उस समय उन्होंने अपने पुरोहित, वसिष्ठ का भी मन ही मन स्मरण किया। रात-दिन एक ही स्थान पर खड़े होकर राजा संवरण तपस्या में लगे रहे। बारहवें दिन विप्रर्षि वसिष्ठ वहाँ उपस्थित हुये। वसिष्ठ ने दिव्यज्ञान से पहले ही राजा की मनोदशा को जान लिया था। वहाँ उपस्थित होने के पश्चात् वसिष्ठ ऊपर सूर्य से मिलने के लिये चले गये। अपना परिचय देने के पश्चात् उन्होंने सूर्य से कहा कि वे अपनी कन्या, तपती, का संवरण से विवाह कर दें। सूर्य ने वसिष्ठ का प्रस्ताव स्वीकार करके तपती को उन्हें अर्पित कर दिया। कन्या को लेकर वसिष्ठ पुनः उसी स्थान पर आये जहाँ संवरण तपस्या कर रहे थे। तदनन्तर संवरण ने देवताओं और गन्धर्वों से सेवित उस उत्तम पर्वत के शिखर पर विधिपूर्वक तपती का पाणिग्रहण किया। इसके बाद वसिष्ठ की आज्ञा लेकर संवरण ने उसी पर्वत पर अपनी पत्नी के साथ विहार करने की इच्छा की। वसिष्ठ के चले जाने पर राजा अपनी पत्नी सहित उसी स्थान पर बारह वर्षों तक रमण करते रहे। उन दिनों संवरण के राज्य और नगर में इन्द्र ने बारह वर्ष तक वर्षा नहीं की। उस अनावृष्टि से समस्त प्रजा अत्यन्त त्रस्त हो उठी। ऐसी दुरवस्था देखकर वसिष्ठ ने राज्य में वर्षा की और तपती-सहित राजा संवरण को नगर में वापस लाये। राजा के नगर में प्रवेश करते ही इन्द्र ने वर्षा आरम्भ कर दी। तदनन्तर तपती के साथ महाराज संवरण ने बारह वर्षों तक यज्ञ किया। संवरण ने तपती के गर्भ से कुरु को उत्पन्न किया जो अर्जुन के पूर्वज थे। चित्ररथ ने कहा कि इसी कारण उन्होंने अर्जुन को तपतीनन्दन के रूप में सम्बोधित किया था (१. १७३)।"

तापत्यवर्धन = अर्जुन (१. १७०, ७०)।

तापसारण्य, एक तीर्थ का नाम है (३. ८७, २०)।

ताम्रचूड, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४६, ५१)।

ताम्रचूडा, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १८)।

ताम्रद्वीप, एक दक्षिणभारतीय जनपद का नाम है जिसे सहदेव ने जीता था (२. ३१, ६८)।

१. ताम्रपर्णी, दक्षिण के एक तीर्थ का नाम है (३. ८८, १४)।

२. ताम्रपर्णी, एक पर्वत (= मलय) का नाम है (६. ६, ५६)।

१. ताम्रलिप्त, एक प्राचीन राजा का नाम है जिसे सहदेव ने पूर्व-दिग्विजय के समय परास्त किया था (२. ३०, २४)।

२. ताम्रलिप्त (बहु० °प्ताः) एक जाति के लोगों का नाम है जो युधिष्ठिर के लिये भेंट लाये (२. ५२, १८)।

३. ताम्रलिप्त, एक राजा का नाम है जो द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुये (१. १८६, १३)।

ताम्रलिप्तक (बहु० °काः), एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ५७; ७. ७०, १२; ११९, १५. २१; ८. २२, २. २१)।

ताम्रवती, अग्नियों के उत्पत्ति की स्थानभूता एक नदी का नाम है (३. २२२, २३)।

१. ताम्रा, कश्यप की पत्नी का नाम है जो काकी, श्येनी, भासी, धृतराष्ट्री, और शुकी नामक पाँच कन्याओं की माता हुई (१. ६६, ५६)।

२. ताम्रा, एक श्रेष्ठ नदी का नाम है। मार्कण्डेय ने इसे भी नारायण के उदर में देखा (३. १८८, १०४; ६. ९, २८)।

ताम्रारुण, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, १५४)।

ताम्रारुणा, एक नदी का नाम है (१३. १६५, २१)।

ताम्राह्वय, दक्षिण के एक द्वीप का नाम है जिसे सहदेव ने विजित किया था (२. ३१, ६८)।

ताम्रोष्ठ = शिव (१,००० नाम)।

ताम्रौष्ठ, कुबेर की सभा में उपस्थित रहनेवाले एक यक्ष का नाम है (२. १०, १६)।

१. तार, एक वानर-योद्धा का नाम है जिसने निखर्वट से युद्ध किया (३. २८५, ९; २८७, ७; २८९, ४)।

२. तार = विष्णु (१,००० नाम)।

१. तारक, एक असुर का नाम है (६. ९५. १८; ७. १५५, ३६; १७३, ६२)। ८. ३३, ४ (यह तारात्त्व, कमलाक्ष और विद्युन्माली का पिता था); ५३, २६; ९. ३१, १३; ४३, ४८; ४६, ७३ (इसका स्कन्द ने वध किया था); १३. ८४, ७९; ८५, १. ३. १४. ५१ (इसने देवताओं को दग्ध करना आरम्भ किया जिससे इसका वध करने के लिये अग्नि से स्कन्द की उत्पत्ति हुई); ८६, २. ४. २७–२९ (स्कन्द ने इसका वध किया था)। तुकी० असुर, दैतेय, दैत्य, दैत्यसत्तम, दैत्येन्द्र, दानव।

२. तारक = शिव (१,००० नाम)।

३. तारक (बहु०), तारक के पुत्रों के लिये प्रयुक्त हुआ है (८. ३४, ९७)।

तारकवधोपाख्यान—"युधिष्ठिर के पूछने पर भीष्म ने बताया : जब गङ्गा ने अग्नि द्वारा स्थापित किये हुये गर्भ को त्याग दिया तब देवताओं और ऋषियों ने बना-बनाया काम बिगड़ता देखकर छः कृत्तिकाओं को उस गर्भ को धारण करने के लिये प्रेरित किया क्योंकि देवाङ्गनाओं में अन्य कोई स्त्री अग्नि एवं रुद्र के उस तेज को धारण करने में समर्थ नहीं थी। कृत्तिकाओं द्वारा उस तेज के धारण कर लेने पर अग्निदेव उन पर प्रसन्न हुये। अग्नि का वह समस्त तेज छः मार्गों से उनके भीतर स्थापित हुआ। प्रसवकाल उपस्थित होने पर उन छहों कृत्तिकाओं ने एक साथ ही उस गर्भ को उत्पन्न किया। छः अधिष्ठानों में पला हुआ वह गर्भ जब उत्पन्न होकर एकत्व को प्राप्त हो गया तब सुवर्ण के समीप स्थित हुये उस बालक को पृथिवी ने ग्रहण किया। वह कान्तिमान शिशु अग्नि के समान प्रकाशित हो रहा था और दिव्य सरकण्डे के वन में जन्म ग्रहण करके दिनोंदिन बढ़ने लगा। कृत्तिकायें अपना स्तनपान कराकर उसका पोषण करने लगीं, और इसी कारण वह कार्तिकेय के नाम से प्रसिद्ध हुआ। स्कन्दन के कारण वह 'स्कन्द', तथा गुहा में वास करने के कारण 'गुह' नाम से भी विख्यात हुआ। तदनन्तर तैंतीस देवता, दसों दिशायें, दिक्पाल, रुद्र, धाता, विष्णु, यम, पूषा, अर्यमा, भग, अंश, मित्र, साध्य, वसु, वासव, अश्विनीकुमार, वरुण, वायु, चन्द्रमा, आकाश, तथा नक्षत्र आदि सभी उस अद्भुत कुमार के दर्शन के लिये उपस्थित हुये। ऋषियों ने स्तुति की और गन्धर्वों ने उसका यश गाया। उस कुमार के छः मुख, बारह नेत्र, बारह भुजायें, तथा कान्ति सूर्य के समान थी। सभी देवताओं ने उस कुमार को उसकी प्रिय वस्तुयें भेंट दीं। राक्षसों और असुरों का समुदाय उस शक्तिशाली कुमार का अनुगामी हो गया। कुमार को बढ़ता हुआ देखकर तारकासुर ने उसे युद्ध के लिये ललकारा, परन्तु अनेक उपाय करके भी वह प्रभावशाली कुमार को मारने में सफल नहीं हो सका। देवताओं ने कुमार की पूजा करके उसका अपने सेनापति के पद पर अभिषेक किया। महापराक्रमी इन देवसेनापति ने वृद्धि को प्राप्त होकर अपनी अमोघ शक्ति से तारकासुर का वध कर डाला। खेल-खेल में ही उन कुमार ने जब तारकासुर का वध कर दिया तो देवेन्द्र पुनः देवताओं के राज्य पर प्रतिष्ठित किये गये। प्रतापी कुमार स्कन्द सेनापति के पद पर ही रहकर देवताओं के ईश्वर तथा संरक्षक थे और भगवान शंकर का सदा ही हित किया करते थे। सुवर्ण भी कार्तिकेय जी के साथ ही उत्पन्न हुआ और अग्नि का उत्कृष्ट तेज माना गया है। इस प्रकार पूर्वकाल में वसिष्ठ ने परशुराम जी को यह सारा प्रसंग एवं सुवर्ण की उत्पत्ति और माहात्म्य सुनाया था। परशुराम जी सुवर्ण का दान करके समस्त पापों से मुक्त हो गये और स्वर्ग में उस महान् स्थान को प्राप्त हुये जो दूसरे मनुष्यों के लिये सर्वथा दुर्लभ है (१३. ८६)।"

तारकाक्ष, एक असुर का नाम है (७. २०२, ६५)। यह सुवर्णमयपुर का अधिपति था (८. ३३, २१)।

तारकाक्षसुत = तारकाक्ष का पुत्र, हरि (८. ३३, २७. २९)।

१. तारकामय—'शक्रविष्णू हि संग्रामे चेरतुस्तारकामये' (३. २४, १७)। 'तारकामयसंकाशः', (२. २७, २६)। 'संग्रामे तारकामये', (३. ४१, ३०)। 'अस्तुवन् मुनयो वाग्भिर्यथेन्द्रं तारकामये', (३. १६९, २४)। 'यथावज्रधरः पूर्वं संग्रामे तारकामये', (६. ८३, २६)। 'सहांशुपतिमित्राभ्यां यथेन्द्रस्तारकामये', (७. ८४, २१)। 'यथा च ब्रह्मणा बद्धं संग्रामे तारकामये', (७. ९४, ७१)। 'यथेन्द्रभयवित्रस्ता दानवास्तारकामये', (७. १६८, २९)। 'दैवैरिव यथा स्कन्दः संग्रामे तारकामये', (८. १०, ५६)। 'संग्रामस्तारकामयः', (८. ३३, ३)। 'संग्रामस्तारकामया', (९. ५१, १)।

२. तारकामय = शिव (१,००० नाम)।

तारकाराज = सोम (चन्द्रमा) : ३. ४१, १४।

१. तारण = शिव (१,००० नाम)।

२. तारण = विष्णु (१,००० नाम)।

१. तारा, वानरराज वालिन् की पत्नी का नाम है (३. २८०, १६. १८. २०. २६. ३८. ३९)।

२. तारा, बृहस्पति की माता का नाम है (५. ११७, १३)।

ताराक्ष = तारकाक्ष (८. ३३, ५)।

ताराधिप, सोम (१. ६७, ३१. १२५; ३. २८०, १८. २०; ११. १९, १७; १२. ३०२, ६०; १३. १२३, ४)।

तारापति = सोम (३. २८०, १८; २९३, २२; ३०८, १; ६. १०६, ७५; ७. ४३, ४)।

तारामृग—'अन्वधावन्मृगं रामा रुद्रस्तारामृगं यथा', (३. २७८, २०)।

तारिणि = दुर्गा (उमा) : ६. २३, ५।

१. तार्क्ष्य, एकाधिक ऋषियों, विशेषतः = अरिष्टनेमि, का नाम है : १. २, १९२ ('संवादश्च सरस्वत्यास्तार्क्ष्यर्षेः सुमहात्मनः); ६५, ४०; १२३, ७३; २. ७, १८ (इन्द्र की सभा में); ३. १८४, ८. १३; १८६, १. २. ४. १६. १७. २१. २३. २६ (सरस्वती और तार्क्ष्य का संवाद); १२. २८८, ४।

२. तार्क्ष्य = गरुड : १. ३०, २२. ३१; १५१, ५ (वेगेन तार्क्ष्यमारुतरंहसः); २. २, १४ (रथमास्थाय तार्क्ष्यकेतनमाशुगम्); ४५, ६१ (रथं दृष्ट्वा तार्क्ष्यप्रवरकेतनम्); ५. १०५, १८; ११२, १; ११५, ३. ५; ७. १४, ६० (तार्क्ष्यस्तं नागमिव चाक्षिपत्); ९९, १० (तार्क्ष्यमारुतरंहोभिः); ८. २०, ४७; २५, ३५ (तार्क्ष्यतुल्यपराक्रमः); २७, ६ (आगच्छन् विलयं सर्वे तार्क्ष्यं दृष्ट्वेव पन्नगाः); ८९, २६ (तार्क्ष्यत्रस्ता भूमिमिवोरगास्ते); १२. ४६, ३४ (तार्क्ष्यध्वजिनं पताकिनम्); १३. १४, ४३ (प्राप्यानुज्ञां गुरुजनाद्दहं तार्क्ष्यमचिन्तयम्)।

३. तार्क्ष्य = शिव (१,००० नाम)।

तार्क्ष्य (बहु० र्याः) एक जाति के लोगों का नाम है जो युधिष्ठिर के लिये भेंट लाये (२. ५२, १५)।

तार्क्ष्यकपिध्वज (द्वि०), से श्रीकृष्ण और अर्जुन के ध्वजों का तात्पर्य है (८. ४०, १४)।

तार्क्ष्यकेतन = कृष्ण (१२. ४८, १५)।

तार्क्ष्यलक्षण = कृष्ण (१२. ४३, ८)।

१. ताल = शिव (१,००० नाम)।

२. ताल—'तालध्वजरथव्रजाः', (११. २५, १६)। 'तालः सुपर्णश्च महाध्वजौ', (१६. ३, ६)।

१. तालकेतु, एक असुरराज का नाम है जिसका श्रीकृष्ण ने वध किया था (गीप्रे. सं. में २. ३८, में दाक्षिणात्य पाठ, पृ० ८२४; ३. १२, ३४)।

२. तालकेतु = बलराम (९. ४१, ४०)।

३. तालकेतु = भीष्म (५. १५०, ५; ६. ४७, ९)।

तालचर (बहु० राः) एक जाति के लोगों का नाम है (५. १४०, २६)।

१. तालजङ्घ, एक असुर का नाम है जो ब्रह्मदण्ड से ही मारा गया (३. ३०३, १७)। यह और हैहय, दोनों वत्स के पुत्र थे (१३. ३०, ७)। 'तालजङ्घं महाक्षत्रमौर्वेणैकेन नाशितम्', (१३. १५३, ११)।

२. तालजङ्घ (बहु० °ङ्घाः), एक जाति के लोगों का नाम है जिन्हें सगर ने पराजित किया था (३. १०६, ८)। 'बहुलस्तालजङ्घानाम्', (५. ७४, १३)। भृगुओं ने इन्हें पराजित किया था (१३. ३४, १७; तुकी० १३. १५३, ११ भी)।

१. तालवन (बहु० °नाः) एक जाति के लोगों का नाम है जिन्हें सहदेव ने दक्षिण दिग्विजय के समय परास्त किया था (२. ३१, ७१)।

२. तालवन, द्वारका के समीपवर्ती लतावेष्ट पर्वत के चारों ओर सुशोभित होनेवाले तीन वनों में से एक का नाम है (गोप्रे. सं. २. ३८ में दाक्षिणात्य पाठ, पृ० ८१३)।

तालाकर, दक्षिण के एक भारतीय जनपद का नाम है जिसे सहदेव ने जीता था (२. ३१, ६५)।

तालिन् = शिव (१,००० नाम)।

तिग्मतेजस् = शिव (१,००० नाम)।

तिग्ममन्यु = शिव (१,००० नाम)।

१. तिग्मांशु = सूर्य (१. २, १४५; ३. ३०२, ५; ३०७, २८; १५. ३०, १२)।

२. तिग्मांशु = अग्नि (देखिये वस्था०)।

१. तित्तिर, एक प्रकार के पक्षियों का नाम है जो मृत त्रिशिरा के भयानक मुख से उत्पन्न हुये (५. ९, ४१)।

२. तित्तिर (बहु० °राः), एक जाति के लोगों का नाम है जो युधिष्ठिर की सेना में सम्मिलित हुये (६. ५०, ५१; ९०, ५)।

१. तित्तिरि, अश्वों की एक जाति का नाम है जो तीतरों की भाँति चितकबरी होती है (२. २८, ६. १९; ५१, ४; ६१, २२; ३. ८०, २५; ७. २३, ९; १२. १२४, १२)।

२. तित्तिरि, कश्यप और कद्रू से उत्पन्न एक प्रमुख नाग का नाम है (१. ३५, १५; ५. १०३, १३)।

३. तित्तिरि, वैशम्पायन के भ्राता, एक ऋषि, का नाम है जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित रहते थे (२. ४, १२)। वसु उपरिचर के यज्ञ में ये भी एक सदस्य थे (१२. ३३६, ९)।

तिमि, सागर में उत्पन्न होनेवाले एक जलजन्तु का नाम है (गोप्रे. सं० २. ३८, २९ के बाद दाक्षिणात्य पाठ)।

तिमिङ्गिल, दक्षिणभारत के एक राजा का नाम है जिसे सहदेव ने पराजित किया था (२. ३१, ६९)।

तिलभार, एक पूर्वोत्तर भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ५३)।

तिलोत्तमा, एक अप्सरा का नाम है जो प्राधा की पुत्री थी (१. ६५, ४९)। इसने अर्जुन के जन्मोत्सव के समय नृत्य किया (१. १२३, ६२)। 'तिलोत्तमायास्तौ', (१. २०८, २०)। 'अप्सरा देवकन्या ''तिलोत्तमा', (१. २०८, २३)। "जब सुन्द और उपसुन्द के अत्याचारों से देवतागण अत्यन्त त्रस्त हो गये तब उन सब ने ब्रह्मा की शरण ली। ब्रह्मा ने एक सुन्दर स्त्री का निर्माण करने के लिये कहा। देवताओं ने तदनुसार एक रूपवती कन्या का निर्माण किया। उत्तम रत्नों का तिल-तिल भर अंश लेकर उसके अंगों का निर्माण हुआ इसी से ब्रह्मा ने उसका नाम तिलोत्तमा रक्खा। ब्रह्मा ने उसे सुन्द और उपसुन्द को मोहित करने की आज्ञा दी। ब्रह्मा की आज्ञा शिरोधार्य करके तिलोत्तमा ने उन्हें नमस्कार किया और फिर देवमण्डल की परिक्रमा करने लगी। ब्रह्मा के दक्षिण भाग में विराजमान महेश्वर पूर्वाभिमुख होकर बैठे थे; उत्तर भाग में देवता लोग थे, और ऋषि-मुनि ब्रह्मा के चारों ओर बैठे थे। तिलोत्तमा ने जब देवमण्डल की प्रदक्षिणा आरम्भ की तब इन्द्र और शङ्कर धैर्यपूर्वक अपने स्थान पर बैठे रहे। जब वह दक्षिण पार्श्व की ओर गई तब शङ्कर ने उसे देखने के लिये एक मुख और प्रगट कर लिया। जब तिलोत्तमा शङ्कर के पृष्ठभाग की ओर गई तब शिव के एक और मुख का प्रादुर्भाव हुआ। इसी प्रकार इन्द्र के भी आगे-पीछे और पार्श्व भाग में सहस्रों विशाल नेत्र प्रगट हो गये। इस प्रकार शिव के चार मुख प्रगट हुये और इन्द्र के सहस्र नेत्र उत्पन्न हो गये। तिलोत्तमा के चले जाने पर ब्रह्मा ने देवताओं और महर्षियों को विदा किया (१. २११)।" "सम्पूर्ण त्रिलोकी पर विजय प्राप्त कर लेने के पश्चात् सुन्द-उपसुन्द भोगविलास में लिप्त हो गये। एक दिन जब ये दोनों विन्ध्यपर्वत के एक शिखर पर विचरण कर रहे थे तब वहाँ तिलोत्तमा उपस्थित हुई। उसे देखकर दोनों दैत्य उस पर मोहित हो गये। दोनों ने उसे अपनी-अपनी पत्नी बनाना चाहा। फलस्वरूप दोनों में परस्पर युद्ध छिड़ गया जिसमें आहत होकर दोनों भूमि पर गिर पड़े। इन दैत्यों की मृत्यु हो जाने पर दैत्यों का समुदाय विषाद और भय से कम्पित होकर पाताल में चला गया। ब्रह्मा ने तिलोत्तमा को यह वर दिया कि वह जहाँ तक सूर्य की गति है वहाँ तक इच्छानुसार विचरण कर सकेगी (१. २१२, १-२४)।" 'तिलोत्तमा नाम पुराब्रह्मणा योषिदुत्तमा। तिलं तिलं समुद्धृत्य रत्नानां निर्मिता शुभा॥', (१३. १४१, १)। अप्सराओं की गणना के अन्तर्गत इसका उल्लेख (१. १६५, १५)।

१. तिष्य, एक नक्षत्र का नाम है (३. १९०, ९०)।

२. तिष्य, चतुर्थयुग, कलियुग, का नाम है (६. १०, ३. ४. ७. १३. १४)। १२. २१८, ३९; ३४०, ८६; ३४९, ४४ (तिष्ये संप्राप्ते कुरवो नाम भारताः'''भविष्यन्ति)।

तीक्ष्ण = शिव (१४. ८, २२)।

तीक्ष्णताप = शिव (१,००० नाम)।

तीक्ष्णदंष्ट्र = शिव (१४. ८, २२)।

तीरग्रह (बहु० °हाः), एक पूर्वोत्तर भारतीय जाति का नाम है (६. ९, ५२)।

तीर्थ (बहु० °र्थानि), मूर्तिमान तीर्थों के लिये प्रयुक्त हुआ है जो स्कन्द के अभिषेक के समय उपस्थित हुये (९. ४५, १२)।

तीर्थकर = विष्णु (१,००० नाम)।

तीर्थकोटि, एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से पुण्डरीक यज्ञ का फल मिलता है (३. ८४, १२१)।

तीर्थदेव = शिव (१,००० नाम)।

तीर्थमहाह्रद, एक तीर्थ का नाम है (१३. १६५, २८)।

तीर्थयात्रा, से तीर्थयात्रा तथा तीर्थयात्रापर्व का तात्पर्य है (१. २, ५२. १६५; ११. २६, १९)।

तीर्थयात्रापर्वन्, महाभारत के ३६वें अवान्तरपर्व का नाम है जो वनपर्व के ८०-१५६ अध्यायों तक आता है। अर्जुन के काम्यकवन से चले जाने पर द्रौपदी, भीमसेन, नकुल और सहदेव शोक करने लगे। सहदेव ने काम्यकवन छोड़कर अन्यत्र चलने का परामर्श दिया (३. ८०)।" "द्रौपदी सहित अपने भ्राताओं की बात सुनकर युधिष्ठिर भी मन ही मन उदास हो गये। इतने ही में देवर्षि नारद वहाँ पधारे। देवर्षि का पूजन करने के बाद युधिष्ठिर ने उनसे पूछा : 'जो मनुष्य तीर्थयात्रा में तत्पर होकर पृथिवी की परिक्रमा करता है उसे क्या फल मिलता है?' तब नारद ने कहा : 'भीष्म ने महर्षि पुलस्त्य के मुख से इस सम्बन्ध में जो बातें सुनी थीं वह सब मैं तुम्हें बताता हूँ। पूर्व समय में गङ्गाद्वार में भीष्म पितृसम्बन्धी व्रत का आश्रय लेकर महर्षियों के साथ रहते थे। कुछ समय के बाद भीष्म ने अद्भुत तेजस्वी मुनि श्रेष्ठ पुलस्त्य को देखा और उनका पूजन किया जिससे मुनि मन ही मन प्रसन्न हुये।' (३. ८१)।" "भीष्म के पूछने पर पुलस्त्य ने उन्हें विभिन्न तीर्थों की यात्रा का माहात्म्य बताते हुये कहा : 'राजा लोग अथवा कुछ समृद्धिशाली मनुष्य ही यज्ञों का अनुष्ठान कर सकते हैं। जिनके पास धनाभाव है वे यज्ञों का अनुष्ठान नहीं कर पाते। परन्तु तीर्थयात्रा एक ऐसा सत्कर्म है जिसे दरिद्र भी कर सकते हैं, और यह यज्ञों से भी श्रेष्ठ कर्म है।' तदनन्तर पुलस्त्य ने पुष्कर तीर्थ का और उसके पश्चात् अन्यान्य तीर्थों तथा उनकी यात्रा के फलों आदि का वर्णन किया (३. ८२)।" "तीर्थों का वर्णन करते हुये पुलस्त्य ने कुरुक्षेत्र की सीमा में स्थित अनेक तीर्थों, जैसे रामह्रद, मचक्रुक, प्रथूदक आदि, के महात्म्य का वर्णन किया (३. ८३)।" "पुलस्त्य ने अनेक अन्य तीर्थों की

महिमा का वर्णन किया (३, ८४)।" "तीर्थों का वर्णन करते हुये पुलस्त्य ने प्रयागतीर्थ का उल्लेख किया। उन्होंने कहा कि गङ्गा में कहीं भी स्नान करना कुरुक्षेत्र के बराबर है, परन्तु कनखल और प्रयाग में स्नान विशेष महत्त्व रखता है। प्रयाग में गङ्गा स्नान से सौ पाप धुल जाते हैं। सत्ययुग में सब तीर्थ पवित्र होते थे; त्रेतायुग में केवल पुष्कर ही पवित्र रह गया। इसी प्रकार द्वापर में कुरुक्षेत्र, और कलियुग में केवल गङ्गा को ही पवित्र कहा गया है। पुष्कर में तप तथा महालय में दान करना चाहिये। मलय पर्वत में अग्नि पर आरूढ़ होना तथा भृगुतुङ्ग में उपवास करना चाहिये। पुष्कर में, कुरुक्षेत्र में, गङ्गा में तथा प्रयाग आदि मध्यवर्ती तीर्थों में स्नान करके मनुष्य अपने आगे-पीछे की सात-सात पीढ़ियों का उद्धार कर देता है। मनुष्य की अस्थि जब तक गङ्गा के जल का स्पर्श करती है तब तक व्यक्ति स्वर्गलोग में पूजित होता है। ब्रह्मा का कथन है कि गङ्गा के समान कोई तीर्थ नहीं, विष्णु से श्रेष्ठ कोई देवता नहीं, और ब्राह्मण से उत्तम कोई वर्ण नहीं। इस सत्य सिद्धान्त को ब्राह्मण आदि द्विजों, साधु पुरुषों, पुत्रों, सुहृदों, शिष्यवर्ग तथा अपने अनुगत मनुष्यों के कान में कहना चाहिये। वसुगण, साध्यगण, आदित्यगण, मरुद्गण, अश्विनीकुमार तथा देवोपम महर्षियों ने भी पुण्य-लाभ की इच्छा से तीर्थों में स्नान किया है। जो ब्रह्मचर्य आदि व्रतों का पालन नहीं करता, जिसने अपने चित्त को वश में नहीं किया है, जो अपवित्र आचार-विचार वाला और चोर है, जिसकी बुद्धि वक्र है, वह मनुष्य श्रद्धा न होने के कारण तीर्थों में स्नान नहीं करता। इस प्रकार तीर्थों के माहात्म्य का वर्णन करके भीष्म की अनुमति ले पुलस्त्य वहीं अन्तर्धान हो गये। नारद ने कहा कि तब शास्त्र के तात्त्विक अर्थों के ज्ञाता भीष्म ने पृथिवी की परिक्रमा की। इसी प्रकार यह सब पापों को दूर करने वाली महापुण्यमयी तीर्थयात्रा प्रतिष्ठानपुर (प्रयाग) में प्रतिष्ठित है। जो इस विधि से तीर्थयात्रा करता हुआ सम्पूर्ण पृथिवी की परिक्रमा करेगा वह सौ अश्वमेध यज्ञों से भी उत्तम पुण्यफल प्राप्त करेगा। तदनन्तर नारद जी ने युधिष्ठिर को सम्बोधित करते हुये कहा : 'भीष्म ने जिस प्रकार तीर्थयात्रा-जनित पुण्य प्राप्त किया था, उससे भी आठ गुने उत्तम धर्म की उपलब्धि तुम्हें होगी। इन सभी तीर्थों में राक्षसों के समुदाय फैले हुये हैं। तुम्हारे अतिरिक्त अन्य नरेशों ने इनकी यात्रा नहीं की है। अनेक महर्षि—वाल्मीकि, कश्यप, आत्रेय, कुण्डजठर, विश्वामित्र, गौतम, असित, देवल, मार्कण्डेय, गालव, भरद्वाज, वसिष्ठ, उद्दालक, शौनक, व्यास, दुर्वासा और जाबालि—तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। तुम इन सब के साथ उक्त तीर्थों की यात्रा करो। महर्षि लोमश भी तुम्हारे पास आनेवाले हैं, जिन्हें साथ लेकर यात्रा करो। इस यात्रा में मैं भी तुम्हारा साथ दूँगा।' इस प्रकार उपदेश करके नारद अन्तर्धान हो गये और युधिष्ठिर ने अपने पास रहनेवाले महर्षियों से तीर्थयात्रा सम्बन्धी महान् पुण्य के विषय में निवेदन किया (३. ८५)।" "युधिष्ठिर ने धौम्यमुनि से पुण्य तपोवन, आश्रम, एवं नदी आदि के विषय में पूछा (३. ८६)। धौम्य ने पूर्व दिशा के तीर्थों का वर्णन किया (३. ८७)। धौम्य ने दक्षिण दिशावर्ती तीर्थों का वर्णन किया (३. ८८)। धौम्य ने पश्चिम दिशा के तीर्थों का वर्णन किया (३. ८९)। धौम्य ने उत्तर दिशा के तीर्थों का वर्णन किया (३. ९०)। जब धौम्य इस प्रकार तीर्थकथन कर रहे थे, उसी समय लोमश ने वहाँ उपस्थित होकर युधिष्ठिर से अर्जुन के पाशुपत आदि दिव्यास्त्रों की प्राप्ति का वर्णन किया और इन्द्र का संदेश सुनाया (३. ९१)। "लोमश ने कहा : 'जब मैं स्वर्गलोक से आने लगा तब अर्जुन ने मुझसे कहा कि मैं आपको तीर्थयात्राजनित पुण्यों से सम्पन्न कराऊँ।' उन्होंने मुझसे यह भी कहा कि जैसे दधीच ने देवराज इन्द्र की और महर्षि अंगिरा ने सूर्य की रक्षा की उसी प्रकार मैं राक्षसों से आप लोगों की रक्षा करूँ। 'इस प्रकार मैं इन्द्र के कथन और अर्जुन के अनुरोध से सब प्रकार के भयों से तुम्हारी रक्षा करते हुये तुम्हारे साथ-साथ तीर्थों में विचरण करूँगा। पहले मैं दो बार सब तीर्थों के दर्शन कर चुका हूँ। अब तीसरी बार तुम्हारे साथ उनका दर्शन करूँगा।' तदनन्तर लोमश के आदेशानुसार युधिष्ठिर ने ऐसे ब्राह्मणों, संन्यासियों तथा प्रजाजनों को वापस कर दिया जो भूख-प्यास, परिश्रम-थकावट, और शीत आदि सहन नहीं कर सकते थे। युधिष्ठिर के निवेदन करने पर अनेक नागरिक, ब्राह्मण, और यति मानसिक दुःख के गहन भार से पीड़ित हो हस्तिनापुर चले गये जहाँ राजा धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर के स्नेहवश उन सबको तृप्त किया। तदनन्तर युधिष्ठिर थोड़े से ब्राह्मणों और लोमश को साथ ले कर अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक तीन रात तक काम्यक वन में ही रुके रहे (३. ९२)।" "युधिष्ठिर को तीर्थयात्रा के लिये उद्यत देख कर काम्यकवन के निवासी ब्राह्मणों ने भी उपस्थित होकर तीर्थयात्रा के लिये चलने का आग्रह किया जिसे युधिष्ठिर ने स्वीकार कर लिया। तदनन्तर युधिष्ठिर आदि ने तीर्थों की यात्रा का ज्योंही निश्चय किया कि वहाँ व्यास, पर्वत, और नारद आदि मर्नाषि उपस्थित हुये और बोले : 'युधिष्ठिर, भीम, नकुल, और सहदेव ! तुम लोग तीर्थों के प्रति मन से श्रद्धापूर्वक सरल भाव रक्खो। मन से शुद्धि का सम्पादन करके शुद्धचित्त हो तीर्थों में जाओ। सब प्राणियों के प्रति मैत्री-बुद्धि का आश्रय ले शुद्धभाव से तीर्थों का दर्शन करो।' महर्षियों के ऐसा कहने पर द्रौपदी सहित पाण्डवों ने तदनुसार प्रतिज्ञा की और फिर उन दिव्य और मानव महर्षियों का चरणस्पर्श किया। इसके पश्चात् ब्राह्मणों, पुरोहित धौम्य, और लोमश आदि के साथ वीर पाण्डव तीर्थयात्रा के लिये निकले। उन्होंने यह यात्रा मार्गशीर्ष की पूर्णिमा व्यतीत होने पर पुष्य नक्षत्र में आरम्भ की। उन सब ने चीर-जटा आदि धारण कर लिया। उनके अङ्ग अभेद्य कवचों से ढके थे। इस प्रकार पाण्डव आवश्यक अस्त्र-शस्त्र लेकर पूर्व दिशा की ओर मुख करके वहाँ से प्रस्थित हुये (३. ९३)।" "युधिष्ठिर ने लोमश से कहा : 'मैं अपने को सात्त्विक गुणों से हीन नहीं मानता, तो भी दुःख से इतना संतप्त रहता हूँ। इसके विपरीत, दुर्योधनादि शत्रुओं को सात्त्विक गुणों से रहित समझता हूँ, किन्तु वे सब इस लोक में उत्तरोत्तर समृद्धिशाली होते जा रहे हैं। कृपया आप बतायें कि इसका क्या कारण है ?' लोमश ने कहा : 'पहले अधर्म द्वारा मनुष्य वृद्धि को प्राप्त कर सकता है, फिर अपने मनोनुकूल सुख-सम्पत्ति-रूप अभ्युदय को देख सकता है; तत्पश्चात् वह शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर सकता है, किन्तु अन्त में जड़मूल सहित नष्ट हो जाता है। मैंने दैत्यों, और दानवों को अधर्म के द्वारा बढ़ते और नष्ट होते देखा है। मैंने देखा कि देवताओं ने धर्म के प्रति अनुराग किया और असुरों ने धर्म का परित्याग। देवताओं ने तीर्थों का सेवन किया, परन्तु असुर उनमें नहीं गये क्योंकि अधर्मजनित दर्प असुरों में पहले ही समा गया था। दर्प से मान हुआ तथा मान से क्रोध उत्पन्न हुआ। क्रोध से निर्लज्जता आई और निर्लज्जता ने उनके सदाचार को नष्ट कर दिया। इस प्रकार लज्जा, संकोच और सदाचार से हीन एवं निष्फल व्रत का आचरण करनेवाले उन असुरों को क्षमा, लक्ष्मी, और स्वधर्म ने शीघ्र त्याग दिया। उस दशा में उन दैत्यों और दानवों में कलि का भी प्रवेश हो गया। इसके पश्चात् शीघ्र ही उनका विनाश हो गया; किन्तु धर्मशील देवताओं ने तीर्थयात्रा, तपस्या और यज्ञ आदि किये जिससे वे सब कल्याण के भागी हुये। जैसे राजा नृग, उशीनरपुत्र शिवि, भगीरथ, वसुमना, गय, पूरु, तथा पुरूरवा आदि नरेशों ने तीर्थयात्रा करके प्रचुर धन प्राप्त किया उसी प्रकार तुम भी सम्पत्ति प्राप्त करोगे। इसके विपरीत धृतराष्ट्र के पुत्र पाप और मोह के वशीभूत होने के कारण दैत्यों की ही भाँति शीघ्र नष्ट हो जायँगे।' (३. ९४)।" "पाण्डव आदि नैमिषारण्य आदि तीर्थों में गये और वहाँ से प्रयाग होते हुये गया तीर्थ में आये। यहाँ उन लोगों ने राजा गय के महान यज्ञों की महिमा का श्रवण किया (३. ९५)।" "इल्वल और वातापि का वर्णन; महर्षि अगस्त्य का पितरों के उद्धार के लिये विवाह करने का विचार तथा विदर्भराज का महर्षि अगस्त्य से एक कन्या प्राप्त करना (३. ९६)।" महर्षि अगस्त्य का लोपामुद्रा से विवाह, गङ्गाद्वार में तपस्या, एवं पत्नी की इच्छा से धनसंग्रह के लिये प्रस्थान (३. ९७)। धन प्राप्त करने के लिये अगस्त्य का श्रुतर्वा, ब्रध्नश्व, और त्रसदस्यु आदि के पास जाना (३. ९८)। अगस्त्य का इल्वल के यहाँ धन के लिये जाना; वातापि तथा इल्वल का वध; लोपामुद्रा

को पुत्र-प्राप्ति; तथा श्रीराम के द्वारा हरे गये तेज की परशुराम को तीर्थस्नान द्वारा पुनः प्राप्ति (३. ९९)। वृत्रासुर से त्रस्त देवताओं को महर्षि दधीच का अस्थिदान एवं वज्र का निर्माण (३. १००)। वृत्रासुर का वध और असुरों की भयंकर मन्त्रणा (३. १०१)। कालेयों द्वारा तपस्वियों, मुनियों, ब्रह्मचारियों आदि का संहार तथा देवताओं द्वारा विष्णु की स्तुति (३. १०२)। विष्णु के आदेश से देवताओं का महर्षि अगस्त्य के आश्रम पर जाकर उनकी स्तुति करना (३. १०३)। अगस्त्य का विन्ध्यपर्वत को बढ़ने से रोकना और देवताओं के साथ सागर-तट पर जाना (३. १०४)। अगस्त्य द्वारा समुद्रपान और देवताओं का कालेय दैत्यों का वध करके ब्रह्मा से समुद्र को पुनः भरने का उपाय पूछना (३. १०५)। सगर द्वारा संतान के लिये तपस्या और शिव से वरदान की प्राप्ति (३. १०६)। सगर-पुत्रों की उत्पत्ति; साठ हजार सगर-पुत्रों का कपिल की क्रोधाग्नि से भस्म होना, असमञ्ज का परित्याग; अंशुमान के प्रयत्न से सगर के यज्ञ की पूर्ति; अंशुमान से दिलीप को और दिलीप से भगीरथ को राज्य-प्राप्ति (३. १०७)। भगीरथ का हिमालय पर तपस्या द्वारा गङ्गा और महादेव को प्रसन्न करके उनसे वर प्राप्त करना (३. १०८)। पृथिवी पर गङ्गा के उतरने और समुद्र को जल से भरने का विवरण, एवं सगर-पुत्रों का उद्धार (३. १०९)। नन्दा तथा कौशिकी का माहात्म्य, ऋष्यशृङ्ग मुनि का उपाख्यान और उनको अपने राज्य में लाने के लिये राजा लोमपाद का प्रयास (३. ११०)। वेश्या का ऋष्यशृङ्ग को मोहित करना और विभाण्डक मुनि का आश्रम पर आकर अपने पुत्र की चिन्ता का कारण पूछना (३. १११)। ऋष्यशृङ्ग का पिता को अपनी चिन्ता का कारण बताते हुये ब्रह्मचारी-रूपधारी वेश्या के स्वरूप और आचरण का वर्णन (३. ११२)। ऋष्यशृङ्ग का अङ्गराज लोमपाद के यहाँ जाना; राजा को उन्हें अपनी कन्या देना; राजा द्वारा विभाण्डक मुनि का सत्कार और उन पर मुनि का प्रसन्न होना (३. ११३)। कौशिकी, गङ्गासागर एवं वैतरणी नदी से होते हुये युधिष्ठिर महेन्द्र पर्वत पर आये और रात्रि के समय वहीं रहे (३. ११४)। अकृतव्रण ने युधिष्ठिर से परशुराम के उपाख्यान के प्रसंग में ऋचीक मुनि का गाधिकन्या के साथ विवाह और भृगु ऋषि की कृपा से जमदग्नि की उत्पत्ति का वर्णन किया (३. ११५)। "पिता की आज्ञा से परशुराम ने अपनी माता का मस्तक काट दिया और फिर पिता के वरदान से ही माता को जीवित किया। तदनन्तर परशुराम ने कार्तवीर्य अर्जुन का वध किया, परन्तु अर्जुन के पुत्रों ने जमदग्नि की ही हत्या कर दी (३. ११६)।" "परशुराम ने पिता के लिये विलाप और पृथिवी को इक्कीस बार क्षत्रियविहीन किया। युधिष्ठिर ने परशुराम का पूजन किया (३. ११७)।" विभिन्न तीर्थों से होते हुये युधिष्ठिर आदि प्रभासक्षेत्र में आकर तपस्या में प्रवृत्त हुये, और यहीं यादवगण आकर पाण्डवों से मिले (३. ११८)। प्रभासतीर्थ में बलराम ने पाण्डवों के प्रति सहानुभूति-सूचक उद्गार प्रगट किये (३. ११९)। "सात्यकि ने कौरवों से प्रतिशोध लेने का परामर्श देते हुये शौर्यपूर्ण उद्गार प्रगट किये और कहा कि राम, कृष्ण, प्रद्युम्न, शाम्ब, अनिरुद्ध, गद, उल्मुक, बाहुक, भानु, नीथ, निशथ, और चारुदेष्ण आदि के नेतृत्व में वृष्णियों, भोजों, अन्धकों, सात्वतों तथा शूरों की सम्मिलित सेना का गठन करके कौरवों पर आक्रमण कर देना चाहिये। सात्यकि ने यह भी परामर्श दिया कि कौरवों को पराजित करके उस समय तक अभिमन्यु ही राज्य-कार्य का संचालन करते रहें जब तक युधिष्ठिर अपना व्रत पूर्ण नहीं कर लेते। युधिष्ठिर ने सात्यकि के उद्गारों की प्रशंसा करते हुये कहा : 'मेरे लिये सत्य की रक्षा ही प्रधान है, राज्य की प्राप्ति नहीं। अतः अभी आप सब यदुवंशी वीर द्वारका लौट जाँय। मैं पुनः आप सब मित्रों को एकत्र हुआ देखूँगा।' इस प्रकार यादवों को विदा करने के पश्चात् युधिष्ठिर सदल पयोष्णी नदी के तट पर गये (३. १२०)।" "लोमश ने बताया कि पयोष्णी नदी के तट पर राजा नृग ने यज्ञ करके सोमरस द्वारा इन्द्र को तृप्त किया था। तदनन्तर लोमश ने पयोष्णी के तट पर किये गये विभिन्न यज्ञों आदि का वर्णन किया। पयोष्णी में स्नान करने के पश्चात् पाण्डव वैदूर्यपर्वत तथा नर्मदा क्षेत्र में आये। लोमश ने इस क्षेत्र का माहात्म्य बताया और पाण्डवों ने भी इस क्षेत्र के समस्त तीर्थों का भ्रमण और ब्राह्मणों को दान आदि किया। तदनन्तर लोमश जी ने च्यवन-सुकन्या के चरित्र का वर्णन आरम्भ किया (३. १२१)।" महर्षि च्यवन को सुकन्या की प्राप्ति का वर्णन (३. १२२)। अश्विनीकुमारों की कृपा से महर्षि च्यवन को सुन्दर रूप और युवावस्था की प्राप्ति (३. १२३)। शर्याति के यज्ञ में च्यवन का इन्द्र पर कोप करके वज्र को स्तम्भित और इन्द्र को मारने के लिये मदासुर को उत्पन्न करना (३. १२४)। अश्विनीकुमारों का यज्ञ में भाग स्वीकार कर लेने पर इन्द्र के संकट-मुक्त होने का वर्णन करने के पश्चात् लोमश ने अन्यान्य तीर्थों का वर्णन किया (३. १२५)। राजा मान्धाता की उत्पत्ति और उनके संक्षिप्त चरित्र का वर्णन (३. १२६)। युधिष्ठिर के पूछने पर लोमश ने सोमक और जन्तु का उपाख्यान सुनाया (३. १२७)। सोमक को सौ पुत्रों की प्राप्ति तथा सोमक और पुरोहित का समान रूप से नरक और पुण्यलोकों का उपभोग करना (३. १२८)। लोमश ने कुरुक्षेत्र के द्वारभूत, प्लक्षप्रस्रवण नामक यमुना तीर्थ एवं सरस्वती तीर्थ की महिमा का वर्णन किया (३. १२९)। विभिन्न तीर्थों की महिमा का वर्णन करते हुये लोमश ने उशीनर की कथा का आरम्भ किया (३. १३०)। राजा उशीनर द्वारा बाज़ पक्षी को अपने शरीर का मांस दे कर शरणागत कपोत के प्राणों की रक्षा करना (३. १३१)। अष्टावक्र के जन्म का वृत्तान्त और उनका राजा जनक के दरबार में जाना (३. १३२)। अष्टावक्र का राजा जनक के द्वारपाल तथा उसके बाद स्वयं राजा जनक से वार्तालाप (३. १३३)। बन्दी और अष्टावक्र का शास्त्रार्थ, बन्दी की पराजय, तथा समङ्गा में स्नान से अष्टावक्र के अङ्गों का सीधा होना (३. १३४)। कर्दमिलक्षेत्र आदि तीर्थों की महिमा; रैभ्य एवं भरद्वाजपुत्र यवक्रीत मुनि की कथा; तथा ऋषियों का अनिष्ट करने के कारण मेधावी की मृत्यु (३. १३५)। यवक्रीत का रैभ्य मुनि की पुत्रवधू के साथ व्यभिचार और रैभ्य के क्रोध से उत्पन्न राक्षस के द्वारा यवक्रीत की मृत्यु (३. १३६)। भरद्वाज का पुत्रशोक से विलाप और रैभ्य मुनि को शाप देने के पश्चात् स्वयं अग्नि में प्रवेश (३. १३७)। अर्वावसु की तपस्या के प्रभाव से परावसु का ब्रह्महत्या से मुक्त होना और रैभ्य, भरद्वाज, तथा यवक्रीत आदि का पुनर्जीवित होना (३. १३८)। पाण्डवों की उत्तराखण्ड यात्रा तथा लोमश द्वारा उसकी दुर्गमता का वर्णन (३. १३९)। "उत्तराखण्ड की दुर्गमता और द्रौपदी आदि की कोमलता का ध्यान करके जब युधिष्ठिर चिन्तित हो उठे तब भीमसेन ने उत्साहपूर्वक कहा कि वे सबको अपने कन्धे पर बैठा कर ले चलेंगे। तदनन्तर सभी पाण्डवों ने कुलिन्दराज सुबाहु के राज्य से होते हुये गन्धमादन और हिमालय पर्वत के लिये प्रस्थान किया (३. १४०)।" "युधिष्ठिर ने अर्जुन को न देखने के कारण भीमसेन से मानसिक चिन्ता व्यक्त की। तदनन्तर अर्जुन के गुणों का स्मरण करते हुये उन्होंने गन्धमादन पर्वत पर जाने का दृढ़ निश्चय व्यक्त किया (३. १४१)।" "पाण्डवों ने गङ्गा की वन्दना की। लोमश ने नरकासुर के वध तथा वाराह द्वारा वसुधा के उद्धार की कथा का वर्णन किया (३. १४२)।" गन्धमादन की यात्रा करते समय पाण्डवों को आँधी-पानी का सामना करना पड़ा (३. १४३)। "गन्धमादन के मार्ग की दुर्गमता के कारण द्रौपदी मूर्च्छित हो गई। पाण्डवों तथा महर्षियों की सेवा से उनकी चेतना लौट आई। युधिष्ठिर के आग्रह करने पर भीमसेन ने घटोत्कच का स्मरण किया जिससे वह अपने कन्धे पर उठा कर पाण्डवों को ले चले (३. १४४)।" "भीमसेन के स्मरण करने पर अपने साथियों सहित घटोत्कच वहाँ उपस्थित हुआ। वह और उसके साथी पाण्डवों तथा उनके साथ के ऋषियों आदि को अपने कन्धों पर उठा कर गन्धमादन क्षेत्र में लाये। पाण्डवों ने बदरिकाश्रम में प्रवेश किया तथा लोमश ने बदरी वृक्ष, और गङ्गा के माहात्म्य का वर्णन किया (३. १४५)।" "द्रौपदी के आग्रह पर भीमसेन सौगन्धिक कमल लाने के लिये गये। कदलीवन में भीमसेन की हनुमान् से भेंट हुई (३. १४६)।" श्रीहनुमान् और भीमसेन का संवाद (३. १४७)।

हनुमान् ने संक्षेप में भीमसेन को श्रीराम का चरित्र सुनाया (३. १४८)। हनुमान् ने चारों युगों के धर्मों का वर्णन किया (३. १४९)। हनुमान् ने भीमसेन को अपने विशाल रूप का दर्शन कराने के पश्चात् चारों वर्णों के धर्मों का प्रतिपादन किया (३. १५०)। भीमसेन को आश्वासन और विदा देकर हनुमान् अन्तर्धान हो गये (३. १५१)। भीमसेन का सौगन्धिक वन में पदार्पण (३. १५२)। क्रोधवश नामक राक्षसों ने भीमसेन से सौगन्धिक सरोवर के निकट आने का कारण पूछा (३. १५३)। भीमसेन ने क्रोधवश नामक राक्षसों को पराजित करके द्रौपदी के लिये सौगन्धिक कमल-पुष्पों का संग्रह किया (३. १५४)। प्रकृति में भयंकर उत्पात देख कर युधिष्ठिर आदि को भीमसेन के लिये चिन्ता होने लगी जिससे वे सब के सब गन्धमादनपर्वत पर सौगन्धिक वन में भीमसेन के पास आये (३. १५५)। पाण्डव आकाशवाणी के आदेश से पुनः नरनारायणाश्रम में लौट आये और वहीं निवास करने लगे (३. १५६)।"

तीर्थसेनि, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ७)।

तुङ्गक, एक पवित्र वन का नाम है, जहाँ पूर्वसमय में वेदों के नष्ट हो जाने के समय सारस्वत मुनि ने अन्य ऋषियों को वेदाध्ययन कराया था (३. ८५, ४६)। "एक समय ऋषियों को सारा वेद विस्मृत हो गया। इस प्रकार वेदों के नष्ट होने पर अङ्गिरा मुनि के पुत्र ऋषियों के उत्तरीय वस्त्रों में छिपकर बैठ गये और विधिपूर्वक ॐकार का उच्चारण करने लगे। ॐकार का ठीक-ठीक उच्चारण होने पर ऋषियों को वेद का स्मरण हो आया। उस समय वहाँ बहुत से ऋषि, देवता, वरुण, अग्नि, प्रजापति, नारायण और महादेव भी उपस्थित हुये। ब्रह्मा ने देवताओं के साथ आकर भृगु को यज्ञ कराने के काम पर नियुक्त किया। भृगु ने तब इस तुङ्गकारण्य में भलीभाँति अग्निस्थापन कराया। उस समय आज्यभाग के द्वारा विधिपूर्वक अग्नि को तृप्त करके सब देवता और ऋषि क्रमशः अपने-अपने स्थानों को चले गये। इस तुङ्गकारण्य में प्रवेश करते ही स्त्री या पुरुष सब के पाप नष्ट हो जाते हैं (३. ८५, ४७–५३)।"

तुङ्गवेणा, एक नदी का नाम है। यह भी अग्नि की माताओं में से एक है (६. ९, २७)।

१. **तुण्ड**, एक राक्षस का नाम है जिसने वानर-सेनापति नल के साथ युद्ध किया था (३. २८५, ९)।

२. **तुण्ड**, एक राजा का नाम है जिन्हें पाण्डवों की ओर से रणनिमन्त्रण भेजा गया (५. ४, २१)।

१. **तुण्डिकेर** (बहु० °राः), एक जाति के लोगों का नाम है जिनका अर्जुन ने वध किया था (८. ५, ४९)।

२. **तुण्डिकेर**, तुण्डिकेरों के राजा का नाम है (७. १७, १९)।

तुम्बवीण = शिव (१,००० नाम)।

तुम्बीवीणाप्रिय = शिव (१,००० नाम)।

१. **तुम्बुरु**, एक गन्धर्व का नाम है जो कश्यप और प्राधा के पुत्र थे (१. ६५, ५१)। इन्होंने अर्जुन के जन्मोत्सव के समय गायन किया (१. १२३, ५४)। २. ४, ३६; ७, १४ (इन्द्र की सभा में); १०, २६ (कुबेर की सभा के प्रधान गन्धर्व थे); ५२, २४) इन्होंने युधिष्ठिर को सौ घोड़े भेंट किये); ३. ४३, १४ (इन्द्रलोक में अर्जुन के स्वागत के समय ये भी उपस्थित थे); १५९, २९ (पर्वसंधि के समय गन्धमादन पर्वत पर कुबेर की सभा में हो रहे इनके सामगान का स्वर स्पष्ट सुन पड़ता है); ४. ५६, १२ (गोग्रहण के अवसर पर कौरवों के साथ अर्जुन के युद्ध को देखने के लिये ये भी उपस्थित हुये); ५. ११७, १६; ६. ६, २०; ७. २३, २०; ४५, २२; ८. ८७, ५२; १२. २८४, ५; ३२४, १५; १३. १६५, १४; १४. ८८, ३९ (युधिष्ठिर के अश्वमेध में ये भी उपस्थित हुये); १५. २९, ९। तु० गन्धर्व।

२. **तुम्बुरु**, एक प्राचीन ऋषि का नाम है जो शर-शय्या पर पड़े भीष्म को देखने के लिये उपस्थित हुये (१२. ४७, ८)।

तुरग (बहु० °गाः)—'देवी लक्ष्मीः पद्मगृहा शुभा। तस्यास्तु मानसाः पुत्रास्तुरगा व्योमचरिणः', (१. ६६, ५१)।

तुर्वसु, ययाति के द्वारा देवयानी के गर्भ से उत्पन्न पुत्र का नाम है (१. ७५, ३५)। १. ७५, ३७; ८३, ९ (ये ययाति द्वारा उत्पन्न देवयानी के द्वितीय पुत्र थे); ८४, १०–११ (इन्होंने ययाति को अपनी युवावस्था देना स्वीकार नहीं किया जिस पर ययाति ने इन्हें शाप दिया). १२. १६; ८५, २१. २६. ३४ (यवन इनके वंशज हैं); ९५, ९ (ययाति के पुत्रों की गणना के अन्तर्गत इनका उल्लेख)।

तुलाधार, एक काशीनिवासी वैश्य का नाम है (१२. २६१, १. ८. ९. ११. ४२–४५; २६२, १. ४. ५; २७३, ४. ३८. ४२; २६४, १. २०. २१. २३)।

तुलाधार-जाजलि-संवाद:—"भीष्म ने कहा : प्राचीनकाल में जाजलि नाम से विख्यात एक ब्राह्मण थे जो वन में ही रहते तथा विचरण करते थे। इन जाजलि ने समुद्र-तट पर जाकर अत्यन्त महान तप आरम्भ किया और नियमित भोजन करते हुए वल्कल, मृगचर्म, एवं जटा धारण करके अनेक वर्षों तक तप करते रहे। फिर किसी समय सम्पूर्ण लोकों को देखने के लिये मन के समान गति से विचरण करने लगे। वन और काननों सहित समुद्र-पर्यन्त पृथिवी का निरीक्षण करके समुद्रवर्ती सजल प्रदेश में निवास करते समय जाजलि के मन में यह विचार आया कि 'इस चराचर जगत् में मेरे अतिरिक्त कोई अन्य मनुष्य ऐसा नहीं जो मेरे साथ जल में विचरने और आकाश में भ्रमण करने की शक्ति रखता हो।' उनकी बातें सुनकर अदृश्य पिशाचों ने कहा : 'काशी में तुलाधार रहते हैं जो वणिक्-धर्म का पालन करते हैं; किन्तु वे भी ऐसी बातें नहीं कह सकते जैसी आप कह रहे हैं।' पिशाचों की बात को सुनकर जाजलि ने तुलाधार का दर्शन करने की इच्छा प्रगट की। तब उन महर्षि को समुद्रतटवर्ती जल प्रदेश से बाहर निकालकर राक्षसों ने उन्हें काशी का मार्ग दिखा दिया। उस मार्ग से काशी पहुँच कर जाजलि ने तुलाधार का दर्शन करने के पश्चात् उनसे प्रश्न किया। युधिष्ठिर के पूछने पर भीष्म ने जाजलि के दुष्कर पूर्वकर्मों का वर्णन करते हुये बताया कि जाजलि महान तपस्वी थे और प्रतिदिन प्रातः सायं सन्ध्योपासना, अग्नि-होत्र तथा वेदाध्ययन में तत्पर रहते थे। एक समय की बात है, वे महातपस्वी जाजलि निराहार रहकर वायु-भक्षण करते हुये काष्ठवत् खड़े हो गये। चेष्टाशून्य होने के कारण वे किसी ठूँठ वृक्ष के समान प्रतीत होते थे। उस समय उनके सर पर गौरैया पक्षी के एक जोड़े ने अपना घोसला बना लिया। कुछ समय के पश्चात् उन पक्षियों ने उसी घोंसले में अण्डे दिये। इस बात को जानकर भी जाजलि विचलित नहीं हुये। अण्डों के पुष्ट होने पर उनसे बच्चे बाहर निकले और वहीं बढ़ने लगे। कुछ समय के पश्चात् उन बच्चों के पर निकल आये और वे अपने चारे आदि चुगने के लिये बाहर जाने लगे। एक समय वे पक्षी उड़ जाने के पश्चात् एक मास तक लौटकर नहीं आये। तब जाजलि मुनि वहाँ से अन्यत्र चले गये। जप करने वालों में श्रेष्ठ जाजलि अपने मस्तक पर पक्षियों के उत्पन्न होने और बढ़ने की बात को स्मरण करके अपने को महान धर्मात्मा समझने लगे और आकाश में ताल ठोंकते हुए स्पष्ट वाणी में बोले : 'मैंने धर्म को प्राप्त कर लिया है।' इतने में ही एक आकाशवाणी ने कहा : 'जाजले ! तुम धर्म में तुलाधार के समान नहीं हो। फिर भी वे तुलाधार वैसी बातें नहीं कहते जैसी तुम कह रहे हो।' इस आकाशवाणी को सुनकर जाजलि अमर्ष के वशीभूत हो गये और तुलाधार को देखने के लिये पृथिवी पर विचरण करने लगे। जहाँ संध्या हो जाती वहीं वे मुनि टिक जाते थे। इस प्रकार दीर्घकाल के पश्चात् वे वाराणसी पुरी में आये और तुलाधार को सौदा बेचते देखा। मुनि को देख कर तुलाधार ने खड़े होकर उनका अभिवादन किया। तुलाधार ने जाजलि के पूर्व-कर्मों तथा उनके मस्तक पर पक्षियों के घोंसला बना लेने आदि का भी उल्लेख किया। तुलाधार ने आकाशवाणी तथा मुनि के अमर्ष का भी उल्लेख किया (१२. २६१)।" "जाजलि के आग्रह पर तुलाधार ने उनसे धर्म के विषय पर संवाद किया। धर्म की व्याख्या करते हुए तुलाधार ने कहा : 'पाँच इन्द्रियोंवाले समस्त प्राणियों में सूर्य, चन्द्र, वायु, ब्रह्मा, प्राण, यज्ञ और यमराज, इन सब देवताओं का निवास है।

अतः जो इन्हें जीते-जी बेचकर जीविका चलाते हैं, उन्हें अधर्म की प्राप्ति होती है। फिर मृत जीवों का विक्रय करनेवालों के विषय में तो कहा ही क्या जाय ? बकरा अग्नि का, भेड़ वरुण का, घोड़ा सूर्य का, और पृथिवी विराट का रूप है; तथा गाय और बछड़े चन्द्रमा के स्वरूप हैं : इनको बेचने से कल्याण की प्राप्ति नहीं होती।...एक समय की बात है, ऋषियों और यतियों ने नहुष की भर्त्सना की क्योंकि उसने माता स्वरूप गौ और प्रजापति वृषभ का वध किया था। फिर भी, नहुष के अज्ञानवश हुये उस पाप के कारण ऋषि और यति शान्त हो गये तथा नहुष के पाप को एक सौ रोगों के रूप में परिणत करके समस्त प्राणियों पर वितरित कर दिया। उन लोगों ने स्वयं नहुष को भ्रूणहत्यारा बताकर उसके यज्ञ में हविष्य की आहुति देना अस्वीकार कर दिया।' तदन्तर तुलाधार ने अपने विषय में निवेदन किया (१२. २६२)।" "तुलाधार की बात सुनकर जाजलि ने कहा : 'तुम तो नास्तिकता की भी बातें करते हो। यदि पशुओं के कष्ट का ध्यान करके कृषि आदि वृत्तियों का त्याग कर दिया जाय तो इस संसार का जीवन ही समाप्त हो जायगा।' तुलाधार ने जाजलि के आक्षेप को अस्वीकार करते हुये यज्ञ के यथार्थ स्वरूप का निरूपण किया। उसने कहा : 'ब्राह्मणों के लिये जिस यज्ञ का विधान है उसे मैं नमस्कार करता हूँ, परन्तु खेद है कि इस समय ब्राह्मण लोग अपने यज्ञ का परित्याग करके क्षत्रियोचित यज्ञों के अनुष्ठान में प्रवृत्त हैं।...किसी देवता के लिये घृत-आदि द्रव्य समर्पित करने के लिये श्रद्धा को ही पत्नी बनाये और यज्ञ को ही देवता के समान आराध्य बनाकर यथावत् रूप से यज्ञपुरुष विष्णु को प्राप्त करे।...सब नदियाँ सरस्वती का रूप हैं, और समस्त पर्वत ही पुण्यमय प्रदेश हैं। यह आत्मा ही प्रधान तीर्थ है। आप तीर्थ सेवन के लिये देश-देश मत भटकिये। जो यहाँ मेरे बताये अहिंसाप्रधान धर्मों का आचरण और धर्म का अनुसंधान करता है वह कल्याणकारी लोकों को प्राप्त होता है।' भीष्म ने कहा कि इस प्रकार हिंसारहित, युक्तिसंगत तथा श्रेष्ठ पुरुषों द्वारा सेवित धर्मों की ही तुलाधार ने सदैव प्रशंसा की थी (१२. २६३)।" "तुलधार ने जाजलि को उन पक्षियों को बुलाने के लिये कहा जो उन्हीं के मस्तक पर उत्पन्न हुये थे। जाजलि के बुलाने पर उन पक्षियों ने वहाँ आकर मनुष्यों के समान वाणी में इस प्रकार उपदेश दिया : 'अहिंसा और दया आदि भावों से प्रेरित होकर किया गया कर्म इहलोक और परलोक में भी उत्तम फल देनेवाला होता है।...श्रद्धा सूर्य की पुत्री है, इसलिये उसे वैवस्वती, सावित्री, और प्रसवित्री भी कहते हैं। वाणी और मन भी श्रद्धा की अपेक्षा बहिरंग हैं।... इस विषय में ब्रह्मा की एक गाथा का वर्णन किया जाता है जो इस प्रकार है : पहले देवता लोग श्रद्धाहीन पवित्र और पवित्रतारहित श्रद्धालु के द्रव्य को यज्ञकर्म के लिये एक सा ही मानते थे। इसी प्रकार वे कृपण वेदवेत्ता एवं महादानी सूदखोर के अन्न में भी कोई अन्तर नहीं मानते थे। देवताओं ने खूब सोच-विचार कर दोनों प्रकार के अन्नों को समान निश्चित किया था। परन्तु एकबार प्रजापति ने देवताओं के इस व्यवहार को देखकर कहा कि वास्तव में उदार का अन्न उसकी श्रद्धा के कारण पवित्र होता है और कृपण का अश्रद्धा के कारण अपवित्र एवं नष्टप्राप्त समझा जाता है। अश्रद्धा सबसे बड़ा पाप है, और श्रद्धा पाप से मुक्ति दिलाता है।' भीष्म ने बताया कि जाजलि और तुलाधार के इस संवाद के थोड़े समय के बाद दोनों हो व्यक्ति परमधाम में जाकर अपने-अपने शुभ कर्मों के कारण सुखपूर्वक विहार करने लगे। तुलाधार ने जो उपदेश दिया था वह बहुजनसम्मत अर्थ से युक्त था। उसे सुनकर जाजलि को परम शान्ति प्राप्त हुई (१२. २६४)।"

तुषार (बहु० °राः) एक जाति के लोगों का नाम है जो युधिष्ठिर के लिये भेंट लाये (२. ५१, ३०)। ये युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित हुये (३. ५१, २५. २६)। गन्धमादन से द्वैतवन की ओर आते हुये पाण्डव तुषार-देश को पार करके राजा सुबाहु के नगर में पहुँचे थे (३. १७७, १२)। ये भीष्मनिर्मित क्रौञ्चव्यूह के दाहिने पक्ष का आश्रय लेकर स्थित हुये (६. ७५, २१)। अर्जुन ने युद्ध में इन्हें परास्त किया था (८. ७३, १९)। इन्हें एक निम्न और बर्बर जाति कहा गया है (१२. ६५, १३)।

तुषारगिरि = हिमवत् (१३. १४, २४४)।

१. **तुषित** = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

२. **तुषित** (बहु० °ताः), देवों के एक वर्ग का नाम है (१३. १८, ७४)।

तुष्ट = विष्णु (१,००० नाम)।

तुष्टाज्यपा = शिव (१,००० नाम)।

तुहर, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७१)।

तुहार, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७१)।

१. **तुहुण्ड**, एक असुर का नाम है जो दनु का पुत्र था (१. ६५, २५)। यह सेनाबिन्दु नामक राजा हुआ (१. ६७, १९-२०)।

२. **तुहुण्ड**, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है जो द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुआ था (१. १८६, ३)।

३. **तुहुण्ड** (बहु० °ण्डाः), एक जाति के लोगों का नाम है (६. ५०, ५२)।

तृणक, एक प्राचीन राजर्षि का नाम है जो यम की सभा में उपस्थित होते थे (२. ८, १७)।

तृणप, एक देवगन्धर्व का नाम है जो अर्जुन के जन्म के समय उपस्थित हुये (१. १२३, ५६)।

तृणबिन्दु, काम्यकवन में निवास करनेवाले एक ऋषि का नाम है जिनकी आज्ञा से पाण्डवों ने द्रौपदी को आश्रम में छोड़ कर आखेट के लिये प्रस्थान किया (३. २६४, ५)। ४. १३, ३; ९. ६१, ४६; १२. ४७, ९ (ये भी उन ऋषियों में एक थे जो शर शय्या पर पड़े भीष्म को घेर कर खड़े हुये)।

तृणबिन्दुसरस्, काम्यकवन में स्थित एक सरोवर का नाम है (३. २५८, १३)।

तृणसोमाङ्गिरस्, दक्षिण दिशा का आश्रय लेकर रहने वाले एक ऋषि का नाम है (१३. १५०, ३४)।

तृणानि (बहु०) = शिव (१,००० नाम)।

तृतीया, एक नदी की नाम है जो वरुण की सभा में उपस्थित होती थी (२. ९, २१)।

तृप्तातृप्तविचारिन् = शिव (१,००० नाम)।

१. **तेजस्**, मूर्तिमान तेज का नाम है जो ब्रह्मा की सभा में उपस्थित होता है (२. ११, २०)।

२. **तेजस्** = सूर्य (३. ३, १७)।

३. **तेजस्** = शिव (१,००० नाम)।

४. **तेजस्** = विष्णु (१,००० नाम)।

तेजसां पतिः = सूर्य (३. ३, १९)।

तेजस्करोनिधिः = शिव (१,००० नाम)।

१. **तेजस्विन्**, पाँच इन्द्रों में से एक का नाम है (१. १९७, २८. २९)।

२. **तेजस्विन्** = शिव (१,००० नाम)।

तेजेयु, पूरुपुत्र रौद्राश्व के द्वारा मिश्रकेशी अप्सरा के गर्भ से उत्पन्न पुत्र का नाम है (१. ९४, ११)।

तेजोपहारिन् = शिव (१,००० नाम)।

तैजस, वरुण से सम्बन्धित एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १६४)। यहीं जलाधिपति के रूप में वरुण का अभिषेक हुआ था (९. ४६, १०५)।

तैत्तिरि, वसु उपरिचर के यज्ञ में सम्मिलित हुये सोलह सदस्यों में से एक का नाम है (१२. ३३६, ९)।

तोमर (बहु० °राः) एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ६९)।

१. **तोयात्मन्** = कृष्ण (१२. ४७, ६०)।

२. **तोयात्मन्** = शिव (१,००० नाम)।

तोरण = शिव (१,००० नाम)।

तोरणस्फाटिका, धृतराष्ट्र द्वारा बनवाये गये उस सभाभवन का नाम है जिसमें द्यूतक्रीड़ा का आयोजन किया गया था (२. ५६, १८)।

त्यागशास्त्र—'अत्र सम्यग्वधो नाम त्यागशास्त्रमनुत्तमम् । शृणु यत्तव मोक्षाय भाष्यमाणं भविष्यति ॥', (१२. २१९, १६) ।

त्रसद्दस्यु, एक प्राचीन राजा का नाम है जो यम की सभा में उपस्थित रहते थे (२. ८, ९) । अगस्त्य ने इनसे धन की याचना की (३. ९८, १२) । प्रातः-सायं स्मरण किये जाने वाले नरेशों में ये भी एक हैं (१३. १६५, ५५) ।

त्रयी, विद्या और धर्म के लिये प्रयुक्त हुआ है : १. १००, ६७ (विद्या). ६९ (पुराणानाम्); २. ५, ९७ (मूले); ३. १५०, ३१ (वार्ता). ३२ (धर्म); २०७, २४ (विद्या); ३१३, ७६ (धर्मः); ६. ३३, २१ (धर्मम्); १२. ८, २७; १८, ३३; २६, २४; ५६, २०; ५९, ३३; ६३, २८; ६८, ३१; ८९, ७ (विद्या); ९१, ८ (विद्या); १२३, २० (विद्या); १३४, १२ (विद्याम्); २३५, १ (विद्याम्); ३४०, ८३ ।

त्रासन = शिव (१,००० नाम) ।

१. त्रिककुद् = शिव (१,००० नाम) ।

२. त्रिककुद् = कृष्ण (विष्णु) : १२. ४३, १० ।

त्रिककुब्धाम = विष्णु (१,००० नाम) ।

त्रिकर्मरत = शिव (१,००० नाम) ।

त्रिकालधृक् = शिव (१,००० नाम) ।

१. त्रिकूट, एक पर्वत का नाम है जो उत्तर में स्थित है (२. ४२, ११) ।

२. त्रिकूट, लङ्का के निकट स्थित एक पर्वत का नाम है । लङ्का से गोकर्ण जाते समय रावण ने इसे पार किया था (३. २७७, ५४) । 'रावणो विदितो मह्यं लङ्का चास्य महापुरी । दृष्टा पारे समुद्रस्य त्रिकूटगिरिकन्दरे ॥', (३. २८२, ५६) ।

त्रिकूटवान्, एक पर्वत का नाम है (१४. ४३, ४) । तुकी० त्रिकूट ।

त्रिगङ्ग, एक तीर्थ का नाम है जहाँ पितरों और देवताओं का तर्पण करने से मनुष्य पुण्यलोक में प्रतिष्ठित होता है (३. ८४, २९) 'सप्तगङ्गे त्रिगङ्गे च इन्द्रमार्गे च तर्पयन्', (१३. २५, १६) ।

१. त्रिगर्त, एक प्राचीन राजा का नाम है जो यम की सभा में विराजते थे (२. ८, २०) ।

२. त्रिगर्त, त्रिगर्तराज क्षेमङ्कर के लिये प्रयुक्त हुआ है (३. २७१, १२) ।

३. त्रिगर्त = सुशर्मा : ४. ३३, १०. ४१; ५. १९५, ९; ६. ८७, १०. ११; १०२, २२; ७. १७, १९ । तुकी० १. त्रैगर्त ।

त्रिगर्त (बहु० र्ताः), एक जाति के लोगों, विशेषतः उन पाँच त्रिगर्त राजकुमारों, के लिये प्रयुक्त हुआ है जो परस्पर भ्राता थे : १. २, २१० (गोग्रहश्च विराटस्य त्रिगर्तैः प्रथमं कृतः); १५६, २ (पाण्डव इनके देश में आये थे); २. २७, १८ (अर्जुन ने दिग्विजय के समय इन्हें पराजित किया था); ३२, ७ (नकुल ने दिग्विजय के समय इन्हें पराजित किया था); ५२, १४ (ये युधिष्ठिर के लिये भेंट लाये); ३. २७१, २८; ४. २५, ८. २०; ३०, १. ११. २१; ३१, ८; ३२, १.२. १९. २१. २३. २५ (राजा त्रिगर्तानां सुशर्मा युद्धदुर्मदः); ३३, १०, ३१. ३६. ५०; ३५, १; ३८, १७; ४७, ९; ६८, २. १०. ११; ५. २३, २५ (नकुल ने इन्हें पराजित किया था); ३०, २३ (ये दुर्योधन की सेना में सम्मिलित हुये); ५७, १८; १६४, ८. १६६, ९ (त्रिगर्ता भ्रातरः पञ्च रथोदारा); ६. ९, ६१; २०, १५ (त्रिगर्ताश्च शूराः); ५१, ७; ५६, ४ (ये भीष्म के गारुडव्यूह के मस्तक में स्थित हुये); ६१, १२ (इन लोगों ने अर्जुन और अभिमन्यु पर आक्रमण किया); ७२, ७; ८२, १३; ९९, ६; १०२, १८ (अर्जुन ने इनके विरुद्ध वायव्यास्त्र का प्रयोग किया); ११४, ९; ११७, ३४; ११९, ८२; ७. ४, ८ (पूर्वसमय में कर्ण ने इन्हें पराजित किया था); ७. ७, १५; ११, १७ (पूर्वसमय में श्रीकृष्ण ने इन्हें पराजित किया था); १७, १६ (सत्यरथ आदि पाँच त्रिगर्त भ्राताओं ने अर्जुन का वध करने या अपनी जान दे देने की शपथ ली). ४७; १८, ७; १९, १६; २७, ११ (दशैव तु सहस्राणि त्रिगर्तानां महारथाः); ७०, १२ (पूर्व समय में राम जामदग्न्य ने इनका वध किया था); ९४, ७१; १०७, २९ (इनके राजकुमार, निरमित्र, का वध); ११५, १७ (त्रिगर्तानां रथोदाराः). १९; १२३, १२. १३. ३५; १४१, २. ८; १५७, २८ (युधिष्ठिर ने इनका वध किया); १६४, २२; ८. ८, १८; ११, १८; २८, ४८; ६१, ४४; ९. ८, २५; १४, १; २७, ३७; ११. २६, ३६; १४. ७४, १ (राजसूय यज्ञ के घोड़े का अनुसरण करते हुये अर्जुन ने इन्हें पराजित किया) । तुकी० त्रैगर्त (बहु०), त्रैगर्तक ।

त्रिगर्तराज् = सुशर्मा (६. १०२, १०; ७. १८, २७) ।

त्रिगर्तराज = क्षेमङ्कर (३. २६५, ७) । = सुशर्मा (४. ३३, ४७; ६. ८१, ३. ३६; ८५, ४. ८; १०२, १३; १०८, ५९; ७. १०७, २७; ८. २७, ४) । = सुरथ (३. २७१, १८) ।

१. त्रिगर्तराजन् = सुशर्मा (६. ८५, १०) ।

२. त्रिगर्तराजन् = सूर्यवर्मा (१४, ७४, ९) ।

त्रिगर्ताधिपति = सुशर्मा (४. ३३, ७; ६. १०४, १०; ७. १७, ११; २८, ६. ८; ९. २, १८; २७, १७) ।

त्रिगुण = महापुरुष (महापुरुषस्तव) ।

त्रिचक्षुस् = कृष्ण (१२. ४३, ७) ।

त्रिजट = शिव (१,००० नाम) ।

त्रिजटा, एक राक्षसी का नाम है जिसने लङ्का में रावण द्वारा बन्दी सीता को सान्त्वना दी । श्रीराम ने इसका सत्कार किया किया : ३. २८०, ५४. ७३. ७४; २८१, ३१; २९१, ४१ । तुकी० राक्षसी ।

त्रिजटिन् = शिव (१३. १७, ४७) ।

त्रिणयन = शिव (देखिये वस्था०) ।

त्रिणाचिकेत = 'ज्ञेयास्ते'''त्रिणाचिकेताः; (१३. ९०, २६) । = महापुरुष (महापुरुषस्तव) ।

त्रिणेत्र = शिव (१,००० नाम) ।

त्रित, एक ऋषि का नाम है जो एकत और द्वित के भ्राता थे : 'और्वत्रिताभ्यामसि तुल्यतेजा', (१. ५५, १६) । 'उदपान यशस्विनः त्रितस्य', (९. ३६, १) । 'त्रितः'''सुमहातपाः'', (९. ३६, ३) । 'त्रितो ब्राह्मणसत्तमः', (९. ३६, ४) । 'आसन् पूर्वयुगे राजन्मुनयो भ्रातरस्त्रयः ॥ एकतश्च द्वितश्चैव त्रितश्चादित्यसन्निभाः', (९. ३६, ७. ८) । 'त्रितः स श्रेष्ठता', (९. ३६, १३) । "एक दिन की बात है कि त्रित के दोनों भ्राता, एकत और द्वित, यह विचार करने लगे कि त्रित को साथ लेकर यजमानों का यज्ञ सम्पन्न करायें और प्रचुर दक्षिणा प्राप्त करें । तदनुसार यज्ञ कराकर तीनों ने प्रचुर संख्या में पशु प्राप्त किये । लौटते समय त्रित आगे-आगे चल रहे थे और उनके दो अन्य भ्राता पीछे-पीछे पशुओं को हाँकते आ रहे थे । दोनों भ्राताओं ने इस बात पर परामर्श किया कि त्रित को उस पशुधन से किस प्रकार वंचित कर दिया जाय । चलते-चलते जब रात्रि हो गई, तब एक स्थान पर सामने भेड़िये को खड़ा देखकर त्रित भागे परन्तु पास ही एक कूयें में गिर गये । यद्यपि त्रित ने जोर से आर्तनाद किया तथापि उनके भ्राता उन्हें वहीं छोड़कर चले गये । तदनन्तर त्रित ने उस कूयें में ही यज्ञ आरम्भ किया जिससे सम्पूर्ण स्वर्गलोक उद्विग्न हो उठा । बृहस्पति के परामर्श पर सब देवता वहाँ त्रित के पास आये । त्रित ने देवताओं को यज्ञ-भाग प्रदान किया और देवताओं ने भी उन्हें वर देकर कूयें से बाहर निकाल दिया । तदनन्तर त्रित ने घर लौट कर अपने दोनों भ्राताओं को शाप देते हुये कहा : तुम लोग भेड़िये का शरीर धारण करके इधर-उधर विचरण करोगे । तुम्हारी सन्तान के रूप में गोलांगूल, रीछ और वानर आदि पशुओं की उत्पत्ति होगी।' (९. ३६,१४–५३) ।'' ये पश्चिम दिशा के ऋषि थे (१२. २०८, ३१) । 'प्रजापतिसुताश्चात्र सदस्याश्चाभवंस्त्रयः । एकतश्च द्वितश्चैव त्रितश्चैव महर्षयः ॥', (१२. ३३६, ६) । 'एकतद्वितत्रिताश्चोचुस्तत्रश्चित्रशिखण्डिनः', (१२. ३३६, २०) । 'द्वितत्रितमतेन', (१२. ३३६, ६०) । 'एकतश्च द्वितश्चैव महर्षयः', (१२. ३३९, १२) । 'त्रितोपघातात्', (१२. ३३९, ८६) । 'त्रितं कूपनिपातितम्'''पृश्निगर्भं त्रितं पाहीत्येकतद्वितपातितम्', (१२. ३४१, ४६) । उन महर्षियों में एक यह भी थे जो भीष्म के दर्शन के लिये उपस्थित हुये (१३. २६, ६) । 'एकतश्च द्वितश्चैव त्रितश्चा-

दित्यसन्निभाः', (१३. १५०, ३६)। 'एकतश्च द्वितश्चैव त्रितश्चैव महानृषिः', (१३. १६५, ४२)।

त्रिदण्डधृक् = शिव (१,००० नाम)।

१. त्रिदश (बहु० °शाः) (देवगण) : १. ६६, २८ (त्रिदशानां च वर्धकिः). २९ (त्रिदशाना चकार); ७४, ८३; ७६, ७२; ७७, १; ७८, ३; ८७, १; १२३, २७; २०७, २५; २२४, १०; २२७, २९; २. १४, ५६; ३. ३९, ४०. ४२, १२; ४६, ३६; ८४, १११; ८५, २०; ८८, २०; १००, ५; १०१, ६. ७. १८; १०२, १७; १०४, १७. १९; १०५, ६. ८. ९. १०. १३. १९; १०७, ६. ८; १०९, १७; १२३, १; १२५, १७; १६१, ११; २०२, २०; २०४, ३४; २२७, ८. १८; २३१, ७२. १०३; २४०, २२; २७२, ७६; २८९, ३१; २९०, ३१; २९१, ३; २९७, ६०; ३०६, २१; ४. २, २३; ६, १५; ६८, ३४; ७०, ६; ५. १०, १४; १८, ९; २८, ८; १०७, १४; १३१, ५; १३३, ४४; १५६, १४; १६०, २५. १०२; १६१, २०; ६. ५७, ३४; ९७, २४; ९८, ४६; १०७, २७. ३९; ११७, २९; ११९, ४१; ७. १, ४७; ३३, १४; ३४, २३; ५९, ७; ७२, ३७; ९४, २९; १३३, २; १६४, २४; १८० २९; २०२, ६२; ९. ४६, ६०; ५६, ४०; ११. २०, १५; १२. ५०, २७; ९७, ११; २२८, ८५. ८७; ३३७, २; ३५५, ३; १३. ६, १४. २१. २६; १४, ८७. ३३४. ३३५; १९, ९१; ६६, २५; १२५, ११. २२. ५८; १२६, ४१; १६०, २२; १४. ५४, ८; ८९, ३०।

२. त्रिदश (एक० °शम्) अर्थात् स्वर्ग : ८. ३७, ३४।

त्रिदशद्विप् (बहु० °पाः) = असुर (बहु०) : ८. ३४, ७४; ९. ५१, २८; १२. २०९, २६; १३. ८५, ८।

त्रिदशपति = इन्द्र (८. ९०, २४)।

त्रिदशपुङ्गव = शिव (१२. २८९, ३०)।

त्रिदशर्षि (बहु०) = देवर्षि (बहु०) : ३. ८७, ८।

त्रिदशवरात्मज (इन्द्र के पुत्र) = अर्जुन (७. २, १६)।

त्रिदशवरावरज (इन्द्र के अनुज) = विष्णु (८. ३०, ९)।

त्रिदशशार्दूल = इन्द्र (१३. १२, ४२)।

त्रिदशश्रेष्ठ = शिव (१३. १२, ४१)।

त्रिदशाधिप = इन्द (देखिये वस्था०)।

त्रिदशाधिपति = इन्द्र (९. ४८, ६)।

त्रिदशाध्यक्ष = विष्णु (१,००० नाम)।

त्रिदशारि (बहु०) असुर = (बहु०) : ८. ३४, ६५।

त्रिदशेन्द्र = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

१. त्रिदशेश = ब्रह्मा (३. १४२, ५२)।

२. त्रिदशेश = इन्द्र (१. ७७, २१; ३. ४८, १४; १७३, १७; २८१, १५)।

३. त्रिदशेश = कृष्ण (१२. ४७, ८०)।

१. त्रिदशेश्वर = इन्द्र (१. ३४, १५; ३. १३५, ३९; १६५, ९; १६८, २४; १९३, १६; ३१४, ३; ८. ८७, ६८. ७१; ९. ४३, ४५; ११. २३, २७; १२. २००, ९; २६६, ५०; १३. ८३, ३५; १४. ९२, ३७।

२. त्रिदशेश्वर = शिव (३. १६७, ४३; १३. १४, ३७८. ४०३)।

३. त्रिदशेश्वर = कृष्ण (७. १८२, २८)।

४. त्रिदशेश्वर (बहु० °राः) = इन्द्र आदि (३. ५६, ३१; १३. १५०, १९)।

त्रिदिव (स्वर्ग)—१. १, १६३ (त्रिदिवस्थं धनञ्जयम्); २३, २५; ३४, २०. २६; ३८, १७; ६९, १६; ७४, ११५ (त्रिदिवौकसाम्); १०४, १० (त्रिदिवौकसाम्); २३४, १४; ३. ४०, २७ (त्रिदिवनिवासिनाम्); ४५, ६. १०; ४६, ६३; ५७, ३९; १००, २५; १०३, ४; १०७, ५६. ६४. ७०; १०८, २; १४२, ४९. ५५; १६२, ५; १६६, १५; १६८, २३; १७१, २५; १८१, ४४; १९३, ३७; २१९, २३; २२७, २; २३०, ११; २३१, ४३; २९४, ३३; ३०१, २; ४. ६, १४; ५. ९, ४३. ५०; १०, ४; २८, ८; ५९, २५; १००, १७; २२४, ५७; १३५, २३; १६०, १२५; १६१, ४३; ७. ३४, ३; ८. ३४, ७५. ९५; ४६, ७९; ९. ३१, १४; ३६, ३८. ४८; ४०, ९. १६; ४३, ४५; ४८, ३१. ६०; ५२, ५; ५३, ४. ७. १५; १०. १०, २४; ११. ९, १७; १२. ११, २६; ३३, २७; ३८, ११; ४३, १०; ८१, ४; २००, २०; ३४०, १५. ९१; ३४२, १३५; ३५४, १३; ३६३, ३; १३. १२, ५४; २६, ८६; ५७, २६; ६६, १९; ७६, ९; ९९, ५. ६. ८; १०६, ६७; १३७, १८; १३८, १; १४१, ५३; १५०, ६६; १५५, २५; १४. ९, २८; ३८, १२; १५. १०, ३८. ४०; १७. ३, ३५; १८. ३, ४० (त्रिदिवालयैः)।

त्रिदिवा, भारतवर्ष की एक प्रमुख नदी का नाम है (६. ९, १७. १८; १३. १६५, २८)।

त्रिदिवेश (स्वर्ग के अधिपति)—८. ३४, ७४।

त्रिदिवेश्वर = इन्द्र (देखिये वस्था)। बहु० °रा—२. ६८, ८३; ५. ९, ५२; ११, १।

त्रिधातु = कृष्ण (विष्णु) : १२. ३४२, ८७।

त्रिधात्मन् = कृष्ण (१२. ४७, ५३)।

त्रिधामन् = कृष्ण (१२. ४३, १०)।

त्रिपथगा = गङ्गा : २. ४२, ११; ३. १०७, ५६; १०९, १९; ६. ६, ४७; १२. ३७, ८; १३. २६, ७७; १४. ४४, १४।

त्रिपथगामिनी = गङ्गा (१. ९८, ८)।

त्रिपद् = विष्णु (१,००० नाम)।

त्रिपाद, एक दैत्य का नाम है जिसका स्कन्द ने वध किया था (९. ४६, ७५)।

त्रिपुर, असुरों की तीन पुरियों का नाम है : 'त्रिपुरस्य निपातनम्', (१. २, २७१)। 'महेश्वरशरोद्धूतं पपात त्रिपुरं यथा', (३. २२, ३५)। 'शङ्करेण त्रिपुरं निहतं यदा', (३. ४१, ३९)। 'पुरेव त्रिपुरं दग्ध्वा दिवि देवो महेश्वरः', (७. १५६, १३५; १७५, ८९)। "पूर्वकाल में परम पराक्रमी तीन असुरों के आकाश में तीन नगर थे जिनमें से कमलाक्ष नामक असुर का नगर सोने का, तारकाक्ष का चाँदी का, तथा विद्युन्माली का लोहे का बना था। सम्पूर्ण अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग करके भी इन्द्र इन नगरों का भेदन नहीं कर सके। तब पीड़ित हुये सब देवता शङ्कर की शरण में आये। देवताओं सहित इन्द्र के निवेदन पर शिव ने 'तथास्तु' कहकर उनके हित की इच्छा से गन्धमादन और विन्ध्य पर्वतों को अपने रथ के दो पार्श्ववर्ती ध्वज बनाये। फिर समुद्र और पृथिवी को रथ बनाकर शेषनाग को उसका धुरा बनाया। चन्द्रमा और सूर्य को उस रथ के दो चक्र बनाये; एकपत्र के पुत्र पुष्पदन्त को जूये की कीलें बनाया; मलयाचल को यूप, और तक्षक नाग को जूआ बाँधने की रस्सी बनाया; चारों वेदों को रथ के चार घोड़े बनाया; और उपवेदों को वल्गा बनाकर गायत्री तथा सावित्री को प्रग्रह बनाया। इसी प्रकार ओंकार को चाबुक, ब्रह्मा को सारथि, मन्दराचल को गाण्डीव धनुष, वासुकि नाग को उसकी प्रत्यञ्चा, विष्णु को बाण, अग्नि को बाण का फल, वायु को बाण का पंख, तथा वैवस्वत यम को उसकी पूँछ बनाया। फिर विद्युत को उस बाण की तीक्ष्ण धार बनाकर मेरु पर्वत को प्रधान ध्वज के स्थान पर रक्खा। इस प्रकार दिव्य रथ तैयार करके शिव त्रिपुरवध के लिये उस पर आरूढ़ हुये। उस समय सम्पूर्ण देवता और महर्षि भगवान् शङ्कर की स्तुति करने लगे। अपने दिव्य रथ का निर्माण करके शिव उस पर १,००० वर्षों तक स्थिर भाव से खड़े रहे। जब वे तीनों पुर आकाश में एकत्र हुये तब शिव ने तीन गाँठ और तीन फल वाले बाण से उन तीनों पुरों को विदीर्ण कर डाला। उस समय दानव उन नगरों की ओर और कालाग्नि से संयुक्त एवं विष्णु तथा सोम की शक्ति से सम्पन्न उस बाण की ओर भी आँख उठा कर देख नहीं सके। जिस सयय वे तीनों पुर दग्ध होने लगे उस समय पार्वती भी उन्हें देखने के लिये एक पाँच शिखावाले बालक को गोद में लेकर वहाँ आईं। जब पार्वती ने देवताओं से पूछा कि उनका बालक कौन है, तब क्रोध में आकर इन्द्र ने उस बालक पर वज्र से प्रहार करना चाहा परन्तु उसी समय शङ्कर ने हँस कर वज्र सहित इन्द्र की भुजा को स्तम्भित कर दिया। तब स्तम्भित हुई भुजा के साथ ही देवताओं को

लेकर इन्द्र तत्काल ब्रह्मा के पास गये और पार्वती की गोद के अद्भुत बालक की चर्चा की। ब्रह्मा ने ध्यान करके अमित तेजस्वी बालरूपधारी शङ्कर को पहचान लिया और तत्काल वहाँ आकर शङ्कर की स्तुति की। तब प्रसन्न होकर शङ्कर ने इन्द्र की भुजा को ठीक कर दिया (७. २०२, ६४–१००)।" ८. ३३, २५. २६; ३४, ९६. १०७. १०८. ११०. ११२. ११४; १३. १४, २०७. २६२ (येन तत्त्रिपुरं दग्ध्वा क्षणाद्भस्मीकृतं पुरा। शरेणैकेन गोविन्द महादेवेन लीलया)। तुकी० १३. १६०, २५ और बाद।

त्रिपुरघातिन्, त्रिपुरघ्न, त्रिपुरनाशन, त्रिपुरमर्दन = शिव (देखिये वस्था०)।

त्रिपुरवासिन् (बहु० °नाः), से त्रिपुरों में निवास करनेवाले असुरों का तात्पर्य है (७. २०२, ६७)।

त्रिपुरहर्तृ = शिव (देखिये वस्था०)।

त्रिपुरा, एक भारतीय जनपद का नाम है जिसे कर्ण ने विजित किया था (३. २५४, १०)। कोसल नरेश बृहद्बल त्रिपुरा के सैनिकों के साथ थे (६. ८७, ९)।

त्रिपुराख्यान—"दुर्योधन ने कहा : देवताओं और असुरों में परस्पर विजय पाने की इच्छा से सर्वप्रथम तारकामय संग्राम हुआ। उस समय देवताओं ने दैत्यों को परास्त कर दिया। तब तारकासुर के तीन पुत्र, ताराक्ष, कमलाक्ष, तथा विद्युन्माली, उग्र तपस्या करने लगे। इन तीनों ने तपस्या द्वारा ब्रह्मा को प्रसन्न करके एक साथ ही वर माँगते हुये कहा : 'हम लोग इच्छानुसार चलने वाले नगराकार विमान बना कर उनमें निवास करना चाहते हैं। हमारा वह पुर देवताओं तथा दानवों के लिये अवध्य हो। राक्षस, यक्ष, नाग तथा नाना जाति के अन्य प्राणियों द्वारा भी नष्ट न हो। हम तीनों अपने-अपने पुरों में रहकर ही विचरण करेंगे और एक सहस्रवर्ष व्यतीत होने पर एक दूसरे से मिलेंगे। ये तीनों पुर जब एकत्र होकर एकीभाव को प्राप्त हों तो उसी समय जो एक ही बाण द्वारा तीनों को नष्ट कर सके, वही देवेश्वर हमारी मृत्यु का कारण हो।' ब्रह्मा के तदनुसार वरदान देने पर उन असुरों ने मयासुर को पुरों का निर्माण करने के लिये वरण किया। मयासुर ने तीनों पुरों का निर्माण किया जो क्रमशः सोने, चाँदी, तथा लोहे के थे। सोने का बना पुर स्वर्ग में स्थित हुआ, चाँदी का अन्तरिक्ष में, तथा लोहे वाला भूलोक में। सोने का पुर तारकाक्ष के, चाँदी का कमलाक्ष के, और लोहे का विद्युन्माली के अधिकार में रहा। इन त्रिपुरों में असुर सुखपूर्वक निवास करने लगे। तीनों दैत्यों ने देवताओं, पितरों और ऋषियों आदि को स्थानच्युत कर दिया। जब सम्पूर्ण लोक के प्राणी पीड़ित होने लगे तब देवता सहित इन्द्र इन तीनों पुरों के साथ युद्ध करने लगे परन्तु इनका भेदन नहीं कर सके। तब वे भयभीत होकर ब्रह्मा की शरण में गये। ब्रह्मा ने बताया कि तीनों पुरों को एक ही बाण द्वारा ध्वस्त करने की क्षमता केवल शिव में ही है, अतः उन्होंने देवों को शिव की शरण में जाने के लिये कहा। तदनन्तर देवताओं ने शिव के पास आकर उन्हें प्रसन्न किया। जो नाना प्रकार की विशेष तपस्याओं द्वारा मन की सम्पूर्ण वृत्तियों के निरोध का उपाय जानते हैं, जिन्हें अपनी ज्ञानस्वरूपता का बोध नित्य बना रहता है, जिनका अन्तःकरण सदा अपने वश में रहता है, जगत् में जिनकी कहीं भी तुलना नहीं है, उन निष्पाप, तेजोराशि, महेश्वर भगवान् उमापति का देवताओं ने दर्शन किया। देवताओं की स्तुति सुन कर शङ्कर ने उनके उपस्थित होने का कारण पूछा (८. ३३)।" "जब शिव ने देवताओं, पितरों, तथा ऋषियों के समुदाय को अभयदान दिया तब ब्रह्मा ने उनसे कहा : 'आपके आदेश से मैंने दानवों को एक महान् वर दे दिया है जिसे पाकर वे मर्यादा का उल्लङ्घन कर रहे हैं। आपके अतिरिक्त अन्य कोई उन दानवों का वध नहीं कर सकता। अतः हम आपकी शरण में आये हैं।' तब शिव ने कहा : 'मेरा ऐसा विचार है कि तुम्हारे शत्रुओं का वध किया जाय, परन्तु मैं अकेला ही सबको नहीं मार सकता क्योंकि वे देवद्रोही दैत्य अत्यन्त बलवान् हैं। अतः तुम सब लोग एक साथ संघबद्ध होकर मेरे आधे तेज से पुष्ट हो युद्ध में उन शत्रुओं को पराजित करो।' जब देवताओं ने बताया कि उन सब के पास दानवों की अपेक्षा केवल आधा ही बल है, तब शिव ने कहा : 'मैं तुम लोगों के आधे तेज से परिपुष्ट हो इन दैत्यों का वध करूँगा।' तदनन्तर देवताओं की स्वीकृति मिलते ही उन सबके आधे तेज को लेकर शिव और अधिक तेजस्वी हो गये। इस प्रकार देव-बल के द्वारा सर्वाधिक बलशाली हो जाने के कारण शङ्कर का उसी समय से 'महादेव' नाम विख्यात हो गया। महादेव ने कहा : 'मैं धनुष-बाण धारण करके रथारूढ़ हो शत्रुओं का वध करूँगा, अतः तुम लोग मेरे लिये रथ और धनुष बाण की खोज करो।' तदनन्तर देवसंघों ने विश्वकर्मा से रथ का निर्माण कराया, और विष्णु, चन्द्रमा तथा अग्नि को उनका बाण बनाया। उस बाण के शृङ्ग अग्नि हुये, उसका भल्ल चन्द्रमा बने, और उसके अग्रभाग में विष्णु स्थित हुये। देवताओं ने पृथिवी को रथ बनाया, और मन्दराचल को उसका धुरा। गङ्गा धुरे का आश्रय, और दिशायें तथा विदिशायें रथ का आवरण बनीं। नक्षत्रों का समूह ईषादण्ड हुआ और कृतयुग ने जूए का रूप धारण किया। वासुकि उस रथ का कूबर बन गये। हिमालय पर्वत अपस्कर तथा विन्ध्य पर्वत उसके आधार-काष्ठ बने। उदयाचल तथा अस्ताचल दोनों को देवताओं ने पहियों का आधारभूत काष्ठ बनाया। समुद्र बन्धन-रज्जु और सप्तर्षि रथ के परिस्कर बने। गङ्गा, सरस्वती, तथा सिन्धु, इन तीन नदियों के साथ आकाश त्रिवेणकाष्ठयुक्त धुरे का भाग हुआ। उस रथ के बन्धन आदि की सामग्री जल तथा सम्पूर्ण नदियाँ थीं। दिन, रात, कला, काष्ठा, और छहों ऋतुयें उस रथ का अनुकर्ष बन गईं। उस रथ में सूर्य और चन्द्रमा को दोनों पहिया बनाकर रात्रि और दिन को पूर्वपक्ष और अपरपक्ष के रूप में प्रतिष्ठित किया गया। धृतराष्ट्र आदि दस नागप्रमुखों ने ईषादण्ड में स्थान ग्रहण किया। द्युलोक को जूए में स्थान मिला। प्रलयकाल के मेघ युगचर्म बने। कालपृष्ठ, नहुष, कर्कोटक, धनञ्जय, तथा अन्य नाग घोड़ों के सर बाँधने की रज्जु बनाये गये। सन्ध्या, धृति, मेधा, स्थिति और संतति सहित आकाश को चर्म बनाया गया। इन्द्र, वरुण, यम तथा कुबेर उस रथ के घोड़े बने। सिनीवाली, अनुमति, कुहू, तथा राका को घोड़ों के जोते का रूप दिया। धर्म, सत्य, तप और अर्थ को बल्गा बनाया गया। रथ की आधारभूमि मन हुआ और सरस्वती देवी रथ के आगे बढ़ने का मार्ग थीं। नाना रंगों की विचित्र पताकायें उस रथ की शोभावृद्धि करने लगीं। वषट्कार घोड़ों का चाबुक हुआ और गायत्री रथ के ऊपरी भाग की बन्धन रज्जु बनीं। महादेव के लिये एक दिव्य कवच तैयार किया गया। मेरुपर्वत रथ के ध्वज का दण्ड बना था। वह रथ क्या था, सम्पूर्ण जगत् के तेज का एकीभूत पुञ्ज था। इस प्रकार रथ निर्मित हो जाने पर शङ्कर ने उस पर अपने प्रमुख अस्त्र-शस्त्र रक्खे और ध्वजा पर नन्दी को स्थापित कर दिया। तदनन्तर ब्रह्मदण्ड, कालदण्ड, रुद्रदण्ड, तथा ज्वर—ये चारों रथ के पार्श्वरक्षक बनकर चारों ओर खड़े हो गये। अथर्वा और अङ्गिरा रथ के चक्र की रक्षा करने लगे। ऋग्वेद, सामवेद और समस्त पुराण रथ के आगे-आगे चलने वाले योद्धा हुये। इतिहास और यजुर्वेद पृष्ठरक्षक बने तथा दिव्यवाणी, और विद्यायें पार्श्ववर्ती बन कर खड़ी हो गईं। स्तोत्र-कवच आदि, वषट्कार तथा ओंकार मुख भाग में स्थित होकर शोभावृद्धि करने लगे। छहों ऋतुओं से युक्त संवत्सर को विचित्र धनुष बना कर अपनी छाया को महादेव ने धनुष की प्रत्यञ्चा बनाया। भगवान् रुद्र ही काल हैं, अतः काल का अवयवभूत संवत्सर ही उनका धनुष हुआ। कालरात्रि भी रुद्र का ही अंश है, अतः उसी को उन्होंने अपने धनुष की अटूट प्रत्यञ्चा बना लिया। विष्णु, अग्नि और चन्द्रमा, ये तीनों बाण बने क्योंकि सम्पूर्ण जगत् अग्नि तथा सोम का स्वरूप और वैष्णव (विष्णुमय) है। भगवान् शङ्कर के आत्मा विष्णु हैं, अतः वे दैत्य शिव के धनुष की प्रत्यञ्चा एवं बाण का स्पर्श सहन नहीं कर सके। महेश्वर ने उस बाण में अपने असह्य और प्रचण्ड कोप को, तथा भृगु और अङ्गिरा के रोष से उत्पन्न क्रोधाग्नि को भी स्थापित कर दिया। आयुधों से घिरे और उस दिव्य रथ में आरूढ़ शिव अत्यन्त सुशोभित होने लगे। उनके पञ्चभूतस्वरूप अङ्गों का आश्रय लेकर ही यह

अद्भुत दिखाई पड़नेवाला चराचर जगत् स्थित एवं सुशोभित है। रथ को सन्नद्ध देख शङ्कर कवच तथा धनुष से युक्त हो चन्द्रमा, विष्णु और अग्नि से प्रगट हुये दिव्य बाण को लेकर युद्ध के लिये उद्यत हुये। उस समय देवताओं ने वायु को हवा करने के कार्य पर नियुक्त किया। जब महादेव रथ पर आरूढ़ होने लगे तब देवताओं, महर्षियों, गन्धर्वों तथा अप्सराओं ने उनकी स्तुति की। जब महादेव ने देवताओं से पूछा कि सारथि कौन होगा, तब देवताओं ने ब्रह्मा के पास जाकर उनसे महादेव के उस दिव्य रथ का सारथि बनने के लिये निवेदन किया। ब्रह्मा ने तदनुसार शिव का सारथि बनना स्वीकार कर लिया। ब्रह्मा ने रथ पर बैठ कर घोड़ों को अपने वश में करने के पश्चात् शिव को भी रथारूढ़ होने के लिये कहा। तब विष्णु, चन्द्रमा, और अग्नि से उत्पन्न दिव्य बाण हाथ में लेकर, महादेव रथ पर आरूढ़ हुये। उस समय देवों आदि ने उनकी स्तुति की। रथ पर आरूढ़ होकर जब महादेव त्रिपुर की ओर प्रस्थित हुये तब नन्दी वृषभ ने भीषण सिंहनाद किया जिसे सुनकर बहुत से तारक नाम वाले दैत्यगण वहीं विनष्ट हो गये। जो दैत्य वहाँ खड़े रह गये वे महादेव से युद्ध के लिये सामने आये। उन्हें देखकर महादेव क्रोध से आतुर हो उठे। फिर तो समस्त प्राणी भयभीत हो उठे। त्रिलोकी और भूमि काँपने लगीं। जब वे वहाँ धनुष पर बाण का संधान करने लगे तब उसमें चन्द्रमा, अग्नि, विष्णु, ब्रह्मा और रुद्र के क्षोभ से अत्यन्त भयंकर निमित्त प्रगट हुये। नारायण ने उस बाण के एक भाग से निकल कर वृषभ का रूप धारण करके शिव के विशाल रथ को ऊपर उठाया। जब रथ शिथिल होने लगा और शत्रु गर्जना करने लगे तब शिव ने भी सिंहनाद किया। उस समय महादेव वृषभ के मस्तक और घोड़ों की पीठ पर खड़े थे। इस प्रकार रुद्र ने दानवों के नगरों को देखा। तब उन्होंने वृषभ के खुरों को चीरकर उन्हें दो भागों में विभक्त कर दिया तथा घोड़ों के स्तन भी काट डाले। तभी से बैलों के दो खुर हो गये और घोड़ों के स्तन नहीं उगते। तदनन्तर भगवान् रुद्र ने धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ा कर उस पर पूर्वोक्त बाण रक्खा और उसे पाशुपतास्त्र से संयुक्त करके तीनों पुरों के एकत्र होने का चिन्तन किया। जब काल की प्रेरणा से तीनों पुर एकत्र हुये तब देवता महेश्वर की स्तुति करने लगे। फिर तो सम्पूर्ण जगत् के स्वामी, भगवान रुद्र ने अपने उस दिव्य धनुष को खींच कर उस पर चढ़े त्रिलोकी के सारभूत बाण को त्रिपुर पर छोड़ दिया। उस श्रेष्ठ बाण के छूटते ही भूतल पर गिरते हुये उन तीनों पुरों का महान् आर्तनाद प्रकट हुआ। भगवान ने उन असुरों को भस्म करके पश्चिमी समुद्र में डाल दिया। इस प्रकार तीनों लोकों का हित चाहनेवाले शिव ने तीनों पुरों तथा उनमें निवास करने वाले दानवों को दग्ध कर दिया। उनके क्रोध से जो अग्नि प्रगट हुई थी उसे भगवान त्रिलोचन ने 'हा-हा' कहकर रोक दिया और उससे कहा: 'तू सम्पूर्ण जगत को भस्म न कर।' तब समस्त देवताओं, महर्षियों तथा तीनों लोकों के प्राणियों ने शिव का स्तवन किया। तत्पश्चात् सब लोग यथास्थान चले गये (८. ३४, १–११८)।"

त्रिपुरान्तक, त्रिपुरान्तकर, त्रिपुरार्दन = शिव (देखिये वस्था०)।

त्रिभुवनविभु = शिव (८. ३७, ३५)।

त्रिभुवनश्रेष्ठ = विष्णु (५. १०, ४३)।

१. त्रिभुवनेश्वर = ब्रह्मा (१२. ५९, २५)।

२. त्रिभुवनेश्वर = इन्द्र (३. २६०, ७; ९. ४८, १०. २९; १३. ८३, ७)।

३. त्रिभुवनेश्वर = विष्णु (कृष्ण) : २. ६८, ४४; ५. १०७, १४; १३. १४७, ६।

४. त्रिभुवनेश्वर (द्वि० °रौ) = अरुण और गरुड (१. ३१, २६)। बहु० °राः = देवगण (१२. २०८, १४ 'देवांस्त्रिभुवनेश्वरान्')। १३. १५०, १३ (रुद्रास्त्रिभुवनेश्वराः)।

त्रिभुवनेश्वरी = दुर्गा (उमा) : ४. ६, १।

१. त्रियुग = कृष्ण : ३. ८६, ५ (द्वि० = कृष्ण और अर्जुन); ५. ६९, ३. ४; १२. ४३, ६।

२. त्रियुग = शिव (१,००० नाम)।

त्रिराव, गरुड की प्रमुख सन्तानों में से एक का नाम है (५. १०१, ११)।

त्रिव्यूह = विष्णु (१२. ३४८, ५७)।

त्रिलोककृत् = ब्रह्मा (१२. १९०, १०; २८२, ४८।

त्रिलोकगा = गङ्गा (१. ९६, १९; १८. ३, ३९)।

त्रिलोकधृक् = विष्णु (१,००० नाम)।

त्रिलोकपथगा = गङ्गा (१२. २९, ६९)।

त्रिलोकराज = इन्द्र (५. ९७, १२)।

त्रिलोकात्मन् = विष्णु (१,००० नाम)।

१. त्रिलोकेश = ब्रह्मा (८. ३४, ७४; १२. २८२, ४०)।

२. त्रिलोकेश = शिव (१४. ८, २८)।

३. त्रिलोकेश = इन्द्र (५. १०४, १९; १२. २२८, १६; २६६, ४७)।

४. त्रिलोकेश = विष्णु (३. ८४, १२५; १३. १४९, ८२ : १,००० नाम)।

१. त्रिलोकेश्वर = विष्णु (१३. ११, ४)।

२. त्रिलोकेश्वर = इन्द्र (१२. ४९, ४)।

त्रिलोचन = शिव (देखिये वस्था०)।

त्रिवर्गमुख्य = धर्म (३. ११९, २१)।

त्रिवर्चक (त्रिवर्चस्.), अङ्गिरा के पुत्र, एक ऋषि का नाम है जिन्होंने चार अन्य ऋषियों के साथ तपस्या करके पाञ्चजन्य नामक अग्नि-स्वरूप पुत्र को जन्म दिया था (३. २२०, १–५)।

त्रिवर्त्मन् = विष्णु (३. १८९, ३४)।

१. त्रिविक्रम = विष्णु (कृष्ण) : १३. १०९, ९; १४७, १०; १४८, २३; १४९, ६९ (विष्णु सहस्रनाम); १६७, ३७।

२. त्रिविक्रम = शिव (१,००० नाम)।

त्रिविक्रमगति = विष्णु (कृष्ण) : ६. ६६, १७।

१. त्रिविष्टप = इन्द्रलोक : १. ३१, ३३; २०७, ३६; २१०, ६; २. ३३, ५३; ६०, ४; ३. ९, ७; २४, २१; ८३, ४. २०५; १००, १८; १०९, ५; १३१, ३३; १३८, २७; ५. ११, ५. ६. ९. १०; १७, १९; ४२, २८; १०२, १५; ६. ८१, १९; ९. ५, ३७. ३८; ४६, १०२; ५३, २१; १२. ६८, ६०; १०५, १९; २२७, ११९; २९८, १४; ३२१, ७९; ३५४, ९; १३. ८६, ३५; ९३, ४४; १४. ३३, ४; १८. १, १. ३. ४।

२. त्रिविष्टप, कुरुक्षेत्र के अन्तर्गत एक तीर्थ का नाम है, जहाँ पापनाशिनी वैतरणी में स्नान करके शिव की पूजा करने से मनुष्य परम गति को प्राप्त होता है (३. ८३, ८४. ८५)।

३. त्रिविष्टप = सूर्य (३. ३, २६)।

४. त्रिविष्टप = शिव (१,००० नाम)।

१. त्रिशङ्कु, एक प्राचीन राजा का नाम है (१. ७१, ३४)। "वे इक्ष्वाकुकुल में उत्पन्न अयोध्या के राजा थे। इनका विश्वामित्र के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध था। इनकी पत्नी का नाम सत्यवती तथा पुत्र का नाम हरिश्चन्द्र था (२. १२. १० के बाद गीप्रे० सं० में दाक्षिणात्य पाठ)। 'त्रिशङ्कुर्बन्धुभिर्मुक्त ऐक्ष्वाकः प्रीतिपूर्वकम्। आवाक्शिरा दिवं नीतो दक्षिणामाश्रितो दिशम्" (१३. ३, ९)। तुकी० १. मतङ्ग।

२. त्रिशङ्कु = शिव (१,००० नाम)।

त्रिशिरस = विश्वरूप, जो त्वष्टा के पुत्र थे : ५. ९, ३. ८. १०. १५. २१. २३. ३८. ४२; ९. ३१, १३ (इनका वध)।

त्रिशीर्ष = शिव (१,००० नाम)।

त्रिशुक्ल = शिव (१,००० नाम)।

त्रिशूलखात, एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से मनुष्य देह त्याग के पश्चात् गणपतिपद प्राप्त करता है। (३. ८४, ११–१२)।

त्रिशूलपाणि = शिव (७. २०२, ४२)।

त्रिशूलपाणेः स्थानम्, एक तीर्थ का नाम है (

त्रिशूलवरपाणि = शिव (१,००० नाम)।

त्रिशूलहस्त = शिव (१४. ८, २७)।

त्रिशृङ्ग, एक पर्वत का नाम है (८. १५, ८; ९. १०, १६)।

त्रिपत्रण, एक महर्षि का नाम है जिन्होंने, दूत के रूप में हस्तिनापुर आते हुए श्रीकृष्ण की परिक्रमा की थी (५. ८३, ६४ के बाद गीताप्रे० सं० में दाक्षिणात्यपाठ)।

त्रिषुवर्चक, एक अग्नि का नाम है (३. २२०, १)।

त्रिसामन् = विष्णु (१,००० नाम)।

त्रिसुपर्ण (वि)—'पञ्चाग्निस्त्रिसुपर्णः षडंगवित् ; (१३. ९०, २९)।

त्रिसौपर्ण (वि०) :— 'सुपर्णो नाम तमृषिः प्राप्तवान्पुरुषोत्तमात् । तपसा वै सुतप्तेन दमेन नियमेन च ॥ त्रिःपरिक्रान्तवानेतत्सुपर्णो धर्ममुत्तमम् । यस्मात्त स्माद्व्रतंह्येतत्त्रिसौपर्णमिहोच्यते ॥', (१२. ३४८, २०. २१)।

त्रिसौवर्ण (म्) = शिव (१,००० नाम)।

त्रिस्थान, एक माहेश्वर तीर्थ का नाम है (१३. २५, १५)।

त्रिस्रोतसी, वरुण की सभा में उपस्थित होने वाली एक नदी का नाम है (२. ९, २३)।

त्रुटि, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १७)।

१. त्रेता, सत्ययुग के बाद आनेवाले द्वितीय युग का नाम है : १. २, ९; ३. ८५, ९० (सर्वं कृतयुगे पुण्यं त्रेतायां पुष्करं स्मृतम); १२१, २० (सन्धिरेष नरश्रेष्ठ त्रेताया द्वापरस्य च); १२५, १४ (सन्धिर्द्वयोर्नरश्रेष्ठ त्रेताया द्वापरस्य च); १४९, ७. २३. २५; १९०, १०; १९१, १४; ५. १३२, १७; १४२, ७. ९. ११. १३. १५; ६. १०, ३. ६. ११; १२. ६९, ८७. ९८. ९९; ९१, ६; १४१, १०. १३ (त्रेताद्वापरयोः सन्धौ तदा दैवविधिक्रमात् । अनावृष्टिरभूद्घोरा लोके द्वादश वार्षिकी). १४; २०७, ४५; २३१, २७ (अन्ये कृतयुगे धर्मास्त्रेतायां द्वापरेऽपरं). २८ (तपः परं कृतयुगे त्रेतायां ज्ञानमुत्तमम); २३२, ३४. ३५; २३८, ७. १४; २६०, ८; ३३९, ८५ (सन्ध्यांशे समनुप्राप्ते त्रेतायाम्); १३. १५८, १० (त्रेताकाले ज्ञानमनुप्रपन्नः)। तुकी० त्रेतायुग।

२. त्रेता = सूर्य (३. ३, २०)।

त्रेतायुग = द्वितीय युग (= त्रेता) : ३. १४९, २६; १८८, २३; १८९, ३ (नारायण का वर्ण पीला होता है); ६. १०, ४; १२. २०७, ३९ (ततस्त्रेतायुगे काले संस्पर्शाज्जायते प्रजा); २३१, १९. २५; २३२, ३२; २६७, ३३ (पादोनेनापि धर्मेण गच्छेत्त्रेतायुगे); ३३६, ५६; ३३९,८४ (त्रेतायुगे भविष्यामि रामो भृगुकुलोद्वहः); ३४०, ८३ (ततस्त्रेतायुगं नामत्रयी यत्र भविष्यति); ३४८, ३८; १४. ४, १७ (कारन्धमः पुत्रस्त्रेतायुगमुखेऽभवत्)। तुकी० त्रेता।

१. त्रैगर्त (त्रिगर्तों का राजा) = सुशर्मा : ४. ३३, ४. ४३; ६. ८७, १०. ११; १०४, ८; ११३, ५२ (प्रस्थलाधिपः); ९. २, ३८ (इसका वध)।

२. त्रैगर्त (वि०)—'अभज्यत बलं सर्वं त्रैगर्तं तद्भयातुरम्', (४. ३३,५०)।

३. त्रैगर्त (बहु० °र्ताः) एक जाति के लोगों = त्रिगर्त (बहु०) का नाम है : ६. १८, १३; ७१, १४; ७. १८, ६. २५; १०७, १८।

त्रैगर्तक (वि०) : ७. १८, ५; १४. ७४, २७. ३१।

त्रैगर्ति (त्रिगर्तराज की पुत्री) = यशोधरा (१. ९५, ३५))

१. त्रैपुर, त्रिपुरा के राजा के लिये प्रयुक्त हुआ है। सहदेव ने इन्हें पराजित किया था (२. ३१, ६०)।

२. त्रैपुर (बहु० राः), एक जाति के लोगों का नाम है (६. ८७,९)।

त्रैबलि, एक ऋषि का नाम है जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित रहते थे (२. ४, १३)।

त्रैय्यम्बक (वि०) : ७. ७, १; ७९, ४ (त्रैयम्बकं बलिम्)।

१. त्रैलोक्यकर्तृ = ब्रह्मा (१२. २८२, २५)।

२. त्रैलोक्यकर्तृ = शिव (५. १८९, ५)।

त्रैलोक्यगोप्तृ = शिव (१,००० नाम)।

त्रैलोक्यनाथ = कृष्ण (३. ४९, २०)।

त्रैलोक्यपति = इन्द्र (१२. २२२, ३७)।

त्रैलोक्यराज—इन्द्र (५. १०५, ९)।

त्रैलोक्येश = इन्द्र (३. २०४, ३३)।

१. त्रैविद्य (तीन वेद) : ३. २०७, ७९ (त्रैविद्य वृद्धाः); १२. १८, ११ (त्रैविद्यवृद्धानाम्); २२६, १४ (त्रैविद्यवृद्धांश्च); २७०, १५ (त्रैविद्यवृद्धाः); १३. १०४, १५४ (त्रैविद्यवृद्धेभ्यः)

२. त्रैविद्य (वि०) : ६. ३३, २०; १२. ६५, ८; ६६, १८; १६१, ९; १३. १४१, ६६।

त्रैशीर्ष (वि०)—'त्रैशीर्षयाऽभिभूतश्च स पूर्वं ब्रह्महत्यया', (५. १०, ४४)।

१. त्र्यक्ष = शिव (देखिये वस्था० भी) : १०. ७, ८; १२. २८१, २५; २८४, ७०. ७५ (सहस्रनाम); १३. १७, १३९ (सहस्रनाम); १४२, ३७; १४३, १।

२. त्र्यक्ष, एक जनपद के लोगों का नाम है जो युधिष्ठिर के लिये भेंट लाये परन्तु द्वार पर ही रोक दिये जाने के कारण रुके रहे (२. ५१, १७)। देखिये १. १९७, ४० भी।

त्र्यक्षन् = शिव (१४. ८, १४)।

१. त्र्यम्बक = शिव (देखिये वस्था०)।

२. त्र्यम्बक = एक रुद्र (१२. २०८, १९; १३. १५०, १२)।

३. त्र्यम्बक = कृष्ण (१२. ४७, ८०)।

त्र्यम्बिकाम्बिकनाथ = शिव (१, ००० नाम)।

त्वष्टाधर, शुक्राचार्य के एक पुत्र का नाम है (१. ६५, ३७)।

१. त्वष्टृ, अदित्य देवताओं में से ग्यारहवें का नाम है (१. ६५, १६)। इनको दसवाँ आदित्य भी कहा गया है (१. १२३, ६७)। इन्होंने कृष्ण और अर्जुन से युद्ध किया (१. २२७, ३४)। इन्द्र की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ७, १४)। इन्होंने इन्द्र के वज्र का निर्माण किया (३. १००, २३. २५)। अर्जुन ने इनका अस्त्र, त्वाष्ट्र, प्राप्त किया (३. १६४, १९)। 'त्वष्टुर्देवस्य तनयो बलवान् विश्वकर्मणः', (३. २८३, ४१)। सुदेष्णा ने द्रौपदी से पूछा कि कहीं वह त्वष्टा की पत्नी तो नहीं हैं (४. ९, १६)। 'त्वष्टा प्रजापतिः', (५. ९, ३. ४४)। 'त्वष्टोवाच', (५. ९, ४५)। इन्द्र ने जब त्रिशिरा का वध कर दिया तब इन्होंने वृत्र का सृजन किया (५. ९, ५७. ५८)। इन्होंने अर्जुन की ध्वजा को अलंकृत किया (५. ५६, ७,)। अर्जुन त्वष्ट्रास्त्र के भी ज्ञाता थे (६. १२१, ४१)। 'त्वष्टुः सुदुर्धरं तेजो येन वृत्रो विनिर्मितः ॥ त्वष्टृपुरा तपस्तप्त्वा वर्षायुतशतं तदा।', (७. ९४, ५३. ५४)। 'त्वष्टेवाद्भुतकर्मकृत्', (७. ९९, ६२)। 'संदधे त्वाष्ट्रमस्त्रं स स्वयं त्वष्टेव मारुतिः', (७. १०८, ३९)। इन्होंने अर्जुन के रथ का निर्माण किया था (८. ६८, २५)। इन्होंने ही ईशान (शिव) के लिये एक अस्त्र का निर्माण किया था जिससे युधिष्ठिर ने शल्य पर प्रहार किया (९. १७, ४५. ४६)। इन्होंने स्कन्द को दो पार्षद, चक्र और अनुचक्र, प्रदान किये (९. ४५, ४०)। 'त्वष्ट्रेव विहितं यंत्रम्', (१२. ३३, २२)। ये नवें आदित्य थे (१२. २०८, १६)। 'त्वष्टुश्चैवात्मजः श्रीमान् विश्वरूपो महायशाः', (१२. २०८, १८)। 'नहुषः पूर्वमालेभे त्वष्टुर्गामिति नः श्रुतम्', (१२. २६८, ६)। शिव को इनके साथ समीकृत किया गया है (१३. १४, ४०८)। ये नवें आदित्य थे (१३. १५०, १५)। 'त्वष्टाधिराजो रूपाणाम्', (१४. ४३, ९)। तुकी० प्रजापति, विश्वकर्मा।

२. त्वष्टृ = सूर्य (३. ३, २६)।

३. त्वष्टृ = शिव (१,००० नाम)।

४. त्वष्टृ = विष्णु (१,००० नाम)।

त्वष्टृपुत्र = विश्वरूप (५. ९, ९)।

१. त्वाष्ट्र = विश्वरूप (५. १६, २०; १२. ३४२, २८. २९. ३३. ४१)।

२. त्वाष्ट्र = वृत्र (५. १६, २८)।

३. त्वाष्ट्र (वि०) : ७. १९, ११; १०८, ३९; १५७, ३४; १८८, ३१; २०१, ७३।

त्वाष्ट्री (त्वष्टा की पुत्री)—'त्वाष्ट्री तु सवितुर्भार्या वडवारूपधारिणी । असूयत महाभागा सान्तरिक्षेऽश्विनावुभौ', (१. ६६, ३५)।

द

दंश, अलर्क नामक कीड़े की योनि में पड़े हुये एक राक्षस का नाम है जो परशुराम की दृष्टि पड़ते ही कीट-योनि से मुक्त हो गया (१२. ३, १९)।

दंष्ट्रिन = शिव : १२. २८४, ९७ (१,००० नाम); १४. ८, २६।

१. दक्ष (प्राचेतस), एक प्रजापति का नाम है (१. १, ३३)। अदिति इत्यादि इनकी तेरह कन्याओं का कश्यप के साथ विवाह हुआ (१. ६५, ११)। "ये ब्रह्मा के दाहिने अँगूठे से और इनकी पत्नी ब्रह्मा के बायें अँगूठे से उत्पन्न हुईं। इन्होंने अपनी पत्नी से पचास पुत्रियाँ उत्पन्न कीं जिन्हें इन्होंने पुत्रिकायें बना लिया। इन पुत्रियों में से दस का धर्म से, सत्ताइस का इन्दु (चन्द्रमा) से, और तेरह का कश्यप से विवाह हुआ (१. ६६, १०-१३)।" 'प्रजापतेस्तु दक्षस्य मनोर्वैवस्वतस्य च', (१. ७५, १)। "प्रचेता के दस पुत्र थे जिनमें से मारिषा के गर्भ से प्राचेतस दक्ष का जन्म हुआ। इन्हीं दक्ष से ये समस्त प्रजायें उत्पन्न हुईं। प्राचेतस दक्ष ने वीरिणी से अपने समान गुणवाले १,००० पुत्र उत्पन्न किये जो सब के सब कठोर व्रत का पालन करनेवाले हुये। इन एक सहस्र दक्ष पुत्रों को नारद ने मोक्षशास्त्र का अध्ययन कराया और परम उत्तम सांख्य-ज्ञान का उपदेश किया। जब ये सब पुत्र विरक्त होकर घर से निकल गये तब दक्ष ने पचास कन्यायें उत्पन्न कीं। इन कन्याओं को दक्ष ने पुत्रिकायें बनाया और इनमें से दस धर्म को, तेरह कश्यप को, तथा सत्ताइस चन्द्रमा को ब्याह दीं (१. ७५, ५-९)।" १. ९५, ७ (ये अदिति के पिता थे); ९९, ८ (दक्षस्य दुहिता···सुरभी); १२३, ५२ (ये अर्जुन के जन्म के समय उपस्थित हुये); २. ११, १८ (ब्रह्मा की सभा में); ३. १३०, २ (इन्होंने सरस्वती के तट पर यज्ञ किया और उस स्थान के लिये यह वर दिया कि वहाँ मरनेवाला स्वर्ग प्राप्त करेगा); १६३, १४ (ये ब्रह्मा के मानस-पुत्रों में सातवें हैं); २२४, ३९ (स्वाहा इनकी पुत्री थी); २३१, ३ (दक्षस्याहं प्रिया कन्या स्वाहा); ५. १०५, १०; ६. ६८, ६ (श्रीकृष्ण को इनके साथ समीकृत किया गया है); ७. २०२, ५२ (शिव ने इनके यज्ञ का विध्वंस किया); ९. ३५, ४५ (इन्होंने अपनी सत्ताइस पुत्रियों का चन्द्रमा से विवाह किया). ५२. ५३. ५७. ५८. ६८. ८०; ३८, २८ (इन्होंने गङ्गाद्वार में यज्ञ किया); ४५, १०; १०. १७, १६; १२. २३, १६. ४५; ४७, १० (उन महर्षियों में एक यह भी थे जो बाणशय्या पर पड़े भीष्म को घेर-कर खड़े हुये); १६६, १७-१८ (इन्होंने साठ कन्यायें उत्पन्न कीं जिन्हें ब्रह्मर्षियों ने पत्नियों के रूप में प्राप्त किया। इन्हीं कन्याओं से सम्पूर्ण प्रजा—मनुष्य, राक्षस, पशु-पक्षी, आदि—उत्पन्न हुये); २०७, १७ (ये ब्रह्मा के सातवें मानसपुत्र थे). १९ (ये ब्रह्मा के अँगूठे से उत्पन्न हुये). २२ (इनकी सन्तानों का वर्णन); २०८, ७ (इनका एक नाम 'क' भी है); २२७, ५० (पृथिवी के प्राचीन शासकों के अन्तर्गत इनका उल्लेख); २८३, २४; २८४, १. २. ३. ४. २०. २२. ३०. ३१. ३६. ५०. ५६. ५८. ६६. ७१ (इन्होंने शिव की स्तुति की). ७२. १८६. १८७. १९०. १९५. १९६. १९७; ३२८, ५१ (यं समासाद्य वेगेन दिशोऽन्तं प्रतिपेदिरे। दक्षस्य दशपुत्राणां सहस्राणि प्रजापतेः); ३३४, ३५ (इक्कीस प्रजापतियों के अन्तर्गत इनकी गणना); ३४२, २५. १०८. १०९. ११०; ३४८, ४९. ५०; १३. १४, ३९७ (शिवलोक में); ७७, ११; ८३, २८ (दक्षस्य दुहिता देवी सुरभी); १४७, २५ (प्राचेतसस्तथादक्षो भवितेह प्रजापतिः); १६०, ११ (शिव ने इनके यज्ञ का विध्वंस किया); १४. ५, ३ (अङ्गराश्चैव देवाश्च दक्षस्यासन्प्रजापतेः); ८८, ३१ (शुशुभे चयनं तच्च दक्षस्येव प्रजापतेः)। तुकी० प्रजापति, प्रचेतस।

२. दक्ष, गरुड की प्रमुख सन्तानों में से एक का नाम है (५. १०१, १२)।

३. दक्ष = शिव (१,००० नाम)।

४. दक्ष, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३५)।

५. दक्ष = विष्णु (१,००० नाम)।

६. दक्ष, एक राजा, सम्भवतः १. दक्ष, का ही नाम है (१३. १६५, ५३)।

दक्षकन्या = कद्रू (१. ६५, १३)।

दक्षक्रतुहर (दक्षयज्ञ के विध्वंसक) : १०. ७, ३; १२. ३४१, २१; १३. १४३, १।

दक्षदुहितृ = स्वाहा (३. २२४, ३९)।

दक्षप्रोक्त-शिवसहस्रनामस्तोत्र—दक्ष ने १००८ नामों से शिव का स्तवन करते हुये शिव की अन्य प्रकार से भी स्तुति की। प्रसन्न होकर शिव ने दक्ष को वरदान दिया और वहीं अन्तर्धान हो गये (१२. २८४, ६९-१८०)। दक्षप्रोक्त-शिव-सहस्रनाम के श्रवण का फल (१२. २८४, १९७)।

दक्षयज्ञनिबर्हण = शिव (७. २०२, ३८)।

दक्षयज्ञविनाश = शिव (३. ३९, ७७)।

दक्षयज्ञविनाशः—"वैशम्पायन ने कहा : प्राचीन काल में दक्ष ने हिमालय के पार्श्ववर्ती गङ्गाद्वार में एक यज्ञ का आयोजन किया। यह स्थान ऋषियों और सिद्धों का निवास और देवताओं, दानवों, गन्धर्वों, पिशाचों, नागों, राक्षसों, आदि से सेवित था। दक्ष के यज्ञ में सभी देवता तथा चतुर्विध प्राणि समुदाय उपस्थित हुये। उस समय महर्षि दधीचि ने देखा कि देवता-दानव आदि तो यज्ञ में उपस्थित हैं परन्तु उनमें शिव नहीं हैं। तब दधीचि ने क्रोधपूर्वक कहा : जिस यज्ञ में भगवान् रुद्र (शिव) का पूजन नहीं होता वह न यज्ञ है और न धर्म। यह यज्ञ भी शिव के बिना यज्ञ कहे जाने के योग्य नहीं है। इसका आयोजन करनेवाले वध तथा बन्धन की दुर्दशा में पड़नेवाले हैं। इस महायज्ञ में अत्यन्त घोर विनाश उपस्थित होने वाला है, किन्तु मोहवश कोई समझ नहीं रहा है।' इस प्रकार उद्गार प्रगट करने के पश्चात् ध्यान लगा कर जब दधीचि ने देखा तो उन्हें भगवान् शङ्कर और पार्वती का दर्शन हुआ। महर्षि नारद भी शिव के पास ही विराजमान थे। तब महर्षि दधीचि को निश्चय हो गया कि सब देवताओं ने एकमत होकर ही शिव को आमन्त्रित नहीं किया है। ऐसा ध्यान आते ही दधीचि यज्ञ से पृथक हो गये। तब दक्ष ने कहा : 'हाथों में शूल और मस्तक पर जटा-जूट धारण करनेवाले बहुत से रुद्र हमारे यहाँ रहते हैं। वे ग्यारह हैं और ग्यारह स्थानों में निवास करते हैं। उनके अतिरिक्त दूसरे किसी महेश्वर को मैं नहीं जानता।' दक्ष का वचन सुनकर दधीचि ने पुनः यज्ञ के विध्वंस हो जाने की चेतावनी दी। तब दक्ष ने कहा : 'समस्त हवि यज्ञेश्वर विष्णु को समर्पित है। विष्णु की कहीं समता नहीं है। मैं उन्हीं को हविष्य का यह भाग समर्पित करूँगा क्योंकि विष्णु ही सर्वसमर्थ, व्यापक और यज्ञभाग अर्पित करने योग्य हैं।' इधर कैलास पर्वत पर देवी उमा अपने पति के यज्ञ में उपेक्षित कर दिये जाने पर अत्यन्त चिन्तित हो उठीं। तब शिव ने उमा को सान्त्वना देते हुये ये कहा : 'तू मुझे नहीं जानती, मैं सम्पूर्ण यज्ञों का ईश्वर हूँ।······यज्ञ में प्रस्तोता लोग मेरी स्तुति करते हैं। सामगान करनेवाले ब्राह्मण रथन्तर साम के रूप में मेरी ही महिमा का गायन करते हैं। वेदवेत्ता विप्र मेरा ही यजन और ऋत्विज यज्ञ में मुझे ही भाग अर्पित करते हैं।' तदनन्तर अपना प्रभाव दिखाने के लिये शिव ने दक्ष-यज्ञ को विनष्ट करने के उद्देश्य से अपने मुख से एक भयंकर और अद्भुत प्राणी को प्रगट किया—वर्णन। शिव ने उस प्राणी को दक्षयज्ञ का विध्वंस करने की आज्ञा दी। उस समय भवानी के क्रोध से प्रगट हुई अत्यन्त भयंकर रूपवाली महाकाली महेश्वरी ने भी अपना पराक्रम दिखाने के लिये सेवकों सहित उस वीर के साथ प्रस्थान किया। शिव के मुख से प्रगट हुआ वह भयंकर और वीर प्राणी शिव के क्रोध का ही मूर्तिमान स्वरूप था। उस वीर के बल, वीर्य, शक्ति, और पुरुषार्थ की कोई सीमा नहीं थी। वह पुरुष वीरभद्र के नाम से विख्यात हुआ।

वीरभद्र ने अपने रोमकूपों से रौम्य नामक गणेश्वरों को प्रगट किया जो रुद्र के समान होने के कारण रौद्रगण कहलाये। ये भयंकर रुद्रगण सहस्रों की संख्या में दक्ष-यज्ञ का विध्वंस करने लगे—वर्णन। उस समय सूर्य का प्रकाश फीका पड़ गया। ग्रह-नक्षत्र, और चन्द्रमा भी निस्तेज हो गये। वीरभद्र ने यज्ञ का सर काट कर अत्यन्त भीषण सिंहनाद किया। तब ब्रह्मा आदि देवता तथा प्रजापति दक्ष ने करबद्ध होकर. वीरभद्र से पूछा कि वह कौन हैं। वीरभद्र ने कहा : 'मैं न तो रुद्र हूँ और न देवी ! तुम्हारा यह यज्ञ देवी पार्वती के रोष का कारण बन गया है, ऐसा जानकर भगवान् शिव कुपित हो उठे हैं।···मेरा नाम वीरभद्र है। रुद्रदेव के क्रोध से मेरा प्राकट्य हुआ है। यह नारी भद्रकाली है जो पार्वती के कोप से प्रगट हुई है। महादेव ने ही हम लोगों को यहाँ यज्ञ का विध्वंस करने के लिये भेजा है। अब तुम लोग भगवान शिव की शरण में जाओ क्योंकि अन्य किसी से प्राप्त वरदान मङ्गलकारक नहीं होता।' वीरभद्र की बात सुनकर दक्ष ने शिव के उद्देश्य से प्रणाम करके इस स्तोत्र से उनकी स्तुति की : 'प्रपद्ये देवमीशानं शाश्वतं ध्रुवमव्ययम्। महादेवं महात्मानं विश्वस्य जगतः पतिम्॥' दक्ष की स्तुति सुनकर महादेव सहसा अग्निकुण्ड से निकल पड़े। और दक्ष को वरदान देने की इच्छा प्रगट की। तब भयभीत दक्ष ने यह वरदान माँगा : 'मैंने दीर्घकाल से महान प्रयत्न करके जो ऐसा यज्ञ-सम्भार एकत्र कर रक्खा था उसमें से जो भस्म या नष्ट कर दिया गया है वह सब मेरे लिये व्यर्थ न हो।' शिव ने दक्ष को तदनुसार वर दिया। तदनन्तर वर पाने के पश्चात् दक्ष ने पृथिवी पर घुटने टेककर शिव को प्रणाम किया और एक हजार आठ नामों द्वारा उन भगवान वृषभध्वज शिव का स्तवन किया (१२. २८४, १–७१)।" देखिये **दक्षप्रोक्त-शिव-सहस्रनामस्तोत्र।**

दक्षयज्ञविनाशन = शिव (७. ९४, ५६; २०२, १०१)।

दक्षयागापहारिन् = शिव (१,००० नाम)।

१. दक्षिण = शिव (१,००० नाम)।

२. दक्षिण = विष्णु (१,००० नाम)।

१. दक्षिणापथ, दक्षिणी भारत के लिये प्रयुक्त हुआ है : २. ३१, १७; ३. ६१, २१. २३; ५. १९, २४; १२. २०७, ४२।

२. दक्षिणापथ (बहु० °थाः), दक्षिणापथ के निवासियों के लिये प्रयुक्त हुआ है, जो दुर्योधन की सेना में सम्मिलित हुये (६. १५, १७)। देखिये बहु० दाक्षिणात्य।

दक्षिणायनमृत्यु, सूर्य के दक्षिणायन होने पर मृत्यु के लिये प्रयुक्त हुआ है (२. ८, ३१)।

दग्धरथ = चित्ररथ (१. १७०, ४०)।

१. दण्ड, मगधराज दण्डधार के भ्राता का नाम है (१. २, २७३)। यह क्रोधहन्ता नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ४५)। यह अपने पिता, विदण्ड, के साथ द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुआ था (१. १८६, १२)। दिग्विजय के समय भीमसेन ने इसे परास्त किया था (२. ३०, १७)। इसका तथा इसके भ्राता, दण्डधार, का अर्जुन ने वध किया (८. १८, १६–१९)।

२. दण्ड, सूर्य के एक अनुचर का नाम है (३. ३, ६८)।

३. दण्ड, एक पाण्डवपक्षीय योद्धा का नाम है जिसका कर्ण ने वध किया (८. ५६, ४९)।

४. दण्ड = शिव (१,००० नाम)।

५. दण्ड = विष्णु (१,००० नाम)।

६. दण्ड, यमराज के दिव्यास्त्र का नाम है जिसका वेग कहीं भी कुण्ठित नहीं होता। इसे यमराज ने अर्जुन को प्रदान किया (३. ४१, २५)।

७. दण्ड, चम्पा के निकट स्थित एक तीर्थ का नाम है जहाँ गङ्गास्नान द्वारा सहस्र गोदान का फल मिलता है (३. ८५, १५)।

१. दण्डक (बहु० °काः), दक्षिणी की एक जाति के लोगों का नाम है जिन्हें दिग्विजय के समय सहदेव ने परास्त किया था (२. ३१, ६६)। एक ब्राह्मण ने दण्डकों के विशाल राज्य को नष्ट कर दिया था (१३. १५३, ११)।

२. दण्डक, एक तीर्थ और वन का नाम है जहाँ स्नान से सहस्र गोदान का फल प्राप्त होता है (३. ८५, ४१)। ३. १४७, ३२; २०६, २७; २७७, ४१; २७९, २६; ९. ३९, ९; १३. १५१, १७।

दण्डकारण्य—देखिये २. दण्डक।

दण्डकेतु, पाण्डवपक्ष के एक योद्धा का नाम है : इसके रथ के घोड़ों का वर्णन (७. २३, ६८)।

दण्डगौरी, एक अप्सरा का नाम है जिसने इन्द्र की सभा में अर्जुन के स्वागतार्थ नृत्य किया था (३. ४३, २९)।

१. दण्डधार, मगध के निवासी एक क्षत्रिय राजा का नाम है जो क्रोधवर्धन नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ४६)। यह द्रौपदी के स्वयंवर के समय उपस्थित हुआ (१. १८६, ७)। दिग्विजय के समय भीमसेन ने इसे और दण्ड को परास्त किया था (२. ३०, १७)। ५. ४, २१; ५. १६६, १७; ८. १८, १. ४. १० (यह मगध का राजा और दण्ड का भ्राता था : अर्जुन ने इसका वध किया)।

२. दण्डधार, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, १०३)। इसने दुर्योधन की रक्षा की (८. ५६, ३६)। उन दस धार्तराष्ट्रों में एक यह भी था जिनका भीमसेन ने वध किया (८. ८४, २)।

३. दण्डधार, पाण्डवों के सहायक एक राजा का नाम है (१. १८६, ७)। पाण्डवों की ओर से इन्हें रणनिमन्त्रण भेजा गया (५. ४, २१), द्रोणाचार्य ने इनका वध किया (८. ६, १३)

४. दण्डधार, एक पाञ्चाल योद्धा का नाम है : इसके घोड़ों का वर्णन (७. २३, ५३)। यह युधिष्ठिर का चक्ररक्षक था और कर्ण ने इसका वध किया (८. ४९, २७)।

५. दण्डधार = शिव (१,००० नाम)।

दण्डनीति = ब्रह्मा द्वारा निर्मित नीतिशास्त्र में वर्णित दण्डविधान विषयक नीतिविद्या (१२. ५९, ७६–७९)। दण्डनीति के गुणों का वर्णन (१२. ६९, ७५–१०५)।

१. दण्डपाणि = अन्तक (५. १६७, १०; ६. ४८, ९०)।

२. दण्डपाणि = शिव (७. २०१, ६५)।

दण्डबाहु, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७३)।

दण्डाख्य, एक तीर्थ का नाम है जो चम्पा क्षेत्र में स्थित था (३. ८५, १५)। देखिये ७. दण्ड भी।

दण्डार्क, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, १६३)।

१. दण्डिन्, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, १०३)।

२. दण्डिन् = यम (१. १८९, १७)।

३. दण्डिन् = शिव : १२. २८४, ८४ (सहस्रनाम). १४५ (सहस्रनाम). १७०; १३. १७, १३१ (सहस्रनाम); १४. ८, २५।

दण्डिमुण्ड = शिव (१,००० नाम)।

१. दत्त, एक ऋषि का नाम है जिन्होंने तपस्या द्वारा महर्षि पद प्राप्त किया था (१२. २९६, १५)।

२. दत्त, एक प्रकार के पुत्र की संज्ञा है जिसे जन्मदाता माता-पिता स्वयं अन्य व्यक्ति को सौंप देते हैं। यह छः प्रकार के अबन्धु-दायादों में से एक है (१. १२०. ३४)

दत्तात्मन्, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३४)।

दत्तात्रेय, एक ऋषि का नाम है जो विष्णु के अवतार माने गये हैं। सहस्रबाहु कार्तवीर्य अर्जुन ने इनकी आराधना करके इससे एक दिव्य कांचन-विमान प्राप्त किया था (३. ११५, १२)। कार्तवीर्य अर्जुन ने इनसे चार दुर्लभ वरदान प्राप्त किये थे (गीता. प्रे० सं० में २. ३८, २९ के बाद दाक्षिणात्य पाठ, पृ० ७९१)। इन्होंने साध्यों को उपदेश दिया (५. ३६, ४–२१)। कार्तवीर्य अर्जुन ने इनकी कृपा से १,००० भुजायें प्राप्त की थीं (१२. ४९, ३६)। ये निमि के पिता और श्रीमत् के पितामह थे (१३.

९१, ४. ५)। इन्होंने कार्तवीर्य अर्जुन को चार वरदान दिये (१३. १५२, ५)। 'दत्तात्रेयप्रसादेन', (१३. १५३, १२)। 'दत्तात्रेयप्रसादाच्च', (१३. १५७, २५)।

दत्तामित्र, सौवीर देश के राजा सुमित्र का नाम है जिनका अर्जुन ने दमन किया था (१. १३९, २३)।

दधिमण्डोदक, एक समुद्र का नाम जो घृतोद सागर के बाद आता है (६. १२, २)।

१. दधिमुख, एक प्रमुख नाग का नाम है (१. ३५, ८; ५. १०३, १२)।

२. दधिमुख, एक वानर का नाम है जो वानरों की एक विशाल सेना लेकर श्रीराम के पास आया (३. २८३, ७)।

दधिवाहनपौत्र—'दधिवाहनपौत्रस्तु पुत्रो दिविरथस्य च। गुप्तः स गौतमेनासीदिक्ष्वाकुलेऽभिरक्षितः ॥', (१२. ४९, ८०)।

दधीच, एक प्राचीन ऋषि का नाम है जिन्होंने इन्द्र के वज्र के निर्माणार्थ अपनी अस्थियाँ प्रदान कीं (१. १३७, १२)। 'धर्मज्ञ दधीचस्य महात्मनः,' (३. ८३, १८६)। 'दधीच इव देवेन्द्रम्', (३. ९२, ६)। 'दधीच इति विख्यातो महानृषिरुदारधीः', (३. १००, ७)। 'दधीचस्याश्रमम्', (३. १००, १३. १८) । 'पश्यन्दधीचं ते दिवाकरसमद्युतिम्', (३. १००, १९)। 'दधीच परमप्रीतः सुरोत्तमांस्तानिदमभ्युवाच', (३. १००, २१)। अलम्बुषा नामक अप्सरा को देखकर इनका वीर्य स्खलित हो गया जिससे सरस्वती नदी से इन्हें सारस्वत नामक पुत्र प्राप्त हुआ (९. ५१, ५ और बाद)। 'ऋतेऽस्थिभिर्दधीचस्य निहन्तुं त्रिदशाद्विषः। तस्माद्गत्वा ऋषि श्रेष्ठो याच्यतां सुरसत्तमाः ॥ दधीचास्थीनि देहीति तैर्वधिष्यामहे रिपून् ।', (९. ५१, २८. २९)। "ब्रह्मा के पुत्र महर्षि भृगु ने तीव्र तपस्या से भरे हुये लोकमङ्गलकारी विशालकाय एवं तेजस्वी दधीच को उत्पन्न किया था। ऐसा प्रतीत होता था मानों सम्पूर्ण जगत् के सारतत्त्व से इनका निर्माण हुआ है। ये पर्वत के समान विशाल और ऊँचे थे। इन्द्र इनके तेज से सदा उद्विग्न रहते थे (९. ५१, ३२–३४)।" दक्षयज्ञ में शिव का भाग न देख कर ये कुपित हो उठे और दक्ष आदि को चेतावनी दी (१२. २८४, १२–२१)। देवताओं के निवेदन पर इन्होंने वज्र-निर्माण के लिये अपनी अस्थियाँ प्रदान कीं जिससे धाता ने वज्र बनाया (१२. ३४२, ३६–४०)। तुक्री० दधीचि।

दधीचि = दधीच : १२. २८४, ११. १६. २१ (दक्षयज्ञ में जब इन्होंने देखा कि शिव को आमन्त्रित नहीं किया गया है तब इन्होंने दिव्य दृष्टि से यज्ञ के विनाश की सम्भावना को देख कर सब को इसकी चेतावनी दी)। 'दधीचिवचनाद्दक्षयज्ञमपाहरत्', (१२. ३४२, १०९)। तुक्री० दधीच।

दनायुस्, दक्ष प्रजापति की पुत्री का नाम है (१. ६५. १२)। इसने विक्षर आदि चार पुत्रों को उत्पन्न किया (१. ६५, ३३)। इसके पुत्रों ने पृथिवी पर विभिन्न राजाओं आदि के रूपों में अवतार लिये (१. ६७, ४१)।

दनु, दक्ष प्रजापति की पुत्री का नाम है जो कश्यप की पत्नी और दानवों की माता हुई (१. ६४, ३२)। यह दक्ष की पुत्री और कश्यप की पत्नी थी (१. ६५, १२)। यह चालीस पुत्रों की माता बनी (१. ६५, २१ : केवल ३२ पुत्रों की ही आगे के श्लोकों में गणना कराई गई है)। 'दनोर्वंशे दानवाः परिकीर्तिताः', (१. ६५, २६) 'दनुपुत्रा महाराज दश दानववंशजाः (१. ६५, २८)। यह ब्रह्मा की सभा में उपस्थित रहती थी (२. ११, ३९) । 'दनोः पुत्रा महाबलाः', (३. ४७, १७) । 'दनोः सुतान्', (१२. ९८, ५०)। 'विप्रचित्तिप्रधानांश्च दानवानसृजद्दनुः', (१२. २०७, २८)।

दनुज (बहु० जाः) = बहु० दानव (१. १९, २३)।

दनुपुत्र (दनु के पुत्र) = बहु० दानव (१. ६५, २८)।

१. दान्त, विदर्भराज भीम के एक पुत्र का नाम है (३. ५३, ९ : 'दान्तं दमनं च)।

२. दान्त = शिव (१,००० नाम)।

दन्तकूर, एक स्थान का नाम है (५. २३, २४ : 'दन्तकूरे कुरूणां दन्ताः क्रोधावेशात् कूरवच्चर्व्यन्तेऽस्मिन्निति दन्तकूरः सङ्ग्रामः तस्मिन् अस्वन् क्षिपन्', नीलकण्ठी)। 'कलिङ्गान् दन्तकूरे ममर्द', (५. ४८, ७६)।

दन्तक्रूर—'दन्तक्रूरं जघान ह', (७. ७०, ५)।

दन्तवक्त्र, एक क्षत्रिय राजा का नाम है जो क्रोधवश संज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ६२)। यह करूष देश का अधिपति था (२. १४, १३)। दिग्विजय के समय सहदेव ने इसे पराजित किया था (२. ३१, ३)। २. ४४, १९; ५. ४, १६।

दन्तवक्र—देखिये दन्तवक्त्र।

दन्ता, कुबेर की सभा में नृत्य करनेवाली एक अप्सरा का नाम है (१३. १९, ४५)।

दन्तिन्, कुबेर की एक सभा में उपस्थित एक व्यक्ति का नाम है (२. १०, ३५)।

दन्तोलूखलिकाः, एक प्रकार के तपस्वियों का नाम है (९. ३७, ४८. ६४; १२. १७, ११; २४४, १२; १३. १४, ५७)।

१. दम, विदर्भराज भीम के पुत्र और दमयन्ती के भ्राता का नाम है (३. ५३, ९)।

२. दम, एक महर्षि का नाम है जो अन्य महर्षियों के साथ भीष्म को देखने आये और कथा-वार्ता सुनकर अन्तर्धान हो गये (१३. २६, ५)।

३. दम = विष्णु (१,००० नाम)।

दमघोषसुत—देखिये शिशुपाल।

दमघोषात्मज—देखिये शिशुपाल।

१. दमन, एक प्राचीन राजा का नाम है (१. १, २२६)।

२. दमन, एक ब्रह्मर्षि का नाम है जिन्होंने विदर्भराज भीम से प्रसन्न होकर उन्हें तीन पुत्र तथा एक पुत्री होने का वरदान दिया (३. ५३, ६. ८)।

३. दमन, विदर्भराज भीम के एक पुत्र का नाम है (३. ५३, ९)।

४. दमन, एक कौरव-योद्धा का नाम है जिसका धृष्टद्युम्न ने वध किया (६. ६१, २०)।

५. दमन = शिव (१,००० नाम)।

६. दमन = विष्णु (१,००० नाम)।

१. दमयन्ती, विदर्भराज भीम की पुत्री, राजा नल की पत्नी, और इन्द्रसेन तथा इन्द्रसेना की माता का नाम है : १. २, १६१; १९९, ५; ३. ५३, ९ (दमन ऋषि के वरदान के फलस्वरूप इसका जन्म हुआ था). १०. १६. २१. २३. २६. ३१; ५४, १. २. ५. ६. ८. १०. २१. २७; ५५, ३. ५. ११. १९; ५६, १३. १८. २४. २५; ५७, २. ८. २२. ३०. ३३. ४०. ४१. ४६ (नल की पत्नी और इन्द्रसेन तथा इन्द्रसेना की माता); ५८, ३. ७; ५९, १२; ६०, १. ८. ११.-२१; ६१, ३. ७. ११. १७. २४. २५. ३०. ३२; ६२, ३. ६. ७. ८. १३. १५. २०; ६३, १. ३१.-३५. ३७; ६४, १३. २५. ३३ (विदर्भराजतनया). ४३. ६०. ६७. ८४. ९१. ९७ (वीरसेननृपस्नुषा). १००. १०५. १११. १२२; ६५, १९. २९. ४३. ५२. ६७. ७५. ७६; ६६, १; ६७, १९; ६८, २. ४. ३१. ३९; ६९, १. ३. ४. ११. १६. १७. २६. २९. ३२. ३५. ५०; ७०, २. १४. २२. २४; ७१, २. ४; ७३, ४. ८. ३२. ३६; ७४, ५. ६. ८. ११; ७५, १. ६. ७. ८. १८. २२; ७६, १. २. ७. ८. १५. २५. २६. ३७. ४१. ४७. ४८. ५२; ७७, २. ४. ९; ७८, ५. १२. १५; ७९, १. २. १०; ३. ११३, २३ (यथा···नलस्य वै दमयन्ती); ५. ८, ५१; ११७, १५। तुक्री० नलोपाख्यानम्, भैमी, भीमनन्दिनी, भीमपुत्रिका, भीमसुता, (३. ६०, २. ७; ६३, १९; ६४, १००. ११०; ७६, ४३), वैदर्भी, विदर्भाधिपतिनन्दिनी, विदर्भराजतनया, विदर्भतनया।

दमयितृ = विष्णु (१,००० नाम)।

दमिन्, एक तीर्थ का नाम है जहाँ ब्रह्मा आदि देवता भगवान् महेश्वर की उपासना करते हैं (३. ८२, ७२)।

दम्भ = शिव (१,००० नाम)।

दम्भोद्भव, एक प्राचीन राजा का नाम है (१. १, २३४)। 'दम्भोद्भवस्य चाख्यानम्', (१. २, २३३)। 'दम्भोद्भवेनासि समोबलेन', (१. ५५, १६)। 'दम्भोद्भवः'''श्रेयसो ह्यवमन्येह विनेशुः', (२. २२, २४)। ५. ९६, ५. २५. २७. २९।

दम्भोद्भवोपाख्यानम्—"पूर्वकाल की बात है, दम्भोद्भव नाम से प्रसिद्ध एक सार्वभौम सम्राट इस सम्पूर्ण अखण्ड भूमण्डल के राज्य का उपभोग करते थे। वह प्रतिदिन प्रातःकाल ब्राह्मणों और क्षत्रियों से पूछा करते थे कि क्या युद्ध में उनसे (दम्भोद्भव से) भी श्रेष्ठ या उनके समान ही कोई और व्यक्ति है। उस समय कुछ ब्राह्मणों ने बार-बार आत्मप्रशंसा करने वाले उन नरेश को मना किया। फिर भी, जब वे प्रतिदिन प्रातःकाल ऐसा ही प्रश्न पूछते रहे तो कुछ ब्राह्मणों ने क्रोध में भर कर उनसे कहा: 'दो ऐसे पुरुषरत्न हैं जिन्होंने युद्ध में अनेक योद्धाओं पर विजय प्राप्त की है, और जिनकी आप समता नहीं कर सकते। उनका नाम नर और नारायण है। वे दोनों महापुरुष गन्धमादन पर्वत पर ऐसी घोर तपस्या कर रहे हैं जिसका वाणी द्वारा वर्णन असम्भव है।' ब्राह्मणों की बात सुनकर राजा दम्भोद्भव उस स्थान पर आये जहाँ नर और नारायण तपस्या कर रहे थे। उन्होंने देखा कि वे दोनों महात्मा भूख और प्यास से दुर्बल हो गये हैं। उनके समस्त अंगों की नस-नाड़ियाँ उभर कर स्पष्ट लक्षित हो रही हैं और वे अत्यन्त कृशकाय हो गये हैं। राजा ने दोनों महात्माओं से युद्ध करने की इच्छा प्रगट की परन्तु उन महात्माओं ने अस्वीकार कर दिया। फिर भी, जब राजा दम्भोद्भव युद्ध करने का आग्रह करते ही रहे तो नर ने हाथ में एक मुट्ठी सींक लेकर कहा: 'युद्ध चाहनेवाले क्षत्रिय! आ युद्ध कर। अपने सारे अस्त्र-शस्त्र ले ले और सेना को भी तैयार कर ले।' राजा ने युद्ध करना स्वीकार कर लिया और सैनिकों सहित नर पर बाण-वर्षा आरम्भ कर दी। परन्तु नर ने ऐषीकास्त्र के प्रयोग द्वारा राजा के अस्त्र-शस्त्रों का निवारण करते हुये सींक के बाणों से ही दम्भोद्भव के सैनिकों की आँखों, कानों और नासिकाओं को बींध डाला। दम्भोद्भव सींकों से भरे समस्त आकाश को देख कर मुनि के चरणों में गिर पड़े और बोले: 'भगवन्! मेरा कल्याण हो।' तब नर ने उनसे कहा: 'आज से तुम ब्राह्मणहितैषी और महात्मा बनो। फिर कभी ऐसा दुःसाहस मत करना।' तदनन्तर राजा दम्भोद्भव उन दोनों महात्माओं के चरणों में प्रणाम करके राजधानी लौट आये और विशेष रूप से धर्म का आचरण करने लगे (५. ९६, ५–३९)।"

दयावास = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

१. दरद, बाह्लीक देश के एक राजा का नाम है जो सूर्य नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ५८)। दरदं स्तुहि बाह्लीकमिमम्', (२. ४४, ८)।

२. दरद (बहु° दाः), एक देश और वहाँ के निवासियों का नाम है जिन्हें अर्जुन ने अपनी दिग्विजय के समय परास्त किया था (२. २७, २३)। ये लोग राजा युधिष्ठिर के लिये भेंट लाये (२. ५२, १३)। ये युधिष्ठिर के राजसूय के समय उपस्थित हुये (३. ५१, २४)। वनवास के समय सुबाहु की राजधानी में जाते समय पाण्डवगण दरद देश में हो कर गये थे (३. १७७, १२)। पाण्डवों की ओर से जिन्हें रण-निमन्त्रण भेजना था उनमें दरदराज का नाम भी था (५. ४, १५)। यह पूर्वोत्तर दिशा में स्थित देश है (६. ९, ६७)। दरद देश के योद्धा दुर्योधन की सेना में सम्मिलित थे (६. ५१, १६)। इन लोगों ने अर्जुन पर आक्रमण किया (६. ११७, ३३)। श्रीकृष्ण ने भी पहले इस देश को जीता था (७. ११, १७)। राम जामदग्न्य ने इनका संहार किया था (७. ७०, ११)। इन लोगों ने अर्जुन पर आक्रमण किया (७. ९३, ४४)। इन लोगों ने सात्यकि पर आक्रमण किया परन्तु सात्यकि ने भी इनका संहार किया (७. ११९, १५. २१; १२१, ४२)। दुर्योधन के सहायकों के रूप में इनका उल्लेख (८. ७३, १९)। ये लोग पहले क्षत्रिय थे परन्तु ब्राह्मणों के साथ ईर्ष्या रखने के कारण शूद्र हो गये (१३. ३५, १७–१८)।

दरि, एक पर्वत का नाम है जिसके अधिष्ठाता देवता कुबेर की सभा में उपस्थित रहते हैं (२. १०, ३२)। मलय और दर्दुर पर्वतों के बहुमूल्य पदार्थ युधिष्ठिर के लिये उपस्थित किये गये (२. ५२, ३४)। यह दक्षिण में स्थित है (३. २८२, ४३)। इसका उल्लेख (१३. १६५, ३२)।

दर्प, अधर्म और श्री के पुत्र का नाम है: 'दर्पो नाम श्रियः पुत्रो जज्ञेऽधर्माद्', (१२. ९०, २६)।

दर्पण = शिव (१,००० नाम)।

दर्पण = विष्णु (१,००० नाम)।

दर्पहन् = विष्णु (१,००० नाम),

दर्भिन्, एक प्राचीन ऋषि का नाम है जिन्होंने कुरुक्षेत्र की सीमा के अन्तर्गत अर्धकील नामक तीर्थ प्रगट किया था। ये इसी तीर्थ में चार समुद्र भी लाये थे (३. ८३, ५४. ५६)।

दर्व (बहु° र्वाः) एक जाति के लोगों का नाम है जो युधिष्ठिर के लिये भेंट लाये (२. ५२, १३)। ६. ९, ५४।

दर्वी, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ५४)।

दर्वीसंक्रमण, एक तीर्थ का नाम है जहाँ की यात्रा करने से अश्वमेध का फल मिलता है (३. ८४, ४५)।

दशार्क, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ५३)।

दर्शप (बहु° पाः) देवों के एक वर्ग का नाम है (१३. १८, ७५)।

दल, इक्ष्वाकुवंशी राजा परीक्षित के पुत्र का नाम है जिनकी माता मण्डूकराज की पुत्री सुशोभना थी (३. १९२, ३८. ५८. ५९. ६०. ६४)।

दशकन्धर = रावण (देखिये वस्था०)।

दशग्रीव = रावण (देखिये वस्था०)। यह वरुण की सभा में विराजमान होता था (२. ९, १४)।

दशज्योतिस्, सुभ्राट के तीन पुत्रों में से एक का नाम है (१. १, ४४)।

दशपार्श्व (बहु° र्श्वाः), एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ५६)।

दशबाहु = शिव (१,००० नाम)।

दशभुज = शिव (१४. ८, ३०)।

दशमालिक (बहु° काः) एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ६६)।

दशरथ, इक्ष्वाकुवंशीय महाराज अज के पुत्र और श्रीराम के पिता का नाम है (३. ९९, ४०. ४२. ४४)। 'लोमपादः'''सखा दशरथस्य', (३. ११०, ४१)। इनके पिता का नाम अज और माता का इलविला था (३. २७४, ६)। इनकी तीन रानियाँ थीं जिनमें से कौसल्या के गर्भ से श्रीराम, कैकेयी से भरत और सुमित्रा से लक्ष्मण और शत्रुघ्न नामक चार पुत्रों का जन्म हुआ (३. २७४, ७. ८)। "श्रीराम के राज्याभिषेक के समय इनकी पत्नी, कैकेयी, ने श्रीराम के लिये वनवास तथा अपने पुत्र भरत के लिये राज्य माँगा। यह वरदान देने के कुछ समय बाद इनकी मृत्यु हो गई (३. २७७, ३. ५. १३. ३०. ३२)।" 'सखा दशरथस्यासीज्जटायुररुणात्मजः', (३. २७९, १)। 'सखा दशरथस्य वै', (३. २७९, २०)। इन्होंने प्रगट होकर सीता की पवित्रता की पुष्टि की और उनसे सीता सहित अयोध्या लौटकर राज्य करने के लिये कहा (३. २९१, १९)। 'विष्णुना वसता चापि गृहे दशरथस्य वै। दशग्रीवो हतश्छन्नं संयुगे भीमकर्मणा ॥', (३. ३१५, २०)। 'दशरथायाह रामायाह-पिता', (१३. ७४, ११)। 'रघुर्नरवरश्चैव तथा दशरथो नृपः,' (१३. १६५, ५१)।

दशरथात्मज = राम (देखिये वस्था०)।

दशलक्षणसंयुक्त = शिव (१,००० नाम)।

दशशतनयन, दशशताक्ष, दशशतेक्षण = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

दशानन = रावण (देखिये वस्था०)

१. दशार्ण = हेमवर्मन् : ५. १९२, ७. ३३

२. दशार्ण (बहु० °र्णाः), एक जाति के लोगों का नाम है जिन्हें पाण्डु ने अपनी दिग्विजय के समय पराजित किया था (१. ११३, २५)। पश्चिम की इस जाति को भीमसेन ने अपनी दिग्विजय के समय पराजित किया था (२. २९, ५)। इन्हें नकुल ने दिग्विजय के समय पराजित किया (२. ३२, ७)। 'त्वं तु जाता मया दृष्टा दशार्णेषु पितुर्गृहे,' (३. ६९, १५)। 'दशार्णा नवराष्ट्राश्च', (४. १, १३)। 'उत्तरेण दशार्णास्ते पञ्चालान् दक्षिणेन च', (४. ५, ३)। 'राजा दशार्णेषु महानासीत् सुदुर्जयः', (५. १८९, ११)। 'उत्तमाश्चदशार्णाश्च', (६. ९, ४१)। दुर्योधन की सेना में ये सैनिक भी थे (६. ५१, १२)। इन लोगों ने भगदत्त पर आक्रमण किया (७. २६, ३५)। इन लोगों ने पाञ्चालों पर आक्रमण किया (८. २२, ३)। युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के समय इनके राजा चित्राङ्गद थे, जिन्हें अर्जुन ने परास्त किया (१४. ८३, ५. ६)।

दशार्णनृप = दशार्णों के राजा : ५. १९२, १७।

दशार्णपति = दशार्णों के राजा : ५. १९१, ८; १९२, २३।

दशार्णराज = दशार्णों के राजा : ५. १८९, २१।

१. दशार्णाधिपति = सुदामन् : ३. ६९, १४।

२. दशार्णाधिपति = हिरण्यवर्मन : ५. १८९, ८. १६; १९१, ४. २७; १९२, १२. १४. २६।

३. दशार्णाधिपति = महाभारत के समय के दशार्णों के अधिपति : ६. ९५, २४. ४०; ७. २६, ३८।

दशार्धहविरात्मक = कृष्ण : १२. ४७, ४२।

१. दशार्ह (बहु० °र्हाः), एक जाति का नाम है : ३. १२०, ५ (सेना); १८३, ३२ (°योधाः). ३५ (°योधैः)। तुकी० बहु० दाशार्ह।

२. दशार्ह = विष्णु (१,००० नाम)।

दशार्हनाथ = कृष्ण : ८. १७, २०।

दशार्हभर्तृ = कृष्ण : ३. १८३, २३।

दशार्हसिंह = कृष्ण : ३. १८३, २२।

दशार्हाधिपति = कृष्ण : ३. २३, १।

दशावर, एक असुर का नाम है जो वरुण की सभा में उपस्थित रहता था (२. ९, १४)।

दशाश्व, इक्ष्वाकु के दसवें पुत्र का नाम है जो महिष्मती पुरी में राज्य करते थे। इनके पुत्र का नाम मदिराश्व था (१३. २, ६. ७)।

दशाश्वमेध, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १४)।

दशाश्वमेधिक, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ६४)।

दशास्य = रावण (देखिये वस्था०)।

दशेयी=सत्यवती (१. १००, ५०; ५. १७४, १)।

दशेरक (बहु० °काः), एक जाति के लोगों का नाम है जिन्हें श्रीकृष्ण ने पराजित किया था (७. ११, १६)। दुर्योधन की सेना में (७. २०, ६)। तुकी० दाशेरक (बहु०)।

दस्यु (बहु० °यवः) : १. ७५, २८; ८५, ४; १०७, ४. ५. ८. ११; १०९, ५; २. २७, १६. २४; ३. १०, १७; १९१, ५; ४. ६, २१; १६, ३१; ५. ४८, ६५. ८२; ७. ७०, १९ (निर्दस्युं पृथिवीं कृत्वा); ११९, ४७; १२१, २१; १५६, २; ८. ६९, ४८; १२. १२, २९; २४, ११. २६; २६, २२; ६०, १४. १७; ६५, १५. १७. १८. २१. २३; ६७, २; ६८, २०; ७३, ८. १०; ७१, ५; ७८, १८. ३५. ३६. ३९; ८६, २८; ८७, २८; ८८, २४; ८९, ८; ९१, ३४; ९७, ८; १००, ३; १०३, ३९; १३२, १; १३३, ११. १२. १५. १७. १९; १३५, १. ३. ९. १०. ११. २२. २४; १३६, २; १४०, १; १४१, ६; १४२, १. २९; १६८, ३१. ३४. ३७. ३८. ४१. ४२. ४६; १७२, ९. २०. २३. २४; १७६, १२; १७७, ३६; ११५, १४. १५; २६७, ५. १०. २१; २९७, २५; ३४२, १९; १३. ४७, ४४; ६०, ४; १६. ४, ४; ७, ४६. ४९. ६०. ६२।

दस्र, अश्विनद्वय का नाम है : 'नासत्यदस्रौ', (१. ३, ५८)। ('नासत्यश्चैव दस्रश्च स्मृतौ द्वावश्विनावपि,' (१२. २०८, १७)। 'नासत्यं चैव दस्रं च भिषजौ', (१२. ३३९, ५३)। 'नासत्यश्चापि दस्रश्च स्मृतौ द्वावश्विनावपि', (१३. १५०, १७ : यहाँ 'दस्र' नहीं वरन् 'दत्त' है)।

दहति, अंश द्वारा स्कन्द को दिये गये पाँच पार्षदों में से एक का नाम है (९. ४५, ३४)।

दहदहा, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २०)।

१. दहन, ग्यारह रुद्रों में से एक नाम है जो स्थाणु के पुत्र और ब्रह्मा के पौत्र हैं (१. ६६, ३)। ये अर्जुन के जन्म के समय उपस्थित हुये (१. १२३, ६९)।

२. दहन=अग्नि (देखिये वस्था०)।

३. दहन, अंश द्वारा स्कन्द को प्रदत्त पाँच पार्षदों में से एक का नाम है (९. ४५, ३४)।

१. दाक्षायणी (दक्षपुत्र)=अदिति : १. ७५, १०। यह इन्द्र की माता है (२. २२४, ५)।

२. दाक्षायणी=सुरभि : १२. १७३, ३।

३. दाक्षायणी=विनता : १. ३१, २४।

४. दाक्षायणी=राजधर्मन् की माता : १२. १७०, २।

५. दाक्षायणी (द्विव०)=कद्रू और विनता : १. २२, ५।

६. दाक्षायणी (बहु०) : ५. १०८, ६; १२. २२७, ६२ (दाक्षायणीपुत्राः प्राजापत्याः)।

दाक्षायण्य=आदित्य : १३. १४७, २६।

१. दाक्षिणात्य (बहु० त्याः) दक्षिण भारत के निवासियों के लिये प्रयुक्त हुआ है। इनके राजा का नाम रुक्मिण था (३. २५४, १२)। भीमसेन को इनसे युद्ध करने के लिये कहा गया (५. ५७, १४)। दुर्योधन की सेना में (५. १६०, १०३; १६१, २१)। इन लोगों ने भीष्म का अनुसरण किया (६. ८७, ६)। कर्ण का अनुसरण किया (७. ७, १६)। श्रीकृष्ण ने इन्हें पूर्वसमय में पराजित किया था (७. ११, १६)। 'दाक्षिणात्याश्च बहवः सूतपुत्रपुरोगमाः,' (७. ११३, ४१)। अर्जुन ने इनका वध किया था (८. ५, ४९)। पाण्ड्यराज ने इनका वध किया (८. २०, ११)। इन्होंने पाञ्चालों पर आक्रमण किया (८. २२, २)। 'वृपला दाक्षिणात्याः', (८. ४५, २८)। इनके वध का उल्लेख (८. ७०, २०. ३३; ९. १, २८)। 'दाक्षिणात्याऽसिपाणयः', (१२. १०१, ५)। देखिये अगला शब्द भी।

२. दाक्षिणात्य (वि०) १. १२१, १२; ३. ११९, १८; ३३७, ३; ५. ३०, २४; १९५, ६; ७. ९३, ३२; १११, २९; ११३, ३७। ऊपर वाला शब्द भी देखिये।

३. दाक्षिणात्य=दाक्षिणात्यों के राजा : २. ५३, ७।

दाक्षिणात्यपति=भीष्मक (५. १५८, २)।

दानपति=अक्रूर (१. २२१, २९)।

१. दानव (बहु० °वाः), देवशत्रुओं के एक वर्ग का नाम है : १. १८, १४ (इन लोगों ने समुद्रमन्थन में भाग लिया). ३०. ३९. ४४. ४६ (दानवदैतेयाः); १९, १ (इन लोगों ने अमृत के लिये देवों से युद्ध किया). २. १०. २० (शक्रं विष्णुर्दानवसूदनम्); ३०, १३ (अजेयं च देवदानवराक्षसैः); ६४, ३८; ६५, ५. ६. ७. २६. २७. २८ (इन्द्रपुत्रा महाराज दशदानव वंशजाः). ३४; ६७, १. ३. ५६. ६२ (विभिन्न दानवों ने पृथिवी पर अंशावतार ग्रहण किया); ६८, १ (देवदानवरक्षसाम्); ७६, ७. १४. २७. ३८. ४१. ७०. ७१; ८०, २७ (सर्वदानवैः); १३५, ३२; १३७, १२ (वज्रं कृतं दानवसूदनम्); १६७, ४७ (देवदानवयक्षाणामीप्सितां देवरूपिणीम्); १७०, ६१ (इन्हें कुरुवंश का इतिहास ज्ञात था); २२५, ९. १३ (सोम ने इन्हें पराजित किया था); २२७, २७ (खाण्डवदाह के समय युद्ध में श्रीकृष्ण ने इनका वध किया था); २२८, १. ७; २. १, ६ (विश्वकर्मा वै दानवानां); ३, २ (इन्होंने बिन्दु सरोवर में एक यज्ञ किया था); ९, १२. १५; ११, ४९; १८, ३ (दानवानां विनाशाय स्थापिता दिव्यरूपिणी); २४, १९ (शक्रो दानवानां जघान नवतीर्नव); ३. १२, १९ (श्रीकृष्ण ने इनका वध किया था); १४, २१; १७, १९; १८, १०;

२०, २८. ३०; २२, ४. ६. २९ (आसेयमक्षं"'दानवान्त वरम्). ३०. ३८; २७, २६ (पूजितं देवदानवैः); ४०, ३. ११. २४; ४१, २० (दानवाश्च महावीर्या ये मनुष्यत्वमागताः). २१ (निवातकवचाश्चैव दानवाः). २२ (अंशाश्च क्षितिसंप्राप्ता देवदानवरक्षसाम्); ४२, १६; ५६, ११ (दैत्यदानवमर्दनम्); ९४, ५. ११ (दानवांश्चैव कलिरप्याविशत्ततः । तान लक्ष्मीसमाविष्टान्दानवान्कलिना हतान्); १००, ३ (दानवा''' कालकेयाः); १०१, ३; १०२, ६. १५; १०५, ७. ९. १३ (कालेय दानवों को देवों ने परास्त किया); १४९, १३ (देवदानवगन्धर्वयक्षराक्षसपन्नगाः । नासन्कृतयुगे तात तदान क्रयविक्रयः); १५४, २३; १५९, २८; १६१, ६ (निहत्य समरे सर्वान् दानवान् मघवानिव); १६३, १९; १६७, ५६; १६८, ७१ (निवातकवचा नाम दानवा). ८४. ८६; १६९, ७. ९. ११. १९. २१; १७०, ३. २८; १७१, ९. ११. २०. ३०; १७२, ४. ८. १६. १७. ३४. ३५ (निवातकवच दानवों का अर्जुन ने वध किया था); १७३, १२ (ये हिरण्यपुर में निवास करते थे). २०. २२. ४५. ५४. ५५. ६१. ७४ (हिरण्यपुर को अर्जुन ने नष्ट किया); १७५, २; १८६, १४; १८८, ४. ७०. १३७; १९३, २३; २०१, ३; २०४, ३; २२३, ३. ५ (इन्होंने देवों को पराजित किया); २२४, ८; २२९, २२ (दानवानां विनाशाय); २३१, ६६. ६९. ७०. ७२. ७९–८१. ८५. ९९. १०१. १०६. १०७. ११२ (देवों के साथ इनका युद्ध); २५१, २१. २९ (इन लोगों ने दुर्योधन को अपने पास बुलाया); २५२, १. १० (अनेक दानव पृथिवी पर अंशावतार ले चुके थे). १३. २७. ३६; २७६, ८ (अनेक देवों, दानवों, और गन्धर्वों आदि ने रावण के वध के लिये पृथिवी पर अवतार लिया); २८१, ३. १०; २९०, १३. २८; २९१, ३१; ३१०, ३६; ४. २३. २७ (वज्री दानवानिव); ३६, ७ (विन्रासयित्वा संग्रामे दानवानिव वज्रभृत्); ४३, ४ (देवदानवगन्धर्वैः पूजितम्, अर्थात गाण्डीव); ४४, १७; ४५, ३७; ४९, १०. २३; ५. ७, २२ (पुरतो देवदानवयोरपि); ११, ७; १४, १८; १५, १८; १६, १७; ४९, १३ (शक्रो विजिग्ये दैत्यदानवान्); ५१. ४२; ९९, १ (पातालोमिति''' दैत्यदानवसेवितम्); १००, १ (हिरण्यपुरमित्येतत् ख्यातं पुरवरं महत्। दैत्यानां दानवानां च मायाशतविचारिणाम्). ३. ७. १८. १९; १२८, ४३. ४५. ४६. ४७ (तान् बध्वा धर्मपाशैश्च स्वैश्च पाशैर्जलेश्वरः । वरुणः सागरे यत्तो नित्यं रक्षति दानवान्); १३०, ४३; १३८, ८ (दानवा घोरकर्माणो निवातकवचाः); १५८, २९. ३०; १६५, २६; १६९, २२ (दानवानां सहस्राणि हिरण्यपुरवासिनाम्); १७२, ४; १७३, १९, ६. १४, २८. ४२; २३, १४; ३४, १४; ५७, ३४ (त्रिदशा दानवानिव); ५८, ६; ५९, ६९ (भीष्मो नाशयेद्देवदानवान्); ६६, ९; ६७, १६; ६९, ३४; ७७, १२ (यथा देवासुरे युद्धे महेन्द्रं प्राप्य दानवान्). ३१; ८३, २८; ९२, १; ९७, ३८; १०२, १८; १०७, ३९; ११९, २३. ५७; ७. ३, २४; ६, ८ (जहीन्द्रो दानवानिव); ७, ४७. ५२; १६, १२. १६; २१, ६५; ५२. ११; ७५, २२ (दानवानां सहस्राणि हिरण्यपुरवासिनाम्); ७९, २४; ८०, ४५; ११९, २७; १२२, ५० (पेतुः'''''पुरायुद्धे यथा दैतेयदानवाः); १२४, २; १४४, २२; १४७, ५५; १४८, ५७ (शतक्रतौ चापि च देवसत्तमे महाहवे जघ्नुषि दैत्यदानवान्); १५१, ८; १५९, ३४ (यथा देवासुरे युद्धे शक्रस्य सह दानवैः). ९०; १६८, २९ (यथेन्द्रभयवित्रस्ता दानवास्तारकामये); १८१, १९; १८५, १८; १८६, २७; १९०, १; १९६, ५; २०२, ८२. १४७; ८. १०, ३४. ३५; १८, ६; १९, १६; ३३, १६. २३. ३६; ३४, २. ४. २३. ६९. ९४. ११४ (शिव ने त्रिपुर का विध्वंस किया). १४५.१४७. १५० (राम जामदग्न्य ने इनका वध किया था); ३५, ३३; ५०, ४९; ५६, ६८ (यादृक्पुरा वृत्तं देवानां दानवैः सह). १०७; ७३, ५७ (पुरा विष्णुरिव हत्वा दैतेयदानवान्); ८७, ३७. ५४. ८८ (ये कर्ण और अर्जुन के युद्ध के समय उपस्थित हुये); ९. ६, ३०; १३, ४६; २५, १५; ३१, ८. १५; ३९, ७; ४३, ४८; ४४, ३०. ४२; ४६, ६७; ४९, १४; ५१, २५. ३६ (दैत्यदानववीराणां जघान नवतीर्नव); १०. ३, २८; ४, १६; १२, १७. ३७; १४, १५; १५, २९; ११. २५, ४९; १२. २, १८; २९, ९७; ३३, २८; ४७, २०. ७४; ६४, ११; १६६, २६. २८. ५४. ५५. ५९. ६२. ६३. ६५ (इन लोगों ने देवताओं से युद्ध किया परन्तु शिव ने खड्ग से इनका वध किया); १८८, ३; २०७, १६. २७. २८; २०९, ७. ८. ९. १०. १२. १४. १९. २०. २२. २५. ३०. ३१ (वराहावतार लेकर विष्णु ने इनका विनाश किया); २२४, ४०; २२७, ७ (देवासुरे युद्धे दैत्यदानवसंक्षये). ५४. ५५; २२८, २८. ४९. ६२. ८१; २८४, ७४. १९२; २८९, ३ (नित्यं वैरनिबद्धाश्च दानवाः सुरसत्तमैः); २९०, १३; ३०२, ३०; ३२७, २२; ३३१, ५९; ३३६, ६०; ३३९, ९० (कृष्णावतार लेकर नारायण इनका वध करेंगे); ३४३, ६२; ३४७, ३०; ३४९, ३० (दैत्यदानवगन्धर्वरक्षोगणसमाकुला). ३१; १३. १४, १४३ (यक्षराक्षससर्पाणां दैत्यदानवयोरपि । वपुर्धारयते देवो भूयश्च बिलवासिनाम). २०५. २०७; १७, १८१ (नास्यं विघ्नं विकुर्वन्ति दानवा यक्षराक्षसाः); १८, ७६; ४०, १७; ८२, १५; ८५, ९; ९८, ४३; १०७, ५४; १४८, ३०; १५०, ७९; १५५, ३. ६. ८. १३ (अगस्त्य ने इन्हें भस्म किया). १७. १८; १५६, २. ३; १५७, १९; १४. ३, ७ (देवाः क्रियावन्तो दानवानभ्यधर्षयन); ९, ३० (अपाकर्षन्दानवान्तरिक्षात्); २६, ११; ४३, १४; ४४, १५; ५९, १८ (कृत्वा नमस्कारं कर्म दानवेष्विव वासवः); १५. ३१, ७ (इन लोगों ने अंशावतार लिया था और इसीलिये महाभारत युद्ध में इनका वध हुआ)। तुकी० बहु० असुर; बहु० दैतेय; बहु० दैत्य; बहु० दानवेय; बहु० दनुज; बहु० दनुपुत्र ।

२. दानव (एक०) : ३. १५७. ५७ (सङ्ख्ये देवदानवयोरिव); ४. २३, ३; ५८, ५१; ६. १०१. ११; ७. ११, ४ (दानवं घोरकर्माणं गर्वा मृत्युमिवोत्थितम् । (वृषरूपधरं बाल्ये भुजाभ्यां निजघान ह); १३५, १४ (महेन्द्रस्य दानवः); १३९, ८२ (सङ्ख्ये देवदानवयोरिव); ८. ६०, ४८ ।

तुकी० अलग-अलग दानवों के नाम :—

* इल्वल : ३. ९८, १९. २० ।
* कैटभ : १२. २२७, ५३ ।
* तारक : १३. ८६, २८ ।
* दीर्घजिह्व : १. ६५, ३० ।
* दुर्जय : १. ६५, २३; ६७, ६२ ।
* नरक : १२. ३३९, ९२ ।
* पीठ : १२. ३३९, ९२ ।
* पुलोमन् : १. ५, ३१. ३२ ।
* बलि : १२. २२३, १३; ३३९, ९४ ।
* मद : १४. ९, ३३ ।
* मय : १. २२९, २; २३४, १८; २. ४८, ९ ।
* महिष : ३. २३१, ९५
* राहु : १. १९, ४. ९ ।
* विप्रचित्ति : ६. ९४, ३१
* विविन्ध्य : ३. १६, २२ ।
* वृत्त : १२. २७९, १३;
* शाल्व : ३. २२, २. २१. २२. २३. ३६. ३७. ४१ ।
* हर : १. ६७, २३ ।
* हिरण्यकशिपु : १३. १४, ७३ ।

३. दानव (द्वि० 'वौः) = मधु-कैटभ : ३. १२, ३९; २०३, १६. २२; १२. ३४७, ३३. ६०. ७४ ।

४. दानव (वि०) : ३. १७३, २४; २३१, ७६; ८. ८७, ७० ।

दानवघ्न = इन्द्र (१४. ९, ३६)

दानवनन्दन = पुलोमन् (१. ५, ३१) ।

दानवपति = बलि (३. २७२, ६७) ।

दानवपुङ्गव = अर्क (१. ६७, ३२) ।

दानवपुर = हिरण्यपुर (३. १७३, ६५)।

१. दानवर्षभ = दीर्घजिह्व (१. ६७, ३९)।

२. दानवर्षभ = विप्रचित्ति (१. ६७, ४)।

दानवर्षि = (बहु०) : ३. १६९, २३।

दानवसूदन = इन्द्र (१. ३४, १४; ३. २२४, २३; ३०२, १३)।

दानवारि = इन्द्र (१२. २८२, १०)।

दानवी (दानवी स्त्री)—शान्तनु ने गङ्गा से पूछा कि वे कोई दानवी तो नहीं (१. ९७, ३१)। कोटिक ने द्रौपदी से पूछा कि कहीं वह दानवी तो नहीं (३. २६५, २)।

१. दानवेन्द्र = बलि (३. २७२, ६४)।

२. दानवेन्द्र = शम्बर (१३. ३६, १९)।

३. दानवेन्द्र = धुन्धु (३. २०२, १७)।

४. दानवेन्द्र = वृषपर्वन् (१. ८१, १०; ८३, ३२)।

५. दानवेन्द्र = वृत्र (१२. २८०, ५. ६. ३४)।

६. दानवेन्द्र (द्वि० °न्द्रौ) = मधु-कैटभ (१२. ३४७, ६५)।

दानवेन्द्रान्तकरण = कृष्ण (१२. ४७, ७३)।

दानवेय (बहु० °याः) = बहु० दानव : ८. ७३, ५८

दानवेश्वर = बलि (१२. २२३, २१)।

दान्त, विदर्भनरेश भीम के पुत्र और दमयन्ती के भ्राता का नाम है (३. ५३, ९)।

दान्ता, अलकापुरी की एक अप्सरा का नाम है जिसने अष्टावक्र के स्वागत में नृत्य किया था (१३. १९, ४५)।

दामग्रन्थि, विराटनगर में अज्ञातवास के समय धारण किया गया नकुल का नाम है (४. १९, ४३; ३१, २१)। तुकी० ग्रन्थिक।

दामचन्द्र, एक पाण्डव योद्धा का नाम है (७. १५८, ४०)।

दामा, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ५)।

१. दामोदर = कृष्ण (देखिये वस्था०)।

२. दामोदर = विष्णु (१,००० नाम)।

दामोष्णीष, युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित एक मुनि का नाम है (२. ४, १३)। इन्होंने हस्तिनापुर जाते हुये श्रीकृष्ण से भेंट की थी (५. ८३, ६४ के बाद गीप्रे० सं० में दाक्षिणात्य पाठ)।

दारद (बहु० °दाः), एक जाति के लोगों का नाम है जो युधिष्ठिर की सेना में सम्मिलित हुये (६. ५०, ५०)।

दारुक, श्रीकृष्ण के सारथि का नाम है : २. २, १६. ३०; ४५, ६०; ३. १९, ६. १३; २०, २३. २४; २१, ४. ५; २२, २८; ४. ४५, १९; ५. ८३, ५९; ८४, २२; ९४, १२; १३१, २९; १३७, ३१; ७. ७९, ७. २१. २२. २७. ३०. ३९. ४१. ४३; ८२, १; ११२, ६०; १४७, ४१. ४५. ४६. ५४. ७९. ८१. ८६; ८. ७२, ५. ६. ७; ९. ६२, ४४; ६३, ३१. ७६; १२. ४६, ३२. ३५; ५३, २१. २२; १४. ५२, १. ५७; १६. ३, ५. ४७; ४, १-४; ५, १. ४; ७, ६। तुकी० दारुकि भी।

दारुकनन्दन=दारुकि (३. १८, ३०)।

दारुकात्मज=दारुकि (३. १८, १२. १३)।

दारुकि, दारुक के पुत्र का नाम है जो प्रद्युम्न के सारथि थे (३. १८, ३. १५; १९, १०)।

१. दारुण, गरुड की प्रमुख सन्तानों में से एक का नाम है (५. १०१, ९)।

२. दारुण (बहु० °णाः) एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ६५)।

३. दारुण=विष्णु (१,००० नाम)

दार्व (बहु० °र्वाः), एक जाति के लोगों का नाम है जिन्हें दिग्विजय के समय अर्जुन ने पराजित किया था (२. २७, १८)। इन लोगों ने अर्जुन पर आक्रमण किया (७. ९३, ४४)। अर्जुन ने युद्ध में इन्हें परास्त किया (८. ७३, १९)। ये पहले क्षत्रिय थे परन्तु बाद में शूद्र हो गये (१३. ३५, १७)।

दार्वातिसार, एक म्लेच्छ जाति का नाम है (७. ९३, ४४)।

दार्वी, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ५४)।

१. दाल्भ्य=बक : २. ४, ११ (बको दाल्भ्यः); ३. २६, ५. २१; २९८, १७; ९. ४०, ३३; ४१, १. ५. ८. १३।

२. दाल्भ्य, उत्तराखण्ड के एक तीर्थ का नाम है (३. ९०, १२)।

३. दाल्भ्य, एक महर्षि का नाम है जिनका बक के साथ उल्लेख है (३. १९३, ४ : 'बकदाल्भ्यौ)।

दाल्भ्यघोष, उत्तराखण्ड के एक तीर्थ का नाम है (३. ९०, १२)।

दाशरथ (वि०) : १२. ८, ३७ : 'दाशरथः पन्था'।

१. दाशरथि=राम (देखिये वस्था०)

२. दाशरथि (द्वि०)=राम लक्ष्मण (३. २७७, २)।

दाशराज, सत्यवती के पालक पिता, एक निषाद का नाम है (१. १००, ४९. ५१)।

१. दाशार्ण=हिरण्यवर्मन : ५. १९०, १२; १९१, १२।

२. दाशार्ण=महाभारत युद्ध के समय के दाशार्ण राजा जिन्होंने भगदत्त के साथ युद्ध किया (६. ९५, ४६)।

दाशार्णक (वि०) : २. २९, ५; ५. १८९, ९. १० (हिरण्यवर्मेति तयो योऽसौ दाशार्णकः स्मृतः). १९; १९०, २१; १९१, ६; १९२, १३।

दाशार्णराज=हिरण्यवर्मा (५. १९२, २९)।

दाशार्णिक (वि०) : ५. १८९, १५।

१. दाशार्ह=कृष्ण (देखिये वस्था०)।

२. दाशार्ह = सात्यकि (देखिये वस्था०)।

३. दाशार्ह (बहु० °र्हाः) एक जाति (= दशार्ह बहु०) के लोगों का नाम है। ये श्रीकृष्ण के अनुगामी थे (१. २०५, २६)। 'दाशार्हनगरी'; (२. १२, ३२)। ये श्रीकृष्ण का अनुसरण करते हैं (५. ७, ३९)। 'दाशार्हाः परिवारास्ते दाशार्णाश्च विशाम्पते', (५. १४०, २४)। 'न हि शैनेय दशार्हा रणे रक्षन्ति जीवितम्', (७. ११०, ९८)। 'भीरूणामसतां मार्गो नैष दाशार्हसेवितः', (७. ११०, ९९)। 'सर्वदाशार्हतुल्यः,' (८. ६५, १४)। 'दाशार्हीं जातमन्यवः', (७. १५९, ३१)।

४. दाशार्ह (वि०)—'दाशार्ही सुधर्मा,' (२. ३, २७)।

दाशार्हकुलवर्धन = कृष्ण (१२. ५२, ९)।

दाशार्हनन्दन = कृष्ण (१. १३२, २७)।

दाशार्हवीर = कृष्ण (५. ९२, २६)।

१. दाशार्ही (दाशार्हराज की पुत्री) = विजया, जो भुमन्यु की पत्नी थी (१. ९५, ३३)।

२. दाशार्ही = सुदेवा जो विकुण्ठन की पत्नी थी (१. ९५, ३६)।

३. दाशार्ही = शुभाङ्गी, जो कुरु की पत्नी थी (१. ९५, ३९)।

दाशेरक (बहु० °काः) एक जाति के लोगों का नाम है जो युधिष्ठिर की सेना में उपस्थित थे (६. ५०, ४७)। दुर्योधन की सेना में इनकी उपस्थिति (६. ५६, ८ : 'दासेरकगणैः')। इन लोगों ने अर्जुन पर आक्रमण किया (६. ११७, ३२ : 'दासेरकगणाश्च')।

दासनीय—'गोवासना ब्राह्मणाश्च दासनीयाश्च सर्वशः', (२. ५१, ५)। देखिये इस श्लोक पर नीलकण्ठी भी।

दासमीय (बहु०), एक जाति का नाम है 'व्रात्यानां दासमीयानां वाह्लीकानामयज्वनाम् ॥ न देवाप्रतिगृह्णन्तिपितरो ब्राह्मणास्तथा ।', (८. ४४, ३३. ३४)। व्रात्यानां दासमीयानामन्नं देवा न भुञ्जते,' (८. ४४, ४६)। 'गोवाह्लीक 'व्रात्यानां दासमीयानां कृतेष्वशुभकर्मणाम्', (८. ४५, २०)। 'दासमीयानां वसातीनां च भारत', (८. ७३, १७)। देखिये दासनीय भी।

दासार्ह = देखिये दाशार्ह

दासी, एक नदी का नाम है (६. ९, ३१)।

दासेयी—देखिये दाशेयी।

दासेरक—देखिये दाशेरक ।

दाहो जतुगृहस्य : १. २, ४३ ।

दिक्पति = महापुरुष (महापुरुषस्तव) ।

दिग्गज (बहु० °जाः), दिशागजों के लिये प्रयुक्त हुआ है (१३. १३२, ७) ।

दिग्भानु = महापुरुष (महापुरुषस्तव) ।

दिग्वासस् = शिव (१३. १४, १०५. १६२. २१७. ३०६; १७, ४२ : सहस्रनाम) ।

१. दिग्विजय—'पर्व दिग्विजयम्', (१. २, ४७. ४८) । 'दिग्विजयोऽत्रैव पाण्डवानाम', (१. २, १३४) ।

दिग्विजयपर्वन्, महाभारत के २४ वें अवान्तरपर्व का नाम है जो सभापर्व के २५-३२ अध्यायों के अन्तर्गत आता है । "धनुष आदि प्राप्त कर लेने के पश्चात् अर्जुन ने युधिष्ठिर से उत्तर दिशा पर विजय प्राप्त करने की आज्ञा ली । तदनन्तर अग्नि से प्राप्त दिव्य रथ पर बैठ कर अर्जुन ने उत्तर दिशा पर विजय प्राप्त की । इसी प्रकार भीमसेन ने पूर्व दिशा, सहदेव ने दक्षिण दिशा, और नकुल ने पश्चिम दिशा को विजित किया । युधिष्ठिर इस अवधि में खाण्डवप्रस्थ में ही रहे (२. २५) ।" अर्जुन द्वारा उत्तर दिशा को विजित करने का विस्तृत वर्णन (२. २६–२८) । भीम द्वारा पूर्व दिशा को विजित करने का विस्तृत वर्णन (२. २९–३०) । सहदेव द्वारा दक्षिण विजय का विस्तृत वर्णन (२. ३१) । नकुल द्वारा पश्चिम विजय का विस्तृत वर्णन (२. ३२) ।

दिति, प्रजापति दक्ष की पुत्री, कश्यप की पत्नी और दैत्यों की माता का नाम है : १. ६४, ३२; ६५, १२. १७ (दितेः पुत्रो हिरण्यकशिपुः स्मृतः); ६७, ५; १९३, ३; २. ११, ३९ (ब्रह्मा की सभा में); ३. ३, २५; १४२, १९; १६५, ७ (स त्वं जघान पूगान् दितेः सुतानां नमुचेर्निहन्ता); १६९, १६; ५. ११०, ८ (अत्र देवीं दितिं सुप्तामात्मप्रसवधारिणीम् । विगर्भामकरोच्छक्रो यत्र जातो मरुद्गणः); ७. ७३, ४९; ८. ६८, १४ (तव कुन्तिपुत्रो जातोऽदितेर्विष्णुरिवारिहन्ता); १२. २०७, २० (प्रजापतेर्दुहितरस्तासां ज्येष्ठाऽभवद्दितिः). २८; ३२८, ५३ (एवमेतेऽदितेः पुत्रामारुताः परमाद्भुताः); १३. १, ५५; १४, २०५ ।

१. दितिज (बहु० °जाः) = दैत्य (बहु०) : १. १९, २३ (नारायण ने दितिजों को पराजित किया); ६७, ३१; ३. ४०, २७; ८२, ९५; ५. ३५, ८; ९७, १८; ७. ६, ७; १२. २०९, १६; १३. १४, ३७८ ।

२. दितिज = हिरण्यकशिपु (३. २७२, ५९) ।

३. दितिज = वृत्र (१२. २८१, ३९) ।

दितिजान्तक = स्कन्द (३. २३२, १७) ।

१. दितिनन्दन = हिरण्यकशिपु (३. २७२, ५७; १२. ३३९, ७१) ।

२. दितिनन्दन = वातापि (३. ९६, ५) ।

१. दिलीप, एक प्राचीन राजा का नाम है जो भगीरथ के पिता थे । 'सत्याङ्गनाभागदिलीपकल्प', (१. ५५, १३) । यम की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ८, १४) । 'राजर्षयश्च बहवो दिलीपप्रमुखा नृपाः'; (३. ४३, १४) । ये अंशुमान के पुत्र और भागीरथ के पिता थे (३. १०७, ६५. ६६. ६९) । 'दिलीपस्य', (५. ९०, १९) । 'दिलीपस्याश्रमे', (५. १८६, २८) । 'दुर्धर्ष दिलीपस्य', (६. ९, ८) । "इन्होंने १०० यज्ञ किये थे । इनके यज्ञों में सोने की सड़कें बनायी गई थीं । इन्द्र आदि देवता इनके यहाँ पधारते थे । समस्त प्राणी इन्हें सत्यवादी मानते थे । जब युद्ध करते हुये ये जल में भी चले जाते थे तो इनके रथ के पहिये वहाँ डूबते नहीं थे । जो लोग इनका दर्शन करते थे वे मनुष्य भी स्वर्गलोक के अधिकारी हो जाते थे (७. ६१) ।" १२.८, ३३; २९, ७१. ७७. ७८; १३. ७६, २७; ९४, ५. २३; ११५, ६८; १६५, ४९ । तुकी० ऐलविल, खट्वाङ्ग

२. दिलीप, एक कश्यपवंशी नाग का नाम है (५. १०३, १५) ।

दिलीपाश्रम, एक तीर्थ का नाम है जहाँ काशिराज की कन्या, अम्बा, ने कठोर तपस्या की थी (५. १८६, २८) ।

दिवःपुत्र, विवस्वान् के बोधक या स्वरूपभूत बारह सूर्यों में से एक का नाम है (१. १, ४२) ।

दिवस्पति = महापुरुष (महापुरुषस्तव) ।

१. दिवस्पृश् = कृष्ण (१२. ४३, १३) ।

२. दिवस्पृश् = विष्णु (१,००० नाम) ।

१. दिवाकर, गरुड़ की प्रमुख सन्तानों में से एक का नाम है (५. १०१, १४) ।

२. दिवाकर = सूर्य (देखिये वस्था०) ।

१. दिविरथ, सम्राट् भरत के पौत्र एवं भुमन्यु के पुत्र का नाम है (१. ९४, २४) ।

२. दिविरथ, दधिवाहन के पुत्र, एक राजा का नाम है जिसके पुत्र को गौतम ने परशुराम के क्षत्रियसंहार से बचा लिया था (१२. ४९, ८१) ।

दिवोदास, काशी के राजा का नाम है जो सुदेव अथवा भीमसेन के पुत्र थे । यम की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ८, १२) । ५. ११६, २२; ११७, १ (महावीर्यो महीपालः काशीनामीश्वरः प्रभुः । दिवोदास इति ख्यातो भैमसेनिर्नराधिपः). ४. १८ (इन्होंने माधवी से प्रतर्दन को उत्पन्न किया). १९. २१; १२. ९६, २१ (अग्निहोत्रावशेषं च हविर्भोजनमेव च । आजह्रे दिवोदासस्ततो विप्रकृतोऽभवत्); १३. ३०, १०. १५. १६. २०. २२. २४. ४६; १६५, ५७ । तुकी० भैमसेनि, काशीश, सौदेव, सुदेवतनय ।

दिवोदासात्मज = प्रतर्दन (१३. ३०, ४६) ।

दिवौकसां पुष्करिणी, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, ११८) ।

दिव्य = कृष्ण (१२. ४७, ४६) ।

दिव्यकर, पश्चिम दिशा के एक नगर का नाम है जिसे नकुल ने दिग्विजय के समय अपने अधिकार में कर लिया था (२. ३२, ११) ।

दिव्यकर्मकृत्, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३५) ।

दिव्यगोवृषभध्वज = शिव (१४. ८, ३०) ।

दिव्यसानु, एक विश्वेदेव का नाम (१३. ९१, ३०) ।

दिव्यात्मन् = कृष्ण (१२. ४७, ७८) ।

दिश, एक नदी का नाम है (६. ९, १९) ।

दिशा, मूर्तिमान उत्तर दिशा के लिये प्रयुक्त हुआ है (१३. १९, १०) ।

दिशाचक्षु, गरुड़ की प्रमुख सन्तानों में से एक का नाम है (५. १०१, १०) ।

दिशां गजः = महापुरुष (महापुरुषस्तव) ।

दिशां पतिः = शिव (१४. ८, १९. २२) ।

१. दिशः = स्कन्द (३. २३२, १२) ।

२. दिशः = विष्णु (१,००० नाम) ।

दीनकृत् = सूर्य (३. ३, ६२) ।

दीनसाधक = शिव (१,००० नाम) ।

दीपक, गरुड़ की प्रमुख सन्तानों में से एक का नाम है (५. १०१, ११)

दीप्त = शिव (१४. ८, २३) ।

दीप्तकीर्ति = स्कन्द (३. २३२, ३) ।

दीप्तकेतु, एक प्राचीन राजा का नाम है (१. १, २३७) ।

दीप्तमूर्ति = विष्णु (१,००० नाम)

दीप्तरोमन्, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३१) ।

दीप्तवर्ण = स्कन्द (३. २३२, ४) ।

दीप्तशक्ति = स्कन्द (३. २३२ , ५) ।

दीप्तसूर्याग्निजटिल = शिव (१, ००० नाम) ।

१. दीप्ताक्ष (बहु० °क्षाः), एक जाति के लोगों का नाम है (५. ७४, १५) ।

२. दीप्ताक्ष = शिव (१४. ८, २३) ।

दीप्तांशु = सूर्य (१. १७१, १७; ३. ३, १८) ।

दीप्ति, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३४) ।

दीप्तोद, एक तीर्थ नाम है जहाँ देवयुग में भृगु ने तपस्या की थी (३. ९९, ६९) ।

१. दीर्घ, मगध के एक राजा का नाम है जिसका राजगृह में पाण्डु ने वध किया था (१. ११३, २७)।

२. दीर्घ = शिव (१,००० नाम)।

दीर्घजिह्व, कश्यप द्वारा दनु के गर्भ से उत्पन्न एक दानव का नाम है (१. ६५, ३०)। इसने काशिराज के रूप में अंशावतार लिया (१. ६७, ३९)।

१. दीर्घजिह्वा, एक राक्षसी का नाम है जिसका इन्द्र ने वध किया (३. २९२, ४)।

२. दीर्घजिह्वा, स्कन्द की अनुचरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २३)।

दीर्घतमस्, एक ऋषि का नाम है। भीष्म ने कहा : "महर्षि उतथ्य की पत्नी का नाम ममता था। जब ममता उतथ्य के वीर्य से गर्भवती थी, और उसके गर्भ में एक ऐसा शिशु था जो गर्भावस्था में ही वेद और उसके छः अंगों का अध्यन कर चुका था, तब उतथ्य के छोटे भ्राता, देवगुरु बृहस्पति ममता के पास समागम के लिए आये। उस समय गर्भस्थ शिशु ने बृहस्पति को लात मारा जिससे उनका वीर्य भूमि पर स्खलित हो गया। इस पर क्रुद्ध हो कर बृहस्पति ने उस शिशु को शाप दिया जिसके कारण उसका अंधे के रूप में जन्म हुआ (तमोदीर्घं प्रवेक्ष्यसि)। दीर्घतमस की पत्नी प्रद्वेषी नाम की एक ब्राह्मणी थी जिससे उन्होंने गौतम तथा अन्य पुत्रों को उत्पन्न किया। अंगों सहित वेदों के ज्ञाता दीर्घतमस ने सौरभेय से गोधर्म का ज्ञान प्राप्त करके उसका पालन आरम्भ किया। इसके फलस्वरूप आश्रम के मुनियों ने इनका परित्याग कर दिया। इनकी पत्नी प्रद्वेषी ने भी इनकी तीव्र भर्त्सना करते हुये कहा कि वह इनका तथा इनके पुत्रों का और अधिक पालन नहीं करेगी। उस समय क्रुद्ध हो कर दीर्घतमस् ने इस मर्यादा की स्थापना की कि पत्नी को यावज्जीवन एक ही पति के प्रति निष्ठा रखनी होगी चाहे वह पति जीवित हो या मृत : 'अद्यप्रभृति मर्यादा मया लोके प्रतिष्ठिता ॥ एक एव पतिर्नार्या यावज्जीवं परायणम्। मृते जीवति वा तस्मिन्नापरं प्राप्नुयान्नरम् ॥' तब प्रद्वेषी ने अपने पुत्रों द्वारा दीर्घतमस् को बँधवा कर गङ्गा में फेंकवा दिया। दीर्घतमस् अनेक राजाओं के क्षेत्र से बहते हुये बलि के देश में पहुँचे, जहां बलि ने इन्हें नदी से बाहर निकाला और इनसे अपनी रानी से पुत्र उत्पन्न करने का निवेदन किया। बलि की पत्नी सुदेष्णा ने इन्हें नेत्रहीन देख कर अपने स्थान पर अपनी एक शूद्रा दासी को इनके पास भेज दिया। उस दासी से इन्होंने काक्षीवत् आदि ग्यारह पुत्र उत्पन्न किये। यतः ये पुत्र स्वयं दीर्घतमस् के थे उनके नहीं, अतः उन्होंने अपने पुत्र के लिये सुदेष्णा को पुनः इनके पास भेजा। उस समय इन्होंने सुदेष्णा का स्पर्श कर के ही कहा कि उसे अङ्ग, वङ्ग, कलिङ्ग, पुण्ड्र, और सुह्म नामक पाँच पुत्र होंगे। इन पुत्रोंके राज्य इन्हीं पुत्रों के नाम से विख्यात हुये (१. १०४)।" इन्द्र की सभा में इनकी उपस्थिति (२. ७, ११)। अन्धेपन के कारण पहले इनका नाम दीर्घतमस् था पर जब इन्होंने केशव के रूप में नारायण की स्तुति कर के पुनः नेत्र प्राप्त कर लिये तब ये गोतम के नाम से विख्यात हुए (१२. ३४१, ५४)। ये पश्चिम दिशा का आश्रय लेकर निवास करने वाले ऋषि हैं (१३. १६५, ४२)। देखिये औतथ्य, गोतम, उतथ्यपुत्र भी।

दीर्घनेत्र = दीर्घलोचन, जिसका भीमसेन ने वध किया था (७. १२७, ६०)।

दीर्घप्रज्ञ, वृषपर्वन नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न एक क्षत्रिय नरेश का नाम है (१. ६७, १६)। उन राजाओं में एक यह भी था जिन्हें पाण्डवों ने रण-निमन्त्रण भेजने का निश्चय किया (५. ४, १२)।

दीर्घबाहु, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, १०५; ११७, १४)। धृतराष्ट्र के उन पुत्रों में एक यह भी था जिनका भीमसेन ने वध किया (६. ९६, २७)। उन धृतराष्ट्र पुत्रों में एक यह भी था जिन्होंने भीमसेन को घेर लिया (७. १२७, ३४)। 'दुर्धर्षं दीर्घबाहुम्', (७. १६४, २०)।

दीर्घयज्ञ, अयोध्या के एक राजा का नाम है जिन्हें भीमसेन ने दिग्विजय के समय वशीभूत कर लिया था (२. ३०, २)।

दीर्घरोम, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, १३)।

दीर्घलोचन, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, १०४; १३८, १९)। धृतराष्ट्र के उन पुत्रों में एक यह भी था जिनका भीमसेन ने वध किया (६. ९६, २६-२७)। अभिमन्यु द्वारा इसका वध (७. ३७, २६. ३०)। भीमसेन द्वारा इसका वध (७. १२७, ६०)। तुको० दीर्घनेत्र भी।

दीर्घवेणु (बहु० °णवः) एक जाति के लोगों का नाम है जो युधिष्ठिर के लिये भेंट लाये (२. ५२, ३)।

दीर्घसत्र, एक तीर्थ का नाम है जहाँ की यात्रा करनेमात्र से व्यक्ति राजसूय और अश्वमेध का फल प्राप्त कर लेता है (३. ८२, १०८. ११०)।

दीर्घायुस्, कलिङ्गराज श्रुतायु के भ्राता और अच्युतायु के पुत्र का नाम है जिसका अर्जुन ने वध किया (७. ९३, २७)।

दुःशल, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९३; ११७, २)। भीमसेन पर आक्रमण करनेवाले धार्तराष्ट्रों में एक यह भी था (७. १२७, ३३)। दुर्योधन के पक्ष के अवशिष्ट योद्धाओं में एक यह भी था (८. ७, १९)।

दुःशला, धृतराष्ट्र और गान्धारी की पुत्री का नाम है (१. ६७, १०५)। इसका सिन्धुराज जयद्रथ से विवाह हुआ (१. ६७, १०९)। इसका जन्म (१. ११६, ५. १८)। इसका जयद्रथ के साथ विवाह हुआ (१. ११७, १४. १८)। युधिष्ठिर ने इसका ध्यान करके ही जयद्रथ को बचाने की आज्ञा दी (३. २७१, ४३; २७२, ६)। ९. ६४, ३६; ११. २२, १३. १६; १४. ७८, २३. २८. ४१. ४५; ८०, ३५ (इसका अल्पायु पौत्र सिन्धुओं का राजा हुआ)।

दुःशलोत्पत्ति—इसके जन्म की कथा। यह जान कर कि गान्धारी को एक पुत्री की भी इच्छा है, व्यास ने मांसपिण्ड को विभाजित करते समय सौ से एक अधिक भाग में विभक्त किया जो सौ पुत्रों के अतिरिक्त एक पुत्री हुआ (१. ११६)।

दुःशासन, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. १, ११०. १५८)। भीमसेन ने इसका रक्तपान किया (१. १, २०४)। १. १, २०६; २, २७६; ६१, १७; ६३, ११९; ६७, ९० (दुर्योधन को छोड़कर दुःशासनादि सब धृतराष्ट्र पुत्र पौलस्त्यों के अंशावतार थे). ९३ (धृतराष्ट्र के १०० पुत्रों की गणना); ९५, ५७ (धृतराष्ट्र के चार प्रमुख पुत्रों के अन्तर्गत इसकी गणना); ११७, २ (धृतराष्ट्र के १०० पुत्रों की गणना); १३८, ६. २०; १४१, १; १४२, ३; १८६, १ (यह द्रौपदी के स्वयंवर में आया); २००, १०; २०४, १०; २. ३५, ५ (युधिष्ठिर के राजसूय के समय इसने भोजन-वितरण की व्यवस्था की); ५८, २५; ६५, ४४; ६६, १०; ६७, २५. २९. ३१. ३४. ३५. ४४. ४५. ५३ (दुर्योधन की आज्ञा पाकर इसने द्रौपदी को सभा में घसीटा); ६८, ३८. ४०. ५५ (इसने द्रौपदी को वस्त्र विहीन करने के लिये उसकी साड़ी खींचा, और भीमसेन ने उसी समय इसका रक्तपान करने की प्रतिज्ञा की). ८९. ९० (इसने द्रौपदी को घसीटा); ७४, २. ४; ७७, २. १९. २०. २९. ४१ (जब कपटद्यूत में पराजित होकर पाण्डव वन जाने लगे तब इसने उन लोगों पर व्यंग किया, और भीमसेन ने भी इसका रक्तपान करने की एक बार और प्रतिज्ञा की); ८०, ३७; ३. १, १४; ४, १६; ७, २. ११. १५; ११, १७ (दुःशासनकरोत्सृष्टविप्रकीर्णशिरोरुहा); १२, ५; २७, ८; ३६, २५; ४४, १०; ४९, ३; ५१, ३०; १२०, १२; २३६, १७. २१; २३८, १३; २३९, २४; २४१, १८; २४२, ७. १२; २४९; १२. २२. २८. ३५; २५१, १०. ११ (जब घोषयात्रा के समय दुर्योधन आदि को गन्धर्वों ने बन्दी बना लिया और पाण्डवों ने उन्हें मुक्त कराया, तब खिन्न दुर्योधन को इसने सान्त्वना दी); २५२, ५०; २५३, १२; २५६, ७ (इसने दुर्योधन के यज्ञ में पाण्डवों को आमन्त्रित करने की आज्ञा दी); २६२, ४. ६. १८; २६३, १६; ४. २१, ७; २६, १३; ३०, २० (विराट् के गोहरण के समय इसने दुर्योधन की सेना को

व्यूहबद्ध किया); ३५, २; ५५, ३७; ६१, ३७. ३८ (अर्जुन से युद्ध किया); ६३, १ (अर्जुन ने इसे पराजित किया); ६६, ५ (इसने दुर्योधन की रक्षा की); ५. २६, १८; २९, ३९. ४५. ५२; ३०, १८; ३१, १६; ३३, १५ (४); ३५, ७६; ४७, ८; ४९, २८; ५५, ६४; ५७, १९. ५९; ५८, ९; ६३, ५; ६६, ५; ७३, १८; ७९, ८; ८२, ३६. ३९; ८६, १९; ९०, ८२; ९१, ५; ९४, ४७; १२४, ४५; १२८, १०. १२. २२. ४८; १२९, ४८; १३०, ३. ३३; १३७, २२; १४१, ४७ (भीमसेन इसका रक्तपान करेंगे); १४२, १०; १४३, ३; १४४, ६; १५३, ८; १५४, १२; १६०, ३. ५. ६७ (दुःशासनस्य रुधिरं पीयताम्). १२३; १६१, १०; १६२, २७ (दुःशासनस्य रुधिरं पाता). ६२ (दुःशासनस्य रुधिरं पीतमद्यावधारय); १६३, १५. ३३. ५४; १६५, १९; १६६, १४; ६. १४, ७०; १५, ११. १२. २०; १८, १० (इसने भीष्म की रक्षा की); ४४, २. १५; ४५, २१; ४८, ११७; ४९, १२; ५१, ३. ८; ६२, १६. २७; ७१, १५; ७६, १८; ७७, ७; ७८, २५ (पाँच केकय राजकुमारों से युद्ध किया); ९५, १४ (भ्रातरः श्रेष्ठा दुःशासनपुरोगमाः); ९७, १. १४. १९; ९८, ३०. ३१. ४९; १०५, २. ७; ११०, १९. २५. २८. ३१. ३२. ३४ (अर्जुन से युद्ध); १११, ५७; ११५, २४; ११७, १३. १५ (अर्जुन ने इसे पराजित किया). ४२. ४६ (अर्जुन ने इसके सारथि और घोड़ों का वध कर दिया); ११८, ६; ११९, ५५, ५९; १२०, २३. २५; ७. ७, १३; १२, ५; ३४, २०; ३७, १६; ३९, २५. २१. २७. २९ (अभिमन्यु से इसका युद्ध); ४०, १. १०. १४. २३ (अभिमन्यु ने इसे पराजित किया); ५१, ६; ७४, ७. १७; ८५, २६. ४४. ५२; ८७, २१; ९०, ५ (इसने अर्जुन पर आक्रमण किया). ७. ३३. ३४ (अर्जुन ने इसे सेनासहित परास्त किया); ९१, १; ९५, ४० (इसने सात्यकि पर आक्रमण किया); ९६, १४; ९८, ५५; ११२, २३; ११६, ४; १२०, १०. ३३. ३८. ३९ (सात्यकि से युद्ध); १२१, १९. २९. ३०. ५८ (सात्यकि ने इसे सेनासहित पराजित किया); १२२, १. २. ५; १२३, १. ६. ७. १०. ११. २१. २४. २५. ३०. ३७ (सात्यकि ने इसे एक बार फिर पराजित किया); १२७, ५८ (भीमसेन पर आक्रमण किया); १३२, १५; १३५, १८. १९; १४०, २२. २४; १४१, १; १४५, २१; १४७, ७१; १५१, २०. ३१; १५६, १२१; १५८, ६०; १६५, ११ (प्रतिविन्ध्य से युद्ध किया); १६८, ३४. ३६. ३८; १७०, १६. ६३; १७४, २; १८२, २०. ३५; १८५, २२. ३३; १८७, २७. ३४; १८८, १. ३. ४ (सहदेव ने इसे पराजित किया); १८९, १. २. ४. ५ (धृष्टद्युम्न ने इसे पराजित किया); १९३, १५; २००, ५२; ८. १, ५; ४, १६ (भीमसेन ने इसका वध किया था); ५, १९; ६, १३; ९, २२. ७०. ७२; १३, १०; २३, १. ५. ८. १६ (सहदेव ने इसे पराजित किया); ३१, २२; ४६, २०. ३५; ४८, ३०. ४५. ५०; ६१, ११. २६. २७. ३३ (धृष्टद्युम्न से युद्ध किया). ६१; ७५, १२; ७८, २. ६१; ८०, २६; ८३ १. ९. १०. ११. १३. १४. १७. १८. २१. २७. ३२. ४१. ५०; ८४, १. ११; ८८, ३१; ९१, २. ७; ९. २, ५१; ४, ३१; ५, १७. ४०; १९, २१; २४, २९; ६०, ४५; ६१, १२ (दुःशासनस्य रुधिरं दिष्ट्यापीतं त्वया); ६४, ३३ (दुःशासनपुरोगांश्च भ्रातॄन्); ६५, १५; १०. १६, ३१ (दुःशासनस्य रुधिरं प्रतीम विस्फुरतो मया); ११. १, १६ (दुःशासनवधं). २७; १४, १६; १५, १३ (अपिबः शोणितं संख्ये दुःशासनशरीरजम्); १८, १९ (एष दुःशासनः शेते शूरेणमित्रघातिना। पीतशोणितसर्वाङ्गो युधि भीमेन पातितः ॥). २७ (दुःशासनः शेते विक्षिप्य विपुलौ भुजौ। निहतो भीमसेनेन सिंहेनेव महागजः). २८ (दुःशासनस्य यत्क्रुद्धोऽपिबच्छोणितमाहवे); १२. ४४, ८ (इसका महल अर्जुन को दिया गया); १३. १४८, ६१; १५. ३, ६; १७, ११. १३; ३१, १०; ३२, ९ (उन मृत योद्धाओं में एक यह भी था जो व्यास के आवाहन पर गङ्गा से प्रगट हुये)। तुकी० भारत, भरतश्रेष्ठ, भारतापसद, धृतराष्ट्रज, कौरव, कौरव्य, कुरुशार्दूल।

१. दुःसह, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है। यह धृतराष्ट्र के उन ग्यारह पुत्रों में से एक था जो महारथी कहे जाते थे (१. ६३, ११९) दुर्योधन को छोड़ कर यह तथा इसके अन्य भ्राता पौलस्त्यों के अंशावतार थे (१.६७, ९०)। धृतराष्ट्र के १०० पुत्रों की गणना के अन्तर्गत इसका उल्लेख (१. ६७, ९३)। १. ११७, २; ४. ५५, ३६; ६१, ३७ (अर्जुन ने इसे पराजित किया); ५. ४७, ९; ५५, ६४; ६६, ७; ६. १८, १०; ६२, १६. २६; ७२, ४; ७७, ७; ७. ३७, १५; ११६, २. ७ (युयुधान से युद्ध); १२०, ११. ३७. ३९; १२७, ३४; १३५, ३० (भीमसेन ने जिन पांच धृतराष्ट्रपुत्रों का वध किया उनमें एक यह भी था); ८. ५, ३२; ११. १९, १९. २०. २१ (गतासुरपि दुःसह)।

२. दुःसह = शिव (१,००० नाम)।

दुःस्वप्ननाशन = विष्णु (१,००० नाम)।

१ दुन्दुभि = कृष्ण (१२. ४३, १३)

२. दुन्दुभि, एक राक्षस का नाम है जिसे भगवान् शङ्कर ने वर दिया। शङ्कर ही इसके विनाश के कारण भी हुए (१३. १४, २१४)।

दुन्दुभिस्वन, क्रौञ्चद्वीप के एक क्षेत्र का नाम है (६. १२, २३)।

दुन्दुभी, एक गन्धर्वी का नाम है जो मन्थरा नामक कुब्जा दासी के रूप में उत्पन्न हुई थी (३. २७६, ९. १०)।

१. दुरतिक्रम = शिव (१,००० नाम)।

२. दुरतिक्रम = विष्णु (१,००० नाम)।

दुराधन, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, २०१)। देखिये दुराधर।

दुराधर, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, १०)।

दुराधर्ष = विष्णु (१,००० नाम)।

दुराहिन् = विष्णु (१,००० नाम)।

दुरावास = विष्णु (१,००० नाम)।

दुरासद, एक राजा का नाम है जिसका केतुमान् ने वध किया (७. १०, ४४)।

१. दुर्ग = विष्णु (१,००० नाम)।

२. दुर्ग = किला या गढ़। दुर्ग छः प्रकार के होते हैं जिसमें मनुष्य दुर्ग को ही सर्वाधिक दुस्तर कहा गया है (१२. ५६, ३५)।

दुर्गम = विष्णु (१,००० नाम)।

दुर्गशैल, शाकद्वीप के एक पर्वत का नाम है (६. ११, २३)।

१. दुर्गा, एक देवी का नाम है (देखिये उमा)। युधिष्ठिर ने देवी दुर्गा की स्तुति की (४. ६, १—२६)। 'देवी दुर्गा त्रिभुवनेश्वरीम्। यशोदागर्भसंभूतां नारायणवरप्रियाम्; (४. ६, १. २)। 'दुर्गात् तारयसे दुर्गे तत् त्वं दुर्गा स्मृता जनैः', (४. ६, २०)। 'शरणं भव मे दुर्गे शरण्ये भक्तवत्सले', (४. ६, २६)। देवी ने युधिष्ठिर को दर्शन देकर उनकी विजय का आश्वासन दिया (४. ६, २७—३५)। 'दुर्गास्तोत्रम्', (६. २३, २)। अर्जुन ने दुर्गा की स्तुति की (६. २३, ४–१६)। देवी ने अर्जुन को दर्शन देकर उनकी विजय का आशीर्वाद दिया (६. २३, १८–२८) उक्त सभी स्थानों पर आये दुर्गा देवी के पर्याय 'उमा' के अन्तर्गत दिये गये हैं।

२. दुर्गा, एक नदी का नाम है (६. ९, ३०. ३३)।

दुर्गाल (बहु० लाः), एक जाति का नाम है (६. ९, ५२)।

१. दुर्जय, महर्षि कश्यप द्वारा दनु के गर्भ से उत्पन्न एक दानव का नाम है (१. ६५, २३)। यह दन्तवक्त्र के रूप में अवतीर्ण हुआ (१. ६७, ६२)।

२. दुर्जय, शारदण्डायनी के पुत्र का नाम है (१. १२०, ४०)

३. दुर्जय, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है जिसे गन्धर्वों ने बन्दी बनाया (३. २४२, १२)। इसने पाँच केकय राजकुमारों से युद्ध किया (६. ७९, ५५)। ७. २५, ४५; १३३, ३८. ४२ (भीमसेन ने इसका वध किया); ८. ५, ३३। तुकी० कुरुवर्धन।

४. दुर्जय, एक राजा का नाम है जिसे रणनिमन्त्रण भेजने के लिये पाण्डवों को द्रुपद ने परामर्श दिया (५. ४, १६)।

५. दुर्जय = शिव (१,००० नाम)।

६. दुर्जय = सुदुर्जय (१३. २, ११. १२)।

७. दुर्जय = विष्णु (१,००० नाम)।

दुर्जया, एक स्थान का नाम है (३. ९६, १)। नीलकण्ठी के अनुसार यह वातापि की मणिमती नगरी का ही दूसरा नाम है।

दुर्दान्त = शिव (१,००० नाम)।

१. दुर्धर, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है जिसका भीमसेन ने वध किया (७. १३५, ३०)। भीमसेन पर आक्रमण करने वाले अनेक धार्तराष्ट्रों में एक यह भी था (८. ५१, ७)।

२. दुर्धर = विष्णु (१,००० नाम)।

१. दुर्धर्ष, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९४; ११७, ३; ७. १६४, २०)। तुकी० दुर्धर्षण

२. दुर्धर्ष = शिव (१,००० नाम)।

दुर्धर्षण, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (७. १२०, ११)।

दुर्निवारण = शिव (१०. ७, ६)।

दुर्मद, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९६; ११७, ५; ६. ७७, ७; ७. १३५, ३०; १५५, ३४. ३५. ३७. ३९. ४०)। भीमसेन पर आक्रमण करनेवाले अनेक धार्तराष्ट्रों में एक यह भी था (८. ५१, ८)।

१. दुर्मर्षण, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है जो ग्यारह महारथी धार्तराष्ट्रों में से एक था (१. ६३, ११९)। १. ६७, ९५; ११७, ३; ५. १६०, १२३; १६१, ४१; ६. ४४, १५; ५९, १३६; ६०, २; ६२, १६. २६; ७९, ५५; ८१, २८; ८४, ४०; ११३, २. ७. ११. २३ (भीमसेन के साथ युद्ध); ११४, ३; ७. २५, ५; ८७, २०; ८८, १०; ८९, १. २ (अर्जुन से युद्ध). ११६, २. ८ (सात्यकि ने इसे बाण से बींध दिया); १३५, ३० (भीमसेन ने इसका वध किया); ८. ५, ३३; ९, ७३; ९, ७३; ९. २६, ४. ९; १२. ४४, १० (इसका महल नकुल को दिया गया)।

२. दुर्मर्षण = विष्णु (१,००० नाम)।

१. दुर्मुख, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है जो दुर्योधन को छोड़कर अन्य भ्राताओं सहित पौलस्त्यों का अवतार था (१. ६७, ९०), १. ६७, ९३. ९५; ११७, ३; १८६, १ (यह द्रौपदी के स्वयंवर में आया); ३. २४२, १२ (गन्धर्वों ने इसे बन्दी बनाया); ४. ३५, ३; ५. ४७, ९; ५५, ६४; ६६, ४; ६. १८, १०; ४४, १५; ४५, २५. २६ (नकुल से युद्ध किया); ४७, २. १२ (अभिमन्यु से युद्ध किया); ६२, १६. २६; ६४, २९ (भीमसेन पर आक्रमण करनेवाले चौदह धार्तराष्ट्रों में एक यह भी था); ७९, ३५. ३८ (श्रुतकर्मा से युद्ध). ५५; १०४, २३; ११०, १४ (घटोत्कच पर आक्रमण किया); १११, ३७. ३८; ७. २०, २७. २८ (धृष्टद्युम्न से युद्ध किया); २५, ४०. ४१ (पुरुजित् से युद्ध किया); ७४, १६; ८५, ११; १०६, १३ (सहदेव से युद्ध किया); १०७, १९. २०. २१. २२ (सहदेव ने इसे पराजित किया); ११६, ४; १२०, ४०; १२७, ३४; १३४, १६. १७. १८. २०. २१. २२ (भीमसेन ने इसका वध किया); १३५, ६; १४७, ९१ (भीमसेन ने जिन ३१ धार्तराष्ट्रों का वध किया उनमें एक यह भी था); १५८, ५९; ८. ५, ३३; ६, २० (इसने जनमेजय पार्वतीय का वध किया था); ११. १९, ७. १०; १२. ४४, १२ (इसका भवन सहदेव को दिया गया) तुकी० कौरव, कुरुमुख्य।

२. दुर्मुख, एक राजा का नाम है जो युधिष्ठिर के सभा-भवन में प्रवेश के समय उपस्थित था (२. ४, २१)।

३. दुर्मुख, एक असुर का नाम है जो वरुण की सभा में उपस्थित रहता था (२. ९, १३)।

४. दुर्मुख, एक पाण्डव योद्धा का नाम है (८. ७३, १०४)।

५. दुर्मुख = शिव (१,००० नाम)।

६. दुर्मुख, एक सर्प का नाम है जो स्वधाम को पधारते समय बलराम के स्वागतार्थ उपस्थित हुआ था (१६. ४, १६)।

१. दुर्योधन, धृतराष्ट्र और गान्धारी के ज्येष्ठ पुत्र का नाम है (१. १, ११०. १३२. १४१. १४५. १७६. २०९; २, १०२. १३६. १३९. १४७. २०९. २१८. २२१. २३२. २३५. २५५. २८७; ६१, ८. ९. ४९. ५२)। इसकी माता का नाम गान्धारी था (१. ६३, ११२)। यह धृतराष्ट्र का सबसे ज्येष्ठ पुत्र था (१. ६३, ११८)। यह कलि के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ८७)। इसे छोड़कर अन्य धृतराष्ट्र पुत्र पौलस्त्यों के अंशावतार थे (१. ६७, ९१)। धृतराष्ट्र के १०० पुत्रों की गणना के अन्तर्गत इसका उल्लेख (१. ६७, ९३)। १. ६७, १५०; ९५, ५७. ६८; ११५, २५. २६ (इसका जन्म भी उसी दिन हुआ जब भीमसेन का; जन्म लेते ही यह गधे के स्वर में रोने लगा जिस पर विदुर ने धृतराष्ट्र को इसका परित्याग कर देने का परामर्श दिया किन्तु धृतराष्ट्र सहमत नहीं हुये); ११७, २ (धृतराष्ट्र के १०० पुत्रों की गणना); १२३, ११ (भीमसेन का भी जन्म उसी दिन हुआ जब इसका); १२६, १७ (धृतराष्ट्रस्य दायादा दुर्योधनपुरोगमाः); १२८, ३०. ३५. ४५. ४८. ५४; १२९, ३. १५. ३२. ४० (इसने भीमसेन को भोजन में विष दिया); १३२, १२ (यह द्रोणाचार्य का शिष्य था; कर्ण और यह पाण्डवों की उपेक्षा करते थे). ६१ (भीमसेन तथा यह गदा चलाने में अत्यन्त निपुण हो गये और एक दूसरे से ईर्ष्या करने लगे). ७८; १३५, ४. ३१ (इसके और भीमसेन के बीच गदायुद्ध की प्रतिस्पर्धा); १३६, ११. १३. १४. १६. २२ (इसने कर्ण का अङ्गराज के रूप में अभिषेक किया); १३७, ९. २०. २४ (इसने पाण्डवों के विरुद्ध कर्ण का पक्ष लिया); १३८, ६. १९. २१ (अपने अर्जुन और दुर्योधन आदि शिष्यों की सहायता से द्रोणाचार्य ने द्रुपद को पराजित किया); १४१, १. २०. ३२; १४२, २. ३. ५. १२. २०; १४३, १; १४४, १. १९; १४८, १४; १४९, ९; १५०, ३ (इसने पुरोचन से वार्णावत नगर में लाक्षागृह बनाकर उसमें पाण्डवों को भस्म कर देने की आज्ञा दी); १६२, ८; १८५, १३ (यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुआ); १८६, १; १८७, १५; १८८, १९; १९०, ९. ३३. ३५; २००, ९. १९. २०. २७; २०१, ४; २०२, १; २०३, ३. ५; २०४, ५; २०५, ११. २९. ३०; २. ३४, ६ (युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में आया); ३५, २. ९; ३७, १२; ४५, ६८; ४६, १२ (दुर्योधनापराधेन). ३३; ४७, १. १४. १६. १८. २०. २१. २२; ४८, १. १३. १८. २२. २३; ४९, २. ३. ४. ६. १२. ४१. ४५. ४७. ५०; ५०, ६. १७ (यह युधिष्ठिर के सभाभवन में भ्रमित होकर त्रुटियाँ करता है और पाण्डवों के वैभव पर उनसे ईर्ष्या करने लगता है; शकुनि इसे पाण्डवों को द्यूतक्रीड़ा के लिये आमन्त्रित करने का परामर्श देता है जिसकी धृतराष्ट्र स्वीकृति देते हैं); ५१, १; ५२, १; ५३, १; ५५, १; ५६, ५. ७. १३; ५८, २४; ५९, २०; ६०, ८; ६२, ३. ४; ६३, १. २. ३. ५; ६४, १ (इसके साथ द्यूतक्रीड़ा में युधिष्ठिर भ्राताओं और पत्नी सहित अपने को भी हार जाते हैं); ६६, १; ६७, २. ४. १२. १३. १८. २३. २५. २७ (यह द्रौपदी को सभाभवन में लाने की आज्ञा देता है); ७०, ३; ७१, ८. २०. २५; ७२, १२ (भीमसेन इसकी जाँघ तोड़ने की प्रतिज्ञा करते हैं); ७४, ३. ५. ७ (यह युधिष्ठिर को एक बार फिर द्यूतक्रीड़ा के लिये आमन्त्रित करने का आग्रह करता है); ७५, २; ७७, २३. २६ (भीमसेन इसके वध की प्रतिज्ञा करते हैं). ३१. ३६. ४३; ८०, ३४. ३६. ३७; ८१, ७. १७. २५; ३. १, १४. १६. १७; ४, १४. १५. २०; ७, १२. १४; ८, २; ९, ३. २३; १०, ३. ५. १८. १९. २९. ३१. ३९ (यह मैत्रेय की उपेक्षा करता है जो भीमसेन द्वारा इसके ऊरुभङ्ग का उल्लेख करते हुये इसे शाप देते हैं); ११, ५५; १२, ५. ७८. १३४ (भीमसेन इसका वध करेंगे); १३, २; २७, ८; ३३, ३. ८१; ३६, १०. १२. १४. १९. २५; ३७, ८; ४९, १. १०; ५०, २; ५१, १४. २९. ३६; ५२, १८. २६ (भीमसेन इसका वध करेंगे); ९९, ३६; ११५, ६. ७. २२; १२०, १०; १४६, ३१; १५१, ११; २३६, २१. ३१; २३७, १; २३८, १. १८; २३९, ५. २२. २९; २४०, १. १८. २३. २६; २४१, १. ४. १७. २७; २४२, २. ४. ६. १३. १४; २४३, ५; २४६, ३. ६. २१. २४; २४७, ३. ९. १६; २४८, १. ६; २४९, १; २५०, १३; २५१, १. १३ (घोषयात्रा के समय दुर्योधन तथा उसके भ्राताओं को गन्धर्वों ने बन्दी

बना लिया, किन्तु जब पाण्डवों ने सब को मुक्त करा दिया तब दुर्योधन अत्यन्त लज्जित होकर प्राणत्याग करने के लिये उद्यत हुआ). २२. ३०; २५२, ३१ (दैत्यों और दानवों ने इसे अपने पास बुला कर बताया कि पूर्व समय में असुरों आदि ने तपस्या द्वारा शिव को प्रसन्न करके अंशावतार लेने का वरदान प्राप्त किया था। वे सब असुर अब अंशावतार ले चुके हैं और युद्ध में इसकी सहायता करेंगे); २५२, ३८ (हस्तिनापुर लौटता है); २५३, १७ (कर्ण दिग्विजय करके समस्त भूमण्डल को इसका करद बनाता है); २५५, १. २; २५६, ९; २५७, १९ (यह वैष्णव यज्ञ करता है); २५८, १; २६२, ३ (धार्तराष्ट्रदुरात्मानः सर्वे दुर्योधनादयः). ६. ९. ११. २४. २८ (यह दुर्वासा मुनि को प्रसन्न करके उन्हें पाण्डवों को त्रस्त करने के लिये भेजता है); ३०९, १७; ३१३, २२; ४. १, १; २२, ३४; २५, ८; २६, १; ३०, ३. १९; ३५, १; ३६, ६; ३८, ८. १४; ३९, १४. १५; ४७, १. २०; ४८, २१; ४९, २१; ५१, १६. १७. १९. २२; ५२, १५; ५३, १९; ५४, १. २. ५; ५५, १; ६३, १; ६५, ५. ११. १४. १७. १८; ६६, ३. ४. ५. २३. २४. २७; ६८, ८. ४१. ७४; ६९, ५ (जब इसने विराट की गायों का हरण किया तब अर्जुन ने इसे पराजित किया); ५. १, १३. २३; २, १. ४. १३; ४, १. ५. ९. २६; ५, १०; ७, ११. २३. २४. २९. ३४ (इसने अपने लिये नारायणी सेना का वरण किया); ८, ७. ८. ११. १५. १६. १८. २०. २२. २३. ३९. ४० (इसने शल्य को सेना सहित अपनी ओर सम्मिलित कर लिया); १८, १४. १८. २५; १९, १७. १८. २७ (इसने ग्यारह अक्षौहिणी सेना एकत्र की); २०, १३; २१, ८. १०. १२. १४; २२, ७. ८. ३४; २६, २३; २७, २५; २९, ५१; ३१, १२; ३३, १५ (४); ३५, ७६; ३६, ७०. ७४; ३८, ४६; ३९, ५. ३१; ४०, ३१; ४७, ९; ४८, २. ६२. ९४; ४९, १. २४. ३२; ५१, ११; ५२, १४; ५४, १६; ५५, १. ३४. ४०; ५६, १. ६; ५७, १४. १९. ३६. ५७. ५९; ५८, २. १०. १९; ६०, ४. ५; ६२, १४. १८; ६३, १; ६४, २३; ६५, १; ६७, १; ६९, ६. ७; ७२, ८३; ७३, २३. २९. ३५. ४२; ७४, २. ८. १०. १८. २०; ७५, १३; ८१, ५; ८२, ८. ३१; ८३. १३; ८५, २. १२. १७; ८६, १४. १९. २१; ८७, १६; ८८, १. १२. १७; ८९, ३; ९०, ६०. ८२. १०५; ९१, १. ६. ११. १२. ३३; ९२, २२. २४. २६; ९३, ९. १४; ९४, ७. १७. ३४. ४८; ९५, ९; ९७, १ (कण्व ने इसे मातलीयोपाख्यान सुनाया); १०५, ३८; १२४, ३. ६. ७. ८; १२५, १. ९. १८. १९. २२. २३. २६; १२६, १; १२७, १; १२८, १. २२. ४८. ५०; १२९, ५. १६. १९. २०; १३०, ३. ३२. ३३. ४०. ४१; १३१, १; १३७, २८; १३८, १; १४१, १३. १५. २२. ४९; १४२, २०; १४३, ३. ५. ३८; १४७, ७. १६; १४८, १. १९. २१. २८. ३१; १४९, १. २; १५३, ३. ८; १५४, ३; १५५, १. २९. ३०; १५७, २९. ३३ (यह बलराम का शिष्य रह चुका था); १५८, ३६; १५९, ६. ८; १६०, २. ४ (इसने उलूक को पाण्डवों के पास भेजा); १६१, २; १६२, २०. ४८; १६३, १; १६४, ५; १६५, १ (मे मन्दाः पुत्रा दुर्योधनादयः). ६. १२; १६८, १२. १९ (भीष्म ने इसे दोनों सेनाओं के रथियों और महारथियों का परिचय बताया); १७३, १. ३ (भीष्म ने इसे अम्बा की कथा सुनाया); १८८, १ (भीष्म ने इसे शिखण्डी की कथा सुनाया); १९२, ७० (कौरव्यो राजा दुर्योधनस्तदा); १९३, १५; १९४, ३; १९५, १. ९. १२. १७; ६. १, १५; ९, १. ३; १२, ४९; १४, २३. ३३. ६३. ६९. ७६; १५, १. ११; १६, १८. २०; १७, २६ (इसकी ध्वजा पर एक मणिमय गज स्थित था); १९, १०; २०, ७; २५, २; ४३, ९२; ४४, १५; ४५, १९; ४८, ३८. ४५. ६०; ४९, ११. २१. २२; ५०, १; ५१, १५; ५२, ३. १३. १४. २५. ३४. ४०; ५३, ३७; ५५, १४; ५६, ६; ५७, ३७; ५८, १४. १६. १७ (इसने घटोत्कच और भीमसेन से युद्ध किया जिसमें भीमसेन के प्रहार से आहत होकर मूर्च्छित हो गया). २८. २९; ५९, ११०. १११. १३२; ६०; २. २३; ६२, ५. १६. २५. ३२. ३४; ६३, १; ६४, ३. ५. ७. १६. २६. ८६; ६५, १२. २९. ३१; ६७, १ (भीष्म ने इसे श्रीकृष्ण की महिमा बताया); ६९, १७; ७०, २८; ७१, २२; ७२, ४; ७३, १७; ७४, ५. ३४; ७५, १८. २८; ७६, २४; ७७, १. ६. ६७; ७८, १. ५. ७. ८. १९. २६; ७९, १. १७. १८. १९; ८०, ७. १२; ८१, १९. २६; ८२, ३; ८४, १८; ८५, ११. १७; ८६, ४०. ४१. ४८. ४९; ८७, ३. १२. १३; ८८, ११. ३१. ३६; ८९, ६. १९; ९०, ४८; ९१, ९. १३. १८. २०. २४. २५. ३१ (घटोत्कच से युद्ध करता है); ९२, ८. १३. १९. २५. २८; ९३, १; ९४, १. ११. २०. ४४; ९५, १. ९. ८२; ९६, ७; ९७, १. ३. १४. ४३; ९८, ४. २८. ३०. ४३. ४७; ९९, ६; १००, १. २३; १०२, ९. २३. ३९; १०३, ३९. ४२; १०४, ९; १०५, २. ११. २५; १०७, ४६; १०९, १५. २५; १११, १५; ११३, ५०; ११४, ३०; ११५, २७; ११६, २. ३ (अभिमन्यु से युद्ध करता है); ११९, ११२; १२०, २१. ५९; १२१, ३७. ३८. ३९; १२२, २४. २६; ७. १, ३९; ४, ७. ९. १०. ११. १२. १४. १७; ५, १. ५. २१; ६, १. २. १३; ७, ६ (द्रोणाचार्य को अपनी सेना का सेनापति बनाया); १०, १०. १९. ६१; ११, ४०; १२, ५. ९. ३१; १३, ७; १६, ५०; १७, २; २०, ५; २२, ५. १०. ११. २९; २४, ८. १२. १३; २५, ३; २६, १०. १४; ३०, ३१; ३२, ४. ५. ६९; ३३, ५; ३४, १९; ३७, १. ७. १८. २६; ३९, ५. १५. २१; ४०, २३; ४५, १८. २८. २९; ४६, ३. ६. ९. १८ (इसके पुत्र, लक्ष्मण, का अभिमन्यु ने वध किया); ४८, १६; ५१, २०; ७४, ७. १३. २१; ७९, २२; ८५, ५. २२. २३. ४३. ४५. ५२; ८६, ६. ९; ८७, २६; ९३, ३२; ९४, २७ (द्रोणाचार्य ने इसे एक दुर्जेय कवच पहनाया); ९५, १; १००, २६. ३५; १०१, ३७. ४०. ४२; १०२, १. २८. ३४; १०३, ९. १६. २५. ३१; १०४, १६. २२; १०५, ३४; ११२, ३२. ३८; ११४, २९. ५४; ११५, १६; ११६, ५. २०. २४; ११९, ३१. ३५; १२०, १०. ३१. ३७. ४०; १२१, ११. १३; १२४, २५. २६. ३०; १२५, ७६; १२८, ४७. ५१. ५२. ५३. ५४; १३०, २५. २९. ३२. ३६. ३८ (युधामन्यु और उत्तमौजा से युद्ध करता है); १३१, १२; १३२, ३; १३३, ९. ३७; १३४, १६. १७; १३५, ३. ४. ६; १३६, १८; १३७, १७. २०. ४१; १४१, २४; १४५, ९. ११. २५. ४२. ५५. ७९; १४६, ७५; १४७, ६९; १४८, २२; १५०, १२; १५१, २. ६. १३. ४०; १५२, १. २; १५३, ११. ३० (युधिष्ठिर ने इसे पराजित किया); १५४, १. ३४; १५५, २. ४. २०. ३८; १५६, २२. ११६. ११८; १५८, १. ३३. ५९. ६८. ७०; १५९, १०. १३. २६. ४१. ६७. ८३. ८६; १६०, १. १७; १६१, २; १६३, १२; १६४, १२. १९. ३१; १६५, ८; १६६, ४२. ४३. ४५. ४७–४९. ५६ (भीमसेन ने पराजित किया); १७०, १६ ४५; १७१, १४. १५. १६. २४ (सात्यकि ने पराजित किया). १७४, ६. ३९. ४१; १७६, ६. ११; १७७, २. ८; १७८, ३६. ३७; १८१, ३; १८२, २०. ३५; १८३, १. १६; १८४, ११. ३०; १८५, १. २. ९. १०; १८६, ५. १४. ४८; १८७, २७. ३३. ३४. ३५. ५०. ५३ (नकुल से युद्ध किया); १८९, १९. २२. २८. ३७. ४४. ४६ (सात्यकि से युद्ध); १९२, १. ४. ४३; १९३, १७. २८. ३३; १९५, ३; २००, २४. ३०. ३२. ५१; ८. १, १. ६. १९; २, २०; ३, ६; ४, १३; ५, ९; ७, १५; ८, १३. १७. २१; ९, २०. २४. ३४. ७३. ७६, ७७; १०, ८. २०. २१. ४२. ४४; ११, १६; १३, ८; १९, २८. ५४; २३, २१; २८, १. ४; २९, ६. १२. १४. २२. २७. २९ (युधिष्ठिर से युद्ध); ३०, १८. २० (अर्जुन से युद्ध); ३१, ५. १४. १६. २१. २२. २४. ३४. ४८. ७१; ३२, ३०; ३३, १ (इसने शल्य को त्रिपुराख्यान सुनाया); ३४, १; ३५, १. ३२. ३४. ३६. ४०; ३६, १. ४. १७. २७; ३८, २३; ४२, ३०. ३३; ४६, २०; ४७, १९; ५०, १. १०; ५१, २. ३; ५६, ७ (नकुल और सहदेव से युद्ध किया). ३२ (धृष्टद्युम्न ने इसे पराजित किया). ३५ (तपनीयाङ्गदं चित्रं नागं मणिमयं शुभम् ॥ ध्वजं कुरुपतेश्छिन्नं ददृशुः सर्वपार्थिवाः । दुर्योधनं तु विरथं छिन्नवर्मायुधं रणे ॥). ७६; ५७, १. ५. ६; ५८, १०; ६०, ४ (दुर्योधनः""""राजा सर्वस्य लोकस्य). १०. १२. १३. ४९; ६१, ६२;

६२, ३. १२. १५. ३४; ६३, ६. २९ (भीमसेन ने पराजित किया); ६४, ४०. ४३; ६६, ६. ३६; ७४, ९. १३. ३४; ७५, ८; ७७, २९. ४७. ७३; ७८, १. ५१; ७९, ८; ८३, ५१; ८४, १०. १२; ८५, ३. ३१. ३४. ३५; ८८, १४. २१; ८९, ९४; ९२, २. ९. १५ (कर्ण का वध तो जाने पर यह अत्यन्त खिन्न हो गया); ९३, १५. ४६. ४८; ९४, १. २३. २४. ६३; ९५, ४. १०; ९. १, ११. २२ (दुर्योधनो हतो राजा). ३९; २, ५०. ५२. ६१. ६७; ३, १६. ४६. ४८. ५०. ६१; ४, ६. ७; ५, ४८; ६, ७. २३. २७; ७, १. २. ६ (शल्य को कौरव सेना का सेनापति नियुक्त किया); ८, १. १५. २७; ११, ३९; १२, २९. ३० (इसने चेकितान का वध किया). ३६ (धृष्टद्युम्न से युद्ध किया); १३, ३१; १५, १. ४; १६, ३९ (भीमसेन ने इसे पराजित किया). ६०; १७, ११. ८०. ८२; १८, २. ३. १७. १९. २१. ४०; १९, १५. २१. ३२. ५४. ५७; २१, ३१. ३२. ३६; २२, ६. ७. १२. ३२; २३, ९. २९; २४, ८. ९. ४५. ४९; २५, २३. ३१. ४०. ४४. ६२; २६, ३; २७, १. २. ५. ६. ७. १९. २५. २८. २९. ३५; २८, २१. ५२; २९, ६. १६. १९. २१. २४. २७ (अपने पक्ष के सभी प्रमुख वीरों की मृत्यु हो जाने पर यह भयभीत होकर द्वैपायन सरोवर में छिप गया). ३५. ४२. ५१. ५८. ५९. ७०. ७९. ८३. ९२; ३०, २. ६. १२. १४. २५. ३१. ३२. ३६. ३८. ४१. ४४. ५१. ५५. ५८. ६३; ३१, १. ३८. ४४. ५४; ३२, २७. ४५. ४७. ४८. ५२. ६५ (यह किसी भी एक पाण्डव से गदायुद्ध के लिये प्रस्तुत हुआ); ३३, १. १२. २६. ४१. ४२. ५२. ५७ (भीमसेन इसे गदायुद्ध करेंगे); ३४, ५. ७; ३५, १४; ५४, ३०; ५५, ३. १२. २०. २४. २६. ४२. ४३. ४६; ५६, २९. ४०. ४४ (भीम और दुर्योधन का गदायुद्ध आरम्भ हुआ); ५७, १. १०. २७. ४७. ४८. ५६; ५८, ३५. ४०. ४२. ४७ (भीमसेन ने गदा से इसकी जाँघ तोड़ी). ६०; ५९, ३. १२. २१ (भीमसेन ने इसके सर में ठोकर मारी); ६०, २८ (दुर्योधनोऽपि धर्मात्मागतिं यास्यति शाश्वतीम् । ऋजुयोधी हतो राजा धार्तराष्ट्रो नराधिपः). ३४; ६१, १. २. ९. ११ (दुर्योधनशिरो दिष्टया पादेन मृदितं त्वया). १४. १६. २३. २७. ५०. ५८. ७१ (दुर्योधनं दृष्ट्वा निहतं); ६२, ४. ६; ६३, ३. ८ (हतं दुर्योधनं दृष्ट्वा भीमसेनेन संयुगे व्युत्क्रम्य समयं राजन् धार्तराष्ट्रं महाबलम्). २२. ६२; ६५, १. ११. ४५; (इसने अश्वत्थामा को सेनापति बनाने के लिये कृपाचार्य को आदेश दिया); १०. १, १६. ५९; २, २५; ३, ३३; ५, २३; ८, ३; ९, १. १०. २६. २९, ३२. ५३. ५८; १६, ३१; ११. १, १. १६; ८, २६ (धृतराष्ट्रस्य पुत्राणां यस्तु ज्येष्ठः शतस्य वै । दुर्योधन इति ख्यातः); ९, ४; ११, ४; १३, ८; १४, १६. १९; १५, ११; १६, ३०; १७, १. २. १२. १७. १९. २५ (सुश्रोणीं दुर्योधनशुभाङ्गाम् । रुक्मवेदीनिभां पश्य कृष्ण लक्ष्मणमातरम्). २८; १८, २३; २५, २७ (यह लक्ष्मण का पिता था). ३१; २६, २. ३१ (इसका शवदाह); २७, १०; १२. १, २८. ४१; २, ८; ३, ३३; ४, १. ४. १२. १६. २१; ५, ७; ७, ३३; १४, ९; १६, २८; ३८, २३. ३३ (दुर्योधनसखा चार्वाको नाम राक्षसः); ३९, ८; ४४, ६ (इसका भवन भीमसेन को दिया गया). ८; १२४, ४. ६. ७. ११. १८. ६३; १३. १, १०. ८२; १४८, २९. ६०. ६१; १६७, ४०; १४. १, १२. १८; ३, १५. १६; ५२, १९; १५. २, २७; ३, ६. १०. १८. ५१; ८, २१; ९, ४; १०, १६. २०. २६. २७; ११, ८. १९; १४, ६; ३१, १० (कलिं दुर्योधनम् विद्धि); ३२, ९ (उन मृत योद्धाओं में यह भी था जो महर्षि व्यास के आवाहन पर गङ्गा से प्रगट हुये); ३६, १९ (दुर्योधनप्रभृतयो दृष्टा लोकान्तरं गताः); १८. १, ४. ६. ७. १२. १३. १८. २०; ५, २८ (दुर्योधनसहायाश्च राक्षसाः परिकीर्तिताः) ।

तुकी० दुर्योधन के निम्नलिखित पर्याय भी :—

* आजमीढ—देखिये वस्था० ।

* कुरु, कुरुकुलश्रेष्ठ, कुरुकुलाधम, कुरुनन्दन, कुरुपति, कुरुपुङ्गव, कुरुप्रवीर, कुरुमुख्य, कुरुराज, कुरुवर्धन, कुरुश्रेष्ठ, कुरुसत्तम, कुरुसिंह, कुरूत्तम, कुरूद्वह, कौरव, कौरवनन्दन, कौरवश्रेष्ठ, कौरवात्मज, कौरवेन्द्र, कौरव्य—देखिये वस्था० ।

गान्धारि (गान्धारी का पुत्र) : ३. २३९, २३; २४७, १०; २५६, ४; ५. ८, १९; ४८, ३०; ८५, १०; १०५, ३३; १२३, २१; १४९, १०; १६५, १७; १६७, ३७; ६. ७९, ५; ९८, १७. २३; ७. ९४, ४९; १५२, १६; १५९. ८४; १८५, ३७; ८. १०, ४०; ३२, ३२. ३९. ५१. ६३; ३५, २८. ४१; ९. ३२, ३३. ३४; ६१, ३९; १०. ९, ३२ ।

* गान्धारीपुत्र (गान्धारी का पुत्र) : २. ४९, १ ।

* धार्तराष्ट्र, धृतराष्ट्रज, धृतराष्ट्रपुत्र, धृतराष्ट्रसुत, धृतराष्ट्रसूनु, धृतराष्ट्रात्मज—देखिये वस्था० ।

* भरतशार्दूल, भरतश्रेष्ठ, भरतर्षभ, भरतसत्तम, भारत, भारतसत्तम, भारताग्र्य—देखिये वस्था० ।

*सुयोधन : १. २, १९५. २२२; १३४, ३२; १३६, ४०; १३७, २५; १४६, १७. २३. २६. २८; १४७, १२; १५४, ३५; २०१, ३; २. ४७, ७; ६२, ९; ७७, २८ (सुयोधनमिमं पापं हन्तास्मि गदयायुधि । शिरः पादेन चास्याहमधिष्ठास्यामि भूतले); ३. २२, ४२; २९, १६. ५१; ३०, ४०; ३४, ३. १४; ३७, २६; ५२, २८. ३४. ३७. ३९; १२०, २८; १४१, १७; १७६, ८. ११. १८३, ३४; २४०, २८; २४३, ७. १०. १४. १६. १७; २४४, १२. १९; २४६, २. ९; २४७, ५; २४९, ३५; २५१, २८; २५२, १. ३३. ३७. ४४. ४९; २५३, ३; २५६, १३. १७; २६२, १७. २३. २४; ३१३, ५; ३१५, ६; ४. २१, ६; ५३, १४; ५५, ४९; ७०, २६; ५. ७, ८. १६; १९, २५; २३, १३; २६, १२. २२. २५. २९; २९, ५२; ३०, १७; ३१, १८; ४९, ३६; ५७, ५०; ६६, १. ९; ७२, १२. ८२. ९२; ७७, १५; ७९, ९. २०; ८०, ११. १७; ८१, ३; ८२, ९. १०; ८३, ३. ३९; ९०, ६२; ९७, ९; १०७, २; १२८, २५; १३०, ३०; १३१, २. ३४; १३२, ३; १४२, १२; १४४, २; १४७, १४; १५०, १०. १२; १५४, १०; १६२, ६. २१. ४३. ५२. ५७; १६३, ९. १४. १६. १९. २२. २४. ३१. ३४. ३६. ३७. ३९. ४६. ५१; ६. ५८, ३३; ६२, ३५; ६४, ६३; ७९, १०; ९६, ८; ९८, १६; १०८, ५७; १२२, २७; ७. २०, १; १०२, १९; ११०, ६८; १११, ७; ११९, १३. १६. २८. २९. ३३. ३४; १२२, १२. २२. २३; १२८, ५५; १३३, ५; १४२, ४; १४६, ९५; १४७, १४; १४९, ४७; १५०, १; १५२, २३; १५९, ८५; १६२, ४९; १६६, ६२; १८१, ५. ३१; १८३, ३८. ४८; ८. १, ५; ४, १; ९, ६३; २९, १०; ४६, ३४; ५६, १९; ६६, ३४. ४३; ६८, १६; ७२, ३७; ७३, १४. २१. ३६. ६४. ६५. ८३. १०१; ८३, १६. १८; ९१, २; ९. १, २. ४; २४, २१. ३२. ४४; २७, ९; ३०, २८; ३१, ८. १८. १९. २९. ३०. ३३. ४२. ५६; ३२, २३. ३३. ५५; ३३, ८. १३. १८. २२. ३३. ३५; ५६, १६. १७; ५७, ३२. ३३; ५८, ४. ७. १३. १७. १८; ६०, १७. २७; १२. ७, ३०; १२५, ३; १३. १४८, ३२; १४. १, १३; १५, १५; ६०, ३४; १५. ३, ५०; १८. १, ६. १०; २, ४५ ।

२. दुर्योधन, सुदुर्जय के पुत्र और महिष्मती के राजा का नाम है (१३. २, १३)। इन्होंने अपनी पुत्री, सुदर्शना, को अग्निदेव को दिया (१३. २, ३४)।

दुर्योधनपितृ (दुर्योधन के पिता) = धृतराष्ट्र (३. १०, ३७; १५. ३, १)।

दुर्योधन-यज्ञ:—"दिग्विजय से लौटने के पश्चात् कर्ण ने दुर्योधन की युधिष्ठिर के ही समान एक राजसूययज्ञ करने की इच्छा का समर्थन किया। दुर्योधन ने कर्ण का अनुमोदन प्राप्त करने के बाद अपने पुरोहितों के समक्ष तदनुसार प्रस्ताव रक्खा, परन्तु पुरोहितों ने कहा : 'राजन् ! राजा युधिष्ठिर तथा धृतराष्ट्र के जीवित रहते आप के लिये राजसूय यज्ञ करना अनुकूल नहीं है । एक अन्य महान् यज्ञ भी है जो राजसूय की समानता रखता है। ये जो सब भूपाल आप को कर देते हैं उन्हें आज्ञा दीजिये कि वे आपको सुवर्ण के बने आभूषण और सुवर्ण कर के रूप में अर्पित करें। उसी सुवर्ण से आप एक हल तैयार कराइये और उस हल से आपके यज्ञमण्डप की भूमि जोती जाय। उस जोती हुई भूमि में ही उत्तम संस्कार से सम्पन्न, प्रचुर अन्नपान से युक्त और सब के लिये खुला यज्ञ यथोचित रूप से

प्रारम्भ किया जाय। इस यज्ञ का नाम वैष्णव-यज्ञ है, जिसका अनुष्ठान सत्पुरुषों के लिये सर्वथा उचित है। पुरातन पुरुष भगवान् विष्णु के अतिरिक्त अन्य किसी ने इस यज्ञ का अनुष्ठान नहीं किया है। यह महान् यज्ञ राजसूय के ही समान है।' पुरोहितों की बात को स्वीकार करके दुर्योधन ने वैष्णव यज्ञ की तैयारी आरम्भ करने के लिये विभिन्न लोगों को विविध कार्य सौंप दिये (३. २५५)।" "जब विदुर ने दुर्योधन को यज्ञ की तैयारी पूर्ण हो जाने की सूचना दी तब यज्ञ में आमन्त्रित करने के लिये समस्त भूपालों तथा ब्राह्मणों के पास दूत भेजे गये। दुःशासन ने पाण्डवों के पास भी एक दूत भेजा परन्तु वनवास के तेरह वर्ष पूर्ण होने के पूर्व आना युधिष्ठिर ने स्वीकार नहीं किया। उस समय दूत से भीम ने कहा: 'तुम दुर्योधन से कहना कि युधिष्ठिर तेरह वर्ष व्यतीत होने के पश्चात् उस समय वहाँ पधारेंगे जब कि रणयज्ञ में अस्त्र-शस्त्रों द्वारा प्रज्वलित की हुई रोषाग्नि में वे तुम्हारी (दुर्योधन की) आहुति देंगे।' भीम के अतिरिक्त अन्य पाण्डवों ने कुछ नहीं कहा। दुर्योधन के यज्ञ में विदुर को अतिथियों को भोजन आदि वितरित करने का कार्य सौंपा गया। यज्ञ की समाप्ति तथा अतिथि भूपालों के विदा हो जाने के पश्चात् अपने भ्राताओं तथा कर्ण और शकुनि सहित दुर्योधन ने हस्तिनापुर में प्रवेश किया (३. २५६)।" "नगर में लोगों ने दुर्योधन की अत्यन्त प्रशंसा की। दुर्योधन के सुहृदों ने ययाति, नहुष, मान्धाता और भरत के साथ दुर्योधन की तुलना करते हुये कहा कि इसी यज्ञ को सम्पन्न करके उक्त पूर्ववर्ती भूपालों ने स्वर्ग प्राप्त किया था। कर्ण ने दुर्योधन से कहा: 'जब युद्ध में पाण्डवों का वध हो जायगा, उस समय तुम्हारे द्वारा आयोजित राजसूय यज्ञ की समाप्ति पर मैं पुनः तुम्हारा इसी प्रकार अभिनन्दन करूँगा।' तदनन्तर कर्ण ने दुर्योधन के समक्ष प्रतिज्ञा करते हुये कहा: 'जब तक मैं अर्जुन का वध नहीं कर लेता तब तक मैं दूसरों से अपना पाद-प्रक्षालन नहीं कराऊँगा; केवल जल से उत्पन्न पदार्थों का ही भोजन करूँगा; आसुर व्रत नहीं धारण करूँगा; और किसी के भी कुछ माँगने पर 'नहीं है', ऐसा वचन नहीं कहूँगा [नीलकण्ठी में आसुर व्रत की इस प्रकार व्याख्या है: 'असुरं सुरारहितं च व्रतं स्वनियमं करिष्ये मद्यं मांसं च त्यक्ष्ये इत्यर्थः', ३. २५७, १७ पर नीलकण्ठी]। (३. २५७)।"

१. दुर्योधन-सुत = लक्ष्मण (८. ५, १३; ६, ११)।

२. दुर्योधन-सुत (बहु० ताः) = दुर्योधन के पुत्र (१८. ५, २)।

दुर्योधनसुता = सुदर्शना (१३. २, २०. २८)।

दुर्योधनावर = विकर्ण (२. ६८, ३०)।

दुर्लभ = विष्णु (१,००० नाम)।

१. दुर्वारण = शिव: ८. ३३, ५८; १२. २८४, १५७ (१,००० नाम)।

२. दुर्वारण, काम्बोज सैनिकों का नाम है, जिनका सात्यकि ने वध किया (७. ११२, ४३)।

१. दुर्वासस्, एक महर्षि का नाम है (१. २, १९८)। इन्होंने कुन्ती को एक मन्त्र की शिक्षा दी (१. ६७, १३३)। १. १११, ५. १३; १२२, ३४; १२३, २; २२३, ५३ (यह स्वयं शिव के एक अंश थे). ५७. ६० (इन्होंने श्वेतकि का यज्ञ पूर्ण कराया); २. ७, १० (इन्द्र की सभा में उपस्थित होनेवाले महर्षियों में एक यह भी थे); ११, २३ (ब्रह्मा की सभा में); ३. ८२, ६४ (इन्होंने विष्णु को एक वर दिया था); ८५, १२१; २६०, ११ (दुर्वासा··· दिग्वासाः). २१. ३० (इन्होंने मुद्गल की परीक्षा ली); २६२, ८. १६. २४. २७; २६३, १. २८. ३०. ३२. ४३ (दुर्योधन पर अनुग्रह करने की दृष्टि से अपने दस हज़ार शिष्यों को लेकर यह उस समय पाण्डवों के पास भोजन के लिये उपस्थित हुए जब उनका भोजन समाप्त हो चुका था; परन्तु श्रीकृष्ण की कृपा से पाण्डव इनका आतिथ्य करने में सफल हो गये); ५. १४४, १९; ७. ११. ९ (इन्होंने श्रीकृष्ण को वर दिये थे); १३. २६, ६ (बाणशय्या पर पड़े भीष्म के दर्शन के लिए उपस्थित महर्षियों में एक यह भी थे); १५०, ४५; १५८, २९। "प्रद्युम्न को ब्राह्मणों की महिमा बताते हुए श्रीकृष्ण ने कहा: पहले की बात है, मेरे घर में एक हरित पिङ्गल वर्णवाले ब्राह्मण ने निवास किया था। वह चिथड़े पहनता और बेल का डण्डा हाथ में लिए रहता था। उसकी मूँछें और दाढ़ियाँ बढ़ी हुई थीं। वह शरीर से दुबला और कद में भूतल के सब मनुष्यों से लम्बा था। वह दिव्य तथा मानव लोकों में विचरण करता हुआ इस श्लोक का गायन करता था: 'दुर्वाससं वासयेत्को ब्राह्मणं सत्कृतं गृहे ॥ रोषणः सर्वभूतानां सूक्ष्मेऽप्यपकृते कृते। परिभाषां च मे श्रुत्वा को नु दद्यात्प्रतिश्रयम्। यो मां कश्चिद्वासयीत न स मां कोपयेदिति।' यतः किसी ने भी उस दुर्वासा का आदर नहीं किया अतः मैंने उन्हें अपने घर में ठहराया। वह कभी तो एक ही समय में इतना भोजन कर लेते थे जितने में कई सहस्र मनुष्य तृप्त हो सकते थे, और कभी अत्यन्त थोड़ा ही भोजन कर के घर से निकल जाते थे। उस दिन वे फिर घर नहीं लौटते थे। वे अकस्मात ज़ोर-ज़ोर से हँसने अथवा अचानक फूट-फूट कर रोने लगते थे। उस समय पृथिवी पर उनका कोई समनवस्क नहीं था। एक दिन अपने ठहरने के स्थान पर जा कर उन्होंने वहाँ बिछी शय्याओं, बिछौनों, तथा वस्त्राभूषणों से अलंकृत कन्याओं को जलाकर भस्म कर दिया और फिर वहाँ से चले गये। इसके बाद तत्काल ही मेरे पास आकर उन्होंने शीघ्र ही खीर खाने की इच्छा की। मैं उनके मन की बात जानता था अतः सब प्रकार के भक्ष्य पदार्थ मैंने पहले ही तैयार रखने की आज्ञा दे रक्खी थी। मैंने तुरन्त ही मुनि को गरम खीर भोजन के लिये प्रस्तुत की जिसमें से थोड़ा खा-कर उन्होंने मुझे आज्ञा दी कि मैं उस खीर को अपने सम्पूर्ण अंग में लगा लूँ। मैंने मुनि की आज्ञा का पालन करते हुये वह खीर अपने अङ्गों में पोत ली। उनकी आज्ञा से मैंने रुक्मिणी के अङ्गों में भी बची हुई खीर लगा दी। तदनन्तर मुनि ने खीर से वेष्टित अङ्गोंवाली रुक्मिणी को रथ में जोत दिया और स्वयं उस रथ पर बैठ कर मेरे घर से निकले। उन्होंने रथ के घोड़ों की ही भाँति रुक्मिणी पर भी कोड़ों से प्रहार किया। इस महान् आश्चर्य की बात को देख कर दशार्हवंशी यादवों को अत्यन्त क्रोध हुआ। उन दुर्धर्ष दुर्वासा के इस प्रकार रथ से यात्रा करते समय रुक्मिणी मार्ग में लड़खड़ा कर गिर पड़ीं। दुर्वासा इस बात को सहन नहीं कर सके और रथ से कूद कर बिना मार्ग के ही दक्षिण दिशा की ओर पैदल चल पड़े। मैं भी उनके पीछे-पीछे दौड़ता हुआ उनसे प्रसन्न होने का निवेदन करने लगा। मेरे अनुरोध पर प्रसन्न होकर ऋषि ने मुझसे कहा: 'तुमने क्रोध को जीत लिया है। मेरे प्रसन्न होने का जो भावी फल है उसे सुनो। जब तक देवताओं और मनुष्यों का अन्न में प्रेम रहेगा, तब तक जैसा अन्न के प्रति उनका भाव या आकर्षण होगा वैसा ही तुम्हारे प्रति भी बना रहेगा। तुम सब लोगों के परम प्रिय बनोगे। तुम्हारी जो वस्तुयें मैंने तोड़ी या नष्ट की हैं वे सब तुम्हें पूर्ववत् या उससे भी अच्छी दशा में सुरक्षित मिलेंगी। तुमने अपने समस्त अङ्गों में जहाँ तक खीर लगा ली है वहाँ तक के अङ्गों में चोट लगने से तुम्हें मृत्यु का भय नहीं रहेगा। तुम जब तक चाहोगे अमर बने रहोगे। परन्तु तुमने अपने पैर के तलवों में खीर नहीं लगाई। तुम्हारा यह कार्य मुझे प्रिय नहीं लगा।' मुनि का वचन सुनकर मैंने अपने शरीर को अद्भुत कान्ति से सम्पन्न देखा। मुनि ने रुक्मिणी को वरदान देते हुये उनसे कहा: 'शोभने! तुम सम्पूर्ण स्त्रियों में उत्तम यश और लोक में सर्वोत्तम कीर्ति प्राप्त करोगी। तुम जरा, व्याधि और कान्तिहीनता से मुक्त रहोगी। पवित्र सुगन्ध से सुवासित होकर तुम श्रीकृष्ण की १६,००० रानियों में सबसे श्रेष्ठ होकर पति के सालोक्य की अधिकारिणी होओगी।' तदनन्तर ब्राह्मणों के प्रति सदैव आदर-दृष्टि रखने का उपदेश करके मुनि वहीं अन्तर्धान हो गये। मैंने तथा रुक्मिणी ने ब्राह्मणों की सदा सेवा करने की प्रतिज्ञा की। तदनन्तर घर में प्रवेश करके देखा कि उन ब्राह्मण ने जो कुछ तोड़ा या नष्ट किया था वह सब नूतन रूप में प्रस्तुत है। उस दिन से मैं सदैव ब्राह्मणों का पूजन करता हूँ (१३. १५९)।" १३. १६०, १. ३७; १५. ३०, २; १६. ४, १९। तुकी० अत्रेय (१६. ४, २०)।

२. दुर्वासस् = शिव (१,००० नाम)।

दुर्वासःसंवाद—'प्रादुर्भावश्च दुर्वासःसंवादश्चैव मायया', (१. २, ७७)।

दुर्विगाह, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, ५)।

दुर्विभाग (बहु० गाः), एक जाति के लोगों का नाम है जो युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये (२. ५२, १३)।

दुर्विमोचन, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, ६)। भीमसेन ने इसका वध किया (७. १२७, ३५. ६२)। ९. २६, ५. १६। तुकी० अगला शब्द।

दुर्विरोचन, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९७)। तुकी० ऊपर वाला शब्द।

दुर्विष = शिव (१.००० नाम)।

१. दुर्विषह, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है जो द्रौपदी के स्वयंवर में आया (१. १८६, १)। गन्धर्वों ने इसे भी बन्दी बनाया (३. २४२, १२)। ५. १२४, ४५; ६. १८, १०; ७७, ७; ७. १७०, ६३; ८. ५, ३३; ९. २६, ५. २० (भीमसेन ने इसका वध किया था)।

२. दुर्विषह = शिव (१,००० नाम)।

दुलिदुह, एक प्राचीन राजा का नाम है (१. १, २३३)।

दुष्कर्ण, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९५; ११७, ३; ६. ७७, ८)। इसने शतानीक से युद्ध किया जिसमें शतानीक ने इसका वध कर दिया (६. ७९, ४६. ४८. ५१. ५२)। दुर्मद को साथ लेकर इसने भीमसेन से युद्ध किया (७. १५५, ३५. ३७. ३९. ४०)।

दुष्काल = शिव (१,००० नाम)।

दुष्कृतिहन् = विष्णु (१,००० नाम)।

दुष्पराजय, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, ९)।

दुष्प्रकम्प = शिव (१,००० नाम)।

दुष्प्रधर्ष, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है जिसने अन्य तेरह भ्राताओं के साथ भीमसेन पर आक्रमण किया (६. ६४, २९)। ८. ५१, ८; ९. २६, ५ (भीमसेन पर आक्रमण किया). १८ (भीमसेन ने उसका वध किया)। तुकी० अगला शब्द।

दुष्प्रधर्षण, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९४; ११७, ३)। यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुआ (१. १८६, १)। 'सुबाहुर्दुःप्रधर्षणः', (७. १७०, ६३)। तुकी० अगला शब्द भी।

दुष्प्रहर्ष, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९६)।

दुष्मन्त—देखिये दुष्यन्त।

१. दुष्यन्त, एक प्राचीन राजा का नाम है जो शकुन्तला के पति और भरत के पिता थे (१. २, ९६)। "ये पूरुवंश के राजा थे। ये महान् पराक्रमी और चारों समुद्रों से घिरी सम्पूर्ण पृथिवी के पालक थे। यहाँ तक कि म्लेच्छों का देश भी इनके अधीन था—इनके राज्यशासन की क्षमता तथा प्रजा के सुख-वैभव आदि का वर्णन। ये अपने दोनों हाथों द्वारा उपवनों और काननों सहित मन्दराचल पर्वत को उठाकर ले जाने की शक्ति रखते थे। ये गदायुद्ध तथा अन्य अस्त्र-शस्त्रों के पूर्ण ज्ञाता थे (१. ६८)।" इनका आखेट के लिये जाना (१. ६९)। आखेट करते हुये ये मालिनी के तट पर स्थित कण्व ऋषि के आश्रम में आये जो चारणों, गन्धर्वों, अप्सराओं, वालखिल्यों आदि से सेवित था (१. ७०)। उक्त अध्यायों तथा अन्य स्थानों पर यह शब्द निम्नस्थलों पर आता है: १. ६८, ३ (पौरवाणां वंशकरो दुष्यन्तो नाम वीर्यवान्); ६९, २. २०. २१; ७१, ४. १५. १६; ७३, १. ६. १७. २८. ३२. ३४; ७४ १४. ३६. ७३. ८३. १०८. १०९. १११. ११३. १२१. १२५. १२६ (इन्होंने शकुन्तला से गान्धर्व विवाह किया और सहवास के बाद राजधानी लौट आये। शकुन्तला इनके वीर्य से उत्पन्न अपने पुत्र, भरत, को लेकर इनके पास आई परन्तु पहले उन्होंने उसे नहीं पहचाना। तदनन्तर आकाशवाणी द्वारा शकुन्तला के वचन की सत्यता प्रमाणित होने पर उसे ग्रहण कर लिया); ९४, १७ (ये ईलिन के पुत्र थे). १८. १९ (ये भरत के पिता थे); ९५, २८ (ईलिन के पुत्र). २९ (शकुन्तला के पति). ३० (भरत के पिता); २. ८, १५ (यम की सभा में); ५. ११७, १५; १३. ११५, ७३ (उन राजाओं में एक यह भी थे जो कार्तिक मास में मांस-भक्षण नहीं करते थे); १६५, ५० (दुष्यन्तो भरतश्चैव चक्रवर्ती महायशाः)।

२. दुष्यन्त, अजमीढ के पुत्र का नाम है। पाञ्चालगण इनके तथा इनके भ्राता, परमेष्ठिन्, की संतान हैं (१. ९४, ३३)।

दुष्वन्त—देखिये १. दुष्यन्त।

दूषण, एक राक्षस का नाम है जिसका रामदाशरथि ने वध किया था (३. २७७, ४४. ५२)।

दूषणानुज (द्वि० जौ) = वज्रवेग और प्रमाथिन् (३. २८६, २९; २८७, २१. २३)।

१. दूषणावरज = प्रमाथिन् (३. २८७, २७))

२. दूषणावरज (द्वि० जौ) = वज्रवेग और प्रमाथिन् (३. २८६, २७)।

१. दृढ, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है जिसका भीमसेन ने वध किया था (७. १३७, ३०)। इसने अपने नौ अन्य भ्राताओं के साथ भीमसेन पर आक्रमण किया था (७. १५७, १९)। तुकी० दृढहस्त, दृढक्षत्र, दृढसन्ध, दृढवर्मन्, दृढायुध।

२. दृढ = विष्णु (१,००० नाम)।

दृढक्षत्र, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (२. ६७, ९९; ११७, ८)। तुकी० दृढ भी।

दृढधन्वन्, एक राजा का नाम है जो द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुआ (१. १८६, १५)।

१. दृढरथ, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, १०४) भीमसेन ने इसका वध किया (७. १५७, १७)। तुकी० दृढरथाश्रय।

२. दृढरथ, एक प्राचीन राजा का नाम है (१३. १६५, ५२)।

दृढरथाश्रय, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, १२)। तुकी० दृढरथ।

दृढवर्मन्, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९९; ११७, ८)।

दृढव्य, एक महर्षि का नाम है जो दक्षिण दिशा का आश्रय लेकर निवास करनेवाले सात धर्मराज-ऋत्विजों में से एक हैं (१३. १५०, ३४)।

दृढव्रत, दक्षिण दिशा का आश्रय लेकर निवास करनेवाले एक महर्षि का नाम है (१२. २०८, २९)। तुकी० दृढव्य, दृढायु।

दृढसन्ध, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, १००; ११७, ९)। तुकी० दृढ।

दृढसेन, एक पाण्डव योद्धा का नाम है जिसका द्रोणाचार्य ने वध किया (७. २१, ५२)।

दृढस्यु, महर्षि अगस्त्य द्वारा लोपामुद्रा के गर्भ से उत्पन्न पुत्र का नाम है जिन्हें 'इध्मवाह' भी कहते हैं (३. ९९, २५)।

दृढहस्त, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, १०२; ११७, १०)।

दृढायुध, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९९)।

१. दृढायुस्, एक राजा का नाम है जिन्हें पाण्डवों ने रण-निमन्त्रण भेजने का निश्चय किया (५. ४, २३)।

२. दृढायुस्, पुरूरवा द्वारा उर्वशी के गर्भ से उत्पन्न पुत्र का नाम है (१. ७५, २५)।

३. दृढायुस्, दक्षिण दिशा का आश्रय लेकर निवास करनेवाले एक ऋषि का नाम है (१३. १६५, ४०)।

दृढाश्व, इक्ष्वाकुवंशीय राजा कुवलाश्व के पुत्र का नाम है (३. २०४, ४०)।

दृढेयु, पश्चिम दिशा के एक ऋषि का नाम है (१३. १५०, ३६)।

दृढेपुधि, एक प्राचीन राजा का नाम है (१. १, २३८)।

१. दृप्त = शिव (१०. ७, ४)।

२. दृप्त = विष्णु (१००० नाम)।

दृषात्मन् = कृष्ण (१२. ४७, ७३)।

दृषद्वत्, एक राजा का नाम है जो वराङ्गी के पिता थे (१. ९५, १४)।

दृषद्वती एक नदी का नाम है : २.७८, १५ (यहाँ युधिष्ठिर को शम्भु (ब्रह्मा) ने उपदेश दिया था)। 'सरस्वतीदृषद्वत्यौ', (३. ५, २)। 'दक्षिणेन सरस्वत्या दृषद्वत्युत्तरेण च । ये वसन्ति कुरुक्षेत्रे', (३. ८३, ४)। इसमें स्नान और तर्पण का महत्व (३. ८३, ८७)। 'कौशिक्याः संगमे यस्तु दृषद्वत्याश्च भारत', (३. ८३, ९५)। 'दक्षिणेन सरस्वत्या उत्तरेण दृषद्वतीम् । ये वसन्ति कुरुक्षेत्रे', (३. ८३, २०४)। 'दृषद्वती महापुण्या', (३. ९०, ११)। 'दृषद्वतीं विपाशां', (६. ९, १५)। 'दृषद्वतीं', (१२.५८,३०)। 'सरस्वतीदृषद्वत्योः संगमो मानसः सरः', (१२. १५२, १३)। 'सरस्वतीदृषद्वत्यौ', (१३. १०२, ४७)। 'दृषद्वती च कावेरी', (१३. १६५, २२)।

दृषद्वान्, पूरुवंशीय राजा संयाति के श्वसुर का नाम है। इनकी पुत्री का नाम वराङ्गी था (१. ९५, १४)।

१. देव = शिव (सहस्रनाम)।

२. देव = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. देवक एक नरेश का नाम है जो किसी गन्धर्व के अंश से पृथिवी पर अवतरित हुये थे (१.६७, ६८)। विदुर ने इनकी पुत्री पारसवी से विवाह किया था (१. ११४, १२)। ये उग्रसेन के भाई, देवकी के पिता तथा वसुदेव के श्वसुर थे (२. २२, ३३ के बाद दाक्षिणात्य पाठ, गी.प्रे.संस्करण)। उन राजाओं में से एक जिन्हें पाण्डवों ने युद्ध में भाग लेने के लिये आमन्त्रित किया (५. ४, १७)। इनकी पुत्री देवकी के स्वयंवर में सम्पूर्ण क्षत्रिय नरेश एकत्र हुये थे (७. १४४, ९)।

देवकन्या – 'देवकन्या भुजङ्गी', (४. ९, १५)। 'देवकन्याः सहस्रशः', (९. ४४, १९)। 'देवकन्याः सहस्रशः', (११. १९, १८)। 'देवपत्न्यो देवकन्या', (१३. १४, ३८)। 'सिद्धार्थो देवकन्याभिरर्च्यते', (१३. १०७, ३५)। देखिये अप्सरा।

देवकी – देवक की पुत्री, वसुदेव की पत्नी तथा श्रीकृष्ण की माता का नाम है। 'वसुदेवात्तु देवक्यां प्रादुर्भूतो महायशाः', (१. ६३, ९९)। विष्णु के एक कृष्ण केश ने देवकी के गर्भ में प्रवेश किया जिससे श्रीकृष्ण का जन्म हुआ (१. १९७, ३३)। 'देवकस्य महात्मनः दुहितुः स्वयंवरे राजन्सर्वक्षत्रसमागमे', (७. १४४, ९)। स्वयंवर में शिनि ने शीघ्र ही समस्त राजाओं पर विजय प्राप्त कर वसुदेव के लिये देवकी को रथ पर बैठा लिया। उस समय देवकी को शिनि के रथ पर बैठा हुआ देख कर सोमदत्त ने शिनि के पराक्रम को सहन नहीं किया (७.१४४,१०-११)। 'यं देवं देवकी देवी वसुदेवादजीजनत्', (१२. ४७, २९)। 'देवक्याश्चैव संवादं महर्षेर्नारदस्य च', (१३. ६४, २)। 'मातुलश्चिरदृष्टो मे त्वया देवी च देवकी', (१४. ५२, ४५)। 'वासुदेव महाबाहो सुप्रजा देवकी त्वया', (१४. ६६, १५)। 'कृष्णं देवकिनन्दनम्', (१४.७१,१०)। 'देवकी च सदा च,' (१६. ७, १९)।

देवकीतनय, देवकीनन्दन, देवकीपुत्र, देवकीमातृ, देवकीसुत = कृष्ण।

देवकूट एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करनेवाला, अश्वमेधयज्ञ का फल प्राप्त करके अपने कुलका उद्धार करता है (३.८४, १४१)।

देवगण – 'अश्विनौ गुह्यकान्विद्धि सर्वौषध्यस्तथा पशून् । एते देवगणा राजन्कीर्तितास्तेऽनुपूर्वशः ।,' (१. ६६, ४०)।

१. देवगणेश्वर = इन्द्र (१. १२३, ३१; १४. ५, २५)।

२. देवगणेश्वर = विष्णु (३. १४२, २३)।

३. देवगणेश्वर = शिव (सहस्रनाम)।

देवगन्धर्व – सोलह देवगन्धर्वों के नामों का उल्लेख जो मौनेय थे (१. ६५, ४१-४४)। दस देवगन्धर्वों के नामों का उल्लेख जो प्राधा के पुत्र थे (१. ६५, ४५-४८)। अर्जुन के जन्म के समय उपस्थित देवगन्धर्वों का उल्लेख (१. १२३, ५९)। देखिये गन्धर्व भी।

देवगिरि कदाचित् हिमवान् के लिये प्रयुक्त हुआ है। (१३.१४८,३)।

१. देवगुरु = बृहस्पति (५. १५, ३२; १२. ३७, १०; १५२, ३२)।

२. देवगुरु = शिव (१३. १४, १०७)।

देवग्रह एक कष्टप्रद देवसम्बन्धी ग्रह जिसे जाग्रत या सुप्तावस्था में देख कर मनुष्य विक्षिप्त हो जाता है (३. २३०, ४७)।

देवतात्मन् = (शिव सहस्रनाम)।

देवदत्त अर्जुन के दिव्य शङ्ख का नाम है। यह महाशङ्ख पूर्व समय में विष्णु का था और विन्दुसरोवर में रक्खा था। मय ने इसे इस सरोवर से ला कर अर्जुन को दिया था (२.३, ८.२१)। देवों ने इसे अर्जुन को प्रदान किया था (३. १६८, ८५; १६९, १२; १७४, ५; १७५, ६)। 'शङ्खवरं देवदत्तं', (४. ५७, ८)। 'स देवदत्तं सहसा विनाद्य विदार्य वीरो द्विषतां मनांसि', (४. ६६, २८)। 'देवदत्तं च', (५. ४८, ६४)। 'निर्घोषं देवदत्तस्य', (६. १, १८)। 'देवदत्तं धनञ्जयः', (६. २५, १५; ५२, २५)। 'देवदत्तमादाय', (७. १८, ८)। 'देवदत्तं महाशंखं', (७. १९, १०)। 'देवदत्तं च फाल्गुनः', (७. ७३,५१)। 'देवदत्तस्य घोषेण', (७.९०, १५)। 'शब्दस्तु देवदत्तस्य', (७. १०४, १२)। 'बीभत्सुर्देवदत्तमथाधमत्', (८. ५३, २२)। 'शंखं देवदत्तं सुघोषम्', (८. ७६, ३२)। 'लेभे शङ्खं देवदत्तम्', (८. ७९, ६०)। 'निर्घोषो देवदत्तस्य', (८. ९४, ६०)।

देवदानवपूजित = शिव (सहस्रनाम)

देवदारुवन एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से विशेष फल प्राप्त होता है (१३. २५, २७)।

देवदूत – देवताओं का सुविख्यात दूत जिसका सायं-प्रातः स्मरण करने से पाप दूर होता है : १.२, ७३; ९, ६. ११. १३. १५;७४, १६; ३.५५, २२; २६०, ३०.३३; २६१, ३७. ४१. ४२. ४५; ६. ४८, ९८; १३. १६५, १४; १८. २,१४-१६. २६. २८. ५१। 'देवदूताः', (१४. ९०, ८५)।

देवदूतक – देखिये देवदूत।

१. देवदेव = ब्रह्मा (प्रजापति) (१.३८, ७)। 'नृलोके देवदेवस्य तीर्थं त्रैलोक्य विश्रुतम् । पुष्करं नाम विख्यातम् ।', (३. ८२, २०)। देवदेवः प्रजापतिः', (१२.२००, १२)। 'देवदेवः पितामहः', (१३. ६, ४)।

२. देवदेव = बृहस्पति (१३.७६, २९)।

३. देवदेव = शिव : 'देवदेवं · · त्र्यम्बकम्', (१.१, १६२)। 'तां देवदेवः', (१.१९७, ४९)। 'देवदेव पिनाकधृक्', (१. २१५, २०)। 'देवदेव उमापतिः', (१.२१५, २१)। 'देवदेवेन शृणु · · · · देवदेवं च शंकरम्', (३.३८, १०–११)। ३. ३९, ६२. ७४ (देवदेव महादेव); ४०, १; ८४, ७९, १६८, १ (देवदेवस्य त्र्यम्बकस्य); १७३, ४०; (देवदेवाय रुद्राय); ५.५०, २७ (देवदेवमुमापतिम्); १८७, ५; ७. २०२, ३१. ७२ (देवदेव पिनाकधृक्). १३६.१४८; ८. ३४, १३३ (देवदेवेन शूलिना). १४८.१५२; ८६, १५; ९.४४, २३ (उमापतिम्); १०.६, ३३ (उमापतिम्); १२.२०, १२; १२२, ५३ (देवदेवः शिवः); १५३, ११७; १६६, ६५; २८३, ३३; २८४, ५४. ५५.७४; २८९, २१; २९२, १४; ३४१, २२ (देवदेवे महेश्वरे); ३४३, १३९ (देवदेवं कपर्दिनम्). १४१ (उमापतिम्); १३. १४, ६. ७. १५. १०९. १३६. २०९. २२७ (रुद्रेण). २४४. २४९. ३६४. ३६७; १५, १०; १७, १०१ (सहस्रनाम); १४१, ९४; १४४, २८; १४६, २०; १४८, ८; १४. ८, २६; ६५, १० ।

४. देवदेव = धर्म (३. ३१४, २३; १५. २८, १६)।

५. देवदेव = इन्द्र (३. १६८, १०)।

६. देवदेव = वरुण (१.२२५, ३)।

७. देवदेव = वायु (१२.२५८, ४०)।

८. देवदेव = कृष्ण। १. ३४, १४; ६८, ५१; ८९, १८; ३. ८८, २६; ११५, १९; १४२, ३५-३६ (आदिदेव · · देवदेवस्य); १६३, २५; १८८, १४३; १९०, ७; २६३, १७; २७२, ३१; ५. १३, १० (विष्णुना); ८३, ३५; ६. ३४, १५; ३५, १३; ६८, ५; ९८, १५; १०७, ६४; ७. १४९, १९; १२. २१०, १२; ३३५; २१ (देवदेवं जनार्दनम्); ३३६, १२. २४; ३४०, ५४; ३४२, २१; ३४४, २४; ३४५, २३; १३.१४९, ४

(सहस्रनाम); १४. ५४, ७; १८. ५, २४ (नारायणो नाम देवदेवः सनातनः तस्यांशो वासुदेवस्तु कर्मणोऽन्ते विवेश ह)।

देवदेव (द्वि०) = ब्रह्मा और शिव (८.८७, ८४)।

१. देवदेवेश = शिव : १.२२३, ४४; २.१०, ३७; ७. २०२, ६८; ९. ४८, ५१; १०. १२, २७ (देवदेवेशं शितिकण्ठमुमापतिम्); १२. २८४, ६४. ७४ (सहस्रनाम). १२२; १३. १४, ३३७; १४. ६३, १४।

२. देवदेवेश = इन्द्र : ३. ३१०, १४।

३. देवदेवेश = महापुरुष (महापुरुषरतव)।

४. देवदेवेश = विष्णु (कृष्ण) : ३. १०२, २६; ७.८३, १७; १९२, ५२।

देवदेवेश्वर = विष्णु (कृष्ण) : ६. ६८, २।

देवनगर (देवों का नगर) : ३. १७२, २६। देखिये देवपुर।

देवनदी—दिव्य नदी के लिये प्रयुक्त। १. १७०, २३ (गङ्गा); २. ९, १९ (गङ्गा); ३. १०९, २; ११०, २२ (कौशिकी); १५९, ९८; २६३, २८. ३७; १३. २, १८ (नर्मदा देवनदी); १६५, २९।

देवपति = इन्द्र (वरथा०)।

देवपथ एक तीर्थ का नाम है (३. ८५, ४५)।

देवपुर (देवों की पुरी) : ७. ७३, ४९।

देवपुरोहित = बृहस्पति : २. ७४, ७; ९. ३६, ३९; १२. ३३६, १।

देवपुष्करिणी एक प्राचीन तीर्थ का नाम है। यहाँ आने मात्र से मनुष्य कभी दुर्गति में नहीं पड़ता और अश्वमेध का फल पाता है (३. ८४, ११८)।

देवप्रस्थ उत्तर दिशा के एक पर्वतीय देश का एक प्राचीन नगर जहाँ सेनाबिन्दु की राजधानी थी। अर्जुन ने दिग्विजय के समय इस पर भी विजय प्राप्त की थी (२. २७, १३)।

देवभिषग्वर = अश्विनद्वय (३.१२३, १२)।

देवभिषज् (द्वि० °जौ) = अश्विनद्वय (१. ३, ५६)।

देवभृत् = विष्णु (सहस्रनाम)

देवभ्राज एक तेजस्वी देवता हैं जो रवि के पुत्र और सुभ्राट् के पिता थे (१.१, ४२-४३)।

देवमत एक प्राचीन महर्षि जिनका नारद के साथ प्राण के विषय में संवाद हुआ था : 'नारदस्य च संवादमृषेर्देवमतस्य च', (१४. २४, १ और बाद)।

१. देवमातृ = देवमाता अदिति : ९. ४५, १३।

२. देवमातृ (बहु० मातरः) : १३. १४, ३८।

देवमित्रा स्कन्द की एक अनुचरी मातृका का नाम है (९. ४६, १४)।

देवमीढ, यदुवंश के एक विख्यात यादव नरेश का नाम है जो शूर के पिता और वसुदेव के पितामह थे (७. १४४, ६)।

देवयजन, देवताओं के यज्ञस्थान प्रयाग के लिये प्रयुक्त है। यहाँ काशिराज की कन्या अम्बा ने कठोर व्रत का आश्रय ले कर स्नान किया था (५. १८६, २७)।

देवयाजिन् स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७०)।

देवयान, उस पंथ के लिये प्रयुक्त है जो देवों की ओर ले जाता है : १. ९३, १८; ३. २, ७७; ११४, ६. १०. १२; २६१, २; ५. २७, २७; १२. १७, १५; २६८, १४; ३२८, ३०; १३. १६. ४४ (देवयानानामादित्यो द्वारमुच्यते) ; ९०, ४२. ४८; १४. ३५. ४४; १५. ३४, ११,

देवयानी, उशनस की पुत्री तथा ययाति की पत्नी का नाम है। १. ७५, ३५ (यदु और तुर्वसु की माता); ७६, ४. १५. १६. २३. २४. २५. २६. ३०. ३१. ३२ (इसने शुक्राचार्य से कच को पुनरुज्जीवित करने का आग्रह किया). ४४.४७ (शुक्राचार्य ने बारबार कच के मर जाने पर इसे सान्त्वना दी). ४९. ५१. ५६; ७७, १. ८. ९. १६. १८ (शुक्राचार्य का शिष्य होने के कारण कच ने इस शुक्रपुत्री को अपनी बहन मानते हुये पत्नी रूप में इसे ग्रहण करना अस्वीकार कर दिया। इस पर देवयानी ने कच को उनकी संजीवनी विद्या सिद्ध न होने का शाप दिया). २१। "कच ने जब शुक्राचार्य के पास से इन्द्रलोक वापस आकर देवताओं को संजीवनी विद्या सिखा दिया तब इन्द्र के नेतृत्व में देवताओं ने असुर-विजय का अभियान आरम्भ किया। चैत्ररथ वन में वायु के रूप में आकर इन्द्र ने वहाँ स्नान कर रही कन्याओं के वस्त्रों को आपस में मिला दिया। इस पर वृषपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा तथा देवयानी के बीच वस्त्रों की अदला-बदली के कारण कलह आरम्भ हो गया और शर्मिष्ठा ने देवयानी को एक कूएँ में ढकेल दिया। कुछ समय पश्चात् नहुष-पुत्र ययाति उस स्थान पर आये और देवयानी को कूएँ में गिरा देख कर उसका दाहिना हाथ पकड़ कर उसे कूएँ से बाहर निकाला। तदनन्तर देवयानी ने ययाति से अपने को पत्नी रूप में ग्रहण कर लेने का प्रस्ताव किया किन्तु ययाति ने उस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया और अपने नगर वापस चले गये। बहुत देर तक घर वापस न आने के कारण शुक्राचार्य ने देवयानी को ढूँढने के लिये घूर्णिका नामक एक दासी को भेजा। घूर्णिका से मिलने पर देवयानी ने अपने पिता के पास शर्मिष्ठा के दुर्व्यवहार तथा अपनी विपदगाथा का समाचार भेजा। (१.७८)।" "शुक्र ने देवयानी को बहुत समझाया परन्तु उसे सन्तोष नहीं हुआ। वह शर्मिष्ठा से प्रतिशोध लेने का हठ करती रही (१.७९)।" "अन्ततः शुक्राचार्य ने महाराज वृषपर्वा पर क्रोध प्रकट करते हुये उनके पास यह सन्देश भेजा कि यदि वे एक सहस्र सेविकाओं के साथ अपनी पुत्री शर्मिष्ठा को देवयानी की दासी नहीं बना देते तो वे वृषपर्वा का साथ छोड़ देंगे। फलस्वरूप वृषपर्वा ने सेविकाओं सहित शर्मिष्ठा को देवयानी की दासी बना दिया (१. ८०)।" "शर्मिष्ठा तथा दो सहस्र सेविकाओं से घिरी देवयानी वन विहार करते हुये राजा ययाति से पुनः मिली। इस बार देवयानी ने ययाति से पुनः विवाह का प्रस्ताव किया जिस पर ययाति ने शुक्राचार्य से देवयानी को विधिवत पत्नी रूप में ग्रहण किया, साथ ही ययाति ने यह भी वचन दिया कि वे शर्मिष्ठा को कभी भी अपनी अंकशायिनी नहीं होने देंगे। (१. ८१)। १. ७८, ६-८. १९. २५. २७. २९. ३१. ३७; ७९, १. ३. ८; ८०, १०. १२. १३. १५. १६. १७. १९. २०. २३. २५; ८१, १. ५. ६. १२. १५. १७. १८. १९. २१. २४. २७. २८. ३०. ३४. ३७। "देवयानी ने ययाति से पुत्र प्राप्त किये। तदनन्तर एक सहस्र वर्ष व्यतीत हो जाने पर युवावस्था को प्राप्त वृषपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा ने ययाति से अपने साथ समागम का आग्रह किया और इस प्रकार उसने भी पुत्रों को जन्म दिया (१. ८२)।" "शर्मिष्ठा ने देवयानी से यह नहीं प्रगट किया कि उसके पुत्र ययाति से उत्पन्न हुये हैं।। देवयानी को उसने यह बताया कि एक धर्मात्मा ऋषि से ही उसने पुत्र प्राप्त किये हैं। उसने यह भी कहा उस ऋषि के तेज से प्रभावित हो कर उसे उनका नाम पूछने का साहस नहीं हुआ। देवयानी के पुत्रों का नाम यदु और तुर्वसु हुआ तथा शर्मिष्ठा के पुत्र द्रुह्यु, अनु और पूरु के नाम से विख्यात हुये। एक दिन ययाति के साथ वन में भ्रमण करते हुये देवयानी का शर्मिष्ठा के पुत्रों से सामना हो गया। देवयानी ने जब उन सुन्दर बालकों से उनके माता पिता का नाम पूछा तब बालकों ने ययाति की ओर संकेत करके उन्हें अपना पिता तथा शर्मिष्ठा को अपनी माता बताया। इस पर क्रुद्ध होकर देवयानी अपने पिता शुक्राचार्य के पास चली वापस लौट आई। ययाति भी उसके पीछे-पीछे शुक्राचार्य के पास आये परन्तु शुक्राचार्य ने उन्हें वृद्धत्व प्राप्त होने का शाप दे दिया। फलस्वरूप यौवन का परित्याग करके नहुषपुत्र महाराज ययाति तत्काल वृद्ध हो गये। ययाति के अनुनय करने पर शुक्राचार्य ने उन्हें यह स्वीकृति दे दी कि यदि वे चाहें तो किसी दूसरे से उसकी युवावस्था लेकर उसे अपना वृद्धत्व दे सकते हैं। साथ ही शुक्राचार्य ने ययाति की यह प्रार्थना भी स्वीकार कर ली कि उनका जो पुत्र उन्हें अपना यौवन दे कर वृद्धत्व ले वही उनके स्थान पर उनका उत्तराधिकारी राजा हो। इतना ही नहीं वह पुत्र दीर्घायुष्य प्राप्त करके यशस्वी तथा अनेक सन्तानों से युक्त हो।" (१. ८२ ८३)।" १. ८२, १.२. ४. ५.८.१५.२३; ८३, १. २. ५. ७. ११.

१३. १४. १६. १९. २३. २८. ३८; ८५, २०; ९५, ८ (उशनसो दुहिता देवयानी). ९ (यदु च तुर्वसुं चैव देवयानी व्यजायत); ५. १४९, ६ (यदुश्च भरतश्रेष्ठ देवयान्याः सुतोऽभवत्); ७. ६३, ६; १४४, ६ (ययातेर्देवयान्यां तु यदुर्ज्येष्ठोऽभवत्सुतः)। देखिये देवयानी के अन्य नाम : औशनसी, भार्गवी, शुक्रतनया।

देवयुग = कृतयुग : १. १६, ५; २. ११, २; ३. ९४, ६; , ९९, ६६; १०. १८, १; १२. ३, १९; १३. ८३, २५।

१. देवराज् = इन्द्र (वस्था०)।

२. देवराज् = नहुष (वस्था०)।

१. देवराज = इन्द्र (वस्था०)।

२. देवराज = नहुष (वस्था०)।

३. देवराज = वसिष्ठ (१३. १३७, १३)।

४. देवराज, एक प्राचीन नरेश का नाम है जो यम की सभा में उपस्थित होते थे (२. ८, २६)।

१. देवराजन् = इन्द्र (वस्था०)।

२. देवराजन् = नहुष (वस्था०)।

देवराजाभिनन्दन = अर्जुन (३. ४६, ४२)।

देवरात, युधिष्ठिर की सभा में विराजमान होने वाले एक नरेश का नाम है (२. ४, २६)।

२. देवरात, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है। ऋचीक (अजीगर्त) का महातपस्वी पुत्र शुनःशेप एक यज्ञ में यज्ञपशु बना कर लाया गया था जहाँ विश्वामित्र ने उस महायज्ञ से उसका उद्धार किया। हरिश्चन्द्र के उस यज्ञ में अपने तेज से देवताओं को सन्तुष्ट करके विश्वामित्र ने शुनःशेप का उद्धार किया था जिसके कारण वह विश्वामित्र के पुत्र भाव को प्राप्त हुआ। इस प्रकार शुनःशेप देवताओं के देने से देवरात नाम से प्रसिद्ध होकर विश्वामित्र का ज्येष्ठ पुत्र हुआ। विश्वामित्र के अन्य पचास पुत्र इसको बड़ा मान कर इसका सम्मान नहीं करते थे। फलतः विश्वामित्र के शाप से वे सभी पचास पुत्र चाण्डाल हो गये। (१३. ३, ६-८)। विश्वामित्र के पुत्र के रूप में इसका उल्लेख (१३. ४, ५०)।

देवर्षि (दिव्यर्षि) : १. १, २५५; ७, २७; ६०, १२; ९४, ६३ (देवर्षिकल्पा नृपते बहवो राजसत्तमाः); ९९, ११; १००, १७; १०५, ५४; १०९, १० (देवर्षिचारणैः); १२१, ८; १७०, ६२ (नारदप्रभृतीनां तु देवर्षीणां); १८७, ७. १३ (देवर्षिगन्धर्व समाकुलम्); २११, १; २.-७, ७. ९. २६; १०, २० (कुबेर की सभा में); ११, ५२; ३. ४३, २० (शक्रासने पुण्ये देवर्षिगणसेविते); ८१, १४; ८२, ४१ (देवर्षिपितृसेवितम्). १०७ (वेदिका तु पुण्या देवर्षिसेविता); ८७, ६. ७; ८८, २२; ८९, ८; ९०, ३१; ९४, १; ९९, ५९; १३४, ९ (द्वौ देवर्षी नारदपार्वतौ च); १४२, ४ (महानदी बदरीप्रभवा राजन्देवर्षिगणसेविता); १४३, ४; १४५, ४१. ५२; १५४, ५; १५६, १०; १५९, २४; १६३, १५ (सप्त देवर्षयस्तात वसिष्ठप्रमुखस्तदा); १६९, २३; १७५, १३; १७८, ६; १९३, २६; २२४, २५; २३१, २५; २७३, ४ (देवर्षीणां त्वं ख्यातो भूतभविष्यवित्); २७६, १; ३१०, ४२; ५. १०, ५०; १२, ११. १५; १६, १३. १५. २१; १७, ८; ८३, ६५; ९८, ७; १०९, ५; ६. ३४, २६; ४५, ८५; ८१, ४१; ७. ७३, ४८; १३९, ५५; १६३, १३ (देवर्षिगन्धर्वसुरर्षिसंघा); ८. १६, १७ (सिद्धदेवर्षिसंघाश्च); ८७, ५१. ६१. ८०; ९. ४४, ३२; ४५, ७; ४८, ५१. ६७; ११. ८, २२; १२. १०, २२; १८, ९; ३७, ९; ४७, १९ (शरशैय्या पर पड़े भीष्म के चारों ओर ये लोग खड़े थे); ९१, ५८; १२२, ५; २०१, ३; २०९, ८; २१०, २१; २२८, ७. ९; २३३, १४; २३४, १३; २८३, १०; ३०१, ९; ३२३, २१; ३२४, १७; ३२८, १४; ३४०, ५६. ८७; ३६०, ३; १३. ३, १०; १४, ३९३; ९४, ४३; १०७, ११५. ११८. १३१; ११२, १२ (देवर्षिपितृमानवाः); १४०, १०; १६५, ६१; १४. ७, ५; ८, ५; २६, ६ (प्रजापतौ पन्नगानां देवर्षीणां). ७. ११; ७७, १७. २४; ८८; ३६; १५. १, १४; २७, २२; ३१, ६.७; १७. ३, २३. ३५।

२. देवर्षि, विभिन्न देवर्षियों के लिये अलग-अलग प्रयुक्त हुआ है। ऐसे देवर्षियों के नाम इस प्रकार हैं :

*असित : १. १००, ८१।

*उशनस : १२.२८९, २ (देवर्षिरुशनाः)।

*कश्यप : १. ६५, ४९।

*तनु : १२. १२७, २०।

*नारद : १. १९८, १४; २०८, ९. १४; २१२, २८; २१७, १४. १५; २. ५, ११; ८०, ३५; ३. ८१, २; ८५, ११८; ८८, २२ (देवर्षिवीरेण नारदेनानुकीर्तितः); १८३, ४७. ४९; ५. १००, १७; १०३, २१; ६. ३४, १३; ७. ५२, ३१. ३२; ५४, ५३; ५५, ११. ३५; ९. ५४, २२; ११. १, १३; १२. ६, १; ३०, ३२ (नारदम् देवर्षि वानरप्रतिमाननम्); ८१, ६; १५५, ८; १९३, ७; २०७, ३. ४७; २२८, १६. ८६; २८७, ३; ३०८, ४४; ३२७, ३; ३२९, २; ३३२, ७; ३३३, ४१; ३३९, २९; ३५२, ९; १३. ३८, ३. ७. ८. ९. २१. २६; ६४, ४; १३९, ५०; १४. ६, ११; ७, ५; १४, १०; १५. २०, ५. २५. ३७; ३७, १।

*पर्वत : ३. ९३, २५।

*बृहस्पति : १. ६७, ६९; २. ५०, ९; ५. १२, ११-५।

*भूर्भुव : १३. १०७, ८१ (भूर्भुवं चापि देवर्षि)।

*लोमश : ३. ९३, १४; ९४, १; ११. २६, २०।

*वसिष्ठ : ३. २९१, ७०; १३. ८४, ३८।

देवल – देखिये असित देवल।

देवलोक : १. २९, १३; ७०, २३; ८७, २; १९७, २७; ३. २४, ७; ४२, १४; १४६, ९३; १५८, १०; १८६, ५. ९; १९९, १२; ३००, ३९; ६. ७, ७; ८, १४; ९०, १६; ८. ९४, २७; ९. ५२, १२; ५५, ९; १२. २४, २८. २९. ३०. ३२. ३३; २५, ३३. ३४. ३५; ३०, ५; ५२, ४; २८०, ४३. ६९; १३. २५, २७. ५३; ५८, २५; १६२, ३०; १४. ९, १७; १६, २९; ५९, १९; १५. ३३, २. १४; १७. ३, १३; १८. ५, ५४; ६, २८।

देववन, एक पुण्यक्षेत्र का नाम है, जहाँ वाहुदा नदी और नन्दा नामक पर्वत स्थित था : ३. ८७, २६ (देववनं पुण्यं तापसैरुपशोभितम्। वाहुदा च नदी यत्र नन्दा च गिरिमूर्धनि)।

१. देववर = सूर्य : ३. ३, ३१।

२. देववर = विष्णु : ३. २०३, ३५।

३. देववर = ब्रह्मा : १३. १०३, ४२।

४. देववर = शिव : १२. २९४, १५।

देवव्रत = भीष्म (देखिये वस्था०)।

देवशर्मन, एक ऋषि जो जनमेजय के सर्पसत्र के सदस्य बनाये गये थे (१. ५३, ९)। ये महा भाग्यशाली ऋषि थे और इनकी पत्नी का नाम रुचि था जो इस पृथिवी पर अद्वितीय सुन्दरी थी (१३.४०, १६)। देवशर्मन अपने शिष्य विपुल को अपनी पत्नी की रक्षा का उत्तरदायित्व सौंप कर यज्ञ के लिये प्रस्थान को उद्यत हुये (१३. ४०, २२–२३)। विपुल के पूछने पर उसे इन्द्र के स्वरूप का वर्णन करना (१३. ४०, २८-३८)। आश्रम पर वापस आने पर इन्होंने विपुल को वर दिया (१३. ४१, २८–३४)। इन्होंने विपुल को दिव्य पुष्प लाने के लिये भेजा (१३. ४२, १२)। इन्होंने विपुल को निर्दोष बताते हुये उसे स्वर्ग-प्राप्ति का अशीर्वाद दिया (१३. ४३, ४–१६)। ये उत्तर दिशा का आश्रय लेकर रहने वाले ऋषि थे (१३. १६५, ४६)।

देवशुनि = सरमा (१. ३, १०)।

देवसत्र एक यज्ञ का नाम है (३. ८४, ६८)।

देवसम एक पर्वत का नाम है। यह अगस्त्य के शिष्य का आश्रम था (३. ८८, १७)।

देवसिंह = शिव (सहस्रनाम)

देवसेना, दक्ष प्रजापति की पुत्री और दैत्यसेना की बहन का नाम है जिसका केशी नामक राक्षस द्वारा अपहरण होने पर इन्द्र ने उद्धार किया था (३. २२३, ७-१५)। इसने अपना तथा अपनी बहन का परिचय दिया और इन्द्र से अपने भावी पति के लक्षणों का वर्णन किया (३. २२४, १-९. २२ । स्कन्द के साथ इसका विवाह हुआ (३. २२९, ४२. ४५. ४६. ४९. ५१)।

देवसेनापति (देवसेनापति, अथवा देवसेना के पति) = स्कन्द (३. २३०, १. २; २३१, ५४)।

देवसेनाप्रिय = स्कन्द (३. २३२, ८)।

देवस्थान एक प्राचीन ऋषि का नाम है। युद्ध के पश्चात् ये युधिष्ठिर के पास आये थे (१२. १, ४)। इन्होंने युधिष्ठिर को उत्तम धर्म और यज्ञानुष्ठान का उपदेश दिया था (१२. २०, २-१४)। इनके तथा अन्य मुनियों के समझाने पर युधिष्ठिर ने मानसिक दुःख का परित्याग किया (१२. ३७, २७)। शरशय्या पर पड़े भीष्म के चतुर्दिक उपस्थित ऋषियों में यह भी एक थे (१२. ४७,५)। भीष्म के राजधर्म विषयक उपदेश को सुनकर इन्होंने अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव किया (१२. ५८, २५)। इनके सान्त्वना देने पर राजर्षि युधिष्ठिर का मन शान्त हुआ और उन्होंने मानसिक शोकजनित दुःख का त्याग किया (१४. १४, २. १०)।

देवस्यतीर्थम् = ब्रह्मसर (१३. ९४, ७)।

देवहव्य, एक प्राचीन ऋषि जो इन्द्र की सभा में रह कर देवेन्द्र की उपासना करते थे (२. ७, १९)।

देवहोत्र एक प्राचीन ऋषि का नाम है। इन्हें वसु उपरिचर के यज्ञ में सदस्य बनाया गया था (१२. ३३६, ९)।

देवह्रद, एक तीर्थ का नाम है (३. ८५, ३०.३७.५६)। यहाँ स्नान का विशेष फल (१३. २५, ४४)।

देवाचार्य = बृहस्पति (१४. ६, १४)।

देवातिथि, पूरुवंशीय राजा अक्रोधन के द्वारा करम्भा के गर्भ से उत्पन्न एक राजा का नाम है (१. ९५, २२)। इनकी पत्नी का नाम मर्यादा तथा पुत्र का नाम अरिह था (१. ९५, २३)।

१. देवातिदेव = ब्रह्मा (१२. २८९, २३)।

२. देवातिदेव = शिव (सहस्रनाम)।

१. देवाधिदेव = ब्रह्मा (१३. १०७, ८१)।

२. देवाधिदेव = शिव (८. ३३, ५५; १३. १४, २८७. ३६९)।

३. देवाधिदेव = विष्णु (१२. २०९, २१)।

१. देवाधिप एक क्षत्रिय राजा का नाम है जो अजेय दैत्य निकुम्भ के अंश से उत्पन्न हुआ था (१.६७, २६-२७)।

२. देवाधिप = इन्द्र (देखिये व्स्था०)।

देवाधिपति = शिव (सहस्रनाम)।

१. देवापि, पाण्डव पक्ष के एक चेदिवंशीय वीर का नाम है जिसका कर्ण ने वध किया था (८. ५६, ४८)।

२. देवापि , महाराज प्रतीप के प्रथम पुत्र तथा शान्तनु के अग्रज का नाम है (१. ९४, ६१. ६२)। धर्माचरण द्वारा कल्याण प्राप्ति के हेतु ये वन चले गये थे, अतः शान्तनु इनके स्थान पर राजा हुये (१. ९५, ४४. ४५)। धर्मपूर्वक पृथिवी का शासन करनेवाले महाराज प्रतीप के तीन देवोपम पुत्र हुये जिनके नाम देवापि, वाह्लीक और शान्तनु थे। देवापि, जो सबसे ज्येष्ठ थे महान् तेजस्वी, धार्मिक, सत्यवादी, पिता की सेवा में तत्पर रहनेवाले और जनपद के निवासियों के लिये परम आदरणीय थे। इन्होंने बालकों से लेकर वृद्धों तक सभी के हृदय में स्थान बना लिया था। अपने दोनों छोटे भ्राताओं के भी ये अत्यन्त प्रिय थे। इन गुणों के विपरीत ये चर्म रोग से पीड़ित रहा करते थे। फलस्वरूप जनपद के लोगों तथा ब्राह्मणों ने इन्हें हीनाङ्ग होने के कारण राजा बनाये जाने से रोक दिया। इस कारण इनके पिता अत्यन्त दुःखी हुये, और देवापि ने भी शान्तभाव से वन के लिये प्रस्थान किया। इनके छोटे भाई वाह्लीक भी अपने मामा के घर रहते थे। अतः शान्तनु को ही राजा बनाया गया (५. १४९, १६. १७. १८. २३. २६)। देवापि ने कुरुक्षेत्र के अन्तर्गत पृथूदक तीर्थ में तपस्या करके ब्राह्मणत्व प्राप्त किया (९. ३९, ३७; ४०, २)।

देवारण्य एक दिव्य वन का नाम है (१. १५५, २८; २१६, १५; ५. १४, ६; १८६, २७; ७. ६३, ७)।

देवारिबलसूदन = शिव (सहस्रनाम)।

१. देवावृध कौरव पक्ष के एक महारथी योद्धा का नाम है (८. ८५, ३)।

२. देवावृध—प्राचीन नरेशों की गणना कराते हुये संजय ने इनका भी उल्लेख किया (१. १, २३४)। इन्होंने एक ब्राह्मण को बहुमूल्य छत्र दान करके स्वर्ग प्राप्त किया (१२. २३४, २१; १३. १३७, ७)।

देवावृधसूनु = बभ्रु (८. ८५, १८)।

देवासुर (वि०): १. ३०, ३५ (अभूतपूर्वे संग्रामे तदा देवासुरेऽपि); १०२, ३० (युद्धम् · · · देवासुरोपमम्); ३. १७३, ७२ (अति देवासुरं कर्म); १९३, ६; २२४, १२; २८५, ११; ४. ३२, ५; ५५, २ (देवासुरसमः); ५. ४९, ११ (देवासुरे युद्धे); ८३, ६६; १०४, ३; १२८, ४१ (देवासुरे युद्धे); ६. २१, ९; ४५, ८५; ५०, ४०; ५८, १३; ७९, २७; ८३, ११; ९८, ४६; १००, ५४; ११६, ३६; ११८, ५४; ७. १४, ४८; १५, २; १९, ६; २५, २१; ६३, ५; १०२, १७; १०५, २२; १०६, ४; ११४, ५६; ११५, ६१; १२२, ५०; १२८, १३; १४३, ८; १५५, ३४; १६९, २४; १९२, ११; ८. १३, ३०; १४, ३५; ३०, १; ३३, १; ४७, २३; ४८, ४०; ६०, ४८; ९. ४५, २७; ६३, ७; १३. ३६, ११।

देवासुरगणाग्रणी = शिव (१,००० नाम)।

देवासुरगणाध्यक्ष = शिव (८. ३४, ११८; १३. १७, १४६)।

देवासुरगणाश्रय = शिव (१,००० नाम)।

१. देवासुरगुरु = ब्रह्मा (१३. १६५, ८)।

२. देवासुरगुरु = शिव (१,००० नाम)।

देवासुरनमस्कृत = शिव (१,००० नाम)।

देवासुरपति = शिव (१,००० नाम)।

देवासुरपरायण = शिव (१,००० नाम)।

देवासुरमहामात्र = शिव (१,००० नाम)।

देवासुरमहेश्वर = शिव (१,००० नाम)।

देवासुरवरप्रद = शिव (१,००० नाम)।

देवासुरविनिर्मातृ = शिव (१,००० नाम)।

देवासुरेश्वर = शिव (१,००० नाम)।

देवाह्वय एक प्राचीन नरेश का नाम है (१. १, २३५)।

१. देविका, गोवासन शैब्य की पुत्री का नाम है जिसे स्वयंवर में युधिष्ठिर ने प्राप्त किया था। इसके गर्भ से यौधेय नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (१. ९५, ७६)।

२. देविका एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, १०२. १०३)। उन नदियों के अन्तर्गत इसकी भी गणना है जो अग्नि की माताएँ थीं (३. २२२, २२)। यह भारतवर्ष की एक नदी है (६. ९, १६)। यह एक तीर्थ है (१३. २५, ९)। 'देविकामुपस्पृश्य सुन्दरिका ह्रदे। अश्विन्यां रूपवर्चस्कं प्रेत्य वै लभते नरः', (१३. २५, २१)। उमा के साथ उपस्थित नदियों में यह भी एक थी (१३. १४, १८)। १३. १६५, १९।

१. देवी, एक दिव्य अप्सरा का नाम है जो अर्जुन के जन्मोत्सव के समय नृत्य के लिये उपस्थित हुई (१. १२३, ६२)।

२. देवी = उमा (देखिये वस्था०)।

३. देवी, वरुण की पत्नी का नाम है जो शुक्र की ज्येष्ठ पुत्री थी। यह बल और सुरा की माता बनी (८. ६६, ५२)।

४. देवी = सावित्री (ब्रह्मा की पत्नी) : १२. १९९, ७-१०. १२-१७।

२००, ६

देवीतीर्थ—कुरुक्षेत्र के अन्तर्गत इस नाम के तीन तीर्थ हैं। प्रथम शंखिन तीर्थ के भीतर है जिसमें स्नान करने से उत्तम रूप की प्राप्ति होती है (३. ८३, ५१)। दूसरा मधुवटी के अन्तर्गत है जहां देवों और पितरों की पूजा करके मनुष्य देवी की आज्ञानुसार सहस्र गोदान का फल पाता है (३. ८३, ९४)। तीसरा मृगधूम के बाद आता है। इसमें स्नान करने से भी सहस्र गोदान का फल मिलता है (३. ८३, १०२)।

देवीस्थान, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, १३)।

१. देवेन्द्र = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

२. देवेन्द्र = नहुष (देखिये वस्था०)।

३. देवेन्द्र = शिव (१,००० नाम)।

१. देवेश = ब्रह्मा : १. ३९, ७; ३. १४२, ५१; ६. १२१, ९; ७.५४, ९; ९. ३४, १८; ४४, ४५; १२. २५८, ३२; २८२, ४५. ५३; १३. १६, ७६; ४०, १०; ८३, १२; १०३, २०. ३७; १४७, ३९।

२. देवेश = शिव : १.४८, २२ (देवेशः शूलपाणिः); ६२, ३४; १९७, ४७; ३. ३८, ३०; ३९, ८१; ८३, १६३; ७. ४२, १८. १९; ८. ३४, ४. १२. ५९. ६२. ८०. ८५. ८९. ९०. १४४. १५५; ९. ३५, ७१; ४४, ३४; १०. ७, १; १२. २८९, १७; ३२३, १५; १३. १४, १५३. २०३. २०५. २८३. ३३०; १४४, ४२; १४६, १४. ६०।

३. देवेश = दक्ष (९.३५, ७१)।

४. देवेश = इन्द्र : १.९६, २; १११, २९; २२६, १५(शतक्रतुं सहस्राक्षं देवेशमसुरार्दनम्); ३. ४३, १६; ९१, ७; १६८, १९; २२७, ७.९; ३०२, १४; ५. १७, ५; १०४, २१; १०५, ९; ७. १, ३७; १०३, १९; ८. ३६, १; ९. ४९, २; १२. २२८, ८२; १३. १२५, ५४।

५. देवेश = कृष्ण अथवा विष्णु : ३. ११४, २६; १८८, १४२; २६३, १५; ५. १३, ११; ६. ३५, २५. ३७. ४५; ५९, ९७; ६५, ६६; १२. ३३५, १९; ३३६, ५३; ३३९, १०. १३७; ३४३, ५९; ३४५, १७; ३४८, ३५ (हरिं नारायणं प्रभुम्); ३४९, २१. २२; १३. १६, ७६; १४८, १८; १४९, ६५ (विष्णुसहस्रनाम)।

६. देवेश = यम : ३. २९७, ११।

७. देवेश = ब्रह्मा और शिव : ३. १२, ४०।

देवेशय = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

देवेशी = उमा : १२. २८४, २८।

१. देवेश्वर = शिव : ८. ३४, १६।

२. देवेश्वर = इन्द्र : २. ७, ४; ३. ११९, २१; ३१०, १५; ७. १९६, २५; १२. ३२४, १९।

देव्याः तीर्थम्—देखिये देवीस्थान।

देशरचिन् = शिव : १०. ७, १०।

देह = शिव (१,००० नाम)।

देहकर्तृ = सूर्य : ३. ३, २७।

१. दैतेय (बहु० °याः) (दिति के पुत्र अथवा वंशज)—यह देव-शत्रुओं के एक वर्ग का द्योतक है। अमृतमन्थन के पश्चात नारायण ने इनसे अमृत छीन लिया था (१. १८. ४६)। 'शरभोनाम यस्तेषां दैतेयानां महासुरः', (१. ६७, २७)। 'सौभवासिनः', (३. १७, ४)। 'दैतेयास्त्र-महाबलम्' (३. १९, १७)। ३. ४१, ३० (तदा मया वीर संग्रामे तारकामये। दैतेयानां सहस्राणि संयतानि महात्मनाम्); ८२, ७५; ९४, ५; १७३, १९. २४. २६. २९; २४५, १८ (दह्यमाना ' ' ' दैतेया); २५१, १९; ५. ९८, १५; ९९, ११; १०५, ११; १२८, ४३. ४६ (धर्म ने दैत्यों और दानवों को वन्दी बनाकर वरुण को समर्पित कर दिया तथा वरुण ने उन्हें सागरतल में रक्खा); ६. ६५, ६८; ७. १२२, ५० (पेतुः क्षितौ राजन् सुवर्चसः देवासुरे पुरायुद्धे यथा दैतेयदानवाः); ८. ३१, ४५; ७३, ५७ (पुराविष्णुरिव हत्वा दैतेयदानवान्); ९. २५, १५; ४३, ४८; ४६, ६७ (स्कन्द के नेतृत्व में देवों ने इन्हें पराजित किया); १२.२९,९७ (व्यूढेनासुरयुद्धेन हत्वा दैतेयदानवान्); १४२, २२ (दैतेया-नुशना प्राह संशयच्छेदनं पुरा); २२३, १७; २२७, ५४; २२८, २८; ३१८, ६३; १३. १४८, ३० (दैतेयादानवेन्द्राश्च महाकाया महाबलाः। चक्राग्नौ क्षयमापन्ना दावाग्नौ शलभा इव)। देखिये असुर (बहु०), दैत्य (बहु०), दानव (बहु०), दितिज (बहु०)।

प्रमुख दैत्यों के नाम :

अश्वपति : १. ६७, १४।

इल्वल : ३. ९६, ४. १३।

तारका : १३. ८४, ७९; ८५, १।

प्रह्लाद : १२. २२२, १२।

बाण : ९. ४६, ८२।

मय : २. १, ९. १५।

विप्रचित्ति : १२. ९८, ५०।

विरूपाक्ष : १. ६७, २२।

विरोचन : ५. ३५, ७।

वेगवत् : ३. १६, १७।

शिबि : १. ६७, ८।

हिरण्यकशिपु : १२. ३३९, ७८।

२. दैतेय (वि०) : १२. २०७, २७ (दानवाश्च पराभूता दैतेयी चासुरी प्रजा)।

दैतेयापसद = ५.-शाल्व (३. २०, २०)

दैतेयी = पुलोमा (३. १७३, ७)।

१. दैत्य (बहु० °याः), देवों के शत्रुओं का द्योतक है (= दैतेय बहु): १. २, ९४ (दैत्यानां दानवानां); १९, १ (इन लोगों ने अमृत के लिये देवों से युद्ध किया); २३, १३; ६४, २८; ६६, ४३ (उशना इनके गुरु हुए); ७८, १९. ३२; ८०, १२ (दैत्येन्द्राणां महासुरः); ८१, ३८; ८२, १४ (दैत्यकन्यामनिन्दिताम्); १२३, ४५ (निवातकवचा नाम दैत्या विबुधविद्विषः); १८७, ७ (ये लोग भी द्रौपदी का स्वयंवर देखने के लिये उपस्थित हुये थे); २०९, ३२ (हृष्टं प्रमुदितं सर्वं दैत्यानामभवत्पुरम्); ३३; २१०, २. ३; २१२, २०; २२५, २६; २२७, २७; २२८, ८ (दैत्याः कृष्णचक्रविदारिताः); २. ९, १५ (ये लोग वरुण की सभा में उपस्थित हुये); ११, ५६ (ये अतिथियों के रूप में ब्रह्मा के सदन में आये); १२, २; ४५, २१; ३. १२, १९; ४१, ६ (ये लोग वरुण के साथ गये); ५६,११; ८२, २३ (इन लोगों ने पुष्कर में तपस्या करके देवत्व प्राप्त किया था); ९४, १३ (निर्यशस्कास्तथा दैत्याः). २२; १०१, १६; १०२, ८. २२ (आदिदैत्यो महावीर्यो हिरण्यकशिपुः पुरा); १५४, २३; १६८, ८२; १६९, ७; १७१, ६; १७२, १. ४. २५; १७३, ६. २५; १८३, ५४; १८८, १२० (मार्कण्डेय ने नारायण के उदर में इन्हें भी देखा); १८९, २८; २०१, २३; २०२, २०; २२४, ८ (जेतायो दुष्टदैत्यानां); २३०, ३०; २३१, ७४. ७५. ८१. ८९. ९१. ९४. १००; २५१, २७; २५२, १७ (दैत्यरक्षोगणाश्चैव). २३. २७. ४४; २६५, २; २७१, १६; २७२, ५७ (दैत्यानामादिपुरुषः); २७५, ३९ (दैत्यानां देवानां बलोत्कटः आक्रम्य रत्नान्यहरत); २८१, १०; २९०, १३; ३१०, २४; ३१५, १४; ४. ५८, ६२; ५. १०, ७; १४, १८; २२, ३२; ४९, १३; ९८, १७; ९९, १; १००, १; ११०, ५; ६. ६, २२; २०, ५; ३४, ३०; ५४, ११; ६६, ९; ७७, ४५; ८०, ११; ८३, ५७ (दैत्यचमूं राजन्निन्द्रोपेन्द्राविवामरौ); ८५, १८; ८७, ३२; ९०, ९३; १०७, ३९; ११८, ३३; ७. ११, १४; २१, ३७; ७९, २४; ८०, १९ (शिव ने पाशुपतास्त्र से इनका वध किया था); १२६, ३०; १४८, ५७; १५८, ५१; १५९, ३२. ४७; १६०, १; १६२, ४; १८५, १६; २०२, ६९; ८. १६, १२; १९, ६. २४; २५, ४३ (यथा दैत्य चमूं राजन् देवराजो ममर्दह); ३१, ४३; ३३, ४ (संग्रामस्तारकामयः निर्जिताश्च तदा दैत्या). १६, २२. ३०; ३४, १३९. १४८. १४९ (राम जामदग्न्य ने इनका वध किया था); ५३, २६; ६०, ७ (जिहीर्षवोऽमृतं दैत्याः

शक्राग्निम्यामिवासकृत्). ३३ (शक्रेणेव यथा दैत्यान् हन्यमानान्); ८२, २५; ९. १४, ४८; २०, ६; २४, ६६; ३१, ८. १५; ३९, ७; ४३, ४९; ४४, ३; ४५, २७; ४६, ५५. ६३. ७४. ७९. ८९. ९४ (देवों से दैत्यों के युद्ध का वर्णन). १०४; ४७, ३; ५१, ३६; ५५, ४३; १०. ४, १६ (दैत्यसेनामिव क्रुद्धः); १२. १२, ३७; ३३, २७. ३०; ४७, ७४; १६६, २८; २०९, १७. २२ (वाराहावतार के रूप में दैत्यों का वध किया था); २२५, २९; २२७, ७. ५५; २२८, २८; २८१ २२; ३४३, ६२; ३४९, ३०. ३१; १३. ६, १८; १४, १४३. २०५. २०७. २३०; ३०, ५९ (इन्होंने इन्द्र समझ कर गृत्समद पर आक्रमण किया); ८१, ४० (परामवाच्च दैत्यानां); ८२, ६ (श्री ने इनको छोड़ दिया); ८३, ७; ९८, ७ (ब्रह्मर्षिदेवदैत्यानां पुराणानां महात्मनाम्). ४१; १२६, ११ (चक्रेण निहता दैत्याः); १५५, ९. २५; १५८, ११. १७; १६०, २८; १४. ५४, ४; ६०, १३; १६. ६, ५। तुकी० असुर (बहु०), दानव (बहु०), दितिज (बहु०)।

२. दैत्य (तुकी० दैत्य बहु०)—युधिष्ठिर ने अजगर से पूछा कि क्या वह दैत्य है (३. १८०, ९)। शिव ने जल में रहने वाले एक दैत्य का वध किया था (१३. १४, ७६)।

विभिन्न दैत्यों के नाम :

इल्वल : ३. ९९, १३।

तारक : ७. १५५, ३६; ९. ३१, १३; १३. ८५, १६४।

धुन्धु : ३. २०१, ३४; २०२, ३१; २०४, ३३. ४२।

नमुचि : ६. ८३, ४०।

नरक : ३. १४२, १६ (दैत्यस्य नरकस्य महात्मनः)।

प्रह्लादः २. ६८, ६८; १२. १२४, २०।

बलि : १२. २२३, २५; २२७, १३।

मय : ३. २८२, ४१।

राहु : १. १९, ९।

वातापि : ३. ९६, २।

वृत्र : ७. ९४, ४९; १२. २७९, १३; २८०, ५७. ५९. ६०; २८१, १२. १८. १९. २१. २९. ३३।

वृषपर्वन् : १. ८०, ५।

शम्बर : ३. १२०, १३।

३. दैत्य (वि०) : १३. ४०, ३४ (दैवं दैत्यमथो राक्षां वपुर्धारयतेऽपि च)।

४. दैत्य (°त्यौ) = सुन्द और उपसुन्द : १. २०९, ३; २१०, ५. २७; २१२, १।

दैत्यकन्या = शर्मिष्ठा (१. ८२, ११. १२)।

दैत्यद्वीप, गरुड की सन्तानों में से एक सुपर्ण (५. १०१, ११)।

दैत्यनिबर्हण = इन्द्र (१७. ३, ३७)।

दैत्यप = बलि (१३. ९८, २२)।

दैत्यपति = प्रह्लाद (१२. २२२, ३६),

१. दैत्यसत्तम = नमुचि (६. ८३, ४०)।

२. दैत्यसत्तम = तारक (७. १५५, ३६)।

दैत्यसेना, दक्ष, प्रजापति की पुत्री और देवसेना की बहन जिसका केशी नामक दैत्य ने अपहरण कर लिया था (३. २२४, १. ३)।

दैत्यहन् = शिव (सहस्रनाम)।

१. दैत्येन्द्र = बलि : ९. ४६, ९०; १२. २२५, ३४. ३७; २२७, १२; १३. ९८, १४।

२. दैत्येन्द्र = हिरण्यकशिपु : ३. २७२, ५७. ६१।

३. दैत्येन्द्र = इल्वल : ३. ९९, ५।

४. दैत्येन्द्र = नरक : ३. १४२, २५।

५. दैत्येन्द्र = निकुम्भ : १. २०९, २।

६. दैत्येन्द्र = प्रह्लाद : २. ६८, ६६; ३. २८, २; १२. १२४, ३९. ४१. ४३. ५१. ५७; २२१, ३७।

७. दैत्येन्द्र = तारक ९. ४६, ७३।

८. दैत्येन्द्र = विरोचन : ५. ३५, ७।

९. दैत्येन्द्र = वृत्र : १२. २८०, २९।

१०. दैत्येन्द्र (द्वि० °न्द्रौ) सुन्द और उपसुन्द : १. २०९, २३. २७।

दैव — एक प्रकार का विवाह जिसे ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य वर्णों के लिये ही ग्राह्य माना गया है (१. ७३, ८-१०)।

दैवकीनन्दन = विष्णु (देखिये देवकीनन्दन)।

दैवयानेय (देवयानी का पुत्र) = यदु : १. ७५, ३९।

दैवराति = जनक : १२. ३१०, ४; ३१९, ९५।

दैवीसम्पत्ति, अभय आदि दिव्य गुणों की संज्ञा है (६. ४०, १-३)। इसे संसार से मोक्ष दिलानेवाला कहा गया है (६. ४०, ५)।

१. दौःशासन — देखिये दौःशासनि

२. दौःशासन (दुःशासन का) : ८. ८३, ३५।

दौःशासनि (धार्तराष्ट्र दुःशासन का पुत्र)—इसने श्रुतिकीर्ति से युद्ध किया (७. २५, ३२)। ७. ३३, २०; ४८, ९. १०; ४९, ९. १२ (इसने अभिमन्यु का वध किया); ५१, ७; ७३, १२; ८. ५, १४ (द्रौपदी के एक पुत्र ने इसका वध किया); ६, १०; ९. ६४, ३४; ११. २६, ३२ (इसके शव को जलाया गया); १४. ६१, १८. २१।

दौर्मुखि, एक पाण्डव सैनिक का नाम है : ७. १५८, ४१; १८४, ५।

दौर्योधन (वि०, दुर्योधन का) : ४. ५५, १६; ७. १७, ४८; १८, २३; ८. ९३, ३१; ९. १६, ६५; १४. ६०, १९।

दौर्योधनि (दुर्योधन का पुत्र) = लक्ष्मण : ६. ५५, ९।

दौवालिक (°काः) एक जाति के लोगों का नाम है जो युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये (२. ५२, १८)।

दौष्मन्त, दौष्मन्ति — देखिये दौष्यन्ति।

दौष्यन्त (दुष्यन्त से उत्पन्न) : १. ९५, ५२।

दौष्यन्ति (दुष्यन्त का पुत्र) = भरत : १. ७४, २. १४; ७. ६८, ३; १२; २९, ४५. ४७; १६६, ७५; १४. ३, १०; १८. ३, २७।

द्युति, एक देवी का नाम है। द्रौपदी ने अर्जुन के संरक्षण के लिये इनसे निवेदन किया था (३. ३७, ३३)।

द्युतिधर = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. द्युतिमत्, मद्रदेश के एक राजा का नाम है। इनकी पुत्री विजया को सहदेव ने स्वयंवर में प्राप्त किया था (१. ९५, ८०)।

२. द्युतिमत्, कुशद्वीप का एक पर्वत है (६. १२, १०)।

३. द्युतिमत्, शाल्वदेश के एक राजा जिन्होंने ऋचीक को राज्य प्रदान करके उत्तम लोक प्राप्त किया था (१२. २३४, ३३; १३. १३७, २३)।

४. द्युतिमत्, महिष्मती के राजा, मदिराश्व के पुत्र तथा सुवीर के पिता थे। (१३. २, ९)।

१. द्युमत्सेन, शाल्वों के राजा, शैब्या के पति तथा सत्यवत् के पिता थे : १. १३९, ५; २. ४, ३१; ३. २९४, ७; २९५, ३. ९. १३; २९६, ५. ७. ८. २७; २९८, १. २५. ३३; २९९, २. ११; १२. २६७, २. ५. १७।

२. द्युमत्सेन एक पर्वतीय राजा थे जिनके साथ श्रीकृष्ण ने सहस्रों पर्वतों को विदीर्ण करके युद्ध किया था (२. ३८, २९ के बाद दा० पा०, गीप्रे० संस्करण पृ० ८२४)।

द्युमत्सेन-सुत = सत्यवत् : ३. २९४, १८; ४. २१, १५।

द्यूतपर्वन्, सभापर्व के एक अवान्तरपर्व का नाम है जो महाभारत के उपपर्वों में २८ वाँ है (१.२,४९)। "राजसूय यज्ञ समाप्त हो जाने पर शिष्यों से घिरे हुए भगवान् व्यास राजा युधिष्ठिर के पास आये। आदर-सत्कार करने के पश्चात युधिष्ठिर ने व्यास जी से देवर्षि नारद द्वारा कथित स्वर्ग, अन्तरिक्ष, तथा पृथिवी विषयक तीन प्रकार के उत्पातों के सम्बन्ध में पूछा। व्यास जी ने बताया कि उक्त उत्पातों का फल तेरह

वर्षों तक होगा और इसके कारण समस्त क्षत्रियों का विनाश हो जायगा। उन्होंने यह भी बताया कि उसी रात को युधिष्ठिर को स्वप्न में भगवान् शिव का दर्शन होगा। शिव उस समय वृषभ पर आरूढ होकर सदा दक्षिण दिशा की ओर देख रहे होंगे। इस प्रकार कह कर व्यास जी अपने शिष्यों के साथ कैलास पर्वत पर चले गये। तदनन्तर चिन्ता और शोक से व्याकुल युधिष्ठिर ने निश्चय किया कि सम्पूर्ण क्षत्रिय जाति के विनाश का निमित्त बनाने की अपेक्षा मर जाना अधिक अच्छा होगा। अपने ज्येष्ठ भ्राता का यह निश्चय सुन कर अर्जुन ने उन्हें समझा कर अपने निश्चय से विरत होने का आग्रह किया। इस पर युधिष्ठिर ने यह प्रण किया कि वे अपने भ्राताओं अथवा अन्य किसी भी राजा के प्रति कटु शब्द का प्रयोग नहीं करेंगे। ऐसा प्रण करने के बाद युधिष्ठिर ने देवताओं तथा पितरों का तर्पण और अपने भ्राताओं तथा मन्त्रियों के साथ अपने नगर में प्रवेश किया (२.४६)।

"दुर्योधन ने मयनिर्मित युधिष्ठिर के सभाभवन को देखा तथा पग-पग पर भ्रम के कारण उपहास का पात्र बना। एक स्फटिक मणिमय स्थल को जल समझ कर दुर्योधन ने अपने वस्त्रों को भीगने से बचाने के लिये ऊपर उठा लिया। इसी प्रकार अनेक स्थानों पर भ्रमित हो जाने के कारण भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव आदि तथा अन्य सेवकों ने दुर्योधन का उपहास किया। अपनी मूर्खताओं पर उपहास का पात्र बना दुर्योधन अत्यन्त क्रुद्ध हो उठा और उसे युधिष्ठिर के वैभव पर ईर्ष्या होने लगी। अपने को अपमानित और लज्जित जान कर उसने अपने मामा शकुनि से मरने की आज्ञा मांगी (२.४७)।

"शकुनि ने दुर्योधन को परामर्श दिया कि वह युधिष्ठिर को जूआ खेलने के लिये आमन्त्रित करे क्योंकि युधिष्ठिर को यह खेल अत्यन्त प्रिय है, यद्यपि वे इसे अच्छी तरह खेलना नहीं जानते। शकुनि ने यह भी कहा इस प्रकार द्यूतक्रीड़ा में वह युधिष्ठिर को पराजित करके उनका सारा साम्राज्य तथा सारी सम्पत्ति जीत लेगा क्योंकि वह स्वयं पासा फेंकने में अत्यन्त कुशल है (२.४८)।

"शकुनि ने धृतराष्ट्र को दुर्योधन की चिन्ता का समाचार दिया। धृतराष्ट्र ने दुर्योधन से जब उसकी चिन्ता का कारण जानना चाहा तब उसने युधिष्ठिर के वैभव का वर्णन करते हुए कहा कि युधिष्ठिर अट्ठासी सहस्र स्नातकों का भरण-पोषण करते हैं और उनमें से प्रत्येक की सेवा के लिये तीस-तीस दासियाँ प्रस्तुत रहती हैं। इनके अतिरिक्त युधिष्ठिर के महल में दस सहस्र ब्राह्मण प्रतिदिन सोने की थालियों में भोजन करते हैं। काम्बोजराजने विभिन्न रंगों के कदली मृगों के चर्म तथा अनेक बहुमूल्य कम्बल आदि युधिष्ठिर को उपहार-स्वरूप दिये थे। अन्य अनेक भूपालों ने भी युधिष्ठिर को अनेक उपहार दिये थे। देवाङ्गनायें इन्द्र के लिये कलशों में जैसा मधु लिये रहती हैं वैसा ही वरुण देवता द्वारा प्रदत्त तथा काँसे के पात्र में रक्खा हुआ मधु समुद्र ने युधिष्ठिर के लिये उपहार में भेजा था। वहाँ एक सहस्र स्वर्णमुद्राओं का बना हुआ कलश रक्खा था जिसमें अनेक प्रकार के रत्न जड़े हुए थे। उस पात्र में स्थित समुद्रजल को उत्तम शङ्ख में लेकर श्री कृष्ण ने युधिष्ठिर का अभिषेक किया था। जब एक लाख ब्राह्मणों को भोजन कराया जाता था तब एक शङ्ख बजाया जाता था। इस प्रकार युधिष्ठिर की समृद्धि का वर्णन करने के पश्चात दुर्योधन ने अपने पिता से युधिष्ठिर को शकुनि के साथ द्यूतक्रीड़ा के हेतु आमन्त्रित करने के लिये कहा। साथ ही उसने धृतराष्ट्र को विदुर से तब तक परामर्श नहीं करने दिया जब तक एक सभामण्डप का निर्माण नहीं हो गया। तदनन्तर धृतराष्ट्र ने विदुर को युधिष्ठिर को आमन्त्रित करने का आदेश दिया। विदुर ने धृतराष्ट्र को इस कार्य से विरत करने का प्रयास किया किन्तु वह निष्फल रहा (२.४९)।

"जनमेजय के निवेदन पर वैशम्पायन ने बताया कि विदुर का मत जानने के पश्चात धृतराष्ट्र ने दुर्योधन को द्यूत का आयोजन करने से विरत करने का प्रयत्न किया परन्तु दुर्योधन सहमत नहीं हुआ। उसने बताया की नीप, चित्रक, कुकुर, कारस्कर तथा लोहजंघ आदि क्षत्रिय नरेश युधिष्ठिर के गृह में सेवकों की भाँति रहते हैं। दुर्योधन ने यह भी बताया कि युधिष्ठिर की सभा में जब वह भ्रमित हो गया था तब भीम, अर्जुन तथा द्रौपदी ने उसका उपहास किया था। अतः वह अब उन लोगों से प्रतिशोध लिये बिना नहीं रह सकता (२.५०)।

"दुर्योधन ने धृतराष्ट्र से युधिष्ठिर को उपहार में मिली बहुमूल्य वस्तुओं का वर्णन किया। उसने बताया कि राज्यसूय यज्ञ के समय यज्ञसेनी (द्रौपदी) स्वयं पहले भोजन न करके इस बात की देख-भाल करती थी कि कुबड़ों और बौनों से लेकर सब मनुष्यों ने भोजन कर लिया है या नहीं। उस समय दो ही कुल के लोगों ने युधिष्ठिर को कर नहीं दिया था। ऐसे कुलों में सम्बन्ध के कारण पाञ्चाल तथा मित्रता के कारण अन्धक एवं वृष्णि थे (२.५१-५२)।

"दुर्योधन ने युधिष्ठिर की सेवा में उपस्थित राजाओं का विस्तारपूर्वक वर्णन करते हुये बताया कि पूर्वकाल में प्रजापति ने इन्द्र के लिये जिस शंख को धारण किया था उसी वरुण देवता के शंख को समुद्र ने युधिष्ठिर को भेंट किया। विश्वकर्मा ने एक सहस्र स्वर्णमुद्राओं से जिस शैक्यपात्र का निर्माण किया था उसी में स्थित समुद्रजल को शंख में लेकर श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर का अभिषेक किया था। उस समय सैकड़ों मंगलकारी शंख एक साथ बजने लगे जिससे दुर्योधन के रोंगटे खड़े हो गये तथा अनेक तेजहीन भूपाल मूर्छित हो गये। धृष्टद्युम्न, पाण्डवगण, सात्यकि और श्रीकृष्ण ही उस समय स्थिर रह सके और दुर्योधन तथा अन्य राजाओं को मूर्छित हुआ देख कर हँसने लगे। तदनन्तर अर्जुन ने पाँच सौ बैलों को, जिनकी सींगें सुवर्णमंडित थीं, मुख्य-मुख्य ब्राह्मणों में वितरित किया। उस समय युधिष्ठिर महाराज हरिश्चन्द्र के समान वैभवशाली सम्राट हो गये जिनकी तुलना में रन्तिदेव, नाभाग, मान्धाता, मनु, पृथु, भगीरथ, ययाति अथवा नहुष जैसे महान राजा भी छोटे प्रतीत होते थे (२.५३)।

"दुर्योधन की बातें सुनने के बाद धृतराष्ट्र ने उसे समझाने का प्रयास किया। धृतराष्ट्र के समझाने के बाद भी दुर्योधन ने अपने पिता को उत्तेजित करने का प्रयास किया (२.५४-५५)।

"जब शकुनी ने अपनी द्यूत-विषयक कुशलता का वर्णन करते हुये द्यूतसभा का आयोजन करने पर बल दिया तथा पाण्डवों के प्रति विशेष अनुराग रखने के कारण दुर्योधन ने विदुर की भर्त्सना की, तब धृतराष्ट्र ने अपनी इच्छा न रहते हुये भी ऐसी तोरण-स्फाटिका का निर्माण करने का आदेश दिया जिसमें सुवर्ण तथा वैदूर्य से जटित एक सहस्र स्तम्भ तथा सौ द्वार हों। उस सुन्दर सभा की लम्बाई और चौड़ाई उन्होंने एक-एक क्रोश रखने का आदेश दिया। तदनन्तर धृतराष्ट्र ने पाण्डवों को लाने के लिए विदुर को भेजा (२.५६-५७)।

"विदुर ने युधिष्ठिर की सभा में जाकर उन्हें आमन्त्रित किया। युधिष्ठिर को जब यह मालूम हुआ कि उन्हें शकुनी, विविंशति, चित्रसेन, सत्यव्रत, पुरुमित्र तथा जय जैसे कपटी द्यूतज्ञों के साथ खेलना होगा तब उन्होंने निमन्त्रण स्वीकार करने में अपनी असमर्थता व्यक्त की। परन्तु युधिष्ठिर ने यह भी प्रण कर रक्खा था कि वे किसी चुनौती को अस्वीकार नहीं करेंगे। इस कारण वह दूसरे दिन ही अपने बन्धु-बान्धवों तथा द्रौपदी के साथ हस्तिनापुर के लिये चल पड़े। उस समय युधिष्ठिर के रथ को वाह्लीक ने तैयार किया था। हस्तिनापुर पहुँच कर युधिष्ठिर ने भीष्म, द्रोण, कर्ण, कृप, अश्वत्थामा, सोमदत्त, दुर्योधन, शल्य, सौबल, दुःशासन, जयद्रथ, आदि तथा गान्धारी और धृतराष्ट्र को नमस्कार किया (२.५८)।

"शकुनि ने युधिष्ठिर को द्यूतक्रीड़ाके लिये बुलाया। उस समय युधिष्ठिर ने लोकद्वारों में भ्रमण करने वाले असितदेवल का मत व्यक्त करते हुये कहा कि जुआरियों के साथ शठतापूर्वक खेला जानेवाला जूआ पाप होता है। परन्तु अन्ततः उन्हें जूआ खेलने के लिये सहमत होना ही पड़ा। उस समय दुर्योधन ने कहा कि शकुनि उसकी ओर से खेलेंगे और वह स्वयं हर प्रकार के रत्नों को दाँव पर लगायेगा (२.५९)।

"द्यूत आरम्भ हुआ और पहले-पहल मोतियों का हार दाँव पर रक्खा गया जिसे शकुनि ने जीत लिया तदनन्तर शकुनि ने युधिष्ठिर के सम्पूर्ण कोषागार, उनके दास-दासियों, हाथियों, रथों, तथा उन गन्धर्वाश्वों को जिन्हें चित्रसेन ने अर्जुन को दिया था, जीत लिया। युधिष्ठिर अपनी सम्पूर्ण निधियाँ भी हार गये (२. ६०-६१)।

"विदुर ने धृतराष्ट्र से कहा कि दुर्योधन के रूप में उनके घर के भीतर एक गीदड़ निवास कर रहा है। भोजवंश के एक नरेश ने पूर्वकाल में प्रजाहित के लिये अपने कुमार्गगामी पुत्र का परित्याग कर दिया था। अन्धकों, यादवों और भोजों ने मिलकर कंस को त्याग दिया तथा उन्हीं की आज्ञा से श्रीकृष्ण ने जब उस कंस का वध कर दिया तो सभी सुखी और प्रसन्न हुये। अतः विदुर ने धृतराष्ट्र को परामर्श दिया कि वे भी अपनी आज्ञा से सव्यसाची अर्जुन द्वारा दुर्योधन को बन्दी बनवा दें जिससे समस्त कौरव सुख-आनन्दपूर्वक रह सकें। विदुर ने इसके बाद उस कथा का वर्णन किया जिसे शुक्राचार्य ने जम्भ नामक दैत्य का परित्याग करने के लिये असुरों को सुनाया था। इस कथा के अनुसार एक वन में रहनेवाले पक्षी अपने मुख से सोना उगलते थे। उस देश के राजा ने एक दिन लोभवश उन सब पक्षियों का बध करा दिया क्योंकि वह एक साथ ही सारा सुवर्ण प्राप्त कर लेना चाहता था। किन्तु धन के लोभ से पक्षियों का वध करा कर उस राजा ने अपना वर्तमान और भविष्य दोनों ही नष्ट कर डाला। विदुर ने कहा कि इसी प्रकार पाण्डवों का सारा धन हड़प लेने के लोभ से धृतराष्ट्र को पाण्डवों से द्रोह नहीं करना चाहिये (२.६२)।

"धृतराष्ट्र को समझाते हुये विदुर ने परामर्श दिया कि जूए की अपेक्षा प्रेम से पाण्डवों पर विजय प्राप्त करना अधिक श्रेयस्कर होगा। उन्होंने यह भी कहा कि धृतराष्ट्र को चाहिये कि वे पाण्डवों को प्रेम से अपने पक्ष में करके शकुनि को उसके घर वापस कर दें (२. ६३)।

"दुर्योधन ने विदुर पर पाण्डवों का पक्षधर होने का आक्षेप करते हुये स्वयं अपनी बुद्धि से ही कार्य करने का निश्चय व्यक्त किया। विदुर ने दुर्योधन को चेतावनी देते हुये उसे मन्दबुद्धि बताया। विदुर ने यह भी कहा कि इस संसार में मन को प्रिय लगनेवाले वचन बोलने वाले महापापी मनुष्य अनेक मिल सकते हैं, परन्तु हितकर होते हुये भी अप्रिय वचन को कहने तथा सुनने वाले दोनों ही दुर्लभ हैं। विदुर ने यह भी संकेत किया कि पाण्डवों से वैर दुर्योधन के लिये घातक होगा (२. ६४)।

"जूये में युधिष्ठिर अपनी सारी सम्पत्ति हार गये। सिन्धु नदी के पूर्वी तट से लेकर पर्णाशा नदी के किनारे तक का सारा पशुधन भी वह हार गये। इसके बाद ब्राह्मणों को दान में दी हुई भूमि के अतिरिक्त शेष भूमि, नगर और जनपद भी वह दाँव पर लगा कर हार गये। युधिष्ठिर ने वहाँ उपस्थित राजपुत्रों के आभूषण दाँव पर लगाया किन्तु शकुनि ने उसे भी जीत लिया। इसी प्रकार युधिष्ठिर क्रमशः अपने भ्राताओं तथा स्वयं अपने को भी दाँव पर लगा कर हारते गये। जब उन्होंने द्रौपदी को दाँव पर लगाया तब उस द्यूतसभा में उपस्थित सभी बड़े-बूढ़े लोगों के मुख से 'धिक्कार' शब्द निकलने लगा भीष्म, द्रोण, और कृपाचार्य आदि के शरीर से पसीना छूटने लगा। विदुर जी यह दृश्य देखकर अचेत हो गये। उस समय महाराज धृतराष्ट्र, दुःशासन, और कर्ण को अत्यन्त हर्ष हुआ। शकुनि ने उस दाँव पर द्रौपदी को भी जीत लिया (२. ६५)।

"दुर्योधन ने विदुर को आदेश दिया कि वे द्रौपदी को लाकर उससे सभामण्डप में झाड़ू लगाने तथा महल की दासियों के साथ रहने को कहें। विदुर ने कहा कि स्वयं अपने को हार जाने के बाद द्रौपदी को दाँव पर लगाने का युधिष्ठिर को कोई अधिकार नहीं है। उन्होंने यह दृष्टान्त दिया कि एक बकरा कोई शस्त्र निगलने लगा, किन्तु जब वह निगला न जा सका तब उसने पृथिवी पर अपना सर पटक-पटक कर उस शस्त्र से स्वयं अपना ही सर काट लिया। दुर्योधन को उन्होंने यह चेतावनी दी कि पाण्डवों से वैर करने पर वह स्वयं अपना ही विनाश करेगा (२. ६६)।

"दुर्योधन ने प्रतिकामिन को आज्ञा दी कि वह द्रौपदी को सभाभवन में ले आये। दुर्योधन की आज्ञानुसार प्रातकामिन जब द्रौपदी को लाने गया तब द्रौपदी ने उसे यह पता लगाने के लिये कहा कि युधिष्ठिर ने पहले अपने को दाँव पर लगाया था या उसे। प्रतिकामी ने सभा में लौटकर युधिष्ठिर से द्रौपदी की बात कही। उस समय युधिष्ठिर निष्प्राण-से हो रहे थे, अतः उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया। दुर्योधन ने सूतपुत्र प्रतिकामी से कहा कि वह द्रौपदी से सभा में उपस्थित होकर अपना प्रश्न करने के लिये कहे। प्रतिकामी के पुनः आने पर द्रौपदी ने उससे कहा कि सभा में उपस्थित धर्मात्मा, नीतिज्ञ और श्रेष्ठ महापुरुषों से जाकर वह यह पूछे कि उसे (द्रौपदी को) इन परिस्थितियों में क्या करना चाहिये। प्रतिकामी ने जब द्रौपदी का यह प्रश्न सभा में उपस्थित लोगों से पूछा तो दुर्योधन के दुराग्रह को जानकर सभी नीचे मुँह किये बैठे रहे। दुर्योधन क्या करना चाहता है यह जान कर युधिष्ठिर ने द्रौपदी के पास एक दूत भेजा जिसे वह पहचानती थी और उसी से यह संदेश कहलवाया कि रजस्वला और नीवी को नीचे रखकर एक ही वस्त्र धारण करने के विपरीत भी वह (द्रौपदी) उसी दशा में विलाप करती हुई सभा में आकर अपने श्वसुर के सामने खड़ी हो जाय। युधिष्ठिर का अनुमान था कि उस दशा में सभी सभासद दुर्योधन की निन्दा करेंगे। तब दुर्योधन ने प्रतिकामी से द्रौपदी को सभा में ले आने के लिये कहा जिससे धर्मात्मा कौरव उसके प्रश्नों का उत्तर दे सकें। उस समय प्रतिकामी के संकोच को देखकर दुर्योधन ने दुःशासन से द्रौपदी को पकड़ कर लाने के लिये कहा। दुःशासन ने जब द्रौपदी को लाने का प्रयास किया तब वह विलाप करती हुई उस ओर भागी जिधर धृतराष्ट्र की स्त्रियाँ बैठी थीं। तब दुःशासन ने दौड़ कर द्रौपदी के केशों को पकड़ लिया और उस अबला को अनाथ की भाँति घसीटता हुआ सभामण्डप में ले आया। ऐसी दशा में यज्ञसेनकुमारी कृष्णा (द्रौपदी) अपनी रक्षा के लिये सर्वपापहारी, सर्वविजयी, नरस्वरूप भगवान श्रीकृष्ण को पुकारने लगी। उस समय द्रौपदी के केश बिखर गये थे। वह लज्जा से गड़ी जा रही थी उसने दुःशासन से कहा कि शास्त्रों के विद्वान, कर्मठ, तेजस्वी और पिता समान वृद्ध लोगों तथा गुरुजनों के सम्मुख उस रूप में उसका खड़ा होना उचित नहीं है। द्रौपदी ने सभा में उपस्थित लोगों को धिक्कारते हुये कहा कि क्षत्रिय धर्म के जानने वाले महापुरुषों का सदाचार भी लुप्त हो गया है। द्रोणाचार्य, भीष्म, विदुर और धृतराष्ट्र में भी कोई शक्ति नहीं रह गई है। द्रौपदी को अपने हारे हुए पतियों की ओर देखती हुई देख दुःशासन उसे बड़े वेग से झकझोर कर जोर-जोर से हसते हुए 'दासी' कह कर पुकारने लगा। कर्ण, दुर्योधन और शकुनि, दुःशासन के इस व्यवहार पर अत्यन्त प्रसन्न हुए। अन्य सभी लोगों को बहुत दुःख हुआ। भीष्म ने द्रौपदी के प्रश्नों का उत्तर देने में अपनी असमर्थता व्यक्त की। जब द्रौपदी ने सभा में उपस्थित अन्य लोगों से न्याय की याचना की तब दुःशासन ने उसके प्रति अनेक रूक्ष वचन कहे। उस समय द्रौपदी की दुरवस्था देखकर भीमसेन को अत्यन्त पीड़ा हुई। वे युधिष्ठिर की ओर देखकर अत्यन्त कुपित हो उठे (२. ६७)।

"भीम ने युधिष्ठिर पर दोषारोपण करते हुए सहदेव से अग्नि लाकर युधिष्ठिर के हाथों को भस्म कर देने के लिए कहा, किन्तु अर्जुन ने उन्हें किसी प्रकार शान्त किया। धृतराष्ट्र-नन्दन विकर्ण ने धर्मसगत बातें कहते हुए द्रौपदी के प्रश्न का समाधान करने का प्रयास किया। उसने कहा कि राजाओं के चार दुर्व्यसन बताये गये हैं: मृगया, मादरापान, जूआ तथा विषयभोग में अत्यन्त आसक्ति। इस प्रकार के व्यसनासक्त पुरुष धर्म की अवहेलना करके मनमाना व्यवहार करने लगते हैं। युधिष्ठिर भी द्यूतरूपी दुर्व्यसन में अत्यन्त आसक्त हैं और धूर्त जुआरियों से प्रेरित होकर द्रौपदी का दाँव पर लगा दिया था। साथ ही वह पहले अपने को भी हार चुके थे। अतः विकर्ण ने कहा कि वह द्रुपदकुमारी, कृष्णा को जीती हुई मानता। विकर्ण की बातें सुनकर सभी सभासद उसकी प्रशंसा तथा सुबल पुत्र शकुनि की निन्दा करने लगे किन्तु कर्ण ने विकर्ण का विरोध करते हुए कहा कि द्रौपदी के बार-बार प्रश्न करने पर भी जब द्रोण, भीष्म, अश्वत्थामा, कृपाचार्य और विदुर आदि कुछ नहीं बोले तो इन लोगों की

अपेक्षा कहीं कम बुद्धि वाले विकर्ण की बातों का कोई महत्त्व नहीं है। कर्ण ने यह भी कहा कि देवताओं ने स्त्री के लिये एक ही पति का विधान किया है, परन्तु द्रौपदी अनेक पतियों के अधीन है, अतः वह निश्चय ही वेश्या है। वह एकवस्त्रा ही नहीं यदि नग्न भी होती तो उसे सभा में लाया जाना उचित था। तदनन्तर उसने दुःशासन को आदेश दिया कि वह पाण्डवों तथा द्रौपदी के वस्त्रों को उतार दे। कर्ण की बात सुनकर समस्त पाण्डव अपने-अपने उत्तरीय वस्त्र उतार कर सभा में बैठ गये। तब दुःशासन ने उस भरी सभा में द्रौपदी को विवस्त्र करना आरम्भ किया। परन्तु द्रौपदी ने उस दशा में बार-बार 'गोविन्द' और कृष्ण का नाम लेकर पुकारना आरम्भ किया। इसी समय धर्मस्वरूप श्रीकृष्ण ने अव्यक्तरूप से द्रौपदी के वस्त्र में प्रवेश करके भाँति-भाँति के सुन्दर वस्त्रों द्वारा उसे आच्छादित कर लिया। इस प्रकार धर्मपालन के प्रभाव से द्रौपदी का शरीर निरन्तर अनेक प्रकार के वस्त्रों से आच्छादित होता रहा। उस समय वहाँ समस्त राजाओं के बीच हाथ पर हाथ मलते हुये भीमसेन ने क्रोधपूर्वक यह प्रतिज्ञा की कि वे युद्ध में बलपूर्वक दुःशासन का वक्ष विदीर्ण कर उसका रक्तपान करेंगे। सभी ने दुःशासन तथा महाराज धृतराष्ट्र की निन्दा की। विदुर ने सभा में उपस्थित लोगों से द्रौपदी के प्रश्नों का उत्तर देने का आवाहन करते हुये प्रह्लाद और अंगिराकुमार मुनि सुधन्वा के संवाद की चर्चा की। इसके विपरीत भी उपस्थित राजाओं के मुख से एक शब्द भी नहीं निकला, और कर्ण ने दुःशासन को आदेश दिया कि वह द्रौपदी को अपने घर ले जाय (२. ६८)।

"जब दुःशासन द्रौपदी को घसीटने लगा तब द्रौपदी ने अनेक प्रकार से विलाप करते हुये सभा में उपस्थित लोगों से न्याय की याचना की। उस समय भीष्म ने उसके प्रश्नों का उत्तर देने में पुनः अपनी असमर्थता प्रगट करते हुये स्वयं युधिष्ठिर को ही निर्णय देने के लिये कहा (२. ६९)।

"दुर्योधन ने द्रौपदी से कहा : 'तुम्हारे प्रश्न का उत्तर तुम्हारे पति, भीम, अर्जुन, सहदेव और नकुल पर छोड़ दिया जाता है। श्रेष्ठ राजाओं के बीच ये लोग यह स्पष्ट कर दें कि युधिष्ठिर को तुम्हें दाँव पर रखने का अधिकार नहीं था। पाण्डव मिलकर युधिष्ठिर को झूठा ठहरा दें। फिर तुम दासत्व से मुक्त कर दी जाओगी।' दुर्योधन की बातों पर कौरव पक्ष हर्षोन्मत्त हो उठा, किन्तु भीम ने कहा कि पिता के समान तथा पाण्डव कुल के स्वामी न होने के कारण युधिष्ठिर तथा उनके भ्राता अर्जुन ही उन्हें धृतराष्ट्र के नीच पुत्रों का वध करने से रोक रहे हैं। भीम के क्रुद्ध वचन को सुनकर भीष्म, द्रोण और विदुर ने भीमसेन को शान्त किया (२. ७०)।

"कर्ण ने द्रौपदी से कहा कि अब धृतराष्ट्र के समस्त पुत्र ही उसके स्वामी हैं, कुन्ती के पुत्र नहीं। उसने द्रौपदी को धृतराष्ट्र पुत्रों में से एक नया पति चुन लेने के लिये कहा। जब भीम ने पुनः अपना क्रोध व्यक्त किया तब दुर्योधन ने युधिष्ठिर से कहा कि वे द्रौपदी के प्रश्नों का उत्तर दें। ऐश्वर्यमद से मोहित दुर्योधन ने अपनी जाँघ का वस्त्र हटा कर द्रौपदी की ओर हँसते हुये देखा। भीम ने प्रतिज्ञा की कि वह उसकी उस जाँघ को युद्ध में अवश्य तोड़ेंगे। विदुर ने भी कौरवों को चेतावनी देते हुये कहा कि द्रौपदी को दाँव पर लगाने का युधिष्ठिर को कोई अधिकार नहीं था क्योंकि वह पहले ही स्वयं अपने को हार चुके थे। दुर्योधन ने उस समय यह कहा कि यदि भीम, अर्जुन और नकुल तथा सहदेव यह घोषणा करें कि युधिष्ठिर उनके स्वामी नहीं हैं तो द्रौपदी को मुक्त कर दिया जायगा। अर्जुन ने कहा कि जुए के पहले निश्चय ही युधिष्ठिर उन सब के स्वामी थे, परन्तु जूए में स्वयं अपने को हार जाने के बाद वह किसके स्वामी रह गये इसका निर्णय स्वयं कौरव गण ही करें। ठीक उसी समय धृतराष्ट्र की अग्निशाला के भीतर एक गीदड़ आकर जोर-जोर से चिल्लाने लगा। उस शब्द को लक्ष्य करके सब ओर गदहे रेंकने लगे, तथा गृध्र आदि भी भयंकर अशुभ सूचक कोलाहल करने लगे। उस भयानक कोलाहल को सुनकर तत्वज्ञानी विदुर और सुबलपुत्री गान्धारी ने धृतराष्ट्र से उसके विषय में निवेदन किया। उनकी बात सुन कर धृतराष्ट्र ने दुर्योधन को दोषी मानते हुये द्रौपदी से एक वर माँगने के लिये कहा। तब द्रौपदी ने युधिष्ठिर को दासत्व से मुक्त कर देने का वर माँगा। जब उससे एक और वर माँगने के लिये कहा गया तब उसने भीम तथा अन्य पाण्डवों को अपने रथ तथा आयुधों सहित दासत्व से मुक्त कर दिये जाने का वर माँगा। तदनन्तर उसने कोई भी तीसरा वर माँगना अस्वीकार कर दिया (२. ७१)।

धृतराष्ट्र ने भ्राताओं तथा द्रौपदी सहित युधिष्ठिर को अपने-अपने रथों पर बैठ कर इन्द्रप्रस्थ जाने की आज्ञा दी। साथ ही उन्होंने यह भी निवेदन किया कि पाण्डवगण दुर्योधनके कठोर व्यवहार को भूलकर उसके प्रति अच्छे भ्राता जैसा स्नेह रक्खें। धृतराष्ट्र के इस प्रकार कहने पर युधिष्ठिर अपने भ्राताओं तथा द्रौपदी सहित वहाँ से विदा हुये (२. ७३)।"

१. द्यौस (आकाश) : १. १, ४२ (दिवः पुत्रो बृहद्भानुः); १. ७४, ३० (उन लोगों में इनकी भी गणना है जो मनुष्य के शुभाशुभ कर्मों को देखते हैं); ९. ४५, १२।

२. द्यौस वसुगणों में से एक। १. ९९, १५ (द्यवे वै दर्शयामास). १७ (द्यौस्तदा तां) २६. २७. ३९. ४५. ४७ (सुनामा शान्तनोः पुत्रः)।

१. द्रविड (बहु० °डाः), एक जाति के लोगों का द्योतक है। २. ३१, ७१ (दिग्विजय के समय सहदेव ने इसे दक्षिण में पराजित किया था); ३. ११८, ४; ५. १४०, ६; १६०, १०३ (ये लोग दुर्योधन की सेना में उपस्थित थे); १६१, २१; १३. ३५, १७ (ये लोग शूद्र हो गये थे : वृषलत्वमनु प्राप्ताः); १४. २९, १६ (वृषलतां गताः); ८३, ११।

२. द्रविड (बहु० °डाः) एक जाति = द्रविड, बहु०। १. १७५, ३६ (वसिष्ठ की धेनु के स्तन से उत्पन्न); २. ३४, १२ (युधिष्ठिर के राजसूय में ये भी आये थे); ३. ५१, २२ (युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित थे); ५. २२, १२ (सेनानुगान् द्रविडांश्चैव चक्रे); ६. ९, ५८ (दक्षिण की एक जाति); ८. ५, ४८ (सव्यसाची अर्जुन ने इनका वध किया); १२, १४ (ये युधिष्ठिर की सेना में उपस्थित थे); ४९, ४; १३. ३३, २२ (वृषलत्वं परिगताः)। पिछला शब्द भी देखिये।

द्रविण, धर नामक वसु का पुत्र था : १. ६६, २१।

द्रविणप्रद = विष्णु (सहस्रनाम)।

द्रविणाधिपति = कुबेर (वस्था०)।

द्रव्यकर्मसमारम्भ = शिव (सहस्रनाम)।

द्रष्टात्मन् = कृष्ण : १२. ४७, ६२।

द्राविड — देखिये द्रविड।

द्रुपद, पाञ्चाल नरेश का नाम है, जो पृषत के पुत्र तथा धृष्टद्युम्न, शिखण्डिन् और द्रौपदी आदि के पिता थे : १. २, २६४; ६३, १२५ (शिखण्डिन् के पिता); ६७, ५७ (ये मरुतों के अंश से उत्पन्न हुये). ८० (इनके कुल में श्री के अंश से द्रौपदी का जन्म हुआ था)। १३०, ४१; १३१, १ (ये महाराज पृषत के पुत्र थे और भरद्वाज के आश्रम में द्रोण के साथ खेलते तथा अध्ययन करते थे। पृषत की मृत्यु के पश्चात् इनका उत्तर पाञ्चाल के राज्य पर अभिषेक हुआ। लगभग इसी समय भरद्वाज भी स्वर्ग चले गये); १३०, ४१; १३१, १. ४. ६२. ६३. ७४ (द्रोण ने जब आकर इन्हें अपना मित्र कहा तो इन्होंने द्रोण को अपशब्द कहे)। १. १३३, १०; १३८, ३ (पञ्चालराजं द्रुपदं). ५. १३. १५. ६०. ६१ (संबन्धी कुरुवीराणां द्रुपदो). ६३. ६४. ७१. ७४ (द्रोण ने अपने शिष्यों की सहायता से इन्हें पराजित किया किन्तु बाद में इनका आधा राज्य इन्हें वापस दे दिया। इसके बाद द्रुपद काम्पिल्य में रहने लगे); १६५, ८ (धृष्टद्युम्नस्य चोत्पत्तिमुत्पत्तिं च शिखण्डिनः। अयोनिजत्वं कृष्णाया द्रुपदस्य महामखे); १६६, ६ (ये पृषत के पुत्र थे); ८. १४. १५. १८. २१. २२; १६७, १. १३. १४. ३५, ५२. ५४ (एक ऐसा पुत्र प्राप्त करने के लिये इन्होंने यज्ञ किया जो द्रोण का वध कर सके। उस समय यज्ञाग्नि से धृष्टद्युम्न की तथा वेदिका के केन्द्र से कृष्णा — द्रौपदी — की उत्पत्ति हुई); १६८, ११ (नगरीं रम्यां द्रुपदस्य महात्मनः); १६९, १४ (इनके कुल में देवरूपिणी कन्या कृष्णा उत्पन्न हुई);

१८४, ५. ७; १८५, १. ३. ११. १२. १४. ३७; १८८, २५; १८९, १२. १३; १९१, ४; १९२, ४ (इन्होंने अपनी पुत्री द्रौपदी का विवाह अर्जुन से करने का निश्चय कर रक्खा था और इस कारण एक ऐसा धनुष बनवाया था जिसे अर्जुन के अतिरिक्त कोई अन्य व्यक्ति झुका नहीं सकता था – देखिये १. १८५, ८-११ – और अन्ततः अर्जुन ने ही स्वयंवर में द्रौपदी को प्राप्त किया); १९३, १४. १८. १९. २१. २३. २६; १९४, १. ९. १५; १९५, १३. १६. १७. २२. २७. ३२; १९६, ७ (इन्होंने अपनी पुत्री का विवाह अर्जुन से करने का निश्चय किया था। अतः जब अर्जुन ने द्रौपदी के स्वयंवर में लक्ष्य भेदन करके द्रौपदी को जीत लिया तब इन्होंने अर्जुन का परिचय जानना चाहा। युधिष्ठिर ने इन्हें अपना परिचय देते हुये द्रौपदी को पाँचों पाण्डवों की पत्नी बनाने की स्वीकृति चाही); १९७, ५१. ५३ (व्यास ने इन्हें पाँच इन्द्रों की कथा बताते हुये कहा कि ब्रह्मा ने यह विधान किया है कि द्रौपदी पाँचों पाण्डवों की पत्नी बने); १९८, १. १५; १९९, १. २ (द्रौपदी का पाण्डवों से विवाह हुआ); २००, १४. १५. १९. २१. २५; २०१, ५. १९; २०२, १९; २०४, ३. ५. ८; २०५, २१. २५; २०६, ५. ९. १५; २०७, १. ६. ७. १०; २१४, २५; २. ३७, ७; ४४, २०; ४८, ४. १५; ७१, ५; ३. ४, १६; १२, १४; २७, ३४; ५१, १७; १४४, १३; २५४, १. ३; २६६, ५; २७३, ५; ४. ४, २ (धौम्य आदि इनके घर पधारे); २०, ११; ३६, ११; ५. १, ३. ५; ४, १; ५, १३; ६, १. १८; १९, ११ (इन्होंने पाण्डवों की ओर से युद्ध किया); २०, १; ४८ ३५. ३६ (ये एक महारथी थे); ५७, ५. ३१ (ये एक अक्षौहिणी सैनिकों के साथ पाण्डवसेना में सम्मिलित हुये); ६४, २६; ८०, १३; ८२, २. २१; ८३, ३१; १५१, ४. १६. ४७; १५३, २. ६. १२; १५७, ११. २३; १६०, ७३; १६१, ५; १६२, ८; १६३, ४१. ५३; १७०, ८; १७१, २४ (ये सत्यजित के पिता थे); १८७, १४; १८८, २. ३. ११. १३-१६; १८९, १. ४. ९. १९. २०; १९०, १. ५. ११. १२: १९१, ५. २२ (शिखण्डी इनका पुत्र था); १९२, ११. १४. १८. २३. २५. २६. २८. ४०. ५९. ६२. ६४ (सन्तानविहीन होने के कारण इन्होंने शिव की उपासना की। शिव ने इन्हें वर दिया कि इनके एक पुत्री प्राप्त होगी जो बाद में पुत्र हो जायगी। परिणामस्वरूप अम्बा के अवतारस्वरूप एक स्त्री के रूप में शिखण्डी का जन्म हुआ किन्तु बाद में उसने पुरुषत्व प्राप्त कर लिया); १९४, १९; १९६, ३. ११; ६. २५, ३. ४. १८; ४५, ५५. ५६ (इन्होंने जयद्रथ के साथ युद्ध किया); ४९, १९. ४३. ४५ (भीष्म ने इन्हें पराजित किया); ५०, २८. ४६; ५३, ३९; ५६, १२; ५९, ११८; ६९, १०; ७१, २२; ७५, ६; ७७, ४०. ४३. ४७. ४८. ४९ (द्रोणाचार्य ने इन्हें पराजित किया); ८२, ४८; ८५, २४. २८; ८९, १७; ९९, १३; १०३, ४. ५. ९. ११; १०४, १७. २३. २४; १०७, ८०; १०८, ८; ११०, ५. १६ (विराट और द्रुपद ने अश्वत्थामा के साथ युद्ध किया); ११, २२. २५; ११६, ४८; ११८, ४५. ५१; ११९, १०. २१; ७. ८, ४; १०, ६३; १४, ४०. ४१. ४२. ८३ (इन्होंने भगदत्त के साथ युद्ध किया); १६, ३२; २०, २४; २३, १२ (इनके अश्वों का वर्णन); २५, १८ (बाह्लीक के साथ युद्ध किया); ३५, २; ४२, ३; ४३, ८; ८३, ५; ८५, ४१; ११४, ६४; १२४, ३३; १२५, ७५. ७८; १५३, २३; १५४, ११; १५५, ४४; १५६, ३६. १८०; १५७, १. ४३; १५८, ४०; १६५, १३ (वृषसेन के साथ युद्ध किया); १६८, १३. १९. २१. २३. २६ (वृषसेन ने इन्हें पराजित किया); १८४, ७; १८६, ३१. ३२, ३३. ३५. ३७. ४३. ४४ (द्रोण ने इनका वध किया था). ५१; १९१, २ (मनुजेन्द्रेण द्रुपदेन महामखे। लब्धो द्रोण विनाशाय समिद्धाद्धव्यवाहनात्); १९२, २३; ८. ६, ६; २६, २४. ३८; ८५, २ (इनके पाँच श्रेष्ठ पुत्र); १०. ८, ६७ (इनके पुत्र-पौत्रों का अश्वत्थामा ने वध किया); १०, २; १७, ३; ११. ११, १२; १६, २१; २५, १७. १९; २६, ३३; १२. २७, १; ४२, ५ (इनका श्राद्ध किया गया); १५. ३२, ८ (उन मृत योद्धाओं में ये भी थे जो व्यास के आवाहन पर गङ्गा से प्रगट हुये थे); १८. १, २६; ४, १३ (इनके कुल में द्रौपदी के रूप में श्री ने जन्म लिया); ५, १. १५ (उन लोगों में ये भी एक थे जो मृत्यु के उपरान्त देवों में प्रविष्ट हुये)।

देखिये द्रुपद के निम्नलिखित पर्याय :

धृष्टद्युम्नपितृ (धृष्टद्युम्न के पिता) - देखिये वस्था०।

पाञ्चाल, पाञ्चालनृप, पाञ्चालपति, पाञ्चालराज, पाञ्चाल्य – देखिये वस्था०।

पार्षत (पृषत के पुत्र) – देखिये पृषतात्मज।

यज्ञसेन : १. १३१ ४२ (अग्निवेश के शिष्य); १३८, १०. ११. ६३; १६८, ७; १८४, ७. ११; १८५, ८; १९५, १९; १९८, ६; २०६, ७. ८. २१; २. ४, ३१; ३४, ९; ४५, ४७; ५२, २९; ७७, १०. ४३; ३. १८३, २४; २३९, ९; ४. ७२, १७; ५. १९१, ५; ६. १९, २५; ७. १९८, १४. १५; ८. २, १२ (यज्ञसेनस्य पुत्रेण)।

द्रुपदकन्या (द्रुपद की पुत्री) = द्रौपदी : १. २००, १९; २०६, ५।

द्रुपददुहितृपुत्र (बहु० °त्राः = द्रुपदपुत्री के पुत्र) = द्रौपदेय: ८. ८५, २

१. **द्रुपदपुत्र** (द्रुपद का पुत्र) = धृष्टद्युम्न : १. १६५, १०; ६. २५, ३; ४५, ३४; ५३, १७. २४; ७. ९७, २९; १६०, ५६; १९८, ५; ११. २३, ३४ (इसने द्रोण का वध किया था)।

२. **द्रुपदपुत्र** (बहु० °त्राः = द्रुपद के पुत्र) : १. २०४, ८; ८. ४६, ८५; ८५, २। (तुकी० द्रुपदसुत बहु०, द्रुपदात्मज बहु०)।

द्रुपदपुत्री = द्रौपदी : १४. ७०, ६; १५. २९, ३६।

द्रुपदशासनम् – द्रोण ने पाण्डवों और कौरवों को अस्त्रविद्या में निपुण देखकर उन सबसे गुरुदक्षिणा लेने की इच्छा से इस प्रकार कहा : 'शिष्यो! पञ्चालराज द्रुपद को युद्ध में बन्दी बना कर मेरे पास ले आओ। यही मेरे लिये सर्वोत्तम गुरुदक्षिणा होगी।' दुर्योधन, कर्ण, युयुत्सु, दुःशासन, विकर्ण, जलसन्ध, सुलोचन, सुबाहु, दीर्घतमस आदि जाकर राजा द्रुपद की राजधानी को ध्वस्त करने लगे; जबकि अर्जुन अपने भ्राताओं के साथ नगर के बाहर ही आधे कोस की दूरी पर रुक गये। अर्जुन को विश्वास था कि उनकी सहायता के बिना कौरवगण महाराज द्रुपद पर विजय नहीं प्राप्त कर सकेंगे। राजा द्रुपद ने कौरवों को देखकर उन पर प्रत्याक्रमण करते हुये उन्हें मूर्च्छित कर दिया। तब पञ्चालराज के बाणों के प्रहार से त्रस्त कर्ण तथा सभी कौरवगण पाण्डवों की ओर भाग कर आने लगे। पाण्डवों ने पीड़ित सैनिकों का आर्तनाद सुनकर आचार्य द्रोण को प्रणाम किया तथा युद्ध के लिये उद्यत हुये। अर्जुन ने युधिष्ठिर को युद्ध करने से रोक दिया और नकुल तथा सहदेव को अपने रथ के पहियों का रक्षक बनाया। भीमसेन हाथ में गदा लेकर आगे-आगे चलते हुये गजसेना का संहार करने लगे। तदनन्तर अर्जुन अपने बाणों से पञ्चालों और सृञ्जय सैनिकों को त्रस्त करने लगे। उन्होंने बाणों से पञ्चालराज को ढँक दिया। द्रुपद और सत्यजित ने भी तब अर्जुन पर प्रबल आक्रमण किया। अर्जुन ने द्रुपद के धनुष को काट दिया और उनकी ध्वजा को भी धरती पर गिरा दिया। जब द्रुपद दूसरा धनुष और तूणीर लेने लगे तब अर्जुन तलवार लेकर द्रुपद के रथ पर कूद पड़े और उन्हें बन्दी बना लिया। उस समय अर्जुन ने अपने भ्राता भीम से ये शब्द कहे : 'राजाओं में श्रेष्ठ द्रुपद कौरवों के सम्बन्धी हैं, अतः इनकी सेना का संहार करना उचित नहीं है। केवल गुरुदक्षिणा के रूप में हमें महाराज द्रुपद को गुरु द्रोण को समर्पित कर देना चाहिये।' अर्जुन का वचन सुन कर पाण्डव सैनिकों ने द्रुपद सेना का संहार बन्द कर दिया। जब पाण्डवगण महाराज द्रुपद को बन्दी बना कर द्रोणाचार्य के पास लाये तब द्रोण ने उनसे इस प्रकार कहा : 'तुम बचपन में मेरे साथ आश्रम में साथ-साथ खेलते थे, अतः तुम्हारे ऊपर मेरा स्नेह एवं प्रेम है। मैं पुनः तुमसे मैत्री के लिये निवेदन करता हूँ। तुम अपने राज्य का आधा भाग मुझसे वापस ले लो। जो राजा नहीं है वह राजा का मित्र नहीं हो सकता। इसी लिये मैंने तुम्हारा राज्य छीनने का प्रयास किया है। गङ्गा के दक्षिण प्रदेश के तुम राजा हो और उत्तर के भूभाग का राजा मैं हूँ। अब यदि उचित

समझो तो मुझे अपना मित्र मानो।' द्रोण की बातें सुनकर जब द्रुपद ने उन्हें अपना मित्र मान लिया तब द्रोण ने द्रुपद को छोड़ दिया। तदनन्तर राजा द्रुपद दीनतापूर्ण हृदय से गंगातटवर्ती अनेक जनपदों से युक्त माकन्दीपुरी में तथा नगरों में श्रेष्ठ काम्पिल्य नगर में निवास एवं चर्मण्वती नदी के दक्षिण तटवर्ती पाञ्चाल देश का शासन करने लगे। इधर द्रोणाचार्य ने उत्तर पाञ्चालवर्ती अहिच्छत्र नामक राज्य को अपने अधिकार में कर लिया (१. १३८)।

द्रुपदसुत (बहु० °ताः) : ८. ३०, १२ (ये युधिष्ठिर की सेना में सम्मिलित हुये)।

१. द्रुपदात्मज = शिखण्डिन् : ५. १५१, २९; १९२, ६३; ६. १४, ५१; १२०, २।

२. द्रुपदात्मज = धृष्टद्युम्न : ६. ७७, ४४; ७. १९२, ६६।

३. द्रुपदात्मज (बहु० °जाः) = द्रुपद के पुत्र : १. २०५, २१; ७. ८, २५। देखिये द्रुपदपुत्र भी।

द्रुपदात्मजा = द्रौपदी : १. १८७, ४. ५; १९२, ४; २. ६७, २४; ६८, २८; ३. १२०, २४; २३५, ३. ७; २३८, १०; २६६, ९; २६८, १; २९३, १. ३; ४. ९, ६; १४, ४; १६, २१; १७, २; २१, ५०; १२. ४०, १४; १४. ८९, २।

१. द्रुम, एक प्राचीन नरेश का नाम है : १. १, १३३ (संजय ने गत राजाओं की गणना कराते हुये इनका भी उल्लेख किया)।

२. द्रुम, महाभारतकालीन एक राजा का नाम है जो शिवि नामक दैत्य के अंश से प्रकट हुआ था (१. ६७, ८)।

३. द्रुम, किम्पुरुषों के एक राजा का नाम है। ये कुबेर की सभा में रह कर उनकी उपासना करते थे (२. १०, २९)। 'किम्पुरुषाचार्यम्,' (२. ३७, १३; ४४, १६)। ये भीष्मक-पुत्र रुक्मी के गुरु थे और इन्होंने रुक्मी को विजय नामक धनुष दिया था (५. १५८, ७)।

द्रुमद, एक ऋषि का नाम है। ये उन ऋषियों में से एक थे जिन्होंने तपस्या द्वारा ऋषित्व प्राप्त किया था (१२. २९६, १५)।

द्रुमपुत्र, किंपुरुषों के एक राजा का नाम है (२. २८, १)।

१. द्रुमसेन, एक राजा का नाम है जो गविष्ठ नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था। (१. ६७, ३५)। यह शल्य का चक्ररक्षक था और युधिष्ठिर ने इसका वध किया (९. १२, ५३)।

२. द्रुमसेन, कौरव पक्ष का एक योद्धा जिसका धृष्टद्युम्न ने वध किया था (७. १७०, २२)।

१. द्रुह्यु, ययाति के पुत्र, जिनकी माता का नाम शर्मिष्ठा था (१. ७५, ३५.३७)। ये ययाति और शर्मिष्ठा के ज्येष्ठ पुत्र थे (१. ८३, १०)। इनके पिता ने जब इनसे यौवन की याचना की तब इन्होंने अस्वीकार कर दिया। फलस्वरूप ययाति ने इन्हें कभी भी प्रिय मनोरथ की सिद्धि न होने, अति दुर्गम देशों में रहने तथा राज्याधिकार से वंचित होकर 'भोज' कहलाने का शाप दे दिया (१. ८४, १६-२२)। १. ८५, २१. २६. ३४; ९५, ९; १२. २९, ९७।

२. द्रुह्यु, पूरुवंशी राजा मतिनार के चार पुत्रों में से एक का नाम है (१. ९४, १४)।

१. द्रोण, महर्षि भरद्वाज के पुत्र थे। इनकी पत्नीका नाम कृपी तथा पुत्र का नाम अश्वत्थामा था। ये धार्तराष्ट्रों, पाण्डवों तथा धृष्टद्युम्न आदि के आचार्य थे : १. १, १४०. १८८. १९६. २०१. २०३; २, ३०. २६५; ६३, १०६. १०८ (अश्वत्थामा के पिता); ६७, ६१. ७१ (ये बृहस्पति के अंश से उत्पन्न, धनुर्वेद में पारंगत तथा वेदविद्वान ब्राह्मण थे); १३०, २७। "जनमेजय ने वैशम्पायन से द्रोण की उत्पत्ति तथा उनके पुत्र अश्वत्थामा की कथा सुनाने के लिये कहा। तब वैशम्पायन बोले : गंगाद्वार निवासी महर्षि भरद्वाज ने एक दिन घृताची नामक अप्सरा को गंगास्नान से लौटते हुये देखा। भरद्वाज तत्काल उस अप्सरा पर आसक्त हो गये जिससे उनका वीर्य स्खलित हो गया। उस स्खलित वीर्य को भरद्वाज ने एक द्रोण (यज्ञकलश) में रख दिया। उसी द्रोण से जो पुत्र उत्पन्न हुआ वह तदनुसार द्रोण के नाम से विख्यात हुआ। द्रोण ने सम्पूर्ण वेदों और वेदाङ्गों का अध्ययन किया। महर्षि भरद्वाज अस्त्रवेत्ताओं में श्रेष्ठ थे और उन्होंने अग्निवेश को आग्नेयास्त्रों की शिक्षा दी थी। उन्हीं अग्निवेश ने भरद्वाजपुत्र द्रोण को आग्नेयास्त्रों की शिक्षा दी। उन्हीं दिनों महाराज पृषत को भी द्रुपद नामक पुत्र प्राप्त हुआ। द्रुपद प्रतिदिन भरद्वाज के आश्रम में आकर द्रोण के साथ खेलता था। इस प्रकार द्रोण और द्रुपद घनिष्ठ मित्र हो गये। द्रोण अपने पिता के आश्रम में ही रह कर तपस्या तथा अध्ययन करने लगे। कुछ दिनों बाद भरद्वाज के स्वर्गवासी हो जाने पर द्रोण ने पुत्रकामना से शरद्वान् की पुत्री कृपी से विवाह करके अश्वत्थामा नामक पुत्र उत्पन्न किया। द्रोण उसी आश्रम में रह कर धनुर्वेद का अभ्यास करने लगे। एक दिन द्रोण ने सुना कि राम जामदग्न्य (परशुराम) ब्राह्मणों को अपना सर्वस्व दान करना चाहते हैं। अतः द्रोण ने परशुराम से धनुर्वेद और दिव्यास्त्रों का ज्ञान प्राप्त करने तथा नीतिशास्त्र की भी शिक्षा लेने का निश्चय कर अपने शिष्यों सहित प्रस्थान किया। महेन्द्र पर्वत पर पहुँच कर द्रोण ने परशुराम के समीप जाकर अपना नाम बताया तथा कहा कि उनका जन्म अङ्गिरस कुल में हुआ है। उस समय तक परशुराम अपने सुवर्णादि धन ब्राह्मणों को तथा पृथिवी कश्यप को दे चुके थे अतः उन्होंने द्रोण को अपना शरीर तथा अपनी अस्त्रविद्या देने का प्रस्ताव किया। फलस्वरूप द्रोण श्री परशुराम से धनुर्वेद तथा दिव्यास्त्र प्राप्त करके द्रुपद के पास लौट आये (१. १३०, २७. ३१. ३७. ४२. ४६. ५८. ६४)" "जब परशुराम के पास से लौट कर द्रोण ने द्रुपद को अपना मित्र कहा तब उसने द्रोण का तिरस्कार करते हुये अपशब्द कहे। फलस्वरूप कुपित द्रोण हस्तिनापुर चले आये और अज्ञात रूप से कृपाचार्य के पास रहने लगे। उस समय अज्ञात रूप से अश्वत्थामा पाण्डवों को शस्त्रविद्या कि शिक्षा देने लगे। एक दिन जब द्रोणाचार्य ने अभिमन्त्रित सींकों के द्वारा राजकुमारों की गेंद को कूएँ से निकालने के बाद अपनी मुद्रिका को भी कूएँ में फेंक कर उसे भी बाण द्वारा निकालकर सबको चकित कर दिया तब विस्मित राजकुमारों ने भीष्म से द्रोण के सम्बन्ध में चर्चा की। यह सोच कर कि द्रोण ही उन राजकुमारों के उपयुक्त गुरु हो सकते हैं, महात्मा भीष्म स्वयं आकर द्रोण को सत्कारपूर्वक घर लाये। द्रोण ने भीष्म को अपनी विगत कथा सुनाते हुये बताया कि एक दिन लोगों को दूध पीते देखकर उनका पुत्र अश्वत्थामा दूध के लिये आग्रह करने लगा। द्रोण ने तब द्रुपद के पास जाकर अपना परिचय दिया तथा अपने को उसका मित्र कहा। उस समय तक द्रुपद का राज्याभिषेक हो चुका था। द्रोण की बात सुन कर द्रुपद ने उनका तिरस्कार करते हुये अपशब्द कहे। फलस्वरूप द्रोण अपनी पत्नी तथा पुत्र के साथ द्रुपद के पास से हस्तिनापुर चले आये। भीष्म ने द्रोण की कथा सुनने के पश्चात उन्हें अपने पौत्रों, कौरव तथा पाण्डव कुमारों को अस्त्र-शस्त्रों की शिक्षा देने का आग्रह किया (१. १३१, ३. २२. २६. २७. २९. ३१. ३५. ३७. ३९. ४०. ४५. ५६)।" "भीष्म ने द्रोणाचार्य का सत्कार करते हुये उन्हें रहने के लिये सुन्दर आवास प्रदान किया तथा पाण्डवों और धार्तराष्ट्रों को शिष्य रूप में उन्हें समर्पित किया। अर्जुन ने द्रोण का प्रिय शिष्य बन कर अश्वत्थामा से भी अधिक प्रवीणता प्राप्त कर लिया। कौरवों-पाण्डवों के अतिरिक्त वृष्णि, अन्धक तथा अनेक अन्य देशों के राजकुमार द्रोण से शिक्षा प्राप्त करने के लिये उनके शिष्य बन गये। यहाँ तक कि कर्ण भी उनसे धनुर्वेद सीखने के लिये आया। दुर्योधन के द्वारा प्रोत्साहित होकर कर्ण अक्सर अर्जुन का अपमान करता था (१. १३२, १. ४. ६. १०. ११. १३. १५. २१. २२. २६. २७. २८. २९)" "एक दिन निषादराज हिरण्यधनु का पुत्र एकलव्य द्रोण के पास आया परन्तु निषादपुत्र होने के कारण द्रोण ने उसे अपना शिष्य नहीं बनाया। निराश एकलव्य द्रोण की प्रतिमा बना कर उसी के सामने धनुर्विद्या का अभ्यास करने लगा। कुछ दिनों बाद एकलव्य की प्रवीणता का पता लगने पर द्रोण ने गुरुदक्षिणा के रूप में एकलव्य से उसके दाहिने हाथ का अँगूठा माँग लिया जिससे वह पाण्डवों से श्रेष्ठ धनुर्धर न बन सके (१. १३२, ३१-

३३. ३६. ४५. ४६. ४७. ५०. ५२. ५३. ५४. ५७. ५८. ६०)।" "दुर्योधन भीमसेन, अश्वत्थामा, नकुल, सहदेव, युधिष्ठिर और अर्जुन द्रोण के प्रमुख शिष्य थे। धृतराष्ट्र के पुत्र अर्जुन और भीम के प्रति अत्यधिक ईर्ष्या का भाव रखते थे (१. १३२, ६१ और बाद)।" "जब सभी राजकुमार धनुर्विद्या और अस्त्र संचालन की कला में प्रवीण हो गये तब द्रोण ने उन सबको एकत्र करके उनकी परीक्षा लेने का विचार किया। इस उद्देश्य से उन्होंने वृक्ष के ऊपर एक कृत्रिम पक्षी रखवाया और सबसे पहले उस पर लक्ष्य कर लेने पर युधिष्ठिर से पूछा कि वह क्या देख रहे हैं। युधिष्ठिर ने बताया कि वह उस लक्ष्य को, स्वयं द्रोण को तथा अपने भाइयों को भी देख रहे हैं। द्रोण ने उनके उत्तर पर अप्रसन्नता प्रकट करते हुये उन्हें अलग खड़ा कर दिया। तदनन्तर उन्होंने अपने अन्य शिष्यों पर भी यही प्रयोग किया जिसमें सभी असफल हुये (१. १३२, ६७. ६९. ७३. ७५. ७७)।" "अन्त में अर्जुन की बारी आई। लक्ष्य साध कर जब अर्जुन खड़े हुये तब द्रोण ने उनसे भी पूर्ववत प्रश्न किया। अर्जुन ने पहले कहा कि वह कृत्रिम गृध्र को देख रहे हैं। पुनः उन्होंने कहा कि वह केवल गृध्र के सर को देख रहे हैं। तदनन्तर द्रोण के आज्ञा देने पर अर्जुन ने अपने बाण से उस कृत्रिम पक्षी का सर काट कर गिरा दिया (१. १३३, १. ४. ५. ६. ८.)।" "एक बार जब गंगास्नान के समय एक ग्राह ने द्रोण के पैरों को पकड़ लिया तब अर्जुन ने पाँच बाणों से उसे मार कर द्रोण की प्राणरक्षा की। द्रोण ने अर्जुन को ब्रह्मशिरस अस्त्र प्रदान करते हुये उसे मानव शत्रुओं के विरुद्ध प्रयोग न करने के लिये कहा अन्यथा वह सम्पूर्ण संसार को भस्म कर देगा (१. १३३, २२. २५)।" १. १३४, १; १३५, ४. ६. ३०; १३६, ६. १२. २१; १३७, १५. २१ (इनके शिष्यों ने अस्त्र-शस्त्रों के संचालन में अपनी कुशलता प्रदर्शित की); १३८, २. ४. १२. २६. ६३. ६४. ७२. ७६. ७७ (अपने शिष्यों की सहायता से द्रोण ने द्रुपद को पराजित किया किन्तु अन्त में द्रुपद को आधा राज्य लौटा कर आधे के शासक स्वयं बन गये); १३९, ८. १५. १९ (इन्होंने अग्निवेश से ब्रह्मशिरस अस्त्र प्राप्त करके उसे अर्जुन को दे दिया। इन्होंने अर्जुन से यह वचन भी लिया कि वे (अर्जुन) स्वयं इनसे (द्रोण से) भी अवसर पड़ने पर युद्ध करने में संकोच नहीं करेंगे)। १. १४२, १७. २०. २१; १४३, १२; १४५, २; १५०, ५; १६५, ११ (ये धृष्टद्युम्न के भी आचार्य थे); १६६, ५. ७. ८. ९. ११. १२. १३. १८. २०. २२. २३. २५. २७; १६७, ३. ४. ११. २२. २३. २५. ३०. ३२. ४३. ५६ (द्रुपद ने ऐसा पुत्र प्राप्त करने के लिये यज्ञ किया था जो द्रोण का वध कर सके; इसी यज्ञ की अग्नि से धृष्टद्युम्न उत्पन्न हुआ था); १७०, ३० (इन्होंने अग्निवेश से आग्नेयास्त्रों की शिक्षा प्राप्त की थी जिसे बाद में इन्होंने अर्जुन को सिखाया); १८४, ८; १९०, ३२; २०२, २४; २०४, १. २६; २०५, ३; २०६, १. १९; २०७, १३; २. ३३, ५५; ३४, ८ (ये युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित हुये); ३५, २. ६; ३७, ८; ४४, १२. १४; ४५, ४८; ४८, ११ (युद्ध में ये दुर्योधन की ओर हुये); ४९, ५७; ५८, २३; ६०, २ (ये द्यूत के समय उपस्थित थे); ६५, ४०; ६७, ४१; ६९, २०; ७०, १८; ७१, २३; ७४, २५; ७८, २. २४; ७९, २६; ८०, ३६. ३७. ४८ (धृष्टद्युम्नो द्रोणमृत्युरिति विप्रथितं वचः). ५१; १, ६. २६; ३. १, १२; ८, ६. १२; ९, २; १०, २; १२, १३४ (धृष्टद्युम्न ने द्रोण का वध करने की प्रतिज्ञा की); १३, ३; ३६, ९. १५. २५; ३७, ४ (चतुर्विध धनुर्वेद द्रोण में निवास करते थे); ४०, १०. १३; ४७, २६; ४८, ९; ८६, ८; ११९, ९; १२०, ११. १६; १७४, ३; २४९, २४; २५२, ११. ३६; २५३, २; २५४, २५; २५६, ५; २५७, ८. २६; ३०२, ९; ३०९, १७. १८; ४. २५, ७; २७, १; २८, ४; ३०, १६; ३५, २; ३६, ६; ३७, २९; ३८, ९. १३; ३९, २. १७; ४५, ४०; ४६, २४; ४७, १. १६. २३; ४९, २१; ५०, २१; ५१, १० (ब्रह्मास्त्र, ब्रह्मवेद, इतिहास, पुराण आदि में ये सर्वश्रेष्ठ थे). १७. १८; ५२, १८; ५३, ३. ४. १२; ५४, २८; ५५, ३६. ४३. ४५. ५१; ५८, १. ३. ११. १५. १६. २०. २१. ३६. ३४. ३७. ४१. ४४. ४९. ५२. ५७. ५९. ६१-६३. ६९. ७०. ७५; ५९, ७; ६३, १. ४; ६६, ५. १३; ६८, ८. ३९. ४१. ७१; ६९ ४; ५. २, ५; ३, ११; ४, ३. २६; ५, ६; ६, १०. २२, २४; २३, १०; २५ ११; २६, २२; २७, २४; ३०, १२ (आचार्य इसे नयगो विधेयो वेदानभीप्सन् ब्रह्मचर्यं चचार। योऽस्त्रं चतुष्पात्पुनरेव चक्रे द्रोणः प्रसन्नोऽभिवाद्यस्त्वयाऽसौ); ३७, ४३; ४७, ६; ४८, ४१. ४२. ४०. १०९; ४९, ४७; ५१, ४५; ५२, ४; ५५, ७. १७. ४३. ४६. ४८. ४९. ५३. ५८. ६२; ५७, २०. ३७. ५०. ५८; ५८, ६. १०; ५९, ११. १५. ६०, १०. १७; ६१, २८; ६२, ६; ६३, ४; ६४, २४; ६५, १२; ६६, ६. ७३, ७. ११. १९; ८०, १६; ८३, ४७. ६९; ८५, २; ८९, ३. ५. ११. १७; ९१, ३५; ९२, ७. ८; ९४, ३५. ३६. ३९; ९५, १९; १२४, १०. ४९; १२५, ९; १२६, १; १२७, १४; १२८, १९. २४. २६. ३३; १२९, २०. २१. ३७. ४९. ५१; १३१, १४. ३६. ४०; १३८, १; १३९, ६; १४१, ४०. ४१. ४८; १४२, १२. १६; १४३, ४३; १४४, १५; १४८, १. १४. १७; १५०, १. ६; १५१, १३. १५. १७. २४; १५४, ११; १५५, ३३; १५७, १४; १५८, २३. २७; १६०, ५२. ७७. ९६. ९८. १२२; १६३, ११. २१, ४६; १६४, ४. ११; १६५, १३. २१; १६७, ६; १६८, ९. १७१, ४. २१ (शिखण्डी इनका शिष्य बना); १८९, २; १९२, ६९. १९३, १५. १६; १९४, ४. १४. १९ (इन्होंने एक महीने में ही युधिष्ठिर की सेना के संहार का वचन दिया); ६. १४, १८; १७, २२. २४ (इनकी ध्वजा पर एक स्वर्ण वेदिका तथा कमण्डल अंकित था). ३९; २०, ११; २१, ८; २५, २५; २६, ४; ३५, २६. ३४; ४३, २२. ५१. ५३. ५९. ६२. ६४ (युधिष्ठिर ने इनसे इनकी मृत्यु का उपाय पूछा। इन्होंने बताया कि जब तक ये रथ पर बैठ कर बाणों की वर्षा करते हुये युद्ध में संलग्न रहेंगे तब तक कोई इन्हें मार नहीं सकता। जब ये शस्त्र त्याग कर अनशन पर बैठ जायँ तभी इनका वध हो सकता है, और ऐसी स्थिति उस समय उपस्थित होगी जब ये किसी विश्वसनीय पुरुष से युद्धभूमि में कोई अत्यन्त अप्रिय समाचार सुनकर शोक में हथियार डाल दें); ४४, २१; ४५, ३१. ३४; ४८, १०१; ५०, २०. २१. ३७; ५१, १०; ५२, १४. २३. २४. २८. ३०. ३६. ७२; ५३, १. ५. ७. १४. १६. १७. १८. १९. २२. २४. ३१. ३४. ३६. ३९; ५५, १८. ४२; ५७, ३१. ३८; ५८, ११. १२. २०. २४. २८. ३५. ३६; ५९, ४४. ७५. ८५. ८६. १३२. १३६; ६०, २. २२; ६४, ७०; ६५, १३. २५. ३१; ६९, २१. २२. २४. २५. २७. ३०. ३१; ७१, २६. ७२, २. १०. ३४; ७३, १३ (अश्वत्थामा ने इनसे सभी अस्त्र-शस्त्र प्राप्त कर लिये थे). १४; ७५, २८. २९. ३०. ३३; ७६, १७; ७७, १२. ४७-५१. ६५. ६८. ६९. ७३. ७४; ८१, २; ८२, १६. १८. २४; ८६, ३९. ५०; ८७, ८; ८८, ४०; ८९, १. ३. १२. २२. २४. ३९; ९०, ८९. ९६. ९२, २३; ९४, ४४; ९५, १३; ९६, १३. ३०-३३; ९७, ४; ९८, १०. ४६. ९९, ४; १००, १६. २६; १०१, ७. ५८. ५९; १०२, १. ४. ६. ८. ९. २८. २१; १०४, ४३; १०४, १७. २३; १०६, ५. ७. ३५; १०८, १२. ५६. १११, ५१. ५२; ११२, ३; ११४, ३०. ३५; ११५, २३; ११६, ४५-४६. ११९, १५; १२०, २३. २६; १२१, ३६; ७. १, ३; ५, १७. १८. १९; ६, १. १२. १३; ७, १. ५-७. ९. २४. ४४. ४५. ४७. ४९. ५०. ५२. ५३. (द्रोण का कौरव सेना के प्रधान सेनापति के रूप में अभिषेक किया गया। तदनन्तर द्रोण ने व्यूहरचना करके धृष्टद्युम्न के नेतृत्व में उपस्थित पाञ्चाल सैनिकों को त्रस्त करना आरम्भ किया); ८, १. ९. १४. १५. १७. २०. २१. २२. २४. २६. २८. २९ (द्रोण के शौर्य का वर्णन); ९, १. २. ३. ७. ९. ११. १३. २२. २५. २६; ३७. ३८. ४१; १०, ७. १२. २५. ३०. ३६. ४२. ४३. ४४. ४६, ४९. ५०-५५. ५९. ६१. ६२. ६३. ७० (उन योद्धाओं का वर्णन जिन्होंने द्रोण पर आक्रमण किया); ११, ४४. ४६. ४७. ४९; १२, १. १३. १९. २०. २९. ३० (द्रोण ने युधिष्ठिर को बन्दी बनाने का वचन दिया); १३, १. ४. ५. ७. ११. १२. १९. २०. २६; १४, १. १८. २०. २६; १६, १५. १८. २०-२४. ३४. ३६. ४०. ४१. ५० (युधिष्ठिर को बन्दी बनाने की चेष्टा

में द्रोण ने उनके अनेक रक्षकों का वध किया); १७, २. ११. ४२. ४३; १९, ३८ (युधिष्ठिर की ओर झपटे); २०, ३. १४ (इन्होंने गरुडव्यूह की रचना की). २२. २३. २४. २५. २६. २९. ३०; २१, १. ३. ५. ८. ९. ११. १२-१९. २२. २३. २५. २६. २८. ३५. ३७. ४४. ४६. ४७. ४९. ५१. ५२. ५९. ६०. ६१. ६३; २२, ३. ७. ८. ११. १२. १४. १५. १७. २५. २८. २९. ३०; २३, १. ३. ४०. ७०. ७३. ९७. ९८; २४, ९. १०. ११; २५, १. २. ८. १०. १३. २२. २४. ३२. ३३. ३८. ४०. ४२. ४७. ४९. ५३. ६०; २८, १. २; ३०, ३०. ३४; ३१, ३. ६. ७. ८. ११. १६. १७. १८; ३२, २. ५. ९. १०. ३७. ३८. ४०. ४३. ६९; ३३, १. ५. १६. १८; ३४, २१; ३५, ८. ९. १०. ११. १२. १७. १८. २४. ३९. ४२; ३६, १. ४. ५. ९. १०. ११. १२. १५; ३७, २. ५. ९. १६. २४; ३९, ५. १४. १९; ४०, २१. २८; ४३, १९; ४६, ६. १९. २४; ४७, ४. ८. १७; ४८, १७. १८. २४. ३७. ३९; ४९, २२; ५१, ४. ७; ७२, २०. ४९; ७३, २. ४. १०. २३; ७४, ७. २१. २२. २५; ७५, २४. २७; ७६, ३. ८; ७९, २४. २५; ८५, २०. २८. ३४. ४६; ८६, ११; ८७, १. १०. २३. २५ (इनके व्यूह का वर्णन). ३०. ३१. ३२. (इनका कवच श्वेत रंग का था। इनके वस्त्र और उष्णीश भी श्वेत थे। उस समय धनुष खींचते हुये द्रोणाचार्य यमराज के समान खड़े थे। वेदी और काले मृगचर्म के चिह्न से युक्त ध्वजवाले, पताका से सुशोभित और लाल रंग के अश्वों से जुते द्रोणाचार्य के रथ को देख कर समस्त कौरव अत्यन्त प्रसन्न हुये): ९०, २. ३४; ९१, १. २. ८-११. १३. १६. २२-२६.२८. २९. ३१-३३; ९२, १. ७. १०. ११. १३. १५-१७; ९४, १. ३. ४. ९. १९. ३३. ३९. ४१. ६४. ६९; ९५, २. ५. ६. १२. १३. १६. १९-२२. २७. २८. ३०. ३१. ३३; ९६, २. ३. २६; ९७, ३. ६. ७. २४. २५. २७. २८. २९. ३३-३६; ९८, २. ७. ११. १२. १६. ३३. ३६. ३८. ४०. ४२. ४५. ४८. ५५. ५६; १०१, ७. १०-१३. २२. २३. २४. २६. २७. २९. ३४. ३७; १०३, ११. १२. १६; १०६, २. ३. ५. ६. ९. ११. १८-२२. २७. ३१. ३३. ३५. ३६. ३७. ४०. ४४. ४५; १०७, २. ९. ३९; १०८, ४२; ११०, २. ३. ५. ७. १६. १७. २०. २१. २३. २६. २८-३३. ३५. ६८. ७०. ७९. ८५. ९४; १११, १३. १४. १६. १९. २७. ३५. ४७. ४८. ५०. ५१; ११२, १०. ३९. ६९; ११३, २. २१. २३ ३०. ३५. ४३. ६२; ११४, १५. ४०. ४३. ४४. ४५; ११५, १२. १५. ६०. ६१; ११६, २; ११७, २. ३. ६. ७. ९. १०. १२. १३. १७. १९. २२. २३. २५. २७. २९. ३१. ३२. ३४. ३६; ११८, १; ११९, ४. ६. १९; १२०, ८; १२१, ८. ४८. ५२. ५७. ५८; १२२, ३०. ३१. ३२. ३४-३८. ४२. ४६. ४७. ५२-५५. ५९. ६२. ६४. ६५. ६७. ६९. ७०. ७२; १२३, १९; १२४, ११. ४२. ४७; १२५, १. ७. ८. १०. १२. १३. १५. १८. १९. २०. २४-३०. ३९. ४१-५०. ५४. ५५. ५७. ५८. ६१. ६२. ६४. ६८. ७२. ७३. ७४. ७८; १२६, ३; १२७, ४. १०. ३९. ४२. ४७. ४९. ५३. ५५. ७४; १२८, २. १२. १३. १५. १८. १९; १३०, १. ३. ९. १३; १३१, ६; १३५, १२; १३७, ४०; १४१, १६-२९. ३७; १४३, ६; १४४, ३; १४६, १४०. १४२; १४७, १७; १४९, ५५. ५६; १५०, ५. १०; १५१, २. ५. ६. ४१; १५२, १. ३. ६. ९. ११. १३. १९. २१. २२; १५३, ४१. ४३; १५४, २. ८. ९. ११. १५. २२. ३५. ३९. ४१; १५५, १३. १४. १९. ३८; १५६, ३१. ३२. ३८-४१. ४३-५०; १५७, ३२. ३३. ३९. ४२. ४३. ४४. ४९; १५८, ५९; १५९, १४; १६०, ३५; १६१, १०. ११. १७; १६२, ३५. ३७. ४१. ४२. ४५. ४७. ४८. ५५; १६३, ३. ११. १९; १६४, १३. १६. १९. २१. २४. ३५. २६. ३१; १६५, २. ३. ५. ७. १३. १४. १५. १७; १६६, ६३; १६७, १. २३. ४८; १६८, १३; १६९, १९-२२; १७०, १. २. ३. ४. ६. ७-१०. १२. १५. १७. १८. ५७. ७०; १७१, ४५. ४६. ४७. ५४; १७२, २. ११. १३. १४. १५. २२. २४. २७. ३१. ३३. ३४; १७३, २३. ३१. ५८. ६३; १७४, ९; १७७, ६. ३६; १७८, १२; १८१, १७. ३३; १८३, १३. १४. १५. ३५. ३८. ४२. ४७. ४८. ५०; १८४, ४. ९. ११; १८५, १. ९. २२. ३७; १८६, ५. ७. १२. २४. २६. ३०. ३१. ३३. ३४. ३६. ३७. ३८. ४०. ४१. ४२. ४५. ४९. ५४. ५५. ५७; १८७, २३. २६. ३४; १८८, २४. २८. २९. ३०. ३२. ३३. ३५. ४०. ४३. ४८. ५३; १८९, ५. ७. १५. १७. १८. ६२. ६४. ६६; १९०, १. २. ३. ५. ७. ९. १६. १८. २०. २३. २४. २५. २९. ३२. ३५. ३६. ४०. ४३. ४५. ४६. ४७. ५०.-५२. ५७. (इन्हें अश्वत्थामा की मृत्यु का मिथ्या समाचार दिया गया जिसकी युधिष्ठिर द्वारा पुष्टि हो जाने पर ये शोकसागर में डूब गये); १९१, २. ४. १४. २४. २५. ३०-३२. ३५. ४०. ४२. ४३. ४७. (धृष्टद्युम्न के साथ इनका युद्ध); १९२, १४. २३. २७. ३०. ३२. ३३. ३५. ३६. ४२. ४७. ४८. ४९. ५६. ६८. ७२. ७४. ७६ (अश्वत्थामा की मृत्यु हुई जान कर इन्होंने अस्त्र-शस्त्र का त्याग किया। तदनन्तर रथ के पिछले भाग में बैठ कर इन्होंने योग का आश्रय लिया तथा परम प्रभु परमात्मा का चिन्तन करते हुये ज्योतिःस्वरूप हो साक्षात ब्रह्मलोक को गमन किया। क्षण भर में ही इनके शरीर से निकली वह दिव्य ज्योति आकाश में अदृश्य हो गई। उस समय धृष्टद्युम्न द्रोणाचार्य के मृतवत शरीर के निकट आया। उसने द्रोण के सर का बाल पकड़ कर तलवार से उनके सर को धड़ से काट लिया); १९३, १. १४. १६. १८. २५. २८. ३३. ३४. ३६. ३७. ४०-४३. ४७. ४८. ५६; १९४, ७. १४; १९५, २०; १९६, ६. १०. १९. २९ (इन्होंने अश्वत्थामा के जन्म के समय ब्राह्मणों को एक सहस्र गायें दान की थी). ३६. ४६. ५१; १९७, २५. ३५; १९८, ३. २९. ३३; १९९, १०. ४६; २००, १४; २०१, ६. ९९. १००; २०२, १. २; ८. १; १. २. १८. २२; २, ५. ८. १०. १५. १६. १७. २०. २१; ३, १. ४. ८; ५; ५. ६; ६, ४ (इन्होंने सत्यजित का वध किया था). ५ (पाञ्चालों का वध किया था). ६ (विराट और द्रुपद का वध किया था). १४ (मणिमत् तथा दण्डधर का वध किया था). १५ (अंशुमान का वध किया था). २१ (दो चमकते हुये ग्रहों के समान दो रोचमानों का वध किया था). २२. २६ (मित्रवर्मा और क्षत्रधर्मा का वध किया था). २८ (सुचित्र और चित्रवर्मा का वध किया था). ३३ (सुकेतु का वध किया था). ३४ (सत्यधृति, मदिराश्व, और सूर्यदत्त का वध किया था). ३९ (वसुदान का वध किया था); ७, २. ६; ९, १३. ३८. ४०. ४४. ४५. ६२. ८७. ९४. ९६; १०, १. १९. २८. ३८; ११, १२. ३९; २०, ३. ५; २६, ४; ३२, ९. १०; ३६, १७; ३७, ११. १६. १७. २३; ४१, ७३. ७९; ५५, ४; ५६, ३८. ५४; ५९, २३. २९. ३२; ६६, २२; ७२, १९; ७३, ११. १२. १३. ४२. ४७. ५२. ५९. ७२. ८१. ९३; ७९, ४२; ८७, ८३; ९६, ३२; ९. २, ३१. ५६. ५९; ४, ११. ३०; ६, १५ (आराध्य त्र्यम्बकं यत्नाद् व्रतैरुग्रैर्महातपाः। अयोनिजायामुत्पन्नो द्रोणेनानिजेन च). २४; ७, २९. २९. ४०; ८, १३. १७. ३५; १६, १६. ३४; १९, ५. २८; २४, २४, ३५; २७, १४; २९, ८०; ३०, २; ३१, ४७; ३२, २०; ३३, ४७; ५४, २५; ५६, ३४; ६१, २०. ३७. ४०. ५९; ६२, १२. २८; ६३, ४६; ६४, ८. १२. ३१; १०. ४, २६; १०, १८; १२, ४. ९ (इन्होंने अग्निवेश से प्राप्त ब्रह्मशिरस अस्त्र अर्जुन को सहर्ष प्रदान किया था, किन्तु अश्वत्थामा को यही अस्त्र देते समय सन्देह में पड़ गये थे कि अश्वत्थामा सम्भव है सत्पुरुषों के मार्ग पर स्थित न रहे); १४, १; ११. १, १७. २९; १२, ७; १३, ४; १६, २१. २८; २०, १८. ३१; २३, २६. २९. ३१. ३४. ३५. ३६. ३८. ४०. ४१. ४२; २५, १३. १४. १५. १७. २०. २१. २५. ३०. ३१ (धृष्टद्युम्न के पुत्रों, द्रुपद और धृष्टकेतु आदि का वध किया था); १२. २, ९. १२; ४, १३; १४, २०; १६, २१; २७, २०; ४२, ३ (इनका श्राद्ध किया गया); १६६, ८. ८० (इन्होंने भरद्वाज से एक खड्ग प्राप्त किया था जो बाद में कृपाचार्य को प्राप्त हुआ); २९७, १५ (उन ऋषियों में इनकी गणना जिन्होंने तपस्या द्वारा अपना वरिष्ठ स्थान प्राप्त

किया था); १४. १२, १२; ६०, ३. १३. १६. १७. १८; ६१, १३. १४. १८. २०. २२; १५. १, १३; ३, २०; १०, ३०; ११, ५. १७; १४, ५; २५, १५; २९, ३२; ३१, १६; ३२, ७ (उन मृत योद्धाओं में ये भी एक थे जो व्यास के आवाहन पर गङ्गा से प्रकट हुये थे); ३६, ३३; १८. ३, १५; ४, २१; ५, १. १२ (मृत्यु के बाद ये बृहस्पति में प्रवेश कर गये)।

देखिये द्रोण के निम्नलिखित पर्याय भी :

आचार्य आचार्यमुख्य – (वस्था०)।

गुरु – (वस्था०)

भरद्वाजसुत, भरद्वाजात्मज – (वस्था०)। **भारद्वाज** – (वस्था०)।

भारताचार्य – (वस्था०) :

रुक्मरथ (स्वर्णिम रथवाले) : ७. ९, २३; १३, २३; ११५, १५; १९३, १९।

शोणाश्व (लाल अश्वों वाले) : ४. ५८, १।

शोणाश्ववाह : ४. ५४, १८।

शोणहय : ७. १६, १९।

२. **द्रोण**, एक शार्ङ्गक, जो मन्दपाल और जरिता के चार पुत्रों में सबसे छोटा था : १. २३०, १०; २३२, ४. १४. २०. २३. २४; २३३, ६।

३. **द्रोण**, एक पर्वत का नाम है : १२. ३२०, ८२।

द्रोणज = अश्वत्थामा : ८. ५६, ३०।

द्रोणतनय = अश्वत्थामा : ७. १५६, १०९; ८. २०, २०।

द्रोणनन्दन = अश्वत्थामा : ७. १९९, १।

द्रोणपर्वन्, महाभारत के सातवें पर्व का नाम है : १. १, ८९; २, २५४. २६८. २७० (इस पर्व के श्लोकों की संख्या ८,९०९ बताई गई है); १८. ६, ६३।

द्रोणपुत्र = अश्वत्थामा : १. १, २०३. २०६. २१२. ११५; २, ३०९; १४२, २०; ३. ३०, ४८; ३६, ९. २५; ३७, ४; ४. ५९, १९. २०; ६९, ७; ५. २३, १२; ९२, ७; १५५, ३३; १६७, ३; ६. १७, २२; ४५, ४७; ५५, २; ९४, १३. २३; १०१, ४८; १०८, ५७; ११५, २६; ११६, १२; ७. १६, ९; २०, १०; ३१, २०; ४६, १८; ८५, १२. १५; १०५, १०; १४५, ८८; १४७, ६६; १५६, ७६. ९२. ९९. १३६. १४४. १४५. १४८. १५५. १५६. १५७. १६२. १८८; १६०, ५७; १६१, १; १६६, १६. ४०; १९३, २६. २८. ३३. ३४. ३६. ६८; १९५, ४६. ५०; १९६, ७; १९७, १७. २१; १९९, ४५. ५४. ५९; २००, ३. ५. २४. ३६. ४०. ६९. ८६. ८८. ९०. ९६. ११९. १२०. १२१. १२२. १२६. १३१; २०१, २७. ३६. ९९; ८. १, १; २, १८; ३, १५; ७, ७; ९, ८२; १०, १; ११, १६; १५, ४. ४३; ५४, १४; ५५, ९. २४. २८. २९. ३०. ३१. ३२. ३५. ३७. ३९; ५६, १३२. १३५; ५८, २; ५९, २७. ५५. ५९. ६२. ६३. ६४; ६०, ५४; ६४, ३. ६. १८. २०. २३. ७०; ६७, ८. ९; ७५, ८; ९४, २५; ९. ६, २२; १२, ३७; १४, ४. २९. ४४; १६, ६. ४५; २२, २०; २९, ३६; ३०, २; ५४, २९; ६४, ४२. ४३; ६५, ३८. ४१; १०. १, ३३. ५६; ५, ३०; ६, १८; ७, १. ५४; ८, १. ५. २८-५०. ५५. ६४. १०५. १०९. ११३. १२१. १५३. १५६; ९, ६०; ११, २०. २९; १३, २१; १४, ८; १६, २२. २३; १७, ३; ११. ११, १८; १४. ६०, ३१; ६७, २. ६. १०; ६८, १३. १८; १५. ३६, ३२; १६. ३, २७।

द्रोणवध : २. २, ७० (देखिये द्रोणवधपर्वन्)।

द्रोणवधपर्वन्, महाभारत के ७७वें अवान्तर पर्व का नाम है जिसमें द्रोण के वध की कथा है। चौदहवें दिन की रात्रि के युद्ध का वर्णनः "व्यास के कहने पर युधिष्ठिर स्वयं कर्णवध से विरत हो गये परन्तु घटोत्कच को मार डालने के कारण वे कर्ण पर अत्यन्त क्रुद्ध थे। भीमसेन द्वारा धृतराष्ट्र की सेना का निवारण होता देख कर युधिष्ठिर ने धृष्टद्युम्न से द्रोण पर आक्रमण करने के लिये कहा। धृष्टद्युम्न सहित पाण्डव सैनिकों ने जब पूरे उद्योग के साथ द्रोणाचार्य पर आक्रमण किया तब शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ द्रोण ने आगे बढ़कर उन सबका सामना किया। उस समय दुर्योधन भी क्रुद्ध होकर द्रोण की सहायता के लिये आ गया। परिणामस्वरूप दोनों सेनाओं के बीच घमासान युद्ध होने लगा। दोनों ही पक्ष के योद्धा अत्यन्त थकान और निद्रा से त्रस्त हो गये। तब अर्जुन ने योद्धाओं को विश्राम कर लेने की आज्ञा दी जिसके कारण द्रोण और सम्पूर्ण देवताओं तथा ऋषियों ने अर्जुन की प्रशंसा की। कौरव सैनिकों ने कर्ण और दुर्योधन से भी युद्ध बन्द करने के लिये कहा। उस समय सभी योद्धा वहीं युद्ध भूमि में विश्राम करने लगे। कुछ समय पश्चात जब चन्द्रमा का प्रकाश चारों ओर फैल गया तब चन्द्र किरणों के स्पर्श से सारी सेना उसी प्रकार जाग उठी जिस प्रकार सूर्य रश्मियों का स्पर्श पाकर कमलसमूह खिल उठता है। तदनन्तर महान जनसंहार के लिये परलोक की इच्छा रखने वाले योद्धाओं का वह युद्ध पुनः आरम्भ हो गया (७. १८४)।

"अमर्ष में भरे दुर्योधन ने द्रोणाचार्य के पास जा कर उनमें हर्षोत्साह और उत्तेजना उत्पन्न करते हुये द्रोण द्वार अस्थायी रूप से पाण्डव सैनिकों को विश्राम देने के निर्णय की भर्त्सना की। पाण्डवों पर उसने किसी भी प्रकार की दया न दिखाने के लिये द्रोण को प्रेरित किया। दुर्योधन की बात सुन कर द्रोण ने सभी पाञ्चालों के वध का वचन देते हुए अर्जुन के शक्ति और शौर्य का वर्णन किया। दुर्योधन ने अपनी सेना को दो भागों में विभाजित करके अर्जुन पर आक्रमण करने की योजना बनाया। दुर्योधन की गर्वोक्ति पर द्रोण ने उसका उपहास करते हुये कहा कि यह उचित ही होगा कि दुर्योधन और शकुनि, जो सम्पूर्ण कलह के लिये उत्तरदायी हैं, एक साथ मिल कर अर्जुन के साथ युद्ध करें। द्रोण ने दुर्योधन से कहा : 'तुम अपने हित के लिये शीघ्र ही अर्जुन का वध कर डालो। तुम कुलीन क्षत्रिय हो। मैं आशा करता हूँ कि निरपराध क्षत्रियों का व्यर्थ वध कराने की अपेक्षा तुम और शकुनि युद्ध में अर्जुन पर आक्रमण करो। धृतराष्ट्र को सुनाते हुये तुमने अनेक बार यह गर्वोक्ति की ही है कि तुम, कर्ण और दुःशासन, केवल यही तीन लोग समर भूमि में एक साथ होकर पाण्डवों का वध कर डालेंगे। अतः अपनी उस प्रतिज्ञा को पूर्ण करो।' ऐसा कह कर द्रोणाचार्य शत्रुसेना की ओर लौट पड़े। तत्पश्चात सेना के दो विभाग करके उसी क्षण युद्ध आरम्भ हो गया (७. १८५)।

"पन्द्रहवें दिन का युद्ध : जब रात्रि के पन्द्रह मुहूर्तों में से तीन मुहूर्त ही शेष रह गये तब कौरवों तथा पाण्डवों का युद्ध पुनः आरम्भ हुआ। जब अरुणोदय हुआ तब समस्त कौरव-पाण्डव सैनिक रथ, घोड़े, आदि सवारियों को छोड़ कर सन्ध्यावन्दन में तत्पर हुये। तदनन्तर सेना के दो भागों में विभक्त हो जाने पर द्रोणाचार्य ने दुर्योधन के आगे होकर सोमकों, पाण्डवों, तथा पाञ्चालों पर आक्रमण किया। कौरव सेना को दो भागों में विभक्त देख कर श्रीकृष्ण ने अर्जुन को द्रोणाचार्य तथा कर्ण को बायें करके आगे बढ़ने के लिये कहा। उस समय भीम ने अर्जुन को प्रोत्साहित करते हुये सम्पूर्ण पराक्रम से युद्ध करने के लिये कहा। श्रीकृष्ण तथा भीम द्वारा इस प्रकार प्रेरित अर्जुन ने कर्ण और द्रोण को लाँघ कर शत्रुसेना पर चारों ओर से घेरा डाल दिया। अर्जुन के विरुद्ध दुर्योधन, कर्ण, तथा शकुनि ने प्रबल युद्ध आरम्भ किया। उधर द्रोणाचार्य उत्तर दिशा की ओर जाकर पाञ्चालों से युद्ध करने लगे। इस प्रकार द्रोण को देखकर पाण्डव सैनिक भयभीत होकर काँपने। उस समय पाञ्चालों और द्रोण के बीच घोर युद्ध होने लगा। द्रुपद ने अपने तीन पौत्रों, विराट और चेदियों के साथ द्रोणाचार्य पर आक्रमण किया। इस युद्ध में द्रोण ने चेदियों को पराजित करते हुए द्रुपद और उनके तीनों पुत्रों तथा विराट का वध कर दिया। यह देख कर धृष्टद्युम्न ने उसी दिन द्रोणाचार्य का वध करने की प्रतिज्ञा की। भीम ने धृष्टद्युम्न को प्रोत्साहित करते हुये उसके साथ द्रोण पर आक्रमण किया। इस प्रकार घमासान युद्ध चल रहा था कि सूर्य पूर्णतः उदित हुये (७. १८६)।

"प्रातःकालीन सूर्य का उपस्थान करने के बाद दोनों पक्ष के बीच पुनः युद्ध आरम्भ हो गया। उस समय युद्ध भूमि का कोलाहल सर्वलोक

तक सुनाई पड़ने लगा। अस्त्र शस्त्रों से कटकर छटपटाते हुये योद्धाओं के महान् आर्तनाद से धरती व्याप्त हो गई। योद्धाओं की कटी हुई भुजाओं, विचित्र कवचों, मनोहर कुण्डलमण्डित मस्तकों तथा इधर-उधर बिखरी हुई अन्यान्य युद्ध सामग्रियों से रण भूमि के विभिन्न प्रदेश प्रकाशित हो रहे थे। उस समय सेनाओं द्वारा उड़ायी हुई धूल से सभी लोग ढक गये थे। न तो कर्ण दिखाई पड़ते थे और न द्रोण। युधिष्ठिर आदि पाण्डव भी धूलों से ढंक गये थे। दुर्योधन ने अपने भ्राताओं के साथ पाण्डवों के विरुद्ध घोर युद्ध आरम्भ किया। उस समय दुर्योधन का नकुल और सहदेव से, कर्ण का भीम से और द्रोण का अर्जुन से युद्ध हुआ। नकुल ने अपनी बाण वर्षा द्वारा दुर्योधन को इतना पीड़ित किया कि वह युद्ध विमुख हो गया। यह देख कर नकुल ने दुर्योधन को ललकारते हुये उससे सामने रुक कर युद्ध करने के लिये आवाहन किया (७. १८७)।

"सहदेव ने दुःशासन के सारथी का वध कर दिया। भीम कूद कर नकुल के रथ पर चढ़ गये। द्रोणाचार्य ने ऐन्द्रास्त्र का आवाहन किया। उस समय उस भयंकर युद्ध को देखने के लिये आकाश में अनेक देवता, सहस्रों गन्धर्व, ऋषि और सिद्ध समुदाय खड़े हो गये। अप्सराओं, यक्षों, और गन्धर्वों से भरा आकाश अत्यन्त सुशोभित होने लगा। ये सभी आकाश में स्थित दिव्य प्राणी अर्जुन और द्रोण के युद्ध कौशल की सराहना करते हुये इस प्रकार कहने लगे : 'यह युद्ध न तो मनुष्यों का है, न असुरों का, न राक्षसों का, और न देवताओं एवं गन्धर्वों का ही। निश्चय ही यह परम उत्तम ब्रह्म युद्ध है।' उस समय द्रोण और अर्जुन ने परस्पर एक दूसरे के विरुद्ध ब्रह्मास्त्रों का प्रयोग किया। आकाश में बाणों का जाल बिछ गया जिससे उस समय कोई पक्षी भी आकाश में उड़ पाने में असफल था (७. १८८)।

"धृष्टद्युम्न और दुःशासन के बीच भयंकर युद्ध हुआ जिसमें दुःशासन को पराजित करके धृष्टद्युम्न द्रोण की ओर बढ़े। दुःशासन को पराजित होता देख कृतवर्मा तथा दुःशासन के तीन भाई वहाँ आकर धृष्टद्युम्न को रोकने का प्रयास करने लगे। द्रोणाचार्य की ओर बढ़ते हुये धृष्टद्युम्न की सहायता के लिये नकुल और सहदेव भी आ गये। अमर्ष से सभी महारथियों ने मृत्यु को सामने रख कर घोर युद्ध आरम्भ किया। सबके हृदय शुद्ध तथा आचार-व्यवहार निर्मल थे। उस धर्मयुद्ध में कर्णी, नालीक, और विष लगे हुये बाण तथा बस्तिक नामक अस्त्रों का प्रयोग नहीं होता था। इसी प्रकार अनेक अन्य निषिद्ध अस्त्र-शस्त्रों का भी कोई प्रयोग नहीं कर रहा था। धृष्टद्युम्न और सात्यकि ने मिल कर द्रोण और दुर्योधन पर आक्रमण किया। उस समय सात्यकि के साथ अपनी मित्रता के कारण द्रोण के मन में अत्यन्त दुःख हुआ। सात्यकि ने दुर्योधन को त्रस्त कर दिया जिससे कर्ण उसकी सहायता के लिये आ पहुँचा। तब भीम ने कर्ण पर धावा किया। इस परिस्थिति में युधिष्ठिर ने अपने योद्धाओं को सात्यकि की सहायता करने के लिये कहा। भीम, नकुल, सहदेव तथा अर्जुन ने कौरवों पर आक्रमण किया, जब कि द्रोण ने पाञ्चालों के साथ युद्ध करना आरम्भ किया (७. १८९)।

"कुपित द्रोणाचार्य ने रणभूमि में पाञ्चालों का उसी प्रकार संहार आरम्भ किया जैसे पूर्वकाल में इन्द्र ने दानवों का किया था। युद्धपरायण पाञ्चाल और सृञ्जय महारथी संग्राम में द्रोण के साथ युद्ध करते हुये उन्हीं की ओर बढ़े आ रहे थे। द्रोणाचार्य ने जब पाञ्चालों का भयंकर वध आरम्भ किया तब पाण्डवों का मन अत्यन्त भयभीत हो उठा। पाण्डव यह भी सोचने लगे कि धर्म के ज्ञाता अर्जुन सम्भव है उस समय मन लगा कर द्रोण से युद्ध न करें। तब श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा : 'द्रोणाचार्य सम्पूर्ण धनुर्धरों में श्रेष्ठ हैं, अतः जब तक उनके हाथ में धनुष है तब तक कोई भी उन पर विजय प्राप्त करने में सफल नहीं हो सकता। इस समय 'गुरु अवध्य हैं' इस धर्मभावना को छोड़ कर द्रोण पर विजय पाने के लिये कुछ उपाय करना चाहिये। इस उद्देश्य से किसी व्यक्ति को भेज कर द्रोण को अश्वत्थामा की युद्ध में मृत्यु का समाचार देना चाहिये।' अर्जुन ने कृष्ण के इस परामर्श को अनुचित बताया, जबकि अन्य लोग इससे सहमत हो गये। युधिष्ठिर भी इसके लिये अत्यन्त कठिनता से तैयार हुये। उस समय मालवराज इन्द्रवर्मा के अश्वत्थामा नामक गज का भीम ने गदा प्रहार से वध कर डाला और द्रोण के निकट आकर कहा कि 'अश्वत्थामा मारा गया'। द्रोण ने भीम की बातों का विश्वास नहीं किया तथा पाञ्चालों पर ब्रह्मास्त्र से प्रहार करके उनका विनाश करते रहे। उस समय द्रोण ने पाँच सौ मत्स्य वीरों का वध करते हुये वसुदान का भी सर काट कर गिरा दिया। ऋषिगण तथा विश्वामित्र आदि महर्षियों ने उपस्थित होकर द्रोण की इस लिये भर्त्सना की कि वे ब्रह्मास्त्र का उपयोग ऐसे लोगों के विरुद्ध कर रहे हैं जो उसका प्रतिकार करना नहीं जानते। फलस्वरूप इन लोगों ने द्रोण से अपना ब्रह्मास्त्र अलग रख कर पृथिवी से विदा होने का आवाहन किया। तब द्रोण ने अश्वत्थामा की मृत्यु होने के समाचार के सम्बन्ध में युधिष्ठिर से पूछा। उस समय कृष्ण ने युधिष्ठिर से थोड़ा असत्य बोलकर अपनी सेना का संहार बचाने के लिये आग्रह किया। भीम ने भी ऐसा ही करने के लिये कहा। इस प्रकार सभी के द्वारा प्रेरित युधिष्ठिर ने जोर से कहा कि अश्वत्थामा युद्ध में मारा गया। इतना कहने के बाद युधिष्ठिर ने धीरे से यह भी कहा कि 'मनुष्य नहीं हाथी'। इस घटना के पूर्व तक युधिष्ठिर का रथ धरती से चार अंगुल ऊपर ही रहता था, किन्तु इस असत्य वचन के कारण वह भूमि पर आ गया। यह समाचार सुनकर द्रोणाचार्य पुत्रशोक से संतप्त होकर अपने जीवन से निराश हो गये। यह समाचार और महर्षियों की बात स्मरण कर द्रोण अपने को अपराधी सा मानने लगे। उनकी चेतनाशक्ति लुप्त होने लगी और वे अत्यन्त उद्विग्न हो उठे। उस समय धृष्टद्युम्न को सामने देख कर भी शत्रुओं का दमन करने वाले द्रोणाचार्य पूर्ववत युद्ध नहीं कर सके (७. १९०)।

"धृष्टद्युम्न ने द्रोण की दशा देख कर उन पर आक्रमण किया। उसने अपने दिव्य धनुष पर एक अग्नि की प्रचण्ड ज्वालाओं वाला बाण रक्खा जिसे रोकने के लिये द्रोण ने प्रयत्न किया परन्तु अब द्रोण के अन्तःकरण में दिव्यास्त्र पूर्ववत प्रकट न हो सके। उनके निरन्तर बाण चलाते चार दिन और एक रात का समय व्यतीत हो चुका था। उस दिन के पन्द्रह भागों में से तीन ही भाग में उनके सारे बाण समाप्त हो गये। इसके बाद द्रोण ने पुनः आङ्गिरस नामक दिव्य धनुष तथा ब्रह्मदण्ड के समान बाण हाथ में लेकर धृष्टद्युम्न के साथ युद्ध आरम्भ कर दिया। दोनों ओर से एक से एक श्रेष्ठ अस्त्रों का प्रयोग किया जाने लगा। द्रोणाचार्य के पास वैतस्तिक नामक बाण थे। ये बाण कृपाचार्य, अर्जुन, अश्वत्थामा, वैकर्तन कर्ण, प्रद्युम्न, सात्यकि और अभिमन्यु को छोड़ कर अन्य किसी के पास नहीं थे। उस घोर संग्राम में तब सात्यकि ने धृष्टद्युम्न की रक्षा की। श्रीकृष्ण, अर्जुन और सिद्धगण सात्यकि के पराक्रम की सराहना करने लगे (७. १९१)।

"सात्यकि के शौर्य को देख कर दुर्योधन, कृपाचार्य, कर्ण, और अन्य धार्तराष्ट्र सात्यकि से युद्ध करने आ पहुँचे। इधर सात्यकि को अकेला देख कर युधिष्ठिर आदि उनकी सहायता के लिये उपस्थित हुये। युद्धस्थल में दोनों पक्षों के युद्ध के कारण क्रूरता का ताण्डव होने लगा। युधिष्ठिर ने अपने योद्धाओं को द्रोणाचार्य के विरुद्ध गम्भीर युद्ध करने के लिये प्रोत्साहित किया। द्रोणाचार्य जब युधिष्ठिर, धृष्टद्युम्न और अन्य पाण्डवों का सामना करने के हेतु आगे बढ़े तब पृथिवी काँपने लगी, वज्रपात की ध्वनि के साथ प्रचण्ड आँधी चलने लगी जिससे सम्पूर्ण सेना भयभीत हो उठी। सूर्यमण्डल से एक भयंकर उल्का निकल कर पृथिवी पर गिर पड़ी। द्रोणाचार्य के शस्त्र जलने लगे, और उनके रथाश्वों की आँखों से आँसू बहने लगा। द्रोण उस समय तेजहीन हो रहे थे तथा सामने धृष्टद्युम्न को देख कर वह उदास हो गये। ब्रह्मवादी महर्षियों के ब्रह्मलोक चलने के वचन को स्मरण करके द्रोण ने अपने प्राणों को त्याग देने का विचार किया। ऐसा विचार आते ही द्रोण ने क्षत्रियों का विनाश करने के लिये

ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया जिससे धृष्टद्युम्न रथहीन, तथा उनके अस्त्र-शस्त्र भी नष्ट हो गये। उस अवस्था में भीम ने आकर उन्हें अपने रथ पर बैठा लिया और उन्हें प्रोत्साहित करने लगे। परिणामस्वरूप द्रोण और धृष्टद्युम्न के बीच पुनः भयंकर युद्ध आरम्भ हो गया। धृष्टद्युम्न ने वसाति, शिवि, बाह्लीक तथा अनेक कौरवों का वध कर दिया। उस समय भीम ने अपना रथ द्रोण के निकट ला कर उनसे इस प्रकार कहा : 'आप ब्राह्मणों में श्रेष्ठ ब्रह्मवेत्ता हैं फिर भी आपने स्त्री, धन और पुत्र की लिप्सा से मूर्ख चाण्डालों की भाँति नाना प्रकार के म्लेच्छों और क्षत्रिय समूहों का संहार कर डाला है। आप अपने एकमात्र पुत्र की जीविका के लिये विपरीत कर्म का आश्रय लेकर क्षत्रियों के वध पर लज्जित क्यों नहीं हो रहे हैं।' भीम के इस कथन को सुन कर द्रोणाचार्य ने अपने सभी अस्त्र-शस्त्रों का त्याग कर दिया, रथ के पिछले भाग में जाकर बैठ गये तथा समाधि लगा लिया। वे योग का आश्रय लेकर ज्योतिःस्वरूप परब्रह्म से अभिन्नता का अनुभव करते हुये पुराणपुरुष विष्णु का ध्यान करने लगे। उस समय एकाक्षर ब्रह्म का जप करते हुये द्रोण प्रणव के अर्थभूत परमात्मा का चिन्तन करते-करते ज्योतिःस्वरूप हो साक्षात् ब्रह्मलोक चले गये। इस प्रकार द्रोण के उत्क्रमण करने पर आकाश में दो सूर्य उदित हुये प्रतीत होने लगे। क्षण मात्र में ही द्रोण के शरीर से निकली ज्योति आकाश में अदृश्य हो गई। संजय ने बताया कि उस समय स्वयं उन्होंने, अर्जुन, कृपाचार्य, श्रीकृष्ण तथा युधिष्ठिर इन्हीं पाँच व्यक्तियों ने योगयुक्त द्रोणाचार्य को परमधाम जाते हुये देखा। द्रोण का सारा शरीर बाण समूहों से क्षत-विक्षत हो गया था और वे अपने शस्त्र भी नीचे डाल चुके थे। उनके शरीर से प्राण निकल चुका था। इसी अवस्था में धृष्टद्युम्न ने द्रोण के सर के बाल को पकड़ कर तलवार से उनका सर काट लिया। इस प्रकार द्रोण का वध कर देने पर धृष्टद्युम्न को महान हर्ष हुआ। द्रोण का सर काटने पर उनका शरीर रक्त रंजित हो भूमि पर गिर पड़ा। उस समय भयभीत होकर सारे सैनिक भागने लगे। कौरवों का उत्साह शिथिल हो गया जिसके कारण पाण्डवों और सृञ्जयों ने उन पर प्रबल आक्रमण कर दिया। कौरवों ने द्रोण के मृत शरीर को बहुत खोजा परन्तु वे उसे प्राप्त नहीं कर सके। दूसरी ओर पाण्डव पक्ष में हर्ष व्याप्त था। भीम ने धृष्टद्युम्न को गले से लगाते हुये कहा कि कर्ण और दुर्योधन का शीघ्र ही वध होने पर वह उसे पुनः गले लगायेंगे। (७. १९२)।"

द्रोणशर्मपद, एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से व्यक्ति को अप्सराओं का लोक प्राप्त होता है (१३. २५, २८)।

द्रोणसुत = अश्वत्थामा : १. २७, २०२; ५. १९४, १४; ६. ९४, ३०; १०२, ४५; ७. १६०, ६०; २००, १९; ८. २०, २४. २९; ४६, ४५; ५५, ३१; ७९, ८२; ८८, २०; १०. ६, २९; ११. २५, ३१; १४. ६७, १०।

द्रोणसूनु = अश्वत्थामा : ८. ६७, ९।

द्रोणहन्तृ = धृष्टद्युम्न (देखिये वस्था०)।

द्रोणात्मज = अश्वत्थामा : ८. १६, २६।

द्रोणाभिषेकपर्वन्, महाभारत के ७१वें अवान्तर पर्व का नाम है जिसमें द्रोण के अभिषेक का वर्णन है (देखिये द्रोणाभिषेचन भी)। जनमेजय ने वैशम्पायन से भीष्म की मृत्यु के बाद धृतराष्ट्र की मनःस्थिति का वर्णन करने लिये कहा। तब वैशम्पायन ने कहा : "भीष्म की मृत्यु से धृतराष्ट्र का मन सर्वथा उत्साहशून्य हो गया। उन्होंने सञ्जय से पूछा कि इस दुःखद घटना के बाद कौरवों ने क्या किया। सञ्जय ने सबसे पहले भीष्म की शरशय्या का वर्णन करते हुये बताया कि भीष्म द्वारा इस प्रकार शरशय्या पर सोने के बाद दोनों पक्ष पुनः युद्ध करने लगे। उस समय कौरवों ने कर्ण का स्मरण किया, क्योंकि वही भीष्म के समान माना जाता था। किन्तु भीष्म के साथ वैमनस्य के कारण वह पिछले दस दिनों से युद्ध विरत था। भीष्म और कर्ण की वैमनस्यता का कारण यह था कि भीष्म ने कर्ण को अर्धरथी कहा था जब कि वह दो रथियों के प्रभाव था। भीष्म के इसी कथन के कारण क्रोधवश कर्ण ने दस दिनों तक उस लिये युद्ध नहीं किया क्योंकि कौरवों के सेनापति भीष्म थे। परन्तु अब भीष्म के युद्ध से हट जाने पर कर्ण युद्ध के लिये पुनः तैयार हो गया (७. १)।

"भीष्म की मृत्यु के बाद कर्ण दुर्योधन के पास आया और इस प्रकार बोला : 'भीष्म सदैव वीरोचित गुणों से सम्पन्न तथा दिव्यास्त्रों के ज्ञाता थे। उनमें वसुओं के समान प्रभाव था।' ऐसा कह कर कर्ण भीष्म के शोक में मन ही मन दुखी हुआ। उसने भीष्म के पराक्रम को विस्तार से स्मरण तथा युधिष्ठिर के भी धैर्य, बुद्धि, सत्य और गुणों का उल्लेख किया। उसने शिव और कृष्ण के साथ अर्जुन के युद्ध की चर्चा करते हुये उनके भी शौर्य का उल्लेख किया। इस प्रकार पाण्डवों की वीरता और अपराजेयता की चर्चा करते हुये भीष्म के मारे जाने से कौरवों के श्रीहीन हो जाने पर चिन्ता प्रकट की। फिर भी युद्ध का निश्चय करके कर्ण ने अपने सारथि से अपना रथ तैयार करने के लिये कहा (७. २)।

"अमित तेजस्वी भीष्म बाणशय्या पर सो रहे थे। उन्हें उस दशा में देखकर कर्ण अत्यन्त आर्त होकर रथ से उतर पड़ा और भीष्म को प्रणाम करके बोला : 'भारत ! आपका कल्याण हो। आप अपनी पवित्र और मंगलमयी वाणी द्वारा मुझसे कुछ कहिये तथा कल्याणमयी दृष्टि से मेरी ओर देखिये।' उस समय कर्ण ने पाण्डव वीरों के पराक्रम की विस्तार से चर्चा करते हुये भीष्म से आशीर्वाद माँगा जिससे वह पाण्डुपुत्र अर्जुन को अपने अस्त्रबल से मार सके (७. ३)।

"कर्ण के उक्त वचन को सुनकर भीष्म ने प्रसन्न होकर कर्ण के उस शौर्य का उल्लेख किया जो उसने काम्बोजों के विरुद्ध प्रकट किया था। भीष्म ने दुर्योधन को विजय दिलाने के लिये कर्ण को युद्ध करने के लिये प्रेरित किया। तदनन्तर कर्ण ने भीष्म को प्रणाम किया। भीष्म के पास से लौट पर कौरव तथा दुर्योधन हर्ष से भर गये (७. ४)।

"कर्ण से दुर्योधन ने अपने लिये हितकर बातों पर परामर्श किया। तब कर्ण ने कौरव सेना के सेनापति पद के लिये द्रोणाचार्य के नाम का प्रस्ताव किया (७. ५)।

"दुर्योधन ने द्रोण की प्रशंसा तथा उनके शौर्य का उल्लेख करते हुये उनसे कौरव-सेना का सेनापति बनने के लिये निवेदन किया (७. ६)।

"दुर्योधन की बात सुनकर द्रोण ने कहा : 'मैं छहों अंगों सहित वेद, मनु द्वारा कथित धर्मशास्त्र, शंकर की दी हुई बाणविद्या तथा अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों का ज्ञाता हूँ। अतः मैं पाण्डवों से युद्ध करूँगा परन्तु मैं धृष्टद्युम्न को किसी भी प्रकार युद्ध में नहीं मारूँगा क्योंकि वह स्वयं मेरे ही वध के लिये उत्पन्न हुआ है।' इस प्रकार द्रोण की अनुमति प्राप्त हो जाने पर दुर्योधन ने उन्हें शास्त्रीय विधि से सेनापति के पद पर अभिषिक्त किया। उस समय बाद्यों का घोष, तथा सब लोगों के हृदय में महान हर्ष प्रकट हुआ। सेनापति बन जाने के पश्चात द्रोण ने अपनी सेना की व्यूह रचना आरम्भ की। उन्होंने शकुनि सहित सिन्धुराज को दाहिनी ओर खड़ा किया। इसी प्रकार काम्बोजों को बायें ओर तथा उनकी सहायता के लिये कृपाचार्य को खड़ा किया। पृष्ठ भाग में मद्रदेश के योद्धाओं को तथा कर्ण को सभी धनुर्धरों के आगे रक्खा। इस व्यूहरचना को शकट व्यूह करते हैं। द्रोण के शकट व्यूह के विरुद्ध युधिष्ठिर ने अपनी सेनाओं को क्रौञ्च के रूप में व्यवस्थित किया जिसके शीर्ष भाग में अर्जुन तथा श्रीकृष्ण स्थित थे। तदनन्तर जब द्रोणाचार्य युद्ध के लिये आगे बढ़े तब भयंकर आर्तनाद के साथ पृथिवी काँप उठी। आकाश से मांस, रक्त, और अस्थियों की वर्षा होने लगी। द्रोण ने पाण्डवों तथा सृञ्जयों की विशाल सेना पर आक्रमण करके उसे तितर-बितर कर दिया। तब धृष्टद्युम्न ने अपने दिव्यास्त्रों से द्रोण की सेना को अनेक प्रकार से आहत करना आरम्भ किया। इस प्रकार द्रोण और धृष्टद्युम्न के बीच भयंकर युद्ध आरम्भ हो गया। द्रोण अपने श्रेष्ठ रथ में बैठकर शत्रुसेना का संहार करने लगे (७. ७)।

"युधिष्ठिर ने अर्जुन तथा धृष्टद्युम्न से द्रोण को रोकने के लिये कहा। उस समय केकय राजकुमार, भीमसेन, अभिमन्यु, घटोत्कच, अन्य पाण्डव, तथा विभिन्न योद्धा अपने पराक्रम के अनुकूल अनेक प्रकार के वीरोचित कार्य करने लगे। द्रोणाचार्य ने पाण्डवों की एक अक्षौहिणी से भी अधिक सेना का संहार कर दिया। अन्त में वे धृष्टद्युम्न द्वारा मार गिराये गये। उस समय देवता, पितरों आदि ने द्रोणाचार्य को मारा गया देखा (७. ८)।

"धृतराष्ट्र ने संजय से द्रोण के पराक्रम के सम्बन्ध में पूछते हुये कहा कि पाण्डव और सृञ्जय किस प्रकार द्रोण को पराजित कर सके, क्योंकि द्रोण एक दुर्जय योद्धा थे। वे सुवर्णमय पङ्खों वाले बाणों की वर्षा करते थे और विचित्र रीति से युद्ध करनेवाले विद्वान थे। अतः जितेन्द्रिय, दिव्यास्त्रधारी और अपनी मर्यादा से कभी च्युत न होनेवाले द्रोण को धृष्टद्युम्न ने कैसे मार दिया ? द्रोण का रणभूमि में गिराया जाना समुद्र के शुष्क होने, मेरु पर्वत के अपने स्थान से हट जाने, और सूर्य के आकाश से च्युत होने के समान है। वे बुद्धि में बृहस्पति और शुक्राचार्य के समान थे। उनके रथाश्व लाल रंगके, विशाल शरीरवाले, वायु के वेग से चलनेवाले, अस्त्र-शस्त्रों के प्रहार को सहन करनेवाले थे। वे सिन्धु देशीय अश्व अत्यन्त प्रबल थे, अतः उनके द्वारा संयुक्त रथ पर बैठकर युद्ध करनेवाले द्रोण किस प्रकार मृत्यु को प्राप्त हुये।' महाराज ने इस प्रकार द्रोण के गुणों की विस्तार से चर्चा करते हुये उनके मारे जाने की परिस्थितियों के सम्बन्ध में संजय से पूछा (७. ९)।

"संजय से द्रोण की मृत्यु के सम्बन्ध में इस प्रकार प्रश्न करते-करते धृतराष्ट्र अचेत होकर भूमि पर गिर पड़े। उन्हें गिरा देखकर राजमहल की अनेक स्त्रियाँ उनके चारों ओर एकत्र होकर उनकी सेवा करने लगीं जिससे धीरे-धीरे वह पुनः स्वस्थ हो गये और संजय से युद्ध का वृत्तान्त पूछने लगे। उन्होंने युधिष्ठिर के सम्बन्ध में भी पूछा। साथ ही युयुधान सात्यकि, धृष्टकेतु, केतुमान, तथा धृष्टद्युम्न के पुत्रों, क्षत्रञ्जय, क्षत्रदेव और कृतवर्मा के सम्बन्ध में भी पूछा जिन्होंने बारह वर्षों तक खेल-कूद छोड़कर अस्त्रों की शिक्षा पाने के लिये उत्तम ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हुये भीष्म के समीप निवास किया था। केकय राजकुमारों, युयुत्सु, और धृष्टद्युम्न के सम्बन्ध में भी उन्होंने संजय से विस्तार से बताने के लिये कहा (७. १०)।

"धृतराष्ट्र ने श्रीकृष्ण की लीलाओं का संक्षिप्त वर्णन करते हुये कहा कि उन्होंने हयराज आदि का वध किया था। अङ्गों को उन्होंने युद्ध में पराजित किया था। इसी प्रकार वङ्ग, कलिङ्ग, मगध, काशि, कोसल, वत्स, गर्ग, करूष, अवन्ती, आदि असंख्य राजाओं को पराजित किया था। यदि गद, साम्ब, प्रद्युम्न, विदूरथ, और वृष्णि आदि के महान योद्धा श्रीकृष्ण के बुलाने पर पाण्डव सेना में आ जाँय तो दुर्योधन का उद्योग संशय में पड़ जायगा। यह दुःख की बात है कि दुर्योधन श्रीकृष्ण और अर्जुन के पराक्रम को नहीं जानता। धृतराष्ट्र ने कौरवों के विनाश के लिये स्वयं अपने तथा नियति को उत्तरदायी बताते हुये संजय से आगे की घटनाओं का वर्णन करने के लिये कहा (७. ११)।

"युद्ध का ग्यारहवाँ दिन : संजय ने विस्तार से द्रोण के मारे जाने की घटनाओं का वर्णन करना आरम्भ किया। उन्होंने बताया कि कर्ण और दुःशासन से परामर्श करने के बाद दुर्योधन ने द्रोणाचार्य से युधिष्ठिर को जीवित ही बन्दी बना लेने के लिये कहा। द्रोण को यह जान कर अत्यन्त हर्ष हुआ कि दुर्योधन ने उनसे युधिष्ठिर का वध करने के लिये नहीं कहा। दुर्योधन ने बताया कि यदि युधिष्ठिर का वध कर दिया गया तो अन्य पाण्डवगण, जो सर्वथा अजेय हैं, युधिष्ठिर की मृत्यु का बदला लेने के लिये उद्यत हो जायेंगे किन्तु यदि उन्हें जीवित ही बन्दी बना लिया जाय तो एक बार पुनः उन्हें जूए में पराजित करना सम्भव होगा, जिससे सभी पाण्डवों को पुनः वनवास दिया जा सकता है। द्रोण ने कहा कि वे युधिष्ठिर को उसी अवस्था में बन्दी बना सकते हैं जब अर्जुन उनकी रक्षा न कर रहे हों। अतः किसी युक्ति से अर्जुन को युधिष्ठिर से दूर हटाना होगा। दुर्योधन ने तब अपनी सम्पूर्ण सेना को द्रोण की बात से अवगत करा दिया जिससे द्रोण अपने वचन पर दृढ़ रह सकें (७. १२)।

"अपने गुप्तचरों द्वारा जब युधिष्ठिर को इस बात का पता चल गया कि द्रोणाचार्य ने उन्हें बन्दी बनाने का वचन दिया है तब उन्होंने अपनी सेना तथा सभी भ्राताओं को इससे अवगत कराया। उस समय अर्जुन ने युधिष्ठिर को सान्त्वना दी। तदनन्तर घमासान युद्ध आरम्भ हुआ। द्रोण तथा अर्जुन द्वारा रक्षित क्रमशः कौरव तथा पाण्डव दोनों ही पक्ष के सैनिक आमने-सामने निश्चल भाव से खड़े थे। उस समय द्रोणाचार्य ने आगे बढ़कर महान पराक्रम दिखाते हुये धृष्टद्युम्न की सेना का वध आरम्भ किया (७. १३)।

"द्रोणाचार्य ने युद्ध में इतने अधिक सैनिकों का वध किया कि युद्धस्थल में रक्त की नदी बह चली। उस समय युधिष्ठिर के साथ द्रोण का, शकुनि के साथ सहदेव का युद्ध हुआ। फिर द्रोणाचार्य ने धृष्टद्युम्न पर आक्रमण किया। भीमने विविंशति को आहत किया। शल्य का नकुल के साथ; धृष्टकेतु का कृपाचार्य के साथ; सात्यकि का कृतवर्मा के साथ; सेनापति का सुशर्मन के साथ; मत्स्यों सहित विराट का कर्ण के साथ; द्रुपद का भगदत्त के साथ; भूरिश्रवा का शिखण्डी के साथ; घटोत्कच का अलम्बुष के साथ; चेकितान का अनुविन्द के साथ; लक्ष्मण का क्षत्रदेव के साथ; और पौरव का अभिमन्यु के साथ घोर युद्ध हुआ। कृतवर्मा ने उस समय पौरवराज की रक्षा की। पौरव को छोड़कर अभिमन्यु ने जयद्रथ के साथ युद्ध करते हुये उसे पराजित किया। विराट आदि ने अभिमन्यु के पराक्रम की सराहना की। यह देखकर धृतराष्ट्र-पुत्रों और शल्य ने मिलकर अभिमन्यु के साथ युद्ध आरम्भ किया (७. १४)।

"भीमसेन ने अभिमन्यु के साथ मिलकर शल्य पर आक्रमण किया। तदनन्तर अभिमन्यु को अलग हटाकर भीम ने शल्य से अकेले ही युद्ध करना आरम्भ किया जिसके परिणामस्वरूप दोनों ही आहत होकर गिर पड़े। उस समय कृतवर्मा अपने रथ पर बैठाकर शल्य को युद्धस्थल से दूर हटा ले गये। इस प्रकार घोर युद्ध में पाण्डवों ने धार्तराष्ट्रों को पराजित किया (७. १५)।

"कर्ण-पुत्र वृषसेन ने पाण्डव सैनिकों पर आक्रमण किया। नकुल-पुत्र शतानीक ने वृषसेन से युद्ध किया। द्रौपदेयों तथा पाण्डवों ने मिलकर वृषसेन तथा अश्वत्थामा पर आक्रमण किया। भीम ने भी उस समय अपूर्व शौर्य का परिचय दिया जिसके परिणामस्वरूप कौरव सेना छिन्न-भिन्न हो गई। द्रोणाचार्य और युधिष्ठिर का युद्ध हुआ। जिसमें पाञ्चालकुमार युधिष्ठिर का चक्र रक्षक था। शिखण्डी और द्रोण का युद्ध। द्रोणाचार्य ने युगन्धर पर प्रहार करके उसे रथ से नीचे गिरा दिया। विराट का द्रोण के साथ; पाञ्चाल राजकुमार व्याघ्रदत्त का द्रोण के साथ; सिंहसेन का द्रोण के साथ युद्ध हुआ। इस युद्ध में द्रोण ने सिंहसेन और व्याघ्रदत्त दोनों का वध कर दिया। युधिष्ठिर की रक्षा के लिये तब अर्जुन ने द्रोणाचार्य पर आक्रमण किया। इसी समय सूर्यास्त हो गया जिसके कारण दुर्योधन और द्रोण ने अपनी सेनाओं को युद्धस्थल से हटा लिया। अर्जुन ने भी ऐसा ही किया। पाण्डवों ने अर्जुन के शौर्य की प्रशंसा की (७. १६)।

द्रोणाभिषेचन : १. २, ६८। देखिये द्रोणाभिषेकपर्वन् भी।

द्रोणायनि – देखिये द्रौणायनि।

द्रोणि – देखिये द्रौणि।

द्रौणपुत्र – देखिये द्रोणपुत्र।

द्रौणायनि (द्रोणपुत्र) = अश्वत्थामा : १. १८७, १५; ६. ९४, २०; ७. २५, ३१; ३१, २४; १९७, २८; २००, ७४. ८०; ८. १७, ५; ५५, ४. ११. १९; १०. ८, ४५; ११. २०, १९।

द्रौणि = अश्वत्थामा : १. १, १९८. २०२; २, ३२. २९२. २९३. २९७. २९९. ३०६. ३०८; २. ३५, २; ४४, १२; ५८, २३; ३. ८६, ८; २४९, १५; ४. ३५, २; ३९, १७; ४७, १६; ४९, २१; ५१, १; ५३, १२;

५५, ३६; ५८, ७५; ५९, १. ६. ८; ६६, १३. २६; ६८, ४१; ५. ५५, १७. ४३. ४६. ४९. ५८. ६३; ५७, ५०; ६०, १७; ६६, ५; ५३, ४७; १४१, ४१; १९३, ६. १९; १९४, ५; ६. ४५, ४६; ५२, ४०; ५५, ३. ४. ५. ७; ५८, ३६; ६१, १. ८. ११; ६५, १३. ३१; ७३, ३. ९. १०. ११. १६; ७६, १८; ८१, २५; ८२, २६. ३१. ३२. ३४. ३७; ८६, ५०; ८७, ११. १२; ९२, ३८; ९४, २०. २९. ३०. ३३. ३७. ४०. ४२; १००, १६; १०१, ४३. ४४. ४६. ५०. ५२. ५३; १११, २४. २७; ११५, ३०; ११६, ९; ७. १६, १५; २५, २९. ३१; ३१, २४. २५; ३२, ५. ८८; ३७, ५. २४; ३९, ५; ४६, ५; ४७, ७. १३. १५. १६; ४८, १२; ७३, १०; ७४, १७; ७५, २६; ८५, १४; ९४, ४९; १०३, २३; १०४, ४. २३. २८. ३२. ३३; १०५, १५; ११२, १०; १३७, १५; १३९, ११८. ११९. १२१. १२२; १४०, २; १४५, २१. २३. ५३. ५४. ७३; १४६, ५३. ९४. ९९; १४७, ३. ७. ७४; १५६, ५६. ७२. ७८. ८०. ८१. ८७. ८९. ९१. ९६. १००. १०१. १०२. १०४. १०६. १०७. १०८. ११०. ११५. १२५. १२७. १३०. १३१. १३७. १४०. १४३. १४६. १४८. १४९. १५०. १५१. १५३. १५८. १६०. १६१. १६३. १६४. १६६. १६७. १७७. १७९. १८०. १८२. १८७. १९०; १५८, ६०; १५९, १. २. १६. ४६. ८३. ९१; १६०, १. २१. २३. २४. २६. २८. ३१. ३२. ३३. ३४. ४१. ४४. ५२. ५५. ५६. ५८; १६३, ११; १६४, २८. ३४; १६६, १८. १९. २०. २२. २५. २८. २९. ३०. ३२. ३८. ३९; १७०, १८; १७१, ५४; १७७, ५; १८३, १६; १८७, २७; १९१, ४३; १९२, ४५; १९३, ६९; १९५, १; १९६, ६. ३४; १९७, ३१; १९९, १५. २९. ४६. ५१. ५६; २००, ८. १४. ३२. ३८. ३९. ४१. ४२. ४३. ४५. ५५. ६०. ६२. ६६. ७४. ७६. ७७. ७८. ७९. ८०. ८१. ८२. ८८. ८९. ९०. ९१. ९३. ९४. ९८. १०२. १०४. १०७. १०९. १११. ११६. ११७. १२४. १२५. १३०; २०१, १३. १५. ४५. ४७. ४९; २०२, २२; ८. २, २१; १३, ६; १४, ३८; १५, १. ३. ५. ७. ९. १०. १७. २२. ३५; १६, २२. २४. २७. ३१. ३३. ३६. ४८. ५१; १७, ३. ४. ७. १५. १८. २१. २२. २३. २४; २०, ३. १२. २१. २५. २७. २८. ३०. ३३. ३४. ३६. ३९. ४०. ४३; २८, ७; ३०, २०. २१; ३२, ९; ४१ ७३; ५१, ६८; ५४, १; ५५, १. १२. १९. २१. २२. २३. २६. २९. ३९; ५६, ११८. १२३. १२७. १२८. १३२. १३४. १३७. १३९; ५७, ६; ५८, ४८; ५९, २०. २१. २४. २५. २६. ३४. ३६. ३९. ४२. ४५. ४८. ४९. ५०. ५१. ५३. ५४. ५८; ६०, १३; ६४, १. ७. १५. १७. १९. २५. २८; ६५, १; ६७, २. ३; ७३, १३. ७२; ७५, १५; ७८, २; ७९, ९. ४२. ८३. ८५; ८३, १६; ८५, ३. १२. ३१; ९. १, ३६; ६, १९; ८, ९; ११, ३८; १४, १. २. २१. २७. ३१. ३२. ३५. ३६. ३८. ४०. ४५; १६, ६६; २७, ५; २९, ५६; ३०, ९. १९. ६१; ६३, ७१; ६५, १२. ३३. ४३; १०. १, १६. २८. ४५; ४, ८. २१; ५, ४०; ६, १. २. १०. ११. १२. १६; ७, २. ५२. ५६. ६०; ८, ९. १३. १९. २२. ३७. ४१. ५५. ५९. ६८. ७२. ७३. ७४. ७९. ८०-८३. ८७. ११७. १३२. १५२. १५७; ११, १३. १५. १९. २७; १२, २. २४. ३६. ४०; १३, १४. १६. १८. १९; १४, १; १५, ३. ११. १३. २८. ३५; १६, १. ५. २०; १७, ६; १८, २६; ११. ११, १. २१. २४; १३. १५०, ४२; १४. ६०, ३३; ६७, ९; ६८, १६; १५. ३१, १६ ।

द्रौपद = शिखण्डी : ६. १०७, ८०; ८. ७०, १५ ।

द्रौपदि = धृष्टद्युम्न : ८. ९, ३८ ।

द्रौपदी, पाण्डवों की पत्नी जिसका वास्तविक नाम कृष्णा था। पाञ्चालराज द्रुपद की पुत्री होने के कारण इसे द्रौपदी, पाञ्चाली, पार्षती, तथा यज्ञ की वेदी से उत्पन्न होने के कारण यज्ञसेनी भी कहते थे : १. १, १२७. १५०. १५४. १५७. १६९; २, ४४. ५४. ५५. ११०. ११३. ११७. ११९. १२०. १२७. १३८. १५२. १७७. १९४. १९८. ३६५. ३६७; ६१, ३०. ३१; ६२, ७; ६३, ११०. १२२ (यह पाँच पुत्रों की माता बनी : युधिष्ठिर से प्रतिविन्ध्य; भीमसेन से सुतसोम; अर्जुन से श्रुतकीर्ति; नकुल से शतानीक; और सहदेव से श्रुतसेन को उत्पन्न किया); ६७, १५७ (यह शची के अंश से उत्पन्न हुई थी); ९५, ७४ (पाँच पाण्डवों की पत्नी तथा प्रतिविन्ध्य आदि पाँच पुत्रों की माता); १६५, ७ (इसका स्वयंवर). ८ (अयोनिजा ... कृष्णाया द्रुपदस्य महामखे). १० (वेदी मध्याच्च कृष्णायाः संभवः). १६७, ४४. ४८. ५४ (कृष्णा नाम की व्युत्पत्ति : कृष्णेत्येवाब्रुवन्कृष्णां कृष्णाऽभूत्सा हि वर्णतः). ५५ (यह वेदी के मध्य से उत्पन्न हुई); १६९, ... (एक पूर्व जन्म में इसने शिव से पति के लिये पाँच बार याचना की ... जिसके कारण इसे पाँच पाण्डवों की पत्नी बनना पड़ा); १८३, ८. ... १८४, १. १०. १८; १८५, ८. ३०. ३३. ३६; १८७, ४ (द्रुपदात्मजां). ... ११. १२. १५. २०. २३; १८८, २७; १८९, ३; १९०, ४०. ४२; १९१, ... ११. १२. १३. १४. १६; १९२, ९. १२. १४ (इसके स्वयंवर में अर्जुन ने इसे प्राप्त किया था। जब सभी पाण्डव इसे घर लाये तो कुन्ती ने कहा कि 'सब भाई मिलकर बाँट लो'); १९३, १. ४. ६. ८. १०. २५; १९४, ... ३. ९; १९५, ४. १०. १८. २३. २६; १९६, ४. १२ (युधिष्ठिर ने द्रुपद से इसे सभी पाण्डवों की पत्नी के रूप में माँगा); १९७, ३५ (यह श्री की अवतार थी). ५१ (पाँच पाण्डवों की पत्नी होने के लिये ही यह उत्पन्न हुई); १९८, ३. ४. ६; १९९, ३. ४; २००, १. १०. ११. १६. २०; २०१, १६; २०३, ७. ८; २०४, ७; २०६, ४. ५. ८. २४; २०७, ११; २०८, २. ३. ४. ५. १३. १६. १८; २१२, २७. २९ (इसके साथ पति के रूप में रहने के सम्बन्ध में पाण्डवों ने नियम बना रक्खा था); २१३, ३. १३; २१४, २६; २२१, १६. १८. २३. ७८. ८०. ८५. ८६ (इसने पाँच पाण्डवों से पाँच पुत्र उत्पन्न किये : युधिष्ठिर से प्रतिविन्ध्य, भीम से सुतसोम, अर्जुन से श्रुतकीर्ति, नकुल से शतानीक, और सहदेव से श्रुतसेन); २२, ... २३; २. २, ७. ८. ३२; २४, ५४. ५९; ४५, ५९; ४८, ४; ५०, ३०; ५२, ... ४८; ५८, १७. ३२. ३३; ६५, ३२. ३९; ६६, १. ४ (यह पाँचों पाण्डवों की भार्या हुई); ६७, २. ४. ५. ७. ९. १०. १२. १३. १५. १७; १८. १९. २१. २३-२७. ३२. ३४. ३६. ५०; ६८, ४. १२. १६. २२. ३१. ३२. ३३. ३८. ४० (दुःशासन ने भरी सभा में इसे ... आरम्भ किया). ४१. ४७. ४९. ५९. ८८. ८९; ६९, १. ४. १९; ७०, ... ४. १४; ७१, ४. ९. १२. २०. २५-२८. ३२. ३४; ७२, २. ३; ७३, ... (कर्ण ने द्रौपदी को दासी कहते हुये दुःशासन को आज्ञा दी कि वह द्रौपदी को सभा भवन से ले जाय। उस समय द्रौपदी को जीती हुई न मानकर ... ने उसे मुक्त करके अपने पतियों के साथ जाने का वरदान दिया); ७४, ... ७६, १२; ७७, १०. ११. ४५; ७८, ११; ८०, ३. ७. १९. ४३; ८१, ... १२. १५. २०. २२. २७. २८. ३०. ३१; ३. १, १०; २, ९; ३, ... ८४; ५, ६; ११, १६. ५५. ६८. ७०. ७१; १२, ४९. ५०. १२२. १३१. १३२; २२, ४६; २३, १. १६; २४, २५; २५, ६; २७, १. २. ... २८, १; २९, ८. ११. १४. २९. ३०. ३५. ४१. ४६; ३०, १; ३१, ... ५. २४; ३२, १; ३३, १; ३४, ७. १८; ३५, २७. २८; ३७, ... ३६; ४९, २. ९. १०. १४; ५०, १०; ५१, ९. ३६. ३७. ३९; ५२, ... ७९, ८; ८०, ११. १६; ८१, १; ८६, १७; ८७, ३; ९१, ९; ९३, ... २४; ९९, ३५. ३७; ११४, १३; ११८, ६. १६. १९; १२०, २४; ... २१; १३९, १८. १९; १४०, ३. ७. १०. १६. १८. १९. २०. २८. ... १४१, १. ४; १४३, १४; १४४, १. २. १२. १८. १९. २२; १४५, ... ८. ३२. ४९. ५४; १४६, ३. १३. ३२. ३६ (सौगन्धिक पुष्प लाने के लिये ... भीम को भेजा); १५२, १०; १५४, २ (सौगन्धिक लाने गये भीम का ... क्रोधवशों से संघर्ष); १५५, ९. १०. १२. १३. १७; १५६, १. २; १५७, ... ३. ५. ९. २५. २८. ३७. ३९ (जटासुर इसे उठा ले गया था परन्तु भीम ने पुनः प्राप्त किया); १५८, २. ३५. ४२; १५९, २; १६०, १८. ... ३३; १६१, २. ३. ४८; १६५, ५; १६७, १; १७५, २५; १७९, ४६. ... ४८; १८१, ४७; १८३, १. ९. ११. १५. २०. २२-२६. २८. ४५; ... ५८; २३३, १. ४. ८. ९. ६०. ६१; २३४, १; २३५, ३. ४. ७. ९. ... २३७, २१; २३६, ... १८ (द्रौपदी-सत्यभामा संवाद); २३६, ६. ११. १३; २३७, २१; ...

८. १०; २४०, १७; २४६, ५. १०; २५९, ६; २६२, २; २६३, २. ६. १७. १९. २०. २१. २२. २३. ४२. ४५. ४७; २६४, ५. ८; २६६, १. ५; २६७, १. ५. ७. ९. १०. २२; २६८, १. १०. ११. १३. २५; २६९, ११. १५. १६. १७. २७; २७०, २. ३. ४; २७१, ३२. ३३. ३४. ४१. ४७. ४९. ५०. ५१ (जयद्रथ इसे उठा ले गया था परन्तु पाण्डवों ने पुनः मुक्त कराया); २७२, १५. १८; २७३, १. २. ८; २९२, १०; २९३, १. २. ३; २९९, १५; ३१० ४२; ३११, १. २. ४; ३१२, २; ३१५, २९; ४. १, २; २, ३१; ३, १४. १८. १९. २२; ४, ४. ८. ५६; ५, ५. ७. ८; ९, २. ६. १७. २०. ३०. ३६; १३, ११. १३. ४५; १४, २. ३. ४. ११. ३४. ३९; १५, ४. २१; १६, ४. ६. १३. २१. २२. ३६. ३९. ४६. ४९; १७, १. २. ६. ११. १२. १४; २०, १. २७; २१, ४. १८. ४९. ५०; २२, २. ७. १२. १७. १८. २४. ३५. ३९. ४२. ७६. ८३. ८४. ८६. ८८. ८९; २३, ४. ९. १२. १५. २६. २७. २१; २४, ११. १४. १८. २६ (कीचक इस पर आसक्त होकर इसके प्रति कुचेष्टायें करने लगा जिसके परिणामस्वरूप भीम ने कीचक का वध किया); २५, १६; ३६, ११. १२. १४. २१; ४४, ४. ६; ४५, ३९; ४९, ७; ५०, १२. १४. २२; ५८, ४८; ७१, २. ४. ८. १७; ५. ३, १७; ८, ३०. ५१; १८, ११. १५; २३, ५; २५, ३; २९, ३७. ३९. ४१. ४२. ४३. ४६; ३१, १३. १६; ३६, ७०; ५०, २२. २४; ५९, ४. ७. २२; ७३, १८; ७८, १७; ८१, ३; ८२, १. २७. ३५. ४२. ४४. ४९; ९०, ४३. ४५. ४६. ४७. ४८. ४९. ५७. ६४. ८०. ८१. ८७. ९८; ९५, ५९; १२८, ८; १३७, १२. १६. १९. २०. २२. २३; १३८, ४; १३९, १३. १८; १५१, ६०; १६०, ७१. ८२. ८८. ९०; १६१, ७. ९. ३०. ३१; १६५, ३१; १६९, १५; १९४, २१; ६. ५६, १६; ७८, २०; ७९, ४; ९१, २७; १०३, १३; १०७, २२; ११८, ४६; ७. ४०, ८; ४२, ११; ७२, २५. ५८; ७८, ३६. ४०; १०२, १४. २१; १२२, ७. ८; १२७, २४; १३२, १४. १६; १३७, ४४. ४५; १५१, १५; १५९, ८७; १८३, ३१; १९७, ९. ४२; १९८, ४०; १९९, ३२; ८. १, ७; ९, ६०. ६२; ५०, २२; ६६, ३८. ४५; ७०, १४. १५; ७३, ८२. ८३; ७४, २३. २५; ८३, ४६; ८७, ११७; ८९, ३९; ९१, २. ७. ८. ९; ९६, २१; ९. २, ६८; ५, १०. १७. १९. २०. २१; ११, ५७; १९, २५; ३१, ७१; ३३, ४४. ४९; ३४, १०; ५६, ३०. ३५; ५९, ४. १०; ६१, ४३. ४५; १०. ११, ४. ६. ९. १६. १७. २०. २१ (इसने अश्वत्थामा के मुकुट का रत्न माँगा); १६, २२. २४. ३४. ३५. ३७ (युधिष्ठिर ने उस रत्न को स्वयं धारण किया); ११. १२, ४; १३, १०; १५, ६. ८. १८. ३६. ३७. ३९; १८, २०. २१. २२; २२, १२; १२. १, १७; १४, २. ६. ३०; १५, १; १६, १८. २१. २८; २७, १. २२; ३७, २५. ४१; ३८, ५. ६; ४०, १४; ४२, ५; १३. ५७, ४४; १४. १२, ११; १४, ३; ५२, २८; ६१, २५; ६६, ५. १३. १८; ६७, ९; ६८, ९; ६९, १२; ७०, ६; ८७, ११; ८८, २. ४; ८९, २. १४; १५. १, ९. २३; ३, १४. ३२; १०, ४६; ११, २१. २२; १५, १०; १६, १५. ३०; १८, १; २१, १५; २२, १४. १८; २३, १२; २४, १९; ३५, ३. ४. ९; २९, १३. १८. ४१; ३१, २. १५; ३६, ५०; १६. ७, ३; १७. १, २०. २३. २४. २९. ३२; २, ४. ५. १२; ३, ५. १४. ३८ (महाप्रस्थान के समय यह गिर कर मृत्यु को प्राप्त हुई); १८. १, ९. १६; २, ११. ४१. ४३; ३, १७. ३४. ३९; ४, १०. १२ (श्री का अवतार थी). १४ (मृत्यु के पश्चात इसके पुत्र गन्धर्व हो गये)। तुकी० मधुसूदनी, सुतसोममातृ।

द्रौपदीज (द्रौपदी के पुत्र) = द्रौपदेय (बहु०) : ८. ८२, २३।

द्रौपदीपरितापवाक्य (द्रौपदी का संतापपूर्ण वचन। तुकी० अर्जुनाभिगमनपर्वन) – "वन में निवास करते हुये पाण्डव एक दिन सायंकाल द्रौपदी के साथ बैठकर दुःख और शोक में मग्न हो बात करने लगे। उस समय द्रौपदी ने क्रूर स्वभाव वाले दुर्योधन, कर्ण शकुनि और दुःशासन की हृदयहीनता पर आश्चर्य प्रकट करते हुये कहा कि पांण्डवों के वन गमन के समय इन्हीं चार व्यक्तियों की आँखों में अश्रु नहीं थे। द्रौपदी ने पाण्डवों के पहले के सुखी जीवन की तुलना में वनवास के कष्टों पर दुःख प्रकट करते हुये युधिष्ठिर को प्रतिशोध लेने के लिये उत्तेजित करने का प्रयास किया (३. २७)।

"द्रौपदी ने पूर्व समय के असुरराज प्रह्लाद और विरोचन पुत्र बलि के संवाद का वर्णन करते हुये कहा कि ये असुर धर्म के रहस्य को भली-भाँति जानते थे। इस संवाद में प्रह्लाद ने अपने पौत्र बलि को बताया था कि न तो तेज ही सदा श्रेष्ठ है और न क्षमा ही। जो सदा क्षमा ही करता है उसे अनेक दोष प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार क्रोध की दशा में भी व्यक्ति योग्य या अयोग्य अवसर का विचार किये बिना ही लोगों को अनेक प्रकार के कष्ट देता रहता है। इस प्रकार प्रह्लाद के उपदेशों को विस्तार से बताने के बाद द्रौपदी ने युधिष्ठिर से कहा : 'मेरे विचार से धृतराष्ट्र के पुत्रों के प्रति आपके तेज के प्रयोग का अवसर आ गया है (३. २८)।

"युधिष्ठिर ने कहा कि बुद्धिमान व्यक्ति को कभी क्रोध का आश्रय नहीं लेना चाहिये। इस जगत में क्रोध के कारण लोगों का नाश होता है क्योंकि क्रोध वास्तव में लोकविनाशक होता है। क्षमा ही मनुष्य के लिये श्रेष्ठ है। क्षमाशील पुरुष से ही समस्त प्राणियों का जीवन बताया गया है। इस विषय में विज्ञ पुरुष क्षमावान पुरुषों की उस गाथा का उदाहरण देते हैं जिसका क्षमावान महात्मा काश्यप ने गायन किया था। इसके अनुसार क्षमा धर्म है, क्षमा यज्ञ है, क्षमा वेद है, और क्षमा शास्त्र है। जो इस प्रकार जानता है वह सब कुछ क्षमा करने योग्य हो जाता है। क्षमा ब्रह्म है, क्षमा सत्य है, क्षमा भूत और भविष्य है, क्षमा तप है क्षमा ही शौच है। जो मनुष्य सब कुछ सहन कर लेता है वह ब्रह्मभाव को प्राप्त हो जाता है। क्षमा और दया यही जितात्मा पुरुषों का सदाचार है और यही सनातन धर्म है (३. २९)।

"दुःख से मोहित द्रौपदी ने युधिष्ठिर की बुद्धि, धर्म एवं ईश्वर के नाम पर आक्षेप करते हुये कहा : 'उस धाता और विधाता को नमस्कार है जिन्होंने आपकी बुद्धि में मोह उत्पन्न कर दिया है। इस जगत में धर्म, कोमलता, क्षमा, विनय, और दया से कोई भी मनुष्य कभी भी धन और ऐश्वर्य प्राप्त नहीं कर सकता। इसी कारण आप पर भी दुःसह संकट आ गया है। आपने अनेक पुण्य कार्य किये हैं। आपने अश्वमेध, राजसूय, पुण्डरीक तथा गोसव आदि महायज्ञ किये हैं। परन्तु कपट द्यूतजनित पराजय के समय आपकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई थी। आपके वर्तमान दुःख से मेरा मन अत्यन्त पीड़ित हो रहा है। इस विषय में प्राचीन इतिहास का उदाहरण देते हुये कहा गया है कि सभी लोग ईश्वर के वश में हैं। जैसे कठपुतली सूत्राधार से प्रेरित होकर अपने अंगों का संचालन करती है। उसी प्रकार सारी प्रजा ईश्वर की प्रेरणा से ही हस्त-पाद आदि अंगों से विविध चेष्टायें करती है। सूत में पिरोयी हुई मणि, नाक में नथे हुये बैल और किनारे से टूट कर धारा में गिरे हुये वृक्ष की भाँति यह जीव सदा ईश्वर के आदेश का पालन करता है। क्षेत्र संज्ञक शरीर ईश्वर का साधन मात्र है जिसके द्वारा सर्वव्यापी परमेश्वर प्राणियों से शुभाशुभ फल भोगने वाले कर्मों का अनुष्ठान करवाता है। जैसे अचेतन एवं चेष्टारहित काठ, पत्थर और लोहे को मनुष्य काठ, पत्थर और लोहे से ही काट देता है, उसी प्रकार प्रपितामह, स्वयम्भू भगवान श्री हरि माया का आश्रय लेकर प्राणियों से प्राणियों का विनाश करते हैं। ईश्वर समस्त प्राणियों के प्रति माता-पिता के समान दया एवं स्नेह युक्त व्यवहार नहीं करता। वह तो अन्य लोगों की भाँति रोष से ही व्यवहार करता प्रतीत होता है; क्योंकि जो लोग श्रेष्ठ, और संकोची हैं वे तो जीविका के लिये कष्ट पाते हैं, किन्तु जो दुष्ट हैं वे सुख भोगते हैं। अतः आपकी विपत्ति तथा दुर्योधन की समृद्धि देखकर मैं उस विषम दृष्टि से देखने वाले विधाता की निन्दा करती हूँ। यदि किया हुआ कर्म कर्त्ता का ही पीछा करता है तब तो ईश्वर भी उस पाप कर्म में अवश्य लिप्त कहा जायगा। इसके विपरीत, यदि किया हुआ पाप कर्म कर्त्ता को नहीं प्राप्त होता तो इसका कारण यहाँ बल ही है। उस दशा में मुझे आप जैसे दुर्बल मनुष्यों के लिये शोक हो रहा है (३. ३०)।

"युधिष्ठिर ने कृष्णा को उसकी नास्तिक प्रवृत्ति के कारण भर्त्सना की। फल की इच्छा रख कर कर्म करना उचित नहीं। मनुष्य को कर्त्तव्य मानकर कर ही कर्म करना चाहिये। साधु पुरुषों के आचार-व्यवहार को देख कर और शास्त्रीय मर्यादा का उल्लंघन न करके मनुष्य को स्वभाव से ही धर्मपरायण होना चाहिये। जो धर्म के विषय में सन्देह रखता है, या जो दुर्बलात्मा पुरुष वेदादि शास्त्रों पर अविश्वास करता है वह मोक्ष नहीं प्राप्त करता। अतः सर्वज्ञ और सर्वद्रष्टा महर्षियों द्वारा प्रतिपादित तथा शिष्ट पुरुषों द्वारा आचरित पुरातन धर्म पर शंका नहीं करना चाहिये। वेदोक्त पुण्य देने वाले सत्कर्मों और अनिष्टकारी पापकर्मों का फलोदय, तथा उत्पत्ति और प्रलय यह सब देवगुह्य हैं। धर्म का फल तत्काल दृष्टिगत न हो तो इसके कारण धर्म एवं देवताओं पर आशंका नहीं करनी चाहिये। व्यास, वसिष्ठ, मैत्रेय, नारद, लोमश, शुक, तथा अन्य महर्षि धर्मपालन से ही शुद्ध हृदय वाले हुये हैं। यदि धर्मपरायण पुरुषों द्वारा पालित धर्म निष्फल होता तो सम्पूर्ण जगत अन्धकाराच्छन्न हो जाता। यदि धार्मिक क्रियाओं का कुछ भी फल न होता तो ऋषि, देवता, गन्धर्व असुर तथा राक्षस प्रभावशाली होते हुये क्यों धर्म का आचरण करते। जो केवल अपनी ही बुद्धि को प्रमाण मानता है वह उद्दण्ड होता है और उत्तम धर्म की अवहेलना करता है। ऐसा व्यक्ति उत्तम लोकों को कभी भी प्राप्त नहीं कर पाता। इस प्रकार द्रौपदी को समझाते हुये युधिष्ठिर ने उससे ईश्वर पर आक्षेप करने से विरत होने के लिये कहा। उन्होंने बताया कि जिनके कृपाप्रसाद से भक्तिभाव रखने वाला मरणधर्मा मनुष्य भी अमरत्व को प्राप्त हो जाता है उन परमदेव परमेश्वर की अवहेलना नहीं करनी चाहिये (३. ३१)।

"युधिष्ठिर का उपदेश सुनने के बाद द्रौपदी ने पुरुषार्थ को प्रधान मान कर पुरुषार्थ करने पर बल देते हुये कहा : 'मैं धर्म की अवहेलना तथा निन्दा नहीं करती हूँ, और ईश्वर की अवहेलना का तो प्रश्न ही नहीं उठता। मैं तो शोक से आर्त होकर ही प्रलाप कर रही हूँ। ज्ञानी पुरुषों को भी इस संसार में कर्म अवश्य करना चाहिये। जो केवल भाग्य के भरोसे कर्म नहीं करता, अथवा जो हठवादी है वह मूर्ख है। जिसकी बुद्धि कर्म में रुचि रखती है वही प्रशंसा का पात्र है। जो प्रारब्ध का भरोसा रख कर कर्म से विरत रहता है उसका विनाश होता है। इसी प्रकार जो हठी और दुर्बुद्धि मानव कर्म करने में समर्थ होकर भी कर्म नहीं करता वह कभी दीर्घजीवी नहीं हो सकता। मनुष्य जो कुछ भी देवाराधन विधि से अपने भाग्य के अनुसार पाता है उसे प्रारब्ध कहते हैं। इसके विपरीत, स्वयं कर्म करके मनुष्य जो कुछ फल प्राप्त करता है उसे पुरुषार्थ कहते हैं। इस प्रकार हठ, दैव, स्वभाव, तथा कर्म से मनुष्य जिन-जिन वस्तुओं को पाता है वे सब उसके पूर्व कर्मों के ही फल हैं। मनुष्य यहाँ जो कुछ भी शुभ-अशुभ कर्म करता है उसे ईश्वर द्वारा विहित उसके पूर्व कर्मों के फल का उदय ही समझना चाहिये। कर्त्ता होने के कारण ही कार्य की सिद्धि में पुरुष की प्रशंसा की जाती है और जब कार्य की सिद्धि नहीं होती तब उसकी निन्दा की जाती है। जो लोग अर्थ-सिद्धि तथा अनर्थ की प्राप्ति में दैव, हठ, और स्वभाव, इन तीनों को कारण नहीं समझते वे वैसे ही हैं जैसे साधारण बुद्धि के लोग। मनुष्य का यह सिद्धान्त है कि कर्म करना ही चाहिये। जो निश्चेष्ट होकर बैठा रहता है वह पराभव को प्राप्त होता है। पुरुषार्थ करने पर भी यदि अपने को सिद्धि न प्राप्त हो तो इस बात को लेकर मन ही मन खिन्न नहीं होना चाहिये क्योंकि फल की सिद्धि में पुरुषार्थ के अतिरिक्त दो और कारण हैं। प्रारब्ध और ईश्वरकृपा। धीर मनुष्य को मंगलमय कल्याण की वृद्धि के लिये अपनी बुद्धि के द्वारा शक्ति और बल का विचार करते हुये देश काल के अनुसार सामदाम आदि उपायों का प्रयोग करना चाहिये। लोक को इसी प्रकार कार्यसिद्धि प्राप्त होती है। काल और अवस्था के विभाग के अनुसार शत्रु की दुर्बलता के अन्वेषण का प्रयत्न ही सिद्धि का मूल कारण है।' इस प्रकार कह कर द्रौपदी ने बताया की उसकी बातें उस बृहस्पति नीति पर आधारित हैं जो उसने अपने पितृगृह में ब्राह्मण से सुनी थीं (३. ३२)

"भीमसेन ने पुरुषार्थ की प्रशंसा करते हुये युधिष्ठिर को उत्तेजित करने का प्रयास किया। उन्होंने कहा कि दुर्योधन ने कपटद्यूत द्वारा पाण्डवों का राज्य छीन लिया। उन्होंने युधिष्ठिर को ही इस दुर्गति का कारण बताते हुये कहा कि पाण्डवों को अब अपने अधिकार प्राप्त करने के लिये धार्तराष्ट्रों से युद्ध आरम्भ कर देना चाहिये। इस कार्य में सृञ्जय, केकय आदि योद्धाओं और श्रीकृष्ण की भी सहायता लेने का परामर्श देते हुये भीम ने युधिष्ठिर से इस प्रकार तर्क किया : 'धर्म, अर्थ, और काम को पृथक्-पृथक समझ कर मनुष्य को केवल धर्म, केवल अर्थ अथवा केवल काम के ही सेवन में तत्पर नहीं कहना चाहिये। उसे तो इन तीनों का इस प्रकार सेवन करना चाहिये कि इनमें विरोध न हो। इस विषय में शास्त्रों का विधान है कि दिन के पूर्व भाग में धर्म का, दूसरे भाग में अर्थ का और अन्तिम भाग में काम का सेवन करना चाहिये। अवस्था-क्रम में इसी प्रकार आयु के पूर्व भाग में काम का, मध्यभाग में अर्थ का और अन्तिम भाग (वृद्धावस्था) में धर्म का पालन करना चाहिये। ब्राह्मण याचना के द्वारा कार्यसिद्धि कर लेता है किन्तु क्षत्रिय के लिये अपने तेज के द्वारा ही धनप्राप्ति का विधान है। अतः अपने धर्म का आश्रय लेकर हमें धार्तराष्ट्रों का विनाश करके अपना राज्य वापस ले लेना चाहिये। केवल धर्म में ही लगे रह कर इस पृथिवी पर किसी भी नरेश ने कभी ऐश्वर्य और लक्ष्मी नहीं प्राप्त की है। असुरगण देवताओं के बड़े भाई तथा सब प्रकार से समृद्धिशाली थे। फिर भी देवताओं ने छल से उन्हें पराजित कर दिया। तात्पर्य यह कि बलवान का ही सब पर अधिकार होता है। अतः कूटनीति का आश्रय लेकर हमें अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त करनी चाहिये। आप (युधिष्ठिर) को आत्मबल का आश्रय लेकर अभीष्टसिद्धि में प्रवृत्त होना चाहिये। जिस प्रकार मधुमक्खियाँ संगठित होकर मधु निकालनेवाले को मार डालती हैं उसी प्रकार संगठित रहनेवाले दुर्बल भी बलवान किन्तु असंगठित शत्रु पर विजय पाते हैं। यह बड़े दुःख की बात है कि हम सब आज इस दुर्दशा को प्राप्त हुये हैं किन्तु यह सब आपके (युधिष्ठिर के) कारण ही हुआ है। अतः आप तत्काल युद्ध का निर्णय कीजिये। अस्त्र-शस्त्र के ज्ञाता और सुदृढ़ धनुष धारण करनेवाले हम सब पाण्डवों को हस्तिनापुर पर आक्रमण कर देना चाहिये (३. ३३)।

"धर्म और नीति का प्रतिपादन करते हुये युधिष्ठिर ने अपनी प्रतिज्ञा का पालन करने और धर्म पर अडिग रहने की घोषणा की। उन्होंने कहा : 'मैं जीवन और अमरत्व की अपेक्षा धर्म को ही श्रेष्ठ मानता हूँ। राज्य, पुत्र, यश, और धन, ये सबके सब सत्यधर्म की सोलहवीं कला के भी बराबर नहीं हैं।' (३. ३४)।

"युधिष्ठिर की प्रतिज्ञा सुन कर दुखित भीम ने एक बार फिर उन्हें युद्ध के लिये उत्साहित करने का प्रयास करते हुये कहा : 'आप फेन के समान नश्वर, फल के समान पतनशील तथा काल के बन्धन में बँधे हुये मरणधर्मा मनुष्य हैं। फिर भी आपने सबका अन्त और संहार करनेवाले, बाण के समान वेगवान, अनन्त, अप्रमेय एवं जलस्रोत के समान प्रवाहशील लम्बे काल को बीच में देकर दुर्योधन के साथ सन्धि करके उस काल को अपनी आँखों के सामने आया हुआ मानते हैं। किन्तु प्रत्येक निमेष में जिसकी आयु क्षीण हो रही है वह क्षण-भंगुर मानव समय की प्रतीक्षा कैसे कर सकता है। तेरह वर्षों तक हमें जिसकी प्रतीक्षा करनी है वह काल हमारी आयु को क्षीण करके हम सब को मृत्यु के निकट पहुँचा देगा। आपके सभी बन्धु-बान्धव और सृञ्जय वंशी योद्धा आपका प्रिय करना चाहते हैं। आपकी बुद्धि अर्थज्ञान से रहित वेदों के अक्षर मात्र को रटने वाले मन्दबुद्धि श्रोत्रिय की भाँति केवल शब्द की वाणी का अनुसरण करने के कारण नष्ट हो गई है। पता नहीं क्षत्रिय कुल में आपका कैसे जन्म हो गया है। बुद्धि, पराक्रम, शस्त्रज्ञान तथा उत्तम कुल से सम्पन्न होकर भी जहाँ कुछ काम करना है वहाँ आप अजगर की भाँति निश्चेष्ट बैठे हैं। भला हम सब वनवास के बाद अज्ञातवास कैसे करेंगे। महान धनुर्धर अर्जुन और मेरे (भीम) के लिये छिप कर रहना कैसे सम्भव होगा। अतः आप शत्रुओं का वध करने का निश्चय कीजिये, क्योंकि क्षत्रियों

के लिये युद्ध से श्रेष्ठ दूसरा कोई धर्म नहीं है। जैसे पूतिका सोमलता के स्थान पर यज्ञ में काम देती है, उसी प्रकार आप इन तेरह मासों को, जो हम अब तक वन में व्यतीत कर चुके हैं, तेरह वर्षों का प्रतिनिधि मान कर वनवास की अवधि समाप्त समझिये और युद्ध का निश्चय कीजिये। इस निश्चय से हमें जो पाप लगेगा उससे हम एक बोझ ढोनेवाले उत्तम बैल को भरपेट भोजन देकर सरलता से छुटकारा प्राप्त कर सकते हैं (३. ३५)।"

द्रौपदीपुत्र (द्रौपदी के पुत्र) = द्रौपदेय (बहु०) : ६. ४४, १८. ६३; १०. ८, ४७।

द्रौपदी-सत्यभामयोः संवाद (:) : १. २, ५४। देखिये द्रौपदी-सत्यभामा-संवादपर्वन्।

द्रौपदी-सत्यभामासंवादपर्वन्, महाभारत के ४२वें अवान्तर पर्व का नाम है। "जब पाण्डव तथा ब्राह्मण लोग बैठकर आपस में धर्मचर्चा कर रहे थे तब उसी समय द्रौपदी और सत्यभामा भी एक ओर सुखपूर्वक बैठकर बात करने लगीं। कुरुकुल और यदुकुल से सम्बन्ध रखनेवाली अनेक विचित्र बातें उनकी चर्चा का विषय थीं। सत्यभामा ने द्रौपदी से यह बताने के लिये कहा कि किस प्रकार वह पाण्डवों को अपने अधीन रखती है। सत्यभामा ने कहा : 'पाञ्चालकुमारी ! आज मुझे भी कोई ऐसा व्रत, तप, स्नान, मन्त्र, औषध, विद्याशक्ति, जप, होम या दवा बताओ जो यश और सौभाग्य की वृद्धि करनेवाली हो तथा जिससे श्यामसुन्दर सदा मेरे अधीन रहें।' सत्यभामा की बातों को सुनकर द्रौपदी ने उसे स्त्री के कर्त्तव्यों के सम्बन्ध में बताते हुये कहा : 'तुम मुझसे जिस विषय में पूछ रही हो वह साध्वी स्त्रियों का नहीं दुराचारिणी और कुलटास्त्रियों का आचरण है। जब पति को यह विदित हो जाय कि उसकी पत्नी उसे वश में करने के लिये किसी मन्त्र-तन्त्र अथवा जड़ी-बूटी का प्रयोग कर रही है तो वह उससे उसी प्रकार उद्विग्न हो उठता है जैसे अपने घर में प्रविष्ट सर्प से लोग शंकित हो उठते हैं। कितनी ही स्त्रियों ने अपने पतियों को वश में करने की आशा से हानिकारक दवाएँ खिलाकर जलोदर, कोढ़ का रोगी, असमय में वृद्ध, नपुंसक, अंधा, गूँगा और बहरा बना दिया है। इसके विपरीत पत्नी को चाहिये कि वह अहंकार और काम-क्रोध को छोड़कर सतर्कतापूर्वक पति की सेवा करे।' सत्यभामा को उपदेश देते हुये द्रौपदी ने बताया कि 'पहले युधिष्ठिर के महल में प्रतिदिन आठ हजार ब्राह्मण सोने की थाली में भोजन किया करते थे। वहाँ अट्ठासी सहस्र ऐसे स्नातक गृहस्थ भी रहते थे जिनका युधिष्ठिर भरण-पोषण करते थे। इन प्रत्येक स्नातकों की सेवा में तीस-तीस दासियाँ तत्पर रहती थीं। इनके अतिरिक्त अन्य दस सहस्र ऊर्ध्वरेता यति भी वहाँ रहते थे। मैं उन सब वेदवादी ब्राह्मणों को अग्रहार का अर्पण करके भोजन, वस्त्र और जल के द्वारा उनकी यथायोग्य पूजा करती थी। युधिष्ठिर के एक लाख दासियाँ थीं जो हाथों में शंख की चूड़ियाँ, भुजाओं में बाजूबन्द और कण्ठ में सुवर्ण के हार पहन कर सज-धज के साथ रहती थीं। वे सभी नृत्य-संगीत में अत्यन्त निपुण थीं और सभी सेविकायें दिन-रात अतिथियों को भोजन कराती थीं। अन्तःपुर के नौकरों, ग्वालों, और सभी सेवकों के कार्यों की देखभाल मैं स्वयं करती थी। पाण्डवों के आय-व्यय और संचय आदि का भी हिसाब मैं स्वयं रखती थी। इस प्रकार मुझपर जो भार था वह दुष्ट स्वभाव की स्त्रियाँ नहीं उठा सकती थीं। रात हो या दिन, मैं सदा भूख-प्यास के कष्ट सहन करके पाण्डवों की आराधना में लगी रहती थी। पतिभक्ति और सेवा ही मेरा वशीकरण मन्त्र है। दुराचारिणी स्त्रियाँ जिन उपायों का अवलम्बन करती हैं उन्हें न तो मैं जानती हूँ और न चाहती हूँ।' द्रौपदी की बातें सुनकर सत्यभामा ने अपने अनुचित प्रश्न के लिये क्षमा माँगी। (३. २३३)।

"द्रौपदी ने सत्यभामा को पत्नियों के कर्त्तव्य तथा पति को अनुकूल बनाने के उपाय के रूप में पतिसेवा पर बल देते हुये कहा कि स्त्रियों के लिये पति के समान दूसरा देवता नहीं है। पति के प्रसाद से नारी की सम्पूर्ण कामनाएँ पूर्ण हो सकती हैं। सेवा के द्वारा प्रसन्न किये हुये पति से स्त्रियों को सन्तान, भाँति भाँति के भोग, शय्या, आसन, वस्त्र, माला, सुगन्धित पदार्थ, स्वर्गलोक तथा महान यश की प्राप्ति होती है। द्रौपदी ने सत्यभामा को समझाते हुये कहा : 'यदि श्यामसुन्दर किसी काम के लिये दासी को भेजते हों तो तुम्हें स्वयं ही वह काम कर देना चाहिये जिससे श्रीकृष्ण को तुम्हारी सेवाभावना पर विश्वास हो जाय। जब महल के द्वार पर पधारे हुये प्राणवल्लभ का स्वर तुम्हारे कानों में पड़े तब तुम उठकर घर आँगन में आ जाओ और उनकी प्रतीक्षा में खड़ी रहो। उनके भीतर आ जाने पर आसन और पाद्य द्वारा उनका स्वागत करो। पति के प्रिय एवं हितैषी व्यक्तियों को भी अच्छे भोजन कराओ तथा जो उनके शत्रु हों उनसे दूर रहो। अपने पुत्रों के पास कभी भी एकान्त में नहीं बैठना चाहिये। क्रोधी, नशे में मत्त रहनेवाली, अधिक भोजन करनेवाली, चोरी और दुष्कर्म करनेवाली, चंचल स्वभाव की स्त्रियों से दूर रहना चाहिये। बहुमूल्य हार, आभूषण एवं अंगराग धारण करके सुगन्धित वस्तुओं से सुवासित हो तुम्हें श्यामसुन्दर की आराधना करनी चाहिये। इससे तुम्हारे सौभाग्य की वृद्धि और मनोरथों की सिद्धि होगी। (३. २३४)।

"श्रीकृष्ण, मार्कण्डेय आदि ब्रह्मर्षियों तथा पाण्डवों के साथ कुछ काल तक वन में रह कर द्वारका जाने को उद्यत हुये। रथ पर चढ़ने की इच्छा से उन्होंने सत्यभामा को बुलाया। तब सत्यभामा ने द्रौपदी से गले मिलते हुये कहा : 'द्रुपदकुमारी, तुम शीघ्र ही देखोगी कि धृतराष्ट्र के पुत्रों को मार कर और पहले के वैर का प्रतिशोध लेकर तुम्हारे पति, पाण्डव शीघ्र ही अपना राज्य वापस प्राप्त कर लेंगे। तुम्हारे पुत्र प्रतिविन्ध्य, सुतसोम, श्रुतकर्मा, नकुलनन्दन शतानीक तथा सहदेवकुमार श्रुतसेन भी शस्त्रविद्या में निपुण हो गये हैं। वे सबके सब अभिमन्यु की भाँति अत्यन्त प्रसन्नता के साथ द्वारिका में रहते हैं। वहाँ सुभद्रादेवी तुम्हारी ही तरह उन सबके साथ सब प्रकार प्रेम पूर्ण व्यवहार करती हैं। प्रद्युम्न की माता भी उन सब की अपने पुत्रों जैसी देखभाल करती हैं। श्यामसुन्दर भी अपने भानु आदि पुत्रों से अधिक तुम्हारे पुत्र को मानते हैं। बलराम आदि सभी अन्धकवंशी तथा वृष्णिवंशी यादव उन पुत्रों की सुख-सुविधा का ध्यान रखते हैं।' इस प्रकार द्रौपदी को सान्त्वना देने के बाद सत्यभामा ने श्रीकृष्ण के रथ पर आरूढ़ होकर द्वारकाके लिये प्रस्थान किया। (३. २३५)।"

द्रौपदीसम्भव (वः) (द्रौपदी की उत्पत्ति) – अमर्ष में भरे राजा द्रुपद एक ऐसे पुत्र की कामना करने लगे जो द्रोण से उनका प्रतिशोध ले सके। उन्होंने कर्मसिद्ध श्रेष्ठ ब्राह्मणों को ढूँढने के लिये बहुत से ब्रह्मर्षियों के आश्रम में भ्रमण किया। जो पुत्र या भाई-बन्धु उत्पन्न हो चुके थे उन्हें वे खेदवश धिक्कारते रहते थे। द्रुपद, कृष्णवर्णा यमुना तथा गंगा दोनों के तटों पर घूमते हुये ब्राह्मणों की एक पवित्र बस्ती में जा पहुँचे। वहाँ उन्होंने कठोर व्रत का पालन करते हुये दो ब्रह्मर्षियों को देखा जिनके नाम याज और उपयाज थे। महाराज द्रुपद इन दोनों में से छोटे उपयाज नामक ऋषि से एकान्त में मिले। उन्होंने उपयाज से एक ऐसा कर्म करने के लिये कहा जिससे उन्हें द्रोणाचार्य का वध करने में समर्थ पुत्र प्राप्त हो सके। उपयाज ने ऐसा यज्ञ कर सकने में अपनी असमर्थता व्यक्त करते हुये द्रुपद को अपने ज्येष्ठ भ्राता याज के पास जाने के लिये कहा। तदनन्तर द्रुपद याज के पास आये तथा उनसे अपना मनोरथ प्रकट करते हुये उन्हें एक अर्बुद गायें दक्षिणा में देने का वचन दिया। याज ने 'तथास्तु' कह कर यजमान की अभीष्टसिद्धि के लिये आवश्यक यज्ञ तथा उसके साधनों का स्मरण किया। इसे दुस्तर कार्य मान कर याज ने अपने भाई उपयाज को भी प्रेरित किया तथा द्रोण के विनाश के लिये वैसा पुत्र उत्पन्न करने की प्रतिज्ञा कर ली। तदनन्तर द्रोण के घातक पुत्र का संकल्प लेकर राजा द्रुपद ने कर्म की सिद्धि के लिये उपयाज के कथनानुसार सारी व्यवस्था की। हवन के अन्त में याज ने द्रुपद की रानी को हविष्य ग्रहण करने के लिये बुलाया। उस समय उस रानी ने अपना मुख अशुद्ध होने के कारण हविष्य-ग्रहण में असमर्थता प्रकट करते हुये थोड़ी देर प्रतीक्षा करने के लिये कहा

किन्तु याज ने अपने से पकाये तथा उपयाज द्वारा अभिमन्त्रित हविष्य क आहुति अग्नि में डाल दी। याज के ऐसा करते ही तत्काल अग्नि से साक्षात अग्निदेव के समान एक कुमार प्रकट हुआ। उस कुमार की कान्ति अग्नि की ज्वाला के समान उद्भासित हो रही थी। उसके मस्तक पर किरीट सुशोभित था। और अंगों पर कवच तथा हाथों में खड्ग, वाण और धनुष था। वह बार-बार गर्जना कर रहा था। कुमार उसी समय एक श्रेष्ठ रथ पर जा चढ़ा। आकाश में स्थित किसी महाभूत ने उस समय आकाश-वाणी करते हुये घोषित किया कि द्रोणाचार्य के वध लिये ही उस कुमार का जन्म हुआ है।

"तत्पश्चात यज्ञ की वेदी से एक कुमारी कन्या भी प्रकट हुई जो पाञ्चाली के नाम से विख्यात हुई। वह अत्यन्त सुन्दरी और सौभाग्य-शालिनी थी। उस समय भी आकाशवाणी ने घोषित किया कि उस कन्या का नाम कृष्णा होगा तथा वह अनेक क्षत्रियों का संहार करने के लिये प्रकट हुई है। वह आकाशवाणी सुनकर समस्त पाञ्चाल हर्ष से भर गये। उन दोनों पुत्र और पुत्री को देख कर पुत्र की इच्छा रखनेवाली राजा पृषत की पुत्रवधू (द्रुपद की रानी) ने याज से निवेदन किया वे दोनों उसके अतिरिक्त अन्य किसी को माता न समझें। याज ने रानी की बात स्वीकार कर ली। तदनन्तर कुमार का नाम धृष्टद्युम्न रक्खा गया क्योंकि वह धृष्ट, अमर्षशील, तथा द्युम्न (तेजोमय कवच-कुण्डल एवं क्षात्रतेज) आदि के साथ उत्पन्न हुआ था (धृष्टत्वादत्यमर्षित्वाद् द्युम्नाद्युत्सम्भवादपि। धृष्टद्युम्न कुमारोऽयं द्रुपदस्य भवत्विति)। तत्पश्चात कुमारी का नाम कृष्णा रक्खा गया क्योंकि वह शरीर से कृष्णवर्णा थी (कृष्णेत्येवाब्रुवन् कृष्णां कृष्णाभूत् साहिवर्णतः)। परमबुद्धिमान और प्रतापी भरद्वाजनन्दन द्रोण ने यह विचार करके कि प्रारब्ध के भावी विधान को टालना असम्भव है, पाञ्चाल राजकुमार धृष्टद्युम्न को अपने घर लाये तथा उसे अस्त्रविद्या की शिक्षा देकर उसका उपकार किया। (१. १६७)।"

द्रौपदीसुत, बहु० = द्रौपदेय : ७. २६, ५१।

द्रौपदीहरणं पर्व : १. २, ५५ (देखिये द्रौपदीहरणपर्वन्)।

द्रौपदीहरणपर्वन्, महाभारत के ४६वें अवान्तरपर्व का नाम है। "जब दुर्योधन, दुःशासन, कर्ण और शकुनि तरह-तरह के उपायों से पाण्डवों को को संकट में डालने की युक्ति का विचार कर रहे थे तब उसी समय महर्षि दुर्वासा अपने दस सहस्र शिष्यों के साथ वहाँ आ पहुँचे। परम क्रोधी दुर्वासा को उपस्थित हुआ देखकर दुर्योधन ने उन्हें आतिथ्य सत्कार के लिये निमन्त्रित किया। दुर्योधन स्वयं मुनि की सेवा में तत्पर हुआ। दुर्वासा वहाँ अनेक प्रकार से दुर्योधन को त्रस्त करने लगे फिर भी दुर्योधन के मन में किसी प्रकार का विकार या क्रोध उत्पन्न नहीं हुआ। फलस्वरूप दुर्वासा अत्यन्त प्रसन्न हो गये और उन्होंने दुर्योधन से वर माँगने के लिये कहा। दुर्योधन ने वर माँगने के सम्बन्ध में पहले ही दुःशासन और कर्ण से परामर्श कर रक्खा था। अतः दुर्योधन ने मुनि से यह वर माँगा कि वे (दुर्वासा) वनवास कर रहे पाण्डवों के पास भी अपने शिष्यों सहित ऐसे समय जाँय जब द्रौपदी समस्त ब्राह्मणों और पाँचों पाण्डवों को भोजन करा कर और स्वयं भी भोजन करने के पश्चात विश्राम कर रही हो। दुर्वासा ने ऐसा ही करने का वरदान देकर दुर्योधन के घर से प्रस्थान किया। यह वरदान प्राप्त करके कर्ण तथा दुर्योधन अत्यन्त प्रसन्न हुये (३. २६२)।

"तदनन्तर एक दिन महर्षि दुर्वासा, उस समय पाण्डवों के पास अपने दस सहस्र शिष्यों के साथ पहुँचे जब वे ब्राह्मणों को भोजन करा चुके थे तथा द्रौपदी भी भोजन से निवृत्त होकर विश्राम कर रही थी। महाराज युधिष्ठिर ने उस समय दुर्वासा का स्वागत और उन्हें भोजन के लिये निमन्त्रित किया। उस समय द्रौपदी को अत्यधिक चिन्ता हुई। वह श्रीकृष्ण का स्मरण करने लगी। द्रौपदी की स्तुति सुनकर श्रीकृष्ण अपने साथ एक ही शय्या पर विश्राम कर रही रुक्मिणी को छोड़कर तत्काल द्रौपदी के पास आ गये। श्रीकृष्ण को आया देखकर द्रौपदी ने दुर्वासा के आने का समाचार दिया। तब श्रीकृष्ण ने कहा : 'मुझे बहुत भूख लगी है अतः पहले मुझे भोजन कराओ और फिर सारा प्रबन्ध करना। द्रौपदी को उस समय अत्यन्त लज्जा हुई। उसने कहा कि सूर्य द्वारा प्रदत्त अक्षय पात्र से तभी तक भोजन मिलता है जब तक वह (द्रौपदी) स्वयं भोजन नहीं करती। उस दिन स्वयं भी भोजन कर लेने के कारण उस पात्र में अन्न नहीं रह गया था। द्रौपदी की बात सुनकर श्रीकृष्ण ने उस पात्र को ही द्रौपदी से माँगा। पात्र के आने पर कृष्ण ने उसके गले में थोड़ा सा शाकान्न लगा देखा और उसी को खाकर श्रीकृष्ण ने कहा कि 'सम्पूर्ण विश्वात्मा, यज्ञभोक्ता सर्वेश्वर श्री हरि तृप्त और सन्तुष्ट हों।' इतना कहने के बाद कृष्ण ने सहदेव से मुनि को शिष्यों सहित भोजनार्थ बुलाने के लिये कहा। उस समय सभी मुनिगण जल में उतर कर अघमर्षण मन्त्र का जप कर रहे थे। सहसा उन सबको पूर्ण तृप्ति का अनुभव होने लगा। बार-बार अन्न से युक्त डकारें आने लगीं। ऐसा अनुभव कर वे सभी अपने गुरु दुर्वासा के पास आकर अपनी तृप्ति का वर्णन करने लगे। तब दुर्वासा इस प्रकार बोले : 'व्यर्थ भोजन बनाने के लिये कह कर हम सब ने युधिष्ठिर का महान अपराध किया है। अम्बरीष के प्रभाव का स्मरण करके मैं सदा ऐसे भक्तजनों से डरता रहता हूँ जिन्होंने भगवान श्रीहरि के चरणों का आश्रय ले रक्खा है। पाण्डव धर्मपरायण और व्रतधारी हैं। कुपित होने पर वे हम सबको रुई के ढेर के समान भस्म कर सकते हैं। अतः शिष्यों, पाण्डवों से कुछ कहे बिना ही यहाँ से तत्काल भाग चलो।' गुरु के वचन को सुन कर सब ब्राह्मण अत्यन्त भयभीत हो दसों दिशाओं में भाग गये। सहदेव ने लौटकर जब दुर्वासा के शिष्यों सहित चले जाने का समाचार दिया तब पाण्डव उस समय मुनि के किसी भी समय उपस्थित हो जाने की सम्भावना से अत्यन्त भयभीत हो गये। तभी श्रीकृष्ण ने प्रकट होकर बताया कि द्रौपदी के स्मरण करने पर वह वहाँ आये हैं। उन्होंने यह आश्वासन दिया कि दुर्वासा अब नहीं लौटेंगे। पाण्डवों ने श्रीकृष्ण के प्रति अपना हार्दिक आभार व्यक्त किया। श्रीकृष्ण, इस प्रकार, पाण्डवों की सहायता करने के बाद अपनी पुरी चले गये। (३. २६३)।

"काम्यक' वन में पाण्डवगण विहार करते थे। एक दिन पाण्डवगण, उद्दीप्त तपस्वी धौम्मय तथा महर्षि तृणबिन्दु की आज्ञा से द्रौपदी को अकेले ही आश्रम में छोड़कर ब्राह्मणों की रक्षा हेतु हिंसक पशुओं को मारने के लिये चारों दिशाओं में अलग-अलग चले गये। उस समय सिन्धुराज जयद्रथ, जो वृद्धक्षत्र का पुत्र था, विवाह की इच्छा से शाल्व देश की ओर जा रहा था। अनेक अन्य राजाओं के साथ यात्रा करता हुआ वह काम्यक वन में आ पहुँचा। उसने पाण्डव पत्नी यशस्विनी द्रौपदी को दूर से देखा। निर्दोष अंगोंवाली द्रौपदी को देखकर जयद्रथ चकित हो गया। उसने कोटि-कास्य को द्रौपदी के पास भेजा। (३. २६४)।

"कोटिक ने द्रौपदी के पास आकर अपना परिचय दिया तथा उसका परिचय पूछा। कोटिक ने अपने को सुरथ का पुत्र बताते हुये अपने साथ उस वन में आये अन्य राजाओं के नाम बताये। उसने त्रिगर्तराज क्षेमंकर की ओर संकेत करते हुये कुलिन्दराज के ज्येष्ठ पुत्र का परिचय दिया जो सदा पर्वत पर ही निवास करते थे। उसने सौवीर देश के अंगारक आदि बारह राजकुमारों का परिचय दिया। उसने बताया कि ये बारह राजकुमार सौवीरराज जयद्रथ के रथ का अनुगमन करते हैं। इस प्रकार जयद्रथ के अनुगामी राजाओं का विवरण देते हुये कोटिक ने द्रौपदी से उसका परिचय पूछा। (३. २६५)।

"द्रौपदी ने कोटिकास्य को अपना परिचय देते हुये कहा कि अन्य किसी पुरुष के उपस्थित न होने के कारण ही वह उसकी बातों का उत्तर देने के लिये विवश है। द्रौपदी ने अपने वंश का परिचय देते हुये पाण्डवों को अपना पति बताते हुये उनके नाम बताये। उसने बताया कि उस समय उसके पति विभिन्न दिशाओं में हिंसक पशुओं का वध करने के लिये गये हैं : युधिष्ठिर पूर्व, भीमसेन दक्षिण, अर्जुन पश्चिम, और नकुल-सहदेव उत्तर दिशा में गये हैं। तदनन्तर द्रौपदी ने कोटिक को आमन्त्रित करते हुये

उसके साथ आये सभी को विश्राम करने के लिये कहा। उसने यह भी कहा कि उसके पति आतिथ्य सत्कार करने के अत्यन्त प्रेमी हैं और शीघ्र वन से वापस आकर सब को देखकर प्रसन्न होंगे। ऐसा कह कर द्रौपदी अपनी पर्णशाला के भीतर चली गई तथा आगन्तुकों को अपना अतिथि समझकर उनके आतिथ्य की व्यवस्था में लग गई (३. २६६)।

"कोटिकास्य ने जयद्रथ को द्रौपदी का उत्तर सुनाते हुये उससे द्रौपदी को सौवीर देश में ले चलने के लिये कहा। ऐसा सुनकर और मन में दुर्भावना भर कर जयद्रथ स्वयं द्रौपदी के पास आया। सामान्य कुशलक्षेम के आदान-प्रदान के बाद जयद्रथ ने द्रौपदी को अपने रथ पर बैठने का आग्रह किया। उसने पाण्डवों को श्रीहीन बताते हुये द्रौपदी को अपनी भार्या बनने के लिये कहा। जयद्रथ की बातें सुन कर द्रौपदी क्रुद्ध हो उठी और पाण्डवों के लौटने तक उसे बातों में उलझाये रखने का प्रयत्न करने लगी। द्रौपदी ने जयद्रथ से अनुचित बातें न करने के लिये भी कहा। (३. २६७)।

"जयद्रथ की बातें सुनकर द्रौपदी क्रोध से भर उठी थी। उसने सौवीर-राज जयद्रथ को फटकारते हुये पाण्डवों के शौर्य का वर्णन किया। उसने युधिष्ठिर, भीम, और अर्जुन के शौर्य की प्रशंसा करते हुये जयद्रथ को पुनः कटुशब्दों में फटकारा। जयद्रथ ने अपने को उन श्रेष्ठ कुलों में से एक बताया जो सत्रह गुणों से सम्पन्न हैं, तथा पाण्डवों को अपने से हीन बताया। उसने द्रौपदी का बलात् अपहरण कर लेने की अपनी इच्छा भी व्यक्त की। द्रौपदी ने उसे बताया कि जिस द्रौपदी की कृष्ण और अर्जुन रथारूढ़ होकर रक्षा करते हैं उसका देवराज इन्द्र भी अपहरण नहीं कर सकते। द्रौपदी ने वृष्णिवंशी वीरों, श्रीकृष्ण, अर्जुन, और केकय राजकुमारों को भी अपना रक्षक बताया। फिर भी जब जयद्रथ के साथ के लोग उसके अपहरण का प्रयास करने लगे तो उसने धौम्य को पुकारा। जयद्रथ ने जब द्रौपदी को बलात् अपने रथ पर बैठा लिया तब धौम्य ने उसे चेतावनी दी। परन्तु इसकी परवाह किये बिना वह द्रौपदी को लेकर अपनी सेना के साथ वहाँ से चला गया। उस सयम धौम्य मुनि भी अपहृत द्रौपदी के पीछे-पीछे जयद्रथ की पैदल सेना के बीच में होकर चलने लगे। (३. २६८)।

"तदनन्तर पाँचों पाण्डव पशुओं को मारने के बाद जब एकत्र हुये तब अनेक अपशकुन हुये जिन्हें देख कर उन्होंने शीघ्र आश्रम लौटने के लिये कहा। पाण्डवगण तब अपने सिन्धु देशीय वेगवान अश्वों से युक्त रथों पर बैठकर आश्रम की ओर चल पड़े। उस समय एक गीदड़ जोर से रोता हुआ पाण्डवों के वाम भाग से होकर निकल गया। इस अपशकुन को देखकर युधिष्ठिर ने अर्जुन और भीम से आशंका व्यक्त की कि कौरवों ने सम्भवतः आश्रम में आकर भयंकर संहार मचा रक्खा है। इस प्रकार सशंकित मन से आश्रम लौटने पर पाण्डवों ने द्रौपदी की धात्री को रोता हुआ देखा। इन्द्रसेन तत्काल अपने रथ से कूद पड़ा और धात्रेयिका के पास आकर रोने का कारण पूछा। धात्रेयी ने तब सारथि इन्द्रसेन से जयद्रथ द्वारा द्रौपदी के अपहरण की बात कही। पाण्डव तत्काल अपने धनुष की प्रत्यञ्चाओं को टंकारते हुये जयद्रथ की ओर वेग से चल पड़े। शीघ्र ही उन लोगों ने जयद्रथ की सेना को तथा उसके साथ चलते हुये महर्षि धौम्य को भी देखा। पाण्डवों ने तत्काल जयद्रथ की सेना पर आक्रमण कर दिया। उस सहसा आक्रमण से जयद्रथ के सैनिक इतने घबरा गये कि उन्हें दिशाओं का ज्ञान भी न रहा। (३. २६९)।

"जयद्रथ के पूछने पर द्रौपदी ने प्रत्येक पाण्डव का परिचय दिया तथा उससे हथियार नीचे डाल कर युधिष्ठिर की शरण में जाने के लिये कहा। यह कहते हुये द्रौपदी ने, अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव और युधिष्ठिर की वीरता का वर्णन करते हुये जयद्रथ को यह चेतावनी दी कि पाण्डवों से युद्ध कर वह अपना सर्वनाश करेगा। इसी समय पाण्डव जयद्रथ की सेना पर घनघोर बाण वर्षा करने लगे। (३. २७०)।

"उस समय जयद्रथ अपने साथ के राजाओं को युद्ध के लिये प्रोत्साहित करने लगा। भीमसेन अपनी शैक्यलौह से निर्मित और सुवर्णमण्डित विशाल गदा लेकर जयद्रथ की ओर बढ़े। कोटिकास्य ने जयद्रथ की रक्षा के लिये भीमसेन और जयद्रथ के बीच व्यवधान डालने का प्रयास किया परन्तु भीम ने जयद्रथ की सेना के अनेक लोगों का संहार आरम्भ किया। अर्जुन ने भी जयद्रथ की सेना के पाँच सौ योद्धाओं को मार डाला। युधिष्ठिर के रथ के चारों अश्वों को त्रिगर्तराज ने मार डाला किन्तु अन्ततः युधिष्ठिर ने उसका वध कर दिया। तदनन्तर युधिष्ठिर अपने सारथि इन्द्रसेन को लेकर सहदेव के रथ पर चढ़ गये। नकुल ने क्षेमङ्कर और महामुख का वध किया किन्तु सुरथ ने उन्हें भीम के रथ पर आश्रय लेने के लिये विवश किया। भीम ने कोटिकास्य का वध किया। अर्जुन ने बारह सौ वीर योद्धाओं का वध किया। जयद्रथ ने भयभीत होकर द्रौपदी को अपने रथ से उतार दिया और स्वयं भाग गया। जब धर्मराज युधिष्ठिर ने देखा कि द्रौपदी धौम्य मुनि को आगे करके आ रही है। तब उन्होंने सहदेव को आज्ञा दी कि वह द्रौपदी को अपने रथ पर बैठा लें। अर्जुन ने तब भीम से बचे हुये सैन्धवों का संहार न करने के लिये कहा। भीम ने तब युधिष्ठिर से द्रौपदी और धौम्य सहित आश्रम लौट जाने के लिये कहा और स्वयं जाकर जयद्रथ का वध करने की इच्छा व्यक्त की। युधिष्ठिर ने दुःशला और गान्धारी का स्मरण करके जयद्रथ का वध न करने का भीम को परामर्श दिया परन्तु द्रौपदी ने क्रोधपूर्वक उसका वध करने पर जोर दिया। परिणामस्वरूप भीम और अर्जुन जयद्रथ का पीछा करने के लिये चल पड़े। इधर युधिष्ठिर ने द्रौपदी और धौम्य सहित आश्रम पर आकर देखा कि मार्कण्डेय आदि ऋषि वहाँ एकत्र होकर द्रौपदी के लिये बारम्बार शोक कर रहे हैं। युधिष्ठिर सहित द्रौपदी को वापस देखकर ऋषियों को अत्यन्त प्रसन्नता हुई। इधर भीम और अर्जुन ने जयद्रथ का पीछा किया। अर्जुन ने पराक्रम दिखाते हुये दिव्यास्त्रों से जयद्रथ के रथाश्वों को मार डाला यद्यपि वे एक कोस आगे निकल गये थे। अपने अश्वों को को मारा गया देख और अर्जुन को अपनी ओर आते देख कर जयद्रथ अत्यन्त भयभीत हो गया। भागते हुये जयद्रथ को भीम ने पकड़ लिया किन्तु अर्जुन ने भीम से उसका वध न करने का निवेदन किया। (३. २७१)।"

१. द्रौपदेय, (बहु० °याः) पाँचों पाण्डवों के द्रौपदी से उत्पन्न पुत्रों का द्योतक है : १. १, २१२; २, १५४. ३००; ६७, १२७ (ये पाँच विश्वेदेवों के अवतार थे और इनके नाम इस प्रकार हैं : प्रतिविन्ध्य, सुतसोम, श्रुतकीर्ति, शतानीक, और श्रुतसेन); २२१, ८६ (इनका जन्म एक-एक वर्ष के अन्तर से हुआ था : युधिष्ठिर से प्रतिविन्ध्य, भीमसेन से सुतसोम, अर्जुन से श्रुतकर्मा, नकुल से शतानीक, और सहदेव से श्रुतसेन उत्पन्न हुये); २. ४५, ४९ (ये पर्वतीयों के साथ गये); ३. २२, ४९ (पाण्डवों के वन चले जाने पर धृष्टद्युम्न इन द्रौपदेयों को अपनी राजधानी में ले गया); ५. १, ६; २२, ४०; ४८, ३१; ५०, ४२; ५६, १७; ५७, २०; १४०, १२. १७. २३; १४१, २४; १५१, ४७. ५५; १६२, १५; १६४, ८; १७०, १ (ये महारथी थे); १८६, ८.१४; ६. १९, १७ (इन्होंने भीमसेन की रक्षा की); २५, ६. १८; ५०, ३५. ५०; ५१, २८; ५२, ३०; ५७, ३३; ६२, १८; ६३, १०; ६९, ११ (युधिष्ठिर के व्यूह के पृष्ठभाग में स्थित). २६; ७५, ७ (पाण्डवों के मकर व्यूह की ग्रीवा में स्थित); ७७, ५८; ७८, २६ (इन लोगों ने दुर्योधन के साथ युद्ध किया); ७९, २१; ८७, २१; ८९, १९; ९५, २३. ४०. ७४ (इन पाँच कुमारों ने मिलकर भगदत्त से युद्ध किया); १००, ३६. ३७ (अलम्बुष से युद्ध किया); १०८, ५; ११६, ४१; ७. ८, ५; १०, ५१ (इन्होंने द्रोण से युद्ध किया); १४, ८४; १६, ८. १० (वृषसेन से युद्ध किया). २८; २३, ८८ (इनके ध्वजों का वर्णन : पाञ्चानां द्रौपदेयानां प्रतिमाध्वजभूषणम्। धर्ममारुतशक्राणामश्विनोश्च महात्मनोः). ९४ (इनके धनुषों का वर्णनः रौद्रमाग्नेयकौबेरं याम्यं गिरिशमेव च। पञ्चानां द्रौपदेयानां धनूरत्नानि भारत); २५, ३२ (अश्वत्थामा से युद्ध किया); २६, ६०; ३५, ५; ४०, १५. १९ (इनके ध्वजों का वर्णन); ४३, ८; ८३, ६; ८५, ४१; ९५, ३७ (बाह्लीक से युद्ध किया); ९६, १२; १०६, १५ (सौमदत्ति भूरिश्रवा से युद्ध किया); १०८, १; १०९, १५. १७; १११, ४४; ११४, ६३; १२४,

३४; १५३, २४; १५४, १२; १५६, ३६; १५८, ४३; १७७, ३५; १८४, ६; १९७, ४२; ८. १२, १४; २१, २५; २२, ८. २७; ३०, २६; ४६, ३६. ८४; ४७. ६ (इन्होंने धृष्टद्युम्न की रक्षा की); ४८, २०. ४७. ५३; ४९, ३३. ६२; ५५, १. १०; ५६, ६४; ५९, ३८; ६१, १३; ६६, ११; ७३, १०३; ७८, १६. १९. २५. ६४; ७९, ३६; ९३, ३९; ९. १, ३२; २, २३; ३, ४०; ७, १५; ११, २२. ३३. ३८. ४४; १६, ६; १७, ३१; १८, ८. १३. १४; २१, ३४; २२, १०. १४. ३५; २३, ३६. ३९. ६३; ३०, ५३; ६२, ३; १०. ८, ४८. ५३ (रात्रि युद्ध में अश्वत्थामा ने इनका वध किया). १५८; ९, १. ५०; १०, २; ११. ११, १२; १२, ९; २६, ३५ (इनका शवदाह); २७, २२, १२. १, १५; ४२, ५ (इन लोगों का श्राद्ध किया गया); १५. २१, १३; ३२, ८ (उन मृत योद्धाओं में ये लोग भी थे जो व्यास के आवाहन पर गंगा से प्रकट हुये); ३३, ४; १६. ३, २५; १८. १, २६; २, ४१. ४३।

२. द्रौपदेय (द्वि० °यौ) : ७. १४७, ३४ (इन लोगों ने सात्यकि का अनुसरण किय—यहाँ सम्भवतः युधामन्यु और उत्तमौजा से तात्पर्य है जो द्रुपद के पुत्र या पौत्र थे)।

३. द्रौपदेय से किसी ऐसे व्यक्ति का तात्पर्य है जिसने दौःशासनि का वध किया था : ८. ५, १४।

४. द्रौपदेय = शिखण्डी : ६. १२०, ७।

५. द्रौपदेय = श्रुतकर्मा (सहदेव पुत्र) : ७. २३, ३१।

६. द्रौपदेय = श्रुतकीर्ति (अर्जुन पुत्र) : ७. २३, ३२; २५, ३२।

७. द्रौपदेय = सुतसोम : ९. १०, ४३।

द्वादश = शिव (सहस्रनाम)।

द्वादशनेत्रबाहु = स्कन्द : ३. २३२, १९।

द्वादशभुज, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है : ९. ४५, ५७।

द्वादशाक्ष, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है : ९. ४५, ५८।

द्वादशात्मन् = सूर्य : ३. ३, २६।

१. द्वापर एक युग का नाम है। त्रेता और द्वापर के सन्धिकाल में राम जामदग्न्य ने क्षत्रियों का वध किया था (१. २, ३)। १. २, १३ (कौरवों और पाण्डवों का युद्ध इसी युग में हुआ था); ३. ३, २९ (सूर्य के १०८ नामों में से एक); ८५, ९०; १२१, २० (सन्धिरेष नरश्रेष्ठ त्रेताया द्वापरस्य च। एतमासाद्य कौन्तेय सर्वपापैः प्रमुच्यते); १२५, १४; १४९, ७. २७ (इस युग में धर्म की मात्रा आधी हो जाती है, नारायण का वर्ण पीला, और वेद का चार भागों में विभाजन हो जाता है). ३३; १८८, २४ (द्वापर का मान दो सहस्र दिव्य वर्ष है, तथा २०० दिव्य वर्ष इसकी सन्ध्या के और सन्ध्यांश के होते हैं—इस प्रकार इसका कुल मान २४०० दिव्य वर्ष होता है); १८९, ३२ (इस युग में कृष्ण का रक्तवर्ण होता है); १९०, १०; १९१, १४; ५. १३२, १७. १९; ६. १०, ३. ४. ६ (इसमें २००० वर्ष होते हैं). १२. १५; ६६, ४० (द्वापरस्य युगस्यान्ते आदौ कलियुगस्य च। सात्वतं विधिमास्थाय गीतः संकर्षणेन वै); १२. ६९, ९८. १००; ९१, ६; १४१, १०. १३ (त्रेता और द्वापर के सन्धिकाल में बारह वर्षों का भीषण अकाल पड़ा था). १४; २०७, ४०; २३१, १९. २७. २८; २३२, ३२. ३५; २३८, ७. १४. १५; २६०, ८; २६७, ३३; ३३९, ८५ (त्रेता और द्वापर के सन्धिकाल में नारायण का राम दाशरथी के रूप में अवतार होगा). ८९ (द्वापर और कलि के सन्धिकाल में नारायण का कृष्ण वासुदेव के रूप में अवतार होगा); ३४०, ८५; १५८, १०।

२. द्वापर, द्यूत में प्रयुक्त होनेवाला एक शब्द : १. ६७, ७८; ३. ५८, १. २. १२. १३; ५९, १; ४. ५०, २४ (नाक्षान् क्षिपति गाण्डीवं न कृतं द्वापरं न च); ५. १४२, ७. ९. ११. १३. १५; १५. ३१, १० (यह शकुनि के रूप में अवतरित हुआ); १८. ५, २१ (शकुनि ने इसमें प्रवेश किया)।

द्वापरयुग – देखिये १. द्वापर।

द्वारका, वृष्णियों की राजधानी का नाम है (= द्वारवती) : १. १, १५१; २, १२५. १५३; २१८, १५. १७; २२०, ७. ९; २. २, २९. ३०; १३, ४१; ४५, ७ (शिशुपालने इसे भस्म किया था). ५२. ५६. ५८; ६८, १३, १. १५; १४, ५; १५, २३; १६, ७. २८; १९, २७; २०, २. ३; २१, १३. १४. १७; २२, २६. ४८; ५. ५, १२; ७, २. ५. ७; ७. २३, ७१ (शार्ङ्गध्वज द्वारका का विध्वंस करना चाहता था); ११०, ६४ (तीर्थयात्रा के समय युधिष्ठिर यहाँ भी आये); ९. ३५, १७; ५४, ३६; ६०, ३०; १०. १२, ११. ३४; १२. १, १६; ३३९, ९१ (कृष्ण वासुदेव इसे अपनी पुरी बनायेंगे). १०१ (द्वारकायाश्च सत्तम। करिष्ये प्रलयं घोरमात्मज्ञानाभिसंहितः); १३. ६४, २; १४७, ३६; १४८, १९; १४. १५, ३२; १६, ७; ५२, २३; ५३, १; ५५, १४; ५९, २; ८६, ९; १६. १, १५; ३, १; ५, ४. १०. १२; ७, २०. २१ (सागर ने इसे आप्लावित किया). ४३. ७५; १७. १, ५५ (सागरेण परिप्लुतम्)। तुकी० द्वारवती, कुशस्थली।

द्वारकाधिपति = आहुक : ३. २१, १२।

द्वारपाल, विभिन्न यक्षों के लिये प्रयुक्त हुआ है : २. ३२, १२; ३. ८३, ९ (मंकनकं...यक्षम्). १५ (तरन्तुकं). ५२ (अरन्तुकम्). २०० (द्वारपालं मच्चक्रुकम्); २. २८, ८।

द्वारवती, वृष्णियों की राजधानी का नाम है (= द्वारका) : १. २, ३५७. ३६०; ६१, ४३; ९५, ७७; २०७, ५२; २२१, ६१; २. १४, ६७ (यादवगण मथुरा से भाग कर यहाँ आये); ४३, १४; ४५, ६२. ६७; ३. १५, २; २०, ९; ८२, ६५ (पिण्डारक तीर्थ यहीं था); ८८, २४ (यह सुराष्ट्र देश में स्थित थी); २३५, १२; ४. ४, ३; २५, १६; ५. ७, ३; ९. ६०, ३१; १०. १२, १२; १३. ७०, २ (द्वारवती की स्थापना के समय नृग की मुक्ति हुई); ७२, ३; १५९, ३; १६०, ३७; १४. १५, २१. २६; ५२, ४४; ५९, ३; ८३, १३; १६. ४, ७; ६, १९ (सागर इसे आत्मसात कर लेगा। तुकी० द्वारका, कुशस्थली।

द्वारिका – देखिये द्वारका।

द्विजर्षि = ब्रह्मर्षि : १३. ७१, ५७ (उद्दालक); ९५, २।

द्वित, एक ऋषि का नाम है जो एकत और त्रित के भ्राता थे : ९. ३६, ८ (ये तथा एकत और त्रित सभी गौतम के पुत्र थे). १३. २०. २१. २८ (त्रित ने एकत और द्वित को भेड़िया वन जाने तथा सन्तान के रूप में गोलांगूल, रीछ, और वानर आदि पशु प्राप्त करने का शाप दिया क्योंकि त्रित के कूप में गिर जाने के बाद द्वित और एकत उन्हें अकेला छोड़कर चले गये थे); १२. २०८, ३१ (ये पश्चिम दिशा का आश्रय लेकर रहनेवाले ऋषि थे); ३३६, ६ (वसु उपरिचर के यज्ञ में इन्हें सदस्य बनाया गया). २०. ६०; ३३९, १२. ८६ (ये लोग वानरों के रूप में जन्म लेकर राम दाशरथी की सहायता करेंगे); ३४१, ४६; १३. १५०, ३६; १६५, ४२।

द्विमूर्धन्, एक असुर का नाम है : ७. ६९, २० (जब असुरों ने पृथिवी का दोहन किया तब ये दोग्धा थे)।

द्वियोध = अर्जुन : २. २४, १५।

द्विव्यूह = विष्णु : १२. ३४८, ५७।

द्विविद एक वानर प्रमुख का नाम है : २. ३१, १८ (किष्किन्धा में सहदेव ने द्विविद और मैन्द नामक वानरप्रमुखों के साथ युद्ध किया था); ३. २८०, २३ (ये सुग्रीव के मन्त्रियों में से एक थे); २८३, १९ (इन्होंने रामदाशरथी की सहायता की); २८९, ४; ५. १३०, ४१ (इस वानरराज ने सौभद्वार में पाषाण वर्षा करके श्रीकृष्ण को आच्छादित कर दिया था)।

द्वीपिचर्मनिवासिन् = शिव : ७. २०२, ४१।

द्वीपिन् (बहु० °नः) शार्दूली की सन्तान थे (१. ६६, ६५)।

द्वैतवन – देखिये द्वैतवन।

द्वेष = शिव (सहस्रनाम)।

१. द्वैतवन, एक सरोवर का नाम है जो द्वैतवन में स्थित था : ३. २४, १०. १२. १६, २६; १; १७७, २१; २३७, १३; २३९, २५. २९;

२४०, १३. २०. २५।

२. द्वैतवन, एक वन का नाम है : १. २, १५४. १९५; ३. ११, ६८ (पाण्डवों ने इसमें प्रवेश किया); २४, १६; २६, १.६; ३६, ४१ (पाण्डवों ने इसे छोड़कर काम्यक वन में प्रवेश किया); १७७, २१ (पाण्डवों ने पुनः इसमें प्रवेश किया); २३८, ५. १९. २३; २४६, २७; २५६, ८; २५७, २५; २५८, २. ५; ३११, ३. ५; ४. ४, ५ (पाण्डवों ने यहाँ से विराट की राजधानी के लिये प्रस्थान किया); ५. २३, २६; ७. ११०, ६२; ८. ४१, ७६; ६८, ४. ५; ९. ३७, २७ (यहाँ सरस्वती नदी बहती थी। बलराम यहाँ आये); १२. १४, ८; १७. ३, १९; १८. ३, ३३।

द्वैतवनप्रवेश (शः) – "श्रीकृष्ण के प्रस्थान के पश्चात युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव, द्रौपदी और पुरोहित धौम्य उत्तम रथों पर बैठकर एक दूसरे वन में जाने के लिये उद्यत हुये। वेद-वेदाङ्ग और मन्त्र के जानेवाले ब्राह्मणों को सुवर्ण मुद्रायें, वस्त्र तथा गौयें प्रदान करके उन्होंने यात्रा आरम्भ की। बीस सेवकों को साथ लेकर श्रीकृष्ण पहले ही द्वारका के लिये प्रस्थान कर चुके थे। सारथि इन्द्रसेन भी सुभद्रा के वस्त्र-आभूषण आदि लेकर रथ के द्वारा द्वारकापुरी के लिये चल दिये। तदनन्तर पुरवासियों ने युधिष्ठिर के पास जाकर उनकी परिक्रमा की। कुरुजाङ्गल देश के ब्राह्मणों तथा सभी प्रमुख लोगों ने भी युधिष्ठिर को नमस्कार किया तथा धार्तराष्ट्र दुर्योधन को धिक्कारने लगे। उस समय अर्जुन ने उपस्थित लोगों को सम्बोधित करते हुये कहा कि वनवास की अवधि पूर्ण होते ही युधिष्ठिर अपने शत्रुओं का यश छीन लेंगे। उन्होंने उपस्थित लोगों से युधिष्ठिर तथा पाण्डवों के शुभचिन्तन के लिये निवेदन किया। तदनन्तर युधिष्ठिर आदि पाण्डवों की अनुमति प्राप्त करके सभी लोग अपने राष्ट्र को प्रस्थित हुये (३. २३)।

"युधिष्ठिर और अर्जुन के बीच मन्त्रणा के बाद यह निश्चय किया गय कि बारह वर्ष के वनवास की अवधि द्वैतवन के पवित्र सरोवर के तटपर रह कर काट दी जाय। ऐसा निश्चय करके सभी पाण्डव अनेक ब्राह्मणों के साथ द्वैतवन नामक सरोवर के पास आये। वहाँ अनेक अग्निहोत्री ब्राह्मणों, ब्रह्मचारियों, तथा सन्यासियों ने युधिष्ठिर को घेर लिया। इस प्रकार पाण्डवों ने द्वैतवन में प्रवेश किया। वह वन अन्यान्य लता-गुल्मों से भरा था जिसमें अनेक पशु-पक्षी मुक्त विहार करते थे। वहीं भोगवती (सरस्वती) नदी में पाण्डवों ने स्नान किया। युधिष्ठिर का दर्शन करने की इच्छा से बहुत से चारण, सिद्ध एवं महर्षि वहाँ आये और उनका सम्मान किया। तत्पश्चात युधिष्ठिर अपने भ्राताओं सहित, फूलों से लदे हुये एक महान वृक्ष के नीचे बैठ गये। (३. २४)।

"जब पाण्डव द्वैतवन में निवास कर रहे थे, तब पुरोहित धौम्य उनके यज्ञ-याग, पितृ-श्राद्ध तथा अन्य सत्कर्म कराते रहते थे। एक दिन पाण्डवों के पास पुरातन महर्षि मार्कण्डेय अतिथि के रूप में पधारे। द्रौपदी सहित पाण्डवों को देखकर महर्षि मन ही मन मुस्कराने लगे। मुस्कराने का कारण पूछे जाने पर महर्षि ने बताया कि पाण्डवों की विपत्ति देखकर उन्हें राम दाशरथी का स्मरण हो आया, जिनका उन्होंने ऋष्यमूक पर्वत के शिखर पर दर्शन किया था। महर्षि मार्कण्डेय ने राम, नाभाग और भगीरथ, काशिराज, करूषराज अलर्क तथा सप्तर्षियों का उदाहरण देकर युधिष्ठिर को सान्त्वना देते हुये कहा कि ये सभी महापुरुष विधाता का आदेश मानते हुये धर्माचरण में संलग्न रहने के कारण ही महानता को प्राप्त हुये थे। महर्षि ने बताया कि युधिष्ठिर भी अपने श्रेष्ठ गुणों के कारण वनवास की अवधि पूर्ण करने के पश्चात कौरवों से अपनी राजलक्ष्मी पुनः प्राप्त कर लेंगे। इस प्रकार बातें कह कर महर्षि मार्कण्डेय धौम्य तथा पाण्डवों से विदा लेकर उत्तर दिशा की ओर चले गये। (३. २५)।

"पाण्डवों के निवास करने से विशाल द्वैतवन धीरे-धीरे ब्राह्मणों से भर गया। भार्गव, आङ्गिरस, वासिष्ठ, काश्यप, अगस्त्य, और आत्रेय वंशीय श्रेष्ठ ब्राह्मण और तपस्वी वहाँ आकर पाण्डवों से मिलने लगे। वहाँ सदैव वेदोच्चारण होने लगा तथा पाण्डवों के धनुषों की प्रत्यञ्चा की टंकार उस वेदध्वनि से मिलकर ऐसा आभास कराने लगी मानों ब्राह्मणत्व और क्षत्रियत्व का सुन्दर संयोग हो रहा है। एक दिन युधिष्ठिर ऋषियों के बीच सन्ध्योपासना कर रहे थे तब दल्भ-पुत्र बक नामक महर्षि ने उनसे कहा कि जब ब्राह्मण क्षत्रिय से और क्षत्रिय ब्राह्मण से मिल जाँय तो दोनों प्रचण्ड शक्तिशाली होकर अपने शत्रुओं का विनाश कर सकते हैं। बक ने युधिष्ठिर को भी उसी प्रकार ब्राह्मणों की सहायता लेने को कहा जिस प्रकार पूर्वकाल में असुरराज बलि वैरोचन लेते थे। उन्होंने बताया कि बलि ब्राह्मणों के अतिरिक्त अन्य किसी तीर्थ का सेवन नहीं करते थे। इसी कारण बलि को हर प्रकार के वैभव प्राप्त हुये। किन्तु जब उन्होंने ब्राह्मणों की उपेक्षा आरम्भ की तब उनका सर्वनाश हो गया। अतः बक ने कहा कि बुद्धिमान पुरुष को अप्राप्त की प्राप्ति तथा प्राप्त की वृद्धि के लिये ब्राह्मणों से बुद्धि ग्रहण करना चाहिये। उस समय द्वैपायन व्यास, नारद, जामदग्न्य इत्यादि वहाँ उपस्थित महर्षियों ने युधिष्ठिर के श्रेष्ठ आचरण की प्रशंसा की (३. २६)।"

१. द्वैपायन = व्यास (देखिये वस्था०)।

२. द्वैपायन, एक सरोवर का नाम है : ९. ३०, ५५ (पराजित दुर्योधन इसी में छिपा); ३१, २; ५४, ३१; १४. ६०, २७।

द्वैपायनसुत = शुक : १२. ३३२, २६।

द्वैपायनह्रद = २. द्वैपायन : ९. ३०, ५५।

द्वैपायनात्मज = शुक : १२. ३३२, ९।

ध

१. धनञ्जय = अर्जुन (देखिये वस्था०)।

२. धनञ्जय, एक नाग का नाम है : १. ३५, ५; २. ९, ९ (ये वरुण की सभा में उपस्थित होते थे); ५. १०३, ९; ८. ३४, २९ (उन नागों में एक यह भी थे जिन्हें शिव के अश्वों को बाँधने के लिये रस्सी बनाया गया।

३. धनञ्जय = विष्णु (सहस्रनाम)।

४. धनञ्जय (बहु० °याः), ब्राह्मणों के एक कुल का नाम है : २. ३३, ३४।

धनञ्जयसुत = बभ्रुवाहन : १४. ८०, ४०।

धनञ्जया, एक सेना का नाम है जिसे शिव ने स्कन्द को प्रदान किया : ९. ४६, ४७।

धनञ्जयाग्रज = भीम : ९. ५७, ६३।

१. धनद = कुबेर (देखिये वस्था०)।

२. धनद, कुबेर के एक अनुचर का नाम है : २. १०, १३ (उन यक्षों में से एक जो कुबेर की सभा में उपस्थित होता था)।

३. धनद एक पर्वत का नाम है : १३. १९, २६।

४. धनद = शिव (सहस्रनाम)।

धनदा एक मातृका का नाम है : ९. ४६, १३।

धनदेश्वर = कुबेर (देखिये वस्था०)।

धनदोद्यान, कुबेर के उद्यान का नाम है जिसकी यक्ष और राक्षस रक्षा करते थे (३. १५०, २२)।

धनपति = कुबेर (देखिये वस्था०)।

धनप्रद = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

धनाधिगोप्तृ, धनाधिप, धनाधिपति = कुबेर (देखिये वस्था०)।

१. धनाध्यक्ष = कुबेर (देखिये वस्था०)।

२. धनाध्यक्ष = शिव : १०. ७, ८।

धनानां ईश्वरः = कुबेर (देखिये वस्था०)।

धनिन, कर्ण के एक दूत का नाम है : १३. १५७, ८. ९५. १६।

धनिष्ठा, एक नक्षत्र का नाम है (= श्रविष्ठा) : ३.२३०, १० (धनिष्ठादिस्तदा कालो ब्रह्मणा परिकल्पितः); १३. ६४, २९ (इस नक्षत्र में दानादि का माहात्म्य); ८९, १२ (इसमें श्राद्ध का माहात्म्य); ११०, ५ (इसमें चन्द्रव्रत का वर्णन)।

धनुर्ग्रह, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७, १०३; ८. ८४, २ (भीमसेन ने जिन दस धृतराष्ट्र-पुत्रों का वध किया उनमें यह भी एक था)।

धनुर्ग्राह, धृतराष्ट्र के पुत्र का नाम है जिसने भीमसेन पर आक्रमण किया (८. ५१, ८)।

१. धनुर्धर, धृतराष्ट्र के पुत्र का नाम है : १. ११७, ११ (तुकी० धनुर्ग्रह)।

२. धनुर्धर = शिवः ७. २०२, ४४।

३. धनुर्धर = विष्णु (सहस्रनाम)।

धनुर्यन्त्राणां = शिव (सहस्रनाम)।

धनुर्वक्त्र, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६२)।

१. धनुर्वेद (शस्त्रविद्या) : १. ४९, १३ (धनुर्वेदं तु शिष्योऽभून्नृपः शारद्वतस्य सः); ६७, ७१; १०९, १९; १०३, ५ (शरद्वत ने इसमें प्रवीणता प्राप्त की) १६. १९. २१ (शरद्वत ने कृपाचार्य को सिखाया). २३ (कृपाचार्य ने अपने शिष्यों को सिखाया). २९ (द्रोण ने धार्तराष्ट्रों और पाण्डवों को सिखाया). ५० (द्रोण ने इसे राम जामदग्न्य से सीखा था); १३१, ४०; १३२, १३. ३०. ४५ (एकलव्य ने इसे सीखा); १३९, ९ (अगस्त्य के शिष्य अग्निवेश ने धनुर्वेद में गुरु से प्रवीणता प्राप्त की); १८८ १९; १९०, १७. २०; २२१, ७२ (अभिमन्यु ने चार पदों और दशविध अंगों से युक्त दिव्य एवं मानुष धनुर्वेद का ज्ञान प्राप्त किया); २. ४, ३४ (अर्जुन ने राजकुमारों को धनुर्वेद की शिक्षा दी); ५, १२१; ३. ३६, ४४; ३७, ४ (धनुर्वेदश्चतुष्पादः); ९९, ६०; ११५, ४५; १२६, ३३; १७७, २१; १८३, १७. २४; २१५, २३; २५३, ९; २७७, ४; ४. ५८, ७; ५. १५८, ३ (धनुर्वेदं चतुष्पादम्); १९२, ६१ (प्रतिपेदं चतुष्पादं धनुर्वेदम्); ६. ६१, १३; ७४, ३५; ७. २३, ३९ (सत्यधृति इसमें पारंगत था); ११२, २१. ४३; १३०, ९; १९४, ४ (द्रोण ने राम जामदग्न्य से इसकी शिक्षा प्राप्त की थी). १२ (अश्वत्थामा इसमें पारंगत थे); ८. २, १३ (साक्षाद्रामेण योवाल्ये धनुर्वेद उपाकृता); ९, ८२. ८३ (कृपाचार्य इसमें प्रवीण थे); ३४, ५६ (राम जामदग्न्य ने कर्ण को धनुर्वेद की शिक्षा दी थी); ७४, ५४; ९. ४४, २२ (यह शरीर धारण करके स्कन्द के पास आया); १२. २, ५. ९; ३, ३; ४९, ३२ (धनुर्वेद में पारंगत राम जामदग्नि ने क्षत्रियों का संहार किया); ५०, २३, ५९, ९९; १६६, ९ (भीम इसमें पारंगत थे); १३. २, ८; ३०, ९. ३१; ५६, ७; १०४, ४६; १४. ६६, २४।

२. धनुर्वेद = विष्णु (सहस्रनाम)।

धनुषाक्ष, एक ऋषि का नाम है : ३. १३५, ५०. ५२. ५५।

धनुषाख्य एक ऋषि का नाम है : १२. ३३६, ७।

धनुस् = शिव : ७. २०२, ४४।

धनेश = कुबेर (देखिये वस्था०)।

१. धनेश्वर = कुबेर (देखिये वस्था०)।

२. धनेश्वर = विष्णु (सहस्रनाम)।

धनेश्वराक्रीड, कुबेर के क्रीडास्थल का नाम है जो सम्भवतः गन्धमादन पर्वत पर स्थित था (३. १७६, २)।

१. धन्वन्तर = शिव : ७. २०२, ४५।

२. धन्वन्तर — देखिये धन्वन्तरि।

१. धन्वन्तरि, देवों के चिकित्सक का नाम है : १. १८, ३८ (ये अमृतमन्थन के समय अमृतघट हाथ में लेकर सागर से प्रगट हुये थे); १३. ९७, १२ (इनके लिये उत्तरपूर्व दिशा में बलि देनी चाहिये।

२. धन्वन्तरि = सूर्य : ३. ३, २५।

३. धन्वन्तरि = शिव (सहस्रनाम)।

धन्वन्तर्य, एक यज्ञ का नाम है : (१३. ९७, १०)।

धन्वाचार्य = शिव : ७. २०२, ४५।

१. धन्विन् = शिव (देखिये वस्था०)।

२. धन्विन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

धमधमा, एक मातृका है : (९. ४६, २०)।

१. धर, वसुओं में से एक : १. ६६, १८. १९ (ये धूम्रा से उत्पन्न हुये थे). २१ (ये द्रविण और हुतहव्य के पिता थे); ९९, ३८; १३. १५०, १६। तुकी० पृथु।

२. धर, एक पाण्डव सैनिक का नाम है (७. १५८, ३९)।

३. धर = शिव (सहस्रनाम)।

४. धर = विष्णु (सहस्रनाम)।

५. धर — देखिये त्वष्टाधर।

धरणी = स्कन्द : ३. २३२, १४।

१. धरणीधर = शिव : १४. ८, २८।

२. धरणीधर = विष्णु (सहस्रनाम)।

३. धरणीधर, बहु० (°राः) : १३. १५०, ४१ (धर्मः कामश्च कालश्च वसुर्वासुकिरेव च। अनन्तः कपिलश्चैव सप्तैते धरणीधराः)।

धरा, मूर्तिमान पृथिवी के लिये प्रयुक्त : १. ३६, २१. २३।

१. धराधर = बलराम (शेष) : १३. १४७, ५२. ६०।

२. धराधर = विष्णु (सहस्रनाम)।

धरापुत्र = अङ्गारक : ९. ११, १५ (भृगुसूनुधरापुत्रौ शशिजेन समन्वितौ)।

१. धर्म, धर्मराज यम के लिये प्रयुक्त : १. १, ११४. १६८; २, १००. १७३. १८६. २७४. २७५; ६२, ९; ६३, ९३. ९४. ९६ (अणिमाण्डव्य ने इन्हें शूद्रा के गर्भ से जन्म लेने का शाप दिया). ११६ (ये युधिष्ठिर के पिता थे); ६६. १३ (दक्ष की दस पुत्रियों के साथ विवाह हुआ). १४ (इनकी दस पत्नियों की गणना). १५. ३१ (स्तनं तु दक्षिणां भित्वा ब्रह्मणो नरविग्रहः। निःसृतो भगवान्धर्मः सर्वलोकसुखावहः); ६७, ८६ (विदुर के रूप में अवतरित). ११० (युधिष्ठिर इनके अंश से उत्पन्न हुवे थे); ७४, ३०; ७५, ९; ९५, ६०; १०६, ३१ (विदुर के रूप में इनका पुनर्जन्म); १०७, १; १०८, ८. ९. १०. १६. १८ (इन्हें अणिमाण्डव्य ने शूद्रा के गर्भ से जन्म लेने का शाप दिया था। इस प्रकार विदुर के रूप में इनका जन्म हुआ); १२२, २५. २६. २७ (पाण्डु ने कुन्ती से धर्म का आवाहन करने के लिये कहा था); १२३, १. २. ३. ५ (इन्होंने कुन्ती से युधिष्ठिर को उत्पन्न किया); १५१, २७; २. २३, ४६; ६८, ४६. ४८ (चीरहरण के समय ये द्रौपदी के शरीर को नित्य नवीन वस्त्रों से आवृत्त करते रहे); ३. १२, २१; ८४, १. ९९. १०२; ८८, २४. २५ (कृष्ण को इनके साथ समीकृत किया गया है); ११४, ४ (इन्होंने वैतरणी के तट पर यज्ञ किया); ११९, २२; १२८, १६; १६२, १६; १७६, १९; १८५, २६; ३१२, १; ३१३, ४६; ३१४, ६ (इन्होंने बताया कि यश, सत्य, दम, शौच, सरलता, लज्जा, अचञ्चलता, दान, तप और ब्रह्मचर्य ये सब इनके शरीर, और अहिंसा, समता, शान्ति, दया और अमत्सर इनके पास पहुँचने के द्वार हैं). १०. २४. २५; ३१५, १ (यक्ष के रूप में इन्होंने युधिष्ठिर आदि की परीक्षा लेने के बाद उन्हें यह वरदान दिया कि अज्ञातवास के तेरहवें वर्ष में वे अज्ञात रहेंगे); ४. १, ५. १०; १३, ३; १६, २६; ५. ६०, ९ (पाण्डवों के प्रति वात्सल्य भाव के कारण ये पाण्डवों की

सहायता करेंगे); ६१, ६. १८; ९०, ७२. ७३; १०५, ३५; १९६, ८. १५. १७. १८ (वसिष्ठ के रूप में इन्होंने विश्वामित्र की परीक्षा ली और इसी के बाद विश्वामित्र क्षत्रिय से ब्राह्मण बने); १०८, ४; १०९, ६; ११२, १; ११३, ९; ११७, १५ (धृति इनकी पत्नी थी); १२८, ४५. ४६. ४७ (इन्होंने अपने पाश से असुरों को बाँध कर वरुण को दे दिया था); ७. २३, ८८; ४०, १८; २०१, ५७ (नारायण ने इनके पुत्र के रूप में जन्म लिया); २०२, ३६; ८. ६९, ५७; ९. ४५, १७ (ये स्कन्द के अभिषेक के समय उपस्थित हुये थे); १०. १०, २८; १२. ५९, ३२. ३३ (श्री से विवाहित तथा अर्थ के पिता); ७२, २५; ९०, १६. १८. १९; १२२, ५४; १२८, २२ (इन्होंने तनु मुनि का रूप धारण किया); १९८, २ (युधिष्ठिर इनके अंश से उत्पन्न हुये थे); १९९, १५. १९. २०. २३-२६. २८. ३३. ५३. ६५. ७६. ११६; २००, ३. ३३; २०७, २२. २३; २६५, ६; २७३, २३. २४ (एक मृग के रूप में इन्होंने सत्य नामक ब्राह्मण की परीक्षा ली); ३००, ५८; ३३४, १७. ३५; ३४२, १८ (दक्ष की दस कन्याओं के साथ इनका विवाह हुआ). ८१. ८९; ३४७, १; १३. २, ७९; ४, ५; ३०, १३; १२६, ४; १५१, ४१; १४. ३२, २५ (एक ब्राह्मण के रूप में इन्होंने जनक की परीक्षा ली); ५४, ११; ९०, ८२. ९८. १०६. १०९ (ब्राह्मण के रूप में एक ब्राह्मण परिवार की परीक्षा ली);९१, १३. २६. २७.-२९. ३२ (जमदग्नि की परीक्षा हेतु इन्होंने क्रोध का रूप धारण किया। अन्ततः क्रोध को नेवला बन जाने का शाप मिला); १५. २०, ३५; २८, ११. १२. १४. १६. १८. १९. २१ (माण्डव्य के शाप से विदुर के रूप में उत्पन्न हुये); ३०, ६; ३१, ९; १७. ३, १७ (पाण्डवों के महाप्रस्थान के समय एक कुत्ते के रूप में ये भी उनके साथ चले). १८. २३; १८. २, ५०; ३, २. ३०. ४०. ४३; ५, २२ (मृत्यु के पश्चात विदुर और युधिष्ठिर इन्हीं में प्रवेश कर गये)। तुर्की० धर्मराज, वृष, यम।

२. धर्म = सूर्य : ३. ३, ६१।

३. धर्म = स्कन्द : ३. २३२, १६।

४. धर्म = कृष्ण : १२. ५६, १०।

५. धर्म = शिव (सहस्रनाम)।

६. धर्म = विष्णु (सहस्रनाम)।

धर्मकामार्थमोक्षाणां कथनीयकथः = शिव (सहस्रनाम)।

धर्मकृत् = विष्णु (सहस्रनाम)।

धर्मक्षेत्र = कुरुक्षेत्र : ६. २५, १; १४. ९०, २४।

धर्मगुप्त = विष्णु (सहस्रनाम)।

१ धर्मज = युधिष्ठिर : ७. १५७, ३५; ८. ७१, ३; १२. ५०, ८; १४. ७३, ५; ८६, ४. ८; १५. २, २९; १०, ४४; २६, ३६; १८. २, ३२।

२. धर्मज = कृष्ण : १२. ३४२, ७।

धर्मजा, शंयु की पत्नी सत्या के लिये प्रयुक्त (३. २१९, ४)।

धर्मतनय = युधिष्ठिर (देखिये वस्था०)।

धर्मतीर्थ, दो तीर्थों का नाम है जहाँ धर्म ने तपस्या किया था (३. ८४, १. ६२)।

धर्मद, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है : ९. ४५, ७२।

धर्मदेव = शेष : १. ३६, २३।

१. धर्मध्वज = सूर्य : ३. ३, १९।

२. धर्मध्वज = जनक : १२. ३२०, ४।

धर्मनन्दन = युधिष्ठिर : ८. ७१, २६; ९६, ६।

धर्मनेत्र, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ९४, ६०।

धर्मपुत्र = युधिष्ठिर (देखिये वस्था०)।

धर्मप्रभव = युधिष्ठिर : ३. २३६, ५।

धर्मयुग कृतयुग : १२. ३२०, ७।

धर्मयूप = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. धर्मराज् = धर्म अथवा यम : १. १०३, १८।

२. धर्मराज् = युधिष्ठिर : १. २, ३७०. ३७५; १५६, १२; २. २, ३१; ४६, ३०; ३. ५२, ४१; ८१, ३; २७१, १३. १५; ४. १३, ६; ५. ७९, ९; १०. १६, ३७; १२. ३३९, १३३; १३. १६७, १५; १४. ७३, ४; ८७, २१; १५. १३; ६।

३. धर्मराज् = राजधर्मा : १२. १७०, ९।

१. धर्मराज = युधिष्ठिर : १. १, १६१. १६८. २०६. २०७; २, ७५. १०३. १५५. १९६. २५५. २७४. २८२. २८४. ३२५. ३५०. ३६२; ६१, ४०; १२९, १०. ३५; १४५, १४; १४६, ४; १५०, २६; १९४, ४; १९८, ५; १९९, १९; २१३, १३. २७. २८; २१४, २१; २१९, २५; २२१, ५८; २२२, ९. १७; २. १, १०. १५; २, २. २३. २४. ३१; ३; ३७; ४, २०; ६, १. ९. १४. १५; १३, २९. ३१. ४३ ४५. ४६. ५४. ५६; २५, ५. ८. ११; २७, १२; २८, २१; २९, १. ११. १५; ३०, ४; ३१, १. २०. ७८; ३३, १. १३. ३२. ४४. ४७. ५२; ३४, ३. ४. १८. २५; ३५, ११. १२; ३६, २१. ३२; ४०, ५; ४५, ४३. ५३. ६३; ४६, ३. ६. ३०; ४७, १९; ५८, १७; ६५, ४०; ६७, २२; ६९, ११; ७०, ४. १२. १७; ७१, २१; ७३, १७; ८०, १०; ३. १, ३९; ३, ३३; १०, ११; ११, २२. २६. ६९; १२, ४. ७; २२, ४५; २३, ६. ९. ११. १२; २४, ४; २५, ७; २६, ५; २७, २; ३६, ३९; ३७, १. ३. १६; ४७, ३५; ५०, ९; ५१, ३४. ४२; ५२, ३६. ४०; ८१, १. ७; ९२, २६; ११७, १६; १२०, २२.; ३१; १४३, १५; १४४, १५. २१; १४५, ६. ३८; १४६, ६. ८; १५४, १. ७; १५५, २७. ३१. ३३; १५७, १२; १६६, १. ७; १७५, १; १७६, ११. १४. १८; १७९, ३. ४६; १८०, ३; १८१, ४०; १८३, १८. ३२. ३७. ४१; १८८, १; १९३, ३; २१७, १; २३६, ९; २३८, ११; २३९, ९; २४०, ३०; २४४, १८; २४६, ९-११; २४७ ५; २५६, १५; २५८, ८; २६८, ५. २७; २७०, ५; २७१, ३४; २७३, २; ४. ५, १७; २१, ५. ४३; २७, २; २८, १४; ३३, १७; ४३, २१; ६८, १५; ७०, १६; ७१, ३५; ५. १, १४; ३, ५; ६, ७; १९, ८; २२, २१; ४८, २६; ५०, ५०; ५७, ६२; ७२, ७९; ७९, १०. १५. २१; ८०, १. १५; ८१, ४; १२६, १२; १३९, १४; १५१, ३९; १५४, ६. १९. २३; १५७, २०; १५८, २४. २५. ४०; १६२, २३. ४६; १६३, ३६. ५२; ६. १९, ३. ६; ४३, १३; ४९, ९; ५०, २; ५३, ४०. ९३; ५६, १५; ५८, ११; ५९, ३३; ७५, ८; ७८, १४; ७९, ६४; ८५, २६; ९५, ११; १०५, १०. ३०; ११०, ६; १२०, ६८; १२१, ५३; ७. ७, २५; ९, २४; १२, १०. १८. २४; १३, २; १७, ७. ३८. ४८; २०, ३; २३, ९१; २५, १६; ३६, १; ४०, ३; ४९, ३३. ३६; ५५, १; ७३, १६; ८२, ३४; ८३, २०; ८४, २९; ९१, ४; १०२, ११; १०६, २२. २६. ३१. ४०; १११, २. १४-१६; ११२, १. ३. ६८. ८०; ११३, १. ३२; ११४, ६२. ६९; १२२, १८; १२४, १५. ३३; १२६, ४. ७. ८. २७. ३१; १२७, ५. ७. ११. १२; १३७, ३७. ३८; १४१, १७. २७. ३६. ३७; १४२, ११; १४३, ४६; १४७, ७५; १५६, १२४; १५८, ३४; १५९, ८७; १६२, ५२; १६५, ३७; १७०, ६४; १८४, १. २; १९. ४५; १९२, १२. ४२; १९३, ५४; १९५, १४; ८. ९, ५७; ११, २२. ३०; २८, २. ७; २९, ६. १३. ३१; ३०, २८; ३१, १२; ३६, २०; ४६, ३७. ८२; ४८, ४८. ५४; ४९, २८. ६५; ५५, ८. २०; ५६, ६३; ५८, ४; ६०, १; ६२, २२. २७. ३०; ६३, १६; ६४, ६९; ६५, १७. २०; ६९, ७०. ८४. ८६. ८७; ७०, १. ४२. ५५; ७१, १. ११. १३. १४. १६; ७२, ८. ३५; ७६, १३; ७९, ३५; ८७, ११७; ८९, ७१; ९६, ५. ३३. ३७. ४६; ९. १, १०; ८, १४; ९, ३९; ११, ११; १२, ३५. ५१; १३, १. १३. २२. ४७. ४८; १५, १२; १६, १४. ३२. ६१; १७, ३६. ३७. ३९. ४३. ४८. ५३. ६३; २२, १४; २४, ५०; ३०, ३८. ४३. ५४; ३३, १९. २३. २७. ३०; ५६, १५; ५८, १०. १२; ५९, १४; ६०, ३३. ३९. ४२; ६२, २७; ६३, १. १४. ३०. ५४; १०. १०, १; ११, १६; ११. ८, ४१; १२, १. १०. १३; १५, ९; १८, १२; २३, १; २६, ७. २७; २७, २५; १२. १, ३; ६, ९; १४, १; ३१, २; ३५, ५१; ३७, ४०; ४०, १८. २४; ४३, १७; ४५, २०; ५२,

१२; ५५, ११; ५९, ४; १६७, ४२; ३४८, ६४; १३. ७६, २९; ७७, ३; ११३, ११; १६७, १८. ३४; १४. २, ९; १५, १३; ५२, ३०. ३६. ५१; ६०, ३४; ६२, १३. २१; ६३, ३; ६४, १३; ६५, १६; ६७, ५; ७३, २. ८. १९; ७४, ७. ८; ७६, २५; ७८, ८; ८०, १०; ८५, ४. २२. २५. २६. ३८; ८६, ११. १३. २१; ८७, २४; ८८, १०. २९; ८९, ४. १८. २७. ३९; ९०, १. ४; १५. १, ७. २६; २, ७. १३; ४, ६; ८, ४. १०; ११, १५; १२, ६; १३, ४; १६, ९. १८; २६, २७. २९. ३१. ३४; २९, २; ३७, ४५; ३८, १७; १७. १, १०; २, २३; ३, २. १०. १८; १८. १, ४; २, २८. ५४; ३, १. ४२।

२. **धर्मराज** = धर्म अथवा यम : १. ९, १३. १४; ५५, ११; २२९, ८; २. ८, ३३; ३. ३६, ३२; ४१, १०; ९५, १२; १२८, १६. १७; २९७, ४१. ५५. ६१; १२. १२९, ८; १५३, ७१; १३. ६८, ११. २४. २५; ७०, २०. २४; ७१, १७. २८. ४२. ४४. ५७; १५०, ३५।

१. **धर्मराजन्** = धर्म अथवा यम : ३. १२८, १३; १३. ६८, ११।

२. **धर्मराजन्** = युधिष्ठिर : १. १२२, २; २. ५, १२; २४, ४६; ५१, ५; ३. १०६, ६; १४४, २५; १५५, ३१; १५७, ३; ६. ४३, ९५; ६०, ११; ८. ७२, १. ८; ९. २३, १२; १२. ४०, १८; ३४८, ६४; १४. ३, १९; ६८, १४; ६९, ९; ७८, ७; १५. ३, २९. ५८; ३६, ४५; १७. २, ४।

धर्मप्रस्थ, एक तीर्थ का नाम है। यहाँ कूपजल से पितरों का तर्पण करने से मनुष्य पापमुक्त हो स्वर्ग प्राप्त करता है (३. ८४, ९९)।

धर्मविद् = विष्णु (सहस्रनाम)।

धर्मव्याध, मिथिलापुरी में रहनेवाले एक धर्मपरायण व्याध का नाम है (३. २०७, १०. ६०)। इन्होंने हिंसा और अहिंसा का विवेचन किया (३. २०८, १)। इन्होंने धर्म-कर्म विषयक मीमांसा की (३. २०९, १)। विषय सेवन से हानि तथा ब्रह्मविद्या का वर्णन (३. २१०, १ और बाद)। इनके द्वारा इन्द्रियनिग्रह का वर्णन (३. २११, १ और बाद)। तीनों गुणों के स्वरूप और फल का निरूपण (३. २१२ १ और बाद)। प्राण वायु की स्थिति का प्रतिपादन (३. २१३, १ और बाद)। माता-पिता की सेवा का दिग्दर्शन (३. २१४, १. ७. १४. १७)। इनके पूर्वजन्म की कथा (३. २१५, १ और बाद)। कौशिक नामक ब्राह्मण को माता-पिता की सेवा का उपदेश देकर विदा करना (३. २१६, ३५)।

धर्मसाधारण = शिव (सहस्रनाम)।

धर्मसुत, धर्मसूनु = युधिष्ठिर (देखिये वस्था०)।

१. **धर्मात्मज** = नारायण : १२. ३३४, ८।

२. **धर्मात्मज** = युधिष्ठिर (देखिये वस्था०)।

धर्मात्मन् = स्कन्द : ३. २३२, ३. ६।

धर्माध्यक्ष = विष्णु (सहस्रनाम)।

धर्मारण्य = विभिन्न तीर्थों के लिये प्रयुक्त हुआ है : (१) एक प्राचीन तीर्थभूत वन, जिसमें प्रवेश करने मात्र से मनुष्य पापमुक्त हो जाता है (३. ८२, ४६)। (२) यहाँ एक रात प्रातःकाल तक निवास करनेवाला मनुष्य ब्रह्मलोक प्राप्त कर लेता है (३. ८४, ८५)। (३) श्रीराम दाशरथी ने खर-दूषण को मार कर इन राक्षसों के निवास स्थान को क्षेमकारक धर्मारण्य बना दिया (३. २७७, ४४)। (४) 'धर्मारण्योपशोभितम्', (१३. २५, ५८)। (५) 'धर्मारण्यं सुरैर्वृतम्', (१३. १६५, २९)। (६) 'धर्मारण्यं तथैव च', (१४. ९२, ५१)।

धर्मिन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

धर्मेन्द्र = यम : ७. ६, ६।

धर्मेयु, पुरुपुत्र रौद्राश्व द्वारा मिश्रकेशी नामक अप्सरा के गर्भ से उत्पन्न एक व्यक्ति का नाम है (१. ९४, ११)।

धर्षणात्मन् = शिव (सहस्रनाम)।

धातु = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. **धातृ**, विधाता ब्रह्मा का द्योतक है : १. ३, १६६ (ये ते स्त्रियौ धाता विधाता च); २३, १७ (इन्हें गरुड के साथ समीकृत किया गया है); ६३, १२० (कृष्ण के साथ समीकृत); ६५, १५ (आदित्यों में से प्रथम); ६६, ५० (द्वौ पुत्रौ ब्रह्मणस्त्वन्यौ ययोरितष्ठति लक्षणम्। लोके धाता विधाता च); ८९, १०; १२३, ६६ (ये आदित्यों में प्रथम थे, तथा अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उपस्थित हुये); १५७, ३५ (भर्तुरर्थाय निक्षिप्तां न्यासं धात्रा महात्मना); १७१, ३२ (लोकं निर्मथ्य धात्रेदं रूपमाविष्कृतं कृतम्); २२७, १५ (इन्होंने अर्जुन पर आक्रमण किया); २२९, ३० (अग्नि को इनके साथ समीकृत किया गया है); २. २१, ५२ (स्ववीर्यं क्षत्रियाणां तु बाह्वोर्धाता न्यवेशयत्); ५७, ४ (धात्रा तु दिष्टस्य वशे किलेदं सर्वं जगच्चेष्टति); ५८, १४. १८; ७६, ३; ७९, २२ (धात्रा किं नु प्रमादतः प्रमान्तो नैव विहितः); ३. १२, २१; १९, २२; २५, १४. १५; ३०, १. २२. २७. २९. ३१. ३८. ४१; ३१, १५. ३०. ४१; ३२, ७. २१. २३. ३६; ३७, ३३ (नमो धात्रे विधात्रे च); ६९, ७ (धात्रा विनिर्मितः); ९०, ३० (कृष्ण के साथ समीकृत); ११८, १२ (तीर्थयात्रा के समय युधिष्ठिर इनके पास आये थे); १२५, २३; १६४, १९ (अर्जुन ने इनसे अस्त्र प्राप्त किया); १८५, २६ (राजा के लिये प्रयुक्त एक सम्मानसूचक उपाधि); १८९, ४ (नारायण ने अपने को धाता और विधाता कहा). ५५; २०८, १९; २६५, ४; ३००, ३३ (इनके द्वारा गाये गये एक श्लोक का उल्लेख); ४. ९, १६; २०, १४; ५६, ११ (अर्जुन और भीष्म का युद्ध देखने के लिये उपस्थित हुये); ५. ३१, १; ३९, १; ४३, ३८; ५१, २७ (नियतं चोदिता धात्रा); ५६, ७; ७३, ४; १०५, ४; १५१, ३६; १६०, ५८; १६३, ४४; १७५, ३२; ६. ३३, १७; ३४, ३३; ७६, २६; १०८, ४३; ११२, १८; १२१, ४१; ७. ९४, ४६; १४३, ५९; ८. ३३, ३८; ८८, २५; ९. ६, १२; ३१, ३६; ४५, ४ (ये स्कन्द के अभिषेक के समय उपस्थित हुये). ४१ (इन्होंने स्कन्द को पाँच अनुचर प्रदान किये); ५९, २३; ६५, २३; ११. १, १९; ७, १२; १२. १०, १९; १५, १८; २०, १०; २६, २५. २६; २७, ३४; ४७, १८; ६६, २६; ९१, १२; १०४, ३०; १४३, २८; २०७, ३३; २०८,१५ (इन्हें आदित्यों में सातवाँ बताया गया है); २१०, २३; २२५,१०; २२६, ११. २१; २३३, १७; २५९, २३; २६७, १५; २८८, १८; ३३४, २४; ३४०, ९५. १००. १०६; ३५१, १९; १३. १, १३; १४, ४१६; १६, २२; १८, २८. ७१; ३५, ४; १४१, ६२; १५०, १५ (आदित्यों में पाँचवे); १६०, ४१ (शिव के साथ समीकृत); १४. ४२, ६६; ८०, १५ (सत्यं चैतत्कृतं धात्रा शाश्वदव्ययमेव तु)।

२. **धातृ** = सूर्य (३. ३, १६)।

३. **धातृ** = शिव (सहस्रनाम)।

४. **धातृ** = विष्णु (सहस्रनाम)।

धाम, ऐसे दिव्य व्यक्तियों के लिये प्रयुक्त हुआ है जिनका बहुधा यम के साथ उल्लेख है : ३. २६१, ६; ५. १११, १७ (गंगाद्वार की रक्षा करनेवाले मुनि जो उत्तर दिशा में रहते थे); ९. ४४, ३२।

धामकेशिन् = सूर्य : ३. ३, ६३।

१. **धामन्** = कृष्ण : १२. ४३, १५।

२. **धामन्** = विष्णु (सहस्रनाम)।

धामविद् = कृष्ण : १२. ४३, १५।

१. **धारण**, एक राजा का नाम है। उन अट्ठारह राजाओं के अन्तर्गत इसकी गणना की गई है जिसने बन्धु-बान्धवों सहित कुटुम्बीजनों तथा हितैषी सुहृदों का संहार कर डाला था (५. ७४, १६)।

२. **धारण**, एक नाग का नाम है : ५. १०३, १६।

३. **धारण** = शिव (सहस्रनाम) : १२. २८४, ५९; १४. ८, २८।

धारा, एक तीर्थ का नाम है जहाँ की यात्रा करने से सब पापों से मुक्ति मिलती है (३. ८४, २५)।

१. **धार्तराष्ट्र** (बहु० 'ष्ट्राः), मुख्यतः धृतराष्ट्र के पुत्रों के लिये प्रयुक्त हुआ है किन्तु पाँचवें से नवें सर्गों में अक्सर यह दुर्योधन के अनुगामियों का भी द्योतक है : १. १, २०१. ११५. १९२; ६२, ६; ११८, १; १२८, १५.

१६. २४. ४९; १३२, ६६. ७८; १३४, १; १३६, २९; १३८, १; १४१, ११; १५६, ७; १६२, १३; १८६, ४ (ये द्रौपदी के स्वयंवर में पधारे—यहाँ २३ धृतराष्ट्र-पुत्रों का नामोल्लेख है); १९०, ४४; २००, १६; २. ४७, ३८; ५५, ३; ६४, १; ७०, १७; ७१, २. १७; ७२, २; ७४, १; ७७, २२ (भीमसेन ने धार्तराष्ट्रों के वध की प्रतिज्ञा की). ४४. ४५ (नकुल ने भी पृथिवी को धार्तराष्ट्र-विहीन करने की प्रतिज्ञा की); ७८, २; ७९, ३२; ८०, ११. ३९; ३. १, ९; ७, १९; १२, ३. ६३. ७५; २८, ३४; ३३, १०. १६. ५२; ३५, २२; ३६, १० (दुर्योधनपुरोगमाः); ३७, २० (वधाय धार्तराष्ट्राणां); ५२, १०. १६-१८; ९४, २२; १२०, १८. २२; १५१, १०; १८३, ३४; २३५, ७; २४१, ४. ७. १०. ११. २४. २६; २४२, १. २. ९. ११; २५३, १. ४. ११. १२. १४. २७; २५४, २३; २५५, ११; २५६, १. ३. ११. १७. १८. १९; २५७, ११. १८. २५; २६२, ३; २६३, ४९; ३१०, ४०; ३१५, ४; ४. ५०, १५; ६२, १४-१५; ६४, ४; ६७, २; ५. २०, ८. १३. १५; २२, १५. ३४; २४, २. ८; २५, १२; २६, २४. २५. २७. २८; २७, १९; २९, ३६. ४२. ४९-५१; ३०, २३. २९. ४०. ४५. ४७. ४८; ३६, ७२; ३७, २१. ४५; ४८, ३. ७. ८. १०-१२. १४-१६. १८. १९. २१-२७. २९. ३१-३८. ४०-४२. ४६. ५०. ५५-५९. ६४. ६६. ८८. ९२. ९५-९७. १०१. १०८; ५९, १६; ७२, ३. ६. ७. १७. ८१. ८५; ७३, ६. ९; ७४, २२; ७५, ४; ८२, १०. ३२. ४७; ८३, २. ५३; ८९, ३. ५; ९०, ५७. ६१; ९२, ३. ८. १०. ११. २०. २५; ९३, १२. १३. २०; १२७, ११; १४२, १४; १४३, १५. १७. २०. २१. २९. ४१. ४३; १४४, १५. १६; १४५, ६. ८; १४६, ११. १५; १४७, ११; १४८, २५; १५०, १३; १५१, ४२. ४४. ४५. ४८; १५२, ५; १५३, २४; १६०, ५८. ६७; १६२, ४०; १६३, ९. ७. ३४. ३७; १६५, २२; १९४, २. ४; १९५, १. १०. ११; ६. २०, ५. ६. १०; २१, १. ३; २३, १; २५, १९. २०. २३. ३६. ३७. ४६; २६, ६; ४४, ६. १९; ४७, २०; ५२, १४; ५७, ३; ६१, ६; ६२, १९; ६४, ९. ४०. ४२; ६९, ३; ७७, ९. १४. १६. २२. ४१. ५९; ८१, २१. ३५; ८८, ४२; ९०, ७८; ९३, ८. ४३; ९४, १५; ९९, २९; १०२, २७; १०७, २९. ८८; ११३, ८; ११७, १८; १२०, ७; १२१, १; ७. ३, १७; १५, ३६; २३, ३४; ३२, ६२; ४७, १४; ४९, २२; ५१, १९; ७२, ५९; ७३, २०; ७५, ६; ७६, १; ७९, ४२; ८०, १२; ९५, २३; २०१, १४; ११०, ३८. ७२. ७६. ९०. १०३; १४२, ३१; १४५, ९१; १४८, २६. २९; १४८, ४५; १५०, ११; १५५, ४१; १७३, ५६; १७९, ४८; १८३, ४१; १८९, ५८; १९३, ३९; १९६, ९; २०१, ५; ८. १, १६; ५, ५८; ९, १७; ११, ३५; ४१, ७२; ४६, ३६; ४९, २३. ६४; ५०, ४; ५८, ५; ६०, २. ६. २०. २१. ४६. ६०. ६७. ७०. ७४. ८५. ८६. ९२; ६२, ३१. ३३; ६४, ३९; ६६, ३. ५; ६७, २२; ६९, ३; ७०, ८; ७४, २७. ३०. ३३. ३५. ३७; ७६, २; ७७, ६३. ७१. ७५. ७६; ७८, ३२. ५०; ७९, ३२; ९१, १५; ९२, ६; ९. १, ३५; ७, १०. २५. ३६. ३७; १९, ४४; २२, १७; २३, ६; २४, १९. २३. ३९. ४०. ५०; २७, ४. ११. १८. २६; २८, ४५. ६६; ३३, ३३. ४०; ५४, २९. ३१; ५९, १०; १०. १, ६६; ८, १२२; ९, ४८; ११. २५, ३९; २७, १८; १२. १, २०. ३९; १०, २; १६३, २२; १३. १, ८; ६, ४०; १४. १५, १६; ५३, १८; १५. ३, ३; ३२, ९; १८. ३, ४४। तुकी० धृतराष्ट्रज (बहु०), धृतराष्ट्रपुत्र (बहु०), धृतराष्ट्रसुत (बहु०), धृतराष्ट्रात्मज (बहु०)।

टिप्पणी : धृतराष्ट्र के १०१ पुत्रों की नाम तालिका इन स्थानों पर मिलती है : १. ६७, ९३-१०६; ११७, २-१५ :

२. धार्तराष्ट्र (धृतराष्ट्र के पुत्र) = (१) चित्रसेन; (२) दुर्योधन; (३) युयुत्सु; (४) विकर्ण :

(१) चित्रसेन : ११. १९, ११।

(२) दुर्योधन : १. २, १०२. ११८. १४७, २८५; ६१, २५; १२८, २५. ३५; १४७, ५. १०; १५०, ४; १५१, ६. ३८; १५७, १२; २. ४७, ३. १८; ६७, १७. ४६; ६८, २९; ७७, ३; ३. १०, ३२; २३, १०; २७, ४; ३०, ४१; ३३, ८६; ४१, ३७; ८६, १०; १२०, ५. ६; १८३, ३४; २४०, ८. २०; २४१, २. ११. २४; २४२, १. ९. ११; २४५, ३; २४६, १४; २४७, ५; २४८, ६; २५१, २७; २५२, ३३. ४९; २५३, ४. ११. १२. १४. २७; २५४, २३; २५५, ११. २२; २५६, १. ३. १८. १९. २१; २५७, ११. २५; ३०९, १९; ४. १३, १३; २५, ५; ३९, १७; ४८, १०; ५०, ८; ५१, २१; ६२, १५; ६५, १६; ६६, १९; ५. ४, ४; ७, २५; ८, ३२; १९, १४; २०, १३. १५; २३, १५; २४, २; २५, १२; २६, १८. २४. २८; २७, १९; २९, ३६. ४३. ५१; ३०, २३. २९. ४०. ४७. ४८; ४८, ३. ७. १०-१२. १४-१६. १८. १९. २१. २३-२७. २९. ३१-३८. ४०. ४६. ५५-५९. ६४-६६. ८८. ९५. १०८; ४९, ३१; ५७, १०. ४८; ६१, १; ६६, ८. १०; ६७, १; ७२, ३. ६. १७. ८५; ७४, २३; ८३, ५३; ९१, ५ ७. १९. २३. ३३; ९२, ३. १०; ९३, ४. १२; १२५, १८; १२८, २५. ३१; १३०, ४०; १३१, १; १४१, १७. २९. ४२. ४५. ४९; १४३, ७. १५. १७. २०. २१. २९. ४३; १४४, १५. १६; १४५, ६; १४७, ११; १४७, २५; १५१, ४४; १५२, ४; १५३, २४; १६१, ३. ६; १६२, ४०; १६३, ८-१०; १६६, १९; १६८, ३१. ३९; १९४, २. ४; १९५, १. १०; १९६, ३३; ६. १, ५. १३; २१, १; २५, २०; ४३, २५. २६. ९२. ९९; ५९, ४४; ६४ ४२; ८१, ३५; ९६, ११; ९७, २०; १०६, ३५; ११२, १३. ३२; १२१, ३६; ७. २, २२; ४, ५; १३, ९; १६, ४०. ४१; ७३, २२; ७५, ४; ७६, १; ८३, २४; ९८, ९; १००, २६; १०२, २. १७; १०३, ११; ११०, ९०. १०२; ११२, २६. ४४; १२०, १४; १४८, २६; १५१, ३४; १८१, ४; १८३, २१; १९२, ८१; १९६, २८; १९९, ३३; ८. ११, ३४; ३९, १०; ४०, ४५; ४३, ८; ४५, ४८; ४९, १२; ६०, ११; ४६. ६०. ८६. ९२; ६१,४०; ६३, २१. २६; ६६, २७. ३१. ४०; ७३, २२. ६६. ४६. ६७. ६९-७१. ८५. ८८; ८३, ४७; ८४, १५; ८६, ६; ९. १, ४; ५, २; ७,२५. ३७; २०, ३; २४, १९. २०. ३९. ४०. ५०; २७, १८. २६; २९, ७; ३०, ४९. ६६; ३१, २. ३; ३२, ४०; ३३, २०. २८. ३३. ४०; ३५, २. ९; ५४, ३१; ५६, २३. ४५; ५७, १४. २५; ५८, ३. २०; ६०, २८; ६१, ६६; ६३, ८; ६५, ३ (निपातितम्); १०. १५, १४; ११. १७, २२; २१, ९; १२. ४, ११; १२५, ५; १३. १, ८; १४. ३, १६; १५, २८; ६०, २६. ३० (निहतो राजा धार्तराष्ट्रो महारणे)।

(३) युयुत्सु : १. ६७, ९१ (वैश्यापुत्रो युयुत्सुश्च धार्तराष्ट्रः); ६७, १०६; १२. ४५, १०

(४) विकर्ण : २. ६८, २९।

३. धातराष्ट्र (वि०), अर्थात धार्तराष्ट्र का : ३. ५१, ३०; २४१, २६; ४. ६१, ३२; ५. १४३, १५. ४१; ६. १६, २१; १९, ३; ८३, २४; ९३, ४३; ११२, ३२; ७. २, २१; ९२, ३४; ८. १०, ३३; ११, २३. २४; ३७, २१; ५०, ४९; ६०, ७३. ७६; ६४, ३४; ७३, २२; ७६, १; ७८, ८; ७९, ३२।

१. धार्तराष्ट्रसुत, बहु० (°ताः) : १. ९४, ५९ (धार्तराष्ट्रसुतानां तु त्रीनेतान्प्रथितान्भुवि। प्रतीत धर्मनेत्रं च सुनेत्रं चापि भारत)।

२. धार्तराष्ट्रसुत, बहु० (°ताः) : ९. २७, १३ (धार्तराष्ट्रसुताः सर्वे हता भीमसेन माधव)।

धार्ष्टद्युम्न अथवा धार्ष्टद्युम्नि, धृष्टद्युम्न के पुत्रों का द्योतक है, जिनका कर्ण ने वध किया था (८. ८२, ९. १०)।

धावमान = शिव (सहस्रनाम)

धिषणा, एक देवी का नाम है जो स्कन्द के अभिषेक के समय अन्य देवपत्नियों के साथ उपस्थित हुई (९. ४५, १४)।

धीमत्, पुरूरवा और उर्वशी के द्वितीय पुत्र का नाम है (१. ७५, २६)।

धीरोष्णिन्, एक सनातन विश्वेदेव है (१३. ९१, ३२)।

१. धुन्धु, मधुकैटभ के पुत्र एक असुर का नाम है : ३. २०२, ३१;

२०२, १८ (मधुकैटभयोः पुत्रः). ३१; २०४, १. ४. ५ (मधुकैटभयोः पुत्रः). १४. १७. १८. २१. २२ (कुवलाश्व ने इसका वध किया). ३३ (धुन्धोर्वधात् तदाराजा कुवलाश्वो महामनाः) ४२ (धुन्धुर्नाम महादैत्यो मधुकैटभयोः सुतः)।

२. धुन्धु, एक प्राचीन राजा जिन्होंने कभी भी मांस नहीं खाया था (१३. ११५, ७५)।

धुन्धुमार (धुन्धु का वध करनेवाले) = कुवलाश्व : ३. २०१, ६. ९. १०. ३४; २०४, १४. ३४ (धुन्धोर्वधात् तदा राजा कुवलाश्वो महामनाः। धुन्धुमार इति ख्यातो नाम्नाऽप्रतिरथोऽभवत्). ४२; ७. ९४, ४२; १२. १६६, ७६ (इसने ऐलविल से एक खड्ग प्राप्त किया था जो बाद में इसके पास से काम्बोजराज के पास चला गया); १३. ६, ३९ (धुन्धुमारश्च राजर्षिः सत्रेष्वेव जरां गतः प्रीतिदायं परित्यज्य सुष्वाप स गिरिव्रजे); १४, ५. २१; १६५, ४९।

धुन्धुमारोपाख्यान, अर्थात धुन्धुवध का उपाख्यान—"महर्षि उत्तङ्क ने विष्णु की आराधना की इच्छा से अनेक वर्षों तक अत्यन्त दुष्कर तपस्या की जिससे प्रसन्न हो कर भगवान् विष्णु ने उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन दिया। विष्णु का दर्शन पाते ही उत्तङ्क ने नाना प्रकार के स्तोत्रों द्वारा उनकी स्तुति की (३. २०१, १४-२३)। विष्णु ने जब उत्तङ्क से वर माँगने के लिये कहा तब उत्तङ्क ने अपनी बुद्धि को सदा धर्म, सत्य और इन्द्रियनिग्रह में लगे रहने का वर माँगा। विष्णु ने उत्तङ्क को मनोवाञ्छित वरदान देने के बाद उनसे कहा : 'तुम्हारे हृदय में उस योगविद्या का प्रकाश होगा जिससे युक्त होकर तुम देवताओं तथा तीनों लोकों में महान कार्य सिद्ध करोगे। तुम्हारे आदेश से वृहदश्वपुत्र कुवलाश्व मेरे योगवल का आश्रय लेकर धुन्धु नामक राक्षस का वध करेंगे और तदनन्तर लोक में धुन्धुमार नाम से विख्यात होंगे।' उत्तङ्क से इस प्रकार कहकर विष्णु अन्तर्धान हो गये (३. २०१)।

"इक्ष्वाकु के देहान्त के बाद उनके धर्मात्मा पुत्र शशाद अयोध्या के राजा हुये। शशाद के वंशजों का वर्णन : शशाद→ककुत्स्थ→अनेना→पृथु→विश्वगश्व→अद्रि→युवनाश्व→श्राव→श्रावस्तक→(जिसने श्रावस्तीपुरी बसाया)→वृहदश्व→कुवलाश्व→२१,००० पुत्र। कुवलाश्व को राज्य पर अभिषिक्त करने बाद वृहदश्व तपस्या के लिये तपोवन में चले गये। उस समय द्विजश्रेष्ठ उत्तङ्क ने यह समाचार जानकर महाराज वृहदश्व को वन जाने से रोका और उनसे इस प्रकार निवेदन किया : 'राजा के लिये प्रजापालन ही श्रेष्ठ धर्म है। मेरे आश्रम के पास उज्जालक नामक बालुकामय समुद्र है जहाँ महान बल और पराक्रम से सम्पन्न एक भयंकर दानव रहता है। वह क्रूर स्वभाव वाला राक्षस धुन्धु नाम से प्रसिद्ध है तथा मधु और कैटभ का पुत्र है। वह धरती के भीतर छिप कर रहता है अतः उस राक्षस धुन्धु का नाश करने के बाद ही आपको वन में जाना चाहिये। वह राक्षस सम्पूर्ण लोकों और देवताओं के विनाश के लिये कठोर तपस्या का आश्रय लेकर पृथिवी में शयन करता है। ब्रह्मा से वर प्राप्त करके वह देवताओं, दैत्यों, राक्षसों, नागों, यक्षों, और समस्त गन्धर्वों के लिये अवध्य हो गया है अतः उस धुन्धु का वध करके आप महान् कीर्ति प्राप्त करेंगे।' इस प्रकार वृहदश्व से निवेदन करते हुये उत्तङ्क ने बताया कि बालू के भीतर छिप कर रहने वाला वह राक्षस एक वर्ष में एक बार ही जब साँस लेता है तब पर्वत, वन और कानन सहित सम्पूर्ण पृथिवी काँपने लगती है। उसके साँस की आँधी से धूल का इतना ऊँचा ववण्डर उठता है कि वह सूर्य के मार्ग को भी आच्छादित कर देता है।' धुन्धु के बल का इस प्रकार वर्णन करने के बाद उत्तङ्क ने पूर्व काल में विष्णु द्वारा प्राप्त वरदान का उल्लेख करते हुये वृहदश्व से कहा कि विष्णु उनके (वृहदश्व के) तेज में वृद्धि करेंगे अतः वह उस राक्षस का वध करें। (३. २०२)।

"उत्तङ्क के इस प्रकार आग्रह करने पर राजा वृहदश्व ने अपने पुत्र कुवलाश्व के बल की प्रशंसा करते हुये उससे ही धुन्धु वध कराने का परामर्श दिया और उत्तङ्क ने उसे स्वीकार कर लिया। तत्पश्चात वृहदश्व वन चले गये। महाराज युधिष्ठिर ने महर्षि मार्कण्डेय से धुन्धु के सम्बन्ध में और विवरण बताने के लिये कहा। मार्कण्डेय ने बताया कि जब सम्पूर्ण चराचर जगत एकार्णव जल में डूब कर नष्ट हो चुका और समस्त प्राणी कालग्रस्त हो गये तब विष्णु एकार्णव के जल में शेषनाग पर योगनिद्रा का आश्रय लेकर शयन करते थे। विष्णु की उस शय्या की लम्बाई-चौड़ाई अनेक योजनों तक विस्तृत थी तथा उनके सर पर मुकुट और कण्ठ में कौस्तुभ मणि सुशोभित हो रही थी। उस समय दिव्यस्वरूप विष्णु की नाभि से एक दिव्य कमल प्रकट हुआ। उसी कमल पर सपूर्ण लोकों के गुरु, साक्षात् पितामह ब्रह्मा प्रकट हुये जो सूर्य के समान तेजस्वी थे। ब्रह्मा जी चारों वेदों के विद्वान हैं। जरायुज आदि चतुर्विध जीव उन्हीं के स्वरूप हैं। उनके चार मुख हैं और उनका बल तथा पराक्रम महान है। ब्रह्मा के प्रकट होने के कुछ काल बाद मधु और कैटभ नामक दो पराक्रमी दानव हुये। ब्रह्मा को देखकर ये दोनों दानव उन्हें भयभीत करने लगे। भयभीत होकर ब्रह्मा ने कमल नाल को हिलाया जिससे भगवान विष्णु की निद्रा भंग हो गई। उन दैत्यों को देखकर भगवान ने उनके बल की प्रशंसा की और वर माँगने के लिये कहा। परन्तु वे दोनों दानव अत्यन्त अभिमानी थे और इसलिये उन्होंने स्वयं विष्णु को ही वर देने की इच्छा प्रकट की। तब विष्णु ने यह वर माँगा : 'तुम दोनों मेरे हाथ से मारे जाओ।' इस पर मधु-कैटभ ने कहा : 'आप इस खुले आकाश में ही हमारा वध कीजिये। हम दोनों आपके पुत्र हों।' भगवान विष्णु ने उन दैत्यों की इच्छानुसार ही कार्य करने का वचन दिया किन्तु बहुत विचार करने पर भी विष्णु को कहीं खुला आकाश दृष्टिगत नहीं हुआ। स्वर्ग और पृथिवी पर भी जब विष्णु को कहीं कोई खुली जगह दिखाई न पड़ी तब उन देवेश्वर ने अपनी दोनों जाँघों को अनावृत देखकर मधु और कैटभ के मस्तकों को उन्हीं पर रख कर तीक्ष्ण धारवाले चक्र से काट दिया (३. २०३)।

"उक्त दोनों दानवों, मधु और कैटभ का पुत्र धुन्धु है जो महान् तेजस्वी और बलपराक्रम-सम्पन्न है। धुन्धु ने एक पाँव पर खड़े होकर दीर्घ काल तक तपस्या करके ब्रह्मा से यह वर प्राप्त किया कि वह देवता, दानव, यक्ष, सर्प, गन्धर्व और राक्षसों के हाथों अवध्य रहे। इस प्रकार वर प्राप्त करने के पश्चात धुन्धु अपने पिता मधु-कैटभ की मृत्यु का प्रतिशोध लेने के लिये विष्णु के पास आया। वह गन्धर्वों सहित सम्पूर्ण देवताओं को पराजित करके उन्हें अनेक प्रकार के कष्ट देने लगा। महर्षि उत्तङ्क के आश्रम के पास श्वास लेकर वह अग्नि की चिनगारियाँ फैलाने लगा। इसी समय राजा कुवलाश्व ने अपनी सेना तथा २१,००० पुत्रों और उत्तङ्क के साथ धुन्धु वधके लिये प्रस्थान किया। उत्तङ्क के अनुरोध पर भगवान् विष्णु ने अपने तेजोमय स्वरूप से कुवालाश्व में प्रवेश किया। कुवालश्व के प्रस्थान करने पर देवलोक हर्षित हो उठा। देवगण उनपर चारों ओर से पुष्पवर्षा और देवराज इन्द्र धरती की धूल को शान्त करने के लिये जल वर्षा करने लगे। कुवलाश्व और धुन्धु का युद्ध देखने के लिये देव, गन्धर्व और महर्षि गण उपस्थित हुये। कुवलाश्व के २१,००० पुत्रों ने उस स्थान को खोदना आरम्भ किया जहाँ धुन्धु रहता था। धुन्धु के दिखाई पड़ने पर कुवलाश्व के पुत्रों ने उसे सब ओर से घेर कर उसपर आक्रमण किया। अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों के प्रहार से आहत धुन्धु क्रुद्ध हो उठा और उसने अपने मुख से प्रलयकालीन अग्नि के समान ज्वालायें उगलना आरम्भ किया। उस समय उन सम्पूर्ण कुवलाश्व-पुत्रों को धुन्धु ने अग्नि से जला कर भस्म कर दिया। अपने पुत्रों के इस प्रकार भस्म हो जाने के पश्चात महातेजस्वी कुवलाश्व ने उस दानव पर स्वयं आक्रमण किया। उस समय धुन्धु के शरीर से प्रचुर जल प्रवाहित होने लगा किन्तु योगी होने के कारण राजा कुवलाश्व ने उस जल का अपने योगबल से पान कर लिया, और पुनः जल प्रकट करके धुन्धु की मुखाग्नि को बुझा दिया। तत्पश्चात लोककल्याणार्थ राजर्षि कुवलाश्व ने ब्रह्मास्त्र से धुन्धु को दग्ध कर दिया। उस समय धुन्धु को मारने के कारण महाराज कुवलाश्व 'धुन्धुमार' के नाम से विख्यात हुये। धुन्धु वध के बाद सम्पूर्ण देवों और महर्षियों ने उपस्थित होकर कुवलाश्व को सदैव ब्राह्मणों को धन-

दान करने तथा शत्रुओं के लिये दुर्जेय होने का वर दिया। तदनन्तर ऋषियों, गन्धर्वों तथा उत्तङ्क ने भी कुवलाश्व को नाना प्रकार के आशीर्वाद दिये। पुत्रों के धुन्धु द्वारा दग्ध कर दिये जाने के बाद उस युद्ध में कुवलाश्व के तीन पुत्र, दृढाश्व, कपिलाश्व, और चन्द्राश्व ही शेष रह गये। इन्हीं पुत्रों से तेजस्वी इक्ष्वाकुवंशी नरेशों की वंश परम्परा प्रारम्भ हुई। उसी समय से महाराज कुवलाश्व 'धुन्धुमार' नाम से विख्यात हुये। इस प्रकार धुन्धु-मारोपाख्यान समाप्त हुआ। जो विष्णु के कीर्तनरूप इस पवित्र उपाख्यान का श्रवण करता है वह धर्मात्मा और पुत्रवान् होता है। जो पर्वों पर इस कथा का श्रवण करता है वह दीर्घायु और ऐश्वर्यशाली होता है। ऐसे श्रोता को रोग-व्याधि का भी कोई भय नहीं रहता (३. २०४)।"

धुरन्धर (बहु० °राः), एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ४१)।

धूतपापा, एक प्रमुख नदी का नाम है (६. ९, १८)।

धूमकेतन = शिव (सहस्रनाम)।

१. धूमकेतु = अग्नि, देखिये वस्था०।

२. धूमकेतु = सूर्य : ३. ३, २५।

३. धूमकेतु = शिव (सहस्रनाम)।

धूमपा, पितरों और ऋषियों के सम्प्रदाय का बोधक है जो दक्ष के यज्ञ में पधारे थे (१२. २८४, ८)।

धूमावती, एक तीर्थ का नाम है। यहाँ तीन रात्रियों तक उपवास करने से मनोवाञ्छित फल प्राप्त होता है (३. ८४, २२)।

धूमिनी, पुरुवंशी राजा अजमीढ की रानी का नाम है। अजमीढ ने इनके गर्भ से ऋक्ष को उत्पन्न किया था (१. ९४, ३२)।

१. धूमोर्णा, महर्षि मार्कण्डेय की पत्नी का नाम है (१३. १४६, ४)।

२. धूमोर्णा, यमराज की भार्या का नाम है (१३. १६५, ११)।

१. धूम्र, स्कन्द के सैनिक का नाम है (९. ४५, ६४)।

२. धूम्र = शिव (सहस्रनाम)। (देखिये ७. ८०, ५८ भी)।

३. धूम्र, एक ऋषि का नाम है। ये इन्द्र की सभा में विराजमान होते थे (२. ७, १७ के बाद दापा० गीप्रे० सं०)।

धूम्रा, दक्ष प्रजापति की पुत्री और धर्म की भार्या का नाम है। यह ध्रुव तथा धर की माता थी (१. ६६, १९)।

धूम्राक्ष, एक राक्षस का नाम है जिसका हनुमान ने वध किया था : ३. २८६, ५. १०. १४. १५. १८; २८८, १।

धूम्राक्षि = दुर्गा (उमा) : ६. २३, ९।

धूर्जटि = शिव : ७. २०२, २९ (धूम्ररूपं च यत्तस्य धूर्जटस्तेन चोच्यते) १३. १६१, ९।

१. धूर्त, एक प्राचीन नरेश का नाम है : १. १, २३८।

२. धूर्त = शिव (सहस्रनाम्)।

धूर्तक, कौरव्य कुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है जो जनमेजय के सर्पसत्र में भस्म हो गया (१. ५७, १३)।

धृत = विष्णु (सहस्रनाम)।

धृतकेतु = देखिये धृष्टकेतु।

१. धृतराष्ट्र, विचित्रवीर्य की विधवा अम्बिका के गर्भ से व्यास द्वारा उत्पन्न हुये थे : १. १, ९५. ११०. १३७. १३८. १४२. २१९. २२०. २५२; २, १०१. १३८. १५९. २२७. २२८. २६२. ३१४. ३१६. ३१७. ३४६; ६०,६ (व्यास के पुत्र); ६१, १७. २१.३२; ६३, ११३ (व्यास के पुत्र). ११८ (इनके सौ पुत्रों में से यहाँ ग्यारह का नामोल्लेख है); ६७, ८४ (अरिष्टा के पुत्र गन्धर्वराज हंस का ही व्यासपुत्र धृतराष्ट्र के रूप में पुनर्जन्म हुआ था। अपनी माता की एक त्रुटि तथा व्यास के कोप के कारण ही धृतराष्ट्र दृष्टिहीन हो गये थे). ९२ (इनके १०१ पुत्रों तथा एक पुत्री का नामोल्लेख); ९५, ५६ (व्यास के पुत्र). ५७ (सौ पुत्रों के पिता). ७०; १०६, २८ (व्यास ने विचित्रवीर्य की विधवाओं से पुत्र उत्पन्न किये : अम्बिका से धृतराष्ट्र और अम्बालिका से पाण्डु उत्पन्न हुये। जब व्यास समागम के लिये अम्बिका के पास गये तब उसने भय से अपनी आँखें ढँक ली इसी कारण उसने नेत्रहीन पुत्र धृतराष्ट्र को जन्म दिया। बाद में व्यास ने अम्बिका की एक दासी के गर्भ से विदुर को उत्पन्न किया); १०९, १०. २१. २५ (धृतराष्ट्र के नेत्रहीन होने के कारण पाण्डु को राजा बनाया गया); ११०, १२. १३. १६ (सुबल पुत्री गान्धारी के साथ धृतराष्ट्र का विवाह हुआ); ११३, २२; ११४, १. ५. ११; ११५, १. ५. ९. ११. २७. २९. ४०. ४२. ४३ (धृतराष्ट्र ने गान्धारी से १०० पुत्र तथा एक वेश्या से युयुत्सु को उत्पन्न किया); ११६, १ (इनके एक दुःशला नामक पुत्री भी उत्पन्न हुई); ११७, १ (इनके १०१ पुत्रों की गणना). १७ (इन्होंने अपने पुत्रों का विवाह किया). १८ (अपनी पुत्री दुःशला का सिन्धुराज जयद्रथ के साथ विवाह किया); ११९, ४४; १२६, ६ (पाण्डु की मृत्यु के बाद उनके पाँचों पुत्रों को हस्तिनापुर लाये). १७; १२७, १; १३४, १. ४. ३५; १३५, १४. १७; १३९, १ (इन्होंने युधिष्ठिर को युवराज बनाया). २७; १४०, १ (पाण्डु के वीर पुत्रों को महान्, तेजस्वी और बल में श्रेष्ठ जान कर धृतराष्ट्र व्याकुल और चिन्तित हो उठे). २. ३. २४ (कणिक के साथ इनका संवाद). ९३; १४१, १. २५. २९. २८. ३०; १४२, २. ३. ५. ६. १६; १४३, २. ४. ११. १५ (इन्होंने पाण्डवों को वारणावत जाने के लिये कहा); १४४, ६; १४५, २. ७. ९. १२; १४८, १५; १५०, ४. ६. ९. १०. १५ (पाण्डवों को भस्म होकर मृत हुआ जान कर उनका तर्पण किया); १५१, ३६; १९१, २४; १९५, १६ (धृतराष्ट्र नरेश्वरम्); २००, ७. १७. २३. २७; २०१, १; २०२, २२. २५; २०३, १.२; २०४, १; २०६, १. ७. १६. २०. २६ (ये पाण्डवों को आधा राज्य देने पर सहमत हुये); २०७, १२. २१-२४; २०८, ५; २२-२, १; २. ३३, ५५; ३४, १. ५ (ये युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय पधारे); ३५, ८; ४५, ४८; ४७, २०. ४०; ४८, २३; ४९, ३. ६. ४२. ४३. ४७. ५०. ५२. ५५; ५०, ३५ (इन्होंने द्यूत के लिये पाण्डवों को आमन्त्रित करने के हेतु विदुर को भेजा, किन्तु साथ ही दुर्योधन को द्यूत का आयोजन न करने के लिये भी समझाया); ५४, १; ५६, ६.-११. १५. १७. २१; ५७, १.४ (विदुर को युधिष्ठिर के पास भेजा); ५८, १. ४. ९. १२. १५. २१. २२. २७; ६०, १; ६३, १; ६५, ४३; ६६, ५; १०. ११; ६७, १. ४; ६८, ११. १३. ३१. ४९. ५४. ५७; ७०, २; ७१, २२. २५-२७. ३१. ३३; ७२, २; ७३ , २ (जब युधिष्ठिर भ्राताओं सहित द्रौपदी को भी जुए में हार गये तब इन्होंने सब पाण्डवों को पुनः मुक्त कर दिया); ७४, २. ६. २४. २७ (इन्होंने युधिष्ठिर को पुनः जुए के लिये बुलाया); ७५, १; ७६, १; ७७, १४. ४३. ४६; ७८, २; ७९, ३४. ३६; ८०, १. २. ९. ३२. ५१; ८१, १. २. ४. १८ (सञ्जय के साथ इनका संवाद); ३. ४, २. १८. २२; ५, ११-१३. १६-१८; ६, १. १६. १९. २५; ७, १. ३; ८, १; ९, १; १०, १. ८. ३५; ११, १; १२, २; ३४, ३. ७. ८; ३५, ३०; ३७, ६; ४८, १. ३; ४९, १४; ५०, १; ५१, २. ४५; ८६, ८; ९२, २२; १७४, १४; १७९, ३४; २३७, १; २३८, ३; २३९, १. २. ३. ६. २२ (इन्होंने दुर्योधनादि को घोषयात्रा की स्वीकृति दी); २४३, ७; २५४, २८. ३४. ३५; २५५, १४; २५६, ५. २१; ३०९, १; ५. १, १६. २१; ३, १९. २२; ४, २. २५. २६; ५, ६; ६, ५. ८. १४; २०, १. ४-६; २१, १८; २२, १. ३८ (सञ्जय को पाण्डवों के पास भेजा); २३, १. ४. ९. १६. १८. २०. २८; २४, ३. ९; २५, १. ४; २६, ६. ११. १२. १३. १५. १९. २०; २९, १. ३. ३२. ३३. ३८. ५३. ५७; ३०, ९. १७. ४०; ३१, ४; ३२, १. ३. ६. १०. ३२; ३३, १. २. ३. ५. ७. ९. १५. १६. १०१; ३४, १. ८४; ३५, १; ३६, २२. ४९. ६०; ३७, ९; ३९, १. ८. ९. ८४; ४०, ३०; ४१, १. २. ४. ७; ४२, १. २. १७. १९. २२. २६; ४३, १. ३. ११. १४. ४१; ४४, १. ३. ५. २५; ४७, ३. ८. १७; ४८, १. ५३; ४९, ३२. ३३. ४३; ५०, १. ९. १३. १४; ५१, १; ५२, १; ५३, १; ५५, ९. १६; ५७, १. २६. ४३; ५८, १. १९; ५९, १. १८; ६४, १४. २७; ६५,

१; ६६, १. ४; ६७, ४. १०; ६९, १. ४. ६. ८. ११. १६; ७०, १; ७१, १; ७२, ७. ९१-१. ७४. ७५; ७३, ३४; ७७, १५; ७८, २; ८०, १७; ८२, ५. ३०; ८३, ५. ४६; ८५, १. ११. १७; ८६, १; ८८, १६, १७. १९; ८९, ११. १५. १८. १९. २१; ९०, ५२; ९१, १५; ९२, २३; ९४, ८. १५. ३७. ३८; ९५, २; १२४, १. १६. ६०; १२५, ५. २२; १२६, १; १२७, २३; १२८, २६; १२९, १. ६. ७. ११. १४. १६; १३०, ४. ९. १३. १८. २४. ३०. ३३. ४०; १३१, १७. १९-२१. ३१. ३६. ३८. ४०; १४०, १; १४१, १३. ५०; १४६, १८; १४७, ८; १४८, ४. ७. ८. ११. २२. २५. ३१. ३६; १४९, १; १५०, १. ७. १५; १५९, २ (सञ्जय ने धृतराष्ट्र को महाभारत युद्ध का विवरण सुनाना आरम्भ किया); १६२, ३२. ३३; १६५, १; १९६, १३; ६. २, ७. १५; ३, ४७. ५०. ५९. ६०. ६४; ४, १; ५, १; ६, १; ७, १; ८, १. १९; ९, १; १०, १; ११, १. १२. २०; १२, ३८; १३, २; १४, १; १९, १. २२; २०, १; २४, १; २५, १; ३५, २६; ४३, ५; ४४, १; ४८, १; ४९, १; ५२, १; ५३, १; ५४; १; ५९, १; ६२, १; ६५, १; ७६, १; ८३, १; ८९, १; ९१, १; ९६, ३; १०१, १; १०२, १; १०३, ४०; १०८, १. २४; १०९, १; ११५, १; १२०, १; ७. १, २. ५. ७. ९. ४८. ४९; ९, १; १०, १. ७; ११, १; १५, १; २२, १; २३, १; २४, १; २६, १; २९, १; ३१, १, ३३, २२; ३४, ११; ३८, १; ३९, १; ४०, ४; ४२, १. १०; ४३, १; ४७, १; ७९, १५; ८५, १; ९०, १; ९८, १; १००, २६; १०५, १; १०६, १; ११०, १; ११४, १; १२१, १; १२४, १. २६; १२९, १; १३१, ३; १३२, १; १३३, १; १३५, १; १३८, १; १४०, १; १४४, १; १४५, १; १४७, १. ३७. ७८; १४८, १; १५१, १. १९; १५४, १; १५५, १; १५९, ४८; १६३, ८; १६४, १०; १७५, १; १७९, २०; १८२, १. १४. १७; १८३, १. १०; १८५, ३३; १९४, १; १९६, ७. ४६; १९८, १; २००, ३२; २०१, ८; २०२, १; ८. १, १७; २, २. १०. २५; ४, १; ५, १; ६, १; ७, १. २४. २५. २८; ८, ७. ९. १०; ९, २. ३२. ३१; ११, १; १६, १; २०, १; २१, १; २९, १; ३१, १. १७; ४०, ५३; ४५, ३. ४; ४६, ५; ४७, १; ४८, १; ५१, १; ६०, १५; ६१, १; ६६, २६; ७३, ८५; ७४, ९. १०. २२. ३७; ७५, १; ७८, १; ८३, ४८; ९३, १; ९६, ५४; ९, १. ३९. ४३. ५१; २, १. ३. ५४; ५६; ४, ४९; ८, १३. ३५; १९, १५; २९, २०; ३०, १; ३२, १; ३३, २४. २८. ३६. ४३; ३५, ५. ६; ५५, १. २; ५६, १. २९; ५९, ११. ३०; ६०, १; ६१, १; ६३, ३५. ३७. ३९. ५८. ७०. ७४. ७६. (दुर्योधन वध के पश्चात श्रीकृष्ण तथा व्यास ने इन्हें सान्त्वना दी); ६४, १; १०. १, ५; २, ३२; ६, १; ८, १. १५२ (सञ्जय ने युद्ध का वर्णन समाप्त किया); ११. १, १. ४. १० (सञ्जय ने इन्हें सान्त्वना दी); ३, १; ४, १; ५, १; ६, १; ७, १ (विदुर के साथ इनका संवाद); ८, ५. ११. १३. २६. (धृतराष्ट्रस्य पुत्राणां यस्तु ज्येष्ठः शतस्य वै). ५०. ५३ (व्यास ने इन्हें सान्त्वना दी); ९, १. ४; ११, १९; १२, २३ (इन्होंने भीमसेन की लौह प्रतिमा को दबा कर तोड़ दिया); १३, १२; १४, १. १५; १६, ९. ५९; १७, ९; २६, ७. ११. १८. २१. ४४; १२२. ७, २७. ३५; ३७, ३०; ४०, ५. ६. १६; ४१, ४. १६; ४२, २. ९; ४४, ७; ४५, ११; ५४, ५; १२४, ४. ७. ८. १४. १९. ६५. ७०. ७१ (दुर्योधन को शील विषयक उपदेश); १३. १११, ७; १४८; ६३; १६७, ९. २१. २९. ३६. ४८; १६८, १८; १४. १, २. ७; २, १; १४, १६. १७; ५२, १८. २५. २६. २७. २९. ३२; ५३, १२; ६३, २३. २४; ६६, ६; ७१, ५. ६; ७२, २६; ७८, ४२; ८४, २३; ८७, २४; ८८, ६; १५. १, १. ४. ५. ११. १५. १९. २०. २७; २, ४. ६. ११. १७. १८. २५. २७. ३०; ३, ३.-६. ९. १५. १६. ५६. ५८. ६९. ७५. ७९. ८६. ८७; ४, १; ५, १; ६, १, ७; ८, ८. १५. २४; ९, १; १०, २. ८. ९. ५१; ११, १. ३. ११. २१; १२, १; १३, १. १५; १४, १. २४; १५, १. ९; १६. ५. ८; १८, ४. १२. १६; १९, १४; २०, ४. २२. २५. ३१. ३३. ३८ (गान्धारी सहित धृतराष्ट्र वन में चले गये; नारद ने भविष्यवाणी की कि मृत्यु के बाद धृतराष्ट्र कुबेर के लोक में चले जायेंगे); २२, ८. १९; २३, ५. १७; २४, ३; २६, १. १६; २७, ४. ६. १६. २४ (पाण्डव गण वन में इनके पास आये) २८, २; २९, १. १०. ३९; ३१, ८ (ये धृतराष्ट्र नामक एक गन्धर्वराज के अवतार थे). २१; ३२, २. ११. १७. २१ (इन्होंने अपने मृत पुत्रों को देखा); ३५, ३; ३६, १. ३. ५. ६; ३७, ६. ४० (वन में लगी अग्नि में गान्धारी और कुन्ती सहित धृतराष्ट्र भी भस्म होकर मृत्यु को प्राप्त हुये); ३९, १७. २५ (इनकी अन्त्येष्टि); १८. २, ४५ (धृतराष्ट्रस्य पुत्रः सुयोधनः); ५, १. १४ (इन्होंने धनेश्वर, अर्थात कुबेर का लोक प्राप्त किया)।

तुकी० धृतराष्ट्र के निम्नलिखित पर्याय भी :—

अम्बिकासुत (अम्बिका के पुत्र) : १. २, १४५; ६१, १८; १४३, ६; १५०, १५; २. ५०, ६; ८०, १; ३. ६, १६; १३, १०; ४८, २; ९२, २६; ६. ३, ५९; ८. १, १८; ४, १; ५, १; ७, २५. २८; ८, ९; ९६, ५४; ९. २, १. ५४; ६२, ४४; १५. १, १८; २, १. १६. २६; ३, ५८; ५, ७; ११, १; १४, १८; १५, १; १८, ४।

आजमीढ — देखिये वस्था०।

आम्बिकेय : ३. ४, १; ५, ११. १४; १३, २; ५. २३, ४; ३३, १२२; ३७, ६४; ७. १, ७।

कुरुकुलश्रेष्ठ, कुरुकुलोद्वह, कुरुनन्दन, कुरुपुङ्गव, कुरुप्रवीर, कुरुमुख्य, कुरुराज, कुरुवंशविवर्धन, कुरुवीर, कुरुवृद्ध, कुरुवृद्धवर्य, कुरुशार्दूल, कुरुश्रेष्ठ, कुरुसत्तम, कुरूद्वह, कौरव, कौरवराज, कौरवेन्द्र, कौरव्य, कौरवश्रेष्ठ; भरतर्षभ, भरतशार्दूल, भरतश्रेष्ठ, भरतसत्तम, भारत — देखिये सभी वस्था०।

वैचित्रवीर्य (विचित्रवीर्य के पुत्र) : १. २, २२५; २. ६४, १९; ७४, ६; ३. ९, ४; १३, ३; २३६, ४. ७; ५. २, ५. १२; २३, ९; ३२, ७; ३७, १; ६२, १. १८; ६९, १३; ८८, ७; ८९, १२; ६. २, ३; ३, ६३; ८. ३७, २६; ९. ४, ४७; ११. २, १; ३, १०; १५. २, १८; १५, ४; २६, ३४; ३८, २; ३९, १।

२. धृतराष्ट्र — कश्यप और कद्रू से उत्पन्न एक नाग का नाम है : १. ३, १८; ३५, १३; ५७, १४; २. ९, ९ (वरुण की सभा में उपस्थित); ४. २, १७ (धृतराष्ट्रश्च नागानां हस्तिष्वैरावणो वरः); ५. १०३, १५; ७. ६९, २२ (जब नागों ने पृथिवी का दोहन किया तब धृतराष्ट्र दोग्धा बना); ८. ३४, २८ (इसे शिव के रथ के ईषादण्ड में स्थान दिया गया था); १६. ४, १५।

३. धृतराष्ट्र, एक गन्धर्व का नाम है जो कश्यप की पत्नी मुनि का पुत्र था) १. ६५, ४२; १२३, ५५ (उन देवगन्धर्वों में यह भी एक था जो अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उपस्थित थे); १४. १०, २. ३. ४. ९; १५. ३१, ८ (यह धृतराष्ट्र वैचित्रवीर्य के रूप में अवतरित हुआ था); १८. ४, १५। तुकी० गन्धर्व, गन्धर्वराज्, गन्धर्वराज, गन्धर्वराजन् भी।

४. धृतराष्ट्र, भरतवंशी महाराज कुरु के पौत्र एवं जनमेजय के प्रथम पुत्र का नाम है (१. ९५, ५६); यह कुण्डिक का पिता था (१. ९५, ५७)।

५. धृतराष्ट्र (वैचित्रवीर्यिणः) = १. धृतराष्ट्र : ९. ४१, २. ७. ११. १२. १४. २८।

६. धृतराष्ट्र, एक राजा का नाम है : १३. १०२, ६. ७. ११. १३. १५. १७. १९. २१. २२. २४. २७. २८. ३०. ३१. ३३. ३४. ३६. ३७. ३९. ४१. ४३. ४८. ५२. ५३ (धृतराष्ट्र के रूप में इन्द्र ने गौतम की परीक्षा ली)।

धृतराष्ट्र बहु० (°ष्ट्राः) : २. ८, २३ (यम की सभा में उपस्थित धृतराष्ट्रों का वर्णन)।

धृतराष्ट्र बहु० (°ष्ट्राः) : २. ८, २३ (धृतराष्ट्राश्चैकशतमशीतिः जनमेजयाः)।

१. धृतराष्ट्रज (धृतराष्ट्र का पुत्र) = दुःशासन : २. ६८, ४९. ५०।

२. धृतराष्ट्रज (धृतराष्ट्र का पुत्र) = दुर्योधनः १. ६१, १०; २. ६७, ३०; ४. २५, ७; ५. ५, ८; १४७, ५. ६. ९. १५; ७. १५८, १६; ९. २७, ११; ३३, २८; १४. ५२, १८।

३. धृतराष्ट्रज (धृतराष्ट्र का पुत्र) = विकर्ण : २. ६८, ११. ३१; ४. ६१, ४१।

४. धृतराष्ट्रज = युयुत्सु : १४. ६३, २५।

धृतराष्ट्रज (बहु० °जाः) : १. १६२, १०; २. ७७, ४३; ३. २, १३; १२, ३५; २४१, १८; २४३, २१; २४४, १९; ४. ४३, ९६।

धृतराष्ट्रजा (धृतराष्ट्र की पुत्री) = दुःशला : १४. ७८, २२. ३३।

१. धृतराष्ट्रपुत्र = दुर्योधन : ४. ६५, १; ६६, १. ५. २, २. १३; ६३, १।

२. धृतराष्ट्रपुत्र (बहु० °त्राः) : ३. १२०, १९; ५. १, १५. २१; २, ६; ६३, ७। तुक्री० धार्तराष्ट्र (बहु०)।

धृतराष्ट्र-पुत्रानाम-कथन (धृतराष्ट्र के पुत्रों के नाम की गणना)— इस अध्याय में जन्म क्रम से धृतराष्ट्र के पुत्रों के नामों का उल्लेख है। ये सभी पुत्र अतिरथी, शूरवीर तथा अस्त्रविद्या के मर्मज्ञ थे। राजा धृतराष्ट्र ने समय पर भलीभाँति देख परख कर अपने सभी पुत्रों का यथा योग्य स्त्रियों के साथ विवाह कर दिया। अपनी एक मात्र पुत्री दुःशला का विवाह उन्होंने सिन्धुराज जयद्रथ के साथ किया (१. ११७)।

धृतराष्ट्र-विवाह-"भीष्म ने यदुवंशी शूरसेन की कन्या पृथा, गान्धारराज सुबल की पुत्री गान्धारी तथा मद्र देश की कन्या माद्री को अपने पौत्रों के लिये चुना। भीष्म ने यह भी सुन रखा था कि गान्धारी भगवान् शिव से अपने लिये सौ पुत्रों का वरदान प्राप्त कर चुकी है। तदनन्तर भीष्म ने जब गान्धारराज सुबल के पास धृतराष्ट्र के विवाह का प्रस्ताव भेजा तब उनके नेत्रहीन होने के कारण गान्धारराज चिन्तित हुये, परन्तु धृतराष्ट्र के उच्च कुलको ध्यान में रख कर उन्होंने अन्ततः विवाह की स्वीकृति दे दी। गन्धारी ने जब यह सुना कि उसके पिता उसका विवाह एक नेत्रहीन व्यक्ति से कर रहे हैं तब उसने पतिव्रत धर्म के उच्चादर्श को ध्यान में रख कर रेशमी वस्त्र से अपनी भी आँखों पर पट्टी बाँध ली। तदनन्तर एक दिन गान्धार राजकुमार शकुनि अपनी बहन गान्धारी को साथ लेकर कौरवों के यहाँ आये और विधिपूर्वक धृतराष्ट्र के साथ उसका विवाह करने के बाद अपनी राजधानी लौट आये। अपने शील और स्वभाव के कारण शीघ्र ही गान्धारी ने समस्त कौरवों को प्रसन्न कर लिया (१. ११०)"

१. धृतराष्ट्र-सुत = दुर्योधनः १. ११५, २७; ३. २४०, २६. ३१; ५. ७, ३२; १४३, ३; ८. ३७, ३७।

२. धृतराष्ट्र-सुत = युयुत्सु : १. ११५, ४।

३. धृतराष्ट्र-सुत, बहु० (°ताः); १. ९४, ५९; ३. २४४, १८; २४५, १०; ५. ५, १५; ८. ७४, २७; ९. २७, १३; ६०, ३६; १५. २, २५। तुक्री० धार्तराष्ट्र (बहु०)।

१. धृतराष्ट्रसूनु = दुर्योधन : ८. ८९, १०।

२. धृतराष्ट्रसूनु (बहु० °नवः) : ८. ३७, ३८।

१. धृतराष्ट्रात्मज = दुर्योधन : २. ५०, ३५; ३. ७, १; ४. ५५, ४९; ५. ७, ४; १५६, २६; ९. ३०, ३३।

२. धृतराष्ट्रात्मज (बहु० °जाः) १. १२४, १; १३०, २३; ४. ६१, ४५; १८. ५, २१ (मृत्यु के पश्चात सभी धृतराष्ट्र पुत्र यातुधान हो गये)।

धृतराष्ट्री, ताम्रा की पुत्री का नाम है। इसने सभी प्रकार के हंसों, कलहंसों, तथा चक्रवाकों को जन्म दिया (१. ६६, ५६. ५८)।

धृतवती, एक नदी का नाम है (६. ९, २३. ३१)।

धृतवर्मन्, त्रिगर्तराज सूर्यवर्मा और केतुवर्मा के भ्राता थे। इन्होंने सूर्यवर्मा के पराजित होने तथा केतुवर्मा के हत हो जाने पर स्वयं अर्जुन के साथ युद्ध किया। इनके बाण चलाने के कौशल को देख कर अर्जुन ने मन ही मन इनकी प्रशंसा की। अर्जुन द्वारा अठारह त्रिगर्त वीरों के मारे जाने पर इन्होंने पराजय स्वीकार कर लिया और अर्जुन की शरण में आये (१४. ७४, १६. १७. १९. २१. २४. २८)।

धृतसेन, कौरव पक्ष के योद्धा का नाम है (९. ६, ३)।

धृतात्मन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

धृतायुध, एक कौरव योद्धा का नाम है : ८. ७, २०।

धृताशिस् = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. धृति, दक्ष प्रजापति की एक पुत्री का नाम है जो धर्म की पत्नी थी : १. ६६, १४; ६७, ६० (सिद्धि और धृति ने ही क्रमशः कुन्ती और माद्री के रूप में अवतार लिया); ५. ११७, १५; ७. ५५, १०; ८. ३४, ३१ (चर्म के रूप में यह शिव के रथ का ऊपरी आवरण बनी); ९. ४६, ६४।

२. धृति = शिव (सहस्रनाम)।

३. धृति एक विश्वेदेव है : १३. ९१, ३०।

१. धृतिमत्, एक अग्नि हैं जिनके लिये दर्श तथा पौर्णमास यागों में हविष्य समर्पण का विधान है। ये अङ्गिरा-गोत्रीय माने गये हैं, और मनु के तीसरे पुत्र हैं (३. २२१, १२)।

२. धृतिमत्, कुशद्वीप के पाँचवें वर्ष का नाम है; ६. १२, १३।

३. धृतिमत् = शिव (सहस्रनाम)।

धृतिमती, एक नदी का नाम है : ६. ९, ३१।

१. धृष्टकेतु, एक प्राचीन नरेश का नाम है। सञ्जय ने प्राचीन नरेशों की गणना कराते समय इनका भी उल्लेख किया (१. १, २३७)।

२. धृष्टकेतु, शिशुपाल के पुत्र चेदिराज का नाम है : १. ६७, ७ (यह अनुह्लाद नामक असुर का अवतार था); २. ४५, ३६ (शिशुपाल के वध के बाद युधिष्ठिर ने चेदिदेश के सिंहासन पर शिशुपाल के इस पुत्र को अभिषिक्त किया); ३. १२, २ (यह वन में पाण्डवों के पास आया); २२, ५ (यह नकुल की पत्नी और अपनी बहन करेणुमती को लेकर अपनी शुक्तिमती नामक नगरी लौट आया); ५१, १७ (वन में पाण्डवों के पास आया था); ५. ४, ८. २० (उन राजाओं में यह भी एक था जिनके पास पाण्डवों ने निमन्त्रण भेजा); १९, ७ (यह एक अक्षौहिणी सेना लेकर युधिष्ठिर के पास आया); ५०, ३२. ४४ (यह युधिष्ठिर के मित्र राजाओं में से था); ५५, ३; ५७, ८ (एक अक्षौहिणी सेना के साथ पाण्डव पक्ष में सम्मिलित हुआ). ३१; ८०, १४; ८३, ३१; १५१, ६३. ६७; १५७, ११ (इसने युधिष्ठिर की सेना के एक भाग का नेतृत्व किया); १६२, १५; १६४, ६ (शल्य से युद्ध किया); १७१, ८; १९६, २. २३; ६. १९, १५. २१; २५, ५; ४५, ३८. ३९ (बाह्लीकों से युद्ध किया); ४८, १०१; ५६, १३ (यह अर्धचन्द्रव्यूह के दाहिने सींग पर स्थित हुआ); ७२, ९; ७५, १०; ७७, ५८; ७९, २१; ८१, ३१ (भूरिश्रवा से युद्ध किया); ८४, ३५. ३७. ३९; ८९, १८; १०८, ९ (यह पाण्डव-सेना के पृष्ठ भाग में स्थित हुआ); ११५, २७ (पौरव से युद्ध किया); ११६, १३-१५. २२. २६; ११८, ३९; ११९, ८; ७. ८, ५; १०, ४३ (यह चेदियों को छोड़कर अकेले ही पाण्डवों के साथ हुआ); १४, ३३. ३४ (कृप से युद्ध किया). ८३; २३, १४. २२ (इसने विराट के साथ होकर द्रोण के विरुद्ध युद्ध किया – इसके रथाश्वों का वर्णन); २६, ५३. ६०; ३५, ३; ४०, २०; ४२, ४; ८३, ५; १०६, ९; १०७, ९. १४ (वीरधन्वा का वध किया); १११, ४६; १२५, २६. ३५. ३९ (द्रोण ने इसका वध किया); ८. ६, ३० (मारे गये राजाओं में इसका उल्लेख); ११. २५, २०. २३; २६, ३२ (इसका शवदाह किया गया); १२. २७, २; १५. १, २४; ३२, ११ (उन मृत राजाओं में यह भी एक था जो व्यास के आवाहन पर गङ्गा से प्रकट हुये थे); १८. १, २५; ५, २. १५ (मृत्यु के उपरान्त यह भी देवों में प्रविष्ट हो गया)।

तुक्री० इसके निम्नलिखित पर्याय :—

चेदिज, चेदिप, चेदिपति, चेदिपुङ्गव, चेदिराज्, चेदिराज, चैद्यः शिशुपालसुतः शिशुपालस्यात्मजः (८. ४९, ३४); शिशुपालात्मज, शिशुपालि, दशार्हपुत्रज (११. २५, २४)—देखिये सभी वस्था०।

धृष्टद्युम्न, पाञ्चालराज द्रुपद के पुत्र और द्रौपदी (कृष्णा) के भ्राता

का नाम है : १. १, २०१; २, १०९. १५४. २२४. ३००. ३०३; ६३, १०८ (यह यज्ञाग्नि से उत्पन्न हुआ); ६७, १२६ (यह अग्नि के अंश से उत्पन्न हुआ); १६५, ८ (एक ब्राह्मण ने इसकी उत्पत्ति का पाण्डवों से वर्णन किया). १० (द्रुपदपुत्रस्य धृष्टद्युम्नस्य पावकात्······सम्भवः); १६७, ५३ (द्रोण का वध कर सकने वाला पुत्र प्राप्त करने की इच्छा से द्रुपद ने एक यज्ञ कराया। उस यज्ञ की अग्नि से जो पुत्र उत्पन्न हुआ उसी का नाम धृष्टद्युम्न रक्खा गया। इसके नाम की व्युत्पत्ति : धृष्टत्वादत्यमर्पित्वाद्द्युम्नाद्युत्सं-भवादपि, धृष्टद्युम्नः कुमारोऽयं द्रुपदस्य भवत्विति). ५५; १८४, ८; १८५, ३३; १८६, १; १९२, १. १३. १४ (इसकी बहन द्रौपदी का स्वयंवर); १९३, १. २; १९५, ३२; १९६, १०. २२ (इसकी बहन का पाँचो पाण्डवों के साथ विवाह हुआ); २००, १५; २०४, ५; २०५, २१; २. ४५, ४७; ५३, १९ (युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के अवसर पर उपस्थित था); ८०, ४३. ४४. ४८ (धृष्टद्युम्नो द्रोणमृत्युरिति विप्रथितं वचः); ३. १२, ४९. ६१. १३४; २२, ४९ (जब पाण्डव वनवास के लिये गये तब यह अपनी बहन द्रौपदी के पाँचों पुत्रों को अपनी पुरी में ले गया); २७, ३५; ३१, ३२; ५१, १७ (काम्यक वन में पाण्डवों के पास आया). २९. ३२. ३५; ४. ७२, १८ (उत्तरा के साथ अभिमन्यु के विवाह के अवसर पर यह भी उपस्थित था); ५. ३, १७; २२, १७; २५, ३; ४८, ९. ४१; ५०, ९. १६ (यह पाण्डवों का एक प्रमुख महारथी योद्धा था); ५७, ४ (दशभिस्तनयैर्वृतः सत्यजित्प्रमुखैर्वीरैर्धृष्टद्युम्नपुरोगमैः). ११ (यो वेद मानुषं व्यूहं दैवं गान्धर्व-मासुरम्। स तत्र सेनाप्रमुखे धृष्टद्युम्नो महारथः). २०. ३१. ४७. ५७; ६५, ६; ८०, १३; ८२, २१; ८३, ३२; १२६, ७ (पार्षतः); १२९, ४९; १४१, २५. ४४ (वैतानिके कर्ममुखे जातो यत्कृष्ण पावकात्); १५१, ४ (एक अक्षौहिणी सेना का सेनापति). २५. २७. ४६. ४९ (युधिष्ठिर इसे अपना प्रधान सेनापति नियुक्ति करेंगे). ५५. ६५; १५२, ६; १५३, ६; १५७, ११. १३ (इसे युधिष्ठिर की सेना का सर्वसेनापति नियुक्त किया गया); १६२, १४. ४०; १६३, ४५. ५३; १६४, १. ३. ४. ११ (इसने द्रोण को अपने समान वीर माना); १७१, ४. ७. २४; १९२, ६१ (द्रोण ने इसे धनुर्वेद की शिक्षा दी थी); १९३, ३; १९४, १८; १९६, १. ८. १२; ६. १६, २४. २५; १९, १५. १८. २७; २२, ३; २५, १७; ४३, १०४; ४४, १८; ४५, ३१ (इसने द्रोण पर आक्रमण किया); ४७, ३० (इसने भीष्म पर आक्रमण किया). ६७ (भीष्म ने इसे बाणों से बींध दिया); ४८, १००. ११०; ४९, १९; ५०, २८. ३०. ३१. ३६. ४९; ५१, २७; ५२, ८ (भीष्म ने इसे बाणों से आहत किया). २९ (इसने द्रोण पर आक्रमण किया); ५३, ५-८. ११. १३. १६. २२. ३४. ४० (इसने द्रोण से युद्ध किया; भीमसेन ने इसकी रक्षा की); ५४, ९९. १०० (इसने भीमसेन की रक्षा की). १०७ (इसने भीष्म पर आक्रमण किया). ११८-१२०; ५५, ५ (अश्वत्थामा से युद्ध किया); ५६, १० (अर्जुन के साथ इसने अर्धचन्द्र व्यूह की रचना की). १४; ६१, २७ सांयमनि के पुत्र का वध किया); ६२, ८. ११. १३ (शल्य से युद्ध किया). १८. २५ (दुर्योधन ने इसे बाणों से बींध दिया). ४०. ४५; ६३, ९; ६९, ८ (श्येन व्यूह के नेत्र स्थान पर यह स्थित हुआ); ७१, २३ (कृप और कृतवर्मा ने इस पर आक्रमण किया); ७२, १० (द्रोण के साथ युद्ध). ३३; ७५, ४. ५ (मकर व्यूह की रचना की). ९; ७७, १७-१९. २१. २६ (भीमसेन की रक्षा की). ५२ (द्रोण के विरुद्ध इसने प्रमोहनास्त्र का प्रयोग किया). ६०. ६२; ७९, ६४; ८२, ४८-५० (दुर्योधन से युद्ध); ८६, २९. ५१; ८७, ३९; ८९, १६ (भीष्म पर आक्रमण किया); ९६, ४३; ९८, ५१; ९९, १०; १०३, ४. ५. ८. १४; १०६, ३. ४ (भीष्म के साथ युद्ध); १०८, ६; १०९, २१; ११०, ४ (भीष्म पर आक्रमण). ९. २०; १११, ४० (कृतवर्मा से युद्ध); ११२, ३७; ११४, ३९. ४५; ११५, १७; ११८, ३९. ४५; ११९, १०. २०; ७. ७, ४८; ८, २; ९, २७ (द्रोण का वध किया था); १०, ६१ (एक स्त्री के अपहरण का प्रयास कर रहे काशिराज के पुत्र को इसने वाराणसी में युद्ध करके पराजित किया था); १३, २८; १४, ८३; १७, ७; २०, २२. २५. २६; २१, ५१ (द्रोण को बाणों से आहत किया). ६२ (द्रोण ने इसे पराजित किया); २३, ४ (द्रोण पर आक्रमण किया; इसके रथाश्वों का वर्णन). ४०. ४४ (प्रभद्रक गण इसके साथ थे); ३१, ५. ८; ३२, ५५ (कर्ण पर आक्रमण किया). ६५ (बृहत्क्षत्र और चन्द्रवर्मा का वध किया). ७१; ३५, २ (द्रोण पर आक्रमण). २२; ४०, १९; ४२, ३; ४३, ७ (जयद्रथ ने इसे आहत किया); ८३, ५; ८५, ४०; ८८, ८ (इसने पाण्डव सेना की व्यूह रचना की); ९५, ५. १६. १७. २०. २२. २४ (द्रोण के साथ युद्ध). ४५ (आवन्त्यों ने इसका सामना किया); ९७, ३. २१. २४. ३२. ३६ (द्रोण के साथ युद्ध किया जिसमें सात्यकि ने इसकी रक्षा की); ९८, १. ५४; ११०, १५. २९; १११, ४८. ५१; ११४, ६३; १२२, ५२. ५७. ६०. ६२. ६४. ६९. ७० (द्रोण ने इसे पराजित किया); १२४, १५. ३४; १२५ ६७; १२७, ३. ४. ९-११ (युधिष्ठिर की रक्षा की); १५१, २६; १५३, २३; १५४, १०. १२ (द्रोण पर आक्रमण किया); १५५, १४ (द्रोण ने इसके पुत्र का वध किया); १५६, २६. ५४. ६१. १६२. १६६ (अश्वत्थामा से युद्ध). १८६; १५७, २; १५८, ३९; १६०, २२. २४. २५. २८. ३१ (अश्वत्थामा से युद्ध); १६४, २५. २६. २८; १६५, १७ (द्रोण का सामना किया); १७०, १ (द्रोण से युद्ध). ३. ८. ९. १५. १९. २६. २८ (द्रुमसेन का वध किया). २९. ५५.६९. ७०; १७१, ४५. ४७. ४८. ५१. ५२; १७३, २ (कर्ण के साथ युद्ध किया). ४. ६. ५८; १७७, ३४; १७८, १०; १७९, ४; १८४, ३; १८६, ४५ (द्रोण ने विराट, द्रुपद और द्रुपद के तीन पौत्रों का वध किया। धृष्टद्युम्न ने तब उसी दिन द्रोण का वध कर देने की प्रतिज्ञा की). ५५. ५६; १८९, १ (दुःशासन को पराजित किया). १५. १७. ६६; १९०, ४१, ५९; १९१, १ (यह द्रोण की ओर बढ़ा). १२ १४. १८. १९. २२. २८. ३३. ४२. ४६ (द्रोण के साथ युद्ध); १९२, ३४. ४६. ४८. ६६ ६८ (जब द्रोण ने योग का आश्रय लेकर ब्रह्मलोक के लिये प्रस्थान किया तब इसने उनका सर काट दिया). ७०. ७९; १९४, १. ३. १३. १४; १९५, १२ १६; १९६, ८. १०; १९७, २४ (अपने व्यवहार के औचित्य का प्रतिपादन किया); १९८, ३५ (सात्यकि के साथ इसका विवाद); १९९, २६; २००, ३६. ४५. ७०. १३० (अश्वत्थामा के साथ युद्ध); २०१, ११; ८. २, १५ (इसने द्रोण का वध किया था); ९, ३९; १०, २९; ११, २९; १२, १४; १३, ९ (कृप के विरुद्ध युद्ध के लिये गया); २२, १; २६, १. ३. ५. २५. १९ (कृप ने इसे पराजित किया); ३५, २०; ४६, १. ५. ३५. ८५; ४७, ४; ४८, ३. २०. ५२; ४९, ३३; ५०, ८; ५४, १२. १३. ३१. ३३. ३५. ३६. ४१. ४२ (कृतवर्मा ने इसे पराजित किया); ५६, २०. २५. २६. २९. ३१ (दुर्योधन को पराजित किया). ३७. ६६; ५७, ७ (अस्त्र त्याग करके योग का आश्रय लेकर बैठे द्रोण का इसने सर काट दिया था). ९ (अश्वत्थामा ने इसका वध कर लेने तक अपना कवच न उतारने की प्रतिज्ञा की). १०; ५८, ४६. ४९; ५९, ४. ७. ११ (कर्ण के साथ युद्ध). २६. २८. ३१. ३५. ३९. ४४. ५२. ५३ (अश्वत्थामा के साथ युद्ध); ६०, २६. ५६; ६१, ७. ११. २५. २७-२९. ३१. ३३ (दुःशासन के साथ युद्ध); ६२, ७; ६३, २५; ६६, ११; ६७, १७; ७३, ११. ४५; ७४, ५१; ७८, १६. १८. ६४; ७९, ३५; ८२, ३; ८७, ३०; ९३, २१. २९. ३६. ३८; ९६, १०; ९. १, ३० (मृत योद्धाओं के साथ इसका उल्लेख); २, ६८; ३, २१. ३०. ३७. ३८ (इसके रथ में कबूतर के समान रंगवाले घोड़े जुते थे तथा रथ की श्रेष्ठ ध्वजा पर कचनार वृक्ष का चिह्न बना था); ५, १६; ७, १६. ३१; ८, २९; ९, ३९; १०, ६३; ११, २२. ३८. ४१ (कृप के साथ युद्ध); १२, ३६; १५, १. ४ (दुर्योधन के साथ युद्ध); १६, २४; १७, ३१. ८३; १८, ८. १३; १९, २५. ४१. ५०; २०, १७; २१, ३३; २२, १०. ३२. ३३; २३, ६४. ६६; २५, १६. १९. ३७. ४९. ५४. ५६; २९, २४. ३१. ३७. ३८; ३०, ५२; ६१, ३२; १०. ३, २८. ३४; ४, २६; ५, १९. ३४; ८, ११. १२ (रात्रि युद्ध में अश्वत्थामा ने इसका वध किया). ३०. ३४. ४८; ९, ४४. ५० (रात्रि युद्ध में अश्वत्थामा ने इसका वध किया था). ५२; १०, १; १७, ४; ११. ११, १२; २३, ३६; २६, ३४

(इसका शवदाह किया गया); १२. २७, १ (मारे गये योद्धाओं में इसका उल्लेख); ४२, ४ (इसका श्राद्ध किया गया); १४. ६०, १५. १८; १५. १०, ११; ३१, १५ (यह अग्नि के एक अंश से उत्पन्न हुआ था); ३२, ११; १६. ३, २५; १८. १, २४; २, ४१; ५, २१ (मृत्यु के पश्चात इसने अग्नि में प्रवेश किया)।

तुकी० इसके निम्नलिखित पर्याय :

द्रोणहन्तृ (द्रोण का वध करने वाला) : ७. २०१, ६; ८. ५६, ३८; ९. १५, ३।

द्रौपदि (द्रुपद का पुत्र) : ८. ९, ३८।

पाञ्चाल, पाञ्चालकुलवर्धन, पाञ्चालतनय, पाञ्चालदायाद, पाञ्चाल पुत्र, पाञ्चालमुख्य, पाञ्चालराज, पाञ्चालराजन्, पाञ्चाल्य, पाञ्चाल्य-पुत्र, पार्षत, भरतर्षभ, यज्ञसेनसुत, यज्ञसेनि – देखिये सभी वस्था०।

धृष्टद्युम्नतनूज, बहु (°जाः) : ८. ७३, १०३।

धृष्टद्युम्नपितृ = द्रुपद : ७. १५४, १२।

१. धृष्टद्युम्नसुत = क्षत्रधर्मा : ७. २२५, ६७।

२. धृष्टद्युम्नसुत, बहु० (°ताः) : ११. २५, १३ (धृष्टद्युम्न के पुत्रों का द्रोण ने वध किया था)।

धृष्टद्युम्नात्मज, बहु०(°जाः): ७. १०, ५३ (चार पुत्रोंका उल्लेख)।

धृष्टरथ, एक राजा का नाम है (१३. १६५, ५०)।

१. धृष्णु, वैवस्वत मनु के द्वितीय पुत्र (१. ७५, १५)।

२. धृष्णु, कवि के तृतीय पुत्र, एक प्रजापति (१३. ८५, १३३)।

१. धेनुक, एक दैत्य का नाम है जिसका श्री कृष्ण ने वध किया था (५. १३०, ४७)।

२. धेनुक, एक दैत्य जो तालवन में गधे का रूप धारण करके निवास करता था। इसका बलराम ने वध किया था (२. ३८, २९ के बाद दापा० गोरे० सं०)।

३. धेनुक, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ५०, ५१)।

४. धेनुक, एक तीर्थ का नाम है : ३. ८४, ८७; ७. ५४, १५ (यहाँ मृत्यु ने तपस्या की थी); १२. २५८, १५।

धेनुकाश्रम = २. धेनुक : ७. ५४, ८।

धौतमूलक, चीनों के कुल में उत्पन्न एक कुलाङ्गार राजा जिसने अपने ही बन्धु-बान्धवों का विनाश किया (५. ७४, १४)।

धौन्धुमार उपाख्यान (धुन्धुमार का उपाख्यान) : १. २, १९३; ३. २०१, ६ (इसे मार्कण्डेय ने युधिष्ठिर को सुनाया था); २०४, ४४ (इस उपाख्यान का श्रवणफल)।

१. धौम्य, असित देवल के लघुभ्राता का नाम है। ये पाण्डवों के पुरोहित थे : १. २, १४५; १८३, २. ६. ७ (ये पाण्डवों के पुरोहित बने); १९८, १० (पाण्डवों के विवाह संस्कार सम्पन्न कराये); २२१, २७ (पाण्डवों के पुत्रों के चूड़ोपनयनादि सम्पन्न कराये); २२२, ८; २. २, ७. ८; ४, १२; १३, २९; २४, ५५; ३३, १७. २९. ३५ (युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में होता बने); ५३, १० (युधिष्ठिर के ऊपर पवित्र जल के छींटे दिये); ७८, ११. १६; ८०, ३. ८. २२. २३ (धौम्य हाथ में कुश लेकर रुद्र तथा यम देवता सम्बन्धी साममन्त्रों का गायन करते हुये नैऋत्य कोण की ओर पाण्डवों के आगे-आगे चलने लगे। धौम्य ने यह कह कर प्रस्थान किया था कि युद्ध में कौरवों के मारे जाने पर उनके गुरु भी इसी प्रकार कभी सामगान करेंगे); ३. ३, ४. ५. १५. १६ (इन्होंने युधिष्ठिर को सूर्य के १०८ नाम का स्तोत्र बताया था). ३२. ७८ (सूर्य के इस स्तोत्र को इन्होंने नारद से प्राप्त किया था). ८०. ८६; ११, १९; १२, ११७; २२, ४६; २५, ४. १९; ३७, ३७; ८६, १ (ये पितामह समान थे); ८७, १ (बृहस्पतिसमं); ८८, १; ८९, १; ९०, १ (इन्होंने युधिष्ठिर को अनेक तीर्थों के सम्बन्ध में बताया); ९१, १; ९२, १६; ९३, १३. १७. २६; १४०, ४; १४३, १५; १४४, १५; १४५, ६; १५६, १९; १५८, ३५; १५९, ३. १०; १६१, २; १६३, १. २. ३ (इन्होंने युधिष्ठिर को मन्दराचल पर्वत आदि के सम्बन्ध में बताया); १६४, १४; १६५, ४; १७९, ४७; १८१, ४५; १८२, १८; १८३, ९. २२; २६४, ५; २६८, २३. २५. २६. २८; २६९, २५. २६; २७१, ३४. ४१ (इन्होंने जयद्रथ द्वारा द्रौपदीहरण के समय द्रौपदी को बचाने का प्रयास किया); ३१५, १०. २२. २९; ४. ४, ६-७. ५४. ५७ (वनवास के तेरहवें वर्ष में पाण्डवों की अग्निहोत्र सम्बन्धी अग्नि को प्रज्वलित करके इन्होंने विविध कृत्य सम्पन्न कराये। तत्पश्चात उस अग्नि को लेकर ये पाञ्चाल देश चले गये); ५. १२६, २; १४०, १६; ११. २६, २४. २७ (मृत लोगों का श्राद्ध सम्पन्न कराया); १२. ३८, १७; ४०, ५. १२; ४१, १४; ४४, १४; ४५, ४; ४७, ११ (शरशय्या पर पड़े भीष्म को घेर कर खड़े ऋषियों में यह भी एक थे); १३. २६, ८; १३९, ११; १५. १५, ८; २३, १५। तुकी० अग्निवेश्य।

२. धौम्य, एक अथवा अधिक ऋषियों का नाम है : ३. २९८, १९; १२. २०८, ३० (पश्चिम के एक ऋषि); १३. १४, १३ (व्याघ्रपाद के पुत्र); १२७, १५; १६५, ४६ (उत्तर के एक ऋषि)।

धौम्य आयोद–देखिये आयोद धौम्य।

धौम्यतीर्थकथन (धौम्य द्वारा तीर्थों का वर्णन)–युधिष्ठिर ने अर्जुन के निर्वासन के बाद अत्यन्त खिन्न होकर बताया कि अब उनका मन काम्यक वन में नहीं लग रहा है। अतः उन्होंने धौम्य से अन्य निवासयोग्य तीर्थों का वर्णन करने का निवेदन किया (३. ८६)। धौम्य ने युधिष्ठिर से पूर्व दिशा के तीर्थों का वर्णन किया (३. ८७)। तदनन्तर धौम्य ने दक्षिण के तीर्थों तथा सुराष्ट्र का वर्णन किया (३. ८८)। धौम्य ने पश्चिम के तीर्थों का वर्णन किया (३. ८९)। धौम्य ने उत्तर दिशा के तीर्थों का वर्णन किया (३. ९०)।

धौम्यपुरोहितकरण (पाण्डवों द्वारा धौम्य को अपना पुरोहित बनाना) – अर्जुन ने प्रसन्नतापूर्वक गन्धर्व चित्ररथ को आग्नेयास्त्र प्रदान करने के बाद उससे कहा : 'तुमने जो अश्व दिये हैं वे अभी तुम्हारे पास ही रहें। आवश्यकता पड़ने पर हम उन्हें ले लेंगे।' अर्जुन की बात पूरी होने पर गन्धर्वराज और पाण्डवों ने परस्पर एक दूसरे का अत्यधिक सत्कार किया। तदनन्तर पाण्डवगण गंङ्गा के रमणीय तट से अपनी इच्छा के अनुसार चल दिये। उत्कोचक तीर्थ में पहुँच कर पाण्डवों ने धौम्य का पौरोहित्य कर्म के लिये वरण किया। सम्पूर्ण वेदों के विद्वानों में श्रेष्ठ धौम्य ने वन्य फलमूल अर्पण करके तथा पौरोहित्य के लिये स्वीकृति देकर पाण्डवों का सत्कार किया। उन गुरु एवं पुरोहित के साथ हो जाने से उस समय पाण्डवों ने अपने आपको सनाथ जाना। धौम्य ने पाण्डवों के लिये स्वस्तिक वाचन किया। तदनन्तर सभी पाण्डवों ने एक साथ द्रौपदी के स्वयंवर में जाने का निश्चय किया (१. १८३)।

धौम्र, एक प्राचीन ऋषि का नाम है। शरशय्या पर पड़े भीष्म को घेर कर खड़े ऋषियों में यह भी थे (१२. ४७, ११)।

१. ध्रुव, अष्ट वसुओं में से द्वितीय का नाम है। ये धूम्रा के गर्भ से उत्पन्न हुये थे (१. ६६, १८. १९)। इनका उल्लेख (१३. १५०, १६)।

२. ध्रुव, नकुल के छठवें पुत्र का नाम है (ययाति) : १.७५, ३०।

३. ध्रुव, एक प्राचीन ऋषि जो यम की सभामें उपस्थित होते थे (२. ८, १०)।

४. ध्रुव, महाराज उत्तानपाद के पुत्र का नाम है : ६. ३, १७; १२. १२७, २५ (सप्तर्षय इव ध्रुवं); ३१७, ९ (जो ध्रुवतारे को नहीं देख पाता उसके जीवन का केवल एक वर्ष ही शेष रह जाता है); ३३९, ५६ (ज्योतिषां श्रेष्ठम्); १३. ३, १५ (औत्तानपादस्य); १५०, ७८ (अभ्यासे नित्यं देवानांसप्तर्षीणां ध्रुवस्य च मोक्षणं सर्वकृच्छ्राणांमोचयत्यशुभात्सदा)।

५. ध्रुव, पाण्डवपक्ष के एक योद्धा का नाम है (७. १५८, ३९)।

६. ध्रुव, कौरव पक्ष के एक योद्धा का नाम है। (७. १५५, २६)।

७. ध्रुव एक ऋषि जो शरशय्या पर पड़े भीष्म के पास आये थे (१३. २६, ५)।

८. ध्रुव = शिव (सहस्रनाम)।

९. ध्रुव = कृष्ण (१२. ४३, १२)।

१०. ध्रुव = विष्णु (सहस्रनाम)।

ध्रवक, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६५)।

ध्रवद्वार, एक स्थान का नाम है : १२. २२८, ६।

ध्रवरत्ना, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ४)।

ध्वजवती, सूर्य देव की आज्ञा से आकाश में स्थित रहने वाली हरिमेधा मुनि की कन्या का नाम है (५. ११०, १३)।

ध्वजिन्, एक प्राचीन नरेश का नाम है जो यम की सभा में उपस्थित होते थे (२. ८, १३)।

ध्वजिनी, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ६१)।

ध्वजिन्युत्सवसंकेत = देखिये ध्वजिनी।

नकुल, पाँच पाण्डव भ्राताओं में से चतुर्थ का नाम है : १. २, २०२; ६१, ३८ (इन्होंने पश्चिम दिशा पर विजय प्राप्त किया); ६३, ११७ (ये अश्विनों से उत्पन्न हुये थे); ६७, ११२ (अश्विनोस्तु तथैवांशौ रूपेणाप्रतिमौ भुवि । नकुलःसहदेवश्च); ९५, ६३ (नकुल और सहदेव को अश्विनों के अंश से माद्री ने उत्पन्न किया था). ७५ (इन्होंने द्रौपदी से शतानीक नामक पुत्र उत्पन्न किया). ७९ (इनका करेणुमती से विवाह हुआ और उससे इन्होंने निरमित्र नामक पुत्र उत्पन्न किया); १२४, १७ (पाण्डु की पत्नी माद्री ने नकुल और सहदेव को अश्विनों से उत्पन्न किया). २१ (ये अपने यमज भ्राता सहदेव से ज्येष्ठ थे); १३२, ६२ (दोनों यमज भ्राता, नकुल और सहदेव तलवार की मूठ पकड़ कर युद्ध करने में अत्यन्त कुशल हुये और इस कला में अन्य सब पुरुषों से बढ़-चढ़ कर थे); १३८, १९; १५४, १३. १९; १९१, ९ (ये सहदेव से बड़े थे); २२१, ८४ (द्रौपदी के गर्भ से इन्होंने शतानीक नामक पुत्र उत्पन्न किया था); २. १३, ११; २५, १० (इन्होंने पश्चिम दिशा पर विजय प्राप्त किया); ३२, १. १७. २० (इन्होंने पश्चिम में स्थित रोहीतक पर्वत तथा उसके समीपवर्ती क्षेत्रों पर विजय प्राप्त करते हुये मत्तमयूरों को भी पराभूत किया। वासुदेव और शल्य ने इनका प्रभुत्व स्वीकार किया। अपनी विजय यात्रा के पश्चात जब ये इन्द्रप्रस्थ लौटे तब १०, ००० हाथी भी बड़ी कठिनाई से इनके द्वारा विजित निधियों के बोझ को किसी प्रकार लाये); ३३, ५४; ३४, १; ३५, ८; ४५, ४९ (ये सुबल और उनके पुत्र को पहुँचाने के लिये गये); ४८, १५; ६५, १२. १३ (युधिष्ठिर इन्हें भी जुए में हार गये); ७०, ३; ७१, ४; ७४, १४; ७७, ४२. ४३ (इन्होंने धार्तराष्ट्रों के वध की प्रतिज्ञा की); ७८, १०; ८०, ६. १८ (अत्यन्त दर्शनीय मनोहर रूपवाले नकुल ने अपने सब अंगों में धूल लपेट लिया था जिससे मार्ग में स्त्रियों के हृदय को वशीभूत न करें); ३. २७, ३२. ३३; ३५, १४. २७; ५१, ५; ८०, २२. २३; १४०, ६. २३; १४१, ५; १४३, १६; १४४, ५. ६; १४६, ३४; १५५, ३२; १५७, २८ (इन्हें जटासुर उठा ले गया था); १६१, ३५; १७९, ३७ (नकुलः सहदेवश्च यमौ). ४८; २७०, १४ (यस्योत्तमं रूपमाहुः पृथिव्यां). १५ (स एष वीरो नकुलः); २७१, १०. १६ (इन्होंने क्षेमङ्कर और महामुख का वध किया). १९-२१ (सुरथ का वध किया); ३११, २०; ३१२, ५. ७. १० १३. १४. १६. ३४; ३१३, १२३-१२५. १२७. १२९. १३०. १३२ (जब यक्ष ने चार पाण्डवों का वध कर दिया तब युधिष्ठिर ने सबसे पहले नकुल को ही जीवित करने का वर माँगा); ३१५, २५; ४. ३, २. ३ (ये ग्रन्थिक के रूप में विराट की अश्वशाला में अश्वों की देख-रेख करने लगे); ५, २५ (इनके नाम की व्युत्पत्ति : कुले नास्ति समो रूपे यस्येति नकुलः स्मृतः). २९; १२, ६ (विराट की अश्वशाला में ग्रन्थिक के नाम से रह कर अश्वों की देख-रेख करने लगे); १३, १०. ४३; ३१, २५ (चार पाण्डव वेश बदल कर रथारूढ़ हुये और त्रिगर्तों के विरुद्ध युद्ध करने चले); ३३, ३४ (सात सौ त्रिगर्तों का वध किया); ४३, १० (नकुलस्यैतदायुधम्). १५ (नकुलस्य कलापः). २२; ४४, २. ६; ५०, १०; ७१, २. ६; ५. २३, २५ (युधिष्ठिर ने बताया कि राजसूय यज्ञ के समय नकुल को शिबि और त्रिगर्त देशों को जीतने के लिये भेजा गया था, परन्तु उन्होंने सम्पूर्ण पश्चिम दिशा को जीतकर युधिष्ठिर के अधीन कर दिया); २६, २६; ४८, २४. २५; ५०, २९ (सहस्रों म्लेच्छों से भरी हुई पश्चिम दिशा को जीत कर नकुल ने अपने अधीन कर लिया था); ५६, १६ (इन्द्र द्वारा प्रदत्त हरे रंग के उत्तम अश्व, जो वायु के समान बलवान् तथा तेजवान् थे, नकुल के रथ का भारवहन करते थे); ५७, २३ (इन्होंने शकुनिपुत्र उलूक तथा सारस्वत प्रदेश के सैनिकों से युद्ध का निश्चय किया). ३१; ८०, १; ९०, ४०-४२; १२६, ७; १३८, ६; १४०, २३; १४१, २४. ३६; १४३, ३९; १५१, ११ इन्होंने द्रुपद को प्रधान सेनापति बनाने का प्रस्ताव किया); १६०, ७०; १६३, ३७. ५३; १६४, ६ (इन्होंने कृतवर्मा से युद्ध किया); १९६, १४; ६. १९, १५ (पाण्डव सेना के नायकों में से एक थे); २५, १६ (इन्होंने अपना सुघोष नामक शङ्ख बजाया); ४३, १८. २८; ४४, १८; ४५, २१. २४ (इन्होंने दुःशासन के साथ युद्ध करते हुये उसके अश्वों का वध कर दिया); ५०, ५३ (पाण्डव सेना के व्यूह के वाम भाग में स्थित हुये); ५१, २६; ६२, ४० (ये भीमसेन के साथ गये); ७२, ७ (इन्होंने त्रिगर्तों से युद्ध किया); ७५, ६ (सहदेव सहित ये मकर व्यूह के नेत्र में स्थित हुये); ८१, ३६ (शल्य से युद्ध किया); ८३, ४६; ८६, १२; ८९, ३२; ९९, ९; १०१, ४. ६; १०५, १०. ३१; १०६, २. ४ (भीष्म के साथ युद्ध में दोनों ने एक दूसरे को बाणों से बींध दिया); १०८, २०; ११०, ६. ११; १११, ३४. ३५ (विकर्ण से युद्ध किया); १२१, ४९; ७. १०, ३० (द्रोण से युद्ध के लिये गये); १४, ३१. ३२; १६, २७ (द्रोण ने इन्हें बाणों से बींध दिया); २३, ७. ८६. ९३ (इनके अश्वों का वर्णन); ३२, ७२ (सात्यकि की रक्षा की); २४, ६ (संजय ने इनकी प्रशंसा की). १०; ३९, १२; ९८, ५४ (सात्यकि की रक्षा की); १०६, १२ (विकर्ण को पराजित किया); १०९, १५. १७ (अलम्बुष के विरुद्ध युद्ध में भाग लिया); ११६, ४७; ११४, ६२ (कृतवर्मा ने बाणों से बींध दिया); १२४, १५; १४३, ४६; १५४, १० (द्रोण से युद्ध किया); १५६, ३५ (द्रोण ने बाणों से बींध दिया); १६५, ९ (शकुनि ने इनका सामना किया); १६८, ११; १६९, १. ३. १०. १२. १५. १९ (शकुनि से युद्ध करते हुये उसे पराजित किया); १७०, ६४; १७७, ३५; १७८, ७ (अलायुध के अनुचर राक्षसों पर बाणवर्षा की). ११; १८४, ६; १८७, ५०. ५४. ५५ (दुर्योधन के साथ युद्ध करते हुये उसे पराजित किया); १८८, २३; ८. ५, २९ (भगदत्त के पुत्र का वध किया था); ११, ३० (पाण्डवों के अर्धचन्द्र व्यूह में ये भी स्थित हुये); १३, ५ (कर्ण के विरुद्ध युद्ध के लिये गये); २२, ८. १६. १७ (अङ्गराज का वध किया). २२. २६; २४, १. २. ५. ९. १३. १६. १८. १९. २७. ३१. ४५ (कर्ण से युद्ध करते हुये उससे पराजित हुये; परन्तु कुन्ती को दिये हुये वचन का स्मरण करके कर्ण ने इनका वध नहीं किया); ४६, ३४ .८३; ४८, ३४. ३५. ३७. ४४. ४६; ५४, १५ (दुर्योधन ने युद्ध में इन्हें रोक दिया); ५६, ७. ९ (दुर्योधन के साथ युद्ध किया). ६५; ६१, १२ (वृषसेन के विरुद्ध युद्ध के लिये गये). ३६. ३७. ४१ (वृषसेन से युद्ध किया); ६२, ७; ६३, ९. १३. ३६; ७३, १०४; ७५, ११; ७८, १६. १९ (कर्ण को बाणों से बींध दिया); ७९, ३६; ८३, ४०; ८४, २०-२३. २५-२७. २९. ३१. ३२. ३५. ३६. ४०. ४२ (वृषसेन ने इनके रथाश्वों का

वध करके इन्हें युद्ध में पराजित किया); ८५, १. २२. २४; ९६, ४९; ९. १०, ९ (कर्ण के पुत्र चित्रसेन के साथ युद्ध किया). १३ (चित्रसेन का वध किया). १६. १८. २७ (कर्ण के पुत्रों, सुषेण और सत्यसेन से युद्ध किया). ३२. ३५. ३७ (सत्यसेन का वध किया). ४३. ४४. ४८. ५१ (सुषेण का वध किया). ५२; ११, ३३; १३, ६. ८. २२. २५. ३३ (शल्य के साथ युद्ध); १५, १२. १३. १५. १९ (शल्य के साथ युद्ध); १६, ५; १७, ३० (शल्य ने इनके रथ का हरसा काट कर गिरा दिया); २२, १०. १३. २८. २९ (दुर्योधन और उलूक के साथ युद्ध किया); २७, ४; २८, २८; ३२, ६६; ३३, २; १०. १०, २७ (द्रौपदी को शिविर में लाने के लिये गये); ११, ४. २९; ११. १४, १७; १५, १३. १७; १८, २२; २३, १; १२. १, ३; ४०, ४; ४१, १२ (इन्हें सैन्य संचालक नियुक्त किया गया); ४४, ११; १६६, १ (यह तलवार चलाने में अद्वितीय थे). २. ९ (ये द्रोण के शिष्य थे); १६७. २१. २२; १४. १४, ३; ५२, ४७; ६६, १९; ७२, १९. २५ (अश्वमेध के समय भीम के साथ इन्होंने नगर की रक्षा की); ८५, ५; १५. २६, १५; १७, ८; २४, ११; १६. ७, २; १७. २, १२-१५. १७ (महाप्रस्थान के समय ये अपने सौन्दर्य के अहंकार के कारण मृत्यु को प्राप्त हुये); ३, २०; १८. २, ४१; ४, ९ (इन्हें स्वर्ग प्राप्त हुआ)। तुवी० आश्विनेय (द्वि०), अश्विनीसुत, अश्विसुत, आजमीढ, भारत, भरतश्रेष्ठ, भरतर्षभ, दामग्रन्थि, दामग्रन्थिक, कुरुश्रेष्ठ, माद्रवतीपुत्र, माद्रवतीसुत, माद्रेय, माद्रिनन्दन, माद्रिनन्दनक, माद्रीपुत्र, माद्रीसुत, माद्रतनूज, पाण्डव, पाण्डवेय, पाण्डुनन्दन, पाण्डुपुत्र, पाण्डुसुत, यम, यमज।

नकुलदायाद, नकुलस्यसुतः = शतानीक (देखिये वस्था०)

नकुलाख्यान (नेवले का आख्यान) : १. २, ३४२। "युधिष्ठिर का अश्वमेध यज्ञ जब पूरा हुआ तब उसी समय एक आश्चर्यजनक घटना हुई। यज्ञ में श्रेष्ठ ब्राह्मणों, बन्धु-बान्धवों, अन्धों, और दीन दुखियों आदि को तृप्त करने से जब युधिष्ठिर की दान-शीलता का यश चारों ओर फैल गया तब उनके ऊपर पुष्पवर्षा होने लगी। उसी समय वहाँ एक नेवला आया। उसकी आँखे नीली थीं तथा शरीर के एक ओर का भाग सुवर्ण का था। आते ही नेवले ने गर्जना करके समस्त जीव-जन्तुओं को भयभीत कर दिया और फिर मनुष्य की भाषा में बोला : 'तुम्हारा यह यज्ञ कुरुक्षेत्र निवासी एक उञ्छवृत्तधारी उदार ब्राह्मण के सेर भर सत्तू दान करने के बराबर भी नहीं हुआ है।' नेवले की बात सुनकर ब्राह्मणों को आश्चर्य हुआ। सबने उस नेवले से अपना परिचय देने के लिये कहा। तब नेवले ने बताया कि 'कुरुक्षेत्र निवासी उञ्छवृत्तधारी दानी ब्राह्मण ने दान के प्रभाव से अपनी पत्नी, पुत्र और पुत्रवधू सहित स्वर्ग लोक पर अधिकार प्राप्त कर लिया और उन्होंने ही मेरे शरीर का अर्ध भाग सुवर्णमय कर दिया।' तदनन्तर नेवले ने उन ब्राह्मण महोदय की कथा इस प्रकार आरम्भ की : 'कुछ दिनों पूर्व कुरुक्षेत्र में एक ब्राह्मण रहते और उञ्छवृत्ति से अपने जीवन का निर्वाह करते थे। वे अपनी स्त्री, पुत्र तथा पुत्रवधू सहित सदैव आचार-विचार के साथ रहने वाले, धर्मात्मा और जितेन्द्रिय थे। एक समय उस क्षेत्र में भयंकर अकाल पड़ा। उत्तम व्रतधारी द्विज सदा छठे काल में, अर्थात तीन-तीन दिन पर ही स्त्रीपुत्रादि के साथ भोजन करते थे। यदि किसी दिन उस समय भोजन न मिला तो दूसरा छठा काल आने पर ही वे अन्न ग्रहण करते थे। उन धर्मात्मा के पास अन्न का कोई संग्रह नहीं था। अतः उक्त अकाल के समय बारम्बार काल आता, किन्तु उन्हें भोजन नहीं मिलता था। एक दिन ज्येष्ठ के शुक्ल पक्ष के दोपहर के समय उनके परिवार के सब लोग उञ्छ लाने के लिये चले। अत्यन्त परिश्रम करने पर भी वे उञ्छ नहीं प्राप्त कर सके। तदनन्तर एक दिन पुनः छठा काल आने तक उन्होंने एक सेर जौ का उपार्जन किया। उन तपस्वी ब्राह्मण ने उस जौ का सत्तू तैयार किया तथा जब नैत्यिक नियम पूर्ण करने के बाद अग्नि में विधिपूर्वक आहुति देने के पश्चात सब लोग एक-एक पाव सत्तू बाँट कर खाने को उद्यत हुये। उसी समय एक ब्राह्मण अतिथि उनके यहाँ आ पहुँचा। क्षुधा से कष्ट पाते हुये उस अतिथि ब्राह्मण को अपना परिचय देकर वे लोग कुटी में ले गये। उन लोगों ने अपना सत्तू उस अतिथि के समक्ष प्रस्तुत कर दिया। उस अतिथि ने बारी-बारी से ब्राह्मण परिवार के चारों सदस्यों के हिस्से का सत्तू क्रमशः ग्रहण कर लिया। उस अतिथि के रूप में मानव विग्रहधारी साक्षात् धर्म ही वहाँ उपस्थित थे। वे धर्म उस ब्राह्मण परिवार से अत्यन्त सन्तुष्ट हुये तथा इस प्रकार बोले : 'तुमने अपनी शक्ति के अनुसार धर्मपूर्वक जो न्यायोपार्जित शुद्ध अन्न का दान दिया है उससे तुम्हारे ऊपर मैं अत्यन्त प्रसन्न हूँ। देखो आकाश से भूतल पर यह पुष्प वर्षा हो रही है। देवर्षि, देवता, गन्धर्व, तथा देवों के अग्रणी पुरुष भी तुम्हारे दान से विस्मित और तुम्हारे दर्शन की इच्छा रखते हैं। अतः तुम स्वर्ग लोक में चलो। उस स्वर्ग द्वार की जो अर्गला है वह लोभ रूपी बीज से निर्मित है। वह द्वार राग के द्वारा गुप्त है, इसलिये उसके भीतर प्रवेश करना अत्यन्त कठिन कार्य है। जो लोग क्रोध पर विजय प्राप्त कर चुके हैं, तथा इन्द्रियों को वश में कर चुके हैं, वे ही यथाशक्ति दान देने वाले उस द्वार को देख पाते हैं। श्रद्धापूर्वक दान देने वाले मनुष्य में यदि एक हजार देने की शक्ति हो तो वह सौ का दान करे, सौ देने की शक्ति वाला दस का दान करे, तथा जिसके पास कुछ न हो, वह यदि अपनी शक्ति के अनुसार जल ही दान कर दे तो इन सब का फल बराबर माना गया है। राजा रन्ति देव के पास जब कुछ भी नहीं रह गया तब उन्होंने शुद्ध हृदय से केवल जल का ही दान कर के स्वर्ग प्राप्त किया था। अन्यायपूर्वक प्राप्त हुये द्रव्य के दान से उतना फल नहीं होता जितना न्यायोपार्जित थोड़े से भी अन्न का श्रद्धापूर्वक दान करने से होता है। राजा नृग ने ब्राह्मणों को एक सहस्र गायें दान की थीं किन्तु उनमें एक गाय दूसरे द्वारा दान की हुई थी, जिससे उन्हें नरक में जाना पड़ा। उशीनर के पुत्र राजा शिबि ने श्रद्धापूर्वक अपने शरीर का मांस देकर भी पुण्यात्माओं का लोक प्राप्त किया था। तुमने आज के दान से जो फल प्राप्त किया है वह अनेक राजसूय तथा अश्वमेध यज्ञों द्वारा भी नहीं प्राप्त हो सकता। तुमने एक सेर सत्तू का ही दान कर अक्षय ब्रह्मलोक प्राप्त कर लिया है।' धर्म के इस प्रकार कहने के बाद स्त्री, पुत्र और पुत्रवधू के साथ वे धर्मज्ञ ब्राह्मण दिव्य विमान में बैठकर स्वर्ग चले गये। इस प्रकार कथा कहने के बाद नेवले ने बताया कि जब वह ब्राह्मण परिवार के स्वर्ग चले जाने के बाद अपने विवर से निकला तब उस स्थान पर गिरे हुये, जल के कीचड़ और दिव्य पुष्पों के सम्पर्क के प्रभाव से उसका आधा शरीर सुवर्ण का हो गया। नेवले ने कहाः 'उसी समय से मैं अत्यन्त हर्ष और उत्साह के साथ अनेकानेक तपोवनों और यज्ञस्थलों में जाता रहता हूँ जिससे मेरे शरीर का शेष भाग भी सुवर्ण का हो जाय। युधिष्ठिर के इस यज्ञ की प्रशंसा सुनकर मैं यहाँ भी आया किन्तु मेरा शेष आधा भाग अब भी सुवर्णमय नहीं हो सका। इसी से मैंने कहा था कि इस यज्ञ का फल ब्राह्मण के एक सेर सत्तू के दान बराबर भी नहीं है।' इतना कह कर वह नेवला वहाँ से अन्तर्धान हो गया। (१४. ९०)।

"वह नेवला वास्तव में धर्म था। पूर्वकाल में एक दिन महर्षि जमदग्नि ने श्राद्ध करने का संकल्प किया। उस समय महर्षि ने स्वयं ही अपनी गाय का दूध दूहा। धर्म उन महर्षि की परीक्षा लेना चाहते थे अतः उन्होंने उस दूध को क्रोध के स्पर्श से दूषित कर दिया। महर्षि ने उस क्रोध को पहचान लिया किन्तु उस पर कुपित नहीं हुये और उसे क्षमा कर दिया। तदनन्तर क्रोध रूपधारी धर्म भयभीत हो वहाँ से अदृश्य हो गये और पितरों के शाप से उन्हें नेवला होना पड़ा। पितरों ने यह भी कहा कि धर्मराज युधिष्ठिर पर आक्षेप करने से धर्म को नेवले के शरीर से मुक्ति प्राप्त होगी। इसी उद्देश्य से धर्मरूपी नेवले ने युधिष्ठिर के यज्ञ में उपस्थित होकर उन पर आक्षेप किया था और उसके बाद शापमुक्त होकर धर्मराज युधिष्ठिर में ही स्थित हो गया (१४. ९२, ४१-५२)।"

नकुलात्मज = शतानीक (देखिये वस्था०)।

नकुलानुज = सहदेव : २. ३१, १६।

नक्त (क्तं), नक्तञ्चर = शिव (सहस्रनाम)।

१. नक्षत्र (अधिकांशतः बहु० °त्राणि): १. ६६, १७ (दक्ष प्रजापति की २७ पुत्रियाँ जो सोम की पत्नी बनीं); ७१, ३४ (चक्रान्यं च लोकं वै क्रुद्धो नक्षत्रसंपदा। प्रतिश्रवण पूर्वाणि नक्षत्राणि चकार यः); २. ११, २५; २५, ४; ३६, १७; ३८, २८; ३. १९०, ९१; २५३, २८; २८२, २ (शशलक्षणम् ग्रहनक्षत्रताराभिरनुयातममित्रहा); ४. ४४, १६ (उत्तराभ्यां फल्गुनीभ्यां नक्षत्राभ्यामहं); ५. २९, १०; ४८, ९८; १४०, २८ (नक्षत्रैरिव चन्द्रमाः); ६. ६, १६ (चन्द्रमाश्च सनक्षत्रो वायुश्चैव प्रदक्षिणः); ८, १२; ७. ६, ७; ६६, १०; ८. ७७, ३४ (नक्षत्रैरिव चन्द्रमाः); ९. ३२, १८ (नक्षत्राणीव सर्वाणि सविता रात्रिसंक्षये तेजसा नाशयिष्यामि); ३४, २१ (नक्षत्रागणैः परिकीर्णो निशाकरः); ३५, ४६ (नक्षत्रयोगनिरताः संख्यानार्थे च ताऽभवन्। पत्न्यो वै तस्य राजेन्द्र सोमस्य शुभकर्मणः). ४९; ५५, ४९ (नक्षत्रैरिव सम्पूर्णो वृतो निशि निशाकरः); १२. ३७, ३०; ५३, २६; ५९, १३९; १००, २५ (तिथिनक्षत्रपूजितः); १२२, ३१; १२४, ३७; १८०, ४५; २०१, ८; २८०, २३; २९७, २३; ३४२, ५७ (प्रजापति दक्ष की साठ कन्यायें थीं। उनमें से तेरह का विवाह कश्यप से हुआ। दस धर्म को, दस मनु को, और सत्ताइस चन्द्रमा को प्राप्त हुईं। वे सत्ताइस कन्यायें ही नक्षत्रों के नाम से प्रसिद्ध हुईं); १३. १४, ३२०; २१, १७; ३६, ९; ६४, १. ३६; १०४, ३८; १२६, ४८; १३२, ७; १५८, ३३ (कृष्ण के साथ समीकृत); १६०, ४२ (शिव के साथ समीकृत); १४. ४३, ६; ६४, ११. १४; ८५, ४; १६. २, १६।

२. नक्षत्र = शिव (सहस्रनाम)।

नक्षत्रनेमि = विष्णु (सहस्रनाम)।

नक्षत्रपति = सोम (चन्द्रमा): १२. १७१, १६।

नक्षत्रराज् = सोम : ३. २३७, ११।

नक्षत्रराज = सोम : १२. २९, ३१।

नक्षत्रविग्रहमति, नक्षत्रसाधक = शिव (सहस्रनाम)।

नक्षत्रिन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

नगात्मजा = उमा : १३. १४०, ४४।

नग्निजत्, एक राजा का नाम है : १. ६३, १११ (प्रह्लादशिष्यो नग्नजित्सुबलश्चाभवत्ततः); ६७, २१ (यह इपुपाद नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था); ३. २५४, २१ (अपनी दिग्विजय के समय कर्ण ने इसे पराजित किया था); ५. ४८, ७५ (यह गान्धार देश का राजा था। श्रीकृष्ण ने इसके समस्त पुत्रों को पराजित किया था); ७. ४, ६ (कर्ण ने इसे पराजित किया था)।

नग्नजित (°ताः), किसी जाति या परिवार का द्योतक है। इसे कर्ण ने पराजित किया था (८. ७९, ४६)।

नग्निका, ऐसी कन्या का द्योतक है जिसमें ऋतु धर्म प्रकट न हुआ हो (२. ३८, २९ के बाद दापा० गीप्रे० सं०)।

नदीज, एक प्राचीन राजा जिसे पाण्डवों ने रणनिमन्त्रण भेजने का निश्चय किया (५. ४, १५)।

नदीसुत = भीष्म : १२. २७, ९; १३. १६६, ८।

१. नन्द, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७, ९६; ११७, ५; ५. ५१, ८; ८. ५१, ७ (अन्य भ्राताओं के साथ इसने भीमसेन पर आक्रमण किया). १९ (भीमसेन ने इसका वध किया)। तुलो० १. नन्दक।

२. नन्द, महाराज युधिष्ठिर की ध्वजा पर बजने वाले दो मृदङ्गों में से एक का नाम है (३. २७०, ६; ७. ८३ ८४)।

३. नन्द, एक गोप का नाम है : ४. ६, २; ६. २३, ७।

४. नन्द, एक कश्यपवंशी नाग का नाम है (५. १०३, १२)।

५. नन्द, स्कन्द के दो सैनिकों का नाम है : ९. ४५, ६४. ६५।

६. नन्द = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. नन्दक, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. १८६, २ (यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था); ६. ६४, ९. १५ (इसने भीमसेन से युद्ध किया जिसमें भीमसेन ने इसका वध कर दिया); ७. १६६, ५८। तुलो० १. नन्द।

२. नन्दक, एक नाग का नाम है : ५. १०३, ११।

३. नन्दक, भगवान् श्रीकृष्ण के खड्ग का नाम है : ५. १३१, १०।

४. नन्दक, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है : ९. ४५, ६४।

नन्दकिन् (नन्दक को धारण करने वाले) = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. नन्दन, एक दिव्य कानन का नाम है : १. ६९, १७; ७०, ३४; ८५, ९ (विश्वाची नामक अप्सरा के साथ ययाति ने यहाँ विहार किया था); ८९, १९ (ययाति एक सौ अयुत वर्ष तक यहाँ रहे थे). २१; ९०, १; २. १०, ८ (नन्दस्य वनस्य च); ३. ४३, ३ (अर्जुन यहाँ आये थे); ७९, ३; १४२, ५९ (विष्णु इसमें रहते थे); १५८, ४०; १६८, ४४; १७७, १०; २६१, ९; २८०, ४१: ५. ११, ११ (नहुष ने यहाँ विहार किया); ७. ५४, ५३ (नारद यहाँ आये थे); १२. १६९, ७; ३४३, ३०; १३. २५, ४५ (जो हर प्रकार की हिंसा का परित्याग करके जितेन्द्रिय भाव से आवर्तनन्दा और महानन्दा तीर्थ का सेवन करता है उसकी स्वर्गस्थ नन्दन वन में अप्सरायें सेवा करती हैं); १०२, २३ (जो लोग नृत्य और गीत में निपुण हैं, कभी किसी से याचना नहीं करते तथा सज्जनों के साथ विचरते हैं—ऐसे लोगों के लिये ही यह नन्दन वन है); १४. १५, ४।

२. नन्दन, अश्विनों द्वारा प्रदत्त स्कन्द के एक सखा का नाम है (९. ४५, ३८)।

३. नन्दन = शिव (सहस्रनाम)।

४. नन्दन = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. नन्दा, हर्ष की पत्नी का नाम है : १. ६६, ३।

२. नन्दा, एक नदी का नाम है : १. २१५, ७ (अर्जुन यहाँ आये थे); ३. ८७, २७ (यह पूर्व में स्थित है); ११०, १ (युधिष्ठिर यहाँ आये थे). १२. २०; ७. ५४, २०. २१ (मृत्यु यहाँ आई); १३. १६५, २८।

नन्दाश्रम एक तीर्थ का नाम है। यहाँ काशिराज की कन्या अम्बा ने कठोर व्रत का आश्रय लेकर स्नान किया था (५. १८६, २६)।

१. नन्दि, एक देवगन्धर्व, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित हुआ था (१. १२३, ५६)।

२. नन्दि, शिव के एक अनुचर का नाम है (१३. १४, ७९)। तुलो० नन्दीश्वर, नन्दिन्।

३. नन्दि = शिव (सहस्रनाम)।

४. नन्दि = विष्णु (सहस्रनाम)।

नन्दिका = शिव (सहस्रनाम)।

नन्दिकुण्ड, एक तीर्थ जहाँ स्नान करने से भ्रूणहत्या जैसे पाप भी निवृत्त हो जाते हैं (१३. २५, ६०)।

नन्दिग्राम, अयोध्या के निकट एक ग्राम का नाम है : ३. २७७, ३९ (यहाँ दशरथ पुत्र भरत ने अपने ज्येष्ठ भ्राता श्रीराम के वनवास की अवधि में उनकी चरणपादुका की सेवा करते हुये राज्य-संचालन किया था); २९१, ६२।

१. नन्दिन्, शिव के एक अनुचर का नाम है : १२. २८३, १६. ३१। तुलो० नन्दि, नन्दीश्वर।

२. नन्दिन् = शिव (सहस्रनाम)।

३. नन्दिन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. नन्दिनी, कश्यप द्वारा सुरभि के गर्भ से उत्पन्न एक गाय का नाम है : १. ९९, १४; १७५, १५. १७. १८. २२. २३. २५. २६. २८. ३०।

२. नन्दिनी, एक तीर्थ जहाँ स्नान करने से नरमेध का फल प्राप्त होता है (३. ८४, ५५)।

३. नन्दिनी, एक मातृका का नाम है : (९. ४६, ५)।

नन्दिमुख = शिव (सहस्रनाम)।

१. नन्दिवर्धन, सात्यकि के शंख का नाम है (९. ६१, ७१ के बाद दाधा० गीप्रे० सं०)।

२. नन्दिवर्धन = शिव (सहस्रनाम)।

नन्दिवेग, एक क्षत्रिय वंश जिसमें शम नामक एक कुलाङ्गार राजा उत्पन्न हुआ था (५. ७४, १७)।

नन्दिसेन, ब्रह्मा द्वारा स्कन्द को प्रदत्त चार पार्षदों में से एक का नाम है (९. ४५, २४)।

१. नन्दीश्वर, शिव के एक पार्षद जो कुबेर की सभा में उपस्थित होने वाले शिव के वाहन हैं (२. १०, ३४)।

२. नन्दीश्वर = शिव।

नपुसंक (कं) = शिव (सहस्रनाम)।

नप्तृ, एक विश्वेदेव है (१३. ९१, ३७)।

नभःस्थल, नभस = शिव (सहस्रनाम)।

नभोद, एक विश्वेदेव है (१३. ९१, ३४)।

नमस, नमस्कार = शिव (सहस्रनाम)।

नमुचि, एक असुर का नाम है जिसका इन्द्र ने वध किया था : १. ३, १४८; ६५, २२ (यह दनु का पुत्र था); २२८, ४५ (मय इसका भ्राता था); २. ५५, १३ (इन्द्र ने नमुचि से कभी वैर न करने की प्रतिज्ञा करके उसका विश्वास प्राप्त कर लिया और फिर अवसर देखकर उसका सर काट लिया); ३. २५, १०; १६५, ७; १६८, ८१ (इन्द्र ने इसे पराजित किया था); २९२, ४ (इन्द्र ने इसका वध किया); ५. १६, १४; ६. ८३, ४० (प्राद्रवद्भयात् यथेन्द्रस्यरणात्पूर्वं नमुचिर्दैत्यसत्तमः); ८८, १७; ८. २६, २१ (त्रासयामास महेन्द्रोनमुचिं यथा); ८५, २६. २७; ८६, १६; ८९, ४६; ९०, ७२; ९. ७, ३८; १७, २२ (विव्याध''''''''यथा महेन्द्रोनमुचिं); ४३, ३४. ३७. ४५ (इन्द्र ने इसे दिये हुये अपने वचन का उल्लंघन करके इसका वध कर दिया); १२. ९८, ४९. (इन्द्र ने इसका वध किया था); १६६, २७ (यह दानवों में प्रमुख था); १८०, ३; २२६, १. ३. ४ (इन्द्र के साथ इसका संवाद); २२७, ५० (यह पृथिवी के प्राचीन शासकों में से एक था); १३. ३९, ६; १४. ५, २३ (इन्द्र ने इसका वध किया था)। तुकी० असुर, असुरश्रेष्ठ, दैत्यसत्तम।

नमुचिघ्न = इन्द्र : १. २५, ८।

नमुचिहन् = इन्द्र : १. २२६, २१।

नय = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. नर, एक देव अथवा महर्षि (सामान्यतया नारायण के साथ सम्बद्ध) जिनके साथ अर्जुन पाण्डव को समीकृत किया गया है : १. १, १७४ (नरनारायणौ तौ कृष्णार्जुनौ); १९, २ ('विष्णुः'''नरेण सहितः' ने असुरों के पास से अमृत ले लिया). १९ (असुरों से युद्ध किया). २०. २८ (देवों ने इन्हें अमृत की रक्षा करने का भार सौंपा); ६७, ११६ (ये इन्द्र के पुत्र के रूप में, अर्थात अर्जुन के रूप में जन्म लेंगे). ११९ (नरनारायणौ= अर्जुन और कृष्ण); ७०, २९ (नरनारायणस्थानं गङ्गयेवोपशोभितम्); २१८, ५ (नरनारायणवृषी=अर्जुन और कृष्ण); २२४, ४. ५. ८ (नर-नारायणौ यौ तौ पूर्वदेवो विभावसो); २२८, १८; २. ३, १५ (इन्होंने बिन्दुसर में यज्ञ किया); ६७, ३३ (द्रौपदी ने इनकी सहायता का आवाहन किया); ६८, ४६; ३. १२, ४६; ४०, १ (नरस्त्वं पूर्वदेहे वै नारायणसहायवान् बदर्यां तप्त्वानुग्रं तपो); ४१, १८; ४७, १० (नरनारायणौ यौ तौ पुराणवृषिसत्तमौ'''हृषीकेशधनञ्जयौ). ११; ८६, ६; १२५, १९; १४१, २३; १४५, १४ (नरनारायणाश्रमः = बदरी). २६. ४२ (नरनारायणस्थानं भागीरथ्योपशोभितम्); १५६, १० (विशाला बदरी : ''' नरनारायणाश्रमः). १४. २०; २७२, ७ (सुरेश्वरं ने बदरी में तपस्या की थी); ५. ४९, ५. ८. ११. १४. २० (नरनारायणने पौलोमों और कालकञ्जों को पराजित किया था): ९६, १४. १५. २२. २५. ३३ (नर और नारायण ने दम्भोद्भव को पराभूत किया था). ४०. ४९; ९७, २; १११, ६. २०; ६. ६, ४६; ८, १५; २३, १८. २६; ६६, १० (नर सहित नारायण मनुष्यों के रूप में जन्म लेंगे). ११-१२. ३२; ६८, १५. १८; ७. ११, ४१; ७७, २; ८०, ५०; ८१, ९; ८८, १९; २०१, ८६; ८. १६, २०; ८७, ७९; ९६, २८; १२. १२७, २. ५ (बदरी में इनका आश्रम); २८०, ५०; ३१७, ५ (यदि ग्रीवा से प्राणों का निष्क्रमण हो तो मनुष्य नर का सान्निध्य प्राप्त करता है); ३३४, ९ (स्वायम्भुव मन्वन्तर के सत्ययुग में वासुदेव के चार अवतार हुये थे, जिनके नाम इस प्रकार हैं : नर, नारायण, हरि और कृष्ण). ११ (नर नारायण ने बदरिकाश्रम जाकर तपस्या आरम्भ की). १८ (नारद से नरनारायण का संवाद); ३३९, १००. १११; ३४१, ३७. ४०; ३४२, १०७. ११३. १२७; ३४३, ७. १४. २६. २८; ३४४, १. २६. २७; ३४५, ७; ३४६, १-३; ३४७, १; १३. १६८, ४३. ४४; १५. ३१, ११ (ऋषिं इमं पार्थं धनञ्जयम्); १८. ६, २३. ८०। तुकी० किरीटिन्, सुरेश्वर।

२. नर = शिव (सहस्रनाम)।

३. नर = विष्णु (सहस्रनाम)।

४. नर, बहु० (°राः) गन्धर्वों का एक वर्ग, जो कुबेर की सभा में उपस्थित होता था (२. १०, १४)।

१. नरक, भूमि के पुत्र एक असुर का नाम है जिसका कृष्ण (विष्णु) ने वध किया था : १. ६५, २९ (दनु के पुत्रों में से एक); २. ९, १२ (वरुण की सभा में); १४, १४ (मुरुञ्च नरकञ्चैव शास्ति यो यवनाधिपः); ३. १२, १८ (कृष्ण ने इसका वध करके अदितिके कुण्डल प्राप्त किये). २९ (कृष्ण ने मुरु दैत्यके पाशों को काट दिया, निसुन्द और नरक का वध किया, और प्राग्ज्योतिषपुर के मार्ग को पुनः यात्रा के योग्य बना दिया); १४२, १६ (यह उत्तर में रहता था। लोमश ने बताया : नरकासुर इन्द्रपद प्राप्त करना चाहता था। उसने १०,००० वर्षों तक कठोर तपस्या करके तप, स्वाध्याय और पराक्रम से इन्द्र का स्थान लेने का प्रयास किया। इससे इन्द्र को अत्यधिक भय हुआ और उन्होंने मन ही मन विष्णु का चिन्तन किया। फलस्वरूप विष्णु ने अपने हाथ से मार कर नरक के प्राणों का हरण कर लिया). २५; १६८, ८१ (प्रह्लाद और नरक को इन्द्र ने पराजित किया था); २५२, २० (श्रीकृष्ण ने नरक का वध किया तब उसकी आत्मा कर्ण के शरीर में प्रवेश कर गई). ३४ (नरकासुरकी अन्तरात्मा से आविष्टचित्त होने के कारण कर्ण ने अर्जुन के वध का संकल्प किया); ५. ४८, ८० (इसने अदिति के मणिकुण्डलों का हरण किया). ८५ (कृष्ण ने इसका वध किया); ६८, ४ (कृष्ण ने इसे पराजित किया था); १३०, ४३; १५८, ८; ७. ११, ५ (कृष्ण ने इसका वध किया था); २९, ३०. ३३. ३५ (पृथिवी ने अपने इस पुत्र को वैष्णवास्त्र से सम्पन्न होकर देवताओं और दानवों के लिये अवध्य हो जाने का वरदान माँगा था। वह वैष्णवास्त्र बाद में इसके पास से भगदत्त को प्राप्त हुआ). ३८ (श्रीकृष्ण ने इसका वध किया था); ८. ५, ५५; १२. ४७, ९३; २०९, ७; २२७, ४९ (पृथिवी के प्राचीन नरेशों में यह भी एक था); ३४०, ९२ (श्रीकृष्ण इसका वध करेंगे)। तुकी० भौम, दैत्य, दैत्येन्द्र, दानव।

२. नरक एक तीर्थ का नाम है : ३. ८३, ६८।

३. नरक, स्वर्ग के विपरीत एक लोक का नाम है जो पापियों को प्राप्त होता है : १. २, ७३; ४५, ३०; ७४, ३९ (पुनाम्नो नरकात्). १०० (त्रायन्ते नरकाज्जाताः पुत्रा धर्मप्लवा); ९०, ४ (इमं भौमं नरकं ते पतन्ति). ६. ७ (भौमं नरकं ते पतन्ति); ९३, १०; १२१, २८; १५७, २३; २२९, १४; २. ६६, १०; ६८, १२; ७७, ५; ३. ३०, २८; ३१, १९; ३५, १०; ५८, १२; १२८, ११. १४. १६; १५७, ४३; १८६, १४; १९९, १४; २०९, ३४; २११, १९. २०; २१५, १६; ३१३, १०३-१०६; ५. २९, ४५; ३३, ३४; २११, १९. २०; २१५, १६; ३१३, १०३-१०६; ५. २९, ४५; ३३,

५४; ३३, ११. ३४; ६८, २०. ३९. ५३; ६०, १०१; ७८, ५; ८५, २४; ९०, ४; ९२, १६; ९८, ४१; ९९, ३. ५. ६; १५०, १५; १५२, ३२; १६५, २२. ४४. ४६; १७३, २१; १७४, ६०; १९०, ३. १४; २१५, १३; २७९, १७. १९. २१; २८०, ३७; २८६, १७; २९७, ७; ३०१, ११; ३१९, १५; ३४६, ६; १३. १७, १८; २६, ४६; ३४, १२; ५७, ४. ३१; ६१, ७४; ६४, २१; ६६, ८. ४५. ५२; ७०, ३२; ७५, ४१; १०१, ६. ७. १५; १०४, २२; १११, २. १६; ११२, २९; ११५, ४७; १२५, ७६; १२६, ३२; १२७, १८; १३०, २९; १६२, २८; १६५, ७; १४. ८०, ३७; ९०, ४९. १००; १८. २, ४६; ३, १२. १४. १६. १७. ३६-३९।

नर-नारायणौ, (अर्थात नर और नारायण की महिमा का वर्णन)— "एक समय बृहस्पति और उशना (शुक्राचार्य), ब्रह्मा की सेवा में उपस्थित हुये। इनके साथ इन्द्र सहित मरुद्गण, अग्नि, वसुगण, आदित्य, साध्य, सप्तर्षि, विश्वावसु, गन्धर्व और श्रेष्ठ अप्सरायें भी वहाँ उपस्थित थीं। वे सब देवता पितामह ब्रह्मा को प्रणाम करके उनके सब ओर बैठ गये। उसी समय पुरातन देवता नर-नारायण ऋषि भी उधर से निकले और अपनी कान्ति तथा ओज से सबके चित्त और तेज का अपहरण-सा करते हुये उस स्थान को लाँघकर चले गये। यह देख कर बृहस्पति ने ब्रह्मा से इन दोनों का, जिन्होंने ब्रह्मा का अभिनन्दन भी नहीं किया, परिचय पूछा। ब्रह्मा ने बताया : ये दोनों महान् शक्तिशाली पृथिवी और आकाश को प्रकाशित करते हुये जो हम सब का अतिक्रमण करके आगे बढ़ गये हैं वे नर और नारायण हैं। इनका धैर्य और पराक्रम महान् है। ये अपनी तपस्या से अत्यन्त प्रभावशाली होने के कारण भूलोक से ब्रह्मलोक में आये हैं। दोनों ही बुद्धिमान और शत्रुओं को सन्ताप देने वाले हैं। एक होते हुये भी असुरों का विनाश करने के लिये दो शरीर धारण किये हुये हैं। देवता और गन्धर्व सभी इनकी पूजा करते हैं। ब्रह्मा की बात सुनकर इन्द्र, बृहस्पति और अन्य सब देवता उस स्थान पर गये जहाँ नर और नारायण ने तपस्या की थी। उन दिनों देवासुर संग्राम उपस्थित था और उसमें देवताओं को महान् भय प्राप्त हुआ था; अतः इन्द्र ने दोनों महात्माओं, नर और नारायण से अपनी सहायता करने का वर माँगा। नर और नारायण ने इन्द्र की सहायता करना स्वीकार कर लिया। तदनन्तर दोनों को साथ लेकर इन्द्र ने समस्त दैत्यों और दानवों पर विजय प्राप्त की। इस मनुष्य लोक में श्रीकृष्ण नारायण और अर्जुन नर माने गये हैं। नर और नारायण दोनों एक ही हैं। अपने सत्कर्म के प्रभाव से दोनों अक्षय एवं ध्रुवलोकों को व्याप्त करके स्थित हैं। लोकहित के लिये जब-जब युद्ध का अवसर आता है तब-तब ये बार-बार अवतार लेते हैं। दुष्टों का दमन करके साधु पुरुषों एवं धर्म का संरक्षण ही इनका कर्तव्य है। इनके सम्बन्ध में ये समस्त बातें वेदों के ज्ञाता नारद जी ने सभी वृष्णिवंशियों के सन्मुख कही थीं (५. ४९, ३-२२)।"

नरमेध, एक यज्ञ का नाम है : ३. ८५, १५५; ९. ५०, ३६; १३. १०३, ३६; १४. ३, ८।

नरर्षभ = शिव (सहस्रनाम)।

नरवाहन = कुबेर (देखिये वस्था०)।

१. **नरसिंह**, विष्णु के पंचम अवतार का नाम है : १२. ३३९, १०४।

नरसिंहवपुस् = विष्णु (सहस्रनाम)।

नरिष्यत्, **नरिष्यन्त**, मनुवैवस्वत के तृतीय पुत्र का नाम है : १. ७५, १५।

१. **नर्तक**, एक अस्त्र का नाम है जिसका उपयोग अर्जुन करेंगे (५. ९६, ४२)।

२. **नर्तक** = शिव (सहस्रनाम)।

नर्तनशील = शिव (सहस्रनाम)।

नर्मदा, एक नदी का नाम है : २. ९, १८ (यह वरुण की सभा में उपस्थित होने वाली नदियों में से एक है); ३१, १० (यह दक्षिण में स्थित है); ३. ८२, ५२ (एक तीर्थ); ८५, ९; ८९, २. ४; १२१, ११ (भ्राताओं सहित युधिष्ठिर ने नर्मदा की यात्रा की थी). १९ (वैदूर्य पर्वत का दर्शन करके नर्मदा में उतरने से मनुष्य देवताओं के समान पवित्र लोक प्राप्त करता है); १५६, ८; १८८, १०३; २२२, २४ (यह अग्नि की माताओं में से एक है); ६ ९, १४; १२. ५२, ३२; १३. २, १८ (यह महिष्मती के राजा दुर्योधन की पत्नी बनी और एक सुदर्शना नामक कन्या को जन्म दिया); २५, ५० (इसमें स्नान करके एक पक्ष तक निराहार रहने वाला मनुष्य जन्मान्तर में राजकुमार होता है); १६६, २०; १५. २०, १३ (पुरुकुत्स की पत्नी)।

१. **नल**, एक निषध राज का नाम है जो वीरसेन के पुत्र और दमयन्ती के पति थे : १. १, २२६, २३५; २, १६१; १९९, ५; २. ८, २२ (यम की सभा में); ३. ५२, ५५ (निषधराज, वीरसेन के पुत्र). ५९; ५३, १. १५. १६. १८. २०. २७. ३०. ३२; ५४, २७. २८. ३१; ५५, १. ७. १६. १९. २२; ५६, १. ५. १८. २२. २५; ५७, ११-१३. २०. २९. ३५. ४१. ४६ (दमयन्ती के साथ इनका विवाह तथा इन्द्रसेन और इन्द्रसेना नामक दो सन्तान उत्पन्न करना); ५८, ४. ७. ८. ११-१३; ५९, ४. ५. ७. ९. १९; ६०, ३. ५. ६. ९. १०. १५. १९. २१. २४; ६१, २. ५. ८. १५. २४. ३०; ६२, १. ३. ८. १७. १८. २५. २६. २८; ६३, १; ६४, १०. १९. २९. ३०. ३३-३५. ५०. ५३. ५५. ७७. ८०. ८४. ८६. ८७ ८९. ९५. १०५. ११४. १२४. १२५. १२८; ६५, ४२; ६६, १-४. ६. ९. १३. १५. २६; ६७, १. ८. १२; ६८, १. २. ४. ६. २०; ६९, २. २९. ३४. ४८. ४९; ७०, २. १८. २६; ७१, ३. १९. २२. २८-३०. ३३; ७२, ३. ५. ६. ३२. ३७. ४२. ४३; ७३, ३-५. ९. ३४-३६; ७४, ३. ११. १३-१६. २३. ३०; ७५, १. १८. २३; ७६, २. ३. ६-८. ११. २५. ३६. ४१. ४४. ४७. ४८. ५०; ७७. १. २. ४. ६. ८. ९. १४. २०; ७८, ४. १७-१९. २६; ७९, ३. ६. ७. १०. १५; ११३, २३; ४. ५६, १०; ५. ११७, १५; ८. ९१, १३; १३. १६५, ५७।

तुल० निम्नलिखित पर्याय :

निषधराजेन्द्र : ३. ५४, ३१।

निषधाधिप : ३. ५७, १८; ६२, ५. २०; ६४, २७; ६८, ३; ७६, २६; ७८, ३२।

निषधाधिपति : ३. ६१, १३; ६४, ३३. ७७; ७७, १९।

निषधेश्वर : ३. ६६, २१।

नैषध (निषधराज) : १. १, २३५; ३. ५३, १६. २१; ५४, ३७ ५५, ३. ९. १०. १५; ५६, १३. ३०; ५७, १७. २३. २५. २६. ३४. ३६. ३८. ४१; ५८, १; ५९, १. ३. १३. १४; ६०, १७; ६१, ७. २५; ६३, २. ९. १६. २२. २४. २५. ३८; ६४, ५८. ९२. १२५; ६६, ११; ६७, १. १९; ६८, ६. २३. २४; ६९, २ (नैषधो नाम वीरसेनसुतो नलः); ७०, २; ७२, ३८. ३९; ७३, ११. १४ ३४-३६; ७४, १४; ७५, २६; ७६, २९; ७७, १०-१२. १७; ७८, १. ११. १२. १४. २७; ८७, २६; १३. ७६, २५।

पुण्यश्लोक : ३. ५७, २१. २६. ४२; ५९, १८; ६०, १. ९; ६१, ४. १७; ६४, ५०; ६६, २; ६९, २. ३३; ७१, ३४; ७३, १६; ७४, ११; ७५, १८; ७६, १. ११. ४३; ७८, २७।

वीरसेनसुत : ३. १३, ५; ५३, १; ५७, ३०; ६४, ६७; ६९, २ (राजा तु नैषधो नाम वीरसेनसुतो नलः। भार्येयं तस्य कल्याणी पुण्यश्लोकस्य धीमतः); ७८, ४ (वीरसेनसुतो नलः)।

२. **नल**, एक वानरप्रमुख का नाम है : ३. २८३, १९ (यह राम दाशरथी के सहायकों में था). ४१ (यह त्वष्टा का पुत्र था). ४३ (राम ने इससे लंका तक सागर पर सेतु का निर्माण कराया). ४५; २८५, ९ (इसने तुण्ड नामक राक्षस से युद्ध किया); २८९, ४; २९०, ३।

नलकानन, बहु० (°नाः), दक्षिण की एक जाति का नाम है (६. ९, ५९ : नभकानन है)।

नलकूबर, धनाध्यक्ष कुबेर के पुत्र का नाम है: २. १०, १९ (कुबेर की सभा में); ३. २७४, १६ (कुबेर का पुत्र); २८०, ५९ (इसने रावण को शाप दिया था। कुछ समय पूर्व रावण ने नलकुबर की पत्नी तथा अपनी पुत्रवधू समान रम्भा का स्पर्श किया था। इसी से नल कूबर ने रावण को शाप दिया था कि किसी भी नारी की इच्छा के विरुद्ध यदि वह (रावण) उस नारी का स्पर्श करेगा तो मृत्यु को प्राप्त होगा); २९१, ३३; ९. ४७, २९ (कुबेर का पुत्र)।

१. नलिनी, एक नदी का नाम है: ३. १८८, ३ (नारायण के उदर में मार्कण्डेय ने इसे भी देखा); ६. ६, ४८ (यह गंगा की सात धाराओं में से एक है।

२. नलिनी, कुबेर द्वार निर्मित एक कमल सरोवर का नाम है: १. २, १७८; ३. १५३, १; १७७, ९. १०; ७. ८०, २७; १३. १९, ३२।

नलोप ख्यान, राजा नल की कथा का द्योतक है: १. २, ५१. १६१।

नलोपाख्यानपर्वन् (°र्व) महाभारत के ३५वें अवान्तर पर्व का नाम है—"जब अर्जुन अस्त्रविद्या के लिये इन्द्रलोक चले गये तब काम्यक वन में निवास करते हुये एक दिन पाण्डव अर्जुन के विरह में बैठे हुये आपस में बात करने लगे। उस समय भीमसेन ने युधिष्ठिर से कहा: 'हम लोग बारह वर्ष व्यतीत होने के पहले ही अर्जुन को वन से लौटा कर और श्रीकृष्ण को बुलाकर धृतराष्ट्र के पुत्रों का संहार कर सकते हैं। शठ शत्रु को शठता के द्वारा ही मारना चाहिये। धर्मशास्त्र में धर्मपरायण धर्मज्ञ पुरुषों द्वारा एक दिन-रात एक संवत्सर के समान देखा जाता है। इसी प्रकार वेदों के अनुसार कृच्छ्रव्रत के अनुष्ठान से एक दिन में ही एक वर्ष की पूर्ति हो जाती है। अतः तेरहवें दिन के बाद ही हम लोगों के वनवास की तेरह वर्ष की अवधि समाप्त हो गई। यदि आप की आज्ञा हो तो जैसे तृण की राशि में डाली हुई अग्नि उसे भस्म कर डालती है उसी प्रकार मैं अपनी शक्ति से ही दुर्योधन का वध कर डालूँ।' भीम के तर्कों को सुनने के बाद भी महाराज युधिष्ठिर उनसे सहमत नहीं हुये। पाण्डव ऐसी बातें कर रहे थे तभी महर्षि बृहदश्व वहाँ आये। युधिष्ठिर ने महर्षि का स्वागत करने के बाद उनसे पूछा: 'क्या मेरे समान अत्यन्त भाग्यहीन राजा इस पृथिवी पर कोई दूसरा भी है।' महर्षि बृहदश्व ने बताया कि प्राचीन काल में युधिष्ठिर से भी अधिक दुखी राजा हो चुका है। उस प्राचीन राजा की कथा बताते हुये महर्षि ने आगे कहा: 'निषध देश में वीरसेन नाम से प्रसिद्ध एक भूपाल थे। उन्हीं के पुत्र का नाम नल था जो धर्म और अर्थ के तत्वज्ञ थे। राजा नल को उनके भ्राता पुष्कर ने छल से ही जूए में जीत कर उन्हें वन में निर्वासित कर दिया। वनवास के समय नल के साथ न सेवक थे, न रथ था, न भाई थे, और न कोई अन्य बान्धव। तुम (युधिष्ठिर) तो देवतुल्य पराक्रमी भाइयों तथा अनेक तेजस्वी ब्राह्मणों के साथ वन में रह रहे हो। अतः तुम्हें शोक नहीं करना चाहिये।' (३. ५२)।

"युधिष्ठिर द्वारा और अधिक जिज्ञासा करने पर महर्षि बृहदश्व ने बताया: निषधराज वीरसेन के पुत्र नल एक बलवान् राजा हो गये हैं। वे उत्तम गुणों से सम्पन्न, रूपवान और अश्वसंचालन की कला में कुशल थे। उन राजा नल का स्थान समस्त राजाओं के ऊपर था। वे शूरवीर, वेदवेत्ता, सत्यवादी तथा द्यूतक्रीड़ा के प्रेमी थे। इसी प्रकार विदर्भ देश में भयानक पराक्रमी भीम नामक राजा राज्य करते थे किन्तु उनके कोई सन्तान नहीं थी। एक दिन दमन नामक ब्रह्मर्षि भीम के पास आये। राजा और रानी के सत्कार से प्रसन्न होकर दमन ने उन्हें एक कन्या और तीन पुत्र प्रदान किये। भीम की पुत्री का नाम दमयन्ती तथा पुत्रों के नाम दम, दान्त, और दमन रक्खे गये। दमयन्ती उस समय की अप्रतिम सुन्दरी थी। उसी प्रकार नर श्रेष्ठ नल भी सौन्दर्य में अनुपम थे। नल और दमयन्ती के हृदय में एक दूसरे की सुन्दरता का वृत्तान्त सुनते-सुनते परस्पर आकर्षण और अनुराग उत्पन्न होने लगा यद्यपि दोनों को एक दूसरे को देखने का अवसर नहीं मिला था। एक दिन राजा नल ने अपने उद्यान में सुवर्णमय पंखों से युक्त हंसों को देख कर उनमें से एक को पकड़ लिया। उस हंस ने नल से कहा कि वह उनका प्रिय कार्य करेगा। दमयन्ती के निकट जाकर उनकी ऐसी प्रशंसा करेगा जिससे वह उनके अतिरिक्त अन्य किसी को भी अपने हृदय में स्थान न देगी। हंस के इस प्रकार वचन देने पर नल ने उसे छोड़ दिया। वहाँ से सभी हंस विदर्भ नगर गये जहाँ दमयन्ती उन अपूर्व पक्षियों को देख कर प्रसन्न हुई। दमयन्ती उन हंसों को पकड़ने की चेष्टा करने लगी। जब वह उस हंस के निकट आई जिसने नल को वचन दिया था तब उसने मानव वाणी में कहा: 'राजा नल अश्विनीकुमारों के समान सुन्दर हैं। मनुष्यों में उनके समान कोई नहीं है। अतः तुम उनकी पत्नी बन कर अपना जीवन सफल करो।' हंस के इस प्रकार कहने पर दमयन्ती ने उनसे राजा नल से भी अपने सम्बन्ध में ऐसी ही बातें कहने के लिये कहा। (३. ५३)।

"दमयन्ती ने जब से हंस की बातें सुनीं तब से राजा नल के प्रति अनुरक्त हो जाने के कारण अस्वस्थ रहने लगी। सखियों से दमयन्ती का समाचार जानकर विदर्भराज ने सोच-विचार करने के बाद उसका विवाह करने के उद्देश्य से स्वयंवर का आयोजन किया। स्वयंवर का समाचार जानने के बाद देश-विदेश के राजकुमार विदर्भ नगर में आने लगे। इसी समय महान् देवर्षि नारद और पर्वत इधर-उधर भ्रमण करते हुये इन्द्रलोक में गये। जब इन्द्र ने नारद से शूरवीर क्षत्रिय अतिथियों के अपने लोक में न आने का कारण पूछा तब नारद ने कहा कि शीघ्र ही अद्वितीय सुन्दरी दमयन्ती का स्वयंवर होने वाला है अतः सभी राजा उसे पाने की अभिलाषा से उसके स्वयंवर में गये हैं। उसी समय लोकपाल गण भी देवराज के समीप आये तथा नारद की बात सुनने के पश्चात दमयन्ती के स्वयंवर में जाने की आज्ञा लेकर प्रस्थित हुये। विदर्भ नगर जाते समय उन लोकपालों ने मार्ग में राजा नल को देखा और उनके रूप-वैभव से चकित हो दमयन्ती को पाने का संकल्प छोड़ बैठे। तब उन देवताओं ने अपने विमानों को आकाश में रोककर राजा नल से कहा: 'आप सत्यव्रती हैं। हम लोगों की सहायता कीजिये। आप हमारे दूत बनकर ही विदर्भ नगर जाइये।' (३. ५४)।

"नल ने देवताओं से उनकी सहायता करने की प्रतिज्ञा करके क्या कार्य करना है यह पूछा। तब इन्द्र, अग्नि, वरुण, और यम ने अपना परिचय देते हुये बताया कि वे दमयन्ती को प्राप्त करना चाहते हैं। अतः नल से उन लोगों ने इसी संदेश को दमयन्ती तक पहुँचाने के लिये कहा। नल ने अपना भी यही उद्देश्य बताते हुये देवों का कार्य कर सकने में अपने को असमर्थ बताया। जब देवताओं ने नल को उनकी प्रतिज्ञा स्मरण दिलाते हुये उन्हें अपना दूत बनने पर विवश किया तब नल देवों की शक्ति से सम्पन्न होकर दमयन्ती के भवन में निर्बाध पहुँच गये। वहाँ दमयन्ती के मनोहर स्वरूप को देखकर वह अत्यधिक मुग्ध हुये किन्तु अपनी प्रतिज्ञा का स्मरण करके उन्होंने अपनी कामवेदना को मन में ही रोक लिया। राजा नल के अपूर्व सौन्दर्य को देखकर सखियों सहित दमयन्ती प्रभावित हुई और उसने नल का परिचय पूछा। नल ने अपना परिचय देते हुये कहा कि उस समय वे इन्द्र, अग्नि, वरुण और यम के दूत बन कर वहाँ आये हैं। उन्होंने बताया कि ये देवता दमयन्ती को प्राप्त करना चाहते हैं। नल ने यह भी बताया कि इन्हीं देवताओं के प्रभाव से वे अन्तःपुर तक आने में सफल हो सके हैं। अतः उन्होंने दमयन्ती को अपनी इच्छानुसार निश्चय करने के लिये कहा (३. ५५)।

"दमयन्ती ने देवताओं के प्रति नमस्कार समर्पित करते हुये कहा कि यदि नल स्वयं उसे स्वीकार नहीं करेंगे तो वह जल, विष, अग्नि, अथवा फाँसी को निमित्त बनाकर अपना प्राण त्याग देगी। दमयन्ती की बात सुन कर नल ने उसे विविध प्रकार से समझाते हुये देवों में से ही किसी का वरण करने का परामर्श दिया तथा अपने को देवों का दूत बताते हुये अपना स्वार्थसाधन करने में असमर्थता प्रकट की। नल के निश्चय को

सुनने के बाद दमयन्ती ने परामर्श दिया कि देवताओं के साथ नल भी स्वयंवर मण्डप में आये जिससे वह लोकपालों, देवताओं आदि के सामने ही नल का वरण कर ले। इससे नल के वर्तमान दौत्य कर्म को दोष नहीं लगेगा। दमयन्ती से बातें करने के बाद नल ने लौट कर देवताओं से वहाँ का समाचार दिया। उन्होंने यह भी बताया कि दमयन्ती ने उनके वरण का ही मानसिक संकल्प कर रक्खा है तथा देवताओं के साथ उनसे भी स्वयंवर में आने का आग्रह किया है जिससे सब के सामने ही वह उनका वरण कर सके। (३. ५६)।

"शुभ समय, उत्तम तिथि, तथा पुण्यदायक अवसर आने पर राजा भीम ने भूपालों को स्वयंवर के लिये बुलाया। यह सुनकर सब भूपाल कामपीड़ित होकर दमयन्ती को पाने की इच्छा से स्वयंवर के मण्डप में आये। व्याघ्रों से भरी हुई पर्वत की गुफा तथा नागों से सुशोभित भोगवती पुरी की भाँति वह पुण्यमयी राजसभा नरश्रेष्ठ भूपालों से भरी दृष्टिगत होने लगी। उस रंगमण्डप में दमयन्ती ने एक स्थान पर एक ही आकृति के पाँच पुरुषों को बैठा देखा। उस समय नल को पहचान न सकने के कारण दमयन्ती अत्यन्त चिन्तित हो गई। उसने अपने सुने हुये देवचिह्नों पर भी विचार किया किन्तु पुरुषों से देवताओं की पहचान करने वाले जिन लक्षणों को उसने अपने बड़े-बढ़ों से सुन रक्खा था वे उन पाँचों पुरुषों में से एक में भी दिखाई नहीं पड़े। तब उसने अनेक प्रकार से निश्चय तथा बार-बार विचार करके देवताओं की शरण में जाना ही समयोचित कर्तव्य समझा। तत्पश्चात देवताओं को नमस्कार करके उसने कहा कि वह निषध नरेश नल का ही पति रूप में वरण कर चुकी है अतः इस सत्य के प्रभाव से देवता स्वयं ही उसे नल की पहचान करा दें। इस प्रकार उसने लोकपालों से अपना-अपना रूप प्रकट देने का निवेदन किया जिससे वह नल को पहचान सके। दमयन्ती का करुण विलाप सुनकर तथा उसके अन्तिम निश्चय, नल विषयक वास्तविक अनुराग, विशुद्ध हृदय, उत्तम बुद्धि तथा प्रेम को देखकर देवताओं ने उसमें देवसूचक लक्षणों को देख पाने की शक्ति उत्पन्न कर दी। तब दमयन्ती ने देखा कि सम्पूर्ण देवता स्वेदरहित हैं। उनके आखों की पलकें नहीं गिरतीं। उनकी पुष्पमालायें नूतन विकास से युक्त हैं तथा कुम्हलात नहीं; इन पुष्पमालाओं पर धूल कण भी नहीं है। वे सिंहासनों पर बैठी हैं किन्तु उनके पाँव पृथिवीतल का स्पर्श नहीं कर रहे हैं तथा उनकी परछाईं भी नहीं पड़ रही है। उन पाँचों पुरुषों में से एक में ये लक्षण नहीं थे। उनकी परछाईं पड़ रही थी, पुष्पमाला कुम्हला गई थी, उनके अंगों पर धूल कण और स्वेदविन्दु स्पष्ट रूप से विद्यमान थे और वे पृथिवी का स्पर्श करते हुये आसीन थे। इन लक्षणों की उपस्थिति से दमयन्ती ने नल को पहचान लिया और उनके गले में पुष्पों की वरमाला डाल दी। उस समय नल ने उल्लसित हृदय से दमयन्ती को आजीवन उसको ही समर्पित रहने का आश्वासन दिया। दमयन्ती ने भी इसी प्रकार विनीत वचनों से नल को आश्वस्त किया। दमयन्ती ने जब नल का वरण कर लिया तब लोकपालों ने प्रसन्न चित्त से नल को आठ वरदान दिये: इन्द्र ने यह वर दिया: 'मैं तुम्हें यज्ञ में प्रत्यक्ष दर्शन दूँगा और अन्त में सर्वोत्तम शुभ गति प्रदान करूँगा।' अग्नि ने नल को अपने ही समान तेजस्वी लोक प्रदान करते हुये कहा कि नल जहाँ चाहेंगे वहीं वे (अग्नि) प्रकट हो जायेंगे। यम ने कहा कि नल के बनाये भोजन में उत्तमोत्तम रस एवं स्वाद उपलब्ध होगा और धर्म में उनकी दृढ़ निष्ठा बनी रहेगी। जलाधिपति वरुण ने कहा कि नल की इच्छा के अनुसार कहीं भी जल प्रकट होगा और उनकी पुष्पमालायें सदा उत्तम सुगन्ध से सम्पन्न रहेंगी। इस प्रकार चारों देवताओं ने नल को दो-दो वर दिये। वरदान देने के बाद देवगण स्वर्ग लोक चले गये तथा स्वयंवर में उपस्थित राजा भी विस्मयविमुग्ध होकर अपने-अपने राज्यों को लौट गये। विवाह के बाद नल कुछ समय तक अपनी ससुराल में रहे फिर विदर्भ नरेश की आज्ञा लेकर दमयन्ती सहित अपनी राजधानी चले गये। अपने राज्य में आकर नल अपनी प्रजा का धर्मपूर्वक पालन करने लगे। अश्वमेध तथा अनेक यज्ञों का भी अनुष्ठान किया। नल ने दमयन्ती के गर्भ से इन्द्रसेन नामक पुत्र तथा इन्द्रसेना नामक एक पुत्री उत्पन्न की (३. ५७)।

"जब लोकपालगण अपने लोक लौट रहे थे तब मार्ग में उन्हें द्वापर और कलि मिले जो स्वयंवर में ही जा रहे थे। इन्द्र ने उन दोनों को बताया कि दमयन्ती ने नल का वरण कर लिया है और स्वयंवर समाप्त हो चुका है। यह सुनकर कलि क्रुद्ध हो उठा और उसने प्रतिशोध लेने की धमकी दी। देवताओं ने उस समय राजा नल की प्रशंसा करते हुये उन्हें चारों वेद, पञ्चम वेद, और समस्त इतिहास-पुराण का विद्वान बताये हुये कलि की भर्त्सना की। जब इस प्रकार नल की प्रशंसा करके देवगण स्वर्ग चले गये तब कलि ने कहा कि वह नल के भीतर निवास करके उन्हें राज्य से वञ्चित करेगा। उसने द्वापर से जुए के पासों में प्रवेश करके अपनी सहायता करने के लिये कहा (३. ५८)।

"कलि निषध देश में आकर उचित अवसर की प्रतीक्षा करने लगा। बारह वर्षों की प्रतीक्षा के बाद एक दिन कलि को नल के आचरण में एक दोष दिखाई पड़ा। उस दिन लघुशङ्का से निवृत्त होने के पश्चात नल हाँथ धोकर आचमन करने के बाद बिना पैरों को धोये ही सन्ध्योपासन के लिये बैठ गये। उनके इस दोष को देखकर कलि उनके शरीर में प्रविष्ट हो गया। नल में आविष्ट हो कर कलि ने दूसरा रूप धारण करके पुष्कर को नल के साथ जुआ खेलने के लिये आमन्त्रित किया। कलि द्वारा निमन्त्रित होकर पुष्कर राजा नल के पास आया। कलि भी वृषभ के रूप में पुष्कर के साथ आया। पुष्कर ने नल के पास आ कर जूआ खेलने का आह्वान किया। वह राजा नल का भाई लगता था। नल जूए के उसके आह्वान को सहन नहीं कर सके और दोनों के बीच खेल आरम्भ हो गया। कलि से आविष्ट नल अपना सुवर्ण, रथ आदि वाहन और बहुमूल्य वस्त्र दाँव पर लगाते और हारते गये। उस समय समस्त पुरवासियों, और दमयन्ती के समझाने पर भी नल द्यूत-विरत नहीं हुये। कलि से आविष्ट राजा ने उस समय दमयन्ती से कोई बात तक नहीं की। पुष्कर और नल के बीच जूए का खेल महीनों तक चलता रहा जिसमें नल सदैव हारते ही जाते थे। (३. ५९)।

"यह देख कर कि राजा नल अपना सब कुछ जूए में हार गये हैं, दमयन्ती ने अपनी सेविका बृहत्सेना के द्वारा राज्य के मन्त्रियों आदि को राजा नल की ओर से आज्ञा देते हुये बुलाया जिससे उन्हें यह बताया जा सके कि क्या-क्या द्रव्य हारे जा चुके हैं और क्या-क्या अभी बचा है। इस प्रकार बुलाये जाने पर जब मन्त्रिगण राजद्वार पर एकत्र हुये तब दमयन्ती ने इसकी सूचना नल को दी परन्तु उन्होंने इस बात का अभिनन्दन नहीं किया। पति को अपनी बात का प्रसन्नतापूर्वक उत्तर देते न देख कर दमयन्ती चिन्तित होकर महल के भीतर चली गई। उसने तब अपनी सेविका बृहत्सेना से राजा नल की ओर से ही वार्ष्णेय नामक सूत को बुलाया। वार्ष्णेय के उपस्थित होने पर दमयन्ती ने उसे नल की दशा का विवरण देने के बाद कहा: 'तुम महाराज के प्रिय और मन के समान वेगशाली अश्वों को रथ में जोत कर उस पर हमारे दोनों बच्चों को बैठा लो और कुण्डिनपुरी चले जाओ। वहाँ मेरे दोनों बालकों को, रथ को और घोड़ों को भी मेरे भाई-बन्धुओं की देख-रेख में सौंपकर तुम भी वहीं रह जाना अथवा यदि इच्छा हो तो अन्यत्र चले जाना।' दमयन्ती की बातें सुनने के पश्चात नल के सारथि वार्ष्णेय ने मन्त्रियों से सारी बातें निवेदित कीं। तदनन्तर उसने नल के बच्चों को रथ पर बैठा कर विदर्भ देश के लिये प्रस्थान किया। विदर्भ पहुँच कर वार्ष्णेय ने बालक इन्द्रसेन और बालिका इन्द्रसेना को तथा रथ और घोड़ों को वहीं छोड़ कर राजा भीम से विदा ली और दुखी मन से अयोध्या नगरी चल गया। अयोध्या में वार्ष्णेय ने राजा ऋतुपर्ण की सेवा में उपस्थित होकर उनके सारथि के रूप में जीवनयापन आरम्भ किया (३. ६०)।

"अन्ततः जब पुष्कर ने नल की सम्पूर्ण सम्पत्ति और राज्य को जीत

लिया तब उसने नल से दमयन्ती को भी दाव पर लगाने के लिये कहा। पुष्कर के ऐसा कहने पर पुण्यश्लोक महाराज नल का हृदय शोक से विदीर्ण-सा हो गया। उन्होंने अत्यन्त दुःखित हृदय से पुष्कर की ओर देख कर अपने सब अंगों के आभूषण उतार दिये और केवल एक अधोवस्त्र धारण करके चादर ओढ़े बिना ही अपनी विशाल सम्पत्ति को त्याग कर सुहृदों का शोक बढ़ाते हुये राजभवन से निकल पड़े। उस समय दमयन्ती के शरीर पर भी एक ही वस्त्र था। वह जाते हुये राजा नल के पीछे चल पड़ी। पुष्कर ने राज्य भर में घोषणा करा दी कि जो नल के साथ अच्छा व्यवहार करेगा वह उसका (पुष्कर का) वध्य होगा। इस प्रकार पुरवासियों ने भय से नल का कोई सत्कार नहीं किया। राजा नल अपने नगर के समीप दमयन्ती सहित तीन रात तक केवल जल मात्र के आहार पर टिके रहे। तदनन्तर वे क्षुधा से पीड़ित होकर अन्यत्र चले गये। उस समय उनके साथ केवल दमयन्ती ही थी। कुछ दिनों पश्चात क्षुधार्त नल ने कुछ ऐसे पक्षी देखे जिनके पंख सुवर्ण के थे। मन में यह विचार करके कि वे पक्षी भक्ष्य तथा उनके पंख सम्पत्ति बन सकते हैं, राजा नल ने उन्हें पकड़ने की इच्छा से अपने अधोवस्त्र से उन पक्षियों को ढँक दिया। किन्तु वे सब पक्षी उनका वह वस्त्र लेकर आकाश में उड़ गये। उड़ते हुये उन पक्षियों ने नीचे दीन भाव से नल को नग्न खड़े देख कर कहा: 'हम पक्षी नहीं पासे हैं और तुम्हारे वस्त्र का अपहरण करने की इच्छा से ही यहाँ आये थे। अपनी दीन दशा को देखते हुये पुण्यश्लोक नल ने दमयन्ती को कहीं अन्यत्र सुरक्षित स्थान पर चले जाने के लिये कहा। उन्होंने दमयन्ती को अवन्ती, ऋक्षवान, विन्ध्य, पयोष्णी, विदर्भ, कोशल, तथा दक्षिण दिशा के मार्गों को दिखाते हुये उन स्थानों में से कहीं भी चले जाने के लिये कहा। परन्तु दमयन्ती ने तब अश्रुपूरित नेत्रों से नल से इस प्रकार कहा: 'आपका राज्य छिन गया है, धन नष्ट हो गया, आपके शरीर पर वस्त्र तक नहीं है तथा क्षुधा से अत्यन्त पीड़ित हैं। ऐसी अवस्था में निर्जन वन में आपको असहाय छोड़ कर मैं कैसे जा सकती हूँ। यदि आपका यह अभिप्राय है कि मैं अपने बन्धु-बान्धवों के पास चली जाऊँ तो अच्छा हो कि हम दोनों साथ ही विदर्भ देश को चलें।'

"नल ने अपनी उस विपत्ति और दरिद्रता की स्थिति में विदर्भ देश जाना अस्वीकार कर दिया। नल और दमयन्ती एक ही वस्त्र से अपने अंगों को ढँके हुये थे। इस प्रकार भटकते हुये वे दोनों एक सभाभवन (धर्मशाला) में पहुँचे जहाँ भूमि पर ही दोनों को निद्रा ने घेर लिया। चिन्तित होने के कारण नल बहुत देर तक सो नहीं सके। कलि के प्रभाव से उन्होंने उस समय दमयन्ती को त्याग देने का निश्चय किया। जिससे वह कदाचित अपने स्वजनों के पास चली जाय। तदनन्तर अपनी वस्त्रहीनता और दमयन्ती की एकवस्त्रता का विचार कर नल ने आधे वस्त्र को काट देना ही उचित समझा। उसी समय वहाँ उन्हें एक तलवार दिखाई पड़ी जिसे लेकर उन्होंने आधा वस्त्र काट कर उससे अपना शरीर ढँक लिया और प्रगाढ़ निद्रा से अचेत विदर्भ राजकुमारी दमयन्ती को वहीं छोड़ कर शीघ्रता से चले गये। कुछ दूर जाने पर उनका विचार बदल गया और वे पुनः उसी सभाभवन में लौट आये और दमयन्ती की दशा को देखकर फूट-फूट कर रोने लगे परन्तु फिर वहाँ से चलने को तैयार हुये। उस समय दुष्ट स्वभाव वाले कलि ने नल की विवेकशक्ति का हरण कर लिया था, अतः वे बार-बार जा कर पुनः उसी धर्मशाला में लौट आते थे। उनके मन को एक ओर से कलि अपनी ओर खींच रहा था और दमयन्ती का सौहार्द अपनी ओर। अन्त में कलि ने प्रबल आकर्षण किया जिससे मोहित होकर नल सोती हुई दमयन्ती को छोड़कर शीघ्रता से चले गये (३. ६२)।

"नल के जाने बाद जब दमयन्ती की आँखें खुली तब उसने अपने को अकेला पाया। उस समय अपनी दशा पर अनेक प्रकार से विलाप करते हुये उसने यह शाप दिया कि जिसके अभिशाप से नल क्लेश पर क्लेश उठा रहे हैं उस प्राणी को हम लोगों के दुख से भी अधिक दुःख प्राप्त हो। वह पापी नल से भी अधिक दुःखी जीवन व्यतीत करे। इस प्रकार विलाप करती और हिंसक जीवों से भरे वन में दमयन्ती अपने पति को खोजती हुई भटकने लगी। थोड़ी ही दूर चलने पर एक अजगर ने द्रौपदी को पकड़ लिया। उसके पाश में बँधा दमयन्ती जोर-जोर से क्रन्दन करने लगी। उसी समय एक व्याध उसका विलाप सुन कर वहाँ आ गया और उसने अजगर से दमयन्ती को मुक्त कराया। दमयन्ती को सान्त्वना देने के बाद व्याध ने उसका परिचय पूछा। वह उस समय दमयन्ता के सौन्दर्य पर आसक्त हो गया और दमयन्ती को अपने अनुकूल बनाने की चेष्टा करने लगा। सती दमयन्ती उसकी दुष्टता को समझ कर तीव्र क्रोध से प्रज्वलित हो उठी और उसने व्याध को प्राणशून्य होकर गिर पड़ने का शाप दे दिया। दमयन्ती के शाप के परिणामस्वरूप वह व्याध तत्काल अग्नि से जले हुये वृक्ष की भाँति प्राणशून्य होकर पृथिवी पर गिर पड़ा (३. ६३)।

"व्याध का विनाश करने के बाद उस भयंकर वन में (वन का विस्तृत वर्णन) आगे बढ़ी। तीन दिन और तीन रात तक सतत उत्तर दिशा में बढ़ती हुई दमयन्ती ने तपस्वियों से युक्त एक आश्रम देखा और उसमें प्रवेश किया। वहाँ तपोवृद्ध महात्माओं को प्रणाम करके वह विनीत भाव से खड़ी हो गई। तपस्वियों के पूछने पर दमयन्ती ने अपना परिचय दिया। तब तपस्वियों ने अपने तपोबल से सब कुछ देखते हुये द्रौपदी को आश्वासन दिया कि वह शीघ्र ही अपने पति नल का दर्शन और पूर्ववैभव प्राप्त करेगी। दमयन्ती को इस प्रकार आश्वस्त करने बाद वे सभी तपस्वी अग्निहोत्र और आश्रमसहित अदृश्य हो गये। आश्चर्यचकित दमयन्ती पुनः आगे बढ़ी। इस तरह बहुत दूर तक मार्ग पार करने के बाद दमयन्ती ने एक बहुत बड़े व्यापारियों के दल को देखा जो हाथी, घोड़े और रथों से व्याप्त था। वह दल उस समय एक नदी को पार कर रहा था। दमयन्ती ने उस दल में प्रवेश करके वहाँ के लोगों के पूछने पर अपना परिचय दिया। उस समूह का नेता और संचालक शुचि के नाम से प्रसिद्ध था। शुचि ने दमयन्ती को बताया कि उसका दल सत्यदर्शी चेदिराज सुबाहु के नगर में व्यापार के लिये जा रहा है (३. ६४)।

"दल के संचालक की बात सुन कर दमयन्ती व्यापारियों के उस दल के साथ ही यात्रा करने लगी। कुछ दिनों तक यात्रा करने के बाद व्यापारियों ने सौगन्धिक नामक सरोवर के निकट डेरा डाला। रात को जब सभी व्यापारी सो गये तब जंगली हाथियों का एक झुण्ड वहाँ आया और व्यापारियों के पालतू हाथियों को देख कर उन पर आक्रमण कर दिया। इस संघर्ष में अनेक व्यापारी मारे गये तथा पूरे समूह को बहुत अधिक क्षति हुई। जो लोग क्षति से बच गये वे एकत्र होकर आपस में अपने ऊपर आई आकस्मिक विपत्ति के कारण पर विचार करने लगे। उन लोगों ने समझा कि कदाचित मणिभद्र, यक्षराज कुबेर और विघ्नकर्त्ता विनायकों की पूजा न करने के कारण ही उनपर वह हाथियों के आक्रमण की विपत्ति आई थी। दल के कुछ लोग जहाँ इस प्रकार विचार कर रहे थे वहीं दूसरी ओर कुछ अन्य लोगों ने दमयन्ती को कोई राक्षसी, यक्षिणी या पिशाचिनी समझ कर उसे ही सारी विपत्तियों के लिये उत्तरदायी मानते हुये उसे मार डालने का निश्चय किया। उनका अत्यन्त भयंकर वचन सुन कर दमयन्ती अत्यन्त व्याकुल हो उठी और तत्काल वहाँ से भयंकर जङ्गल के भीतर भाग गई। दूसरे दिन प्रातःकाल बचे हुये लोगों के दल ने आगे के लिये प्रस्थान किया। तदनन्तर मृत्यु से बचे हुये वेदों के विद्वान ब्राह्मणों के साथ यात्रा करती हुई दमयन्ती भी सन्ध्या होते-होते चेदिराज सुबाहु की राजधानी में जा पहुँची। उस समय वह आधी साड़ी से अपने शरीर को लपेटे हुये उन्मत्तों की भाँति राजमहल की ओर बढ़ने लगी। अनेक ग्रामीण बालक कौतूहल वश उसके साथ हो लिये। तभी राजमाता ने महल से दमयन्ती को देखा और एक सेविका से उसे अन्दर बुलवा लिया। परिचय पूछने पर दमयन्ती ने अपने को सैरन्ध्री जाति की एक सेविका बताते हुये अपने पति का नाम बताये बिना ही अपने ऊपर आई विपत्ति का वर्णन किया। उसकी दुःखद गाथा सुन कर राजमाता ने उसे राजभवन में ही रहने के लिये कहा तथा उसके पति का पता लगाने का आश्वासन

दिया। दमयन्ती ने तब इस शर्त पर वहाँ रहना स्वीकार किया कि वह किसी का जूठन नहीं खायेगी, किसी के पैर नहीं धोयेगी, तथा परपुरुष से वर्तालाप भी नहीं करेगी। यदि कोई पुरुष उसे प्राप्त करने की चेष्टा करेगा तो वह राजमाता द्वारा दण्डनीय होगा। दमयन्ती के ऐसा कहने पर राजमाता ने अपनी पुत्री सुनन्दा के साथ दमयन्ती के रहने की व्यवस्था की। सुनन्दा भी तब दमयन्ती को अत्यन्त आदर-सत्कार के साथ रखने लगी जिससे वह वहाँ उद्वेगरहित होकर रहने लगी (३. ६५)।

"इधर दमयन्ती को छोड़ कर जब राजा नल आगे बढ़े तब एक गहन वन में उन्होंने महान् दावानल प्रज्वलित होते देखा। उस दावानल के बीच उन्हें किसी प्राणी का यह शब्द सुन पड़ा : 'पुण्यश्लोक महाराज नल ! दौड़िये और मुझे बचाइये।' उच्च स्वर से बार-बार इस पुकार को सुन कर राजा नल दौड़ कर वन में भीतर घुस गये और वहाँ उन्होंने एक नागराज को कुण्डलाकार पड़ा देखा। नाग ने अपना परिचय देते हुये अपना नाम कर्कोटक बताया और कहा कि महर्षि नारद के शाप से वह एक ही स्थान पर पड़ा रहने के लिये विवश है। नाग ने यह भी बताया कि जब राजा नल ही उसे अन्यत्र ले जायेंगे तब वह शापमुक्त होगा। इतना कह कर नागराज कर्कोटक एक अँगूठे के बराबर हो गया और नल उसे उठा कर उस ओर ले चले जहाँ दवानल नहीं था। सुरक्षित स्थान पर पहुँच कर जब नल ने उस नाग को छोड़ने का विचार किया तब कर्कोटक ने उनसे अपने पगों को गिनते हुये आगे बढ़ने के लिये कहा जिससे वह नल का कल्याण कर सके। नल तब पगों को गिनते हुये चलने लगे। जब नल ने गिनती करते हुये 'दस' कहा तब नाग ने उन्हें डँस लिया। नागदंश से नल का पूर्वरूप अन्तर्हित हो गया, अर्थात् नल श्याम वर्ण हो गये। अपने रूप को इस प्रकार विकृत हुआ देखकर नल अन्यत्त विस्मित हो गये। उस समय उन्होंने कर्कोटक को अपना पूर्व विशाल रूप धारण कर सामने खड़ा देखा। तब कर्कोटक ने नल का रूप विकृत कर देने का कारण यह बताया कि उस नवीन रूप में लोग उन्हें पहचान नहीं पायेंगे। साथ ही उसने यह भी बताया कि जिस कलियुग के कपट से वे महान् दुःखों का सामना कर रहे हैं वह कर्कोटक के विष से दग्ध होकर उनके भीतर अत्यन्त कष्ट से निवास करेगा। नाग ने नल को दाढ़ों वाले जन्तुओं और शत्रुओं से तथा वेदवेत्ता ब्राह्मणों के शाप से कभी भय न प्राप्त होने का वरदान दिया। तदनन्तर उसने नल से कहा कि वे बाहुक नाम धारण करके उन राजा ऋतुपर्ण के पास जाँय जो द्यूतविद्या में अत्यन्त निपुण हैं। तदनन्तर नाग ने नल से इस प्रकार कहा : 'आप आज ही अयोध्या पुरी चले जाइये। इक्ष्वाकु कुल में उत्पन्न राजा ऋतुपर्ण आप से अश्वविद्या का रहस्य सीख कर बदले में आपको द्यूतक्रीड़ा का रहस्य बतायेंगे। जब आप द्यूत के ज्ञाता होंगे तब आप पुनः कल्याणभागी हो जायेंगे।' इसके बाद नागराज कर्कोटक ने नल को दो वस्त्र देते हुये कहा कि जब वे उस वस्त्र को ओढ़ लेंगे तब वे अपना पूर्व रूप प्राप्त कर लेंगे। इस प्रकार नल को संदेश दे कर कर्कोटक वहीं अन्तर्धान हो गया (३. ६६)।

"कर्कोटक के अन्तर्धान होने के दसवें दिन नल ने राजा ऋतुपर्ण की अयोध्या नगरी में प्रवेश किया और बाहुक के रूप में अपना परिचय देते हुये ऋतुपर्ण के समक्ष उपस्थित हुये। नल ने ऋतुपर्ण को बताया कि अश्वविद्या में उनके समान इस पृथिवी पर दूसरा कोई नहीं है। साथ ही विविध प्रकार के भोजन बनाने में अपनी प्रवीणता का भी उन्होंने उल्लेख किया। ऋतुपर्ण ने प्रसन्न होकर दस सहस्र मुद्रायें प्रतिवर्ष के वेतन पर नल को अपने यहाँ नियुक्त कर लिया। इस प्रकार निवास की व्यवस्था हो जाने पर नल दमयन्ती की चिन्ता करते हुये वहाँ रहने लगे। वे प्रतिदिन सायं-काल यह श्लोक पढ़ा करते थे : 'क्व नु सा क्षुत्पिपासार्ता श्रान्ता शेते तपस्विनी। स्मरन्ती तस्य मन्दस्य कं वा साद्योपतिष्ठति ॥' एक दिन रात्रि के समय जब नल इस प्रकार अपना श्लोक बोल रहे थे तब जीवल ने उनसे उस स्त्री का परिचय पूछा जिसके वियोग में वह श्लोक पढ़ते थे। तब नल ने अपना नाम बताये बिना जीवल को नल और दमयन्ती की कथा बताया। उन्होंने बताया कि उसी अभिशप्त स्त्री पुरुष का स्मरण कर वे वह श्लोक प्रतिदिन पढ़ते हैं। इस प्रकार निषध नरेश नल राजा ऋतुपर्ण के यहाँ अज्ञातवास करते हुये दमयन्ती का निरन्तर स्मरण करते रहे (३. ६७)।

"जब राज का अपहरण हो जाने पर नल पत्नी सहित वन में चले गये तब विदर्भनरेश भीम ने इन दोनों का पता लगाने के लिये ब्राह्मणों को प्रचुर धन दे कर भेजा। उन्होंने नल और दमयन्ती का पता लगाने वाले व्यक्ति को एक सहस्र गायें पुरस्कार स्वरूप देने की भी घोषणा की। इस प्रकार विदर्भराज का आदेश पा कर सब ब्राह्मण प्रसन्न होकर विभिन्न दिशाओं में गये। बहुत दिनों तक भ्रमण करते हुये सुदेव नामक ब्राह्मण ने चेदि नगर में जाकर वहाँ राजमहल में दमयन्ती को देखा। उस समय राजा के पुण्याहवाचन के समय दमयन्ती राजकुमारी सुनन्दा के साथ खड़ी थी। विविध लक्षणों से दमयन्ती को पहचान और अपने कर्तव्य का निश्चय कर के सुदेव उसके समीप गये और इस प्रकार बोले : 'मैं तुम्हारे भाई का सखा सुदेव हूँ। महाराज भीम की आज्ञा से तुम्हारी खोज करने यहाँ आया हूँ। तुम्हारे माता-पिता और भाई सब सकुशल हैं। कुण्डिन पुर में जो तुम्हारे बालक हैं वे भी कुशलपूर्वक हैं।' सुदेव को पहचान कर दमयन्ती ने अपने सभी सगे-सम्बन्धियों का कुशल समाचार पूछा और शोक से व्याकुल हो कर फूट-फूट कर रोने लगी। उसे इस प्रकार सुदेव से एकान्त में बातें करते तथा रोते देख कर सुनन्दा भी व्याकुल हो उठी। उसने अपनी माता से दमयन्ती के रोने का कारण जानने का निवेदन किया। तब राजमाता सुदेव को बुलाकर उससे दमयन्ती के सम्बन्ध में पूछने लगीं (३. ६८)।

"सुदेव ने दमयन्ती की कथा बताते हुये कहा कि उसकी दोनों भौंहों के बीच में एक जन्मजात तिल का चिन्ह है जिसके कारण उन्होंने उसे पहचान लिया। यद्यपि वह तिल उस समय मैल आदि से ढँक गया था। सुनन्दा ने सुदेव का वचन सुन कर दमयन्ती के ललाटवर्ती चिह्न को ढँकने वाली मैल को धो दिया। उस तिल को देख कर राजमाता ने भी दमयन्ती को पहचान लिया और बताया कि वह उनकी बहन की पुत्री है क्योंकि राजमाता तथा दमयन्ती की माता दोनों दशार्णराज सुदामन की पुत्रियाँ हैं जिनमें से एक का चेदिराज वीरबाहु के साथ तथा दूसरी का विदर्भराज भीम के साथ विवाह हुआ था। राजमाता ने यह भी बताया कि अपने पिता दशार्णराज के घर में ही दमयन्ती के जन्मोत्सव के समय वह उपस्थित थीं। दमयन्ती ने यह वृत्तान्त सुनकर राजमाता को अपनी मौसी के रूप में सम्बोधित करते हुये अपने निवास की सुन्दर व्यवस्था के लिये आभार प्रकट किया और फिर अपने पितृगृह जाने की आज्ञा माँगी। दमयन्ती की इच्छा जानकर राजमाता ने पालकी पर बिठा कर उसे विदा किया। उसकी रक्षा के लिये बहुत बड़ी सेना दी और खाने-पीने का भी पर्याप्त सामान साथ भेजा। वहाँ से विदा होकर दमयन्ती थोड़े ही दिनों में अपने देश की राजधानी में जा पहुँची। उसके आगमन से उसके माता-पिता तथा सभी बन्धु-बान्धव अत्यन्त प्रसन्न हुये। समस्त बन्धु-बान्धवों, दोनों बच्चों, माता-पिता और सम्पूर्ण सखियों को सकुशल देखकर यशस्विनी दमयन्ती ने उत्तम विधि के साथ देवताओं और ब्राह्मणों का पूजन किया। राजा भीम ने भी अपने वचन के अनुसार सुदेव को एक सहस्र गायें, एक ग्राम तथा पर्याप्त धन देकर सन्तुष्ट किया। दूसरे दिन प्रातः काल दमयन्ती ने अपनी माता से कहा कि वह नल की खोज कराने के लिये पिता से कहें। तदनन्तर अपनी महारानी से प्रेरित होकर राजा भीम ने नल को ढूँढ़ने के लिये सभी दिशाओं में ब्राह्मणों को भेजा। जब ब्राह्मण जाने के लिये तैयार हुये तब दमयन्ती ने उन लोगों से खोज करते समय जन समुदाय के समक्ष बार-बार यह श्लोक पढ़ने के लिये कहा : 'क्व नु त्वं कितवच्छित्त्वा वस्त्रार्धं प्रस्थितो मम। उत्सृज्य विपिने सुप्तामनुरक्तां प्रियां प्रिय"……"तस्या रुदत्याः सततं तेन शोकेन पार्थिव प्रसादं कुरु वै वीर प्रतिवाक्यं ददस्व च। एव हि मे श्रुनः (३. ६९, ३७-४३)।' दमयन्ती ने ब्राह्मणों से यह भी कहा कि किसी को पता न लगे कि उसी के कहने पर वे लोग उक्त श्लोकों को दोहरा रहें हैं। तदनन्तर विभिन्न

दिशाओं में जाकर ब्राह्मण दमयन्ती के श्लोकों को बोलते हुये नल की खोज करने लगे (३. ६९)।

"दीर्घकाल के पश्चात् पर्णाद नामक ब्राह्मण ने विदर्भदेश की राजधानी में लौट कर दमयन्ती को बताया कि वे अयोध्या नगरी गये थे जहाँ बाहुक नामक एक पुरुष ने अपने को ऋतुपर्ण का सारथि बताते हुये अपना परिचय दिया। बाहुक ने दमयन्ती के श्लोक को सुन कर इस प्रकार उत्तर दिया था: 'उत्तम कुल की स्त्रियाँ बड़े से बड़े संकट में पड़कर भी स्वयं अपनी रक्षा करती हैं। ऐसा करके वे सत्य और स्वर्ग दोनों पर विजय प्राप्त कर लेती हैं। श्रेष्ठ नारियाँ परित्यक्त होने पर भी कभी क्रोध नहीं करतीं और सदाचार रूपी कवच से आवृत्त प्राणों को धारण करती हैं। इत्यादि (३. ७०, ८-१२)।' पर्णाद की बातें सुनकर दमयन्ती ने धन आदि देकर उनका विशेष सत्कार किया तथा यह आश्वासन भी दिया कि नल के घर लौट आने पर और भी धन देगी। तदनन्तर दमयन्ती ने अपनी माता से इस विषय पर विचार विनिमय किया कि किस प्रकार नल को वापस बुलाया जाय। उसने सुदेव नामक ब्राह्मण को माता के पास बुलाकर यह निवेदन किया: 'आप शीघ्र अयोध्या नगरी में जाकर राजा ऋतुपर्ण से कहिये कि भीमकुमारी दमयन्ती पुनः स्वयंवर करेगी। कल ही स्वयंवर होगा। अतः यदि आप का वहाँ पहुँचना सम्भव हो तो शीघ्र जाइये।' दमयन्ती के इस प्रकार निवेदन करने पर सुदेव ने जाकर ऋतुपर्ण से यही बात कही। उस समय दमयन्ती ने अपने पिता भीम को इस प्रकार के झूठे संदेश के सम्बन्ध में कुछ नहीं बताया था (३. ७०)।

"सुदेव की बात सुनकर ऋतुपर्ण ने बाहुक से कहा कि दमयन्ती के स्वयंवर में सम्मिलित होने के लिये वे एक ही दिन में विदर्भ देश पहुँचना चाहते हैं। इसलिये अश्वविद्या का तत्वज्ञ होने के कारण वह (बाहुक) उन्हें किसी प्रकार विदर्भ पहुँचायें। ऋतुपर्ण की बात सुन कर नल अत्यन्त चिन्तित होकर दमयन्ती के उद्देश्य के सम्बन्ध में अनेक प्रकार के तर्क-वितर्क करने लगे। अन्त में दीन हृदय से बाहुक (नल) ने हाथ जोड़ कर राजा ऋतुपर्ण से कहा: 'मैंने आप की आज्ञा सुनी। मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि एक दिन में ही आपके साथ विदर्भ देश की राजधानी में जा पहुँचूँगा।' तदनन्तर बाहुक ने अश्वशाला में जाकर चार श्रेष्ठ सैन्धव अश्वों को चुन कर रथ में जोता (श्रेष्ठ अश्वों के लक्षणों का विस्तृत वर्णन) और ऋतुपर्ण को रथ पर बैठा लिया। बाहुक ने वार्ष्णेय नामक अपने पूर्व सारथि को भी अपने साथ ही रथ पर बैठाया और इतने तीव्र वेग से रथ को हाँकने लगे मानों वह आकाश में उड़ रहा हो। रथ की आवाज सुन कर और अश्वों को वश में रखने की बाहुक की कला को देख कर वार्ष्णेय अत्यन्त विस्मित हुआ। वह मन ही मन सोचने लगा कि वे कहीं इन्द्रसारथि मातलि या अश्वों का तात्विक ज्ञान रखने वाले शालिहोत्र अथवा स्वयं नल तो नहीं हैं जिन्होंने बाहुक के रूप में शरीर धारण कर रक्खा है। इस प्रकार तर्क-वितर्क करते हुये वार्ष्णेय ने मन ही मन निश्चय कर लिया कि बाहुक वास्तव में सर्वगुण सम्पन्न राजा नल ही हैं। राजा ऋतुपर्ण भी बाहुक के अश्व संचालन विषयक ज्ञान से अत्यन्त प्रसन्न हुये (३. ७१)।

"जिस प्रकार पक्षी आकाश में उड़ता है उसी प्रकार बाहुक अनेक नदी, पर्वत, वन और सरोवरों को अत्यन्त वेग से लाँघते हुये बढ़ने लगे। जब रथ तीव्र गति से जा रहा था तभी राजा ऋतुपर्ण का उत्तरीय वस्त्र नीचे गिर गया। इस पर उन्होंने बाहुक से कुछ क्षणों के लिये रथ को रोकने के लिये कहा जिससे वे वार्ष्णेय से उत्तरीय वस्त्र मँगवा लें। इस पर बाहुक ने उन्हें बताया कि उनका उत्तरीय वस्त्र बहुत पीछे गिर गया है और वे लोग उस स्थान से एक योजन आगे आ गये हैं, अतः वह वस्त्र अब नहीं लाया जा सकता। बाहुक के ऐसा कहने पर राजा ऋतुपर्ण चुप हो गये। शीघ्र ही जब वे लोग एक विभीतक के वन से गुजरने लगे तब राजा ऋतुपर्ण ने उन वृक्षों की, उनके पत्तों और फलों की गणना करने की अपनी अद्भुत शक्ति का परिचय दिया। उन्होंने अपने को द्यूतविद्या का भी मर्मज्ञ बताया। जब बाहुक ने इस पर आश्चर्य करते हुये उनसे गणित और द्यूत विद्या जानने की इच्छा प्रकट की और बदले में ऋतुपर्ण को अश्वविद्या का रहस्य बताने का वचन दिया। किन्तु उदार ऋतुपर्ण ने बाहुक से इस प्रकार कहा: 'तुम मुझ से द्यूतविद्या का गूढ़ रहस्य ग्रहण करो और अश्व विज्ञान को मेरे लिये अपने ही पास धरोहर के रूप में रहने दो।' ऐसा कह कर ऋतुपर्ण ने नल को अपनी विद्या दे दी। द्यूतविद्या का रहस्य जानने के अनन्तर नल के शरीर से कलि बाहर आया। वह कर्कोटक नाग के विष को अपने मुख से बार-बार उगल रहा था। उस समय कष्ट में पड़े हुये कलि की शापाग्नि भी दूर हो गई। विष के प्रभाव से मुक्त होकर कलि ने जब अपने स्वरूप को प्रकट किया तब नल ने कुपित हो उसे शाप देने की इच्छा की। यह देखकर भयभीत कलि ने हाथ जोड़ कर इस प्रकार कहा: 'महाराज! आप अपने क्रोध को रोकिये। मैं आपको उत्तम कीर्ति प्रदान करूँगा। जब वन में आपने दमयन्ती को त्याग दिया था उस समय उन्होंने मुझे शाप दे दिया था। उस शाप से मैं अत्यधिक कष्ट पाता रहा हूँ। कर्कोटक का विष भी मुझे बहुत अधिक दग्ध कर रहा था। इस प्रकार मुझे मेरे किये का दण्ड प्राप्त हो गया है और मैं अब आप की शरण में हूँ। यदि आप मुझे आज शाप नहीं देंगे तो संसार में जो मनुष्य आलस्य रहित होकर आपकी कीर्ति गाथा का कीर्तन करेंगे उन्हें मुझ से कभी भय नहीं रहेगा।' कलियुग के ऐसा कहने पर नल ने अपने क्रोध को रोक लिया। तदनन्तर भयभीत कलि तत्काल विभीतक (बहेड़ा) के वृक्ष में समा गया। कलि जिस समय नल के साथ बात कर रहा था, वह केवल नल को ही दिखाई पड़ता रहा। अन्य लोग उसे नहीं देख सके। कलियुग के अदृश्य हो जाने के बाद निषधराज नल सारी चिन्ताओं से मुक्त हो गये। उस समय से कलि के आश्रय लेने के कारण विभीतक वृक्ष निन्दित हो गया। अब कलि के प्रभाव से मुक्त राजा नल रथ को पुनः तीव्र वेग से हाँकने लगे। उनके चले जाने पर कलि भी अपने घर चला गया। कलि से मुक्त होने पर राजा नल चिन्ताओं से तो मुक्त हो गये किन्तु उन्हें अपना पूर्व रूप नहीं प्राप्त हुआ था (३. ७२)।

"सन्ध्या होते होते १०० योजनों की दूरी पार करके ऋतुपर्ण और नल विदर्भ राज्य में जा पहुँचे। उस समय नल के अश्व विदर्भ में ही थे। उन सब ने जब नल के रथ का घोष सुना तब अत्यन्त उत्साहित तथा प्रसन्न हो उठे। दमयन्ती ने भी नल के रथ की घर्घराहट सुनी तो वह भी विस्मित और आनन्दित हो उठी। उस समय मयूर और हाथी रथघोष को सुनकर उसी प्रकार उत्कण्ठापूर्वक अपनी बोली बोलने लगे जैसे वे मेघों की गर्जना होने पर बोला करते थे। दमयन्ती नल के दर्शन की इच्छा से महल के सर्वोच्च छत पर चढ़ गई। कुण्डिनपुर में ठहरने बाद ऋतुपर्ण वहाँ स्वयंवर की कोई चहल-पहल न देखकर कुछ विस्मित हुये। राजा भीम ने भी मन में यही सोचा कि कोशलराज ऋतुपर्ण केवल उनसे मिलने के लिये पधारे हैं। जब ऋतुपर्ण और वार्ष्णेय अपने लिये निर्धारित अतिथि भवन में चले गये तब बाहुक उनके रथ को रथशाला में लाये और अश्वों को खोलकर उनकी परिचर्या करने के बाद स्वयं रथ के पृष्ठभाग में जाकर बैठ गये। तदनन्तर दमयन्ती ने नल का पता लगाने के लिये अपनी दूती को भेजा (३. ७३)।

"दमयन्ती की दूती केशिनी ने रथशाला में आकर बाहुक से उनके और वार्ष्णेय के सम्बन्ध में पूछा। बाहुक ने वार्ष्णेय को राजा नल का सारथि बताते हुये अपने को ऋतुपर्ण का सारथि और भोजन पकाने वाला कहा। बाहुक ने केशिनी को यह भी बताया कि कोई दूसरा पुरुष नल को नहीं जानता क्योंकि उनका पूर्वरूप अदृश्य हो गया है। परमात्मा ही नल को जानते हैं अथवा उनकी जो अन्तरात्मा है वह उन्हें जानती होगी, दूसरा कोई नहीं क्योंकि राजा नल अपने लक्षणों या चिह्नों को कभी दूसरे के सामने प्रकट नहीं करते। अन्त में केशिनी ने उन श्लोकों को दोहराया जिन्हें दमयन्ती के कहने पर पर्णाद ने अयोध्या में नल के समक्ष दोहराया था। इस श्लोक को बोलकर केशिनी ने बाहुक से कहा कि दमयन्ती वही उत्तर सुनना चाहती है जो उन्होंने पर्णाद को दिया था। तब बाहुक ने शोकाग्नि से दग्ध अपनी हृदय वेदना रोककर अश्रुगद्गद् वाणी में पुनः उन्हीं श्लोकों को दोहराया जो उन्होंने पर्णाद से कहा था। तदनन्तर केशिनी ने

दमयन्ती के पास लौट कर उसे सारी बातों से अवगत कराया (३. ७४)।

"यह सुनकर दमयन्ती ने केशिनी को बाहुक के पास जाकर बिना कुछ बोले उनकी परीक्षा करने और उनके क्रिया-कलापों पर दृष्टि रखने के लिये कहा। दमयन्ती ने बाहुक के माँगने पर उन्हें अग्नि या जल न देने का भी केशिनी को निषेध कर दिया। आज्ञानुसार केशिनी बाहुक के पास पुनः आकर उनका निरीक्षण करने लगी। लौटकर उसने दमयन्ती को इस प्रकार समाचार दिया : 'बाहुक का प्रत्येक व्यवहार अत्यन्त पवित्र है। किसी छोटे से छोटे दरवाजे पर जाकर वह झुकते नहीं। उन्हें देखकर स्वयं दरवाजा ही इस प्रकार ऊँचा हो जाता है जिससे उनके मस्तक का उससे स्पर्श न हो। संकुचित स्थान में भी उनके लिये बहुत बड़ा अवकाश बन जाता है। उनके देखने मात्र से खाली घड़े जल से भर जाते हैं। एक मुट्ठी भर तृण लेकर सूर्य की किरणों से ही उन्होंने उसे जला दिया और फिर क्षण मात्र में अग्नि प्रज्वलित हो गई। वह अग्नि का स्पर्श करके भी जलते नहीं। पात्र में रक्खा थोड़ा सा जल भी उनकी इच्छा के अनुसार तत्काल प्रवाहित हो जाता है। उनके हाथों से मसले गये पुष्प भी विकृत न होकर अधिक सुगन्धित तथा विकसित हो जाते हैं।' केशिनी के वर्णन को सुनकर दमयन्ती को विश्वास हो गया कि उसके पति राजा नल ही बाहुक के वेश में उपस्थित हैं। उसने केशिनी को पुनः बाहुक के पास जाकर उनका पकाया हुआ मांस लाने के लिये कहा। मांस आने पर उसके स्वाद से भी दमयन्ती को विश्वास हो गया कि वह नल द्वारा ही पकाया गया है। इस प्रकार हर तरह से आश्वस्त हो जाने पर उसने अपने दोनों बच्चों को केशिनी के साथ बाहुक के पास भेजा। उन बच्चों को पाकर नल अत्यन्त दुःखमग्न होकर जोर-जोर से रोने लगे और केशिनी से इस प्रकार कहा: 'भद्रे ! ये दोनों बालक मेरे पुत्र और पुत्री के समान हैं।' फिर उन्होंने लोगों की आशंका से बचने की दृष्टि से केशिनी और दोनों बालकों को महल में चले जाने के लिये कहा (३. ७५)।

"अपने माता और पिता की आज्ञा लेकर दमयन्ती ने नल को अपने महल में बुलाया। दमयन्ती को साक्षात देखकर नल अत्यन्त शोक विह्वल हो उठे। उन्होंने दमयन्ती को कलि के प्रभाव से किये गये अपने व्यवहार के लिये निर्दोष बताया। परन्तु दमयन्ती द्वारा द्वितीय स्वयंवर के आयोजन पर आश्चर्य प्रकट करते हुये उसका कारण पूछा। तब दमयन्ती ने बताया कि नल को पाने के लिये ही उसने दूसरे स्वयंवर का झूठा समाचार ऋतुपर्णके पास भेजा था क्योंकि वह जानती थी कि नल के अतिरिक्त अन्य कोई भी व्यक्ति एक दिन में १०० योजन की दूरी नहीं पार कर सकता। अतः यदि नल अयोध्या में होंगे तभी राजा ऋतुपर्ण उन्हें लेकर विदर्भ पहुँच सकते हैं। तदनन्तर दमयन्ती ने वायु, सूर्य, चन्द्रमा, को साक्षी बनाकर अपनी सच्चरित्रता तथा नल के प्रति एकनिष्ठता की शपथपूर्वक घोषणा की। दमयन्ती के ऐसा कहने पर स्वयं वायु देवता ने भी अन्तरिक्ष से दमयन्ती के निष्पाप होने तथा नल में ही एकनिष्ठ प्रेम रखने की घोषणा की। उस समय आकाश से पुष्पवर्षा होने लगीं और मंगलमय पवन चलने लगा। नल ने भी नागराज कर्कोटक का स्मरण करके उसके दिये हुये वस्त्र को ओढ़ लिया जिससे उन्हें अपना पूर्वरूप पुनः प्राप्त हो गया। नल के वास्तविक रूप में प्रकट होते ही दमयन्ती उनके गले से लगकर उच्च स्वर से रोने लगी। दोनों ने एक दूसरे को सान्त्वना दी। इस प्रकार चौथे वर्ष अपनी प्रिय पत्नी को पुनः प्राप्त कर नल अत्यन्त प्रसन्न और कृतार्थ हो गये। (३. ७६)।

"वह रात व्यतीत होने पर राजा नल वस्त्राभूषणों से अलंकृत हो दमयन्ती के साथ राजा भीम से मिले। विदर्भ नरेश भीम ने दोनों का विधिपूर्वक सत्कार किया और अपनी नगरी को विविध प्रकार से सजाने का आदेश दिया। सम्पूर्ण देवमन्दिरों और देवमूर्तियों की पूजा की गई। राजा ऋतुपर्ण ने भी जब यह सुना कि बाहुक के वेश में राजा नल थे तब उन्हें भी अत्यन्त प्रसन्नता हुई। उन्होंने नल से क्षमा याचना भी की। नल ने भी ऋतुपर्ण से क्षमा माँगते हुये उन्हें अपनी अश्वविद्या प्रदान की। तदनन्तर ऋतुपर्ण ने शास्त्रीय विधि के अनुसार नल से अश्वविद्या ग्रहण की और उन्हें द्यूतविद्या का रहस्य समझा कर दूसरे सारथि के साथ अपने नगर के लिये प्रस्थान किया (३. ७७)।

"एक मास तक कुण्डिनपुरी में रहने के पश्चात नल ने निषध देश के लिये प्रस्थान किया। उस समय उन्होंने अपने साथ थोड़े से सेवक, सोलह हाथियों से घिरा एक रथ, पचास अश्व और छः सौ पैदल सैनिक लिये। निषध की राजधानी में पहुँच कर उन्होंने पुष्कर से पुनः जूआ खेलने का आग्रह किया। उन्होंने पुष्कर को बताया कि अब उनके पास पर्याप्त धन हो गया है। साथ ही वह दमयन्ती को भी अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति के साथ दाँव पर लगायेंगे। पुष्कर से भी उन्होंने सारा राज्य ही दाँव पर रखने के लिये कहा। नल ने कहा कि यदि पुष्कर चाहे तो प्राणों की भी बाजी लगाई जा सकती है। यदि जूआ न खेलना चाहे तो नल ने पुष्कर से द्वैरथ युद्ध की भी चुनौती दी। पुष्कर के हृदय में दमयन्ती को प्राप्त करने की प्रबल आकांक्षा थीं, अतः वह तत्काल जूआ खेलने के लिये तैयार हो गया। तदनन्तर एक ही दाँव लगाने की शर्त रखकर जूए का खेल प्रारम्भ हुआ और पहले ही दाँव में नल जीत गये। तब नल ने बताया कि पहले वह कलि के प्रभाव के कारण हार गये थे उसमें पुष्कर का कोई पुरुषार्थ नहीं था। इसके बाद नल ने पुष्कर को उसके हिस्से का सारा धन लौटाकर उसे क्षमा भी कर दिया। नल के द्वारा इस प्रकार सत्कार प्राप्त करके पुष्कर एक मास तक निषध देश में ही रहा और फिर अपनी राजधानी चला गया। नल के पुनः लौट आने पर जनपद के लोग अत्यन्त हर्षित हो उठे और अपने राजा का हार्दिक स्वागत किया (३. ७८)।

"जब नगर में शान्ति व्याप्त हो गई, सब लोग प्रसन्न हो गये, और सर्वत्र महान् उत्सव होने लगा तब नल एक विशाल सेना के साथ जाकर दमयन्ती और अपने बच्चों को विदर्भ से ले आये। पुत्र-पुत्री सहित दमयन्ती के आ जाने पर नल न्यायपूर्वक अपने देश का शासन करने लगे। उन्होंने अनेक यज्ञों द्वारा भगवान् का यजन किया। इस प्रकार नलोपाख्यान का वर्णन करने के बाद बृहदश्व मुनि ने युधिष्ठिर से कहा : 'तुम्हें भी शीघ्र अभ्युदय की प्राप्ति होगी। जो राजा नल का चरित्र वर्णन अथवा श्रवण करेंगे उन्हें दरिद्रता नहीं प्राप्त होगी।' कथा सुनकर युधिष्ठिर के मन में यह भय उत्पन्न हुआ कि कोई द्यूतविद्या का ज्ञाता मनुष्य उन्हें पुनः जूए के लिये आमन्त्रित करेगा तो उन्हें पराजय का ही मुख देखना पड़ेगा। युधिष्ठिर के इस भय का निवारण करने के लिये बृहदश्व ने उन्हें द्यूतविद्या के रहस्यों को भली भाँति बता दिया और उसके बाद स्नान करने के लिये चले गये। बृहदश्व के चले जाने के बाद ब्राह्मणों और तपस्वियों से युधिष्ठिर को यह समाचार मिला कि अर्जुन अब भी घोर तपस्या कर रहे हैं। इसे जानकर युधिष्ठिर अर्जुन के लिये शोक करने लगे (३. ७९)।"

नवचक्राङ्ग = शिव (सहस्रनाम)।

नवतन्तु, विश्वामित्र के पुत्र का नाम है (१३. ४, ५८)।

१. **नवराष्ट्र**, बहु० (°ष्ट्राः), नवराष्ट्र के निवासियों का द्योतक है (४. १, १३)।

२. **नवराष्ट्र**, एक देश का नाम है जो दक्षिण में स्थित था और सहदेव ने इस पर विजय प्राप्त की (२. ३१, ६)।

१. **नहुष**, एक सर्प का नाम है: १. ३५, ९; ५. १०३, ९; ८. ३४, २९ (उन सर्पों में यह भी था जो शिव के अश्वों के बालबन्धन बने)। तुकी० २. नहुष।

२. **नहुष**, एक प्राचीन नरेश का नाम है जो आयु के पुत्र और ययाति के पिता थे। कुछ समय तक ये देवराज भी बन गये थे परन्तु शाप ग्रस्त हो पृथिवी पर अजगर के रूप में जन्म लेना पड़ा था : १. ७५, २५ (ये स्वर्भानवी के गर्भ से उत्पन्न आयु के ज्येष्ठ पुत्र थे). २६. २८ (इन्होंने अपने विशाल राज्य का धर्मपूर्वक शासन किया। पितरों, देवताओं, ऋषियों, ब्राह्मणों, गन्धर्वों, नागों, राक्षसों, तथा ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों का भी पालन किया। झुण्ड के झुण्ड दस्युओं और लुटेरों का वध करके

इन्होंने ऋषियों को भी कर देने के लिये विवश किया). ३१ (अपने इन्द्रत्व काल में इन्होंने महर्षियों को पशुओं की तरह वाहन बनाकर उनकी पीठ पर सवारी की थी। तेज, तप, ओज और पराक्रम द्वारा समस्त देवताओं को तिरस्कृत करके इन्द्र पद का उपभोग किया। इनके छः पुत्र उत्पन्न हुये जिनके नाम ये हैं : यति, ययाति, संयाति, आयाति, अयति और ध्रुव। इनमें यति योग का आश्रय लेकर ब्रह्मभूत मुनि हो गये। ययाति इनके उत्तराधिकारी हुये ययाति ने देवयानी से यदु तथा तुर्वसु, और शर्मिष्ठा से द्रुह्यु, अनु, और पूरुनामक पुत्र उत्पन्न किये); ८८, १; ८९, १; ९३, २२; ९५, ७ (आयु के पुत्र और ययाति के पिता); २. ८, ८ (यम की सभा में); ५१, २२; ३. ३, ११; १०३, १५ (इन्होंने जब देवों को यन्त्रणा दी तब अगस्त्य ने देवों की रक्षा की); १७९, १३; १८०, ४. ११; १८१, ४४ (अगस्त्य के शाप से ये अजगर हो गये किन्तु युधिष्ठिर ने इनका उद्धार किया); २५७, ५ (इन्होंने वैष्णव यज्ञ किया था); ४. ५६, ९ (ये भी युद्ध देखने आये); ५. ११, १. ३. १३. १६. २०. २५. २६; १२, १. १२. १३. १५. २५. २६. २९. ३०. ३१. ३२; १३, १. २. ४. ६. ७. ८. १५. २१; १४, १४. १७; १५, १. ३. ५. ६. १६. २३-२५; १६, २१. २२. २४-२६. २९-३२; १७, १. ३. ६-१०. २२; ५. १८, १३ (नहुष ने इन्द्रत्व प्राप्त कर लिया परन्तु अगस्त्य के शाप से अजगर बनकर १०,००० वर्षों तक पृथिवी पर पड़े रहे); ९०, १८ (कृष्ण की उपासना की); ६. १७, १०; ७. १४४, ५ (आयु के पुत्र और ययाति के पिता); १२. ८, ११. ३३; १६६, ७४ (इन्होंने अपने पिता से एक खड्ग प्राप्त किया जो बाद में इनसे इनके पुत्र ययाति को प्राप्त हुआ); २६२, ४८-५० (नहुष ने एक गाय और वृषभ का वध किया था जिसके लिये ऋषियों ने इनकी भर्त्सना की किन्तु इनके निवेदन पर ऋषियों ने इनके पाप को एक सौ एक रोगों में परिणत करके समस्त प्राणियों में वितरित कर दिया); २६८, ६ (पूर्वकाल में नहुष ने वेद के अनुशासन को प्राचीन, सनातन एवं नित्य समझ कर अपने घर पर आये हुये अतिथि त्वष्टा के लिये एक गाय का आलम्भ करने का निश्चय किया); ३४२, ४४. ४६; १३. ५०, २. २७; ५१, १. ४. ६. ८. १०. १२. १४. १५. १८. २१. २३. २५. ४१. ४३. ४६; ८१, ५ (इन्होंने गायों का दान किया); ९४, ५. २८; ९९, ३-५. १५. २२. २८; १००, ११. १९-२१. २४. २६. ३२-३४. ३८. ३९ (नहुष के इन्द्रत्व प्राप्त करने तथा शापग्रस्त होकर पतित होने की कथा का यहाँ कुछ भिन्न रूप से वर्णन है); ११५, ६९ (कार्तिक मास में ये मांस भक्षण नहीं करते थे); १४७, २७ (आयु के पुत्र तथा ययाति के पिता); १६५, ४८ (इनका उल्लेख)।

तुल० इनके नामों के निम्नलिखित पर्याय भी :
जगत्पति – देखिये वस्था०।
देवराज् : ५. १३, १; १३. ९९, २३; १००, १७. २२।
देवराज : ५. ११, १३; १२, २-४. १३; १३, ४; १५, १०।
देवराजन् : ५. १२, १।
देवेन्द्र : ५. ११, १५; १३. १५, २५; १००, ४।
नाग, नागेन्द्र – देखिये नाग (बहु०)।
सुरपति : १३. १००, १८।
सुराधिप : ५. १२, ५; १५, ९. १२; १३. १००, १९।
सुरेन्द्र : ५. १५, १५; १३. १००, ११. १३।
सुरेश्वर : देखिये वस्था०।

२. नहुष = कृष्ण (विष्णु) : १२. ४३, १३; १३. १४९, ४७ (विष्णु सहस्रनाम)।

नहुषोपाख्यान (नहुष की कथा)—"राजा नहुष बहुत बड़े तपस्वी थे। अपने पुण्यकर्म के प्रभाव से उन्होंने इन्द्र का पद प्राप्त कर लिया था। स्वर्ग में रहते हुये भी शुद्धचित्त होकर वे अनेक प्रकार के दिव्य और मानुष कर्मों का अनुष्ठान किया करते थे। अग्निहोत्र, समिधा, कुशा, पुष्प, अन्न और लावा की बलि, धूपदान तथा दीपकर्म भी उनके घर में नित्य होते थे। वे देवेश्वर होकर भी विधिपूर्वक सभी देवताओं का पूर्ववत् यथोचित पूजन किया करते थे। किन्तु कुछ समय के बाद 'मैं इन्द्र हूँ' ऐसा अहंकार उनमें उत्पन्न हो गया जिससे उनकी उक्त सम्पूर्ण क्रियायें नष्ट प्राय होने लगीं। वरदान के मद से मोहित होकर वे ऋषियों से भी अपनी सवारी खिंचवाने लगे। धर्म-कर्म छूट जाने के कारण वे दुर्बल होने लगे। वे बारी-बारी से सभी ऋषियों को अपना वाहन बनाने का उपक्रम किया करते थे। एक दिन महर्षि अगस्त्य की बारी आई। उस दिन भृगु जी ने अगस्त्य के आश्रम में आकर उनसे नहुष की निन्दा की। इस पर अगस्त्य ने भृगु को बताया कि नहुष को शाप देना अत्यन्त कठिन है क्योंकि ब्रह्मा ने उन्हें यह वर दे रक्खा है कि जो उनकी दृष्टि में आयेगा वह उनके अधीन हो जायगा। पूर्वकाल में ब्रह्मा ने उन्हें (नहुष को) अमृत भी पीने के लिये प्रदान किया था। इस स्थिति में अगस्त्त ने भृगु से नहुष को दण्डित करने का उपाय पूछा। इस पर भृगु ने अगस्त्य से कहा : 'आज मूर्ख नहुष आपको अपने रथ में जोतेगा और अपने ही विनाश के लिये आपको लात से मारेगा। आपके प्रति किये गये इस अत्याचार के लिये मैं उसे रोषपूर्वक सर्प होने का शाप दूँगा। तदनन्तर चारों ओर से तिरस्कार के शब्दों को सुनकर दुर्बुद्धि नहुष श्रीहीन हो जायगा और मैं अपने ऐश्वर्यबल से मोहित उस पापाचारी को पृथिवी पर गिरा दूँगा।' भृगु के कथन को सुनकर मित्रावरुण कुमार अगस्त्य अत्यन्त प्रसन्न और निश्चिन्त हो गये (१३. ९९)।

"भीष्म ने नहुष की कथा का वर्णन करते हुये युधिष्ठिर को बताया कि बल के अहंकार के कारण देवराज नहुष सत्कर्मों से भ्रष्ट हो गये जिसके परिणाम स्वरूप उनके यज्ञ-स्थल में राक्षसों ने अपना निवास बना लिया। उन्हीं से प्रभावित होकर नहुष ने अपना रथ ढोने के लिये सरस्वती तट से महर्षि अगस्त्य को बुलाया। तब भृगु ने अगस्त्य से आँखे बन्द कर लेने के लिये कहा जिससे भृगु उनकी जटा में प्रवेश कर सकें। अगस्त्य ने तदनुसार आँखे बन्दकर लीं और भृगु ने नहुष को स्वर्ग से नीचे गिराने के उद्देश्य से अगस्त्य की जटा में प्रवेश किया। उसी समय नहुष अगस्त्य के पास आये। उन्हें देख कर अगस्त्य ने उनकी आज्ञा से रथ का वाहन बनना स्वीकार कर लिया। जब अगस्त्य नहुष के रथ के वाहन बन गये तब नहुष ने उन्हें चाबुक मार कर हाँकना आरम्भ किया। अगस्त्य की जटा में बैठे भृगु ने नहुष को मिले वरदान का ध्यान कर उनका साक्षात्कार नहीं किया। चाबुक मार कर हाँकने पर भी जब अगस्त्य को क्रोध नहीं आया तब कुपित देवराज नहुष ने अगस्त्य के सर पर बायें पैर से प्रहार किया। उनके मस्तक पर चोट लगते ही जटा के भीतर बैठे भृगु अत्यन्त कुपित हो उठे और नहुष को सर्प होकर पृथिवी पर चले जाने का शाप दे दिया। भृगु उस समय नहुष को दृष्टिगत नहीं हो रहे थे। अतः उनके इस प्रकार शाप देने से नहुष सर्प होकर पृथिवी पर गिरने लगे। यदि नहुष भृगु को देख लेते तो उनके तेज से प्रतिहत होकर वे उन्हें स्वर्ग से नीचे गिराने में सफल न होते। अपने तप, नियमों के पालन तथा यज्ञों के अनुष्ठान के कारण पृथिवी पर गिर कर भी नहुष अपनी पूर्व स्मृतियों से वंचित नहीं हुये। उन्होंने भृगु को प्रसन्न करते हुये शाप के अन्त का उपाय पूछा। अगस्त्य ने भी दया से द्रवित होकर भृगु को नहुष के शाप के अन्त के लिये प्रसन्न किया। तब कृपायुक्त होकर भृगु ने नहुष से कहा : 'तुम्हारे कुल में ही युधिष्ठिर नाम से प्रसिद्ध एक राजा होंगे जो तुम्हें इस शाप से मुक्त करेंगे।' ऐसा कहकर भृगु जी अन्तर्धान हो गये। अगस्त्य भी शतक्रतु इन्द्र का कार्य सिद्ध करके द्विजातियों से पूजित होकर अपने आश्रम चले गये। भृगु से नहुष के पतन का समाचार प्राप्त करके ब्रह्मा ने पूर्वइन्द्र को देवराज के पद पर अभिषिक्त कराया। भीष्म ने नहुष की कथा सुनाते हुये युधिष्ठिर से तब इस प्रकार कहा : 'राजन्। तुमने भी नहुष का उनके शाप से उद्धार कर दिया है और वे तुम्हारे देखते-देखते ब्रह्मलोक चले गये। इस प्रकार पूर्वकाल में नहुष के अपराध से ऐसी घटना घटी थी। वे नहुष बार-बार दीपदान आदि पुण्य कर्मों से सिद्धि को प्राप्त हुये थे। इसलिये गृहस्थों को सायंकाल

अवश्य दीपदान करना चाहिये क्योंकि दीपदान करने वाला पुरुष परलोक में दिव्य नेत्र प्राप्त करता है। साथ ही जितने पलकों के गिरने तक दीपक जलता है उतने ही वर्षों तक दीपदान करने वाला मनुष्य रूपवान् और बलवान् होता है।' (१३ : १००)।"

नाक, एक आयुध का नाम है जिसका अर्जुन प्रयोग करेंगे (५. ९६, ४२)।

नाकुलि = शतानीक (देखिये वस्था०)।

१. नाग, बहु० (°गा :), कश्यप और कद्रू (अथवा सुरसा) की सन्तान हैं : १. २, ९०. ९४; ३, १३४. १३६ (गंगा के उत्तर तट पर अनेक नागों के घर हैं). १४० (नागराजमस्तौषं कुण्डलार्थाय तक्षकम्). १४२ (नागमुख्यताम्). १५१. १६७ (ऐरावतो नागराट्); १५, ६; १६, ८ (नागसहस्रं, कद्रू और कश्यप की सन्तान); २०, ७ (कद्रु ने आज्ञा न मानने वाले सर्पों को जनमेजय के सर्पसत्र में भस्म हो जाने का शाप दिया); २१, ६; २२, १; २३, १३ (गरुड़ इनके विनाशक हैं); २५, ४ (सागर इनका आलय है); २६, ६; २७, १. ७; २८, १४; ३५, १७ (प्रमुख नागों के नाम); ३७, १९. २१-२७; ३८, १६. १९; ३९, १ (नागों का कद्रू के शाप से मुक्ति के उपाय के लिये परस्पर विचार करना); ४३, ३०. ३६; ५३, १२. १३. १६ (जनमेजय का सर्पसत्र। आस्तीक ने जनमेजय से सर्पसत्र समाप्त करने का वरदान माँगा); ५७, ७ (अग्नि में गिरे वासुकि के कुल के नागों की गणना). १० (तक्षक के कुल के भस्म हुये नागों की गणना). १२ (ऐरावत-कुल के भस्म हुये नागों की गणना) १४ (धृतराष्ट्र कुल के भस्म नागों की गणना). १९; ५८, २ (इस प्रकार आस्तीक ने कद्रू के शाप से नागों को मुक्ति दिलाई); ६६, ६३ (ये सुरसा की सन्तान थे; पन्नग कद्रू से उत्पन्न हुये थे); १२३, ७२ (अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उपस्थित नागों का उल्लेख); १२८, ५६. ६३. ७०. ७२; १२९, २७. २८. ३३ (नागों ने भीमसेन की रक्षा की और वे कुछ समय तक नागलोक में रहे); १८७, १३; २०७, ३१. ५१; २१०, ८ (सुन्द और उपसुन्द ने इन्हें पराजित किया था); २१२, २ (सुन्द और उपसुन्द ने इनके रत्नों का हरण किया); २१३, ३ (नागैरिव सरस्वती); २२४, १९; २२५, २६; २२८, १. ३५ (खाण्डव वन में इनका वध); २. ८, २४ (यम की सभा में); ९, ९; ११, ५०. ५६ (ये ब्रह्मा की सभा में आये); १२, २ (वरुण की सभा में); ३. ९, ८; ५७, ५; ८३, १४ (सर्पदेवीं समासाद्य नागानां तीर्थमुत्तमम्); ८५, ७२; १३९, १२ (कैलास पर्वत पर); १६०, ३६; १७३, ६५; १८८, १२०. १३७ (मार्कण्डेय ने नारायण के उदर में नागों को भी देखा); १९०, ६७. ८४; २०२, २१; ४. २, १७ (धार्तराष्ट्रश्च नागानां); २६, ५; ५. ७१, ७; ९७, २० (मातलि ने नागों में से अपनी पुत्री के लिये उपयुक्त वर ढूँढ़ने का प्रस्ताव किया); १०३ ४-८ (प्रमुख नागों की गणना); १२०, ३ (नागयक्षमनुष्यानां समागमः); १७९, २९ (क्षरन्तो रुधिरं नागा इव); ६. ६, ५१ (निषध पर्वत पर); ३४, २९ (कृष्ण ने कहा कि वे नागों में अनन्त हैं); १०४, ३० (महाशक्ति······नागकन्योपमां शुभाम्); ७. १५६, १९० (अश्वत्थामा की प्रशंसा की); १६३, १४; १८५, १६ (खाण्डव वन में अर्जुन ने इनका वध किया था); २०१, ८२; ८. २४, ११. ६१; ३४, २८ (शिव के अश्वों के वालबन्धन बनने वाले नागों का उल्लेख); ८७, ४३ (इन्होंने अर्जुन का पक्ष लिया); ८८, १; ९. १०, ३९; ५८, २६; ६२, ५; १०. ६, ४; १५, २९; ११. ५, ९; १२. ४७, ४८ (पर्यङ्के नागभूषिते); ५९, ४५; १८८, ३; २००, १२; २१०, १५; ३००, ६१; ३४३, ६२; ३६०, ३; १३. ६, १४; १४, १५५; २६, ४९; ६७, १४; ८४, ४७; ८५, ९; ९८, २९. ३५. ६२; १०७, ५७; १३२, ८. १६; १४०, १४; १४२, ३९; १४७, ५६; १४. २६, ७; ४३, १४; ५४, ४. १९; ५७, २४; ५८, ५०. ५४. ५६. ५८ (नागलोक में उत्तङ्क का भ्रमण); १६. ४, १३ (समाधिस्थ बलराम के मुख से श्वेत वर्ण, विशालकाय एक नाग को निकलते हुये श्रीकृष्ण ने देखा)। तुकी० काद्रवेय बहु०, कद्रूज बहु०, तथा बहु० पन्नग, बहु० सर्प।

प्रमुख नागों के नाम :

* अकर्कर : १. ३५, १६ (कर्कराकर्करौ नागौ)।
* अतिषण्ड : १६. ४, १६ (चक्रमन्दातिषण्डौ)।
* अनील : १. ३५, ७ (नीलानीलौ नागौ)।
* अपूरण : १. ३५, ६।
* अश्वतर : २. ९, ९ (कम्बलाश्वतरौ नागौ)।
* अश्वसेन : १. २२७, ९; ८. ९०, १२।
* आर्यक : १. १२८, ६४।
* एलापत्र : १. ३९, ८।
* ऐरावण : २. ९, ८।
* ऐरावत : ५. १०३, ११।
* कपिल : ३. ८४, ३२।
* कम्बल : २. ९, ९।
* कर्दम : १. ३५, १६।
* कर्कर : १. ३५, १६।
* कर्कोटक : ३. ६६. ३. ४. ९. १०. १३. १४. २६; ६७, १; ७२, ३५; ७६, ४२; ७९, १०।
* कलशपोतक : १. ३५, ७।
* कालीयक : १. ३५, १०।
* कौरव्य : १. २१४, १३. १४. १६. ३४; १४. ८०, ३१. ४३. ५१; ८१, १८।
* क्षेमक : १. ३५, ११।
* चक्रमन्द : १६. ४, १६।
* चिकुर : ५. १०३, २४।
* जय : ९. ४५, ५२।
* तक्षक : १. ३, १११. ११२. १६७; ४२, ३६; ४३, ३. ४. ६. ३४; ४४, ३; ५०, १५. १९. २२; ५३, १४. १६; ५६, १०. १८. २०; ५८, ३; २२७, ५; ३. ८२, ९०; ५. १०९, २०।
* धृतराष्ट्र : १६. ४, १५।
* नहुष : ३. १७९, ७; १८०, २१. ३६।
* नील : १. ३५, ७।
* पद्म : १२. ३५५, ४. ८; ३५७, २. ३. ४. ६. ८; ३५८, २. १९; ३५९, ५. ७. १०. १५; ३६०, १. ५. १३; ३६१, २. ५. ८. ९; ३६२, ३; ३६४, ३।
* पिञ्जरक : १. ३५, ६।
* पिण्डारक : १. ३५, ११।
* प्रभाकर : १. ३५, १५।
* बलदेव : १६. ४, १३।
* बहुमूलक : १. ३५, १६।
* मणि : ५. १०३, १०।
* महाजय : ९. ४५, ५२।
* रेणुक : १३. १३२, २।
* वासुकि : १. १८, १२-१५; ३९, ४. ७. ९. १३; ४६, २०. २१; ४७, ४. १०; ४८, १४; ५४, १२. १९. २२; १२८, ६३. ६७. ६९; १२९, २४; ९. ४५, १६।
* वेगवत् : १. ५७, १७।
* शङ्खमुख : १. ३५, ११।
* शेष : १. ३६, २१. २३; ६७, १५२; ३. २०३, १२. १७; ५. १०३, २. ७; २०२, ७२।
* सुमुख : ५. १०३, २३. २६; १०५, १।

१. नागतीर्थ, कुरुक्षेत्र की सीमा में स्थित एक तीर्थ (३. ८३, १४)।

२. नागतीर्थ, गङ्गाद्वार एवं कनखल के समीप एक तीर्थ जहाँ स्नान करने से मनुष्य को सहस्र कपिलादान का फल मिलता है (३. ८४, ३३)।

नागवक्त्र, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७, १०२; ११७, ११; ७. १५७, १७ (भीमसेन ने जिन धृतराष्ट्र-पुत्रों का वध किया उनमें यह भी था)।

नागद्वीप, सुदर्शन द्वीप के अन्तर्गत एक द्वीप जो चन्द्रमण्डल की शशाकृति में कान के रूप में दिखाई पड़ता है (६. ६, ५५)।

नागधन्वन्, सरस्वती तटवर्ती एक प्राचीन तीर्थ जहाँ वासुकि का निवास था। यहीं वासुकि का नागराज के पद पर अभिषेक हुआ था (९. ३७, ३०)। इस स्थान का वर्णन (९. ३७, ३०-३३)।

नागपति, बहु० (°तय:) : ८. ३४, २८ (शिव ने अनेक नागों को अपनी रथ की ईषा बनाया)।

नागपुर, नैमिषारण्य में गोमती तटपर स्थित एक नगर जो पद्मनाभ नामक नाग का निवास स्थान था : १. ११३, ३५; ११९, ४०; १२६, ११; १३१, १४. ७६; ३. ९२, २५; १८३, ३५. ३६; ५. १४७, ५. ६; ६. २२, ५; ८. १, १७; २, १; ९. २७, २३; १४. ५२, ५४।

नागपुरसिंह = पाण्डु : १. ११३, ३८।

नागपुराधिप = पाण्डु : १. ११३, ३५।

नागलोक से नागों के लोक का तात्पर्य है : १. ३, १३०. १३३. १५३. १६१; १२९, २७. ३३; ३. ८२, ११३; ८३, १५; १८८, ७१; २०२, ३३; ५. ९७, १९; ९८. ८; ९९, १; १०२, १५; १०३, ४; ६. ९०, १०; १४.५८, ३०. ३२. ३३. ३५. ३६. ४०. ४८. ४९ (नागलोक सहस्रों योजन विस्तृत है। उसके चारों ओर सोने की ईंटों से दिव्य परकोटे बने हैं। ये परकोटे अनेक मणिमुक्ताओं से अलंकृत हैं। वहाँ स्फटिक मणि की बनी सीढ़ियों से सुशोभित अनेक बावलियाँ, निर्मल जल की अनेकानेक नदियाँ और मनोहर वृक्ष हैं। वहाँ का प्रवेशद्वार सौ योजन लम्बा और पाँच योजन चौड़ा है)।

नागवत्मान् – देखिये नागधन्वन्।

नागशत, एक पर्वत है जहाँ तपस्या के लिये जाते समय अपनी पत्नियों सहित राजा पाण्डु पधारे थे (१. ११९, ४७)।

नागसाह्वय एक नगर का नाम है : १. २, ३९; ४३, २१; ६१, २०; १३१, १३; १६६, १६; २. ४७, २; ३. १, ३५; २२, ४२; २५४, २२. २९; ५. ६, १८; ७, १; १६३, ३२; ९. ६२, ४३; ६३, ३४; ११. १२, १; १२. ४, २१; ३७, ४३; १६६, १५; १४. ६२, ७; ७०, १५; ७१, ३; १९. ८, ३८।

नागाशिन, एक सुपर्ण जो गरुड का पुत्र था : ५. १०१, ९।

१. नागाह्वय, एक एक नगर का नाम है : ७. १, ७; १४. ६५, २१; ८५, १।

२. नागाह्वय, गोमती तटपर स्थित नागों के एक नगर का नाम है : १२. ३५५, २।

१. नागी, तक्षक नाग की पत्नी और अश्वसेना की माता का नाम है : (१. २२७, ७)।

२. नागी, पद्म नामक नाग की पत्नी के लिये प्रयुक्त हुआ है (१२. ३५७, १३)।

नागेन्द्र = शिव (सहस्रनाम)।

नागोद्भेद, एक तीर्थ है जहाँ सरस्वती अदृश्य भाव से रहती है। विनशन तीर्थ के अन्तर्गत इस तीर्थ में सरस्वती के जल का प्रत्यक्ष दर्शन होता है। इसमें स्नान करने से नागलोक की प्राप्ति होती है (३. ८२, ११२)।

नाचिक, विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ४, ५८)।

नाचिकेत, उद्दालक के पुत्र एक ऋषि का नाम है : १३. १७, १७९ (यम ने इन्हें शिव के सहस्रनामों का उपदेश दिया और इन्होंने उन नामों को मार्कण्डेय को बताया); ७१, २. ३ (उद्दालकि). ९. ११. ३७ (अपने पिता से शापग्रस्त होकर ये यमलोक गये जहाँ यम ने इन्हें गोदान के फल का उपदेश दिया); ७२, १; ८४, ४; १६५, ४६ (ये उत्तर दिशा के ऋषि हैं)।

नाचिकेतु, एक मुनि का नाम है जो युधिष्ठिर की सभा में उनकी सेवा करते थे (२. ४, १७)।

नाचीन, बहु० (°नाः) एक जाति के लोगों का द्योतक है : २. ३१, १४ (अपने दिग्विजय के समय सहदेव ने दक्षिण में इन्हें पराजित किया था)।

१. नाडीजङ्घ, इन्द्रद्युम्न सरोवर पर रहनेवाले एक चिरजीवी बक का नाम है (३. १९९, ७)।

२. नाडीजङ्घ, कश्यप के पुत्र तथा ब्रह्मा के मित्र एक बकराज का नाम है। इसका दूसरा नाम राजधर्मा था। देवकन्या के गर्भ से जन्म लेने के कारण इनकी शरीरकान्ति देवोपम थी। ये श्रेष्ठ विद्वान् एवं तेजस्वी थे (१२. १६९, १९)।

नाद्योपहारलुब्ध = शिव (सहस्रनाम)।

नाम = शिव (सहस्रनाम)।

१. नाभाग, वैवस्वत मनु के एक पुत्र थे : १. ५५, १३; ७५, १५; २. ८, १९ (यमसदन में); ५३, २१; ३. २५, १२ (इन्होंने पृथिवी को जीत लिया था); ६. १७, १०; १२. ९६, २२; १२४, १६ (सात रात्रियों में ही इन्होंने पृथिवी पर विजय प्राप्त कर ली थी); १३. ९४, ३१; ११५, ६८ (ये कार्तिक मास में मांस भक्षण नहीं करते थे)।

२. नाभाग = अम्बरीष : ३. १२९, २; ७. ६४, १. ११; १२. २९, १००; १३. ११५, ६८। तुल० नाभागि।

नाभागारिष्ट, वैवस्वत मनु के दसवें पुत्र का नाम है (१. ७५, १७)।

नाभागि (नाभाग के पुत्र) = अम्बरीष : १२. २९७, १००. १०२; १८, ३। तुल० २. नाभाग।

नाभि = शिव (सहस्रनाम)।

नाभ्य = शिव (सहस्रनाम)।

नामनामिक – महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

१. नारद, परमेष्ठिन के पुत्र एक देवर्षि जिनका अक्सर गन्धर्वों के साथ उल्लेख मिलता है : १. १, १०७ (इन्होंने देवों को महाभारत की कथा सुनाया). १७४. २२३ (शैब्य को चौबीस मृत नरेशों के नाम बताये); २, ८०. ११९. १३३. १६५. ३५०; ५३, ८ (जनमेजय के सर्पसत्र में ये सदस्य बनाये गये); ७५, ७ (दक्ष के पुत्रों को उपदेश दिया); १७०, ६२; १८७, ७ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित); २०८, ९. १४. १६. १८; २०९, १. २६; २१०, १; २११, १. २२; २१२, १. २५. २८-३१ (युधिष्ठिर को सुन्दोपसुन्दोपाख्यान सुनाते हुये द्रौपदी के साथ पति के रूप में रहने के लिये पाण्डवों से एक नियम बनाने के लिये कहा); २१७, १४ (वर्गा आदि को नारीतीर्थों में जाने के लिये कहा जहाँ अर्जुन उनका उद्धार करेंगे); २. ५, १०. १३. १७. ११२-११४. १२६. १२८; ६, ६. ९.१०. १४. १९; ७, १; ८, १; ९, १; १०, १; ११, १ (विभिन्न देवसभाओंका वर्णन किया); १२, १० (इन्होंने युधिष्ठिर को बताया कि पाण्डु एक राजसूय यज्ञ कराना चाहते थे). ३३. ३४; ३६, २. १०. ११. १३. २० (ये यह जानते थे कि श्रीकृष्ण स्वयं नारायण हैं); ३९, ८ (कृष्ण की स्तुति की); ४६, ८ (राजसूय के सम्बन्ध में इनके एक कथन का उद्धरण); ५३, १० (राजसूय के समय इन्होंने युधिष्ठिर के ऊपर पवित्र जल छिड़का); ७८, १६ (ये युधिष्ठिर को उपदेश देंगे); ८०, ३३ (इन्होंने महाभारत युद्ध की भविष्यवाणी की थी); ३. ३, ७८ (इन्होंने शक्र से सूर्यस्तोत्र सीखकर उसे धौम्य को बताया); १२, ४१ (इन्होंने अर्जुन से श्रीकृष्ण की वास्तविक प्रकृति बता दिया था). ५३ (कृष्ण के सम्बन्ध में इनके एक कथन का उद्धरण); १९, २१ (देवों ने वायु और नारद को दूत बनाकर श्रीकृष्ण के पास भेजा); २४, ६ (ये सम्पूर्ण लोकों में विचरण करते हैं और युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित थे); २६, २२ (ये युधिष्ठिर का आदर

करते थे); ३१, १२; ४३, १४ (इन्द्र की सभा में); ५४, १४. १६.१७. २०. २५ (इन्होंने इन्द्र को दमयन्ती के स्वयंवर की सूचना दी); ६६, ५ (इन्होंने कर्कोटक को शाप दिया था); ८१, २. ६. १२ (पुलस्त्य द्वारा भीष्म को बताये तीर्थों का वर्णन किया); ८३, ८१. ८२; ८५, ११२. १३१ (तीर्थों का वर्णन करने के बाद अन्तर्धान हो गये); ८६, १. ५ (ये यह जानते थे कि कृष्ण तथा अर्जुन वास्तव में नारायण और नर हैं); ८८, २२ (उज्ज्यन्त के सम्बन्ध में इनके एक श्लोक का उद्धरण); ९३, १३. १८ (युधिष्ठिर के पास आये); १०७, ३३ (सगर को उनके पुत्रों की मृत्यु की सूचना दी); १३४, ९; १७५, १८ (देवों ने इनके द्वारा अर्जुन को संदेश भेजा कि वे उस समय दिव्यास्त्रों का प्रयोग न करें); १८३, ४७. ४९; १९४, १. ३. ७. ८ (शिवि और सुहोत्र के विवाद के समाधान के लिये तीन श्लोकों का उद्धरण दिया); १९८, २. ३. १२. १६ (शिवि को उपदेश दिया); २९४, ३. ४. ११. १५. १७. २२. २९. ३२. ३३ (इन्होंने यह भविष्यवाणी की थी कि सत्यवत् की एक वर्ष में मृत्यु हो जायगी); २९५, २३; २९६, २. १४; २९७, ७; २९८, ३७; ५. ११, १५ (नहुष द्वारा इन्द्रपद प्राप्त कर लेने पर उनके पास आये); ४९, २२ (इन्होंने वृष्णियों को यह बता दिया था कि श्रीकृष्ण नारायण और अर्जुन नर हैं); ६१, ४; ८३, २७ (कृष्ण की उपासना की); ९४, ४१; ९८, १-३. ६. ७. ९. १०; १००, १; १०१, १; १०२, १; १०३, १. १८. २३; १०४, १. १२. १९. २३. २५. ३०; १०५, ३७ (अपनी पुत्री के लिये सम्पूर्ण लोकों में भ्रमण करते समय मातलि के साथ ये भी थे); १०६, ४. ५; १०७, १; ११२, ४. ११९; ११३, १; ११४, १; ११५, १; ११६, १; ११७, ३. १५; ११८, १; ११९, १; १२०, १ (गालवचरित का वर्णन किया); १२१, १. २०; १२२, १; १२३, १. १९ (ययाति की कथा का वर्णन किया); १२४, १; १३१, २५; १६०, १५ (एक दुष्ट बिलाव की कथा का वर्णन किया); १८५, २ (राम के विरुद्ध भीष्म से प्रस्वापास्त्र के प्रयोग का निषेध किया). ६. २४. २७; १८६, १७; १८८, १०. २० (भीष्म को शिखण्डी के जन्म की सूचना दी); ६. ६, २०; २१, ८. १२; २३, २७; ३४, १३ (इन्होंने श्रीकृष्ण को देवाधिदेव बताया). २६ (श्रीकृष्ण ने इन्हें देवर्षि कहा); ६६, २७; ६८, २ (कृष्ण के सम्बन्ध में इनकी एक उक्ति का उद्धरण); ९८, १६ (कृष्ण की महिमा का वर्णन किया था); १२१, ३१ (अर्जुन को एक पुरातन ऋषि बताया था); १२२, ९ (इन्होंने कर्ण के कुन्तीपुत्र होने का भेद भीष्म को बताया); ७. ५२, २०. ३१. ३६. ३७; ५३, १५; ५४, १. १२. ४४. ५१. ५३; ५५, ५. १२. १३. १५ (सृञ्जय की पुत्री के लिये परस्पर स्पर्धा में नारद और पर्वत ने एक दूसरे को शाप दिया). ३५. ३६ (इन्होंने सृञ्जय को सुवर्णष्ठीवी नामक पुत्र प्रदान किया); ५६, १; ५७, १; ५८, १; ५९, १; ६०, १; ६१, १; ६२, १; ६३, १; ६४, १; ६५, १; ६६, १; ६७, १; ६८, १; ६९, १; ७०, १ (सृञ्जय के लिये षोडशराजिका का वर्णन किया); ७१, २. ६. ८ (सुवर्णष्ठीवी को पुनरुज्जीवित किया); ८३, १९ (कृष्ण को नारायण बताया); ९९, ६१ (अर्जुन द्वारा निर्मित सरोवर देखने आये); १६३, १५; ८. २, ७; ९. ५२, ११. १३; ५४, १७-२० (इनके स्वरूप का वर्णन : ये जटामण्डल से मण्डित हो सुनहरा चीर धारण किये हुये थे। इन्होंने कमण्डलु, सुवर्ण दण्ड, तथा सुखदायक शब्द करने वाली कच्छपी नामक वीणा ले रक्खी थी। ये नृत्य-गीत में कुशल, देवताओं तथा ब्राह्मणों से सम्मानित, कलह कराने वाले और कलह के प्रेमी थे). २२. २३. २५. ३५ (इन्होंने ब्रह्मा को युद्ध की सूचना दी); १०. १४, १२; १६, २१; ११. १, १३. २९; ८, २२. ३४. ३७. ३९; १२. १, ४. ९. १८; २, १. ३ (कर्ण के इतिहास का वर्णन किया); ४, १; ५, १; ६, १; २९, १४ (सृञ्जय से षोडशराजिकोपाख्यान का वर्णन किया). १४६. १४७. १४९; ३०, ४. ६ (पर्वत के मामा थे). १७. २०. २६. ३०-३२. ३५. ३६. ४०. ४२-४४ (नारद और पर्वत ने एक दूसरे को शाप दिया); ३१, १-३ (इन्होंने सृञ्जय को सुवर्णष्ठीवी नामक पुत्र प्रदान किया); ३७, ५; ४७, ५ (भीष्म के चतुर्दिक खड़े ऋषियों में यह भी थे); ५४, ४. ७. ११; ८१, २-४. ७. ८. १२. १३. २१ (कृष्ण के साथ इनका संवाद); १२४, १९ (इतिहासं पुरातनं नारदेन पुरा प्रोक्तम्); १५४, ९; १५५, १. ६. ९; १५६, १. २. ५. ६. १५. १६; १५७, ७ (शाल्मलि के साथ इनका संवाद); १६६, २३; १७३, १८ (भीष्म को कृतघ्नोपाख्यान सुनाया); १९३, ७; २००, ११; २०७, ३. ४७. ४८ (कृष्ण को देवाधिदेव बताया); २१०, २३; २२८, ५. १६. १७. ८६. ९०; २३०, २-४. ६. ७; २५६, ९. ११. १२; २५७, १३; २५८, १ (अनुकम्पक को मृत्यु की कथा सुनाया); २७२, २. ३ (सत्य नामक ब्राह्मण की कथा सुनाया); २७५, १-३. ६ (असित देवल के साथ संवाद); २८३, ११ (दक्षयज्ञ में उपस्थित हुये); २८४, ६. १५ (उमा के बगल में बैठे); २८६, २. ३. ७. १०. २१ (समङ्ग के साथ संवाद); २८७, ३. ४. १२ (गालव के साथ संवाद); २९२, १५; ३०८, ४५. ४६ (वसिष्ठ से ब्रह्मज्ञान प्राप्त करके उसे भीष्म को बताया); ३१८, ६१ (विश्वावसु को उपदेश दिया); ३२३, १९; ३२४, १५; ३२७, ३; ३२८, ११. १६. २०. २२ (ये व्यास जी के आश्रम में आये); ३२९, १-५; ३३०, १; ३३१, १ (शुकदेव के साथ संवाद). ४६. ६१; ३३२, ७. ९; ३३३, ४०; ३३४, ७. १४. २३. २५. ४५ (बदरिकाश्रम में आकर नर और नारायण की उपासना की); ३३५, २. ६ (श्वेतद्वीप गये); ३३७, ४१; ३३८, १; ३३९, १. १०. १६. १८ (नारायण ने इन्हें अपना दर्शन दिया). २६. ४२. ४५. ५६. ८२. ११२ (बदरिकाश्रम लौट आये). ११४ (ब्रह्मा जी को इन्होंने नारायण के साथ अपने साक्षात्कार का विवरण सुनाया). १३७; ३४३, ५. ६. ९. २३. २५. २६. ३१. ३९. ४३. ४५. ४७ (नर नारायण के साथ संवाद); ३४४, २. २५. २७; ३४५, १. ४. १५; ३४६ १. १०. १७ (अपने आश्रम में लौट कर नारायणीय का वर्णन किया); ३४८, ११ (इन्होंने युधिष्ठिर को सात्वत धर्म का उपदेश दिया था). १२. ५४ (नारद ने इस धर्म को साक्षात् नारायण से ही सुना था). ६५. ८५ (इन्होंने व्यास को इस धर्म का उपदेश दिया था); ३५२, ४. ५. १९; ३६५, ३. ४; १३. १४, १०६ (जब इन्होंने भक्ति भाव से शङ्कर की आराधना की तब उन्होंने प्रसन्न होकर इन्हें गीत और वीणावादन के द्वारा सदा अपना अनुसरण करने का वरदान दिया था); २६, ७ (भीष्म के पास आये); ३१, २. ३. ५ (श्रीकृष्ण के साथ संवाद); ३४, २३; ३८, २. ३. ५. ६. ११. ३० (पञ्चचूडा के साथ संवाद); ६३, ४. ५. ४१ (भीष्म के साथ अन्नदान विषयक संवाद); ६४, २-५. ३६ (देवकी के साथ संवाद); ८३, ९; ९४, ४. ३०; ९८, ६५. ६६ (भीष्म के साथ संवाद); १०२, २३; १२६, ३९; १३९, १०. ४७. ५०; १४०, १. ३; १४१, २४; १४६, १; १४८, १ (शिव-उमा संवाद का वर्णन किया). ४३. ५३. ५६. ६४; १५०, ४५; १५४, १७. १९. २१. २३ (उतथ्य ने इन्हें वरुण के पास भेजा); १५७, २०. २१; १६५, १३; १६७, १३. ४४ (इन्होंने भीष्म को बताया था कि श्रीकृष्ण स्वयं नारायण हैं); १६८, १९; १४. २, ५; ६, १०. ११. १४. १६. १८. २०. २२. २५. २७. २८; ९, १४. २, ५; ... ३. ४; १४, ३ (युधिष्ठिर को सान्त्वना दिया था). ६. १०; २४, १. ५ (देवमत के साथ संवाद); ५२, १५ (इन्होंने अर्जुन को श्रीकृष्ण के देवाधि-देव होने के विषय में उपदेश दिया था); ८८, ३९ (युधिष्ठिर के अश्वमेध के समय उपस्थित थे); १५. २०, १. ५. ६. २१-२३. २९. ३० (इन्होंने धृतराष्ट्र को बताया कि उनका जीवन केवल तीन वर्ष ही शेष रह गया है); २९, ९; ३६, ८; ३७, १. ५. ९; ३९, १. २४ (धृतराष्ट्र, गान्धारी और कुन्ती की मृत्यु की सूचना दी); १६. १, १५ (शाम्ब को शाप दिया); ६, १३ (ये जानते थे कि कृष्ण स्वयं विष्णु हैं); १७. १, १२; ३, २६ (युधि-ष्ठिर की प्रशंसा की). ३०; १८. १, ११. १९. २५. २६ (स्वर्ग में); ५, ५६ (देवताओं को नारद ने महाभारत सुनाया था)। तुकी० महर्षि, देवर्षि, परमेष्ठिज, परमेष्ठिन्, परमेष्ठिपुत्र, सुरर्षि ।

२. नारद, एक देवगन्धर्व का नाम है : १. ६५, ४४; १२३, ५७

(अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उपस्थित देवगन्धर्वों में यह भी एक थे); ९. ४४, ३१ (नारदप्रमुखाश्चापि देवगन्धर्वसत्तमाः)।

३. नारद, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५३)।

नारद-पर्वतोपाख्यान : — "नारद और पर्वत दोनों सम्पूर्ण लोकों में श्रेष्ठ ऋषि हैं। दोनों परस्पर मामा और भानजे हैं। पहले की बात है कि वे दोनों महर्षि मनुष्यलोक में भ्रमण करने के लिये देवलोक से पृथिवी पर आये। वहाँ दोनों विचरते और मानवीय भोगों का उपभोग करते हुये परिभ्रमण करने लगे। दोनों ने अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक यह शर्त कर रक्खी थी कि दोनों के मनमें शुभ या अशुभ जो भी विचार प्रकट होंगे उसे वे एक दूसरे से कह देंगे अन्यथा व्यर्थ ही शाप का भागी होना पड़ेगा। इस प्रकार भ्रमण करते हुये ये दोनों ऋषि श्वेत-पुत्र राजा सृञ्जय के पास आये। वहाँ सृञ्जय की पुत्री सुकुमारी पर नारद आसक्त हो गये किन्तु लज्जावश उन्होंने अपने हृदय के भावों को पर्वत पर प्रकट नहीं किया। फिर भी पर्वत ने अपनी तपस्या और नारद की चेष्टाओं से जान लिया कि नारद सुकुमारी के प्रति कामभाव से पीड़ित हैं। फिर तो उन्होंने अत्यन्त कुपित होकर नारद को यह शाप दे दिया कि सुकुमारी के साथ उनका विवाह तो होगा किन्तु विवाह के बाद सुकुमारी तथा अन्य सब लोग उनका (नारद का) मुख वानर के समान देखने लगेंगे। इस शाप से कुपित हो नारद ने भी पर्वत को तपस्या, ब्रह्मचर्य, सत्य और इन्द्रियसंयम से युक्त एवं धर्म परायण होने पर भी स्वर्गलोक में न जा सकने का शाप दे दिया। इस प्रकार परस्पर शाप देकर दोनों ऋषि प्रतिकूल दिशाओं में चले गये। बुद्धिमान पर्वत अपने तेज से यथोचित सम्मान पाते हुये सम्पूर्ण पृथिवी पर विचरने लगे। इधर नारद का सुन्दरी सुकुमारी से विवाह हो गया परन्तु विवाह समाप्त होते ही सुकुमारी नारद मुनि को वानराकार मुख से युक्त देखने लगी। फिर भी सुकुमारी ने नारद की अवहेलना नहीं की और उनके प्रति अपनी निष्ठा और प्रेम बढाती ही गई। पतिपरायण सुकुमारी अपने स्वामी की सेवा में सदैव उपस्थित रहती और किसी अन्य पुरुष, यक्ष, मुनि अथवा देवता का भी मन के द्वारा पतिरूप में चिन्तन नहीं करती थी। कुछ समय पश्चात नारद और पर्वत पुनः एक दूसरे से मिले और विनम्रतापूर्वक दोनों ने एक दूसरे के शाप को निवृत्त कर दिया। तब नारदजी को देवता समान तेजस्वी देखकर सुकुमारी परपति की आशंका से भाग चली। उसे भागती देखकर पर्वत ने उसके हृदय का सन्देह मिटाते हुये कहा कि वे तेजस्वी मुनि नारद ही हैं। इस प्रकार परस्पर शाप देने के पश्चात परस्पर शापों की निवृत्ति भी करने के बाद पर्वत स्वर्गलोक तथा नारद सुकुमारी के घर आ गये। नारद-पर्वतोपाख्यान का वर्णन करने के बाद श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर को बताया कि महर्षि नारद उक्त सब घटनाओं के प्रत्यक्षदर्शी हैं और पूछने पर सारी बातें बता देंगे (१२. ३०)।"

नारदागमन, अर्थात नारद का आगमन (१. २, ८०)।

नारदागमनपर्वन्, महाभारत के ९७वें अवान्तर पर्व का नाम है: "वैशम्पायन ने बताया कि पाण्डवों को तपोवन से आये दो वर्ष व्यतीत हो जाने पर एक दिन देवर्षि नारद उनके पास आये। युधिष्ठिर ने नारद का आदर-सत्कार करने के बाद उनसे धृतराष्ट्र का कुशलक्षेम पूछा। नारद जी ने बताया कि जब पाण्डव वन से लौट आये तब धृतराष्ट्र अपनी पत्नी गान्धारी और कुन्ती सहित गङ्गाद्वार चले गये। वहाँ धृतराष्ट्र ने घोर तपस्या आरम्भ की। वे केवल वायु आहार ग्रहण करते हुये मौन रहने लगे। वे कभी वन में दिखाई पड़ते और कभी अदृश्य हो जाते। उनके द्वारा स्थापित अग्नि में उस समय याजक ब्राह्मण ही विधिवत हवन करते थे। धृतराष्ट्र वन में सब ओर विचरते थे। गान्धारी और कुन्ती भी उनका अनुसरण करतीं। ऊँची नीची भूमि आ जाने पर संजय ही धृतराष्ट्र को सहारा देकर मार्गदर्शन करते। साध्वी कुन्ती रानी गान्धारी की नेत्र बनी हुई थीं। एक दिन जब धृतराष्ट्र गङ्गा स्नान के पश्चात् अपने आश्रम लौट रहे थे तब भयंकर दावाग्नि प्रज्वलित हो उठी। सारा वन जलने लगा। उस समय धृतराष्ट्र ने अग्नि को निकट आती जानकर सञ्जय को विदा कर दिया तथा स्वयं गान्धारी और कुन्ती के साथ पूर्वाभिमुख होकर बैठ गये। वे अपने इन्द्रिय समुदाय को रोककर योगयुक्त होकर निश्चेष्ट हो गये। तदनन्तर गान्धारी, कुन्ती और राजा धृतराष्ट्र, ये तीनों दावाग्नि में जल कर भस्म हो गये। संजय वहाँ से बच कर निकल गये और नारद ने उन्हें गङ्गा तट पर तपस्वियों के बीच देखा। उस समय सञ्जय ने धृतराष्ट्र आदि के भस्म हो जाने का समाचार नारद को दिया और फिर स्वयं हिमालय पर्वत पर चले गये। नारद जी ने बताया कि वन में भ्रमण करते समय उन्होंने अकस्मात धृतराष्ट्र तथा गान्धारी और कुन्ती के मृत शरीरों को स्वयं भी देखा। धृतराष्ट्र की मृत्यु का समाचार सुनकर अनेक तपस्वी उस तपोवन में आये परन्तु किसी ने भी उन मृतकों के लिये शोक नहीं किया क्योंकि तीनों की सद्गति के विषय में किसी को कोई सन्देह नहीं था। नारद जी से धृतराष्ट्र और माताओं के परलोक गमन का समाचार सुनकर पाण्डवों को अत्यधिक शोक हुआ। (१५. ३७)।

"नारद जी के सम्मुख युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र आदि के लौकिक अग्नि में दग्ध हो जाने का वर्णन करते हुये विलाप किया। अन्य पाण्डव भी विलाप करने लगे (१५. ३८)।

"युधिष्ठिर को सान्त्वना देते हुये नारद जी ने बताया कि जिस अग्नि में धृतराष्ट्र आदि भस्म हुये वह लौकिक अग्नि नहीं थी। नारद जी ने इस सम्बन्ध में वहाँ जैसा सुना था उसका वर्णन करते हुये कहा कि धृतराष्ट्र जब सघन वन में प्रवेश करने लगे तब उन्होंने याजकों द्वारा इष्टि कराकर तीनों अग्नियों को वहीं त्याग दिया। उन अग्नियों को उसी निर्जन वन में छोड़कर उनके याजकगण भी इच्छानुसार अपने-अपने स्थान को चले गये। वही अग्नि बढ़ कर उस वन में चतुर्दिक फैल गई और सारे वन को भस्म कर दिया। इस प्रकार राजा धृतराष्ट्र अपनी ही अग्नि से दग्ध हुये। अतः उन्होंने उत्तम गति प्राप्त कर ली है और अब उनके लिये शोक करना उचित नहीं है। नारद जी ने बताया कि उन्हें गङ्गा जी के तट पर उपस्थित मुनियों से ही यह समाचार विदित हुआ है। वैशम्पायन ने कहा : पाण्डव-श्रेष्ठ युधिष्ठिर अपने भ्राताओं, स्त्रियों तथा पुरवासियों सहित युयुत्सु को आगे करके गङ्गा तट पर आये और धृतराष्ट्र आदि के लिये जलाञ्जलि दी। तत्पश्चात शौचसम्पादन या अशौचनिवृत्ति के लिये प्रयत्न करते हुये वे सब लोग नगर से बाहर ही ठहर गये। युधिष्ठिर ने विधिविधान के ज्ञाता विश्वासपात्र व्यक्तियों को भेजकर मृत धृतराष्ट्र और माताओं का अन्तिम संस्कार कराया और उन व्यक्तियों को नाना प्रकार की वस्तुयें अर्पित कीं। दशाह आदि कर्म कर लेने के बाद युधिष्ठिर ने द्वादशाह के दिन धृतराष्ट्र आदि के उद्देश्य से विधिवत् श्राद्ध किया तथा ब्राह्मणों को पर्याप्त दक्षिणायें दीं (दक्षिणा का वर्णन)। इस प्रकार अनेक बार श्राद्ध का दान देकर युधिष्ठिर ने हस्तिनापुर में प्रवेश किया। देवर्षि नारद जी भी युधिष्ठिर को सान्त्वना देने के बाद अपने अभीष्ट स्थान को चले गये। युद्ध के बाद धृतराष्ट्र ने पन्द्रह वर्ष हस्तिनापुर नगर में और फिर तीन वर्ष तपस्या करते हुये वन में व्यतीत किये थे। तदनन्तर युधिष्ठिर मन में अधिक प्रसन्न न रहते हुये किसी प्रकार राज्य संचालन करने लगे (१५. ३९)।"

नारदिन्, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५९)।

नारसिंह, अर्थात नरसिंह का : ३. १०२, २२ (= विष्णु — जब उन्होंने हिरण्यकशिपु का वध किया); २७२, ६० (= विष्णु); १२. ३३९, ७८; ३४९, ३७ (हिरण्यकशिपु का वध करने के लिये विष्णु ने नृसिंह रूप में अवतार लिया था)।

नाराः (बहु०) = आपः — ३. १८९, ३; २७२, ४२; १२. ३४२, ४०।

नाराणांपतिः = शिव (सहस्रनाम)।

१. नारायण, धर्म के पुत्र, एक पुरातन देव अथवा ऋषि का नाम है जिनका बहुधा नर के साथ ही उल्लेख मिलता है। फिर भी यह देवाधिदेव (विष्णु, कृष्ण) का भी नाम है : १. १ (प्रथम श्लोक); १. १, २७४ (नरनारायणौ तौ कृष्णार्जुनौ); २, १७६ (इनका बदरी क्षेत्र में आश्रम

था); १७, ११; १८, ७. १५. ३०. ३१. ३३. ३६. ४५ (मोहिनी रूप धारण करके नारायण ने असुरों से अमृत ले लिया); १९, १९ (असुरों के साथ युद्ध किया); ३३, १२. १४. १७ (गरुड़ को अपना वाहन और ध्वज बनाया); ५५, १४; ६३, १०२ (= विष्णु, जो कृष्ण के रूप में अवतरित हुये). १०५ (सात्यकि और कृतवर्मा ने इनका अनुसरण किया); ६४, ५१; ६५, १. २ (विष्णु के ही एक अंश से नारायण का अवतार हुआ); ६७, ११६ (= कृष्ण, जो नर = अर्जुन के सखा हैं). ११९ (नरनारायणौ = अर्जुन और कृष्ण). १५१ (कृष्ण नारायण के एक अंश के अवतार थे); ७०, २९ (नरनारायण का स्थान = वदरिकाश्रम); १९७, ३१ (इनके एक श्याम और श्वेत केश से ही कृष्ण और बलराम का जन्म हुआ था); १९९, ६; २१८, ५; २२४, ४ (नरनारायणौ यौ तौ पुरादेवौ······सन्प्राप्ते मानुषे लोके); २२८, १८; २. १, १; ३, १५ (इन्होंने विन्दुसर में यज्ञ किये); ११, ५२ (ब्रह्मा की सभा में); ३६, १४. १६. २० (कृष्ण के रूप में उत्पन्न); ३. १, १; १२, २१. ४१. ४६; ३६, ३३; ४०, १; ४७, १० (नरनारायणौ यौ तौ पुराणावृषिसत्तमौ······हृषीकेशधनञ्जयौ). ११; ८३, १६९ (नरकतीर्थ में). १७२ (पद्मनाभम् = विष्णु); ८४, १२२ (इनका स्थान एक तीर्थ है); ८५, ४९; ८६, ६ (वासुदेवधनञ्जयौ······ नरनारायणा वृषी); ९०, २४. २७. २८; १००, १३; १०१, ९; १०२, १८ (नारायण = विष्णु के अवतारों का उल्लेख); १२५, १९ (नरनारायणौ चोभौ स्थानं प्राप्ताः सनातनं); १२९, ६; १४१, २३ (वदरी विशाल में इनका आश्रम); १४२, ४० (वराहावतार); १४५, १८. २६. ४१; १४९, १७ (कृतयुग में इनका = विष्णु का श्वेत वर्ण होता है); १५६, १०. १४. २०; १५८, १; १६३, १७. २०. २३; १७७, ९; १८८, ९; १८९, ३ (नाम की व्युत्पत्ति). ४. ४० (मार्कण्डेय ने इनका दर्शन प्राप्त किया और फिर इनके उदर में प्रवेश करके सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को देखा); २०४, १९ (= विष्णु के रूप में इन्होंने कुवलाश्व को अपनी शक्ति से पुनर्वलित किया); २७२, २९. ३७. ४१. ४२; ३१०, २८ (कृष्ण नारायण हैं); ४. ६, २. ८ (यथा पद्मा नारायणपरिग्रहः); ५. १, १; ७, २२ (= कृष्ण); ४९, ५. ८. ११. १८. १९. २०; ७०, १०; ९६, १४. १५. २३. ४०. ४६. ४९ (इन्होंने दम्भोद्भव को पराभूत किया); ९७, २; १११, ४. ६. २०; ११७, १०; १६९, १६; ६. १, १; ६, ४६; ८, २१ (ये सर्वज्ञ हैं); १२, ४. ९ (ये गोमन्त पर्वत पर निवास करते हैं); २३, १८. २६; ५९, ९२. ९३; ६५, ५० (= विष्णु, जिनकी स्तुति करने के बाद ब्रह्मा ने अवतार लेने का निवेदन किया); ६६, ११. १२. ३२ (अर्जुन और कृष्ण); ६८, १५. १८ (अर्जुन और कृष्ण); ७. १, १; १०, ७६; ११, ४१; ५२, २७; ७६, २५; ७७, २ (अर्जुन और कृष्ण); ८०, ५०; ८१, ९; ८८, १८; ११०, ९३; १९५, ३१. ४० (द्रोण को नारायणास्त्र दिया); २०१, ५७. ६९. ७२ (जो हमारे पूर्वजों के भी पूर्वज भगवान् नारायण हैं वे ही आदिदेव स्वयं ही सब कुछ करने में समर्थ हैं। वे ही विश्वविधाता भगवान् नारायण एक समय किसी विशेष कार्य के लिये धर्म के पुत्र के रूप में अवतीर्ण हुये थे। उन्होंने हिमालय पर्वत पर रहकर ६६, ००० वर्ष तक केवल वायु पीकर घोर तपस्या की थी और फिर उसके भी दुगने समय तक तपस्या की। उस तपस्या से जब वे साक्षात् ब्रह्म स्वरूप में स्थित हो गये तब उन्हें भगवान् विश्वेश्वर का दर्शन प्राप्त हुआ। उन्होंने उस समय विश्वेश्वर शिव की स्तुति की (स्तोत्र : ७. २०१, ७२–७८)। इस स्तुति से प्रसन्न होकर शिव ने नारायण को यह वर दिया : 'तुम मेरे कृपाप्रसाद से मनुष्यों, देवताओं तथा गन्धर्वों में भी असीम बल-पराक्रम से सम्पन्न होगे। देवता, असुर, सर्प, पिशाच, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, सुपर्ण, तथा समस्त पशुयोनि के प्राणी भी तुम्हारे वेग को सहन नहीं कर सकेंगे। शस्त्र, वज्र, अग्नि, वायु, गीले-सूखे पदार्थ और स्थावर-जङ्गम प्राणियों के द्वारा भी तुम्हें कोई क्षति नहीं होगी। समरभूमि में पहुँचने पर तुम मुझ से अधिक बलवान् हो जाओगे।' नारायण की महिमा का इस प्रकार वर्णन करने के पश्चात् व्यास जी ने अश्वत्थामा को बताया कि वही भगवान् नारायण श्रीकृष्ण के रूप में अपनी माया से संसार को मोहित करते हुये विचर रहे हैं। नारायण के ही तप से महामुनि नर प्रकट हुये हैं जो भगवान् के समान ही शक्ति शाली हैं। वे नर ही अर्जुन हैं। ये दोनों ऋषि प्रमुख देवता, ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र में से विष्णु स्वरूप तथा तपस्या में श्रेष्ठ हैं। लोगों को धर्म-मर्यादा में रखकर ये उनकी रक्षा के लिये युग-युग में अवतार ग्रहण करते हैं)। ८. १, १; १६, २०; ३४, १०१ (= विष्णु, शिव के बाण में स्थित); ६२, १; ६५, १२; ७९, ६५. ६७; ८७ ७९ (= अर्जुन और कृष्ण); ९१, ४२; ९६, २८; ९. १, १; १०. १, १; ११. १, १; १२. ४७, १८. १९. २४. ३६. ९९ (नारायणः परं ब्रह्म नारायण परंतपः। नारायणः परो देवः सर्वं नारायणं सदा); ५२, २; ५९, ८८ (नारायण देवः, विरजों के पिता); ६१, १३; ६४, ८ (विष्णु···सर्वभूतेश्वरं देवं प्रभुं नारायणं पुरा). १३ (अनादिमध्यनिधनं देवं नारायणं प्रभुम्). १६ (अनन्तमायामितमन्त्रवीर्यं नारायणं ह्यादिदेवं पुराणम्); ११०,२४. २८; १२१, २३ (दण्डो हि भगवान्विष्णुर्दण्डो नारायणः प्रभु); १२७, २ (इनका आश्रम वदरी तीर्थ में था). ५; २०७, २; २१७, २ (प्रवृत्ति को धर्म का उपदेश दिया).३८;२५६,८ (= हरि, अनुकम्पक के पुत्र); २७९, २८; २८०, १९. ५६; ३००, ६२; ३०१, २३. ७७. ८६. ११४. ११५; ३३४, ७.८. (विश्वात्मा चतुर्मूर्तिः सनातनः). ९ (स्वायम्भुव मन्वन्तर के सत्ययुग में इन स्वयम्भू भगवान के चार अवतार हुये थे जिनके नाम हैं नर, नारायण, हरि और कृष्ण). १० (बदरिकाश्रम में नर और नारायण ने घोर तपस्या की). १८. २१ (नारद ने बदरिकाश्रम में नर-नारायण का दर्शन किया). २४ (नारद ने इन्हें नमस्कार किया); ३३५, १. ५. १७. १८. २२. ३४. ३५ (इनकी प्रेरणा से सप्तर्षियों ने शास्त्र की रचना की जिसमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का वर्णन है); ३३६, २४. २५. ५९ (एकत, द्वित और त्रित ने श्वेत द्वीप में आकर तपस्या की किन्तु उन्हें नारायण के दर्शन नहीं हुये). ६४; ३३७, १८. २९. ३० (गरुड़ को वसु उपरिचर को लाने के लिये भेजा); ३३९, ८. १००. १११. ११२. १३४. १३६ (नारायण मन्त्र); ३४०, ४. २६ (नारायण की कृपा से क्षीरसागर के तट पर व्यास को तीनों कालों का ज्ञान प्राप्त हुआ); ३४१, १२ (नारायणाय विश्वाय निर्गुणाय गुणात्मने). २२. २३. २७ (रुद्रो नारायणश्चैव सत्वमेकं द्विधाकृतम्). ३१ (समरुतः सरुद्राश्च सेन्द्रादेवाः सहर्षिभिः। अर्चयन्ति सुर श्रेष्ठ देवं नारायणं हरिम्). ३७. ४०; ३४२, ६ (इन्हें कृष्ण के साथ समीकृत किया गया है). २०. २६ (नारायणहस्तग्रहणान्नीलकण्ठत्वमेव च). ६० (नारायणो लोक हितार्थं वडवामुखो नाम पुरा महर्षिः). ८४. १०४. १०७ (नरनारायणौ पूर्वं तपस्तेपतुरव्ययम्).१११-११५ (अथ रुद्र उपधावत्तावृषी तपसान्वितौ। तत एनं समुद्धूतं कण्ठे जग्राह पाणिना। नारायणः सविश्वात्मा तेनास्य शितिकण्ठता). ११८ (संलग्नयोर्युद्धे रुद्रनारायणात्मनोः). १२७ (नरो नारायणश्चैव जातौ धर्मकुलोद्वहौ। तपसामहता युक्तौ देवश्रेष्ठौ महाव्रतौ). १३०. १३५; ३४३, २. ३. ५. ७ (नरनारायणौ). १४. १७. २६. २८. ३०. ४६; ३४४, १. २५-२७; ३४५, ७. १२. २८ (सर्वात्मा नारायण इति श्रुतः); ३४६, १-३. ७ (नारायणं हरिम्). १०; ३४७, १ (जन्म धर्मगृहे चैव नरनारायणात्मकम्). १२ (ईश्वरो हि जगत्स्रष्टा प्रभुर्नारायणो विराट्). २४. २६. ६९. ८१ (नारायणपरावेदा यज्ञा नारायणात्मकम्). ८२-८७. ९१ (महायोगी हरिर्नारायणः प्रभुः); ३४८, ४. १०. १३ (यदासीन्मानसं जन्म नारायणमुखोद्गतम्। ब्राह्मणः पृथिवीपाल तदा नारायणः स्वयम्). ४४ (धर्म १७. १९. २४. ३१. ३५. ३९. ४३ (नारायणमुखोद्भवः). समुद्भूतौ नारायणमुखात्पुनः). ४८. ५२. ५४ (एष धर्मो जगन्नाथात्साक्षान्नारायणान्नृप). ६६. ७१. ७५. ८२ (धर्मो नारायणपरात्मकः). ८३; ३४९, ४ (नारायणस्यांशजमेकपुत्रं द्वैपायनं वेद महानिधानम्).५ (नारायणं ब्रह्म महानिधानम्). ७ (कृष्णद्वैपायनो मुनिः भूयो नारायणसुतं). ८. १४. १५. ६०. ६९. ७०. ७३ (सांख्यं च योगं च सनातने द्वे वेदाश्च सर्वे निखिलेन राजन्। सर्वैः समस्तैर्ऋषिभिर्निरुक्तो नारायणो विश्वमिदं पुराणम्); ३५१, १४; १३. १, १; ११, ३. २०; १४, ८. २७७. २८३. २८४; १७, १७८ (नारायणाय साध्याय समाधिष्ठाय धीमते। यमाय प्राह भगवान् साध्यो

नारायणोऽच्युतः — मनु ने समाधिनिष्ठ नारायण नामक साध्य देवता को शिव सहस्रनाम का उपदेश दिया और फिर साध्यदेव नारायण ने इसे यम को प्रदान किया); १०९, ४ (पौषमासे तु पूज्यो नारायणेति च। वाजपेयमवाप्नोति सिद्धिं च परमां व्रजेत्); १२५, १४; १३२, १०; १३९, ५. १६. २३; १४०, १; १४७, ४५; १४८, १९. २७; १४९, ३८ (विष्णु के सहस्र-नामों में से एक). १३८; १५८, ४६; १६५, ९; १६७, ४४; १४. १, १; २५, १६. १७; १५. १, १; ३१, १२; १६. १, १; ४, २६; १७. १, १; १८. १, १; ५, २४ (मृत्यु के बाद कृष्ण ने नारायण में प्रवेश किया); ६, २३ (नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्। देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुदीरयेत् —यह श्लोक प्रथम से लेकर अठारहवें पर्वों तक प्रत्येक पर्व के प्रारम्भ में आता है). ८० (नरनारायणौ)। तुक्री० कृष्णवासुदेव; महापुरुष, विष्णु।

२. नारायण, बहु० (°णा :), एक गोप समुदाय का द्योतक है : ५. ७, १८ (गोपनामर्बुदं महत्। नारायण इति ख्याताः, इन्हें दुर्योधन ने अपनी सेना के लिये चुना); ७. १८, ३१ (नारायणाश्च गोपाला); १९, ७ (इन लोगों ने अर्जुन पर आक्रमण किया); ३१, २९; ९१, ३९ (इन्होंने अर्जुन पर आक्रमण किया); ८. ६, ३ (भीष्म ने इनका वध किया); ११, १७ (नारायणबलैर्युक्तो गोपालैर्युद्धदुर्मदैः); २७, २; ५३, २ (अर्जुन से युद्ध किया); ९५, ५ (कृतवर्मा का अनुसरण किया); ९. २, ४० (नारायणा हता यत्र गोपाला युद्धदुर्मदाः)।

३. नारायण (वि०) : १. १, २०३ (नारायणं दिव्यमस्त्रम्); २, २६५; ७. १९४, २ (परममस्त्रं नारायणम्—इसे नारायण ने द्रोण को दिया और द्रोण से अश्वत्थामा को प्राप्त हुआ); १९५, ३२. ५०; १९६, १; १९९, १५. २२; १२. ३४३, १४; १३. १४, २६१।

नारायणास्त्र, नारायण के अस्त्र का द्योतक है : १. २, ७०; ७. १९५, ४४ (यह अश्वत्थामा को ज्ञात था); १९९, ५१. ५३ (अश्वत्थामा ने इसका प्रयोग किया था); २००, १३. १९. ३३; ८. २, १८ । तुक्री० ३. नारायण (वि०)।

नारायणास्त्रमोक्षपर्वन्, महाभारत के ७८ वें अवान्तर पर्व का नाम है : "पन्द्रहवें दिन के युद्ध का अन्तिम चरण—द्रोण के मारे जाने के पश्चात् अस्त्रों के आघात से पीड़ित हुये कौरव अपने प्रमुख वीरों के मारे जाने से भारी विध्वंस को प्राप्त हो अत्यन्त शोकमग्न हो गये। शकुनि, कर्ण, शल्य, कृतवर्मा, और यहाँ तक कि स्वयं दुर्योधन भी रणक्षेत्र से भयभीत होकर भाग गये। उस समय केवल अश्वत्थामा ही भयभीत नहीं हुये और शत्रुसेना की ओर बढ़ने लगे। पहले अश्वत्थामा ने शिखण्डी से युद्ध किया। अपने पक्ष को पलायन करता देख अश्वत्थामा ने दुर्योधन के पास जा कर इस प्रकार भागने का कारण पूछा। द्रोणपुत्र की बात सुनकर भी दुर्योधन उन्हें द्रोण की मृत्यु का अप्रिय समाचार स्वयं न दे सका। उसने कृपाचार्य से संकोचपूर्वक निवेदन किया कि वे ही अश्वत्थामा को उनके पिता की मृत्यु का समाचार दें। तब कृपाचार्य ने विस्तार से द्रोण वध की परिस्थितियों से अश्वत्थामा को अवगत कराया। अपने पिताके युद्ध में मारे जाने का यह समाचार सुनकर अश्वत्थामा पैरों से कुचले गये सर्प के समान अत्यन्त कुपित हो उठे (७. १९३)।

"धृतराष्ट्र ने संजय से पूछा कि पिता की मृत्यु का समाचार सुनकर अश्वत्थामा ने क्या कहा। धृतराष्ट्र ने कहा : 'जिनमें मानव, वारुण, आग्नेय, ब्राह्म, ऐन्द्र और नारायण नामक अस्त्र सदा प्रतिष्ठित थे, उन धर्मात्मा द्रोण को धृष्टद्युम्न द्वारा अधर्मपूर्वक मारा गया सुनकर पराक्रमी अश्वत्थामा ने क्या कहा।' (७. १९४)।

"धृष्टद्युम्न ने छल से द्रोण को मारा यह समाचार सुनकर अश्वत्थामा अत्यन्त कुपित हो उठे। उन्होंने दुर्योधन के सामने प्रतिज्ञा की कि वे समस्त पाञ्चालों और पाण्डवों का वध कर डालेंगे। उन्होंने कहा कि रणभूमि में उन्हें देवता, गन्धर्व, असुर, राक्षस अथवा मानव कोई भी मार नहीं सकता। यदि अर्जुन के पास अनेक दिव्यास्त्र हैं तो भी अश्वत्थामा ने कहा : 'मैं जिस अस्त्र का आज प्रयोग करूँगा उसे न श्री कृष्ण जानते हैं और न कोई पाण्डव वह अस्त्र प्रयोग और उपसंहार सहित केवल मेरे ही पास है। मेरे पिता ने स्वयं नारायणकी स्तुति करके उनसे नारायणास्त्र प्राप्त किया था। तब भगवान ने वह अस्त्र मेरे पिता को देते हुये कहा था कि उसका प्रयोग सहसा या जल्दी में नहीं करना चाहिये क्योंकि वह शत्रु का वध किये बिना कभी नहीं लौटता। वही नारायणास्त्र अपने पिता द्रोण से मुझे प्राप्त हुआ है जिससे मैं आज रणभूमि में पाण्डव, पाञ्चाल, मत्स्य और केकय योद्धाओं का वध करूँगा।' अश्वत्थामा के इस प्रकार कहने पर कौरवों की सेना पुनः युद्ध के लिये सन्नद्ध हो गई। अनेक वीर अपने-अपने शङ्ख भी बजाने लगे। वह तुमुल नाद सुनकर पाण्डव आपस में गुप्त मन्त्रणा करने लगे। द्रोण-पुत्र अश्वत्थामा ने तब जल से आचमन कर के उस दिव्य नारायणास्त्र को प्रकट किया (७. १९५)।

"नारायणास्त्र के प्रकट होते ही प्रचण्ड वायु चलने लगी, पृथिवी काँप उठी, समुद्र में ज्वार आ गया, नदियों का प्रवाह प्रतिकूल दिशा में बहने लगा और प्रकृति में अनेक अन्य उत्पात होने लगे। उस समय देवता, दानव और गन्धर्व भी अत्यन्त भयभीत हो उठे। धृतराष्ट्र ने सञ्जय से पूछा कि उस समय धृष्टद्युम्न की रक्षा के लिये पाण्डवों ने क्या उपाय किया। सञ्जय ने बताया कि युधिष्ठिर ने अपने सैनिकों को भय से भागते देखकर अर्जुन से आशंका व्यक्त की कि सम्भवतः वज्रधारी इन्द्र ही गर्जना कर रहे हैं और कौरवों की सहायता के लिये रणभूमि में आ गये हैं। तब अर्जुन ने युधिष्ठिरकी शंका का समाधान करते हुये कहा : 'यह गर्जना इन्द्र की नहीं द्रोण पुत्र अश्वत्थामा की है। पाञ्चाल राजकुमार ने द्रोण का केश पकड़ कर खींचने का जो पापकर्म किया है उसे अश्वत्थामा क्षमा नहीं करेंगे। आपने भी धर्मज्ञ होते हुये भी जो झूठ बोल कर द्रोण का वध कराया है वह अक्षम्य पाप है। आज कुपित होकर अश्वत्थामा अपने पिता का प्रतिशोध लेने के उद्देश्य से धृष्टद्युम्न का वध करना चाहते हैं। अब हम सब मिल कर भी उसकी रक्षा नहीं कर सकते। अब हम लोगों की आयु का अधिकांश भाग व्यतीत हो चुका है। इसी से हम लोगों की बुद्धि भ्रष्ट हो गई है और यह पाप कर डाला है। गुरुदेव मुझ पर विश्वास करते थे, परन्तु मैंने भी राज्यसुख के मोह में पड़ कर उनकी हत्या करा दी। इस पाप के कारण अब मैं अधोमुख होकर नरक प्राप्त करूँगा। द्रोणाचार्य एक तो ब्राह्मण थे, दूसरे वृद्ध, और तीसरे हम लोगों के गुरु। साथ ही उन्होंने हथियार नीचे डाल दिया था और मुनिवृत्ति का आश्रय लेकर बैठ गये थे। उस अवस्था में राज्य के लिये उनकी हत्या कराकर मैं अब जीवन की अपेक्षा मृत्यु को ही श्रेयस्कर समझता हूँ (७. १९६)।

"अर्जुन की बातें सुनकर भीमसेन ने क्रोधपूर्वक अपने भाई को डाँटा। भीम ने द्रोणाचार्य के वध को उचित बताते हुये कहा कि वे अपनी गदा से पृथिवी को विदीर्ण कर सकते हैं। असुर, नाग, मानव तथा राक्षसों सहित सम्पूर्ण देवों और इन्द्र को भी बाणों द्वारा मारकर भगा सकते हैं। भीम की बातें सुनकर धृष्टद्युम्न ने भी द्रोण का वध करने के अपने कार्य को उचित बताते हुये अर्जुन से कहा : 'न तो युधिष्ठिर ही असत्यवादी हैं और न मैं अधर्मी हूँ। द्रोण स्वयं पापी और शिष्यद्रोही थे। इसीलिये वे मारे गये।' (७. १९७)।

"धृतराष्ट्र के पूछने पर सञ्जय ने बताया : जब अर्जुन और भीम तथा धृष्टद्युम्न ने अपना-अपना मत प्रकट किया तब सभी लोग उसे शान्त भाव से सुनते रहे। अर्जुन टेढ़ी दृष्टि से धृष्टद्युम्न की ओर देख कर अश्रु-पूरित नेत्रों से केवल 'धिक्कार' शब्द का ही उच्चारण कर सके। युधिष्ठिर आदि पाण्डव तथा श्रीकृष्ण भी लज्जित होकर चुप बैठ गये। तब सात्यकि ने क्रोधपूर्वक धृष्टद्युम्न की भर्त्सना करते हुये उसे मार डालने की धमकी दी। धृष्टद्युम्न ने भी सात्यकि पर प्रत्याक्षेप करते हुये उनके द्वारा भूरिश्रवा के वध का स्मरण दिलाया। सात्यकि यह सुनकर धृष्टद्युम्न को मार डालने के उद्देश्य से उसकी ओर झपटे परन्तु श्रीकृष्ण के कहने से भीम ने उन्हें किसी प्रकार रोका। सहदेव ने भी सबके क्रोध को शान्त कराने और मैत्री स्थापित करने का प्रयास किया। धृष्टद्युम्न ने भीमसेन से सात्यकि का वध करने की आज्ञा माँगी। उस समय श्रीकृष्ण और युधिष्ठिर ने अत्यन्त कठिनता पूर्वक पुनः शान्ति स्थापित कराई। तदनन्तर सभी वीर समरभूमि में शत्रुओं का सामना

करने के लिये चले। (७. १९८)।

"अश्वत्थामा ने नारायणास्त्र का प्रयोग करते हुये पाण्डव सेना का भीषण संहार आरम्भ किया (नर संहार का विस्तृत वर्णन)। उन्होंने दुर्योधन के सामने अपनी प्रतिज्ञा को पुनः दोहराया। कौरव सेना पुनः सन्नद्ध हो गई। तब अश्वत्थामा ने पाण्डवों और पाञ्चालों को लक्ष्य करके नारायणास्त्र प्रकट किया जिससे आकाश में सहस्रों वाण प्रकट हो गये। उन बाणों के अग्र भाग प्रज्वलित थे और वे पाण्डवों का विनाश करने लगे। अपनी सेना का इस प्रकार विनाश देखकर युधिष्ठिर भयभीत हो उठे। उन्होंने पाञ्चालों की सेना के साथ धृष्टद्युम्न को वहाँ से भाग जाने के लिये कहा। इसी प्रकार सात्यकि से वृष्णियों और अन्धकों सहित युद्धभूमि से हट जाने के लिये कहा। इस प्रकार कह कर युधिष्ठिर वोले: 'मैं भी अपने सब भ्राताओं के साथ अग्नि में प्रवेश कर जाऊँगा।' युधिष्ठिर के इस प्रकार कहने पर श्रीकृष्ण ने हाथ उठाकर सभी योद्धाओं से हथियार फेंक अपने वाहनों से उतर कर भूमि पर खड़े हो जाने के लिये कहा। उन्होंने बताया कि नारायणास्त्र के निवारण का यही उपाय भगवान् नारायण ने निश्चित किया है। अतः उन्होंने सभी से अपने हाथी, घोड़े और रथों से उतकर पृथिवी पर आ जाने के लिये कहा क्योंकि भूमि पर खड़े निहत्थे लोगों पर नारायणास्त्र प्रहार नहीं करता। श्रीकृष्ण के परामर्श को सभी ने स्वीकार किया किन्तु अकेले भीमसेन ने उसके अनुरूप आचरण करना अस्वीकार कर दिया। अन्य लोगों से भी भीम ने कृष्ण की वात न मानने के लिये कहा। अर्जुन ने यह कहा कि नारायणास्त्र, गायों और ब्राह्मणों के विरुद्ध उन्होंने गाण्डीव धनुष का प्रयोग न करने की प्रतिज्ञा की है। भीमसेन ने अश्वत्थामा पर आक्रमण किया किन्तु शीघ्र ही नारायणास्त्र की शक्ति के तेज से आच्छादित हो गये (७. १९९)।

"भीमसेन को इस प्रकार नारायणास्त्र से आच्छादित देखकर अर्जुन ने उन्हें वरुणास्त्र से ढँक दिया। तदनन्तर श्रीकृष्ण और अर्जुन अपने रथ से उतर कर भीमसेन के पास गये तथा उन्हें बलात् रथ से उतार लिया। श्रीकृष्ण ने भीमसेन से उनके हथियार भी भूमि पर रखवा दिये और इस प्रकार नारायणास्त्र को शान्त कर दिया। नारायणास्त्र के दुःसह तेज के शान्त हो जाने पर एक बार पुनः समस्त दिशायें और विदिशायें निर्मल हो गई। पाण्डव सेना तव एक वार पुनः संगठित होकर युद्ध के लिये सन्नद्ध हो गई। दुर्योधन ने अश्वत्थामा से एक वार पुनः नारायणास्त्र के प्रयोग का निवेदन किया परन्तु उन्होंने इसमें अपनी असमर्थता प्रकट करते हुये बताया कि इस अस्त्र का प्रयोग केवल एक वार ही किया जा सकता है। यदि दूसरी वार प्रयोग किया जाय तो यह प्रयोग करने वाले को ही समाप्त कर देता है। तब दुर्योधन ने अन्य अस्त्रों से ही शत्रुओं का वध करने का निवेदन किया। धृतराष्ट्र द्वारा यह पूछने पर कि इसके वाद क्या हुआ सञ्जय ने कहा कि दोनों पक्षों में पुनः घोर युद्ध होने लगा। अश्वत्थामा से युद्ध करते हुये धृष्टद्युम्न के सारथि और अश्व मारे गये। इसे देखकर पाञ्चाल सैनिक युद्ध भूमि से भागने लगे। उस समय सात्यकि ने आकर अश्वत्थामा से युद्ध आरम्भ किया और उनके सारथि तथा अश्वों को वाणों से बींधते हुये स्वयं उन्हें भी बाणों से आहत कर दिया। सात्यकि के प्रहार से पीड़ित अश्वत्थामा को उस समय कोई कर्तव्य नहीं सूझता था। उनकी यह दशा देखकर कर्ण तथा कृपाचार्य के साथ आकर दुर्योधन ने सात्यकि से युद्ध आरम्भ किया, परन्तु सात्यकि ने अपने बाणों द्वारा शीघ्र ही इन सभी महारथियों को रथहीन एवं युद्ध विमुख कर दिया। तब अश्वत्थामा एक दूसरे रथ पर बैठ कर सात्यकि से युद्ध के लिये उपस्थित हुये किन्तु सात्यकि ने इस बार भी उन्हें रथहीन करके पलायन के लिये विवश कर दिया। उस समय पाण्डवों ने प्रफुल्लित होकर अपने-अपने शङ्ख बजाये और सात्यकि ने वृषसेन की सेना के तीन हजार विशाल रथों को नष्ट कर दिया। तदनन्तर कृपाचार्य की सेना के पन्द्रह हजार हाथियों और शकुनि के पचास हजार अश्वों का भी उन्होंने वध कर दिया। इसी समय एक अन्य रथ पर बैठ कर अश्वत्थामा पुनः सात्यकि से युद्ध के लिये आये और धृष्टद्युम्नवध की अपनी प्रतिज्ञा को पुनः दोहराया। अश्वत्थामा ने इस बार तीव्र प्रहारों से सात्यकि को आहत कर दिया जिसके फलस्वरूप सात्यकि का सारथि उन्हें अश्वत्थामा के पास से दूसरे रथी के पास हटा ले गया। तदनन्तर अश्वत्थामा ने धृष्टद्युम्न के दोनों भौहों के बीच गहरा आघात किया। धृष्टद्युम्न को इस प्रकार आहत देखकर अर्जुन, भीम, वृद्धक्षत्र, चेदि देश के युवराज तथा मालव नरेश सुदर्शन आदि अश्वत्थामा से युद्ध के लिये उपस्थित हुये। इस युद्ध में अश्वत्थामा ने मालवराज सुदर्शन, पौरवराज वृद्धक्षत्र, और चेदिदेशीय युवराज का वध कर दिया। यह देखकर भीमसेन अश्वत्थामा से युद्ध करने लगे जिसमें पहले तो दोनों ने एक दूसरे को आहत किया, किन्तु अन्त में अश्वत्थामा के तीव्र प्रहारों से भीमसेन का सारथि आहत हो गया जिसके कारण उनके रथ के घोड़े तत्काल वहाँ से दूर भाग गये। अपनी इस विजय पर अश्वत्थामा अत्यन्त प्रसन्न हो उठे। उनके प्रहारों से त्रस्त पाञ्चाल सैनिक भी रणभूमि से भाग खड़े हुये (७. २००)।

"अपनी सेना को पलायन करते देखकर अर्जुन ने उसे रोकना चाहा किन्तु श्रीकृष्ण सहित उनके प्रयास से भी सैनिक वहाँ रुक नहीं सके। अकेले अर्जुन ही तब सोमकों और मत्स्यों को लेकर अश्वत्थामा के साथ युद्ध के लिये आकर इस प्रकार वोले: 'आचार्यपुत्र! तुममें जो शक्ति, जो विज्ञान बल-पराक्रम, जो पुरुषार्थ, कौरवों पर जो प्रेम और हम लोगों पर जो द्वेष हो वह सब तथा अपने तेज और प्रभाव को मुझ पर दिखाओ। तुम बहुत उद्दण्ड हो रहे हो। आज युद्ध में मैं तुम्हारा सारा गर्व चकनाचूर कर दूँगा।' धृतराष्ट्र ने सञ्जय से पूछा कि अर्जुन ने अश्वत्थामा के प्रति इतनी कठोर वात क्यों कही क्योंकि अर्जुन और अश्वत्थामा एक दूसरे के प्रति प्रेम भाव रखते थे। सञ्जय ने बताया कि अपने पक्ष के अनेक महारथियों के मारे जाने तथा सात्यकि, धृष्टद्युम्न और भीमसेन के परास्त हो जाने पर अर्जुन के मन में अत्यधिक कष्ट हुआ था। अतः अधिक खेद के कारण ही उनके मन में अश्वत्थामा के प्रति अभूतपूर्व क्रोध जागृत हो गया था। अर्जुन की मन को विदीर्ण कर देने वाली वाणी को सुनकर अश्वत्थामा उनपर और श्रीकृष्ण पर अत्यधिक क्रुद्ध हो उठे। उन्होंने रथ पर खड़े होकर आचमन करने के वाद एक आग्नेयास्त्र हाथ में लिया। उस आग्नेयास्त्र के प्रयोग के कारण प्रकृति में अनेक उत्पात होने लगे। अग्नि की लपटें अर्जुन पर भी टूट पड़ीं। राक्षस-पिशाच जोर-जोर से गर्जना करने लगे। चारों ओर कुहराम मच गया। उस आग्नेयास्त्र ने पाण्डवों की पहले से ही भयभीत सेना को दग्ध करना आरम्भ किया। कौरवसेना हर्ष से प्रफुल्लित हो उठी। तब अर्जुन ने ब्रह्मास्त्र को प्रकट किया जिससे सारा अन्धकार दूर हो गया, शीतल वायु बहने लगी तथा दिशायें स्वच्छ हो गईं। उस समय तक पाण्डवों की एक अक्षौहिणी सेना आग्नेयास्त्र से दग्ध हो चुकी थी। अर्जुन द्वारा ब्रह्मास्त्र के प्रयोग के बाद उन्हें और श्रीकृष्ण को एक साथ देखकर पाण्डवसेना हर्षित हो उठी। उस समय अर्जुन और श्रीकृष्ण को अग्नेयास्त्र से मुक्त देखकर अश्वत्थामा अत्यन्त दुःखित और चिन्तित हो उठे। कुछ क्षणों तक इसी चिन्ता में डूबे रहने के वाद अश्वत्थामा अपने रथ से कूद कर 'धिक्कार है, सब मिथ्या है' ऐसा कहते हुये रणभूमि से भाग चले। इतने ही में महर्षि व्यास वहाँ दिखाई पड़े। उन्हें सामने देखकर अश्वत्थामा ने अर्जुन और श्रीकृष्ण को आग्नेयास्त्र से अप्रभावित रहने का कारण पूछा। अश्वत्थामा ने कहा: 'मेरे द्वारा प्रयुक्त इस अस्त्र को असुर, गन्धर्व, पिशाच, राक्षस, सर्प, यक्ष, पक्षी, और मनुष्य कभी व्यर्थ नहीं कर सकते थे, फिर भी वह अस्त्र केवल एक अक्षौहिणी सेना को दग्ध करने के पश्चात् शान्त हो गया। इतने भयंकर अस्त्र ने भी श्रीकृष्ण और अर्जुन का वध नहीं किया। अतः हे महामुने! मुझे इसका कारण बताने का कष्ट करें।' तब महर्षि ने नारायण की कथा सुनाते हुये अश्वत्थामा को बताया कि श्रीकृष्ण और अर्जुन वास्तव में स्वयं नारायण और नर हैं। पूर्व समय में नारायण ने शिव को प्रसन्न करके यह वर प्राप्त कर लिया था कि देवता, असुर, पिशाच, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, आदि कोई भी उनके वेग को सहन नहीं कर सकेंगे। साथ ही शस्त्र, वज्र, अग्नि, वायु, गीले-सूखे पदार्थ, अथवा स्थावर-जङ्गम प्राणी कोई भी उन्हें क्षति नहीं पहुँचा सकते। उन्हीं नारायण के तप से नर प्रकट हुये

वे जो स्वयं नारायण के समान ही शक्तिशाली हैं। ये नर और नारायण ही अर्जुन और कृष्ण हैं जो सत्पुरुषों की रक्षा के लिये युग युग में अवतार लेते हैं। इस प्रकार नर-नारायण की कथा बताकर व्यास ने अश्वत्थामा से कहा : 'तू भी पूर्व जन्म में नारायण के ही समान ज्ञानवान् होकर उनके जैसे सत्कर्म तथा तपस्या से क्रोध और तेज धारण करने वाला रुद्रभक्त हुआ था। सम्पूर्ण जगत को शङ्करमय जान कर भगवान् शङ्कर के विग्रह की स्थापना कर के होम, जप और उपहारों द्वारा उनकी आराधना की थी। तुझ से पूजित होकर शङ्कर अत्यन्त प्रसन्न हुये थे और उन्होंने तुझे अनेक वरदान दिये थे। नर-नारायण ने शिवलिङ्ग में तथा तूने प्रतिमा में प्रत्येक युग में महादेव की आराधना की है। जो भगवान शङ्कर को सर्वस्वरूप जान कर शिवलिङ्ग में उनकी पूजा करता है उसमें सनातन आत्म योग तथा शास्त्र योग प्रतिष्ठित होते हैं। श्रीकृष्ण भगवान शङ्कर के भक्त हैं और उन्हीं से प्रकट हुये हैं। जो भगवान शिव के लिङ्ग को सम्पूर्ण भूतों की उत्पत्ति का स्थान जानकर उसकी पूजा करता है उस पर भगवान् शङ्कर अधिक प्रेम रखते हैं।' व्यास की यह बात सुनकर अश्वत्थामा ने मन ही मन भगवान् शङ्कर को प्रणाम किया और श्रीकृष्ण की महत्ता को स्वीकार कर लिया। उन्होंने विनीत भाव से महर्षि व्यास को प्रणाम किया तथा अपनी सेना को छावनी में लौटने की आज्ञा दे दी। इस प्रकार द्रोणाचार्य के मारे जाने के बाद पाण्डव तथा कौरवों की सेनायें अपने-अपने शिविरों में लौट आईं। वेदों के पारङ्गत विद्वान द्रोणाचार्य पाँच दिनों तक युद्ध तथा शत्रुसेना का संहार करके ब्रह्म लोक चले गये (७. २०१)।

"द्रोणाचार्य की मृत्यु के बाद जब समस्त कौरव सेना भाग खड़ी हुई तब अपने को विजय दिलाने वाली एक अत्यन्त आश्चर्यमयी घटना देखकर अर्जुन ने वहाँ अकस्मात् आ गये महर्षि से इस प्रकार प्रश्न किया : "जब मैं अपने बाणों से शत्रुसेना का संहार कर रहा था उस समय मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि एक अग्नि के समान तेजस्वी पुरुष मेरे आगे-आगे चल रहे हैं। वे जलता हुआ शूल हाथ में लिये जिस ओर जाते थे उस ओर के शत्रु विदीर्ण हो जाते थे। अतः मुझे बताइये कि वे महापुरुष कौन थे। वे अपने पैरों से पृथिवी का स्पर्श नहीं करते थे और अपने त्रिशूल को हाथ से कभी अलग नहीं करते थे।' अर्जुन के पूछने पर महर्षि व्यास ने बताया कि वे स्वयं महादेव थे। तदनन्तर व्यास जी ने महादेव की महिमा का वर्णन करते हुये एक स्तोत्र सुनाया और कहा कि यदि महादेव कुपित हो जाँय तो देवता, असुर, गन्धर्व, और राक्षस इस लोक अथवा पाताल में छिप कर भी बच नहीं सकते। पूर्वसमय में इन्हीं महादेव ने कुपित होकर दक्ष के यज्ञ का विध्वंस करा दिया था। उस समय भगवान शङ्कर ने पूषा पर भी आक्रमण किया जो पुरोडाश खा रहे थे और उनके दाँतों को तोड़ दिया। तब सारे देवताओं ने भयभीत होकर महेश्वर के चरणों में नमस्कार किया और रुद्र के लिये विशिष्ट यज्ञ भाग की कल्पना की। क्रोध शान्त होने पर महेश्वर शङ्कर ने उस यज्ञ को पूर्ण किया। पूर्वकाल में इन्हीं शङ्कर ने आकाश में स्थित असुरों के तीन पुरों को भी तीन गाँठ और तीन फल वाले बाण से विदीर्ण कर दिया था। व्यास जी ने बताया कि वे शङ्कर ही रुद्र हैं, वे ही शिव हैं, वे ही अग्नि हैं, वे ही पर्वस्वरूप एवं सर्वज्ञ हैं। तदनन्तर व्यास जी ने शिव के अनेक नामों की चर्चा करते हुये इस पर्व (नारायणास्त्रमोक्ष पर्व) के पाठ अथवा श्रवण का फल बताया। इसके प्रतिदिन पाठ अथवा श्रवण से ब्राह्मणों को यज्ञ का फल मिलता है; क्षत्रियों को युद्ध में सुयश की प्राप्ति होती है, और शेष दो वर्णों के लोग भी पुत्र, पौत्रि आदि अभीष्ट एवं प्रिय वस्तुयें प्राप्त करते हैं। (७. २०२)।"

नारायणी, अर्थात् नारायण की पुत्री = इन्द्रसेना (३. ११३, २४; ४. २१, ११)।

नारायणीय (वि०): १२. ३४६, १६ (नारायणीयमाख्यान)।

नारायणीयम, से शान्तिपर्वान्तर्गत मोक्षधर्मपर्व के उन अध्यायों का तात्पर्य है जिनमें नारायण की कथा का वर्णन है: "भीष्म ने कहा कि उन्होंने अपने पिता से यह सुना था कि कृतयुग में मनु स्वायम्भुव मन्वन्तर के समय सनातन भगवान् नारायण सम्पूर्ण जगत के आत्मा, चतुर्मूर्ति और सनातन देवता हैं। उन्होंने ही एक समय धर्म के पुत्र के रूप में चतुर्विध अवतार लिया था जिनके नाम नर, नारायण, हरि और कृष्ण हैं। इनमें से अविनाशी नारायण और नर बदरिकाश्रम जाकर एक सुवर्णमय रथ पर स्थित हो घोर तपस्या करने लगे (रथ का विस्तृत वर्णन)। उन्हीं दिनों देवर्षि नारद मेरु पर्वत के शिखर से गन्धमादन पर्वत पर उतरे और सम्पूर्ण लोकों में विचरण करते हुये बदरिकाश्रम आ पहुँचे। वह नर और नारायण के नित्यकर्म का समय था। तब नारद के मन में उनके दर्शन की इच्छा हुई। नारद ने मन ही मन विचार किया कि यह उन्हीं भगवान का स्थान है जिनके भीतर देवता, असुर, गन्धर्व, किन्नर और महान् नागों सहित सम्पूर्ण लोक निवास करते हैं। पहले ये एक ही रूप में विद्यमान थे; फिर धर्म की वंशपरम्परा के विस्तार के लिये चार विग्रहों में प्रगट हुये। इनमें से हरि और कृष्ण किसी अन्य कार्य में संलग्न हैं, परन्तु दो भाई नर और नारायण यहीं बदरिकाश्रम में तपस्या कर रहे हैं। ये ही दोनों परमधाम स्वरूप हैं। इनका यह नित्य कर्म कैसा है। दोनों सम्पूर्ण प्राणियों के पिता और देवता हैं। तब ये दोनों बन्धु किस देवता का यजन और किन पितरों का पूजन करते हैं। इस प्रकार विचार करते हुये नारद ने नर और नारायण का दर्शन किया और उनसे इस प्रकार प्रश्न किया : 'अंग और उपांगों सहित सम्पूर्ण वेदों तथा पुराणों में आपकी ही महिमा का गान किया गया है। आप अजन्मा, सनातन, सबके पिता-माता और सर्वोत्तम अमृत रूप हैं। फिर आज आप किस देवता और किस पिता की पूजा करते हैं यह मैं समझ नहीं पा रहा हूँ।' नारायण ने बताया कि नारद द्वारा पूछा गया विषय अत्यन्त गोपनीय है। फिर भी उन्होंने नारद जैसे भक्त पुरुष को यह रहस्य बताना स्वीकार कर लिया। तदनन्तर नारायण ने क्षेत्रज्ञ आदि विषयों पर नारद को विस्तृत उपदेश दिया। ब्रह्मा, रुद्र, मनु, दक्ष, भृगु, धर्म, तप, यम मरीचि, अङ्गिरा, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, वसिष्ठ, परमेष्ठी, सूर्य, चन्द्रमा, कर्दम, क्रोध और विक्रीत – ये इक्कीस प्रजापति भी उसी क्षेत्रज्ञ परमात्मा से उत्पन्न हुये हैं तथा उसी की सनातन धर्म-मर्यादा का पालन एवं पूजन करते हैं। नारायण ने बताया कि वे और नर भी उसी परमात्मा की पूजा करते हैं (१२. ३३४)।

"नारदमुनि ने तब श्वेतद्वीप में जाकर नारायण के आदि विग्रह का दर्शन करने का निश्चय किया। तदनन्तर उत्तम योगयुक्त होकर नारद आकाश की ओर उड़े और मेरु पर्वत पर पहुँच कर अदृश्य हो गये। मेरु पर्वत पर दो घड़ी तक विश्राम करने के बाद नारद ने उत्तर-पश्चिम की ओर दृष्टिपात किया। तब उन्हें श्वेत नाम से प्रसिद्ध और विशाल द्वीप दिखाई पड़ा। विद्वानों ने उस द्वीप को मेरु से बत्तीस हजार योजन ऊँचा बताया है। उस द्वीप के निवासी इन्द्रियों से रहित, निराहार और चेष्टारहित एवं ज्ञानसम्पन्न होते हैं। उनके अङ्गों से उत्तम सुगन्ध निकलती रहती है। वहाँ सब प्रकार के पापों से रहित श्वेत वर्ण वाले पुरुष निवास करते हैं (निवासियों का विस्तृत वर्णन)। जब युधिष्ठिर ने श्वेतद्वीप और उसके निवासियों के सम्बन्ध में और विस्तार से बताने का निवेदन किया तब भीष्म ने अपने पिता से सुनी उपरिचर की कथा का वर्णन आरम्भ किया जिसे उन्होंने स्वयं अपने पिता से सुना था और जिसे सम्पूर्ण कथाओं का सारभूत माना गया है (उपरिचर की सम्पूर्ण कथा) (१२. ३३५-३३७)।

"श्वेतद्वीप में पहुँच कर नारद ने अपनी दोनों बाहें ऊपर उठाकर एकाग्र चित्त हो सगुण विश्वात्मा भगवान् नारायण की दो सौ नामों से स्तुति की, अर्थात् महापुरुषस्तव का गान किया (१२. ३३८)।

"नारद की स्तुति से प्रसन्न होकर नारायण ने विश्वरूप (वर्णन) धारण करके उन्हें दर्शन दिया। भगवान नारायण अपने एक मुख से ॐ और गायत्री तथा अन्यान्य मुखों से चारों वेदों तथा आरण्यकों का गान कर रहे थे। भगवान् नारायण ने तब नारद को सम्बोधित करते हुये इस प्रकार कहा: 'एकत, द्वित, और त्रित भी मेरे दर्शन की इच्छा से इस स्थान पर आये हैं किन्तु उन्हें मेरा दर्शन प्राप्त नहीं हो सका। तुम मेरे भक्तों में श्रेष्ठ हो इस

लिये तुम्हें मेरा दर्शन हुआ।' इस प्रकार कहकर नारायण ने नारद को भक्ति सम्बन्धी अनेक उपदेश दिये। नारायण ने बताया कि एकमात्र सनातन पुरुष वासुदेव को छोड़कर कोई भी चराचर भूत नित्य नहीं है। वासुदेव = आत्मा = जीवात्मा = क्षेत्र = सङ्कर्षण (जीव)। इसी सकर्षण अथवा जीव से उत्पन्न होकर जो सनत्कुमारत्व प्राप्त कर लेता है वह सम्पूर्ण भूतों का 'मन' ही 'प्रद्युम्न' कहलाता है। प्रद्युम्न से जिसकी उत्पत्ति हुई वह तन्मात्रा आदि का कर्ता, महाभूतों का कारण तथा महत्तत्व का कार्य है। उसी से समस्त चराचर जगत की उत्पत्ति होती है। वही 'अनिरुद्ध' और 'ईशान' कहलाता है। प्रद्युम्न से जो अनिरुद्ध प्रकट हुये हैं वे ही अहंकार और ईश्वर हैं। तदनन्तर नारायण ने कहा: 'मुझ से ही समस्त स्थावर-जङ्गम जगत की उत्पत्ति होती है। क्षर-अक्षर, असत्-सत् भी मुझ से ही प्रकट हुये हैं। मैं निर्गुण, निष्कल, द्वन्द्वातीत और परिग्रहशून्य हूँ। मैं ही सर्वव्यापी और समस्त प्राणि समुदाय का अन्तरात्मा हूँ। सम्पूर्ण जगत के आदि, चतुर्मुख, हिरण्यगर्भ एवं सनातन देवता ब्रह्मा मेरे अनेक कार्यों का चिन्तन करने वाले हैं। मेरे क्रोध वश मेरे ललाट से ही रुद्रदेव प्रकट हुये हैं। ये ग्यारह रुद्र मेरे दाहिने तथा बारह आदित्य मेरे बायें विराजमान हैं। मेरे अग्रभाग में आठ वसु स्थित हैं।' इस प्रकार नारायण ने अपने को ही विस्तार से सम्पूर्ण सृष्टि का कारण एवं विस्तार बताया। तदनन्तर नारद ने भगवान से पूछा कि किन-किन स्वरूपों में उनका दर्शन और स्मरण करना चाहिये। तब भगवान ने अपने दस अवतारों का नामोल्लेख करते हुये उन युगों के नाम बताये जिनमें वे अवतार होते हैं। तब नारायण ने नारद जी से कहा: 'मुझ में अनन्य भक्ति रखने के कारण तुमने आज मेरे जिस रूप का दर्शन पाया है उस मेरे स्वरूप का दर्शन ब्रह्मा को भी नहीं प्राप्त हो सका है।' इतनी बात कहकर विश्वरूपधारी, अविनाशी भगवान् नारायण वहीं अन्तर्धान हो गये। तब नारद मुनि नर और नारायण का दर्शन करने के उद्देश्य से पुनः बदरिकाश्रम आये। नारद ने चारों वेदों के विज्ञान, सांख्य-योग आदि से युक्त जिस ज्ञान को भगवान नारायण के मुख से सुना था वह पाञ्चरात्र के नाम से प्रसिद्ध है। इसी विषय को नारद जी ने ब्रह्मा के भवन में सुनाया था। युधिष्ठिर ने भीष्म से तब पूछा कि क्या ब्रह्मा जी इसे नहीं जानते थे, और क्या इसी कारण उन्होंने नारद के मुख से इसे सुना। भीष्म ने बताया कि यद्यपि ब्रह्मा जी अपनी उत्पत्ति के कारणभूत नारायण को अच्छी तरह जानते थे, तथापि अपनी सभा में निवास करने वाले अनेक सिद्धों के लिये ही उन्होंने नारद जी से यह वेद तुल्य पुरातन पाञ्चरात्र सुना था। तदनन्तर उन सिद्धों के मुख से इस माहात्म्य को सूर्य ने सुना, सूर्य ने ६६,००० भावितात्मा मुनियों को इसका श्रवण कराया। इन मुनियों से इसे इस प्रकार अन्य लोगों ने श्रवण किया: मुनि→मेरुपर्वत पर निवास करने वाले देवता→असित→पितृगण। इस प्रकार परम्परया प्राप्त होकर यह उत्तम ज्ञान शान्तनु को मिला और उन्हीं से भीष्म ने श्रवण किया। यह ऋषि सम्बन्धी आख्यान परम्परा से प्राप्त हुआ है और जो भगवान् वासुदेव का भक्त नहीं है उसे किसी भी प्रकार इसका उपदेश नहीं करना चाहिये। भीष्म ने युधिष्ठिर से कहा: 'तुमने मुझ से जो सैकड़ों उपाख्यान सुने हैं उन सब का यह सार भाग निकाल कर तुम्हारे सामने वर्णित हुआ है। जैसे देवताओं और असुरों ने समुद्र को मथ कर उससे अमृत निकाला था उसी प्रकार प्राचीन काल में ब्राह्मणों ने सारे शास्त्रों को मथ कर इस अमृतमयी कथा को यहाँ प्रकाशित किया।' जो मनुष्य प्रतिदिन इसका पाठ करेगा वह श्वेतद्वीप पहुँच जायगा। वैशम्पायन ने कहा: 'इस उत्तम उपाख्यान को सुनकर युधिष्ठिर और उनके सभी भाई नारायण के भक्त हो गये। व्यास जी भी परम उत्तम नारायण मन्त्र का जप करते हुये निरन्तर उनकी महिमा का गान करते हैं। वे सदा ही आकाश मार्ग से क्षीरसागर के तट पर जाकर देवेश्वर श्रीहरि की पूजा करने के पश्चात् पुनः अपने आश्रम पर लौट आते हैं।' इस प्रकार भीष्म ने नारदोक्त यह सम्पूर्ण उपाख्यान युधिष्ठिर को सुनाया। उन्होंने बताया कि यह पूर्व पम्परा से उनके पिता को और पिता से उन्हें प्राप्त हुआ था। सूत ने शौनक से कहा: 'वैशम्पायन का कहा हुआ सारा उपाख्यान मैंने तुमसे कहा। जनमेजय ने इसे सुनकर उत्तम विधि से भगवान् का यजन किया। अब तुम लोग भी तपस्वी और उत्तम व्रती हो। नैमिषारण्य में निवास करने वाले प्रायः सभी ऋषि प्रमुख वेदवेत्ता हैं और सभी शौनक के इस महायज्ञ में एकत्र हैं। अतः आप सभी यज्ञों द्वारा उन सनातन परमेश्वर का यजन करें। यह परम्परा से प्राप्त उत्तम आख्यान मेरे पिता ने पहले-पहल मुझ से कहा था।' (१२. २३८)।

"शौनक ने प्रवृत्ति और निवृत्ति धर्मों के सम्बन्ध में पूछा। सौति ने इस सन्दर्भ में वैशम्पायन द्वारा जनमेजय को दिये गये उपदेश का उद्धारण दिया। जनमेजय ने कहा कि ब्रह्मा, देवगण, असुर, तथा मनुष्यों सहित समस्त लोक लौकिक अभ्युदय के लिये बताये गये कर्मों, अर्थात् प्रवृत्ति धर्म में ही आसक्त देखे जाते हैं। वैशम्पायन ने बताया कि यह एक अत्यन्त गूढ़ विषय है। जिसने तपस्या नहीं की है और जो वेदों तथा पुराणों का विद्वान् नहीं है वह अनायास ऐसा प्रश्न नहीं कर सकता। वैशम्पायन ने तब इस प्रकार अपना विवेचन आरम्भ किया: 'पूर्वकाल में महर्षि व्यास ने जो कुछ अपने शिष्यों सुमन्तु, जैमिनि, पैल तथा मुझे (वैशम्पायन को) बताया वही मैं तुम्हें बताऊँगा।' वैशम्पायन ने कहा: सिद्धों-चारणों से सेवित मेरु शिखर पर एक समय वेदव्यास ने अपने शिष्यों से कहा कि उन्होंने भूत, भविष्य, वर्तमान तीनों कालों का ज्ञान प्राप्त करने के लिये अत्यन्त कठोर तपस्या की। उस तपस्या के पूर्ण होने पर क्षीरसागर के तट पर नारायण की कृपा से व्यास को तीनों कालों का ज्ञान प्राप्त हुआ। फलस्वरूप उन्होंने कल्प के आदि में जैसा वृत्तान्त घटित हुआ था उसे देखा। सांख्य और योग जिन्हें परमात्मा कहते हैं वे ही अपने कर्म के प्रभाव से महापुरुष नाम धारण करते हैं। उन्हीं महापुरुष से सृष्टि का विस्तार होता है: महापुरुष→अव्यक्त (प्रधान)→अनिरुद्ध (महान् आत्मा, अहंकार)→पितामह (ब्रह्मा)। अहंकार से पञ्च महाभूत उत्पन्न होते हैं। मरीचि, अङ्गिरा, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, वसिष्ठ और स्वायम्भुव मनु — इन आठों को प्रकृति जानना चाहिये जिनमें सम्पूर्ण लोक प्रतिष्ठित हैं। ब्रह्मा ने लोकों के जीवन-निर्वाह के लिये वेद-वेदाङ्ग और यज्ञों की सृष्टि की। ब्रह्मा के रोष से रुद्र का प्रादुर्भाव हुआ। इन रुद्र ने स्वयं ही दस अन्य रुद्रों की सृष्टि कर ली। इस प्रकार कुल ११ रुद्र हैं जो विकार पुरुष माने गये हैं। इन ग्यारह रुद्रों, आठ प्रकृतियों, और समस्त लोकरक्षक देवर्षिगण और ब्रह्मा जी क्षीरसागर के उत्तर तट पर गये। वहाँ सभी ने वेदोक्त रीति से कठोर तपस्या आरम्भ की। एक हजार दिव्य वर्षों तक तपस्या करने के पश्चात् उन्हें वेद-वेदाङ्गों से विभूषित वाणी सुनाई पड़ी। श्रीहरि ने प्रकट होकर उन सब को प्रवृत्ति युक्त धर्म का पालन करने के लिये कहा। देवाधिदेव भगवान नारायण का यह वचन सुनकर उन सब देवताओं, महर्षियों और ब्रह्मा ने वेदोक्त विधि से वैष्णव यज्ञ का अनुष्ठान करके भगवान् के लिये भाग निश्चित किया। उसी प्रकार सत्ययुग के न्यायानुसार देवाओं और देवर्षियों ने भी अपना-अपना भाग भगवान् के लिये निश्चित किया। यज्ञभाग निश्चित हो जाने पर भगवान नारायण ने बिना शरीर के ही स्थित होकर उन समस्त देवताओं को पुनरावृत्ति रूप फल प्रदान करते हुये प्रवृत्ति-विषयक उपदेश दिया। भगवान ने कहा: 'मरीचि, अङ्गिरा, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, और वसिष्ठ—ये सप्तर्षि ब्रह्मा के मानस पुत्र और प्रवृत्ति धर्मावलम्बी हैं। ये सभी वेदाचार्य हैं और प्रजापति के पद पर प्रतिष्ठित हैं। सन, सनत्सुजात, सनक, सनन्दन, सनत्कुमार, कपिल और सनातन — ये सातों ऋषि ब्रह्मा के मानस पुत्र हैं। इन्हें स्वयं विज्ञान प्राप्त है और ये निवृत्ति धर्म में स्थित हैं। ये प्रमुख योग वेत्ता, सांख्य ज्ञान विशारद, धर्मशास्त्रों के आचार्य और मोक्षधर्म के प्रवर्तक हैं। पूर्वकाल में अव्यक्त प्रकृति से जो त्रिगुणात्मक महान् अहंकार प्रकट हुआ था उससे अत्यन्त परे जिसकी स्थिति है वह समष्टि चेतन क्षेत्रज्ञ मैं हूँ। ब्रह्मा के ललाट से रुद्र उत्पन्न हुये हैं। यह सत्ययुग चल रहा है जिसमें यज्ञ-पशुओं की हिंसा नहीं की जाती। इसके बाद त्रेता युग आयेगा जिसमें वेदत्रयी का प्रचार होगा और मन्त्रों द्वारा पवित्र किये गये पशुओं का वध किया जायगा। उसके बाद द्वापर युग का आगमन होगा जो धर्म और अधर्म के सम्मिश्रण से युक्त होगा। तदनन्तर पुष्य नक्षत्र में कलियुग का पदार्पण होगा जिसमें यज्ञ-

धर्म का एक चरण ही शेष रह जायगा।' भगवान् का यह उपदेश सुन कर ऋषियों सहित देवता उन्हें नमस्कार करके अपने अभीष्ट स्थानों को चले गये किन्तु श्रीहरि का दर्शन करने के उद्देश्य से ब्रह्मा वहीं खड़े रहे। तब भगवान् ने महान् हयग्रीव रूप धारण करके ब्रह्मा को दर्शन दिया। ब्रह्मा भगवान के उस रूप को प्रणाम करने के बाद करबद्ध खड़े हो गये। तब भगवान ने ब्रह्मा को इस प्रकार सम्बोधित किया : 'तुम सम्पूर्ण लोकों के समस्त कर्मों और उनसे मिलने वाली गतियों का विधिपूर्वक चिन्तन करो। जब कभी तुम्हारे लिये देवताओं का कार्य असह्य हो जायगा तब मैं आत्मज्ञान का उपदेश देने के लिये तुम्हारे समक्ष प्रकट हो जाऊँगा।' ऐसा कहकर भगवान् अन्तर्धान हो गये, और ब्रह्मा ने भी शीघ्र ही अपने लोकके लिये प्रस्थान किया। इस प्रकार नारायण का वर्णन करने के बाद व्यासजी ने अपने शिष्यों को उन्हीं अजन्मा, विश्वरूप, सम्पूर्ण देवताओं के आश्रय, निर्गुण परमात्मा नारायण देव को नमस्कार करने के लिये कहा। इस वृत्तान्त का श्रवण-फल।' (१२. ३४०)।

"जनमेजय ने नारायण के विभिन्न नामों के अर्थ के सम्बन्ध में पूछा। वैशम्पायन ने बताया कि भगवान् श्रीहरि ने अर्जुन पर प्रसन्न होकर उनसे गुण और कर्म के अनुसार स्वयं अपने नामों की व्याख्या की थी क्योंकि अर्जुन ने भगवान से इस प्रकार प्रश्न किया था : 'महर्षियों ने आपके जो-जो नाम कहे हैं तथा पुराणों और वेदों में जो-जो गोपनीय नाम पढ़े गये हैं, उन सब की व्याख्या मैं आपके मुख से ही सुनना चाहता हूँ।' इस पर श्रीकृष्ण ने इस प्रकार कहा : वेदों और अन्य शास्त्रों में मेरे अनेक नाम हैं जिनमें से कुछ गुणों के और कुछ कर्मों के आधार पर रक्खे गये हैं। नारायण से ब्रह्मा उत्पन्न हुये और उनके क्रोध से रुद्र का आविर्भाव हुआ (रुद्र का वर्णन)। मैं सम्पूर्ण जगत का आत्मा हूँ और सर्वप्रथम अपने आत्मस्वरूप रुद्र की ही पूजा करता हूँ। नर से उत्पन्न होने के कारण जल को नार कहा गया है। यह नार पहले मेरा अयन (निवासस्थान) था इसलिये मैं 'नारायण' कहलाता हूँ। जो सब में व्याप्त हो अथवा जो किसी का निवासस्थान हो उसे 'वासु' कहते हैं। मैं ही सम्पूर्ण प्राणियों का वासस्थान हूँ इसलिये मेरा नाम 'वासुदेव' है। मैं सबका अतिक्रमण कर के स्थित हूँ इस कारण मेरा नाम विष्णु हुआ। मनुष्य दम (इन्द्रिय संयम) के द्वारा सिद्धि पाने की इच्छा करते हुये मुझे पाना चाहता है। इसलिये मैं 'दामोदर' कहलाता हूँ। अन्न, वेद, जल और अमृत को पृश्नि कहते हैं। ये सदा मेरे गर्भ में रहते हैं, इसलिये मेरा नाम 'पृश्नि गर्भ' है। जब त्रित मुनि अपने भाइयों द्वारा कूएँ में गिरा दिये गये थे उस समय त्रित ने मेरे पृश्निगर्भ नाम का ही बार-बार कीर्तन किया था और इसी से वह कूएँ से बाहर निकल आये। सूर्य, अग्नि और चन्द्रमा की किरणें मेरा केश कहलाती हैं। उस केश से युक्त होने के कारण मुझे केशव कहते हैं। यह केशव नाम सम्पूर्ण देवताओं और ऋषियों के लिये वरदायक है। अग्नि सोम के साथ संयुक्त हो एक योनि को प्राप्त हुये, इसलिये सम्पूर्ण चराचर जगत अग्नि सोममय है। एक योनि होने के कारण ये एक दूसरे को आनन्द प्रदान करते हैं और समस्त लोकों को धारण करते हैं (१२. ३४१)।

"अग्नि और सोम पूर्वकाल में किस प्रकार एकयोनि हुये इसके सम्बन्ध में अर्जुन द्वारा पूछने पर भगवान् ने इस प्रकार वर्णन किया : एक सहस्र चतुर्युग व्यतीत हो जाने पर सम्पूर्ण लोकों के लिये प्रलयकाल आ गया। तब समस्त भूत अव्यक्त में विलीन हो गये और समस्त संसार एकार्णव के जल में निमग्न हो गया। उस समय न रात थी न दिन था। न सत था. न असत था। न व्यक्त था और न अव्यक्त था। उस अवस्था में नारायण के गुणों का आश्रय लेकर रहने वाले सर्वव्यापी तथा सर्वकर्त्ता तत्व से अविनाशी सनातन पुरुष हरि का प्रादुर्भाव हुआ। उस मायाविशिष्ट ईश्वर से प्रकट हुये ब्रह्मयोनि पुरुष से ब्रह्मा का प्रादुर्भाव हुआ। उस पुरुष ने प्रजासृष्टि की इच्छा से अपने नेत्रों द्वारा अग्नि और सोम को उत्पन्न किया। इस प्रकार भौतिक सर्ग की सृष्टि हो जाने पर प्रजा की उत्पत्ति के समय क्रमशः ब्रह्म और क्षत्र का प्रादुर्भाव हुआ। जो सोम है वह ब्रह्म है और जो ब्रह्म है वही ब्राह्मण है। जो अग्नि है वही क्षत्र या क्षत्रिय है। अग्निदेव यज्ञों के होता और कर्ता हैं। वे यज्ञ देवताओं को तृप्त करते हैं। अग्नि देव ब्राह्मण हैं। जो विद्वान ब्राह्मण के मुख रूपी अग्नि में अन्न की आहुति देता है, वह मानो प्रज्वलित अग्नि में आहुति देता है (ब्राह्मणों की श्रेष्ठता का विस्तार से प्रतिपादन)। देवता, असुर, और महर्षि आदि को ब्राह्मणों ने ही उनके अधिकार पर स्थापित किया है और उनके द्वारा अपराध होने पर ब्राह्मण उन्हें दण्ड भी देते हैं। गौतम ने इन्द्र को अहिल्या पर बलत्कार करने के कारण दण्डित किया था। च्यवन ने भी इन्द्र की भुजायें स्तम्भित कर दिया था। प्रजापति दक्ष ने अपने यज्ञ का रुद्र द्वारा विध्वंस करा दिये जाने पर रुद्र के ललाट पर एक तीसरा नेत्र प्रकट कर दिया था। त्रिपुरनिवासी दैत्यों के वध के समय शुक्राचार्य ने अपनी जटा के केशों से सर्प उत्पन्न कर दिया था। इन सर्पों के काटने से ही रुद्रदेव नीलकण्ठ हो गये। बृहस्पति अमृत उत्पन्न करने के समय जब आचमन करने लगे तब जल को स्वच्छ न देखकर उसपर कुपित हो गये और मत्स्य, मकर, कच्छप आदि द्वारा जल के कलुषित हो जाने का शाप दे दिया। वसिष्ठ के शाप से हिरण्यकशिपु वध को प्राप्त हुआ। विश्वरूप ने भी एक समय अप्सराओं की उपेक्षा से क्रुद्ध होकर इन्द्र आदि सम्पूर्ण देवताओं को शाप दे दिया। ब्राह्मण दधीचि की अस्थियों से बने वज्र से इन्द्र ने विश्वरूप का वध कर डाला था। ब्रह्महत्या से त्रस्त इन्द्र के स्वर्ग से भाग जाने पर जब नहुष इन्द्र-पद पर आसीन हुये तब उन्हें भी ब्रह्मर्षि अगस्त्य ने शाप देकर सर्प बना दिया। प्राचीन काल में महर्षि भरद्वाज आकाशगङ्गा में खड़े होकर आचमन कर रहे थे। उस समय तीन पग से त्रिलोकी नापते हुये विष्णु उनके पास तक आ गये। तब भरद्वाज ने जल सहित हाथ से विष्णुके वक्ष पर प्रहार किया जिससे उनके वक्ष में चिन्ह बन गया। भृगु के शाप से अग्नि देव सर्वभक्षी हो गये। भगवान् ने इसी प्रकार ब्राह्मणों की महिमा बताने वाली अनेक प्रकार की अन्य संक्षिप्त कथाओं का उल्लेख करने के बाद अपने विभिन्न नामों की व्याख्या करते हुये नामों के हेतुओं की चर्चा की। तदनन्तर अर्जुन ने भगवान् से रुद्र और नारायण के युद्ध के सम्बन्ध में प्रश्न करते हुये यह जानना चाहा कि उस युद्ध में कौन विजयी हुआ। भगवान् ने बताया कि रुद्र और नारायण के बीच जब भयंकर युद्ध होने लगा तब सम्पूर्ण पृथिवी काँपने लगी। सभी देवता और ब्रह्मा ने तब रुद्रदेव को शान्त करने के लिये उनकी स्तुति की। ब्रह्मा की स्तुति से प्रसन्न होकर रुद्र ने अपनी क्रोधाग्नि का त्याग किया। तदनन्तर उन्होंने आदि देव, वरेण्य, वरदायक, सर्वसमर्थ भगवान् नारायण को प्रसन्न किया और उनकी शरण में आ गये। इससे प्रसन्न होकर नारायण ने अपने और रुद्रदेव के बीच अभिन्नता का प्रतिपादन करते हुये रुद्र से कहा : 'आज से तुम्हारे शूल का यह चिह्न मेरे वक्षःस्थल में 'श्रीवत्स' के नाम से प्रसिद्ध होगा और तुम्हारे कण्ठ में मेरे हाथ का चिह्न अंकित होने के कारण तुम भी 'श्रीकण्ठ कहलाओगे।' भगवान ने अर्जुन को बताया कि इस प्रकार अनेक रूप धारण करके वे पृथिवी, ब्रह्मलोक और गोलोक में विहार करते हैं। उन्होंने अर्जुन से कहा : 'मुझ से सुरक्षित होकर तुमने महाभारत युद्ध में महान् विजय प्राप्त की है। युद्ध में जो पुरुष तुम्हारे आगे-आगे चलते थे वे जटा-जूटधारी, देवाधिदेव स्वयं रुद्रदेव थे। तुमने जिन शत्रुओं को मारा है वे पहले ही रुद्रदेव के हाथों मारे जा चुके थे। तुम उन देवाधिदेव उमावल्लभ विश्वनाथ, पापहारी एवं अविनाशी महादेव को संयतचित्त होकर नमस्कार करो।' (१२. ३४२)।

"शौनक ने पूछा कि अनिरुद्ध-विग्रह में जगन्नाथ श्रीहरि का दर्शन करने के बाद नारद—पुनः नर-नारायण का दर्शन करने के लिये क्यों गये? सौति ने कहा कि सर्पसत्र के बीच अवकाश मिलने पर जनमेजय ने भी अपने पितामह व्यास जी से यही प्रश्न किया था। तब वैशम्पायन ने इस प्रकार वर्णन किया : श्वेतद्वीप में श्रीहरि का दर्शन करने के पश्चात् नारद अत्यन्त वेग से मेरु पर्वत पर आये। वहाँ से गन्धमादन पर्वत पर आये और फिर आकाश मार्ग से चल कर बदरी विशाल के समीप आकाश से नीचे उतर पड़े। बदरिकाश्रम में नारद जी ने दोनों पुरातन देवता ऋषिश्रेष्ठ नर-नारायण का दर्शन किया जो आत्मनिष्ठ होकर तपस्या कर रहे थे। वे दोनों सूर्य से भी अधिक तेजस्वी थे। उनके वक्षःस्थल पर श्रीवत्स के चिह्न सुशोभित थे और उन्होंने जटामण्डल

धारण कर रक्खा था। उनके हाथों में हंस का और चरणों में चक्र का चिह्न था। विशाल वक्षःस्थल, बड़ी-बड़ी भुजायें, अण्डकोश में चार-चार बीज, मुख में साठ दाँत और आठ दाढ़ें, मेघ के समान गम्भीर स्वर, सुन्दर मुख, चौड़े ललाट, बाँकी भौहें, सुन्दर ठोढ़ी, और मनोहर नासिका से उन दोनों की अपूर्व शोभा हो रही थी। उन महापुरुषों का दर्शन करके नारद जी अत्यन्त प्रसन्न हुये और नर-नारायण से सत्कृत होकर उन्होंने श्वेतद्वीप में जो कुछ देखा था उसका वर्णन किया। नारद जी ने बताया : 'मैंने श्वेतद्वीप में अव्यक्त रूपधारी श्रीहरि को जिन लक्षणों से सम्पन्न देखा था वे लक्षण व्यक्त रूपधारी आप दोनों महापुरुषों में भी सुशोभित हैं।' तदनन्तर श्वेतद्वीप का वर्णन करते हुये नारदजी ने बताया कि वहाँ सूर्यदेव तपते नहीं, चन्द्रमा प्रकाशित नहीं होते, तथा यह लौकिक वायु भी वहाँ नहीं चलती। वहाँ की भूमि पर एक ऊँची वेदी बनी है जिसकी ऊँचाई आठ अंगुल है। उसी पर आरूढ होकर विश्वकर्ता परमात्मा दोनों भुजायें ऊपर उठाये, उत्तर की ओर मुख किये एक पैर से खड़े तपस्या कर रहे हैं। ब्रह्मा आदि समस्त देव, असुर, राक्षस, गन्धर्व आदि जो भी हव्य और कव्य विधिपूर्वक अर्पित करते हैं वह सब कुछ उन्हीं भगवान् के चरणों में उपस्थित होता है। इस प्रकार वर्णन करने के बाद नारद जी ने कहा : 'यहाँ भी मैं उन्हीं परमात्मा के भेजने से आया हूँ। स्वयं भगवान् श्रीहरि ने मुझ से ऐसा कहा था। अब मैं उन्हीं की आराधना में तत्पर हो आप दोनों के साथ यहाँ नित्य निवास करूँगा।' (१२. ३४३)।

"नर-नारायण ने नारद जी की प्रशंसा करते हुये उन्हें भगवान् वासुदेव के स्वरूप का उपदेश दिया। नरनारायण ने कहा : सम्पूर्ण प्राणियों का हित चाहने वाले नारायण देव से ही रस प्रकट हुये हैं। उन्हीं से रूप गुणाविशिष्ट तेज का प्रादुर्भाव हुआ जिससे वायुदेव संयुक्त होते हैं; उन्हीं से सम्पूर्ण प्राणियों के भीतर रहने वाले मन की भी उत्पत्ति हुई है। संसार में जो लोग पुण्य और पाप से रहित एवं निर्मल हैं वे भगवद्धाम को प्राप्त होते हैं। उस समय भगवान् सूर्य ही उनके उस मोक्षधाम का द्वार बताये जाते हैं सूर्यदेव उनके सम्पूर्ण अंगों को जलाकर भस्म कर देते हैं जिससे कोई उन्हें देख नहीं पाता। फिर वे परमाणु रूप होकर उन्हीं सूर्यदेव में प्रवेश कर जाते हैं। तदनन्तर सूर्य से मुक्त होकर वे अनिरुद्ध विग्रह में और फिर मनोमय होकर प्रद्युम्न में प्रवेश करते हैं। प्रद्युम्न से भी मुक्त होकर वे सांख्यज्ञान से सम्पन्न श्रेष्ठ ब्राह्मणजीव स्वरूप संकर्षण में प्रविष्ट होते हैं। तदनन्तर तीनों गुणों से मुक्त होकर वे अनायास ही निर्गुण स्वरूप क्षेत्रज्ञ में प्रवेश कर जाते हैं। भगवान् वासुदेव ही क्षेत्रज्ञ हैं। नरनारायण ने अन्त में नारद जी से कहा : 'हम दोनों ने उत्तम व्रत में तत्पर रहते हुये, श्वेतद्वीप में उपस्थित होकर तुम्हें देखा था। भगवान् ने वहाँ तुमसे जो वार्तालाप किया उससे भी हम अवगत हैं।' वैशम्पायन ने बताया कि भगवान् नर और नारायण की यह बात सुनकर नारद जी ने उन लोगों को करबद्ध प्रणाम किया और फिर उन्हीं की आराधना में लग गये। (१२. ३४४)।

"वैशम्पायन ने कहा कि नारद जी तथा नर-नारायण ने एक दूसरे को देवकार्य और पितृकार्य के सम्पादन के सम्बन्ध में अपने-अपने मतों को बताया। परमेष्ठि ब्रह्मा ने प्रजापति को उत्पन्न किया और नारद जी प्रजापति के पुत्र हैं। नारद जी सर्वप्रथम नारायण की आराधना का कार्य पूर्ण कर लेने पर ही पितरों का पूजन करते हैं। इस प्रकार नारायण ही उनके पिता, माता और पितामह हैं। नारद ने नरनारायण को बताया कि पितृयज्ञों में सदा श्रीहरि की आराधना की जाती है। एक दूसरी श्रुति है कि पिताओं (देवताओं) ने पुत्रों (अग्निष्वात्त आदि) का पूजन किया। देवताओं का वेदज्ञान भूल गया था। तब उनके पुत्रों ने ही उन्हें वेदश्रुतियों को पढ़ाया। इसी से मन्त्रदाता पुत्र पितृभाव को प्राप्त हुये।' नरनारायण ने नारद को बताया कि जब यह पृथिवी एकार्णव के जल में डूबकर विलीन हो गई तब भगवान् ने वाराह रूप में पृथिवी का उद्धार किया। जब सूर्य मध्याह्न में आ पहुँचे और तत्कालोचित नित्यकर्म का समय उपस्थित हुआ तब भगवान् ने अपनी दाढ़ों में लगी मिट्टी से तीन पिण्ड बनाये। फिर पृथिवी पर कुश बिछाकर उसी पर उन पिण्डों को रखकर विधिपूर्वक पितृपूजन का कार्य सम्पन्न किया। ये तीनों पिण्ड पिता, पितामह और प्रपितामह के रूप हैं किन्तु इन तीनों में भगवान् को ही स्थित जानना चाहिये। यह भगवान् की नियत की हुई मर्यादा है। इस प्रकार पितरों को पिण्ड संज्ञा प्राप्त हुई है। भगवान् वाराह के कथनानुसार वे पितर सदा सब के द्वारा पूजा प्राप्त करते हैं। जो देवता, पितर, गुरु, अतिथि, गो, श्रेष्ठ ब्राह्मण, पृथिवी और माता की मन, वाणी, एवं क्रिया द्वारा पूजा करते हैं वे वास्तव में भगवान् विष्णु की ही आराधना करते हैं क्योंकि विष्णु समस्त प्राणियों के शरीर में अन्तरात्मा स्वरूप से विराजमान हैं। ऐसी बात कहकर भगवान् वराह पर्वत पर विस्तारपूर्वक पिण्ड दान दे पितरों के रूप में अपने आपका ही पूजन करके वहीं अन्तर्धान हो गये। (१२. ३४५)।

"वैशम्पायन ने बताया कि नर-नारायण का कथन सुनकर भगवान् के प्रति नारद जी की भक्ति बहुत बढ़ गई। नर-नारायण के आश्रम में रहते और उनका दर्शन करते जब नारद जी के एक सहस्र दिव्य वर्ष पूर्ण हो गये तब वे हिमालय पर्वत पर स्थित अपने आश्राम चले गये जब कि नर-नारायण अपने उसी आश्रम में तपस्या में संलग्न रहे। जनमेजय को सम्बोधित करते हुये वैशम्पायन ने कहा कि जो व्यक्ति मन, वाणी और क्रिया द्वारा अविनाशी भगवान् विष्णु के साथ द्वेष रखता है उसको न इस लोक में और न परलोक में ही कोई आश्रय मिलता है। जो देवश्रेष्ठ भगवान् नारायण से द्वेष करता है उसके पितर सदा के लिये नरक में डूब जाते हैं (नारायण-विष्णु-की विस्तृत प्रशस्ति)। इस भूतल पर कृष्ण द्वैपायन व्यास को ही नारायण का स्वरूप समझना चाहिये। व्यास ने ही हरिगीता में भगवान् के माहात्म्य का वर्णन किया था। व्यास के अतिरिक्त दूसरा कौन है जो महाभारत की रचना कर सकता है? नारद जी ने रहस्य और संग्रह सहित धर्म को नारायण से प्राप्त किया था। सौति ने बताया कि वैशम्पायन के मुख से सुने इस नर-नारायण के उपाख्यान को ही उन्होंने शौनक को बताया। पूर्वकाल में नारद जी ने ऋषियों, पाण्डवों, कृष्ण, तथा भीष्म के सुनते हुये व्यास को बताया था और व्यास से ही उनके शिष्य सौति को प्राप्त हुआ। तदनन्तर सौति ने भगवान् नारायण की विस्तृत प्रशंसा की (१२. ३४६)।

"शौनक ने प्राचीन काल में भगवान् महावराह द्वारा पिण्डों की उत्पत्ति करके पिण्डदान की मर्यादा चलाने तथा प्रवृत्ति-निवृत्ति के विषय में सुनने की इच्छा प्रकट की। उन्होंने यह भी जानना चाहा कि सम्पूर्ण जगत को धारण करने वाले श्रीहरि ने पूर्वकाल में अपना हयग्रीव रूप क्यों प्रकट किया था? सौति ने तब कहा कि वे उस वृत्तान्त को सुनायेंगे जिसे भगवान् व्यास की आज्ञा से वैशम्पायन ने जनमेजय को सुनाया था। सर्पसत्र में जब जनमेजय ने हयग्रीव अवतार के कारण के सम्बन्ध में पूछा तब वैशम्पायन ने इस प्रकार वर्णन आरम्भ किया : इस जगत में जितने प्राणी हैं वे सब ईश्वर के संकल्प से उत्पन्न हुये पञ्चमहाभूतों से युक्त हैं। पूर्वकाल में इस पृथिवी का एकार्णव जल में लय हो गया। जल का तेज में, तेज का वायु में, वायु का आकाश में, आकाश का मन में, मन का व्यक्त (महत्तत्व) में, व्यक्त का अव्यक्त प्रकृति में, अव्यक्त का पुरुष में, अर्थात् मायाविशिष्ट ईश्वर में और पुरुष का सर्वव्यापी परमात्मा में लय हो गया। उस समय सब ओर केवल अन्धकार ही अन्धकार व्याप्त हो गया। उस तम से जगत् का कारणभूत ब्रह्म (परम व्योम) प्रकट हुआ। तम का मूल है अधिष्ठानभूत अमृत तत्व। वह मूलभूत अमृत ही तम से युक्त हो सभी नाम-रूप में प्रपञ्च को प्रकट करता है और विराट् शरीर का आश्रय लेकर रहता है। उसी को अनिरुद्ध कहा गया है। उसी को प्रधान, तथा त्रिगुणमय अव्यक्त जानना चाहिये। उस अवस्था में विद्याशक्ति से सम्पन्न सर्वव्यापी श्रीहरि ने योगनिद्रा का आश्रय लेकर जल में शयन किया। जब वे सृष्टि का विचार करने लगे तब उन्हें अपने गुण महत्तत्व का स्मरण हो आया। उससे अहंकार प्रकट हुआ। वह अहंकार ही चार मुखों वाले ब्रह्मा हैं जो पितामह और हिरण्यगर्भ के नाम से प्रसिद्ध हैं। इस प्रकार ब्रह्माण्ड में कमल में अनिरुद्ध से ब्रह्मा का प्रादुर्भाव हुआ था। ब्रह्मा सहस्रदल कमल पर विराज-

मान होकर इधर-उधर दृष्टि डालने लगे और सत्वगुण में स्थित होकर प्राणियों की सृष्टि में प्रवृत्त हुये। जिस कमल पर ब्रह्मा बैठे थे उसके देदीप्यमान पत्ते पर भगवान् नारायण की प्रेरणा से जल के दो विन्दु पहले से ही विद्यमान थे जो रजोगुण और तमोगुण के प्रतीक थे। जब भगवान् अच्युत ने उन दोनों विन्दुओं को देखा तब उनमें से एक विन्दु उनकी प्रेरणा से तमोमय मधु नामक दैत्य के आकार में परिणत हो गया। जल का दूसरा विन्दु नारायण की आज्ञा से रजोगुण से उत्पन्न कैटभ नामक दैत्य के रूप में प्रकट हुआ। तमोगुण और रजोगुण से युक्त वे दोनों दैत्य मधु और कैटभ अत्यन्त बलवान् थे। उन दैत्यों ने चारों वेदों सहित ब्रह्मा को कमल पर विराजमान देखा। तब दोनों ने चारों वेदों का हरण कर लिया और उसे लेकर महासागर के गर्भ से होते हुये रसातल में चले गये। वेदों का अपहरण हो जाने पर ब्रह्मा को अत्यन्त खेद हुआ। ब्रह्मा तब श्रीहरि की इस प्रकार स्तुति करने लगे : 'मेरा प्रथम बार जो जन्म हुआ था उसे मानस जन्म कहा गया है। तदनन्तर दूसरा जन्म आपके नेत्र से, तीसरा आपके वचन से, चौथा आपके कर्ण से, पाँचवा नासिका से और छठाँ आपके द्वारा ब्रह्माण्ड से हुआ है। मेरी वर्तमान कमल से उत्पत्ति मेरा सातवाँ जन्म है। इस प्रकार प्रत्येक कल्प में मैं आपका पुत्र होकर प्रकट होता हूँ। मेरे नेत्र स्वरूप वेदों का हरण हो गया है, अतः आप निद्रा का त्याग कीजिये और मेरे वेद मुझे वापस दिलाइये।' ब्रह्मा द्वारा इस प्रकार स्तुति करने पर भगवान् ने उसी क्षण निद्रा त्याग दी और अपने ऐश्वर्य के योग से दूसरा शरीर धारण कर लिया। उस स्वरूप का मुख और गला अश्व के समान था। उनका वह शुद्ध मुख सम्पूर्ण वेदों का आश्रय था। नक्षत्रों और ताराओं से युक्त स्वर्गलोक उनका सर था। आकाश और पाताल उनके कान थे और पृथिवी उनका ललाट थी (यहाँ भगवान् के हयग्रीव रूप का विस्तृत वर्णन है)। इस प्रकार अनेक मूर्तियों से आवृत्त हयग्रीव रूपी जगदीश्वर हरि वहाँ से अन्तर्धान हो गये और रसातल में पहुँच कर शिक्षा के नियमानुसार उदात्त स्वरों से युक्त उच्च स्वर से सामवेद का गायन करने लगे। उन दोनों असुरों ने वह शब्द सुनकर वेदों को कालपाश से आबद्ध कर के रसातल में झोंक दिया और स्वयं उस ओर दौड़े जिधर से ध्वनि आ रही थी। इसी बीच हयग्रीव ने रसातल में पड़े वेदों को ले कर ब्रह्मा को वापस दे दिया। तदनन्तर भगवान् ने पुनः अपना पूर्वरूप धारण कर लिया। दोनों दानवों ने जब लौट कर देखा कि वेद उस स्थान पर नहीं हैं जहाँ उन्होंने फेंका था, तब वे शीघ्रता से रसातल से ऊपर आये। ऊपर आने पर उन्हें भगवान् पुरुषोत्तम दृष्टिगोचर हुये जो योगनिद्रा का आश्रय लेकर सो रहे थे और अनिरुद्ध विग्रह में स्थित थे। वे भगवान् चन्द्रमा के समान विशुद्ध और उज्ज्वल प्रभा से विभूषित थे। शेषशय्या पर सत्वगुण से सम्पन्न मनोहर कान्ति वाले भगवान् नारायण सो रहे थे। उन्हें देखकर दोनों दानव जोर-जोर से हँसने लगे। दोनों दानवों ने तब भगवान् को ही रसातल से वेदों का अपहरण करने वाला समझ कर उन्हें जगाया और उनसे युद्ध का निश्चय किया। फिर तो भगवान् नारायण और दानवों के बीच युद्ध आरम्भ हो गया। भगवान् मधुसूदन ने ब्रह्मा का मान रखने के लिये तमोगुण और रजोगुण से आविष्टशरीर वाले उन दोनों दैत्यों, मधु और कैटभ का वध कर डाला। इस प्रकार उन्होंने ब्रह्मा के शोक को दूर कर दिया। तत्पश्चात् वेद से सम्मानित और भगवान से सुरक्षित होकर ब्रह्माजी ने समस्त चराचर जगत की सृष्टि की। ब्रह्मा की लोक रचना की बुद्धि देख कर नारायण वहीं अन्तर्धान हो गये। उन्होंने पुनः प्रवृत्ति धर्म का प्रचार करने के लिये ही अपना हयग्रीव रूप धारण किया था। जो ब्राह्मण प्रतिदिन इस अवतार कथा को सुनता या स्मरण करता है उसका अध्ययन कभी निष्फल नहीं होता। उग्र तपस्या द्वारा हयग्रीव की आराधना करके पाञ्चालदेशीय गालव मुनि ने वेदों का क्रमविभाग प्राप्त किया था। श्रीमान् हरि वेद और तपस्या की निधि हैं। वे ही योग, सांख्य, ब्रह्म ब्रह्मविद्य और विभु हैं। ऋत नारायण का ही स्वरूप है। निवृत्ति-प्रधान धर्म के चरम लक्ष्य नारायण ही हैं। प्रवृत्ति रूप धर्म भी नारायण का ही स्वरूप है। भूमि, जल, तेज, वायु और आकाश के गुण, क्रमशः गन्ध, रस, रूप, स्पर्श और शब्द भी नारायण ही हैं। अधिष्ठान, कर्ता, करण, चेष्टायें तथा दैव - इन पाँच कारणों के रूप में सर्वत्र श्रीहरि ही विराजमान हैं। भगवान् केवल ब्रह्मा आदि देवताओं, सम्पूर्ण लोकों, ऋषियों, सांख्यवेत्ताओं, योगियों और आत्मज्ञानी यतियों के मन की बात जानते हैं; परन्तु स्वयं उनके मन में क्या है यह कोई नहीं जानता। सम्पूर्ण प्राणियों के आवास होने के कारण वे 'वासुदेव' कहे जाते हैं। उनकी गति को कोई नहीं जानता। जो ज्ञानस्वरूप महर्षि हैं वे ही उन नित्य, अन्तर्यामी एवं अनन्त गुणविभूषित परमात्मा का साक्षात्कार करते हैं। (१२. ३४७)।

"जनमेजय ने कहा कि भगवान् अनन्य भाव से भजन करने वाले सभी भक्तों को प्रसन्न करते और उनकी पूजा स्वयं ग्रहण करते हैं। जो भगवान् के अनन्य भक्त हैं वे अनिरुद्ध, प्रद्युम्न और सङ्कर्षण की अपेक्षा न रख कर वासुदेव संज्ञक चौथी गति में पहुँच कर पुरुषोत्तम एवं उनके परमपद को प्राप्त कर लेते हैं। तदनन्तर जनमेजय ने वैशम्पायन से यह जानना चाहा कि भगवान् की इस प्रकार अनन्य भक्ति का किसने उपदेश दिया था तथा अनन्य भक्तों की दिनचर्या क्या होती है? वैशम्पायन ने कहा : जिस समय कौरव और पाण्डवों की सेनायें युद्ध के लिये आमने-सामने सन्नद्ध थीं और अर्जुन विषादग्रस्त हो रहे थे तब भगवान् ने उन्हें गीता में इस धर्म का उपदेश दिया था। यह धर्म सामवेद के समान है और प्राचीन काल के सत्ययुग से ही प्रचलित है। युधिष्ठिर ने ऋषियों के बीच जब नारद जी से यही विषय पूछा था तब श्रीकृष्ण और भीष्म भी इस विषय को सुन रहे थे। इस प्रकार कह कर वैशम्पायन ने नारदोक्त इस धर्म का वर्णन आरम्भ किया। उन्होंने बताया कि सृष्टि के आदि में भगवान् नारायण के मुख से ब्रह्मा का मानसिक जन्म हुआ था। उस समय साक्षात् नारायण ने उन्हें इस धर्म का उपदेश दिया था। नारायण ने इस धर्म से देवताओं और पितरों का पूजनादि कर्म किया था। फिर फेनप ऋषियों ने उस धर्म को ग्रहण किया। फेनपों से वैखानसों ने उसे प्राप्त किया और उनसे सोम ने ग्रहण किया। तदनन्तर वह धर्म पुनः लुप्त हो गया। जब ब्रह्मा का नेत्रजनित द्वितीय जन्म हुआ तब उन्होंने सोम से उस धर्म को सुना और रुद्र को उसका उपदेश दिया। रुद्र ने कृतयुग में सम्पूर्ण वालखिल्य ऋषियों को इसका उपदेश दिया। तदनन्तर विष्णु की माया से धर्म पुनः लुप्त हो गया। जब भगवान् की वाणी से ब्रह्मा का तीसरा जन्म हुआ तब नारायण से ही धर्म पुनः प्रकट हुआ। सुपर्ण नामक ऋषि ने तपस्या करके भगवान् पुरुषोत्तम से इस धर्म को प्राप्त किया। सुपर्ण ने प्रतिदिन इस उत्तम धर्म की तीन आवृत्ति की थी। इसलिये इस व्रत या धर्म को यहाँ 'त्रिसौपर्ण' कहते हैं। सुपर्ण से इस धर्म को वायु ने प्राप्त किया। वायु से विघसाशी ऋषियों ने और इन ऋषियों से महोदधि को इस उत्तम धर्म की प्राप्ति हुई। तत्पश्चात यह पुनः लुप्त होकर नारायण में विलीन हो गया। जब नारायण के कानों से ब्रह्मा का चौथी बार जन्म हुआ तब स्वयं भगवान् नारायण ने जगत की सृष्टि करने की इच्छा से एक ऐसे पुरुष का चिन्तन किया जो संसार की सृष्टि करने में पूर्णतः समर्थ हो। इस प्रकार चिन्तन करते समय उनके कानों से एक पुरुष का प्रादुर्भाव हुआ जो ब्रह्मा हुये। नारायण ने ब्रह्मा को अपने मुख से पाँव तक के अङ्गों से समस्त प्रजा की सृष्टि करने का आदेश दिया। साथ ही उन्होंने ब्रह्मा को सात्वत नामक धर्म प्रदान करते हुये विधिपूर्वक सत्ययुग की सृष्टि करके उस धर्म की स्थापना का आदेश दिया। उस धर्म को ग्रहण करने के पश्चात् ब्रह्मा ने सम्पूर्ण चराचर लोकों की सृष्टि की। फिर सृष्टि के उस आरम्भ में कृतयुग की प्रवृत्ति हुई और तब से सात्वत धर्म सम्पूर्ण संसार में व्याप्त हो गया। इस धर्म की प्रतिष्ठा के लिये ब्रह्मा ने स्वारोचिष मनु को इस धर्म का उपदेश किया। स्वारोचिष मनु से यह धर्म शंखपद को और शंखपद से उनके औरस पुत्र दिक्पाल सुवर्णाभ को यह धर्म प्राप्त हुआ। इसके बाद त्रेता युग आने पर यह धर्म पुनः लुप्त हो गया। तदनन्तर ब्रह्मा ने नारायण की नासिका द्वारा जब पाँचवाँ जन्म ग्रहण किया तब भगवान् ने इस धर्म का ब्रह्माको

उपदेश दिया। ब्रह्मा से सनत्कुमार को, सनत्कुमार से वीरण प्रजापति को, उनसे रैभ्य मुनिको, और रैभ्य से कुक्षि को प्राप्त होने के बाद यह सात्वत धर्म पुनः लुप्त हो गया। ब्रह्मा के छठवें जन्म के समय यह नारायण के मुख से पुनः प्रकट हुआ जिसे ब्रह्मा ने प्राप्त किया। ब्रह्मा से बर्हिषद् मुनियों→ज्येष्ठ नामक ब्राह्मण→अविकम्पन तक आते आते यह धर्म पुनः लुप्त हो गया। भगवान् के नाभि कमल से ब्रह्मा का सातवाँ जन्म होने पर उन्हें नारायण ने इस धर्म का स्वयं उपदेश दिया। ब्रह्मा से यह दक्ष को प्राप्त हुआ। दक्ष ने अपने ज्येष्ठ दौहित्र, अदिति के सविता से भी बड़े पुत्र को इसका उपदेश दिया। उनसे विवस्वान→मनु→इक्ष्वाकु से होता हुआ यह धर्म सम्पूर्ण जगत में प्रचलित हुआ। कल्पान्त में यह धर्म फिर भगवान नारायण को प्राप्त हो जायगा। इस प्रकार यह आदि एवं महान धर्म सनातन् काल से चला आ रहा है। भगवान् के भक्त सदा ही इसे धारण करते हैं। इस धर्म को जानने और क्रिया रूप से आचरण में लाने से जगदीश्वर श्रीहरि प्रसन्न होते हैं। भगवान् के भक्तों द्वारा कभी केवल एक व्यूह – वासुदेव की; कभी दो व्यूह – वासुदेव और संकर्षण की; कभी प्रद्युम्न सहित तीन व्यूहों की, और कभी अनिरुद्ध सहित चार व्यूहों की उपासना देखी जाती है। वैशम्पायन से सात्वत धर्म की कथा सुनने के बाद जनमेजय ने यह जानना चाहा कि इस उत्तम धर्म को सभी ब्राह्मण क्यों नहीं आचरण में लाते। वैशम्पायन ने बताया कि शरीर के बन्धन में बँधे हुये जीवों के लिये ईश्वर ने तीन प्रकार की प्रकृतियाँ बनाई हैं: सात्विकी, राजसी और तामसी। जिस पुरुष को भगवान् मधुसूदन अपनी कृपादृष्टि से देख लेते हैं उसे सात्विक जानना चाहिये और वह मोक्ष का अधिकारी हो जाता है। एकान्त भक्तों द्वारा सेवित धर्म सांख्य और योग के तुल्य है। राजसी और तामसी प्रकृति से युक्त होकर जन्म धारण करने वाले लोग प्रायः सकाम कर्म में प्रवृत्ति के लक्षणों से युक्त होते हैं। अतः श्रीहरि उनकी ओर नहीं देखते। ऐसे पुरुष जब जन्म लेते हैं तब उनपर ब्रह्मा की कृपादृष्टि होती है और उनका मन रजोगुण तथा तमोगुण के प्रवाह में डूबा रहता है। देवता और ऋषि कामनायुक्त सत्त्वगुण में स्थित होते हैं। उनमें भी शुद्ध सत्त्वगुण की कमी होती है, इसलिये वे वैकारिक माने जाते हैं। जनमेजय ने यह जानना चाहा कि वैकारिक पुरुष भगवान् को कैसे प्राप्त कर सकता है? वैशम्पायन ने बताया कि जो अत्यन्त सूक्ष्म, सत्वगुण से संयुक्त तथा अकार उकार और मकार – इन तीन अक्षरों से युक्त प्रणवस्वरूप है, उस परम पुरुष परमात्मा को पचीसवाँ तत्वरूप पुरुष (जीवात्मा) कर्तृत्व के अहंकार से शून्य होने पर प्राप्त करता है। सांख्य, योग, आरण्यक, उपनिषद्, तथा पाञ्चरात्र आगम - ये सब शास्त्र एक लक्ष्य के साधक होने के कारण एक बताये जाते हैं। अतः सम्पूर्ण कर्मों को नारायण के चरणों में समर्पित कर देना एकान्तिक भक्तों का धर्म है। वैशम्पायन ने बताया कि उनके गुरु व्यास को नारद जी ने इस एकान्तिक भक्ति का रहस्य बताया था। व्यास जी ने इसे युधिष्ठिर को बताया और इसका ही वैशम्पायन ने जनमेजय को उपदेश दिया है। (१२. ३४८)।

"जनमेजय ने पूछा कि क्या सांख्य, योग पाञ्चरात्र तथा वेदों के आरण्यक भाग - ये चार प्रकार के ज्ञान सम्पूर्ण लोकों में प्रचलित हैं? ये सब क्या एक ही लक्ष्य का बोध कराने वाले हैं? वैशम्पायन ने अपने गुरुदेव व्यास जी को नमस्कार करने के बाद कहा: 'ब्रह्मा के आदि पुरुष जो नारायण हैं उनके स्वरूपभूत जिन महर्षि को पूर्वपुरुष नारायण से छठीं पीढ़ी में उत्पन्न बताते हैं वे अपने पिता के एकमात्र पुत्र और द्वीप में उत्पन्न होने के कारण द्वैपायन कहलाते हैं। उन वेद के भण्डाररूप व्यास जी को मैं प्रणाम करता हूँ। प्राचीन काल में नारायण ने वैदिक ज्ञान के महानिधिरूप, महात्मा, अजन्मा और पुराणपुरुष व्यास जी को अपने पुत्र रूप से उत्पन्न किया था।' इस पर जनमेजय ने वैशम्पायन से पूछा: 'पहले आदि पर्व की कथा सुनाते समय आपने यह कहा था कि वसिष्ठ के पुत्र शक्ति, शक्ति के पुत्र पराशर और पराशर के पुत्र मुनिवर श्री कृष्ण द्वैपायन व्यास हैं; किन्तु अब आप इन्हीं व्यास को नारायण का पुत्र बता रहे हैं। क्या व्यास जी का इससे पहले भी कोई जन्म हुआ था? कृपया यह बतायें कि व्यास जी का जन्म कब और कैसे हुआ था?' वैशम्पायन ने कहा: गुरु वेदव्यास तपस्या की निधि और ज्ञाननिष्ठ हैं। पहले वे वेदों के अर्थ का वास्तविक ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा से हिमालय के एक शिखर पर रहते थे। महाभारत नामक इतिहास की रचना करके तपस्या करते-करते वे थक गये थे। उन दिनों उनकी सेवा में सुमन्तु, जैमिनि, पैल, वैशम्पायन तथा पाँचवे स्वयं व्यास जी के पुत्र शुकदेव, शिष्य रूप में गुरु की सेवा करते थे। शिष्यों द्वारा वेदों और महाभारत का अर्थ तथा नारायण से उनके जन्म की कथा पूछने पर व्यास जी ने पहले वेदों और महाभारत का अर्थ बताया और तदनन्तर नारायण से अपने जन्म का वृत्तान्त इस प्रकार बताना आरम्भ किया: सातवें कल्पके आरम्भ में सातवीं बार ब्रह्माजी के कमल से जन्म ग्रहण का अवसर आने पर नारायण ने अपने नाभिकमल से ब्रह्मा को उत्पन्न करके उनसे प्रजासृष्टि करने के लिये कहा। ब्रह्मा जी ने उस समय सृष्टि करने के लिये आवश्यक बुद्धि से अपने को रहित बताते हुये नारायण से उचित निर्देश की याचना की। तब नारायण ने अदृश्य होकर बुद्धि का चिन्तन किया जिससे बुद्धि मूर्तिमान होकर नारायण के सम्मुख उपस्थित हुई। नारायण ने उस बुद्धि को अपनी योगशक्ति से सम्पंन्न कर दिया और उससे ब्रह्मा जी के भीतर प्रवेश करने के लिये कहा। तदनन्तर बुद्धि के प्रवेश करने से बुद्धिसम्पन्न ब्रह्मा को नारायण ने प्रजासृष्टि का पुनः आदेश दिया और स्वयं अन्तर्धान हो गये। कुछ काल के बाद भगवान् के मन में यह विचार उठा कि 'ब्रह्मा ने समस्त प्रजाओं की सृष्टि तो कर दी किन्तु दैत्य, दानव, गन्धर्व, तथा राक्षसों से व्याप्त पृथिवी भार से पीड़ित हो गई है। वरदान प्राप्त करके ये दैत्य और दानव निश्चय ही देवों और ऋषियों को त्रस्त करेंगे। अतः मुझे पृथिवी पर क्रमशः नाना अवतार धारण कर के उसके भार को कम करना होगा। मैं पाताल में शेषनाग के रूप में रहकर इस पृथिवी को धारण करता हूँ और मेरे द्वारा धारित यह पृथिवी सम्पूर्ण चराचर जगत को धारण करती है। इसलिये मैं अवतार लेकर पृथिवी की रक्षा अवश्य करूँगा।' इस प्रकार विचार करके भगवान् मधुसूदन ने अवतार के निमित्त अपने अनेक रूपों, वाराह, नरसिंह, वामन एवं मनुष्य रूपों का स्मरण किया। तदनन्तर जगत्स्रष्टा श्रीहरि ने 'भो' शब्द से सम्पूर्ण दिशाओं को प्रतिध्वनित करते हुये सरस्वती का उच्चारण किया जिससे वहाँ सरस्वती का आविर्भाव हुआ। उस सरस्वती अथवा वाणी से उत्पन्न हुये शक्तिशाली पुत्र का नाम 'अपान्तरतमा' हुआ। भगवान् ने उन अपान्तरतमा से ऋक्, साम, यजुष् आदि श्रुतियों का पृथक्-पृथक् संग्रह करने के लिये कहा। अपान्तरतमा ने स्वायम्भुव मन्वतर में भगवान् की आज्ञा के अनुसार वेदों का विभाग किया। उनके इस कार्य से सन्तुष्ट होकर भगवान् ने उन्हें सभी मन्वन्तरों में यह कार्य करने का आदेश दिया। भगवान् ने कहा कि द्वापर और कलि के सन्धि काल में अपान्तरतमा की सन्तान कुरु वंशीय क्षत्रिय होंगे। उस समय भी अपान्तरतमा तपस्या से सम्पन्न होकर वेदों के अनेक विभाग करेंगे। उस समय कलियुग आ जाने पर अपान्तरतमा के शरीर का वर्ण काला हो जायगा। तदनन्तर भगवान् ने अपान्तरतमा को सम्बोधित करते हुये इस प्रकार कहा: 'तुम्हारा पुत्र वीतराग होकर परमात्मा-स्वरूप हो जायगा। ब्रह्मा के मानस पुत्र वसिष्ठ के वंश में पराशर नामक महर्षि होंगे। वही पराशर मुनि तुम्हारे पिता होंगे। उन्हीं ऋषि से तुम पिता के घर में रहने वाली एक कुमारी कन्या से पुत्र रूप में जन्म लोगे और कानीनगर्भ कहलाओगे। मेरी आज्ञा से तुम भूत और भविष्य के सभी कल्पों को देख सकोगे। तुम्हारी अनुपम ख्याति होगी और जब सूर्यपुत्र शनैश्चर मन्वन्तर के प्रवर्तक होंगे तब मेरी कृपा से तुम्हीं मन्वादि गणों में प्रधान होगे।' व्यास जी ने बताया कि इस प्रकार भगवान् के कृपाप्रसाद से वे अपान्तरतमा नाम से उत्पन्न हुये थे और अब पुनः वसिष्ठकुलनन्दन व्यास के नाम से उत्पन्न होकर प्रसिद्ध हैं। व्यास जी के जन्म का यह वृत्तान्त सुनाने के बाद वैशम्पायन ने सांख्य, योग, पाञ्चरात्र

वेद, पाशुपत-शास्त्र आदि के सम्बन्ध में बताते हुये कहा कि सांख्य के वक्ता कपिल हैं। योग-शास्त्र के पुरातन ज्ञाता ब्रह्मा हैं। अपान्तरतमा वेदों के आचार्य बताये जाते हैं। अपान्तरतमा को कुछ लोग प्राचीनगर्भ भी कहते हैं। शिव ने पाशुपत ज्ञान का उपदेश दिया। पाञ्चरात्र के ज्ञाता भगवान् नारायण ही हैं। ज्ञान के बल से जिनके संशय का निवारण हो गया है उन सब के भीतर सदा श्रीहरि निवास करते हैं। किन्तु कुतर्क के कारण संशय में पड़े लोगों में माधव का निवास नहीं है। पाञ्चरात्र के ज्ञाता सेवापरायण हो अनन्य भाव से भगवान् की शरण में प्राप्त हैं। सांख्य और योग दो सनातन शास्त्र हैं। स्वर्ग, अन्तरिक्ष भूतल और जल – इन सभी स्थानों में और सम्पूर्ण लोकों में जो कुछ शुभाशुभ कर्म होता है वह सब नारायण की सत्ता से ही हो रहा है। (१२. ३४९)।

"वैशम्पायन ने बताया कि सांख्य और योग की विचारधारा के अनुसार इस जगत में पुरुष अनेक हैं किन्तु उन सब की उत्पत्ति का स्थान एक ही पुरुष है। इस 'एकपुरुषवाद' के सम्बन्ध में ब्रह्मा और रुद्र का प्राचीन संवाद प्रसिद्ध है, जो इस प्रकार है : क्षीरसागर के मध्य में वैजयन्त नामक पर्वत है। वहाँ आध्यात्मगति का चिन्तन करने के लिये ब्रह्माजी प्रतिदिन आते थे। एक दिन ब्रह्मा जब वहाँ बैठे थे तब उसी समय उनके ललाट से उत्पन्न हुये पुत्र, महायोगी, त्रिनेत्रधारी शिव अनायास ही वैजयन्त पर्वत पर आये। तब अपने पुत्र को दीर्घकाल के पश्चात् अपने पास आया देखकर ब्रह्मा ने उनका स्वागत करते हुये उनसे तप के विषय में पूछा। रुद्र ने कहा: 'आपकी कृपा से मेरा स्वाध्याय और तप कभी भंग नहीं हुआ। आपको यहाँ एकान्त में देख कर मेरे मन में इसके कारण के विषय में कौतूहल उत्पन्न हो गया है। आप अपने श्रेष्ठ धाम को छोड़कर अकेले इस पर्वत पर क्यों चले आये हैं ?' ब्रह्मा ने कहा : 'मैं इन दिनों गिरिवर वैजयन्त का सेवन करते हुये एकाग्रचित्त से विराट पुरुष का चिन्तन करता हूँ। इस पर रुद्र ने विराट् की विशेषता के सम्बन्ध में ब्रह्मा से पूछा। ब्रह्मा ने बताया कि यह विराट् पुरुष सनातन, अविकारी, अविनाशी, अप्रमेय और सर्वव्यापी हैं। वे स्थूल, सूक्ष्म और कारण तीनों शरीरों से रहित होकर सम्पूर्ण शरीरों में निवास करते हुये भी कभी उनके कर्मों से लिप्त नहीं होते। वे क्षेत्रज्ञ कहलाते हैं। उनमें एकत्व भी है और महत्व भी, अतः वे ही एक मात्र पुरुष माने गये हैं। उन्हें ही कर्मभेद से देव-तिर्यक आदि भावों को प्राप्त होने के कारण बहुविध बताया गया है। जो लोकतन्त्र का सम्पूर्ण धाम है वह परम पुरुष ही वेदनीय परमतत्त्व है। वही ज्ञाता और वही ज्ञातव्य है। वहीं भोक्ता और भोज्य है। वही द्रष्टा और द्रष्टव्य है। वही सगुण और निर्गुण है। वह नित्य, सनातन और अविनाशी है। इस प्रकार विराट् पुरुष का वर्णन करने के बाद ब्रह्मा ने रुद्र से कहा : 'मैं भी उन्हीं से उत्पन्न हुआ हूँ और मुझसे तुम्हारी उत्पत्ति हुई है। मुझ से चराचर जगत तथा रहस्य सहित सम्पूर्ण वेद प्रकट हुये हैं। वासुदेव आदि चार व्यूहों में विभक्त हुये वे परम पुरुष अपनी इच्छानुसार क्रीडा करते हैं। (१२. ३५० - ३५१)।"

नारीतीर्थानि (बहु०), पाँच तीर्थों का द्योतक है। वर्गा आदि पाँच अप्सराओं के लिये नारद जी ने अगस्त्य, सौभद्र, पौलोम, कारन्धम और भारद्वाज तीर्थ निर्धारित किये (१. २१७, १२)। वर्गा, सौरभेयी, समीची, बुद्बुदा और लता नामक पाँच अप्सराओं को सौ वर्षों तक जल में ग्राह बनकर रहने का शाप मिला था। ये पाँचों जिस जल में ग्राह रूप से निवास करती थीं वे सभी इनके उद्धार के बाद तीर्थ बनकर नारीतीर्थ के नाम से विख्यात हुये। अर्जुन ने इन अप्सराओं का उद्धार किया था (१. २१७, ११)। तीर्थ यात्रा के समय युधिष्ठिर यहाँ भी आये थे (३. ११८, ४)।

नाला, एक नदी का नाम है : ६. ९, ३१।

नाव्याश्रम, राजा लोमपाद द्वारा निर्मित एक आश्रम। जिस नौका से ऋष्यशृङ्ग उनके राज्य में आये थे उसी के नाम पर इसका नामकरण हुआ था (३. ११२, १. ३; ११३, ९)।

१. नासत्य, अश्विनीकुमारों में से एक का नाम है : १. ३, ६६; १२. २०८, १७; ३३९, ५३; १३. १५०, १७।

२. नासत्य (द्वि० °त्यौ) = अश्विनौ (द्वि०) : १. २, १७०; ३, ६६; ३२, १७; ३. १२१, २४; १२३, २. २२; १२४, ९; १४. ८, ५।

नास्तिक (बहुधा बहु० °काः) : ३. २०७, ७१; २६१, ३; ३१३, ९७. ९८; ५. २८, ७; ३३, १६; ३५, ४७; ३९, ६२-७५; १३९, ७; ७. १७, ३४; १०१, ४; ८. ४०, ४८; १२. १०, २०; ११, २७; १२, ५; १४, ३३; १५, ३३; ३५, ४७; ७०, ३; १२३, १६; १३३, १४; १६७, १९; १६८, ८; १८०, ४९; १८१, ५; २१८, २८; २२९, ७९; २६३, ४. ६; २६५, ४; ३२१, १०. १६. ७५; ३२२, ४; १४. ५०, ४।

नास्तिक्य, से अनीश्वरवादियों का तात्पर्य है : २. ५, १०७; ३. ३१, १. ६. ४०; १२. १२, २६; २२८, ७०; २६४, ३; २६९, ६७; १४. ३६, १३।

नाहुष, नाहुषात्मज = ययाति (देखिये वरधा०)।

१. निकुम्भ, अनेक असुरों का नाम है : १. ६५, १९ (प्रह्लाद का पुत्र). २६ (दनु का पुत्र); ६७, २६ (राजा देवाधिप के रूप में अवतरित हुआ); २०९, २ (सुन्द और उपसुन्द का पिता।

२. निकुम्भ, एक कौरव योद्धा का नाम है (७. १५६, १२१)।

३. निकुम्भ, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ५६)।

निखर्वट, एक राक्षस का नाम है (३. २८५, ९)।

निग्रह = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

निचन्द्र, एक असुर का नाम है जो दनु का पुत्र था : १. ६५, २६; ६७, २५. २६ (मुञ्जकेश नामक एक क्षत्रिय राजा इसके अंश से उत्पन्न हुये थे)।

निचित, एक नदी का नाम है (६. ९, १८)।

निज = शिव (सहस्रनाम)।

नितम्भू, एक महर्षि का नाम है। शरशय्या पर पड़े भीष्म को देखने ये भी आये थे (१३. २६, ८)।

नित्य = शिव (सहस्रनाम)।

नित्यनर्त = शिव (सहस्रनाम)।

निद्रात्मन् = कृष्ण (१२. ४७, ४८)।

निधि = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

निधिप = कुबेर (१२. २०७, ३५)।

निधिपाल (बहु० °लाः) : १४. ६५, १२।

निपातिन् = शिव (सहस्रनाम)।

निबिड – देखिये निविड।

१. निमि, विदेहों के प्राचीन नरेश का नाम है : २. ८, ९ (यम की सभा में); १२. २३४, २६ (इन्होंने अपना राज्य ब्राह्मणों को दान कर दिया था); १३. ११५, ७३ (ये कार्तिक मास में मांस भक्षण नहीं करते थे); १३७, ११ (अपना राज्य ब्राह्मणों को दान कर दिया था); १६५, ५६। तुकी० वैदेह।

२. निमि, दत्तात्रेय के पुत्र और श्रीमत् के पिता का नाम है : १३. ९१, ५. ७. २० (ये श्राद्धकर्म सम्पन्न करने वाले प्रथम व्यक्ति थे); ९२, १।

निमित्त, निमित्तस्थ = शिव (सहस्रनाम)।

१. निमिष, गरुड़ के पुत्र एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, १०)

२. निमिष = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. निमेष एक नाग (नीलकण्ठी के अनुसार एक यक्ष) का नाम है जिसने गरुड के साथ युद्ध किया (१. ३२, १९)।

२. निमेष, निमेषाः (बहु०), निमेषोन्मेषकर्मन् = शिव (सहस्रनाम)।

निम्नगासुत = भीष्म (१३. १६७, १८)।

१. नियत, एक अग्नि का नाम है (३. २२२, ६. ७)।

२. नियत = शिव (सहस्रनाम)।

नियतायुस, एक कुरु-सैनिक का नाम है जिसका अर्जुन ने वध किया था (७. ९३, २७)।

नियति एक देवी का नाम है जो ब्रह्मा की सभा में उपस्थित होती थी (२. ११, ४३)।

१. नियन्तृ = शिव (८. ३३, ५९)।

२. नियन्तृ = विष्णु (सहस्रनाम)।

नियम = महापुरुष (महापुरुषस्तव)। = शिव (सहस्रनाम)। =विष्णु (सहस्रनाम)।

नियमधर = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

नियमाश्रित = शिव (सहस्रनाम)।

नियमेन्द्रियवर्धन = शिव (सहस्रनाम)।

१. निरमित्र, नकुल के पुत्र का नाम है जो करेणुमती के गर्भ से उत्पन्न हुआ था (१. ९५, ७९)।

२. निरमित्र, एक त्रिगर्त राजकुमार का नाम है जिसका सहदेव ने वध किया था (७. १०७, २५-२७)।

निरय (नरक) एक लोक का द्योतक है : १. ४५, १३; १४१, ३७; ३. ९६, १७; १७९, २४; १८३, ७०; ४. १८, २५; १९, १३; ५. २५, ७; ३७, ६; ७. १४७, २३; ८. ७०, १७; १२. ३, २१; ७३, २७; १७३, १८; १९७, २. ३. ५. ७. ९-११. १३; १९८; १. ६. १०. ११; १९९, १४. १२७; २७१, ४४; २८०, ४२; २९५, ३०; ३०२, ४७; ३०३, ४०. ४२. ४३; ३१५, १८; ३२१, ७९; ३६०, १२; १३. १९, ५; २२, २१; २३, ६०. ७५; ४५, १९; ७४, ६; १०४, १२; ११२, ३; ११५, ८०; १४३, १२; १४४, ५१. ५३; १४५, १३. २१. ३४; १४. १६, ३६; ५०, ४; ८१, ६०; १८. ३, १३।

निरवग्रह = शिव (सहस्रनाम)।

निरविन्द, एक पवित्र पर्वत का नाम है : १३. २५, ४२ (यह गया के निकट स्थित है)।

१. निरामय, एक प्राचीन नरेश का नाम है जिनका संजय ने उल्लेख किया (१. १, २३७)।

२. निरामय = शिव (सहस्रनाम)।

निरामर्द, एक प्राचीन नरेश का नाम है जिसका संजय ने उल्लेख किया था (१. १, २३७)।

निरुक्त, यास्क की कृति का नाम है : १२. २०१, ८; २४५, ३०; ३४२, ७३; १३. ८५, ९१।

निरुक्तग = ब्रह्मा : १२. ३३९, ५०; ३४२, १२४।

१. निर्ऋति, स्थाणु-पुत्र एकादश रुद्रों में से एक का नाम है : १. ६६, २; १२३, ६८ (अर्जुन के जन्मोत्सव में सम्मिलित हुये रुद्रों में यह भी एक थे)।

२. निर्ऋति, अधर्म की पत्नी और निर्ऋतों की माता एक देवी का नाम है (१. ६६, ५४; १२. १२२, ४६)।

निर्गुण = महापुरुष (महापुरुषस्तव)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

निर्घण्टक - देखिये नैघण्टुक।

निर्जीव = शिव (सहस्रनाम)।

निर्माणरत (बहु० °ता:), देवों के एक वर्ग का नाम है जो विभिन्न रूप धारण कर सकते थे (१३. १८, ७५)।

निर्मोचन, एक नगर का नाम है जहाँ श्रीकृष्ण ने ६०,००० असुरों का वध किया था : ५. ४८, ८३; १३०, ४५।

निर्याण, सेना के कूच करने का द्योतक है : (१. २, ६३-६४)। देखिये सैन्यनिर्याणं।

निर्वाण, चरम गति का द्योतक है : ३. ३१, २६; १२६, १६; २०१, २२; २६१, ४१; ६. २६, ७२; २९, २४-२६; ३०, १५; १२. २१, १७; २६, १६; १६७, ४६; १८९, १७; १९५, २. २२; ३४०, ८; १३. १६, १५; १४. १९, १२।

निर्वाणम् = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

निर्वीर, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, १३८)।

निर्वीरासंगम, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, १३९)।

निलय = शिव (सहस्रनाम)।

निवातकवच, बहु० (°चाः) असुरों के एक वर्ग का नाम है : १. २, ५३. १८४ (निवातकवचैर्युद्धं हिरण्यपुरवासिभिः). १८५ (निवातकवचै-र्घोरैर्दानवैः). १२३, ४५ (निवातकवचा नाम दैत्या); ३. ४१, २१; ४७, १५. २१; १६८, ७१ (निवातकवचा नाम दानवा मम शत्रवः). ७१. ८३ (कौन्तेय निवातकवचान् रणे विजेता); १६९, १४. २२ (महाघोरो निवातकवचान्तकः); १७०, १. ५. १७. २५. २९; १७१, २९. ३०; १७२, ३. ७. १५. १८. २२. २८; १७३, ६८. ७० (निवातकवाचानाम्न वधम्); १७४, १५. १६; ४. ४५, ३८; ४९, १०; ५. ४९, १६; १००, ७; १३८, ८; १५८, ३०; ६. ९८, १३; ७. ५१, १६; १२८, ४४; १८५, १८; ८. ३१, ३; ४७, ११; १३. १४, १५।

निवातकवचयुद्धपर्वन्, महाभारत के ३९ वें अवान्तर पर्व का नाम है जिसमें अर्जुन और निवातकवचों के युद्ध का वर्णन है : "एक दिन जब पाण्डवगण अर्जुन का चिन्तन कर रहे थे तब उसी समय हरे रंग के घोड़ों से जुता हुआ देवराज इन्द्र का रथ सहसा आकाश में प्रकट हुआ। उस रथ का संचालन मातलि कर रहे थे। रथ पर बैठे हुये अर्जुन स्पष्ट दिखाई देने लगे। शीघ्र ही अर्जुन अपनी दिव्य कान्ति से प्रकाशित होते हुये गन्धमादन पर्वत पर आ पहुँचे। देवराज इन्द्र के दिव्य रथ से उतर कर उन्होंने सर्वप्रथम महर्षि धौम्य के चरणों में मस्तक झुकाया। तदनन्तर अपने अन्य भ्राताओं से मिलकर अर्जुन विनीत भाव से वहाँ खड़े हो गये। नमुचिनाशक इन्द्र ने जिस रथ पर बैठकर दैत्यों के सात यूथों का संहार किया था उस इन्द्ररथ के समीप जाकर पाण्डवों ने उसकी परिक्रमा की, साथ ही उन्होंने मातलि का भी देवराज इन्द्र के समान सर्वोत्तम विधि से सत्कार किया। मातलि ने भी पाण्डवों का अभिनन्दन किया और जिस प्रकार पिता पुत्र को उपदेश देता है उसी प्रकार उन्होंने पाण्डवों को कर्तव्य की शिक्षा दी। तदनन्तर वे अपने अनुपम कान्ति वाले रथ को लेकर स्वर्गलोक चले गये। मातलि के चले जाने के बाद अर्जुन ने बहुमूल्य, उत्तम तथा सूर्य के समान देदीप्यमान अनेक दिव्य आभूषण अपनी प्रियतमा, सुतसोम की माता द्रौपदी को समर्पित किये। इसके बाद अर्जुन ने जिस प्रकार इन्द्र, वायु तथा साक्षात् शिव से दिव्यास्त्रों की शिक्षा प्राप्त की उसका अपने भ्राताओं से वर्णन किया। इस प्रकार निर्दोष कर्म करने वाले अर्जुन ने अपने स्वर्गीय प्रवास का सब समाचार देने के बाद नकुल-सहदेव के साथ निश्चिन्त होकर उस आश्रम में शयन किया (३. १६५)।

"रात व्यतीत होने पर प्रातःकाल सहसा अन्तरिक्ष में देवताओं के सम्पूर्ण वाद्यों की तुमुल ध्वनि गूंज उठी। पाण्डवों ने जब ध्वनि की ओर देखा तब उन्हें देवराज इन्द्र दृष्टिगोचर हुये। इन्द्र के साथ सभी मरुद्गण, देवता, गन्धर्व और अप्सरायें भी थीं। इन्द्र को देखकर पाण्डवों ने उनका स्वागत किया। तब देवराज ने पाण्डवों को आशीर्वाद देकर काम्यक वन के कल्याणकारी आश्रम में चले जाने के लिये कहा। उन्होंने युधिष्ठिर से अर्जुन की प्रशंसा करते हुये बताया कि अर्जुन ने सभी दिव्यास्त्र प्राप्त कर लिये हैं और अब उन्हें कोई युद्ध में परास्त नहीं कर सकता। तदनन्तर इन्द्र वापस इन्द्रलोक चले गये। पाण्डवों और इन्द्र के इस समागम को जो एकाग्रचित्त होकर प्रतिदिन पढ़ता है वह सब प्रकार की बाधाओं से रहित होकर सौ वर्ष तक जीवन धारण करता है। (३. १६६)।

"देवराज इन्द्र के चले जाने पर युधिष्ठिर ने अर्जुन से अपनी तपस्या तथा दिव्यास्त्रों की प्राप्ति का विस्तारपूर्वक वर्णन करने के लिये कहा। तब अर्जुन ने बताया कि युधिष्ठिर की विद्या ग्रहण करके और उन्हीं की आज्ञा से वे पहले काम्यक वन से होते हुये भृगुतुङ्ग पर्वत पर पहुँचे। वहाँ एक रात रह कर जब वह आगे बढ़े तब उन्हें एक ब्राह्मण मिले जिन्होंने उन्हें तपस्या का आश्रय लेने का परामर्श दिया जिससे देवराज का दर्शन प्राप्त

हो सके। ब्राह्मण के आदेश से तब अर्जुन ने हिमालय पर्वत पर जाकर तपस्या आरम्भ की। तपस्या करते पाँचवाँ महीना प्रारम्भ होने पर एक दिन एक शूकर वहाँ आया और उसके पीछे किरात जैसी आकृति में एक महान् पुरुष का दर्शन हुआ। अर्जुन ने तत्काल उस शूकर पर बाण से आघात किया किन्तु साथ ही किरात ने भी अपने धनुष को खींचकर एक बाण से उसी शूकर पर प्रहार कर दिया। तदनन्तर किरात ने अर्जुन से कहा कि वह शूकर पहले उसके बाण का निशाना बन चुका था अतः आखेट के नियम के अनुसार अर्जुन को उस पर प्रहार नहीं करना चाहिये था। इतना ही नहीं उस किरात ने अर्जुन पर बाण वर्षा आरम्भ कर दी। अर्जुन ने भी उस पर बाणवर्षा की। उस समय उस किरात के सैकड़ों और सहस्रों रूप प्रकट हुये। कभी वह एक रूप हो जाता था, कभी अत्यन्त विशाल और कभी लघु रूप धारण कर लेता था। अर्जुन ने उस किरात पर वायव्यास्त्र, स्थूणाकर्ण, वारुणास्त्र, और शलभास्त्र आदि भयंकर अस्त्रों से प्रहार किया किन्तु उस किरात ने इन सभी अस्त्रों को अपना ग्रास बना लिया। अन्ततः अर्जुन ने ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया किन्तु उस किरात ने उसे भी शान्त कर दिया। इस प्रकार अपने सभी अस्त्र-शस्त्रों के निष्फल हो जाने पर अर्जुन ने किरात से मल्ल युद्ध आरम्भ किया। किन्तु उनका कोई वश नहीं चला और वे निश्चेष्ट होकर पृथिवी पर गिर पड़े। तब वह अलौकिक प्राणी, किरात, अपने साथ की स्त्रियों सहित वहाँ से अन्तर्धान हो गया। वास्तव में वह किरात नहीं बल्कि उस वेश में स्वयं शङ्कर थे। किरात रूप का परित्याग करके शङ्कर ने दिव्य रूप धारण कर लिया। इस प्रकार अर्जुन को उमा सहित भगवान वृषभध्वज शङ्कर का दर्शन प्राप्त हुआ। शिव ने अर्जुन के अक्षय बाणों से भरे दोनों तरकसों को उन्हें लौटाते हुये वर मागने के लिये कहा। तब अर्जुन ने देवताओं के पास के सभी दिव्यास्त्रों को जानने की इच्छा प्रकट की और शिव ने उन्हें तदनुसार सम्पूर्ण दिव्यास्त्रों की प्राप्ति का वरदान दिया। साथ ही भगवान् शङ्कर ने अपना रौद्रास्त्र और पाशुपतास्त्र भी अर्जुन को प्रदान किया। इस प्रकार अर्जुन को मनोवांछित वरदान और अस्त्र प्रदान कर शङ्कर वहाँ से अन्तर्धान हो गये (३. १६७)।

"वह रात वहीं व्यतीत करने के बाद प्रातःकाल अर्जुन ने पुनः उन्हीं ब्राह्मण को देखा जिनसे वह पहले मिल चुके थे। उन ब्राह्मण महोदय ने अर्जुन को बताया कि वह शीघ्र ही देवराज का दर्शन प्राप्त करके उनसे भी अन्यान्य दिव्यास्त्र प्राप्त करेंगे। ऐसा कहकर वह ब्राह्मण अपने अभीष्ट स्थान को चले गये। सन्ध्या समय वहाँ का वातावरण अत्यन्त मनोहर हो गया और शीघ्र ही शची तथा सम्पूर्ण देवताओं के साथ इन्द्र वहाँ पधारे। कुबेर भी वहाँ आ गये। अर्जुन ने वहाँ उपस्थित देवताओं और लोकपालों से उनके दिव्यास्त्र प्राप्त किये। देवराज इन्द्र ने अर्जुन से स्वर्गलोक की यात्रा करने के लिये कहा जहाँ उन्हें वायु, अग्नि, वसु, वरुण, मरुद्गण, साध्य, ब्रह्मा, गन्धर्व, नाग, राक्षस, विष्णु, तथा निर्ऋति से भी दिव्यास्त्र प्राप्त हो सकें। इन्द्र के चले जाने पर मातलि अर्जुन को इन्द्रलोक ले चले। मार्ग में जब मातलि तीव्र गति से आकाश में चक्कर लगाते हुये रथ को चलाने लगे तब अर्जुन को उस पर स्थिरतापूर्वक और बिना हिले डुले बैठा देखकर उन्हें अत्यन्त आश्चर्य हुआ। मातलि ने बताया कि जब उनके द्वारा संचालित अश्व पहली बार उड़ान भरते हैं तब देवराज इन्द्र भी विचलित हुये बिना नहीं रह पाते। अतः चक्कर काटते हुये रथ पर भी निश्चल भाव से बैठे अर्जुन पर उन्हें आश्चर्य हुआ। स्वर्गलोक (विस्तृत वर्णन) पहुँच कर अर्जुन ने अस्त्रविद्या का नियमित अभ्यास आरम्भ किया। धीरे-धीरे अस्त्रविद्या में निपुण हो जाने पर अर्जुन को देवराज ने आशीर्वाद देते हुये कहा कि अब देवता भी उन्हें युद्ध में परास्त नहीं कर सकेंगे। इन्द्र ने अर्जुन से कहा : 'तुमने पाँच विधियों सहित पन्द्रह अस्त्र प्राप्त किये हैं। अतः इस भूतल पर तुम्हारे जैसा शूर दूसरा कोई नहीं है। प्रयोग उपसंहार, आवृत्ति, प्रायश्चित्त, और प्रतिघात—ये अस्त्रों की पाँच विधियाँ हैं। तुम इन सब का ज्ञान प्राप्त कर चुके हो। अब गुरुदक्षिणा का समय आ गया है। अतः तुम उसे देने की प्रतिज्ञा करो तब मैं अपने महान कार्य को तुमसे बताऊँगा।' अर्जुन के वचन देने पर इन्द्र ने बताया कि निवातकवच नामक दानव उनके शत्रु हैं और समुद्र के भीतर दुर्गम स्थान का आश्रय लेकर रहते हैं। उनकी संख्या तीन करोड़ है और सभी के रूप, बल तथा तेज एक समान हैं। इन्द्र ने इन्हीं दानवों का संहार करने के लिये अर्जुन से कहा और यह भी बताया कि इतने से उनकी गुरुदक्षिणा पूर्ण हो जायगी। अर्जुन की स्वीकृति प्राप्त हो जाने पर देवराज ने उन्हें हर प्रकार की युद्ध सामग्रियाँ प्रस्तुत कीं। उन्होंने मातलि द्वारा संचालित अपना दिव्य रथ भी दिया जिस पर बैठ कर पूर्वकाल में उन्होंने स्वयं विरोचन कुमार बलि को परास्त किया था। शम्बरासुर, नमुचि, बल, वृत्र, प्रह्लाद और नरकासुर को भी इन्द्र ने उसी रथ पर बैठकर परास्त किया था। इन्द्र ने अर्जुन को देवदत्त नामक शंख भी दिया। इस प्रकार अस्त्र, शस्त्रों, रथ, शंख आदि से सम्पन्न अर्जुन ने अत्यन्त भयंकर दानवों के नगर की ओर प्रस्थान किया (३. १६८)।

"समुद्र के समीप पहुँच कर अर्जुन ने उसका निरीक्षण किया। उसके पास ही उन्होंने दानवों से भरा दैत्यनगर भी देखा। रथ-संचालन में कुशल मातलि शीघ्र ही वहाँ पहुँच कर पाताल में उतरे तथा रथ पर बैठकर सावधानी से आगे बढ़े। रथ के घोष को सुनकर दानव भयभीत हो गये और उन्होंने नगर की रक्षा का प्रबन्ध करके सारे द्वार बन्द कर दिये। तब अर्जुन ने देवदत्त नामक शंख बजाया। तदनन्तर निवातकवच नामक सभी दैत्य आभूषणों से विभूषित हो भाँति-भाँति के कवच धारण किये, हाथ में विचित्र आयुध लिये, लोहे के बड़े-बड़े शूल, गदा, मुसल, पट्टिश, करवाल, रथचक्र, शतघ्नी, भुशुण्डि, तथा रत्नजटित खड्ग आदि लेकर सहस्रों की संख्या में नगर के बाहर आये। उस समय भीषण स्वर तथा विकराल आकृति वाले विभिन्न प्रकार के सहस्रों बाजे बजने लगे। तब अर्जुन और दानवों के बीच भयंकर युद्ध आरम्भ हो गया जो निवातकवचों के लिये अत्यन्त विनाशकारी सिद्ध हुआ। उस समय बहुत से देवर्षि, ऋषि, सिद्ध आदि उस महायुद्ध को देखने के लिये वहाँ आ गये (३. १६९)।

"निवातकवचों ने अर्जुन पर भयंकर आक्रमण किया। अर्जुन ने भी अपने गाण्डीव धनुष से एक साथ दस-दस बाण चलाकर निवातकवचों को त्रस्त करना आरम्भ किया। मातलि ने भी उस समय अपने रथ-संचालन का अपूर्व प्रदर्शन किया। उन दानवों ने जब और प्रबल आक्रमण किया तब अर्जुन ने बाणों को ब्रह्मास्त्र से अभिमन्त्रित कर के चलाया और इस प्रकार सहस्रों दानवों का संहार कर डाला। जब दैत्य और अधिक क्रुद्ध होकर आक्रमण करने लगे तब अर्जुन ने माधव नामक प्रचण्ड तेजस्वी अस्त्र का आश्रय लिया। इस अस्त्र के प्रभाव से उन्होंने दैत्यों के अस्त्र-शस्त्रों के टुकड़े-टुकड़े कर दिये। उस समय अर्जुन ने अपने गाण्डीव धनुष से इतनी कुशलतापूर्वक बाणवर्षा आरम्भ की कि मातलि भी उनकी प्रशंसा करने लगे। इस प्रकार त्रस्त होकर दैत्यों ने पुनः प्रबल प्रत्याक्रमण किया किन्तु अर्जुन ने अस्त्रविनाशक अस्त्रों द्वारा दानवों की बाणवर्षा को शान्त कर दिया। उस युद्ध में अर्जुन ने दानवों का भीषण संहार किया जिससे पीड़ित होकर उन सब ने माया-युद्ध आरम्भ कर दिया (३. १७०)।

"दानवों ने चारों ओर से पत्थरों की वर्षा आरम्भ की। वृक्षों के बराबर ऊँचे शिलाखण्ड रणभूमि में गिरने लगे। तब अर्जुन ने महेन्द्रास्त्र से अभिमन्त्रित वज्रतुल्य बाणों द्वारा उन शिलाखण्डों को चूर-चूर कर दिया। पत्थरों की वर्षा निष्फल होते देख दानवों ने अग्नि प्रकट की। शीघ्र ही आकाश से सैकड़ों जल-धारायें प्रकट हो गईं जिससे चारों दिशायें आप्लावित होने लगीं। तब अर्जुन ने इन्द्र द्वारा प्राप्त दिव्य विशोषणास्त्र का प्रयोग किया जिससे वह सारा जल सूख गया। पत्थरों और जल की वर्षा शान्त हो जाने बाद के दानवों ने अग्नि और वायु का प्रयोग आरम्भ किया किन्तु अर्जुन ने वारुणास्त्र से अग्नि को शान्त किया तथा शैलास्त्र से माया-मय वायु के वेग को कुण्ठित कर दिया। तदनन्तर चारों ओर महाभयानक अन्धकार छा गया। सम्पूर्ण लोकों के तिमिराच्छादित हो जाने

से रथ के अश्व युद्धविमुख हो गये और मातलि भी लड़खड़ाने लगे। उनके हाथ से घोड़ों का लगाम और चाबुक पृथिवी पर गिर गया और वह घबरा कर बार-बार अर्जुन से पूछने लगे कि वह कहाँ हैं। मातलि ने बताया कि प्राचीन काल में अमृत की प्राप्ति के लिये देवताओं और दैत्यों में अत्यन्त घोर संग्राम हुआ था जिसे उन्होंने अपनी आँखों से देखा था। शम्बरासुर के वध के समय भी भयानक युद्ध हुआ जिसमें वे ही इन्द्र के सारथि थे। इसी प्रकार वृत्रासुर और विरोचनकुमार बलि के साथ युद्ध भी उन्होंने देखा था किन्तु उन्होंने बताया कि निवातकवचों के साथ हो रहे युद्ध की भयंकरता उन सबसे अधिक है। मातलि के ये भयभीत वचन सुनकर अर्जुन ने उन्हें आश्वस्त किया और अस्त्रसम्बन्धिनी माया की सृष्टि की जो समस्त प्राणियों को मोह में डालने वाली थी। उससे असुरों की सारी माया नष्ट हो गई। किन्तु उन भयंकर असुरों ने अनेक प्रकार की अन्य मायायें प्रकट कीं जिससे कभी प्रकाश छा जाता था और कभी सब कुछ अन्धकाराच्छन्न हो जाता था। कभी सम्पूर्ण जगत अदृश्य हो जाता था और कभी जल में डूब जाता था। अर्जुन ने उन सब का सफलतापूर्वक विनाश करते हुये उस समय असंख्य दानवों का संहार कर डाला। अभी युद्ध हो ही रहा था कि सभी दानव अन्तर्धानी माया से छिप गये जिससे अर्जुन किसी भी दानव को देख नहीं पाते थे (३. १७१)।

"जब सभी दैत्य अदृश्य होकर युद्ध करने लगे तब अर्जुन ने भी अपने अस्त्रों की अदृश्य शक्ति के द्वारा उनका सामना करना आरम्भ किया। अर्जुन के दिव्यास्त्रों से प्रेरित बाण उन्हीं-उन्हीं स्थानों पर जाकर दैत्यों का संहार करने लगे जहाँ-जहाँ वे दैत्य अदृश्य रूप से स्थित थे। जब अर्जुन ने दानवों का इस प्रकार संहार आरम्भ किया तब वे सभी निवातकवच दानव अपनी माया समेट कर सहसा नगर में घुस गये। दानवों की माया समाप्त हो जाने पर अर्जुन ने देखा कि वहाँ लाखों दानव मरे पड़े हैं। उस समय वहाँ दानवों के इतने अधिक शव पड़े थे कि अश्वों को पैर रखने के लिये कोई स्थान शेष नहीं रह गया था। अतः वे अन्तरिक्षचारी अश्व वहाँ से उछल कर आकाश में खड़े हो गये। कुछ भयंकर दानवों ने, जो पृथिवी के भीतर छिपे थे, अर्जुन के रथाश्वों के पैरों तथा रथचक्रों को पकड़ लिया। फिर चारों ओर से दानवों ने बड़े-बड़े शिलाखण्डों की वर्षा आरम्भ की जिससे अर्जुन उनसे आच्छादित हो गये। रथ के घोड़ों का पैर पकड़े जाने से रथ की गति भी कुण्ठित हो गई थी। अर्जुन इस परिस्थिति में अत्यन्त पीड़ा का अनुभव करने लगे किन्तु मातलि ने उन्हें आश्वस्त करते हुये वज्र का प्रयोग करने के लिये कहा। तब अर्जुन ने वज्रास्त्र से अभिमन्त्रित बाणवर्षा आरम्भ की जिससे बड़े-बड़े दानव धराशायी होने लगे। उन बाणों ने पृथिवी के भीतर छिपे दानवों का भी वध कर डाला जिन्होंने रथ के अश्वों और चक्रों को पकड़ रक्खा था। अर्जुन के इस पराक्रम को देखकर मातलि ने उनकी प्रशंसा की। सम्पूर्ण असुर-समूह के मारे जाने पर उनकी स्त्रियाँ जोर-जोर से करुण क्रन्दन करने लगीं। तब अर्जुन ने अपने उस दिव्य रथ पर बैठकर दानवों के नगर में प्रवेश किया। उस दिव्य रथ को देखकर भयभीत दानव स्त्रियाँ इधर-उधर भागने लगीं। अर्जुन ने देखा कि दानवों के गृह सुवर्ण के बने थे और अनेक प्रकार के रत्न उनकी शोभा में वृद्धि कर रहे थे। सम्पूर्ण दानवनगर देवपुरी से भी श्रेष्ठ प्रतीत हो रहा था। अर्जुन ने मातलि से पूछा कि देवगण भी अपने नगर इतने ही सुन्दर क्यों नहीं बनाते। उस पर मातलि ने बताया कि पूर्वकाल में वह दानवनगर भी देवराज के ही अधिकार में था, किन्तु निवातकवचों ने आकर देवों को निर्वासित कर दिया था। क्योंकि उन दानवों ने ब्रह्मा से यह प्राप्त कर रक्खा था कि उन्हें युद्ध में देवताओं से भय न हो। तब इन्द्र ने ब्रह्मा से ही इन दानवों को नष्ट करने के लिये कहा था किन्तु पितामह ने बताया कि अर्जुन (जो इन्द्र के ही दूसरे स्वरूप होंगे) इन दैत्यों के वध के लिये देवराज से दिव्यास्त्र प्राप्त करके इन दैत्यों का वध करेंगे। इसी विधिविधान के कारण अर्जुन ने इन सम्पूर्ण निवातकवच नामक दैत्यों का संहार किया। इसी उद्देश्य से देवराज ने अर्जुन को परम उत्तम अस्त्रबल से सम्पन्न किया था। इस प्रकार दानवों का संहार करके अर्जुन पुनः मातलि के साथ देवलोक लौट आये (३. १७२)।

"लौटते समय अर्जुन ने एक दूसरा दिव्य एवं विशाल नगर देखा जो अग्नि और सूर्य के समान प्रकाशित हो रहा था। वह नगर अपने निवासियों की इच्छा के अनुसार सर्वत्र आ-जा सकता था (नगर की शोभा का वर्णन)। अर्जुन ने जब मातलि से उस नगर के सम्बन्ध में पूछा तब उन्होंने बताया कि वह दैत्यकुल की कन्या पुलोमा तथा महान् असुरवंशी कन्या कालका का नगर है। इन दोनों कन्याओं ने हजारों वर्ष तक तपस्या करके ब्रह्मा से अपने पुत्रों का दुःख दूर हो जाने का वरदान माँगा था। उन दोनों ने यह वर भी माँगा था कि उनके पुत्र देवता, राक्षस तथा नागों के लिये भी अवध्य हों तथा उनके रहने के लिये ऐसा सुन्दर नगर भी हो जो अपने ही प्रभापुञ्ज से प्रकाशित होता हो। वह नगर आकाश में विचरने वाला, सब प्रकार के रत्नों से सम्पन्न, तथा ऐसा हो जिसे देवता, ऋषि, यक्ष, गन्धर्व, नाग अथवा असुर कोई भी ध्वस्त न कर सकें। मातलि ने बताया कि यह वही दिव्य नगर है जो सर्वत्र विचरता है तथा इसमें देवता भी प्रवेश नहीं कर पाते। इसमें पौलोम और कालकञ्ज नामक दानव ही रहते हैं। इसका नाम हिरण्यपुर है और पौलोम नामक असुर इसकी रक्षा करते हैं। मातलि ने यह भी बताया कि पूर्वकाल में ब्रह्मा ने मनुष्य के हाथ से इनकी मृत्यु निश्चित की थी अतः उन्होंने अर्जुन से वज्रास्त्र से इन पौलमों और कालकञ्जों का भी संहार करने के लिये कहा। मातलि की बात सुनकर अर्जुन ने रथ को उस नगर में ले चलने के लिये कहा जिससे देवराज के इन द्रोहियों का भी वे संहार कर डालें। जब मातलि ने अपने दिव्य रथ को उस नगर के पास पहुँचा दिया तब वहाँ के निवासी असुरों ने विचित्र वस्त्राभूषणों से विभूषित होकर अत्यन्त तीव्र वेग से अर्जुन पर आक्रमण कर दिया। अर्जुन ने भी अपने विद्याबल का आश्रय लेकर उन असुरों पर प्रत्याक्रमण कर उन्हें धराशायी करना आरम्भ किया। अर्जुन ने विभिन्न प्रकार के युद्धकौशल द्वारा उन असुरों को इस प्रकार मोहित कर दिया कि वे आपस में ही लड़कर एक दूसरे का वध करने लगे। अपने को इस प्रकार हत होता देखकर वे असुर पुनः अपने नगर में प्रवेश कर गये। तदनन्तर वे सब दानवी माया का आश्रय लेकर नगर सहित आकाश में उड़ गये। अर्जुन ने तब बाणवर्षा कर उन दैत्यों का मार्ग रोक दिया तथा उनकी गति भी कुण्ठित कर दी। सूर्य के समान प्रकाशित दानवों का वह आकाशचारी दिव्य नगर उनकी इच्छा के अनुसार कभी पृथिवी पर अथवा पाताल में चला जाता, कभी ऊपर उड़ जाता, और कभी जल में डूब जाता था परन्तु अर्जुन ने नाना दिव्यास्त्रों से उसे सब ओर से रोक कर दैत्यों सहित क्षतविक्षत करना आरम्भ कर दिया। अन्ततः उनके एक लोह निर्मित बाण से क्षतिग्रस्त होकर वह दैत्यनगर ध्वस्त होकर पृथिवी पर गिर पड़ा। मातलि भी अपने दिव्य रथ को लेकर अर्जुन सहित पृथिवी पर उतर आये। उस समय युद्ध की इच्छा से अमर्ष में भरे हुये दानवों के साठ हजार रथ अर्जुन के सामने आकर डट गये। अर्जुन ने उन दानवों पर प्रहार आरम्भ किया, किन्तु वे सब दिव्यास्त्रों का धीरे-धीरे निवारण करने लगे। दानवों के युद्धकौशल को देखकर अर्जुन के मन में महान् भय उत्पन्न हुआ। तब देवाधिदेव रुद्र को प्रणाम कर अर्जुन ने पाशुपतास्त्र का प्रयोग किया। उसका प्रयोग करते ही अर्जुन को एक दिव्य पुरुष का दर्शन हुआ जिसके तीन मस्तक, तीन मुख, नौ नेत्र तथा छः भुजायें थीं। उनके दर्शन से अर्जुन का भय समाप्त हो गया और उन्होंने भगवान् शंकर को नमस्कार कर के पाशुपतास्त्र को गाण्डीव धनुष पर संयोजित कर दानवों पर चला दिया। उस अस्त्र के छूटते ही उससे सहस्रों रूप प्रकट हो गये। मृग, सिंह, व्याघ्र आदि नाना प्रकार के जीवों का उससे प्रादुर्भाव हुआ और सभी जीव विविध प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों से सम्पन्न थे। उन सब जीवों के प्रहार से सारे दानव नष्ट हो गये। जब समस्त दानवों का संहार हो गया तब अर्जुन ने शङ्कर को प्रणाम किया। मातलि ने उस समय अर्जुन के पराक्रम को देखकर अत्यन्त प्रशंसा की। इस प्रकार देवकार्य सम्पन्न हो जाने पर मातलि अर्जुन को लेकर इन्द्रलोक आये जहाँ

उन्होंने देवराज से सारा समाचार बताया। इन्द्र ने अर्जुन को धन्यवाद देते हुये उन्हें देव, असुर, गन्धर्व, आदि किसी से भी पराजित न होने का आशीर्वाद दिया (३. १७३)।

"इन्द्र ने अर्जुन से कहा : 'तुममें सब दिव्यास्त्र विद्यमान हैं। भूमण्डल का कोई भी मनुष्य तुम्हें पराजित नहीं कर सकता। भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य, कर्ण, शकुनि, अथवा अन्य राजा भी संग्राम में खड़े होने पर तुम्हारी सोलहवीं कला के बराबर भी नहीं होंगे।' ऐसा कहकर इन्द्र ने अर्जुन के शरीर की रक्षा के लिये उन्हें एक अभेद्य कवच, सुवर्णमयी माला, देवदत्त शंख, और किरीट प्रदान किया। सत्कार करने के बाद इन्द्र ने अर्जुन को विदा किया। इस प्रकार अर्जुन पाँच वर्ष तक इन्द्रलोक में रहने के बाद अपने भाइयों के पास गन्धमादन पर्वत पर लौट आये। दूसरे दिन प्रातः काल अपने सभी दिव्यास्त्रों को युधिष्ठिर को दिखाने का वचन देने के बाद अर्जुन ने रात व्यतीत की (३. १७४)।

"दूसरे दिन जब अर्जुनने अपने भाइयों को अपने दिव्यास्त्रों को दिखाने का आयोजन किया तब उनके पैरों से दबी हुई पृथिवी वृक्षों सहित काँपने लगी। नदियों और समुद्र में उफान आ गया। इसी समय ब्रह्मर्षि, सिद्ध, महर्षि, समस्त जङ्गम प्राणी, श्रेष्ठ देवर्षि, देवता, यक्ष, राक्षस, गन्धर्व, पक्षी, तथा आकाशचारी प्राणी वहाँ आकर उपस्थित हो गये। ब्रह्मा, लोकपाल और महादेव भी वहाँ आये। अर्जुन पर दिव्य पुष्पों की वर्षा होने लगी और अप्सरायें नृत्य करने लगीं। महर्षि नारद ने आकर अर्जुन से दिव्यास्त्रों का उस समय प्रदर्शन न करने के लिये कहते हुये बताया कि इनको लक्ष्य के बिना कदापि नहीं छोड़ना चाहिये क्योंकि समुचित रक्षा न होने पर ये दिव्यास्त्र तीनों लोकों के विनाश का कारण बन जाते हैं। इस प्रकार अर्जुन को दिव्यास्त्रों के प्रदर्शन से रोककर सम्पूर्ण देवता तथा अन्य सभी प्राणी जैसे आये थे वैसे लौट गये। उन सब के चले जाने पर द्रौपदी सहित पाण्डव हर्षपूर्वक उसी वन में रहने लगे (३. १७५)।"

निवातकवचान्तक = अर्जुन : ७. ८८, १७; १४. ७२, १५; ७७, १।

निविड = क्रौञ्चद्वीप के एक पर्वत का नाम है (६. १२, १९)।

निवृत्तश्रम = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

निवृत्तरूप = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

निवृत्ति = शिव (सहस्रनाम)।

निवेदन = शिव (सहस्रनाम)।

१. निशठ, एक वृष्णि राजकुमार का नाम है : १. २१९, १०; २२१, ३१ (यह अर्जुन और सुभद्रा के विवाह के अवसर पर उपस्थित हुये); २. ४, ३५; ३४, १६ (युधिष्ठिर के राजसूय में आये); ३. १२०, १९ (उन वृष्णि योद्धाओं में यह भी एक थे जो पाण्डवों की सहायता करेंगे); ४. ७२, २२ (अभिमन्यु और उत्तरा के विवाहोत्सव में पधारे); ७. ११, २८; १४. ६६, ४ (कृष्ण के साथ गये); ८६, ५; १८. ५, १६ (उन लोगों में यह भी एक थे जो मृत्यु के पश्चात् देवों में प्रविष्ट हुये)।

२. निशठ, एक प्राचीन राजा का नाम है जो यम की सभा में उपस्थित होते थे (२. ८, ११)।

१. निशा, भानु नामक अग्नि की पत्नी का नाम है (३. २२१, १५)।

२. निशा—'निशां देवीमुपातिष्ठत तत्र सा', (५. १३, २६)।

१. निशाकर = सोम (चन्द्रमा), देखिये वस्था०।

२. निशाकर, गरुड के पुत्र एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, १४)।

१. निशाचर (बहु० °राः) = राक्षस : १. २२८, ७; २. १०, ३०; ३. ३, २९; १५४, ३; १६०, ७७; २८३, ५३; २८४, ३२. ३६; २८६, १०; ६. ९१, २७. २२; ७. १४८, ५६; ८. ९४, ५२; १०. ८, १३३; ११. १६, २२; १२. १७२, २१. २३; ३०२, २१; १३. ९७, १४; १३१, २. ३।

२. निशाचर (एक०) : ३. २७८, २१ (मारीच); २७९, ३ (रावण); २८०, ६३ (रावण); २८१, १७ (रावण); २८४, १५ (रावण); २९०, २० (रावण); २९१, ११ (रावण); ६. ९२, १५ (घटोत्कच); १००, ४९ (अलम्बुष); १०१, १४ (अलम्बुष); ७. १०९, ३१ (अलम्बुष); ८. ४५, २४ (कल्माषपाद)।

३. निशाचर = शिव (सहस्रनाम)।

निशाचरपति = शिव (७. ५२, ४३)।

निशाचरिन् = शिव (सहस्रनाम)।

निशाचरी, से राक्षसी का तात्पर्य है : ३. २३०, २७ (शीतपूतना); १३. १५२, २१ (गायत्री ? तुकी० नीलकण्ठी)।

निशाचरेन्द्र = रावण : ३. १४८, १२।

निशालय = शिव (सहस्रनाम)।

निश्चिता, एक नदी का नाम है (६. ९, १८)।

निश्चरा—देखिये निर्वीरा।

निश्च्यवन, एक अग्नि का नाम है (३. २१९, १२)।

निषङ्गिन्, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७, १०३; ११७, ८; ८. ५१, ७; ८४, २ (धृतराष्ट्र के उन दस पुत्रों में यह भी एक था जिसका भीमसेन ने वध किया)।

निषठ—देखिये निशठ।

निषदः – 'निषत्सुपनिषत्सु', (१२. ४७, २६)।

१. निषध, जनमेजय के पुत्र का नाम है (१. ९४, ५६)।

२. निषध, एक प्राचीन नरेश का नाम है जो यम की सभा में उपस्थित होते थे (२. ८, १५)।

३. निषध, एक पर्वत का नाम है : ३. १८८, ११२ (मार्कण्डेय ने नारायण के उदर में इसे देखा); ३१५, १३ (इन्द्र ने इस पर्वत पर अज्ञातवास किया); ६. ६, ४ (जम्बूद्वीप के वर्षपर्वतों में से एक). ८ (दक्षिणेन तु नीलस्य निषधस्योत्तरेण). ५२; ७, १९; ८, २. ५; १३. १६५, ३२।

४. निषध, बहु० (°धाः) एक जाति के लोगों का नाम है : ३. ५२ ५५ (निषधेषु महीपालो वीरसेनः); ५३, ३. २७. ३२ (नल निषधों के राजा थे); ५९, २. ५; ६४, ४८. ५५. ७९. ८७. ९३. १०५; ७८, ३; ६. ९, ५१।

निषधराजेन्द्र, निषधाधिप, निषधाधिपति, निषधेश्वर = नल (देखिये वस्था०)।

१. निषाद (बहु० °दाः), एक निम्न जाति के लोगों का द्योतक है : १. २८, २ (ये समुद्र के बीच में स्थित एक द्वीप में रहते थे). १७-१९ (गरुड ने इनका भक्षण किया); २९, ११; २. ३१, ५. ६७ (सहदेव ने इन्हें पराजित किया); ३. १३०, ४ (विनशन नामक तीर्थ निषादराज का द्वार है। निषादों के संसर्ग दोष से यहाँ सरस्वती नदी पृथिवी के भीतर प्रविष्ट हो गई है); ६. ९, ५१ (ये भारतवर्ष की एक जाति थे); ५०, ४९; ५४, ७ (केतुमत् का अनुगमन करते हुये इन लोगों ने भीमसेन के विरुद्ध युद्ध के लिये प्रस्थान किया). ९. १५; ११७, ३३ (अर्जुन पर आक्रमण किया); ७. ४, ८ (कर्ण ने इन्हें पराजित किया था); ४६, २२ (अभिमन्यु से युद्ध किया); १९७, ३७; ८. ८, १९ (इन जातियों में यह भी एक थे जिन्हें कर्ण ने पराजित करके दुर्योधन को कर देने के लिये विवश किया था); १७, १२ (अर्जुन पर आक्रमण किया); २०, १० (पाण्ड्य ने इनका वध किया); २२, ३ (पाञ्चालों पर आक्रमण किया). २१ (नकुल पर आक्रमण किया); ४९, ४ (कर्ण पर आक्रमण किया); ७०, ९ (भीमसेन ने इनका वध किया था); १२. ५९, ९५ - ९७ (ऋषियों ने जब वेन की दाहिनी जाँघ का मन्थन किया तब उससे एक नाटे कद का मनुष्य उत्पन्न हुआ जिसकी आकृति बेडौल थी। उसकी आँखें लाल और बाल काले थे। वेदवादी, महर्षियों ने उसे देखकर 'निषीद' (अर्थात् बैठ जाओ) कहा। उसी मनुष्य से पर्वतों और वनों में रहने वाले क्रूर निषादों की उत्पत्ति हुई); २९६, ८ (विभिन्न जातियों के साथ इनका भी उल्लेख है); ३२८,

१४; १३. ४८, १२. २१. २३. २७ (ये क्षत्रिय द्वारा शूद्रा के गर्भ से उत्पन्न हुये); ५०, १२. २४. २७; ५१, ६. ८. १०. १२ (निषादों ने मछली मारने के जाल में एक बार महर्षि च्यवन को फँसा लिया और उन्हें लाकर नहुष के हाथ एक गाय के मूल्य पर बेच दिया। वही गाय इन लोगों ने च्यवन को देकर स्वर्ग प्राप्त किया); १४. ८३, ८ (अश्वमेध के अश्व की रक्षा करते समय अर्जुन ने इन्हें पराजित किया था)।

२. निषाद (एक०) निषादों के राजा का द्योतक है : ५. ४, २१ (उन राजाओं में यह भी एक था जिन्हें पाण्डवों ने रण-निमन्त्रण भेजा);

३. निषाद (एक०) = एकलव्य (७. १८०, ३२)।

निषादज = एकलव्य (१. १३२, ५३; ७. १८१, ५)। तुकी० निषाद।

१. निषादराज = हिरण्यधनुस् : १. १३२, ३१ (निषादराजस्य हिरण्यधनुषः सुतः एकलव्यः)।

२. निषादराज = एकलव्य (५. ४८, ७७)।

निषादराजन् = एकलव्य का पुत्र (१४. ८३, ७)।

१. निषादाधिपति (निषादों का राजा) : १. ६७, ५० (महान् तेजस्वी और महामायावी कालेय दैत्यों में से तीसरा निषाद नरेश के रूप में उत्पन्न हुआ था); २. ३०, ११ (दिग्विजय के समय भीमसेन ने इन्हें पूर्व दिशा में पराजित किया था)।

२. निषादाधिपति = हिरण्यधनुस् : १. १३२, ४५ (अर्थात् एकलव्य). ४९ (निषादाधिपतेः सुतम्, अर्थात एकलव्य)।

१. निषादी (निषादपत्नी)—१. २, १०४ (लाक्षागृह में अपने पाँच पुत्रों के साथ सोती हुई एक निषादी मृत्यु को प्राप्त हुई); १४१, १० (निषादी पञ्चपुत्रा); १४८, ७ (निषादी पञ्चपुत्रा); १५०, ७।

२. निषादी : एक ब्राह्मण की भार्या निषादी थी। गरुड़ ने उस निषादी सहित ब्राह्मण का भक्षण कर लिया था किन्तु ब्राह्मण के निवेदन पर उन्होंने निषादी सहित उस ब्राह्मण को अपने उदर से बाहर निकल आने की स्वीकृति दी : १. २९, ३-५; १२. १३५, ३ (यह कायव्य की माता थी); १३. ४८, २६. २८।

निष्कम्प = शिव (सहस्रनाम)।

निष्कुट, एक पर्वत का नाम है जिस पर दिग्विजय के समय अर्जुन ने विजय प्राप्त की (२. २७, २९)।

निष्कुटिका, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १२)।

निष्कृति, एक अग्नि का नाम है (३. २१९, १४)।

१. निष्क्रिय = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

२. निष्क्रिय = विष्णु (१२. ३४९, २४. ३१. ४३)।

निष्ठा = विष्णु (सहस्रनाम)।

निष्ठानक, एक नाग का नाम है (१. ३५, ९)।

निष्ठुरिक, एक नाग का नाम है (५. १०३, १२)।

निसुन्द, एक असुर का नाम है : ३. १२, २९ (इसका कृष्ण ने वध किया था)।

निहन्तृ = शिव (सहस्रनाम)।

१. नीति, मूर्तिमान नीति का द्योतक है : १२. १२२, २५ (= सरस्वती)। देखिये १२. १२१, २४ भी।

२. नीति = शिव (सहस्रनाम)।

नीतिशास्त्र, आचरण (मुख्यतः राजनीतिक) सम्बन्धी नियमों के संग्रह का द्योतक है : १. ४९, १६; १०९, १९; १३०, ५; १४०, २६; १४५, २१; १५४, ५; २. १९, २६; ५. ६, १९; १२. ५९, ७४; १११, ७३; १३८, ४०. ४२. १९६; २१०, २०; २६७, ९; १३. १६३, ७; १४. ६६, २४।

नीथ, एक वृष्णि का नाम है : ३. १२०, १९ (वाहुक, भानु और नीथ पाण्डवों की सहायता करेंगे)।

नीप (बहु० °पाः) एक जाति अथवा कुटुम्ब के लोगों का नाम है : २. ८, २२ (यम की सभा में); ५०, २० (युधिष्ठिर के सभाभवन में सेवकों के रूप में निवास करने वालों में ये भी थे); ५१, २४ (युधिष्ठिर की सेवा करते थे); ५. ७४, १३; १३. ३४, १७ (अङ्गिरसों द्वारा पराजित हुये)।

नीपातिन् = शिव (सहस्रनाम)।

नीरज = शिव (सहस्रनाम)।

१. नील, एक नाग का नाम है (१. ३५, ७)।

२. नील, महिष्मती के राजा का नाम है : १. ६७, ६१ (ये क्रोध वशों के अंश से उत्पन्न हुये थे); १८६, १० (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित थे); २. ३१, २१ (दिग्विजय के समय सहदेव का इनसे युद्ध हुआ था). २८. ३० (अग्नि ने इनकी पुत्री से विवाह किया). ५८ (इन्होंने सहदेव का सत्कार किया); ३. २५४, १५ (अपनी दिग्विजय के समय कर्ण ने इन्हें पराजित किया था); ५. ४, १६; १९, २३ (ये अपनी सेना के साथ दुर्योधन के पास आये); १६६, ४ (ये दुर्योधन की सेना में रथी थे); ६. ५६, १३ (युधिष्ठिर की सेना में); ९३, १५ (घटोत्कच का अनुसरण किया); ९४, २९. ३२. ३४-३६ (अश्वत्थामा से युद्ध करते समय मूर्छित हुये); ७. २३, ६१ (द्रोण से युद्ध के लिये गये—इनके अश्वों का वर्णन); २५, ४५ (धृतराष्ट्र-पुत्रों से युद्ध किया); ३१, १९. २१. २२. २४. २७ (अश्वत्थामा ने इनका वध किया); ८. ६, १६; १२. ४, ६ (कलिङ्गराज चित्राङ्गद की पुत्री के स्वयंवर में उपस्थित थे)। तुकी० नीलराजन्।

३. नील, एक पर्वत का नाम है : ३. १२८, ११३ (मार्कण्डेय ने इसे नारायण के उदर में देखा था); ६. ६, ४. ८. ३७. ५२ (यह जम्बूद्वीप के वर्षपर्वतों में से एक था। दक्षिण में स्थित यह पर्वत महर्षियों का निवास स्थान था); ७, २. १९; ८, ५ (दक्षिणेन तु नीलस्य निषधस्योत्तरेण तु। वर्षं हैरण्मयं नाम यत्र हैरण्वती नदी); १३. १६५, ३२; १४. ४३, ५; ७६, ७। तुकी० नीलपर्वत।

४. नील, एक वानर यूथपति का नाम है : ३. २८३, १९ (राम की वानरी सेना में); २८७, २७ (प्रमाथिन् नामक राक्षस से युद्ध किया); २८९, ४. १३; २९०, ३।

५. नील, एक पाण्डव योद्धा का नाम है : ५. १७१, १५ (ये युधिष्ठिर की सेना के एक रथी थे)। तुकी २. नील।

६. नील, एक कौरव योद्धा का नाम है (७. १५६, १२०)।

७. नील = शिव (सहस्रनाम)।

नीलकण्ठ = शिव (देखिये वस्था०)।

नीलग्रीव = शिव (देखिये वस्था०)।

नीलपर्वत, एक पर्वत का नाम है (१३. २५, १३)। तुकी० ३. नील।

नीलमौलि = शिव (सहस्रनाम)।

नीलराजन् = २. नील (२. ३१, ३४)।

नीललोहित = शिव (देखिये वस्था०)।

नीलवासस् = बलराम (१. २२०, २०; ९. ३७, १९; ५५, ४१)।

नीलशिखण्ड = शिव (७. ८०, ५८)।

नीला, एक नदी का नाम है (६. ९, ३१)।

नीलायुध (बहु० °धाः), राजा नील के अनुचर, एक जाति के लोगों का नाम है : ५. १९, २३; ६. ५६, १३।

नीलिका, एक नदी का नाम है (१३. १६५, २८)।

नीली, अजमीढ की भार्या का नाम है : १. ९४, ३२ (यह अजमीढ की द्वितीय पत्नी थी और दुष्यन्त तथा परमेष्ठिन् की माता बनी)।

नीवारा, भारत की एक नदी का नाम है (६. ९, २१)।

नृग, एक प्राचीन नरेश का नाम है : १. १, ५५, ५; २. ८, ८ (यम की सभा में); ३. ८८, ४-६ (राजा नृग की नदी पयोष्णी अगाध जल से सुशोभित और द्विजों से सेवित थी। मार्कण्डेय ने नृग के वंश की यशोगाथा का वर्णन किया था); ९४, १७; १२१, १ (पयोष्णी के तट पर नृग के यज्ञ का वर्णन); १९९, १८ (ननु देवकीपुत्रेणापि कृष्णेन नरको मज्जमानो

राजर्षिर्नृगस्तस्मात् कृच्छ्रात् पुनः समुत्थाप्य स्वर्गं प्रापितः); ६. ९, ७; १७, १० (इन्हें उच्चतम लोक प्राप्त हुआ); ९. ५३, २३ (कुरुक्षेत्र में यज्ञ किया); १२. ८, ३३ (ये पृथिवी पर शासन कर चुके थे); १३. २, ३८ (ओघवत् के पौत्र थे); ६, ३८ (ये एक पाप के कारण एक कृकलास हो गये थे); ७०, १. ७. १०. ३०-३२ (इन्होंने एक ऐसी गाय का दान कर दिया था जो पहले ही दान की जा चुकी थी। इस पाप के कारण इन्हें कृकलास के रूप में पुनः जन्म लेना पड़ा था। श्रीकृष्ण ने इनका उद्धार किया था); ७६, २५ (इन्होंने अनेक गायों का दान किया); ८४, ८; ११५, ६९; १६५, ४८; १३. १६५, ४८; १४. ९०, ९९-१०१ (इन्होंने एक हजार गायें ब्राह्मणों को दान दीं परन्तु उनमें से एक गाय ऐसी थी जो पहले ही दान की जा चुकी थी। इस पाप के कारण इन्हें नरकवास करना पड़ा)।

नृत्यप्रिय = शिव (सहस्रनाम)।

नृत्यप्रिया, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १०)।

नृपर्षि, राजर्षियों का द्योतक है (८. ८७, ५१; १३. ९४, ४३)।

नृयज्ञ, एक प्रकार के यज्ञ का नाम है (१०. १८, ५. ६)।

नृशंस = शिव (१४. ८, २५)।

नृसिंह, विष्णु के एक अवतार का नाम है : ३. २७२, ५९ (इस अवतार में विष्णु ने हिरण्यकशिपु का वध किया था)। तुकी० नरसिंह, नारसिंह (वि०)।

१. नेतृ = स्कन्द (३. २३२, ७)।

२. नेतृ = शिव (सहस्रनाम)।

३. नेतृ = विष्णु (सहस्रनाम)।

नेय = विष्णु (सहस्रनाम)।

नैक, नैककर्मकृत, नैकज = विष्णु (सहस्रनाम)।

नैकदृश्, विश्वामित्र के पुत्र का नाम है (१३. ४, ५४)।

नैकपृष्ठ (बहु० °ष्ठाः) : ६. ९, ४१।

नैकमय, नैकरूप, नैकशृङ्ग = विष्णु (सहस्रनाम)।

नैकसानुचर = शिव (सहस्रनाम)।

१. नैकात्मन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

२. नैकात्मन् = शिव (सहस्रनाम)।

नैगमेय, स्कन्द के स्वरूप अथवा स्कन्द से ही सम्बद्ध एक देवता का नाम है : १. ६६, २४ (तस्य शाखो विशाखश्च नैगमेयश्च पृष्ठजः); ३. २२६, २९ (अग्निर्भूत्वा नैगमेयश्छागवक्त्रो बहुप्रजः। रमयामास शैलस्थं बालं क्रीडनकैरिव); २३२, ७ (स्कन्द के नामों में से एक); ९. ४४, ३८ (स्कन्द के चार रूपों में से एक : तस्य शाखो विशाखश्च नैगमेयश्च पृष्ठतः). ४४ (नैगमेयोऽजमवक्त्रकां कुमारः पावकप्रभः)।

नैघण्टुक, वैदिक शब्दकोश का नाम है (१२. ३४२, ८८)।

१. नैमिष, एक पवित्र वन का नाम है : १. २१५, ६ (इस सुन्दर वन में अर्जुन आये थे); ३. ८४, ५९-६१. ६३. ६४ (इसका वर्णन); ८७, ६ (यह पूर्व में स्थित है); ७. ५४, २६ (मृत्यु यहाँ आई); ८. ४५, १६; ९. ३७, ३७-५७ (वैशम्पायन ने बताया कि नैमिषारण्य निवासी मुनियों के दर्शन के लिये पूर्व दिशा की ओर लौटी हुई सरिताओं में श्रेष्ठ सरस्वती का दर्शन करके श्वेतचन्दन-चर्चित बलराम आश्चर्यचकित हो उठे। जनमेजय ने जब बलराम जी के आश्चर्य का कारण पूछा तब वैशम्पायन ने बताया : 'सत्ययुग में नैमिषारण्य में एक द्वादशवर्षी यज्ञ का अनुष्ठान हुआ। उस सत्र में नैमिषारण्यनिवासी तपस्वी मुनि तो थे ही अनेक अन्य ऋषि भी पधारे थे। वे सभी महाभाग ऋषि दीर्घकाल तक वहाँ रहे। जब यज्ञ समाप्त हो गया तब अनेक महर्षि तीर्थसेवन के लिये वहाँ आये। ऋषियों की संख्या अधिक होने के कारण सरस्वती के दक्षिण तट पर जितने तीर्थ थे वे सभी नगरों के समान प्रतीत होने लगे। तीर्थसेवन के लोभ से वे महर्षिगण समन्तपंचक तीर्थ तक सरस्वती नदी के तट पर ठहर गये। सरस्वती के उस निकटवर्ती तट पर सुप्रसिद्ध तपस्वी बालखिल्य, अश्मकुट्ट, दन्तोलूखली, प्रसंख्यान, आदि विराजमान थे। सत्रयाग में सम्मिलित हुए सैकड़ों महर्षि वहाँ आये किन्तु उन्होंने सरस्वती तट पर अपने निवासयोग्य स्थान उपलब्ध नहीं देखा। तब उन लोगों ने यज्ञोपवीत से उस तीर्थ का निर्माण कर के वहाँ अग्निहोत्र सम्बन्धी आहुतियाँ दीं। उस समय उस ऋषि-समूह को निराश देख और चिन्तित जान कर सरस्वती ने उनकी अभीष्ट-सिद्धि के लिये उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन दिया। तत्पश्चात् अन्यान्य कुञ्जों का निर्माण करती हुई सरस्वती पीछे लौट पड़ीं क्योंकि उनके हृदय में उन ऋषियों के प्रति करुणा का संचार हो गया था। उनके लिये लौटकर सरस्वती पुनः पश्चिम की ओर मुड़ कर बहने लगीं। उस महानदी (सरस्वती) ने यह विचार किया था कि वे उन ऋषियों को सफल बनाकर पुनः पश्चिम मार्ग से ही लौट आयेंगी। इसी कारण उन्होंने (सरस्वती ने) वह महान् कार्य किया था। इस प्रकार वह कुञ्ज नैमिषीय नाम से प्रसिद्ध हुआ); ३८, १६. १९ (नैमिषारण्य में सरस्वती नदी काञ्चनाक्षी नाम से प्रकट हुई); १२. १५३, २; २९७, ३७; ३५५, २ (नैमिषे गोमतीतीरे तत्र नागाह्वयं पुरम्); १३. २५, ९. ३३; १०२, ४५; १०३, ३८; १६५, २३।

२. नैमिष (बहु० °षाः), नैमिषारण्य के निवासियों का द्योतक है (८. ४५, १४)।

नैमिषकुञ्ज, सरस्वती नदी के तट पर स्थित एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १०९)। देखिये ९. ३७, ५४ भी।

नैमिषाख्य = १. नैमिष : १. १, १. ३ (यहाँ शौनक ने द्वादशवर्षी यज्ञ का अनुष्ठान किया था); २, ८४ (यहाँ महाभारत के अट्ठारह पर्वों का परायण किया गया था); ४, १; १३, ७; १९७, १ (देवों ने यज्ञानुष्ठान किया था); ३. ९५, १० (तीर्थयात्रा करते हुये युधिष्ठिर यहाँ आये); २००, ७९; ९. ४१, २७; १२. ३३९, ४० (शौनक आदि यहाँ निवास करते थे); ३४६, १६ (शौनकाद्येषु नैमिषारण्यवासिषु)। तुकी० १. नैमिष।

नैमिषीय (वि०) : ९. ३७, ४३-५७; ४१, ३।

नैमिषेय (वि०) : ३. ८३, १०९ (यहाँ के ऋषिगण); ९. ३७, ३७. ४१।

नैयायिक, तर्कशास्त्रियों का द्योतक है : १. २, ७५ (नैयायिकानां मुख्येन वरुणस्यात्मजेन, अर्थात् बन्दी)।

१. नैर्ऋत (बहु० °ताः), निर्ऋति के पुत्रों = राक्षसों का द्योतक है : १. ६६, ५४ (निर्ऋति और अधर्म से उत्पन्न राक्षसगण); ३. १७३, ५०; २८७, २९ (ये रावण के अनुचर थे); ५. १००, ५ (यातुधान); १०९, ८ (सहस्रों नैर्ऋत दक्षिण में रहते थे); १११, १२ (ये उत्तर में सौगन्धिक वन की रक्षा करते थे); ९. ४५, २८ (देवों ने इन्हें स्कन्द को दिया); ४६, १०३; ४७, ३१; १२. ६७, २६; ७४, ५ (कुबेर ने इन्हें उत्पन्न करके मुचुकुन्द की सेना के विरुद्ध युद्ध के लिये भेजा); २२७, ५४।

२. नैर्ऋत (बहु० °ताः) एक जाति के लोगों का नाम है जो भारतवर्ष में निवास करते थे (६. ९, ५१)।

३. नैर्ऋत (वि०) : २. ८०, २२; ३. १६८, ३०; ७. १५६, १३५; ९. ४६, ५५ (ये स्कन्द की सेना में सम्मिलित थे); १२, १६५, ५१; १६६, १३ (ब्रह्मा द्वारा सृजित)।

नैर्ऋति, एक असुर का नाम है, जिसका पृथिवी के प्राचीन शासकों के साथ उल्लेख है (१२. २२७, ५२)।

१. नैषध = नल (देखिये वस्था०)।

२. नैषध, युधिष्ठिर के समकालीन निषधराज का द्योतक है : ७. २०, १३ (द्रोण के गारुडव्यूह में स्थित); ३२, ६६ (धृष्टद्युम्न ने इनका वध किया)।

३. नैषध (बहु० °धाः), निषधदेश के निवासियों का द्योतक है : ३. ६१, १९; ६४, १३ (= नल)।

४. नैषध – देखिये १. नल के पर्यायों के अन्तर्गत।

नैषध्य (वि०) : ४. ४२, २४।

नैषाद, निषादों के आचार-विचार के लिये प्रयुक्त हुआ है : १२. १३५, ३।

१. नैषादि = एकलव्य : १. १३२, ३२. ३८. ५०. ५९; ७. १८१, २. १७. १८।

२. नैषादि = एकलव्यसुत : १४. ८३, १०; १६. ६, ११।

३. नैषादि = कायव्य (१२. १३५, ३)।

४. नैषादि = केतुमत् (६. ५४, ५)।

५. नैषादि, एक कौरव सैनिक का नाम है जिसका भीमसेन ने वध किया था (८. ६०, ८०)।

नौकर्णी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २९)।

नौबन्धन, हिमालय के एक पर्वतशिखर का नाम है जिससे मनु वैवस्वत ने अपनी नौका बाँधा था (३. १८७, ५०)।

१. न्यग्रोध = शिव (सहस्रनाम)।

२. न्यग्रोध = विष्णु (सहस्रनाम)।

न्यग्रोधरूप = शिव (सहस्रनाम)।

न्यग्रोधाख्य, एक तीर्थ का नाम है (३. ९०, ११)।

१. न्याय, एक शास्त्र का नाम है : १. १, ६७; ७०, ४२; २. ५, ३; १२. ५९, १४१; २६९, ६४।

२. न्याय = विष्णु (सहस्रनाम)।

न्यायनिर्वपण = शिव (१३. १७, २६)।

प

पक्तृ, पक्वभुज्, पक्वाममांसलुब्ध = शिव (सहस्रनाम)।

पक्ष = शिव (सहस्रनाम)।

पक्षरूप = शिव (सहस्रनाम)।

पक्षालिका, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १९)।

पक्षिन् (एक० और बहु०) = शिव (सहस्रनाम)।

१. पक्षिराज् = गरुड : १. २८, १९; ३१, ३; ३२, १. ११. १४, १८; ३३, २२; १०२, ४६; ३. १३१, १४; ६. ८, ६; ७. ४८, ३६; १२८, १०।

२. पक्षिराज् = सम्पाति : ३. २८२, ५५।

१. पक्षिराज = गरुड : ५. १०१, ४; १२. ३२७, ७।

२. पक्षिराज = सुरुच : ५. १०१, ३।

पङ्कजित्, गरुड-पुत्र एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, १०)।

पङ्कदिग्धाङ्ग, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ३५)।

पचपच = शिव (सहस्रनाम)।

पञ्चक, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है जिसे इन्द्र ने उन्हें प्रदान किया था (९. ४५, ३५)।

पञ्चकर्पट (बहु० °टाः) पश्चिम की एक जाति का नाम है जिसे नकुल ने पराजित किया था (२. ३२, ७)।

पञ्चकालकर्तृपति = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

पञ्चगङ्ग (बहु०) एक तीर्थ का नाम है जिसका मृत्यु ने भी सेवन किया था (७. ५४, २३)।

पञ्चचूडा, एक अप्सरा का नाम है : ३. १३४, १२; १२. ३३२, १९ (पञ्चचूडाप्रभृतयः); १३. ३८, २ (नारदस्य संवादं पुंश्चल्या पञ्चचूडया). ३. (अप्सरसं मार्ष्णीं). ११ (नारद और पञ्चचूडा का संवाद); १६५, १५। तुकी० रम्भा।

१. पञ्चजन, एक असुर का नाम है जो पाताल में रहता था। श्रीकृष्ण ने इसका वध करके पाञ्चजन्य नामक शंख प्राप्त किया था (७. ११, २०)।

२. पञ्चजन–देखिये पञ्चनद (१६. ८, १७)।

१. पञ्चनद, पाँच नदियों का देश, अर्थात् पंजाब : २. ३२, ११ (नकुल ने इस पर विजय प्राप्त की); ३. ८२, ८३; ८३, १६; १३४, १२ (लोके ख्यातं पञ्चनदं च पुण्यम्); २२२, २२ (सिन्धुं नदं पञ्चनदं); ५. १९, २९; १३. १०२, ४६ (एक तीर्थ); १४. ८३, १८; १६. ७, ४५, ८, १७ (पञ्चनदालयैः)।

२. पञ्चनद (वि०) : ५. ४, १९ (पञ्चनदा नृपाः)।

३. पञ्चनद (बहु० °दाः), पञ्चनद के निवासियों का द्योतक है (६. २०, १०; ५६, ५; ८. ४५, ३०. ३८)।

पञ्चनाभि = कृष्ण (१३. १५८, २७)।

पञ्चमी, एक नदी का नाम है (६. ९, २६)।

पञ्चयज्ञा, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, १०)।

पञ्चयज्ञ = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

पञ्चरात्र, एक शास्त्रीय कृति का द्योतक है : १२. २१८, ११; ३३५, २५; ३३९, ११२ (इदं महोपनिषदं चतुर्वेदसमन्वितम्। सांख्ययोगकृतं तेन पञ्चरात्रानुशब्दितम्। नारायणमुखोद्गीतं नारदोऽश्रावयत्पुनः। ब्रह्मणः सदने तात यथा दृष्टं यथा श्रुतम्); ३४९, ६४ (पञ्चज्ञानों में से एक). ६८ (पाञ्चरात्रस्य कृत्स्नस्य वेत्ता तु भगवान्स्वयम्). ७२ (पाञ्चरात्रविदो)।

पञ्चरात्रिक = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

पञ्चवक्त्र, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७६)।

पञ्चवटी, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १६२)।

पञ्चवीर्य, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३६)।

पपञ्चशिख, एक मुनि का नाम है : १२. २१८, ६ (पञ्चशिखो नाम कापिलेयो महामुनिः). १२. १५ (ये आसुरि के शिष्य थे और कपिला नामक ब्राह्मणी का दूध पीने से कापिलेय कहलाये); २१९, ५. ५१ (इन्होंने जनक को उपदेश दिया था); ३१८, ६० (विश्वावसु को उपदेश दिया था); ३१९, ३. ४ (जनक को उपदेश दिया था); ३२०, २४ (पराशरसगोत्रस्य वृद्धस्य सुमहात्मनः। भिक्षो पञ्चशिखस्याहं शिष्यः). १६२ (पञ्चशिखाच्छ्रुतः)। तुकी० कापिलेय।

पञ्चशिख वाक्यं (पञ्चशिख के उपदेश)—"भीष्म ने कहा : प्राचीन काल में मिथिला के राजा जनक देहत्याग के पश्चात् सदा आत्मा के अस्तित्वरूप धर्मों के चिन्तन में ही लगे रहते थे। उनके दरबार में सौ आचार्य नित्य रहते थे जो विभिन्न आश्रमों के निवासी थे। वे सभी भिन्न-भिन्न धर्मों का उपदेश देते रहते थे। शरीर को त्याग देने के पश्चात् जीव की सत्ता रहती है या नहीं, अथवा उसका पुनर्जन्म होता है या नहीं, इस विषय में उन आचार्यों के विचार से राजा जनक को विशेष सन्तोष नहीं होता था। एक बार कपिल के पुत्र महामुनि पञ्चशिख पृथिवी की परिक्रमा करते हुये मिथिला आये। वे सम्पूर्ण संन्यास-धर्मों के ज्ञाता और तत्त्वज्ञान के निर्णय में एक सुनिश्चित सिद्धान्त के पोषक थे। उनके मनमें किसी प्रकार का सन्देह नहीं था और वे निर्द्वन्द्व होकर विचरण करते थे। सांख्य के विद्वान तो उन्हें साक्षात् प्रजापति महर्षि कपिल का ही स्वरूप मानते थे। उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता था मानो सांख्यशास्त्र के प्रवर्तक भगवान् कपिल स्वयं ही पञ्चशिख के रूप में उपस्थित हैं। उन्हें आसुरि मुनि का प्रथम शिष्य और चिरंजीवी बताया जाता है। उन्होंने एक सहस्र वर्षों तक मानस यज्ञ का अनुष्ठान किया था। ये महर्षि पञ्चशिख पाँच स्रोतों वाले मन के व्यापार में कुशल थे; पञ्चरात्र आगम के विशेषज्ञ थे; पाँचों कोशों के ज्ञाता और तद्विषयक पाँच प्रकार की उपासनाओं के जानकर थे। शम,

दम, उपरति, तितिक्षा और समाधान—इन पाँचों गुणों से भी युक्त थे। इसी कारण ये पञ्चशिख कहलाते थे। आसुरि ने एक समय उपस्थित शिष्य मण्डली के समक्ष एकमात्र अक्षर और अविनाशी ब्रह्म के ही नाना रूपों में दिखाई पड़ने से सम्बद्ध ज्ञान का प्रतिपादन किया। उन्हीं आसुरि के शिष्य पञ्चशिख थे जो मानवी दूध से पले थे। कपिला नामक एक ब्राह्मणी का स्तनपान करने के कारण कापिलेय नाम से भी इनकी प्रसिद्धि हुई। पञ्चशिख ने राजा जनक के दरबार में आकर अपने युक्तियुक्त वचनों द्वारा वहाँ के सभी सौ आचार्यों को मोहित कर दिया। पञ्चशिख का ज्ञान देख कर राजा जनक भी अपने सौ आचार्यों को छोड़कर उन्हीं के प्रति आकृष्ट हो गये। पञ्चशिख ने राजा को योग्य अधिकारी मान कर उन्हें सांख्यशास्त्रानुसार परम मोक्ष का उपदेश दिया। उन्होंने जातिनिर्वेद, कर्मनिर्वेद और सर्वनिर्वेद का उपदेश दिया। तदनन्तर उन्होंने जनक को अनेक प्रकार से विरतृत उपदेश देते हुये आत्मा और जीव की प्रकृति पर प्रकाश डाला। इनका उपदेश भ्रम और वञ्चना से रहित, सर्वथा निर्दोष तथा आत्मा का साक्षात्कार कराने वाला था। इसे सुनकर महाराज जनक को अत्यधिक विस्मय हुआ, अतः उन्होंने पञ्चशिख से और अधिक प्रश्न करने का विचार किया (१२. २१८)।

"पञ्चशिख ने जनक के प्रश्न करने पर उन्हें पुनः आत्मा की अनश्वरता पर विस्तृत उपदेश दिया। पञ्चशिख के बताये हुये अमृतमय ज्ञानोपदेश को सुनकर राजा जनक एक निश्चित सिद्धान्त पर पहुँच गये। एक बार उन मिथिला नरेश राजा जनक ने अपनी मिथिला नगरी को आग से जलती देखकर स्वयं यह विचार प्रकट किया कि इस नगर के जलने से उनका कुछ नहीं जलता। इस प्रकार जनक को आत्मज्ञान रूपी अनन्त धन प्राप्त हुआ जिससे उनका मन सदैव सद्भावपूर्वक धर्म में तथा बुद्धि तत्त्वज्ञान में परिनिष्ठित रहने लगी। वह विषयों से विरक्त होकर सत्य मार्ग का अनुसरण करने लगे (१२. २१९)।"

पञ्चस्रोतस्—'पञ्चस्रोतसि यः सत्रमास्ते वर्षसहस्रिकम्'''पञ्चस्रोतसि निष्णातः पञ्चरात्रविशारदः,' (१२. २१८, १०. ११)।

पञ्चाग्नि = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

१. पञ्चाल (बहु० °लाः), एक जाति का नाम है : २. २९, ३. ४ (दिग्विजय के समय भीमसेन ने इन्हें समझा-बुझा कर वश में किया था); ४. ४, ४ (पाण्डवों के वनवास के तेरहवें अज्ञातवास-वर्ष में उनके सेवक गण इसी देश में चले आये थे); ५, ३ (उत्तरेण दशार्णास्ते पञ्चालान् दक्षिणेन च); ५. २१, ११; २५, ३ (पञ्चालानामधिपं चैव वृद्धम्). १२; १६५, २२; १७१, ३; ९. १, ३१ (इनका वध); ३, ३६ (पञ्चालानां महारथाः)। तुकी० पाञ्चाल (बहु०)।

२. पञ्चाल (एक०) = द्रुपद : ३. १२, २; १२. ३४७, ७७ (पञ्चालेन क्रमः प्राप्तो देवेन पथि देशिते)। तुकी० ४. पाञ्चाल (एक०)। =शिव (सहस्रनाम)।

पञ्चालक = द्रुपद (५. १७२, १८)।

पञ्चालराज = द्रुपद : १. १९१, ५. १०; १९२, १२; १९३, २८; ५. १९, ३३; २२, ३६; १७१, १; १८९, १२; १९२, १४। तुकी०

पञ्चालराजन् = द्रुपद : ५. १९०, ८; ७. १४, २६; ११. २५, १८।

पञ्चालसुता = शिखण्डिन् (५. १९०, ३)।

पञ्चेन्द्रोपाख्यान (म्) से पाँच इन्द्रों की कथा का तात्पर्य है। व्यास जी ने द्रुपद से कहा : प्राचीन काल में एक समय जब देवगण नैमिषारण्य में एक महान् यज्ञ का अनुष्ठान कर रहे थे, तब यम शामित्र (यज्ञ) कार्य करते थे। उस यज्ञ की दीक्षा लेने के कारण यम ने मानव प्रजा की मृत्यु का कार्य बन्द कर रक्खा था। फलस्वरूप प्रजा की संख्या में अत्यधिक वृद्धि हो गई। सोम, इन्द्र, वरुण, कुबेर, साध्यगण, रुद्रगण, वसुगण, अश्विन द्वय तथा अन्य सब देवताओं ने ब्रह्मा से मनुष्यों की संख्यावृद्धि से उत्पन्न भय की चर्चा की। तब ब्रह्मा ने बताया कि यज्ञकार्य पूर्ण करने के पश्चात् यमराज इन मनुष्यों के लिये पुनः मृत्यु काल उपस्थित करेंगे। ब्रह्माजी की बात सुनकर देवगण पुनः यज्ञस्थल पर लौट आये। एक दिन जब देवगण गङ्गास्नान के लिये गये तब उन्हें भागीरथी के जल में बहता हुआ एक सुवर्ण कमल दिखाई दिया। उसे देखकर देवगण चकित हो गये। इन्द्र उस कमल के स्रोत का पता लगाने के लिये गङ्गोत्तरी गये। वहाँ उन्होंने एक अग्नि के समान तेजस्विनी युवती देखी। वह युवती गङ्गा के जल में खड़ी होकर विलाप कर रही थी। उसके नेत्रों से जो अश्रुबिन्दु जल में गिरते थे वे सुवर्ण कमल बन जाते थे। इन्द्र के पूछने पर उस युवती ने अपने को भाग्यहीन अबला बताते हुये इन्द्र से अपने पीछे आने के लिये कहा। उस स्त्री के पीछे-पीछे चलकर हिमालय के शिखर पर इन्द्र ने एक परम सुन्दर तरुण को एक युवती के साथ क्रीड़ा करते देखा। वह युवक अपनी सम्पूर्ण इन्द्रियों से क्रीड़ा में इतना तन्मय था कि उसका ध्यान इधर उधर विचलित नहीं हो रहा था। उसे इस प्रकार तल्लीन देखकर इन्द्र ने कुपित होकर उस युवक को सम्बोधित करते हुये अपने को इस जगत का स्वामी कहा। इन्द्र के क्रोध को देखकर उस देवपुरुष ने हँसकर उनकी ओर देखा जिससे इन्द्र का शरीर स्तम्भित हो गया। वह देवोपम पुरुष स्वयं भगवान् रुद्र और वह रोनेवाली स्त्री श्री थीं। रुद्र ने इन्द्र से समीप की एक गुफा में प्रवेश करने के लिये कहा जहाँ उन्हीं के समान चार इन्द्र और भी रहते थे। इन्द्र ने गुफा में प्रवेश करके अन्य इन्द्रों को देखा और यह सोचकर चिन्तित हो गये कि कहीं उनकी भी वही दुर्दशा न हो। तब इन्द्र ने महादेव की स्तुति और उनसे क्षमायाचना की। किन्तु भयंकर तेज वाले रुद्र ने हँसकर कहा : 'तुम्हारे जैसे शील-स्वभाव वाले लोगों को यहाँ प्रसाद की प्राप्ति नहीं होती। ये लोग भी पूर्वकाल में तुम्हारे जैसे ही थे, अतः तुम भी इस कन्दरा में प्रवेश कर शयन करो। तुम को मनुष्य योनि में प्रवेश करना पड़ेगा। उस जन्म में तुम अनेक दुःसह कर्म करके अपने शुभ कर्मों द्वारा इन्द्रलोक जाओगे।' रुद्र का यह वचन सुन कर गुफा में विराजमान पहले के चार इन्द्र इस प्रकार बोले : 'हम मनुष्य लोक में जाने के लिये प्रस्तुत हैं किन्तु वहाँ हमें धर्म, वायु, इन्द्र और दोनों अश्विनीकुमार—ये ही देवता माता के गर्भ में स्थापित करें।' पूर्ववर्ती इन्द्रों का यह वचन सुनकर वज्रधारी इन्द्र ने पुनः महादेव से इस प्रकार कहा : 'मैं अपने वीर्य से ही अपने अंशभूत पुरुष को देवताओं के कार्यार्थ समर्पित करूँगा। जो इन चारों के साथ पाँचवाँ होगा उसे मैं स्वयं ही उत्पन्न करूँगा।' विश्वभुक्, भूतधामा, प्रतापी इन्द्र शिबि, चौथे शान्ति और पाँचवें तेजस्वी—ये ही उन पाँचों के नाम हैं। भगवान् रुद्र ने उन सब को अभीष्ट कामना पूर्ण होने का वरदान दिया, साथ ही उस लोक-कमनीया युवती स्त्री को, जो स्वर्ग लोक की लक्ष्मी थी, मनुष्य लोक में उनकी पत्नी निश्चित किया। तदनन्तर उन्हीं के साथ महादेव जी अप्रमेय, अव्यक्त, अजन्मा, पुराणपुरुष, सनातन, विश्वरूप एवं अनन्तमूर्ति भगवान् नारायण के पास गये। उस समय नारायण ने अपने मस्तक से दो केश निकाले जिनमें से एक श्वेत और दूसरा श्याम था। ये दोनों केश देवकी तथा रोहिणी के भीतर प्रविष्ट हुए। रोहिणी से बलदेव प्रकट हुये जो नारायण के श्वेत केश थे; दूसरा केश देवकी के गर्भ से श्रीकृष्ण के रूप में प्रकट हुआ। उत्तरवर्ती हिमालय की कन्दरा में पहले जो इन्द्रस्वरूप पुरुष बन्दी थे वे ही ये चारों पाण्डव हैं और साक्षात् इन्द्र का अंशभूत जो पाँचवाँ है वह सव्यसाची अर्जुन है। इस प्रकार पाँचों पाण्डव पहले इन्द्र रह चुके हैं। द्रौपदी वही स्वर्ग लोक की लक्ष्मी है जो पहले ही इनकी पत्नी नियत हो चुकी थी। इस प्रकार पञ्चेन्द्रोपाख्यान का वर्णन करने के बाद व्यासजी ने अपनी तपस्या के प्रभाव से राजा द्रुपद को दिव्य दृष्टि प्रदान की जिससे उन्होंने समस्त पाण्डवों को पूर्व शरीरों से सम्पन्न वास्तविक रूप में देखा (पाण्डवों के दिव्य स्वरूप का वर्णन)। द्रुपद ने अपनी पुत्री के पूर्व लक्ष्मी-स्वरूप को भी देखा। तदनन्तर व्यास जी ने द्रुपद को उनकी पुत्री के एक अन्य जन्म का वृत्तान्त सुनाया जिसमें उसे भगवान् शङ्कर ने पाँच पति प्राप्त करने का वरदान दिया था क्योंकि उसने 'पति दीजिये' इस वाक्य को शङ्कर के समक्ष पाँच बार दोहराया था (१. १९७)।

पटच्चर (बहु० °राः) एक जाति का नाम है : २. १४, २६ (उन लोगों में ये भी थे जो जरासन्ध के भय से भाग गये थे); ३१, ४ (दक्षिण में इन्हें सहदेव ने पराजित किया था); ४. १, ११; ६. ५०, ४८ (ये युधिष्ठिर की सेना में सम्मिलित हुये)।

पटच्चरनिहन्तृ, एक राजकुमार का नाम है : १. १८६, १६ (द्रौपदी के स्वयंवर में यह भी उपस्थित था)।

पटच्चरहन्तृ, एक राजकुमार का नाम है : ७. २३, ६३ (द्रोण के विरुद्ध युद्ध के लिये गये); २५, ३४ (लक्ष्मण के साथ युद्ध किया)।

पटलावती, एक नदी का नाम है (६. ९, २२)।

पटवासक, एक नाग का नाम है : १. ५७, १८ (रक्ताङ्ग सर्वसारङ्गः समृद्धपटवासकौ)।

पटुश, एक राक्षस का नाम है : ३. २८५, ९ (पनस नामक वानर से युद्ध किया)।

पट्टिशिन् = शिव (सहस्रनाम)।

पठवासक—देखिये पटवासक।

पठ्यते श्रुतिभिश्चैव वेदोपनिषदां गणैः = शिव (सहस्रनाम)।

पण = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. पण्डित, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है जिसका भीमसेन ने वध किया था (६. ८८, २४. २५)। तुल्की० पण्डितक।

२. पण्डित = शिव (सहस्रनाम)।

पण्डितक, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है = १. पण्डित (१. ६७, १०१; ६. ८८, १५)।

पतगपति = गरुड (१. ३४, २६)।

पतगराज = गरुड (७. १२३, २०)।

पतगश्रेष्ठ = गरुड (१. ३२, २२; ८. ३९, २२)।

पतगेन्द्र = गरुड (१. ३२, ४. १६; ५. ८३, २०; ११३, १२)।

पतगेश्वर = गरुड (१. ३६, २५; २३, १५; २७, १०; ३०, २४; ६. १२१, ३४; १३. १५०, २६)।

पतगोत्तम = गरुड (१. २७, १३; ६. ८, ६)।

१. पतङ्ग = सूर्य (१. ६६, ९)।

२. पतङ्ग = श्रीकृष्ण (१२. ४३, १२)।

पतङ्गराज = गरुड (५. ११५, १७)।

पतत्रिवर = गरुड (७. १६, १४)।

पतन, एक राक्षस का नाम है (३. २८५, २)।

पताकिन्, एक कुरु योद्धा का नाम है (७. १५६, १२२)।

पति = शिव : १३. १७, १२० (सहस्रनाम); १४. ८, २२।

पतित्रि, एक कुरुयोद्धा का नाम नाम है (८. ४८, ३०)।

पतिव्रतानां लोकाः (पतिव्रताओं का लोक): ९. ५०, ४३।

पतिव्रतामाहात्म्यपर्वन्—"युधिष्ठिर ने मार्कण्डेय से पूछा कि क्या उन्होंने द्रौपदी के समान पतिव्रता नारी पहले भी कहीं देखा है ? तब मार्कण्डेय ने राजकन्या सावित्री की कथा का इस प्रकार वर्णन आरम्भ किया : प्राचीन काल में मद्र देश के राजा अश्वपति को अपनी रानी मालवी से कोई सन्तान उत्पन्न नहीं हुई। बहुत अधिक अवस्था व्यतीत हो जाने पर उन्हें सन्तान की अत्यधिक चिन्ता होने लगी। उन्होंने सन्तानोत्पत्ति के लिये कठोर व्रत आरम्भ किया। वे ब्राह्मणों के साथ प्रति दिन गायत्री मन्त्र से एक लाख आहुति देकर दिन के छठे भाग में अल्प भोजन करते थे। इस प्रकार अठ्ठारह वर्ष तक व्रत करने पर देवी सावित्री ने प्रसन्न होकर वर दिया। राजा ने यद्यपि अनेक वंशप्रवर्तक पुत्र प्राप्त करने का वर माँगा किन्तु सावित्री ने उन्हें एक कन्या प्राप्त होने का वरदान दिया। तदनन्तर रानी मालवी के गर्भ से कन्या उत्पन्न होने पर अश्वपति ने उसका नाम सावित्री ही रक्खा क्योंकि वह देवी सावित्री के वरदान से उत्पन्न हुई थी। धीरे-धीरे युवावस्था प्राप्त होने पर भी किसी योग्य वर ने उसके लिये याचना नहीं की। फलस्वरूप राजा ने उसे स्वयं ही ऐसे वर की खोज कर लेने का आदेश दिया जो गुणों में उसके अनुरूप हो (३. २९३)।

"कुछ समय के बाद सावित्रि ने अपने पिता के पास लौटकर नारद जी की उपस्थिति में बताया कि उसने शाल्व देश के राजा द्युमत्सेन के पुत्र सत्यवान् का ही पति के रूप में वरण किया है। सावित्री ने बताया कि राजा द्युमत्सेन की आँखें चली गई हैं और उनका पुत्र अभी बाल्यावस्था में ही था जिसके कारण एक दूसरे राजा ने उन पर आक्रमण करके उनके राज्य का हरण कर लिया। अब वह राजा एक तपस्वी के रूप में वन में निवास करते हैं और उनके पुत्र का पालन-पोषण भी वन में ही हुआ है। नारदजी ने सावित्री की बात सुनकर बताया कि राजकुमार सत्यवान् सूर्य के समान तेजस्वी, बृहस्पति के समान विद्वान्, इन्द्र के समान वीर और पृथिवी के समान क्षमाशील है। वह अपनी शक्ति के अनुसार दान देने में रन्तिदेव के समान है तथा उशीनरपुत्र शिवि के समान ब्राह्मणभक्त और सत्यवादी है। वह ययाति की भाँति उदार, चन्द्रमा के समान प्रियदर्शन और रूप में अश्विनीकुमारों के ही समान है। किन्तु नारदजी ने बताया कि उस दिन से एक वर्ष पूर्ण होने तक सत्यवान् की आयु पूर्ण हो जायगी और वह शरीर त्याग देगा। फिर भी नारदजी ने सावित्री का विवाह सत्यवान् से कर देने का परामर्श दिया और फिर स्वर्गलोक चले गये (३. २९४)।

"नारदजी के परामर्शानुसार राजा द्युमत्सेन ने तपोवन में जाकर सत्यवान् के साथ सावित्री का विवाह कर दिया। विवाह के बाद सावित्री ने अपने सब आभूषण उतार कर वल्कल तथा गेरुआ वस्त्र धारण कर लिया। अपनी सेवापरायणता, विनय, और संयम से उसने अपने सभी परिजनों को प्रसन्न और सन्तुष्ट कर दिया (३. २९५)।

"सावित्री एक-एक दिन बीतने पर उसकी गणना करती रहती थी। जब उसे निश्चय हो गया कि उसके पति की उस दिन से चौथे दिन मृत्यु होगी तब उसने तीन रात का व्रत धारण किया जिसमें वह दिन-रात खड़ी ही रही। चौथे दिन प्रातःकाल उस तपोवन में रहने वाले तपस्वियों ने सावित्री के लिये अवैधव्यसूचक – सौभाग्यवर्धक, शुभ और हितकर आशीर्वाद दिये। सावित्री ने सभी को नमस्कार किया और सूर्यास्त तक मनोरथ पूर्ण हो जाने पर ही भोजन ग्रहण करने का निश्चय व्यक्त किया। जब सत्यवान् कन्धे पर कुल्हाड़ी रखकर समिधा लाने के लिये वन की ओर चले तब सावित्री ने भी साथ जाने की इच्छा व्यक्त की। सत्यवान् ने उसे बहुत समझाया किन्तु वह अपने निश्चय पर दृढ़ रही और अन्ततः सास तथा श्वसुर की आज्ञा लेकर पति के साथ वन के लिये चली (३. २९६)।

"तदनन्तर पत्नी सहित वन में आकर सत्यवान् लकड़ी काटने लगे। उस परिश्रम से उनके सर में पीड़ा होने लगी। उस समय सावित्री अपने पति का सर गोद में रख कर पृथिवी पर बैठ गई। जब सत्यवान् उसकी गोद में विश्राम कर रहे थे तब दो घड़ी में ही वहाँ एक दिव्य पुरुष प्रकट हुये। उनका स्वरूप भयानक था और वे हाथ में पाश लिये हुये थे। उन दिव्य व्यक्ति ने सावित्री को अपना परिचय देते हुये बताया कि वे यम हैं और राजकुमार सत्यवान् की आयु समाप्त हो जाने के कारण उसे बाँध कर यमलोक ले जाने के लिये उपस्थित हुये हैं। तदनन्तर यमराज ने सत्यवान् के जीव को अपने पाश में बाँध कर दक्षिण दिशा की ओर प्रस्थान किया। सावित्री भी यमराज के पीछे-पीछे चलने लगी। यम के मना करने पर सावित्री ने कहा : 'जहाँ मेरे पति ले जाये जा रहे हैं वहाँ मुझे भी जाना चाहिये, यही सनातन धर्म है। तपस्या, गुरु-भक्ति, पति-प्रेम, व्रतपालन और आपकी कृपा से मेरी गति कहीं भी रुक नहीं सकती।' यम द्वारा वर माँगने के लिये कहने पर सावित्री ने इस प्रकार क्रमशः पाँच वर माँगे : '(१) मेरे सास-श्वसुर की आंखें मिल जाँय और वे बलवान् तथा अग्नि एवं सूर्य के समान तेजस्वी हो जाँय; (२) मेरे श्वसुर अपना राज्य पुनः प्राप्त कर लें और कभी अपना धर्म न छोड़ें; (३) मेरे पिता अश्वपति

को सौ ऐसे पुत्र प्राप्त हों जो उनकी वंशपरम्परा को चलाने वाले हों; (४) मेरे और सत्यवान् दोनों के संयोग से कुल की वृद्धि करने वाले सौ औरस पुत्र हों; और (५) आपने मुझे जो पुत्र-प्राप्ति का वर दिया वह पुण्यमय दाम्पत्य-संयोग के बिना सफल नहीं हो सकता। अतः मेरे पति सत्यवान् जीवित हो जाँय क्योंकि उनके बिना मैं स्वयं भी मृतप्राय हूँ।' सावित्री के धर्मयुक्त वचनों को सुनकर यम ने प्रसन्न होकर सत्यवान् का बन्धन खोल दिया और उसे जीवित करते हुये चार सौ वर्षों की आयु प्रदान किया। इस प्रकार वरदान देकर यमराज के चले जाने के बाद सावित्री उसी स्थान पर लौट आयी जहां उसके पति का मृत शरीर पड़ा था। उसने पति के सर को उठा कर अपनी गोद में रख लिया। तदनन्तर सत्यवान् ने शीघ्र ही अपनी चेतना प्राप्त कर ली। सत्यवान् ने अपनी निद्रावस्था के अनुभव बताये। फिर सावित्री के साथ वह अत्यन्त उतावली के साथ अपने माता-पिता के आश्रम की ओर चलने लगे (३. २९७)।

"इस बीच द्युमत्सेन की आंखें पुनः प्राप्त हो गई थीं किन्तु सत्यवान् को न देखकर वे चिन्तित हो उठे। उस समय सुवर्चा, गौतम, भरद्वाज, दालभ्य, आपस्तम्ब और धौम्य आदि ब्राह्मणों ने राजा को सान्त्वना दी। थोड़ी ही देर में सावित्री सहित सत्यवान आश्रम में लौट आये। सावित्री ने वन की सम्पूर्ण घटनाओं का वर्णन किया जिसे सुनकर ऋषियों ने उसकी प्रशंसा की। (३. २९८)।

"शीघ्र ही राजा द्युमत्सेन के विरोधी मार डाले गये और राजा को अपना शाल्व देश का राज्य पुनः प्राप्त हो गया। दीर्घकाल के पश्चात् सावित्री ने सौ पुत्रों को जन्म दिया। उसके पिता अश्वपति को भी मालवी के गर्भ से सौ पुत्र प्राप्त हुये। सावित्री की कथा का इस प्रकार वर्णन करने के बाद मार्कण्डेय जी ने युधिष्ठिर को बताया कि सावित्री की ही भाँति द्रौपदी भी उन सब का महान् संकट से उद्धार करेगी। मार्कण्डेयजी के इस प्रकार सान्त्वना देने पर युधिष्ठिर शोक तथा चिन्ता से रहित होकर काम्यक वन में सुखपूर्वक रहने लगे (३. २९९)।"

पतिव्रताया आख्यान – १. २. १९४। देखिये पतिव्रतोपाख्यान।

पतिव्रताया माहात्म्य सावित्र्याः – पतिव्रता सावित्री की महानता: १. २. ५६। देखिये पतिव्रता माहात्म्यपर्व।

पतिव्रतोपाख्यान (पतिव्रता स्त्री की कथा) और [**ब्राह्मणव्याध-संवाद**, अर्थात् ब्राह्मण और व्याध का संवाद] – "स्त्रियों के गुण-धर्म के सम्बन्ध में पूछने पर मार्कण्डेय जी ने बताया कि कुछ लोग माताओं को गौरव की दृष्टि से बड़ा मानते हैं। परन्तु माता जो अपनी सन्तानों को पालपोस कर बड़ा बनाती है वह उसका कठिन कार्य है। माता-पिता तपस्या, देव-पूजा, वन्दना, तितिक्षा तथा अन्य उपायों से पुत्र प्राप्त करना चाहते हैं। पिता-माता अपने पुत्रों के लिये यश, कीर्ति और ऐश्वर्य, सन्तान तथा धर्म की शुभकामना करते हैं। जो सन्तान अपने माता-पिता की आशा को सफल बनाते हैं उनके माता-पिता उनसे सदैव सन्तुष्ट रहते हैं और ऐसी सन्तान को इहलोक और परलोक में अक्षय कीर्ति प्राप्त होती है। नारी के लिये किसी यज्ञ-कर्म, उपवास, और श्राद्ध आदि की आवश्यकता नहीं है। उसे तो पति-सेवा द्वारा ही स्वर्ग पर विजय प्राप्त हो जाती है। इसी प्रकरण में पतिव्रताओं के नियत धर्म का वर्णन करते हुये मार्कण्डेय जी ने आगे की कथा का इस प्रकार वर्णन किया (३. २०५)।

"कौशिक नामक एक वेद का अध्ययन करने वाला और तपस्या का धनी ब्राह्मण था। एक दिन जब वह किसी वृक्ष के नीचे बैठकर वेदपाठ कर रहा था तब उस वृक्ष पर बैठी एक बगुली ने ब्राह्मण के ऊपर बीट कर दिया। ब्राह्मण ने तब क्रोध में आकर उस बगुली का अनिष्ट चिन्तन आरम्भ किया जिससे वह पृथिवी पर गिर पड़ी। उस बगुली को अचेत देख कर ब्राह्मण का हृदय दया से द्रवित हो गया। उसे अपने क्रोध पर पश्चाताप होने लगा। इस प्रकार बार-बार पश्चाताप करता हुआ वह ब्राह्मण गाँव में भिक्षा मांगने के लिये गया। एक द्वार पर जब ब्राह्मण ने भिक्षा देने की पुकार की तब भीतर से गृहस्वामिनी ने शीघ्र भिक्षा लाने के लिये आश्वासन दिया। उस समय वह स्त्री घर के बर्तन माँज रही थी। इस कार्य से जैसे ही वह मुक्त हुई कि उसका पति घर में आ गया, जो उस समय भूख से अत्यन्त पीड़ित था। फलस्वरूप वह पतिव्रता स्त्री पति की सेवा में लग गई। उसने शीघ्र पति के हाँथ-मुँह धुलाये और फिर स्वादिष्ट भोजन उसके सामने रख दिया। पति के भोजन कर लेने पर उसने उच्छिष्ट को प्रसाद मान कर स्वयं भोजन किया (उस स्त्री के गुणों का विस्तृत वर्णन)। पति की सेवा करते-करते उसे भिक्षुक ब्राह्मण का स्मरण आया। अपनी भूल पर उसे लज्जा और पश्चाताप हुआ और इसलिये वह शीघ्र भिक्षा लेकर बाहर आई। उसे विलम्ब से आया देखकर भिक्षुक ने क्रोध प्रकट किया। तब उस पतिव्रता स्त्री ने उससे क्षमा माँगते हुये विलम्ब का कारण पतिसेवा में तत्परता बताया। फिर भी जब ब्राह्मण का क्रोध शान्त नहीं हुआ तब उस स्त्री ने कहा कि वह बगुली नहीं है जो ब्राह्मण के क्रोध से भस्म हो जायेगी। उसने यह उत्तर देते हुये भी अपने अपराध के लिये क्षमायाचना की। ब्राह्मणों के क्रोध का महत्व स्वीकारते हुये उस स्त्री ने बताया कि सागर का जल ब्राह्मण के क्रोध से ही खारा हो गया है। मुनियों के क्रोध से ही दण्डकारण्य की अग्नि बुझ नहीं पा रही है। दुष्ट वातापि ब्राह्मण अगस्त्य के पेट में जाकर पच गया। फिर भी उस स्त्री ने पतिसेवा से प्राप्त धर्म को प्रधान बताते हुये अपने लिये पति को ही सबसे बड़ा देवता बताया। उसने कहा कि क्रोध मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है। जो क्रोध और मोह को त्याग देता है उसी को देवगण ब्राह्मण मानते हैं (ब्राह्मणों के गुणों का विस्तृत वर्णन)। स्त्री ने कहा कि जो जितेन्द्रिय, धर्मपरायण, स्वाध्याय तत्पर, पवित्र तथा काम और क्रोध को वश में रखने वाला है उसे ही देवगण ब्राह्मण मानते हैं। धर्मज्ञ पुरुष सत्य और सरलता को सर्वोत्तम धर्म बताते हैं। इस प्रकार ब्राह्मणों के गुणों की चर्चा करते हुये उस पतिव्रता स्त्री ने ब्राह्मण से कहा: 'मेरे विचार से तुम्हें धर्म का यथार्थ ज्ञान नहीं है। यदि तुम धर्म का ज्ञान प्राप्त करना चाहते हो तो मिथिला पुरी में जाकर धर्मव्याध से पूछो।' यह कह कर उस स्त्री ने पुनः ब्राह्मण से क्षमा याचना की। स्त्री की बात सुनकर उस ब्राह्मण ने उसे आशीर्वाद दिया और उसके सदाचार की प्रशंसा करने के बाद घर लौट आया (३. २०६)।

"उस पतिव्रता स्त्री की बातों का स्मरण करके कौशिक ने मिथिला के लिये प्रस्थान किया। अनेकानेक वनों, ग्रामों और नगरों को पार करता हुआ कौशिक राजा जनक द्वारा सुरक्षित, धर्म की मर्यादा से व्याप्त और यज्ञादि उत्सवों से सुशोभित मिथिला पुरी में जा पहुँचा (मिथिला की शोभा का वर्णन)। कौशिक ने धर्मव्याध का पता ज्ञात कर उसके पास आ कर देखा कि वह सूकर, भैंसे आदि पशुओं का मांस बेच रहा है। वहाँ ग्राहकों की भीड़ के कारण कौशिक एकान्त में जाकर खड़ा हो गया। ब्राह्मण को आया हुआ जान कर व्याध शीघ्रता से उठकर उसके पास आया। कौशिक को प्रणाम करके उसने कहा: 'उस पतिव्रता देवी ने आप को यहाँ भेजा है, यह बात मुझे ज्ञात है। आप जिस उद्देश्य से यहाँ पधारे हैं वह भी मुझे ज्ञात है।' व्याध की बात सुनकर कौशिक को महान आश्चर्य हुआ। व्याध कौशिक को अपने घर ले गया। घर पहुँच कर उसने कौशिक का आदर सहित पूजन किया। तब कौशिक ने कहा: 'यह मांस बेचने का कार्य तुम्हारे योग्य नहीं है। इस घोर कर्म पर मुझे अत्यधिक सन्ताप हो रहा है।' व्याध ने बताया कि यह कार्य उसका पैतृक व्यवसाय है। वह किसी की निन्दा नहीं करता और अपनी शक्ति के अनुसार दान भी करता है। देवताओं, अतिथियों, और कुटुम्बीजनों को भोजन दे कर जो बचता है उसी से शरीर निर्वाह करता है। कृषि, गोरक्षा, वाणिज्य, दण्ड-नीति और त्रयी विद्या के अनुसार यज्ञादि के अनुष्ठान से ही लौकिक और पारलौकिक उन्नति सम्भव है। व्याध ने कहा कि मिथिला राजा जनक का नगर है जहाँ कोई भी ऐसा नहीं है जो वर्ण-धर्म के विरुद्ध आचरण करे। राजा जनक दुराचारी को अवश्य दण्ड देते हैं किन्तु धर्मात्मा को कष्ट नहीं पहुँचाते। अपने सम्बन्ध में बताते हुये व्याध ने कहा: 'मैं स्वयं किसी

की जीवहिंसा नहीं करता। सदा दूसरों के मारे हुये शूकर और भैसों का मांस बेचता हूँ। स्वयं मांस भी नहीं खाता। ऋतुकाल प्राप्त होने पर ही पत्नी-समागम करता हूँ। मैं दिन में उपवास और रात में भोजन करता हूँ। शील से रहित पुरुष भी कभी बलवान हो जाता है। प्राणियों की हिंसा में अनुरक्त मनुष्य भी फिर धर्मात्मा हो जाता है। राजाओं के व्यभिचार दोष से धर्म अत्यन्त संकीर्ण हो जाता है और अधर्म बढ़ जाता है। उस दशा में भयंकर आकृति वाले बौने, कुबड़े, मोटे मस्तक वाले, नपुंसक, अन्धे, बहरे, और अधिक ऊँचे नेत्र वाले मनुष्य उत्पन्न होते हैं। किन्तु राजा जनक समस्त प्रजा को धर्मपूर्ण दृष्टि से ही देखते हैं।' इस प्रकार अपनी और अपने राजा जनक की चर्चा करने के बाद व्याध ने कौशिक को धर्म-विषयक उपदेश दिये: 'यदि भूल से कभी कोई निन्दित कर्म हो जाय तो फिर दूसरी बार व्यक्ति को वैसा कार्य नहीं करना चाहिये। यदि अपने साथ कोई बुरा व्यवहार करे तो भी स्वयं बदले में उसके साथ उत्तम व्यवहार ही करना चाहिये। उत्तम पुरुष सर्वत्र विनय शील होता है। अहंकारी मूढ़ मनुष्यों की सोची हुई प्रत्येक बात निःसार होती है। कोई भी गुणवान् पुरुष परनिन्दा और आत्मप्रशंसा का त्याग किये बिना इस भूमण्डल में सम्मानित नहीं हुआ है। जो मनुष्य पापकर्म हो जाने पर सच्चे हृदय से पश्चाताप करता है वह उस पाप से छूट जाता है। लोभ ही सब पापों का मूल है। लोभी मनुष्य ही पाप करने का विचार करते हैं।' व्याध के उपदेशों को सुनकर कौशिक ने उससे शिष्टाचार के ज्ञान के सम्बन्ध में बताने के लिये कहा। तब व्याध ने कहा: 'यज्ञ, दान, तपस्या, वेदों का स्वाध्याय, और सत्य भाषण—ये पाँच पवित्र वस्तुयें शिष्ट व्यक्तियों के आचार-व्यवहार में सदा उपस्थित रहती हैं। श्रेष्ठ पुरुष तीन ही पद बताते हैं—किसी से द्रोह न करे, दान करे, और सदा सत्य बोले। यही श्रेष्ठ पुरुषों का उत्तम मत है। दोषदृष्टि का अभाव, क्षमा, शान्ति, सन्तोष, प्रियभाषण और काम-क्रोध का त्याग, शिष्टाचार का सेवन और शास्त्र के अनुकूल कर्म करना—यह श्रेष्ठ पुरुषों का अति उत्तम मार्ग है। जो धर्मात्मा पुरुष सदा शिष्टाचार का सेवन करते हैं और प्रज्ञारूपी प्रासाद पर आरूढ़ होकर भाँति-भाँति के लोक चरित्रों का निरीक्षण, तथा अत्यन्त पुण्य एवं पापकर्मों की समीक्षा करते हैं वे महान् भय से मुक्त हो जाते हैं।' (३. २०७)।

"व्याध ने कहा: 'पूर्वजन्म में किये हुये कर्म का ही नाम दैव है। व्याध के घर में जन्म भी मेरे पूर्व जन्म में किये हुये पाप का ही फल है। विधाता के द्वारा पहले ही से जीव की मृत्यु निश्चित की जाती है। घातक या व्याध उसमें केवल निमित्त बन जाता है। अतः मैं अपने कर्मों में निमित्त मात्र हूँ। पहले से मेरे पूर्वज यह व्याध-कर्म करते आये हैं ऐसा समझ कर मैं इसी कर्म से जीवन निर्वाह करता हूँ। धर्म और अधर्म सम्बन्धी कार्यों के विषयों में अनेक तर्क दिये गये हैं। पूर्वकाल में राजा रन्तिदेव की पाकशाला में २,००० पशुओं और २०० गायों का प्रतिदिन वध होता था। चातुर्मास्य के समय भी पशुओं की बलि दी जाती है। श्रुति के अनुसार अग्नि भी मांस प्रेमी हैं। यज्ञ के समय जिन पशुओं का वध किया जाता है वे अपने पाप से मुक्त होकर मन्त्रों की शक्ति से स्वर्ग प्राप्त कर लेते हैं। मुनियों ने मांसभक्षण के सम्बन्ध में यह नियम बनाया है: 'देवतानां पितॄणां च भुंक्ते दत्वाऽपि यः सदा। यथा यथा श्राद्धं न प्रदुष्यते भक्षणात्। (३. २०८, १४)।' शापग्रस्त होकर राजा सुदास ने मनुष्य के मांस का भक्षण किया था। कृषि कार्य में हल चलाने से धरती के भीतर निवास करने वाले अनेक जीवों की हत्या होती है। धान आदि जितने अन्न के बीज हैं वे सब भी जीव हैं। कितने ही मनुष्य पशुओं पर आक्रमण करके उन्हें मारते और खाते हैं। वृक्षों और ओषधियों में भी अनेक जीव रहते हैं। जल भी नाना प्रकार के जीवों से भरा है। जीवों से ही जीवन-निर्वाह करने वाले जीवों द्वारा यह सारा जगत व्याप्त है। इस जगत में अनेक विपरीत बातें दृष्टिगत होती हैं। अधर्म भी धर्म से युक्त प्रतीत होता है। अतएव जो अपने कुलोचित कर्म में लगा हुआ है वही महान् यश का भागी होता है।' (३. २०८)।

"व्याध ने कहा: 'यदि किसी के प्राणों पर संकट आ जाय अथवा कन्या का विवाह करना हो तो ऐसे अवसरों पर प्राणरक्षा अथवा कार्यसिद्धि के लिये झूठ बोलने से भी सत्य का फल मिलता है। जिससे परिणाम में प्राणियों का अत्यन्त हित होता हो वह वास्तव में सत्य है। इसके विपरीत जिससे किसी का अहित होता हो या दूसरों के प्राण जाते हों तो वह देखने में सत्य होने पर भी वास्तव में असत्य एवं अधर्म है।' इस प्रकार व्याध ने धर्म की सूक्ष्मता, शुभाशुभ कर्म और उनके फल, तथा ब्रह्म की प्राप्ति के उपायों पर कौशिक को विस्तृत उपदेश दिये (३. २०९)।

"कौशिक ने व्याध से इन्द्रिय-निग्रह रूपी धर्म पर प्रकाश डालने के लिये कहा। व्याध ने कहा कि इन्द्रियों द्वारा विषय का ज्ञान प्राप्त करने के लिये सबसे पहले मनुष्य का मन प्रवृत्त होता है। उस विषय को प्राप्त कर लेने पर मन में उसके प्रति राग उत्पन्न होता है। इसी से मनुष्य में लोभ की सृष्टि होती है। इस प्रकार मनुष्य पापात्मा हो जाता है। जो दुःख और सुख के विवेचन में कुशल हैं, वे अपनी बुद्धि से इन विषय-सम्बन्धी दोषों को पहले ही समझ लेते हैं। उनसे दूर हटकर श्रेष्ठ पुरुषों का सत्सङ्ग करने वाले व्यक्तियों की बुद्धि धर्म में लग जाती है। तदनन्तर कौशिक के पूछने पर व्याध ने ब्राह्मी विद्या का इस प्रकार वर्णन आरम्भ किया: पञ्चमहाभूतों से निर्मित यह सम्पूर्ण चराचर जगत सब प्रकार से अजेय ब्रह्मस्वरूप है। आकाश, वायु, अग्नि, जल तथा पृथिवी—ये पञ्चमहाभूत हैं तथा शब्द स्पर्श, रूप, रस, और गन्ध ये क्रमशः उनके विशेष गुण हैं। इन शब्दादि गुणों के भी अनेक गुण-भेद हैं। प्रथम सभी गुण क्रमशः बाद वाले तीन गुणवान् भूतों (अग्नि, जल, और पृथिवी) में उपलब्ध होते हैं, अर्थात् अग्नि में शब्द, स्पर्श और रूप; जल में शब्द, स्पर्श, रूप और रस; तथा पृथिवी में शब्द, स्पर्श, रूप, रस, और गन्ध पाये जाते हैं। इन पाँचभूतों के अतिरिक्त छठा तत्त्व है चित्त जिसे मन कहते हैं। सातवाँ तत्त्व बुद्धि है और उसके बाद आठवाँ अहंकार है। इनके अतिरिक्त पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, प्राण और सत्व, रज, तम — इन सत्रह तत्त्वों का समूह अव्यक्त कहलाता है। पाँच ज्ञानेन्द्रियों तथा मन और बुद्धि के जो व्यक्त अव्यक्त विषय हैं जो बुद्धि रूपी गुहा में छिपे हैं, उन्हें सम्मिलत करने से चौबीस तत्त्व होते हैं। इन तत्त्वों का समुदाय ही व्यक्त और अव्यक्तरूप गुण है (३. २१०)।

"तदनन्तर व्याध ने पञ्चमहाभूतों के गुणों और इन्द्रिय-निग्रह का विस्तार से वर्णन करते हुये बताया कि बाह्य इन्द्रियों से जिस-जिस का संसर्ग होता है उसे व्यक्त माना गया है। किन्तु जो इन्द्रियग्राह्य नहीं है और केवल अनुमान से ही जाना जा सकता है उसे अव्यक्त समझना चाहिये। वश में की हुई इन्द्रियाँ स्वर्ग की प्राप्ति कराने वाली हैं और विषयों की ओर खुली छोड़ दी गई इन्द्रियाँ नरक में डालने वाली हैं। पुरुष का स्थूल शरीर रथ है। आत्मा (बुद्धि) सारथि है और इन्द्रियाँ अश्व हैं। जिस प्रकार कुशल सारथि अश्वों को वश में रखकर रथ से अपनी यात्रा करता है उसी प्रकार साधन-कुशल पुरुष इन्द्रियों को वश में करके सुख-पूर्वक जीवन-यात्रा करता है (३. २११)।

"ब्राह्मण के पूछने पर व्याध ने विस्तार से तीनों गुण सत्व, रज और तम के स्वरूप का विवेचन प्रस्तुत किया (३. २१२)।

"व्याध ने प्राणवायु की स्थिति का विवेचन करते हुये बताया कि उदानवायु मस्तक का आश्रय लेकर शरीर में रहता है। मुख्य प्राण मस्तक और उदानवायु इन दोनों में स्थित हुआ समस्त शरीर में जीवन का संचार करता है। भूत, वर्तमान और भविष्य सब कुछ प्राण के ही आश्रित है। वह प्राण ही जीव है, समस्त प्राणियों का आत्मा है, सनातन पुरुष है, महत्तत्व, बुद्धि और अहंकार है। जगत में सर्वत्र प्राण की स्थिति है। समान वायु के रूप में जठराग्नि का आश्रय लेकर प्राण जब मूत्राशय और गुदा में स्थित होता है तब वह अपान वायु के रूप में विख्यात होकर संचरण करता है। वही प्राण जब प्रयत्न, कर्म, और बल — इन तीन में प्रवृत्त

होता है तब उसे उदान करते हैं। जब यह मनुष्य के प्रत्येक सन्धि-स्थल में व्याप्त होकर रहता है तब उसे व्यान कहते हैं। समान और उदान वायुओं के बीच में प्राण और अपान वायु की स्थिति है। शरीर में स्थित समस्त प्राण नाभि में ही प्रतिष्ठित है। नाड़ियाँ हृदय से नीचे-ऊपर और इधर-उधर फैली हैं। वे दस प्राण वायुओं से प्रेरित होकर शरीर के सब भागों में अन्न के रस को पहुँचाती रहती हैं। जिसने समस्त क्लेशों को जीत लिया है, जो समदर्शी और धीर है, जिसने प्राणमय आत्मा को मस्तक में ले जाकर स्थापित किया है, उन योगियों के लिये परम ब्रह्म की प्राप्ति का यही मार्ग है। मनुष्य अपने चित्त की पवित्रता के द्वारा ही समस्त शुभाशुभ कर्मों को नष्ट कर देता है। जिसका अन्तःकरण पवित्र है वह अपने आप में ही स्थित होकर अक्षय सुख और मोक्ष का भागी होता है। इस लिये दृश्य संसार से वियोग कराने वाले और योग के नाम से विख्यात इस ब्रह्म योग को स्वयं जानना और सम्पादन करना चाहिये। जो गुणों में रहता हुआ भी गुणों से रहित है वही ब्रह्म का अद्वितीय नित्य सिद्ध पद है और वही निरतिशय सुख है (३. २१३)।

"व्याध ने कौशिक से कहा: 'मेरा जो प्रत्यक्ष धर्म है और जिसके प्रभाव से मुझे यह सिद्धि प्राप्त हुई है आप उसका भी दर्शन कर लीजिये।' इतना कहकर वह व्याध कौशिक नामक ब्राह्मण को अपने घर के भीतर ले गया और अपने माता-पिता से उसका परिचय कराया। धर्मव्याध ने अपने माता-पिता को देखते ही उनके चरणों में अपना मस्तक रख दिया और पृथिवी पर लेट कर साष्टाङ्ग प्रणाम किया। उन माता-पिता ने भी अपने पुत्र को विविध आशीर्वाद दिये। व्याध ने कौशिक को बताया कि उसके माता-पिता ही उसके प्रधान देवता हैं। वह सदैव उन्हें सन्तुष्ट रखता है। उसके पुत्र, उसकी स्त्री तथा अन्य सुहृद भी उनकी सेवा शुश्रूषा में सदैव लगे रहते हैं। व्याध ने कहा कि उन्नति चाहने वाले पुरुष के पाँच ही गुरु हैं: पिता, माता, अग्नि, परमात्मा तथा गुरु। जो इन सबके प्रति उत्तम व्यवहार करेगा उस गृहस्थ धर्म का पालन करने वाले के द्वारा सदा सब अग्नियों की सेवा सम्पन्न होती रहेगी। यही सनातन धर्म है (३. २१४)।

"इस प्रकार व्याध ने कौशिक ब्राह्मण को अपने माता पिता रूप दोनों गुरुजनों का दर्शन करा कर पुनः उससे इस प्रकार कहा: 'माता पिता की सेवा ही मेरी तपस्या है। मुझे इससे दिव्यदृष्टि प्राप्त हो गई है। द्विज श्रेष्ठ! आपने अपने माता-पिता की उपेक्षा की है। वेदाध्ययन करने के लिये आप अपने माता-पिता से आज्ञा लिये बिना ही निकल पड़े हैं। यह आपने अनुचित कार्य किया है। आप के शोक में आप के माता-पिता अन्धे हो गये हैं। माता-पिता को सन्तुष्ट न करने के कारण आपका यह सब धर्म व्यर्थ हो गया है। अतः शीघ्र जा कर उन दोनों को प्रसन्न कीजिये।' तब ब्राह्मण कौशिक ने व्याध द्वारा दिये गये उपदेशों के प्रति आभार प्रकट किया। ब्राह्मण ने कहा: 'मैं नरक में गिर रहा था। आज आपने मेरा उद्धार कर दिया। मैं आपको शूद्र नहीं मानता। आपका जो शूद्र योनि में जन्म हो गया है इसका कोई विशेष कारण होना चाहिये।' व्याध ने तब अपने पूर्वजन्म का वर्णन करते हुये बताया कि पहले वह एक ब्राह्मण का पुत्र और वेदाध्ययन परायण ब्राह्मण था। किन्तु अपने ही दोषों के कारण उसे इस दुरवस्था में आना पड़ा। पूर्वजन्म में उसने एक राजा की मित्रता करके धनुर्वेद की शिक्षा ग्रहण कर लिया। एक दिन वन में उसके बाण से एक ऋषि पर आघात हो गया था। व्याध ने कहा: 'यह न करने योग्य पाप कर डालने के कारण मेरे मन में अत्यधिक पीड़ा हुई। मैंने साहस करके उन आहत मुनीश्वर से अपने अपराध के लिये क्षमायाचना की किन्तु उन मुनिवर ने क्रोधपूर्वक मुझे शूद्र योनि में जन्म लेकर व्याध होने का शाप दे दिया।' (३. २१५)।

"व्याध ने बताया कि उसने उन मुनिवर से बार-बार क्षमा माँगी। तब मुनि ने अनुग्रह करके कहा: 'तू शूद्र योनि में रहकर भी धर्मज्ञ रहेगा। माता-पिता की सेवा करेगा। उस सेवा से तुझे महत्ता मिलेगी। तू पूर्व जन्म की बातों को स्मरण रक्खेगा और अन्त में स्वर्ग प्राप्त करेगा। शाप का निवारण हो जाने पर तू पुनः ब्राह्मण हो जायगा।' व्याध ने बताया कि वह तब उन मुनिवर को उठाकर उनके आश्रम ले गया। उसने उनके शरीर से बाण निकाला और उन मुनि की प्राण रक्षा हो गई। व्याध के उपदेश तथा उसके पूर्वजन्म का वृत्तान्त सुनने के पश्चात् कौशिक ने उसकी परिक्रमा की और वहाँ से घर लौटकर अपने माता-पिता की सेवा में लग गया (३. २१६)।"

पत्तन, एक नगर का नाम है जिस पर कर्ण ने अपनी दिग्विजय के समय विजय प्राप्त की थी (३. २५४, १०)।

पत्तनाधिपति, अर्थात् पत्तन के राजा। ये द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित थे (१. १८६, १३)।

पत्ति (बहु० °त्तयः) एक जाति का नाम है (६. ९, ६७)।

पत्रोर्ण (बहु० °र्णाः) एक जाति का नाम है। ये युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये थे (२. ५२, १८)।

पथिकृत, एक अग्नि का नाम है (३. २२१, ३०)।

पद, वेदपाठ की एक विधि है (१. ७०, ३७. ४०; १३. ८५, ९०)।

पदमनुत्तमम् = विष्णु (सहस्रनाम)।

पदाति, जनमेजय के सातवें पुत्र का नाम है (१. ९४, ५७)।

१. पद्म, अनेक नागों का नाम है: १. ३५, १० (नागौ द्वौ); २. ९, ८ (वरुण की सभा में); ५. १०३, १३ (द्वौ); १२. ३५५, ४ (पद्मनाभो महानागः पद्म इति विश्रुतः)।

२. पद्म, एक प्राचीन राजा का नाम है जो यम की सभा में उपस्थित होते थे (२. ८, २१)।

३. पद्म, कुबेर की सभा की एक निधि: २. १०, ३९ (निधिप्रवरमुख्यौ च शंखपद्मौ धनेश्वरौ)।

४. पद्म, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ५६)।

५. पद्म, एक व्यूह का नाम है (७. ८७, २४)।

पद्मकेतन, गरुड के पुत्र, एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, ११)।

१. पद्मगर्भ = शिव (सहस्रनाम)।

२. पद्मगर्भ = विष्णु (सहस्रनाम)।

पद्मज (वि०), ब्रह्मा के एक जन्म का नाम है (१२. ३४८, ४८; जन्म सप्तमं ब्रह्मणः)।

पद्मजन्मन्, अर्थात् पद्म से जन्म: १२. ३४७, ४३।

१. पद्मनाभ = विष्णु: १. २१, १४; ६४, ५२; ३. ८३, १७२; ६. ६५, ४९; १२. ४७, १५; २०९, ३४; ३४०, ९८; १३. १०९, १३; १३९, ३७; १४९, १९. ३४. ५१।

२. पद्मनाभ, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९६)।

३. पद्मनाभ = १. पद्म (१२. ३५५, ४; ३६१, ५)।

४. पद्मनाभ, पद्मनाभाग्र = शिव (सहस्रनाम)।

पद्मनिभेक्षण = विष्णु (सहस्रनाम)।

पद्मयोनि = ब्रह्मा (देखिये वस्था०)।

पद्मलोचन = विष्णु (१. १८, ६)।

१. पद्मसम्भव = ब्रह्मा (देखिये वस्था०)।

२. पद्मसम्भव (वि०): १२. ३४९, १७ (प्राप्ते प्रजाविसर्गे वै सप्तमे पद्मसम्भवे)। तुकी० पद्मज, पद्मजन्मन्

पद्मसरस्, एक स्थान का नाम है: २. २०, २६ (इन्द्रप्रस्थ से गिरिव्रज जाते समय श्रीकृष्ण के मार्ग में यह स्थान भी पड़ा था)।

पद्मा = श्री: २. ६८, ४५; ४. ६, ८; १२. २२८, १५. २१; १३. ११, ३; १४. ५२, १२।

पद्माक्ष = विष्णु (७. २०१, ७१)।

पद्मात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ५८)।

पद्मालय = ब्रह्मा (३. १८८, ८५)।

पद्मावती = एक मातृका (९. ४६, ९)।

पद्मिन् = विष्णु (सहस्रनाम)।
पद्मेशय = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।
पद्मोद्भव = ब्रह्मा (देखिये वरथा०)।
पनविन् = शिव (सहस्रनाम)।

पनस् , एक वानरप्रमुख का नाम है : ३. २८३, ६ (यह ५२ कोटि वानरों के साथ रामदाशरथी की सेना में सम्मिलित हुआ); २८५, ९ (पट्टुश के साथ युद्ध किया)।

१. पन्नग (बहु० °गाः) सामान्यतः नाग (बहु०) का पर्यायवाची है : १. ३, १३६; १२, २; १५, ७; १६, २४ (पन्नग भोजनः); २५, ५. ६; २७, १०; ३४, १८; ३५, ३. ४. १९; ३७, ३०; ३८, ४ (पन्नगसत्तमाः) ५. ६ (पन्नगश्रेष्ठाः). ९. ११; ३९, ११. १२ (पन्नगान्सर्वान्वासुकिः शापमोहितः); ४०, ७; ४६, १९; ४८, ३. २१ (पन्नगराजस्य). २२; ५०, ३८; ५२, ८; ५३, २; ५४, ५. १३; ५७, ३; ५८, ८. १९. २४; ६४, ३८; ६५, ५. ६; ६६, ७० (कद्रूः पुत्रांस्तु पन्नगान्); ६७, १; २०७, ३३; २२७, २४; २२८, २१; २. २४, २४; ३. ३, ४०; ३९, १६; ४०, ११; ४१, ११; ६४, ९; ८३, ६; ८५, २६; १४९, १३; १७३, ९. १०. ४६. ७५; १७९, ५; १८१, ३४; २३१, ७५; २९१, ४९; ४. २, १३; ४८, १६; ५९, १३; ५. १०१, १; ११२, ५. १५; ११९, २४; १२४, ५३; १२९, १७; १८१, १२; ६. ६५, ६४; ७९, ३१. ४८; ८२, १६; ९०, ७५; ९५, ४८; ११७, ४३; ७. ३०, ३९; ३६, २७; ७७, २६; १०८, ३४; १०९, २३; ११०, ६; १३६, १६. २९; १३८, ५. १९; १३९, ७; १६५, २९; १७२, ८; १७५, ४४; १८४, ४०; १९९, १६. ५७; २००, ९७; ८. १९, ३०; २७, ६; ५२, २६; ५६, २५. ६७; ५८, १२; ५९, ५४; ८१, ४८; ९. १५, ४०; १७, ५९; ३७, ३१. ३३; ४४, ४७; ४५, ७; ४६, ८५; ११. ६, ११; १२. २५, १०; ४७, २०; १८२, २८; ३६३, ५; १३. १४, ३९९; १८, ७६; ९८, ५८; १५०, ७१; १६०, १०; १६५, १८; १४. २६, २. ५. ६; ५७, २३; ५८, ५५; ८०, ४२. ४९; ८२, १२।

२. पन्नग (एक०) : १. ४१, १३. १५; २. ६५, ४२; ७७, ३८; ३. ६६, ८; ९९, ३२; १६०, ७४; ४. ४८, १३; ५. १२९, १७; ६. ८२, ३६; ९२, २; ९६, १; ७. २९, ४१; ३७, २८; ४०, १२; १०९, २८; ११६, ३९; १४३, २; १६८, ५; ८. २३, १९; २४, ५३; ५१, ३८; ५९, ४७; ७७, २२; ८७, ९६; ९. १३, २१; ११. २७, १५; १२. २९८, २९; १३. १, १६. १९. २६. २७. ३१. ३४. ३७-३९. ४४. ४७. ४९. ५०. ५६. ६६. ६९. ७०. ७९. ८०; १४, २५६; १४. ७४, २०; ७९, २२।

विभिन्न पन्नगों के नाम :
* अर्बुद : २. २१, ९।
* कौरव्य : १. २१४, १८।
* तक्षक : १. ३, १७८. १८६; ४१, १८; ४२, ३४. ३८; ४३, ४. ५; ४४, ३; ५०, १५. ३५. ४१; ५१, ४. ५; ५६, १२; ५८, ५; २२३, ७; २२५, ३०।
* नहुष : ३. १७९, २. ५; १८०, २; १८१, १७।
* पद्म : १२. ३५७, ७; ३५८, ११; ३५९, २।
* वासुकि : १. १५, २; ३७, १. ३०; ४६, २१; ४८, १४; ५३, २०; ५४, १४. १८. २४; ९. ३७, ३२।
* शङ्खपिन् : २. २१, ९।
* शेष : १. ३६, १५; ७. ९४, ४८।
* श्रीवह : १. ३५, १३।
* सुमुख : ५. १०४, २८

पन्नगनन्दिनी = उलूपी : १४. ८०, ७।
पन्नगपति = १. पद्म : १२. ३६१, १।
१. पन्नगराज = शेष (अनन्त) : ५. ११०, १८।
२. पन्नगराज = वासुकि : १. ४८, २१; ९. ३७, ३०।
पन्नगराजन् = वासुकि : ९. ३७, ३२।
पन्नगसुता = उलूपी : १४. ८०, २. १८।
पन्नगात्मजा = उलूपी : १४. ७९, ८. ११; ८०, ८।
१. पन्नगी : १. ९७, ३२; ७. १०६, ३३; १२५, ३२।
२. पन्नगी = उलूपी : १. २१४, १८।
१. पन्नगेन्द्र = तक्षक : १. ४२, ३५. ३७. ३९; ४३, ७. ८; ५०, ३८. ३९; ५६, १९; ९. ६१, ३६ (पन्नगेन्द्रसुतस्य अश्वसेनस्य)।
२. पन्नगेन्द्र = वासुकि : १. ४७, ६।
१. पन्नगेश्वर = तक्षक : १. ४१, १३; ४३, ३६।
२. पन्नगेश्वर = वासुकि : १. ४८, ९; ९. ४५, ५३; १३. १५०, २१।
पन्नगेश्वरकन्या = उलूपी : १. २१४, ३३।

पम्पा, एक सरोवर का नाम है जो ऋष्यमूक पर्वत के निकट स्थित था: ३. २७९, ४४; २८०, १. ८; १३. १०२, ४७।

पयस्य, अङ्गिरस् के आठ पुत्रों में से तीसरे का नाम है (१३. ८५, १३०)।

पयोदा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २८)।

पयोनिधि = शिव (सहस्रनाम)।

पयोष्णी, एक नदी का नाम है : ३. ६१, २२ (यह समुद्रगा है); ८५, ४० (सरितां वरम्); ८८, ४ (दक्षिण का एक सुरम्य तीर्थ). ७. ९ (इसके तट पर स्थित वाराह तीर्थ में राजा नृग ने एक यज्ञ किया था। इस यज्ञ में इन्द्र सोमपान करके मत्त और प्रचुर दक्षिणा प्राप्त कर ब्राह्मण लोग भी हर्षोल्लास से पूर्ण हो गये थे। पयोष्णी का जल हाथ से उठाया गया हो या धरती पर पड़ा हो, अथवा वायु के वेग से उछल कर अपने ऊपर पड़ गया हो, वह जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त किये हुये सम्पूर्ण पापों का हरण कर लेता है); १२०, ३१ (तीर्थयात्रा के समय युधिष्ठिर यहाँ भी आये थे). ३२। "इस पयोष्णी नदी के तट पर राजा नृग ने यज्ञ करके सोमरस द्वारा इन्द्र को तृप्त किया था। उस समय इन्द्र पूर्णतः तृप्त होकर आनन्द मग्न हो गये थे। यहीं इन्द्र सहित देवताओं ने और प्रजापतियों ने भी प्रचुर दक्षिणा से युक्त अनेक यज्ञ किये थे। अमूर्तरया के पुत्र राजा गय ने यहाँ सात अश्वमेध यज्ञ कर के उनमें इन्द्र को सन्तुष्ट किया था। इन सातों यज्ञों में जो वस्तुयें नियमित रूप से काष्ठ और मिट्टी की बनाई जाती हैं उन्हें भी राजा गय ने सुवर्ण की बनवाया था। चषाल, यूप, चमस, स्थाली, पात्री, स्रुक् और स्रुवा-ये सातों इन यज्ञों में सुवर्ण के बने थे। इन यज्ञों के सुवर्णमय यूपों को स्वयं इन्द्रादि देवों ने खड़ा किया था। इन यज्ञों में इन्द्र सोमपान कर के और ब्राह्मण प्रचुर दक्षिणा पाकर हर्षोन्मत्त हो गये थे। राजा गय ने इन यज्ञों में जो असंख्य धन प्रदान किया था उसकी गणना उसी प्रकार नहीं हो सकती जैसे इस जगत में बालू के कणों अथवा आकाश के तारों और वर्षा की धाराओं की गणना नहीं की जा सकती। गय ने विश्वकर्मा द्वारा निर्मित अनेक सुवर्ण गायें ब्राह्मणों को दान दिया था। उन यज्ञों के प्रभाव से गय ने इन्द्रादि लोकों को प्राप्त किया था। जो इस पयोष्णी में स्नान करता है वह गय के समान ही पुण्यलोक का भागी होता है। राजा युधिष्ठिर ने भी अपने भाइयों सहित पयोष्णी नदी में स्नान किया। (३. १२१, १-१६)।" ६. ९, १६. २०।

१. पर, एक प्राचीन नरेश का नाम है जिसका संजय ने उल्लेख किया (१. १, २३४)।

२. पर, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५५)।

पर (:) = शिव (सहस्रनाम)।
पर (म्) = शिव (सहस्रनाम)।
पर (म्) = विष्णु (सहस्रनाम)।

परतङ्गण (बहु० °णाः) एक जातिका नाम है (२. ५२, ३; ६. ९, ६४)।

परपुरञ्जय, एक हैहयवंशी राजकुमार जिसने हिंसक पशु के भ्रम में एक ऋषि की हत्या कर दी थी (३. १८४, ३)। अरिष्टनेमि ने इसके

ब्रह्महत्या के भ्रम का निवारण किया (३. १८४, १३)।
परमं-तपः = शिव (सहस्रनाम)।
परमं-पदम् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ३७)।
परमं-पवित्रम् = स्कन्द (३. २३२, १२)।
परमं-ब्रह्म = शिव (सहस्रनाम)।
१. परमंहवि = अग्नि (१. २३२, १३)।
२. परमंहविः = स्कन्द (३. २३२, १३)।
परमकाम्बोज, पश्चिमोत्तर भारत के एक जनपद का नाम है जिस पर अर्जुन ने विजय प्राप्त की थी (२. २७, २५)।
परमक्रोधी, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३२)।
परमहंस = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।
परमतिग्मांशु = सूर्य (३. ३०२, १)।
परमद्युति – 'विश्वमूर्तिरमेयात्मा भगवान्परमद्युतिः', (१३. १६०, ४२)।
परमयाज्ञिक = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।
परमस्पष्ट = विष्णु (सहस्रनाम)।
परमात्मन्, परमब्रह्म परमात्मा का द्योतक है जो मुख्यतः ब्रह्मा, शिव, विष्णु (श्रीकृष्ण, नारायण) के लिये प्रयुक्त हुआ है : ३. १४२, १७. ३३. ५६ (सभी स्थानों पर विष्णु); १४७, ८ (निर्गुणः) ५. ४३, ५५; ६. ३७, २२. ३१; ३९, १७ (उत्तमः पुरुषः). ९८, १५ (कृष्ण); ७. १४९, १८ (कृष्ण); १२. १८७, २३; १९४, ४२; १९८, ६ (स्थानस्य परमात्मनः); २०२, ७; २१३, २; २४१, १९; २४५, २९. ३५; ३०१, ३७. ७८. ९७; ३१७, १८; ३३९, २५. ११७. १२५; ३४०, ६. २८; ३४१, ११; ३४३, ३१. ४६. ५०. ५४. ६६; ३४४, ४. १७; ३४५, ४; ३४७, १; ३४९, ४८; ३५१, १३. १४; १३. १७, १३९ (शिव : सहस्रनाम); ८५, ८७ (ब्रह्मा); १४७, ५८ (कृष्ण); १४९; १५ (विष्णु : सहस्रनाम); १६७, ३८ (कृष्ण); १४. ५२, १४ (कृष्ण)।
परमेश्वर का भी अक्सर ब्रह्मा, शिव, विष्णु (कृष्ण, नारायण) के लिये प्रयोग हुआ है : ३. ८८, २७ (कृष्ण); ५. ११२, २० (काल); ६. ३७, २०; ६५, ४४ (कृष्ण); १२. ६४, १३ (नारायण); ३३९ ११. १४१ (नारायण); १३. १४, ८. २०१. २०४. २०६. ३१९. ३२९ (सभी स्थानों पर शिव); १७, ६; १८, ६३; ७४, १४; १४८, ३९ (काल); १४९, ५४ (विष्णु : सहस्रनाम); १४. ४७, ४; ५५, ६ (कृष्ण)।
परमेष्ठिज = नारद (१२. ३४३, २३. २६; ३४५, १)।
१. परमेष्ठिन् = ब्रह्मा (प्रजापति): १. १, ३२. ६१; ७, २६; २३, १६; ६४, ४३; २२३; ७७; ३. १००, ६. २०; १८८, ६. ११; ५. १२८, ४१. ४५. ४६; ६. १४, ३९; ७. ५२, ४३; १२. १५५, ५; १९९, ११५; २४०, ३६; ३११, २०; ३३४, ३६; ३४५, ६; ३४७, ४. २३; ३४९, २९।
२. परमेष्ठिन् = शिव (३. ३७, ५८; ७. २०२, १५)।
३. परमेष्ठिन् = विष्णु (नारायण, कृष्ण): ३. १०३, १२; १८८, ८०; १२. ४७, १७; १३. १४९, ५८।
४. परमेष्ठिन् = नारद (१२. ३३९, १८)।
५. परमेष्ठिन् = अजमीढ के पुत्र (१. ९४, ३२. ३३)।
परमेष्ठिपुत्र = नारद (१२. ३३५, ६)।
परमो मन्त्रः = शिव (सहस्रनाम)।
परर्द्धि = विष्णु (सहस्रनाम)।
परशु, एक प्राचीन नरेश का नाम है जिसका सञ्जय ने उल्लेख किया (१. १, २३४)।
परशु राम – देखिये राम।
परशुवन, एक नरक का नाम है (१२. ३२१, ३२)।
परश्वधायुध = शिव (सहस्रनाम)।
परस्वामिन् = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

परहन्, एक प्राचीन नरेश का नाम है जिसका सञ्जय ने उल्लेख किया (१. १, २३८)।
१. परा, एक देवी का नाम है : २. ११, ४१ (ब्रह्मा की सभा में)।
२. परा, एक नदी का नाम है (६. ९, ४७)।
पराक्रम, एक कुरु-सैनिक का नाम है (७. १५६, १२१)।
परागतिः = शिव (सहस्रनाम)।
परान्त (बहु० °न्ताः) एक जाति का नाम है (६. ९, ४७)।
१. परायण = सूर्य (३. ३, १७)।
२. परायण = विष्णु (सहस्रनाम)।
परावर = स्कन्द (३. ३२३, १८)।
परावरज्ञ = स्कन्द (३. ३२३, १८)।
परावसु, रैभ्य के पुत्र और अर्वावसु के भ्राता, एक ब्राह्मण का नाम है : ३. १३५, १३; १३६, ६; १३७, १८; १३८, २-४. १२. २० (इन्होंने बृहद्द्युम्न के लिये एक यज्ञ किया था। इन्होंने गलती से अपने पिता की हत्या करने के बाद उसका दोष अपने भ्राता अर्वावसु पर आरोपित कर दिया था); १२. ४९, ५७. ६०; २०८, २६ (यह पूर्व दिशा में रहने वाले ऋषियों में से एक थे); ३३७, १ (वसु उपरिचर के यज्ञसत्र में सदस्य थे) १३. १५०, ३० (यवक्रीतश्च रैभ्यश्च अर्वावसुपरावसू ः महेन्द्रगुरवः)।
परावह, एक वायु का नाम है : "जो वायु अन्तकाल में सम्पूर्ण प्राणियों के प्राणों को शरीर से निकालता है ; जिसके इस प्राणनिष्कासनरूप मार्ग का मृत्यु तथा वैवस्वत यम अनुगमन मात्र करते हैं; सदा आध्यात्म चिन्तन में लगी हुई शान्त बुद्धि के द्वारा भलीभाँति अनुसन्धान करने वाले तथा ध्यान के अभ्यास में ही सानन्द रत रहने वाले पुरुषों को जो अमृतत्व देने में समर्थ है; जिसमें स्थित होकर प्रजापति दक्ष के सहस्र पुत्र सम्पूर्ण दिशाओं के अन्त में पहुँच गये तथा जिससे स्पर्शित होकर विलीन हुआ प्राणी यहाँ से केवल जाता है वापस नहीं लौटता, उस सर्वश्रेष्ठ सप्तम वायु का नाम 'परावह' है। उसका अतिक्रमण करना सभी के लिये सर्वथा कठिन है। (१२. ३२८, ४९-५२)।
१. पराशर, शक्ति और अदृश्यन्ती के पुत्र, एक ऋषि का नाम है। कृष्ण द्वैपायन व्यास इनके पुत्र थे : १. ६०, २ (जनयामास यं काली शक्तेः पुत्रात्पराशरात्); ६३, ७० (इन्होंने सत्यवती के गर्भ से व्यास को उत्पन्न किया); ९५, ४९; १०५, ७ (सत्यवती ने बताया कि वह एक निषाद-पुत्री थी किन्तु पराशर ने उसके गर्भ से व्यास जी को उत्पन्न किया); १७८, ३ (गन्धर्व ने बताया कि अदृश्यन्ती ने शक्ति के वंश को बढ़ाने वाले एक पुत्र को जन्म दिया। उस बालक ने गर्भ में आकर परासु, अर्थात मरने की इच्छा रखने वाले वसिष्ठ मुनि को पुनः जीवित रहने के लिये उत्साहित किया था। इसीलिये वह लोक में 'पराशर' के नाम से विख्यात हुआ। एक दिन पराशर ने अपनी माता अदृश्यन्ती के सामने ही वसिष्ठ को 'तात' कहकर पुकारा। तब अदृश्यन्ती ने पराशर को बताया कि वसिष्ठ उनके पिता नहीं है। उनके पिता को तो वन में एक राक्षस खा गया है। यह सुनकर पराशर क्रुद्ध हो उठे और उन्होंने सम्पूर्ण लोकों को नष्ट कर डालने का निश्चय किया किन्तु वसिष्ठ ने उन्हें विविध युक्तियों से इस निश्चय से विरत किया); १८०, २३ (वसिष्ठ ने पराशर को और्व की कथा बताया); १८१, २ (शाक्तेयोऽथ पराशरः). १०. १३. १७ (पराशर ने अपने क्रोध को शान्त किया, किन्तु एक राक्षस-यज्ञ आयोजित किया। पुलस्त्य ने इनसे इस यज्ञ को समाप्त करने का आग्रह किया); २. ७, १० (इन्द्र की सभा में); १२. ४७, १० (शरशय्या पर पड़े भीष्म को देखने आये); ४९, ७७ (सुदास के पुत्र की रक्षा की); २९०, ३. ६; २९१, १; २९२, १; २९३, १; २९४, १; २९५, १; २९६, ३. १२. २०. ३२. ३६; २९७, १; २९८, १. ३; ३१८, ५९; ३२०, २४; ३४९, ३ (इन्होंने सत्यवती के गर्भ से व्यास को उत्पन्न किया था). ६ (शक्ति पुत्रः पराशरः). ७ (पराशरस्य दायादः कृष्णद्वैपायनो मुनिः). ५०

(महर्षिः पराशरो नाम महाप्रभवः); १३. १८, ४०. ४५ (शिव को प्रसन्न करके इन्होंने व्यास को पुत्र रूप में प्राप्त किया था); ६६, ६०; १५०, १०. ७४। तुकी० शाक्त्र, शक्त्रेः पुत्रः, शक्त्रेय, शक्त्रिज, शक्त्रिपुत्र।

२. पराशर, एक नाग का नाम है : १. ५७, १९ (यह धृतराष्ट्र-कुल में उत्पन्न हुआ था)।

पराशरशरीरज = व्यास (१३. २४, ४)।

पराशरसुत = व्यास : २. ४६, १०; ७. २०२, १५४; १२. २४१, ३; २८४, २०८; ३२८, ५. ५७; ३४०, २४; १३. १४, ९० (वेदव्यासश्च योगात्मा पराशरसुतो मुनिः)।

पराशरात्मज = व्यास : १. १, ५५; १२. ३२७, ४२।

१. परिक्षित् अथवा **परीक्षित्**, उत्तरा के गर्भ से अभिमन्यु द्वारा उत्पन्न पुत्र का नाम है। ये जनमेजय के पिता थे (१. २, ३३९)। "एक दिन राजा परीक्षित ने शिकार खेलते हुये एक मृग को आहत किया। वह मृग भाग कर तत्काल उनकी दृष्टि से ओझल हो गया। उस मृग का पीछा करते हुये परीक्षित थके-माँदे शमीक मुनि के आश्रम में आये। राजा ने अपना परिचय देते हुये शमीक मुनि से आहत मृग के सम्बन्ध में पूछा। मुनि उस समय मौन-व्रत का पालन कर रहे थे। अतः उन्होंने राजा को कोई उत्तर नहीं दिया। तव परीक्षित ने कुपित हो धनुष की नोक से एक मरे हुये सर्प को मुनि के कन्धे पर रख दिया। फिर भी मुनि ने उनकी उपेक्षा कर दी। मुनि को इस अवस्था में देखकर परीक्षित ने अपना क्रोध त्याग दिया और अपनी राजधानी लौट आये। मुनि शमीक के पुत्र शृङ्गी ऋषि जब अपने आश्रम लौट रहे थे तब मार्ग में उन्हें अपने पिता के साथ राजा के दुर्व्यवहार का पता लगा। उस समय शृङ्गी अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे (१. ४०)।

"शृङ्गी ने जब अपने सखा कृश से यह सुना कि परीक्षित ने उनके पिता के गले में एक मरा सर्प डाल दिया है तब उन्होंने क्रोधपूर्वक राजा को इस प्रकार शाप दिया। 'जिस पापात्मा ने मेरे पिता के कन्धे पर मृत सर्प रक्खा है उसे आज से सात रात के बाद तक्षक नामक विषैला सर्प मेरे वाग्बल से प्रेरित होकर यमलोक पहुँचा देगा।' शृङ्गी के पिता शमीक मुनि इस शाप से प्रसन्न नहीं हुये क्योंकि उनके विचार से राजा परीक्षित अपनी प्रजा की सुचारु रूप से रक्षा करते थे। इसलिये वह परीक्षित के अपराध को क्षमा कर देना चाहते थे (१. ४१)।

"शमीक ने अपने पुत्र शृङ्गी के क्रोध पर असन्तोष व्यक्त करते हुये अपने गौरमुख नामक शिष्य को आदेश दिया कि वह परीक्षित के पास जाकर उन्हें शाप के सम्बन्ध में बताये। गौरमुख के मुख से अपने शाप का समाचार जानकर परीक्षित अत्यन्त सन्तप्त हो उठे। उन्होंने अपने अपराध के लिये क्षमा माँगते हुये गौरमुख से कहा : 'भगवान शमीक मुनि यहाँ पधार कर पुनः मुझ पर कृपा करें।' तदनन्तर मन्त्रियों से परामर्श कर राजा परीक्षित ने एक ऐसा महल बनवाया जो सब ओर से सुरक्षित था। उसमें सब प्रकार की ओषधियाँ एकत्र करके उन्होंने वैद्यों और मन्त्रसिद्ध ब्राह्मणों को भी सभी ओर नियुक्त कर दिया। तदनन्तर अपने मन्त्रियों को राज-काज सौंप कर परीक्षित उस नवनिर्मित महल में रहने लगे। सातवाँ दिन आने पर मन्त्रशास्त्र के ज्ञाता द्विजश्रेष्ठ काश्यप राजा की चिकित्सा के लिये आ रहे थे। मार्ग में नागराज तक्षक ने ब्राह्मण का वेश बना कर काश्यप जी से हस्तिनापुर जाने का प्रयोजन पूछा। काश्यप ने बताया कि वह तक्षक के डँसने पर राजा परीक्षित को अपने विद्यावल से विपरहित करने के उद्देश्य से हस्तिनापुर जा रहे हैं (१. ४२)।

"काश्यप की विद्या की परीक्षा लेने के उद्देश्य से तक्षक ने एक वट वृक्ष को काट कर अपने विष से भस्म कर दिया किन्तु काश्यप ने उसे पुनः हरा-भरा और पूर्ववत खड़ा कर दिया। विस्मित तक्षक ने तब काश्यप को उससे कहीं अधिक धन दिया जितना उन्होंने परीक्षित से प्राप्त करने की आशा की थी। इस प्रकार तक्षक से सत्कृत होकर तथा अपने योगवल से यह जान कर कि परीक्षित की आयु समाप्त होने वाली है, काश्यप वहीं से अपने घर लौट गये। तदनन्तर जब तक्षक ने हस्तिनापुर में आकर सुना कि राजा एक सुरक्षित स्थान में वैद्यों और मन्त्र-विशारदों के साथ निवास कर रहे हैं तब उसने फल, दर्भ, और जल लेकर कुछ नागों को तपस्वी वेश में राजा के पास भेजा। परम पराक्रमी राजा परीक्षित ने उन तपस्वियों की सभी वस्तुयें ग्रहण कर लीं। राजा ने उन फलों में से जब एक उठाया तब उसमें से एक छोटा-सा कीट प्रकट हुआ। देखने में वह अत्यन्त लघु था, उसकी आँखें काली और शरीर का रंग ताँबे के समान था। परीक्षित ने उस कीट को हाथ में लेकर मन्त्रियों से इस प्रकार कहा : 'अब सूर्यदेव अस्ताचल को जा रहे हैं इसलिये इस समय मुझे सर्पविष से कोई भय नहीं है। वे मुनि सत्यवादी हों, इसके लिये यह कीट ही तक्षक नाम धारण करके मुझे डँस ले। ऐसा करने से मेरे दोष का परिहार हो जायगा।' ऐसा कहकर परीक्षित ने उस लघु कीट को अपने कन्धे पर रख लिया। उसी समय तक्षक नाग ने अपने शरीर से राजा को जकड़ कर डँस लिया (१. ४३)।" १. ४०, १०. १६. १९; ४१, ३. ५. १८. २५; ४२, १३. ३८। "जनमेजय के मन्त्रियों ने राजा परीक्षित के सम्बन्ध में बताया कि वे अत्यन्त धर्मात्मा, महात्मा और प्रजापालक थे। वे धनुर्वेद में शारद्वत (कृपाचार्य) के शिष्य थे। जब कुरुकुल परिक्षीण हो चला था उस समय उत्तरा के गर्भ से उनका जन्म हुआ था, इसलिये वे परीक्षित नाम से विख्यात हुये। उन्होंने साठ वर्ष की आयु तक प्रजापालन किया। भाँति भाँति के हिंसक पशुओं का शिकार करने में उनकी अत्यधिक रुचि थी। एक दिन वन में शिकार के समय उन्होंने शमीक मुनि का अपमान कर दिया जिससे मुनि कुमार शृङ्गी ने उन्हें शाप दे दिया। फलस्वरूप तक्षक के डँसने से उनकी मृत्यु हो गई। तक्षक ने महर्षि उत्तङ्क को भी अपमानित किया था : १. ४९, २. १५; ५०, १९; ९५, ८४. ८५; १०. १६, ३. ४. १३. १६ (जब कौरववंश परीक्षीण हो जायगा तब उत्तरा को एक पुत्र प्राप्त होगा और इसीलिये उस गर्भस्थ शिशु का नाम 'परिक्षित्' होगा। वह पुत्र परिक्षित् ही पाण्डववंश का प्रवर्तक होगा। अश्वत्थामा के ब्रह्मास्त्र के तेज से दग्ध हुये गर्भस्थ शिशु परिक्षित् को श्रीकृष्ण पुनः जीवित कर देंगे); १४. ६६, ८ (ये जड़वत उत्पन्न हुये थे); ७०, १२ (इन्हें श्रीकृष्ण ने पुनः जीवित किया : 'परिक्षीणे कुले यस्माज्जातोऽयमभिमन्युजः। परिक्षिदिति नामास्य भवत्वित्यब्रवीत्तदा'); १५. २१, १६; ३५, ६ (जनमेजय ने अपने पिता परीक्षित को देखने की इच्छा प्रकट की। तब व्यासजी ने परीक्षित का परलोक से आवाहन कर के उन्हें जनमेजय को दिखाया); १७. १, ७. ९. १५. २८ (पाण्डवों के महाप्रस्थान के बाद परीक्षित् का हस्तिनापुर के राज्य पर अभिषेक किया गया। कृपाचार्य इनके आचार्य नियुक्त किये गये)। तुकी० अभिमन्योः सुतः, अभिमन्युज, भरतश्रेष्ठ, किरीटितनयात्मज, कुरुश्रेष्ठ, कुरुकुलाधम, कुरुनन्दन, कुरुराज, कुरुवर्धन, पाण्डवेय।

२. परिक्षित् अथवा **परीक्षित्**—ये अविक्षित् के पुत्र थे : १. ९४, ५२. ५४।

३. परिक्षित् अथवा **परीक्षित्**, अयोध्या के एक राजा का नाम है : ३. १९२, ३ (अयोध्यायामिक्ष्वाकुकुलोद्वहः पार्थिवः परिक्षिन्नाम मृगयामगतम्)।

परिग्रह = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. परिघ, अंश द्वारा प्रदत्त स्कन्द के एक अनुचर का नाम है (९. ४५, ३४)।

२. परिघ, एक चाण्डाल का नाम है (१२. १३८, ११७)।

परिद्वीप—देखिये सरिद्वीप।

परिधीपतिखेचर = शिव (सहस्रनाम)।

परिनिर्मित = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

परिवह, एक वायु का नाम है : जिस वायु के आधार पर आकाश से दिव्य जल ऊपर ही ऊपर प्रवाहित होते हैं; जो आकाश गङ्गा के पवित्र जल को धारण करके स्थित है और जिसके द्वारा दूर से ही प्रतिहत होकर सहस्रों किरणों के उत्पत्ति-स्थान सूर्यदेव, जिनसे यह पृथिवी प्रकाशित होती है, एक ही किरण से युक्त प्रतीत होते हैं, तथा जिससे अमृत की दिव्यांनाथ

चन्द्रमा का पोषण होता है, वह विजयशीलों में श्रेष्ठ छठाँ वायुतत्व 'परिवह' नाम से प्रसिद्ध है (१२. ३२८, ४६-४८)।

परिव्याध, एक ऋषि का नाम है : १२. २०८, ३० (ये पश्चिम दिशा में निवास करते थे); १३. १५०, ३६-३७ ('वरुणरयत्विजः सप्त पश्चिमां दिशमाश्रिताः); १६५, ४१ (पश्चिम के एक ऋषि)।

परिशेष—'तत्रोपनिषदं चैव परिशेषं च पार्थिव', (१२. ३१८, ३४)।

परिश्रुत, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६०. ६१)।

परीक्षित्, अनश्वन् के पुत्र का नाम है : १. ९५; ४१. ४२ (ये सुयशा बाहुदा के पति और भीमसेन के पिता थे)।

१. पर्जन्य = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

२. पर्जन्य, एक देवगन्धर्व का नाम है १. ६५, ४४ (ये मुनि के चौदहवें पुत्र थे); १२३, ५६ (अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उपस्थित थे)।

३. पर्जन्य = विष्णु (सहस्रनाम)।

पर्णशाला, एक ग्राम का नाम है : १३. ६८, ४ (यमुन पर्वत के नीचे गङ्गा और यमुना के बीच में स्थित इस ग्राम में ब्राह्मण निवास करते थे)।

पर्णशीरपट = शिव (सहस्रनाम)।

पर्णाद, एक अथवा अनेक ब्राह्मणों का नाम है : २. ४, १३ (युधिष्ठिर की सेवा में); ३. ७०, ४. २४. १८; ७४, ४; ७६, २८; १२. २७२, ८ (शुक्रस्य पुनराजाभिः पर्णादो नाम धर्मवित्)।

पर्णाशा, एक नदी का नाम है : २. ९, २१ (वरुण की सभा में उपस्थित होने वाली नदियों में से एक); ६५, ६ (यत्किञ्चिदनुपर्णाशां प्राक्सिन्धोरपि सौवल); ६. ९, ३१; ७. ९२, ४५. ५९; १३. १६५, २१।

पर्यवस्थित = विष्णु (सहस्रनाम)।

पर्याय = शिव (सहस्रनाम)।

पर्वण, एक राक्षस का नाम है (३. २८५, २)।

१. पर्वत, एक देवर्षि, जो नारद की बहन के पुत्र थे। इनका अक्सर गन्धर्वों के साथ उल्लेख मिलता है : १. ५३, ८ (नारद और पर्वत महा राज जनमेजय के सर्पसत्र के सदस्य बनाये गये थे); १८७, ७ (ये नारद के साथ द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित थे); २. ४, १५ (युधिष्ठिर की सेवा करते थे); ५, ११; ७, १० (इन्द्र की सभा में); ३. ५४, १४; ९३, १८. २५; १३४, ९; ७. ५५, ५. ९. १३ (सृञ्जय की पुत्री पर नारद के आसक्त हो जाने पर इन्होंने और नारद ने एक दूसरे को शाप दिया); १६३, १५; १२. २९, १४९ (इन्होंने सृञ्जय को सुवर्णष्ठीवि नामक पुत्र प्रदान किया); ३०, १. ४. ६. १८. १९. २६. २९. ३४-३६. ४१. ४३. ४४ (नारद और पर्वत ने एक दूसरे को शाप दिया); ३१, ४. ६. ८. १०. १४. १६. १८. १९. २८; १६६, २३; २००, ११; २८३, ११; २९२, १५; ३२३, १९; १३. २६, ७ (ये नारद सहित भीष्म को देखने आये); ८३, ९; ९४, ४. ३४; १३९, १०; १६५, १३; १५. २०, २; २९, ९।

२. पर्वत, एक गन्धर्व का नाम है जिससे सम्भवतः १. पर्वत का ही तात्पर्य है : २. १०, ३२ (कुबेर की सभा में उपस्थित गन्धर्वों में यह भी थे)।

पर्वतज = कुलिन्दपुत्र (८. ८५, १६)।

पर्वतपति = भगदत्त (७. २६, ५१)।

पर्वतराजकन्या = उमा (१. १८७, ४)।

पर्वतराजन् = मन्दार (१. १८, ८)।

पर्वतवासिन्, एक जाति का नाम है : ३. २५४, १९ (अपने दिग्विजय के समय कर्ण ने इन्हें परास्त किया था)।

१. पर्वतेश्वर = बृहन्त (२. २७, ९)।

२. पर्वतेश्वर = भगदत्त (७. २९, ११)।

पर्वसंग्रह—१. २, ४१. ८५. ३८०. ३९६। देखिये पर्वसंग्रहपर्वन्।

पर्वसंग्रहपर्वन्, महाभारत के दूसरे अवान्तर पर्व का नाम है : "सौति ने कहा कहा : त्रेता और द्वापर की सन्धि के समय परशुराम ने क्षत्रियों के प्रति क्रोध से प्रेरित होकर अनेक बार क्षत्रिय राजाओं का संहार किया और समन्तपञ्चक क्षेत्र में रक्त के पाँच सरोवर बना दिये। उन्होंने रक्ताञ्जलि द्वारा अपने पितरों का तर्पण किया जिससे प्रसन्न होकर ऋचीक आदि पितृगण परशुराम जी के पास आये और उनसे वर माँगने के लिये कहा। परशुरामजी ने क्षत्रियसंहार के पाप से मुक्त हो जाने तथा अपने द्वारा निर्मित समन्तपञ्चक क्षेत्र के प्रसिद्ध तीर्थ हो जाने का वर माँगा जो पितरों ने इन्हें प्रदान किया। अक्षौहिणी शब्द की व्याख्या करते हुये सौति ने बताया कि एक रथ, एक हाथी, पाँच पैदल सैनिक और तीन घोड़े—इन्हें 'पत्ति' कहते हैं। पत्ति की तिगुनी संख्या को सेनामुख; तीन सेनामुख को एक गुल्म; तीन गुल्मों को एक गण; और तीन गण की एक वाहिनी होती है। तीन वाहिनियों को पृतना; तीन पृतना को एक चमू; तीन चमू को एक अनीकिनी, और दस अनीकिनी की एक अक्षौहिणी होती है। इस प्रकार एक अक्षौहिणी में २१,८७० रथ, १,०९,३५०, पैदल; २१,८७० हाथी, और ६५,६१० घोड़े होते हैं। कौरवों और पाण्डवों की कुल अट्ठारह अक्षौहिणी सेना थी। समन्तपञ्चक क्षेत्र में कौरवों को निमित्त बनाकर इतनी विशाल सेना एकत्र हुई और वहीं नाश को प्राप्त हो गई। भीष्म ने दस दिनों तक, द्रोण ने पाँच दिनों तक, कर्ण ने दो दिन तक, शल्य ने आधे दिन तक, तथा अट्ठारहवाँ दिन व्यतीत हो जाने पर रात्रि के समय अश्वत्थामा, कृपाचार्य, और कृतवर्मा ने कौरव सेना का सेनापतित्व करते हुये पाण्डवों से युद्ध किया। तदनन्तर सौति ने महाभारत का महत्त्व बताते हुये उसके १०० अवान्तर पर्वों तथा हरिवंश के ३ पर्वों का उल्लेख किया। उन्होंने महाभारत के १८ पर्वों की गणना कराते हुये हरिवंश का उन्नीसवें पर्व के रूप में उल्लेख किया। सौति ने इन पर्वों के विषयवस्तु का सारांश, उनकी श्लोक संख्यायें और श्रवणफल आदि भी बताये। (१. २)।"

पर्वानुक्रमणी; महाभारत के प्रथम अवान्तर पर्व का नाम है जिसमें प्रमुख १८ पर्वों के विषयवस्तु का सारांश दिया गया है। इसे अनुक्रमणिकापर्वन् भी कहते हैं (१. २; ४१)। तुकी० अनुक्रमणी।

पलाला, शिशु की माताओं में से एक का नाम है (३. २२८, १०)।

पलाश (बहु० °शाः), किसी कुल विशेष का नाम है जो यम की सभा में उपस्थित होता था : २. ८, २५ (यहाँ १०० पलाशों का यम-सभा में उपस्थिति का उल्लेख है)।

पलाशिनी, एक नदी का नाम है (६. ९, २२)।

पलित, एक मूषक का नाम है (१२. १३८, २१. २६. ६४. ७२. ७६. ७७. ८९. ९१. ९३. १२३. १३५. १८३. २०१-२०२)। देखिये मार्जार-मूषिक-संवाद।

पल्लव (बहु०) : ३. ५१, २४। देखिये पह्लव (बहु०)।

पल्वलानि = शिव (सहस्रनाम)।

१. पवन = वायु (देखिये वस्था०)।

२. पवन = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

पवन-अर्जुन संवाद (पवनदेव और अर्जुन कार्तवीर्य का संवाद)—"भीष्म ने कहा : पूर्वकाल में महिष्मती नगरी में हैहयवंशी, सहस्रभुजधारी कार्तवीर्य अर्जुन नामक राजा राज्य करते थे। उन्होंने दत्तात्रेय की आराधना करते हुये अपना सारा धन उनकी सेवा में समर्पित कर दिया। दत्तात्रेय ने राजा कार्तवीर्य से प्रसन्न होकर वर माँगने के लिये कहा; राजा ने ये वर माँगे : (१) 'युद्ध में मैं सहस्रभुजाओं से युक्त रहूँ किन्तु घर में मेरे केवल दो ही भुजायें रहें; (२) रणभूमि में सभी सैनिक मेरी एक सहस्र भुजायें देखें; (३) मैं पृथिवी को धर्म के अनुसार प्राप्त कर उसका आलस्यरहित होकर पालन करूँ; और (४) यदि मैं कभी सन्मार्ग का परित्याग करके असत्य मार्ग का आश्रय लूँ तो श्रेष्ठ पुरुष मुझे सत्पथ पर लाने के लिये शिक्षा दें।' इस प्रकार वरदानों से सम्पन्न राजा कार्तवीर्य ने सम्पूर्ण

पृथिवी पर विजय प्राप्त कर लिया। तदनन्तर बल के अभिमान से मोहित होकर वे अपने को संसार में सर्वश्रेष्ठ समझने लगे। तभी एक आकाशवाणी ने घोषणा की कि क्षत्रियों से ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं किन्तु कार्तवीर्य ने अपनी श्रेष्ठता ही प्रतिपादित करने का प्रयास किया। उन्होंने कहाः 'आज से मैं सब प्राणियों से श्रेष्ठ कहे जाने वाले, सदा भिक्षा माँग कर जीवन-निर्वाह करने वाले और अपने को सबसे उत्तम मानने वाले ब्राह्मणों को अपने अधीन करूँगा। आज से मैं क्षत्रियों की प्रधानता स्थापित करूँगा। आकाश में स्थित हुई गायत्री नामक कन्या ने जो ब्राह्मणों को क्षत्रियों से श्रेष्ठ बताया है वह बिल्कुल झूठ है।' कार्तवीर्य अर्जुन की यह गर्वोक्ति सुनकर निशाचरों भी भयभीत हो गई। तब अन्तरिक्ष में स्थित होकर वायु ने अर्जुन को सम्बोधित करते हुये कहा: 'तुम इस कलुषित भाव को त्याग दो। ब्राह्मणों को नमस्कार करो। यदि ब्राह्मणों की बुराई करोगे तो तुम्हारे राज्य में उथल-पुथल मच जायगी।' अर्जुन ने वायु देव का परिचय पूछने के बाद उनसे पृथिवी के समान क्षमाशील किसी द्विज का नाम बताने के लिये कहा। साथ ही उन्होंने जल, अग्नि, सूर्य, वायु एवं आकाश के समान यदि कोई श्रेष्ठ ब्राह्मण हो तो उसका भी नाम बताने के लिये कहा। (१३. १५२)।

"कश्यप, अङ्गिरा, गौतम, कपिल, और्व, और दत्तात्रेय आदि का उद्धरण देते हुये वायु देवता ने ब्राह्मणों को सर्वोपरि बताया। उन्होंने बताया कि अग्नि और ब्रह्मा तक ब्राह्मण हैं। दण्डकारण्य का महान राज्य एक ब्राह्मण के कोप से नष्ट हो गया। सागर, जो पहले मीठे जल से भरा रहता था, ब्राह्मणों के शाप से खारा हो गया। वायु देवता की बातें सुन कर अर्जुन चुप हो गये (१३. १५३)।

"वायु देवता ने कश्यप की कथा का अधिक विस्तार से वर्णन करते हुये अर्जुन से कहा कि यदि वे काश्यप से श्रेष्ठ किसी क्षत्रिय का नाम जानते हों तो बतायें। अर्जुन इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं दे सके। वायु देवता ने तब उतथ्य की कथा का वर्णन किया (१३. १५४)।

"अर्जुन कार्तवीर्य वायु की बातें सुन कर चुप रहे। तब वायु ने अगस्त्य के पराक्रम का वर्णन किया। अर्जुन अब भी चुप रहे। वायु ने वसिष्ठ की कथा का वर्णन किया (१३. १५५)।

"अर्जुन कार्तवीर्य वायु देवता की बात चुप-चाप सुनते रहे। वायु ने अग्नि की महानता का वर्णन किया। अर्जुन के अब भी चुप रहने पर वायु ने च्यवन की महानता का वर्णन किया। (१३. १५६)।

"वायु ने कपों के इतिहास का वर्णन किया। अर्जुन ने दत्तात्रेय का उल्लेख करते हुये ब्राह्मणों की प्रशंसा की। वायु ने कार्तवीर्य की बात सुन कर उनसे इस प्रकार कहा: 'तुम क्षत्रिय-धर्म के अनुसार ब्राह्मणों की रक्षा और इन्द्रियों का संयम करो। तुम्हें भृगुवंशी ब्राह्मणों से घोर भय प्राप्त होने वाला है। परंन्तु वह दीर्घकाल के पश्चात् सम्भव होगा। (१३. १५७)।"

पवन-शाल्मलि संवाद—"भीष्म ने बताया कि हिमालय पर्वत पर एक विशाल तथा प्राचीन शाल्मलि वृक्ष था। एक दिन नारद मुनि ने आकर उस वृक्षराज की प्रशंसा करते हुये कहा: 'पवन देव तुमसे किसी कारण वश प्रसन्न रहते हैं, अथवा वे तुम्हारे सुहृद हैं, जिससे इस वन में वे तुम्हारी रक्षा करते हैं। अन्यथा वे (वायु देवता) इतने वेग शाली हैं कि वृक्षों को कौन कहे, पर्वत शिखरों तक को भी अपने स्थान से हिला देते हैं (१२. १५४)।

"शल्मलि ने नारद जी को बताया कि वायु न तो उसके मित्र हैं, न बन्धु, न सुहृद। उसका अपना तेज और बल वायु से भी भयंकर है। वायु उसकी अठारहवीं कला की भी समता नहीं कर सकते। शाल्मलि की अहंकारोक्ति सुनकर नारद जी ने उसे फटकारते हुये बताता कि वायु देवता ने उसे इसलिये छोड़ रक्खा है क्योंकि सृष्टि करते समय ब्रह्मा ने कुछ काल तक उसके नीचे विश्राम किया था। नारद जी ने यह भी बताया कि वायु देवता इन्द्र आदि से भी अधिक शक्तिशाली हैं (१२. १५५)।

"नारद जी ने उस वृक्ष की गर्वोक्ति की सूचना वायु देवता को दी। तब वायु देवता ने आकर उस शाल्मलि वृक्ष को फटकारते हुये ब्रह्मा के विश्राम की बात का उल्लेख करते हुये उसे छोड़ने का कारण बताया। वायु की बात सुनकर शाल्मलि हँसने लगा और उसने वायु से अपनी शक्ति दिखाने की चुनौती दी। तब वायु ने दूसरे दिन उसे अपनी शक्ति का परिचय देने का वचन दिया। रात होने पर शाल्मलि ने विचार करके देखा कि वह उतना बलवान नहीं है, और वायु तो निश्चित रूप से उससे कहीं अधिक बलवान् हैं। उसने इस परिस्थिति में बुद्धि का आश्रय लेकर इस संकट से मुक्त होने का निश्चय किया क्योंकि बुद्धि में उसने अपने को अन्य सब से श्रेष्ठ माना (१२. १५६)।

"ऐसा विचार करके शाल्मलि ने अपनी सभी शाखाओं, डालियों और टहनियों को स्वयं नीचे गिया दिया। इस प्रकार शाखाविहीन होकर वह प्रातःकाल वायु देव के आने की प्रतीक्षा करने लगा। वायु देवता ने आकर जब उसका वह रूप देखा तब मुस्कराने लगे। उन्होंने कहा: 'मैं रोष में भरकर तुम्हें ऐसा ही बना देना चाहता था किन्तु अपनी कुमति से तुमने स्वयं ही यह विपत्ति ले ली है। वायु की बात सुनकर शाल्मलि ने नारद जी के वचन का स्मरण किया और अपने अहंकार पर पश्चाताप करने लगा (१२. १५७)।"

पवनस्य ह्रदः, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १०५)।

१. **पवनात्मज** = भीमसेन : २. ३०, २६; ३. १५७, २९; ७. २६, ७; १२७, ४०।

२. **पवनात्मज** = हनुमत् (देखिये वस्था०)।

१. **पवित्रः** = स्कन्द : ३. २३२, ६।

२. **पवित्रः** = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

पवित्रपाणि, एक ऋषि का नाम है : २. ४, १५; ७, १२ (इन्द्र की सभा में)।

१. **पवित्रम्** = शिव (सहस्रनाम)।

२. **पवित्रम्** = कृष्ण (१२. ४३, १५)।

३. **पवित्रम्** = विष्णु (सहस्रनाम)।

पवित्रा, एक नदी का नाम है (६. ९, २१)।

१. **पशु** = शिव (१४. ८, २०)।

२. **पशु** (बहु० °वः), एक जाति का नाम है : (६. ९, ६७)।

३. **पशु** (बहु० °वः), पशुओं का द्योतक : १. ६, ४०; २. ११, ५०।

४. **पशु** (बहु० °वः) = शिव (सहस्रनाम)।

पशुपति = शिव (देखिये वस्था०)।

पशुभर्तृ = शिव (९. ४३, १५; १२. २८४, १९; १३. १४, ३२)।

पशुभूमि, एक देश का नाम है जिस पर पूर्व में भीमसेन ने विजय प्राप्त किया था (२. ३०, ९)।

पशुसखा, एक शूद्र का नाम है : १३. ९३, २२ (गण्डा का पति). ५१. ७९. १०४. १३५।

पशूनाम् पतिः = शिव (१२. २८४, ८२ : सहस्रनाम; १४. ८, २०)।

पश्चिमानूपक, एक राजा और उसकी प्रजा का द्योतक है : १. ६७, ३४ (यह मृतपा नामक असुर से उत्पन्न हुये थे)। तुकी० ५. ८१, १८ (पश्चिमानूपकाश्च)।

पह्लव (बहु० °वाः) एक जाति का नाम है (६. ९, ४७)।

पह्लव (बहु० °वाः) एक जाति का नाम है : १. १७५, ३६ (वसिष्ठ की धेनु की पूँछ से उत्पन्न हुये); २. ३२, १७ (पश्चिम में इन्हें नकुल ने पराजित किया था); ५२, १५ (ये युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये); ३. ५१, २४ (युधिष्ठिर के राजसूय के समय उपस्थित थे); ५. ४, १५; ६. ९, ६८ (उत्तर-पूर्व की जातियों के साथ इसका उल्लेख); १२. ६५, १३ (निम्न और बर्बर जातियों की गणना में इसका उल्लेख)।

पांशुराष्ट्र, एक देश का नाम है। यहाँ से वसुदान हाथियों का उपहार

गये थे : २. ५२, २७ ।

पांसुराष्ट्र (बहु० °ष्ट्राः) एक जाति का नाम है (६. ९, ४४) ।

पांसुराष्ट्राधिप = वसुदान (५. ४, २०) ।

पाक, एक असुर का नाम है जिसका इन्द्र ने वध किया था (१२. ९८, ४९) ।

पाकशासन = इन्द्र (देखिये वस्था०) ।

पाकशासनदायाद (पाकशासन के पुत्र) = अर्जुन (२. २६, ११) ।

पाकशासननन्दन = अर्जुन (२. २९, ७) ।

पाकशासनि = अर्जुन : १. १३६, ८; १३८, ३४; २२७, ४८; २. २५, ९; २७, २०. २३. २५; २८, ३; ४. ४४, २१; ५१, १२; ५. १५८, ६; ७. २९, ८; ७७, ९; ८८, २९; ९०, ४; १३९, १२५; १४६, ७८. ८०; ११. २२, ७; १२. १५७, १५; १४. ७४, १८; ७६, १७; ८१, ३२; ८३, १०; १६. ७, ६२ ।

पाकात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ७२) ।

१. पाञ्चजन्य, श्रीकृष्ण के शंख का नाम है : ३.२२, ११ (यह सागर से उत्पन्न हुआ था); ३. १४, २० (जलजं); २०, १३ (शंखप्रवरं). ३२; ५. ४८, ६४ (दिव्यं शंखम्); १५१, ७० (पाञ्चजन्यस्य निर्घोषम्); ६. १, १८; २५, १५; ५१, २५; ५९, १०५ (पाञ्चजन्यस्य रवेण); ७१, २; ११२, १४; ७. ३, १९ (नदतः पाञ्चजन्यस्य); ११, २०; ७३, ५१. ५२; ७९, ३९; ८८, २१; ९०, १५; १००, ३२; १०३, ४०; १०४, १२. १३; ११०, ३६; १२६, ३५; १२७, २०; १४८, ५८; ८. ५३, २०; ७६, ३५; ९४, ६०; ९. ४, १७; ६१, ७१; १२. ४०, १७; १७. २, ३ ।

२. पाञ्चजन्य, एक अग्नि का नाम है : ३. २२०, ५ (पञ्चवर्णः स तपसा कृतस्तैः पञ्चभिर्जनैः । पाञ्चजन्यः श्रुतो देवः पञ्चवंशकरस्तु सः) ।

पाञ्चनद (बहु० °दाः) = पञ्चनद (बहु) : ८. ४५, १६ ।

पाञ्चनद (वि०) : ८. ४५, १९. २१ ।

१. पाञ्चाल (बहु० °लाः), एक जाति (पञ्चाल) का नाम है : १. १, १५४. २१२; २, ११०. ११२. १५०. २९४. २९७. ३००. ३०२; ६१, ३० (कृष्णां पञ्चालेषु स्वयंवराम्); ९४, ३३ (तथेमे सर्वपञ्चाला दुष्यन्तपरमेष्ठिनोः); १३०, ४३ (द्रुपद उत्तर पञ्चाल के राजा बने); १३८, ५. १८. २९. ३७. ४०. ५८. ७४ (अपने शिष्यों की सहायता से द्रोण ने द्रुपद को पराजित किया किन्तु बाद में उन्हें आधा राज्य वापस कर दिया, अर्थात गङ्गा के दक्षिण के शर्मणवती नदी तक का भाग द्रोण ने द्रुपद को लौटा दिया); १५६, २; १६५, ७ (पञ्चालेष्वद्भुताकारं); १६७, ४१. ४२. ५० (द्रौपदी और धृष्टद्युम्न का जन्म); १६८, ६. ७; १८४, ५; १८५, १ (राज्ञा दक्षिणपञ्चालान्द्रुपदेनाभिरक्षितान्). ५ (द्रौपदी का स्वयंवर); २. १४, २७. २९ (जरासन्ध के भय से भाग गये); ५२, ४९; ८१, ३१. ३२; ३. १२, ६४; ५१, ९; ५२, ७; ८०, २०; ८७, १५ (पाञ्चालेषु च कौरव्य कथयन्त्युत्पलावनम्); ४. १, १२; ४, ५७ (पाण्डवों के तेरहवें वर्ष में उनके पुरोहित धौम्य पाञ्चाल नरेश के पास रहे); ५, २१ (इन्हें भीमसेन पहले पराजित कर चुके थे); २०, १२; ५. ३१, २१. २२; ५०, ४-७; ५३, २; ५४, १७; ५७, ३२. ४२. ५१; ६१, २५; ६२, ५; ७२, १४; ८२, २५; १४०, १६. २३; १४४, ३. १२; १५१, ५५; १६७, २०; १६८, २३; १७१, ११; १७३, २; १९०, ८; ६. १, १५; ९, ३९. ४१; १४, २०. २८; ४७, ४; ४९, १. ४२; ५२, १५; ५३, १३; ५६, १४; ५९, २. १२९; ६४, ७२. ७६; ७२, ३२; ७९, ६२; ८६, ३९; ८८, ३. ४; ९३, ९; ९५, ८५; ९७, ३९; ९८, १९; १०३, १४; १०५, ४; १०८, २९; १०९, ९. ३३; ११५, १५. २६; ११८, २३. ५२; ११९, ११७; १२०, ८; ७. ७, ४६. ४८; ८, २०. ३२; १०, ४०; १६, ११. २१. ५२; २१, २२. २३. २९. ६०. ६१. ६५; २२, १. ७. ११. १३; २३, २०. ४०. ५०; २६, ३२. ४८; ३१, ६. ८; ३२, ४०. ४१; ३५, १०. २२; ३९, २२; ४०, १६. २०; ४३, १८; ७२, ८९; ७८, ९. १२; ८६, ७; ९५, १३. १४. २७; १०६, १-५; १०८, ३५; ११०, २९. ३०. ३२. ३४; १११, ४६; ११३, ६५; ११४, ४४. १००; ११७, ३५. ३६; १२४, ३२. ४२; १२५, ४९. ५१. ५२. ५४. ५७. ७२; १२६, १. ३; १२७, ३२; १३०, २४. ४४; १३५, २३; १५०, १३. २७; १५१, २६. ३४; १५३, २. ८. १७. २२. ३९; १५४, ६. ७. ११. ११. १३; १५५, ३. ७; १५६, ५१; १५७, ४४. ४७; १५८, ३. ४. ६. ११; १५९, १९. २२. ४७. ६९. ९१. ९२. ९५-९७. १००; १६०, १२. १३. १६. १९. २३. २५. ४२. ५३. ५५-५७; १६१, ११. १४; १६२, ५५; १६४, १५. १६. ३४; १६५, २. ३; १६६, ३४. ६३; १६८, २५; १६९, ३४; १७०, ३; १७१, १७; १७२, १५. २३. २४. ३२; १७३, १०. १३. १४. १९. २३. ५०; १७७, ५. ३१; १७८, ९. १२. ३३; १७९, ३; १८२, २१; १८३, १३. ५२; १८५, २२; १८६, ५. ३०. ४४. ४७. ४८; १८७, २५. ३०; १८९, ५७. ६२. ६५; १९०, १. ३-५. २२. २४-२६. २९; १९३, २६. ३७. ४१. ४४; १९५, १५. १७. ४०. ४५; १९८, १९. ५४. ५८; १९९, १०. १५. २०. २६. ३४; २००, २५. ४४. ६४. १२९; ८. ३, १९. २१; ५, ५; ६, ५; ८, १९; ९, ४; १०, ३५. ३६; १२, १९; २१, १८. २४. २६; २२, ४. ७. २२; २४, ५४. ५५. ५८. ७५; २५, १२; २८, ११. ४८; ३२, २६; ३७, २१; ४५, १४. १६. २८. ३०. ३५; ४६, ५६; ४७, १५. २०; ४८, ३. ४. ११. १३. १४-१७. २१; ४९, ७. ९. ६१; ५५, ११; ५६, ४. ५. ४१. ४२. ५७. ५८. ६०. ६२. ६३. ६७. १४५; ५८, ४६; ५९, २८. ५५. ६४; ६०, ३. २३. २६. ३३. ३४. ५६. ५७. ६०. ६६-६९. ७२. ७३. ७५; ६१, ३४; ६२, ३३; ६४, ४०. ४४. ५०. ५४; ६६, ११; ६७, १३; ७३, २९. ३५. ५८. १०२. १०३. १०५-१०७; १०९-११२. ११४. ११५; ७४, ५. ५१; ७५, १०; ७८, ८-१०. १२. २६. ३५. ४९. ५२. ५४. ६०; ७९, ८. ९; ८१, ५४. ५६. ५७; ८२, १७. २७; ८३, ११; ८६, १०; ८९, २९-३१. ३३. ३७. ६९. ८०; ९३, ३६; ९४, ४२; ९६, ५०; ९. १, १३; २, २२. ६८; ६, २४; ७, १३. १५. ४३. ४४; ८, ४४; १३, ३१; १४, ३७; १६, २७. २९; १७, ९; १८, ८. १४; १९, १२. १४; २०, २२; २१, ७. ११. ३४; २३, १५. ३६; ३०, २२. ४८. ५३; ३१, ४६; ३२, १४. ३२. ४३. ४४. ४७; ३३, ३०; ४१, ४; ५५, ४५; ५८, ६०; ६०, ३१; ६१, ३. १७. ७०; ६५, ३६; १०. १, ५६. ६२; ३, २५. २९-३३ ३५. ३६; ४, ४. १६. १९. २६. २७; ५, १३. ३५. ३६; ७, ६४. ६५; ८, ४. १४९. १५८; ९, १. ५०; ११. ११, १२; १२, ४; १६, १५. २६; २०, २०; २७, २३; १२. ७, २१; १५. ३६, ३२ । तुकी० पञ्चाल बहु०; पाञ्चाल्य बहु०; प्रभद्रक बहु०; सोमक बहु०; सृञ्जय बहु० ।

२. पाञ्चाल (एक०) = धृष्टद्युम्न : ७. १९८, ६५; ८. २२, २७; ९. २५, ५२ (पाञ्चालस्य बलेन); १०. १८, २५ (पाञ्चालस्य पदानुगाः) ।

३. पाञ्चाल (एक०) = द्रुपद : १. १३८, ९. १३. ४३. ४५. ५७. ७०; १९६, १९; ३. १२, २ (पाञ्चालस्य दायादो); ५. ५, १४ (मत्स्यपाञ्चाल्योश्च); ५०, ३५; १९०, ९; ७. ८, २८ ।

४. पाञ्चाल (एक०) = सत्यजित् : १. १३८, ४०. ४२. ४६ ।

५. पाञ्चाल (एक०) = गालव : १२. ३४२, १०३-१०४ (पाञ्चालेन क्रमः प्राप्तस्तस्माद्भूतात्सनातनात् । बाभ्रव्यगोत्रः स बभौ प्रथमं क्रमपारगः ॥ नारायणाद्वरं लब्ध्वा प्राप्य योगमनुत्तमम् । क्रमं प्रणीय शिक्षां च प्रणयित्वा स गालवः) ॥

१. पाञ्चालक = धृष्टद्युम्न (७. १९८, २२) ।

२. पाञ्चालक (वि०) : १. १३८, ३७; २०२, १४ ।

पाञ्चालकुलनन्दन = वीरकेतु (७. १२२, ४०. ४१) ।

पाञ्चालकुलवर्धन = धृष्टद्युम्न (६. ६१, १८) ।

पाञ्चालज = युधामन्यु (८. ८३, ३८) ।

पाञ्चालतनय = धृष्टद्युम्न (७. १६०, ३४) ।

१. पाञ्चालदायाद = शिखण्डिन् (६. ११२, ३५) ।

२. पाञ्चालदायाद = धृष्टद्युम्न (६. ०५, ३. ४; ६१, २८) ।

पाञ्चालनगर = काम्पिल्य (१. २, ११३; ९५, ७३; १६९, १५)।

पाञ्चालनृप = द्रुपद (१. १९८, १८)।

पाञ्चालपति = द्रुपद (३. १३०, २६)।

१. पाञ्चालपुत्र = धृष्टद्युम्न (६. ११६, ४५; ७. ९, ५; ९७, ६; १७०, २७; ९. २०, ११. १३. २३)।

२. पाञ्चालपुत्र = वीरकेतु (७. १२२, ३३)।

३. पाञ्चालपुत्र (बहु० °त्राः) (३. ५१, ४३; ७. १९८, १८; ८. ८२, १; ९. २०, २३।

पाञ्चालपुत्री = द्रौपदी (१५. ११, २२)।

पाञ्चालमुख्य = धृष्टद्युम्न (७. १७३, ४)।

१. पाञ्चालराज = द्रुपद : १. १३८, ३. ४२; १८५, २७; १९२, १४; १९३, १६. १७. २३. ३९; १९४, ३; २. ७०, २; ८१, ३०; ३. १४४, ६; ५. १, ४; १९०, १३; ६. ५९, ११८; ६१, ३१; ११८, ३९; ११९, ८; ८. २३, ४; ७२, १५; ११३, २; १६०, २५; १६७, १९; १७०, ५४; १९१, १; १९३, ६१; १९७, २३; १९८, ६०; ८. ९३, ३६; ९. ३, ३६; २०, १६. १९. २४; २५, ३९; १०. ५, ३५; ८, २१; १०, २५. २८। तुकी० पञ्चालराज।

२. पाञ्चालराज = धृष्टद्युम्न : ६. ५४, ९५; ७. २००, ४०; ८. २१, २५; ९. २०, १६; ३५, ४७; १०. ३, ३४।

१. पाञ्चालराजन् = धृष्टद्युम्न (१०. ८, ३३)।

पाञ्चाली = द्रौपदी : १. २, ४४. ८६. १५२. १८१. २०८; ६३, १२२; ६७, ४८; १८३, ८. १२; १९०, ४०; १९१, ११. १४; २०६, ३४. २०८, १८; २२१, ७८. ८०; २. ६५, ३२. ३९; ६७, १३. १९. २७; ६८, ११; ६९, १९; ७०, ४. १४; ७१, २६. ३७; ७२, ३; ७७, १०; ८१, १२. १७. २८. ३१; ३. ३, ७२; १२, ४९. १२३. १३२; ५१, ३६. ३९; ८०, ११; १४०, १६. १८; १४१, १; १४४, २. १८; १४६, ३; १५४, ३; १५५, १०; १५६, २१; १७९, ४७; २३३, ८. ६०. ६१; ४. ५, ७; १४, ३; १७, ११. १२. १४; १९, ३९; २२, ३९. ८४. ८६; २३, २९; २४, १४; ३६, ११. १४; ४४, ४; ४५, ३९; ५. ८१, ३; ८२, २७; १३७, १६; १४१, ५५; ७. ७८, ३६. ४०; १३७, ४३; १८३, ३१; ८. ९, ६०; ७४, २५; ११. १३, १२; १५, ६. ३६; १८, २१. २२; १२. १४, ३०; ३८, ५; १४. ६९, १२; १५. १०, ४६; १८, १; १८. १, ९; २, ११. ४३; ४, १०।

पाञ्चालेय (अर्थात् द्रौपदी-पुत्र) = शतानीक : ८. ७५, १०।

१. पाञ्चाल्य = आरुणि : १. ३, २३. २५. २७।

२. पाञ्चाल्य = ब्रह्मदत्तः १२. २३४, २६; १३. १३७, १७।

३. पाञ्चाल्य = शिखण्डिन्: ५. ५०, ३६; १४१, ४८; १५०, ११; १७२, १६; १९२, १०; ६. १३, ९; १४, २०; १०७, १०३; १०९, १; ११२, १७; ११५, ६; ११६, ८०; ११८, ५०; १२०, ८; ७. १, १; १६, ५२; ९. १६, ६; ११. २६, ३४; १२. २७, ११; १८. १, २६।

४. पाञ्चाल्य = द्रुपद : १. १३१, २. १३. ४२. ४६; १३८, ९. १३; १६६, १६. २५. २७; १८५, ९; १९५, १. ८; १९६, १; २०२, ९. १४, १५; २०६, २०; २. ७१, ५; ३. ९२, २४; ५. ५, १८; ५७, ४; १९०, ६; १९२, १४. ५९; ६. १९, १८; ४९, ४३; ५१, २८; ६१, २४; ७. २३, १२. ५०; ११. २५, १८।

५. पाञ्चाल्य = धृष्टद्युम्नः १. १६७, ५५; १९२, १; ५. ५३, ५; ६५, ६; १४१, २५. ४८; १५३, ६; १५७, १२; १६०, ७६; १६४, ४; ६. १९, १८; ४५, ३२; ४७, ३१; ५२, ३१; ५३, १. ३९; ५५, ३; ६१, १४. २१. ३३; ७७, ६४; ८६, २९. ३५; ९८, ५१; ११५, ३०; ७. ९, २५; १३, १९; २०, ३०; ३१, ८. १८; ३२, ६६; ८५, ४५; ९७, ७. ३४; ११०, २५; १२२, ५१. ५३; १२४, १९; १६५, १७; १७०, ६. १७; १८६, ४७. ५०; १८७, २७; १८९, ४. १८; १९१, ४. २६; १९२, २६. २७; १९४, १४; १९६, ३३; १९८, ५. ४७. ४९. ५८; १९९, ६; २००, ४०. ७१; २०१, ७; ८. ५६, १. २१. २२. २३; ५९, ५५; ९. १६, ३७; २३, ६४; २५, १६. १७; २७, ६. १०; २९, ८; ३०, ५३; १०. ५, ३७; ८, १३. १८।

६. पाञ्चाल्य = जनमेजय : ७. १६७, २२; ८. ४९, ३५।

७. पाञ्चाल्य = मित्रवर्मन् : ८. ६, २५।

८. पाञ्चाल्य = सत्यजित् : ७. १७, ४४; २१, ४. १८. २०।

९. पाञ्चाल्य = सिंहसेन : ७. २३, ५०।

१०. पाञ्चाल्य = सुधन्वन् : ७. २३, ५५।

११. पाञ्चाल्य = उत्तमौजस् : ५. ५७, ४२; ७. ८३, ६; ८५, ३९; १३०, ३७।

१२. पाञ्चाल्य = वीरकेतु : ७. १२२, ३०।

१३. पाञ्चाल्य = वृक : ७. २१, १२।

१४. पाञ्चाल्य = व्याघ्रदत्त : ७. १६, ३२. ३४।

१५. पाञ्चाल्य (पाञ्चालों के राजा)—इन्होंने संवरण को पराजित किया था (१. ९४, ३८)।

१६. पाञ्चाल्य, एक पाञ्चाल राजकुमार का द्योतक है। द्रोण ने इसका वध किया था (७. २१, ५८)।

१७. पाञ्चाल्य, एक तीर्थ का नाम है (३. ९०, ११)।

१८. पाञ्चाल्य, द्वि० (°ल्यौ) = युधामन्यु और उत्तमौजाः ५. १९६, ३. १७; ६. १९, २०; ७. ९१, ३६; ९२, २८; १३०, २६. ४०; १४७, २९. ३८; ८. ११, ३१।

१९. पाञ्चाल्य, द्वि० (°ल्यौ) = चन्द्रदेव और दण्डधरः ८. ४७, २०।

२०. पाञ्चाल्य, बहु० (°ल्याः), एक जाति = पाञ्चाल (बहु०) का द्योतक है : ६. ५१, २८; ५४, ११९; १०८, ६; ७. ९, २७; २६, ३२; ९ , ३६; १४९, ५३; १५०, १३; १५३, ३९; १७०, ७०; ८. ५६, ६३; ८२, १०।

पाञ्चाल्यपुत्र = धृष्टद्युम्न : ६. ६१, २८; ७. १७०, २७।

पाणिक, स्कन्द के एक अनुचर का नाम है जिसे पूषा ने इन्हें दिया था (९. ४५, ४३)।

पाणिकर्ण = शिव (सहस्रनाम)।

पाणिकूर्चन्, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७६)।

पाणिखात, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ८९)।

पाणिमत् = देखिये अणिमत्।

पाणीतक, स्कन्द को पूषा द्वारा प्रदत्त एक अनुचर का नाम है (९. ४५, ४३)।

पाण्डर, ऐरावतवंशीय एक नाग का नाम है (१. ५७, ११)।

पाण्डरवासिनी = श्री (१. १८, ३५)।

१. पाण्डव, बहु० (°वाः), पाण्डु के पाँच पुत्रों, युधिष्ठिर, भीमसेन और अर्जुन (कुन्ती से उत्पन्न) तथा नकुल और सहदेव (माद्री से उत्पन्न) का द्योतक है। ये पाँचों पाण्डव द्रौपदी के पति थे। कभी-कभी, विशेषतः ५ वें से नवें सर्ग में पाण्टव शब्द युधिष्ठिर के पक्ष के सभी व्यक्तियों का द्योतक है : १. १, १३. १००. ११७. ११८. १२४. १३४. १३५. १४७. १६०. १७३. १८८. २०३. २१०. २१७; २, १३. २८. ५७. १०१. १०२. १०५. ११५. ११८. १३२. १३४. १३९. १४३. १४७. १६३. १६५. १९०. १९५. २०३. २०७. २०९. २१२. २१८. २२२-२२४. २२६. २२७. २३७. २४०. २५५. २७३. २९४. ३०३. ३०६. ३०९. ३४०. ३६५; ४२, ३९; ६०, २. १८. २२. २४; ६१, ७. ९. १५. १८. २६. ४०. ५३; ६२, ४. २८; ९५, ६६. ६८. ८२. ८७; १०६, १९; ११८, २; १२३, ७५; १२६, ६; १२७, १५. २८-३२; १२९, १. २०. २१. २८. ३३. ४०. ४१; १३०, २३. २७. ३०; १३२, ४. १२. ३६. ३७. ४१. ४३. ४६; १३३, ६; १३४, ३५; १३५, १७ (पृथारणिसमुद्भूतैस्त्रिभिः पाण्डववह्निभिः); १३७, २१; १३८, १. २५. २६; १३९, २६; १४०, ३, १०; १४१, ४. ९. १४. १६.

१०. १९. २१. २२. २७; १४२, ४. १४. २३; १४३, ६. १७; १४४, ६. १२. १७; १४५, २. २८; १४६, ८; १४७, २-३. ५; १४८, १८. १९; १४९, २. १४; १५०, ३. ६. ७. १४. १८. १९; १५१; १३; १५२, १६; १५३, १; १५४, ३२; १५५, ४१; १५७, १; १६२, १; १६४, १५; १६५, १. ५. १०; १६६, २०; १६९, १. १६; १७०, १. ७; १८३, ५. ६. ८; १८४, १. ३; १८५, १. २. ६. २७; १९१, २४; १९२, १४; १९६, १. २२; १९७, ३४. ३५ (पाँचों पाण्डव पाँच इन्द्रों के अवतार थे और इनकी पत्नीस्वरूप द्रौपदी के रूप में श्री ने अवतार लिया था). ५२ (द्रौपदी के साथ पाण्डवों का विवाह हुआ); १९८, १८; १९९, १; २००, १. ८. १२. १६. २१. २४; २०१, ७. ९; २०२, १. १०. १६. १९. २०; २०३, ५. १६; २०४, ८-११. २६; २०६, ७. ८. ११. १४. २२. २६; २०७, ४. १०. १६. २०. २८. ४९. ५०. ५२; २०८, १. ५. १४. १७; २१२, ३०; २१३, १. ४. ६. ७. १३; २२१, ८९; २२२, १३; २. १, १८; २, २५; ३, ३६; ४, ९; ५, १. १२. १६; २०, ९; २१, १३. ४०; २२, २५; २४, २७. ४६. ५१. ५३. ५९. ६०; ३७, ३; ३९, १२; ४१, १९; ४२, ७; ४५, २. ३. ४६; ४६, ३०; ४७, १६. १८. २६; ४८, १; ५०, १; ५२, ४१; ५३, १३; ५४, १; ५५, २०. २१; ५६, ७. १४; ५८, १. ३०. ३१; ६२, १०. १४. १५; ६३, ५. ९; ६५, १; ६६, १; ६७, २. ३. २२. ३०. ४२; ६८, ५. ११. २३. ३३. ३७-३९. ९०; ६९, ६; ७४, १. ५. ९. ११. १७. २०. २४. २७; ७५, १२; ७६, २२; ७७, ६. ८-१०. १३. १४. २३; ७८, ७; ७९, २. ३०; ८०, ९. ३८. ४०. ४१. ४४. ५२; ८१, ३. ४. ६. १५. २८. ३०. ३५. ३७; ३. १, १०. १७. १९. ४०-४२; ३, ८६; ४, १. १३. १८. १९; ५, १; ६, १. २. १२. १७; ७, ४. ८. १०. १८. २२; ८, २. ४. ८-१०; ९, २३; १०, ४. ९. २०. २७; ११, ३. १५. १८; १२, १. ६६. ७१. ८७. ९५. ११२. १२०. १२९; २२, ४४. ४७. ५०-५२; २४, १३. १६. २६; २५, ३. ४; २६, १; ३६, २२. २३; ४२, ४०; ४८, ७; ४९, २. ९; ५०, १; ५१, १६. १९. ४५. ४६; ५२, १; ८०, १. ४. ५. ७; ९१, ४; ९२, ३; ९३, २४. २९; ९५, २. १३; ११४, १३; ११९, १-३; १४०, २९; १४२, २. ११. १३. १४; १४४, १. १३. १७. २६; १४५, ८. २६. ३९. ४२. ४५. ४८. ५४; १५१, १४; १५५, ७. २२; १५७, १; १५८, १९. २१. २६. २८. ३१. ७२; १५९, ३. ३१; १६०, ९. १३. १७; १६१, ३१. ३४. ३५; १६२, २७. ३८; १६३, १; १६६, १६; १७५, २५; १७६, ५; १८१, ४८. ४९; १८२, ११. १७. १८; १८३, ११. १२. ३८. ४४. ४५. ५०. ५२. ५३; १९०, ६; १९१, ३४; १९२, १; १९४, १; १९९, १. १७. १८; २३३, १. ४. ६. २०. ५३; २३५, १; २३७, २. ४. १२. १३. १६; २३८, २. ३; २३९, १८. १९; २४२, ९. १०; २४३, १३; २४४, ४. ८. २१. २२; २४५, २. २९; २४६, १९; २४७, १. २; २४८, ६-९. १६; २४९, ३. ५. २१. २९; २५०, १. ५. ६. ९; २५१, ७. ९; २५२, १६. २६. ३४; २५३, ६. ८-१०. १७. १९. २०; २५४, २७; २५६, ८. ९. १९; २५७, १५. १९. २१; २५८, १४; २५९, १. ८; २६२, १; २६३, १. ३२. ३४. ३६. ३९. ४७. ४९; २६४, ३. ८; २६८, २७; २६९, १४; २७०, ३. १४. १७; २७२, २७. ७७. ८१; २७३, १; ३००, ११; ३१०, २९. ४१; ३११, १. ४. १४. १७. १९; ३१३, १२७; ३१४, १. २६; ३१५, १. २९; ४. १, १७; ४, ५. ७; ५, ४. १४. ३१; ६, ३४; १२, १३; १३, ८-१०; २५, ९. १३. १८. १९; २६, २. ४. ११; २८, ८-१०. २६; २९, १. ४-७. १३; ३०, १७; ३१, १. ६. ३०; ३३, ३२; ३४, २; ३६, १७; ३७, १७; ४७, ५. २४; ५२, १०. १५; ६८, १; ७०, १. ५. १३; ७१, ११. १८. २४. ३०. ३३; ७२, २६; ५. १, ९; २, ४; ५, ३. ७. १६; ६, ५. २९; ७, ४; ८, १. २५; १९, ७. १२. १४; २०, १४; २१, ३. ५. १५. १९-२१; २२, ३. ८. १३. १७-२४. २७. ३८. ३९; २३, १. १९; २४, ९; २५, १. ४; २६, २४. २७; २७, १६; २९,

१. २. २२. ३२. ३४. ३७. ४२. ४८. ५६. ५८; ३०, २३. ३०; ३१, ५. १४; ३२, ५. ८; ३३, १२; ३४, ८३; ३५, ७७; ३६, ७२; ३७, २१. ४२. ४४. ६४; ३८, ४६; ३९, २१. २६; ४०, ३१; ४७, १३. १५. १७; ४८, ५. ६. १०. ३८. ८९. ९१. ९२. ९९; ४९, ३१. ३४. ३७. ४५. ४७; ५०, ४. ५. ९. १६. १८. २०. २३. २५. २८. ३०. ३१. ३७. ४०. ४२-४६. ४९; ५१, ४९. ५२; ५३, १. ३. १२; ५४, १०. २२; ५५, ८. १६. २४. २८. ४३. ६८; ५७, १. ३. ९. १०. २८. ३०. ३६. ३८-४०. ४२. ४४. ४६. ५१; ५८, १५. १७. १८. २०. २७; ६०, ४. ९. २३; ६१, २५; ६३, ६. ८; ६७, ३. ४; ६८, ३. ६. ११; ७२, ४. ८१; ७३, १०. १६; ७४, ३; ७६, ११; ७८, ७. ८. १८. १९; ७९, १; ८१, २. ६; ८४, ४. ११. १४. १९. २८; ८३, ४१; ८५, ५; ८७, ९. १०. १६; ८८; १०. १३. १४; ८७, २७; ९०, ७. १०. २७. २९, ३९, ६१. ९८. ९९; ९१, २६. २८; ९२, १२. २४. २६. २९; ९३, १३. १६. १९; ९५, ३. १५. १७. १८. २२. २६. २९-३१. ३७. ४०. ५४; ९६, ५०; ९७, ८. १०; १२३, २१; १२४, १६. २१. ३१. ४२. ४४. ४५. ४७. ६२; १२६, ५. १७; १२७, ७. ८. १०. ११. १४. २४. २५; १२८, ३. ४. १४-१६. १८. २३. २४. ४८. ५०; १२९, ३६. ४५. ५२; १३०, ६. ८. २६; १३१, ३. ३४; १३२, ३; १३७, २३; १३८, ११; १३९, १७. १९; १४०; ११-१३. १७. २५. २७. २९; १४१, १५. १९. ४५; १४२, ३; १४३, ४. १६. १८. २०; १४४, १. ८. १२. १६-१८; १४६, १०; १४७, १. ३; १४८, २६. २७; १५०; १५; १५१, ५३. ६८; १५२, ९. १७; १५३, ५. ७. १०; १५५, २७; १५६, १६; १५७, २९. ३१. ३५; १५८, १०. १७; १५९, ३. ११; १६०, १. ६. ८. ४७. ५३. ६०. ७५; १६१, ४; १६२, २. १२. २७. ५२; १६३, ११; १६४, १२; १६५, १०. २३. २७. ३०. ३२. ३३; १६७, १; १६८, ३. २२. २३. २७; १६९, १. २; १७०, ७; १७१, १०. १२. १८. १९. २५. २६; १७२, १; १९२, ११. १७; १९५, १; ६. १, १-३. २६. २६. ३३; २, १३; ३, २३. ५८. ६२; ९, ३. ७५; १३, १०; १४, ९. १३. १७. २४. ३९. ४१. ४६. ५३. ६५. ७९; १५, ४. १३; १६, ४. ५. २३. २६; १८, ४; १९, १४. २५. ३५. ४३; २०, १. ५. ६. २०; २२, २; २५, १. २; ३४, ३७; ४३, ७. ८९. ९३. १०४; ४४, १. ३. ६. २५; ४५, ७. ६०; ४६, ३. ४८; ४७, ३. २९; ४८, ३८. ३९. ४३. ४५. ४६. ५९. ८३. १०२. ११६; ४९, १. ५. ६. १२. २०. ४७. ५१; ५०, २४. २६. ३८. ५७; ५१, ३०; ५२, ४. ११. ४१. ६७; ५३, १३; ५४, १०४; ५६, १८; ५७, ३. ४. ५. ३२. ३७. ३८; ५८, ३६. ३८. ४२. ४६; ५९, ४-६. १४. २१. २३. ७०. ७१. १०२; ६१, २७. ३४; ६२, २. ४. ६. ४२; ६४, ४, ३२. ६६. ७२. ७६. ७७. ७९. ८१; ६५, ४. ६. १६. २२. २६. २७. ३३. ३६. ४०; ६६, ३१, ३७; ६८, १३. १६. १७; ६९, ३. ४. ७. २०. २१. ३३; ७०, २. १२. २५. २८. २९; ७२, ११; ७३, ४०. ४२; ७४, ३२. ३८. ३९; ७५, १. १३. २३. ३७; ७७, ३; ७८, २९. ३१. ३६; ७९, ५. ६३; ८०, ४. ९. १२; ८१, ८. १०; ८२, १२. २५; ८३, २८. २९; ८४, ५५; ८६, ४०. ५२. ५३; ८७, १. ४. २२. ३७. ३९; ८८, १. १०. ४४; ८९, १०. २१. २८; ९०, १. २. ८५. ८९; ९१, २७; ९४, ७. १०. १३. १५. २८. ४८; ९५, ४. ६. २२. ३९. ४६. ५०. ७९. ८१. ८४; ९६, ३. १५. ७९. ८०; ९७, ६. १०. ११. १३. ४१; ९८, १८. ३२. ३९. ४४; ९९, ६. १५. १६. १८. २९; १००, १३. २८. ३२. ३४. ३५. ५१; १०१, ३८. ४०; १०३, २. ४१. ४४; १०४, १२. १४. १५. ३७. ३८; १०५, १. ३. ४. ११. २४; १०६, ९. १०. ७८. ७९. ८२; १०७, ७. ८. १०. ५७. ६९. १०७; १०८, १-३. १०. ११. २१. २३. २५-२७. २९. ३०. ३४. ४६; १०९, ३. ३. ९. ११. २८. ३०. ३१; ११०, १९. २३. २६; १११, १७; ११३, २८. ५६; ११४, ३९. ४६; ११५, १-३. १०. २१. ४२; ११७, ९. १०. १४. १८. २५. २७. ५०; ११८, ६. १५. ४९; ११९, १. ९. १८. २६. २९. ५६. ६७. ७४. ११०. ११३. ११६; १२०, २. ११. १८. २८. ३२. ६२. ६५; १२१, १. ६. ५०. ५३; १२२, ११. २१.

२५. २९; ७. १, ३. ११. २९. ४०; ३, १४. २५; ७, २. ४. ९. २१. ४२-४४. ४७. ५२. ५३; ८, १. ७. ८. २०. ३०. ३१. ३६; ९, १. २०. २३; १०, ४३. ५७; ११, ३२. ३३; १२, ११. १७. ३०; १३, १५. १६. १९; १४, १; १५, २. १०. ३५; १६, १३. १९. ३८; २०, ३; २१, १३. ३७. ६१; २२, १. ७. १६. १९. २०. २३. ३०; २३, ३४; २५, ४. १३; २६, ३०. ४७. ५७; २७, ६. ९; ३१, ७. १०. २८; ३२, ११. ३६. ४०. ४६; ३३, ८. २१; ३४, २. ८; ३५, ९; ३६, ३. ११; ४०, १५. २०. २५; ४२, ९. २०; ४३, १६. १८; ७२, १७; ७४, १०. १२. ३१; ७८, ९; ७९, १०. ३२; ८३, १७; ८४, २५; ८५, १४. २३. ३०. ३३. ३७; ८६, ७. १५. २३; ८७, १५; ८८, ८; ९४, ११. १३. १५; ९५, २. ३. ११. १३. १५. १९. २१. २५. २६. ३०; ९६, १; ९७, १. ४; ९९, ३७; १०२, ५. १४; १०३, ४७; १०६, ३; १०८, ३२, ३६. ४३; १०९, ११. २३. २४; ११०, २. २१. २७. ३४. ४५; ११२, ३९; ११३, ३; ११४, ४८. ५१. ५२. ६२. ८७. १०१; ११६, ४६; ११९, ३६; १२१, ७. ५४; १२२, ६. ८. १९-२४. ३०. ३१. ७३; १२४, १३. २४. ४४; १२५, ५०; १२६, १. ३७; १३०, १३; १३१, १२; १३३, ८. ९. ११; १३५, १९; १३७, १६. ४५. ४६; १४३. ३; १४६, १४२; १४९, ६२; १५१, १७. १९. ३३. ४१; १५२, ३५; १५३, ११. १३. १६; १५४, २. १४. ३५; १५५, ६. ११. १३. १७; १५६, ३२. ३३. ४१. ९१. ९८. १२६; १५८, १. ३. ४. १०. १५. १८. ५०. ५८. ६३. ६७. ६९; १५९, १५. १९. २२. २३. २८. ९८; १६०, २. ६. ७; १६१, २; १६२, ३५; १६३, ८. १७. ३७; १६४, २६. ३०. ३५; १६५, २; १७०, ३. ६८; १७१, ५३; १७२, १८. २६. ३०. ३६. ४१; १७३, ४७-४९. ५६; १७४, ७. ११. १५; १७६, १०. २१. २२; १७७, ४७; १७८, ३३; १७९, ४१. ६२; १८०, १; १८२, २. ९. १०. १६. २७. ३८; १८३, १२. ४६. ५४; १८४, १०. ११. १३. २८; १८५, ३. ३२; १८६, १. ५. २५. ५४; १८७, २९. ३५; १८८, ५०; १८९, १४; १९०, ५. ११. ४५. ५८; १९२, ४४. ७४. ७८. ८४; १९३, ४१. ५०; १९५, २२. २६. ४०. ४४. ४८; १९६, ८; १९८, ९. ४०. ५६; १९९, ९. १२. १३. १६. २१. ६३; २००, २३. ५७. ६५. ७२; २०१, ९९; २०२, १; ८. १, ६. १३-१५; ३, २१; ४, १०; ५, ४. २६; ६, १. ३२. ३९; ८, २३; ९, १.७ २६. ३५. ३६. ५९. ६८. ७३. ७९. ९१. ९५; १०, ४. १९. ३४. ३६. ३८. ४०. ४१; ११, १४. २८. ३०; १३, १. २; १४, ३७; १६, १. २; २०, ३७; २१, ४. ९. १०; २४, ५२; २५, ४१; २८, ४९; ३०, ४२. ४३; ३१, २१-३१. ३५. ६८; ३२, १६; ३५, २१; ३६, २७; ३७, १०. २३. ३८. ४५; ३८, १; ४०, ४६; ४६, ५. ६८; ४७, १. २०; ४८, १०. ६४. ६७; ४९, २४. ३८. ३९. ५४. ६१; ५०, १; ५१, २. ६८. ७६. ८०; ५६, ४०. ६७. ७०. ८०; ५७, ४. ११; ५८, ४४; ५९, २. ४. ३७; ६०, २३. २७; ६१, ५. ६. ९; ६३, १४; ६४, ३३. ३४. ३९. ४४. ५२; ६६, ३८; ७२, ३१; ७३, ५-७. २४. २८. ३६. ३९. ६२. ८४. १०२. १२१; ७४, २५. २९; ७५, १; ७८, १४. १५. ३६. ३९. ४० ४७. ६३. ६४; ७९, ४७. ६९; ८३, ११. ४०; ८४, १३. १७; ८७, ११. ३०. ३३. ७६; ८८, ५. १३. २१. २२. २८; ९१, ९. १४. २९. ५६; ९२, १२; ९३, ४६. ५०. ५४; ९४, ४२; ९५, ८; ९. १, २. ९. १७. ३४. ३५; २, ३. २४. २५. २९. ३२. ३६. ५८. ६६. ६९; ३, १. ४६. ४९. ५२. ५३. ५९. ६१; ४, ४४; ५, ४. १८. २३. २९; ६, १७. २६; ७, ४. १३. १८. ४२. ४४; ८, ८. ९. ११. २८. ३४. ४१. ४३; ९, ४२. ४५; १०, ५. ६. ६३-६५. ६८; ११, ६. ९. १०. २०. २८. ४८; १२, ३२. ३३. ४०; १३, ३१. ३४. ३९. ४४. ४५. ४७; १५, ९. ११. २९; १८, ३. ९. १३; १७, ३३. ३५. ६९. ८३; १८, ५. ९. १६. २७. ४०; १९, १२. १४. ३४. ४६. ५८. ६०. ६६; २०, १. ७. ११; २१, ४. ११; २२, ३; २३, १. २. १४. १५. २६. ३२. ४१. ४५. ५९. ८१. ८५. ८८; २४, १. ११. ३४; २५, १४. १६. २५. ३१. ३८. ४६. ४९. ६०. ६१; २७, १२. २४. ३०. ४७. ५५; २८, १६. २४. २६. ३४. ४४. ६७; २९, ८. १०. १३. १७. २०. २३. ३१. ५०. ७९; ३०, ८. ३६. ४७. ६२. ६६. ६७; ३१, १; ३२, १९; ४५, ४६. ४७. ५०. ६५; ३५, ३९. ४०. ५१. ५६. ५८; ३४, १. ३. ५. १४; ३५, ५. ९. १५; ५२, २७; ५४, ३२; ५५, १२. १४; ५६, ४६; ५७, ५२. ६५; ५८, ६०; ५९, १. १०; ६०, १५. १९. ३१. ३८; ६१, १. ३. १७. ४२. ६०. ७०; ६२, २. ७. ३६. ३८. ३९. ४६; ६३, ३०. ४१. ४९. ५२. ५३. ६४. ६८. ७३. ७५. ७८; ६४, ११. १२. २९; १०. १, ४. ८. २८. ४६. ५२. ५९. ६६; २, २७; ४, ३३; ८, ३. ७३. १३२. १५६; ९, ११. ४८. ५१. ६१; ११, १५; १३, २१; १५, १६. २५. २७. २८; १६, २०. २१. २५; ११. १, २१; ८, ३६. ३८. ३९. ४८; ११, १०. १४; १२, ११; १३, ५; १४, १. ३; १८, २४; १९, १६; २१, ४; २२, १४. १७; २३, २३. ३१; २४, २८; २५, ३०. ३९. ४३. ५०; २७, ८. १३; १२. १४, ३२; ३३, ८; ३८, २५; ४१, ७; ४५, ३; ४८, १; ५०, ८; ५२, २३. २८. ३०; ५३, १९; ५४, २. ७; ५९, १; ७०, १४; २८०, ६९; ३४६, ४. १७; ३४८, ८; १३. ६, ४२; २६, १२. १४. १५. १७; ५७, ४३. ४४; १४८, २२; १६६, १; १६७, ४१. ४८; १६८, ११; १४. १, ६; १५, २; ५२, ७; ५३, १०. १८; ५४, २३; ६०, ३. १०. १५. २३. २८. ३२. ३३; ६२, ७. १२; ६३, ७. १८; ६६, २०; ६७, ६; ६९, ३; ७०, १४; ७१, १. २. ५; ७३, २१; ७५, ८; ८६, ९; ८८. १. ६; ८९, ३१; १५. १, १. ४. ६. ९. २०; २, १. १५. १९; ५, ६; १०, ४१. ४२; १५, १. ४. १२; १६, ३२; १८, १. ३. १३. १५; २१, १. ८; २२, १; २४, १. ३. ४. १५; २५, २; २७, ३. १९; २८, १; २९, ६. २७; ३१, २१, २३; ३२, २. ५. ६; ३३, ४. ५; ३६, ४; ३७, १. ३९; ३८, २०; ३९, १०; १६. १, ९. ११; ५, ५; १७. १, १. २९. ३३. ३६. ४३; १८. १, १; ३, ४४; ५, ३०. ३९। तुल्नी० पाण्डवेय (बहु०); पाण्डु (बहु०); पाण्डुदायाद (बहु०); पाण्डुकुमार (बहु०); पाण्डुनन्दन (बहु०); पाण्डुपुत्र (बहु०); पाण्डुसुत (बहु०); पाण्डुतनय (बहु०)।

२. पाण्डव (द्वि० °वौ), अर्थात पाण्डु के पुत्र = नकुल और सहदेवः १. १२५, १४; २०१, ४; २. ८०, २; ३. ५१, ५; २६८, ८; ३११, ५; ४. ७१, ३०; ५. ८३, ३०; ६. ५८, १२; ६२, १८; ८७, १९; १०५, १६; १०९, २०; ११२, ३१; ११८, ४५; ७. ३२, ८; १९२, ३; ८. ४९, ६२; ६३, १९. ३०. ३५; ९६, १८; ९. १०, ५७; ११, २२; १२, ६०; १३, १; १६, ३७; १८, ७; १९, २५; २५, ३६; ३०, ५२; ६२, २२; १०. १०, ८; १२. ३८, ४; ४०, २२; १४. ५२, २७।

३. पाण्डव (एक०) अर्थात पाण्डु-पुत्र = अर्जुनः १. १, १९५; २, २४१ (पाण्डवः गाण्डीवधन्वा). ३४०; ६१, ४५; ६२, १० (पाण्डवः कृष्णसारथिः); १२३, ६७; १३२, १३. २५; १३३, ९. १०. १५; १३५, ११ (मध्यमपाण्डवः); १३८, ३३. ३६. ५४; १३९, १७ (धनञ्जयः); १७०, २६. ३१; १७६, ४६; १८५, ८ (पाण्डवाय किरीटिने); १९०, १९ (किरीटिनः). ३२; १९७, ३४; २०५, १६ (पाण्डवः श्रीमान्सव्यसाची धनञ्जयः); २१३, ११. १३. २५; २१४, १४; २१५, १०. १८. २५; २१६, ५; २१७, ३३; २१८, ४. ६. ८. १०. ११; २१९, २५; २२१, ३. ५; २२३, ३; २२५, २१; २२७, १. २. ८-१०. २१. २२; २२८, १३; २३४, १०; २. १, ६; २०, १४; २६, ८; २७, ८. १६; २८, ५. ७; ६५, २३; ७०, १०; ३. १२, ४४; ३७, ३७; ३९, ५७. ५९. ६४. ६६; ४०, १५. २४; ४२, ३४; ४३, ९; ४४, ३. ५; ४६, ५३; ४७, २; ८०, ४; ८६, १६; १६६, १६; १६७, २, ४. ५१; १६८, २१. २५; १७१, २०; १७५, ३. ११. १६; २४४, १३; २४५, १५. २२; २४६, ७; २४८, १३-१५; २४९, ३; ३०२, ७; ४. ११, १३; १३, ४२; ३६, १३. २४; ३७, २३; ३८, ४९; ४८, १४. १५; ५०, १४. २१. २२; ५२, १८; ५४, ६. २०. २३. ३६; ५५, ३४; ५७, ३०; ५८, ११. ४४. ५२. ७१. ७२; ५९, १४; ६०, २१; ६२, ५. १४; ६४, ८. १०. ११. १३. १६. १८. २९. ३२-३३; ६५, १८; ६९, १५; ७२, १५. २६; ५. ४९, ४७; ५७, ६१; ५९, २६; ६०, १९; ६५, १०; ७९, १. १८; ८३, ५४; ९०, २९. ३२. ६१; १२४, ४७; १२९,

३७; १४२, ३; १५६, १९; १५८, २१. २२; १६०, ८२. ९०; १६३, ७; १६७, ३७; १९६, ९; ६. १९, ६; २३, १८; २५, १४. २०; २८, ३५; ३० २; ३५, १३. ५५; ३८, २२; ४०, ५; ४५, ११; ४६, ४८; ५२, १९. २६. ३१. ४३; ५३, २-४; ५९, १४; ६६, ३१; ७५, ६; ८२, १; ९०, ६. १४; ९५, ९. ८१. ८३; ९६, ३६; ९८, ६. १४; १०२, १. २. १५; १०७, ८४. ८६; १०९, १५. १७; ११०, ३. २६. २९. ३१. ३५. ३७; ११२, २२. २४; ११५, २१. ३२; ११६, ६१. ६३. ६८; ११७, ३०; ११८, १३. ३८; ११९, ९. १७. २६; १२०, ३७. ४८. ५१; १२१, १७. २३. ४३; ७. ३, २५; ७, ३३; ११, ४१; १६, ४४; १७, ४; १८, १९; १९, १०. १३; २७, १७; २८, ६. १४; २९, १. २. १२.१५. १७. ४८; ३०, १०; ७९,१३; ८१, ३. १८; ८४, २५; ८९, २४; ९१, ११. १२. २१. २२. २९. ३३; ९२, ६५. ७१; ९३, ३. १३. १४. ३१. ४५. ५८; ९४, ३१; ९९, ५. १७. २२; १००, ६. २९. ३१; १०१, ३. ३२; १०२, १४. ३०. ३३; १०३, २६; १०४, २२. २६; ११०, ५५. ८१; १११, २७; ११२, ५. ८. ११. ३३. ७६; ११४, २१; ११९, २७; १२४, १३; १२६, ११; १३९, १३; १४०, १८; १४२, ५७. ६६. ७१; १४३, ३. १७; १४५, १८. ६९; १४६, ४. ९. १७. ३९. ४१. ४९. ५०. ६१. ९५. १००. १२४; १४७, ३. ३२; १४९, ५. ४४; १५२, २. ९. २२; १५८, ४. ३१. ५३; १५९, ४५. ५१. ५३. ६०; १६१, १; १६७, ४९; १७०, ४८; १७१, ४०; १७२, ३०. ३३; १७३, ४३; १७७, ३४. ३६; १७९, ६२; १८०, १. ३०; १८१, २८. ३२; १८२, ४०; १८३, २९; १८४, ७; १८५, ३६. ३७; १८६, ४८; १८८, २८. ३०. ३२. ४३. ४५. ५३; १९७, ३९; २०१, ३४; ८. २, १८; ११, २८. ३०; १६, ८. २१. २९. ३२. ३६. ३७. ४०. ५०. ५१; १७, १२; १८, १३. १७; १९, ४; २१, २. ७; २७, ७. ८. ३८; ३०, २१; ३१, २१. ३५. ४७. ५४. ५७; ३२, ८. २८; ३७, ३१; ३९, २२; ४०, ५; ४१, ८१. ८२; ४२, २. १७. २७. २९. ३४; ५३, २. १२. २४. २५. ४६; ५६, ८९. ९०. १०४. १२४. १३०. १३२; ५८, ४४; ५९, ६७; ६०, २. ११; ८०; ६४, ६. २१. २६. २८; ६९, १७. २९. ७८. ८७; ७१, ३. ३०; ७२, ७. १०. १४. २५. २७; ७३, २७; ७७, ११; ७९, १५. १७. ४७. ५८. ६७. ६९. ८०; ८१, १०. २०. ५०; ८२, १४; ८४, ७; ८६, ३. ९. २२. २३; ८७, ५१. १०३; ८८, २१; ८९, १६. २७. ६१. ७४. ७५; ९०, ६०. ६१. ६४. ७०. ९९. १११. ११३. ११६; ९१, २२; ९३, ४१. ५३; ९३, ३०. ४०; ९. ३, २. ५२; ४, २५. ३३. ३९; १४, २१. २२. ३३. ३५; २७, २७; ५८, १२; १०. १४, २. ४; १५, १०. २५; ११. १०, २२; २३, २८; १२. २६, ६; २९, १; १५७, १५; १४. १५, ५. १७. ३०; १६, ४. ११; १९, ६४; ५२, २. ४; ७३, २१; ७४, १३. १४; ७५, १५; ७६, ५. ६. ११. २०. २६; ७८, १८. २४. ४९; ७९, २९. ३०. ३४; ८०, ५०; ८२, ८. १०; ८३, १; ८४, ५. ९; १५. ११, ७; १६. ५, १५; ६, २२. २७; ७, ३२. ७०; १७. २, १८ (श्वेतवाहनः)।

४. पाण्डव (एक०) = भीमसेनः १. ६१, २९; १२८, १७. ५५. ७०; १२९, २०. २१. २६. २८. ३३; १३८, २५; १३९, ४; १४८, १०; १५१, ४१; १५५, २. २३. ३०; १६३, ४. ५. १३. १९. २१. २३. २७; १९०, ३४; १९५, २४; २. २३, ३४; २४, ८; २९, ४. १२; ३०, ६. १५. २१. २९; ५३, १३; ८०, ४; ३. ११, ४२. ४६. ६०; ५२, ३६; १४१, १८; १४६, ३०. ४८. ६१. ६८; १४७, ३; १५३, ५; १५४, १. ५; १५५, १५; १५७, ७०; १६०, २८. ३३. ४७. ५४. ६२; १६१, ५१; १७९, ३; २३८, ११; २७१, २६; ४. ८, ७; १८, २९; १९, ४१; २०, १५. २०. २९; २२, २७. ५३. ६४. ६७; ३३, ४६; ५. ४८, १६; ५१, ५. १८. २०. २१. ६१; ७५, ९; ७७, ३. ११. १५; ९०, २२. २५. २७; १४१, ४७; ६. ५४, १७. १९. ३२. ५०. ६३. ८३. १२४; ५८,१६; ६२, ३२. ४९; ६३, ६.१३. २२; ६४, २४. २७. ३२. ३६; ७७, १२. १६. २१. ३७; ८८, १६. ३५; ९४, २. २७; ९९, ९; १०१, ६; १०२, ३१; १११, ४९; ११३, ७. ८. १९. २८; ११४, ३१; ११८, ३८; १२१,४९; ७. २६, १२. १३. २२. २४; ३९, ११; ९८, ५३; १०८, २२. ३८; १२४, ३०; १२६, २६. ४९; १२७, ४३. ५८. ६४. ७३; १२८, १. १५; १२९, २६. ३९; १३१, २७. ३६; १३२, ५. २९; १३३, ३. ३८; १३४, १. ७. २०; १३५, १. २१. ३०; १३६, १२. २०. २४. २६. ३७; १३७, ३. ११-१३. २३. ३१. ३९. ४६. ५३; १३८, ११. १९; १३९, २. ९. १३. १४. ५१. ५४. ६०. ६१. ८०. ८४. ८८. ९६; १४८, १६; १५४, ९; १५५, २४. ३०. ३८; १५७, १५; १५८, ३४; १७०, ६७; १७१, ५२; १७३, ६०; १८६, ४८; १८९, ५२; १९२, ८२; १९८, ५०; १९९, ४४; २००, ७. ८६. ९७. ९९. १०२.१०३. १२०. १२९; ८. ४, १६; १२, ३५. ३६; १५, ४-६. ९. १०. १९. २३. ४४; ५०, ३५. ३६. ४३; ५१, २१-२३. २८. ३४. ४०. ४१. ५०. ६८; ५८, १; ६१, ६१; ७६, २९; ७७, ५२. ६२; ८१, २७; ८४, २१. ३८; ९६, १८. ५०; ९. १, २९; ५, १४; १५, २७; २६, २६. ३२. ३८; २७, ५५; ३०, ४२; ३३, २९. ३४; ५६, ४५; ५७, १४. ४४. ६५; ५८, २३. ४०. ४६; ६०, २५. २७. ३८; ६२, २१; ११. १३, १५; १४, ७; १२. ४०, २२; १४. ८६, ३; १५. ३, २७।

५. पाण्डव (पाण्डु का वंशज) = जनमेजय (१. ६०, १४)।

६. पाण्डव (पाण्डुपुत्र) = नकुलः २. ३२, १३; ३३, ५४; ३४, १; ४. ५, २४; १२, १; ५. ९०, ३९; १७१, ८; ६. ७२, ७; ७. १०, २९; ८. २२, १८; २४, १०. २९. ३४. ३५. ४९. ५२; ८४, २१; ९. १०, १०. २०. २३. २५. २९-३१. ४७।

७. पाण्डव (एक०) = सहदेवः १. १, २०७; २. ३१, २२. ५६; ३. १५७, १०. ३५; ४. १३, ९; ५. १६०, ७२; ६. १११, ३२; ७. १०७, १९; १६५, ७; ९. २३, ३५. ४०; २८, ४१. ६२; ११. २४, २५; १६. ७, ३; १७. २, १२।

८. पाण्डव (एक०) युधिष्ठिरः १. १, १४६; २, १४७. ३७४; १३८, २५; १४१. ३२. ३५; १४५, ८. २८; १४७, ६; १६२, १९; १९१, २५; १९५, १५; २०५, १९; २. १, १४; ३, ४; ४, ८; ५, ८६; ६, ६. ९. १९; ७, २०; ८, २; ११, ३. ३२. ५४; १२, २८; १३, २७. ३८; २४, ५१; ३३, २६. २७. ५३; ३४, ४; ३७, २; ४५, ३४. ६६; ४७, २९; ४९, ३७; ५१, ३५; ५८, २०. २२; ६१, ३; ६३, ८; ६५, २३; ६७, ४८; ७६, ३. ६; ७८, १७. २४; ८०, १२; ३. ३, ७०. ८१; ५, ५; ११, २६; ३३, ६३; ३६, ३२; ५२, ५१; ५७, २६; ७९, ८. २१. २६; ८७, ४; ८९, १२; ९०, ३; ९२, १३. १८; ९३, ३. १९; ९४; १४; ९९, ३७. ३९; ११०, ६; ११४, १. २२. २७. २८; ११५, ११. ४३; १२२, २; १२५, २२; १३५, १६; १४५, ३९; १५८, १०; १६०, ४४; १६२, २१; १६३, ५. २२. ३१. ४१; १६६, १३; १८०, १५; १८३, १६. २०. ३४. ५३; १८७, १; १९०, १२; १९१, १५; १९६, १; १९८, १; २००, ५६; २३६, २४; २३९, १८; २४६, २४; २५५, ६; २५६, १७; २५८, ४; २५९, ५; २६०, १२; २९९, १६; ३१४, २५; ४. १, २१; २, ३१; ३, ६; ६, २६; ७, ४; १२, ८. ११ १३, ५; १८, २९; ६८, ३०. ३६. ३८. ६३; ७०, २७; ७१, २४. २९; ५. ३, २०. २२; ५, १; ६, ५; ८, ६. २१. २२. ४५. ४८; ९, ४१; २२, २३; २४, १. २. ८; २७, १. ३. १४. २०. २१; २९, ३. ४. ३२; ३०, १; ३२, १. १२. १३; ४८, १०-१२. १४; ५०, १. ७; ५३, १०; ५७, ६०; ५८, १; ८३, ११; १३८, ११; १३९, १३. १८-२०; १५०, २०; १५४, १८; १५७, १७. २२; १५८, २५; १६१, १. ९. १०; १६५, २२; १६९, ३; १७२, ८. ९; १९४, १७; १९६, १४. १६; ६. १, १३; १९, १. ३; २१, २. ८; ४३, २२. २८. ३६; ४९, ९; ५०, २४. ५७; ५१, १; ५४, ९३; ५६, ११; ५८, २०; ५९, ७०; ८४, ५. ७. ९. ११; ८३, ५; १०५, १०. ३०; १०७, २८. ३०. ७५; ११५, १२. १६. १७; ७. ७, २८; ८, ६. ११; १२, ३१; १३, ८; १६, ४१; १७, ८. १०; २२, १७; ५४, ५८; ७९, १९; ८२, १८; ८६, ११; १०६, २१. ३५. ४२; ११०, ३९; १११, १८; १२४, १५; १२७, ११; १४६, १४२; १४८, ५८; १४९, ४९. ६१; १५३, ३५. ४२; १५७, १५; १५८, ३४; १६२, ३५. ४५. ५५; १६५, ३०-३२.

३५; १८३, ६६. ६७; १८४, ९; १९०, ४४; १९२, ५८; १९५, १३; १९६, ३२. ३७; १९७, ४४; १९८, ४०; ८. ५, ५९; ११, ४१; २९, ७; ३७, २२; ४९, २६. ४७. ५४; ५५, ८. ३६; ५६, १८; ६०, ८. १८; ६२, ४. ३०; ६७, १६; ६९, २९. ७०. ७५; ७०, १८. ४२; ७१, १६; ८७, ११७; ९६, १९; ९. २, २६; ४, ४९; ५, ४६; १२, ४९. ५३. ५८. ६१; १६, १४. ५०. ५६. ६०; १७, ६९; १९, २२; २४, ११; ३०, ३१; ३१, १६; ५६, १७; ६४, ७; १०. ११, ९. १६. १७. २१; १२, २; १५, २६; १८, २२; ११. १२, १२; २६, ८; १२. १, ११; २३, १; २४, २३; ३२, ९; ३३, १३. ३३; ३८, ३७; ४०, १६. २१; ४२, ७; ४३, १७; ४५, ५; ४६, १८; ४९, ८९; ५४, १४. २४. २९; ५५, ३-१०; ५६, २२. ४७; ५९, ४१. ४७. ८९. ११७. १२१. १३२. १४३; ६२, ५; ६३, ११. १९; ६४, १; ६६, ७. ४३; ६९, १३; ७१, २५. ३२; ८९, २६; १२०, ५१; १३८, २१७; ३२३, ७; १३. ९, १७; १८, ३८. ५८. ६०; २६, १७; ७५, १३; १०६, ६४; ११२, १८; १२३, २२; १२५, ३; १४८, ५३. ६५; १६५, १; १४. १०, ३७; ६४, ४. ७; ६५, २१; ७२, ७; १५. ३, ६७. ६९. ७५. ७६. ८१; ५, ४०; ७, १३; १०, ४१; १७, १; २२, २५; २६, २९; २७, १९; २८, २१; ३७, ३८; ३९, १६; १६. १, ८; १८. ३, २३. २८; १८. २, ३२. ३८; ४, २२ ।

९. पाण्डव (वि०): ६. ४८, ३८; ७२, ३२; ७५, २७. ३२; ८३, ४२; १०५, १५; ७. १३, २१; २५, ५६; ३१, २७; ७२, ६१; ९५, ३०; १२४, ३०; १५३, १९. २१; १५६, ४५; १६०, ४. ५४; १७२, १३. १९; १८३, ३६; २०१, ३२; ८. ११, ३३; १३, ३; २५, ४३; २६, ३८; ४६, ४; ४८, ९; ४९, ६०; ५६, १२१; ५८, ३; ६४, ५९; ७३, २७. १०२; ७८, ३९. ५०. ६२; ९१, ५६; ९. १०, ६५; २०, ९; १४. ६०, ३१; ६८, २२; १५. २३, १३ ।

पाण्डवदायाद = अभिमन्यु (१५. ३१, १३) ।

१. पाण्डवनन्दन = अर्जुन : २. २६, ११; ६. ११९, २९; १२. ३४१, २८ ।

२. पाण्डवनन्दन = भीमसेन : ३. १४३, ३८; १५१, १८; १६१, ५१; ७. १३१, २३ ।

३. पाण्डवनन्दन = जनमेजय (१५. ३५, १३) ।

४. पाण्डवनन्दन = युधिष्ठिर : ३. १५७, ६; १६७, १६; २५९, ११; २६१, ५१ ।

पाण्डवप्रवेशपर्वन्—"जनमेजय ने वैशम्पायन से अपने पूर्वज पाण्डवों के अज्ञातवास का विवरण बताने के लिये कहा। वैशम्पायन ने तब इस प्रकार कहा : यक्ष-रूपधारी धर्म से वरदान प्राप्त करने के बाद आश्रम में लौट कर युधिष्ठिर ने अरणी सहित मन्थन काष्ठ ब्राह्मण को सौंप दिया। तदनन्तर उन्होंने अपने भ्राताओं को एकत्र करके कोई ऐसा स्थान चुनने के लिये कहा जहाँ वे सभी लोग वनवास का तेरहवाँ वर्ष अज्ञात रूप से व्यतीत कर सकें। अर्जुन ने कुरुदेश के चारों ओर स्थित जनपदों में से किसी एक का चुनाव करने के लिये कहा। युधिष्ठिर ने उन जनपदों में से मत्स्य-देश के राजा विराट के नगर को सर्वोपयुक्त बताया क्योंकि राजा विराट पाण्डवों के हितैषी, धर्मात्मा और उदार थे। अर्जुन के यह पूछने पर कि युधिष्ठिर महाराज विराट के नगर में किस प्रकार रहेंगे, युधिष्ठिर ने कहा : 'मैं कङ्क नाम धारण करके एक ब्राह्मण के रूप में विराट की राजसभा का सदस्य बन जाऊँगा और विराट तथा उनके मन्त्रियों को पासों के खेल से प्रसन्न करता रहूँगा (४. १)।

"भीमसेन ने बताया कि वे विराटराज की पाकशाल के अध्यक्ष बन कर वल्लव नाम धारण करेंगे क्योंकि अपने को उन्होंने भोजन पकाने में विशेष निपुण माना। साथ ही अपने बल से भी वे राजा विराट को प्रभावित करेंगे। अर्जुन ने विराट नगर में अपने कार्य के सम्बन्ध में इस प्रकार कहा : 'मैं अपने को नपुंसक बता कर अपना बृहन्नला नाम घोषित करूँगा। इस प्रकार मैं विराट के अन्तःपुर की स्त्रियों का मनोरंजन करूँगा। अपने परिचय के रूप में मैं यह कहूँगा कि मैं पहले महाराज युधिष्ठिर के घर में द्रौपदी की परिचारिका रह चुकी हूँ। (४. २)।

"नकुलने बताया कि वे ग्रन्थिक नाम धारण करके विराट की अश्वशाला के रक्षक बनेंगे। अपने अनुभव के रूप में वे यह कहेंगे कि पहले युधिष्ठिर की अश्वशाला के अध्यक्ष रह चुके हैं। सहदेव ने बताया कि वे तन्तिपाल नाम धारण करके गोशाला के अध्यक्ष बनेंगे। कृष्णा ने बताया कि वह सैरन्ध्री नाम धारण करके विराटराज की महारानी सुदेष्णा की सेवा में केशसज्जा आदि का कार्य करेगी। वह यह भी कहेगी कि पहले वह महारानी द्रौपदी की परिचारिका रह चुकी है (४. ३)।

युधिष्ठिर ने कहा : 'विराट की राजधानी में रहकर हमें जो कार्य करना है वह सब हमने निश्चित कर लिया। अब पुरोहित धौम्य जी पाकशाला के अध्यक्ष और कर्मचारियों सहित राजा द्रुपद के पास जा कर रहें और वहाँ हमारे अग्निहोत्र की अग्नि की रक्षा करें। इन्द्रसेन और अन्य सेवकगण रथों को लेकर द्वारका चले जाँय। सेविकायें आदि पाञ्चाल राज के घर चली जाँय। कोई पाण्डवों के सम्बन्ध में कुछ न बताये और यही कहे कि द्वैतवन में सब को छोड़कर पाण्डव अज्ञात स्थान को चले गये हैं।' तदनन्तर पुरोहित धौम्य ने पाण्डवों को राजा के यहाँ रहने का ढंग बताया (राजा के समीप और राजदरबार में रहने से सम्बद्ध नियमों और आचरणों का विस्तृत वर्णन)। इसके बाद उन्होंने यात्रा के समय के जो आवश्यक शास्त्र-विहित कर्त्तव्य हैं उन्हें विधिपूर्वक सम्पन्न किया। तदनन्तर पाण्डवों ने द्रौपदी को आगे करके गन्तव्य के लिये प्रस्थान किया। उनके जाने के बाद धौम्य उनकी अग्निहोत्र सम्बन्धी अग्नि लेकर पाञ्चाल देश चले गये। इन्द्रसेन ने भी रथों और सेवकों सहित द्वारका के लिये प्रस्थान किया (४. ४)।

"पाण्डवगण कालिन्दी नदी के दक्षिणी किनारे पर पैदल चलते हुये दशार्ण देश पहुँचे। वहाँ से विभिन्न जनपदों, उत्तरी दशार्ण, दक्षिण पाञ्चाल, यकृल्लोम, शूरसेन देश आदि से यात्रा करते हुये विराट के नगर के निकट पहुँच गये। राजधानी के समीप पहुँच कर उन लोगों ने अपने अस्त्र-शस्त्रों को एकत्र कर वहीं श्मशान में स्थित एक विशाल शमीवृक्ष पर छिपा कर राजधानी में प्रवेश करने का निश्चय किया। नकुल ने शमी वृक्ष पर चढ़कर सभी अस्त्र-शस्त्रों को उस वृक्षके एक खोखले में रख कर रस्सियों से उन्हें अच्छी तरह बाँध दिया। इसके बाद पाण्डवों ने एक मृतक का शव लाकर उस वृक्ष की शाखा में बाँध दिया जिससे उसकी दुर्गन्ध से लोग उस शमी वृक्ष के निकट न आयें। उस वन में गाय आदि चराने वाले ग्वालों से पाण्डवों ने उस शवको अपनी एक सौ अस्सी वर्ष की माता बताया। तदनन्तर पाँचों पाण्डवों ने अपने जय, जयन्त, विजय, जयत्सेन और जय-द्बल—ये पाँच गुप्त नाम रक्खे तथा इस प्रकार तेरहवें वर्ष के अज्ञातवास के लिये मत्स्य राष्ट्र के उस विशाल नगर में प्रवेश किया (४. ५)।

"विराट के रमणीय नगर में प्रवेश करते समय युधिष्ठिर ने मन ही मन दुर्गा देवी की स्तुति की जिससे देवी ने प्रसन्न होकर उन्हें दर्शन तथा विजय प्राप्त कर पुनः पूर्व वैभव प्राप्त कर लेने का वरदान दिया। (४. ६)।

"पाण्डवों ने विराट के नगर में प्रवेश किया। विराट ने भी उन सभी का एक-एक करके स्वागत तथा सब को यथास्थान नियुक्त किया। (४. ७)।

"भीमसेन ने विराट की सभा में उपस्थित होकर अपना नाम वल्लव बताया। विराट ने उन्हें पाकशाला का अध्यक्ष, और मल्ल बना दिया। (४. ८)।

"कृष्णा को विराट की महारानी सुदेष्णा ने अपने साथ सैरन्ध्री के रूप में रख लिया। द्रौपदी ने सैरन्ध्री के रूप में अपना परिचय देते हुये कहा : 'पाँच तरुण गन्धर्व मेरे पति हैं जो प्रतिदिन मेरी रक्षा करते हैं। मैं स्वयं भी दुर्धर्ष हूँ।' (४. ९)।

"एक ग्वाले के रूप में उपस्थित होकर सहदेव ने ग्रामीण ग्वालों की भाषा बोलते हुये विराट राज से अपने को ग्वालों के प्रधान के रूप में नियुक्त करने का निवेदन किया। विराट ने उनको तदनुसार नियुक्त कर दिया

(४. १०)। "अर्जुन ने एक नपुंसक के वेश में प्रवेश करके अपना नाम बृहन्नला बताते हुये विराट से नृत्य शिक्षक का कार्य प्राप्त किया (४. ११)। "नकुल ने ग्रन्थिक नाम धारण करके विराट की अश्वशाला के प्रधान का पद प्राप्त किया। (४. १२)।"

१. पाण्डवमुख्य = अर्जुन (७. ११९, ८. ३०; १४५, २८)।

२. पाण्डवमुख्य = युधिष्ठिर (५. ७३, ४२)।

पाण्डवयोध = अर्जुन (८. ८७, ६४)।

१. पाण्डवर्षभ= अर्जुनः १. २१४, ११; २. २७, २१; ३. २४५, २९; ४. ३७, ११. १९; ७. ११४, २६; ८. ७९, ८६; १४. ७७, २. १३; ८२, १६।

२. पाण्डवर्षभ = भीमसेन : २. ३०, ८; ६. १०२, ३२; १३२, २६।

३. पाण्डवर्षभ = युधिष्ठिर : २. ११, ५; ३. ९३, १६; ४. ७१, २६; ७. ८४, २; १२. ३३, ३४; १४. १४, १६।

पाण्डववीर = अर्जुन (८. ८७, ६३)।

पाण्डवशार्दूल = सहदेव (२. ३१, २०)।

१. पाण्डव-श्रेष्ठ = अर्जुन : १. २१५, ४; २१७, २१; २२१, २६; २. २८, २; ३. ३९, ६६; ४०, २०; १२९, १९; ४. ४५, ३३; ७२, १; ५. १८५, १९।

२. पाण्डव-श्रेष्ठ = भीमसेन : २. ३०, २. १९।

३. पाण्डव-श्रेष्ठ = युधिष्ठिर : १. १५१, ४१; १५६, १७; २. ५, १३; ३. २१, ७; ८०, ११; ८३, १७; १२९, ११; ७. १२, २०; २५, १५. १७; ८. ६०, १५; १२. २३, ४५; ६६, ४२; १३. १५०, ५।

पाण्डवाग्रज = युधिष्ठिर : २. ३५, ४; ६८, ३१; ३. ९१, २; ६. ४३, १४; १२. ३७, ३८; १३. १८, १२; १७. १, ७।

१. पाण्डवाग्र्य = अर्जुन : ५. २३, ४; ८. ३२, ६४; ३५, २९।

२. पाण्डवाग्र्य = युधिष्ठिर (८. ६५, ७)।

पाण्डवानां प्रवेश, से पाण्डवों के अज्ञातवास के लिये विराट के नगर में प्रवेश का तात्पर्य है (१. २, ५७)। देखिये पाण्डवप्रवेशपर्वन्।

पाण्डवीय (वि०), अर्थात् पाण्डवों का (५. ६, १५)।

१. पाण्डवेय (बहु० °याः) = पाण्डव बहु० (युधिष्ठिर पक्ष के अन्य लोगों का भी द्योतक है): १. १, १५४. १६९. १८३. २१६; २, १५४; ६१, ४; ६३, १२२; १४४, १३; १४७, १९; १९१, २३; १९८, ५; २००, २२; २०२, ११. १५; २०३, ६; २०५, १२; २२१, २५; २. २०, २१; ४७, १४; ५१, १; ५२, २८; ६३, १०; ७७, ३; ३. ५, १०; ८०, ४; १५७, ४; १८३, ३९. ४०; ४. २०, १२; ५. ३, १७; २०, ६; २९, ५१; ६५, ७; ९१, २७; १३२, ४; १५८, १८. ३९; १६१, १; १६५, २२; १६९, २८; ६. १, ११; २४, २; ४८, १; ५२, ७०; ५७, ९; ५९, २. २६; ६४, ८१; ७२, १२; ८०, ६। ९०, ९२; १०९, ३६. ३७; ११२, २; ११८, ३३. ४१; ७. १, १५. ३९; १३, २७; १५, ३६; २४, १९; २६, ६४; ४३, १६; ७४, ९. १९; १०७, १८; १२५, ४२. ४७; १४५, १६; १५३, ११; १५५, २४; १५६, १५२; १६२, १३; १७५, ९०; १७८, ३३; १८५, ६; १९०, ६; १९८, ४३; २००, ६५; ८ २, २३; ३, ७; ६, १; ७, ९; ३२, २९; ७२, १४; ७३, ८४; ७८, ३१. ३४. ४७; ८४, ३७. ३९; ९२, १४; ९३, ४९; ९. २, २४; ७, ४६; ८, ३६; २३, ८१; २७, ५५. ५७; २८, ६७; ३२, ६. ४४. ६१; ३३, ३०; ३५, १०. १६; १०. १, ६७; ८, ७६; १३, ९; १५, १७. ३२. ३४; ११. २०, २०; १२. १२४, १३; १३. १६७, ४०; १४. १५, १।

२. पाण्डवेय (एक०) = अभिमन्यु (७. ४८, २०)।

३. पाण्डवेय (एक०) = अर्जुन : १. २१४, २४; २१७, १८; २. २६, १३; ३. ३९, २२; ४१, ३४; ५. १६६, १२; ७. ९२, ३८; १४७, ११; १५९, २८; ८. २, १२; ४२, ११; ६८, २९; ७९, १६. ४७; ९०, ११६; ९१, २४; ९. ५८, १०; १२. ३४१, २२।

४. पाण्डवेय (एक०) = भीमसेन : ७. १२६, १९; ८. ७६, १७; ७७, ४८; ७८, ३।

५. पाण्डवेय (एक०) = जनमेजय : १. ३५. ५; २०, ८; ३८, २; ५३, १; ५८, १०; ११६, ६।

६. पाण्डवेय (एक०) = नकुल (१२. १६६, ८३)।

७. पाण्डवेय (एक०) = परिक्षित् (१. ४३, १८)।

८. पाण्डवेय (एक०) = युधिष्ठिरः २. ३३, ४२; ३४, १५; ३. ११५, ४५; १३०, १९; १३५, ९; १९२, १; २३२, २; ४. ६८, ३४; ५. १९३, २; ६. ४९, ४६; ५१, १६; ७. १, ४२; १३, २५; ८. ६०, २१; ९. ६३, ३; १०. १, ११. १२; १२. २४, ८; ५०, ३८।

९. पाण्डवेय (वि०) : ३. २५०, ८; ८. ३५, १५; १४. १५, १।

पाण्डवोत्पत्ति (पाण्डवों का जन्म)—"जब गान्धारी को गर्भ धारण किये एक वर्ष व्यतीत हो गया तब कुन्ती ने गर्भ धारण करने के लिये भगवान् धर्म का आवाहन किया। भगवान् धर्म सूर्य के समान तेजस्वी विमान पर बैठ कर कुन्ती के पास आये। उन्होंने कुन्ती से युधिष्ठिर को उत्पन्न किया। (इसी प्रकार कुन्ती द्वारा वायु देव तथा इन्द्र से क्रमशः भीमसेन और अर्जुन को उत्पन्न करने का विस्तार से उल्लेख है)। तीन पुत्र प्राप्त कर लेने के बाद कुन्ती ने और अधिक पुत्र प्राप्त करना अस्वीकार कर दिया (१. १२३)। कुन्ती की सहायता से माद्री ने भी अश्विनीकुमारों के अंश से दो यमज पुत्रों को उत्पन्न किया जिनका नाम नकुल और सहदेव रक्खा गया। शतशृङ्ग निवासी ऋषियों ने पाण्डु के पाँचों पुत्रों का नामकरण किया। कुन्ती के पुत्रों का क्रमशः युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन नाम रक्खा गया। माद्री के दोनों यमज पुत्रों को क्रमशः नकुल और सहदेव नाम मिला। पाण्डु के इन पाँचों पुत्रों का एक-एक वर्ष के अन्तर से जन्म हुआ था। ये सभी बालक शतशृङ्ग निवासी समस्त मुनियों और मुनिपत्नियों के प्रियपात्र बन गये। तदनन्तर पाण्डु ने माद्री से और अधिक सन्तान उत्पन्न करने के लिये प्रेरित किया किन्तु कुन्ती ने यह कहकर अस्वीकार कर दिया कि माद्री ने एक साथ दो पुत्र प्राप्त करके उसके साथ छल किया है (१. १२४)।"

१. पाण्डु, विचित्रवीर्य की विधवा अम्बालिका के गर्भ से व्यास द्वारा उत्पन्न पुत्र का नाम है : १. १, ९५. ११२. ११९. १२०; २, १०१; ४०, ११ (ये परीक्षित् के प्रपितामह थे); ४९, २३; ६०, ६ (व्यास द्वारा उत्पन्न); ६३, ११३; ६७, ८६; ९५, ५५. ५९. ६०. ६२. ६४; १०६, १७. २८ (ये विदुर के भ्राता थे); १०९, १७. २१. २५; ११२, ४. ७. ८. ११. १२; ११३, १. ६. १८ (माद्री के साथ विवाह). २१. २५. २८. ३१. ३६. ३७. ३८ (इनकी दिग्विजय); ११४. १ (अपने ज्येष्ठ भ्राता धृतराष्ट्र की आज्ञा लेकर इन्होंने अपने बाहुबल से विजित धन को भीष्म, सत्यवती, तथा माता अम्बिका और अम्बालिका को भेंट किया। विदुर को भी इन्होंने धन भेजा। माता कौशल्या को भी धन से सन्तुष्ट किया। इनके पराक्रम से धृतराष्ट्र ने बड़े-बड़े सौ अश्वमेध यज्ञ किये और प्रत्येक यज्ञ में एक-एक लाख स्वर्ण मुद्राओं की दक्षिणा दी। ये कुन्ती और माद्री की प्रेरणा से राजमहलों का निवास और सुन्दर शय्यायें छोड़कर वन में रहने लगे। हिमालय के दक्षिण भाग की रमणीय भूमि में विचरण करते हुये ये अपना अधिकांश समय आखेट में व्यतीत करते थे। धृतराष्ट्र की आज्ञा से प्रेरित होकर बहुत से मनुष्य आलस्य छोड़कर वन में इनके पास इच्छानुसार भोग-सामग्री पहुँचाया करते थे : ११४, २. ६. ९; ११५, २. ५; ११८, ५. ६. १२. १७. ३४; ११९, २. २५. ३१. ३९. ४०. ४५. ४७। "इन्होंने वानप्रस्थ आश्रम में रह कर शास्त्रों की कठोर विधियों का पालन करने की इच्छा व्यक्त की। इस उद्देश्य से अपने सभी सेवकों को हस्तिनापुर वापस भेजकर भीष्म को अपने निश्चय की सूचना दी। धृतराष्ट्र इस समाचार को सुन कर अत्यन्त चिन्तित रहने लगे। पाण्डु फल-मूल का आहार करते हुये अपनी दोनों पत्नियों के साथ नागशत नामक पर्वत पर चले गये। तत्पश्चात् चैत्ररथ नामक वन में जाकर कालकूट और हिमालय पर्वत को लाँघते हुये गन्धमादन पर्वत पर आये। उस समय महाभूत, सिद्ध, महर्षिगण, आदि उनकी रक्षा करते थे। वे ऊँची-नीची भूमि पर सोते थे। इन्द्रद्युम्न सरोवर

पहुँच कर तथा उसके बाद हंसकूट को पार कर के वे शतशृङ्ग पर्वत पर जा पहुँचे। वहाँ तपस्वी जीवन व्यतीत करते हुये भारी तपस्या में संलग्न हो गये (१. ११९, २. २५. ३१. ३९. ४०. ४५. ४७)।" "तपस्या में लगे राजा पाण्डु सिद्ध और चारणों के समुदाय को अत्यन्त प्रिय लगने लगे। दीर्घकाल तक तपस्या का अनुष्ठान करके पाण्डु ब्रह्मर्षियों के समान प्रभावशाली हो गये थे। एक दिन अमावस्या तिथि को अनेक ऋषि-महर्षि ब्रह्मा के दर्शन के लिये ब्रह्मलोक जाने के लिये प्रस्थित हुये। पाण्डु के पूछने पर महर्षियों ने बताया कि ब्रह्माजी की सभा में ऋषि, मुनि, देवता, पितर, आदि एकत्र होने वाले हैं। यह सुनकर पाण्डु भी उन महर्षियों के साथ जाने के लिये उद्यत हुये। वे अपनी दोनों पत्नियों के साथ उत्तर की ओर मुख कर के शतशृङ्ग पर्वत से चल दिये। पाण्डु को हिमालय पर पत्नियों सहित इस प्रकार चलता देखकर महर्षियों ने आगे के मार्ग की दुर्गमता का वर्णन करते हुये बताया कि वहाँ देवताओं और अप्सराओं की क्रीड़ाभूमि है। मार्ग में अनेक बड़ी-बड़ी नदियाँ और दुर्गम पर्वतीय घाटियाँ हैं। उस मार्ग पर केवल वायु ही चल सकती है तथा सिद्ध-महर्षि भी जा सकते हैं। ऐसी परिस्थिति में उन महर्षियों ने पाण्डु को पत्नी सहित उस मार्ग पर न चलने का परामर्श दिया। पाण्डु ने तब महर्षियों से अपनी सन्तानहीनता के दुःख का वर्णन किया। महर्षियों ने पाण्डु को बताया कि प्रयत्न द्वारा उन्हें अवश्य संन्तान प्राप्त होगी। तब पाण्डु ने कुन्ती से इस विषय में परामर्श करते हुये उसे विभिन्न प्रकार से पुत्र प्राप्ति के सन्बन्ध में तर्क देते हुये मनु स्वायम्भुव का उदाहरण देकर किसी अन्य श्रेष्ठ पुरुष से सम्बन्ध करके पुत्र प्राप्त करने का आग्रह किया। (१. १२०, ४. ६. ८. १५. २६)।" "कुन्ती ने व्युषिताश्व की कथा का वर्णन करते हुये कहा कि उनके मृत शरीर से भी उनकी पतिव्रता पत्नी भद्रा ने पुत्र प्राप्त किया था। अतः कुन्ती ने पाण्डु से कहाः 'आप भी मेरे गर्भ से मानसिक संकल्प द्वारा अनेक पुत्र उत्पन्न कर सकते हैं क्योंकि आप तपस्या और योगबल से सम्पन्न हैं।' (१. १२१, १ और बाद)।" "पाण्डु ने कुन्ती से कहा कि वेदज्ञ पुरुषों के अनुसार स्त्री को पति की आज्ञानुसार कार्य करना ही चाहिये वह आज्ञा चाहे धर्म के अनुकूल हो या प्रतिकूल। इस तर्क के साथ पाण्डु ने कुन्ती को किसी श्रेष्ठ ब्राह्मण के साथ समागम करके गुणवान् पुत्र उत्पन्न करने की आज्ञा दी। कुन्ती ने तब अपनी बाल्यावस्था में दुर्वासा से प्राप्त उस मन्त्र का उल्लेख किया जिससे वह किसी भी देवता का आवाहन कर सकती है। उसने यह भी बताया कि इस प्रकार आहूत देवता से पुत्र प्राप्त करना भी सम्भव है। कुन्ती ने इस मन्त्र से किसी भी देवता का आवाहन करके पुत्र प्राप्त करने के प्रति अपनी सहमति प्रकट की। पाण्डु ने भगवान् धर्मराज का आवाहन करके प्रथम पुत्र प्राप्त करने का आदेश दिया (१. १२२, २. ३२. ४०)।" १. १२३, ९. १०. १८. २०. २५. ७६; १२४, १. ७. ९. २२. २५. २८। "एक दिन जब अर्जुन के जन्मोत्सव के समय कुन्ती ब्राह्मणों के सत्कार में लगी हुई थी उस समय पाण्डु अपनी दूसरी रानी माद्री के साथ वन में विचरण के लिये चले गये। कुछ देर तक सुरम्य वन में विचरण के पश्चात् पाण्डु काममोहित होकर माद्री से लिपट गये। फलस्वरूप किन्दम के शाप के कारण पाण्डु अपनी पत्नी के साथ समागम करते ही मृत्यु को प्राप्त हो गये। शीघ्र पुत्रों सहित कुन्ती ने वन में आकर मृत पाण्डु को देखा और उनके साथ सती होने की इच्छा प्रकट की। उस समय माद्री ने कुन्ती को रोकते हुये स्वयं सती होने का प्रस्ताव किया। तदनन्तर तपस्वी ऋषियों ने सत्यपराक्रमी पाण्डवों को धैर्य बँधा कर कुन्ती और माद्री को भी देहत्याग करने के निश्चय से विरत करने का प्रयास किया। मुनियों के समझाने पर भी माद्री अपने दोनों पुत्रों, नकुल और सहदेव, को कुन्ती को सौंप कर अपने पति की चिता पर जा बैठी (१. १२५, १. ४. १२. १७)।" "तपस्वी मुनियों ने पाण्डुपत्नी कुन्ती, पाँचों पाण्डवों तथा पाण्डु और माद्री की अस्थियों को साथ लेकर हस्तिनापुर के लिये प्रस्थान किया। सहस्रों चारणों सहित मुनिगण पाण्डवों आदि को लेकर जब हस्तिनापुर पहुँचे तब नगरनिवासी प्रातःकाल से ही उनके दर्शन के लिये पहुँचने लगे। शान्तनुनन्दन भीष्म, सोमदत्त, बह्लिक, धृतराष्ट्र, संजय, विदुर, सत्यवती, कौसल्या, गान्धारी तथा अन्तःपुर की अन्य स्त्रियाँ भी वहाँ आईं। धृतराष्ट्र के दुर्योधन आदि सौ पुत्र भी उस स्थान पर उपस्थित हुये। तदनन्तर वहाँ आये मुनियों में से जो सबसे अधिक वृद्ध थे उन्होंने नगर-निवासियों को पाण्डवों का परिचय देते हुये पाण्डु की मृत्यु का समाचार दिया। मुनि ने कहा : 'साधु-पुरुषों के आचार-व्यवहार का पालन करते हुये राजा पाण्डु उत्तम पुत्रों की उपलब्धि करने के पश्चात् आज से सत्रह दिन पूर्व पितृलोकवासी हो गये हैं। उनकी पत्नी माद्री भी उनके शव के साथ अग्नि में प्रविष्ट हो गई।' इस प्रकार समस्त समाचार देने के पश्चात् सबके देखते-देखते वे सभी तपस्वी मुनि गुह्यकों के साथ क्षणभर में वहाँ से अन्तर्धान हो गये। गन्धर्व नगर के समान उन महर्षियों और सिद्धों के समुदाय को इस प्रकार अन्तर्धान होते देखकर समस्त कौरव अत्यन्त विस्मित हुये (१. १२६, ३. ५. ७. २२. २७. २९. ३३)।" "भीष्म से परामर्श करने के बाद धृत-राष्ट्र ने विदुर से गंगा तट पर पाण्डु और माद्रीके समस्त प्रेतकार्य राजोचित ढंग से सम्पन्न कराने के लिये कहा (१. १२७, १. २. ४-६. ११. १७)।" १. १२८, १; १३९, १; १४१, ३४; १४२, ६. ८. १०. ११; १४५, ११; १५०, ४; १५१, २५; १७०, ६५; १९१, १७; १९३, १८; २००, २३; २०३, १; २०६, २; २०७, १८; २. ८, २५; १२, ८. २३. २७; ३७, १३; ५४, १०; ७९, १७. २७; ३. ४, ४. १४; ६,२४; ९, २०. २१; १२, १२०; २७, ३४; १५९, ४; १६०, १; १६१, ३१; १७७, १०; २७३, ५; ५. १, ११; २०, ५; २४, ८; ३३, १२२; ३६, ७२; ८२, २२; १३२, २३; १३७, १२; १४०, ९; १४१, २. ४; १४७, ३९; १४८, ७. ८. ३३; १४९, २९. ३०; १५६, २१; १५८, २६; ६. १०४, ३७; १०७, ५६. ६९. ९३; १०८, २७; १०९, ११; ११६, ६१; ७. ३९, २५; ७४, ४; १०२, ३६; ८. ६१, ३४; ९. १३, ३९; ३३, १६; १२. ७५, २२; १३. १६७, ३३; १४. ६६, २०; १५. ४, १३; ९, २; १०, २०; १७, ३. १५; २०, १७. ३०; ३१, ९; १८. ४, २०; ५, १५ (महेन्द्रसदनं ययौ)। तुकी० भारत, भरतर्षभ, भरतसत्तम, कौरव, कौरवनन्दन, कौरवर्षभ, कौरव्य, कौरव्यदायाद, कौसल्यानन्दवर्धन, कुरूद्वह, कुरुकुलोद्वह, कुरुनन्दन, कुरुपति, कुरुप्रवीर, नागपुराधिप, नागपुरसिंह।

२. पाण्डु, जनमेजय के द्वितीय पुत्र का नाम है (१. ९४, ५६)।

३. पाण्डु (बहु०) = पाण्डव (बहु०) = (युधिष्ठिर के पक्ष के अन्य लोग भी) : १. २, १६९. १८३. १८७; १३९, २७; १४४, १४; १९९, १३; २०७, १२; २१४, ७; २२१, ५७; २. ६९, १०; ३. ५, ५; १४५, ८; २४८, २; २५२, ३२; २७२, १६; ३००, ५; ४. ६, ३५; ९, २०; ५. ३; १२; ५, ३. ८; १९, १३; ५७, ४०; ६०, ८; ८२, २६; १७२, ५; १९४, ३; ६. ४९, ४९; ५०, ३४; ५४, ८१; ६२, १; ६५, २१. ३८; ८३, १. ३१; ८७, ३७; ८९, ३९; ९५, २५; ९६, ४३; १०३, १५; १०६, ८५; १०८, ९; ११७, १७; ११८, ७; ११९, ३४; १२२, ३०; ७. ११, ३२; १२, १; १३, २४; १६, ५१; २१, २९; २५, १; २६, ३४. ४९; ३१, १६; ३२, ४०. ४३; ४०, १७; ४३, १. १७; ४४, १; ७२, ७९; ७३, ५३; ७४, १; ८६, १५; ९५, २३; १०५, १४. ३४; १०६, ५५. ५६; ११०, ३०; ११३, ६४; ११४, ४३. ५८. ५९; ११७, ३५. ३६; १२२, ३२. ७३; १२५, २; १२६, ३; १२९, ३६; १३०, २४; १५०, २९. ३६; १५६, १. १८. २१; १५४, १. ३९; १५६, ४२; १६४, ३५; १६७, १९; १७२, ४; १८२, २१. २३. २५; १८३, १५; १८४, ३०. ३१; १८६, ४; १९३, २७. ४६; १९८, ३३; १९९, १०. १५. २०. २३. ५१. ६०; २००, ९. १३०; ८. ९, ५९; १८, १; २१, १९. २४. २६; २२, ७. २२. २८. २९; ३०, ३२; ३१, ३२; ४८, ५२; ४९, ७. ९. १२. ३२; ५५, ३१; ६०, ३४. ३६. ३७; ६१, १. २४; ६४, ४४; ७७, ३१; ७८, १२; ७९, १५; ८५, ९; ८८, ३; ८९, ३२; ९६, ४४; ९. ७, १९; ११, ८; १२, २८; १७, ७; १८, ४. ११; १९, ३६; २१, ५. ३३; २३, ३३. ६०; २९, १५; ३०, १५. ४०; ३१, ४६; ५७, ३५; ६१, २१; ६४, २; १०. १, ५६; ३, ३५; ४, १८. १९; ८, ८०; ११.

११, ११; ११, ११; २२, १२; १२. ५२, ३४; १४. ६७, १० (गर्भान्पाण्डूनां)।

पाण्डुकुमार = पाण्डव (बहु०) : ६. ६५, १।

१. पाण्डुतनय (बहु० °याः) = पाण्डव (बहु०) : ३. १५८, ४१; ७. १५८, ६।

२. पाण्डुतनय = अर्जुन (७. १४३, ३९)।

१. पाण्डुदायाद (बहु०) = पाण्डव (बहु०) : १. १४८, १५; १५० ४; २. ८०, २५।

२. पाण्डुदायाद = भीमसेन (७. १२७, ६५)।

पाण्डुदिग्विजय—"भीष्म ने पाण्डु के द्वितीय विवाह का विचार किया। वे वृद्ध मन्त्रियों, ब्राह्मणों, और सेना के साथ वाहीकपुङ्गव राजा शल्य के पास मद्र देश गये। उन्होंने वाहीक नरेशसे उनकी बहन माद्री का पाण्डु के साथ विवाह का प्रस्ताव किया जिसे मद्रराज ने स्वीकार कर लिया। शल्य द्वारा अपने कुल की मर्यादा तथा प्रथानुसार कुछ शुल्क लेने का प्रस्ताव करने पर भीष्म ने उन्हें सुवर्ण तथा अनेक प्रकार के रत्न भेंट किये। इस प्रकार प्रचुर धन प्राप्त करके शल्य ने अपनी बहन माद्री को पाण्डु के लिये भीष्म को सौंप दिया। माद्री को हस्तिनापुर लाकर भीष्म ने शुभ मुहूर्त में पाण्डु के साथ उसका विवाह कर दिया। तदनन्तर तीस रात्रियों तक पत्नियों के साथ विहार करने के पश्चात् पाण्डु ने दिग्विजय करने का निश्चय किया। उन्होंने सर्वप्रथम दशार्णों को परास्त किया। तत्पश्चात् मगध पर आक्रमण करके मगधराज दीर्घ का वध किया। मगधराज का राजगृह में वध करने के बाद पाण्डु ने क्रमशः विदेह, काशि, सुह्म, और पुण्ड्र देशों पर आक्रमण करके वहाँ के राजाओं को अपने अधीन किया। इस प्रकार पाण्डु ने सामने आने वाले सभी नरपतियों की सेनायें नष्ट कर उन्हें अपने अधीन किया तथा कौरवों का आज्ञाकारी बना दिया। अन्त में विभिन्न पराभूत राजाओं से प्राप्त प्रचुर उपहार, सुवर्ण तथा रत्नादि लेकर पाण्डु हस्तिनापुर लौटे। वे जब नगर के निकट आये तब भीष्म आदि ने पुरवासियों को साथ लेकर उनका हार्दिक स्वागत किया। इस प्रकार जिन राजाओं ने पहले कुरु देश के धन तथा कुरुराष्ट्र का अपहरण किया था उन सब को हस्तिनापुर के सिंह महाराज पाण्डु ने अपना करद बना दिया। उस समय सभी के हृदय में पाण्डु के प्रति विश्वास तथा हर्षोल्लास छा गया (१. ११३)।

१. पाण्डुनन्दन (बहु० °नाः) = पाण्डव (बहु०): १. १४३, १८; १४८, ११; १५०, १. २२; १७०, ३. ६०; १८५, ५; १९१, ११; २००, ५; २०६, १३; २०८, ७; २. ८०, २५; ३. १४२, १४; १८३, २; २५३; ३; २६२, २७; ४. ४, ५१; ५. १५१, ६१; ६. १४, १८; ८३, ४३ (द्वि० = नकुल और सहदेव); ७. ४२, १९; १३३, १२; १६०, ८; १७०, ६७; १९७, ४३; ९. १२, २९; १९, १८; १२. १, १. २; १४. ६३, २२; १५. २, १०; २२, ५।

२. पाण्डुनन्दन (पाण्डु के पौत्र) = अभिमन्यु (७. ४७, ३)।

३. पाण्डुनन्दन (पाण्डु के पुत्र) = अर्जुन : १. १३२, २५; १३६, ३१; २१४, ४; २२७, ४९; २. २७, २३; ३. ३७, ५६; ३८, २६; ४. ३७, ३०; ३८, ३; ४५, २७; ४६, १; ५७, १; ५. ७, ६; ६. ५९, ५७; ७. ९९, २३; १४६, ७६; १५९, ६४; १७२, ३२; २०२, १११; ८. ५०, १५; ५३, २६; ५६, १००; ६०, २८; ७२, १२; ९४, ५७; ९६, ४४; ९. १०, ६२; २७, ३९; १२. ३४१, २३; ३४२, २; १४. ८४, ७; ८७, ४; १६. ७, २५।

४. पाण्डुनन्दन (पाण्डु के पुत्र) = भीमसेन : १. १२८, ५३. ७१; १५४, ३२; ३. ११, ६३; १४६, ३८; १५२, १४; ४. १७, १२; २२, ७८; ७. १२७, ५८. ६८; १२८, ३०; १२९, २४; १३७, ३६; १३९, ८०. ८७; १५५, ३०; २००, १५; ८. ८१, ३२; ९. ११, ४१. ४६; ३३; २६।

५. पाण्डुनन्दन = नकुल : २. ३२, ७; ३. ८०, २२; ७. १६९, १२. १५; ९. १०, ३५. ४२।

६. पाण्डुनन्दन = सहदेव (२. ३१, १५; ८. २३, २१)।

७. पाण्डुनन्दन = युधिष्ठिर : ३. १३, १५; १५, ३; १६, ३३; ४७, ३२; ९१, ९; ९९, ३९. ७०; २७३, ३; ५. ५३, ८; १९६, ८; ७. ८२, ८६: ८२, १९; १५७, ३५; ८. ४९, ५१; ७१, २८; १२. ३७, २९. ४९; १३. ८, १३; १४, ३८२; १५, ५; १८, ३; ४३, २४; ५९, ३९; १४. ५, १५; ७३, २; १५. २, १५; ५, ९; ७, ११।

पाण्डुनृपात्मज = युधिष्ठिर (१३. १८, ७)।

१. पाण्डुपुत्र (बहु० °त्राः) = पाण्डव (बहु०): १. १, १४१. १५६; २, १४६. १५६; १२४, २२; १२८, २७; १३४, १; १४०, ९१; १४२, ३१; १४४, १; १४६, २; १५०, १०. १५; १५१, ५; १५२, ४; १८७, २२; १८९, १४; १९२, ९०; २०३, १; २०६, ३. १५. २२. २५; २०७, ८; २. १, १७; ४, ४०; ४७, २७; ५४, ९; ५६, ५; ६६, ८; ७२, २-४; ८०, ४०; ३. ४, ७. १५; ५, १०; ७, ३; ११, १४. २०; १२, ६४. १२१; ५०, २. ३; ५२, ६; २३६, २; २३७, १४; २४४, ६; २४५, ५; २५२, ३७; २५८, १; २६७, ६. १९; २६८, ११; २७०, २०; ३००, २६. ३०; ४. १०, ९; १२, ६; २०, ११; २७, ७; ३३, ५१; ३५, २०; ४०, ४; ५. ५, १५; २०, ५; २२, १; २९, ५३; ३६, ७४; ५४, २०; ५७, २४; ५८, ३. ४. १६; ६२, १०; ६५, २; ७५, २०; ८२, २२. २४. २५; ८९, २५; १२८, ९; २२९, ४३. ४६; १४८, १५; १५२, १८; १५८, १९; १६४, १२; १६९, ८; ६. ९, २; १४, ६८; १७, ६; २५, ३; ४३, १००. १०५. १०८; ५१, ५; ५९, ३८. ४१; ६४, ८२; ६५, ५; ६९, १४; १०३, ४०; १०६, २९; १०७, ३२; ७. २, २२; १६, १२; ३९, २२; ९६, २४; १३७, ४४; १५०, ३६; १५२, ३३; १५९, ८६. १००; १६०, ७. २२; १६५, १८; १८५, ३४; १८९, ६३; १९३, ४८; १९८, ६३; ८. ३, १५. १६; ८, १३; १०, २६; ४०, ११; ५६, १४; ७२, ३६; ७४, २७; ९. ४, ४४; १०, ६६; ११, १५; १३, २७; ३०, १. ४; ३२, ५; ३५, २; ६३, ५१; ११. ८, ४०; ११, २२. २४; १३, १६; १६, ९; २३, ३; १२. १६, १६; १४. ६०, ९. १०; ७०, १७; १५. २, २२; ३, २१; १०, ३१; २९, २. १२।

२. पाण्डुपुत्र = अर्जुन : ३. ४६, १६. ६२; ४. ५३, ८; ५७, ३१; ६४, ७; ५. ५९, २८; ७. १८, ११; ३१, १; ८०, १८; ८९, २२; १४३, ५०; १४६, ७६; १८५, २१; ८. ५, ३६; २७, ४१; ३७, ३०; ५४, २; ८६, २३; ९१, २६; ९. १४, ३०; ६१, ३३; ६२, १०; १४. ७३, २६; ७५, २; ८०, ३९; १६. ७, ३४।

३. पाण्डुपुत्र = भीमसेनः ५. ५१, ४० (जरासन्ध का वध किया था); ७. १३३, २८; १५५, २७; ९. २६, १; ३०, २९. ३०; ६४, १५।

४. पाण्डुपुत्र = नकुल (८. २४, ८. २५. ३२)।

५. पाण्डुपुत्र = सहदेव (८. २३, ३; ९. २८, ६३)।

६. पाण्डुपुत्र = युधिष्ठिर : १. २, २५५; १३९, १; १४३, १७; १६२, २; २०७, ९; २. ३४, १८; ४९, २२. ३४. ३६. ४२; ५६, १; ६८, २२; ३. ९१, ४; ११८, २; २४६, १७; ३००, १; ५. २१, १०; ३२, ८. ११; ४०, २९; ५७, १३; १६७, १३; १७२, १३; १९३, १६; ६. ५९, ४१. ६७; १०६, ३०. ३२. ५४; १११, ५२; ७. ८, १५; १०८, ३२; १५६, ३८; ८. २२, ३०; ३६, २२; ४९, ५०; ६३, ३२; ९. १०, २; १२, ५७; १२. २८, १; ५०, ३१; ५४, १२; ६३, ९; १४. ६५, १७; १८. २, ५३।

पाण्डुपूर्वज—देखिये १. पाण्डु।

पाण्डुर, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७३)।

पाण्डुराज्याभिषेक — "धृतराष्ट्र, पाण्डु और महात्मा विदुर – इन तीन राजकुमारों के जन्म से कुरुवंश, कुरुजाङ्गल, और कुरुक्षेत्र – इन तीनों की अत्यधिक उन्नति हुई। उस समय दक्षिण कुरु देश के निवासी उत्तर कुरु में रहने वाले लोगों, देवताओं, ऋषियों तथा चारणों के साथ स्वच्छन्द विचरण करते थे। भीष्म द्वारा सब ओर से धर्मपूर्वक सुरक्षित भूमण्डल में कुरुदेश सैकड़ों देवस्थानों और यज्ञस्तम्भों से चिह्नित होने के कारण अत्यन्त

सुशोभित होने लगा। धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुर—इन तीनों भ्राताओं का भीष्म ने जन्म से ही पुत्रवत् पालन किया। ये तीनों राजकुमार ब्रह्मचर्य का पालन करते हुये वेदों के स्वाध्याय में तत्पर हो गये। युवावस्था प्राप्त होने पर तीनों धनुर्वेद, अश्वारोहण, गदायुद्ध, तथा विभिन्न युद्धकौशलों और नीतिशास्त्र में पारंगत हो गये। उन्हें इतिहास, पुराण तथा विभिन्न शिष्टाचारों का भी ज्ञान कराया गया। पाण्डु धनुर्विद्या में उस समय के मनुष्यों में सबसे अधिक पराक्रमी थे। इसी प्रकार धृतराष्ट्र दूसरे लोगों की अपेक्षा शारीरिक बल में अप्रतिम थे। तीनों लोकों में विदुर के समान धर्मपरायण तथा धर्म में उच्च अवस्था को प्राप्त कोई अन्य मनुष्य नहीं था। इस प्रकार नष्ट हुये शान्तनु के वंश का पुनः उद्धार हुआ देखकर समस्त राष्ट्र के लोग परस्पर इस प्रकार कहने लगे: 'वीर पुत्रों को जन्म देने वाली स्त्रियों में काशिराज की दोनों पुत्रियाँ सर्वश्रेष्ठ हैं; देशों में कुरुजाङ्गल देश सबसे उत्तम है; सम्पूर्ण धर्मज्ञों में भीष्म का स्थान सर्वोच्च है; और नगरों में हस्तिनापुर सर्वोत्तम है। धृतराष्ट्र नेत्रहीन होने के कारण तथा विदुर पारशव (शूद्रा के गर्भ से ब्राह्मण द्वारा उत्पन्न) होने से राज्य न प्राप्त कर सके। अतः सबसे छोटे पाण्डु ही राजा हुये (१. १०९)।"

पाण्डुराष्ट्र (बहु० °ष्ट्राः)—देखिये पांशुराष्ट्र (बहु०)।

पाण्डुवीर = युधिष्ठिर (९. १७, ३५)।

१. पाण्डुसुत (बहु० °ताः) = पाण्डव (बहु०): १. १, १४२; २, १६२; १४०, १; १४१, २३; १४५, ६; १६६, २२; १८९, २३; १९३, १४; २०५, ५; ३. ११, ७; ९५, ७; ११८, १९. २१; १८४, १; २३७, १५; २३८, ९; ४. १३, १३; ५. १, १७; ८, २६; ३७, ४५. ६३; ३९, ८६; १०५, ३३; ६. १४, ८; ५२, ६०; ५८, ३७. ४४; ५९, ६९; ६५, ७; ६६, ३६; ६९, २०; ८३; ६. ८; ८५, १५; ९७, २. ३७. ३८; १०३, ४६; ११३, ५१; ११४, ४३; ११८, ८; ७. ७, २२; ११४, १०२; १३३, ८; १३५, ५; १५८, १५. २९. ३२. ५०; १७२, ५; ८. ९, २७; २८, ९; ३१, २१. २३. ७९; ४६, ७; ९. ७, १५; १७, ४४; २०, ४; २७, ११; २९, ६३; ६२, १५; १०. ३, ३१; १५, १७; ११. १४, ११; १२. ४१, २; १४. ५३, १२; ६३, १९; १७. १, ३६।

२. पाण्डुसुत = अर्जुन : ५. २१, ६; ६. ५२, ३५; ५५, ३७; ९८, ७; १०२, २२; १०९, १६; ११६, ८०; ७. १६, ५४; ८. ९, २५; ५३, ४३।

३. पाण्डुसुत = भीमसेन (३. १४६, ५०; ७. १३५, १२)।

४. पाण्डुसुत = नकुल (८. ८४, २२)।

५. पाण्डुसुत = सहदेव (८. २३, १६)।

६. पाण्डुसुत = युधिष्ठिर : १. १४१, २४; ३. ११८, ५; २४८, ८; ५. ३, २३; ६. ८५, ३१, १०५, २६; ११०, १७; ७. १५८, ४४; १६३, २९; ८. ४९, १४; १२. ३१, १; १३. १८, १७; १६७, २; १५. ४, १९।

१. पाण्डुसूनु = अर्जुन (७. १४५, ९०)।

२. पाण्डुसूनु = युधिष्ठिर (६. ८४, ३)।

पाण्डुसौपाक, एक जाति का नाम है (१३. ४८, २७)।

पाण्ड्रोड्रराजौ (२. ४, २४)—देखिये पाण्ड्यराज।

१. पाण्ड्य (बहु० °ड्याः), एक जाति के लोगों तथा उनके देश का नाम है : २. १४, २० (भीष्मक ने इन्हें पराजित किया था); ३१ ७१ (अपनी दिग्विजय के समय सहदेव ने इन्हें परास्त किया था); ३. ८८, १४; ६. ५०, ५१ (ये युधिष्ठिर की सेना में सम्मिलित थे); ७. ११, १५ (कृष्ण ने इन्हें पराजित किया था); २३, ६९ (श्रीकृष्ण ने इनके राजा का, जो शारङ्गध्वज के पिता थे, वध किया था); ८. १२, ९५।

२. पाण्ड्य, पाण्ड्यों के एकाधिक राजाओं का द्योतक है : १. २, २९४; १८७, १६ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित थे); २. ४४, २०; ५२, ३५ (युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये); ५. १९, ९ (अपनी सेना के साथ युधिष्ठिर के पास आये); २२, २३ (ये युधिष्ठिर के मित्र थे); ४८, ७६ (कृष्ण ने इनका वध किया था); ७. २३, ६९ (द्रोण के विरुद्ध युद्ध के लिये गये). ७२. ७४; २५, ५७ (वृषसेन से युद्ध किया); ८. १९, ५१ ५८; २०, ६-८. १२. २०. २१. २३. २४. २७. ३३. ३९. ५० (इनका अश्वत्थामा के साथ युद्ध; अश्वत्थामा द्वारा इनका वध); २२, १. ४; ४९, ३३ (कर्ण पर आक्रमण किया); ९. २, ३६ (मृत नरेशों के साथ उल्लेख)। तुकी० पाण्ड्यराज, पाण्ड्यराष्ट्राधिप।

३. पाण्ड्य, पाण्ड्य-देश का द्योतक है (३. ८५, २१)।

४. पाण्ड्य (वि०): ३. २५४, १४।

पाण्ड्यराज = २. पाण्ड्य : २. ४, २४; ३१, १६ (सहदेव द्वारा पराजित हुये); ५. १७१, २६ (ये युधिष्ठिर की सेना के रथियों में से एक थे); ८. २०, ४६।

पाण्ड्यराष्ट्राधिप = २. पाण्ड्य : १. ६७, ४२ (ये विक्षर नामक असुर के छोटे भाई के अंश से उत्पन्न हुये थे)।

पाताल, पृथिवी के नीचे स्थित अधोलोक का नाम हैं जहाँ असुर निवास करते हैं : १. १८, २१ (पातालतलवासीनि); २१, ७ (पाताल-ज्वलनावासमसुराणां च बान्धवम्). १३ (पातालतलमव्ययम्); २२, १ (पातालज्वलनावासमसुराणां). १२ (पातालज्वलनशिखाविदीपिताङ्गम्); २१२, २१ (पातालमगमत्सर्वो विषादभयकम्पितः, अर्थात् भयभीत होकर असुर गण पाताल चले गये); ३. ४७, १७ (पातालवासिनो रौद्रा दनोः पुत्रा महाबलाः); १०५, १२ (विदार्य वसुधां देवीं पातालतलमास्थिताः); १४२, २९ (नष्टा वसुमती कृत्स्ना पाताले चैव मज्जिता); २५१, २२ (दैतेयदानवाः पातालवासिनो रौद्राः पूर्वं देवैर्विनिर्जिताः); २६८, ४ (पातालमुखं पतन्तम्); २७१, ४२ पातालतलसंस्थोऽपि यदि शक्रोऽस्य सारथिः); २७२, ३३ (नागलोकांश्च पातालतलचारिणः); ५. ९९, १ (एतत्तु नागलोकस्य नाभिस्थाने स्थितं पुरम्। पातालमिति विख्यातं दैत्यदानवसेवितम्). ६ (यस्मादलं समस्तास्ताः पतन्ति जलमूर्तयः। तस्मात् पातालमित्येव ख्यायते पुरमुत्तमम्). ९ (पातालतलमाश्रिताः); १००, २ (पातालमाश्रितम्); १०८, १२; ६. २३, १४ (नित्यं वससि पाताले युद्धे जयसि दानवान्); ७. १, ३१; ११, २० (दैत्यं पातालवासिनम्), १०३, ४६ (वसुन्धरा"'सपाताला); ११४, १५ (द्रोणगम्भीरपातालं कृतवर्म महाह्रदम्); ८. ४७, १३ (पातालतलसन्निभे); ६०, २४; ६६, ७ (पातालमिव गम्भीरं सुहृदां नन्दिवर्धनम्); ७३, ५६ (साकाशजलपातालं सपर्वतमहावनाम्); ९०, १२ (पातालतले शयानो नागोऽश्वसेनः); ९. ७, ४० (कर्णपातालसंभवम्); १२. १५४, १५ (शोषयत्येव पाताल); १७७, ३९; २५०, १५ (योनिपातालदुस्तराम्); ३२९, ८३ (पातालतलवासिनम्); ३४७, ५० (कर्णावाकाशपाताले ललाटं भूतधारिणी। गंगा सरस्वती श्रोण्यौ); ३४९, ३५ (पातालस्थेन भोगिना); १३. ६, ३५ (बलिर्वैरोच-निर्बद्धो धर्मपाशेन दैवतैः। विष्णोः पुरुषकारेण पातालसदनः कृतः); ३८, २९ (अन्तकः पवनो मृत्युः पातालं वडवामुखम्)।

पाद (:) = शिव (सहस्रनाम)।

पादप (बहु० °पाः) मूर्तिमान वृक्षों का द्योतक है (९. ४५, १२)।

पादाङ्ग = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ४६)।

पापनाशन = विष्णु (सहस्रनाम)।

पापहन् = अग्नि (देखिये बरथा०)।

पापहरा, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, २२)।

पारद (बहु० °दाः) एक जाति का नाम है : २. ५१, १२; ५२, ३. १३ (ये युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये); ६. ८७, ७ (दुर्योधन की सेना में। इन्होंने द्रोण का अनुगमन किया); ७. ९३, ४२ (अर्जुन पर आक्रमण किया); १२१, १३ (सात्यकि पर आक्रमण किया)।

पारमेष्ठ, परमेष्ठिन् ब्रह्मा के पुत्र, नारद का नाम है (१२. ३३५, ५)।

पारमेष्ठ्य (वि०): १. २११, ४; ३. १६४, १८ (अर्जुन ने परमेष्ठिन् का अस्त्र प्राप्त किया); ६. १२१, ४१)।

पारशव, शूद्रा के गर्भ से ब्राह्मण द्वारा उत्पन्न एक जाति के लोगों का नाम है (१३. ४८, ५)।

पारसव, विदुर के लिये प्रयुक्त (१. १०९, २५) । देखिये पारशव ।

पारसवी, पारशव जाति की स्त्री का द्योतक है और विदुर की पत्नी के लिये प्रयुक्त हुआ है जो राजा देवक की पुत्री थी (१. ११४, १२) ।

पारसिक (बहु० °काः) एक जाति के लोगों का नाम है जो उत्तर दिशा में निवास करते थे (६. ९, ६६) ।

पारा, कौशिकी नदी का दूसरा नाम है । विश्वामित्र ने ही कौशिकी का यह नाम रक्खा था (१. ७१, ३२) ।

पारावत, ऐरावत वंशीय एक नाग का नाम है (१. ५७; ११) ।

१. पाराशर्य = व्यास : १. २, २७०; ६३, ८४; १०५, १४; ३. ३६, ३८; ६. २५, ७; १२. ३२७, २६. ३३; १३. १६५, ४४ (ये उत्तर के ऋषियों में से एक थे); १६७, २३; १८. ५, १० (मुनि) ।

२. पाराशर्य, पराशर के वंशज, एक या दो ऋषियों का नाम है : २. ४, ११; ७, १२ (शक्र की सभा में) ।

पारिक्षित अथवा पारीक्षित = जनमेजय (देखिये वस्था०) ।

पारीक्षित् = जनमेजय (देखिये वस्था०) ।

१. पारिजात, ऐरावत वंशीय एक नाग का नाम है (१. ५७, ११) ।

२. पारिजात, नारद के साथ के एक ऋषि का नाम है (२. ५, ११) ।

३. पारिजात, एक पुष्पवृक्ष का नाम है जिसका महेन्द्र के उपवन से श्रीकृष्ण ने हरण किया था : ३. २३१, २३; ९. ३७, ६३; ५. १३०, ४९; ७. ११, २२ ।

पारिजातक, एक मुनि का नाम है जो युधिष्ठिर की सेवा करते थे (२. ४, १४) ।

पारिपात्र अथवा पारियात्र, एक पर्वत का नाम है : २. १०, ३१ (कुबेर की सभा में उपस्थित पर्वतों में से एक); ३. १८८, ११५ (मार्कण्डेय जी ने नारायण के उदर में इसे भी देखा था); ३१३, ८ (यहाँ के लोगों ने अर्जुन को अजेय बताया). ३२; ६. ९, ११ (भारतवर्ष के कुल-पर्वतों में से एक); १२. १२९, ४ (गौतम का आश्रम यहीं था); १३५, ५; १४. ४३, ४ (प्रमुख पर्वतों की गणना में इसका भी उल्लेख है) ।

पारिप्लव, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १२) ।

पारिबर्ह, गरुड के पुत्र, एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, १३) ।

पारिभद्रक (बहु० °काः), एक जाति के लोगों का नाम है जो दुर्योधन की सेना में सम्मिलित हुये थे (६. ५१, ९) ।

पारियात्र — देखिये पारिपात्र ।

पारिषद (अधिकांशतः बहु० °दाः), शिव और स्कन्द के अनुचरों के लिये प्रयुक्त हुआ है : २. १०, ३४. ३६ (कुबेर की सभा में शिव के चारों ओर खड़े थे); ३. १०९, ३; २२५, ३१; २२८, १; २७२, ७९; ७. २०२, १९; ८. ३४, ८६; ९. ४५, २५. ५०; ५१. ७७. ७८. १०४. १०८. ११२. ११३; ४६, ५४; १०. ७, ३३ ।

पारिषदप्रिय = शिव (१०. ७; ८) ।

पारीक्षित = जनमेजय (१२. १५०, ३) ।

पार्जन्य (वि०) : १. १३५, १९ (पार्जन्येनासृजद्बनान्) ।

पार्जन्यास्त्र, पर्जन्य के अस्त्र का द्योतक है जिसका अर्जुन ने प्रयोग किया (६. १२१, २३) ।

१. पार्थ (बहु० °र्थाः) पृथा (कुन्ती) के पुत्रों — युधिष्ठिर, भीमसेन और अर्जुन (तथा कभी-कभी नकुल और सहदेव, — के लिये प्रयुक्त हुआ है । कुछ स्थलों पर युधिष्ठिर के पक्ष के अन्य लोगों के लिये भी व्यवहृत है : १. १; ११२. ११३. १५३. १६६; २, २९२. ३०१; ६२, ८; १३५, ३२; १३९, २०; १४८, २१; १४९, ४; १६४, २१; १६६, १८; १६९, ३. १६; १८३, १०; १८७, १२; १९१. १; १९३, १२. १३; २००, १४; २०१, ८; २०३, १३; २०५, २८; २०६, ५; २१३, २; २.१, १९; २, १. २८; १२, ३३; २४, ४३. ४५; २६, २; ४७, १७. ३८; ५२, ३३; ५९, १; ६२, १७; ६३, ९; ६६, ९; ७२, २; ७५, ६; ७७, १. ५. १०, १४; ७८, ६; ८०, ४४; ८१; १. ३१. ३५; ३. १, ३. ९; ४, २२; ७, ५; ९, २२; १२, ३. ८; ६१; २५, १९; २६, ४; २७, १; ३८, ७; ४९, १३; ५१, १०. १६. १८, ३०; ८१, ५; ११८, २१; ११९, ९; १२०, ४; १४४, १९; १५७; ४; १५८, ११; ३५. ७३; १६१, ७; १६४, १२; १६५, ७. ९; १६६, ६; १७४, १३; १७६, १. ३३; १७७, १७; १८३, ४०; १८९, ५८; २३६, १; २४२, ११; २५१, ६. ८; २५२, ४३; २५३, १. ३; २५४, ३६; २५७, १०; २६३, ४२. ४५; २६६, ६; २६७; ६. १७; २६८, २१; २६९, १. १३. १६; २७०, २१; ३०९, १९; ३१०, ४०; ४. ५, ३४; १०, ६; १४, १; २५, ११. १६; २९, ७; ३१, २५. २८. २९; ४४, १; ५२, ९; ६७, ९; ६८, २. ३; ७१, २. १२. १८. २७. ३५; ५. ६, ११; २१, २०; २२, ४-६. २०; २५, ५. ९. १३; २६, ३; २७, १६; २९, १९. ५७; ३६, ७३; ४७, ३; ५४, ३. ६. ८; ५५, २. ३; ५६, ६; ६०, ११. २६; ६१, २. ६. १९; ६२, ५. ६; ६३, १. ४; ८२, १५; ८८, १; ९०, ६. ९४. ९५; ९१, २७; ९२, ८; ९५, ६२; १२४, ६१; १२७, ३. ९; १२९, ४८; १३०, २८; १४०; १०. २८; १४६, ९; १५३, ९; १६०, ५९; १६२, ५४. ५८; १६६, ९. १०. १३; ६. २४, ६६; २५, २४; २७, ५; २०, ५; ४६, ४९; ४८, १२१; ४९, ५३; ५२, ३७; ५९, १२९; ६५, १७. १९; ७२, ३३; ८६, १८; ८८, ४४; ९१, १; ९७, ४. ९. ४०. ४२; ९८, ३३; ९९, १६; १०६, १; १०७, ७२. ८९; १०८, १८. २४. ३८; १०९, ८; ११४, ४१. ४२; ११५, ५. २५; ११७, १४. २९; ११८, २२. २९. ३०; १२१, ५२; ७. ७, २२; ९, ३४; १०; ६१. ७३. ७५; २६, १; ३५, १; ३९, ११; ४०, ३७; ४२, ७. १८; ८६; १३. १४. १८; ९४, २२; ९५, ५. ६; ९६, ३; १०५, १; १०७, ८; १०९, ३१; ११४, ५७. ६०. ९९-१००; १२२, १९; १२४, ३९; १२५, ७. ८; १२६, १; १३२, १५. १९; १३३, ५. ७; १३५, २३; १३८, १३; १५२, २८; १५५, १२; १५६, १८०; १५८, ८. ५१. ५६; १५९, २६; १७२, ६. ९. १०; १७३, ५८; १७४, ७; १७९, ४९; १९८, ४. १२; २००, ३३; २०१, ४४; ८. ९, ५. ६६; १०, २९. ४९; १२, १३; २१, ५. ९; ३०, २६. ४०; ३१, १९. २२; ३२, १४; ३५, ३३; ३६, ३; ३७, २५; ४६, १; ४८, १-३. ६७; ५८, ४७; ५९, १; ७३, ६७. ६८; ७९, १३; ८८. २३; ८९, ११; ९१, ६; ९. २, १२. २२; ४, ५०; ७, ४. १७. २२; ८, १७. १९. २१. ३६; १०, ३०; ११, ३४. ६३; १५, २८. ३५; १६, १. २; १७, ८३. ९०; १८, ३६; १९, ५६. ६७; २२, ८; २९, ९. ७७; ३०, १०; ३१, ४३; ३२, १०. ५१; ३३, ४५; ६२, ४; १०. १, ९; ८, ९. १२३. १५४; ११, २४; १५, १९. २६; ११. १, ४०; २०, २३; १२. ३८, १; १४. ७९, ३१; १५. १८, १२; १६. ५, १ । तुकी० पार्थात्मज (बहु०), कौन्तेय (बहु०), कुन्तीपुत्र (बहु०), कुन्तीसुत (बहु०) ।

२. पार्थ, पृथा अर्थात् कुन्ती के पुत्र = अर्जुन : १. १, १८४. १९१. १९६. २०५; २, १२२. १२४. १५७. १८७. २१३. २४६. २५०. २५६. २५८. २७७. ३६०; ६१, ४६. ४७; १२३, ५०; १३२, १२. २०; १३३, ५. ८. १६; १३५, ७. १६; १३६, ९. १२. १५. १७. २२. २६. ३३; १३७, ६; १३८, १२. ३८. ४३. ४५. ४७. ४८. ५०. ५१. ५५. ७७; १३९, २०; १५४, १७; १७०, ६५. ६७. ७१. ७३; १७१, ४. १८. २१. २३; १७३, ४९; १७४, १४; १७५, २. २१. २३; १७६, १. १६. २३. २७; १७७, २. १६; १८१, १०; १८८, २. २२. २५. २७; १८९, १७; १९२, १७. १८; १९५, २४; २०७, २५; २१३, २५; २१४, २९; २१७, १५; २१९, १३. १५. २१; २२०, १०. १६. २६; २२१, ६. ८. १०. ११. १५. १९. ५५; २२२, १७. १९. २२. २९; २२३; २; २२४, १२; २२५, ५. १९; २२६, ११; २२७, २३. २५. ३७. ३९; २२८, ४४. ४५. ४६; २३४, ७. ९. १३; २. १, १. १५; २, ९. २०; ३, १. ९; १५, १३; १६, ६; २०, १४; २१, १. ८. ३२; २५, १. ७; २७, २६; २८, ८. २१; ५२, ३१. ३३; ७२, १३; ७७, ३७; ८१, ३५; ३. १२, ४४. ४७. ६७. ७८. ११६; २४, १२; २७, २७; ३३, ५२;

३५, १२; ३६, २९; ३७, ९. २२. २९. ३०; ३८, १. ७, १०. २८. २९;
३९, ७. ५४. ६६. ७३. ८४; ४०, ४. ५. १९. २१; ४१, ५. २६. २८.
४२; ४२, १. ९. ३८; ४३, १०. २२. १६. २२; ४४, १. ६. ८; ४५,
१; ४६, १. ५. १९. २८. ३३. ४८. ५०; ४७, ४. २०; ४८, १-३. १०.
१६; ४९, ४. १८. १९. २३; ५१, २१; ५२, १. २. १६; ७९, २२. २४.
२५; ८०, १; ८६, ९; ९१, ७. ८. १०. १३. २३; ११८, २२; १२०, ७;
१४१, ५. ११; १५७, १; १५८, ८; १६२, २१. २४; १६८, ६७; १७१,
१७; १७२, २. ८; १७३, १५. ७२; १७५, १८. २३. २४; १७६, ५;
१८३, १३; २४४, १३. २०; २४५, २१; २५२, २१. ३२; २७१, ८.
६०; २७२, ७५. ७६; ३१२, २८. २९. ३१. ३२; ४. ५, १९; १९, १५.
२६. २७; २०, १७; ३६, ९. १६. १९; ३७, ३. ५. १६. ३०; ३८, ९.
३७. ४६. ५१; ३९, ९. ११. १३. १५; ४०, १. ५; ४१, ६; ४३, १.
३. ७; ४४, २. ५. ७. २३. २४; ४५, २७. २८. ३५; ४६, ३२; ४७,
२७; ४८, ४. १२. १३. १६. २२; ४९, ५. ७. १२. १७. १९-२२; ५०,
१९; ५१, १९; ५३, ४. ७. ९. १९. २१. २२; ५४, ९. ११. १५. २२.
२९; ५५, ४. ६. ११. १४. २८. ३०. ३९; ५७, १. १६-२१. २६. २७.
२९. ३३-३५. ४१; ५८, ११. १५. १६. २०-२२. ३०. ३३. ३६.
५७. ६३. ६४. ६७. ६८. ७३. ७४; ५९, १. ६. ९. १०. १४. १७. १९;
६०, ९. १०. १३. २२; ६१, १. ३. ४०; ६२, ४. १४. २१; ६४, ६.
१२. १४. २०. २५. ३८. ४४; ६५, ५. ८. ११. १३. १६; ६६, ३. ४.
६. ७. १०-१२. १७. १९. २२. २५. २७. ३०; ६७, ४. ८. १५; ६९,
१५; ७१, ९. २३. ३५; ७२, ११. १२. २७. ३५; ५. १, १६; ७, १५.
१७. २०. २९. ३८. ३९; २१, ६. १६; २३, २०; ३२, २३; ५०, ८;
५२, ६; ५४, ९; ५५, ४४; ५७, १६; ५९, ८. ९. २४. २९. ३०; ६०,
१८; ६२, १; ६६, ११; ६७, ७; ७९, ९. १४. १७. १८; ८२, ३१;
९०, ९०; ९६, ४८; १२४, ५६; १३८, ७. १६. १४१, १८; १५२, ५;
१५४, २६; १६०, ६०. ९२. ९८. १००. १०५. ११४; १६१, ३०. ३२.
४३; १६२, ११-१३. ६३; १६४, ९; १६५, २. ३; १६७, १६. १७;
१६८, ३८; १६९, १९; १७०, २; १७२, १२; १९३, २१; ६. १५, २०;
१९, २३; २३, ३. १७. २०; २५, २५. २६; २६, ३. २१. ३२. ३९.
४२. ५५. ७२; २७, १६. २२. २३; २८, ११. ३३; ३०, ४०; ३१, १.
१०; ३२, ८. १४. १९. २२. २७; ३३, १३. ३२; ३४, २४; ३५, ५.
९; ३६, ७; ४०, ४. ६; ४१, २६. २८.-४२; ३०, ३१-३५. ७२. ७४.
७८; ४५, १०; ४९, २४; ५०, ४५; ५२, ३५. ३९. ४२. ४५. ४९.
६०. ६६; ५५, ३४; ५७, २; ५८, ५. २७; ५९, ३५. ४२. ५०. ५४.
५७. ५९. ६५. ७३. ८३. ९९. १०१. १०८. ११५. ११६. १२१. १३७;
६०, २६; ६१, ४; ६१, ४; ६९, ९; ७१, २; ७३, ५; ७४, ३४. ३५;
७८, ३०; ८१, ४४; ८२, ३; ८५, ४. ५. ८. १०. १७; ९०, ७. १०;
९६, १३; ९८, १३. ४८; १००, २६; १०१, ३६. ५९; १०२, २. ४. ६.
७. १०. १४. १८. २५; १०४, २. ४; १०६, ३३. ४२. ४५. ४९. ५३.
५६. ६७. ६८; १०७, ३५-३८. ९७. ९८, १०९, १३; ११०, ३. ४.
२८. ३४. ३६. ३८. ३९. ४२. ४३. ४६. ४८; १११, ५७; ११२, ४.
१७. २०. ३३; ११४, ५. ९. २०. २५. २७. ३१; ११५, १५. ३२;
११६, ८. ३१. ६८; ११७, ७. १२. ३५. ४१. ४८; ११८, ९. १०;
११९, ५६. ६८. ७९; १२०, ४२; १२१, २४-२६. ३२. ३९. ४५; ७.
३, १८; ७, २७; ९, २५; १०, २१. ३६; ११, २१; १२, १५. २१. २४;
१६, ५१; १७, ४. ४७; १८, १३. १४. २६; १९, १७. २१. ३१. ३६;
२०, २; २३, ३२. ३३; २६, २; २७, १. १९. २०. २२. २८. २९. ३१;
२८, १. ८. १७. १९. २०. २६. २७; २९, १. ६. १६. १८. २५. ३६.
३७. ३९. ४०; ३०. १. ४. ९. २३. २९. ३७. ४२; ३२, ४९. ६०. ६१;
३४, ५; ३५, २७; ४२, १८; ७२, ६५. ७५; ७४, ६. २६. २७. ३४;
७५, १. २१. २९; ७७, १९. २५; ७८, १२. ४३; ७९, ३. ४. ६. ८.
१७. २१. २३; ८०, ५. ६. १७. १९. २५. ३४. ३७. ४३; ८१, १. ४,

१२; ८३, २१; ८४, १३. १८. २०. २४. ३५; ८५, ५०; ८८, २१; ८९,
४. ६. १४. १५. २०. २१; ९०, १३. २१. २६; ९१, १४. ३०, ११;
९२, १. ११. १४. २०. २३. २५. ३६. ३७. ४४. ६२. ६४. ६५. ६६.
७५; ९३, १. ४. १४. १६. २१. २२. २६. ३०. ३९. ६२. ६३. ६७.
७०; ९४, १०. २६; ९५, १; ९९, ३३. ३९. ४४. ४६. ५३. ६२. ६३;
१००, ५. ७. ८-१०. १९. ३५; १०१, ३३. ३८; १०२, ३. ५. ९. १०.
१३. १६. १७. १९. २९. ३५. ३६; १०३, ३. ६. ९. १०. २८, ४३;
१०४, ६. २८. २९; १०५, ३१. ३७; ११०, ३९. ९६.-१००; १११, ४.
३१; ११२, १. १२; ११४, ३७; १२६, ५; १२८, ३३. ३५. ४५-४८;
१२९, ३७; १३१, २२; १३६, ३९; १३९, १११. ११२. १२५; १४१,
११. १३. १९. २०. २२. २३; १४२, ७. ११. ६९. ७२; १४३, ६. ९.
१५. १६. ४४. ४५. ५२. ५४. ६५; १४५, १७. २२. २४. ३२. ३९.
४४. ४९. ५२. ६१. ६३. ६८. ७०. ७६. ८९. ९६; १४६, ३. १५. २७.
६२. ६९. ८६. १३४. १३६; १४७, २. ३. १२. २९. ३४. ७१. ७३;
१४८, ३६. ५३; १४९, १; १५०, ६; १५२, ५; १५४, ८; १५५, २;
१५६, ५. ८. ३९; १५७, ४४; १५८, ५. १७. २१. २४; १५९, ४९.
५३. ६१. ६४. ६९. ७०. ७३. ७८ ८०. ८२. ८५; १६१, १२; १६७,
४७; १७०, ४७. ५९; १७१, ४०; १७३, २६. २७. २९. ४२; १७९,
४९; १८०, ४; १८१, ७. १४. १९; १८२, १. १३-१५. २२. ३१. ३८.
४४. ४५; १८३, ७. ९. ३७; १८४, ३६; १८६, ८; १८८, ३३. ३६.
४०. ४८. ५१; १८९, ६५; १९१, ४३; १९२, ५७; १९७, ३. २०, २३.
२५. २७. ३५. ४१; १९८, २६. ३२; १९९, २५; २००, ७७. ७९. ८१;
२०१, १४. १५. १८; २०२, १०. २०. २२. २३. ५५. ८०. १४५. १४८;
८. ५, २६. ४०. ५२; ८, १४; ९, २५; १०, ३९; ११, २३; १६, ४.
२६. २९. ४९; १७, ९. १३. २३; १८, ४. ११. १४. २०; १९, २. १६.
१७. २२. २३. २८; २१, ३; २७, १८. २१. ४२; ३०, २३; ३१, २.
३६-३८. ५४. ६१; ३२, ५. १९. २०. २२. २४. ६१; ३५, ९. १०. ३१.
४४. ४८; ३७, १२; ३९, १५. १९-२१. २५. ३५; ४०, ११; ४१, ७३.
७८. ८४; ४२, १६. १८. २०. ३५. ३७; ४३, ३; ४६, ५८. ६५. ६६.
७५. ७७; ४७, १. ८. १३; ५३, ३-७. १६. १७. २८. २९. ३७; ५६,
५. १०१. १०५. १०७. १३४. १३८; ५८, १०. ४३. ४४; ५९, ३०.
४८. ५३. ५६. ५९. ६२. ६६; ६०, १. ४. १९. २२. २५. २७. २८. ३०.
३५. ४०. ४४. ४८. ५७. ८७. ९२; ६३, १६. १८. २२; ६४, १. २.
१०. १२. १४. १८. २२. २४. २५. ६५. ६६; ६५, ११; ६६, २०. ३०.
३९; ६८, ३. ५. २१; ६९, २. १५. १६. १८. २०. २२. २७. २८.
६७. ७८. ८३. ८८; ७०, १. २५. २६. २८. २९. ३६. ३८. ४३. ५०.
५३; ७१, १-३. ५. २४. ३०. ३१; ७२, १. १५. १६. २३. २५. ३६.
४०; ७३, ४. १०-१२. २७. २८. ४८. ५०. ५१. ५३. १२०. १२१.
१२५; ७५, ७; ७६, २६. ३६; ७७, ५. १२. १७. २२. २३. २४; ७५,
२२. २८. ३७. ७७. ८७. ८८; ८०, २९; ८१, ११. १२. १९. ४४. ४६.
५२. ५३; ८२, १०; ८५, २६-२८. ३७; ८६, १५. १६. २१. २३; ८७,
३०. ३१. ४६. ६२. ७५. ९४. १०२. १०४; ८९, १०. १२. १४. ४२.
४८. ६३. ७३. ७७. ८३. ८५. ८६; ९०, २. ६. ९. ११. १४. १५. १९.
२१. ३७. ३८. ४१. ४६. ४७. ४९. ५०. ६७. ७९. ८५. ८८. ९३. ९९.
१०२. १०८. १०९; ९१, १७. २१. ३३. ४०. ४३. ५१. ५८; ९२, ८.
१२; ९३, ३. १४. १६; ९४, ३९. ४०. ४२; ९६, १. ८. १२. ३६. ३१.
४७; ९. ३, ३. १५. १६. ३५; ४, ३; १४, ४. ९. ११-१३. १७. १९.
२१. ३१. ३२. ३४. ३५; १६, २. २५; १८, ६; १९, ३२; २४, ६०-६३.
२७, ७. ३५. ३६. ४१. ४२; ६१, ३५; ६२, ३०; १०. ८, ११५; १२.
२९; १५, १८; ११. २१, १; २३, १२. १३; २४, २०; १३, १, २६.
३७; ७, ४४; १९, १०. २५; २६, २. १०. ११. १७; २७, ५; १४७.
१०; ३४१, २३. ३७. ४२. ४३; ३४२, २. ७९; ३४८, ११; १३. १९५.
२६; १४. १५, ८. ९. १६. २७. ३३. ३४; १६, २, ९. १६; १९, ५४.

५७. ६०. ६२. ६६; २०, १; २६, ३; ३५, ५. १४; ५२, ३; ५३, ३; ६७, २१; ६१, १९; ६७, २; ७३, १८; ७४, ७. ११. २१. ३३; ७५, ५. ८; ७७, ३. ६. १२. २३-२५. २७; ७८, २०. २५. २७. ३३. ३९. ४५. ४८; ७९, १६. १७. २८; ८०, ५०. ५१; ८१, ९. २५; ८२, १४; ८४, ३. ४. ६. १०. १२. १५. १६; ८५, १; ८६, १४; ८७, ३. १९; ८८, ५; १५. ११, २४; १३, १४; २५, ११; ३१, ११. १२; ३८, १३; १६. ४, २; ५, ५. १२; ६, २. ७. ११. २८; ७, ९. १३. १४. १९. ३५. ३७. ४०. ४६. ५८. ६०. ६२. ६६. ६९. ७५; ८, ४. ७. ३८; १७. १, ४१; १८. ३, १६ ।

३. पार्थ, कुन्ती (पृथा) के पुत्र = भीमसेन : १. १३८, ३१; १४६, १८; १५४, १९; १८९, १७; २. ५०, ३०; ७७, २१; ३. ५२, ३८; १४१, २७; १४६, ७. १२; १५०, ५०; १५८, ८५. ८७. ९०; १६०, ३४; १६१, १२; २७२, १३; ३१२, ३८; ४. २०, १६; २२, ३७; ३३, ४४. ५५; ४३, ८; ५. ५५, ३८; ७५, १६. १९; १२६, ४; १५७, २१; १६०, ६५; ६. ५४, ७५. १०१; ६४, १४; ७७, ११; ९०, ५१; १०२, २८. ३५; ७. २३, २८; २६, ५; १०८, २३; ११२, ७५; १२६, १४. ४८; १२७, १०. २५; १३१, ३७; १३३, ३; १३४, ६. ९; १३७, ६. १३; १३९, ८५; १६६, ६२; १९९; ५७; ८. ७६, १६; ८४, ६; ९३, २२; ९. ३, २३; ३२, १४; ३३, ७. २८; ५६, ६; ५७, ६२; ५८, ३५; १०. ११, १४; ११. ८, १४. १७; १७. २, २५ ।

४. पार्थ = कर्ण (५. १४५, १२) ।

५. पार्थ = युधिष्ठिर : १. १२९, ५; १६२, १४; २०९, १; २२२, २३; २. ५, ५५. ६०. ८९; ७, ४. ९; ८, १. ३४. ३९; १२, ३४; १३, ३४. ४१. ४३; १५, २२; ४५, ३६; ४७, २३; ५३, २४; ५८, ८. २०; ५९, ८; ६१, १८; ७१, ५; ७६, १. ६. १८. २४; ३. १, ४०; ३, १५; २३, १६; २५, ९. १७; २६, ६. ९; २७, ३८; ३०, ११. १२. ४०; ३२, १. १७; ३३, ५६. ५८; ३५, २५. २७. २८; ८५, ११६; ९०, १०; ११९, ८; १२५, १५; १३९, ९. १३. १७; १५६, १६; १५९, ६. ७. १०. ११. १४. १८. २५; १६१, ४३; १६२, ४. २४; १६३, ४०; १८३, १५. १९; १८७, २४; १८८, ३०; २००, २२. ९२; २२७, ७; २७१, १४; २८७, २३; २८८, १९; २८९, ८; २९८, २५. २७; ३१३, ४२; ४. २७, ५. ९; २८, ३०; ६८, ४७; ६९, १८; ७१, ३३; ७२, ३५; ५. ७, २९; ८, २८; २४, १; २७, १. ५. १२. २२. २५; २९, ४६; ३२, १०; ५०, ८; ५४, १८; ५७, ७; ५८, २२; ७२, ८८; १२८, २०; १३९, ३. १३; १६१, १४; १७१, १; ६. १, १३; २१, ६; ४३, ४०; ५०, २५. ३७. ३९; ७५, ५; ८४, ६; ८६, १६; ७. २०, ३१; २४, ८; ४३, ११; ११०, ३६; १११, ३७, १२७, ६. ८; १३३, ८. १०; १५७, ४२; १६२, ३८. ४४; १६५, २८. ३३; १९०, ४३; ८. १०, २; ४९, ४४. ४८. ४९. ५९; ५५, ३८; ६०, २. २२; ६३, ८; ६८, १; ६९, ८७; ७३, ५७; ९६, २७; ९. ३, १५; ५, ८; ७, ३८; १२, ४८. ५६; १६, ५९; १७, १२. १९. ६०; १९, १८. २८; १०. ११, ११. १३; १२. २, २०; १२, १०. ११. १३. १७. ३८; १४, ६; १६, २९; २०, ५; २३, ६; २४, ६; २७, २८; ३३, ३१; ३७, ४०. ४५; ४६, २०; ४८, ८; ६६, १०. २०. २३; ७८, ४२; ७९, २०; ८३, १६; ८७, ३७; १०२, २९; १४३, ७; १६७, ५०; १७५, ३; १९४, ३; १९५, १. ३; २६८, ४; २७७, ३; २८२, ६०; ३००, २४; ३०१, ७९. ९४. १११. ११२; १३. ४, १; १४, ४२४; १७, १८२; १८, ३६. ८१; २२, १०; ३४, ३१; ४३, १९; ४७, ५८; ६०, २; ७०, २. ३२; ७६, २८; ७७, ३४; १००, ३६; १०२, २; १०६, ५२; १०७, १४१; १११, ६; ११५, ६७; ११९, १४; १४८, २६; १५८, ५. ९. १०. १३. १४. ३३. ४०; १६०, २४; १६६, ११; १४. २, १४; ३, १९. २०. २३; ११, ३; १२, ७. ११; १३, ७; ८९, ३३; १७. ३, १; १८. २, ३४; ३, १. २१. ३२. ३६ ।

पार्श्वस्थित = विष्णु (सहस्रनाम) ।

पार्वत (वि०) नामक अस्त्र का अर्जुन ने प्रयोग किया (१. १३५, २०) ।

पार्वती = उमा (देखिये वस्था०) ।

१. पार्वतीय (बहु० °याः), एक जाति के लोगों का नाम है: २. ५२, ७ (युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये); ५. ३०, २४ (ये दुर्योधन की सेना में उपस्थित थे); ६. ९, ५७; ७. ११, १६ (पूर्व समय में इन्हें श्रीकृष्ण पराजित कर चुके थे); २०, ११ (द्रोण के गारुडव्यूह में उपस्थित); १२१, १५ (सात्यकि पर आक्रमण किया). ३०. ३७; ८. ४५, ३५; ४६, १३ (शकुनि और उलूक का अनुगमन किया); ७३, २० (दुर्योधन की सेना में); ९. १, २७ (इनका संहार) ।

२. पार्वतीय (वि०) : २. ३४, १० (युधिष्ठिरके राजसूय में उपस्थित हुये); ४५, ४९; ३. २७१, ८ (इन्होंने जयद्रथ का अनुगमन किया । अर्जुन ने इनका संहार किया); ५. ४, १९; १९५, ६ (दुर्योधन की सेना में); ७. ३६, ३६; १२१, २७. ३३; ८. ७, ११ ।

३. पार्वतीय, एक राजा का नाम है : १. ६७, ५९ (यह कुक्षि नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था) ।

४. पार्वतीय = शकुनि : २. ६३, १०; ३. ३४, ४; ५. ३०, २९ ।

५. पार्वतीय = ९. जनमेजय (८. ६, १९) ।

१. पार्षत = द्रुपद : १. १३८, २०. ३६; १६६, ७. २१; १९६, ४; ५. १८८, १०. १७; १८९, ३; १९०, १० ।

२. पार्षत = धृष्टद्युम्न : १. १९६, २२; २. ६९, १०; ८०, ४६; ३. २२, ४९; ५. ३, १७; २५, ३. १०; ५७, ३१; १२६, ७; १५१, ५५; १५२, ६; १९२, ६१; १९४, १८; ६. ४४, १८; ४७, ३०. ६७; ४८, १००; ५०, २८. २९. ३९. ४९; ५२, ८. २९; ५३, १. ९. २०. ३३. ३५. ३६; ५४, ९१. ९४. १०१. १०७; ५८, २०. ३८; ६१, २७. ३५. ३६; ६२, ९. १८. २७. ४०. ४५; ६३, ९; ६९, ८; ७७, १७. २६. ३७. ३८. ५४. ५५. ६७. ६८. ७२; ७८, १८; ८१, २६; ८२, ५३. ५५; ८६, ३२-३४. ५१; ८७, १५-१७; ९०, ८८; १११, ४१. ४२; ११९, ३९; ११४, ३९; ११५, १९; ११६, ४६. ४७. ४९. ५२. ५३; ११८, ३९. ४५; ११९, १०. २०; ७. ७, ३. ४९. ५१; ८, ३. ३०; ९, ३. ६. २६. ३८; १३, २९; १६, १५; २०, २१. २७-२९; २४, ९; ३५, २; ८८, ८; ९५, ६. १५. १६. १९. ३२. ३३; ९७, २५; ११०, १६; १११, ४४. ४९; १२२, ५४. ६७; १२७, ५; १५६, ३४. १६९. १७९; १५७, २; १६०, ३२. ३९. ४०. ४५. ५२; १६३, ३; १७०, ५५. ५७; १७२, २०. २४; १७३, १. १०; १८९, ३. ५; १९०, २१; १९१, ६. ३१. ३४. ३७. ३९; १९२, १३. १४. २१. ३२. ५९. ७९. ८०. ८१; १९५, ३०; १९६, ३२. ४१. ४२; १९८, ६. २४. ५८; २००, ३४; २०१, ६; २०२, १; ८. २२, १. ५; २६, २. ९. ११. १२. २१; ३०, २७; ४७, ५६; ५०, ८. १०; ५४, ३२. ३४. ३७. ३९; ५६, १९. ३४. ४०; ५९, ९. १२. २०. २२-२४. २६. ३४. ३६. ४०. ४६. ४८. ४९. ५७. ६४; ६१, ३०; ६२, ७. १६; ७८, १६; ७९, ३५; ८२, १६; ९३, २१. २२; ९. ३, २१-२३; १५, १. ३. ५; १७, ८३; १९, २५. ४१; २१, ३३; ११. २६, ३४; १४. ६०, १७ ।

३. पार्षत = शिखण्डी (८. २६, ३४) ।

४. पार्षत (बहु० °ताः), द्रुपद के पुत्रों का द्योतक है : १. २०५, २१; ३: १०, २६ ।

पार्षतात्मज (पृषत के पुत्र अर्थात् द्रुपद) = धृष्टद्युम्न (८. ८२, २१) ।

१. पार्षती, द्रुपद की महारानी के लिये प्रयुक्त हुआ है (१. १६७, ५१) । तुकी० पृषती ।

२. पार्षती, द्रुपद की पुत्री, अर्थात् द्रौपदी के लिये प्रयुक्त हुआ है : १. १६९, १५; १९७, ५१; ३. ३, ८४; ५. १६०, ११३, १६१, ३१ ।

पार्षद = पारिषद (९. ४५, ४४; १३. १९, १७. १९) ।

पार्ष्णिक्षेमसमूह, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३०)।

पाल, वासुकि वंशीय एक नाग का नाम है (१. ५७, ५)।

पालिता, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ३)।

१. पावक = अग्नि (देखिये वस्था०)।

२. पावक (बहु० °काः) ऋषियों के एक वर्ग का नाम है (३. १२५, १७)।

पावकसुत = सुदर्शन (१३. २, ४२)।

पावकात्मज = स्कन्द (३. २२७, ७. १३; २२९, ३२; ९. ४६, १०३)।

पावकात्मजा = द्रौपदी (४. ३६, ११)।

पावकाशनि = पाकशासनि (देखिये वस्था०)।

१. पावकि = स्कन्द : ३. ३९, २६; १३०, १७; २२७, ११; २२९, ४१; २३१, २८; ५. १५६, १५; ७. ६, ९; १५६, १२५; १५८, ७; १७०, ६५; ९. ६, ३०; ४६, ९१. ९३; १२. ३२७, १४; १३. ८५, १३; ८६, ३२।

२. पावकि = सुदर्शन (१३. २, ५८. ६४)।

१. पावन, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १७५)।

२. पावन = विष्णु (सहस्रनाम)।

पाश = शिव (सहस्रनाम)।

पाशिन्, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है। इसका भीमसेन के साथ युद्ध हुआ जिसमें भीमसेन ने इसका वध किया। (१. ११७, ८; ८. ५१, ७; ८४, २)।

पाशाशिनी — देखिये पलाशिनी।

पाशिवाट (बहु० °टाः) दक्षिण की एक जाति का नाम है (६. ९, ६४)।

पाशुपत (वि०) अर्थात पशुपति (शिव) का : १. १, ६७; १२३, ४४; ३. ४०, ८. १५; १६४, १८; १६७, ५१; २७२, ३०; ५. ४८, १०६; १४१, ३१; ६. १२१, ४१; ७. ८०, १९; १८८, ३१; ८. ६०, २२; ७९, ६१; १२. २८४, १९५; ३४९, ६४. ६७; १३. १४, २५८।

पाशुपतास्त्र, शिव के प्रसिद्ध अस्त्र का नाम है (८. ३४, १०७)।

पापागततीर्थ, शूर्पारक में जमदग्नि की दो वेदियों में से प्रथम का नाम नाम है (३. ८८, १२)।

पिङ्ग = शिव (१०. ७, ९)।

पिङ्गतीर्थ, एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, ५७)।

१. पिङ्गल, एक नाग का नाम है (१. ३५, ९)।

२. पिङ्गल, दो ब्राह्मणों का नाम है : १. ५३, ६ (जनमेजय के सर्प सत्र में अध्वर्यु बने). ७ (यज्ञ के सदस्य बने)।

३. पिङ्गल, एक यक्षराज का नाम है : ३. २३१,५१ (व्यापृतस्तु श्मशाने यो नित्यं रुद्रस्य वै सखा। पिङ्गलो नाम यक्षेन्द्रो लोकस्यानन्ददायकः)।

४. पिङ्गल = शिव (१३. १४, २८८)।

पिङ्गलक, एक यक्ष का नाम है : २. १०, १७ (कुबेर की सभा में)।

पिङ्गला, एक नर्तकी का नाम है : १२. १७४, ५६ (पिङ्गलाया गीता गाथाः). ५८ (वेश्या). ६२; १७८, ७. ८।

पिङ्गाक्षी, दो मातृकाओं का नाम है (९. ४६, १८. २१)।

पिङ्गायाः आश्रमः, एक तीर्थ (१३. २५, ५५)।

पिङ्गेश = अग्नि (देखिये वस्था०)।

पिच्छल, वासुकि वंशीय एक नाग का नाम है (१. ५७, ६)।

पिच्छला, एक नदी का नाम है (६. ९, २९)।

पिञ्जरक, एक नाग का नाम है : १. ३५, ६; ५. १०३, ११)।

पिञ्जला, एक नदी का नाम है (६. ९, २७)।

पिठर, वरुण की सभा में उपस्थित एक असुर का नाम है (२. ९, १३)।

पिठरक, धृतराष्ट्र वंशीय एक नाग नाम है : १. ३५, १४; ५७, १५; ५. १०३, १४।

पिण्डसेक्तृ, तक्षकवंशीय एक नाग का नाम है (१. ५७, ८)।

पिण्डार, एक नाग का नाम है (५. १०३, १४)।

१. पिण्डारक, धृतराष्ट्र वंशीय एक नाग का नाम है : १. ३५, ११; ५७, १७।

२. पिण्डारक, द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित एक वृष्णि का नाम है (१. १८६, २०)।

३. पिण्डारक, सुराष्ट्र देश में स्थित एक तीर्थ का नाम है : ३. ८८, २१; १३. २५, ५७।

पिता, माता, पितामहः = सूर्य (३. ३, २६)।

पितात्मन् = शिव (सहस्रनाम)।

१. पितामह = भीष्म (देखिये वस्था०)।

२. पितामह = ब्रह्मा (देखिये वस्था०) : ९. ३८, ५. ११. १३-१५; ४०, २७; ४३, ३९; ४४, ४३; ४५, ९।

३. पितामह (बहु० °हाः) = पितृगण (बहु०) : १. १३, १५. १६. २३. ३१; १५, ९. १०; २१४, १२; ५. १३२, ३४; १३. ९२, १६; १२५, ३९; १२९, १४; १४. २९, २०; ३०, ३३; ९०, १३।

४. पितामह = शिव (३. २३१, ५३; १३. १७, ७६. १४३)।

पितामहसरस्, एक अथवा एकाधिक तीर्थों का नाम है (३. ८४, १४८; ८९, १६)।

१. पितामहसुत = अत्रि (१३. ६५, १)।

२. पितामहसुत = सनत्कुमार (९. ४६, ९८; १२. ३७, १२)।

पितामहस्यसरस्, एक अथवा अनेक तीर्थों का नाम है : ३. ८४, १४९; ९. ४२, ३० (सरस्वती यहीं से निकली है)।

१. पितृ = शिव (सहस्रनाम)।

२. पितृ = विष्णु (सहस्रनाम)।

३. पितृ (बहु० °तरः) : १. १, ३५. १०६. २६७; २, ५-८. १०; ४, १०; ७, ७-११. १३. १८. २३. २४. ३०; १४, २; १५, ७. ९; ४३, ३. १२. २२; ४६, १. २. ४. ५. १०-२६; ६२, ३७; ६३, ४०. ४४; ७४, ९८. १००; ७५, २७. ३३; ८५, ३; ८६, १३; १००, १७; ११९, ३६; १२०, ७. १६. १७. २०; १२६, ३३; १३०, ४५; १३१ ४८; १५७, ३६; १५९, ८. १८; १७०, २२; १७९, १३. १४; १८०, १. ७. १२; २१५, २५; २२८, ३१; २. ६, १६; ८, ३०; ११, ३१. ४४-४७; ४६, ३६; ७१, १४; ३. २, ८३; ३, २९. ४३; ३०, ११; ३६, ४५; ४१, ९; ४२, २१; ८१, १५; ८२, २. २७. ४१. ४४. ४७. ५३. ६२. ६९. ७७. ८८. ९३. ९४. ११७; ८३, २५. २८-३२. ३४. ३५. ३७-३९. ४६. ४७. ४९. ५५. ६९. ७०. ७८. ९४. १४२. १६०; ८४, ८. १२. २९. ४९. ६६. ६९. ८३. ८४. १००. १५३; ८५, ८. ४०. ५९. ६४. ७०; ८७, १८. ९५, ३; ९६, १४. १६. १८; ९९, २९. ३७. ५८. ६६. ६७; १०७, ५३. ६६; १०८, २. २०. २५. २७; ११४, १३; ११८, ३. १२. १६; ११९, १०; १२५, १२. २०; १३४, ८. १६; १५६, ६; १५७, १५; १५९, १३; १६२, २२. २५; १८८, ११९; १९१, २४; १९३, ३२; १९७, १३; २००, ६५. ६७. ६८; २०८, ५. १४; २१०, १४; २२०, ६. ८; २३०, ४८; २८०, ८; २९८, ३८; ३१३, ५८. १०५; ४. ५६, ८; ५. ११, ३. ८; १६, २३. ३४; १७, २०; ३३, ३५. ७५; ३६, ३२; ४३, १५; ६६, १४; ७२, ३९; १०९, २. ३; ११८, ७; १६०, ४५; १८३, १; १८५ १०. २१; ११; ६. २५, ४२; ३३, २५; ३४, २९; ४३, ९; ११९, १२०; ७. ६. ६ (पितृणामिव धर्मेन्द्रो); ८, ३५; १७, ३४; ३७, ३७; ५५, ४४; ५५ १९; ६०, ७; ६७, २०; ६९, ११. २६ (जब पितरों ने पृथिवी का दोहन किया तब यम बछड़ा और अन्तक दोग्धा बने); ७३, ४८; ७६, ५ ११०, ३४; १५६, १९०; १९८, ४५; ८. २०, ५०; ३४, १. ११८; ४० ३४; ४५, ३१; ७७, ४४; ८७, ४९. ५५; ९. ५, ३०. ३८; १९

६; ४४, २९. ३२ (पितरो जगतः श्रेष्ठा देवानामपि देवताः); ४५, ६. २९. ५३; ५०, ५७; ५१, १७. ४०; ५२, ६. ९; ५४, १३; १०. ८, ११०; ११. ३, ५; ४, १६; २६, ३९; १२. ७, १८; ९, १०; १०, २२; ११, २७. १९. २४; १२, १८. ३३; १८, ९. १०; २३, ४. ३९. ४४; २४, ६; २८, ४३. ५५; २९, ११६ (तर्पयामास सोमेन देवान्त्रित्तैर्द्विजानपि। पितृन्स्वधाभिः); ३१, ४४; ३५, २८; ३६, ३४. ४९; ४७ (शुक्ले देवान्पितृन्कृष्णे तर्पयत्यमृतेन यः); ४८, ८; ६३, २०; ६५, १९; ६६, १० (पितृयज्ञांश्च); ७२, २०. २१ (यज्ञमेवोपजीवन्ति नास्ति चेष्टमराजक। इतो दत्तेन जीवन्ति देवताः पितरस्तथा); ७३, ३; ७५, २३; ८५, २७; ८९, २५ (इतो दत्तेन जीवन्ति देवाः पितृगणास्तथा); ९०, ११ (स्वधां पितरस्तथा); ९१, ५८ (देवर्षिपितृगन्धर्वाः कीर्तयन्ति महौजसः); ९८, ८; १०८, २७; १११, ९; १२१, २; १२२ २. २७ (यमं वैवस्वतं चापि पितृणामकरोत्प्रभुम्); १२७, ४; १३५, १५; १३६, ५; १४१, ९९; १४६, २१; १५०, १४; १५३, ५२. ६५ (पितृपिण्डदम्); १५८, २५ (पितृदेवातिथेयाश्च); १६१, ११ (ऋषयः पितरो देवा); १६२, १. २३ (प्रशंसन्ति विप्राः सपितृदेवताः); १६५, १. १६६, १८; १७१, १५, ६; १९१, १३ (निवापेन पितरो); २०७, ३५; २०८, १८. २१ (द्विविधाः पितरः स्मृताः); २१०, १५; २२१, १५. १७ (पितृभ्यश्चोपभुञ्जते); २२४, २९; २२८, ३०. ४३. ५७; २३२, १४ (ततः ससृजति ब्रह्मा देवर्षिपितृमानवान्); २३४, १३; २६७, २१; २६९, १५. १६; २७७, ६; २८४, ९ (ऋषयः पितरश्चैव आगता ब्रह्मणा सह); २८७, १८ दैवतेभ्यः पितृभ्यश्च संविभागोऽतिथिष्वपि); २९२, ९. १०; २९५, १६; ३००, ६०; ३०१, ७; ३११, ८. ९; ३१७, ६; ३१८, ६३; ३२१, ३०; ३२६, १५; ३३४, ४. २०. २७; ३३५, २० (पितृशेषेण विप्रांश्च); ३३९, ५७-५९. ६४. १२३; ३४५, ७. ८; ११. १८-२०. २५. २६; ३४६, ६ (मज्जन्ति पितरस्तस्य नरके शाश्वतीः समाः); ३४७, ५२ (दन्ताश्च पितरो राजन्सोमपा इति विश्रुताः); १३. ६, ४६ (पितृवनभवनाभं दृश्यते चामराणाम्); ९, २७ (इतो दत्तेन जीवन्ति देवताः पितरस्तथा); १०, २७. ३३. ५६; १४, ३७. ३२४. ४२५; २३, ३२. ३५. ७१; २५, २५; २६, ४९. ६२. ६५. ७४; २९, १०; ३१, ३३. ३६; ३३, १५. १६; ३४, ७. ८. ११; ३७, १७; ४४, १; ५८, ८. २५. २६. २८; ६०, १०; ६२, २८. ९५; ६३, १५. २०; ६४, २०. २४. ३२; ६५, २; ६६, ७. ९. ३४. ३५; ६७, १४; ६८, २७. २८; ६९, ११ (पितृसद्मानि); ७५, ३२; ८३, ४९; ८४, २२. २४. २८; ८७, ३-६. ९; ८८, १. ३. ५. ६. ८. १०. ११. १५; ८९, ७; ९०, १३ (पुरीषे तस्य ते मासं पितरस्तस्य शेरते). १६ (पुरीषं भुञ्जते तस्य पितरः प्रेत्य निश्चयः). ४१. ४६. ४७; ९१, २० (निमे संकल्पितस्तेऽयं पितृयज्ञस्तपोधन). २४. २७. २८. ४२; ९२, १. ३. ४. ५. ७. ८. ११. १४. १६. १८. २०. २२; ९३, १५. १७. १४९; ९७; ५. ९. १६. १७; ९८, २५. ५९; १००, १०; १०८, १७; १११, ८५; ११२, १२; ११५, १. ५२. ६०; ११६, २२ (पितृदैवतयज्ञेषु); ११७, २२ (देवार्थे पितृयज्ञार्थमन्नं अद्याहृतं मया); १२१, ८; १२३, १०; १२५, ६. १२. १९. २२. २३. २७. २९-३१. ३३. ३५. ३६. ३८. ४०. ४१. ४७. ७०. ७३. ७४. ७६. ७८. ७९. ८३; १२६, २२. २६. २७. ३०. ३५; १२७, ४. ५. ७. १४; १२८, २. ७. १०; १२९, १. ३. ११. १४. १५; १३०, १. १२. ३५. ४०; १३१, १२. १३; १३६, १२. १४; १४१, १०४. ११०; १४२, ६; १४३, ४२; १४९, १३८; १५०, २०. ६६; १५१, ९; १५५, २; १५८, २१. ४२; १५९, १०; १६२, ५१; १६५, १६; १६६, ११; १६८, १५; १४. २, ३; २९, २२; ३०, १; ३२, २४; ४२, ६७; ४३, ७; ५१, १९; ९०, ४८. ७२. ८६; ९२, ४८. ४९; १५. १, १४; २, ५; १४, १५; २६, ६; १६. २, १०; ७, २३; १८. ५, ४२. ५५; ६, १०४।

पितृग्रह : ३. २३०, ४८ (आसीनश्च शयानश्च यः पश्यतिनरः पितृन्। उन्मादयति स तु क्षिप्रं स ज्ञेयस्तु पितृग्रहः)।

पितृपति = यम (देखिये वस्था०)।

पितृयान, पितृलोक के मार्ग का द्योतक है : ३. २, ७६ (पितृयाणपथे); १२. १७, १५; ३२८, ३०; १३. १६, ४५ (अयं च पितृयानानां चन्द्रमा द्वारमुच्यते)।

पितृराज, पितृराजन् = यम (देखिये वस्था०)।

पितृरूप, एक रुद्र का नाम है (१३. १५०, १२)।

पितृलोक, पितरों के लोक का द्योतक है। यह यमलोक से भिन्न लोक है : १. ६२, १०; १२६, २९; १७९, १३; २२९, ७; २. १२, ८; ३. ८३, ५६; ११९, १२; १५९, १२; ५. ४२, ६; ७. ३, १३; १४, १८; १५५, १५; ९. ९, ३३; ५०, २८; ११. ९, ५; २०, २६; १२. ३१८, ६५; १३. ६२, २८; ७०, २०; ७९, १७; १२९, १५; १४१, १०४; १४. ९०, ८५।

पितृलोकर्षि, पितृलोक के ऋषियों का द्योतक है (५. १०९, ५)।

पितृणामाश्रमः, एक तीर्थ का नाम है (१३. २५, ३८)।

पित्र्य (वि०) : १. १, १०६; १२०, १६. २१; ३. २५, ३; १२. १४१, ९६; २३१, १६; ३३४, २.३४.३८; ३४५, १. २. १५; ३४७, ९३; ३४८, १४; १३. २३, १. ८. १२. ४४. ४८. १०३; ९०, २; १०४, १०५. ११०. १२०. १२६; १५०, ६६; १४. ५, १८; १८. ५, ५५।

पिनाक, शिव के धनुष का नाम है : ६. ६२, ६२ (भीमसेन की गदा पिनाक की भाँति प्रबल थी); ६३, १८; ८. ९०, ३५ (हराम्बुपाखण्डलवित्तगोप्तृभिः पिनाकपाशाशनिसायकोत्तमैः। सुरोत्तमैरप्यविषह्यमर्दितुं प्रसह्य नागेन जहार यद्भृपः); ९१, ४२ (सहस्रनेत्राशनितुल्यवीर्यं कालानलं व्यात्तमिवातिघोरम्। पिनाकनारायणचक्रसन्निभं भयंकरं प्राणभृतां विनाशनम्); १२. २८९, १८ (आनतेनाथ शूलेन पाणिनाऽमिततेजसा। पिनाकमिति चोवाच शूलमुग्रायुधः प्रभुः); १३. १४, २८९ (धनुः पिनाकमिति विख्यातम्); १४०, ४८; १४१, ७।

पिनाकगोप्तृ, पिनाकधृक्, पिनाकपाणि = शिव (देखिये वस्था०)।

पिनाकशूलहस्त = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ८१)।

१. पिनाकिन्, एक रुद्र का नाम है जो स्थाणु के पुत्रों में से एक थे : १. ६६, २; १२३, ६८ (ये अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित हुये); १२. २०८, २०; १३. १५०, १२।

२. पिनाकिन् = शिव (देखिये वस्था०)।

पिप्पलाद, एक ऋषि का नाम है। शरशय्या पर पड़े भीष्म के चारों ओर उपस्थित ऋषियों में ये भी थे (१२. ४७, ९)।

पिशङ्ग, धृतराष्ट्र वंशीय एक नाग का नाम है (१. ५७, १७)।

१. पिशाच (बहु० °चाः), एक जाति तथा एक मनुष्येतर योनि के लोगों का द्योतक है : १. १, ३५ (अन्य प्राणियों के साथ ये भी दिव्य अण्ड से उत्पन्न हुये); १९, २४ (पपौ रणे रुधिरमथो पिशाचवत्); १७० ६१ (पिशाचोरग दानवाः); २२४, १९; २२५, २६; २२८, ९. ११ (पिशाचोरग राक्षसान्); २. १०, ३६ (धनदं राक्षसाश्चान्ये पिशाचाश्च उपासते); ११. ४९ (ब्रह्मा की सभा में ये उनकी उपासना करते हैं); ३. ४०, ११. २७ (पिशाचसूदनं ददौ भवः पुरुषवराय गाण्डिवम्); ६४, ७ (पिशाचोरगराक्षसान्); ८५, २५ (ये गोकर्ण में शिव की उपासना करते हैं); १७३, ४९; १७९, ५; २२५, ११ (श्वेत पर्वत पर); २२९, ४० (ये स्कन्द को घेर कर खड़े हुये); २३०, ५२; २३१, १७ (पिशाचानामसंख्येया गणाः). २१ (पिशाचानां गणैः); २७२, ४६ (महर्षियों ने इनका सृजन किया); २७५, ३८ (इन लोगों ने रावण को अपना राजा बनाया); २८१, ११ (पिशाच कन्यायें रावण की पत्नियाँ बनीं); २८५, १. ५ (ये रावण के अनुचर थे); ६. २३, २२; ४८, ११३; ५०, ५० (युधिष्ठिर की सेना में सम्मिलित एक जाति); ५८, ६ (इन्होंने अर्जुन की प्रशंसा की); ६५, ६४; ८६, ४५ (राक्षसाश्च पिशाचाश्चान्ये पिशिताशनाः); ८७, ८ (दुर्योधन की सेना में सम्मिलित एक जाति); ७. ११, १६ (कृष्ण द्वारा पराजित एक जाति); ५०, ९; ७७, २६; ७९, ३२; १४६, ३६ (नृत्यत्प्रेतपिशाचाद्यैर्भूताकीर्णो सहस्रशः); १४८, ५६ (निशाचरश्ववृकपिशाचमोदनं महीतलं नरवर पश्य दुर्दृशम्); १५६, १९० (इन लोगों ने अश्वत्थामा की प्रशंसा की);

१५८, ५१; १६७, ३८ (अलम्बुष के रथाश्व बने); १७५, ९४ (ये घटोत्कच के रथ में जुते थे); २०१, २०. ५२. ७३. ८१; ८. ३०, ४४ (युद्ध क्षेत्र में); ३७, ३६ (खाण्डव वन में अर्जुन ने इन्हें पराजित किया था); ४५, ३३ (हिमवत् की रक्षा करते हैं); ४६, १३; ८७, ३७ (कर्ण और अर्जुन के युद्ध के समय उपस्थित थे). ५० (कर्ण का पक्ष लिया); ९. ३७, २२ (शक्रतीर्थ में); ४९, २० (आदित्य तीर्थ में); ५८, ५२ (पिशाचानां''अन्तरिक्षे महानादः); १०. ८, १३४ (रक्षांसि पिशाचाश्च पृथग्विधाः खादन्तो नरमांसानि पिबन्तः शोणितानि च); ११. १६, १२; १२. १२१, २; १७५, ३३; १८८, ३. १८; २२९, २५; २६१, ७; २६७, २२; २७७, ३३; २८३, १४; २८४, ६. ६३. २०२; ३०२, ३१; ३३१, ५९; १३. १४, ४. २४१. ४२५; १७, १८१; १८, ७६ (पिशाचदानवाः); ३३, १६; ८२, १५; ८४, ५०; ८७, ४ (पिशाच किन्नराणां); ९०, २२ (यातुधानाः पिशाचाश्च). ४६; ११६, २५; १४०, १४ (हिमवत् पर्वत पर); १५०, ६९; १४. ८, ५ (मुञ्जवत् पर्वत पर शिव की उपासना करते हैं); ४२, ६७; ४४, १५; ५१, ११; १५. ३१, ६ (महाभारत युद्ध के लिये इन लोगों ने भी सैनिकों के रूप में जन्म लिया था); ३३, १६ ।

२. पिशाच, एक यक्ष का नाम है जो कुबेर की सभा में उपस्थित होता था (२. १०, १६)।

पिशाचक (= पिशाच); द्वि० °कौ० = बहि और हीक (८. ४४, ४१)।

पिशाची (स्त्री०) : ३. ६५, २७ (व्यापरीदल के लोगों ने भ्रमवश दमयन्ती को एक पिशाची मान लिया था); १२९, ८ (अत्रानुवंशं पठतः शृणु मे कुरुनन्दन। उलूखलैराभरणैः पिशाची यदभाषत); २८०, ४७. ७४ (रावण की सभा में)।

पिशिताश (बहु०) = राक्षस (बहु०): ७. २१, ४५; ९७, १३; १३. १३१, ११।

पिशिताशन (एक०) = घटोत्कच (६. ९२, ५)।

पिशिताशिन् (बहु०) = राक्षस (बहु०) : ३. २००, ८६; ६. ८६, ४१।

पीठ, एक असुर का नाम है: ७. ११, ५ (श्रीकृष्ण ने इसका वध किया था); १२. ३३९, ९२ (यह भविष्यवाणी हुई कि श्रीकृष्ण इसका वध करेंगे)।

पीतकौशेयवासस् = श्रीकृष्ण : ३. २०३, १८ (= विष्णु); २७२, ७४।

पीतवासस् = श्रीकृष्ण (देखिये वस्था०)।

पीतवासिनी = दुर्गा (उमा) : ६. २३, ८।

पुंस् = शिव (सहस्रनाम)।

पुक्कश अथवा **पुक्कस**, एक जाति के लोगों का नाम है : १२. २९६, ८; ३०२, ३२; १३. २२, २२; २८, ६. ७; ४८, २४ (पुल्कस है); १४५, २३ (पुल्कस है)।

पुच्छाण्डक, तक्षक वंशीय एक नाग का नाम है (१. ५७, ८)।

पुञ्जिकस्थला, एक अप्सरा का नाम है : १. १२३, ६४ (इसने अर्जुन के जन्मोत्सव के समय गायन किया); २. १०, १० (कुबेर की सभा में)।

१. **पुण्डरीक**, एक प्राचीन नरेश का नाम है जो यम की सभा में उपस्थित थे (२. ८, १४)।

२. **पुण्डरीक**, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ८३)।

३. **पुण्डरीक**, एक नाग का नाम है (५. १०३, १३; १६. ४, १५)।

पुण्डरीकवनालय = शिव (सहस्रनाम)।

पुण्डरीका, एक अप्सरा का नाम है। इसने अर्जुन के जन्मोत्सव के समय नृत्य किया था (१. १२३, ६३)। सुदेष्णा ने द्रौपदी से पूछा कि वह पुण्डरीका तो नहीं है (४. ९, १६)।

१. **पुण्डरीकाक्ष** = श्रीकृष्ण (विष्णु) : १. २२१, २६; २. २, १५; ३६, १३; ३७, २; ४५, ६२. ६४; ३. १२, ४३. ४९; १८, २७; ८८, २६; १८३, १२; १८८, १३९; २७२, ६१. ७५; ५. ६५, ८; ७०, १. ६; ८२, २९. ३५. ३६; ८३, ३; ८९, ११; १३०, १६. १९. ३६; १३१, १७; १४१, ५४; १४७, ५; १५१, ३९; ६. ६७, २. १८; १०६, ६३. ६४; ७. ११, १८. २४; २९, २२; ७८, ३९; ७९, १. ८; ८३, ९. २०; १०१, ३८; ८. ८७, १००; १०. १२, १. १; १६, ६; ११. १६, १७. १८; १८, १५; २०, ९; २५, १८; १२. २७, २१; ४३, १. ३; ४७, ९७; ५१, ९; २०७, १. ४९; २०९, ३६; ३३६, ४४; ३४७, ४४; १३. १४, ६६. ७१; १०९, १५; १४७, १४. ४०; १४८, ५६. ५७; १४९, ८. २५; १६७, ३९; १४. ५२, ४४; ५९, ४; ६०, ५; ६१, ७. ११; ६७, २; ६८, १२. १४; ६९, १५ ।

२. **पुण्डरीकाक्ष** = शिव (सहस्रनाम)।

पुण्डरीकेक्षण = श्रीकृष्ण (२. २४, २९; १२. २९, ४)।

पुण्डरीयक, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३४)।

१. **पुण्ड्र**, एक प्राचीन नरेश का नाम है : १. १, २४; १०४, ५१ (बलि की पत्नी सुदेष्णा के गर्भ से उत्पन्न चौथे पुत्र का नाम है। ये दीर्घतमा के स्पर्श से उत्पन्न हुये थे). ५५ (इनसे पुण्ड्रवंश की उत्पत्ति हुई)।

२. **पुण्ड्र**, पुण्ड्रों के राजा का नाम है (८. २२, १४)।

३. **पुण्ड्र** (बहु० °ड्राः) एक जाति के लोगों का नाम है : १. १०४, ५५; ११३, २९ (पाण्डु ने इन्हें पराजित किया था); २. १४, २० (वङ्गपुण्ड्रकिरातेषु राजा बलसमन्वितः। पौण्ड्रकोवासुदेवेति योसौ लोकेभिविश्रुतः); ५२, १६ (ये युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये); ६. ९, ५१; ५०, ५० (युधिष्ठिर की सेना में); ७. ९३, ४४ (अर्जुन पर आक्रमण किया); ८. ८, १९ (पहले कर्ण ने भी इन्हें पराजित किया था); २२, २; १४. २९, १६; ८२, २९ (अर्जुन ने इन्हें पराजित किया था)। तुकी० पौण्ड्र (बहु०), पौण्ड्रिक (बहु०); पुण्ड्रक (बहु०)।

१. **पुण्ड्रक**, पुण्ड्रों के राजा का नाम है, जो युधिष्ठिर की सेवा में उपस्थित थे (२. ४, २८)।

२. **पुण्ड्रक** (बहु०) : २. ५२, १८ ।

पुण्ड्राधिप = वासुदेव (२. ३०, २२)।

१. **पुण्य**, पश्चिम दिशा के एक सरोवर का नाम है (३. ८९, ११)।

२. **पुण्य** = विष्णु (सहस्रनाम)।

पुण्यकीर्ति = विष्णु (सहस्रनाम)।

पुण्यकृत्, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३०)।

पुण्यचक्षु = शिव (सहस्रनाम)।

पुण्यजन (बहु०), यक्ष अथवा राक्षस जैसी किसी मानवेतर योनि के लोगों का द्योतक है : ३. १२; १५; ७. ६९, १०. २४; १५. ३१, ६; १८. ४, २२ ।

पुण्यनामन्, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ५९)।

पुण्यश्रवणकीर्तन = विष्णु (सहस्रनाम)।

पुण्यश्लोक = नल (देखिये वस्था०)।

पुण्या, एक नदी का नाम है (६. ९, ३६)।

पुण्याख्य = एक या अधिक आश्रमों का द्योतक है : ३. ९०, ११; ११०, २४ ।

२. **पुण्याख्य**, एक ह्रद का नाम है (३. १३५, ७ : अपां ह्रदं च पुण्याख्यं)।

पुण्योदका, एक नदी का नाम है (१३. १३०, २५)।

पुत्, एक नरक का नाम है : १. ७४, ३९ (पुंनाम्नो नरकाद्यस्मात्पितरं त्रायते सुतः। तस्मात्पुत्र इति प्रोक्तः स्वयमेव स्वयंभुवा); २२९, १४; १४. ९०, ६३ ।

पुत्रदर्शन, पुत्रों का दर्शन (१. २, ८०)।

पुत्रदर्शनपर्वन्, महाभारत के ९६ वें अवान्तर पर्व का नाम है।

"जनमेजय ने पूछा: जब अपनी धर्मपत्नी गान्धारी और बहू- कुन्ती के साथ धृतराष्ट्र वनवास के लिये चले गये, विदुर जी सिद्धि को प्राप्त होकर धर्मराज युधिष्ठिर के शरीर में प्रविष्ट हो गये और समस्त पाण्डव आश्रम मण्डल में निवास करने लगे, उस समय व्यास जी ने जिस आश्चर्यजनक घटना को प्रकट करने लिये कहा था उसे मुझे बताइये। वैशम्पायन ने बताया: धृतराष्ट्र ने पाण्डवों को नाना प्रकार के अन्न-पान ग्रहण करने की आज्ञा दे दी थी। अतः वे वहाँ विश्राम पाकर सभी तरह के उत्तम भोजन करते थे। वे सेनाओं तथा अन्तःपुर की स्त्रियों के साथ वहाँ एक मास तक वन में विहार करते रहे। उस समय व्यास जी वहाँ आये। उनके साथ ही अनेक अन्य मुनि भी आ गये। धृतराष्ट्र की आज्ञा से युधिष्ठिर ने व्यास जी की पूजा की। पूजा ग्रहण करने के बाद व्यास जी तथा अन्य मुनिगण पवित्र आसनों पर विराजमान हुये। उन सब के बैठ जाने पर पाण्डवों सहित धृतराष्ट्र भी बैठे। गान्धारी, कुन्ती, द्रौपदी, सुभद्रा, तथा अन्य स्त्रियाँ भी आस-पास बैठ गईं। उस समय उन लोगों में धर्म से सम्बद्ध कथाओं पर बात-चीत होने लगी। प्राचीन ऋषियों, देवताओं और असुरों के सम्बन्ध में चर्चा हुई। तब व्यास जी ने धृतराष्ट्र से कहा: 'तुम्हारे हृदय में जो इच्छा है वह मुझे ज्ञात है। तुम निरन्तर अपने मृत पुत्रों के शोक से जलते रहते हो। गान्धारी, कुन्ती और द्रौपदी आदि के हृदय में भी जो दुःख सदा बना रहता है, वह मुझे ज्ञात है। आज मैं तुम्हें मनोवाञ्छित वर देने के लिये प्रस्तुत हूँ। ये देवता, गन्धर्व और महर्षि आज मेरी चिरसंचित तपस्या का फल देखें।' तब धृतराष्ट्र ने अपने मृत पुत्रों तथा युद्ध में मारे गये अन्य बन्धु-बान्धवों को देखने की इच्छा प्रकट की। गान्धारी और कुन्ती का दुःख धृतराष्ट्र की बातें सुनकर पुनः प्रज्वलित हो उठा। गान्धारी ने बताया कि उनके पुत्रों को मृत हुये सोलह वर्ष व्यतीत हो गये हैं फिर भी अब तक उनके हृदय को शान्ति नहीं मिली है। धृतराष्ट्र तो पुत्र शोक से सन्तप्त होकर सदैव आहें भरते हैं और रात में कभी नींद नहीं आती। इसी प्रकार द्रुपदकुमारी कृष्णा भी अपने पुत्र के शोक से पीड़ित रहती है। व्यास जी ने कुन्ती से भी उसके दुःख का कारण पूछा। (१५, २९)।

"कुन्ती ने तब कर्ण के जन्म के गुप्त रहस्य को प्रकट किया तथा कर्ण को ही देखने की इच्छा व्यक्त की। व्यास जी ने कुन्ती से कर्ण को दिखाने का वचन देते हुये कहा कि कर्ण को जन्म देने से वह किसी दोष की भागी नहीं है। व्यास ने कहा: देवगण संकल्प, वचन, दृष्टि, स्पर्श तथा समागम-इन पाँच प्रकारों से पुत्र उत्पन्न करते हैं। देव धर्म के द्वारा मनुष्य धर्म दूषित नहीं होता। अतः तुम्हें चिन्तित नहीं होना चाहिये। (१५. ३०)।

"व्यास जी ने गान्धारी, कुन्ती, सुभद्रा आदि को बताया कि रात में वे उनके मृत प्रियजनों को उन्हें दिखायेंगे। उन्होंने धृतराष्ट्र आदि को सम्बोधित करते हुये कहा: 'तुम्हें क्षत्रिय-धर्म परायण होकर तदनुसार ही वीरगति को प्राप्त हुये उन समस्त महामनस्वी नरश्रेष्ठ वीरों के लिये कदापि शोक नहीं करना चाहिये। यह देवताओं का कार्य था और इसी रूप में अवश्यम्भावी था। इसीलिये सभी देवताओं के अंश से इस पृथिवी पर अवतीर्ण हुये थे। गन्धर्व, अप्सरा, पिशाच, गुह्यक, राक्षस, पुण्यजन, सिद्ध, देवर्षि, देवता, दानव तथा निर्मल देवर्षिगण—ये सभी यहाँ अवतार लेकर कुरुक्षेत्र के समराङ्गण में वध को प्राप्त हुये हैं। गन्धर्वों के लोक में धृतराष्ट्र नामक गन्धर्वराज थे, वही धृतराष्ट्र के रूप में अवतीर्ण हुये हैं। राजा पाण्डु मरुद्गण थे। विदुर धर्म के अंश से उत्पन्न हुये थे। भीमसेन भी मरुद्गण से उत्पन्न थे। अर्जुन प्राचीन ऋषि नर हैं। श्रीकृष्ण स्वयं नारायण के अवतार थे।' व्यासजी ने इस प्रकार सभी मृत योद्धाओं के पूर्वजन्म का परिचय देते हुये वहाँ उपस्थित लोगों से गङ्गा तट पर चलने के लिये कहा। व्यास जी का आदेश प्राप्त करने के बाद सब लोग जाकर गङ्गा तट पर प्रतीक्षा करने लगे। सूर्यदेव के अस्ताचल पर पहुँचने पर सब लोग स्नान करके सायंकालोचित सन्ध्या-वन्दन आदि कर्म करने लगे (१५. ३१)।

"रात्रि हो जाने पर सब लोग सायंकालोचित नित्य-नियम पूर्ण करके भगवान् व्यास के समीप उपस्थित हुये। तत्पश्चात् महातेजस्वी व्यास जी ने भागीरथी के पवित्र जल में प्रवेश करके पाण्डव तथा कौरव पक्ष के सब लोगों का आवाहन किया। तत्काल जल के भीतर से कौरवों और पाण्डवों की सेनाओं का पूर्ववत् भयंकर शब्द प्रकट होने लगा। फिर तो भीष्म-द्रोण आदि समस्त राजा अपनी सेनाओं के साथ सहस्रों की संख्या में उस जल से बाहर निकलने लगे। विराट, द्रुपद, द्रौपदी के पाँचों पुत्र, अभिमन्यु, घटोत्कच, कर्ण, दुर्योधन, शकुनि, धृतराष्ट्र के अन्य पुत्र, तथा अन्यान्य क्षत्रिय वीर, देह धारण करके उस जल से प्रकट हुये। जिस वीर का जैसा वेश, जैसी ध्वजा और जैसा वाहन था वह उसी से युक्त दृष्टिगत हुआ। प्रकट हुये सभी नरेश दिव्य वस्त्र धारण किये हुये थे। उस समय वे वैर, अहंकार, क्रोध और मात्सर्य छोड़ चुके थे। गन्धर्व उनके गुण गाते और वन्दीजन उनकी स्तुति करते थे। उस समय व्यास जी ने अपने तपोबल से धृतराष्ट्र को दिव्य नेत्र प्रदान किये। गान्धारी भी दिव्य ज्ञान-बल से सम्पन्न हो गई थीं। इस प्रकार उन दोनों ने युद्ध में मारे गये अपने पुत्रों और अन्य सब सम्बन्धियों को देखा। राजा धृतराष्ट्र दिव्य नेत्रों द्वारा अपने समस्त पुत्रों और सम्बन्धियों को देखते हुये आनन्दमग्न हो गये। (१५, ३२)।

"क्रोध और मात्सर्य से रहित तथा पापशून्य हुये वे सभी श्रेष्ठ पुरुष ब्रह्मर्षियों द्वारा निर्धारित प्रणाली का आश्रय लेकर एक-दूसरे से प्रेम पूर्वक मिले। सारी रात एक-दूसरे के साथ घूमने-फिरने के कारण उन सबके मन में अत्यन्त प्रसन्नता थी। स्वर्गवासियों के समान ही उन्हें वहाँ परम सन्तोष का अनुभव हुआ। वे सभी वीर और उनकी वे तरुणी स्त्रियाँ एक रात साथ-साथ विहार करने के पश्चात् एक-दूसरे की अनुमति ले परस्पर गले मिलकर जैसे आये थे वैसे ही चले जाने लिये उद्यत हुये। तब व्यास जी ने उन सब लोगों का विसर्जन कर दिया जिससे सभी लोग देखते ही देखते भागीरथी के जल में अदृश्य हो गये। कोई देव लोक, कोई ब्रह्म लोक, कोई वरुणलोक, और कुछ कुबेर के लोक में चले गये। कितने ही लोग राक्षसों और पिशाचों के लोक में गये और कितने ही उत्तर कुरु में जा पहुँचे। उन सब के अदृश्य हो जाने पर व्यास ने विधवा क्षत्राणियों से कहा कि यदि वे अपने पति के लोक में जाना चाहें तो सभी गङ्गा जी के जल में प्रवेश कर के गोता लगायें। उनकी बात सुनकर और श्वसुर धृतराष्ट्र की आज्ञा लेकर अनेक सती स्त्रियाँ गङ्गा के जल में समा गईं। फलस्वरूप वे स्त्रियाँ मानव शरीर से मुक्त होकर अपने-अपने पति के साथ जा मिलीं। इस प्रकार सभी शीलवती पतिव्रता क्षत्राणियाँ इस शरीर से मुक्त होकर पतिलोक को चली गईं। उस समय जिसके-जिसके मन में जो कामना थी उसे व्यास जी ने पूर्ण कर दिया। समराङ्गण में मरे हुये राजाओं के पुनरागमन का वृत्तान्त सुनकर भिन्न-भिन्न देश के मनुष्यों को अत्यधिक आश्चर्य और आनन्द हुआ। जो मनुष्य स्वाध्याय-परायण, तपस्वी, सदाचारी, जितेन्द्रिय, दान के द्वारा पाप रहित, सरल, शुद्ध, शान्त, हिंसा और असत्य से दूर, आस्तिक, श्रद्धालु और धैर्यवान् हैं, वे इस आश्चर्यजनक पर्व का श्रवण कर के उत्तम गति प्राप्त करेंगे। (१५. ३३)।

"सौति ने बताया कि पितामहों के इस प्रकार परलोक से आने और जाने का वृत्तान्त सुनकर राजा जनमेजय को अत्याधिक प्रसन्नता हुई। इस प्रकार प्रसन्न होने पर भी उक्त पुनरागमन के विषय में सन्देह करते हुये उन्होंने वैशम्पायन से पूछा कि जो लोग मृत्यु को प्राप्त हो चुके हैं उनका पुनः मनुष्य रूप में दर्शन कैसे सम्भव हो सकता है? वैशम्पायन ने कहा: यह सिद्धान्त है कि कर्मों का फल-भोग किये बिना उनका नाश नहीं होता। जीवात्मा को जो शरीर और नाना प्रकार की आकृतियाँ प्राप्त होती हैं वे सब कर्मजनित हैं। जब तक शरीर के प्रारब्ध कर्मों का क्षय नहीं होता तब तक उस जीव की उस शरीर से एकरूपता रहती है। जब कर्मों का क्षय हो जाता है तब वह दूसरे स्वरूप को प्राप्त हो जाता है। अश्वमेध के समय पढ़ी जाने वाली श्रुति का उदाहरण देकर वैशम्पायन ने अपने इस कथन की विस्तार से पुष्टि की। (१५. ३४)।

"वैशम्पायन जी ने आगे बताया कि धृतराष्ट्र ने पहले कभी अपने पुत्रों को नहीं देखा था; परन्तु व्यास जी के प्रसाद से उन्होंने उनके स्वरूप का

दर्शन प्राप्त किया। धृतराष्ट्र ने राजधर्म, ब्रह्मविद्या तथा बुद्धि का यथार्थ निश्चय भी प्राप्त कर लिया था। विदुर ने तो अपने तपोबल से सिद्धि प्राप्त की भी किन्तु धृतराष्ट्र ने तपस्वी व्यास जी का आश्रय लेकर सिद्धि लाभ किया था। जममेजय ने तब कहा : 'यदि व्यास जी मुझे मेरे मृत पिता का दर्शन करा दें, तो मैं आपकी सारी बात पर विश्वास कर लूँगा।' जनमेजय के इस प्रकार कहने पर महर्षि व्यास जी ने उन पर भी कृपा की। उन्होंने राजा परीक्षित को यज्ञभूमि में बुला दिया। उनके साथ ही महात्मा शमीक और उनके पुत्र शृङ्गी ऋषि भी आये। राजा परीक्षित के जो मन्त्री थे उनका भी जनमेजय ने दर्शन किया। तदनन्तर प्रसन्न होकर जनमेजय ने यज्ञान्त-स्नान के समय सर्वप्रथम अपने पिता को स्नान कराया, फिर स्वयं स्नान किया। इसके बाद परीक्षित वहीं अन्तर्धान हो गये, स्नानोपरान्त जनमेजय ने जरत्कारुकुमार आस्तीक मुनि से कहा कि उनका वह यज्ञ नाना प्रकार के आश्चर्यों का केन्द्र हो रहा है। आस्तीक ने बताया कि जिसके यज्ञ में तपस्यानिधि पुरातन ऋषि महर्षि द्वैपायन व्यास विराजमान हों उसकी दोनों लोकों में विजय है। आस्तीक ने कहा : 'तुम्हारे शत्रु सर्पगण भस्म होकर तुम्हारे पिता की ही गति को प्राप्त हो गये। तुम्हारी सत्यपरायणता के कारण किसी प्रकार तक्षक के प्राण बच गये। इस पापनाशक कथा को सुनकर तुम्हें महान धर्म की प्राप्ति हुई है।'- सौति ने बताया कि आस्तीक के मुख से ऐसी बातें सुनकर राजा जनमेजय ने उन मुनि का बार-बार पूजन किया। तदनन्तर उन्होंने वैशम्पायन से पुनः धृतराष्ट्र के वनवास की अवशिष्ट कथा का वर्णन करने का निवेदन किया। (१५. ३५)।

"जनमेजय ने पूछा कि धृतराष्ट्र और युधिष्ठिर ने परलोक से आये पुत्रों-पौत्रों तथा बन्धु-बान्धवों का दर्शन करने के बाद क्या किया। वैशम्पायन ने बताया : मृत पुत्रों का दर्शन एक महान आश्चर्य की घटना थी। उसे देख कर धृतराष्ट्र का दुःख-शोक दूर हो गया। वे पुनः अपने आश्रम पर लौट आये। व्यास जी भी उनके आश्रम पर आये और उन्हें सम्बोधित करते हुये बोले : 'महाबाहु धृतराष्ट्र ! तुमने श्रद्धा और कुल में बढ़े-चढ़े, वेद-वेदाङ्ग-वेत्ता, ज्ञानवृद्ध, पुण्यकर्मा प्राचीन महर्षियों के मुख से नाना प्रकार की कथाओं का श्रवण किया है। अतः अपने मन से शोक निकाल दो। तुम्हारे सभी पुत्र इच्छानुसार विहार करने वाले स्वर्गवासी हुये हैं।' व्यास जी के ऐसा कहने पर धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर को राजधानी लौट जाने के लिये कहते हुये बताया : 'मेरे हृदय में तुम्हारे प्रति किञ्चित भी क्रोध नहीं है। तुम पर मेरा अत्यन्त प्रेम है और तुम्हारे द्वारा मुझे पुत्र का फल प्राप्त हो गया है।' धृतराष्ट्र की बातें सुनकर युधिष्ठिर अपने सब भाइयों और सेवकों को तो राजधानी भेजने के लिये सहमत हो गये किन्तु उन्होंने स्वयं वन में रहकर धृतराष्ट्र तथा दोनों माताओं, गान्धारी और कुन्ती, की सेवा करने की इच्छा व्यक्त की। युधिष्ठिर को तब गान्धारी ने समझाते हुये राजधानी लौटने के लिये प्रेरित किया। युधिष्ठिर ने फिर भी कहा कि उनका मन अब राजकाज में नहीं लगता। वे तपस्या करना चाहते हैं क्योंकि उनकी दृष्टि में सारी पृथिवी सूनी प्रतीत होने लगी है। सहदेव ने भी माता को छोड़कर राजधानी लौटने की अनिच्छा व्यक्त करते हुये युधिष्ठिर से ही राजधानी चलने लिये कहा। उन्होंने स्वयं वन में रहकर तपस्या करने तथा माता और पिता की सेवा करने की इच्छा व्यक्त की। तब कुन्ती ने प्रेमपूर्वक अपने पुत्रों को वन में रहने से विरत करते हुये बताया कि इस प्रकार वृद्ध धृतराष्ट्र तथा माताओं की तपस्या में बाधा पड़ेगी। माता के इस प्रकार आग्रह पर युधिष्ठिर ने भाइयों सहित धृतराष्ट्र, गान्धारी तथा कुन्ती से वापस लौटने की आज्ञा माँगी। धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर, आदि को सान्त्वना दी और एक एक करके सभी पाण्डवों का आलिङ्गन किया। गान्धारी ने उन सबको आशीर्वाद दिया तथा कुन्ती ने सबके माथों का चुम्बन लिया। गान्धारी और कुन्ती ने द्रौपदी को भी गले लगाया तथा उसे आवश्यक उपदेश दिया। इसप्रकार धृतराष्ट्र आदि से विदा लेकर युधिष्ठिर ने अपने भाइयों, सैनिकों और बन्धु-बान्धवों के साथ हस्तिनापुर के लिये प्रस्थान किया (१५. ३६)।"

पुङ्कल = शिव (सहस्रनाम)।

पुनरावर्तनन्दा, एक तीर्थ का नाम है। जो सब प्रकार की हिंसा का त्याग करके जितेन्द्रिय भाव से आवर्तनन्दा और महानन्दा तीर्थ का सेवन करता है उसकी स्वर्गस्थ नन्दन वन में अप्सरायें सेवा करती हैं। जो कार्तिक पूर्णिमा को कृत्तिका का योग होने पर एकाग्रचित्त हो उर्वशीतीर्थ और लौहित्यतीर्थ में विधिपूर्वक स्नान करता है उसे पुण्डरीक यज्ञ का फल मिलता है (१३. २५, ४५)।

१. पुनर्वसु, एक नक्षत्र का नाम है: ८. ४९, २८ (रथाभ्यासे चकाशेते चन्द्रस्येव पुनर्वसू); १३. ६४, ९ (पुनर्वसु नक्षत्र में दान का फल); ८९, ४ (इस नक्षत्र में श्राद्ध का फल); ११०, ६ (चान्द्रव्रत का वर्णन)।

२. पुनर्वसु = श्रीकृष्ण (विष्णु) : १२. ४३, १३; १३. १४९, २९ (विष्णु सहस्रनाम)।

पुनश्चन्द्रा, जमदग्नि की एक वेदी का नाम है जो शूर्पारक में स्थित थी (३. ८८, १२)।

पुरञ्जय, एक कौरव सैनिक का नाम है जो शकुनि का अनुगमन करेगा (७. १५६, १२२)।

१. पुरन्दर = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

२. पुरन्दर = विष्णु (सहस्रनाम)।

पुरन्दरसुत = अर्जुन (५. १८५, १९)।

पुरमालिनी, एक नदी का नाम है (६. ९, २१)।

पुराण (एक० और बहु०) प्राचीन इतिहास के संग्रह, अष्टादश पुराणों का द्योतक है : १. १, १६ (पुराणसंहिताः पुण्याः कथा धर्मार्थसंश्रिताः). १७ (द्वैपायनेन यत्प्रोक्तं पुराणं परमर्षिणा). ६३ (इतिहासपुराणानामुन्मेषं निर्मितं च यत्). ६५ (पुराणानां च कृत्स्नशः). ८६ (पुराणपूर्णचन्द्रेण). २३८ (महापुराणसंभाव्यः). २५३ (कथ्यते लोके पुराणे कविसत्तमैः). २६७ (इतिहासपुराणाभ्यां); २, ८२ (हरिवंशस्ततः पर्व पुराणं). १९३ (मार्कण्डेयसमास्य च पुराणं परिकीर्त्यते). ३८६ (आख्यानस्य विषये पुराणं वर्तते द्विजाः); ४, २ (पौराणिकः पुराणे कृतश्रमः); ५, १ (पुराणमखिलं तात पिता ते). २ (पुराणे हि कथा दिव्या): ७ (पुराणाश्रयसंयुतम्); १३, ६ (इतिहासमिमं विप्राः पुराणं परिचक्षते): ३१, ३ (पुराणे यदि पठ्यते). ४ (विषयोऽयं पुराणस्य); ५१, ६ (पुराणे परिपठ्यते); ५६. ७ (पुराणमागम्य); ६२, १६ (पुराणमृषिसंस्तुतम्); ६५, ३८ (वंशप्रभवः... पुराणे संश्रुतः). ५२ (अपत्यं कपिलायास्तु पुराणे परिकीर्तितम्); १००, ६९ (एषा त्रयी पुराणानां देवतानां च शाश्वती); १०९, २० (इतिहासपुराणेषु नानाशिक्षासु बोधिताः); १२१, १३ (पुराणविदो जनाः); १७५, २ (इदं वासिष्ठमाख्यानं पुराणं परिचक्षते); १९६, १४ (श्रूयते हि पुराणेपि जटिलानाम गौतमी); २. ५, २ (इतिहासपुराणज्ञः पुराकल्प विशेषवित्); ४१, ३१ (पुराणविदो जनाः); ३. २५, १४ (धात्रा विधियों विहितः पुराणैः); १८७, ५७ (मात्स्यकं पुराणं परिकीर्तितम्); १९१, १६ (वायुप्रोक्तमनुस्मृत्य पुराणमृषिसंस्तुम्). ३५ (मर्कण्डेयस्य धीमतः विस्मिताः समपद्यन्त पुराणस्य निवेदनात्); ४. ५१, १० (वेदान्ताश्च पुराणानि इतिहासं पुरातनम्); ५. १७८, ४७. (पुराणे श्रूयते...मरुत्तेन ......गीतः श्लोकः); ६. ५९, ८१ (कथितः पुराणैः); ६५, ४१ (पुराणगीतम्); ७. ५७, १० (पुराणविदो जनाः); ६७, १४ (पुराणविदो जनाः); २०२, १०९ (पुराणाख्यानः निश्चयाः); ८. ३४, ४४ (ऋग्वेदः सामवेदश्च पुराणं च पुरःसराः); ११. १३, २ (श्रुतानि च पुराणानि राजधर्माश्च केवलाः); १२. ४७, ३२ (पुराणं पुरुषं प्रोक्तं); ५०, ३६ (इतिहासपुराणार्थाः); ५३, ३ (स्तुतिपुराणज्ञा); १६६, ५९, १३९ (आगमश्च पुराणानां); १५०, २ (पुराणमृषिसंस्तुतम्); १६६, ८५ (महेश्वरप्रणीतश्च पुराणे निश्चयं गतः); २०१, ६ (भगवन्पुराणम्); २०७, ७ (पुराणविदो जनाः); २०८, ५ (सप्त ब्रह्माण इत्येते पुराणे निश्चयं गताः); २९४, ८ श्रूयन्ते हि पुराणेषु प्रजा धिग्दण्डशासनाः); ३०१, १०८ (दृष्टं विविधं पुराणे सांख्यागतं); ३१८, २१ (रोमहर्षण पुराणमवधारितम्); ३३४, २५ (वेदेषु सपुराणेषु); ३३९, १०६ (अतिक्रान्ताः पुराणेषु श्रुतास्ते यदि). ११८ (पुराणं वेदसंमितम्). १२४ (पुराणं यैरिदं श्रुतम्); ३४१,

६ (वेदेषु सपुराणेषु यानि गुह्यानि कर्मभिः). ८ (पुराणे सोपनिषदे). ५९ (अपि हि पुराणे भवति); ३४२, २ (पुराणं पाण्डुनन्दन); ३४२, २० (वेदपुराणेतिहासप्रामाण्यान्नारायणमुखोद्गताः); ३४७, ८ (सर्वं पुराणं वेदसंमितम्). ७८ (पुराणं वेदसंमितं); १३. १६, १७ (पुराणैः सुरर्षिभिः). ६५ (वेदशास्त्रपुराणोक्ताः पञ्चैता गतयः स्मृताः); २२, १२ (सांख्यं पुराणं); ८४, ५९ (श्रुतमिदं पूर्वं पुराणे भृगुनन्दन); ९०, ३४ (अधीयते पुराणं); १०२, २१ (इतिहासं पुराणं); १०४, १४९ (पुराणमितिहासाश्च); १४८, ३३ (पुराणं हिमवत्पृष्ठे); १५८, ५ (उक्ता धर्मा ये पुराणे); १८. ६, ९७ (अष्टादशपुराणानां)।

पुराणः = शिव (सहस्रनाम)।

पुरातन = विष्णु (सहस्रनाम)।

पुरावती, एक नदी का नाम है (६. ९, २४)।

पुरिका, एक नगर का नाम है : १२. १११, ३ (पुरिकायां पुरि······ पौरिको नृपः)।

१. पुरु — देखिये १. पूरु।

२. पुरु, एक राजा का नाम है जो युधिष्ठिर की सेवा में उपस्थित होते थे (२. ४, २७)।

३. पुरु, एक पर्वत का नाम है जहाँ पूर्वकाल में पुरूरवा ने यात्रा की थी (३. ९०, २२)।

पुरुकुत्स, मान्धाता के पुत्र, एक प्राचीन नरेश का नाम है : २. ८, १३(यम की सभा में); १५. २०, १२ (ये नर्मदा के पति थे। कुरुक्षेत्र में तपस्या करके सिद्धि को प्राप्त हो ये स्वर्गलोक में गये थे)।

१. पुरुजित्, एक प्राचीन राजा का नाम है जो यम की सभा में उपस्थित होते थे (२. ८, २०)।

२. पुरुजित्, एक क्षत्रिय नरेश का नाम है : २. १४, १७ (मातुले गतः···पुरुजित्कुन्तिवर्धनः); ५. १७२, २ (पुरुजित् कुन्तिभोजश्च···मातुलो भीमसेनस्य); ६. २५, ५; ७. २३, ४६ (पुरुजिन्मातुलः सव्यसाचिनः); २५, ४० (दुर्मुख से युद्ध किया); ८. ६, २२ (पुरुजित् कुन्तिभोजश्च मातुलौ सव्यसाचिनः)। तुकी० कुन्तिभोज, कुन्तिवर्धन।

३. पुरुजित् = विष्णु (सहस्रनाम)।

पुरुमित्र, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६३, १२० (धृतराष्ट्र के ग्यारह महारथी पुत्रों में यह भी एक था); २. ५८, १३ (द्यूतक्रीड़ा के समय उपस्थित था); ५. ५५, ६४ (दुर्योधनके प्रमुख योद्धाओं में से एक); ५८, ७. ११; ६६, ५; १६०, १२३; १६१, ४१; ६. १७, २१ (अश्वत्थामा का अनुसरण किया); १८, ११ (भीष्म की रक्षा की); २०, १२; ४४ १६ (भीमसेन पर आक्रमण किया); ५७, ३१; ६२, १७. २८; ७३, २४. २६ (अभिमन्यु ने इसे बाणों से बींध दिया); ७. ७४, १६; ८५, २८; १५६, १२१; ८. ७, १४। तुकी० कुरुप्रवीर।

पुरुमीढ, सुहोत्र और ऐक्ष्वाकी के पुत्र, तथा अजमीढ और सुमीढ के भ्राता, एक राजकुमार का नाम है (१. ९४, ३०)।

१. पुरुष, परम् पुरुष परमात्मा का द्योतक है जिसे अक्सर श्रीकृष्ण (विष्णु नारायण) तथा शिव और ब्रह्मा के साथ भी समीकृत किया गया है : १. १, २२ (आद्यं पुरुषं···विष्णुं). ३४ (पुरुषश्चाप्रमेयात्मा यं सर्वे ऋषयो विदुः); ६३, १०१. १०३ (सविभुः कर्ता सर्वभूतपितामहः); ३. ३, २१ (सूर्य के साथ समीकृत); १२, ५५ (पुरुषोसि सनातनः); १८, २७ (शंखचक्रगदाधरं पुरुषं); १८८, १७ (पुरुष पुराणाय). २१ (पुरुषो वेद वेदा अपि न तं विदुः); १८९, ५६ (पुरुषं पीतवाससम्); २०१, २६ (पुरुषं शाश्वतं); २६३, ११ (पुराणपुरुष); २७२, ३८ (सहस्रशीर्षा पुरुषः); ५. ७१, ६ (सहस्रशीर्षं पुरुषं पुराणम्); १११, ५ (प्रकृत्या पुरुषः); ६. ३२, ४ (पुरुषश्चाधिदैवतम्). ८ (परमं पुरुषं). १०; ३४, १२ (पुरुषं शाश्वतम्); ३५, १८. ३८; ३७, १ (प्रकृति पुरुषं). २० (पुरुषः सुखदुःखानां). २१-२३; ३९, ४. १६; ६५, ४४ (पुरुषं परमेश्वरम्); ६६, १६; ६८, ८; ७. १४९, २१; १९२, ५० (पुराणं पुरुषं विष्णुं); २०२, ३० (शिव); १२. ४३, ४. ८; ४७, ३२. ४० (महतस्तमसः पारे पुरुषं). ८८ (पुरुषोऽसि सनातनः); २०५, २४; २०७, ५ (पुरुषः सर्वमित्येव); २१०, १० (पुरुषं सनातनं विष्णुं). २५; २११, १२ (पुरुषाधिष्ठिता);२१७, ६. ३७; २१८, १२; २८४, १६२; ३०६, ३८; ३१३, १६; ३१५, ४; ३१६, १७; ३१८, ३९-४३. ४६; ३३४, ३०; ३३६, ३३; ३३७, ४०; ३३८, ४९; ३३९, २४. ३१. ३२. ४३; ३४०, ५७; ३४१, १५; ३४२, ६. ९; ३४३, ४७; ३४६, २१; ३४७, १६. ४६. ६२. ६६. ८८. ९६; ३४८, २६. २७. ६९. ७०. ७९. ८१; ३५०, १. ३. ५. ७. २२. २३. २५, २७; ३५१, १. ८-१०. १२. १४. १६. २२; १३. १४, ५. ६. ३१८. ४२०. ४२२; १६, ४ (पुरुषमधिष्ठातारमीश्वरम्); १४७, २ (शाश्वतः पुरुषो हरिः); १४९, ४ (पुरुषः सततोत्थितः). ५ (पुरुषमव्ययम्). १५ (पुरुषः साक्षी). ५७ (पुरुषः प्राणः); १६७, ३८ (पुरुषः सविता); १४. ८, १३ (रुद्राय शितिकण्ठाय पुरुषाय सुवर्चसे). १५; ४०, ५ (महाप्रभावः पुरुषः). १३; ४३, ३८ (पुरुषस्तद्विजानीते तस्मात्क्षेत्रज्ञ उच्यते); ४८, ३ (पुरुषं सत्त्वसंश्रयम्). ८; ५०, ८ (पुरुषो नित्यं). १३. १६ (पुरुषो व्यक्त इष्यते). ५५ (परम व्यक्तमव्यक्तात्पुरुषः परः); ५१, ३१ (पुरुषं प्रसते विषा). ३२ (विषामयोऽयं पुरुषो)।

पुरुषवर = विष्णु (१. १९, २३)।

पुरुषश्रेष्ठ = कृष्ण (७. १७७, ३७)।

पुरुषसत्तम = कृष्ण : २. २, ८; ५. ८०, ६; ९. ३५, ८; १२.५१,५।

१. पुरुषोत्तम = कृष्ण : १. ६४, ५४; ९५, ८३; २०७, ७; २२१, ३८; २. २४, ४२; ४५, २८; ३. १२, २२. ८१; २२, ४४; ४०, २; ९०, २४; १०२, २२; १८३, ३७; २०१, २०; २०३, २८; ५. ६८, ५; ७०, १. ११; ८०, ४; ८१, ७; ८३, २२; ९०, ७९. ८९; ९१, २१; १२४, ४; १३०, २३; १३७, १५. २९; ६. ३२, १; ३४, १५; ३५, ३; ३९, १८. १९; ६७, ३. ५. १५; ६८, ११; १०६, ६९; ७. ७३, २१; ८३, १८; १४९, २३; १८२, ३१; ८. ८०, ८९; ९०, ५५; ९. ६३, २६; १०. १६, १९. ३०; ११. १६, १७; १२. ४३, ५; ४६, ८; ४७, १७ १०३. १०४; ११०, २६. २७; २०७, ९. १०. १५; २८०, ५९; ३२७, १५; ३३५, ३८. ५२; ३३६, २८; ३३८, ४; ३३९, १३१; ३४३, ५३; ३४४, २. १०; ३४५, १३; ३४७, ६८. ७१; ३४८, ३. २०. ७१. ७९; ३५०, २४; ३६२, १०; १३. १४, ३७२; १४९, ४. १४. १२९. १३३; १६७, ३९; १४. ५५, ११; ६६, ७; ६७, ९। तुकी० उत्तमपुरुष।

२. पुरुषोत्तम, अनेक व्यक्तियों के लिये प्रयुक्त : २. १४, १८ (शिशुपाल). १९ (पौण्ड्रक); ३. ४०, ६ (अर्जुन)।

३. पुरुषोत्तम (द्वि०) = नर और नारायण (१२. ३४३, ४०)।

पुरुष्टुत = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

पुरुसत्तम = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. पुरुहूत = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

२. पुरुहूत = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

पुरूरवस्, एक प्राचीन नरेश का नाम है जो इला के पुत्र और उर्वशी के पति थे : १. ४४, १० (यशोर्वशीं प्राप्य पुरा पुरूरवाः)। "इला के गर्भ से विद्वान् पुरूरवा का जन्म हुआ। सुना जाता है कि इला पुरूरवा की माता भी थी और पिता भी। राजा पुरूरवा समुद्र के तेरह द्वीपों का शासन और उपभोग करते थे। वे मनुष्य होकर भी मानवेतर प्राणियों से घिरे रहते थे। वे अपने बल-पराक्रम से उन्मत्त हो ब्राह्मणों के साथ विवाद करने लगे। ब्राह्मण आर्तनाद करते रहते थे फिर भी वे उनका सारा धन-रत्न छीन लेते थे। राजा पुरूरवा लोभ से अभिभूत थे और बल के दर्प में अपनी विवेक शक्ति खो बैठे थे। ये गन्धर्वलोक में स्थित और विधिपूर्वक स्थापित त्रिविधि अग्नियों को उर्वशी के साथ इस धरातल पर लाये थे। इनके छः पुत्र उत्पन्न हुये जिनके नाम आयु, धीमान्, अमावसु, दृढ़ायु, वनायु, और शतायु थे। (१. ७५, १८ - २५)।" १. ९५, ७ (इला के पुत्र और

आयु के पिता); २. ७८, १७; ३. ८५, १२५; ९०, २२; ९४,१८; ५. ७४, १५ (उन राजाओं में ये भी एक थे जिन्होंने अपने बन्धु-बान्धवों का विनाश कर दिया था); ११७, १४; ७. १४४, ४ (बुध के पुत्र). ५ (आयु के पिता); १२. ७२, २ (वायु देवता के साथ इनका संवाद); १६६, ७३ (इक्ष्वाकु से एक खड्ग प्राप्त किया); १३. ६, ३१ (स्वर्ग प्राप्त किया); ७६, २६ (गायों का दान किया); १४७, २७ (बुध के पुत्र और आयु के पिता); १५०, ४९ (ऐलं बुधस्य पुत्रं) । तुकी० ऐल ।

पुरोचन, दुर्योधन के एक विश्वासपात्र सखा का नाम है: १. २, १०५; ६१, २२; १४१, ११; १४४, २. ३. १८. १९; १४६, ८. ९. ११.१२. १६. २२. २३. ३१; १४७, ४. १०. १५. १८. १९; १४८, १-४. १०; १५०, २. ९. २४ (पाँचों पाण्डवों तथा कुन्ती को भस्म करने के लिये इसने लाक्षागृह का निर्माण किया था, किन्तु उसमें यह स्वयं ही भस्म हो गया;) १६२, ९ (निहतः); २००, १३; २०३, १३. १५; २०५, २३; २०६, ६ ।

पुरोडाशभागहर = महापुरुष (महापुरुषस्तव) ।

पुरोरवस् – देखिये पुरूरवस ।

पुलस्त्य, ब्रह्मा के मानस पुत्र, एक महर्षि का नाम है : १. ६५, १० (ब्रह्मा के छः मानस पुत्रों में से चौथे); ६६, ४ (छः महर्षियों में से एक). ७, (राक्षस, वानर, किन्नर और यक्ष इन्हीं की सन्तान थे); १२३, ५२ (अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उपस्थित हुये); १८१, ९. १०. २१ (इन्होंने पराशर से राक्षस-यज्ञ समाप्त करने का आग्रह किया); २. ७, १७ (इन्द्र की सभा में); ११, १९ (ब्रह्मा की सभा में); ३. ८१, १२. १६ (ऋषिसत्तमं); ८२, १. ८; ८३, १; ८४, १; ८५, १. ११२. ११३ (इन्होंने भीष्म को विभिन्न तीर्थों का परिचय देते हुये उनके सेवन का फल बताया); २७४, १२ (ब्रह्मा के मानस पुत्र और कुबेर के पिता); २७५, १; ५. ११७, ११ (रेमे'''पुलस्त्यः सन्ध्याया यथा). १६ (रेमे'''पुलस्त्यश्च प्रतीच्यया); ९. ४५, ९ (स्कन्द के अभिषेक के समय उपस्थित हुये); १२ ४७, १० (शरशय्या पर पड़े भीष्म के पास उपस्थित ऋषियों में ये भी थे); १६६, १६ (ब्रह्मा के तृतीय पुत्र); २०७, १७ (ब्रह्मा के मानस पुत्रों में चौथे); २०८, ४ (ब्रह्मा के सात पुत्रों में से चौथे); ३१८, ६१ (विश्वावसु को उपदेश दिया था); ३३४, ३५ (२१ प्रजापतियों में से एक); ३३५, २९ (सप्तर्षियों में से एक); ३३९, ८८ (पुलस्त्य कुलपांसनं); ३४०, ३४ (अष्ट प्रकृतियों में से एक). ६९ (सप्तर्षियों में से एक); १३. १४, ३९६; २६, ४ (भीष्म को देखने के लिये उपस्थित हुये ऋषियों में ये भी थे); ९२, २० । तुकी० ब्रह्मर्षि, ब्रह्मयोनि, विप्रर्षि ।

पुलस्त्यतीर्थयात्रा, पुलस्त्य द्वारा तीर्थों के वर्णन का द्योतक है (१. २, १६५) । देखिये ३. ८१-८५ भी ।

पुलह, ब्रह्मा के मानस पुत्रों में से एक : १. ६५, १० (ब्रह्मा के छ मानस पुत्रों में से पाँचवे); ६६, ४ (छः महर्षियों में से एक). ७ (शलभ, सिंह, किम्पुरुष, व्याघ्र, ऋक्ष और ईहामृग इनकी सन्तान थे); १२३, ५२ (अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उपस्थित हुये); १८१, ९ (राक्षसों की रक्षा के लिये पराशर के यज्ञ में उपस्थित हुये); २. ७, १७ (इन्द्र की सभा में); ११, १९ (ब्रह्मा की सभा में); ३. १४२, ६ (गङ्गातट पर सामगान करने वाले ऋषियों में ये भी थे); ९. ४५, ९ (स्कन्द के अभिषेक में उपस्थित); १२. ४७, १० (भीष्म को घेर कर खड़े ऋषियों में ये भी थे); १६६, १६ (ब्रह्मा के चौथे पुत्र); २०७, १७ (ब्रह्मा के सात मानस पुत्रों में पाँचवें); २०८, ४ (ब्रह्मा के सात पुत्रों में पाँचवें); ३३४, ३५ (इक्कीस प्रजापतियों में से एक); ३३५, २९ (सप्तर्षियों में से एक); ३४०, ३४ (अष्ट प्रकृतियों में से एक). ६९ (सप्तर्षियों में से एक); १३. १४, ३९६; २६, ४ (भीष्म को देखने आये ऋषियों में से एक); ९२, २० ।

पुलिन, एक नाग का नाम है । इसने गरुड से युद्ध किया था (१. ३२, १९) ।

१. पुलिन्द (बहु० °न्दाः), एक बर्बर जाति का नाम है : १. १७५, ३८ (वसिष्ठ की धेनु के फेन से उत्पन्न हुये थे); २. २९, १० (पुलिन्द नगर में भीमसेन ने सुकुमार और सुमित्र को पराजित किया था); ३१, १६ (दक्षिण में सहदेव ने इन्हें पराजित किया था); ३. १४०, २५ (पुलिन्दशतसंकुलम्); १८८, ३५ (कलियुग में शासन करने वाली बर्बर जातियों में से एक); ५. १६०, १०३ (दुर्योधन की सेना में); १६१, २१; ६. ९, ३९. ६२; ८७, ७ (द्रोण का अनुसरण किया); ८. २०, १० (पाण्ड्यराज से युद्ध किया); ७३, २० (इनका वध); १२. ६५, १४ (बर्बर और निम्न जातियों के साथ इनका उल्लेख); १५१, ८; २०७, ४२; १३. ३३, २२ (ब्राह्मणों की कृपादृष्टि न प्राप्त होने से ये शूद्र हो गये) । तुकी पुलिन्दक (बहु०) ।

२. पुलिन्द, पुलिन्दों के राजा, जो युधिष्ठिर की सेवा करते थे (२. ४, २४) ।

पुलिन्दक (बहु० °काः) एक जाति का नाम है (६. ९, ४०) । तुकी० पुलिन्द (बहु०) ।

पुलोमन्, एक राक्षस का नाम है : १. ५, १५. १९ (इसने पुलोमा का अपहरण कर लिया, किन्तु भय से ज्योंही पुलोमा ने च्यवन को जन्म दिया त्योंही यह भस्म हो गया); ७, २९; ६५, २२ (दनु का चौथा पुत्र); १२. २२७, ५० (पृथिवी के प्राचीन शासकों में से एक) । तुकी० दानव, दानवनन्दन, राक्षस् ।

१. पुलोमा, भृगु की पत्नी का नाम है : "भृगु की पत्नी पुलोमा अपने पति को अत्यन्त प्रिय थी । उसके गर्भ में भृगु के वीर्य से उत्पन्न एक शिशु पल रहा था । एक दिन जब भृगु स्नान के लिये बाहर गये हुये थे तब पुलोमा नाम का ही राक्षस उनके आश्रम पर आया । उस राक्षस को अतिथि समझ कर भृगुपत्नी ने उसका सत्कार किया । पुलोमा (भृगुपत्नी) को पहले इस पुलोमा राक्षस ने ही वरण किया था किन्तु बाद में उसके पिता ने शास्त्र विधि के अनुसार महर्षि भृगु के साथ उसका विवाह कर दिया। उसके पिता का वह अपराध राक्षस के हृदय में काँटे-सा चुभता रहता था । फलस्वरूप उस दिन उसे अकेला पाकर वह राक्षस उसका अपहरण करने के विचार से अग्नि को सम्बोधित करके बार-बार यह प्रश्न करने लगा : 'असत्य व्यवहार करने वाले भृगु ने, जो पहले मेरी ही थी, उस भार्या का अपहरण किया है । यदि यह वही है तो वैसी बात ठीक-ठीक बता दो ।' राक्षस की बात सुनकर सप्तजिह्वा अग्नि अत्यन्त दुखी हुये किन्तु धीरे से इस प्रकार कहा : इसमें सन्देह नहीं कि पहले तुम्हीं ने इस पुलोमा का वरण किया था, किन्तु विधिपूर्वक मन्त्रोच्चारण करते हुये इसके साथ तुमने विवाह नहीं किया था । इसके पिता ने तो इस पुलोमा को भृगु को ही दिया है ।' (१. ५, १३. १४. १७. ३१. ३२) ।" "अग्नि का यह वचन सुनकर उस राक्षस ने वराह का रूप धारण करके मन और वायु के वेग के समान उस पुलोमा का अपहरण कर लिया । उस समय वह गर्भ, जो अपनी माता की कुक्षि में निवास कर रहा था, अत्यन्त रोष के कारण योगबल से माता के उदरसे च्युत होकर बाहर निकल आया । च्युत होने के कारण ही उसका नाम च्यवन पड़ा । माता के उदर से च्युत होकर गिरे उस सूर्य के समान तेजस्वी गर्भ को देखते ही वह राक्षस भृगुपत्नी पुलोमा को छोड़कर गिर पड़ा और तत्काल जल कर भस्म हो गया । उस समय पुलोमा दुःख से मूर्छित हो गई । थोड़ी देर के बाद वह अपने पुत्र को लेकर ब्रह्मा के पास आई । उसके नेत्रों से सतत अश्रुपात हो रहा था, जिससे एक विशाल नदी प्रकट हो गई । वही नदी वधूसरा के नाम से च्यवन के आश्रम के निकट प्रवाहित होती है । महर्षि भृगु द्वारा पूछने पर पुलोमा ने बताया : 'अग्नि देव ने उस राक्षस को मेरा परिचय दे दिया । इससे उस राक्षस ने मेरा अपहरण कर लिया । आपके इस पुत्र के तेज से ही मैं उस राक्षस के चंगुल से मुक्त हो पाई ।' पुलोमा का वचन सुनकर भृगु ने अग्नि को सर्वभक्षी होने का शाप दे दिया । (१. ६, ४. ९. १२. १४) । ५. ११७, १२ (रेमे'''यथा भृगुः पुलोमायाम्) ।

२. पुलोमा, एक असुर-स्त्री का नाम है जिसने ब्रह्मा :से अपनी

सन्तान के लिये वरदान प्राप्त किये थे। इसकी सन्तान पौलोम नामक असुर हुवे (३. १७३, ७)।

पुल्कस — देखिये पुक्कस।

१. पुष्कर (एक० और बहु० °राणि) एक तीर्थ समूह का नाम है : १. २, ३९२; २२१, १४; ३. १२, १२ (यहाँ श्रीकृष्ण ने तपस्या किया था)। "मनुष्यलोक में ब्रह्मा का त्रिलोक विख्यात पुष्कर नामक तीर्थ है। उस तीर्थ में अत्यन्त भाग्यशाली ही प्रवेश कर पाता है। पुष्कर में तीनों समय दस सहस्र कोटि तीर्थों का निवास रहता है। वहाँ आदित्य, वसु, रुद्र, साध्य, मरुद्गण, गन्धर्व और अप्सराओं की नित्य संनिधि रहती है। वहाँ तप कर के देवता, दैत्य और महर्षि महान पुण्य से सम्पन्न होकर दिव्य योग से युक्त होते हैं। उस पुष्कर तीर्थ में ब्रह्मा जी नित्य निवास करते हैं। जो उसमें स्नान करता है तथा देवताओं और पितरों की पूजा करता है उसे अश्वमेध से दस गुना फल प्राप्त होता है। पुष्कर में जाकर कम से कम एक ब्राह्मण को भोजन कराने से मनुष्य इहलोक और परलोक में आनन्द का भागी होता है। कार्तिक मास की पूर्णिमा को जो पुष्कर तीर्थ में स्नान करता है वह ब्रह्मधाम में अक्षय लोकों को प्राप्त होता है। जैसे विष्णु सब देवताओं के आदि हैं वैसे ही पुष्कर सब तीर्थों का आदि कहा जाता है। तीन शुभ्र पर्वत-शिखर, तीन सोते और तीन पुष्कर – ये आदि सिद्ध तीर्थ हैं। ये कब से और किस कारण से तीर्थ माने गये हैं यह अज्ञात है (३. ८३, २०. २१. २४. २६. ३१. ३२. ३४. ३५. ३७. ३८)।" ३. ८३, २५ (संमितं पुष्कराणां). २०२ (पृथिव्यां नैमिषं तीर्थमन्तरिक्षे च पुष्करम्); ८५, ९० (सर्वे कृतयुगे पुण्यं त्रेतायां पुष्करं स्मृतम्). ९१. ९२; ८९, १६ (पितामहसरः पुण्यं पुष्करं नाम नामतः). १७ (पुष्करेषु कुरुश्रेष्ठ गाथांसुकृतिनां वर). १८; १२५, १३; ७. ५४, २६ (यहाँ मृत्यु ने तपस्या किया था); ९. ३८, ११.(यत्रै पुष्करस्थे पितामहे). १३ (पितामहेन यजता आहूता पुष्करेषु वै). १५ (सरिच्छ्रेष्ठा पुष्करेषु सरस्वती); १२. १५२, १२. २८; २९७, ३७ (नैमिषपुष्करेषु); १३. २५, ९ (पुष्कर, प्रभास, नैमिषारण्य, सागरोदक, देविका, इन्द्रमार्ग, तथा स्वर्णविन्दु – इन तीर्थों में स्नान करने से मनुष्य विमान पर बैठकर स्वर्ग में जाता है और अप्सरायें उसकी स्तुति करती हुई उसे जगाती हैं); १०२, ४५; १०३, ११; १२५, ४८; १२७, १०; १३०, १९ (यहाँ कपिला गाय का दान करना चाहिये). ३०; १६५, १९; १८. ५, ६७ (पुष्करजलैः)।

२. पुष्कर, वरुण के पुत्र का नाम है : २. ९, २९; ५. ९८, १२।

३. पुष्कर, नल के भ्राता का नाम है : ३. ५२, ५६; ५९, ४. ६. ७. १८; ६०, १४. १५ (इसने द्यूत में नल को पराजित किया); ६१, १. २. ४. ५. ८. ९. (नल ने इसे पराजित करके अपना राज्य पुनः जीत लिया); ७८, ४. ५. १०. ११. १८. २०. २५. २७. २९. ३१ (नल ने द्यूत में इसे पराजित करके अपना राज्य वापस ले लिया); ८. ९१, १३।

४. पुष्कर, एक द्वीप का नाम है (६. १२, २४)।

५. पुष्कर, पुष्करद्वीप के एक पर्वत का नाम है (६. १२, २४)।

६. पुष्कर = कृष्ण (१२. ४३, १४)।

पुष्करधारिणी, एक सत्य नामक ब्राह्मण की पत्नी का नाम है (१२. २७२, ६)।

१. पुष्करमालिनी, इन्द्र की सभा का द्योतक है (२. ७, ३०)।

२. पुष्करमालिनी, वरुण की सभा का द्योतक है (२. ८, ४१)।

पुष्करस्थपति = शिव (सहस्रनाम)।

१. पुष्कराक्ष (कमल के समान नेत्र वाले) = श्रीकृष्ण : ५. ८९, २४; १२. ४३, १७; १३. १४९, १८ (विष्णु सहस्रनाम). ७२. १४२।

२. पुष्कराक्ष = स्कन्द (३. २३२, ११)।

पुष्करारण्य, पुष्कर तीर्थ के वन का द्योतक है : १. ३६, ३ (यहाँ शेष ने तपस्या किया था); २. ३२, ८ (पश्चिम में यहाँ के निवासियों को नकुल ने पराजित किया था); ३. ८२, २८।

पुष्करिणी, भौमन्यु की पत्नी का नाम है। १. ९४, २५ (यह दिविरथ और सुहोत्र आदि की माता थी)।

१. पुष्करेक्षण = श्रीकृष्ण : ३. २२१, ५०; ३. १०२, २१; ११९, ४; ५. १२८, ३३; ७. ११, ५. १०; ८०, १८; १००, १३।

२. पुष्करेक्षण = इन्द्र (१३. ८३, ४४)।

पुष्ट = विष्णु (सहस्रनाम)।

पुष्टि, एक देवी का नाम है : १. ६६, १४ (दक्ष की पुत्री और धर्म की भार्या); २. ११, ४२ (ब्रह्मा की सभा में); ३. ३७, ३३ (द्रौपदी ने अर्जुन के प्रति यह शुभकामना प्रकट की कि पुष्टि उनकी रक्षा करेंगी)।

पुष्टिमति, एक अग्नि का नाम है (३. २२१, २)।

पुष्प, एक नाग का नाम है (५. १०३, १३)।

पुष्पक, कुबेर के प्रसिद्ध विमान का नाम है : ३. १६१, ३७ (इसका विश्वकर्मा ने निर्माण किया था); २३१, ३३ (आस्थाय रुचिरं याति पुष्पकं नरवाहनः); २७४, १७ विमानं"'कामगं, जिसे ब्रह्मा ने कुबेर को दिया था); २७५, ३४ (रावण ने इसका हरण कर लिया); २९१, ५३ (विमानेन खेचरेण विराजता). ५८ (पुष्पकेण विमानेन). ६९ (पुष्पकं च विमानं तत् पूजयित्वा स राघवः); ९. ४७, ३१।

पुष्पकेतु = काम (३. २८१, ७)।

पुष्पदंष्ट्र, एक नाग का नाम है (१. ३५, १२)।

१. पुष्पदन्त, एक नाग का नाम है : ७. २०२, ७३ (शिव ने पत्रपत्र और पुष्पदन्त को अपने रथ के जूए की कील बनाया)।

२. पुष्पदन्त, पार्वती द्वारा प्रदत्त स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ५१)।

पुष्पधारण = श्रीकृष्ण (१२. ४३, १४)।

१. पुष्पवत्, कुशद्वीप के एक पर्वत का नाम है (६. १२, ११)।

२. पुष्पवत्, पृथिवी के प्राचीन शासकों में से एक असुर का नाम है (१२. २२७, ५१)।

पुष्पवती, एक तीर्थ का नाम है (३. ८५, १२)।

पुष्पहास = विष्णु (सहस्रनाम)।

पुष्पानन, कुबेर की सभा के एक यक्ष का नाम है (२. १०, १७)।

पुष्पाम्भस, एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, १०६)।

पुष्पोत्कटा, एक राक्षसी का नाम है : ३. २७५, ५. ७ (विश्रवा द्वारा यह कुम्भकर्ण और रावण की माता बनी)।

पुष्पोदका, एक नदी का नाम है (३. २००, ५८);

पुष्य, एक नक्षत्र का नाम है = तिष्य : ३. ९३, २६ (पुष्येण प्रययुः); २७७, १५ (अद्य पुष्यो निशि ब्रह्मन् पुण्यं योगमुपैष्यति); ५. ६, १७ (पुष्ययोगेन मुहूर्तेन जयेन च); १५०, ३ (पुष्योऽद्येति); ६. ३, १३ (धूम्रकेतुर्महाघोरः पुष्यं चाक्रम्य तिष्ठति); ९. ३४, ६ (पुष्येण संप्रयातोऽस्मि श्रवणे पुनरागतः); ३५, १० (निर्गच्छध्वं पाण्डवेयाः पुष्येण सहिता मया). १५ (रौहिणेये गते शूरे पुष्येण मधुसूदनः); १३. ६४, १० (इस नक्षत्र में सुवर्ण दान की महिमा); ८९, ४ (इस नक्षत्र में श्राद्ध की महिमा); ११०, ७ (चान्द्रव्रत का वर्णन)। तुकी० तिष्य।

पूजनी, एक पक्षी का नाम है : १२. १३९, ४ (पूजन्या सह संवादं ब्रह्मदत्तस्य भूपतेः). ५ (पूजनी नाम शकुनिर्दीर्घकालं सहोषिता). ८ (सा खेचरी पूजनी सदा). १४ (सा पूजनी राजग्रागमत्फलहारिणी). १५ (पूजनी दुःखसंतप्ता रुदती वाक्यमब्रवीत्). २०. २३. २४. २५. ३६. ३८. ४२. ५३. ५४. ७६. ११३ (ब्रह्मदत्त के पुत्र द्वारा पूजनी के शिशु की हत्या हो जाने पर पूजनी और ब्रह्मदत्त का संवाद)।

१. पूतना, एक राक्षसी का नाम है : २. ४१, ४ (श्रीकृष्ण ने इसका वध किया था). ३. २३०, २७ (पूतना राक्षसीं प्राहुस्तं विद्यात् पूतनाग्रहम्); ५. १३०, ४६ (श्रीकृष्ण ने इसका वध किया था)।

२. पूतना, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १६)।

पूतात्मन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

पूरण, एक ऋषि का नाम है। भीष्म के पास आये ऋषियों में ये भी

थे (१२. ४७, १२)।

पूरयितृ = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. पूरु, ययाति के पुत्र, एक प्राचीन नरेश का नाम है : १. १, २३२ (प्राचीन नरेशों की गणना कराते समय संजय ने इनका भी उल्लेख किया); ७५, १. ३५ (शर्मिष्ठा से ययाति द्वारा उत्पन्न पुत्र). ३७. ४३. ५७ (इन्होंने अपना यौवन अपने पिता को देकर उनका वृद्धत्व ले लिया। पिता के बाद ये सिंहासनारूढ हुये); ८३, १० (ययाति और शर्मिष्ठा के पुत्र); ८४, २७. २८. ३०. ३३. ३४ (ययाति से वृद्धत्व लिया); ८५, १०. १७. १८-२१. २७-२९. ३१-३३ (अपने अन्य ज्येष्ठ पुत्रों की उपेक्षा कर ययाति ने इन्हें अपने स्थान पर राजा बनाया). ३५ (इन्हीं से पौरव वंश चला और आगे चल कर जनमेजय पारिक्षित इसी वंश में उत्पन्न हुये); ८६, ११; ८७, ४; ८९, १ (ययाति इनके पिता थे); ९३, २२; ९४, १. ४. ५ (अपनी पत्नी पौष्टी के गर्भ से इन्होंने प्रवीर, ईश्वर और रौद्राश्व नामक पुत्र उत्पन्न किये); ९५, ९. १० (इनसे पौरव वंश की वृद्धि हुई). ११; १२१, ७ (व्युषिताश्व···पूरोर्वंशविवर्धनः); २. ८, ८ (यमकी सभा में); ३. ४६, ४३; ८५, १२७; ९४, १८; ४. ५६, १० (ये भी स्वर्ग लोक से महाभारत युद्ध देखने के लिये उपस्थित हुये); ५. १२०, २. १३; १४९, ५ (धृतराष्ट्र के पूर्वज थे); ७. ६३, १० (ययाति के बाद राजा हुये); १२. २९, ९८, १६६, ७४ (इन्होंने अपने पिता ययाति से एक खड्ग प्राप्त किया जो बाद में इनसे अमूर्तरया को मिला); १३. ९४, ५. २२; ११५, ६८ (ये कार्तिक मास में मांस भक्षण नहीं करते थे); १६५, ४८।

२. पूरु – देखिये ३. पूरु।

३. पूरु, एक राजा का नाम है (७. ६२, १०)।

पूरुवंशानुकीर्तनम् से पूरु की वंशावली का तात्पर्य है। आदिपर्वान्तर्गत सम्भवपर्व में ९४-९५ अध्यायों में इसका इस प्रकार उल्लेख है :

पूरु~पौष्टि (इसे कौसल्या भी कहते हैं)
|
१) प्रवीर (~शूरसेनी), २) ईश्वर, ३) रौद्राश्व (~अप्सरा मिश्रकेशी)
|　　　　|
मनस्यु (~ सौवीरी)　　१) ऋचेयु + ९ अन्य
|　　　　|
शक्त + २ अन्य　　मतिनार
|
१) तंसु, २) महत्, ३) अतिरथ, ४) द्रुह्यु
|
ईलिन~रथन्तरि
|
१) दुष्यन्त~शकुन्तला, २) शूर, ३) भीम, ४) प्रवसु, ५) वसु
|
भरत

भरत (देखिये वस्था०) ने भरद्वाज से भुमन्यु नामक पुत्र प्राप्त किया, जो उनका उत्तराधिकारी हुआ।

भरत
|
भुमन्यु (~ पुष्करिणी)
|
१) दिविरथ, २) सुहोत्र (~ ऐक्ष्वाकी), ३) सुहोतृ, ४) सुहविस्, ५) सुयजुस्, ६) ऋचीक
|
१) अजमीढ (~ क) धूमिनी, ख) नीली, ग) केशिनी, + २ अन्य
|
क) ऋक्ष, (ख, २-३); २) दुष्यन्त, ३) परमेष्ठिन्, (ग, ४-६), ४) जह्नु + अन्य
|　　　　|　　　　|
संवरण　　पाञ्चालाः　　कुशिकाः

संवरण (देखिये वस्था)।

संवरण~तपती सौरी
|
कुरु (~ वाहिनी)
|
अविक्षित् + ४ अन्य
|
परीक्षित् + ७ अन्य
|
जनमेजय + ७ अन्य
|
१) धृतराष्ट्र, २) पाण्डु, ३) वाह्लीक + ५ अन्य
|
१) कुण्डिक, २) हस्तिन् + ६ अन्य

धृतराष्ट्र के पुत्र-पौत्रों में तीन अत्यन्त प्रसिद्ध हुये : प्रतीप, धर्मनेत्र और सुनेत्र। प्रतीप के तीन पुत्र थे : देवापि, शान्तनु, और बाह्लीक। देवापि ने संन्यास ग्रहण कर लिया; शान्तनु और बाह्लीक राजा हुये। भरत और मनु वंश में देवर्षियों के समान अनेक अन्य राजा हुये जिन्होंने ऐल वंश को सुशोभित किया (१. ९४)।

जनमेजय ने मनु से आरम्भ करके इस वंश-विवरण को और अधिक विस्तार से सुनने की इच्छा प्रकट की। तब वैशम्पायन ने इस प्रकार वर्णन किया :

दक्ष
|
आदिति
|
विवस्वत्
|
मनु
|
इला
|
पुरूरस्
|
आयुस्
|
नहुष　उशनस　वृषपर्वा
|　　|　　|
ययाति~क) देवयानी ख) शर्मिष्ठा
|
(क, १-२) १) यदु, २) तुर्वसु (ख ३-५) ३) द्रुह्यु ४) अनु
|　　५) पूरु(~कौसल्या)
यादवाः　　|
जनमेजय (~अनन्ता माधवी)
|
प्राचीनवत् (~अश्मकी यादवी)
|
संयाति (~वराङ्गी, दृषद्वत् की पुत्री)
|
अहंयाति (~भानुमती, कृतवीर्य की पुत्री)
|
सार्वभौम (~सुनन्दा कैकेयी)
↓

सार्वभौम (~सुनन्दा कैकेयी)
|
जयत्सेन (~सुश्रवा वैदर्भी)
|
अवाचीन (~मर्यादा वैदर्भी)
|
अरिह (~आङ्गी)
|
महाभौम (~सुयशा प्रसेनजिती)
|
अयुतनायिन् (~कामा, पृथुश्रवा की पुत्री)
|
अक्रोधन (~करम्भा कालिङ्गी)
|
देवातिथि (~मर्यादा वैदेही)
|
अरिह (~सुदेवा आग्नेयी)
|
ऋक्ष (~ज्वाला, तक्षक की पुत्री)
|
मतिनार (~सरस्वती)
|
तंसु (~कालिङ्गी)
|
ईलिन (~रथन्तर)

दुष्यन्त (~शकुन्तला, विश्वामित्र की पुत्री) + ४ अन्य पुत्र
|
भरत (~सुनन्दा सार्वसेनी काशेयी
|
भुमन्यु (~विजया दाशार्ही)
|
सुहोत्र (~सुवर्णा इक्ष्वाकु-कन्या)
|
हस्तिन् (~यशोधरा त्रैगर्ती)
|
वैकुण्ठन (~सुदेवा दाशार्ही)
|
अजमीढ (~क) कैकयी, ख) गान्धारी, ग) विशाला, घ) ऋक्षा)
|
संवरण (~तपती वैवस्वती) + १२३ अन्य पुत्र
|
कुरु (~शुभाङ्गी दाशार्ही)
|
विदूरथ (~ सम्प्रिया माधवी)
|
अनश्वन् (~ अमृता मागधी)
|
परीक्षित् (~ सुयशा बाहुदा)
|
भीमसेन (~ कुमारी कैकेयी)
|
प्रतिश्रवस्
↓

प्रतीप (~ सुनन्दा शैब्या)
|
१) देवापि, २) शान्तनु (~क) गङ्गा भागीरथी, ख) सत्यवती), ३) बाह्लीक
|
(क, १) देवव्रत अथवा भीष्म, (ख, २-३) (२) विचित्रवीर्य (~अम्बिका और अम्बालिका, कौसल्यात्मजे, काशिराज की पुत्रियाँ।) ३) चित्राङ्गदा

विचित्रवीर्य निःसन्तान ही मृत्यु को प्राप्त हुये। तदनन्तर सत्यवती को दुष्यन्त की वंशपरम्परा को आगे बढ़ाने की चिन्ता होने लगी। उन्होंने द्वैपायन जी को बुलाकर उनसे विचित्रवीर्य के लिये तीन पुत्र, धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुर, उत्पन्न कराये। महर्षि द्वैपायन के वरदान से धृतराष्ट्र को गान्धारी से १०० पुत्र प्राप्त हुये। इन पुत्रों में दुर्योधन, दुःशासन, विकर्ण, और चित्रसेन आदि को पर्याप्त प्रसिद्धि मिली। पाण्डु के दो पत्नियाँ थी : कुन्ती अथवा पृथा, और माद्री। एक दिन शिकार करते समय राजा पाण्डु ने मृग के वेश में अपनी भार्या से समागम करते हुये एक ऋषि का वध कर दिया जिसके परिणामस्वरूप उन ऋषि ने पाण्डु को यह शाप दे दिया कि उनकी भी स्त्री-समागम के समय ही मृत्यु हो जायगी। इस शाप के कारण पाण्डु ने अपनी पत्नी कुन्ती को अपने लिये पुत्र उत्पन्न करने का आग्रह किया। तब कुन्ती ने महर्षि दुर्वासा के वरदान से धर्म द्वारा युधिष्ठिर को, मारुत (अथवा वायु देवता) से भीम को, और इन्द्र (शक्र) से अर्जुन को उत्पन्न किया। तदनन्तर पाण्डु ने माद्री से भी पुत्रोत्पन्न करवाने के लिये कुन्ती से कहा जिसके परिणामस्वरूप अश्विनीकुमारों से माद्री को भी दो पुत्र, नकुल और सहदेव प्राप्त हुये। एक दिन माद्री के साथ वन में विहार करते समय पाण्डु ने कामपीड़ित होकर उसके साथ समागम आरम्भ किया किन्तु उसी क्षण उनकी मृत्यु हो गई। शोक विह्वल माद्री ने अपने दोनों पुत्रों को कुन्ती को सौंप कर स्वयं पति के साथ चिता में प्रवेश कर अपनी देह भी त्याग दिया। इस घटना के पश्चात वनवासी ऋषिगण पाण्डवों और कुन्ती को हस्तिापुर लाये और उनमें से वृद्धतम ऋषि ने भीष्म और विदुर को पाण्डवों का परिचय दिया। इसके तत्काल बाद वे सभी ऋषिगण अन्तर्धान हो गये, किन्तु चारों ओर दिशायें प्रकाशित हो गईं, दिव्य वाद्य बजने लगे तथा आकाश से पुष्पवर्षा होने लगी। जब हस्तिनापुर में पाण्डवों का पोषण होने लगा तब दुर्योधन को उनसे ईर्ष्या होने लगी। दुर्योधन ने पाण्डवों के विरुद्ध अनेक कुचक्र किये। उदाहरणार्थ उसने अपने पिता से पाण्डवों को वारणावत भेजने के लिये कहा तथा मार्ग में लाक्षागृह में उन्हें भस्म कर देने की योजना बनाई, किन्तु विदुर जी ने पाण्डवों की प्राणरक्षा में सहायता की। इसके बाद पाण्डवों ने हिडिम्ब-वध किया; एकचक्रा आये और बकासुर का वध किया। पश्चात नगर जाकर पाण्डवों ने द्रौपदी को प्राप्त किया और उसके साथ वापस घर आ गये। । पाण्डवों को ग्यारह पुत्र प्राप्त हुये : युधिष्ठिर को १) प्रतिविन्ध्य; भीमसेन को २) सुतसोम; अर्जुन को ३) श्रुतकीर्ति; नकुल को ४) शतानीक और सहदेव को ५) श्रुतकर्मा नामक पुत्र द्रौपदी से प्राप्त हुये। इनके अतिरिक्त युधिष्ठिर~देविका (गोवासन शैब्य की पुत्री) से ६) यौधेय; भीमसेन~बलन्धर काश्या से ७) सर्वग; अर्जुन~सुभद्रा (वासुदेव की बहन) से ८) अभिमन्यु; नकुल~करेणुमती चैद्या से ९) निरमित्र; सहदेव~विजयामाद्री (मद्रराज द्युतिमान की पुत्री) से १०) सुहोत्र; और भीमसेन~हिडिम्बा से ११) राक्षस घटोत्कच नामक पुत्र भी उत्पन्न हुये। पाण्डवों का वंश अभिमन्यु से आगे बढ़ा। अभिमन्यु का विराट की पुत्री उत्तरा से विवाह हुआ। उत्तरा ने एक छः मास के पुत्र को जन्म दिया। यह पुत्र अश्वत्थामा के ब्रह्मास्त्र के प्रहार के कारण ही मृत उत्पन्न हुआ था। उस समय श्रीकृष्ण के आदेश से कुन्ती ने इस पुत्र को अपनी गोद में उठा लिया और श्रीकृष्ण ने उसे पुनरुज्जीवित कर दिया। इस बालक का नाम परीक्षित् पड़ा क्योंकि वह परिक्षीण हो रहे वंश में उत्पन्न हुआ था। परीक्षित् का माद्रवती के साथ विवाह हुआ जिससे जनमेजय का जन्म हुआ। जनमेजय की पत्नी वपुष्टमा को दो पुत्र उत्पन्न

हुये जिनके नाम शतानीक और शंकुकर्ण थे। शतानीक की पत्नी विदेह राजकुमारी के गर्भ से उत्पन्न हुये पुत्र का नाम अश्वमेधदत्त हुआ। इस वंशानुकीर्तन नामक अध्याय का श्रवण-फल। (१. ९५)।

पूरुप = पुरुष (१२. ३०५, ८)।

१. पूर्ण, एक वासुकि-वंशीय नाग का नाम है (१. ५७, ५)।

२. पूर्ण, प्राधा के पुत्र एक देवगन्धर्व का नाम है (१. ६५, ४६)।

३. पूर्ण = विष्णु (सहस्रनाम)।

पूर्णभद्र, एक नाग का नाम है (१. ३५, १२)।

पूर्णमुख, धृतराष्ट्रवंशीय एक नाग का नाम है (१. ५७, १६)।

पूर्णाङ्गद, धृतराष्ट्र वंशीय एक नाग का नाम है (१. ५७, १६)।

पूर्णायुस्, प्राधा के पुत्र, एक देवगन्धर्व का नाम है (१. ६५, ४६)।

पूर्णाशा — देखिये पर्णाशा।

पूर्वचित्ति, एक प्रमुख अप्सरा का नाम है : १. ७४, ६८; १२३, ६५ (अर्जुन के जन्मोत्सव के समय गायन प्रस्तुत किया था); ३. ४३, २९ (इन्द्र की सभा में); १२. ३३२, २१ (उर्वशी और पूर्वचित्ति मलय पर्वत पर निवास करती हैं)।

पूर्वदेव = श्रीकृष्ण : १३. १५८, ११ (स एव पूर्वं निजघान दैत्यान् स पूर्वदेवश्च बभूव सम्राट)। = अर्जुन : ३. ४१; ३५। द्वि० = नर और नारायण : १. २२४, ४; २२८, १८; ५. ४९, ५. १९। =असुर (नील०) : २. १, १७।

पूर्वनिवास = महापुरुप (महापुरुपस्तव)।

पूर्वपालिन्, एक राजा का नाम है : ५. ४, १७ (इन्हें पाण्डवों को रण-निमन्त्रण भेजना था)।

पूर्वापूर्वालुगण्डिका, एक स्थान का नाम है (६. ७, २८)।

पूर्वा — "यस्मात् पूर्वतरे काले पूर्वमेवावृता सुरैः। अतएव च सर्वेषां पूर्वामाशां प्रचक्षते। पूर्वं सर्वाणि कार्याणि दैवानि सुखमीप्सता। अत्र वेदान् जगौ पूर्वं भगवान् लोकभावनः ॥," (५. १०८, ८-९)।

पूर्वाभिरामा, एक नदी का नाम है (६. ९, २२)।

पूषणा, एक मातृक का नाम है (९. ४६, २०)।

पूपन्, आदित्यों में से एक देवता का नाम है : १. ६५, १५ (यह नवें आदित्य हैं); १२३, ६७ (अर्जुन के जन्मोत्सव में आये); २२७, ३६ (कृष्ण और अर्जुन से युद्ध किया); ३. ३, १६ (धौम्य के नामों की गणना कराते समय सूर्य का पाँचवा नाम पूपा बताया). ६१ (युधिष्ठिर के स्तोत्र में सूर्य का द्योतक है); ५. १७९, ३९ (= सूर्य), ७. २०२, ५९ (जब दक्ष के यज्ञ में ये पुरोडाश खा रहे थे तब शिव ने इनके दाँत उखाड़ लिये थे); ९. ४५, ५ (स्कन्द के अभिषेक के अवसर पर उपस्थित हुये). ४४ (स्कन्द को दो सैनिक दिये); १०. १८, १६ (शिव ने इनका दाँत तोड़ दिया था). २२ (शिव ने पुनः इनके दाँत लगा दिये); १२. १५, १८ (न ब्रह्माणं न धातारं न पूषणां कथञ्चन); २०८, १६ (आदित्यों में दसवें); १३. ६५, ७ (ये घृत से सन्तुष्ट होते हैं); ८१, ३१ (एतान्लोकानवाप्नोति गां दत्वा"'येषामधिपतिः पूषा); ८५, ९९; १५०, १५ (आदित्यों में दसवें); १६०, १९ (शिव ने इनके दाँत उखाड़ दिये थे)।

१. पूषात्मज = कर्ण (८. ८९, ७६)।

२. पूषात्मज = इन्द्र (देखिये पूषानुज)।

पूषानुज = इन्द्र (८. २०, २९)।

पूष्णो दन्तभिद् = शिव (१४. ८, १४)।

पूष्णो दन्तविनाशः = शिव (७. २०२, ४९)।

पूष्णो दन्तविनाशनः = शिव (१२. २८४, १४८)।

पृथा = कुन्ती (देखिये वस्था०) : १. १, १७७; २, ३२१. ३४६; ६७, १२९. १४८; ९५, ५८. ८३; १११, १; ११२, १; १२०, ३२. ३६; १२४, २६; १२८, ६४; १३५, १६; १३६, ३. ३१; १५२, १६; १५७, ८. ११; १६१, १९; १८९, २३. २४; १९०, ४६; १९१, १; १९९, ४; २०३, १३; २०६, ५. २३; २२१, २१; २. २, २; २४, ५४; ४५, ५७; ७८, ५; ७९, १. १०; ३. ४६, ५५; २३३, ४१; ३०३, १०. १२. २२. २७. २८; ३०४, १३. २०; ३०५, ५. १२. २३; ३०८, १. २२. २३; ३०९, १५; ५. ९०, १. ३. ९०; ९१, १; १४४, १. २७; १४६, २. २७; ८. ६८, ३. १०. २९; ११. १५, ३३. ३४. ३८; १२. १, २६. २७. ३१. ३५. ३६. ३८. ४२; ४०, ४; १३. १६७, ९; १४. १५, १७; ५२, २८.. ३०; ६१, ३२; ६२, १०; ६३, २३; ६६. ५. २७; ६७, १. ९; ८८, २; ८९, २९; १५. १८, ३; १९, ६; २१, ३; २२, ५. १५; २४, ८. ११; ३१, ३; ३७, ७. १७. ३१. ३५. ४३; ३८, ७. १६; ३९, १३. १८।

पृथात्मज (बहु० °जाः) = पार्थ (बहु०) : ८. ८८, ३२।

पृथाश्व, यम की सभा में उपस्थित एक प्राचीन राजा का नाम है (२. ८, १९)।

पृथिविञ्जय = उत्तर (४. ६८, ७)।

पृथिवी = मूर्तिमान पृथिवी : २. ११, ४२; ३. ३, १७; १२, २२; १४२, ४१; ७. २९, ३०; ९. ४५, १२; ११. ८, २२. २५; १२. १४, ३७; ४९, ७३. ७५. ८८; ५९, ११७; ३४५, २६; १३. ७, २५ (प्रीणाति मातरं येन पृथिवी तेन पूजिता); २२, १०. ११. १५; ३४, २२; ८५, ७९ (पृथिवी तदा देवी ख्याता वसुमतीति वै); ९१, २५ (स्तोतव्या चेह पृथिवी निवापस्येह धारिणी); ९७, २ (वासुदेवस्य संवादं पृथिव्याश्चैव). ३ (संस्तुत्य पृथिवीं देवीं वासुदेवः). ५; १५४, ४. ७ (पृथिवी काश्यपी जज्ञे सुता तस्य महात्मनः)। तुकी० पृथ्वी।

पृथिवीतीर्थ, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३ १३)।

पृथिवीपति = महापुरुप (महापुरुपस्तव)।

१. पृथु, एक वसु का नाम है (१. ९९, ११. २७)। तुकी० धर।

२. पृथु, एक वृष्णि का नाम है : ९. १८६, १८ (यह द्रौपदी के स्वयंवर में आया); २१९, १०; ७. ११, २८।

३. पृथु, अयोध्या के एक राजा का नाम है : ३. २०२, २ (अनेना के पुत्र). ३ (विश्वगश्व के पिता)।

४. पृथु = शिव (१४. ८, ३१)।

५. पृथु = विष्णु (सहस्रनाम)।

पृथुलाक्ष, यम की सभा में उपस्थित एक प्राचीन राजा का नाम है (२. ८, १०)।

पृथुलाश्व, यम की सभा में उपस्थित एक प्राचीन राजा का नाम है (२. ८, २२)।

पृथुवक्त्रा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १९)।

पृथुवेग, यम की सभा में उपस्थित एक प्राचीन राजा का नाम है (२. ८, १२)।

पृथु वैन्य, एक पौराणिक राजा का नाम है : १. २, १९१; २. ५१, २२; ६. ९, ६। "नारद जी ने बताया : वेन के पुत्र राजा पृथु भी जीवित नहीं रह सके। महर्षियों ने राजसूय यज्ञ में उन्हें सम्राट के पद पर अभिषिक्त किया था। 'ये समस्त शत्रुओं को पराजित करके अपने प्रयत्न से प्रथित (विख्यात) होंगे,' ऐसा महर्षियों ने कहा था, इसलिये वे 'पृथु' कहलाये। ऋषियों ने यह भी कहा कि 'ये क्षत से हमारा त्राण करेंगे।' इसलिये वे क्षत्रिय इस सार्थक नाम से प्रसिद्ध हुये। वेन कुमार को देखकर प्रजा ने कहा हम इनमें अनुरक्त हैं। इसलिये उस प्रजारञ्जनजनित अनुराग के कारण उनका नाम 'राजा' हुआ। वेनुनन्दन पृथु के लिये यह पृथिवी कामधेनु हो गई थी। उनके राज्य में विना कृषित हुये ही पृथिवी अनाज उत्पन्न कर देती थी। उस समय सभी गायें कामधेनु के समान थीं। पत्ते-पत्ते में मधु भरा रहता था। कुश सुवर्णमय होते थे। उनका स्पर्श कोमल था और वे सुखद जान पड़ते थे। उन्हीं के चीर बनाकर प्रजा उनसे अपना शरीर ढकती थी तथा उन कुशों की ही चटाइयों पर सोती थी। वृक्ष के फल अमृत के समान मधुर और स्वादिष्ट होते थे। उन दिनों उन फलों का ही आहार किय जाता था। सभी मनुष्य नीरोग होते थे, सब सन्तुष्ट और भयरहित थे। उस समय राष्ट्रों और नगरों का विभाग नहीं था। सारी प्रजा

प्रसन्न रहती थी। राजा पृथु जब समुद्रयात्रा करते थे तब पानी थम जाता था और पर्वत उन्हें जाने के लिये मार्ग दे देते थे। उनके रथ की ध्वजा कभी खण्डित नहीं हुई थी। एक दिन सुखपूर्वक बैठे हुये राजा पृथु के पास वनस्पति, पर्वत, देवता, असुर, मनुष्य, सर्प, सप्तर्षि, पुण्यजन, गन्धर्व, अप्सरा तथा पितरों ने आकर इस प्रकार कहा : 'तुम हमारे सम्राट हो, क्षत्रिय हो, तथा राजा; रक्षक और पिता हो। तुम हमें अभीष्ट वर दो जिससे हम लोग अनन्तकाल तक तृप्ति और सुख का अनुभव करें। तुम ऐसा करने में समर्थ हो।' 'बहुत अच्छा, ऐसा ही होगा,' यह कहकर वेनकुमार पृथु ने अपना आजगव नामक धनुष और बाण हाथ में लेकर पृथिवी से कहा: 'वसुधे! तुम्हारा कल्याण हो। इन प्रजाजनों के लिये शीघ्र ही दुग्ध-धारा प्रवाहित करो। तब मैं जिसका जैसा अभीष्ट अन्न है उसे वैसा दे सकूँगा।' तब वसुधा ने पृथु से कहा कि वे उसे (वसुधा को) अपनी पुत्री मान लें। पृथु ने इस निवेदन को स्वीकार कर लिया। तदनन्तर प्राणियों के समुदाय ने वसुधा का दोहन आरम्भ किया। सबसे पहले दूध की इच्छा वाले वनस्पति उठे। उस समय गोस्वरूपधारिणी पृथिवी वात्सल्य-स्नेह से परिपूर्ण हो बछड़े, दुहने वाले और दुग्ध पात्र की इच्छा करती हुई खड़ी हो गई। वनस्पतियों से खिला हुआ शाल वृक्ष बछड़ा हो गया। पाकड़ का पेड़ दुहने वाला बन गया। गूलर सुन्दर दुग्धपात्र का काम देने लगा। कटने पर पुनः पल्लवित हो जाना यही दूध था। पर्वतों में उदयाचल बछड़ा, महागिरि मेरु दुहनेवाला, रत्न और ओषधि दूध तथा प्रस्तर ही दुग्धपात्र था। देवताओं में भी उस समय कोई दुहनेवाला और कोई बछड़ा बन गया। उन्होंने पुष्टिकारक अमृतमय प्रिय दूध का दोहन कर लिया। असुरों ने कच्चे बर्तन में मायामय दूध का ही दोहन किया। उस समय द्विमूर्धा दुहने वाला और विरोचन बछड़ा बना। भूतल में मनुष्यों ने कृषिकर्म और खेती की उपज को ही दूध के रूप में दूहा। उनके बछड़े के स्थान पर स्वायम्भू मनु ही थे और दोग्धा का कार्य पृथु ने किया। सर्पों ने तुम्बी के पात्र में पृथिवी से विष का दोहन किया। उनके ओर से दोग्धा धृतराष्ट्र और बछड़ा तक्षक था। अक्लिष्टकर्मा सप्तर्षियों ने ब्रह्म (वेद एवं तप) का दोहन किया। उनके दोग्धा बृहस्पति, पात्र छन्द और बछड़ा राजा सोम थे। यक्षों ने कच्चे पात्र में पृथिवी से अन्तर्धान विद्या का दोहन किया। उनके दोग्धा कुबेर और बछड़ा महादेव जी थे। अप्सराओं और गन्धर्वों ने कमल के पात्र में पवित्र गन्ध को ही दूध के रूप में दुहा। उनका बछड़ा चित्ररथ और दोग्धा गन्धर्व-राज विश्वरुचि थे। पितरों ने पृथिवी से रजत पात्र में स्वधारूपी दूध का जब दोहन किया तब उनकी ओर से वैवस्वत यम बछड़ा और अन्तक दोग्धा थे। इस प्रकार सभी प्राणियों ने बछड़ों और पात्रों की कल्पना करके पृथिवी से अपने-अपने अभीष्ट दूध का दोहन किया जिससे वे आज तक निरन्तर जीवन-निर्वाह करते हैं। तदनन्तर प्रतापी वेनकुमार पृथु ने नाना प्रकार के यज्ञों द्वारा यजन करके मन को प्रिय लगने वाले सम्पूर्ण भोगों की प्राप्ति कराकर सब प्राणियों को तृप्त किया। भूतल पर जो कोई भी पार्थिव पदार्थ हैं उनकी सोने की आकृति बनावा कर राजा पृथु ने महायज्ञ अश्वमेध में उन्हें ब्राह्मणों को दान किया। राजा ने ६६,००० सोने के हाथी बनवाकर ब्राह्मणों को दान किये। राजा पृथु ने इस सम्पूर्ण पृथिवी की भी मणि तथा रत्नों से विभूषित सुवर्णमयी प्रतिमा बनवा कर ब्राह्मणों को दे दिया। (७. ६९)।" ७. ६९, १-३. १३. १५. २१. २८; १२. २९, १३७-१३९। "महर्षियों ने वेन के दाहिने हाथ का मन्थन किया जिससे एक पुरुष का प्राकट्य हुआ। वह पुरुष रूप में इन्द्र के समान था। वह कवच धारण किये, कमर में तलवार बाँधे तथा धनुष और बाण लिये प्रकट हुये थे उन्हें वेदों और वेदान्तों का पूर्ण ज्ञान था और वे धनुर्वेद में भी पारङ्गत विद्वान् थे। उन वेनकुमार को सम्पूर्ण दण्डनीति का स्वतः ज्ञान हो गया। महर्षियों ने उनसे इस प्रकार कहा : 'वेननन्दन! जिस कार्य में नियम-पूर्वक धर्म की सिद्धि होती हो उसे निर्भय होकर करो। प्रिय-अप्रिय का विचार त्याग कर काम; क्रोध, लोभ और मान को दूर हटाकर समस्त प्राणियों के प्रति समभाव रक्खो। लोक में जो भी मनुष्य धर्म से विचलित हो उसे सनातन धर्म पर दृष्टि रखते हुये अपने बाहुबल से परास्त कर के दण्ड दो। साथ ही, मन, वाणी, और क्रिया द्वारा भूतलवर्ती ब्रह्म (वेद) का निरन्तर पालन करने की प्रतिज्ञा करो। ब्राह्मणों को अदण्डनीय मानने तथा सम्पूर्ण जगत् को वर्णसंकरता तथा धर्मसंकरता से बचाने का भी व्रत लो।' महर्षियों के इस प्रकार कहने पर वेनकुमार ने कहा : 'महाभाग ब्राह्मण मेरे लिये सदा वन्दनीय रहेंगे।' महर्षियों के एवमस्तु कहने के बाद शुक्राचार्य उन वेनकुमार के पुरोहित हुये। वालखिल्यगण तथा सरस्वती-तटवर्ती महर्षियों के समुदाय ने उनके मन्त्री का कार्य सँभाला। महर्षि गर्ग राज ज्योतिषी बने। मनुष्यों में यह लोकोक्ति है कि स्वयं राजा पृथु भगवान् विष्णु से आठवीं पीढ़ी में हुये थे। उनके जन्म से पहले सूत और मागध नामक दो बन्दी (स्तुतिपाठक) उत्पन्न हुये थे। वेन के पुत्र प्रतापी पृथु ने उन दोनों को पुरस्कृत किया। सूत को अनूप देश (सागर तटवर्ती प्रान्त) और मागध को मगध देश प्रदान किया। पृथु के समय यह पृथिवी बहुत ऊँची-नीची थी। उन्होंने ही इसे भली भाँति समतल बनाया था। सभी मन्वन्तरों में पृथिवी ऊँची-नीची हो जाती है। उस समय वेनकुमार पृथु धनुष की कोटि द्वारा चारों ओर से शिला समूहों को उखाड़ डाला और उन्हें एक स्थान पर संचित करा दिया। इसलिये पर्वतों की लम्बाई, चौड़ाई और ऊँचाई बढ़ गई। विष्णु, देवताओं सहित इन्द्र, ऋषि-समूह, प्रजापतिगण तथा ब्राह्मणों ने पृथु का राजा के पद पर अभिषेक किया। उस समय साक्षात् पृथिवी देवी रत्नों की भेंट लेकर उनकी सेवा में उपस्थित हुई थीं। समुद्र, हिमवान, और इन्द्र ने भी अक्षय धन समर्पित किया। महामेरु ने स्वयं आकर उन्हें सुवर्ण की राशि भेंट की। कुबेर ने प्रचुर धन दिया। पृथु के चिन्तन करते ही उनकी सेवा में अश्व, रथ, हाथी, और कोटिशः मनुष्य प्रकट हो गये। उनके राज्य में किसी को वृद्धावस्था दुर्भिक्ष, तथा आधिव्याधि का कष्ट नहीं था। सबकी रक्षा की समुचित व्यवस्था होने के कारण किसी को सर्पों, चोरों, तथा आपस के लोगों से भय नहीं प्राप्त होता था। जिस समय वे समुद्र में होकर चलते थे उस समय उसका जल स्थिर हो जाता था। पर्वत उन्हें रास्ता दे देते थे। उनके रथ की ध्वजा कभी भग्न नहीं हुई। उन्होंने इस पृथिवी से सत्रह प्रकार के धान्यों का दोहन किया। यक्षों, राक्षसों, और नागों में से जिनको जो वस्तु अभीष्ट थी उसका उन्होंने पृथिवी से दोहन कर लिया था। उन्होंने समस्त प्रजाओं का रंजन किया था इसलिये वे 'राजा' कहलाये। ब्राह्मणों की क्षति से रक्षा करने के कारण वे क्षत्रिय कहे जाने लगे। उन्होंने धर्म के द्वारा इस भूमि को प्रथित किया इसलिये मनुष्य इसे 'पृथ्वी' कहने लगे। राजा पृथु की तपस्या से प्रसन्न होकर विष्णु ने स्वयं उनके शरीर में प्रवेश किया था। समस्त नरेशों में से राजा पृथु को ही यह सारा जगत् देवता के समान मस्तक झुकाता है। उस समय भगवान् विष्णु के ललाट से एक सुवर्णमय कमल प्रकट हुआ जिससे बुद्धिमान धर्म की पत्नी श्रीदेवी का प्रादुर्भाव हुआ। धर्म के द्वारा श्रीदेवी से अर्थ की उत्पत्ति हुई। तदनन्तर धर्म, अर्थ और श्री – तीनों ही राज्य में प्रतिष्ठित हुये। पुण्य का क्षय होने पर मनुष्य स्वर्गलोक से पृथिवी पर आता है और दण्डनीति विशारद राजा के रूप में जन्म लेता है। वह मनुष्य इस भूतल पर भगवान् विष्णु की महत्ता से युक्त तथा बुद्धि-सम्पन्न हो विशेष माहात्म्य प्राप्त कर लेता है। तदनन्तर उसे देवताओं द्वारा राजा के पद पर स्थापित हुआ मानकर कोई भी उसकी आज्ञा का उल्लंघन नहीं करता। यह सारा जगत् उस एक ही व्यक्ति के वंश में स्थित रहता है (१२. ५९, ९८ - १३७)।" १२. १६६, ८६ (पृथु ने ही सर्वप्रथम धनुष का उत्पादन किया था और उन्होंने ही इस पृथिवी से नाना प्रकार के शस्यों (अन्न के बीजों) का दोहन किया था। उन वेनकुमार पृथु ने पहले के ही समान धर्मपूर्वक इस पृथिवी की रक्षा की थी); २२७, ४९ (पृथिवी के प्राचीन शासकों में इनका उल्लेख); १३. ११५, ७४ (ये कार्तिक मास में मांस-भक्षण नहीं करते थे); १५०, ४७ (पृथुं वैन्यं नृपवरं पृथ्वी यस्याभवत्सुता। प्रजापतिं सार्वभौमं कीर्तयेद्वसुधाधिपम्); १६५, ५५ (आदिराजः पृथुर्वैन्यो)। तुल० प्रजापति, वैन्य।

१. पृथुश्रवस्, एक अथवा अधिक प्राचीन नरेशों का नाम हैं : १.

९५, २१ (अयुतनायिन की पत्नी कामा के पिता); २. ८, १२ (यम की सभा में)।

२. पृथुश्रवस्, एक ब्राह्मण का नाम है जो युधिष्ठिर की सेवा करता था (३. २६, २२)।

३. पृथुश्रवस्, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६२)।

४. पृथुश्रवस्, एक नाग का नाम है (१६. ४, १५)।

पृथुहर = शिव (१४. ८, ३१)।

पृथूदक, सरस्वतीतट पर स्थित एक तीर्थ का नाम है : ३. ८३, १४२. १४५ - १४७. १४९ (स्त्री हो या पुरुष, उसने मानव बुद्धि से अनजान में या जान-बूझ कर जो कुछ भी पापकर्म किया है वह सब पृथूदक तीर्थ में स्नान करने मात्र से नष्ट हो जाता है और तीर्थसेवी पुरुष को अश्वमेध यज्ञ के फल एवं स्वर्गलोक की प्राप्त होती है); ९. ३९, २९. ३४ (तपस्वी रुषंगु ने पृथूदक तीर्थ में स्नान करने के बाद इस तीर्थ के सम्बन्ध में इस प्रकार कहा था : जो सरस्वती के उत्तर तट पर पृथूदक तीर्थ में जप करते हुये अपने शरीर का परित्याग करता है उसे भविष्य में पुनः मृत्यु का कष्ट नहीं भोगना पड़ता); १२. १५२, ११ (सरस्वत्याश्च तीर्थानि तीर्थेभ्यश्च पृथूदकम्)।

पृथ्वी = पृथिवी : १३. ३४, २० (संवादं वासुदेवस्य पृथ्व्याश्च); १५०, ४७ (पृथुं वैन्यं नृपवरं पृथ्वी यस्याभवत्सुता)।

पृश्नि (बहु० °श्नयः) ऋषियों के एक वर्ग का नाम है : ७. १९०, ३४; १२. २६, ७; १६६, २५।

पृश्निगर्भ = कृष्ण (विष्णु) : १२. ४३, ६; ३४१, ४५-४७।

पृश्निगर्भप्रवृत्त = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

पृषत, द्रुपद के पिता, पाञ्चालों के राजा का नाम है : १. १३०, ४१ (ये भरद्वाज के मित्र थे). ४३ (द्रुपद के पिता); १६६, ६ (भरद्वाज के मित्र). ८ (द्रुपद के पिता)।

पृषतात्मज = द्रुपद (५. १८९, ६)।

पृषती = पार्षती (१. १६७, ५१)।

पृषदश्व, यम की सभा में उपस्थित एक प्राचीन नरेश का नाम है : २. ८, १२; १२. १६६, ८१ (इन्होंने अष्टक से एक खड्ग प्राप्त किया था जो इनसे भरद्वाज को प्राप्त हुआ)।

पृषद्ध्र, एक प्राचीन नरेश का नाम है (१३. १६५, ५८)। देखिये अगला शब्द।

पृषध्र, एक अथवा अधिक प्राचीन राजाओं का नाम है : १. ७५, १६ (मनु वैवस्वत के नवें पुत्र); १५. २०, ११ (ये स्वर्गलोक गये।

पृष्ठज — 'तस्य शाखो विशाखश्च नैगमेयश्च पृष्ठजः,' (१. ६६, २४)।

पेशल = विष्णु (सहस्रनाम)।

पैङ्ग, एक मुनि का नाम है जो युधिष्ठिर की सेवा करते थे (२. ४, १७)।

पैजवन, एक शूद्र का नाम है : १२. ६०, ३९ (इसने ऐन्द्राग्नि यज्ञ की विधि से मन्त्रहीन यज्ञ का अनुष्ठान करके उसकी दक्षिणा के रूप में एक लाख पूर्णपात्र दान किये थे)।

१. पैतामह (वि०) : ३. १६८, ३० (अस्त्रम्); ९. ४५, ७७ (महापारिषदा); १२. १६०, ३२ (पैतामहं स्थानं ब्रह्मराशिसमुद्भवम् गुहायां पिहितं नित्यं)।

२. पैतामह = मनु (१. ६६, १७)।

पैतृक (वि०) : १३. २३, २ (पितरों के संस्कार)।

पैत्र (वि०) : ७. २०१, ७३ (कर्म)।

पैत्र्य (वि०) : १३. १२६, २५ (पितरों को समर्पित अन्नादि)।

पैप्पलादि, एक ब्राह्मण का नाम है: १२. १९९, ४ (षडङ्गविन्महाप्राज्ञः पैप्पलादिः स कौशिकः)।

पैल, एक ऋषि का नाम है : १. ६३, ८९ (व्यास के शिष्य); २. ४, ११ (युधिष्ठिर की सेवा में उपस्थित); ३३, ३५ (युधिष्ठिर के राजसूय में होता बने); १२. ४७, ६ (व्यासशिष्य); ३१८, २०; ३२७, १९; ३४९, ११; १४. ७२, ३।

पैलगर्ग, एक ऋषि का नाम है: ५. १८६, २८ (अम्बा ने इनके आश्रम में तपस्या की थी)।

१. पैशाच (वि०) : १. ७३, ९ (विवाह). १२; ३. २३०, ५२ (अधिरोहन्ति यं नित्यं पिशाचाः पुरुषं प्रति। उन्मादयति स तु क्षिप्रं ग्रहः पैशाच एव सः); ६. १०८, १६; १२. ३०१, ५; १३. १९, १७ (कुबेर की सभा में); ४४, ९ (पैशाच विवाह)।

२. पैशाच (बहु० °चाः), एक जाति के लोगों का नाम है : ७. १२१, १४ (सात्यकि पर आक्रमण किया)। तुकी० पिशाच (बहु०)।

पोतक, एक नाग का नाम है (५. १०३, ११)।

पोतिमत्सक, एक राजा का नाम है (५. ४, २०)।

पोतृ = शिव (७. ८०, ५९)।

१. पौण्ड्र, पुण्ड्रों अथवा पौण्ड्रों के राजा का द्योतक है : १. १८७, १६ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित); ५. ४, २१।

२. पौण्ड्र, भीमसेन के शङ्ख का नाम है (६. २५, १५; ५१, २५)।

३. पौण्ड्र (बहु० °ण्ड्राः) एक जाति के लोगों का नाम है : १. १७५, ३७ (वसिष्ठ की धेनु के फेन से उत्पन्न हुये); २. ५१, २२ (राजसूय के समय उपस्थित थे); ६. ९, ५७; ५०, ४८. ५० (युधिष्ठिर की सेना में); ७. ४, ८ (कर्ण इन्हें पराजित कर चुके थे); ११, १५ (कृष्ण इन्हें पराजित कर चुके थे); २०, १० (दुर्योधन की सेना में); ८. ४५, १४; १२. ६५, १४ (बर्बर और हीन जातियों के अन्तर्गत इनका भी उल्लेख); १३. ३५, १७ (ये शूद्र हो गये थे)। तुकी० पौण्ड्रिक (बहु०); पुण्ड्र (बहु०)।

पौण्ड्रक, = वासुदेव : १. १८६, १२; २. १४, २०; ३४, ११। तुकी० पौण्ड्र, पुण्ड्राधिप।

पौण्ड्रमात्स्यक, एक राजा का नाम है : १. ६७, ४३ (यह असुर वर्षीन के अंश से उत्पन्न हुआ था)।

पौण्ड्रिक (बहु० °काः), एक जाति = पौण्ड्र (बहु०) : २. ५२, १६ (ये युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये)।

पौदन्य, एक नगर का नाम है : १. १७७, ४७ (अश्मक द्वारा स्थापित)।

पौरन्दर (वि०) : १. ११४, ९; १९०, २१।

१. पौरव (बहु० °वाः), अर्थात पूरु के वंशज। एक जाति का नाम है : १. ६८, ३ (पौरवाणां वंशकरो दुष्यन्तः); ७३, १५ (= दुष्यन्त). ३४; ९५, १० (पूरु के वंशज); १००, ४१. ४२ (शान्तनु इनके शासक थे); ११८, २१ (पाण्डु इसी वंश में उत्पन्न हुये थे); ३. ४६, ४०; ६. ५६, १४; ७. १११, २८ (अर्जुन पर आक्रमण किया)। तुकी० पौरवक (बहु०)।

२. पौरव = बृहत्क्षत्र : ७. २००, ७३. ७७. ८०. ८४. ८६; २०१, १०। तुकी० ७. पौरव।

३. पौरव = शान्तनु (१. १००, ५०)।

४. पौरव = दुष्यन्त (१. ७४, ६०. ११४. ११५)।

५. पौरव = १. जनमेजय (९. ३७, ३३)।

६. पौरव = संवरण (१. ९४, ४५)।

७. पौरव, युधिष्ठिर के समकालीन एक या अधिक राजाओं का नाम है : १. ६७, २८ (शरभासुर के अंश से उत्पन्न); १८६, १५ (दृढधन्वा); २. २७, १४. १५ (पार्वतीयों के राजा). १६ (अर्जुन ने इसे पराजित किया); ५. ४, १४; १६७, १९ (दुर्योधन की सेना के एक महारथी); ६. १७, २६ (दुर्योधन की सेना में); ६१, २०; ११५, २७ (धृष्टकेतु ने इससे युद्ध किया); ११६, १३. १५. १६. २२. २३. २५; ७. १४, ५०. ५२- ५४. ५९. ६२. ६४ (अभिमन्यु ने इसे पराजित किया); ३७, ६ (अभिमन्यु पर आक्रमण किया); ८. ५, ३६ (महाभारत युद्ध में अर्जुन

ने इसका वध किया था); ९. २, ३५; २४, २६। तुकी २. पौरव।

८. पौरव, अङ्गों के एक प्राचीन राजा का नाम है (= बृहद्रथ) : "नारद जी ने कहा : राजा पौरव ने दस लाख श्वेत घोड़ों का दान किया था। उनके अश्वमेध में देश-देश से आये हुये शिक्षाशास्त्र, अक्षर और यज्ञविधि के ज्ञाता असंख्य विद्वान उपस्थित थे। नित्य उद्योगशील एवं खेलकूद करने वाले नट, नर्तक और गन्धर्वगण कुक्कुट सी आकृति वाले आरती के प्यालों से अपनी कला का प्रदर्शन करके उन विद्वानों का मनोरंजन करते थे। उस यज्ञ के सम्बन्ध में प्राचीन बातों को जानने वाले लोग विविध गाथाओं का गायन करते थे (७. ५७, १ और बाद)।" तुकी० ७. बृहद्रथ, ४. आ।

९. पौरव (वि०) : १. ७५, ४६. ५६; ८५, १. ३५; ९४, १५।

पौरवक (बहु० °काः) एक जाति = पौरव (बहु०) : ६. ५०, ४८ (युधिष्ठिर की सभा में)।

पौरवदायाद = विदूरथसुत (१२. ४९, ७६)।

१. पौरवनन्दन = भरत (१. ९४, २३)।

२. पौरवनन्दन = शान्तनु (१. ९९, १७)।

३. पौरवनन्दन = संवरण (१. १७१, १४)।

पौरवशार्दूल—'दिव्यां पौरवशार्दूल महतीमद्भुतोपमाम्,' (३. ३८,९)।

पौरवेश्वर, एक राजा का द्योतक है जिसे अपनी दिग्विजय के समय दक्षिण में सहदेव ने पराजित किया था (२. ३१, ६१)।

पौराण (वि०) अर्थात पुराण में वर्णित, परम्परागत, प्राचीन आदि : १. २, २७१ (त्रिपुरस्य निपातनम्); ७४, ३७; १२१, ६; १२२, ६; १२३, १६. १७; ५. १०२, १४; १०८, १३; १७८, ६१; ८. ४१, ७८; १२. ३४७, ७५; १३. १५८, १७; १५. २६, ३।

पौराणिक (वि०) पुराणों का मर्मज्ञ : १. ४, १ (लोमहर्षणपुत्र उग्रश्रवाः सौतिः पौराणिको). २ (पौराणिकः पुराणे कृतश्रमः); ५१, ७. १५; ५६, ६; २१४, २; ६. १२, ४२; १२. ८५, ९।

पौरिक, पुरिकाओं के राजा का नाम है (१२. १११, ३)।

पौरुकुत्स = त्रसदस्यु (३. ९८, १२)।

पौरुष (वि०) : ३. २७२, ४८; १२. ३४७, १७।

पौरूरवस (वि०) : ८. ४०, ५१।

१. पौलस्त्य (पुलस्त्य-पुत्र) = कुबेर : २. १०, ३७; ३. १७८, २; ५. १९२, ५६।

२. पौलस्त्य = रावण : ३. २८४, ९; ५. १०९, १२; ७. ५९, ५।

३. पौलस्त्य = विभीषण : २. ३१, ७२; ३. २९१, ६७।

४. पौलस्त्य (बहु० °त्याः) = पुलस्त्य के वंशज : १. ६७, ८९. ९१ (राक्षस, जिन्होंने धृतराष्ट्र के पुत्रों के रूप में जन्म लिया); ३. २८०, ६२ (रावण); २८३, ३६ (रावण); ७. १५६, ११३ (राक्षसों का एक वर्ग)।

५. पौलस्त्य (वि०) : ७. २३, ९३ (घटोत्कच द्वारा धारण किया गया पौलस्त्य धनुष)।

पौलस्त्यतनय = रावण (९. ३१, ११)।

१. पौलोम (वि०) : १. १, ८८; २, ३४. ४२. ८५. ९०।

२. पौलोम, एक तीर्थ का नाम है : १. २१६, ३ (पाँच नारीतीर्थों में से एक)।

३. पौलोम (बहु० °माः) असुरों की एक जाति का नाम है : १. २, १८५; ३. १७३, २. १२. १३ (हिरण्यपुर में पुलस्त्य की सन्तान जिनका अर्जुन ने संहार किया); ४. ४५, ३८ (अर्जुन ने इन्हें पराजित किया था); ६१, २५; ५. ४९, १४ (नर ने इनका संहार किया); ७. ५१, १७ (अर्जुन ने इनका संहार किया)।

पौलोमन् (बहु०) = पौलोम (बहु०) : १. १, १६४।

पौलोमपर्वन्, महाभारत के चौथे अवान्तर पर्व का नाम है : शौनक के द्वादशवर्षीय यज्ञ के समय नैमिषारण्य में सौति और ऋषियों का संवाद (१. ४)। शौनक की वंशपरम्परा का वर्णन करते हुये सौति ने उन्हें ब्रह्मा, भृगु, च्यवन, प्रमति, रुरु आदि के वंश में उत्पन्न बताया। रुरु ने नागों को नष्ट कर देने की प्रतिज्ञा की। वे जहाँ भी किसी सर्प को देखते उसका वध कर देते थे। सहस्रपद ने रुरु से जनमेजय के सर्पयज्ञ तथा आस्तीक द्वारा सर्पों की रक्षा का विवरण जानने के लिये कहा। तब घर आकर रुरु द्वारा अपने पिता से उस सर्पयज्ञ के सम्बन्ध में बताने का निवेदन करने पर उन्होंने उसकी सम्पूर्ण कथा का वर्णन किया (१. ९–१२)।

पौलोमी = शची (१०. ११, २६)।

पौष, भारतीय वर्ष के एक मास का नाम है : १३. १०६, २० (इस मास में एक समय उपवास करने का फल); १०९, ४ (श्रीकृष्ण की नारायण के रूप में पूजा करते हुये इस मास के बारहवें दिन उपवास करने का फल); १२६, ४८ (इस मास के शुक्ल पक्ष में रोहिणी नक्षत्र के अन्तर्गत श्राद्ध करने का फल)।

पौष्टी, पूरु की पत्नी का नाम है जिसने प्रवीर आदि पुत्रों को जन्म दिया (१. ९४, ५)।

१. पौष्य, एक क्षत्रिय का नाम है : १. ३, ८२. ९६. १०२. १०३. १०५-१०८. ११३. ११६-११८. १२२।

२. पौष्य (वि०) : १. २, ३४. ४२. ८५. ८९।

३. पौष्य (वि०) – पुष्य नक्षत्र से सम्बद्ध : १. १९८, ५।

पौष्यपर्वन् महाभारत के तीसरे अवान्तर पर्व का नाम है : "जनमेजय अपने भाइयों के साथ कुरुक्षेत्र में दीर्घकाल तक चलने वाले यज्ञ का अनुष्ठान करते थे। उनके तीन भाई थे – श्रुतसेन, उग्रसेन और भीमसेन। ये तीनों उस यज्ञ में बैठे थे। इतने में ही देवताओं की कुतिया सरमा का पुत्र सारमेय वहाँ आया। जनमेजय के भाइयों ने उस कुत्ते को मारा जिससे वह रोता हुआ अपनी माँ के पास गया और यह बताया कि जनमेजय के भाइयों ने उसे मारा है। माँ के पूछने पर कुत्ते ने अपने को सर्वथा निर्दोष बताया। तब उसकी माता सरमा ने यज्ञसत्र में आकर जनमेजय से पूछा कि उसके पुत्र ने जब कोई अपराध नहीं किया था तब उसे क्यों मारा गया। सरमा के प्रश्न को सुन कर भी जब वहाँ जनमेजय और उनके भाई चुप रहे तब उसने उन लोगों को यह शाप दिया कि उन पर अकस्मात ऐसा भय उत्पन्न होगा जिसकी पहले से कोई सम्भावना न रही होगी। शाप को सुन कर जनमेजय अत्यन्त दुःखी हो उठे। सत्र समाप्त होने पर वे हस्तिनापुर आये और अपने योग्य पुरोहित की खोज करते हुये इसके लिये बहुत यत्न करने लगे जिससे शापजनित भय की शान्ति हो सके। एक दिन शिकार खेलते हुये जनमेजय ने वन में एक आश्रम देखा जो उन्हीं के राज्य में था। उस आश्रम में श्रुतश्रवा नाम के एक ऋषि रहते थे और उनके पुत्र का नाम सोमश्रवा था। जनमेजय ने श्रुतश्रवा के पास जाकर उनके पुत्र सोमश्रवा का अपने पुरोहित के रूप में वरण किया। श्रुतश्रवा ने बताया कि उनका पुत्र सोमश्रवा एक सर्पिणी के गर्भ से उत्पन्न हुआ है। उन्होंने यह भी बताया कि वह पुत्र जनमेजय के सम्पूर्ण पापकृत्याओं (शापजनित उपद्रवों) को शान्त करने में समर्थ है किन्तु उसका एक गुप्त नियम यह भी है कि यदि कोई ब्राह्मण उसके पास आकर किसी वस्तु की याचना करेगा तो वह उसे उसकी अभीष्ट वस्तु अवश्य दे देगा। तदनन्तर श्रुतश्रवा को आश्वस्त करके राजा जनमेजय सोमश्रवा को पुरोहित के रूप में साथ लेकर अपने राज्य में लौट आये। उन्होंने अपने भाइयों को पुरोहित की आज्ञा मानने का आदेश दे कर तक्षशिला विजय के लिये प्रस्थान किया। इन्हीं दिनों आयोदधौम्य नामक एक ऋषि थे जिनके तीन शिष्य थे – उपमन्यु, आरुणि पाञ्चाल और वेद। एक दिन ऋषि ने अपने शिष्य आरुणि को खेत की टूटी क्यारियों की मेंड़ बाँधने के लिये भेजा। आरुणि ने गुरु की आज्ञा का पालन करते हुये मेंड़ बाँधने का प्रयास किया किन्तु जब पानी को रोकने में असफल हो गया तब वह टूटी हुई मेंड़ के स्थान पर स्वयं लेट गया जिससे जल का बहना रुक गया। कुछ काल के पश्चात् आरुणि को वापस न आया देख कर ऋषि प्रवर अपने अन्य शिष्यों सहित स्वयं उस स्थान पर आये जहाँ उन्होंने आरुणि को भेजा था। अपने

गुरु के बुलाने पर आरुणि ने बताया कि टूटी हुई क्यारी में पानी रोकने के लिये वह स्वयं वहाँ लेट गया था। आरुणि के ऐसा कहने पर उपाध्याय ने उत्तर दिया : 'तुम क्यारी के मेंड़ को विदीर्ण करके उठे हो अतः इस उद्दलन कर्म के कारण तुम उद्दालक नाम से प्रसिद्ध होओगे।' साथ ही उपाध्याय ने आरुणि को अन्य आशीर्वादों से अनुगृहीत किया। तदनन्तर उपाध्याय आयोदधौम्य ने अपने दूसरे शिष्य उपमन्यु को भी परीक्षार्थ अनेक आदेश दिये। एक दिन जब उपमन्यु घर नहीं लौटे तब उपाध्याय ने उन्हें ढूँढते हुये वन में आकर देखा कि वह अन्धे होकर कूएँ में गिर पड़े हैं। तब उपाध्याय ने उन्हें अश्विनीकुमारों की स्तुति करने का आदेश दिया। उपमन्यु की स्तुति से प्रसन्न होकर अश्विनीकुमारों ने प्रकट होकर उन्हें एक पूआ खाने के लिये दिया। परन्तु अपूर्व गुरुभक्ति का परिचय देते हुये उपमन्यु ने गुरु को निवेदन किये बिना उस अपूप को खाना अस्वीकार कर दिया। तब अश्विनीकुमारों ने प्रसन्न होकर उपमन्यु की आँखें भी ठीक कर दीं तथा उनके दाँत सुवर्णमय बना दिये। उपमन्यु ने लौट कर गुरु से सब कुछ बताया जिस पर प्रसन्न होकर गुरु ने उन्हें भी अनेक आशीर्वाद दिये। आयोदधौम्य के तीसरे शिष्य थे वेद। वेद की परीक्षा के लिये भी उपाध्याय ने उन्हें आदेश दिये जिन्हें सफलतापूर्वक पूर्ण करने पर उपाध्याय ने उन्हें भी अनेक आशीर्वाद दिये। तदनन्तर उपाध्याय की आज्ञा से अपनी शिक्षा समाप्त करके वेद अपने घर लौट आये और गृहस्थाश्रम में रहने लगे। एक समय ब्रह्मवेत्ता वेद के पास जनमेजय और पौष्य नामक दो क्षत्रियों ने आकर उनका अपने उपाध्याय के रूप में वरण किया। इसके बाद एक दिन वेद जब बाहर जाने के लिये उद्यत हुये तब उन्होंने अपने एक उत्तङ्क नामक शिष्य को अग्निहोत्र आदि के कार्य में नियुक्त किया। उत्तङ्क गुरु की आज्ञा का पालन करते हुये गुरुगृह में रहने लगे। एक दिन उपाध्याय के आश्रम में रहनेवाली स्त्रियों ने उनसे बताया कि उनकी गुरुपत्नी का ऋतुकाल उपस्थित है अतः यह ऋतुकाल निष्फल न हो इसलिये उत्तङ्क से आवश्यक उपाय करने के लिये कहा किन्तु उत्तङ्क ने यह निन्द्य कर्म करना अस्वीकार कर दिया। कुछ समय के पश्चात् वेद ने जब वापस लौट कर उत्तङ्क का समाचार ज्ञात किया तब वे अत्यन्त प्रसन्न हुये। उत्तङ्क को गुरु ने जब आशीर्वाद दिया तब उत्तङ्क ने भी गुरुदक्षिणा देने की इच्छा प्रकट की। तब गुरु ने इस सम्बन्ध में उत्तङ्क से कहा कि वह गुरुपत्नी से ही पूछ लें कि वह किस प्रकार की गुरुदक्षिणा से प्रसन्न होंगी। फलस्वरूप उत्तङ्क ने अपनी गुरुपत्नी से इस सम्बन्ध में पूछा। गुरुपत्नी ने उन्हें राजा पौष्य की क्षत्राणी पत्नी के कानों के कुण्डल माँग कर लाने के लिये कहा। इस कार्य के लिये उन्होंने उत्तङ्क को केवल चार दिन का ही समय दिया। गुरुपत्नी के ऐसा कहने पर उत्तङ्क वहाँ से चल दिये। मार्ग में उन्हें एक विशाल बैल पर आरूढ़ एक विशालकाय पुरुष मिला जिसने उन्हें बैल का गोबर खाने का परामर्श दिया। कुछ संकोच के पश्चात् उत्तङ्क गोबर खा कर राजा पौष्य के पास आये। वहाँ राजा से कुण्डलों के लिये निवेदन करने पर राजा ने अपनी क्षत्राणी पत्नी से ही माँगने के लिये कहा। अन्तःपुर में प्रवेश करने पर उत्तङ्क को क्षत्राणी वहाँ नहीं मिलीं। लौट कर जब पौष्य से उत्तङ्क ने रानी के दिखाई न पड़ने की बात कही तब उन्होंने उत्तङ्क से कहा : 'निश्चय ही आप जूठे मुँह हैं। मेरी पत्नी क्षत्राणी पतिव्रता होने के कारण उच्छिष्ट-अपवित्र मनुष्य के द्वारा नहीं देखी जा सकती।' तब उत्तङ्क को स्मरण आया कि गोबर भक्षण के पश्चात् उन्होंने ठीक से आचमन नहीं किया था। अतः उत्तङ्क ने शुद्ध जल से आचमन करके जब पुनः अन्तःपुर में प्रवेश किया तब उन्हें क्षत्राणी का दर्शन प्राप्त हुआ। उत्तङ्क ने जब महारानी से गुरुदक्षिणा के लिये दोनों कुण्डल माँगा तब रानी ने स्वयं अपने कुण्डल उतार कर उन्हें दे दिया किन्तु उन्हें सतर्क करते हुये इस प्रकार कहा : 'ब्रह्मन्! नागराज तक्षक इन कुण्डलों को पाने के लिये बहुत प्रयत्नशील हैं। अतः आपको अत्यन्त सावधान होकर इन्हें ले जाना चाहिये।' तदनन्तर महारानी से आज्ञा लेकर उत्तङ्क पौष्य से भी विदा लेने आये। पौष्य ने तब आग्रह करके उत्तङ्क से भोजन करने का निवेदन किया। भोजन आने पर उत्तङ्क ने उसमें एक बाल पड़ा देख कर पौष्य को अन्धा हो जाने का शाप दे दिया। पौष्य ने भी तब उत्तङ्क को सन्तानहीन हो जाने का शाप दिया। पौष्य ने बाद में उत्तङ्क से क्षमा-याचना की जिस पर उत्तङ्क ने कहा कि कुछ दिन अन्धे रहने के बाद उनके नेत्र फिर ठीक हो जायेंगे। इस प्रकार अपने शाप का निराकरण करने के बाद उत्तङ्क ने पौष्य से अपने शाप को निरस्त करने के लिये कहा किन्तु पौष्य ने अपनी असमर्थता प्रकट करते हुये ब्राह्मण होते हुये भी अत्यधिक क्रोध करने पर उत्तङ्क की भर्त्सना की। उत्तङ्क वहाँ से दोनों कुण्डल ले कर जब घर लौटने लगे तब मार्ग में उन्होंने एक नग्न क्षपणक को छिप कर अपने पीछे आते देखा। कुछ दूर चल कर उत्तङ्क ने एक जलाशय के निकट जब उन कुण्डलों को रख कर नित्य-कर्म आदि कृत्य आरम्भ किया तो इसी बीच उस क्षपणक ने उन कुण्डलों का हरण कर लिया। वास्तव में वह क्षपणक नागराज तक्षक ही था। उत्तङ्क ने उसका पीछा कर के उसे पकड़ लिया किन्तु उसी क्षण उसने क्षपणक का रूप त्याग कर तक्षक नाग का रूप धारण कर लिया और एक विवर में प्रविष्ट होकर नागलोक चला गया। उत्तङ्क ने भी इन्द्र की सहायता से उस विवर के मार्ग से नागलोक में पहुँच कर नागों का स्तवन किया। फिर भी उत्तङ्क को कुण्डल प्राप्त नहीं हुये। उस समय उत्तङ्क ने वहाँ बारह अरों का एक चक्र देखा जिसे छः कुमार घुमा रहे थे। उसे काल-चक्र का रूप मान कर उत्तङ्क ने उस चक्र के पास विद्यमान श्रेष्ठ पुरुष का भी स्तवन किया (यहाँ कालचक्र का ज्योतिषशास्त्रीय वर्णन है)। उस पुरुष ने उत्तंक से प्रसन्न हो कर वर माँगने के लिये कहा। उत्तंक ने सभी नागों को वशीभूत कर लेने का वर माँगा। उस पुरुष ने तब वहीं खड़े अश्व की गुदा में फूँक मारने के लिये कहा। उत्तंक के वैसा करते ही चारों ओर धूएँ सहित अग्नि की ज्वालायें निकलने लगीं। तक्षक भी उससे त्रस्त हो कर उत्तंक के पास आया और उन्हें दोनों कुण्डल वापस दे दिया। तदनन्तर उत्तङ्क कुण्डल ले कर अपने आचार्य के पास आये और गुरुपत्नी को सौंप दिया। उत्तंक ने कुण्डल प्राप्त करने के सन्दर्भ में हुई समस्त घटनाओं का विवरण अपने आचार्य को बताया। उपाध्याय ने उत्तङ्क के साथ घटित सम्पूर्ण घटना का रहस्य समझाने के बाद उन्हें आशीर्वाद दे कर विदा किया। वहाँ से चलकर उत्तङ्क हस्तिनापुर आये और राजा जनमेजय से मिले। जनमेजय तक्षशिला-विजय करके लौटे थे। उत्तंक ने जनमेजय को सर्पयज्ञ करने का परामर्श दिया और जिस प्रकार तक्षक ने छलपूर्वक जनमेजय के पिता परीक्षित का प्राण लिया था उसकी भी पूर्ण कथा सुनाया। उत्तङ्क की बात सुन जनमेजय अत्यन्त क्रुद्ध हुये और पिता की मृत्यु का विवरण जान कर शोकसागर में डूब गये (१. ३)।'

प्रकालन, वासुकि वंश के एक नाग का नाम है (१. ५७, ६)।

१. प्रकाश, एक ऋषि का नाम है : १३. ३०, ६३ (ये तमस् के पुत्र और वागीन्द्र के पिता थे)।

२. प्रकाश = शिव (सहस्रनाम)।

प्रकाशकर्तृ, प्रकाशकर्मन् = सूर्य (देखिये वस्था०)।

प्रकाशन, प्रकाशात्मन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. प्रकृति (मूल तत्व या प्रकृति का द्योतक): १. ६३, १०१ (=कृष्ण); ६. २७, २७; ३३, १०; ३७, १. २०. २१. ३४; १२. २०५, २२. २४; २१०, २६. २८; ३०५, ८. २४; ३१४, १२; ३४०, ३८।

२. प्रकृति (मूर्तिमान) : ५. १११, ५ (हिमवत् पर्वत के शिखर पर उपस्थित); १२. ३४०, ३८; १३. १४, ६।

३. प्रकृति (बहु०) : १२. २१०, २८; ३१०, १०. १२; ३३५, ३०. ४१; ३४०, ३५. ३६; १३. १६, २४. ५४. ६२ (प्रकृतीनां लयानां च सा गतिस्त्वं सनातन)।

प्रकृष्टारि = शिव (सहस्रनाम)।

प्रग्रह = विष्णु (सहस्रनाम)।

प्रघस, एक राक्षस का नाम है (३. २८५, २)।

प्रघसा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २६)।

प्रचण्ड = स्कन्द (३. २३२, १४)।

१. प्रचेतस्, एक ऋषि अथवा प्रजापति का नाम है : २. ७, १६ (इन्द्र की सभा में); ११, १८ (ब्रह्मा की सभा में); ९. ४५, १० (स्कन्द के अभिषेक के समय उपस्थित हुये); १२. १४७, २५ (पिता दक्ष के दस प्राचीनबर्हिस् पुत्रों में से ज्येष्ठतम)। तुकी० प्रचेतस (बहु०); १. और २. प्राचेतस ।

२. प्रचेतस् = शिव (७. २०१; ६४)।

३. प्रचेतस् (बहु० °सः) : १. १९६, १५ (एक ही नाम के दस भाइयों में से एक जिसका वार्क्षी के साथ विवाह हुआ)।

१. प्रजागर (निद्राहीनता) (१. २, ३०. २२७)।

२. प्रजागर = विष्णु (सहस्रनाम)।

प्रजागरपर्वन् धृतराष्ट्र की निद्राहीनता से सम्बद्ध महाभारत के ५९ वें अवान्तर पर्व का नाम है। "संजय के चले जाने के बाद धृतराष्ट्र ने विदुर से ऐसे व्यक्ति के कर्तव्य के सम्बन्ध में पूछा जिसे चिन्ता के कारण निद्रा न आती हो और जिसके सारे अंग संतप्त हो रहे हों। विदुर ने कहा कि राजा युधिष्ठिर तीनों लोकों के स्वामी हो सकते हैं जब कि धृतराष्ट्र इसके सर्वथा विपरीत गुणवाले हैं। धृतराष्ट्र को सम्बोधित करते हुये विदुर ने कहा : 'आप धर्मात्मा और धर्म के ज्ञाता होते हुये भी आँखों की ज्योति से हीन होने के कारण पाण्डवों को पहचान न सके और उनके अत्यन्त विपरीत हो गये। आप दुर्योधन, शकुनि और कर्ण जैसे अयोग्य व्यक्तियों पर राज्य का भार रख कर कैसे कल्याण चाहते हैं।' तदनन्तर विदुर जी ने इन्द्र को दिये गये बृहस्पति के उत्तरों का उद्धरण देते हुये पण्डितों और मूर्खों के लक्षणों की व्याख्या की। उन्होंने असुरेन्द्र के पुत्र के सन्दर्भ में सुधन्वा और असुरेन्द्र प्रह्लाद के बीच हुये वार्तालाप का भी उद्धरण दिया (५. ३३)।

"विदुर जी ने धृतराष्ट्र को नीति-विषयक उपदेश दिये (५. ३४)।

"विदुर जी ने कहा : इस लोक में जब तक मनुष्य की पावन कीर्ति का गान किया जाता है तब तक वह स्वर्गलोक में प्रतिष्ठित होता है। इस विषय में उन्होंने उस प्राचीन इतिहास का उद्धरण दिया जिसमें 'केशिनी' के लिये सुधन्वा के साथ विरोचन के विवाद का वर्णन है। तदनन्तर विदुर ने धृतराष्ट्र से कहा : 'आप दुर्योधन, शकुनि, मूर्ख दुःशासन तथा कर्ण पर राज्य का भार रखकर कैसे उन्नति की आशा कर सकते हैं ? पाण्डव तो सभी उत्तम गुणों से सम्पन्न हैं और आप में पिता का भाव रखकर ही व्यवहार करते हैं। अतः आप भी उन पर पुत्र भाव रखकर उनके साथ उचित व्यवहार कीजिये।' (५. ३५)।

"दत्तात्रेय और साध्य-देवताओं के संवाद का उल्लेख करने के बाद महाकुलीन लोगों का लक्षण बताते हुये विदुर जी ने धृतराष्ट्र को अनेक प्रकार से समझाने का प्रयास किया (५. ३६)।

धृतराष्ट्र के प्रति विदुर जी का नीतियुक्त उपदेश, धर्म की महत्ता का प्रतिपादन तथा ब्राह्मण आदि चारो वर्णों के धर्म का संक्षिप्त वर्णन (५. ३७. ४०)।"

प्रजागरा, इन्द्र की सभा में उपस्थित एक अप्सरा का नाम है (३. ४३, ३०)।

प्रजाद्वार = शिव सहस्रनाम)।

प्रजाध्यक्ष = सूर्य (३. ३, २२)।

प्रजानां पतयः = प्रजापति (बहु०)। १. १, ३३ (प्रथम अण्ड से २१ प्रजापति उत्पन्न हुये); १२३, ५० (अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित); २. ११, १८ (दक्ष आदि प्रजापति ब्रह्मा की सभा में उपस्थित थे); १२. २०८, १. २. १४; १३. ८३, ८; ८५, ११० (अग्नि के कान से उत्पत्ति). १२७ (त्रयः अर्थात भृगु, अङ्गिरस् और कवि). १३९।

१. प्रजानां पतिः = ब्रह्मा (१३. ९७, १०)।

२. प्रजानां पतिः = शिव (७. २०२, ३८)।

३. प्रजानां पतिः = दक्ष (१२. २८३, २४)।

४. प्रजानां पति : राजा के लिये प्रयुक्त आदरसूचक उपाधियों में से एक (३. १८५, २६)।

प्रजानामधिप (:) = नृप (१२. १२२, ३५; १६६, ७२)।

प्रजानामीश्वरेश्वर = ब्रह्मा (७. ५४, १३)।

प्रजानिधनकर = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

१. प्रजापति (चराचर जगत के अधिपति); बहुधा ब्रह्मा की उपाधि है : १. १, ३२ (ब्रह्मा दिव्य अण्ड से उत्पन्न हुये); १३, २० (प्रजापतिसमः प्रभुः······जरत्कारुः); १६, ६ (कश्यप); २३, १६(गरुड को इनके साथ समीकृत किया गया है); ३६, २०; ४९, १०; ५५, १ (प्रयाग में यज्ञ किया); ६४, ४५ (ईशः शम्भुः प्रजापतिः). ५३ (प्रजापतिर्देवः सुरनाथो महाबलः); ८९, १७; १९७, ३; २२२, ८ (इव) २. ११, ४३. ४८; ५३, १४ (इन्द्र को एक शङ्ख दिया); ३. ३, ६० (सूर्य इनसे समीकृत); १२, १० (प्रजापतेर्विष्णोः); ३२, १; ८५, ३. ४९. ७३. ७७. ७८; ८९, १७ (पुष्कर में एक गाथा का गान किया); ९५, ६ (प्रयाग में इनकी वेदी); ११०, ३२ (प्रजापतिसमद्युतेः, अर्थात् विभाण्डक); १२९, १ (एक सहस्र वर्ष तक चलने वाला यज्ञ किया). २२; १६४, १८ (अर्जुन ने इनसे अस्त्र प्राप्त किया); १८३, ६३ (ससर्ज धर्मतन्त्राणि); १८५, २७ (राजा की आदरसूचक उपाधियों में से एक); १८७, २ (°समद्युतिः, मनु वैवस्वत). ५२ (मत्स्य के रूप में); १८९, ५५ (गोविन्दः); २००, ३७ (अन्नं प्रजापतिश्चोक्तः स च संवत्सरोमतः). ६८; २३१, ८; २७२, ४७ (सृज्यते ब्रह्ममूर्तिस्तु रक्षते पौरुषी तनुः। रौद्रीभावेन शमयेत् तिस्रोऽवस्थाः प्रजापतेः); २७४, ११ (पुलस्त्य के पिता तथा रावण और कुबेर के पितामह); २८१, २२; ४. ९, १६; ४३, ५ (पाँच सौ वर्ष तक गाण्डीव धारण किया था। यहाँ यह ब्रह्मा से भिन्न प्रतीत होते हैं); ५६, ११; ६१, २६ (अर्जुन ने संकट के समय विचित्र प्रकार से तुमुल युद्ध करने की कला को प्रजापति से सीखा था); ५. ४८, ६३ (प्रजापतेः कर्म यथाऽर्थनिष्ठितम्); ७८, ७; ११३, ८; १२८, ४१. ४५ (परमेष्ठी : असुरों को बाँधने के लिये धर्म से कहा); १३४, ३७ (प्रजापतिविनिर्मितं···क्षत्रहृदयं); १४८, २३ (प्रजापतिः प्रजाः सृष्ट्वा यथा संहरते तथा); १५७, ३ (प्रजापतिमिवौदार्ये); ६. १२, २५ (पुष्कर द्वीप में पुष्कर पर्वत पर). २९; १४, ३९ (सर्वलोकेश्वरस्य); २७, १० (सहयज्ञाः प्रजाः); ३५, ३९ (कृष्ण को इनके साथ समीकृत किया गया है); ६५, ४३. ५८; १२०, ३० (प्रजापतिमवामराः); १२१, ४१ (इनका अस्त्र अर्जुन को ज्ञात था); ७. ५४, १; ५८, ८; २०२, ९५; ८. ३३, २३; ३४, ११७ (प्रजापतिमुखाः सुराः); ४४, ४२ (नैषा सृष्टिः प्रजापतेः). ४५ (तुल्यकालाः प्रजापतेः); ८७, ६३ (स्वायम्भुवम्); ९. ३६, ८ (प्रजापतिसमाः = एकत, द्वित और त्रित); ५३, १ (प्रजापते-रुत्तरवेदिरुच्यते सनातनं राम समन्तपञ्चकम्). २४ (एतत्कुरुक्षेत्रसमन्तपञ्चकं प्रजापतेरुत्तरवेदिरुच्यते); ५५, ९ (समन्तपञ्चकं······ उत्तरवेदिः······ प्रजापतेः); १०. ३, १८ (प्रजाः सृष्ट्वा कर्म तासु विधाय च); १७, १६ (ब्रह्मा द्वारा रचित और दक्ष के पिता); ११. २३, ३२ (वेदा यस्माच्च चत्वारः सर्वाण्यस्त्राणि केशव अनयेतानि वै शूराद्यथैवादौ प्रजापतेः); १२. १२, २० (असृजद्धि प्रजा राजन्प्रजापतिः); २९, ४२; ६०, २३. २८ (पालतू पशुओं, दासों आदि की सृष्टि की); ६५, ३० (प्रजापतिर्हि भगवान्सर्वं चैवासृजज्जगत्); ९१, ५ (राजा की उपाधि); १०८, २५; १२१, ४१ (ईश्वरः पुरुषः प्राणः सत्त्वं चित्तं प्रजापतिः। भूतात्मा जीव इत्येवं नामभिः प्रोच्यते अष्टभिः). ५७; १२२, ४३. ४४ (ब्रह्मा से भिन्न); १६१, २ (प्रजापतिरिदं सर्वं तपसैवासृजत्प्रभुः); १८२, ३५; १८७, ३२ (सृष्टिः प्रजापतेरेषा); १९०, १५; १९१, १३; १९२, २० (ब्रह्मलोक प्राप्त किया); २००, १२ (देवदेवः); २०८, ७; २१७, ४ (प्रवृत्ति-धर्म का वर्णन किया); २२४, ५२ (काल को इनके साथ समीकृत किया गया है); २३२, १३ (आदिकर्त्ता स भूतानाम्); २३४, २७ (जीवयामास प्रजापतिरिव प्रजाः); २३६, २३; २५७, ३; २६४, १३; २६८, २१; २९५, १५ (प्रजाः पूर्वमसृजत्तपसा); २९६, ५; २९९, ३ (सुवर्ण हंस का रूप धारण किया); ३०२, २१ (अहंकार महातेजाः प्रजापतिमहंकृतम्);

३११, ४ (हिरण्याण्ड से उत्पन्न होकर आकाश और पृथिवी की सृष्टि की); ३१२, १२ (अहंकारः प्रजापतिः). १३ (विश्वं शम्भुः प्रजापतिः); ३१३, ३ (अक्षिदैवमुपस्थोः); ३१७, ३ (जब जीव ऊरुओं से निकलता है तो व्यक्ति प्रजापति लोक प्राप्त करता है); ३२१. ६१; ३३८, ४ (= महापुरुष); ३४२, ८९ (कृष्ण को इनके साथ समीकृत किया गया है); ३५०, २४; १३.-७, २५ (येन प्रीणाति पितरं तेन प्रीतः प्रजापतिः); १४, ४०४; १६, ४६ (शिव की स्तुति की); १९, ९४; २०, १४; ४०, ९. १३ (इनके द्वारा नारी-सृष्टि); ४४, १७; ४८, ३; ६३, ३१; ६७, ७; ७९, २३; ८४, २४. ५९; ८५, ९५. १४७ (शिव और अग्नि को इनके साथ समीकृत किया गया है); ९७, १२; १३८, ११; १५०, २२; १५३, १५; १५८, ३४; १६०, ५ (शतरुद्रिय की रचना की); १४. ९, १८. २३; १८, २८; २१, ४. १९; २३, २१. २२; २६, ६. ७; ३५, २५. ३४. ४१; ४२, २७. ६५; ४३, १९; ४४, ५; ५१, १४. २१; ७१, २२; ७३, ५; ९१, २४; १५. ८, ६ ।

२. प्रजापति = वसुओं के पिता (१. ६६, १७) ।

३. प्रजापति = शिव : १२. १२२, ५२; २८४, ७०; १३. १४, ६; १७, ५९ ।

४. प्रजापति = विष्णु (श्रीकृष्ण) : २. १, १०; ३. १२, ५०; १२. ४७, ३१; ५३, ३; १३. १४९, २१. ३४ ।

५. प्रजापति, निम्नलिखित ऋषियों के लिये प्रयुक्त :

* अग्नि : १३. ८४, ६९ ।

* इन्द्र : ३. १८५, १५. १६ ।

* कपिल : १२. २१८, ९ ।

* कर्दम : १२. ५९, ९१ ।

* कश्यप : १. २०, १६; ३१, ५. १६. १७. २१. २२. ३०; ३. १८९, ६; २२४, १. २; ६. ६, २१; १२. ३४२, ८९ ।

* क्षुप : १२. १२२, १७ ।

* त्वष्टा : ५. ९, ३. ४५ ।

* दक्ष : १. ६६, १२; ७५, २; ७६, १; १२३, ५२; ५. ८६, १; ९. ३५, ४४. ७३. ८१; १२. २०७, १९. २०. २२; २०८, ७; २८३, १९; २८४, १. ५. ५०. ५८. ६६. ७२. १९५. १९७; ३२८, ५१; १३. ७७, १६. २३. २७; १४७, २५; १६०, ११; १४. ५, ३; ८८, ३१ ।

* पृथुर्वैन्य : १३. १५०, ४७ ।

* भरत : ३. २१९, ८ ।

* मनु : १. ९५, ३; ३. ८४, १३७; १२. ३६, ३-५; १२९, १०३; २०१, २. ३; २०८, २१; १३. २, ५; ९८, २; १६५, ५७ ।

* विश्वकर्मन् : १. २२५, १३ ।

* वीरण : १२. ३४८, ४१ ।

* शशबिन्दु : १२. २०८, १३ ।

* शुक्र : १२. ४७, ८९ ।

* सोम : ५. १४९, ३ ।

* स्विष्टकृत् : ३. २२१, १८ ।

* हविर्धामन् : १३. १४७, २४ ।

६. प्रजापति (बहु० तयः) : ३. १२१, २ (देवों और प्रजापतियों सहित इन्द्र ने पयोष्णी नदी के तट पर यज्ञ किया); ७. २०२, ९; ८. ३३, ५६; ८७, ५६ (महाभारत युद्ध देखने आये); १०. १७, १६ (सप्त दक्षादींस्तु प्रजापतीन् । यैरिमं व्यकरोत्सर्वं भूतग्रामं चतुर्विधम्); १२. १८८, १; २०८, ५; ३००, २४; ३०१, ९. २८; ३३४, ३७; ३३९, ५३; १३. ८५, ५२. १३४; १४. ४४, १२ ।

प्रजापतिपति = विष्णु : १. ६४, ५३; ३. १२, १०; १८९, ५५; ६. ६५, ५८; १२. ३४१, २ ।

प्रजापतिमखघ्न = शिव (८. ३३, ५६) ।

प्रजापतिसुत (प्रजापति के पुत्र) : ९. ५१, ३३; १२. ३३६, ६; ३३९, ८६ ।

प्रजापतिसुता (प्रजापति की पुत्रियाँ) = कद्रू और विनता (१. १६, ५) ।

प्रजाबीज = शिव (सहस्रनाम) ।

प्रजाभाव = विष्णु (सहस्रनाम) ।

प्रजासर्गकर = महापुरुष (महापुरुषस्तव) ।

१. प्रजेश्वर = ब्रह्मा (७. ५४. ७) ।

२. प्रजेश्वर = दक्ष (९. ३५, ५१) ।

३. प्रजेश्वर = मनु (१३. ९८, ९) ।

४. प्रजेश्वर = यम (२. ८, ४०) ।

प्रज्ञास्त्र, एक दिव्यास्त्र का नाम है : ३. २८९, ५ (विभीषण ने प्रज्ञास्त्र के द्वारा ही अचेत राम-लक्ष्मण को पुनः चेतनावस्था में ला दिया था); ६. ७७, ५३ (द्रोणाचार्य ने मोहनास्त्र को प्रज्ञास्त्र द्वारा ही शान्त किया था) ।

प्रणव = विष्णु (सहस्रनाम) । तुकी० ६. ३१, ८; १३. ३६, १४ ।

प्रणिधि, एक अग्नि का नाम है (३. २२०, ९) ।

१. प्रतर्दन, दिवोदास के पुत्र, काशिराज का नाम है : १. ८६, ६; ९२, १४. १६; ९३, २६ (जब ययाति स्वर्ग से नीचे गिर गये तब उनकी पुत्रियों के पुत्र, प्रतर्दन आदि ने उन्हें अपने लोक प्रदान करना चाहा किन्तु उन्होंने स्वीकार नहीं किया । इसके बाद वे सभी लोग – ययाति और प्रतर्दन आदि स्वर्गलोक चले गये); २. ८, १० (यम की सभा में). १८; ३. १९८, २. ७ (नारद जी ने इनके गुणों का वर्णन किया); ५. ११७, १८ (दिवोदास को विवाहित ययाति की पुत्री से उत्पन्न); १२१, १०; १२२, ६ (अपने पुण्यकर्मों से ययाति की पुत्री के पुत्रों, प्रतर्दन आदि ने ययाति को पुनः स्वर्ग प्राप्त कराया); १२. ४९, ५८. ८०; ९६, २०; ९९, १ (जनक के साथ इनका युद्ध); १६६, ८० (शिवि से इन्होंने एक तलवार प्राप्त किया था जो बाद में इनके पास से अष्टक को मिली); २३४, २० (इन्होंने एक ब्राह्मण को अपने नेत्र दान कर दिये); १३. ३०, ३० (दिवोदास के पुत्र). ३६. ३७. ४०. ४२. ४६. ५३ (प्रतर्दन और वीतहव्य का युद्ध); १३७, ५ (अपने पुत्र को एक ब्राह्मण को दान कर दिया); १६६, ५७ । तुकी० दिवोदासात्मज, काशिपति ।

२. प्रतर्दन, एक कौरव सैनिक जिसने अभिमन्यु पर आक्रमण किया (७. ३७, २५) ।

३. प्रतर्दन = विष्णु (सहस्रनाम) ।

प्रताप, एक सौवीर राजकुमार जो जयद्रथ का ध्वज-वाहक था (३. २६५, ११) ।

प्रतापन = विष्णु (सहस्रनाम) ।

प्रतिज्ञापर्वन्, महाभारत के ७४ वें अवान्तर पर्व का नाम है (१. २, ६९) । "सन्ध्यासमय जब अर्जुन अपने दिव्यास्त्रों द्वारा संशप्तक समूहों का वध करके अपने रथ पर बैठकर शिविर की ओर चले तब उन्होंने अत्यन्त गद्गद कण्ठ से गोविन्द से कहा कि न जाने क्यों उनका हृदय धड़क रहा है, वाणी लड़खड़ा रही है, और शरीर शिथिल होता जा रहा है । पृथ्वी पर तथा सम्पूर्ण दिशाओं में होने वाले भयंकर उत्पातों और अपशकुनों से भी उन्हें भय हो रहा है । अर्जुन की बातों को सुनकर श्रीकृष्ण ने उन्हें सान्त्वना दी । फिर दोनों योद्धा जब शिविर के पास पहुँचे तब वहाँ का वातावरण देखकर अर्जुन ने पुनः श्रीकृष्ण से इस प्रकार कहा : 'आज हमारे शिविर में आनन्द और उत्साह का अभाव है । प्रतिदिन की भाँति अपने साथियों सहित अभिमन्यु भी मेरे स्वागत के लिये नहीं आ रहा है ।' इस प्रकार बातें करते हुये दोनों ने शिविर में पहुँच कर देखा कि पाण्डव अत्यन्त व्याकुल और हतोत्साह हो रहे हैं । अर्जुन ने तब कहा : – 'मैंने सुना है कि द्रोण ने चक्रव्यूह की रचना की थी । आप लोगों में से बालक अभिमन्यु को छोड़कर अन्य कोई भी उस व्यूह का भेदन नहीं कर सकता था किन्तु उस व्यूह से बाहर निकलने की शिक्षा मैंने अभी अभिमन्यु को भी

नहीं रहा है। मैंने धृतराष्ट्र पुत्रों का दर्पयुक्त सिंहनाद सुना है और श्रीकृष्ण ने यह भी सुना है कि युयुत्सु उन कौरव वीरों को यह उपालम्भ दे रहा था कि उन लोगों को अर्जुनको मार सकने में असफल होने के बाद एक बालक की हत्या करके आनन्द मनाना शोभा नहीं दे रहा है।' संजय ने बताया कि पुत्रशोक से इस प्रकार चिन्तित और व्याकुल अर्जुन को श्रीकृष्ण ने सान्त्वना दिया। श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा: 'मित्र, ऐसे व्याकुल मत होओ। जो युद्ध से कभी पीछे नहीं हटते हैं, उन युद्धपरायण शूर वीरों के लिये सम्पूर्ण शास्त्रज्ञों ने यही गति निश्चित की है।' श्रीकृष्ण की बातें सुनकर अर्जुन और अधिक शोकाकुल हो उठे। उस समय श्रीकृष्ण अथवा युधिष्ठिर को छोड़कर किसी अन्य व्यक्ति का यह साहस नहीं था कि अर्जुन से कुछ बोल पाते। क्रोध से भरे अर्जुन से तब राजा युधिष्ठिर ने इस प्रकार कहा (७. ७२)।

"युधिष्ठिर ने अभिमन्यु वध का वृत्तान्त बताते हुये अभिमन्यु की वीरता और उसकी मृत्यु की परिस्थितियों का विस्तार से वर्णन किया। उस समय अर्जुन ने दूसरे दिन सूर्यास्त के पूर्व ही जयद्रथ-वध करने की प्रतिज्ञा करते हुये कहा कि देवता, असुर, मनुष्य, पक्षी, नाग, पितर, निशाचर, ब्रह्मर्षि, देवर्षि, तथा चराचर जगत् और उसके परे भी जो कुछ है वह सब भी जयद्रथ की रक्षा नहीं कर सकते। उन्होंने कहा कि यदि जयद्रथ रसातल में छिप जाय, या आकाश, देवलोक, अथवा दैत्यों के नगर में चला जाय तो भी वह उनसे बच नहीं सकता। उन्होंने एक दूसरी प्रतिज्ञा यह भी की कि यदि जयद्रथ के मारे जाने से पहले ही सूर्यास्त हो जायगा तो वे स्वयं प्रज्वलित अग्नि में प्रवेश कर लेंगे। इस प्रकार प्रतिज्ञा करके अर्जुन ने गाण्डीव धनुष पर टंकार की और अपना देवदत्त नामक शङ्ख बजाया। श्रीकृष्ण ने भी अपना पाञ्चजन्य शङ्ख बजाया (७. ७३)।

"गुप्तचरों से अर्जुन की प्रतिज्ञा का समाचार सुनकर जयद्रथ अत्यन्त भयभीत हो उठा। उसने विचार किया कि द्रोण, दुर्योधन, कृपाचार्य, कर्ण, आदि भी उसे बचा नहीं पायेंगे। अर्जुन की प्रतिज्ञा को देवता, गन्धर्व, असुर, नाग तथा राक्षस भी विपरीत नहीं कर सकते। उस समय दुर्योधन ने जयद्रथ को सान्त्वना देते हुये कहा कि कर्ण उसकी रक्षा करेंगे। तब जयद्रथ ने दुर्योधन के साथ उसी रात्रि के समय द्रोणाचार्य के पास आकर उनसे यह बताने का निवेदन किया कि उसमें (जयद्रथ में) और अर्जुन में बाण आदि चलाने की दृष्टि से कितना अन्तर है। द्रोण ने बताया कि दोनों को एक प्रकार की ही शिक्षा मिली होने के विपरीत भी सम्पूर्ण दिव्यास्त्रों की प्राप्ति एवं अभ्यास और क्लेश सहन की दृष्टि से अर्जुन उससे (जयद्रथ से) श्रेष्ठ हैं। फिर भी द्रोण ने एक अभेद्य व्यूह की रचना करके जयद्रथ की रक्षा करने का आश्वासन दिया। उन्होंने जयद्रथ से यह भी कहा कि उसे मृत्यु से भयभीत नहीं होना चाहिये (७. ७४)।

"जब अर्जुन ने जयद्रथ-वध की प्रतिज्ञा कर ली तब श्रीकृष्ण ने उनसे कहा: 'अपने भाइयों का मत जाने बिना ही जो वाणी द्वारा तुमने यह प्रतिज्ञा कर ली है वह तुमने दुःसाहसपूर्ण कार्य किया है। तुम्हारे सिंहनाद आदि को सुनकर धृतराष्ट्रकुमार अत्यन्त सतर्क हो गये हैं।' इधर जयद्रथ ने दुर्योधन से अपनी रक्षा का निवेदन किया। अर्जुन के पराक्रम की चर्चा करते हुये जयद्रथ ने बताया कि हिमालय पर्वत पर अर्जुन ने पैदल ही महेश्वर के साथ भी युद्ध किया था। उन्होंने हिरण्यपुरवासी सैकड़ों दानवों का भी संहार कर डाला था। जयद्रथ की बात सुनकर दुर्योधन ने स्वयं ही आचार्य द्रोण से उसकी रक्षा के लिये प्रार्थना की। श्रीकृष्ण ने अर्जुन को बताया कि इस प्रकार जयद्रथ की रक्षा का पूरा प्रबन्ध कर लिया गया है। श्रीकृष्ण ने कहा: 'कल के युद्ध में कर्ण, भूरिश्रवा, अश्वत्थामा, वृषसेन, कृपाचार्य, और शल्य — ये छः महारथी जयद्रथ के आगे होकर उसकी रक्षा करेंगे। द्रोणाचार्य ने ऐसे व्यूह की रचना की है जिसका अग्रभाग शकट के आकार का और पृष्ठ भाग कमल के समान है। कमल व्यूह के मध्य की कर्णिका के बीच सूचीव्यूह के पार्श्व भाग में जयद्रथ स्थित होगा। अतः इस प्रकार की रक्षा-व्यवस्था के होते हुये उसका वध सरल कार्य नहीं है।' (७. ७५)।

"अर्जुन ने श्रीकृष्ण को अपनी वीरता तथा प्रतिज्ञा पूर्ण कर लेने की क्षमता के सम्बन्ध में बताया। उन्होंने कहा कि द्रोण, साध्य, रुद्र, वसु, अश्विनीकुमार, इन्द्र सहित मरुद्गण, विश्वेदेव, देवता, पितर, गन्धर्व, गरुड़, समुद्र, पर्वत, स्वर्ग, आकाश, पृथिवी, दिशायें, दिक्पाल, ग्राम और वनवासी प्राणी, सम्पूर्ण चराचर जीव आदि कोई भी जयद्रथ की रक्षा क्यों न करें, वे उसका वध अवश्य कर देंगे। अर्जुन ने कहा: 'गाण्डीव धनुष, यम, कुबेर, इन्द्र, वरुण, और रुद्र आदि से प्राप्त दिव्यास्त्रों से मैं कल जयद्रथ का अवश्य वध कर दूँगा।' (७. ७६)।

"दुःख और शोक से पीड़ित श्रीकृष्ण और अर्जुन सर्पों के समान दीर्घ निश्वास ले रहे थे। उन्हें रात को निद्रा भी नहीं आई। नर और नारायण को इस प्रकार कुपित जान इन्द्र सहित सम्पूर्ण देवता व्यथित होकर चिन्ता करने लगे। रूक्ष, भय-सूचक एवं दारुण वायु बहने लगी। सूर्योदय होने पर सूर्य मण्डल में कबन्धयुक्त घेरा देखा गया। इसी प्रकार अन्याय अपशकुन प्रकट होने लगे। श्रीकृष्ण ने अर्जुन के पास जाकर क्षत्रियों के कर्त्तव्य और प्रतिशोध आदि पर उपदेश देते हुये सुभद्रा को सान्त्वना दिया (७. ७७)।

"अभिमन्यु के लिये शोक करती हुई सुभद्रा ने अभिमन्यु की रक्षा में असमर्थ हो जाने के कारण भीमसेन को धिक्कारा। द्रौपदी और उत्तरा भी विलाप करती हुई सुभद्रा के पास आई। श्रीकृष्ण ने कहा कि अभिमन्यु सर्वश्रेष्ठ गति को प्राप्त हुआ है। अपनी बहन को इस प्रकार सान्त्वना देकर श्रीकृष्ण पुनः अर्जुन के पास लौट आये (७. ७८)।

"अपनी विजय की इच्छा से रात्रि में अर्जुन ने भगवान् शिव का पूजन किया। दारुक के साथ श्रीकृष्ण अपने शिविर में चले गये। अर्जुन के लिये चिन्तित पाण्डवों में से किसी को भी उस रात निद्रा नहीं आई। श्रीकृष्ण उस रात के बीच में ही उठकर दारुक से बोले: 'मैं कल वह उद्योग करूँगा जिससे कुन्तीपुत्र अर्जुन सूर्यास्त के पूर्व ही जयद्रथ का वध कर दें। मैं अर्जुन के लिये हाथी, घोड़े, कर्ण दुर्योधन और अन्य सभी शत्रुओं का संहार कर डालूँगा।' इस प्रकार अपना निश्चय व्यक्त करके श्रीकृष्ण ने दारुक से शास्त्र विधि के अनुसार प्रातःकाल ही रथ को सुसज्जित करने के लिये कहा। उन्होंने कौमोदकी गदा, दिव्य शक्ति, चक्र, धनुष-बाण, तथा अन्य सभी आवश्यक सामग्रियाँ भी रथ पर रखने का आदेश दिया। रथ के पिछले भाग में गरुड़ध्वज के लिये स्थान बनाने तथा चारों श्रेष्ठ अश्वों — बलाहक, मेघपुष्प, शैब्य तथा सुग्रीव — को भी रथ में जोतने का आग्रह किया। उन्होंने दारुक से कहा कि पाञ्चजन्य शङ्ख का घोष सुनते ही वह उनके पास शीघ्रता से आ जायँ (७. ७९)।

"अर्जुन ने स्वप्न में श्रीकृष्ण को देखा। श्रीकृष्ण ने उन्हें शोक न करने तथा उस पाशुपतास्त्र का प्रयोग करने के लिये कहा जिससे शिव ने युद्ध में दैत्यों का संहार किया था। श्रीकृष्ण ने बताया कि यदि अर्जुन को यह दिव्यास्त्र इस समय स्मरण है तो वे जयद्रथ का वध करने में अवश्य सफल होंगे, अन्यथा उन्हें शिव की स्तुति करना चाहिये। श्रीकृष्ण का यह वचन सुनकर अर्जुन जल का आचमन करके धरती पर एकाग्र होकर बैठ गये और महादेव का चिन्तन करने लगे। तब शुभ ब्राह्म मुहूर्त में ध्यानस्थ होने पर अर्जुन ने अपने को श्रीकृष्ण के साथ आकाश में जाते देखा। उन्होंने पवित्र हिमालय के शिखर तथा तेजःपुञ्ज से व्यास एवं सिद्धों और चारणों से सेवित मणिमान् पर्वत भी देखा। उस समय अर्जुन भगवान् श्रीकृष्ण के साथ आकाश में बहुत ऊँचे उठ गये। इस प्रकार अनेक शिखरों को पार करने के बाद अर्जुन को शिव का दर्शन प्राप्त हुआ। शिव को देखते ही अर्जुन और श्रीकृष्ण ने उनकी स्तुति की (७. ८०)।

"अर्जुन ने देखा कि उनके द्वारा रात को श्रीकृष्ण को समर्पित नैत्यिक उपहार शिव के समीप रक्खा है। यह देखकर उन्होंने श्रीकृष्ण तथा शिवकी मन ही मन पूजा की और फिर शिव से दिव्यास्त्र प्राप्त करने की इच्छा प्रकट की। शिव ने अर्जुन और श्रीकृष्ण से पास के एक अमृतमय सरोवर

में से अपना दिव्य धनुष और बाण लाने के लिये कहा। तब श्रीकृष्ण और अर्जुन उस सरोवर पर गये। वहाँ उन लोगों ने जल के भीतर एक भयंकर नाग देखा। वहीं एक सहस्र फणों वाला दूसरा नाग भी था जिसके मुख से अग्नि की प्रचण्ड ज्वालायें निकल रही थीं। तब श्रीकृष्ण और अर्जुन ने शतरुद्रिय का पाठ आरम्भ किया। पाठ समाप्त होते ही दोनों नाग धनुष और बाण के रूप में परिणत हो गये जिसे लेकर उन दोनों सज्जनों ने शिव को समर्पित कर दिया। उस समय शिव के पार्श्व भाग से एक ब्रह्मचारी प्रकट हुआ जो पिङ्गल नेत्रों से युक्त, बलवान् तथा नील-लोहित वर्ण का था। उसने शिव के धनुष-बाण के प्रयोग की विधि तथा उसको संचालित करने का मन्त्र अर्जुन को बता दिया। अर्जुन की इच्छा जानकर भगवान् शंकर ने अपना वह दिव्यास्त्र उन्हें दे दिया। इस प्रकार एक बार पुनः पाशुपतास्त्र प्राप्त करके श्रीकृष्ण और अर्जुन अपने शिविर में वापस लौट आये (७. ८१)।

"युद्ध का चौदहवाँ दिन : युधिष्ठिर ने प्रातःकाल उठकर अपने नित्य कर्म समाप्त किये (उस समय का विस्तृत वर्णन)। उसी समय श्रीकृष्ण युधिष्ठिर के पास आये (७. ८२)।

"शीघ्र ही विराट तथा अन्य महारथी भी युधिष्ठिर के पास आ गये। तब युधिष्ठिर ने नारद जी का उद्धरण देते हुये श्रीकृष्ण से पाण्डवों की रक्षा करने के लिये निवेदन किया। युधिष्ठिर की प्रार्थना सुनकर श्रीकृष्ण ने उन्हें अर्जुन की सफलता का आश्वासन दिया (७. ८३)।

"अर्जुन ने युधिष्ठिर के पास आकर अपने रात्रिकालीन स्वप्न तथा स्वप्न में ही पाशुपतास्त्र की पुनः प्राप्ति का समाचार दिया। युधिष्ठिर ने भी अर्जुन को आशीर्वाद दिया। अर्जुन के स्वप्न का समाचार जानकर सभी सुहृदों को अत्यन्त प्रसन्नता हुई। तदनन्तर युधिष्ठिर की आज्ञा लेकर श्रीकृष्ण, अर्जुन और सात्यकि ने एक साथ प्रस्थान किया। सात्यकि और श्रीकृष्ण एक ही रथ में बैठकर अर्जुन के शिविर में आये। वहाँ पहुँच कर श्रीकृष्ण ने अर्जुन के रथ को सुसज्जित किया। तदनन्तर कवच आदि धारण करके अर्जुन ने रथ की परिक्रमा की और फिर उस पर आरूढ़ हुये। उस रथ को पहले से ही विजयसाधक मन्त्रों से अभिमन्त्रित किया गया था। अर्जुन के रथारूढ़ होते ही सात्यकि और श्रीकृष्ण भी उसी रथ पर बैठ गये अनेक शुभ शकुन चारों ओर प्रकट होने लगे। अर्जुन ने सात्यकि से कहा कि वे उनकी अनुपस्थिति में युधिष्ठिर की रक्षा करें क्योंकि वे (सात्यकि) अथवा प्रद्युम्न ही यह कार्य करने की क्षमता रखते हैं। अर्जुन का आदेश पाकर सात्यकि युधिष्ठिर के पास लौट आये (७. ८४)।"

प्रतिमास्य अथवा **प्रतिमत्स्य** (बहु० °स्याः), एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ५२)।

प्रतिरूप, पृथिवी के प्राचीन शासकों की तालिका में उल्लिखित एक असुर का नाम है (१२. २२७, ५३)।

१. प्रतिविन्ध्य, युधिष्ठिर के द्रौपदी से उत्पन्न पुत्र का नाम है : १. ६३, १२३; ६७, १२८ (द्रौपदी के सभी पुत्र विश्वेदेवों के अवतार थे); ९५, ७५ (पाण्डवों के पुत्रों की गणना में इसका उल्लेख); २२१, ७९ (इसका जन्म). ८१ (नाम की व्युत्पत्ति); २. ७१, २९; ३. १२, ७३; २३५, १०; ६. ४५, ६३. ६५; १००, ३९; ७. २३, २७ (इसके रथाश्वों का वर्णन); २५, २९. ३० (अश्वत्थामा से युद्ध किया); १६५, ११ (दुःशासन ने इसे रोका); १६८, ३४. ३६. ३८. ३९ (दुःशासन के साथ युद्ध); ८. १३, ७ (चित्र पर आक्रमण किया); १४, २०. २२. २४-२६. २९. ३१. ३४ (चित्र का वध किया); २५, १७; ५५, १३ (अश्वत्थामा को बाणों से बींध दिया); १०. ८, ५४ (रात्रि युद्ध में अश्वत्थामा ने इसका वध किया)। तुकी० यौधिष्ठिर, यौधिष्ठिरि।

२. प्रतिविन्ध्य, एक या अधिक राजाओं का नाम : १. ६७, २२ (एकचक्र नामक असुर का अवतार); २. २६, ५ (अपनी दिग्विजय के समय उत्तर में अर्जुन ने इसे पराजित किया था); ५. ४, १३।

३. प्रतिविन्ध्य (बहु० °न्ध्याः) — एक सौ प्रतिविन्ध्यों का यम की सभा में उपस्थिति का उल्लेख (२. ८, २४)।

प्रतिश्रवण,, एक नक्षत्र का नाम है : १. ७१, ३४ (चकारान्यं च लोकं वै क्रुद्धो नक्षत्रसंपदा। प्रतिश्रवणपूर्वाणि नक्षत्राणि चकार यः)।

प्रतिश्रवस्, भीमसेन और कैकेयी के पुत्र एक प्राचीन राजा का नाम है। यह प्रतीप के पिता थे (१. ९५, ४३. ४४)।

प्रतिष्ठा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २९)।

प्रतिष्ठान, गङ्गा और यमुना के संगम के निकट गङ्गा तट पर स्थित एक नगर का नाम है : ३. ८५, ७६ (प्रयाग के निकट एक तीर्थ). ११४ (यहाँ भीष्म ने अपनी तीर्थयात्रा की समाप्ति की थी); ५. ११४, १ (ययाति की राजधानी)।

प्रतिष्ठित = विष्णु (सहस्रनाम)।

प्रतिस्कन्ध, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ५७)।

प्रतिस्मृति, एक विद्या का नाम है : १. २, १५६ (विद्या); ३. ३६, ३० (व्यास ने इस विद्या को युधिष्ठिर को सिखाया था और युधिष्ठिर से यह अर्जुन को प्राप्त हुई)।

१. प्रतीच्य (बहु० °च्याः) एक जाति का द्योतक है : ३. २३७, ३; ५. ३०, २४ (दुर्योधन की सेना में); १६०, १०३; १९१, २१; १९५, ६; ६. १५, १७ (ये भीष्म की रक्षा करेंगे); १०६, ७ (भीष्म की रक्षा करते हैं); ११७, ३३ (अर्जुन पर आक्रमण किया); ११९, ८१ (भीष्म का साथ छोड़ दिया); ७. ७, १५ (दुर्योधन की सेना के पृष्ठ भाग में स्थित); ८. ५, ४९ (इनका संहार); ७०, २०. ३३; ९. १, २८।

२. प्रतीच्य (वि०) : २. ३२, १२ (नकुल ने पश्चिम के नृपों को पराजित किया)।

प्रतीच्या, पुलस्त्य की भार्या का नाम है (५. ११७, १६)।

प्रतीत, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३२)।

प्रतीप, एक प्राचीन राजा का नाम है : १. ९४, ६० (धृतराष्ट्र के पुत्र). ६१ (देवापि, शान्तनु और बाह्लीक के पिता); ९५, ४४ (प्रतिश्रवस के पुत्र, सुनन्दा शैब्य के पति और देवापि, शान्तनु तथा बाह्लीक के पिता); ९६, ९, १७ (इनके पुत्र शान्तनु के रूप में महाभिष ने जन्म लिया); ९७, १. ४. ८. १७. २०. २४ (गङ्गा को अपनी पुत्रवधू बनाना स्वीकार किया; इनके पुत्र के रूप में शान्तनु का जन्म); ५. १४७, ३१; १४९, १४ (देवापि, शान्तनु और बाह्लीक के पिता); १३. १६५, ५८। तुकी० कुरुनन्दन।

प्रत्यग्धर्मन् = यम (३. २६०, २)।

प्रत्यग्रह, वसु उपरिचर के द्वितीय पुत्र का नाम है (१. ६३, ३१)।

प्रत्यङ्ग, एक प्राचीन राजा का नाम है (१. १, २३८)।

१. प्रत्यय = शिव (सहस्रनाम)।

२. प्रत्यय = विष्णु (सहस्रनाम)।

प्रत्यूष, वसुओं में से एक का नाम है : १. ६६, १८ (वसुओं की गणना). २० (प्रजापति और प्रभाता से उत्पन्न पुत्र). २६ (ऋषि देवल के पिता); १३. १५०, १७ (वसुओं में सातवें)।

प्रथमित्रसापर्ण = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

प्रथित = विष्णु (सहस्रनाम)।

प्रथु = विष्णु (सहस्रनाम)।

प्रदक्षिणावर्तशिख = अग्नि (१. ५५, १०)।

प्रदर (बहु० °राः), एक जाति के लोगों का नाम है : २. ५२, ३ (ये लोग युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये)।

प्रदातृ एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३२)।

प्रद्युम्न, रुक्मिणी से उत्पन्न श्रीकृष्ण के पुत्र का नाम है : १. ६७, १५२ (ये सनत्कुमार के अवतार थे); २२१, ३१ (अर्जुन और सुभद्रा के विवाह के समय उपस्थित हुये); २. २, ३५ (प्रद्युम्नसाम्बनिशठाद्याः); १७, ३४, १६ (गदप्रद्युम्नसाम्बाद्य); ३. १२, ७४; १६, ९. २१. ३३; १७,

८-१०. ११. १४. २१. २२. २५; २८; १. २. २२; १९; १: १२. १६. २५. २६ (शाल्व के साथ युद्ध करते हुये इन्होंने शाल्व को पराजित किया); ५१, २६. ४३ (ये पाण्डवों की सहायता करेंगे); १२०, ४. ११; २३४, १०; २३५, १४. १६; ५. १, ५; ३, १९; ५०, ३२; ९०, ८८; १११, ९; ६. ६५, ७० (कृष्ण त्वमात्मनात्राक्षीः प्रद्युम्नं चात्मसम्भवम्). ७१ (श्रीकृष्ण ने इनसे अनिरुद्ध की सृष्टि की); ७. ११, २७; ३५, १५; ७२, ३४; ८४, ३२; ११०, ५९. ९३ (ये अतिरथी थे); १११, १३; १५६, ४; १९१, ४४; १०. १२, ३१; १२. ८१, ७ (इन्हें अपने रूप का गर्व था); ३३९, ३८ (जो संकर्षण अथवा जीव से उत्पन्न होकर अपने कर्म के द्वारा सनत्कुमारत्व प्राप्त कर लेता है, जिसमें समस्त प्राणी लय एवं क्षय को प्राप्त होते हैं, वह सम्पूर्ण भूतों का मन ही 'प्रद्युम्न' कहलाता है). ४१ (संकर्षण से प्रद्युम्न का प्रादुर्भाव हुआ है, जो मनोमय कहलाते हैं। प्रद्युम्न से जो अनिरुद्ध प्रकट हुये हैं वे ही अहंकार और ईश्वर हैं); ३४४, १६ (पुण्यात्मा लोग सूर्य द्वारा भस्म होने के बाद मनोमय होकर प्रद्युम्न में प्रवेश करते हैं और प्रद्युम्न से भी मुक्त होकर वे संकर्षण में प्रविष्ट होते हैं); १३. १४, २९. ३३; १४९, ८१ (विष्णु के सहस्रनामों में से एक); १५८, ३९ (इन्हें श्रीकृष्ण का तीसरा रूप माना गया है); १५९, ३. ६; १४. ८६, ५; ८८, ९; ८९, ३७; १६. ३, १९. ४५ (इनका वध); ६, ८; १८. ५, १३ (मृत्यु के पश्चात् इन्होंने सनत्कुमार में प्रवेश किया)।

तुक० प्रद्युम्न के निम्नलिखित पर्याय भी :

* कार्ष्णि – देखिये वस्था०।

* जानर्दनि : ३. १८, ७।

* मकरध्वज, मकरकेतुमत् – देखिये वस्था०।

* रुक्मिणिनन्दन : ३. १७, १७. २३; १९, १४; १६. ३, ३३।

* रौक्मिणेय : १. १८६, १७; २१९, ९; २. ४, ३५; ३. १६, २५; १७, १; १८, १०; १९, २. १४. १९. २२; २१, १८; १८३, २८. ३०; ५. ४८, ७४; १५७, १८; ७. ११, २२; १३. १४, २८; १५९, ७. ८. ५४; १४. ६६, ३; १६. ६, १०।

* वृष्णिप्रवीर – देखिये वस्था०।

* सात्वतमुख्य – देखिये वस्था०।

प्रद्योत, कुबेर की सभा में उपस्थित एक यक्ष का नाम है (२. १०, १५)।

प्रद्वेषी, दीर्घतमा की पत्नी का नाम है : १. १०४, २४ (यह गौतम की माता थीं). ३०. ३२. ३३।

१. प्रधान, एक राजर्षि का नाम है जो सुलभा के पूर्वजों से एक थे (१२. ३२०, ८१)।

२. प्रधान = प्रकृति : १. ६३, १००; १२. २०५, २५; २५३, ५. १५; ३१४, १; ३४०, २९; ३४७. १८ (अनिरुद्ध के साथ समीकृत). ८८; १३. १४, १४; १६, ५३; १४. १८, २६. ३३; ३९, २३; ४७, ९; ५०, ३२. ३३ (महापुरुष)।

प्रधानधृक् = शिव (सहस्रनाम)।

प्रधानपुरुष = शिव : ३. २७२, ३१; १३. १४, ३४६।

प्रधानपुरुषेश्वर = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. प्रपितामह = भीष्म (देखिये वस्था०)।

२. प्रपितामह = ब्रह्मा : १. २१२, २३; ३. ३०, ३६ (स्वायम्भूः); ५. ८६, ३ (कृष्ण को इनके साथ समीकृत किया गया है); ६. ३५, ३९; ८. ३५, ८; ९. ३८, ७; १२. २००, २२; २५६, १८; १३. १७, १३; १४. ३५, ३१।

३. प्रपितामह = विष्णु (सहस्रनाम)।

प्रबालक – देखिये प्रवालक।

प्रबाहु, एक कुरु-सैनिक का नाम है (७. ३७, २६)।

प्रभञ्जन, मणिपूर के राजा चित्रवाहन के पूर्वज एक राजा का नाम है (१. २१५, १९)।

प्रभञ्जनसुत, अर्थात वायु पुत्र = भीमसेन (४. २३, २८)।

प्रभञ्जनसुतानुज = अर्जुन (७. १४६, ११६)।

प्रभद्रक (बहु० °काः) का बहुधा पाञ्चाल सैनिकों के लिये प्रयोग हुआ है : ५. ४८, ३४; ५७, ३३; १५१, ५५; ६. १९, १८; ४९, ४२; ५६, १४; ७. २३, ४३. ७९; ३५, २२; ९५, ४५; १६२, ३५; १८३, ५२; १८४, ६; १९३, २६; ८. १२, १४; २२, ८. २७; ३०, २६; ४८, १०. २०; ४९, ३३; ५६, ६५; ६७, १४. २०; ९. ७, ३१; ७, १६; ११, २४; १५, ७; २७, ६; १०. ८, ४९. ६३. ६६।

प्रभव = विष्णु (सहस्रनाम)।

प्रभवः सर्वभूतानां = ब्रह्मा (१. ६४, ४५)।

१. प्रभा, एक देवी का नाम है : २. ११, ४१ (ब्रह्मा की सभा में)।

२. प्रभा, कुबेर की सभा की एक अप्सरा का नाम है (१३. १९, ४५)।

१. प्रभाकर = सूर्य (३. ३, १६)।

२. प्रभाकर, कुशद्वीप के एक वर्ष का नाम है (६. १२, १३)। देखिये प्रभारक भी।

प्रभाता, प्रजापति की पत्नी और प्रत्यूष तथा प्रभास नामक वसुओं की माता का नाम है (१. ६६, २०)।

प्रभारक, एक नाग का नाम है (१. ३५, १५)।

प्रभाव, = शिव (सहस्रनाम)।

१. प्रभावती, एक तापसी का नाम है : ३. २८२, ४१ (इसने मयासुर के भवन में तपस्या की थी)।

२. प्रभावती, सूर्य की पत्नी का नाम है (५. ११७, ८)।

३. प्रभावती, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ३)।

४. प्रभावती, अङ्गराज चित्ररथ की पत्नी और रुचि की बहन का नाम है (१३. ४२, ८)।

प्रभावात्मन् = शिव (सहस्रनाम)।

१. प्रभास, वसुओं में से एक का नाम है : १. ६६, १८ (ये आठवें वसु थे). २० (प्रजापति और प्रभाता के पुत्र). २७ (इनकी पत्नी बृहस्पति की बहन थी तथा विश्वकर्मा इनके पुत्र थे); १३. १५०, १७ (आठवें वसु)।

२. प्रभास, एक प्रसिद्ध तीर्थ का नाम है : १. २१८, २ (पश्चिमी सागर के तट पर स्थित). ३. ४. ८ (अर्जुन श्रीकृष्ण से प्रभास तीर्थ में ही मिले थे); ३. १२, १५ (यहाँ श्रीकृष्ण ने तपस्या की थी); ८२, ५८ (यहाँ हुताशन नामक अग्नि निवास करते हैं); ८८, २० (सुराष्ट्र देश में सागर तट पर स्थित); ९३, १०; ११८, १५ (पाण्डव यहाँ आये). १३०, ७ (यह इन्द्र का प्रिय स्थान है और सभी पापों का विनाश कर देता है); ९. ३५, ७८ (इसके नाम की व्युत्पत्ति). ८०. ८४ ८६; १२. १५२, १२. २८; १३. २५, ९. ५४; ९४, ३; १०२, ४५; १२५, ४८; १६५, १९. २३; १४. ८३, १३ (द्वारावती के निकट स्थित); १६. ३, १०. १५ (वृष्णिगण यहीं विनाश को प्राप्त हुये थे); ८, ९। तुकी० हिरण्यसरस्, प्रभासतीर्थ।

३. प्रभास, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६९)।

४. प्रभास (बहु० °साः) ऋषियों के एक वर्ग का नाम है (१२. १६६, २४)।

प्रभासतीर्थ = २. प्रभास (१. २, २२४. १६९; ३. ११९, १)।

प्रभासोत्पत्तिकथन – "वैशम्पायन जी ने बताया कि प्रजापति दक्ष के बहुत-सी सन्तान उत्पन्न हुई। उनमें से अपनी सत्ताइस कन्याओं का विवाह उन्होंने चन्द्रमा के साथ कर दिया। चन्द्रमा (सोम) की वे पत्नियाँ समय की गणना के लिये नक्षत्रों से सम्बन्ध रखने के कारण उसी नाम से विख्यात हुईं। वे सब की सब अप्रतिम सुन्दरियाँ थीं। उनमें भी रोहिणी अपने रूप-वैभव की दृष्टि से अन्य की अपेक्षा श्रेष्ठ थी। इसलिये भगवान् निशा०

कर (चन्द्रमा) उससे अधिक प्रेम करने लगे। पूर्वकाल में चन्द्रमा सदा रोहिणी के ही समीप रहते थे जिससे उनकी अन्य पत्नियाँ उन पर कुपित हो उठीं। उन सब ने अपने पिता दक्ष के पास आकर कहा कि चन्द्रदेव उन सब की उपेक्षा करके सदा रोहिणी के ही पास रहते हैं। तब दक्ष ने चन्द्रमा को सभी पत्नियों के पास रहने का आदेश देते हुये अपनी पुत्रियों को पुनः चन्द्रमा के पास जाने के लिये कहा। किन्तु इस आदेश के विपरीत भी चन्द्रमा रोहिणी के पास ही अधिक रहते थे जिससे अन्य पत्नियों ने पुनः दक्ष से कहा। यह सुनकर दक्ष ने सोम से कहा कि यदि वे अपनी सभी पत्नियों के पास समान भाव से नहीं रहेंगे तो शाप के भागी होंगे। इतना कहने पर भी चन्द्रदेव दक्ष की अवहेलना करके रोहिणी के पास ही रहते रहे। यह समाचार विदित होते ही दक्ष ने क्रोध पूर्वक राजयक्ष्मा की सृष्टि करके उसे सोम के शरीर में प्रविष्ट करा दिया। फल स्वरूप चन्द्रमा प्रतिदिन क्षीण होने लगे। उनके क्षीण होने से ओषधियाँ भी क्षीण हो गईं। सभी प्राणी भी क्षीणता को प्राप्त होने लगे। उस समय देवताओं ने चन्द्रमा से उनकी क्षीणता का करण पूछा। चन्द्रमा ने दक्ष के शाप का उल्लेख किया। तब देवताओं ने दक्ष से अपना शाप हटा लेने का निवेदन किया किन्तु दक्ष ने इसमें अपनी असमर्थता व्यक्त करते हुये कहा कि यदि चन्द्रमा अपनी सभी पत्नियों के प्रति सदा समान व्यवहार करें और सरस्वती के श्रेष्ठ तीर्थ में स्नान करें तो वे पुनः पुष्ट हो सकते हैं। इस प्रकार सोम आधे मास तक प्रतिदिन क्षीण होंगे और आधे मास तक निरन्तर बढ़ते रहेंगे। दक्ष की यह आज्ञा सुनकर चन्द्रदेव सरस्वती के प्रथम तीर्थ प्रभास क्षेत्र में गये। चन्द्रमा ने अमावस्या को उस तीर्थ में स्नान किया जिससे उन्हें शीतल किरणें प्राप्त हुईं और वे सम्पूर्ण जगत को प्रकाशित करने लगे। तदनन्तर सम्पूर्ण देवता सोम के साथ दक्ष के समक्ष उपस्थित हुये। दक्ष ने चन्द्रमा को अपनी सभी पत्नियों से सम-भाव रखने के लिये कहा। दक्ष की आज्ञा मानकर चन्द्रमा अपने स्थान को चले गये। इस प्रकार, वैशम्पायनजी ने चन्द्रमा के शाप तथा उसके मोचन का वृत्तान्त बताते हुये प्रभास तीर्थ को सब तीर्थों में श्रेष्ठ कहा। चन्द्रदेव उस प्रभास तीर्थ में प्रति अमावस्या को स्नान करके कान्तिमान और पुष्ट होते हैं। इसीलिये सब लोग इसे प्रभास तीर्थ के नाम से जानते हैं, क्योंकि इसमें स्नान करने से चन्द्रमा को उत्कृष्ट प्रभा प्राप्त होती है : 'अतश्चैतत् प्रजानन्ति प्रभासमिति भूमिप। प्रभां हि परमां लेभे तस्मिन्नुन्मज्ज्य चन्द्रमाः।' (९. ३५, ४५-८६)।"

१. **प्रभु**, एक प्राचीन राजा का नाम है (१. १, २३६)।

२. **प्रभु** = ब्रह्मा : १२. १६६, ३४; १८२, ३५; १८८, २; १९०, १०; १३. १५३, १५।

३. **प्रभु** = शिव (सहस्रनाम)।

४. **प्रभु** = कुबेर (३. २५७, २०)।

५. **प्रभु** = स्कन्द (३. २३२, ७. १४)।

६. **प्रभु** = सूर्य (३. ३, ६०)।

७. **प्रभु** = विष्णु (श्रीकृष्ण) : १. ६३, १००. १०२; ३. १८९, ५५; २७२, ४९. ५६. ६१; ६. ८, १५; ६७, १७; १२. ४७, ३६; ३०१, ७७; ३४२, १३०; १३. १४९, १७. ४५ (सहस्रनाम)।

प्रभुः प्रभूनां = स्कन्द (३. २३२, १७)।

प्रभूत = विष्णु (सहस्रनाम)।

प्रमतक, एक ऋषि का नाम है जो जनमेजय के सर्पयज्ञ में सदस्य बने (१. ५३, ७)।

प्रमति, रुरु के पिता, एक ऋषि का नाम है ; १. ५, ९ (च्यवन के पुत्र और रुरु के पिता); ८, १ (च्यवन और सुकन्या के पुत्र). २ (घृताची से रुरु नामक पुत्र उत्पन्न किया), १५ (रुरु की पत्नी के रूप में प्रमद्वरा का वरण किया). २६; ११, १०. ११; २४, ६. १८; ५८, ३० (इन्होंने रुरु को आस्तीकपर्व का वर्णन सुनाया); १३. २६, ५ (भीष्म के चारों ओर उपस्थित ऋषियों में यह भी एक थे); ३०, ६४ (वागीन्द्र के पुत्र और रुरु के पिता)। तुकी० भार्गव।

१. **प्रमथ**, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, १३)।

२. **प्रमथ** (बहु० °थाः) शिव के अनुचर, राक्षसों के एक वर्ग का नाम है : १३. १४, ३८९; १२५, ६; १३१, १. ४।

प्रमथनाथ = शिव (सहस्रनाम)।

प्रमद्वरा, रुरु की पत्नी का नाम है : १. ५, १० (रुरु की पत्नी और शुनक की माता)। "गन्धर्वराज विश्वावसु ने मेनका के गर्भ से एक सन्तान उत्पन्न की। मेनका ने अपनी इस नवजात कन्या को स्थूलकेश मुनि के आश्रम के निकट छोड़ दिया। स्थूलकेश ने उस कन्या का स्वयं पालन-पोषण किया तथा उसका प्रमद्वरा नाम रक्खा। एक दिन रुरु ने उस कन्या को स्थूलकेश के आश्रम पर देखा और उस पर तत्काल मुग्ध हो गये। स्थूलकेश ने प्रमद्वरा का रुरु के लिये वाग्दान कर दिया और आगामी उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में विवाह का मुहूर्त निश्चित किया किन्तु इस मुहूर्त के पहले ही एक सर्प के काटने से प्रमद्वरा की मृत्यु हो गई (१. ८, २. १३. १४. १६)।" "प्रमद्वरा की मृत्यु से रुरु अत्यन्त दुःखित होकर गहन वन में जाकर जोर-जोर से रुदन करने लगे। इस प्रकार विलाप करते हुये रुरु के पास एक देवदूत ने आकर इस प्रकार कहा : 'प्रमद्वरा गन्धर्व और अप्सरा की पुत्री थी। उसे जितनी आयु मिली थी वह समाप्त हो चुकी थी। अतः यदि तुम उसे पुनः प्राप्त करना चाहते हो तो अपनी आधी आयु उसे दे दो। ऐसा करने से वह पुनः जीवित हो उठेगी।' रुरु ने इसके लिये तत्काल स्वीकृति दे दी। तब उस देवदूत और गन्धर्वराज विश्वावसु ने धर्मराज से जाकर निवेदन किया कि प्रमद्वरा रुरु की आधी आयु से जीवित हो जाय। धर्मराज ने यह निवेदन स्वीकार करते हुये प्रमद्वरा को पुनरुज्जीवित कर दिया। तदनन्तर रुरु और प्रमद्वरा का विवाह हो गया और दोनों आनन्दपूर्वक रहने लगे (१. ९, २. ५. ९. ११. १४-१६)। प्रमद्वरा ने कालान्तर में रुरु से शुनक नामक पुत्र उत्पन्न किया (१३. ३०, ६५)।

प्रमर्दन = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

प्रमाण, एक बट-वृक्ष का नाम है जो गङ्गा तट पर स्थित था (३. १, ४१)।

१. **प्रमाणम्** = शिव (सहस्रनाम)।

२. **प्रमाणम्** = विष्णु (सहस्रनाम)।

प्रमाणकोटि, एक स्थान का नाम है : १. ६१, ११; १२८, ३३. ५२ (यहीं दुर्योधन ने भीमसेन के भोजन में विष मिलाया था); ३. १२, ८२; ८. ८३, ४४; ९. ५६, २१।

१. **प्रमाथ**, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ३०)।

२. **प्रमाथः** ७. १५७, १८। देखिये १. प्रमाथिन्।

१. **प्रमाथिन्**, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, ११; ७. १५७, १८)।

२. **प्रमाथिन्**, एक राक्षस का नाम है जो दूषण और वज्रवेग का भाई था : ३. २८६, २७. २८; २८७, २२. २५. २७ (नल नामक वानर ने इसका वध किया था)।

३. **प्रमाथिन्**, एक राक्षस, जिसका दुर्योधन ने वध किया था (६. ९१, २०)।

प्रमाथिनी, एक अप्सरा का नाम है जिसने अर्जुन के जन्मोत्सव के समय नृत्य किया था (१. १२३, ६३)।

प्रमुच, एक ऋषि का नाम है : १२. २०८, २९ (ये दक्षिण दिशा में रहते थे)।

प्रमुचु, सात धर्मराज ऋत्विजों में से एक का नाम है। ये दक्षिण दिशा में निवास करने वाले ऋषियों में से एक थे (१३. १५०, ३४; १६५, ३९)।

१. **प्रमोद**, ऐरावत वंशीय एक नाग का नाम है (१. ५७, ११)।

२. **प्रमोद**, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६५)।

प्रमोदन = विष्णु (सहस्रनाम)।

प्रमोहनास्त्र, धृष्टद्युम्न द्वारा प्रयुक्त एक अस्त्र का नाम है (६. ७७, ४४. ४५. ५०)।

प्रम्लोचा, कुबेर की सभा की एक अप्सरा का नाम है जिसने अर्जुन के जन्मोत्सव के समय गाना गाया था : १. १२३, ६५; २. १०, ११।

प्रयतात्मन् = शिव (सहस्रनाम)।

प्रयाग, गङ्गा और यमुना के संगम पर स्थित एक प्रसिद्ध तीर्थ का नाम है : १. ५५, १ (यहाँ सोम, वरुण और प्रजापति ने यज्ञ किये थे)। "प्रयाग तीर्थ में ब्रह्मा आदि देवता, दिशा, दिक्पाल, लोकपाल, साध्य, पितर, सनत्कुमार आदि महर्षि, अङ्गिरा आदि ब्रह्मर्षि, नाग, सुपर्ण, सिद्ध, सर्प, नदी, समुद्र, गन्धर्व, अप्सरा तथा भगवान् विष्णु निवास करते हैं। यहाँ तीन अग्निकुण्ड हैं जिनके बीच से सब तीर्थों से सम्पन्न गङ्गा वेगपूर्वक बहती हैं। यमुना यहीं गङ्गा से मिलती हैं। गङ्गा और यमुना का मध्य भाग पृथिवी का जघन माना गया है। ऋषियों ने प्रयाग को जंघनस्थानीय उपस्थ बताया है। प्रतिष्ठानपुर सहित प्रयाग, कम्बल और अश्वतर नाग तथा भोगवती तीर्थ यह ब्रह्माजी की वेदी है। यहाँ वेद और यज्ञ मूर्तिमान होकर रहते और प्रजापति की उपासना करते हैं। ऋषि, देवता तथा चक्रधर नृपतिगण यहाँ यज्ञों द्वारा भगवान् का यजन करते हैं। इसीलिये तीनों लोकों में प्रयाग को सब तीर्थों की अपेक्षा श्रेष्ठ एवं पुण्यतम बताया गया है। यहाँ आने अथवा इसका नाम लेने मात्र से ही मनुष्य मृत्युकाल के भय और पाप से मुक्त हो जाता है। यहाँ संगम में स्नान करने वाला राजसूय और अश्वमेध यज्ञों का पुण्य-फल प्राप्त कर लेता है। साठ करोड़ दस हज़ार तीर्थों का निवास केवल इस प्रयाग में ही बताया गया है। चारों विद्याओं के ज्ञान से जो पुण्य होता है और सत्य बोलने वाले व्यक्ति को जिस पुण्य की प्राप्ति होती है वह सब गङ्गा-यमुना के संगम में स्नान करने मात्र से प्राप्त हो जाता है। प्रयाग में भोगवती नाम से प्रसिद्ध वासुकि नाग का उत्तम तीर्थ है, जहाँ स्नान करने वाले को अश्वमेधयज्ञ का फल मिलता है। (३. ८५, ६९. ७६. ७९. ८३. ८८)।" ३. ८७, १९ (गङ्गायमुनयोर्वीर संगमं लोकविश्रुतम्'''प्रयागमितिविख्यातं तस्माद् भरतसत्तम); ९५, ४ (प्रयागे देवयजने देवानां पृथिवीपते'' गङ्गायमुनयोश्चैव संगमे सत्यसंगराः); ५. १८६, २७ (यहाँ अम्बा ने तपस्या की थी); १३. २५, ३७; १६५, २३।

प्रयुत, एक देवगन्धर्व का नाम है : १. ६५, ४३ (मुनि के पुत्र, देवगन्धर्वों में से एक)।

१. प्ररुज, एक नाग का नाम है : १. ३२, १९ (गरुड के साथ युद्ध किया था)।

२. प्ररुज, एक राक्षस का नाम है : ३. २८५, २ (रावण का अनुसरण किया)।

प्रलम्ब, एक असुर का नाम है जिसका श्रीकृष्ण ने वध किया था : १. ६५, २९ (दनु का पुत्र); ७. ११, ५ (श्रीकृष्ण ने इसका वध किया था)।

प्रलम्बहन् = बलराम : ९. ४७, १३; ६०, १९।

प्रवचनगत = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

प्रवर = शिव (सहस्रनाम)।

प्रवरः सुराणाम् = स्कन्द (३. २३२, १७)।

प्रवरा, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, २३)।

प्रवसु, ईलिन के पाँचवें पुत्र का नाम है (१. ९४, १८)।

प्रवह, एक प्रकार की वायु का नाम है : १२. ३०१, २७. ७४; ३२८, ३६ (जो धूम तथा गर्मी से उत्पन्न बादलों को इधर से उधर ले जाता है वह प्रथम मार्ग में प्रवाहित होने वाला 'प्रवह' नामक प्रथम वायु है)।

प्रवालक, कुबेर की सभा के एक यक्ष का नाम है (२. १०, १७)।

प्रवाह, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६४. ७०)।

१. प्रवीर, पूरु और पौष्टी के द्वितीय पुत्र का नाम है (१. ९४, ५)।

२. प्रवीर (बहु० °राः) एक जाति का नाम है (५. ७४, १६)।

प्रवृत्तवेदक्रिय = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

प्रवृत्ति = शिव (सहस्रनाम)।

प्रवेणी, एक नदी का नाम है (३. ८८, ११)

प्रवेपन, तक्षकवंशीय एक नाग का नाम है (१. ५७, ९)।

प्रशमी, कुबेर की सभा की एक अप्सरा का नाम है (१३. १९, ४५)।

प्रशस्ता, एक नदी का नाम है : ३. ११८, २ (अपनी तीर्थयात्रा के समय युधिष्ठिर यहाँ भी आये)।

प्रशान्त = शिव (१४. ८, १७)।

१. प्रशान्तात्मन् = सूर्य (३. ३, २७)।

२. प्रशान्तात्मन् = स्कन्द (३. २३५, ५)।

३. प्रशान्तात्मन् = शिव (सहस्रनाम)।

प्रश्नि – देखिये पृश्नि।

प्रसंख्यान (बहु० °नाः (ऋषियों के एक वर्ग का द्योतक है (९. ३७, ४८)।

प्रसन्धि, मनु के पुत्र और क्षुप के पिता का नाम है (१४. ४, १. ३)।

प्रसन्न = शिव (सहस्रनाम)।

प्रसन्नात्मन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

प्रसाद = शिव (सहस्रनाम)।

प्रसुह्म (बहु० °ह्माः) एक जाति का नाम है : २. ३०, १६ (अपनी दिग्विजय के समय भीमसेन ने पूर्व में इन्हें पराजित किया था)।

प्रसेन, कर्ण के पुत्र का नाम है जिसका सात्यकि ने वध किया था (८. ८२, ४. ६)।

प्रसेनजित्, एक प्राचीन नरेश का नाम है : २. ८, २१ (यम की सभा में); ३. ११६, २ (जमदग्नि-पत्नी रेणुका के पिता); १२. १५९, १३ (स्वर्गलोक प्राप्त किया); २३४, ३६ (गायों का दान करके स्वर्गलोक प्राप्त किया)।

प्रसेनजिती, महाभौम की पत्नी सुयज्ञा का नाम है (१. ९५, २०)।

प्रस्कन्दन = शिव (सहस्रनाम)।

प्रस्तुत, एक दैत्य का नाम है जिसका गरुड ने वध किया था (५. १०५, १२)।

प्रस्थल, त्रिगर्तों की एक उपजाति का नाम है : ८. ४४, ४७ (ये निन्द्य आचरण वाले लोग थे)।

प्रस्थलाधिप = त्रिगर्तराज सुशर्मा : (६. ७५, २०; ८७, १०; ११२, ५२)।

प्रस्थलाधिपति = सुशर्मा (९. २७, ४३)।

प्रस्रवणम् इन्द्रस्य, एक तीर्थ का नाम है : (३. १२५, २३)।

प्रस्वाप एक अस्त्र का नाम है : ५. १८३, १२. १८; १८४, २३; १८५, १-३।

प्रहर्तृ = शिव (सहस्रनाम)।

प्रहस्त, एक राक्षस का नाम है : ३. २८५, १४ (विभीषण के साथ युद्ध किया); २८६, १५. १८. २५ (विभीषण ने इसका वध किया)। तुकी० राक्षस।

१. प्रहास, धृतराष्ट्र वंशीय एक नाग का नाम है (१. ५७, १६)।

२. प्रहास, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६८)।

प्रहुत = शिव (सहस्रनाम)।

प्रह्लाद, एक असुर = प्रह्राद : १. ६३, १११ (प्रह्राद शिष्यो नग्नजित्); ५. ३५, २१-२३. २५-२८. ३०. ३५. ३७. ३८; ७. १७३, ६८ (शक्रप्रह्लादयोरिव); ९. ५७, ३; १२. ९८, ५०; १२४, २०. २७-२९.

३१. ३३. ३४. ३९. ४१. ४४. ४५. ४७. ५०. ५२. ५८. ६५ (प्रह्लाद ने शील का आश्रय लेकर महेन्द्र के राज्य का हरण और तीनों लोकों को भी अपने वश में कर लिया था। तदनन्तर ब्राह्मण का रूप धारण करके इन्द्र ने पुनः प्रह्लाद का शील प्राप्त कर लिया); १७९, २-४. ९. १०. १२; १८०, ३; २२२, ३. ८. ११. १२. १४. ३३. ३४ (इन्द्र और प्रह्लाद का संवाद); २२७, ५० (पृथिवी के प्राचीन शासकों में से एक)। इसके नाम के पर्यायों के लिये देखिये प्रह्लाद।

१. प्रह्लाद, एक असुर का नाम है : १. ६५, १८ (हिरण्यकशिपु का ज्येष्ठ पुत्र). १९ (विरोचन, कुम्भ और निकुम्भ के पिता); ६७, ६; २. ११, १९ (ब्रह्मा की सभा में); ६८, ६५ (प्रह्लाद के एक पुत्र था विरोचन। उसका केशिनी नामक एक कन्या की प्राप्ति के लिये अङ्गिरा के पुत्र सुधन्वा के साथ विवाद हो गया। जब उन दोनों का विवाद बहुत बढ़ गया तब दोनों ने प्रह्लाद के पास आकर पूछा : 'हम दोनों में कौन श्रेष्ठ है। आप इसका ठीक-ठीक उत्तर दीजिये।' प्रह्लाद इस विवाद से भयभीत होकर सुधन्वा की ओर देखने लगे। तब सुधन्वा ने प्रह्लाद को चेतावनी दी कि यदि वे उक्त विवाद का निर्णय देने में झूठ बोलेंगे तो इन्द्र अपने वज्र द्वारा उनके सर के सैकड़ों टुकड़े कर देंगे। सुधन्वा के इस कथन से व्यथित होकर प्रह्लाद ने काश्यप जी से इस प्रकार कहा : 'मैं यह जानना चाहता हूँ कि जो प्रश्न का उत्तर ही न दे, अथवा असत्य उत्तर दे दे उसे परलोक में कौन-सा लोक प्राप्त होता है ? काश्यप जी ने कहा : 'जो जानते हुये भी काम, क्रोध अथवा भय से प्रश्नों का उत्तर नहीं देता वह अपने ऊपर वरुण देवता के सहस्रों पाश डाल लेता है। इन पाशों में से प्रत्येक पाश एक-एक वर्ष के बाद खुलता है। अतः सत्य को जानने वाले पुरुष को यथार्थ रूप से सत्य ही बोलना चाहिये।' कश्यप जी की बात सुनकर प्रह्लाद ने अपने पुत्र विरोचन से इस प्रकार कहा : 'सुधन्वा तुमसे श्रेष्ठ है क्योंकि उसके पिता अङ्गिरा मुझ से श्रेष्ठ हैं, और उसकी माता तुम्हारी माता से श्रेष्ठ है।' प्रह्लाद की बात से प्रसन्न होकर सुधन्वा ने विरोचन को सौ वर्षों तक जीवित रहने का आशीर्वाद दिया (२. ६८, ६५. ६६. ६८. ७०. ७२. ८०. ८५)। ३. २८, १ (प्रह्लादस्य च संवादं बलेर्वैरोचनस्य च). २ (असुरेन्द्रं···प्रह्लादं). ६ (इनका और बलिर्वैरोचन का संवाद); १६८, ८१ (इन्द्र ने इन्हें पराजित किया था); २८६, १२; २८९, १८; ५. १६०, १३; ६. ३४, ३०; ७. १०८, ४४ (इन्द्र ने इन्हें पराजित किया था); १२२, ६५; १५६, १२७; १६६, ३०; १२. १३९, ७० (उशना ने इन्हें दो गाथायें सुनाया); १६६, २७ (ये स्कन्द के बाण को उठा नहीं सके और मूर्च्छित होकर गिर पड़े); ३२७, १७; १४. ९, ३०। तुल० असुराधिप, असुरेन्द्र, दैतेय, दैत्य, दैत्यपति दैत्येन्द्र, दानव।

२. प्रह्लाद, एक वाह्लीक राजा का नाम है जो शलभ नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ३१)।

३. प्रह्लाद, वरुण की सभा में उपस्थित एक नाग का नाम है (२. ९, १०)।

४. प्रह्लाद (बहु० °दाः) एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ४६)।

प्राक्कोटक (बहु० °काः), एक जाति के लोगों का नाम है (२. ३१, १३)।

प्राक्कोशल (बहु०) — देखिये कोशल (बहु०)।

प्राक्श्रृङ्गवत्, एक ऋषि का नाम है : ९. ५२, १५ (ऋषि कुणिगर्ग की पुत्री से विवाह किया)।

१. प्राग्ज्योतिष, एक नगर का नाम है : २. २६, ७ (भगदत्त की राजधानी; अपनी दिग्विजय के समय अर्जुन यहाँ आये थे); ४४, ७ (जब वृष्णि यहाँ आये तब उसी बीच शिशुपाल ने द्वारका को भस्म कर दिया था); ३. १२, २९ (नरक की राजधानी); २२, ९; ५. ४८, ८० (नरक की राजधानी जिसे श्रीकृष्ण ने जीत लिया); १३०, ४३ (शौरि, अर्थात कृष्ण यहाँ आये); १२. ३३९, ९२ (नरकासुर का वध करने के बाद श्रीकृष्ण द्वारका में इस नगर की पुनः स्थापना करेंगे); १४. ७५, १ (वज्रदत्त की राजधानी)।

२. प्राग्ज्योतिष = भगदत्त : २. २६, ९; ३४, ९; ६. ६४, ७०; ७५, १९; ८१, २९; ८३, २६. ३७. ३८; ८५; ४९. ६१. ८०; १११, ८. ९; ११३, ३१; ११४, २; ११६, ६१; ७. २०, १६; २६, ११. ३५. ४२. ४९; २७, ३; २८, १४. २६; २९, १. २. १०. ३६; ३०, १ (अर्जुन ने इसका वध किया था)।

प्राग्ज्योतिषज्येष्ठ = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

प्राग्ज्योतिषपति = भगदत्त (७. २६, ३७)।

१. प्राग्ज्योतिषाधिप = भगदत्त : २. ५१, १४. १६; ५. ५५, ४३. ६३; १३७, ३५; ७. २७, ७।

२. प्राग्ज्योतिषाधिप = वज्रदत्त (१४. ७६, १६)।

प्रागद्क्षिण = शिव (सहस्रनाम)।

प्राग्वंश = विष्णु (सहस्रनाम)।

प्राङ्नदी, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, १५९)।

१. प्राचीनगर्भ = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

२. प्राचीनगर्भ = अपान्तरतमा (१३. ३४९, ६६)।

प्राचीनबर्हिस्, एक प्रजापति का नाम है : १२. २०८, ६ (इनका अत्रि-वंश में जन्म हुआ था। दस प्रचेताओं के पिता); १३. १४७, २४ (हविर्धामा के पुत्र तथा दस प्राचेताओं के पिता); १६५, ५८।

प्राचीनवत्, एक प्राचीन राजा का नाम है : १. ९५, १२ (जनमेजय और अनन्ता के पुत्र; इन्होंने पूर्वी क्षेत्र पर विजय प्राप्त की). १३ (अश्मकी के पति और संयाति के पिता)।

१. प्राचेतस्, दस प्रचेतसों के पिता : १. ७५, ४ (प्राचेतसो दक्षो दक्षादिमाः प्रजाः)।

२. प्राचेतस् (बहु०) = प्रचेतागण : १. ७५, ४; १२. २०८, ६ (दक्ष के पिता)।

१. प्राचेतस = दक्ष : १. १, ३३; ७५, ५. ६; १२. २१, १६. ४१; १६६, १७; १३. ४६, १; १४७, २५।

२. प्राचेतस = मनु : १२. ५७, ४३; ५८, २।

प्राच्य (बहु० °च्याः) अर्थात् पूर्व दिशा की एक जाति : १. १३९, २४ (अर्जुन ने इन्हें पराजित किया); ५. ३०, २४ (दुर्योधन की सेना में); ५७, १४ (इन्हें युद्ध में भीमसेन से युद्ध करने के लिये निर्धारित किया गया); १६०, १०३ (दुर्योधन की सेना में); १६१, २१; १९५, ७; ६. ९, ५८; १५, १७; ५२, २१; ५९, ७६. १३५ (अर्जुन ने इन्हें पराजित किया); १०६, ७ (भीष्म की रक्षा की); ११९, ८१ (भीष्म को छोड़कर चले गये); ७. ७, १६; २०, ६. ११; ९३, २२ (अर्जुन ने इनका संहार किया); ८. ५, ४९; २२, २ (पाञ्चालों पर आक्रमण किया); ४५, २८; ७०, २०. ३३ (इनका संहार); ७३, १७; ९. १, २८; ३३, २५; १२, १०१, ४ (ये लोग हाथियों पर बैठकर युद्ध करने में पारंगत थे)।

१. प्राजापत्य (वि०, अर्थात् प्रजापति का) : १. ७३, ८; ३. २२६, ४; ४. ६४, २३; ५. २८, ८; १४३, ८; १८३, १२; ७. १५७, ३७; ८. ३४, २; १२. ६०, ४४; ११२, ४; १६५, २३; २४३, १७; २६८, २३; ३४०, ७०; १३. १९, २; ७६, १०; ८१, ३२; १०७, ९; १४७, २२।

२. प्राजापत्य (बहु० °त्याः), प्रजापति के वंशजों का द्योतक है : ५. ३५, ९; १२. २२७, ६२; १३. ८५, १४१।

प्राजापत्यक = अग्नि (३. २१७, १६)।

प्राजापत्याः लोकाः — "स्वर्ग के शिखर पर प्रजापति के महान् लोक हैं जो हृष्ट-पुष्ट और शोक रहित हैं। सम्पूर्ण जगत के प्राणी उन्हें पाना चाहते हैं। धृत राष्ट्र ने कहा : जो धर्मात्मा राजा राजसूय यज्ञ में अभिषिक्त होते हैं, प्रजाजनों की रक्षा करते हैं, तथा अश्वमेध यज्ञ के अवभृथ-स्नान में जिनके सम्पूर्ण अंग सिक्त हो जाते हैं उन्हीं के लिये प्रजापति लोक हैं।"

(१३. १०२, ४०. ४१)।

१. प्राण, वर्चस और मनोहरा के पुत्र का नाम है : १. ६६, २२; २. ११, २६ (ब्रह्मा की सभा में)।

२. प्राण, अग्नियों का नाम है : ३. २२०, १ (प्राणश्च प्राणपुत्रकः). १० (प्राणस्य चानुदात्तस्तु व्याख्याताः पञ्चविंशतिः)।

३. प्राण, पञ्चप्राणों (प्राणवायुओं) में से एक : ३. २१३, ३. ४. ६. ११. १२. १६; ५. ४६, ११. १३; ६. २९, २७ (प्राणापानौ); ७. ५९, १७ (प्राणापानसमानाः); २०२, १३९; १२. १८४, २४। "प्राण मस्तक तथा अग्नि दोनों में स्थित होकर शरीर को चेष्टाशील बनाता है। प्राण से संयुक्त आत्मा ही जीव है। वही सम्पूर्ण भूतों का आत्मा सनातन पुरुष है। वही मन, बुद्धि, अहंकार, पाँचों भूत और विषय रूप होता है। इस प्रकार प्राण के द्वारा शरीर के भीतर के समस्त विभाग तथा इन्द्रिय आदि सारे बाह्य अंग परिचालित होते हैं। तत्पश्चात् समान वायु के रूप में परिणत हो प्राण ही अपनी-अपनी गति के आश्रित शरीर का संचालक होता है। मुख से लेकर वायु तक जो महान स्रोत (प्राण के प्रवाहित होने का मार्ग) है वही अन्तिम छोर में गुदा के नाम से प्रसिद्ध है। उसी महान स्रोत से देहधारियों के अन्य सभी छोटे-छोटे स्रोत प्रकट होते हैं। उन स्रोतों द्वारा सम्पूर्ण अंगों में प्राणों का सम्बन्ध या प्रसार होने से उसके साथ रहने वाले जठरानल का भी सम्बन्ध या प्रसार हो जाता है। प्राणियों के शरीर में जो गर्मी का अनुभव होता है उसे जठरानल का ही ताप समझना चाहिये। वही देहधारियों के खाये हुये अन्न को पचाता है। अग्नि के वेग से बहता हुआ प्राण गुदा के निकट जाकर प्रतिहत हो जाता है; फिर ऊपर की ओर लौट कर समीपवर्ती अग्नि को भी ऊपर उठा देता है। नाभि से नीचे पक्वाशय और ऊपर आमाशय स्थित है। नाभि के मध्य भाग में शरीर-सम्बन्धी सभी प्राण स्थित हैं। ये समस्त प्राण हृदय से इधर-उधर और ऊपर नीचे प्रस्थान करते हैं; इसलिये दस प्राणों (प्राण-वायु के दस भेद इस प्रकार हैं : प्राण, अपान, व्यान, उदान और समान तथा नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त और धनञ्जय) से परिचालित होकर सभी नाड़ियाँ अन्न का रस वहन करती हैं। मुख से लेकर गुदा तक का जो महान् स्रोत है वह योगियों का मार्ग है। उससे वे योगी परमपद को प्राप्त होते हैं जिन्होंने सारे क्लेशों को जीत लिया है, जो सर्वत्र समदर्शी और धीर हैं, तथा जिन महात्माओं ने सुषुम्णा नाड़ी के द्वारा मस्तक में पहुँच कर वहीं अपने आपको स्थित कर दिया है। प्राणियों के प्राण, अपान आदि सभी वायुओं में स्थापित हुई जठराग्नि शरीर में ही रह कर सदा अग्नि-कुण्ड में रखी हुई अग्नि की भाँति प्रज्वलित होती रहती है (१२. १८५, १.५. १३. १७)।" १२. २००, १७; २१३, १७; २१९, ९; २३९, ७; २५२, ४; २८४, ६३; ३०१, २७; ३२८, ३३-३५; १४. २०, १४-१६; २१, १८. १९. २५; २३, २. ४. ८-१२. १४. १५. १७. १९; २४, २. ६. ९. १२; २५, १४; २८, २; ४२, ८।

४. प्राण = शिव (सहस्रनाम)।

५. प्राण = विष्णु (सहस्रनाम)।

६. प्राण (बहु० °णाः) विभिन्न प्राण वायुओं के लिये प्रयुक्त हुआ है : ३. २१३, ११. १३. १५. १६; १२. १८५, १२. १४. १५; ३२८, ४९।

प्राणघण्ट = शिव (सहस्रनाम)।

प्राणजीवन = विष्णु (सहस्रनाम)।

प्राणद = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. प्राणधारण = सूर्य (३. ३, २५)।

२. प्राणधारण = शिव (सहस्रनाम)।

प्राणनिलय = विष्णु (सहस्रनाम)।

प्राणभरन = शिव (सहस्रनाम)।

प्राणभृत् = विष्णु (सहस्रनाम)।

प्राणात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ७१)।

प्रातर, कौरव्यवंशीय एक नाग का नाम है (१. ५७, १३)।

प्रातिकामिन्, उस सूत का नाम है जिसे द्रौपदी को सभाभवन में लाने के लिये भेजा गया : २. ६७, १-६. १३. १४. २३; ७६, १; ८१, ७; ३१२, २; ४. १८, २; ९. ३३, ४९; ५६, ३५। तुकी० सूतः, सूतजः सूतपुत्र।

प्रातीप = शान्तनु (५. १४८, २)।

प्रातीपीय = बाह्लीक : ७. १५७, १३।

१. प्रातीपेय = शान्तनु (१. १३०, १८)।

२. प्रातीपेय = बाह्लीक (५. २३, ९; ११. २२, ५)।

३. प्रातीपेय (बहु० °याः) अर्थात् प्रतीप के वंशज : २. ६३, २, ७; ५. ५७, ५८।

प्राद्युम्नि = अनिरुद्ध (१. १८६, १७)।

प्राधा, दक्ष की पुत्री और कश्यप की पत्नी का नाम है : १. ६५, १२ (दक्ष की पुत्रियों की गणना). ४६ (यह आठ अप्सराओं और दस देवगन्धर्वों की माता बनी). ४९ (कश्यप से तेरह अप्सराओं को उत्पन्न किया; चार गन्धर्वसत्तमाः को भी जन्म दिया)।

प्राधेय (बहु० °याः), देवगन्धर्वों के एक कुल का द्योतक है : १. ६५, ४८; ८. ८७, ५२ (कर्ण और अर्जुन के युद्ध को देखने के लिये आये)।

१. प्राप्ति, शम की पत्नी का नाम है (१. ६६, ३३)।

२. प्राप्ति, जरासन्ध की पुत्री और कंस की पत्नी का नाम है (२. १४, ३१)।

३. प्राप्ति, एक सिद्धि का नाम है : १२. ३०२, १६ (शम्भु के गुणों में से एक); ३१२, १३; १३. १४, ४२० (= शिव)।

प्रावार, क्रौञ्चद्वीप के एक क्षेत्र का नाम है (६. १२, २२)।

प्रावारक = प्रावार (६. १२, २२)।

प्रावारकर्ण, एक वृद्ध उलूक का नाम है (३. १९९, ४. १७)।

प्रावृषेय, एक जाति का नाम है (६. ९, ५०)।

प्रांशु = विष्णु (सहस्रनाम)।

प्रासानां प्रभवोऽव्ययः = शिव सहस्रनाम)।

प्रासेनजिती = सुयज्ञा : १. ९५, २० (यह महाभौम की पत्नी थी)।

प्राह्लाद (प्रह्लाद के पुत्र) = विरोचन (५. ३५, १४)।

१. प्राह्लादि = वातापि (३. ९९, ३०)।

२. प्राह्लादि = विरोचन (५. ३५, १३. १४)।

१. प्रिय = स्कन्द (३. २३२, ५. ९)।

२. प्रिय = शिव (सहस्रनाम)।

प्रियक, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६५)।

१. प्रियकृत् = स्कन्द (३. २३२, ९)।

२. प्रियकृत् = विष्णु (सहस्रनाम)।

प्रियङ्कर, एक प्राचीन राजा का नाम है (१३. १६५, ५५)।

प्रियदत्ता = पृथिवी (१३. ६२, १२)।

प्रियदर्शन, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ५९)।

प्रियभृत्य, एक प्राचीन राजा का नाम है (१. १, २३६)।

प्रियमाल्यानुलेपन, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६०)।

प्रिया, अद्भुत नामक अग्नि की पत्नी (३. २२२, २६)।

प्रियार्ह = विष्णु (सहस्रनाम)।

प्रीतिवर्धन = विष्णु (सहस्रनाम)।

प्रेक्षागृह, उत्सव या नाटक आदि को सुविधापूर्वक देखने के लिये बनाया गया भवन। राजकुमारों के अस्त्रकौशल के प्रदर्शन के समय इसे द्रोणाचार्य ने शिल्पियों द्वारा बनवाया था (१. १३३, ११)। अस्त्रकौशल देखने के लिये इस दिव्य भवन में गान्धारी, कुन्ती आदि राजरानियों का आगमन (१. १३३, १५)। यहाँ राजकुमारों का कौशल-प्रदर्शन (१. १३३. १३५)।

प्रेत : ३. १७३, ४८; २८३, ९४; ६. ४६, १९; ७. १४६, ३६; ८. ३४, ३२ (सुराम्बुप्रेतवित्तानां पतीन् अर्थात इन्द्र, वरुण, यम और कुबेर); ८७, ५०; १०. ८, ७१; १२. २५३, ९७; १३. १४, १४१; ९०, ४८; ९२, २२; १८. २, २० (विन्ध्यशैलोपमैः)। तुकी० पितृ (बहु०)।

प्रेतचारिन् = शिव (सहस्रनाम)।

प्रेतराज् = यम (८. १४, १७)।

प्रेतराज = यम : १. ५३, २३; ६७, १२२; ११८, ३२; १७३, ४३; ३. १६३, ९; ६. १००, ४; १०३, ३८; १०४, १; ११६, ७८; ७. ९३, १९; १२२, ३३; १३५, १४; १६२, २९; ८. ५२, ३५; ६६, ५९; ९. ६५, ३७; १२. ३१, २१; १५. २९, ३०।

प्रेतलोक : १. ५४, ७; ११८, ३१; ३. २००, ५७; ६. ९०, ५८; ७. ३९, २४; १५५, १४; १६०, ३७; १३. १३०, १६. २४. २८. ३९।

प्रेताधिप = यम (३. १८९, ५)।

प्रोषक, एक जाति का नाम है (६. ९, ६९)।

प्रोष्ठ, एक जाति का नाम है (६. ९, ६१)।

प्रोष्ठपदा (द्वि० और बहु०) एक नक्षत्र (= भाद्रपदा) का नाम है : ५. ११४, ३; ६. ३, १५ (शुक्रः प्रोष्ठपदे पूर्वे समारुह्य विरोचते। उत्तरे तु परिक्रम्य सहितः समुदीक्षते ॥); १३. ८९, १३ (इस नक्षत्र में श्राद्ध करने का फल); १०४, १२७ (इस नक्षत्र में श्राद्ध नहीं करना चाहिये)। तुकी० भाद्रपदा।

प्रौष्ठपद, एक मास का नाम जिसका प्रोष्ठपदा नक्षत्र के आधार पर नामकरण किया गया है (१३. १०६, २८)।

प्रौष्ठपदा – देखिये प्रोष्ठपदा।

प्लक्षजात (वि०) का सरस्वती नदी के लिये प्रयोग किया गया है (१. १७०, २०)।

प्लक्षप्रस्रवण, एक तीर्थ का नाम है : (९. ५४, ११. ३७)।

प्लक्षराज, सोमतीर्थ के एक वृक्ष का नाम है : (९. ४३, ४९)।

प्लक्षवती, एक नदी का नाम है (१३. १६५, २५)।

प्लक्षा = सरस्वती (३. ८४, ७)।

प्लक्षावतरण, एक तीर्थ का नाम है : ३. ९०, ४ (यमुना तट पर स्थित)। "यमुना पर स्थित इस तीर्थ को मनीषी पुरुष स्वर्गलोक का द्वार बताते हैं। यहीं यूप और ओखली आदि यज्ञ-साधनों का संग्रह करने वाले महर्षियों ने सारस्वत यज्ञों का अनुष्ठान करके अवभृथ स्नान किया था। वसुधा का राज्य प्राप्त कर भरत ने अनेक यज्ञ किये थे और यहीं अश्वमेध के उद्देश्य से उन्होंने अनेक वार कृष्ण मृग के समान रंगवाले यज्ञ सम्बन्धी श्यामकर्ण अश्व को भूतल पर भ्रमण के लिये छोड़ा था। इसी तीर्थ में ऋषिप्रवर संवर्त से सुरक्षित होकर महाराज मरुत्त ने उत्तम यज्ञ का अनुष्ठान किया था। यहाँ स्नान करके शुद्ध हुआ मनुष्य सम्पूर्ण लोकों को प्रत्यक्ष देखता है और पाप से मुक्त होकर पवित्र हो जाता है। (३. १२९, १३-१७)।"

प्लक्षावतरणगमन – "पूर्वकाल में प्लक्षतीर्थ में प्रजापति ने इष्टीकृत नामक सत्र का एक सहस्र वर्ष तक चलने वाला अनुष्ठान किया था। यहीं अम्बरीष ने भी यज्ञ किया था। यज्ञ पूर्ण होने पर उन्होंने सदस्यों को दस पद्म मुद्रायें दान की थीं तथा स्वयं परम सिद्धि को प्राप्त हुये। ययाति की भी यही यज्ञभूमि रही है। यहाँ अग्नियों से युक्त नाना प्रकार की वेदियाँ, एक पत्ते वाली शमी का अवशेष तथा उत्तम सरोवर है। परशुरामजी के कुण्ड और नारायणाश्रम भी यहाँ स्थित हैं। जमदग्नि का प्रसर्पण तीर्थ भी यहीं रौप्या नामक नदी के समीप है। प्राचीन काल में एक स्त्री अपने पुत्र के साथ इस तीर्थ में निवास करने आई थी। उस समय एक भयंकर पिशाचिनी ने, जिसने ओखली जैसे आभूषण पहन रक्खे थे, इस प्रकार कहा था : 'तू युगन्धर में दही खाकर, अच्युतस्थल में निवास करके, और भूतलय में स्नान कर यहाँ पुत्रसहित निवास करने की अधिकारिणी कैसे हो सकती है। यदि एक रात रह लेने के बाद दूसरी रात भी यहाँ रहेगी तो तुझे अनेक कष्ट प्राप्त होंगे।' लोमश जी ने इसे कुरुक्षेत्र का द्वार बताया। (प्लक्षावतरण तीर्थ का विस्तृत वर्णन)। इस तीर्थ में स्नान कर लेने पर युधिष्ठिर को सब लोक प्रत्यक्ष दिखाई पड़ने लगे। उन्होंने श्वेतवाहन अर्जुन को भी देखा। (३. १२९)।"

"प्राचीन काल में दक्ष ने यज्ञ करते समय यह आशीर्वाद दिया था कि जो मनुष्य यहाँ मृत्यु को प्राप्त होंगे वे स्वर्गलोक पर अधिकार प्राप्त कर लेंगे। लोमश जी ने युधिष्ठिर को सरस्वती नदी का विनशन नामक तीर्थ, निषादराज का द्वार, चमसोद्भेद तीर्थ, सिन्धु तीर्थ, प्रभास तीर्थ, विष्णुपद तीर्थ, विपाशा, काश्मीर मण्डल, मानसरोवर के द्वार आदि का वर्णन करते हुये बताया कि परशुराम जी के आश्रम का द्वार विदेह देश के उत्तर में स्थित है। प्रचण्ड वायु भी उनके इस द्वार का कभी उल्लंघन नहीं कर सकता। इस देश की एक अन्य आश्चर्यजनक बात की चर्चा करते हुये लोमश जी ने बताया कि यहाँ निवास करने वाले साधक को युग के अन्त में पार्षदों तथा पार्वती सहित भगवान् शङ्कर का प्रत्यक्ष दर्शन प्राप्त होता है। इस सरोवर के तट पर चैत्र मास में साधक शिव की आराधना करते हैं। यह सरोवर उज्जानक नाम से प्रसिद्ध है। इसी प्रकार अन्य अनेक स्थलों का वर्णन करते हुये लोमश जी ने सब के महात्म्य का वर्णन किया। (३. १३०)।"

प्लवङ्ग = अग्नि (देखिये वस्था०)।

फ

फलकक्ष, कुबेर की सभा के एक यक्ष का नाम है (२. १०, १६)।

फलकीवन, एक तीर्थ जहाँ देवगण निवास करते हैं (३. ८३, ८६)।

फलोदक, कुबेर की सभा के एक यक्ष का नाम है (२. १०, १६)।

फल्गु, एक तीर्थ और नदी का नाम है। यहाँ आने से अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है : ३. ८४, ८९ (गया में); ८७, १२।

फल्गुतीर्थ, एक तीर्थ का नाम है (१३. १६५, २९)।

फल्गुनी (एक०, द्वि०, अथवा बहु०) दो नक्षत्रों (पूर्वा और उत्तरा) का नाम है : ४. ४४, १६ (उत्तराभ्यां फल्गुनीभ्यां नक्षत्राभ्यामहं दिवा जातो हिमवतः पृष्ठे तेन मां फाल्गुनं विदुः); १३. ६४, १३ (इस नक्षत्र में दान करने का फल); ८९, ६ (इस नक्षत्र में श्राद्ध करने का फल); ११०, ४ (चान्द्रव्रत का वर्णन)।

१. फाल्गुन = अर्जुन (देखिये वस्था०)।

२. फाल्गुन, भारतीय वर्ष के एक मास का नाम है : १. १४५, ३६; १३. १०६, २२ (जिस मास की पूर्णिमा को पूर्वा फाल्गुनी अथवा उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र का योग हो उसे फाल्गुन मास कहते हैं। यह माघ मास के बाद तथा चैत्र मास के पूर्व आता है। जो इस मास में एक समय भोजन करता है वह अपनी पत्नी का प्रिय होता है और पत्नी उसके अधीन रहती है); १०९, ६ (इस मास की द्वादशी को उपवासपूर्वक गोविन्द नाम से भगवान् का पूजन करने वाला पुरुष अतिरात्र यज्ञ का फल पाता है और मृत्यु के बाद सोमलोक में जाता है)।

फाल्गुनात्मज = अभिमन्यु (७. ४०, ३४)।

१. फाल्गुनि = अभिमन्यु : ६. १००, ६. ७; १०१, ११. २८; ११६,

१३. ३५; ७. ३६, ३०; ४४, १३; ४५, १३. २६; ४७, १०. २१; ४८, १; १४. ६८, २४।

२. फाल्गुनि = इरावत (६. ४५, ७१)।

फेनप (फेन पान करने वाला) : २. ८, ३०; ५. १०२, ५. ६; १२. ३४८, १४. २५; १३. १४, ५७; १४१, ९८।

फेनपाचार्य = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

ब

१. बक, एक राक्षस का नाम है : १. २, ८६ (हिडिम्बबकयोर्वधः). १०८ (बकस्य निधनं); ६१, २८; ९५, ७३ (तस्यामप्येकचक्रायां बकं नाम राक्षसं हत्वा पाञ्चालनगरमधिगताः); १६०, ३; १६३, २१; १६४, १. ८. १९; १६५, १. २; ३. १०, २३ (पाण्डवों ने अनेक राक्षसों, जैसे हिडिम्ब, बक, किर्मीर आदि का वध किया); ११, २३. ३० (किर्मीर ने कहा कि उसके भ्राता बक का वेत्रकीय वन में भीम ने वध किया था). ३४. ३६; १२, ११३; १५७, ४७ (मार्गे बकहिडिम्बयोः); ५. ९०, २३; ६. ९०, ४९ (आर्ष्यशृङ्गिं महेष्वासं मायाविनमरिन्दमम्। वैरिणं भीमसेनस्य पूर्वं बकवधेन वै); ७. १०८, २४ (अलम्बुष आर्ष्यशृङ्गि का भ्राता, जिसका भीमसेन ने वध किया); १७६, ३ (यह अलायुध का सम्बन्धी, हिडिम्ब का मित्र, और ब्राह्मणों का भक्षक था। भीमसेन ने इसका वध किया). ७ (हिडिम्बबककिर्मीराः); १७८, ४ (बकभ्राता, अर्थात अलायुध). ३३ (बकज्ञातिम् अर्थात अलायुध); १८०, ३३ (राक्षसेन्द्रा हिडिम्बकिर्मीरबकप्रधानाः) १८१, २३ (हिडिम्बबककिर्मीराः, इनका भीमसेन ने वध किया)।

२. बक : ३. ३१३, २९ (यक्ष के रूप में धर्म ने अपने को बक कहा)।

३. बक, एक ऋषि का नाम है जिन्हें सामान्यतया दक दाल्भ्य कहा जाता था : २. ४, ११; ३; २६, ५. २१; ९. ४०, ३२. ३३; ४१, १. ५. १३. २०. २२ अवाकीर्ण तीर्थ में रहते हुये दल्भपुत्र बक ने क्रोध में भर कर घोर तपस्या द्वारा अपने शरीर को शुष्क करते हुये राजा धृतराष्ट्र के राष्ट्र का होम कर दिया था। पूर्वकाल में नैमिषारण्य निवासी ऋषियों ने बारह वर्षों तक चलने वाले एक यज्ञसत्र का आरम्भ किया। उसके पूरा हो जाने पर वे सब ऋषि पाञ्चाल देश गये और वहाँ के राजा से दक्षिणा के लिये धन की याचना की। महर्षियों ने पाञ्चालराज से इक्कीस बलवान् और नीरोग बछड़े प्राप्त किये। तब उन ऋषियों से दल्भपुत्र बक ने इन पशुओं को आपस में बाँट लेने के लिये कहा और यह भी कहा कि वे स्वयं अपने लिये अन्य किसी राजा से पशु माँग लेंगे। इस प्रकार कह कर बक ने महाराज धृतराष्ट्र के पास आकर पशुओं की याचना की। उनकी याचना सुनकर धृतराष्ट्र कुपित हो उठे। उनके कुछ पशु मर गये थे। उन्हीं को लक्ष्य करके उन्होंने बक से कहा कि वे मरे पशुओं को ही ले जाँय। धृतराष्ट्र की बात सुनकर दाल्भ्य बक ने उनके राष्ट्र का विनाश करने का निश्चय किया। अतः बक ने मृत पशुओं के मांस काट-काट कर धृतराष्ट्र के राष्ट्र की आहुति देना आरम्भ किया। सरस्वती के अवाकीर्ण तीर्थ में उन्होंने इस प्रकार धृतराष्ट्र के राष्ट्र का हवन आरम्भ किया जिससे वह क्षीण होने लगा। अपने राष्ट्र को इस प्रकार संकटग्रस्त देखकर धृतराष्ट्र ने उसे बचाने का यथाशक्ति सभी प्रयास किया किन्तु सफलता न मिलने पर उन्होंने प्राश्निकों से इसका कारण पूछा। प्राश्निकों ने जब बक द्वारा राष्ट्रहोम की बात बताया तब धृतराष्ट्र ने सरस्वती-तट पर आकर बक मुनि से इस प्रकार निवेदन किया : 'मैं आपको प्रसन्न करना चाहता हूँ आप मुझ दीन, लोभी, और मूर्ख अपराधी के अपराध को क्षमा करें।' धृतराष्ट्र को इस प्रकार शोकसन्तप्त देखकर बक ने उनके राज्य को दया कर के संकट से मुक्त कर दिया। उन्होंने इस हेतु अग्नि में पुनः आहुतियाँ डाली। इस प्रकार धृतराष्ट्र के संकट का निवारण कर के बक पुनः नैमिषारण्य चले आये)।

४. बक, एक ऋषि जिनका दाल्भ्य के साथ उल्लेख मिलता है : ३. १९३, १. ४. १४. १६. १८. २७. ३७।

५. बक (बहु० °काः), भारतवर्ष के दक्षिणी क्षेत्र की एक जाति का नाम है (६. ९, ६१)।

बकनख, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५८)।

बकभ्रातृ, बक के भ्राता, सम्भवतः अलायुध का द्योतक है (७. १७८, ४; ११. २६, ३७)।

बकवध : १. २, ४३।

बकवधपर्वन् – "पाण्डव गण एकचक्रा नगरी में आकर एक ब्राह्मण के घर में रहने लगे। वे सभी लोग भिक्षा ला कर अपनी माता कुन्ती को सौंप देते थे। उस सम्पूर्ण भिक्षा में से आधा अकेले भीमसेन ही खाते थे और शेष आधे में कुन्ती तथा अन्य पाण्डव निर्वाह करते थे। एक दिन युधिष्ठिर आदि चार भाई भिक्षा के लिये गये किन्तु भीमसेन कुन्ती के साथ घर पर ही रह गये। उस दिन ब्राह्मण के घर में बड़े जोर का आर्तनाद होने लगा जिसे कुन्ती ने सुना। भीमसेन ने अपनी माता से उस ब्राह्मण के दुःख का पता लगाने के लिये कहा। कुन्ती ने ब्राह्मण के घर में जाकर उसके शोकमग्न परिवार को देखा। ब्राह्मण अपनी दशा पर विभिन्न प्रकार से विलाप कर रहा था। उसने अपनी विपत्ति से छुटकारा पाने की दृष्टि से स्वयं अपने जीवन का अन्त कर देने का निश्चय व्यक्त किया (१. १५७)।

"ब्राह्मण की आर्तवाणी सुनकर उसकी स्त्री ने उसे बचाने की दृष्टि से स्वयं अपने जीवन का अन्त कर देने का प्रस्ताव किया। ब्राह्मणी का प्रस्ताव सुनकर ब्राह्मण का हृदय अत्यन्त दुखी हो उठा। अतः वह अपनी पत्नी को गले से लगाकर विलाप करने लगा। (१. १५८)।

"अपने माता-पिता को इस प्रकार विलाप करते देखकर ब्राह्मण-पुत्री ने अपने जीवन का अन्त कर देने का प्रस्ताव किया जिससे उसके माता-पिता जीवित रह सकें। कन्या के मुख से नाना प्रकार का विलाप तथा उसका प्रस्ताव सुनकर ब्राह्मण-परिवार फूट-फूट कर रोने लगा। उस समय कुन्ती उन सब की स्थिति देखकर उन्हें सान्त्वना देने के लिये उनके पास गईं (१. १५९)।

"कुन्ती के पूछने पर ब्राह्मण ने अपने दुःख का कारण बताते हुये कहा कि उस नगर के पास यमुना तट पर एक सघन वन में बक नामक हिंसा-प्रिय और नरभक्षी राक्षस रहता है। वही उनके नगर का स्वामी है। उसके प्रतिदिन के लिये नगर वासियों को बीस खारी अगहनी चावल का भात तथा दो भैंसे देना पड़ता है। जो मनुष्य इन सामानों को लेकर उस राक्षस के पास जाता है उसका भी वह राक्षस भक्षण कर जाता है। प्रत्येक गृहस्थ अपनी बारी आने पर उसे भोजन देता है। यद्यपि यह बारी बहुत वर्षों के बाद आती है, तथापि लोगों के लिये उसकी पूर्ति अत्यन्त कठिन होती है। ब्राह्मण ने बताया कि उसके नगर का राजा वेत्रकीय नामक स्थान में रहता है और प्रजा के इस संकट के निवारणार्थ कोई प्रभावी उपाय नहीं करता। ब्राह्मण ने कहा कि आज उस राक्षस को भोजन देने की उसी की बारी है जो समूचे कुल का विनाश करने वाली है। इसी कारण वह तथा उसका सम्पूर्ण परिवार दुःख के महासागर में डूबा हुआ है। उसने बताया कि अपने बान्धवों के साथ उस राक्षस के पास जाने पर वह उन सब का

भक्षण कर लेगा (१. १६०)।

"कुन्ती ने ब्राह्मण को सान्त्वना देते हुये कहा कि उसके तो केवल एक ही पुत्र है अतः राक्षस के पास जाने से उसका समस्त कुल समाप्त हो जायगा। कुन्ती ने अपने पाँच पुत्रों में से एक को ही खाद्य-सामग्री लेकर राक्षस के पास जाने का प्रस्ताव किया। कुन्ती का वचन सुनकर ब्राह्मण ने इस प्रकार अपने अतिथि का जीवन संकट में डालना सर्वथा अस्वीकार कर दिया। कुन्ती ने ब्राह्मण से तब इस प्रकार कहा : 'मेरा भी यह स्थिर विचार है कि ब्राह्मणों की रक्षा करनी चाहिये। वह राक्षस मेरे पुत्र का विनाश करने में समर्थ नहीं है क्योंकि मेरा पुत्र पराक्रमी, मन्त्र सिद्ध और तेजस्वी है। फिर भी आपको यह बात किसी अन्य पर प्रकट नहीं करना होगा। अन्यथा लोग मन्त्र सीखने के लोभ से कौतूहलवश मेरे पुत्रों को तंग करेंगे, और यदि मेरा पुत्र गुरु की आज्ञा लिये बिना अपना मन्त्र किसी को बता देगा तो भी वह सीखने वाला व्यक्ति उस मन्त्र से वैसा कोई कार्य नहीं कर सकेगा जैसा मेरा पुत्र कर लेता है।' तदनन्तर भीम ने भी इस कार्य के लिये अपनी स्वीकृति दे दी (१. १६१)।

"जब अन्य पाण्डव भिक्षा लेकर घर लौटे तब कुन्ती ने ब्राह्मण की सहायता से सम्बद्ध अपना विचार प्रकट किया। युधिष्ठिर ने कुन्ती से कहा कि इस प्रकार शीघ्रता से उन्हें यह निर्णय नहीं करना चाहिये था। फिर भी कुन्ती ने भीमसेन के बल और पराक्रम के प्रति पूर्णतः आश्वस्त होकर अपने निश्चय के औचित्य का प्रतिपादन किया (१. १६२)।

"दूसरे दिन प्रातःकाल भीमसेन भोजन सामग्री लेकर उस स्थान पर गये जहाँ वह नरभक्षी राक्षस रहता था। वक राक्षस के वन में पहुँच कर भीमसेन उसके लिये लाये हुये अन्न को स्वयं खाते हुये राक्षस का नाम ले-ले कर उसे पुकारने लगे। उनके इस प्रकार पुकारने पर वक अत्यन्त कुपित हो उठा और क्रोधपूर्वक उस स्थान पर आया जहाँ भीमसेन बैठ कर भोजन कर रहे थे (राक्षस के स्वरूप का विस्तृत वर्णन)। भीमसेन को अपने लिये लाया गया भोजन खाते देखकर वक अत्यन्त क्रुद्ध हो उठा किन्तु उसकी अवहेलना करते हुये भीमसेन खाते ही रहे। राक्षस ने भीमसेन पर अपने हाथों से भीषण प्रहार किया किन्तु उन्होंने इस सब की उपेक्षा करके सम्पूर्ण खाद्य सामग्री स्वयं खा डाला और फिर मुँह-हाथ धो कर वक से युद्ध के लिये सन्नद्ध हो गये। दोनों के बीच भयंकर युद्ध होने लगे। दोनों ने वृक्ष उखाड़ कर एक दूसरे पर फेंका। तदनन्तर भीमसेन ने वक को अपनी बाहों में जकड़ लिया और पृथिवी पर पटक कर उसे दोनों घुटनों से मारने लगे। अन्त में भीमसेन ने उस भयंकर राक्षस की कमर तोड़कर उसका वध कर दिया। भीमसेन जब उस राक्षस की कमर तोड़ रहे थे तब उसके मुख से रक्त गिरने लगा और वह भयंकर चीत्कार कर मृत्यु को प्राप्त हुआ (१. १६३)।

"पसली की हड्डियों के टूट जानेसे पर्वत के समान विशालकाय वकासुर भयंकर चीत्कार करके प्राणरहित हो गया। उसकी चीत्कार से भयभीत होकर उसके परिवार के लोग सेवकों सहित घर से बाहर निकल आये। भीमसेन ने उन सब से यह आश्वासन लिया कि वे मनुष्य हिंसा नहीं करेंगे अन्यथा उनकी भी यही गति होगी। उन सभी ने भीमसेन की बात मान लिया तथा भविष्य में उन लोगों ने मनुष्यों के प्रति कभी कोई क्रूर व्यवहार नहीं किया। भीमसेन ने उस राक्षस के शव को नगर के द्वार पर फेंक दिया और स्वयं चुप-चाप लौट कर युधिष्ठिर को सारा समाचार दिया ब्राह्मण ने नगर-वासियों को बताया कि एक मन्त्रसिद्ध ब्राह्मण ने उस राक्षस का वध किया है। सभी नगरवासी इस घटना से आश्चर्यचकित होकर आनन्द में निमग्न हो गये। उस समय उन लोगों ने ब्राह्मणों के उपलक्ष में महान उत्सव मनाया। (१. १६४)।"

बक-शक्रसंवाद — "मार्कण्डेय जी ने युधिष्ठिर को महर्षि वक के दीर्घायु होने का रहस्य बताते हुये कहा कि बक और इन्द्र घनिष्ठ मित्र थे। जब देवासुर संग्राम समाप्त हो गया तब इन्द्र तीनों लोकों के अधिपति बना दिये गये। तब सारी प्रजा रोग-व्याधि से रहित, धर्म में स्थित, और धर्म को ही अपना परम आश्रय मानने वाली थी। एक दिन इन्द्र ऐरावत हाथी पर आरूढ़ होकर अपनी प्रजा को देखने के लिये निकले। अनेक स्थानों का भ्रमण करते हुये उन्होंने वक मुनि के रमणीय आश्रम में आकर मुनि का दर्शन किया। वक ने भी इन्द्र का समुचित सत्कार किया। उस समय बक मुनि की अवस्था एक लाख वर्ष की हो गई थी। इन्द्र ने वक मुनि से दीर्घायु लोगों के दुःखों का वर्णन करते हुये बताया कि ऐसे लोगों को अपने प्रियजनों की मृत्यु, आँखों के सामने बन्धु-बान्धवों से वियोग और जीवन-निर्वाह के लिये दूसरों के अधीन रहकर उनके तिरस्कार का कष्ट भोगना पड़ता है। इन्द्र ने वक से कहा : 'महाभाग, देवता, तथा ऋषिगण आपकी सेवा में उपस्थित रहते हैं। आप मुझ से पुनः यह बताइये कि चिरजीवी मनुष्यों को क्या सुख मिलता है।' वक ने कहा कि जो साधारण भोजन से भी सन्तुष्ट होकर दूसरों की शरण में नहीं जाता उसे सर्वश्रेष्ठ सुख मिलता है। दूसरे के सामने दीनता न दिखाकर अपने घर में फल और शाक खा कर रहना अच्छा है। जो द्विज अतिथियों, भूत प्राणियों और पितरों को अर्पण करके शेष अन्न स्वयं खाते हैं उनसे बढ़कर महान् सुख और क्या हो सकता है। ब्राह्मण के भोजन कर लेने पर जो उसे दक्षिणा दी जाती है उस समय उसके हाथ में जो प्रतिग्रह का जल रहता है उसे दाता पुनः उत्सर्ग के जल से सींचे। ऐसा करने से वह तत्काल सब पापों से छूट जाता है। इस प्रकार देवराज इन्द्र और बक की बात-चीत हुई जिसके बाद बक की आज्ञा लेकर इन्द्र स्वर्गलोक चले गये (३. १९३)।"

बकुल = शिव (सहस्रनाम)।

बदरपाचन, सरस्वती नदी के एक तीर्थ का नाम है : ९. ४७, ३३; ४८, १. ३२. ५१ (इस तीर्थ में तपस्वी और सिद्ध पुरुष सदैव विचरण करते रहते हैं। पूर्वकाल में यहाँ भरद्वाज की ब्रह्मचारिणी पुत्री श्रुतावती निवास करती थी। इन्द्र को अपने पति के रूप में प्राप्त करने के उद्देश्य से वह इस तीर्थ में उग्र तपस्या करती थी। उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर इन्द्र महात्मा वसिष्ठ का रूप धारण करके उसके आश्रम पर आये। इन्द्र ने श्रुतावती से कहा कि तपस्या से सब कुछ प्राप्त होता है। अन्त में इन्द्र ने उसे पाँच बेर के फल देकर पकाने के लिये कहा और उससे आज्ञा लेकर स्वयं थोड़ी ही दूर स्थित तीर्थ में स्नान करके जप करने लगे। इन्द्र ने श्रुतावती के मनोभाव की परीक्षा लेने के उद्देश्य से उन बेरों को पकने नहीं दिया। श्रुतावती ने उन फलों को आग पर चढ़ा दिया और तत्परता से उन्हें पकाने लगी। फलों को पकाते समय जब पूरा दिन व्यतीत हो गया और उसका सम्पूर्ण ईंधन भी समाप्त हो गया तब उसने अपने शरीर को ही जलाना आरम्भ किया। सब से पहले उस कन्या ने अपने दोनों पाँव अग्नि में डाल दिये फिर भी बेर नहीं पके। उसके मन में निरन्तर इस बात का चिन्तन होता रहा कि 'इन बेर के फलों को किसी भी प्रकार पकाना है।' अग्नि ने उसके दोनों पैर जला दिये किन्तु उसके मुख पर उदासी या पीड़ा का कोई चिह्न प्रकट नहीं हुआ। उसका यह कर्म देखकर इन्द्र अत्यन्त प्रसन्न हुये और उसे अपना यथार्थ रूप दिखाकर इस प्रकार कहा : 'मैं तुम्हारी तपस्या से अत्यन्त प्रसन्न हूँ। तुम्हारा अभीष्ट मनोरथ पूर्ण होगा। तुम इस शरीर का परित्याग करके स्वर्ग में मेरे पास रहोगी। तुम्हारा यह तीर्थ इस जगत में सुस्थिर होकर बदरपाचन नाम से प्रसिद्ध होगा। यह सम्पूर्ण पापों का नाश करने वाला तीर्थ तीनों लोकों में विख्यात होगा।' इन्द्र ने बताया कि पूर्वकाल में अरुन्धती को भगवान् शंकर ने भी बेर पकाने के लिये कहा और अरुन्धती उन्हें बारह वर्ष तक बिना कुछ खाये-पीये पकाती रहीं। शिव ने उनसे प्रसन्न होकर उन्हें वरदान और इस तीर्थ को बदरपाचन नाम से विख्यात होने का भी आशीर्वाद दिया। शिव ने यह भी कहा कि इस तीर्थ में तीन रात तक पवित्र भाव से रहकर वास करने से मनुष्य को बारह वर्षों के उपवास का फल प्राप्त होगा। इन्द्र ने तब श्रुतावती से इस प्रकार कहा : 'भगवान् शंकर ने अरुन्धती देवी को जो वर दिया था, तुम्हारे तेज और प्रभाव से

मैं उससे भी बढ़कर उत्तम वर देता हूँ। जो इस तीर्थ में एक रात निवास करेगा वह यहाँ स्नान करके देहत्याग के पश्चात् उन पुण्य लोकों में जायगा, जो दूसरों के लिये अत्यन्त दुर्लभ हैं।' श्रुतावती से ऐसा कहकर सहस्र नेत्रधारी इन्द्र अपने लोक में चले गये। इन्द्र के चले जाने पर वहाँ दिव्य पुष्पों की वर्षा होने लगी। श्रुतावती भी अपने शरीर का त्याग कर इन्द्र की भार्या हो गई। (९. ४८, १-६४)।" तुकी० बदरीपाचन भी।

बदरिका = बदरी : ३. ८५, १३ (यहाँ स्नान करने से मनुष्य को दीर्घजीवन तथा अन्त में स्वर्ग प्राप्त होता है)।

बदरी, एक तीर्थ का नाम है। नर और नारायण का आश्रम भी यहीं था : १. ३६, ३; ३. ४०, १; ४७, १२ (तदाश्रमपदं पुण्यं बदरी नाम विश्रुतम्); ९०, २५. २६ (तस्यातियशसः पुण्यां विशालां बदरीमनु। आश्रमः ख्यायते पुण्यस्त्रिषु लोकेषु विश्रुतः॥ उष्णतोयवहा गंगा शीततोयवहा पुरा। सुवर्णसिकता राजन्विशालां बदरीमनु॥); ११५, १९; १४१, २३; १४२, ४ (महान् नदी गंगा यहीं से आरम्भ होती है); १४५, ११. १९. ५१ (यहाँ के बदरी वृक्ष तथा नर-नारायण के आश्रम का वर्णन); १५४, १ (विशालां बदरीं); १५६, १० (विशाला बदरी दृष्टा नरनारायणाश्रमः). १४ (नरनारायणस्थानं बदरीत्यभिविश्रुतम्); १७७, ८ (विशाल). ११; १८७, ४ (विशालायां बदर्यां); २७२, २९; ५. ११, ४; १२. ३९, ३; १२७, ३; ३३४, १०. १४; ३३९, १११; ३४३, १०. २५. २६. ३३; १३. १४, १०; १४८, ५५; १६७, ४३।

बदरीपाचन : ३. ८३, १७९ (बदरीपाचनं गच्छेद्वसिष्ठस्याश्रमं गतः। बदरीं भक्षयेत्तत्र त्रिरात्रोपोषितो नरः॥)।

बधिरान्ध, एक नाग का नाम है : ५. १०३, १६ (भोगवती में)।

बन्धकर्तृ = शिव (सहस्रनाम)।

बन्धन = शिव (सहस्रनाम)।

बन्धनः असुरेन्द्राणां = शिव (सहस्रनाम)।

१. बभ्रु, एक या अधिक वृष्णि अथवा यादव राजाओं के लिये प्रयुक्त हुआ है : १. २१९, १० (एक वृष्णि); २. ४५, १० (इसकी पत्नी के साथ शिशुपाल ने बलात्कार किया); ८. ८५, १८ (इसने कुलिन्दराज के पुत्र का वध किया; इसे सहदेव के पुत्र ने आहत कर दिया); १२. ८१, १७; १६. १, १७. २९; ३, १६. ४६; ४, १. ४-६।

२. बभ्रु (बहु० बभ्रवः) से बभ्रु के वंश का तात्पर्य है (१६. ७, २)।

३. बभ्रु, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५०)।

४. बभ्रु = शिव (१. १४, २; १२. ४३, १३)।

५. बभ्रु, राजा की आदरसूचक उपाधियों में से एक (३. १८५, २८)।

६. बभ्रु = विष्णु (सहस्रनाम)।

बभ्रुमालिन् : २. ४, १६।

बभ्रुवाहन, चित्राङ्गदा से उत्पन्न अर्जुन के पुत्र का नाम है : १. २, १२३ (इसका जन्म); २१७, २४; १४. ७९, २ (अर्जुन के पुत्र और मणिपूर के राजा). १३. १६. २१. ३२. ३३; ८०, २०. ५३. ५६; ८१, ३. ५. २५; ८६, १९; ८७, २६; ८८, ५; ८९, ३४। तुकी० चित्राङ्गदासुत, चित्राङ्गदात्मज, धनञ्जयसुत, मणिपूरपति, मणिपूरेश्वर।

बर्बर, एक जाति का नाम है : १. १७५; ३७; २. ३०, १४ (भीमसेन ने इसे पराजित किया); ३२, १७ (नकुल ने पराजित किया था); ५१, २३ (युधिष्ठिर के लिये उपहार लाने वालों में ये भी थे); ३. ५१, २३ (युधिष्ठिर के राजसूय के समय उपस्थित लोगों में ये भी थे); २५४, १८; ६. ९, ५७ (यह भारतवर्ष की एक जाति थी); ७. ११९, १५. २१. ४६; १२१, १४; १२. ६५, १३; २०७, ४३; १३. ३५, १७।

१. बर्हिन्, दस प्राधेय देवगन्धर्वों में से एक का नाम है (१. ६५, ४६)।

२. बर्हिन्, पूर्व के एक ऋषि का नाम है (१३. १६५, ३८)।

१. बर्हिषद, एक प्रकार के पितरों अथवा मुनियों का द्योतक है : २. ८, ३०; १२. २६९, १५; ३४८, ४५ (मुनयः)।

२. बर्हिषद, एक ऋषि का नाम है : १२. २०८, २७ (ऋषिर्मेधातिथेः पुत्रः कण्वो बर्हिषदस्तथा); १३. १५०, ३१ (ये पूर्व में रहते थे)।

१. बल, दनायुस् के पुत्र और वृत्र के भाई, एक असुर का नाम है : १. ६५, ३३; २. २३, ८ (शक्रं बल इवासुरः); ३. १६८, ८१ (अपने रथ पर बैठ कर इन्द्र ने नमुचि, बल, वृत्र आदि असंख्य दैत्यों को परास्त किया था); ५. १६, १४; ६. ४५, ४२ (बलं शक्र इवाहवे); १००, ३२ (देवसेनां यथा बलः); ७. १४, ४८ (यथा......बलशक्रौ); ३०, ९ (इन्द्रं वृत्रबला इव); १०९, ३५ (बलं हत्वेव वासवः); ११८, १५ (वक्त्रं विचकर्त देहात्। यथा पुरा वज्रधरः प्रसह्य बलस्य संख्येऽतिबलस्य राजन्); ८. ९०, ६१ (यथेन्द्रौ बलमोजसा रणे); १२. ९८, ४९; १३. १४, २१५; १४. ५, २३ (निहन्ता त्वं बलस्य च)।

२. बल, देवी से उत्पन्न वरुण के पुत्र का नाम है (१. ६६, ५२)।

३. बल, एक आङ्गिरस का नाम है : १२. २०८, २७ (पूर्व के ऋषियों में से एक); १३. १५०, ३०।

४. बल, वायु द्वारा प्रदत्त स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ४४)।

५. बल, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३०)।

६. बल, एक वानर का नाम है (३. २८७, ६)।

७. बल, अयोध्या के राजा परिक्षित के पुत्र का नाम है (३. १९२, ३८)।

८. बल = बलदेव (बलराम) : १. ३७, २. १८. २७. २९. ३८. ६०; ३९, ७; ४३, ४६; ४७, ३२; ४९, १; ५१, २; ५४, ११; १३. १४७, ५४।

९. बल = शिव (सहस्रनाम)।

बलचारिन् = शिव (सहस्रनाम)।

बलद, एक अग्नि का नाम है (२. २२१, १०)।

१. बलदेव = बलराम : १. ६७, १५२ (ये शेषनाग के अंश से उत्पन्न हुये थे); १९०, ३४; १९१, २५; १९७, ३३ (विष्णु के एक श्वेत केश के द्वारा रोहिणी के गर्भ से उत्पन्न हुये); २२०, २४; ३. १२, ४१ (कृष्ण की बाल-लीलाओं में ये उनके साथ-साथ रहते थे); १८, २८; २१, १६. २१; ५. ४, ३; ७, ३; ४८, ७८; ७. ११, ८; ८. ६, ७; ९. ३५, २०; ६०, १; १३. १२६, १७; १४. १५, २०; ५२, २४. ४६; ६२, ६; ८६, ४; ८९, ३७।

२. बलदेव, एक नाग का नाम है (१३. १३२, ८)।

बलदेवतीर्थयात्रा, अर्थात् सरस्वती के विभिन्न तीर्थों की बलदेव द्वारा यात्रा : "जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन ने बताया : बलराम जी सरस्वती-तट के तीर्थों की यात्रा के लिये चल पड़े। सबसे पहले वे प्रभास क्षेत्र में गये जहाँ राजयक्ष्मा से कष्ट पाते हुये चन्द्रमा को शाप से मुक्ति मिली थी। जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन जी ने प्रभासोत्पत्ति की कथा बताया। तदनन्तर बलराम जी ने चमसोद्भेद तीर्थ में आकर स्नान किया तथा प्रचुर दान देने के पश्चात् एक रात वहीं रहे। चमसोद्भेद से वे उदपान तीर्थ में आये। वैशम्पायन जी ने इस तीर्थ की उत्पत्ति तथा महिमा का वर्णन किया। यहाँ से बलराम जी विनशन तीर्थ में आये (९. ३५-३६)।

"शूद्रों और आभीरों के प्रति द्वेष होने से सरस्वती नदी विनशन तीर्थ में विनष्ट (अदृश्य) हो गई है। इसीलिये ऋषिगण उसे विनशन तीर्थ कहते हैं। यहाँ से बलदेव जी 'सुभूमिक' तीर्थ में गये जहाँ अप्सरायें नाना प्रकार की विमल क्रीड़ाओं द्वारा मनोरंजन करती हैं। अप्सराओं की क्रीडा भूमि होने के कारण ही इसे सुभूमिक कहते हैं। यहाँ से बलदेव जी गन्धर्व तीर्थ में आये जहाँ विश्वावसु आदि गन्धर्व नृत्य-वाद्य और गीत का आयोजन करते रहते हैं। गन्धर्व तीर्थ से चलकर एक कान में कुण्डल..

धारण करने वाले बलदेव गर्गस्रोत नामक महातीर्थ में आये। यहाँ महात्मा गर्ग ने सरस्वती के तीर्थ में काल का ज्ञान, काल गति, ग्रहों और नक्षत्रों के उलट-फेर, दारुण उत्पात तथा शुभ लक्षण – इन सभी बातों की जानकारी प्राप्त कर ली थी। उन्हीं के नाम से यह गर्ग तीर्थ कहलाता है। महर्षियों की सेवा के पश्चात् बलदेव जी शङ्खतीर्थ में आये। जहाँ उन्होंने महाशङ्ख नामक एक वृक्ष देखा। यहाँ गोदान करने के बाद बलदेव जी द्वैतवन आये और ब्राह्मणों का पूजन किया। इसके बाद सरस्वती के दक्षिण तट पर होकर यात्रा करते हुये वे नागधन्वा नामक तीर्थ में आये जहाँ चौदह हजार ऋषि निवास करते हैं। यहाँ से बलदेव जी उस स्थान की ओर चल पड़े जहाँ सरस्वती पूर्व दिशा की ओर लौट पड़ी है। जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन जी ने पूर्वकाल में सरस्वती के इस स्थान पर पूर्वाभिमुख होकर बहने की कथा का वर्णन किया। इस स्थान को कुछ नैमिषीय तीर्थ कहते हैं। यहाँ से चलकर बलदेव जी सप्तसारस्वत नामक तीर्थ में आये जो सरस्वती के तीर्थों में सर्वश्रेष्ठ है। यहाँ अनेकानेक ब्राह्मण समुदाय निवास करते हैं। बेर, इंगुद, काश्मर्य, पाकड़, पीपल, बहेड़ा, कंकोल, पलाश, करीर, पीलु, करूष, विल्व, अमड़ा अतिमुक्त, पारिजात तथा सरस्वती के तट पर उगे हुये नाना प्रकार के वृक्षों से इस तीर्थ की शोभा में पर्याप्त वृद्धि हो गई है। यहाँ महामुनि मंकणक ने बहुत उग्र तपस्या की थी। (९. ३७)।

जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन जी ने इस सप्तसारस्वत तीर्थ की उत्पत्ति के सम्बन्ध में बताते हुये कहा कि समय-समय पर ब्रह्मा तथा अन्यान्य महर्षियों के निवेदन पर सरस्वती नदी सुप्रभा, काञ्चनाक्षी, विशाला, मनोरमा, सुरेणु, ओघवती, विमलोदका – इन सात नामों से प्रकट हुई थीं। फिर ये सातों सरस्वतियाँ एकत्र होकर इस सप्तसारस्वत तीर्थ में आईं जिससे यह तीर्थ विख्यात हुआ। इस तीर्थ में मंकणक मुनि ने तपस्या की थी (मंकणक की कथा) (९. ३८)।

"एक रात तक सप्तसारस्वत तीर्थ में रहने के बाद बलराम जी औशनस तीर्थ में आये। इस तीर्थ का ही दूसरा नाम कपालमोचन भी है। पूर्व काल में भगवान् श्रीराम ने एक राक्षस को मार कर उसे दूर फेंक दिया था। उसका विशाल सर महामुनि महोदर की जाँघ में चिपक गया था। वे महामुनि इसी तीर्थ में स्नान करने पर उस कपाल से मुक्त हुये थे। महात्मा शुक्राचार्य ने भी यहाँ तप किया था जिससे उनके हृदय में सम्पूर्ण नीति-विद्या स्फुरित हुई थी। शुक्राचार्य ने यहीं रहकर दैत्यों और दानवों के युद्ध के विषय में विचार किया था। जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन जी ने श्रीराम द्वारा दण्डकारण्य में राक्षस वध, उसके कपाल का महर्षि महोदर के जाँघ में चिपकने तथा महर्षि के कपालमोचन की कथा का विस्तार से वर्णन किया। यहाँ से बलदेव जी रुषंगु मुनि के आश्रम पर आये जहाँ आर्ष्टिषेण मुनि ने घोर तपस्या की थी और यहीं विश्वामित्र ने ब्राह्मणत्व प्राप्त किया था। यहाँ से बलदेव जी उस तीर्थ में आ गये जहाँ लोकपितामह भगवान् ब्रह्मा ने सृष्टि की थी, जहाँ मुनिश्रेष्ठ आर्ष्टिषेण ने घोर तपस्या करके ब्राह्मणत्व प्राप्त किया था, तथा जहाँ राजर्षि सिन्धुद्वीप, तपस्वी देवापि और भगवान् विश्वामित्र ने भी ब्राह्मत्व प्राप्त किया था (९. ३९)।

"जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन जी ने आर्ष्टिषेण और विश्वामित्र की कथा का विस्तार से वर्णन किया। इस तीर्थ से चल कर बलदेव जी उस बक तीर्थ में आये जहाँ दाल्भ्य बक ने तपस्या की थी (९. ४०)।

"ब्राह्मणत्व की प्राप्ति कराने वाले उक्त तीर्थ से प्रस्थित होकर बलदेव जी अवाकीर्ण तीर्थ में गये जहाँ दाल्भ्य बक ने क्रुद्ध होकर विचित्रवीर्य-कुमार धृतराष्ट्र के राष्ट्र का होम कर दिया था। इसी तीर्थ में बृहस्पति ने असुरों के विनाश के लिये मांस द्वारा आभिचारिक यज्ञ का अनुष्ठान किया था। इस यज्ञ के परिणामस्वरूप असुर क्षीण हो गये और देवताओं ने उन्हें मार भगाया। इस तीर्थ से बलदेव जी ययातितीर्थ में गये जहाँ पूर्वकाल में नहुषनन्दन ययाति ने यज्ञ किया था और उसमें सरस्वती ने उनके लिये दूध तथा घृत का स्रोत बहाया था। यह यज्ञ समाप्त करने के बाद ययाति ऊर्ध्वलोक चले गये थे जहाँ उन्हें बहुत-से पुण्यलोक प्राप्त हुये। ययाति जब वहाँ यज्ञ कर रहे थे उस समय सरस्वती नदी ने उस यज्ञ में आये ब्राह्मणों को उनके मनोवाञ्छित भोग प्रदान किये थे। यज्ञमण्डप में आया जो ब्राह्मण जहाँ कहीं ठहर गया वहीं उसके लिये सरस्वती ने पृथक्-पृथक् गृह, शय्या, आसन, षड्रस भोजन, तथा नाना प्रकार के दान की व्यवस्था की थी। उस यज्ञ की सम्पत्ति से देवता और गन्धर्व तक अत्यन्त प्रसन्न हुये थे। तदनन्तर बलदेव जी, जो प्रतिदिन बड़े-बड़े दान किया करते थे, वहाँ से वसिष्ठापवाह नामक तीर्थ में गये जहाँ सरस्वती का वेग बहुत भयंकर है (९. ४१)।

"जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन जी ने वसिष्ठापवाह का इतिहास बताते हुये कहा कि विश्वामित्र जी के कहने पर सरस्वती नदी वसिष्ठ जी को तीव्र वेग से बहा कर विश्वामित्र के पास लाई। बहते समय वसिष्ठ जी सरस्वती की स्तुति करने लगे। सरस्वती नदी ने जब वसिष्ठ को विश्वामित्र के आश्रम तक बहा कर पहुँचा दिया तब विश्वामित्र उनके वध के लिये हथियार ढूँढ़ने लगे। उस समय सरस्वती ब्रह्महत्या के भय से वसिष्ठ मुनि को पुनः पूर्व दिशा में तीव्र वेग से बहा ले गईं। तब विश्वामित्र ने क्रुद्ध होकर सरस्वती को जल के स्थान पर रक्त बहाने का शाप दे दिया जो राक्षसों के समूह को अधिक प्रिय है। इस प्रकार यह स्थान वसिष्ठापवाह नाम से प्रसिद्ध हो गया। (९. ४२)।

"उक्त तीर्थ में स्नान करने के पश्चात् बलराम जी सोम के उस महान् एवं उत्तम तीर्थ में गये जहाँ पूर्वकाल में सोम ने राजसूय यज्ञ का अनुष्ठान किया था। इस यज्ञ में महात्मा अत्रि ने होता का कार्य किया था। इस यज्ञ के अन्त में देवताओं के साथ दानवों, दैत्यों तथा राक्षसों का भयंकर तारकामय संग्राम हुआ जिसमें स्कन्द ने तारकासुर का वध किया था। इसी समय स्कन्द (कार्तिकेय) ने देवताओं का सेनापतित्व ग्रहण किया था। इस तीर्थ में जहाँ विशाल प्लक्ष वृक्ष है वहाँ कुमार कार्तिकेय साक्षात् निवास करते हैं (९. ४३)।

"वैशम्पायन जी ने महाराज जनमेजय के पूछने पर स्कन्द के सेनापति पद पर अभिषिक्त होने की कथा का विस्तार से वर्णन किया। तदनन्तर उन्होंने उस तैजस तीर्थ का माहात्म्य बताया जहाँ देवताओं ने वरुणदेव का जल के स्वामी के रूप में अभिषेक किया था। इस श्रेष्ठ तैजस तीर्थ में स्नान करने के पश्चात् बलराम जी ने स्कन्द का पूजन और ब्राह्मणों को सुवर्ण आदि का दान किया (९. ४४-४६)।

"वैशम्पायन जी ने वरुण के अभिषेक का विस्तार से वर्णन किया। इस तैजस तीर्थ से बलरामजी (जिन्होंने प्रलम्बासुर का वध किया था) अग्नि तीर्थ में गये। जब शर्मी के गर्भ में छिप जाने के कारण अग्नि देव का कहीं दर्शन नहीं हो रहा था और जगत के प्रकाश अथवा दृष्टिशक्ति के विनाश की घड़ी उपस्थित हो गई तब सब देवताओं ने ब्रह्माजी से अग्नि देव को प्रकट करने के लिये कहा। वैशम्पायन ने अग्नि के पुनः प्रकट होने से सम्बद्ध अग्नितीर्थ का वर्णन किया। अग्नितीर्थ से बलराम जी ब्रह्मयोनि तीर्थ में आये। पूर्वकाल में ब्रह्मा ने इसी तीर्थ में स्नान करके सृष्टि रचना की थी। यहाँ से बलराम जी उस तीर्थ में आये जहाँ कुबेर ने धनाध्यक्ष का पद प्राप्त किया था। बलराम जी ने यहाँ उस उत्तम स्थान का दर्शन किया जहाँ पूर्वकाल में कुबेर ने उग्र तपस्या करके अनेक वर प्राप्त किये थे। इसी तीर्थ में धन और निधियाँ कुबेर के पास आ गई थीं। यहाँ कुबेर ने रुद्र के साथ मित्रता, धन का स्वामित्व, देवत्व, लोकपालत्व और नलकूबर नामक पुत्र अनायास ही प्राप्त कर लिया थे। यहाँ से बलराम जी बदरपाचन नामक शुभतीर्थ में आये जो सब प्रकार के जीव-जन्तुओं से सेवित, नाना ऋतुओं की शोभा से सम्पन्न वनस्थलियों से युक्त तथा निरन्तर फूलों और फलों से भरा रहने वाला था (९. ४७)।

"बदरपाचन तीर्थ की उत्पत्ति की कथा का वर्णन करते हुये वैशम्पायन जी ने बताया कि यह तीर्थ तपस्वियों और सिद्धों का निवास-स्थान है। इस तीर्थ के प्रसंग में उन्होंने श्रुतावती और अरुन्धती के तप की कथा का

भी विस्तार से वर्णन किया। इस तीर्थ में स्नान-दान करने के बाद बलराम जी इन्द्रतीर्थ में आये (९. ४८)।

"इन्द्रतीर्थ, रामतीर्थ, यमुनातीर्थ और आदित्य तीर्थों की महिमा का वैशम्पायन ने वर्णन करते हुये बताया कि आदित्यतीर्थ में ऋषि असित देवल ने योगिक शक्ति प्राप्त की थी (असित देवल की कथा)। यहाँ से बलराम का सोमतीर्थ में आगमन (९. ४९- ५०)।

"सोमतीर्थ में चन्द्रमा ने राजसूय यज्ञ किया था और यहीं तारकामय संग्राम हुआ था। यहाँ से बलराम जी सारस्वत तीर्थ में आये, जहाँ पूर्व-काल में बारह वर्षीय अनावृष्टि के समय सारस्वत मुनि ने उत्तम ब्राह्मणों को वेदों का अध्ययन कराया था। सारस्वत और दधीच का भी वैशम्पायन जी ने वर्णन किया। बलराम जी उस प्रसिद्ध तीर्थ में गये जहाँ किसी समय कन्या वृद्धकुमारी निवास करती थी (९. ५१)।

"वैशम्पायन जी ने वृद्धकन्या के चरित्र का विस्तार से वर्णन किया। इसी तीर्थ में बलराम जी ने शल्य के मारे जाने का समाचार सुना। यहाँ यदुवंशी बलराम जी ने ब्राह्मणों को अनेक प्रकार के दान दे समन्तपञ्चक द्वार से निकल कर ऋषियों से कुरुक्षेत्र के सेवन का फल पूछा (९. ५२)। ऋषियों द्वारा कुरुक्षेत्र की सीमा और महिमा का वर्णन (९. ५३)।

"सात्वतवंशी बलराम जी कुरुक्षेत्र का दर्शन करके एक महान एवं दिव्य आश्रम में आये। महुआ और आम के वृक्ष उस आश्रम की शोभावृद्धि कर रहे थे। महर्षियों ने बलराम को बताया कि प्राचीन काल में भगवान् विष्णु ने इसी आश्रम में तपस्या की थी। यहीं विष्णु के सभी सनातन यज्ञ भी विधिपूर्वक सम्पन्न हुये थे। इसी तीर्थ में कुमारावस्था में ब्रह्मचर्य का पालन करते हुये एक सिद्ध ब्राह्मणी निवास करती थी जो तपःसिद्ध तपस्विनी थी और योगयुक्त होकर स्वर्ग चली गई। नियमपूर्वक व्रत और ब्रह्मचर्य का पालन करने वाली वह तेजस्विनी साध्वी महात्मा शाण्डिल्य की पुत्री थी। स्त्रियों के लिये जो अत्यन्त दुष्कर था ऐसा घोर तप करके देवताओं और ब्राह्मणों द्वारा सम्मानित हुई वह सौभाग्यशालिनी देवी स्वर्गलोक चली गई थी। इस तीर्थ में ऋषियों को प्रणाम और सन्ध्यावन्दन आदि सब कर्म करने के बाद बलराम जी हिमालय पर्वत पर चढ़ने लगे। थोड़ी ही दूर जाने पर वह प्लक्षप्रस्रवण नामक तीर्थ में पहुँच गये। यहाँ से वे कारपवन तीर्थ में आये और वहाँ एक रात निवास किया। यहाँ से बलराम जी मित्रावरुण के आश्रम पर आये जहाँ पूर्वकाल में इन्द्र, अग्नि और अर्यमा ने अत्यन्त हर्ष प्राप्त किया था। यह स्थान यमुना तट पर स्थित था। यहाँ स्नान करके बलराम जी ने भी अत्यन्त हर्ष प्राप्त किया। तदनन्तर वे ऋषियों और सिद्धों के साथ बैठकर उत्तम कथायें सुनने लगे। इस प्रकार वे लोग वहीं ठहरे हुये थे, तब तक देवर्षि नारद जी भी उन लोगों के पास उसी स्थान पर आ गये। बलराम जी के पूछने पर नारदजी ने कुरुकुल के संहार का वर्णन किया। उन्होंने उन योद्धाओं के नाम भी बताये जो युद्ध मारे गये थे तथा जो जीवित बच रहे थे। नारद जी ने बताया कि शल्य के मारे जाने तथा कृपाचार्य आदि के भाग जाने पर दुर्योधन द्वैपायन-सरोवर में छिप गया, किन्तु पाण्डवों और श्रीकृष्ण के वाग्बाणों से त्रस्त होकर वह गदा हाथ में लेकर सरोवर से निकल आया। नारद जी ने बताया कि भीमसेन और दुर्योधन के बीच भयंकर गदायुद्ध उसी दिन होने वाला है। अतः उन्होंने बलराम से अपने शिष्यों का युद्ध देखने चलने के लिये कहा। नारद जी की बात सुनकर बलराम जी अपने साथ के श्रेष्ठ ब्राह्मणों आदि को विदा कर प्लक्षप्रस्रवण नामक शिखर से नीचे उतर आये और तीर्थसेवन का महान फल सुनकर प्रसन्नचित्त हो उन्होंने सरस्वती की प्रशंसा में एक श्लोक का गान किया। तदनन्तर शत्रुओं को संतप्त करने वाले बलराम जी उज्ज्वल रथ पर आरूढ़ होकर अपने शिष्यों, भीमसेन और दुर्योधन के बीच होने वाले गदायुद्ध को देखने के लिये चल पड़े। (९. ५४)।

बलनाशन = इन्द्र (९. ९, ५४)।

बलनिसूदन = इन्द्र : ३. १९३, ८; ५. ९, १३; १३, २१; १२०, १७ (शक्र); ९. ५३, १५; १३. ८३, १५ (शक्रं)।

बलन्धरा, काशिराज की पुत्री थी और भीमसेन (पाण्डव) की रानी बनी : १. ९५, ७७ (यह सर्वग की माता थी)।

बल प्रमथन = शिव (सहस्रनाम)।

बलबन्धु, अतीत के एक व्यक्ति का नाम है (१. १, २३७)।

बलभद्र = बलदेव (बलराम) : ९. ३९, ३८।

बलभिद् = इन्द्र : १. २९, ३१; ३. १२४, १४; ५. ७६, १०; १०४, ४; ८. ८८, २५; ९. ४३, ४४; १२. ३४०, १० (शक्रः); १४. १०, ३३।

बलभेदन = इन्द्र (८. ७७, ९)।

बलराम, श्रीकृष्ण के ज्येष्ठ भ्राता जो शेष के अवतार और विष्णु के एक श्वेत केश के अंश से रोहिणी के गर्भ से उत्पन्न हुये थे। इन्हें बलराम के अतिरिक्त बलदेव, हलायुध, रौहिणेय, और संकर्षण आदि नामों (देखिये सभी नाम वस्था०) से भी अभिहित किया गया है : १. २, ३५६. ३५९; ६७, १५२; १३९, ४; १८६, १७; १८७, ८. १०; १९०, ३४; १९१, २५; १९७, ३३; २०५, २०; २०७, ४; २१९, ७; २२०, २३-२५; २२१, २७. ३८. ४०. ५५. ६२; २. १४, ३४; १५, ९; ३४, १५; ४३, १५. १६; ३. १२, ४४. १३५; १८, २८; २१, १६. १८; ५१, ११. २८. ४३; ११८, १८. २०; ११९, ४ (इन्होंने श्रीकृष्ण से पाण्डवों के प्रति सहानुभूति प्रकट करते हुये कहा कि आचरण में लाया हुआ धर्म भी प्राणियों के अभ्युदय का कारण नहीं होता और उनका किया हुआ अधर्म भी पराजय की प्राप्ति कराने वाला नहीं होता; क्योंकि महात्मा युधिष्ठिर को, जो सदा धर्म का ही पालन करते हैं, जटाधारी होकर वल्कल वस्त्र पहने वन में रहते हुये महान क्लेश भोगना पड़ रहा है, जब कि अधर्मी दुर्योधन पृथिवी का शासन कर रहा है। इस परिस्थिति में मन्दबुद्धि वाले मनुष्य यही समझेंगे कि धर्माचरण की अपेक्षा अधर्म का आचरण ही श्रेष्ठ है); १२०, १-४. ९; १४१, २०; २३५, १५; ४. ६, ९; ७२, २५; ५. १, ३. ४; २, १; ३, ४; ४, ३; ७, ३. २५. २६. ३१; ४८, ७८; ५५, ३५. ५४; ८०, १२; ९०, ८८; १३१, ८; १४५, १०; १५७, १८. २३. २४. ३५; १५८, ३८; ६. ६५, ७०; ६६, ४०; ६७, ११ (अग्रजं सर्वभूतानां संकर्षणम्); १२१, ३६; ७. ११, ३१; २३, ९५ (रौद्रं धनुर्वरं श्रेष्ठे लेभे यद्रोहिणीसुतः। तत तुष्टः प्रददौ रामः सौभद्राय महात्मने); ११०, ५९. ९३ (संकर्षण समो बले); १८१, ८; ८. २, ७; ४१, ७८, ९. ३४, २ (ततस्तालध्वजो रामस्तयोर्युद्ध उपस्थिते। श्रुत्वा तच्छिष्ययो राजन्नाजगाम हलायुधः). ४. ५. ८. ९. ११. १३-१५. १८. १९; ३५, १. ३. ४. ११. १३. १५. १६. २७. ३४. ३६. ८८; ३६, १. ५३; ३७, १. २. १०. ११. १८. २७. २९. ३८. ५८. ६०. ६६; ३९, १-४. ७. २७. ३४. ३८; ४०, ३०. ३३; ४३, ४६; ४६, १०६. १०७; ४७, २६. ३१. ३२; ४८, १; ४९, १. १६; ५०, ६९; ५१, २. ५३; ५२, २८; ५३, १. ३. ४. २१; ५४, ४. ११. १२. १८. २१. २३. २६. ३०. ३४. ३७; ५५, २-५. २८. ४४; ६०, १-३. २६. ३०. ३१; १०. ९, २६; १२, ३३; १२. १२२, ३; १३. १४, ४२; १४७, ५४ (शेष नाग ही बलराम के रूप में अवतीर्ण). ६० (जो बलराम हैं वे ही श्रीकृष्ण हैं; जो श्रीकृष्ण हैं वे ही भूमिधर बलराम हैं। बलराम जी हल धारण करने वाले हैं)। "श्रीकृष्ण के ज्येष्ठ भ्राता कैलास की पर्वतमालाओं के समान श्वेत कान्ति से प्रकाशित होने वाले हलधर और बलराम के नाम से विख्यात होंगे। पृथिवी को धारण करने वाले शेषनाग ही बलराम के रूप में अवतार लेंगे। बलराम के रथ पर तीन शिखाओं से युक्त दिव्य सुवर्णमय तालवृक्ष ध्वज के रूप में सुशोभित होगा। बलराम जी का मस्तक बड़े-बड़े फन वाले विशालकाय सर्पों से आवृत्त होगा। उनके चिन्तन करते ही सम्पूर्ण दिव्यास्त्र उन्हें प्राप्त हो जायेंगे। अविनाशी भगवान् श्रीहरि ही अनन्त शेषनाग कहे गये हैं। पूर्वकाल में देवताओं ने गरुड से अनुरोध किया था : 'आप हमें भगवान् शेष का अन्त दिखा दीजिये।' तब गरुड

अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगा कर भी वे उन परमदेव अनन्त का अन्त नहीं देख सके। ये शेषनाग आनन्द के साथ सर्वत्र विचरते हैं और अपने विशाल शरीर से पृथिवी,को आलिङ्गन पाश में बाँधकर पाताल लोक में निवास करते हैं। ये बलराम ही श्रीकृष्ण हैं और श्रीकृष्ण बलराम। ये दोनों रूप और दिव्य पराक्रम से सम्पन्न पुरुषसिंह बलराम तथा श्रीकृष्ण क्रमशः चक्र एवं हल धारण करने वाले हैं। (१३. १४७, ५४-६१)।" १६. १, ८. २०. २९. ३१; २, ११; ३, ६. १६. ४७; ४, १. ७. ८. १०. १२; ५, १०; ६, २५; ७, ३१; ८, ८; १७. १, १०।

बलवत् = शिव (सहस्रनाम)। देखिये १२. २४४, १८ भी।

बलवर्धन, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, ७)।

बलविष्कम्भ = शिव (सहस्रनाम)।

बलवीर = शिव सहस्रनाम)।

बलवृत्रघ्न = इन्द्र : ३. ३००, २९; १३. ४१, ३६; १४. १०, २२।

बलवृत्रनिसूदन = इन्द्र (२. ७, २६; ३. ५४, २३)।

बलवृत्रसूदन = इन्द्र (१२. १०३, ४२)।

बलवृत्रहन् = इन्द्र : ३. ५८, २; १६८, ७०; १२. ३१, २६; १३. २९, २. २१।

बलसूदन = इन्द्र : १. २५, ७; २११, २८; ३. १९३, १६; २२९, १०; ५. १६, १३; १७, ४; ९. ४६, १०८; ५८, ६; १२. २२८, २२. २५; १३. ५, १६; १४, २३६; ८३, २५; ९४, ४६; १५६, २२; १४. ५, २४।

१. बलहन् = शिव (सहस्रनाम)।

२. बलहन् = इन्द्र : १. ८८, ११ (बलहाऽपि शक्रः)।

बलहन्तृ = इन्द्र : ७. २७, ८; १३. १६०, ३६; १५. २०, १७।

बलाक, एक व्याध का नाम है। "बलाक नामक एक प्रसिद्ध व्याध अपनी स्त्री और पुत्रों की जीवनरक्षा के लिये ही हिंसक पशुओं को मारा करता था, केवल कामना वश नहीं। वह अपने वृद्ध माता-पिता तथा अन्य आश्रितों का पालन-पोषण भी करता था। सदा अपने धर्म में लगा रहता, सत्य बोलता, और परनिन्दा नहीं करता था। एक दिन वह पशु को मार लाने के लिये वन में गया किन्तु कहीं किसी हिंसक पशु को नहीं पा सका। इतने में ही उसे एक पानी पीता हुआ हिंसक पशु दिखाई दिया जो अन्धा था और नाक से सूँघ कर ही आँख का काम निकाला करता था। यद्यपि वैसे जानवर को व्याध ने पहले कभी नहीं देखा था, तो भी उस समय उसने उसे मार डाला। उस अन्धे पशु के मारे जाते ही आकाश से व्याध पर पुष्पवर्षा होने लगी। साथ ही उस हिंसक पशु को मारने वाले व्याध को ले जाने के लिये स्वर्ग से एक सुन्दर विमान उतर आया। अप्सराओं के गीतों और वाद्यों की मधुर ध्वनि मुखरित होने के कारण वह विमान अत्यन्त मनोरम प्रतीत हो रहा था। व्याध द्वारा मारे गये जन्तु ने पूर्वजन्म में तप करके सम्पूर्ण प्राणियों का संहार कर डालने के लिये वर प्राप्त किया था, इसलिये ब्रह्मा ने उसे अन्धा बना दिया था। इस प्रकार समस्त प्राणियों का अन्त कर देने के निश्चय से युक्त उस पशु को मार कर बलाक स्वर्गलोक में चला गया। (८. ६९, ३६. ३८-४५)।"

बलाका, एक तीर्थ का नाम है (१३. २५, १९)।

बलाकाश्व, एक राजा का नाम है : १२. ४९, ३ (ये अज के पुत्र, कुशिक के पिता और गाधि के पितामह थे); १३. ४, ४ (सिन्धुद्वीप के पुत्र)।

बलाकिन्, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७, ९८; ११७, ७; १८६, २।

बलाक्ष, एक प्राचीन राजा का नाम है जो विराट के गोग्रहण के समय अर्जुन और कृपाचार्य का युद्ध देखने के लिये इन्द्र के विमान पर बैठ कर आये थे (४. ५६, ९)।

१. बलानीक, द्रुपद के पुत्र का नाम है जिसका अश्वत्थामा ने वध किया था (७. १५६, १८१)।

२. बलानीक, मत्स्यराज विराट के भ्राता का नाम है जो पाण्डव पक्ष की ओर से युद्ध करने के लिये आये (७. १५८, ४२)।

बलानुचरगुप्त = शिव (सहस्रनाम)।

१. बलाहक, वरुण की सभा में उपस्थित एक नाग का नाम है (२. ९, ९)।

२. बलाहक, सिन्धुराज जयद्रथ के एक भाई का नाम है जो द्रौपदी-हरण के समय जयद्रथ के साथ आया था (३. २६५. १२)।

३. बलाहक, श्रीकृष्ण के रथ का एक अश्व जो दाहिने पार्श्व में जोता जाता था : ४. ४५, २३; ७. ७९, ३८; १४७, ४७ (कामगैः शैव्य-सुग्रीवमेघपुष्पबलाहकैः); १२. ५३, २१।

१. बलि, एक असुर का नाम है : १. ६५, २० (विरोचन का पुत्र और बाण का पिता); १३८, ४१ (इन्द्रवैरोचनाविव); २. ९, १२ (वरुण की सभा में); ३. २६, १३ (असुरस्य वैरोचनेः); २८, १ (प्रह्लादस्य च संवादं बलेर्वैरोचनस्य च). १६; १०२, २३ (अवध्यः सर्वभूतानां बलिश्चासीत् महासुरः); १५७, ५२ (बलिर्वज्रधरं यथा); १६८, ७७; १७१, १९; २७२, ६४-६७ (विष्णु ने वामन के रूप में इसे पराभूत किया); ३१५, १५; ४. ५८, ५९; ६४, १२; ५. १०, ७ (बलिं बद्ध्वा महादैत्यं शक्रो देवाधिपः कृतः); ३२, २४; ३८, ४७ (ऐश्वर्यमदसंमूढं बलिं लोकत्रयादिव); १३०, ५; ६. ११६, ३६ (यथा देवासुरे युद्धे बलिवासव-योरभूत्); ७. १, २६ (आसुरीव यथा सेना निगृहीते नृपे बलौ); २१, ४; २५, २१ (यथेन्द्राग्नी पुरा बलिम्); ९४, ७५; ११७, २; १३६, ३३; १४२, ८ (पुरा देवासुरे युद्धे शक्रस्य बलिना यथा); १५६, ३३ (बलेरिव सुरैः पूर्वं त्रैलोक्यजयकांक्षया); १६७, २४ (यादृशं ह्यभवद्राजन् जम्भवासवयोः पुरा); १७०, ३२; १७४, २९; ८. २०, ५१ (जितो बलो विष्णुमिवामरेश्वरः); ७९, ८७ (तथा यथा वज्रधरः पुरा बलेः); ८७, ५ (त्रैलोक्यविजये यत्ताविन्द्रवैरोचनाविव); ८९, ५ (सुरेशवैरोचनयोर्यथा पुरा); ९०, ७३ (तथा यथा शम्बरहा पुरा बलिम्); ९३, ४७; ९४, ६८; ९. ३, ४६; २२, ३२; ३१, ९; ४६, ८२ (बाणो नामाथ दैतेयो बलेः पुत्रोमहाबलः); ११. २३, १२ (शक्रस्य बलिना यथा); १२. १९, २३ (ब्राह्मणों के प्रति घृणा की भावना रखने के कारण श्री ने इसे त्याग दिया); १६६, २७; १८०, ३; २२३, २-४. ६-८. १०. ११. १३. २५. २६; २२४, ३. ५. ३०; २२५, २. ३-५. ७. ९. ११. १२. २९. ३०. ३३. ३४. ३७. ३८; २२७, ७. ११. १२. १५. २०. २१; ३३९, ८१ (विरोचनस्य बलवान्बलिः पुत्रो महासुरः). ८३ (बलिं चैव करिष्यामि पातालवासिनम्। दानवं च बलिं श्रेष्ठमवध्यं सर्वदैवतैः). ९४ (ततः सुतं बलेर्जित्वा बाणं बाहुसहस्रिणम्); १३. ६, ३५ (विष्णु ने इसे पातालवासी बना दिया); ३९, ७; ९०, २० (जो दोषदृष्टि रखते हुये दान करता है और जो बिना श्रद्धा के देता है, उस सारे-दान को ब्रह्माजी ने असुरराज बलि का भाग निश्चित किया है); ९८, १०. ११ (बलेर्वैरोचनस्येह त्रैलोक्यमनुशासतः). १२. १५. ६५; १२६, १२ (वामनं रूपमास्थाय जितो राजामया बलिः); १५५, १० (बलिस्तु यजते यज्ञमश्वमेधं महीगतः)।

२. बलि, एक राजा का नाम है जिसने दीर्घतमा की रक्षा की : १. १०४, ४२. ४३. ५१. ५५।

३. बलि — जब युधिष्ठिर ने अपने राजभवन में प्रवेश किया तब उस समय उपस्थित ऋषियों और राजाओं में यह भी एक था (२. ४, १०)।

बलि-वासव संवाद (बलि और इन्द्र का संवाद) — "एक समय समस्त असुरों पर विजय प्राप्त करने के पश्चात् इन्द्र ने ब्रह्माजी के पास जाकर पूछा कि 'बलि अब कहाँ रहते हैं। क्या बलि ही वायु बन कर चलते हैं, वरुण बनकर वर्षा करते हैं, सूर्य और चन्द्रमा बनकर प्रकाश करते हैं, अग्नि बनकर सम्पूर्ण प्राणियों को ताप देते हैं, अथवा जल बनकर सबकी प्यास बुझाते हैं?' ब्रह्माजी ने इन्द्र को बताया कि किसी सूने घर में ऊँट, गौ, गर्दभ, अथवा अश्व जाति के पशुओं में जो श्रेष्ठ जीव उपलब्ध हो उसे ही वे बलि समझें। साथ ही ब्रह्माजी ने कहा कि यदि बलि मिल

जाँय तो उनका वध करने की अपेक्षा उनसे इच्छानुसार न्यायोचित व्यवहार के विषय में प्रश्न करना ही अधिक उत्तम होगा। ब्रह्मा के इस प्रकार आदेश देने के पश्चात् इन्द्र ऐरावत हाथी पर आरूढ़ होकर पृथिवी पर विचरने लगे। शीघ्र ही उन्होंने ब्रह्माजी के कथनानुसार एक शून्य गृह में निवास करने वाले राजा बलि को देखा जिन्होंने गर्दभ के वेश में अपने आपको छिपा रक्खा था। इन्द्र ने बलि का उपहास करते हुये उनसे कहा: 'तुम गर्दभ योनि में पड़कर भूसी खा रहे हो। तुम्हारा बल-पराक्रम नष्ट हो गया है। तुमने बहुत वर्षों तक राजलक्ष्मी से सुशोभित होकर समृद्धि में समय व्यतीत किया था। उस समय सहस्रों देवाङ्गनायें तुम्हारे सामने नृत्य किया करती थीं। उन दिनों तुम्हारी मनःस्थिति कैसी थी, और अब कैसी है? एक समय था जब कि तुम्हारे ऊपर सुवर्ण का रत्नविभूषित छत्र तना रहता था और छः सहस्र गन्धर्व सप्तस्वरों में गीत गाते हुये तुम्हारा मनोरंजन करते थे। किन्तु अब तुम्हारे पास न छत्र है न चँवर, और न ब्रह्माजी की माला ही तुम्हारे पास है।' इन्द्र के इस उपहासपूर्ण वचन को सुनकर बलि हँस पड़े और इस प्रकार बोले: 'देवेश्वर! तुमने यहाँ जो मूर्खता व्यक्त की है उस पर मुझे आश्चर्य होता है। तुम देवताओं के राजा हो अतः इस प्रकार की बातें करना तुम्हें शोभा नहीं देता। तुम अपनी अशुद्ध बुद्धि के कारण मेरे सामने आत्मप्रशंसा कर रहे हो। जब मेरी जैसी स्थिति तुम्हारी भी हो जायगी तब ऐसी बात नहीं बोल सकोगे। (१२. २२३)।

"इन्द्र ने जब अपना उत्कर्ष सूचित करने के लिये हँसते हुये बलि से पुनः उपेक्षात्मक बातें कहीं तब बलि ने कहा: 'कालचक्र स्वभाव से ही परिवर्तनशील है। मैं यहाँ की प्रत्येक वस्तु को अनित्य मानता हूँ इसीलिये कभी शोक नहीं करता; क्योंकि यह सारा जगत विनाशशील है। एक दिन देवता, मनुष्य, पितर, गन्धर्व, नाग और राक्षस सभी मेरे अधीन थे। किन्तु मुझे अपने इस पतन के लिये तनिक भी शोक नहीं होता है। मैं सदैव अपने को ईश्वर के वश में मानता हूँ। जो लोग तत्वदर्शी हैं, वे निश्चित रूप से ऐसा मानते हैं कि वह कालरूप परब्रह्म परमात्मा स्वयं निराकार होते हुये भी समस्त प्राणियों के भीतर जीव का प्रवेश कराता है। समस्त प्राणियों की गति काल ही है। कुछ लोग इन कालदेव को अग्नि कहते हैं, कुछ प्रजापति और कुछ उन्हें ऋतु, मास, पक्ष, दिन, क्षण, आदि मानते हैं। तुम अपने को आज अत्यन्त शक्तिशाली और उत्कृष्ट बल से युक्त देवराज समझते हो किन्तु समय आने पर महापराक्रमी काल तुम्हें भी शान्त कर देगा। तुम जिस उत्तम राजलक्ष्मी को पाकर यह समझते हो कि वह तुम्हारे पास स्थिर भाव से रहेगी वह लक्ष्मी एक जगह बँधकर कभी नहीं रहती। अतः, शक्र! तुम पुनः ऐसा व्यवहार न करना। अब तुमको शान्ति धारण कर लेनी चाहिये। तुम्हें भी मेरी जैसी स्थिति में जानकर यह लक्ष्मी शीघ्र किसी दूसरे के पास चली जायगी (१२. २२४)।

"इन्द्र ने देखा कि महात्मा बलि के शरीर से परम सुन्दरी तथा कान्तिमती लक्ष्मी मूर्तिमती होकर निकल रही हैं। आश्चर्यचकित होकर उन्होंने बलि से उस देवी का परिचय पूछा। बलि ने उस देवी से ही उसका परिचय पूछने का इन्द्र को परामर्श दिया। तब इन्द्र के पूछने पर उस श्रीदेवी ने उन्हें इस प्रकार उत्तर दिया: 'मुझे न तो विरोचन जानता है और न उसका पुत्र बलि। लोग मुझे दुःसहा कहते हैं और कुछ अन्य लोग विधित्सा के नाम से भी मुझे जानते हैं। मुझे भूति, लक्ष्मी और श्री भी कहते हैं। तुम भी मुझे नहीं जानते, और सम्पूर्ण देवताओं को भी मेरे विषय में कुछ ज्ञान नहीं है। धाता या विधाता किसी प्रकार भी मुझे किसी कार्य में नियुक्त नहीं कर सकते; किन्तु काल का ही आदेश मुझे मानना पड़ता है। वही इस समय बलि का परित्याग करने के लिये मुझे प्रेरित कर रहा है। तुम भी काल की अवहेलना न करना।' इन्द्र द्वारा यह पूछने पर कि वह बलि का त्याग क्यों कर रही हैं, श्री ने बताया: 'मैं सत्य, दान, व्रत, तपस्या, पराक्रम और धर्म में निवास करती हूँ। राजा बलि इन सब से विमुख हो चुके हैं। वे पहले ब्राह्मणों के हितैषी, सत्यवादी और जितेन्द्रिय थे, किन्तु बाद में ब्राह्मणद्रोही और दूषित आचरण वाले हो गये। इन कारणों से बलि से तिरस्कृत होकर अब मैं तुममें ही निवास करूँगी। तुम्हें सदा सावधान रहकर तपस्या और पराक्रम द्वारा मुझे धारण करना चाहिये।' इस प्रकार कहकर श्री ने यह भी बताया कि देवता, गन्धर्व, असुर और राक्षस कोई भी अकेले उनका भार सहन नहीं कर सकते। इन्द्र ने तब श्री से पूछा कि वे किस प्रकार उनके पास सदा निवास कर सकती हैं। इस पर श्री ने कहा: 'तुम वेद में बताई हुई विधि से मुझे चार भागों में विभक्त करो। मेरा एक पैर जो पृथिवी पर रक्खा हुआ है उसे मैंने यहीं प्रतिष्ठित कर दिया है। अब तुम मेरे दूसरे पैरों को सुप्रतिष्ठित करो।' तदनुसार इन्द्र ने श्री के दूसरे, तीसरे और चौथे पैरों को क्रमशः जल, अग्नि और सत्यवादी श्रेष्ठ पुरुषों में प्रतिष्ठित किया। इस प्रकार श्री के कहने पर इन्द्र ने उन्हें सम्पूर्ण भूतों में स्थापित कर दिया। इन्द्र ने श्री को यह भी आश्वासन दिया कि विभिन्न भूतों में स्थापित श्री को जो भी पीड़ा देगा वह उनके (इन्द्र के) द्वारा दण्डनीय होगा। तदनन्तर लक्ष्मी से परित्यक्त होकर दैत्यराज बलि ने कहा कि सूर्य जब तक पूर्वदिशा में प्रकाशित होंगे तभी तक वे दक्षिण, पश्चिम और उत्तर दिशाओं को भी प्रकाशित करेंगे। जब सूर्य केवल मध्याह्न में ही स्थित होंगे, अस्ताचल को नहीं जायँगे, उस समय पुनः देवासुर संग्राम होगा और उस समय बलि सब देवताओं को पुनः परास्त कर देंगे। बलि की बात सुनकर इन्द्र ने कहा: 'ब्रह्माजी ने मुझे आज्ञा दी है कि मैं तुम्हारा वध न करूँ। इसलिये मैं अपना वज्र तुम्हारे मस्तक पर नहीं छोड़ रहा हूँ। तुम्हारी जहाँ इच्छा हो चले जाओ। सूर्य कभी मध्याह्न में ही स्थित होकर सम्पूर्ण लोकों को ताप नहीं देंगे। ब्रह्मा ने उनके लिये एक मर्यादा स्थापित कर दी है, अतः वे उसी के अनुसार निरन्तर परिभ्रमण करते रहेंगे। उनके दो मार्ग हैं – उत्तरायण और दक्षिणायन।' इन्द्र के ऐसा कहने पर दैत्यराज बलि दक्षिण दिशा को चले गये और स्वयं इन्द्र उत्तर दिशा को प्रस्थित हुये। (१२. २२५)।

"भीष्म ने बताया: पूर्वकाल में जब दैत्यों और दानवों का संहार करने वाला देवासुर संग्राम समाप्त हो गया, वामन रूपधारी विष्णु ने अपने पैरों से तीनों लोकों को नाप लिया और शत यज्ञों का अनुष्ठान करने वाले इन्द्र देवताओं के राजा हो गये, तब देवताओं की सब ओर आराधना होने लगी। तीनों लोकों का अभ्युदय होने लगा और सब को सुखी देखकर ब्रह्माजी अत्यन्त प्रसन्न रहने लगे। उन्हीं दिनों देवराज इन्द्र अपने ऐरावत नामक हाथी पर बैठकर लोकों का भ्रमण करने निकले। उस समय इन्द्र के साथ रुद्र, वसु, आदित्य, अश्विनीकुमार, ऋषिगण, गन्धर्व, नाग, सिद्ध तथा विद्याधर आदि भी थे। अपने ऐरावत नामक हाथी पर भ्रमण करते हुये वे किसी समुद्रतट पर जा पहुँचे। वहाँ एक पर्वत की गुफा में उन्हें विरोचनकुमार बलि दिखाई दिये। उन्हें देखते ही हाथ में वज्र लेकर और देवताओं से घिरे हुये इन्द्र उनके पास जा पहुँचे। उस समय दैत्यराज बलि लेश मात्र भी व्यथित या भयभीत नहीं हुये। तब इन्द्र ने बलि से पूछा कि शोचनीय दशा में पड़कर भी वह किस बल का आश्रय लेकर शोकरहित और अविचलित बैठे हैं। इन्द्र ने कहा: 'तुम्हारी राज्यलक्ष्मी नष्ट हो गई है। इतने पर भी तुम्हें शोक नहीं होता है। तीनों लोकों का राज्य नष्ट हो जाने पर भी तुम्हारे अतिरिक्त और कौन जीवित रहने का उत्साह दिखा सकता है।' ये तथा अनेक अन्य कठोर बातें सुना कर इन्द्र ने बलि का तिरस्कार किया किन्तु बलि ये सारी बातें अत्यन्त शान्तिपूर्वक सुनते रहे। उनका मन तनिक भी विचलित नहीं हुआ और उन्होंने इन्द्र से कहा: 'जब मैं शत्रुओं अथवा काल के द्वारा भलीभाँति बन्दी बना लिया गया हूँ तब मेरे आगे इस प्रकार बढ़-चढ़ कर बातें करना तुम्हें शोभा नहीं देता। जो शक्तिशाली होते हुये भी अपने वश में पड़े हुये अथवा हाथ में आये हुये वीर शत्रु पर दया करता है उसे श्रेष्ठ लोग उत्तम पुरुष मानते हैं। तुम्हारा आज का राज-वैभव और मेरी यह दीन दशा, सब कुछ काल के ही अधीन है। प्रत्येक पुरुष बारी-बारी से सुख और दुख

पाता है। तुम भी अपने पराक्रम से नहीं बल्कि कालक्रम से ही इन्द्रपद को प्राप्त हुये हो। (काल की महत्ता का प्रतिपादन)। प्रत्येक व्यक्ति काल (प्रारब्ध) से आक्रान्त होने पर संकट में पड़ जाता है। मैं या तुम अथवा अन्य जो लोग भी देवेश्वर के पद पर प्रतिष्ठित होंगे वे सब उसी मार्ग पर जायेंगे जिसपर पहले सैकड़ों इन्द्र जा चुके हैं। प्रत्येक मन्वन्तर में इन्द्रों का परिवर्तन होने के कारण अब तक देवताओं के अनेक सहस्र इन्द्र कालकलवित हो चुके हैं। अतः काल का उल्लंघन करना किसी के लिये भी कठिन कार्य है। नाशवान् होने के कारण जो विश्वासयोग्य नहीं है, उस राज्य पर तुम विश्वास करते हो और जो अस्थिर है उसे स्थिर मानते हो; किन्तु इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है क्योंकि काल ने जिसके हृदय पर अधिकार कर लिया हो वह सदा ऐसे ही विपरीत भावों से भावित रहता है। तुम ने ही सौ यज्ञों का अनुष्ठान किया हो यह बात नहीं है। पृथु, पुरूरवा, मय, प्रह्लाद, आदि असंख्य देवता और असुर इस पृथिवी के स्वामी रह चुके हैं किन्तु समय आने पर काल कलवित होकर यहाँ से विदा हो गये। ये सभी लोग वेदोक्त व्रत को धारण करने वाले विद्वान थे। किन्तु काल ने उन सब का संहार कर दिया। सब का जन्म दक्ष कन्याओं के गर्भ से हुआ था किन्तु काल ने सभी का संहार कर दिया। तुम्हारी आयु भी देवताओं के सहस्र वर्ष के बराबर है। इस आयु के समाप्त होने पर तुम भी समाप्त हो जाओगे। पहले देवासुर संग्राम में मैंने अकेले ही समस्त आदित्यों, रुद्रों, साध्यों, वसुओं तथा मरुद्गणों को परास्त किया था। तुम्हारे सर पर भी मैंने अनेक पर्वत फोड़ डाले थे। किन्तु इस समय मैं विवश हूँ क्योंकि काल का उल्लंघन नहीं कर सकता। इस समय मेरे लिये पराक्रम दिखाने का नहीं क्षमा करने का समय आया है। यही कारण है कि मैं तुम्हारे सब अपराध शान्तिपूर्वक सहन कर रहा हूँ। यों अब भी मेरा वेग तुम्हारे लिये दुःसह है। किन्तु अब काल विपरीत हो गया है और मैं कालपाश से निश्चित रूप से आबद्ध हो गया हूँ तब तुम इस समय मेरे सामने खड़े होकर अपनी बड़ाई कर रहे हो। जो काल के प्रभाव को जानता है वह उससे आक्रान्त होकर भी शोक नहीं करता क्योंकि विपत्ति को दूर करने में शोक से सहायता नहीं मिलती। यही सोचकर मैं इस समय शोक नहीं कर रहा हूँ।' बलि के इस प्रकार कहने पर इन्द्र ने अपने क्रोध को रोककर बलि की प्रशंसा की। तदनन्तर वे अपने स्थान को लौट गये। उस समय महर्षियों ने इन्द्र का भलीभाँति स्तवन किया। अग्निदेव यज्ञ मण्डप में देवताओं के लिये हविष्य वहन करने लगे और देवेश्वर इन्द्र भी सेवकों द्वारा समर्पित अमृत का पान करने लगे। श्रेष्ठ ब्राह्मणों ने क्रोधशून्य हुये इन्द्र की स्तुति की। फिर वे इन्द्र शान्तचित्त एवं प्रसन्न होकर अपने निवास स्थान स्वर्गलोक में जाकर आनन्द का अनुभव करने लगे (१२. २२७)।"

बलिन् = शिव (सहस्रनाम)।

बलीन, एक असुर का नाम है जिसने पौण्ड्रमात्स्यक के रूप में जन्म लिया (१. ६७, ४३)।

बलीवाक, एक ऋषि का नाम है जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित रहते थे (२. ४, १४)।

बलीह, एक जाति का नाम है (५. ७४, १४)।

बलोत्कटा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २३)।

बल्लव – अज्ञातवास के समय विराटनगर में पाण्डव भीमसेन ने यही नाम धारण किया था: ४. २, १; ८, ७. ८; १३, ३८; १९, ४. ९; २१, २१; ४४, ५; ७१, ३; ५. १६०, ६६।

बल्लवाः एक जाति का नाम है। देखिये मल्लवाः।

बहि, एक पिशाच का नाम है: ८. ४४, ४१ (बहिश्च नाम हीकश्च विपाशायां पिशाचकौ। तयोरपत्यं बाहीका नैषासृष्टिः प्रजापतेः)।

बहिर्गिरि, एक पर्वतीय प्रदेश जिसे उत्तरदिग्विजय के समय अर्जुन ने जीता था (२. २७, ३; ६. ९, ५०)।

बहीनर: २. ८, १५ (यम की सभा में)।

बहुकर्कश = शिव (सहस्रनाम)।

बहुगुण, एक देवगन्धर्व, जो अर्जुन के जन्मोत्सव के समय आया था (१. १२३, ५८)।

बहुदामा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १०)।

बहुधर = शिव (सहस्रनाम)।

बहुधात्मक = हिरण्यगर्भ (१२. ३०२, १९)।

बहुधानिन्दित = शिव (सहस्रनाम)।

बहुधान्यक, पश्चिम के प्रदेश का नाम है जिस पर अपनी दिग्विजय के समय नकुल ने विजय प्राप्त की थी (२. ३२, ५२)।

बहुनेत्र = शिव (सहस्रनाम)।

बहुपुत्रिका, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ३)।

बहुप्रद = शिव (सहस्रनाम)।

बहुप्रसाद = शिव (सहस्रनाम)।

बहुभूत = शिव (सहस्रनाम)।

बहुमाल = शिव (सहस्रनाम)।

बहुशुक्ल = शिव (सहस्रनाम)।

बहुमूलक, एक नाग का नाम है (१. ३५, १६)।

बहुयोजना, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ९)।

बहुरश्मि = शिव (सहस्रनाम)।

बहुरूप = शिव (सहस्रनाम)।

१. बहुल, एक राजा का नाम है जिसने स्वयं ही अपने बन्धु-बान्धवों का विनाश कर डाला था (५. ७४, १३)।

२. बहुल = शिव (सहस्रनाम)।

१. बहुला, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ३)।

२. बहुला, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, २७)।

बहुवध्याः – देखिये बाहुवध्याः।

बहुवेद्य = शिव (सहस्रनाम)।

बह्वाशिन्, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है: १. ६७, १०२; ११७, ११; ६. ८८, १५ (महाभारत युद्ध के आठवें दिन भीमसेन ने इसका वध किया था). १८. २९।

बह्वृच, ऋग्वेद की ऋचाओं में पारंगत व्यक्ति का द्योतक है (१५. १०, ११)।

१. बाण, असुरराज बलि के पुत्र का नाम है: १. ६५, २ (यह भगवान् रुद्र का अनन्य भक्त था); ५. ६२, ११ (बाणस्य भौमस्य च कर्ण हन्ता किरीटिनं रक्षति वासुदेवः); १३०, ४८ (बाणश्च निहतः संख्ये); ९. ४६, ८२ (इसने क्रौञ्च पर्वत पर शरण लिया); १२. २२७, ५२; ३३९, ९३. ९४ (ततः सुतं बलेर्जित्वा बाण बाहुसहस्रिणं)।

२. बाण, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६७)।

बाणहस्त = शिव (सहस्रनाम)।

बाभ्रव्यः १२. ३४२, १०२-१०४: सोऽहमेवोत्तरे भागे क्रमाक्षरविभागवित्। वामादेशितमार्गेण मत्प्रसादान्महात्मना॥ पाञ्चालेन क्रमः प्राप्तस्तस्माद्भूतात्सनातनात्। बाभ्रव्यगोत्रः स बभौ प्रथमं क्रमपारगः॥ नारायणाद्वरं लब्ध्वा प्राप्य योगमनुत्तमम्। क्रमं प्रणीय शिक्षां च प्रणयित्वा स गालवः॥ "श्रीकृष्ण ने कहा: मैं ही उत्तर भाग में वेदमन्त्रों के क्रमविभाग और अक्षर-विभाग का ज्ञाता हूँ। महात्मा पाञ्चाल ने वामदेव के बताये हुये ध्यान मार्ग से मेरी आराधना करके मुझ सनातन पुरुष के ही कृपाप्रसाद से वेद का क्रम-विभाग प्राप्त किया था। बाभ्रव्य गोत्र में उत्पन्न हुये वे महर्षि गालव भगवान् नारायण से वर एवं परम उत्तम योग पाकर वेद का क्रम-विभाग एवं शिक्षा प्रणयन करके सबसे पहले क्रम-विभाग के पारंगत विद्वान् हुये थे)।" (१३. ४, ५७)।

बाभ्रवायणि, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५७)।

१. बार्हद्रथ – सनत्सुजात ने धृतराष्ट्र को बताया कि ऋग्वेद की ऋचाओं में, यजुर्वेद के मन्त्रों में, अथर्ववेद के सूक्तों में तथा विशुद्ध साम-

वेद में भी परमात्मा दृष्टिगोचर नहीं होता। रथन्तर और बार्हद्रथ नामक साम में तथा महान् व्रत में भी उसका दर्शन नहीं होता क्योंकि वह ब्रह्म नित्य है (५. ४४, २८)।

२. बार्हद्रथ, जरासन्ध के संरक्षक का नाम है : २. १४, ३०; १५, १८; २१, १५. ५२; २२, १०; २४, ४४।

बार्हस्पत, अर्थात् बृहस्पति का : १२. १४२, १७ (इति बार्हस्पतं ज्ञानं प्रोवाच मघवा स्वयम्); १३. ७६, २८ (बार्हस्पतीं भारतीं)।

बार्हस्पत्य (= बार्हस्पत) : ३. २८५, ७ (बार्हस्पत्यं विधिं कृत्वा प्रत्यव्यूहन्निशाचरम्); ८. ४६, २७ (बार्हस्पत्यः महाव्यूहः); १२. ५९, ८४ (बार्हस्पत्यं यदुच्यते); १३. ७६, २४ (बार्हस्पत्यं वाक्यम्)।

बाल = शिव (सहस्रनाम)।

बालक्रीडनक = शिव (सहस्रनाम)।

बालक्रीडनकप्रिय = स्कन्द (३. २३२, ७)।

बालग्रह, उन दुष्टात्माओं का द्योतक है जो बालकों को ग्रसित करते हैं (१२. १५३, ३)।

बालधि, एक मुनि का नाम है (३. १३५, ४५. ४८)।

बालभद्राः (बहु०) बलभद्र के सैनिकों का द्योतक है (८. ६, ३)।

बालरूपधर = शिव (सहस्रनाम)।

बालरूपधृक् = शिव (सहस्रनाम)।

बालसूदन = इन्द्र (देखिये बलसूदन)।

बालार्कवर्ण = शिव (सहस्रनाम)।

बाष्कल, हिरण्यकशिपु के एक पुत्र का नाम है : १. ६५, १८; ६७, ९ (इसने भगदत्त के रूप में जन्म लिया)।

१. बाहीक (बहु० °काः) एक जाति का नाम है : ६. ५०, ५१ (ये लोग युधिष्ठिर के, क्रौञ्चव्यूह के पक्ष-भाग में स्थित हुये — यहाँ बाह्लीक पाठ है)। "कर्ण ने शल्य को बताया : जब मैं वाहीक देश में आया तब देखा कि वहाँ एक ही वाहीक पहले ब्राह्मण होकर फिर क्षत्रिय होता है। तत्पश्चात् वैश्य और शूद्र भी बन जाता है। वहाँ एक ही कुल में कुछ लोग ब्राह्मण और कुछ स्वेच्छाचारी वर्णसंकर सन्तान उत्पन्न करने वाले लोग होते हैं। गान्धार, मद्र और वाहीक सभी मन्दबुद्धि होते हैं। भिन्न-भिन्न देशों में वाहीक निवासियों को छोड़कर प्रायः सर्वश्रेष्ठ पुरुष उत्पन्न होते हैं। वाहीक सब काम उलटा करते हैं। वाहीकों की उत्पत्ति की चर्चा करते हुये कर्ण ने बताया कि विपाशा नदी में दो पिशाच रहते हैं। एक का नाम है वहि और दूसरे का नाम हीक। इन्हीं दोनों की सन्तान वाहीक कहलाती है। ये नीच योनि में उत्पन्न लोग धर्मों से अपरिचित हैं। विशाल ओखलियों की मेखला धारण करने वाली किसी राक्षसी ने किसी तीर्थ-यात्री के घर में एक रात रहकर उससे इस प्रकार कहा था : जहाँ ब्रह्माजी के समकालीन वेद-विरुद्ध आचरण करने वाले नीच ब्राह्मण निवास करते हैं वे आरट्ट नामक देश हैं और वहाँ के जल का नाम वाहीक है। इन अधम ब्राह्मणों को न तो वेदों का ज्ञान है, न यहाँ यज्ञ की वेदियाँ हैं, और न इनके यहाँ यज्ञ-याग ही होते हैं। ये संस्कार हीन एवं दासों से समागम करने वाली कुलटा स्त्रियों की सन्तानें हैं। अतः देवता भी इनका अन्न ग्रहण नहीं करते (८. ४४-४५)। ८. ४४, ७. ९. १०. १६. २२. २३. २५. ३३-३५. ३७. ३८. ४१. ४२; ४५, ५. ६. ८-१०. २८. ३६; १२. २२८, २० (मलं पृथिव्या वाहीकाः)।

२. बाहीक, वाहीकों के देश की एक नदी का नाम है (८. ४४, ४५)।

१. बाहु : ५. ४, २२ (बृहद्बलो महौजाश्च बाहुः पुरपुरञ्जयः)।

२. बाहु, उन अट्ठारह प्राचीन राजाओं में से एक का नाम है जिन्होंने अपने बन्धु-बान्धवों का विनाश कर दिया था (५. ७४, १५)।

३. बाहु, एक राजा का नाम है जिसके पुत्र सगर ने अपने ज्येष्ठ पुत्र असमञ्ज को बहिष्कृत कर दिया था (१२. ५७, ८; २२७, ५१)।

१. बाहुक, एक कौरव्य वंशी नाग का नाम है (१. ५७, १३)।

२. बाहुक (= सूत के रूप में नल) : ३. ६६, २०; ६७, २. ५. ७. ११; ७०, ५; ७१, १. २. ९. ११. १२. १६. १८. २३. २५. २६. २९. ३०. ३३. ३५; ७२, ७. ९. १०. १२. १६. १८. २०. २१. २७-२९; ७३, १७. २१. ३३; ७४, ५. ८. ११. १३. १४; ७५, २. ५. ७. १२. १९-२१. २४. २५; ७६, ३. ९. १०; ७७, ८।

३. बाहुक, एक राजा का नाम है (३. १२०, १९)।

बाहुकण्टक, युद्ध करने की एक विधि का नाम है (१२. ५, ४)।

बाहुकर्कश = शिव (सहस्रनाम)।

बाहुदन्तक, इन्द्र द्वारा संक्षिप्त किये गये नीतिशास्त्र के एक ग्रन्थ का नाम है (१२. ५९, ८३)।

१. बाहुदा, भीमसेन की माता है : १. ९५, ४२ (परीक्षित्खलु बाहुदामुपयेमे सुयशां नाम तस्यामस्य जज्ञे भीमसेनः)।

२. बाहुदा, एक पवित्र नदी का नाम है : ३. ८४, ६७ (यहाँ एक रात तक निवास करने वाले स्वर्गलोक में सम्मानित होता है); ८७, २७; ९५, ४; ६. ९, १४ (भारतवर्ष की एक महानदी); १२. २३, १९; १३. १९, २८; १०२, ४५; १०३, ३८; १६५, २७।

बाहुबाधाः, भारत की एक जाति का नाम है (६. ९, ५५)।

बाहुभूत = शिव (सहस्रनाम)।

१. बाहुशालिन् = शिव (सहस्रनाम)।

२. बाहुशालिन्, एक राजा का नाम है जो द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (१. १८६, ३)।

बाहुशिरस् = विष्णु (सहस्रनाम)।

बाहेयिक, वाहीकों द्वारा प्रयुक्त एक शब्द है (८. ४४, २६)।

बाह्यकर्ण, एक नाग का नाम है (१. ३५, ९)।

बाह्यकुण्ड, भोगवती नगरीके एक नाग का नाम है (५. १०३, १०)।

बाह्लिजात, सम्भवतः बाह्लीक देश में उत्पन्न घोड़ों के लिये प्रयुक्त हुआ है : ५. ८६, ६; ७. २३, २४; १३. १०३, १६ (वाजिनां बाह्लिजाता-नामयुतान्यददं दश)।

१. बाह्लीक, एक अतीत के राजा का नाम है : १. १, २२६; २. ८, १६ (यम की सभा में)।

२. बाह्लीक, पूर्ववर्ती जनमेजय के पुत्र और धृतराष्ट्र और पाण्डु के भ्राता का नाम है (१. ९४, ५६)।

३. बाह्लीक, पूर्ववर्ती धृतराष्ट्र के पौत्र, प्रतीप के पुत्र, और देवापि तथा शान्तनु के भ्राता का नाम है : १. ९४, ६१. ६२ (इन्हें भी शान्तनु के साथ ही राजा बनाया गया); ९५, ४४ (प्रतीप तथा शैब्या सुनन्दा के पुत्र); १२६, १५ (सोमदत्तोऽथ बाह्लीकः); १३४, २ (कृपस्य सोमदत्तस्य बाह्लीकस्य च धीमतः सान्निध्ये); १४३, १२; २. ३४, ७ (शल्यश्च बलवान्बाह्लीकश्च महाबलः। सोमदत्तोथ कौरव्यो भूरिर्भूरिश्रवाः शलः); ३५, ८ (बाह्लिको धृतराष्ट्रश्च सोमदत्तो जयद्रथः। नकुलेन समानीताः स्वामिवत्तत्र रेमिरे); ५३, ५ (बाह्लीको रथमाहार्षीज्जाम्बूनद-विभूषितम्); ५८, २० (बाह्लीकेन रथं यत्तम्); ६३, २ (प्रातिपेयाः शान्तनवा भीमसेनोः सबाह्लिकाः। दुर्योधनापराधेन कृच्छ्रं प्राप्स्यन्ति सर्वशः); ७४, २५ (ततो द्रोणः सोमदत्तो बाह्लीकश्चैव गौतमः); ७८, १ (युधिष्ठिर ने कहा : आमन्त्रयामि भरतांस्तथा वृद्धं पितामहम्। राजानं सोमदत्तं च महाराजं च बाह्लीकम्); ८१, २६ (बाह्लीकश्च महामनाः); ३. १३, ३ (कृपं बाह्लीकमेवं च); २४९, १५ (दुर्योधन ने कर्ण से पूछा कि भीष्म, द्रोण, बाह्लीक आदि उसके हस्तिनापुर आने पर क्या कहेंगे); २५२, ५१ (दुर्योधन का अनुसरण किया); २५४, २५ (दुर्योधन ने कर्ण से कहा : 'मुझे भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य, तथा बाह्लीक से भी जो वस्तु नहीं मिली थी वह तुमसे प्राप्त हो गई); ४. ३८, १३ (कौरव सेना के सम्बन्ध में उत्तर ने कहा कि उसमें भीष्म, द्रोण, कृप बाह्लीक आदि जैसे महारथी उपस्थित हैं); ५. २३, ९ (युधिष्ठिर ने भीष्म, धृतराष्ट्र, बाह्लीक आदि के स्वास्थ्य के सम्बन्ध में संजय से पूछा); ३०, १९ (युधिष्ठिर ने संजय से बाह्लीक वंश के श्रेष्ठ

पुरुषों के प्रति अपना प्रणाम निवेदित करने के लिये कहा); ४७, ६ (भीष्म द्रोण, वाह्लीक आदि ने कौरवसभा में प्रवेश किया); ५५, ६३ (कौरव सेना के प्रमुख वीरों में इनकी गणना); ५७, ५८; ५८, ६ (ये भी महाभारत युद्ध के पक्ष में नहीं थे). १० (दुर्योधन ने कहा कि उसने भीष्म, द्रोणाचार्य, कृप, वाह्लीक आदि के बल पर पाण्डवों को युद्ध के लिये आमन्त्रित नहीं किया है, बल्कि उसने अपने तथा कर्ण के पुरुषार्थ को ध्यान में रख कर ही यह कार्य किया है); ६२, १६ (कर्ण ने कहा कि अवन्ती नरेश, कलिङ्गराज, जयद्रथ, वाह्लीक के रहते हुये भी वह सदा अकेला ही शत्रुओं के सहस्रों-सहस्र योद्धाओं का संहार कर डालेगा); ६३, ४ (दुर्योधन ने कहा कि वह भीष्म, द्रोण, कृप, वाह्लीक आदि पर निर्भर नहीं है); ६५, १२ (धृतराष्ट्र ने दुर्योधन से कहा कि वह द्रोण, कृप, भीष्म, वाह्लीक आदि की बात माने); ६६, ४ (अर्जुन ने कहा कि धृतराष्ट्र, द्रोण, कृप, कर्ण, वाह्लीक आदि के लिये सर्वाधिक संकट उपस्थित हो गया है); ८०, १६ (विदुर, भीष्म, वाह्लीक आदि श्रीकृष्ण की बात को समझेंगे); ८३, ४७ (युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण से भीष्म वाह्लीक आदि को अपना प्रणाम निवेदित करने के लिये कहा); ८९, १४ (श्रीकृष्ण के सम्मान में कृप, सोमदत्त, वाह्लीक आदि अपने-अपने आसनों से उठकर खड़े हो गये). १७ (श्रीकृष्ण पुत्रसहित द्रोणाचार्य, वाह्लीक, कृप आदि से मिले); ९०, ५२ (द्रौपदी के सभा भवन में घसीटे जाने पर अन्य लोगों के साथ इन्होंने भी दुःख प्रकट किया); ९१, ३५ (श्रीकृष्ण के पास आये); ९५, १९ (भीष्म, द्रोण, कृप, वाह्लीक आदि की उपस्थिति से कौरव सेना दुर्जय हो गई है); १२४, १७ (दुर्योधन ने इनकी बात नहीं माना); १२८, २६ (दुर्योधन ने इनकी उपेक्षा की); १२९, ४१ (आपसी फूट के भय से ही भीष्म, धृतराष्ट्र और वाह्लीक ने पाण्डवों को राज्य का भाग प्रदान किया); १३१, ३६ (श्रीकृष्ण ने धृतराष्ट्र, द्रोण, भीष्म, वाह्लीक आदि को सम्बोधित किया). ४० (अन्य के साथ इन्होंने भी श्रीकृष्ण का अनुसरण किया); १४९, १६. २०. २७. २८ (ये अपना समृद्धिशाली राज्य तथा पिता और भाइयों को छोड़कर अपने मामा के घर चले गये। तदनन्तर इनकी आज्ञा लेकर शान्तनु को राजा बनाया गया); १५५, ३३ (उन ग्यारह महारथियों में यह भी थे जिनमें से प्रत्येक को दुर्योधन ने एक-एक अक्षौहिणी सेना का नेतृत्व सौंपा था); १६७, २८ (ये अतिरथी थे); ६. १७, ३९ (अन्य योद्धाओं के साथ इन्होंने कौरव सेना के व्यूह का निर्माण किया); ४५, ३८. ४० (धृष्टकेतु के साथ युद्ध किया); ४८, ६३ (कृतवर्मा, शल्य आदि के साथ श्वेत पर आक्रमण किया); ५९, १३२ (सूर्यास्त के समय अपने शिविर में लौट आये). १३७ (अर्जुन ने अन्यान्य योद्धाओं सहित इन्हें परास्त किया); ६०, २ (ये लोग भीष्म के साथ गये); ७६, १८ (भीष्म, द्रोण आदि के साथ ये भी कौरव सेना की रक्षा कर रहे थे); ८१, ३ (भीष्म ने दुर्योधन से कहा कि उनके स्थान पर द्रोण, शल्य, वाह्लीक आदि युद्ध करेंगे); ९२, २३ (अन्य के साथ इन्हें भी भीष्म ने दुर्योधन की रक्षा के लिये भेजा). ३४ (घटोत्कच ने इन्हें आहत किया); ९६, १८ (कृतवर्मा सहित इन्होंने सात्यकि से युद्ध किया); १०२, २४ (इन्होंने अश्वत्थामा, शल्य आदि के साथ अर्जुन को घेर लिया); १०४, १८ (भीमसेन से युद्ध किया). २५. २७ (ये लक्ष्मण के रथ पर चढ़ गये); ७. २०, ८ (महाभारत युद्ध के बारहवें दिन भूरिश्रवा आदि के साथ ये भी द्रोणाचार्य के गरुड-व्यूह के दाहिने पार्श्व में स्थित हुये); २५, १८ (द्रुपद से युद्ध किया); ३२, १ (भीमसेन से युद्ध किया); ३९, १५ (दुर्योधन ने इनसे तथा कर्ण आदि से अभिमन्यु को परास्त करने के लिये कहा); ७४, ७ (जयद्रथ ने यह शंका प्रकट की कि द्रोण, दुर्योधन, वाह्लीक आदि भी अर्जुन से उसकी रक्षा नहीं कर सकेंगे); ८५, ३४ (धृतराष्ट्र ने कहा कि पाण्डवगण भीष्म, शल्य, वाह्लीक आदि की बात सुनेंगे); ९५, ३७ (शिखण्डी से युद्ध किया); ९६, ७. ८. १२ (शिखण्डी से युद्ध किया); १५५, ३८ (इन लोगों के देखते-देखते भीमसेन ने दुष्कर्ण और दुर्मद का वध कर दिया); १५७, ११ (भीम ने इनके पुत्र सोमदत्त को मूर्च्छित कर दिया). १२ (भीमसेन ने इन्हें आहत किया). १५ (भीमसेन ने इनका वध किया). १६; १५८, ६५ (कर्ण ने कहा कि विधि-विधान के अनुसार ही भीष्म, जयद्रथ और वाह्लीक आदि का वध हुआ है); ८. १, २२ (ये युद्ध में मारे गये थे); ५, ३० (संजय ने धृतराष्ट्र को बताया कि भीमसेन ने इनका वध कर दिया था); ६, ३० (इन्होंने सेनाबिन्दु के पुत्र का वध किया था); ९. २, १६ (मृत राजाओं के अन्तर्गत इनका उल्लेख); २४, २८; ३२, २०; ६३, ४६; १०. ९, ४४; ११. २२, ५; १३. ४४, ४३; १५. ११, ५. १७ (धृतराष्ट्र ने अन्य मृत योद्धाओं सहित इनका भी श्राद्ध करने की इच्छा प्रकट की); १४, ५; २९, ४४ (यस्यास्तु श्वशुरो धीमान् वाह्लीकः स कुरूद्वहः निहतः सोमदत्तश्च पित्रा सह महारणे); ३२, १२ (वाह्लीकः सोमदत्तश्च चेकितानश्च पार्थिवः। एते चान्ये च बहवो बहुत्वाद्ये न कीर्तिताः)।

४. वाह्लीक = सोमदत्त : ७. १६२, १८; १५. २९, ४४।

५. वाह्लीक, एक राजा का नाम है जो अहर के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, २५)।

६. वाह्लीक, क्रोधवश-गण के अंश से उत्पन्न एक राजा का नाम है (१. ६७, ६०)।

७. वाह्लीक (बहु० °काः), एक जाति का नाम है : २. २७, २२ (अर्जुन ने इन पर विजय प्राप्त की); ५२, १३ (ये युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये); ५. ३९, ८०; १९५, ५; ६. ९, ५४; २०, १० (ये भीष्म की सेना में उपस्थित थे); ७५, १७ (महाभारत युद्ध के छठवें दिन भीष्म के क्रौञ्च व्यूह के शिरोभाग में कृतवर्मा के साथ ये लोग स्थित हुये); ८१, ३; १०२, २४; ११७, ३३ (निषादों, सौवीरों, दरदों आदि के साथ इन लोगों ने भी अर्जुन पर आक्रमण किया); ७. ४, ८ (कर्ण ने इन्हें पराजित किया था); ९३, ४२ (अर्जुन ने जिन लोगों का भीषण संहार किया उनमें ये भी थे); ११३, ३७ (सात्यकि ने इन्हें अपने सारथि को दिखाया). ४०; १२१, १३ (दुर्योधन के नेतृत्व में इन लोगों ने सात्यकि पर आक्रमण किया); १५७, २९ (युधिष्ठिर ने इनका संहार आरम्भ किया); १७९, ४५; १९२, ३३ (धृष्टद्युम्न ने इनका संहार आरम्भ किया); १९३, १३ (इनके साथ कृतवर्मा ने पलायन किया); ८. ५, ३०; २०, १० (पाण्ड्य ने इनका वध किया); ५६, ७० (भीम ने इनका संहार किया); ७४, ५६ (अर्जुन ने यह गर्वोक्ति की कि वे कौरवों और वाह्लीकों को नष्ट कर देंगे।

८. वाह्लीक, वाह्लीकों के राजा का द्योतक है ; १. ६७, ५८ (असुराणां तु यः सूर्यः श्रीमांश्चैव महासुरः। दरदो नाम वाह्लीको वरः सर्वमहीक्षिताम्); १८६, २१; २. ३४, १३ (वाह्लिकाश्चापरे शूरा राजानः); ४४, ८ (दरदं स्तुहि वाह्लीकमिमं पार्थिवसत्तमम्। जायमानेन येनेयमभवद्दारिता मही); ३. १८८, ३६ (कलियुग में राज्य करने वाले पापी और बर्बर राजाओं के अन्तर्गत इसका उल्लेख); ५. ४, १४ (उन राजाओं में से एक जिनके पास पाण्डवों को अपने पक्ष का समर्थन करने के लिये दूत भेजना चाहिये था)।

९. वाह्लीक, अर्थात् वाह्लीक देश का : १. २२१, ५१ (श्रीकृष्ण ने उत्तम दहेज के रूप में वाह्लीक देश के एक लाख घोड़े दिये जो पीठ पर सवारी ढोने वाले थे); ७. ३६, ३६ (उन घोड़ों के अन्तर्गत यहाँ के घोड़ों का भी उल्लेख है जिनको धराशायी करते हुये अभिमन्यु रणक्षेत्र में सुशोभित हो रहे थे); १२१, २७ (युद्ध में मारे गये घोड़ों के अन्तर्गत यहाँ के घोड़ों का भी उल्लेख)।

वाह्लीक-पुङ्गव = शल्य : १. ६७, ६; ११३, ३ (= मद्रराज शल्य जो पाण्डु-पत्नी माद्री के भाई थे)।

वाह्लीकात्मज = सोमदत्त (७. १६२, २४)।

वाह्लीकी = माद्री (१. १२५, २५)।

विन्दु = शिव (सहस्रनाम)।

विन्दुसरस्, एक प्रसिद्ध तीर्थ का नाम है : २. ३, ३. ५. १०; ५०,

२५ (मय ने बिन्दुसरोवर से लाये रत्नों द्वारा युधिष्ठिर के सभाभवन में एक कृत्रिम पुष्करिणी का निर्माण किया था); ३. १४५, ४४; ६. ६, ४३-४७ (मणिमय हिरण्य शृङ्ग के निकट ही विशाल, दिव्य, उज्ज्वल, तथा काञ्चनमयी बालुका से सुशोभित रमणीय बिन्दुसरोवर स्थित है जहाँ राजा भगीरथ ने भागीरथी गंगा का दर्शन करने के लिये अनेक वर्षों तक निवास किया था। यहाँ अनेक मणिमय यूप तथा सुवर्णमय चैत्य शोभा पाते हैं। यहीं यज्ञ करके इन्द्र ने सिद्धि प्राप्त की थी। इसी स्थान पर सब ओर सम्पूर्ण जगत् के लोग लोकस्रष्टा, प्रचण्ड तेजस्वी सनातन भगवान् भूतनाथ की उपासना करते हैं। नर, नारायण, ब्रह्मा, मनु और शिव यहाँ सदा निवास करते हैं। ब्रह्मलोक से उतर कर त्रिपथगामिनी दिव्य नदी गङ्गा सर्वप्रथम इस बिन्दुसरोवर में ही प्रतिष्ठित हुई थीं। यहीं से उनकी सात धारायें विभक्त हुई थीं)।

१. बिल्वक, एक नाग का नाम है (१. ३५, १२)।

२. बिल्वक, एक तीर्थ का नाम है (१३. २५, १३)।

बिल्वतेजस, तक्षकवंशीय एक नाग का नाम है (१. ५७, ९)।

बिल्वदण्ड = शिव (१४. ८, १७)।

बिल्वपत्र, भोगवती के एक नाग का नाम है (५. १०३, १४)।

बिल्वपाण्डर, एक नाग का नाम है (१. ३५, १२)।

बिसस्तैन्योपाख्यान (कमलों की चोरी की कथा) – "भीष्म ने कहा : एक समय कश्यप, अत्रि, वसिष्ठ, भरद्वाज, गौतम, विश्वामित्र, जमदग्नि और अरुन्धती – ये सब लोग समाधि के द्वारा सनातन ब्रह्मलोक प्राप्त करने की इच्छा से तपस्या करते हुये इस पृथिवी पर विचरण कर रहे थे। इन सब की एक गण्डा नामक दासी थी जिसका पशुसख नामक एक शूद्र के साथ विवाह हुआ था। एक बार पृथिवी पर दीर्घ काल तक वर्षा नहीं हुई जिससे सारा जगत् भूख से पीड़ित रहने लगा। पूर्वकाल में शिवि के पुत्र शैव्य ने किसी यज्ञ में दक्षिणा के रूप में अपना एक पुत्र ही ऋत्विजों को दे दिया था। उक्त दुर्भिक्ष के समय वह अल्पायु राजकुमार मृत्यु को प्राप्त हो गया। वे सप्तर्षि भूख से पीड़ित होने के कारण इसी मरे हुये बालक को चारों ओर से घेर कर खड़े हो गये। तब राजा शैव्य वृषादर्भि ने उन ऋषियों को प्रचुर धन, खच्चर, गायें और बैल देने का प्रस्ताव किया, किन्तु इस दान को अस्वीकार करते हुये ऋषियों ने राजा से कहा कि राजा का दिया हुआ दान ऊपर से मधु के समान मीठा प्रतीत होता है, किन्तु परिणाम में विष के समान भयंकर हो जाता है। इस प्रकार राजा के दान को अस्वीकार करके ऋषिगण दूसरे मार्ग से चले गये। तब राजा ने अपने मन्त्रियों को वन में भेज कर ऋषियों को गूलर के फल देने का प्रयास किया। उन मन्त्रियों ने वृक्षों से गूलर तथा अन्य फल तोड़ कर उनमें स्वर्ण-मुद्रायें भर दीं और उन्हें लेकर ऋषियों के पास आये, किन्तु महर्षि अत्रि ने फलों को भारी देखकर यह जान लिया कि उनमें सुवर्ण भरा है, अतः सभी ऋषियों ने उन्हें अस्वीकार कर दिया तथा अन्यत्र चले गये। महाराज वृषादर्भि को जब यह समाचार मिला तो वे अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे। उन्होंने ऋषियों से प्रतिशोध लेने की दृष्टि से कठोर नियमों का पालन करते हुये आहवनीय अग्नि में आभिचारिक मन्त्र पढ़ते हुये आहुतियाँ डालना आरम्भ किया। आहुति समाप्त होने पर उस अग्नि से एक लोकभयंकर कृत्या प्रकट हुई जिसका नाम राजा वृषादर्भि ने यातुधानी रक्खा। तदनन्तर राजा ने उस यातुधानी को वन में जाकर उन सप्तर्षियों, उनकी पत्नी, तथा उनकी दासी और दासी के पति को भी उन सब का नाम पूछ कर मार डालने की आज्ञा दी। राजा की आज्ञा मान कर वह यातुधानी उस वन में चली गई जहाँ वे महर्षि विचरण कर रहे थे। उन दिनों वे महर्षिगण फल-मूल का आहार ग्रहण करते हुये विचरण करते थे। एक दिन उन महर्षियों ने देखा कि एक संन्यासी कुत्ते के साथ वहाँ इधर-उधर विचर रहा है (संन्यासी के स्वरूप का वर्णन)। उस हृष्ट-पुष्ट अङ्गों वाले संन्यासी को देख कर अरुन्धती ने ऋषियों से पूछा कि क्या वे लोग कभी इस प्रकार हृष्ट-पुष्ट नहीं हो सकेंगे। वसिष्ठ जी ने तथा अन्य महर्षियों ने अरुन्धती को अपने क्षीणकाय होने तथा उस संन्यासी के पुष्ट होने का कारण बताया। उस संन्यासी ने जब उन महर्षियों को देखा तब उसने संन्यासी की मर्यादा के अनुसार उनके पास आकर हाथ से उनका स्पर्श किया। परस्पर कुशल क्षेम पूछने के बाद वे महर्षिगण उस संन्यासी (शुनःसख) के साथ ही उस स्थान से आगे चल पड़े। एक दिन वन में विचरण करते हुये उन महर्षियों को कमल पुष्पों से सुशोभित एक सरोवर दिखाई पड़ा। पशुसख के साथ महर्षिगण जब मृणाल लेने के लिये उस सरोवर के तट पर गये तब उसकी रक्षा कर रही वृषादर्भि की भेजी हुई यातुधानी ने उन सब लोगों का नाम पूछा। उसने कहा कि यदि एक-एक करके वे महर्षिगण आयें और अपना नाम बतायें तो वे उस सरोवर से मृणाल ले सकते हैं। यातुधानी की बात सुनकर अत्रि यह समझ गये कि वह यातुधानी एक कृत्या है और उन सब का वध करने के लिये ही वहाँ उपस्थित है। किन्तु भूख से व्याकुल होने के कारण महर्षियों ने एक-एक करके अपना नाम तथा नाम की व्युत्पत्ति बताते हुये यातुधानी की आज्ञा से सरोवर में प्रवेश किया। जब वे ऋषिगण अपना नाम तथा उसकी व्युत्पत्ति बताने लगे तब प्रत्येक दशा में उस यातुधानी ने कहा कि उनके नामों की व्याख्या तथा अक्षरों का उच्चारण आदि उसकी समझ से बाहर है फिर भी वह प्रत्येक को सरोवर में प्रवेश करने की अनुमत देती गई। अन्त में शुनःसख नामक संन्यासी ने अपना नाम सीधे बिना किसी व्यत्पत्ति के 'शुनःसख' बताया। तब यातुधानी ने उनसे कहा : 'आपने संदिग्ध वाणी में अपना नाम बताया है। अतः स्पष्ट रूप से नाम की व्याख्या कीजिये।' संन्यासी शुनःसख ने पुनः नाम बताना अस्वीकार करते हुये अपने त्रिदण्ड से यातुधानी के मस्तक पर प्रहार किया जिससे वह वहीं भूमि पर गिर कर भस्म हो गई। उस यातुधानी का वध करने के बाद अपना त्रिदण्ड पृथिवी पर रख कर शुनःसख वहीं भूमि पर बैठ गये। तदनन्तर वे सभी महर्षि इच्छानुसार कमल के फूल और मृणालों के अलग-अलग बोझ बाँध कर बाहर निकले। अपने बोझों को सरोवर के तट पर रख कर वे ऋषिगण जल से तर्पण करने लगे। जब वे तर्पण से निवृत्त होकर जल से बाहर आये तब उनके कोई भी बोझ वहाँ दिखाई नहीं पड़े। अपने पुष्पों तथा मृणालों के बोझों के इस प्रकार चोरी चले जाने पर ऋषियों ने शपथपूर्वक अपनी-अपनी निर्दोषिता प्रमाणित करने का निश्चय किया। जब सभी महर्षिगण, देवी अरुन्धती, उनकी दासी तथा दासी के पति ने शपथपूर्वक अपने को निर्दोष बता दिया तब शुनःसख ने इस प्रकार शपथ ली : 'जिसने मृणाल को चुराया हो वह ब्रह्मचर्य व्रत पूर्ण करके आये हुये सामवेदी अथवा यजुर्वेदी विद्वान् को कन्यादान दे अथवा वह ब्राह्मण अथर्ववेद का अध्ययन पूरा करके शीघ्र ही स्नातक बन जाय।' इस शपथ को सुनकर ऋषियों ने शुनःसख से इस प्रकार कहा : 'तुमने जो शपथ की है उससे यही प्रतीत होता है कि हमारे मृणालों की चोरी तुमने ही की है।' तब शुनःसख ने अपनी चोरी को स्वीकारते हुये कहा : 'आपके मृणालों की चोरी मैंने ही की थी। मैं आप की रक्षा के लिये यहाँ आया था। आपकी परीक्षा की दृष्टि से ही मैंने यह चोरी की थी।' इस प्रकार कह कर शुनःसख ने अपने को इन्द्र बताते हुये महाराज वृषादर्भि द्वारा भेजी यातुधानी का उद्देश्य तथा उसे भस्म कर देने की बात बताया। इन्द्र की बात सुनकर महर्षियों को प्रसन्नता हुई। फिर वे सब के सब देवेन्द्र के साथ स्वर्गलोक चले गये (१३. ९३)।"

बीजकर्तृ = शिव (सहस्रनाम)।

बीजमव्यय = विष्णु (सहस्रनाम)।

बीजवाहन = शिव सहस्रनाम)।

बीजाध्यक्ष = शिव (सहस्रनाम)।

बीभत्सु – देखिये अर्जुन।

बुद्धि, दक्ष की पुत्री और धर्म की पत्नी का नाम है : १. ६६, १५; १२. ४५, १८ (देवी); ३०२, १८ (= हिरण्यगर्भ); ३१३, १२।

बुद्धिकामा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १२)।

बुद्बुदा, एक अप्सरा का नाम है : १. २१६, २० (उन पाँच अप्सराओं में से एक जिनका ब्रह्मा के शाप से अर्जुन ने उद्धार किया था); २. १०, १२ (कुबेर की सभा में)।

बुध, एक ग्रह का नाम है : २. ११, २९ (ब्रह्मा की सभा में उपस्थित ग्रहों में से एक); ३. ३, १७ (सूर्य को इसके साथ समीकृत किया गया है); ६. ४५, ४१ (अङ्गारकबुधाविव); १०१, ५९ (यथा बुधश्च शुक्रश्च); १०४, २१ (यथा······बुधशनैश्चरौ); ७. ८४, २० (सहितो बुधशुक्राभ्यां तमो निघ्नन् यथा शशी); १४४, ४ (सोम के पुत्र और पुरूरवा के पिता); १६८, ३५ (बुधभार्गवयोरिव); ८. १५, १६ (अङ्गारकबुधाविव); १२. २४४, १७; १३. १४७, २७ (इला के साथ विवाहित, पुरूरवा के पिता); १५०, ४९ (इनके पुत्र, अर्थात पुरूरवा); १६५, १७।

बृंहिता, एक मातृका : ३. २२८, १० (शिशु की माताओं में से एक)।

बृहज्ज्योतिस्, अङ्गिरस के पुत्र का नाम है (३. २१८, २)।

१. बृहत्, द्यौ के प्रथम पुत्र का नाम है (१. १, ४२)।

२. बृहत्, कालेयों में से आठवें, एक असुर का नाम है (१. ६७, ५५)।

३. बृहत्, एक सामन् का नाम है : ३. २२०, ७ (पाञ्चजन्य द्वारा रचित); ६. ३४, ३५; १२. ४७, ४४ (= कृष्ण); १३. १०२, ५४ (रथन्तरं यत्र बृहच्च गीयते)।

४. बृहत्, = ब्रह्मा १२. ३३६, २)।

५. बृहत् = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

६. बृहत् = विष्णु (सहस्रनाम)।

बृहत्कीर्ति, अङ्गिरस् के पुत्र का नाम है : ३. २१८, २)।

बृहत्केतु, अतीत काल के एक राजा का नाम है (१. १, २३७)।

१. बृहत्क्षत्र, एक कैकेय राजा का नाम है : १. १८६, २१; ६. ४५, ५२ (कृपाचार्य से युद्ध किया); ७. २३, २३ (इनके अश्वों का वर्णन); ३५, ३ (द्रोण की ओर झपटे); १०६, ७ (द्रोण से युद्ध किया); १०७, १. २. ५. ८; १२५, ५. ११. १२. १४. १९. २०. २३ (ये एक महारथी थे जिनका द्रोण ने वध किया); ८. ५, २८। तुकी० कैकेय।

२. बृहत्क्षत्र, एक निषाद का नाम है जिसका धृष्टद्युम्न ने वध किया (७. ३२, ६६)।

बृहत्सेन, क्रोधवशगणों के अंश से उत्पन्न एक राजा का नाम है (१. ६७, ६४; ५. ४, २१)।

बृहत्सेना, दमयन्ती की धाय का नाम है (३. ६०, ४. ५. १०. ११)।

बृहदम्बालिका, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ४)।

१. बृहदश्व, एक ऋषि का नाम है : १. २, १६०; ३. २६, २४ (युधिष्ठिर की प्रशस्ति करने वाले ऋषियों में यह भी थे); ५२, ४०. ५१. ५४; ५३, १ (इन्होंने युधिष्ठिर को नलोपाख्यान सुनाया); ५४, १. १७; ५५, १. १०; ५६, १; ५७, १; ५८, १; ५९, ९; ६०, १; ६१, १; ६२, ३; ६३, १; ६४, १; ६५, १; ६६, १; ६७, १. ८; ६८, १. २७. ३१; ७०, १; ७१, १; ७२, १; ७३, १; ७४, २३; ७५, १. १८; ७६, १; ७७, १; ७८, १; ७९, १. २२ (इन्होंने युधिष्ठिर को द्यूतविद्या सिखाया)।

२. बृहदश्व, अयोध्या के एक राजा और कुवलाश्व के पिता का नाम है : ३. २०१, ३३; २०२, ४ (श्रावस्तक के पुत्र). ५ (कुवलाश्व के पिता); ७. ८ (कुवलाश्व को अपने स्थान पर राजा बना कर स्वयं तपस्यार्थ वन में चले गये). ९।

बृहदुक्थ, तपस के पुत्र, एक अग्नि (३. २२०, १८)।

बृहद्गर्भ, शिबि औशीनर के पुत्र का नाम है (३. १९८, १८)।

बृहद्गुरु, अतीत काल के एक राजा का नाम है (१. १, २३३)।

१. बृहद्बल, अतीतकाल के एक राजा का नाम है (१. १, २३७)।

२. बृहद्बल, गान्धार राज सुबल के पुत्र का नाम है : १. १८६, ५ (शकुनिः सौबलश्चैव वृषकोऽथ बृहद्बलः। एते गान्धारराजस्य सुताः सर्वे समागताः)।

३. बृहद्बल, सम्भवतः ४. बृहद्बल के लिये ही प्रयुक्त हुआ है (१. १८६, १६; २. ४४, २०)।

४. बृहद्बल, एक कोसल नरेश का नाम है : २. ३०, १ (अपनी दिग्विजय के समय भीमसेन ने इन्हें पराजित किया था); ३४, १० (युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित हुये); ५. ४, २२; ५७, १९; १६१, ३९ (दुर्योधन की सेना में); १६६, १८ (कौशल्यो रथसत्तमः); ६. १६, १६; ४५, १४. १६ (महाभारत युद्ध के प्रथम दिन अभिमन्यु से युद्ध किया); ५६, ९; ८१, ४; ८७, ९ (युद्ध के दसवें दिन भीष्म के सैन्य व्यूह में). १०; ९२, २३. ४१; ९४, १४; १०८, १४; ११४, ३८; ११५, ३१ (इनकी ध्वजा पर सिंह अंकित था); ११६, ३०. ३४; ७. ३७, ५. १७ (अभिमन्यु से युद्ध किया); ३९, ५; ४६, ६. १९; ४७, ४. ८. १८. २२. २४ (अभिमन्यु ने इनका वध किया); ७३, १४; ९. २, १७. ३०; ११. २५, १० (इनकी मृत्यु पर इनकी विधवाओं का विलाप)। तुकी० कौसल्य, कौसलेन्द्र, कोसलक, कोसलानामधिपतिः। कोसलानां भर्ता, कोसलराज।

बृहद्ब्रह्मन्, अङ्गिरस् के पुत्र का नाम है (३. २१८, २)।

१. बृहद्भानु = ७. भानु (३. २२१, ८)।

२. बृहद्भानु = श्रीकृष्ण (१२. ४३, ८)।

३. बृहद्भानु = विष्णु (सहस्रनाम)।

बृहद्भास, अङ्गिरस् के पुत्र का नाम है (३. २१८, २)।

बृहद्भासा, ७. भानु की पत्नी का नाम है (३. २२१, ८)।

बृहद्द्युम्न, एक राजा का नाम है : ३. १३८, १. २. १०. १२।

१. बृहद्रथ, अतीतकाल के एक राजा का नाम है : १. १, २३५; २. ८, १० (यम की सभा में)।

२. बृहद्रथ, एक राजा जो सूक्ष्म नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था : १. ६७, १९; १८६, २१ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित)।

३. बृहद्रथ, एक मागध नरेश का नाम है जो वसु उपरिचर के पुत्र थे १. ६३, ३०; २. १७, १३ (जरासन्ध के पिता). २५. ४९; १९, २. १६. १८ (इन्होंने जरासन्ध को राजा बनाया); २१, १६ (इन्होंने ऋषभ नामक असुर का वध करके उसकी खाल से तीन ढोल बनवाये थे); २२, २४; २४, २८ (इनका दिव्य रथ); १२. ४९, ८२ (बृहद्रथो महातेजा भूरिभूतिपरिष्कृतः। गोलांगूलैर्महाभागो गृध्रकूटेऽभिरक्षितः)। तुकी० १. बृहद्रथ।

४. बृहद्रथ, प्रनिधि के पिता, एक अग्नि का नाम है। (३. २२०, ९)। तुकी वसिष्ठ।

५. बृहद्रथ : ५. १९५, १०।

६. बृहद्रथ, एक राजा का नाम है जिसका मान्धाता ने वध किया था : ७. ६२, १०; १२. २९, ८८।

७. बृहद्रथ = अङ्गराज पौरव (१२. २९, ३१)।

बृहद्रूप = विष्णु (सहस्रनाम)।

बृहद्वती, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, ३०)।

१. बृहन्त एक राजा का नाम है : १. १८६, ७ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित); ५. ४, १३।

२. बृहन्त उलूकराज का नाम है जिन्होंने अर्जुन से उनकी दिग्विजय के समय युद्ध किया था (२. २७, ५. ७. ८)।

३. बृहन्त, एक राजा का नाम है। "जो एकत्र हुये सम्पूर्ण भरतवंशियों के मतों का परित्याग करके अपने सभी मनोरथों को छोड़कर केवल भक्तिभाव से युधिष्ठिर के पक्ष में चले गये थे, उन लाल नेत्र और विशाल भुजावाले राजा बृहन्त को, जो सुवर्णमय रथ पर बैठे हुये थे, अरट्ट देश के महापराक्रमी, विशालकाय, और सुनहरे रंग वाले घोड़े रणभूमि में

हो गये। (७. २३, ७६-७७)।

४. बृहन्त, एक कौरव योद्धा का नाम है जिसने सात्यकि पर आक्रमण किया : ७. २५, ४७; ८. ५, ४३; ११. २६, ३३।

५. बृहन्त, एक पाण्डव योद्धा जिसका दुःशासन ने वध किया (८. ६, १२)।

बृहन्नला = देखिये अर्जुन।

बृहन्मनस्, अङ्गिरा के एक पुत्र का नाम है (३. २१८, २)।

बृहन्मन्त्र, अङ्गिरा के एक पुत्र का नाम है (३. २१८, २)।

बृहस्पति, देवगुरु तथा एक ग्रह का नाम है : १. ३०, ३८. ४०. ४४; ६०, ११; ६६, ५ (अङ्गिरा के पुत्र तथा उतथ्य और संवर्त्त के भ्राता). २६. ३९; ६७, ६९ (इनके एक अंश से द्रोण का जन्म हुआ था); ७६, ९ (देवों के गुरु). ११. १९. २१. २८. ४६. ४९ (अङ्गिरा के पुत्र तथा कच के पिता); ७७, ३. २२; ८०, १०; १०४, १०. १२. १४. १७, १९. २०. २३; १७०, २९ (इन्होंने भरद्वाज को आग्नेयास्त्र दिया था); १७४, १२; २२१, ३०; २२२, ८; २२९, ३० (अग्नि को इनके साथ; समीकृत किया गया है); २. ५, ५; ७, २८ (इन्द्र की सभा में); ११, २९ (ब्रह्मा की सभा में उपस्थित ग्रहों के साथ); ४०, ३; ५०, ९ (देवर्षिर्वासवगुरुर्देवराजाय धीमते। यत्प्राह शास्त्रं भगवान्बृहस्पतिरुदारधीः); ५५, ६; ७४, ७ (यज्जगाद बृहस्पतिः शक्रस्य नीतिं प्रवदन्विद्वान्देवपुरोहितः); ३. ३, १७ (सूर्य को इनके साथ समीकृत किया गया है); ८७, १ १५०, २६. २९; १८५; २६ (राजाओं की सम्मानसूचक उपाधियों में से एक); १९०, ९० (सूर्यश्च चन्द्रश्च तथा तिष्यबृहस्पती। एकराशौ समेष्यन्ति प्रपत्स्यति तदा कृतम्); २१७, १८ (अङ्गिरा के पुत्र); २१८, २; २१९, १. २ (इनके छः पुत्र तथा एक पुत्री थी; शंयु इनके प्रथम पुत्र थे); २२९, ४९; २५१, २३; २७२, ६५; २७७, १०; २९४, १५; ४. ५८, ६; ५. ११, १९. २३. २६; १२. १०, १४. १६. २४. २५; १३, ८; १५, २३. २४. २८. ३१; १६, १. ९. १३. १९. २१. २३. २७; १८, २; २९; १४; ३३, ७१; ३९, २. ४१; ४९, २. ६. १०; ५५, ६६; ८६, ४; ११७, १३; १५७, २; १६५, ९; ६. ३, १४. २७; १९, ४; ३४, २४; ५०, ४० (व्यूहः क्रौञ्चारुणो नाम सर्वशत्रुनिवर्हणः। यं बृहस्पतिरिन्द्राय तदा देवासुरेऽब्रवीत्); १०३, २२; १०७, १००; ७. ९, १५; १०, ४८; २२, १४; ५५, ३८. ३९; ६९, २३ (पृथिवी के दोग्धा); ९४, ६७; १०३, १९; १९४, ८; ८. ३१, १३; ३७, २०; ९४, ५१; ९, ४, ४३; ३६, ३८; ४१, २९; ४४, २१ (स्कन्द के जातकर्म आदि संस्कार सम्पन्न किये). ३२; ४५, १; ४६, ५० (स्कन्द को एक दण्ड दिया); ४७, २०; ४९, २ (इन्द्र ने इन्हें प्रचुर धन दिया); ५०; ४० (इनका लोक गोलोक के नीचे है). ६४; ६१, ४८; १२. २१, १; २३, १४; २९, १९. २०. २१; ३१, २६; ३५, १८; ३७, ९; ४७, ८ (शरशय्या पर पड़े भीष्म के चारों ओर खड़े ऋषियों में यह भी थे); ५७, ६; ५८, १. १३; ५९, ८४ (इन्होंने बाहुदन्तक को संक्षिप्त करके उसे बार्हस्पत्य नाम दिया); ६८, २ (वसुमनस् के साथ इनका संवाद). ३. ४. ५. ७. ८; ६९, २३; ८४, १. ३; ९८, ४३; १०३, २. ३. ७. ४६. ५३; १११, ६३; ११५, ८; १२०, २१; १२२, ११; १२४, २१-२४; १५२, ३२. ३४; १७०, १२; १९८, ५; २०१, २. ३. १२; २१०, २० (वेदविद्वेद भगवान् वेदाङ्गानि बृहस्पतिः); २८१, २६. ३२; ३२१, ६१; ३२४, २३; ३३५, ४५-४७. ५४; ३३६, २. ५. १९. ४०. ६०; ३४१, ५०. ५२; ३४२; २७; १३. १४, ३९७; १८, १९. ७१; २६, १. ५; ३०, २४; ३९, ८. ११; ५६, १२; ६२, ५१. ५२. ५४. ५५; ६५, ७; ७६, ४ (मान्धाता को उपदेश दिया); ८५, १३० (अङ्गिरा के आठ वारुण पुत्रों में से प्रथम); १११, ४-६. ८. ११. २१. २८. ३२. ३५; ११२, ३; ११३, २; ११५, १५; १२५, ५३. ५८. ६०; १५०, ७८; १६५, १७; १४. ४, २०; ५, ४. ५. ८. १७-१९. २२. २८; ६, १. ३. ६. ८. १५. १९; ७, १२. १३. १८. २०; ८, ३६. ३८; ९, १. २. ४. ६. ८. ९. १५-२२. २६; १०, २. ५. २३. २४; ४३, ८ (ब्राह्मणों के अधिपति); ९२, ३७; १५. २७, २०; २८, १३ (बुद्धि में विदुर जी इनसे श्रेष्ठ थे); ३१, १३ (द्रोण इनके एक अंश से उत्पन्न हुये थे); १८. ४, २१; ५, १२। तुकी० २-३. अङ्गिरस्; १. आङ्गिरस्; अङ्गिरसः पुत्रः; गुरु।

२. बृहस्पति = शिव (सहस्रनाम)।

बृहस्पतिसुत = कच (१. ७६, १७. ३७)।

बोध (बहु०) एक जाति का नाम है : २. १४, २६ (ये लोग जरासन्ध के भय से पश्चिम की ओर जाकर बस गये); ६. ९, ३८ (भारतवर्ष की एक जाति)।

बोध्य, एक ऋषि का नाम है (१२. १७८, ३. ४. ६)।

ब्रध्नश्व, एक राजा का नाम है (३. ९८, ७. ८. १२)।

१. ब्रह्मकन्या : १२. १२१, २४।

२. ब्रह्मकन्या : १३. १०७, ४४।

१. ब्रह्मकल्प : १२. १८३, ६।

२. ब्रह्मकल्प (वि०) : १. ६०, ९; ७४, १३२; ३. ५२, ५८; ५. १७, १५; १२०, ४; १३. १६७, १७; १५. २९, २५।

ब्रह्मकाय, प्राणियों के एक वर्ग का नाम है (१३. १८, ७४)।

ब्रह्मकायिक = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

ब्रह्मकायिकमग्नीनां = शिव (सहस्रनाम)।

१. ब्रह्मकृत् = शिव (सहस्रनाम)।

२. ब्रह्मकृत् = विष्णु (सहस्रनाम)।

ब्रह्मक्षेत्र = कुरुक्षेत्र : ३. ८३, ५-६ (तत्र मासं वसेद्वीरः सरस्वत्यां युधिष्ठिर। यत्र ब्रह्मादयो देवा ऋषयः सिद्धचारणाः। गन्धर्वाप्सरसो यक्षाः पन्नगाश्च महीपते। ब्रह्मक्षेत्रं महापुण्यमभिगच्छन्ति भारत॥); १४. ४४, ११ (स्थावराणां तु भूतानां सर्वेषामविशेषतः। ब्रह्मक्षेत्रं सदा पुण्यं प्लक्षः प्रथमतः स्मृतः॥)।

ब्रह्मगर्भ = शिव (सहस्रनाम)।

ब्रह्मगुहा, से ब्रह्मा की गुफा का तात्पर्य है : १३. १५८, २७ (स पौराणीं ब्रह्मगुहां प्रविष्टो महीसत्रं भारताग्रे ददर्श)।

ब्रह्मचक्र = शिव (७, ८०, ६२)।

१. ब्रह्मचारिन्, एक देवगन्धर्व का नाम है : १. ६५, ४७; १२३, ५८ (अर्जुन के जन्मोत्सव के समय गायन करने वाले गन्धर्वों में यह भी था।

२. ब्रह्मचारिन् = स्कन्द (३. २३२, ८)।

३. ब्रह्मचारिन् = शिव : ७. ८०, ६०; ८. ३३, ५८; १०. ७, ४. ७; १८, ८; १३. १७, ७४ (सहस्रनाम)।

ब्रह्मज = स्कन्द (३. २३२, ११)।

१. ब्रह्मज्ञ = विष्णु (सहस्रनाम)।

२. ब्रह्मज्ञ = स्कन्द (३. २३२, ११)।

ब्रह्मणः क्षयः – ९. ५३, १८। तुकी० ब्रह्मक्षेत्र।

ब्रह्मणः पदम् : ३. २०९, ५४; १२. ७९, २१; २३५, ९; २३६, ३६; २७०, ३२; २७४, १७; १३. १५४, ३; १४. ११, ४; १६, १२।

ब्रह्मणः शास्त्रं = वेद (१२. २९१, १२)।

ब्रह्मणः सदनम् : १. २२३, ६८; ३. ८२, ३२; १६३, १८ (ब्रह्मणः सदनात्तस्य परं स्थानं प्रकाशते); २६१, ३७ (ब्रह्मणः सदनादूर्ध्वं तद्विष्णोः परमं पदम्); ९. ५०, ५०; ११. ८, २४; १३. २६, ९३; ९३, १६; ९४, ४५।

ब्रह्मणः सरस्, एक सरोवर का नाम है जहाँ से सरस्वती नदी निकलती है (९. ५१, १९)।

ब्रह्मणसंव्रतिन् = स्कन्द (३. २३२, ११)।

ब्रह्मणस्तीर्थम्, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ११३)।

ब्रह्मणः स्थानम् : १. ६२, १५; ३. ८३, ७१; १२. १९९, १५;

२२९, १. २. २४; २६२, २४; २७८, १; २८०, ५०; ३३६, ६५।

ब्रह्मणोऽहस (ब्रह्मा का एक दिन) : ३. ३, ५५ (यदहर्ब्रह्मणः प्रोक्तं सहस्रयुगसंमितम्); ६. ३२, १७)।

ब्रह्मणो भवनम् : २. ३६, १२।

ब्रह्मणो लोकः = ब्रह्मलोक : ९. ५०, ४८ (जैगीषव्यः स वै लोकं शाश्वतं ब्रह्मणो मतः); १३. ९४, ५४; १०२, ६३ (स याति ब्रह्मणोलोकं ब्राह्मणो गौतमो यथा)।

१. ब्रह्मण्य = स्कन्द (३. २३२, ११; ९. ४६, ५३)।

२. ब्रह्मण्य = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. ब्रह्मण्यदेव = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ९४)।

२. ब्रह्मण्यदेव = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

ब्रह्मण्या = दुर्गा (उमा) ६. २३, १०।

ब्रह्मतुङ्ग, एक पर्वत का नाम है (७. ८०, ३१)।

१. ब्रह्मदण्ड (ब्राह्मण का शाप) : १. २, ३५४; ३०, ११; ५४, २३; ५७, २४; २. ५, १२२; ६८, ६९; ३. २९०, २१ (शूलमिन्द्राशनि प्रख्यं ब्रह्मदण्डमिवोद्यतम्). २९; ५. ५१, ८; ७. १९१, १२; ८. ३४, ४३; ९. १७, ४३; १६. १, ९; ३, ४०। तुकी० ब्रह्मशाप।

२. ब्रह्मदण्ड = शिव (१३. १४, ३१५)।

ब्रह्मदण्डविनिर्मातृ = शिव (सहस्रनाम)।

१. ब्रह्मदत्त, एक प्राचीन राजा का नाम है : २. ८, २३ (यम की सभा में); १२. १३९, ४. ५. २३. २४. ३५. ३७. ४०. ४९. ६३. ७५. ११२. ११३; २३४, २९ (ब्रह्मदत्तश्च पाञ्चाल्यो राजा बुद्धिमतां वरः। निधिं शंखं द्विजाग्रेभ्योदत्त्वालोकानवाप्तवान्); ३४२, १०५ (कण्डरीकोऽथ राजा च ब्रह्मदत्तः प्रतापवान् जातीमरणजं दुःखं स्मृत्वा पुनः पुनः। सप्तजातिषु मुख्यत्वाद्योगानां संपदं गतः); १३. १३७, १७ (शंखनिधि देने के बाद इन्होंने स्वर्गलोक प्राप्त किया)।

२. ब्रह्मदत्त, यम की सभा में उपस्थित १०० ब्रह्मदत्तों में से एक (२. ८, २३)।

ब्रह्मदत्त-पूजनी-संवाद – "युधिष्ठिर ने भीष्म से पूछा : 'आपने यह परामर्श दिया है कि शत्रुओं पर विश्वास नहीं करना चाहिये। साथ ही, यह भी कहा है कि कहीं भी विश्वास करना उचित नहीं है। परन्तु यदि राजा सर्वत्र अविश्वास ही करे तो वह किस प्रकार राज्य सम्बन्धी व्यवहार चला सकता है ?' भीष्म ने तब इस सम्बन्ध में राजा ब्रह्मदत्त के घर में रहने वाली पूजनी नामक पक्षी के साथ ब्रह्मदत्त के संवाद का उल्लेख करते हुये कहा : काम्पिल्य नगर में ब्रह्मदत्त नाम के एक राजा राज्य करते थे। उनके अन्तःपुर में पूजनी नाम से प्रसिद्ध एक चिड़िया दीर्घकाल तक निवास करती रही। वह चिड़िया जीव-जीवक नामक विशेष पक्षी के समान समस्त प्राणियों की भाषा समझती थी तथा तिर्यग्योनि में उत्पन्न होने पर भी सर्वज्ञ एवं सम्पूर्ण तत्त्वों की ज्ञाता थी। एक दिन उसने रनिवास में ही एक बच्चा दिया जो अत्यन्त तेजस्वी था। उसी दिन राजा की रानी के गर्भ से भी एक बालक उत्पन्न हुआ। पूजनी चिड़िया प्रतिदिन समुद्र तट पर जाकर वहाँ से उन दोनों बच्चों के लिये दो फल ले आया करती थी। अपने बच्चे की पुष्टि के लिये वह एक फल उसे, तथा राजा के बेटे की पुष्टि के लिये दूसरा फल उस राजकुमार को देती थी। पूजनी का लाया वह फल अमृत के समान स्वादिष्ट और बल तथा तेज की वृद्धि कराने वाला होता था। उस फल को खाकर हृष्ट-पुष्ट हुये राजकुमार ने एक दिन उस चिड़िया के बच्चे को देखा और यत्नपूर्वक उसके साथ खेलने लगा। अपने साथ ही जन्म लेने वाले उस पक्षी को एकान्त में ले जाकर राजकुमार ने उसे मार डाला और उसके बाद अपनी धाय की गोद में बैठ गया। जब पूजनी फल लेकर लौटी तो उसने देखा कि राजकुमार द्वारा मारा गया उसका बच्चा धरती पर पड़ा है। वह अपने बच्चे की मृत्यु से अत्यन्त दुःखी हुई और अश्रुपूरित नेत्रों से इस प्रकार कहने लगी : 'क्षत्रियों में संगत का निर्वाह करने की भावना नहीं होती। ये किसी हेतु या स्वार्थ से ही दूसरों को सान्त्वना देते हैं। कार्य सिद्ध हो जाने पर ये आश्रित व्यक्ति को त्याग देते हैं।' इस प्रकार विलाप करती और क्षत्रियों के दोषों का उल्लेख करती हुई पूजनी ने प्रतिशोध लेने का निश्चय किया। अपने बच्चे के साथ ही जन्म लेने वाले राजकुमार को कृतघ्न, क्रूर और विश्वासघाती बताती हुई पूजनी ने अपने दोनों पञ्जों से राजकुमार की दोनों आखें फोड़ डाली। तदनन्तर आकाश में स्थिर होकर वह इस प्रकार बोली : 'इस जगत् में स्वेच्छा से किये गये पाप का फल कर्ता को तत्काल मिल जाता है। जिनसे पाप का बदला मिल जाता है उसके पूर्वकृत शुभाशुभ कर्म नष्ट नहीं होते।' राजा ब्रह्मदत्त ने देखा कि पूजनी ने उनके पुत्र की आँखे ले ली हैं तब उन्होंने यह समझ लिया कि राजकुमार को उसके कुकर्म का फल मिला है। यह सोचकर राजा ने रोष त्याग दिया और पूजनी से इस प्रकार कहा : 'हमने तेरा अपराध किया था और तूने उसका बदला चुका लिया। अब हम दोनों का कार्य बराबर हो गया। अतः अब तू अन्यत्र न जाकर इसी स्थान पर पूर्ववत् निवास कर।' राजा की बात पर पूजनी ने कहा कि एक बार किसी का अपराध करके फिर वहीं रहने की विद्वान् पुरुष प्रशंसा नहीं करते। जब किसी से वैर बँध जाय तो उसकी मीठी बातों में आकर उस पर कभी विश्वास नहीं करना चाहिये। पूजनी की बातें सुनकर राजा ब्रह्मदत्त ने उससे इस प्रकार कहा : जो एक व्यक्ति के अपराध करने पर स्वयं भी बदले में कुछ करे वह अपराध नहीं करता। बदला ले लेने पर तो वैर शान्त हो जाता है। प्राणों का नाश करने वाले भी यदि एक साथ रहने लगें तो उनमें परस्पर स्नेह उत्पन्न हो जाता है और वे एक दूसरे का विश्वास भी करने लगते हैं, जैसे श्वपच के साथ रहने से कुत्ते का उसके प्रति स्नेह और विश्वास हो जाता है। काल ही समस्त कार्य करता है तथा काल के प्रभाव से भाँति-भाँति की क्रियायें आरम्भ होती हैं। एक-दूसरे के प्रति किये गये अपराध में दोनों में से कोई भी वास्तविक हेतु नहीं होता। काल ही समस्त देहधारियों के सुख-दुःख को ग्रहण या उत्पन्न करता है। पूजनी ने राजा को उत्तर देते हुये कहा कि जिसने वैर बाँध लिया हो ऐसे सुहृद पर भी इस जगत् में विश्वास नहीं करना चाहिये, क्योंकि जैसे लकड़ी के भीतर आग छिपी रहती है उसी प्रकार वैरी के हृदय में वैर भाव छिपा रहता है। जिस प्रकार बड़वानल समुद्र में किसी प्रकार शान्त नहीं होता, उसी प्रकार क्रोधाग्नि भी न धन, न कठोरता दिखाने से, न मीठे वचनों से और न शास्त्रज्ञान से ही शान्त होती है। वैर पाँच कारणों से होता है : १. स्त्री के लिये; २. घर और जमीन के लिये; ३. कठोर वाणी के कारण; ४. जातिगत द्वेष के कारण, और ५. किसी समय किये हुये अपराध के कारण। यदि काल सब क्रियाओं का कारण मान लिया जाय तब किसी का किसी से वैर नहीं होना चाहिये। यदि काल से ही मृत्यु, दुःख-सुख और उन्नति-अवनति का सम्पादन होता है तब पूर्वकाल में देवताओं और असुरों ने आपस में युद्ध करके क्यों एक दूसरे का वध किया ? वैद्य लोग रोगियों की दवा करने की अभिलाषा क्यों करते हैं ? यदि काल ही सब को पका रहा है तो औषधियों का क्या प्रयोजन है ? यदि काल ही प्रमाण है तो कर्म करनेवाले के लिये विधि-निषेध रूपी धर्म पालन का नियम रखना व्यर्थ है। मनुष्य खाने और खेलने के लिये ही पक्षियों की कामना करते हैं। सबको अपना प्राण प्रिय होता है। दुःख के अनेक रूप हैं। वृद्धावस्था, धननाश, अप्रियजनों के साथ निवास, प्रियजनों का वियोग – ये सभी दुःख के कारण हैं। कुछ मूर्ख मनुष्य कहा करते हैं कि पराये दुःख में दुःख नहीं होता परन्तु ऐसे लोग दुःख के तत्त्व को नहीं जानते। जो दुःख से पीड़ित होकर शोक करता है तथा जो अपने और पराये सभी के दुःख का रस जानता है वह ऐसी बात नहीं कह सकता। आपस में एक-दूसरे का उपकार करने के कारण दोनों का मेल नहीं हो सकता। मरणान्त वैर ठन जाने पर जो प्रेम करना चाहता है, उसका वह प्रेम उसी प्रकार असम्भव है जैसे मिट्टी का बर्तन एक बार टूट जाने पर फिर नहीं जुड़ता। विश्वास दुःख देने वाला है। यही नीतिशास्त्रों का निश्चय है। प्राचीन काल में

शुक्राचार्य ने भी प्रह्लाद से इस सम्बन्ध में दो गाथायें कही थीं जो इस प्रकार हैं : जैसे सूखे तृण से ढके हुये गड्ढे के ऊपर रक्खे हुये मधु को लेने आने वाले मनुष्य मारे जाते हैं, उसी प्रकार जो लोग वैरी की झूठी या सच्ची बात पर विश्वास करते हैं वे भी अनायास मृत्यु को प्राप्त होते हैं। जब किसी कुल में वैर बँध जाता है तब उस कुल में एक भी पुरुष के जीवित रहते वह शान्त नहीं होता। ब्रह्मदत्त ने पूजनी से असहमत होते हुये कहा कि अविश्वास करने से मनुष्य संसार में अपने अभीष्ट पदार्थ को कभी नहीं प्राप्त कर सकता। यदि मन में एक पक्ष से सदा भय बना रहे तो मनुष्य मृतकतुल्य हो जायेंगे। पूजनी ने राजा का प्रतिवाद करते हुये कहा : जिसके दोनों पैरों में घाव हो गया हो और फिर भी वह उन पैरों से चलता रहे तो उसके घाव कभी नहीं भर सकते। जो अपनी शक्ति को समझे बिना दुर्गम मार्ग पर चल पड़ता है उसका जीवन वहीं समाप्त हो जाता है। जो प्रतिदिन कड़वा, कसैला, स्वादिष्ट अथवा मधुर — जैसा भी हो, हितकर भोजन करता है वही अन्न उसके लिये अमृत के समान लाभकारी होता है। परन्तु जो मोह वश अपथ्य भोजन करता है उसका जीवन वहीं समाप्त हो जाता है। दैव और पुरुषार्थ दोनों परस्पर आश्रित हैं; परन्तु उदार विचार वाले पुरुष सर्वदा शुभ कर्म करते हैं जब कि नपुंसक भाग्य के भरोसे पड़े रहते हैं। कठोर अथवा कोमल, जो अपने लिये हितकर हो वह कर्म करते रहना चाहिये। काल, भाग्य और स्वभाव आदि सब पदार्थों का भरोसा छोड़कर पराक्रम अवश्य करना चाहिये। विद्या, शूरता, दक्षता, बल और धैर्य ये मनुष्य के पाँच स्वाभाविक मित्र बताये गये हैं। विद्वान पुरुष इनके द्वारा ही जगत में सब कार्य करते हैं। घर, ताँबा आदि धातु, खेत, स्त्री, और सुहृदजन — ये उपमित्र बताये गये हैं और सर्वत्र उपलब्ध रहते हैं। घर की आसक्ति में बँधे मन्दबुद्धि मनुष्यों के मांस को कुटिला स्त्री खा जाती है जैसे केकड़े की मादा अपनी सन्तान को ही नष्ट कर देती है। अपना जन्मस्थान भी यदि रोग और दुर्भिक्ष से पीड़ित हो तो वहाँ से हट जाना चाहिये। दुष्ट भार्या, दुष्ट पुत्र, कुटिल राजा, दुष्ट मित्र, दूषित सम्बन्ध और दुष्ट देश को दूर से ही त्याग देना चाहिये। कुमित्र का स्नेह कभी स्थिर नहीं रह सकता। जिस देश का राजा गुणवान् और धर्मपरायण होता है वहाँ स्त्री, पुत्र, मित्र, सम्बन्धी तथा देश सभी उत्तम गुण से सम्पन्न होते हैं। जो राजा प्रजा की आय का छठाँ भाग कर रूप से ग्रहण करके उसका उपभोग करता है और प्रजा का भली-भाँति पालन नहीं करता वह राजाओं में चोर है। प्रजापति मनु ने राजा के सात गुण बताये हैं और उन्हीं के अनुसार उसे माता-पिता, गुरु, रक्षक, अग्नि, कुबेर और यम की उपमा दी है। जो राजा प्रजा पर सदा कृपा रखता है वह अपने राष्ट्र के लिये पिता के समान है। राजा अपने और प्रजा के अप्रियजनों को जलाता है अतः वह अग्नि के समान है और दुष्टों का दमन करके उन्हें संयम में रखने के कारण उसे यम कहा गया है। प्रियजनों की कामना पूर्ण करने के कारण वह कुबेर के समान है। धर्म का उपदेश करने के कारण गुरु और सब का संरक्षण करने के कारण संरक्षक है। जिस राजा की प्रजा सर्वदा कर के भार से त्रस्त रहती है वह राजा पराभव को प्राप्त होता है। इसके विपरीत जिसकी प्रजा सरोवर में कमल के समान विकास एवं वृद्धि को प्राप्त होती है वह सब प्रकार के पुण्यलोक का भागी होता है। बलवान् के साथ युद्ध छेड़ना कभी अच्छा नहीं माना जाता। भीष्म जी ने युधिष्ठिर को बताया कि ब्रह्मदत्त से इस प्रकार कह कर वह पूजनी चिड़िया उनसे विदा ले अभीष्ट दिशा को चली गई। (१२. १३९)।"

ब्रह्मदर्शन : १३. ८५, ८७ (अपि चेदं पुरा राम श्रुतं मे ब्रह्मदर्शनम्)।

१. ब्रह्मन् (ब्रह्मा) : १. १, ३२ (दिव्याण्ड से उत्पन्न हुये). ५७ (लोक गुरुः). ६० (परमेष्ठिन्). ६१ (परमेष्ठिनं). ६२. ७१. ७४; ५, ७ (स्वयम्भू ने वरुण की यज्ञाग्नि से भृगु को उत्पन्न किया); ६, ५ (सर्वलोकपितामहः); ७, १६; १७, ११; १८, ४. २९. ३१. ४२; २०, ९; २४, १३. १५. १८; ३१, १८. १९; ३६, १८. २१. २३. २४; ३८, ९. १४. १५; ३९, ८; ४२, २०; ५४, १३; ६३, ८८; ६४, ३७. ४०. ४६. ४७. ५०; ६५, १० (ब्रह्मणो मानसाः पुत्रा विदिताः षण्महर्षयः, अर्थात मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह और क्रतु); ६६, १. ४ (मरीचिरङ्गिरा अत्रिः पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः। षडेते ब्रह्मणः पुत्रा वीर्यवन्तो महर्षयः). १० (दक्ष इनके दाहिने पाँव के अंगुष्ठ से उत्पन्न हुये थे). ३१ (धर्म इनके दाहिने वक्ष से उत्पन्न हुये). ४१ (मृत्यु इनके हृदय का भेदन करके उत्पन्न हुये). ५० (धाता और विधाता के पिता); ९६, ३. ५; १२०, ५; १७४, ५ (वसिष्ठ इनके मानस पुत्र थे); २०९, २१; २११, १९; २२३, ६९; २२४, २; २२५, १९ (इन्होंने गाण्डीव का सृजन किया); २. ३, १५ (नर, नारायण, यम, और स्थाणु के साथ इन्होंने ब्रह्म सरोवर में यज्ञसत्र का आयोजन किया था). २७ (इनकी सभा भी युधिष्ठिर की सभा से प्रतिस्पर्धा नहीं कर सकती थी); ४, ४१; ६, ८ (नारद इनके द्वारा रचित लोकों में भ्रमण करते हैं). १२. १६; ७, २९ (ब्रह्मणः सदृशा राजन्भृगुः सप्तर्षयस्तथा); ११, २७. ४९. ५७ (लोकपितामहः); ३. ३, १८ (= सूर्य). ५५ (यदहर्ब्रह्मणः प्रोक्तं सहस्रयुगसंमितम्). ७८ (एतद् ब्रह्मा ददौ पूर्वं शक्राय सुमहात्मने); १२, २१ (श्रीकृष्ण पहले नारायण हुये, फिर हरि और तब ब्रह्मा). ३८ (ये श्रीकृष्ण की नाभि से उत्पन्न हुये थे). ५४ (श्रीकृष्ण शंकर, ब्रह्मा और शक्र आदि के साथ उसी प्रकार क्रीड़ा करते हैं जैसे बालक खिलौनों के साथ खेलता है); ३१, ३९; ४१, १८; ८२, ७२. १०८; ८३, ५. ७३. ११९. १२९. १३५. १६४. १६९. १९१; ८४, ५. ६५ (देवों के साथ ये नैमिषारण्य में सदा निवास करते हैं). ९२ (ब्रह्म सरोवर में एक यूप का निर्माण किया था). १०३. १२३; ८५, २०. २५. ७१; १००, ५; १०६, १; १०७, ७ (ब्रह्माणं शरणं जग्मुः सहिताः सर्वदैवतैः); ११०, ३६; १४२, ५०. ५१. ५४. ५९; १६३, १४ (ब्रह्मणः पुत्रान् मानसान् दक्षसप्तमान्); १७३, ११ (कालकेयों के लिये हिरण्यपुर का सृजन किया). १५ (इन्होंने यह निश्चित किया था कि कालकेयों की मृत्यु केवल मनुष्य के हाथों ही होगी); १८७, ५२ (अहं प्रजापतिर्ब्रह्मा मत्परं नाधिगम्यते); १८८, ३ (परमेष्ठिनं). ४ (प्रलयकाल में मार्कण्डेय इनके पास आये). १० (ब्रह्मणः कामरूपिणः). १४ (पद्मोत्पलनिकेतनम्......सर्वभूतेश); १८९, ५ (नारायण देव ने मार्कण्डेय मुनि से अपने को ही ब्रह्मा और विष्णु बताया). ४२. ४७; २०३, १५ (विष्णु के नाभिकमल से उत्पन्न). २२ (मधु कैटभ ने इन्हें भयभीत किया); २०४, २ (धुन्धु को वर दिया); २१७, १०. १४ (अग्नि की सृष्टि की थी); २१८, १ (अङ्गिरा इनके तीसरे पुत्र थे); २२०, २; २२४, २३; २२९, ४५; २३०, ९. १०; २३१, ८. १०५; २७२, ४४ (चतुर्मुखो ब्रह्मा नाभिपद्माद्विनिःसृतः). ४८ (सृज्यते ब्रह्ममूर्तिस्तु रक्षते पौरुषी तनुः। रौद्रीभावेन् शमयेत् तिस्रोऽवस्था प्रजापतेः); २७५, १५ (पुलस्त्य के पुत्रों ने घोर तपस्या द्वारा ब्रह्मा को प्रसन्न किया). २१ (ब्रह्मा ने आकर इन पुत्रों को तपस्या से विरत होने के लिये कहा). २२. २६. ३१; २७६, १ (ब्रह्मर्षि आदि इनकी शरण में आये). ४; २९१, ३०. ४१. ४३; ३१३, ४६; ४. १३, १४. १५; ४३, ५ (इन्होंने पहले १००० वर्ष तक गाण्डीव धारण किया था); ६१, २६; ५. १२, १८; १३, ३; १७, ९; ४९, २. ६. ७; ५५, २९; ९७, २ (लोकपितामहः); ९८, २१ (सृष्टः प्रथमतश्चण्डा ब्रह्मणा ब्रह्मवादिना); १००, ५ (नैर्ऋता यातुधानाश्च ब्रह्मपादोद्भवाश्च ये); १११, ४ (बदरी तीर्थ में इनका शाश्वत निवास है); १३१, ५ (श्रीकृष्ण के ललाट में स्थित); १८५, ११ (देवैः परिवृतो ब्रह्मा वेद्यामिव महाध्वरे); ६. ६, १९ (नर, नारायण, मनु, और स्थाणु सहित ये भी बिन्दु सरोवर पर उपस्थित थे); १७, ८ (गच्छध्वं तेन शक्रस्य ब्रह्मणः सहलोकताम्); २८, ३२ (एवं बहुविधा यज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे); ३२, १७ (सहस्रयुगपर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणो विदुः); ३५, १५ (श्रीकृष्ण के शरीर में स्थित). ३७; ६५, ४४. ४६. ७१; ६६, १. १३ (यस्याहमग्रजः पुत्रः सर्वस्य जगतः प्रभुः). २५ (कथां तां ब्रह्मणा गीतां श्रुत्वा प्रीता दिवं ययुः). २९ (यस्य चैवात्मजो ब्रह्मा सर्वस्य जगतः

पिता); ६७, १५ (मधुं······ब्रह्मणोऽपचितिं यातुं जघान पुरुषोत्तमः); ६८, १; ७. २३, ९२ (इन्होंने अर्जुन के धनुष की सृष्टि की थी); ५२, ३८. ४३; ५३, ३; ५४, १०. ३९. ५०; ९४, ४१ (करोतु स्वस्ति ते ब्रह्म ब्रह्मा चापि द्विजातय । सरीसृपाश्च ये श्रेष्ठास्तेभ्यस्ते स्वस्ति भारत). ५०. ५७. ७१ (यथा च ब्रह्मणा बद्धं संग्रामे तारकामये । शक्रस्य कवचं दिव्यं तथा बध्नाम्यहं तव); ९८, ३३; १०३, २० (दुर्योधन का कवच ब्रह्मा द्वारा निर्मित होने पर भी अर्जुन ने उसका भेदन कर सकने की अपनी क्षमता का उल्लेख किया); १२७, १; १४३, ४८; २०१, ७४; २०२, ६७. ७६ (त्रिपुर के साथ युद्ध में ये रुद्र के सारथि बने). ८७. ८८. ९०. ९१. ९५. ९६. १३७; ८.१ ६, १९; ३२, ७ (स पाहि सर्वथा कर्णं यथा ब्रह्मा महेश्वरम्). ४३ (ब्रह्मणा ब्रह्मणाः सृष्टा मुखात् क्षत्रं च बाहुतः । ऊरुभ्यामसृजद्वैश्यान् शूद्रान्पद्भ्यामिति श्रुतिः); ३३, ४६; ३४, १. २. ११९ (यथैव भगवान् ब्रह्मा लोकधाता पितामहः । सारथ्यमकरोत्तत्र रुद्रस्य परमोऽव्ययः); ३५, १ (त्रिपुर के साथ युद्ध में रुद्र के सारथि बने). ४४; ४५, २०; ४६, ३८. ३९; ७२, २४ (इन्होंने प्राणियों तथा गाण्डीव की सृष्टि की थी); ८७; ५६ (कर्ण और अर्जुन के युद्ध के समय उपस्थित थे). ६८. ८४; ८९, ५०. ५१; ९. ३४, १८; ३८, २९. ४१. ५३; ४०, २९; ४४, ८. ३०. ५१; ४५, २२. २३ (स्कन्द को चार सैनिक दिये); ४६, ५३ (स्कन्द को एक काला मृगचर्म दिया); ४७, २३ (ब्रह्मा···ससर्ज तीर्थानि तथा देवतानां यथाविधि); ५३, १६. २६; १०. १७, २२; ११. ७, २३. २४ १२. १५, १८. ३१; २२, ११ (इन्द्रो ब्रह्मणः पुत्रः); ३५; १८. ३६; ३९, ३. ६; ४३, १५; ५३, २४. २६; ५९, २२. ८१ (शास्त्रं महास्त्रं ब्रह्मणा कृतम्); ६३, ७; ६४, १७ (ये भी नारायण का दर्शन नहीं प्राप्त कर सके); ७२, ४. ८; ८९, ८ (क्षत्रियों की सृष्टि की); १२१, १२. ५७; १२२, १५. १८. ३५. ४४. ४७; १३६, १; १४२, २६; १५३, ७६; १६६, २५. ३१. ३३. ४६; १६७, १५; १६९, १९; १७२, ६; १७३, ७. ८. १६, १८२, १५. १६. ३५. ३६; १८३, १; १८४, १; १८७, २२; १८८, १. १०. १५; १९०, १०. १६; १९१, ८; १९२, २५; १९९, ११९; २००, २१. ३०; २०७, १३. १५. १७. १९. ३४ (मरीचि आदि मानसपुत्रों, दक्ष, तथा वेदविद्या की सृष्टि की); २०८, ३; २०९, ११. १२; २२१, १६; २२३, ४. ६-८. १०. ११. २५. २६; २२५, ३३: २२७, ४२; २२८, ५; २३१, ३१. ३२; २३२, १४. ४०; २३६, ३६. ४१; २४२, ५; २४३, २८; २५६, १९; २५८, १३. १७; २६२, ४०; २६४, १०; २८०, २६; २८१, २३. २६; २८२, २२. २९. ३१. ३२. ३३. ३७. ४१. ४२. ४६. ४९. ५१. ५४; २८३, ४५. ५०; २८३, ९. ५०. ६६; २८९, २३; २९५, १८ (ब्राह्मणों की सृष्टि की); २९५, १८; २९६, १०; ३००, ५९; ३०१, ८; ३०८, ४१; ३११, ३; ३१२, १; ३१७, ७ (यदि प्राणी के जीव का उत्सर्जन सर की शिखा से होता है तो वह ब्रह्म-लोक प्राप्त करता है); ३१८, ८५. ८९. ९०; ३३४, ३५; ३३५, ४१; ३३९, ५०. ६०. ६३. ६५. ६६. ७४. १०७. ११४. ११६; ३४०, ७. १०. ३६. ३८. ४२. ४५. ४६. ४९. ५२. ५४. ५५. ७३. ७७. ७९. ९१./९३. ९८; ३४१, १२. १७. ३०. ३६. ४७; ३४२, ९. १५. २०-२२. १२१. १२३. १२९. १३२; ३४३, ४. १५. ६१; ३४५, ५; ३४७, ४. ६. १०. २१. २८. २९. ३१. ३२. ३६. ३८. ५८. ७०. ७१. ९१; ३४८, १३ (मानसं जन्म नारायणमुखोद्गतम्). १६ (चाक्षुषं जन्म द्वितीयं ब्रह्मणो नृप). १९ (तृतीयं ब्रह्मणो जन्म······वाचिकम्). २५ (श्रवणजा······ब्रह्मणः). २७ (प्रजासर्गकरो······जगत्पतिः). ३०. ३१. ३३. ३५. ३९. ४०. ४४ (अण्डजे जन्मनि पुनर्ब्रह्मणे हरियोनये). ४५. ४८ (सप्तमं जन्म पद्मजं ब्रह्मणो नृप). ७७ (लोकपितामहः); ३४९, १८. १९. २५. २९. ६७; ३५०, ८. २२-२५; ३५१, १. २०; १३. ६, २ (वसिष्ठ के साथ संवाद). ५; १४, ४ (ब्रह्माविष्णुसुरेशानां स्रष्टा च प्रभुरेव च । ब्रह्मादयः पिशाचान्ता यं हि देवा उपासते). ६ (ब्रह्माणमसृजत्तस्माद्देवदेवः प्रजापतिः). १९. ३६. १४० (ब्रह्मविष्णुसुरेन्द्राणां रुद्रादित्याश्विनामपि विश्वेषामपि देवानां वपुर्धारयते भवः). २०० (यत्पूर्वमसृद्देवं ब्रह्माणं लोकभावनम्). २०४ (भगवत्युत्तमैश्वर्यं ब्रह्मविष्णुपुरोगमम्). २२९. २३० (ब्रह्मेन्द्रहुताश-विष्णुसहिता देवाश्च दैत्येश्वरा). २३२. २६४. २७६. २८२. २८४. ३१७. ३३८. ३४७. ३९२. ४०७. ४०८. ४१७; १६, १५. १७. २२. ३७. १८; १७, २. २१. १५४. १७१. १७५. १७६; १८, ६४. ७३; २६, १. १५; ३१, ६; ३५, १२. १६; ४०, ३; ५९, ४०; ६२, ४८; ६६, १७. १८. २१; ७४, १४; ७९, ५; ८१, १४. १६; ८३, १५. ३५; ८४, २४. ८२; ८५, ३. ८. ५१. ८७. ९५. १००. ११९. १२३. १३२. १३८. १४५. १४७. १५१. १५६; ९०, २०; ९१, २०; १००, ३८; १०३, ४. ६. १५. १७. १८. ३४. ३६. ४३; १०४, १५७; १११, १३२; ११९, १३; १२६, ४२. ४५. ४६; १३०, १३; १३३, ६; १४१, १. १०. ९७; १४३; ११. ४८. ५३; १४४, ६०; १४५, ९; १४६, ४ (सावित्री ब्रह्मणः साध्वी); १४७, ४. १३. ३७. ४०; १५३, १५-१९ (जिन्होंने इस सम्पूर्ण चराचर जगत की सृष्टि की है वे अव्यक्त स्वरूप अविनाशी ब्रह्मा ब्राह्मण हैं। कुछ मूर्ख ब्रह्मा को अण्डज मानते हैं, किन्तु ऐसा नहीं क्योंकि ये अजन्मा हैं। ब्रह्मा ही जगत् के उत्पादक हैं); १५४, २; १५५, १८. २५; १५७, ३. ४; १५८, ३५; १६०, ३०. ३५; १६५, ९; १४. १८, २५; २०, ११; २३, ७. २१; २७, २२; ३५, १५. २७. ३२; ३७, १; ३८, १; ३९, १; ४०, १; ४१, १; ४२, १. ३२; ४३, १; ४४, १; ४५, १; ४६, १; ४७, १; ४८, १; ५०, १; ५१, १. ४१. ४२; ५४, १४; १५. २८, १५। तुकी० इनके निम्नलिखित पर्याय भी :

अग्नि : १२. २२४, ५२।

अज – देखिये वस्था०।

अब्जसम्भव : १. ५४, ११।

अव्यय – देखिये वस्था०।

आदिदेव : १२. १८८, २०।

ईश – देखिये वस्था०।

ईश्वर – देखिये वस्था०।

चतुर्मुख – देखिये वस्था०।

चतुर्वक्त्र – देखिये वस्था०।

चतुर्वेद – देखिये वस्था०।

जगत्पति – देखिये वस्था०।

जगत्प्रभु : १२. २५७, २।

जगन्नाथ – देखिये वस्था०।

त्रिभुवनेश्वर – देखिये वस्था०।

त्रिलोककृत् : १२. १९०, १०; २८२, ४८।

त्रिलोकेश – देखिये वस्था०।

त्रैलोक्यकर्तृ : १२. २८२, २५।

देवदेव – देखिये वस्था०।

देववर – देखिये वस्था०।

देवातिदेव : १२. २८९, २३।

देवाधिदेव – देखिये वस्था०।

देवासुरगुरु – देखिये वस्था०।

देवेश – देखिये वस्था०।

धातृ – देखिये वस्था०।

निरुक्तग : १२. ३३९, ५; ३४२, ७३।

पद्मयोनि : ३. २११, १७; ७. २०१, ३७; २०२, ९१; १२. ३४४, १; १३. १७, १३; ७२, ५; १३३, ६।

पद्मसम्भव : १३. १२६, ४२।

पद्मोद्भव १३. ६, ४।

परमेष्ठिन् – देखिये वस्था०।

पितामह : १. १, ३२; ६, ६; ७, २६; २०, ९; २४, १३. १५. १८; ३६, ५. ६. १३. १७. २५; ३८, ६-८. १७; ३९, ४. ५. १३; ४५

१४; ४८, ४; ५३, १७. २५; ५४, ९. १०; ९६, ४; १९७, ५; २०९, १७-१९. २४-२६; २११, २. ३. ६. ८. ९. ११. १२. १८. २०. २२. ३०; ३१२, २१. २२; २२४, १; २. ६, १६; ११, १. ६. ५०. ५२; १२, ४; १८, ११; ३. ८३, २०८; ८४, ५६; ८५, ५०. ९६. ११०; ८६, १; ८७, १९; १००, १२. १९; १०३, १३; १०५, १९; १०६, ३; १०७, १०; १६३, १६; १७१, २१; १७२, २९; १७५, १५; १८८, ५; २०३, १४. २०; २०४, ४; २२४, २२; २७४, १५; २७६, ६. १०; ५. ४९, ४. ६; १०२, ३; १११, १५; ११७, १०; १२३, ६. १४; ६. ६५, ४२; ६६, ३. ५; १२१, ९; ७. ५२, ३८; ५३, २३; ५४, २७. २९; १४७, ८. ३४. ६४. ७२. ७४-७६. ७८. ११९. १२०; ३५, ३. ८; ४५, १९. २१; ८७, ६६; १०. १७, १०. १२. १७. २५; १२. ३७, १२; ५९, २७; ६७, २०; ११२, ५; १२१, ५७; १२२, २२. ४७. ४८. ५१; १५६, ७; १६६, १२. १५. २६. ४३; १६९, १४; १७३, ८; २००, २६; २०९, २८. ३१; २२३, ३; २२८, ९१; २५६, १३. १६; २५७, १. १०; २५८, ८. २४. २६; २८०, २७; २८१, १६; २८२, २१. २२. २८. ३५. ३६. ४५. ४९; २८३, ४४; २८४, १६२; ३३९, ११४; ३४०, ३१. ३९; ३४५, २२; ३४७, ७३; ३४८, १६. ४०; ३४९, ४९; ३५०, १५. १९; ३५२, १; १३. ६, ३. ४; १४, २०३; १६, ७५; २१, ६; ४०, ६. ७. ९; ५७, ४१; ६५, १; ७३, १; ७४, २. ११; ८३, ६. ९; ८४, २४; ८५, २. ६. ८७. १२१. १२५. १३८. १४२. १४३; ९१, ४५; ९२, ७. २०; ९९, २२; १००, ३४. ३६; १०३, १८. २३. २७; ११२, १. ५; १४३, १८; १४७, २. ५. ३८. ३९; १५३, १७; १६५, ९. १६; १४. १८, २९; २३, ६; २७, २१; ७०, ३; १८. ५, २३।

प्रजानामीश्वरेश्वर : ७. ५४, १३।

प्रजापति – देखिये वस्था०।

प्रजेश्वर : ७. ५४, ७।

प्रपितामह : १. २१२, २२; ३. ३०, ३६; २७५, २८; ६. ३५, ३९; ९. ३८, ७; १२. २००, २२; २५६, १८; १३. १७, १३; १४. ३५, ३१।

प्रभवः सर्वभूतांना : १. ६४, ४५।

भूतकृत् – देखिये वस्था०।

भूतात्मन् – देखिये वस्था।

भूमिपति : १. ६४, ४५।

महादेव : १२. २५७, १२; ३४०, ४१।

मानस – देखिये वस्था०।

लोककर्तृ – देखिये वस्था०।

लेककृत् – देखिये वस्था०।

लोकगुरु – देखिये वस्था०।

लोकधातृ – देखिये वस्था०।

लोकपितामह : १. २१२, २२; ३. ३०, ३६; २७५, २८; ६. ३५, ३९; ९. ३८, ७; १२. २००, २२; २५६, १८; १३. १७, १३; १४. ३५, ३१।

लोकभावन् – देखिये वस्था०।

लोकवृद्ध : ५. ४९, ४।

लोसम्भव : १३. १४, ३४७।

लोकस्रष्टृ : ८. ३४, ७६।

लोकादिनिधनेश्वर : ७. ५३, २०।

लोकेश – देखिये वस्था०।

विधातृ – देखिये वस्था०।

विधि – देखिये वस्था०।

विबुधश्रेष्ठ – देखिये वस्था०।

विबुधेश्वर – देखिये वस्था।

विरिञ्च – देखिये वस्था०।

विश्वकृत् – देखिये वस्था०।

विश्वात्मन् – देखिये वस्था०।

विश्वेश, विश्वेश्वर – देखिये वस्था०।

वेधस् – देखिये वस्था०।

शम्भु – देखिये वस्था०।

सर्वभूतपितामह : १. ६४, ३८; ९. ४४, ५०; १२. २०७, १३।

सर्वभूतात्मन् – देखिये वस्था०।

सर्वभूतेश : ३. १८८, १४।

सर्वलोककृत् : १ २२३, ७१।

सर्वलोकपितामह : १. ६, ५; २१२, २४; २. ११, १७; ३. १०७, ९; १८८, ७; १८९, ४८; २०२, २१; ८. ३५, १; ९. ४०, २९; ४४, ४६; ४७, १५. २३; १२. १२२, १५; १६६, २१; ३४७, २१; १३. १७, २१; १४. १८, २५।

सर्वलोकेश्वर – देखिये वस्था०।

सर्वेश : ७. ५४, ३०।

सुरगुरु : १. १, ३२; ६४, ५०।

सुरश्रेष्ठ – देखिये वस्था०।

सुरसत्तम – देखिये वस्था०।

स्वयम्भू – देखिये वस्था०।

हिरण्यगर्भ – देखिये वस्था०।

२. ब्रह्मन् = शिव (सहस्रनाम)।

३. ब्रह्मन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

४. ब्रह्मन् (परम्ब्रह्म, वेदादि): १. १, १४ (शौनक के यज्ञ के समय उपस्थित ब्रह्मभूत मुनि). २२ (एकाक्षरं ब्रह्म व्यक्ताव्यक्तं सनातनम्). ३० (सत्यं ज्योतिर्ब्रह्म सनातनम्). १११ (मलं कृष्णो ब्रह्म). २५७ शाश्वतं ब्रह्म परमं ध्रुवं ज्योतिः सनातनम्); ६२, ३६ (ब्रह्म गच्छति शाश्वतम्); ६३, १०० (अव्यक्तमक्षरं); ६४, २० (न च विक्रीणते ब्रह्म); ७४, १०६ (सत्यं परंब्रह्म); ७५, ३१ (°भूतः). ५२ (सम्पद्यते तदा). ५३; ७६, ४७ (ब्रह्म च ब्राह्मणाश्च). ६२ (°राशि). ७० (ब्राह्मणो ब्रह्मभूतः); ७८, ३८ (अचिन्त्यम्); ८५, २६ (ब्रह्मण्याधाय मानसम्); ९०, २३; १७५, ४४ (महदाश्चर्यं ब्रह्मतेजोभवं). ४५ (°तेजोबलं); १८८, २५ (°तेजसा); २३२, २१; २३४, ३; २. २२, १८ (स्वर्गयोनिर्महद् ब्रह्म); ३. ३, ६० (शाश्वतम्); २९, ३७ (क्षमा ब्रह्म). ३८. ३९. ४०; ३६, ४० (ब्रह्म मनसा यतः); ३७, ११; ८४, ६५ (ब्रह्मभूतः); ९०, २९ (परमं ब्रह्म); ९९, ५८ (ब्रह्मभूताः सनातनाः); १३८, २४ (= वेद). २६; १४५, ३४; १८०, २२ (परं ब्रह्म निर्दुःखमसुखं च यत). २३; १८३, ६४; १८६, ५; १८९, ४२; २०१, १५ (ब्रह्मवेदाश्च); २१०, १६ (महाभूतात्मकं ब्रह्म); २११, १५ (ब्रह्मभूतस्य संयोगो); २१३, ४ (ब्रह्मयोनिमुपास्महे). ३३. ३८. ३९; २६१, ३७ (विष्णोः परमं पदम्'''ब्रह्मेतियद्विदुः); ४. ५०, ६ (कर्माणि); ५१, ११ (ब्रह्मास्त्रं चैव वेदाश्च); ५. १७, १४ (यस्मात् पूर्वैः कृतं राजन् ब्रह्मर्षिभिनुष्ठितम्। अदुष्टं दूषयसि). १५ (ब्रह्मकल्पान्); २९, ५३; ३६, २३ (° वित्तं); ३९, ७० (ब्रह्म ब्रह्मविदां बलम्); ४२, ५ (अप्रमादाद् ब्रह्मभूता भवन्ति). २६; ४३, ५९. ६३; ४४, २. १७. २४. २५; ४५, ८. २१; ४६. २ (शुक्राद् ब्रह्म प्रभवति ब्रह्म शुक्रेण वर्धते); ५३, ८; ६३, २२; ९०, १०४ (श्रीकृष्ण के साथ समीकृत); १४०, १७; १८१, १५ (= राम जामदग्न्य); ६. २६, ७२ (ब्रह्म निर्वाणम्); २७, १५ (कर्म ब्रह्मोद्भवं''''''''ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम्); २८, २४. २५. ३१ (यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम्); २९, ६. १०. १९-२१. २४-२६; ३०, २७. २८. ३८. ४४; ३१, २९; ३२, १. ३. १३. २४; ३४, १२; ३७, १२. ३०; ३८, ३. ४. २६. २७; ४१, २३ (ॐतत्सदिति निर्देशोब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः); ४२, ५०. ५३. ५४; ६६, १५ (श्रीकृष्ण के साथ समीकृत); ६७, २० (°भूतं केशवम्); ७. ४२, १४; ६९, २३

(सप्तर्षियों ने इनका पृथिवी से दोहन किया था); ८०, ४३. ४६ (शिव के साथ समीकृत); ८१, १३ (गृणन्तो वेदविद्वांसो तद् ब्रह्म शतरुद्रियम्); ९४, ४१. ७० (ब्रह्मसूत्रेण बध्नामि कवचं); १५, ९३१; २०१, ६१. ७८; ८. ३३, ४७ (गृणन्तो ब्रह्म शाश्वतम्); ४२, ९ (अब्राह्मणे ब्रह्म न हि ध्रुवं स्यात्); १०. ७, ७ (शिव के साथ समीकृत); ११. ७, २९; १२. ३, ३१; ७, ३९; १२, २५ (भूतस्य द्विजातेः); १३, ४ (त्र्यक्षरं ब्रह्म शाश्वतम्). ५; १५, ३७; १७, २२. २३; २०, ४ (= वेद); २१, ५; २६, १४. १५; ३४, ६; ४७, १८. २९. ३२. ३५. ८९ (नारायणः परं ब्रह्म); ५६, २६; ५९, २१ (अर्थात् वेद). २२. २४ (भगवक्त्र-लोकस्थं भरतं ब्रह्म सनातनम्). २५. १०६; ६३, २ (ब्रह्म षट्कर्म); ६६, ३८; ७७, ३१ (येषां ब्रह्मपरं बलम्); १०८, २६ (येन प्रीणात्यु-पाध्यायं तेन स्याद् ब्रह्म पूजितम्); १२१, ५५; १४१, ६४; १६०, २५ (ब्रह्मभूयाय कल्पते). ३२ (पैतामहं स्थानं ब्रह्मराशिसमुद्भवम्); १६२, ५ (सत्यं ब्रह्म सनातम्); १७४, ५२. ५४; १७७, ३१. ५०. ५३; १८८, २. १६ (ब्राह्मणा ब्रह्मतन्त्रस्थास्तपस्तेषां न नश्यति। ब्रह्म धारयतं नित्यं व्रतानि नियमांस्तथा). १७. २०; १९०, १; १९६, ८. १६. २२; १९७, १२; १९९, ६४. १२३. १२४; २०१, १४; २०४, १७; २०५, ७. १०. ११. १९. २१. २२; २०६, १. १४. १७. १८. २७. ३१; २१०, ८-११. १४. २३; २१५, २०. २७; २१६, १९. २० (अक्षरं); २१७, १ (परं). ३ (शाश्वतम्). ३० (भूताः); २१८, १४ (एक क्षरं नानारूपं); २२४, ४८ (गम्भीरं ब्रह्म); २३१, ११ (अग्रे संप्रवर्तते). २२ (शाश्वतम्); २३२, १ (तेजोमयं शुक्रं). ३० (द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये शब्द ब्रह्मपरं च यत्। शब्दब्रह्मणि निष्णातः परं ब्रह्माधिगच्छति); २३३, १७ (परं). १७. १९ (एवं विस्तारसंक्षेपौ ब्रह्माव्यक्ते पुनः पुनः); २३४, २२ (निर्गुणं); २३५, १७ (प्रायभवेन); २३७, २२ (ब्रह्मज्ञानप्रतिष्ठं हि तं देवा ब्राह्मणं विदुः। शब्द ब्रह्मणि निष्णातं परे च); २३९, २ (अधिगच्छति). १८ (भूयाय कल्पते). २१ (सम्पद्यते तदा); २४०, ९ (तेजोमयं शुक्रं); २४१, १३ (ब्रह्म परममव्यक्तमचलं ध्रुवम्। अव्या-कृतमनायासम व्यक्तं चा वियोगि च); २४२, ८ (भूयसे कल्पते). १५ (चतुष्पदी हि निःश्रेणी ब्रह्मण्येषा प्रतिष्ठिता। एतामारुह्य निःश्रेणीं ब्रह्म लोके महीयते); २५०, १७ (उत्तमां बुद्धिमास्थाय ब्रह्मभूयान्भविष्यसि). २२ (अदुःखमसुखं ब्रह्म भूतभव्यभवात्मकम्); २५१, ५ (संपद्यते तदा). ६. ७ (भूयाय कल्पते); २५३, १५; २६२, १५. १६; २६३, १६ (ब्रह्मैव वर्तते लोके). २० (सर्वं ब्रह्मं ब्रह्मणि संश्रितम्); २६९, ३. १९ (ब्रह्मणि ब्रह्म विन्दति); २७०, १. २. ४०. ४६. ४७; २७५, ३७, ३८ (ब्रह्मभावे परं गतिम्); २७९, ११ (प्रकाशति सनातनम्). ३१ (ऐश्वर्यं वै महद् ब्रह्म); २८०, २६ (विष्णु के साथ समीकृत). २९ (प्रकाशते) ५५ (दुष्प्रापमन्येति स शाश्वतम्); २८४, १९८ (दक्ष ने शिवसहस्रनाम का पाठ किया); २९१ १३; २९९, २० (गुह्यं); ३०१ १०१ (अक्षरं ध्रुवमेवोक्तं पूर्णं ब्रह्म सनातनम्); ३०२, ११ (सनातनम्); ३०८, ८ (अव्यक्तं). ३१ (सनातनं विशुद्धमाद्यम्). ३६. ३८. ४०. ४२. ४६ (सनातम्); ३१०, ५ (अव्यक्तं परं); ३१६, १७ (अव्ययम्). २५ (परममव्ययम्); ३१८, ८९. १०१; ३२०, ७३ (ब्रह्मविदां बलम्); ३२५, ५ (तुल्यपराक्रमम्); ३२६, १९. ३३ (संपद्यते तदा). ३४-३६. ३८; ३२८, ६; ३३०, १७; ३३३, ३. २०. ३५; ३३५, ३२; ३३६, २ (बृहद् ब्रह्म महच्चेति शब्दाः पर्यायवाचकाः). ५१; ३४०, १०८; ३४२, ४. ९. ६५; ३४७, १७ (तमसो ब्रह्म संभूतं). ३२ (वेदा में ब्रह्म चोत्तरम्). ८०; ३४८, ६६; ३५९, १४; ३६१, ७ (अवर्तयामि तद् ब्रह्म योगयुक्तो निरामयः); १३. ७, २६ (येन प्रीणात्युपाध्यायं तेन स्याद् ब्रह्म पूजितम्); १४, ५ (शिव के साथ समीकृत); १६, ८ (निर्गुणम्). ९. २१. २९. ४९. ५६. ६६; १७, ५ (= शिव). ७. ८०. १५३. १५८ (सभी स्थानों पर शिव); १८, ७४; २५, ४२; ६२, ३६; ६३, ३३; ८५, ११९; ११७, ७; ११८, २३; ११९, १३; १४१, ३१; १४२, ३३; १४३, ५२. ५७; १४७, १२. ३३; १४८, ६ (= श्रीकृष्ण); १४९, ९. १३०; १५०, ३१ (तेजोमयाः, अर्थात् पूर्व के ऋषिगण). ४६. ७२ (महद् ब्रह्म सावित्रीगुणकीर्तनम्). ७६ (सनातनम्); १५८, १७ (ब्रह्म गुहां प्रविष्टौ); १४. १३, ३ (त्र्यक्षरं शाश्वतम्). ४; १६, १३; १७, २४; १८, ६; १९, १४ (सनातनम् परमाप्नोति). २६ (अव्ययमा-प्नोति). ४७. ५०; २०, १० (निर्द्वन्द्वम्); २४, १७; २६, ८ (ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म). १६. १७ (ब्रह्मैव समिधस्तस्य ब्रह्माग्निर्ब्रह्मसम्भवम्। आपो ब्रह्म गुरुर्ब्रह्म स ब्रह्मणि समाहितः); २७, २०; ३२, २६; ३४, ४; ३५, १८ (भूयाय कल्पते). २२ (बीजः सनातनः). २७. ३४. ३८ (भावाय गतं); ४२, ११. १४. ५१; ४७, १. २. ८. १४; ४८, १; ४९, ४. ६; ५१, ९. २९. ३५; १५. ३५, २; १८. ५, ४०. ६४।

५. ब्रह्मन् = शिव (सहस्रनाम)।

६. ब्रह्मन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

ब्रह्मनिर्मितं सरस्, ब्रह्मा द्वारा निर्मित सरोवर का द्योतक है (१३. १६५, २९)।

ब्रह्मपुत्र (बहु०) ब्रह्मा के पुत्रों का द्योतक है (१२. ३००, ५८)।

ब्रह्मपुर : १२. १७७, ५५; १३. १२६, ३९।

ब्रह्मपुरोहित = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

ब्रह्मप्रश्नानुशासन : १. २, ७७।

ब्रह्मप्रिय = स्कन्द (३. २३२, ११)।

ब्रह्मबोध्या : ६. ९, ३०।

ब्रह्मभवन (ब्रह्मा का निवासस्थानः) २. ३६, ३; ३. २६१, १२; ६. ३२, १६; १३. १००, ३२. ३३; १०२, ५३।

ब्रह्ममय (विं०) : ५. ६२, २; १२. ४६, ३०; १८३, ८; १४. ४३, १२. १३; ४४, १६; ५१, ५. ६।

ब्रह्ममेध्या, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है : ६. ९, ३२।

ब्रह्मयज्ञ : १२. १७५, ३२ (ब्रह्म यज्ञे स्थितो मुनिः)।

१. ब्रह्मयोनि (ब्रह्मा से उत्पन्न) : ३. २८१, २२ (पुलस्त्य); ९. ४६, ९८ (सनत्कुमार); १२. २०८, ६ (प्राचीन बर्हि); ३४३, ९ (पुरुष); १३. १४, २९ (तण्डिन्); ३१, २४ (अयोनीनग्नियोनींश्च ब्रह्मयोनींस्तथैव च)।

२. ब्रह्मयोनि (ब्रह्मा से उत्पन्न) : १. ७४, ६९ (मेनका)।

३. ब्रह्मयोनि, एक तीर्थ का नाम है : ३. ८३, १४० (यहाँ स्नान करने से ब्रह्मलोक प्राप्त होता है); ९. ४१, १; ४७, २२ (सरस्वती नदी पर स्थित)।

४. ब्रह्मयोनि : १४. ४२, ३८ (द्विविधा खलु विज्ञेया ब्रह्मयोनिः सनातनी)।

ब्रह्मरक्षस् (बहु०) : १३. १११, ४८। देखिये अगला शब्द।

ब्रह्मराक्षस (अधिकांशतः बहु०) : २. १२, २९ (यज्ञाः); ९. ४३, २१; १३. ९२, १२; १११, ४८ (एक०); १४५, ६२।

ब्रह्मराशि, एक राशि (नीलकण्ठी के अनुसार श्रवण) का नाम है (६. ३, १८)।

ब्रह्म-रुद्र-संवाद — "वैशम्पायन ने कहा : क्षीरसागर के मध्य में वैजयन्त नाम से विख्यात एक श्रेष्ठ पर्वत है जो सुवर्ण जैसी कान्ति से प्रकाशित होता है। वहाँ एकाकी ब्रह्मा अध्यात्मगति का चिन्तन करने के लिये ब्रह्मलोक से प्रतिदिन आते और उस पर्वत का सेवन करते थे। पहले एक दिन ब्रह्मा जब वहाँ बैठे हुये थे, उसी समय उनके ललाट से उत्पन्न हुये पुत्र महायोगी त्रिनेत्रधारी शिव अनायास ही आकाश मार्ग से वैजयन्त पर्वत पर आये। शिव ने ब्रह्मा के चरणों में प्रणाम किया। शिव को अपने चरणों में पड़ा देख ब्रह्मा ने अपने दाहिने हाथ से उन्हें उठाया, और इस प्रकार बोले : 'पुत्र ! तुम सदा कठोर तपस्या में लगे रहते हो, इसलिये मैं तुमसे बार-बार तप के विषय में पूछता हूँ।' तब रुद्र ने ब्रह्मा से उस वैजयन्त पर्वत पर एकान्त निवास का प्रयोजन पूछा। ब्रह्मा

ने बताया कि वे इस पर्वत पर विराट् पुरुष का एकान्त चिन्तन करते हैं। रुद्र ने कहा : 'ब्रह्मन्', आपने अनेक पुरुषों की सृष्टि की है और अभी अनेक पुरुषों की सृष्टि करते जा रहे हैं। वह विराट् भी तो एक पुरुष ही है, फिर उसमें क्या विशेषता है।' ब्रह्मा ने तब रुद्र के समक्ष विराट् पुरुष, नारायण की महिमा का विस्तार से वर्णन किया (१२. ३५०, ९-२७; ३५१, १-२३)।"

१. ब्रह्मर्षि (बहु०) : १. १, २७ (महाभारत का श्रवण किया). ३५ (दिव्याण्ड से उत्पन्न हुये). २५५ (महाभारत में इन लोगों का वर्णन); ४, ११ (शौनक के यज्ञ में उपस्थित); ६२, ३३ (महाभारत में वर्णन); ६५, ४ (देवों ने इनके वंशों में जन्म लिया); १२०, ४; १२१, १०; २११, ३; २. ७, २६ (इन्द्र-सभा में); ८, ७ (यम सभा में); १०, २० (कुबेर की सभा में); ११, ६०; ३. ४३, १३ (सुरवीथी पर); ८२, २३ (पुष्कर में); ८३, २०६ (कुरुक्षेत्र इनके द्वारा सेवित था); ८४, १६२ (धर्मतीर्थ में); ८५, ७१ (प्रयाग में); ९०, २१ (गङ्गा द्वार में); १०१, ११; १४५, ४३ (नर-नारायण के आश्रम में); १४६, २१ (गन्धमादन पर); १६३, २१(मेरु पर); १६९, २३; १७५, १२; १८१, ३४. ३६; २२३, २ (सप्तर्षियों की पत्नियाँ); २७६, १; ५. ११, ९; १७, ९. १४; ५५, ४८ (द्रोण इनके समान थे); ८३, २८ (श्रीकृष्ण की पूजा की); ६. ६, ५२ (नील पर); २२, ७ (युधिष्ठिर की प्रशंसा की); ६६, ५; ७, ७३, ४८; ८. ३३, ५३; ३४, ६० (शिव की स्तुति की); ८७, ५६ (कर्ण और अर्जुन का युद्ध देखने के लिये आये); ८८, १; ९. ४५, ७ (स्कन्द के अभिषेक के समय उपस्थित हुये); ४८, ३३ (बदरपाचन की प्रशंसा की); ४९, ११; १२. १, ३ (द्वैपायन, नारद, देवल, देवस्थान और कण्व को सिद्ध ब्रह्मर्षिसत्तम कहा गया है); ३७, १५; १६६, १७ (दक्षकन्याओं से विवाह करके प्राणियों को उत्पन्न किया). ३१. ३७; १८३, ६; १९१, ७. १०; १९२, २; २०८, ३०; २८१, २६ (बृहस्पतिपुरोगमाः) ३०१, ८. २९; ३२३, १७; ३२४, १७; १३. ३, ५ (महान्कुशिक वंशश्च ब्रह्मर्षिशतसंकुलः). १० (कौशिकी च शिवा पुण्या ब्रह्मर्षिसुरसेविता). १५ (भुवस्योत्तानपादस्य ब्रह्मर्षीणां); ४, १; १४, ३९३; ३०, ५७; ५२, ३; ६६, ३९; ८५, १०८; १४, ४३; ९८, ७ (ब्रह्मर्षिदेवदैत्यानां); १५०, ७८ (शुक्रागस्त्यबृहस्पतिप्रभृतिभिर्ब्रह्मर्षिभिः); १६८, ८; १४. ७७, २४; ९०, ८५।

२. ब्रह्मर्षि (एक०) : १. १०७, १ (कस्य शापाच्च ब्रह्मर्षे शूद्रयोनावजायत)। अलग अलग ब्रह्मर्षियों के नाम इस प्रकार हैं :

अत्रि : १. २१, १३।
अर्वावसु : ३. १३८, १४।
अष्टावक्र : १३. १९, ३७।
और्व : ३. ११५, १२।
ऋचीक : १३. ४, २०. २१।
कश्यप : १. ५०, १७।
कृप : १. ६७, ७७।
गौतम : ३. ८४, १०८; १२. १२९, १।
च्यवन : १३. ५४, २७।
जाजलि : १२. २६१, २१।
दधीच : ९. ५१, ५. १३. १४।
दमन : ३. ५३, ६।
देवशर्मन् : १३. ४३, ४।
नारद : २. ६, १. १८।
पुलस्त्य : ३. ८१, १९।
भरद्वाज : ५. ५५, ४८।
भृगु : १२. १८२, १०।
मंकनक : ३. ८३, १३१।
मार्कण्डेय : ३. १८३, ५१।
लिखित : १२. २३, ३६।
लोमश : ३. ४७, ७. १४।
वसिष्ठ : १. ९९, ३५; १७४, ११।
विश्वामित्र : १३. ४, ४७।
वैशम्पायन : १२. ३४९, १।
व्यास १. १, ५५; ६०, ५; १०५, ३३; ६. २. ७; १२. ३२४, ९; ३२७, ३७; ३२८, १२. १९; ३३२, २२ (= शुक); १५. ३३, २; ३६, ५।
शुक : १२. ३२६, ४२।

ब्रह्मलोक (ब्रह्मा का लोक) : १. १, २७४ (नारद जी ने श्रीकृष्ण और अर्जुन को ब्रह्मलोक में देखा था); ६५, ३७ (°परायणः); ७०, ३६. ४१. ४९; ७५, २१ (सनत्कुमार ब्रह्मलोक से आये); ८७, २ (ययाति वहाँ आये); १२०, ७; २०९, २६; २१०, ६; २१२, २५; ३. ३, ४५ (समब्रह्मकेषु लोकेषु सप्तस्वप्यखिलेषु च); २४, ७ (नारदजी सदैव देवलोक से ब्रह्मलोक तक भ्रमण करते रहते हैं); २९, ३९ (क्षमावतां ब्रह्मलोके लोकाः परमपूजिताः); ८२, ३६. ४३. ८०; ८३, ७. ५४. ५७. ७३. १४०. १६६. १६७. १८३. १९९ (पञ्चवर्णेन यानेन ब्रह्मलोकं प्रपद्यते); ८४, ३६. ५८. ८५. १५४; ८५, ५४; २२४, २१ (ब्रह्मा यहीं निवास करते हैं); ५. २८, ८ (प्राजापत्यं त्रिदिवं ब्रह्मलोकं नाधर्मतः सञ्जय कामयेयम्); २९, २५; ४०, २५ (ब्राह्मणस्त्वप्यवरते ब्रह्मलोकात्); ४२, २७; ४४, २०; ६. ६, ४७ (दिव्या त्रिपथगा प्रथमं तु प्रतिष्ठिता ब्रह्मलोकादपक्रान्ता सप्तधा प्रतिपद्यते); ७, ३० (ब्रह्मलोकच्युताः सर्वे सर्वे सर्वेषु साधवः); १६, २० (हुता दुर्योधनस्यार्थे ब्रह्मलोकाय दीक्षिताः); ११५, २१; ११८, १. १६; ७. २०, १३; ६०, ११; १४२, २९; १४३, ३४ (यियासुर्ब्रह्मलोकाय प्राणान्प्राणेष्वथाजुहोत्); १९०, ३३; १९२, ५६ (द्रोण ने ब्रह्मलोक प्राप्त किया). ५९. ६१; २०१, १००; २०२, १५५; ९. ३६, ९; ११. १, २१ (विवृतं ब्रह्मलोकस्य दीर्घमध्वानमास्थितम्); ७, २४; १२. ७८, ३० (जो ब्राह्मणद्रोहियों का ताडन करते हैं वे ब्रह्मलोक प्राप्त करते हैं); १०८, ९; १६९, १८; १९२, ६. २०; २१४, १० (ब्रह्मचर्य-पालन से व्यक्ति ब्रह्मलोक प्राप्त करता है); २२८, ४; २३६, १२ (जीवन्मुक्तो रथी दिव्यो ब्रह्मलोके विराजते); २४२, १५; २४३, १७; ३१८, ६६; ३२७, ४४; ३३७, २७. ३८. ४०; ३४२, १३७; ३४७, ५२ (गोलोको ब्रह्मलोकश्च ओष्ठावास्तां महात्मनः); १३. १४, १९. १८८. ३२४; १७, ५ (शिव सहस्रनाम). २३; २५, ६१; ५७, १६, ६२, २५. ५८. ८५. ८८; ६६, ३८; ७५, १०. १९. ३६; ७९, ८; ९३, २३; १०३, ४१; १०६. ३८; १०७, ३२. ५८. ८०. १२७. १२८. १३५; ११२, ४४ (यमस्य भवने दिव्ये ब्रह्मलोकसमे गुणैः); ११५, ६६ (जो मांसभक्षण नहीं करते वे ब्रह्मलोक प्राप्त करते हैं). ७७; १२२, १२; १२७, १९; १४२, १८; १४३, १२; १४. १६, १५; १९, ६२; ९०, ८५. १०४। तुकी० ब्रह्मणो लोकः।

२. ब्रह्मलोक = शिव : १३. १४, ३२४; १७, १४४ (सहस्रनाम)।

ब्रह्मलौकिक (वि०) : १३. १५०, ४६।

ब्रह्मवक्त्र = शिव (७. ८०, ६२)।

ब्रह्मवर्तावरिष्ठः = स्कन्द (३. २३२, ११)।

ब्रह्मवध्या (ब्राह्मवध) : १२. २८२, १२. १७. २०. २२. २५. २८. ३१. ३४. ३८. ४०. ४४. ५१. ५६. ५७. ५८।

ब्रह्मवर्चस = शिव (सहस्रनाम)।

ब्रह्मवशातीय (बहु०) – देखिये वशातीय।

ब्रह्मवालुक, एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, १०६)।

१. ब्रह्मविद् = शिव (सहस्रनाम)।

२. ब्रह्मविद् स्कन्द (३. २३२, ११)।

३. ब्रह्मविद् = विष्णु (सहस्रनाम)।

ब्रह्मविदां वरः = शिव (सहस्रनाम)।

१. ब्रह्मविद्या = दुर्गा (उमा) : ६. २३, ११।

२. ब्रह्मविद्या (मूर्तिमान ब्रह्म का ज्ञान) : १३. १४, ३९।
ब्रह्मविवर्धन = विष्णु (सहस्रनाम)।
ब्रह्मवेदिन् : ५. ६, २।
ब्रह्मवेदी = कुरुक्षेत्र, जिसे ब्रह्मा की वेदी कहा गया (३. ८३, २०६)।
ब्रह्मवेध्या, एक नदी का नाम है (६. ९, ३०)।
ब्रह्मव्रत : : २. ११, ९ (वर्षसहस्रकम्)।
ब्रह्मशाप (ब्रह्मा का शाप) : १. ६३, ५८; १६. ४, ३; ७, ३०; ८, ८।

ब्रह्मशाला, पूर्व की एक नदी का नाम है (३. ८७, २३)।

ब्रह्मशिरस्, एक दिव्यास्त्र का नाम है : १. १, २१४ (अर्जुन ने इसका प्रतिकार किया); १३३, १८ (द्रोण ने इसे अर्जुन को दिया); १३९, ११ (द्रोण ने इसे अग्निवेश से प्राप्त किया था)। "अर्जुन ने शङ्कर से ब्रह्मशिरस् प्रदान करने का निवेदन करते हुये कहा : 'जिसका नाम ब्रह्मशिर है, आप भगवान् रुद्र ही जिसके देवता हैं, जो भयानक पराक्रम प्रकट करने वाला है, तथा दारुण प्रलयकाल में सम्पूर्ण जगत् का संहारक है। कर्ण, भीष्म, कृप, द्रोण, आदि के साथ मेरा महान युद्ध होने वाला है। उस युद्ध में मैं आपकी कृपा से उन सब पर विजय प्राप्त कर सकूँ इसी के लिये दिव्यास्त्र चाहता हूँ। इस अस्त्र से संग्राम में दानवों राक्षसों, भूतों, पिशाचों, गन्धर्वों, तथा नागों को भस्म कर सकूँ। जिस अस्त्र के अभिमन्त्रित करते ही सहस्रों शूल; देखने में भयंकर गदायें, और विषैले सर्पों के समान बाण प्रकट हों उस अस्त्र को प्राप्त कर मैं भीष्म, द्रोण, कृप, तथा कर्ण के साथ भी युद्ध कर सकूँगा।' अर्जुन का निवेदन सुनकर शिव ने कहा : 'मैं अपना परम प्रिय पाशुपतास्त्र तुम्हें प्रदान करता हूँ। इसे देवराज इन्द्र, यम, कुबेर, वरुण, अथवा वायु देवता भी नहीं जानते। चराचर प्राणियों में कोई भी ऐसा नहीं है जो इस अस्त्र से मारा न जा सके। इसका प्रयोग करने वाला पुरुष अपने मानसिक संकल्प से, दृष्टि से, वाणी से, अथवा धनुष बाण द्वारा भी शत्रुओं को नष्ट कर सकता है। (३. ४०, ९-१८)" "जो ब्रह्मशिर नामक अस्त्र अमृत से प्रकट होकर तपस्या के प्रभाव से भगवान् शङ्कर को मिला था वही पाशुपतास्त्र सव्यसाची अर्जुन ने प्राप्त कर लिया (३. ९१, १९)।" "द्रोणाचार्य ने ब्रह्मशिर नामक अस्त्र का अपने पुत्र को उपदेश दिया था। द्रोण ने प्रसन्न होकर पहले यह अस्त्र अर्जुन को दिया था किन्तु अश्वत्थामा इसे सहन नहीं कर सका। तब आचार्य ने अपने उस अस्त्र का अश्वत्थामा को भी उपदेश दे दिया, किन्तु इससे उनका मन अधिक प्रसन्न नहीं था। इस अस्त्र को प्रदान करते हुये द्रोण ने अपने पुत्र से इस प्रकार कहा : 'बड़ी से बड़ी आपत्ति में पड़ने पर भी रणभूमि में मनुष्यों पर इस अस्त्र का प्रयोग नहीं करना चाहिये। मुझे सन्देह है कि तुम कभी सत्पुरुषों के मार्ग पर स्थिर नहीं रहोगे।' अपने पिता के अप्रिय वचन को सुनकर दुष्टात्मा द्रोणपुत्र सब प्रकार के कल्याण की आशा छोड़ कर शोक से पृथिवी पर विचरण करने लगा। उन्हीं दिनों वह द्वारका में आकर रहने लगा। वहाँ वृष्णिवंशियों ने अश्वत्थामा का अत्यधिक सत्कार किया। एक दिन द्वारका में समुद्र तट पर रहते हुये उसने श्रीकृष्ण के पास आकर इस प्रकार कहा : 'मेरे पिता ने उग्र तपस्या करके महर्षि अगस्त्य से जो ब्रह्मास्त्र प्राप्त किया था वह देवताओं और गन्धर्वों द्वारा सम्मानित अस्त्र इस समय मेरे पास है। अतः वह दिव्यास्त्र मुझसे लेकर अपना चक्र नामक अस्त्र मुझे दे दीजिये।' श्रीकृष्ण ने अश्वत्थामा से इस प्रकार कहा : 'देवता, दानव, गन्धर्व, मनुष्य पक्षी और नाग – ये सब मिल कर मेरे पराक्रम के सौवें अंश की भी समानता नहीं कर सकते। यह मेरा धनुष है, यह शक्ति है, यह चक्र है और यह गदा है। तुम जो-जो अस्त्र मुझसे लेना चाहते हो वह ले लो।' श्रीकृष्ण की अनुमति पाते ही अश्वत्थामा ने बायें हाथ से चक्र को पकड़ लिया परन्तु वह उसे अपने स्थान से हिला भी न सका। तब उसने दाहिने हाथ से उसे उठाने का प्रयत्न किया। अपनी पूरी शक्ति से प्रयत्न करके भी जब वह द्रोणकुमार उस चक्र को उठाने या हिलाने में असमर्थ रहा तब मन ही मन अत्यन्त दुखी हो गया। श्रीकृष्ण ने तब अर्जुन की प्रशंसा करते हुये अश्वत्थामा को बताया कि अर्जुन तक ने कभी इस प्रकार चक्र प्राप्त करने की प्रार्थना नहीं की थी। श्रीकृष्ण ने कहा : 'मेरे समान व्रत का पालन करने वाली रुक्मिणी देवी के गर्भ से जिसका जन्म हुआ, जिसके रूप में साक्षात् सनत्कुमार ने ही मेरे यहाँ जन्म लिया है, वह मेरा पुत्र प्रद्युम्न है। परन्तु उसने भी मेरे इस दिव्य चक्र को कभी नहीं माँगा। बलराम, गद, और साम्ब ने भी कभी इसे लेने की इच्छा नहीं की। फिर यह चक्र माँगकर तुम किसके साथ युद्ध करना चाहते हो।' तब अश्वत्थामा ने श्रीकृष्ण से कहा : 'मैं आपकी पूजा करके फिर आपके साथ ही युद्ध करूँगा। मैंने आप से चक्र को इसलिये माँगा था कि मैं इसे पाकर अजेय हो जाऊँ। किन्तु अब मैं अपनी इस दुर्लभ कामना को आपसे प्राप्त किये बिना ही लौट जाऊँगा।' इस प्रकार श्रीकृष्ण से कहकर अश्वत्थामा द्वारका से विदा हुआ (१०. १२, ४-४१)।" १०. १५, १९. २३ (ब्रह्मशिरो यत्र परमास्त्रेण वध्यते। समा द्वादश पर्जन्यस्तद्राष्ट्रं नाभिवर्षति)।

ब्रह्मशिरोपहर्त=शिव (१३. १४, ३१३)।

ब्रह्मसंकाश, अर्थात् जो स्वयं ब्रह्मा के समान है : १२. १८२, १० (भृगु)।

ब्रह्मसत्र, एक धार्मिक कृत्य है (१२. २४३, ४)।

ब्रह्मसत्रिन्, अर्थात् ब्रह्मसत्र का आयोजन करने वाला : ९. ५०, ४१. ४६. ४८।

ब्रह्मसदन : ११. २६, १६; १२. ३३९, ११८ (सिद्धगण यहाँ निवास करते हैं); ३४२, ७६ (पुष्करे); १३. १६, ६२ (या गतिर्ब्रह्मसदने सा गतिस्त्वं सनातन)।

ब्रह्मसदस् : ३. १६३, १३ (यस्मिन् ब्रह्मसदश्चैव भूतात्मा चावतिष्ठते); १२. १७३, १५; १५. ३३, १४।

ब्रह्मसद्मन् : १३. १७, १७६।

ब्रह्मसभावर्णनम् = "सत्ययुग की बात है, भगवान् सूर्य ब्रह्मसभा देखने के बाद मनुष्यलोक को देखने के लिये विचरण कर रहे थे। उन्होंने ब्रह्मसभा का वर्णन करते हुये नारद जी को बताया कि वह सभा अप्रमेय, दिव्य, मानसी, तथा समस्त प्राणियों के मन को मोहित कर लेने वाली है। यह वर्णन सुनकर नारद के मन में भी उस सभा को देखने की इच्छा हुई। तब सूर्यदेव ने नारद को एकाग्रचित्त होकर एक सहस्र वर्ष का महाव्रत करने का परामर्श दिया। तदनुसार हिमालय के शिखर पर जाकर नारद जी ने वह महान अनुष्ठान आरम्भ किया। तपस्या पूर्ण होने पर सूर्यदेव नारद जी को लेकर ब्रह्मा जी की सभा में गये। वह सभा 'ऐसी ही है' इस प्रकार नहीं बताई जा सकती क्योंकि वह एक-एक क्षण में दूसरा अनिर्वचनीय स्वरूप धारण कर लेती है। वहाँ न शीत का अनुभव होता है न गर्मी का। वहाँ भूख-प्यास और ग्लानि का अनुभव भी नहीं होता। वह स्तम्भों के आधार पर नहीं टिकी है और उसमें कभी क्षयरूप विकार न आने के कारण वह नित्य मानी गई है। उस सभा में पितामह ब्रह्मा देवमाया द्वारा समस्त जगत की स्वयं ही सृष्टि करते हुये सदा अकेले ही विराजमान होते हैं। दक्ष आदि प्रजापतिगण वहाँ पितामह की सेवा में उपस्थित रहते हैं। (२. ११, २–१८)।"

ब्रह्मसरस् : एक तीर्थ का नाम है : ३. ८४, ८५ (यहाँ ब्रह्मा ने एक यूप का निर्माण किया था); ८७, ८ (पूर्व में)। "महर्षियों से सेवित, पावन शिखरों वाले, दिव्य एवं पवित्र पर्वत पर उत्तम ब्रह्मसरोवर स्थित है। यहाँ अगस्त्य मुनि वैवस्वत यम से मिलने के लिये पधारे थे क्योंकि धर्मराज यम यहाँ स्वयं निवास करते हैं। यहीं सम्पूर्ण नदियाँ प्रकट हुई हैं। पिनाकधारी महादेव इस तीर्थ में नित्य निवास करते हैं। और पाण्डवों ने यहीं चातुर्मास्यव्रत करके भगवान् की आराधना की थी। महान् अक्षयवट भी यहीं स्थित है। देवताओं की यह यज्ञभूमि अक्षय है, और यहाँ सम्पन्न किये हुये प्रत्येक सत्कर्म का फल अक्षय होता है। पाण्डवों ने इस तीर्थ में अनेक उपवास किये। उस समय यहाँ सैकड़ों तपस्वी ब्राह्मण

पधारे थे। उन सबने विधिवत् चातुर्मास्य यज्ञ किया। यहाँ आये वे सभी ब्राह्मण वेदों के पारंगत विद्वान थे। उनमें शमा नामक एक विद्वान् ब्राह्मण थे जिन्होंने आजीवन ब्रह्मचर्य पालन का व्रत ले रक्खा था (३. ९५, १०-१७)।" ७ ६६, २०; १३. २५, ३९ (यह गङ्गा पर स्थित है। यहाँ स्नान का फल). ५८ (धर्मारण्योपशोभितम्); ९४, ७ (सुपुण्यम्)।

ब्रह्मसुता : १२. ३४२, ७५ (नारायण ने कहा : ऋता ब्रह्मसुता सामे सत्या देवी सरस्वती)।

ब्रह्मसूत्र, एक प्रसिद्ध कृति का नाम है (६. ३७, ४)।

ब्रह्मसृज (ब्रह्मा का सृजन करने वाले) = शिव (१०. ७, ७)।

ब्रह्मस्थान, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, १०३; ८५, ३५)।

ब्रह्महत्या (मूर्तिमान) = ब्रह्मवध्या (देखिये वस्था०): १२. २८२, १८।

ब्रह्महृदय = विष्णु (१२. ३४७, ३)।

ब्रह्माग्र्य = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

१. ब्रह्मात्मन् = शिव (सहस्रनाम)।

२. ब्रह्मात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ७९)।

ब्रह्माविस्तम्बपर्यन्त = शिव (१३. १६, ५३)।

ब्रह्माधिप = शिव (१३. १४, ४०७)।

ब्रह्मावर्त, एक तीर्थ का नाम है : ३. ८३, ५३. ५४; ८४, ४३।

ब्रह्मास्त्र, एक दिव्यास्त्र का नाम है : १. १६६, १३ (राम जामदग्न्य से द्रोण ने इसे प्राप्त किया था); १६७, २३ (द्रोण इसके ज्ञाता थे); ३. १९, १७ (प्रद्युम्न ने इसका प्रयोग किया); १६७, ३४ (अर्जुन ने प्रयोग किया). ३७; १७०, १८; २०४, ३१ (कुवलाश्व ने प्रयोग किया); २७५, ३० (विभीषण ने इसे प्राप्त किया); २८७, १८ (लक्ष्मण ने प्रयोग किया); २९०, २६ (बाणवर्यं रामेण ब्रह्मास्त्रेणानुमन्त्रितम्). २८. ३२. ३३; ४. ५१, ८. ११; ५. १८४, १७ (द्वि०, भीष्म और राम जामदग्न्य ने इसका प्रयोग किया था); १८५, ७; ६. ४८, ११२; ७. २७, २० (अर्जुन ने प्रयोग किया); ९२, ९. १२; १०६, ३६ (युधिष्ठिर ने प्रयोग किया); १२५, १३; १५७, ४१; १८५, ५; १८८, ५१; १९०, ३९; १९३, ४२; १९७, ३२; १९९, ३४; ८. ९०, ९१. ९५; ९१, २० (कर्ण ने प्रयोग किया). २१ (अर्जुन ने प्रयोग किया); ९. ६२, १९. २८; १०. १५, २१ (अर्जुन ने द्रोण से इसे प्राप्त किया); १२. २, १०. १३ (ब्रह्मास्त्रं ब्राह्मणो विद्यावच्चरितव्रतः। क्षत्रियो वा तपस्वी यो नान्यो विद्यात्कथञ्चन); ३, २ (कर्ण ने इसे रामजामदग्न्य से प्राप्त किया था). ३० (रामजामदग्न्य ने कर्ण को शाप दिया कि उसे मृत्यु का समय निकट आ जाने पर इस दिव्यास्त्र का स्मरण नहीं रहेगा); १४. ६६, ९ (इसके द्वारा आहत होने से परीक्षित् जड़वत उत्पन्न हुये थे); ६८, १६. २१; ६९, १६ (श्रीकृष्ण ने जल का स्पर्श करके इसका निवारण किया); ७०, १ (परीक्षित् जीवित हो उठे)।

ब्रह्मिन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. ब्रह्मेशय = स्कन्द (३. २३२, ११)।

२. ब्रह्मेशय = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

ब्रह्मोदुम्बर, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ७१)।

ब्रह्मोपनिषद् : १५. ३५, २ (स राजा राजधर्मांश्च ब्रह्मोपनिषदं तथा)।

ब्राह्म (वि०) : १. २, १९; ७३, ८; ८१, १३; १३८, ७५; १५६, ५; १६७, २८. २९; १९०, २१. २३; २. ११, १०; २२. ३६; ८०, ३५, ३. ३७, ५. ४४; ८१, २; १४५, २८; १६४, १८; १८८, २८; २१०, १५; ५. १६, ८; ४४, १. ७; ४८, १०६; ८४, २५; १३६, २०; १४१, ३१; १६०, १७; १६१, १५; १८४, १५; ७. ९, ३६; १०, ३८; २३, ३९; ७६, १४; ८०, २३; १०६, ३४; १२५, १२-१४; १५७, ३९; १८८, ४२. ४८; १९०, २४; १९१, १९; १९२, २५. ३१; १९३, ४०; १९४, २; २०१, ३६; ८. ९, ४५; ४२, ३४. ३५; ४९, ३८. ५६; ६०, १७; ८९, ५०. ५१; ९. ४६, ३७; १२. १८८, १०. १५; १९६, २१; १९९, ६; २३१, १८. २९; २३३, १३; २६३, २०; ३०२, २४; ३२५, ५; ३४१, १६; १३. १४, २६१; २६, ९४; ३८, ३; ४४, ४. १०; ६९, ५; ८५, १२६; १०४, १५. १०४. ११२; १४१, ९७; १८. ४, २।

१. ब्राह्मण = शिव (सहस्रनाम)।

२. ब्राह्मण = विष्णु (सहस्रनाम)।

३. ब्राह्मण (वि०) : ३. २६१, १८।

ब्राह्मणगीता – "श्रीकृष्ण ने कहा : एक ब्राह्मण ज्ञान-विज्ञान के पारगामी विद्वान् थे। एक समय जब वे एकान्त में बैठे हुये थे तब उनकी पत्नी ने उनसे इस प्रकार पूछा : 'मैंने सुना है कि स्त्रियाँ पति के कर्मानुसार प्राप्त हुये लोकों को जाती हैं; किन्तु आप तो कर्म छोड़कर बैठे हैं और मेरे प्रति कठोरता का व्यवहार करते हैं। ऐसी दशा में आप जैसे पति का आश्रय लेकर मैं किस लोक में जाऊँगी ?' तब उस शान्तचित्त वाले ब्राह्मण ने पत्नी की बात सुनकर उसे कर्म, आत्मा के स्थान, ब्रह्म, सोम, अग्नि आदि के निवास, ज्ञानेन्द्रियों की प्रकृति, प्राणवायु आदि के सम्बन्ध में विस्तृत उपदेश देते हुये बताया कि नासिका, जिह्वा, नेत्र त्वचा, कान, मन एवं बुद्धि – ये वैश्वानर अग्नि की सात जिह्वायें हैं। इसी प्रकार उन्होंने वैश्वानर अग्नि की समिधाओं, तथा सात श्रेष्ठ ऋत्विजों की प्रकृति पर प्रकाश डालते हुये बताया कि सात होता, सात हविष्यों का सात रूपों में विभक्त हुये वैश्वानर में भली-भाँति हवन करके, विद्वान् पुरुष अपने तन्मात्रा आदि योनियों में शब्दादि विषयों को उत्पन्न करते हैं। पृथिवी, वायु, आकाश, जल, तेज, मन और बुद्धि–ये सात योनि कहलाते हैं। इनके समस्त गुण हविष्य रूप हैं। ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय–इन तीन आहुतियों से समस्त लोक परिपूर्ण हैं (१४. २०)।

"प्राचीन इतिहास का उदाहरण देते हुये ब्राह्मण ने बताया कि कान, त्वचा, नेत्र, जिह्वा, नासिका, हाथ, पैर, उपस्थ और गुदा – ये दस होता हैं। शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, वाणी, क्रिया, गति, वीर्य, मूत्र का त्याग और मल-त्याग—ये दस विषय ही दस हविष्य हैं। दिशा, वायु, सूर्य, चन्द्रमा, पृथिवी, अग्नि, विष्णु, इन्द्र. प्रजापत्ति, और मित्र – ये दस देवता अग्नि हैं। दस इन्द्रियरूपी होता दस देवतारूपी अग्नि में दस विषयरूपी हविष्य एवं समिधाओं का हवन करते हैं। इस प्रकार ब्राह्मण के अन्तर में निरन्तर यज्ञ हो रहा है, अतः उसे अकर्मण्य कैसे कहा जा सकता है। ब्राह्मण ने मन और वाणी की श्रेष्ठता का भी प्रतिपादन किया (१४. २१)।

"इसी विषय में एक पुरातन इतिहास का उदाहरण देते हुये ब्राह्मण ने सात होताओं के यज्ञ की प्रकृति पर प्रकाश डालते हुये बताया कि नासिका नेत्र, जिह्वा, त्वचा, कान, मन और बुद्धि—ये सात होता अलग-अलग रहते हैं। गुणों को न जानना ही गुणवान् को न जानना है, और गुणों को जानना ही गुणवान् को जानना है। ये नासिकादि सात होता एक दूसरे के गुणों को कभी नहीं जान पाते, अर्थात् इनमें से प्रत्येक अपने अतिरिक्त अन्य के गुणों को नहीं जान सकता। नासिकादि संकल्प-विकल्प नहीं कर सकते। यह कार्य मन का है। इसी प्रकार निश्चयात्मक ज्ञान केवल बुद्धि को होता है। इस सम्बन्ध में इन्द्रियों और मनके संवादरूपी एक प्राचीन इतिहास का उदाहरण देते हुये ब्राह्मण ने बताया कि एक बार मन ने इन्द्रियों से कहा कि उसकी सहायता के बिना नासिकादि इन्द्रियाँ भी अपने-अपने गुणों को ग्रहण नहीं कर सकतीं। इसलिये मन ने अपने को सब भूतों में श्रेष्ठ और सनातन बताया। किन्तु इन्द्रियों ने मन को बताया कि उनकी सहायता के बिना स्वयं मन भी संकल्प-मात्र से विषयों का यथार्थ अनुभव नहीं कर सकता। (१४. २२)।

"तदनन्तर पञ्चहोताओं के यज्ञ के सम्बन्ध में प्राचीन दृष्टान्त देकर ब्राह्मण ने बताया कि प्राण, अपान, उदान, समान, और व्यान ये पाँचों

प्राण पाँच होता हैं। विद्वान् इन्हें सबसे श्रेष्ठ मानते हैं। वायु प्राण के द्वारा पुष्ट होकर अपानरूप, अपान के द्वारा पुष्ट होकर व्यानरूप, व्यान से पुष्ट होकर उदानरूप, उदान से परिपुष्ट होकर समानरूप होता है। एक बार इन पाँचों वायुओं ने सबके पूर्वज पितामह ब्रह्मा से यह निर्णय करने के लिये कहा कि इनमें से सर्वश्रेष्ठ कौन है, जिससे अन्य सब वायु उसे ही अपना प्रधान मान लें। ब्रह्मा ने कहा कि प्राणधारियों के शरीर में स्थित हुई इन वायुओं में से जिसका लय हो जाने पर अन्य सभी प्राण लीन हो जायँ और जिसके संचरित होने पर सबके सब संचार करने लगें वही श्रेष्ठ है। ब्रह्मा का कथन सुनकर सभी प्राणवायुओं ने अपनी-अपनी श्रेष्ठता का प्रतिपादन किया किन्तु पितामह ने यह निर्णय दिया कि सभी वायु श्रेष्ठ हैं, अथवा कोई भी श्रेष्ठ नहीं है। सबका धारणरूप धर्म एक दूसरे पर अवलम्बित है। एक ही वायु स्थिर और अस्थिर रूप से विराजमान है। उसी के विशेष भेद से पाँच वायु होते हैं (१४. २३)।

"देवर्षि नारद और देवमत के संवादरूप प्राचीन इतिहास का उदाहरण देते हुये ब्राह्मण ने कहा : देवमत ने नारद जी से पूछा था कि जीव जब जन्म लेता है तब उसके शरीर में उपरोक्त प्राणादि पाँच वायुओं में से सबसे पहले किसकी प्रवृत्ति होती है। नारद जी ने बताया कि जिस निमित्त-कारण से इस जीव की उत्पत्ति होती है उससे भिन्न दूसरा पदार्थ भी पहले कारण रूप से उपस्थित होता है। वह है प्राणों का द्वन्द्व जो ऊपर देव-लोक, तिर्यकलोक, और अधोलोक में व्याप्त रहता है। प्राणों के द्वन्द्व की व्याख्या करते हुये नारद ने बताया कि संकल्प से हर्ष उत्पन्न होता है। मनोनुकूल शब्द से, रस से और रूप से भी हर्ष की उत्पत्ति होती है। रज में मिले वीर्य से पहले प्राण आकर उसमें कार्य आरम्भ करता है। उस प्राण से वीर्य में विकार उत्पन्न होने पर अपान की प्रवृत्ति होती है। हर्ष ही उदान का रूप है। प्राण और अपान भी द्वन्द्व हैं। ये नीचे और ऊपर को जाते हैं। व्यान और समान ये दोनों मध्यगामी द्वन्द्व कहे जाते हैं। अग्नि ही सम्पूर्ण देवता है। इस अग्नि का धूम तमोमय और भस्म रजोमय है। इनके निमित्त हविष्य की आहुति दी जाती है। उस अग्नि से सारा जगत उत्पन्न होता है। सत्त्व गुण से समान और व्यान की उत्पत्ति होती है। प्राण और अपान आज्य भाग नामक दो आहुतियों के समान हैं। उनके मध्य में अग्नि की स्थिति है। यही उदान का उत्कृष्ट रूप है। दिन और रात द्वन्द्व हैं। इनके मध्य भाग में अग्नि है जिसे उदान का रूप माना गया है। सत्-असत् भी द्वन्द्व हैं और इनके मध्य में अग्नि है जिसे उदान कहते हैं। ऊर्ध्व अर्थात् ब्रह्म जिस संकल्प नामक हेतु से समान और व्यान रूप होता है उसी से कर्म का विस्तार होता है। जगत् और स्वप्न के अतिरिक्त जो तीसरी अवस्था है उससे उपलक्षित ब्रह्म का समान के द्वारा ही निश्चय होता है। एक मात्र व्यान शान्ति के लिये है। शान्ति सनातन ब्रह्म है। इसी को उदान का उत्कृष्ट रूप माना गया है (१४. २४)।

"इसी विषय में चार होताओं से युक्त यज्ञ के विधान का प्राचीन इतिहास बताते हुये ब्राह्मण ने बताया : करण, कर्म, कर्ता और मोक्ष – ये चार होता हैं जिनके द्वारा यह सम्पूर्ण जगत् आवृत्त हैं। नासिका, जिह्वा, नेत्र, त्वचा, कान, मन और बुद्धि ये सात कारणरूप हेतु हैं और गन्ध, रस, रूप, शब्द, स्पर्श, मन्तव्य और बोद्धव्य ये सात विषय कर्मरूप हेतु हैं। इनके सात कर्तारूप हेतु होते हैं। नासिकादि ये सातों मोक्ष के हेतु हैं। जो मन से अवगत होता है, वाणी द्वारा जिसका कथन होता है, जिसे कान से सुना और आँख से देखा जाता है, जिसको त्वचा से स्पर्श और नासिका से सूँघा जाता है – इन मन्तव्य आदि छहों विषयरूपी हविष्यों का मन आदि छहों इन्द्रियों के संयमपूर्वक अपने आप में होम करना चाहिये। इसी होम के अधिष्ठानभूत पावकरूप परमात्मा मेरे तन मन के भीतर प्रकाशित हो रहे हैं। मैंने योगरूप यज्ञ का अनुष्ठान आरम्भ कर दिया है। इस यज्ञ का उद्भव ज्ञानरूपी अग्नि को प्रकाशित करने वाला है। इसमें प्राण ही स्तोत्र है, अपान शस्त्र है और सर्वस्व का त्याग ही दक्षिणा है। अहंकार (कर्ता), अनमन्ता (मन) और आत्मा (बुद्धि) – ये तीनों ब्रह्मरूप होकर क्रमशः होता, अध्वर्यु, और उद्गाता हैं। सत्य भाषण ही प्रशास्ता का शस्त्र है और अपवर्ग ही उस यज्ञ की दक्षिणा है। भगवत्प्राप्ति हो जाने पर परमानन्द से परिपूर्ण हुये सिद्ध पुरुष जो सामगान करते हैं उसका दृष्टान्त उपनिषद् के विद्वान् 'एतत् सामगायन्नास्ते' इत्यादि मन्त्रों के रूप में उपस्थित करते हैं (१४. २५)।

"अन्तर्यामी की प्रधानता का प्रतिपादन करते हुये ब्राह्मण ने बताया कि जगत् का शासक एक ही है और वह परमात्मा हृदय के भीतर ही विद्यमान रहता है। उस परमात्मा की प्रेरणा से ही व्यक्ति कार्य में नियुक्त होता है। एक ही गुरु है जो हृदय में स्थित है। वह परमात्मा ही गुरु है और उसी के अनुशासन से समस्त दानव हार गये। वह परमात्मा ही बन्धु है, वही श्रोता है, और वही शत्रु है। यह शत्रु भी हृदय में ही स्थित होता है। एक बार देवता, ऋषि, नाग और असुरों ने प्रजापति से अपने कल्याण का उपाय बताने के लिये कहा। तब प्रजापति ने ॐ का उच्चारण किया जिसे सुनकर सब लोग अपनी-अपनी दिशाओं की ओर भाग चले। जब उन सबने प्रजापति के उपदेश के सम्बन्ध में विचार किया तब सर्वप्रथम सर्पों के मन में दूसरों को डँसने का भाव उत्पन्न हुआ, असुरों में स्वाभाविक दम्भ का आविर्भाव हुआ और ऋषियों ने दम को अपनाने का निश्चय किया। इस प्रकार एक ही गुरु के एक ही शब्द के उपदेश से उन सबके मन में उनकी बुद्धि के अनुसार संस्कार उत्पन्न हुये। अतः प्रश्न पूछने वाले के लिये अपने अन्तर्यामी से बढ़कर अन्य कोई गुरु नहीं है। पहले वह कर्म का अनुमोदन करता है, उसके बाद जीव की उस कार्य में प्रवृत्ति होती है। इस प्रकार हृदय में प्रकट होने वाला परमात्मा ही गुरु, ज्ञानी, श्रोता और द्रष्टा है। संसार में जो पाप करते हुये विचरण करता है वह पापाचारी और जो शुभकर्म का आचरण करता है वह शुभाचारी कहलाता है। जो व्रत और कर्मों का त्याग करके केवल ब्रह्म में स्थित है वह ब्रह्मरूप होकर संसार में विचरता है। उसकी समिधा, उसकी अग्नि, उसका जल और उसका गुरु सब कुछ ब्रह्म ही है। उसकी चित्तवृत्तियाँ सदा ब्रह्म में ही लीन रहती हैं (१४. २६)।

"आध्यात्म विषयक महान् वन का वर्णन करते हुये ब्राह्मण ने बताया कि यह संसार एक दुर्गम वन है जो गर्मी, सर्दी, मोह, लोभ, व्याधि, क्रोध, आदि से व्याप्त है। इसी प्रकार ब्रह्म भी एक महान् वन है (ब्रह्मरूपी वन का विस्तृत वर्णन) (१४. २७)।

"ज्ञानी पुरुषों की स्थिति की व्याख्या के प्रसंग में ब्राह्मण ने अध्वर्यु और यति के संवादरूप प्राचीन इतिहास का वर्णन किया। किसी यज्ञ कर्म में पशु का प्रोक्षण होता देखकर एक यति ने उसकी निन्दा करते हुये अध्वर्यु से इस कार्य को हिंसा बताया किन्तु अध्वर्यु ने कहा कि यह बलि का बकरा नाश नहीं बल्कि कल्याण का ही भागी होगा। उसके शरीर के सभी तत्व पंचभूतों में, और इन्द्रियाँ सूर्यादि देवताओं में मिल जायँगी। जब यति ने पुनः शंका प्रकट करते हुये कहा कि किसी भी प्राणी की हिंसा अनुचित है तब अध्वर्यु ने कहा कि सभी भूतों में प्राण है तो भी मनुष्य पृथिवी के गन्ध-गुण का उपभोग करता है। इसी प्रकार वह जल, अग्नि, वायु आदि के भी गुणों का उपभोग करता है अतः यह भी हिंसा ही है किन्तु मनुष्य और यति इससे विरत नहीं हैं। तब यति ने कहा : आत्मा के दो रूप हैं – एक अक्षर है और दूसरा क्षर। जिसकी सत्ता तीनों कालों में कभी नहीं मिटती वह अविनाशी सत्स्वरूप अक्षर कहा गया है। इसके विपरीत जिसका सर्वथा और सभी कालों में अभाव है वह क्षर कहलाता है। प्राण, जिह्वा, मन और रजोगुण सहित सत्वगुण – ये रज, अर्थात् माया सहित सद्भाव हैं। इन भावों से मुक्त निर्द्वन्द्व, निष्काम, समस्त प्राणियों के प्रति समभाव रखने वाले, ममतारहित, जितात्मा तथा सब ओर से बन्धनशून्य पुरुष को कभी और कहीं भी भय नहीं होता। यति की बात सुनकर अध्वर्यु ने उनसे कहा : 'इस जगत् में आप जैसे साधु पुरुषों के साथ ही निवास करना उचित है। मैं आपकी बुद्धि से ज्ञान-

सम्पन्न होकर यह बात कह रहा हूँ कि वेदमन्त्रों द्वारा निश्चित किये हुये व्रत का ही मैं पालन कर रहा हूँ। अतः इसमें मेरा कोई अपराध नहीं है।' अध्वर्यु की इस युक्ति से यति चुप हो गया। फिर अध्वर्यु भी मोहरहित होकर उस महायज्ञ में प्रवृत्त हुआ। इस प्रकार ब्राह्मण मोक्ष का ऐसा ही अत्यन्त सूक्ष्म स्वरूप बताते हैं और तत्वदर्शी पुरुष के उपदेश के अनुसार उस मोक्षधर्म को जानकर उसका अनुष्ठान करते हैं (१४. २८)।

"इस विषय में ब्राह्मण ने कार्तवीर्य अर्जुन और समुद्र के संवादरूप एक प्राचीन इतिहास का उदाहरण दिया (देखिये अर्जुन कार्तवीर्य, और परशुराम) (१४. २९)। तदनन्तर इसी प्रसंग में अलर्क के ध्यानयोग का उदाहरण देकर ब्राह्मण ने पितामहों द्वारा परशुराम को समझाने तथा परशुराम द्वारा तपस्या से सिद्धि प्राप्त करने का उल्लेख किया (१४. ३०)।

"ब्राह्मण ने कहा : 'संसार में सत्त्व, रज, और तम — ये तीन मेरे शत्रु हैं। ये वृत्तियों के भेद से नौ प्रकार के माने गये हैं। हर्ष, प्रीति, और आनन्द — ये तीन सात्त्विक गुण हैं; तृष्णा, क्रोध, और द्वेषभाव — ये तीन राजस गुण हैं, और थकावट, तन्द्रा तथा मोह — ये तीन तामस गुण हैं। शान्त चित्त, जितेन्द्रिय, आलस्यहीन और धैर्यवान पुरुष शम-दम आदि बाण-समूहों के द्वारा इन पूर्वोक्त गुणों का उच्छेद करके दूसरों को जीतने का उत्साह करते हैं। पूर्वकाल में शान्तिपरायण राजा अम्बरीष ने उस समय बलपूर्वक अपने राज्य की बागडोर अपने हाथ में ले ली जब दोषों का बल बढ़ा और अच्छे गुण दबने लगे। उस समय उन्होंने इस गाथा का गान किया : 'मैंने अनेक दोषों पर विजय प्राप्त की है और समस्त शत्रुओं का नाश कर डाला है, किन्तु एक सबसे से बड़ा दोष रह गया है। यद्यपि वह नष्ट कर देने योग्य है, तथापि अब तक मैं उसका नाश नहीं कर सका हूँ। इत्यादि।' इस प्रकार राजा अम्बरीष ने आत्मराज्य को आगे रखकर एकमात्र प्रबल शत्रु लोभ का उच्छेद करते हुये इस गाथा का गान किया था (१४. ३१)।

"ब्राह्मण रूपधारी धर्म और जनक के ममत्वत्याग-विषयक प्राचीन संवाद का उल्लेख (१४. ३२) करते हुये ब्राह्मण ने अपनी पत्नी के प्रति अपने ज्ञाननिष्ठ स्वरूप का परिचय दिया (१४. ३२-३३)।

"ब्राह्मणी के यह पूछने पर कि किस प्रकार महान् ज्ञान को प्राप्त किया जा सकता है, ब्राह्मण ने कहा : 'बुद्धि नीचे की अरणी है और गुरु ऊपर की अरणी। तपस्या और वेद-वेदान्त के श्रवण मनन द्वारा मन्थन करने पर उन अरणियों से ज्ञानरूप अग्नि प्रकट होती है।' ब्राह्मणी ने क्षेत्रज्ञ को ब्रह्म का स्वरूप किस प्रकार माना जाता है इस पर प्रकाश डालने के लिये कहा। तब ब्राह्मण ने कहा कि क्षेत्रज्ञ वास्तव में देह सम्बन्ध से रहित और निर्गुण है क्योंकि उसके सगुण और साकार होने का कोई कारण नहीं दिखाई देता। अतः उस क्षेत्रज्ञ का साक्षात्कार करने के लिये क्रिया का त्याग कर देने से भौंरों के द्वारा गन्ध की भाँति वह अपने आप जाना जाता है। किन्तु कर्म विषयक बुद्धि वास्तव में बुद्धि न होने कारण ज्ञान के सदृश प्रतीत होती तो है, परन्तु वह ज्ञान नहीं है। जिससे पर कुछ भी नहीं है उसका साक्षात्कार 'नेति-नेति' अर्थात् यह भी नहीं, वह भी नहीं — इस अभ्यास के अन्त में ही होगा (१४. ३४)।"

१. ब्राह्मण-प्रिय = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

२. ब्राह्मण-प्रिय = विष्णु (सहस्रनाम)।

ब्राह्मणमाहात्म्य कथन — "पाण्डवों ने मार्कण्डेय जी से ब्राह्मणों का माहात्म्य सुनाने का निवेदन किया। मार्कण्डेय ने बताया : हैहयवंशी क्षत्रियों के राजा परपुरञ्जय एक दिन हिंसक पशुओं को मारने के लिये वन में गये। वहाँ उन्होंने काले हिंसक पशु के चर्म की ओढ़नी ओढ़े थोड़ी दूर पर एक मुनि को देखा। हिंसक पशु समझ कर राजकुमार ने उन मुनि को बाण से मार डाला। अपने अनजान में किये इस पाप से राजकुमार शोक से मूर्च्छित हो गये। होश में आने पर उन्होंने लौट कर हैहयवंशी राजाओं के पास जाकर इस दुर्घटना का समाचार दिया। वे सब राजा तब उन मुनि का पता लगाते हुये कश्यपनन्दन अरिष्टनेमि के आश्रम पर आये और ब्रह्महत्या के पाप का उल्लेख किया। यह सुनकर अरिष्टनेमि ने उस मरे हुये ब्राह्मण का पता पूछा। तब सभी लोग उस स्थान पर आये जहाँ मुनि की हत्या हुई थी किन्तु उन्होंने वहाँ मरे हुये मुनि का शव नहीं देखा। तब मुनिवर अरिष्टनेमि ने उनसे कहा : 'तुम लोगों ने जिसे मार डाला था वह मेरा तपोबलसम्पन्न पुत्र है।' उन महर्षि को जीवित हुआ देखकर वे सभी क्षत्रिय अत्यन्त विस्मित हुये और उन्होंने मुनि से इस रहस्य पर प्रकाश डालने के लिये कहा। तब महर्षि ने कहा : 'हम लोगों पर मृत्यु का वश नहीं है। हम लोग शुद्ध आचार-विचार से रहते हैं, आलस्य से रहित हैं, प्रतिदिन सन्ध्योपासना करते हैं, और ब्रह्मचर्य व्रत के पालन में भी लगे रहते हैं; केवल सत्य को ही जानते हैं और कभी झूठ में मन नहीं लगाते। इसलिये हमें मृत्यु से भय नहीं है। हम केवल ब्राह्मणों के शुभ कर्मों की चर्चा करते हैं, अतिथियों को अन्न-जल से तृप्त करते हैं और उनसे बचा हुआ ही भोजन स्वयं करते हैं। हम सदा शम, दम, क्षमा, तीर्थसेवन, और दान में तत्पर रहते हैं। इन्हीं कारणों से हमें मृत्यु का भय नहीं है। अब आप लोग जाँय, आपको ब्रह्महत्या के पाप से भय नहीं रहा। (३. १८४)।

"मार्कण्डेय जी ने ब्राह्मणों की महिमा के विषय में अत्रि मुनि और राजा पृथु की प्रशंसा करते हुये बताया : प्राचीन काल में पृथु वैन्य ने अश्वमेध यज्ञ की दीक्षा ली। उन दिनों अत्रि ने धन माँगने की इच्छा से उनके पास जाने का विचार किया; किन्तु ऐसा करने से उन्हें अपना धर्मात्मापन प्रकट करना पड़ता, अतः उन्होंने धन के लिये अनुरोध नहीं किया। तदनन्तर उन्होंने अपनी धर्मपत्नी और पुत्र को बुलाकर कहा : 'हम लोग वन में रहकर भी धर्म का फल प्राप्त कर सकते हैं। अतः हम सब को शीघ्र वन में चलना चाहिये।' अत्रि की पत्नी ने तब राजा वैन्य के पास जाकर अधिक धन की याचना का परामर्श दिया। किन्तु अत्रि ने बताया कि वैन्य के यज्ञ में निवास करने वाले सभी ब्राह्मण उनसे (अत्रि से) द्वेष रखते हैं इसलिये उन्होंने वहाँ जाने के विचार से असहमति प्रकट की। उन्होंने बताया कि गौतम ने भी यही बात कही थी। फिर भी अपनी पत्नी की बात मान कर अत्रि शीघ्र ही राजा पृथु वैन्य के यज्ञ में गये और यज्ञमण्डप में पृथु की प्रशंसा की। अत्रि ने कहा : 'राजन्, तुम इस भूतल के सर्वप्रथम राजा हो, अतः धन्य हो। तुम सब प्रकार के ऐश्वर्य से सम्पन्न हो। महर्षि तुम्हारी स्तुति करते हैं। तुम्हारे अतिरिक्त अन्य कोई नरेश धर्म का ज्ञाता नहीं है।' अत्रि की बात सुनकर महातपस्वी गौतम ने कुपित होकर कहा : 'फिर कभी ऐसी बात न कहना। तुम्हारी बुद्धि एकाग्र नहीं है। यहाँ हमारे प्रथम प्रजापति के रूप में साक्षात् इन्द्र उपस्थित हैं।' तब अत्रि ने भी गौतम को उत्तर देते हुये पृथु को ही विधाता, और प्रजापति इन्द्र के समान बताते हुये स्वयं गौतम को मोह से मोहित और उत्तम बुद्धि से रहित बताया। गौतम ने भी अत्रि की भर्त्सना करते हुये कहा : 'मैं अच्छी तरह समझता हूँ कि तुम राजा से मिलने की इच्छा से भरी सभा में स्वार्थवश उनकी स्तुति कर रहे हो। उत्तम धर्म का तुम्हें ज्ञान नहीं है। जब अत्रि और गौतम इस प्रकार परस्पर विवाद में लगे रहे तब वैन्य के यज्ञ में उपस्थित ब्राह्मणों ने अपना रोष प्रकट किया और सनत्कुमार जी के पास निर्णय के लिये आये। सनत्कुमार जी ने तब यह निर्णय दिया : 'ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों को संयुक्त रूप से कार्य करना चाहिये। ये दोनों आपस में मिल कर शत्रुओं को उसी प्रकार दग्ध कर डालते हैं जैसे अग्नि और वायु परस्पर मिल कर वनों को भस्म कर डालते हैं। राजा धर्मरूप से विख्यात हैं। वही प्रजापति, इन्द्र, शुक्राचार्य, धाता और बृहस्पति हैं। अधर्म से डरे हुये ऋषियों ने अपना ब्रह्मबल भी क्षत्रियों में स्थापित कर दिया है। अतः शास्त्र प्रमाण पर दृष्टिपात करने से राजा की प्रधानता सूचित होती है। इसलिये जिसने राजा को प्रजापति बताया है उसी का पक्ष उत्कृष्ट सिद्ध होता है।' तदन्तर एक पक्ष की उत्कृष्टता सिद्ध हो जाने पर पृथु बड़े प्रसन्न हुये। उन्होंने अत्रि को प्रचुर मात्रा में नाना प्रकार के रत्न और धन, सुन्दर वस्त्राभूषणों से विभूषित सहस्रों युवती

दासियाँ और दस करोड़ स्वर्ण मुद्रायें दिया। तब अत्रि मुनि यह सब धन लेकर अपने घर आये तथा पुत्रों को प्रसन्नतापूर्वक वह सम्पूर्ण धन देकर स्वयं शुभ संकल्प सहित वन में चले गये। (३. १८५)।

ब्राह्मणरूप = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

ब्राह्मण-व्याध-संवाद — देखिये पतिव्रतोपाख्यान।

ब्राह्मणसव्रतिन् = स्कन्द (३. २३२, ११)।

ब्राह्मणानां नेतृ = स्कन्द (३. २३२, ११)।

ब्राह्मणाः = शिव (सहस्रनाम)।

१. ब्राह्मणी, एक तीर्थ, जहाँ स्नान करने से मनुष्य ब्रह्मलोक प्राप्त करता है (३. ८४, ५८)।

२. ब्राह्मणी, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, ३३)।

भ

१. भक्तवत्सल = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

२. भक्तवत्सल = विष्णु (सहस्रनाम)।

भक्तानां परमागतिः = शिव (सहस्रनाम)।

१. भग, एक आदित्य का नाम है : १. ६५, १५; १२३, ६६; २२७, ३६; २. ७, २२ (इन्द्र की सभा में); ९. ४५, ५; १०. १८, १६ (रुद्र ने इनकी आँखें निकाल लीं). २२; १२. २०८, १५; १३. ६५, ७; १५०, १४ (बारह आदित्यों की गणना के अन्तर्गत इनका उल्लेख); १६०, १८ (रुद्र ने इनकी आँखें निकाल लीं); १४. ४३, १५ (अक्सर प्रेमसूचक अर्थ में इसका प्रयोग हुआ है)।

२. भग, पूर्वा और उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्रों का द्योतक है (६. ३, १४)।

३. भग = सूर्य : ३. ३, १६ (धौम्य ने अन्य नामों के साथ इस नाम का भी उल्लेख किया)।

४. भग, एक रुद्र का नाम है : १. ६६, ३ (स्थाणु के पुत्र); १२३, ६९ (तेरह रुद्रों की गणना के अन्तर्गत इनका भी उल्लेख है)।

भगघ्न = शिव (७. २०२, ४७)।

भगदत्त, प्राग्ज्योतिष के राजा का नाम है : १. २, २५६ (भगदत्तो महाराजो यत्र शक्रसमो युधि। सुप्रतीकेन नागेन स हि शान्तः किरीटिना); ६७, ९ (यह वास्कल नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुये थे); १८९, १२; २. १०, २८. २९ (किङ्कराः शतशस्तत्रधनानामीश्वरं प्रभुम्। आसते चापि राजानो भगदत्तपुरोगमाः); १४, १५ (ये युधिष्ठिर के पिता के मित्र थे। वाणी तथा क्रिया द्वारा यद्यपि ये जरासन्ध के सामने विशेष रूप से नतमस्तक रहते थे, तथापि मन ही मन युधिष्ठिर पर पुत्रवत् स्नेह रखते थे); २६, ८ (प्राग्ज्योतिषपुर के प्रधान राजा थे। अर्जुन ने इन्हें पराजित किया था। वे किरात तथा समुद्र के द्वीपों में रहने वाले अनेक योद्धाओं से घिरे हुये थे। इन्होंने अर्जुन के साथ आठ दिनों तक युद्ध किया था फिर भी अर्जुन को थका हुआ न देखकर इन्होंने उनकी प्रशंसा की थी). १६ (इन्होंने युधिष्ठिर और अर्जुन के प्रति स्नेह प्रकट करते हुये उन लोगों के लिये हर प्रकार की सहायता करने का वचन दिया); २७, १ (अर्जुनको कर देना स्वीकार किया); ३४, ९ (प्राग्ज्योतिषश्च नृपतिर्भगदत्तो महारथः। स तु सर्वैः म्लेच्छैः सागरापनूवासिभिः); ४४, ११९; ५१, १४ (प्राग्ज्योतिषाधिपःशूरो म्लेच्छानामधिपो बली। यवनैः सहितो राजा भगदत्तो महारथः). १६ (युधिष्ठिर को हीरे और पद्मराग आदि मणियों के आभूषण तथा विशुद्ध हाथी दाँत की मूठ वाले खड्ग के उपहार दिये); ३. २५२, ९ (पुरोगमाः); २५४, ५ (इन पर विजय प्राप्त करके राधेय कर्ण शत्रुओं से युद्ध करता हुआ महान् पर्वत हिमालय पर आरूढ़ हुआ); ५. ४, ११ (पाण्डवों को इनके पास भी रण-निमन्त्रण भेजने का द्रुपद ने परामर्श दिया); १९, १५ (इन्होंने चीन और किरात देश के योद्धाओं से भरी हुई एक अक्षौहिणी सेना दुर्योधन को प्रदान की); ६६, ७ (ये दुर्योधन के पक्ष में सम्मिलित हुये); १६७, ३५ (इनके साथ अर्जुन का युद्ध हो चुका था। ये इन्द्र के मित्र थे और हाथी पर बैठ कर युद्ध करने में अत्यन्त कुशल थे); ६. १७, ३७ (अपने हाथी पर आरूढ़). ३७; ४५, ४९-५१; ५१, १७; ५६, ५; ६४, ४३. ४९. ५४. ६०. ६१. ६४. ७१; ६५, ३२; ७६, १८; ८३, २५. २७. ३२; ८७, ८; ८९, ४; ९५, १६. २४ (अपने सुप्रतीक नामक हाथी पर). २५. ३२. ३७. ४४. ५३. ५७. ५८. ६९. ७६. ८४. ८५; ९६, १७. ३६; ९९, ४; १०२, २५; १०८, १३. ५८; १११, ७. १०; ११३, १. ५. २२. ३४. ३८; ११६, ५६; ११९, १५; ७. १४, ४०-४२; २६, ३२. ३४. ३८. ३९. ४७. ४९. ६३; २७, २. ९. १२. ३१; २८, २१. २३-२५; २९, १. ५. ६. १२. १८. ३८. ३९. ४२. ४७. ४८ (अर्जुन ने इनका वध किया); ३०, १ (प्रियमिन्द्रस्य सततं सखायममितौजसम्। हत्वा प्राग्ज्योतिषं पार्थः प्रदक्षिणमवर्तत); १४७, ९२ (इनका वध हो गया); १५८, ६६; १९७, ३९ (यद्यपि ये पाण्डु के मित्र थे तथापि अर्जुन ने इनका वध किया); ८. ५, १६. २१ (इनके पुत्र का नकुल ने वध किया था); १८, ३; ७२, १९; ९. २, १६. ३४; २४, २९; ३२, २०; ६४, ३२; ११. २३, ११; २६, ३५; १४. ७६, ४ (अर्जुन ने इनके पुत्र वज्रदत्त को प्राग्ज्योतिषपुर में पराजित किया); १५. २०, १० (इनके पिता महाराज शैलालय भी तपस्या के बल से इन्द्रलोक गये थे); ३२, १० (व्यास के आवाहन पर गङ्गा के जल से प्रकट हुये मृत नरेशों में ये भी थे)।

भगदत्तज = वज्रदत्त (१४. ७५, १५)।

भगदत्तसुत = वज्रदत्त (१४. ७५, ३; ७६, १४)।

भगदत्तात्मज = वज्रदत्त (१४. ७५, १. १६; ७६, २६)।

भगदा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २६)।

भगदैवत : १. ८, १६ (उत्तरा फाल्गुनी): १३. १०६, २२ (°मास = फाल्गुन)।

भगनन्दा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ११)।

भगनेत्रघ्न = शिव : १३. १४३; १; १४७, १।

भगनेत्र निपातन = शिव : ३. ३९, ७४; २७२, ८०; ७. ९४, ५७।

भगनेत्रहन् = शिव (३. ४०, १४)।

भगनेत्रहर = शिव : १. ११०, १०; २२१, ८; १०. ६, ३४; १२. २८४, ७०; ३४१, २१।

भगनेत्रांकुश = शिव : १३. २८४, १४८ (सहस्रनाम)।

भगवत्, का अक्सर उच्चगुणों, विशेषतः श्रेष्ठतम धार्मिक गुणों से सम्पन्न व्यक्तियों (देवों और मनुष्यों) के लिये प्रयोग हुआ है : (क) उच्चतम श्रेणी के व्यक्ति : १. २१४, २; ३. २११, १७; ५. ४२, २१; ४६, १-५. ७-१०. १२-२४; १२. ३४०, ८८. ९०. ९१. ९५. ११३; ३४१, ८; ३४२, २. ११८. १३४; ३४३, ४. १०. १४. २२. ४६. ५४. ६७; ३४४, २. २३; ३४५, ७. २७; ३४६, २; ३४७, १. २५. ४६; ३४८, १. ८; ३४९, २२. २७. ३६. ४२. ६८; ३५१, २२। (ख) श्रीकृष्ण : १. २, ६१; २२, ५; ३. २६३, २२; ५. ६८, १२. १३; ७२, ८५; ७९, ३; ८३, ५; ९३, १; १३१, १८; १४७, ११; ६. २६, ५५; २७, ३३; २८,

१. ५; २९, २; ३०, १. ४०; ३१, १; ३२, ३; ३३, १; ३४, १. १४. १७. १९; ३५, ५. ३२. ४७. ५२; ३६, २; ३७, २; ३८, १. २२; ४०, १; ४१, २; ४२, २; ६६, १; ७. ७६, २१; ८. ६९, २८; १३. १४, २७; १४. १४, २; १६, ६; ३४, १०. १२; ५३, १४। (ग) विष्णु : ३. ११५, १६; २०१, १२; २०३, २६. ३३; ५. १०५, २२. २७; १३. १४९, १४ (सहस्रनामों का वर्णन)। (घ) नारायण : ७. १९५, ३२. ३९। (ङ) ब्रह्मा : १. ६४, ४९; २११, २३; ३. १७२, ३०; ५. १२३, ११. १३; ८. ८७, ६८; १२. ३५०, १३. १४. १७। (च) शिव : १. २१५, २१; २२३, ४१. ४३; ५. १८८, ५; ७. १४४, १७; ८. ८७, ७३; ८९, ४६; १३. १४, १६. २५. २७. ६८. ७१. ७६. ७७. ८५. ९२. ९९. ३२७. ३३७-३३९. ३४६; १६, ६९; १७, ३३. १२९. १५४; १४१, १. ३०. ९५; १६०, ४२. ४४; १४. ८, ७। (छ) इन्द्र : ५. १०, ३४; १५, १; १३. १४, १७४. २११। (ज) अग्नि—देखिये वस्था०। (झ) कुबेर : ८. ८८, २५। (ञ) धर्म : १७. ३, १७। (ट) नारद : ३. १९८, १४. १५ .१६; ५. १२४, १। (ठ) कण्व : ५. १०५, ३। (ड) धृतराष्ट्र : ५. ८२, २७।

भगवद्गीता, महाभारतान्तर्गत श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को दिये गये उपदेशों का प्रसिद्ध संग्रह (१. २, ६८)।

भगवद्गीतापर्वन्; महाभारत के ६९वें अवान्तर पर्व का नाम है जिसमें श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उपदेश दिया था। इस पर्व के २५-४२ अध्याय स्वतन्त्र रूप से भगवद्गीता के नाम से प्रसिद्ध हैं। संजय का युद्धभूमि से लौटकर धृतराष्ट्र को भीष्म की मृत्यु का समाचार सुनाना (६. १३)। धृतराष्ट्र का विलाप करते हुये भीष्म के मारे जाने की घटना को विस्तारपूर्वक जानने के लिये संजय से प्रश्न करना (६. १४)। संजय का युद्ध के वृत्तान्त का वर्णन आरम्भ करना — दुर्योधन का दुःशासन को भीष्म की रक्षा के लिये समुचित व्यवस्था करने का आदेश (६. १५)। प्रातःकाल दोनों पक्षों की सेनाओं का व्यूहन और दुर्योधन की सेना का वर्णन (६. १६)। कौरव महारथियों का युद्ध के लिये आगे बढ़ना तथा उनके व्यूह, वाहन और ध्वज का वर्णन (६. १७)। कौरव सेना का कोलाहल तथा भीष्म के रक्षकों का वर्णन (६. १८)। व्यूह-निर्माण के विषय में युधिष्ठिर और अर्जुन का वार्तालाप; अर्जुन द्वारा वज्रव्यूह की रचना; भीमसेन की अध्यक्षता में सेना का आगे बढ़ना (६. १९)। दोनों सेनाओं की स्थिति तथा कौरव-सेना का अभियान (६. २०)। कौरव सेना को देख कर युधिष्ठिर का विषाद; 'श्रीकृष्ण की कृपा से ही विजय होती है' यह कह कर अर्जुन का उन्हें आश्वासन देना (६. २१)। युधिष्ठिर की रणयात्रा; अर्जुन और भीमसेन की प्रशंसा तथा श्रीकृष्ण का अर्जुन से कौरव-सेना को मारने के लिये कहना (६. २२)। अर्जुन द्वारा दुर्गाजी की स्तुति वरप्राप्ति और अर्जुनकृत दुर्गास्तव के पाठ की महिमा (६. २३)। दोनों पक्ष के सैनिकों के हर्ष और उत्साह के विषय में धृतराष्ट्र और संजय का संवाद (६. २४)। श्रीमद्भगवद्गीता का प्रारम्भ : दोनों सेनाओं के मुख्य मुख्य वीरों एवं शंखध्वनि का वर्णन तथा स्वजनवध के पाप से भयभीत हुये अर्जुन का विषाद (६. २५)। अर्जुन को युद्ध के लिये उत्साहित करते हुये भगवान् के द्वारा नित्यानित्य वस्तु के विवेचनपूर्वक सांख्ययोग, कर्मयोग एवं स्थितप्रज्ञ स्थिति और महिमा का वर्णन (६. २६)। ज्ञानयोग और कर्मयोग आदि समस्त साधनों के अनुसार कर्तव्यकर्म करने की आवश्यकता का प्रतिपादन एवं स्वधर्मपालन की महिमा तथा कामनिरोध के उपाय का वर्णन (६. २७)। सगुणभगवान् के प्रभाव, निष्काम कर्मयोग तथा योगी-महात्मा पुरुषों के आचरण और उनकी महिमा का वर्णन करते हुये विविध यज्ञों एवं ज्ञान की महिमा का वर्णन (६. २८)। सांख्ययोग, निष्काम कर्मयोग, ज्ञानयोग एवं भक्ति सहित ध्यानयोग का वर्णन (६. २९)। निष्काम कर्मयोग का प्रतिपादन करते हुये आत्मोद्धार के लिये प्रेरणा तथा मनोनिग्रहपूर्वक ध्यानयोग एवं योगभ्रष्ट की गति का वर्णन (६. ३०)। ज्ञान-विज्ञान, भगवान् की व्यापकता, अन्य देवताओं की उपासना एवं भगवान् को प्रभाव सहित न जानने वालों की निन्दा और जानने वालों की महिमा का वर्णन (६. ३१)। ब्रह्म, अध्यात्म और कर्मादि के विषय में अर्जुन के सात प्रश्न और उनका उत्तर एवं भक्तियोग तथा शुक्ल और कृष्ण मार्गों का प्रतिपादन (६. ३२)। ज्ञान-विज्ञान और जगत् की उत्पत्ति का, आसुरी और दैवी सम्पदावालों का, प्रभावसहित भगवान् के स्वरूप का, सकाम-निष्काम उपासना का, एवं भगवद्भक्ति की महिमा का वर्णन (६. ३३)। भगवान् की विभूति और योगशक्ति का तथा प्रभावसहित भक्तियोग का कथन; अर्जुन के पूछने पर भगवान् द्वारा अपनी विभूतियों का और योगशक्ति का पुनः वर्णन (६. ३४)। विश्वरूप का दर्शन कराने के लिये अर्जुन की प्रार्थना; भगवान् और संजय द्वारा विश्वरूप का वर्णन ; अर्जुन द्वारा भगवान् की स्तुति-प्रार्थना; भगवान् द्वारा विश्वरूप और चतुर्भुज रूप के दर्शन की महिमा, तथा केवल अनन्य भक्ति से ही भगवत्प्राप्ति का कथन (६. ३५)। साकार और निराकार के उपासकों की उत्तमता का निर्णय, भगवत्प्राप्ति के उपाय, एवं भगवत्प्राप्ति वाले पुरुषों के लक्षणों का वर्णन (६. ३६)। ज्ञानसहित क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ और प्रकृति पुरुष का वर्णन (६. ३७)। ज्ञान की महिमा और प्रकृति-पुरुष से जगत् की उत्पत्ति का, सत्व, रज, तम — इन तीनों गुणों का, भगवत्प्राप्ति के उपाय का, एवं गुणतीत पुरुष के लक्षणों का वर्णन (६. ३८)। संसारवृक्ष का, भगवत्प्राप्ति के उपाय का, जीवात्मा का, प्रभाव सहित परमेश्वर के स्वरूप का, एवं क्षर, अक्षर और पुरुषोत्तम के तत्त्व का वर्णन (६. ३९)। फलसहित दैवी और आसुरी सम्पदा का वर्णन, तथा शास्त्रविपरीत आचरणों को त्यागने और शास्त्रानुकूल आचरण करने की प्रेरणा (६. ४०)। श्रद्धा का और शास्त्रविपरीत घोर तप करने वालों का वर्णन; आहार, यज्ञ, तप और दान के पृथक्-पृथक् भेद तथा ॐ, तत् और सत् के प्रयोग की व्याख्या (६. ४१)। त्याग का, सांख्य सिद्धान्त का, फलसहित वर्ण-धर्म का, उपासना सहित ज्ञान निष्ठा का, भक्ति सहित निष्काम कर्मयोग का एवं गीता के माहात्म्य का वर्णन (६. ४२)।

भगवद्भक्त : १. २१४, २।

भगवद्यान, श्रीकृष्ण की यात्रा का द्योतक है : १. २, ६१। देखिये अगले दो शब्द भी।

भगवद्यानम् (श्री कृष्ण का प्रस्थान) : कुछ दिनों तक पाण्डवों के साथ खाण्डवप्रस्थ में सुखपूर्वक निवास करने के बाद श्रीकृष्ण ने पिता के दर्शन के लिये उत्सुक होकर युधिष्ठिर और कुन्ती से आज्ञा लेकर द्वारका जाने का विचार किया। उस समय वे अपनी बहन सुभद्रा से भी मिले और उससे अपने प्रस्थान की आवश्यकता बताते हुये विदा ली। तदनन्तर श्रीकृष्ण ने धौम्य मुनि से भी विदा ली तथा यात्राकालोचित कर्म करने के लिये पवित्र हो स्नान करके अलंकार धारण किया। इस प्रकार यात्राकालोचित सब कार्य पूर्ण करके वे प्रस्थित हुये। उस समय ब्राह्मणों ने स्वास्तिवाचन किया। युधिष्ठिर प्रेमपूर्वक स्वयं भगवान् के सारथि बन गये। अन्य पाण्डवगण भी श्रीकृष्ण की सेवा करने लगे और काफी दूर तक उनके पीछे गये। तदनन्तर श्रीकृष्ण ने अनेक प्रकार से प्रेमपूर्वक आग्रह कर के पाण्डवों को वापस लौटने के लिये प्रेरित किया तथा अपने गरुड चिह्नित ध्वजा से सुशोभित, गदा, चक्र, खड्ग, शार्ङ्ग धनुष आदि आयुधों से सम्पन्न तथा शैब्य और सुग्रीव आदि अश्वों से युक्त शुभ सुवर्णमय रथ पर आरूढ होकर उत्तम तिथि, शुभ नक्षत्र एवं गुणयुक्त मुहूर्त में द्वारका की यात्रा आरम्भ की। उस समय सात्यकि भी श्रीकृष्ण के पीछे बैठकर यात्रा कर रहे थे और सारथि दारुक आगे था। द्वारका पहुँचने पर श्रीकृष्ण ने राजा उग्रसेन, पिता वसुदेव, और माता देवकी को प्रणाम करके बलराम जी के चरणों में मस्तक झुकाया। उन्होंने प्रद्युम्न, साम्ब, निशठ, अनिरुद्ध तथा भानु आदि को स्नेहपूर्वक हृदय से लगाया। इस प्रकार सब से मिलकर और बड़ों की आज्ञा लेकर उन्होंने रुक्मिणी के भवन में प्रवेश किया। इधर महाभाग मय ने भी धर्मपुत्र युधिष्ठिर के लिये इन्द्रप्रस्थ में विधिपूर्वक सम्पूर्ण रत्नों से विभूषित सभामण्डप बनाने की मन

ही मन कल्पना की। (२. २)।

भगवद्यानपर्वन्, महाभारत के ६२ वें अवान्तर पर्व का नाम है : "अपने सभी भाइयों और सभासदों के साथ युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण के पास आकर उनसे पुत्रोंसहित राजा धृतराष्ट्र के कुटिल अभिप्रायों का वर्णन किया। युधिष्ठिर ने बताया कि राजा धृतराष्ट्र का लोभ इतना बढ़ गया है कि वे दुर्योधन की हाँ में हाँ मिलाते हैं और अपना ही प्रिय कार्य करते हुये पाण्डवों के साथ मिथ्या व्यवहार कर रहे हैं। युधिष्ठिर ने कहा : 'यद्यपि काशि, चेदि, पाञ्चाल और मत्स्य देश के वीर हमारे सहायक हैं, और आप हम लोगों के रक्षक तथा स्वामी हैं, तथापि मैंने केवल पाँच गाँव ही अपने लिये माँगा था। मैंने धृतराष्ट्र से अविस्थल, वृकस्थल, माकन्दी, वारणावत और अन्तिम पाँचवा कोई भी गाँव देने का निवेदन किया था किन्तु दुरात्मा दुर्योधन इन गाँवों तक को देना स्वीकार नहीं कर रहा है।' तदनन्तर युधिष्ठिर ने क्षत्रियों की कुटिलता का वर्णन करते हुये राजधर्म की चर्चा की। युधिष्ठिर की बात सुनकर श्रीकृष्ण पाण्डवों के दूत बनकर धृतराष्ट्र के पास जाने के लिये तैयार हुये। युधिष्ठिर ने भी इस प्रस्ताव का अनुमोदन किया (५. ७२)।

"कौरवों के पापकर्मों का उल्लेख करते हुये श्रीकृष्ण ने कहा कि पाण्डवों और कौरवों के बीच युद्ध अवश्यम्भावी है। उस समय के सभी लक्षण (शकुन) इस बात का संकेत कर रहे थे। अतः उन्होंने युधिष्ठिर से युद्ध की तैयारी करने तथा सभी आवश्यक सामग्रियाँ, शस्त्र, सेना आदि एकत्र करने के लिये कहा। (५. ७३)।

"भीमसेन ने श्रीकृष्ण से निवेदन किया कि वे कौरवों के बीच वैसी ही बातें करें जिससे दोनों पक्षों में शान्ति स्थापित हो सके। उन्होंने कहा कि युद्ध की बात करके कौरवों को भयभीत करना उचित नहीं होगा, क्योंकि भीमसेन के विचार से दुर्योधन अदूरदर्शी, निष्ठुर, परनिन्दक और दीर्घकाल तक मन में क्रोध को संचित रखने वाला पापात्मा व्यक्ति है जो मर जायगा किन्तु झुक नहीं सकेगा। भीम ने कहा : 'जिस प्रकार धर्म के विप्लव का समय उपस्थित होने पर तेज से प्रज्वलित होने वाले समृद्धिशाली असुरों में भयंकर कलह उत्पन्न हुआ था, उसी प्रकार हैहय, नीप, बलीह, दीसाक्ष, मत्स्य आदि देशों में अनेक कुलाङ्गार एवं नराधम क्षत्रिय युगान्त आने पर उत्पन्न हुये थे। यह दुर्योधन भी युग के अन्त में काल से प्रेरित होकर हमारे कुल के विनाश का कारण बन कर उत्पन्न हुआ है। अतः आप दुर्योधन से जो कुछ भी कहें वह कोमल एवं मधुर वाणी में कहें। इस प्रकार मैं शान्ति-स्थापना के लिये कह रहा हूँ। युधिष्ठिर भी शान्ति चाहते हैं तथा अर्जुन भी युद्ध के इच्छुक नहीं हैं। (५. ७४)।

"भीमसेन के मुख से इस प्रकार अभूतपूर्व मृदुतापूर्ण वचन सुनकर श्रीकृष्ण हँसने लगे। तब भीम को उत्तेजित करते हुये श्रीकृष्ण ने उनसे कहा : 'आज के पहले तो तुम हिंसा से ही प्रसन्न होने वाले क्रूर धृतराष्ट्र-पुत्रों को मसल डालने की इच्छा मन में लेकर सदा युद्ध की ही प्रशंसा किया करते थे। तुम अपने भाइयों के बीच में शपथपूर्वक बार-बार कहते थे कि जिस प्रकार सूर्य पूर्व दिशा में उदित होते हुये अपने तेजोमण्डल को प्रकट करते हैं और पश्चिम में वे ही अस्ताचल पर जाकर मेरु की परिक्रमा करते हैं, और उनके इस नियम में कोई अन्तर नहीं आता, उसी प्रकार तुम यह कहते थे कि अमर्षशील दुर्योधन के पास जाकर अपनी गदा से उसका प्राण ले लोगे — और तुम्हारे इस कथन में कोई अन्तर नहीं पड़ सकता। ऐसी प्रतिज्ञा करने वाले तुम अब शान्ति की बात कह रहे हो यह आश्चर्यजनक है। तुम्हारे चित्त में जो ग्लानि उत्पन्न हुई है वह तुम्हारे जैसे शूर-वीर के कदापि योग्य नहीं है, क्योंकि क्षत्रिय जिसे ओज एवं पराक्रम से प्राप्त नहीं करता उसे अपने उपभोग में नहीं लाता (५. ७५)।

"भीमसेन ने अपने पराक्रम का उल्लेख करते हुये कहा कि वह इस समय शान्ति तथा कौरवों के अत्याचार को सहन करने की बात कायरता वश नहीं बल्कि इस दृष्टि से कह रहे हैं कि भरत वंशियों का नाश न हो (५. ७६)।

"श्रीकृष्ण ने भीमसेन को आश्वासन देते हुये कहा : 'मैंने तो तुम्हारा मनोभाव जानने के लिये प्रेम से ये बातें कही थीं। तुम पर आक्षेप करने, पाण्डित्य, प्रदर्शित करने, क्रोध दिखाने अथवा व्याख्यान देने की इच्छा से कुछ नहीं कहा है (५. ७७)।

"अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा कि वे हृदय से दोनों पक्षों में शान्ति स्थापित करने का प्रयास करें। उन्होंने कहा : 'आप ऐसा प्रयत्न कीजिये जिससे कौरवों तथा पाण्डवों के दुःख का निवारण हो जाय। मेरा विश्वास है कि हमारे लिये हितकर कार्य करना आपके लिये दुष्कर नहीं है। यदि दुरात्मा दुर्योधन के प्रति आप को कुछ और करना अभीष्ट हो तो जैसी आपकी इच्छा होगी वह सब कार्य उसी रूप में सम्पन्न होगा।' तदनन्तर अर्जुन ने दुर्योधन के दुष्कृत्यों तथा द्रौपदी के प्रति अत्याचार का उल्लेख करते हुये श्रीकृष्ण से कहा : 'यदि आप अब कौरवों का वध ही श्रेष्ठ मानते हों तो वही शीघ्र से शीघ्र किया जाय। अतः आप पाण्डवों के लिये अब से करने योग्य जो उचित एवं हितकर कार्य मानते हों वही यथासम्भव शीघ्र आरम्भ कीजिये।' (५. ७८)।

"श्रीकृष्ण ने अर्जुन को आश्वस्त करते हुये कहा : 'मैं वही करने का प्रयास करूँगा जिससे कौरवों तथा पाण्डवों दोनों का संकट दूर हो, दोनों सुखी हों। इसमें सन्देह नहीं है कि शान्ति और युद्ध दोनों कार्यों में से किसी एक को हितकर समझ कर अपनाने का सम्पूर्ण दायित्व मेरे हाथ में आ गया है, तथापि इसमें प्रारब्ध की अनुकूलता अपेक्षित है, क्योंकि प्रारब्ध के विधान को बदल देना या टाल देना मेरे लिये सम्भव नहीं है। अपने सगे-सम्बन्धियों सहित दुर्योधन जब तक मारा नहीं जायगा तब तक वह राज्य-भाग देकर कदापि सन्धि नहीं करेगा। उसने मुझे भी तुम्हारी ओर से फोड़ने की अनेक बार चेष्टा की है। किन्तु मैंने उसके पापपूर्ण प्रस्ताव को कभी स्वीकार नहीं किया है। विराटनगर में गोहरण के समय तुम्हारे अज्ञातवास का वर्ष पूर्ण हो चुका था। उस समय भीष्म ने मार्ग में दुर्योधन से याचना की थी कि वह पाण्डवों को उनका राज्य दे दे किन्तु उसने इसे स्वीकार नहीं किया था। मुझे कौरवों के पास जाकर सर्वप्रथम सन्धि के लिये सब प्रकार से प्रयत्न करना है। यदि यह सफल न हुआ तो फिर मुझे यह विचार करना होगा कि दुरात्मा दुर्योधन को उसके पाप का दण्ड किस प्रकार दिया जाये।' (५. ७९)।

"नकुल ने श्रीकृष्ण से कहा : 'आपने युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन की बातें सुन लीं किन्तु इन सब को पीछे छोड़कर और विपक्षियों के मत को अच्छी तरह सुनकर आपको समय के अनुसार जो कर्तव्य उचित प्रतीत हो वही करें। आप कौरवों के बीच में सबसे पहले सान्त्वनापूर्ण बातें कहियेगा और अन्त में युद्ध का भय भी दिखाइयेगा जिससे दुर्योधन के मन में व्यथा न हो। कौन ऐसा मनुष्य है जो युद्ध में युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, सहदेव, बलराम, सात्यकि, विराट आदि का सामना कर सके। आप वहाँ केवल जाने मात्र से धर्मराज के अभीष्ट मनोरथ को सिद्ध कर देंगे, इसमें संशय नहीं है। विदुर जी और आप किसी भी बिगड़ते कार्य को सिद्धि के मार्ग पर लाने की पूर्ण क्षमता रखते हैं।' (५. ८०)।

"द्रौपदी के अपमान को दृष्टि में रखकर सहदेव ने श्रीकृष्ण से कहा कि वे दोनों पक्षों के बीच निर्णायक युद्ध कराने का ही प्रयास करें। सात्यकि ने भी सहदेव के प्रस्ताव का अनुमोदन किया। वहाँ उपस्थित अन्य सब योद्धाओं ने भी इसी पक्ष में अपना मत दिया (५. ८१)।

"धार्तराष्ट्रों के अत्याचार का अश्रुपूरित नेत्रों से उल्लेख करते हुये कृष्णा ने भी सहदेव और सात्यकि के मत का समर्थन किया। उसने कहा कि जब दुर्योधन ने अविस्थल आदि पाँच गाँव भी माँगने पर नहीं दिया तब कौरवों के पास जा कर सन्धि की याचना करना उचित नहीं है। श्रीकृष्ण ने द्रौपदी को सांत्वना देते हुये कहा : 'युधिष्ठिर की आज्ञा तथा विधाता के रचे हुये अदृष्ट से प्रेरित हो भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव को साथ लेकर मैं भी वही करूँगा जो तुम्हें अभीष्ट है। यदि कालग्रसित होने वाले धृतराष्ट्र पुत्र मेरी बात नहीं सुनेंगे तो वे मारे जाकर धरती पर लोटेंगे

और कुत्तों तथा शृगालों के भोजन बनेंगे। तुम शीघ्र ही देखोगी कि सारे शत्रु मार डाले गये और तुम्हारे पति राज्यलक्ष्मी से सम्पन्न हैं।' (५. ८२)।

"अर्जुन ने एक बार फिर श्रीकृष्ण से शान्ति-प्रयास करने का निवेदन किया। तदनन्तर जब प्रातःकाल होने पर सूर्यदेव की किरणें सब ओर फैल गईं तब कार्तिक मास के रेवती नक्षत्र में मैत्र नामक मुहूर्त के उपस्थित होने पर श्रीकृष्ण ने अपनी यात्रा आरम्भ की। उन दिनों शरदऋतु का अन्त और हेमन्त का आरम्भ हो रहा था (ऋतुगत प्रकृति का वर्णन)। उस समय श्रीकृष्ण ने शिनिपौत्र सात्यकि को अपना रथ सुसज्जित कराने की आज्ञा दी (रथ और उसके आयुधों आदि का वर्णन)। श्रीकृष्ण के सेवकों ने शैब्य, सुग्रीव, मेघपुष्प तथा बलाहक नामक चार घोड़ों को स्नान कराकर रथ में जोत दिया। मेरु पर्वत के शिखरों की भाँति सुवर्ण प्रभा से सुशोभित तथा मेघ और दुन्दुभियों के समान गम्भीर नाद करने वाले उस रथ पर, भगवान् श्रीकृष्ण आरूढ़ हुये। सात्यकि को भी उसी रथ पर बैठा कर पुरुषोत्तम ने प्रस्थान किया। उस समय अनेक शुभ शकुन प्रकट हुये (शकुनों का वर्णन)। वसिष्ठ, वामदेव, नारद, वाल्मीकि आदि अनेक देवर्षियों और ब्रह्मर्षियों ने आकर श्रीकृष्ण की दक्षिणावर्त परिक्रमा की। श्रीकृष्ण के जाते समय उन्हें पहुँचाने के लिये युधिष्ठिर, तथा अन्य पाण्डवगण भी पीछे पीछे चले। कुछ दूर जाने के बाद युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण से कुन्ती का कुशल-समाचार पूछने तथा अपना प्रणाम निवेदित करने के लिये कहा। अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा कि यद्यपि वे शान्ति चाहते हैं तथापि यदि दुर्योधन ने पाण्डवों का अधिकार देना स्वीकार नहीं किया तो वे कौरव पक्ष के सम्पूर्ण क्षत्रियों का संहार कर डालेंगे। अर्जुन के ऐसा कहने पर भीम को अत्यधिक हर्ष हुआ और वे जोर-जोर से सिंहनाद करने लगे जिसे सुनकर समस्त धनुर्धर भयभीत होकर थर-थर काँपने लगे। उनके सभी वाहनों ने भी भय से मलमूत्र कर दिया। इस प्रकार श्रीकृष्ण से वार्तालाप करके उन्हें अपना निश्चय बताने के बाद जब सब लौट आये तब दारुक के हाँकने पर भगवान् वासुदेव के रथाश्व अत्यन्त वेग से चलने लगे। तदनन्तर मार्ग में श्रीकृष्ण ने कुछ महर्षियों को उपस्थित देखा जो मार्ग में दोनों ओर खड़े थे। रथ से उतर श्रीकृष्ण ने उन सब को प्रणाम किया और अपने योग्य सेवा की आज्ञा माँगा। उस समय देवराज तथा दैत्यराज के भी सखा जमदग्निनन्दन परशुराम ने ऋषियों की ओर से श्रीकृष्ण से कहा : 'केशव! जिन्होंने पुरातन देवासुर संग्राम को अपनी आँखों से देखा है वे पुण्यात्मा देवर्षिगण, अनेक शास्त्रों के विद्वान् ब्रह्मर्षिगण, तथा अनेक अन्य तपस्वी सम्पूर्ण दिशाओं से एकत्र हुये क्षत्रिय नरेशों को, सभा में बैठे हुये भूपालों को और आप भगवान् जनार्दन को देखना चाहते हैं। इस उद्देश्य से हम सब भी हस्तिनापुर चल रहे हैं। वहाँ कौरवों तथा अन्य नरेशों की मण्डली में आपके द्वारा कही जाने वाली धर्म और अर्थ से युक्त बातों को हम लोग सुनना चाहते हैं। अब हम लोग आपसे विदा ले रहे हैं किन्तु जब कौरव सभा में पधार कर आप दिव्य आसन पर विराजमान होंगे तब उसी समय बल और तेज से सम्पन्न आपके श्री अंगों का हम पुनः दर्शन करेंगे।' (५. ८३)।

"श्रीकृष्ण के प्रस्थान करते समय दस महारथी, एक सहस्र पदाती, एक सहस्र अश्वारोही सैनिक तथा प्रचुर खाद्य सामग्री सहित शताधिक सेवक उनके साथ गये। श्रीकृष्ण के जाते समय प्रकट हुये शुभाशुभ शकुनों का उल्लेख करते हुये वैशम्पायन जी ने बताया कि यद्यपि मार्ग में अनेक अपशकुन प्रकट हुये किन्तु श्रीकृष्ण जहाँ जहाँ जाते वहाँ वे अपशकुन समाप्त होकर शुभ शकुन प्रकट हो जाते थे। वृकस्थल में पहुँच कर श्रीकृष्ण ने रात्रि विश्राम किया (५. ८४)।

"दूतों के द्वारा मधुसूदन के आगमन का समाचर जान कर धृतराष्ट्र के शरीर में रोमाञ्च हो आया। उन्होंने भीष्म, द्रोण, सञ्जय, तथा विदुर का सत्कार करने के बाद दुर्योधन से इस प्रकार कहा : 'पाण्डवों की ओर से श्रीकृष्ण यहाँ आने वाले हैं। उनका यहाँ सम्मान होना चाहिये। श्रीकृष्ण यदि हमारे सत्कार से सन्तुष्ट हो जायँगे तो हम समस्त राजाओं में उनसे अपने सम्पूर्ण मनोरथ प्राप्त कर लेंगे। तुम उनके स्वागत-सत्कार के लिये मार्ग में अनेक विश्रामस्थान बनाओ और उनमें सब प्रकार की उपभोग-सामग्री प्रस्तुत करो।' भीष्म, आदि ने भी धृतराष्ट्र के इस विचार का समर्थन किया। दुर्योधन ने तब अत्यन्त दुर्लभ और देवोचित व्यवस्था करके धृतराष्ट्र को सूचित किया। परन्तु श्रीकृष्ण ने उन विश्रामस्थलों तथा नाना प्रकार के रत्नों की ओर दृष्टिपात तक नहीं किया और हस्तिनापुर की ओर बढ़ते रहे। (५. ८५)।

"जब श्रीकृष्ण वृकस्थल में रुककर दूसरे दिन प्रातःकाल हस्तिनापुर पहुँचने का विचार कर रहे थे तब धृतराष्ट्र ने विदुर से श्रीकृष्ण की अगवानी करके उन्हें भेंट देने एवं दुःशासन के महल में ठहराने का विचार प्रकट किया (५. ८६)।

"विदुर ने धृतराष्ट्र को समझाते हुये कहा कि श्रीकृष्ण को अतिथि रूप में पाकर उन्हें जो प्रचुर भेंट आदि देना चाहते हैं वह उचित नहीं है। आप यह सब धन देकर उन्हें अपने पक्ष में करना चाहते हैं किन्तु आप उन्हें किसी भी युक्ति से पाण्डवों से पृथक नहीं कर सकते। विदुरजी ने कहा कि आपकी दी हुई वस्तुओं में से जल से भरे हुये कलश, पाँव धोने के लिये जल तथा कुशल प्रश्न को छोड़कर दूसरी किसी भी वस्तु को श्रीकृष्ण स्वीकार नहीं करेंगे।' वे दुर्योधन तथा पाण्डवों में सन्धि कराना चाहते हैं अतः उनके इस कथन का पालन ही उनका सर्वश्रेष्ठ आतिथ्य होगा। (५. ८७)।

"दुर्योधन ने भी विदुर की बातों का समर्थन किया। उसने कहा कि श्रीकृष्ण को पाण्डवों से पृथक करना असम्भव है। अतः उसने श्रीकृष्ण को रत्नादि उपहार भेंट करना भी अनुचित बताते हुये कहा कि इस प्रकार वह यह समझेंगे कि कौरव भयभीत होकर उनका सत्कार कर रहे हैं। दुर्योधन की बात सुनकर भीष्म ने श्रीकृष्ण की अवहेलना न करने का परामर्श देते हुये कहा कि वे जो कुछ कहें उसे निःशंक होकर स्वीकार करना ही अधिक उचित होगा। उन्हें मध्यस्थ बनाकर कौरवों को शीघ्र पाण्डवों के साथ सन्धि कर लेनी चाहिये। किन्तु दुर्योधन ने इसका विरोध करते हुये श्रीकृष्ण को हस्तिनापुर आने पर बन्दी बना लेने का अपना निश्चय व्यक्त किया। दुर्योधन की श्रीकृष्ण के साथ छल करने की बात सुनकर धृतराष्ट्र अपने मन्त्रियों सहित अत्यन्त उदास हो गये। उन्होंने श्रीकृष्ण को बन्दी बनाने के विरुद्ध मत व्यक्त करते हुये कहा कि जब वे एक दूत के रूप में आ रहे हैं, और उन्होंने कौरवों का कोई अपराध भी नहीं किया है तब उन्हें बन्दी बनाना नितान्त अनुचित होगा। भीष्म भी दुर्योधन की कुमति पर रोष व्यक्त करते हुये सभाभवन से उठकर चले गये। (५. ८८)।

"वृकस्थल में प्रातःकाल उठकर भगवान् श्रीकृष्ण ने हस्तिनापुर के लिये प्रस्थान किया। दुर्योधन के अतिरिक्त धृतराष्ट्र के सभी पुत्र, तथा भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य आदि सुसज्जित होकर श्रीकृष्ण की अगवानी के लिये उपस्थित हुये। भीष्म तथा द्रोण आदि ने मार्ग में ही मिलकर श्रीकृष्ण का स्वागत किया। उस समय भगवान् वासुदेव के दर्शन की इच्छा से सभी पुरवासी भी मार्ग में एकत्र हो गये थे। (स्वागतकारियों का विस्तृत वर्णन)। श्रीकृष्ण हस्तिनापुर आने के बाद धृतराष्ट्र के भवन में गये जहाँ धृतराष्ट्र आदि सभी ने अपने अपने स्थानों पर खड़े होकर उनका स्वागत किया। सब से मिलने के बाद श्रीकृष्ण ने विदुर जी के रमणीय गृह में प्रवेश किया। विदुर जी ने उनका स्वागत-सत्कार करने के बाद पाण्डवों का कुशल क्षेम पूछा (५. ८९)।

तीसरे पहर श्रीकृष्ण कुन्ती के पास गये। उन्हें आते देखकर कुन्ती उनके गले लग गईं और अपने पुत्रों का स्मरण कर के फूट-फूट कर रोने लगीं। युधिष्ठिर की अम्बरीष, मान्धाता, ययाति आदि से तुलना करते हुये श्रीकृष्ण से उनका कुशल-क्षेम पूछा। भीम के पराक्रम तथा शौर्य की चर्चा और अर्जुन की भी कार्तवीर्य के साथ तुलना करते हुये उनका भी समाचार जानना चाहा। नकुल, सहदेव और द्रौपदी के सम्बन्ध में भी पूछते हुये उन्होंने दुःशासन द्वारा द्रौपदी के प्रति किये गये अत्याचारों

का उल्लेख किया। किन्तु उन्होंने विदुरजी की विशेष रूप से प्रशंसा की। कुन्ती ने बताया कि लगभग १४ वर्ष पूर्व दुर्योधन ने उनके पुत्रों को वनवास की आज्ञा दी थी और तब से ही उन्होंने उन पुत्रों को नहीं देखा है। अर्जुन के जन्मकाल में सूतिकागृह में हुई आकाशवाणी की चर्चा करते हुये कुन्ती ने कहा कि उस आकाशवाणी ने यह घोषणा की थी कि अर्जुन सम्पूर्ण पृथिवी पर विजय प्राप्त कर लेंगे। कुन्ती ने कहा : 'मैं उस आकाशवाणी को दोष नहीं देती अपितु विष्णुस्वरूप धर्म को ही नमस्कार करती हूँ। श्रीकृष्ण ! तुम युधिष्ठिर, अर्जुन आदि से कौरवों से प्रतिशोध लेने के लिये कहना। उन लोगों से कहना कि समय आने पर वे अपने प्राणों का त्याग करने के लिये भी उद्यत रहें।' इस प्रकार अपने पुत्रों को क्षत्रिय धर्म सम्बन्धी संदेश देने के बाद कुन्ती ने श्रीकृष्ण से भी पाण्डवों की रक्षा करने का निवेदन किया। श्रीकृष्ण ने कुन्ती को सान्त्वना दी और तदनन्तर दुर्योधन के घर की ओर प्रस्थान किया (५. ९०)।

"श्रीकृष्ण दुर्योधन के भव्य भवन में आये (भवन की शोभा का वर्णन)। वहाँ उन्होंने दुःशासन, कर्ण, शकुनि आदि को भी विराजमान देखा। दुर्योधन ने श्रीकृष्ण को अपने साथ भोजन करने का निमन्त्रण दिया, किन्तु कृष्ण ने उसे अस्वीकार कर दिया क्योंकि दुर्योधन पाण्डवों के प्रति द्वेष और घृणा की भावना रखता था। तदन्तर श्रीकृष्ण ने विदुर के घर आकर वहीं भोजन किया। वहीं द्रोणाचार्य भी उनसे मिलने आये (५. ९१)।

"विदुरजी ने श्रीकृष्ण को दुर्योधन की दुष्ट प्रकृति के प्रति सतर्क करते हुए बताया कि वह कभी भी शान्ति सन्धि करने के लिये तैयार नहीं होगा क्योंकि उसे भीष्म आदि की शक्ति पर पूर्ण विश्वास है। विदुरजी ने यह भी बताया कि दुर्योधन श्रीकृष्ण पर भी विश्वास नहीं करता अतः कौरव सभा में जाकर शान्ति प्रयास को उन्होंने व्यर्थ बताया (५. ९२)।

"श्रीकृष्ण ने कहा कि वह दुर्योधन की प्रकृति को भली भाँति जानते हैं। उन्होंने विदुर से कहा : 'मैं निष्कपट भाव से धृतराष्ट्र के पुत्रों, पाण्डवों तथा भूमण्डल के सभी क्षत्रियों के हित का ही प्रयत्न करूँगा। इस प्रकार हितसाधन का प्रयत्न करने पर भी यदि दुर्योधन मुझ पर शंका करेगा तो भी मेरे मन को प्रसन्नता होगी और मैं अपने कर्तव्य-भार से उऋण हो जाऊँगा। यदि पाण्डवों के स्वार्थ में बाधा न आने देकर मैं कौरवों तथा पाण्डवों में यथायोग्य सन्धि कराने में सफल हो गया तो यह महान् पुण्य का कार्य होगा और कौरव भी मृत्यु के पाश से मुक्त हो जायँगे। मैं यदि कुपित हो जाऊँ तो ये समस्त राजा लोग एक साथ मिलकर भी मेरा सामना नहीं कर सकेंगे।' विदुर से इस प्रकार बातें करने के बाद श्रीकृष्ण ने विश्राम किया (५. ९३)।

"प्रातःकाल दुर्योधन और शकुनि ने श्रीकृष्ण के पास आकर उन्हें धृतराष्ट्र की सभा में चलने का निमन्त्रण दिया जहाँ भीष्म आदि भी उपस्थित थे। तदनन्तर श्रीकृष्ण अपने सुसज्जित रथ में आरूढ होकर धृतराष्ट्र की सभा में जाने के लिये प्रस्थित हुये (श्रीकृष्ण के रथ तथा रथाश्वों का विस्तृत का वर्णन)। श्रीकृष्ण के रथ के आगे-आगे सहस्रों सैनिक चले। उनके पीछे भी पाँच सौ हाथी और सहस्रों रथ जा रहे थे। इस प्रकार कौरवों से घिरे हुये और वृष्णि वंशी वीरों से सुरक्षित होकर श्रीकृष्ण दारुक को सारथि बनाकर कौरवसभा के लिये चलें। उनके पीछे अपने रथ में विदुरजी और दुर्योधन तथा शकुनि भी दूसरे रथ पर बैठ कर चल रहे थे। सात्यकि, कृतवर्मा तथा वृष्णिवंश के अन्य रथी, हाथी-घोड़ों पर सवार अन्यान्य सैनिक भी पीछे-पीछे चले। सभा के द्वार पर पहुँचकर श्रीकृष्ण ने विदुर और सात्यकि के साथ अन्दर प्रवेश किया। उस समय श्रीकृष्ण के आगे-आगे कर्ण और दुर्योधन थे तथा उनके पीछे कृतवर्मा तथा अन्य वृष्णिवंशी वीर। श्रीकृष्ण को देखकर भीष्म, द्रोण और धृतराष्ट्र ने अपने-अपने आसन से उठकर उनका स्वागत किया। वहाँ श्रीकृष्ण ने जब नारद आदि महर्षियों को भी उपस्थित देखा तब उन्होंने भीष्म से उन सम्मानित महर्षियों को सत्कार-पूर्वक आसन देकर निमन्त्रित करने के लिये कहा। दुःशासन ने सात्यकि को तथा विविंशति ने कृतवर्मा को स्वर्णमय आसन प्रदान किया। अमर्ष में भरे हुये दुर्योधन और कर्ण दोनों एक आसन पर श्रीकृष्ण के पास ही विराजमान थे। (५. ९४)।

"कौरवसभा में श्रीकृष्ण ने प्रभावशाली भाषण देते हुये पाण्डवों की उचित शिकायतों और माँगों को प्रस्तुत किया। उन्होंने कहा कि इस समय अत्यन्त भयंकर आपत्ति कौरवों में ही प्रकट हुई है। यदि इसकी उपेक्षा की गई तो समस्त भूमण्डल का विध्वंस हो जायगा। पाण्डवों के साथ सन्धि करके और उनसे सुरक्षित होकर देवता सहित इन्द्र भी कौरवों पर विजय नहीं प्राप्त कर सकेंगे। उन्होंने धृतराष्ट्र को सम्बोधित करते हुये कहा : 'आप यदि अपने समस्त पुत्रों – कौरवों और पाण्डवों – से मिलकर रहें तो इस सम्पूर्ण पृथिवी का उपभोग करेंगे। युद्ध आरम्भ होने पर तो महान संहार ही होगा। अतः इस जगत की रक्षा कीजिये। पाण्डवों को यथोचित पैतृक राज्य-भाग देकर अपने पुत्रों के साथ सफल-मनोरथ हो वाञ्छित सुख-भोग कीजिये। आपके पुत्र लोभ में अत्यन्त आसक्त हैं अतः उन पर नियन्त्रण करना आवश्यक है। पाण्डव आपकी सेवा के लिये भी तत्पर हैं और युद्ध के लिये भी प्रस्तुत हैं। इस स्थिति में जो आप के लिये विशेष हितकर प्रतीत हो उसी मार्ग का अवलम्बन कीजिये।' श्रीकृष्ण के इस कथन का वहाँ उपस्थित समस्त राजाओं ने हृदय से आदर किया किन्तु उत्तर में कोई भी कुछ कहने के लिये अग्रसर न हो सका (५. ९५)।

"जब श्रीकृष्ण के वचनों को सुनकर सभी उपस्थित नृपतिगण आश्चर्य-चकित होकर मौन हो गये तब परशुराम जी ने कौरवसभा में इस प्रकार कहा : 'पूर्वकाल की बात है, दम्भोद्भव नाम से प्रसिद्ध एक सार्वभौम सम्राट हुये थे। वे प्रातःकाल उठने पर प्रतिदिन ब्राह्मणों से यह पूछा करते थे कि क्या इस जगत में कोई भी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र है जो उनके समान या उनसे श्रेष्ठतर हो। इस प्रकार प्रश्न करते और महान दर्प से उन्मत्त होकर वे पृथिवी पर विचरते थे (देखिये दम्भोद्भवोपाख्यान वस्था०)। परशुरामजी ने इस कथा का वर्णन करने बाद कहा : पूर्वकाल में महात्मा नर ने दम्भोद्भव का मानमर्दन करके महान कार्य किया था। उनसे भी बहुत गुणों के कारण भगवान् नारायण श्रेष्ठ हैं। अतः जब तक श्रेष्ठ धनुष गाण्डीव पर अस्त्रों का सन्धान नहीं किया जाता तब तक तुम (धृतराष्ट्र) अभिमान छोड़कर अर्जुन से मिल जाओ। आठ प्रकार के अस्त्रों (नामोल्लेख) से विद्ध होने पर सभी मनुष्य मृत्यु को प्राप्त होते हैं। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मान, मात्सर्य और अहंकार – ये आठ दोष हैं जिनके प्रतीक रूप ही उपरोक्त आठ अस्त्र हैं। राजन् ! भगवान् नारायण जिनके बन्धु हैं वे नर रूप अर्जुन युद्ध में दुःसह हैं। यदि तुम इस बात को इस रूप में जानते हो और मुझ पर तुम्हें सन्देह नहीं है तो मेरे कहने से श्रेष्ठ बुद्धि का आश्रय लेकर पाण्डवों के साथ सन्धि कर लो।' (५. ९६)।

"कण्वमुनि ने दुर्योधन को सन्धि के लिये समझाते हुये मातलि का उपाख्यान सुनाया (५. ९७-१०५)। जब कण्व ने यह उपाख्यान समाप्त करते हुये दुर्योधन से कहा कि वह पाण्डवों से सन्धि करले तब उसने अहंकार प्रदर्शित करते हुये कण्व मुनि की अवहेलना की। उस समय श्रीकृष्ण, भीष्म और नारद जी ने दुर्योधन की भर्त्सना करते हुये उसे समझाने का प्रयास किया। नारद जी ने इस प्रसंग में गालवचरित (देखिये वस्था०) तथा ययाति (देखिये वस्था) के पतन की कथायें सुनाया (५. १०-१२३)।

"धृतराष्ट्र ने भगवान् श्रीकृष्ण के समक्ष अपनी विवशता प्रकट करते हुये स्वयं उन्हीं से दुर्योधन को समझाने का निवेदन किया। उन्होंने श्रीकृष्ण से कहा : 'जनार्दन ! दुरात्मा दुर्योधन की बुद्धि पाप में लिप्त है। आप ही उसे समझाइये।' तब श्रीकृष्ण ने दुर्योधन को समझाते हुये कहा : 'तुम पाण्डवों के साथ सन्धि कर लो। राजा धृतराष्ट्र को भी यही प्रिय एवं हितकर प्रतीत हो रहा है। पितामह भीष्म, आचार्य द्रोण, विदुर, कृपाचार्य, सोमदत्त, आदि का भी ऐसा ही मत है। तुम, दुःशासन, कर्ण और शकुनि

आदि पर आश्रित होकर उन्नति की इच्छा रखते हो किन्तु ये लोग तुम्हें ज्ञान, धर्म और अर्थ की प्राप्ति कराने में समर्थ नहीं हैं। भीष्म, द्रोण, कर्ण, अश्वत्थामा, जयद्रथ आदि अन्यान्य सभी योद्धा मिलकर भी अर्जुन का सामना करने में समर्थ नहीं हैं। सम्पूर्ण देवता और असुर भी युद्ध में अर्जुन को जीत नहीं सकते। वे मनुष्यों और गन्धर्वों द्वारा भी अजेय हैं। जिन्होंने खाण्डव वन में गन्धर्वों, यक्षों, असुरों और नागों सहित सम्पूर्ण देवताओं को जीत लिया था उन अर्जुन के साथ कौन मनुष्य युद्ध कर सकता है। इसके अतिरिक्त विराटनगर में जो अनेक महारथी योद्धाओं के साथ अर्जुन के युद्ध की अत्यन्त अद्भुत घटना सुनी जाती है वह एक ही युद्ध भावी परिणाम को बताने के लिये पर्याप्त है। अतः तुम पाण्डवों को आधा राज्य दे दो और स्वयं भी विशाल सम्पत्ति का उपभोग करो। पाण्डवों के साथ सन्धि करके और अपने हितैषी सुहृदों की बात मान कर मित्रों के साथ प्रसन्नतापूर्वक रहते हुये तुम दीर्घकाल तक कल्याण के भागी बने रहोगे। (५. १२४)।

"भीष्म, द्रोण, विदुर और धृतराष्ट्र ने भी दुर्योधन को समझाते हुये पाण्डवों से सन्धि करने के लिये कहा। धृतराष्ट्र ने दुर्योधन से कहा : 'श्रीकृष्ण से मिलकर तुम युधिष्ठिर के पास जाओ और पूर्ण रूप से मंगल सम्पादन करो जिससे भरतवंशियों को कोई क्षति न उठानी पड़े। श्रीकृष्ण को मध्यस्थ बनाकर शान्ति धारण करो। यदि तुम श्री कृष्ण का तिरस्कार करोगे तो तुम्हारा पराभव हुये बिना नहीं रह सकता। (५. १२५)।

"भीष्म और द्रोणाचार्य ने दुर्योधन को समझाते हुये श्रीकृष्ण को रुष्ट न करने का आग्रह किया (५. १२६)।

"दुर्योधन ने श्रीकृष्ण से कहा : आपको अच्छी तरह सोच-विचार कर ऐसी बातें कहनी चाहिये। आप तो विशेष रूप से मुझे ही दोषी ठहराकर मेरी निन्दा कर रहे हैं। आप पाण्डवों के प्रेम की दुहाई देकर सदा अकारण हमारी निन्दा करते हैं। पाण्डवों को जूए का खेल अत्यधिक प्रिय था इसलिये वे उसमें प्रवृत्त हुये। फिर मामा शकुनि ने उनका राज्य जीत लिया तो इसमें मेरा क्या दोष है। मैं तो मातंग मुनि के इस वचन को ग्राह्य समझता हूँ कि वीर पुरुष को चाहिये कि वह सदा उद्योग ही करे, किसी के सामने नत-मस्तक न हो।' इस प्रकार कह कर दुर्योधन ने अपने पक्ष के वीरों को दुर्जेय बताया (५. १२७)।

"दुर्योधन की बात सुनकर श्रीकृष्ण के नेत्र क्रोध से लाल हो गये। उन्होंने उसे सम्बोधित करते हुये उसके पाण्डवों के प्रति किये गये अनैतिक और पापपूर्ण व्यवहारों का उल्लेख किया। दुःशासन ने उस समय दुर्योधन से कहा : 'यदि आप अपनी इच्छा से पाण्डवों के साथ सन्धि नहीं करेंगे तो ऐसा प्रतीत होता है कि कौरव लोग आपको बाँध कर युधिष्ठिर के हाथ में सौंप देंगे। भीष्म, आचार्य द्रोण और पिताजी भी ऐसा लगता है कर्ण को, आपको और मुझे—इन तीनों को पाण्डवों के अधिकार में दे देंगे।' उस समय दुर्योधन क्रुद्ध होकर विदुर, धृतराष्ट्र, भीष्म, द्रोण आदि सबका अनादर करते हुये सभाभवन से उठ कर बाहर चला गया। दुर्योधन को जाते देख उसके भाई, मन्त्री तथा सहयोगी नरेश सब के सब उठकर उसके साथ चल दिये। तब श्रीकृष्ण ने भीष्म और द्रोण आदि से इस प्रकार कहा : 'कुरुकुल के सभी बड़े-बूढ़ों का यह बहुत बड़ा अन्याय है कि आप लोग इस मूर्ख दुर्योधन को राजा के पद पर बिठाकर अब इसका बलपूर्वक नियन्त्रण नहीं कर रहे हैं।' श्रीकृष्ण ने कंस की चर्चा करते हुये बताया कि किस प्रकार उन्होंने स्वयं कंसवध करके उग्रसेन को यादवों, अन्धकों और वृष्णियों के हित में राजा बनाया था। श्रीकृष्ण ने एक अन्य उदाहरण देते हुये कहा कि, एक समय जब देवता और असुर युद्ध के लिये मोर्चा बाँधकर खड़े थे तब सारा संसार दो भागों में विभक्त होकर विनाश के गर्त में गिरना चाहता था। उस समय ब्रह्मा ने धर्मराज से दैत्यों और दानवों को बाँधकर वरुण देव को सौंप देने के लिये कहा था। यमराज ने वैसा ही किया और तब से वरुण उन्हें धर्मपाश और वारुणपाश में बाँधकर उन दानवों को समुद्र की सीमा में ही रखते हैं। श्रीकृष्ण ने कहा : 'उसी प्रकार आपलोग दुर्योधन, कर्ण, सुबलपुत्र शकुनि तथा दुःशासन को बन्दी बनाकर पाण्डवों के हाथ में दे दें। समस्त कुल की भलाई के लिये एक पुरुष को, एक गाँव के हित के लिये कुल को, और आत्मकल्याण के लिये समस्त भूमण्डल को त्याग देना चाहिये (५. १२८)।

"धृतराष्ट्र ने विदुर से गान्धारी को बुलवाया और उनसे दुर्योधन को समझाने के लिये कहा। तब गान्धारी ने धृतराष्ट्र से इस प्रकार कहा : 'आपको अपना पुत्र अत्यन्त प्रिय है अतः वर्तमान परिस्थिति के लिये आप ही निन्दनीय हैं क्योंकि आप उसके पापपूर्ण विचारों को जानते हुये भी सदा उसी की बुद्धि का अनुसरण करते हैं।' गान्धारी ने धृतराष्ट्र से इस प्रकार कह कर विदुर जी से दुर्योधन को पुनः बुलवाया। उसके आ जाने पर गान्धारी ने उससे कहा : 'तुम्हारे पिता, पितामह भीष्म, द्रोणाचार्य, और विदुर तुमसे जो कुछ कहते हैं उसे स्वीकार करो। आपस की फूट के भय से पितामह भीष्म ने, तुम्हारे पिता ने और महाराज बाह्लीक ने पाण्डवों को राज्य का भाग प्रदान किया है। जिस समय भीष्म, कर्ण, द्रोण, कृपाचार्य तथा भीमसेन, अर्जुन और धृष्टद्युम्न कुपित होकर परस्पर युद्ध करेंगे उस समय सम्पूर्ण प्रजा का विनाश अवश्यम्भावी है। भीष्म, द्रोण आदि यह समझते हैं कि पाण्डवों का भी इस राज्य पर समान अधिकार है। इस संसार में केवल लोभ करने से किसी को धन की प्राप्ति नहीं होती। अतः तुम पाण्डवों के साथ सन्धि कर लो।' (५. १२९)।

"अपनी माता के शब्दों की अवहेलना करते हुये दुर्योधन क्रोधपूर्वक पुनः सभाभवन से बाहर चला गया और शकुनि से परामर्श करके श्रीकृष्ण को बन्दी बनाने का षड्यन्त्र करने लगा। उसने यह निश्चय किया कि इस प्रकार कृष्ण को बन्दी बना लेने से सोमकों सहित पाण्डव निरुत्साहित तथा हताश हो जायँगे। किन्तु सात्यकि ने दुर्योधन के षड्यन्त्र को जान लिया और कृतवर्मा से अपनी सेना तैयार कर लेने के लिये कहा। उन्होंने कृतवर्मा को भी कवचादि धारण कर सेना सहित सभाभवन के द्वार पर व्यूहाकार सन्नद्ध हो जाने के लिये कहा। तदनन्तर सात्यकि ने श्रीकृष्ण, धृतराष्ट्र और विदुर से किंचित मुसकराते हुये दुर्योधन के अभिप्राय को बताया। उस समय विदुर जी ने धृतराष्ट्र से कहा कि उनके सभी पुत्रों का अन्तकाल निकट आ गया है। उन्होंने श्रीकृष्ण के पराक्रम की भी चर्चा की। विदुर ने जब अपना मत प्रकट कर लिया तब श्रीकृष्ण ने धृतराष्ट्र से कहा कि यदि दुष्ट कौरव उन्हें बन्दी बना लेते हैं तो उससे युधिष्ठिर का उद्देश्य पूर्ण हो जायेगा। श्रीकृष्ण ने कौरवसभा को सम्बोधित करते हुये कहा : 'मैं आज ही इन कौरवों तथा इनके अनुगामियों को बन्दी बना कर कुन्तीपुत्रों के हाथ सौंप सकता हूँ। किन्तु क्रोध अथवा पापबुद्धि से होने वाला यह निन्दित कर्म मैं नहीं करूँगा। यह दुर्योधन जैसा चाहता है वैसा ही हो। मैं आपके सभी पुत्रों को इसके लिये आज्ञा देता हूँ। श्रीकृष्ण की बात सुनकर धृतराष्ट्र ने एक बार फिर विदुर जी से दुर्योधन को बुलाकर उसे फटकारते हुये कहा : 'देवता, मनुष्य, गन्धर्व, असुर और नाग भी संग्राम में जिनके वेग को सहन नहीं कर सकते उन भगवान् श्रीकृष्ण को क्या तू नहीं जानता ?' धृतराष्ट्र के ऐसा कहने पर विदुर जी ने भी अमर्ष में भर कर दुर्योधन से इस प्रकार कहा : 'सौभद्वार में द्विविद नामक वानरराज ने पत्थरों की बड़ी भारी वर्षा करके श्रीकृष्ण को आच्छादित कर दिया था। वह पराक्रमपूर्वक उन्हें बन्दी बनाना चाहता था, किन्तु सफल नहीं हो सका। इसी प्रकार प्राग्ज्योतिषपुर में गये हुये कृष्ण को दानवों सहित नरकासुर ने भी बन्दी बनाने की चेष्टा की थी परन्तु वह भी सफल नहीं हो सका। इसके विपरीत श्रीकृष्ण नरकासुर का ही वध करके उसके यहाँ से सहस्रों राजकन्याओं का उद्धार करके अपने साथ ले गये और उन सबके साथ विवाह कर लिया। निर्मोचन में छः सहस्र बड़े-बड़े असुरों को भगवान् ने पाश में बाँध लिया। बाल्यकाल में शकुनि पूतना का भी श्रीकृष्ण ने वध और गोवर्धन पर्वत को अपनी एक उँगली पर धारण किया था। अन्यान्य राक्षस और असुर भी श्रीकृष्ण के हाथों ही मृत्यु को प्राप्त हुये थे।

अतः तुम ऐसे व्यक्ति को कभी बन्दी नहीं बना सकते।' (५. १३०)।

"श्रीकृष्ण ने दुर्योधन को बताया कि वे अकेले नहीं हैं और उनके शरीर से ही असंख्य देवता, यक्ष, गन्धर्व आदि उत्पन्न होकर उसे दग्ध कर सकते हैं। इस प्रकार श्रीकृष्ण ने उस सभाभवन में अपने विराट रूप को प्रकट किया। उसे देखकर भीष्म, द्रोण, विदुर, सञ्जय, और महर्षियों को छोड़कर अन्य सभी सभासदों और नरेशों ने भय से अपनी आँखें बन्द कर लीं। भीष्म आदि उस रूप को देख सकें इसलिये कृष्ण ने उन्हें दिव्यदृष्टि प्रदान की थी। इस प्रकार अपने विराट रूप का दर्शन करा कर वह सात्यकि और कृतवर्मा के साथ बाहर चले गये। नारद आदि ऋषिगण भी अन्तर्धान हो गये। बाहर दारुक उनका दिव्य रथ तैयार करके उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। धृतराष्ट्र ने अपने को असहाय बताते हुये कृष्ण से क्षमा माँगी और कृष्ण ने भी उनसे विदा ली और कुन्ती के महल की ओर चले। उस समय भीष्म उनके पीछे-पीछे गये। (५. १३१)।

"कुन्ती ने कृष्ण के द्वारा पाण्डवों के लिये सन्देश देते हुये कहा : 'केशव! तुम युधिष्ठिर से कहना कि वह केवल मन्त्रपाठ और धर्म पर ही दृष्टि न रखकर क्षत्रिय धर्म का भी पालन करें। राजा दण्डनीति के प्रयोग में जब पूर्णतः न्याय से काम लेता है तब जगत् में सत्ययुग आ जाता है। इस प्रकार राजा ही सत्ययुग, त्रेता, द्वापर और कलि का स्रष्टा है। अपने सत्कर्मों के द्वारा सत्ययुग उपस्थित करने के कारण राजा को अक्षय स्वर्ग की प्राप्ति होती है। त्रेता की प्रवृत्ति करने से भी उसे स्वर्ग प्राप्त होता है किन्तु वह अक्षय नहीं होता। द्वापर उपस्थित करने से उसे यथाभाग पुण्य और पाप का फल प्राप्त होता है, परन्तु कलियुग की प्रवृत्ति करने से राजा को अत्यन्त कष्ट भोगना और अनेक वर्षों तक नरक में निवास करना पड़ता है। युधिष्ठिर के पिता-पितामहों ने जिनका पालन किया उन राजधर्मों की ओर भी उसे देखना चाहिये। वह जिसका आश्रय ले रहा है वह राजर्षियों का आचार अथवा राजधर्म नहीं है। वह युधिष्ठिर इस जिस बुद्धि के सहारे चल रहे हैं उसके लिये न तो उनके पिता पाण्डु ने, न मैंने, और न पितामह ने ही पहले कभी आशीर्वाद दिया था।' युधिष्ठिर के लिये इस प्रकार सन्देश देकर कुन्ती ने राजधर्म पर प्रकाश डाला (५. १३२)।

इस सन्दर्भ में कुन्ती ने विदुलोपाख्यान (देखिये वस्था०) सुनाया (५. १३३–१३६)।

"कुन्ती ने श्रीकृष्ण से अर्जुन को उनके जन्म के समय हुई भविष्यवाणी का स्मरण दिलाने के लिये कहा। उनके जन्म के समय यह आकाशवाणी सुनाई पड़ी थी कि कुन्ती का यह पुत्र इन्द्र के समान पराक्रमी होगा और भीमसेन के साथ समस्त कौरवों को जीत लेगा। श्रीकृष्ण के साथ रह कर यह पुत्र सम्पूर्ण भूमण्डल को जीत लेगा और इसका यश स्वर्गलोक तक फैल जायगा। यह पुत्र कौरवों को मारकर अपने पैतृक राज्यभाग का पुनरुद्धार तथा तीन अश्वमेध यज्ञों का अनुष्ठान करेगा। भीमसेन के लिये सन्देश देते हुये कुन्ती ने उनसे यह कहने के लिये कहा कि क्षत्राणी जिसके लिये पुत्र को जन्म देती है, उसका यह उपयुक्त अवसर आ गया है। नकुल और सहदेव के लिये यह सन्देश दिया कि वे प्राणों की बाजी लगाकर भी अपने पराक्रम से प्राप्त हुये भोगों का ही उपभोग करें। उन्हें द्रौपदी के साथ के किये गये अत्याचार को कभी नहीं भूलना चाहिये। कुन्ती ने कहा कि उसे राज्य छिन जाने का उतना दुःख नहीं है। जूए में हारने तथा वनवास होने का भी दुःख नहीं है। परन्तु भरी सभा में रजस्वला द्रौपदी के प्रति दुर्योधन ने जो कटुवचन कहे थे वही महान दुःख का कारण है। कुन्ती ने कहा कि भीम और अर्जुन साथ-साथ रहने पर यम के समान भयंकर हो जाते हैं और देवताओं को यमलोक पहुँचा सकते हैं। अतः इन दोनों को दुःशासन के कटुवचनों का स्मरण करके उसका प्रतिशोध लेना चाहिये। इस प्रकार कुन्ती से पाण्डवों के लिये सन्देश लेकर कृष्ण, भीष्म आदि से विदा लेकर और कर्ण को अपने रथ पर बैठाकर उससे दीर्घकाल तक परामर्श करते हुये सात्यकि के साथ वापस चलने को उद्यत हुये। परामर्श करने के पश्चात कर्ण को भी विदा करके वे दारुक द्वारा हाँके जाने वाले रथ पर बैठकर शीघ्र ही उपप्लव पहुँच गये। उनके चले जाने पर सब कौरव आपस में मिले और उनके महान् एवं आश्चर्यजनक बल-वैभव की चर्चा करने लगे। (५. १३७)।

"भीष्म और द्रोण ने दुर्योधन को उन सब बातों का स्मरण दिलाया जो कुन्ती ने कृष्ण से कहीं थीं। उन लोगों ने अर्जुन के पराक्रम और शौर्य की चर्चा करते हुये पाण्डवों से शान्ति सन्धि करने पर बल दिया। उस समय अनेक भयानक अपशकुन प्रकट हुये (५. १३८)।

"द्रोण की बात सुनकर दुर्योधन का मन उदास हो गया। वह द्रोण और भीष्म के सामने चुप होकर बैठ गया। भीष्म ने कहा कि गुरुजनों की सेवा के लिये उत्सुक और किसी का भी दोष न देखने वाले ब्राह्मणभक्त और सत्यवादी युधिष्ठिर से युद्ध करने से बढ़कर दुःख की और क्या बात होगी। द्रोण ने कहा कि अर्जुन उन्हें अपने पुत्र अश्वत्थामा से भी अधिक प्रिय हैं। उन्होंने दुर्योधन से कहा कि बड़ों का परामर्श मान लेना अधिक श्रेयस्कर है। युधिष्ठिर अजेय हैं। पाण्डवों ने कुबेर के भवन में जाकर उनसे भाँति-भाँति के रत्न प्राप्त किये हैं। अतः पाण्डवों को जीत पाना असम्भव है। अन्त में द्रोण ने कहा कि 'हमारी आयु समाप्त हो चुकी है। अतः हमें कृतकृत्य ही समझें।' (५. १३९)।

"धृतराष्ट्र के पूछने पर संजय ने श्रीकृष्ण और कर्ण के बीच हुये वार्तालाप का वर्णन किया। कृष्ण ने कर्ण को यह बताया कि वह वास्तव में पाण्डु का ही पुत्र है। पिता के पक्ष से वह पाण्डवों का और माता के पक्ष से वृष्णियों का सम्बन्धी है। अतः उन्होंने कर्ण को पाण्डवों के पास चलने तथा युधिष्ठिर का बड़ा भाई होने के कारण धौम्य द्वारा राजा के पद पर अभिषिक्त कराये जाने के लिये निमन्त्रित किया। ऐसी परिस्थिति में कर्ण शासक होगा और युधिष्ठिर युवराज तथा द्रविड़, कुन्तल, आन्ध्र, तालचर आदि देशों के लोग उसके सेवक बन जायेंगे। (५. १४०)।

"कर्ण ने यह स्वीकार किया कि वह वास्तव में पाण्डु का पुत्र है। कुमारावस्था में सूर्य के अंश से जन्म देने के कारण कुन्ती ने उसको त्याग दिया था। उस समय सूत अधिरथ ने उसे अपने घर पर लाकर उसका पालन-पोषण किया। उस समय सूत अधिरथ की पत्नी राधा के स्तन में उसके प्रति अत्यधिक स्नेह के कारण दूध छलछला आया था। उस अवस्था में राधा ने उसका मल-मूत्र तक उठाना स्वीकार कर लिया था। कर्ण ने कहा : 'अधिरथ मुझे सदा अपना पुत्र समझते थे और उन्होंने ही मेरे जातकर्म आदि संस्कार कराये, मेरा वसुषेण नाम रखवाया, युवावस्था आने पर उन्होंने ही अनेक सूत जातीय कन्याओं से मेरा विवाह कराया और अब उन स्त्रियों से मेरे पुत्र और पौत्र भी उत्पन्न हो चुके हैं। अतः अब मैं सम्पूर्ण पृथिवी का राज्य पाकर भी हर्ष या भय के कारण यह सब सम्बन्ध मिथ्या नहीं करना चाहता। दुर्योधन की सहायता पाकर धृतराष्ट्र के कुल में रहते हुये मैंने तेरह वर्ष तक अकण्टक राज्य किया है। सूतों के साथ मिलकर अनेक यज्ञों का अनुष्ठान, तथा अनेक कुलधर्म एवं वैवाहिक कर्म सम्पन्न किये हैं। दुर्योधन ने मेरे भरोसे पर ही हथियार उठाने तथा पाण्डवों के साथ विग्रह करने का साहस किया है। द्वैरथ युद्ध में अर्जुन के साथ युद्ध के लिये दुर्योधन ने मुझे ही निर्धारित किया है। अतः मैं वध, बन्धन, भय अथवा लोभ से भी दुर्योधन के साथ मिथ्या व्यवहार नहीं करना चाहता। मेरे और आपके बीच यह जो गुप्त परामर्श है उसे आप यहीं तक सीमित रक्खें। यदि युधिष्ठिर यह जान लेंगे कि मैं कुन्ती का प्रथम पुत्र हूँ तो वे राज्य ग्रहण नहीं करेंगे। उस दशा में मैं उस विशाल राज्य को पाकर दुर्योधन को ही सौंप दूँगा।' इस प्रकार गुप्त मन्त्रणा के बाद कर्ण ने युधिष्ठिर की प्रशंसा करते हुये युद्ध की यज्ञकर्म के साथ तुलना की। उसने अर्जुन को प्राप्त दिव्यास्त्रों का भी विस्तार से उल्लेख किया। उसने युद्ध में भीम द्वारा दुःशासन के रक्तपान की तुलना सोमपान से की। (५. १४१)।

"कृष्ण ने कहा कि युद्ध में पाण्डवों की विजय निश्चित है। उन्होंने बताया कि अर्जुन की ध्वजा में विश्वकर्मा ने दिव्य माया की रचना की है

जिससे उसमें अनेक दिव्य एवं भयंकर प्राणी दृष्टिगोचर होते हैं। जब कृष्ण को सारथि बनाकर अर्जुन युद्ध में ऐन्द्र, आग्नेय तथा वायव्य अस्त्र प्रकट करेंगे उस समय सत्ययुग, त्रेता और द्वापर की प्रतीति नहीं होगी। भीमसेन जब दुःशासन का रक्तपान करके नृत्य करेंगे तब वे मद की धारा बहाने वाले गजराज के समान शत्रु पक्ष की सेना का संहार करेंगे। कृष्ण ने अन्त में कर्ण से कहा : 'तुम यहाँ से लौटकर द्रोण, भीष्म आदि से कहना कि यह सौम्य मास चल रहा है। आज से सातवें दिन के बाद अमावस्या होगी। उसी समय युद्ध आरम्भ किया जाय।' इस प्रकार सन्देश देकर उन्होंने कहा कि दुर्योधन के वश में रहने वाले जितने राजा और राजकुमार हैं वे शस्त्र द्वारा मृत्यु को प्राप्त होकर उत्तम गति का लाभ करेंगे। (५. १४२)।

"भगवान् केशव के हितकर और कल्याणकारी वचन सुनकर कर्ण ने उनके प्रति सम्मान व्यक्त करते हुये इस प्रकार कहा : 'यह जो भूतल का पूर्णरूप से विनाश उपस्थित हुआ है उसमें मैं शकुनि, दुःशासन तथा दुर्योधन को निमित्त मात्र मानता हूँ। दुर्योधनपक्ष के सभी लोग रणभूमि में अस्त्र-शस्त्रों की अग्नि से भस्म होकर निश्चित रूप से यमलोक पहुँचेंगे। मुझे भयंकर स्वप्न दिखाई पड़ते हैं। घोर अपशकुन तथा अत्यन्त दारुण उत्पात दृष्टिगोचर होते हैं (शकुनों का विस्तृत वर्णन)। मैंने अपने स्वप्न के अन्त में इस पृथिवी को रक्त से मलिन और आँत से लिपटी हुई देखा है। आप सब लोग इस युद्ध में दुर्योधन आदि सम्पूर्ण राजाओं का वध कर डालेंगे, इसमें मुझे संशय नहीं है। अब हम लोग स्वर्ग में ही मिलेंगे।' ऐसा कहकर कर्ण ने कृष्ण का प्रगाढ़ आलिङ्गन किया और रथ के पिछले भाग से उतर कर उनसे विदा ली। तदनन्तर अपने सुवर्णभूषित रथ पर आरूढ़ हो वह हस्तिनापुर लौट आया और सात्यकि सहित कृष्ण उपप्लव नगर की ओर तीव्र गति से बढ़ने लगे। (५. १४३)।

"कुन्ती के पास आकर विदुर ने उनसे युधिष्ठिर और उनके सहयोगियों का वर्णन करते हुये आसन्न युद्ध के भावी दुष्परिणामों से उसे अवगत किया। इस वर्णन को सुनकर शोक से व्यथित होकर कुन्ती को विशेषरूप से कर्ण की सम्भाव्य मृत्यु से अत्यधिक क्लेश हुआ। उसे दुर्वासा के शाप तथा उसके दुष्परिणामों का स्मरण हो आया। फलस्वरूप कुन्ती कर्ण के पास गई। उस समय कर्ण गङ्गातट पर हाथ ऊपर उठाये पूर्वाभिमुख होकर जप कर रहा था। कुन्ती उसके जप की समाप्ति की प्रतीक्षा करती हुई उसके पीछे की ओर खड़ी हो गई। जप समाप्त करने के बाद जब कर्ण पीछे घूमा तब कुन्ती को सामने खड़ा देखकर उसे करबद्ध प्रणाम किया। (५. १४४)।

"कुन्ती ने कर्ण को अपना प्रथम पुत्र बताकर उससे पाण्डवों से मिल जाने का अनुरोध किया (५. १४५)।

"सूर्य ने आकाशवाणी द्वारा कुन्ती की बातों का समर्थन करते हुये कर्ण से माता की आज्ञा का पालन करने के लिये कहा। उस वाणी को सुनकर कर्ण ने कुन्ती से बिना विचलित हुये इस प्रकार कहा : 'तुमने मेरे प्रति जो अत्याचार किया है वह अत्यन्त कष्टदायक है। जब मेरे लिये कुछ करने का अवसर था तब तुमने मुझपर दया नहीं दिखाई और आज जब मेरे संस्कार का समय बीत गया है तब तुम मुझे क्षात्रधर्म की ओर प्रेरित कर रही हो। धृतराष्ट्र के पुत्रों ने मुझे हर प्रकार का मनोवाञ्छित सम्मान दिया है अतः मैं उनके मनोरथों को छिन्न-भिन्न नहीं कर सकता। फिर भी अर्जुन को छोड़कर मैं तुम्हारे किसी भी अन्य पुत्र का वध नहीं करूँगा।' कर्ण के इस आश्वासन पर कुन्ती ने धन्यवाद दिया। तदनन्तर दोनों पृथक्-पृथक् अपने स्थानों को चले गये (५. १४६)।

"उपप्लव लौटकर कृष्ण ने हस्तिनापुर का सारा वृत्तान्त पाण्डवों को यथावत् सुना दिया। फिर रात्रि के समय पाँचों पाण्डवों ने कृष्ण को बुलाकर उनसे वे सब बातें दुहराने का निवेदन किया जो भीष्म, द्रोण आदि ने कही थीं। तब श्रीकृष्ण ने सारी बातों का इस प्रकार वर्णन किया : भीष्म ने दुर्योधन की बातों पर कुपित होकर पहले अपने जीवन तथा वंश का परिचय दिया। तदनन्तर उन्होंने रामजामदग्न्य के साथ एक युद्ध का उल्लेख करते हुये बताया कि उन दिनों परशुराम के भय से नागरिकों ने विचित्रवीर्य (भीष्म के छोटे भाई) को नगर से दूर हटा दिया था और वे अपनी पत्नियों में अत्यधिक आसक्त होने के कारण शीघ्र ही राजयक्ष्मा से पीड़ित होकर मृत्यु को प्राप्त हो गये। विचित्रवीर्य की मृत्यु के पश्चात् सम्पूर्ण राज्य में अनेक विप्लव आरम्भ हो गये। इन्द्र ने वर्षा बन्द कर दी। उस समय सारी प्रजा ने क्षुधा के भय से भीष्म को राजा बनाना चाहा परन्तु उन्होंने उसे स्वीकार नहीं किया। तदनन्तर भीष्म ने विचित्रवीर्य की स्त्रियों से पुत्र उत्पन्न करने के लिये व्यास से निवेदन किया। इस प्रकार उनकी स्त्रियों ने तीन पुत्रों को जन्म दिया जिनमें धृतराष्ट्र नेत्रहीन थे अतः पाण्डु ही राजा बनाये गये। इस प्रकार पाण्डु के पुत्र ही अपने पिता के उत्तराधिकारी हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण वृत्तान्त बताकर भीष्म ने दुर्योधन से पाण्डवों को राज्य लौटा देने का परामर्श दिया। (५. १४७)।

"द्रोणाचार्य ने भी पाण्डु के जीवन पर प्रकाश डाला। विदुर ने भीष्म को धृतराष्ट्र के साथ वन में चले जाने का अथवा दुर्बुद्धि दुर्योधन को शीघ्र ही बाँधकर पाण्डवों को उनका राज्यभाग लौटा देने का परामर्श दिया। गान्धारी ने भी सिद्ध किया कि यह राज्य पाण्डवों और उनके पुत्र पौत्रों का है। (५. १४८)।

"श्रीकृष्ण ने हस्तिनापुर की बातों का वर्णन करते हुये आगे कहा कि धृतराष्ट्र ने दुर्योधन के समक्ष सोम से आरम्भ कुरुवंश के सम्पूर्ण इतिहास का वर्णन करते हुये विशेष रूप से इस बात का उल्लेख किया कि ययाति ने अपने सबसे छोटे पुत्र को ही राजा बनाया था तथा भयंकर त्वचारोग से पीड़ित देवापि को राज्य देने का प्रजाजनों और ब्राह्मणों ने घोर विरोध किया था। तदनन्तर बाह्लीक द्वारा अपने मामा के यहाँ चले जाने पर तीनों भाइयों में सबसे छोटे शान्तनु को ही राजा बनाया गया था। अपने सम्बन्ध में बताते हुये धृतराष्ट्र ने बताया कि अंगहीन होने के कारण ज्येष्ठ होने पर भी छोटे भाई पाण्डु को राजा बनाया गया था। इस प्रकार पाण्डु की मृत्यु के बाद उनका राज्य उनके पुत्रों को ही मिलना चाहिये। किसी राजा का पुत्र न होने के कारण दुर्योधन को राज्य पाने का कोई अधिकार नहीं है। (५. १४९)।

"कृष्ण ने वृत्तान्त को आगे बढ़ाते हुये बताया कि भीष्म, द्रोण, विदुर, गान्धारी तथा धृतराष्ट्र के ऐसा कहने पर भी दुर्योधन को तनिक चेत नहीं हुआ। उसने बार-बार अपने अनुयायी राजाओं को कुरुक्षेत्र चलने की आज्ञा दी। उसने कहा : 'आज पुष्य नक्षत्र है। कौरवों की ग्यारह अक्षौहिणी सेनायें आ गई हैं जिसके प्रधान भीष्म हैं जो अपने तालध्वज के साथ सुशोभित हो रहे हैं।' इस प्रकार हस्तिनापुर की घटनाओं का वर्णन करके श्रीकृष्ण ने कहा कि कौरव बिना युद्ध के पाण्डवों को उनका राज्य नहीं लौटायेंगे (५. १५०)।"

भगहन् = विष्णु : १३. १४९, ७३ (सहस्रनाम)।

भगहारिन् = शिव : १३. १७, ७६ (सहस्रनाम)।

भगाक्षिहन् = शिव : १२. १६६, ५०।

भगीरथ, सगर के एक वंशज का नाम है : १. १, २२८; ५५, २६; १८६, २१; २. ४, १०; ८, १२ (यम की सभा में); १५, १५; ५२, २२; ३. २५, १२; ८५, १२६ (नारद जी ने युधिष्ठिर से भगीरथ आदि तीर्थों में जाकर यशलाभ प्राप्त करने के लिये कहा); ८७, १४ (गंगा तट पर भगीरथ ने अनेक यज्ञों का अनुष्ठान किया था); ९२, १३ (लोमश ने युधिष्ठिर से तीर्थ सेवन करके भगीरथ, गय और ययाति की भाँति बनने के लिये कहा); १०६ २; १०७, ६९ (दिलीप के पुत्र); १०८, २१ (गङ्गा ने पृथिवी पर आकर इनके पूर्वजों का उद्धार करने का इन्हें वचन दिया). २५ (कैलास पर्वत पर तपस्या की); १०९, १ (शिव ने गङ्गा को धारण करने का इन्हें आश्वासन दिया). ४. १३ (गङ्गा आकाश से गिरीं). १५ ये अपने पूर्वजों, सगर-पुत्रों के शरीरों को गंगा जल से प्लावित करने के लिये प्रस्थित हुये; इन्होंने गंगा को अपनी पुत्री बना लिया); ५. १७८, ६९; ६. ६, ४४ (गंगा का दर्शन करने के बाद ये अनेक वर्षों तक बिन्दु

सरोवर पर रहे); ७. ६०, १. ८. १० (अपने पूर्वजों का उद्धार करने के लिये इन्होंने गंगा को भूतल पर उतारा था। यज्ञ करते समय इन्होंने गंगा के दोनों तटों पर सोने की ईंटों के घाट बनवाये थे। इतना ही नहीं, इन्होंने दस लाख कन्यायें ब्राह्मणों को दान किया था। ये सभी कन्यायें रथों में बैठी थीं और उनके रथों में चार-चार घोड़े जुते थे। प्रत्येक रथ के पीछे सोने के हारों से अलंकृत सौ-सौ हाथी चलते थे। ये गंगा के तट पर प्रचुर दक्षिणा देते हुये निवास करते थे। इनके संकल्पकालिक जल प्रवाह से आक्रान्त होकर गंगा अत्यन्त व्यथित हो उठीं और इनके अंक में आकर बैठ गईं। इस प्रकार इनकी पुत्री होकर गंगा भागीरथी नाम से विख्यात हुई। गन्धर्वों ने प्रसन्न होकर देवताओं, पितरों, और मनुष्यों को सुनाते हुये इस गाथा का गान किया था। इनके पास जो भी धन था वह ब्राह्मणों के लिये अदेय नहीं था। ब्राह्मणों की कृपा से अन्ततः इन्होंने ब्रह्मलोक प्राप्त किया); ९४, ४२ (एक राजर्षि थे); ८. ५, २८ (इनका वध हुआ); १२. २९, ६३. ६८; १७०, ४; १३. २६, ९६ (घोर तपस्या द्वारा सभी देवों को प्रसन्न करके ये गंगा को भूतल पर लाये); ७६, २५; १०३, ४. ५ (ये देवलोक, गोलोक और ऋषिलोक को भी लाँघ कर ब्रह्मलोक में जा पहुँचे थे). ६-८. ४३; १३७, २६ (इन्होंने कौत्स को अपनी हंसी नामक पुत्री देकर अक्षय लोक प्राप्त किया). २७ (कोहल नामक ब्राह्मण को एक लाख सवत्सा गौएँ दान करके उत्तम लोक प्राप्त किया); १६५, ५१; १८. ३, २७।

भगीरथसुता = गंगा (५. १७८, ६९)।

भङ्ग, तक्षकवंशी एक नाग का नाम है (१. ५७, ९)।

१. भङ्गकार, अविक्षित् के पुत्र का नाम है (१. ९४, ५३)।

२. भङ्गकार, रैवतक पर्वत पर उत्सव में उपस्थित एक व्यक्ति का नाम है (१. २१९, ११)।

भङ्गासुरि = ऋतुपर्ण : २. ८, १५ (यम की सभा में); ३. ७०, २; ७१, ११; ७२, २. ६; ७३, ३२; ७४, ११; ७६, २४; ७७, १८।

भङ्गास्वन, एक राजर्षि का नाम है (१३. १२, २. ३. ३०)।

भङ्गास्वनोपाख्यान – "भीष्म ने कहा: पूर्व समय की बात है। भङ्गास्वन नाम से प्रसिद्ध एक अत्यन्त धर्मात्मा राजर्षि पुत्रहीन होने के कारण पुत्रप्राप्ति के लिये यज्ञ करते थे। उन्होंने अग्निष्टुत नामक यज्ञ का आयोजन किया था जिसमें इन्द्र की प्रधानता न होने से इन्द्र उस यज्ञ से द्वेष रखते थे। अतः वे राजर्षि भङ्गास्वन का छिद्र ढूँढने लगे। कुछ काल के पश्चात राजा भङ्गास्वन शिकार खेलने के लिये वन में गये। तब प्रतिशोध लेने का अवसर उपस्थित मान कर इन्द्र ने उन्हें मोह में डाल दिया। इन्द्रमोहित एवं भ्रान्त हुये राजर्षि भङ्गास्वन एकमात्र घोड़े के साथ इधर-उधर भटकने लगे। अत्यन्त भूख-प्यास तथा परिश्रम और तृष्णा से विकल हो भटकते हुये राजा ने उत्तम जल से भरा हुआ एक सरोवर देखा। उन्होंने अपने घोड़े को उस सरोवर में स्नान कराकर पानी पिलाया। तदनन्तर घोड़े को एक वृक्ष से बाँध कर वह स्वयं भी जल में उतर गये। उसमें स्नान करते समय वे श्रेष्ठ नरेश सहसा स्त्री भाव को प्राप्त हो गये। अपने को स्त्री रूप में देख कर राजा को बड़ी लज्जा का अनुभव होने लगा। वे अत्यन्त चिन्तित हो उठे। किसी तरह महान् प्रयत्न करके वे स्त्री रूपधारी नरेश घोड़े पर चढ़कर अपने नगर में आये। वहाँ राजा के पुत्र, स्त्रियाँ, सेवक तथा नगर और जनपद के लोग उन्हें उस रूप में देखकर अत्यधिक आश्चर्य में पड़ गये। स्त्री रूपधारी राजा ने तब सबको उन परिस्थितियों से अवगत कराया जिसमें उन्हें स्त्रीभाव प्राप्त हुआ था। तदनन्तर अपना सम्पूर्ण राज्य अपने पुत्रों को सौंप कर तथा अपनी स्त्रियों से विदा लेकर वे वन में चले गये और किसी स्थान पर जाकर एक तपस्वी के आश्रम में रहने लगे। उस तपस्वी से उस आश्रम में स्त्री रूपी उस राजा के १०० पुत्र उत्पन्न हुये। तब वह स्त्री (रूपी राजा) अपने इन १०० पुत्रों को लेकर पहले वाले पुत्रों के पास गई और इस प्रकार बोली : 'जब मैं पुरुषरूप में थी तब तुम मेरे १०० पुत्र हुये थे, और अब जब स्त्रीरूप में आई हूँ तब ये मेरे अन्य १०० पुत्र हुये हैं। तुम सब लोग एकत्र होकर साथ-साथ भ्रातृभाव से इस राज्य का उपभोग करो। तब वे सब भाई एक साथ होकर उस राज्य का उपभोग करने लगे। उन सबको भ्रातृभाव से एक साथ रहते हुये देखकर क्रुद्ध हो देवराज इन्द्र ने ब्राह्मण का रूप धारण करके उस नगर में जाकर उन राजकुमारों में फूट डाल दी। उन्होंने उन पुत्रों से इस प्रकार कहा : 'जो एक पिता के पुत्र हैं उनमें भी प्रायः उत्तम भ्रातृप्रेम नहीं रहता। देवता और असुर दोनों ही कश्यप जी के पुत्र हैं; तथापि राज्य के लिये परस्पर विवाद करते रहते हैं। तुम १०० भाई तो भङ्गास्वन के पुत्र हो और दूसरे १०० भाई एक तापस के पुत्र हैं। तुम लोगों का जो पैतृक राज्य है उसे एक तापस के लड़के आकर भोग रहे हैं।' इस प्रकार इन्द्र के द्वारा फूट डालने पर वे सभी आपस में लड़ पड़े और एक-दूसरे को मार गिराया। यह समाचार सुन कर तापस की स्त्री को अत्यधिक दुःख हुआ। उस समय ब्राह्मण का वेश धारण करके इन्द्र उसके पास आये और उसके दुःख का कारण पूछा। तापसी द्वारा सारी कथा सुनने के बाद अपने को प्रकट करते हुये इन्द्र ने इस प्रकार कहा : 'पहले जब तुम राजा थीं तब तुमने मुझे दुःसह दुःख दिया था। इसलिये मैंने ही इस रूप में अपने पूर्वअपमान का बदला लिया है।' इन्द्र को देखकर वे स्त्रीरूपधारी राजर्षि उनके चरणों में गिर पड़े और क्षमायाचना की। इस प्रकार क्षमा माँगने पर इन्द्र उनसे प्रसन्न हो गये और उनसे पूछा : 'राजन्! तुम्हारे कौन से पुत्र जीवित हो जाँय? पहले वाले अथवा वे जिन्हें तुमने स्त्रीरूप से उत्पन्न किया था?' तब राजर्षि ने तापसी के रूप में उत्पन्न हुये पुत्रों को जीवित करने का ही वर माँगा क्योंकि उन्होंने इन्द्र को बताया कि स्त्री का अपने पुत्रों पर जैसा स्नेह होता है वैसा पुरुष का नहीं होता। तापसी के यों कहने पर इन्द्र बड़े प्रसन्न हुये और उन्होंने दूसरे वर के रूप में उसके पूर्व-पुत्रों को भी जीवित कर दिया। इन्द्र ने उससे यह भी पूछा कि वह स्त्री ही रहना चाहती है या पुनः पुरुष का पूर्व रूप वापस चाहती है। तापसी ने स्त्री रूप में ही रहने की इच्छा व्यक्त करते हुये बताया कि स्त्री का पुरुष के साथ संयोग होने पर स्त्री को पुरुष की अपेक्षा अधिक विषय सुख प्राप्त होता है। तापसी की इच्छा से उसे उसी रूप में रहने का आशीर्वाद देकर इन्द्र स्वर्गलोक चले गये (१३. १२)।"

१. भद्र (बहु० °द्राः) एक जाति का नाम है : २. ५२, १४; ३. २५४, २०।

२. भद्र : ८. ५६, ४८ (कर्ण ने इसका वध किया)।

भद्रकर्णेश्वर, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, ३९)।

भद्रकार (बहु० °राः) एक जाति का नाम है (२. १४, २६)।

१. भद्रकाली, दुर्गादेवी के एक रूप का नाम है : ६. २३, ५ (अर्जुन ने अपने दुर्गास्तव में इसका उल्लेख किया); १२. २८४, ५४।

२. भद्रकाली, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ११)।

भद्रकृत् = स्कन्द (३. २३२, ५)।

भद्रतुङ्ग एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, ८०)।

भद्रमनस्, क्रोध की नौ पुत्रियों में से एक का नाम है : १. ६६, ६०. ६३ (यह ऐरावत की माता थी)।

भद्रवट, एक सुन्दर वटवृक्ष के लिये प्रयुक्त हुआ है (३. २३१, २८. १११)।

भद्रशाख, स्कन्द के एक रूप का नाम है (३. २२८, ४. १४)।

भद्रशालवन – देखिये भद्रसालवन।

भद्रसालवन, सालवृक्षों से युक्त एक सुन्दर वन का नाम है (६. ७, १४)।

१. भद्रा, व्युषिताश्व की महारानी का नाम है : १. १२१, १७. २०. २१. ३३. ३५।

२. भद्रा : १. १९९, ६ (यथा वैश्रवणे भद्रा वसिष्ठे चाप्यरुन्धती। यथा नारायणे लक्ष्मीस्तथा त्वं भव भर्तृषु ॥)।

३. भद्रा : २. ४५, ११ (जहार भद्रां वैशालीं मातुलस्य नृशंसकृत्)।

४. भद्रा, सोम की पुत्री और उतथ्य की भार्या का नाम है : १३. १५४, १०. २८ (वरुण इसका अपहरण करके इसके साथ रमण करने लगे)।

५. भद्रा (वसुदेव की पुत्री) = सुभद्रा (देखिये वस्था०)।

६. भद्रा, वसुदेव की पत्नी का नाम है (१६. ७, १८)।

भद्राश्व, एक द्वीप का नाम है : ६. ६, १३ (मेरु के निकट एक द्वीप); ७, १४ (मेरोः पार्श्वमहं पूर्वे वक्ष्याम्यथ यथातथम्। तत्र मूर्धाभिषेकस्तु भद्राश्वस्यं विशाम्पते); १२. १४, २४ (महामेरु से उत्तर शाकद्वीप के बराबर ही भद्राश्ववर्ष है जिसे युधिष्ठिर के दण्ड से दबना पड़ा)।

भय, मूर्तिमान भय के लिये प्रयुक्त हुआ है। यह अधर्म और निर्ऋति का पुत्र था (१. ६६, ५५)।

भयकृत् = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. भयंकर, जयद्रथ के ध्वजवाहकों में से एक जो सौवीर देश का राजकुमार था (३. २६५, ११)।

२. भयंकर, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३१)।

भयंकरी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ४)।

भयनाशन = विष्णु (सहस्रनाम)।

भयावह = विष्णु (सहस्रनाम)।

भर, एक अग्नि का नाम है : ३. २२२, ६ (अग्निष्टोमे च नियतः क्रतुश्रेष्ठो भरस्य तु)।

भरणी, एक नक्षत्र का नाम है : १३. ६४, ३५ (इस नक्षत्र में ब्राह्मणों को तिलमयी धेनु का दान करने वाला इस लोक में बहुत-सी गौएँ तथा परलोक में महान् यश प्राप्त करता है); ८९, १४ (इस नक्षत्र में श्राद्ध करने से व्यक्ति दीर्घजीवन प्राप्त करता है); ११०, ९ (चान्द्रमत में इसे सिर समझना चाहिये : भरण्यां तु शिरोविद्यात्)।

१. भरत, दुष्यन्त और शकुन्तला के पुत्र का नाम है : १. १, ४६ (इनका वंश सहस्रज्योति से आरम्भ हुआ था). २२७ (इनकी मृत्यु); २, ९६ (दुष्यन्त और शकुन्तला के पुत्र। भरतवंश इन्हीं से आरम्भ हुआ); ६९, १ (इन्हें सर्वदमन भी कहते थे। ये सार्वभौम चक्रवर्ती सम्राट हुये); ७४, ११५ (नाम की व्युत्पत्ति). १२६. १३०. १३१ (भरताद्भारती कीर्तिर्येनेदं भारतं कुलम्). १३२ (भरतस्यान्ववाये हि). १३३; ९४, १९ (दुष्यन्ताद्भरतो जज्ञे विद्वाञ्शाकुन्तलो नृपः). २० (इन्होंने अपनी तीन रानियों से नौ पुत्र उत्पन्न किये। किन्तु 'ये मेरे अनुरूप नहीं हैं' ऐसा कह कर राजा ने उन शिशुओं का अभिनन्दन नहीं किया। तब उन शिशुओं की माताओं ने कुपित होकर उनको मार डाला जिससे इनका पुत्रोत्पादन व्यर्थ हो गया। तब इन्होंने बड़े-बड़े यज्ञों का अनुष्ठान किया और महर्षि भरद्वाज की कृपा से एक पुत्र प्राप्त किया जिसका नाम भुमन्यु था). २२. ४६. ६३; ९५, २९. ३२ (सर्वसेन की पुत्री सुनन्दा से विवाह किया। वह काशी की राजकुमारी थी और उसके गर्भ से भुमन्यु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ); १०५, ४; ११३, ३७; १३१, २३; २०२, १७; २२१, ७; २. ८, ११ (यम की सभा में); १५, १५; ३. ९०, ८ (यमुनातट पर ३५ अश्वमेध यज्ञ किये); १३५, १ (समंगा के निकट कर्दमिल नामक क्षेत्र में इनका अभिषेक किया गया था); २५७, ५; ५. ९०, १९; ७. ६८, १-१७ (ये बाल्यावस्था में नखों और दाढ़ों से प्रहार करने वाले श्वेत सिंहों को अपने बाहुबल के वेग से पराजित एवं निर्बल करके उन्हें खींच लाते थे। मैनसिल के समान पीली और लाक्षाराशि से संयुक्त लाल रंग की बड़ी-बड़ी शिलाओं को ये सुगमता से उठा लेते थे। सर्प आदि जन्तुओं और सुप्रतीक जाति के हाथियों को भी दाँत पकड़ कर अपने अधीन कर लेते थे। जब ये बड़े हुये तब इन्होंने यमुना तट पर सौ, सरस्वतीतट पर तीन सौ और गंगातट पर चार सौ अश्वमेध यज्ञों का अनुष्ठान करके पुनः उत्तम दक्षिणाओं से सम्पन्न एक सहस्र अश्वमेध और सौ राजसूय महायज्ञों द्वारा भगवान् का यजन किया। दस लाख वाजपेय यज्ञों द्वारा यज्ञपुरुष की आराधना करके धन द्वारा ब्राह्मणों को तृप्त किया और आचार्य कण्व को विशुद्ध जाम्बूनद सुवर्ण के बने हुये एक सहस्र कमल भेंट किये। इन्द्र आदि देवताओं ने ब्राह्मणों के साथ मिलकर इनके यज्ञ में सोने के बने हुये सौ व्याम — चार सौ हाथ — लम्बे सुवर्णमय यूप का आरोपण किया था); २९, ४५ (दौष्मन्ति शाकुन्तलम्). ४७-४९; १६६, ७५; १२. ४, २; ७६, २६ (चक्रवर्ती); ११५, ७३. ७५; १५०, ५० (त्रिलोके विश्रुतं वीरं भरतं च प्रकीर्तयेत्। गवामयेन यज्ञेन येनेष्टं वै कृते युगे। रन्तिदेवं महादेवं कीर्तयेत्परमद्युतिम्); १६५, ५०; १४. ३, १०; १८. ३, १७।

२. भरत, दशरथ के पुत्र का नाम है : ३. २७४, ७. ८ (दशरथ और कैकेयी के पुत्र, रामदाशरथी के भाई). २७७, २६ (राम के वनवास के बाद युवराज बने); २९१, ६१-६५ (ये नन्दिग्राम में श्रीराम से मिले और उन्हें उनका राज्य सौंप दिया)।

३. भरत, दो अथवा अधिक अग्नियों का नाम है : ३. २१९, ६-८ (पौर्णमास यागों में स्रुवा से हविष्य के साथ घृत उठा कर जिसके लिये 'प्रथम आधार' अर्पित किया जाता है वह 'भरत' (ऊर्ज) नामक अग्नि शंयु का द्वितीय पुत्र था। भरत (ऊर्ज) के भरत नामवाला ही एक पुत्र तथा भरती नामक एक कन्या हुई। सबका भरण-पोषण करने वाले प्रजापति भरत नामक अग्नि से पावक की उत्पत्ति हुई); २२१, १ (पूर्वोक्त भरत नामक अग्नि, जो शंयु के पौत्र और ऊर्ज के पुत्र थे, गुरुतर नियमों से युक्त थे); २२२, ६ (दहन् मृतानि भूतानि तस्याग्निर्भरतो ऽभवत्)। देखिये भर भी।

४. भरत, (बहु०) भरत के वंशजों के लिये प्रयुक्त हुआ है : १. २, ९२; ६२, २६. ३९. ४०; ७५, १; १०५, ५१; १३१, २७; २. ७१, १६; ७८, १; ८०, ३१; ८१, १९. २४. २९; ३. २९, ५०; ३४, ८; ११९, ९; २५२, १; ३१५, २७; ४. २८, १. २; ५८, १५; ६४, १; ५. ५२, २०; ८३, ४४; ८३, ४७; ९५, १६; १२५, २५; १६३, ९; ६. २, २; १३, ३; ४८, १०९; ११९, १२१; १२०, ४७; ७. २, ८; १०, ३; २३, ७६; २८, १५; ८८, ३; ८. १९, २८; ३१, ४; ४२, १०; ५८; १०; ९. २, ६७; २८, ६७; १०. १४, १३; ११. १०, २; १६, १४. ५४; २४, ४; २५, ४६; १२. ४७, १; ५४, ६; १३. १६७, २४; १६८, १०. २०; १४. ५२; २८; ५१, १४; ६९, २; ७०, ४. ६; १७. १, ४६।

भरतप्रवह = युधिष्ठिर (३. २३, ७)।

भरतप्रवर्हाः (बहु०) = पाण्डवगण (३. २४, २५)।

भरतप्रवीर = भीमसेन पाण्डव (३. ३४, १९)।

१. भरतमुख्य = दुर्योधन धार्तराष्ट्र (५. ३०, ४९)।

२. भरतमुख्य = जनमेजय पारिक्षित (१. १९२, २१)।

भरतर्षभ = १. अर्जुन पाण्डव; २. जनमेजय पारिक्षित; ३. दुर्योधन धार्तराष्ट्र; ४. धृतराष्ट्र वैचित्रवीर्य; ५. धृष्टद्युम्न; ६. नकुल पाण्डव; ७. पाण्डु वैचित्रवीर्य; ८. भीमसेन पाण्डव; ९. भीष्म शान्तनव; १०. युधिष्ठिर पाण्डव; ११. विकर्ण धार्तराष्ट्र; १२. विदुर वैचित्रवीर्य; १३. शान्तनु; १४. सहदेव पाण्डव :—

१. अर्जुन पाण्डवः १. १७०, ५७; १७५, ३. ४२; १८१, १०; २१४, ६; २१५, ५; २१६, १; २२०, २; २. २५, ६; ३. ३७, १२. ३५; ३९, ६९; ५२, ६; ६. २७, ४१; ३१, ११; ३२, २३; ३७, २६; ३८, १२; ४२, ३६; ११९, २०; ७. ७२, ७०; १०३, ७; ८. ५६, १३८; ६०, २१. ४९. ५०. ५५. ५७. ८५; ८९, ५५; १४. १५, ३१; १६, १६; १९, ५७. ६४; २०, १; १६. ६, १९; ८, ६।

१. जनमेजय : १. ६१, ५; ६२, ५३; ६४, ११. १८. २५. २७; ६७, १२७; ७८, १; ९४, ६१; ९९, ८; १००, ४४. ७४. ७७; १०२, ५०; १०७, ५; १११, १६; ११४, ६; ११७, १८; १२०, ४; १३२, ७३; १३३, ११; १३८, ६३; १४१, ८; १४४, २; १४६, ८; १५१, ८. १९; १५२, १६; १५७, ७; १७४, १; १८५, ३०; २२२, ३; २२३, ८२; २२५, ३६; २३४, १९; २. १, ९; २२, ३२; २४, ५७; २६, ७; ३०, २५; ३१, ३९. ५७;

४. भीमसेन : २. २९, ३ ।

५. युधिष्ठिर : ३. १०७, ३६; २७५, ४; १२. ५९, ६८; १३. ६२, ६६; १५०, ९ ।

भरतशार्दूलौ = भीमसेन और दुर्योधन (९. ५५, ३४) ।

भरतश्रेष्ठ = १. अर्जुन पाण्डव; २. जनमेजय पारिक्षित; ३. दुर्योधन धार्तराष्ट्र; ४. दुःशासन धार्तराष्ट्र; ५. धृतराष्ट्र वैचित्रवीर्य; ६. नकुल पाण्डव; ७. परिक्षित् (जनमेजय के पिता); ८. भीमसेन पाण्डव; ९. भीष्म शान्तनव; १०. युधिष्ठिर पाण्डव :–

१. अर्जुन : १. १७८, २; ३. १७३, ११; ८. १६, ३९; ५८, २५; ६०, ६२; ७१, २५; ७३, १०२; ८१, ७; १४. ५१, ५०; ७८, २६ ।

२. जनमेजय : १. ९४, २३; ३. २०५, १; २७२, २३; ३००, ४; ३१०, ७; ३१२, ३०; ९. १, ९. २२; ३६, ३०; ४८, ६१; ४९, २२; ५२, २५; १०. १५, २; १४. ७५, २; ७७, २०; १५. ३२, २१; १७. १, ४३; १८. ६, ६१. ८३. ८४ ।

३. दुर्योधन : ३. २३९, २३; २५७, १०; ५. ९६, ५१; १२५, ७; १३८, ९; १४९, ६; १७४, १; १७५, १९; १७६, ३७; १७७, १५; १८०, १५; १८२, १९; १९२, २३; ६. ९७, ७; ७. १२, ११; ८. ३५, ४२; ५६, २६; ९. ३, ४६; ५७, ५९; ६५, २२ ।

४. दुःशासन : ७. १२३ ४ ।

५. धृतराष्ट्र : ५. ९५, ५४; ९६, ५१; १६२, ४८; १६५, २३; ६. ४, १६; ९, ७४; ११, २०; १२, ३३. ४९; ४७, ५८; ४८, १०६. १०९; ४९, ३९. ५३; ५०, १; ५७, २६; ६५, २७; ७८, ३४; ८१, १; ८२, १८; ८७, ३४; ९१, २०. २२; ९३, १. ७; ९५, ७६; १०९, ३०; ११९, २३; १२१, २२; ७. १, २८; १९, ३७; २०, ३; ४१, २२; ८६, ३; १०३, ४७; १०६, १९; १०९, २१; १११, २; १३२, ३३; १३३, १८; १३७, ४८; १३९, ४९. १२४; १४२, २३; १४५, ४१; १५६, १५४; १६५, ३१; १६६, ४५; १६९, २६. ४३; १७१, ४२; ८. ५१, ४३; ५५, ५. ३०; ५६, ७. ७९. ८०; ९. ८, १२; १४, १९; १९, १०; २५, ३; २९, ११. २४. ७५; ५७, ५९ ।

६. नकुल : ९. १०. ४५ ।

७. परिक्षित् : १. ४०, २४ ।

८. भीमसेन : ३. १४८, ८; ४. १९, ३५; ८. ७७, ३४; ९. ३३, ३७ ।

९. भीष्म : ५. ४९, ४४; ८८, २३; १७३, १; १८५, ६; ६. ९८, ४०; १२०, ४६; ७. १, २५; ३. १४; ९. ३३, ४६; १२. ५६, ८; २०७, २. ५; १३. ७, १; २२, १; २६, ३; ३२, २; ९९, १; १२४, १; १६७, १८ ।

१०. युधिष्ठिर : २. १२, ८; १७, ५०; ३. १३, १२; १४, ४; १५, २. ९; १६, २२; २०, ६; २१, १; ६९, २३; ८०, ८; ८८, १०; १०६, ९; १८९, ५१; १९०, ५४; २००, २८. ६६; २०५, १६; २२४, ३०; २७७, २७; ६. ५०, २६; ७. ८४, १; १०६, १८; १८३, २५. ६३; ८. ७१, १२; ९. ३१, ८; ३२, २१; ५६, २४; १२. २२, ५; २४, ३; ५९, १४५; ८७, ७; १४६, १८; १५३, १२०; १६४, ४; ११४, १३; २०७, १९; २०९, २; २८९, ३८; ३६५, ४; १३. ४, २; ९, ६. २८; १०, ९. २०; २२, ७; २५, ३८; ३४, १३; ९०, २४; ९६, १८. २२; ९७, ३; १६२, २२; १४. ८५, २१; ८९, ९. ४४; १७. ३, २२; १८. ३, ३९ ।

१. भरतश्रेष्ठाः (बहु०) = पाण्डवाः : ३. ५२, ३; १८२, १७; २६४, १ ।

२. भरतश्रेष्ठाः = दुर्योधन के पक्ष के लोग (७. १, २२) ।

भरतश्रेष्ठौ = नकुल और सहदेव (८. ५६, १०) ।

भरतसत्तम : १. अर्जुन पाण्डव; २. जनमेजय पारिक्षित; ३. दुर्योधन धार्तराष्ट्र; ४. धृतराष्ट्र वैचित्रवीर्य; ५. पाण्डु वैचित्रवीर्य; ६. भीष्म शान्तनव; ७. युधिष्ठिर पाण्डव; ८. विकर्ण धार्तराष्ट्र; ९. शान्तनु; १०. सहदेव पाण्डव :–

१. अर्जुन : ३. ३८, २५; ६. ४२, ४; ७. ७२, ७३; १४६, ७२; ९. ६२, ९ ।

२. जनमेजय : १. ४९, ३०; ६०, १०; ६३, ६१; ६८, ३; ९८, ५; १२३, १९; १२८, १३; १३०, ४०; २२१, ८७; २२२, १२; २. ३, १२; २१, ३८; ५०, ५; ८. ४, ३; ९. ४५, ४५; ५१, १६; ११. २, ५; १४. ५२, ५; ६४, ७; ८१, ३२; ९०, ३; ९२, ११; १५. २३, १; १७. १, १५. ३२ ।

३. दुर्योधन : ५. ४९, १२; ५८, २; १२५, १७; १३९, ९; १४७, ३८; १७८, ७५; १८०, ३८; ६. ६५, ३६; ७. १९५, २५ ।

४. धृतराष्ट्र : ५. १२९, २०. २२; ३८, १५; ९५, ९. ४८; ७. १५६, ५०; १६४, ३२; १६९, ४८; ८. ३२, ६६; ५६, १४७; ९. ७, ७; २२, ४६; २३, ४७. ९२; २५, १२; १०. ८, ९४; ९, २८ ।

५. पाण्डु : १. ११२, ४; १२५, २६ ।

६. भीष्म : १. १३०, २६; १२. १५०, १; ३३५, १४; १३. ३२, १; ३८, १; ६३, १; १६३, ४ ।

७. युधिष्ठिर : २. १४, ६१; १७, १६; ३. २७, ३६; ८२, १७. ८४; ८३, ४२. ५७. ६२. ७७. ८८. १०८. ११०. १३९. २०१; ८४, ६३; ८५, १३; ८७, १९; ९०, १४; १२९, ११; १५९, २८; १९०, १३; २०१, २८; २०४, २८; २०६, १०. १७; २१९, ८; २९६, १५; ५. १६०, ४५; ७. १८३, ६१; ८. ६०, १७; १२. १३, १३; १४, ३५; ५९, १७; ६२, २; ६४, २; ९०, २०; १०७, १०. २२; १४३, २; १४९, १२; १६५, ३; १७१, १३; १७४, ३; २०९, २१; २८२, १५. २२; ३५२, ३; १३. ९, २५; ३३, ३८; ४०, ४१; ५०, १४; ५१, ४३; ५३, ५३; ५६, १६; ५९, ४१; ६६, ३१; ६८, २८; ७०, ३०; ८१, ३; ८२, २; ९४, २; ९६, २२; १०६, ५; १०७, १४२; १५. ३९, ३; १७. २, ७ ।

८. विकर्ण : ११. १९, ६ ।

९. शान्तनु : १. ९९, ५. ७ ।

१०. सहदेव : २. ३१, ५५ ।

भरतसत्तमाः : १. २१२, २६ (= पाण्डवाः); ३. १५९, २२; १६०, १४ (दुर्योधन के पक्षधर); ५. १२४, ५८ (दुर्योधन के पक्षधर); १७. १, ४६ (पाण्डवाः) ।

१. भरतसिंह = भीष्म शान्तनव (६. ८६, २०) ।

२. भरतसिंह = पाण्डु (१. ११९, ४२) ।

१. भरद्वाज, एक ऋषि का नाम है : १. ८, २५; ६३, १०६ (भरद्वाजस्य च स्कन्नं द्रोण्यां शुक्रमवर्धत । महर्षेरुग्रतपसस्तस्माद् द्रोणो व्यजायत); ९४, २२ (इन्होंने भरत को भुमन्यु नामक पुत्र प्राप्त कराया); १२३, ५१ (सप्तर्षियों में से एक); १३०, ३३. ३४. ३७ (द्रोण का जन्म). ३९ (अग्निवेश को आग्नेयास्त्र की शिक्षा दी). ४१ (भरद्वाज-सखा पृषतो). ४४ (स्वर्गलोक गये). ५७ (द्रोण इनसे उत्पन्न अयोनिज पुत्र थे); १३१, ५१; १६६, १. ६. ९ (= द्रोण); १७०, २९ (बृहस्पति ने इन्हें आग्नेयास्त्र दिया था). ३० (अग्निवेश ने इनसे आग्नेयास्त्र प्राप्त किया था); २. ११, २२ (ब्रह्मा की सभा में); ३. ८५, १२० (उन ऋषियों में एक यह भी थे जो तीर्थों में युधिष्ठिर के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे); १०२, ५; १३५, १२ (ये तथा रैभ्य परस्पर सखा थे). ४४; १३७, १ (रैभ्य को शाप दिया). ९. १९ (विलाप करते हुये अपने पुत्र का दाह-संस्कार किया और तत्पश्चात स्वयं भी जलती आग में प्रवेश कर गये); १३८, २२ (अर्वावसु ने इन्हें पुनरुज्जीवित किया); ५. ५५, ४८ (इनके वीर्य से द्रोण कलश से उत्पन्न हुये थे); १५१, १३ (द्रुपद ने इनसे अस्त्रों की शिक्षा प्राप्त की थी); १६७, १४; ६. १४, १९; १७, ५; ५६, ३; ७. १९०, ३३; ९. ४८, २ (श्रुतावती के पिता). ६४. ६७; १२. १६६, ८१; १८२, ५. ६. १०. ३६; १८३, ५; १८४, १. ६; १८५, १; १८६, १; १८७, ३. ११; १८८, ६; १८९, १; १९०, १०; १९१, १. ५. ७; १९२, ७. २६; २०८, ३३ (उत्तर के ऋषियों में से एक); २२०, २१

(ये अस्त्रनिधानवेत्ता थे); २३१, ४; २९३, १६; ३४२, ५४; १३. २६, ६; ३०, २३ (दिवोदास के पुरोहित). २४ (ज्येष्ठ. पुत्रो बृहस्पतेः). २८. ३२; ३४, १७ (वीतहव्यों और ऐलों को पराजित किया); ९३, २१. ४५. ७०. ९२. १२२; ९४, ५. ३५; १५०, ३८ ३९ (अत्रिर्वसिष्ठो भगवान् कश्यपश्च महानृषिः। गौतमश्च भरद्वाजो विश्वामित्रोऽथ कौशिकः ऋचीकतनयश्चोग्रो जमदग्निः प्रतापवान्। धनेश्वरस्य गुरवः सप्तैते उत्तराश्रिताः); १६५, ४४; १४. ३५, २५ (प्रजापतिभरद्वाजो)।

२. भरद्वाज एक अग्नि का नाम है : ३. २१९, ५ (शंयु के पुत्र). ९ (वीरा के साथ विवाहित और वीर के पिता)।

३. भरद्वाज (बहु० °जाः) भारतवर्ष की एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ६८)।

भरद्वाजसुत = द्रोण (१. १६६, ९)।

भरद्वाजात्मज = द्रोण (५. १६७, १४; ६. १४, १९; १७, ५)।

भरुकच्छ = भरोच। यहाँ के लोग युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये (२. ५१, १०)।

भर्ग (बहु० °र्गाः) : २. ३०, ११ (भीमसेन ने इन पर विजय प्राप्त की)।

भर्तृ = विष्णु (सहस्रनाम)।

भर्तृस्थान, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, ७६; ८५, ६०)।

भल्लाट एक पर्वत का नाम जिस पर भीमसेन ने विजय प्राप्त की (२. ३०, ५)।

१. भव, अतीत काल के एक नरेश का नाम है (१. १, २३३)।

२. भव = शिव (सहस्रनाम)।

भवघ्न = शिव (१३. १४, ३१५)।

भवदा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १३)।

भव-भार्गव-समागम—"भीष्म ने कहा : भृगुपुत्र उशना एक विशेष कारण से रुष्ट होकर देवताओं के विरोधी हो गये। उस समय इन्द्र तीनों लोकों के अधीश्वर थे और कुबेर उनके कोषाध्यक्ष बनाये गये। योगसिद्ध मुनि उशना ने कुबेर के शरीर में प्रवेश करके उन्हें अपने वश में करके उनके धन का अपहरण कर लिया। धन का अपहरण हो जाने से कुबेर ने शिव के पास आकर बताया कि उशना ने योगबल से उन्हें बन्दी बनाकर उनके धन का हरण कर लिया है। यह सुनकर महायोगी शिव कुपित हो उठे और अपना त्रिशूल हाथ में लेकर उशना को ढूँढने लगे। तब योगसिद्धात्मा उशना अपनी उग्र तपस्या द्वारा महेश्वर का चिन्तन करके उनके त्रिशूल के अग्रभाग में दिखाई दिये। उन्हें पहचान कर शिव ने अपने हाथ से उस शूल को झुका दिया जिससे वह शूल धनुष के रूप में परिणत हो गया। भगवान् शिव ने पाणि (हाथ) से आनत होने के कारण उस शूल को पिनाक कहा। उस शूल के मुड़ने से भृगुपुत्र उशना शिव के हाथ में आ गये। तब शिव ने मुह फैला लिया और धीरे से हाथ का धक्का देकर उशना को मुख के भीतर डाल लिया। महादेव के पेट में जाकर उशना उसके भीतर सब ओर विचरने लगे। युधिष्ठिर के यह पूछने पर कि उशना ने महादेव के पेट के भीतर क्या किया, भीष्म ने बताया कि प्राचीन काल में महादेव जी जल के भीतर प्रवेश करके लाखों-अरबों वर्ष तक तपस्या करते रहे। जब तपस्या पूर्ण करके वे जल से बाहर निकले तब ब्रह्मा ने उनके पास आकर उनका कुशल समाचार पूछा। तत्पश्चात महादेव ने देखा कि उनकी तपस्या के सम्पर्क से उशना की तपस्या में भी वृद्धि हो गई है। उस तपस्या रूपी धन से सम्पन्न एवं शक्तिशाली उशना तीनों लोकों में प्रकाशित होने लगे। तदनन्तर महादेव ने ध्यान लगाया। उस समय उशना अत्यन्त उद्विग्न हो उनके उदर में ही विलीन होने लगे। उशना ने तब उदर में स्थित होकर महादेव की स्तुति की। वे बाहर निकलना चाहते थे किन्तु महादेव उनकी गति को प्रतिहत कर देते थे। तब उशना ने उदर में ही रहकर महादेव की बारंबार प्रार्थना की। तब महादेव ने बताया कि उनके शिश्न के मार्ग से ही उशना का उद्धार होगा। सब ओर के मार्गों से अवरुद्ध उशना तब महादेव के शिश्नद्वार से निकल कर बाहर आये। उस द्वार से निकलने के कारण ही उनका नाम शुक्र (वीर्य) हो गया। यही कारण है कि वे (उशना) आकाश के बीच से होकर नहीं निकलते। बाहर निकलने पर शुक्र अपने तेज से प्रज्वलित हो रहे थे। तब त्रिशूल हाथ में लेकर शिव पुनः क्रुद्ध हो उठे। उस समय पार्वती जी ने अपने कुपित पति, भगवान् पशुपति को रोका। देवी के द्वारा भगवान् शंकर के रोक देने पर शुक्राचार्य उनके पुत्रभाव को प्राप्त हुये (१२. २८९, ६–३४)।"

भवभावन = शिव (१०. ७, २)।

भविष्य, हरिवंश के एक पर्व का नाम है : १. २, ८३; ९, १७ (एतद् दृष्टं भविष्ये हि कुरोरुत्तमतेजसः); १८. ६, ८३।

भवोद्भव = श्रीकृष्ण (१२. ४३, ११)।

भस्मगुण्ठित = शिव १३. १४, १०५)।

भस्मगोप्तृ = शिव (१३. १७, ९५)।

भस्मदिग्धोर्ध्वलिङ्ग = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ८१)।

भस्मभूत = शिव : १३. १७, ९५ (सहस्रनाम)।

भस्माशय = शिव : १३. १७, ९५ (सहस्रनाम)।

भागकर = शिव : १३. १७, ८४ (सहस्रनाम)।

भागवत : १२. ३३५, २३ (भागवतं सर्वमिति तत्त्वोक्षितं सदा); ३३७, १ (भागवतोऽत्यर्थमासीद्राजा महान्वसुः); ३४०, २ (क्षमी भागवतः प्रभुः); ३४३, ५५ (भागवतप्रियः); ३४४, १७ (विशन्ति विप्रप्रवराः सांख्या भागवतैः सह)।

भागिन् = शिव (सहस्रनाम)।

भागीरथी, भगीरथ की पुत्री, अर्थात् गङ्गा का नाम है : १. २, ९७. ३३२; ९५, ४७ (शान्तनु ने भागीरथी गङ्गा के साथ विवाह करके उनसे देवव्रत अथवा भीष्म को उत्पन्न किया); १००, २३; १३८, ७; १४९, ५; १६६, २४; १७०, १२. २४; १६३, ५; १९७, ९; २. ३, ११; ९. १८ (नदी); ३. ८१, १३ (तीरे); ८४, १६३; ८५, १४; ८७, २३ (भागीरथी पुण्या सरस्यासीद्युधिष्ठिर); ९९, ३१ (एषा भागीरथी पुण्या देवगन्धर्वसेविता); १३५, ३१. ३३; १४५, ४१ (नारायणस्थानं भागीरथ्योपशोभितम्). ५० (भागीरथीं सुतीर्थां च सीतां विमलपङ्कजाम्). ५२ (भागीरथीपुण्यजले); ५. १४४, २६; १८५, २८ (भीष्म की माता); ६. ६, २९. ४४; ११८, ५३ (भीष्मं भागीरथीपुत्रं); ७. ६०, १. ६ (तथा भागीरथी गंगा उर्वशी चाभवत् पुरा दुहितृत्व गता राज्ञः पुत्रत्वमगमत् तदा); १०. १३, १३; १२. १, ८; २९, ६८ (उपह्वरे निवसतो यस्याङ्के निषसाद ह। गंगाभागीरथी तस्मादुर्वशी चाभवत्पुरा); ३१, ३१; ३७, ७; १३. २५, १५. ३९; २६, २६; ८५, ५५; १३९, ७; १६८, १९. २१; १४. ८१, १३; १५. १८, १६; १९, १. ८; ३१, १९; ३२, ४; ३३, १३; २९, ६।

भागीरथीपुत्र = भीष्म : १. २, ३३२; ६. ११८, ५३; १२. ३७, ७; १३. १३९, ७।

भागीरथीसुत = भीष्म : १४. २, ५।

भाङ्गासुरि = ऋतुपर्ण : २. ८, १५; ३. ७०, २; ७१, ११; ७२, २. ६; ७३, ३२; ७४, ११; ७६, २४; ७७, १८।

भाण्डायनि : २. ७, १२ (इन्द्र की सभा में)।

भाद्रपद, भारतीय वर्ष के ६ वें मास का नाम है : १३. १०९, १३; १२६, २६।

भाद्रपदा, दो नक्षत्रों, पूर्वभाद्रपदा और उत्तरभाद्रपदा का नाम है : १३. ६४, ३१ (पूर्वाभाद्रपदायोगे राजमाषान्प्रदाय तु। सर्वभक्षफलोपेतः स वै प्रेत्य सुखी भवेत). ३२ (उत्तरायोगे यस्तु मांसं प्रयच्छति। स पितॄन्प्रीणयति वै प्रेत्य चानन्त्यमश्नुते); ११०, ५ (नाभिं भाद्रपदे विद्याद्वत्यामक्षिमण्डलम्। पृष्ठमेव धनिष्ठासु अनुराधोत्तरास्तथा)।

१. भानु एक देवगन्धर्व प्राधेय का नाम है (१. ६५, ४७)।

२. भानु = सूर्य : १. १, ४२; १७, ५; २४, १४; ३. ३, २४. ६१; १२. ६, ७; १८. ५, १६।

३. भानु = शिव (सहस्रनाम)।

४. भानु = विष्णु (सहस्रनाम)।

५. भानु, एक व्यक्ति का नाम है : २. २, ३५; ३. १२०, १८; १८३, २८।

६. भानु : ४. ५६, १० (भानुः......नलः विमाने देवराजस्य समदृश्यन्त सुप्रभाः)।

७. भानु, अङ्गिरस के एक पुत्र का नाम है : ३. २२०, ९ (भानुरङ्गिरसो धीरः पुत्रो); २२१, ८ (भानुं चाप्यङ्गिराः सृजत्). ९ (भानोर्भार्या सुप्रजा तु बृहद्भासा तु सूर्यजा). १० (तमग्निं बलदं प्राहुः प्रथमं भानुतः सुतम्). ११ (अग्निः स मन्युमाञ्नाम द्वितीयो भानुतः सुतः। दर्शे च पौर्णमासे च यस्येह हविरुच्यते); १३ (अग्निराग्रयणो नाम भानोरेवान्वयस्तु सः). १४ (चातुर्मास्येषु नित्यानां हविषां यो निरग्रहः। चतुर्भिः सहितः पुत्रैर्भानोरेवान्वयः स्तुमः)।

भानुदेव का कर्ण ने वध किया था। (८. ४८, १५)।

१. भानुमत् = सूर्यः १. ९३, २; ३. ३००, ३१; १४. ३२, ६; १५. ३०, १४।

२. भानुमत्, कलिङ्गराज का नाम है जिसका युद्ध में भीम ने वध किया (६. ५४, ३४. ३९)।

१. भानुमती, कृतवीर्य की पुत्री, अहंयाति की पत्नी और सार्वभौम की माता का नाम है (१. ९५, १५)।

२. भानुमती, अङ्गिरस की पुत्री का नाम है (३. २१८, ३);

भानुसेन, कर्ण के एक पुत्र का नाम है जिसका भीमसेन ने वध किया (८. ४८, २७)।

१. भारत (बहु० °ताः) : १. ७४, १३१ (पूर्वे); ९४, ३७ (भरतवंशी). ४१ (सिन्धु नामक महानद के तटवर्ती निकुञ्जों में, जो एक पर्वत के समीप से लेकर नदी के तट तक फैला था, भरतवंशी क्षत्रियों ने एक सहस्र वर्ष तक निवास किया). ४२. ४३. ४५; १०२, २५; १०३, ११; १२८, १०; १६९, ११; २. ६२, २ (= धृतराष्ट्र); ६७, ४० (कौरव); ८०, ३७ (भरतवंशी); ३. ३४, १०; १६४, १६; ५. २२, ४०; २३, १४; ३०, १९; ३१, ८; ३२, २८; ७२, २; ७२, ९०; ७४, १०; ८४, १७; १२८, ३६. ३७; १४४, १२; १५७, २ (भीष्म); ६. १३, २ (भीष्म); १५, १०; ६१,२९; ८६, २५; १०३, ७; ११२, ६; ११४, ३६; ११९, ११०; १२०, १५. १६. ४४; ७. ३, ८ (भीष्म); ३२, ५२; ४१, २२; ४९, १७; ८५, ३५; १२४, ४६; १३७, ३७; १४२, ४९; १४६, ६; १६८, ८; १७८, ४१; ८. ७३, १२ (भीष्म और द्रोण); ७६, ९; ८४, ५; ९४, ६३; ९५, १२; ९. २९, १०५; १२. ३४९, ४४; १३. ७६, २६; १६७, ५०; १४. ६१, १; ८१, ८।

२. भारत : १. २०३, ६।

३. भारत, °ती (बि०) : १. २, ९६. २६० (कौरवों की सेना); ६१, ३ (भारतीं कथाम् = महाभारत); ६७, १२४; ७४, १३०; ९७, १२; १०५, ५३; २. १७, २; ३३, १५; ३. ४८, १७; ४. ३८, ११; ५. ७, १०. ५२, १८; ५८, २१; १२५, ५; १४१, ५६; ६. ३, ६२; १००, १९; ११२, ३२; १२१, ८; ७. १, २८; ४१, ११; ९६, २७. ६३; ११०, ७१. ८२. ८४; १२२, १०; १२६, ३८; १३०, १५; १३१, ५; १४२, ४९; १५१, ८; १५४, २८. ३१; १५७, ४८; १६१, १६; १८५, २३; ८. ५७, ११; ६०, ६२; ७०, ३४; ७३, ५३; ७५, १२; ७६, २३; ९. २७, ४९; १२. ३२५, १४; ३४९, १०; १६. २, १९; १८. ५, ४५।

४. भारत : १. अभिमन्यु आर्जुनि, २. अर्जुन पाण्डव; ३. जनमेजय पारिक्षित; ४. दुःशासन धार्तराष्ट्र; ५. दुर्योधन धार्तराष्ट्र; ६. धृतराष्ट्र वैचित्रवीर्य; ७. नकुल पाण्डव; ८. पाण्डु वैचित्रवीर्य; ९. भीमसेन पाण्डव; १०. भीष्म शान्तनव; ११. युधिष्ठिर पाण्डव; १२. विदुर वैचित्रवीर्य; १३. शान्तनु; १४. सगर :—

१. अभिमन्यु : ४. ७१, ३६।

२. अर्जुन : १. १३६, २०; १३९, ९; १७१, १०, १७३, ३८; १७६, १८. ३८; १७७; १८. २५; २१५ १; २. १, ५; ३, ४; २८ १३; ७२, १०. ११; ३. ३७, ४. ३१; १६७, २४; १६८, १. ३५; १७२, ३१; १७४, १५; १७५, १९; ३१२, २७; ४. १, १८; ५४, ७; ६७, २; ५. ७९, १०. १२; १६०, १०५; ६. २६, १४. १८; २७, २५; २८, ४२; ३१, २७; ३५, ६; ३७, २. ३३; ३८, ३. ८; ३९, १९; ४०, ३; ४१, ३; ४२, ६२; ८२, ६. ८; १०७, ९४; १२०, ४७; ७. १४२, ४७; १४८, ४. ४१; १७३, ६३; ८. ५६, १३५; ५८, ११. १३. २२; ६०, २३. ४१. ४५. ५९; ६९, ३९. ८३; ७३, २. १७. १८. ५०. ७०. ९०. ११५. ११९. १२१; १०. १४, ३; १२. १९, २२; २६, ७; ३४१, ३१. ३८. ४२. ४३; ३४२, ८८. १०९. १३६; ३४८, १४. ३८; १४. ८२, ६; १६. ६, २२; ८, ३२. ३६।

३. जनमेजय : १. ५८, १०; ६४, ४२. ४४; ६५, १३. १४. १९. २१. ३०. ४५; ६६, ४५. ६८; ६७, ७२; ७४, ११८. १२५. १३१. १३३; ७५, ३७; ७६; २३. २५. ३०; ८३, १; ९४, २२. ३०. ३१. ६०; ९८, १३; १००, ५७. ७६. ८५; १०२, २५; १०३, १; १०६, १६; १०७, १६; ११०, ११. १३. १८; १११, २. १५; ११५, ३३; ११६, १८; १२०, २; १२३, २७; १२७, ५; १२८, १२. ३२. ३३; १३२, २६; १३३, ५; १३४, १. २८; १३५, २६; १३६, १३; १३७, २२; १३८, २१. ७२; १४४, १; १४७, १७; १५१, १८. १९; १५३, १२; १५८, ३८; १५९, ५; १६२, १; १६३, २१. १८; १६४, ६; १६७; ५; १८५, ९; १९४, ४; १९५, ३३; २०६, ७. ११; २१२, ३१; २१४, ५. ८. ३६; २१५, ३. ५. ७. १०; २१६, २१; २१७, १४; २१९, ७; २२१, ६३. ६९; २२२, १७. २०; २२३, ४०; २२८, १०. ४४; २२९, ७. १८; २३३, ७. २०; २. १, १६; ३, १८; ४, ५; ५, १; १३, १. २८; १९, २३; २१, २४. ३६; २४, २१. ४८. ५४. ५९; ३०, २०; ३१, ८. ५२; ३२, १३; ३३, ४३; ३४, ४; ४०, १५; ४२, १४; ६०, २; ६८, ३९; ७५, ३; ७६, २. २४; ३. ६, १; ११, २५. ४१; ३९, ६२; ४१, २; ८१, १८; ११४, ३; १२६, ४७; १४३, १०. २३; १४६, ६५; १५२, ५; १५५, ३२; १५७, ६३; १६०, ४९; १६१, ३४; १६४, १६; १७९, ४६; १९३, ३; २०१, ८; २४०, १२; २४१, ३. २४; २४४, २. २२; २४५, २०; २४९, ३५; २५२, २८. ३१; २५४, ३६; २५७, २०; २६७, १; २७२, २५; ३००, ८; ३०५, २०; ४. १, ७; १६, ११; २३, ३२. ३४; ३१, ४; ३३, १; ३८, ४०; ५१, १७; ५५, ९; ६२, १. १६; ६३, १२; ६४, ४४; ७२, १३; ५. ७, २३; ८, ७. ३९; १९, २९; ४१, ८; ४७, १२; ४९, १; ५५, ६८; ८४, ११; ९४, ४६; १५५, १. ३४; १५८, ४०; १६३, ५३. ५४; १९५, १२; १९६, १. ३१; ६. १३, १. २; ८. १, १०; १६, ५९; ९. ३५, २९; ३८, २०. २२. ३३; ३९, ३. २५. २८; ४२, ९. ११; ४३, २. ४५; ४४, ४९; ४५, ४४. ४८. ६६. ७०. ८०. ८४. १०१. १०३. १०५. १०६. ११०; ४६, २. ५. ७. ८. ११. १४. २३. २४. २८. ३१. ९५; ४८, ७. ११. २६. २७; ४९, २३; ५०, ११. १६. ५९. ६४; ५१, १. ३५. ४०; ६३, ९; ११. १२, १३; १५, ३१; १७, १७; २५, ३७; २६, ३२; १२. ३७, ४०; ३८, ३. ७. १९; ४०, २४; १५१, २०; १६६, ८; ३३९, १३४; ३४०, २३; ३४८, ६८. ८४; ३५०, ६; १३. १८, ९; १४. ५५, ३७; ५६, ३. १०; ५८, २८. ४९. ५१; ५९, ९; ६२, १३; ६३, १६. १७; ६९, २९; ७०, ९. १३; ७२, १३; ७४, ६. २३; ७५, १२; ७६, ११; ७७, १३; ७८, २. ६; ८५, २८; ८९, १५; ९०, ४; ९७, ७. १९. ३७; १५. ३, ७४; ५, ५; १८, १९; १९, ५; २१, १४; २७, १३; २९, ९; ३३, २९; ३७, ४५; १६. २, ७. १४; ३, ४१; ६, २; ७, १९. ४६; १८. २, ३०; ३, ७; ५, ३०; ६, ११. २४. ३७।

४. दुःशासन : ३. २४९, २२; ७. १२२, २७।

५. दुर्योधन : २. ४९, ३८; ५३, ६; ६१, ३०; ३. २३७, २; २३९,

१७. १८; २४६, २२; २४७, १३. १५; २५३, १८. १९; २५५, १८. २१; २५७, १३; ४. २५, २१; २६, ८; २८, ९; ५. ६०, २१; ६५, १३; ९१, १८; ९६, २५. ४७. ५०; १०५, १; १२४, ९. १३. २८. ४१. ४३. ४६; १२५, १५; १२८, ४; १२९, ४४; १४९, २९; १६८, २१; १७०, १४; १७१, ४. ९. १९; १७२, १५. २०; १७३, २३; १७५, ३७; १७६, १८; १७७, २०; १७८, २२. ६५; १७९, १९. ३६. ३८; १८०, ११. १७. २५; १८१, ३. ४. ७; १८२, १८; १८४, १. २२; १८६, ११. ४०; १९०, ५; १९१, ७. २६; १९२, ९; १९३, १३. १४; ६. ६७, २५; ८८, ४४; ९७, ४०; ९८, २२; १२१, ५६; ७. ५. १९; १२, ४; ९४, ४१; १३०, २९; १५१, २७. ३३; १५८, ६; १६०, ६. ८. १६; १७०, ५७; १८५, २६; १९३, २९; १९५, ४२; ८. १०, १६; ३१, ३६. ३७. ४१. ६८; ३५, ७; ९२, ११. १४; ९. ४, ४. २७; १८, २०; ३०, १४; ३१, २७. ३२. ३४. ३५. ६३; ३२; ४१. ६०; ५९, २४; १०. ९, २७. ५०; १२. १२४, १९।

६. धृतराष्ट्र : १. १, २४४; ११५, ३७; १४०, ५६; १४२, १५; २०४, ३. १२; २०५, ६. ११. २२; २. ४९, ३२; ५०, २३. २५. २८; ५१, १. २; ५२, १९. ४९; ५३, ४. २१. २४; ५५, १८; ६२, २. १५; ६३, १०; ७३, १; ७५, ३. ४; ८०, ११. १६. १७. २२; ३. ६, २४; ८, ३. ८; ९, २१; ११, ७४; २३९, १८; ५. २३, ७; ३२, १२. १७; ३३, ६७. ९६; ३४, ६. ७३; ३५, ७४; ३६, २७; ३७, १२. ५५. ५९; ३८, १८. ३४. ४१. ४४. ४६; ३९, २; ४०, ११. २१; ४१, २; ४३, ३६; ४४, ८; ४६, २९; ५४, १. २२; ५५, ५. १७. २०. ३१. ४३. ४६. ५४. ५७. ६०. ६७. ६८; ५७, ४१. ४७; ५९, २; ६१, ३. ७. १०; ७०, ४; ८७, १; ९५, ३. ६. १२. २६. ४५. ६०; ९६, ४७; १२८, ४२; १३०, २७. २८; १४०, ५; १६०, ३. ४; १७०, ७; ६.२, ५. ३०; ३, २३. ४६. ७०. ७८. ८४; ६, ७. १३. ३२; ९, ५. ९. २४. ३६; १०, १४; ११, २९; १२, ४६; १६, ६; १८, १८; २०, १६. १७; २५, २४; ४३, ९३; ४४, २३; ४५, २१. २३. ३१. ४३. ५२; ४६, १९. ३७; ४७, ६३; ४८, ३०; ५३, १०; ५४, ४२. ५२; ५५, १. ५; ५६, २२; ५७, २९ ५९, १३८; ६०, १; ६२, ६०; ६३, २२. २८; ६४, ४; ६५, १७; ६९, २२; ७२, २३; ७४, ५. ३९; ७५, २. ३५; ७७, ७. ७५; ७८, ३५; ७९, २८. ४२; ८१, २०; ८२, ४२. ४९; ८३, २९. ३७; ८४, २८. ५५; ८५, ३७; ८६, ४१; ८७, २७. ३०; ८९, ३९; ९०, २५; ९३, २६; ९५, ७८; ९६, १४. ४४. ६१. ७७. ७८; ९९, ३; १००, ८. १७. २२; १०१, १४. ४५. ५१; १०२, १८; १०३, ५; १०४, ३५; १०६, ८२. ८४; १०७, ८; १०८, १५. १७; ११०, १६. २९; १११, २३. ५६; ११५, ३; ११७, ५०; ११९, ६८; ७. १, ४२; १३, २. १८. २७; १५, ११. १९; २०, २७, २१, ३६. ६५; २३, ८. ९४; २५, ३५; ३०, ३५; ३२, ८०; ३३, १९; ३८, ९; ३९, ७. १०; ४१, २४. २५; ४२, १७; ४५, २१; ४८, २; ८२, ५; ८८, ४; ९२, २२. ४२. ६२; ९३, १९. २७. ६३; ९४, ७६; ९५, ३०. ३१; ९६, २१; ९८, ३१. ४६; ९९, १३; १००, २७; १०५, १०; १०६, १८. ३०. ४६; १०७, ९. १४. २१; ११०, २०; ११४, ५५; ११५, ३८; ११८, ५; १२१, ११. १८; १२३, २३. ३५. ३६; १२४, २५; १२५, ५८. ६१; १२६, २; १२८, ४; १३१, ४६; १३२, १५; १३४, १४; १३७, १४. २६; १३८, २१; १३९, ७०; १४०, ११; १४२, ४७. ६२; १४६, ८६; १४९, ३; १५३, ११. १४. २१; १५५, ४२; १५६, ४६. १३२. १४९. १५२. १६७; १५७, ३. २२; १५९, ५८; १६२, २९. ३२; १६३, ७; १६४, ४; १६५, १४; १६६, ४१; १६७, ३५, ४३. १६८, ८. ३१. ३९; १६९, ३३. ४०. ४८; १७०, ७; १७३, २१; १७५, २१; १७८, ३७; १८४, ३१. ३३; १८६, २६; १८७, ३. २२; १८८, २०. ३५; १८९, ६६; १९०, २८; १९२, ८; १९३, ६; १९५, ४९; २००, २२. १०१. ११२; २०१, २५. ३०; ८. ३, ३; १०, १९. ५६; १४, २२. २८; १५, २४; १६, २०; १९, २. २६. २९. ३१. ३९; २०, ३८; २४, ३९. ४६. ६६. ६७. ६९; २५, १५. १९. ३७; २६, २; २७, ३. ४१; २८, ३९; २९, ७. २२; ३०, ३९; ३२, ६०; ३६, ६; ४८, १५; ४९, १५. ६७. ८९; ५१, ५७; ५२, ८. ११. ३६. ४०; ५३, ४४; ५४, १६; ५५, २५. २६. ५६, १५. ५१. ६०. ९६. १४३; ५९, ३; ६१, २२. २७; ६४, ५. ३२. ७०; ७३, १; ७४, १; ७५, १२; ७६, ९; ७७, २९. ३८. ७४; ७८, २९. ५४. ५५; ८०, २७; ८७, ८. ६०; ८९, ९७; ९१, १६. २८; ९. १, ३२. ३९; ३, ११; ४, ५; ७, ८; ८. ५, १८. ४१; ९, ५. १०. १५. १९. ४४; १३, २६; १४, १४. १७. ३४; १६, ४४. ६०; १७, ८९; १८, १७. २७; १९, ५; २०, २३; २२, ४. ८. २२. ३८. ४७; २३, ८१; २५, १९. २६; २६, १. २; २७, ४. ५४; २८, ७. ८. १९. ३४. ६७; २९, १४. १५; ३०, ५३. ५६; ३१, १७; ३४, १९; ५५, ४; ५७, १५. २७. ३०; ५८, ५१. ६२; ६१, २६; ६२, ३२; ६३, ४०. ४१. ४७; ६४, ४३; १०. १, ३३. ३९; ७, १८. २१. २२. २८. ५३; ८, १२. १७. ३०. ९९. ११६; १०, ५; ११. १, ३०; २, ४. ६; ३, ११. १४; ७, ४. ८. २०. २३. २७; ८, १२. १२४, १३. १८; १५. १३, १०; २८, ९. १०।

७. नकुल : ५. १६०, ७०. ७१; १२. १६६, ३०. ५३।

८. पाण्डु : १. ११४, १०; ११८, ११. २२; १२१, ३; १२२, ३७।

९. भीमसेन : २. ७२, ८. १६; ३. ३४, ११; ३६, ५. ६; १४१, २५; १४८, २२; १५०, १८. २४; १५१, ९; ३१२, ३४; ४. १८, २. ६. ३२; १९, १. ३२; २०, १२; २१, ४६. ४७; २२, २९; ३३, १९; ५. ७५, २५; ७७, ९; १६०, ६८. ६९; ६. ५४, ४२; ७८, १२; ७. १३४, १२; ९. ६१, १५. १६; १०. १६, ३४; ११. १५, १३।

१०. भीष्म : १. १००, ६३. ७०; १०२, २५; १०३, ९; १०५, १०; २. ३७, १५. १८; ४१, ३९; ४२, ८; ४४, २७; ५. १७६, ४८; १७७, ४१; १७९, ३६; १८३, १२; ६. १३, १३; १४, १६; ११७, ११; ७. ३, ९. २०; १२. ५०, १७. ३१. ३२; ५१, ११; ५४, ३३; ५९, ५; ६१, २; ७८, १; ११४, १; १२४, ३. ४; १२९, १; १३०, १; १३१, १; १४०, १; १४१, ३; १६०, ३; १६४, १. ३; १९६, ३; २१०, १; २२०, १; २२२, १; २६०, ३. १४; २७१, १; २७४, १; ३००, ४२. ४३; १३. ८, १; २४, १. ६; ४९, १९; ५७, २. ५; ६१, २; ६३, २३. ३०. ३६. ३८; ६४, १७; ६७, १; ७७, २; १०६, १४; १३५, १; १३७, १।

११. युधिष्ठिर : १. १६७, ५; २. २, २२; ५, २२. २७. ७४. १०६; ६, १०; ७, ४. २३; ८, ३५; ९, २५; ११, १-१२. २१. २५. ३१. ३७. ४६. ५९. ६२; १२, २५; १४, १. ४१; १९, ३; ३६, २२; ४०, ११; ४६, १२; ७३, १३; ७६, २. १५. २४; ७८, २२; ३. २, ८२; ३, ११; १४, ५; १७, २४; २०, २१. २६. ३६. ३७; २१, १०. २६; २७, ७. १३. २८; ३०, ४. ५. २९; ३२, ५०; ३३, ८. ; ८२. ८८; ५३, ६; ५५, १; ५७, १०. २६; २९; ५९, ११; ६२, १८; ६३, २९; ६४, ११७; ६८, ३३; ६९, १२; ७३, १६. २२; ७४, ३०; ७५, २४; ८२, ३३. ६८. ८९. ९८. ११०. ११४. १२०; ८३, ६. १२. ५८. ६०. ७९. ८२. ८८. ९०. ९५. १३६. १७५; ८४, १०. ११. २०. ४८. ५१. ६२. ७२. ८९. ९०. १२३. १३७; ८५, ३९. ४१. ७९. ८२. ११७; ८८, १; ८९, २. ४; ९०, ५; ९३, ८; ९४, ७; ९५, १८. २२; ९६, २३; ९९, १८. २५. २७. ५१; १०५, ९; १०६, ८; १०७, ५२; ११०, १६. १८; ११५, ९. १०; ११७, ६; १२१, १४; १२२, १; १२५, १४; १२६, ३५; १२८, ७; १२९, ११; १३०, ११; १३५, १३. २३; १३६, २. १३; १३८, १५; १३९, १. ११; १४०, ८. १०. २१; १४४, ६; १५६, १९; १५७, ३५; १६२, २. २२; १६३, ४२; १६७, २८; १६८, ३. १८. ६०; १६९, १५. २२; १७०, २०; १७१, ९. ११; १७२, ८; १७३, ३१. ५५; १७४, २; १७६, १२. १३; १८८, ६८. ६९. ८३. ९९. १०१; १९१, ७; २००, २८. ७३; २०१, ८; २०४, ४०; २०५, २०; २१७, १९; २२२, २४; २२९, ३१; २५८, ४; २५९, १७; २७७, ८; २७९, ३०; २८२, ३२; २९०, ८. २९; २९४, १; २९५, २२; ३१२, ४; ३१४, २७; ४. २, १. ४; ३, १७.

१९; ४, ७; ५, १६; १८; ३२; ५. ८, ३४; १२, १०; १४, ९; २३, ५; ७२, ५; ७३, १४. ३७; १३२, १२; १५०, ७. ११; १५१, ४३; १६०, ११; ६. ४३, १८; १०७, ५५; ७. ५२, ११; १८३, ६५; ८. ४६, ३३; ६७, १९; ७०, १२. १४; ९६, २०; ९. ७, ३०. ३१; ३१, ६. ३८. ५०; ६२, २३; १०. १२, ११. २४; १७, ९; १८, ७; ११. १२, ९; १२. २, २; ३, ८; ४, ३. १०. ११; १०, १४; १२, ६. १३; १३, १. ६. ११; १४, १४. २६. २७; १५, १७. ५४; १८, २; २१, ६; २४, ५. ६; ३०, ३०; ३२, १२. १३. २१. २३. २५; ३३, २९. ३३. ४६. ४८; ३४, १२. ३२; ३५, १. १५; ३९, ३. ७; ४०, २३; ४३, १७; ४९, ४४; ५४, ८; ५६, ५९; ५७, ४०; ५९, १५. १२७; ६०, १३. २७. ३७. ४०. ४४; ६६, १७. १८. १९. २५. ३२. ४१; ६८, २; ६९, ३१. ७५; ७१, ६. २२; ७५, २. ६; ७८, ७; ८२, १. ३. १८; ८३, ४; ८६, २; ८७, ८. २१. ३८; ८८, ३०; ८९, १९. २६; ९१, ५८. ५९; ९६, २२; १००, ५. ११. २४; १०२, ५. १७. ३४. ४०; १०७, ५. ७. २४; १०८, १. ९. १९; १०९, १. ४; ११२, १८; ११३, २; ११५, १३; ११८, २८; १२०, १; १२१, २९; १२२, ५२. ५६; १२४, ५; १२६, ७; १३०, ८. १४. २०. ४४; १३३, ९. ११; १३५, २६; १३६, ३; १३८; १२. १५. १६. २१८. २२१; १४०, २; १४१, ४२. ९६; १४२, ८. १६. २०; १४३, ५; १५७, १६; १५८, २६; १५९, ९; १६०, ३६; १६२, ३. ७. २२; १६५, २. ३८; १६९, १; १७०, १०; १७१, २०. २२; १७३, १८; १७७, २; १९४, १२. २८. ३०; १९५, २०; २०७, २०. २३; २२१, ६; २२४, १; २२५, ३७; २२८, १२; २२९, ३; २६१, २०; २६४, ९; २६६, ७२; २७१, ४१; २७३, ८. १८. २३; २७९, १४; २८२, ४. १३. २३. ४३; २८३, ४. ६. १३. ५६. ५९; २८४, ७३; २८५, १३. १८; २८६, २; ३०१, १२. ४२. ६३. ७२. ७४. ७५. ८९. ९२. ९७. ९८; ३०८, ५०; ३१०, ३; ३२०, ३; ३२३, २६; ३२४, २१; ३२५, ४. ३८. ४५; ३२६, १; ३२९, ४; ३३२, १; ३३३, ९. १४. ३९; ३३७, २. २९; ३३९, १२४; ३६५, ८; १३. २, ६. १८, ७६. ९६; ४, २१; ७, २; ९, ४. ८. २२; १०, १२. १३; १४, १०. १५. ६०. ३७९. ३८२. ४०३; १५, ९; १८, ८३; २३, ५. ७. १७. २०. ३६. ३९. ४६. ६३. ६५. ८४. ८६. ९०. ९४. १००. १०३; २९, २६; ३०, ८. १९. ३१; ३७, ९; ४०, २८; ४२, ६. १२. १५; ४४, २४; ४६, १५; ४७, ११. १५. १९. २१. ५४; ४९, ५. १८; ५२, ७; ५३, ८. ५२; ५४, ४. ८. ३३; ५७, २६; ५८, २६; ५९, १४; ६०, ४; ६१, १३. १४. १७. १८. ३४. ३६; ६६, ३८. ४०. ५५. ५८; ७७, २८; ८१, २९; ८२, २६; ८३, ५२; ९०, ५०. ५१. ५४; ९२, ३. ७; ९३, २०. २७; ९६, १६. २१; ९७, २; ९८, २. ३; ९९, १३; १००, २२; १०१, २; १०३, ५; १०४, १०५. १२१. १२५–१२७. १४०. १४३. १४८; १०५, २. ३. १६. १८; १०६, ९. १४; १०७, १४४; १०८, १५; १११, ३५. ४७. ४९. ६७. ६९. ८२. ९४. ९६. १०६. १२६. १३२; ११२, ३१; ११५, १८; ११६, ७. १८. २७. ३५; १२५, ४; १३८, ४. ५; १४८, ४४; १५०, ५६. ८२; १५२, २; १५८, १७; १६०, १६. ३१; १६२, ७; १४. २, २०; ३, ३. ८; ४, ५; ५, ६; १३, १. ५; ७१, २५; १५. ४, १०; ५, १२. १८. २८; ६, १. ९. १०; ७, ६. १५; २६, ७. ११; ३७, १४. ३६; १७. ३, १८. २२; १८. २, ३५; ३, ३४।

१२. विदुर : १. २००, १८; २०६, ४; २. ४९, ५७; ६२, १७; ३. ५, १७।

१३. शान्तनु : १. ९९, ४५. ४९।

१४. सगर : ३. १०६, २३।

५. भारत (म्) = महाभारत : १. १, १९ (भारतस्येतिहासस्य). ५२ (मन्वादि भारतं केचित्). ७७ (लेखको भारतस्यास्य). ८५ (भारतसूर्येण). ९२ (भारतद्रुमः) ९७ (अब्रवीद्भारतं लोके मानुषेऽस्मिन्महानृषिः). ९८ (श्रावयामास भारतम्). १०२ (चतुर्विंशतिसाहस्रीं चक्रे भारतसंहिताम्). २५४ (भारताध्ययनं). २६२ (अनुक्रमणिकाध्यायं भारतस्येममादितः). २६४ (भारतस्यवपुः). २६६ (इतिहासानां तथा भारतमुच्यते). २७० (अधीतं भारतं तेन). २७१ (एकतश्चतुरो वेदं भारत चैतदेकतः). २७३. २७४; २, ३३ (भारताख्यानमुत्तमम्). ३८ (तदेतद्भारतं नाम कविभिस्तूपजीव्यते). ४१ (भरतस्येतिहासस्य'''पर्व संग्रहः). ८५ (समासो भारतस्यायमत्रोक्तः पर्वसंग्रहः). २४१ (पञ्चमं पर्व भारते). २५१ (षष्ठमेतत्समाख्यातं भारते पर्व). २६७ (सप्तमं भारते पर्व). २७७ (अष्टमं पर्व निर्दिष्टमेतद्भारतेचिन्तकैः). ३२४ (श्लोकसप्तशतीचापि पञ्चसप्ततिसंयुता)। संख्यया भारताख्यानमुक्तं व्यासेन धीमता). ३८० (एतत्सर्वं समाख्यानां भारते पर्वसंग्रहः). ३९२ (यो भारतं समधिगच्छति). ३९५ (पुण्यां च भारतकथां शृणुयाच्च नित्यं तुल्यं फलं भवति तस्य च तस्य चैव); ५९, ५ (आख्यानं भारतं महत्); ६२, ३१ (यो ऽधीते भारतं पुण्यं). ३२ (भारतं पठन्). ४८. ५०; ६३, ८९; ९५, ८९ (इदं भारतं); १२. ३४३, ११ (शतसहस्राद्धि भारताख्यानविस्तरात्); ३४९, १३ (वेदानावर्तयन्सांगान्भारतार्थांश्च सर्वशः). १४. १५; १३. ७६, १८; १२७, १४; १५०, ८०; १८. ५, ४८. ५३. ५९. ६४ - ६८; ६, १. ३. ९. १२ (श्रुत्वा भारत भारतम्). २४. ५३. ८३. ८८-९३।

६. भारत = महाभारत युद्ध : १२. ४९, २ (भारते हताः। भारते भारतसंग्रामे-नीलकण्ठी)।

७. भारत = भारतवर्ष : ६. ९. ९; १२. ३२५, १४।

भारतगोप्तृ = शान्तनु (१. १००, ८)।

भारतरथ श्रेष्ठ = अर्जुन पाण्डव (७. ३२, ५२)।

भारतराजपुत्र ; ८. ७, १८ (हीनिषेधोभारतराजपुत्र उग्रायुधः क्षणभोजी सुदर्शः)।

भारतश्रेष्ठ = अर्जुन पाण्डव (१४. ८३, १७)।

भारतसत्तम = दुर्योधन (५. १८४, १७)।

भारतसिंह = युधिष्ठिर (३. १८, २४)।

भारतं वर्षम् : ६. ६, ७; ९, १. ४. ५; १०, १. ३; १२, ५१।

भारताग्र्य : १. अर्जुन पाण्डव; २. जनमेजय पारिक्षित; ३. दुर्योधन धार्तराष्ट्र :–

१. अर्जुन : १५. १५, ७।

२. जनमेजय : १, ५५, १-७।

३. दुर्योधन : ५. २६, २९।

१. भारताचार्य = द्रोण (२. ४४, १७; ४. ५१, ९; १०. १२, १३)।

२. भारताचार्य = कृप (२. ३७, १२)।

भारताचार्यपुत्र = अश्वत्थामा (१०. १२, ३५)।

भारतापसद : दुःशासन धार्तराष्ट (२. ६८, ५३)।

१. भारती, एक नदी का नाम है (३. २२२, २५)।

२. भारती : १२. ३८, २०; १३. ७६, २८ (बार्हस्पतीं); १४. २१, २३; ४३, २३।

१. भारद्वाज : १२. १४०, ३ (भारद्वाजस्य संवादं राज्ञः शत्रुञ्जयस्य च). ४।

२. भारद्वाज ; १. २१६, ४ (भारद्वाजस्य तीर्थे तु पापप्रशमनं महत्)।

३. भारद्वाज, एक ऋषि का नाम है (७. १९०, ३०)।

४. भारद्वाज = यवक्रीत (३. १३५, ९. १०)।

५. भारद्वाज, से भरद्वाज के वंशजों का तात्पर्य है : १३. ९४, ५; १५०, ७९; १७. १, १२।

६. भारद्वाज = द्रोण : १. १, १७८. १९०; ६७, ६९; १३०, २७. ३९. ४९. ५४. ५७. ५९; १३१, १. २. १२. १४. ७६; १३२, १; १३३, १७; १३४, ४. ८; १३५, ३; १३६, २६; १३८, ३५; १३९, १२; १६६, १४. २५. २६; १६७, २४. २६. ३५. ५५; १७०, ६४; २०६, १९; २. ६८, १४; ३. ४१, २०; ४. ३९, ३; ५३, १८; ५८, ५. १०. २३. २८. ३२;

६४, २१; ५. ४९, ४३; १४७, ८; १६७, १७; १९५, ५; ६. ४३, ६७; ५१, १४; ५३, ८. १०. १२. १५. १९. ३२. ३७; ५५, ३६; ५७, ८; ६४, ७४; ६९, १७. २३. २४; ७३, १५; ७५, २६. २९. ३१. ३२; ७७, ५१. ६६; ८१, २५; ८२, १४. २०. २३. २५; ८७, ३. ७; ८९, २३; ९४, ९. २६; १०१, ५५; १०२, २. ३; ११०, १७; १११, ५०; १२०, २७; ७. ७, १०. ३३; ८, ७. ३५; ९, २१; १२, २; १३, ३. २८; १६, २६. ३०; २०, १. ४. ५. २८; २१, २७. २९; २२, १. ६. २७; २३, ८१; ३३, ३. १०; ३५, १. ६. ७. ९; ३७, ३५; ३८, २. २४; ३९, ९. २०; ७४, ३४; ८७, ११. २९; ९१, २७. ४०; ९५, १०; ९६, २; ९८, ३७; १०१, २५; १०६, १. २४. ४६; ११०, १. ४. ८. १०. ११. २२. २४. २५; १११, १४. १७. २१. २३; ११४, ४५; ११५, ११९; ११६, ७; ११७, ५. १३. २८; १२१, ५२. ५६; १२२, १. ३३. ४४. ५०. ५८. ७३; १२५, ४. ३२–३४. ३७. ५२. ५३. ५६. ७१; १२८, ११; १४६, १३९. १४१; १५५, ६. १६; १५६, ३४. ४१; १५७, ३४. ४६; १६१, २. १४; १६२, २६; १६४, २७. ३४; १६६, ४२; १८३, १७; १८५, २३; १८६, ३५; १८७. ३६; १९०, २७. ३०. ३३; १९१, ७. २८. ३६; १९२, १३. १६. १९. २०. ३२. ५४. ५७. ५८. ६३. ७०. ७१. ७७; १९३, ८; ८. ६, १५. ३८; २६, ७; ७३, ४४; ९. २, १९. ६९; १२, ३५; १४, ३६; १२. ५८, ३; १४०, ३. ४।

७. भारद्वाज = अश्वत्थामा : १. २, ३०५; १०. ८, ३१. ४९. ५०; १४, १२।

भारद्वाजगुरु = द्रोण (१. २, ३०५)।

भारद्वाजतीर्थ, पाँच नारीतीर्थों में से एक है। यहाँ अर्जुन तीर्थयात्रा के समय आये थे (१. २१५, ४)।

भारद्वाजसुत = द्रोण (७. ११४, ४५)।

भारद्वाजी, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, २९)।

भारभृत् = विष्णु (सहस्रनाम)।

भारुण्ड, उत्तरकुरुवर्ष में मिलने वाले बलवान् पक्षियों की एक जाति का नाम है। इनकी चोंच बड़ी तीक्ष्ण होती थी और ये वहाँ के मृतकों के शव को उठाकर कन्दराओं में फेंक आते थे (६. ७, १२; १२. ८९, २२; ९३, ३७; १६९, ९)।

भारुण्डसामन् : १. ७०, ३९ (भारुण्डसामगीताभिरथर्वशिरसोद्गतैः)।

भार्ग (बहु०), भारतवर्ष की एक जाति का नाम है (६. ९, ५१)।

१. भार्गव (बहु०) = भृगु के वंशज (८. ३४, १२८; १३. ५२, ३८; ८५, १२६. १४३)।

२. भार्गव (बहु०) भारतवर्ष की एक जाति का नाम है (६. ९, ५०)।

३. भार्गव (वि०) : १. ५, ३. ६; ६६, ३८।

४. भार्गव = भृगु के वंशज : ११. २३, २७; १२. २, १५; १३. ८५, १२९; १४. ३५, २५।

५. भार्गव = और्व (१. १७९, १. ९)।

६. भार्गव = च्यवन : १. २, १७०; ५, ८. १२; ८, १; ४८, १८; ३. १२१, २२. २३; १२२, ७. १०. १२. १६. २२. २३; १२३, १४; १२४, १. ७. १३. १६. १७; १२५, ३. ५. ७; १२. ३७, ११; ३६५, १. ३; १३. ५०, ३; ५१, २५; ५२, ८. १९. ३१. ३६; ५३, १०. ११. ५२. ५४; ५४, ३३; ५५, २; १६५, ४७।

७. भार्गव = शौनक (१. ५, २०; १८, ६)।

८. भार्गव = शिव (७. २०२, ३५; १४. ८, २१)।

९. भार्गव = दधीच (१२. ३४२, ३६)।

१०. भार्गव = देवशर्मा (१३. ४०, २२)।

११. भार्गव = जमदग्नि (१२. ४९, २९; १३. ९५, ७. २६)।

१२. भार्गव = मार्कण्डेय : ३. १८३, ६०; १८८, ९०; १९०, ३; १३. २२, १५।

१३. भार्गव = परशुराम : १. २, ६; ६४, ५; ६७, ७६; १०४, ४; १३०, ६५. ६६; ३. ४, २; ८३, २९. ३९; ८७, २२; ९९, ४०. ४२. ५४, ५६; ११५, ४; ११६, २३; ५. ३९, ३०; १७६, २९; १७७, ३. १९. ३०. ४०; १७८, १३. १५. ३९. ६०. ८५. ९२; १७९, ९. १०; १८२, १. ७. २८; १८४, ३; १८५, १४. १९. ३०. ३७; ६. १४, ५०; ७. ७०, १५; ८. २, १३; ५, ५५; ८, ४; ३१, ४४, ४७; ३४, १३२. १३९. १४२. १४३. १४९. १५०. १५२. १५६; ७३, ११६; ९०, ८२; ९. ४९, ७; १२. ३, ९. २२. २६-२८; २७, ८; ४६, १४; ४७, ९; ४८, १४; ४९, ५४. ६०; ५७, ४०; १२४, २४; १४३, ६. ७; १३. ८४, ३५. ४१; ८५, ४६. १५३; १४. २९, १२।

१४. भार्गव = प्रमति (१. ८, २५)।

१५. भार्गव = ऋचीक (३. ११५, २१; १२. ४९, ८. ९; १३. ४, ८. १२)।

१६. भार्गव = उशना (शुक्र) : १. ६३, ४४; ७६, ३९. ७१; ७७, ७; ८०, ७. ८. ११. १३. १४; ८१, २९. ३२; ८३, २७; ३. ८३, १३९; १२. ५७, ४०; २२४, २४. २७; २१०, २०; २८९, १९. ३८; १३. १७, १७७; ९८, १२. ६५; १०३, ३९।

१७. भार्गव = उतङ्क : १४. ५३, २३; ५४, १४; ५५, ३१. ३२; ५६, १९; ५८, ५२।

१८. भार्गव = विपुल (१३. ४०, ५५)।

१९. भार्गव : १. २, ११८; १९०, ४७; १९१, १. १८; १९२, १. २; १९३, ६।

भार्गवदायाद = उशना (१२. २८९, ७)।

१. भार्गवनन्दन = जमदग्नि (३. ११५, ४४; ११६, ३)।

२. भार्गवनन्दन = परशुराम (१२. ४, १; १३. ८५, ७८)।

भार्गवर्षभ = ऋचीक (१३. ४, ४३)।

भार्गवश्रेष्ठ = परशुराम (५. १७६, २६)।

भार्गवसत्तम = मार्कण्डेय (३. २०१, ७; २१७, ५)।

भार्गवसत्तमाः (बहु०) : १. १७८, १५।

भार्गवास्त्र, एक दिव्यास्त्र का नाम है जिसका कर्ण ने प्रयोग किया था : ८. ६४, ४७. ५०. ६०; ७४, ६; ८९, २७. २८।

भार्गवी = देवयानी (१. ७६, ३५; ८२, २३; ८३, ८)।

भार्गवोत्तम = शौनक (१. ५८, ३०)।

भार्तृ = विष्णु (सहस्रनाम)।

भालुकि, एक मुनि का नाम है : २. ४, १५; ७, १२ (इन्द्र की सभा में); ३. २६, २२।

१. भाव = शिव (सहस्रनाम)।

२. भाव = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. भावन = स्कन्द : ३. २३२, १३ (भावनः सर्वसुरासुराणाम्)।

२. भावन = शिव (सहस्रनाम)।

३. भावन = विष्णु (सहस्रनाम)।

भावनी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ११)।

भाष्य : २. ११, ३५ (भाष्याणि तर्कयुक्तानि देहवन्ति); ३६, ७ (सर्वभाष्यविदां वराः); १२. ३२०, १५ (सर्वभाष्यविदां मध्ये); १३. ९०, ३४ (ये च भाष्यविदः केचिद्ये च व्याकरणे रताः)।

भास, एक पर्वतराज का नाम है (१४. ४३, ५)।

१. भासी, कश्यप की प्राधा नामक पत्नी से उत्पन्न आठ कन्याओं में से एक का नाम है (१. ६५, ४६)।

२. भासी, ताम्रा की पुत्री का नाम है जिसने हिंसक पक्षियों को जन्म दिया (१. ६६, ५६. ५७)।

भासुर = महापुरुष (महापुरुषस्तव)

१. भास्कर = सूर्य : १. १२६, ३ (तीक्ष्णांशोर्भास्करस्यांशः कर्णोऽरिगणसूदनः). ५ (श्रीमान्भास्करस्यात्मसंभवः); ६. ५५, २३; ७. १७४,

३१ (स्वर्भानुभास्करौ); १७५, ४९ (स्वर्भानुरिव भास्करम्); ९. ५, २६; ११, ७; २२, ४५; २४, ६२; २९, ७३. ८७; ३२, ४१; ३३, ३१; ४०, २७; ४४, ८; ४९, १८; ११. २७, १२; १२. ६, ५; १२२, ३१; ३१८, ८. १०; १३. १५०, २५ (बारह आदित्यों में से आठवें); १५६; २ (स्वर्भानुः सोमभास्करौ)।

२. भास्कर = शिव (१४. ८, १६)।

भास्करद्युति = विष्णु (सहस्रनाम)।

भास्करि, एक प्राचीन मुनि का नाम है (१२. ४७, १२)।

भास्वर, सूर्य द्वारा स्कन्द को प्रदत्त दो पार्षदों में से एक का नाम है (९. ४५, ३१)।

भिक्षु = शिव (सहस्रनाम)।

भिक्षुरूप = शिव (सहस्रनाम)।

भिषज् = विष्णु (सहस्रनाम)।

भिषजावर्त = श्रीकृष्ण (१२. ४३, १२)।

भिषजौ = आश्विनगण (१२. ३३९, ५३)।

१. भीम, एक असुर का नाम है (१२. २९४, १७)।

२. भीम, अंश द्वारा स्कन्द को दिये गये एक अनुचर का नाम है (९. ४५, ३४–३५)।

३. भीम, एक प्राचीन राजा का नाम है (१२. २२७, ४९)।

४. भीम = विष्णु (सहस्रनाम)।

५. भीम = शिव (सहस्रनाम)।

६. भीम = भीमसेन पाण्डव जिन्हें बहुधा भीम नाम से ही सम्बोधित किया गया है : १. १, ११२. १२५ १३१. १३६. १५५. १६६. १९७. २०४. २१३; २, ३१ (दुर्योधन के साथ आधे दिन तक इनका गदायुद्ध होता रहा). ११४. १३६. १५०. १५५. १७७. १८१. १८८. १९९. २११. २५९. २८४. २८५. २८७. ३०४. ३०६. ३१४; ६१, १० (इन्हें विष दिया गया). ११ (गंगा में फेंका गया). १२. २५. २८. ३७; ६३, १२३ (सुतसोम को उत्पन्न किया). १२४; ६७, १११ (भीमसेनं तु वातस्य); ९५, ६१ (मारुताद्भीमसेनं). ७५ (सुतसोम के पिता). ७७ (भीमसेनोऽपि काश्यां बलन्धरां नामोपयेमे वीर्यशुल्कां तस्यां पुत्रं सर्वगं नामोत्पादयामास). ८१ (पूर्वमेव हिडिम्बायां राक्षसं घटोत्कचं पुत्रमुत्पादयामास); १२३, १२–१८ (कुन्ती के आवाहन पर महाबली वायु मृग पर आरूढ़ होकर उसके पास आये। कुन्ती ने उनसे एक ऐसा पुत्र प्रदान करने के लिये कहा जो महाबली और विशालकाय होने के साथ ही सबके दर्प को चूर्ण करने वाला हो। वायुदेव ने तब भीम को उत्पन्न किया। उस महाबली पुत्र को लक्ष्य करके यह आकाशवाणी हुई कि वह कुमार समस्त बलवानों में श्रेष्ठ होगा। भीमसेन के जन्म लेते ही एक अद्भुत घटना यह हुई कि प्रसव के दसवें दिन कुन्ती भीमसेन को गोद में लेकर एक सुन्दर सरोवर पर गई। वहाँ से लौटते समय उन्हें एक बहुत बड़ा व्याघ्र दिखाई पड़ा जिससे भयभीत हो कुन्ती उछल पड़ी। इस अस्तव्यस्तता के क्षण में बालक भीम उनकी गोद से पर्वत के शिखर पर गिर पड़े। उनके गिरने से पत्थर की शिला चूर-चूर हो गई); १२४, २० (भीमसेनेतिमध्यमम्); १२६, २४ (मातरिश्वा ददौ पुत्रं भीमं नाम महाबलम्); १२८, १६. २१. २५. ३०. ४५. ४७. ५१. ५४. ५६. ६०. ६४. ७०. ७२; १२९, १. २. ५. ९–११. १३. १४. १९. ३२. ३४; १३२, ६१ (भीम और दुर्योधन गदायुद्ध में विशेषप्रवीण हुये किन्तु दोनों सदा एक दूसरे के प्रति मन में क्रोध से भरे रहते थे). ६६. ७९ (द्रोण ने अपने शिष्यों, भीमादि, की परीक्षा लेने का निश्चय किया); १३५, १. २. ४ (दुर्योधन के साथ इनकी गदायुद्ध-प्रतियोगिता); १३७, ५. १०; १३८, २७. २९. ३०. ३१. ६१. ६२; १३९, ४ (इन्होंने संकर्षण से गदायुद्ध की शिक्षा ली और द्युमत्सेन के समान बलवान हो गये); २४; १४१, २०; १४५, ८; १४६, १३. २०; १४८, २. १०. २०; १५०, १६. २३. २६; १५१, ५. १४. १५. ४५; १५२, १६. १७. २१. २२. ३१. ३४; १५३, ३. ७. १२. २१. २२. ३८–४१. ४३; १५४, १७. १८. २०. २३. २४. ३०. ३१. ३३. ३४; १५५, १. २. ५. १२. १७–१९. २१. ३०–३२. ४३; १५६, १३; १५७, ६. ८. ११. १६; १६२, १. ३. १५. १६. १९; १६३, २. ४. ६. ९. ११. १२. १५–१९. २१–२३. २८; १६४, ३. ७. ९; १६८, १०; १८७, १०; १८९, १५. १६; १९०, ४. ८. २८–३०. ३८. ४१; १९१, ८; १९२, ३. ६; १९३, २१. २२; १९५, ९. १८. २४; २००, ४; २०१, १०. १४; २०५, १७; २०७, ३; २२१, ४१. ८२; २. २, १८. २१; ३, ७. २१; १३, २०. ४४; १५, ९. १०. ११; १६, २; २०, ३. ५. ७. ८. २०. २४; २१, २६. ३२ (पार्थभीमयोः); २३, ३. ७–९. ३१; २४, १. ४. ५. ९. १०. १६. ३२. ४७-४९. ५५; २५, ८. १०; २९, १. ५. ६. ७. १४-१६; ३०, ७. ३०। "भीमसेन ने पूर्व दिशा के देशों को जीतने के लिये प्रस्थान किया और साथ पाञ्चालों आदि पर विजय प्राप्त की। दशार्ण नरेश सुधर्मा ने भीमसेन के बिना अस्त्र-शस्त्र के ही महान् युद्ध किया। उनका अद्भुत पराक्रम देखकर भीम ने उन्हें अपना प्रधान सेनापति बना दिया। चेदिराज शिशुपाल ने भीम का अभिप्राय जानकर अपना राष्ट्र भीमसेन को सौंप दिया। शिशुपाल से सम्मानित होकर भीमसेन अपनी सेना सहित तेरह दिन तक वहाँ रह गये। (२. २९)।" "भीमसेन पूर्व दिशा के अनेक देशों तथा राजाओं को जीत कर भारी धन-सम्पत्ति के साथ इन्द्रप्रस्थ लौटे (२. ३०)।" २. ३३, १७; ४२, २. ५. ९. १४. १६. १८. २०; ४४, २; ४५, ४८; ४६, १२; ४७, ७. ८; ४८, १५; ५०, २७. ३५; ५३, १३; ५८, ३०; ६३, २; ६५, १७. २३. २५; ६८, ७. १०. ५०. ५१; ७०, ३. १०. ११; ७१, ४. ६. ८. ९. १२. १३. १६. २०. ३२; ७२, ४. १०. १२; ७३, १५; ७७, १५. १६. २०. २३. २६. ३१–३३. ४०; ७८, १०; ८०, २. ४. १३. १४. ३४; ८१, ३३. ३४. ३६; ३. ४, १०. ११. १६; ५, ७. ९; ६, १४; १०, २४. २५. ३४. ३७; ११, १. २. २६. २९. ३६. ३९. ४१. ४३. ४५. ५१. ५७. ६०. ६८. ६९. ७२. ७३. ७४; १२, ६७. ७७. ७८. ८०. ८१. ८३. ८४. ८९. ९५–९७. १००. १०४–११०. ११४. १३४; २२; ४५; २३, १; २४, २५; २५, ६; २७, २०. २१; ३०, ७; ३४, १. ४. ६. ७. १६. १८; ३५, १; ३६, १. ४. २१; ४९, १०. २३; ५०, ११; ५१, ७. १२. १३. २८. ४३; ५२, ५. ३६. ४०; ८०, १६. २६; ९३, १६. २०; १२०, २४; १२५, २२; १३९, १३. १९; १४०, ८. १८. २३; १४१, १. २०. २६; १४३, १४; १४४, ८. २१. २३. २७ (घटोत्कच के पिता). २८; १४५, १. ३; १४६, ४. ५. ८. ९. ३६. ३९. ४५. ४८. ४९. ५३. ५५. ६१. ६२. ६५–६७. ७४. ८४. ८५; १४७, १. ३ (पाण्डवो वायुतनयो भीमसेन इति श्रुतः). ६. ८. ११. १७. १९–२१; १४८, १८; १४९, १. १०; १५०, १. २. ७. ९. ११. १७; १५१, १. २. ४. ८. १२. १५. १९; १५२, १. ७. १०; १५३, १२; १५४, १. १३. १६. १८. २२. २६. २७; १५५, ४. ९. १०. १३. १८. २४. २५; १५६, १२. २१; १५७, २. ७. ४१. ३६. ४०. ४७. ५०. ५१. ५७. ६७–६९. ७१; १५८, ७७. ८३. ८६. ९२. ९८; १५९, ३; १६०, ४. १९. २४. २६. ४५. ५० ५३. ५६. ५७. ६३–६५. ६९. ७१. ७३. ७६; १६१, २. ४. ५. १०. ११. १४. १६. २२. ४०. ४१. ४२. ४४. ४६–४८; १६२, १०; १७८, १. १२. १३. १७–१९. २१–२३. २८–३१; १७९, १. ३. ८. २५. ४६. ४९; १८०, ४; १८१, ४३. ४८. ४९; १८३, ८. २२; २३६, १३. १८; २३८, ८. ११; २३९, ९; २४२, १४. २२; २४३, १६. १८; २४४, १; २४५, ८. ३०; २४८, ११; २५६, १५; २५९, ६; २६६, ६. ७; २६८, ६. २०; २६९, ७. २५; २७०, १. १०; २७१, २. ४. ६. ७. २३. २४. २६. ३६. ३९. ४४. ५२. ५५. ६०; २७२, २. ३. ५–७. १२. १४–१६. १८; २९२, ६; ३१२, २. ३३. ३५. ३६. ४०; ३१३, २. १२. २४–२६; ३१५, २३. २७; ४. २, १; ५, २१. २३; ८, ९. १३; १३, ७. ३०; १६, १३. १४. १७. १८; १७, ४. ६. ९. १०. १४. १५; १८, ३३; १९, १३. २०. २४. २५. ३३; २०, ५. १६. २७–२९; २१, १८. १९. २०. २२. ४४. ४८. ४९. ५१; २२, २४. ३०. ३६. ३८. ४१. ४९. ५७. ६१. ६४–६६. ६९–७१. ७३. ८३. ८५; २३,

३. १५. १८. १९. २६. २७; २४, ११. १४. १६; ३१, २५; ३३, २२.
१३. १४. १८–२०. २२. २४. २८. ३३. ४३. ४५–४७. ४९. ५३.
५७–५९; ४०, ४. ८; ४३, ८. १४. २०; ४४, २. ५; ५०, ११; ७१, १.
३. ९. २५. ३०; ५. १, ५; ३, १६; ८, २८; १८, १८; २०, १७; २२,
१४; २३, ४. २३. २६. २७; २४, ५; २६, २५. २६; २९, १९. ५०. ५१.
५३; ३०, २; ४८, ८. १६–१८. २३; ४९, ४१; ५०, २०; ५१, १. २.
९. १२–१५. १९. २३. २५. ३६; ५३, ६; ५४, १५; ५५, ३३. ३५.
६०; ५६, २. ९; ५७, १४. २६; ५८, २३–२८; ६२, १५; ६५, ४; ६९,
१०; ७४, १; ७५, १. ३. ४. ६. ८. ११. १५. २१; ७६, ४; ७७, ४.
१३. १८; ८०, २. १२; ८१, ४; ८२, ३. ३१. ३७. ४१. ४६; ८३, ३०;
९०; २४. २६. ४९. ८१. ८२. ८४. ८९; ९५, २०; १०५, ३४; १२४,
४८; १२६, ४. ५; १२९, ४९; १३१, ९; १३७, ३. ११. २१; १३८,
५. १३. १५. २७; १४०, २०; १४१, २४. २७. ३३; १४२, १०; १४४,
३; १४६, २१; १५१, ५. २९. ४६. ५४. ५५; १५३, १०. ११; १५४
१७. १९; १५७, ५. ३३; १६०, ६५. ११२. ११५; १६१, १०; २९.
३०. ३३; १६२, ४. १५. ३०. ३६. ३७. ३९. ६२. ६३; १६३, १५. २२.
३०. ५२; १६४, ३. ५; १६६, १२; १६९, ४; १७१, २०; १७२, २;
१९३, ३; १९४, १८; १९६, ९. १६; ६. १९, ८. ११. १५. १७. २१.
२३. २९. ३२; २०, १; २२, ३. १२; २५, ४. १०; ४३, १७. ३३; ४४,
३. ८. १०. २३; ४५, १९; ४७, २६. ३०. ३२. ३३. ६६; ४८, १००.
१०६. १०७; ४९, १०; ५०, १७. ३५. ४९; ५१, ६; ५२, ८;
५३, ३५. ३८. ४१; ५४, ३. ५. ६. ८. १६. १७. १९. २१–
२३. २६. २९–३१. ३३–३५. ३७. ४५. ४९. ६७–७२. ७४.
७७. ७८. ८१. ८५. ८७. ८९. ९०. ९२. ९४. ९६. ९८.
९९. १०३–१०७. ११०. १११. ११३. ११४. ११६. १२०. १२४;
५६, ११; ५७, ९. ३३; ५८, १४. १६. १९; ५९, ८७; ६२, १८.
३२. ३३. ३५. ३८. ३९. ४१. ४९. ५०. ५३. ५५. ५७. ५९. ६०, ६३.
६५; ६३, १. २. ५. ८. १०. १६. १९. २४. २६; ६४, ५–८. १६. १७.
२२. २४. २६. २८–३१. ३६. ३८–४०. ४२–४५. ५१. ५३. ५४. ६३.
८३; ६५, १०; ६९, ८. १३. २४. २५; ७०, १. २१; ७१, २०; ७२, १४.
२१. २३; ७३, १७. २१. २२; ७४, ३०; ७५, ७. २७. २९–३१. ३४;
७७, ६. १५. १७. १८. २०. २७. २८. ३०. ३२. ३३. ३५. ३७–४०.
५२. ५४. ५५. ६०. ७२; ७८, १–३. ५. ९. १०. १४. १६. १८; ७९,
१. २. १९. २०; ८०, ५; ८१, २८; ८२, ५६–५९. ६२; ८४, ४२; ८५,
१४. १७. २२; ८६, ४८; ८७, १८; ८८, ८. ९. १२. १७. १९. २०. २२.
२९. ३१. ३७. ४२; ८९, ८. २०. २६. २९; ९०, ४९. ८८; ९३, ७.
१८; ९४, १. ३. ५. ६. ११. १६. १९–२१. २६. २९; ९५, ६. १२.
२३. ३२. ३५–३९. ५१. ६८. ७१. ७३. ७७. ८०. ८६; ९६, १६. २०.
२३. २६. २९. ३२; ९९, ९. १६; १०१, ३. ६; १०२, २६. २९. ३१.
३३; १०३, १३; १०४, १८. २५; १०५, ३३; १०६, २. ४. ५; १०७,
२७. ६०; १०८, ५. १९; १०९, १९; ११०, १०; १११, ४४. ४५. ४८;
११२, ३१; ११३, २. ४. १२–१४. १७. २०. २१. २३. २६. २९. ३४.
४०. ४३. ४७. ४९. ५०. ५२; ११४, ५. ८. १०. २१. २९. ३१–३३.
३५. ३६. ३८; ११५, १९. २९; ११६, ३७; ११८, ३९; ११९, ९. १०.
२०. ११८; १२०, १९; १२१ ३७. ४९; ७. २, ३१; ८, ४. २५. २८;
१०, १३; १४, २७. २८. ३०. ८३; १५, ५. ६. ८. ११. १३ (पट्टैर्जाम्बू-
नदैर्बद्धा बभूव जनहर्षणी । प्रजज्वाल तदा विद्धा भीमेन महती गदा). १७.
१८. २०. २५. २६. ३३; १६, २५; २२, १६. २४; २३, १. ७८. ८३.
९१; २५, ५. ६; २६, ३. ६. ८. ९. ११. १२. १४. १५. १९. २१. २३.
२६. २७. २९. ३०. ४८. ५०; ३२, ४. ७. ९. ५५. ६३. ७१; ३४, ४.
९; २५, १. २२; ३९, १२; ४०, ४. ९; ४२, ३. १२; ४३, १२. १३; ७८,
१२; ८३, ४; ९५, ३५; ९६, ३१; ९७, २; ९८, ५३; १०६, १६; १०८,
१३. १५–१९. २२. २३. २५–२७. ४१. ४२; १०९, ११. १६; ११०,

१८. ६३. ७०; १११, ४३; ११२, ६८. ७०. ७१. ७३. ७४; ११३, ६०.
६५; ११४, ६१. ६६. ६९. ७१. ७२. ७५–७९. १०१; १२२, १४. २१;
१२३, ३६; १२४, १५. १९. ३२; १२५, ५८; १२६, १९. २०. २३. २५.
२७–२९. ३१. ३५. ३९; १२७, १. ४. १६. १९. २१. २४. २९. ३६. ३७.
४५. ४७. ४९. ५२. ५६. ५७. ५९. ६२–६४. ७०–७४; १२८, ४. ९. ११.
१२. १३. १६. १७. १९–२१. २३. २४. ३०. ३३. ३६. ३८. ३९. ४३;
१२९, १. २. ५–१०. १२. १४. १५. २०. २१. २३. २६. २७. ३०. ३२.
३४. ३५. ३८; १३०, १. ४. ७. ८; १३१, २–५. ७. १०. ११. १३–१७.
१९. २१. २२. २४. ३०. ३२. ३४. ३५. ३९–४५. ४८. ४९. ५१. ५२.
५५; १३२, २–४. ६–८. १२. २२. २३. २८. ४१; १३३, १. ६. १४.
१७. २०. २२. २४. २५. २९. ३४. ४०. ४१. ४५; १३४, १. ३–५. ८.
१०. १२. १६. १८. २१. २५. ३१–३४; १३५, ८. ११. १३. १५. १६.
१८–२०. २२. २३. २९. ३२–३६. ३८–४०; १३६, २. ३. ७. ८. १०.
११. १३. १५. १७. २१. ३५–३९; १३७. १. २. १४. १९. २०. २२.
२५. २६. ३८. ४७. ५२; १३८, ४. ५. ८. १०. १२. १३. २७. २९;
१३९, १. २. ६. ११. १७. २२. २६. ३५. ३८. ३९–४१. ४३. ४४.
४६. ५१. ५६–५९. ६२. ६४. ७६. ७७. ८९. ९१. ९४. ९७. १००.
१०३. १०६. १०९. ११४. ११५; १४०, ३. ९; १४३, ४६. ५२; १४५,
२५. ४०. ६१. ६३; १४६, १३७; १४७, ७१. ७२. ९०; १४८, १. २. ७.
११. १५; १४९, ५२; १५०, ३; १५२, १४; १५३, २२; १५४, ९; १५५,
२१. २२. २५–२७. ३४. ३६. ३७. ४१; १५६, ३५. ४८. ५३. ८१. ८९.
९७. १२४. १६५. १६६. १६९; १५७, २. ५. ८. १२–१४. १७. ४४.
४५; १५८, ४५; १६१, १. ५. १२; १६२, २४. ५१. ५५; १६३, ३;
१६४, २९; १६५, ८; १६६, ४२. ४३. ४५–५०. ५२. ५५. ५६. ५८.
५९; १७०, ६४; १७२, २०. २९; १७३, ४०. ६०. १७६, ५. ६; १७७,
१६. १८. १९. २२. २४–२७. २९. ३३. ३९–४३. ४८; १७८, १. २.
१०. ३८. ४०; १७९, ४९; १८१, २५. २३; १८३, २१. २२. ३७. ५०;
१८४, ३; १८६, ८. ९. १२. ५०. ५१; १८७, २७; १८८, ११. १२. १४.
१८. २०. २३; १८९, ५०. ५२. ५५. ५६. ६४; १९०, १४. १६–१८. ४१.
४८; १९१, ५१; १९२, ३. २६. ३६. ४२. ७९. ८० ८२; १९३, ५३.
५६; १९५, २९; १९७, २; १९८, ४९. ५१. ६०. ६६; १९९, ४४. ५३.
५४. ५८. ६०. ६२. ६३; २००, ४. ६. ८. १०. १३. २२. ७३. ८०. ८१.
८७. ८९. ९१. ९२. ९५. १०१. १०३. १०६. १११. ११२. ११४. ११५.
१२१. १२३. १२५. १२८. १२९; २०१, ११; ८. ३, १२; ४, १६; ५, ९.
१९. २२. ३०. ३२, ३५. ४२. ४४; ९, ४७; ११, २९; १२, ३२. ३३.
३४. ३६–३९. ४१–४३; १३, ६; १४, ३८; १५, १. ३. ७. १८. ३०.
३५; २१, ९; २६, १७. १९; २८, ४९; २९, ३३. ३५; ३५, १७; ३६,
१९. २१. २५. ३०; ४६, ५. ३४; ४८, २४. २९. ३२. ४७. ५३; ४९,
३४. ६७; ५०, ३. ४. ६. ७. १४. १९. २०. २५. २६. २८. २९. ३२–
३४. ४७. ४९; ५१, १. ३. ५. ६. ९. १२. १४–१६. १८. २०. २२. २४.
२६. २८. ३०. ३१. ३३. ३५. ४२. ४४. ४५. ५१–५५. ६२. ६३. ६४;
५४, १६; ५६, १–३. ७०. ७१. ७४. ७५. ८१; ५७, १०; ५८, १. ४५;
६०, ७. १९. २६. ३२. ५८. ६०–६२. ६७. ७४. ७७–७९. ८१. ८६.
८८. ८९; ६१, १. ३. ४. ७. १५. ३५. ५३–५५. ५७. ६०. ६२. ६६.
६७. ७१. ७३. ७४; ६२, ८. ३४; ६३, ३. २६. २७. २९. ३५. ३७; ६५,
३. ४. ७–११. १४. १६; ६६, १४; ६७, २२; ६८, २-४; ६९, ३. ७३. ८२;
७०, २. ७. ८. ११. ४६. ४७; ७१, २१; ७३, १८. २६. २७. १२०; ७४,
५१. ५८; ७५, १२. १७; ७६, १–५. ७ १०. १९–२१. २८. ४०; ७७,
२. २३–२५. २७–३०. ३२. ३७. ३९. ४०. ४८. ५०. ५१. ५३. ५५.
५८–६०. ६२. ६४. ६८. ७१–७३. ७५. ७६; ७८, १. ७–९. १६. २०.
२३. ६४; ७९, ७; ८०, १. २१. २३. २४; ८१, २१. २३. २४. ३०.
३१. ३३. ३५. ४६; ८२, १४. ३०. ३४. ३५; ८३, १–३. ५. ६. ८. ९.
१३. १४. १६. २१. २२. २४. २७. २९. ३२. ३३. ३६. ४१. ५०; ८४,

२. ४. ५. ८. १०. २८. ३५. ३६. ३९; ८५, २२. ३४; ८९, ३६. ४९. ५१. ६२; ९१, ५; ९२, ६; ९३, १५. २१–२३. २६–२९. ३६. ५८; ९. १, २२; २, ५१; ३, १५. २१–२३. २७–२९. ३६. ५६; ४, १७. ३७. ३८; ५, २४; ७, ३१; ८, १५. ३२; ९, ३६. ३८; १०, ५७; ११, २१. ३७. ४१. ४५. ४९. ६३; १२, ३. ६. ११–१३. १६. १७. २७. ५४. ६०; १३, १. ४. ८. १२. २०. २१. २४. ३२. ४८; १५, १६. १८. २३. २७; १६, ३. ७. ११. २५. ३६. ३९. ४०; १७, ३. ८. १०. २३. २६–३०. ३२. ३३. ३५; १८, ७; १९, २०–२२. २५. ३१. ४१–४४. ४७. ५०. ६२; २०, १९; २२, ९. १५. २०; २४, ३१; २५, ३०. ३३. ३४. ५९. ६०; २६, १. ४. ७–९. ११. १३. १४. २०. २४. २७–२९. ३४–३६. ३९; २७, १३. २९. ३१. ४९. ५२. ५३. ५४; २८, ३. ७. १८. २८–३१; २९, २. ७६. ८४; ३०, २४. ३३. ४१. ४२. ५२; ३२, ६६; ३३, ५. ८. २३. १७. ३०. ३१. ४२; ३४, ११; ५४, ३३; ५५, २. १८. २०. २५. ४५; ५६, ७. २९; ५७, १. १३. १७. २६. २७. २९. ३२. ३३. ३८. ३९. ४१. ४४. ४६–४८. ५०. ५१. ५४. ५६. ६०. ६१. ६७; ५८, ३. ४. ६. ७. १९. २१. २२. २४. ४०. ४२. ४७. ४८; ५९, ३. ६. १३. १७. २०. २१; ६०, ३. ४. ८. १७. १८. २३. ३४. ४०. ४१; ६१, १. २. ६. १४. १७. २८. ४२; ६२, २१; ६३, ८; ६४, ११. १६. ३१; १०. १, ७. १५. ६०; ५, २३. २४; ९, २०. २१. २३; १०, ८; ११, ९. २२. २८; १२, ३; १३, ११. १७; १५, २३. १४; १६, २६; ११. ११, ११; १२, १३–१५. १७. १८. २२. २३. २७. २८; १३, ९. १०. १४. १७; १४, १९; १५, १. १५; १७, १६. १७. १९; १८, १. १९. २०. २५. २७. २८; १९, १; २२, १; १२. १, १३. २६; २, ६; १०, १; १६, १; ३३, १६; ३७, ३४; ३८, ४; ४०, ३. २२; ४१, ९; ४४, २; ५३, १८. २५; ५४, ५; १६७, २८. २९. ४१; १३. १५, ९; १६८, १३. १४. १, ४; १४, ३; १५, १३. १८; ५२, २७. ३१. ४७. ५६; ६०, १५. २७. ३०; ६१, ३८; ६३, ४. १०. ११. १६; ६६, १९; ६७, ३. ५; ६८, १४; ७१, २६; ७२, १४. १९. २५; ७७, ३; ८५, ५–७. १०. ११. १७. २८; ८६, १. ३. ६; ८७, १२. २५; ८८, ६. १०. २४. २९; ९१, ५; १५. १, २७; २, ७. २९; ३, २. ३. ५. १३. ६४; १०, ३१. ४५; ११, ७. ९. १६; १२, १. ५–८. १०; १३, ५. ७; १६, १५. २४; १७, ६. ७. १०. २१; २४, ११; २५, ३; २६, ३५; २७, १९. २३; २८, ७; ३१, ११; ३६, ४६; ३७, ४२; ३८, १०. १७; १६. ७, ३; ८, ३१; १७. १, ५. २०. ३१. ३७; २, ४. ८; ११. १५. १९. २३; ३, २०; १८. २, १०. ४०; ३, १६. ३८; ४, ७ (मरुद्गणवृतं भीमसेनम्)। तुकी० भीमसेन के निम्नलिखित पर्याय :—

अच्युतानुज, अर्थात् युधिष्ठिर के लघुभ्राता (४. ८, ६)।
अनिलात्मज, अर्थात् वायु के पुत्र (६. ११३, ४१; ७. २६, १०)।
अर्जुनपूर्वज, अर्थात् अर्जुन के ज्येष्ठ भ्राता (६. ९६, ३४)।
अर्जुनाग्रज, अर्जुन के ज्येष्ठ भ्राता (१. १३८, ३४)।
कुरुशार्दूल = देखिये वस्था० ।
कौन्तेय = देखिये वस्था० ।
कौरव = देखिये वस्था० ।
पवनात्मज = अर्थात् वायु के पुत्र (३. १५०, १०; १५. २३, ९)।
पाण्डव = देखिये वस्था० ।
पार्थ = देखिये वस्था० ।
प्रभञ्जनसुतानुज : ७. १४६, ११६ ।
बल्लव = देखिये वस्था ।
भीमधन्वन् : १०. १३, १७ ।
मारुति : ७. ११४, ७; ८. ५१, ६१; ६०, ७६; ८४, ४० ।
राक्षसकण्टक : ३. ११, ३५ ।
वायुपुत्र : ५. १०५, ३४ ।
वायुसुत : ३. १४६, ४७ ।

वृकोदर : १. २, १८० (जटासुरस्य च वधो राक्षस्य वृकोदरात्). २०८ (दुष्टात्मनो वधो यत्र कीचकस्य वृकोदरात्). २७६; ६१, १२. २८; ६२, ६; ६३, ११६; ९५, ७५; १२३, १५; १२८, १८. २४. २७. २८; १२९, ३. ७; १३४, ३२; १३७, १०; १३८, ३५; १४८, २२; १५१, ४३; १५४, २९. ३४; १६२, १२. १५. १७; १६३, २५; १९०, २३. ३४; १९१, ९; २०१, १३; २२१, ७९; २. २०, १५; २३, ३५; ५०, २६. २७; ६३, ८; ६७, २५. ५४; ७१, १५; ७७, २१. २४; ३. ११, ३७. ५५. ५९. ६१. ६४; १२, ७३. ८९. १०७; २३, १६; २७, २४; ३२, ४५; ३७, २०; ११९, १४. १७; १२०, २५, १४०, १; १४१, ५. ७–९. १२. ३५; १४६, ३७; १५३, १५; १५४, ५; १५५, १६; १५७, ५४. ५६; १५८, ८४; १६१, ४९; १६२, १३. १६. २८; १६५, ५; १७७, १८; १७८, ६; १७९, ४७; १८०, १७. ३८; २३६, ११. १७. २०; २४३, ११. १५. १९; २६९, २८; २७०, ९; २७१, ५; २७२, ९. १०. १३; ३१२, ३८; ३१३, ४; ४. १, २८; २, १८; १३, ३६. ४१; २०, ३०; २२, ६३. ७२. ७४. ७६; २३, २९; ३३, ३८. ५५; ७१, २४; ५. २२, ९; २५, २; ५०, २१. २२; ५१, ३. ७. १८. ३३; ५५, ३१. ३८; ७५, २; ७७, ५. २०; ८३, ५४; ९०, २७. ७१. ७४. ८३; १२६, १५; १३७, ९; १४३, ३५; १५७, २१; १६०, ७०; १६२, १७; ६. ६, १२; २२, १२. १३; २५, १५; ४३, २८; ५१, २५; ५४, १००; ६२, ३६. ५६; ६३, २४; ७०, २९; ७७, ३१. ३६. ६२. ६५; ७९, ६४; ८५, ३३; ९३, ११; ९६, ३३. ३५; १०२, २८; ११२, ३७. ३९; ११३, ३३. ५१; ७. २, १६. ३०; १०, ७२ (सद्यो वृकोदरान्जातो महाबलपराक्रमः); १५, १२. १५; २२, २१. २५; २३, २; २४, १. १८; २६, १७. २२. २५. ३०. ३१; ३२, १; ४३, ७; ८५, ३९; ८६, १९. २०; ८७; ९; १२६, १४; १२७, ९. २६. ४४; १२८, ३४; १३०, १६; १३१, ९. ३०. ३८. ४७; १३२, २०. २५. ३२; १३५, ३१; १३६, ५. १०. १८. ३१. ४०; १३९, ५. १९. ९८. ९९. १०१; १४८, १७; १४९, ६१; १५५, २३. ३०. ४३-४५; १५६, ५२. १७९; १५७, ४६; १६१, १३; १६६, ६२; १७१, ५२; १७२, ३०; १८१, ३१; १८३, १७; १८६, ५५; १८७, ३६; १८८, १०; २००, ७७. १२५; ८. ६, १८; १२, १३. २१. ४३; १५, १७; ५०, ५. १८. २२. ३१. ४०; ५६, ५. १४५; ६०, ८३; ६१, ६३. ६५; ६३, ३६; ७७, ३६; ८२, ३०. ३३. ३४; ८३, १२. १८. ४९; ८४, १८. ४१; ८८, २३. ३१; ८९, ६१; ९३, १०. १८. २४; ९६, १०. १८. ४९; ९. ३, १०. १८. २४; ११, ३२. ६०; १२, ७. ८; १५, ९; १६, ४३; २५, ३२; २७, ५२; ३०, ४३; ३२, १४; ३३, ७. १५. २२. ५२; ३४, ७; ५५, २६. ४२; ५६, १५. ३८. ३९. ४५; ५७, १०. १५; ५८, ३. ३६. ४४; ५९, ९. १४; ६०, ५. ३५; ६१, ९; ६४, १५; १०. १, ६१; ९, २२. २५; ११, ८; १२, ४१; ११. १२, १७. २९; १४, १७; १५, १४; १२. ४४, ७; १५. ३, ४. ११; १३, ८. ९; १५, ८; २३, ९; २५, ६. १२; १७. २, १७ ।

समीरणस्यसुतः : ३ २३६, १५ ।

७. भीम, कश्यप द्वारा मुनि के गर्भ से उत्पन्न एक देवगन्धर्व का नाम है (१. ६५, ४३)।

८. भीम, ईलिन के द्वारा रथन्तरी के गर्भ से उत्पन्न हुये दुष्यन्त के भाई थे (१. ९४, १७-१८)।

९. भीम, एक प्राचीन नरेश का नाम है जिन्होंने तपस्या द्वारा प्रजाजनो का कष्ट से उद्धार किया था (३. ३, ११)।

१०. भीम, विदर्भ देश के एक राजा का नाम है (३. ५३, ५)। महर्षि दम की कृपा से इन्हें तीन पुत्र तथा एक पुत्री प्राप्त हुई थी (३. ५३, ७)। ३. ५४, ६. ८ (दमयन्ती के स्वयंवर का आयोजन किया); १२; ५७, ४० (दमयन्ती का नल के साथ विवाह किया). ४२; ६०, २४ (नल के सारथि वार्ष्णेय द्वारा लाये नल के बच्चों को अपने आश्रय में लिया); ६४, ४४. ७६ (विदर्भेषु महीपालो भीमो नाम महीपतिः); ६८, १ (इन्होंने नल की खोज के लिये ब्राह्मणों को भेजा). २८; ६९, १. १५. ३२; ७३,

(विष्मेंपु महीपालो भीमो नाम महिपतिः); ६८, १ (इन्होंने नल की खोज के लिए ब्राह्मणों को भेजा). २८; ६९, १. १५. ३२; ७३, १ (ऋतुपर्ण इनके पास आये). २. १९. २०. २६; ७६, ५. ४७; ७७, ३ (इन्होंने नल को पुत्र की भाँति अपनाया); ७८, १ (इनके पास एक मास तक निवास करके नल निषध देश के लिए प्रस्थित हुये); ७९, २ (इन्होंने अपनी पुत्री दमयन्ती को विदा किया)।

१०. भीम, पन्द्रह यज्ञमुषः देवताओं में से एक का नाम है (३. २२०. ११)।

भीमकदलीखण्डप्रवेश = "बदरी तीर्थ में भागीरथी के तट पर पाण्डवगण छः रात तक रहे। तदनन्तर ईशानकोण से अकस्मात् वायु के झोंके के साथ एक दिव्य सहस्रदल कमल उनके समीप आ गया। वह कमल अत्यन्त मनोरम था। द्रौपदी ने जब उसे देखा तब उन्होंने भीम से उसी प्रकार के बहुत से कमलपुष्प लाने के लिये कहा। उन्होंने पुष्पों को काम्यकवन में ले जाने की इच्छा व्यक्त की। भीम से इस प्रकार आग्रह करके द्रौपदी वह पुष्प युधिष्ठिर को देने चली गई। इधर भीम वैसा ही पुष्प लाने के लिये चल पड़े (मार्ग की सुन्दरता का विस्तृत वर्णन)। मार्ग में यक्ष और गन्धर्व युवतियाँ अलक्षित होकर भीमसेन की ओर देख रही थीं। भीमसेन उन्हें सौन्दर्य के अवतार से प्रतीत हो रहे थे। भीम सिंहों, व्याघ्रों और मृगों से भयभीत हुये बिना वन्यवृक्षों को रौंदते हुये आगे बढ़ रहे थे। उनकी गर्जना सुनकर वनवासी जीव छिप गये और भयभीत पक्षी आकाश में उड़ने लगे। गन्धमादन पर्वत के शिखर पर पहुँच कर उन्होंने केले का एक सुन्दर बाग देखा। वहीं एक सुन्दर सरोवर भी स्थित था। भीम उस सरोवर में देर तक स्नान करते रहे। जल से निकलकर उन्होंने अपना शंख बजाया और केले के वन में प्रवेश किया। उस समय हनुमान जी, जो उसी वन में रहते थे, जीव-जन्तुओं के चीत्कार से यह समझ गये कि उनके भाई भीमसेन उधर ही आ रहे हैं। तब हनुमान जी ने भीमसेन के हित के लिये स्वर्ग की ओर जाने वाले मार्ग को रोक दिया। वे स्वयं उस संकुचित मार्ग पर बैठ गये। भीमसेन को उस मार्ग पर कोई शाप या तिरस्कार न प्राप्त हो इस विचार से ही हनुमान जी उस वन के भीतर स्वर्ग के मार्ग को रोककर सो गये। निद्रा के वशीभूत होकर जब हनुमान जी अपनी विशाल पूँछ को फटकारने लगे तब वह महान पर्वत कम्पित हो उठा। पूँछ फटकारने की आवाज को सुन कर भीम के भी रोंगटे खड़े हो गये और उसके कारण का पता लगाने के लिये वे उस केले के वन में इधर-उधर घूमने लगे। शीघ्र ही उन्होंने वन के भीतर एक विशाल शिलाखण्ड पर लेटे हुये वानरराज हनुमान को देखा। अपना मार्ग उन वानरराज द्वारा अवरुद्ध देखकर भीमसेन उनके पास आकर भयंकर सिंहनाद करने लगे। तब हनुमान जी ने अपनी आँखें खोलकर भीम से कहा : 'मैं तो रोगी हूँ और यहाँ विश्राम कर रहा था। तुमने मुझे क्यों जगा दिया? तुम्हें तो प्राणियों पर दया करनी चाहिये। तुम्हें धर्म का लेशमात्र ज्ञान नहीं है और ऐसा प्रतीत होता है कि तुमने विद्वानों की सेवा नहीं की है। तुम इस मार्ग पर कहाँ जाना चाहते हो? आगे का मार्ग तो अगम्य है। सिद्ध पुरुषों के अतिरिक्त किसी की यहाँ गति नहीं है। यह देवलोक का मार्ग है जो मनुष्यों के लिये सदा अगम्य है। अतः मीठे फल-फूल खाकर यहीं से वापस लौट जाओ।' (३. १४६)।" हनुमान जी ने अपनी इच्छा से भीम को मार्ग देना स्वीकार नहीं किया और भीमसेन उन्हें लाँघकर नहीं जाना चाहते थे। तब हनुमान ने भीम से कहा कि वे उनकी पूँछ एक ओर हटाकर चले जायँ। हनुमान का यह वचन सुनकर भीमसेन अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगाकर भी पूँछ को थोड़ा-भी नहीं हिला सके। तब भीम ने उन वनराज से क्षमा माँग कर उनसे परिचय पूछा और हनुमान जी ने अपना परिचय दिया। (३. १४७)।" देखिये हनुमद्भीमसंवाद वस्था०।

भीमजानु, एक प्राचीन नरेश का नाम है जो यम की सभा में रहकर यम की सेवा करते थे (२. ८, २१)।

भीमदुन्दुभिहास = शिव (सहस्रनाम); १२. २८४, ९५।

भीमधन्वन् = भीमसेन पाण्डव (१०. १३. १७)।

भीमनन्दिनी = दमयन्ती (३. ६४, ११)।

भीमपराक्रम = विष्णु (सहस्रनाम)।

भीमपुत्रिका = दमयन्ती (३. ६८, ६)।

भीमपूर्वज = युधिष्ठिर (१३. १५, ९)।

१. **भीमबल**, पन्द्रह यज्ञमुषः देवों में से एक (३. २२०, ११)।

२. **भीमबल**, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९८; ११७, ७)।

भीममुख = शिव (सहस्रनाम)।

१. **भीमरथ**, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ११७, १२; ६. ६४, ३६-३७ (भीमसेन ने इसका वध किया); ७. २०, १२ (यह द्रोणनिर्मित गारुडव्यूह के हृदयस्थान में खड़ा हुआ); २५, २६ (इसने पाण्डव पक्ष के म्लेच्छराज शाल्व का वध किया था)।

२. **भीमरथ**, उन राजाओं में यह भी एक थे जिन्होंने युधिष्ठिर द्वारा सभाभवन में प्रवेश करने के समय उनका स्वागत किया था (२. ४, २६)।

भीमरथी, दक्षिण-भारत की एक नदी का नाम है : ३. ८८, ३; ६. ९, २०; १३. १६५, २७।

भीमविक्रम, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९८)।

भीमवेग, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७, ९८; ११७, ७।

भीमवेगरव, एक राजा का नाम है जो द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (१. १८६, २)।

भीमव्रतधर = शिव (सहस्रनाम)।

भीमशर, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९९)।

भीमसूनु = घटोत्कच (७. १७०, १७)।

१. **भीमसेन**, (पाण्डव)—देखिये ६. भीम।

२. **भीमसेन**, महाराज परीक्षित के पुत्र और जनमेजय के भाई का नाम है। इन्होंने कुरुक्षेत्र में यज्ञ के समय देवताओं की कुतिया सरमा के पुत्र को पीट दिया था (१. ३, १-२)।

३. **भीमसेन**, सोमवंशी महाराज अविक्षित के पौत्र और परीक्षित के पुत्र थे (१. ९४, ५५; ९५, ४२)।

४. **भीमसेन**, कश्यप की पत्नी मुनि के गर्भ से उत्पन्न एक देवगन्धर्व का नाम है : १. ६५, ४२; १२३, ५५ (उन्होंने अर्जुन के जन्मोत्सव के समय गाना गाया था)।

भीमसेनरसपान = "वैशम्पायन ने बताया कि पाण्डवगण शक्ति और गुणों में धार्तराष्ट्रों से कहीं अधिक श्रेष्ठ थे। खेल आदि में भीम धृतराष्ट्र के सभी पुत्रों का मानमर्दन कर डालते थे। जल में क्रीड़ा करते समय वे अपनी दोनों भुजाओं से धृतराष्ट्र के दस-दस पुत्रों को एक साथ पकड़कर पानी में गोते लगाते रहते थे। इस प्रकार भीम स्पर्धा रखते हुये धृतराष्ट्र के पुत्रों को अप्रिय लगने वाले अनेक कार्य करते रहते थे। भीम को दण्डित करने के उद्देश्य से तब दुर्योधन ने गंगातट पर प्रमाणकोटि में एक उदकक्रीड़ा गृह का निर्माण कराया और फिर पाण्डवों को उस नवनिर्मित गृह में चलकर जलक्रीड़ा करने के लिये निमन्त्रित किया। दुर्योधन का निमन्त्रण पाकर कौरवों के साथ पाण्डव भी उस स्थान पर आये (जलक्रीडन स्थान का विस्तृत वर्णन)। वहाँ भाँति-भाँति की क्रीड़ा करने के बाद भीमसेन को मार डालने के उद्देश्य से दुर्योधन ने उनके भोजन में कालकूट नामक विष डाल दिया। भीमसेन भोजन के दोष से अपरिचित थे, अतः उनके सामने जितना भोजन परोसा गया वे उस सब को खा गये। थोड़ी देर के बाद जब भीमसेन विष के प्रभाव के कारण निश्चेष्ट प्रतीत होने लगे तब लताओं के पाश में बाँधकर दुर्योधन ने गंगा जी के ऊँचे तट से उन्हें पानी में ढकेल दिया। भीमसेन बेहोशी की दशा में जल के भीतर डूबकर नागलोक जा पहुँचे। तब बहुत से महाविषधर नागों ने मिलकर भीमसेन

को डँसना आरम्भ किया। उन नागों के डँसने से उनका कालकूट विष का प्रभाव नष्ट हो गया। भीमसेन की त्वचा लोहे के समान कठोर थी, अतः सर्पों के दाँत उनकी त्वचा का भेदन नहीं कर सके। फिर भी सर्पों के जंगम विष ने खाये हुये स्थावर विष का हरण कर लिया। पुनः चेतन होने पर भीमसेन ने अपने सारे बन्धन तोड़ डाले और सर्पों को धरती पर पटक-पटक कर मारने लगे। कुछ नागों ने भाग कर महाराज वासुकि को इसकी सूचना दी। तब अन्य नागों को साथ लेकर वासुकि ने उस स्थान पर आकर भीमसेन को देखा। उनके साथ नागराज आर्यक भी थे जो पृथा के पिता शूरसेन के नाना थे। उन्होंने अपने दौहित्र के दौहित्र को पहचान कर अपनी छाती से लगा लिया। नागराज वासुकि भी भीमसेन पर प्रसन्न हुये और आर्यक के कहने पर भीमसेन को उन कुण्डों का रसपान करने की आज्ञा दी जिससे एक-एक हजार हाथियों का बल प्राप्त होता है। इस प्रकार वासुकि की स्वीकृति मिल जाने पर भीमसेन पूर्वाभिमुख होकर कुण्डों का रसपान करने लगे। जब उन्होंने कुण्डों का रसपान कर लिया तब विश्राम करने के लिये नागों द्वारा प्रस्तुत शय्या पर सुखपूर्वक सो गये। (१. १२८)।

"क्रीडा समाप्त करके सब पाण्डव और कौरव हस्तिनापुर आये। उस समय दुर्योधन भीमसेन को अपने बीच न देखकर अत्यन्त प्रसन्न था। राजा युधिष्ठिर धर्मात्मा थे अतः उनके पवित्र हृदय में दुर्योधन के पापपूर्ण विचार का भान तक नहीं हुआ। घर जाकर युधिष्ठिर ने अपनी माता से यह जानना चाहा कि भीमसेन पहले ही तो नहीं लौट आये। जब भीमसेन का पता नहीं चला तब कुन्ती अनेक प्रकार से विलाप करने लगीं। विदुर ने कुन्ती को सान्त्वना देते हुये कहा कि भीमसेन कहीं भी हों वहाँ से शीघ्र ही लौट आयेंगे। उधर नागलोक में आठवें दिन भीमसेन जागे। उस समय उनके बल की कोई सीमा नहीं थी। नागों ने उन्हें बताया कि कुण्डों के रसपान से उनमें दस हजार हाथियों का बल आ गया है और वे अजेय हो गये हैं। तदनन्तर भीम ने दिव्य जल में स्नान किया और नागों की दी हुई विषनाशक औषधियों से युक्त खीर खाया। इसके बाद भीम का आदर-सत्कार करके नागों ने उन्हें उसी गंगातटवर्ती प्रमाणकोटि में पहुँचा दिया जहाँ से उठ कर भीमसेन शीघ्र ही अपनी माता के पास आये। भीम को पुनः देखकर सभी पाण्डवों तथा कुन्ती को अत्यधिक प्रसन्नता हुई। भीमसेन ने दुर्योधन की सारी कुचेष्टाओं का अपने भाइयों से वर्णन किया। युधिष्ठिर ने भीम से इन सब बातों को किसी अन्य पर प्रकट न करने के लिये कहा। भीम को इस प्रकार आदेश दे कर युधिष्ठिर अपने सब भाइयों के साथ अत्यन्त सावधान रहने लगे। दुर्योधन ने भीमसेन के सारथि का गला घोंट कर मार डाला और भीम के भोजन में पुनः कालकूट नामक विष डलवा दिया किन्तु भीमसेन ने उस विष को खाकर बिना किसी विकार के उसे पचा लिया। भीमसेन के उदर में वृक नामक अग्नि थी जिससे वह विष भी वहाँ जाकर पच गया। इधर दुर्योधन, कर्ण तथा शकुनि अनेक उपायों से पाण्डवों को मार डालना चाहते थे किन्तु सब कुछ जान कर भी पाण्डवगण विदुर जी के परामर्श के अनुसार अपने अमर्ष को प्रकट नहीं करते थे। राजा धृतराष्ट्र ने उन सब कुमारों को खेल-कूद में ही समय व्यतीत करता देख कर, कृपाचार्य की खोज कराई। कृपाचार्य सरकण्डे के समूह से उत्पन्न हुये थे और विविध शास्त्रों के विद्वान थे। धृतराष्ट्र ने कुरुवंशी कुमारों को धनुर्वेद की शिक्षा देने के लिये उन्हीं कृपाचार्य को नियुक्त कर दिया। (१. १२९)।"

भीमसेनसुत = घटोत्कच (७. १७५, ५२)।

भीमसेनात्मज = घटोत्कच (३. १५७, २)।

१. भीमा, एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, ८४)।

२. भीमा, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, २२)।

भीमाः : २. ८, २४ (भीमानां तु तथा शतम्)।

१. भीष्म : १. २, १४०, १७८ (भीष्मं शान्तनवम्). १८२. १८४. १८५; २, ३० (अहानि युयुधे भीष्मो दशैव परमास्त्रवित्). ३६६. ३७८ (स्वर्गारोहणिकं चैव ततो भीष्मस्य धीमतः). ९८. २४८ (अर्जुन की शिथिलता को देख कर श्रीकृष्ण हाथ में चाबुक लेकर भीष्म को मारने के लिये स्वयं रथ से कूद पड़े). २५० (अर्जुन ने शिखण्डी को सामने करके भीष्म को रथ से गिरा दिया). २५१ (भीष्म शरशय्या पर शयन करने लगे). ३३२ (भीष्माद्भागीरथीपुत्रात्कुरुराजो युधिष्ठिरः). ३३६ (भीष्मस्यात्रैव संप्राप्तिः स्वर्गस्य); ५५, १३; ६३, ९१ (ये आठवें वसु के अंश से तथा गंगा जी के गर्भ से उत्पन्न हुये थे); ९५, ४७ (शान्तनु और गङ्गा के पुत्र; इनका वास्तविक नाम देवव्रत था). ४८ (इन्होंने अपने पिता का सत्यवती के साथ विवाह कराया). ६६; ९९, ४७ (सुनामा); १००, १०१; (इन्हें भीष्म कहा गया); १०१. ५ (इन्होंने पिता के स्वर्गवासी हो जाने के बाद माता सत्यवती की सम्मति से चित्राङ्गद को गद्दी पर बैठाया). ११ (चित्राङ्गद की मृत्यु के बाद उनका प्रेतकर्म कराया). १३ (विचित्रवीर्य को राजा बनाया). १४ (शान्तनव); १०२, १ (चित्राङ्गद की मृत्यु के समय विचित्रवीर्य अभी बहुत छोटे थे, अतः माता की आज्ञा से इन्होंने ही उनके राज्य का पालन किया). २ (इन्होंने काशिराज की कन्याओं से विचित्रवीर्य का विवाह कराया). २. ३. ५. ६. ९. १०. १२. २६. २९. ३२. ३५–३७. ४०. ४२. ४३. ४५. ४८. ४९. ५२. ५८. ६०. ६३. ६५. ७२ (इन्होंने काशिराज की पुत्रियों का विचित्रवीर्य के साथ विवाह कराने के उद्देश्य से काशिराज पर आक्रमण किया। स्वयंवर में उपस्थित राजाओं तथा महाराज शाल्व के साथ घोर युद्ध करते हुये इन्होंने सबको पराजित कर दिया। तदनन्तर काशिराज की कन्याओं का हरण कर लाये और उनका विचित्रवीर्य के साथ विवाह कर दिया। कुछ समय बाद विचित्रवीर्य का निधन हो जाने पर इन्होंने उनका श्राद्ध आदि सम्पन्न कराया); १०३, २. १९. २३ (इन्होंने विचित्रवीर्य की विधवाओं के साथ विवाह करना अस्वीकार किया); १०४, १. ३२ (इन्होंने व्यास जी द्वारा विचित्रवीर्य की विधवा रानियों से पुत्र उत्पन्न कराने की स्वीकृति दी); १०५, १. ३. १८-२०. २३. ३३. ३६. ४५. ५२; १०६, ३; १०९, १३. १४. १७ (धृतराष्ट्र, पाण्डु तथा विदुर का अपने पुत्र की भाँति पालन किया). २४ (सम्पूर्ण धर्मज्ञों में इनका स्थान सर्वोच्च है); ११०, १० (कुरु पितामहः). १७ (भीष्मेण प्रतिपूजितः); ११३, १ (शान्तनव). ३ (पाण्डु के साथ माद्री का विवाह कराया). ५. ८. १२. १७ (भीष्मः सागरगासुतः). २२. ४० (भीष्म पुरोगमाः); ११४, १. ३. १२ (इन्होंने देवक की कन्या से विदुर का विवाह कराया); ११५, २६. ३० (दुर्योधन के जन्म के समय प्रकट हुये अपशकुनों को देख कर इन्होंने धृतराष्ट्र से विचार-विमर्श किया); ११९, २४; १२६, ६ (पाण्डु के पुत्रों को ग्रहण किया). १५ (शान्तनवः). २१ महर्षियों की पूजा की); १२७, ५ (पाण्डु का अन्तिम संस्कार कराया). १६. २८. २९; १२८, १ (पाण्डु का श्राद्ध कराया). १२; १३०, २४ (राजकुमारों के लिये उपयुक्त आचार्य के सम्बन्ध में विचार विमर्श किया). २८; १३१, ३५ (द्रोण को आचार्य बनाया). ३६. ३७. ४५. ६०. ७५. ७७; १३२, १. २; १३४, १३; १३६, २६ (अर्जुन के पक्ष में); १३७, २१; १४१, १६ (पाण्डवों को भस्म हो गया समझ कर उनका अन्तिम संस्कार कराया). २६. २८ (शान्तनव). ३२. ३३; १४२, १७. २०; १४३, १२; १४५, १. १०. २९; १४६, २४ (पितामहः). २५; १५०, ५ (शान्तनवः); १६६, १७; २००, ७; २०२, २४; २०३, १; २०४, २. १२; २०५, २ (शान्तनवो); २०६, १. १८; २०७, २१. ५०; २. ३३, ५५; ३४, १. ५; ३५, २. ६; ३६, २२. २७. ३०. ३२; ३७, ४. १०. ३०; ३८, ३. ५. ६; ३९, १; ४०, २. ५. १५; ४१, ३. ५. ६-१०. १२. १४. १६. २१. २३. २५. २८. ३०. ३२-३४. ३८. ३९; ४२, १४. १५. १९. २०; ४३, १. २५; ४४, १. ५-७. ९. १२-१४. २२. २५. २८. ३०-३३. ३५. ३६. ३८; ४५, १. ४८; ४९, ५७; ५८, २३; ६०, २; ६५, ४१; ६७, ४१. ४७; ६८, ५०; ६९, १४; ७०, १८; ७१, २३; ७८, २४; ७९, २६; ८१,

६. २६; ३. १, १२. ३५; ८, ६. १२; ९, २; १०, २. १५; १२, ६५; १३, ३; ३६, ०. १५. २५; ३७, ४; ४०, १०. १३; ४१, १९; ४७, २६; ४८, ९; ८१, १३. १८. २०–२२ (कुरुकुलश्रेष्ठं ; ८२, ३. ४. २८; ८५; १११. ११३. ११६; ८६, ८; ११९, ९; १२०, १६; १७४, ३: २३८, १५. १६; २४९, १५: २५२, ११. ३६; २५३, २. ४. ११. १३. १४. १७. १८; २५४, २५; २५६, ५; २५७, ८. २६; ४. २५, ७; २८, १ (शान्तनवो भीष्मो भरतानां पितामहः . ४; ३५, २; ३७, २९; ३८, १३; ३९, २. १७; ४७, १. ६. १६; ४९, २१; ५१, १. १७. १८; ५२, १. १६. २० २२; ५३, १२; ५४, २४; ५५, ३७. ५८; ५९, ७; ६१, २ (एतन्मां प्रापयानीकं यत्र तालो हिरण्मयः। अत्र शान्तनवो भीष्मो रथेऽस्माकं पितामहः). १७. ३३; ६४, १. ६. ८. १०-१३. १५. १६. १८. १९. २१. २४. २५. २७-२९. ३२. ३३. ४२ (भीष्मं गांगेयम्). ४४–४६; ६५, १; ६६, ४ (शान्तनवः) १४. १७. १८. २४; ६८, ८. ३९. ४१. ७०; ६९, ४; ५. २, ५; ३, ११; ४, २; ६, १०; २०, १; २१, १. ८. १६. १८. १९; २२, २४; २३, ८; २५, ११. १५; २७, २४; २९, ३७; ३०, १५ (कुरुसत्तमस्य); ३१, ८; ३७, ४३; ४७, ६; ४८, ४०. १०९; ४९, १. ३३. ४३. ४४. ४७; ५०, ३४; ५१, ३९. ४५. ४९; ५५, ७. १७. २०. २२. ४३. ४५. ४७. ५३. ५७. ६२; ५७, १२ (शान्तनवं…भागः क्लृप्तः शिखण्डिनः). ४४. ५०. ५९; ५८, ६. १०; ५९, ११. १८; ६०, १०. १७; ६३, ७. १४. १८; ६४, २४; ६५, ११; ७३, ७. १९. २८; ७९, १९; ८०, १६; ८२, ३०; ८३, ४७. ६९; ८५, १. १०. ११; ८८, ७ (कुरुपितामहः). १९. २३; ८९, ३. ५. १३. १५; ९१, ३५; ९२, ७. ८; ९४, ८. ३५. ३६. ३९. ४२; ९५, १९; १०६, ४; १२४, ५. ४९; १२५, १. १०. १२. १५; १२६, १; १२७, १४; १२८, १९. २४. २६. २९. ३३; १२९, २०. २१. ३७. ४१. ४९. ५१; १३१, १४. ३६. ४०; १३७, २६; १३८, १; १३९, ३; १४१, ४८; १४३, ४३; १४७, १५; १४८, १. २. १०. १३. १४. ३२; १५०, १. ४-६. १५; १५१, ८. १०. १३. १७. २५. ३२; १५६, १. १६. २५. २६. ३२; १५७, १ (आपगेयं महात्मानं भीष्मं शस्त्रभृतां वरम् पितामहं भारतानां); १६०, ९४. १२०; १६१, १२. ४०; १६२, २८; १६३, ८. १३. २१. ४४. ४५; १६४, ७; १६५, १. ३. ५ (कुरुवृद्धेन). ६ (शान्तनव). १७; १६६, १; १६७, १; १६८, १. १०. १९. २२. २४. २७-३०; १६९, १. २७; १७०, १; १७१, १; १७२, १; १७३, ३. १५; १७४, १. ५. ७; १७५, १. ६. ७. ११. २४. २६. २८. २९. ३१. ३३-३५; १७६, १. १५. २६. ४७. ४८. ५२-५४. ५६; १७७, ३. ५. ७. १२. १४. १५. ३२. ३५. ३८. ३९. ४२; १७८, १. ३. ५-९. १५. २४. २८. ४०. ६३-६५. ६७. ७०. ८७. ९३. ९४; १७९, १. ३; १८०, १. २८; १८१, १; १८२, १; १८३, १. १६; १८४, १; १८५, १. ८. १०. १३. १८. २०. २१. ३०. ३६; १८६, २. ४. ६. ८. ९. १८. ३१. ३२. ३५; १८७, १-३. ६. १०. ११. १३. १९; १८८, २. ५; १८९, १.; १९०, १. ११; १९१, १; १९२, १. ८. ५७. ६९. ७०; १९३, ८. १५. १८; १९४, १९; ६. १३, २ (भारतानां पितामहम्). ३ (शान्तनवः). ६ (शिखण्डी ने इनका वध किया); १४, १. २. १७. १९. २२. २४. २५. ३३-३५. ४०. ४७. ४८. ५३. ५७. ५८. ६१. ६२ (भीष्माच्छान्तनुनन्दनात्). ६०. ७०. ७३. ७४. ७६. ७८; १५, १२. १४. १६. २०; १६, २२; १७, १२. १३. १८. २३; १८, १०; १९, २. १९; २०, १. ९. १७-१९; २१, २. ४. ८; २२, १. १५ (कुरुवंशकेतुः); २५, ८. १०. २५; २६, ४; ३५, २६. ३४; ४३, २३. २७. ३३. ३५. ३६. ३८. ४४. ४६. ४८. ४९. ९०. ९१; ४४, २. ३; ४५, ११; ४६, ४९. ५०; ४७, २. ४. ६-९. १५. १७. २१-२४. २७. ३१. ६४; ४८, २. ४. २२. २७. ३३. ३६. ४०. ४१. ४३. ४७. ५०. ५२. ५४. ५६-६२. ६७-६९. ७३. ८१. ८२. ९०. ९१. ९३. ९४. ९६. ९७. १०३. १०७. ११२. ११५. ११८; ४९, ८. १३. ३५. ३७. ४१. ४२. ४५. ४६. ५०. ५३; ५०, १. ३. ४. ८. १०. १५. २०-२३. ३० (शिखण्डी च महाबाहो भीष्मस्य निधने किल). ३७; ५१, ६. ९-११. १३; ५२, ७. १२. १३. १५. १७. २२. २३. २७. ३१. ३४. ४१. ४४-४६. ४८-५२. ५९. ६६. ६८; ५३, २. ३; ५४, ६७. ८३. १०७. १०८. ११५; ५५, १८. ४२; ५६, १; ५७, ३१. ३८; ५८, ११. २२. २३. २८. ३३. ४१. ४५; ५९, १. २. २४. २६. २९. ३२. ३४. ३६. ४४. ४६. ४८-५१. ५३. ५४. ६१-६७. ६९. ७१. ७३. ८०. ८३. ८५. ८६. ८९. ९०. ९६. १०१. १०९. १३२. १३८; ६०, १. २१ (भीष्मः कपिराजकेतुम् तं पञ्चतालोच्छ्रिततालकेतुः). २६. २८. २९; ६३, २४; ६४, ६३. ७०. ७४; ६५, ४. १३. २५. ३५; ६६, १. २४; ६७, २; ६८, १. १४; ६९, ४. १३. १४. १९. २५. २७. ३०. ३२. ३३; ७०, १. २१. २८. २९; ७१, १. १०. १९; ७२, १. २१. २२. २४. २६. २८. ३१-३४; ७३, १. ४२; ७४, ३२; ७५, २८. ३३; ७६, १७; ७७, ९; ७८, २९; ७९, ६२; ८१, १२. १६. २१. ४५; ८२, ५. ८. १३; ८४, ४३. ४९; ८५, ८. ११. १४ २०. २२. २४-२७. ३०; ८६, २. ४. ५. ७. ८. १०. ११. १३-१५. २१. २६. २७. ४०. ४९; ८७, ३. ५. ६. ३८; ८८, १. ३-५. ७. ९. ११. १२. ३६; ८९, १. ३. ६. १२. १५-१८. ३९; ९०, ८२. ८५. ८७; ९२, १८; ९५, ३. ९. २१; ९६, १५. १७; ९७, ४. ८-१३. १६. १७. २३. ३४-३६. ४३; ९८, २७. ३१. ३३. ४५. ४९-५१; ९९, १. ३. १५. १७; १००, २६; १०१, ७. ३१. ३७. ३९; १०२, २७; १०३. १. ४. ६. ९. १२. १५. ४३; १०४, ९. १२. १३. ३७; १०५, १. २. ४. ५. ७; १०६, ८. १२. १७. २०. २७. ३५. ३९-४२. ४५. ४६. ५०. ५२. ५३. ५५. ५७. ५९-६१. ६३. ७६. ८०. ८१. ८४; १०७, २. ३. ७. ८. १३. १५. १७-२०. २८. २९. ३८-४०. ४३. ४५. ४८. ५३. ५७-५९. ७५. ८९. ९६. ९९. १००. १०३. १०५; १०८, १. ११. १६ (भीष्म युद्ध में प्रतिदिन अलग-अलग प्रकार के व्यूहों का निर्माण करते थे। कभी वे असुर, कभी पिशाच, तथा कभी रांक्षस व्यूहों का निर्माण करते थे). १८. २४. २८. ३४. ४२. ४७-४९. ५२-५४; १०९, ३-५. ८. ११. १५. ३२. ३५. ३७. ३८; ११०, १. २. ४. ९. १२. १४. १५. १७. १८. २०-२३. २६. ४०. ४६; १११, १. १८. २०. २२. २६. ३२. ३३. ३४. ३६. ३७. ४०. ४३. ४४. ४८-५०. ५३. ५४. ५७; ११२, ४. १६-१८. २१. ४१; ११३, ३. ४८; ११४, ३८. ३९. ४१. ४३. ४४. ४६. ४७; ११५, १. २. ५-१०. १७. १८. २०. २२. २४. २६. ४२; ११६, १. ८. ३०. ३१. ३५. ४१. ५४. ६०. ६२. ६७. ६९. ७१. ७३. ७६-७८. ७९; ११७, १. ५. ६. १०. २०. २५. २७-२९. ६२. ६४; ११८, ८. १३. २२ (वृद्धः कुरुपितामहः भीष्मो). २३. २७ (शतनीक का वध किया). २९. ३३. ३५-३७. ४२-४४. ४६-४८. ५०. ५३ (भागीरथी पुत्रं) ५४; ११९, १. ४. ५. ११-१४. २४. २६. ३०. ३१. ३६. ३९-४२. ४४. ४८. ५०. ५४. ५९. ६८. ७४. ८५. ८९. ९०. ९७. ९९. १००. १०२. १०९. ११४. १२०; १२०, १. २. ४. ५. ८. ९. ११. १२. १६. २३. २६. ३२. ४६. ६१. ६३. ६५. ६६; १२१, ८. १०. १७. २४. २६. ५२; १२२, १. २. २३. ३४; ७. १, ३. ८. ९. १५. १७. १८. ३५. ४० ४२. ५१ (कौरवाणामपाकृतम्); २, १. ३. ४. २०. ३०. ३२; ३, २. ६. ८; ५, ५; ७, १९. २२; ११, ४४. ४६. ४७. ४९; २३, ७०; २४, ११; ८५, २७. ३४. ४६; ८६, ११; ९८, ४२; ११०. ९४; १२२, २२; १२८, ५५; १३१, ६; १४७, ९२; १४९, ४८; १५०, १२; १५१, ७. २८. ३१; १५८, ६४; १९६, ४६; १९८, १६. १८. ४२; १९९, २९; ८. २, ८. १६; ५, ६; ६, ३. ३६; ७, २; ९, १३. २४. ३७ (भीष्ममप्रतियुद्ध्यन्तं शिखण्डी सायकोत्तमैः। पातयामास समरे). ४४. ६२. ९४; १०, १९. २४. २६. ३८; ११, १२; २०, ३. ५; २६, २१; ३२, ९. १०; ३६, १७. १८; ३७, ११. १३. ३०; ४१, ७३. ७९; ४५, ४१; ५६, ५४; ६१, १६ (शिखण्डी … भीष्महन्ता); ६६, २२; ६९, २९; ७२, १९; ७३, ११. १३. २९. ३३. ४० (शिखण्डी ने इनका वध किया था). ५२. ९३. १०७; ७९, ४२; ८७, ८३; ८८, २१; ९६, ३२; ९. २, १९. ३०. ५६. ५८; ४, ११; ६, २४; ७, २०. २९. ४०; ८, १३. १७. ३५; १६,

१६; १९, ५. २६; २४, २०-२२; २७, १४; २९, ८०; ३२, २०; ५४, २५; ५८, ११; ६१, ३७. ४०. ५९. ६२; ६३, ४६; ६४, ७. १२; १०. ३, ३१; ५, २१; १०, २१; ११. १, १५. २८; १२, ८; १३, ४; १६, २१. २८; २३, १४ (भीष्मकृन्दाहवे). २२; २५, ३०; १२. ४, १३; ५, १२; १६, २२; ३७, ६ (व्यास जी ने इनसे उपदेश लेने के लिये युधिष्ठिर को आदेश दिया); ४६, ११. २१. २३ (कौरवाणां धुरंधरे). २५. २६. २८; ४७, २ (जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन जी ने यह बताया कि भीष्म पितामह ने किस प्रकार प्राणत्याग किया). ४. १४-१७. १०१-१०४; ५०, ६. १२. १८. २१. २६. ३१; ५१, १. २. १३. १४. १७; ५२, १. १५. १८. २१. २७; ५३, १०. १५. २४; ५४, २ (शान्तनुनन्दने गांगेये). ४ (कौरवाणां धुरंधरे). ८. ११. १७. २७. २९. ३१; ५५, १४. २०. २१; ५६, १०; ५७, १; ५८, १. २६. २७; ५९, २-४. १३; ६०, ६; ६१, १; ६२, २; ६३, १; ६४, १; ६५, ३२; ६६, २; ६७, २. २३; ६८, २; ६९, ३. ७५; ७०, २; ७१, २; ७२, १; ७३, १; ७४, १. १९; ७५, २. १८. ३४; ७६, २; ७७, २. ३२; ७८, २. ४. १४. २०. ३८; ७९, २. १०; ८०, ३; ८१, २; ८२, १; ८३, २; ८४, १. ११; ८५, २. ५; ८६, २; ८७, २; ८८, २; ८९, १. २१; ९०, १; ९१, ६०; ९२, २; ९४, १३; ९५, २. ७; ९६, १; ९७, ३; ९८, २. ५१; ९९, १; १००, २; १०१, २; १०२, २; १०३, २. ५३; १०४, २; १०७, १०; १०८, ३; १०९, ४; ११०, २; १११, २. ४८; ११२, २; ११३, २. १२; ११४, २; ११५, १३; ११६, १; ११७, १; ११८, १; ११९, १; १२०, ३; १२१, ८; १२२, १. ५५; १२३, ३; १२४, ४. ६३. ७१; १२५, ८; १२६, १; १२७, १; १२८, २५; १२९, ३; १३०, ५; १३१, ४. १०; १३२, ३; १३३, १; १३४, १; १३५, १. २३; १३६, १; १३७, १; १३८, ११. १२. ८३; १३९, ४. ११२; १४०, २; १४१, ९. ९२; १४२, ३. ३६; १४३, २. ६; १४४, १; १४५, १; १४६, १; १४७, १; १४८, १; १४९, १; १५०, २; १५१, १; १५२, ३८; १५३, २; १५४, ४; १५६, ३. ५. १०; १५७, १. ७; १५८, २; १५९, २. ६; १६०, ५. ३७. ३८; १६१, १; १६२, ३; १६३, ३; १६४, ४; १६५, १; १६६, ९. १०; १६७, १; १६८, ५. २९; १६९, १; १७०, १. ३; १७१, १. ६; १७२, १; १७३, १. २६; १७४, २. ७. ६३; १७५, २. ३९; १७६, २; १७७, २; १७८, १. ८; १७९, २. ९; १८०, २; १८१, २; १८५, ५; १९२, २६; १९३, २; १९४, ३; १९५, १; १९६, ६; १९७, २. १३; १९८, २; १९९, २. १७. २९. ३४. ८४. ११८; २००, ३. ३२; २०१, २; २०७, ३; २०८, २; २०९, ४; २१०, २; २११, १; २१२, १. २७; २१३, १; २१४, १; २१५, १; २१६, १; २१७, १; २१८, २; २१९, १. ५; २२०, २; २२१, २. ४. १०; २२२, ३; २२३, २. १२; २२४, १; २२५, १. ३७; २२६, १; २२७, ३; २२९, २; २३०, २; २३१, ६; २४१, ३; २४२, १२; २४४, १; २४५, १. १२; २४६, ७; २४८, ९; २४९, ३; २६१, १. १३; २६२, १. ४; २६३, ४२, २६४, ५. २०; २६५, १. १४; २६६, २; २६७, २; २६८, ३; २७१, २. २८. ३३. ४७. ५०; २७२, २; २७३, २; २७४, २; २७५, १; २७६, ३; २७७, २. ३९; २७८, २; २७९, ६; २८०, ५९. ६१. ६९; २८१, ७. २७. ४०; २८२, २. २८. ४२. ४७; २८३, ४. ३०; २८४, ७३; २८५, २; २८६, २; २८७, २; २८८, २. ४; २८९, ६. २२; २९०, ३; २९७, ४१; २९८, १. ४७; २९९, २. ४५; ३००, २. ११. ४३; ३०१, ३. ५४. ८४; ३०२, ७; ३०९, १. २५; ३१०, ३; ३१९, ३; ३२०, ३. ७६. ९०; ३२१, ३. ९४; ३२२, २; ३२३, ६; ३२४, १; ३२५, १; ३२६, १; ३२७, १; ३२८, १. २२; ३२९, १; ३३२, १; ३३३, १; ३३४, ५; ३३५; १. १६; ३३६, १. १७; ३३७, २. ६. १४; ३३८, १; ३३९, १. १८. १०९. ११५. १३७; ३५०, १५; ३५२, २; ३५३, १; ३५६, ८; ३५७, १; ३५८, १; ३५९, १; ३६२, १; ३६५, १; १३. १, १५. ३३. ४९. ६१. ६९. ८०; २, ८९; ४, १. १३; ५, २. २०; ६, २; ७, २. २७; ८, ३; ९, ३. १४. १६; १०, ३. १८. ४९. ६३; ११, २; १२, २. ४८; १३, २; १४, ३. १७. १८; १९, १०. २७. ९५; २०, १. १३; २१, २. १२. १८; २२, २. ४. ६. ९. १५. १७. १९. २५. ३३; २३, २. ४९; २४, २; २५, ३; २६, ९. ११. १६. १७. १९. १०२. १०५ (इतिहासं भीष्मोक्तं गंगायाः स्तवसंयुतम्); २७, ५. २७; २८, १; २९, १; ३०, ५; ३१, २; ३२, ३. १७; ३३, २; ३४, १. ३०; ३५, १; ३६, १. ३९; ३७, २. ६; ३८, २. ५. ७; ४०, १. २४. २७; ४१, १. २७; ४२, १; ४३, १; ४४, ३. २१. ३१; ४५, २. ११; ४६, १; ४७, ७. ३०. ४७; ४८, ३. ४०; ४९, ३. ७. १३. १५. २०. २३; ५०, २; ५१, १. १४. २१. ४०; ५२, ७. १३; ५३, २. ४९; ५४, १; ५६, १५; ५७, ६; ५८, २; ५९, ३; ६०, २; ६१, ४; ६२, २. ५४; ६३, ४. ४३; ६४, २. ३६; ६५, १; ६६, २. ६; ६७, ३; ६८, २. २३; ६९, ४. १५; ७०, १; ७१, २; ७२, ५; ७३, १; ७४, २. ११; ७५, ८; ७६, २. २९; ७७, ४. १०; ७८, १. ४; ८०, १७; ८१, २; ८२, २; ८३, १. ४६; ८४, १०; ८५, ६६; ८६, ५; ८७, ३; ८८, २; ८९, १; ९०, २; ९१, ३; ९२, १; ९३, २. ४. १०. १९. ५३. ६२. ७२. ८५. १४४; ९४, १. ४२; ९५, ४. १९; ९६, २. ८. १३. १६; ९७, २. २४; ९८, २; ९९, ३; १००, २; १०१, २. २८; १०२, २; १०३, ३. ४३; १०४, ४; १०५, २; १०६, ७. ८; १०७, ५; १०८, २; १०९, २; ११०, २ (कुरुपितामहम्). ३; १११, ४; ११४, ४; ११५, ७; ११६, ७; ११७, ४. १५; ११९, १. ६. १२; १२०, २; १२१, १; १२२, १; १२३, २. २१; १२४, २; १२५, ४; १२६, १. ११. ४२; १३०, १; १३१, १; १३२, १; १३४, १५; १३५, २; १३६, ३; १३७, २; १३८, ४; १३९, ७. ८; १४०, १. ५०; १४६, ६०; १४८, १८. ६५; १४९, ४; १५०, ४; १५१, २; १५२, २; १५५, १. १५; १५६, १; १५७, १; १५८, ३; १५९, ५६; १६२, १. ३. ११. १९. २८. ३४; १६३, ११; १६४, १; १६५, १. ४; १६६, १; १६७, ८ (संस्करणाय). ११ (स्याग्नीन). २५. ३०. ३७. ४६; १६८, १. ८. १४. ३३ (कुरुशार्दूलम्); १४. २, ५ (भागीरथीसुताव); १२, १२; १४, १४. १५; १५, २२; ५३, १७; ६०, ३. ८; ६१, १४; ६३, ६; ८१, ९. १४; १५. ३, २०; ७, २१; ८, २; ९, १; १०, २९. ३०; ११, ११. १६. २३; १२, ५; १४, २. ५; २९, ३२; ३१, १६ (भीष्मं च विद्धि गांगेयं वसुं मानुषतां गतम्); ३२, ७; १८. ४, २१ (वसुभिः सहितं पश्य भीष्मं शान्तनवं नृपम्); ५, १: ११ (वसूनेव महातेजा भीष्मः प्राप महाद्युतिः)।

तुकी० इनके नामों के निम्नलिखित पर्याय :—

आपगासुत : १. ११४, १२; ६. ११२, १९।

आपगेय — देखिये वस्था०।

कुरुकुलश्रेष्ठ, कुरुकुलाधम, कुरुकुलोद्वह, कुरुनन्दन, कुरुपति, कुरुपितामह, कुरुपुङ्गव, कुरुप्रवीर, कुरुमुख्य, कुरुराजर्षिसत्तम, कुरुवंशकेतु, कुरुश्रेष्ठ, कुरुवृद्ध, कुरूद्वहतम, कुरुशार्दूल, कुरुश्रेष्ठ, कुरुसत्तम, कुरूत्तम, कुरूद्वह, कुरूनां ऋषभ, कुरुनाम् अभयकर, कुरूनाम् ऋपयः, कौरव, कौरवनन्दन, कौरवाधम, कौरवानां धुरंधर, कौरवानां पितामहः, कौरवांवाम् उपश्रयः, कौरव्य।

गङ्गासुत = भीष्म : ६. ८०, ७; ८५, १५; १२१, ९।

गाङ्गेय = भीष्म : १. १, ९४; ९९, ४७ (स तु देवव्रतोनाम गाङ्गेय इति चाभवत्। वनामा शान्तनोः पुत्रः शान्तनोरधिको गुणैः); १००, २१ (देवव्रतो वसुः). ६५ ८५. ९४; १०२, ७२; १०३, २; १०९, २६; ११३, १५; १३०, २६; १३१, ५३; १३४, २; ३. ३, ३५; ४. ५१, २२; ६४, ४. ४२. ४८; ५. ५५, ४६; १४७, २७; १५०, १६; १५६, २५. ३१; १६०, ७९; १६३, ७; १६५, २. ४. १२; १६८, १३. २९. ३९; १७३, २; १७५, १३. १५; १७६, ५०; १८३, ९; १८५, १७. १८; १८७, ५; १९३, २. ५; १९४, १४; ६. १५, २०; ४५, ९. १०; ४८, ४८. ६३. ७४. १०७; ५२, ३०. ३६. ३८. ४२. ४८. ६९; ५४, १०८. १११; ५८, २०; ५९, २५; ७१, १. ८; ८१, १. ३५; ८२, २; ८५, १३; ८६, ६; ८८, २; ९६, ३६; ९७, ८. २७. ३८; ९८, ३०. ४०-४४; १०३, २. ११. १४; १०४, ३६; १०७, ३६. ६१. ९७. १०४; १०९, १. १७. ३१. ३९; ११०, ३. ५.

१०. २४. २६; १११, २१; ११४, २१. ४५; ११६, ५५; ११७, २. २३. २४; ११८, १८. १९; ११९, २४. ४६. ५२. ६९. ७२. ९५. ९६, १२८; १२२, ७. ३९; ७. २, १८. २२. ३८; ८. ६, २; ९. ३३, ४६ (भारतश्रेष्ठः सर्वेषां नः पितामहः); ५६, ३४; ६१, २०; १०. ९, ५४; ११. २३, १९; १२. ७, २८; २७, ४; ४६, २१; ५०, ५. १०-१२. ३४; ५२, १५. १६. २३. ३०; ५३, १६. २६; ५४, २. ६. ८; ५५, २२; ५९, २; ६०, १; १३. २६, २. १४; ३०, ३; १११, ६; १२५, २; १४८, ६२. ६६; १६६, ५; १६७, २४. २९. ४८; १६८, १२. १७. १८. २०; १४. ६०, ११; १५. ११, ४; ३१, १६ ।

जाह्नवीपुत्र : ६. १२०, ५६ ।

जाह्नवीसुत : ५. १७७, ३३; ७. १, २१. २८ ।

तालध्वज : ६. १०४, १४ ।

देवव्रत, भीष्म का वास्तविक नाम है : १. ९५, ४७; ९९, ४७; १००, २१ (देवव्रतोवसुः). ५९. ७५; ५. ५५, २१; १४८, २. १८. ३४; ६. १४, ७३; १७, ७; ४८, ३९. ७२. ८६. १०४. १०८. ११०; ५२, ३८; ५४, १०९. ११२; ५५, ३६; ५६, ३; ५९, ४; ६९, ५; ७४, ३७; ७५, १५; ८५, २१; ८६, १७; ८८, ६. ३९; ९४, ४६; १०१, ३६; १०३, ३; १०६, ७७; १०७, ४७. ५३; १०९, २४; ११५, १२; ११७, ८; १२०, ६; १२१, ७; ७. १, १. १३. १४. २४. ३१. ३२; १०, ४६; ११. २३, २५ (गते देवव्रते स्वर्गं देवकल्पे नरर्षभे); १२. ५४, १ (महाभागे शरतल्पगतेऽच्युते) ।

नदीज : ४. ३९, १०; ५. ४, १५; १४८, ३२ ।

पितामह : १. १४६, २५; ३. २९, ४६; ४. ६६, २६; ५. ५७, ३७; ६५, ११; ६६, ४; ६. ४८, ४४. ७८. १०८; ६३, २७; १०६, ७३; १०८, ५५; १०९, ७; ११२, १५; ११७, २२; ११८, ४९; ९. २, १९; ५, ४०; ३१, ४७; ३३, ४६ (गाङ्गेयो भरतश्रेष्ठः सर्वेषां नः पितामहः); ३८, ५ (पितामहस्य महतो वर्तमाने महामखे). ११. १३-१५; ६१, ३१; ११. १२, ८; १२. २७, ६; ५४, १२; ५६, १. ३. ८; ५८, २८; ६०, १. ५; ६७, १; ६८, १; ६९, ६४; ७०, १४; ७१, १; ७५, १; ७६, १; ७७, १; ७९, १; ८०, १; ८३, १; ८६, १; ८८, १; ९२, १; ९५, ३; ९८, १; १००, १; १०३, १; ११५, १; १२१, १; १२५, १. ३; १२९, २; १३२, २; १३९, ३; १४०, १; १४१, ७ ।

प्रपितामह : ६. ११८, २४; १२. १६६, ६ ।

भरतर्षभ – देखिये वस्था० ।

भरतश्रेष्ठ – देखिये वस्था० ।

भरतसत्तम – देखिये वस्था ।

भागीरथी पुत्र : १३. १३९, ७ ।

भागीरथी सुत : १४. २. ५ ।

भारत, भारताणां पितामह : देखिये वस्था० ।

भीष्मक : ५. १७५, ६ ।

महाव्रत : ५. १४८, ३५; १७७, ३८. ४१; १९४, ३; ६. ५९, ८६; ८५, २०; ७. २, ६; ३, ७;

वसु – देखिये वस्था० ।

शान्तनव : १. २, १७८. १८६; ६१, ३२; ६३, ९१; १०१, ११. २४; १०२, ३५. ४२. ४५. ४९; १०५, ३४; ११३, १; १२६, १५; १२७, २९; १४१, २६. २८; १४३, १२; १५०, ५; २०५, २; २०६, १. १८; २०७, २३; २२२, १; २. ३६, २७; ३७, १०; ३८, ३; ७४, २६; ३. २९, ४६; ४. २८, १; ३६, ६; ३८, ८; ५१, १८; ५५, ३७. ५८ (शान्तनवो भीष्मः सर्वेषां नः पितामहः); ६४, १ (भरतानां पितामहः) २१. ३१. ४५; ६६, ४. २०. २६ (पितामहं वृद्धं); ६८, ८; ५. ४, २६; २१, १९; २७, २४; ३१, ८; ४८, ९०. १०९; ४९, ३३; ५७, १२; ६२, १८; ६५, ११; ६६, ४; ९४, ४२. ४४; १२५, १. १०; १२८, २९; १२९, ३७; ६०, २४; १४२, १२. २६; १४४, १४; १४८, ३६; १५६, १; १७३, १५; १७५, ३३; १७६, ४७; १९३, १८; १९५, ६; ६. १३, ३; १४, ९. १७. ४५. ६१, ६३. ६५. ६८. ७३; १६, २१; १७, १९. ३९; २०, १८; ४३, ३६; ४५, ८; ४७, ३१. ३४; ४८, २. ६. ३३. ५३. ५४. ६२. ६७. ८१; ४९, ५०; ५२, २२. ४५; ५३, २; ५४, १०६; ५६, १. २; ५८, ३३; ५९, २०. ७७; ६०, ५. ६. २२; ६५, ४०. ७४; ६८, १४; ७०, १; ७१, १०; ७२, ३१. ३३; ७३, २; ७९, ६१; ८१, ४५; ८२, ५. ८. १२; ८५, १४. १५. १९. २३; ८६, २. ४. ८. १५. ४९; ८७, ६. ३८; ८८, ५; ८९, ३९; ९२, १८; ९५, ९; ९६, १७; ९७, ८; ९८, २९; ९९, १; १०१, ३१; १०६, ७६; १०७, ४०. ५५. ६९; १०८, १६; १०९, ३. ३८; ११५, १. ८. २६. ३४; ११८, १९. ३५; ११९, ४२. ५४. ६७. १०४. १२२; १२०, ११. १४. १६. ३२. ४१; १२१, १३. १५. २९. ३८; ७. १, २३; २, २. १२; ५, ११; ८. १, २२; ५, ४; ७३, १३; ९. २४, ३५; ६४, ७; १०. ५, २१; ११. २३, १५. २०. २२; १२. ५०, २१; ५२, १; ७०, १४; १३८, ११; १३. ८७, २; १०६, ७; १४९, १; १६२, १; १६५, ३; १६६, ९; १६७, १२; १६८, १. ९; १४. ८१, ८. १२. १४; १५. २९, ३२; १८. ४, २१ ।

शान्तनुनन्दन : १. १०२, ६; ६. १४, ६२; १२२, १; १२. ५४, २ ।

शान्तनुसुतः : १३. १६८, ४ ।

शान्तनूज : ५. ४८, ३९ ।

शान्तनोः पुत्रः : ६. ११९, ११४; ९. २४, २३; ११. २५, ३५ ।

शान्तनोः सुतः : ६. १०६, ४८; १०९, २५ ।

सत्यसन्ध : ५. १६३, १०. १३; ८. ७०, १५ ।

सागरगासुत : १. १०२, ५६; ११३, १७; ६. १०७, ५३ ।

२. भीष्म = शिव (सहस्रनाम) ।

३. भीष्म (बहु०) : २. ८, २४ (यम की सभा में : भीष्माणां द्वे शतेप्यत्र) ।

१. भीष्मक = भीष्म (देखिये वस्था०) ।

२. भीष्मक : १. ६७, १५६ (श्रियस्तु भागः संजज्ञे रत्यर्थं पृथिवीतले। भीष्मकस्य कुले साध्वी रुक्मिणी नाम नामतः); २. ४, ३१; १४, २१ (यद्यपि ये भोजवंशी राजा इन्द्र के सखा थे, तथापि जरासन्ध के भी भक्त थे]); ३१, १२ (सहदेव ने इन्हें पराजित किया था). ६३ (अपने पुत्र सहित इन्होंने श्रीकृष्ण की ओर दृष्टि रख कर प्रेमपूर्वक सहदेव का शासन स्वीकार कर लिया था); ३७, १३ (भीष्मके चैव दुर्धर्षे पाण्डुवत् कृतलक्षणे); ४४, १९ (महावीर्ये); ५. १५८, १ (अतियशस्वी दाक्षिणात्य देश के अधिपति भोजवंशी तथा इन्द्रसखा, हिरण्यरोमा नामवाले संकल्पों के स्वामी महामना भीष्मक का पुत्र रुक्मी पाण्डवों के पास आया). ३९ (इनके पुत्र रुक्मी के अपने नगर चले जाने पर पाण्डवों ने आपस में गुप्त मन्त्रणा की); १२. ४, ६ (राजपुर में कलिङ्गराज चित्राङ्गद की पुत्री के स्वयंवर में उपस्थित) ।

भीष्मकात्मजा = रुक्मिणी : ३. १२, ११५ ।

भीष्मनिहन्तृ = शिखण्डी : १०. ८, ६३ (अश्वत्थामा ने इसका वध किया था) ।

भीष्मपर्वन् : १. १, ८९ (भीष्मपर्वमहाशाखो ... भारतद्रुमः); २, २४४ (विचित्रार्थं भीष्मपर्व प्रचक्षते). २५३ (इस पर्व में ५८८४ श्लोक बताये गये हैं किन्तु वास्तव में इसमें ५८५६ श्लोक ही मिलते हैं) ।

भीष्मवध : १. २, ६८ । देखिये भीष्मवधपर्वन् ।

भीष्मवधपर्वन् , महाभारत के ७०वें अवान्तरपर्व का नाम है जिसमें भीष्म के वध का वर्णन है : "अर्जुन को गान्डीव धनुष धारण किये देखकर पाण्डवों, सोमकों तथा उनके अनुगामी सैनिकों ने पुनः बड़े जोर से सिंहनाद किया । उस समय देवता, गन्धर्व, पिता, सिद्ध, चारण; तथा महर्षिगण देवराज इन्द्र को आगे करके युद्ध देखने के लिये वहाँ आये । युधिष्ठिर ने तब कौरवों और पाण्डवों की विशाल सेनाओ के बीच में अपना कवच उतार दिया और रथ से उतर कर पैदल ही हाथ जोड़कर भीष्म की ओर

चल दिये। अर्जुन तथा अन्य पाण्डव भी बिना युधिष्ठिर के अभिप्राय को समझे ही उनके पीछे-पीछे चल पड़े। कौरव सैनिकों ने उस समय यह समझा कि युधिष्ठिर भीष्म आदि की शरण में जा रहे हैं। किन्तु श्रीकृष्ण ने उनका अभिप्राय समझ लिया। दोनों ही सेनाओं के मन में जब इस प्रकार संशय उत्पन्न हो गया था तभी युधिष्ठिर ने पितामह भीष्म के पास पहुँचकर उनसे युद्ध के लिए आशीर्वाद तथा आज्ञा देने का निवेदन किया। भीष्म से आज्ञा प्राप्त कर युधिष्ठिर ने द्रोण, कृपाचार्य तथा अन्य बड़ों से भी आज्ञा ली। भीष्म और द्रोणाचार्य से उनके मारे जाने का उपाय भी युधिष्ठिर ने पूछा। भीष्म ने युधिष्ठिर से कहा : 'धृतराष्ट्र-पुत्रों ने धन द्वारा मेरा भरण-पोषण किया है अतः मैं उनकी ओर से युद्ध करने के लिए बाध्य हूँ। अभी मेरा मृत्युकाल उपस्थित नहीं हुआ है अतः तुम्हें मेरी मृत्यु का उपाय जानने के लिए मुझसे एक बार पुनः मिलना होगा।' द्रोण ने युधिष्ठिर से इस प्रकार कहा : 'जब मैं रथ पर बैठ कर कुपित हो युद्ध में संलग्न रहूँगा तब कोई भी मुझे मार नहीं सकता। जब मैं शस्त्रत्याग करके अचेत सा होकर आमरण अनशन के लिये बैठ जाऊँ, उसी अवस्था में कोई श्रेष्ठ योद्धा मुझे मार सकता है। यदि मैं किसी विश्वसनीय पुरुष से युद्धभूमि में कोई अत्यन्त अप्रिय समाचार सुन लूँ तो शस्त्रत्याग कर दूँगा।' तदन्तर जब युधिष्ठिर ने कृपाचार्य से उनकी मृत्यु का उपाय पूछा तब उन्होंने अपने को अवध्य बताते हुये युधिष्ठिर को विजय प्राप्त करने का आशीर्वाद दिया। शल्य ने भी कौरवों के अर्थ से अपने को बँधा बताते हुये अपने इस वचन को पुनः दुहराया कि अर्जुन के साथ युद्ध करते हुये कर्ण के उत्साह को वे निरन्तर क्षीण करने का प्रयास करेंगे। इस प्रकार अपने पितामह, आचार्य और मामा से आज्ञा तथा आशीर्वाद लेकर युधिष्ठिर अपने पक्ष की सेना में लौट आये। उसी समय श्रीकृष्ण ने कर्ण के पास आकर उससे इस प्रकार कहा : 'मैंने सुना है कि भीष्म से द्वेष रखने के कारण तुम उस समय तक युद्ध नहीं करोगे जब तक भीष्म का वध नहीं हो जाता। ऐसी स्थिति में तुम पाण्डवों का पक्ष ग्रहण कर लो। जब भीष्म का वध हो जायगा तो तुम पुनः दुर्योधन की ओर चले जाना।' परन्तु कर्ण ने श्रीकृष्ण के इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। तदनन्तर युधिष्ठिर ने सेनाओं के बीच में खड़े होकर यह घोषणा की कि जो लोग उनके पक्ष में आना चाहें उन्हें वे स्वीकार करेंगे। उनकी यह घोषणा सुनकर धृतराष्ट्र के पुत्र युयुत्सु ने पाण्डव पक्ष में आना स्वीकार किया। युधिष्ठिर ने युयुत्सु को अपने पक्ष में स्वीकार करते हुये उससे कहा कि धृतराष्ट्र की वंशपरम्परा तथा पिण्डोदक-क्रिया उसी पर अवलम्बित प्रतीत होती है। इसके बाद दोनों सेनाओं के वीर युद्ध के लिये तत्पर होकर अपनी-अपनी व्यूहरचना करने लगे। पाण्डवों के सौहार्द और समयोचित कर्तव्यपालन को देखकर सभी लोगों ने उनकी प्रशंसा की। म्लेच्छों और आर्यों ने जब पाण्डवों का वह व्यवहार देखा और सुना तो वे सब गद्गद कण्ठ होकर रोने लगे। तदन्तर हर्ष में भरे हुये सभी मनस्वी पुरुषों ने अपने अपने शङ्ख तथा अन्य युद्धवाद्य बजाये। (६. ४३)।

'प्रथम दिन के युद्ध का आरम्भ : भीष्म को आगे करके दुर्योधन सेना सहित आगे बढ़ा। इसी प्रकार पाण्डव भी भीमसेन को आगे करके भीष्म से युद्ध करने की इच्छा रखकर प्रसन्न मन से आगे बढ़े। दोनों सेनाओं में सिंहनाद, भेरी, मृदङ्ग और अन्यान्य वाद्यों की ध्वनि गूँजने लगी। भीमसेन भी भयंकर गर्जना करने लगे। दुर्योधन ने अपनी सेनासहित भीमसेन पर आक्रमण किया। इधर द्रौपदी के पाचों पुत्र, महारथी अभिमन्यु, नकुल, सहदेव तथा धृष्टद्युम्न आदि ने भी धार्तराष्ट्रों पर आक्रमण करके उन्हें पीड़ित करना आरम्भ किया। द्रोणाचार्य के शिष्यों ने इस युद्ध में अपूर्व कुशलता से युद्ध किया। दोनों सेनाओं का वह संघर्ष अत्यन्त दुःसह था। सेना की धूल से आच्छादित हो सूर्यदेव अदृश्य हो गये। उस समय भीष्म उन समस्त सेनाओं से ऊपर उठकर अपने तेज से प्रकाशित हो रहे थे। (६. ४४)।

"उभय पक्ष के बीच भयंकर युद्ध होने लगा। भीष्म ने अर्जुन पर आक्रमण किया। सात्यकि ने कृतवर्मा से, अभिमन्यु ने बृहद्बल से, भीमसेन ने दुर्योधन से, दुःशासन ने नकुल से, दुर्मुख ने सहदेव से, युधिष्ठिर ने मद्रराज शल्य से, धृष्टद्युम्न ने द्रोण से और शङ्ख ने सोमदत्त के पुत्र से घोर द्वन्द्व युद्ध आरम्भ किया। इस समय ये दोनों योद्धा क्रमशः मंगल और बुध ग्रहों के समान प्रतीत हो रहे थे। घटोत्कच ने अलम्बुष का और शिखण्डी ने अश्वत्थामा का सामना किया। विराट ने भगदत्त पर और कृपाचार्य ने कैकेयराज बृहत्क्षत्र पर आक्रमण किया। महाराज द्रुपद और जयद्रथ परस्पर युद्ध करते हुये शुक्र और अङ्गारक (मंगल) ग्रहों जैसे प्रतीत हो रहे थे। धार्तराष्ट्र विकर्ण ने सुतसोम पर आक्रमण किया। पाण्डवों की ओर से युद्ध करते हुए चेकितान ने सुशर्मा पर आक्रमण किया शकुनि ने प्रतिविन्ध्य से युद्ध किया। सहदेव पुत्र श्रुतकर्मा ने काम्बोजराज सुदक्षिण पर आक्रमण किया। उस समय श्रुतकर्मा मैनाक पर्वत के समान अटल प्रतीत हो रहे थे। अर्जुनपुत्र इरावत् ने श्रुतायु पर आक्रमण किया। अवन्ति के दो राजकुमारों, विन्द और अनुविन्द ने कुन्तिभोज और उनके पुत्र का सामना किया। केकय राजकुमारों ने पाँच गान्धार राजकुमारों से युद्ध किया। धृतराष्ट्र पुत्र वीरबाहु ने विराटपुत्र उत्तर के साथ युद्ध किया। चेदिराज ने उलूक पर आक्रमण किया। इनके अतिरिक्त सहस्रों की संख्या में हाथी, रथ, अश्वारोही और पैदल सैनिक द्वन्द्व युद्ध के पूर्वोक्त क्रम का उल्लंघन कर के युद्ध करने लगे। उस समय वहाँ उपस्थित देवर्षियों, सिद्धों तथा चारणों ने भयंकर संग्राम को देखा (६. ४५)।

"उसरणाभूमि में जहाँ-तहाँ लाखों सैनिक मर्यादाशून्य होकर परस्पर भयंकर संग्राम में लिप्त थे। उस समय न पुत्र पिता को पहचानता था और न पिता पुत्र को। कौरव और पाण्डव दोनों उस समय इस प्रकार युद्ध कर रहे थे मानों उनमें किसी ग्रह आदि का आवेश आ गया हो। जब यह मर्यादाशून्य भयानक संग्राम हो रहा था तभी भीष्म के पास पहुँचकर पाण्डवों की सारी सेना काँपने लगी (६. ४६)।

"दिन का पूर्व भाग व्यतीत हो जाने पर उस भयानक संग्राम में दुर्योधन की आज्ञा से दुर्मुख, कृतवर्मा, कृपाचार्य, आदि भीष्म की रक्षा करने लगे। भीष्म ने चेदियों, कारूषों, पाञ्चालों आदि पाण्डवपक्षीय सैनिकों पर भीषण आक्रमण किया। यह देखकर अभिमन्यु अपने रथ पर बैठकर भीष्म की ओर दौड़े। उन्होंने अपने तीखे बाणों से भीष्म के तालध्वज को छेद डाला और उनके अनुगामियों से युद्ध आरम्भ किया। अभिमन्यु ने इस युद्ध में दुर्मुख के सारथी का सर काट दिया और कृपाचार्य के धनुष को भी भालों से काट गिराया। अभिमन्यु का युद्ध कौशल देखकर भीष्म आदि सभी महारथियों ने उन्हें अर्जुन के समान माना। अभिमन्यु का धनुष गाण्डीव के समान टंकारध्वनि प्रकट करने वाला था। कृतवर्मा, कृपाचार्य, और शल्य उस समय मैनाक पर्वत की भाँति स्थिर हुये अर्जुनकुमार अभिमन्यु को बाणविद्ध करके भी कम्पित नहीं कर सके अभिमन्यु ने भीष्म के ध्वज को काट कर पृथिवी पर गिरा दिया जिसे देखकर भीमसेन ने उच्चस्वर से गर्जना की। भीष्म ने तब अनेक दिव्यास्त्रों को प्रकट किया। धृष्टद्युम्न, भीम, केकयराजकुमार और सात्यकि अभिमन्यु की रक्षा के लिये आ गये। भीष्म ने धृष्टद्युम्न और सात्यकि को बाणों से आहत कर दिया। उन्होंने भीमसेन के ध्वज को भी काट गिराया। भीम ने भी भीष्म, कृपाचार्य और कृतवर्मा को आहत कर दिया। एक विशाल हाथी पर चढ़ कर विराट कुमार उत्तर ने मद्रराज शल्य पर आक्रमण किया। उत्तर के हाथी ने शल्य के रथ के चारों घोड़ों को मार डाला। घोड़ों के मारे जाने पर शल्य ने एक शक्ति से प्रहार कर उत्तर को आहत करके हाथी से गिरा दिया और स्वयं कृतवर्मा के रथ पर बैठ गये। अपने भाई उत्तर को मारा गया और शल्य को कृतवर्मा के साथ रथ पर बैठा हुआ देखकर विराटपुत्र श्वेत क्रुद्ध हो उठे और शल्य को मार डालने की इच्छा से उन पर धावा किया। शल्य की रक्षा करने के उद्देश्य से तब कोसलराज बृहद्बल ने श्वेत पर आक्रमण किया। श्वेत ने रुक्मरथ को आहत किया जिससे रुक्मरथ का सारथि उन्हें युद्धभूम से दूर हटा ले गया। भीष्म सहित दुर्योधन ने श्वेत पर आक्रमण करके शल्य की रक्षा की। भीष्म ने पाण्डव पक्ष के अभिमन्यु आदि पर

वाणवर्षा आरम्भ कर दी (६. ४७)।

"श्वेत की रक्षा करने के उद्देश्य से शिखण्डी सहित पाण्डवों ने उपस्थित होकर भीष्म पर आक्रमण किया। श्वेत ने अपूर्व पराक्रम दिखाते हुये भीष्म को युद्धविमुख कर दिया। उनके भय से कौरव सैनिक भी भीष्म को अकेला छोड़कर भाग गये। श्वेत ने भीष्म की ध्वजा को भी काट गिराया। तब भीष्म की रक्षा करने के लिये बाह्लीक आदि ने श्वेत पर आक्रमण किया। सेनापति श्वेत ने अनेक लौह वाणों द्वारा भीष्म को क्षत-विक्षत कर दिया। जब भीष्म और श्वेत का घोर संग्राम हो रहा था तब इस प्रकार आकाशवाणी हुई : 'महाबाहु शीघ्र प्रयत्न करो; श्वेत पर विजय प्राप्त करने के लिये ब्रह्मा ने यही समय निश्चित किया है।' इस वाणी को सुनकर भीष्म ने श्वेत के बध का विचार किया। सात्यकि, भीम, धृष्टद्युम्न आदि श्वेत की रक्षा करने के लिये दौड़े परन्तु भीष्म, द्रोण आदि ने उन सबको रोक दिया। तदनन्तर एक विशाल वाण को ब्रह्मास्त्र द्वारा अभिमन्त्रित करके भीष्म ने श्वेत पर छोड़ दिया। उस समय देवताओं, गन्धर्वों, आदि ने भी देखा कि वह वाण महान् वज्र के समान प्रज्वलित हो उठा और श्वेत के कवच तथा हृदय को भी छेद कर धरती में समा गया। पाण्डव तथा उनके दल के सभी लोग श्वेत की मृत्यु से शोकसागर में डूब गये। दुःशासन हर्षित होकर नाचने लगा। सेनापति श्वेत के मारे जाने के कारण अर्जुन और श्रीकृष्ण ने अपनी सेना को धीरे-धीरे युद्धभूमि से पीछे हटा लिया। कौरवों ने भी ऐसा ही किया (६. ४८)।

"दिन के पूर्वभाग का अधिकांश व्यतीत हो जाने पर कौरवों और पाण्डवों का युद्ध पुनः आरम्भ हुआ। विराट के सेनापति श्वेत को मारा गया और राजा शल्य को कृतवर्मा के साथ रथ पर बैठा हुआ देख शंख ने क्रुद्ध होकर शल्य को मार डालने की इच्छा से उनपर आक्रमण किया। भीष्म ने शंख पर आक्रमण किया; शंख के आगे स्थित होकर अर्जुन ने भीष्म पर आक्रमण किया। गदा हाथ में लेकर शल्य ने शंख के घोड़ों का वध कर दिया; शंख तब अर्जुन के रथ पर चढ़ गया। भीष्म ने भयंकर वाणवर्षा करके पाञ्चाल सैनिकों का संहार किया। उन्होंने अर्जुन को छोड़ कर पाञ्चालराज द्रुपद पर धावा किया और सम्पूर्ण पाण्डव सेना को वाण-वर्षा द्वारा त्रस्त करने लगे। परिणामस्वरूप पाण्डवसेना के बहुत से सैनिक मारे गये और बहुत से भाग गये। इस प्रकार पाण्डवदल में हा-हाकार मच गया। उस समय सूर्य अस्त होने वाला था अतः पाण्डवों ने अपनी सेनाओं को पीछे हटा लिया (६. ४९)।

"भीष्म और द्रोण के पराक्रम को देखकर युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण के पास आकर इस प्रकार कहा : 'भीष्म को जीतना अशक्य है। मेरे पक्ष के सैनिकों का उन्होंने भीषण संहार किया है। अब मैं वन को चला जाऊँगा। अपने मित्र भूपालों को भीष्मरूपी मृत्यु को सौंप देने में कोई भलाई नहीं है। एकमात्र भीमसेन ने ही क्षत्रिय धर्म का विचार करते हुए अपनी पूरी शक्ति से युद्ध किया है। अर्जुन दिव्यास्त्रों के ज्ञाता हैं परन्तु वह हम लोगों की उपेक्षा कर रहे हैं। अतः अब आपकी कृपा से ही पाण्डव अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर सकते हैं।' युधिष्ठिर की शोकातुर बातें सुनकर उन्हें सान्त्वना देते हुये श्रीकृष्ण ने कहा कि शिखण्डी ही भीष्म का वध करेंगे। साथ ही पाण्डवों के साथ सात्यकि जैसे महारथी भी हैं। श्रीकृष्ण द्वारा प्रोत्साहित होने पर युधिष्ठिर ने धृष्टद्युम्न को पाण्डवों का सेनानायक बनाया और आश्वस्त किया कि सभी पाण्डव उनका (धृष्टद्युम्न का) अनुसरण करेंगे। धृष्टद्युम्न ने भी युधिष्ठिर को आश्वस्त करते हुये कहा: 'मुझे भगवान शम्भु ने पहले से ही द्रोणाचार्य का काल बना कर उत्पन्न किया है। आज मैं समराङ्गण में भीष्म, कृपाचार्य, द्रोण, शल्य तथा जयद्रथ का सामना करूँगा।' धृष्टद्युम्न की उत्साहवर्धक बात सुनकर युधिष्ठिर ने उनसे क्रौञ्चारुण नामक व्यूह का, जिसे देवासुर संग्राम के समय बृहस्पति ने इन्द्र को बताया था, निर्माण करने के लिये कहा। धृष्टद्युम्न ने तदनुसार प्रातःकाल सूर्योदय से पहले ही समस्त सेनाओं का व्यूह निर्माण किया। उस व्यूह में सबसे आगे अर्जुन को खड़ा किया। द्रुपद उसके शिरोभाग में, कुन्तिभोज और धृष्टकेतु नेत्रों के स्थान पर और दशार्णक, प्रभद्रक, अनूपक तथा किरातादि ग्रीवा में स्थित हुये। (६. ५०)।

"अत्यन्त भयंकर और अभेद्य क्रौञ्चव्यूह को अमित तेजस्वी अर्जुन के द्वारा सुरक्षित देखकर दुर्योधन ने द्रोण, कृप, शल्य और अपने भाइयों के समीप आकर इस प्रकार कहा: 'भीष्म पितामह द्वारा सुरक्षित हमारी सेना अजेय तथा पाण्डवसेना जीतने में सुगम है। अतः संस्थान, शूरसेन, दुःशासन, विकर्ण आदि अपनी सेना को आगे रखते हुये भीष्म की रक्षा करें।' दुर्योधन की बात सुनने के बाद एक विशाल सेना से घिरे हुये भीष्म आगे-आगे चले। भीष्म, द्रोण तथा धार्तराष्ट्रों ने मिलकर अपनी सेना का महान व्यूह बना लिया जो पाण्डव सैनिकों को बाधा पहुँचाने में समर्थ था। भीष्म के पीछे द्रोणाचार्य और कुन्तल, दशार्ण आदि सैनिक चले। शकुनि ने अपनी सेना साथ लेकर द्रोणाचार्य की रक्षा में योग दिया। तत्पश्चात अपने भाइयों सहित दुर्योधन अत्यन्त हर्ष में भरकर अश्वातक, विकर्ण, अम्बष्ठ, कोसल, दरद, शक, क्षुद्रक, तथा मालव आदि देशों के वीरों के साथ अपनी सेना का संरक्षण करने लगा। भूरिश्रवा, शल, शल्य, भगदत्त आदि उसकी सेना के वामभाग की रक्षा कर रहे थे। सोमदत्तपुत्र भूरि, त्रिगर्तराज सुशर्मा, श्रुतायु और अच्युतायु आदि दक्षिण भाग में स्थित होकर उस सेना की रक्षा कर रहे थे। अश्वत्थामा, कृपाचार्य आदि कौरव सेना के पृष्ठ भाग में खड़े होकर उसका संरक्षण करते थे। केतुमान्, वसुदान, आदि अनेक नरेश सेना के पृष्ठपोषक थे। भीष्म ने सिंहनाद करते हुए अपना शंख बजाया। श्रीकृष्ण और अर्जुन ने भी अपने अपने शंख बजाये। इस प्रकार व्यूहबद्ध होकर कौरव और पाण्डव सेनायें पुनः युद्ध के लिए रणक्षेत्र में जा पहुँचीं। (६. ५१)।

"युद्ध का दूसरा दिन : जब सेनाओं की व्यूहरचना हो गई तब सैनिकों के बीच में स्थित होकर दुर्योधन ने युद्ध आरम्भ करने का निर्देश दिया। फिर तो दोनों पक्षों के बीच रोमांचक युद्ध आरम्भ हो गया। भीष्म आगे बढ़े और अभिमन्यु, भीमसेन, सात्यकि आदि पर वाणों की वर्षा करने लगे। अर्जुन ने श्रीकृष्ण से अपने रथ को भीष्म के सामने ले चलने के लिये कहा अन्यथा भीष्म पाण्डव-सेना का विनाश कर डालेंगे। तदनुसार श्रीकृष्ण ने अर्जुन के रथ को भीष्म के रथ के निकट पहुँचा दिया (अर्जुन के रथ का वर्णन)। भीष्म भी सहसा अर्जुन की ओर बढ़े। भीष्म, द्रोणाचार्य तथा कर्ण के अतिरिक्त अन्य कोई महारथी अर्जुन का सामना करने में समर्थ भी नहीं था। सैन्धवों से सुरक्षित भीष्म ने अर्जुन पर वाण वर्षा आरम्भ की। अर्जुन ने भी भीष्म, कृप, द्रोण आदि को वाणों से आहत किया। सात्यकि आदि महारथी योद्धाओं ने उस समय अर्जुन को चारों ओर से घेर रक्खा था। सोमकों और धृष्टद्युम्न ने द्रोण पर आक्रमण किया। जब अर्जुन ने कौरव सेना को त्रस्त करना आरम्भ किया तब दुर्योधन ने भीष्म से इस प्रकार कहा : 'आपके तथा द्रोणाचार्य के रहते हुये हमारे सैनिक मारे जा रहे हैं। आप ही के कारण कर्ण ने हथियार डाल दिया है और अर्जुन से युद्ध नहीं कर रहा है। अतः आप ऐसा प्रयत्न कीजिये जिससे अर्जुन मार डाले जाँय।' दुर्योधन की बात सुनकर भीष्म अर्जुन की रथ की ओर बढ़े। उस समय दुर्योधन, अश्वत्थामा आदि भीष्म को घेर कर युद्ध के लिये खड़े हुए। अर्जुन और भीष्म के बीच घोर युद्ध आरम्भ हो गया। भीष्म ने तीन वाणों से श्रीकृष्ण के वक्ष पर प्रहार किया। अर्जुन ने भी भीष्म के सारथि को वाणों से विदीर्ण कर दिया। दोनों के घोर युद्ध को देखकर वहाँ आये देवता, गन्धर्व, चारण, आदि उसे अत्यन्त आश्चर्यजनक घटना मानते हुए कहने लगे कि भविष्य में ऐसे युद्ध की सम्भावना नहीं है। जहाँ एक ओर भीष्म और अर्जुन का अत्यन्त दारुण तथा भयानक युद्ध चल रहा था वहीं दूसरी ओर द्रोणाचार्य और धृष्टद्युम्न में भी भयंकर मुठभेड़ हो रही थी। (६. ५२)।

"द्रोणाचार्य और धृष्टद्युम्न के बीच घोर युद्ध हो रहा था। भीम ने धृष्टद्युम्न को बचाने के लिए द्रोण पर आक्रमण किया। दुर्योधन के कहने पर कलिङ्गराज द्रोण की सहायता के लिए आ गये। तदनन्तर द्रोणाचार्य भी धृष्टद्युम्न को छोड़कर विराट और द्रुपद नरेशों को आगे बढ़ने से रोकने

लगे। धृष्टद्युम्न तब युधिष्ठिर के पास चले गये। तत्पश्चात् कलिङ्ग देशीय योद्धाओं और भीमसेन के बीच रोमांचकारी युद्ध होने लगा। (६. ५३)।

"उस युद्ध में चेदि सैनिक भीमसेन की तथा केतुमत् और श्रुतायु कलिङ्गराज की सहायता कर रहे थे। चेदियों ने निषादों पर आक्रमण किया। चेदि सैनिक यथाशक्ति कुछ देर तक युद्ध करने के पश्चात् भीमसेन को छोड़ कर भाग चले। कलिङ्गराज और उनके पुत्र शक्रदेव ने भीमसेन से युद्ध किया जिसमें भीम ने शक्रदेव का वध कर दिया। भीम ने कलिंग राजकुमार भानुमत पर आक्रमण करके उसे अपनी तलवार से मार गिराया। तदनन्तर भीम ने सैनिकों और हाथियों आदि का भयंकर संहार किया। कलिंगदेशीय सेना का नेतृत्व श्रुतायुस कर रहे थे। अतः भीमसेन ने उन पर आक्रमण कर दिया किन्तु शीघ्र ही आहत हो गये। तब उनके सारथि विशोक ने शीघ्र ही अपना रथ ला कर भीमसेन को उस पर बैठा लिया। भीमसेन ने एक बार फिर घोर युद्ध करते हुए श्रुतायुस का वध कर दिया। तदनन्तर उन्होंने सत्यदेव, सत्य और केतुमत् का भी वध करके कलिंग देशीय सैनिकों को परास्त कर दिया। फिर भी जब कलिंग सैनिक पुनः युद्ध के लिये लौटे तब धृष्टद्युम्न, शिखण्डी तथा युधिष्ठिर भीमसेन के पृष्ठभाग की रक्षा करने लगे। पांचालराज धृष्टद्युम्न के लिये भीम और सात्यकि को छोड़कर दूसरा कोई ऐसा पुरुष नहीं था जो प्राणों से भी बढ़ कर हो। भीम और धृष्टद्युम्न जब कलिङ्ग से युद्ध कर रहे थे तब उन लोगों ने सात्यकि को दूर से अपनी ओर आते देखा जिससे वे और अधिक उत्साहित हो उठे। भीमसेन ने वहाँ कलिंग सैनिकों के रक्त की नदी बहा दी। भीष्म ने अपने पक्ष के सैनिकों का कोलाहल सुनकर भीम पर आक्रमण कर दिया। सात्यकि भीम की रक्षा करने लगे। गदा हाथ में लेकर भीमसेन अपने रथ से कूद पड़े और भीष्म के सारथि को मार डाला। सारथि के मारे जाने के बाद भीष्म के अश्व तीव्र वेग से उन्हें लेकर युद्ध-स्थल से बाहर चले गये। भीमसेन ने कलिंगों को पूरी तरह परास्त कर दिया। तदनन्तर धृष्टद्युम्न यशस्वी भीमसेन को अपने रथ पर चढ़ाकर अपने दल में ले गये जहाँ मत्स्य और पांचाल देशीय नरेशों ने उन लोगों के शौर्य की सराहना की। सात्यकि ने पुनः अपने रथ पर बैठकर भीमसेन का बल बढ़ाते हुए कौरवों का संहार आरम्भ कर दिया। (६. ५४)।

"दूसरे दिन पूर्वाह्न का अधिक भाग व्यतीत हो जाने पर धृष्टद्युम्न अकेले ही अश्वत्थामा, शल्य, और कृपाचार्य से युद्ध करने लगे। उन्होंने अश्वत्थामा के विश्वविख्यात घोड़ों को मार डाला। तब अश्वत्थामा शल्य के रथ पर बैठकर युद्ध करने लगे। अभिमन्यु ने तीव्रगति से आकर शल्य आदि को आहत कर दिया किन्तु उसी समय अश्वत्थामा ने अभिमन्यु को आहत किया। दुर्योधन पुत्र लक्ष्मण ने अभिमन्यु पर आक्रमण किया। भीष्म और द्रोण को आगे कर बढ़ने वाली कौरव सेना से अर्जुन ने युद्ध किया। उस समय धूल तथा अभिमन्यु के बाणों ने सूर्य को ढँक लिया जिससे चारों ओर अन्धकार व्याप्त हो गया। कौरव सेना परास्त हुई। अर्जुन और कृष्ण ने अपने शंख बजाये। भीष्म ने द्रोणाचार्य से कहा कि वे अपनी सेनाओं को युद्धभूमि से लौटा लें। इधर सूर्य भी अस्त होने को था इसलिये दोनों पक्ष की सेनायें अपने शिविर की ओर लौट आईं। (६. ५५)।

"तीसरे दिन का युद्ध : प्रातःकाल होने पर भीष्म ने अपनी सेनाओं को युद्धभूमि में चलने का आदेश दिया। उन्होंने उस समय गरुड़व्यूह की रचना की और स्वयं उसके चंचु के स्थान पर खड़े हुए। अश्वत्थामा और कृपाचार्य उस व्यूह के शिरोभाग में तथा द्रोण और कृतवर्मा उसके नेत्र भाग में स्थित हुए। भूरिश्रवा, शल्य और भगदत्त को जयद्रथ के साथ उसके ग्रीवा भाग में खड़ा किया गया। अपने भाइयों और अनुचरों के साथ स्वयं दुर्योधन व्यूह के पृष्ठभाग में स्थित हुआ। उस व्यूह के पुच्छभाग में विन्द आदि, दाहिने पंख के स्थान पर कारूष आदि और बायें पंख के स्थान पर मगध और कलिङ्ग योद्धा स्थित हुये। अर्जुन और धृष्टद्युम्न ने अपनी सेना का अर्धचन्द्राकार व्यूह बनाया जिसके दक्षिण शिखर पर भीमसेन और उनके पीछे विराट तथा द्रुपद खड़े हुये। उनके बाद नील और धृष्टकेतु स्थित हुये। धृष्टद्युम्न आदि, उस विशाल व्यूह के मध्यभाग में युद्ध के लिये सन्नद्ध हुये। युधिष्ठिर भी वहीं थे और उनके बाद सात्यकि और द्रौपदी के पाँचों पुत्र। उन लोगों के बाद अभिमन्यु और इरावान थे। इरावान के बाद घटोत्कच और केकय खड़े हुये। तत्पश्चात अर्जुन उस व्यूह के बाँये शिखर पर खड़े हुये और उनके साथ जगत का पालन करनेवाले भगवान् श्रीकृष्ण विराजमान थे। इस प्रकार दोनों पक्षों की व्यूहरचना के बाद घमासान युद्ध आरम्भ हो गया। (६. ५६)।

"अर्जुन ने कौरवों का भीषण संहार आरम्भ किया किन्तु कौरव सैनिक यत्नपूर्वक युद्ध करते रहे क्योंकि द्रोण उन सब की रक्षा कर रहे थे। पाण्डव सैनिक भी भीम और अर्जुन से रक्षित होने के कारण सन्नद्ध रहे। अन्त में घोर युद्ध करते हुये भीष्म आदि के सम्मुख पाण्डवों के पैर उखड़ने लगे। भीमसेन ने कौरवों पर आक्रमण करते हुये दुर्योधन, भीष्म और द्रोण के साथ युद्ध किया। अभिमन्यु और सात्यकि ने शकुनि पर आक्रमण किया। (६. ५७)।

"अर्जुन के अलौकिक रणकौशल को देखकर देवता, गन्धर्व, दानव, पिशाच, नाग तथा राक्षस आदि उनकी प्रशंसा करने लगे। गान्धार सैनिकों सहित शकुनि ने वृष्णि वीर सात्यकि और अभिमन्यु से युद्ध करते हुये सात्यकि के रथ को ध्वस्त कर दिया। तब सात्यकि अभिमन्यु के रथ पर चढ़ गये। द्रोण और भीष्म ने युधिष्ठिर पर आक्रमण किया किन्तु माद्रीकुमारों सहित युधिष्ठिर ने भी प्रत्याक्रमण किया। भीमसेन और घटोत्कच ने दुर्योधन पर आक्रमण करके उसे और उसके सैनिकों को भगा दिया। उस समय भीमसेन ने दुर्योधन का पीछा किया। धृष्टद्युम्न और युधिष्ठिर ने द्रोण तथा भीष्म की सेना का संहार किया जिससे उनके सैनिक भागने लगे। द्रोण और भीष्म भी अपने भागते सैनिकों को रोकने में सफल नहीं हो सके। अभिमन्यु तथा शैनेय (सात्यकि) ने शकुनि की सेना का संहार आरम्भ किया। अर्जुन ने कौरव सेना को परास्त कर दिया जिससे सभी सैनिक भागने लगे तथा भीष्म और द्रोण के रोकने पर भी नहीं रुके। उस समय दुर्योधन ने अपनी भागती हुई सेना को पुनः लौटाया और स्वयं भीष्म के पास जाकर उनपर आक्षेप किया कि वे पूर्ण मनोयोग से युद्ध नहीं कर रहे हैं। दुर्योधन ने भीष्म से कहा: 'आपके, द्रोण के और कृपाचार्य के होते हुए भी मेरी सेना भाग रही है। यह आप लोगों के योग्य नहीं है। यदि आपको पाण्डवों पर दया दिखानी थी तो आपको पहले ही यह बता देना चाहिए था जिससे मैं कर्ण के साथ उसी समय अपने कर्तव्य का निश्चय कर लेता।' तब भीष्म ने कहा कि पाण्डवों को इन्द्र आदि देवता भी नहीं जीत सकते फिर भी उन्होंने दुर्योधन को आश्वस्त किया कि वे पाण्डवों को आगे बढ़ने से रोकेंगे। (६. ५८)।

"पूर्वाह्नकाल का अधिक भाग व्यतीत हो जाने पर भीष्म ने पाण्डवों पर भीषण आक्रमण किया। दोनों पक्षों में घनघोर युद्ध होने लगा जिसमें पाण्डव सैनिक भागने लगे। तब श्रीकृष्ण ने अपने रथ को रोककर अर्जुन से इस प्रकार कहा: 'तुमने पहले यह कहा था कि तुम भीष्म और द्रोण के नेतृत्व में युद्ध करने वाले सम्पूर्ण धृतराष्ट्रपुत्रों का वध कर डालोगे। अतः आज अपनी इस बात को सत्य करके दिखाओ।' अर्जुन ने तब अपना रथ भीष्म के पास ले चलने के लिये कहा। अर्जुन को सन्नद्ध देखकर पाण्डव सेना पुनः संगठित हो गई। अर्जुन और भीष्म का युद्ध; कृष्ण ने अश्वसंचालन और नियन्त्रण का महान कौशल प्रदर्शित किया। भीष्म ने कृष्ण और अर्जुन दोनों को आहत कर दिया। पाण्डव सेना भी छिन्न भिन्न हो गई। भीष्म ने अर्जुन पर आक्रमण करने के लिये द्रोण आदि से भी कहा। इस समय शिनि के पौत्र सात्यकि अर्जुन की सहायता के लिये पहुँच गये। कृष्ण ने सात्यकि की प्रशंसा की। वे स्वयं ही भीष्म तथा द्रोण का वध करने का निश्चय कर अपना सुदर्शनचक्र हाथ में लेकर रथ से नीचे कूद पड़े और भीष्म की ओर झपटे। भीष्म ने कृष्ण का स्वागत किया। अर्जुन ने तब श्रीकृष्ण को रोकते हुये स्वयं कौरवों का संहार करने का निश्चय व्यक्त किया। तब श्रीकृष्ण पुनः

रथ पर बैठ गये और अर्जुन गाण्डीव धनुष से बाणवर्षा करने लगे। दुर्योधन ने अर्जुन पर आक्रमण किया किन्तु उन्होंने माहेन्द्रास्त्र को प्रकट कर के कौरव सेना को रोक दिया। विराट और द्रुपद भी अर्जुन के पास आ गये। अर्जुन ने कौरव सेना का इतना भीषण संहार किया कि वहाँ रक्त की नदी बहने लगी और उस रक्तनद के दोनों किनारों पर कुत्ते, कौवे, गिद्ध और तरक्षु स्थित होकर मांस आदि का भक्षण करने लगे। कौरव सेना के अनेक प्रमुख वीरों के मारे जाने पर पाञ्चाल, चेदि, करूष और मत्स्य देशीय पाण्डव सैनिक कुन्ती पुत्रों के साथ प्रसन्न होकर सिंहनाद करने लगे। भीष्म सहित कौरव ऐन्द्रास्त्र से भयभीत हो गये। सूर्यास्त के समय दोनों पक्षों की सेनायें शिविरों में चली आईं। उस समय रात्रि के आरम्भ में कौरवों के दल में भयंकर कोलाहल होने लगा। अर्जुन के हाथों प्राच्य, सौवीर, क्षुद्रक और मालव सैनिकों के मारे जाने से सब दुःखी थे। साथ ही श्रुतायु, द्रोण, कृप, शल्य आदि के भी अर्जुन से पराजित हो जाने से कौरव सैनिक त्रस्त हो गये थे। (६. ५९)।

"चौथे दिन का युद्ध : प्रातःकाल होने पर द्रोण आदि से घिरे भीष्म ने अपनी सेना सहित युद्ध के लिये प्रस्थान किया। पाण्डवों ने पुनः अपना वही व्यूह बनाया जो पहले दिन था। कौरव सेना व्याल नामक व्यूह में आबद्ध होकर उपस्थित हुई थी। भीष्म और द्रोण ने अर्जुन पर आक्रमण किया। उसी समय अभिमन्यु एक श्रेष्ठ रथ पर बैठ कर वेगपूर्वक वहाँ पहुँच गये और उन्होंने समस्त कौरव महारथियों पर आक्रमण कर दिया। भीष्म ने उस समय अभिमन्यु की उपेक्षा करते हुये अर्जुन के साथ द्वैरथ युद्ध आरम्भ किया। (६. ६०)।

"अश्वत्थामा ने अभिमन्यु से युद्ध किया। दुर्योधन के कहने पर त्रिगर्तों ने अभिमन्यु और अर्जुन पर आक्रमण किया। अर्जुन की सहायता के लिये आते हुये धृष्टद्युम्न ने मद्रों पर आक्रमण करके संयमन कुमार शल के पुत्र का वध कर दिया। (६. ६१)।

"धृष्टद्युम्न ने शल्य के साथ युद्ध किया। अभिमन्यु ने शल्य पर आक्रमण किया। दुर्योधन आदि ने शल्य के रथ की रक्षा की। भीमसेन ने दुर्योधन से युद्ध करते हुये अपनी गदा से उस पर आक्रमण किया। मगध सेना ने अभिमन्यु से युद्ध किया। भीम ने अपनी गदा से गजसेना का संहार किया। उस समय द्रौपदेय राजकुमार भीष्म के पृष्ठ-भाग की रक्षा कर रहे थे। अभिमन्यु ने मगध राज के हाथी का वध करने के बाद स्वयं मगधराज का भी वध कर दिया। (६.६२)।

"दुर्योधन ने अपनी सम्पूर्ण सेना को भीमसेन पर आक्रमण करने का आदेश दिया। प्रचण्ड पराक्रम प्रकट करते हुये भीमसेन ने अपनी गदा से कौरवों का विनाश आरम्भ किया। उस समय धृष्टद्युम्न भीमसेन के साथ थे। भीष्म ने भीम पर आक्रमण किया। सात्यकि ने भीष्म पर आक्रमण किया। उस समय केवल अलम्बुष नामक राक्षस ने ही सात्यकि को दस बाणों से आहत किया। सात्यकि ने भी अलम्बुष को बाणों से बींध दिया। उस समय वहाँ सोमदत्तपुत्र भूरिश्रवा को छोड़कर दूसरा कोई ऐसा योद्धा नहीं था जो विषादग्रस्त न हुआ हो। भूरिश्रवा ने अपने रथियों को विवश होकर भागते देखकर सात्यकि पर आक्रमण किया। (६. ६३)।

"भाइयों सहित दुर्योधन युद्ध के लिये उद्यत होकर भूरिश्रवा को चारों ओर से घेर कर उसकी रक्षा में तत्पर हो गये। दुर्योधन के नेतृत्व में उपस्थित धार्तराष्ट्रों का भीमसेन ने सामना किया। धृतराष्ट्र-पुत्र नन्दक ने भीमसेन पर आक्रमण करते हुये उनके सारथि विशोक को ठीक से रथ चलाने के लिये सतर्क किया। दुर्योधन ने भी विशोक को आहत किया। दुर्योधन ने भीमसेन पर प्रहार किया जिससे उन्हें मूर्च्छा आ गई। तब अभिमन्यु के नेतृत्व में पाण्डव सेना ने दुर्योधन पर बाणवर्षा आरम्भ की। मूर्च्छा दूर होने पर भीमसेन ने दुर्योधन और शल्य से पुनः घमासान युद्ध किया। इस युद्ध में शल्य का सारथि शल्य को युद्धभूमि से दूर हटा ले गया। सेनापति आदि चौदह धृतराष्ट्र-पुत्रों ने भीमसेन पर आक्रमण किया। इस युद्ध में भीमसेन ने सेनापति आदि अनेक धार्तराष्ट्रों का वध कर दिया। शेष धार्तराष्ट्र युद्धभूमि से भाग गये। भीष्म के कहने पर सम्पूर्ण धार्तराष्ट्र सेना ने भीमसेन पर आक्रमण कर दिया। एक विशाल हाथी पर सवार होकर प्राग्ज्योतिष के राजा भगदत्त ने भीमसेन पर भीषण प्रहार किया जिससे भीमसेन मूर्च्छित हो गये। अपने पिता को मूर्च्छित देखकर अपनी माया से घटोत्कच ऐरावत पर विराजमान होकर युद्ध के लिये उपस्थित हुआ। उसके साथ चार-चार दाँतों वाले अन्य दिग्गज भी थे। घटोत्कच ने भगदत्त के हाथी पर आक्रमण किया। भीष्म ने द्रोण और दुर्योधन से भगदत्त को बचाने के लिये कहा जिससे द्रोण के नेतृत्व में सभी नरेश भगदत्त की सहायता के लिये चल पड़े। युधिष्ठिर ने पाञ्चाल सैनिकों को साथ लेकर भगदत्त की सहायता के लिये जा रहे कौरव-सैनिकों का पीछा किया। घटोत्कच ने भयंकर सिंहनाद किया। भीष्म ने द्रोणाचार्य से अपनी सेना पीछे हटा लेने के लिये कहा। भीमसेन और घटोत्कच ने भी अपनी सेनायें हटा लीं। दुर्योधन अत्यन्त शोक संतप्त होकर चिन्ता में डूब गया। (६. ६४)।

"धृतराष्ट्र ने संजय से अपनी सेना की असफलता और पाण्डवों की विजय का कारण पूछा। संजय ने उन्हें बताया कि सदा धर्म की ही विजय होती है। धर्म-पालन के कारण ही कुन्ती पुत्र अवध्य हैं और युद्ध में जीत रहे हैं। संजय ने धृतराष्ट्र से कहा कि उनके पुत्र सदा से पापों में ही तत्पर हैं जिससे उन्हें हानि उठानी पड़ रही है। अपनी पराजय के कारणों के सम्बन्ध में दुर्योधन ने भी पितामह भीष्म से पूछा था। तब पितामह ने इस प्राचीन कथा का वर्णन किया था : पूर्व समय में समस्त देवता और ऋषिगण गन्धमादन पर्वत पर आकर पितामह ब्रह्मा के पास बैठे। उस समय ब्रह्मा ने आकाश में खड़ा एक श्रेष्ठ विमान देखा। ब्रह्मा जी ने ध्यान द्वारा यथार्थ बात जान कर हाथ जोड़ लिया और उन परम पुरुष परमेश्वर को नमस्कार किया। ऋषि तथा देवता भी उस तेज का दर्शन करते हुए हाथ जोड़कर खड़े हो गए। ब्रह्मा ने उन तेजोमय पुरुष की स्तुति करते हुये कहा : 'आप संपूर्ण विश्व को आच्छादित करने वाले विश्वरूप और विश्व के स्वामी भी हैं। आप सबको अपने वश में रखने वाले हैं। इसीलिये आपको विश्वेश्वर और वासुदेव कहते हैं। • • • 'आपके प्रसाद से पृथ्वी सदा निर्भय रही है। अतः आप पुनः पृथ्वी पर यदुवंश में अवतार लेकर उसकी कीर्ति में वृद्धि कीजिये। धर्म की स्थापना, दैत्यों के वध और जगत् की रक्षा के लिये हमारी प्रार्थना स्वीकार कीजिये। आपने आत्मा द्वारा स्वयं अपने आपको ही संकर्षण देव के रूप में प्रकट करके अपने ही द्वारा आत्मज स्वरूप प्रद्युम्न की सृष्टि की है। प्रद्युम्न से आपने ही उन अनिरुद्ध को प्रकट किया है जिन्हें ज्ञानी जन अविनाशी विष्णुरूप से जानते हैं। उन विष्णु रूप अनिरुद्ध ने ही मुझ ब्रह्मा की सृष्टि की है। इस प्रकार आपसे अभिन्न होने के कारण मैं भी वासुदेवमय हूँ। आपसे मैं याचना करता हूँ कि आप अपने आपको स्वयं ही वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध इन चार रूपों में विभक्त करके मानव शरीर ग्रहण कीजिये। यहाँ सब लोगों के सुख के लिये असुरों का वध करके धर्म और यश का विस्तार कीजिये। अवतार का उद्देश्य पूर्ण करके आप पुनः अपने पारमार्थिक स्वरूप से संयुक्त हो जाँयगे। आपका आश्रय लेकर समस्त प्राणि समुदाय आप में ही स्थित है। आप आदि, मध्य और अन्तरहित, किसी सीमा के सम्बन्ध से शून्य और लोकमर्यादा की रक्षा के लिये सेतु स्वरूप हैं।' (६. ६५)।

"ब्रह्मा जी के इस प्रकार स्तुति करने पर देवता, ऋषि और गन्धर्व सभी विस्मित हुये और उन्होंने नारायण देव के सम्बन्ध में जानने की इच्छा व्यक्त की जिनकी ब्रह्मा जी ने स्तुति की थी। तब ब्रह्मा जी ने इस प्रकार कहा : 'जो परम तत्त्व हैं, भूत, भविष्य और वर्तमान—तीनों जिनके उत्कृष्ट स्वरूप हैं, जिन्हें सर्वशक्तिमान् प्रभु कहा गया है उन्हीं परमात्मा ने मुझे दर्शन देकर मुझसे वार्तालाप किया है। मैंने उन जगदीश्वर से सम्पूर्ण जगत पर कृपा करने की प्रार्थना की है और निवेदन किया है कि वे वासुदेव नाम से विख्यात होकर कुछ काल तक मनुष्य लोक में रहें और असुरों के वध के लिए इस भूतल पर अवतीर्ण हों। जो-जो दैत्य, दानव तथा राक्षस संग्राम

भूमि में मारे गये हैं वे मनुष्य लोक में उत्पन्न हुये थे और अत्यन्त बलवान् होकर जगत के लिये भयंकर बन बैठे थे। ऋषियों में श्रेष्ठ जो पुरातन महर्षि अमित तेजस्वी नर और नारायण हैं वे एक साथ मानव लोक में अवतीर्ण होंगे। युद्धभूमि में उन्हें देवता भी परास्त नहीं कर सकेंगे। संपूर्ण जगत के स्वामी, शंख, चक्र और गदा धारण करने वाले उन महान पराक्रमी भगवान् वासुदेव को मानव समझ कर अनादर नहीं करना चाहिये। इस प्रकार तात्विक वस्तु को समझकर सब लोगों को भगवान् वासुदेव को नमस्कार करना चाहिये।' भीष्म जी ने कहा कि देवताओं तथा ऋषियों से इस प्रकार कह कर ब्रह्मा जी अपने लोक चले गये। भीष्म ने आगे इस प्रकार वर्णन किया : 'एक समय महर्षियों का एक समाज एकत्र था। उसमें परशुराम, मार्कण्डेय, व्यास तथा नारद जी भी थे। उनकी बातों को सुनकर मैं भगवान् श्रीकृष्ण को अविनाशी प्रभु, परमात्मा, लोकेश्वरेश्वर, और सर्वशक्तिमान नारायण जानता हूँ। जगत के पिता ब्रह्मा जिनके पुत्र हैं वह भगवान वासुदेव मनुष्यों के लिये आराधनीय हैं।' नारायण वासुदेव की महिमा का वर्णन करने के बाद भीष्म ने दुर्योधन से कहा : 'ऋषियों तथा मैंने तुमको मना किया था कि तुम वासुदेव के साथ विरोध न करो और पाण्डवों से सन्धि कर लो। परन्तु मोहवश तुमने इन बातों का कोई मूल्य नहीं समझा। मुझे ऐसा लगता है कि तुम कोई क्रूर राक्षस हो क्योंकि राक्षसों की ही भाँति तुम्हारी बुद्धि सदा तमोगुण से आच्छन्न रहती है। भगवान गोविन्द और पाण्डुनन्दन धनञ्जय दोनों ही क्रमशः नारायण और नर हैं। ये भगवान श्रीकृष्ण सनातन, अविनाशी और सर्वलोक स्वरूप एवं अविचल हैं। जहाँ श्रीकृष्ण हैं वहाँ धर्म है और जहाँ धर्म है वहाँ विजय है। इनके माहात्म्ययोग तथा आत्मस्वरूप योग से समस्त पाण्डव सुरक्षित हैं और इसीलिये उनकी विजय होगी। जिसके विषय में तुम मुझसे पूछ रहे हो वे सनातन देवता वासुदेव नाम से जानने योग्य हैं। चारों वर्ण के लोग इन्हीं की सेवा करते हैं। ये ही श्रीकृष्ण के नाम से विख्यात होकर इस लोक की रक्षा करते हैं। वासुदेव ही युग-युग में देवलोक, मर्त्यलोक तथा समुद्र से घिरी हुई द्वारिका पुरी का निर्माण करते हैं और ये ही बार बार मनुष्य लोक में अवतार ग्रहण करते हैं। (६. ६६)।

"मार्कण्डेय जी से भीष्म जी ने श्रीकृष्ण की महिमा के विषय में जो कुछ सुना था उसका उन्होंने दुर्योधन से वर्णन किया। (६. ६७)।

"भीष्म जी ने उस स्तोत्र का वर्णन किया जिससे ब्रह्मा ने श्रीकृष्ण की स्तुति की थी और जिसे पूर्वकाल में ब्रह्मर्षियों तथा देवताओं ने इस भूतल पर ब्रह्मस्तोत्र कहा था। तदनन्तर भीष्म जी ने दुर्योधन से इस प्रकार कहा : 'श्रीकृष्ण यशस्वी पाण्डवों पर बहुत प्रसन्न हैं, अतः पाण्डवों से सन्धि कर लो। वे तुम्हारे बलवान भाई हैं। तुम अपने मन को वश में रख कर उनके साथ पृथिवी के राज्य का उपभोग करो।' भीष्म की बात सुनने के बाद दुर्योधन उन्हें प्रणाम करके अपने शिविर में चला गया। (६.६८)।

"युद्ध का पाँचवा दिन : प्रातःकाल होने पर भीष्म ने कौरव सेना का मकर व्यूह बनाया। पाण्डवों ने भी अपनी सेना को श्येन व्यूह में व्यवस्थित करके भीमसेन को उसके चंचु भाग में खड़ा किया। भीमसेन ने मकरव्यूह के मुख से भीतर प्रवेश कर भीष्म पर आक्रमण किया। उस समय पाण्डवों की व्यूहबद्ध सेना को मोहित करते हुये भीष्म उस पर बड़े-बड़े अस्त्रों का प्रयोग करने लगे। अर्जुन ने तब भीष्म पर आक्रमण किया। दुर्योधन ने द्रोणाचार्य से पाण्डवों का वध करने का आग्रह किया। भीमसेन ने सात्यकि को बचाने के लिये स्वयं द्रोण पर आक्रमण किया। द्रोण ने भी भीमसेन पर प्रहार किया। अभिमन्यु तथा द्रौपदी के पाँचों पुत्रों ने मिल कर कौरवों पर आक्रमण किया। शिखण्डी ने भी भीष्म और द्रोण पर प्रहार आरम्भ किया। भीष्म ने शिखण्डी की उपेक्षा की। दुर्योधन के कहने पर द्रोण भीष्म की रक्षा करने लगे। शिखण्डी ने द्रोण की उपेक्षा की। अर्जुन के नेतृत्व में पाण्डव सेना ने भीष्म पर प्रबल आक्रमण किया। दुर्योधन स्वयं भीष्म की रक्षा करने लगा। (६. ६९)।

"पूर्वाह्नकाल में कौरव-पाण्डव नरेशों का यह महाभयंकर युद्ध आरम्भ हुआ जो बड़े-बड़े शूरवीरों का विनाश करने वाला था। दुर्योधन और कलिंग सैनिकों ने भीष्म को आगे करके पाण्डवों पर आक्रमण किया। भीम की सहायता करते हुए पाण्डवों ने भी भीष्म पर आक्रमण किया। भीष्म और भीमसेन के बीच घमासान युद्ध होने लगा। (६. ७०)।

"अपने गाण्डीव धनुष से अर्जुन ने भीष्म पर आक्रमण किया जिससे अत्यन्त भयभीत होकर कौरव पलायन करने वाले ही थे कि सुन्दर काम्बोज देशीय घोड़ों से युक्त रथों पर बैठकर कलिंगराज तथा अन्य योद्धाओं ने शकुनि को चारों ओर से घेर लिया। भीष्म आदि अर्जुन से युद्ध करने लगे। द्रुपद ने द्रोण से युद्ध किया तथा कृपाचार्य और कृतवर्मा ने धृष्टद्युम्न पर आक्रमण किया। (६. ७१)।

"अर्जुन ने द्रोण से और सात्यकि आदि ने शल्य तथा कैकेयों से युद्ध किया। धृष्टकेतु और घटोत्कच ने धार्तराष्ट्रों की रथ-सेना पर आक्रमण किया। भीष्म ने भीमसेन को रोक दिया। सात्यकि ने भीष्म पर आक्रमण किया किन्तु भीष्म ने उनके सारथि का वध कर दिया। भीष्म ने पाण्डव सैनिकों का संहार आरम्भ किया किन्तु पाञ्चालों और सोमकों ने भीष्म पर आक्रमण किया। तब भीष्म और द्रोणाचार्य ने मिल कर पाण्डवों पर आक्रमण किया। (६. ७२)।

"विराट↔भीष्म, अश्वत्थामा ↔ अर्जुन, दुर्योधन ↔ भीमसेन, और अभिमन्यु↔लक्ष्मण का द्वन्द्व युद्ध होने लगा। अभिमन्यु ने चित्रसेन आदि पर आक्रमण किया। दुर्योधन ने अभिमन्यु पर आक्रमण किया और धृतराष्ट्र के पुत्र लक्ष्मण ने भी ऐसा ही किया किन्तु अभिमन्यु ने लक्ष्मण के सारथि तथा रथाश्वों को मार डाला। उस समय कृपाचार्य लक्ष्मण को अपने रथ पर बैठा कर युद्धभूमि से दूर हटा ले गये। सञ्जय कौरवों के साथ केवल भुजाओं द्वारा ही मल्लयुद्ध कर रहे थे। भीष्म ने अपने दिव्यास्त्रों से अनेक पाण्डव-सैनिकों का संहार किया। (६. ७३)।

"सात्यकि ने अपने बाणों से असंख्य शत्रुओं का संहार किया जिसे देख कर दुर्योधन ने १०,००० रथियों को सात्यकि से युद्ध करने के लिये भेजा; परन्तु सात्यकि ने अपने दिव्यास्त्रों से उन सबको नष्ट कर दिया। सात्यकि का भूरिश्रवा के साथ युद्ध हुआ। भूरिश्रवा ने अपने हस्तलाघव का परिचय देते हुये सहस्रों विषैले बाण छोड़े। उन बाणों का स्पर्श मृत्यु तुल्य था। उस समय सात्यकि के साथ आये हुए सैनिक उन बाणों के वेग को सहन नहीं कर सके और सात्यकि को वहीं छोड़कर सब ओर भाग निकले। सात्यकि के दस महाबलवान पुत्रों ने भूरिश्रवा से युद्ध किया जिसमें भूरिश्रवा ने उन सबका वध कर दिया। अपने पुत्रों को मारा गया देखकर सात्यकि ने स्वयं भूरिश्रवा पर आक्रमण किया जिसमें दोनों ने एक दूसरे के रथाश्वों का वध कर दिया। तब भीमसेन ने सात्यकि को अपने रथ पर तथा भूरिश्रवा को दुर्योधन ने अपने रथ पर बैठा लिया। पाण्डवों और भीष्म का घोर युद्ध होने लगा। दुर्योधन ने २५,००० सैनिकों से अर्जुन को मार डालने के लिये कहा किन्तु अर्जुन ने उन सबका वध कर डाला। सूर्यास्त के समय भीष्म ने अपनी सेना से युद्ध बन्द करके शिविर में लौट चलने के लिये कहा। पाण्डवों और सञ्जयों ने भी ऐसा ही किया। (६. ७४)।

"युद्ध का छठवाँ दिन : प्रातःकाल होने पर कौरव और पाण्डव एक बार पुनः युद्ध करने के लिये निकल पड़े। युधिष्ठिर ने धृष्टद्युम्न से अपनी सेना को मकर व्यूह में व्यवस्थित करने के लिये कहा। उस मकर व्यूह के शिरोभाग में द्रुपद और अर्जुन, दोनों नेत्रों में नकुल और सहदेव, चञ्चु में भीमसेन; ग्रीवा में अभिमन्यु आदि, पृष्ठभाग में विराट तथा धृष्टद्युम्न, बाँये पंख में पाँच केकय राजकुमार; दाहिने पंख में धृष्टकेतु और चेकितान; दोनों पैरों में कुन्तिभोज और शतानीक; पुच्छ भाग में शिखण्डी आदि स्थित हुये। भीष्म ने अपनी सेना का, क्रौञ्चव्यूह बनाया। उस क्रौञ्च व्यूह के चंचु में द्रोण, दोनों नेत्रों में अश्वत्थामा और कृपाचार्य; शिरोभाग में कृतवर्मा आदि; ग्रीवा में शूरसेन तथा दुर्योधन; वक्ष में प्राग्ज्योतिषपुर के राजा, बायें पंख में प्रस्थलराज सुशर्मा; दाहिने पंख में तुषारादि; पृष्ठभाग

में श्रुतायु आदि स्थित हुए। पाण्डवों की सेना का भीमसेन और कौरव सेना की भीष्म रक्षण कर रहे थे। भीमसेन और द्रोण का युद्ध—द्रोण ने भीम को आहत किया। तब कुपित भीमसेन ने द्रोण के सारथि को यमलोक भेज दिया। द्रोण स्वयं अपने रथ के घोड़ों का संचालन करते हुये पाण्डव सेना का भीषण संहार करने लगे। द्रोण और भीष्म ने इतना भयंकर नरसंहार किया कि सृञ्जय और केकय सैनिक भाग खड़े हुये। इसी प्रकार भीम और अर्जुन द्वारा किये गये संहार के कारण कौरव सैनिक भी भाग चले। (६. ७५)।

"द्रोण से रक्षित अपनी सेना की उत्कृष्टता की धृतराष्ट्र ने संजय से चर्चा की। उन्होंने कहा : 'अनेक अंगों से युक्त और अनेक प्रकार से संगठित हमारी सेना अमोघ है। हमारी सेना हमलोगों पर प्रसन्न और अनुरक्त रहने वाली है। यह किसी भी व्यसन में लिप्त नहीं रही है और पूर्वकाल में इसका पराक्रम देखा जा चुका है। द्रोणाचार्य, भीष्म, कृपाचार्य, दुःशासन, कृतवर्मा, जयद्रथ, अश्वत्थामा, शकुनि तथा वाह्लीक आदि प्रमुख वीरों से सदा सुरक्षित रहने वाली मेरी सेना भी यदि संग्राम में मारी गई तो इसमें हमलोगों का पुरातन प्रारब्ध ही कारण होगा। निश्चय ही पाण्डवों के लिये देवता आकर मेरी सेना के साथ युद्ध करते हैं जिसके कारण हमारा प्रतिदिन संहार हो रहा है। विदुर ने नित्य ही हित और लाभ की बातें कही थीं किन्तु मेरे मूर्ख पुत्र दुर्योधन ने उन्हें स्वीकार नहीं किया। अथवा यह इसी प्रकार होने वाला था। विधाता ने जो पहले से ही रच रक्खा है वह उसी रूप में होता है, उसे कोई बदल नहीं सकता।' (६. ७६)

"भीमसेन ने दुःशासन आदि दुर्योधन के छोटे भाइयों से युद्ध किया। अपना रथ छोड़ कर भीम ने गदा हाथ में लेकर युद्ध करना आरम्भ किया। द्रोण की उपेक्षा करके धृष्टद्युम्न ने शकुनि पर आक्रमण किया। भीमसेन के खाली रथों को देखकर धृष्टद्युम्न शोकसंतप्त हो उठा परन्तु विशोक ने उसे सान्त्वना दी। तब चारों ओर शत्रुओं से घिरे भीमसेन को उसने अपने रथ में बैठा लिया। दुर्योधन आदि धार्तराष्ट्रों ने धृष्टद्युम्न से युद्ध किया। धृष्टद्युम्न ने प्रमोहनास्त्र का प्रयोग किया। द्रोण और द्रुपद का युद्ध हुआ जिसमें द्रुपद रणभूमि छोड़कर हट गये—सोमकों में इससे अत्यन्त भय व्याप्त हो गया। द्रोण ने अपने प्रज्ञास्त्र से प्रमोहनास्त्र का निवारण करके धार्तराष्ट्रों की रक्षा करने का प्रयास किया। युधिष्ठिर ने अभिमन्यु के नेतृत्व में केकय सैनिकों का सूचीमुख व्यूह बनाकर भीम और धृष्टद्युम्न की रक्षा के लिए भेजा। कौरव सेना भीमसेन के भय से व्याकुल और धृष्टद्युम्न के बाणों से मोहित हो रही थी। अतः वह अभिमन्यु और उनके साथ के वीरों को रोकने में सफल नहीं हो सकी। मद और मूर्च्छा के वशीभूत हुई मतवाली स्त्री की भाँति वह मार्ग में चुपचाप खड़ी रही। धृष्टद्युम्न ने भीमसेन को केकय के रथ पर बैठा कर स्वयं द्रोणाचार्य पर आक्रमण कर दिया। द्रोण ने धृष्टद्युम्न के घोड़ों और सारथि का वध कर दिया। तब धृष्टद्युम्न अभिमन्यु के रथ पर चढ़ गया। द्रोण ने इतना प्रबल आक्रमण किया कि पाण्डव सेना भागने लगी। (६. ७७)।

"उभय सेनाओं का संकुल युद्ध होने लगा। दुर्योधन और भीम, तथा भीम और चित्रसेन का युद्ध। युधिष्ठिर ने अभिमन्यु आदि बारह महारथियों को भीम का पीछे से अनुसरण करने के लिये भेजा। इन महारथियों को देख कर धार्तराष्ट्र भीमसेन को छोड़ कर चले गये। अपराह्न काल में दुर्योधन ने अभिमन्यु और भीमसेन पर आक्रमण किया। अभिमन्यु और विकर्ण का युद्ध—अभिमन्यु ने विकर्ण के घोड़ों का वध कर दिया जिससे वह चित्रसेन के रथ पर चढ़ गया। अभिमन्यु ने विकर्ण और दुर्जय से युद्ध किया। दुःशासन और पाँच केकय राजकुमारों तथा दुर्योधन और द्रौपदेय का युद्ध हुआ। (६. ७८)।

"दुर्योधन और भीमसेन का युद्ध। भीमसेन ने कहा कि वह दुर्योधन का वध करके कुन्ती का शोक दूर कर देंगे। सिन्धुराज दुर्योधन की रक्षा के लिए आ गये। कृपाचार्य ने दुर्योधन को अपने रथ पर बैठा लिया। जयद्रथ और भीमसेन का, धृष्टकेतु और धार्तराष्ट्रों का, अभिमन्यु और विकर्ण का, दुर्मुख और श्रुतकर्मा का भयंकर युद्ध हुआ। सुतसोम ने श्रुतकर्मा को अपने रथ पर बैठा लिया। शतानीक ने दुष्कर्ण का वध किया। पाँच केकय राजकुमारों ने धार्तराष्ट्र-पुत्रों से युद्ध किया। महाधनुर्धर भीष्म ने पाण्डव सेना का संहार करके अपनी समस्त सेना को सायंकाल होने पर शिविर में लौटा लिया। इसी प्रकार धृष्टद्युम्न और भीमसेन ने भी कौरव सेना का विनाश कर डाला था। धर्मराज युधिष्ठिर ने भीम और धृष्टद्युम्न का माथा सूँघा और अत्यन्त हर्षपूर्वक शिविर के लिये प्रस्थान किया। (६. ७९)।

"रात के समय भीष्म के पास आकर दुर्योधन ने पाण्डवों की सफलता पर चिन्ता प्रकट की। भीष्म ने दुर्योधन को सान्त्वना देते हुये यथाशक्ति अपना पराक्रम दिखाने का वचन दिया। भीष्म की उत्साहवर्धक बात सुनकर दुर्योधन को प्रसन्नता हुई। (६. ८०)।

"युद्ध का सातवाँ दिन : भीष्म ने दुर्योधन से कहा कि वे, द्रोणाचार्य, शल्य, अश्वत्थामा, शकुनि, राजा वाह्लीक आदि अत्यन्त दुर्जय वीर उसके लिये युद्ध करने के लिये तत्पर हैं। फिर भी पाण्डवों को इन्द्र सहित सम्पूर्ण देवता भी नहीं जीत सकते क्योंकि साक्षात् भगवान् श्रीकृष्ण उनके सहायक हैं। ऐसा कह कर भीष्म ने दुर्योधन को विशल्यकरणी नामक एक औषधि दी जिसके कारण उसके शरीर में धँसे हुये बाण तुरन्त उससे निकल गये और वह आघातजनित घाव तथा उसकी पीड़ा से मुक्त हो गया। प्रभात होने पर भीष्म ने अपनी सेना का मण्डल व्यूह बनाया (व्यूह का वर्णन) जिसकी रक्षा स्वयं भीष्म कर रहे थे और भीष्म की रक्षा के लिये चित्रसेन आदि को नियुक्त किया गया था। उस समय दुर्योधन स्वयं शक्र के समान प्रतीत हो रहा था। भीष्म ने युद्धस्थल में कौरव सैनिकों का पश्चिमाभिमुख व्यूह बनाया था। कौरवों के इस व्यूह को देख कर युधिष्ठिर ने अपनी सेना का वज्र व्यूह बनाया। दोनों सेनाओं के व्यूह निर्माण के बाद उभय पक्ष के वीरों ने युद्ध आरम्भ किया। द्रोण↔मत्स्यराज, अश्वत्थामा↔शिखण्डी, दुर्योधन↔धृष्टद्युम्न, नकुल और सहदेव↔मद्रराज, विन्द और अनुविन्द↔इरावत, अनेक राजाओं↔अर्जुन, भीमसेन↔कृतवर्मा, अभिमन्यु↔चित्रसेन आदि धार्तराष्ट्र, घटोत्कच↔भगदत्त, अलम्बुष↔सात्यकि, भूरिश्रवा↔धृष्टकेतु, युधिष्ठिर↔श्रुतायु, चेकितान↔कृप के बीच घोर युद्ध होने लगा। अन्यान्य योद्धा भीमसेन से युद्ध के लिये गये तथा सहस्रों अन्य योद्धा एवं भाइयों सहित त्रिगर्तराज के साथ अर्जुन से युद्ध करने लगे। कौरव योद्धाओं ने जब बाणवर्षा करके कृष्ण और अर्जुन को आच्छादित कर दिया तब देवताओं, ऋषियों, गन्धर्वों और नागों को महान् आश्चर्य हुआ। उस समय कुपित होकर अर्जुन ने ऐन्द्रास्त्र का प्रयोग किया जिससे पीड़ित हो शत्रुसेना भागने लगी। तब भीष्म ने उन भागते हुये योद्धाओं को बचाया (६. ८१)।

"अर्जुन से पराजित होकर जब सुशर्मा युद्धभूमि से दूर हो गया तथा अन्यान्य वीर भी भाग खड़े हुये और भीष्म ने अर्जुन पर आक्रमण किया तब दुर्योधन ने सुशर्मा तथा अन्य नरेशों को प्रोत्साहित करके भीष्म की रक्षा के लिये भेजा। उस समय भीष्म श्वेतग्रह के समान प्रतीत हो रहे थे और त्रिगर्तों ने उन्हें सब ओर से घेर रक्खा था। द्रोणाचार्य ने मत्स्यराज विराट से युद्ध करते हुये उनके घोड़ों का वध कर दिया। तब विराट अपने पुत्र शंख के रथ पर बैठ गये और पिता-पुत्र दोनों ने मिलकर द्रोण पर आक्रमण किया। द्रोण ने तब शंख का वध किया। अपने पुत्र को मारा गया देखकर विराट युद्धभूमि से भाग गये। शिखण्डी और अश्वत्थामा का युद्ध—शिखण्डी ने रथ से उतर कर तलवार द्वारा युद्ध किया और फिर सात्यकि के रथ पर बैठ गया। सात्यकि और अलम्बुष का युद्ध—सात्यकि ने अर्जुन से प्राप्त ऐन्द्रास्त्र द्वारा अलम्बुष की माया को नष्ट कर दिया जिससे अलम्बुष रणभूमि से भाग गया। धृष्टद्युम्न और दुर्योधन का युद्ध—दुर्योधन के घोड़ों का वध; दुर्योधन अपने रथ से कूदकर शकुनि के रथ पर चढ़ गया। कृतवर्मा और भीमसेन का युद्ध—भीमसेन ने कृतवर्मा के रथ के चारों घोड़ों तथा सारथि का भी वध कर दिया।

स्वयं कृतवर्मा भी भीम के बाणों से अत्यन्त आहत हो गया था, फलस्वरूप वह दुर्योधन तथा शल्य के देखते-देखते वृषक के रथ पर सवार हो गया। इधर अत्यन्त कुपित होकर भीमसेन यमराज की भाँति कौरव सेना का संहार करने लगे। (६. ८२)।

"धृतराष्ट्र ने सञ्जय से पाण्डवों की प्रसन्नता तथा कौरवों की खिन्नता की चर्चा करते हुये सारी घटना को प्रारब्ध का ही खेल बताया। सञ्जय ने युद्ध का वर्णन करते हुये बताया कि उस दिन पूर्वाह्नकाल में अत्यन्त भयंकर जनसंहार हुआ। अवन्ती के महाबली महान् धनुर्धर और विशाल सेना से युक्त राजकुमार विन्द और अनुविन्द अर्जुनपुत्र इरावान से युद्ध करने लगे। इरावान ने अनुविन्द के चारों घोड़ों को मार डाला जिससे वह अपना रथ त्याग कर विन्द के रथ पर जा बैठा। इरावान ने विन्द के सारथि का वध कर दिया जिससे उसके घोड़े रथ को लेकर इधर उधर भागने लगे। घटोत्कच और भगदत्त का युद्ध हुआ। उस समय देवता, गन्धर्व और राक्षस यह नहीं समझ पा रहे थे कि घटोत्कच और भगदत्त में पराक्रम की दृष्टि से क्या अन्तर है। भगदत्त के भयानक आक्रमण के कारण पाण्डव सैनिक भागने लगे। उस समय केवल घटोत्कच ही रणक्षेत्र में सन्नद्ध दिखाई दे रहा था। घटोत्कच के पराक्रम को देख कर पाण्डव सैनिक पुनः लौट आये। भगदत्त ने पुनः तीव्र प्रहार आरम्भ किया जिससे घटोत्कच भय से भाग गया। मद्र नरेश शल्य का नकुल और सहदेव से युद्ध हुआ जिसमें शल्य आहत होकर अपने रथ के पिछले भाग में बैठ कर मूर्छित हो गये। तब उनका सारथि उन्हें रणभूमि से बाहर हटा ले गया (६. ८३)।

"जब सूर्य दिन के मध्य भाग में आ गये तब श्रुतायु को सामने देख कर कुपित हो युधिष्ठिर ने उस पर आक्रमण किया। उन्हें कुपित देख कर देवता, गन्धर्व और राक्षसों सहित सम्पूर्ण जगत व्यथित हो उठा। देवता और ऋषि लोग लोकों की शान्ति के लिये श्रेष्ठ स्वस्तिवाचन करने लगे। युधिष्ठिर के प्रहारों से भयभीत श्रुतायु भाग गया। दुर्योधन की सेना भी पीछे हटने लगी। चेकितान और कृप का युद्ध—कृप ने चेकितान के घोड़ों, सारथि तथा पृष्ठरक्षकों को मार डाला। फलस्वरूप अपने रथ से कूद कर चेकितान ने पहले गदा से और फिर तलवार से युद्ध किया। चेकितान और कृप दोनों आहत होकर भूमि पर गिर पड़े। करकर्ष ने आकर चेकितान को तथा शकुनि ने कृपाचार्य को अपने रथों पर बैठा लिया। धृष्टकेतु और भूरिश्रवा का युद्ध। भूरिश्रवा ने धृष्टकेतु के घोड़ों और सारथि को मार दिया जिससे धृष्टकेतु शतानीक के रथ पर बैठ गया। चित्रसेन आदि का अभिमन्यु से युद्ध। अभिमन्यु ने भीमसेन के वचन का स्मरण करके चित्रसेन आदि का वध नहीं किया। अर्जुन ने श्रीकृष्ण से अपना रथ भीष्म के पास ले चलने के लिये कहा। अर्जुन और सुशर्मा का युद्ध। (६. ८४)।

"अर्जुन ने बहुत से महारथियों और सैनिकों का संहार किया। त्रिगर्तराज और बत्तीस अन्य राजाओं ने अर्जुन पर आक्रमण किया। अर्जुन, ६२ महारथियों का संहार करने के बाद भीष्म की ओर बढ़े। त्रिगर्तराज ने अर्जुन पर प्रबल आक्रमण किया; शिखण्डी आदि अर्जुन की सहायता के लिये आ गये। अर्जुन ने गाण्डीव धनुष से शत्रुओं पर प्रहार आरम्भ किया। अर्जुन के विरुद्ध युद्ध में भीष्म की सहायता करने के लिये दुर्योधन और जयद्रथ आदि आ गये किन्तु अर्जुन ने इन लोगों की उपेक्षा करके भीष्म पर ही आक्रमण किया। इसी प्रकार मद्रराज की उपेक्षा करके युधिष्ठिर ने भी भीष्म पर ही आक्रमण किया। कृपाचार्य आदि ने पाण्डवों पर प्रबल प्रहार किया जिससे शिखण्डी भागने लगा किन्तु युधिष्ठिर द्वारा अपने वचन का स्मरण दिलाये जाने पर पुनः लौटकर भीष्म से युद्ध करने लगा। शल्य और शिखण्डी का युद्ध—शिखण्डी ने वारुणास्त्र द्वारा शल्य के अस्त्रों का प्रतिघात किया। भीमसेन और जयद्रथ का गदायुद्ध; चित्रसेन और भीमसेन का युद्ध। (६. ८५)।

"चित्रसेन विकर्ण के रथ पर बैठ गया। भीष्म और युधिष्ठिर का युद्ध जिसमें युधिष्ठिर नकुल के रथ पर बैठे। युधिष्ठिर ने अपने पक्ष के योद्धाओं से भीष्म का वध कर देने के लिये कहा। शिखण्डी और भीष्म का युद्ध। पहले स्त्री होने के कारण शिखण्डी की भीष्म ने उपेक्षा की। सृञ्जयों और भीष्म का युद्ध। धृष्टद्युम्न और सात्यकि ने कौरव सेना का संहार किया। विन्द और अनुविन्द ने धृष्टद्युम्न पर आक्रमण करके उनके घोड़ों को मार डाला। फलस्वरूप धृष्टद्युम्न सात्यकि के रथ पर चढ़ गये। दुर्योधन द्वारा रक्षित विन्द और अनुविन्द पर युधिष्ठिर ने आक्रमण किया। अनेक शत्रुओं के विरुद्ध अर्जुन ने युद्ध किया। रूई के ढेर को जिस प्रकार अग्नि भस्म कर डालती है उसी प्रकार द्रोण ने पाञ्चालों को भस्म करना आरम्भ किया। दुर्योधन और उसके भाइयों ने चारों ओर से भीष्म को घेर कर पाण्डवों से युद्ध किया। सूर्यास्त होने पर चारों ओर राक्षस और पिशाच आदि रणभूमि में विचरण करने लगे। सूर्यास्त होने तक अर्जुन ने सुशर्मा को और भीमसेन ने दुर्योधन को पराजित करने के बाद शिविर के लिये प्रस्थान किया। द्रोण, भीष्म और युधिष्ठिर आदि भी अपने अपने शिविरों में लौट आये। (६. ८६)

"युद्ध का आठवाँ दिन : रात्रि व्यतीत करने के पश्चात् कौरव और पाण्डव पुनः युद्ध के लिये निकले। दुर्योधन, चित्रसेन, भीष्म और द्रोण आदि संगठित और सावधान होकर पाण्डवों से युद्ध करने के लिये कवच बाँधकर कौरवों के विशाल सैन्यव्यूह की रचना करने लगे। भीष्म ने समुद्र के समान विशाल एवं भयंकर महाव्यूह का निर्माण किया। सेनाओं के आगे भीष्म, उनके साथ मालव तथा अवन्ति देश के योद्धा थे। उनके पीछे पुलिन्द, पारद, क्षुद्रक, आदि वीरों के साथ द्रोणाचार्य थे। द्रोण के पीछे मागध, कलिङ्ग और पिशाच सैनिकों के साथ भगदत्त चले। इनके पीछे कोसलराज बृहद्बल मेकल, कुरुविन्द, तथा त्रिपुरा के सैनिकों के साथ थे। इनके बाद काम्बोज और यवन योद्धाओं के साथ त्रिगर्तराज थे। त्रिगर्त के पीछे क्रमशः अश्वत्थामा, भाइयों सहित दुर्योधन तथा कृपाचार्य चल रहे थे। युधिष्ठिर के कहने पर धृष्टद्युम्न ने शृङ्गाटक के आकार का व्यूह बनाया। उस व्यूह के दोनों शृङ्गों के स्थान पर भीमसेन और सात्यकि स्थित हुए। इन दोनों के बीच में अर्जुन और श्रीकृष्ण खड़े हुये। व्यूह के मध्य में युधिष्ठिर तथा पृष्ठभाग में अभिमन्यु स्थित हुये। तदनन्तर दोनों पक्षों के बीच घोर संग्राम आरम्भ हुआ (युद्ध का विस्तृत वर्णन)। भीष्म और धृष्टद्युम्न के बीच युद्ध। (६. ८७)।

"युधिष्ठिर और भीष्म का, दुर्योधन द्वारा रक्षित भीष्म और भीमसेन का युद्ध : भीमसेन ने भीष्म के सारथि को मार डाला जिससे भीष्म के घोड़े इधर-उधर भागने लगे। भीमसेन ने धृतराष्ट्र के सुनाभ आदि आठ पुत्रों का संहार कर दिया। भयभीत होकर अन्य धार्तराष्ट्र भाग गये। दुर्योधन ने अपने भाइयों से भीमसेन का वध कर देने के लिये कहा। अपने भाइयों को इस प्रकार मारा गया देख कर धार्तराष्ट्र उन बातों का स्मरण करने लगे जिन्हें विदुर ने कहा था। दुर्योधन ने भीष्म पर अपनी उपेक्षा करने का आक्षेप किया जिससे दुखी होकर भीष्म ने दुर्योधन से इस प्रकार कहा: 'मैंने, द्रोणाचार्य ने, विदुर ने, तथा गान्धारी देवी ने भी पहले तुम्हें युद्ध न करने का परामर्श दिया था। तुम स्थिर होकर युद्ध के विषय में अपना दृढ़ निश्चय बना लो और स्वर्ग को ही अन्तिम आश्रय मानकर रणभूमि में पाण्डवों से युद्ध करो। इन्द्रसहित देवता और असुर मिल कर भी पाण्डवों को जीत नहीं सकते। (६. ८८)।

"धृतराष्ट्र ने सञ्जय से कहा कि द्रोण द्वारा रक्षित होने पर भी उनके पुत्रों का वध हो रहा है। धृतराष्ट्र ने दुर्भाग्य को ही इसका कारण माना। उन्होंने इस बात पर भी दुःख प्रकट किया कि मूर्ख दुर्योधन ने भीष्म, विदुर, द्रोण आदि के सत्यपरामर्श को भी स्वीकार नहीं किया। सञ्जय ने कहा कि धृतराष्ट्र को चाहिये था कि वे अपने पुत्रों को जुआ खेलने से रोकते। मध्याह्नकाल में युधिष्ठिर और धृष्टद्युम्न के आदेश पर सम्पूर्ण पाण्डव सेना ने भीष्म पर, अर्जुन ने दुर्योधन और उसके साथ के नरेशों पर, तथा अभिमन्यु ने अन्य कौरव सैनिकों पर आक्रमण किया। द्रोण ने सोमकों और सृञ्जयों का संहार किया। भीमसेन ने मुख्य रूप से कौरवों की गज सेना का, और नकुल-सहदेव ने अश्वसेना का संहार किया। भीष्म ने

अपने पराक्रम से पाण्डव सेना को नष्ट कर दिया। (६. ८९)।

"शकुनि और कृतवर्मा ने पाण्डवों पर आक्रमण किया। काम्बोज अश्वों से युक्त सेना के साथ अर्जुनपुत्र इरवान ने कौरवों पर प्रबल आक्रमण करके उनकी अश्वसेना को छिन्न-भिन्न कर दिया। तब गज, गवाक्ष, वृषभ, चर्मवान, आर्जव और शुक नामक छः गान्धार देशीय वीरों ने अपनी सेना को साथ लेकर इरावान पर आक्रमण किया किन्तु इरावान ने इन छहों का वध कर दिया। इस प्रकार अपनी सेना का संहार देखकर सुबल पुत्रों ने इरावान पर आक्रमण किया किन्तु उन्होंने इन सबका भी वध कर डाला। उस समय केवल वृषभ ही किसी प्रकार बच गया। भयभीत दुर्योधन ने अलम्बुष नामक राक्षस को इरावान से युद्ध करने के लिये भेजा। पूर्वकाल में किये गये बकासुर वध के कारण अलम्बुष भीमसेन के साथ वैर रखता था। अतः अलम्बुष ने इरवान के साथ अपनी माया का आश्रय लेकर घोर संग्राम आरम्भ किया। परिणामस्वरूप दोनों पक्षों के बहुत से सैनिक मृत्यु को प्राप्त हुए। इरवान ने माया का आश्रय लेकर अलम्बुष के साथ भयंकर युद्ध किया। उसी समय इरवान के मातृकुल के नागों का समूह भी उनकी सहायता के लिये वहाँ पहुँचा। रणभूमि में बहुत से नागों से घिरे इरवान ने विशाल शरीर वाले शेषनाग की भाँति बहुत बड़ा रूप धारण कर लिया था। तब अलम्बुष ने गरुड का रूप धारण करके सभी नागों का भक्षण करने के बाद मोहित हुए इरवान को तलवार से मार डाला। उधर अर्जुन ने कौरव का भीषण संहार किया। उस समय दोनों पक्ष के सैनिक भूतों से आविष्ट-से हो राक्षसों के समान बनकर क्रोधपूर्वक एक दूसरे के साथ युद्ध कर रहे थे। (६. ९०)।

'घटोत्कच आदि ने दुर्योधन और १०,००० हाथियों की सेना के साथ बङ्गराज के विरुद्ध युद्ध किया। दुर्योधन ने वेगवान आदि चार राक्षसों का वध किया। उस समय क्रोध में भर कर घटोत्कच ने दुर्योधन से इस प्रकार कहा : 'आज मैं उन पितरों और माता के ऋण से उऋण हो जाऊँगा जिन्हें तूने दीर्घकाल तक वन में रहने के लिये विवश किया था। तूने पाण्डवों के साथ जो छल और द्रौपदी के साथ जो अत्याचार किया है उन सबका मैं आज प्रतिशोध लूँगा :' इस प्रकार कह कर घटोत्कच ने दुर्योधन के साथ भयानक युद्ध आरम्भ किया। (६. ९१)।

"अपने हाथी पर सवार होकर बंगराज उस समय घटोत्कच और दुर्योधन के बीच आ गये। घटोत्कच ने उनके हाथी को मार डाला। भीष्म ने तब द्रोण आदि को दुर्योधन की रक्षा करने के लिये भेजा। (६. ९२)।

"युधिष्ठिर के कहने पर सत्यधृति आदि को साथ लेकर भीमसेन घटोत्कच की रक्षा के लिये आ गये। कौरव सेना तब घटोत्कच से भयभीत होकर भाग गई। (६. ९३)।

"दुर्योधन और भीमसेन का युद्ध जिसमें भीमसेन आहत हो गये। अभिमन्यु आदि ने दुर्योधन से युद्ध किया। द्रोण के कहने पर सोमदत्त आदि ने पाण्डवों पर आक्रमण किया। द्रोण↔भीम; नील↔अश्वत्थामा; अश्वत्थामा↔घटोत्कच और अनेक राक्षस; द्रोण↔राक्षसों का भयंकर युद्ध हुआ घटोत्कच ने माया का प्रयोग किया जिससे भयभीत होकर सभी सैनिक युद्ध से विमुख हो गये। उन्होंने एक दूसरे को तथा द्रोण, दुर्योधन, शल्य, और अश्वत्थामा आदि को भी छिन्न-भिन्न होकर पृथिवी पर गिरकर छटपटाते देखा। यह सब देखकर कौरव सेना शिविर की ओर भाग चली। सञ्जय और भीष्म के रोकने पर भी सेना का पलायन नहीं रुका। विजयी पाण्डव तब घटोत्कच के साथ सिंहनाद करने लगे। (६. ९४)।

"दुर्योधन ने पितामह भीष्म के पास जाकर उनसे घटोत्कच के हाथों अपनी सेना के पराजय का वृतान्त बताया। उसने स्वयं घटोत्कच का वध करने की इच्छा व्यक्त की। तब भीष्म ने दुर्योधन से कहा कि उसे सदा युधिष्ठिर से ही संग्राम करना चाहिये क्योंकि राजधर्म के अनुसार राजा को राजा से ही युद्ध करना चाहिये। उन्होंने अर्जुन, भीमसेन, नकुल और सहदेव से भी युद्ध करने को उचित बताया। भीष्म ने यह भी कहा कि वे स्वयं, द्रोण, कृप, अश्वत्थामा आदि घटोत्कच से युद्ध करेंगे। भीष्म के कहने पर अपने सुप्रतीक नामक हाथी पर सवार होकर भगदत्त भीमसेन से युद्ध करने लगे। केकय राजकुमार, अभिमन्यु, द्रौपदी के पाँचों पुत्र, दशार्णराज आदि ने मिलकर भगदत्त के हाथी पर आक्रमण किया। भगदत्त ने दशार्ण नरेश के हाथी को तोमरों से आहत कर दिया जिससे वह पीछे की ओर लौट पड़ा। भगदत्त और घटोत्कच का युद्ध—घटोत्कच ने भगदत्त द्वारा छोड़ी गई शक्ति को तोड़कर फेंक दिया। देवता, गन्धर्व और मुनिगण घटोत्कच के पराक्रम पर अत्यन्त विस्मित हुए। भगदत्त ने भीम के सारथि विशोक को आहत कर दिया। तब भीमसेन हाथ में गदा लेकर रथ से कूद पड़े। अर्जुन भी इसी समय वहाँ आ गये। तब दुर्योधन ने भी रथ, हाथी, और घोड़ों से भरी एक सेना वहाँ भेजा। भगदत्त ने युधिष्ठिर पर आक्रमण किया। पाञ्चालों के साथ भगदत्त का युद्ध। भीमसेन ने श्रीकृष्ण और अर्जुन को इरावत के मारे जाने की सूचना दी। (६. ९५)।

"अपने पुत्र इरावत के वध का वृत्तान्त सुन कर अर्जुन को बड़ा दुःख हुआ। तब उन्होंने श्रीकृष्ण से कहा कि महाज्ञानी विदुर ने बन्धु-बान्धवों के वध की घटनाओं को पहले ही देख लिया था। अपराह्न में धृतराष्ट्र-पुत्रों सहित द्रोण और भीमसेन का युद्ध हुआ। भीष्म↔अर्जुन; कृतवर्मा±बाह्लीक ↔सात्यकि; अम्बष्ठ↔अभिमन्यु; का घोर युद्ध हुआ। भीम ने धृतराष्ट्र-पुत्र व्यूढोरस्क को मार गिराया। तब अन्य धृतराष्ट्र-पुत्र वहाँ से भाग गये। अम्बष्ठ कृतवर्मा के रथ पर बैठ गया। धृष्टद्युम्न आदि ने कौरवों से युद्ध किया। सूर्यास्त होने पर दोनों पक्ष की सेनायें अपने-अपने शिविरों में लौट आईं। (६. ९६)।

"दुर्योधन ने शकुनि आदि से इस बात पर मन्त्रणा की कि पाण्डवों को किस प्रकार जीता जा सकता है। उसने इस बात का कारण भी जानना चाहा कि द्रोण, भीष्म, कृप, शल्य तथा भूरिश्रवा आदि कुन्तीपुत्रों को क्यों कभी कोई बाधा नहीं पहुँचाते। उस समय कर्ण ने दुर्योधन से इस प्रकार कहा : 'मैं तुम्हारा प्रिय कार्य करूँगा, परन्तु तुम भीष्म से शीघ्र ही युद्ध से हट जाने के लिये कहो। जब भीष्म युद्ध से सर्वथा निवृत्त हो जायेंगे तब मैं युद्ध में भीष्म के देखते-देखते सोमकों सहित समस्त कुन्तीपुत्रों को एक साथ मार डालूँगा। भीष्म सदा ही पाण्डवों पर दया करते हैं अतः युद्ध में वे इन महारथियों को जीतने में सर्वथा असमर्थ हैं।' कर्ण की बात सुनकर दुर्योधन तत्काल ही अपने भाइयों के साथ भीष्म के पास जाने के लिये अपने शिविर से बाहर निकला (दुर्योधन के प्रस्थान के समय का विस्तृत वर्णन)। भीष्म के पास पहुँचकर दुर्योधन ने उनसे इस प्रकार कहा : 'हमलोग आपका आश्रय लेकर युद्ध के मैदान में इन्द्रसहित सम्पूर्ण देवताओं तथा असुरों को भी जीतने का उत्साह रखते हैं। अतः आपको हम लोगों पर कृपा करनी चाहिए। जिस प्रकार देवराज इन्द्र दानवों का संहार करते हैं उसी प्रकार आप पाण्डवों को मार डालिए। यदि पाण्डवों के प्रति दयाभाव अथवा मेरे दुर्भाग्यवश मेरे प्रति द्वेष भाव रखने के कारण आप पाण्डवों की रक्षा करते हैं तो समरभूमि में शोभा पानेवाले कर्ण को युद्ध के लिये आज्ञा दे दीजिये। वह बन्धु-बान्धवों सहित पाण्डवों को अवश्य जीत लेगा। (६. ९७)।

"दुर्योधन के इस प्रकार कहने पर भीष्म ने उससे कोई अप्रिय वचन नहीं कहा। उन्होंने सान्त्वना देते हुए दुर्योधन से इस प्रकार कहा: 'मैं तो यथाशक्ति सत्रुओं पर विजय पाने तथा तुम्हारे हितसाधन का ही प्रयास करता हूँ। इसके लिये मैं अपने प्राणों की आहुति देने के लिये प्रस्तुत हूँ। तुम्हें स्मरण होगा कि युद्ध में देवराज इन्द्र को परास्त करके अर्जुन ने खाण्डव वन में अग्नि को तृप्त किया था। गन्धर्व लोग जब तुम्हें पकड़ ले गये थे तब भी अर्जुन ने ही तुम्हें मुक्त कराया था। विराट नगर में भी अर्जुन ने अकेले ही सम्पूर्ण कौरवों को पराजित किया था। किरीटरक्षक, शंख, चक्र, गदा और पद्म धारण करने वाले सर्वात्मा, सर्वेश्वर भगवान् वासुदेव जिसकी रक्षा करने वाले हैं उसे कोई भी नहीं जीत सकता। नारद आदि महर्षियों ने भी तुमसे ऐसी ही बातें कई बार कहीं हैं किन्तु मोहवश तुम

इसे समझते नहीं हो।' इस प्रकार कह कर भीष्म ने दूसरे दिन अपनी सम्पूर्ण शक्ति प्रदर्शित करने का वचन दिया किन्तु उन्होंने यह भी कहा कि वे शिखण्डी का, जो वास्तव में शिखण्डिनी था वध नहीं करेंगे। तब दुर्योधन ने दुःशासन और विशेष रूप से शकुनि से अपनी कुल बाईसों सेना को लेकर भीष्म की शिखण्डी से रक्षा करने के लिये कहा। दुर्योधन की बात सुन कर सभी कौरव वीरों ने भीष्म को घेर कर युद्ध के लिये प्रस्थान किया। तब दुर्योधन ने अपने भाइयों से पुनः इस प्रकार कहा : 'अर्जुन के रथ के बायें पहिये की रक्षा युधामन्यु और दहिने पहिये की रक्षा उत्तमौजा करते हैं। इस प्रकार रक्षित अर्जुन स्वयं शिखण्डी की रक्षा कर रहे हैं। अतः अर्जुन से सुरक्षित और हम लोगों से उपेक्षित होकर शिखण्डी भीष्म को किसी प्रकार मार न सके, ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये।' इस प्रकार योजना बनाकर कौरवगण भीष्म को आगे करके सेना के साथ युद्ध के मैदान में गये। भीष्म को रथों के समूह से घिरा देखकर अर्जुन ने धृष्टद्युम्न से कहा : 'तुम पुरुषसिंह शिखण्डी को भीष्म के सामने उपस्थित करो। मैं उसकी रक्षा करूँगा।' (६. ९८) :

"युद्ध का नवाँ दिन : भीष्म ने अपनी सेना का सर्वतोभद्र व्यूह बनाया। कृपाचार्य, कृतवर्मा, शैब्य, शकुनि, आदि भीष्म और धार्तराष्ट्रों के साथ व्यूह के प्रमुख भाग में खड़े हुये। द्रोण, भूरिश्रवा, आदि दाहिने पक्ष में तथा अश्वत्थामा आदि बाँये पक्ष में स्थित हुये। त्रिगर्तदेशीय सैनिकों के साथ दुर्योधन व्यूह के मध्यभाग का संरक्षण करने लगा। अलम्बुष तथा श्रुतायु व्यूह के पृष्ठभाग में खड़े हुये। उधर युधिष्ठिर, भीम, नकुल और सहदेव अपनी सेना के व्यूह के अग्रभाग में कवच बाँधकर खड़े हुये। धृष्टद्युम्न, विराट और सात्यकि भी व्यूह में यथास्थान स्थित हुये। शिखण्डी, अर्जुन, घटोत्कच आदि ने भी व्यूह में अपना स्थान ग्रहण किया। कौरवसेना का नेतृत्व भीष्म और पाण्डव सेना का नेतृत्व भीमसेन कर रहे थे। (६. ९९)।

"अभिमन्यु ने अपूर्व पराक्रम का परिचय देते हुये कृपाचार्य आदि सब को मोहित कर दिया। अभिमन्यु का वध करने के लिये दुर्योधन ने अलम्बुष को भेजा, जब कि भीष्म और द्रोण के साथ उसने अर्जुन से युद्ध आरम्भ किया। अलम्बुष और अभिमन्यु का युद्ध : अलम्बुष ने पाण्डव सैनिकों का संहार किया। द्रौपदी के पुत्रों, विशेषतः प्रतिविन्ध्य ने अलम्बुष से युद्ध किया। (६. १००)।

"धृतराष्ट्र ने सञ्जय से अलम्बुष के पराक्रम के सम्बन्ध में पूछा। सञ्जय ने बताया कि अलम्बुष और अभिमन्यु का घोर युद्ध हुआ जिसमें अलम्बुष की पराजय हुई। भीष्म और अभिमन्यु का युद्ध : अभिमन्यु ने कौरव सेना का संहार किया। पाण्डवों से घिरे अर्जुन तथा धार्तराष्ट्रों से रक्षित भीष्म के बीच युद्ध। कृप ↔ अर्जुन; सात्यकि ↔ अश्वत्थामा; द्रोण ↔ सात्यकि; अर्जुन ↔ द्रोण का युद्ध (६. १०१)।

"दुर्योधन ने द्रोणाचार्य के पार्श्व की रक्षा के लिये सुशर्मा को भेजा। पुत्रों सहित त्रिगर्तराज ने अर्जुन से युद्ध किया। देवता और दानव अर्जुन के पराक्रम को देखकर अत्यन्त सन्तुष्ट हुये। अर्जुन ने वायव्यास्त्र का तथा द्रोण ने शैलास्त्र का प्रयोग किया। अर्जुन ने त्रिगर्तराज के रथ समूह को उत्साह रहित और पराक्रम शून्य करके युद्धविमुख कर दिया। तब दुर्योधन आदि ने अर्जुन पर चारों ओर से आक्रमण किया। उधर भगदत्त आदि ने भी भीम पर आक्रमण किया। भूरिश्रवा का नकुल-सहदेव के साथ तथा धार्तराष्ट्रों सहित भीष्म का युधिष्ठिर के साथ युद्ध। भीमसेन ने अपनी गदा से अनेक हाथियों का वध कर दिया। दुर्योधन की सेना का पलायन। (६. १०२)

"भीष्म और सोमकों का, धृष्टद्युम्न इत्यादि और भीष्म का, द्रौपदेयों इत्यादि और भीष्म का, घोर युद्ध हुआ। कौरव सेनायें भीष्म की रक्षा कर रही थीं। भीष्म ने पाण्डव सेना का भीषण संहार किया। दुर्योधन ने अपने योद्धाओं को और घमासान युद्ध करने के लिये प्रेरित किया जिसके परिणाम-स्वरूप कौरवों और पाण्डवों में भयंकर युद्ध होने लगा जो कपटपूर्णद्यूत के कारण ही सम्भव हुआ था और जिसमें बहुत बड़ा नरसंहार हुआ। पूर्वकाल में महात्मा पुरुषों के मना करने पर भी धृतराष्ट्र और दुर्योधन ने जो उनके सत्परामर्शों को नहीं माना उसका यह युद्ध एक भयंकर परिणाम था। सञ्जय ने धृतराष्ट्र से कहा कि विदुर आदि की बातें न मानने अथवा दैव की प्रेरणा से या धृतराष्ट्र के अन्याय से होने वाले इस युद्ध में स्वजनों का घोर संहार हो रहा था। (६. १०३)।

"अर्जुन ने सुशर्मा के सभी सैनिकों का वध कर दिया। दुर्योधन + भीष्म ने अर्जुन से युद्ध किया। मध्याह्न के समय सात्यकि और कृतवर्मा का, द्रुपद और द्रोण का, भीमसेन और बाह्लीक का, तथा अभिमन्यु और चित्रसेन का युद्ध हुआ। चित्रसेन भागकर दुर्मुख के रथ पर चढ़ गया। द्रोण और द्रुपद के युद्ध में द्रुपद युद्धविरत हो गये। बाह्लीक लक्ष्मण के रथ पर चढ़ गये; सात्यकि और भीष्म का युद्ध हुआ। सात्यकि की रक्षा करने की दृष्टि से पाण्डवों ने भी भीष्म पर आक्रमण किया। कौरवों-पाण्डवों के बीच घमासान युद्ध (६. १०४)।

"दुर्योधन के कहने पर दुःशासन भीष्म की रक्षा के लिए आ गया। शकुनि ने नकुल इत्यादि को रोका। दुर्योधन ने ०,००० अश्वारोही सैनिकों को युद्ध के लिये भेजा किन्तु युधिष्ठिर ने उन सबको रोक दिया। तब दुर्योधन ने शल्य को युधिष्ठिर से युद्ध करने के लिये भेजा। शल्य और युधिष्ठिर का युद्ध — भीम युधिष्ठिर की रक्षा के लिये आये। तदन्तर जब सूर्यदेव पश्चिम दिशा का आश्रय लेकर अस्ताचल को जा रहे थे उसी समय दोनों सेनाओं में अत्यन्त दारुण महाघोर युद्ध आरम्भ हुआ। (६. १०५)।

"भीष्म और भीम का; द्रोण और सात्यकि + भीमसेन का, भीष्म और सौवीरों इत्यादि का; भीष्म और १४,००० चेदियों का घोर युद्ध हुआ जिसमें भीष्म ने चेदियों का संहार कर दिया। श्रीकृष्ण ने भीष्म का वध करने के लिए अर्जुन से कहा। अर्जुन और भीष्म का युद्ध हुआ। श्रीकृष्ण ने देखा कि अर्जुन भीष्म के प्रति कोमलता दिखा रहे हैं, और उधर भीष्म निरन्तर बाणवर्षा करते हुये मध्याह्न के सूर्य के समान तप रहे हैं। अतः श्रीकृष्ण रथ से कूद पड़े और हाथों में चाबुक लेकर भीष्म की ओर दौड़े। उन्हें भीष्मवध के लिये उद्यत हुआ देख उस समय वासुदेव के भय से चारों ओर यह महान कोलाहल सुनाई देने लगा कि 'भीष्म मारे गये, भीष्म मारे गये'। तब अनेक प्रकार से प्रार्थना करके अर्जुन ने किसी प्रकार श्रीकृष्ण को रोका। तदन्तर भीष्म ने पाण्डव सेना का पुनः भीषण संहार आरम्भ किया (६. १०६)।

"कौरवों और पाण्डवों के युद्ध करते समय ही सूर्यदेव अस्ताचल को चले गये। तब दोनों पक्षों ने अपनी अपनी सेनाओं को शिविर में लौटा लिया। पाण्डव भीष्म के बाणों से अत्यन्त पीड़ित हो रहे थे अतः उन लोगों ने रात के समय भीष्मवध के सम्बन्ध में गुप्त मन्त्रणा की। युधिष्ठिर ने अपनी सेना के संहार पर दुःख प्रकट किया। तब श्रीकृष्ण ने उनसे कहा : 'आपके भाई शूरवीर और दुर्जय हैं। अर्जुन और भीमसेन वायु तथा अग्नि के समान तेजस्वी हैं। युद्ध के पूर्व उपप्लव्य नगर में अनेक लोगों के सामने अर्जुन ने भीष्म का वध करने की प्रतिज्ञा की थी। अर्जुन के उस वचन का पालन करना मेरे लिये आवश्यक है। अतः आप मुझे ही भीष्म के साथ युद्ध की आज्ञा दीजिये।' श्रीकृष्ण की बातें सुनकर युधिष्ठिर ने कहा कि सभी पाण्डवों को श्रीकृष्ण के साथ जाकर भीष्म से ही उनके वध का उपाय पूछना चाहिये। श्रीकृष्ण ने इस प्रस्ताव का अनुमोदन किया तदनुसार श्रीकृष्ण और सभी पाण्डवों ने भीष्म के शिविर में जाकर उनसे उनके वध का उपाय पूछा। भीष्म ने सबका स्वागत किया। तत्पश्चात युधिष्ठिर के पूछने पर इस प्रकार कहा: 'जब तक मेरे हाथ में शस्त्र रहेगा तब तक कोई मुझे नहीं मार सकता। जब मैं शस्त्र डाल दूँ उस अवस्था में तुम्हारे महारथी मुझे मार सकते हैं। तुम्हारी सेना में शिखण्डी है जो अमर्षशील, शौर्यसम्पन्न तथा युद्ध विजयी है। वह पहले स्त्री था फिर पुरुष भाव को प्राप्त हो गया। यदि समराङ्गण में अर्जुन कवच धारण कर शिखण्डी को आगे रखकर मुझपर तीखे बाणों द्वारा आक्रमण करे तब वे मुझे मार सकते हैं। शिखण्डी की ध्वजा अमाङ्गलिक

चिह्न से युक्त है तथा वह स्वयं भी पहले स्त्री रह चुका है; इसलिए मैं उसपर प्रहार नहीं करूँगा। इसी अवसर का लाभ उठाकर अर्जुन मुझे चारों ओर से शीघ्रतापूर्वक बाणों द्वारा मार डालने का प्रयास करें। इस प्रकार तुम्हारी निश्चितरूप से विजय होगी।' भीष्म की बात सुनकर पाण्डव अपने शिविर में लौट आये। तब अर्जुन ने दुःख से संतप्त होकर श्रीकृष्ण से इस प्रकार कहाः 'कुरुकुल के वृद्ध, विशुद्धबुद्धि, मतिमान् पितामह भीष्म से रणक्षेत्र में मैं कैसे युद्ध करूँगा?' श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उनकी भीष्मवध की प्रतिज्ञा का स्मरण दिलाते हुए कहा: 'भीष्म इसी प्रकार यमलोक जायँगे। जिसे देवताओं ने देखा है वह उसी प्रकार होगा। बृहस्पति ने इन्द्र को पूर्वकाल में यह उपदेश दिया था कि कोई बड़े गुरुजन, वृद्ध और सर्वगुण सम्पन्न पुरुष ही क्यों न हों, यदि शस्त्र उठाकर अपना वध करने के लिये आ रहे हों तो उस आततायी को अवश्य मार डालना चाहिये। यह क्षत्रियों का निश्चित सनातन धर्म है।' श्रीकृष्ण की बात सुनने के बाद सभी पाण्डव तथा श्रीकृष्ण ने भी प्रसन्न मन से विश्राम के लिये अपनी-अपनी शय्याओं का आश्रय लिया। (६. १०७)।

"दसवें दिन का युद्ध : प्रातःकाल होने पर पाण्डवगण शिखण्डी को आगे करके युद्ध के लिए शिविर से बाहर निकले। भीमसेन और अर्जुन शिखण्डी के रथ के पहियों के रक्षक बन गये। द्रौपदी के पाँच पुत्र और अभिमन्यु ने उसके रथ के पृष्ठभाग की रक्षा का कार्य सँभाला। सात्यकि और चेकितान भी उन्हीं के साथ थे। पाञ्चाल वीरों से सुरक्षित महारथी धृष्टद्युम्न उन सबके पीछे रहकर सबकी रक्षा करते रहे। तदनन्तर युधिष्ठिर, नकुल-सहदेव अपने सिंहनाद से सम्पूर्ण दिशाओं को प्रतिध्वनित करते हुए युद्ध के लिए चले। उनके पीछे अपनी सेना के साथ राजा विराट चले। विराट के पीछे द्रुपद ने धावा किया। पाँच केकय भाई तथा धृष्टकेतु सेना के जघन भाग की रक्षा करने लगे। कौरव भी भीष्म को सब सेनाओं के आगे करके युद्ध के लिए आये। धृतराष्ट्रपुत्र भीष्म की रक्षा कर रहे थे; उनके पीछे द्रोण और अश्वत्थामा थे; उनके भी पीछे अपनी गजसेना के साथ भगदत्त, और उनके भी पीछे कृप और कृतवर्मा थे। कृतवर्मा के पीछे काम्बोजराज सुदक्षिण थे। युद्ध आरम्भ होने पर अर्जुन आदि कुन्तीपुत्रों ने शिखण्डी को आगे करके भीष्म पर आक्रमण किया। भीम आदि ने शत्रु सेना का संहार किया। भीष्म और पाण्डवों का युद्ध हुआ। शिखण्डी ने भीष्म पर प्रहार आरम्भ किया। भीष्म ने शिखण्डी से युद्ध न करने की घोषणा की। शिखण्डी ने भीष्म से इस प्रकार कहा : 'मैं आपको जानता हूँ। आपने परशुराम के साथ युद्ध किया था। आपकी शक्ति को जानकर भी मैं आज आपके साथ युद्ध करूँगा।' अर्जुन ने शिखण्डी से भीष्म का वध करने लिए कहा और स्वयं द्रोणाचार्य को रोकने लगे। (६. १०८)।

"भीष्म ने पाञ्चालों और पाण्डव सेनाओं का संहार किया। अर्जुन ने भी कौरव सेना का संहार किया। दुर्योधन ने भीष्म से अर्जुन और सात्यकि के पराक्रम और विजय पर चिन्ता व्यक्त की। भीष्म ने कहा कि वे आज या स्वयं मारे जायँगे अथवा पाण्डवों का ही वध कर देंगे। तदन्तर उन्होंने शत्रु सेना के सहस्रों सैनिकों का संहार किया। (६. १०९)।

"अर्जुन के कहने पर शिखण्डी और धृष्टद्युम्न ने भी भीष्म पर आक्रमण किया। चित्रसेन और चेकितान का; कृतवर्मा और धृष्टद्युम्न का; सोमदत्त के पुत्र और भीमसेन का; विकर्ण और नकुल का; कृप और सहदेव का; दुर्योधन और सात्यकि का; काम्बोजराज सुदक्षिण और अभिमन्यु का; अश्वत्थामा और विराट+द्रुपद का; द्रोण और युधिष्ठिर का; तथा दुःशासन और अर्जुन+शिखण्डी का घोर युद्ध हुआ। अर्जुन की सहायता करने के लिए सैनिकों को प्रोत्साहित करते हुये धृष्टद्युम्न ने भीष्म पर आक्रमण किया। दुःशासन ने अर्जुन के साथ घमासान युद्ध करते हुए अर्जुन की प्रगति को रोक दिया। अर्जुन के बाणों से आहत होकर दुःशासन थोड़ी देर के लिए भीष्म के रथ पर चढ़ गया। तदनन्तर थोड़ा ठीक हो जाने पर दुःशासन ने पुनः अर्जुन पर पूर्ण वेग से आक्रमण कर दिया। (६. ११०)।

"अलम्बुष और सात्यकि; भगदत्त और सात्यकि; दुर्योधन और सत्यकि काम्बोजराज और अभिमन्यु; शिखण्डी और भीष्म का, विराट+द्रुपद और भीष्म का; अश्वत्थामा और विराट+द्रुपद का; कृपाचार्य और सहदेव का; विकर्ण और नकुल का; दुर्मुख और घटोत्कच का; कृतवर्मा और धृष्टद्युम्न का; भूरिश्रवा और भीमसेन का; द्रोण और युधिष्ठिर का; चित्रसेन और चेकितान का घोर युद्ध हुआ। अर्जुन ने अपने प्रहारों से पीड़ित करके दुःशासन को युद्ध से हट जाने के लिए विवश कर दिया। तदनन्तर उन्होंने कौरव सेना का विनाश आरम्भ किया, किन्तु दुःशासन पुनः उनसे युद्ध करने के लिए आ गया। (६. १११)।

"द्रोणाचार्य ने अपशकुनों की सूचना देते हुए अश्वत्थामा से भीष्म की रक्षा के लिए धृष्टद्युम्न, शिखण्डी और भीमसेन आदि से युद्ध करने का आदेश दिया। (६. ११२)।

"भगदत्त, कृपाचार्य, शल्य, कृतवर्मा, विन्द और अनुविन्द, जयद्रथ, चित्रसेन, विकर्ण, तथा दुर्मर्षण—ये दस योद्धा एक साथ भीमसेन के साथ युद्ध करने लगे। भीमसेन ने अपूर्व पराक्रम का परिचय दिया। भीम ने जयद्रथ के घोड़ों तथा सारथि का वध कर दिया जिससे जयद्रथ चित्रसेन के रथ पर चढ़ गया। शल्य ने भीम के सारथि विशोक को आहत कर दिया। शिखण्डी को आगे करके अर्जुन भीम की सहायता के लिए आये। दुर्योधन ने त्रिगर्तराज सुशर्मा से भीम और अर्जुन का वध करने के लिए कहा। सुशर्मा और अर्जुन+भीमसेन का युद्ध। (६. ११३)।

"अर्जुन और शल्य का युद्ध; जयद्रथ ने भीम पर आक्रमण किया; शल्य ने भी भीम पर ही आक्रमण करते हुए श्रीकृष्ण को भी पाँच बाणों से आहत कर दिया। दुर्योधन के नेतृत्व में मगधराज जयत्सेन के घोड़े उसे रणभूमि से दूर हटा ले गये। तदनन्तर भीष्म आदि ने अर्जुन और भीमसेन पर आक्रमण किया। धृष्टद्युम्न और भीष्म का; शिखण्डी और भीष्म का; युधिष्ठिर आदि और भीष्म का घोर संग्राम होने लगा। (६. ११४)।

"दिन के प्रथम भाग में महाभयानक युद्ध होने लगा। कौरव और सृञ्जयवंशी वीर एक दूसरे को जीतने की इच्छा से भीषण सिंहनाद कर रहे थे। भीष्म और अर्जुन; सात्यकि और अश्वत्थामा; धृष्टकेतु और कौरव; अभिमन्यु और दुर्योधन; विराट और जयद्रथ; युधिष्ठिर और शल्य; भीमसेन और गजसेना; धृष्टद्युम्न और द्रोण, बृहद्बल और अभिमन्यु; धृतराष्ट्र पुत्रों और शिखण्डी+अर्जुन के बीच घमासान युद्ध हुआ। (६. ११५)।

"अभिमन्यु और दुर्योधन; अश्वत्थामा और सात्यकि; पौरव और धृष्टकेतु (धार्तराष्ट्र जयत्सेन को पौरव अपने रथ पर बैठा कर दूर हटा ले गया जबकि धृष्टकेतु को सहदेव ने अपने रथ पर चढ़ा लिया); अभिमन्यु और बृहद्बल; युधिष्ठिर और शल्य; जयद्रथ और विराट; द्रोण और धृष्टद्युम्न; अर्जुन और भीष्म; भगदत्त और अर्जुन; भगदत्त और द्रुपद के बीच घोर युद्ध होने लगा। शिखण्डी को आगे करके अर्जुन ने भीष्म पर आक्रमण किया। कौरवों ने अर्जुन पर और शिखण्डी ने भीष्म पर आक्रमण किया। भीष्म ने १४,००० चेदियों का और सोमकों का भी संहार किया। उस समय श्रीकृष्ण को सारथि के रूप में साथ लेकर अर्जुन तथा शिखण्डी के अतिरिक्त किसी भी अन्य महारथी में भीष्म के निकट आने का साहस नहीं हुआ। (६. ११६)।

"शिखण्डी ने रणक्षेत्र में पुरुषरत्न भीष्म के सामने पहुँचकर उनकी छाती में दस तीखे भल्ल नामक बाण मारे; किन्तु उसके स्त्रीत्व का विचार करके भीष्मजी ने उसपर कोई आघात नहीं किया। उस समय अर्जुन ने शिखण्डी से भीष्म का वध कर देने के लिये कहा। अर्जुन के ऐसा कहने पर शिखण्डी ने तत्काल भीष्म पर नाना प्रकार के बाणों की वर्षा आरम्भ की परन्तु भीष्म ने उन बाणों की कोई परवाह न करके अर्जुन को अपने बाणों से रोक दिया। साथ ही उस सम्पूर्ण पाण्डव सेना को जो उस समय सामने थी उसे भीष्म ने मारकर परलोक भेज दिया। दुःशासन और अर्जुन+सभी कुन्तीपुत्रों के बीच युद्ध जिसमें अर्जुन ने दुःशासन को पराजित किया। दुर्योधन के कहने पर विदेहों ने अर्जुन पर आक्रमण किया किन्तु

अर्जुन ने उन सब का अपने दिव्यास्त्रों से संहार कर दिया। दुःशासन भी अर्जुन से युद्ध करते हुये पूर्वाह्न में ही पलायन करने के लिये वाध्य हुआ। दिव्यास्त्रों सहित भीष्म ने अर्जुन से युद्ध किया। उसी समय शिखण्डी भीष्म से युद्ध के लिये उपस्थित हुआ जिसे देखकर भीष्म ने अपने दिव्यास्त्रों को समेट लिया (६. ११७)।

"शल्य ने पाण्डव सेना का भीषण संहार किया। अर्जुन ने भी बहुत से कौरव सैनिकों का वध कर दिया। धृतराष्ट्रपुत्रों और पाण्डवों, सोमकों, सृञ्जयों और भीष्म का युद्ध हुआ। भीष्म ने राम जामदग्न्य की अस्त्रशिक्षा का उपयोग करते हुये शत्रुवीरों का संहार किया। उन्होंने १०,००० हाथियों का तथा सात मत्स्यों और पाञ्चाल वीरों का तथा विराट के भाई शतानीक आदि का वध किया। श्रीकृष्ण ने अर्जुन से भीष्म का वध करने के लिये कहा। भीष्म ने पाञ्चालराज और धृष्टकेतु को पीड़ित किया किन्तु अर्जुन ने इन लोगों को बचा लिया। अर्जुन से रक्षित होकर शिखण्डी ने भीष्म पर आक्रमण किया। भीष्म के सभी अनुगामियों का वध करने के बाद अर्जुन स्वयं भीष्म की ओर झपटे। सात्यकि आदि ने भी उस समय भीष्म पर आक्रमण किया। भीष्म ने भी धृष्टद्युम्न की सेना के साथ योद्धाओं का वध कर दिया। (६. ११८)।

"अभूतपूर्व पराक्रम दिखाते हुये भीष्म ने पाञ्चालराज तथा धृष्टकेतु की उपेक्षा करते हुये सात्यकि आदि से भयंकर युद्ध किया। शिखण्डी को आगे करके अर्जुन ने भीष्म पर आक्रमण किया। द्रोण आदि ने दिव्यास्त्रों का प्रयोग करते हुये अर्जुन से युद्ध किया। अर्जुन की रक्षा करते हुये सात्यकि ने कौरवों पर पुनः प्रवल आक्रमण किया। अर्जुन के बाणों से अत्यधिक आहत होने पर महाधनुर्धर भीष्म ने दुःशासन से इस प्रकार कहा: 'अर्जुन युद्ध में क्रुद्ध होकर अनेक सहस्र बाणों से मुझे आहत कर चुके हैं। इन्हें वज्रधारी इन्द्र भी युद्ध में नहीं जीत सकते। इसी प्रकार समस्त देवता, दानव तथा राक्षस वीर एक साथ मिलकर मुझे परास्त नहीं कर सकते। मैं जिन वज्र और विद्युत के समान बाणों से आहत हुआ हूँ वे शिखण्डी के नहीं हो सकते। गाण्डीवधारी वीर कपिध्वज अर्जुन को छोड़कर अन्य सभी नरेश मिलकर भी अपने प्रहारों से मुझे इतनी पीड़ा नहीं दे सकते।' भीष्म जब ऐसा कह रहे थे तभी युधिष्ठिर की आज्ञा से पाण्डव सेना ने भीष्म पर प्रबल आक्रमण किया जिससे भीष्म इतने आहत हो गये उनके शरीर में दो अंगुल भी ऐसा स्थान नहीं रह गया जो बाणों से विद्ध न हुआ हो। उस अवस्था में, जब दिन थोड़ा ही शेष था, कौरवों के देखते-देखते भीष्म पूर्वदिशा की ओर मस्तक किये रथ से नीचे गिर पड़े। आकाश में खड़े देवताओं तथा भूतलवर्ती राजाओं में उस समय तीव्र हाहाकार मच गया। भीष्म के सारे अंग बाणों से बिंधे थे इसलिये गिरने पर भी उनका धरती से स्पर्श नहीं हुआ। इस प्रकार बाण शय्या पर पड़े भीष्म ने सूर्य के दक्षिणायन होने के कारण अपने प्राणों का त्याग नहीं किया और उत्तरायण की प्रतीक्षा करने लगे। उनके उस अभिप्राय को जानकर गङ्गा देवी ने महर्षियों को हंसरूप से वहाँ भेजा। हंसरूपधारी ऋषियों ने वहाँ पहुँचकर भीष्म से कहा कि सूर्य के दक्षिणायन होते हुये वे मृत्यु को अस्वीकार करें। भीष्म को इच्छानुसार प्राणत्याग करने की शक्ति प्राप्त थी। अतः सूर्य के उत्तरायण होने तक उन्होंने प्राणों को धारण करने का निश्चय किया। भीष्म के इस प्रकार गिर जाने से पाण्डवों ने हर्ष से सिंहनाद किया जबकि कौरव पक्ष के लोग सिसक-सिसक कर रोने लगे। ऋषियों और पितरों ने महानव्रतधारी भीष्म की बहुत प्रशंसा की। भरतवंश के पूर्वजों ने भी भीष्म की सराहना की। परम पराक्रमी एवं बुद्धिमान शान्तनुनन्दन भीष्म महान् उपनिषदों के सारभूत योग का आश्रय लेकर प्रणव का जप करते हुये उत्तरायणकाल की प्रतीक्षा में बाणशय्या पर सोये रहे। (६. ११९)।

"धृतराष्ट्र ने सञ्जय से कहा: 'भीष्मजी बलवान् और देवता के समान थे। उन्होंने अपने पिता के लिये आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन किया था। अपनी दयालुता के कारण जब उन्होंने शिखण्डी पर प्रहार करने से हाथ खींच लिया तभी मैंने यह समझ लिया कि अब पाण्डवों के हाथ से कौरव भी मारे जायँगे। अपने पिता के भाई भीष्म के मारे जाने का समाचार सुनकर भी मैं जीवित हूँ। मेरी बुद्धि बहुत ही खोटी है।' इस प्रकार शोक प्रकट करते हुये धृतराष्ट्र ने कहा कि जो भीष्म पूर्वकाल में राम जामदग्न्य के दिव्यास्त्रों से भी नहीं मारे जा सके थे, वे ही शिखण्डी के हाथों मारे गये यह अत्यन्त दुःख की बात है। सञ्जय ने भीष्म की दशा का वर्णन करते हुये बताया: भीष्म जी रथ से गिरने पर भी धरती का स्पर्श किये बिना बाणशय्या पर सो रहे थे। उनके गिर जाने से उभय सेनाओं के क्षत्रियों के मन में भारी भय समा गया। उस अवस्था में उन्हें देखकर पाण्डव और कौरव, दोनों ही उन्हें घेरकर खड़े हो गये। आकाश अन्धकाराच्छन्न हो गया। सूर्य की प्रभा फीकी पड़ गई। सम्पूर्ण पृथिवी भयानक शब्द करने लगी। दिव्य प्राणी भीष्म को ब्रह्मज्ञानियों और ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ माना। उन्होंने कहा कि भीष्म ने अपने पिता शान्तनु को कामासक्त जानकर अपने आपको ऊर्ध्वरेता (नैष्ठिक ब्रह्मचारी) बना लिया। इस प्रकार सिद्ध और चारणसहित ऋषिगण भीष्म की प्रशंसा करने लगे। कौरवों के मुख पर विषाद छा गया था। पाण्डव पक्ष के लोग अपनी विजय पर हर्षित थे। भीमसेन तो अत्यन्त हर्षपूर्वक नृत्य करने लगे। भीष्म के रथ से गिर जाने से सर्वत्र हाहाकार मच गया था। कहीं कोई मर्यादा नहीं रह गयी थी। दुःशासन ने शीघ्रतापूर्वक जाकर द्रोण को भीष्म के गिरने का समाचार दिया। यह अप्रिय बात सुनकर द्रोण मूर्छित हो गये। सचेत होने पर उन्होंने अपनी सेनाओं को युद्ध करने से रोक दिया। कौरवों को युद्ध बन्द करके लौटते देखकर पाण्डवों ने भी अपनी सेनाओं से युद्ध बन्द करा दिया। तदनन्तर सभी राजा तथा लाखों योद्धा युद्ध से विरत हो कर भीष्म के पास आये। जब पाण्डव और कौरव प्रणाम करके भीष्म के पास खड़े हुये तब उन्होंने सब का स्वागत करने के बाद अपने लटके हुए सर के लिये एक तकिया माँगा। तत्काल लोग कोमल तकिया ले आये किन्तु भीष्म ने उन्हें स्वीकार न करते हुये अर्जुन से वीरोचित तकिया प्रदान करने के लिये कहा। तब अर्जुन ने अश्रुपूरित नेत्रों से अपना विशाल गाण्डीव धनुष हाथ में लिया और अभिमन्त्रित करके झुकी हुई गाँठोंवाले तीन बाणों से भीष्म के मस्तक को अनुगृहीत (कुछ ऊँचा करके) स्थिर कर दिया जिससे भीष्म जी अत्यन्त सन्तुष्ट हो गये। तब भीष्मजी ने वहाँ उपस्थित लोगों को इस प्रकार सम्बोधित किया: 'मैं तब तक इस बाणशय्या पर शयन करूँगा जब तक कि सूर्यदेव का रथ कुबेर के निवासभूत उत्तर दिशा के पथ पर नहीं आ जाता। उस समय जो लोग मेरे पास आयेंगे वे मेरी उर्ध्वगति को देख सकेंगे। आप सब मेरे चारों ओर खाई खोद दें। मैं यहीं इसी प्रकार सैकड़ों बाणों से व्याप्त शरीर के द्वारा सूर्य की उपासना करूँगा अब आप लोग अपना वैर भाव त्यागकर युद्धविरत हो जायँ।' तदन्तर शरीर से बाण निकाल कर फेंकने की कला में कुशल वैद्य भीष्म की सेवा में उपस्थित हुये किन्तु भीष्म ने उन्हें विदा कर दिया। उस समय भीष्मजी के समीप उपस्थित नरेश, कौरव तथा पाण्डव, सभी ने एक साथ उनकी तीन बार प्रदक्षिणा की। इसके बाद सब ओर से भीष्म की रक्षा की व्यवस्था करके सभी वीर अपने-अपने शिविर की ओर चल दिये। श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर की विजय पर शुभकामनायें व्यक्त कीं। श्रीकृष्ण ने कहा: 'भीष्म सम्पूर्ण शास्त्रों के पारंगत विद्वान थे। उन्हें सम्पूर्ण देवत भी मिलकर नहीं मार सकते थे। आप दृष्टिमात्र से ही दूसरों को भस्म करने में समर्थ हैं। आपके पास पहुँचकर भीष्म आप की घोर दृष्टि से ही नष्ट हो गये हैं।' श्रीकृष्ण के ऐसा कहने पर युधिष्ठिर ने उन्हें इस प्रकार उत्तर दिया: 'आप हमारे आश्रय हैं तथा आप भक्तों को अभयदान देते हैं। आप के कृपा-प्रसाद से विजय और आपके रोष से पराजय होती है।' इस प्रकार युधिष्ठिर ने अपनी विजय का सम्पूर्ण श्रेय श्रीकृष्ण को दिया। (६. १२०)।

"ग्यारहवें दिन का युद्ध: रात्रि व्यतीत होने पर पाण्डव तथा धार्तराष्ट्र दोनों ही भीष्म की सेवा में उपस्थित हुए। सहस्रों कन्यायें वहाँ आकर चन्दनचूर्ण, लाजा, और पुष्पमाला आदि शुभ सामग्रियाँ भीष्म के ऊपर बिखेरने लगीं। कौरव तथा पाण्डव युद्ध से निवृत्त हो पहले की भाँति

परस्पर प्रेमभाव प्रदर्शित करते हुए भीष्म के समीप एक साथ बैठ गये। उस समय भीष्म ने पानी माँगा। तब सभी लोग उत्तम जल से भरे पात्र लेकर उनके समीप आये परन्तु भीष्म ने वह सब जल अस्वीकार करते हुए अर्जुन से दिव्य जल प्रदान करने के लिये कहा। अर्जुन ने अपने रथ पर भीष्म की परिक्रमा की ओर अपने गाण्डीव धनुष पर एक बाण रखकर उसे मन्त्रोच्चार पूर्वक पर्जन्यास्त्र से संयुक्त करके दाहिने पार्श्व में पृथिवी पर चलाया। तत्काल शीतल, अमृत के समान मधुर तथा दिव्य सुगन्ध एवं दिव्य रस से संयुक्त जल की सुन्दर धारा ऊपर की ओर उठकर भीष्म के मुख में पड़ने लगी। उस जल ने भीष्म को तृप्त कर दिया। अर्जुन के इस कार्य से सभी उपस्थित लोग आश्चर्यचकित हो गये तथा भीष्म जी ने भी उनकी प्रशंसा की। भीष्म ने अर्जुन से कहा : 'मुझे नारद जी ने पहले ही बता दिया था कि तुम पुरातन महर्षि नर हो और नारायण रूपी श्रीकृष्ण की सहायता से इस भूतल पर ऐसे-ऐसे महान कर्म करोगे जिन्हें निश्चय ही सम्पूर्ण देवताओं के साथ इन्द्र भी नहीं कर सकते। तुम सम्पूर्ण धनुर्धरों में श्रेष्ठ हो। मैंने, विदुर ने, द्रोणाचार्य ने, परशुराम ने, श्रीकृष्ण ने, तथा सञ्जय ने भी बार बार युद्ध न करने का परामर्श दिया था परन्तु दुर्योधन ने हमारी बात को नहीं सुना।' भीष्म की यह बात सुनकर दुर्योधन मन ही मन बहुत दुखी हो गया। भीष्म ने दुर्योधन से कहा कि आग्नेय, वारुण, सौम्य, वायव्य, वैष्णव, ऐन्द्र, पाशुपत, ब्राह्म, पारमेष्ठ्य, प्राजापत्य, धात्र, त्वाष्ट्र, सावित्र, और वैवस्वत आदि सम्पूर्ण दिव्यास्त्र एकमात्र अर्जुन और श्रीकृष्ण को ही ज्ञात हैं। अतः भीष्म जी ने कहा कि जब तक युधिष्ठिर आदि सम्पूर्ण धार्तराष्ट्रों का वध नहीं कर देते, उसके पहले ही दुर्योधन को पाण्डवों से सन्धि करके उन्हें आधा राज्य दे देना चाहिये। परन्तु दुर्योधन ने भीष्म जी का यह परामर्श अब भी स्वीकार नहीं किया। (६. १२१)।

"भीष्म के चुप हो जाने के बाद सब राजा वहाँ से उठकर अपने-अपने विश्रामस्थान को चले गये। तदनन्तर कर्ण अत्यन्त शीघ्रतापूर्वक भीष्म के पास आया। भीष्म ने कर्ण को बताया कि वह राधा का नहीं बल्कि कुन्ती का पुत्र है। भीष्म ने कर्ण से कहा : 'तुम्हारे पिता अधिरथ नहीं बल्कि सूर्य हैं। मैंने नारद और व्यास जी से तुम्हारे जन्म का वृत्तान्त सुना है। तुम्हारा जन्म धर्मलोप से हुआ है इसीलिए नीच पुरुषों के आश्रय से तुम्हारी बुद्धि इस प्रकार ईर्ष्यावश गुणवान् पाण्डवों से भी द्वेष रखने वाली हो गई है। इसी कारण कौरव सभा में मैंने तुम्हें अनेक बार कटुवचन सुनायें हैं।' इस प्रकार कर्ण के जन्म का वृत्तान्त बताने के बाद भीष्म ने उसके पराक्रम का वर्णन करते हुए कहा कि उसने अकेले ही काशिराज तथा अनेक राजाओं को पराजित करके दुर्योधन के लिए कन्या प्राप्त की थी। जरासन्ध भी युद्ध में कर्ण की समता नहीं कर सकता। तदनन्तर भीष्म ने कर्ण से अपने सगे भाइयों, पाण्डवों, से मिल जाने के लिए कहा। तब कर्ण ने कहा कि कुन्ती ने उसका परित्याग कर दिया था; दुर्योधन ने उसे हर प्रकार का सम्मान दिया है। अतः उसने कहा कि वह श्रीकृष्ण द्वारा रक्षित पाण्डवों और विशेष रूप से अर्जुन से अवश्य युद्ध करेगा। कर्ण की बात सुनकर भीष्म ने उसे अपने निश्चयानुसार ही युद्ध करने की स्वीकृति प्रदान करते हुए कहा : 'धनञ्जय के हाथ से मारे जाने पर तुम्हें क्षत्रिय धर्म के पालन से प्राप्त होने वाले लोकों की उपलब्धि होगी। क्षत्रिय के लिए धर्मानुकूल युद्ध से बढ़ कर और कोई दूसरा कल्याणकारी साधन नहीं है।' भीष्म के ऐसा कहने पर कर्ण उन्हें प्रणाम करके उनकी आज्ञा ले रथ पर आरूढ़ हो दुर्योधन के पास चला गया। (६. १२२)।"

भीष्मनिहन्तृ = शिखण्डी जिसका अश्वत्थामा ने वध किया था। (१०. ८, ६३)।

भीष्मस्वर्गारोहणिक पर्वन् : १. २, ७८.

भीष्महन्तृ = शिखण्डी (८. ६१, १६)।

भीष्माभिषेचन, अर्थात् भीष्म का अभिषेक (१. २, ६६)।

भीष्मोत्पत्ति (भीष्म की उत्पत्ति)— "यशस्विनी गङ्गा ने शान्तनु की पत्नी बनना स्वीकार करते हुए कहा : 'मैं भला या बुरा जो कुछ भी करूँ उसके लिए आपको मुझे रोकना नहीं चाहिए। आप मुझसे कभी कोई अप्रिय बचन भी नहीं कहेंगे। यदि आपने मुझे किसी कार्य से रोका या अप्रिय बचन कहा तो मैं निश्चय ही आपका साथ छोड़ दूँगी।' शान्तनु ने गङ्गा की बातें मानकर उन्हें पत्नी रूप से ग्रहण किया। तदनन्तर शान्तनु ने गङ्गा के गर्भ से आठ पुत्र उत्पन्न किए। जो-जो पुत्र उत्पन्न होता उसे गङ्गा स्वयं गङ्गा के जल में फेंक देती। पत्नी का यह व्यवहार शान्तनु को अच्छा नहीं लगता था तो भी वे उस समय उससे कुछ कहते नहीं थे। तदनन्तर जब आठवाँ पुत्र उत्पन्न हुआ तब शान्तनु ने अपनी पत्नी से इस बालक का बध न करने का निवेदन किया। तब गङ्गा ने उस आठवें पुत्र का वध तो नहीं किया किन्तु अपनी पूर्व शर्त के कारण वह शान्तनु को छोड़ कर चली गई। गङ्गा ने शान्तनु को अपना परिचय देते हुए कहा : 'मैं जह्नु की पुत्री गङ्गा हूँ। देवताओं का कार्य सिद्ध करने के लिए ही मैं तुम्हारे साथ रह रही थी। तुम्हारे आठों पुत्र महातेजस्वी आठ वसुगण थे जो वसिष्ठ के शाप से मनुष्य-योनि में आये थे। तुम्हारे सिवा कोई अन्य राजा इस पृथिवी पर ऐसा नहीं था जो इन वसुओं का जनक हो सकता। इसी प्रकार जगत् में मेरी जैसी दूसरी कोई मानवी भी नहीं है जो इन वसुओं को गर्भ में धारण कर सकती। अतः इन वसुओं को जन्म देने के लिए मैं मानव शरीर धारण करके आई और तुमने आठ वसुओं का जन्म देकर अक्षय लोक जीत लिए हैं। यह तुम्हारा आठवाँ पुत्र सब वसुओं के पराक्रम से सम्पन्न होकर अपने कुल की आनन्दवृद्धि के लिये प्रकट हुआ है। इसका नाम गङ्गादत्त रखना।' इस प्रकार आठवें पुत्र वसु के रूप में भीष्म को जन्म देकर गंगा चली गई। (१. ९८, ३-२४)।

भुजगपति = पद्मनाभ (१२. ३६५, १९)।

भुजगात्मज = उलूपी (१४. ८१, २; १७. १, २७)।

भुजगारि = गरुड़ (१०. १३, ५)।

भुजगेन्द्रकन्या = उलूपी (१५. २५, ११)।

भुजगोत्तम = विष्णु (सहस्रनाम)।

भुजगोत्तमा = उलूपी (१४. ८०, ३५)।

१. **भुमन्यु**, भरत के पुत्र का नाम है : १. ९४, २२ (लेभे पुत्रं भरद्वाजाद् भुमन्युं नाम भारत). २३ (इन्हें युवराज बनाया गया). २४. २५ (इनके दिविरथ सुहोत्र, सुहोत्रा, सुहवि और सुयुस् नामक पुत्र उत्पन्न हुये जिसमें सुहोत्र सबसे ज्येष्ठ थे); ९५, ३२ (भरत ने राजा सर्वसेन की पुत्री सुनन्दा से विवाह किया। वह काशी की राजकुमारी थी और उसके गर्भ से भुमन्यु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ). ३३ (इन्होंने दशार्हकन्या विजया से विवाह करके सुहोत्र नामक पुत्र उत्पन्न किया)।

२. **भुमन्यु**, पूर्ववर्ती धृतराष्ट्र के पुत्र और सोमवंशी महाराज कुरु के प्रपौत्र का नाम है। (१. ९४, ५९)।

३. **भुमन्यु**, एक देव गन्धर्व का नाम है जो अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उपस्थित हुआ था। (१. १२३, ५८)।

१. **भुवः** = शिव (सहस्रनाम)।

२. **भुवः** = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. **भुवन**, भीष्म को देखने के लिये उपस्थित हुए लोगों में, यह भी थे (१३. २६, ८)।

२. **भुवन**, ६४ विश्वेदेवों में से एक का नाम है (१३. ९१, ३५)।

भुवनभर्तृ—देखिये अग्नि।

भुवनश्रेष्ठ = विष्णु (१२. ३४७, ३८)।

१. **भुवनेश्वर** = शिव (१४. ८, २७)।

२. **भुवनेश्वर** = स्वयम्भू (१३. १४१, ६७)।

३. **भुवनेश्वर** = स्कन्द (३, २३२, ४)।

भुवभर्तृ : ३.२२२, १ (आपस मुदिता भार्या सहस्य परमा प्रिया। भूपतिर्भुवभर्ता च जनयत् पावकं परम्), ५ (भूपतिर्भुवभर्ता च सबलः पतिरुच्यते)।

१. भू = शिव (सहस्रनाम)।

२. भू = श्रीकृष्ण (१२. ४३, ११)।

३. भू = विष्णु (सहस्रनाम)।

भूगर्भ = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. भूत = शिव (सहस्रनाम)।

२. भूत (बहु०) पञ्चभूतों अथवा तत्वों का तथा कहीं-कहीं एक प्रकार के गणों का भी द्योतक है : १.२, ३८५ (पञ्चभ्य इव भूतेभ्यो); २. ३, १४ (उपास्यते तिग्मतेजाः स्थितो भूतैः सहस्रशः); १०, २१ (शिव को घेर कर खड़े भूतगण);३. ३७, ३६ (दिव्येभ्यश्चैव भूतेभ्यो); ३९, ४ (शिव के चारों ओर उपस्थित); ४०, ११ (दानवान्राक्षसांस्तथा । भूतानि च पिशाचांश्च गन्धर्वानथ पन्नगान्); ८५, २५ (भूतयक्षपिशाचाश्च); १७३, ४१ (स्वस्ति भूतेभ्य); २२५, ११ (रक्षोभिश्च पिशाचैश्च रौद्रैर्भूतगणैस्तथा); २२९, ४३ (सर्वभूतगणैर्वृतः); २७२, ४६ (सर्वभूतानि त्रसानि स्थावराणि च। यक्षराक्षसभूतानि पिशाचोरगमानुषान्); २७५, २५ (सर्पकिन्नरभूतेभ्यो न मे भूयात् पराभवः); ४. ६, १८ (कृतानुयात्रा भूतैस्त्वं वरदा कामचारिणि); ६७, १३ (ततः स वह्निप्रतिमो महाकपिः सहैव भूतैर्दिवमुत्पपात);५. ११, ७ (देवदानवयक्षाणामृषीणां रक्षसां तथा । पितृगन्धर्वभूतानां चक्षुर्विषयवर्तिनाम् । तेज आदाय्यसे पश्यन्); १८३, २ (नक्तंचराणां भूतानां); ६. ६, २५ (पशुपतिर्दिव्यैर्भूतैः समावृतः) ३३, २५ (भूतानि यान्ति भूतेज्या); ४१, ४ (प्रेतान् भूतगणांश्चान्ये यजन्ते तामसा जनाः); ८६, ४४ (घोर-मायोधनं जज्ञे भूतसंघैः समाकुलम्); ९०, ९२ (आविष्टा इव युध्यन्ते रक्षोभूता महाबलाः); ११७, ५८ (दृश्यमानेषु रक्षःसु भूतेषु च नदत्सु च); १२०, १३ (इत्यभाषन्त भूतानि); ७. ८, ३३ (ततो निनादो भूतानामाकाशे समजायत); २७, २७ (धनञ्जयं भूत गणाः साधु साध्वित्य पूजयन्); ३८, ९(नाद्देन सर्वभूतानि); ४९, २१ (अन्तरिक्षे च भूतानि प्राक्रन्दन्त); ६१, ७; ७८, ५ (भूतानि त्वां निरीक्षन्ते नूनं चन्द्रमिवोदितम्): ८०, ४० (भूतसंघैः); ८७, ३३ (इति भूतानि मेनिरे); ९८, ५२ (भूतान्याकाशगान्यपि); १०१, २९; १०६, २४. ३०. ३१; १०८, १४ (सर्वभूतानां प्रहर्षः); १४६, ३६ (नृत्यत्प्रेतपिशाचाद्यैर्भूताकीर्णां सहस्रशः); १५६, १९० (भूतगणाः); १५८, ४५ (सभूतभुजगाद्रिपम्); १७०, ५६ (नेदुर्भूतान्यन्तरिक्षे); १९९, (भूतयक्षगणाकुलम्); २०१, ६६. ७०; ८. २४, ७८ (भूतानीव तमोनुदः); २६, ३; ५२, ३६ (नृत्यन्ति वै भूतगणाः सुतृप्तामांसशोणितैः); ५७, १३ (सर्वाणि सदैवतानि सहाप्सरोभिः); ९. ४४, २४. ४७ (भूतयक्षविहंगानां); ४५, ६९) भूतानां मथनस्तथा); ४६, ५७. ६२; ५०, ५७ (पितृभिः सह). ५८. ६१; ६५, ८; १०. ७, ४७. ५०. ६८; ८, ९४. १४२; १०, २९; १२. १८, ४० (देवातिथिभूतानां); २३, ५; ४८, ६; १२२, ३२; २०७, ३४ (°मातृगणाध्यक्षं विरूपाक्षं); २६१, ९. ११; ३०२, ३१ (सयक्षभूतगन्धर्वे); ३२३, ११; ३२८, ४३ (भूतानां विमानानि); ३४९, १२ (भूतैर्भूतपतिर्यथा); १३. १४, २८१. ४२५; ९८, ४३. ५५. ६२; १२६, १७; १३०, १२; १४०, ३. ४. ७. ९; १४१, १८; १४६, ६१; १४८, ३; १४. ८, ३. ५; ३२, २४; ४२, ६७; ४३. ८ (अग्निर्भूतपतिर्नित्यं); ४४, १५; ६५, ७. ९ (नक्तंचराणां भूतानां)।

३. भूत (बहु० °ताः) : १२. २८४, २०२ (न राक्षसाः पिशाचा वा न भूता न विनायकाः); ३२८, ३२ (तत्र देवगणाः साध्या महाभूता महाबलाः)।

भूतकर्मन्, कौरवपक्ष के एक योद्धा का नाम है जो नकुलपुत्र शतानीक के साथ युद्ध में उनके द्वारा मारा गया (७. २५, २२. २३)।

१. भूतकृत् = ब्रह्मा : १२. १९४, ८; २४७, ६; २८५, ९।

२. भूतकृत् = शिव (सहस्रनाम)।

३. भूतकृत् = विष्णु (सहस्रनाम)।

४. भूतकृत् = वसिष्ठ (१२. २३५, २७)।

भूतग्रामश्चतुर्विधः = शिव (सहस्रनाम)।

भूतचारिन् = शिव (सहस्रनाम)

भूतधामन्, पाँच इन्द्रों में से एक का नाम है (१. १९७; २९ : जिन पाँच इन्द्रों के अंश से पाण्डवों की उत्पत्ति हुई थी उनमें से द्वितीय)।

भूतनिषेविन् = शिव (सहस्रनाम)

१. भूतपति = भूतों के अधिपति : २. ३, १४; १२. ३४९, १२।

२. भूतपति = शिव : ३. ३८, ३२; १८३, १३; ५. ९९, १२; ६. ६, ४५; १२. ३४९, १२. ६७; १३. १७, १३ (सहस्रनाम); १४०, २१. २८; १४४, १८।

३. भूतपति = श्रीकृष्ण (१२. २०७, ४१; १३. १५८, ४२)।

१. भूतभव्यभवत्प्रभु = विष्णु (सहस्रनाम)।

२. भूतभव्यभवत्प्रभु = शिव : (१०. ७, ४७)।

भूत-भव्य-भवन्नाथ = विष्णु (सहस्रनाम)।

भूतभव्यभवन्नाथ = शिव : १२. २८४, १५१ (शिव सहस्रनाम); १३. १४६, १३।

भूतभव्येश = इन्द्र (१७. ३, ७)।

१. भूतभावन = शिव : ६. ६, २५; १३. १७, ३४. १०५ (सहस्रनाम)।

२. भूतभावन = विष्णु (सहस्रनाम)

भूतभृत् = विष्णु (सहस्रनाम)।

भूतमथन, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६९)।

भूतमहेश्वर = विष्णु (१३. १४९, ६५)।

१. भूतलय = शिव (सहस्रनाम)।

२. भूतलय, चोर-डाकुओं के निवासस्थान, एक ग्राम का नाम है। यहाँ एक नदी थी जिसमें शवों का प्रवाह किया जाता था। इस नदी में स्नान शास्त्रनिषिद्ध है (३. १२९, ९)।

भूतवाहनसारथि = शिव (सहस्रनाम)।

भूतशर्मन्, कौरव पक्ष के एक योद्धा का नाम है जो द्रोणाचार्य द्वारा निर्मित गरुड व्यूह के ग्रीवास्थान में खड़ा हुआ (७. २०, ६)।

१. भूतात्मन् = शिव (सहस्रनाम)।

२. भूतात्मन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

३. भूतात्मन् = ब्रह्मा अथवा श्रीकृष्ण : ३. ८७, १९ (भूतात्मा पूर्वमेव पितामहः); १६३, १३ (प्रजापतिः); १२. १९४, ७; २०१, १; २०३, ७; २०४, ५; २०७, ८ (= श्रीकृष्ण); २०९, ३१; २३९, ११. १२. २२; २९७, १८ (परिभ्रमति भूतात्मा द्वामिवाम्बुधरो महान् । स पुनर्जायते राजन्प्राप्येहायतनं नृप); ३०२, ३५ (इसे क्षर कहा गया है); ३१२, १२ (मनोग्रसति भूतात्मा सोऽहंकारः प्रजापतिः); ३१९, १३; १४. ५२, ९ (त्वत्तेजःसम्भवोनित्यं भूतात्मा मधुसूदन)।

भूतादि = विष्णु (सहस्रनाम)।

भूतादिनिधन = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ८२)।

भूताधिपति : १५. ३४, ५ (महाभूतानि नित्यानि भूताधिपतिसंश्रयात्)।

भूतानां पतिः = शिव (१४. ८, २०)।

भूतानां मथनः, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६९)।

भूतानामीश्वरः = श्रीकृष्ण (९. ६२, १२)।

भूतान्तरात्मन् = नारायण (१२. ३४७, १३)।

भूतावास = विष्णु (सहस्रनाम)

भूति = विष्णु (सहस्रनाम)।

भूतितीर्था, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २७)।

१. भूतेश = शिव (३. ३७, ५७; १४६, १६)

२. भूतेश = श्रीकृष्ण (१२. ४७, २१)।

३. भूतेश = स्कन्द (३. २३२, ३)।

भूपति, ६४ विश्वेदेवों में से एक का नाम है (१३. ९१, ३२)।

भूमि; मूर्तिमान पृथिवी देवी के लिए प्रयुक्त : १. ७४, ३०; १३. १५४ ५, ६ ।

१. भूमिञ्जय : ४. ३५, ९ (पुत्रं मत्स्यस्य मानिनम्); ४०, ३ (= उत्तर); ४४, २३ (अहं भूमिञ्जियो नाम नाम्नाऽहमपि चोत्तरः) ।

२. भूमिञ्जय, एक कौरवपक्षीय योद्धा का नाम है जो द्रोणाचार्य द्वारा निर्मित गरुड़व्यूह के हृदयस्थान पर खड़ा था (७. २०, १३) ।

भूमिपति, एक प्राचीन नरेश का नाम है (५. ११७, १४) ।

भूमिपर्वन्, महाभारत के ६८वें अवान्तरपर्व का नाम है : १. २, ६७ । "धृतराष्ट्र ने जम्बूखण्ड के विस्तार और परिमाण के विषय में बताने के लिये सञ्जय से निवेदन करते हुये शाकद्वीप और कुशद्वीप के सम्बन्ध में भी बताने के लिये कहा । सञ्जय ने तब सात महाद्वीपों, चन्द्रमा, सूर्य और राहु के सम्बन्ध में बताया । उन्होंने कहा कि जम्बूद्वीप की विस्तार १८६०० योजन है । इसके चारों ओर के खारे पानी के समुद्र का विस्तार जम्बूद्वीप की अपेक्षा दूना माना गया है । इसके तट पर तथा द्वीपों में बहुत से देश और जनपद हैं । इसके भीतर नाना प्रकार के मणि और मूँगे हैं जो इसकी विचित्रता सूचित करते हैं । अनेक प्रकार की धातुओं से अद्भुत प्रतीत होने वाले बहुसंख्यक पर्वत उक्त सागर की शोभावृद्धि करते हैं । सिद्धों और चारणों से भरा हुआ वह लवण समुद्र सब ओर से मण्डलाकार है । तदनन्तर सञ्जय ने शाकद्वीप (देखिये वस्था०) का वर्णन किया । (६. ११) ।

"सञ्जय ने जम्बूद्वीप और शाकद्वीप के बाद के द्वीपों के विषय में बताते हुये कहा : क्षीरोद समुद्र के बाद घृतोद समुद्र है । फिर क्रमशः दधिमण्डोदक, सुरोद और मीठे जल के सागर हैं । इन समुद्रों से घिरे हुये सभी द्वीप और पर्वत उत्तरोत्तर दुगने विस्तार वाले हैं । इनमें से मध्यद्वीप में मनःशिला का एक विशाल पर्वत है जो गौर नाम से विख्यात है । उसके पश्चिम में कृष्ण पर्वत है जो नारायण को विशेष प्रिय है । कुशद्वीप में कुशों का एक बहुत बड़ा झाड़ है जिसकी वहाँ के जनपदों में निवास करने वाले लोग पूजा करते हैं । शाल्मलिद्वीप में इसी प्रकार शाल्मलि के वृक्ष की पूजा की जाती है । क्रौञ्चद्वीप में महाक्रौञ्च नामक एक महान् पर्वत है । वहाँ चारो वर्ण के लोग उसकी पूजा करते हैं । वहीं गोमन्त नामक सम्पूर्ण धातुओं से सम्पन्न पर्वत है जहाँ नारायण नित्य निवास करते हैं । कुशद्वीप में सुधामा नामक एक अन्य सुवर्णमय पर्वत भी है जो मूँगों से भरा और दुर्गम है । वहीं कुमुद नामक एक तीसरा पर्वत भी है । चौथा पुष्पवान, पाँचवाँ कुशेशय और छठाँ हरिगिरि भी कुशद्वीप के ही श्रेष्ठ पर्वत हैं । इन पर्वतों का विस्तार सब ओर से उत्तरोत्तर दूना होता गया है । इसी द्वीप में उद्भिद, वेणुमण्डल, सुरथाकार, कम्बल, धृतिमान, प्रभाकर और कापिल नामक सात वर्ष हैं जिनमें देवता, गन्धर्व तथा मनुष्य सानन्द विहार करते हैं । क्रौञ्चद्वीप में क्रौञ्च, वामन, अन्धकार, मैनाक, गोविन्द और निविड नामक पर्वत हैं जिनका विस्तार उत्तरोत्तर दूना होता गया है । कुशल, मनोनुग, उष्ण, प्रवारक, अन्धकारक, मुनिदेश और दुन्दुभिस्वन नामक देश क्रमशः उक्त सातों पर्वतों के निकट स्थित हैं जिनमें देवता और गन्धर्व निवास करते हैं । पुष्करद्वीप में पुष्कर नामक पर्वत है जो मणियों तथा रत्नों से परिपूर्ण है । वहाँ स्वयं ब्रह्मा निवास करते हैं । जम्बूद्वीप से अनेक प्रकार के रत्न अन्यान्य सब द्वीपों में वहाँ की प्रजाओं के उपयोग के लिये भेजे जाते हैं । ब्रह्मा स्वयं इन सभी द्वीपों की रक्षा करते हैं । यहाँ की प्रजाओं के पास सदा पका-पकाया भोजन स्वयं उपस्थित हो जाता है । इनके बाद समा नामक लोगों की बस्ती है जो चौकोर बसी है और उसमें ३३ मण्डल हैं । वहाँ वामन, ऐरावत, सुप्रतीक, और अञ्जन नामक चार दिग्गज रहते हैं । इनमें से सुप्रतीक नामक गजराज नीचे-ऊपर तथा अगल-बगल सब ओर फैला हुआ और अपरिमित है । इन दिग्गजों के मुख से मुक्त होकर जो वायु वहाँ आती है उसी से सारी प्रजा जीवन धारण करती है । इस प्रकार विभिन्न द्वीपों का वर्णन करने के बाद ग्रहों का वर्णन करते हुये सञ्जय ने बताया कि राहुग्रह माण्डलाकार है और उसका विस्तार बारह सहस्र योजन है । उसकी परिधि का विस्तार छत्तीस सहस्र और मोटाई छः सहस्र योजन है । चन्द्रमा का व्यास ग्यारह सहस्र योजन, परिधि या मण्डल का विस्तार ३३ सहस्र योजन, और मोटाई (वैपुल्यगत विस्तार) उनसठ सौ योजन है । सूर्य का व्यासगत विस्तार दस सहस्र योजन, परिधि का विस्तार तीस सहस्र योजन तथा विपुलता अट्ठावन सौ योजन है । सूर्य और चन्द्रमा से अधिक विस्तार रखने के कारण राहु यथासमय दोनों को आच्छादित कर लेता है । द्वीपों और ग्रहों आदि का वर्णन करने के बाद सञ्जय ने बताया कि जिसमें हम लोग निवास करते हैं और जहाँ हमारे पूर्वजों ने पुण्यकर्मों का अनुष्ठान किया था वह यही भारतवर्ष है । (६. १२) ।"

भूमिपाल, एक प्राचीन नरेश का नाम है जो क्रोधवशसंज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुये थे (१ ६७, ६१) । इन्हें पाण्डवों की ओर से रणनिमन्त्रण भेजने का निश्चय किया गया था (५. ४, १९) ।

भूमिशय, एक प्राचीन नरेश थे जिन्होंने अमूर्तरया से एक खड्ग प्राप्त करके उसे दुष्यन्तकुमार भरत को दिया था (१२. १६६, ७५) ।

भूरि, कुरुवंशी सोमदत्त के पुत्र थे । इनके दो छोटे भाइयों का नाम भूरिश्रवा और शल था । ये अपने पिता तथा भाइयों के साथ द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुये थे (१. १८६, १४-१५) । ये पिता तथा भाइयों के साथ युधिष्ठिर के राजसूय में भी पधारे थे (२. ३४, ८) । ७. ३०, ५; १५९, ६०; १६५, ६ (इन्होंने सात्यकि पर आक्रमण किया); १६६, १-१२ (इन्होंने सात्यकि के साथ युद्ध किया जिसमें सात्यकि ने इनका वध कर दिया); १८. ५, १६-१७ (मृत्यु के पश्चात ये विश्वेदेवों में मिल गये) ।

भूरितेजस्, एक क्षत्रिय नरेश का नाम है जो क्रोधवश दैत्य के अंश से उत्पन्न हुये थे (१. ६७, ६३) । इन्हें पाण्डवों की ओर से रणनिमन्त्रण भेजने का निश्चय किया गया (५. ४, १७) ।

१. भूरिदक्षिण — देखिये भूरिश्रवा ।

२. भूरिदक्षिण = विष्णु (सहस्रनाम) ।

१. भूरिद्युम्न, एक प्राचीन नरेश का नाम है : २. ८, १९. २१ (यम की सभा में); १३. ७६, २५ (इन्होंने गोदान करके स्वर्ग प्राप्त किया था) ।

२. भूरिद्युम्न, एक प्राचीन महर्षि जिन्होंने शान्तिदूत बनकर हस्तिनापुर जाते समय मार्ग में श्रीकृष्ण को दक्षिणावर्त परिक्रमा की थी (५. ८३, २७) ।

३. भूरिद्युम्न, राजा वीरद्युम्न के एकमात्र पुत्र का नाम है जो वन में खो गया था (१२. १२७, १४) ।

भूरिद्युम्नपिता = वीरद्युम्न (१२. १२७, १४) ।

भूरिबल, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है जिसका भीमसेन ने वध किया था (९. २६, १४) ।

भूरिश्रवस्, कुरुवंशी सोमदत्त के पुत्र का नाम है (इनके दो भाइयों का नाम भूरि और शल था) । ये पिता और भाइयों के साथ द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित थे : १. १४३, १३; १८६, १५; १९९, ७ के बाद दापा० ग्रीप्रे० सं; २. ३४, ८; ७४, २६; ३. २५२, ५१; ५. १९, १६; २३, १०; ५५, ४३; ५८, ७; ६६, ७; १२४, ४९; १५५, ३३; १६५, २८ (रथियों के यूथपतियों के यूथपति के रूप में इनका भीष्म द्वारा उल्लेख); १९५, १०; ६. १७, २१; १८, ११; २०, १२; ५१, २७; ५६, ५ (भीष्म के गरुडव्यूह के ग्रीवाभाग में स्थित); ५९, ७५. १०९. १११. १३०; ६१, १. ११; ६३, ३२ (सोमदत्तिः); ६४, १ (सात्यकि पर आक्रमण किया); ६५, ३२; ७४, ७. १३ (यूपकेतुं). २७. ३१; ८१, ३१; ८४, ३७; ९२, २३. ३७; ९४, १३; ९९. ४ (भीष्म के सर्वतोभद्रव्यूह के दाहिने पंखस्थान पर स्थित); १०२, २६; १११, ४५; ११९, १५; ७. १४, ४४ (शिखण्डी से युद्ध किया); २०, ८ (द्रोण के गरुडव्यूह के दाहिने पंखस्थान पर

स्थित); ३४, २३; ३७, ५. १८. २५; ७१, २६; ८५, २८; १०४, ४. २६. ३३; १०५, २२-२४ (इनकी ध्वजा का वर्णन); १३७, १५; १४१, २९. ३२. ३५; १४२, १. २१. ५१. ६०. ६२. ६४-६६; १४३, ४. ५. १६. ५६ (सात्यकि ने इनका वध किया); १४४, २. ३; १४५, १. २; १४७, ३१. ३७; १५१, १. ३. २९; १५५, ३; १५६, १५; १५८, ६५; १९८, २८. ४३. ६४; ८. १, २२; ५, १७ (हतोभूरिश्रवा राजन्शूरः सात्यकिना युधि); ९. २, १६. ३३; २४, २७; ३२, २१; ५४, २६; ६१, ३४. ५९; ६४, १२; १०. ५, २२; ९, ४५; ११. २४, ३ (सोमदत्त के पुत्र). ९. ११; २६, ३१; १४. ५२, २०; १५. ११, १७; २९, ४३ (भूरिश्रवसो भार्याः यस्यास्तु श्वसुरोधीमान् बाह्लिकः स कुरूद्वहः); ३२, १०; १६. ३, २१; १८. ५, १६ (मृत्यु के पश्चात इनका विश्वेदेवों में प्रवेश)।

तुकी० इनके नामों के निम्नलिखित पर्याय भी :-

कुरुपुङ्गव, कुरुशार्दूल, कुरुश्रेष्ठ, कुरूद्वह, कौरव, कौरवदायाद कौरवेय, कौरव्य, कौरव्यमुख्य — देखिये वस्था०।

भूरिदक्षिण : ७. १४२, ४९. ५९; १४३, ५०; १४४, १९।

शलाग्रज : ७. १४३, ४६. ५०।

यूपकेतन : ७. १४३, ३७।

यूपकेतु : २. ४४, १९; ६. ७४, १३; ७. २५, ५५; १४३, ३३. ४१. ४५।

भूरिहन्, एक राक्षस का नाम है जो प्राचीन काल में पृथिवी का शासक था (१२. २२७, ५१)।

भूर्लोक, एक लोक का नाम है : १३. १७, २४ (स्वर्गाच्चैवात्र भूर्लोकं तण्डिना ह्यवतारितः)।

भूलिङ्ग, हिमालय के दूसरे भाग में रहने वाले एक पक्षी का नाम है, जो सदा यही बोला करता है : 'मा साहसम्' अर्थात् 'साहस न करो'। परन्तु स्वयं साहस का काम करते हुये सिंह के दाँत में लगे हुए मांस के टुकड़े को अपनी चोंच से चुगता रहता है : २. ४४, २८-३०; १२. १६९, १० (भूलिङ्गशकुनाश्चान्ये सामुद्राः पर्वतोद्भवा)।

भूशय = विष्णु (सहस्रनाम)।

भूषण = विष्णु (सहस्रनाम)।

भूषिक, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ५८)।

१. भृगु, एक महर्षि का नाम है : १. ५, ७. ८ (भृगुर्महर्षिर्भगवान् ब्रह्मणा वै स्वयंभुवा। वरुणस्य क्रतौ जातः पावकादिति नः श्रुतम्। भृगोः सुदयितः पुत्रश्च्यवनो नाम भार्गवः). १३ (पुलोमा के साथ विवाह करके च्यवन को उत्पन्न किया). १४-१६. २०. २४-२६. २८-३०. ३२. ३३; ६, ४. ७. ९. १०. १४; ७, १. १७. २९; ६६, ४१ (ब्रह्मणो हृदयं भित्वा निःसृतोभगवान्भृगुः) ४२ (भृगोः पुत्रः कविर्विद्वान्); २. ४, १६; ७, २९; ११, १९; ७८, १६; ३. ६४, ६२; ८५, ५०; ९०, २३; ९९, ३४. ६६; ११५, ३१ (आजगाम भृगुश्रेष्ठः पुत्रं दृष्ट्वा ननन्द ह). ३३. ३५. ३९; १२२, १ (च्यवन इनके पुत्र थे); १२६, ९; १४२, ६; २२२, १७; २३१, ४२; ५. ८३, २७; ११७, १२ (यथा भृगुः पुलोमायां); ६. ३४, २५ (महर्षीणां भृगुरहं); ७. ७०, ११; ८. ३४, ५१ (भृग्वङ्गिरोमन्युभवं क्रोधाग्निम्); ९. ४५, १०; ४७, १७ (भृगोः शापाद्भृशं भीतो जातवेदाः प्रतापवान्। शमीगर्भमथासाद्य ननाश भगवांस्ततः). २२ (सर्वभक्षश्च सोऽभवत्। भृगो शापात्); ५१, ३३ (प्रजापतिसुतेनाथ भृगुणा लोकभावनः); १२. ३, ३. १९. २०. २२; १२२, ३७. ३८; १६६, २३; १८२, ५ (भृगुणाऽभिहितं शास्त्रं भरद्वाजाय पृच्छते). ६. ११. २३. ३७; १८३, २; १८४, ३. १०; १८५, २; १८७, १. ५. १९; १८८, १. १०; १८९, २; १९०, १. ११; १९१, २. ६. ८; १९२, १. ८. २६; २३१, ४; २९६, १७; ३०९, १ (ऋषि वंशधरं भृगोः); ३२८, ६०; ३३८, ३५; १३. १४, २८०. ३९७; २६, ४; ३०, ४४ (वीतहव्य ने इनके आश्रम में शरण लिया). ४५. ४७. ४८. ५२. ५३. ५७. ६६; ५१, २४ (भृगोः पुत्रं च्यवनं); ६६, २३; ८५, १०५. १०६. १२४ (वरुण रूपी भगवान शिव ने सबसे पहले सूर्य के समान तेजस्वी भृगु को पुत्र रूप में ग्रहण किया). १२५. १२८ (इनके सात पुत्र हुए). १३५. १३६; ९१, १; ९४, ४. १६; ९९, ३ (नाहुषस्य च संवादमगस्त्यस्य भृगोस्तथा). १४. २२. २९; १००, १५. १७. २०. २३. २६. २८-३०. ३३; १०६, ६९; १५०, ७९. ८१; १६५, ३८। तुकी० भृगूद्वह

तुकी० इनके वंश का निम्नलिखित वर्णन (१. ५, ७-१६; ६६, ४१-४९)।

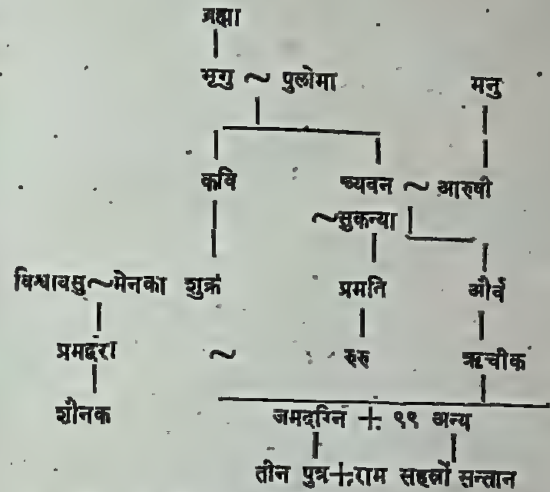

२. भृगु : १३. ८५, १३३ (कविः काव्यश्च धृष्णुश्च बुद्धिमानुशनास्तथा। भृगुश्च विरजाश्चैव काशी चोग्रश्च धर्मवित्)।

३. भृगु = च्यवन : १३. ५१, १८ (महर्षेः सदृशं भृगोः)।

४. भृगु (बहु०), भृगु के वंशजों का द्योतक है : १. १७८, ११. १५. १८. १९. २१; १७९, ३. ११. १५. १७; १८०, ५. ६. ८; ३. २६, ७; ११५, २. ९ (भृगूणां राजशार्दूल वंशे जातस्य भारत। रामस्य जामदग्न्यस्य); ११७, १० (भृगून्भृगुकुलोद्वहः); २२४, १४ (भृगुभिश्चाङ्गिरोभ्यश्च); ७. ७०, २३ (भृगूणां कीर्तिवर्धनः); १९०, ३४; ९. ४५, ८; १३. ३४, १७ (तालजंघों पर विजय प्राप्त की); ५५, ३२; ५६, २. ३. १५. २०; १५७, २७; १४. ९२, ४४।

भृगुकुल कीर्तिवर्धन = च्यवन (१३. ५३, ६८)।

१. भृगुकुलश्रेष्ठ = मार्कण्डेय (३. २०५, १५)।

२. भृगुकुलश्रेष्ठ = परशुराम (१३. ८५, ३७)।

१. भृगुकुलोद्वह = च्यवन (१३. ५३, ४९)।

२. भृगुकुलोद्वह = शौनक (१. ६, २)।

३. भृगुकुलोद्वह = शुक्र (१३. ९८, ११)।

४. भृगुकुलोद्वह = परशुराम (देखिये वस्था०)।

५. भृगुकुलोद्वह = उत्तङ्क (१४. ५८, १६.)।

भृगुतुङ्ग : १. ७५, ५७; २१५, २; २. ७८, १५; ३. ८४, ५० (भृगुतुंग समासाद्य वाजिमेधफलं लभेत्); ८५, ९१ (मलये त्वग्निमारोहेद्भृगुतुंगे त्वनाशनम्); ९०, २३ (महागिरिः); १३०, १९; १३५, ७ (पर्वतम्); १६७, ११; १३. २५, १८ (महाह्रदे उपस्पृश्य भृगुतुंगे त्वलोलुपः। त्रिरात्रोपोषितो भूत्वा मुच्यते ब्रह्महत्या)।

१. भृगुनन्दन (३. १२६, ९)।

२. भृगुनन्दन = और्व (१. १७९, ११)।

३. भृगुनन्दन = च्यवन (देखिये वस्था०)।

४. भृगुनन्दन = शौनक (१. ५, ६; ६, ४; ८, ७; ३१, ३५; ४६, २३; ५६, २६)।

५. भृगुनन्दन = मार्कण्डेय (३. २०५, ४)।

६. भृगुनन्दन = परशुराम (देखिये वस्था०)।

७. भृगुनन्दन = कुरु (१. ९, ११)।

८. भृगुनन्दन = ऋचीक (१२. ४९, १२; १३. ५६, ७)।

९. भृगुनन्दन = उशना (१२. २८९, २०)।

१०. भृगुनन्दन = उत्तङ्क (१४. ५३, २३; ५४, ९. १७. १८; ५५, २९. ३६; ५८, ४६)।

भृगुभरद्वाज-संवाद – शान्तिपर्वान्तर्गत मोक्षधर्मपर्व (१२. १८०-१९२) में युधिष्ठिर से भीष्म ने भृगु और भरद्वाज के बीच इस संवाद का उदाहरण दिया। युधिष्ठिर ने पितामह भीष्म से पूछा कि इस सम्पूर्ण स्थावर-जंगम जगत् की उत्पत्ति कहाँ से हुई है और प्रलयकाल में किसमें लीन होता है। भीष्म ने भृगु द्वारा इस विषय में भरद्वाज को दिये हुए उपदेश का उदाहरण देते हुए कहा : भगवान् नारायण सम्पूर्ण जगत्स्वरूप हैं। वे ही सबके अन्तरात्मा और सनातन पुरुष हैं। वे ही कूटस्थ, अविनाशी, अव्यक्त, निर्लेप, सर्वव्यापी और इन्द्रियातीत हैं। उन भगवान् नारायण के मन में जब सृष्टिविषयक संकल्प का उदय हुआ तब उन्होंने अपने हजारवें अंश से एक पुरुष को उत्पन्न किया जो मानस पुरुष के नाम से प्रसिद्ध है। पूर्वकाल में उत्पन्न वह मानस देव अनादि, अनन्त, अभेद्य, अजर और अमर है। उसी की अव्यक्त नाम से प्रसिद्धि है। उस स्वयंभू देव ने सबसे पहले महत्तत्त्व से क्रमशः अहंकार → आकाश → जल→अग्नि, एवं वायु→पृथिवी। तदनन्तर उस स्वयम्भू मानस देव ने पहले एक तेजोमय दिव्य कमल उत्पन्न किया जिससे ब्रह्मा प्रकट हुए। ये जो पाँच महाभूत हैं इनके रूप में महातेजस्वी ब्रह्मा ही प्रकट हुए हैं। पर्वत उनकी हड्डियाँ हैं, पृथिवी उनका मेद और मांस है, समुद्र उनका रुधिर और आकाश उदर है। वायु निश्वास है, अग्नि तेज है, नदियाँ नाड़ियाँ हैं, सूर्य और चन्द्रमा (अग्नि और सोम) ब्रह्मा के नेत्र हैं। आकाश का ऊपरी भाग उनका सिर है, पृथिवी पैर है, दिशायें भुजायें हैं। वे अचिन्त्य रूप ब्रह्मा सिद्ध पुरुषों के लिए भी दुर्विज्ञेय हैं। वह स्वयम्भू ही भगवान विष्णु हैं जो अनन्त नाम से प्रसिद्ध हैं। इतना वर्णन सुनने के बाद भरद्वाज जी ने जानना चाहा कि आकाश, दिशा, पृथिवी और वायु का कितना-कितना परिमाण है। तब भृगु ने कहा : यह आकाश अनन्त है। इसमें अनेकानेक सिद्ध और देवता निवास करते हैं। इसमें उनके भिन्न-भिन्न लोक भी स्थित हैं। तेजस्वी नक्षत्रस्वरूप देवता भी इस आकाश का अन्त नहीं देख पाते। पृथिवी के अन्त में समुद्र है। समुद्र के अन्त में घोर अन्धकार, और अन्धकार के अन्त में जल है। जल के अन्त में अग्नि की स्थिति बताई गई है। रसातल के अन्त में जल, जल के अन्त में नागराज शेष, उनके अन्त में पुनः आकाश और आकाश के ही अन्त में पुनः जल है। इस प्रकार भगवान का, आकाश का, जल का तथा अग्नि और वायु का भी अन्त और परिमाण जानना देवताओं के लिए भी कठिन है। भरद्वाज जी ने पूछा कि यदि ब्रह्मा जी कमल से प्रकट हुए तो कमल ही ज्येष्ठ है परन्तु भृगु जी ने ब्रह्मा को ही पूर्वज बताया है अतः इसकी क्या व्याख्या है। तब भृगु जी ने बताया कि उन्होंने मानस देव का जो स्वरूप बताया है वह ब्रह्मरूप में प्रकट है। उन्हीं ब्रह्मा जी के आसन के लिए इस पृथिवी को पद्म कहते हैं। इस कमल की कर्णिका मेरु पर्वत है जो आकाश में बहुत ऊँचाई तक चला गया है। उसी पर्वत के मध्य भाग में स्थित होकर जगदीश्वर ब्रह्मा सम्पूर्ण लोकों की सृष्टि करते हैं। (१२. १८२)।

"भरद्वाज जी ने यह जानने की जिज्ञासा प्रकट की कि मेरु पर्वत के मध्य भाग में स्थित होकर ब्रह्मा जी नाना प्रकार की सृष्टि किस प्रकार करते हैं। भृगु जी ने इस प्रकार कहा : उन मानस देव ने अपने मानसिक संकल्प से ही नाना प्रकार की प्रजासृष्टि की है। उन्होंने प्राणियों की रक्षा के लिए सर्वप्रथम जल की सृष्टि की। यह जल समस्त प्राणियों का जीवन है। पृथिवी, पर्वत, मेघ, तथा अन्य मूर्तिमान वस्तुओं को जलमय ही समझना चाहिये। भरद्वाज जी ने यह जानना चाहा कि जल, अग्नि, वायु और पृथिवी की भी रचना किस प्रकार हुई। भृगु जी ने बताया कि पूर्व काल में ब्रह्मकल्प में ब्रह्मर्षियों का परस्पर समागम हुआ था। उन महात्माओं की उस सभा में लोकसृष्टि विषयक सन्देह उपस्थित हुआ। वे सब महर्षि भोजन छोड़ वायु पी कर रहते हुए सौ दिव्य वर्षों तक ध्यान लगा कर मौन का आश्रय ले निश्चल भाव से बैठे रहे। उस ध्यानावस्था में उन सबके कानों ने ब्रह्ममय वाणी सुन पड़ी। उस समय वहाँ आकाश से दिव्य सरस्वती ने प्रकट हो आकाशवाणी द्वारा कहा कि पूर्वकाल में अनन्त आकाश पर्वत के समान निश्चल था। उसमें चन्द्रमा, सूर्य अथवा वायु किसी के दर्शन नहीं होते थे। तदनन्तर आकाश से जल की उत्पत्ति हुई। उस जल से वायु का उत्थान हुआ। जैसे कोई छिद्ररहित पात्र निःशब्द लक्षित होता है परन्तु उसमें छिद्र करके जब जल भरा जाता है तब वायु उसमें से शब्द प्रकट कर देता है; उसी प्रकार जल से आकाश का सारा प्रान्त ऐसा अवरुद्ध हो गया था कि उसमें थोड़ा सा भी अवकाश नहीं था। तब उस एकार्णव के तल प्रदेश का भेदन करके बहुत तीव्र ध्वनि के साथ वायु प्रकट हुआ। वह वायु सर्वत्र विचरने लगा। वायु और जल के उस संघर्ष से अग्नि प्रकट हुई जिसकी लपटें ऊपर की ओर उठ रही थीं। वायु का संयोग प्राप्त कर अग्नि जल को आकाश में उठाने लगा। फिर वहाँ जल अग्नि और वायु के संयोग से घनीभूत हो गया। उसका वह गीलापन जो आकाश में गिरा वही घनीभूत होकर पृथिवी के रूप में परिणत हो गया। इस पृथिवी को सम्पूर्ण रसों, गन्धों, स्नेहों तथा प्राणियों का कारण समझना चाहिये। इसी से सबकी उत्पत्ति होती है। (१२. १८३)।

"भरद्वाज जी ने यह जानना चाहा कि पाँच महाभूतों की आदिसृष्टि करने के बाद जब ब्रह्मा जी ने और भी सहस्रों भूतों की रचना की तब इन पाँच को ही 'भूत' कहना कहाँ तक युक्तिसंगत है। भृगु जी ने कहा कि ये पाँच ही असीम हैं। इन्हीं से अन्य की उत्पत्ति होती है, अतः इन्हीं के लिये 'महाभूत' शब्द का प्रयोग सुसंगत है। प्राणियों का शरीर इन पाँच महाभूतों का संघात है। इसकी जो चेष्टा या गति है वह वायु का भाग है। जो खोखलापन है वह आकाश का अंश है। ऊष्मा अग्नि है। रक्त आदि तरल पदार्थ जल के अंश हैं और अस्थि तथा मांस आदि ठोस पदार्थ पृथिवी के अंश हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण स्थावर-जंगम जगत् इन पाँच महाभूतों से युक्त है। इन्हीं के सूक्ष्म अंश कान, नाक, रसना, त्वचा और नेत्र – इन पाँच इन्द्रियों के नाम से प्रसिद्ध हैं। भरद्वाज जी ने यह जानना चाहा कि यदि समस्त स्थावर-जंगम पदार्थ इन पाँच महाभूतों से ही संयुक्त हैं तो स्थावरों के शरीर में तो पाँच भूत नहीं दिखाई देते। वृक्षों में गर्मी और चेष्टा का अभाव है। वास्तव में वे घन हैं, अतः उनके शरीर में पाँच भूतों की उपलब्धि नहीं होती। भृगु जी ने बताया कि वृक्ष यद्यपि ठोस प्रतीत होते हैं तथापि उनमें आकाश है जिससे उनमें नित्य फल-फूल आदि की उत्पत्ति होती है। वृक्ष के भीतर जो ऊष्मा है उसी से उसके पत्ते, छाल, फल-फूल कुम्हलाते हैं। इससे उनमें स्पर्श का होना भी सिद्ध होता है। इसी प्रकार भृगु जी ने वृक्षों में तथा अन्य स्थावरों में भी पञ्चमहाभूतों की उपस्थिति का विस्तार से प्रतिपादन करते हुए बताया कि सभी स्थावर-जंगम प्राणियों में इन पंचभूतों की उपस्थिति के अनुपात में अन्तर होता है। शरीर में त्वचा, मांस, अस्थि, मज्जा और स्नायु इन पाँच वस्तुओं का समुदाय पृथिवीमय है। इसी प्रकार तेज, क्रोध, नेत्र, ऊष्मा और जठरानल ये पाँच अग्निमय हैं। कान, नासिका, मुख, हृदय और उदर ये पाँच आकाश से उत्पन्न हैं। कफ, पित्त, स्वेद, चर्बी और रुधिर ये पाँच जल रूप हैं। प्राण से प्राणी चलने फिरने का कार्य करता है; व्यान से व्यायाम करता है; अपान ऊपर से नीचे की ओर जाता है, समान वायु हृदय में स्थित होता है, उदान से पुरुष उच्छ्वास लेता है और कण्ठ, तालु आदि स्थानों के भेद से शब्दों एवं अक्षरों का उच्चारण करता है। इस प्रकार पाँच वायु के परिणाम हैं जो शरीरधारियों को चेष्टाशील बनाते हैं। तदनन्तर गन्ध, स्पर्श, रस, रूप और शब्द – इन पृथिवी के गुणों का विस्तार से वर्णन करने के बाद भृगु जी ने बताया कि जल, अग्नि और वायु, ये तीन तत्त्व सदा देहधारियों में जाग्रत होकर शरीर में स्थित रहते हैं। (१२. १८४)।

"भरद्वाज जी के पूछने पर भृगु जी ने शरीर के भीतर जठरानल तथा

प्राण-अपान आदि वायुओं की स्थिति आदि का वर्णन किया। (१२. १८५)।

"भरद्वाज जी ने शंका प्रस्तुत की कि यदि वायु ही प्राणी को जीवित रखता है, वायु ही शरीर को चेष्टाशील बनाता है, वही श्वास लेता है, और वही बोलता भी है तब तो इस शरीर में जीव की सत्ता स्वीकार करना ही व्यर्थ है। इसी प्रकार जीव की सत्ता पर नाना प्रकार की युक्तियों से भरद्वाज जी ने शंकायें उपस्थित कीं। (१२. १८६)।

"इन शंकाओं का समाधान करते हुये भृगुजी ने जीव की सत्ता तथा नित्यता को युक्तियों से सिद्ध करते हुये बताया कि जीव का तथा उसके दिये हुये दान एवं किये हुये कर्म का कभी नाश नहीं होता; केवल उसका छोड़ा हुआ शरीर ही यहाँ नष्ट होता है। परन्तु अग्नि का उदाहरण देकर भरद्वाज जी ने शरीर के साथ जीव के भी नष्ट हो जाने का तर्क प्रस्तुत किया। तब भृगुजी ने बताया कि समिधाओं के जल जाने पर भी अग्नि का नाश नहीं होता। वह आकाश में अव्यक्त रूप से स्थित हो जाती है। इसी प्रकार शरीर को त्याग देने पर जीव आकाश की भाँति स्थित होता है। जीव को भी अग्नि के समान ही ज्योतिर्मय समझना चाहिये। उस अग्नि को वायु देह के भीतर धारण कर रखती है। श्वास रुक जाने पर वायु के साथ-साथ अग्नि भी नष्ट हो जाती है। उस शरीराग्नि के नष्ट होने पर अचेतन शरीर पृथिवी पर गिर कर पार्थिवभाव को प्राप्त हो जाता है, क्योंकि पृथिवी ही उसका आधार है। भरद्वाज जी ने यह जानना चाहा कि यदि देहधारियों के शरीर में केवल अग्नि, वायु, भूमि, आकाश एवं जल तत्त्व ही विद्यमान हैं तो उस शरीर में रहने वाले जीव के क्या लक्षण हैं। उन्होंने यह भी जानना चाहा कि शरीर के भीतर कौन हर्ष तथा उद्वेगों का अनुभव करता है ? इच्छा, द्वेष और वार्ता कौन करता है ? तब भृगुजी ने कहा कि मन भी पाञ्चभौतिक ही है अतः पाँचों भूतों से भिन्न कोई दूसरा तत्त्व नहीं है। एकमात्र अन्तरात्मा ही इस शरीर का भार वहन करता है। वही रूप, रस, गन्ध, स्पर्श तथा शब्द का और दूसरे भी जो गुण हैं उनका अनुभव करता है। जब उसका शरीर के साथ सम्बन्ध छूट जाता है तब इस शरीर को सुख-दुःख का अनुभव नहीं होता जिससे मन के अतिरिक्त उसके साक्षी आत्मा की सत्ता स्वतः सिद्ध हो जाती है। आत्मा जब प्राकृत गुणों से युक्त होता है तब उसे क्षेत्रज्ञ कहते हैं और उन्हीं गुणों से जब वह मुक्त हो जाता है तब परमात्मा कहलाता है। देह का नाश होने पर भी जीव का नाश नहीं होता। जीव तो इस मृत देह का त्याग करके दूसरे शरीर में चला जाता है। समस्त शरीर में मन के भीतर रहने वाला जो अग्नि के समान प्रकाशस्वरूप चैतन्य है उसी को समष्टि जीवस्वरूप प्रजापति कहते हैं। इसी प्रजापति से सृष्टि उत्पन्न होती है (१२. १८७)।

"भृगु जी ने कहा : ब्रह्मा ने सृष्टि के आरम्भ में अपने तेज से सूर्य और अग्नि के समान प्रकाशित होनेवाले ब्राह्मणों, मरीचि आदि प्रजापतियों को ही उत्पन्न किया। उसके बाद उन्होंने सत्य, धर्म आदि आचार और शौच के नियम बनाये। तदनन्तर देवता, दानव, गन्धर्व, दैत्य, असुर, सर्प, यक्ष, राक्षस, नाग, पिशाच और मनुष्यों को उत्पन्न किया। फिर चारों वर्णों की रचना की। ब्राह्मणों का रंग श्वेत, क्षत्रियों का लाल, वैश्यों का पीला तथा शूद्रों का काला बनाया। भरद्वाज ने इस वर्ण विभेद पर आपत्ति करते हुये कहा कि चारों वर्णों में से प्रत्येक वर्ण में विभिन्न वर्ण के मनुष्य होने के कारण वर्णसंकरता ही दिखाई देती है। भृगुजी ने स्वीकार किया कि पहले वर्णों में कोई अन्तर नहीं था। ब्रह्माजी से उत्पन्न होने के कारण सारा जगत् ब्राह्मण ही था। बाद में विभिन्न कर्मों के कारण उनमें वर्ण-भेद हो गया। जो इस सारी सृष्टि को परब्रह्म परमात्मा का रूप नहीं जानते हैं वे द्विज कहलाने के अधिकारी नहीं हैं। ऐसे लोगों को नाना प्रकार की दूसरी-दूसरी योनियों में जन्म लेना पड़ता है। पीछे ऋषियों ने अपनी तपस्या के बल से कुछ ऐसी प्रजा उत्पन्न की जो वैदिक संस्कारों से सम्पन्न तथा अपने धर्म-कर्म में दृढ़तापूर्वक सनद्ध रहने वाली थी। किन्तु जो सृष्टि आदिदेव ब्रह्मा के मन से उत्पन्न हुई है, वह मानसी कहलाती है तथा वह अक्षय, अविकारी एवं धर्म में तत्पर रहनेवाली है (१२. १८८)।

"भरद्वाज जी ने पूछा कि मनुष्य कौन सा कर्म करने से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र होता है ? भृगुजी ने बताया कि जो जाति, कर्म आदि संस्कारों से सम्पन्न, पवित्र तथा वेदों के स्वाध्याय में संलग्न हैं वही ब्राह्मण कहलाते हैं। इसी प्रकार अन्य तीनों वर्णों की भी भृगुजी ने कर्मानुसार व्याख्या करने के बाद बताया कि यदि सत्य आदि सात गुण शूद्र में भी दिखाई दें और ब्राह्मण में न हों तो वह शूद्र शूद्र नहीं और वह ब्राह्मण ब्राह्मण नहीं। जिसके सभी कार्य कामनाओं के बन्धन से रहित होते हैं, तथा जिसने त्याग की अग्नि में सब कुछ होम कर दिया है वही त्यागी और वही बुद्धिमान है। जो विश्वास के योग्य नहीं है उस मार्ग पर न चले और जो विश्वास करने योग्य है उसमें मन लगाये। मनुष्य को चाहिये कि वह सर्वदा शौच और सदाचार का पालन करे और समस्त प्राणियों पर दयाभाव रक्खे। यह ब्राह्मण का प्रधान लक्षण है। (१२. १८९)।

"भृगु जी ने बताया कि सत्य ही ब्रह्म है, सत्य ही तप है, सत्य ही प्रजा की सृष्टि करता है, सत्य के ही आधार पर संसार टिका हुआ है, और सत्य के प्रभाव से मनुष्य स्वर्ग में जाता है। असत्य अन्धकार का रूप है और वह मनुष्य को नीचे गिराता है। स्वर्ग प्रकाशमय है और नरक अन्धकारमय। विज्ञ एवं बुद्धिमान मनुष्य को चाहिये कि वह सदा दुःख से छूटने का प्रयत्न करे। सुख दो प्रकार का बताया जाता है : एक शारीरिक और दूसरा मानसिक। भरद्वाज जी ने शंका प्रकट की कि सुख को ही सबसे उच्च स्थान देना उपयुक्त प्रतीत नहीं होता क्योंकि जो महान् तप में स्थित ऋषिगण हैं उनके लिए यह वाञ्छनीय गुणविशेष सुख यद्यपि प्राप्त हो सकता है तथापि वे इसे नहीं चाहते। इसी प्रकार ब्रह्मा जी अकेले रहते हैं और कामसुख में मन न लगाकर ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं। शिव ने काम को भस्म कर दिया है। अतः भरद्वाज जी ने कहा कि उनकी दृष्टि में महात्मा पुरुषों ने सुख को सर्वोच्च कभी नहीं माना है। भृगु जी ने बताया कि असत्य से अज्ञान की उत्पत्ति हुई है, अतः तमोग्रस्त मनुष्य अधर्म के पीछे चलते हैं। इसी से वे वृद्धावस्था और मृत्यु तक का क्लेश उठाते हैं। जो इन शारीरिक और मानसिक दुःखों के सम्बन्ध से रहित हैं, उन्हें यथार्थ सुख का अनुभव होता है। वास्तविक सुख परमपदस्वरूप परब्रह्म परमात्मा ही हैं। पूर्वकाल में ब्रह्मा जी ने स्त्री-पुरुषस्वरूप जगत की सृष्टि की थी। यहाँ समस्त प्रजा अपने-अपने कर्मों से आवृत होकर सुख-दुःख का अनुभव करती है। (१२. १९०)।

"भरद्वाज जी के पूछने पर भृगुजी ने ब्रह्मचर्य और गार्हस्थ्य आश्रमों के धर्मों का वर्णन करते हुये कहा कि अग्निहोत्र से पाप का निवारण किया जाता है। स्वाध्याय से उत्तम शान्ति मिलती है; दान से भोगों की प्राप्ति कही गयी है और तपस्या से मनुष्य स्वर्गलोक प्राप्त कर लेता है। जो व्यक्ति अपने वर्णाश्रमोचित धर्माचरण में सावधानी के साथ लगे रहते हैं उन्हें स्वर्गरूपी फल की प्राप्ति होती है ब्रह्माजी ने धर्म की रक्षा के लिये पूर्वकाल में ही चार आश्रमों का निर्देश किया था। उनमें से प्रथम आश्रम के अन्तर्गत ब्रह्मचर्यपालनपूर्वक गुरुकुलवास का विधान है। गार्हस्थ्य को दूसरा आश्रम कहते हैं जिसमें धर्म, अर्थ और काम तीनों की प्राप्ति होती है। इसलिये त्रिवर्ग साधन की इच्छा रखकर गृहस्थ को उत्तम कर्म के द्वारा धन संग्रह करना चाहिये। गुरुकुल में रहने वाले ब्रह्मचारी, वन में रहनेवाले वानप्रस्थ और सब कुछ त्याग कर सर्वत्र विचरण करनेवाले संन्यासी भी इस गृहस्थाश्रम से ही भिक्षा, भेंट, उपहार तथा दान आदि पाकर अपने अपने धर्म के पालन में प्रवृत्त होते हैं। वानप्रस्थों के लिये धनसंग्रह करना निषिद्ध है। गृहस्थ को चाहिये कि ऐसे व्यक्तियों को उचित आदर तथा उत्तम भोजन दें। जिस पुरुष को गृहस्थाश्रम में सदा धर्म, अर्थ और काम के गुणों की सिद्धि होती रहती है वह इस लोक में सुख का अनुभव करके

अन्त में शिष्ट पुरुषों की गति को प्राप्त करता है। (११. १९१)।

"भृगुजी ने वानप्रस्थ तथा संन्यास धर्मों का वर्णन करते हुये बताया कि वानप्रस्थ का पालन करने वाले व्यक्तियों को चाहिये कि वे धर्म का अनुसरण करते हुये तीर्थों में, नदियों के तट पर अथवा एकान्त वन में निवास करते हुये विचरण करें। जो पुरुष नियमानुसार रहकर ब्रह्मर्षियों द्वारा आचरण में लायी गई इस वानप्रस्थ विधि का अनुष्ठान करता है वह अग्नि की भाँति अपने दोषों को भस्म करके दुर्लभ लोकों को प्राप्त कर लेता है। संन्यास आश्रम में प्रवेश करने वाले व्यक्ति अग्निहोत्र, धन, स्त्री आदि परिवार तथा घर की सारी सामग्री का परित्याग करके, भोगों तथा संगों के प्रति अपनी आसक्ति के बन्धनों को तोड़ कर सदा के लिये घर से बाहर निकल जाते हैं। मिट्टी और सुवर्ण को वे समान समझते हैं। धर्म, अर्थ और काम की प्रवृत्तियों में उनकी बुद्धि आसक्त नहीं होती। सबके प्रति वे समान दृष्टि रखते हैं। आश्रमों के वर्णन के बाद, भरद्वाजजी के पूछने पर भृगुजी ने बताया कि उत्तर दिशा में हिमालय के पार्श्वभाग में सर्वगुण-सम्पन्न एक श्रेष्ठ लोक बताया जाता है। उस पवित्र, कल्याणकारी और कमनीय लोक में पापकर्म से रहित, पवित्र, लोभ-मोह से शून्य तथा सब प्रकार के उपद्रवों से रहित मानव निवास करते हैं। वहाँ किये हुये कर्म का फल प्रत्यक्ष उपलब्ध होता है। पूर्वकाल में वहाँ प्रजापति, देवता तथा ऋषियों ने यज्ञ और अभीष्ट तपस्या करके पवित्र हो ब्रह्मलोक प्राप्त कर लिया था। पृथिवी का वह उत्तरी भाग सर्वाधिक पवित्र और मंगलमय है। इस लोक में जो पुण्यात्मा मनुष्य हैं वही मृत्यु के बाद उस भूभाग में जन्म लेते हैं। जो मन और इन्द्रियों को संयम में रखकर ब्रह्मचर्य का पालन करते हुये गुरुजनों की उपासना करते हैं वे मनीषी पुरुष सभी लोकों के मार्ग को जानते हैं। इस प्रकार उपदेश देकर भृगुजी ने भरद्वाज जी से पूछा कि वे और क्या सुनना चाहते हैं। (१२. १९२)।"

भृगुमुख्य = च्यवन (१३. ५४, २५)।

भृगुवंश : १. २, ९०; ५९, १; १७९, ४।

१. भृगुशार्दूल = च्यवन (१३. ५४, ३७)।

२. भृगुशार्दूल = शौनक (१. १५, ११; १६, २५)।

३. भृगुशार्दूल = जमदग्नि (१३. ५६, ९)।

४. भृगुशार्दूल = परशुराम (देखिये वस्था०)।

५. भृगुशार्दूल = ऋचीक (१२. ४९, १७; १३. ४, ११)।

१. भृगुश्रेष्ठ = शुक्र (१. ८०, १)

२. भृगुश्रेष्ठ = जमदग्नि (१४. ९२, ४५)।

३. भृगुश्रेष्ठ = परशुराम (देखिए वस्था०)।

१. भृगुसत्तम = परशुराम (५. १८६, ११)।

२. भृगुसत्तम = ऋचीक (१३. ४, १५. ३६)।

३. भृगुसत्तम = विपुल (१३. ४०, ३९)।

भृगुसुत = ऋचीक (१३. ४, १९)।

भृगुसूनु = एक ग्रह (शुक्र) : ९. ११, १५।

१. भृगूत्तम = जमदग्नि (१३. ९६, १५)।

२. भृगूत्तम = परशुराम (१३. ८४, ५१; ८५, २१. ३०)।

३. भृगूत्तम = विपुल (१३. ४०, २४)।

१. भृगूद्वह = भृगु (१३. ३०, ५६)।

२. भृगूद्वह = च्यवन (१३. ५१, ४२; ५५, ८)।

३. भृगूद्वह = शौनक (१. ५, १४)।

४. भृगूद्वह = शुक्र (१. ८३, ३०. ३५. ३८)।

५. भृगूद्वह = परशुराम (देखिये वस्था०)।

६. भृगूद्वह = उत्तङ्क (१४. ५४, ८; ५५, १८; ५६, २२; ५८, ३९)।

भृगोस्तीर्थम्, एक तीर्थ का नाम है। यहाँ स्नान करके परशुराम ने श्रीराम दाशरथी द्वारा अपहृत अपने तेज को पुनः प्राप्त कर लिया था। राजा युधिष्ठिर ने भी अपने भाइयों सहित यहाँ स्नान-तर्पण किया जिससे उनका रूप अत्यन्त तेजस्वी हो गया और वे शत्रुओं के लिए परम दुर्धर्ष हो गये (३. ९९, ३४-३८)।

भेडी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १३)।

भेत्तृ = शिव (शिव सहस्रनाम)।

भेरीस्वना, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २६)।

भैम (बहु०) : ३. १२०, १० (पश्यन्तु भैमा युधि जातदर्पाः); ७. १०८, १७ (भैमान् परिजघानाशु रथांस्त्रिंशतमाहवे)।

१. भैमसेनि = दिवोदास (५. ११७, १)।

२. भैमसेनि = घटोत्कच : ५. १७२, ६ (भैमसेनिर्महाराज हैडिम्बो राक्षसेश्वरः); ६. ४५, ४४ (समरे भैमसेनिं महाबलम्); ५६, १७ (भैमसेनिस्ततो राजन् केकयाश्च महारथाः); ८३, ३०. ३३; ९१, २ (भैमसेनिर्घटोत्कचः). २४; ९४, ४१ (भैमसेनिर्घटोत्कचः); ११०, १३ (राक्षसं क्रूरकर्माणं भैमसेनिं महाबलम्); ७. १०८, ८; १०९, १४. २५. ३०; १५६, ५७. ७८. ९६. १६१; १६५, १२; १६६, २२; १७४, १२. १५. २४; १७५, ५८. ७८. १०६; १७, १०. १४; १७८, १३. ३६; १७९, ३. ६१; १८१, २५ (भैमसेनिर्घटोत्कचः); १८३, ४० (भैमसेनिर्महाबलः)।

भैमि = घटोत्कच (७. १७८, २७)।

भैमी = दमयन्ती: ३. ५३, १२; ५७, १०. २६. ३४; ५८, १. १४; ५९, १४; ६०, १२; ६१, २४; ६२, २३; ६३, १५. २१; ६४, ११. ९३. १०८; ६५, ५४. ६४. ७२; ६८, ९. २७; ६९, ३३; ७०, १; ७३, ५; ७६, २२. ३९. ४४. ५३; ७८, १३।

भैरव, धृतराष्ट्रवंशी एक नाग का नाम है जो सर्पसत्र में दग्ध हो गया था (१. ५७, १७)।

भोक्तृ = विष्णु (सहस्रनाम)।

भोगवत्, एक पर्वत, जिसे भीमसेन ने पूर्व-दिग्विजय के समय जीता था (२. ३०, १२)।

१. भोगवती, पातालस्थ नागों की नगरी का नाम है : १. २०७, ३१ (नागैर्भोगवतीमिव). ५१; ३. ५७, ५ (नागैर्भोगवतीमिव); ५. १०३, १ (इयं भोगवती नाम पुरी वासुकिपालिता। यादृशी देवराजस्य पुरीवर्याऽमरावती); १०९, १९ (अत्र भोगवती नाम पुरी वासुकिपालिता). २०-२१ (तार्क्ष्येण च नागेन तथैवैरावतेन च। अत्र निर्याणकालेऽपि तमः संप्राप्यते महत्। अभेद्यं भास्करेणापि स्वं वा कृष्णवर्त्मना)।

२. भोगवती = सरस्वती नदी (३. २४, २०)।

३. भोगवती, एक तीर्थ का नाम है : ३. ८५, ७७ (तीर्थं भोगवती चैव वेदिरेषा प्रजापतेः). ८६ (गङ्गायमुनसंगमे। तत्र भोगवती नाम वासुकेस्तीर्थमुत्तमम्); ५. १८६, २७ (प्रयागे देवयजने देवारण्येषु चैव ह। भोगवत्यां महाराज कौशिकस्याश्रमे तथा)।

४. भोगवती, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ८)।

५. भोगवती, विभिन्न तीर्थों का द्योतक है (देखिये ग्री प्रे० सं० २. ३८, २९ के बाद दक्षिणात्य पाठ)।

भोगिन् (बहु०) सर्पों का द्योतक है : ३. २२५, ११ (भोगिन्, राक्षस, पिशाच आदि श्वेत पर्वत की रक्षा करते हैं); ४. ४१, ११ (भोगिनामिव जृम्भताम्); ७. १६, १४ (पतत्त्रि वरभोगिनाम्); १४५, ४६ (भुजैर्भोगिभोगाभैः); १३. ९८, ४१ (यक्षराक्षसयोगिनाम्); १३२, ९ (भोगिनः सुमहाबलाः)।

भोगिपति (नागों का राजा) : १२. ३६४, ९ (आसीत्तु मे भोगपते संशयः पुण्यसंचये)।

१. भोज (बहु०) एक जाति के लोगों का नाम है : १. ८५, ३४ (द्रुह्योः सुतास्तु वै भोजाः); २१८, १८ (भोजवृष्ण्यन्धकानां). १९ (भोजवृष्ण्यन्धकात्मजैः); २१९, २ (महेन्द्र पर्वत पर भोजों, वृष्णियों और अन्धकों आदि ने उत्सव मनाया); २२०, १२. ३२; २२१, ३३ (वृष्णि, भोज और अन्धकगण दहेज की बहुत सी सामग्री लेकर खाण्डवप्रस्थ आये). ३८; २. १४, ६ (ययातेस्त्वेव भोजानां विस्तरो गुणतो महान्). २५ (उदीच्याश्च तथा भोजाः कुलान्यष्टादश प्रभो। जरासन्ध-

भयादेव प्रतीचीं दिशमाश्रिताः). ३२ (भोजराजन्यवृद्धैश्च पीड्यमानैर्दुरात्मना); ६२, ७ (विदितं मे महाप्राज्ञ भोजेष्वेवासमञ्जसम् । पुत्रं संत्यक्तवान्पूर्वं पौराणां हितकाम्यया). ८ (अन्धका यादवा भोजाः समेताः कंसमत्यजन्); ३. १२०, २० (सवृष्णिभोजान्धकयोधमुख्याः); ४. ७२, २५ (इन लोगों ने द्वारका तक श्रीकृष्ण का अनुगमन किया); ५. ७, ३ (श्रीकृष्ण सैकड़ों भोजों, अन्धकों और वृष्णियों के साथ द्वारकापुरी आये); १९, १७ (कृतवर्मा च हार्दिक्यो भोजान्धकुकुरैः सह). २८ (शैनेयोऽयं चेदयश्चान्धकाश्च वार्ष्णेयभोजाः कुकुराः सृञ्जयाश्च); ४८, ७४ (यो रुक्मिणीमेकरथेन भोजानुत्साद्य राज्ञः समरे प्रसह्य); १२८, ३९ (आहुकः पुनरस्माभिर्ज्ञातिभिश्चापि सत्कृतः उग्रसेनः कृतो राजा भोजराजन्यवर्धनः । कंसमेकं परित्यज्य कुलार्थे सर्वयादवाः); ६. ९, ४०; ७. ९२, १६ (किरीटमाली कौन्तेयो भोजानीकं व्यशातयत्); ९४, १ (अर्जुन ने इन्हें पराजित किया); १०१, १३; ११३, ६०; ११४, ४२; १२०, ८ (द्रोणानीकमतिक्रान्तं भोजानीकं च दुस्तरम्); १२८, २६ (भोजानीकं समासाद्य हार्दिक्येनाभिरक्षितम्). २८ (भोजानीकमतिक्रम्य); १९३, १३ (भोजानीकेन··· कृतवर्मा वृतो); ८. २०, ९१ (भोजांश्च शूरान् संग्रामकर्कशान्); १२. ८१, २९ (यादवाः कुकुरा भोजाः); १४. ५९, १८ (भोजवृष्ण्यन्धकास्तथा); १६. १, १२. १४; ३, ३०. ३४. ३७; ५, २ (समोजान्धककौकुरान्); ७, ३९; ८, १०; १८. ४, १८ (गणेषु पश्य राजेन्द्र वृष्ण्यन्धकमहारथान् । सात्यकि प्रमुखान्वीरान्भोजांश्चैव महाबलान्)।

२. भोज (भोजों के राजा) : १. १८६, ६ (अश्वत्थामा च भोजश्च सर्वशस्त्रभृतां वरौ); २. ४, २६ (सभाभवन में प्रवेश करते समय युधिष्ठिर का स्वागत करनेवाले राजाओं में ये भी थे)। ५. १७१, १२; ६. ४४, १६ (पुरुमित्रो जयो भोजः सौमदत्तिश्च वीर्यवान्)।

३. भोज = भीष्मक : ५. १५८, २ (भीष्मकस्य···आकृतीनामधिपतिर्भोजस्यातियशस्विनः । दाक्षिणात्यपतेः पुत्रो दिक्षु रुक्मीति विश्रुतः)।

४. भोज मार्तिकावत, महाभोज के एक वंशज का नाम है : ७. ४८, ८ (मार्तिकावतकं भोजं ततः कुञ्जरकेतनम्)।

५. भोज = कृतवर्मन : ५. ५७, ३१ (भोजं तु कृतवर्माणं युयुधानो युयुत्सति); १६५, २३; ७. १४, ३६; ३९, ५; ४८, ३२; ७४, १६; ९२, १८. २०. २९. ३२; ९४, २९ (भोजश्च हार्दिक्यो); ९५, २१; ११३, ५८. ६२. ६७; ११४; ७८; ११६, ३१; ८. ३, २० (भोजस्य कृतवर्मणः); ७, ८ (भोजः कृतवर्मा); २६, ३५; ३२, ९; ७९, ७१. ७९. ८६; ८२, २५; ८५, ११; ८८, १४; ९. २, १७; ११, ४१; २९, ५६ (कृतवर्माणं); ३५, १४; १०. १, ३१. ५७; ३, २२. १५; ५, ३१; ६, १; ८, १; ९, ५४; १२. ४, ७; ८१, १४ (अक्रूरभोजप्रभवाः); १६६, ७९; १४. ६०, ३२ (सहैव कृपभोजाभ्यां)।

भोजकट, भोजों का नगर जिसे सहदेव जी ने जीता था (२. ३१, ११-१२)। रुक्मिणीहरण के समय श्रीकृष्ण के साथ युद्ध करके जहाँ रुक्मी पराजित हुआ था वहीं उसने इस नगर को बसाया था (५. १५८, १४-१५)।

१. भोजन = शिव (सहस्रनाम)।

२. भोजन = विष्णु (सहस्रनाम)।

भोजनगर : ५. ११८, २ (गालवो विमृशन्नेव स्वकार्यगत मानसः । जगाम भोजनगरं द्रष्टुमौशीनरं नृपम् ।

१. भोजराज, शिशुपाल के आक्रमण के समय द्वारका के राजा का द्योतक है (२. ४५, ८ : क्रीडतो भोजराजस्य एष रैवतके गिरौ । हत्वा बध्वा च तान्सर्वानुपायात्स्वपुरं पुरा ।)

२. भोजराज = उग्रसेन : ५. १२८, ३७ (भोजराजस्य वृद्धस्य दुराचारो ह्यनात्मवान् । जीवतः पितुरैश्वर्यं हृत्वा मृत्युवशं गतः ॥ उग्रसेन सुतः कंसः परित्यक्तः स बान्धवैः)।

३. भोजराज = कंसः ७. ११, ७ (सुनामा रणविक्रान्तः समग्राक्षौहिणीपतिः । भोजराजस्य मध्यस्थो भ्राता कंसस्य वीर्यवान्)।

४. भोजराज = अंशुमत् (८. ६, १४)।

५. भोजराज = कृतवर्मन् : १६. ७, ६९ (हार्दिक्य तनयं पार्थो नगरं मार्तिकावतम् । भोजराजकलत्रं च हतशेषं नरोत्तमः)।

भोजराजन्यवर्धन = श्रीकृष्ण : १४. ८७, ७ (भोजराजन्यवर्धनो विष्णुरब्रवीत्)।

भोजसुता = कुन्ती (१४. ६६, १४)।

भोजा, सौवीरराज की सर्वांग सुन्दरी कमनीया कन्या का नाम है। इसे सात्यकि ने अपनी रानी बनाने के लिये हर लिया था (७. १०, ३३)।

१. भौम = नरक : ३. १२, १८; १८३, ३४; ५. ४८, ८०. ८५; १५८, ८; १२. ३३९, ९२।

२. भौम = मंगल ग्रह : १३. १६५, १७ (पाप से मुक्ति दिलानेवाले देवों के अन्तर्गत इसकी गणना)।

३. भौम, एक दिव्यास्त्र का नाम है जिसका अर्जुन ने प्रयोग किया था (१. १३५, २०)।

भौमन = विश्वकर्मा : १. ३२, ३ (भौमनः सुमहावीर्यः सोमस्य परिरक्षिता); २२५, १२ (इन्होंने उस रथ का निर्माण किया था जिसे वरुण ने अर्जुन को प्रदान किया); ५. ५६, ७ (भौमनः सह शक्रेण बहुचित्रं विशाम्पते । रूपाणि कल्पयामास त्वष्टा धाता सदा विभो). १० (अर्जुन की ध्वजा की शोभावृद्धि की). ११।

भ्रमर, सौवीर देश के एक राजकुमार का नाम है जो जयद्रथ के रथ के पीछे हाथ में ध्वजा लेकर चलता था और द्रौपदी हरण के समय जयद्रथ के साथ था (३. २६५, ११)। अर्जुन ने इसका वध किया (३. २७१, २७)।

भ्राजिष्णु = विष्णु (सहस्रनाम)।

म

१. मकर = शिव (सहस्रनाम)।

२. मकर, एक व्यूह का नाम है : ६. ६९, ४ (व्यूहं). १३; ७५, ४. १२; ८०, ५; ८. ११, १४।

३. मकर, प्रद्युम्न की ध्वजा का चिन्ह (३. १७, ३)।

मकरकेतुमत् = प्रद्युम्न (३. १८, ११)।

१. मकरध्वज (जिनकी ध्वजा पर मकर का चिन्ह है) = काम (३. २८१, २७)।

२. मकरध्वज = प्रद्युम्न : ७. ११, २४ (कार्ष्णिर्धनुष्पाणिरिह यान्मकरध्वजः); १३. ११, ३।

मकरी, भारतवर्ष की एक प्रधान नदी का नाम है (६. ९, २३)।

१. मगध (बहु० °धाः), एक जाति के लोगों का नाम है : १. ६७, ४८ (मगधेषु जयत्सेनस्तेषामासीत्स पार्थिवः । अष्टानां प्रवरस्तेषां कालेयानां महासुरः); ११३, २७ (गोप्तामगधराष्ट्रस्य दीर्घो राजगृहे हतः); २. १८, १० (इस देश में जरा राक्षसी के लिए राजा बृहद्रथ ने महान उत्सव मनाने की आज्ञा जारी की थी); २१, २-३ (एक प्राचीन प्रदेश जो भारतवर्ष के बिहार प्रान्त के दक्षिणी भाग में स्थित था); ५२, १८ (यहाँ के राजा तथा निवासी युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपहार लेकर आये थे); ३. ८५, ९२ (पुष्करे तु कुरुक्षेत्रे गंगायां मगधेषु च । स्नात्वा तारयते जन्तुः सप्तसप्ता-

बरांस्तथा); ५. ५०, २० (भीमसेन ने इन्हें पराजित किया था). ३१ (सहदेव ने इन्हें पराजित किया था); ५३, २ (ये लोग महाभारत युद्ध में युधिष्ठिर के पक्ष में रहे); ६. ९, ५० (भारतवर्ष के प्रमुख जनपदों में इसकी गणना)।

२. मगध : ८. ६, ३६ (देखिये मागध)।

३. मगध, मगध देश का द्योतक है : १२. ५९, ११३ (तयोः प्रीतो ददौ राजा पृथुर्वैन्यः प्रतापवान् अनूपदेशं सूताय मगधं मागधाय च)।

मगधाधिप = जरासन्ध : १५. २५, १३ (मगधाधिपस्य सुता जरासंध इतिश्रुतस्य)।

मगधाधिपति = बृहद्रथ (२. १८, १३; १८, १२)।

मगधेन्द्र= जरासन्ध (५. ५१, ३८)।

मगधेश्वर = मेघसन्धि (१४. ८२, १०)।

मघवत्, मघवन् = देखिये इन्द्र।

मघा (अधिकांशतः बहु० °घाः), एक नक्षत्र का नाम है : ३. २१०, २ (मघासु); ३. ८४, ५१ (कृत्तिकामघयोश्च व तीर्थमासाद्य भारत); ६. ३, १४ (मघास्वंगारको वक्रः); १७, २ (मघाविषयगः सोमः); १३. ६४, १२ (इस नक्षत्र में दान देने का माहात्म्य); ८८, १२. १३; ८९, ५ (इस नक्षत्र में श्राद्ध करने का फल); ११०, ८ (चान्द्रव्रत का वर्णन तुकी० अश्लेषा); १२६, ३६ (इस नक्षत्र में श्राद्ध करना चाहिए)।

मङ्कणक, एक प्राचीन ऋषि का नाम है : "सप्तसारस्वत नामक तीर्थ में लोकविख्यात महर्षि मङ्कणक को सिद्धि प्राप्त हुई थी। पहले मङ्कणक के हाथ में कुश का अग्र भाग गड़ गया जिससे उनके हाथ में घाव हो गया था। उस समय उस हाथ से शाक का रस टपकने लगा। शाक का रस टपकता देख महर्षि हर्षातिरेक से मतवाले होकर नृत्य करने लगे। उनके नृत्य करते समय उनके तेज से मोहित होकर सारा जगत् नृत्य करने लगा। तब ब्रह्मा आदि देवता तथा तपोधन महर्षिगण — सबने मङ्कणक मुनि के विषय में महादेव जी से निवेदन किया : 'आप कोई ऐसा उपाय करें जिससे इनका यह नृत्य बन्द हो जाय।' महादेवजी ने देवताओं के हित की इच्छा से हर्षावेश से नृत्य करते महर्षि के पास जाकर इस प्रकार कहा : 'धर्मज्ञ मुनि! आप क्यों नृत्य कर रहे हैं? आपके नृत्य का कारण क्या है?' ऋषि ने बताया कि वे धर्म के मार्ग पर स्थित रहनेवाले तपस्वी हैं और अपने हाथ से शाक के रस को टपकता देखकर हर्षातिरेक से नृत्य कर रहे हैं। महादेवजी ने मुनि की बात पर हँस कर अपने अँगुली के अग्रभाग से अपने अँगूठे को ठोंका जिससे उसमें से भस्म गिरने लगा। यह आश्चर्यजनक दृश्य देखकर मुनि लज्जित होकर महादेवजी के चरणों में गिर पड़े। उन्होंने यह भी निश्चय किया कि किसी भी अन्य देवता को महादेवजी से बढ़कर नहीं मानेंगे। मुनि ने शिव की स्तुति करते हुये उनसे कहा : 'भगवन्! देवता तथा असुरों सहित सम्पूर्ण जगत के आश्रय आप ही हैं। त्रिशूलधारी! आपने ही चराचर जीवों सहित सम्पूर्ण त्रिलोकी को उत्पन्न किया है। फिर प्रलयकाल आने पर आप ही सब जीवों को अपना ग्रास बना लेते हैं। देवता भी आपके स्वरूप को नहीं जान पाते।' इस प्रकार स्तुति कर मुनि ने महादेव जी से यह वर माँगा कि उनकी तपस्या नष्ट न हो। महादेवजी ने प्रसन्न होकर कहा : 'मेरे प्रसाद से आपकी तपस्या में सहस्रों गुना वृद्धि हो। मैं तुम्हारे साथ इसी आश्रम में रहूँगा।' (३. ८३, ११५-१३२)।" मङ्कणक ने सप्तसारस्वत तीर्थ में तपस्या की थी (९. ३७, ६६)। "सप्तसारस्वत तीर्थ की महिमा का वर्णन करते हुये वैशम्पायन जी ने कुमारावस्था से ही ब्रह्मचर्यव्रत का पालन तथा प्रतिदिन सरस्वती नदी में स्नान करनेवाले मङ्कणक मुनि के महान लीलामय चरित्र का उल्लेख किया। उन्होंने बताया कि एक समय एक अनिन्द्य सुन्दरी सरस्वती के जल में नग्न होकर स्नान कर रही थी। दैवयोग से मङ्कणक मुनि की दृष्टि उस पर पड़ गई और उनका वीर्य स्खलित होकर जल में गिर पड़ा। तब मुनि ने उस वीर्य को एक कलश में रख लिया जहाँ वह सात भागों में विभक्त हो गया। उस कलश से सात महर्षि उत्पन्न हुये जो मूलरूप से मरुद्गण थे। उनके नाम इस प्रकार हैं : वायुवेग, वायुबल, वायुहा, वायुमण्डल, वायुज्वाल, वायुरेता और शक्तिशाली वायुचक्र। ये उनचास मरुद्गणों के जन्मदाता मूलभूत 'मरुत्' उत्पन्न हुये थे। पहले कभी सिद्ध मङ्कणक मुनि का हाथ किसी कुश के अग्रभाग से विद्ध हो गया था और उससे रक्त के स्थान पर शाक का रस टपकने लगा। वह शाक का रस देखकर मुनि हर्षातिरेक से नृत्य करने लगे। उस समय उनके तेज से मोहित होकर स्थावर और जङ्गम सभी प्राणी नृत्य करने लगे। तब ब्रह्मा आदि ने महादेवजी से मङ्कणक का नृत्य बन्द कराने का निवेदन किया (यहाँ पुनः ३. ८३, ११५-१३२ की कथा को दोहराया गया है)। महातेजस्वी मङ्कणक मुनि वायु के औरस पुत्र थे। वायु देवता (मातरिश्वन्) ने सुकन्या के गर्भ से उन्हें उत्पन्न किया था (९. ३८, ३२-५९)।" ९. ३९, १ (मङ्कणके प्रीतिं शुभां चक्रे हलायुधः)। तुकी० महर्षि भी।

मङ्की, एक प्राचीन मुनि का नाम है : १२. १७७, ४ (इतिहासं पुरातनम्'''मङ्किना गीतं). ५. ८. ५३. ५४ (इन स्थानों पर यह वर्णन है कि इनके दो बछड़ों का अपहरण हो जाने पर इन्होंने तृष्णा और कामना की गहन आलोचना की जो मङ्किगीता के नाम से प्रसिद्ध है। अन्त में ये धन-भोगों से विरक्त होकर परमानन्दस्वरूप परब्रह्म को प्राप्त हो गये)।

मङ्ग, शाकद्वीप के एक जनपद का नाम है जिसमें अधिकतर कर्तव्य-पालन में तत्पर रहनेवाले ब्राह्मण निवास करते हैं" (६. ११, ३६)।

१. मङ्गलम = शिव (सहस्रनाम)।

२. मङ्गलम = विष्णु (सहस्रनाम)।

मचक्रुक, समन्तपञ्चक एवं कुरुक्षेत्र की सीमा का निर्धारण करनेवाले एक तीर्थ का नाम है जहाँ मचक्रुक नामक यक्ष द्वारपाल के रूप में निवास करते हैं : ३. ८३, ९ (ततो मचक्रुकं नाम द्वारपालं महाबलम्। यक्षं समभिवाद्यैव गोसहस्र फलं लभेत्). २०० (अभिवाद्य ततो यक्षं द्वारपालं मचक्रुकम्। कोटितीर्थमुपस्पृश्य लभेद्बहु सुवर्णकम्). २०८ (रामह्रदानां च मचक्रुकस्य च। एतत्कुरुक्षेत्रसमन्तपञ्चकं पितामहस्योत्तरवेदिरुच्यते); ९. ५३, २४ (तरन्तुकारन्तुकयोर्यदन्तरं रामह्रदानां च मचक्रुकस्य च)।

मञ्जन, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७०)।

मञ्जुला, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, ३४)।

१. मणि, एक ऋषि का नाम है : २. ११, २४ (ब्रह्मा की सभा में)।

२. मणि, धृतराष्ट्रवंशी एक नाग का नाम है : १. ५७, १८ (यह जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हो गया)।

३. मणि, चन्द्रमा द्वारा स्कन्द को दिये गये दो पार्षदों में से एक का नाम है (९. ४५, ३२)। दूसरे पार्षद का नाम सुमणि (देखिये वस्था०) था।

मणिक, एक नाग का नाम है जिसने अर्जुन और कर्ण के युद्ध के समय अर्जुन का पक्ष लिया (८. ८७, ४३)।

मणिकाञ्चन, श्यामगिरि के पास स्थित शाकद्वीप के एक वर्ष का नाम है (६. ११, २६)।

मणिकुट्टिका, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २०)।

मणिजला, शाकद्वीप की एक प्रमुख नदी का नाम है (६. ११, ३२)

१. मणिनाग, कश्यप द्वारा कद्रू के गर्भ से उत्पन्न एक नाग का नाम है : १. ३५, ६; २. २१, ९ (गिरिव्रज के निकट इसका निवासस्थान था)।

२. मणिनाग, एक तीर्थ का नाम है। यहाँ एक रात निवास करने से सहस्र गोदान का फल प्राप्त होता है। इस तीर्थ का प्रसाद भक्षण करने से सर्प के काटने से उसके विष का प्रभाव नहीं पड़ता (३. ८४, १०६)।

मणिपर्वत, एक पर्वत का नाम है। भौमासुर ने सोलह सहस्र अपहृत कन्याओं के रहने के लिये यहाँ अन्तःपुर का निर्माण कराया था (२. ३८, २९ के बाद दाक्षि. प्रक्षे. सं०)।

मणिपूर, राजा चित्रवाहन की राजधानी का नाम है : १. २१५, १३; २१७, २३; १७. १, २८।

मणिपूरपति = बभ्रुवाहन (१४. ७८, ४९; ७९, ३९; ८०, ६१; ८१, १. २२; ८६, १९ ।

१. मणिपूरेश्वर = चित्रवाहन (१. २१५, १५)।

२. मणिपूरेश्वर = बभ्रुवाहन (१४. ७९, २; ८०, ४१; ८१, १७)।

मणिपुष्पक, सहदेव के शंख का नाम है : ६. २५, १६; ५१, २६ ।

मणिभद्र, एक यक्ष का नाम है : २. १०, १५ (कुबेर की सभा में); ३. ६४, १३० (यक्षराडथ मणिभद्रः प्रसीदतु); ६५, २२ (नूनं न पूजितोस्माभिर्मणिभद्रो महायशाः); १३९; ७ (यक्षेन्द्रं ··· मणिभद्रमुपासते) १२. २७१, १५. १९. २१. २२. २७. २९; १३. १९, ३३. ४१; १४. ६५, ६ (बलिमुत्तमम् यक्षेन्द्राय कुबेराय मणिभद्राय चैव ह)। तुकी० यक्षराज, यक्षेन्द्र ।

मणिभद्रक (बहु० °काः) एक जाति के लोगों का नाम है जो दुर्योधन की सेना में उपस्थित थे : ६. ५१, ९ : केवल कलकत्ता संस्करण में; चित्रशाला प्रेस, पूना संस्करण में पारिभद्रक पाठ है)।

१. मणिमत्, एक यक्ष अथवा राक्षस का नाम है : १. २, १७९ (राक्षैः सह···मणिमत्प्रमुखैः). १८२ (यक्षैर्वलोत्कटे · · · मणिमत्प्रमुखैः सह); ३. १६०, ५९ (भीमसेन से युद्ध किया जिसमें भीमसेन ने इसका वध किया). ६४. ७२; १६१, २० (कुबेरसखा): ५८ (अगस्त्य का अपमान करने के कारण इसे मानव के हाथों वध को प्राप्त होने का शाप मिला था)। तुकी० राक्षस, राक्षसाधिपति ।

२. मणिमत्, एक राजा का नाम है जो वृत्र नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था : १. ६७, ४४; १८६, ७ (द्रौपदी के स्वयम्वर में उपस्थित) २. ३०, ११ (भीमसेन ने पूर्वदिग्विजय में इसे पराजित किया था); ५. ४, २०; ७. २५, ५३ (भूरिश्रवा से युद्ध किया); ८. ६, १३ (युद्ध में द्रोण ने इसका और दण्डधर का वध किया था)।

३. मणिमत्, एक नाग का नाम है : २. ९, ९ (वरुण की सभा में)।

४. मणिमत् , एक ऋषि का नाम है : २. २१, १० (कौशिको मणिमांश्चैव चक्राते चाप्यनुग्रहम्)।

५. मणिमत् , एक तीर्थ का नाम है जहाँ एक रात निवास करने से अग्निष्टोम का फल प्राप्त होता है (३. ८२, १०१)।

६. मणिमत् , एक पर्वत का नाम है : ७. ८०, २४ (स्वप्न में श्री कृष्ण के साथ शिवजी के पास जाते समय अर्जुन को मार्ग में यह पर्वत मिला था)।

मणिमती, इल्वल दैत्य की नगरी का नाम है (३. ९६, ४)।

मणिमन्थ, एक पर्वत का नाम है : १३. १८, ३३ (यहाँ श्रीकृष्ण ने अपने एक पूर्वजन्म में लाखों-करोड़ों वर्ष तक शिव की आराधना की थी)।

मणिवर, मन्दराचल निवासी एक यक्ष का नाम है (३. १३९, ५)।

मणिवाहन = कुशाम्ब (१. ६३, ३१)।

मणिविद्ध = शिव (सहस्रनाम)।

मणिस्कन्ध, एक नाग का नाम है : १. ५७, १९ (पराशररतरुणको मणिः स्कन्धस्तथारुणिः)।

मण्डक, एक भारतीय जनपद का नाम है (६. ९, ४३)।

मण्डल, एक व्यूह का नाम है (६. ८१, २१)।

मण्डलक, तक्षक वंशी एक नाग का नाम है : १. ५७, ८ (यह जनमेजय के सर्प सत्र में भस्म हो गया था)।

मण्डिक, (बहु० °काः), एक जाति का नाम है जिसे अपनी पूर्वदिग्विजय के समय कर्ण ने पराजित किया था (३. २५४, ८, केवल कलकत्ता संस्करण में; चित्रशाला प्रेस पूना के संस्करण में 'शुण्डिक' है)।

१. मण्डूक, अश्वों की एक जाति नाम है : २. २८, ६ (अर्जुन ने दिग्विजय के समय गन्धर्वनगर से कर के रूप में इस जाति के बहुत से अश्व प्राप्त किये थे ।

२. मण्डूक, बहु०) मेढकों का द्योतक है (३. १९२, २३-३१)।

मण्डूकराज (माण्डूकों का राजा) = आयु (३. १९२, २५)।

मण्डूकराज = आयु (३. १९२, ३२. ३६. ३७)।

१. मतङ्ग, एक प्राचीन राजर्षि जो शापवश व्याध हो गये थे। इन्होंने दुर्भिक्ष के समय विश्वामित्र की पत्नी का भरण-पोषण किया था (१. ७१, ३१)। विश्वामित्र ने पुरोहित बन कर इनके यज्ञ का सम्पादन किया था जिसमें स्वयं इन्द्र भी सोमपान के लिये पधारे थे (१. ७१, ३३)।

२. मतङ्ग, एक अथवा अधिक ऋषियों का नाम है : २. ८. २९ (यम की सभा में); ३. ८४, १०१ मतङ्गस्याश्रमम्); ८५, १७ (एक तीर्थ); ८७, २५ (मतङ्गस्यमहानाश्रम उत्तमः); १२. २९६, १५ (इन्होंने तपस्या से अपना उच्च पद प्राप्त किया था); १३. ३, १८. १९ (स्थाने मतङ्गो ब्राह्मण्यं नालभद्भरतर्षभ); २७, ७ (मतङ्गस्य संवादं गर्दभ्याश्च) . ८. १४. १८. २०. २३. २४. २६. २७; २८, १. ३. ५. ७. १६; २९, १. ३. ५. ८. १०. १३. २२. २६ (ये एक ब्राह्मणी के पुत्र थे। एक गर्दभी ने इन्हें बताया कि वास्तव में ये एक चाण्डाल थे और तपस्या द्वारा इन्होंने ब्राह्मण होने का निष्फल प्रयास किया था। अन्ततः ये ब्राह्मणपद पाने में सफल हुये थे : छन्दोदेव इति ख्यातः स्त्रीणां पूज्यो भविष्यसि, कीर्तिश्च तेऽतुला वत्स त्रिषु लोकेषु यास्यति··· प्राणांस्त्यक्त्वा मतङ्गोऽपि संप्राप्तः स्थानमुत्तमम :एवमेतत्परं स्थानं ब्राह्मण्यं नाम भारत)।

मति, दक्ष प्रजापति की पुत्री और धर्म की पत्नी : १. ६६, १५; ६७, ६० (इसने गान्धारी के रूप में जन्म लिया)

मतिनार, एक पूरुवंशी नरेश का नाम है जो पूरु के पौत्र अनाधृष्टि के पुत्र थे। ये महान् धार्मिक तथा अश्वमेध आदि बड़े-बड़े यज्ञों के अनुष्ठाता थे। तंसु, महान, अतिरथ और द्रुह्यु नामक इनके चार पुत्र थे (१. ९४, १३-१४)। इस वर्णन के अनुसार राजामतिनार पूरु से चौथी पीढ़ी में परन्तु आदि पर्व के ९५वे अध्याय के वर्णन के अनुसार ये पूरु से सोलहवीं पीढ़ी में आते हैं : १. ९५, २५ (ऋक्ष और ज्वाला के पुत्र). २६ (इन्होंने सरस्वती नदी के तट पर एक द्वादशवर्षी यज्ञ-सत्र का आयोजन किया जिसके बाद सरस्वती नदी ने इनकी पत्नी बन कर तंसु नामक पुत्र उत्पन्न किया) . २७ (इनके सम्बन्ध में एक श्लोक का उद्धरण)। तुकी० अनाधृष्टिसुत ।

१. मतिमत्, एक राजा का नाम है। यह क्रोधवश गण के अंश से उत्पन्न हुये थे (१. ६७, ६५)।

२. मतिमत्, = शिव (सहस्रनाम)।

मत्कुलिका, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १९)।

मत्तमयूरक (बहु० °काः) एक जाति का नाम है। नकुल ने अपनी पश्चिम दिग्विजय के समय इन्हें पराजित किया था (२. ३२, ५)।

१. मत्स्य, एक राजा का नाम है। ये वसु उपरिचर के पुत्र थे। " एक दिन ऋतुकाल को प्राप्त हो स्नान के पश्चात् शुद्ध हुई वसुपत्नी गिरिका ने पुत्र उत्पन्न होने योग्य समय में राजा से समागम की इच्छा प्रकट की।" उसी दिन पितरों ने वसु पर प्रसन्न हो उन्हें आज्ञा दी कि वे हिंसक पशुओं का वध करें। तब पितरों की आज्ञानुसार वसु, गिरिका का ही चिन्तन करते हुये, हिंसक पशुओं को मारने के लिए वन में गये। राजा जिस वन में आये वह चैत्ररथ नामक वन के समान शोभा पा रहा था। वन के उद्दीपक वातावरण में राजा वसु का हृदय काम-वेदना से पीड़ित हो उठा। उस समय अपनी पत्नी गिरिका का चिन्तन करते हुये राजा इधर-उधर घूमने लगे। एक सुन्दर अशोक का वृक्ष देख कर वह उसी के नीचे बैठ गये। उस समय कामोद्दीपक वायु से प्रेरित हो राजा का वीर्य स्खलित हो गया। उस वीर्य को अभिमन्त्रित करके राजा ने अपनी रानी के पास भेजने का निश्चय किया। उन्होंने अपने विमान के समीप ही बैठे एक श्येन पक्षी से उस वीर्य को रानी के पास भेज दिया। जब वह श्येन उनका वीर्य लेकर आकाश में उड़ा जा रहा था तब एक दूसरे श्येन पक्षी ने उस पर आक्रमण कर दिया। उन दोनों पक्षीयों के परस्पर संघर्ष में राजा का वीर्य यमुना में गिर पड़ा। उस समय अद्रिका नामक एक अप्सरा ब्रह्मा के शाप के कारण मछली के रूप

में जमुना के जल में निवास करती थी । श्येन के पास से जल में गिरे राजा के वीर्य को उस मत्स्यरूपधारिणी अद्रिका ने शीघ्रता से निगल लिया । तत्पश्चात् दसवाँ मास आने पर मत्स्यजीवी मछुओं ने उस मछली को फँसा कर उसके उदर को चीर कर एक कन्या और एक पुरुष को निकाला । आश्चर्यचकित मछुओं ने इस घटना का समाचार राजा को दिया । उनकी बात सुनकर राजा उपरिचर ने उस समय उन दोनों बालकों में जो पुरुष था उसे स्वयं ग्रहण कर लिया । वही मत्स्य नामक धर्मात्मा एवं सत्यप्रतिज्ञ राजा हुआ । इधर वह अप्सरा अद्रिका भी शापमुक्त होकर दिव्य रूप को प्राप्त हो सिद्ध, महर्षि, और चारणों के पथ से स्वर्ग लोक चली गई । (१. ६३, ३९-६६) ।" २. ८, १० (यम की सभा में)। तुकी० अगला शब्द ।

२. मत्स्य (मत्स्यों के राजा) = विराट : २. ५२ २६; ५३, ८ (युधिष्ठिर की सेवा में); ४. १, १७; ५, ४; ७, ११; १३, २. ७; १४, १ (मत्स्य नगरे); १६, २०. ३२. ३३; १८, २५; १९, ३०. ३५. ४४; २०, २६; २२, ३४; २५, २० (सूतेन राज्ञो मत्स्यस्य कीचकेन); ३०, २ (सूतेनैव च मत्स्यस्य कीचकेन). २२; ३१, १९. २०; ३२, २५; ३३, ४; ३४, ६. ९. १०. १४. १६. १८; ३५, ९ (भूमिञ्जयं नाम पुत्रं मत्स्यस्य). ११; ३७, २ (मत्स्यस्य राज्ञो दुहिता, अर्थात् उत्तरा); ४७, ८-१५; ५०, २८; ५२, १९; ५४; ३ (मत्स्यस्य पुत्रं); ६१, १४ (कुले मत्स्यस्य); ६७, ८ (पुत्रं). ९; ६८, २९. ३६. ६७; ६९, १९ (पुत्रेण मत्स्यस्य); ७०, ५; ७१, ३५; ७२, २७. ३०. ४०; ५. १, ४; ५, १४ (मत्स्यपाञ्चाल्योश्च); २७, १८; १५१, १० (मत्स्यो विराटो बलवान्), ६. ७२, १; ८१, २५ (द्रोण ने इन पर आक्रमण किया); ८२, १४ (द्रोण ने इन्हें बाणों से बींध दिया); ११६, ४४ (संग्रामे मत्स्य सैन्धवौ); ७. ८, ४; १०, ७१; १६, २८; २१, २५) द्रोणं मत्स्यादवरजः शतानीकः) ; २३, १५; २५, २०; ९५, ४३; १५६, ३६ (विराट)।

३. मत्स्य (मत्स्य जाति की) = उत्तरा : ४. ५७, ६; ६७, १४।

४. मत्स्य (मत्स्य देश) : ४. १२, १३; ३१, १४

५. मत्स्य = शिव (सहस्रनाम)।

६. मत्स्य (बहु० °स्याः), एक जाति का नाम है : १. १५६, २ (पाण्डव इनके देश में गये थे); २. १४, २८ (जरासन्ध के भय से भाग गई जातियों में ये भी थे); ३०, ८ (अपनी पूर्वदिग्विजय के समय भीमसेन ने इन्हें पराजित किया था); ३१, ४ (दक्षिण दिग्विजय के समय सहदेव ने इन्हें पराजित किया); ४. १, १२; ७, १३ (विराट इनके शासक थे); ११, ७; १३, २. १४. ३५; १६, ३२. ३४. ४३; २१, ४; २२, ९; ३०, २; ३१, ९. १४ (अभेद्यकल्पं मत्स्यानां राजा). ३४; ३२, १. २; ३३, १०; ३४, ६ (मत्स्यानामीश्वराः). ७; ३५, ४; ३८, २६; ४७, ८. २०. ११; १५; ४८, २; ५४, ३; ६८, ५. ११ (राजा मत्स्यानां विराटो वाहिनीपतिः); ७१, ३६; ७२, १९. ४०; ५. १९, १२ (इनके राजा विराट एक अक्षौहिणी सेना के साथ पाण्डवपक्ष में सम्मिलित हुए); २१. ११; २२, १९; ४८, ३७ ; ५०, ७; ५३, २ (ये युधिष्ठिर के पक्ष में थे); ५४, १७ (ये दुर्योधन की उपेक्षा करते थे); ५७, १२. ३३; ६१, २५; ६२, ५; ७२. १४ (युधिष्ठिर के मित्रों में ये भी थे); ७४, १६ (सहजश्चेदिमत्स्यानां प्रवीराणां वृषध्वजः); १६०, १०३; १६१, ४. २१; ६. ९, ४०; १८, १३ (भीष्म की रक्षा की); २०, १२ (भीष्म की सेना में); ४९, ४२ (भीष्म ने इनका वध किया); ५२, ९ (भीष्म ने इन पर आक्रमण किया); ५४, ८ (चेदिमत्स्यकरूषाश्च भीमसेनपदानुगाः). ११९. ५९, १२९ (चेदिपाञ्चालकरूषमत्स्याः); ७१, २२ (दुर्योधन और शकुनि पर आक्रमण किया); ७४, ३५ (अर्जुन को घेर कर खड़े हुए); ११८,२३. ५२ (मत्स्यपाञ्चालचेदीनां); ७. ९, २८ (द्रोण पर आक्रमण किया); १४, ३८ १६, ११; २१, २३. २८. २९ (द्रोण से पराजित होकर पलायन किया). ६१. ६५; २२, ७. २३; २५, २०. २१; ३५, २२; ४०, २०; ४२, ४; ४३, १८; ७८, १३; ९८; ५५; ११०, ३२; १२२, ३२; १५४, ११; १५६, ५१; १५७, ४७; १५८, ३; १६१, १५; १६६, ६३; १८६, ३५ (द्रोण ने इन्हें पराजित किया). ४४ (द्रोण ने इनका वध किया); १८९, ५७; १९०, ३; (द्रोण ने पाँच सौ मत्स्यों का वध किया); १९३, ४१; १९५, ४०; २०१, ३; ८. ८, १८ (पहले कर्ण भी इन्हें पराजित कर चुके थे); ३०, २७; ४५, १४. १६. २८. ३०; ४७, १७; ४८, २१; ४९, ३४; ५६, ७०; ७३, ९. २९; ७८. २७; ९. १६, २७; १०. ८, १५९ (शेष मत्स्यों का अश्वत्थामा ने वध कर दिया); ९, ५०; १५. ३६, ३४।

७. मत्स्य (बहु०) : २. ८, २२ (शतं मत्स्या नृपतयः, यम की सभा में)

मत्स्यनगर = उपप्लव (४. ११, १; ७. १२८, ४५)।

मत्स्यपति = विराट : ४. ३५, २० (विराटपुत्र उत्तर); ५. १, २; १४. ६८, १५।

मत्स्यपुत्र = उत्तर (४. ३८, ४; ६६, १२. २९)।

मत्स्यराज = विराट : २. ३१, २ (अपनी दक्षिण दिग्विजय के समय सहदेव ने इन्हें पराजित किया था); ४. ८, २; २२, ३; ३२, २९ (सुशर्मा से युद्ध किया); ३३, ४. १२. २२; ३४, ९. १०; ४१, ५ (दायादं मत्स्यराजस्य); ६७, ९; ६८, २९. ५३; ७१, २२. २९; ७२, ४० (नगरं मत्स्यराजस्य); ५. ५०, १५ (मत्स्यराजगृहावासनिरोधेनावकर्शितान्); ६४. २६; ७. १५९, ४१ (सहानुजः); ११. २०, ३० (कुलस्त्रियः)।

मत्स्यराज् = विराट : ४. ११, ११; १२, २; १३, १९; ६८, ४।

मत्स्यराजन् = विराट : १. १, १७१; ३. ५१, ४३; ४. १८, ५; ३०, ४; ३३, ८. २२; ७. २३, १५।

मत्स्यवीर = उत्तर (४. ६७, २२)।

मत्स्या = सत्यवती (१. ६३. ६२)।

मत्स्योपाख्यानः १. २, १९२। देखिये वैवस्वतोपाख्यान।

मथुरा, एक नगर (वर्तमान मथुरा) का नाम है ; २. १४, ४३ (यादवों की नगरी, जहाँ से जरासन्ध के भय से यादवगण अन्यत्र भाग गये). ६७ (महाराज जरासन्धभयात्तदा मथुरां संपरित्यज्य गता द्वारवतीं पुरीम्); १९, २४ (जरासन्ध ने मथुरा की ओर लक्ष्य करके एक गदा फेंकी; जहाँ यह गदा गिरी उसका नाम गदावसान पड़ा); १२. १०१, ५ (यवनकाम्बोजा मथुरामभितश्च ये ... नियुद्धकुशला); ३३९, ९० (नारायण श्रीकृष्ण के रूप में मथुरा में अवतार लेंगे)।

मद एक असुर का नाम है : ३. १२४, १९ (मदो के नाम महावीर्यो बृहत्कायो महासुरः); १२५, १ (इसने इन्द्र को भयभीत किया). ८ मदं च व्यभजद्राजन्पाने स्त्रीषु च वीर्यवान्). ९ (मदं विनिक्षिप्य ... संतर्प्य चेन्दुना); १३. १५६, २७ (च्यवन ने मद की सृष्टि की—इसके घोर रूप का वर्णन). ३०. ३२ (इसे द्यूत, आखेट, मदिरा और स्त्रियों में वितरित किया गया); १५७, २. ४; १४. ९, ३३ (मदं नामासुरं विश्वरूपं)। तुकी०, असुर, दानव।

मदधार, एक पर्वत का नाम है जिसे पूर्वदिग्विजय के समय भीमसेन ने जीता था (२. ३०, ९)।

१. मदन = काम (१. ८, १४; ३. ४६, १३; १२२, ९)।

२. मदन = शिव (सहस्रनाम)।

मदयन्ती, राजा मित्रसह (कल्माषपाद अथवा सौदास) की पत्नी का नाम है। इसके गर्भ से वसिष्ठ द्वारा अश्मक की उत्पत्ति हुई थी : १. १२२, २२ (मदयन्ती जगामर्षिं वसिष्ठमिति न श्रुतम्। तस्माल्लेभे च सा पुत्रं अश्मकं नाम भाविनी); १७७, ४३-४६; १८२, २४ (स्वयं शापग्रस्त होने के कारण कल्माषपाद ने मदयन्ती को वसिष्ठ के पास भेजा। वसिष्ठ ने उसके गर्भ से अश्मक नामक पुत्र उत्पन्न किया); १२. २३४, ३० (राजा मित्रसहश्चापि वसिष्ठाय महात्मने। मदयन्तीं प्रियां दत्त्वा तया सह दिवं गतः); १३. १३७, १८; १४. ५७, १९; ५८, ६. १९ (उत्तङ्क ने इससे कुण्डल प्राप्त किये)।

मदिरा, वसुदेव जी की पत्नियों में से एक का नाम है (१६. ७,

१८)।

मदिराश्व, विराट के भ्राता का नाम है : ४. ३१, १३ (शतानीकादवराजो मदिराक्षोऽभ्यहारयत्); ३२, २१ (विराट की सेना के पृष्ठभाग में); ३३, ४०। तुकी० मदिराश्व।

१. मदिराश्व = मदिराक्ष (विराट का भ्राता) : ५. ५७, ६ (केवल कलकत्ता सं० में; पूना सं० में मदिराक्ष है); १७१, १५ (पाण्डव सेना के रथियों में से एक); ८. ६, ३४ (द्रोण ने इसका वध किया)।

२. मदिराश्व, एक प्राचीन राजा का नाम है : १२. २३४, ३५ (हिरण्यहस्त को कन्यादान करके ये देववन्दित लोक में गये); १३. २, ७-८ (ये इक्ष्वाकुकुमार दशाश्व के पुत्र और एक राजर्षि थे। इनके पुत्र का नाम द्युतिमान् था)।

मद्गुरु, एक जाति का नाम है : १३. ४८, २१ (निषादी मद्गुरं सूते दासं नावोपजीविनम्)।

१. मद्र (बहु० °द्राः), एक जाति का नाम है . १. १२३, ४०; १९०, ८ (शल्यो मद्राणामीश्वरो बली); २. ३२, १४ (ततः शाकलमभ्येत्य मद्राणां पुटभेदनम्); ५२, १४ (युधिष्ठिर के लिए उपहार लाये); ३. १९३, ५ (अश्वपति इनके शासक थे); ६. ६१, १२ (दुर्योधन की सेना में : इन लोगों ने अर्जुन और अभिमन्यु पर आक्रमण किया); ७१, १४ (मद्रसौवीरं गान्धारैः). २० (मद्राणामृषभेण यशस्विना); ७५, १९ (मद्रसौवीरकेकयैः, भगदत्त का अनुसरण किया); ७. ७, १५ (द्रोण के व्यूह के पृष्ठभाग में स्थित); १५, ३४; २०, ७ (द्रोण के गारुडव्यूह के ग्रीवा भाग में स्थित); ९५, ३९ (मद्राणामीश्वरः शल्यो); १९३, ११; ८. ९, ८५ (मद्राणामधिपो); ११, १९ (शल्यो व्यवस्थितः महत्या सेनया सार्धं मद्रदेशसमुत्थया); २२, ३; ४४, ४७ (मद्रगान्धारा आरट्टा नामतः ··· इति प्रायोऽतिकुत्सिताः); ४५, १६. २३ (स्त्रीणां मद्रस्त्रियो मलम्); ४६, २१ (दुर्योधन की रक्षा की); ४७, २०; ५०, १४. १८; ५६, ७० (भीमसेन पर आक्रमण किया); ९. ७, १२; १२, २५ (मद्राणामृषभं ··· शल्यं); १३, १९; १५, २८-३०. ३२; १८, ३. १९. २९ (शल्य का वध हो जाने पर इन लोगों ने युधिष्ठिर पर प्रबल आक्रमण किया किन्तु पाण्डवों ने इनका वध कर दिया); २३, २७ (मद्रयोधास्तरस्विनः)। तुकी० मद्रक (बहु०), माद्रेय (बहु०)।

२. मद्र (बहु० °द्राः) : १. १२१, ३६ (रानी मद्रा ने व्युषिताश्व के मृत शरीर से सात पुत्र उत्पन्न किये जिनमें से तीन शाल्व देश के और चार मद्र देश के शासक हुए)।

१. मद्रक, एक प्राचीन क्षत्रिय राजा का नाम है जो क्रोधवशसंज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ६०)।

२. मद्रक (बहु० °काः) = मद्र (बहु०) : २. ४, २४ (युधिष्ठिर की सेवा में); ६. ५१, ७ (भीष्म की रक्षा की); ६१, १६. १९; ८. ४०, २१. २३. २४. २९. ३०. ३२. ३३. ३६. ३८. ४०. ४२. ५३ (कल्याद्वयो मद्रकाधम); ४५, ८. २६. ३६. ३७ (इनकी गर्हित रीतियों का वर्णन) ; ९. ७, ९ ; ८, २५ ; १८, ६ (मद्रराजप्रिये युक्तैर्मद्रकाणां महारथैः); १२. ६५, १३ (निम्न कोटि की जातियों के अन्तर्गत इनकी गणना); २०७, ४२ (दक्षिण के निवासी थे)।

मद्रकाधम, मद्रकाधिप, मद्रकेश्वर = देखिये शल्य (वस्था०)।

मद्रज, मद्रजनाधिप, मद्रजनेश्वर — देखिये शल्य (वस्था०)।

मद्रनाभ (बहु० °भाः) एक जाति के लोगों का नाम है : १३. ४८, २२।

मद्रप, मद्रपति — देखिये शल्य (वस्था०)।

मद्रनृपानुज = शल्यानुज (९. १७, ६७)।

१. मद्रराज = द्युतिमत् (१. ९५, ८०)।

२. मद्रराज = शल्य (देखिये वस्था०)।

३. मद्रराज = अश्वपति (३. २९३, १३)।

मद्रराज् = शल्य (देखिये वस्था०)।

मद्रराजात्मज = रुक्मरथः ८. ५, २२ (अभिमन्यु ने इनका वध किया था)।

मद्रराजानुज : ९. १७, ६१ (मद्रराजानुजो युवा)।

मद्रराजेश्वरात्मज = शल्य (देखिये वस्था०)।

मद्राणां ऋषभः, मद्राणां वृषभ , — देखिये शल्य (वस्था०)।

मद्राणामधिपः, मद्राणामीश्वरः = देखिये शल्य (वस्था०)।

१. मद्राधिप = अश्वपति : ३. २९४, १ ; २९९, १३।

२. मद्राधिप = शल्य (देखिये वस्था०)।

मद्राधिपति = शल्य (देखिये वस्था०)।

मद्रेश, १. मद्रेश्वर = शल्य (देखिये वस्था०)।

२. मद्रेश्वर = माद्री और शल्य के पिता (१. ११०, ५)।

मद्रेश्वरसुत = शल्यसुत रुक्मरथ (७. ४५, ९)।

१. मधु, एक प्राचीन राजा का नाम है : २. ८, १६ (यम की सभा में)।

२. मधु, एक असुर का नाम है : ३. १२, ३९ (कैटभ सहित यह असुर ब्रह्मा को मारने के लिये उद्यत हुआ) ; २०२, १८ (मधुकैटभयोः पुत्रो धुन्धुर्नाम सुदारुणः) ; २०३, १७. २०. २८. ३५ (मधु और कैटभ ने ब्रह्मा जी को भयभीत किया, किन्तु मधुसूदन विष्णु ने इन दोनों का वध कर दिया) ; २०४, ९ (मधुकैटभयोः पुत्रो धुन्धुर्भीमपराक्रमः) . ४२ (धुन्धुर्नाम महादैत्यो मधुकैटभयोः सुतः) ; ५. १३०, ५० (एकार्णवे च स्वपता निहतौ मधुकैटभौ); ६. ६७, १४ (कर्णस्रोतोभवं चापि मधुं नाम महासुरम्) . १५ (ब्रह्मणोऽपचितिं यातुं जघान पुरुषोत्तमः , इसका वध करने के कारण ही श्रीकृष्ण मधुसूदन कहलाये); ९. ४९ २२ (हत्वा पुरा विष्णुरसुरौ मधुकैटभौः) ; ५५, ३० (मधुकैटभयोर्युधि); १२. २०७, १४-१६ (श्रीहरि के नाभिकमल से ब्रह्मा की उत्पत्ति हो जाने के बाद तमोगुण से मधु नामक महान् असुर प्रकट हुआ जो असुरों का पूर्वज था। उस दैत्य का स्वभाव अत्यन्त उग्र था। ब्रह्मा का हित करने के लिए पुरुषोत्तम भगवान विष्णु ने मधु का वध कर दिया। मधु का वध करने के कारण ही श्रीकृष्ण मधुसूदन कहलाये); २२७, ५१ (पृथिवी के शासक दैत्य-दानवों के अन्तर्गत इसका उल्लेख); ३४७, २६-३१ (भगवान नारायण की प्रेरणा से उनके नाभिकमल के पत्ते पर पड़ी दो बूँदों में से एक जो तमोगुण की प्रतीक थी उस पर भगवान् की दृष्टि पड़ते ही मधु नामक दैत्य की उत्पत्ति हुई। दूसरी रजोगुणमयी बूँद से कैटभ उत्पन्न हुआ। मधु और कैटभ नामक इन दोनों असुरों ने ब्रह्मा के पास से वेदों का हरण कर लिया। विष्णु ने इन वेदों को पुनः प्राप्त करके ब्रह्मा जी को दे दिया) . ७० (रजस्तमोविष्टतनू तावुभौ मधुकैटभौ। ब्रह्मणोपचितिं कुर्वन् जघान मधुसूदनः)। तुकी० असुर, असुरेन्द्र (द्वि०), दानव (द्वि०), दानवेन्द्र (द्वि०), कैटभ।

३. मधु = शिव (सहस्रनाम)।

४. मधु = विष्णु (सहस्रनाम)।

५. मधु = (बहु०) = वृष्णि लोग : २. २२, ३५ (अवध्यं मधुभिर्मृधे); ३. १८३, ११ (मधूनाम सेना, पाण्डवों की सहायता करेगी)।

मधुकलोचन = शिव (सहस्रनाम)।

मधुकुम्भा, = एक मातृका का नाम है (९. ४६, १९)।

मधुकैटभहन् = विष्णु (श्रीकृष्ण, नारायण) : १२. ३४६, १९।

मधुघातिन् = श्रीकृष्ण (नारायण) : १०. १६, २८।

मधुच्छन्द, एक वानप्रस्थी ऋषि का नाम है। इन्होंने अपने धर्म के पालन द्वारा उत्तम लोक प्राप्त किया था (१२. २४४, १६)। ये विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक थे (१३. ४, ५०)।

मधुनिषूदन = श्रीकृष्ण (विष्णु) : ३. ४७, १८ (श्रीमान्विष्णुर्मधुनिषूदनः)।

मधुनिहन् = श्रीकृष्ण (विष्णु) : ३. १८, २४ (मधुनिहा

हरिः)।

१. मधुपर्क, गरुड की प्रमुख सन्तानों में से एक का नाम है (५. १०१, १४)।

२. मधुपर्क, देवताओं तथा अतिथियों के पूजन का एक उपचार जो विशेष विधि से अर्पित किया जाता है (३. ५२, ४१: धर्मात्मा संप्राप्तं धर्मचारिणम्। शास्त्रवन्मधुपर्केण पूजयामास धर्मराट्)।

१. मधुप्रवीर = बलराम (५. ३, १५)।

२. मधुप्रवीर = श्रीकृष्ण (५. ६६, १२)।

मधुमन्त = (बहु० °न्ताः), भारतवर्ष की एक जाति का नाम है (६. ९, ५३)।

मधुर, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७१)।

मधुलिका, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १९)।

मधुवटी, कुरुक्षेत्र की सीमा में स्थित एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ९४)।

मधुवन, वानरराज वालि के अधिकार में सुरक्षित एक वन जिसके भीतर बलपूर्वक घुसकर हनुमान, अङ्गद आदि वानरों नें मधुपान कर लिया था (३. २८२, २७,)।

मधुवर्ण, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७२)।

मधुविला = समङ्गा : कर्दमिल क्षेत्र के निकट बहने वाली एक प्रसिद्ध नदी का नाम है : ३. १३५, १। वृत्रासुर वध करके श्रीहीन हुये इन्द्र इसी में स्नान करके पापमुक्त हुये थे (३. १३५, २)।

मधुश्च्युतानामप्रपा : = शिव (सहस्रनाम)।

मधुसूदन = श्रीकृष्ण : १. १९९, १८ ; २१८, ३ ; २२२, १५; २२५, २४; २२८, ४०; २. २, २५; २२, ३६; २४, ३१; ३७, १७. १८. २९ ; ४५ ,१९. २१; ३. १२, १३. २३. ३५. ३७. ५१. ६०. ६४. ७७. ७९. ११६. १२१. १२५. १३३; २२, ४४ ; ४७, २२; ५१, १६. १९ ; ८२, ३४ (सुराणां सर्वेषामादिस्तु मधुसूदनः); ८८, २४. २७ ; १०२, १९. २५ ; २०१, १७ ; २०३, २४. ३४. ३५ (मधुकैटभ का वध किया); ५. ७, ११. १३ ; ५५, २; ५७, ३०; ६९, ३. ४ (त्रियुगं); ७०, ४. १५ ; ७२, १४. ४०. ६६. ७७ ; ७४, १. १०. ११; ७६, १८; ७८, १२ ; ८२, ४. १२. ३८ ; ८३, २५. ४८. ६३. ६५ ; ८४, ३. २३; ८५, १. ५; ८६, १७ ; ८९, २५ ; ९०, १६. २३. ३१. ३७. ८८. १०१; ९१, ७. २०. २१. ३६. ३७. ४० ; ९२, ९. १३ ; १२७, ३. ७. ८. १४; १३१, २१. २४ ; १४०, १. ५; १४१, ५. १९. २०. २२. ३५. ५२ ; १४३, १. ६. ९. १५. २७. २८; १५७, २८. ३०. ३५ ; ६. २५, ३५ ; २६, १. ४ ; ३०, ३३ ; ३२, २; ५२ ५१; ६७, १६ (वधादेव देवदानवमानवाः। मधुसूदन मित्याहुर्ऋषयश्च जनार्दनम्); ६८, १० ९६, ४. ८. ११ ; १०७, २२. ४७ ; ११८, ३४; ७. २७, ३ ; २८, ४; ७६, २. ६; ८३, २. ९. १२; ८५, ४२; ९९, २८; १०३, १५; १४८, ३४ ; १४९, १० ; १७३. ३१. ३४; १८०, ६. ९; १९३, ४८; ८. ७२, १६ ; ७४, २०. ३८. ३९. ४४ ; ८०, २७ ; ८६, १७ ; ८७, ११५ ; ९०, ३१. ५१; ९. ३३, १७ ; ३५, ५. १२. १५ ; ४९, २० ; ६१, १८ ; ११. १३, १; १६, २६. ५५ ; १९, २. ११ ; २२,२ ; २३, ३४ ; २४, ३० ; २५, ६. २१. २६. ४१. ४४ ; १२. १, १६ ; ४६, ३१ ; ४७, १४ ; ५२, ६. ११; ५३, १; ५४, १३ ; २०७, १६ (वधात्सर्वे देवदानवमानवाःमधुसूदनंमित्याहुर्ऋषभं सर्वसात्वताम्). २९; ३४१, १ ; ३४२, १ ; ३४७, ७० ; ३४८, ७३ ; १३. १४, ३४. ९९. १३३ ; ३४, २९. ३० ; ७०, १८ ; ९७, ७. ८ ; १०९, ८ ; १३९, २८. ४६ ; १४०, २२ ; १४८, १०. २५ ; १४९ २१ (= विष्णु, सहस्रनाम); १५९, १. ४. ४३ ; १६०. १ ; १४. १६, १८ ; १९, ३८ ; ५२, ७. ९. ११. ४४ ; ५३, ९. २१ ; ६६, २६ ; ६८, ९. २१ ; ८६, ७ ; १५. ८, २; १६. १, २३; ३, २३. ४४; ६, १३; १८. ४, ४।

मधुस्रव, कुरुक्षेत्र की सीमा के अन्तर्गत और पृथूदक के पास स्थित एक प्रचीन तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से सहस्र गोदान का फल प्राप्त होता है (३. ८३, १५०)।

मधुरस्वरा, एक अप्सरा का नाम है जिसने अर्जुन के स्वागतार्थ इन्द्र की सभा में नृत्य किया था (३. ४३, ३०)।

मधुहन् (मधु का हनन करने वाले) = श्रीकृष्ण : ३. १८३, १५; ५. ७०, ४ (मधुहा मधुसूदनः); १३. १४७, ९; १३. ६८, १३।

मधूद्वह = सात्यकि (७. १९१, ५०)।

मध्यदेश, भारतवर्ष के प्रचीन मध्यवर्ती प्रान्त का नाम है : १२. १६८, ४६; १७१, ५; १३. ६८, ३।

मध्यदेशीय, मध्यदेश के निवासियों का द्योतक है (१२. १६८, ३०)।

मध्यदेश्य मध्यदेश के निवासियों का द्योतक है : ५. १६०, १०३ (दुर्योधन की सेना में)।

मध्यम = शिव : १३. १७, ५२ (सहस्रनाम); १४. ८, २०।

मध्यमकेय (बहु०) एक जाति के लोगों का नाम है जिन्हें अपनी पश्चिम दिग्विजय के समय नकुल ने पराजित किया था (२. ३२, ८)।

मनस् , मूर्तिमान मनस् का द्योतक है : २. ११. २० (ब्रह्मा की सभा में)।

मनसः परमा योनिः = शिव (सहस्रनाम)।

मनस्पति = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

मनस्यु, महाराज पूरु के पौत्र और प्रवीर के पुत्र का नाम है। इनकी माता का नाम शूरसेनी तथा पत्नी का नाम सौवीरी था। इन्होंने अपनी पत्नी के गर्भ से शक्त, संहनन तथा वाग्मी नामक तीन पुत्र उत्पन्न किए थे (१. ९४, ६-७)।

मनस्विनी, प्रजापति दक्ष की पुत्री, धर्मराज की पत्नी और चन्द्रमा (सोम) की माता का नाम है (१. ६६, १९)।

मनः सुपर्ण = सूर्य (३. ३, २५)।

१. मनु, मानव-सृष्टि के प्रवर्तक आदि मनु, जो विराट अण्ड से प्रकट हुये थे : १. १, ३२. ५२ (यहाँ नीलकण्ठी के अनुसार मन = मन्त्रः 'मनुर्मन्त्रः नारायणं नमस्कृत्येति) . २२७; ४१, ३१ (इत्येवं मनुरब्रवीत्); ६६, ४६ (आरुषी तु मनोः कन्या). ५०; ७४, ९९ (मनुरब्रवीत); १७०, ४३ (चाक्षुषी नाम विद्येयं यां सोमाय ददौ मनुः); २. ११, १० (अपरिहार्या मेधानां मागधा मनुना कृताः); ५३, २१ (इन्होंने भी वह ऐश्वर्य और समृद्धि नहीं प्राप्त की जो युधिष्ठिर को राजसूय यज्ञ द्वारा उपलब्ध हुई थी); ३. ३२, ३९ (मनोरेष विनिश्चयः); ३५, २१ (यथा मे मनुरब्रवीत्); ५३, ४ (साक्षादिव मनुः स्वयम्); ८४, १३७ (मनोः प्रजापतेर्लोकानाप्नोति पुरुषर्षभः); ८५, १२७; ९२, १० (इन्होंने तीर्थयात्रा की थी); ४. ५६, १० (ये युद्ध देखने आये); ७०, १५; ५. ४०, ११; ११७, १४; ६. ६, ४६ (इन्होंने विन्दु सरोवर में यज्ञ किया था); ९. ४५, १० (स्कन्द के अभिषेक के समय उपस्थित हुए); १२. ५५, १९; ५६, २३ (मनुना...गीतौ श्लोकौ महात्मना); ६७, २१. २२; ७८, ३०; ८८, १६ (इति व्यवस्था भूतानां पुरस्तान्मनुना कृता); ११२, १७. १९; १२१, १०. १२. २२ (रुद्रतनयो मनुर्ज्येष्ठः शिवंकरः। नामान्येतानि दण्डस्य कीर्तितानि); १३९, १०३; १५२, १४. ३०; २०१, २ (मनोः प्रजापतेर्वादं महर्षेश्च बृहस्पतेः). १०. १३; २०२, १; २०३, १; २०४, १; (२०५, १; २०६, १ मनु और बृहस्पति का संवाद); २०८, २१ (वसवं ऽत्रौ प्रकीर्तिताः एत एवंविधा देवा मनोरेव प्रजापतेः); २६५, ५; ३३४, ३५ (इक्कीस प्रजापतियों के अन्तर्गत इनकी गणना); ३४२, ५७ (दक्ष की दस कन्याओं के साथ विवाह किया); ३४९, ५५ (शनैश्चरः सूर्यपुत्रो भविष्यति मनुर्महान्). ५६ (मन्वादिगणपूर्वकः); १३. १४, ४२८; १६, ९. २२; ४४, १८. २३; ४६, ८ (स्त्रियः पुंसां परिददे मनुर्जिगमिषुर्दिवम्); ४७, ३५ (मनुनाभिहितं शास्त्रं); ६१, ३५; ६५, ३; ६७, १९; ६८, ३१ (धर्मं तं मनुः प्राह धर्मवित्); ८८, ४; ११५, ५३; १४७, २३ (गोविन्दो

मनोर्वंशे महात्मनः); १६५, ५७ (मनुश्चैव प्रजापतिः) । तुकी० १. मनु, और प्रजापति तथा प्रजेश्वर।

२. मनु चाक्षुषः १३. १८, २० (वरिष्ठो नाम भगवांश्चाक्षुषस्य मनोः सुतः)।

३. मनु प्राचेतस : १२. ५७, ४३ (प्राचेतसेन मनुना श्लोकौ चेमावुदाहृतौ); ५८, २ (प्राचेतसो मनुः)।

४. मनु सावर्ण : १३. १८, ४३ (सावर्णस्य मनोः सर्गे सप्तर्षिश्च भविष्यति)।

५. मनु स्वारोचिष : १२. ३४८, ३६. ३७ (इन्होंने नारायण के धर्म का ब्रह्मा से उपदेश ग्रहण करके उसे अपने पुत्र शङ्खपद को प्रदान किया)।

६. मनु स्वायम्भुव : १. ७३, ९ धर्मोन्यथापूर्वं मनुः स्वायम्भुवोऽब्रवीत्); १२०, ३६; ३. १८०, ३५; ५. ३७, १; ७. ६९, २१ (जब मनुष्यों ने पृथिवी का दोहन किया तब ये बछड़ा बने); १२. २१, १२; ३६, २ (सिद्धानां चैव संवादं मनोश्चैव प्रजापतेः). ५ (सिद्धों के साथ इनका संवाद); २६७, ३६; ३३५, ४४; ३४०, ३४ (अष्ट प्रकृतियों के अन्तर्गत इनकी गणना); ३४९, ४२; १३. ९८, २. ५. ८. १०. ६५ (मनु और सुवर्ण का संवाद); ११५, १२। तुकी० स्वायम्भुव।

७. मनु वैवस्वत : १. ७५, १। "मरीचिनन्दन कश्यप ने अपनी पत्नी, दक्षकन्या अदिति के गर्भ से इन्द्र आदि बारह आदित्यों को जन्म दिया। तदनन्तर उन्होंने अदिति से विवस्वान को उत्पन्न किया। विवस्वान के पुत्र यम हुये जो वैवस्वत कहलाते हैं। वे समस्त प्राणियों के नियन्ता हैं। विवस्वान के ही पुत्र परम बुद्धिमान् मनु हुए। मनु से सूर्यवंश की प्रतिष्ठा हुई। मनु से ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि सब मानव उत्पन्न हुए। तभी से ब्राह्मणकुल क्षत्रिय से सम्बद्ध हुआ। उनमें से ब्राह्मण जातीय मानवों ने छहों अङ्गों सहित वेदों को धारण किया। वेन, धृष्णु, नरिष्यन्त, नाभाग, इक्ष्वाकु, कारूष, शर्याति, आठवीं इला, नवें क्षत्रिय धर्मपरायण पृषध्र तथा दसवें नाभागारिष्ट – इन दसों को मनुपुत्र कहा जाता है। इस पृथिवी पर मनु के पचास और पुत्र उत्पन्न हुए परन्तु आपसी कलह के कारण सबके सब नष्ट हो गये (१. ७५, १०-१७)।" १. ९४, ६४; ९५, ३ (प्रजापतितो मनोः). ७ (विवस्वान् के पुत्र और इला के पिता); ३. १८७, १. ३. १०-१२. १४-१६. १८. २१. २२. २४-२६. ३६. ३८. ३९. ४१. ४६. ५१. ५५. ५७. ५८ (मनु और मत्स्य की कथा); ६. ९, ५; २८, १ (विवस्वान् ने मनु को योग की शिक्षा दी और मनु ने इक्ष्वाकु को उसका उपदेश दिया); १२. १२२, ३९. ४२; १६६, ६७-७३ (लोकपालों ने सूर्यपुत्र को खड्ग देकर कहा : 'तुम मनुष्यों के शासक हो। इस धर्मगर्भित खड्ग से प्रजा का पालन करो। जो लोग स्थूल शरीर और सूक्ष्म शरीर को दुख देने के लिये धर्म की मर्यादा का उल्लंघन करें उन्हें तुम न्यायपूर्वक पृथक्-पृथक् दण्ड देना। धर्मपूर्वक समस्त प्रजा की रक्षा करना, किसी के प्रति स्वेच्छाचार न करना। कटुवचन से अपराधी का दमन करना वाग्दण्ड कहलाता है। जिसमें अपराधी से सुवर्ण वसूल किया जाय वह अर्थदण्ड कहलाता है। शरीर के किसी अङ्ग विशेष का छेदन करना कायदण्ड कहलाता है और अपराधी के वध को प्राणदण्ड कहते हैं। ये चारों दण्ड खड्ग के दुर्निवार या दुर्धर्षरूप हैं।' ऐसा कहकर लोकपालों ने मनु को विदा कर दिया। तत्पश्चात् मनु ने प्रजा की रक्षा के लिए वह खड्ग अपने पुत्र क्षुप को दिया); ३४८, ५१ (इन्होंने विवस्वान् से नारायण-धर्म का उपदेश ग्रहण करके उसका ज्ञान इक्ष्वाकु को प्रदान किया); १३. २, ५; १७, १७७ (इन्होंने गौतम से शिव सहस्रनाम का उपदेश ग्रहण किया); ३०, ६ (शर्याति के पिता); १३७, १९ (सुद्युम्न के पिता); १४७, २६ (मनोश्च वंशज इला सुद्युम्नश्च भविष्यति); १४. ४, २ (आसीत्कृतयुगे तात मनुर्दण्डधरः प्रभुः। तस्य पुत्रो महाबाहुः प्रसन्धिरिति विश्रुतः)। तुकी० आदित्यतनय, सूर्यपुत्र, वैवस्वत।

८. मनु = विष्णु (सहस्रनाम)।

९. मनु एक अग्नि का नाम है : ३. २२१, ४ (तप के मनु नामक अग्निस्वरूप पुत्र ने प्राजापत्य यज्ञ सम्पन्न कराया था). ८ (तपश्च मनुं पुत्रं भानुं). १५ (निशा त्वजनयत् कन्यामग्नीषोमावुभौ तथा। मनोरेवाभवद्भार्या सुषुवे पञ्च पावकान्). १७ (सोऽग्निर्विश्वपतिर्नाम द्वितीयो वै मनोः सुतः)।

१०. मनु : १. ६५, ४५ (प्राधा और कश्यप से उत्पन्न एक कन्या का नाम है)।

११. मनु, नीलकण्ठी के अनुसार मनुमन्त्र का द्योतक है (२. १, ५२)। १३. ७, १८ (मनुं साधयतो राज्यं नाकपृष्ठमनाशके)।

१२. मनु (बहु०) ३. ३, ५६ (मनूनां मनुपुत्राणां...ईश्वरः); ६. ३४, ६ (चत्वारो मानवस्तथा); १३. १४, २८० (स्वायंभुवाद्या मनवो). ३९७ (मानवः सप्त)।

मनुपुत्र (बहु०) : ३. ३, ५६।

मनोगति = अग्नि (५. १५, ३०)।

१. मनोजव, अनिल नामक वसु और शिवा के प्रथम पुत्र का नाम है (१. ६६, २५)।

२. मनोजव, कुरुक्षेत्र की सीमा में व्यासवन में स्थित एक तीर्थ का नाम है। यहाँ स्नान करने से सहस्र गोदान का फल मिलता है। (३. ८३, ९३)।

३. मनोजव = शिव (सहस्रनाम)।

४. मनोजव = विष्णु (सहस्रनाम)।

मनोजवा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १६)।

मनोनुग, क्रौञ्चद्वीपवर्ती वामन पर्वत के समीपस्थ एक देश का नाम है (६. १२ २१)।

मनोभव = काम (देखिये वस्था०)।

१. मनोरमा, एक अप्सरा का नाम है। यह कश्यप और प्राधा से उत्पन्न हुई थी : १. ६५, ५० ; १२३, ६२ (अर्जुन के जन्मोत्सव के समय नृत्य किया)।

२. मनोरमा, सप्तसरस्वतियों में से एक नदी का नाम है, जो उद्दालक मुनि के आवाहन पर उनके यज्ञ में प्रकट हुई थी (९. ३८, २५)।

मनोविरुध् (बहु०) देवों के एक वर्ग का नाम है (१३. १८, ७५)।

मनोवेग = शिव (सहस्रनाम)।

मनोहर = विष्णु (सहस्रनाम)

१. मनोहरा, सोम नामक वसु की पत्नी का नाम है। इनके गर्भ से पहले वर्चा का और फिर शिशिर, प्राण तथा रमण नामक पुत्रों का जन्म हुआ (१. ६६, २२)।

२. मनोहरा, अलकापुरी की एक अप्सरा का नाम है। इसने अष्टावक्र के स्वागत के लिये कुबेर-सभा में नृत्य किया था (१३. १९, ४५)।

१. मन्त्र, मूर्तिमान मन्त्र का द्योतक है : २. ११, ३० (ब्रह्मा की सभा में)।

२. मन्त्र = शिव (सहस्रनाम)।

३. मन्त्र = विष्णु (सहस्रनाम)।

मन्त्रकार = शिव (सहस्रनाम)।

मन्त्रपर्वन् : १. २, ४७ (सभापर्व ततः प्रोक्तं मन्त्रपर्व ततः परम्)।

मन्त्रमूर्ति = शिव : १. १८, ४३ (मन्त्रमूर्तिर्महेश्वरः)।

मन्त्रविद् = शिव (सहस्रनाम)।

मन्त्रस्तुत = स्कन्द (३. २३२, १२)।

मन्थरा, दुन्दुभी नामक गन्धर्वी के अंश से उत्पन्न एक कुबड़ी दासी का नाम है जो कैकेयी की सेवा करती थी : ३. २७६, १०. १५ (ब्रह्मा ने मन्थरा बनी हुई दुन्दुभी को जो-जो कार्य जैसे-जैसे करने थे उसे समझा दिया)।

मन्थान = शिव (सहस्रनाम)।

मन्थिनी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २८)।

मन्दग (बहु०) शाकद्वीप के एक जनपद का नाम है जिसमें धर्मात्मा शूद्रों का निवास है (६. ११, ३८)।

मन्दगा, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, ३३)।

मन्दपाल, एक देवर्षि का नाम है : १. २, १२९; २२९, ५-३४ (ये धर्मज्ञों में श्रेष्ठ और कठोर धर्म का पालन करने वाले महर्षि थे। ऊर्ध्वरेता मुनियों के मार्ग का आश्रय ले ये सदा वेदों के स्वाध्याय, धर्मपालन, तथा तपस्या में संलग्न रहते थे। अपनी तपस्या पूर्ण करके जब ये पितृ लोक में गये तब वहाँ इन्हें इनके तप एवं सत्कर्मों का फल उपलब्ध नहीं हुआ। जब इन्होंने देवताओं से इसका कारण पूछा तब देवताओं ने इन्हें बताया कि ये अपने पितृ-ऋण से उऋण नहीं हुए हैं। अतः देवों ने इन्हें सन्तानोत्पत्ति करके अपनी वंश परम्परा को अविच्छिन्न बनाने का परामर्श दिया। यह सुन कर शीघ्र सन्तान उत्पन्न करने के लिए इन्होंने शार्ङ्गिक पक्षी होकर जरिता नामक शार्ङ्गिका से सम्बन्ध स्थापित किया। उसके गर्भ से चार ब्रह्मवादी पुत्रों को जन्म देकर ये मुनि लपिता नामक पक्षिणी के पास चले गये। बच्चे अपनी माता के साथ खाण्डव वन में ही रहे। जब अग्निदेव ने उस वन को भस्म करना आरम्भ किया तब इन्होंने उनकी स्तुति की तथा अपने पुत्रों की जीवन रक्षा के लिए वर माँगा। अग्नि देव ने 'तथास्तु' कह कर इनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली); २३१, १७; २३२, ६. २०. २२; २३३, १. ७. १४. २०. २२. २६ (मन्दपाल ने लपिता से अपने बच्चों की रक्षा के लिए चिन्ता प्रकट की। लपिता के ईर्ष्यायुक्त वचन सुन कर इन्होंने उससे अपने कथन की यथार्थता बताकर अपने बच्चों के पास जाने के लिए प्रस्थान किया। बच्चों के पास पहुँचने पर भी जब उन बच्चों ने इनका अभिनन्दन नहीं किया तब इन्होंने जरिता से अपने ज्येष्ठ आदि पुत्रों का परिचय पूछा। जरिता ने इन्हें फटकारते हुए इनसे कहा कि जिन पुत्रों का परित्याग करके ये अन्यत्र चले गये हैं उन पुत्रों से अब इनका क्या सम्बन्ध है। मन्दपाल ने तब स्त्रियों के सौतिया-डाह रूपी दोष का वर्णन करके उनकी अविश्वसनीयता बताया। तत्पश्चात् अपने पास आये पुत्रों को इन्होंने आश्वासन दिया तथा उन पुत्रों और जरिता को साथ लेकर देशान्तर के लिए प्रस्थान किया)।

मन्दर, एक पर्वत का नाम है : १. १८, १ (पर्वतवरं). ५. १०. १३ १९. २३. ३२ (इस पर्वत की ऊँचाई ग्यारह सहस्र योजन थी। पृथिवी के भीतर भी यह उतनी ही ऊँचाई तक धँसा हुआ था। इसकी शोभा का वर्णन। भगवान् विष्णु की प्रेरणा से शेषनाग के द्वारा समुद्रमन्थन के लिए इसका उत्पाटन। तदनन्तर इसे मथानी बनाया गया। समुद्र-मन्थन के समय इसने जल-जन्तुओं एवं पातालवासी प्राणियों का संहार किया); १९, ३० (समुद्र-मन्थन द्वारा अमृत प्राप्त कर लेने के पश्चात् देवताओं ने इसे सम्मानपूर्वक इसके पूर्व स्थान पर पहुँचा दिया); ६८, १२ (उद्यम्य मन्दरं दोर्भ्यां वहेत्सवनकाननम्); २०७, ३२ (गोपुरैर्मन्दरोपमैः); २२७, ४१ (इन्द्र ने मन्दराचल के एक शिखर को उखाड़ कर उससे अर्जुन पर प्रहार किया); २. १०, ३१ (कुबेर की सभा में); ५२, २ (मेरुमन्दरयोर्मध्ये शैलोदामभितो नदीम्); ३. ४२, २१-२९ (विधिपूर्वक पितरों का तर्पण करके शैलराज मन्दराचल से विदा लेते हुए अर्जुन ने उसे साधु-महात्माओं, पुण्यात्मा मुनियों, तथा स्वर्ग-मार्ग की अभिलाषा रखने वाले पुण्यकर्मा मनुष्यों का सदैव शुभ आश्रय बने रहने की कामना की। अर्जुन ने इस पर्वत पर अनेक तीर्थों के दर्शन किये थे तथा अप्सराओं से व्याप्त और वैदिक मन्त्रों के उच्च घोष से प्रतिध्वनित इसके शिखरों पर सुखपूर्वक निवास किया था); १०१, १५ (यथा शैलवरः पुरस्तात् मन्दरो विष्णुकराद्विमुक्तः); १३९, ५ (यहाँ मणिवर यक्ष और यक्षराज कुबेर निवास करते हैं). ६. ७ (यहाँ तीव्र गति से चलने वाले ८८,००० गन्धर्व और उनसे चार गुने अधिक किन्नर तथा यक्ष निवास करते हैं। उनके रूप तथा आकृतियाँ अनेक प्रकार की हैं। वे भाँति-भाँति के अस्त्र-शस्त्र धारण करके यक्षराज मणिभद्र की उपासना करते हैं); १४२ २ (यह देवताओं और पुण्यकर्मा ऋषियों का निवास-स्थान है); १६३, ४ (असौ सागरपर्यन्तां भूमिमावृत्य तिष्ठति। शैलराजो महाराज मन्दरोऽतिविराजते). ३३ (एवमेतं त्वतिक्रम्य महामेरुमतन्द्रितः भावयन् सर्वभूतानि पुनर्गच्छति मन्दरम्); १८८, ११३ (मार्कण्डेय जी ने नारायण के उदर में इसे भी देखा); १८९, १० (चतुःसमुद्रपर्यन्तां मेरुमन्दरभूषणाम्); २३१, २२; ४. ६, १३; ५. ९, ५१ (उपविष्टा मन्दराग्रे); ११, १२; १०२, ११ (मन्थानं मन्दरं कृत्वा); ११०, ९ (मूलं हिमवतोमन्दरं याति शाश्वतम्); १११, १२ (उत्तर में स्थित); ६. ३, ३७ (कैलासमन्दराभ्यां); ७. ८०, २९. ३३ (शैलेन्द्रं महामन्दरमेव च); ९४, ५७ (शिव का स्थान); २०२, ७६ (शिव ने इसे अपना धनुष बनाया); ८. ३४, २० (शिव के रथ का अक्ष बना); ३६, १६ (मन्दरस्थ इवांशुमान्); ११. १९, ५४ (उत्तर में अष्टावक्र ने इसे पार किया था); १६५, ३२। तुकी० पर्वतराजन्।

मन्दरवासिनी = दुर्गा (उमा): ६. २३, ४ (आर्ये मन्दरवासिनी);

मन्दरवाहिनी, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, ३३)।

१. मन्दाकिनी, गिरिवर चित्रकूट के पास बहने वाली सर्वपापनाशिनी एक नदी का नाम है जिसमें स्नानपूर्वक देव-पितरों का पूजन करने से अश्वमेध यज्ञ का फल होता है : ३. ८५, ५८. ५९; ६. ९, ३४. ३६; १२. ३३३, १६. २८ (मन्दाकिनी तीरे क्रीडन्त्योऽप्सरसां गणाः); १३. २५, २९ (चित्रकूट में मन्दाकिनी के जल में स्नान करके उपवास करने से मनुष्य राजलक्ष्मी से सेवित होता है); १०२, १८ (गौतम ने कहा : मन्दाकिनी वैश्रवणस्य राज्ञो महाभागा भोगिजन प्रवेश्या। गन्धर्वयक्षैरप्सरोभिश्च जुष्टं तत्र त्वाहं हस्तिनं यातयिष्ये). १९ (शिष्टाशिनः संविभज्याश्रितांश्च मन्दाकिनीं तेऽपि विभूषयन्ति)।

२. मन्दाकिनी, उत्तराखण्ड की एक नदी का नाम है (५. १११, १२)।

३. मन्दाकिनी, यक्षराज कुबेर का कमलपुष्पों से सुशोभित एक सरोवर जो गंगाजल से पूर्ण होने के कारण मन्दाकिनी नाम से विख्यात है (१३. १९, ३२. ६३)।

मन्दार, हिरण्यकशिपु के ज्येष्ठ पुत्र का नाम है। यह शिव के वरदान से एक अर्बुद वर्षों तक इन्द्र से युद्ध करता रहा। इसके अंगों पर भगवान् विष्णु का भयंकर चक्र तथा इन्द्र का वज्र भी पुराने तिनके के समान जीर्ण-शीर्ण हो गया और इसके शरीर पर उनका कोई चिह्न तक नहीं पड़ा (१३. १४, ७४-७५)।

१. मन्दोदरी रावण की महारानी का नाम है (३. २८१, १६)।

२. मन्दोदरी, एक मातृका का नाम है। (९. ४६, १७)।

मन्मथ = काम (देखिये वस्था०)।

मन्मथकर, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७२)।

मन्यु, एक अग्नि का नाम है : ३. २१९, २२ (यः प्रशान्तेषु भूतेषु मन्युर्भवति पावकः)। यहाँ नीलकण्ठी के अनुसार पावकः = बृहस्पति, और मन्युः = क्रोधरूपी।

मन्युमत्, एक अग्नि का नाम है : ३. २२१, ११ (यः प्रशान्तेषु भूतेषु मन्युर्भवति दारुणः। अग्निः स मन्युमानाम् द्वितीयो भानुतः)।

मन्वन्तर एक मनु के शासनकाल का द्योतक है : ३. ३, ५६ (मन्वन्तराणां सर्वेषामीश्वराणां त्वमीश्वरः); १२. ५९, ११५; ३४३, २६ (पूर्वे च मन्वन्तरे स्वायंभुवे); ३४९, ४३. ५६; १३. १४, ३८।

ममता, उतथ्य की पत्नी और दीर्घतमस् की माता का नाम है (१. १०४, ९. १०. १८)।

मय, एक असुर का नाम है : १. १, १३५ (मयेन सुकृतां सभाम्); ६१. ४८ २, ४६ (मयदर्शनम्). ८९. १२८ (मयस्य मोक्षो); २२८, ३९. ४१ (दानवेन्द्राणां मयं मोक्षयामास वीभत्सुर्मयं यत्र महासुरम्); २२८, ३९. ४१ (मोक्षयामास वीभत्सुर्मयं यत्र महासुरम्); ... ४७ (यह खाण्डववने वै शिल्पिना वरम्). ४४. ४५ (नमुचेर्भ्रातरं मय म्). ४७

वाह के समय अग्नि में दग्ध होने से बच गया); २२९, २ (दानवस्य मयस्य); २३४ १८, (दानवश्च मयस्तथा); २. १, २. ४. ९. १३-१६; २, ३६; ३, १. १९. २८. ३०. ३७ (मय ने विन्दुसरोवर से लाकर भीमसेन को एक गदा दी और युधिष्ठिर के सभाभवन का निर्माण किया); ४८, ८. ९; ५०, २५; ३. २३, १२ (चकार यामप्रतिमां महात्मा सभां मयो देव सभाप्रकाशाम्); २८२, ४१ (मयस्य किल दैत्यस्य तद सद्देश्म); ५. १००, २ (हिरण्यपुरमित्येतत् ख्यातं पुरवरं महत् ··· मयेन मनसा सृष्टं); ६. १००, २० (मयं जित्वेव वासवः) १०१, २२ (मयं शक्र इवाहवे); ११०, ३१ (मयशक्रौ यथा पुरा); ७. १७४, ३६ (मयं विष्णुरिवाहवे); ८. ३३, १६-१७ (विश्वकर्माणमजरं दैत्यदानवपूजितम् । ततो मयः स्वतपसा, असुरों के लिये तीन पुरों का निर्माण किया था). २५ (सर्वयोगवहो मयः). २७ (मयस्य); १२. २२७, ४९ (पृथिवी के प्राचीन शासकों के अन्तर्गत इसका उल्लेख); १३. ४०, ४ (मायाश्च मयजाः)। तुकी० असुर, दैत्य, दैतेय, दानव।

मयूर, एक महान असुर का नाम है। यह विश्व नामक राजा के रूप में पृथिवी पर उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ३५-३६)।

मयूरकेतु = स्कन्द (३. २३२, ३)।

१. मरीचि, ब्रह्माजी के मानस पुत्र तथा कश्यप के पिता, एक ऋषि का नाम है : १. ६५, १० (ब्रह्मा के छः मानस पुत्रों में से प्रथम). ११ (कश्यप के पिता); ६६, ४ (ब्रह्मा के छः मानस पुत्रों मे प्रथम). ३४ (कश्यप इनके पुत्र थे); ७५, १०; १२३, ५२ (अर्जुन के जन्मोत्सव मे पधारे थे); २. ७, १७ (इन्द्र की सभा में); ११, १८ (ब्रह्मा की सभा में उपस्थित रहने वाले प्रजापतियों में ये भी एक थे); ३. १४२, ६; २७२, ४५ (ब्रह्मा ने इनका सृजन किया था); ६. ३४, २१ (श्रीकृष्ण कहते हैं : मरीचिर्मरुतामस्मि); ९. ४५, १० (स्कन्द के अभिषेक के समय उपस्थित); १२. ४७, १० (शरशय्या पर पड़े भीष्म को घेर कर खड़े ऋषियों में ये भी थे); १२२, ३७ (इन्हें अङ्गिरा से जिस दण्ड की प्राप्ति हुई उसे बाद में इन्होंने भृगु को प्रदान किया); १६६, १६. ६६ (ये ब्रह्मा के प्रथम मानस पुत्र थे। विष्णु ने इन्हें जो खड्ग दिया उसे इन्होंने अन्य महर्षियों को दिया); २०७, १८. २१ (ये ब्रह्मा के प्रथम मानस पुत्र और कश्यप के पिता थे); २०८, ४. ८; ३३४, ३५ (इक्कीस प्रजापतियों में से एक); ३३५, २९ ('चित्तशिखण्डी' कहे जाने वाले सात महर्षियों में इनकी भी गणना); ३४०, ३४ (अष्ट प्रकृतियों में से प्रथम). ६९; १३. १४, ३९६; ८५. १०८ (ज्वालाभिरुत्पन्नो······मरीचिर्भ्यो). १४३ (ब्रह्मा के प्रथम मानस पुत्र)।

२. मरीचि, एक अप्सरा, जिसने अर्जुन के जन्मोत्सव के समय नृत्य किया था (१. १२३, ६२)।

३. मरीचि = विष्णु (सहस्रनाम)।

मरीचिन् = सूर्य (५. ३७, २)।

मरीचिप (बहु०) एक प्रकार के रश्मिपायी ऋषियों का द्योतक है : १. ३०, १५ (बालखिल्या मरीचिपा); २११, ५ (बालखिल्या वानप्रस्था मरीचिपाः); २. ११, २० (बालखिल्या मरीचिपाः, ब्रह्मा की सभा में); ३. ३, ४४ (वसवो मरुतो रुद्रा ये च साध्या मरीचिपाः); ७. १९०, ३४ (सिकताः पृश्नयो गर्गा बालखिल्या मरीचिपाः); ९. ४५, ८ (ये स्कन्द के अभिषेक में उपस्थित हुए); १२. १६६, २४ (वैश्वानरमरीचिपाः); १३. १२५, ११ (सप्तर्षयो वालखिल्यास्तथैव च मरीचिपाः); १४. ९२, ६।

१. मरुत्, (बहु०) देवों के एक वर्ग का द्योतक है। ये इन्द्र के अनुगामी थे : १. ५, ५ (देवैः सेन्द्रैः सर्षिमरुद्गणैः); ३०, ३४ (साध्यानां मरुतां चैव ये चान्ये देवतागणाः); ६५, ५४; ६६, ३८; ६७ ७९ (सात्यकिः ··· पक्षात्स जज्ञे मरुतां); ८७, १; १२३, ७० (अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित); १८७, ६ (द्रौपदी का स्वयंवर देखने के लिये आये); २१४, ४; २२७, ३१ (उन देवों में ये भी थे जिन्होंने श्रीकृष्ण और अर्जुन से युद्ध किया); २३४, ७ (मरुद्गणैः); २. ७, ७ (इन्द्र की सभा में); ११, ३१ (ब्रह्मा की सभा में); ६२, २७ (मरुद्भिः सहितो ··· मरुत्पतिः); ३. ३, ४४ (सूर्य की उपासना करते हैं); ३३, ८६ (मरुद्भिरिव वृत्रहा); ३७, ३४; ४३, १३; ६२, २४ (अश्विनौ समरुद्गणौ)। ८२, २२ (पुष्कर में); ८३, १०५ (मरुतां तीर्थमुत्तमम्); ८५; १०५ (तीर्थों में स्नान करते हैं); ९०, ३३; ९९, ५७ (राम दाशरथी के शरीर में उपस्थित थे); ११८, ११; १२५, १६ (आर्चीक पर्वतश्चैव ···मरुतां स्थानमुत्तमम्); १३९, १५; १४२, ७ (अत्राधिकं सुरश्रेष्ठो जपते समरुद्गणः); १५७, ७२; १६४, ३ (दिवं प्राप्य मरुद्गणानाम्); १६८ ११. २९ (अर्जुन ने इनसे दिव्यास्त्र प्राप्त किये); १७३, ७१; १८६, ३० (देवाः सेन्द्राः समरुद्गणाः); २३१, ७२; २३२, १६ (स्कन्द को इनके साथ समीकृत किया गया है); २३७, ११; २४९, २४ (मरुतो वृत्रहा); २६५, १३ (मरुद्गणैरिन्द्र इवाभिगुप्तः). २९२, ४ (निहतो वृत्रो मरुद्भिर्वज्रपाणिना). ७ (वज्रिणः सेनां जयेयुः समरुद्गणाम्); ३०८, १४; ३१३ ३१; ३१४, ३; ४. ५६, ३ (युद्ध देखने आये); ६८, ४२ (मरुद्गणैः परिवृत······ मरुत्पतिः); ७०, ६ (मरुद्गणैरुपासीनं त्रिदशानामिवेश्वरम्); ५. ४९, २; ६१, १८; ९१, ४२ (अनुयायिभिः सार्धं मरुद्भिरिव वासवः); ११०, ८ (शक्रो यत्र जातो मरुद्गणः); १३१, ७ श्रीकृष्ण के मुख से प्रकट हुये); १५७, १९; ६. ३४, २१ (श्रीकृष्ण ने अपने को मरुद्गण जैसा बताया); ३५, ६ (श्रीकृष्ण के शरीर में ये भी दिखाई दिये). २२; ७. ३५, ३०; ५५, ४३ (ये मरुत्त की सभा में भोजन वितरित करते थे); ७६, ४; १०८, ४४ (यथा शक्रं मरुद्गणाः); १७५, ८२; १७९, ६४ (पूज्यमानो यथा शक्रो वृत्रवधे मरुद्भिः); ८. १९, ८ (मरुद्भिः प्रेरिता मेधा); ३१, १४; ३३ ३६; ८२, २७; ८७, ४६ (अर्जुन का पक्ष लिया). ८३; ९. ३८, ३६. ३७ (मङ्कणक के सात पुत्रों से उत्पन्न); ४४, २९; ४५, ६ (स्कन्द के अभिषेक में सम्मिलित हुये); ४७, ३०; ४९, १९; १२. १५, १७ (हन्ता कालस्तथा ··· वसवो मरुतः); २९, २३ (मरुत्त के यज्ञ में इन लोगों ने भोजन वितरित किया). ८१ (मान्धातारं······यं देवा मरुतो गर्भं पितुः पार्श्वादपाहरन्); ३३, ३९ (मरुद्भिः सह जित्वाऽरीन्भगवान्पाकशासनः). ४०; ६४, २० (ये क्षत्रिय धर्म का पालन करते हैं); ६१, ३२ (भगवान्मरुद्गणवृतः प्रभुः); १६६, २२; १८६, ४; १९८, ५; २००, १०; २०८, २२. २३; २२७, ७७ (पूर्व काल में बलि ने इन्हें पराजित किया था); २८४, ७; २९५, १६; ३०१, ७. ७६ (सप्तानां मरुतां श्रेष्ठो); ३१७, ४ (यदि आत्मा या जीव का मनुष्य के पार्श्व भाग से उत्क्रमण होता है तो वह मनुष्य इनका लोक प्राप्त करता है); ३२३, १८; ३४०, १०३; १३. १४, ३२४; १६, ९; ४४, ३५ (कन्यावरः पुरा दत्तो मरुद्भिरिति नः श्रुतम्); ७५; ३०; ७९, २१; ८४, ८०; ९७, १३ (इनकी बलि अन्तर्गृह में समर्पित करना चाहिये); १०७, ३४. ९५. १११. १२६; १२५, ६९; १३४, ६; १४०, १४; १५८, ३४ (मरुतां गणाश्च ··· सर्वे कृष्णाद्भयश्चैव सन्त); १६५, १२; १४. ८, ६ (मुञ्जवत् पर्वत पर शिव की उपासना करते हैं); ४३, ६. ७; १५. ३१, ९ (पाण्डु मरुद्गणों के अंश से उत्पन्न हुये थे). ११ (भीमसेन भी मरुद्गणों के अंश से उत्पन्न हुये थे); १७. ३, २३; १८. ३, ७; ४, १. ७ (भीमसेन स्वर्ग में जाकर इनमें लीन हो गये); १७; ५, ११. (कृतवर्मा ने इनमें प्रवेश किया)। तुकी० मारुत (बहु०), और मरुत्वत् (बहु०)।

२. मरुत् = वायु (देखिये वस्था०): १२. १५५, १०।

मरुत, एक राजा (= मरुत्त) का नाम है : ५. ८३, २७ (कृष्ण की उपासना करते हैं); १२. २३४, २८ (करन्धमस्य पुत्रस्तु कृतात्मा मरुतस्तथा); १३. १३७, १६ (करन्धमस्य पौत्रस्तु मरुतोऽविक्षितः सुतः। कन्यामाङ्गिरसे दत्वा दिवमाशु जगाम सः)।

मरुतसुत = भीमसेन (८. ८९, ७६)।

मरुत्त, अविक्षित् के पुत्र, एक प्राचीन नरेश का नाम है : १. १, २२७; २. ७, १७ (इन्द्र की सभा में); ८, १०. १६ (यम की सभा में

उपस्थित राजाओं में से एक); १५, १६ (पाँच सम्राटों में से एक); ३. ९४, २१; १२९, १६ (इन्होंने यज्ञ किये जिसमें संवर्त इनके पुरोहित थे); ५. १११, २२ (उत्तर में यज्ञ किये); १७८, ४७ (अयं चापि विशुद्धात्मन् पुराणे श्रूयते विभो । मरुत्तेन महाबुद्धे गीतः श्लोको महात्मना : "गुरोरप्यवलिप्तस्य कार्याकार्यमजानतः । उत्पथप्रतिपन्नस्य परित्यागो विधीयते ॥); ७. ५५, ३७-४९ (ये अविक्षित् के पुत्र थे। बृहस्पति के साथ स्पर्धा रखने के कारण इनके भाई संवर्त ने इनका यज्ञ सम्पन्न कराया। भगवान शंकर ने प्रचुरधनराशि के रूप में इन्हें हिमालय का एक सुवर्णमय शिखर प्रदान किया था। प्रतिदिन यज्ञकार्य के अन्त में इनकी सभा में इन्द्र आदि देवता तथा बृहस्पति आदि समस्त प्रजापतिगण सभासद के रूप में विराजमान होते थे। इनके यज्ञमण्डप की सम्पूर्ण सामग्री सुवर्णनिर्मित थी। इनके गृह में मरुद्गण रसोई परोसने का कार्य किया करते थे। विश्वेदेव भी इनकी राजसभा के सभासद थे। इन्होंने अपनी समस्त प्रजा को निरोग बना दिया था। देवताओं, ऋषियों और पितरों को भी इन्होंने सन्तुष्ट किया था। ब्राह्मणों को शय्या, आसन, वाहन और दुस्त्यज्य सुवर्ण राशि प्रदान की थी। इन्द्र सदैव इनका शुभचिन्तन करते थे। युवावस्था में रह कर इन्होंने प्रजा, मन्त्री, धर्मपत्नी, पुत्र एवं भाइयों के साथ एक सहस्र वर्षों तक राज्यशासन किया था। ये धर्म, ज्ञान, वैराग्य तथा ऐश्वर्य में सृञ्जय से भी बढ़कर और पुण्यात्मा थे।); १२. २०, १३ (आविक्षितः पार्थिवोऽसौ मरुत्तो वृद्धया शक्रं योऽभ्ययद्देवराज्यम्); २९, १८. २३. ८८ (मान्धाता ने इन्हें पराजित किया था); ४९, ८३ (मरुत्तस्यान्ववाये च रक्षिताः क्षत्रियात्मजाः); ५७, ६ (मरुत्तेन हि राज्ञा वै गीतः श्लोकः पुरातनः । राजाधिकारे राजेन्द्र बृहस्पति मते पुरा); १६६, ७७ (इन्होंने मुचुकुन्द से एक खड्ग प्राप्त किया जो इनसे रैवत को मिला); १३. १३७, १६ (करंधमस्य पौत्रस्तु मरुत्तोऽविक्षितः सुतः । कन्यामांगिरसे दत्त्वा दिवमाशु जगाम सः); १६५, ५२; १४. ३, २१. २२ (इनके यज्ञ में ब्राह्मणों ने प्रचुर सुवर्ण हिमवत पर्वत पर ही छोड़ दिया था); ४, १. २३. २८ (अविक्षित् के पुत्र राजा मरुत्त गुणों में अपने पिता से भी बढ़ कर थे। मरुत्त में दस सहस्र हाथियों का बल था। इन्होंने अपने यज्ञ में सहस्रों सुवर्ण पात्रों का निर्माण कराया था। हिमालय पर्वत के उत्तर भाग में मेरु पर्वत के निकट एक महान सुवर्णमय पर्वत है। उसी के समीप इन्होंने यज्ञ शाला का निर्माण कराकर यज्ञ आरम्भ किया। उस यज्ञ में सुवर्णकारों ने सुवर्णमय कुण्ड, सुवर्ण पात्र, थाली और आसन तैयार किए। जब सब सामग्री तैयार हो गई तब राजा मरुत्त ने अन्य सब प्रजापालों के साथ विधिपूर्वक यज्ञ किया); ५, १४-१६. १९-२१. २५ (ये इन्द्र के समान पराक्रमी थे और इन्द्र से स्पर्धा रखते थे। इन्द्र ने अपने को इनसे श्रेष्ठ बनाने का यथाशक्ति प्रयास किया किन्तु इनसे श्रेष्ठ बन नहीं पाये। फलस्वरूप इन्द्र ने बृहस्पति से मरुत्त का यज्ञ तथा श्राद्ध आदि कार्य न कराने का निवेदन किया। बृहस्पति ने इन्द्र की बात मान कर इनका यज्ञ न कराने की प्रतिज्ञा की); ६, १. २. ७. ८. १०. १४. १५. २० (नारद जी ने इन्हें संवर्त से मिलने का परामर्श दिया); ७, ३. ५. ७. १३. १४; २२ (अपने भाई बृहस्पति से ईर्ष्या रखने के कारण संवर्त इनका यज्ञ कराने के लिये तैयार हो गये); ८, ३६ (मुञ्जवत् पर्वत पर शिव की उपासना की); ९, ४. ७-९. ११. १३. १५. १६. १९. २१. २२. २६; १०, २. ६. १०. १६. १८. २१. २३. २८ (संवर्त ने इनका यज्ञ पूरा कराया। इन्होंने इन्द्र को भी सन्तुष्ट किया); ६३, २ (रत्नं च यन्मरुत्तेन निहितं). ९ (मरुत्तस्य धनं, युधिष्ठिर ने इनके धन को प्राप्त किया); ८९, २१ (यत्कृतं कुरुराजेन मरुत्तस्यानुकुर्वता)। तुकी० आविक्षित; मरुत ।

१. मरुत्पति = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

२. मरुत्पति = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

३. मरुत्पति = शिव (सहस्रनाम)।

१. मरुत्वत् = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

२. मरुत्वत् (बहु०) देवों के एक वर्ग (= मरुद्गण) का द्योतक है : २. ७, ७ (इन्द्र की सभा में); १२. २०, २३, (धर्म के पुत्र [और दक्ष की एक पुत्री])। तुकी० मरुत (बहु०)।

मरुद्गण, एक तीर्थ का नाम है। यहाँ पवित्र भाव से स्नान करने वाला मनुष्य स्वयं तीर्थवत् हो जाता है (१३. २५, ३८)।

मरुभूमि, एक देश (वर्तमान राजस्थान प्रदेश) का नाम है। पश्चिम-दिग्विजय के समय नकुल ने इसे जीता था : २. ३२, ५; ३. २५८, १३ (मरुभूमि के शीर्ष स्थान में काम्यक वन है जहाँ तृणविन्दु सरोवर स्थित है); ५. १९, ३० (कौरव सेना ने यहाँ भी पड़ाव डाला था); १४. ५३-५५ (उत्तङ्क मुनि यहीं निवास करते थे जिनसे द्वारका जाते समय श्रीकृष्ण की भेंट हुई थी। श्रीकृष्ण ने उत्तङ्क मुनि को विश्वरूप का दर्शन कराया था और मरुदेश में उत्तङ्कमेघ प्रकट होने का वरदान दिया था)।

१. मर्यादा, एक विदर्भराजकुमारी जो पूरुवंशी राजा अवाचीन की पत्नी और अरिह की माता थी (१. ९५, १८)।

२. मर्यादा, विदेहराज की पुत्री, जो पूरुवंशी महाराज देवातिथि की पत्नी और अरिह की माता थी (१. ९५, २३)।

मलज (बहु० °जाः) एक जाति के लोगों का द्योतक है (६. ९, ५४)।

मलद (बहु० ° दाः) एक जाति के लोगों का द्योतक है। अपनी पूर्व दिग्विजय के समय भीमसेन ने इन्हें जीता था (२. ३०, ८)। ये लोग कौरव सेना में सम्मिलित हुये और दुर्योधन तथा कर्ण का अनुगमन करते थे (७. ७, १५-१६)।

१. मलय, दक्षिण भारत के एक पर्वत का नाम है : १. २७, ६ (वृक्षैर्मलयजैरपि); २. १०, ३२ (कुबेर की सभा में) ५२, ३३-३४ (पाण्ड्य और चोल देश के राजा मलय तथा दुर्दुर पर्वतों से सुवर्णमय घटों में रख कर चन्दनरस एवं चन्दन लेकर युधिष्ठिर को उपहार देने के लिए उपस्थित हुये); ३. ८५, ९१ (मलये स्वाग्निमारोहे); १८८, ११५ (मार्कण्डेय जी ने इसे भी नारायण के उदर में देखा); २८०, ३४ (श्रीमानिव महाशैलो मलयो मेघमालया); २८२, ४३ (सह्य मलयौ दर्दुरं च महागिरिम्). ४४ (लंका जाते समय वानरों ने इसे पार किया था); ३१३, ३२ (हिमवान् पारियात्रश्च विन्ध्यो मलय एव च); ५. ११, १२; ६. ९, ५६, ; ९, ११ (भारतवर्ष के कुलपर्वतों में इसकी गणना); ७. ५४, २६ (यहाँ मृत्यु ने तपस्या की थी); २०२, ७३ (शिव ने त्रिपुरदाह के समय इसे अपने रथ का यूप बनाया था); ८. २०, ३४ (पाण्ड्यराज की ध्वजा पर यह चिह्नित था); १२. ३३२, २१ (यहाँ उर्वशी और विप्रचित्ति नामक दो अप्सरायें नित्य निवास करती हैं); १३. १६५, ३१।

२. मलय, शाकद्वीप के एक पर्वत का नाम है (६. ११, १५)। तुकी० जलद भी ।

३. मलय, गरुड़ के पुत्र, एक सुपर्ण का नाम है : ५. १०१. १४ (केवल कलकत्ता संस्करण में, पूना संस्करण में 'मालय' पाठ है)।

१. मल्ल (बहु० °ल्लाः) एक जाति के लोगों का नाम है जिन्हें पूर्वदिग्विजय के समय भीमसेन ने पराजित किया था : २. ३०, ३. १२; ४. १, १३ ; ६. ९ , ४६। तुकी० मल्लराष्ट्र ।

२. मल्ल (बहु० ° ल्लाः) मल्लयोद्धाओं का द्योतक है : २. ४, ७ (मल्ला नटा झल्लाः); ४. १३, १५; ९. २३, ५२ (मल्ला इव समासाद्य); १४. ७०, ७ (मल्ला नटाश्चैव)।

मल्लराष्ट्र, एक प्राचीन भारतीय राष्ट्र का नाम है : ६. ९, ४४। तुकी० १. मल्ल ।

मल्लव (बहु० ° वाः), एक जाति के लोगों का द्योतक है : ६. ९, ६२ (केवल कलकत्ता संस्करण में ; पूना संस्करण में 'वल्लवा' पाठ है)।

मशक, शाकद्वीप में निवास करने वाली एक जाति के लोगों का नाम है (६. ११, ३७-३८)।

मसीर, भारतवर्ष में निवास करने वाली एक जाति का नाम है

६. ९, ५३)।

१. महत् = हिरण्यगर्भ (१२. ३०२, १८)।

२. महत् = शिव (१३. १७, ३५. ४३. १३०; १४. ८, १८)।

३. महत् = विष्णु (सहस्रनाम)।

महत्तर, पाञ्चजन्य नामक अग्नि के पाँच पुत्रों में से एक का नाम है। वे कश्यप के अंश से उत्पन्न हुये थे (३. २२०, ९)।

महत्सरस्, एक तीर्थ का नाम है (१३. १०२, ४५) । तुकी० महासरस् ।

महद्भूतम् = विष्णु (सहस्रनाम)

महद्युम्न, एक तीर्थ का नाम है (१. ३, १४२)।

महर्द्धि = विष्णु (सहस्रनाम)।

महर्षयः सप्त = सप्तर्षि : १. १२३, ५०; ६. ३४, ९।

१. महर्षि = शिव (सहस्रनाम)।

२. महर्षि = विष्णु (सहस्रनाम)।

महाकम्बु, महाकर्ण = शिव (सहस्रनाम)

महाकर्णि, मगधराज अम्बुवीच के एक दुष्ट मन्त्री का नाम है (१. २०४, १९)।

महाकर्णी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २६)।

महाकर्तृ = शिव (सहस्रनाम)।

१. महाकर्मन् = शिव (सहस्रनाम)।

२. महाकर्मन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

महाकल्प = शिव (सहस्रनाम) ।

महाकाय = शिव : ७. २०२, ४१; १३. १७, ३५. ५४. ८५।

महाकाया, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २४)।

१. महाकाल, शिव के एक स्वरूप का नाम है : ३. ८२, ४९ (उज्जयिनी में शिप्रा के तट पर स्थित एक प्राचीन तीर्थ, जहाँ महाकाल नामक ज्योतिर्लिङ्ग स्थित है); १२. २८४, ११८ (शिव सहस्रनाम)।

२. महाकाल, भगवान् शिव के पार्षदों का नाम है : १. ६५; २१ (रुद्रस्यानुचरः श्रीमान्महाकालेति यं विदुः); २. १०, ३४ (कुबेर की सभा में)।

महाकाली = उमा : ४. ६, १७; ६. २३, ५; १२. २८४, ३१।

महाकाश, शाकद्वीप के एक वर्ष का नाम है (६. ११, २५)।

महाकृच्छ्र = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

महाकेतु, महाकेश = शिव (सहस्रनाम)।

महाकोश, महाक्रतु, महाक्रम = विष्णु (सहस्रनाम)।

महाक्रोध = शिव (सहस्रनाम)।

महाक्रौञ्च, क्रौञ्चद्वीप के एक पर्वत का नाम है (६. १२, ७)। तुकी० क्रौञ्च।

१ महाक्ष = शिव (सहस्रनाम)।

२. महाक्ष = विष्णु (सहस्रनाम)।

महागङ्गा, एक तीर्थ का नाम है। इसमें स्नान करके एक पक्ष तक निराहार रहने वाला मनुष्य निष्पाप होकर स्वर्ग प्राप्त करता है (१३. २५, २२)।

महागणपति = शिव (१०. ७, ४)।

महागर्त = विष्णु (सहस्रनाम)।

महागर्भ, महागर्भपरायण = शिव (सहस्रनाम)

महागिरि, हिमवत् पर्वत के लिये प्रयुक्त हुआ है (३. ८४, २९)।

महागीत = शिव (सहस्रनाम)।

महागौरी, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है। (६. ९, ३३)।

महाग्रीव, महाघोर महाङ्ग = शिव (सहस्रनाम)

महाचूडा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ५)।

महाजट, महाजत्रु = शिव (सहस्रनाम)।

६५ म०

महाजय, नागराज वासुकि द्वारा स्कन्द को प्रदत्त दो पार्षदों में से एक का नाम है। दूसरे का नाम 'जय' था (९. ४५, ५२)।

महाजवा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २२)।

महाजानु एक श्रेष्ठ द्विज का नाम है जो प्रमद्वरा के सर्पदंशन के समय दया से द्रवित होकर उसे देखने के लिये आये थे (१. ८, २४)।

महाजिह्व, महाज्वाल = शिव (सहस्रनाम)

१. महातपस् = शिव (सहस्रनाम)।

२. महातपस् = विष्णु (सहस्रनाम)।

महातुषित = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

१. महातेजस् = शिव (सहस्रनाम)।

२. महातेजस् = विष्णु (सहस्रनाम)।

महातेजा, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७०)।

महात्मन् = शिव (सहस्रनाम)।

महादंष्ट्र महादन्त = शिव (सहस्रनाम)।

१ महादेव = शिव (देखिये वस्था०)।

२. महादेव = ब्रह्मा (१२. २५७, १२; ३४०, ४१)।

३. महादेव = विष्णु : ३. ८४, १४७; ५. १०, ८; १२. १२२, २३; २८०, ६१; १३. १४९, ६५ (सहस्रनाम)

महादेवपुर : ३. २३, ११ (पुरं महादेवपुरप्रकाशम्)।

महादेवसहस्रनामस्तोत्रम्, से महादेव के १००८ नामों का उल्लेख करने वाले स्तोत्र का तात्पर्य है। देखिये शिव (वस्था०)।

महादेवस्तवः, शिव को समर्पित स्तुति का द्योतक है। अर्जुन ने शिव के नामों का गायन किया (३. ३९, ७४-८२)।

१. महादेवी = अदिति (१३. ८३, २७)।

२. महादेवी = उमा : ३. ८४, १५१; ४. ६, २२; ६. २३, १३; १२. २८४, ५९; १३. ८५, ५४; १४. ४३ १५। तुकी० देवी।

महाद्भुत, एक अग्नि (= अद्भुत) का नाम है (३. २२२, ५)।

१. महाद्युति = विष्णु (सहस्रनाम)।

२. महाद्युति = शिव (१४. ८, २२)।

३. महाद्युति, एक प्राचीन नरेश का नाम है (१. १, २३२)।

महाद्रिधृक् = विष्णु (सहस्रनाम)।

महाधन = विष्णु (सहस्रनाम)।

महाधनुस्, महाधातु = शिव (सहस्रनाम)

१. महान्, पूरुवंशी राजा मतिनार के पुत्र का नाम है (१. ९४, १४)।

२. महान्, प्रजापति भरत नामक अग्नि के पुत्र पावक, जो अत्यन्त महनीय होने के कारण महान् कहे जाते थे (३. २१९, ८)।

महानख = शिव (सहस्रनाम)।

१. महानद = सिन्धु (१३. २५, ८)।

२. महानद = शिव (सहस्रनाम)।

१. महानदी, एक या अधिक नदियों का नाम है : १. २१५, ७ (अर्जुन इसके तट पर गये थे।); ३. ८४, ८४ (इसमें स्नान और तर्पण करने वाला अक्षय लोकों को प्राप्त करता है); ८७, ११ (गया के निकट); ९५, ९; १८८, १०५ (मार्कण्डेय ने नारायण के उदर में जिन नदियों को देखा उनमें से एक यह भी थी); ८. ३४, २० (शिव ने इसे अपने रथ की जंघा बनाया); १३. १६५, २०।

२. महानदी, शाकद्वीप की एक नदी का नाम है (६. ११, ३२)।

महानदीसुत अर्थात महान् नदी गङ्गा के पुत्र = भीष्म (१२. ५८, २९)।

महानन, महान्तक = शिव (सहस्रनाम)।

महानन्दा, एक तीर्थ का नाम है। इसका सेवन करने वाले व्यक्ति की स्वर्गस्थ नन्दनवन में अप्सरायें सेवा करती हैं (१३. २५, ४५)।

महानागहन, महानास = शिव (सहस्रनाम)।

महानिधि = विष्णु (सहस्रनाम)।

महानियम = महापुरुष (महापुरुषस्तव)। तुकी० १२. ३४०, ४६ ।

महानृत्य, महानेत्र = शिव (सहस्रनाम)।

महापगा, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, २८)।

१. महापद्म, एक दिग्गज का नाम है : ६. ६४, ५७ (घटोत्कच के एक साथी राक्षस की सवारी में आया); ७. १२१, २५-२६ ।

२. महापद्म, एक नगर का नाम है (१२. ३५३, १)।

महापथ = शिव (सहस्रनाम)।

महापवित्र = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

महापाद = शिव (सहस्रनाम)।

महापारिषदेश्वर, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६६)।

१. महापार्श्व, एक असुर का नाम है : २. ९, १३ (वरुण की सभा में उपस्थित दैत्यों और दानवों में यह भी था)।

२. महापार्श्व = कैलास पर्वत पर महादेव जी के पूर्वोत्तर भाग में स्थित एक पर्वत का नाम है (१३. १९, २१)।

३. महापार्श्व = शिव (सहस्रनाम)।

महापुमान्, मोदाकी वर्ष से आगे एक पर्वत का नाम है (६. ११, २६)।

महापुर, एक तीर्थ का नाम है। यहाँ स्नान करके तीन रात तक उपवास करने से मनुष्य सब भयों से मुक्त हो जाता है (१३. २५, २६)।

महापुराणसम्भाव्य, एक प्राचीन नरेश का नाम है (१. १, २३८)।

महापुरुष = विष्णु (नारायण, श्रीकृष्ण) : १२. ३३६, ४४; ३३८, ४ (नारद जी ने महापुरुषस्तव द्वारा नारायण का स्तवन किया); ३४०, २९. ४४; ३४७, ७; ३५१, ९ ।

महापुरुषस्तव—नारद ने श्वेतद्वीप में नारायण की प्रशस्ति में इसका गायन किया था : १२. ३३८, ४ (यह स्तव देवदेवेश नाम से आरम्भ होता है)। इसमें नारायण का २०० नामों से स्तवन किया गया है, जो अकारादि क्रम से इस प्रकार हैं (नामों के पूर्व उनकी स्तवान्तर्गत क्रमसंख्या को भी दे दिया गया है) : १२३ अखण्डल, ९० अग्नि, १७१ अग्राह्य. १७२ अचल, १६८ अज, १६० अतिकृच्छ्र, ११३ अथर्वशिरस्, ७. १३२, अनन्त, १३० अनन्तगति, १३१ अनन्तभोग, १५ अनन्ताख्य, १३३ अनादि, ६९ अपराजित, ५३ अपरिनिन्दित, ५१ अपरिनिर्मित, ५४ अपरिमित, १७९ अप्रतर्क्य, ११९ अभग्नपरिसंख्यान, ११८ अभग्नयोग, ४१ अभासुर, १३४ अमध्य, १३ अमृत, १४ अमृताक्ष, ८० अमृतेशय, ५६ अवशवर्तिन्, १८० अविज्ञेय, १३६ अव्यक्तनिधन, १३५ अव्यक्तमध्य, २० आदिदेव, ९२ आहुति, २६ ऊर्जस्पति, १९ ऋतधामन्, २०० एकान्तदर्शन, ९५ ओंकार, १४४ कीर्त्याभास, ८३ कुशेषय, १५९ कृच्छ्र, १२५ कौशिक, ५ क्षेत्रज्ञ, १८८ गताध्वर, ३६ गुह्य, ९९ चक्षुराज्यम्, ९८ चन्द्रमस्, ४० चातुर्महाराजिक, १८५ चित्रशिखण्डिन्, १८९ छिन्नतृष्णा, १९० छिन्नसंशय, २८ जगत्पति; ८९ जगत्प्रकृति, ८८ जगदन्वय, १११ज्येष्ठसामग ९६ तपस्, १४० तपोवास, ४७ तुषित, ११ त्रिगुण, १०८ त्रिनाचिकेत, १४१ दयावास, ३४ दिक्पति, १०२ दिग्भानु, ३० दिवस्पति, १०१ दिशंगज, १ देवदेवेश, ८२ देवेशय, १५४ धनप्रद, ७१ नामनामिक, १५७ नियम, १६३ नियमधर, ३ निर्गुण, १६४ निवृत्तभ्रम, १९२ निवृत्तरूप, २ निष्क्रिय, ६६ पञ्चकालकर्तृपते, ११४ पञ्चमहाकल्प, ६५ पञ्चयज्ञ, १०७ पञ्चाग्नि, ८५ पद्मेशय, ७७ परमयाज्ञिक, ७५ परमहंस, ७२ परस्वामिन्, ५० परिनिर्मित, १७५ पवित्र, ६७ पाञ्चरात्रिक, ८ पुरुष, ६.१० पुरुषोत्तम, १२६ पुरुष्टुत, १२७ पुरुहूत, १८७ पुरोडाशभागहर, ३५ पूर्वनिवास, ३३ पृथिवीपति, १६६ पृश्निगर्भप्रवृत्त, १८३ प्रजानिधनकर, २२ प्रजापति, १०५ प्रथमत्रिसौपर्ण, १२ प्रधान, ४९ प्रमर्दन, १६५ प्रवचनगत, १६७ प्रवृत्तवेदक्रिय, ११० प्राग्ज्योतिष, १२४ प्राचीनगर्भ, ११५ फेनपाचार्य, १९७ बान्धव, १७८ बृहत्, ३८ ब्रह्मकायिक, ३७ ब्रह्मपुरोहित, १८१ ब्रह्माग्र्य, ८४ ब्रह्मेशय, १९४ ब्राह्मणप्रिय, १९३ ब्राह्मणरूप, १९९ ब्राह्मण्यदेव, १९८ भक्तवत्सल, ९७ मनस्, २९ मनस्पति, ३१ मरुत्पति, १६१ महाकूर्म, ४८महातुषित, १७४ महानियम, १७६ महापवित्र, ९ महापुरुष, २५ महाप्रजापति, ४२ महाभासुर, १७३ महाभूति, १८४ महामायाधर, १९६ महामूर्ति, ५८ महायज्ञ, १५१ महायज्ञभागहर, ४५ महायाम्य, ३९ महाराजिक, ७६ महाहंस, ७० मानसिक, ११२ मासिकव्रतधर, १७४ माहात्म्यशरीर, ५७ यज्ञ, ६१ यज्ञगर्भ, ६४ यज्ञभागहर, ६० यज्ञयोनि, ५९ यज्ञसम्भव, ६३ यज्ञस्तुत, ६२ यज्ञहृदय, १५६ यम, १३९ यशोवास, ४४ याम्य, १२२ युगनिधन, १२१ युगमध्य, १२० युगादि, १४२ लक्ष्म्यावास, ४ लोकसाक्षिन्, ९१ वडवामुखोऽग्निः, २४ वनस्पति, १५२. १८६ वरप्रद, १०६ वर्णधर, ८४ वषट्कार, ५२. ५५ वशवर्तिन्, २१ वसुप्रद, २७ वाचस्पति, ११६ वालखिल्य, १४७ वासुदेव, १७३ विदिग्भानु, १४३ विद्यावास, १२८ विश्वकृत्, ८७ विश्वक्सेन, १९५ विश्वमूर्ति, १२९ विश्वरूप, ८६ विश्वेश्वर, १३७ वृत्तावास, ६८ वैकुण्ठ, ११७ वैखानस, १६ व्योम, १४५ श्रीवास, १०९ षडङ्गनिधान, ४६ संज्ञासंज्ञ, १८ सदसद्व्यक्ताव्यक्त, १७ सनातन, ४३ सप्तमहाभाग, १३८ समुद्राधिवास, १६२ सर्वकृच्छ्र, १६९ सर्वगति, १४८ सर्वच्छन्दक, १९१ सर्वतोवृत्त, १७० सर्वदर्शिन्, १४६ सर्वावास, ३२ सलिलपित, १११ सामग, ९३ सारथि, ७९ सांख्यमूर्ति, ७८ सांख्ययोग, १५३ सुखप्रद, २३ सुप्रजापति, ७३ सुस्नात, १०० सूर्य, ७४ हंस, १०४ हयशिरस्, १५०. १५५ हरिमेध, १४९ हरिहय, १७७ हिरण्यमय, ८१ हिरण्येश ।

महाप्रजापति = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

महाप्रसाद = शिव (सहस्रनाम)।

महाप्रस्थानिकम्, पाण्डवों के महाप्रस्थान का द्योतक है जिसका पूर्ण विवरण महाप्रस्थानिकपर्व में मिलता है : १. २, ८१ (महाप्रस्थानिक पर्व), ३६४. ३६८; १८. ६, ७० ।

महाप्रस्थानिकपर्वन्, महाभारत के १७ वें प्रमुख तथा ९९वें अवान्तर पर्व का नाम है : "जनमेजय ने यह जानना चाहा कि वृष्णि और अन्धक वंश के वीरों में मूसल युद्ध होने का समाचार सुनकर श्रीकृष्ण के परमधाम पधारने के पश्चात् पाण्डवों ने क्या किया। वैशम्पायन जी ने बताया : वष्णिवंशियों के महान् संहार का समाचार सुनकर युधिष्ठिर ने महाप्रस्थान का निश्चय करके अर्जुन से कहा : 'काल ही सम्पूर्ण भूतों को विनाश की ओर ले जा रहा है। अब मैं काल के बन्धन को स्वीकार करता हूँ। तुम भी इसकी ओर दृष्टिपात करो।' अर्जुन ने अपने ज्येष्ठ भ्राता के कथन का अनुमोदन किया। भीमसेन तथा नकुल-सहदेव ने भी अर्जुन की बातों का अनुमोदन किया। तत्पश्चात् धर्म की इच्छा से राज्य छोड़कर प्रस्थान करने वाले युधिष्ठिर ने युयुत्सु को राज्य की देख-भाल का भार सौंप दिया। अपने राज्य पर परीक्षित का अभिषेक करके युधिष्ठिर ने आर्त होकर सुभद्रा से इस प्रकार कहा : 'परीक्षित कुरुदेश तथा कौरवों का राजा होगा और यादवों में जो लोग बच गये हैं उनका राजा श्रीकृष्ण-पौत्र वज्र को बनाया गया है। परीक्षित् हस्तिनापुर में राज्य करेंगे और वज्र इन्द्रप्रस्थ में।' इस प्रकार निर्देश देने के बाद युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण, मामा वसुदेव तथा बलदेव आदि के लिये जलाञ्जलि दी और इन सबके उद्देश्य से विधिपूर्वक श्राद्ध किया। तदन्तर उन्होंने श्रीकृष्ण के उद्देश्य से द्वैपायन व्यास, देवर्षि नारद, तपोधन मार्कंडेय, भरद्वाज और याज्ञवल्क्य को भोजन कराया। भगवान् का नामकीर्तन करके उन्होंने उत्तम ब्राह्मणों को नाना प्रकार के रत्न-वस्त्र आदि प्रदान किये। कृपाचार्य का पूजन करके उन्होंने पुरवासियों सहित परीक्षित को शिष्यभाव से उनकी सेवा में सौंप दिया। तदनन्तर युधिष्ठिर ने अपने मन्त्रियों और पुरवासियों को बुलाकर भाइयों सहित महाप्रस्थान का विचार व्यक्त किया। इसके बाद युधिष्ठिर और उनके सभी भाइयों तथा द्रौपदी ने अपने अंगों से आभूषण आदि उतार कर वल्कल वस्त्र धारण कर लिया। ब्राह्मणों से विधिपूर्वक उत्सर्गकालिक इष्टि करवा कर अग्नियों का जल में विसर्जन करने के बाद सभी पाण्डव महायात्रा के लिये प्रस्थित हुये। पाचों भाइयों के साथ द्रौपदी और एक कुत्ता भी साथ चला। नगर की

सीमा के बाहर तक उन सब को पहुँचाने के लिये नगर की प्रजा साथ गई। तदनन्तर समस्त पुरवासी और कृपाचार्य आदि युयुत्सु को साथ लेकर वापस लौट आये। उलूपी उसी समय गङ्गा में समा गई। चित्राङ्गदा मणिपूर चली गई। शेष मातायें परीक्षित् को लेकर लौट आईं। तब पाण्डव और यशस्विनी द्रौपदी उपवास व्रत का आश्रय लेकर पूर्व दिशा की ओर मुँह करके चल पड़े। आगे-आगे युधिष्ठिर चले, उनके पीछे भीमसेन थे। भीम के पीछे अर्जुन और उनके भी पीछे क्रमशः नकुल और सहदेव चल रहे थे। सबके पीछे द्रौपदी थीं। उन लोगों के पीछे-पीछे एक कुत्ता भी चल रहा था। क्रमशः चलते हुये वे वीर पाण्डव लाल सागर के तट पर जा पहुँचे। अर्जुन ने दिव्य रत्न के लोभ से अभी तक अपने दिव्य गाण्डीव धनुष तथा दोनों अक्षय तूणीरों का परित्याग नहीं किया था। वहाँ पहुँच कर उन्होंने पर्वत की भाँति मार्ग रोकर सामने खड़े हुये पुरुषरूपधारी साक्षात् अग्नि देव को देखा। उन अग्नि ने पाण्डवों को अपना परिचय देते हुये अर्जुन से गाण्डीव धनुष वापस करने के लिये कहा। अग्नि की बात सुनकर सभी भाइयों ने अर्जुन से गाण्डीव धनुष त्याग देने के लिये कहा। तब अर्जुन ने धनुष और अक्षय तूणीरों को पानी में फेंक दिया जिसके बाद अग्निदेव वहीं अन्तर्धान हो गये और पाण्डवगण वहाँ से दक्षिणाभिमुख होकर आगे चले। वे लोग लवणसमुद्र के उत्तर तट पर होते हुये दक्षिण-पश्चिम दिशा की ओर अग्रसर होने लगे। इसके बाद वे केवल पश्चिम दिशा की ओर मुड़ गये और आगे जाकर समुद्र में डूबी हुई द्वारका पुरी को देखा। तदनन्तर पृथिवी की परिक्रमा पूर्ण करने की इच्छा से उन लोगों ने उत्तर दिशा की ओर यात्रा की। (१७. १)।

"वैशम्पायन जी ने बताया कि उत्तर दिशा का आश्रय लेकर चलते हुये पाण्डवों ने हिमालय पर्वत का दर्शन किया। उसे भी लाँघ कर जब वे आगे बढ़े तब उन्हें बालू का समुद्र दिखाई पड़ा। साथ ही उन लोगों ने महागिरि मेरु का भी दर्शन किया। उस समय सभी पाण्डव योगयुक्त होकर शीघ्रता से चल रहे थे। तभी द्रौपदी का मन योग से विचलित हो गया और वे लड़खड़ाकर पृथिवी पर गिर पड़ीं। भीमसेन के पूछने पर युधिष्ठिर ने बताया कि द्रौपदी के मन में अर्जुन के प्रति विशेष पक्षपात था अतः उन्हें उसी के फलस्वरूप यह फल भोगना पड़ा। कुछ आगे बढ़ने पर सहदेव भी भूमि पर गिर पड़े। तब युधिष्ठिर ने भीमसेन को बताया कि सहदेव किसी को अपने जैसा विद्वान या बुद्धिमान नहीं समझते थे अतः उसी दोष के कारण उनका पतन हुआ। तदनन्तर शेष भाइयों सहित आगे बढ़ने पर नकुल भी गिर पड़े। युधिष्ठिर ने बताया कि नकुल को अपने रूप का अहंकार था अतः उस दोष के कारण उनका पतन हुआ है। द्रौपदी, सहदेव और नकुल के इस प्रकार गिर जाने से अर्जुन शोक सन्तप्त होकर स्वयं भी गिर पड़े। युधिष्ठिर ने भीमसेन को बताया कि अर्जुन को अपनी शूरता का अभिमान था जिसके कारण उन्हें भी धराशायी होना पड़ा। इतना कह कर राजा युधिष्ठिर आगे बढ़ गये। इतने में ही भीमसेन भी गिर पड़े। गिर जाने पर भीमसेन ने युधिष्ठिर से अपने पतन का कारण पूछा। तब युधिष्ठिर ने उनसे कहा कि 'तुम बहुत खाते थे और सदा अपने बल की डींग हाँका करते थे। इसी से तुम्हें भी धराशायी होना पड़ा है।' यह कह कर भीम की ओर देखे बिना ही युधिष्ठिर आगे चल दिये। एक कुत्ता भी बराबर उनका अनुसरण कर रहा था। (१७. २)।

"तदनन्तर आकाश और पृथिवी को प्रतिध्वनित करते हुये देवराज इन्द्र ने रथ के साथ युधिष्ठिर के पास आकर उनसे अपने रथ पर बैठने के लिये कहा। अपने भाइयों के मार्ग में ही धराशायी होने के दुःख से सन्तप्त युधिष्ठिर ने इन्द्र से अपने उन भाइयों और द्रौपदी को भी साथ ले चलने के लिये अनुरोध किया। इन्द्र ने बताया कि युधिष्ठिर के सभी भाई तथा द्रौपदी उनसे पहले ही स्वर्ग में पहुँच चुके हैं। इन्द्र ने कहा : 'वे सभी पाण्डव मानव शरीर त्याग कर स्वर्ग गये हैं, किन्तु तुम इसी शरीर में वहाँ चलोगे।' तब युधिष्ठिर ने अपने कुत्ते को भी अपने साथ ही स्वर्ग ले चलने का आग्रह किया। इन्द्र ने उन्हें बताया कि कुत्ता रखनेवालों के लिये स्वर्ग में स्थान नहीं है। अतः इन्द्र ने कुत्ते को छोड़ कर ही स्वर्ग चलने का युधिष्ठिर को परामर्श दिया। परन्तु युधिष्ठिर ने अपने उस भक्त कुत्ते का परित्याग करना किसी भी प्रकार स्वीकार नहीं किया। इन्द्र ने कुत्ते को छोड़ने के लिये विविध प्रकार से युधिष्ठिर को समझाया पर वे नहीं माने। युधिष्ठिर ने कहा कि शरण में आये हुये को भय देना, स्त्री का वध करना, ब्राह्मण के धन का हरण करना और मित्रों के साथ द्रोह करना—ये चारों अधर्म एक ओर और भक्त का त्याग दूसरी ओर हो तो भी यह अकेला ही उक्त चारों के बराबर अधर्म है। धर्मराज युधिष्ठिर का कथन सुन कर कुत्ते का रूप धारण करके आये स्वयं धर्मराज अत्यन्त प्रसन्न हुये और उन्होंने प्रकट हो कर युधिष्ठिर की प्रशंसा की। धर्मराजने कहा : 'यह कुत्ता मेरा भक्त है—ऐसा सोचकर तुमने देवराज इन्द्र के भी रथ का परित्याग कर दिया है, अतः स्वर्गलोक में तुम्हारे समान दूसरा कोई राजा नहीं है।' ऐसा कहा कर धर्म, इन्द्र, मरुद्गण, अश्विनीकुमार देवता तथा देवर्षियों ने पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर को रथ पर बैठा कर स्वर्गलोक के लिये प्रस्थान किया। राजा युधिष्ठिर उस रथ में बैठ कर अपने तेज से पृथिवी और आकाश को व्याप्त करते हुये तीव्र गति से ऊपर की ओर जाने लगे। उस समय नारदजी ने युधिष्ठिर के गुणों की प्रशंसा की। युधिष्ठिर ने तब देवेश्वर से कहा : 'मेरे भाइयों को शुभ या अशुभ जो स्थान प्राप्त हुआ हो उसी को मैं भी प्राप्त करना चाहता हूँ। उसके अतिरिक्त अन्य किसी लोक में मैं नहीं जाना चाहता।' देवराज ने युधिष्ठिर की धर्मपरायणता की प्रशंसा करते हुये उनसे कहा कि उनके भाई उनके जैसा स्थान प्राप्त नहीं कर सकते। अतः उन्होंने युधिष्ठिर से मनुष्यलोक के स्नेहपाश का परित्याग करके स्वर्ग में निवास करने के लिये कहा। तब युधिष्ठिर ने कहा : 'अपने भाइयों के बिना मुझे स्वर्ग में निवास करने का उत्साह नहीं है। अतः मैं वहीं जाना चाहता हूँ जहाँ मेरे भाई गये हैं तथा जहाँ सत्त्वगुणसम्पन्न द्रौपदी गई है। (१७. ३)।"

१. महाबल = शिव (सहस्रनाम)।

२. महाबल = विष्णु (सहस्रनाम)।

महाबला, दो मातृकाओं का नाम है : प्रथम (९. ४६ ९); द्वितीय (९. ४६, २६)।

१. महाबाहु, धृतराष्ट्र के दो पुत्रों का नाम है : १. ६७, ९८. १०४; ११७, ६. १४; ७. १५७, १७ (भीमसेन ने धृतराष्ट्र के जिन दस पुत्रों का वध किया उनमें ये भी थे)।

२. महाबाहु = श्रीकृष्ण (विष्णु) : ५. ७०, ९।

महाबुद्धि = विष्णु (सहस्रनाम)।

महाभय, अधर्म की स्त्री निर्ऋति के गर्भ से उत्पन्न तीन नैर्ऋत नामवाले राक्षसों में से एक का नाम है (शेष दो के नाम भय और मृत्यु हैं) : १. ६६, ५४-५५)।

महाभाग = विष्णु (सहस्रनाम)।

महाभारत, द्वैपायन व्यास द्वारा रचित महाकाव्य का नाम है : १. १, ११ (महाभारतसंज्ञिताः, महाभारत महाकाव्य की रचना द्वैपायन व्यास ने की थी, और महाराज जनमेजय के सर्पसत्र में वैशम्पायन जी ने इसे सर्वप्रथम जनमेजय को सुनाया था). २६४-२६६ (नवनीतं यथा दध्नो द्विपदां ब्राह्मणो यथा। आरण्यकं च वेदेभ्य ओषधिभ्योऽमृतं यथा। ह्रदानामुदधिः श्रेष्ठो गौर्वरिष्ठा चतुष्पदाम्। यथैतानीतिहासानां तथा भारतमुच्यते); २, ३९२ (महाभारतमाख्याय); ५९, ६ (महाभारतमाख्यानं पाण्डवानां यशस्करम्। जनमेजयेन पृष्टः सन्कृष्णद्वैपायनस्तदा ॥). ९ (महदाख्यानमुत्तमम् कृष्णद्वैपायनमतं महाभारतमादितः); ६२, १ (महाभारतमाख्यानं कुरूणां चरितं महत्). ३९ (तन्महाभारताख्यानं श्रुत्वैव प्रविलीयते। भरतानां महज्जन्म महाभारतमुच्यते). ४०. ४२. ५२ (त्रिभिर्वर्षैः सदोत्थायी कृष्णद्वैपायनो मुनिः। महाभारतमाख्यानं कृतवानिदमद्भुतम् ॥); ६३, ८९ (वेदानध्यापयामास महाभारतपञ्चमान्। सुमन्तुं जैमिनिं पैलं शुकं चैव स्वमात्मजम् ॥); १२. ३४०, २१ (वेदानध्यापयामास महाभारतपञ्चमान्);

३४६, १२। "मुनि व्यास द्वारा निर्मित यह पुण्यमय इतिहास परम पवित्र एवं अत्यन्त श्रेष्ठ है। व्यासजी ने दिव्य दृष्टि से देखकर महात्मा पाण्डवों तथा अन्य महातेजस्वी राजाओं की कीर्ति का प्रसार करने के लिये इस इतिहास की रचना की है। जो विद्वान् प्रत्येक पर्व पर सदा इसे दूसरों को सुनाता है उसके समस्त पाप धुल जाते हैं। (महाभारत पाठ का फल)। इस ग्रन्थ में भरतवंशियों के महान् जन्मकर्म का वर्णन है इसलिये इसे भारत कहते हैं। महान् और विशाल होने के कारण इसका नाम महाभारत पड़ा। स्वयं व्यासजी ने यह कहा है कि अट्ठारह पुराण, सम्पूर्ण धर्मशास्त्र, और छहों अंगों सहित चारों वेद एक ओर और केवल महाभारत दूसरी ओर अकेला ही उन सब के बराबर है। व्यासजी ने तीन वर्षों में इस महाभारत को पूर्ण किया था। जो 'जय' नामक इस महाभारत इतिहास को सदा भक्तिपूर्वक सुनता रहता है उसके यहाँ श्री, कीर्ति और विद्या तीनों एक साथ निवास करती हैं। व्यासजी ने पहले साठ लाख श्लोकों की महाभारतसंहिता की रचना की थी। उसमें से तीस लाख श्लोकों की संहिता का देवलोक में प्रचार हुआ। पन्द्रह लाख की दूसरी संहिता पितृलोक में, चौदह लाख की तीसरी संहिता यक्षलोक में तथा एक लाख श्लोकों की चौथी संहिता मनुष्यलोक में प्रचारित हुई। मनुष्यों को वैशम्पायनजी ने ही सर्वप्रथम महाभारतसंहिता सुनाया था। देवताओं को नारदजी ने, पितरों को असित देवल ने, और यक्ष-राक्षसों को श्रीशुकदेवजी ने महाभारत सुनाया था। गम्भीर अर्थ से परिपूर्ण और वेद की समानता करनेवाले इस व्यासप्रणीत पवित्र इतिहास का श्रवण करने वाला इस जगत में सारे मनोवाञ्छित भोगों और उत्तम कीर्ति को प्राप्त कर परम सिद्धि प्राप्त करता है (महाभारत का श्रवण-पठन फल)। स्वयं व्यास जी महाभारत के सारभूत उपदेश का इस प्रकार वर्णन करते हैं : 'मनुष्य इस जगत में हजारों माता-पिताओं तथा सैकड़ों स्त्री-पुत्रों के संयोग-वियोग का अनुभव कर चुके हैं, करते हैं, और करते रहेंगे। अज्ञानी पुरुष को प्रतिदिन हर्ष के सहस्रों और भय के सैकड़ों अवसर प्राप्त होते रहते हैं, किन्तु विद्वान् पुरुष के मन पर उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। मैं दोनों हाथ ऊपर उठाकर पुकार-पुकार कह रहा हूँ, पर मेरी बात कोई नहीं सुनता। धर्म से मोक्ष तो सिद्ध होता ही है; अर्थ और काम भी सिद्ध होते हैं। तो भी लोग उसका सेवन नहीं करते। कामना से, भय से, लोभ से, अथवा प्राण बचाने के लिये भी धर्म का त्याग न करे। धर्म नित्य और सुख-दुःख अनित्य हैं। इसी प्रकार जीवात्मा नित्य है और उसके बन्धन का हेतु अनित्य है।' (१८.५, ६०-६३)। व्यास जी का यह सारभूत उपदेश 'भारत-सावित्री' के नाम से प्रसिद्ध है। अतः महाभारत के प्रतिदिन श्रवण अथवा पठन से व्यक्ति को मोक्ष प्राप्त होता है। (१८. ५)।"

"जनमेजय ने पूछा : 'विद्वानों को किस विधि से महाभरत का श्रवण करना चाहिये; इसके सुनने से क्या फल होता है; इसके पारण के समय किन-किन देवताओं का पूजन करना चाहिये; इसके पर्वों की समाप्ति पर क्या दान आदि करना चाहिये और इसका कथावाचक कैसा होना चाहिये?' तब वैशम्पायन जी ने उन देवताओं आदि का नाम बताया जो महाभारत में मिलते हैं। तदनन्तर उन्होंने बताया कि इसके श्रवण के पश्चात् इसमें मारे गये वीरों के लिये श्राद्ध करना, फिर ब्राह्मणों को दान आदि करना चाहिये, इसके कथावाचक को शुद्ध, सदाचारी और सम्पूर्ण शास्त्रों का तत्त्वज्ञ होना चाहिये। उसे अक्षरों और पदों का स्पष्ट उच्चारण करते हुये उच्चस्वर से कथा कहनी चाहिये। कथा सुनाते समय वाचक के लिये स्वस्थ और एकाग्रचित्त होना आवश्यक है। उसका आसन भी ऐसा होना चाहिये जिस पर वह सुखपूर्वक बैठ सके। प्रत्येक पारण द्वारा प्राप्त फल आदि का वर्णन। (१८. ६)" तुकी० भारत, जय।

महाभासुर = महापुरुष (महारुषस्तव)

महाभिष, इक्ष्वाकु वंश में उत्पन्न एक सत्यवादी और सत्य पराक्रमी राजा का नाम है : १. ९६, १. ३. ५. ६. ९ (ब्रह्मा की सभा में बैठे हुये महाभिष को गङ्गा के अनावृत शरीर की ओर देखने पर ब्रह्मा के शाप के कारण पृथिवी पर जन्म लेना पड़ा था। मर्त्यलोक में इन्होंने राजा प्रतीप के पुत्र के रूप जन्म लेने का निश्चय किया); १. ९७, १८ (वे राजा प्रतीप के पुत्र शान्तनु के रूप में उत्पन्न हुये); ३. ८५, १२४; १२. ३०९, २३ (राजर्षिरधृतिः स्वर्गात् पतितो हि महाभिषः); १३. १६५, ५६।

महाभिषोपाख्यानम्—"इक्ष्वाकुवंश में उत्पन्न महाभिष नामसे प्रसिद्ध एक राजा हो गये हैं जो सत्यवादी होने के साथ सत्यपराक्रमी भी थे। उन्होंने एक सहस्र अश्वमेध और एक सौ राजसूय यज्ञों द्वारा देवेश्वर इन्द्र को सन्तुष्ट किया और उन यज्ञों के पुण्य से स्वर्ग प्राप्त किया था। एक समय जब ये ब्रह्मा की सभा में बैठे थे तब गङ्गाजी ब्रह्मा के निकट आईं। उस समय वायु के झोंके से गङ्गा के शरीर का वस्त्र सहसा ऊपर की ओर उठ गया। यह देख कर वहाँ उपस्थित देवताओं ने तो अपना मुख नीचे की ओर कर लिया किन्तु राजर्षि महाभिष निःशङ्क होकर देवनदी की ओर देखते ही रह गये। नके उइस व्यवहार पर ब्रह्मा जी ने उन्हें पृथिवी पर जन्म लेने का शाप देते हुये कहा : जिस गङ्गा ने तुम्हारे मन को मोहित कर लिया है वही मनुष्यलोक में तुम्हारे प्रतिकूल आचरण करेगी। जब तुम्हें गङ्गा पर क्रोध आ जायगा तब तुम शापमुक्त हो जाओगे।' तब महाभिष ने अनेक राजाओं का चिन्तन करके राजा प्रतीप को ही अपना पिता बनाने के योग्य चुना। महाभिष को धैर्य खोते देख कर गङ्गा मन ही मन उन्हीं का चिन्तन करती हुई लौटीं। मार्ग में गङ्गा ने वसु-देवताओं के शरीर को स्वर्ग से नीचे गिरते देखा। उन्हें इस रूप में देख कर गङ्गा ने उनके इस प्रकार स्वर्गच्युत होने का कारण पूछा। तब वसुओं ने बताया कि उन लोगों ने महर्षि वसिष्ठ की धेनु का अपहरण कर लिया था जिससे क्रुद्ध होकर वसिष्ठ ने उन सब को मनुष्यलोक में जन्म लेने का शाप दे दिया है। उन वसुओं ने गङ्गाजी से पृथिवी पर मानव-पत्नी होकर अपने को पुत्र रूप में उत्पन्न करने का निवेदन किया जिससे उन लोगों को मानुषी स्त्रियों के उदर में प्रवेश न करना पड़े। गङ्गाजी ने वसुओं से ऐसे श्रेष्ठ व्यक्ति का नाम बताने के लिये कहा जो उन सब का पिता हो सके। वसुओं ने बताया कि प्रतीप के पुत्र शान्तनु लोक विख्यात साधु पुरुष होंगे जो उन लोगों के पिता हो सकते हैं। तब गङ्गाजी ने वसुओं का निवेदन स्वीकार करते हुये उनका प्रिय कार्य करने का आश्वासन दिया। वसुगण गङ्गा से बोले : 'हम लोग जब तुम्हारे गर्भ से जन्म लें तब तुम तत्काल ही हमें जल में फेंक देना जिससे हमें शीघ्र ही मर्त्यलोक से मुक्ति मिल जाय।' गंगाने वैसा ही करने का वचन देते हुये कहा 'राजा शान्तनु का मेरे साथ पुत्र के लिये किया हुआ सम्बन्ध व्यर्थ न हो जाय इसलिये उनके लिये भी एक पुत्र की व्यवस्था होनी चाहिये।' तब वसुओं ने अपने तेज के अष्टमांश को राजा शान्तनु के पुत्र के रूप में देने का वचन दिया किन्तु यह भी कहा कि मर्त्यलोक में उस पुत्र की कोई सान्तान न होते हुये भी वह अत्यन्त पराक्रमी होगा। इस प्रकार गङ्गाजी के साथ शर्त कर के वसुगण प्रसन्नतापूर्वक अपनी इच्छा के अनुसार चले गये। (१. ९६)।" इसे कथा के आगे के अंश के लिये देखिये 'शान्तनूपाख्यान।

महाभीमा = उमा (१२. २८४, ३१)।

१. **महाभूत** = विष्णु (सहस्रनाम)।

महाभूत (बहु० °तानि), पञ्चभूतों का द्योतक है : ३. २१०, १६ (महाभूतात्मकं ब्रह्म). १७; २११, २ (महाभूतानि यान्याहुः पञ्च धर्मभृतां वरः); ६. ५, ३ (पञ्चेमानि...महाभूतानि). ७ (महाभूतेषु पञ्चसु); १०, ५; १२. १८४, १. ३; १९५, ५. ६. ८. ११ (महाभूतानि पञ्चैव); २०७, ८; २१२, १९; २३९, ६; २४७; ३. ६; २७५, ४; १३. १४९, १३८; १४. ३५, ४७; १५. ३४, ५। तुकी० भूत (बहु०)।

महाभूताधिपति = विष्णु (नारायण) : १२. ३४०, १०२।

महाभोग = विष्णु (सहस्रनाम)।

महाभौम, पूरुवंशी महाराज अरिह के पुत्र का नाम है। ये सुयज्ञा के पति और अयुतनायी के पिता थे (१. ९५, १९-२०)।

महामख = विष्णु (सहस्रनाम)।

महामती, महर्षि अङ्गिरा की सातवीं पुत्री का नाम है : ३. २१८, ७ (महागखेष्वाङ्गिरसी दीप्तिमत्सु महामते। महामतीति विख्याता सप्तमी कथ्यते सुता ॥)।

महामनस् = विष्णु (सहस्रनाम)।

महामात्र = शिव (सहस्रनाम)।

१. महामाय = शिव (सहस्रनाम)।

२. महामाय = विष्णु (सहस्रनाम)।

महामायाधर = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

महामाल = शिव (सहस्रनाम)।

१. महामुख, जयद्रथ की सेना के एक योद्धा का नाम है। द्रौपदी हरण के समय नकुल ने इसका वध किया था (३. २७१, १६-१७)।

२. महामुख = शिव (सहस्रनाम)।

महामुनि = शिव (सहस्रनाम)।

१. महामूर्ति = शिव (सहस्रनाम)।

२. महामूर्ति = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

३. महामूर्ति = विष्णु (सहस्रनाम)।

महामूर्धन् = शिव (सहस्रनाम)।

महामेघचयप्रख्य = शिव (सहस्रनाम)।

महामेघनिवासिन् = शिव (सहस्रनाम)।

१-२. महामेरु = देखिये १-२ मेरु।

१. महायज्ञ = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

२. महायज्ञ = विष्णु (सहस्रनाम)।

महायज्ञभागहर = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

महायज्वन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

महायशस् = शिव (सहस्रनाम)।

महायशा = एक मातृका का नाम है (९. ४६, २८)।

महायुध = शिव (सहस्रनाम)।

महायोगिन् = शिव (१४. ८, २७)।

महायोगेश्वर बहु० (अर्थात् योग के महान ज्ञाता) = ब्रह्मा (१३. ९२, २१)।

१. महारथ, एक प्राचीन राजा का नाम है जिसका नारद ने उल्लेख किया (१. १, २२५)।

२. महारथ = शिव (सहस्रनाम)।

महारव, एक यदुवंशी क्षत्रिय जो रैवतक पर्वत पर आयोजित उत्सव में सम्मिलित था (१. २१९, ११)।

महाराजिक = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

महारूप = शिव (सहस्रनाम)।

महारेतस्, महारोमन् = शिव (सहस्रनाम)

महारौद्र, घटोत्कच के साथी एक राक्षस का नाम है। इसका दुर्योधन ने वध किया था (६. ९१, २०-२१)।

महार्णवनिपानविद् = शिव (सहस्रनाम)।

महार्ह = विष्णु (सहस्रनाम)।

महालय एक तीर्थ का नाम है : ३. ८४, ५४; ८५, ९१।

महालिङ्ग, महावक्त्र, माहवचस्, = शिव (सहस्रनाम)।

महावराह = विष्णु (श्रीकृष्ण) : १३. १४७, ५२; १४९; ७१ (सहस्रनाम)।

महावाच् = समाश्वास (एक अग्नि) : ३. २१९, २५।

महाविभूति = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

महावीर, एक प्राचीन क्षत्रिय राजा जो क्रोधवश-संज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ६६)।

महावीर्य = विष्णु (सहस्रनाम)।

महावेग = शिव (सहस्रनाम)।

महावेगा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १६)।

महाव्रत = भीष्म (देखिये वस्था०)।

महाशक्ति = विष्णु (सहस्रनाम)।

महाशङ्ख, शक्रतीर्थ के एक वृक्ष (नीलकण्ठी के अनुसार) का नाम है (९. ३७, १९-२०)।

महाशन = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. महाशिरस्, एक प्राचीन ऋषि जो युधिष्ठिर की सभा में विराजते थे (२. ४, १०)।

२. महाशिरस्, एक असुर का नाम है : २. ९, १४ (वरुण की सभा में उपस्थित दैत्यों और दानवों में यह भी था)।

महाशोण, एक नदी का नाम है : २. २०, २७ (श्रीकृष्ण, भीमसेन और अर्जुन इसे पार करके मगध गये थे)। तुकी० शोण।

महाशृङ्ग = विष्णु (सहस्रनाम)।

महाश्रम, एक तीर्थ का नाम है : ३. ८४, ५३; १३. २५, १७-१८ (यहाँ स्नान और व्रत का फल)।

महाश्व, एक प्राचीन राजा का नाम है : २. ८, १२ (यम की सभा में)।

महासत्त्व = अग्नि (देखिये वस्था०)।

महासरस्, एक तीर्थ का नाम है : १२. १५२, १२. २८। तुकी० महासरस्।

महासुर — देखिये असुर।

महासुरी = कालका (३. १७३, ७ : पुलोमा नाम दैतेयी कालका च महासुरी)।

१. महासेन = स्कन्द (देखिये वस्था०) : ३. २२५, २७; ९. ४६, ६०; २. ११, ५२)।

२. महासेन = शिव (सहस्रनाम),

महास्वन = विष्णु (सहस्रनाम)।

महास्वना एक मातृका का नाम है (९. ४६, २६)।

महाहंस = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

२. महाहनु तक्षकवंशी एक नाग का नाम है : १. ५७, १० (यह जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हो गया था)।

१. महाहनु, धार्तराष्ट्रवंशी एक नाग का नाम है (१. ५७, १७)।

महाहर्ष = शिव (सहस्रनाम)।

महाहविस् = विष्णु (सहस्रनाम)।

महाहस्त = शिव (सहस्रनाम)।

१. महाह्रद, एक अथवा अधिक तीर्थों का द्योतक है : ३. ८४, १४४; ११०, ३४ (ऋष्यशृङ्ग यहाँ निवास करते हैं); ११३, २५; १३. २५, १८. ४७; १०२, ४६।

२ महाह्रद = विष्णु (सहस्रनाम)।

महिष, एक असुर का नाम है : ३. २३१, ८२. ८३. ८५-८८. ९०-९१. ९५. ९६. १०५ (स्कन्द त्वयाऽयं महिषो हतः). १०६ (महिषतुल्यानां दानवानां); ७. १६६, १६ (निहानव्यामिमहिषं षण्मुखो यथा); ८. ५, ५७; ९. ४६, ७४ (स्कन्द ने इसका वध किया था); १३. १४, २१४। तुकी० दानव।

महिषघ्न = शिव (१३. १४, ३१३)।

महिषदा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २८)।

महिषानना, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २५)।

महिषार्दन = स्कन्द (३. २३२, ३)।

महिषासुरनाशिनी = दुर्गा (उमा) : ४. ६, १५।

१. महिष्मती, महर्षि अङ्गिरा की एक पुत्री का नाम है (३. २१८, ६)।

२. महिष्मती एक पुरी (नगर) का नाम है : २. ३१, २१ (सहदेव ने दिग्विजय के समय यहाँ के राजा नील के साथ घोर युद्ध किया, जिसमें अग्निदेवने नील की सहायता की)।

"जनमेजय के यह पूछने पर कि अग्निदेव ने नील की सहायता क्यों

की वैशम्पायन जी ने बताया : एक समय अग्निदेव महाराज नील की सुदर्शना नामक कन्या पर आसक्त हो गये। नील की वह कन्या अनुपम सुन्दरी थी और सदा अपने पिता के अग्निहोत्र-गृह में अग्नि को प्रज्वलित करने के लिये उपस्थित हुआ करती थी। पंखे से हवा करने पर भी अग्निदेव तब तक प्रज्वलित नहीं होते थे जब तक कि वह सुन्दरी अपने मनोहर ओष्ठ संपुट से फूँक मार कर हवा नहीं देती थी। इस प्रकार सुदर्शना पर अग्निदेव के आसक्त होने की बात राजा नील और उनके सभी नागरिक जान गये। तदनन्तर एक दिन अग्निदेव ब्राह्मण के वेश में सुदर्शना के पास आकर कामभाव प्रकट करने लगे। तब राजा नील ने शास्त्र के अनुसार उस ब्राह्मण पर शासन किया। इस पर क्रुद्ध होकर अग्नि अपने रूप में प्रज्वलित हो उठे। इस रूप में अग्नि को देखकर राजा नील को आश्चर्य हुआ और उन्होंने पृथ्वी पर मस्तक रखकर अग्निदेव को प्रणाम किया। तदनन्तर राजा ने अपनी कन्या को अग्निदेव की सेवा में अर्पित कर दिया। उस कन्या को पत्नीरूप में ग्रहण करके अग्निदेव ने राजा नील को यह वरदान दिया कि उनकी सेना को शत्रुओं से कोई भय नहीं रहेगा। तभी से जो राजा महिष्मती पर आक्रमण करता है उसे अग्निदेव भस्म कर देते हैं। जो राजा इस रहस्य से परिचित थे वे अग्नि के भय के कारण महिष्मती पुरी पर आक्रमण नहीं करते थे। (२. ३१, २६-३९)। ५. १९, २३; १६६, ४; १३. २, ६ (दशाश्व की राजधानी). ३२; १५२, ३।

१. मही=पृथिवी : १.६४,३५-३७;२-११,२०; ३.११४,१९; २३२,१५;

२. मही, एक नदी का नाम है (३. २२२, २३)। १३.१५४,२।

महीचारिन् = शिव (सहस्रनाम)।

१. महीधर, एक राजा जिसे भीमसेन ने अपनी दिग्विजय के समय पराजित किया था (२. ३०, ९)।

२. महीधर, गया के निकट गय द्वारा प्रतिष्ठित एक तीर्थ का नाम है (३. ९५, ८)।

३. महीधर = विष्णु (सहस्रनाम)।

महीभर्तृ = विष्णु (सहस्रनाम)।

महेज्य = विष्णु (सहस्रनाम)।

महेत्थ, एक देश का नाम है : २. ३२, ६ (पश्चिम दिग्विजय के समय नकुल ने इसे जीता था)।

१. महेन्द्र = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

२. महेन्द्र, एक पर्वत जहाँ रामजामदग्न्य निवास करते थे : १. ६४, ४; १३०, ५६. ५४; २१५, १३ (अर्जुन यहाँ आये थे); २. १०, ३० (कुबेर की सभा में); ३. ८५, १६, ८७, २२; ९३, १० (महेन्द्रादींश्च पर्वतान्); ९९, ६५; ११४, ३० (युधिष्ठिर तीर्थयात्रा करते हुए यहाँ भी आये थे); ११७, १४ (शैलेन्द्रे). १८ (परशुराम जी ने यहाँ पधार कर युधिष्ठिर आदि को दर्शन दिया था); १८८, ११४ (मार्कण्डेय जी ने इसे भी नारायण के उदर में देखा); ५. १७६, ३१; १८६, ११; ६. ९, ११ (भारतवर्ष के कुलपर्वतों में से एक); ७. ७०, २२. २३ (सम्पूर्ण पृथिवी कश्यप जी को दान दे कर रामजामदग्न्य इस पर्वत पर रहने लगे); १२. २, १४ (जगाम सहसा रामं महेन्द्रं पर्वतं प्रति). १७ (कर्णस्य वसतो महेन्द्रे); १३. १६५, ३१; १४. ४३, ५।

३. महेन्द्र (?) : 'राक्षसाधिपतिश्चैव महेन्द्रो', (२. १०, ३०)। तुकी० २. १०, ३२ भी।

४. महेन्द्र = विष्णु (सहस्रनाम)।

महेन्द्रतनय = अर्जुन (६. ११७, १९)।

महेन्द्रलोक = इन्द्रलोक (१. २, १५९)।

महेन्द्रवाणी, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (१३. १६५, २८)।

महेन्द्रसूनु = अर्जुन (८. ८९, १७; ९१, ५१)।

महेन्द्रा, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, २२)।

महेन्द्राचलगमनम् – "चतुर्दशी तिथि को परशुराम जी ने महेन्द्र पर्वत पर पधार कर युधिष्ठिर आदि को दर्शन दिया। युधिष्ठिर ने भी परशुराम का पूजन किया जिससे प्रसन्न होकर उन्होंने युधिष्ठिर से एक रात महेन्द्रपर्वत पर निवास करके दक्षिण की यात्रा आरम्भ करने का परामर्श दिया। (३. ११७, १६-१८)।

महेन्द्राणी = शची (देखिये वस्था०)।

महेन्द्रावरज = श्रीकृष्ण (विष्णु) : देखिये वस्था०।

१. महेश्वर = शिव (देखिये वस्था०)।

२. महेश्वर = विष्णु (श्रीकृष्ण) : १२. ३४०, ५८; १३. १४७, ८।

३. महेश्वर, एक रुद्र : १२. १५०, १२।

महेश्वरपद, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, ११९)।

महेश्वरपुर, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, १२८)।

महेश्वरसख = कुबेर (९. ११, ५५)।

महेश्वरी = उमा (१२. २८४, ३१)।

महेष्वास = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. महोत्सह, एक प्राचीन राजा का नाम है (१. १, २३५)।

२. महोत्सह = विष्णु (सहस्रनाम)।

महोदधि = शिव (सहस्रनाम)।

महोदधिशय = विष्णु (सहस्रनाम)।

महोदय, एक राजा का नाम है (१३. १६५, ५२)।

१. महोदर, एक नाग का नाम है (१. ३५, १६)।

२. महोदर, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७,९८; ११७, ७; ६. ८८, १५. १७. २७ (भीमसेन ने इसका वध किया)।

३. महोदर, एक मुनि का नाम है : "पूर्वकाल में भगवान श्रीराम ने एक राक्षस को मारकर उसे दूर फेंक दिया। उसका विशाल सर महामुनि महोदर की जाँघ में चिपक गया था। वे महामुनि कपालमोचन तीर्थ में स्नान करके उस कपाल से मुक्त हुये थे। वैशम्पायन जी ने जनमेजय को बताया कि पूर्वकाल में राम दाशरथी ने जब दण्डकारण्य में निवास करते समय राक्षसों के विनाश का विचार किया तब उन्होंने जनस्थान में एक दुरात्मा राक्षस का मस्तक काट दिया। वह कटा हुआ मस्तक उस महान वन में ऊपर की ओर उछला और दैवयोग से वन में विचारते हुये महोदर मुनि की जाँघ पर गिर कर उसमें चिपक गया। उस कपाल के जाँघ में चिपकने की वेदना से पीड़ित महोदर ने भूमण्डलों के सभी तीर्थों की यात्रा की किन्तु उस कपाल से वे मुक्त नहीं हो सके। अन्ततः कुछ मुनियों से सरस्वती के तट पर स्थित औशनस नामक तीर्थ की स्तुति के सम्बन्ध में सुन कर वे वहाँ आये और तीर्थ के जल से आचमन स्नान किया। उसी समय वह कपाल उनकी जाँघ को छोड़ कर पानी में गिर पड़ा। कपाल से मुक्त होकर महोदर मुनि ने अत्यधिक सुख का अनुभव किया। साथ ही वह मस्तक भी पानी में गिर कर अदृश्य हो गया। उस कपाल से मुक्त हो निष्पाप एवं पवित्र महोदर मुनि कृतकृत्य हो कर अपने आश्रम पर लौट आये। (९. ३९, ५-२०)।"

४. महोदर = शिवः ७. २०२, ४१; १२. २८४, १४१ (सहस्रनाम)।

महोपनिषद् : ६. ११९, १२१; ७. १४३, ३५; १२. ३३९, १११ (इदं महोपनिषदं चतुर्वेदसमन्वितम्। सांख्ययोगकृतं तेन पञ्चरात्रानु शब्दितम् ॥)।

१. महोरग (बहु०°गाः) विभिन्न नागों का द्योतक है : १. ६, २५५; १८७, ७; ३. ४६, २५; ८४, ५; ८५, २५; १०४, २४; १५९, १९; १८८, १३; २०१, १८ (देवासुरमहोरगाः); ४. ५६, ४ (देवगन्धर्वमहोरगसमाकुलम्); ७०, १२ (सकिन्नरमहोरगाः); ५. १०, ४१; १२, २; ७. ९८, ४. ३४; १११, ३१; ११७, ९ (यथा क्रुद्धा महोरगाः); २०१, ८१; १२३, २०; १३४, २८; १३७, ४ (श्वसन्निव महोरगाः); ९४, ६७; ८. १४, ३२; ३७, ३६ (असुरसुरमहोरगान्नरान्); ९०, ५०. ५९; १८८, १२. ४७, १९ (सिद्धमहोरगाः). ३५; १५८, १४; १६६, १९; १८८, ३ (दैत्यासुरमहोरगाः); ३०२, ३१; ३३४, १६; १३. ८३, ३० (सर्पिमहोरगाः); १४०, २२; १५०, १०।

२. महोरग = विष्णु (सहस्रनाम)।

महोरगपति = शिव (सहस्रनाम)

महोरस्क, महोष्ठ = (शिव (सहस्रनाम)।

१. महौजस्, एक अथवा अधिक क्षत्रिय राजाओं का नाम है : १. ६७, ५२ (पाँचवें कालेय के अंश से उत्पन्न); २. ३०, २२ (दिग्विजय के समय भीमसेन ने इन्हें पराजित किया था); ५. ४, २२ इनको पाण्डवों की ओर से रण-निमन्त्रण भेजने का निश्चय किया गया)।

२. महौजस् = शिव (१४. ८, ३३. २८)।

३. महौजस् (बहु० °साः) एक क्षत्रियकुल जिसमें 'वरयु' नामक कुलाङ्गार राजा उत्पन्न हुआ था (५. ७४, १५)।

महौषध = शिव (सहस्रनाम)।

१. माकन्दी, एक नगर का नाम है। यह पाञ्चाल देश में गंगातट पर स्थित था (१. १३८, ७३)।

२. माकन्दी, पाण्डवों ने जिन पाँच ग्रामों की दुर्योधन से याचना की उनमें से एक का नाम है :५. ३१, १९ (अविस्थलं वृकस्थलं माकन्दीं वारणावतम्); ७२, १५; ८२, ७।

१. मागध = बृहद्रथ (२. १९, ४)।

२. मागध = दण्डधार (८. १८, ३)।

३. मागध = जलसन्ध (७. ११५, ३४. ३९)।

४. मागध = जरासन्ध : २. १४, २२. ४६; १५, १३. २४; १९, १५. २३; २०, ३. २१; २२, २३. २६; २३, ३ (जरासन्धस्तवो राजा). ३०; ७. ८, २६ (कर्ण के साथ मित्रता करके इसने पृथिवी के अनेक राजाओं को अपने अधीन कर लिया); १२. ५, १ (राजा···जरासन्धो महीपतिः); १३. १४३, ३३ (श्रीकृष्ण ने इसके द्वारा बन्दी राजाओं का उद्धार किया)।

५. मागध = जयसेन (२. ४, २६) तुकी० अगला शब्द।

६.मागध = जयत्सेन, जो जरासन्ध का पुत्र था : २. ४४, १९; ५. १९, ८; ६. १०८, १४; ११४, ३०. ३४; ८. ५, ३१ (अभिमन्यु ने इसका वध किया)

७. मागध = सहदेवपुत्र मेघसन्धि : १४. ८२, १४-१६. २५; ८३, १।

८. मागध = जरासन्धपुत्र सहदेव (५. १५७, १२)।

९. मागध, युधिष्ठिर के समकालीन एक अथवा अधिक मगध-राजाओं का द्योतक है : २. ५३, ७ (युधिष्ठिर की सेवा में); ५. ५७, ८ (जरासन्धिः ने युधिष्ठिर का पक्ष लिया); ६. १७, २७ (दुर्योधन की सेना में); १८, १५; ६२, ३५. ४६. ४७ (अभिमन्यु से युद्ध किया); ८१, ३ (दुर्योधन की सेना में); १०८, ५८; ७. ४८, ७ (अभिमन्यु ने वध किया); १०७, ३३ (सात्यकि ने वध किया); ८. ६, ३६; ९. २, १७ (दुर्योधन की सेना में सम्मिलित). ३७ (बृहद्बलो हतो···मागधश्च महाबलः)।

१०. मागध (वि०); २. १४, ५२ (गिरिमुख्यं तं मागध); २०, ३० (मागधं पुरम्); २१, १. १०; २२, २०; ६. ६२, ३५; ८. ३८, १८ (दासीनां ···मागधीनां शतम्); ११. २५, ७ (मागधानामधिपतिम्)।

११. मागध (मागधों के पूर्वज) : १२. ५९, ११२. ११३ (अनूपदेशं सूताय मगधं मागधाय च)।

१२. मागध (बहु० °धाः) एक जाति के लोगों का नाम है : १. १, १५५ (मागधानां वरिष्ठं जरासन्धं); ६३, ३० (महारथो मागधानां विश्रुतो यो बृहद्रथः); २०४, १७ (अब्रुवीच्च हृतीश्वरः। आसीद्राजगृहे राजा मागधानां महीक्षिताम्); २. १९, १ (बृहद्रथ इनके शासक थे): २०, २९ (ये जरासन्ध के राज्य में रहते थे); २१, १० (अपरिहार्या मेघानां मागधा मनुना कृताः). १९ (मागधानां सुरुचिरं चैत्यकं). २९; २४, ९. १०. २० (जरासन्ध के वध के बाद उसका पुत्र सहदेव मागधों का राजा बना); ३०, १६; ३. २५४. ८ (दिग्विजय के समय कर्ण ने इन्हें पराजित किया था); ६. ९, ४५ (भारतवर्ष के निवासियों के अन्तर्गत इनका उल्लेख). ५०; ५१. १२; ५६, ८ (भीष्म के गारुडव्यूह के दाहिने पंख में स्थित); ८७, ८; ७. ११, १५ (कर्ण ने इन्हें पराजित किया था); २०, १० (द्रोण के व्यूह के पृष्ठभाग में स्थित); १०७, ३३. ३६ (मगधराज के पुत्र व्याघ्रदत्त के वध के बाद इन लोगों ने सात्यकि पर आक्रमण किया); ८. १२, १९; १८, ३. ५; २२, २ (पाञ्चालों पर आक्रमण किया); ४५, १४. ३०. ३४; ४६, ११ (कौरवों के व्यूह के दाहिने पार्श्व में); ७०, ९; ७३, २४ (इनके अधिपति जयत्सेन का अभिमन्यु ने वध किया); ९. ३३, २५; ११. २५, ७. ९; १३. ४४, ३८ (अम्बा के स्वयंवर के समय भीष्म ने इन्हें पराजित किया था); १६. ६, ११ (श्रीकृष्ण ने इन्हें पराजित किया था)।

१३. मागध, सूतों की एक जाति का द्योतक है : १. १८४, १६ (सूतमागधाः); ३. २३६, १० (मागधसूतपूगैः); ४. १८, १९; ६८, २८; ५. ३६, ५५; ९४, ४; ६. ९७, ३०; ७. ७, ८; ७८, ८ (सूतमागधबन्दिभिः); ८. १, १२; १२. ३७, ४३; २९६, ८; १३. ४८, १२ (वैश्य द्वारा क्षत्रिय पत्नी से उत्पन्न). १९. २२; ४९, १०; ११८, १६; १४. ६४, ३; ७०, ८; १५. २३, ७; ३८, ५ (सूतमागधसंघैः)।

मागधी, मगधराज की पुत्री अमृता का द्योतक है (१. ९५, ४१)।

माघ, एक मास का नाम है : १३. २५, ३७ (इस मास में प्रयाग स्नान करना चाहिये); ६६, ८ (इस मास में तिल्दान का महत्व); १०६, २१ (इस मास में व्रत का माहात्म्य); १०९, ५ (अहोरात्रेण द्वादश्यां माघमासे तु माधवम्); १६७, २८ (माघोऽयं समनुप्राप्तो मासः सौम्यो युधिष्ठिर, त्रिभागशेषः पक्षोऽयं शुक्लो भवितुमर्हति); १४. ८५, ४ (द्वादशीं माघमासिकीम्)।

माघी, माघपूर्णिमा का द्योतक है : १२. १७१, १७ (इस दिन राक्षसराज अनेक ब्राह्मणों को भोजन कराता था); १३. २५, ३६-३७ (दशतीर्थसहस्राणि तिस्रः कोट्यस्तथा पराः। समागच्छन्ति माघ्यां तु प्रयागे); ९४, ६ (शुक आदि इस दिन कौशिकी आये); १४. ८५, ८ (माघी···पौर्णमासीयं मासः शेषो वृकोदर)।

१. माठर, सूर्य के एक अनुयायी का नाम है : ३. ३, ६८ (अनुचराः सर्वे पादोपान्तं समाश्रिताः माठरारुणदण्डाद्याः); ८८, १० (माठ·११ वनं पुण्यं); १२. २९२, ८ (तैरेव फलपत्रैश्च स माठरमतोषयत्। तस्माल्लेभे परं स्थानं शैब्योऽपि पृथिवीपतिः)।

२. माठर (बहु०) : ८. ७३, १९ (माठरतक्षणा)। देखिये रामठ (बहु०) भी।

माणिवर, मन्दराचल निवासी एक यक्ष का नाम है : (३. १३९, ५)।

माण्डव्य एक ऋषि (= अणिमाण्डव्य) का नाम है : १. १०६, २९ (धर्मो विदुररूपेण शापात्तस्य महात्मनः। माण्डव्यस्यार्थतत्त्वज्ञः कामक्रोधविवर्जितः); १०७, २ (विदुर के रूप में जन्म लेने का धर्म को शाप देने के कारण ये अणिमाण्डव्य (देखिये वस्था०) कहलाये); ५. १८६, २८ (इनके आश्रम में अम्बा ने तपस्या की थी); १२. ४७, ११ (शरशय्या पर पड़े भीष्म को घेर कर खड़े ऋषियों में ये भी थे); १२. २७६, ३. १४ (जनक के साथ इनका संवाद); १३. १८, ४६-४८ (इन्होंने बताया कि जब चोर न होते हुये भी इन्हें शूली पर चढ़ा दिया गया तब वहीं से इन्होंने महादेवजी का स्तुति की थी और महादेव जी ने इनके शूली से मुक्त होने का आशीर्वाद दिया था); १५. २८, १२ (माण्डव्य शापाद्धि स वै धर्मो विदुरतां गतः). १४ (माण्डव्येनर्षिणा धर्मो ह्यभिभूतः)। तुकी० अणिमाण्डव।

१. मातङ्ग एक ऋषि का नाम है। इनके वचन प्रमाण के रूप में ग्रहण किये जाते हैं। वे वचन ये हैं : वीर पुरुष को चाहिये कि वह सदा उद्योग ही करे। किसी के सामने नतमस्तक न हो क्योंकि उद्योग करना ही पुरुष का कर्त्तव्य है। वीर पुरुष असमय में नष्ट भले ही हो जाय परन्तु कभी शत्रु के सामने मस्तक न झुकाये।' (५. १२७, १९-२०)।

२. मातङ्ग (बहु०) मातङ्गी की सन्तानों का द्योतक है (१. ६६, ६६)।

३.मातङ्ग एक जाति (= चाण्डाल) का नाम है : १२. १४१, ५०. ९२; १४. ५५, १८ और बाद।

मातङ्गवापी, एक तीर्थ का नाम है (१३. २५, ३२)।

मातङ्गी, क्रोधवशा की क्रोधजनित कन्या का नाम है जिसने हाथियों को जन्म दिया (१. ६६, ६१. ६६)।

१. मातरिश्वन् = वायु (देखिये वस्था०)।

२. मातरिश्वन्, गरुड के पुत्र एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१ १४)।

मातलि इन्द्र के सारथी का नाम है : १. २, २३३ (वरान्वेषणमत्रैव मातलेश्च महात्मनः); ३. ४१, ४५ (रथो मातलिसंयुक्त आगन्ता); ४२, २. १०. ११. १५. १९ (शक्र सारथिः). ३८ (ये अर्जुन को इन्द्रलोक लाये); ७१, २६ (ऋतुपर्ण ने नल को मातलि माना); १६५, २. ८. ९ (ये अर्जुन को इन्द्रलोक से पाण्डवों के पास लाये); १६८, ३२. ३३. ३५. ३७. ४१. ४५. ७३ (निवातकवचों से युद्ध करने के लिये इन्द्र ने अपने रथ तथा सारथि मातलि को अर्जुन को दिया); १६९, ७. २७; १७०, ७-९.१३. १५ (शक्रसारथिः). २३. २४; १७१, १४. २३. २८; १७२, ११. १९. २०. २२. २६. २८. ३५; १७३, ६. ७. १६. १८. ३२. ५८. ६६. ६८; २९०, १२. १३. १५ (ये इन्द्र का रथ लेकर राम दाशरथी के पास आये। उसी रथ पर बैठ कर राम ने रावण से युद्ध किया); ४. ४५, १९; ५. ९७, ११. १२ (मतस्त्रिलोकराजस्य मातलिर्नाम सारथिः). १४. १९; ९८, १. ३. ५-७. १५-१७. २५; ९९, १६. १९. २०; १००, ६. ८. १६. १७; १०१, ३. ७. १६; १०२, ६. ७. ९. १०. १२; १०३, १७. १८. २२. २४. २५; १०४, १ (सूतोऽयं मातलिर्नाम शक्रस्य दयितः सुहृत्). १२. १८. २३. २५ (नारद जी को साथ लेकर इन्होंने अपनी पुत्री गुणकेशी के लिये सभी लोकों में योग्यपति की खोज करने के बाद सुमुख का चयन किया। भगवान् विष्णु के हस्तक्षेप से गरुड ने सुमुख का भक्षण नहीं किया); ७. ८४, १९; ११२, ६०; ८. ३५, ४७; ३६, १. २ (यथा हरिहयैर्युक्तं संगृह्णाति स मातलिः)।

तुकी इनके नामों के निम्नलिखित पर्यायः

शक्रसारथि : ३. ४२, १९; १६८, ४५; १७०, १५; १७३, ५८; २९०, १२; २९१, ४७।

देवसारथि : ३. १७३, ५७।

मातलीय (वि०) : १. २, ६१। देखिये मतलीयोपाख्यान।

मातलीयोपाख्यान - "महर्षि कण्व ने दुर्योधन से कहा : 'जिस प्रकार लोकपितामह ब्रह्मा अक्षय और अविनाशी हैं, उसी प्रकार वे दोनों भगवान् नर-नारायण ऋषि भी हैं। अदिति के सभी पुत्रों में अथवा सम्पूर्ण आदित्यों में एकमात्र भगवान् विष्णु ही अजेय, अविनाशी, नित्यविद्यमान एवं सर्वसमर्थ सनातन परमेश्वर हैं।' इस प्रकार कह कर कण्व ने दुर्योधन को परामर्श दिया कि वह पाण्डवों से सन्धि कर ले। कण्व ने कहा कि सम्पूर्ण पाण्डव देवताओं के समान पराक्रमी हैं, अतः वे दुर्योधन की अपेक्षा बलवान् हैं। इस प्रसङ्ग में कण्व ने मातलि के इस प्राचीन इतिहास का उदाहरण देते हुये बताया : इन्द्र के प्रिय सारथि का नाम मातलि है। उनके कुल में इन्हीं की एक कन्या थी जो अपने रूप के कारण सम्पूर्ण लोकों में विख्यात थी। उस कन्या का नाम गुणकेशी था। देवों, मनुष्यों, देवताओं, दैत्यों गन्धर्वों, तथा ऋषियों में भी जब मातलि को अपनी कन्या के योग्य वर दिखाई नहीं पड़ा तब उन्होंने नागलोक में जाने का विचार किया (५. ९७)।

"उसी समय नारद जी भी वरुण से मिलने नागलोक की ओर ही जा रहे थे, अतः वे भी मातलि के साथ हो लिये। इस प्रकार मातलि और नारद दोनों महात्मा पृथिवी के भीतर प्रवेश करके जल के स्वामी वरुण के समीप गये। वहाँ वरुण देवता से अपने कार्य का निवेदन करने के पश्चात् उनकी आज्ञा लेकर मातलि और नारद जी नागलोक में विचरण करने लगे। नारद जी पाताललोक में निवास करनेवाले सभी प्राणियों को जानते थे। अतः उन्होंने मातलि को वहाँ की सब वस्तुओं के विषय में विस्तार से बताना आरम्भ किया। उन्होंने पुत्रों और पौत्रों से घिरे वरुण देवता का मातलि को दर्शन कराया। तदनन्तर नारद जी ने वरुण के पुत्रों का परिचय देते हुये पुष्कर के सम्बन्ध में बताया कि सोम की पुत्री ने उसका अपने पतिरूप में वरण किया था। सोम की दूसरी पुत्री ज्योत्स्नाकाली ने अदिति के ज्येष्ठ पुत्र सूर्यदेव को अपना श्रेष्ठ पति बनाया था। तदनन्तर नारद जी ने चारों ओर से सुवर्णनिर्मित वरुण देवता के भवन को दिखाया जहाँ पहुँच कर ही देवगण देवत्वलाभ करते हैं। उन्होंने दैत्यों के अस्त्र शस्त्रों को दिखाते हुए बताया कि देवताओं ने उन आयुधों को जीतकर अपने अधिकार में कर लिया था। ये अक्षय आयुध ऐसे थे जो प्रहार करने पर शत्रु को आहत करके पुनः अपने स्वामी के पास लौट आते थे। वहीं नारद जी ने उन स्थानों को भी दिखाया जहाँ दैत्य और राक्षस पूर्वसमय में अपने दिव्यास्त्रों के साथ निवास करते थे। वरुण देवता के सरोवर में अग्निदेव प्रकाशित होते हैं। अग्निदेव ने विष्णु के सुदर्शन चक्र को भी अवरुद्ध कर दिया था। वज्र की गाँठ को 'गाण्डी' कहा गया है। उसी से बना धनुष गाण्डीव कहलाता है। उस धनुष को दिखाते हुये नारद जी ने बताया कि जगत् का संहार करने के लिये ही उसका निर्माण हुआ है और देवगण सदा उस धनुष की रक्षा करते हैं। ब्रह्मा जी ने उस प्रचण्ड धनुष का निर्माण किया था। उस महान् अभ्युदयकारी धनुष को वरुण के पुत्र धारण करते हैं। आवश्यकता पड़ने पर यह धनुष एक लाख गुनी शक्ति से सम्पन्न होकर बल को धारण करता है और सदा अविचल बना रहता है। नारद जी ने वरुण के छत्र को दिखाते हुये बताया कि उस छत्र से मेघ की भाँति सब ओर से शीतल जल की वर्षा होती रहती है। उस छत्र से गिरा हुआ चन्द्रमा के समान निर्मल जल अन्धकार से आच्छन्न रहता है जिससे दृष्टिपथ में नहीं आता। नारदजी ने वरुण लोक की आश्चर्यजनक वस्तुओं की संख्या अगणित बताते हुये सब को देखपाना अत्यधिक श्रम और समय साध्य बताया (५. ९८)।

"नारद जी ने कहा : यह जो नागलोक के नाभिस्थान में स्थित नगर दिखाई पड़ता है इसे पाताल कहते हैं। इस नगर में दैत्य और दानव निवास करते हैं। यहाँ जल का आहार करनेवाली आसुर अग्नि सदा उद्दीप्त रहती है। देवताओं ने अपने शत्रुओं का संहार करके अमृत पान कर उसका अवशिष्ट भाग यहीं रख दिया था। यहाँ अदितिनन्दन हयग्रीव विष्णु सुवर्णमय कान्ति धारण करके प्रत्येक पर्वपर वेदध्वनि के द्वारा जगत् को परिपूर्ण करते हुये ऊपर को उठते हैं। जगत का हित करनेवाला और समुद्र से उत्पन्न होनेवाला वर्षाकालीन वायु यहीं से शीतल जल लेकर मेघों में स्थापित करता है जिसे देवराज इन्द्र भूतल पर बरसाते हैं। पाताल निवासी जीव-जन्तु यहाँ दिन में सूर्य की रश्मियों से संतप्त हो मृतप्राय अवस्था में पहुँच जाते हैं; परन्तु रात होने पर अमृतमयी चन्द्ररश्मियों के सम्पर्क से पुनः जी उठते हैं। सर्वभूत महेश्वर भगवान् भूतनाथ ने सम्पूर्ण प्राणियों के कल्याण के लिये यहीं तपस्या की थी। तपस्या द्वारा स्वर्गलोक पर विजय पानेवाले गोव्रतधारी ब्रह्मणमहर्षिगण भी यहीं निवास करते हैं। यहाँ नागराज ऐरावत, वामन, कुमुद, और अञ्जन नामक श्रेष्ठ गज सुप्रतीक के वंश में उत्पन्न हुये हैं। जल के भीतर यह एक अण्ड रक्खा हुआ है जो यहाँ अपनी प्रभा से उद्भासित होता है। जब से प्रजाजनों की सृष्टि आरम्भ हुई है तब से लेकर अब तक यह अण्ड न तो फूटता है और न अपने स्थान से इधर-उधर जाता है। प्रलय काल में इस अण्ड के भीतर से महान अग्नि प्रकट होगी जो चराचर प्राणियों सहित समस्त त्रिलोकी को भस्म कर डालेगी। नारद जी का यह भाषण सुनकर मातलि ने कहा : 'यहाँ मुझे कोई भी वर पसन्द नहीं आया; अतः शीघ्र ही अन्यत्र चलिये' (५. ९९)।

"नारदजी ने हिरण्यपुर का वर्णन करते हुये बताया : हिरण्यपुर में मायावी दैत्यों और दानवों का निवासस्थान है। असुरों के विश्वकर्मा मय ने अपने मानसिक संकल्प के अनुसार पाताल लोक में इस नगर का निर्माण किया है। यहाँ सहस्रों मायाओं का प्रयोग करनेवाले शूरवीर दानव निवास करते हैं जिन्हें पूर्वकाल में अवध्य होने का वरदान प्राप्त हो चुका है। इन्द्र, यम, वरुण, कुबेर तथा अन्य कोई देवता भी इन दानवों को वश में

नहीं कर सकते। भगवान विष्णु के चरणों से उत्पन्न कालखञ्ज नामक असुर तथा ब्रह्मा के पैरों से प्रकट नैर्ऋत और यातुधान इसी नगर में निवास करते हैं। निवातकवच नामक दानव, जिन्हें इन्द्र भी परास्त नहीं कर सकते, यहीं निवास करते हैं। नारदजी ने कहा : मातले, तुम, तुम्हारा पुत्र गोमुख, तथा पुत्र सहित शचीपति देवराज इन्द्र अनेक बार इन निवातकवचों के सामने युद्धभूमि छोड़ कर भाग चुके हैं।' तदनन्तर नारद जी ने इन दानवों के सुवर्णनिर्मित भवनों तथा उनमें लगे वैदूर्य, अर्कस्फटिक वज्रसत और पद्मरागा आदि मणियों का वर्णन किया। यह सब वर्णन सुन कर मातलि ने नारद जी को बताया कि देवता और दानव यद्यपि परस्पर भाई हैं, तथापि इनमें सदैव वैरभाव बना रहता है। ऐसी दशा में शत्रुपक्ष के साथ अपनी पुत्री का सम्बन्ध बनाना उचित नहीं है। अतः उन्होंने अन्यत्र चलने का परामर्श देते हुये नारद जी से कहा : 'मैं यह जानता हूँ कि आपके मन में हिंसात्मक कार्य का अवसर उपस्थित करने की प्रबल इच्छा रहती है।' (५. १००)।

"तदनन्तर नारद जी मातलि को सर्पभोजी गरुडवंशी पक्षियों के लोक में लाये। उन्होंने बताया कि उस लोक में विनतानन्दन गरुड के छः पुत्रों ने अपनी वंशपरम्परा का विस्तार किया है जिनके नाम सुमुख, सुनामा, सुनेत्र, सुवर्चा, सुरुच तथा पक्षिराज सुबल हैं। ये सभी सम्पन्न तथा श्रीवत्स-चिह्न से विभूषित हैं। ब्राह्मण कुल में उत्पन्न होकर भी ये कर्म से क्षत्रिय हैं। ये सर्पों को ही अपना आहार बनाते हैं। इस प्रकार अपने भाई-बन्धुओं का संहार करने के कारण इन्हें ब्राह्मणत्व प्राप्त नहीं है। भगवान् विष्णु ही इनके देवता हैं। विष्णु इनके हृदय में सदा विराजते हैं और वे विष्णु ही सदा इनकी गति हैं। तदनन्तर नारद जी ने प्रमुख सुपर्णों के नामों का उल्लेख किया। (५. १०१)।

"रसातल का वर्णन करते हुये नारद जी ने बताया कि यह पृथिवी का सातवाँ तल है। यहाँ अमृत से उत्पन्न हुई गोमाता सुरभि निवास करती हैं। ये पृथिवी के सारतत्त्व से प्रकट, छः रसों के सारभाग से संयुक्त एवं सर्वोत्तम एकरसरूप क्षीर सदा अपने स्तनों से प्रवाहित करती रहती हैं। पूर्वकाल में जब ब्रह्मा अमृतपान करके तृप्त हो उसका सारभाग अपने मुख से निकाल रहे थे उसी समय उनके मुख से अनिन्दिता सुरभि का प्रादुर्भाव हुआ था। पृथिवी पर निरन्तर गिरती हुई सुरभि के क्षीर की धारा से एक अनन्त ह्रद बन गया है जिसे क्षीरसागर कहते हैं। क्षीरसागर से उत्पन्न होनेवाला फेन पुष्प के समान प्रतीत होता है। इस फेन को फेनपसंज्ञक रसातलवासी बहुसंख्यक मुनिगण पान करते हैं। फेन का आहार करने के कारण ये मुनिगण 'फेनप' नाम से विख्यात हैं। ये अत्यन्त घोर तपस्या में संलग्न रहते हैं जिसके कारण देवता लोग भी इनसे भयभीत रहते हैं। सुरभि से चार अन्य धेनुएँ उत्पन्न हुई हैं जो सब दिशाओं में निवास करती हैं। इन चार धेनुओं में सुरूपा नामक धेनु पूर्व दिशा को, हंसिक नामक धेनु दक्षिण दिशा को विश्वरूपा सुभद्रा नामक धेनु पश्चिम दिशा को और सर्वकामदुघा नामक धेनु उत्तर दिशा को धारण करती हैं। देवताओं और असुरों ने मिलकर मन्दराचल को मथानी बनाकर इन्हीं धेनुओं के दूध से मिश्रित क्षीरसागर का मन्थन किया और उससे वारुणी, लक्ष्मी एवं अमृत को प्रकट किया था। तत्पश्चात उस समुद्रमन्थन से उच्चैःश्रवा नामक अश्वराज और कौस्तुभ नामक मणिरत्न का प्रादुर्भाव हुआ था। सुरभि के स्तनों से प्रवाहित दूध सुधाभोजी लोगों के लिये सुधा, स्वधाभोजी पितरों के लिये स्वधा, तथा अमृत भोजी देवताओं के लिये अमृतरूप है। रसातलवासियों ने पूर्वकाल में जिस पुरातन गाथा का गायन किया था वह आजभी लोकों में सुनी जाती है और मनीषी पुरुष उसका गान करते हैं। वह गाथा इस प्रकार है : 'नागलोक, स्वर्गलोक तथा स्वर्गलोक के विमान में निवास करना भी उतना सुखदायक नहीं होता जितना रसातल में निवास करनेवाले को सुख प्राप्त होता है।' (५. १०२)।

"नारद जी ने नागराज वासुकि द्वारा सुरक्षित उनकी भोगवती नामक पुरी का वर्णन करते हुये बताया कि इन्द्र की अमरावती पुरी की भाँति यह भी सुख समृद्धि से सम्पन्न है। यहीं शेषनाग स्थित हैं जो पृथिवी को अपने सर पर धारण करते हैं। यहाँ सुरसा के पुत्र नागराज शोक-सन्ताप से रहित होकर निवास करते हैं। इनके अतिरिक्त सहस्रों की संख्या में नाग यहाँ रहते हैं जिनके नामों का भी नारद जी ने उल्लेख किया। तदनन्तर उन्होंने मातलि से किसी एक नाग को अपनी पुत्री के वर के रूप में पसन्द करने के लिये कहा। तब मातलि ने एक नागकुमार को पसन्द करके उसका परिचय पूछा। नारद जी ने उसका परिचय देते हुये बताया कि वह ऐरावत के कुल में उत्पन्न, आर्यक का पौत्र और वामन का दौहित्र नागराज सुमुख है। सुमुख के पिता नागराज चिकुर थे जिन्हें कुछ दिन पूर्व गरुड ने अपना ग्रास बना लिया था। मातलि ने सुमुख को ही अपना जामाता बनाने का निश्चय किया। (५. १०३)।

"नारदजी ने मातलि का निश्चय जान कर नागराज आर्यक से उनका परिचय देते हुये उन्हें इन्द्र का मित्र और सारथि बताया। नारदजी ने कहा कि मातलि का प्रभाव इन्द्र से कुछ ही कम है। देवासुर संग्राम में सहस्र अश्वों से युक्त देवराज के विजयशील रथ का ये अपने मानसिक संकल्प से ही संचालन और नियन्त्रण करते हैं। ये अश्वों द्वारा जिन शत्रुओं को जीत लेते हैं उन्हीं को देवराज इन्द्र अपने बाहुबल से पराजित करते हैं। अपनी गुणवती कन्या के लिये वर की खोज करते हुये इन्होंने अनेक लोकों में भ्रमण किया है और अन्ततः नागराज सुमुख को ही अपना जामाता बनाने का निश्चय कर लिया है। नारदजी की बात सुन कर आर्यक ने इस प्रस्ताव पर आपत्ति व्यक्त करते हुये कहा : 'सुमुख के पिता को गरुड ने अपना भोजन बना लिया है। इस दुःख से हम लोग पीड़ित हैं। इतना ही नहीं, यहाँ से जाते समय गरुड़ यह भी कह गये हैं कि दूसरे महीने में वे सुमुख का भी भक्षण करेंगे।' तब मातलि ने सुमुख की प्राणरक्षा का वचन देते हुये उसे अपना जामाता बन कर देवराज इन्द्र के पास ले जाने का प्रस्ताव किया। तदनुसार वे सभी महातेजस्वी सज्जन सुमुख को इन्द्र के पास ले गये। वहाँ दैवयोग से भगवान् विष्णु भी विराजमान थे। नारद जी से सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनने के बाद भगवान् विष्णु ने इन्द्र से सुमुख को अमृत देकर देवताओं के समान बना देने के लिये कहा। परन्तु इन्द्र ने गरुड के पराक्रम का विचार करके विष्णु से निवेदन किया कि वे स्वयं ही सुमुख को उत्तम आयु प्रदान करें। तब विष्णु ने स्वयं इन्द्र से ही सुमुख को आयुष्य प्रदान करने के लिये कहा। तदनुसार इन्द्र ने नागराज सुमुख को अच्छी आयु प्रदान की किन्तु उसे अमृतभोजी नहीं बनाया। इन्द्र का वरदान पा कर सुमुख प्रसन्न हो उठा और मातलि की कन्या से विवाह कर के अपने घर को चला गया। नारद और आर्यक भी कृतकृत्य हो इन्द्र की अर्चना करके प्रसन्नतापूर्वक अपने-अपने स्थान को चले गये। (५. १०४)।

"यह सारा वृत्तान्त सुन कर गरुड ने अत्यन्त क्रुद्ध हो इन्द्र के पास आकर गर्वोक्ति करते हुये कहा : 'आपने मेरे आहार में बाधा क्यों उत्पन्न की है; मुझमें भी विशाल बल है जिसे समस्त प्राणी मिल कर भी सहन नहीं कर सकते। मैंने भी दैत्यों के साथ युद्ध करते हुये श्रुतश्री, श्रुतसेन, आदि दैत्यों का वध किया है। परन्तु मैं विष्णु के रथ की ध्वजा में रह कर उनकी सेवा करता हूँ, और उनको वहन करता हूँ, इसी से आप मेरी अवहेलना करते हैं।' तदनन्तर गरुड ने विष्णु से कहा : 'आपको मैं अपने पंख के एक देश में बिठा कर बिना किसी थकावट के वहन करता रहता हूँ। अतः आप ही विचार करें कि कौन सर्वाधिक बलवान है।' गरुड की गर्वोक्ति सुन कर विष्णु ने उनसे कहा : 'तुम मेरी केवल दाहिनी भुजा का भी भार वहन नहीं कर सकते।' इतना कह कर विष्णु ने गरुड के कन्धे पर अपनी दाहिनी भुजा रख दी जिसके बोझ से पीडित हो गरुड गिर पड़े और उनकी चेतना भी नष्टप्राय हो गई। तब गरुड ने विष्णु के चरणों में प्रणाम करके उनकी स्तुति की जिससे प्रसन्न हो विष्णु ने अपने पैर के अँगूठे से सुमुख को उठाकर गरुड के वक्षःस्थल पर रख दिया। तभी से गरुड उस सर्प को सदा साथ लिये रहते हैं। इस प्रकार गरुड विष्णु के

बल से आक्रान्त हो कर अपना अहंकार छोड़ बैठे। कण्व ने दुर्योधन से कहा कि वह भी गरुड़ की भाँति अपने अहंकार का परित्याग करके पाण्डवों से सन्धि कर ले क्योंकि वह भीम आदि के साथ युद्ध करके कभी विजयी नहीं हो सकता। कण्व की बात सुन कर दुर्योधन की भौंहे तन गईं और कर्ण की ओर देख कर वह जोर-जोर से हँसने लगा। उसने अहंकार पूर्वक कहा : 'मुझे ईश्वरने जैसा बनाया है, जो होनहार और जैसी मेरी अवस्था है, उसी अनुसार मैं व्यवहार करता हूँ। आप लोगों का यह प्रलाप क्या करेगा ?' (५. १०५)।"

१. मातृ = शिव (सहस्रनाम)।

२. मातृ (बहु० °तरः), अर्थात मातायें : ३. २२६, २१ (लोकस्य मातरः). २६; २२७, १. २; २२८, ९-१० (शिशु की माताओं की गणना). १३; २३०, १४ (लोकस्य मातरः). १५. १६. १९. २१. ४३ (मातृगणाः); ७. २०२, ४८ (मातृणां पतये); ९. ४४, १२. २९ (सप्त मातृगणाश्चैव); ४६, १ (मातृगणान् राजन्कुमारानुचरानिमान्). २ (मातृ-गणों के नामों की गणना). ३०. ५४; १२. २०७, ३४ (भूतमातृगणाध्यक्षं विरूपाक्षं); १३. १४, २८१ (मातरो विविधाः); १२५, ६२ (लोकानां मातरश्चैव गावः सृष्टाः स्वयंभुवा); १४. ८, २० (मातृभक्ताय)।

मातृतीर्थ, कुरुक्षेत्र की सीमा में स्थित एक प्राचीन तीर्थ जिसमें स्नान करने से सन्तति-वृद्धि होती है (३. ८३, ५८)।

मातृवत्सल = स्कन्द (३. २३२, ६)।

मात्राः = शिव (सहस्रनाम)।

१. मात्स्य, मत्स्यराज के पुत्र उत्तर का द्योतक है : ५. ४८, ३८ (मात्स्यं···विराटपुत्रं)।

२. मात्स्य, एक ऋषि का नाम है जिन्होंने अपनी तपस्या से उच्चपद प्राप्त किया था (१२. २९६, १६)।

मात्स्यक (वि०) : ३. १८७, ५७ (मात्स्यकं नाम पुराणम्)।

माथुरदेश्य (वि०) : १. २२१, ४६ (माथुरदेश्यानां दोग्ध्रीणां)।

१. माद्रवती, राजा परिक्षित की धर्मपत्नी और जनमेजय की माता का नाम है (१. ९५, ८५)।

२. माद्रवती = माद्री : १४. ५२, ५६ (पाण्डु की धर्मपत्नी और नकुल-सहदेव की माता)।

१. माद्रवतीपुत्र = सहदेव (१७. २, ९)।

२. माद्रवतीपुत्र (द्वि० °त्रौ) = नकुल और सहदेव (१४. १५, १८)।

१. माद्रवतीसुत = नकुल : ३. २७१, १६. २३; ५. ५७, २३; १२. १६६, ८५; १५. २५, १४।

२. माद्रवतीसुत = सहदेव : २. ३१, ७३; ७७, ३७; ७. १६७, १४; १५. २५, १३; ३८, १९।

३. माद्रवतीसुत (द्वि० °तौ) = नकुल और सहदेव : ३. २९२, ६; ५. १७, ५. १८; २५, २; ९. १६, १९; ५९, ९; १४. ५२, ५६; ७१, २६।

माद्रिका (बहु०) : ८. ४०, ३८. ४०।

१. माद्रिनन्दन = सहदेव (२. ३१, १२)।

२. माद्रिनन्दन (द्वि०) = नकुल और सहदेव (३. १, १९)।

१. माद्री, मद्रराज की पुत्री का नाम है जो पाण्डु की पत्नी और नकुल-सहदेव की माता थी : १. ६७, १६० (यह धृति देवी की अवतार थीं); ९५, ५८ (पाण्डु की धर्मपत्नी). ६३ (इन्होंने अश्विनों के अंश से नकुल और सहदेव को उत्पन्न किया). ६४; ११३, ६ (यह शल्य की बहन थीं). १७. १८. २० (पाण्डु ने इनके साथ विवाह किया); ११४, ६. ९ (पाण्डु माद्री के साथ वन चले गये); ११५, २; ११९, २३. २६ (किंदम के शाप के बाद पाण्डु अपनी पत्नियों के साथ वन चले गये); १२४, १४. १५ (पाण्डु के आग्रह पर इन्होंने देवों के आवाहन का मन्त्र कुन्ती से सीख कर अश्विनों का आवाहन किया तथा उनके अंश से नकुल और सहदेव को उत्पन्न किया). २५; १२५, ५, ९. १३. १५. १७. १९. २२. २३. २५ (पाण्डु की मृत्यु); १२६, २६ (अश्विनों के अंश से इन्होंने नकुल और सहदेव को उत्पन्न किया). ३० (ये अपने पति पाण्डु की चिता में ही सती हो गईं); १२७, १-३ (इनका और पाण्डु का प्रेतकर्म सपम्न कराया गया). ९. २२; १५६, १४; २. ७९, १९; ३. ४६, ४६; २६६, ६; ३१३, १३१. १३२; ९. १७, ८; ११. १३, १७; १८. ४, २० (स्वर्ग में पाण्डु के साथ)। तुकी० मद्रराजसुता, मद्रवती

२. माद्री = विजया (सहदेव की पत्नी) : १. ९५, ८०

माद्रीतनूज = (द्वि०) नकुल और सहदेव (५. २३, ४)।

माद्रीनन्दनक (द्वि०) = नकुल और सहदेव (३. १४०, १७)।

माद्रीनन्दिकर = सहदेव (५. ५०, ३३)।

१. माद्रीपुत्र = नकुल : ३. २७, ३२; ४. २५, २४; ४३, १६; ५. ५०, ३०; ६. ७२, ७; ७. १६९, ९. २०; १८७, ५१; ८. २४, १७; ६६, ११; ७५, ११; ९. १०, ३०; १२. १६६, ७।

२. माद्रीपुत्र = सहदेव : १. १९२, ८; २. ८०, २; ३. २७१, ३४; ५. २३, २४; ९०, ३८; ६. १११, २९. ३१; ११६, २६; ७. ९५, ४२; १६७, ४; १८८, २. ९; ८. १३, १०; ९. १५, २१; १७, २८; २२, ११; २८, ४५।

३. माद्रीपुत्र (द्वि० °त्रौ) = नकुल और सहदेव : १. १२४, २१; १२५, १४; १४५, ९; २०१, ४; २०४, ६; २. ६५, १७; ८०, २; ३. १५७, ५३; १६१, १; २४५, ९; २६८, २०; ३११, ५; ४. ७१, ६. ३०; ५. २२, ९. १६; २३, २७; २९, ५३; ९०, ७७; १३१, ९; १३७, १४; १४१, ३६; १४२, १४; १५१, ५४; १६९, ५; ६. १९, १७; ५०, ३५; ५८, १२; ६२, १८. २९. ३१; ८३, ५६; ८७, १९; ९९, ९; १०२, २७; १०५, १६. ३३; १०७, २७; १०९, २०; ११२, ३१; ११८, ४५; ७. ३२, ८; ३५, ३; ९६, २१. २५; १५३, २२; १९१, ५१; १९२, ३; ८. ३५, १८; ३६, २१; ४९, ६२; ५६, १८. १९; ६३, ८. १९. ३०. ३५; ९३, ३०. ३९; ९६, १०. १८; ९. ३, ३१. ३९; ८, ३३; ९, ४१; १०, ५७; ११, २२; १२, ५५. ६०; १३, १; १५, २७; १६, ३७; १८, ७; १९, २३. २५. ३१. ६९; २५, ३६; ३४, १०; ६२, २२; १०. १०, ८; १२. ३७, ३६; ३८, ४३; ४०, २२; १६७, २१; १३. १६८, १४।

१. माद्रीसुत = नकुल : १. १, २०२; २. ३२, १९; ५. २३, २५; ६. ४५, २२; ८. ८४, ३६; ८५, २४; १०. १०, २८. २९।

२. माद्रीसुत = सहदेव : २. ३१, ६०; ५. ८१, ७; ६. १११, २९; ७. १४, २३; ९. २८, ५९. ६० (शकुनि का वध किया)।

३. माद्रीसुत (द्वि० °तौ) = नकुल और सहदेव : १. १, ११९; ६२, ८; ३. ३३, १२; ५१, ४३; १२०, २५; १६५, ५. १४; ५. २४, ६; ३०, २; १५१, १८; ६. ८५, १४; ८. ६३, २९; ९. १७, १०।

१. माद्रेय = नकुल : ३. ३१२, ५. १२; ८. २४, ५०; १२. १६६, १०. ८७।

२. माद्रेय = सहदेव : २. ३१, ५१. ५७; ७९, २८; ३. १५७, ३६; ५. ५७, २३; ७. १०७, २०; १६७, १७. १८. २०; ८. २३, १६; ९. १५, १६।

३. माद्रेय (द्वि० °यौ) = नकुल और सहदेव : ३. ३०, ७।

४. माद्रेय (बहु० °याः) अर्थात मद्र देश के निवासी : ६. ९, ३१ (शाल्वामाद्रेयजाङ्गलाः)।

१. माधव = बलराम : ५. ३, ४; ७, ३; ९. ३७, ८. १३; ३९, २४; ४६, १०८; ५२, २८; ५४, २८. ३४।

२. माधव = श्रीकृष्ण वासुदेव : १. २, १७३. १९९; २, २७५; १९९, २२४, १९; १४; २१८, ४; २२१, २३. ३४; २२२, २९ (पार्थमाधवौ); २२४, ३७, २५; ४०, २२५, २७; २२७, ४३; २. १५, ९; ३३, १३. १९; ७, ५. १४; ४४, ४१; ३. १८, १७; १८९, ५७; ४. ४५, ४०; ५. १, ९; ७२, ३. ४२. १३; ६८, ४; ६९, १ (माधवं···सर्वलोकमहेश्वरम्); ७०, ४; ७२, ३. ४२. ७५. ७९. ८४; ७६, ४; ७८, १८; ८०, १. २. १३; ८३, ४०. ६८. ७०;

८५, ६; ८६, ३ (वृष्णिराष्ट्रस्य भर्ता गोप्ताच माधवः); ८९, १६. २२; ९०, ५९. ६९. ७२; ९१, १५; ९२, १४. १९. २९; ९४, ६. ३९; ९५, २; १२५, १२; १२७, १५. १७. २३; १३०, ४२; १३१, १६. ३५; १३७, १२; १४१, ६. ९. २४. ३१. ४९; १४३, १२. २२. २९. ४२. ५०; १५८, ३२; ६. २१, १३; २५, १४. ३७; ५०, १६; ५२, ५२; ५९, ४९; ८१, ३६; ८४, ४६; ९६, १२; १०६, ४०. ५९. ७२. ७५; १०७, ४१. ४४. ४६. ५१. ९१. १०७; १२०, ६६; ७. ११, १४; २७, २८; ७२, १४. ५१; ७७, १०; ७९, ४; ८०, ११; ८२ ३३; ८३, १४. १९; ९२, २०; ९९, ३८; १०२, २१; १०३, १७; १२८, ३५; १४१, ३२; १४२, ७०; १४७, ४५; १४९, २४; १७२, ३३ (माधवपाण्डवौ); १८३, ३७; १८६, ६. ७; ८. १६, २५. ३६; २७, १६. १७; ५६, १२४; ५८, ४३; ५९, ४७; ७०, ५७; ७?, २३. २६; ७४, ४९. ५१; ८७, १०३. १११. ११७; ९०, २९; ९४, ६१; ९६, ३६. ४०; ९. ७, २५. २६; १३, ३८; १६, १६: २४, १९-२१. ४१. ४६. ४७. ५०; २७, १३. १८; ३१, ६; ३३, २०; ३४, ७; ६१, ७१; ६३, २३. २६. ३३. ७०; ११. १३, १५; १६, १८; १७, १०. २३. ३०; १८, १. १४. २०; १९, १. ४. १४; २०, ३५; २१, ९; २३, २०. २५. २७. ३१. ३९; २४, १. १६; २५, १२. १७. ३३; १२. १, १०; २९, २; ४६, ५. २५. २८; ४७, १०१; ५३, २. ८; ५४, २४; ८१, ३०; ३४३, ५५; ३४९, ७१; १३. १४, १२. १०९. ११३. ११६. १२२. ३७५; १७, ९. १७७; ३१, २३; ३४, २८; ७०, ८; ९७, ५. १२; १०९, ५; १४०, १२; १४८, २६. ४२; १४९, २१ (= विष्णुसहस्रनाम). ३१. ९१; १४. १६, ७. १८; १९, ४४; ५२, ५६; ५३, ९. २२; ६६, १८; ६७, १०; ८६, ११; १६. ३, ४४.

३. माधव = कृतवर्मा : ७ . १६५, २७. ३५; ९. २१, २४ ।

४. माधव = सात्यकि : ३. १२० २३. २८; ५. ४८, ५०; ५८, २२; १७०, ४; ६. ८२, ३८. ४३. ४५; १०१, ४१. ५०; १०४, ३७; १०६, ४; १११, २-४. ६. ७. ९. १४; ७. ९८, ११; ११०, २३. ५४. ६६.९५; १११, ११. १६. १७. २०.३९; ११२, ७४; ११३, ३१; ११४, ३८ (माधवपार्थाभ्यां); ११५, ४४; ११६, ५. १४. २७; ११७, १४. २०. २३; १२०, ४०; १२१, ४७; १२३, ९; १२४, १६. ४६; १२६, ५. १५; १४२, ११. १३; १४८, ३२; १६२,८. १५; १७०, ६०; १७१, ४. ७. १५. २२; १८९, २० (कुरुमाधवौ). ४९; १९८, २५; ९. १७, १०; २५, ५६ (माधवानीकं) ।

५. माधव = जलसन्ध (५. १६७, २४,) ।

६. माधव, एक भारतीय मास का नाम है : ३. ११२, ८; १३६, १ ।

७. माधव, इन्द्र के एक अस्त्र का नाम है ; ३. १७०, २० (अस्त्रमातिष्ठं परमं तिग्मतेजसम् । दयितं देवराजस्य माधवं नाम भारत ॥) ।

८. माधव (बहु० °वाः = मधु (बहु०) : २. १४, ५३ (एक जाति का नाम है) ।

माधवसिंह = सात्यकि (७. १८९, ३५) ।

माधवाग्र्य = सात्यकि (७. १४०, ११. १२) ।

१. माधवोत्तम = बलराम (९. ४६, १०८; ६०, १) ।

२. माधवोत्तम = सात्यकि (७. १०७, ३७; ११५, ५०) ।

१. माधवी = जनमेजय की पत्नी अनन्ता (१. ९५, १२) ।

२. माधवी = विदूरथ की पत्नी सम्प्रिया (१. ९५, ४०) ।

३. माधवी = कुन्ती (१. १४८, ६) ।

४. माधवी = ययाति की पुत्री : ५. ११५, १४ (ययाति ने अपनी पुत्री माधवी को गालव मुनि को प्रदान किया); ११६, २०. २१ (वसुमनस् की माता); ११७, १८ (प्रतर्दन की माता); ११८, १ (शिबि की माता); ११९. १८ (अष्टक की माता); १२०, २; १२१, २०. २२. २४ (इनकी तपस्या) । तुकी० ययातिजा ।

५. माधवी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ७) ।

माधवीसुत = अष्टक (५. १२२, १२) ।

१. मानद, धृष्टद्युम्न के पुत्र का नाम है (७. १०, ५३) ।

२. मानद = विष्णु (सहस्रनाम) ।

१. मानव, मनु के वंशजों, मनुष्यों का द्योतक है : १. ७५, १३. १४ (मनोर्वंशो मानवानां ततोऽयं प्रथितोऽभवत् । ब्रह्मक्षत्रादयस्तस्मान्मनोर्जातास्तु मानवाः) ।

२. मानव (वि०) : ७. १९४, २ (मानवं'''अस्त्रम्); १३. १४७, २२ (प्राजापत्ये शुभे मार्गे मानवे धर्मसंस्कृते); १५०, २९ (मानवान्नृपिसत्तमान्) ।

मानवर्जक (बहु०) : ६. ९, ५० ।

१. मनवी, एक नदी का नाम है (६. ९, ३२) ।

२. मानवी : ३. २९३, २२ ।

१. मानस, दो नागों का नाम है : १. ५७, ५ (वासुकि के कुल में उत्पन्न). १६ (धृतराष्ट्र के कुल में उत्पन्न) ।

२. मानस, एक प्रसिद्ध और पवित्र सरोवर का नाम है : २. २८, ४ (हाटक क्षेत्र में स्थित); ३. १३०, १२. १४-१७ ('इस सरोवर के निकट निवास करनेवाले साधक को युग के अन्त में पार्षदों तथा पार्वती सहित इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले भगवान् शङ्कर का प्रत्यक्ष दर्शन होता है। चैत्र मास में इसके तट पर कल्याणकामी याजक शिव की आराधना करते हैं। इस सरोवर में श्रद्धापूर्वक स्नान और आचमन करके पापमुक्त हुआ जितेन्द्रिय पुरुष शुभ लोकों में जाता है। इसका दूसरा नाम उज्जानक है। यहीं स्कन्द तथा अरुन्धती सहित महर्षि वसिष्ठ ने साधना करके सिद्धि प्राप्त की थी); ६. ११९, ९८ (यहाँ के हंसरूपधारी महर्षि शरशय्या पर पड़े भीष्म को देखने आये); ८. ४१, २२; ६०, ७३ (मानसादेत्य हंसैर्गङ्गेव वेगितैः); १२. १५२, १२; ३४२, ४३. ४८; १३. १५५, १६ (उपश्रुति देवी ने शची को इसी सरोवर पर कमलनाल में छिपे हुये इन्द्र का दर्शन कराया था) । तुकी० मानस तीर्थ; उत्तरमानस ।

३. मानस, एक पर्वत का नाम है : ३. २२३, ६ (शैलं मानसं); २२४, २ ।

४. मानस, आदिपुरुष का नाम है : १२. १८२, ११ (मानसो नाम यः पूर्वो विश्रुतो) .३३ (मानसस्य महात्मनः) .३७; १८३, २ (प्रजाविसर्गं विविधं मानसो मनसाऽसृजत्); १८७, २२ (तत्रात्मा मानसो ब्रह्मा सर्वभूतेषु लोककृत्) ।

५. मानस (वि०): १२. १८८, २० (सृष्टिर्मानसी); ३४७, ४० (मानसं जन्म); ३४८, १३ ।

६. मानस (बहु ० °साः) : ६. ११, ३६. ३७ (मानसाश्च महाराज वैश्यधर्मोपजीविनः) ।

मानसं तीर्थम् : १३. १०२, ४५ ।

मानसिक = महापुरुष (महापुरुषस्तव) ।

मानुष; एक तीर्थ का नाम है। यहाँ व्याधों के बाणों से आहत हुये मृग पानी में गोते लगाकर मानव-शरीर पा गये थे जिसके कारण इसका नाम मानुषतीर्थ पड़ गया (३. ८३, ६५-६६) ।

मनुष्यग्रहकथनम् – "स्कद को देवसेनापति बना देख कर सप्तर्षियों में से छः की पत्नियों ने उनके पास आकर कहा : 'हमारे देवतुल्य पतियों ने अकारण रुष्ट हो कर हमें त्याग दिया है। उन्हें किसी ने यह बता दिया है कि तुम हमलोगों के गर्भ से उत्पन्न हुये हो जब कि बात ऐसी नहीं है। अतः हमारे सत्यकथन को सुन कर तुम इस संकट से हमारी रक्षा करो।' तब स्कन्द ने उन सती स्त्रियों को आश्वासन देते हुये उन्हें अपनी मातायें बताया। उस समय इन्द्र ने स्कन्द से कहा : 'रोहिणी की छोटी बहन अभिजित् स्पर्धा के कारण ज्येष्ठता प्राप्त करने की इच्छा से तपस्या करने वन में चली गई हैं। इस प्रकार आकाश से एक नक्षत्र च्युत हो गया है। तुम ब्रह्मा के साथ मिल कर इस उत्तम काल की पूर्ति के उपाय का विचार करो। अभिजित् का पतन होने से ब्रह्मा ने धनिष्ठा से

बल से आक्रान्त हो कर अपना अहंकार छोड़ बैठे। कण्व ने दुर्योधन से कहा कि वह भी गरुड़ की भाँति अपने अहंकार का परित्याग करके पाण्डवों से सन्धि कर ले क्योंकि वह भीम आदि के साथ युद्ध करके कभी विजयी नहीं हो सकता। कण्व की बात सुन कर दुर्योधन की भौंहें तन गईं और कर्ण की ओर देख कर वह जोर-जोर से हँसने लगा। उसने अहंकार पूर्वक कहा : 'मुझे ईश्वरने जैसा बनाया है, जो होनहार और जैसी मेरी अवस्था है, उसी अनुसार मैं व्यवहार करता हूँ। आप लोगों का यह प्रलाप क्या करेगा ?' (५. १०५)।"

१. मातृ = शिव (सहस्रनाम)।

२. मातृ (बहु० °तरः), अर्थात मातायें : ३. २२६, २१ (लोकस्य मातरः). २६; २२७, १. २; २२८, ९-१० (शिशु की माताओं की गणना). १३; २३०, १४ (लोकस्य मातरः). १५. १६. १९. २१. ४३ (मातृगणाः); ७. २०२, ४८ (मातृणां पतये); ९. ४४, १२. २९ (सप्त मातृगणाश्चैव); ४६, १ (मातृगणान् राजन्कुमारानुचरानिमान्). २ (मातृ-गणों के नामों की गणना). ३०. ५४; १२. २०७, ३४ (भूतमातृगणाध्यक्षं विरूपाक्षं); १३. १४, २८१ (मातरो विविधाः); १२५, ६२ (लोकानां मातरश्चैव गावः सृष्टाः स्वयंभुवा); १४. ८, २० (मातृभक्ताय)।

मातृतीर्थ, कुरुक्षेत्र की सीमा में स्थित एक प्राचीन तीर्थ जिसमें स्नान करने से सन्तति-वृद्धि होती है (३. ८३, ५८)।

मातृवत्सल = स्कन्द (३. २३२, ६)।

मात्राः = शिव (सहस्रनाम)।

१. मात्स्य, मत्स्यराज के पुत्र उत्तर का द्योतक है : ५. ४८, ३८ (मात्स्यं···विराटपुत्रं)।

२. मात्स्य, एक ऋषि का नाम है जिन्होंने अपनी तपस्या से उच्चपद प्राप्त किया था (१२. २९६, १६)।

मात्स्यक (वि०) : ३. १८७, ५७ (मात्स्यकं नाम पुराणम्)।

माथुरदेश्य (वि०) : १. २२१, ४६ (माथुरदेश्यानां दोग्ध्रीणां)।

१. माद्रवती, राजा परिक्षित की धर्मपत्नी और जनमेजय की माता का नाम है (१. ९५, ८५)।

२. माद्रवती = माद्री : १४. ५२, ५६ (पाण्डु की धर्मपत्नी और नकुल-सहदेव की माता)।

१. माद्रवतीपुत्र = सहदेव (१७. २, ९)।

२. माद्रवतीपुत्र (द्वि० °त्रौ) = नकुल और सहदेव (१४. २५, १८)।

१. माद्रवतीसुत = नकुल : ३. २७१, १६. २३; ५. ५७, २३; १२. १६६, ८५; १५. २५, १४।

२. माद्रवतीसुत = सहदेव : २. ३१, ७३; ७७, ३७; ७. १६७, १४; १५. २५, १३; ३८, १९।

३. माद्रवतीसुत (द्वि० °तौ) = नकुल और सहदेव : ३. २९२, ६; ५. १७, ५. १८; २५, २; ९. १६, १९; ५९, ९; १४. ५२, ५६; ७१, २६।

माद्रिका (बहु०) : ८. ४०, ३८. ४०।

१. माद्रिनन्दन = सहदेव (२. ३१, १२)।

२. माद्रिनन्दन (द्वि०) = नकुल और सहदेव (३. १, १९)।

१. माद्री, मद्रराज की पुत्री का नाम है जो पाण्डु की पत्नी और नकुल-सहदेव की माता थीं : १. ६७, १६० (यह धृति देवी की अवतार थीं); ९५, ५८ (पाण्डु की धर्मपत्नी). ६३ (इन्होंने अश्विनों के अंश से नकुल और सहदेव को उत्पन्न किया). ६४; ११३, ६ (यह शल्य की बहन थीं). १७. १८. २० (पाण्डु ने इनके साथ विवाह किया); ११४, ६. ९ (पाण्डु माद्री के साथ वन चले गये); ११५, २; ११९, २३. २६ (किंदम के शाप के बाद पाण्डु अपनी पत्नियों के साथ वन चले गये); १२४, १४. १५ (पाण्डु के आग्रह पर इन्होने देवों के आवाहन का मन्त्र कुन्ती से सीख कर अश्विनों का आवाहन किया तथा उनके अंश से नकुल और सहदेव को उत्पन्न किया). २५; १२५, ५, ९. १३. १५. १७, १९. २२. २३. २५ (पाण्डु की मृत्यु); १२६, २६ (अश्विनों के अंश से इन्होंने नकुल और सहदेव को उत्पन्न किया). ३० (ये अपने पति पाण्डु की चिता में ही सती हो गईं); १२७, १-३ (इनका और पाण्डु का प्रेतकर्म सपम्न्न कराया गया). ९. २२; १५६, १४; २. ७९, १९; ३. ४६, ४६; २६६, ६; ३१३, १३१. १३२; ९. १७, ८; ११. १३, १७; १८. ४, २० (स्वर्ग में पाण्डु के साथ)। तुकी० मद्रराजसुता, मद्रवती

२. माद्री = विजया (सहदेव की पत्नी) : १. ९५, ८०

माद्रीतनूज = (द्वि०) नकुल और सहदेव (५. २३, ४)।

माद्रीनन्दनक (द्वि०) = नकुल और सहदेव (३. १४०, १७)।

माद्रीनन्दिकर = सहदेव (५. ५०, ३३)।

१. माद्रीपुत्र = नकुल : ३. २७, ३२; ४. २५, २४; ४३, १६; ५. ५०, ३०; ६. ७२, ७; ७. १६९, ९. २०; १८७, ५१; ८. २४, १७; ६६, १३; ७५, ११; ९. १०, ३०; १२. १६६, ७।

२. माद्रीपुत्र = सहदेव : १. १९२, ८; २. ८०, २; ३. २७१, ३४; ५. २३, २४; ९०, ३८; ६. १११, २९. ३१; ११६, २६; ७. ९५, ४२; १६७, ४; १८८, २. ९; ८. १३, १०; ९. १५, २१; १७, २८; २२, ११; २८, ४५।

३. माद्रीपुत्र (द्वि० °त्रौ) = नकुल और सहदेव : १. १२४, २१; १२५, १४; १४५, ९; २०१, ४; २०४, ६; २. ६५, १७; ८०, २; ३. १५७, ५३; १६१, १; २४५, ९; २६८, २०; ३११, ५; ४. ७१, ६. ३०; ५. २२, ९. १६; २३, २७; २९, ५३; ९०, ७७; १३१, ९; १३७, १४; १४१, ३६; १४२, १४; १५१, ५४; १६९, ५; ६. १९, १७; ५०, ३५; ५८, १२; ६२, १८. २९. ३१; ८३, ५६; ८७, १९; ९९, ९; १०२, २७; १०५, १६. ३३; १०७, २७; १०९, २०; ११२, ३१; ११८, ४५; ७. ३२, ८; ३५, ३; ९६, २१. २५; १५३, २२; १९१, ५१; १९२, ३; ८. ३५, १८; ३६, २१; ४९, ६२; ५६, १८. १९; ६३, ८. १९. ३०. ३५; ९३, ३०. ३९; ९६, १०. १८; ९. ३, ३१. ३९; ८, ३३; ९, ४१; १०, ५७; ११, २२; १२, ५५. ६०; १३, १; १५, २७; १६, ३७; १८, ७; १९, २३. २५. ३१. ६९; २५, ३६; ३४, १०; ६२, २२; १०. १०, ८; १२. ३७, ३६; ३८, ४३; ४०, २२; १६७, २१; १३. १६८, १४।

१. माद्रीसुत = नकुल : १. १, २०२; २. ३२, १९; ५. २३, २५; ६. ४५, २२; ८. ८४, ३६; ८५, २४; १०. १०, २८. २९।

२. माद्रीसुत = सहदेव : २. ३१, ६०; ५. ८१, ७; ६. १११, २९; ७. १४, २३; ९. २८, ५९. ६० (शकुनि का वध किया)।

३. माद्रीसुत (द्वि० °तौ) = नकुल और सहदेव : १. १, १११; ६२, ८; ३. ३३, १२; ५१, ४३; १२०, २५; १६५, ५. १४; ५. २४, ६; ३०, २; १५१, १८; ६. ८५, १४; ८. ६३, २९; ९. १७, १०।

१. माद्रेय = नकुल : ३. ३१२, ५. १२; ८. २४, ५०; १२. १६६, १०. ८७।

२. माद्रेय = सहदेव : २. ३१, ५१. ५७; ७९, २८; ३. १५७, ३६; ५. ५७, २३; ७. १०७, २०; १६७, १७. १८. २०; ८. २३, १६; ९. १५, १६।

३. माद्रेय (द्वि० °यौ) = नकुल और सहदेव : ३. ३०, ७।

४. माद्रेय (बहु० °याः) अर्थात मद्र देश के निवासी : ६. ९, ३९ (शाल्वामाद्रेयजाङ्गलाः)।

१. माधव = बलराम : ५. ३, ४; ७, ३; ९. ३७, ८. १३; ३९, २४; ४६, १०८; ५२, २८; ५४, २८. ३४।

२. माधव = श्रीकृष्ण वासुदेव : १. १, १७३. १९९; २, २७५; १९९, १४; २१८, ४; २२१, २३. ३४; २२२, २९ (पार्थमाधवौ); २२४, १९; २२५, २७; २२७, ४३; २. १५, ९; ३३, १३. १९; ३७, २५; ४०, १४; ४४, ४१; ३. १८, १७; १८९, ५७; ४. ४५, ४०; ५. १, ९; ७, ५. १३; ६८, ४; ६९, १ (माधवं···सर्वलोकमहेश्वरम्); ७०, ४; ७२, ३. ४२. ७५. ७६. ८४; ७६, ४; ७८, १८; ८०, १. २. १३; ८३, ४०. ६८. ७०;

८५, ६; ८६, ३ (वृष्णिराष्ट्रस्य भर्ता गोप्ताच माधवः); ८९, १६. २२; ९०, ५९. ६९. ७२; ९१, १५; ९२, १४. १९. २९; ९४, ६. ३९; ९५, २; १२५, १२; १२७, १५. १७. २३; १३०, ४२; १३१, १६. ३५; १३७, १२; १४१, ६. ९. २४. ३१. ४९; १४३, १२. २२. २९. ४२. ५०; १५८, ३२; ६. २१, १३; २५, १४. ३७; ५०, १६; ५२, ५२; ५९, ४९; ८१, ३६; ८४, ४६; ९६, १२; १०६, ४०. ५९. ७२. ७५; १०७, ४१. ४४. ४६. ५१. ९१. १०७; १२०, ६६; ७. ११, १४; २७, २८; ७२, १४. ५१; ७७, १०; ७९, ४; ८०, १३; ८२ ३३; ८३, १४. १९; ९२, २०; ९९, ३८; १०२, २१; १०३, १७; १२८, ३५; १४१, ३२; १४२, ७०; १४७, ४५; १४९, २४; १७२, ३३ (माधवपाण्डवौ); १८३, ३७; १८६, ६. ७; ८. १६, २५. ३६; २७, १६. १७; ५६, १२४; ५८, ४३; ५९, ४७; ७०, ५७; ७१, २३. २६; ७४, ४९. ५१; ८७, १०३. १११. ११७; ९०, २९; ९४, ६१; ९६, ३६. ४०; ९. ७, २५. २६; १३, ३८; १६, १६: २४, १९-२१. ४१. ४६. ४७. ५०; २७, १३. १८; ३१, ६; ३३, २०; ३४, ७; ६१, ७१; ६३, २३. २६. ३३. ७०; ११. १३, १५; १६, १८; १७, १०. २३. ३०; १८, १. १४. २०; १९, १. ४. १४; २०, ३५; २१, ९; २३, २०. २५. २७. ३१. ३९; २४, १. १६; २५, १२. १७. ३३; १२. १, १०; २९, २; ४६, ५. २५. २८; ४७, १०१; ५३, २. ८; ५४, २४; ८१, ३०; ३४३, ५५; ३४९, ७१; १३. १४, १२. १०९. ११३. ११६. १२२. ३७५; १७, ९. १७७; ३१, २३; ३४, २८; ७०, ८; ९७, ५. १२; १०९, ५; १४०, १२; १४८, २६. ४२; १४९, २१ (= विष्णुसहस्रनाम). ११. ९१; १४. १६, ७. १८; १९, ४४; ५२, ५६; ५३, ९. २२; ६६, १८; ६७, १०; ८६, ११; १६. ३, ४४.

३. **माधव** = कृतवर्मा : ७ . १६५, २७. ३५; ९. २१, २४।

४. **माधव** = सात्यकि : ३. १२० २३. २८; ५. ४८, ५०; ५८, २२; १७०, ४; ६. ८२, ३८. ४३. ४५; १०१, ४१. ५०; १०४, ३७; १०६, ४; १११, २-४. ६. ७. ९. १४; ७. ९८, ११; ११०, २३. ५४. ६६.९५; १११, ११. १६. १७. २०.३९; ११२, ७४; ११३, ३१; ११४, ३८ (माधवपार्थाभ्यां); ११५, ४४; ११६, ५. १४. २७; ११७, १४. २०. २३; १२०, ४०; १२१, ४७; १२३, ९; १२४, १६. ४६; १२६, ५. १५; १४२, ११. १३; १४८, ३२; १६२,८. १५; १७०, ६०; १७१, ४. ७. १५. २२; १८९, २० (कुरुमाधवौ). ४९; १९८, २५; ९. १७, १०; २५, ५६ (माधवानीकं)।

५. **माधव** = जलसन्ध (५. १६७, २४,)।

६. **माधव**, एक भारतीय मास का नाम है : ३. ११२, ८; १३६, १ ।

७. **माधव**, इन्द्र के एक अस्त्र का नाम है ; ३. १७०, २० (अस्त्रमातिष्ठं परमं तिग्मतैजसम् । दयितं देवराजस्य माधवं नाम भारत ॥)।

८. **माधव** (बहु० °वाः = मधु (बहु०) : २. १४, ५३ (एक जाति का नाम है)।

माधवसिंह = सात्यकि (७. १८९, ३५)।

माधवाग्र्य = सात्यकि (७. १४०, ११. १२)।

१. **माधवोत्तम** = बलराम (९. ४६, १०८; ६०, १)।

२. **माधवोत्तम** = सात्यकि (७. १०७, ३७; ११५, ५०)।

१. **माधवी** = जनमेजय की पत्नी अनन्ता (१. ९५, १२)।

२. **माधवी** = विदूरथ की पत्नी सम्प्रिया (१. ९५, ४०)।

३. **माधवी** = कुन्ती (१. १४८, ६)।

४. **माधवी** = ययाति की पुत्री : ५. ११५, १४ (ययाति ने अपनी पुत्री माधवी को गालव मुनि को प्रदान किया); ११६, २०. २१ (वसुमनस् की माता); ११७, १८ (प्रतर्दन की माता); ११८, १ (शिबि की माता); ११९. १८ (अष्टक की माता); १२०, २; १२१, २०. २२. २४ (इनकी तपस्या)। तुकी० ययातिजा ।

५. **माधवी**, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ७)।

माधवीसुत = अष्टक (५. १२२, १२)।

१. **मानद**, धृष्टद्युम्न के पुत्र का नाम है (७. १०, ५३)।

२. **मानद** = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. **मानव**, मनु के वंशजों, मनुष्यों का द्योतक है : १. ७५, १३. १४ (मनोर्वंशो मानवानां ततोऽयं प्रथितोऽभवत् । ब्रह्मक्षत्रादयस्तस्मान्मनो- र्जातास्तु मानवाः)।

२. **मानव** (वि०) : ७. १९४, २ (मानवं'''अस्त्रम्); १३. १४७, २२ (प्रजापत्ये शुभे मार्गे मानवे धर्मसंस्कृते); १५०, २९ (मानवानृषिसत्त- मान्) ।

मानवर्जक (बहु०) : ६. ९, ५०।

१. **मनवी**, एक नदी का नाम है (६. ९, ३२)।

२. **मानवी** : ३. २९३, २२ ।

१. **मानस**, दो नागों का नाम है : १. ५७, ५ (वासुकि के कुल में उत्पन्न). १६ (धृतराष्ट्र के कुल में उत्पन्न)।

२. **मानस**, एक प्रसिद्ध और पवित्र सरोवर का नाम है : २. २८, ४ (हाटक क्षेत्र में स्थित); ३. १३०, १२. १४-१७ (इस सरोवर के निकट निवास करनेवाले साधक को युग के अन्त में पार्षदों तथा पार्वती सहित इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले भगवान् शङ्कर का प्रत्यक्ष दर्शन होता है। चैत्र मास में इसके तट पर कल्याणकामी याजक शिव की आराधना करते हैं। इस सरोवर में श्रद्धापूर्वक स्नान और आचमन करके पापमुक्त हुआ जितेन्द्रिय पुरुष शुभ लोकों में जाता है। इसका दूसरा नाम उज्जानक है। यहीं स्कन्द तथा अरुन्धती सहित महर्षि वसिष्ठ ने साधना करके सिद्धि प्राप्त की थी); ६. ११९, ९८ (यहाँ के हंसरूपधारी महर्षि शरशय्या पर पड़े भीष्म को देखने आये); ८. ४१, २२; ६०, ७३ (मानसादेत्य हंसैर्गङ्केव वेगितैः); १२. १५२, १२; ३४२, ४३. ४८; १३. १५५, १६ (उपश्रुति देवी ने शची को इसी सरोवर पर कमलनाल में छिपे हुये इन्द्र का दर्शन कराया था)। तुकी० मानस तीर्थ; उत्तरमानस ।

३. **मानस**, एक पर्वत का नाम है : ३. २२३, ६ (शैलं मानसं); २२४, २ ।

४. **मानस**, आदिपुरुष का नाम है : १२. १८२, ११ (मानसो नाम यः पूर्वो विश्रुतो) .३३ (मानसस्य महात्मनः) .३७; १८३, २ (प्रजाविसर्गं विविधं मानसो मनसाऽसृजत्); १८७, २२ (तत्रात्मा मानसो ब्रह्मा सर्वभूतेषु लोककृत्)।

५. **मानस** (वि०): १२. १८८, २० (सृष्टिर्मानसी); ३४७, ४० (मानसं जन्म); ३४८, १३ ।

६. **मानस** (बहु ० °साः) : ६. ११, ३६. ३७ (मानसाश्च महाराज वैश्यधर्मोपजीविनः)।

मानसं तीर्थम् : १३. १०२, ४५ ।

मानसिक = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

मानुष; एक तीर्थ का नाम है। यहाँ व्याधों के बाणों से आहत हुये मृग पानी में गोते लगाकर मानव-शरीर पा गये थे जिसके कारण इसका नाम मानुषतीर्थ पड़ गया (३. ८३, ६५-६६)।

मनुष्यग्रहकथनम् — "स्कंद को देवसेनापति बना देख कर सप्तर्षियों में से छः की पत्नियों ने उनके पास आकर कहा : 'हमारे देवतुल्य पतियों ने अकारण रुष्ट हो कर हमें त्याग दिया है। उन्हें किसी ने यह बता दिया है कि तुम हमलोगों के गर्भ से उत्पन्न हुये हो जब कि बात ऐसी नहीं है। अतः हमारे सत्यकथन को सुन कर तुम इस संकट से हमारी रक्षा करो।' तब स्कन्द ने उन सती स्त्रियों को आश्वासन देते हुये उन्हें अपनी मातायें बताया। उस समय इन्द्र ने स्कन्द से कहा : 'रोहिणी की छोटी बहन अभिजित् स्पर्धा के कारण ज्येष्ठता प्राप्त करने की इच्छा से तपस्या करने वन में चली गई हैं। इस प्रकार आकाश से एक नक्षत्र च्युत हो गया है। तुम ब्रह्मा के साथ मिल कर इस उत्तम काल की पूर्ति के उपाय का विचार करो। अभिजित् का पतन होने से ब्रह्मा ने धनिष्ठा से

ही सत्ययुग की गणना का क्रम निश्चित किया है। इसके पहले रोहिणी को ही युगादि नक्षत्र माना जाता था।' इन्द्र की बात का आशय समझ कर छहों कृत्तिकायें अभिजित् के स्थान की पूर्ति करने के लिये आकाश में चली गईं। वह अग्नि देवता-सम्बन्धी कृत्तिका नक्षत्र सात सिरों की आकृति में प्रकाशित हो रहा है। गरुडजातीय विनता ने स्कन्द से कहा : 'तुम मेरे पिण्डदाता पुत्र हो। अतः मैं सदा तुम्हारे पास ही रहना चाहती हूँ।' स्कन्द ने इस निवेदन को स्वीकार करते हुये विनता को अपनी माता बना कर अपने पास रहने का आदेश दिया। तदनन्तर समस्त मातृगणों ने स्कन्द से कहा : 'तुम मातृभाव से हमारा पूजन करो।' स्कन्द के पूछने पर माताओं ने कहा : 'सुप्रसिद्ध लोकमातायें जो पहले से इस सम्पूर्ण जगत् की माताओं के स्थान पर प्रतिष्ठित हैं : उनके स्थान पर अब हमारा अधिकार हो जाय। पूर्वमाताओं का उस स्थान पर अब कोई अधिकार न रहे क्योंकि उन माताओं ने हम सब पर मिथ्या आरोप करके हमारे पतियों को कुपित कर दिया है। तुम उन लोकमाताओं की सन्तानें भी हमें सौंप दो। हमलोग उन सब का भक्षण करना चाहती हैं।' स्कन्द ने उन पूर्वलोक-माताओं की सन्तान इन माताओं को समर्पित करना स्वीकार करते हुये इन सन्तानों का भक्षण नहीं बल्कि उनकी रक्षा करने का निवेदन किया। इस पर माताओं ने सन्तानों की रक्षा करने का वचन देते हुये स्कन्द के साथ दीर्घकाल तक रहने का निवेदन किया। तब स्कन्द ने कहा : 'संसार के मनुष्य जब तक सोलह वर्ष के तरुण न हो जाँय तब तक आप मानव प्रजाको पृथक्-पृथक् उतने ही रूप धारण करके संताप दे सकती हैं। मैं आप लोगों को एक भयंकर पुरुष प्रदान करूँगा। उसके साथ रह कर आप लोग परम सुख की भागिनी होंगी।' तदनन्तर स्कन्द के शरीर से अग्नि के समान तेजस्वी तथा परम कान्तिमान एक पुरुष प्रकट हुआ जो सम्पूर्ण मानवप्रजा का भक्षण करने की इच्छा रखता था। वह स्कन्द की आज्ञा से भयंकर रूपधारी ग्रह हो गया। इस ग्रह को 'स्कन्दापस्मार' कहते हैं। इसी प्रकार अत्यन्त रौद्ररूप धारण करनेवाली विनता को 'शकुनि' ग्रह बताया जाता है। पूतना राक्षसी को पूतनाग्रह समझना चाहिये जो क्रूरता के साथ बालकों को कष्ट पहुँचाती है। इसके अतिरिक्त एक भयानक आकारवाली शीतपूतना होती है जो स्त्रियों के गर्भ का हरण कर लेती है। लोग अदिति देवी को रेवती कहते हैं। यह भी बालकों को अत्यधिक कष्ट देती है। दैत्यों की माता दिति को मुखमण्डिका कहते हैं जो छोटे बच्चों के मांस से अधिक प्रसन्न होती है। स्कन्द के शरीर से उत्पन्न हुये जिन कुमार एवं कुमारियों का वर्णन किया गया है वे सभी गर्भस्थ शिशुओं का भक्षण करनेवाले महान् ग्रह हैं। वे कुमार उन्हीं पत्नीस्वरूपा कुमारियों के पति कहे गये हैं। उनके कर्म अत्यन्त भयंकर हैं और वे जन्म लेने के पूर्व ही बच्चों को पकड़ लेती हैं। शकुनिग्रहरूपी विनता सुरभि नामक गोमाता पर आरूढ़ होकर अन्य ग्रहों के साथ भूमण्डल के बालकों का भक्षण करती हैं। कुत्तों की माता देवजातीय सरमा भी सदैव मानवीय स्त्रियों के गर्भस्थ बालकों का अपहरण करती रहती हैं वृक्षों की माता करञ्ज वृक्ष पर निवास करती है। जो वरदायक और सौम्य है। इसीलिये पुत्रार्थी मनुष्य करञ्ज वृक्ष पर निवास करनेवाली उस देवी को नमस्कार करते हैं। ये तथा अन्य १८ ग्रह मांस और मधु के प्रेमी हैं और दस रात तक सूतिका गृह में टिके रहते हैं। कद्रू सूक्ष्म शरीर धारण कर गर्भिणी स्त्री के शरीर के भीतर प्रवेश कर जाती है और वहाँ गर्भ का भक्षण कर जाती है और वह गर्भिणी सर्प उत्पन्न करती है। गन्धर्वों की माता और अप्सराओं की माता भी गर्भिणी के गर्भ को पकड़ लेती हैं जिससे गर्भ नष्ट हो जाता है। लाल्सागर की कन्या का नाम लोहितायनि है जिसे स्कन्द की धाय बताया गया है। इसकी कदम्ब वृक्ष में पूजा होती है। जिसप्रकार पुरुषों में रुद्र श्रेष्ठ हैं उसी प्रकार स्त्रियों में आर्या उत्तम मानी गई है। आर्या कुमार कार्तिकेय की जननी हैं। अपनी अभीष्टसिद्धि के लिये लोग उपयुक्त ग्रहों से पृथक्-पृथक् पूजन करते हैं। कुमार सम्बन्धी ये महान् ग्रह सोलह वर्ष की अवस्था के पूर्व तक बालकों का अमंगल करते रहते हैं। इन सभी ग्रहों को 'स्कन्दग्रह' के नाम से जानना चाहिये स्नान, धूप, अञ्जन, बलिकर्म, उपहार, तथा स्कन्द देव की विशेष पूजा द्वारा स्कन्दग्रहों की शान्ति करनी चाहिये। इस प्रकार पूजित होने पर ये सभी ग्रह मनुष्यों का मंगल करते हैं। इसके बाद १६ वर्ष से ७० वर्ष के बीच मनुष्यों के लिये अनिष्टकारक देवग्रह, पितृग्रह, सिद्धग्रह, राक्षसग्रह, गान्धर्व-ग्रह, पिशाचग्रह और यक्षग्रह का वर्णन किया गया है। इन ग्रहों में से कोई क्रीडा-विनोद की, कोई भोजन की और कोई कामोपभोग की इच्छा रखता है। इस प्रकारक ग्रहों की प्रकृति तीन प्रकार की होती है। सत्तर वर्ष के बाद तो सभी देहधारियों को ज्वर आदि रोग ही ग्रहों के समान संत्रस्त करने लगते हैं। जितेन्द्रिय, पवित्र, नित्य आलस्यरहित, आस्तिक तथा श्रद्धालु पुरुष को ग्रह दूर से ही त्याग देते हैं। भगवान् महेश्वर के भक्तों को भी ये ग्रह कभी नहीं त्रस्त करते। (३. २ ३०)।"

मान्धातृ, युवनाश्व के पुत्र एक प्राचीन राजा का नाम है : १. २, १७१ (मान्धातुश्चाप्युपाख्यानम्); ५५, १३ (ययातिमान्धातृसमप्रभाव); २. ८, ८ (यम की सभा में); ३. ४२, ४१ (इक्ष्वाकुवंशी महाराज युवनाश्व के पुत्र); ९४, २१; १२६, १. ३. ४. ३१ (नाम की उत्पत्ति). ४६ (इनका इतिहास); २५७, ५-६ (ये उन राजाओं में से थे जिन्होंने वैष्णव-यज्ञ करके उत्तम लोक प्राप्त कर लिये थे); ५. ९०, १८; ६. १७, १०। "युवनाश्व के पुत्र राजा मान्धाता ने देवता, असुर और मनुष्य तीनों पर विजय प्राप्त की थी। पूर्वकाल में दोनों अश्विनीकुमारों ने मान्धाता को पिता के पेट से निकाला था। एक समय की बात है राजा युवनाश्व वन में शिकार खेलने के लिये विचर रहे थे। वहाँ उनका घोड़ा थक गया और उन्हें भी प्यास लग गई। उन्होंने कुछ दूर जाकर एक यज्ञमण्डप में एक पात्र में रक्खे हुये घृतमिश्रित अभिमन्त्रित जल का पान कर लिया जो उनके (युवनाश्व) के पेट में जाकर पुत्ररूप में परिणत हो गया। तब देवचिकित्सक अश्विनीकुमारों ने शल्यक्रिया द्वारा उस गर्भस्थ शिशु को युवनाश्व के पेट से बाहर निकाला। देवताओं के समान तेजस्वी उस शिशु के लिये स्वयं इन्द्र ने दूध पिलाने की व्यवस्था की। इन्द्र की अँगुलियों से अमृतमय दूध की धारा प्रकट हो गई क्योंकि इन्द्र ने करुणावश उस बालक को देखकर 'मां धास्यति' (मेरा दूध पीयेगा) ऐसा कहा था। इस लिये उस शिशु का नाम मान्धाता निश्चित किया गया। इन्द्र के हाथ ने तब मान्धाता के मुख में दूध और घी की धारा बहाई। इस प्रकार वह बालक इन्द्र का हाथ पीता हुआ एक ही दिन में बहुत बड़ा हो गया। वह पराक्रमी राजकुमार १२ दिनों में १२ वर्षों की अवस्था वाले बालक के समान हो गया। राजा होने पर उस मान्धाता ने सम्पूर्ण पृथिवी को जीत लिया। उन्होंने जनमेजय, सुधन्वा, गय आदि राजाओं पर विजय प्राप्त कर ली। सूर्य जहाँ से उदय होते हैं और जहाँ जाकर अस्त होते हैं वह सारा प्रदेश युवनाश्व के पुत्र मान्धाता का राज्य कहलाता था। मान्धाता ने सौ अश्वमेध और सौ राजसूय यज्ञों का अनुष्ठान करके सौ योजन विस्तृत रोहितक, मत्स्य और हिरण्यमय जनपदों को ब्राह्मणों को दान कर दिया। उन्होंने ब्राह्मणों को प्रचुर भोज्य सामग्री और अन्न आदि भी दान किये। उनके यहाँ भक्ष्य-भोज्य अन्न और पीने योग्य पदार्थों की अनेक राशियाँ संचित थीं। अन्न के तो पर्वतों जैसे ढेर सुशोभित होते थे। उन पर्वतों को मधु और दूध की सुन्दर नदियाँ घेरे हुये थीं। वहाँ देवता असुर, मनुष्य, यक्ष, गन्धर्व, नाग, पक्षी, तथा वेद-वेदाङ्ग के पारङ्गत विद्वान् ब्राह्मण एवं ऋषि भी उपस्थित थे। उस समय राजा मान्धाता सब ओर से धन धान्य से सम्पन्न समुद्रपर्यन्त पृथिवी को ब्राह्मण के अधीन करके सूर्य के समान अस्त हो गये। इस प्रकार उन्होंने पुण्यात्माओं के लोकों में पदार्पण किया। (७. ६२)।" ७. ६२, १. ७. ११. १२; १२. ८, ३४ (उन राजाओं में से एक जिन्होंने पृथिवी पर शासन किया था); १४, ३८; २९, ८१ (मान्धातारं यौवनाश्वं मृतं सृञ्जय शुश्रुम। ये देवा मरुतोगर्भं पितुः पार्श्वादपाहरन्). ८४ (इनके नाम की व्युत्पत्ति). ८८. ९०; ६४, १२. १३. १९; ६५, १३. २३ (मान्धाता और इन्द्र के वेश में विष्णु के बीच क्षत्रिय-धर्म सम्बन्धी संवाद); ९०, १. ३. २१. २५. २८; ९१, १२. ४२. ५४. ५९. ६० (उतथ्य द्वारा मान्धाता को उपदेश);

१२२, ६. ७. १०. ११ (वसुहोम ने इन्हें दण्डनीति का उपदेश दिया); १२४, १६ (इन्होंने एक रात में ही सम्पूर्ण पृथिवी पर विजय प्राप्त कर लिया था); ३५५, ३ (नैमिष तीर्थ में इन्होंने इन्द्र की उपेक्षा की थी); १३. १४, २६७ (यौवनाश्वो हतो येन मान्धाता); ७६, २५ (इन्होंने गोदान द्वारा स्वर्ग प्राप्त किया). २७. २९; ८१, ५ (ये दान में सहस्रों गायें देते थे); ११५, ७० (ये कार्तिक मास में मांसभक्षण नहीं करते थे); १६५, ५४; १५. २०, १२ (मान्धातुरपि चात्मजः पुरुकुत्सो नृपः); १८. ३, २७ (स्वर्ग में)।

तुकी० इनके निम्नलिखित पर्याय :

यौवनाश्व : २. ५३, २१; ३. १२६, १; ७. ६२, १. ८. १२; १२. २९, ८१. ८५. ८९. ९०; ९०, १; १३. १४, २६७; ७६, २५; ८१, ५; १६५, ४९।

यौवनाश्वि : २. १५, १५।

२. मान्धातृ = शिव (सहस्रनाम)।

मान्धात्रुपाख्यानम् — "युधिष्ठिर ने लोमश से नृपश्रेष्ठ मान्धाता की उत्पत्ति और चरित्र का वर्णन करने का निवेदन किया। लोमश जी ने बताया : इक्ष्वाकु वंश में युवनाश्व नामक एक राजा हो गये हैं। उन्होंने एक सहस्र अश्वमेध यज्ञ पूर्ण करके अनेक छोटे-छोटे यज्ञ सम्पन्न किया था। एक दिन राजा युवनाश्व उपवास के कारण दुःखित हो गये। जल पीने की इच्छा से उन्होंने महर्षि भृगु के आश्रम में प्रवेश किया। उसी रात में भृगुनन्दन महर्षि च्यवन ने सुद्युम्नकुमार युवनाश्व को पुत्र प्राप्त कराने के लिये एक इष्टि की थी। उस इष्टि के समय महर्षि ने मन्त्रपूत जल से बहुत बड़े कलश को भर कर रख दिया था। वह कलश-जल पहले से ही आश्रम के भीतर इस उद्देश्य से रक्खा गया था कि उसे पीकर राजा युवनाश्व की रानी इन्द्र के समान शक्तिशाली पुत्र को जन्म दे सके। उस कलश को वेदी पर रख कर सब महर्षिगण सो गये। उसी समय पानी पीने की अभिलाषा से युवनाश्व ने आश्रम के भीतर जाकर उक्त कलश के जल को पी कर अवशिष्ट जल वहीं गिरा दिया। निद्रा से उठने पर जब महर्षियों ने कलश का जल पीनेवाले के सम्बन्ध में परामर्श किया तब युवनाश्व ने स्वीकार किया कि उन्होंने ही जल पी लिया था। तब च्यवन ने उन्हें जल के मन्त्रपूत होने की बात बता कर कहा कि उसके पुत्रोत्पादक प्रभाव को मिटाया नहीं जा सकता। अतः युवनाश्व को अपने ही पेट से एक इन्द्र के समान पराक्रमी पुत्र को जन्म देना होगा। च्यवन ने यह भी कहा कि उन्हें गर्भधारण कष्ट का अनुभव नहीं होगा। तत्पश्चात् पूरे सौ वर्ष व्यतीत होने पर युवनाश्व की बायीं कोख फाड़कर एक सूर्य के समान तेजस्वी बालक को बाहर निकाला गया। उस बालक को देखने के लिये जब इन्द्र वहाँ आये तब देवताओं ने पूछा कि वह शिशु क्या पीयेगा। तब इन्द्र ने अपनी तर्जनी अँगुली उस बालक के मुख में डाल कर कहा : 'माम अयं धाता।' अर्थात यह मुझे ही पीयेगा। इन्द्र के ऐसा कहने पर देवताओं ने मिल कर उस बालक का नाम 'मान्धाता' रख दिया। इन्द्र की तर्जनी का रसास्वादन करके वह बालक तेरह बित्ता बढ़ गया। उस समय मान्धाता के चिन्तन करने मात्र से ही धनुर्वेद सहित सम्पूर्ण वेद और दिव्यास्त्र उपस्थित हो गये। आजगव नामक धनुष, सींग के बाण और अभेद्य कवच, सभी तत्काल उसकी सेवा में आ गये। देवराज इन्द्र ने मान्धाता का राज्याभिषेक किया। मान्धाता ने धर्म के द्वारा तीनों लोकों को जीत लिया। उनके लिये सम्पूर्ण पृथिवी धन-रत्नों से परिपूर्ण थी। उन्होंने अनेक यज्ञों द्वारा भगवान् की समाराधना की तथा धर्म कार्यों के फल से स्वर्गलोक में इन्द्र का आधा सिंहासन प्राप्त कर लिया। उन्होंने केवल शासन मात्र से एक दिन में समुद्र, खान और नगरों सहित सारी पृथिवी पर विजय प्राप्त कर ली। उन्होंने दस सहस्र पद्म गायें ब्राह्मणों को दान में दी। उन महात्मा नरेश ने बारह वर्ष तक होनेवाली अनावृष्टि के समय वज्रधारी इन्द्र के देखते-देखते स्वयं जलवर्षा की। उन्होंने पराक्रमी चन्द्रवंशी गान्धारराज को बाणों से आहत कर के मार डाला। वे अपने मन को सदैव वश में रखते और अपने तपोबल से देवता, मनुष्य, तिर्यक और स्थावर—चारों प्रकार की प्रजा की रक्षा करते थे। सूर्य के समान तेजस्वी उन्हीं महाराज मान्धाता के यज्ञ का स्थान कुरुक्षेत्र की सीमा के भीतर स्थित था। इस प्रकार मान्धात्रुपाख्यान का वर्णन करके लोमश जी ने युधिष्ठिर को धर्मपूर्वक पृथिवी की रक्षा करते हुये स्वर्गलोक प्राप्त करने का आशीर्वाद दिया। (३. १२६)।"

१. मान्य = शिव (सहस्रनाम)।

२. मान्य = विष्णु (सहस्रनाम)।

माय = शिव (१३. १४, ३१६)।

माया : १. २, ७७ (देखिये दुर्वासः संवाद। तुकी० उमा-महेश्वर संवाद भी : १३. १४० और (बाद)।

मायात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ५७)।

मायाविन् = शिव (सहस्रनाम)।

मारिष (बहु० °षाः) दक्षिण की एक जाति का नाम है (६. ९, ६०)।

मारिषा, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, ३६)।

१. मारीच, रावण के मित्र, एक राक्षस का नाम है : ३. १४७, ३४ (कपट मृग बन कर यह सीता के हरण का कारण बना); ३. २७७, ५६ (रावण इसके पास आया); २७८, १. ६. ९. १० (सीता के अपहरणार्थ रावण की सहायता करने के लिए इसने सुवर्णमृग बन कर सीता को मोहित किया और श्रीराम ने इसका वध करने के लिये इसका पीछा किया). १४. १७ (श्रीराम के बाण से आहत होकर इसने श्रीराम के स्वर में आर्तनाद करके प्राण त्याग दिया) तुकी० राक्षस।

२. मारीच = कश्यप : ५. ११०, १९ (महर्षेः कश्यपस्यात्र मारीचस्य); ७. ७०, २१; १२. २०७, २१; १३. ४७, ६१; ८५, १०८; १६५, १७।

१ मारुत = वायु (देखिये वस्था०)।

२. मारुत (वि०) : ५. १४२, ६ (अर्जुन इनके दिव्यास्त्र का प्रयोग करेंगे)।

३. मारुत (बहु० °ताः) : ६. १२, ३७ (श्वसद्भिर्मुच्यमानास्तु दिग्गजैरिह मारुताः); १२. २८४, ३८; ३२८, ५३ (दितेः पुत्रा मारुताः)। तुकी० मरुत् (बहु०)।

४. मारुत (बहु० °ताः) अर्थात देवों के योद्धा : ३. २३१, ५५. ५६ (महादेवो बृहद्वचः सप्तमं मारुतस्कन्धं रक्ष नित्यमतन्द्रितः। स्कन्द उवाचः सप्तमं मारुतस्कन्धं पालयिष्याम्यहं प्रभो)।

५. मारुत (बहु० °ताः) एक जाति के लोगों का नाम है जो युधिष्ठिर की सेना में सम्मिलित थे (६. ५०, ५१)।

मारुतन्तव्य विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ४, ५४)।

मारुतस्कन्ध, देवताओं के एक व्यूह का नाम है जिसकी रक्षा का भार स्कन्द ने लिया था (३. २३१, ५५)।

१. मरुतात्मज = भीमसेन (देखिये वस्था०)।

२. मारुतात्मज = हनुमत् (देखिये वस्था०)।

मारुताशन, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६२)।

मारुति = भीमसेन : ७. १०८, १९. ३९. ४४; १०९, १४; ११४, ७०; ८. ५०, ४५; ५१, ६१; ६०, ७६।

मारुध, एक देश का नाम है जिसे दक्षिण दिग्विजय के समय सहदेव ने जीता था (२. ३१, १४)।

मार्कण्डेय एक ब्रह्मर्षि का नाम है : २. ४, १५ (युधिष्ठिर की सेवा में); ११, २२ (युधिष्ठिर की सभा में); ३. २५, ४ (वन में पाण्डवों के पास आये). ८ (राम दाशरथी के वनवास का दृष्टान्त दे कर युधिष्ठिर को सान्त्वना दी); ३१, ११ (धर्मेण चिरजीविता); ८४, ८० (मार्कण्डेयस्य''' तीर्थम्'''गोमतीगङ्गयोश्चैव संगमे); ८५, १२० (युधिष्ठिर के आगमन की प्रतीक्षा करनेवाले ऋषियों में ये भी थे); ८८, ५ (इन्होंने पयोष्णी में एक आनुवंशिकी गाथाका गायन किया था); १८३, ५ (बहुवत्सरजीवी च मार्कण्डेयो

महातपाः). ४२ (ये अनेक सहस्र वर्ष तक जीवित रहने पर भी सदैव पचीस वर्ष के युवक प्रतीत होते हैं और अजर-अमर हैं). ४६. ४९. ५१. ६१ (पण्डवों के पास आकर इन्होंने अनेक विषयों पर वार्तालाप किया : अध्याय १८४-२३२ तक); १८४, १. ३;१८५, १. ३२; १८६, १. ४; १८७, १. २; १८८, १.१७. ९७. १३० (ये प्रलय काल में भी जीवित रहें और उस समय नारायण के उदर में प्रवेश करके विश्वदर्शन किया); १८९, ५०; १९०, १. ७; १९१. १. २१. २३. ३३. ३५; १९२, १. २. ५७. ६४. ७२; १९३, १.६; १९४, १; १९५, १; १९६, २; १९७, १; १९८, १; १९९, १. १७; २००, १. ४. १३. ४३.४५. ६५. ८२. १२०; २०१, १. ८. ९; २०२, १. ९; २०३, १.९; २०४, १; २०५, १. १६; २०६,१ . ७.१९. ४८; २०७, १. १७. ६०; २०८, १; २०९, १; २१०, १; २११, १; २१२, १; २१३, २; २१४, १. ५.१७; २१५, १; २१६, ३२; २१७, १. ६. १८; २१८, १; २१९, १; २२०, १; २२१, १; २२२, १; २२३, १; २२४, १०. ३६; २२५, १. ७. १०; २२६, १. १७; २२७, १; २२८, १, २२९, १. २३; २३०, १. ७. १४. २४; २३१, १. ७. १४. २८. ५८; २३२, २. ३.१०; २३५, १; २७१, ४८; २७३, ३; २७४, १. ६ (राम दाशरथी की कथा का वर्णन किया : अध्याय २७४-२९१); २७५, १. २७. ३२; २७६, १. ६; २७७, ३; २७८, १; २७९, १; २८०, १; २८१, १; २८२, १; २८३, १; २८४, १; २८५, १; २८६, १; २८७, १; २८८, १; २८९, १; २९०, १; २९१, १. ३८; २९२, १. १४; २९३, ४. १९. ३७; २९४, १. ६. ३३; २९५, १; २९६, १. ८. १८. २३. २९; २९७, १. १५. ५५. ९६. १०३: २९८, १. २०. ४४; २९९, १ (सावित्री की कथा का वर्णन किया); ३१०, ४२; ६. ६६, २७ (भीष्म श्रीकृष्ण की कथा मार्कण्डेये जी से सुन चुके थे); ६७, ३ (श्रीकृष्ण की प्रशंसा की); ६८, ३; ८. ३३, २ (इन्होंने धृतराष्ट्र को त्रिपुराख्यान सुनाया था); १२. ३७, १३ (मार्कण्डेयमुखात्कृत्स्नं यतिधर्मकवासवान्); ४७, ११ (भीष्म को घेर कर खड़े ऋषियों में ये भी थे); २०७, ४ (इन्होंने श्रीकृष्ण के यश का वर्णन किया था); २०९, ४ (मार्कण्डेयाश्रमे); ३२३, २४ (मार्कण्डेयो हि भगवानेतदाख्यातवान्मम । स देव चरितानीह कथयामास मे सदा); १३. १७, १८० (नाचिकेता ने इन्हें शिव सहस्रनाम का उपदेश दिया और इन्होंने उसका उपमन्यु को उपदेश दिया); २२, ७ (मार्कण्डेयः पुराप्राह इति लोकेष बुद्धिमान्). १० (मतम् ' 'मार्कण्डेयस्य). १४ (इनके एक वाक्य का उद्धरण); २६, ६ (भीष्म को घेर कर खड़े ऋषियों में ये भी थे) ; ४३, १८ (इन्होने भीष्म को विपुल की कथा सुनाया था); ११५, ३८ (मांसभक्षण के दुर्गुणों का वर्णन किया); १४६, ४ (इनकी पत्नी का नाम धूमोर्णा था); १५०, ४४; १६७, ४७ (मार्कण्डेय इवापरः); १७. १, १२ । तुकी० भार्गव, भार्गवसत्तम, भृगुकुलश्रेष्ठ; भृगुनन्दन, ब्रह्मर्षि, विप्रर्षि ।

मार्कण्डेयसमास्या : १. २, ५३. १९१. १९३ (मार्कण्डेयसमास्या च पुराणं परिकीर्त्यते)।

मार्कण्डेयसमास्यापर्वन् , महाभारत के ४१वें अवान्तर पर्व का नाम है जिसमें पाण्डवों द्वारा मार्कण्डेय के सान्निध्यलाभ का वर्णन है : ग्रीष्मऋतु की समाप्ति के बाद वर्षाकाल आया जो समस्त प्राणियों को सुख देनेवाला था । पाण्डव अभी द्वैतवन में ही थे (वर्षा ऋतु का वर्णन) । पाण्डव अभी मरुप्रदेश में ही विचरण कर रहे थे कि वर्षाऋतु भी बीत गई । तत्पश्चात् आनन्दमयी शरद्-ऋतु का शुभागमन हुआ (शरद् का वर्णन) । वहीं रहते समय पर्व की सन्धिवेला में कार्तिक मास की शरद्-पूर्णिमा की परम पुण्यमयी रात्रि आई । उस समय पाण्डवों ने महान् सत्वगुण से सम्पन्न, पुण्यात्मा, तपस्वी मुनियों के साथ स्नान-दानादि के द्वारा उस उत्तम योग को पूर्णतः सफल बनाया । तदनन्तर कृष्णपक्ष का उदय होने पर पाण्डवलोग धौम्य-मुनि, सारथिगण. तथा पाकशालाध्यक्ष के साथ काम्यकवन की ओर चल दिये । (३. १८२) ।

"काम्यकवन पहुँचने पर मुनियों ने युधिष्ठिर आदि पाण्डवों का स्वागत किया । तदनन्तर पाण्डवगण वहीं निवास करने लगे । शीघ्र ही पाण्डवों को समाचार मिला कि शीघ्र ही श्रीकृष्ण और महातपस्वी मार्कण्डेयजी भी उन सब लोगों के पास आनेवाले हैं । समाचार देनेवाला ब्राह्मण अभी यह सूचना दे ही रहा था कि शैव्य और सुग्रीव नामक अश्वों से युक्त रथ पर बैठ कर श्रीकृष्ण आते हुये दिखाई पड़े । शीघ्र ही सत्यभामा के साथ श्रीकृष्ण ने वहाँ पहुँच कर पाण्डवों का अभिवादन किया । श्रीकृष्ण ने अर्जुन को अनेक बार हृदय से लगाया और द्रौपदी को भी सान्त्वना दी । तदनन्तर पाण्डवों ने भी श्रीकृष्ण का पूजन किया और उनके चतुर्दिक बैठ गये । श्रीकृष्ण ने भी पाण्डवों की प्रशंसा करने के बाद पाण्डुपुत्रों के कुशल क्षेम की सूचना देते हुये बताया कि सुभद्रा उन पुत्रों को सदाचार की ओर प्रद्युम्न धनुर्वेद की शिक्षा देते हैं और उन्हें विविध प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों भी दे रक्खे हैं । अभिमन्यु भी द्रौपदीपुत्रों को अनेक शस्त्रों के प्रयोग की शिक्षा देते हैं । तत्पश्चात् श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर से कहा : 'राजन ! दशार्ह, कुकुर, और अन्धकवंशी योद्धा, जहाँ आप चाहें वहीं आपकी आज्ञा का पालन करते हुये खड़े रह सकते हैं । बलरामजी के नेतृत्व में मथुरा की गोपों की चतुरंगिणी सेना भी आपकी अभीष्ट सिद्धि के लिये तत्पर है । अतः अब आप दुर्योधन का वध कर अपना मनोरथ सिद्ध कीजिये ।' श्रीकृष्ण की बातें सुनने के बाद युधिष्ठिर ने कहा : 'हम लोगोंने प्रतिज्ञानुसार वनवास और अज्ञातवास की अवधि व्यतीत करने का निश्चय किया है। इस अवधि के पश्चात् हम सभी पाण्डव आप की शरण में आ जायेंगे ।' अभी पाण्डवों और श्रीकृष्ण की बातचीत हो ही रही थी कि उसी समय अनेक सहस्र वर्षों की अवस्थावाले तपोवृद्ध महातपस्वी मार्कण्डेय मुनि वहाँ आते हुये दिखाई पड़े । वे रूप और उदारता आदि गुणों से सम्पन्न तथा अजर-अमर थे । इतनी अधिक अवस्था के विपरीत भी वे पच्चीस वर्ष के तरुण प्रतीत हो रहे थे । महर्षि मार्कण्डेयजी के उपस्थित होने पर मुनियों, सहित श्रीकृष्ण और पाण्डवोंने उनका पूजन किया । तदनन्तर जब सब लोग यथास्थान बैठ गये तब देवर्षि नारद जी भी पाण्डवों से मिलने वहाँ आये । सभी ने नारद का हार्दिक स्वागत-सत्कार किया । युधिष्ठिर ने मार्कण्डेय जी से सदाचार का उपदेश देने का निवेदन करते हुये कहा : 'आप देवताओं दैत्यों, ऋषियों और समस्त महात्माओं के चरित्रों के ज्ञाता हैं । हमारे मन में आपकी सेवा और सत्सङ्ग का अवसर प्राप्त करने की दीर्घकाल से इच्छा थी । जब मैं अपने को सुख से वंचित और दुराचारी धृतराष्ट्रपुत्रों को सब प्रकार से समृद्धिशाली होते देखता हूँ तब स्वभावतः मैं सोचता हूँ कि शुभ और अशुभ कर्म करनेवाला जो पुरुष है वह अपने उन कर्मों का फल कैसे भोगता है तथा ईश्वर उन कर्मफलों का रचयिता कैसे होता है ? कर्मों का फल इसी लोक में प्राप्त होता है या परलोक में ?' तब मार्कण्डेयजी ने सृष्टि के आरम्भ और कृतयुग का वर्णन करने के बाद बताया कि उसके बाद भूतलवासियों के चरित्रों में उत्तरोत्तर पतन होने लगा । इस वर्णन के बाद मार्कण्डेयजी ने युधिष्ठिर के प्रश्नका उत्तर देना आरम्भ किया (३. १८३) ।

" मार्कण्डेय जी द्वारा ब्राह्मण माहात्म्य-कथन, देखिये वस्था० (३. १८४-१८५); सरस्वती-तार्क्ष्यसंवाद (देखिये वस्था०) (३. १८६); वैवस्वतोपाख्यान (देखिये वस्था०) (३. १८७), का वर्णन किया । तदनन्तर युधिष्ठिर ने मार्कण्डेयजी से इस प्रकार कहा : 'आपने एक एक सहस्र युगों के अन्त में होने वाले अनेक महाप्रलय देखे हैं । ब्रह्मा के अतिरिक्त अन्य कोई आप के समान दीर्घायु नहीं है । जब यह संसार देवता, दानव तथा अन्तरिक्ष आदि लोकों से शून्य हो जाता है तब उस प्रलयकाल में केवल आप ही ब्रह्मा के पास रह कर उनकी उपासना करते हैं । प्रलयकाल व्यतीत होने पर ब्रह्मा जी द्वारा हर प्रकार की सृष्टि के कार्य को भी आपने देखा है । आपने ही अनेक कल्पों की श्रेष्ठ रचना का अनेक बार अनुभव किया है । इस प्रकार सम्पूर्ण लोकों में कभी कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो आप को ज्ञात न हो ।' तब मार्कण्डेयजी ने युगादि का वर्णन करते हुये कहा : 'हमलोगों के पास विराजमान पीताम्बधारी भगवान् जनार्दन ही संसार की सृष्टि और संहार करनेवाले हैं । ये पवित्र, अचिन्त्य एवं महान् आश्चर्यमय

तत्व कहे जाते हैं। सम्पूर्ण जगत का प्रलय होने के बाद इन आदिभूत परमेश्वर से ही सम्पूर्ण जगत् पुनः उत्पन्न हो जाता है। चार सहस्र दिव्य वर्षों का एक कृत (सत्य) युग बताया गया है, उतने ही सौ वर्ष की उसकी संध्या और संध्यांश के होते हैं। त्रेतायुग = ३,००० दिव्य वर्ष+३००+३००; द्वापरयुग = २,०००+२००+२००; कलियुग = १,०००+१००+१००। कलियुग के क्षीण हो जाने पर पुनः सत्ययुग आरम्भ होता है। इस प्रकार बारह सहस्र दिव्य वर्षों की एक चतुर्युगी बताई गई है। एक सहस्र चतुर्युग व्यतीत होने पर ब्रह्माजी का एक दिन होता है। यह सम्पूर्ण जगत् ब्रह्मा के एक दिन मात्र तक अस्तित्व में रहता है और दिन समाप्त होते ही नष्ट हो जाता है। इसी को लोकों का प्रलय कहते हैं। सहस्रयुग की समाप्ति में जब थोड़ा सा ही समय शेष रह जाता है उस समय कलियुग के अन्तिम भाग में प्रायः सभी मनुष्य मिथ्यावादी हो जाते हैं (कलियुग का वर्णन)। सहस्र युगों के अन्तिम भाग की समाप्ति होने पर बहुत वर्षों तक वृष्टि बन्द हो जाती है। तदनन्तर प्रचण्ड तेजवाले सात सूर्य उदित होकर सरिताओं और समुद्रों का जल सोख लेते हैं। इसके पश्चात् संवर्तक नामक प्रलयकालीन अग्नि वायु के साथ उन सम्पूर्ण लोकों में फैल जाती है जहाँ का जल पहले ही सात सूर्यों द्वारा सोख लिया गया है। यह अग्नि पृथिवी का भेदन करके रसातल तक पहुँच जाती है तथा देवों, दानवों और यक्षों के लिये महान् भय उपस्थित कर देती है। यह नागलोक को, पृथिवी के नीचे जो कुछ भी है उन सब को क्षणमात्र में नष्ट कर देती। इसके बाद आकाश में महान् मेघों की घोर घटा घिर आती है। कुछ मेघ नीलकमल के समान श्याम और कुछ श्वेत होते हैं (मेघों के प्रकार का वर्णन)। इन मेघों की वर्षा से सम्पूर्ण पृथिवी अगाध जलराशि में डूब जाती है। उपरोक्त भयानक अग्नि भी इस वर्षा से शान्त हो जाती है। प्रलयकाल के ये मेघ ब्रह्मा की प्रेरणा प्राप्त कर पृथिवी को परिपूर्ण करने के लिये बारह वर्षों तक धारावाहिक वृष्टि करते हैं। उस समय कमल में निवास करनेवाले ब्रह्मा भयंकर वायु को पीकर सो जाते हैं। इस प्रकार चराचर प्राणियों, देवताओं तथा असुर आदि के नष्ट हो जाने पर यक्ष, राक्षस, मनुष्य, हिंसक जीव, वृक्ष तथा अन्तरिक्ष से उदास एकार्णव जल में मार्कण्डेयजी अकेले ही इधर उधर भ्रमण करते हैं। इस प्रकार घूमते हुये व्याकुल मार्कण्डेयजी को एक दिन उस एकार्णव जल में एक बहुत विशाल वटवृक्ष दिखाई पड़ा। उस वृक्ष की एक चौड़ी और विशाल शाखा पर एक पलङ्ग पर एक बालक बैठा था। उस बालक को देख कर मार्कण्डेयजी को अत्यन्त आश्चर्य हुआ। उन्हें इस प्रकार विस्मित देख कर उस पद्मलोचन श्रीवत्सधारी बालक ने उनसे इस प्रकार कहा : 'मैं तुम्हें जानता हूँ। तुम अत्यन्त श्रान्त हो गये हो, अतः जब तक चाहो। यहाँ विश्राम करो।' मार्कण्डेयजी को उस समय अपने दीर्घजीवन और मानव शरीर पर अत्यन्त खेद और वैराग्य हुआ। तदनन्तर उस बालक ने अपना मुख खोला और मार्कण्डेयजी मानो परवश की भाँति उसके मुख में प्रवेश कर गये। फिर तो उस बालक के उदर में भ्रमण करते हुये मार्कण्डेयजी ने सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को देखा (मार्कण्डेयजी ने उस बालक के उदर में जो कुछ देखा उसका विस्तृत वर्णन)। वहाँ अनेक वर्षों तक भ्रमण करने के बाद भी जब उस महात्मा बालक के शरीर का अन्त नहीं मिला तब मार्कण्डेयजी ने मन और वाणी द्वारा उस वरेण्य देवता की ही शरण ली। तब तत्काल वायु के समान वेग से वे उस बालक के मुख से पुनः बाहर निकल आये। बाहर आकर उन्होंने देखा कि उसी वटवृक्ष की शाखा पर वही बालवेश धारण किये हुये श्रीवत्सचिह्न से सुशोभित वह अमित तेजस्वी बालक पूर्ववत् बैठा है। शीघ्र ही मार्कण्डेयजी को एक नवीन दृष्टि प्राप्त हुई। बालक के समीप जाकर उसे विनीत भाव से प्रणाम करने के पश्चात् उन्होंने उसकी माया जानने की इच्छा प्रकट की। उन्होंने अनेक प्रकार से उस अलौकिक बालक की स्तुति करते हुये उससे कहा : 'अनघ ! आपके शरीर में यह सम्पूर्ण जगत् क्यों स्थित है ? आप यहाँ इस रूप में कितने समय तक रहेंगे। मैंने आपके उदर में जो कुछ देखा है वह अगाध और अचिन्त्य है।' मार्कण्डेयजी के इस प्रकार पूछने पर बालरूपी देवाधिदेव श्रीभगवान् उन्हें सान्त्वना देते हुये इस प्रकार बोले (३. १८८)।

"श्रीभगवान बोले : 'देवता भी मेरे स्वरूप को यथेष्ट और यथार्थरूप से नहीं जानते। पूर्वकाल में मैंने ही जल का 'नारा' नाम रक्खा था। वह नारा मेरा सदा से अयन (वासस्थान) है, अतः मैं नारायण नाम से विख्यात हूँ। मैं नारायण ही सबकी उत्पत्ति का कारण, सनातन अविनाशी हूँ। मैं ब्रह्मा, विष्णु, और इन्द्र हूँ। मैं ही यम और कुबेर हूँ। शेष के रूप में मैं ही पृथिवी को धारण करता हूँ और वराहरूप धारण कर मैंने ही इस पृथिवी को जल से बाहर निकला था। मैं ही वडवामुख अग्नि हूँ। मेरे मुख, भुजाओं, जाँघों और चरणों से क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र उत्पन्न हुये हैं। मैं ही ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद हूँ। मैं ही संवर्तक वह्नि, संवर्तक वायु, संवर्तक सूर्य, और संवर्तक अनल हूँ। आकाश के तारे मेरे रोमकूप हैं। रत्नाकर समुद्र और चारों दिशाओं को मेरे वस्त्र, शय्या और निवासस्थान समझो। जब जब धर्म की हानि और अधर्म का उत्थान होता है तब-तब मैं अपने आप को नये रूपों में प्रकट करता हूँ। सत्य युग में मेरे शरीर का रंग श्वेत, त्रेता में पीला, द्वापर में लाल और कलियुग में काला होता है। प्रलयकाल आने पर मैं ही अत्यन्त दारुण कालरूप हो कर अकेला ही सम्पूर्ण चराचर त्रिलोकी का नाश करता हूँ। सर्वलोकपितामह ब्रह्मा मेरे आधे अंग हैं। मैं शंख, चक्र और गदा धारण करनेवाला विश्वात्मा नरायण हूँ। सहस्र युग के अन्त में जो प्रलय होता है उसमें समस्त प्राणियों को मोहित करके मैं जल में शयन करता हूँ। यद्यपि मैं बालक नहीं हूँ, तो भी जब तक ब्रह्मा नहीं जागते तब तक सदा इसी प्रकार बालरूप धारण करके यहाँ रहता हूँ। ब्राह्मणशिरोमणि (मार्कण्डेय)! मैंने ही ब्रह्मरूप से तुम्हें बार बार अभीष्ट वर प्रदान किया है। सर्वलोकपितामह ब्रह्मा के जागने पर मैं उनसे एकीभूत होकर समस्त शरीरों की सृष्टि करूँगा।' मार्कण्डेयजी ने युधिष्ठिर को बताया : 'इस प्रकार कह कर वह बालमुकुन्द भगवान् अन्तर्धान हो गये और तब मैंने देखा कि यह नाना प्रकार की प्रजा ज्यों-की-त्यों उत्पन्न हो गई है। पुरातन प्रलय के समय मुझे जिन कमलदल-लोचन देवता भगवान बालमुकुन्द का दर्शन हुआ था, वे तुम्हारे सम्बन्धी श्रीकृष्ण ही हैं। इन्हीं के वरदान से मुझे पूर्व जन्म की स्मृति बनी हुई है। मेरी दीर्घकालीन आयु और स्वच्छन्द मृत्यु भी इन्हीं का कृपा प्रसाद है।' मार्कण्डेयजी की बात सुन कर वहाँ उपस्थित सभी लोगों ने श्रीकृष्ण के चरणों में मस्तक झुका कर प्रणाम किया। श्रीकृष्ण ने भी सब का विधिपूर्वक समादर करते हुये सान्त्वनापूर्ण वचनों द्वारा सब प्रकार से आश्वासन दिया। (३.१८९)।

"युधिष्ठिर ने मार्कण्डेयजी से अपने साम्राज्य में जगत की भावी गति-विधि के विषय में बताने का निवेदन किया। तब मार्कण्डेयजी ने अन्य युगो की स्थितियों का वर्णन करने के बाद कलियुग की स्थिति का विस्तार से वर्णन किया। उन्होंने अन्त में बताया कि युगान्त के समय काल की प्रेरणा से विष्णुयशा कल्की नामक एक महान् व्यक्ति प्रकट होगा जो सम्पूर्ण कलियुग का संहार करके नूतन सत्ययुग का प्रवर्तक होगा। (३. १९०)। तदनन्तर मार्कण्डेयजी ने कल्की द्वारा सत्ययुग की स्थापना का वर्णन करने के बाद युधिष्ठिर को धर्मोपदेश दिया (३. १९१)।

"मार्कण्डेय जी ने इक्ष्वाकुवंशी परीक्षित का मण्डूकराज की कन्या से विवाह, शल और दल के चरित्र तथा वामदेवचरित (देखिये वस्था०) का वर्णन किया (३. १९२)।

"मार्कण्डेय मुनि ने बक-शक्र-संवाद (देखिये वस्था०) का वर्णन किया (३. १९३)।

"क्षत्रिय राजाओं के महत्व और सुहोत्र तथा शिवि (देखिये वस्था०) की प्रशंसा करते हुये इनके चरित्रों का वर्णन (३. १९४)।

"नहुषचरित (देखिये ययाति) के प्रसङ्ग में राजा ययाति द्वारा ब्राह्मण को सहस्र गायें दान देने का वर्णन (३. १९५)।

"युधिष्ठिर द्वारा क्षत्रियों के आरम्भ का वर्णन करने का अनुरोध

करने पर मार्कण्डेयजी ने कहा : पूर्वकाल में वृषदर्भ और सेदुक नामक दो राजा थे। दोनों ही नीति के मार्ग पर चलनेवाले और अस्त्र-शस्त्र की विद्या में निपुण थे। वृषदर्भ ने बचपन से ब्राह्मणों को केवल सुवर्ण और रजत दान देने का व्रत ले रक्खा था। उनके इस व्रत को सेदुक जानते थे। एक दिन एक ब्राह्मण ने सेदुक के पास आकर दक्षिणा के रूप में एक सहस्र अश्वों की माँग की, परन्तु उन्होंने दान देने में अपनी असमर्थता प्रकट करते हुये उस ब्राह्मण को वृषदर्भ के पास भेज दिया। तब ब्राह्मण ने वृषदर्भ के पास आकर एक सहस्र अश्वों का दान माँगा। यह सुन कर राजा उस ब्राह्मण को कोड़े से पीटने लगे। यह देख कर ब्राह्मण ने अपने को निरपराध बताते हुये इस दण्ड का कारण पूछा और शाप देने के लिये उद्यत हो गया। राजा ने उससे पूछा कि क्या जो अपना धन दे उसे शाप देना उचित है ? ब्राह्मण ने कहा कि वह सेदुक के आदेश पर ही उनके पास दक्षिणा माँगने आया था। इस पर राजा वृषदर्भ ने कहा कि जिसे कोड़ों से पीटा जाय उसे खाली हाथ नहीं लौटाया जा सकता। ऐसा कह कर राजा ने उस ब्राह्मण को अपनी एक दिन की पूरी आय दे दिया जो एक सहस्र अश्वों के मूल्य से कहीं अधिक थी। (३. १९६)।

"शिवि (देखिये वस्था०) की इन्द्र और अग्नि द्वारा परीक्षा लेने की कथा (३. १९७)। राजन्यमहाभाग्य (देखिये वस्था०) के अन्तर्गत देवर्षि नारद द्वारा शिवि के महत्ता-प्रतिपादन की कथा (३. १९८)। इन्द्रद्युम्नोपाख्यान (देखिये वस्था०) के अन्तर्गत राजा इन्द्रद्युम्न तथा चिरजीवी प्राणियों की कथा (३. १९९)।

"युधिष्ठिर ने महर्षि मार्कण्डेय से पूछा कि किन अवस्थाओं में दान देकर मनुष्य इन्द्रलोक का सुख भोगता है ? बाल्यावस्था, गृहस्थाश्रम, युवावस्था अथवा वृद्धावस्था में दान देने से कैसा फल प्राप्त होता है ? मार्कण्डेयजी ने कहा : चार प्रकार के जीवन व्यर्थ हैं और सोलह प्रकार के दान व्यर्थ हैं। ब्राह्मण जप, मन्त्र, होम, स्वाध्याय और वेदाध्ययन से दूसरों को भी तारते हैं और स्वयं भी तर जाते हैं। तदनन्तर मार्कण्डेय ने श्राद्धवर्जित ब्राह्मणों का उल्लेख करने के बाद अनेक नैतिक और सदाचार सम्बन्धी उपदेश देते हुये देवों को समर्पित की जानेवाली सामग्रियों (चन्दन, पुष्पादि) का उल्लेख किया। आतिथ्य-सत्कार करने के महत्व पर प्रकाश डालते हुये उन्होंने ऐसे सत्पात्रों का उल्लेख किया जिन्हें दान देना उचित है। ब्राह्मणों को विभिन्न वस्तुओं के दान के फल का भी उन्होंने वर्णन किया। युधिष्ठिर के पूछने पर उन्होंने यमलोक (देखिये वस्था०) का वर्णन किया। इसके बाद ब्राह्मणों के चरण-प्रक्षालन तथा उन्हें विभिन्न वस्तुओं का दान देने पर मार्कण्डेयजी ने विस्तार से प्रकाश डाला। शौच का उपदेश देते हुये उन्होंने वाक्शौच, कर्मशौच और जलशौच का, सन्ध्या और गायत्री जप के महत्व का वर्णन किया, तथा ब्राह्मणों की महत्ता पर भी विस्तृत प्रकाश डाला। (३. २००)।

"इन्द्रद्युम्न की कथा सुनने के बाद युधिष्ठिर ने मार्कण्डेय जी से कहा : 'महामुने ! आप देवता, दानव तथा राक्षसों को भी अच्छी तरह जानते हैं। नाना प्रकार के राजवंशों और ऋषियों की सनातन परम्परा का भी ज्ञान रखते हैं। मनुष्य, नाग, राक्षस, देवता, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर तथा अप्सराओं की दिव्य कथाओं से भी आप परिचित हैं। अतः मैं आप से इक्ष्वाकुवंश में कुवलाश्व नामक उन राजा की कथा सुनना चाहता हूँ जो अपना नाम परिवर्तित करके धुन्धुमार कहलाने लगे थे।' मार्कण्डेय जी द्वारा धुन्धुमारोपाख्यान (देखिये वस्था०) (३. २०१- २०४); पतिव्रतोपाख्यान (देखिये वस्था०) (३. २०५-२०६) तथा इसी सन्दर्भ में ब्राह्मण-व्याध संवाद (३. २०७-२०८) का वर्णन। धर्म की सूक्ष्मता, शुभाशुभ कर्म और उनके फल तथा ब्रह्म की प्राप्ति के उपायों का वर्णन (३. २०९); विषयसेवन से हानि, सत्सङ्ग से लाभ और ब्राह्मीविद्या का वर्णन (३. २१०); पञ्चमहाभूतों के गुणों का और इन्द्रियनिग्रह का वर्णन (३. २११-२१२); प्राणवायु की स्थिति का वर्णन तथा परमात्म-साक्षात्कार के उपाय (३. २१३); माता-पिता की सेवा का दिग्दर्शन (३. २१४); धर्म-व्याध द्वारा अपने व्याध होने का कारण बताने का वर्णन (३. २१५-२१६); ब्राह्मण व्याध-संवाद (देखिये वस्था०)। अग्नि द्वारा अङ्गिरा को पुत्र रूप में स्वीकार करने तथा अङ्गिरा से बृहस्पति की उत्पत्ति की कथा (३. २१७-२२४)। अङ्गिरसोपाख्यान (देखिये वस्था०)। स्कन्दोत्पत्ति (देखिये वस्था०); स्कन्द-शक्र-संवाद (देखिये वस्था०), स्कन्दोपाख्यान (देखिये वस्था०); मनुष्यग्रहकथन (देखिये वस्था०); स्कन्दयुद्ध (देखिये वस्था०), कार्तिकेयस्तव (देखिये वस्था०); आदि का भी मार्कण्डेय ने वर्णन किया।

१. मार्ग = शिव (सहस्रनाम)
२. मार्ग = विष्णु (सहस्रनाम)।

मार्गणप्रिया, कश्यप की प्राधा के गर्भ से उत्पन्न एक पुत्री का नाम है (१. ६५, ४५)।

मार्गमर्षि, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५७ : केवल कलकत्ता संस्करण में)।

मार्गशीर्ष, एक मास का नाम है : ६. ३४, ३५ (श्रीकृष्ण ने अपने को मासों में मार्गशीर्ष बताया); १३. १०६, १७; १०९, ३ (इस मास की द्वादशी को श्रीकृष्ण का केशव के रूप में पूजन करना चाहिये); ११०, ३ (इस मास में चान्द्रव्रत का उल्लेख)।

मार्गशीर्षी — मार्गशीर्ष मास की पूर्णिमा को मृगशिरा नक्षत्र का योग होने पर उसे मार्गशीर्षी कहते हैं : ३. ९३, २६ (पाण्डवों ने इसी दिन तीर्थयात्रा के लिये प्रस्थान किया); १२. १००, १० (चैत्र्यां वा मार्गशीर्ष्यां वा सेनायोगः प्रशस्यते)।

मार्जालीय = शिव (३. ३९, ७८)।

मार्जार-मूषिक संवाद (बिल्ली और चूहे का संवाद) : एक वन में एक विशाल बरगद का वृक्ष था जो लता-समूहों से आच्छादित और भाँति-भाँति के पक्षियों से सुशोभित था। उसी वृक्ष की जड़ में सौ द्वारों वाला बिल बना कर उसमें पलित नामक एक बुद्धिमान् चूहा निवास करता था। उस बरगद की डाल पर लोमश नामक एक बिलाव भी सुखपूर्वक निवास करता था। उसी वन में एक चाण्डाल भी घर बनाकर रहता था और प्रतिदिन सायंकाल सूर्यास्त हो जाने पर बरगद के वृक्ष के नीचे अपना जाल लगा दिया करता था। एक दिन उसके जाल में उक्त बिलाव लोमश फँस गया। लोमश के जाल में फँस जाने पर पलित निर्भय होकर विचरने लगा। सहसा उसने जाल पर बिखेरे गये मांसको देखा। तब जाल पर चढ़कर वह मांस को खाने लगा। इतने में ही पलित की दृष्टि हरिण नामक एक न्योले तथा चन्द्रक नाम एक उल्लू पर पड़ी। इन नवीन शत्रुओं से बचने की दृष्टि से पलित ने बिलाव को जाल से मुक्त कराने का निश्चय किया यद्यपि वह बिलाव भी उसका शत्रु ही था। पलित ने बिलाव से सन्धि की और उससे इस प्रकार कहा : 'मुझे इस नेवले से भय लग रहा है। अतः मैं तुम्हारे पीछे इस जाल में छिप जाऊँगा। इधर उल्लू भी मेरा प्राण-हरण करना चाहता है। अतः इस समय तुम मेरी प्राणरक्षा करो। संकट टल जाने पर मैं तुम्हारे बन्धन काट कर तुम्हें मुक्त कर दूँगा।' बिलाव के आश्वासन पर चूहा उसके नीचे छिप गया। थोड़ी देर में नेवला और उल्लू वहाँ से अन्यत्र चले गये। तब चूहे ने धीरे-धीरे बिलाव के बन्धनों को काटना आरम्भ किया। बिलाव बन्धन में फँसे होने के कारण अत्यधिक त्रस्त था, अतः उसने चूहे से बन्धनों को शीघ्रतापूर्वक काटने का निवेदन किया। प्रातःकाल जब परिध नामक चाण्डाल अनेक कुत्तों के साथ आता हुआ दिखाई पड़ा तब चूहे ने बिलाव के शेष बन्धनों को शीघ्रता से काट दिया। फलस्वरूप चाण्डाल के भय से बिलाव भाग कर बरगद की डाल पर चढ़ गया और चूहा भी अपने बिल में घुस गया। चाण्डाल भी अपना जाल लेकर अपने घर चला गया। संकट टल जाने के बाद डाल पर बैठे बिलाव ने चूहे से बात करना चाहा और इस हेतु उसे अपने पास आने का आग्रह करने लगा। किन्तु चूहे ने बिलाव के आग्रह को अमान्य करते हुये कहा : 'अब मैं तुम्हारे साथ मिल नहीं सकता। बुद्धिमान एवं विद्वान पुरुष बिना विशेष कारण के अपने शत्रु के वश में नहीं जाते।' (१२. १३८)।

मार्तण्ड = विवस्वत् (सूर्य) देखिये वस्था०।

१. मार्तिकावत, एक देश का नाम है जहाँ राजा शाल्व का राज्य था (१. २०, १५)।

२. मार्तिकावत (बहु०), मार्तिकावत के निवासियों का द्योतक है जिनका परशुराम जी ने वध किया (७. ७०, १२)।

३. मार्तिकावत (वि०) : १६. ७, ६९ (कृतवर्मा के पुत्र को भोजराज के परिवार की अपहरण से बची हुई स्त्रियों का राजा बना कर अर्जुन ने उन सब को मार्तिकावत नगर में बसा दिया)।

मार्तिकावतक (वि०) : ३. १४, १६ (°को नृपः); ११६, ६ (चित्ररथं नाम मार्तिकावतकं नृपम्)।

मार्तिकावतिक (वि०) : ७. ४८, ८ (मार्तिकावतिकं भोजं ततः कुञ्जरकेतनम्)।

मार्दमर्षि, विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ४, ५७)।

माल (बहु °लाः) एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ३९)।

मालतिका, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ४)।

मालय – देखिये ३. मलय।

मालयध्वज, पाण्ड्य-राज का नाम है : ८. २०, २०.४१ (अश्वत्थामा ने इसका वध किया)। तुकी० पाण्ड्य।

१. मालव (बहु० °वा :) एक जाति का नाम है : २. ३२, ७ (अपनी पश्चिम दिग्विजय के समय नकुल ने इसे पराजित किया था); ३४, ११ (युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में सम्मिलित हुये); ५२, १५ (ये युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये); ३. ५१, २६ (ये युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय उपस्थित थे); २५४, २० (कर्ण ने दिग्विजय के समय इन्हें पराजित किया था); २९७, ६० (अश्वपति अपनी पत्नी मालवी के गर्भ से सौ मालवों को उत्पन्न करेंगे); ५. ५७, १८ (मालवों और शाल्वों को केकयों के साथ युद्ध करने का भार सौंपा गया); ६. ९, ६०. ६२; ५१, १६ (दुर्योधन की सेना में); ५९, ७६ (अर्जुन पर आक्रमण किया); १३५ (अर्जुन ने इन्हें पराजित किया); ८७, ६ (दुर्योधन की सेना में). ७; १०६, ७ (भीष्म की रक्षा की); ११७, ३३ (अर्जुन पर आक्रमण किया); ११९, ८१; ७. ७, १४ (कर्ण और दुर्योधन का अनुगमन किया); ११, १७ (श्रीकृष्ण पहले इन्हें पराजित कर चुके थे); १९, १६ (अर्जुन ने जिन संशप्तकों का वध किया उनमें ये लोग भी थे); ७०, ११ (राम जामदग्न्य ने इनका वध किया था); १५७, २८. ३० (युधिष्ठिर ने इनका वध किया); १६१, ३. ५ (अर्जुन ने इनका वध किया); ८. ५, ४८ (दुर्योधन की सेना के मृत सैनिकों के अन्तर्गत इनका उल्लेख)।

२. मालव से मालवराज का तात्पर्य है : ७. १७, १९ (संशप्तकों के साथ इनका उल्लेख)।

३. मालव = इन्द्रवर्मन् : ७. १९०, १५ (पाण्डव सेना में; इनके अश्वत्थामा नामक हाथी का भीमसेन ने वध कर दिया). ४९; १९३, ५६।

४. मालव = सुदर्शन : ७. २००, ७३ (अश्वत्थामा पर आक्रमण किया). ७७. ८०. ८६ (अश्वत्थामा ने इनका वध किया); २०१, १० (इनका वध)।

मालवा, एक नदी का नाम है : १३. १६५, २५।

मालवानक (बहु०) एक जाति का नाम है : ६. ९, ६० (केवल कलकत्ता संस्करण में)।

मालवी, मद्रनरेश अश्वपति की बड़ी रानी और सावित्री की माता का नाम है : ३. २९७, ५९-६० (यम ने इसे अपने पति द्वारा सौ मालव-संज्ञक पुत्रों को उत्पन्न करने का वरदान दिया था); २९९, १३ (इसने १०० पुत्र उत्पन्न किये)।

माला, एक नदी का नाम है, जिसे श्रीकृष्ण, भीमसेन और अर्जुन ने इन्द्रप्रस्थ से गिरिव्रज जाते समय पार किया था (२. २०, २८)।

मालिन् = शिव (सहस्रनाम)।

१. मालिनी, कण्व मुनि के आश्रम के समीप बहनेवाली एक नदी का नाम है (१. ७०, २१)। इसी के तट पर मेनका ने शकुन्तला को जन्म दिया था (१. ७२, १०)।

२. मालिनी, सप्तशिशुमातृकाओं में से एक का नाम है (३. २२८, १०)।

३. मालिनी, एक राक्षसी का नाम है। कुबेर की आज्ञा से यह महर्षि विश्रवा की परिचर्या में तत्पर रहती थी। विश्रवा ने इसके गर्भ से विभीषण नामक पुत्र को जन्म दिया था (३. २७५, ३-८)।

४. मालिनी, एक देवी का नाम है (४. ९, १६)।

५. मालिनी, महाराज विराट की सभा में द्रौपदी द्वारा धारण किया गया नाम है (४. ९, २१)।

६. मालिनी, अङ्गदेश की एक समृद्धिशालिनी नगरी का नाम है। जरासन्ध ने इसे कर्ण को दे दिया था (१२. ५, ६)।

माल्यपिण्डक, एक कश्यपवंशी नाग का नाम है (५. १०३, १३)।

१. माल्यवत् , एक या अधिक पर्वतों का नाम है : ३. १५८, ३७ (गन्धमादन जाते समय उत्तर में पण्डवों ने इसे पार किया था); २८०, २६ (दक्षिण में स्थित इस पर्वत पर सुग्रीव निवास करते थे). ४० (यहाँ श्रीराम ने चार मास तक निवास किया था); २८२, १. २२; ६. ६, ९ (नील के दक्षिण और निषध के उत्तर); ७, १. २७. २८ (माल्यवत् पर्वत पर निवास करनेवाले लोग प्रातःकालीन सूर्य के समान कान्तिमान् होते हैं। इसके शिखर पर अग्निदेव सदा प्रज्वलित रहते हैं। अग्नि यहाँ संवर्तक और कालाग्नि के नाम से प्रसिद्ध हैं। इसके शिखर पर पूर्व की ओर एक नदी प्रवाहित होती है। माल्यवत् का विस्तार ११,००० योजन है। यहाँ सुवर्ण के समान कान्तिमान् मानव उत्पन्न होते हैं। वे सब लोग ब्रह्मलोक से नीचे आये हुये पुण्यात्मा मनुष्य हैं। उन सब का सब के प्रति साधुतापूर्ण व्यवहार होता है। वे ऊर्ध्वरेता होते हैं और कठोर तपस्या करते हैं। तदनन्तर समस्त प्राणियों की रक्षा के लिये सूर्यलोक में प्रवेश कर जाते हैं। उनमें से ६६,००० मनुष्य भगवान सूर्य को चारों ओर से घेर कर अरुण के आगे-आगे चलते हैं। वे ६६,००० वर्षों तक ही सूर्यदेव के ताप में तप्त हो कर अन्त में चन्द्रमण्डल में प्रवेश कर जाते हैं); १४. ४३, ५।

मावेल्ल, वसु उपरिचर के चतुर्थ पुत्र का नाम है (१. ६३, ३०-३१)। ये युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित हुये थे (२. ३४, १३)।

मावेल्लक, एक जनपद के लोगों का द्योतक है : ७. १७, २० (संशप्तकों के अन्तर्गत); १९, १६ (अर्जुन ने इनका वध किया); ९१, ३९ (अर्जुन पर आक्रमण किया); ८. ५, ४९ (अर्जुन द्वारा मारे गये योद्धाओं के अन्तर्गत इनका उल्लेख)।

मांस : १३. ४८, २२ (मांसं स्वादुकरं)।

१. मास = स्कन्द : ३. २३२, १२ (मासार्थमासावयनं दिशश्च)।

२. मास = शिव (सहस्रनाम)।

मासार्धम = शिव (सहस्रनाम)।

मासिकव्रतधर = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

महात्म्यशरीर = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

माहिक (बहु०) एक भारतीय जनपद के निवासियों का द्योतक है (६. ९, ४६)।

माहिषक (बहु० °का :) एक जति के लोगों का द्योतक है : ६. ९, ५९; ८. ४४, ४३ (इनका कोई धर्म नहीं था); १३. ३३, २२ (शूद्रत्व को प्राप्त हुये); १४. ८३, ११ (अर्जुन ने इन्हें पराजित किया था)।

महिष्मती, एक नगर का नाम है : २. ३१, २१ (दिग्विजय के समय सहदेव ने महिष्मती पुरी में आकर यहाँ के राजा नील से युद्ध किया जिसमें अग्निदेव ने नील की सहायता की). २७। "महिष्मती में निवास करनेवाले भगवान अग्निदेव किसी समय वहाँ के राजा नील की कन्या

सुदर्शना पर आसक्त हो गये। वह कन्या अपने पिता के अग्निहोत्रगृह में अग्नि को प्रज्वलित करने के लिये उपस्थित हुआ करती थी। पंखे से हवा करने पर भी अग्निदेव तब तक प्रज्वलित नहीं होते थे जबतक वह सुन्दरी कन्या अपने मनोहर ओष्ठ-सम्पुट से फूँक मार कर हवा नहीं देती थी। एक दिन ब्राह्मण का रूप धारण करके अग्निदेव उस कन्या के पास आकर कामभाव प्रकट करने लगे। तब धर्मात्मा नील ने उस ब्राह्मण पर शास्त्रानुसार शासन किया जिससे क्रुद्ध हो अग्निदेव अपने रूप में प्रज्वलित हो उठे। यह देख कर आश्चर्यचकित राजा नील ने अग्निदेव की स्तुति की और अपनी कन्या उन्हें समर्पित कर दी। प्रसन्न होकर अग्नि ने नील को यह वरदान दिया कि उनकी सेना किसी से भी पराजित नहीं होगी। उस समय के बाद जो भी राजा महाराज नील पर आक्रमण करता उसे अग्निदेव भस्म कर देते थे। उस समय महिष्मती पुरी में युवती स्त्रियाँ इच्छानुसार अपने वरों का वरण किया करती थीं। तभी से जो राजा इस रहस्य से परिचित थे। वे अग्नि के भय से महिष्मती पुरी पर आक्रमण नहीं करते थे। (२. ३१, २७-३९)।" ५. १९, २३; १६६, ४ (नीलो महिष्मतीवासी); १३. २, ६ (दशाश्व की राजधानी). ३२; १५२, ३ (अर्जुन कार्तवीर्य की राजधानी)।

माहेन्द्र (वि०) अर्थात् महेन्द्र (इन्द्र) का : ५. १३४, २४ (माहेन्द्रं च गृहं लेभे); १५८, ४ (माहेन्द्रं धनुः). ५ (विजयं धनुः); १६९, २१ (अस्त्रग्रामश्च माहेन्द्रो); ६. ५९, ११३ (अर्जुन ने माहेन्द्रास्त्र का प्रयोग किया); ७. २३, ९१ (धर्मराज युधिष्ठिर ने माहेन्द्र धनुष धारण किया); १५७, ३८ (युधिष्ठिर ने माहेन्द्रास्त्र का प्रयोग किया); १८४, ४६ (माहेन्द्री दिक्); ९. ४६, ३७; १२. ३८, ३६।

माहेय (बहु०) एक जाति का द्योतक है (६. ९, ४६)।

माहेश्वर (वि०): ७. २०२, ८०; ९. ४४, ६ (तेजः); १२. २८३, ५७ (माहेश्वरं तेजो ज्वरो नाम); २८९, २० (कोष्ठं माहेश्वरं); १३. १४, १६. २२४. २३३ (प्रजा)।

माहेश्वरपद, सोमपदतीर्थ का एक अवान्तर तीर्थ है (३. ८४, ११९)।

माहेश्वरपुर एक तीर्थ का नाम है जहाँ आकर भगवान् शंकर की पूजा करने से कामनाओं की पूर्ति होती है (३. ८४, १२९)।

माहेश्वरी = उमा (१४. ४३, १५)।

माहेश्वरीधारा एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, ११७)।

मिञ्जिकामिञ्जिक (मिञ्जिका और मिञ्जिक): ३. २३१, १० (रुद्र के शुक्र से उत्पन्न हुये). १५ (मिञ्जिकामिञ्जिकं चैव मिथुनं रुद्रसम्भवम्। नमस्कार्यं सदैवेह बालानां हितमिच्छता)।

मित्र, बारह आदित्यों में से एक का नाम है : १. ६५, १५ (आदित्यों में दूसरे); १०५, ४१ (पुत्रान्प्रदास्यामि मित्रावरुणयोः समान्); १२३, ६६ (अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उपस्थित थे); २२७, ३६ (खाण्डव-वनदाह के समय इन्द्र की ओर से इन्होंने हाथ में चक्र लेकर अर्जुन और श्रीकृष्ण पर आक्रमण किया); २२९, ३१ (अग्नि को इनके साथ समीकृत किया गया है); २. ७, २१ (इन्द्र की सभा में); ३. ३, ६१ (सूर्य को इनके साथ समीकृत किया गया है); ८४, १३५ (मित्रावरुणयोर्लोकान्); ११४, २७; ७. १५५, ३६ (यथाम्बुपतिमित्रौ हि तारकं दैत्यसत्तमम्); ९. ४५, ५ (स्कन्द के अभिषेक में सम्मिलित हुये). ४१ इन्होंने सुव्रत और सत्यसन्ध नामक दो पार्षद स्कन्द को दिये); ५०, ३९; ५४, १४ (मित्रावरुणयोः······आश्रमं); १२. २०, १५ (आदित्यों में चौथे). २९ (मित्रवरुणयोः पुत्रः······अगस्त्यः); २८०, २७ (विष्णु को इनके साथ समीकृत किया गया है); ३१३, २ (पयुरध्यात्ममित्याहुर्यथा तत्त्वार्थदर्शिनः। विसर्गमधिभूतं च मित्रस्तत्राधिदैवतम्); ३१८, २८. ३९ (= पुरुष); १३. १, ५५; १७, १०४ (= शिव सहस्रनाम); ८६, १६ (स्कन्द को देखने आये ; १५०, १४ (आदित्यों में तीसरे). ३५ (अगस्त्य मित्रावरुण के पुत्र थे); १६५, ४०; १४. २१, ४; ४२, २६ (अवाग्गतिरपानश्च पायुरध्यात्ममुच्यते। अधिभूतं विसर्गश्च मित्रस्तत्राधिदैवतम्). ६५ (= परमब्रह्म); ६०, १५ (गुप्तो···मित्रेण वरुणो यथा)।

मित्रज्ञ, पाञ्चजन्य नामक अग्नि के पुत्र का नाम है जो पञ्चदेवविनायकों में से एक हैं (३. २२०, १२)।

मित्रदेव, एक कौरव योद्धा का नाम है : ८. २७, ३ (अर्जुन पर आक्रमण किया). ८. ११ (अर्जुन ने इन्हें बाणों से बींध दिया)।

मित्रधर्मन्, पाञ्चजन्य नामक अग्नि के पुत्र और पञ्चदेवविनायकों में से एक का नाम है (३. २२०, १२)।

मित्रभानु, एक राजा का नाम है (१३. १६५, ५५)।

मित्रवत्, पाञ्चजन्य नामक अग्नि के पुत्र और पञ्चदेवविनायकों में से एक का नाम है (३. २२०, १२)।

मित्रवर्धन, पाञ्चजन्य नामक अग्नि के पुत्र और पञ्चदेवविनायकों में से एक का नाम है (३. २२०, १२)।

१. मित्रवर्मन, एक पाञ्चाल सैनिक का नाम है : ८. ६, २५ (द्रोण ने इसका वध किया था)।

२. मित्रवर्मन, त्रिगर्तराज सुशर्मा के भाई का नाम है : ८. २७, १ (अर्जुन पर आक्रमण किया). ९. १२ (अर्जुन ने इसे बाणों से बींध दिया). २३ (अर्जुन ने इसका सर काट दिया)।

मित्रविन्द, एक देवता का नाम है। रथन्तर नामक अग्नि को दी हुई हवि इनका ही भाग है (३. २२०, १९)।

मित्रविन्दा, श्रीकृष्ण की आठ पटरानियों में से एक का नाम है (२. ३८, २९ के बाद दा० पा० गीप्रे० संस्करण, पृ० ८१५)।

मित्रसह, कल्मापपाद सौदास (देखिये वस्था०) का नाम है : १. १७६, २५ (राजर्षिर्द्विजं मित्रसहस्तदा); १२. २३४, ३० (राजा); १३. १३७, १८ (राजा); १४. ५८, १।

मित्रसाह्वया, एक देवी का नाम है जिसने उमा का अनुसरण किया (३. २३१, ४८)।

मित्रसेन, एक कौरव योद्धा का नाम है जिसका अर्जुन ने वध किया (८. २७, २५)।

मित्रा, उमादेवी की अनुगामिनी एक सखी का नाम है (३. २३१, ४८)। देखिये मित्रसाह्वया।

मित्रावरुण, सदा साथ रहनेवाले मित्र और वरुण देवताओं के लिये प्रयुक्त यौगिक शब्द है (९. ५४, १४)। महर्षि अगस्त्य (देखिये वस्था०) और वसिष्ठ (देखिये वस्था०) दोनों ही मित्रावरुण के पुत्र हैं।

मित्रावरुणयोः पुत्रः = अगस्त्यः १२. २०८, २९; १३. १५०, ३५; १६५, ४०।

१. मिथिला, एक नगरी का नाम है जो विदेहों की राजधानी थी : ११३, २८ (पाण्डु ने मिथिला जाकर विदेहों को पराजित किया); २. २०, २८ (इन्द्रप्रस्थ से राजगृह जाते समय श्रीकृष्ण आदि मिथिला आये); ३. २०६, ४४. ४५ (माता-पिता के भक्तसु विख्यात व्याध यहीं रहते थे); २०७, २. ५. ६ (जनकेन सुरक्षिताम्). १४; २१५, २; १२. १७, १९ (मिथिलायां प्रदीप्तायां न मे दह्यति किञ्चन); १७८, २; २१८, ३ (जनको जनदेवस्तु मिथिलायां जनाधिपः). ६; २७६, ४; ३२०, १२ (विदेहानां पुरीं···मिथिलां रम्यां); ३२५, ७. १२. २२. २४ (शुक मिथिला में जनक के पास आये); १४. ३२, ९।

२. मिथिला (बहु०): ३. २५४, ८ (कर्ण ने दिग्विजय के समय यहाँ के निवासियों को पराजित किया था)।

मिथिलाधिप, मिथिलाधिपति, मिथिलेश्वर = जनक (देखिये वस्था०)।

मिलीमिलिन् = शिव (सहस्रनाम)।

१. मिश्रक, कुरुक्षेत्र की सीमा के अन्तर्गत स्थित एक तीर्थ का नाम है जिसमें स्नान करने से सभी तीर्थों में स्नान करने के समान फल मिलता है (३. ८३, ९१-९२)।

२. मिश्रक, द्वारकापुरी की शोभा वृद्धि करनेवाले एक दिव्यवन का

नाम है (२. ३८, २९ के बाद दापा० गीप्रे० संस्करण)।

मिश्रकेशी, एक अप्सरा का नाम है : १. ६५, ४९ (प्राधा की पुत्रियों में से एक); ९४, ८ (रौद्राश्व की पत्नी और ऋचेयु आदि दस पुत्रों की माता); १२३, ६१ (अर्जुन के जन्मोत्सव के अवसर पर नृत्य किया); २. १०, १० (कुबेर की सभा में); ३. ४३, २९ (इन्द्र की सभा में अर्जुन के स्वागतार्थ नृत्य किया); ४. ९, १६ (सुदेष्णा ने द्रौपदी से पूछा कि वह मिश्रकेशी अप्सरा तो नहीं है); १३. १९, ४४ (कुबेर की सभा में नृत्य किया); १६५, १५।

मिश्रिन्, एक नाग का नाम है जो बलरामजी के परमधाम के समय उनके स्वागतार्थ प्रभासक्षेत्र में आया था (१४. ४, १५-१६)।

मिहिर = सूर्य (३. ३, ६१)।

मीढ्वस = शिव (देखिये वस्था०)।

मुकुट (बहु० °टाः) एक जाति का नाम है जिसमें 'विगाहन' नामक कुलाङ्गार नरेश हुआ था (५. ७४, १६)।

मुकुटा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २३)।

मुकुटिन (मुकुट धारण करनेवाला) = इन्द्र (१३. ४०, २९)।

मुकुट्ट (बहु० °ट्टाः) एक जाति के लोगों का नाम है जो जरासन्ध के भय से भाग गये थे (२. १४, २६, केवल कलकत्ता सं० में। चित्रशाला प्रेस, पूना संस्करण में इसी स्थान पर मुकुट्टा है)।

मुकुन्द = विष्णु (सहस्रनाम)।

मुक्ततेजस् = शिव (सहस्रनाम)।

मुक्तानां परमा गतिः = विष्णु (सहस्रनाम)।

मुक्तिमती — देखिये शुक्तिमती।

मुखकर्णी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २९)।

मुखमण्डिका, शिशुग्रह-स्वरूपा एक राक्षसी का नाम है : ३. २३०. ३० (= दिति, देखिये वस्था०)।

मुखर, एक कश्यपवंशी नाग का नाम है (५. १०३, १६)।

मुखवादित्रवादिन् = शिव (सहस्रनाम)।

मुख्य = शिव (सहस्रनाम)।

मुचुकुन्द, एक प्राचीन नरेश का नाम है : २. ८, २१ (यम की सभा में); ३. ९४, २१। "पूर्वकाल में वैश्रवण (कुबेर) ने मुचुकुन्द पर प्रसन्न होकर उन्हें सम्पूर्ण पृथिवी दान में देना चाहा किन्तु मुचुकुन्द ने उसे ग्रहण नहीं किया और कुबेर से कहा : 'मैं अपने बाहुबल से उपार्जित राज्य का ही उपभोग करना चाहता हूँ।' इस उत्तर को सुनकर कुबेर अत्यन्त प्रसन्न और विस्मित हुये। तदनन्तर क्षत्रिय धर्म में तत्पर रहनेवाले मुचुकुन्द ने अपने बाहुबल से प्राप्त हुई इस पृथिवी का न्यायपूर्वक शासन किया (५. १३२, ९-१३)।" १२. ७४, ३ (मुचुकुन्दस्य संवादं राज्ञो वैश्रवणस्य च). ४-६. ८. १७. १८-२० (मुचुकुन्द और वैश्रवण का संवाद); १४३, ६. ७ (भार्गव ने मुचुकुन्द को कपोतलुब्धक संवाद सुनाया); १६६, ७७ (इन्होंने काम्बोज से एक खड्ग प्राप्त किया जो बाद में इनसे मरुत्त को प्राप्त हुआ); १३. ७६, २५ (गोदान द्वारा स्वर्ग प्राप्त करने वाले राजाओं के साथ इनका उल्लेख); ११५, ६१ (ये कार्तिक मास में मांस-भक्षण नहीं करते थे); १६५, ५४।

मुचुकुन्दोपाख्यानम् — राजा मुचुकुन्द ने इस पृथिवी को जीतने के पश्चात अपने बल की परीक्षा लेने की दृष्टि से अलकापति कुबेर पर चढ़ाई की। कुबेर ने तब मुचुकुन्द का सामना करने के लिये राक्षसों की सेना भेजी जिसने राजा की सेना को कुचलना आरम्भ किया। तब राजा मुचुकुन्द ने अपने विद्वान पुरोहित वसिष्ठ से अपनी सेना के पराभव की बात की जिस पर वसिष्ठ ने घोर तपस्या द्वारा राक्षसी सेना को विनष्ट कर दिया। अपनी सेना को मरते देख कर कुबेर ने मुचुकुन्द के सामने प्रकट होकर इस प्रकार कहा : 'यदि तुम्हारी भुजाओं में बल हो तो उसे दिखाओ। ब्राह्मण के बल पर इतना गर्व क्यों कर रहे हो?' इस पर कुपित हो मुचुकुन्द ने कुबेर से कहा कि ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों को स्वयंभू ब्रह्मा ने उत्पन्न किया है। यदि दोनों का बल अलग-अलग हो जाय तो संसार की रक्षा नहीं हो सकती। ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों को मिलकर प्रजा का पालन करना चाहिये। अतः मुचुकुन्द ने कुबेर से पूछा कि वे उनकी निन्दा क्यों कर रहे हैं। राजा की बात सुन कर कुबेर ने स्वेच्छा से सम्पूर्ण पृथिवी का राज्य उन्हें सौंपने का प्रस्ताव किया किन्तु राजा मुचुकुन्द ने इस प्रस्ताव को अस्वीकार करते हुये कहा कि वे अपने बाहुबल से उपार्जित राज्य का ही उपभोग करना चाहते हैं। राजा मुचुकुन्द को निःसंकोच क्षत्रिय-धर्म में स्थित हुआ देख कर कुबेर को आश्चर्य हुआ। इसके बाद मुचुकुन्द ने अपने बाहुबल से पृथिवी को जीतकर उसका शासन किया। (१२. ७४, ४-२०)।"

मुञ्ज, एक प्राचीन ऋषि का नाम है जो युधिष्ठिर की सेवा में उपस्थित रहते थे (३. २६, २३)।

मुञ्जकेतु, एक राजा का नाम है जो युधिष्ठिर की सेवा में उपस्थित रहते थे (२. ४, २१)।

१. मुञ्जकेश एक प्राचीन राजा का नाम है जो निचन्द्र नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुये थे (१. ६७, २५-२६)। इन्हें पाण्डवों की ओर से रण-निमन्त्रण भेजने का निश्चय किया गया (५. ४, १४)।

२. मुञ्जकेश = शिव (सहस्रनाम)।

३. मुञ्जकेश = विष्णु (सहस्रनाम)।

मुञ्जकेशवत् = श्रीकृष्ण (विष्णु, नारायण) : १२. ३४२, ११२ (नाम की व्युत्पत्ति)।

मुञ्जकेशिन् = विष्णु (नारायण) : १२. ३४०, १०४।

मुञ्जग्राम, दक्षिण के एक नगर का नाम है जिसे दिग्विजय के समय सहदेव ने जीता था (२. ३१, १४, केवल कलकत्ता सं० में, पूना संस्करण में रम्यग्राम है)।

मुञ्जपृष्ठ, हिमालय के शिखर पर एक रुद्रसेवित स्थान का नाम है (१२. १२२, २. ४)।

१. मुञ्जवट कुरुक्षेत्र की सीमा में स्थित एक स्थाणुतीर्थ का नाम है : ३. ८३, २२; ८५, ६७।

मुञ्जवत्, एक पर्वत का नाम है : १०. १७, २६ (गिरेर्मुञ्जवतः पदं)। "हिमालय के पृष्ठभाग में मुञ्जवान् नामक एक पर्वत है जहाँ भगवान शंकर सदा तपस्या किया करते हैं। वनस्पतियों के मूलभाग में, दुर्गम शिखरों पर तथा पर्वत की गुफाओं में नाना प्रकार के भूतगणों से घिरे हुये भगवान् महेश्वर उमादेवी के साथ नित्य निवास करते हैं। इस पर्वत पर रुद्रगण, साध्य, विश्वेदेव, वसुगण, यम, वरुण, अनुचरों सहित कुबेर, भूत पिशाच, अश्विनद्वय, गन्धर्व, अप्सरा, यक्ष, देवर्षि, आदित्यगण, मरुद्गण और यातुधान सब शिव की उपासना करते हैं (१४. ८, १-६)।

मुञ्जवासस् = शिव (७. २०२, ३६)।

मुञ्जावट, हिमालय के शिखर पर स्थित एक स्थान जहाँ परशुरामजी ने ऋषियों को अपनी जटा बाँधने का आदेश दिया था (१२. १२२, ३)।

१. मुण्ड = शिव : १२. २८४, ९६ (सहस्रनाम). १४५; १३. १७, ४५ (सहस्रनाम). १३१; १४. ८, २५।

२. मुण्ड, एक जाति के लोगों का नाम है: ३. ५१, २५ (युधिष्ठिर के राजसूय के समय उपस्थित); ६. ५६, ९ (भीष्म के गारुडव्यूह में वृहद्बल के साथ बायें पंख में स्थित); ७. ११९, २६. २८।

मुण्डवेदाङ्ग, धृतराष्ट्र वंशी एक नाग का नाम है (१. ५७, १७)।

मुण्डिन् = शिव : १३. १४, २१; १७, ५८ (सहस्रनाम)।

मुण्डी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १७)।

मुदावर्त, हैहयवंश में उत्पन्न एक कुलाङ्गार राजा का नाम है (५. ७४, १३)।

मुदित = शिव (सहस्रनाम)।

मुदिता, सहनामक अग्नि की भार्या का नाम है (३. २२२, २)।

मुद्गर, तक्षकवंशी एक नाग का नाम है (१. ५७, १०)।

मुद्गरपर्णक, एक कश्यपवंशी नाग का नाम है (५. १०३, १३)।

मुद्गरपिण्डक, कश्यप द्वारा कद्रू के गर्भ से उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ३५, ९)।

१. मुद्गल, एक ऋषि का नाम है : ३. ११३, २४ (नारायणी चन्द्रसेना बभूव वश्या नित्यं मुद्गलस्याजमीढ)। "युधिष्ठिर द्वारा मुद्गल के दानधर्म के सम्बन्ध में पूछने पर व्यासजी ने बताया : कुरुक्षेत्र में मुद्गल नामक एक धर्मात्मा और जितेन्द्रिय ऋषि निवास करते थे। वे शिल तथा उन्छ वृत्ति से ही अपनी आजीविका निर्वाह करते हुये सत्य बोलते और किसी की निन्दा नहीं करते थे। उन्होंने अतिथिसेवा का व्रत ले रखा था। वे कर्मनिष्ठ तथा तपस्वी थे और कापोतीवृत्ति का आश्रय ले कर अवश्यकतानुरूप थोड़े से अन्न का ही संग्रह करते थे। अपनी स्त्री और पुत्र के साथ रह कर वे पन्द्रह दिन में कपोत की भाँति एक-एक दाना चुन कर एक द्रोण धान का संग्रह कर पाते थे और उसके द्वारा इष्टीकृत नामक यज्ञ का अनुष्ठान करते थे। इस प्रकार परिवार सहित उन्हें पन्द्रह दिन पर भोजन प्राप्त होता था। वे प्रत्येक पक्ष में दर्श एवं पौर्णमास यज्ञ करते हुये देवतओं और अतिथियों को उनका भाग अर्पित करके शेष अन्न से जीवन-यापन करते थे। प्रत्येक पर्व पर देवताओं सहित इन्द्र उनके यज्ञ में भाग ग्रहण करते थे। मुद्गल एक द्रोण धान से तैयार किये हुये अन्न में से जब-जब दान करते थे तब तब देने से बचा हुआ अन्न मुद्गल द्वारा दूसरे अतिथियों के दर्शन से बढ़ जाया करता था। इस प्रकार उसमें सैकड़ों मनीषी ब्राह्मण भोजन कर लेते थे। एक दिन दिगम्बर वेश में भ्रमण करते हुये दुर्वासा मुद्गल के व्रत की ख्याति सुन कर उनके पास आये। दुर्वासा मुनि पागलों की भाँति अटपटे वेश में नाना प्रकार के कटुवचन बोलते हुये मुद्गल के आश्रम में पधारे और उन्होंने भोजन की इच्छा प्रकट की। तब मुद्गल ने उन्हें भोजन अर्पित किया। वह अन्न अत्यन्त स्वादिष्ट था अतः दुर्वासा सब भोजन खा गये तब मुद्गल ने उन्हें और भोजन दिया। इस प्रकार सम्पूर्ण भोजन उदरस्थ करने के पश्चात दुर्वासा ने जूठन लेकर अपने सम्पूर्ण अङ्गों में लपेट लिया और जैसे आये थे वैसे ही चले गये। इसी प्रकार दूसरा पर्वकाल आने पर दुर्वासा ने पुनः उपस्थित हो कर मुद्गल के यहाँ का सारा अन्न उदरस्थ कर लिया। फलस्वरूप मुद्गल निराहार रह कर पुनः अन्न के दाने बीनने लगे किन्तु क्षुधा कष्ट ने उनके मन में विकार उत्पन्न नहीं किया। इधर मुद्गल का धैर्य भंग करने के उद्देश्य से दुर्वासा निरन्तर छः बार ठीक पर्व के समय आ कर उनका सम्पूर्ण भोजन उदरस्थ करते रहे। इसके विपरीत भी मुद्गल को विकाररहित देख कर दुर्वासा ने उनके दानधर्म की प्रशंसा करते हुये उन्हें सदेह स्वर्गलोक जाने का आशीर्वाद दिया। ठीक उसी समय हंसों और सारसों से जुता हुआ एक दिव्य रथ मुद्गल के समीप आया। रथ पर बैठे देवदूत ने मुद्गल से कहा : 'यह विमान आपके शुभ कर्मों से प्राप्त हुआ है। आप इस पर बैठिये क्योंकि परम सिद्धि प्राप्त कर चुके हैं।' तब मुद्गल ने देवदूत से स्वर्ग के गुण के सम्बन्ध में जानना चाहा (३. २६०)।

"मुद्गल के पूछने पर देवदूत ने उनकी बुद्धि की प्रशंसा करने के बाद कहा : 'स्वर्गलोक बहुत ऊपर है और उसे ऊर्ध्वग भी कहते हैं। वहाँ के लोग सदा विमानों पर विचरण करते हैं (स्वर्ग का विस्तृत वर्णन)। धर्मात्मा, ईर्ष्यारहित, दानधर्मपरायण तथा युद्धकला में प्रसिद्ध शूरवीर लोग ही स्वर्ग प्राप्त करते हैं। वहाँ देवता, साध्य, विश्वेदेव, गन्धर्व और अप्सरा आदि सब के अलग-अलग अनेक प्रकाशमान लोक हैं। स्वर्ग में ३३,००० सहस्र योजन का एक सुवर्णमय पर्वत है जो मेरुगिरि के नाम से विख्यात है। वहीं देवताओं के नन्दन आदि पवित्र उद्यान तथा पुण्यात्माओं के विहारस्थल हैं। वहाँ किसी को भूख-प्यास नहीं लगती, मनमें ग्लानि नहीं होती, और शरीर से पसीना आदि नहीं निकलता। वहाँ कोई दुर्गन्ध भी नहीं होती और मल-मूत्र का भी अभाव होता है। देवताओं के लोकों के ऊपर ब्रह्माजी के लोक हैं जहाँ अपने शुभ कर्मों से पवित्र ऋषि, मुनि ही जाते हैं। वहीं ऋभु नामक दूसरे देवता भी रहते हैं जो देवगणों के भी आराध्यदेव हैं। इन ऋभुओं को स्त्रियों के लिये संताप नहीं होता। लोकों के ऐश्वर्य के लिये भी इनके मन में कोई ईर्ष्या नहीं होती। ये ऋभुगण देवताओं की भाँति आहुतियों से जीविका निर्वाह नहीं करते। उन्हें अमृत पीने की भी आवश्यकता नहीं होती। उनका दिव्य शरीर ज्योतिर्मय होता है और उनकी कोई विशेष आकृति नहीं होती। वे सुख में प्रतिष्ठित हैं परन्तु सुख की कामना नहीं रखते। कल्प का अन्त होने पर भी उनकी स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं होता। वे जरा-मृत्यु से रहित हैं। हर्ष, प्रीति तथा सुख आदि विकारों का भी उनमें सर्वथा अभाव है। उनकी संख्या तैंतीस है और उन्हीं के लोकों को मनीषी पुरुष उत्तम नियमों के आचरण से अथवा विधिपूर्वक दिये हुये दानों से प्राप्त करते हैं।' ब्रह्मलोक का इस प्रकार वर्णन करने के बाद देवदूत ने मुद्गल से कहा : 'तुमने अपने दान के प्रभाव से अनायास यह स्वर्गीय सुख-सम्पत्ति प्राप्त कर ली है अतः इसका उपभोग करो।' तदनन्तर स्वर्ग के दोषों का वर्णन करते हुये देवदूत ने कहा : 'अपने सत्कर्मों का ही फल स्वर्ग में भोगा जाता है। वहाँ कोई नया कर्म नहीं किया जाता। इस प्रकार अपना पुण्यरूप मूलधन गवाने से ही वहाँ के भोग प्राप्त होते हैं। कर्मों का भोग-समाप्त होने पर स्वर्ग से पतन भी हो जाता है। यह पतन अत्यन्त दुःखदायी होता है। स्वर्ग से पतित होते समय वहाँ के निवासियों की चेतना लुप्त हो जाती है। उनके गले की मालायें कुम्हला जाती हैं और पतन की सूचना मिल जाने से उनके मन में अत्यधिक भय समा जाता है। फिर भी वहाँ से भ्रष्ट हुये लोग अपने शुभ कर्मों के संस्कार के कारण मनुष्ययोनि में ही जन्म पाते हैं। परन्तु मानव योनि में वह अपने कर्त्तव्य को न समझे तो उससे भी अधम योनि में चला जाता है। मनुष्यलोक में मानव शरीर द्वारा जो कर्म किया जाता है उसी को परलोक में भोगा जाता हैं।' देवदूत के वर्णन को सुनकर मुद्गल ने उससे किसी ऐसे लोक का वर्णन करने के लिये कहा जो स्वर्ग के उपरोक्त दोषों से रहित हो। देवदूत बोला : ब्रह्मा के लोक के ऊपर विष्णु का परम धाम है। वह शुद्ध सनातन ज्योतिर्मय लोक हैं और उसे परब्रह्म भी कहते हैं। विषयानुरक्त, दम्भी, लोभी, क्रोधी आदि व्यक्ति इस लोक में नहीं जा सकने। ममता और अहंकार से रहित, सुख-दुःख आदि द्वन्दों से ऊपर उठे हुये, जितेन्द्रिय, तथा ध्यानयोग में तत्पर व्यक्ति ही उस लोक को प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार विष्णुलोक का वर्णन करने के बाद देवदूत ने मुद्गल से कहा : 'आपने जो कुछ पूछा था वह सब मैंने बता दिया। अब आपकी कृपा से हम लोग सुखपूर्वक स्वर्ग की यात्रा करें। इसमें विलम्ब नहीं होना चाहिये।' व्यास जी ने युधिष्ठिर को बताया कि देवदूत की बात सुनकर मद्गल ने उस पर भलीभाँति विचार करने के बाद देवदूत से कहा : 'देवदूत' तुम्हें नमस्कार। तुम सुखपूर्वक पधारो। मुझे स्वर्ग की आवश्यकता नहीं है क्योंकि उसके दोषों की बात जानने के बाद मैं वहाँ नहीं जाना चाहता। जहाँ जाकर मनुष्य कभी शोक नहीं करते, व्यथित तथा विचलित नहीं होते, मैं उसी अक्षय धाम का अनुसन्धान करूँगा।' ऐसा कहकर मद्गल ने देवदूत को विदा कर दिया और पूर्ववत् शम दम आदि नियमों का पालन करने लगे। उनकी दृष्टि में निन्दा और स्तुति समान हो गई। वे मिट्टी और सुवर्ण को समान समझने लगे। ध्यान से उन्हें उत्तम बोध प्राप्त हुआ और उसके द्वारा उन्होंने सनातन मोक्षरूपा परम सिद्धि प्राप्त कर ली। (३. २६१)।" ३. २६०, ३. ११. १४. १६. २३. ३०; २६१, ३. ८. २९. ३६; १२. २३४, ३२ (इन्हें एक सुवर्णमय भवन देकर शतद्युम्न स्वर्ग गये)। तुकी० मौद्गल्य।

२. मद्गल (बहु०) एक जाति के लोगों का नाम है : ७. ११, १६ (कृष्ण पहले इन्हें पराजित कर चुके थे)।

१. मुनि, अहर (अहः) नामक वसु के एक पुत्र का नाम है (१. ६६, २३)।

२. मुनि, पूरुवंशी महाराज कुरु के पाँच पुत्रों में से एक का नाम है (१. ९४, ५०)।

३. मुनि = शिव (सहस्रनाम)।

४. मुनि, दक्ष की पुत्री और कश्यप की पत्नी का नाम है : १. ६५, १२. ४२ (देवगन्धर्व मौनेयों की माता)।

मुनिदेश, क्रौञ्चद्वीपवर्ती अन्धकार के बाद के एक देश का नाम है (६. १२, २२. २३)।

मुनिलोक, मुनियों के लोक का द्योतक है (३. ८४, ४)।

मुनीवीर्य, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३१)।

मुनीन्द्र = शिव (१३. १४, २९४)।

मुमुक्षु, दक्षिण के एक ऋषि का नाम है (१३. १६५, ३९)

१. मुरु, एक प्राचीन देश जिसपर भगदत्त का शासन था (२. १४, १४)।

२. मुरु, एक महान् असुर का नाम है जिसका श्रीकृष्ण ने वध किया था : ५. ४८, ८३ (श्रीकृष्ण ने निर्मोचन की सीमा पर जाकर सहसा छः सहस्र लौहमय पाश काट दिये जो तीखी धारवाले थे। तदनन्तर उन्होंने मुरु दैत्य का वध और राक्षस-समूह का नाश करके निर्मोचन नगर में प्रवेश किया); १५८, ७ (श्रीकृष्ण ने अपने तेज और बल से मुरु दैत्य के पाशों का उच्छेद करके नरकासुर को भी जीत लिया); ७. ११, ५ (श्रीकृष्ण ने मुरु का वध किया था); ८. ५, ५५; १२. ३३९, ९२ (हनिष्ये नरकं भौमं मुरं पीठं च दानवम्)।

मुर्मुरा, एक नदी का नाम है : ३. २२२, २५ (उन नदियों में से एक जिन्हें अग्नि की मातायें कहा गया है)।

मुसल, विश्वामित्र के पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ४, ५३)।

मुसलायुध = बलराम (९. ३६, २)।

१. मुहूर्त = सूर्य (३. ३, २०)।

२. मुहूर्त = शिव (सहस्रनाम)।

१. मूक एक तक्षकवंशी नाग का नाम है (१. ५७, ९)।

२. मूक, एक असुर का नाम है जो शूकर का रूप धारण करके अर्जुन को मारने के घात में था किन्तु अर्जुन और किरात (शिव) दोनों ने इसका वध किया (३. ३९, ७. १४)।

मूर्तिज = शिव (सहस्रनाम)।

मूर्तिशास्त्र : १२. २५२, ३ (मूर्तिशास्त्रविधानवित्)।

मूर्तौ हि ते…सर्वे वै देवताः = शिव (सहस्रनाम)।

मूर्धग = शिव (सहस्रनाम)

मूल (म्) = शिव (सहस्रनाम)।

मूल, सत्ताइस नक्षत्रों में से एक का नाम है : १३. ६४, २४ (जो इस नक्षत्र में एकाग्रचित्त होकर ब्राह्मणों को फलमूल का दान करता है उसके पितर तृप्त होते हैं); ८९, १० (इस नक्षत्र में श्राद्ध करने से आरोग्य की प्राप्ति होती है) ; ११०, ३ (मार्गशीर्ष मास के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को मूल नक्षत्र से चन्द्रमा का योग होने पर चन्द्र सम्बन्धी व्रत आरम्भ करना चाहिये)।

मूषक (बहु० °काः) दक्षिण की एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ५६. ७१)।

मूषकाद, एक नाग का नाम है (१. ३५, १२)। तुकी० मूषिकाद भी।

मूषिक (बहु० °काः) दक्षिण की एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ५८)।

मूषिकाद, एक नाग का नाम है : २. ९, १० (वरुण की सभा में); ५. १०३, १४।

१. मृग (बहु० °गाः) शाकद्वीप के ब्राह्मणों का द्योतक है : ६. ११, ३६ (केवल कलकत्ता संस्करण में। पूना संस्करण में मङ्ग है)।

२. मृग, मृगी की सन्तानों का द्योतक है (१. ६६, ६२)।

३. मृग = शिव (सहस्रनाम)।

मृगधूम, कुरुक्षेत्र की सीमा के अन्तर्गत स्थित एक तीर्थ का नाम है जहाँ महादेव का पूजन करने से अश्वमेध का फल प्राप्त होता है (३. ८३, १०१)।

मृगबाणार्पण = शिव (सहस्रनाम)।

मृगमन्दा, क्रोधवशा की क्रोधजनित कन्याओं में से एक का नाम है जिसने रीछों आदि को जन्म दिया (१. ६६, ६०. ६२)।

१. मृगव्याध, ग्यारह रुद्रों में से एक का नाम है : १. ६६, २; १२३, ६८ (अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उपस्थित रुद्रों में ये भी थे)।

२. मृगव्याध = शिव (१४. ८, १८)।

मृगशिरस्, एक नक्षत्र का नाम है : १३. ६४, ७; ८९, ३ (इस नक्षत्र में श्राद्ध करने से तेज की प्राप्ति होती है); ११०, ८ (मार्गशीर्ष में चान्द्रव्रत में मृगशिरा को चन्द्रमा के नेत्र समझ कर पूजा करने का विधान है)।

मृगस्वप्ननिदर्शन : १. २, १९६ (ह्रियमाणस्तु मन्दात्मा मोक्षितोऽसौ किरीटिना। धर्मराजस्य चात्रैव मृगस्वप्ननिदर्शनात्)।

मृगस्वप्नोद्भव : १. ९, ५४।

मृगस्वप्नोद्भवपर्वन्, महाभारत के ४४वें अवान्तर पर्व का नाम है : "एक रात युधिष्ठिर को स्वप्न में द्वैतवन के सिंह-व्याघ्र आदि ने दर्शन देकर उनसे कहा : 'हम लोग द्वैतवन के पशु हैं जो आप लोगों के मारने से इतनी अल्प संख्या में शेष रह गये हैं। अतः अब हमारा और अधिक संहार न हो इसलिये आपलोग अपना निवास-स्थान बदल दीजिये।' युधिष्ठिर ने स्वप्न में ही उन पशुओं को उनकी इच्छा पूर्ण करने का आश्वासन दिया। रात व्यतीत होने पर युधिष्ठिर ने अपने सब भाइयों को स्वप्न की बात बता कर द्वैतवन से काम्यक वन में चल कर रहने का प्रस्ताव किया। तदनन्तर सभी पाण्डव साथ के ब्राह्मणों और इन्द्रसेन आदि सभी सेवकों के साथ काम्यक वन में चले आये (३. २५८)।"

मृगाक्ष = शिव (८. ३३, ५७)।

मृगालय = शिव (सहस्रनाम)।

मृगी, क्रोधवशा की क्रोधजनित पुत्रियों में से एक का नाम है : १. ६६, ६०. ६२ (संसार के समस्त मृग इसी की सन्तान हैं)।

मृगोत्तम एक नक्षत्र (मृगशिरस्) का नाम है १३. ८९, ३)।

मृत = शिव (सहस्रनाम)।

मृतपा, पश्चिम तट पर निवास करनेवाले एक असुर का नाम है : १. ६५, २९; ६७, ३३ (इसने पश्चिमानूपक के रूप में जन्म लिया)। तुकी० अमृतपा।

मृत्तिकावती, एक जनपद जिसे कर्ण ने जीत लिया था (३. २५४, १०)।

१. मृत्यु को अक्सर अन्तक और यम के साथ भी समीकृत किया गया है: १. ६६, ५५ (मृत्युर्भूतान्तकः); १४१, ७ (मृत्युपाशात्); १७७, २० (मृत्युरिवोग्रेण दण्डेन); २२७, ३५ (मृत्युर्देवः परश्वधम्। प्रगृह्य परिघं घोरं विचचारार्यमा अपि); २. ८, २९ (कालो मृत्युस्तथैव च); ३. १७७, १८ (मृत्युमिवोग्ररूपम्); २३१, ३६ (यम का अनुसरण किया); ४. ५०, २६; ५. ४२, २ (न मृत्युरस्तीति तव प्रवादम्). ४ (मोहान्मृत्युः संमतोऽयं कवीनाम्। प्रवादं वै मृत्युमहं). ५-६. ८. ९. ११. १२. १५. १६; ४८, ३३ (मृत्युमिवोत्पतन्तम्); ५१, २७ (नररूपेण); ६४, ९; ७२, ८१; १३७, २८; १६२, ३८: १८४, ८; ६. ३४, ३४; ४८, ८१ (कालदण्डोपमां घोरां मृत्योर्जिह्वामिव श्वसन्); ५३, १२; ६३, १८. २१; ६४, २२. ६५; ७७, ७०; ८०, ५; ८६, ३; ८९, २९; ९६, ३७; १०४, ३१ (मृत्यु कल्पां); १०५, ३४; ११४, २५; ११६, ३ ((मृत्योर्घोरां); ७. १, २३; २, १७ (मृत्युमुखात्); ९, १२; ११, ४०; १६, ३८ (मृत्युरिवान्तकः); २५, ६; ५२, १८. २२. ३५; ८५, ३; ८८, १५; ९१, ४१; १०२, ३५ (प्रेषयिष्यामि मृत्यवे); ११४, २० (ग्रस्तान्… मृत्युना); १३९, ११७ (प्रैषीन्मृत्युमिवान्तकः); १४६, १५ (मृत्युविग्रहवानिति). २७; १६६, ५४ (मृत्योरिव स्वसारं); १७०, २८; १७९, ५४; १८२, ४२; १९३, ४२; २०२, १०४ (शिव को इसके साथ

समीकृत किया गया है); ८. १७, ६; २३, १७ (शरं घोरं मृत्युकालान्तकोपम्); ३७, १६; ४२, ११; ४९, ९ (मृत्युर्मन्त्रविदां यथा); ५०, २४ (किं करोत्यतदण्डेन मृत्युनाऽपि); ५१, ३१. ४१; ५४, २० (आपन्नो मृत्युरास्यमिवातुरः); ५६, १८. १२० (अन्तकाले यथा क्रुद्धो मृत्युः किंकरदण्डभृत्); ५९, १४. २८. ४९; ६०, ९; ६७, १४; ७५, ५. ६. ७; ८३, ७; ९०, ४२; ९१, ४८; ९. १७, ७. ८४; ४५, १७ (कालो यमश्च मृत्युश्च यमस्यानुचराश्च ये); ५५, ३१; ११. ४, १०; १२, २४ (मृत्योर्दंष्ट्रान्तरं गतः); १७, २०; १८, २३; १२. ७, १३ (मृत्युयानं); १२, १५ (पाशैर्न् कण्ठे बध्नाति मृत्युराट्); १३, १०; १५, १७. ५८; १७, १६; ५९, ९३ (मृत्योस्तु दुहिता राजन्सुनीथा नाम मानसी); ६८, ४१. ५१; ७९, २१; १२२, २९. ३३ (मृत्योश्चतुर्विभागस्य दुःखस्य च सुखस्य च); १७५, २८; १९९, १. ३. १६. २८. २९. ३२. ३३. ५२. ११६; २००, ३; २१७, २; २५६, ६; ३०१, २५; ३२८, ४९; १३. १, १६. २३. ३५. ४९. ५०. ५८. ६०-६७. ६९. ७०.७६. ७८-८०; २, ३. ४. ४१. ४८. ५८ (मृत्युना रौद्रभावेन). ६७ (कूटमुद्गरहस्तस्तु). ८०. ८६. ९०. ९४; १७, १७५ (इसने शक्र से शिव सहस्रनाम का उपदेश ग्रहण करने के बाद उसका रुद्रों को उपदेश दिया); ३८, २९; ६२, २७. ७५; १४८, ३६ (मृत्योः पन्थानमव्ययम्); १५०, २०; १५८, ४४ (श्रीकृष्ण को इसके साथ समीकृत किया गया है); १६०, ४० (रुद्र को इसके साथ समीकृत किया गया है); १६१, २०; १४. ११, ४; १३, ७; ५२, १२।

२. मृत्यु = सूर्य (३. ३, १६)।

३. मृत्यु = शिव (सहस्रनाम)।

४. मृत्यु : "नारदजी ने अकम्पन से कहा : आदि सृष्टि के समय महातेजस्वी पितामह ब्रह्मा ने जब प्रजासृष्टि की थी उस समय संहार की कोई व्यवस्था नहीं की थी। अतः सम्पूर्ण जगत् को प्राणियों से परिपूर्ण एवं मृत्युरहित देख कर ब्रह्मा चिन्तित हो उठे, किन्तु बहुत सोच-विचार के बाद भी उन्हें प्राणियों के संहार का कोई उपाय ज्ञात नहीं हो सका। उस समय क्रोधवश ब्रह्मा के श्रवण-नेत्र आदि इन्द्रियों से अग्नि प्रकट हो कर जगत को दग्ध करने की इच्छा से सम्पूर्ण दिशाओं और विदिशाओं में फैल गई। दाह करने में समर्थ भगवान अग्निदेव क्रोध के वेग से सब को त्रस्त करते हुये चराचर जगत को दग्ध करने लगे जिससे बहुत से प्राणी नष्ट हो गये। तब स्थाणु नामधारी रुद्र परमेष्ठी ब्रह्मा की शरण में आये। रुद्र को देख कर ब्रह्मा ने उनसे कहा : 'तुम मेरे मानसिक संकल्प से उत्पन्न हुये हो। तुम्हारी कौन सी कामना मैं पूर्ण करूँ। तुम जो कुछ चाहते हो मैं उसे पूर्ण करूँगा।' (७. ५२)।

"स्थाणु रुद्र के पूछने पर ब्रह्मा ने कहा : 'वसुधा के हित के लिये ही मेरे मन में क्रोध का आवेश हुआ था। इस पृथिवी ने प्राणियों के भार से पीडित होकर मुझे जगत के संहार के लिये प्रेरित किया था।' रुद्र ने ब्रह्मा से कहा : 'आप रोष न कीजिये। स्थावर-जंगम प्राणियों का विनाश मत कीजिये। आपकी कृपा से यह जगत भूत, भविष्य और वर्तमान इन तीन रूपों में विभक्त हो जाय। अपने क्रोध से आपने जिस अग्नि को प्रकट किया है वह सम्पूर्ण जगत् को दग्ध कर रही है। अतः मैं आप से प्रार्थना करता हूँ कि यह चराचर जगत नष्ट न हो।' रुद्र की प्रार्थना सुन कर ब्रह्मा ने उस क्रोध को अपनी अन्तरात्मा में ही धारण कर लिया। तदनन्तर ब्रह्मा ने अग्नि का उपसंहार करके मनुष्यों के लिये प्रवृत्ति और निवृत्ति मार्गों का उपदेश दिया। उक्त क्रोधाग्नि का उपसंहार करते समय ब्रह्माजी की सम्पूर्ण इन्द्रियों से एक नारी प्रकट हुई जो काले और लाल रंग की थी (इस नारी का वर्णन)। वह उनकी इन्द्रियों से निकल कर दक्षिण दिशा में खड़ी हो गई। उस समय ब्रह्माजी ने उस नारी को पास बुलाकर सान्त्वना देते हुये 'मृत्यो' कह कर पुकारा और उससे कहा कि 'तू इन सब प्रजाओं का संहार कर।' ब्रह्मा के ऐसा कहने पर वह मृत्युनामवाली अबला चिन्तामग्न हो गई और फूट-फूट कर रोने लगी। ब्रह्मा ने उसके आँसुओं को समस्त प्राणियों के हित के लिये अपने दोनों हाथ में ले लिया और उस नारी को भी अनुनय से प्रसन्न किया। (७. ५३)।

"तब उस नारी ने प्रजाओं का संहार करने का अप्रिय कार्य करने में अपनी अनिच्छा प्रकट करते हुये धेनुकाश्रम में जाकर तपस्या करने के लिये ब्रह्माजी से अनुमति माँगी। ब्रह्मा जी ने उस नारी को पुनः प्रजाओं का संहार करने की आज्ञा देते हुये अपने क्रोध को शान्त किया और प्रसन्न होकर देखा जिससे सभी लोक पुनः हरे-भरे हो गये। इधर उस मृत्यु नामक नारी ने भी प्रजासंहार के विषय में कोई प्रतिज्ञा किये बिना ही वहाँ से धेनुकाश्रम में आकर अत्यन्त कठोर व्रत का पालन आरम्भ किया। वह इक्कीस पद्म वर्षों तक एक पैर पर खड़ी हो कर तपस्या करती रही। इसके बाद पुनः इक्कीस पद्म वर्षों तक एक ही पैर पर खड़े हो कर तपस्या करने के बाद वह दस सहस्र पद्म वर्षों तक मृगों के साथ विचरण करती रही। तदनन्तर उसने पुण्यमयी नन्दानदी में जाकर उसके जल में आठ सहस्र वर्ष व्यतीत किये। इसके बाद कौशिकी नदी के तट पर आकर वहाँ वायु तथा जल का आहार करती हुई पुनः कठोर नियमों का पालन करने लगी। उस पवित्र कन्या ने पञ्चगङ्गा में तथा वेतसवन में विभिन्न प्रकार की तपस्याओं द्वारा अपने शरीर को अत्यन्त दुर्बल कर दिया। इसके बाद वह गङ्गातट और महामेरु के शिखर पर जाकर प्राणायाम में तत्पर हो प्रस्तर मूर्ति की भाँति निश्चेष्ट भाव से बैठी रही। फिर हिमालय के शिखर पर एक निखर्व वर्ष तक अँगूठे के बल पर खड़ी रही और उसके बाद पुष्कर, गोकर्ण, नैमिषारण्य तथा मलयाचल के तीर्थों में रह कर तपस्या करती रही। वह सदा ब्रह्मा में ही सुदृढ़ भक्तिभाव रखती थी। इस प्रकार अपनी कठोर तपस्या और धर्माचरण से उस कन्या ने पितामह को सन्तुष्ट कर लिया। तब ब्रह्मा ने उस पर प्रसन्न होकर वर माँगने के लिये कहा। मृत्यु ने कहा कि उसे विलाप करती स्वस्थ प्रजाओं का वध न करना पड़े क्योंकि अधर्म से वह अत्यधिक भयभीत होती है। ब्रह्मा ने उससे कहा : 'इन प्रजाओं का संहार करने से तुझे अधर्म नहीं होगा। अतः तू चार श्रेणियों में विभाजित समस्त प्राणियों का संहार कर। लोकपाल, यम तथा नाना प्रकार की व्याधियाँ तेरी सहायता करेंगी। मैं और सम्पूर्ण देवता तुझे पुनः वरदान देंगे जिससे तू पापमुक्त हो अपने निर्मल स्वरूप से विख्यात होगी।' तब मृत्यु ने ब्रह्मा से कहा : 'यदि यह संहार का कार्य मेरे बिना नहीं हो सकता तो आपकी आज्ञा मैंने शिरोधार्य कर ली है; परन्तु मेरा आप से निवेदन है कि लोभ, क्रोध, असूया, ईर्ष्या, द्रोह, मोह, निर्लज्जता और एक दूसरे के प्रति कही हुई कठोर वाणी ये विभिन्न दोष ही देहधारियों का भेदन करें।' ब्रह्मा ने मृत्यु के निवेदन को स्वीकार करते हुये कहा: 'तेरे आँसुओं की बूँदें, जिन्हें मैंने अपने हाथ में ले लिया था, प्राणियों के अपने ही शरीर से उत्पन्न व्याधियाँ बन कर गतायु प्राणियों का नाश करेंगी। तुझे अधर्म की प्राप्ति नहीं होगी। काम और क्रोध का परित्याग करके इस जगत के समस्त प्राणियों का संहार कर। ऐसा करने से तुझे अक्षय धर्म की प्राप्ति होगी। मिथ्याचारी पुरुषों को तो उनका अधर्म ही मार डालेगा।' नारदजी ने बताया कि तभी से वह मृत्यु अन्तकाल आने पर काम और क्रोध का परित्याग करके अनासक्त भाव से समस्त प्राणियों के प्राणों का अपहरण करती है। यही प्राणियों की मृत्यु है। अतः नारदजी ने अकम्पन से अपने पुत्र की मृत्यु पर शोक न करने के लिये कहा। (७.५४)" ७. ५३, १९. २२ (मृत्युः कमललोचना); ५४, २. १०. १६. २९. ३३. ३९. ४४. ४५. ४९ (मृत्युर्दैवदिष्टा). ५०; ५५, १ (मृत्युसमुत्पत्ति); ७१, २१; १२. २५७, १८. २१; २५८, ९. ११. १५. १८. २६. २८. ३३. ३४. ३७. ३८. ४२ (यहाँ मृत्यु की उत्पत्ति और तपस्या आदि की उपरोक्त कथा को पुनः दोहराया गया है)।

मृत्युपा = शिव (सहस्रनाम)।

मृत्यु-प्रजापति-संवाद, से मृत्यु और ब्रह्मा (प्रजापति) के बीच वार्ता का तात्पर्य है। उस प्रसंग में मृत्यु की उत्पत्ति आदि की द्रोणपर्वान्तर्गत ५२-५४ अध्यायों की कथा को पुनः दोहराया गया है (१२. २५६-२५८)।

मृत्युलोक : ५.४८, १०५; ६. ५४, ८२; ८८, २३; ११३, १५; ७.

१८, ३०; ९३, ५४; २५७, २८; १६१, ६; ८. ७३, २८; ७६, १९; १०. ८, ८० (प्राह्णिणोऽमृत्युलोकाय)।

मृदु = शिव (सहस्रनाम) : १३. १७, ७२; १४. ८, २५।

मेकल (बहु० °लाः) एक जाति के लोगों का नाम है : ६. ९, ४१ (भारतवर्ष के निवासी); ५१, १३-१४ (ये भीष्म की रक्षा में तत्पर थे); ८७, ९ (कोसलराज बृहद्बल के साथ); ७. ४, ८ (कर्ण ने पहले इन्हें पराजित किया था); ८. २२, ३. २१; १३. ३५, १७-१८ (उन क्षत्रियों के अन्तर्गत इनका उल्लेख जिन्हें शूद्रत्व प्राप्त हो गया था)।

मेघकर्णा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ३०)।

मेघकाल = शिव (सहस्रनाम)।

मेघनाद, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६२)।

मेघपुष्प, श्रीकृष्ण के एक दिव्य अश्व का नाम है : ४. ४५, २१; ५. ८३, १९; ७. ७९, ३८; १४७, ४७; १०. १३, ३; १२. ५३, ५१।

मेघमाला, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ३०)।

मेघमालिन्, मेरु द्वारा स्कन्द को दिये दो पार्षदों में से एक का नाम है। दूसरे का नाम काञ्चन था (९. ४५, ४७)।

मेघवासस् एक असुर का नाम है : २. ९, १४ (वरुण की सभा में)।

मेघवाहन, एक राजा का नाम है जो जरासन्ध के समक्ष नतमस्तक रहते थे (२. १४, १३)।

मेघवाहिनी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १७)।

मेघसञ्ज्ञा = शिव (सहस्रनाम)।

मेघसन्धि, सहदेव के पुत्र और मगध देश के एक राजकुमार का नाम है जो द्रौपदी के स्वयंवर में आया था (१. १८६, ८)। अश्वमेध अश्व की रक्षा के प्रसंग में अर्जुन के साथ युद्ध करके पराजित हुआ (१४. ८२, ४. ५)। तुकी० मागध, मगधेश्वर, सहदेवज, सहदेवात्मज।

मेघस्वना, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ८)।

मेघावर्त = शिव (सहस्रनाम)।

मेचक = शिव (सहस्रनाम)।

मेढ्ज = शिव (सहस्रनाम)।

१. मेद, ऐरावतवंशी एक नाग का नाम है (१. ५७, ११)।

२. मेद एक जाति का नाम है (१३. २२, २२)।

मेदिनी, मूर्तिमान् पृथिवी का नाम है (१३. ३४, ३०)। तुकी० पृथिवी।

मेदिनीपति = विष्णु (सहस्रनाम)।

मेधज, मेधस् = विष्णु (सहस्रनाम)।

मेधा, दक्ष की पुत्री और धर्म की पत्नी का नाम है (१. ६६, १४)। इन्द्र की सभा में (२. ७, १९)।

१. मेधातिथि, एक ऋषि का नाम है : २. ७, १७ (इन्द्र की सभा में); १२. २०८, २७ (पूर्व दिशा के ऋषियों के साथ इनका उल्लेख); २४४, १७ (इन्होंने वानप्रस्थ का पालन करके स्वर्ग प्राप्त किया था); २६६, ४५; ३३६, ७ (ये उपरिचर-वसु के यज्ञ में सदस्य बने); १३. २६, ७ (शरशय्या पर पड़े भीष्म को देखने आये); १५०, ३१ (इन्द्र के सात गुरुओं में से एक); १६५, ३८ (पूर्व के ऋषियों के अन्तर्गत इनका उल्लेख)।

२. मेधातिथि, एक नदी का नाम है जिसे अग्नि की उत्पत्ति का स्थान बताया गया है (३. २२२, २३)।

मेधाविका, एक तीर्थ का नाम है। यहाँ देवताओं और पितरों का तर्पण करने से मनुष्य अश्वमेध का फल तथा मेधा प्राप्त करता है (३. ८५, ५५)।

१. मेधाविन्, बालधि मुनि के पुत्र का नाम है। इनका जन्म पिता बालधि की तपस्या से हुआ था। "प्राचीन काल में बालधि नाम से प्रसिद्ध एक मुनि थे। उन्होंने पुत्रशोक से संतप्त होकर अत्यन्त कठोर तपस्या की जिससे उन्हें एक देवोपम पुत्र प्राप्त हो। अपनी उस अभिलाषा के अनुसार बालधि को एक पुत्र प्राप्त हुआ। देवताओं ने उन पर कृपा अवश्य की किन्तु उनके पुत्र को देवोपम नहीं बनाया और कहा कि 'मरणधर्मा मनुष्य कभी देवता के समान अमर नहीं हो सकता। अतः उसकी आयु निमित्त के अधीन होगी।' बालधि ने देवों से निवेदन किया कि जिस प्रकार पर्वत सदा अक्षय भाव से खड़े रहते हैं उसी प्रकार उनका पुत्र भी अक्षय बना रहे और पर्वत उसकी आयुके निमित्त हों। अर्थात जब तक पर्वत विद्यमान रहें तब तक उनका पुत्र भी जीवित रहे। तदनन्तर बालधि के पुत्र का जन्म हुआ जो मेधायुक्त होने के कारण मेधावी नाम से विख्यात हुआ। वह पुत्र स्वभाव से से अत्यधिक क्रोधी था। अपनी आयु के सम्बन्ध में देवताओं के वरदान की बात सुन कर मेधावी दर्प से भर उठा और ऋषियों का अपमान करने लगा। एक दिन वह महान् मनीषी धनुषाक्ष के पास जाकर उनका तिरस्कार करने लगा। तब तपोबल-सम्पन्न धनुषाक्ष ने उसे जलकर भस्म हो जाने का शाप दिया; किन्तु इसके विपरीत भी जब वह भस्म नहीं हुआ तब धनुषाक्ष ने ध्यान द्वारा देखा कि मेधावी रोग एवं मृत्यु से रहित है। तब धनुषाक्ष ने उसकी आयु के निमित्त-भूत पर्वतों को भैंसों से विदीर्ण करा दिया। निमित्त का नाश होते ही उस मुनिकुमार मेधावी की मृत्यु हो गई। मेधावी के पिता अपने मृत पुत्र को लेकर अत्यन्त विलाप करने लगे। उन्हें विलाप करते देखकर वहाँ के समस्त वेदवेत्ता मुनिगण एकत्र होकर इस गाथा का गायन करने लगे : 'मरणधर्मा मनुष्य किसी भी प्रकार दैव के विधान का उल्लंघन नहीं कर सकता। तभी तो धनुषाक्ष ने उस बालक की आयु के निमित्तभूत पर्वतों का भैंसों द्वारा भेदन करा दिया।' (३. १३५, ४५-५५)।"

२. मेधाविन्, एक ब्राह्मण बालक का नाम है जिसने पिता को ज्ञानोपदेश दिया : १२. १७५, ३; २७७, ३।

३. मेधाविन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

मेध्या, एक नदी का नाम है : ३. ८९, १५ (पश्चिम में स्थित); २२२, २३ (उन नदियों मे से एक जिन्हें अग्नि की मातायें माना गया है); १३. १६५, २६।

मेध्यारण्य, एक वन का नाम है (३. २९५, ३)।

मेनका, एक अप्सरा का नाम है : १. ८, ६-८ (गन्धर्वराज विश्वावसु से गर्भधारण किया और स्थूलकेश ऋषि के पास प्रमद्वरा नामक एक पुत्री को जन्म देकर उसे वहीं त्याग दिया); ७१, २१. २२. २४. २७; ७२, १. २. ९ (इन्द्र ने इसे विश्वामित्र को मोहित करने के लिये भेजा। तप भंग होने के बाद विश्वामित्र ने इससे शकुन्तला नामक एक पुत्री उत्पन्न किया); ७४, ६८ (प्रमुख अप्सराओं में से एक). ६९ (मेनका नामक ब्रह्मयोनि-र्वराप्सराः). ७०. ७४. ७६ (मेनकाऽप्सरसां श्रेष्ठा). ७८. ८०. ८३; १२३. ६४ (अर्जुन के जन्मोत्सव के समय गायन किया); २. १०. १० (कुबेर की सभा में); ३. ४३, २९ (अर्जुन के स्वागत में इन्द्रसभा में नृत्य किया); ५. ११७, १६; १३. १६५, १५।

मेनकात्मजा = शकुन्तला (देखिये वस्था०)।

मेना, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, २३)।

१. मेरु, एक पर्वत का नाम है : १. १७, ५ (ज्वलन्तमचलं मेरुं तेजोराशिमनुत्तमम्); ६२, ४८ (मेरुर्महागिरिः); ७१, ३६ (संक्षिपेच्च महामेरुं); ७४, ८४; ८५, ९ (विश्वाची के साथ यहाँ ययाति ने रमण किया); ९९, ६ (इसके पार्श्व में वसिष्ठ का आश्रम स्थित था); १३४, १६ (हर्यादारुरुदुर्मेरुञ्चान्मेरुं देवस्त्रियो यथा); १७६, ४५ (आत्महत्या करने के उद्देश्य से वसिष्ठ ने इस पर्वत के शिखर से अपने आपको इसकी एक शिला पर गिराया); २२५, ३७; २२७, ३३; २. १०, ३३ (कुबेर की सभा में उपस्थित पर्वतों में से एक); १८, ८; ३८, २९; ५२, २ (मेरु-मन्दरयोर्मध्ये शैलोदामभितो नदीम्); ३. ३५, २९; ३६, ३; ३९, २; ४१, ४०; ८१, ५ (मेरुमर्कप्रभा यथा); ८२, १११ (मेरुपृष्ठे सरस्वती); १०४, २ (अद्रिराजं महाशैलं मेरुं कनकपर्वतम्). ३ (सूर्य इसी की परिक्रमा करते हैं); १४२, १३; १६३, १२ (ब्रह्मा के मानस पुत्र,

सप्तर्षियों का निवास) .१६ (ब्रह्मा का निवासस्थान). २० (विष्णु का स्थान इसके पश्चिम में स्थित है). २७ (सूर्य और चन्द्रमा प्रतिदिन इसकी प्रदक्षिणा करते हैं). ३१. ३३; १८८, १४४ (मार्कण्डेयजी ने नारायण के उदर में इसे देखा); १८९, १० (यह पृथिवी का भूषण है); २२५, ३३ (हंस और गृध्र यहाँ आते हैं); २६१, ८ (इसका विस्तार ३३,००० योजन है); ५. ६५, ५; ८१, २१; १५६, ११; १६०, ९८ (न हि शुश्रुम वातेन मेरुमुन्मथितं गिरिम्). ९९ (अनिलो वा वहेन्मेरुम्); १६१, १६; ६. ६, २० (गन्धमादन और माल्यवान् पर्वतों के बीच). १५. ३१ (मेरोस्तु पश्चिमे पार्श्वे केतुमालो महीपते); ७, १. २. १३. २४ (जम्बूफल का रस इसके चारों ओर से उत्तर कुरु में प्रवाहित होता है); ३४, २३ (श्रीकृष्ण ने अपने को इसके शिखर के साथ समीकृत किया); ४६, ५०; ४८, ३४; ६३, ८; ७८, २४; ७९, २६; ८२, २७; ८३, ३२; १०९, ३८; ११०, ३५; ७. ९, १२; ३४, २२; ५४; २४; ५८, ७; ६९, १८ (जब पर्वतों ने पृथिवी का दोहन किया तब यह दोग्धा बना); ८४, १७; १२०, ४; १४४, २८; १५६, ८२; १६६, १४; १७४, २०; १८०, १०; १९३, ७; २०२, ७८ (त्रिपुरदाह के समय शिव ने इसे अपनी ध्वजा बनाया); ८. ८, ३; ३४, ३८ (यह शिव की ध्वजा का दण्ड बना); ४०, ८ (कर्ण ने इसे एक महान् पर्वत बताया); ४६, ८०; ६८, १३ (स्थैर्येण मेरोः); ८८, ३२; ९. ६, ८; ३७, २०; ४५, १४. ४८ (इसने स्कन्द को काञ्चन और मेघमाली नामक दो पार्षद दिये); १२. १४, २२ (क्रौञ्चद्वीप के उत्तर में स्थित). २३.२४; ५९, ११९ (इसने पृथु को सुवर्ण के पर्वत दिये); १२२, ३. २८ (इसे पर्वतों का अधिपति बनाया गया); १४०, २१; २५८, २२; २८३, ५, ३२३, ११; ३२५, १४; ३३३, ८ (स शृङ्गे प्रथमे दिव्ये हिमवन्मेरुसम्भवे। संश्लिष्टे श्वेतपीते द्वे रुक्मरूप्यमये शुभे ॥ शतयोजनविस्तारे); ३३४, १३; ३३५, ७. ९ (श्वेतद्वीप इससे ३२,००० योजन दूर स्थित है). २८ (इस पर्वत पर सप्तर्षियों ने एक शास्त्र की रचना की थी); ३३६, २३ (मेरोरुत्तरभागे तु क्षीरोदस्यानुकूलतः); ३३९, १२२; ३४०, २२ (अपने शिष्यों के साथ व्यास ने यहाँ निवास किया था); ३४२, ५९ (पूर्वकाल में इसके उत्तर भाग में स्थूलशिरा महर्षि ने तपस्या किया था). ६० (वडवामुख ने यहाँ तपस्या की थी); ३४३, ३१. ३३; १३. १४, २११. ३२०; १८, २ (व्यास ने यहाँ तपस्या की थी); २६, ९८ (मेरोः समुद्रस्य च सर्वयत्नैः संख्योपलानामुदकस्य वापि); ८५, ६८ (गङ्गा ने रुद्र के शुक्र को मेरु पर्वत पर गिरा दिया); ९२, ७; ९६, १०; ९८, ६; १०२, २० (मेरु पर्वत के सामने जो रमणीय वन सुशोभित है, जहाँ सुन्दर पुष्पों की छटा बिखरी रहती हैं और किन्नरियों के मधुर गीत गूँजते रहते हैं, जहाँ देखने में सुन्दर विशाल जम्बू वृक्ष शोभा पाता है, वहाँ पहुँच कर भी गौतम अपना हाथी धृतराष्ट्र से वापस लेंगे); १६५, ३१; १४. ४, २५ (मेरु पर आकर हिमालय के उत्तर पार्श्व में मरुत्त ने यज्ञार्थ सुवर्ण पात्रों का निर्माण कराया); ४४, १३ (पर्वतानां महामेरुः सर्वेषामग्रजः स्मृतः): ५९, ९; १७. २, २ (महाशैलं मेरुं शिखरिणं वरम्)। तुकी० सुमेरु।

२. मेरु, शाकद्वीप के एक पर्वत का नाम है : ६. ११, १५. २५ (महामेरु)।

मेरुधामन् = शिव (सहस्रनाम)।

मेरुभूत (बहु० °ताः) एक जाति के लोगों का द्योतक है (६. ९, ४८)।

मेरुध्वज, राक्षसराज विरूपाक्ष की राजधानी का नाम है (१२. १७०, १९; १७२, १४।

मेरुसावर्णि, एक ऋषि का नाम है। इन्होंने हिमालय पर्वत पर युधिष्ठिर को धर्म और ज्ञान का उपदेश दिया था : २. ७८, १४; १३. १५०, ४४।

मेष, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६४)।

मेषहृत्, गरुड के पुत्र, एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, १२)।

१. मैत्र (वि०), एक मुहूर्त का द्योतक है : ५. ८३, ६; ९. ३५, १४ (मैत्रनक्षत्रयोगेन); १३. ८५, ११३ (रौद्रं लोहितमित्याहुर्लोहितात्कनकं स्मृतम्। तन्मैत्रमिति विज्ञेयं धूमाच्च वसवः स्मृताः)।

२. मैत्र : १२. ६०, १२ (मैत्रो ब्राह्मण उच्यते); २३८, १३; १३. २७, १२ (मैत्रो ब्राह्मण उच्यते); १४१, ६६ मैत्र एष स्मृतो द्विजः)।

मैत्रायण : ३. २१३, ३४; १२. १६०, २७ (मैत्रायणगतिश्चरेत्); १८९, १३; २७८, ५ (मैत्रायणगतश्चरेत्); ३२९, १८।

१. मैत्रावरुणि (मैत्र और वरुण के पुत्र) = अगस्त्यः ३. १०२, १४; १०४, १७; १०५, ३; १२. ३४२, ५१; १३. ९१, २९; १००, १५।

२. मैत्रावरुणि = वसिष्ठ : १. १७८, ९; ९. ४२, २९; १२. ३०२, ९।

मैत्री (मूर्तिमान मैत्री) : ३. ३, ६९

मैत्रेय, एक अथवा अधिक ऋषियों का नाम है : २. ४, १० (युधिष्ठिर की सेवा में); ३. १०, ४. ७. ११. १८. १९. २८. ३१. ३२. ३५-३९ (इन्होंने दुर्योधन को शाप दिया कि उसकी जाँघ भीमसेन तोड़ देंगे); ९. ६०, १८ (मैत्रेयेणाभिशप्तश्च पूर्वमेव महर्षिणा। ऊरू ते भेत्स्यते भीमो गदयेति परंतप ॥); १२. ४७, ६ (भीष्म को घेर कर खड़े ऋषियों में ये भी थे); १३, १२०, २-४. ६; १२१, १-८; १२२, १. १६. १९. २० (व्यास के साथ इनका संवाद)।

२. मैत्रेय = सूर्य (३. ३. २७)।

मैत्रेय-भिक्षा – "एक समय की बात है, श्रीकृष्णद्वैपायन व्यास विचरण करते हुये वाराणसी आये और मुनियों के साथ बैठे हुये मुनिवर मैत्रेय जी के पास उपस्थित हुये। मैत्रेयजी ने व्यासजी को पहचान कर उनका पूजन किया और उन्हें उत्तम अन्न भोजन कराया। रुचिकर भोजन करके व्यासजी सन्तुष्ट हुये और जब वहाँ से चलने लगे तब मुस्कराये। मैत्रेयजी ने व्यास जी से इस प्रकार मुस्कराने का कारण पूछते हुये कहा : 'मैं अपने में तपस्याजनित सौभाग्य देखता हूँ और आप में यहाँ सहज महाभाग्य प्रतिष्ठित हैं क्योंकि आप मेरे गुरुपुत्र हैं। जीवात्मा और परमात्मा में बहुत थोड़ा अन्तर मानता हूँ। परमात्मा का सभी पदार्थों के साथ सम्बन्ध हैं, इस लिये मैं उसे जीवात्मा की अपेक्षा श्रेष्ठ भी मानता हूँ, किन्तु आप जीवात्मा को परमात्मा से अभिन्न जाननेवाले हैं, फिर आपका आचारण इस मान्यता से भिन्न हो रहा है; क्योंकि आपको विस्मय हुआ है और मुझे नहीं हुआ है।' व्यासजी ने बताया : 'अतिथि को अत्यन्त गौरव प्रदान करते हुये उसकी इच्छा के अनुसार सत्कार करना 'अतिच्छन्द' कहलाता है, और वाणी द्वारा अतिथि के गौरव का प्रकाशन 'अतिवाद' कहते हैं। मुझे यहाँ अतिच्छन्द और अतिवाद दोनों प्राप्त हुआ है, इसलिये मेरा यह विस्मय और हर्षोल्लास प्रकट हुआ है। शास्त्रविधि के अनुसार दिया हुआ थोड़ा सा भी दान महान् फल देता है। मैं भूखा और प्यासा था। मुझे अन्न-जल देकर तृप्त करने के पुण्य से बड़े-बड़े लोकों पर तुमने विजय प्राप्त कर लिया है। मैं तुम्हारी तपस्या से सन्तुष्ट हुआ हूँ और तुम्हारा दर्शन भी पुण्य का ही दर्शन है।' तदनन्तर व्यास जी ने दान के महत्व पर विस्तार से प्रकाश डाला। (१३. १२०)।"

" मैत्रेय ने व्यास के वचनों की पुष्टि करते हुये विद्वान एवं सदाचारी ब्राह्मण को अन्नदान की प्रशंसा की। मैत्रेय जी ने कहा कि ब्राह्मणत्व के तीन कारण माने गये हैं : तपस्या, शास्त्रज्ञान और विशुद्ध कुल में जन्म। ऐसे ब्राह्मण के तृप्त होने पर देवता और पितर भी तृप्त हो जाते हैं। (१३. (१२१)। व्यास जी ने मैत्रेय से तप की प्रशंसा करते हुये गृहस्थ के उत्तम कर्तव्य का निर्देश दिया (१३. १२२)।"

मैत्रेय-शाप – "व्यास जी ने धृतराष्ट्र को बताया कि महर्षि मैत्रेय दुर्योधन को यथायोग्य शिक्षा देंगे। अतः मैत्रेय जो कुछ कहें उसीके अनुसार आचरण करना चाहिये। यदि बताये हुये कार्य की अवहेलना की गई तो वे कुपित होकर दुर्योधन को शाप दे देंगे। ऐसा कहकर व्यास जी के चले जाने पर मैत्रेय जी धृतराष्ट्र के पास आये। धृतराष्ट्र द्वारा सत्कृत होने के पश्चात मैत्रेय जी ने बताया : ' मैं तीर्थयात्रा के प्रसंग में भ्रमण करता हुआ कुरु-जाङ्गल देश में चला आया हूँ। काम्यकवन में युधिष्ठिर से भी मिल चुका

हूँ।' इस प्रकार अपने यात्रा का वृत्तान्त बताने के पश्चात मैत्रेय जी ने दुर्योधन से कहा : 'तुम वक्ताओं में श्रेष्ठ हो। मैं तुम्हारे हित की बात बता रहा हूँ। तुम पाण्डवों से द्रोह न करो। पाण्डव शूरवीर, पराक्रमी और युद्धकुशल हैं। भीमसेन ने किर्मीर जैसे बलशाली राक्षस का वध कर दिया है। राजा जरासन्ध का भी उन्होंने वध कर दिया है। ऐसे महापराक्रमी पाण्डवों के साथ तुम्हें मिलकर ही रहना चाहिये।' मैत्रेय जी जब इस प्रकार कह रहे थे तब दुर्योधन ने मुस्करा कर अपनी जाँघ को ठोंका और पैरों से पृथिवी को कुरेदने लगा। मैत्रेय जी ने देखा कि दुर्योधन उनकी उपेक्षा कर रहा है। यह देखकर मैत्रेय जी क्रुद्ध हो उठे और दुर्योधन को इस प्रकार शाप दे दिया : 'तेरे द्रोह के कारण बड़ा भारी युद्ध छिड़ेगा जिसमें बलवान् भीम गदा के प्रहार से तेरी जाँघ तोड़ डालेंगे।' धृतराष्ट्र ने मुनि मैत्रेय को शान्त किया और उनसे शाप का निराकरण करने का निवेदन किया। तब मैत्रेय जी ने कहा कि यदि दुर्योधन पाण्डवों के साथ सन्धि कर लेगा तो उनका शाप समाप्त हो जायगा। धृतराष्ट्र ने मैत्रेय से यह बताने के लिये कहा कि भीम ने किर्मीर का वध किस प्रकार किया, किन्तु क्रुद्ध मैत्रेय वहाँ से यह कर चले गये कि विदुर जी उन्हें किर्मीर-वध की कथा बतायेंगे। (३. १०)।"

मैथिल = जनक (देखिये वस्था०)।

मैथिली = सीता (देखिये वस्था०)।

मैनसिल, लालरंग की एक पर्वतीय धातु का नाम है (३. १५८, ९४)।

१. मैनाक एक पर्वत का नाम है : १. २१, १५; २. ३, २ (उत्तरेण तु कैलासं मैनाकं पर्वतं प्रति). ९ (उत्तरेण कैलासान्मैनाकं पर्वतं प्रति, यहीं हिरण्यश्रृङ्ग और बिन्दुसरोवर स्थित हैं); ३. ११, १५; ८९, ११ (पश्चिम में); १३४. ५; १३५, ३; १३९, १ (पाण्डव इसके पास से गये); १४५, ४४ (बिन्दुसर और हिरण्यश्रृङ्ग के निकट स्थित); १५०, १३; १५८, १७ (पाण्डवों ने भी इसे देखा); ६. ६, ४२ (हिरण्यश्रृङ्ग और बिन्दुसर इसके निकट स्थित हैं); ४५, ६७; ४७, १९; ९२, २६; ७. ३, ३ (महेन्द्रेणेव मैनाकमसह्यं भुवि पातितम्); ४७, १५; ९२, १७; ९९, २८; १२३, २; १७५, ६३; ९. १९, ४५ (न चचाल ततः स्थानान्मैनाक इव पर्वतः); १३. २५, ५९ (मैनाके पर्वते स्नात्वा तथा सन्ध्यामुपास्य च। कामं जित्वा च वै मासं सर्वयज्ञफलं लभेत्)।

२. मैनाक, क्रौञ्चद्वीप के एक पर्वत का नाम है : ६. १२, १८. १९।

मैन्द, एक वानरराज का नाम है : २. ३१, १८ (इसे दक्षिण दिग्विजय के समय किष्किन्धा में सहदेव ने पराजित किया था); ३. २८०, २३ (यह सुग्रीव का मन्त्री था); २८३, १९ (श्रीराम की सेना में यह भी था); २८९, ४. १३; २९०, ३।

मैरेयक (बहु०) एक जाति के लोगों का नाम है (१३. ४८, २०)।

१. मोक्षद्वार = सूर्य (३. ३, २६)।

२. मोक्षद्वार = शिव (सहस्रनाम)।

१. मोक्षधर्म= मोक्षधर्मपर्वन् : १. २, ७६. ३२८।

२. मोक्षधर्म : ९. ५०, ५५. ६३; १२. ५६, ४; १५३, ६२; १७५, ४; २२९, २; २३९, १; २७७, ४; २७८, २; २९८, १९; २९९, ४; ३०५, ९; ३१४, १५; ३२०, २५. ६०. १८३; ३२४, २७; ३२५, २. ५; ३२६, १०; ३३३, ४२; ३४०, ९. ७४. १०४; ३५२, १; १३. १४१, ९१; १४. २, १७; १६, १७; १९, ३८. ५४; ३५, ११ (मोक्षधर्मार्थकुशलो भवांल्लोकेषु गीयते)।

मोक्षधर्मपर्वन्, महाभारत के ९०वें अवान्तर पर्व का नाम है जिसमें मुख्यतः मोक्ष प्राप्त करने से सम्बद्ध उपदेश निहित हैं। युधिष्ठिर ने भीष्म से आश्रमधर्म विषयक उपदेश देने का निवेदन किया। भीष्म ने कहा : धर्म के अनेक द्वार हैं। संसार में कोई ऐसी क्रिया नहीं है जिसका कोई फल न हो। यह जगत अनेक दोषों से परिपूर्ण है; ऐसा निश्चय करके बुद्धिमान पुरुष को अपने मोक्ष के लिये प्रयत्न करना चाहिये। युधिष्ठिर ने यह जानना चाहा कि धननाश या परिजनों की मृत्यु से उत्पन्न शोक का मनुष्य किस प्रकार निवारण कर सकता है। भीष्म ने कहा : जब धन नष्ट हो जाय, अथवा स्त्री-पुत्र या पिता की मृत्यु हो जाय तो शोक को दूर करने के लिये शम-दम आदि साधनों का अनुष्ठान करे। इस विषय में भीष्म ने पुत्रशोक से दुखी राजा सेनजित और एक ब्राह्मण के संवाद का दृष्टान्त देते हुये कहा कि सेनजित को सान्त्वना देते हुये उस ब्राह्मण ने बताया : बुद्धि का आश्रय लेकर कामनाओं के त्यागरूपी गुण से युक्त हुआ मनुष्य सुख से रहता है। इसलिये सब प्रकार के भोगों से विरक्ति द्वारा ही सुख की प्राप्ति होती है। इस प्रसङ्ग में ब्राह्मण ने पिङ्गला नामक वेश्या की गाथा का भी उल्लेख किया। वह पिङ्गला अपने प्रियतम से मिलने के लिये एक स्थान पर बहुत देर तक प्रतीक्षा करती रही किन्तु उसका प्रियतम उसके पास नहीं आया। तब उसने घोर दुःख का अनुभव करने के विपरीत भी शान्त रह कर इस प्रकार विचार किया : 'अब मैं मोहनिद्रा से जाग गई हूँ, अपनी सम्पूर्ण कामनाओं का त्याग कर चुकी हूँ। अतः वह धूर्त, नरकरूपी मनुष्य काम का रूप धारण करके मुझे धोखा नहीं दे सकता। आज की निराशा ने मेरे ज्ञानचक्षु खोल दिये हैं। वास्तव में जिसे किसी प्रकार की आशा नहीं है, वही सुख की नींद सोता है। आशा का अभाव ही परम सुख है।' भीष्म जी ने बताया कि ब्राह्मण के कहे हुये इन पूर्वोक्त तथा अन्य युक्तियुक्त वचनों से राजा सेनजित का चित्त स्थिर हो गया और वे प्रसन्नतापूर्वक रहने लगे। (१२. १७४)।

"युधिष्ठिर ने भीष्म से पूछा : समस्त भूतों का संहारक यह काल निरन्तर व्यतीत होता जा रहा है; ऐसी अवस्था में मनुष्य क्या करने से कल्याण का भागी हो सकता है? भीष्म ने इस विषय में एक वेद-शास्त्रों में पारङ्गत ब्राह्मण तथा उसके एक मोक्ष, धर्म, और अर्थ में कुशल तथा लोक तत्त्व के ज्ञाता मेधावी नामक पुत्र के बीच संवाद के प्राचीन इतिहास का उदाहरण देकर बताया कि उस मेधावी नामक पुत्र ने अपने पिता को विभिन्न प्रकार के तर्कों से समझाया कि परमात्मा के साथ एकता तथा समता, सत्यभाषण, सदाचार, ब्रह्मनिष्ठा, दण्ड का परित्याग, सरलता तथा सब प्रकार के सकाम कर्मों से उपरति, इनके समान ब्राह्मण के लिये कोई दूसरा धन नहीं है। भीष्म ने कहा कि अपने पुत्र के वचनों को सुनकर ब्राह्मण पिता ने जैसे सत्यधर्म का अनुष्ठान किया था वही अनुकरणीय व्यवहार है (१२. १७५)।

"युधिष्ठिर ने पूछा कि धनी और निर्धन दोनों स्वतन्त्रतापूर्वक व्यवहार करते हैं; फिर उन्हें किस रूप में सुख और दुःख की प्राप्ति होती है। भीष्म ने इस सन्दर्भ में शम्पाक नामक एक जीवनमुक्त व्यक्ति की प्राचीन कथा का उदाहरण दिया। प्राचीन काल में अपनी दुष्टा स्त्री, अपने फटे-पुराने वस्त्रों, एवं भूख के कारण अत्यन्त कष्ट पाने वाले एक त्यागी ब्राह्मण ने कहा था कि इस संसार में जो भी मनुष्य उत्पन्न होता है, उसे जन्म से ही नाना प्रकार के सुख-दुःख प्राप्त होने लगते हैं। परन्तु जो मनुष्य धन को त्याग कर उसकी आसक्ति से मुक्त हो गया है और मन में किसी प्रकारकी कामना नहीं रखता, उस पर न अग्नि का वश चलता है और न अनिष्टकारी ग्रहों का; न मृत्यु उसको कोई हानि पहुँचा सकती है और न चोर-डाकू ही उसका कुछ बिगाड़ सकते हैं। मनुष्य त्याग किये बिना सुख नहीं पाता; त्याग किये बिना परमात्मा को नहीं प्राप्त कर सकता; और त्याग के बिना निर्भय होकर निद्रा का भी आनन्द नहीं ले सकता। भीष्म ने बताया कि इस प्रकार पूर्वकाल में शम्पाक नामक ब्राह्मण ने हस्तिनापुर में त्याग की महिमा का वर्णन किया था (१२. १७६)।

"युधिष्ठिर के यह पूछने पर कि एक निर्धन व्यक्ति को सुख की प्राप्ति किस प्रकार हो सकती है, भीष्म ने सुखी मनुष्य की व्याख्या करने के बाद प्राचीन काल में एक भोगों से विरक्त मङ्कि नामक मुनि के उद्गारों का उल्लेख करते हुये कहा : मङ्कि ने धनप्राप्ति की अनेक चेष्टायें कीं किन्तु अन्ततः उन्होंने अनुभव किया कि वे धनोपार्जन में कभी सफल नहीं हो

सकते। अन्त में जब बहुत थोड़ा धन शेष रह गया तब मङ्कि ने उससे दो बछड़े खरीदे। एक दिन उन दोनों बछड़ों को परस्पर जोत कर वे हल चलाने की शिक्षा देने के लिये जा रहे थे। जब वे दोनों बछड़े गाँव से बाहर निकले तो बैठे हुये एक ऊँट को बीच में करके सहसा दौड़ पड़े। उस समय ऊँट रोष में भर कर खड़ा हो गया और उन दोनों बछड़ों को ऊपर लटकाये हुये बड़े जोर से भागने लगा। बलपूर्वक अपहरण करनेवाले उस ऊँट के द्वारा उन दोनों बछड़ों को अपहृत होते और मरते देखकर मङ्कि ने निराशा भरे स्वर में कहा कि मनुष्य कैसा भी चतुर क्यों न हो, जो उसके भाग्य में नहीं उस धन को वह प्रयत्न करके भी नहीं प्राप्त कर सकता। उन्होंने शुक के इस कथन का स्मरण किया : 'जो मनुष्य अपनी समस्त कामनाओं को प्राप्त कर लेता है, और जो अपनी समस्त कामनाओं का त्याग कर देता है— इन दोनों के कार्यों में समस्त कामनाओं को प्राप्त करने की अपेक्षा उनका त्याग ही श्रेष्ठ है। भीष्म ने बताया कि इसी बुद्धि का आश्रय लेकर मङ्कि धन और भोगों से विरक्त हो गये और समस्तकामनाओं का परित्याग करके उन्होंने परमानन्दस्वरूप परब्रह्म को प्राप्त कर लिया (१२. १७७)।

"भीष्म ने बताया कि इसी विषय में शान्तभाव को प्राप्त हुये विदेहराज जनक के उद्गारों के प्राचीन इतिहास का भी उदाहरण दिया जाता है। जनक ने कहा था : 'मेरे पास अनन्त धन-वैभव है, फिर भी मेरा कुछ नहीं है। इस मिथिलापुरी में आग लग जाय तो भी मेरा कुछ नहीं जलता।' भीष्म ने इसी प्रसङ्ग में नाहुष (अर्थात ययाति) और महर्षि बोध्य के वैराग्य विषयक संवाद का भी उल्लेख किया। बोध्य के छः गुरु (पिङ्गला, कुरर पक्षी, आदि) थे। (१२. १७८)।

"युधिष्ठिर ने यह जानना चाहा कि किस प्रकार के आचार को अपना कर मनुष्य शोकरहित हो कर इस पृथिवी पर विचरण कर सकता है। भीष्म ने इस विषय में प्रह्लाद और अजगर वृत्ति से रहनेवाले एक मुनि के संवादरूप प्राचीन इतिहास का दृष्टान्त दिया (१२. १७९)।

"युधिष्ठिर ने यह जानना चाहा कि मनुष्य को बन्धुजन, कर्म, धन अथवा बुद्धि — इनमें से किसका आश्रय लेना चाहिये। भीष्म ने बताया कि प्राणियों का प्रधान आश्रय बुद्धि है। सत्पुरुषों के मत से बुद्धि ही स्वर्ग है। राजा बलि, प्रह्लाद, नमुचि और मङ्कि ने बुद्धि से ही अपना-अपना अर्थ सिद्ध किया था। इस विषय में इन्द्र और कश्यप के संवादरूप प्राचीन इतिहास का भीष्म ने उदाहरण देते हुये बताया कि पूर्वकाल में एक धनी वैश्य ने कठोर व्रत का पालन करनेवाले तपस्वी ऋषिकुमार कश्यप को अपने रथ से धक्का देकर गिरा दिया। तब पीड़ा से कराह रहे उस ऋषिकुमार ने यह विचार करके कि संसार में निर्धन मनुष्य का जीवन व्यर्थ है, अपने जीवन का अन्त कर देने का निश्चय किया। इस प्रकार मरने की इच्छा लेकर बैठे, मूर्च्छा से अचेत हो कुछ न बोलते और मन ही मन धन के लिये लुब्ध ब्राह्मणकुमार काश्यप के सामने एक शृगाल के रूप में इन्द्र ने आकर मनुष्य योनि और उसमें भी ब्राह्मणत्व प्राप्त करने के महत्त्व पर प्रकाश डाला। इन्द्र ने काश्यप से कहा : 'आप तो मनुष्य हैं, ब्राह्मण हैं और श्रोत्रिय भी। अतः आप को मरने के लिये उद्यत होना उचित नहीं है। आपका शरीर निर्भय और निरोग है; आपके समस्त अङ्ग ठीक हैं, इसलिये आप धर्मपालन के लिये उठ खड़े हों। आप सावधान हो कर स्वाध्याय, अग्निहोत्र, सत्य, इन्द्रियसंयम और दानधर्म का पालन कीजिये। पूर्वजन्म में मैं नास्तिक, सब पर सन्देह करनेवाला तथा मूर्ख होकर भी अपने को पण्डित माननेवाला था। यह शृगाल योनि उसी कुकर्म का फल है। अब मैं सैकड़ों दिन-रातों तक साधन करके भी क्या कभी वह उपाय कर सकता हूँ जिससे मैं पुनः मनुष्य योनि प्राप्त कर सकूँ।' शृगाल की ज्ञानपूर्ण बातें सुन कर काश्यप ने ज्ञान-दृष्टि से देखा तो उन्हें शचीपति इन्द्र के दर्शन हुये। तदनन्तर उन्होंने इन्द्रदेव का पूजन किया और उनकी आज्ञा लेकर पुनः अपने घर लौट गये। (१२. १८०)।

युधिष्ठिर ने यह जानना चाहा कि दान, यज्ञ, तप और गुरुशुश्रूषा आदि शुभ कर्मों तथा अन्यान्य अशुभ कर्मों का क्या फल होता है। भीष्म ने तब अन्यान्य शुभाशुभ कर्मों के परिणाम पर प्रकाश डालते हुये बताया कि काम, क्रोध आदि दोषों से युक्त बुद्धि की प्रेरणा से मन पापकर्म में प्रवृत्त होता है। इस प्रकार मनुष्य अपने ही कार्यों द्वारा पाप करके दुःखमय लोकमें गिराया जाता है। इसके विपरीत जो श्रद्धालु, जितेन्द्रिय, धनसम्पन्न तथा शुभकर्मपरायण होते हैं, वे उत्सव से अधिक उत्सव को, स्वर्ग से अधिक स्वर्ग को, तथा सुख से अधिक सुख को प्राप्त करते हैं। (१२. १८१)।

"युधिष्ठिर के पूछने पर भीष्म जी ने इस सम्पूर्ण स्थावर-जङ्गम जगत, समुद्र, आकाश, पर्वत, भूमि, अग्नि और वायु सहित इस संसार की उत्पत्ति और विभिन्न तत्त्वों का वर्णन करते हुये भरद्वाज और भृगु के संवाद का उल्लेख किया (१२. १८२-१९२)। तुकी० भृगु-भरद्वाज-संवाद भी।

"भीष्म ने शिष्टाचार का फलसहित वर्णन करते हुये पाप को छिपाने से हानि और धर्म की प्रशंसा की। भीष्म ने कहा कि धर्म ही मनुष्यों की योनि है। वही स्वर्ग में देवताओं का अमृत है। धर्मात्मा मनुष्य मृत्यु के पश्चात् धर्म के ही बल से सदा सुख भोगते हैं। (१२. १९३)।

"युधिष्ठिर के पूछने पर भीष्म ने अध्यात्मज्ञान का निरूपण करते हुये तीनों गुणों और क्षेत्रज्ञ आदि की प्रकृति पर विस्तार से प्रकाश डाला। उन्होंने बताया कि जो काम, क्रोध आदि दुर्व्यसनों से आतुर रहता है उसके निन्दनीय कर्म उसे पशु-पक्षी आदि योनियों में जन्म दिलाते हैं। जो विवेक में कुशल हैं और सत्पुरुषों को प्राप्त होनेवाले दो प्रकार के पद को अर्थात् सगुण उपासना और निर्गुण उपासना को जानते हैं वे कभी शोक नहीं करते (१२. १९४)।

ध्यानयोग का वर्णन करते हुये भीष्म ने बताया कि यह आलम्बन के भेद से चार प्रकार का होता है। मनोनिग्रहपूर्वक ध्यान करनेवाले योगी को जो दिव्य सुख प्राप्त होता है, वह मनुष्य को किसी दूसरे पुरुषार्थ या दैवयोग से भी नहीं मिल सकता। उस ध्यानजनित सुख से सम्पन्न होकर योगी ध्यानयोग में अधिकाधिक अनुरक्त हो जाता है और अयन्त दुःखशोक से रहित मोक्ष प्राप्त कर लेता है। (१२. १९५)।

"जपयोग के विषय में युधिष्ठिर के प्रश्नके उत्तर में भीष्म ने प्राचीन काल के यम, काल और ब्राह्मण के बीच हुये संवाद का वर्णन करते हुये जप और ध्यान की महिमा तथा उसके फल का विस्तार से वर्णन किया (१२. १९६) भीष्म ने यह भी बताया कि जापक में दोष आने पर उसे नरक की प्राप्ति होती है (१२. १९७)। तदनन्तर भीष्म जी ने बताया कि परमधाम के अधिकारी जापक के लिये देवलोक भी नरक-तुल्य है। जो आत्मकैवल्य को प्राप्त हो चुका है वही मनुष्य परमधाम में जाकर शोकरहित हो जाता है। उस परमधाम का स्वरूप ऐसा है कि नाना प्रकार के सुख भोगों से सम्पन्न अन्यान्य लोक भी नरक जैसे प्रतीत होने हैं। (१२. १९८)।

"जापक को सावित्री का वरदान, उसके पास धर्म, यम, और काल आदि का आगमन, राजा इक्ष्वाकु और जापक ब्राह्मण का संवाद, सत्य की महिमा तथा जापक की परम गति, आदि का भीष्म ने वर्णन किया (१२. १९९-२००)

"युधिष्ठिर ने भीष्म से ज्ञानयोग और वेदों तथा वेदोक्त नियमों आदि के फल के सम्बन्ध में पूछा। भीष्म ने इस सम्बन्ध में प्रजापति मनु तथा महर्षि बृहस्पति के संवादरूप प्राचीन इतिहास का उदाहरण देते हुये बताया कि ब्रह्मा जी ने मन और कर्म, दोनों के साथ ही प्रजा की सृष्टि की है। कर्म दो प्रकार का होता है : एक सनातन और दूसरा विनाशशील। मन के द्वारा किये जानेवाले फल की इच्छा का त्याग ही कर्मों को सनातन बनाने और उनके द्वारा परब्रह्म की प्राप्ति कराने में कारण है। वेदों के अनुसार कर्म त्रिगुणात्मक होते हैं। वे सात्विक, राजस और तामस भेद से तीन प्रकार के होते हैं। इसलिये मन्त्र भी इसी के अनुरूप तीन प्रकार के होते हैं क्योंकि मन्त्रोच्चारण पूर्वक ही कर्म का अनुष्ठान किया जाता है। इसी प्रकार कर्मों की विधि, विधेय, मन के द्वारा अभीष्ट फल की सिद्धि और उसका भोक्ता देहाभिमानी जीव—ये सभी तीन-तीन प्रकार के होते हैं। जीव शरीर से जो-जो अशुभ या शुभ कर्म करता है, शरीर से युक्त हुआ ही

उसके फलों को भोगता है, क्योंकि शरीर ही सुख और दुःख भोगने का स्थान है। इसके बाद भी भीष्म ने आत्मतत्त्व और बुद्धि आदि प्राकृत पदार्थों का विवेचनक्रिया तथा उसके साक्षात्कार का उपाय बताया (१२. २०१-२०२)। तदनन्तर भीष्म ने शरीर, इन्द्रिय और मन-बुद्धि से अतिरिक्त आत्मा की सत्ता का प्रतिपादन (१२. २०३); आत्मा एवं परमात्मा के साक्षात्कार का उपाय और महत्त्व (१२. २०४); परमब्रह्म की प्राप्ति का उपाय (१२. २०५); और परमतत्व का निरूपण करते हुये मनु बृहस्पति-संवाद का उपसंहार किया (१२. २०६)।

"युधिष्ठिर ने नारायण, हृषिकेश, गोविन्द और केशव आदि नामों से विख्यात सर्वव्यापी और सम्पूर्ण भूतों की उत्पत्ति तथा प्रलय के स्थान भगवान श्रीकृष्ण के स्वरूप का तात्विक विवेचन करने का अनुरोध किया भीष्म ने इस विषय में जमदग्निनन्दन परशुराम, देवर्षि नारद और श्रीकृष्ण द्वैपायन व्यास से जो कुछ सुना था उसके आधार पर नारायण के स्वरूप का विवेचन करते हुये कहा : भगवान् श्रीकृष्ण सबके ईश्वर और प्रभु हैं। सम्पूर्ण भूतों के आत्मा भगवान् पुरुषोत्तम ने आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथिवी — इन पाँच महाभूतों की रचना की है। पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण ने इस प्रकार पृथिवी आदि की सृष्टि कर के जल को ही अपना निवासस्थान बनाया। उस जल में शयन करते हुये उन्होंने सम्पूर्ण प्राणियों के अग्रज तथा आश्रय संकर्षण को उत्पन्न किया। उन संकर्षण के बाद श्रीहरि की नाभि से एक कमल प्रकट हुआ जिससे पितामह ब्रह्मा उत्पन्न हुये। ब्रह्मा के बाद मधु नामक असुर प्रकट हुआ जिसे ब्रह्माजी के हित के लिये भगवान विष्णु ने स्वयं ही मार डाला। मधुवध करने से ही श्रीकृष्ण मधुसूदन कहलाये। तदनन्तर ब्रह्माजी ने सात मानस पुत्र उत्पन्न किये। इन पुत्रों में सबसे ज्येष्ठ मरीचि थे जिन्होंने कश्यप नामक पुत्र उत्पन्न किया। ब्रह्माजी ने अपने अंगूठे से दक्ष को उत्पन्न किया जो मरीचि से भी बड़े थे और इस कारण प्रजापति बने। पहले दक्ष की तेरह कन्यायें हुईं जिन सब के पति कश्यप हुये। इसके बाद दक्ष ने पुनः दस कन्याये उत्पन्न कीं जिन सब का धर्म के साथ विवाह हुआ। धर्म के रुद्र, साध्य, मरुद्गण आदि अनेक पुत्र हुये। इसके बाद दक्ष की सत्ताइस कन्यायें और हुईं। सोम इन कन्याओं के पति हुये। इन कन्याओं के अतिरिक्त भी दक्ष की अनेक कन्यायें हुईं जिनसे गन्धर्व, अश्व, पशु, पक्षी, मत्स्य उद्भिज और वनस्पतियाँ आदि उत्पन्न हुईं। श्रीमधुसूदन ने दिन-रात, ऋतु के अनुसार काल, पूर्वाह्न तथा अपराह्न आदि काल विभाग की व्यवस्था की। तदनन्तर उन्होंने अपने मुख से सैकड़ों श्रेष्ठ ब्राह्मणों, दोनों भुजाओं से सैकड़ों क्षत्रियों, जाँघों से सैकड़ों वैश्यों दोनों पैरों से सैकड़ों शूद्रों को उत्पन्न किया। इस प्रकार श्रीहरि ने चारों वर्णों को उत्पन्न करके स्वयं ही धाता को सम्पूर्ण भूतों का अध्यक्ष बनाया जो वेद विद्या को धारण करनेवाले ब्रह्मा हुये। फिर श्रीहरि ने भूतों और मातृगणों के अध्यक्ष विरूपाक्ष की रचना की। पापियों को दण्ड देनेवाले यम और धनाध्यक्ष कुबेर को भी उन्होंने ही उत्पन्न किया। पहले मनुष्य इच्छानुसार जितने दिन चाहते जीवित रहते थे। फिर त्रेतायुग आने पर स्पर्श करने मात्र से, सन्तान उत्पन्न होने लगी। द्वापरयुग में प्रजा के मन में मैथुन धर्म का सूत्रपात हुआ और कलियुग में वही चलता रहा। दक्षिण भारत में जन्म लेनेवाले सभी अन्ध्र, पुलिन्द, मद्र आदि म्लेच्छ हैं। उत्तर में भी कम्बोज, किरात आदि म्लेच्छ हैं। इस प्रकार महात्मा श्रीकृष्ण ने इस लोक को उत्पन्न किया। वे श्रीकृष्ण तपस्यारूप ही हैं। उनका ही आश्रय लेकर इन्द्र, देवगण, तथा महर्षि आदि अपने-अपने पदों पर प्रतिष्ठित रहते हैं। देवर्षि नारदजी ने भी देखा है कि भगवान् श्रीहरि ही सम्पूर्ण जगत् के कारण हैं। वे ही जगत के स्रष्टा, संहारक और समस्त कारणों के भी कारण हैं। जो भगवान् विष्णु की आराधना करते हैं वे अत्यन्त दुर्लभ मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं। इस प्रकार ये सत्यपराक्रमी कमलनयन महाबाहु केशव अचिन्त्य परमेश्वर हैं। इन्हें केवल मनुष्य नहीं मानना चाहिये। (१२. २०७)।

"प्रजापतियों और महर्षियों आदि के वंशादि का वर्णन करते हुये भीष्म ने बताया : एकमात्र ब्रह्मा सबके आदि हैं। उनके सात मानस पुत्र हुये जिनके नाम मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु और वसिष्ठ हैं। अत्रिकुल में प्राचीनबर्हि से प्राचेतस नामक दस प्रजापति उत्पन्न हुये। उन दसों के एकमात्र पुत्र दक्षके नाम से प्रसिद्ध हैं। मरीचि के पुत्र कश्यप, और अत्रि के पुत्र सोम हुये। अर्यमा और उनके सभी पुत्र प्रदेश तथा प्रभावन कहे गये हैं। शशबिन्दु के दस सहस्र स्त्रियाँ थीं जिनमें से प्रत्येक के गर्भ से एक-एक सहस्र पुत्र उत्पन्न हुये। इस प्रकार उनके एक करोड़ पुत्र थे। प्राचीन-काल के ब्राह्मण आधिकांश प्रजा की उत्पत्ति शशबिन्दु से ही बताते हैं। वही कृष्णवंश का भी उत्पादक हुआ। भग आदि बारह आदित्य कश्यप और अदिति के पुत्र हैं। अश्विनीकुमार महात्मा सूर्य के पुत्र हैं। अजैकपाद आदि ग्यारह रुद्र हैं। वसुगणों की संख्या आठ है। इस प्रकार ये देवता प्रजापति मनु की ही सन्तान हैं। देवताओं में एक वर्ग सुन्दर शील-स्वभाव वाला और अक्षय यौवन से सम्पन्न है। दूसरा वर्ग सिद्ध और साध्यों का है। आदित्यगण क्षत्रिय और मरुद्गण वैश्य माने जाते हैं। अश्विनीकुमारों को शूद्र कहा जाता है। अङ्गिरा गोत्रवाले सम्पूर्ण देवता ब्राह्मण हैं। यवक्रीत आदि अङ्गिरा के पुत्र हैं। तदनन्तर भीष्मजी ने प्रत्येक दिशा में निवास करनेवाले महर्षियों के नामो का उल्लेख किया (१२. २०८)।

युधिष्ठिर के पूछने पर भीष्मजी ने भगवान विष्णु द्वारा वराहरूप में प्रकट होकर देवताओं की रक्षा करने, दानवों का विनाश करने, तथा नारदजी को अनुस्मृतिस्तोत्र का उपदेश देने की कथा तथा नारद द्वारा भगवान् की स्तुति करने का वर्णन किया (१२. २०९)। तदनन्तर गुरुशिष्य के संवाद का उल्लेख करते हुए उन्होंने श्रीकृष्ण-सम्बन्धी आध्यात्मतत्त्व का वर्णन किया। (१२. २१०) भीष्मजी द्वारा संसारचक्र और जीवात्मा की स्थिति का वर्णन (१२. २११)। निषिद्ध आचरण के त्याग, सत्व, रज, और तम के कार्य एवं परिणाम का तथा सत्वगुण के सेवन का उपदेश (१२. २१२)। जीवोत्पत्ति का वर्णन करते हुये दोषों और बन्धनों से मुक्त होने के लिये विषयासक्ति के त्याग का उपदेश (१२. २१३)। ब्रह्मचर्य के लाभ तथा वैराग्य से मुक्ति-विषयक उपदेश (१. २१४)। आसक्ति छोड़कर सनातन ब्रह्म की प्राप्ति के लिये प्रयत्न करने का उपदेश (१२. २१५)। स्वप्न और सुषुप्ति अवस्थाओं में मन की स्थिति तथा गुणातीत ब्रह्म की प्राप्ति के उपाय से सम्बद्ध उपदेश (१२. २१६)।

"सच्चिदानन्दघन परमात्मा, दृश्यवर्ग, प्रकृति और पुरुष—इन चारों के ज्ञान से मुक्ति का कथन तथा परमात्माप्राप्ति के अन्य साधनों का वर्णन (१२. २१७)। राजा जनक के दरबार में पञ्चशिख का आगमन और उनके द्वारा नास्तिक मतों के निराकरणपूर्वक शरीर से भिन्न आत्मा की नित्य सत्ता का प्रतिपादन (१२. २१८)। पञ्चशिख द्वारा मोक्षतत्व का विवेचन एवं भगवान विष्णु द्वारा मिथिला-नरेश जनकवंशी जनदेव की परीक्षा और उनके लिये वरप्रदान का वर्णन (१२. २१९)।

"श्वेतकेतु और सुवर्चला का विवाह, दोनों पति-पत्नी का अध्यात्म-विषयक संवाद तथा गार्हस्थ्यधर्म पालन करते हुये परमात्मा को प्राप्त होना एवं दम की महिमा का वर्णन (१२. २२०)।

"व्रत, तप, उपवास, ब्रह्मचर्य तथा अतिथिसेवा आदि का विवेचन तथा यज्ञशिष्ट अन्न का भोजन करनेवाले को परम उत्तम गति की प्राप्ति का कथन (१२. २२१)।

सनत्कुमारजी का ऋषियों को भगवत्स्वरूप का उपदेश देना (१२. २२२)। इन्द्र और बलि का संवाद : इन्द्र के आक्षेपयुक्त वचनों का बलि के द्वारा कठोर प्रत्युत्तर (१२.२२३)। बलि-इन्द्र संवाद : बलि द्वारा काल की प्रबलता का प्रतिपादन करते हुये इन्द्र को फटकारना (१२. २२४)। इन्द्र और लक्ष्मी का संवाद : बलि को त्याग कर आई हुई लक्ष्मी की इन्द्र द्वारा प्रतिष्ठा (१२. २२५)। इन्द्र और नमुचि का संवाद (१२. २२६)। इन्द्र और बलि का संवाद : काल और प्रारब्ध की महिमा का वर्णन (१२. २२७)।

"दैत्यों का त्याग कर लक्ष्मी देवी का इन्द्र के पास आना; तथा किन

श्रेष्ठ गुणों के होने पर लक्ष्मी आती है और किन दुर्गुणों के होने पर वे त्याग कर चली जाती हैं इसका विस्तारपूर्वक वर्णन (१२. २२८)।

"जैगीषव्य का असित देवल को समत्व बुद्धि का उपदेश (१२.२२९)। श्रीकृष्ण और उग्रसेन का संवाद : नारदजी की लोकप्रियता के हेतुभूत गुणों का वर्णन (१२. २३०)। शुकदेवजी का प्रश्न और व्यासजी का उनके प्रश्नों का उत्तर देते हुये काल के स्वरूप का निरूपण करना (१२. २३१)। व्यासजी का शुकदेवजी को सृष्टि के उत्पत्ति, क्रम तथा युगधर्मों का उपदेश (१२. २३२)।

"ब्राह्म प्रलय एवं महाप्रलय का वर्णन (१२. २३३)। ब्राह्मणों का कर्त्तव्य और उन्हें दान देने की महिमा का वर्णन (१२.२३४)। कर्त्तव्यों का प्रतिपादन करते हुये कालरूप नद को पार करने का उपाय बताना (१२. २३५)।

"ध्यान के सहायिक योग, उनके फल और सात प्रकार की धारणाओं का वर्णन; सांख्य एवं योग के अनुसार ज्ञान द्वारा मोक्ष की प्राप्ति (१२. (२३६)। सृष्टि के समस्त कार्यों में बुद्धि के प्रधानता और प्राणियों की श्रेष्ठता के तारतम्य का वर्णन (१२.:२३७)। नाना प्रकार के भूतों की समीक्षापूर्वक कर्मतत्व का विवेचना, युगधर्म का वर्णन एवं काल का महत्व (१२. २३८)।' ज्ञान का साधन एवं उसकी महिमा (१२. २३९)। योग से परमात्मा की प्राप्ति का वर्णन (१२. २४०)। कर्म और ज्ञान का अन्तर तथा ब्रह्म प्राप्ति के उपाय का वर्णन (१२. २४१)।

"आश्रमधर्म की प्रस्तावना करते हुये ब्रह्मचर्य-आश्रम का वर्णन (१२. २४२)। ब्राह्मणों के उपलक्षण से गार्हस्थ्य धर्म का वर्णन (१२. २४३)। वानप्रस्थ और संन्यास आश्रमों के धर्म और उनकी महिमा का वर्णन (१२. २४४)। संन्यासी के आचरण और ज्ञानवान् संन्यासी की प्रशंसा (१२. २४५)। परमात्मा की श्रेष्ठता, उनके दर्शन का उपाय तथा इस ज्ञानमय उपदेश के पात्र का निर्णय (१२. २४६)।

"महाभूतादि तत्वों का वर्णन (१२. २४७)। बुद्धि की श्रेष्ठता और प्रकृति-पुरुष विवेक (१२. २४८)। ज्ञान के साधन तथा ज्ञानी के लक्षण और महिमा (१२. २४९)। परमात्मा की प्राप्ति का साधन, संसाररूप नदी का वर्णन और ज्ञान से ब्रह्मप्राप्ति का कथन (१२. २५०)। ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मण के लक्षण और परब्रह्म की प्राप्ति का उपाय (१२. २५१)। शरीर में पञ्चभूतों के कार्य और गुणों की पहचान (१२. २५२)। स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर से भिन्न जीवात्मा का और परमात्मा का योग के द्वारा साक्षात्कार करने का प्रकार (१२. २५३)। कामरूपी अद्भुत वृक्ष का, उसे काट कर मुक्ति प्राप्त करने के उपाय का और शरीररूपी नगर का वर्णन (१२. २५४)। पञ्चभूतों के तथा मन और बुद्धि के गुणों का विस्तृत वर्णन (१२. २५५)।

"युधिष्ठिर का मृत्युविषयक, प्रश्न; नारद जी का अकम्पन से मृत्यु की उत्पत्ति का प्रसङ्ग सुनाते हुये ब्रह्माजी की रोषाग्नि से प्रजा के दग्ध होने का वर्णन (१२. २५६)। महादेव जी की प्रार्थना से ब्रह्मा जी के द्वारा अपनी रोषाग्नि का उपसंहार तथा मृत्यु की उत्पत्ति की कथा (१२. २५७)। मृत्यु की घोर तपस्या और प्रजापति की आज्ञा से उसका प्राणियों के संहार का कार्य स्वीकार करने का वर्णन (१२. २५८)। धर्माधर्म के स्वरूप का निर्णय (१२. २५९)। युधिष्ठिर द्वारा धर्म की प्रामाणिकता पर सन्देह उपस्थित करना (१२. २६०)।

"जाजलि की घोर तपस्या, उनके सिर पर जटाओं में पक्षियों के घोसला बनाने से उनका अभिमान, और आकाशवाणी की प्रेरणा से उनका तुलाधार वैश्य के पास जाना (१२. २६१)। जाजलि और तुलाधार का धर्मविषयक संवाद (१२. २६२)। जाजलि को तुलाधार का आत्मज्ञानविषयक धर्म का उपदेश (१२. २६३)। जाजलि को पक्षियों का उपदेश (१२. २६४)। राजा विचख्नु के द्वारा अहिंसा-धर्म की प्रशंसा (१२. २६५)।

"महर्षि गौतम और चिरकारी का उपाख्यान, दीर्घकाल तक सोच-विचार कर कार्य करने की प्रशंसा (१२. २६६)। द्युमत्सेन और सत्यवान का संवाद — अहिंसापूर्वक राज्यशासन की श्रेष्ठता का कथन (१२. २६७)। स्यूमरश्मि और कपिल का संवाद, स्यूमरश्मि द्वारा यज्ञ की अवश्यकर्तव्यता का निरूपण (१२. २६८)। प्रवृत्ति और निवृत्ति के विषय में स्यूमरश्मि और कपिल का संवाद (१२. २६९)। इसी संवाद में चारों आश्रमों में उत्तम साधनों के द्वारा ब्रह्म की प्राप्ति का कथन (१२. २७०)। धन और काम-भोगों की अपेक्षा धर्म और तपस्या का उत्कर्ष सूचित करनेवाली ब्राह्मण और कुण्डधार मेघ की कथा (१२. २७१)। यज्ञ में हिंसा की निन्दा और अहिंसा की प्रशंसा (१२. २७२)। धर्म, अधर्म, वैराग्य और मोक्ष के विषय में युधिष्ठिर ने भीष्म से पूछा : मनुष्य पापात्मा कैसे हो जाता है ? वह धर्म का आचरण किस प्रकार करता है ? किस हेतु से उसे वैराग्य प्राप्त होता है ? और किस साधन से वह मोक्ष पाता है ? उनके इन चारों प्रश्नों का भीष्म ने उत्तर देते हुये कहा कि सभी अवस्थाओं में धर्म का ही आचरण करना चाहिये क्योंकि इसी से मोक्ष प्राप्त होता है (१२. २७३)। मोक्ष के साधन का वर्णन (१२. २७४)। जीवात्मा के देहाभिमान से मुक्त होने के विषय में नारद और असित देवल का संवाद (१२. २७५)। तृष्णा के परित्याग के विषय में माण्डव्य मुनि और जनक का संवाद (१२. २७६)। शरीर और संसार की अनित्यता तथा आत्मकल्याण की इच्छा रखनेवाले पुरुष के कर्त्तव्य का निर्देश-पिता–पुत्र संवाद (१२. २७७)। हारीत मुनि के द्वारा प्रतिपादित संन्यासी के स्वभाव, आचरण और धर्म का वर्णन (१२. २७८)। ब्रह्म की प्राप्ति का उपाय तथा उस विषय में वृत्र-शुक्र संवाद (१२. २७९)। वृत्रासुर को सनत्कुमार का आध्यात्मविषयक उपदेश देना और उसकी परमगति, तथा भीष्म द्वारा युधिष्ठिर की शंका का निवारण (१२. २८०)।

"इन्द्र और वृत्रासुर के युद्ध का वर्णन (१२. २८१)। वृत्रासुर का वध और उससे प्रकट हुई ब्रह्महत्या का ब्रह्मा जी के द्वारा चार स्थानों में विभाजन (१२. २८२)।

"शिव द्वारा दक्षयज्ञ का विध्वंस और उनके क्रोध से ज्वर की उत्पत्ति तथा उसके विभिन्न रूप (१२. २८३)। पार्वती के रोष एवं खेद का निवारण करने के लिये भगवान शिव के द्वारा दक्षयज्ञ का विध्वंस, दक्ष द्वारा शिवसहस्रनाम स्तोत्र से स्तुति, स्तुति से प्रसन्न और सन्तुष्ट होकर महादेव जी का दक्ष को वरदान देना; शिवसहस्रनाम स्तोत्र की महिमा (१२. २८४)।

"आध्यात्मज्ञान और उसके फल का वर्णन (१२. २८५)। समङ्ग द्वारा नारद जी से अपनी शोकहीन स्थिति का वर्णन (१२. २८६)। नारद जी द्वारा गालव मुनि को श्रेय का उपदेश (१२. २८७)। अरिष्टनेमि का राजा सगर को वैराग्योत्पादक मोक्षविषयक उपदेश (१२. २८८)। भृगु-पुत्र उशना का चरित्र और उन्हें शुक्र नाम की प्राप्ति (१२. २८९)।

"पराशरगीता का आरम्भ : पराशर मुनि द्वारा राजा जनक को कल्याण की प्राप्ति के साधन का उपदेश (१२. २९०)। कर्मफल की अनिवार्यता तथा पुण्यकर्म से लाभ (१२. २९१)। धर्मोपार्जित धन की श्रेष्ठता, अतिथि-सत्कार का महत्व, पाँच प्रकार के ऋणों से छूटने की विधि, भगवत्स्तवन की महिमा, सदाचार, तथा गुरुजनों की सेवा से महान लाभ (१२. २९२)। शूद्र के लिये सेवावृत्ति की प्रधानता, सत्सङ्ग की महिमा और चारो वर्णों के धर्म पालन का महत्व (१२. २९३)। ब्राह्मण और शूद्र की जीविका, निन्दनीय कर्मों के त्याग की आज्ञा, मनुष्यों में आसुरभाव की उत्पत्ति और भगवान शिव के द्वारा उसका निवारण तथा स्वधर्मानुसार कर्तव्यपालन का आदेश (१२. २९४)। विषयासक्त मनुष्य का पतन, तपोबल की श्रेष्ठता तथा दृढ़तापूर्वक स्वधर्मपालन का आदेश (१२. २९५)। वर्णविशेष की उत्पत्ति का रहस्य, तपोबल से उत्कृष्ट वर्ण की प्राप्ति, विभिन्न वर्णों के विशेष और सामान्य धर्म, सत्कर्म की श्रेष्ठता, तथा हिंसारहित धर्म का वर्णन (१२. २९६)। नाना प्रकार के धर्म और कर्त्तव्यों का उपदेश (१२. २९७)। पराशरगीता का उपसंहार : राजा जनक के विविध प्रश्नों का उत्तर (१२. २९८)।

"हंसगीता : हंसरूपधारी ब्रह्मा का साध्यगणों को उपदेश (१२. २९९)। सांख्य और योग का अन्तर बताते हुये योगमार्ग के स्वरूप, साधन, फल और प्रभाव का वर्णन (१२. ३००)। सांख्ययोग के अनुसार साधन और उसके फल का वर्णन (१२. ३०१)।

वसिष्ठ और करालजनक का संवाद। क्षर और अक्षरतत्व का निरूपण और इनके ज्ञान से मुक्ति (१२. ३०२)। प्रकृति-संसर्ग के कारण जीव का अपने को नाना प्रकार के कर्मों का कर्ता और भोक्ता मानना एवं नाना योनियों में बार-बार जन्म लेना (१२.३०३)। प्रकृति के संसर्ग-दोष से जीव का पतन (१२. ३०४)। क्षर-अक्षर प्रकृति-पुरुष के विषय में राजा जनक की शंका ओर उसका वसिष्ठ द्वारा समाधान (१२.३०५)। योग-सांख्य के स्वरूप का वर्णन तथा आत्मज्ञान से मुक्ति (१२. ३०६)। विद्या-अविद्या, अक्षर-क्षर 'तथा प्रकृति-पुरुष के स्वरूपों का एवं विवेकी के उद्वार का वर्णन (१२. ३०७)। क्षर-अक्षरऔर परमात्म-तत्त्व का वर्णन; जीव के नानात्व और एकत्व का दृष्टान्त; उपदेश के अधिकारी और अनधिकारी का निरूपण, तथा इस ज्ञान की परम्परा को बताते हुये वसिष्ठ-करालजनक संवाद का उपसंहार (१२. ३०८)।

"जनकवंशी वसुमान् को एक मुनि द्वारा धर्म-विषयक उपदेश (१२. ३०९)। याज्ञवल्क्य का राजा जनक को उपदेश : सांख्यमत के अनुसार चौबीस तत्वों और नौ प्रकार के सर्गों का निरूपण (१२. ३१०)। अव्यक्त, महत्तत्व, अहंकार, मन और विषयों की कालसंख्या का एवं सृष्टि का वर्णन तथा इन्द्रियों में मन की प्रधानता का प्रतिपादन (१२. ३११)। संहारक्रम का वर्णन (१२. ३१२)। अध्यात्म, अधिभूत और अधिदैवत का वर्णन, तथा सात्विक, राजस और तामस भावों का लक्षण (१२. ३१३)। सात्विक, राजस और तामस प्रकृति के मनुष्यों की गति का वर्णन और राजा जनक के प्रश्न (१२. ३१४)। प्रकृति-पुरुष का विवेक और उसका फल (१२. ३१५)। योग का वर्णन और उसके साधन से परब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति (१२. ३१६)। विभिन्न अंगो से प्राणों के उत्क्रमण का फल तथा मृत्युसूचक लक्षणों का वर्णन और मृत्यु को जीतने का उपाय (१२. ३१७)। याज्ञवल्क्य द्वारा अपने को सूर्यदेव से वेदज्ञान की प्राप्ति का प्रसङ्ग सुनना; विश्वावसु को जीवात्मा और परमात्मा की एकता के ज्ञान का उपदेश देकर उसका फलमुक्ति बताना तथा जनक को उपदेश देकर विदा होना (१२. ३१८)।

"जरा-मृत्यु का उल्लंघन करने के विषय में पञ्चशिख और राजा जनक का संवाद (१२. ३१९)। राजा जनक की परीक्षा करलेने के लिये आई हुई सुलभा का उनके शरीर में प्रवेश करना, राजा जनक का उस पर दोषारोपण करना एवं सुलभा का युक्तियों द्वारा निराकरण करते हुये राजा जनक को अज्ञानी बताना (१२. ३२०)। व्यास जी द्वारा अपने पुत्र शुकदेव को वैराग्य और धर्मपूर्ण उपदेश देते हुये सावधान कराना (१२. ३२१)। शुभाशुभ कर्मों का परिणाम कर्ता को अवश्य भोगना पड़ता है — इसका प्रतिपादन (१२. ३२२)।

"व्यास जी की पुत्रप्राप्ति के लिये तपस्या और भगवान शंकर से वर प्राप्ति (१२. ३२३)। शुकदेव की उत्पत्ति, उनके यज्ञोपवीत, वेदाध्ययन एवं समावर्तन संस्कार का वृत्तान्त (१२. ३२४)। पिता की आज्ञा से शुकदेव जी का मिथिला जाना और वहाँ उनका द्वारपाल, मन्त्री तथा युवती स्त्रियों के द्वारा सत्कृत होने के उपरान्त ध्यान में स्थित हो जाना (१२. ३२५)। राजा जनक द्वारा शुकदेव का पूजन तथा उनके प्रश्न का समाधान करते हुये ब्रह्मचर्य आश्रम में परमात्मा की प्राप्ति होने के बाद अन्य तीनों आश्रमों की आवश्यकता का प्रतिपादन तथा मुक्त पुरुष के लक्षणों का वर्णन (१२. ३२६)। शुकदेव का पिता के पास लौट आना तथा व्यास जी का अपने शिष्यों को स्वाध्याय की विधि बताना (१२. ३२७)। शिष्यों के जाने के बाद व्यास जी के पास नारद जी का आगमन और व्यास जी को वेदपाठ के लिये प्रेरित करना; व्यास जी का शुकदेव को अनध्याय का कारण बताते हुये 'प्रवह' आदि सात वायुओं का परिचय देना (१२. ३२८)। शुकदेव जी को नारद जी द्वारा वैराग्य और ज्ञान का उपदेश (१२. ३२९)। नारद जी द्वारा शुकदेव को सदाचार और अध्यात्म-विषयक उपदेश (१२. ३३०)। नारद जी द्वारा शुकदेव को कर्मफल-प्राप्ति में परतन्त्रता विषयक उपदेश तथा शुकदेव का सूर्यलोक में जाने का निश्चय (१२. ३३१)। शुकदेव जी की ऊर्ध्वगति का वर्णन (१२. ३३२)। शुकदेव की परम-पद-प्राप्ति तथा पुत्रशोक से व्याकुल व्यास जी को महादेव द्वारा आश्वासन (१२. ३३३)।

"बदरिकाश्रम में नारद जी के पूछने पर भगवान् नारायण द्वारा परमदेव परमात्मा को ही सर्वश्रेष्ठ पूजनीय बताना (१२. ३३४)। नारद जी द्वारा श्वेतद्वीप दर्शन, वहाँ के निवासियों के स्वरूप का वर्णन; राजा उपरिचर का चरित्र तथा पञ्चरात्र की उत्पत्ति का प्रसङ्ग (१२. ३३५)। राजा उपरिचर के यज्ञ में भगवान् पर बृहस्पति का क्रुद्ध होना, एकत और द्वित आदि मुनियों का बृहस्पति से श्वेतद्वीप एवं भगवान की महिमा-वर्णन करके उनको शान्त करना (१२. ३३६)। यज्ञ में आहुति के लिये अज का अर्थ अन्न है, बकरा नहीं — इस बात को जानते हुये भी पक्षपात करने के कारण राजा उपरिचर के अधःपतन की और भगवत्कृपा से उनके पुनरुत्थान की कथा (१२. ३३७)। नारद जी का दो सौ नामों द्वारा भगवान् की स्तुति करना (१२. ३३८)। श्वेतद्वीप में नारद को भगवान् का दर्शन; भगवान् का वासुदेव-संकर्षण आदि अपने व्यूह-स्वरूपों का परिचय कराना और भविष्य में होनेवाले अवतारों के कार्यों की सूचना; इस कथा के श्रवण-पठन का फल (१२. ३३९)।

"व्यासजी का अपने शिष्यों को भगवान द्वारा ब्रह्मा आदि देवताओं से कहे हुये प्रवृत्ति और निवृत्तिरूप धर्म के उपदेश का रहस्य बताना (१२. ३४०)। भगवान श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को अपने प्रभाव का वर्णन करते हुये अपने नामों की व्युत्पत्ति एवं माहात्म्य का उपदेश (१२. ३४१)। सृष्टि की प्रारम्भिक अवस्था का वर्णन, ब्राह्मणों की महिमा बतानेवाली अनेक प्रकार की संक्षिप्त कथाओं का उल्लेख, भगवन्नामों के हेतु तथा रुद्र के साथ होनेवाले युद्ध में नारायण की विजय (१२. ३४२)। जनमेजय के पूछने पर सौति ने देवर्षि नारद के श्वेतद्वीप से लौट कर नर-नारायण के पास जाने और वहाँ के महत्वपूर्ण दृश्यों का वर्णन किया (१२. ३४३)। नरनारायण ने नारद जी की प्रशंसा करते हुये उन्हें भगवान् वासुदेव का माहात्म्य बताया (१२. ३४४)। भगवान् वाराह के द्वारा पितरों के पूजन की मर्यादा का स्थापित होना (१२. ३४५)। नारायण की महिमा-सम्बन्धी उपाख्यान का उपसंहार (१२. ३४६)।

"हयग्रीव अवतार की कथा; वेदों का उद्धार, मधु-कैटभ वध तथा नारायण की महिमा का वर्णन (१२. ३४७)। सात्वत धर्म की उपदेश-परम्परा तथा भगवान के प्रति एकान्तिक भाव की महिमा (१२. ३४८)। व्यास जी का सृष्टि के आरम्भ में भगवान् नारायण के अंश से सरस्वती-पुत्र अपान्तरतमा के रूप में जन्म और उनके प्रभाव की कथा (१२. ३४९)। वैजयन्त पर्वत पर ब्रह्मा और रुद्र का मिलन एवं ब्रह्मा द्वारा परम पुरुष नारायण की महिमा का वर्णन (१२. ३५०)। ब्रह्मा और रुद्र के संवाद में नारायण की महिमा का विशेष रूप से वर्णन (१२. ३५१)। नारद द्वारा इन्द्र को उञ्छवृत्ति वाले ब्राह्मण की कथा सुनाने का उपक्रम (१२. ३५२)। महापद्मपुर में एक श्रेष्ठ ब्राह्मण के सदाचार का वर्णन और उसके घर पर अतिथि का आगमन (१२. ३५३)। अतिथि द्वारा स्वर्ग के विभिन्न मार्गों का कथन (१२. ३५४)। अतिथि द्वारा नागराज पद्मनाभ के सदाचार और सद्गुणों का वर्णन तथा ब्राह्मण को उसके पास जाने के लिये प्रेरणा (१२. ३५५)। अतिथि के वचनों से सन्तुष्ट होकर ब्राह्मण का उसके कथनानुसार नागराज के घर की ओर प्रस्थान (१२. ३५६)। नागपत्नी द्वारा ब्राह्मण का सत्कार और वार्तालाप के बाद ब्राह्मण द्वारा नागराज के आगमन की प्रतीक्षा (१२. ३५७)। नागराज के दर्शन के लिये ब्राह्मण की तपस्या तथा नागराज के परिवारवालों का भोजन के लिये ब्राह्मण से आग्रह करना (१२. ३५८)। नागराज का घर लौटना;

पत्नी के साथ उनकी धर्मविषयक बात-चीत तथा उनकी पत्नी का उनसे ब्राह्मण को दर्शन देने के लिये अनुरोध (१२. ३५९)। पत्नी के धर्मयुक्त वचनों से नागराज के अभिमान एवं रोष का नाश और उनका ब्राह्मण को दर्शन देना (१२. ३६०)। नागराज और ब्राह्मण का परस्पर मिलन तथा वार्तालाप (१२. ३६१)। नागराज का ब्राह्मण के पूछने पर सूर्यमण्डल की आश्चर्यजनक घटनाओं का वर्णन (१२. ३६२)। उञ्छ एवं शिलवृत्ति से सिद्ध हुये पुरुष की दिव्य गति (१२. ३६३)। ब्राह्मण का नागराज से वार्तालाप समाप्त करके उञ्छवृत्ति के पालन का निश्चय और घर जाने के लिये नागराज से विदा माँगना (१२. ३६४)। नागराज से विदा लेकर ब्राह्मण द्वारा च्यवन मुनि से उञ्छवृत्ति की दीक्षा लेना तथा साधनपरायण होना; इस कथा की परम्परा का वर्णन (१२. ३६५)। देखिये वस्था० शुकोत्पत्ति, शुककृति, शुककृत्य, शुकनारदसंवाद, शुकाभिपतन, उञ्छवृत्त्युपाख्यान।

मोक्षशास्त्र : १. ६२, २३; १२. १३७, २३; ३२०, ५. ३९; ३२५, ११; ३२६, ३१।

मोक्षात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ५५)।

मोदाकिन्, शाकद्वीप के एक वर्ष का नाम है (६. ११, २६)।

मोदागिरि, एक देश का नाम है : २. ३०, २१ (भीमसेन ने दिग्विजय के समय यहाँ के राजा का वध किया था)।

मोदापुर, उत्तर दिशा के एक देश का नाम है : २. २७, ११ (उत्तर दिग्विजय के समय अर्जुन ने यहाँ के राजा को परास्त किया था)।

मोह = शिव (सहस्रनाम)।

मोहन, एक जनपद का नाम है : ३. २५४, १० (दिग्विजय के समय कर्ण ने इसे जीत लिया था)।

मोहनास्त्र, एक अस्त्र का नाम है जिसका धृष्टद्युम्न ने प्रयोग किया था (६. ७७, ५३)।

मोहनी, एक प्रकार की माया का नाम है : १४. ८०, ४५ (माया तु मोहनी नाम मायैषा संप्रदर्शिता)।

मौञ्जायन, एक ऋषि का नाम है : २. ४, १३ (युधिष्ठिर की सभा में)।

१. मौद्‍गल्य, मुद्गल के वंशज, एक अथवा अधिक ऋषियों का नाम है : १. ५३, ९ (जनमेजय के सर्पसत्र के सदस्यों में से एक); ३. २६१, ६. १३. २४. २९ (मुद्गल, देखिये वस्था०); १२. ४७, ९ (शरशय्या पर पड़े भीष्म को घेर कर खड़े ऋषियों में ये भी थे); १३. १३७, २१ (मौद्गल्य को एक सुवर्ण भवन देकर राजा शतद्युम्न ने स्वर्ग प्राप्त किया)।

२. मौद्‍गल्य (वि०) : १३. ४८, १० (वैश्यो वैदेहकं चापि मौद्गल्यमपवर्जितम्)।

मौदाकिन — देखिये मोदाकिन्।

मौनेय (बहु० °याः) देवगन्धर्वों के एक कुल का नाम है : १. ६५, ४४ (देवगन्धर्वाः); ८. ८७, ५२ (कर्ण और अर्जुन का युद्ध देखने आये)।

मौरव (वि०) : ३. १२, २९ (सादिता मौरवाः पाशा निसुन्दनकरौ हतौ। कृतः क्षेमः पुनः पन्थाः पुरं प्राग्ज्योतिषं प्रति); ५.१५८, ७ (संछिद्य मौरवान्)। तुकी० मुरु।

मौर्वी एक तृण-विशेष का नाम है जिसकी मेखला बनाई जाती है (७. १७, २३)।

मौलेय (बहु० °याः) एक जाति के लोगों का द्योतक है : २. ५२, १५ (युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये)।

१. मौसल, मौसलों से युद्ध का द्योतक है : १६. १, ७. ११; ५, १; ८, ८; १७. १, १

२. मौसल = मौसलपर्व : १. १, ९१; २, ८१. ३५३. ३६३; १८, ६. ७० (मौसले सार्वगुणिकं गन्धमाल्यानुलेपनम्)।

मौसलपर्वन्, महाभारत के १६वें प्रमुख तथा ९८वें अवान्तर पर्व का नाम है : "वैशम्पायन ने कहा : महाभारत युद्ध के बाद जब छत्तीसवाँ वर्ष आरम्भ हुआ तब युधिष्ठिर को अनेक प्रकार के अपशकुन दिखाई पड़ने लगे (अपशकुनों का वर्णन)। थोड़े ही दिनों बाद यह समाचार मिला कि मूसल को निमित्त बना कर वृष्णिवंशियों का संहार हो गया। केवल भगवान श्रीकृष्ण और बलरामजी उस विशाल विनाश से किसी प्रकार बच गये हैं। यह सुन कर युधिष्ठिर ने अपने सब भाइयों को बुलाकर अपने कर्त्तव्य के सम्बन्ध में परामर्श किया। ब्राह्मणों के शाप के कारण विवश हो आपस में लड़कर वृष्णियों के विनष्ट हो जाने का समचार ज्ञात कर सभी पाण्डवों को अत्यधिक वेदना हुई। भगवान श्रीकृष्ण का वध तो असम्भव था, अतः पाण्डवों ने उनके विनाश की बात पर विश्वास नहीं किया। जनमेजय ने वृष्णियों के विनाश के सम्बन्ध में और अधिक बताने का अनुरोध किया, जिसपर वैशम्पायनजी ने बताया कि महाभारत युद्ध के छत्तीसवें वर्ष वृष्णियों में कलह आरम्भ हो गया जिसमें काल से प्रेरित होकर उन्होंने एक दूसरे को मूसलों से मार डाला। जनमेजय ने जानना चाहा कि वृष्णि, अन्धक, तथा भोजवंश के उन वीरों को किसने शाप दिया था जिससे उनका संहार हो गया। वैशम्पायन ने कहा : एक समय की बात है, महर्षि विश्वामित्र, कण्व और नारदजी द्वारका गये। उस समय दैव के मारे सारण आदि वीर साम्ब को स्त्री के वेश में विभूषित करके उनके पास ले गये। उन सब ने उन मुनियों का दर्शन किया और इस प्रकार पूछा : 'यह स्त्री बभ्रु की पत्नी है। बभ्रु के मन में पुत्र प्राप्ति की अत्यधिक लालसा है। आप लोग ऋषि हैं; अतः अच्छी तरह देख कर बतायें कि इसके गर्भ से क्या उत्पन्न होगा।' ऐसी बात कह कर उन यादवों ने जब ऋषियों को धोखा दिया और उनका तिरस्कार किया तब वे सभी महर्षि कुपित हो उठे। उन्होंने क्रोधपूर्वक कहा : 'श्रीकृष्ण का यह पुत्र साम्ब एक भयंकर लोहे का मूसल उत्पन्न करेगा जो वृष्णि और अन्धकादि वंशों के विनाश का कारण होगा। उसी से तुम सब श्रीकृष्ण और बलराम को छोड़ कर अपने शेष सम्पूर्ण कुल का संहार कर डालोगे। बलरामजी स्वयं ही अपने शरीर को त्याग कर समुद्र में चले जायँगे और महात्मा श्रीकृष्ण जब भूतल पर सो रहे होंगे तब जरा नामक व्याध उन्हें अपने बाणों से बींध डालेगा।' ऐसा कहकर वे मुनि श्रीकृष्ण के पास चले गये और उन्हें सारी बातें बता दीं। तब श्रीकृष्ण ने वृष्णियों को बताया कि ऋषियों ने जैसा कहा है वैसा ही होगा। दूसरे दिन प्रातःकाल होते ही साम्ब ने एक मूसल को जन्म दिया जो वृष्णि और अन्धक वंश के वीरों का विनाश करने के लिये यमदूत के समान था। यदुवंशियों ने उस मूसल को लेकर राजा उग्रसेन के दे दिया। राजा उग्रसेन ने उस मूसल को कुटवा कर उसका अत्यन्त महीन चूर्ण करा कर उस चूर्ण को समुद्र में फेंकवा दिया। फिर श्रीकृष्ण, बलराम और बभ्रु की सहमति से राजा ने यह घोषणा करा दी कि उस दिन से वृष्णि और अन्धकवंशी क्षत्रियों के यहाँ कोई भी मदिरा न तैयार करे। जो इस आज्ञा का उल्लंघन करेगा उसे शूली पर चढ़ा दिया जायगा। फलस्वरूप सम्पूर्ण प्रजाजनों ने यह निश्चय कर लिया कि न तो वे मदिरा बनायेंगे और न उसका सेवन करेंगे। (१६. १)।

"इस प्रकार वृष्णि और अन्धकवंश के लोग अपने ऊपर आसन्न संकट के निवारणार्थ भाँति-भाँति के प्रयत्न कर रहे थे और उधर काल प्रतिदिन सब के घरों का चक्कर लगाया करता था। उस कालि का स्वरूप विकराल और वेश विकट था। उसके शरीर का वर्ण काला और पीला तथा सर के बाल मुँड़े हुये थे। वह वृष्णियों के घरों में प्रवेश करके सब को देखता और कभी-कभी अदृश्य हो जाता था। उसे देखते ही बड़े-बड़े धनुर्धर उसके ऊपर लाखों बाणों का प्रहार करते थे किन्तु उसे बेध नहीं पाते थे। अब प्रतिदिन अनेक प्रकार के प्राकृतिक उत्पात भी होने लगे थे (अपशकुनों का वर्णन)। उन दिनों वृष्णिवंशी लोग निर्लज्जतापूर्वक अनेक पाप करने तथा ब्राह्मणों, देवताओं और पितरों से भी द्वेष रखने लगे। इतना ही नहीं, वे बलराम और श्रीकृष्ण को छोड़ कर गुरुजनों तक का तिरस्कार करने लगे। जब श्रीकृष्ण का पाञ्चजन्य शंख बजता था तब वृष्णियों और अन्धकों के घरों के

आस-पास भयंकर स्वरवाले गदहे रेंकने लगते थे। इस प्रकार काल की गति देख कर और त्रयोदशी तिथि को अमावस्या का संयोग जानकर श्रीकृष्ण ने सब लोगों से कहा : 'इस समय राहु ने चतुर्दशी को ही अमावस्या बना दिया है। महाभारत युद्ध के समय जैसा योग था वैसा ही आज भी है। यह सब हमलोगों के विनाश का सूचक है।' इस प्रकार समय का विचार करते हुये श्रीकृष्ण ने देखा कि महाभारत युद्ध के बाद छत्तीसवाँ वर्ष आ पहुँचा है। उन्होंने तब वृष्णियों को बताया कि गान्धारी देवी के शाप के सफल होने का समय उपस्थित है। उन्होंने कहा कि पूर्वकाल में कौरव-पाण्डवों की सेनायें जब व्यूहबद्ध होकर एक दूसरे के सामने खड़ी थीं उस समय के भयानक उत्पातों को देखकर युधिष्ठिर ने जो कुछ कहा था वैसा ही लक्षण इस समय उपस्थित है। अतः श्रीकृष्ण ने गान्धारी के कथन को सत्य करने की इच्छा से यदुवंशियों को तीर्थयात्रा की आज्ञा दी। इस आज्ञा के अनुसार यह घोषणा कर दी गई कि समस्त यादवों को तीर्थयात्रा के लिये प्रभास क्षेत्र में उपस्थित होना चाहिये। (१६. २)।

"द्वारका के लोग रात को स्वप्न में देखते थे कि एक काले रङ्ग की स्त्री अपने सफेद दाँतों को दिखा-दिखा कर हँसती हुई आई है और घरों में प्रवेश करके स्त्रियों का सौभाग्य-चिह्न लूटती हुई सम्पूर्ण द्वारका में दौड़ रही है। अग्निहोत्र गृहों में भयंकर गृध्र आकर वृष्णि और अन्धक वंश के मनुष्यों को पकड़-पकड़ खा रहे हैं। अत्यन्त भयानक राक्षस उनके आभूषण, छत्र, ध्वजा और कवच चुराकर भाग रहे हैं। उन लोगों ने स्वप्न में ही देखा कि अग्निदेव का दिया हुआ विष्णु का चक्र दिव्य लोक में चला गया है। बलराम और श्रीकृष्ण के ताल और गरुड़ के चिह्नों से अंकित दोनों विशाल ध्वजों को अप्सरायें ऊँचे उठा ले गई हैं और दिन-रात लोगों से यह कह रहीं हैं कि सब लोग तीर्थयात्रा के लिये चलें। इस प्रकार के विचित्र स्वप्नों को देखने के बाद वृष्णि और अन्धक महारथियों ने अपनी-अपनी स्त्रियों के साथ तीर्थयात्रा करने का विचार किया। उन्होंने नाना प्रकार के भक्ष्य, भोज्य, पेय, मद्य और भाँति-भाँति के मांस तैयार कराये। तदनन्तर वे रथों, घोड़ों, और हाथियों पर सवार होकर नगर से बाहर निकले। उस समय स्त्रियों सहित समस्त यदुवंशी प्रभास क्षेत्र में पहुँच कर अपने-अपने अनुकूल घरों में ठहर गये। परमार्थ ज्ञान में कुशल और योगवेत्ता उद्धव जी ने देखा कि समस्त यदुवंशी वीर समुद्र तट पर डेरा डाल कर बैठे हैं। तब उद्धव जी उन लोगों तथा श्रीकृष्ण से विदा लेकर वहाँ से प्रस्थित हुये। इधर महामनस्वी यादवों के यहाँ ब्राह्मणों को भोजन कराने के लिये जो अन्न तैयार किया गया था उसमें मदिरा मिलाकर उसकी गन्ध से युक्त भोजन को उन्होंने वानरों में बाँट दिया। तदनन्तर नटों और नर्तकों का नृत्य होने लगा और यादवों ने महापान आरम्भ किया। श्रीकृष्ण के पास ही कृतवर्मा सहित बलराम, सात्यकि, गद और बभ्रु पीने लगे। पीते-पीते सात्यकि मद से उन्मत्त हो उठे और सबके सामने कृतवर्मा का उपहास और अपमान करने लगे। प्रद्युम्न ने भी कृतवर्मा का तिरस्कार करते हुये सात्यकि के व्यवहार का अनुमोदन किया। यह सब देख कर कृतवर्मा ने कुपित हो कर सात्यकि का अपमान करते हुये कहा : 'भूरिश्रवा की बाँह कट गई थी और वे मरणान्त उपवास करके पृथिवी पर बैठ गये थे, उस अवस्था में तूने उनकी क्रूरतापूर्ण हत्या की थी।' कृतवर्मा की बात सुनकर श्रीकृष्ण को क्रोध आ गया। उन्होंने रोषपूर्ण वक्र दृष्टि से उसकी ओर देखा। उस समय सात्यकि ने श्रीकृष्ण से कहा कि स्यमन्तक मणि के लोभ से ही कृतवर्मा ने सत्राजित का वध करवाया था। यह सुनकर सत्यभामा अत्यन्त क्रुद्ध होकर श्रीकृष्ण के अंक में सर रख कर रोने लगी। तब क्रुद्ध सात्यकि ने कृतवर्मा के वध का निश्चय करके श्रीकृष्ण के पास से तलवार उठाकर उसका सर काट दिया। तदनन्तर सात्यकि अन्य लोगों का भी वध करने लगे। यह देख कर श्रीकृष्ण उन्हें रोकने के लिये दौड़े। इतने में ही काल की प्रेरणा से भोज और अन्धक वंश के समस्त वीरों ने एकमत होकर सात्यकि को चारों ओर से घेर लिया। श्रीकृष्ण ने भी काल की गति को देख कर क्रोध त्याग दिया। फलस्वरूप सब के सब अन्धक और वृष्णि वंशी लोग मदिरा के आवेश से उन्मत्त हो जूठे बरतनों से सात्यकि पर आघात करने लगे। सात्यकि को बचाने के लिये प्रद्युम्न भी अक्रमणकारियों के बीच में कूद पड़े। प्रद्युम्न भोजों से और सात्यकि अन्धकों से युद्ध करने लगे। फिर भी विपक्षियों की संख्या अत्यधिक होने के कारण श्रीकृष्ण की आँखों के सामने ये दोनों ही वीर मार डाले गये। सात्यकि तथा अपने पुत्र प्रद्युम्न को मारा गया देखकर श्रीकृष्ण ने कुपित होकर एक मुट्ठी एरका उखाड़ ली। उनके हाथ में आते ही वह घास वज्र के समान भयंकर लोहे का मूसल बन गई। फिर जो-जो सामने आया उसे श्रीकृष्ण ने उसी से मार गिराया। उस समय काल से प्रेरित हुये अन्धक, भोज, शिनि और वृष्णि वंश के लोगों ने उस भीषण युद्ध में उन्हीं मूसलों से एक दूसरों का संहार आरम्भ किया। उन लोगों में से जो कोई भी एरका नामक घास हाथ में लेता, उसी के हाथ में वह वज्र के समान मूसल बन जाती थी। यह सब ब्राह्मणों के शाप का ही प्रभाव था। वे जिस किसी पर उसका प्रहार करते वह अभेद्य वस्तु का भी भेदन कर डालता था और वज्रमय मूसल के समान सुदृढ़ दिखाई देता था। उस मूसल से पिता ने पुत्र को और पुत्र ने पिता को मार डाला। इस प्रकार कुकुर और अन्धक वंश के लोग परस्पर युद्ध करते हुये एक-दूसरे का संहार करने लगे। कालचक्र के इस परिवर्तन को जानते हुये श्रीकृष्ण सब कुछ देखते रहे और मूसल का सहारा लेकर खड़े रहे। उन्होंने जब अपने पुत्रों साम्ब, चारुदेष्ण और प्रद्युम्न तथा पौत्र अनिरुद्ध को मारा गया देखा तब उनकी क्रोधाग्नि प्रज्वलित हो उठी। अपने छोटे भाई गद को रणशय्या पर पड़े देखकर वे अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे और शार्ङ्ग धनुष, चक्र और गदा धारण करनेवाले श्रीकृष्ण ने शेष समस्त यादवों का संहार कर डाला। तब बभ्रु और दारुक ने श्रीकृष्ण से कहा : 'अब सब का विनाश हो गया। इनमें से अधिकांश तो आपके हाथों मारे गये हैं। अब बलराम जी का पता लगाइये। हम तीनों उधर ही चलें जिधर बलराम जी गये हैं।' (१६. ३)।

"दारुक, बभ्रु और श्रीकृष्ण, तीनों बलराम जी के चरणचिह्नों का अनुसरण करते हुये वहाँ से चल दिये। शीघ्र ही उन लोगों ने बलराम जी को एक वृक्ष के नीचे विराजमान देखा। बलराम जी के पास पहुँच कर श्रीकृष्ण ने दारुक को आज्ञा दी कि वह शीघ्र ही कुरुदेश की राजधानी हस्तिनापुर जाकर अर्जुन को यादवों के संहार का समाचार दे और उन्हें तत्काल द्वारका बुला लाये। दारुक ने तदनुसार हस्तिनापुर के लिये प्रस्थान किया। तब श्रीकृष्ण ने बभ्रु को स्त्रियों की रक्षा के लिये द्वारका भेजा जिससे डाकू धन-लोभ से उनकी हत्या न करने पायें। मदिरा के मद से आतुर और बन्धु-बान्धवों के वध से शोकाकुल बभ्रु अभी श्रीकृष्ण के निकट खड़े ही थे कि ब्राह्मणों के शाप के प्रभाव से उत्पन्न एक महान् दुर्धर्ष मूसल किसी व्याध के बाण से लगा हुआ सहसा उनके ऊपर आकर गिरा और तत्काल उनके प्राणों का हरण कर लिया। इस प्रकार बभ्रु को भी मारा गया देखकर श्रीकृष्ण ने अपने बड़े भाई बलराम से कहा : 'आप यहीं रहकर मेरी प्रतीक्षा करें। मैं स्त्रियों को कुटुम्बी जनों के संरक्षण में सौंपकर आता हूँ।' यों कह कर श्रीकृष्ण ने द्वारकापुरी में आकर अपने पिता वसुदेव जी से कहा : 'आप अर्जुन की प्रतीक्षा करते हुये कुल की स्त्रियों की रक्षा करें। मैंने इस समय यदुवंशियों का विनाश देखा है और पूर्वकाल में कुरुकुल के श्रेष्ठ राजाओं का भी संहार देख चुका हूँ। अब मैं यादव वीरों के बिना उनकी पुरी को देखने में असमर्थ हूँ। मैं अब वन में जाकर बलराम जी के साथ तपस्या करूँगा।' ऐसा कह कर श्रीकृष्ण ने अपने मस्तक से पिता के चरणों का स्पर्श किया और चल पड़े। इतने में ही उस नगर की स्त्रियों और बालकों का करुण आर्तनाद सुनकर श्रीकृष्ण पुनः लौट आये। उन्होंने उन सबको आश्वस्त करते हुये कहा कि शीघ्र ही अर्जुन वहाँ आ कर सबको संकट से बचायेंगे। फिर श्रीकृष्ण ने शीघ्रता से लौटकर बलराम का दर्शन किया। बलराम जी योगयुक्त हो समाधि में बैठे थे। श्रीकृष्ण ने उनके मुख से एक श्वेतवर्ण विशालकाय सर्प को निकलते देखा। वह महान् सर्प उनके सामने ही सागर की ओर चला गया। उसके सहस्रों मस्तक थे और विशाल शरीर

पर्वत के समान विस्तृत था। समुद्र ने स्वयं प्रकट होकर नागरूपी भगवान् अनन्त का स्वागत किया। कर्कोटक, वासुकि, तक्षक आदि दिव्य नागों तथा सरिताओं और स्वयं वरुण ने भी उनका स्वागत किया। इस प्रकार अपने भाई बलराम के परमधाम पधारने के बाद श्रीकृष्ण कुछ विचार करते हुये उस सूने वन में विचारने लगे। सबसे पहले उन्होंने उन बातों का स्मरण किया जिन्हें पूर्वकाल में गान्धारी देवी ने कहा था। जूठी खीर को शरीर में लगाने के समय दुर्वासा ने जो बात कही थी उसका भी उन्हें स्मरण हो आया। फिर वे अन्धक, वृष्णि और कुरुकुल के विनाश की बात सोचने लगे। तत्पश्चात् उन्होंने तीनों लोकों की रक्षा तथा दुर्वासा के वचन का पालन करने के लिये परमधाम पधारने का उपयुक्त समय उपस्थित जानकर अपनी सम्पूर्ण इन्द्रिय-वृत्तियों का निरोध किया। फिर वे महायोग का आश्रय लेकर पृथिवी पर लेट गये। उसी समय जरा नामक एक भयंकर व्याध उस स्थान पर आया। उसने श्रीकृष्ण को भी मृग समझ कर पाँव के तलवे में एक बाण मार दिया। फिर जब वह मृग को पकड़ने के विचार से निकट आया तब उसने योग में स्थित चतुर्भुज, पीताम्बरधारी श्रीकृष्ण को देखा। अपने को अपराधी मान कर उसने श्रीकृष्ण के दोनों पैर पकड़ लिये। तब श्रीकृष्ण ने उसे आश्वासन दिया और अपनी कान्ति से पृथिवी एवं आकाश को व्याप्त करते हुये ऊर्ध्वलोक चले गये। अन्तरिक्ष में पहुँचने पर इन्द्र, अश्विनीकुमार, रुद्र, आदित्य आदि देवताओं तथा मुनि, सिद्ध, गन्धर्व तथा अप्सराओं ने भी भगवान् का स्वागत किया। तत्पश्चात् जगत की उत्पत्ति के कारणरूप वे भगवान् नारायण अप्रमेयधाम को प्राप्त हो गये। तदनन्तर वे गन्धर्वों, अप्सराओं, सिद्धों, साध्यों आदि से पूजित हो कर देवताओं, ऋषियों और चारणों से मिले। इन्द्र ने भी प्रेमवश उनका अभिनन्दन किया। (१६. ४)।

"इधर दारुक ने कुरुदेश में जाकर पाण्डवों वृष्णियों आदि के संहार का समाचार दिया। वृष्णि, भोज, अन्धक और कुकुरवंश के वीरों का विनाश हुआ सुनकर समस्त पाण्डव शोक से संतप्त हो उठे। तत्पश्चात अपने भाइयों से अनुमति ले कर अर्जुन अपने मामा से मिलने चल दिये। उस समय उन्हें यह विश्वास नहीं हुआ कि समस्त यदुवंशियों का विनाश हो गया है। दारुक के साथ द्वारका पहुँच कर अर्जुन ने श्रीहीन द्वारका को देखा। अर्जुन को देखकर श्रीकृष्ण की सोलह सहस्र अनाथ स्त्रियाँ करुण क्रन्दन करने लगीं। अर्जुन को वह द्वारका नगरी एक नदी के समान प्रतीत हुई। वृष्णि और अन्धक लोग उसके भीतर जल के समान थे (नदी के साथ द्वारका और उसके निवासियों की तुलना का विस्तृत वर्णन)। वहाँ का कारुणिक दृश्य देख कर अर्जुन भी फूट-फूट कर रोने लगे। सत्यभामा और रुक्मिणि आदि रानियाँ अर्जुन को घेर कर विलाप करने लगीं। तदनन्तर उन सब ने शोक से मूर्च्छित अर्जुन को सुवर्ण आसन पर बैठाया। (१६. ५)।

"मामा के महल में पहुँच कर अर्जुन ने देखा कि वसुदेव पुत्रशोक से दुखी होकर पृथिवी पर पड़े हैं। अर्जुन को देख कर वसुदेव ने विभिन्न प्रकार से अपने शोक और दुःख को प्रकट करते हुये भोजन त्याग कर अपना प्राण दे देने के निश्चय को प्रकट किया। (१६. ६)।

"वसुदेवजी की बातें सुन कर अर्जुन अत्यन्त दुःखी हुये और बोले : 'अब मैं वृष्णिवंश की स्त्रियों, बालकों और वृद्धों को अपने साथ इन्द्रप्रस्थ ले जाऊँगा।' इस प्रकार कह कर अर्जुन ने यादवों की सुधर्मा नामक सभा में प्रविष्ट हो कर कहा कि वे अन्धक और वृष्णि वंश के लोगों को अपने साथ इन्द्रप्रस्थ ले जाना चाहते हैं क्योंकि समुद्र अब शीघ्र ही सम्पूर्ण द्वारका पुरी को डुबा देगा। इन्द्रप्रस्थ में श्रीकृष्ण के पौत्र वज्र वृष्णियों और अन्धकों के राजा बना दिये जायगे। अर्जुन ने सब से तैयार हो जाने के लिये कहा जिससे सातवें दिन सब लोग नगर से बाहर हो जाँय। अर्जुन ने उस रात श्रीकृष्ण के महल में ही निवास किया। सवेरा होने पर शूरनन्दन प्रतापी वसुदेवजी ने अपने चित्त को परमात्मा में लगा कर योग के द्वारा उत्तम गति प्राप्त की। इस नवीन घटना से चारों ओर कुहराम मच गया। देवकी, भद्रा, रोहिणी तथा मदिरा—ये सब की सब अपने पति के साथ चिता पर आरूढ़ होने को उद्यत हो गईं। तदनन्तर अर्जुन अग्नि संस्कार के लिये वसुदेवजी की अर्थी उठाकर नगर से बाहर ले गये। वसुदेवजी की पत्नियाँ भी वस्त्र और आभूषण से सज-धज कर सहस्रों पुत्र-वधुओं तथा अन्य स्त्रियों के साथ अपने पति की अर्थी के पीछे-पीछे चलीं। वसुदेवजी को अपने जीवनकाल में जो स्थान विशेष प्रिय था वहीं ले जा कर अर्जुन ने उनका पितृमेध कर्म सम्पन्न किया। चिता प्रज्वलित होने पर उनकी उपरोक्त चारों पत्नियाँ भी सती हो कर पतिलोक को प्राप्त हुईं। वृष्णि और अन्धकवंश के कुमारों तथा स्त्रियों ने वसुदेवजी को जलाञ्जली दी। यह धर्मकृत्य पूर्ण करा कर अर्जुन उस स्थान पर गये जहाँ वृष्णियों का संहार हुआ था और मूसलों द्वारा मारे गये उन सब यदुवंशी वीरों का अन्त्येष्टि कर्म सम्पन्न कराया। विश्वस्त पुरुषों द्वारा बलराम और श्रीकृष्ण के शरीरों की खोज करा कर अर्जुन ने उनका भी दाह संस्कार किया। इस प्रकार सभी मृतकों के प्रेतकर्म विधिवत सम्पन्न कराने के बाद अन्धक और वृष्णि वंश की स्त्रियों, वृद्धों और बालकों को घोड़ों, रथों आदि पर बैठा कर अर्जुन सातवें दिन द्वारका से चल दिये। वे सब लोग श्रीकृष्ण के पौत्र वज्र को आगे करके चल रहे थे। जन समुदाय के निकलते ही समुद्र ने रत्नों से परिपूर्ण द्वारका नगरी को जल में डुबो दिया। यह आश्चर्यजनक दृश्य देख कर द्वारकावासी मनुष्य अत्यन्त शीघ्रता से आगे बढ़ चले। पञ्चनद देश में पहुँच कर अर्जुन ने पड़ाव डाला। एकमात्र अर्जुन के संरक्षण में चल रही इतनी अनाथ स्त्रियों को देखकर वहाँ रहनेवाले लुटेरों के मन में लोभ उत्पन्न हुआ। अतः उन लुटेरे आभीरों ने उन सब पर आक्रमण कर दिया। वे लट्ठधारी लुटेरे वृष्णि वंश की अनाथ स्त्रियों पर सहस्रों की संख्या में टूट पड़े। अपने दल पर पीछे की ओर से हुये इस आक्रमण को देखकर अर्जुन ने आक्रामकों को ललकारा किन्तु उनकी बातों की अवहेलना करके मूर्ख आभीरों ने उन सब पर आक्रमण कर ही दिया। तब अर्जुन ने अपने दिव्य एवं कभी न जीर्ण होनेवाले विशाल धनुष गाण्डीव को चढ़ाना आरम्भ किया और अत्यधिक प्रयत्नपूर्वक उसे चढ़ाने में सफल हुये। परन्तु जब अर्जुन अस्त्र-शस्त्रों का चिन्तन करने लगे तब उन्हें उनका बिल्कुल स्मरण नहीं हो सका। युद्ध के अवसर पर अपने बाहुबल में यह महान विकार आया देख कर और महान् दिव्यास्त्रों को विस्मृत हुआ जान कर अर्जुन लज्जित हो गये। फिर भी वे अपने दल की स्त्रियों आदि की रक्षा का यथासम्भव प्रयास करते रहे। किन्तु सब योद्धाओं के देखते-देखते वे डाकू उन सुन्दरी स्त्रियों को चारों ओर से खींच-खींच कर ले जाने लगे। कुछ स्त्रियाँ तो उनके स्पर्श के भय से उनकी इच्छा के अनुसार चुपचाप उनके साथ चली गईं। साथ के योद्धाओं को लेकर अर्जुन ने डाकुओं का वध करने का प्रयास किया, परन्तु उनके सीधे जानेवाले बाण क्षण भर में क्षीण हो गये। जो रक्तभोगी बाण पहले अक्षय थे वे ही उस समय सर्वथा क्षय को प्राप्त हो गये। बाणों के समाप्त हो जाने पर दुःख और शोक के आघात को सहन करते हुये अर्जुन धनुष की कोटि से ही उन डाकुओं का वध करने लगे। फिर भी अर्जुन अपने साथ के लोगों को बचा नहीं सके और डाकू वृष्णि-अन्धकवंश की स्त्रियों को लूट कर ले गये। अर्जुन का अस्त्र शस्त्रों का ज्ञान लुप्त हो गया। भुजाओं का बल भी घट गया। धनुष वश के बाहर हो गया और अक्षय बाणों का भी क्षय हो गया। इन सब से अर्जुन का मन उदास हो गया। वे इसे दैव का विधान मानने लगे। तदनन्तर अपहरण से बची हुई स्त्रियों और बचे हुये रत्नों आदि को साथ लेकर अर्जुन कुरुक्षेत्र में उतरे। इस प्रकार उन्होंने बची हुई उन स्त्रियों को जहाँ तहाँ बसा दिया। कृतवर्मा के पुत्र को और भोजराज के परिवार की बची हुई स्त्रियों को उन्हों ने मार्तिकावत में बसाया तत्पश्चात वृद्धों बालकों तथा अन्य स्त्रियों को इन्द्रप्रस्थ लाये और उन सब को वहाँ का निवासी बना दिया। सात्यकि के पुत्र यौयुधानि को अर्जुन ने सरस्वती के तटवर्ती देश का अधिकारी बना दिया। तदनन्तर वज्र को उन्होंने इन्द्रप्रस्थ का राज्य दे दिया। अक्रूर की स्त्रियाँ वज्र के रोकने पर भी वन में तपस्या करने चली गईं। रुक्मिणी, गान्धारी, शैब्या, हैमवती तथा जामवन्ती ने पतिलोक की प्राप्ति

के लिये अग्नि में प्रवेश किया। सत्यभामा तपस्या करने वन में चली गई। जो-जो द्वारकावासी अर्जुन के साथ आये थे उन सब का यथायोग्य विभाग करके अर्जुन ने वज्र को सौंप दिया। इस प्रकार समयोचित व्यवस्था करके अर्जुन नेत्रों से आँसू बहाते हुये व्यासजी के आश्रम पर आये और उन महर्षि का दर्शन किया (१६. ७)।

"व्यास जी ने अर्जुन को अपने पास बैठा कर उनसे पूछा : 'क्या तुमने नख, बाल अथवा अधोवस्त्र की कोर पड़ जाने से अशुद्ध हुये घड़े के जल से स्नान कर लिया है? अथवा तुमने किसी रजस्वला स्त्री से समागम या किसी ब्राह्मण का वध तो नहीं किया है? कहीं तुम युद्ध में परास्त तो नहीं हो गये हो क्योंकि तुम श्रीहीन दिखाई देते हो? तुम अपनी मलिनता का कारण शीघ्र बताओ।' तब अर्जुन ने व्यास जी को श्रीकृष्ण, बलराम आदि के परमधाम पधारने का समाचार बताते हुये कहा कि मौसलयुद्ध में वृष्णि वंशी वीरों का भी विनाश हो गया है। वे सभी गृहयुद्ध में एक-दूसरे के हाथों मार डाले गये हैं। इस प्रकार अपने बाहुबल से शोभा पानेवाले पाँच लाख वीर आपस में ही लड़कर मृत्यु को प्राप्त हो गये। इस प्रकार सारा समाचार देकर अर्जुन ने कहा : 'पंजाब के आभीरों ने मुझसे युद्ध करके मेरे देखते-देखते वृष्णिवंश की सहस्रों स्त्रियों का अपहरण कर लिया। मैंने धनुष को लेकर उनका सामना करना चाहा परन्तु मैं उसे चढ़ा नहीं सका। मेरी भुजाओं में पहले जैसा बल अब नहीं रहा। नाना प्रकार के अस्त्रों का मेरा ज्ञान भी विलुप्त हो गया है। श्रीकृष्ण के बिना अब मैं जीवित रहना नहीं चाहता। अब आप कृपा करके मुझे यह उपदेश दें कि मेरा कल्याण कैसे होगा।' व्यास जी बोले : 'वे समस्त यदुवंशी देवताओं के अंश थे। वे सब श्रीकृष्ण के साथ ही यहाँ आये थे और उन्हीं के साथ चले गये। वृष्णि और अन्धक वंश के वे सब लोग ब्राह्मणों के शाप से दग्ध होकर नष्ट हुये हैं। अतः तुम उनके लिये शोक न करो। उनका प्रारब्ध ही ऐसा था। जिन स्त्रियों का अपहरण हुआ है वे भी पूर्वजन्म में अप्सरायें थीं। उन सब ने अष्टावक्र मुनि के रूप का उपहास किया था जिससे मुनि ने उन्हें मानवी होने का शाप दिया था। डाकुओं के हाथ में पड़ने से शाप का उद्धार होने की बात भी अष्टावक्र जी ने ही कही थी। अब वे सब अपना पूर्वरूप और स्थान प्राप्त कर चुकी हैं। जो स्नेहवश तुम्हारे रथ का संचालन करते थे वे साक्षात् चतुर्भुज नारायण थे। मैं समझता हूँ कि तुम सब लोगों ने अपना कर्त्तव्य पूर्ण कर लिया है। तुम्हें सब प्रकार से सफलता प्राप्त हो चुकी है। अब तुम लोगों के परलोक गमन का समय आ गया है; और यही तुम सब के लिये श्रेयस्कर है। जब उद्भव का समय आता है तब मनुष्य की बुद्धि, तेज और ज्ञान का विकास होता है, और जब विपरीत समय उपस्थित होता है तब इन सब का नाश हो जाता है। इस प्रकार काल ही सबका मूल है। संसार की उत्पत्ति का बीज काल है और काल ही फिर अकस्मात् सब का संहार कर देता है।' व्यास जी के वचनों का तत्त्व समझ कर अर्जुन उनकी आज्ञा लेकर हस्तिनापुर चले गये। वहाँ उन्होंने युधिष्ठिर को वृष्णि और अन्धक वंश के लोगों की मृत्यु तथा श्रीकृष्ण और बलराम के भी परमधाम चले जाने का समाचार कह सुनाया। (१६. ८)।"

१. म्लेच्छ, अनार्य जातियों का द्योतक है : १. २, १०३ (हितोपदेश '''विदुरेण कृत'''म्लेच्छभाषया); ६८, ५; ८४, १५ (गुरुदारप्रसक्तेषु तिर्यग्योनिगतेषु च पशुधर्मेषु पापेषु म्लेच्छेषु त्वं भविष्यसि); ८५, ३४ (अनोऽस्तु म्लेच्छजातयः); १४१, ११; १४७, ६ (विदुरेणोक्तो म्लेच्छवाचा); १७५, ३८ (वसिष्ठ की धेनु के फेन से उत्पन्न हुये). ३९ (विश्वामित्र की सेना को पराजित किया); २१०, ८ (सुन्द और उपसुन्द ने इन्हें पराजित किया); २. ३०, २५ (पूर्व में भीमसेन द्वारा पराजित). २७; ३१, ६६ (दक्षिण में सहदेव द्वारा पराजित); ३२, १६ (पश्चिम में नकुल द्वारा पराजित); ३४, १० (भगदत्त का अनुसरण किया); ५१, १४ (प्राग्ज्योतिषाधिपः शूरो म्लेच्छानामधिपो बली); ५२, ३१ (युधिष्ठिर की सेवा में); ३. ५१, २३ (युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित थे); ६४, २; १४५, १३ (उत्तर में निवास करते थे); १८८, ३४ (कलियुग में शासक होंगे ;) १९०, २९. ३८ (कलियुग में : म्लेच्छीभूतं जगत् सर्वं भविष्यति न संशयः). ४६. ५१ (म्लेच्छाचाराः सर्वभक्षा दारुणाः सर्वकर्मसु). ७२ (मही म्लेच्छजनाकीर्णा भविष्यति). ९७; २५४, १९ (अपनी दिग्विजय के समय कर्ण ने इन्हें परास्त किया था); ५. २२, २२ (युधिष्ठिर का साथ दिया); ५०, २९ (नकुल ने इन पर विजय प्राप्त किया था); १६०, १०३ (दुर्योधन की सेना में); १६१, २१; ६. ९, १३. ६५; १२, १५ (ये कुशद्वीप के वर्षों में नहीं मिलते); ४३, १०८; ७. ५६, ५; ९३, ३७. ४३. ४५. ४७. ४९ (अर्जुन ने इनका वध किया); ९४, ३०; ११२, १७ (दुर्योधन की सेवा में). ३८; ११९, १५. २२ (सात्यकि ने पराजित किया था). ४३; १२२, २९; १९२, ३९ (द्रोण ने इनका वध किया था); ८. २२, १० (नकुल ने इनका वध किया); ४०, ४३; ४५ २५ (मनुष्याणां मलं म्लेच्छा म्लेच्छानामौष्ट्रिका मलम्). ३६; ४६, २३ (दुर्योधन की सेना में); ७३, २० (अर्जुन ने इन्हें पराजित किया था); ८१, ११ (अर्जुन पर आक्रमण किया); ९. १, २७ (इनका वध); २, १८ (इन्होंने दुर्योधन के लिये युद्ध किया). ४०; २०, १ (शाल्वो म्लेच्छगणाधिपः); १२, ४ (इयं च पृथिवी सर्वा म्लेच्छाटविका भृशम्); १२. ४, ८; ५९, ९७; १६८, २९; १८८, १८; १३. १०६, १; १११, १२८; १४. ७३, २५ (अश्वमेध की रक्षा कर रहे अर्जुन ने इन्हें परास्त किया था); ८२, ३०; ८९, २६ (युधिष्ठिर के अश्वमेध के समय उपस्थित थे); १६. ७, ६३।

२. म्लेच्छ, दो अङ्ग-राजकुमारों के लिये प्रयुक्त हुआ है : ७. २६, १७ (भीमसेन ने वध किया); ८. २२, १८ (नकुल ने वध किया)।

य

यकृल्लोम (बहु०) एक जाति के लोगों का नाम है : ४. ५, ४ (अन्तरेण यकृल्लोमान् शूरसेनांश्च पाण्डवाः)। तुकी० अगला शब्द।

यकृलोमन् (बहु०) एक जाति के लोगों का नाम है : ६. ९, ४६। तुकी० पिछला शब्द।

१. यक्ष (बहु० °क्षाः) एक प्रकार के अर्धदेवों के एक वर्ग का नाम है, : १. १, ३५ (यक्ष, साध्य, गुह्यक आदि सृष्टि के आरम्भ में दिव्याण्ड से उत्पन्न हुये). १०८ (शुक ने गन्धर्वों, यक्षों, राक्षसों आदि को महाभारत सुनाया). २५५ (ब्रह्मर्षयोऽमलाः कीर्त्यन्ते'''यक्षा महोरगाः); २, ९४. १७१ (मणिमत्प्रमुखैः). १८२; ६५, ७; ६६, ८ (पुलस्त्य की सन्तान); १६७, ४७; १७०, ९ (यक्षगन्धर्वरक्षसाम्). ६१ (ये कुरुओं के इतिहास को जानते हैं); २१०, ७ (सुन्द और उपसुन्द ने इन्हें पराजित किया था); २१२, २ (सुन्द और उपसुन्द ने इन्हें लूटा); २२७, २४ (अर्जुन पर आक्रमण किया); २२८, २१; २. १०, १८ (कुबेर की सभा में उपस्थित यक्षों का उल्लेख). ३०; ११, ५६ (ब्रह्मा की सभा में); १२, २ (कुबेर की सभा में); ३. ३, २९. ४० (सूर्य के रथ का अनुगमन करते हैं); २२, ३० (श्रीकृष्ण के साथ); ४१, ७; ४६, २५; ५३, १३; ८२, ९५ (वडवा तीर्थ में); ८३, ६ (कुरुक्षेत्र में); ८५, २५; ९०, २०; ९९, ५८ (रामदाशरथी के शरीर में); १०४, २१; १०९, ८; ११५, २४; १३९, ६ (चतुर्गणाः). १२; १४१, २३; १४६, २१. ३०; १४९, १३ (कृतयुग में इनका अस्तित्व नहीं था); १५०, २२; १५३, ९; १५४, ५; १५५, २४ (भीमसेन ने इनका कुबेर के पद्म सरोवर के निकट वध किया था); १५९, २७; १६०, ५. ४७. ४८. ५३. ५७ (भीमसेन ने इनका वध किया); १६१, १९. २१. २८. ३०. ३४. ३८. ४५. ४८. ५५;

१६२, ११. ३०. ३३ (यक्षराज कुबेर पाण्डवों के पास आये); १७३, १०. ४९. ७५; १७५, १४; १७७, २४; १७८, २; १७९, ३०; १८१, ३४; १८८, ७०. ७३. ८६. १२० (मार्कण्डेय जी ने नारायण के उदर में इन्हें भी देखा). १३७; २०१, ५; २०२, २१; २०४, ३; २२४, ८; २३०, ५२ (अविशन्ति च यं यक्षाः पुरुषं कालपर्यये। उन्मादयति स तु क्षिप्रं ज्ञेयोयक्षग्रहस्तु सः); २३१, ३४; २६८, २ (समूहेष्वपि यक्षरक्षसाम्); २७२, ४६; २७४, १७ (कुबेर को इनका अधिपति बनाया गया); २७५, २५. ३३. ३७ (विभीषण को इनकी सेना का सेनापति बनाया गया); २८१, ३. १२ (कुछ यक्षगण रावण की सेवा करते थे); २९१, ३१. ४८. ४९; ३१२, ३७; ३१३, १-१३३ (यक्ष युधिष्ठिर संवाद); ३१४, १-२९ (युधिष्ठिर ने अपने भाइयों को यक्ष से मुक्त कराया); ४. ५६, ४; ६८, १६; ७०, १२; ५. १०, ४१; ११, ७; १६, ३३ (कुबेर को इनका अधिपति बनाया गया); १७, २०; २९, १६; ५१, १६ (भीमसेन ने इनका वध किया था); ५९, २६; १११, ६ (ये भी पुरुष का दर्शन नहीं कर सकते). १०; १२०, ३; १२४, ५३; १३१, ७; १५६, २२; १६९, १८; १९२ ३७. ४०. ४६. ४८. ४९. ५०; ६. ८, ६ (हिरण्मय वर्ष के निवासी); २३, २२; ३४, २३; ३५, २२; ४१, ४; ६५, ६४; ७. ६, ५; ३३, ११; ६२, १६ (मान्धाता के यज्ञ में उपस्थित हुये); ८०, ४५; ९४, ३६; १३३, २; १४४, २४; १४७, ४२; १५८, ३५. ४५. ५१; १६३, १४. ३४; १८५, १४. १६; १८८, ३८; १९९, ३; २०१, ५२. ७३. ८१; ८. ३७, ३६ (गरुड-पिशाच सयक्षराक्षसान्); ८७, ५४; ८८, १; ९४, ६७; ९. ३७; २१; ४४, ४७; ४५, ७. २९; ४९, २० (आदित्यतीर्थ में); ५८, ५२; १०. ८, १२०. १२३; १२. २, १७ (महेन्द्र पर्वत पर); ४७, २० (ये नारायण को नहीं जानते); ५०, २५; ५९, ११९. १२४; १२१, २; १४९, १३; १५३, ९५; १६९, ७; १८८, ३; २१०, १५; २२८, ९३; २७१, १७. ५५; २८३, ९ (वैश्रवण, अर्थात् कुबेर इनके राजा थे); २८४, ६३; २८९, ८; २९५, १७, ३००, ६१; ३०१, ३; ३०२, ३१ (त्रैलोक्ये'''सयक्षभूतगन्धर्वं सकिन्नरमहोरगे); ३२८, २२; ३३३, १५; १३. ६, १४; १४, १४३ (शिव इनका रूप धारण करते हैं). २१३. २१५. ३१९. ३६५; १७, १८१; १८, ७६; १९, ४१; ९८, २५. २९. ३५. ४१. ५५. ५८. ६१; १०२, १८; १४०, ७. १४; १४२, ४२; १४९, १३५; १४. ८, ५ (मुञ्जवत् पर्वत पर शिव की उपासना करते हैं); ४२, ६७; ४३, १४; ४४, १५; ५४, ४. १९; ५७, २२. २३; ६५, ७; १८. ४, २२ (महाभारतयुद्ध में मारे गये कुछ योद्धा यक्षों में सम्मिलित हो गये); ५, २७ (घटोत्कच इत्यादि मृत्यु के बाद देवों और यक्षों में सम्मिलित हुये). ५५ (षष्टि शतसहस्राणि चकारान्यां स संहिताम् त्रिंशच्छतसहस्राणि देवलोके प्रतिष्ठितम् ॥ पित्र्ये पञ्चदश ज्ञेयं यक्षलोके चतुर्दश। एकं शतसहस्रं तु मानुषेषु प्रभाषितम). ५६ (शुक ने यक्षों और राक्षसों को महाभारत सुनाया)।

२. यक्ष (एक०) : ३. ३९, ४० (अर्जुन ने किरात से पूछा कि वह यक्ष तो नहीं हैं). ४२; ५५, १७ (नल से पूछा गया कि वह कोई यक्ष तो नहीं हैं); ५. १२१, १६ (ययाति से पूछा गया कि वह यक्ष तो नहीं है); १२. ३०, ३४।

तुकी० अलग-अलग यक्षों के निम्नलिखित नाम :

अमोघ : १४. २३१, ३५ (वात्यमोघो महायक्षो)।

मचक्रुक : ३. ८३, ९. २००।

माणिवर : ३. १३९, ५।

स्थूणाकर्ण : १. ६३, १२५; ५. १९१, २०. २१. २३. २६; १९२, ९. ३३. ३४. ३८. ४२. ४३. ४८. ५०. ५२. ५७।

३. यक्ष (एक०) – धर्म ने यक्ष का रूप ग्रहण किया : १. १, १६८; ३. ३१२, १२. ३१. ३९. ४०; ३१३, २९. ३६. ३८. ४०. ४३. ४५. ४७. ४९. ५१. ५३. ५५. ५७. ५९. ६१. ६३. ६५. ६७. ६९. ७१. ७३. ७५. ७७. ७९. ८१. ८३-८७. ८९. ९१. ९३. ९५. ९७. ९९. १०१. १०३. १०७. १०६. ११२. ११४. ११९. १२२. १२४. १२९. १३०. १३२. १३३; ३१४, १-२. ६. १३।

यक्षपति = कुबेर : ५. १९२, ३७. ४६।

यक्षप्रवर = कुबेर : ३. १५४, ५।

यक्षयुद्धपर्वन्, महाभारत के ३८वें अवान्तर पर्व का नाम है : "जटासुर के वध के पश्चात् पाण्डवगण नर-नारायण के आश्रम में लौट आये। एक दिन अपने सब भाइयों को एकत्र करके युधिष्ठिर ने इस प्रकार कहा : हमलोगों को वन में विचरते हुये चार वर्ष हो गये। अर्जुन ने यह संकेत किया था कि वे पाँचवें वर्ष में लौट आयेंगे। वे श्वेत पर्वत पर आ कर हम लोगों से मिलने वाले थे, अतः उन्हीं की प्रतीक्षा में हमलोग पड़े हुये हैं।' इस प्रकार कह कर युधिष्ठिर वहाँ निवास करनेवाले ब्राह्मणों का आशीर्वाद प्राप्त करने के बाद उन ब्राह्मणों तथा भाइयों के साथ वहाँ से प्रस्थित हुये। घटोत्कच आदि राक्षस भी उनकी सेवा के लिये साथ चले। पाण्डवगण महर्षि लोमश के द्वारा सर्वथा सुरक्षित थे। युधिष्ठिर अपने भाइयों के साथ पैदल चलते और कहीं राक्षस लोग उन सब को पीठ पर बैठाकर ले जाते थे। इस प्रकार वे सभी लोग अनेक स्थानों से होते हुये उत्तर दिशा की ओर चल रहे थे। कैलास, मैनाक, गन्धमादन की घाटियों और श्वेत पर्वत का दर्शन करते हुये उन्होंने पर्वतमालाओं के ऊपर अनेक कल्याणमयी सरितायें देखीं। सत्रहवें दिन वे सभी लोग हिमालय के एक पावन पृष्ठभाग में जा पहुँचे। वहाँ उन लोगों ने गन्धमादन का निकट से दर्शन किया (उस प्रदेश की शोभा का वर्णन)। वहीं सुन्दर पुष्पवृक्षों से घिरा हुआ वृषपर्वा का आश्रम स्थित था। पाण्डवों ने उन धर्मात्मा राजर्षि के पास जाकर उन्हें प्रणाम किया। उन राजर्षि ने भी पाण्डवों का पुत्र के समान अभिनन्दन किया। पाण्डवगण उस आश्रम में सात दिन तक ठहरे रहे। तदनन्तर अपने साथ आये ब्राह्मणों को उन लोगों ने वृषपर्वा को सौंप कर आठवें दिन वहाँ से प्रस्थान का विचार किया। उनलोगों ने अपनी शेष सामग्री तथा अपने रत्नमय आभूषण आदि भी वृषपर्वा के पास रख दिया। वृषपर्वा से उपदेश ग्रहण करने के बाद पाण्डवगण वहाँ से पुनः उत्तर दिशा की ओर चले। नाना प्रकार के सुन्दर पर्वतीय शिखरों से होते हुये चौथे दिन पाण्डव हिमालय पर्वत पर जा पहुँचे (हिमालय की शोभा का वर्णन)। तदनन्तर उसपर्वत की अत्यन्त दुर्गम गुफाओं और दुर्गम्य प्रदेशों को पार करते हुये पाण्डवगण द्रौपदी, पुरोहित धौम्य और महर्षि लोमश के साथ आगे बढ़ते हुये माल्यवान् नामक महान पर्वत पर पहुँचे जहाँ से उन सब ने सिद्ध-चारणों से सेवित किम्पुरुषों के निवासस्थान, गन्धमादन का दर्शन किया (वहाँ की प्राकृतिक शोभा का वर्णन)। उस सुन्दर प्रदेश में पाण्डवों ने देवनदी गङ्गा का दर्शन किया। गिरिराज गन्धमादन का दर्शन करने से उन्हें तृप्ति नहीं होती थी। तदनन्तर पाण्डवों ने वहाँ सुन्दर पुष्पों और फलों वाले वृक्षों से घिरे राजर्षि आर्ष्टिषेण का आश्रम देखा और वहाँ जाकर राजर्षि का दर्शन किया। (३. १५८)।

"राजा युधिष्ठिर ने राजर्षि आर्ष्टिषेण के चरणों में प्रणाम किया। अन्य पाण्डवों ने भी राजर्षि को विधिवत प्रणाम किया तथा सभी उन्हें घेर कर खड़े हो गये। आर्ष्टिषेण ने अपनी दिव्य दृष्टि से पाण्डवों को पहचान लिया और उनका कुशल-समाचार पूछा। राजर्षि ने तब उपदेशात्मक रूप में पाण्डवों से विविध प्रश्न किये और धर्म का सारांश बताया। युधिष्ठिर ने आर्ष्टिषेण को अपने धर्माचरण के सम्बन्ध में आश्वस्त किया। आर्ष्टिषेण ने बताया कि पर्वों की सन्धिवेला में बहुत से ऋषिगण आकाशमार्ग से उस पर्वत का सेवन करने आते हैं। उनमें से कितने केवल जल को और कितने केवल वायु को पीकर जीवन-निर्वाह करते हैं। पर्व के दिनों में उस पर्वत पर भेरी, पणव, शङ्ख और मृदङ्ग की ध्वनि भी सुनाई पड़ती है। इस प्रकार उस पर्वत की अलौकिकता का वर्णन करने के बाद आर्ष्टिषेण ने अपने आश्रम में रहकर ही सब कुछ देखने सुनने का पाण्डवों को परामर्श देते हुये बताया कि आगे देवताओं की विहार-स्थली है अतः वहाँ जाना असम्भव है। उन्होंने यह भी बताया कि वहाँ थोड़ी सी भी चपलता करने पर राक्षस लोग प्रहार कर देते हैं। यक्षाधिपति कुबेर जब उस कैलास शिखर पर विराज-

मान होते हैं तब वे उदित हुये सूर्य की भाँति शोभित होते हैं। अतः आर्ष्टिषेण ने पाण्डवों को परामर्श दिया कि जब तक अर्जुन नहीं आते तब तक वे सभी वहीं निवास करें (३. १५९)।

"जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायनजी ने बताया : आर्ष्टिषेण के उपदेशों को सुनने के बाद पाण्डवगण उनकी आज्ञा का पालन करते हुये वहीं रहने लगे। उन दिनों लोमश जी पाण्डवों को नाना प्रकार की कथायें सुनाया करते थे। वहाँ निवास करते हुये पाण्डवों को कई मास हो गये। एक दिन वहीं के एक महान जलाशय में निवास करनेवाले ऋद्धिमान नामक एक महान नाग को गरुड ने सहसा झपाटा मार कर पकड़ लिया। उस समय वह महान् पर्वत हिलने लगा और बड़े-बड़े वृक्ष गिर पड़े। पाण्डवों सहित वहाँ के समस्त लोगों ने उस आश्चर्यजनक घटना को प्रत्यक्ष देखा। तत्पश्चात उस पर्वत के शिखर से पाण्डवों की ओर हवा के एक झोंके के साथ अनेक प्रकार के पुष्पों से बनी हुई बहुत सी सुन्दर मालायें आकर बिखर गईं। उन मालाओं में पाँच रंग के दिव्य पुष्प गुँथे थे। द्रौपदी ने उन पुष्पों को देख कर एकान्त में बैठे भीमसेन से कहा : 'मैं चाहती हूँ कि तुम्हारे बाहुबल के वेग से भयभीत हो कर सम्पूर्ण राक्षस इस पर्वत को छोड़ दें और दसों दिशाओं में भाग जाँय। तत्पश्चात विचित्र मालाधारी एवं शिवस्वरूप इस उत्तम शैलशिखर को तुम्हारे सब सुहृद भय तथा शोक से रहित हो कर देखें। मैं भी तुम्हारे बाहुबल से सुरक्षित हो कर इस शैलशिखर का दर्शन करना चाहती हूं।' द्रौपदी की बात सुन कर भीमसेन ने इसे अपने ऊपर आक्षेप समझा। वे मनस्वी, बलवान्, अभिमानी और शूर वीर थे। वे तत्काल मदोन्मत्त सिंह और मद की धारा बहानेवाले गजराज की भाँति उस पर्वत पर चढ़ने लगे। उस समय सब भूतों ने धनुष-बाणधारी भीमसेन को देखा। उनके हाथ में गदा भी थी और वे भय अथवा घबराहट छोड़कर उस पर्वत पर चढ़ गये। ऊपर जा कर उन्होंने कुबेर का निवासस्थान देखा जो सुवर्ण और अन्यान्य रत्नों से विभूषित था (कुबेर सदन की शोभा का वर्णन)। भीमसेन के हाथ में उस समय गदा, खड्ग और धनुष सुशोभित थे। उन्होंने अपना शङ्ख बजाया जिसे सुन कर यक्ष, राक्षस, और गन्धर्व रोमांचित हो कर भीम की ओर दौड़ पड़े। तदनन्तर उन यक्षों, राक्षसों और गन्धर्वों का भीमसेन के साथ युद्ध प्रारम्भ हो गया। वे यक्ष और राक्षस अत्यन्त मायावी थे। भीमसेन पर उन सब ने शूल, शक्ति, आदि से घोर आक्रमण कर दिया। भीम ने आकाश में उड़कर युद्ध कर रहे मायावी राक्षसों के शरीरों को अपने बाणों द्वारा अच्छी प्रकार छेद डाला जिससे राक्षसों के शरीर से रक्त की भारी वर्षा होने लगी (भीम और यक्ष राक्षसों के युद्ध का वर्णन)। भीमसेन के भय से पीड़ित होकर विकृत एवं विशाल अंगोंवाले यक्ष-राक्षस अपने अपने अस्त्र-शस्त्रों को छोड़कर दक्षिण दिशा की ओर भाग गये। वहाँ कुबेर-सखा मणिमान् भी उपस्थित थे। अपने सैनिकों को युद्ध से विमुख होते देख कर उन्होंने उन सब को प्रोत्साहित किया जिससे सब ने लौट कर भीमसेन पर पुनः आक्रमण कर दिया। गजराज की भाँति विशाल मणिमान् जब तीव्र वेग से भीमसेन की ओर बढ़े तब भीमसेन ने वत्सदन्त नामक तीन बाणों से मणिमान् के वक्ष पर प्रहार किया। मणिमान् ने भी एक भयंकर शक्ति से भीम की दाहिनी भुजा पर प्रहार किया। उस शक्ति की गहरी चोट से भीम अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे और उन्होंने एक सुवर्णमण्डित गदा हाथ में ले कर मणिमान् पर आक्रमण किया। मणिमान ने भीम पर त्रिशूल से वार किया किन्तु वह भीम की गदा से टकरा कर टूट गया। तदनन्तर भीम ने सहसा आकाश में उछल कर अपनी गदा से मणिमान् पर प्रहार किया जिसके आघात से मणिमान् की मृत्यु हो गई। अपने नेता को मरा हुआ देख कर शेष निशाचर भयंकर आर्तनाद करते हुये पूर्व दिशा की ओर भाग चले (३. १६०)।

"उस समय उस पर्वत की गुफा नाना प्रकार के शब्दों से प्रतिध्वनित हो रही थी। उस प्रतिध्वनि को सुनकर युधिष्ठिर, नकुल, सहदेव, पुरोहित धौम्य, द्रौपदी तथा समस्त ब्राह्मण और सुहृद भीमसेन को न देखने के कारण बहुत चिन्तित हो उठे। द्रौपदी को राजर्षि आर्ष्टिषेण की देख-रेख में सौंप कर वे सभी पाण्डव हाथों में अस्त्र-शस्त्र लिये एक साथ पर्वत पर चढ़ गये। वहाँ उन लोगों ने भीमसेन को तथा उनके द्वारा मारे गये विशालकाय राक्षसों को देखा। तब वे उत्तम आश्रय को प्राप्त हुये पाण्डव अपने भाई भीमसेन को हृदय से लगाकर उनके पास ही बैठ गये। उस समय उन चार महान धनुर्धर बन्धुओं से वह पर्वत-शिखर सुशोभित होने लगा। तब युधिष्ठिर ने कुबेर का भवन और मारे गये राक्षसों की ओर दृष्टिपात करने के पश्चात अपने भाई भीमसेन से कहा : 'तुमने दुःसाहसवश अथवा मोह के कारण जो यह पापकर्म किया है वह मुनिवृत्ति से रहनेवाले तुम्हारे अनुरूप नहीं है। राक्षसों का यह संहार व्यर्थ ही किया गया है। अपने इस कार्य से तुमने न केवल राजद्रोह वरन् देवताओं के प्रति भी द्रोह का कार्य किया है। यदि तुम ऐसे कार्य करना चाहते हो जो मुझे प्रिय लगे तो आज से फिर कभी ऐसा काम तुम्हें नहीं करना चाहिये।' वैशम्पायन जी ने बताया कि युधिष्ठिर धर्म से कभी च्युत नहीं होते थे। अतः उपरोक्त बातें कह कर वे उसी विषय पर बार-बार विचार करने लगे। उधर भीमसेन की मार से बचे हुये राक्षस एकत्रित होकर कुबेर के भवन में गये और वहाँ आर्तनाद करने लगे। उन लोगों ने कुबेर को बताया कि एक मनुष्य ने बलपूर्वक उस पर्वत को रौंद कर युद्ध में क्रोधवश-संज्ञक राक्षसगणों को मार भगाया है। उन सब ने मणिमान् की मृत्यु का भी समाचार दिया। यह सब वृत्तान्त सुन कर कुबेर अत्यन्त कुपित हो उठे। भीमसेन ने यह दूसरा अपराध किया है यह सुन कर यक्षराज कुबेर के क्रोध की सीमा न रही। उन्होंने तत्काल अपना विशाल रथ तैयार कराया और उस पर बैठकर गन्धमादन पर्वत पर आये। उनके साथ समस्त यक्ष भी वहाँ आये। वहाँ पाण्डवों को देख कर कुबेर मन-ही-मन सन्तुष्ट हुये क्योंकि वे देवताओं का कार्य सिद्ध करना चाहते थे। युधिष्ठिर, नकुल और सहदेव यक्षराज कुबेर को प्रणाम करके अपने को अपराधी-सा मानते हुये करबद्ध खड़े हो गये। भीमसेन को राक्षसों ने बहुत आहत कर दिया था। उस अवस्था में कुबेर को देख कर उनके मन में कोई ग्लानि नहीं हुई। वे उस समय भी हाथ में धनुष-बाण लिये युद्धार्थ सन्नद्ध थे। यह देख कर नरवाहन कुबेर ने धर्मपुत्र युधिष्ठिर से कहा : 'तुम सदा सब प्राणियों के हित में तत्पर रहते हो, अतः तुम अपने भाइयों सहित इस शैलशिखर पर निर्भय हो कर रहो। तुम्हें भीम पर भी क्रोध नहीं करना चाहिये। ये यक्ष और राक्षस काल के द्वारा पहले ही मारे गये थे। भीम तो इसमें निमित्त मात्र बने हैं।' इस प्रकार युधिष्ठिर से प्रेमपूर्वक वचन कहकर कुबेर ने भीमसेन से कहा : 'तुमने जो कार्य किया है उसके लिये तुम्हें लज्जित नहीं होना चाहिये क्योंकि यक्ष और राक्षस का यह विनाश देवताओं को पहले ही प्रत्यक्ष हो चुका था। तुम्हारे कार्य से मुझे पहले भी प्रसन्नता हो चुकी है। तुमने द्रौपदी के लिये जो यह कार्य किया है उसके प्रति मेरे मन में कोई विचार नहीं है। तुमने अपने बाहुबल से यक्षों तथा राक्षसों का जो विनाश किया है उससे मैं तुम पर बहुत प्रसन्न हूँ। आज मैं एक भयंकर शाप से मुक्त हो गया। पूर्वकाल में किसी अपराध पर कुपित हो महर्षि अगस्त्य ने मुझे शाप दे दिया था। उस शाप का तुमने निराकरण कर दिया है। मुझे पूर्वकाल से ही यह दुःख देखना बदा था।' तब महाराज युधिष्ठिर ने कुबेर से अगस्त्य के शाप के कारण के सम्बन्ध में बताने के लिये कहा। कुबेर ने बताया : 'प्राचीन काल में कुशवती में देवताओं की मन्त्रणा-सभा चल रही थी जिसमें मैं भी सम्मिलित और तीन सौ महापद्म यक्षों के साथ उस सभा में गया था। वहाँ जाते समय मार्ग में मुझे अगस्त्य दिखाई दिये जो यमुना तट पर तपस्या कर रहे थे। उन्हें देखकर मेरे मित्र राक्षसराज मणिमान् ने मूर्खता, अज्ञान, अभिमान एवं मोहवश उन मुनिवर पर थूक दिया। उसी समय अगस्त्य जी ने शाप दिया कि मेरे साथ के यक्ष, राक्षस तथा मणिमान् केवल एक मनुष्य के हाथों मारे जायेंगे। अतः इन यक्षों और राक्षसों के मारे जाने तथा इनको मारनेवाले मनुष्य का दर्शन करने से मैं उक्त शाप से मुक्त हो गया हूँ।' (३. १६१)।

"तदनन्तर सत्ययुग के आचरणों का उल्लेख करते हुये कुबेर ने युधिष्ठिर को उपदेश दिये। उन्होंने युधिष्ठिर से भीमसेन के उद्धत व्यवहार पर नियन्त्रण

रखने के लिये भी कहा। कुबेर ने पाण्डवों से कहा कि वे राजर्षि आर्ष्टिषेण के आश्रम पर लौट कर पूरे कृष्ण पक्ष भर वहीं शोक और भय से रहित होकर निवास करें। उन्होंने आश्वासन दिया कि उनके अनुचर यक्ष पाण्डवों का संरक्षण करते हुये उन सब के लिये अन्नपान आदि की व्यवस्था करेंगे। अर्जुन के शील-स्वभाव की प्रशंसा करते हुये कुबेर ने बताया कि वे शीघ्र ही अस्त्रविद्या का अभ्यास करने के बाद इन्द्रलोक से वापस आकर पाण्डवों से मिलेंगे। इस प्रकार युधिष्ठिर को उपदेश और सान्त्वना देने के बाद कुबेर श्वेतपर्वत चले गये। उनके पीछे सहस्रों यक्ष और राक्षस भी अपने-अपने वाहनों पर आरूढ़ होकर आकाश मार्ग से चले। कुबेर की आज्ञा से राक्षसों के निर्जीव शरीर उस पर्वत-शिखर से दूर हटा दिये गये। पाण्डव भी अपने उन आश्रमों में सम्पूर्ण राक्षसों से पूजित एवं उद्वेगशून्य होकर सुख से रात्रि व्यतीत करने लगे। (३. १६२)।

"सूर्योदय होने पर आर्ष्टिषेण सहित धौम्य नित्यकर्म पूर्ण करने के बाद युधिष्ठिर के पास आये। पण्डवों ने भी आर्ष्टिषेण तथा धौम्य के चरणों में प्रणाम किया। तदनन्तर धौम्य ने युधिष्ठिर का दाहिना हाथ पकड़ कर पूर्व की ओर देखते हुये सूर्य की किरणों में प्रकाशित हो रहे मन्दराचल की ओर संकेत किया और बताया कि इन्द्र तथा कुबेर पूर्व दिशा की रक्षा करते हैं। पूर्व से ही उदित होने वाले सूर्य की सम्पूर्ण प्रजा तथा ऋषि, सिद्ध और साध्य आदि उपासना करते हैं। समस्त प्राणियों के ऊपर प्रभुत्व रखनेवाले राजा यम दक्षिण दिशा का आश्रय ले कर रहते हैं। उनके निवासस्थान को संयमन कहते हैं। सूर्यदेव जहाँ अस्त होते हैं उसे अस्ताचल कहते हैं। महामेरु पर्वत, जो उत्तर दिशा को उद्भासित करता हुआ स्थित है वहाँ केवल ब्रह्मवेत्ताओं की ही पहुँच हो सकती है। उसी पर्वत पर ब्रह्मा निवास करते है। दक्ष आदि सहित समस्त प्रजापति भी इसी मेरु पर्वत पर निवास करते हैं। वसिष्ठ आदि सप्तर्षि इन्हीं प्रजापतियों में लीन होते और पुनः इन्हीं से प्रकट होते हैं। समस्त पञ्चभूतमयी प्रकृति के अक्षय उपादान, अनादि और अनन्त भगवान् नारायण का उत्तम स्थान ब्रह्मलोक से भी ऊपर है। वह स्थान सूर्य और अग्नि से भी तेजस्वी है। तथा स्वयं अपनी प्रभा से प्रकाशित होता है। पूर्व दिशा में मेरु पर ही नारायण का स्थान सुशोभित है। यत्नशील महात्मा भक्ति के प्रभाव से वहाँ भगवान् नारायण को प्राप्त होते हैं। सूर्य और चन्द्रमा प्रतिदिन इस निश्चल मेरु गिरि की प्रदक्षिणा करते हैं। शीत की सृष्टि करने की इच्छा से सूर्यदेव दक्षिण दिशा का आश्रय लेते हैं। इस दक्षिणायन से निवृत्ति होने के बाद सूर्यदेव पुनः ग्रीष्म और फिर वर्षा का सृजन कर के चराचर जगत् के प्राणियों का पोषण करते हैं। सूर्य निरन्तर चलनेवाली गति हैं। वे सम्पूर्ण भूतों की आयु और कर्म का विभाग करते हुये दिन-रात, कला-काष्ठा आदि समय की निरन्तर सृष्टि करते रहते हैं (३. १६३)।

"गन्धमादन पर निवास करते हुये अर्जुन के दर्शन की इच्छा रखनेवाले पाण्डव अर्जुन के आगमम की प्रतीक्षा करते थे (उस पर्वत की नैसर्गिक शोभा का वर्णन)। वहाँ गन्धर्व और अन्यान्य महर्षिगण भी पाण्डवों से मिलने आते रहते थे। इस प्रकार लगभग एक मास तक पाण्डवों ने उस पर्वत पर व्यतीत किया। इधर अर्जुन ने इन्द्र-भवन में पाँच वर्ष रह कर सभी दिव्यास्त्र प्राप्त कर लिये। अग्नि, वरुण, सोम, वायु, विष्णु, इन्द्र, पशुपति, ब्रह्मा, परमेष्ठी, प्रजापति, यम, धाता, सविता, त्वष्टा तथा कुबेर सम्बन्धी अस्त्रों को देवेन्द्र से प्राप्त करके अर्जुन ने उन्हें प्रणाम किया। तदनन्तर इन्द्र से अपने भाइयों के पास लौटने की आज्ञा पा कर अर्जुन अत्यन्त प्रसन्न हुये और हर्षोल्लास में भर कर गन्धमादन पर आये। (३. १६४)।

यक्षयुद्धम् से यक्षों के साथ युद्ध का तात्पर्य है (१. २, ५२)।

यक्षरक्षोधिप = कुबेर (१२. २८९, ८)।

यक्षराक्षसभर्तृ = कुबेर (१२. ५९, ११९)।

१. यक्षराज = कुबेर (३. ४०, १६; ८. ८८, २५)।

२. यक्षराज = मणिभद्र (३. ६४, १३०)।

यक्षराज = कुबेर (३. १५४, ८)।

यक्षराजन् = कुबेर (९. ४७, २८)।

यक्षाधिप = कुबेर (३. ६५, २३; २९१, १८; ५. १९२, ४३)।

यक्षाधिपति = कुबेर (३. १६१, १७. २३)।

यक्षिणी : ३. ८३, २३ (सम्भवतः एक तीर्थ का नाम); ८४, १०५ (एक देवी जिनके प्रसादरूप नैवेद्य के भक्षण से ब्रह्महत्या से मुक्ति हो जाती है)।

यक्षी : १. ९७, ३२ (गङ्गा से पूछा गया कि वह यक्षी तो नहीं है); ३. ६४, १२० (दमयन्ती से यह पूछा गया कि वह यक्षी तो नहीं है); ६५, २७ (दमयन्ती को यक्षी समझा गया); २६५, २ (द्रौपदी से पूछा गया कि वह यक्षी तो नहीं है); ४. ९ १४

१. यक्षेन्द्र = कुबेर (५. १९२, ४४. ४९; १४. ६५, ६)।

२. यक्षेन्द्र = मणिभद्र (३. १३९, ७)।

३. यक्षेन्द्र = पिङ्गल (३. २३१, ५१)।

४. यक्षेन्द्र = अरन्तुक (३. ८३, ५२)।

यक्ष्मा, एक व्याधि का नाम है। चन्द्रमा पर कुपित हो कर प्रजापति दक्ष ने उन्हीं के लिये इस रोग की सृष्टि की थी (९. ३५, ६१-६२)।

यजन, एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, १०६)।

यजिन् = शिव (सहस्रनाम)।

यजुःपादभुज = शिव (सहस्रनाम)।

यजुर्मय = शिव (सहस्रनाम)।

यजुर्वेद : २. ११, ३२ (ब्रह्मा की सभा में उपस्थित वेदों में यह भी था); ३. १८९, १४ (अन्य वेदों के साथ यह भी नारायण से उत्पन्न हुआ); ८. ३४, ४५ (शिव का पृष्ठरक्षक बना); १२. ३४१, ८; ३४२, ९९ (षट्पञ्चाशतमष्टौ च सप्तत्रिंशतमित्युत। यस्मिञ्शाखा यजुर्वेदे सोऽहमाध्वर्यवे स्मृतः)। तुकी० अगला शब्द।

यजुस् (अधिकांशतः बहु० जूंपि): १. १, ६६; २९, ३५; ७०, ३८; ३. २६, ३; २९, ३९; ४३, १८; १४९, १४ (सत्ययुग में नहीं था); ३१३, ५३. ५४ (एक०); ५. ४३, ३. ४; ४४, २८; १०८, ११ (सूर्य ने इसे प्रदान किया); ९. ३६, ३४; १२. ४७, ४४; ५२, २२; ६०, ४३. ४४. ४७; ७६, ३; १९३, १४; २०१, ८; २०६, १६. १८; २३२, ३३; २३३, १; २३८, ८; २४३, ६; २४४, २६; २५१, २; २६८, २६. ३७; २८४, १३८ (यजुषां शतरुद्रियम्); ३०९, १५; ३१८, २ (याज्ञवल्क्य ने सूर्य से इसे प्राप्त किया था). ५. २१; ३३५, ४०; १३. १४, ३२३ (यजुषां शतरुद्रियम्); १६, ४८; ८५, ९०; ९४, २३; १६२, ४३ (यजुषा संस्कृतं मांसं)। तुकी० यजुर्वेद।

१. यज्ञ (मूर्तिमान यज्ञ) : ५. ११३, ९; १२. २६, २४; ६०, ४८ (गाथा यज्ञगीताः) (

२. यज्ञ = शिव (सहस्रनाम)।

३. यज्ञ = श्रीकृष्ण (विष्णु) : १२. ४३, १३; ३४१, १५; १३. १४९, ६१।

४. यज्ञ = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

यज्ञकृत् = विष्णु (सहस्रनाम)।

यज्ञगर्भ = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

यज्ञगुह्यम् = विष्णु सहस्रनाम)।

१. यज्ञपति = शिव (सहस्रनाम)।

२. यज्ञपति = विष्णु : १२. ३३९, १०; १३. १४९, ११७ (सहस्रनाम)।

यज्ञभागविद् = शिव (सहस्रनाम)।

यज्ञभागहर = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

१. यज्ञभुज् = अग्नि (३. २६३, २५)।

२. यज्ञभुज् = विष्णु (सहस्रनाम)।

यज्ञभृत् = विष्णु (सहस्रनाम)।

यज्ञमुष् (बहु०) देवों के एक वर्ग का नाम है (३. २२०, १०. ११)।

यज्ञमृगव्याध = शिव (सहस्रनाम)।
यज्ञयोनि = महापुरुष (महापुरुषस्तव)
१. यज्ञवाह, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७०)।
२. यज्ञवाह = शिव (सहस्रनाम)।
यज्ञवाहन = विष्णु (सहस्रनाम)।
यज्ञसमाहित = शिव (सहस्रनाम)।
यज्ञसम्भव = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।
यज्ञसाधन = विष्णु (सहस्रनाम)।
१. यज्ञसेन — देखिये द्रुपद।
२. यज्ञसेन = श्रीकृष्ण (१२. ४३, १२)।
यज्ञसेनसुत, अर्थात द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न (७. १९४, १४)।
१. यज्ञसेनि = शिखण्डिन् : ६. ११२, १९; ७. १०, ४८; १४, ४४; २५, ३६ (यज्ञसेनिं शिखण्डिनम्); ९५, ४४; ९६, ७. ८; १६९, ३३; ९. ५६, ३३ (इसने भीष्म का वध किया था)।
२. यज्ञसेनि = धृष्टद्युम्न : ७. ७, ४८; ११४, ६४; १९२, ३४; ८. ७५, ११ (यज्ञसेनिः सेनापतिः)।
यज्ञसेनी = द्रौपदी : १. १६७, ७ (इसका स्वयंवर); १९१ १. ३. ७; २. ५२, ४८; ५८, ३३; ६७, ४. १७. २५. ३३. ३४; ६८, १२. ४५. ४६; ७०, ३; ७१, ४. २०; ७७, १०. ११; ३. २३, १६; ३१, १; ३३, १; ३४, १८; १४१, ४; १८३, २३. २४. ३१; २३३, ४. ६१; २६९, १६. २७; २७०, २; ४. ४, ५६; १४, २; १९, ३८; २२, २; ५. २५, ३; २९, ४३. ४६; ५०, २२; ८. ६६, ४५; ८३, २०; ९. ५९, १०; ६१, ४३; १०. ११, १६; ११. १५, ३९; १२. १५, १; १४. १२, ११; १६. ७, ३; १७. २, ३. ४।
यज्ञस्तुत = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।
यज्ञहन् = शिव (सहस्रनाम)।
यज्ञहृदय महापुरुष (महापुरुषस्तव)।
१. यज्ञाङ्ग (बहु०) : १०. १८, ७ (चत्वारि). १७ (यज्ञाङ्गा:न)।
२. यज्ञाङ्ग = विष्णु (सहस्रनाम)। तुकी० १२. ४७, ४७ (यज्ञाङ्गो यो वराहो वै भूत्वा)।
यज्ञात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ४२)।
यज्ञाधिप = शिव (सहस्रनाम)।
यज्ञानां पतिः = शिव (७. २०२, ४८)।
यज्ञान्तकृत् = (विष्णु सहस्रनाम)।
यज्ञारि = शिव (सहस्रनाम)।
यज्ञिन् = विष्णु (सहस्रनाम)।
यज्वन् = विष्णु (सहस्रनाम)।
१. यति, नहुष के प्रथम पुत्र और ययाति के बड़े भाई का नाम है : १. ७५, ३०. ३१ (ये योग का आश्रय लेकर ब्रह्मभूत मुनि हो गये थे।)
२. यति, विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ४, ५८)।
३. यति = शिव (१४. ८, १७)।
यद् अथवा यत्तद् = विष्णु (सहस्रनाम)।
यथावास, एक वानप्रस्थी ऋषि का नाम है जो वानप्रस्थ धर्म का पालन एवं प्रसार करके स्वर्गलोक में गये थे (१२. २४४, १७)।
१. यदु, ययाति के पुत्र और यदुवंशियों के पूर्वज का नाम है : १.; ७५, ३५ (इनका वंश). ३७. ४३ (इन्होंने ययाति का वृद्धत्व लेना अस्वीकार कर दिया); ८३, ९ (ये ययाति और देवयानी के पुत्र थे) ८४, १. ३ (अपने पिता को अपनी युवावस्था देना अस्वीकार कर देने पर इनके पिता ने इनकी सन्तान को राज्याधिकार से वंचित होने का शाप दिया); ८५, २०. २१. २४. २६ (ये राज्याधिकार से वंचित हुये). ३४ (यादव इनके वंशज हैं); ८६, १२; ९५, ९. १० (यदोर्यादवाः) १९७, ३२-३३ (भगवान् नारायण ने अपने मस्तक से दो केश निकाले जिनमें से एक श्वेत था और दूसरा श्याम। वे दोनों केश यदुकुल की दो स्त्रियों, रोहिणी और देवकी के भीतर प्रविष्ट हुये। रोहिणी से बलदेव उत्पन्न हुये जो भगवान् नारायण के श्वेत केशरूप थे और देवकी के गर्भ से श्याम केशरूप भगवान् श्रीकृष्ण का प्रादुर्भाव हुआ); ५. १२०, २. १३; १४९, ४. ६. ७ (यादवानां कुलकरो). ९ (यदु देवयानी के पुत्र और शुक्राचार्य के दौहित्र थे। ये बलवान्, उत्तम पराक्रम से सम्पन्न एवं यादववंश के प्रवर्तक हुये। इनकी बुद्धि मन्द थी और दर्पवश इन्होंने समस्त क्षत्रियों का अपमान किया था। ये पिता की अवज्ञा तथा भाइयों और पिता का अपमान करते थे। उन दिनों भूमण्डल में यदु ही सबसे बलवान, और समस्त राजाओं को वश में करके हस्तिनापुर में निवास करते थे। इनके पिता ययाति ने अत्यन्त कुपित हो कर इन्हें राज्याधिकार से वंचित कर दिया। इनके जिन भाइयों ने इनका अनुसरण किया उन्हें भी ययाति ने शाप दिया); ७. १४४, ६ (देवमीढ़ ने इनके वंश में जन्म लिया); १२. २९, ९८ (अन्त्येषु पुत्रान्निक्षिप्य यदुद्रुह्युपुरोगमान्); १३. १४७, २८ (इनके पुत्र का नाम क्रोष्टा था); १६५, ४८। तुकी० दैवयानेय।
२. यदु, उपरिचर वसु के पुत्र, एक राजकुमार का नाम है (१. ६३, ३१)।
३. यदु (बहु० वः), एक जाति, सामान्यतया वृष्णियों का द्योतक है : १. १, ४६ (इनका वंश); २, ३५८ (यदुवीराणामापाने वैशसं); ६७, ६२ (श्रीकृष्ण का जन्म यदुवंश में हुआ था); १८७, ९ (यदुवीरमुख्यः); १९७, ३३ (नारायण के श्याम केश से यदुवंश में श्रीकृष्ण का जन्म हुआ था); २. २, ३३ (यदुश्रेष्ठैरुग्रसेनमुखैस्तथा); ३६, १६; ३. १२०, ३०; २३३, ३; २७२, ७१; ५. ८३, १८; ६. ५९, ९९; ६०, ९; ७. ११८, १६; १४०, १९; ८. ३७, ३४ (यदुसदनमुपेन्द्रपालितम्); ७६, ३३; ९. ४९, १; १०. १२, १; १३, ९; १२. ५०, ११; १६६, ७९; १६. ४, २. ९; ६, २०; ८, १३; १७. १, ८ (यदूनां परिशेषश्च वज्रः)।
यदुकुल-पाण्डव-नन्दन = श्रीकृष्ण (७. १८२, २७)।
यदुकुलश्रेष्ठ = श्रीकृष्ण (१३. १७, ६)।
१. यदुकुलोद्वह = श्रीकृष्ण : (९. ६०, ३९; ६३, ३०; १३. १४, ३१)।
२. यदुकुलोद्वह = वसुदेव (१४. ६१, ३७)।
१. यदुनन्दन = बलराम : ९. १२, ६; ३५, १३; ३७, ४०. ५९; ४१, १; १०. ९, २६।
२. यदुनन्दन = श्रीकृष्ण : २. २३, १; २४, १. ३४; ४३, २०. २२; ८. ६९, १२; ७१, १ (गोविन्दो यदुनन्दनः); ९. ३३, १७; ६२, १७; १४. ६६, १७; ७०, ९; ७१, २०; ८६, १२; ८७, २३; १६. ३, ३५।
यदुनन्दनी = सुभद्रा (१४. ६१, ३४)।
यदुपुङ्गव = श्रीकृष्ण : २. २, ११; ८. ५३, २१; ९६, ८. १६; ९. ५४, ४१; १२. ४८, ११. १२।
१. यदुप्रवीर = बलराम : १. १९१, २१; ९. ३५, ३४।
२. यदुप्रवीर = श्रीकृष्ण : १. १९१, २१; ६. ५९, ९९; १२. ४९, ९; १४. ६६, १६।
यदुवंशविवर्धन = श्रीकृष्ण (६. ६५, ६७)।
यदुवर (द्वि० °रौ) = बलराम और श्रीकृष्ण (९. ६०, १२)।
१. यदुवीर = श्रीकृष्ण (१२. ३१, ४०)।
२. यदुवीर = सात्यकि (७. १५६, ३१)।
यदुवीरमुख्य = श्रीकृष्ण (१. १८७, ९)।
यदुवृष = श्रीकृष्ण (१२. ५२, ३४)।
यदुव्याघ्र = सात्यकि (६. ५४ १२०)।
१. यदुशार्दूल = बलराम (९. ३७, २५)।
२. यदुशार्दूल = श्रीकृष्ण (३. २४, २; १२. ४३, २; ४८, १४)।
१. यदुश्रेष्ठ = बलराम (९. ५३, १६)।
२. यदुश्रेष्ठ = शूर : १. ६७, १२९; १११, १।

३. यदुश्रेष्ठ = श्रीकृष्ण : २. २, १२; २०, २०; ४५, २५; ३. २३५, १८; ६. ८१, ३७; १२. ३७, २०; ५४, १३; ८१, ३१; १३. १४, ३७३; १४७, ६२; १४९, ८८ (विष्णु सहस्रनाम)।

यदुसिंह = बलराम (९. ५२, २९)।

यदुसुखावह = श्रीकृष्ण (५. ८३, २८)।

१. यदूत्तम = श्रीकृष्ण (५. ७२, ५०; ९. ६३, ५८; १०. १२, १५)।

२. यदूत्तम = सात्यकि (७. १५६, ३२; ८. ८२, २५)।

१. यदूद्वह = श्रीकृष्ण (३. २६३, २४)।

२. यदूद्वह = वसुदेव (१४. ६१, ३९)।

१. यम, विवस्वान् के पुत्र का नाम है जिन्हें अक्सर धर्म नाम भी दिया जाता है : १. २, २६२; ४१, १४ (नेता यमस्य सदनं प्रति); ४२, ३४; ५५, ३ (यमस्य यज्ञो यथा). ११ (धर्मराजो यमो वा). २५; ७१, ३९; ७४, ३० (समस्त प्राणियों के शुभाशुभ कर्मों के साक्षी). ३१. ३२. ८५; ७५, ११ (विवस्वान् के पुत्र); ८२, १२; ९४, २१; ९५, ३१ (रेतोधाः पुत्र'''यमक्षयात्); १०२, ७१; १२५, २६; १५१, ४०; १५३, २९; १६३, १०; १७४, ९; १८७, ६ (द्रौपदी के स्वयंवर को देखने के लिये आये); १९७, २ (नैमिषारण्य में इन्होंने देवताओं के यज्ञ में शामित्र कर्म का सम्पादन किया); २०५, १८; २१०, २०; २२७, ३२ (कालदण्डं यमो राजन्गदां चैव धनेश्वरः); २. ३, १५ (एक सहस्र युग व्यतीत हो जाने पर ये बिन्दुसरोवर पर यज्ञ का अनुष्ठान करते हैं); ५, ८८; ६, १७; ८, ८. ३२ (इनके भवन का वर्णन); ११, ५१ (ये ब्रह्मा की सभा में विराजते हैं); १६, ३; १७, १५; २२, २३. २६; ४०, १०; ४९, ३५; ६२, १६; ६६, ३; ७७, १८. ३४; ३. ११, ४३. ६६; १२, २१ (श्रीकृष्ण यम बन जाते हैं); १४, १२; २२, ३१; २५, १० (यमस्य नेता); २७, २५ (कालान्तकयमोपमः); २९, ६; ३९, १०. २८. ४२. ४८; ४०, १६ (ये ब्रह्मशिरस् को नहीं जानते); ४१, ९. १६ (यमः परमधर्मज्ञो). ३३; ५५, ४. ६. २३; ५७, ३७ (दमयन्ती के स्वयंवर में उपस्थित लोकपालों में ये भी थे। इन्होंने नल को वरदान दिये); ९१, १३ (अर्जुन ने इनसे दिव्यास्त्र प्राप्त किये); १२०, ५; १२६, २१; १३४, ८; १३७, १२ (कालान्तकयमोपमम्); १३९, १४; १४२, ३६; १४७, १४; १५४, १७ (यमदण्डकल्पां महागदां); १६३, ८ (ये दक्षिण के अधिपति हैं); १६४, १९ (अर्जुन ने इनका अस्त्र प्राप्त किया); १६८, १४ (दक्षिण में); १७१, २९; १७२, १७: १७८, २७; १८९, ५ (नारायण को इनके साथ समीकृत किया गया है); २००, २४ (नोपसर्पन्ति ते यमम्). ४० (यमस्य ते निर्वचना भवन्ति). ४८ (नीयते यमदूतैस्तु यमस्याज्ञाकरैर्बलात्); २३१, ३६ (यमस्य मृत्युना). ३७ (यमस्य पृष्ठतश्चैव); २३५, ९ (सम्प्रस्थितान्'''यमसादनम्); २३७, ११ (रुद्रैरिव यमो राजा); २४५, ७; २६५, ३ (द्रौपदी से पूछा गया कि वह यम की पत्नी तो नहीं है); २९१, १८; २९७, १२. १७. १९. २०. २६. २८. ३१. ३३. ३४. ३७.३९. ४४. ४६. ५१. ५५) वैवस्वतो यमः). ६२. ६६ (प्रजासंयमनो यमः); २९८, ३८ (यम सत्यवान् का प्राण लेने के लिये आये थे किन्तु सावित्री की तपस्या से प्रसन्न होकर उसे अनेक वर देते हुये उसके पति सत्यवान् को भी जीवनदान दिया); ३१३, २७. ११६ (यमालये); ४. २३, २७; ३०, १८; ३३, ४ (यमराष्ट्रविवर्धनः); ४५, ४०; ४७, १८; ५६, ११; ६०, २३; ५. ३, १४. १६ (यमकालोपमद्युति); १६. २७ (इन्द्र के पास आने वाले लोकपालों में ये भी थे). ३१ (इन्द्र ने इन्हें पितरों का राजा बनाया था); १८, २; २०, ७; २९, १६; ३५, ७१ (प्रच्छन्नपापानां शास्ता वैवस्वतो यमः); ४२, ६ (यमं त्वेके मृत्युमतोऽन्यमाहुः); ५५, ४४; ६९, १४ (यमस्य वशमायान्ति काममूढाः पुनः पुनः); १००, ४; ११७, ९ (रेमे स तस्यां राजर्षिः प्रभावत्यां यथा रविः); १३०, २२; १३७, २१ (क्रुद्धाविव यमान्तकौ); १४३, ५. ४४; १५१, २६ (यमदूतसमान् वेगे). ४६ (यमौ'''यमोपमौ); १५८, ३२; १६२, २४. २७. २८; १८४, ५ (यमदण्डसमप्रभाम्); ६. ४, ४; ३४ २९ (यमः संयमतामहम्); ३५, ३९ (श्रीकृष्ण के साथ समीकृत); ५०, ७; ५४, ४७. ७६. ७७. ८१; ५५, ३८ (रूपं कालान्तकयमोपमम्); ६२, ६१ (यमदण्डोपमां गदां); ६३, १९; ६४, ३३. ३८; ७४, २१ (यमदण्डाशनिप्रभान्); ७५, ३१; ७९, ११. ६०. ६२; ८३, ८ (यमराष्ट्रविवर्धनः). १६. ४१ (अजेयं समरे वीरं यमेन वरुणेन च). ४७; ८५, ३३ (घोरैर्यमदण्डकल्पैः'''शरैः). ३६; ८७, ३७; ८८, २९; ८९, ९. २२. २८; ९१, ८; ९४, २१. २२; ९५, २५; ९६, ४६; ९८, २०; १००, ५ (यमदण्डोपमान्'''सायकान्); १०१, १९; १०३, १६. १७. ३६; १०४, ३; १०६, ६; १०७, १६. ७४. ९८; १०८, १७; ११०, ४१; १११, १२; ११२, ४१; ११६, ४९ (गदां यमदण्डोपमां); ११८, २९; ११९, ६३ (प्राणान् यमदूता इवाहिता); ७. २, १५. १७. ३२; ८, २१; १०, ४१ (यमवैश्रवणादित्य'''वरुणोपमम्); १४, १५; १९, १५; २१, ५५; २३, ४२; २५, २६; २७, ३९; २८, ८; ३२, ७५; ४६, १५; ५४, ५. ३५ (लोकपालो यमश्चैव); ६९, २३ (जब पुण्यजनों ने पृथिवी का दोहन किया तब ये बछड़ा बने); ७२, २७. ३३. ३५; ७४, ५; ७६, १३; ७७, ६; ७८, १०; ८३, २७ (राजधानीं यमस्याद्य हतः प्राप्स्यति); ९३, २९; ९४, १७ (यमदंष्ट्रान्तरं प्राप्तो मुच्येतापि हि मानवः); १००, २८; १०८, ७; ११०, १९ (यमदंष्ट्रान्तरं गतम्); ११३, ९; ११६, ३९; ११९, २५ (कालान्तकयमोपमम्); १२५, ४१. ५१. ५६ (यमाय प्रेषयामास); १२७, ६६; १३०, ३५; १३२, ३३ (यमदंष्ट्रोपमं'''आयोधनं); १३३, २६. ३५. ४२; १३४, २१; १३५, ९. ३६; १३९, ५९. १४५, ९७ (यमराष्ट्रवर्धनः). ९८; १५०, १५; १५३, २ (यमराष्ट्राय महते'''दीक्षिता). ३; १५४, ४०; १५५, ३४; १५६, १७८. १८२. १८५ (शरमुत्तमम्'''यमदण्डोपमम्); १५९, ४८. ६२; १६०, ३२; १६६, ३६; १६७, ५. ३०; १६८, ४७; १७१, १९. ३८. ५१ (यथा वैतरणी'''यमराजपुरम्); १७४, २१; १८०, १६ (यमो वा नोत्सहेत्कर्णम्); १८४, २०; १८५, २५; २००, ९६; २०२, ७७ (ये शिव के बाण के पङ्खभाग में प्रतिष्ठित हुये). १०४ (शिव को इनके साथ समीकृत किया गया है). १३७; ८. २, १८; ४, १३; ५, १४. १६. २१. २५. ३५. ४६; ६, १३. १५-१७. २६. ३२. ३८; १५, ३१. ३२ (यमौ); १६, ९; २१, १०. १८; २२, १६; २३, ९; (विशिखं यमदण्डोपमत्विषम्) २४, ३९ (यमस्य भवनं); २७, १३. १९; ३०, १७; ३७, २३ (यास्यामि वा द्रोणयथा यमाय). ३०. ३१; ४५, ३१ (ये दक्षिण में स्थित पितृलोक की रक्षा करते हैं); ४९, १९; ५१, १६. १९. २०; ५२, ३३; ५४, ४०; ५६, १७. ७०; ५९, २; ६१, ४३. ४८; ६३, २; ६६, २४ (युद्धे यमतुल्य पराक्रमे); ७३, ६०. ७५. ९५; ७४, ३१; ७६, २; ७७, १६. १८. २७; ८०, २८; ८१, ३१. ३३; ८४, ६; ८७, १९. ४९ (इन्होंने अर्जुन का पक्ष लिया); ९०, ६८ (यमाग्निदण्डप्रतिमैः); ९१, ३२. ४९ (नयतां यमाय); ९२, १०; ९३, ५७ (अन्तको यमः); ९. ५, १५ (यमावपि यमोपमौ); ९, ७; १०, ६१; ११, ५. ५०; १४, ४१. ४६; १५, १० (यमौ युद्धे यमतुल्यपराक्रमौ); १७, ४३ (यमस्य धात्रीमिव); २०, ५; २१, ८; २३, १४; २५, ३६; २६, २६ (यमदण्डनिभैः शरैः). २९; २७, ४४; २८, १६; ३२, ४७; ४५, १७ (कालो यमश्च मृत्युश्च यमस्यानुचराश्च ये). ३० (इन्होंने स्कन्द को उन्माथ और प्रमाथ नामक दो अनुचर दिये); ५०, ३ (यमवत्समदर्शनः); ५३. २० (यमस्य विषयम्); ५५, २८; ५७, १२. २८; १०. ८, २६. ८३. १३१. १३२; ११, १० (संप्रदाय यमाय); १३, २३; ११. २, ४; ४, १०; ५, ५; १२. ५, १३ (अर्जुन ने इनसे एक दिव्यास्त्र प्राप्त किया था); १५, ५. १६; ३३, ९; ५७, १८; ६८, ४१. ४५ (एक आदर्श राजा की तुलना यम से की गई है); ७२, २५; ८२, ३१. ३७; ९१, ४२ (यमो राजा धार्मिकाणां मान्धातः परमेश्वरः). ४४ (यमो यच्छति भूतानि सर्वाण्येवाविशेषतः। तथा राज्ञानुकर्तव्यं यन्तव्या विधिवत्प्रजाः). ५६; ९८, २३; १२२, २७ (इन्हें पितरों का राजा बनाया गया था); १२९, ३ (गौतमस्य च संवादं यमस्य

च). ६. ७. १० (यम और गौतम का संवाद); १३८, ११७; १३९, १०३ (माता पिता गुरुर्गोप्ता वह्निर्वैश्रवणो यमः). १०५; १०, १९ (यमदूता यमक्षये); १५५, १०; १९६, ६ (यमस्य यत्पुरावृत्तं बालस्य ब्राह्मणस्य च); १९९, १ (कालमृत्युयमानां ते इक्ष्वाको ब्राह्मणस्य च विवादः). १६. २८. ३०. ५२; २००, ३; २०७, ३७; २३५, १७; २५८, ७ (यमस्य भवने); २६२, ४०; २८०, २७ (परमात्मा के साथ समीकृत); ३००, २५ (न यमो नान्तकः'''न मृत्युर्भीमविक्रमः); ३०१, ३१; ३२१, ३५-३७; ३३४, ३५; १३. १६, २२ (शिव के साथ समीकृत); १७, १७८ (इन्होंने नारायण से शिवसहस्रनाम का ज्ञान प्राप्त करके उसका नाचिकेता को उपदेश दिया); ४५, १७ (गाथा यमोद्गीताः); ६२, ७६; ६८, २ (ब्राह्मणस्य च संवादं यमस्य च). ५. ९. १०. १३. १६. २३. २४. २६. २७ (यम और ब्राह्मण का संवाद); ७०, २१. ३५ (इन्होंने नृग को दण्ड दिया); ७१, ७. १८. २९. ३८ (उद्दालक ने नाचिकेता को यम के पास जाने का शाप दिया परन्तु यम के पास जाकर नाचिकेता ने उनसे उपदेश ग्रहण किया); ८०, ९ (यमस्य लोके); ८९, १ (यमस्तु यानि श्राद्धानि प्रोवाच शशबिन्दवे); ९७, ११ (दक्षिणायां यमायेति प्रतीच्यां वरुणाय च); १०२, १५ (यमस्य ते यातनां); १०४, ७२ (गाथा यमोद्गीताः); १११, ३६. ४० (अधर्मेण समायुक्तो यमस्य विषयं गतः). ४२. ४४ (यमस्य भवने दिव्ये ब्रह्मलोकसमे गुणैः). ६६ (यमस्य विषयं). ९२. ९४. ११७; १२५, ५ (देवगुह्यमिदं राजन्यमेनाक्लिष्टकर्मणा); १३०, १४; १६०, २९ (ये शिव के बाण के पङ्ख बने); १६५, ११ (यमो धूमोर्णया सह); १४. ८, ४ (ये मुञ्जवत् पर्वत पर शिव की उपासना करते हैं); १६, ३६; ४३, ७ (ये पितरों के आधिपति हैं); ५३, १८; ५७, २; ६१, ३८) (यमो यमोपमो); ६८, २२; ७४, २७; ७८, ४३; १८. २, १० (यमो चैव यमोपमो)।

तुकी० धर्म, और निम्नलिखित पर्याय भी :

कृतान्त, दण्डिन, देवेश — देखिये यथा०।

पितृपति : ७. ५०, १४; ८. ३०, ३ (पितृपतिराष्ट्रमिव प्रजाक्षये)।

पितृराज : १. १८९, १७; २. ६, ११ (सभां तु पितृराजस्य); ८, ३३; ४६, १५; ३. २९७, १५; ८. ९०, ७७।

पितृराजन् : २. ८, ४१।

प्रेतराज्, प्रेतराज, प्रेताधिप, वैवस्वत, सुरेश, सूर्यपुत्र — देखिये यथा०।

२. यम वरुण द्वारा स्कन्द को दिये गये दो पार्षदों में से एक का नाम है। दूसरे का नाम अतियम था (९. ४५, ४५)।

३. यम = सूर्य : ३. ३, १८।

४. यम = शिव (सहस्रनाम)।

५. यम = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

६. यम = विष्णु (सहस्रनाम)।

७. यम (द्वि० °मौ) = नकुल और सहदेव : १. १, १२९; ६४, ११७ (अश्विनों से उत्पन्न); ९६, ६६; १२४, १६ (अश्विनों से उत्पन्न). १७; १४८, २. २१; १५०, १७; १८७, १०. १२; १८८, २६; १९१, ९; १९२, ३; १९५, १०. १८; २०५, १८; २०७, ३; २२१, ३४; २. २, १८. २१; १३, ४५; २५, ८; ३३, १७; ४७, ९; ५३, १४; ६३, ८; ७०, १०; ७१, ९. २०. ३२; ७३, १६; ३. ६, १४; २२, ४६; २३, १. १६; २४, २५; ३२, ४५; ५०, ११; ५१, २८; ९३, २०; १२५, २२; १३९, २०; १४१, १. ११ (यमयोः पूर्वजः); १४४, २३; १५५, ९. १६; १५९, २; १६२, १७; १७६, ६; १७९, ३७; १८३, २२; १८९, ५८; २३६, ५. १३. १४; २४३, ७; २४५, ३०; २४९, २८; २७२, ५१; ३१३, २. १३; ४. २१, ९; ३३, २१; ४०, ८; ७१, १६; ५. ३, १६; ८, २८; २०, १७; ४९, ४१; ५६, २; ८२, ४६; ९०, ४९. ७१; ९५, २०; १४४, ३; १४६, २३; १५४, १७; १६२, ६३; १९४, १८; ६. ४९, १०; ६९, १२; ८३, ४१; ८५, २७; ९५, १२; १०५, २६; १०७, ६०; ११८, ४०; ७. २, १७. ३०; ८, ४; १४, ८४; ४२, ३; ८३, ५; ८५, ४२; १५५, ४४; १५६, १६१; १५८, ४३; १७१, ५२; १७२, २०; १८७, २७. ३५; १८९, १७. १८. ६४; १९५, २९; १९८, ७; ८. २१, २५; ३०, २७; ३६, २१ (माद्रीपुत्रौ यमावपि). २५. ३१; ३७, २२; ४८, २१; ४९, ३३; ५६, ११. २७; ६३, ५; ६६, ११; ६९, ८२; ७१, २१; ७४, ५१; ८८, २३; ९१, ५७; ९. ५, १५; ११, ३८; १५, १०; ३२, १५; १२. १, २६; २, ६; ३३, १६; ४७, १०६; ५३, १८. २५; ५४, ५; १४. १५, १३; ६१, ३८; ६३, ४ (माद्रीपुत्रौ यमावपि); ८६, ३; ८८, १०; १५. २, ७; १०, ३१; २५, ३. ८; २८, ७; ३६, ४७; १६. ८, ३१; १७. १, ५. २०; १८. २, १०; ३, १६. ३८। तुकी० यमज (द्वि०)।

यमज (द्वि० °जौ) = नकुल और सहदेव : १. १३२, ६२; १६८, १०; २. २४, ५५; ५०, ३३; ३. १४०, १९; १४५, ६; २४८, ११; २५९, ६; २६६, ७; ५. १६२, १५; १२. ४४, २; १५. ३१, १२। तुकी० यम (द्वि०)।

यमदूत, विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ४, ५१)।

यमलोक — "युधिष्ठिर ने मार्कण्डेय जी से यह बताने का निवेदन किया कि मनुष्यलोक से यमलोक कितनी दूर है और किस उपाय से मनुष्य वहाँ के संकटों से पार हो सकता है। मार्कण्डेय जी ने बताया कि यह विषय सर्वाधिक गोपनीय, पवित्र, धर्मसम्मत तथा ऋषियों तक के लिये भी आदरणीय है। मनुष्यलोक और यमलोक के बीच की दूरी ८६,००० योजन है। उसके मार्ग में जलरहित शून्य आकाशमात्र है। वह देखने में अत्यन्त भयानक और दुर्गम है। वहाँ न तो वृक्ष की छाया है, न पानी है, और न कोई ऐसा स्थान है जहाँ रास्ते का थका व्यक्ति कुछ क्षण विश्राम कर सके। यमदूत आकर पृथिवी के पुरुषों, स्त्रियों और अन्य जीवों को बलपूर्वक पकड़ कर वहाँ ले जाते हैं। जिन्होंने ब्राह्मणों को अश्व आदि वाहनों का दान किया है वे उन्हीं वाहनों पर बैठकर उस मार्ग की यात्रा करते हैं (विभिन्न प्रकार के दानों से यमलोक के मार्ग में उपलब्ध सुख-सुविधाओं का वर्णन)। जो जलदान करते हैं उनके लिये उस मार्ग में पुष्पोदका नामक नदी प्राप्त होती है जिसका शीतल और अमृत के समान मधुर जल वे पीते हैं। किन्तु पापियों के लिये उस नदी का जल पीव बन जाता है। (३. २००, ४४-५९)।" ४. १६, ५१ (यमलोकं गमिष्यति); २१, १५; ३३, ३३ (भीमः सप्त सहस्राणि यमलोकमदर्शयत्); ७. ८४ २८ (यियासुर्यमलोकाय); ११. ४, ९ (यमलोकमथागतम्); १३. १०२, १४-१७ (गौतम ने धृतराष्ट्र से कहा कि 'जहाँ जाकर पुण्यकर्मा पुरुष आनन्दित होता है और पापकर्मा मनुष्य शोकग्रस्त हो जाता है उस यमराज के सदन में मैं तुमसे अपना हाथी वापस लूँगा।' धृतराष्ट्र ने कहा : 'जो निष्क्रिय, नास्तिक, श्रद्धाहीन, पापात्मा और इन्द्रियासक्त हैं वे ही यमयातना को प्राप्त होते हैं। परन्तु राजा धृतराष्ट्र को वहाँ नहीं जाना है।' गौतम ने कहा : 'जहाँ कोई झूठ नहीं बोलता, जहाँ सदा सत्य ही बोला जाता है और जहाँ निर्बल मनुष्य भी बलवान् से अपने प्रति किये गये अन्याय का प्रतिशोध ले सकता है, वही मनुष्यों को संयम में रखनेवाली यमराज की पुरी संयमनी नाम से प्रसिद्ध है। वहीं मैं तुमसे अपना हाथी वापस लूँगा।' धृतराष्ट्र ने कहा : जो मदमत्त मनुष्य बड़ी बहन, माता और पिता के साथ शत्रु जैसा व्यवहार करते हैं उन्हीं के लिये यह यमराज का लोक है; परन्तु धृतराष्ट्र वहाँ जानेवाला नहीं है।')। तुकी० याम्यलोक।

यमसभा-वर्णनम् — "यम की तेजोमयी विशाल सभा लम्बाई और चौड़ाई दोनों में सौ-सौ योजन है। सम्भव है वह इससे कुछ बड़ी ही हो। उस सभा का प्रकाश सूर्य के समान है। वह सभा इच्छानुसार रूप धारण कर सकती है। वहाँ की वायु न तो अत्यन्त गर्म और न अत्यन्त शीतल है। उसके भीतर शोक, जीर्णता, क्षुधा, प्यास आदि का अनुभव नहीं होता। उस सभा में कोई अप्रिय घटना घटित नहीं होती। दीनता, प्रतिकूलता अथवा थकावट का भी वहाँ कोई चिह्न नहीं होता। वहाँ दिव्य और मानुष

सभी प्रकार के भोग उपस्थित रहते हैं। इसके अतिरिक्त वहाँ चाटने योग्य, चूसने योग्य, पीने योग्य, तथा हृदय को प्रिय लगनेवाली वस्तुयें सदा प्रस्तुत रहती हैं। वहाँ अनेक पुण्यात्मा लोग बैठ कर यम की उपासना करते हैं (यमसभा में विराजमान होनेवाले पुण्यात्मा लोगों की विस्तृत सूची)। ऐसे लोग यम सभा के सदस्य हैं। यम की वह सभा बाधारहित, रमणीय तथा इच्छानुसार गमन करनेवाली है। विश्वकर्मा ने दीर्घकाल तक तपस्या करके उसका निर्माण किया है। कठोर तपस्या और उत्तम व्रत का पालन करनेवाले, सत्यवादी, शान्त, संन्यासी तथा शुद्ध कर्मों से पवित्र हुये लोग उस सभा में जाते हैं। उन सब के शरीर तेज से प्रकाशित होते रहते हैं और सभी निर्मल वस्त्र धारण करते हैं। सभी के पास सुन्दर और बहुमूल्य आभूषण होते हैं। कितने ही गन्धर्व और अनेक अप्सरायें उस सभा में उपस्थित होकर अपनी-अपनी कला का प्रदर्शन करती हैं। उस सभा में सब ओर पवित्र गन्ध, मधुर शब्द, और दिव्य मालाओं का सुखद स्पर्श प्राप्त होता रहता है। सुन्दर रूप धारण करनेवाले एक करोड़ धर्मात्मा एवं मनस्वी पुरुष यम की उपासना करते हैं (२. ८)।"

यमुना, भारतवर्ष की एक प्रख्यात एवं पवित्र नदी का नाम है : १. २, १२७; ६०, २ (यमुना के एक द्वीप में ही व्यास जी का जन्म हुआ था); ६३, ५८ (यमुनाम्भसि). ५९ (यमुनाचरी). ८४ (पराशरेण संयुक्ता सद्यो गर्भं सुषाव सा। जज्ञे च यमुनाद्वीपे पाराशर्यः स वीर्यवान्); ८७, ५ (गङ्गायमुनयोर्मध्ये, यहाँ पूरु का राज्य था); १००, ४५ (यातो यमुनामभितो नदीम्); १०५, ८; १७०, २० (गङ्गा च यमुना); २२१, ६४ (यमुनातीरे); २२२, १४; २. १४, ४१ (डिम्भको राजन्यमुनाम्भस्यमज्जत). ४३ (प्रपेदे यमुनामेव); १७, २० (गङ्गायमुनयोर्मध्ये मूर्तिमानिव सागरः); ३. ५, २; ८४, ३५ (गङ्गायमुनयोर्मध्ये स्नाति यः संगमे नरः। दशाश्वमेधानाप्नोति कुलं चैव समुद्धरेत्); ४४ (यमुनाप्रभवं); ८५, ७५ (यमुना गङ्गया सार्धं संगता लोकपावनी। गङ्गायमुनयोर्मध्यं पृथिव्या जघनं स्मृतम्). ८५ (गङ्गायमुनसंगमे); ८७, १८ (गङ्गायमुनयोर्वीर स्कमं लोकविश्रुतम्); ९०, ३ (समुद्रगा महावेगा यमुना). ७ (संजयपुत्र सहदेव ने यमुना के तट पर लाखों सुवर्णमुद्राओं की दक्षिणा देकर अग्नि की उपासना की थी). ८ (राजा भरत ने यमुना तट पर पैंतीस अश्वमेध यज्ञों का अनुष्ठान किया था); ९५, ५ (गङ्गायमुनयोश्चैव सङ्गमे); १२५, २१. २५ (यह नदी आर्चीक पर्वत के पास बहती है। यह पुण्यमयी नदी है और पापों का विनाश करती है। इसके तट पर मान्धाता और दानिशिरोमणि सहदेवकुमार सोमक ने यज्ञ किया था); १२९, २ (इसके तट पर नाभागपुत्र अम्बरीषने यज्ञ किया था); १३०, २१ (जलां चोपजलां चैव यमुनामभितो नदीम्); १३९, १४; १५६, ८ (इला सरस्वती सिन्धुर्यमुना नर्मदा तथा, नानातीर्थेषु रम्येषु सुपरपृष्ठं सह द्विजैः); १६१, ५६ (इसके तट पर अगस्त्य ने तपस्या की थी); १६२, २५ (शन्तनु ने इसके तट पर यज्ञ किये थे); १८८, १०२ (मार्कण्डेय जी ने इसे नारायण के उदर में देखा); ३०८, २५ (जिस मंजूषा में बालक कर्ण रक्खा था वह चर्मण्वती नदी से बहते हुये यमुना में और यमुना से गङ्गा में आया); ५, १२०, १ (गङ्गा और यमुना का संगम); १८६, १९. २१; १८७, १९; ६. ९, १५; १८, १८; ७. ११, ३ (हयराजं तं यमुनावनवासिनम्); ६८, ८ (भरत ने यमुना तट पर १०० अश्वमेध यज्ञ किये थे); ९५, ८ (जाह्नवीयमुने नद्यौ प्रावृषीवोल्वणोदके); १५०, २५; ८. ४४, ६ (बहिष्कृता हिमवता गङ्गया च बहिष्कृताः सरस्वत्या यमुनया कुरुक्षेत्रेण चापि ये); ४६, ८७; ९. ५४, १५ (कारपवनाद्यमुनायां जगाम); १२. २९, ४६ भरत ने इसके तट पर ३०० अश्वमेध यज्ञ किये थे); १३. ३०, ११ (गङ्गा और यमुना के बीच के प्रदेश में वीतहव्य ने हर्यश्व के साथ युद्ध किया था); ५०, ६ (गङ्गा और यमुना के बीच च्यवन ने जल में प्रवेश किया था). ७ (गङ्गायमुनयोर्वेगं). ८. १५ (गङ्गायमुनयोर्वारि); ६८, ३ (गङ्गायमुनयोर्मध्ये यामुनस्य गिरेरधः। पर्णशालेति विख्यातो रमणीयो); १०२, ४७; १५४, १२ (सोम की पुत्री भद्रा ने यमुना में स्नान किया); १६५, २७; १५. २३, १६ (यमुना नदीं परमपावनीम्); २४, ६ (वाक्यं यमुनामवगाहितुम्)। तुकी० कालिन्दी, कल्माषी।

१. यमुनातीर्थ = प्लक्षावतरण (३. १२९, १३)।

२. यमुनातीर्थ – "बलराम जी यमुनातीर्थ में आये जहाँ अदिति के महाभाग पुत्र गौरकान्ति वरुण जी ने राजसूय यज्ञ का अनुष्ठान किया था। शत्रुओं का संहार करनेवाले वरुण ने मनुष्यों और देवताओं को जीतकर उस यज्ञ का आयोजन किया था। वह यज्ञ समाप्त होने पर देवताओं और दानवों में घोर संग्राम हुआ था। राजसूय का अनुष्ठान पूर्ण हो जाने पर उस देश के क्षत्रियों में महाभयंकर संग्राम हुआ करता था (९. ४९, ११-१५)।

यमुनाद्वीप, यमुना के बीच के एक द्वीप का नाम है जहाँ पराशरजी के द्वारा सत्यवती ने व्यास को उत्पन्न किया था (१. ६०, २)।

यमुनाप्रभव, एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करके मनुष्य अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त कर स्वर्गलोक में प्रतिष्ठित होता है (३. ८४, ४४)।

ययाति, एक प्राचीन राजा का नाम है जो नहुष के पुत्र थे : १. १ ४७. २२९; ५५, ४३ (ययातिमान्धातृसनप्रभाव); ७५, ३० (नहुष के द्वितीय पुत्र). ३२. ३३ (इनके पुत्र)। "राजा नहुष ने छः पुत्रों को उत्पन्न किया जिनमें से ययाति दूसरे थे जो सम्राट हुये। ययाति ने पृथिवी का पालन तथा अनेक यज्ञों का अनुष्ठान किया। ये मन और इन्द्रियों पर संयम रखते हुये देवताओं-पितरों का पूजन करते थे। इन्होंने देवयानी और शर्मिष्ठा के गर्भ से अनेक पुत्र उत्पन्न किये। एक समय जब ययाति को अत्यन्त भयानक वृद्धावस्था प्राप्त हुई तब उन्होंने अपने समस्त पुत्रों, यदु, पूरु, तुर्वसु, द्रुह्यु तथा अनु से उनकी युवावस्था प्राप्त करके अपनी वृद्धावस्था उन्हें देना चाहा परन्तु ययाति के चार पुत्रों ने यह प्रस्ताव अस्वीकृत कर दिया। तब उनके छोटे पुत्र ने अपने पिता की वृद्धावस्था ग्रहण कर उन्हें युवावस्था देना स्वीकार किया। पूरु के प्रस्ताव से प्रसन्न हो कर ययाति ने तप और वीर्य के आश्रय से अपनी वृद्धावस्था का पूरु में संचार कर दिया और उसकी युवावस्था लेकर युवक बन गये। तदनन्तर किसी से भी परास्त न होनेवाले और सिंह के समान पराक्रमी ययाति एक सहस्र वर्ष तक युवावस्था में स्थित रहे। उन्होंने अपनी दोनों पत्नियों के साथ दीर्घकाल तक विहार करने के बाद चैत्ररथ वन में जाकर विश्वाची नामक अप्सरा के साथ रमण किया। परन्तु उस समय भी ययाति काम-भोग से तृप्त न हो सके। तब उन्होंने मन से विचार कर यह निश्चय किया कि विषयों के भोगने से भोगेच्छा कभी शान्त नहीं हो सकती। उन्होंने इस सम्बन्ध में एक गाथा का गायन किया (देखिये १. ७५, ४०-५४) ययाति ने इस प्रकार भोगों की निःसारता का विचार करके बुद्धि के द्वारा मन को एकाग्र किया और पुत्र से अपनी वृद्धावस्था वापस ले लिया। पूरु को उसकी युवावस्था लौटा कर ययाति ने उसे राज्य पर अभिषिक्त करते हुये उससे कहा : 'मैं तुम्हारे समान पुत्र से ही पुत्रवान् हूँ। तुम्हीं मेरे वंश के प्रवर्तक पुत्र हो। तुम्हारा वंश इस जगत में पौरव वंश के रूप में विख्यात होगा।' तदनन्तर पूरु का राज्याभिषेक करने के पश्चात ययाति ने अपनी पत्नियों के साथ भृगुतुङ्ग पर्वत पर जाकर तपस्या आरम्भ की और दीर्घकाल व्यतीत होने के बाद स्त्रियों सहित निराहार व्रत करके उन्होंने स्वर्ग प्राप्त किया (१. ७५, ३०-५८)।" १. ७५, ४०. ४७. ४८; ७६, १ (ययातिः पूर्वजोऽस्माकं दशमो यः प्रजापतेः). ३. ४ (देवयान्याश्च संयोगं ययातेर्नाहुषस्य च); ७८, १४ (नहुषात्मजः). २४; ८१, ८. ११. १४. १६. १८. २०. २३. २५. ३२. ३६ (ययाति ने देवयानी से विवाह करते हुये शर्मिष्ठा के साथ कभी संसर्ग न करने का वचन दिया); ८२, १. १४. १८. २० (शर्मिष्ठा ने पुत्रोत्पन्न करने के लिये ययाति को प्रेरित किया); ८३, ९ (ययाति ने देवयानी के गर्भ से यदु और तुर्वसु को तथा शर्मिष्ठा के गर्भ से द्रुह्यु, अनु और पूरु को उत्पन्न किया). ११. २७. २९. ३२. ३७. ३८. ४१ (शुक्राचार्य ने ययाति को जराक्रान्त हो जाने का शाप दिया); ८४, १. २. ९. १३. १६. १७. २०. २३. २५. २७. ३३. ३४ (योग का आश्रय लेकर ययाति ने अपना वृद्धत्व अपने छोटे पुत्र पूरु को देकर उसका

यौवन स्वयं ले लिया। तदनन्तर अपने अन्य पुत्रों को ययाति ने शाप देकर राज्य से वंचित कर दिया। ययाति ने विश्वाची नामक अप्सरा के साथ नन्दनवन और अलकापुरी में तथा मेरु के उत्तर शृङ्ग पर रमण किया किन्तु भोगेच्छा तृप्त न होने पर उन्होंने एक गाथा का गायन किया (देखिये १. ७५, ५०-५४) और अपने पुत्र को उसका यौवन लौटाते हुये उसे राज्य पर अभिषिक्त करके वन में आकर तपस्या द्वारा स्वर्ग प्राप्त किया); ८५, १. ५. १८. २३। "ययाति अपने प्रिय पुत्र पूरु का राज्याभिषेक करके प्रसन्नतापूर्वक वानप्रस्थ मुनि हो गये। कठोर व्रतों का आश्रय ले कर १,००० वर्ष तक वन में तपस्या करने के बाद वे स्वर्ग चले गये। जहाँ देवताओं, साध्यों, मरुतों और वसुओं ने उनका अत्यधिक स्वागत-सत्कार किया। इस प्रकार जितेन्द्रिय राजा ययाति देवलोक और ब्रह्मलोक में भ्रमण करते हुये वहाँ दीर्घकाल तक रहे। एक दिन इन्द्र ने ययाति से पूछा : 'जब पूरु तुमसे वृद्धावस्था लेकर तुम्हारे स्वरूप से इस पृथिवी पर विचरण करने लगे तब उस समय उसे राज्य देकर तुमने उसे क्या आदेश दिया था ?' ययाति ने बताया कि उन्होंने पूरु से कहा कि गङ्गा और यमुना के बीच का सारा प्रदेश उसके अधिकार में रहेगा जब कि उसके भाई सीमान्त देशों के अधिपति होंगे। तदनन्तर ययाति ने पूरु को सदाचार के उपदेश दिये (१. ८७)।

"ययाति ने इन्द्र को बताया कि देवताओं, मनुष्यों, गन्धर्वों और महर्षियों में से कोई भी तपस्या में उनकी समता नहीं कर सकता। तब इन्द्र ने ययाति से कहा : 'तुमने अपने समान, अपने से बड़े, और छोटों का भी प्रभाव न जानकर सबका तिरस्कार किया है, अतः पुण्यलोक में निवास करने की तुम्हारी अवधि समाप्त हो गई। अब तुम यहाँ से नीचे गिरोगे। फिर भी यहाँ से च्युत होकर तुम साधु पुरुषों के निकट ही गिरोगे और अपनी खोई प्रतिष्ठा पुनः प्राप्त कर लोगे, तदनन्तर इन्द्र के पुण्यलोक का परित्याग करके राजा ययाति नीचे गिरने लगे। उस समय राजर्षि अष्टक ने उन्हें गिरते देख कर इस प्रकार च्युत होने का कारण पूछा। (१. ८८)।

"ययाति ने अष्टक को अपना परिचय दिया। उन्होंने अष्टक से कहा : 'मैं नहुष का पुत्र और पूरु का पिता हूँ। समस्त प्राणियों का अपमान करने से मेरा पुण्य क्षीण हो गया और मैं देवों, साध्यों और महर्षियों के लोक से नीचे गिर रहा हूँ। मैं आप लोगों से अवस्था में बड़ा हूँ, अतः आप लोगों को प्रणाम नहीं कर रहा हूँ।' तब अष्टक ने ययाति से कहा कि द्विजों में जो विद्या और तपस्या में बढ़ा-चढ़ा हो वही पूज्य होता है। ययाति ने उत्तर देते हुये कहा : 'मेरे पास पुण्यरूपी धन था किन्तु दूसरों की निन्दा करने के कारण वह सब नष्ट हो गया। मेरी इस दुरवस्था को समझ कर जो आत्मकल्याण में संलग्न रहता है वही ज्ञानी और धीर है। मैं कभी भय में पड़ कर मोहित नहीं होता क्योंकि मैं समझता हूँ कि विधाता मुझे जैसे रक्खेगा वैसे ही रहूँगा।' अष्टक को इस प्रकार अपना परिचय तथा उपदेश देनेवाले राजा ययाति समस्त सद्गुणों से सम्पन्न थे और नाते में अष्टक के नाना लगते थे। अन्तरिक्ष में स्थित हो कर ही उन्होंने उक्त बातें कहीं। अष्टक द्वारा और अधिक परिचय देने का निवेदन करने पर ययाति ने कहा : 'मैं पहले समस्त भूमण्डल में प्रसिद्ध चक्रवर्ती राजा था। तदनन्तर सत्कर्मों द्वारा मैंने बड़े-बड़े लोकों पर विजय प्राप्त की और उनमें एक सहस्र-वर्ष तक निवास किया। वहाँ सौ योजन विस्तृत और एक सहस्र दरवाजों से युक्त इन्द्र की रमणीय पुरी प्राप्त हुई। उसमें भी मैंने एक सहस्र वर्षों तक निवास किया और उसके बाद और ऊँचे लोक में गया। वहाँ से मैं प्रजापति के उस दिव्यलोक में जा पहुँचा जहाँ जरावस्था का प्रवेश नहीं है। वहाँ एक सहस्र वर्ष तक निवास करने के बाद मैं उससे भी उत्तम लोक में चला गया। वह ब्रह्मा का धाम था। वहाँ मैं अपनी इच्छानुसार भिन्न भिन्न लोकों में विहार करता हुआ सम्पूर्ण देवताओं से सम्मानित हो कर रहा। इसी प्रकार मैं नन्दन वन में भी अप्सराओं के साथ विहार करता हुआ दस लाख वर्षों तक रहा। वहाँ मुझे पवित्र गन्ध और मनोहर रूपवाले वृक्ष देखने के लिये मिले। वहाँ रहकर मैं देवलोक के सुखों में आसक्त हो गया। कुछ समय व्यतीत होने के बाद एक देवदूत ने आकर तीन बार मुझे सम्बोधित करके कहा : 'गिर जाओ, गिर जाओ' 'मुझे इतना ही स्मरण है। तदनन्तर पुण्य क्षीण हो जाने के कारण मैं नन्दनवन से नीचे गिर पड़ा। उस समय देवताओं ने मेरे लिये शोक प्रकट किया। तब गिरते हुये मैंने देवों से साधु पुरुषों के बीच ही गिरने का उपाय पूछा। देवताओं ने मुझे आपकी यज्ञभूमि का परिचय दिया। मैं इसी को देखता हुआ तत्काल यहाँ आ पहुँचा हूँ। यज्ञभूमि का परिचय देनेवाली हविष्य की गन्ध का अनुभव तथा धूमप्रान्त का अवलोकन कर मुझे प्रसन्नता और शान्ति प्राप्त हुई।' (१. ८९)।

अष्टक ने ययाति से पूछा : 'जब आप इच्छानुसार रूप धारण करके दस लाख वर्षों तक नन्दनवन में निवास कर चुके हैं तब उसे छोड़ कर भूतल पर आने का क्या कारण है।' ययाति ने बताया कि परलोक में जिसका पुण्य समाप्त हो गया है उसको देवराज इन्द्र सहित सम्पूर्ण देवता तत्काल त्याग देते हैं। अष्टक ने यह जानना चाहा कि देवलोक में मनुष्यों के पुण्य कैसे क्षीण होते हैं। ययाति ने कहा कि जो अपने मुख से अपने पुण्यकर्मों का बखान करते हैं वे सभी भौम नरक में जा गिरते हैं। अष्टक ने यह जानना चाहा कि मृत्यु के बाद गृध्र, नीलकण्ठ और अन्य पक्षियों द्वारा भक्षण कर लिये गये लोग किस रूप में उत्पन्न होते हैं। अष्टक ने यह भी कहा कि वे भौम नामक नरक से परिचित नहीं हैं। ययाति ने बताया कि कर्म से उत्पन्न और विकास को प्राप्त करनेवाले सभी जीव इस पृथिवी पर विचरते हैं। उनका यह विचरण ही भौम नरक कहा गया है। कितने प्राणी आकाश में साठ सहस्र वर्ष तक रहते हैं। कुछ ८०,००० वर्षों तक वहाँ रहते हैं। इसके बाद वे भूमि पर गिरते हैं। यहाँ उन्हें पृथिवी के भयानक राक्षस अत्यन्त पीड़ा देते हैं। इसके बाद ययाति ने पुनर्जन्म और उसकी प्रक्रिया पर उपदेश दिया (१. ९०)।

"ययाति ने आश्रमधर्म-विषयक उपदेश देते हुये गृहस्थ, भिक्षुक ब्रह्मचारी और वानप्रस्थ के कर्त्तव्यों का निरूपण किया। तदनन्तर उन्होंने विभिन्न प्रकार के मुनियों तथा मौन का वर्णन किया। (१. ९१)।

"ययाति ने अष्टक से कहा : 'मैं अपने पुण्य का क्षय होने से इस भौम नरक में प्रवेश करने के लिये आकाश से गिर रहा हूँ। इन्द्र से प्राप्त वरदान के कारण मुझे आप लोगों जैसे श्रेष्ठ गुणों से सम्पन्न सन्तों का सत्सङ्ग प्राप्त हुआ है।' अष्टक ने ययाति से कहा : '"स्वर्ग में मेरे लिये जो लोक विद्यमान हैं वे सब मैं आप को देता हूँ, परन्तु आप का पतन न हो।' ययाति ने इस प्रस्ताव को अस्वीकार करते हुये अष्टक से कहा 'ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मण ही प्रतिग्रह लेता है, क्षत्रिय कदापि नहीं।' तदनन्तर ययाति ने प्रतर्दन को उपदेश दिया। (१. ९२)।

"वसुमान और शिबि ने ययाति को अपने-अपने लिये निर्धारित दिव्यलोक समर्पित किये किन्तु ययाति ने इसे भी स्वीकार नहीं किया। ययाति की पुत्री माधवी ने भी तपस्या द्वारा जिन लोकों को प्राप्त किया था उसे ययाति को देना चाहा किन्तु ययाति ने उसे भी ग्रहण नहीं किया। उसी समय वहाँ पाँच दिव्य रथ आ गये जिन पर चढ़ कर वे पाँचों सज्जन स्वर्ग की ओर चले। अष्टक, शिबि काशिराज प्रतर्दन तथा इक्ष्वाकु वंशी वसुमना — ये सभी लोग यज्ञान्त स्नान करके एक साथ ययाति के साथ स्वर्ग चले। उस समय उशीनर पुत्र शिबि अकेले सम्पूर्ण वेग से शेष लोगों के रथों को लाँघ कर सबसे आगे बढ़ गये। अष्टक द्वारा इसका कारण पूछने पर ययाति ने बताया कि शिबि ने ब्रह्मलोक के मार्ग की प्राप्ति के लिये अपना सर्वस्व दान कर दिया था इसलिये वे अन्य लोगों से श्रेष्ठ हैं; और इसी कारण वे सबसे आगे बढ़ गये हैं। तदनन्तर ययाति ने अष्टक के प्रश्नों का उत्तर देते हुये पुनः अपना परिचय दिया और सत्य, दान आदि की महिमा पर प्रकाश डाला। (१. ९३)।" १. ८६, १. ८. १०. ११; ८७, ३. ५; ८८, १. ३. ४. ६; ८९, १ (नहुषस्य पुत्रः पूरोः पिता). ४. १३. १५. २२; ९०, २. ४. ७. १०. १४. १८. २२; ९१, २. ९. ११;

९२, २. ७. १०. १२. १५. १७; ९३, २. ४. ७. ९. ११. १३. १५. १८. २२ (नहुषस्य पुत्रः पूरोः पिता); ९५, ७ (नहुष के पुत्र, देवयानी और शर्मिष्ठा के पति; इनके पुत्रों का उल्लेख); २. ८, ८ (यम की सभा में); १४, ६ (ययातेस्त्वेव भोजानां विस्तरो गुणतो महान्); ५३, २२; ३. २१, २३ (प्रपततः'''ययातेः क्षीणपुण्यस्य स्वर्गादिव महीतलम्); ५७, ४४ (ईजे चाप्यश्वमेधेन ययातिरिव नाहुषः); ५८, १२५; ८९, ९ (विश्वामित्रनदी'''यस्यास्तीरे सतां मध्ये ययातिर्नहुषात्मजः । पपात स पुनर्लोकाँल्लेभे धर्मान्सनातनात् ॥); ९२, १३; १२०, २ (नाथाःशिब्यादयो राम यथा ययातेः); १२९, ४. ५ (लोमश जी ने बताया कि यह नहुषकुमार ययाति का देश है, जो पुण्यकर्मा, याज्ञिक, महातेजस्वी और सार्वभौम सम्राट थे। वे सदा इन्द्र के साथ ईर्ष्या रखते थे। उनकी यज्ञभूमि की अग्नियों से युक्त नाना प्रकार की वेदियाँ हैं जिनसे यमुनातट की सम्पूर्ण भूमि व्याप्त है और ययाति के यज्ञकर्मों से आक्रान्त हो यमुना की धारा में डूबी है). १२ (ययाति ने प्रचुर रत्नराशि की दक्षिणा से युक्त अनेक यज्ञों द्वारा भगवान् का यजन किया था। उन यज्ञों से इन्द्र को अत्यन्त प्रसन्नता हुई थी); १३३, १७ (प्राचीन काल में एक ययाति ही यज्ञकर्म सम्पन्न करते थे); १९५, १-५ (नहुष के पुत्र राजा ययाति जब पुरवासी मनुष्यों से घिरे हुये राजसिंहासन पर विराजमान थे तब एक दिन एक ब्राह्मण गुरु-दक्षिणा देने के लिये भिक्षा माँगने की इच्छा से उनके पास आकर बोला 'मैं गुरु-दक्षिणा देने के लिये भिक्षा चाहता हूँ, किन्तु उसके साथ एक शर्त है। इस संसार में प्रायः देखा जाता है कि जब किसी मनुष्य से कोई वस्तु माँगी जाती है तब वह उस माँगनेवाले से अत्यन्त द्वेष करने लगता है। अतः मैं आपसे पूछता हूँ कि आप मुझे मेरी प्रिय वस्तु कैसे दे सकते हैं ?' तब ययाति ने कहा : 'मैं कोई वस्तु देकर उसकी बार-बार चर्चा नहीं करता। मैं प्रतिज्ञापूर्वक कहता हूँ कि मेरे पास कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो आपके माँगने योग्य न हो। जो वस्तु प्राप्त हो सकती है उसे देने की मैं प्रतिज्ञा कर लेने पर उसे देकर ही अधिक सुखी होता हूँ। मेरे मन में याचक पर कभी क्रोध नहीं आता और न मैं कभी दिये हुये धन के लिये पश्चाताप ही करता हूँ।'); २१७, १७ (राजा ययातिर्दौहित्रैः पतितस्तारितो यथा); २३७, १६; २५७, ५ (इन्होंने वैष्णव यज्ञ किया था); २९४ १८; ४. ५६, ९ (युद्ध देखने आये); ५. ९०, १८; ११४, ७. ९; ११५, २ (इन्होंने अपनी पुत्री माधवी को गालव को दिया); १२०, १२. १४. १६. २० (अपने पुण्यकर्मों से इन्होंने स्वर्ग प्राप्त किया किन्तु पुण्य क्षीण हो जाने पर ये स्वर्गच्युत हो गये)। "ययाति अपने सिंहासन से गिरकर उस स्वर्गीय स्थान से भी विचलित हो गये। उनके मुकुट और आभूषण उनसे अलग हो गये और उनके वस्त्र भी खिसक-खिसक कर गिरने लगे। वे अन्धकार से आवृत्त होने के कारण स्वयं स्वर्गवासियों को कभी दिखाई पड़ते थे और कभी नहीं। स्वर्ग के राजर्षि, सिद्ध और अप्सरा — सभी ने स्वर्ग से भ्रष्ट हो अवलम्बनशून्य हुये ययाति को देखा। इतने ही में देवराज की आज्ञा से एक पुरुष आया जो पुण्यरहित व्यक्तियों को स्वर्ग से नीचे गिराता था। उसने ययाति से कहा कि उनका दर्प ही उनके स्वर्गच्युत होने का कारण है। तब ययाति ने तीन बार यह कहा कि 'मैं सत्पुरुषों के बीच में गिरूँ।' गिरते समय ययाति ने नैमिषारण्य में चार श्रेष्ठ राजाओं को देखा और वे उन्हीं के बीच में गिरने लगे। उन चारों राजाओं का नाम प्रतर्दन, वसुमना, औशीनर शिवि तथा अष्टक था। ये चारों नरेश वाजपेय यज्ञ के द्वारा देवेश्वर श्रीहरि को तृप्त करते थे। ययाति उन नरेशों के यज्ञधूम को सूँघते हुये नीचे गिर रहे थे। इस प्रकार ययाति उसी धूमालेखा का अवलम्बन करके अपने चारों सम्बन्धियों के बीच में गिरे। इन चारों नरेशों ने अपने-अपने पुण्यकर्मों और यज्ञों के फल ययाति को देना चाहा। ययाति की पुत्री माधवी ने भी वहाँ आकर उक्त राजाओं से ययाति का परिचय कराया। तदनन्तर माधवी ने अपने पुण्यकर्मों का आधा भाग अपने पिता को समर्पित करना चाहा। इसी बीच गालव मुनि भी वहाँ आ पहुँचे और अपनी तपस्या का अष्टमांश ययाति को देने का प्रस्ताव किया। (५. १२१)।

"उन सत्पुरुषों के द्वारा पहचाने जाने मात्र से ययाति पृथिवी तक का स्पर्श न करते हुये ऊपर की ओर उठने लगे। उस समय उनकी आकृति दिव्य हो गई। तदनन्तर राजा वसुमना, प्रतर्दन, औशीनर शिवि, और अष्टक ने उच्च स्वर से अपने अपने पुण्यों को राजा ययाति को देने की घोषणा की। इन सत्पुरुषों में से अष्टक ने सैकड़ों पुण्डरीक, गोवत्स तथा वाजपेय यज्ञों का अनुष्ठान किया था और उन सब के फल को उन्होंने ययाति को दे दिया। राजा शिवि ने कभी भी असत्य भाषण नहीं किया था। अपने सत्य के सम्पूर्ण प्रभाव को उन्होंने ययाति को दे दिया। इस प्रकार अपने सत्कर्मों द्वारा उन सब राजाओं ने स्वर्ग से गिरे हुये ययाति को अनायास ही तार दिया। अपने वंश की वृद्धि करनेवाले वे चारों दौहित्र चार राज-वंशों में उत्पन्न हुये थे। उन्होंने अपने यज्ञ-दानादिजनित धर्म से अपने मातामह ययाति को पुनः स्वर्गलोक में पहुँचा दिया (५. १२२)।

"अपने दौहित्रों से विदा लेकर ययाति स्वर्गलोक में पहुँच गये। गन्धर्वों और अप्सराओं ने उनका वहाँ स्वागत किया। देवर्षियों, राजर्षियों तथा चारणों ने भी उनका स्तवन किया। देवताओं ने उत्तम अर्घ्य निवेदन करके ययाति का पूजन और अभिनन्दन किया। ब्रह्मा ने ययाति से कहा : 'तुमने अपने अभिमानपूर्ण व्यवहार से ही अपना पुण्य नष्ट किया था और फल स्वरूप स्वर्ग से नीचे गिर गये। तुम्हारे दौहित्रों ने प्रेमपूर्वक तुम्हें तार दिया जिससे तुम पुनः स्वर्ग में आ गये हो। अतः अब तुम्हें किसी का अपमान नहीं करना चाहिये।' तदनन्तर नारद जी ने बताया कि इस प्रकार पूर्वकाल में ययाति अपने अभिमान के कारण संकट में पड़ गये थे और अत्यन्त आग्रह एवं हठ के कारण महर्षि गालव को भी महान् क्लेश सहन करना पड़ा था। इस उदाहरण के बाद नारद जी ने दुर्योधन से कहा कि वह पाण्डवों के साथ सन्धि कर ले (५. १२३)।" ५. १२१, ६. १२. १४. १७. १९. २२; १२२, १. १६; १२३, १. ११. १९। "धृतराष्ट्र ने दुर्योधन को बताया कि नहुषपुत्र ययाति प्रजापति सोम की छठीं पीढ़ी में उत्पन्न हुये थे। ययाति के पाँच पुत्र हुये जिनमें सबसे बड़े यदु थे और सबसे छोटे पूरु जिनसे ही पौरव वंश आरम्भ हुआ। पूरु वृषपर्वा-पुत्री शर्मिष्ठा के गर्भ से उत्पन्न हुये थे जब कि यदु का जन्म देवयानी से हुआ था। वे यदु ही यादव वंश के प्रवर्तक हुये। उनकी बुद्धि बहुत मन्द थी और उन्होंने दर्प में भर कर समस्त क्षत्रियों का अपमान किया था। वे पिता की भी आज्ञा नहीं मानते थे और उन्हें अपमानित तक करते थे। भूमण्डल में यदु ही सबसे अधिक बलवान थे और समस्त राजाओं को अपने अधीन करके हस्तिनापुर में निवास करते। यदु के पिता ययाति ने कुपित होकर यदु को शाप देकर उन्हें राज्य से भी वंचित कर दिया। ययाति ने यदु का अनुसरण करनेवाले अपने अन्य पुत्रों को भी शाप से राज्य-वंचित करने के बाद अपने सबसे छोटे पुत्र पूरु का राज्याभिषेक किया। (५. १४९)। ५. १४९, ३. १०. ११; ६. ९, ६; १७, १०। "नहुष पुत्र ययाति ने सौ राजसूय यज्ञ, सौ अश्वमेध, एक सहस्र पुण्डरीक, सौ वाजपेय, एक सहस्र अतिरात्र तथा इच्छानुसार चातुर्मास्य और अग्निष्टोम आदि नाना प्रकार के यज्ञों का अनुष्ठान किया था। इस पृथिवी पर ब्राह्मणद्रोहियों के पास जो कुछ धन था वह सब उनसे छीन कर ययाति ने ब्राह्मणों के अधीन कर दिया। देवासुर संग्राम में उन्होंने देवताओं की सहायता की थी। उन्होंने इस सम्पूर्ण पृथिवी को चार भागों में विभक्त करके उसे ऋत्विज, अध्वर्यु, होता तथा उद्गाता—इन चार प्रकार के ब्राह्मण में बाँट दिया। उनकी एक पत्नी का नाम देवयानी था जो उशना (शुक्र) की पुत्री थी। ययाति की दूसरी स्त्री दानवराज की पुत्री शर्मिष्ठा थी। वे देवोपम नरेश ययाति दूसरे इन्द्र की भाँति समस्त देवकाननों में अपनी इच्छा के अनुसार विहार करते थे। इस प्रकार ऐश्वर्यशाली राजा ययाति ने धैर्य का आश्रय लेकर कामनाओं का अन्ततः परित्याग कर दिया और अपने छोटे पुत्र पूरु को राजसिंहासन पर बैठा कर वन में चले गये। (७. ६३)। ७. ७३, १. १०; ९४, ४२; १४४, ५. ६ (यदु के पिता); १५७, ७; ८. ९, १; ९. ४१, ३३. ३४. ३५; १२. २४, ३; २६, १३ (ययाति द्वारा गायी गई एक गाथा का उदाहरण); २९, ९४,

९७; ४९, ५८; ९२, ५; ९३, ३९; १५२. ९; १६६, ७४ (इन्होंने नहुष से एक खड्ग प्राप्त किया जो बाद में इनसे पूरु को मिला); १७८, ४; १०९, २३ (क्षीणपुण्योऽपि धृत्या लोकानवाप्तवान्); ३२६, ३१ (गाथाः पुरा गीताः···यथातिना); १३. ६, ३० (पुरा ययातिर्विभ्रष्टश्च्यावितः पतितः क्षितौ । पुनरारोपितः स्वर्गं दौहित्रैः पुण्यकर्मभिः); ८१, ५; ९४, ५. २७; ११५, ६९ (ये कार्तिकमास में मांस-भक्षण नहीं करते थे); १६५, ४८; १६६, १० (ययातिरिव); १४. ५, १२ (ययातिरिव धर्मवित्)।

तुकी० इनके निम्नलिखित पर्याय :

नाहुष (नहुष के पुत्र) : १. ७५, ३२. ३६; ७६, ४; ७८, १५. २४. ३८; ८१, ४. १९. २१. ३०; ८२, १२; ८३, ३६. ३७; ८५, १८. ३२; ८६, १. ११; ३. ५७, ४४; १०३, १५; १२९, ३. १२; १३०, ११ (यत्रोत्तराणां सर्वेषामृषीणां नाहुषस्य च); १९५, १; २३७, १६; ५. ११४, ७. ११; १२०, १३; १२२, १२; ७. ६३, १. ४; १५७, ७; ८. ९, १; ९. ४१, ३३; १२. २४, ३; २९, ९४; ९२, ५; ९३, ३९; १७८, ४।

नाहुषात्मज : १. ७८, १४. २२; ८१, ३१; ८२, ४; ८५, १; ३. ८९, १०; ५. १२०, १८; १२१, ८; १४९, ३. १०; १२. २९, ९७।

सर्वकाशीश : ५. ११५, २ (ययातिः सर्वकाशीश)।

ययातिजा = माधवी (५. १२०, ६)।

ययातिपतन, एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, ४८)।

ययात्युपाख्यानम् — वैशम्पायनजी ने प्रजापति दक्ष, मनु वैवस्वत, भरत, कुरु, पूरु, आजमीढ, यादव, कौरव और भरतों की वंशावलियों का वर्णन करने का वचन दिया (१. ७५, १-२)। इस प्रसङ्ग में उन्होंने दक्ष (१. ७५, ४—९), मनु वैवस्वत (१. ७५, १०-१८), पुरूरवा (१. ७५, १८—२६), नहुष (१. ७५, २६—३५), ययाति (१. ७५, ३६—५८), कच (१. ७६-७७), देवयानी (१, ७८—८३) और ययाति (१. ८४—८५) का वर्णन किया। इस प्रकार ययात्युपाख्यान महाभारत के आदि पर्व के पचहत्तर से पचासी अध्यायों में वर्णित है।

यवक्रि = यवक्रीत (३. १३६, ८)।

यवक्रिन् = यवक्रीत (३. १३५, ४२)।

यवक्री = यवक्रीत : ३. १३५, १३. १५. २३. ६०; १३६, १. ३.७. १२. १५. १६।

यवक्रीत, भरद्वाज के पुत्र एक ऋषि का नाम है : १. २, १७६ (यवक्रीतस्य चाख्यानं); ३. १३५, ९ (भारद्वाजो यत्र कविर्यवक्रीतो व्यनश्यत). १०. १८. १९. २७. ३१. ३३. ३४. ३७. ४०. ४३ (यवक्रीत की तपस्या और इन्द्र के साथ संवाद). ५९; १३६, ७. १२. १४. १९. २० (इन्होंने रैभ्य मुनि की पुत्रवधू के साथ व्यभिचार किया जिसके कारण रैभ्य द्वारा उत्पन्न राक्षस ने इन्हें मार डाला); १३८, २२. २३. २५. २७ (अर्वावसु के प्रयत्न से इनका पुनरुज्जीवन); १२. २०८, २६ (पूर्व के ऋषियों में एक); २९६, १५; १३. २६, ६ (भीष्म को देखने के लिये आये); १५१, ३०,(पूर्व के सात महेन्द्रगुरुओं में से एक); १६५, ३७ (पूर्व के ऋषियों के अन्तर्गत इनका उल्लेख)। तुकी० भारद्वाज, यवक्रि, यवक्रिन् , यवक्री।

यवक्रीतात्मज : ५. १०९, ११ (अत्र (दक्षिण में) सावर्णिना चैव यवक्रीतात्मजेन च मर्यादा स्थापिता ब्रह्मन् यां सूर्यो नातिवर्तते)।

यवक्रीतोपाख्यानम् — "लोमशजी ने युधिष्ठिर को बताया कि भरद्वाज तथा रैभ्य एक दूसरे के सखा थे और निरन्तर एक आश्रम में निवास करते थे। रैभ्य के दो पुत्र थे अर्वावसु और परावसु। भरद्वाज के पुत्र का नाम यवक्री (यवक्रीत) था। यवक्रीत ने देखा कि लोग उनके तपस्वी पिता का सत्कार नहीं करते, परन्तु पुत्रों सहित रैभ्य का ब्राह्मणों में आदर होता है। यह देख कर उन्हें सन्ताप हुआ। वे क्रोध से आविष्ट हो वेदों का ज्ञान प्राप्त करने के लिये अत्यन्त प्रज्वलित अग्नि में अपने शरीर को तप्त करते हुये घोर तपस्या करने लगे। यवक्रीत की इस तपस्या से इन्द्र के मन में सन्ताप उत्पन्न हो गया और उन्होंने यवक्रीत के पास आकर तपस्या का कारण पूछा। यवक्रीत ने बताया कि वे द्विजातियों के पढ़ाये बिना ही सब वेदों का ज्ञान करना चाहते हैं। इन्द्र ने यवक्रीत को बताया कि इस प्रकार वेदों का ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास वास्तविक अध्ययन का मार्ग नहीं है। इन्द्र के जाने पर यवक्रीत पुनः पूर्ववत् तपस्या में लग गये। इन्द्र ने पुनः आकर यवक्रीत को तपस्या से विरत करना चाहा किन्तु यवक्रीत अपने निश्चय पर दृढ़ रहे। यवक्रीत ने कहा कि वे अपनी इच्छा पूर्ण न होने पर प्रज्वलित अग्नि में अपने एक-एक अंग का होम कर देंगे। तब इन्द्र ने यवक्रीत को रोकने के लिये कुछ विचार किया और फिर एक ऐसे तपस्वी ब्राह्मण का रूप धारण किया जिसकी अवस्था कई सौ वर्ष की थी और जो यक्ष्मा का रोगी तथा दुर्बल दिखाई देता था। गङ्गा के जिस तीर्थ में यवक्रीत मुनि स्नान करते थे वहीं उस ब्राह्मण रूपधारी इन्द्र ने बालू द्वारा पुल बनाना आरम्भ किया। वे निरन्तर एक-एक मुट्ठी बालू लेकर गङ्गा में छोड़ते थे और इस प्रकार उन्होंने यवक्रीत को दिखा कर पुल बाँधने का प्रयास आरम्भ कर दिया। तब यवक्रीत ने उनके प्रयास को देख कर कहा 'ब्रह्मन्! आप प्रयत्न तो महान् कर रहे हैं परन्तु यह व्यर्थ है।' तब ब्राह्मण ने यवक्रीत से कहा कि यदि बिना अध्ययन के वेदों का ज्ञान प्राप्त करने की तपस्या सफल हो सकती है तो उनका पुल बाँधने का प्रयास भी अवश्य सफल होगा। तब यवक्रीत ने ब्राह्मण से वर देने के लिये कहा। ब्राह्मण ने कहा : 'तुम तपस्या छोड़ कर आश्रम लौट जाओ, तुम्हें और तुम्हारे पिता को वेदों का यथेष्ट ज्ञान प्राप्त हो जायगा। साथ ही तुम्हारी जो भी कामना हो वह पूर्ण होगी।' यवक्रीत ने आश्रम लौट कर अपने पिता भरद्वाज को बताया कि उन्हें शीघ्र सम्पूर्ण वेदों का ज्ञान प्राप्त हो जायगा। तब भरद्वाज ने यवक्रीत से कहा : 'इस प्रकार मनोवाञ्छित वर प्राप्त करने के कारण तुम्हारे मन में अहंकार उत्पन्न हो जायगा और तुम शीघ्र ही नष्ट हो जाओगे।' तदनन्तर भरद्वाज ने बालधि पुत्र मेधावी से सम्बद्ध कुछ देवताओं द्वारा गाई गई गाथाओं का उदाहरण देते हुये यवक्रीत से यह वचन देने के लिये कहा कि वह रैभ्य और उनके पुत्रों के पास कदापि नहीं जायगा। यवक्रीत ने अपने पिता को तदनुसार वचन दे दिया। तदनन्तर वह निर्भय विचरने लगा। दूसरे ऋषियों को त्रस्त करने में उसे अत्यधिक सुख प्राप्त होता था। (३. १३५)।

"उन दिनों यक्रीत सर्वथा भयशून्य हो कर चारों ओर चक्कर लगाया करते थे। एक दिन वैशाख मास में वह रैभ्य मुनि के आश्रम में गये जहाँ रैभ्य की पुत्रवधू किन्नरी के समान विचर रही थी। उसे देखते ही यवक्रीत काम के वशीभूत हो कर निर्लज्जतासे उस मुनिवधू से बोले : 'तू मेरी सेवा में उपस्थित हो।' शाप के भय से वह पुत्रवधू यवक्रीत के पास चली गई। यवक्रीत ने एकान्त में ले जाकर उसके साथ बलात्कार किया। इतने में ही रैभ्य मुनि ने अपने आश्रम में आ कर देखा कि उनकी पुत्रवधू आर्तभाव से रो रही है। रैभ्य के पूछने पर उसने सारी बातें और यवक्रीत के कुकृत्य को मुनि से बता दिया। रैभ्य मुनि ने तब यवक्रीत को मारने के उद्देश्य से अपनी एक जटा उखाड़ कर अग्नि में संस्कारपूर्वक डाल दी जिससे एक कृत्या प्रकट हुई। वह कृत्या रूप में उनकी पुत्रवधू के ही समान थी। तत्पश्चात एक दूसरी जटा उखाड़ कर उन्होंने पुनः उसी अग्नि में डाल दिया जिससे एक भयंकर राक्षस प्रकट हुआ। रैभ्य ने उस राक्षस को आज्ञा दी कि वह यवक्रीत को मार डाले। रैभ्य की रची हुई कृत्यारूपी सुन्दरी नारी ने पहले यवक्रीत के पास उपस्थित हो उन्हें मोह में डाल कर उनके कमण्डलु का हरण कर लिया। कमण्डल के चले जाने से यवक्रीत का शरीर उच्छिष्ट रहने लगा। तब रैभ्य द्वारा उत्पन्न राक्षस हाथ में त्रिशूल ले कर यवक्रीत की ओर दौड़ा। यह देख कर यवक्रीत सहसा उस मार्ग की ओर भागे जो एक सरोवर की ओर जाता था। उनके जाते ही सरोवर का जल सूख गया। यवक्रीत तत्काल सब सरिताओं के पास गये किन्तु उनके पहुँते ही सरिताओं का जल सूख गया। तब भयभीत हो कर यवक्रीत अपने पिता के अग्निहोत्र गृह में प्रवेश करने लगे। उस समय अग्निहोत्र गृह में एक अन्धा शूद्र रक्षक नियुक्त था जिसने यवक्रीत को पकड़ लिया। शूद्र द्वारा पकड़े गये यवक्रीत पर पीछा कर रहे राक्षस ने त्रिशूल से वार कर

दिया। इससे यवक्रीत का वक्ष विदीर्ण हो गया और वह प्राणहीन हो कर वहीं गिर पड़े। इस प्रकार यवक्रीत को मार कर वह राक्षस रैभ्य के पास लौट आया और उनकी आज्ञा से उस कृत्या स्वरूपा रमणी के साथ उनकी सेवा में रहने लगा। (३. १३६)।

"भरद्वाज मुनि प्रतिदिन का स्वाध्याय पूर्ण करके जब अपने आश्रम में लौटे तब अन्य दिनों की भाँति अग्नियों ने उनका स्वागत नहीं किया क्योंकि यवक्रीत के मारे जाने से वे अशौचयुक्त थीं। तब उन्होंने अन्धे रक्षक से इसका कारण पूछा। रक्षक ने बताया कि मन्दमति यवक्रीत अवश्य ही रैभ्य के यहाँ गया था जिनके कारण एक राक्षस ने उसका वध कर दिया है। शूद्र से सारा समाचार जानकर विलाप करते हुये भरद्वाज ने रैभ्य को यह शाप दे दिया कि वह अपने ही ज्येष्ठ पुत्र के हाथों मारे जायँगे। तदनन्तर भरद्वाज ने अपने पुत्र का दाह-संकार किया और उसके बाद स्वयं भी प्रज्वलित अग्नि में प्रवेश कर गये (३. १३७)

"उन्हीं दिनों राजा बृहद्द्युम्न ने एक यज्ञ का अनुष्ठान आरम्भ किया और रैभ्य के दोनों पुत्रों, अर्वावसु तथा परावसु को सहयोगी बनाया। उन दोनों पुत्रों के चले जाने के बाद आश्रम में केवल रैभ्य और उनकी पुत्रवधू, परावसु की पत्नी ही रह गये। एक दिन घर की देखभाल करने के लिये परावसु अकेले ही आश्रम पर आये। उस समय उन्होंने काले मृगचर्म से ढके अपने पिता को हिंसक पशु समझ कर उनकी हत्या कर दी। यद्यपि वे ऐसा नहीं करना चाहते थे तथापि हिंसक पशु के धोखे में पितृहत्या का पाप कर दिया। तदनन्तर अपने पिता का प्रेतकर्म करने के बाद उन्होंने यज्ञमण्डप में लौट कर अपने भाई अर्वावसु से सारा वृत्तान्त बताते हुये कहा : 'यह यज्ञकर्म तुम अकेले नहीं सम्पन्न कर सकते। इधर मैंने हिंसक पशु के धोखे में पिता की हत्या कर डाली है। अतः तुम मेरे लिये ब्रह्महत्या-निवारण का व्रत करो और मैं राजा का यज्ञ कराऊँगा क्योंकि मैं अकेले ही इस कार्य का सम्पादन कर सकता हूँ।' अर्वावसु ने अपने भाई की बात मान कर ब्रह्महत्या-निवारण का प्रायश्चित पूरा किया। जब वे पुनः यज्ञमण्डप में लौट कर आये तब परावसु ने राजा से कहा कि अर्वावसु ब्रह्महत्यारा है, अतः उसे यज्ञमण्डप में प्रवेश नहीं करना चाहिये। परावसु की बात सुनते ही राजा के सेवकों ने अर्वावसु को मण्डप में आने से रोका। अर्वावसु ने अनेक बार अपनी स्थिति स्पष्ट करने का प्रयास किया किन्तु राजा के सेवकों ने उन्हें फटकार दिया। तब अर्वावसु ने वन में आकर उग्र तपस्या द्वारा सूर्य-सम्बन्धी रहस्यवेद का अनुष्ठान किया। अर्वावसु के उस कार्य से सूर्य आदि सब देवता प्रसन्न हुये। उन लोगों ने अर्वावसु का पुनः यज्ञ में वरण और परावसु को बहिष्कृत करा दिया। तत्पश्चात अग्नि-सूर्य आदि देवताओं ने अर्वावसु को वर देने की इच्छा प्रकट की। अर्वावसु ने यह वर माँगा कि 'भरद्वाज तथा यवक्रीत दोनों जीवित हो जाँय और सूर्य देवता सम्बन्धी रहस्यवेद की प्रतिष्ठा हो।' साथ ही उन्होंने अपने पिता के जीवित हो जाने तथा अपने भाई परावसु के भी निर्दोष हो जाने और पिता के वध की बात भूल जाने का वर माँगा। इस प्राकर जब पूर्वोक्त सभी मृत मुनि जीवित हो उठे तब यवक्रीत को देवों ने बताया कि रैभ्य मुनि ने अत्यन्त क्लेश से गुरुजनों को सन्तुष्ट कर के वेदों का ज्ञान प्राप्त किया था जब कि यवक्रीत ने बिना गुरु के ही वेद पढ़ा था। अतः अपने इसी गुण के कारण रैभ्य शाप द्वारा यवक्रीत का वध करने में सफल हो गये। ऐसा कहकर और सब को नूतन जीवन प्रदान करने के बाद देवगण पुनः स्वर्गलोक चले गये (३. १३८)।"

यवक्षा, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, ३०)।

१. यवन (बहु० °नाः) एक जाति का नाम है : १. ८५, ३४ (तुर्वसु की सन्तान); १७५, ३६ (वसिष्ठ की धेनु की योनि से उत्पन्न हुये). ३७; २. ४, २३; ३१, ७२ (अपनी दिग्विजय के समय सहदेव ने दक्षिण में इन्हें जीता था); ३२, १७ (दिग्विजय के समय पश्चिम में नकुल ने इन्हें पराजित किया था); ५१, १४ (यवनैः सहितो राजा भगदत्तो); ३. ५१, २४ (युधिष्ठिर के राजसूय के समय उपस्थित थे); १८८, ३५ (कलियुग में शासन करनेवाली बर्बर जातियों में एक यह भी होगी); २५४, २१ (दिग्विजय के समय कर्ण ने इन्हें पराजित किया था); ५. १९, २१ (काम्बोजराज सुदक्षिण का अनुगमन किया); १९५, ७; ६. ९, ६५; २०, १३; ५१, ७ (भीष्म की रक्षा की); ७५, १० (त्रिगर्तराज के साथ गये); ७. ७, १४ (द्रोण के व्यूह में); २०, ७ (द्रोण के गारुडव्यूह के ग्रीवा भाग में); ९३, ४२ (अर्जुन पर आक्रमण किया); ११९, १४. २१. ३९. ४२. ४५. ५३ (सात्यकि ने इनका वध किया); १२०, १; १२१, १३ (सात्यकि पर आक्रमण किया); ८. ४५, ३६ (सर्वज्ञा यवना); ४६, १५; ५६, ११५ (एकेपुनिष्ठतैरश्वैः काम्बोजैर्यवनैः शकैः); ७३, १९; ८८, १७; ९. १, २७ (यवना विनिपातिताः); २, १८ (दुर्योधन का साथ दिया); ८, २६ (कृप के साथ गये); ११. २२, ११ (जयद्रथ की पत्नियों में यवन स्त्रियाँ भी थीं); १२. ६५, १३; १०१, ५; १३. ३३, २१ (इन्हें शूद्रत्व प्राप्त हुआ); ३५, १८ (शूद्र हो गये); १४. ७३, २५ (अर्जुन के साथ युद्ध किया)। तुकी० यौन (बहु०)।

२. यवन (एक०) से यवनों के राजा का तात्पर्य है : ३. १२, ३२ (यवनराज कसेरुमान का श्रीकृष्ण ने वध किया था); ७. ११, १८ (श्रीकृष्ण ने इन्हें पराजित किया था)।

यवनाधिप, एकाधिक यवन राजाओं का द्योतक है : १. १३९, २१ (अर्जुन ने पराजित किया); १८७, १६ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित थे); २. ४, २५ (युधिष्ठिर की सेवा में); १४, १४ (= भगदत्त)।

यशस् = शिव (सहस्रनाम)।

यशस्विनी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १०)।

यशोदा, नन्दगोप की पत्नी का नाम है : ४. ६, २ (यशोदागर्भ संभूतां नारायणवरप्रियाम्। नन्दगोपकुले जातां मङ्गल्यां कुलवर्धिनीम्)।

१. यशोधर, श्रीकृष्ण के रुक्मिणी देवी के गर्भ से उत्पन्न पुत्र का नाम है (१३. १४, ३३)।

२. यशोधर, पाण्डव-पक्षीय दुर्मुख के पुत्र का नाम है (७. २८४, ५)।

यशोधरा, त्रिगर्तराज की पुत्री, जो पूरुवंशी महाराज हस्ती की पत्नी और विकुण्ठन की माता थी (१. ९५. ३५)।

यशोवासस् = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

यष्टृ = श्रीकृष्ण (विष्णु) : १२. ३४१, १५।

याज, उपयाज के ज्येष्ठभ्राता, कश्यप-गोत्रीय एक महर्षि का नाम है : "महाराजा द्रुपदने दो ऐसे ब्रह्मर्षियों को देखा जो कठोर व्रत का पालन करते थे। उनके नाम याज और उपयाज थे। ये दोनों ही परम शान्त और परमेष्ठी ब्रह्मा के समान प्रभावशाली तथा वैदिकसंहिता के अध्ययन में सदा संलग्न रहते थे। दोनों सूर्यदेव के भक्त अत्यन्त योग्य तथा श्रेष्ठ ऋषि थे। राजा द्रुपद ने इन ऋषियों को सम्पूर्ण मनोवाञ्छित भोगपदार्थ अर्पित करने का संकल्प ले कर निमन्त्रित किया। राजा ने उपयाज से एकान्त में मिल कर उन्हें अपने अनुकूल बनाने की चेष्टा की। उन्होंने उपयाज से कहा : "जिस कर्म से मुझे ऐसा पुत्र प्राप्त हो जो द्रोणाचार्य को मार सके, वैसा ही कर्म सम्पन्न करने के लिये मैं आपको एक अर्बुद गायें दूँगा। इसके अतिरिक्त भी आपको जो अत्यन्त प्रिय लगने वाली वस्तु होगी वह सब भी आपको अर्पित करूँगा।' उपयाज द्वारा अस्वीकार कर दिये जाने पर द्रुपद उनकी एक वर्ष तक सेवा करते रहे। तब उपयाज ने राजा से कहा : 'मेरे बड़े भाई याज ने एक समय वन में घूमते हुये ऐसी भूमि पर पड़े एक फल को उठा लिया था जिसकी शुद्धि के सम्बन्ध में कोई पता नहीं था। इससे मैंने अनुमान किया है कि वे अपवित्र वस्तु को ग्रहण करने में भी कोई विचार नहीं करते। अतः तुम उन्हीं के पास जाओ। वे तुम्हारा यज्ञ करा देंगे।' तब राजा द्रुपद ने याज के पास आ कर अपना मनोरथ बताते हुये उन्हें अपना मनोवाञ्छित कर्म कराने के लिये अस्सी सहस्र गायें देने का वचन दिया। द्रोणाचार्य की शक्ति का वर्णन करते हुये राजा द्रुपद ने याज को बताया कि द्रोण ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ और ब्रह्मास्त्र के प्रयोग में भी सर्वोत्तम हैं। उनका धनुष छः हाथ लम्बा

है। द्रुपद के प्रस्ताव पर याज उनका यज्ञ कराने के लिये सहमत हो गये और उन्होंने उपयाज को भी सहयोग के लिये सहमत कर लिया। तदनन्तर उपयाज ने यज्ञ के लिये आवश्यक सामग्रियों का विवरण द्रुपद को बताया। (१. १६७, ७-५६।" १. १६७, ७. २१. २२. ३१. ३६. ३७-३९. ५१. ५२ (याज और उपयाज ने द्रुपद के लिये जो यज्ञकर्म सम्पन्न कराया उससे धृष्टद्युम्न और द्रौपदी यज्ञाग्नि से प्रकट हुये); २. ८०. ४३ (याजोपयाजतपसा पुत्रं लेभे स पावकात्)। तुकी० काश्यप द्वि०)।

याजन, एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, १०३)।

याज्ञवल्क्य, एक ऋषि का नाम है : २. ४, १२ (युधिष्ठिर की सेवा में); ७, १२ (इन्द्र की सभा में); ३३, ३५ (ये युधिष्ठिर के राजसूय में अध्वर्यु बने); १२. ३१०, ३) जनक के साथ इनका संवाद). ४ (ऋषिश्रेष्ठं). ८; ३११, १; ३१२, १; ३१३, १; ३१४, १; ३१५, १; ३१६, १; ३१७, १; ३१८, १ (इन्होंने सूर्य से युजुर्वेद और शतपथ ब्राह्मण आदि प्राप्त किया था). ६७. ६९. ८४ (विश्वावसु के साथ इनका संवाद).९४. ११२ (जनक के साथ इनका संवाद, देखिये १२. ११०–११८); १३. ४, ५१ (विश्वामित्र के पुत्रों में से एक); १४, ८९ शिव की स्तुति की); १४. ७२, ३ (अश्वमेध के समय विविध कर्म सम्पन्न करेंगे); ७३, १७ (इनके शिष्य); १७. १, १२ (भारद्वाजं याज्ञवल्क्यं)।

१. यातुधान (बहु० °नाः) दानवों के एक वर्ग का नाम है : ३. १२, ७; ११९, ९; १७३, ५१ (यातुधानानां गदामुद्गरधारिणाम्); १९२, ५२ (सुरौद्राः). ५९ (शल का वध किया); ५. १००, ५ (नैर्ऋता यातुधानाश्च ब्रह्मपादोद्भवाश्च ये); १४३, १९; ७. १५६, ११३ (पौलस्त्यै-र्यातुधानैश्च); १७५, १०९ (राक्षसाश्च पिशाचाश्च यातुधानास्तथैव च); १७९, १९ (घटोत्कच ने माया से इनका सृजन किया); ८. ८७, ४० (कर्ण का पक्ष लिया); १३. ३, ४ (क्रोध में आकर विश्वामित्र ने यातुधानों और रक्षसों की सृष्टि की); १७, १८१; ९०, २२ (ये लेग यज्ञों में हवि का हरण कर लेते हैं); १४. ८, ६ (मुञ्जवत पर्वत पर शिव की उपासना करते हैं); १८. ५, २१ (धृतराष्ट्र के पुत्र यातुधानों के अंश से उत्पन्न हुये थे)।

२. यातुधान (एक०) : ७. २०२, १०८।

यातुधानी, एक कृत्या जिसका वृषदर्भ मुनि ने सृजन किया था : १३. ९३, ५७. ६१. ७८. ८०. ८२. ८४. ८५. ८७. ८९. ९१. ९३-९७. ९९. १०१. १०३. १०५-१०७. ११०. १४०।

१. यादव (बहु० °वाः), यदु के वंशजों का द्योतक है (यदु बहु० सामान्यतया वृष्णि बहु० का पर्यायवाची है) : १. ७५, १; ८५, ३४ (यदु के वंशज); ९५, १०; १३०, २३ (कृपाचार्य इनके आचार्य हुये); २०२, १५; २. १३, ४०; १४, ३० (इनके राजा कंस ने इन्हें त्रस्त कर रक्खा था); ६२, ८ (इन लोगोंने कंस का परित्याग किया); ३. १६, ११; १७, १; २०, ८ (शाल्व ने द्वारका पर आक्रमण किया); ८०, २८ (सुभद्रा हरण के समय अर्जुन ने इन्हें पराजित किया था); १७६, १६ (कृष्णः सह यादवैः); ४. ४, ५८ (इन्द्रसेन आदि इनके पास आये); २८, १२; ७१, ३ (श्रीकृष्ण); १२८, ४० (कंस को छोड़ दिया); १४४, १२; १४९, ७ (यदु); ८. ८, २७; ९. ३५, १४ (बलराम के साथ गये); १०. १२, ३५ (मानितः सर्वयादवैः); ११. २५, ५० (गान्धारी ने यादवों को शाप दिया कि वे स्वयं अपने ही में एक दूसरे के हाथों मारे जायेंगे); १२. ५९, १; ८१, २९. ३१; १६६, ७९ (भोजः स यादवः); १४. ८३, १४ (यादवानां कुमारकाः); १६. ३, १०. १८; ४, ३. ९ (यादवानां पुरीं, अर्थात द्वारका)।

२. यादव = शूर (७. १४४, ७) :

३. यादव = श्रीकृष्ण : २. २१, ४०; ४४, ४२; ६. ३५, ४१; ७. १९, १३ (पाण्डवयादवौ); ९. ६२, ४३; १३. १४, ४०; ३१, १०-१२. १५-१७. २०; १४७, ३३; १४८, १८ (देवेशं यादवं)।

४. यादव = सात्यकि (५. ४८, ४९, ७. १४२, ७०)।

५. यादव = वज्र (१७. १, ९)।

६. यादव (द्वि० °वौ) = श्रीकृष्ण और बलराम (२. ४३, १५)।

७. यादव (वि०) : १६. ७, ७ (सुधर्मां यादवीं सभाम्)।

यादवनन्दन = श्रीकृष्ण : ३. १२, २५; ५. १४१, २०; ६. ५९, ४१; १०६, ३२; ७. १८२, २६; ९. ६३, १६; १२. ४६, २७; १४. २, ११। तुकी० सर्वयादवनन्दन।

यादवर्षभ = श्रीकृष्ण (६. १०६, ६२)।

यादवशार्दूल = श्रीकृष्ण (५. ८३, ७०; १३. १४, ४२९)।

१. यादवश्रेष्ठ = बलराम (९. ५४, ३)।

२. यादवश्रेष्ठ = श्रीकृष्ण : २. २, २४; ५. १३१, १७; ७. १८३, ४६; ९. ६३, ३२. ३७)।

यादवाग्र्य = श्रीकृष्ण (१२. ४३, १७)।

१. यादवी = अश्मकी (१. ९५, १३)

२. यादवी = शिशुपाल की माता (२. ४३, १५)।

३. यादवी = कुन्ती (१. ११०, ५)।

४. यादवी = सुभद्रा (१५. ३१, २)।

यादवीपुत्र = युधिष्ठिर (१२. ६९, ७१)।

यादवीमातृ = युधिष्ठिर (१५. ३, ३०)।

यादवेश्वर = श्रीकृष्ण (१३. १६, ७३)।

यादसां भर्ता, यादसां पतिः = वरुण (देखिये वस्था०)।

यानसन्धि, यानसन्धिपर्व का द्योतक है (१. २, ६१)।

यानसन्धिपर्वन् – "इस प्रकार महर्षि सनत्सुजात और विदुर जी के साथ बातचीत करते हुये धृतराष्ट्र की सारी रात व्यतीत हो गई। प्रातःकाल धृतराष्ट्र आदि समस्त कौरवों ने संजय को पाण्डवों के पास से लौटा हुआ जान कर उनसे सारा समाचार जानने के लिये राजसभा में प्रवेश किया (राजसभा की शोभा का वर्णन)। भीष्म, द्रोण, कृप, शल्य, कृतवर्मा, जयद्रथ, अश्वत्थामा आदि भी वहाँ उपस्थित हुये। संजय ने तब सभी को सम्बोधित करते हुये पाण्डवों का समाचार सुनाने की घोषणा की (५. ४७)।

"सञ्जय ने कहा कि श्रीकृष्ण की उपस्थिति में अर्जुन ने दुर्योधन के लिये यह सन्देश दिया है : 'जो काल के गाल में जानेवाला, मन्दबुद्धि और मूर्ख मेरे साथ युद्ध का दम्भ भरता है वह दुर्योधन यदि महाराज युधिष्ठिर का राज्य नहीं छोड़ता तो पापकर्म का परिणाम समस्त धार्तराष्ट्रों को भोगना पड़ेगा। यदि दुर्योधन चाहता है कि पाण्डव वीरों के साथ कौरवों का युद्ध हो तो उससे पाण्डवों का सारा मनोरथ सिद्ध हो जायगा। धर्मात्मा युधिष्ठिर ने वन में निर्वासित होकर जिन दुःखों का सहन किया है उनसे भी अधिक दुःखदायिनी मृत्यु की शय्या दुर्योधन को प्राप्त होगी। जिस प्रकार ग्रीष्म ऋतु में प्रज्वलित अग्नि सब ओर से धधक उठती है और घास-फूस तथा जङ्गलों को जला देती है उसी प्रकार क्रोध से भरे युधिष्ठिर दुर्योधन की सेना को अपने दृष्टिपात मात्र से दग्ध कर देंगे। भीमसेन भी युद्ध होने पर उसी प्रकार धार्तराष्ट्रों का संहार करेंगे जिस प्रकार सिंह गायों के झुण्ड में घुस उनका संहार कर डालता है।' सञ्जय ने बताया कि अर्जुन ने पाण्डव पक्ष के सभी महान वीरों के पराक्रम का उल्लेख करते हुये कहा कि कौरव उनके सामने टिक नहीं पायेंगे और युद्ध आरम्भ होने पर सम्पूर्ण कौरव पक्ष का विनाश सुनिश्चित है। उन्होंने अपने पक्ष में श्रीकृष्ण के होने की विशेष रूप से चर्चा करते हुये उनके दिव्य पराक्रम का भी उल्लेख किया है। सञ्जय ने कहा कि अर्जुन ने अन्त में अपने सम्बन्ध में चर्चा करते हुये इस प्रकार कहा है : 'मैं शत्रुओं के वध के लिये सुसज्जित हो अस्त्रसंचालन की विभिन्न रीतियों का आश्रय लेकर स्थूणाकर्ण, पाशुपतास्त्र, ब्रह्मास्त्र और ऐन्द्रास्त्र आदि का भी प्रयोग करूँगा। मेरे बाणों के प्रहार से युद्ध में कोई जीवित नहीं बचेगा। अतः सञ्जय तुम दुर्योधन से यह कह देना कि पाण्डव समरभूमि में इन्द्र आदि समस्त देवताओं को भी पराजित कर सकते हैं। फिर भी मैं चाहता हूँ कि पितामह भीष्म, कृपाचार्य, द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा, और

विदुर जी जैसा कहेंगे वैसा ही होगा। मेरी इच्छा है कि समस्त कौरव दीर्घायु हों।' (५. ४८)।

"संजय से अर्जुन का सन्देश सुनने के बाद भीष्म ने दुर्योधन से कहा कि अर्जुन और श्रीकृष्ण वास्तव में नर और नारायण हैं। इन्हीं की सहायता से शक्र ने दैत्यों और दानवों पर विजय प्राप्त की थी। नर ने सैकड़ों-हजारों पौलोमों और कालकेयों का युद्ध में वध किया था। एक बाण से ही अर्जुन ने उस जम्भासुर का सर काट दिया जो उन्हें निगलना चाहता था। उन्होंने सागर के पार स्थित हिरण्यपुर में जाकर ६०,००० निवातकवचों को युद्ध में परास्त किया था। इसी प्रकार नारायण ने भी इस संसार में अगणित दैत्यों और दानवों का वध किया है। भीष्म की बातें सुनकर कर्ण ने यह गर्वोक्ति की कि वह युद्ध में सम्पूर्ण पाण्डवों का वध कर डालेगा। किन्तु भीष्म ने उसे फटकारते हुये कहा कि विराटनगर में स्वयं उसके भाई का भी वध करके गोहरण के समय अर्जुन ने अकेले ही कर्ण सहित सम्पूर्ण कौरवों को परास्त किया था। द्रोणाचार्य ने भी पाण्डवों के साथ सन्धि करने पर बल दिया,किन्तु धृतराष्ट्र ने उनकी बातों का कोई उत्तर नहीं दिया (५. ४९)।

धृतराष्ट्र के कहने पर संजय ने बताया कि पाञ्चाल आदि वीर युधिष्ठिर की आज्ञा की प्रतीक्षा कर रहे हैं। तदनन्तर धृतराष्ट्र ने जब सञ्जय से प्रद्युम्न की सेना तथा सोमकों की विशाल वाहिनी का वर्णन करने की प्रार्थना की तब सञ्जय बार बार दीर्घ निश्वास छोड़ते हुये सहसा निष्कारण ही मूर्छित होकर गिर पड़े। कुछ समय पश्चात चेतना लौटने पर सञ्जय ने पाण्डव पक्ष के प्रमुख वीरों का परिचय देते हुये भीमसेन के बल और पराक्रम की चर्चा की। अर्जुन के खाण्डवदाह के समय की वीरता का भी सञ्जय ने उल्लेख किया। तदनन्तर उन्होंने नकुल, सहदेव, धृष्टद्युम्न, शिखण्डी पाँच केकय राजकुमारों आदि की वीरता का अलग-अलग उल्लेख किया। (५. ५०)।

"धृतराष्ट्र ने सञ्जय द्वारा बताये पाण्डव वीरों में से भीमसेन को सर्वाधिक पराक्रमी मानते हुये कहा कि वे कौरव पक्ष में किसी को ऐसा नहीं मानते जो भीमसेन को पराजित कर सके। धृतराष्ट्र ने भीम के प्रति ये उद्गार प्रकट किये : भीम असहनशील और वैर को दृढ़तापूर्वक पकड़ रखने वाले हैं। उनकी लोहे की गदा आठ कोनोंवाली और ब्रह्मदण्ड के समान उठी हुई है। वे अस्त्रविद्या में द्रोणाचार्य और अर्जुन के समान हैं। वेग में वायु की समानता करते हैं और क्रोध में महेश्वर के समान हैं। भीमसेन टूट भले ही जाँय परन्तु झुक नहीं सकते। ऊँचाई में वह अर्जुन से भी एक बित्ता अधिक हैं और बल में तो उनकी समता कोई नहीं कर सकता। वह निष्ठुर और पराक्रमी भीमसेन समरभूमि में कौरव पक्ष के रथों। हाथियों, घोड़ों और सैनिकों का सरलता से संहार कर डालेंगे। वह एक दुर्गम अपार समुद्र हैं जिसे पार करने के लिये न तो कोई नौका है और न उसकी कहीं थाह है। मूर्ख धार्तराष्ट्र इस बात को नहीं समझ रहे हैं। इस प्रकार भीम के पराक्रम की चर्चा करते हुये धृतराष्ट्र ने उनसे अत्यधिक भय प्रकट करते हुये कहा कि भीम और अर्जुन युद्ध में मेरे सभी पुत्रों को मार डालेंगे।' (५. ५१)।

"भीम की वीरता और अजेयता आदि की चर्चा करने के बाद धृतराष्ट्र ने अर्जुन से प्राप्त होनेवाले भय का उल्लेख करते हुये कहा : जिनके मुख से कभी कोई झूठ बात नहीं निकलती, जिनके पक्ष में धनञ्जय जैसे योद्धा हैं, उन धर्मराज युधिष्ठिर को तीनों लोकों का राज्य प्राप्त हो सकता है। हृदय को विदीर्ण कर देनेवाले कर्णी और नालीक आदि बाणों की निरन्तर वर्षा करके गाण्डीवधन्वा अर्जुन युद्ध में सभी वीरों को परास्त कर सकते हैं। यदि बलवानों में श्रेष्ठ, अस्त्रविद्या में पारङ्गत विद्वान तथा युद्ध में कभी पराजित न होनेवाले, मनुष्यों में अग्रगण्य वीरवर द्रोणाचार्य और कर्ण भी अर्जुन का सामना करने के लिये आगे बढ़े तो भी अर्जुन पर विजय प्राप्त नहीं कर सकते। अर्जुन का वध कर सकने वाला कौरव पक्ष में ही क्या संसार में कोई नहीं है। मन्दबुद्धि दुर्योधन तथा अन्य कौरव इस बात को नहीं समझ पा रहे हैं। खाण्डव दाह के समय अर्जुन ने तैंतीस देवताओं को युद्ध के लिये ललकार कर अग्नि देव को तृप्त किया था। तब से आज तक अर्जुन की कभी पराजय हुई है ऐसा सुनने में नहीं आया। साक्षात भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुन के सारथि हैं अतः इन्द्र की विजय की भाँति अर्जुन की विजय निश्चित है। ऐसा प्रतीत हो रहा है कि अब भरतवंश के विनाश का समय आ पहुँचा है। (५. ५२)।

"धृतराष्ट्र ने पाण्डवों और उनके पक्ष के पाञ्चाल, केकय आदि वीरों के प्रति अपना भय प्रकट करते हुये शान्ति स्थापित करने का प्रयास किया (५. ५३)।

"सञ्जय ने भी पाण्डवों के प्रति पक्षपातपूर्ण और अनुचित व्यवहार करने के लिये धृतराष्ट्र की भर्त्सना की। सञ्जय ने धृतराष्ट्र से अनुरोध किया कि वे दुर्योधन के व्यवहारों पर शासन करें। उन्होंने धृतराष्ट्र को यह भी बताया कि पाण्डवों के प्रति अनुचित व्यवहार के कारण मत्स्य, पाञ्चाल, केकय, शाल्व तथा शूरसेन आदि के योद्धा अब धृतराष्ट्र का आदर नहीं करते और सभी पाण्डव पक्ष ने सम्मिलित हो गये हैं। अतः अब दुर्योधन के व्यवहारों पर अंकुश रखना अत्यन्त आवश्यक है (५. ५४)।

"धृतराष्ट्र को धैर्य बँधाते हुये दुर्योधन ने अपने उत्कर्ष और पाण्डवों के अपकर्षण का इस प्रकार वर्णन किया : 'हम लोग बलवान और शक्तिशाली हैं। समरभूमि में शत्रुओं को जीतने की शक्ति रखते हैं। पाण्डवों को हमने जब वन में भेज दिया था तब विशाल सैन्य समूह के साथ श्रीकृष्ण उनसे मिले थे। श्रीकृष्ण के साथ केकय राजकुमार, धृष्टकेतु, द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न तथा और भी बहुत से नरेश पाण्डवों से मिले थे। वे सभी महारथी इन्द्रप्रस्थ के निकट आये और समस्त कौरवों सहित आप की निन्दा करने लगे। उन सब ने हमलोगों का मूलोच्छेद कर डालने की इच्छा से कहा था कि धृतराष्ट्र के हाथ से राज्य को लौटा लेना ही कर्तव्य है। उनके इस निश्चय को सुन कर मैंने भीष्म, द्रोण और कृपाचार्य से यह सन्देह प्रकट किया था कि पाण्डव अपनी प्रतिज्ञा पर स्थिर नहीं रहेंगे क्योंकि श्रीकृष्ण हम सब लोगों का पूर्णतः विनाश कर डालना चाहते हैं। वे विदुर और धृतराष्ट्र को छोड़ कर अन्य सब कौरवों का वध करने की इच्छा रखते हैं। ऐसी अवस्था में मैंने प्राणों का मोह छोड़कर शत्रुओं का सामना करने का निर्णय किया है। मेरी बात सुन कर द्रोण, भीष्म और कृप ने मुझे आश्वासन दिया है कि यदि पाण्डव हमसे द्रोह करते हैं तो हमें भी उनसे भयभीत नहीं होना चाहिये। हमारे पक्ष का एक-एक वीर भी समस्त राजाओं को जीतने की शक्ति रखता है। अपने पिता शान्तनु की मृत्यु के पश्चात भीष्म ने एकमात्र रथ की सहायता से सभी राजाओं को परास्त कर दिया था। वे ही पितामह भीष्म हमारे साथ हैं। पहले यह सारी पृथिवी हमारे शत्रुओं के अधिकार में थी, किन्तु अब हमारे हाथ में आई है। इसके विपरीत पाण्डव सहायकों के अभाव में पंखहीन पक्षी की भाँति असहाय और पराक्रमशून्य हो गये हैं। मेरी सम्पूर्ण सेना को इन्द्र भी पराजित नहीं कर सकते। गदा युद्ध में मेरी समानता करनेवाला इस पृथिवी पर न तो कोई है और न भविष्य में कोई होगा। भीम अथा दूसरे योद्धाओं से मुझे भय नहीं है। यदि मैं एक बार गदा का आघात कर दूँ तो हिमालय पर्वत भी लाखों टुकड़ों में विदीर्ण हो जायगा। भीम, अर्जुन और श्रीकृष्ण भी मेरी इस शक्ति को जानते हैं। हमारे पक्ष में अकेले कर्ण ही भीष्म, द्रोण और कृप तीनों के समान पराक्रमी हैं। अश्वत्थामा भी अर्जुन के समान श्रेष्ठ धनुर्धर हैं। पाँच पाण्डव, सात्यकि और धृष्टद्युम्न — ये कुल सात योद्धा ही पाण्डव पक्ष की सम्पूर्ण शक्ति हैं। इसके विपरीत हमारे पक्ष में विशिष्ट योद्धाओं की संख्या पाण्डवों से कहीं अधिक है। हमारे पास ग्यारह अक्षौहिणी सेना है, जब कि पाण्डवों के पास कुल सात अक्षौहिणी है। इन सभी दृष्टियों से मेरा बल अधिक है।' इस प्रकार अपने पक्ष की सामर्थ्य और बल की चर्चा करके दुर्योधन ने धृतराष्ट्र को सान्त्वना दी और फिर समयोचित कर्तव्यों की जानकारी के लिये पुनः सञ्जय से प्रश्न किया (५. ५५)।

"दुर्योधन के पूछने पर सञ्जय ने अर्जुन, युधिष्ठिर, भीमसेन, नकुल

और सहदेव के रथों और ध्वजों का वर्णन करते हुये कहा कि सभी के रथ दिव्य अश्वों से युक्त और दुर्जेय हैं। अभिमन्यु और द्रौपदी के पुत्रों के रथों के अश्व भी वेगशाली और श्रेष्ठ जातिवाले हैं जो देवताओं ने उन्हें दिये हैं। (५.५६)।

"धृतराष्ट्र के पूछने पर सञ्जय ने पाण्डवों और श्रीकृष्ण के साथ के योद्धाओं का तथा उनमें से कौन कौन कौरव पक्ष के किस योद्धा के समान हैं, इसका वर्णन किया। उन्होंने बताया कि शान्तनुनन्दन भीष्म के वध का कार्य शिखण्डी को सौंपा गया है। युधिष्ठिर के हिस्से में मद्र नरेश हैं। अपने सौ भाइयों तथा पुत्रों सहित दुर्योधन और पूर्व एवं दक्षिण के कौरव सैनिक भीमसेन के भाग नियत किये गये हैं। वैकर्तन कर्ण, अश्वत्थामा, विकर्ण, और जयद्रथ अर्जुन के हिस्से में हैं। पाँच भाई केकय राजकुमार समराङ्गण में केकयदेशीय अपने विरोधियों को ही अपना वध्य मान कर युद्ध करेंगे। मालव, शाल्व, त्रिगर्त और संशप्तक सैनिक भी इन राजकुमारों के ही भाग नियत किये गये हैं। दुःशासन के सभी पुत्र और राजा बृहद्बल सुभद्रानन्दन अभिमन्यु के भाग हैं। धृष्टद्युम्न द्रोण पर आक्रमण करेंगे। सहदेव ने शकुनी को अपना भाग निश्चित किया है। शकुनीपुत्र उलूक और सारस्वत प्रदेश के सैनिकों को माद्रीकुमार नकुल ने अपने हिस्से में लिया है। दूसरे भी जो जो नरेश कौरवों की ओर से युद्ध करेंगे उन सबका नाम ले-लेकर पाण्डवों ने अपना-अपना भाग निश्चित किया है। इस प्रकार पाण्डवों की सेनायें पृथक-पृथक भागों में विभक्त हैं। सञ्जय की बात सुनकर धृतराष्ट्र ने कहा: 'समरभूमि के प्रमुख भाग में भीमसेन के साथ जिनका युद्ध होनेवाला है वे मेरे सभी मूर्ख पुत्र अब नहीं के बराबर हैं: युधिष्ठिर जिनके नेता हैं, भगवान् मधुसूदन जिनके रक्षक हैं, अर्जुन और भीमसेन जिनके प्रमुख योद्धा हैं, नकुल-सहदेव, धृष्टद्युम्न, सात्यकि द्रुपद, धृष्टकेतु, उत्तमौजा, युधामन्यु, शिखण्डी, उत्तर आदि प्रदेशों के योद्धा जिनके सहायक हैं, जिनकी आज्ञा के बिना देवराज इन्द्र भी इस पृथिवी का अपहरण नहीं कर सकते, जिनका प्रताप देवताओं के समान है, उन्हीं पाण्डवों के साथ मेरा दुष्ट पुत्र दुर्योधन मेरे विरोध के विपरीत युद्ध करना चाहता है।' तब दुर्योधन ने अपने पिता धृतराष्ट्र से कहा: 'हम कौरव और पाण्डव दोनों एक ही जाति के हैं और दोनों इसी भूमि पर रहते हैं। फिर एकमात्र पाण्डवों की ही विजय होगी यह धारणा आपने कैसे बना ली है? पितामह भीष्म, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य और वीर कर्ण के अतिरिक्त अनेक अन्य दुर्जेय वीर हमारे पक्ष में हैं। अतः हमारी विशाल सेना तथा हमारे सैनिकों की बाणवर्षा से आहत होकर पाण्डव अवश्य भाग खड़े होंगे।' धृतराष्ट्र ने कहा: 'मेरा यह पुत्र पागल के समान प्रलाप कर रहा है। यह युद्ध में युधिष्ठिर को कभी पराजित नहीं कर सकता। भीष्म जी भी पाण्डवों के बल से परिचय होने के कारण युद्ध के पक्ष में नहीं हैं।' सञ्जय ने कहा कि दूसरी ओर धृष्टद्युम्न पाण्डवों को युद्ध के लिये सदा उत्तेजित करता रहता है और कहता है कि वह अकेले ही कौरव पक्षीय समस्त नरेशों को पराजित कर देगा। इस प्रकार पाण्डवों के बल का वर्णन करने के बाद सञ्जय ने बताया कि पाण्डवों ने उन्हें कौरवों को यह सन्देश देने के लिये कहा है: 'राजा युधिष्ठिर सद्व्यवहार से ही वश में किये जा सकते हैं। ऐसा अवसर न आने दो कि देवताओं द्वारा सुरक्षित अर्जुन कौरवों का वध कर डालें। युधिष्ठिर को शीघ्र उनका राज्य सौंप दो और अर्जुन से क्षमा-याचना करो। अर्जुन का रथ देवताओं द्वारा सुरक्षित है और कोई भी मनुष्य उनको जीत नहीं सकता। अतः तुम लोग अपने मन को युद्ध की ओर मत जाने दो।' (५.५७)।

"धृतराष्ट्र ने कहा कि अपने बाल्यकाल से ही युधिष्ठिर ने ब्रह्मचर्य का विधिपूर्वक पालन किया है। स्वयं भी युद्ध को आच्छा न मानते हुये धृतराष्ट्र ने दुर्योधन से युद्धविरत होकर पाण्डवों को उनका राज्य देने के लिये कहा। उन्होंने यह भी कहा कि वास्तव में कर्ण, दुःशासन, और शकुनि ही दुर्योधन को बहका कर युद्ध के लिये प्रेरित कर रहे हैं। तब दुर्योधन ने अपने पिता से कहा: 'मैंने आप, द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा, सञ्जय, भीष्म, आदि पर ही सारा बोझ रख कर पाण्डवों को युद्ध के लिये आमन्त्रित नहीं किया है। वस्तुतः मैंने और कर्ण ने रणयज्ञ का विस्तार कर के युधिष्ठिर को बलिपशु बना कर उस यज्ञ की दीक्षा ली है। मैं, कर्ण तथा दुःशासन ही मिल कर समरभूमि में सम्पूर्ण पाण्डवों का संहार कर डालेंगे। या तो मैं ही पाण्डवों को मार कर इस पृथिवी का शासन करूँगा या पाण्डव ही मुझे मार कर भूमण्डल का राज्य भोगेंगे। मैं जीवन, राज्य, धन, सब कुछ छोड़ सकता हूँ परन्तु पाण्डवों के साथ सन्धि नहीं कर सकता। तीखी सूई के अग्रभाग से जितनी भूमि बिंध सकती है उतनी भी मैं पाण्डवों को नहीं दे सकता।' दुर्योधन की बात सुन कर धृतराष्ट्र ने कहा: 'दुर्योधन को तो मैंने त्याग दिया। मुझे दुःख उन लोगों का है जो उस मूर्ख के यमलोक जाते समय उसका अनुकरण करेंगे।' वैशम्पायन ने कहा कि सभा में उपस्थित भूपालों से इस प्रकार अपने उद्गार प्रकट करने के बाद धृतराष्ट्र ने पुनः सञ्जय से पूछा। (५.५८)।

"धृतराष्ट्र के पूछने पर सञ्जय ने यह बताया कि अर्जुन और श्रीकृष्ण को सूचित करने के लिये उन्होंने किस प्रकार उन लोगों के अन्तःपुर (वर्णन) में प्रवेश किया। सञ्जय ने अर्जुन के दोनों पैर के तलवों में ऊर्ध्वगामी रेखायें देखा। अर्जुन के पैर अनेक अन्य शुभसूचक चिह्नों से युक्त थे। उस समय श्रीकृष्ण ने धृतराष्ट्र को बताने के लिये सञ्जय को यह सन्देश दिया: 'कौरवो तुम्हारे ऊपर बहुत बड़ा भय आ पहुँचा है। जिस समय कौरव सभा में द्रौपदी का वस्त्र खींचा जा रहा था उस समय मैं हस्तिनापुर से बहुत दूर था। उस समय द्रौपदी ने आर्तभाव से 'गोविन्द' कह कर जो मुझे पुकारा था उसका मेरे ऊपर बहुत बड़ा ऋण है और वह ऋण बढ़ता ही जा रहा है। जिसको काल ने सब ओर से घेर लिया हो, ऐसा कौन पुरुष, भले ही वह साक्षात् इन्द्र ही क्यों न हो, उस अर्जुन के साथ युद्ध करना चाहता है जिसका सहायक मैं हूँ। जो अर्जुन को जीत ले वह अपनी दोनों भुजाओं से इस पृथिवी को उठा सकता है और सम्पूर्ण देवताओं को स्वर्ग से नीचे गिरा सकता है। देवताओं, असुरों, मनुष्यों, यक्षों, गन्धर्वों तथा नागों में मुझे कोइ ऐसा वीर नहीं दिखाई देता जो अर्जुन का सामना कर सके। विराटनगर में अकेले अर्जुन ने ही समस्त कौरवों को परास्त कर दिया था। उनका मात्र यही पराक्रम मेरे उपरोक्त कथन को प्रमाणित करने के लिये पर्याप्त है।' (५.५९)।

"अपने पुत्रों की विजय के आकांक्षी राजा धृतराष्ट्र ने सञ्जय के वचनों के गुण-दोषों की यथावत् समीक्षा करके दोनों पक्ष के बलाबल का निश्चय कर लिया। तदनन्तर उन्होंने दुर्योधन से कहा: 'तुम्हारा पक्ष दुर्बल है। मैं यह बात अनुमान से नहीं कह रहा हूँ, बल्कि प्रत्यक्ष देख रहा हूँ। कौरवों-पाण्डवों के इस भयंकर संग्राम में अग्निदेव भी खाण्डववन में अर्जुन के किये हुये उपकार को स्मरण करके उनकी सहायता अवश्य करेंगे। इसके अतिरिक्त पाण्डवों का जन्म अनेक देवताओं से हुआ है, इसलिये धर्म आदि देवगण भी युधिष्ठिर के आवाहन पर उनकी सहायता के लिये अवश्य पधारेंगे। जिसके पास गाण्डीव धनुष और वरुण द्वारा प्रदत्त दो दिव्य अक्षय तूणीर हैं, जिनका दिव्य वानरध्वज कहीं भी अवरुद्ध नहीं होता, जो एक वेग से पाँच सौ बाण चलाते हैं तथा जो बाहुबल में कार्तवीर्य अर्जुन के समान हैं, उन इन्द्र और विष्णु के समान पराक्रमी अर्जुन को मैं इस महासमर में शत्रु सेनाओं का संहार करता हुआ देख रहा हूँ। कौरवों के लिये यह महान विनाश का अवसर उपस्थित हुआ है। इस कलह का अन्त करने के लिये सन्धि के अतिरिक्त अन्य कोई उपाय मुझे दिखाई नहीं पड़ता। मैं पाण्डवों को सदा से कौरवों की अपेक्षा शक्तिशाली मानता हूँ।' (५.६०)।

"पिता के वचनों को सुन कर क्रुद्ध दुर्योधन ने उनसे कहा: 'आप जो ऐसा मानते हैं कि देवता पाण्डवों के सहायक हैं, यह ठीक नहीं है। काम, द्वेष, संयोग, लोभ, ममता, द्रोह आदि दोषों से रहित होने तथा दूषित भावों की उपेक्षा कर देने के कारण ही देवताओं को देवत्व, प्राप्त है। यह बात पूर्वकाल में द्वैपायन व्यास, नारद, तथा परशुरामजी ने हम लोगों

से बताई थीं। यदि अग्नि, वायु, धर्म, इन्द्र तथा दोनों अश्विनीकुमार भी काम के वशीभूत हो कर सब कार्यों में प्रवृत्त होने लग जाते तब तो पाण्डवों को कभी दुःख उठाना ही न पड़ता। तथापि यदि देवताओं में कामनावश द्वेष और लोभ लक्षित होता है तो उनकी वह शक्ति हम लोगों पर कोई प्रभाव नहीं दिखा सकेगी क्योंकि देवताओं में देवभाव की प्रधानता है। इसके अतिरिक्त यदि मैं अभिमन्त्रित कर दूँ तो सम्पूर्ण लोकों को भस्म कर देनेवाली अग्नि भी सब ओर से संकुचित हो कर बुझ जायगी। यदि कोई ऐसा उत्कृष्ट तेज है जिससे देवता युक्त हैं तो मुझे भी देवताओं से ही अनुपम तेज प्राप्त हुआ है। मैं अनेक प्रकार की मन्त्रिक और दिव्य शक्तियों से युक्त हूँ। जिनसे मैं द्वेष रखता हूँ उनकी रक्षा का साहस अश्विनीकुमार, अग्नि, वायु, मरुद्गण सहित इन्द्र और धर्म में भी नहीं है। मेरी बुद्धि उत्तम है। तेज उत्कृष्ट है, बल-पराक्रम महान् है, विद्या अधिक है, तथा उद्योग भी सबसे श्रेष्ठतर है। पितामह भीष्म, आचार्य द्रोण, कृपाचार्य, शल्य तथा शल — ये लोग भी अस्त्रविद्या के विषय में जो कुछ जानते हैं वह सम्पूर्ण ज्ञान मुझमें भी विद्यमान है।' दुर्योधन की ये गर्वोक्तियाँ सुन कर धृतराष्ट्र ने सञ्जय से पुनः समयोचित प्रश्न किया। (५. ६१)।'

"तब कर्ण ने दुर्योधन को प्रसन्न करते हुये कहा : 'पूर्वकाल में मैंने झूठे ही अपने को ब्राह्मण बता कर परशुराम जी से जब ब्रह्मास्त्र की शिक्षा प्राप्त कर ली, तब उन्होंने मेरा यथार्थ परिचय जानने के बाद कहा था कि अन्त समय आने पर मुझे ब्रह्मास्त्र का स्मरण नहीं रहेगा। वह ब्रह्मास्त्र अब भी मेरे पास है। परशुराम का कृपाप्रसाद पाकर मैं पलक मारते ही पाञ्चाल, करूष तथा मत्स्य देशीय योद्धाओं सहित पाण्डवों और उनके पुत्र-पौत्रों को भी यमलोक पहुँचा दूँगा।' कर्ण को ऐसी बातें करते देख भीष्म ने उसे फटकारते हुये कहा : 'श्रीकृष्ण सहित अर्जुन ने खाण्डव वन का दाह करते समय जो पराक्रम किया था उसे सुन कर ही बान्धवों सहित तुझे अपने ऊपर नियन्त्रण रखना चाहिये था। महेन्द्र ने तुझे जो शक्ति प्रदान की है वह भगवान श्रीकृष्ण के चक्र से आहत हो समरभूमि में छिन्न-भिन्न एवं दग्ध हो जायगी। तेरे पास जो सर्पमुख बाण हैं और जिनकी तु पुष्पमालाओं से प्रतिदिन पूजा किया करता है वे सब अर्जुन के बाण समूहों से छिन्न-भिन्न हो नष्ट हो जाँयगी क्योंकि भौमासुर का वध करनेवाले श्रीकृष्ण स्वयं अर्जुन की रक्षा करते हैं।' भीष्म की बात सुनकर क्रोध में भर कर कर्ण ने कौरव सभा में यह घोषणा की : 'श्रीकृष्ण का जो प्रभाव बताया गया वे वैसे या उससे भी बढ़ कर हो सकते हैं। किन्तु मेरे प्रति जो किञ्चित कटु वचन का प्रयोग किया गया है उसके परिणाम स्वरूप मैं अपने अस्त्र-शस्त्र रख देता हूँ और भीष्म के रहते कभी युद्ध नहीं करूँगा। भीष्म के शान्त हो जाने के बाद ही समस्त भूपाल रणभूमि में मेरा प्रभाव देखेंगे।' ऐसा कहकर कर्ण सभा त्याग कर अपने भवन में चला गया। उस समय भीष्म ने कौरव-सभा में कर्ण का उपहास करते हुये वहाँ उपस्थित लोगों से कहा : 'सतपुत्र कर्ण युद्ध का भार कैसे वहन कर सकता था। अब तुम लोग पाण्डव सेना के व्यूह का सामना करने के लिये अपनी सेना का भी व्यूह बना कर युद्ध करो और परस्पर एक दूसरे के मस्तक काटकर भीमसेन के हाथों सारे संसार का संहार देखो।' (५. ६२)।

"दुर्योधन ने भीष्म की बातें सुनकर अपनी सेना की प्रबलता का वर्णन किया, किन्तु विदुर जी ने दम की महिमा बताकर आत्म-संयम रखने का परामर्श दिया। (५. ६३)।

"विदुर ने बताया कि एक समय सदैव साथ-साथ रहनेवाले पक्षी एक जाल में फँस गये किन्तु परस्पर प्रेम के कारण दोनों जाल को लेकर एक साथ उड़ गये। बहेलिया उन्हें जाल सहित उड़ते देखकर भी हताश नहीं हुआ और जिधर वे पक्षी गये थे उधर उनके पीछे-पीछे दौड़ता रहा। जब उस वन में रहनेवाले एक मुनि ने आकाशचारी पक्षियों के पीछे दौड़ रहे व्याध के व्यवहार पर आश्चर्य प्रकट किया तब व्याध ने कहा कि ये दोनों पक्षी आपस में मिल गये हैं और इसी कारण जाल को लेकर उड़े जा रहे हैं। किन्तु जहाँ कहीं ये आपस में लड़ेंगें वहीं वे पकड़े जाँयगे। तदनन्तर कुछ ही देर में काल के वशीभूत हुये वे दनों दुर्बुद्धि पक्षी आपस में झगड़ने लगे और लड़ते-लड़ते पृथिवी पर गिर पड़े। उनके पीछे दौड़ रहे व्याध ने तब उन्हें सरलता से पकड़ लिया। विदुर जी ने बताया कि जो कुटुम्बीजन धन-सम्पत्ति के लिये आपस में लड़ते हैं वे युद्ध करके दोनों पक्षियों की भाँति शत्रुओं के वशीभूत हो जाते हैं। अतः परस्पर विरोध करना कदापि उचित नहीं है। विदुर जी ने इस प्रसङ्ग में एक अन्य कथा का वर्णन करते हुये कहा : 'एक समय हम बहुत से भीलों और ब्राह्मणों के साथ उत्तर दिशा में गन्धमादन पर्वत पर गये। हमारे साथ जो ब्राह्मण थे उन्हें मन्त्र-यन्त्रादि विद्याओं और ओषधियों के साधन आदि की बातें अत्यन्त प्रिय थीं। सम्पूर्ण गन्धमादन पर्वत पर दिव्य ओषधियाँ प्रकाशित हो रही थीं। सिद्ध और गन्धर्व उस पर्वत पर निवास करते थे। वहाँ हम सब लोगों ने देखा कि पर्वत की एक दुर्गम गुफा में, जहाँ से कोई कूल-किनारा न होने से गिरने की ही अधिक सम्भावना रहती थी, एक मधुकोष है। वह मधुमक्खियों का बनाया हुआ नहीं था। उसका रंग सुवर्ण के समान पीला था और वह देखने में एक घड़े के समान प्रतीत होता था। भयंकर विषधर सर्प उस मधु की रक्षा करते थे। कुबेर को वह मधु अत्यन्त प्रिय था। हमारे साथ के औषध-साधक ब्राह्मणों ने बताया कि उस मधु को प्राप्त करके मरणधर्मा मनुष्य भी अमरत्व प्राप्त कर लेता है। उसे पीने से अन्धे को दृष्टि मिल जाती है और वृद्ध भी युवा हो जाता है। उस समय उस मधु के गुणों को सुनकर साथ के भीलों ने उसे पाने की चेष्टा की परन्तु सर्पों से भरी उस दुर्गम गुफा में जाकर वे सब के सब नष्ट हो गये। इस कथा का वर्णन कर विदुर जी ने धृतराष्ट्र से कहा : 'आपका पुत्र दुर्योधन अकेला ही सम्पूर्ण पृथिवी का राज्य भोगना चाहता है। वह मोह वश केवल मधु को ही देखता है, भावी पतन या विनाश की ओर उसकी दृष्टि नहीं जाती। जिस वीर अर्जुन ने अकेले रथ पर बैठकर सम्पूर्ण पृथिवी पर विजय प्राप्त की है, जिसने विराट नगर पर आक्रमण करने वाले भीष्म और द्रोण जैसे योद्धाओं को भयभीत करके भगा दिया उसके सामने आपका पुत्र क्या पराक्रम दिखायेगा। साथ ही द्रुपद, मत्स्य नरेश विराट और अर्जुन — ये तीनों वायु का सहारा पाकर प्रज्वलित हुई विविध अग्नियों के समान जब आक्रमण करेंगे तब उन्हें कौन जीत सकता है?' (५. ६४)।

"तब धृतराष्ट्र ने दुर्योधन को भावी दुष्परिणामों का स्मरण दिलाते हुये उससे भीष्म आदि की आज्ञा मानने का परामर्श दिया। उन्होंने दुर्योधन को विराट नगर में अर्जुन के हाथों हुई पराजय का भी स्मरण दिलाया (५. ६५)।

"धृतराष्ट्र के पूछने पर सञ्जय ने बताया कि अर्जुन ने कहा कि भीष्म, धृतराष्ट्र, द्रोण आदि सब की मृत्यु बहुत ही निकट है। अर्जुन ने कहा था कि 'यदि कौरव महाराज युधिष्ठिर को उनका अभीष्ट राज्य नहीं लौटायेंगे तो मैं उन्हें अपने बाणों द्वारा यमलोक पहुँचा दूँगा।' सञ्जय ने कहा कि अर्जुन की बात सुनने के बाद श्रीकृष्ण को नमस्कार कर वे धृतराष्ट्र को पाण्डवों का संदेश सुनाने के लिये वापस आ गये। (५. ६६)।

"दुर्योधन ने जब श्रीकृष्ण और अर्जुन के उक्त कथनों का कुछ भी आदर नहीं किया और सब लोग चुप हो गये तब वहाँ बैठे हुये समस्त नर-श्रेष्ठ भूपालगण वहाँ से उठकर चले गये। अपने पुत्रों की विजय चाहनेवाले और उन्हीं के वश में रहनेवाले राजा धृतराष्ट्र ने वहाँ एकान्त में अपनी, दूसरों और पाण्डवों की जय-पराजय के विषय में सञ्जय का निश्चित मत जानने के लिये उनसे कुछ और बातें पूछनी आरम्भ कीं। तब सञ्जय ने एकान्त में धृतराष्ट्र से बात करने में अपनी कठिनाई व्यक्त करते हुये व्यास जी और गान्धारी को भी वहाँ बुला लेने के लिये कहा (५. ६७)।

"सञ्जय ने धृतराष्ट्र को भगवान् श्रीकृष्ण की महिमा बताते हुये कहा कि ये भगवान केशव अपनी माया के प्रभाव से सब को मोह में डाले रहते हैं; किन्तु जो मनुष्य उन्हीं की शरण ले लेते हैं, वे उनकी माया से मोहित नहीं होते। (५. ६८)।

"श्रीकृष्ण के गुणों के विषय पर धृतराष्ट्र और सञ्जय के बीच वार्ता-

लाप। धृतराष्ट्र ने दुर्योधन से श्रीकृष्ण की शरण में जाने के लिये कहा किन्तु उसने अस्वीकार कर दिया। गान्धारी ने भीमसेन का भय दिखाकर दुर्योधन को समझाया। व्यास जी ने धृतराष्ट्र को सञ्जय से श्रीकृष्ण माहात्म्य सुनने और उसके परिणामस्वरूप मोक्ष प्राप्त करने का परामर्श दिया। तब धृतराष्ट्र के निवेदन पर सञ्जय ने उन्हें श्रीकृष्णप्राप्ति एवं तत्त्वज्ञान के साधन पर उपदेश दिये (५. ६९)।

"धृतराष्ट्र के पूछने पर सञ्जय ने श्रीकृष्ण के विभिन्न नामों की व्युत्पत्तियों का वर्णन किया (५. ७०)।

धृतराष्ट्र ने श्रीकृष्ण का गुणगान करते हुये कहा : 'जो लोग परम उत्तम श्रीअङ्गों से सुशोभित तथा दिशा-विदिशाओं को प्रकाशित करते हुये वसुदेवनन्दन श्रीकृष्ण का दर्शन करेंगे उन सफल नेत्रोंवाले मनुष्यों के सौभाग्य को पाने की मैं भी अभिलाषा रखता हूँ। मैं भी अजन्मा, नित्य तथा परात्पर परमेश्वर भगवान् श्रीकृष्ण की शरण लेता हूँ।' (५. ७१)।"

१. याम = सूर्य (३. ३, २०)।

२. याम (बहु० °माः), दिव्य प्राणियों के एक वर्ग का नाम है जिनका धामों के साथ-साथ उल्लेख मिलता है : ३. २६१, ६ (यामा धामाश्च); ९. ४४, ३३ (यामा धामाश्च)।

१. यामुन, एक पर्वत का नाम है : ३. १७७, २५ (अद्रिराजम्); ५. १९, ३१ (पर्वतः); १३. ६८, ३ (गङ्गा-यमुना के मध्यभाग में स्थित)।

२. यामुन (वि०): ७. ३, ४ (स्रोतसा यामुनेनेव)।

३. यामुन, (बहु०) एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ५१)।

१. याम्य (वि०) : २. ७, ३० (सभा); ८, १; ९, १; ७८, १८ (कोपविधारणे); ८०, ८. २२; ४. ६४, २३; ५. १६९, २१; ७. २३, ९४; १५७, ३४; २०१, ७३; ९. ४६, ३६; ५०, २८; ११. ७, १९; १३, ८०, ११ (याम्यांसमां वीतभयो मनुष्यः)।

२. याम्य = शिव (१४. ८, १४)।

३. याम्य = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

याम्यलोक = यमलोक (१३. ७९, १३)।

यायात (वि०) : १. ७५, ४६ (यायातेनापि वयसा); ९. ४१, ३२ (सरस्वती तट पर स्थित एक तीर्थ)।

यायावर (बहु० °राः) ब्राह्मणों के एक कुल का द्योतक है : १. १३, ११ (यायावराणां प्रवरो धर्मज्ञः संशितव्रतः). १८; (जरत्कारु के पूर्वज); ३८, १२ (यायावर कुले···भविष्यति महानृषिः जरत्कारुरिति ख्यातस्तपस्वी नियतेन्द्रियः); ४५, १६ (जरत्कारु के पूर्वज); १२. २४४, १९ (यायावरा गणाः); १५. ३५, १० (यायावरकुलोत्पन्नं जरत्कारुसुतं)।

यावन (वि०) (३. २५४, १८)।

यास्क, एक प्राचीन ऋषि का नाम है जिन्होंने अनेक यज्ञों में नारायण का शिपिविष्ट नाम से गायन और इस प्रकार नष्ट निरुक्त का पुनरुद्धार किया था (१२. ३४२, ७२-७३)।

युक्त, युक्तबाहु = शिव (सहस्रनाम)।

युगं = शिव (सहस्रनाम)।

युग (एक० और बहु०) १. १, ३० (युगस्यादै). ३८ (युगक्षये). ३९ (युगादिषु). ६६; २१, १४ (युगादिकालशयनं विष्णोरमिततेजसः); २३, ७ (युगान्ताग्निसमप्रभः); ३२, २०; ६३, ८७; १०९, ५ (कृतयुग); १३५, ५ (युगान्तानिल); १३८, ३७ (युगान्ताग्निरिव); २२५, ३५; २२७, ४०; २. ३, १५ (सहस्रयुगपर्यये); ४२, १२; ७२, १५; ३. ३, ५५ (यदहर्ब्रह्मणः प्रोक्तं सहस्रयुगसंमितम्); १२, ३७. ३८; २२, ३३; ४०, ९; ४२, ११; ८३; १२८; ८६, ११; १२३, ३; १४९, ८. १० (युगसंख्यां···युगे युगे). ११ (कृतयुग). १२. १५. १८. २२. २६. ३३. ३४. ३६-३८. ४०; १८८, २ (सहस्रान्ताः). २२. २७ (द्वादशसाहस्री युगाख्या). २९. ३२. ३३. ३९. ४०-४२. ४९. ५५. ६५ (सहस्रान्ते); १८९, ५१; १९२, २. ४. ११. १३. १९-२३. २५. ३३. ३४. ३६. ३७. ४०. ४२. ४४. ४५. ४८. ५०-५२. ५४-५६. ६०. ६३. ६६. ६८ (भविष्यति युगे क्षीणे तद्युगान्तस्य लक्षणम्). ६९. ७०. ७६. ८०. ८१. ८३. ८५-८८. ९७ (सर्वस्य); १९१, ९. १३. १५; २७२, ३२. ३७ (चतुर्युगसहस्रान्ते सलिलेनाप्लुता मही); ३१३, १; ४. ५५, १४; ६२, १७; ५. ४८, ६५; ५१, ३२; ६८, १२ (युगचक्रं); ७४, १७. १८; १११, ५; १३२, १७; १६०, ९९; १६१, १७; १६७, ११; १७१, ५; १८४, १६; १९४, १३; ६. १, २५; ६, ४९; १०, ३; १६, २७; २८, ७; ३२, १७ (सहस्रयुगपर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणो विदुः। रात्रिं युगसहस्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः); ५७, २; ५९, ६७. १३२; ६३, १३. २०; ६६; ४०. ४१; ६९, ३१; ७७, ४२; ८०, १९ (युगान्तमेघौघनिभं); ८४, ८. १२ (युगान्तादित्यसन्निभम्); ९२, १७; १००, ३८; १०२, १४; १०४, ४; १०६, ५५; ११९, ७. १८; ७. ७, २८; ११, ४३; १४, ८; ३२, ४६. ४७; ३४, ४; ७३, ५२; ८८, १६; ९०, १३; ९१, २१ (युगान्तादित्यरश्म्याभैः); ९२, १५; ९६, ५१; १०४, २१; १०५, २९; ११४, ७३. ९३; १२४, ८; १२६, २; १४५, ९७; १४६, २; १५६, ६३. १३४. १३६. १५१. १७२; १५९, ७०; १६०, ५९; १६१, ९; १७५, ८८; १९५, २३; १९९, १; २०१, ३२. ८७. ९२; ८. १४, २५; १६, ४७; १७, ४; २४, ७६; ४९, १७; ५०, १७; ५७, १२; ७७, २८; ७९, ७६ (युगान्तसूर्यप्रतिमानतेजसम्); ८८, ११; ८९, ४४ (युगे युगे). ५६ (युगान्तवह्न्यर्ककरप्रकाशाः); ९. ९, २७; १७, ४२; ३६, ७; ३८, ५१; १०. ६, १४; ८, १४५; १४, ७; ११. १०, १२. १९; २१, ८; २३, १५; २४, ४; १२. ४७, ३२. ५६. ६६; ६४, २६; ६५, २५; ६९, ९८ (राजा कृतयुगस्रष्टा त्रेताया द्वापरस्य च। युगस्य च चतुर्थस्य राजा भवति कारणम्); ९१, ६; १४०, १; १४१, १४; १४९, १०; २०८, ९; २१०, १६-१८; २२७, ४१; २२८, ४९; २३१, १. १९. २३. २६-२९. ३१ (सहस्रयुगपर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणो विदुः। रात्रिं युगसहस्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः); २३२, ३२. ३५-३९; २३३, १९; २३५, १७; २३८, ७. १४. १८; २४४, १६; २६०, ७; २६७, ६. ३३; २८०, ३८; २८४, १७२; ३०१, ४९; ३०२, १४ (युगं द्वादशसाहस्रं कल्पं विद्धि चतुर्युगम्); ३३४, ९; ३३५, ५४; ३३६, ३७; ३३९; ७० (सहस्रान्ते). १०५; ३४०, ६१. ८२. ८५. ८६. १०० (युगान्तेप्रसुप्तः···युगादौ प्रबुद्धो); ३४१, २२; ३४२, ३ (चतुर्युगसहस्रान्ते); ३४८, ३२. ४९; ३४९, ४७. ५२. ५३; १३. १४, १३. ३९. १०३. १८४. २४७. ३४८. ३४९. ३९५; १६, ४६ (संवत्सरयुगादिश्च = शिव); २६, ४०. ४१ (युगानामयुतं); ६४, २२; ८५, १४४; १०७, ५३. ६३. ५४. ११३ (द्वे युगानां सहस्रे). ११७ (युगकल्पसहस्राणि त्रीणि) १३३, ६; १३९, ३० (कृष्णवर्त्मा युगान्ताभो येनायं मथितो गिरिः); १४०, ३०. ३४; १४८, २८. ३२; १४९, ११ (यतः सर्वाणि भूतानि भगवन्त्यादियुगागमे। यस्मिंश्च प्रलयं यान्ति पुनरेव युगक्षये); १५०, ५०; १५८, १०; १४. ४४, ९; ५२, १३; ५४, १६ (चलिते चलिते युगे); ९०, ८७; १५. ३८, २० । तुकी० द्वापर (युग), कलि (युग), कृत (युग), तिष्य, त्रेतायुग।

युगनिधन = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

१. युगन्धर, एक पर्वत या प्रदेश का नाम है। यहाँ के लोग ऊँटनी और गदही तक के दूध का दही बना लेते थे जो शास्त्रनिषिद्ध है : ३. १२९, ९; ८. ४४, ३८ (युगन्धरे पयः पीत्वा)।

२. युगन्धर, एक पाण्डव-सैनिक का नाम है जिसने द्रोण पर आक्रमण किया किन्तु द्रोण के हाथों मारा गया (७. १६, ३०. ३१)।

३. युगन्धर (बहु०) एक जातिके लोगों का द्योतक है (४. १, १३)

युगप, एक गन्धर्व का नाम है जो अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उपस्थित हुआ था (१. १२३, ५६)।

युगमध्य = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

युगरूप = शिव (सहस्रनाम)।

युगादि = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

युगादिकृत् = विष्णु (सहस्रनाम)।

युगाधिप = शिव (सहस्रनाम)।
१. युगावर्त = शिव (सहस्रनाम)।
२. युगावर्त = विष्णु (सहस्रनाम)।
युगावह = शिव (सहस्रनाम)।

युधामन्यु, एक पाञ्चाल राजकुमार का नाम है जो उत्तमौजा के भाई थे : ५. ५७, ३२; १४१, २५; १५३, ६ (युधामन्युश्च विक्रान्तो देवैरपि दुरासदः); १७०, ५ (ये पाण्डवपक्ष के एक प्रमुख रथी थे); १९४, १८; १९५, ३ (पाञ्चाल्यौ च महेष्वासौ युधामन्यूत्तमौजसौ). १७; ६. १५, १९ (अर्जुन के बायें चक्ररक्षक बने); १९, २० (चक्ररक्षौ तु पाञ्चाल्यौ युधामन्यूत्तमौजसौ); २५, ६; ९८, ४७ (अर्जुन के बाँये चक्ररक्षक); ९९, १३; ७. २१, ५०. ५७; २३, ३ (इनके अश्वों का वर्णन); ३५, ४; ८३, ६; ८५, ३९; ९१, ३६ (चक्ररक्षौ पाञ्चाल्यौ युधामन्यूत्तमौजसौ); ९२, २९. ३०; १३०, २६. ३१. ३२. ३४. ३७. ३९. ४१ (दुर्योधन ने इसे पराजित किया); १३७, १९; १३९, ६४; १४६, १३७; १४७, ४९; १५६, ३७; १७७, ३४; १७९, ५; ८. ६, २४ (मारे गये योद्धाओं के साथ इनका उल्लेख); ११, ३१; १३, ३७; ३०, २६; ५९, ३८ ६१, १४ (कर्ण ने इन पर आक्रमण किया). ५५. ५६ (कृप ने इन्हें पराजित किया); ६३, २४ (पृष्ठरक्षौ···युधामन्यूत्तमौजसौ); ६७, १८ (अर्जुन ने कहा कि उनके चक्ररक्षक युधामन्यु और उत्तमौजा हैं); ७५, ८ (चित्रसेन से युद्ध किया); ७९, ३६; ८२, १६. २१; ८३, ३७. ३९ (चित्रसेन का वध किया); ९६, १०; ९. १, ३१ (मारे गये योद्धाओं के साथ इनका उल्लेख); ३०, ५३; १०. ८, ३६ (अश्वत्थामा द्वारा मारे गये); २६, ३४ (इनका दाह-संस्कार किया गया); १८. २, १ (भ्रातरौ च महात्मानौ युधामन्यूत्तमौजसौ)। तुल्०ि पाञ्चालज, पाञ्चाल्य (द्वि०); सौमकि।

युधिष्ठिर, पाण्डु के ज्येष्ठ पुत्र जिन्हें अजातशत्रु और धर्मराज भी कहा गया है। पाण्डु की आज्ञा से उनकी भार्या कुन्ती ने धर्म के अंश से इन्हें उत्पन्न किया था : १. १, १११. १२५. १३०. १५१. १७२. २०६; २, १२०. १६०. १८९. २४७. २६० (युधिष्ठिर नृपाञ्जया). २७४. २७५. ३२५. ३३२ (कुरुराजो युधिष्ठिरः). ३५०. ३६७; ५५, ६(प्रियश्रुतो दिवि देवस्य सूनोर्युधिष्ठिरस्याजमीढस्य राज्ञः); ६१, ४०. ५०; ६३, ९ (सुतो धर्मस्य धर्मवित्); ६३, ११५ (ज्येष्ठः). ११६ (धर्म से उत्पन्न). १२३ (द्रौपदी से इन्होंने प्रतिविन्ध्य नामक पुत्र उत्पन्न किया); ६७, ११० (धर्मस्यांश); ९५, ६१ (धर्म ने कुन्ती से इन्हें उत्पन्न किया). ७५ (प्रतिविन्ध्य के पिता). ७६ (गोवासन शैब्य की पुत्री के साथ विवाह कर के उससे यौधेय नामक पुत्र उत्पन्न किया); ११५, २५ (ये दुर्योधन से ज्येष्ठः थे) ३१। "जब गान्धारी को गर्भ धारण किये एक वर्ष व्यतीत हो गया तब कुन्ती ने गर्भ धारण के लिये धर्म का आवाहन किया। धर्म के उपस्थित होने पर कुन्ती ने उनसे पुत्र की याचना की। तब धर्म के वरदान से कुन्ती ने ऐसा पुत्र प्राप्त किया जो समस्त प्राणियों का हित करने वाला था। जब चन्द्रमा ज्येष्ठा नक्षत्र पर था, सूर्य तुला राशि पर विराजमान थे, शुक्ल पक्ष की पूर्णा नामवाली पञ्चमी तिथि थी और अत्यन्त श्रेष्ठ अभिजित् नामक आठवाँ मुहूर्त विद्यमान था, उस समय कुन्ती ने एक उत्तम पुत्र को जन्म दिया जो महान् यशस्वी था। पुत्र के जन्म लेते ही आकाशवाणी हुई थी कि 'वह श्रेष्ठ पुरुष धर्मात्माओं में अग्रगण्य और इस पृथिवी पर पराक्रमी एवं सत्यवादी राजा होगा। इस पुत्र का नाम युधिष्ठिर होगा और यह तीनों लोकों में ख्याति प्राप्त करेगा।' ऐसे पुत्र को प्राप्त कर पाण्डु धन्य हुये (१. १२०, १-१०)।" १. १२३, ९ (पाण्डोः प्रथमजः पुत्रः); १२४, २० (ब्राह्मणों ने इनका नाम युधिष्ठिर रक्खा); १२६, २३ (साक्षाद्धर्मादयं पुत्रस्तत्र जातो युधिष्ठिरः); १२८, २९. ३७; १२९, ४. ११. ३४. ३५; १३१, २६ (कुन्तीपुत्रः); १३२, ६३ (द्रोण के शिष्य थे). ७१. ७२. ७४; १३४, २४ (°पुरोगमाः); १३७, २५; १३८, २६; १३९, १ (इन्हें युवराज बनाया गया). ३; १४१, २९; १४२, ११; १४३, ११. १४; १४५, १३. १४. २७. ३२; १४६, ४. १३. १४. २१; १४७, ७; १४८, २; १४९, ६; १५०, १६ (कौरव्य); १५१, ३९. ४१ (कुन्ती सहित पाँचों पाण्डव लाक्षागृह से बच निकले); १५४, १३; १५५, २. ४ (कौन्तेयं). १६; १५६, १२ (व्यास ने पाण्डवों को एकचक्रा में निवास करने का निर्देश दिया); १६२, २ (पाण्डुपुत्रः). ३. ५. १२. २१; १६३, १; १६८, २. ९ (व्यासजी ने पाण्डवों को पाञ्चाल देश जाने के लिये कहा); १७०, ३४. ३६. ३७ (इन्होंने अर्जुन से चित्ररथ नामक गन्धर्व को मुक्त कर देने के लिये कहा); १८४, ४. २०; १८७, १०; १८८, २३ (धर्मवितां वरिष्ठः); १८९, २२ (धर्मपुत्रः); १९१, ३. १५. २० (अजमीढस्य राज्ञः); १९२, ३; १९३, २२. २९; १९४, ४ (धर्मराजः); १९५, १. ८ (इन्होंने द्रुपद को पाण्डवों का परिचय दिया). १३. १४. १७. २१. २३ (इन्होंने द्रुपद से द्रौपदी को पाँचों पाण्डवों की पत्नी के रूप में प्रदान करने के लिये कहा). २९; १९६, १३. १८; १९८, ११; १९९, १९ (अपने भाइयों सहित इन्होंने द्रौपदी से विवाह किया); २०१, ६ (कुन्तीपुत्रं); २०७, ३. ५. ९ (ये इन्द्रप्रस्थ में राजा बने); २०८, ६. १०. ११. १२. १७. २१. २२; २०९, १ (नारद जी ने इन्हें और इनके भाइयों को सुन्द और उपसुन्द की कथा सुनाया जिसके बाद सभी पाण्डवों ने द्रौपदी के साथ पति के रूप में रहने के सम्बन्ध में नियम बनाया); २१३, १३. २९; २१७, २९; २१९, २५; २२१, ३४. ४०. ४२. ५८. ६१. ७९ (द्रौपदी से प्रतिविन्ध्य को उत्पन्न किया). ८१; २२२, २. ९. १७; २. १, १५. १६ (मय ने इनके लिये एक सभाभवन बनाने का वचन दिया); २, १९. २१. २२. २४; ३, ९५ (मय ने इनके लिये सभाभवन का निर्माण किया); ४, १. ७. ३३. ४१ (अनेक राजा और ऋषि इनकी उपासना करते थे); ५, १६. १११. ११३ (इनके साथ नारद जी का संवाद); ६, १. ६. ७. ९. १४. १५; ७ से ११ अध्याय (नारद जी ने इनसे विभिन्न देवसभाओं का वर्णन किया); ८, १; ९, १. ११. २४; ११, ३९; १२, १. २४ (नारद ने बताया कि पाण्डु की इच्छा थी कि युधिष्ठिर एक राजसूय यज्ञ करें); १३, १. ४. ७. १४. १६. २०. २९. ३०. ३१. ३९ (पार्थः). ४६ (इन्होंने राजसूय यज्ञ करने का निश्चय किया); १५, १. १६; १६, १. ६; १७, १ (श्रीकृष्ण ने इन्हें जरासन्ध की कथा बताया); २०, ८. ९ (इन्होंने श्रीकृष्ण, अर्जुन और भीम को जरासन्ध का वध करने के लिये भेजा); २४, ३६. ४९. ५२. ५७ (°मुखाः पाण्डवाः, जरासन्ध का वध); २५, १. ५. ११ (इन्होंने अपने चारों भाइयों को दिग्विजय के लिये भेजा); २६, १४. १६; २७, १२; २८, १५ (अर्जुन ने इनके लिये उत्तर दिग्विजय किया); २९, १ (धर्मराज). ११. १५; ३०, ३० (भीमसेन ने इनके लिये पूर्व दिग्विजय किया); ३१, १. २०. ५५ (धर्मसुतस्य). ७८ (धर्मराजायः) (सहदेव ने इनके लिये दक्षिण दिग्विजय किया); ३२, १९ (नकुल ने इनके लिये पश्चिम दिग्विजय किया); ३३, ५. १६. १८. २५. ३२. ४३ (कुन्तीपुत्रं). ४४ (दीक्षितः···धर्मराजो युधिष्ठिरः). ५४. ५५; ३४, २५; ३५, १. ११. १६ (राजसूय यज्ञ किया); ३६, ९. २२. २३. २६; ३७, २४. ३०; ३८, १; ३९, १५ (°अभिषेकं); ४०, २. ५. १४; ४५, ४०. ४३. ५१. ५६. ५९. ६३ (धर्मराजो युधिष्ठिरः). ६४ (कुन्तीपुत्रं युधिष्ठिरम्); ४६, ३. ६. ७. २१. २५. ३३; ४७, २२; ४८, १. १५. १७; ४९, १ (अनुभूय तु राज्ञस्तं राजसूयं महाक्रतुम् । युधिष्ठिरस्य नृपतेर्गान्धारीपुत्रसंयुतः). १५. १८ (निवेशने). ३५. ५८; ५०, १९-२२; ५१, २१ (इनको प्राप्त उपहारों का वर्णन) ५२; ३८. ४० (निवेशने). ४२. ४५–४७; ५३, २२; ५४, २; ५६, १ (पाण्डु पुत्रे). २; ५७, ५; ५८, ३ (धर्मपुत्रं युधिष्ठिरं). ५. १०. १२. १४. १९ (धृतराष्ट्र की आज्ञा से विदुरने इन्हें द्यूतक्रीडा के लिये आमन्त्रित किया; अपने भाइयों और द्रौपदी सहित ये हस्तिनापुर आये); ५९, १ (पार्था युधिष्ठिरपुरोगमाः). ३-५. ९. १४-१६. १८. २१; ६०, ६. ९ (द्यूतक्रीडा आरम्भ हुई); ६१, १. ४. ७. ८. ११. १२. १४. १५. १८. १९. २१. २२. २४. २५. २८. २९. ३१; ६३, ६; ६५, १. २.

५-१६. १८. २०-२२. २४. २६. २८. २९. ३३. (द्यूतक्रीड़ा में ये अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति, अपना राज्य, अपने चार भाइयों और द्रौपदी को भी हार गये); ६७, ४. ९. ११. १८. ४८. ४९ (कुन्तीसुतः). ५४; ६८, १; ६९, २१; ७०, ४. ९; ७१, ४. ८. २०. २८; ७२, १६; ७३, १. ४. ८. १७ (पाण्डवों और द्रौपदी को पुनः मुक्त कर दिया गया); ७६, १-३. १५. २०. २४ (दूसरी बार ये पुनः द्यूत में हार गये जिसके परिणामस्वरूप पाण्डवों और द्रौपदी को बारह वर्ष का वनवास मिला); ७८, १. ४. ९. २२. २४; ८०, २. ४. १० (विदुर ने धृतराष्ट्र को बताया कि युधिष्ठिर वस्त्र से मुह ढंक कर जा रहे हैं फिर भी उनकी बुद्धि धर्म से विचलित नहीं हुई। जूये में हार जाने और राज्यवंचित हो जाने से मन में क्रोध के कारण युधिष्ठिर अपनी आँखे नहीं खोल रहे हैं, अन्यथा उनकी क्रुद्धदृष्टि पड़ते ही मनुष्य भस्म हो जायेंगे); ३. १, ३३; २, २. ७. ५०. ५१; ३, १. ४. १३. ३६. ७८ (सूर्य की स्तुति करके इन्होंने एक अक्षय पात्र प्राप्त किया जिसमें से अगणित ब्राह्मणों को भोजन कराया जा सकता था). ८३. ८४; ४, १७; ५, २२; ६, १२. १४. १८; १०, ११ (मैत्रेय इनके पास आये); ११, २१. १२. २६. ३६. ३८; १२, ४. ७. ७३ (प्रतिविन्ध्य के पिता); १४, १; १५, १; २०, १८; २१, ११ (श्रीकृष्ण ने इन्हें सौभवधोपाख्यान सुनाया); २२, ४५. ४८. ५४; २३, १. १६; २४, १ (कौन्तेयः). १२. १५; २५, ५. ६; २६, ५. २०. २१; २७, ३२; २९, १; ३०, ३६; ३१, १; ३२, ४. ४०. ५६. ६२; ३३, ८०; ३४, २ (इन्होंने प्रतिज्ञा भंग करके युद्ध करना स्वीकार नहीं किया); ३६, १. ५. २३. २४. २८. ४० (व्यास जी ने इन्हें प्रतिस्मृति का उपदेश दिया); ३७, १. ४ (इन्होंने अर्जुन को प्रतिस्मृत का उपदेश देकर उन्हें इन्द्र के पास दिव्यास्त्र प्राप्त करने के लिये भेजा); ३८, ११; ४७, २४ (इन्द्र ने लोमश को इनके पास भेजा); ५०, ६. ९; ५१, २०. ३२; ५२, १. ५. ३६. ४०. ४२. ५९; ५९, १८; ६१, ९; ६८, ३१; ७०, २२; ७९, २७ (भद्रश्व ने इन्हें नलोपाख्यान सुना कर द्यूतविद्या सिखाया); ८१, ७. २१ (नारद जी ने इन्हें पुलस्त्योक्त तीर्थों का वर्णन सुनाया = अध्याय ८२-८५); ८२, ५५. ६४. ७०; ८३, ५. ७; ८४, ९९; ८५, ७७. १३२; ८७, ५; ८८, १३. २०. २२; ८९, १२; ९०, ६. ११. २१ (धौम्य ने इनसे चारों दिशाओं के तीर्थों का वर्णन किया); ९१, ३. १२. १६. १७; ९२, १. १४. १९; ९३, १९. २०; ९४, १ (लोमश जी युधिष्ठिर के पास आये और उसके बाद ब्राह्मणों को साथ लेकर इन्होंने तीर्थयात्रा आरम्भ की); ९६, १ (कौन्तेयः); ९९, ६०; १००, १; १०४, १; १०६, ४; १०७, ३८; ११०, १ (कौन्तेयः). २७ (तीर्थयात्रा के समय लोमश इनसे विभिन्न तीर्थों और उनके माहात्म्यों का वर्णन करते थे); ११४, १०. १४. १६. ३०; ११५, ७; ११६, २७; ११७, १६ (अकृतव्रण ने इन्हें राम जामदग्न्य की कथा सुनाया, जिसके बाद राम जामदग्न्य महेन्द्र पर्वत पर प्रकट हुये); ११८, १८. २१; ११९, ५. ७. १३; १२०, १. २१. २४. २७ (प्रभास क्षेत्र में वृष्णियों से मिलने के बाद भाइयों सहित इन्होंने तीर्थयात्रा के लिये आगे प्रस्थान किया); १२१, ७. २३; १२५, १७. २०; १२६, १; १२७, १. २; १३२, ७; १३५, ५. १०. १८; १३६, ६; १३८, ११. २३ (लोमश जी ने इनसे अन्यान्य तीर्थों और उनके माहात्म्यों का वर्णन किया); १३९, १८; १४०, १. १८; १४१, १; १४२, ३०. ३४; १४४, १०. १५. २१; १४५, १. ३५. ३८; १४६, ३३. ३४; १५५, ६. ९; १५६, १. २० (पाण्डवगण कुबेर के पद्मसरोवर पर आये); १५७, १२. २७. २८. ३१. ७२; १५८, १६. ३०. ७७; १५९, १. १५. २४. ३०; १६१, १ (अजातशत्रुः कौन्तेयः). १०. १३. ५२; १६२, १. १७. ३२ (गन्धमादन पर्वत पर युधिष्ठिर सहित अन्य पाण्डवों से कुबेर का मिलन); १६३, ३. २६; १६४, १५; १६५, ४ (अर्जुन इन लोगों के पास लौट आये); १६६, १. ७. १०. १५; १६७, १ (धर्मपुत्रं); १७३, ७५; १७४, ११; १७५, १; १७६, १०. १४. १८; १७७, १९; १७९, ३. ४०; १८०, १. ५. ९. १८. २०. २१. २३. २५. ३१. ३८; १८१, १. ३. ८. १६. २४ २८. ३१. ४० (युधिष्ठिरो धर्मराजः). ४१ (अजगर रूपी नहुष से युधिष्ठिर का मिलन); १८३, १. १५. २२. ८०. ८७ (मार्कण्डेय जी ने इन्हें अनेक कथायें सुनाया (अध्याय १८५-२३२); १८८, १; १९०, १. २. १३. ४६; १९१, ३१; १९३, १. ३; २००, २. १२. २०. ४३. ६४. ७१. ८१. १२०; २०१, २. ८. ९; २०३, ६; २०४, १७. ३९; २०५, १. २३; २०६, १२; २०८, १; २०९, १; २१०, १; २१३, २; २१४. १; २१६, ३४. ३६; २१७, २; २३२, १; २३३, ४२. ४३. ५०; २३६, १३; २३७, ५. ६; २३९, १६. १९; २४०, १५; २४२, १३; २४६, ११. १२. २१. २५ (इन्होंने चित्रसेन से दुर्योधन को मुक्त करा दिया); २४७, ५; २४९, ५. ७; २५५, १३; २५६, १२. १५; २५७, ३ (युधिष्ठिरस्य यज्ञेन न समो ह्येष ते क्रतुः). २३; २५८, २. ४. ७. ८ (इनका स्वप्न); २५९, ३. ७. ९. १२. २७. ३४; २६०, १ (व्यास ने इन्हें मुद्गल की कथा सुनाया); २६२, २०; २६३, २. ३८; २६६, ६; २६७, १२ (कौरव्यः कुशली राजा कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः). १५; २६८, ५ (धर्मराजम्). २७; २६९, २. २३; २७०, ५ (इनकी ध्वजाग्र पर नन्द और उपनन्द नामक दो मृदङ्ग अंकित थे). ७. १२ (भ्राता च शिष्यश्च युधिष्ठिरस्य धनञ्जयो नाम पतिः); २७१, २. ३९. ४३ (जयद्रथ पराजित हुआ); २७२, १४. १८-२० (इन्होंने जयद्रथ को मुक्त करा दिया; मार्कण्डेय जी ने इन्हें रामोपाख्यान सुनाया); २७३, २. ४; २७४, ४; २७७, १; २८९, १४; २९२, १ (मार्कण्डेय जी ने इन्हें सान्त्वना दी); २९३, १. ४ (मार्कण्डेय जी ने पतिव्रतामाहात्म्य के प्रसङ्ग में इन्हें सावित्री की कथा सुनाया); ३००, १ (पाण्डुपुत्रम्); ३०९, २२; ३११, ३. ५. १५; ३१२, १. ५. ९. १४. २०. ३३; ३१३, १९ (तपः सुतो'''धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः). ३१. ४३. ४६. ४८. ५०. ५२. ५४. ५६. ५८. ६०. ६२. ६४. ६६. ६८. ७०. ७२. ७४. ७६. ७८. ८०. ८२. ८४. ८६. ८८. ९०. ९२. ९४. ९६. ९८. १००. १०२. १०४. १०८. ११३. ११५. १२०. १२३. १२८; ३१४, २. १२. १५. २३ (एक यक्ष के रूप में धर्म ने इनके भाइयों को मार डाला। तदनन्तर यक्ष के प्रश्नों का उत्तर देते हुये इन्होंने नकुल का जीवनदान माँगा। इनके उत्तरों से प्रसन्न होकर धर्म ने इनके सभी भाइयों को जीवित करते हुये इन्हें यह वरदान दिया कि वनवास के बाद तेरहवें वर्ष के अज्ञातवास में पाण्डवों को कोई पहचान नहीं पायेगा); ३१५, ९ (पाण्डवों ने ब्राह्मणों से विदा लिया); ४. १, ५ (धर्मो धर्मभृतां वरः). ६. ७. १५. २३. २७; २, ९. ११. ३१; ३, २. ७. १४. १९. २२; ४, १. ५२; ५, ७. १७. २०. २८. ३५; ६, १. ३५ (इन्होंने दुर्गा की स्तुति की जिससे प्रसन्न हो देवी ने प्रकट होकर इन्हें युद्ध में विजय प्राप्त करने का वरदान दिया); ७, १. ८. १२. १४ (इन्होंने कङ्क वैयाघ्रपद्य के रूप में विराट को अपना परिचय दिया और विराट ने इन्हें अपना सभासद बनाया); ८, ९; १०, ९. १२; १२, ६. ८. ११; १३, ४ (सभास्तारो मत्स्यानामभवत् प्रियः). ७; १६, ९. १३. १७. १८. ३९; १८, १ (यस्या भर्ता युधिष्ठिरः). १६ (महाराजमिन्द्रप्रस्थे). २१. २४. २५ (सभायां देविता राज्ञः कङ्कः). २८ (विराटस्य सभास्तारः). ३०. ३१; १९, ४५; २१, ८; २२, ३४; २७, २ (धर्मज्ञाश्च कृतज्ञाश्च धर्मराजम्). ४ (अजातशत्रुम्); २८, ३. १५. १६. २१. २३. २४. २८. २९; ३१, २५ (राजे, जब सुशर्मा के नेतृत्व में त्रिगर्तों ने विराट नगर पर आक्रमण किया तब युधिष्ठिर आदि ने विराट की सहायता के लिये युद्ध किया); ३३, ११. १७. ३३. ३५-३७. ५६. ६१ (भीमसेन ने सुशर्मा को पराजित करके बन्दी बना लिया किन्तु इन्होंने उसे मुक्त करा दिया); ३४, ७ (कौरवेयाः'''युधिष्ठिरपुरोगमाः). ९. १४ (विराट ने इनके प्रति आभार प्रकट किया); ४०, ४. ८; ४३, ९; ४४, २. ५; ५०, ११; ५२, ६; ६५, १६ (अर्जुन ने अपने को इनका आज्ञाकारी बताया); ६८, २०. ३४. ३७. ४१. ४६ (बृहन्नला की प्रशंसा करने पर विराट ने इनको पासा फेंक कर मार दिया); ६९, १८; ७०, २. ९-२८ (इनकी प्रशंसा करते हुये अर्जुन ने कहा : युधिष्ठिर तो इन्द्र के भी आधे सिंहासन पर बैठने के अधिकारी हैं। ये ब्राह्मणभक्त, शास्त्रों के विद्वान, त्यागी, यज्ञशील तथा दृढ़व्रती हैं। ये मूर्तिमान् धर्म हैं तथा

पराक्रमी पुरुषों में श्रेष्ठ हैं। इस जगत् में ये सर्वश्रेष्ठ बुद्धिमान और तपस्या के परम आश्रय हैं। ये नाना प्रकार के ऐसे अस्त्र-शस्त्रों के ज्ञाता हैं जिन्हें इस चराचर त्रिलोकी में दूसरा मनुष्य न तो जानता है और न कभी जान सकेगा। जिन अस्त्रों को देवता, असुर, मनुष्य, राक्षस, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर और बड़े बड़े नाग भी नहीं जानते उन सब का ज्ञान इनको है। ये पाण्डवों में अतिरथी वीर हैं एवं सदा यज्ञ और धर्म के अनुष्ठान में संलग्न तथा मन और इन्द्रियों को वश में रखनेवाले हैं। ये महर्षियों के समान, राजर्षि तथा लोकों में विख्यात हैं। बलवान्, धैर्यवान्, चतुर, सत्यवादी, तथा धन और संग्रह की दृष्टि से इन्द्र और कुबेर के समान हैं ये ही कुरुवंश में सर्वश्रेष्ठ धर्मराज युधिष्ठिर हैं। उदयकाल के सूर्य की शान्त प्रभा के समान इनकी कीर्ति समस्त संसार में फैली हुई है। इनके सद्गुणों की गणना नहीं की जा सकती। इस प्रकार सर्वोत्तम गुणों से युक्त होकर भी ये राजोचित आसन के अधिकारी क्यों नहीं हैं ?); ७१, १. २२. २६. ३०. ३१; ७२, १२. १६. ३४. ३८ (जब पाण्डवों का परिचय प्राप्त हो गया तब विराट ने युधिष्ठिर से सन्धि कर ली और अपनी पुत्री उत्तरा का अभिमन्यु के साथ विवाह कर दिया); ५. १, ४. १०. १९. २५; २, ४. ८. १०; ३, ९. २२; ५, १२. १८; ६, ५. ७; ७, ३९; ८, १४. २०. २१. २७. ३४. ३५. ४०. ५३ (शल्य ने कर्ण को हतोत्साहित करते रहने का इन्हें वचन दिया); ९, १. २०; १३, १९ (शल्य ने इन्हें इन्द्रविजय का वृत्तान्त सुनाया); १८, १७. १८. २२ (शल्य ने अपने वचन को पुनः दोहराया); १९, १. ९ (उन राजाओं का वर्णन जो अपनी-अपनी सेनाये लेकर युधिष्ठिर के पक्ष में आये तथा उनकी सेनाओं की संख्याओं का वर्णन); २०, १६ (सात अक्षौहिणी सेना इनके पास एकत्र हुई); २१, १०; २२, १९; २३, २. ६; २५, १; २६, १; २८, १; २९, ४. ५३; ३०, ३. ३६; ३१, १. ११; ३२, ८. १५; ३३, १६; ३४, ८४; ३७, ४३; ४८, २. ७. ९. २६; ५०, २. ४. ७. ४३; ५३, ६. १६; ५५, ५. १०. १२. ३० (इन्होंने दुर्योधन से केवल पाँच ग्राम ही माँगे); ५६, १. २. १४ (-इनके रथ में शक्तिशाली श्वेतवर्ण अश्व जुते थे); ५७, ३०. ४३. ५१. ५७; ५८, १२; ६४, २७; ६५, ३; ६६, १४; ७२, १. ६. ८२. ८९ (ये सन्धि के लिये कौरवों के पास श्रीकृष्ण को हस्तिनापुर भेजने के लिये सहमत हुये); ७३, ५; ७८, १; ७९, १०. १३; ८०, १५; ८१, ४; ८२, ६. ९. ४६; ८३, ३०. ३३. ३७. ४९ (इनके कहने पर श्रीकृष्ण हस्तिनापुर के लिये प्रस्थित हुये); ८४, २३; ९०, २१. ४९. ७०. ७२ (कुन्ती ने श्रीकृष्ण द्वारा अपने पुत्रों, पाण्डवों के लिये समाचार तथा अपना सन्देश भेजा); ९५, २०. ६०; ९७, ८ (धर्मपुत्रेण); १२५, २५; १२६, ३; १२८, २३ (कुन्तीपुत्राय); १२९, ५३; १३०, २७; १३१, ९. ३८; १३२, ५ (कुन्ती ने श्रीकृष्ण द्वारा इनके लिये सन्देश भेजा); १३८, ६. १४; १३९, १४ (धर्मराजः); १४०, ११ (कौन्तेय पूर्वजातं युधिष्ठिरात्). १९. २०; १४१, २३. ३४; १४२, ८; १४३, ७. ३०. ३३. ३४; १४४, ४; १४६, २१; १४७, ५. ७; १४८, ३६; १४९, ३२. ३४ (उपप्लव लौटकर श्रीकृष्ण ने इन्हें हस्तिनापुर में हुई बातों का विवरण बताया, अध्याय १४७–१५०); १५१, १ (इनकी सात अक्षौहिणी सेना के सेनानायकों आदि का उल्लेख). ३३. ५७. ६४; १५२, १. ३. १४; १५३, १; १५४, १. १७; १५७, ४. ६. १३ (इन्होंने अपनी सेना के सात सेनापति नियुक्त किये, तुको० अध्याय १५१). २४; १५८, १९; १६०, ५०. ७१; १६१, १. ३. ६. २३; १६२, ७. ६०. ६३; १६३, २४. ५०; १६४, १; १९४, २; १९६, १. ६. ९. २१. २७. ३१ (इन्होंने अपनी सेना का व्यूहन किया); ६. १, ७. १०. ११; १९, १. २४. २७; २१, १. ६; २२, १; २५, १६ (इन्होंने अपना अनन्तविजय नामक शङ्ख बजाया); ४३, १३. २०. २६. २७. ३१. ३२. ३४. ३७. ४३. ४५. ४७. ४९. ५४. ५८. ६१. ६३. ७३. ८४. ८६. ९३. ९५. ९७. १०१ (इन्होंने भीष्म, द्रोण, कृप, शल्य आदि से मिलकर युद्ध के पूर्व उन लोगों का आशीर्वाद प्राप्त किया); ४४, २७; ४५, २८ (शल्य के साथ युद्ध किया). २९; ४९, ७ (इन्होंने अपना अनन्तविजय नामक शङ्ख बजाया); ५३, ४०; ५४, ९३; ५६, १५; ५८, ११ (धर्मराज). १२ (धर्मसुतः). २० (धर्मपुत्रश्च पाण्डवः); ५९, ५०. ८१ (युधिष्ठिरानीकमभिन्द्रवन्तं); ६४, ७१ (युधिष्ठिर पुरोगमाः); ६७, २५; ६९, १२; ७१, २० (इन्होंने शल्य के साथ युद्ध किया); ७२, ६; ७५, ४. ८; ७७, ५४; ७८, १४; ७९, ६४; ८१, २३ (इन्होंने अपनी सेना का वज्र-व्यूह बनाया). ३२ (श्रुतायु पर आक्रमण किया); ८४, १. ८. १९ (श्रुतायु को पराजित किया); ८५, १३. १७; ८६, २-४ (भीष्म से युद्ध किया). ९. १२. १५. ३६ (दो आवन्त्य राजकुमारों पर आक्रमण किया). ४७; ८७, १५. १९; ८९, १५; ९३, ७; (भगदत्त ने इन पर आक्रमण किया); ९९, ९; १०२, २८ (भीष्म ने इन पर आक्रमण किया); १०३, १४ (भीष्म पर आक्रमण किया); १०५, १६. २९. ३२. ३४ (शल्य के साथ युद्ध किया); १०६, ३. ५ (भीष्म से युद्ध किया). ४१; १०७, २. ५. १२. २५. ४१. ७३ (इन्होंने भीष्म से उनकी मृत्यु का उपाय पूछा); १०८, ७; ११०, ६. १७; १११, ५० (द्रोण ने इन्हें रोक दिया); ११२, २१. ३५; ११४, ४१; ११५, १३. १७. २९; ११६, ४०; ११९. ७१; १२०, ६६; १२१, ४८; ७. २, १६. ३०. ३१; ६, ११; ७, २५; ८, २. ४. २४; ९, २४; १०, ७ (अजातशत्रु). १२ (कौन्तेय); ११, ४६. ४८; १२, ६. १५. २०. २८ (द्रोणने इन्हें बन्दी बनाने का वचन दिया); १४, २० (द्रोण पर आक्रमण किया). ८३; १६, १७. १९. २०. २८. २९. ३१. ३३. ३८; १७, ३. ५. ९. ४२; १९, ३८. ३९; २०, ४ (अपनी सेना का व्यूहन किया). २०. ६३ (द्रोणने इन्हे बन्दी बनाने का प्रयास किया); २१, १. ३ (सात्यकि द्वारा रक्षित). २२-२४. ५१. ५७. ५८; २३, १०. ११. ७६. ७८. ९१ (इन्होंने माहेन्द्र धनुष हाथ में लिया); २४, ३. ६; २५, १५ (पाण्डवश्रेष्ठं); २६, ३१. ३९ (भगदत्त के साथ युद्ध किया); २७, १३; ३१; ४; ३२, ७ (अजातशत्रुः); ३३, १. ७; ३४, ३. ९ (युधिष्ठिरस्य वीर्येण); ३५, ११. १२. २०. २९; ३९, ११; ४०, ३. २०; ४२, ३; ४३, ९; ४७, ५; ४९, ३३. ३४. ३६; ५१, २. ३; ५२, १. २. ९. ११. १२. १९. २९ (इन्हें सान्त्वना देते हुये व्यासजी ने नारदजी द्वारा अकम्पन को सुनाई कथा तथा मृत्यु की उत्पत्ति की कथा सुनाया); ५४, ५५; ५५, २. ३६ (व्यासजी ने इन्हें षोडशराजिक और नारदजी द्वारा सृञ्जय को दिया गया उपदेश सुनाया); ७१, २४. २६; ७२, ४७; ७३, १; ७९, १७; ८२, ६. ३४; ८३, १. ३. ९. २०; ८४, ९. ३५; ८६, ४; ९४, २३; ९५, ३९ (अजातशत्रु कौन्तेयं); ९६, २९ (शल्य के साथ युद्ध किया); ९७, २ (कृतवर्मा से युद्ध किया); ९८, ५३; १०२, ११; १०६, ११. १८. २४. २६. ३५. ३८. ४२. ४८; १०९, १४. १६; ११०, १३. ४२; १११, २. १४. १९. ३९; ११२, ६६. ६८. ७७ (अर्जुन की सहायता के लिये सात्यकि को भेजा); ११३, १. ३२; ११४, ६२. ६९; १२२, १८. २०; १२४, १५. ३७. ३९ (दुर्योधन के साथ युद्ध किया); १२६, ४. ७. १३. २६. ३०; १२७, ३. ८. २१ (सात्यकि की सहायता के लिये भीम को भेजा); १२८, ३६. ३८; १२९, ३५. ३७; १३१, ६; १३३, १३; १३७, ३७. ३८; १४१, १७. २०. २७. ३६; १४२, ६. ११; १४३, ५. ४६; १४४, १; १४६, १३८; १४७, ७५; १४८, ३४. ५८, (अजातशत्रु ···पाण्डवं); १४९, १. ३; १५३, २३. २८. ३०. ३३. ३६–३८; १५४, ९; १५५, ४३. ४४; १५६, १७. १८ (मृदङ्गकेतोः). ३१. ३४. ३७ (द्रोण के साथ युद्ध). १२४. १६९; १५७, २. २७. २८. ३०. ३१. ३२. ३४. ३९. ४१ (द्रोण के साथ द्वन्द्व युद्ध); १५८, ३७; १५९, ८७; १६०, १५; १६१, १; १६२, ३५. ३७–३९. ४६. ४७. ५२; १६५, १. ५. २३. २४. ३४. ३६–३८. ४०. ४१; १६८, ३३; १७०, ६४; १७२, २०. ३४; १७३, ७. ८. २४. २९ (कुन्तीसुतो); १८३, २६. ५१. ५४. ५५.५८. ६१. ६४ (व्यासजी ने इनके पास आकर घटोत्कचवध का कारण बताया); १८४, १. २; १८७, २६; १८९, ५६; १९०, १४. ४२. ५५. ५७ (इन्होंने द्रोणाचार्य को अश्वत्थामा के वध का मिथ्या समाचार दिया); १९१, ५१; १९२, ३. १२. १५. ४२. ५८; १९३, ५२. ५५; १९५, ५. १४. २९; १९६, ८. १०; १९८, ७. ३९. ६७; १९९, ५. २४; २००, ९;

२०१, ११; ८. ७, १०; ९, ४. २३. ५७; ११, २२. ३०. ३५; १३, ८ (दुर्योधन ने इन पर आक्रमण किया); २४, ५२; २८, १. ४ (दुर्योधन के साथ युद्ध किया).९; २९, ६. ९. १३. १५. २०. २६; ३०, २८; ३६, २०. २५ ३१; ४६, ४. ८. ९. २९. ३४. ८२; ४७, २२ (कर्ण ने इन पर आक्रमण किया); ४८, २. ४८. ५४. ६३. ६७; ४९, ७. ८. १०. २८. २९. ३२. ४६. ५०. ६२. ६४. ६५; ५०, ८; ५१. ५९ (कर्णोऽपि समरे राजन् धर्मपुत्रमरिन्दमम्, (स शरैश्छादयामास सारथिं चाप्यपातयत् ॥); ५४, १४ (अश्वत्थामा ने युद्ध में रोका); ५५, १. ३. १३. ३१. ३८. ३९ (अश्वत्थामा के साथ युद्ध किया); ५६, ६३. १४७ (युद्ध से हट गये); ५८, ४. ६. ८. ४२; ५९, १; ६०, २ (कौन्तेयं धर्मराजं युधिष्ठिरम्). ३. ६. १०. १८. १९. २१. ५०. ५८; ६१, १. २२ (चित्रसेन से युद्ध करने गये); ६२, ४-८. २२. २७-३० (कर्ण के साथ युद्ध); ६३, ४. ११. १९. २१. २२. २९. ३२ (शिविर में आ गये); ६४, ६७; ६५, ३. ४. १५. २०. २१; ६६, १; ६७, १; ६८, १ (इन्होंने कर्ण वध न कर पाने के कारण अर्जुन की भर्त्सना की); ६९, १. ४. ८. २२. २९. ६७. ७०. ८३. ८४ (युधिष्ठिर के ऐसा कहने पर अर्जुन अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे और उन्होंने युधिष्ठिर को मार डालने के लिये हाथ में तलवार उठा ली। तब श्रीकृष्ण ने अर्जुन को समझाते हुये उन्हें बड़ों का आदर करने का उपदेश दिया और उनसे कहा कि वह युधिष्ठिर को 'तू' से सम्बोधित कर दें क्योंकि गुरुजनों को यदि 'तू' कह दिया जाय तो वह साधु पुरुषों की दृष्टि में उसका वध ही हो जाता है); ७०, १. ३०. ३६. ३८. ५५; ७१, २. ८. १३. २७. ३०. ३९ (अर्जुन ने क्रोध त्याग कर पुनः इनसे पूर्ववत् सम्बन्ध स्थापित कर लिया); ७२, ९. ३५; ७४, १६. १७. ४०. ४२; ७६, १३ ८०, २४; ८७, ११७; ८८, २३; ८९, ७१; ९४, ६२; ९६, १२. ३९ (ये कर्ण के मृत शरीर को देखने आये). ४६. ४८. ५१; ९. १, १०; ३, ६१; ४, ४७; ५, २४; ७, २४. ४३; ८, १४. ३०; ९, ३९; १०, २. ४. ५७; ११, २१. २९ (अजातशत्रु कौन्तेयम्). ३०. ४८; १२, ४७. ५१. ५६. ६१. ६३ (शल्य के साथ युद्ध); १३, २२. ३७. ४७. ४८; १५, १२. १६. १८. २२. २७; १६, ७. १०. १३. १४. ४६. ४७. ५७. ६१. ६७ (शल्य के साथ युद्ध); १७, १. ३. १२. १३. १७. २८. २३. २५. ३०. ३५. ४९ (शल्य का वध किया). ५८. ६३ (शल्य के छोटे भाई का वध किया). ८५. ८७ (कृतवर्मा को पराजित किया). ८८. ९१; १८, ४ (मद्रकों ने इन पर आक्रमण किया). ९. १२; १९, ४ (अजातशत्रुणा) १४. २६. २८. ५४; २२, ९. २३. २६; २३, ६. ९. ११. १३. ३४. ६५; २४, १०. ५०; २५, ३६; २७, १ (पाण्डुपुत्रेण); २९, ८४. १०१; ३०, ५. ११. ३२. ५१. ५९; ३१, ७. १५. ४२. ४६. ५४. ५५ (इन्होंने युद्ध के लिये दुर्योधन को ललकारा); ३२, ७. १२. २३. ३२. ३३. ५२. ५५ (इन्होंने दुर्योधन से कहा कि यदि वह एक भी पाण्डव को पराजित कर देगा तो ये अपने राज्याधिकार को त्याग देंगे); ३३, १. २. २३. ३१; ३४, ८. १८; ५५, ५. ११. ४३; ५६, १५ (भीम और दुर्योधन का युद्ध आरम्भ हुआ); ५८, ९ (दुर्योधन को भीम ने पराजित किया); ५९, ९. २१. ३१; ६०, ३२. ३५. ४२. ४७; ६१, १३; ६२, २०. २७. २८. ४०; ६३, १. ९. १४. ३० (श्रीकृष्ण को हस्तिनापुर भेजा). ५४; १०. ९, २४; १०, ७ (अपने योद्धाओं का रात में वध कर दिये जाने का समाचार प्राप्त किया). ३१; ११, १६; १२, १; १३, ६; १७, १; १८, १४; ११. १, २ (कौरवो राजा धर्मपुत्रो महामनाः); ८, ३७. ४५; ९, २ (कौरवः··· धर्मपुत्रः); १२, १. १०; १४, २. १७; १५, ४. ११. २४–२६. २९ (गान्धारी की दृष्टि पड़ते ही इनके पाँव के एक अँगूठे का नख भस्म हो गया); १६, ९ (पाण्डुपुत्रः···पुरोगमाः); १८, १२; २१, ७; २३, १. ६; २४, २६; २६, ७. ९. ११. १२. १९. २३. २४. ४४ (इन्होंने मृत योद्धाओं के शवों का अन्तिम संस्कार कराया); २७, १४. २५. २८ (कुन्ती ने इन्हें बताया कि कर्ण भी उन्हीं का पुत्र था); १२. १, ३. ७. ९. १०. ११. २९ (नारदजी ने इन्हें कर्ण का इतिहास सुनाया : अध्याय २–५); ६, १. ४; ७, १. ४४ (इन्होंने राज्य का त्याग कर देने की इच्छा व्यक्त की); ८, १ और बाद (अर्जुन ने इनके मत का निराकरण करते हुये धर्म की महत्ता बताया और राजधर्म पालन करते हुये यज्ञानुष्ठान के लिये इन्हें प्रेरित किया); ९, १; १०, ८ (भीम ने इन्हें समझाया); १४, १. ४. ३०; १७, १; १९, १; २०, १; २३, २. १७; २४, २. १०. १७. २१. २४; २५, १. २. ४. १३. २९ (विभिन्न लोगों ने इन्हें सान्त्वना दिया); २६, १; २७, १; २८, २ (व्यासजी ने इन्हें अश्मा ऋषि और जनक के संवाद द्वारा प्रारब्ध की प्रबलता बताकर इन्हें समझाया); २९, १ (श्रीकृष्ण ने नारद–सञ्जय संवाद के रूप में षोडशराजोपाख्यान सुना कर इनके शोक का निवारण करने का प्रयास किया); ३०, १ (श्रीकृष्ण ने इन्हें नारद और पर्वत का उपाख्यान सुनाया); ३१, २ (नारदजी ने सुवर्णष्ठीविसम्भवो-पाख्यान सुनाया); ३२, १. १०; ३३, १. १३; ३४, १; ३५, ५१; ३६, १. ५०; ३७, १. २०. २८. ३१ (व्यास तथा श्रीकृष्ण की आज्ञा से भीष्म से राजधर्म की शिक्षा लेने के लिये पाण्डवों सहित हस्तिनापुर आये); ३८, ४. ८. २९. ३०; ४०, १५. २०. २१. २४ (इनका राज्याभिषेक); ४१, १. १३; ४२, १. ३. १२ (अपने सम्बन्धियों का श्राद्धकर्म सम्पन्न किया); ४३, १ (श्रीकृष्ण की प्रशंसा की); ४४, २. ११. २६; ४५, १. ४. ११; ४६, १. २१; ४७, १०५ (पाण्डव तथा श्रीकृष्ण भीष्म को देखने के लिये चले); ४८, १. ७. १०. १६; ४९, ९० (श्रीकृष्ण ने इन्हें राम जामदग्न्य की कथा सुनाया); ५०, १. ५; ५१, १८; ५२, १२ (इन्हें उपदेश देने के लिये श्रीकृष्ण ने भीष्म को सहमत किया). २७; ५३, ६. १०. ११. १४. १८. २५; ५४, ५. १२; ५५, २. ११. २०; ५६, १. २ (इन्होंने भीष्म से राजधर्म सम्बन्धी प्रश्न किया और भीष्म ने इन्हें उसका उपदेश दिया, अध्याय ५६–५८).११. १४. ६१; ५७, १; ८७, १. ५. २२. २९; ५९, ४. ५. १९. ६४. ११८. १३९; ६०, १; ६१, १. १८; ६२, १; ६४, ६; ६६, १–३. ५. ८. २०. २५. २७. २८. ३४; ६७, १; ६८, १; ६९, १. ५५. ६७. ७४. ८६; ७०, १. १४; ७१, १. १८. २५; ७३, ६; ७५ १. १५. ३३; ७६, १; ७७, १; ७८, १. ३. ४. ९. १२. १८. १९. २४. ३५; ७९, १. ७; ८०. १; ८१, १; ८२; २; ८३, १; ८४, १; ८५, १. ३; ८६, १; ८७, १. १५. २१. ४०; ८८, १; ८९; ११. १९. २०. २२; ९०, २; ९२, १; ९५, १. ६; ९६, २३; ९७, १; ९८, १. २; ९९, २. १०; १००, १. २०; १०२, १. १६. ३३; १०३, १. २; १०४, १. २; १०७, १; १०८, १. ४. १६; १०९; १; ११०, १; १११, १. २; ११२, १. ३. २०; ११३, १; ११४, १; ११५, १; १२०, १; १२१, १. २२. ३४. ४३. ५५; १२३, १; १२४, १. ११. १४. ६३. ७०; १२५, १. ८; १२९, १; १३०, १. ५ (युधिष्ठिर के पूछने पर भीष्म ने राजधर्म के कुछ अन्य पक्षों पर प्रकाश डाला); १३१, १९; १३२, १. ७. २२; १३३. १ (कौन्तेय); १३७, ३; १३८, १. १२. २१३; १३९, १; १४०, १; १४१, १. २४; १४२, १. ३५; १४३, १. ५; १४९, १८; १५०, १; १५३, १; १५४, १; १५८, १. ३०; १५९, १. ४; १६०, १. ३७; १६२, १; १६३, १; १६४, १; १६७, १. ४३; १६८, १. ५. २८; १६९, १६; १७०, २१; १७३, २६ (भीष्म ने इन्हें कृतघ्नो-पाख्यान सुनाया); १७४, १. ५. ६; १७५, १. २; १७६, १; १७७, १. ४; १७८, ३; १७९, १; १८०, १. ४; १८१, १; १८२, १; १९३, १; १९४, १; १९६, १; १९७, १. १२; १९८, १; १९९, १; २००, १; २०१, १; २०७, १. ६. ३१; २०८, १; २०९, १; २१०, १; २१२, २५; २१८, १, २२०, १; २२१, १-३. ९. १३; २२२, १. ३; २२३, १; २२६, १; २२७, १. ७; २२८, १; २२९, १; २३०, १; २३१, १; २४४, १; २५५, ११; २५६, १; २५९, १. २५; २६०, १; २६१, १२; २६४, २३ (कौन्तेय); २६५, १३; २६६, १; २६७, १; २६८, १. ५: २७१, १. १५. २३. ३०; २७२, १; २७३, १. १८. २४; २७४, १; २७६, १; २७७, १. २; २७८, १; २७९, १; २८०, ६०. ६५; २८१, १; २८२, ५६; २८३, १; २८४, ७२; २८५, १; २८६, १; २८७, १; २८८, १; २८९, १. २१; २९०, १; २९९, १. २; ३००, १. ७. १०. ४२; ३०१, १. ४४. ५३. ८०. ९४; ३०२, १; ३१०, १; ३१९, १; ३२०,

१; ३२१, १; ३२२, १ (युधिष्ठिर के पूछने पर भीष्म ने मोक्षधर्म के सम्बन्ध में बताया); ३२३, १; ३२४, २ (भीष्म ने इन्हें शुक का इतिहास बताया : अध्याय ३२३-३३३); ३३४, १; ३३५, १३; ३३६, १६; ३३७, १. ३९ (कौन्तेय); ३३९, ९८ (यज्ञे धर्मसुतस्य वै). ९९. ११३. १३३ (इनके पूछने पर भीष्म ने नारायणीय तथा उसी के अन्तर्गत उपरिचर का उपाख्यान सुनाया); ३४८, ६४ (धर्मज्ञो धर्मराज्ञे). ८६ (धर्मपुत्राय); ३५२, १ (भीष्म ने उन्छवृत्त्युपाख्यान सुनाया); १३. १, १. ८३; २, १. २०; ३, १; ४, ३५. ६१; ५, १; ६, १. २; ७, १. २; ८, १. ७. ९. ११. २०. २५; ९, १. २५; १०, १. ५. ४९; ११, १; १२, १; १३, १; १४, १. १८. २६. २९. ३९८; १५, ९ (भीमपूर्वजः); १७, १; १८, ८. ३१. ३७. ४६. ५६. ६१. ७० (श्रीकृष्ण का इनके साथ शिव-विषयक संवाद); १९, १. ९७; २१, १; २२, १. ३. ५. ८. १६. १८. २४. २६. ३२; २३, १. ३४. ३९. ४०. ४७-४९. ५२. ६०. ७५. ७६. ८५. ९८. १०१; २४, १; २५, १; २६, २. ९. १७-१९. १०५; २७, १. ५. ७; ३०, १. ४१; ३१, १; ३२, १. ३४; ३३, १; ३५, १६; ३६, १; ३७, १. ५; ३८, १; ३९, १; ४०, ८; ४४, १. ४. ६. ९. १९. २८; ४५, १. १०; ४७, १. ७. १०. १२. १४. २५. २७. ३३. ३६. ३९. ४०. ४५. ४६. ४८; ४८, १. ३९; ४९, १. ६. ७. १२. १४. १९. २२. २४; ५०, १; ५१, ४७; ५२, १; ५३, १ (भीष्म ने इन्हें च्यवनोपाख्यान और च्यवन-कुशिकसंवाद सुनाया, अध्याय ५०-५६); ५७, १. ६. ४३. ४४; ५८, १; ५९, १. ९. १६. २१. २५; ६०, १. ५. १३. १७; ६१, १. १२. ३७; ६२. १. ४. ५१; ६३, १. २८; ६४, १; ६६, १. ३. ५; ६७, १; ६८, १. २; ६९, १. ६. १४; ७०, ३३; ७१, १; ७२, १; ७४, १४; ७५, १; ७६, १. २९; ७७, १-३. ९. ३४ (आजमीढः...पार्थः); ८१, १. २८. ३०; ८२, १; ८३, १. ६. ४६; ८४, १; ८५, १६७ (भीष्म ने सुवर्णोत्पत्ति बताया); ८६, १ (भीष्म ने तारकवधोपाख्यान सुनाया); ८७, १. २; ८८, १. २. ११; ९०, १. ११. ४९; ९१, १; ९३, १-३. ९. १३. १८ (भीष्म ने इन्हें विसस्तैन्योपाख्यान और शपथविधि बताया); ९५, १; ९६, १ (भीष्म ने इन्हें छत्रोपानद्दानप्रशंसा सुनाया); ९७, १; ९८, १; ९९, १; १००, १ (इन्हें नहुषोपाख्यान सुनाया). ३० (युधिष्ठिर ही नहुष को शाप से मुक्ति दिलायेंगे); १०१, १; १०२, १ (भीष्म ने हस्तिकूट बताया); १०३, १. ३; १०४, १. ८०. ११७. १३६. १५४; १०५, १; १०६, १. ७ (कौन्तेयं धर्मज्ञं धर्मतत्त्ववित्); १०७, १. ६; १०८, १; १०९, १; ११०, १. २; १११, १. ८. ९. १९. २७. ३१. ३४. ८४; ११२, १. ९; ११३, १. ११; ११४, १. २; ११५, १. ९. १०; ११६, १; ११७; १. ५. ६; ११९, ६ (कीटोपाख्यान सुनाया); १२०, १ (भीष्म ने मैत्रेयभिक्षा के सम्बन्ध में बताया); १२३, १; १२४, १; १२५, १; १३५, १; १३६, १. ४; १३७, १. २८. ३०; १३८, १; १३९, १; १४८, ५८. ६६ (भीष्म ने उमा-महेश्वरसंवाद सुनाया); १४९, १. २; १५१, १; १५२, १ (भीष्म ने पवनार्जुनसंवाद और उसके अन्तर्गत ब्राह्मणमाहात्म्य सुनाया); १५३, १ (पवनार्जुन संवाद का वर्णन); १५८, १; १५९, १; १६०, १ (ईश्वर प्रशंसा); १६१, १ (श्रीकृष्ण ने महेश्वरमाहात्म्य सुनाया); १६२, १. १०. १२. १७. २७. ३३; १६३, १. १४; १६५, १. २; १६६, २. ६ (कुरुराजो युधिष्ठिरः). ८. १५ (कौन्तेयः, भीष्म ने अपने उपदेश समाप्त किये और युधिष्ठिर आदि हस्तिनापुर लौट आये); १६७, १. ३. ७. १८. १९. २६. २८. २९. ५१; १६८, १२ (भीष्म के स्वर्ग जाने के समय उपस्थित थे); १४. १, ५. ८ (कौन्तेय). १५. १६; २, ९. १०; ३, १. ४. ८. ११. २२; ४, १. १४; ५, १; १०, ३७ (व्यास जी ने इन्हें संवर्तमरुत्तीय का वर्णन करते हुये मरुत्त द्वारा छोड़े हुये सुवर्ण को एकत्र करके अश्वमेधयज्ञ करने का परामर्श दिया); ११, ३ (पार्थे...धर्मसुतम्); १३, १२ (श्रीकृष्ण ने इन्हें सान्त्वना दी); १४, १. ५. १३ (इन्होंने हिमवत् पर्वत पर जाकर मरुत्त का सुवर्ण लाने का निश्चय किया); १५, १२. १३. २२. २३. ३३. ३४; ५१, ५२; ५२, २२. २६. ४०. ४४. ५१. ५५ (श्रीकृष्ण ने इनसे विदा ली); ६०, २३. २४ (युद्ध का संक्षिप्त वर्णन); ६२, १३. २०. २१; ६३, ३; ६४, ३. १३. १६; ६५, २. १६. २० (ये हिमालय से सुवर्ण लेकर लौटे); ६६, २. १९; ६७, ५; ७१, १३. १७; ७२, १. १२. २२. २६ (अर्जुन को यज्ञाश्व की रक्षा करते हुये उसका अनुसरण करने के लिये आज्ञा दी); ७३, २ (अश्वमेध की दीक्षा ली). ४. ५. ७. १९; ७४, ७. ८ (धर्मराज); ७६, २१. २३. २५; ७८, ७. ८; ८०, ९ (कुरुमुख्यस्य). १० (धर्मराज); ८१, २३; ८२, २४; ८४, ४; ८५, २. ४. २४; ८६, १. ७. ११. १३. १४. २१; ८७, १. १९; ८८, ६. १२ (अश्वमेध यज्ञ आरम्भ हुआ); ८९, ७. ९ (भरतश्रेष्ठं धर्मराजं युधिष्ठिरम्). १०. १६. १८. २२. २५. ३६ (कुरुराजो युधिष्ठिरः); ९०, १. ४; ९१, ५; ९२, ५२ (नेवले ने इनके यज्ञ को श्रेष्ठ नहीं माना); १५. १, ११. १८. २६; २, ३. १३. २८; ३, १. १३. २७. ४१. ६३. ७९. ८६. ८७; ४, १. ९. १२. १७; ५, १०. २०. २६. २९. ४२; ६, ५; ७, १; ८, १. ७. ८. २१; ९, १०. १४; १०, ४७. ४९; ११, १. २. ६, २५; १२, ३. ७; १३, २; १४, ७. ८; १५, ६. ७; १६, ५. ९; १७, २०; १८, ५ (युधिष्ठिरस्य जननी देवी साधु निवर्त्यताम् । यथा युधिष्ठिरः प्राह तत्सर्वं सत्यमेव हि ॥). २१ (युधिष्ठिरस्य जननी कुन्ती साधुव्रते स्थिता); २०, १९. २० (इनकी अनुमति से धृतराष्ट्र आदि वन में तपस्या करने चले गये); २३, ७. १५. १६; २४, १७ (ये वन में धृतराष्ट्र आदि से मिलने के लिये गये); २५, ३; २६, १. ११. २०. २१. २३. २४. २७. २९. ३४. ३६ (धर्म के ही एक अंश से उत्पन्न होने के कारण महात्मा विदुर जी युधिष्ठिर के शरीर में प्रवेश कर गये क्योंकि युधिष्ठिर भी धर्म के ही पुत्र थे); २७, २३ (कौरव्यः कुन्तीपुत्रः); २८, ७. १८; २९, ४. १०. ११; ३१, ९; ३६, १. १०. १३. ३७. ४५. ४६. ५३ (ये हस्तिनापुर लौटे); ३७, १. २. ६. ४२; ३८, १. १०; ३९, ६. २४. २७ (नारद जी ने इन्हें धृतराष्ट्र आदि की मृत्यु का समाचार दिया जिसे सुनकर इन्होंने उन लोगों का अन्तिम-संस्कार सम्पन्न किया); १६. १, १. ७; २,२२; ८, ३८; १७. १, ६. १५. १९. २४. ३१. ३७; २,६. १०. ११. १५. २१. २३. २५; ३, २. ७. ९. ११. १५. ३२. ३६ (परिक्षित् का राज्याभिषेक करके युधिष्ठिर आदि पाण्डव तथा पत्नी द्रौपदी महाप्रस्थान के लिये चल पड़े। मार्ग में युधिष्ठिर के चारों भाई और द्रौपदी मृत्यु को प्राप्त हुये और धर्म के रूप में एक कुत्ते के साथ युधिष्ठिर अकेले ही जीवित स्वर्ग पहुँचे) : १८. १, ३. ४. ६. १२. १९; २, १. १४. ३०. ३७. ३९. ४९. ५०; ३, १. २. १०. २६. ३०. ४२. ४३ (इन्द्र द्वारा प्रकट माया से भ्रमित हो कर इन्होंने अपने भाइयों को नरकवास करते देखा। धर्म ने इन्हें बताया कि इनकी परीक्षा लेने के लिये ही माया का सृजन किया गया था। इस प्रकार विभिन्न परीक्षाओं से होते हुये इन्होंने स्वर्ग प्राप्त किया); ४, १. ५. ११. १२; ५, २२ (ऋद्धिमन्तो महात्मानः शस्त्रपूता दिवं गताः । धर्ममेवाविशत्क्षत्ता राजा चैव युधिष्ठिरः ॥)।

तुकी० इनके निम्नलिखित पर्याय :

अजातशत्रु, आजमीढ—देखिये वस्था० ।

कुन्तीनन्दन, कुन्तीपुत्र, कुन्तीसुत, कुरुकुलश्रेष्ठ, कुरुकुलोद्वह, कुरुनन्दन, कुरुपति, कुरु-पाण्डवाग्र्य, कुरुपुङ्गव, कुरुप्रवीर, कुरुमुख्य, कुरुराज, कुरुवर्धन, कुरुवीर, कुरुवृषभ, कुरुशार्दूल, कुरुश्रेष्ठ, कुरुश्रेष्ठतम, कुरुसत्तम, कुरूत्तम, कुरूद्वह, कौन्तेय, कौरव, कौरवनन्दन, कौरवनाथ, कौरवर्षभ, कौरववंशवर्धन, कौरवश्रेष्ठ, कौरवसत्तम, कौरवाग्र्य, कौरवेन्द्र, कौरव्य—देखिये वस्था० ।

तपःसुत : ३. ३१३, १९ ।

धर्म : ४. १, ५; ६. ५०, ३१ ।

धर्मज : ७. १५७, ३५; ८. ७१, ३; १२. ५०, ८; १३०, ५; १३. १६७, १७; १४. ७३, ५; ८६, ४. ८; १५. २, २९; १०, ४४; २६, ३६; १८. २, ३२ ।

धर्मतनय : ७. १५७, ३७ ।

धर्मनन्दन : ८. ७१, २६; ९६, ६ ।

धर्मपुत्र : १. २, १४३; १८९, २२; २. ४, ७; २४, १४; ५८, ३; ८०, २; ३. ९, ३; १४५, ३५; १५५, ६. ९; १६१, ३५; १६७, १; २३६, १८; २४०, १५; २४४, ९; २४६, २४; २६९, १३; २७२, २०; ३१३, ४. १९; ४. १, ७; ७२, ३८; ५. २०, १६; ५०, १; ९७, ८; १४०, १९; १४८, ३६; १६१, २३; १६३, ५०; १९६, १; ६. ५८, २०; ८१, ३२; ८४, ८. १८. १९; ८६, १२; ८८, २; ८९, १५; १०७, २६. ६०; ११०, १७; ११६, ४१; १२०, ६६; ७. १७, ९; ४३, १०; ७९, १७; १०६, ३८; १२२, २०. ३६; १३६, १३. २६; १२७, २०; १२८, ३६. ३८; १४३, ५; १४९, १; १५३, २३; १५६, १६९; १५८, ३७; १६०, १५; १६५, १. २३. २६. २७. ३८. ४०; १७२, २०; १८३, ५८; १९५, ५; १९९, २४. २५; ८. १३, ८; २९, ३. १४; ३६, ३१; ५१, ५९; ५५, १७. ३८; ५८, ६; ६०, ५८; ६२, २२. २४; ६५, ४; ६९, ७९. ८०; ७१, ९; ७४, ४२; ९६, २४; ९. १०, ४; १२, ४७; १३, ५. १५-१८. ३७; १८, ५; २३, ९; ३१, ३७; ५९, ३१; ११. १, २; ८, ४२; ९, २; १२. १, ९. ३१; २९, १. २; ४४, ११; ४५, १; ५३, १४; ५५, २०; १६७, ३९; ३४८, ८६; १३. १८, ७०; ३२, ३; १०६, ७; १६७, २९; १४. १, ५; १५, २४. २९; ६६, २. १९; ७२, १; ९२, ५२; १५. २, ३०; ३, ८३; १७. १, १९; १८. २, ३९. ५४; ३, ९ ।

धर्मप्रभव : ३. २३६, ५ (धर्मानिलेन्द्रप्रभवान्) ।

धर्मराज्, धर्मराज, धर्मराजन् – देखिये वस्था० ।

धर्मसुत : १. २, १३७; २. २, ३६; ३१, ५५; ६७, ३८; ७०, ५; ३. ८१, ६. ८; १६१, ४२; २३६, १२; २५७, २३; २६६, ८; २७०, ७. १६; ३१५, ९; ५. १, १३; ७८, १२; ६. ५८, १२; ७. २, ३०; १४२, ६; १६०, १४; १८९, ५६; ८. ५५, २१; ९. १३, ३५; १७, १०. २०. २५; ३४, १८; १२. १६७, ५१; ३३९, ९८; १३. २६, १७; १११, ८; १४. ११, ३; १४, १३; १५, १२. १६. १८; ५२, ५३; ६४, १६; ७१, १३; ७२, ८; १५. १, १७; २८, ७; १८. २, ५० ।

धर्मसूनु : ६. ८४, ३; ७. ८४, ७; १७३, ८; १७, ५६ ।

धर्मात्मज : २. ३४, १९; ७. ८२, ३२; १४. ६२, २०; ६३, १७; ७२, ९; १५. २६, ३७ ।

पाण्डव, पाण्डवनन्दन, पाण्डवमुख्य, पाण्डवर्षभ, पाण्डवश्रेष्ठ पाण्डवाग्र्य, पाण्डवेय, पाण्डुनन्दन, पाण्डुनृपात्मज, पाण्डुपुत्र, पाण्डुवीर, पाण्डुसुत, पाण्डुसूनु, पार्थ–देखिये वस्था० ।

भरतप्रवर्ह, भरतर्षभ, भरतशार्दूल, भरतसत्तम, भरतसिंह, भारत – देखिये वस्था० ।

भीमपूर्वज : १३. १५, ९ ।

युधिष्ठिराश्वास (युधिष्ठिर को आश्वासन)–"वानरों और रीछों की सहायता से श्रीराम द्वारा रावण पर विजय प्राप्त कर लेने की कथा का उल्लेख करते हुये युधिष्ठिर को मार्कण्डेयजी ने सान्त्वना दी। मार्कण्डेयजी ने युधिष्ठिर से कहा ; 'तुम क्षत्रिय हो, शोक न करो। तुम उस मार्ग पर चल रहे हो जहाँ केवल अपने बाहुबल पर ही भरोसा किया जाता है। श्रीराम के कष्ट की तुलना में तुम्हारा कष्ट अणुमात्र भी नहीं है। जो सहायकों से सम्पन्न है उसके सभी मनोरथ सिद्ध होते हैं। फिर तुम्हें तो धनञ्जय जैसा भाई मिला है जो युद्ध में किसी को भी परास्त कर सकता है। भीमसेन भी बलवानों में श्रेष्ठ हैं। इन सब सहायकों के होते हुये तुम्हें चिन्ता नहीं करनी चाहिये। वज्रपाणि इन्द्र ने मरुद्गणों के साथ मिल कर वृत्रासुर, नमुचि तथा दीर्घजिह्वा राक्षसी का वध किया था। तुम अपने पराक्रमी भाइयों की सहायता से मरुद्गणों सहित इन्द्र को भी परास्त कर सकते हो। अतः तुम्हें शोक नहीं करना चाहिये। जयद्रथ द्वारा द्रौपदी का हरण कर लिये जाने पर तुम्हारे इन्हीं भाइयों ने अत्यन्त दुष्कर कर्म करके द्रौपदी को पुनः लौटा लिया तथा जयद्रथ को भी परास्त करके अपने अधीन कर लिया था। अतः तुम्हें शोक नहीं करना चाहिये।' (३. २९२)।"

युयुत्सु, धृतराष्ट्र द्वारा एक वेश्या से उत्पन्न पुत्र का नाम : १. ६३ ११८ (पुत्रशतं जज्ञे धृतराष्ट्रस्य धीमतः'''युयुत्सुः करणस्तथा). १२० (वैश्यापुत्रो युयुत्सुश्च); ६७, ९१ (वैश्यापुत्रो युयुत्सुश्च धार्तराष्ट्र, शताधिकः). ९३. १०६; ११५, ४३ (युयुत्सुः करणो नृपः). ४४ (युयुत्सुश्च महातेजा वैश्यापुत्रः प्रतापवान्); ११६, २; ११७, २ (धृतराष्ट्र के पुत्रों की गणना); १२९, ३८ (वैश्यापुत्रः); १३८, ६; १८६, २ (द्रौपदी के स्वयंवर में आया); २. ७४, २५ (वैश्यापुत्रः); ७८, ३; ३. २९, ४८; ५. २३, १३ (वैश्यापुत्रः कुशली तात कच्चिन्महाप्राज्ञो राजपुत्रो युयुत्सुः); ४७, ७ (युयुत्सुश्च महारथः); ६१, २९ (युयुत्सोः वैश्यापुत्रस्य पाण्डवेष्वनुरक्तस्य कार्याणि ज्ञात्वा, नीलकण्ठी); ९५, २१; १३१, ४०; ६. ४३, ९५. ९७. १०० (पाण्डव पक्ष में सम्मिलित हुआ); ७. ८, ५; १०, ५९ (वारणावत में अनेक राजाओं ने क्रोध में भर कर छः मास तक युयुत्सु से युद्ध किया किन्तु इन्हें परास्त नहीं कर सके); २३, ३४ (द्रोण के विरुद्ध युद्ध के लिये गये–इनके अश्वों का वर्णन); २५, १३ (अपने भाई सुबाहु से युद्ध किया). १४; २६, ५४. ५६. ५७. ६० (भगदत्त के गजराज से युद्ध किया); ७२, ६०; ८३, ६; ८. २५, १. २. ४. ७ (युयुत्सोः काञ्चनध्वजः). ८. १० (उलूक ने पराजित किया); ३०, २७ (कर्ण पर आक्रमण किया); ४९, ३३ (वसुषेण पर आक्रमण किया); ९. २९, ८९. ९१. ९६. ९७. १०२. १०५ (हस्तिनापुर लौटे); ६२, २; ११. १२, ३; २६, २५ (युधिष्ठिर ने मृत योद्धाओं का दाह संस्कार सम्पन्न करने के लिये जिन लोगों को आदेश दिया उनमें यह भी थे); १२. ३७, ३८ (युधिष्ठिर के साथ गये); ४०, ६; ४१, १७; ४४, १४; ४५, १० (युयुत्सो धार्तराष्ट्रस्य); ४७, १०६ (भीष्म को देखने गये); १३. १६७, १०; १६८, ११. १३ (भीष्म के स्वर्ग जाने के समय उपस्थित थे); १४. ५२, २७; ६०, ३३; ६३, २४ (जब पाण्डवगण हिमालय पर मरुत्त का सुवर्ण लाने गये तब यह हस्तिनापुर में रहे); ६६, ७; १५. १, ५. १२; ३, ४७; ४, २१; १६, ५; २३, १५ (जब पाण्डव धृतराष्ट्र से मिलने गये तो ये हस्तिनापुर में रहे); ३९, १२ (धृतराष्ट्र का अन्तिम संस्कार किया); १७. १, ६ (युधिष्ठिर ने वैश्यापुत्र युयुत्सु को बुला कर उन्हीं को सम्पूर्ण राज्य की देख-भाल का भार सौंपा और फिर उन्होंने परीक्षित का अभिषेक कर दिया). २७ (युधिष्ठिर आदि पाण्डवों को महाप्रस्थान के लिये विदा कर वापस लौटे)।

तुकी० इनके निम्नलिखित पर्याय :

करण, कौरव, कौरव्य–देखिये वस्था० ।

धार्तराष्ट्र, धृतराष्ट्रज, धृतराष्ट्रसुत–देखिये वस्था० ।

वैश्यापुत्र : १. ६३, १२०; ६७, ९१. १०६; ११५, ४४. ११६, २; १२९, ३८; २. ७४, २५; ७. ७२, ६३; ९. २९, ८६; १५. १, ५; १५, ८; १७. १, ६ ।

युयुधान = सात्यकि (देखिये वस्था० ।

युवन् = शिव (सहस्रनाम) ।

युवनाश्व, एक प्राचीन राजा का नाम है : १. १, २३२; ३. १२६, ५:(इक्ष्वाकुवंशप्रभवो'''महीपतिः) १८. २८ (इनके बायें पार्श्व से मान्धाता का जन्म हुआ था); २०२, ३ (ये अयोध्या के राजा, अद्रि के पुत्र, और श्राव के पिता थे); ७. ६२, ३ (युवनाश्वस्य जठरे सुतुतां गतम्); १२. २९, ८२; १५९, १३ (स्वर्ग प्राप्त किया); १६६, ७८ (इन्होंने रैवत से एक तलवार प्राप्त किया जो बाद में इनसे रघु को मिली); २३४, २५ (इन्होंने दानधर्म के पालन द्वारा स्वर्ग प्राप्त किया); १३. ११५, ७० (ये कार्तिक मास में मांस-भक्षण नहीं करते थे) । तुकी० सौद्युम्नि)

युवराज चेदीनां : ७. २००, ६३ [तुकी० २००, ७९. ८० ८५. ८६ (अश्वत्थामा ने इनका वध किया था); २०१, १० [।

यूपकेतन, यूपकेतु = भूरिश्रवा (देखिये वस्था०) ।

यूपध्वज = भूरिश्रवा (११. २४, ५. १६. १७) !

१. योग, षड्दर्शनों में से एक का नाम है : १. २, ४८ (वेदा योगः सविज्ञानोधर्मोऽर्थः); २. ५, ७ (सांख्ययोगविभागज्ञो); ३. २, १५ (योगे सांख्ये च); २२१, २१ (कपिलो नाम सांख्ययोगप्रवर्तकः); ६. २६,

१९ (एषा तेऽभिहिता सांख्ये बुद्धिर्योगे तु); २८, १-३ (श्रीकृष्ण ने विवस्वान को सिखाया और विवस्वान से मनु को प्राप्त हुआ); २९, ४. ५; ४२, ७५ (योगं योगेश्वरात्कृष्णात्साक्षात्कथयतः स्वयं); १२. ५०, ३३ (योगे सांख्ये च नियता ये च धर्माः सनातनाः); १९६, ४ (सांख्ययोगक्रियाविधिः). ७. ८; २३६, २९ (योगे सांख्येऽपि). ४०; २३९, ३ (सांख्ये वा यदि वा योग); २४०, २; २५३, १३ (योगशास्त्रपरः); २८४, १९२ (सांख्ययोगात्); ३००, १. २ (प्रशंसन्ति योगा योगं); ३०१, १३. १०८; ३०५, १९ (एकं साख्यं च योगं च). ३३ (सांख्ययोगे कुशलाः); ३०६, ५-७. २६ (योगदर्शनम्); ३०७, ४४ (सांख्ययोगौ मया प्रोक्तौ शास्त्रद्वयनिदर्शनात् । यदेव शास्त्रं सांख्योक्तं योगदर्शनमेव तत्). ४८; ३१३, ३ (योगप्रदर्शिनः); ३१४, १८; ३१६, १. २ (नास्तिसांख्यसमं ज्ञानं नास्तियोगसमं बलम्). ४ (एकं साख्यं च योगं च). ८; ३१८, १२ (सांख्ययोगेप्सितं पदम्). ६७ (योगशास्त्रं च याज्ञवल्क्य विशेषतः). ८६. ९८; ३२०, ७. २५; ३२५, ४ (योगशास्त्रं च निखिलं कापिलम्); ३३९, ६९. ११२ (सांख्ययोगकृतं तेन पञ्चरात्रानुशब्दितम्); ३४१, ९; ३४७, ८०. ८७ (सांख्य योगो नारायणात्मकः); ३४८, ७४ (सांख्योगेन तुल्यो हि धर्म एकान्तसेवितः). ८१; ३४९, १ (सांख्यं योगः). ६५ (सांख्यस्य वक्ता कपिलः···हिरण्यगर्भो योगस्य वेत्ता नान्यः पुरातनः). ७३ (सांख्यं च योगं च सनातने द्वे); ३५०, २; ३५१, ७. २३; १३. १४, १९८; १८, ७७; ७५, २४ (योगशूराः); १४१, ८३. १४९, १३९; १५०, ५४; १४. १९, १५. १८; १८. ५, ३८ ।

२. योग (योग के व्यवहार, साधना और समाधि, आदि से अलौकिक शक्तियाँ प्राप्त होती हैं): १. ७, ६; २१, १४ (अध्यात्मयोगनिद्रां च पद्मनाभस्य सेवतः); ६६, २७; ७५, ३१; १२१, ३७; १२३, ५ (धर्मेण योगमूर्तिधरेण); २. ८, २९ (योगशरीरिणः); ३. २, २३. ८१. ८२; ३, ११. ३४; ३१, १३; ३७, ३८. ५९; ८२, २३. १२०; १०६, ११ (योगसमन्वितः); १२९, ७ (ऋचीकपुत्रस्य योगैर्विचरतो महीम्); १६२, १६ (योगोत्पन्नो निजः सुतः); १६३, २४ (योगसिद्धा); १८३, ९० (योगयुक्ताः); २०१, ३०; २०४, ३१; २०९, ३९ (तपोयोगसमारम्भं); २११, २० (योगविधिः); २१३, ३३ (तं विद्याद्ब्रह्मणो योगं वियोगं योगसंज्ञितम्); २६१, ४६ (ज्ञानयोगेन). ४७ (ध्यानयोगाद्बलं); २९६, १३ (ध्यानयोगपरायणा); ३००, ९; ३०६, २० (योगात् कृत्वा द्विधाऽऽत्मानमाजगाम तताप च); ३०७, २८ (योगेनाविश्यात्मसंस्थां); ५. २७, ८ (योगाभ्यासे); ३३, ६१ (योगयुक्तः); ३६, ५२; ४३, ५१; ४४, ६; ४५, १८; ६९, २१; ६. १५, ५; २६, ४८. ४९. ५० (योगः कर्मसु कौशलम्). ५३; २७, ७ (कर्मयोगमसक्तः); २७, २८ (योगयज्ञाः). ३८. ४१ (योगसंन्यस्तकर्माणं) ४२; २९, १. २. ५. ६. २१ (ब्रह्मयोगयुक्तात्मा); ३०, ३ (योगारूढस्य). ४. १२. १६. १७ (योगो भवति दुःखहा). १९. २०. २३ (तं विद्याद् दुःखसंयोगवियोगं योगसंज्ञितम्). २९ (योगयुक्तात्मा). ३३. ३६. ३७ (योगाच्चलितमानस···योगसंसिद्धिं). ४१ (योगभ्रष्टः). ४२. ४४ (योगस्य शब्दब्रह्मातिवर्तते). ४५. ४७; ३१, २५ (योग मायासमावृतः); ३२, ८ (अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा). १० (योगबलेन). १२ (योगधारणाम्). २७ (योगयुक्तो भवार्जुनः); ३३, ५ (योगमैश्वरम्). २८ (संन्यासयोगयुक्ता); ३४, ७. १० (बुद्धियोगम्). १८; ३५, ८; ३६, १ (योगवित्तमाः). ६. ११; ३७, १०. २४ (अन्ये सांख्येन योगेन कर्मयोगेन चापरे); ४२, ३३ (योगेनाव्यभिचारिण्या). ५२ (ध्यानयोगपरो). ५७. ७५ (योगं योगेश्वरात्कृष्णात्साक्षात्कथयतः स्वयम्); ६५, ४८ (जयविश्वमहादेव जय लोकहिते रत । जय योगीश्वर विभो जय योगपरावर ॥). ७३. ७५ (अनादिमध्यान्तमपारयोगं लोकस्य सेतुं प्रवदन्ति विप्राः); ६६, २. ३६; ६७, ५. १४ (ध्यानयोगेन). २० (योगभूतं··· केशवम्); ६८, ११ (योगविद्भिर्भगवान् पुरुषोत्तमः); ११९, १२१; ७. ७९, ९; १४३, ३५ (योगयुक्तोऽभवन्मुनिः); १४६, ६८ (योगी योगेन संयुक्तो योगिनामीश्वरो हरिः); १९२, ४६. ५०. ५७, ५९. ६१ (आचार्यं योगमास्थाय ब्रह्मलोकमरिंदमम्); ८. ९, ३८ (युक्तयोगो); ३३, ४९ (तपोविशेषैर्विविधैर्योगं यो वेद चात्मनः); ९०, २३ (बाणेप्रविष्टं योगबलेन नागम्); ९. ४४. १६ (महायोगबलान्वितः). ३३. ३७; ४५, ९ (योगसिद्धैः). ७७; ४९, २१. २३ (संप्राप्य परमं योगं). २४ (परमं योगमास्थाय); ५०, ५. ७ (योगनित्यः). २३ (प्रभावं तपसो···योगजम्). ४५. ५३. ५६ (विधिं च योगस्य परं कार्याकार्यस्य शाश्वतः). ६४. ६८; ५४, ६; १२. १९, १५; २५, ४ (व्यासो योगविदां वरः). ५; २६, १० (योगवतां लोका); ४७, १. ४८. १०१; ६६, ३९; १०४, ३४; १०५, २३ (योगधर्मविदं); ११२, १७; १६२, ५. १०; १७७, ३१ (योगे बुद्धिं श्रुते सत्त्वं मनो ब्रह्मणि धारयन्); १९५, १ (ध्यानयोगं चतुर्विधम्). ७. १४. २०; २००, २३. २९; २०९, २१ (योगात्मा योगसारथिः); २१०, १. ४१. ४२; २१५, २१ (योतन्त्रैः); २१९, १८ (तपोयोगं); २३६, ३. १६. ४०; २३८, ११ (कर्मयोगेन) २४०, ४. ८ (योगदोषान्). १६. २४-२६; २४१, १८ (योगजितात्मकम्); २५३, ६. १४ (समाधौ योगमेवैतच्छाण्डिल्यः शममब्रवीत्); २५४, ७ (योगप्रसादात्); २६८, १. २; २७१, ५४; २७४, १०. १३. १४ (वाग्योगसाधनान्); २७७, ३५; २८१, ३५; २८३, ३२; २८४, १५; २८७, २४; २८९, ९. १२. १६ (उशना योगसिद्धात्मा). २७; २९७, १७; २९८, १२. ३४; ३००, ११. १४. १८. २२-२६. २९. ३५. ४१. ५३. ५४. ५७; ३०१, १. १३ (ज्ञानयोगे च ये दोषा गुणा योगे च ये नृप). ३४. ६२ (ज्ञानयोगेन सांख्येन व्यापिना महता नृप). ७२; ३१५, ७; ३१६, ४-७ (वेदेषु चाष्टगुणितं योगमाहुर्मनीषिणः). २७; ३१७, २०; ३२०, १०. १६. १७ (योगबन्धैर्बबन्ध ह). ६८; ३२३, ५. ९. १०. १३ (योगधर्मपरायणः). १५. २१; ३३१, ५२. ५३ (योगं समास्थाय). ६०; ३३२, २ (क्रमयोगवित्). ६. ७. ९; ३३३, २०; ३३६, ३३; ३३९, ६९; ३४०, २८. ७४; ३४१, १४ (प्रकृतिः···योगधारिणी); ३४२, ९६. १०४; ३४७, १९. ५४. ६३; ३४८, १७ (योगस्थितः रुद्रः पुरा); ३४९, २३; ३६१, ७ (ब्रह्म योगयुक्तो निरामयः); १३. २, ८४; १४, ५. ९. ८६. ८८. ३९३. ४२१; १५, २. ६१; १७, १९. १७२ (शिव के सहस्रनामों में से एक). १८२; २९, ६; ३०, ३२; ४०, ५०; ४१, ११. १२; ५४; २१; ५५, १९; ५७, १६ (योगयुक्ते तपोधने); ६०, ९ (ज्ञानविज्ञानतपोयोगसमन्विताः); ८३, २९; ११२, १५ (योगेष्वभिरतः); १४१, ४. ११२; १४२, ८ (योगचर्याकृतैः). ९ (मण्डूकयोगनियतैः). ३९ (मण्डूकयोगशयनो). ४१ (शीतयोगवहो नित्यं). ४३ (अग्नियोगवहो). ५७ (वीरयोगसहः); १४७, १८ योगभायः); १६८, ४; १४. १३, १०; १६, १३ (योगयुक्तेन); १९, १७ (मोक्षयोगं). २३. ३३. ६६; २५, १५ (योगयज्ञः); ३०, २८. २९. ३१; ३५, ३५ (नित्यं योगपरायणाः); ४०, ६; ४३, २६ (प्रवृत्तिलक्षणो योगः); ५०, ६. २५; ५१, २३; ९१, ३३ (महायोगः); १५. २६, २७. ३०; २८, १८ (योगबलाज्जातः···युधिष्ठिरः); ३१, १३; १६. ३, ११; ४, १३. २१ (महायोगमुपेत्य कृष्णः). २२ (केशवं योगयुक्तं ध्यानं मृगासक्तो लुब्धकः सायकेन). २३ (अथापश्यत्पुरुषं योगयुक्तं पीताम्बरं लुब्धकोऽनेकबाहुम्); १७. १, ३०. ४६; २, ३; १८. ५, २३ ।

३. योग (अधिकांशतः बहु०) : ३. १८६, २६; १८९, २६; ६. २९, ५; ६७, २५; ७. ८०, ४६; १८२, १४; १२. २००, २३. २९; ३००, २९. ३१. ३३. ३५. १-३. ७. ११. १२. १४-१६. १८. १९. २२-२६. २८. २९. ३३. ३५. ४१. ५३. ५७; ३०७, ४४; ३१०, ८; ३१५, २०; ३१६, ४. ८. २७; ३१८, ७१. ७९. ८६. ९८; ३४२, ६८. ९६. १०६; ३४७, ३८; १३. १६, २५; १७, १७३; ९०, ३३; १५०, २६ ।

४. योग = शिव : ७. २०२, १५; १३. १७, १२५ (सहस्रनाम).।

५. योग = विष्णु (सहस्रनाम) ।

६. योग, एक ऋषि का नाम है : १३. १५०, ४५ (सांख्ययोगौ नारदश्च···महानृषिः

योगकर = शिव (सहस्रनाम) ।

योगनिद्रात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ५७, ५९)।

योगयोगीश = श्रीकृष्ण (६. ६५, ६२)।

योगविदां नेतृ = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. योगाचार्य = शुक्र (१. ६६, ४३; १२. ५९, ८५)।

२. योगाचार्य = श्रीकृष्ण (१६. ४, २६)।

३. योगाचार्य = सनत्कुमार (२. ११, २३)।

योगात्मन् : ३. ३०७, २३ (सूर्य); ६. ६५, ४७ (श्रीकृष्ण). ५५ (श्रीकृष्ण); १२. ४७, ५४ (श्रीकृष्ण); २०९, २१ (श्रीकृष्ण); २८४, १६९ (शिव); २८९, २७ (शिव); ३५१, ३ (पुरुष): १३. ३, ९ (योगात्मनि तपोधने); १४, ९० (व्यास). १६४ (हृदि प्राणो मनो जीवो योगात्मा योगसंश्रितः)।

योगाध्यक्ष = शिव (सहस्रनाम)।

१. योगिन् (एक० अथवा बहु०), से योगियों का तात्पर्य है (= योग, बहु०) ; १. ३४, १४ (योगिनामीश्वरं हरिम्); ३. ३, ३७; १४९, १७ (गतिर्योगिनां परा); २०१, १९; २०४, ३१; २१३, १६ (योगिनां··· मार्गः). १९; ५. ४६, १-१०. १२-२४; ६. २७, ३; २८, २५; २९, ११. २४; ३०, १. २. ८. १५. १९. २८. ३१. ३२. ४६.:४७; ३२, १४. २३. २५. २७. २८; ३४, १७; ३६, १४; ३९, ११; ७. ७१, १६; १४६, ६८; ९. ४६, ९६. १००; १२. १२, १०; १९५, २; २०६, ९; २३३, १८; २४८, १७; २८१, ३७; ३००, २१. ३७. ३८. ४०. ४२. ४६. ६१. ६२; ३४६, २२; ३४७, ९१; १३. १४, २२२. ३१८; १६, ४. ८; १७, २९; १४. १३. १०; १८, २१; १९, १५. २२।

२. योगिन्, अलग-अलग व्यक्तियों के लिये प्रयुक्त : अर्जुन (१३. १४८, ३२)। श्रीकृष्ण (विष्णु, नारायण) : (२. ६८, ४३; ३. ९०, ३१; ५. ६८, १४; १०७, १५; ६. ६६, २०; १०६, ५६; ७. १४६, ६८; १२. २०९, २७. ३१. ३२. ३४: ३४७, ९१; ३४९, १७; १३. १४९, ३१ (सहस्रनाम). १०४)। गाधि (९. ४०, १३)। दधीच (१२. २८४, १४: ३४२, ४०)। माण्डव्य (१. १०७, ३)। मार्कण्डेय (३. ८८, ५)। विदुर (१५. २८, १२)। वृत्र (१२. २८३, ६०)। व्यास (१. १०५, १४; ३. ३६, २२. ३८: २५९, ९)। शिव (१३. २८९, १३. १५. २६; ३४१, २१; १३. १४, ३०८; १७, २९. ४० (सहस्रनाम); १८, २६. ४६)। शुक (१२. ३२४, १०)। शुक्र (१२. २८९, २६)। सूर्य (३. ३, २१)।

योगीश = श्रीकृष्ण (विष्णु) : १३. १४९, १०४ (सहस्रनाम)।

१. योगीश्वर = शिव (३. ८२, १२१)।

२. योगीश्वर = श्रीकृष्ण (विष्णु) : ६. ६६, ४८; १२. ५१, ४।

३. योगीश्वर (बहु०) : १३. १४, ३९३

१. योगेश्वर = शिव : ३. ८३, १६३; ७. २०२, १५; १३. १४, ८९. ३२८।

२. योगेश्वर = शुक : १२, ३३२, ६ (महायोगेश्वर)।

३. योगेश्वर = श्रीकृष्ण (विष्णु) : १. २, २३५; ३. ३५, ४. ९: ६. ४२, ७५. ७८; ५०, २३; १२. ४७, १५; ३१६, ५।

४. योगेश्वर (बहु०) : १३. ९२, २१ (महायोगेश्वराः)।

योजनगन्धा, व्यास-जननी सरस्वती का दूसरा नाम है (१. ६३, ८२-८३)।

योज्य = शिव (सहस्रनाम)।

योतिमत्सक, एक राजा का नाम है जिनके पास पाण्डवों की ओर से रण-निमन्त्रण भेजने का निश्चय किया गया था (५. ४, २०)।

योध्य (बहु० °ध्याः) एक जाति का नाम है जिसे दिग्विजय के समय कर्ण ने पराजित किया था (३. २५४, ८-९)।

योनि, भीमा के उत्तम स्थान में स्थित एक तीर्थ का नाम है। यहाँ स्नान करने से मनुष्य देवी का पुत्र होता है (३. ८२, ८४)।

योनिद्वार, एक तीर्थ का नाम है, जो उदयगिरि पर स्थित है। यहाँ जाने से मनुष्य योनिसंकट से मुक्त हो जाता है (३. ८४, ९५)।

१. यौधिष्ठिर = प्रतिविन्ध्य (६. ४५, ६४)।

२. यौधिष्ठिर (बहु० °राः) : ७. ९८, ३२।

३. यौधिष्ठिर (वि०) : १. २, ३२. २४५; ३. २७२, ७७; ४. १९, १३; ५. १९, ६; १३९, १२; १४५, ८; १४६, २१; १७२, १०; ६. ४९, ४८; ५९, ४६. ६७. ६८; ९०, ८६; १०६, ५५; ११७; ५; ७. १६, ३९; २०, ३०; २१, २; ३०, ३४; ४२, २. २२; १५६, ४०. १८७; १७९, १२; ८. ६२, १६; ७३, १२२; ९. ३०, ६१; १४. ७९, ४; १५. १६ २८।

यौधिष्ठिरि = प्रतिविन्ध्य (७. १०८, ९)।

१. यौधेय, युधिष्ठिर के एक पुत्र का नाम है जो उनके द्वारा गोवासन-पुत्री देविका के गर्भ से उत्पन्न हुये थे (१. ९५, ७६)।

२. यौधेय (बहु० °याः) एक जाति के लोगों का नाम है : २. ५२, १४-१७ (युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये); ७. १९, १६ (अर्जुन ने इन्हें पराजित किया था); १५७, ३०: १६१, ५; ८. ५, ४८ (अर्जुन ने इनका वध किया था)।

यौन, एक जाति के लोगों का द्योतक है। ये लोग पापाचारी और निकृष्ट आचार-विचार वाले थे (१२. २०७, ४३-४५)।

यौयुधानि, सात्यकि के पुत्र का द्योतक है : १६. ७, ७० (ये सरस्वती के तट पर बस गये)।

यौवनाश्व, यौवनाश्वि = मान्धातृ (देखिये वस्था०)।

र

रंहस् = शिव (१४. ८, १६. ३३)।

रक्त, रक्तमाल्याम्बरधर = शिव (सहस्रनाम)।

रक्तविरक्त = शिव (सहस्रनाम)।

रक्ताङ्ग, एक धृतराष्ट्रवंशी नाग का नाम है जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हो गया था (१. ५७, १८)।

रक्षण = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. रक्षस् (बहु० °क्षांसि) एक प्रकार के दुष्ट-प्रकृति के प्राणियों का द्योतक है : १. १, १०८ (गन्धर्वयक्षरक्षांसि); २३, १३ (दैत्य रक्षसाम्); ६५, ७ (यक्षरक्षसाम्); ६७, १ (गन्धर्वोरगरक्षसाम्). १४६. १६४; ६८, १ (देवदानवरक्षसाम्); १११, ३०; १५३, ५ (रक्षोबल-समन्विता). २६ (रक्षसां वै यशोहर); १५४, २२ (रौद्रे मुहूर्ते रक्षांसि प्रबलानि भवन्त्युत); १५५, १. ४५ (°सां श्रेष्ठः); १६४, ५. ६; १७०, ९; १८१, ४. ९. ११. १९. २३ (पराशर ने एक राक्षसयज्ञ किया); १९०, ४५; २१०, ७ (यक्षरक्षोगणांस्तदा); २१२, २ (नागपार्थिव-रक्षसाम्); २२५, २६ (रक्षः पिशाचदैत्यानां); २. ३, १९ (किंकरैः सह रक्षोभिर्यदरक्षन्महद्धनम्); ५, १२३ (रोगरक्षोभयाद्); ३. १०, २२. २३; ११, ४. १९. ७५; ४१, २२ (अंशाश्च क्षितिसंप्राप्ता देवदानवरक्षसाम्). ११७; ९०, २०; ९२, ५; ९३, १३; १०७, २५ (असुरोरगरक्षांसि); ११३, १; १४४, १६; १५४, २६; १५७, २. १३. १५; १५९, २७ (अधिपं यक्षरक्षसाम्); १६०, २२ (गन्धर्वोरगरक्षांसि). ५२. ५३ (यक्षरक्षसाम्). ५४ (भीमसेन ने मणिमान आदि अनेक राक्षसों का वध किया १) ६१,

३० (कुबेरं…यक्षरक्षोगणावृतम). ४५. ४८; १६२, ३६; १६८, ३०; २०२, २० (अवध्यो दैवतानां हि दैत्यानामथ रक्षसाम्); २०४, ३ (सर्पगन्धर्वरक्षसाम्); २२४, ८ (किन्नरोरगरक्षसाम); २३१, ३४ (यक्षरक्षोभिः); २५२, १७ (महाभारतयुद्ध के लिये इन लोगों ने भी योद्धाओं के रूप में जन्म लिया); २६८, २; २७४, २६ (लंकां रक्षोगणान्विताम्); २७५, ३३ (कुबेर के साथ गन्धमादन पर आये); २७७, ४५ (राम दाशरथि ने इनका वध किया था); २७९, ४२; २८१, ११ (पुरुषादानां रक्षसां, रावण २८ करोड़ राक्षसों का शासक था); २८४, ३७; २८५, १; ३१२, ३७; ५. ११, ७; १५, १२; ४८, १०४; १३१, ७ (रूपाणि यक्षगन्धर्वरक्षसाम्); ६. ६, ५१ (हिमवद् पर निवास करते हैं); २३, २२ (यक्षरक्षःपिशाचेभ्यो न भयं विद्यते सदा); ३४, २३; ९०, ९२ (आविष्ट इव…रक्षोभूताः); ९९, २७; ११७, ५८; ७. २५, ६२; ३०, २० (विविधानि रक्षांसि); ३२, ७९ (श्वापदपक्षिरक्षसाम्); ५०, ९; ५९, १८. १९ (राम दाशरथि ने इनका जनस्थान में वध किया था); १०८, ३५ (नदीं…रक्षोगणसमाकुलाम); १०९, ३ (रक्षोग्रामणिमुख्ययोः). ३५ (घटोत्कचस्तु…रक्षो बलवतां वरम्); १५६, ६२ (रक्षसां घोररूपाणामक्षौहिण्या समावृतः). ९८ (रक्षसामधिराजोऽहं). १३३ (यूथं रक्षसां). १३७. १४७ (यूथं रक्षसां पीनवक्षसाम्). १९० (रक्षोगणा); १७४, ८. ३४; १७५, ३६ (रक्षसां घोररूपाणां महत्या सेनया वृतः). ८७ (यूथं रक्षसां पीनवक्षसाम्); १७८, ५ (द्वि० = घटोत्कच और अलम्बुष); १७९, ३४; १८५, २६ (नासुरोरगरक्षांसि); २०१, २० (रक्षांसि च पिशाचाश्च विनेदुः). ७३; ८. ३०, ४४; ४५, २७. ३३; ९. ३७. ९ (छायाश्च…देवगन्धर्वरक्षसाम्); ४२, ३९ (शोणितं…रक्षोग्रामणिसम्मतम्); ४३, ७. २५. २७ (भागोऽसौ रक्षसामिह); ४४, ४२. ४७; ४५, २९; १०. ७, ६८; ८, ९३. १२०. १२२. १२६. १३४. १३७. १४१; १५, ३०; ११. १६, ८. १२; १२. २, १८; ४८, ६ (रक्षोगणनिषेवितम्…कुरुक्षेत्रम्); ७४, ७ (मुचुकुन्द ने इनका वध किया); ७७, ३०; ८९, २५; ९०, ३३; १२१, २; १६६, १८; १७२, ११. १४; २३२, १५; २६१, ७. १०; २८९, ८ (धनदो राजा यक्षरक्षोधिपः); ३२८, २१; ३३९, ८० (अवध्यः सर्वलोकानां सदेवासुररक्षसाम्). ८८ (रक्षःपति, अर्थात् रावण); ३४२, ४३; ३४९, ३० (दैत्यदानवगन्धर्वरक्षोगणसमाकुला); १३. १४, २१३ (देवानां सयक्षोरगरक्षसाम्). २१५. ४२५; १७, १६; २३, ३; ३३, १५; ५८, २९; ६१, ३८; ६२, ९४; ६५, ११; ८५, ६; ८७, ४; ९०, १२; ९२, १२; ९८, २५. ५५. ६१; १००. १४; ११५. ५३; ११६, १; १३१, ३. १२; १३५, १९ (रक्षसां कुलवर्धनः); १४०, ७; १४. २०, ९; ४२, ६७; ४३, १४; ४४, १५ (पिशाचोरगरक्षसाम्…सर्वेषामीश्वरः प्रभुः); ७०, २; १५. १, १४; २०, ३५ (संचरिष्यति लोकांश्च देवगन्धर्वरक्षसाम्); १६. ३, ३; १८. ५, ५६ (रक्षोयक्षान् शुकः)

२. रक्षस् (एक०): १. २०९, १४ (शूलहस्तेन); ३. १३६, ११ (यवक्रीत का वध करने के लिये रैभ्य ने एक राक्षस का सृजन किया). १७; १३७, ७. ८; १५७, १९; ४. १५, २०; १६, १२; ६. ९३, ११; ८. ८३, २६; १०. ९, ३६; १२. ७७, ६. ७; १३. १२४, ४. ५. ७. ८. १०. ३९।

तुकी अलग-अलग राक्षसों के निम्नलिखित नाम :—

अलम्बुष : ६. ८२, ४५; ९०, ६८. ७७; १००, ३०-३४. ३८; १०१, २१. २२. २७. २८; १११, ५; ७. ९६, १९; १०८, १६; १०९, ३४; १७४, १०. १४।

अलायुध : ७. १७०. २५. ४३; १७८, १. २. ३४; १७९, १।

ओघ : ५. ४८, ८३ (ओघरक्षः; ओघसंज्ञः रक्षः—नीलकण्ठी)।

किङ्कर : १, १७६, २०. २२. २३. ३१. ३७. ३८. ४१; १७७, १८. २३. २८; १७८, ७।

किर्मीर : ३. १०, २३; ११, १. ६. २२. ४१. ४६. ५७।

घटोत्कच : ६. ९२, १८; ७. १७३, ४२; १७४, २; १७५, २. ७०. १०५. ११३; १७९, ४८. ५१. ५५. ६३; १८१, २६; १८३, ६२. ६३; १२. ४२, ४ (हैडिम्बश्च च रक्षसः)।

चार्वाक : १. २, ७४; १२. ३८, २८; ३९, ६।

जटासुर : ३. १५७, २. ५६. ५७. ६८।

धूम्राक्ष : ३. २८६, १३।

पुलोमन् : १. ५, १५. १७. १८. २२. २६; ६, १. १०. १२. १३।

बक : १. १६०, ५. ८. १६; १६१, १. ३; १६३, ५. २२. २५. २८; १६४, २।

मणिमत् : ३. १६०, ७६।

मारीच : २. १४७, ३४; २७९, १५ (मृगरूपधरेण)।

रावण : ३. २७४, १; २७८, ३१; २९०, २४. २७; २९१, ११; ४. २१, १३।

लवण : १३. १४, २६८।

वज्रवेग ; ३. २८७, २६।

हिडिम्ब : १. ६१, २४; १५२, २६; १५३, ३२; १५४, १८. २१. २३. २५; १५५, ३; ३. १२, १०७।

रक्षिता, एक अप्सरा का नाम है जो कश्यप द्वारा प्राधा के गर्भ से उत्पन्न हुई थी (१. ६५, ५०)।

रक्षोवाह (बहु०) एक देश के निवासियों का द्योतक है जिनका परशुराम ने संहार किया था (७. ७०, १२)।

रघु, एक प्राचीन राजा का नाम है : १, १, २३२; ४. ५६, १० (विराट के गोहरण के समय कौरवों के साथ होनेवाले अर्जुन के युद्ध को देखने के लिये इन्द्र के साथ एक ही विमान में बैठ कर ये भी आये थे); १२. १६६, ७८ (इन्होंने युवनाश्व से एक तलवार प्राप्त किया था जो इनसे हरिणाश्व को मिली); १३. ११५, ६८ (ये कार्तिक मास में मांसभक्षण नहीं करते थे); १५०, ८१ (संग्रामजिद्व्रतति चैव रघुं नगरयन्); १६५, ५१।

रघुकुलोद्वह : ३, २८२, ७।

रघुनन्दन = रामदाशरथि : ३. १४८, १५; २७८, ३८; २८४, २३; २९१, २८. ६९।

रज, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७३)।

रजस् = शिव (सहस्रनाम)।

रजि, आयु द्वारा स्वर्भानुकुमारी के गर्भ से उत्पन्न पुत्र का नाम है। इनके चार अन्य भाई थे जिनके नाम नहुष, वृद्धशर्मा, गय और अनेना थे (१. ७५, २५-२६)।

रणप्रिय = विष्णु (सहस्रनाम)।

रणेष्वनिमुखः = शिव (सहस्रनाम)।

रणोत्कट स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६८)।

रता, दक्ष की पुत्री, धर्म की भार्या तथा वसु अहः की माता का नाम है (१. ६६, २०)।

१. रति कामदेव की पत्नी का नाम है : १. ६६, ३३; २. ११, ४१ ब्रह्मा की सभा में); ३. ६८, १२ (मन्मथस्य रतीमिव)।

२. रति, एक अप्सरा का नाम है जिसने अष्टावक्र के स्वागत के अवसर पर नृत्य किया था (१३. १९, ४५)।

३. रति = शिव (सहस्रनाम)।

रतिगुण, कश्यप द्वारा प्राधा के गर्भ से उत्पन्न एक देवगन्धर्व का नाम है (१. ६५, ४७)।

रत्नगर्भ, रत्ननाभ = विष्णु (सहस्रनाम)।

रत्नप्रभूत = शिव (सहस्रनाम)।

रथचक्रभृत् = विष्णु (५. १०५, १८)।

रथचित्रा, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, २६)।

रथध्वान, शंयुपुत्र वीर नामक अग्नि का नामान्तर है (३. २१९, १०)।

१. रथन्तर, एक सामन् का नाम है : २. ११, ३० (ब्रह्मा की

सभा में); ३. २२०, ७ (पाञ्चाल की मूर्धा से इसका सृजन हुआ था); ५. ४४, २८ (रथन्तरे बार्हद्रथे वा); १२. ४७, ४४ (रथन्तरं बृहत्साम = श्रीकृष्ण) ; २८१, २१ (वसिष्ठ ने रथन्तर से इन्द्र को पुनः चैतन्य कर दिया); २८४, २६ (रथन्तरं सामगाश्चोपगान्ति); १३. १४, २८२. १९२; १८, २१; १०२, ५४ (रथन्तरं यत्र बृहच्च गीयते); १५८, १६ (रथन्तरे सामगाश्च स्तुवन्ति); १४. ११, १९ (वृत्र की माया से मोहित इन्द्र को वसिष्ठ ने रथन्तर द्वारा ही पुनः प्रबुद्ध किया)।

२. रथन्तर, पाञ्चजन्य नामक अग्नि के पुत्र का नाम है, जिनका दूसरा नाम 'तरसाहर' है। ये पाञ्चजन्य के मुख से प्रकट हुये थे (३. २२०. ७)।

रथन्तरी, ईलिन की पत्नी का नाम है (१. ९४, १७)। इनके पाँच पुत्र हुये जिनके नाम दुष्यन्त, शूर, भीम, प्रवसु और वसु थे (१. ९४, १६-१८; ९५, २८)।

रथप्रभु, शंयुपुत्र वीर नामक अग्नि का नामान्तर है (३. २१९, १०)।

रथयोगिन् = शिव (सहस्रनाम)।

रथवाहन, विराट के भाई का नाम है। इन्होंने पाण्डवों की ओर से युद्ध किया (७. १५८, ४२)।

रथसेन, पाण्डव-पक्ष के एक योद्धा का नाम है जिनके रथ में मटर के फूल के समान रंगवाले अश्व जुते थे। इन अश्वों की रोमराजि श्वेत-लोहित वर्ण की थी (७. २३, ६२)।

रथस्था, गङ्गा की सात धाराओं में से एक का नाम है। इसका जल पीने से मनुष्य के सभी पाप नष्ट हो जाते हैं (१. १७०, २०)।

रथाक्ष, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६३)।

रथाङ्गपाणि = विष्णु (सहस्रनाम)।

रथातिरथसंख्या, से रथियों और अतिरथियों आदि की संख्या के उल्लेख का सन्दर्भ है : १. २, ६५; ७. १, ३७।

रथातिरथसंख्यान : १. २, २४१।

रथातिरथसंख्यानपर्वन्, महाभारत के ६५वें अवान्तर पर्व का नाम है जो उद्योगपर्व के अन्तर्गत आता है। इसमें रथियों और अतिरथियों का वर्णन है : "सञ्जय ने धृतराष्ट्र को बताया : सेनापति का पद प्राप्त करके शान्तनुनन्दन भीष्म ने दुर्योधन से कहा कि वे हाथ में शक्ति धारण करने वाले देवसेनापति कुमार कार्तिकेय को नमस्कार करके सेना के अधिपति बनेंगे। भीष्म ने कहा : 'मुझे सेनासम्बन्धी प्रत्येक कर्म का ज्ञान है। नाना प्रकार के व्यूहों के निर्माण में भी मैं कुशल हूँ। मुझे देवता, गन्धर्व और मनुष्य — तीनों की व्यूहरचना का ज्ञान है। मैं युद्ध के लिये यात्रा करने, युद्ध करने, तथा विपक्षी के चलाये हुये अस्त्र का प्रतीकार करने के विषय में बृहस्पति के समान ज्ञान रखता हूँ।' दुर्योधन के पूछने पर भीष्म ने कौरव-पक्ष के रथियों, अतिरथियों और महारथियों का परिचय दिया (५. १६५-१६७)।"

"रथियों और अतिरथियों का परिचय देते हुये भीष्म ने कर्ण को कटुभाषी, आत्म-प्रशंसी बताते हुये कहा : कर्ण युद्धभूमि में न तो अतिरथी है, और न रथी ही कहलाने योग्य है। वह अपने कवच और कुण्डल से हीन हो चुका है, दूसरों के प्रति वह सदा घृणा का भाव रखता है, और परशुरामजी के शाप से, ब्राह्मण की शापोक्ति से तथा विजयसाधक उपकरणों से रहित हो जाने से मेरी दृष्टि में वह अर्धरथी मात्र है। अर्जुन से युद्ध होने पर वह कदापि जीवित नहीं बच सकता।' भीष्म की बात का द्रोणाचार्य ने भी अनुमोदन किया। यह वार्तालाप सुनकर कर्ण क्रोधपूर्वक भीष्म से बोला : 'पितामह ! यद्यपि मैंने आपका कोई अपराध नहीं किया है, तथापि आप मुझसे सदा द्वेष रखते हैं और अपने वाग्बाणों द्वारा मुझे चोट पहुँचाते रहते हैं। केवल बड़ी अवस्था हो जाने से, बाल पक जाने से, अधिक धनसंग्रह कर लेने से, अथवा बहुसंख्यक बन्धु-बान्धवों के होने से ही किसी को महारथी नहीं कहा जा सकता। आप राग-द्वेष के कारण मोहवश मनमाने ढंग से रथी-अतिरथियों का विभाग कर रहे हैं। मैं अकेला ही पाण्डवों की सेना को रोक सकता हूँ।' भीष्म से इस प्रकार कहकर कर्ण ने दुर्योधन से कहा : 'तुमने इन भीष्म को सेनापति बनाया है। विजय का यश सेनापति को ही प्राप्त होता है। मैं भीष्म के जीते-जी किसी प्रकार युद्ध नहीं करूँगा; परन्तु भीष्म के मारे जाने पर सम्पूर्ण महारथियों के साथ टक्कर लूँगा।' कर्ण की बात सुनकर भीष्म ने उसे फटकारते हुये अपना क्रोध प्रकट किया। दुर्योधन ने किसी प्रकार भीष्म को शान्त किया। (५. १६८)।"

"दुर्योधन के पूछने पर भीष्म ने पाण्डव-पक्ष के रथियों आदि का एवं उनकी महिमा का वर्णन किया। (५. १६९-१७१)'

"पाण्डव-पक्ष के अतिरथी वीरों का वर्णन करते हुये भीष्म ने कहा : 'पाञ्चाल राजकुमार शिखण्डी को युद्ध में अपना सामना करता देखकर भी मैं उसे नहीं मारूँगा। सारा जगत यह जानता है कि मैं मिले हुये राज्य को पिता का प्रिय करने की इच्छा से ठुकराकर ब्रह्मचर्य के पालन में दृढ़तापूर्वक संलग्न हूँ। मैंने माता सत्यवती के ज्येष्ठ पुत्र चित्राङ्गद को कौरवों के राज्य पर और बालक विचित्रवीर्य को युवराज के पद पर अभिषिक्त कर दिया था। सम्पूर्ण भूमण्डल में समस्त राजाओं के यहाँ अपने देवव्रत स्वरूप की ख्याति कराकर मैं कभी भी किसी स्त्री को अथवा जो पहले स्त्री रहा हो उस पुरुष को भी नहीं मार सकता। शिखण्डी पहले स्त्री था और बाद में पुरुष हो गया। अतः मैं उससे युद्ध नहीं करूँगा। अन्य सब राजाओं को जिन्हें युद्ध में पाऊँगा मैं अवश्य मारूँगा, किन्तु कुन्ती के पुत्रों का भी वध कदापि नहीं करूँगा।' (५, १७२)।"

रथाध्वान = कुम्भरेतस (३. २१९, १०)।

रथावर्त, शाकम्भरी देवी के दक्षिणार्ध भाग में स्थित एक तीर्थ का नाम है (२. ८४, २३)।

रथिन्, एक प्राचीन राजा का नाम है : २. ८, १३ (यम की सभा में)।

रथ्यविरथ्य = शिव (सहस्रनाम)।

रन्तिदेव, एक प्राचीन राजा का नाम है जो संकृति के पुत्र थे : १. १, २२६; ५५, ३ (यथा यज्ञो रन्तिदेवस्य); २. ५३, २१; ३. ८२, ५४ (चर्मण्वतीं समासाद्य नियतो नियताशनः। रन्तिदेवाभ्यनुज्ञातमग्निष्टोमफलं लभेत्); २०८, ८. ९ (इनके दान का वर्णन); २९४, १७(सांकृते रन्तिदेवस्य स्वशक्त्या दानतः समः)। " नारदजी ने कहा : संकृति के पुत्र रन्तिदेव भी जीवित नहीं रह सके। रन्तिदेव की पाकशाला में दो लाख रसोइये थे, जो घर पर आये हुये ब्राह्मण अतिथियों को अमृत के समान मधुर कच्चा-पक्का उत्तम अन्न दिन-रात परोसते रहते थे। उनके अग्निहोत्र में बलि किये जानेवाले पशुओं की संख्या इतनी अधिक होती थी कि उन सबके चर्मों के ढेर से निकलने वाले जल को चर्मण्वती नदी कहते थे। रन्तिदेव ने न्यायपूर्वक प्राप्त हुये धन का ब्राह्मणों को दान किया और चारों वेदों का अध्ययन करके धर्म के द्वारा समस्त शत्रुओं को अपने वश में कर लिया था। ब्राह्मणों को वे सहस्रों निष्क दान किया करते थे। इस प्रकार वे एक दिन में सहस्रों कोटि निष्क दान में देने पर भी यह खेद प्रकट करते रहते थे कि उन्होंने बहुत कम दान दिया है (एक सहस्र सुवर्ण के बैल, प्रत्येक के पीछे सौ-सौ गायें और एक सौ आठ सुवर्ण मुद्रायें — इतने को निष्क कहते हैं)। रन्तिदेव के दान का यह नियम सौ वर्ष तक चलता रहा। उनकी यह अलौकिक समृद्धि देख कर पुराणवेत्ता पुरुष वहाँ उनकी यशोगाथा का गायन करते हुये कहते थे कि उन्होंने कुबेर के भवन में भी उस प्रकार की समृद्धि नहीं देखी है (७. ६७)।" ७. ६७, १. १३. १४. १६. १८; १२. २९, १२०. १२२. १२६. १२७; २३४, १७ (वसिष्ठ को शीतोष्ण जल का दान करके ये स्वर्गलोक में प्रतिष्ठित हुये); २९२, ७ फल-मूल और पत्तों द्वारा ऋषियों का पूजन करके इन्होंने अभिलषित सिद्धि प्राप्त की); १३. ६६, ४२ (इन्होंने एक महान यज्ञ किया जिसमें बलि किये गये पशुओं के चर्म के ढेर से जो जल बह निकला वही चर्मण्वती

नदी है).५६ (इन्होंने भोजनदान द्वारा स्वर्ग प्राप्त किया); ११२, १२; ११५, ६३ (कार्तिक मास में मांसभक्षण न करने वाले राजाओं में ये भी एक थे); १३७, ६ (वसिष्ठ मुनि को अर्घ्य दान करने से इन्हें श्रेष्ठ लोकों की प्राप्ति हुई); १५०, ५१ (सायं-प्रातः स्मरणीय नरेशों में इनकी गणना की जाती है); १४. ९०, ९७ (कहते हैं कि जब राजा रन्तिदेव के पास कुछ भी नहीं रह गया तब उन्होंने शुद्ध हृदय से केवल जल का दान करके ही स्वर्ग प्राप्त किया)। तुकी० सांकृति, सांकृत्य।

रमेणक, तक्षकवंशी एक नाग का नाम है जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हो गया था (१. ५७, ८)।

रमठ, एक म्लेच्छ जाति का नाम है जो मान्धाता के शासनकाल में उनके राज्य में निवास करती थी (१२. ६५, १४-१५)।

१. रमण, सोम नामक वसु द्वारा मनोहरा के गर्भ से उत्पन्न पुत्र का नाम है (१. ६६, २२)।

२. रमण (बहु०) एक जाति का नाम है जो उत्तर में निवास करती थी (६. ९, ६६)।

रमणक, एक वर्ष का नाम है जो श्वेत पर्वत के दक्षिण और निषध पर्वत के उत्तर में स्थित है। यहाँ जो मनुष्य जन्म लेते हैं वे उत्तम कुल से युक्त और देखने में अत्यन्त प्रिय होते हैं। यहाँ के सब मनुष्य शत्रुओं से रहित और ११,५०० वर्षों तक प्रसन्नतापूर्वक जीवित रहते हैं (६. ८, २-४)।

रमणीयक, एक द्वीप का नाम है : १. २६, ८। "उग्रश्रवा ने बताया : गरुड पर सवार हो कर यात्रा करनेवाले नाग जलधारा से स्नान कर रमणीयक द्वीप में पहुँचे। विश्वकर्मा के बनाये इस द्वीप में, जहाँ अब मकर निवास करते हैं, जब वे नाग प्रथम बार आये तब उन्हें लवणासुर का दर्शन हुआ। इस द्वीप के मनोरम वन में झुण्ड के झुण्ड पक्षी कलरव कर रहे थे। विचित्र फल-पुष्पों से परिपूर्ण वन श्रेणियाँ अनेक रमणीय भवनों और कमलयुक्त सरोवरों से आवृत्त थीं। गन्धर्वों और अप्सराओं को यह वन अत्यन्त प्रिय था (१. २७, १. ९)।"

रमणचीन, दक्षिण भारत के एक जनपद का नाम है (६. ९, ६६)।

रमानाथ = श्रीकृष्ण (२. ६८, ४२)।

१. रम्भा, कश्यप द्वारा प्राधा के गर्भ से उत्पन्न एक अप्सरा का नाम है : १. ६५, ५०; १२३, ६२ (अर्जुन के जन्मोत्सव में नृत्य किया); २. १०, १० (कुबेर की सभा में); ३. ४३, २९ (अर्जुन के स्वागतार्थ इन्द्र की सभा में नृत्य किया था); २८०, ६० (यह नलकुबर की पत्नी बन कर रहती थी; इसी का तिरस्कार करने के कारण रावण को नलकूबर ने यह शाप दिया था कि न चाहनेवाली स्त्री के साथ बलात्कार करने का प्रयास करने पर रावण का प्राणान्त हो जायगा।); ५. ११७, १६ (तुम्बरुश्चैव रम्भया); १३. ३, ११ (विश्वामित्र के शाप के कारण यह शिला बन गई थी); १९, ४४ (अष्टावक्र के स्वगतार्थ कुबेर की सभा में नृत्य किया था); १६५, १५।

रम्यग्राम एक नगर का नाम है जिसे दक्षिण दिग्विजय के समय सहदेव ने जीता था (२. ३१, १४)।

१. रवि = सूर्य (विवस्वान के एक रूप अथवा पुत्र) : १. १, ४२; २, १४४; २४, १५; २. २०, २३ (रविसोमाग्निवपुषां); ३. ३, ६. ८. १६ (सूर्य के १०८ नाम). ६२; ९२, ६ (यथा चाप्यङ्गिरा रविम् तथा रक्षस्व); ६. १००, ३७ (राक्षसं दुद्रुवुः संख्ये ग्रहाः पञ्च रविं यथा); १२. १५, १७; ३१८, ९; १५. ३०, ८; १८. ५, २० (मृत्यु के बाद कर्ण ने रवि में प्रवेश किया)।

२. रवि धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है जिसका भीमसेन ने वध किया था (९. २६, ४. १४)।

३. रवि, जयद्रथ के ध्वजवाहक का नाम है (३. २६५, १०)।

४. रवि = शिव (सहस्रनाम)।

५. रवि = विष्णु (सहस्रनाम)।

रवितनय = कर्ण (८. ३०, ९)।

रविलोचन = विष्णु (सहस्रनाम)।

रविसूनु = कर्ण (देखिये वसुषा०)।

रश्मिवत्, एक सनातन विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३६)।

रस, मूर्तिमान रस का द्योतक है : २. ११, २१ (ब्रह्मा की सभा में)।

रसा = रसातल : १२. ३४७, ३०. ५४. ६२ (रसानामालयात्वंदा)

रसातल, एक अधोलोक का नाम है : ३. ११४, २० (पृथिवी ने कहा : यास्याम्येषा रसातलम्); १८८, ७० (संवर्तक अग्नि ने पृथिवी का भेदन करके रसातल में प्रवेश किया); २५१, २९ (एक कृत्या दुर्योधन को रसातल में ले गई); ५. १०२, १ (इदं रसातलं नाम सप्तमं पृथिवीतलम्). १४ (गाथा पुरा गीता रसातलनिवासिभिः). १५ (रसातलतले); १६०, ५६; ७. ७३, ४९; १९९, ४२ (निह्ननिष्पति'''रसातलगतानपि); १२. ४७, ७५ (रसातलगतः श्रीमाननन्तो भगवान्विभुः) ४९, ७१ (प्रविवेश रसातलम्); १८२, २८ (रसातलान्ते सलिलं जलान्ते पन्नगाधिपः); २०९, २६ (वराहरूपी विष्णु ने रसातल में प्रवेश किया); २७२, १२ (सावित्री रसातल गई); २८४, १८०: ३४७, ५७. ५८ (वेदों के उद्धार के लिये विष्णु रसातल गये); १३. ६, ३४ (मिथ्याभिधानेनैकेन रसातलतलं गतः); ८५, २३ (मण्डूको रसातलतलोत्थितः). ८४ (रसातलतले देवावसत्यग्निरिति प्रभो). ४५ (आपो रसातले यास्तु); १३२, २ (महाबलो नागो रसातलचरो बली); १४. ९१, २३ (वसु उपरिचर को रसातल जाना पड़ा); १८. ५, २३ (अनन्तो भगवान्देवः प्रविवेश रसातलम्)।

रसाहर : ३. २२०, ७।

रहस्या, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, १९)।

१. राका, एक राक्षसी का नाम है : ३. २७५, ५. ८ (विश्रवा ने इसके गर्भ से खर नामक पुत्र और शूर्पणखा नामक कन्या को उत्पन्न किया था)।

२. राका, पूर्णिमा तिथि की अधिष्ठात्री देवी का नाम है : ९. ४५, १४ (यह मूर्तिमान होकर स्कन्द के अभिषेक के समय उपस्थित हुई)।

१. राक्षस (बहु० °साः) = रक्षस बहु० : १. २, १८० (राक्षसस्य वृकोदरात्); ३०, १३ (देवदानवराक्षसैः) ६५, ५. ६; ६६, ७ (ये पुलस्त्य कीसन्तान थे). ५४ (निर्ऋति और अधर्म की सन्तान); ६७, १६१ (अंशावतरणं राजन्राक्षसानां); ७१, २७ (गन्धर्वोरगराक्षसान्); ९०, ८ (भीमा भीमा राक्षसास्तीक्ष्णदंष्ट्राः). ९; १५२, २५ (गहनं वनं राक्षससेवितम्). ३५; १५३, ८. ३१ (करिष्येऽहमिदं वनमराक्षसम्). ३३; १५५, ३६; १५८, ३१; १६१, १६ (भीमसेन ने राक्षसों का बध किया था); १७०, १०. ६१; १८१, २ (पराशर ने राक्षसयज्ञ किया). २. २२; २२७, २४; २२८, १. ११ (पिशाचोरगरक्षसान्). २१ (यक्षराक्षसगन्धर्वनरकिन्नरपन्नगैः). ३५; २. ३, २८ (किंकरा नाम); १०, ३६ (कुबेर की सभा में); ११, ४९ (ब्रह्मा की सभा में); १२, ३; ३१, ६७ (ये च कालमुखा नाम नरराक्षसयोनयः); ४८, ९ (किंकरा नाम); ३. ११, ३५. ५०; २२, ३०; ३१, २९; ४०, ११; ४७, ३१ (गिरि दुर्गेषु च सदा देशेषु विषमेषु च। वसन्ति राक्षसा); ५३, २९ (देवगन्धर्वमनुष्योरगराक्षसान्); ६४, ७; ८२, ९५ (वाडवातीर्थ में); ९२, ६. ७; ९९, ५८ (राम दाशरथि के शरीर में); १०७, ६; १३९, १० (कुबेरसचिवाश्चान्ये रौद्रामैत्राश्च राक्षसाः). १२ (कैलास पर्वत पर); १४०, १२ (शैलेऽस्मिन्राक्षसाकीर्णे); १४१, २४ (कुबेरनलिनीं रम्यां राक्षसैरभिसंवृताम्); १४५, १०. १२. २५; १४८, ११. १२; १४९, १३ (कृतयुग में ये नहीं थे); १५०, ३०. २२ (धनदोद्यानं रक्षितं यक्षराक्षसैः); १५३, १ (नलिनीं रम्यां राक्षसैरभिरक्षिताम्). ९. ११; १५४, १. ४. ९. ११. १५ (कुबेर के कमल सरोवर की रक्षा करनेवाले अनेक राक्षसों का भीमसेन ने वध किया); १५५, १७; १५७, १४ (धर्मस्य राक्षसा मूलं धर्मे ते विदुः). ४९; १५८, १४. १५; १५९, २५; १६०, ११. २४. ३६. ४७. ४८. ५१. ५२. ५६ (भीमसेन ने मणिमान् सहित अनेक राक्षसों का वध किया);

१६१, ५. ९. १४. ३८. ४१; १६२, ३३. ३८; १६७, ५६ (सुरदानव राक्षसैः); १७३, ९ (सुरराक्षसपन्नगैः). ७४ (देवदानवराक्षसैः); १७५, १४; १७९, ३० (हिमवांश्च सुदुर्गोऽयं यक्षराक्षससंकुलः). ३२; १८१, ३४ (ब्रह्मर्षि-देव-गन्धर्व-यक्ष-राक्षस-पन्नगाः); १८२, ७३. ८६. १३७; १८९, ३०; २५२, २३ (संशप्तकों के रूप में इनका पुनर्जन्म हुआ). ३५ (संशप्तकाश्च ते वीरा राक्षसाविष्टचेतसः); २७२, ४६ (यक्षराक्षसभूतानि); २७५, २५. ३१. ३७. ३८; २७७, ४३ (राम दशरथि ने इनका वध किया); २८३, ४९ (श्रीराम ने विभीषण को सभी राक्षसों का राजा बना दिया); २८४, ८. १६ (अराक्षसमिमं लोकं कर्ताऽस्मि निशितै शरैः). ३३. ३८. ४०; २८५, ५; २८६, १२ (हरिराक्षसवीरयोः). १६; २८७, २०. २४; २९०, २. ५-७. १०; २९१, ४९; ३१३, ३३; ४. २, १३ (हत्वा पन्नगराक्षसान्); ५०, १७; ५६, ८; ७०, १२; ५. १५, १८ (किन्नरोरगराक्षसाः); १७, २०; ५१, १६ (भीमबला यक्षा राक्षसाश्च पुरा हता); ६१, २०; १११, १० (उत्तर में : राक्षसयक्षाणां गन्धर्वाणां च गालव अधिपत्येन कैलासे धनदोऽथभिषेचितः); १६७ ३४; १६९, १८; १७२, ७; ६. ३, ३३ (शोणितैर्वक्त्रसम्पूर्णा अतृप्तास्तत्र राक्षसाः); ६, १८. ३४ (कुबेर के साथ गन्धमादन पर्वत पर); ४८, ११३; ५८, ६; ६४, ५५ (घटोत्कच के साथी), ५८; ६५, ६४; ६६, ९ (इन लोगों ने महाभारत युद्ध के लिये युद्धाओं के रूप में पुनः जन्म लिया); ८४, ९; ८६, ४५; ९०, ५७. ६३-६४ (विमोहयित्वा मायाभिस्तस्य गात्राणिसायकैः चिच्छेद सर्वमर्मज्ञः कामरूपो दुरासदः । तथा स राक्षसश्रेष्ठः शरैः कृत्तः पुनः पुनः); ९१, ६. १३. १४. १८. १९ (दुर्योधन ने चार राक्षसों का वध किया); ९२, २८; ९४, ३८. ३९ (अश्वत्थामा पर आक्रमण किया); ११९, ५७; ७. १४, ४६ (राक्षसौ हैडिम्बालंबुषावुभौ); ३३, ११; ५९, ३ (राम दाशरथि ने जनस्थान के राक्षसों का वध किया था); ७४, ११; ७५, १४; ७९, ३२; ९४, ३६; १०९, २; १११, ३१; १४४, २४; १४७, ४२; १५६, ६६. ६९. ११२. ११५. १३३. १३४. १३७. १४२. १४६. १५१. १६८ (अक्षौहिणी राक्षसानां). १७९; १५७, १; १५९, ४५. ५१; १७३, ५७; १७५, ३२. ८०. ८६. ८८. १०९; १७६, २. ६. ८; १७७, २० (भीमः⋯राक्षसान्तकरः). २२. २४. ३०. ३२. ३६. ३८; १७८, ६. ११; १७९, ५८; १८१, १९; १८५, १४; १८८, ४१; १९५, २३; १९७, २०; २०१, ५२. ८१; २०२, ५१; ८. २०, ५०; ३७, ३६ (गरुड पिशाच सयक्षराक्षसान्); ८७, ३७; ८९, ४४ (अर्जुन ने युग युग में राक्षसों का संहार किया था); ९. ३१, १५; ३७, २१ (शंखतीर्थ में); ३९, १० (राम दाशरथि ने दण्डकारण्य में राक्षसों का वध किया था); ४०, १७; ४३, २ (अथाजग्मुस्ततो राजन् राक्षसास्तत्र भारत। तत्र ते शोणितं सर्वे पिबन्तः सुखमासते). ८. १८. २२-२३ (एवं हि वैश्यशूद्राणां क्षत्रियाणां तथैव च । ये ब्राह्मणान्प्रद्विषन्ति ते भवन्तीह राक्षसाः ॥ आचार्यमृत्विजं चैव गुरुं वृद्धजनं तथा । प्राणिनो येऽवमन्यन्ते ते भवन्तीह राक्षसाः ॥). २६-२८ (जिस अन्न पर थूक पड़ गई हो, जिसमें कीड़े पड़े हों, जो जूठा हो, जिसमें बाल गिरा हो, जो तिरस्कारपूर्वक प्राप्त हुआ हो, जो अश्रुपात से दूषित हो गया हो, तथा जिसे कुत्तों ने छू दिया हो, वह सारा अन्न इस जगत् में राक्षसों का भाग है। अतः विद्वान् पुरुष सदैव समझ-बूझ कर इन सब प्रकार के अन्नों का यत्नपूर्वक परित्याग करे। जो ऐसे अन्न को खाता है वह मानो राक्षसों का अन्न खाता है।). २९. ३० (अरुणा में स्नान करके स्वर्ग गये). ४८ (दैत्य-दानवों से देवों का युद्ध); ४५, ७; ४६, ६७ (स्कन्द ने इन्हें पराजित किया); ४९, २० (आदित्यतीर्थ में) ५८, ५२; १०. ८, १२३; १२. २, १७; ४७, २०; ५०, २५; ५९, ११९ (यक्षराक्षसभर्ता⋯भगवान्नरवाहनः). १२४; ७२, २०; ७४, ५; ७७, २५. २६; १२२, २८; १४२, १६; १७१, २५. २६; १७२, १२. १३. १९. २३; १८८, ३. १८; २१०, १५; २२४, २९; २२८, ९३; २२९, २५; २८३, १४ (राक्षसाश्च महारौद्राः); २८४, ६. ६३. २०२; २९५, १७; ३२७, १३. २२; ३३३, १५; ३४३, ६२; ३४९, ३१; १३. ३, ४; १४, १४३ (शिव इनका रूप धारण करते हैं). ४०१; १७, १८१; १९, ३३ (मणिभद्र आदि राक्षस कुबेर के कमल सरोवर की रक्षा करते थे). ३४. ३५; ३३, १५; ५८, ८; ७६, २३; ८२, १५; ८३, ८; ८४, ४८ (कुक्कुटाश्च वराहाश्च राक्षसाभृगुनन्दन). ५०; ८५, ९; ८६, २२ (इन्होंने स्कन्द को एक महिष और एक वराह दिया). २६; ९८, ३५. ४१. ४९. ५६ (येषां नाग्रभुजो विप्रा देवतातिथिबालकाः । राक्षसानेव तान्विद्धि निर्विशंकानमङ्गलान्). ५८; ११६, २५; १४५, ५९; १४९, १३५; १५८, १५. २५ (श्रीकृष्ण ने इन्हें पराजित किया); १६५, ९१ (रामो राक्षसहा वीरः); १४. ५१, ११; ५४, ४. १९; ५७, २४; ६८, ६; ७०, २; १५. ३१, ६ (राक्षस और गुह्यक महाभारत युद्ध के लिये योद्धाओं के रूप में उत्पन्न हुये थे). १० (= दुःशासन इत्यादि); ३३, १६; १८. ५, २८ (दुर्योधन सहायाश्च राक्षसाः)। तुकी० ब्रह्मराक्षस (बहु० और एक०)।

तुकी० अलग-अलग राक्षसों के निम्नलिखित नाम :—

अलम्बुष : ६. ४५, ४३; ६३, २८; ८१, ३१; ८२, ३९; ९०, ४८. ५२. ५५. ५६. ६०. ६३. ६६. ६८. ७१. ७४. ७६. ७८ (इरावान् का वध किया); १००, ३३. ३८. ४०. ४२. ४७. ४९. ५०; १०१, १०. १५. १६. २९; १०८, ५९ (आर्यश्रृङ्गि); १११, २-४. ६. ८; ७. २५, ६१; १०६, १७; १०८, १४. १८. २६. ३१. ४१. ४२; १०९, १६. १७. २०; १६७, ४१. ४२।

अलायुध : ७. ९६, २७; १७७, १३; १७८, १९. ३१; ९. २, २०. ३९; २४, २८; २५. ३२, १२।

इन्द्रजित् : ३. २८८, २०. २५।

घटोत्कच : १. १, १९९; ९६, ८१; ३. १४४, २५. २८; ५. १६२, १४; ६. ५७, ३३. ३७; ६४, ५५. ६५; ७२, ९; ७५, ७; ८३, ३३. ३५; ८७, २१; ९१, २. ६; ९२, ७. १९. २१. २६; ९३, १. ७. ८; ९४, ३८. ४०; ९५, ८. १५. १९. २३. ६४. ६५. ६७. ७१; १०१, ३; १०९, २१; ११०, १३; ११९, २१; ७. १०, ७२; २५, ६१; ९५, ४६; १०९, २०. २२; १११, ४५; १५४, १२; १५६, १००. १२७. १५७. १८५; १५८, ४३; १६५, १२; १६६, १७. २९. ३१. ३७; १७३, ३६. ५९. ६५. ६८; १७४, ४. ५. १०. २१. २७. ३९. ४५; १७५, १. १४. २५. ३२. ६४. ८२. ९६; १७७, ४. १६; १७८, १९; १७९, २०. २१. २४. ४४. ४५. ५०. ५१. ५४. ५७. ६३ (निहतं); १८२, ४६; १८३, १९. ३८. ४०; ८. ५०, १६; ९. २, २३; १५. ३२, ८।

कल्माषपाद : ८. ४५, २२।

किङ्कर : १. १७६, २१; १७७, २०. २२. २३।

किर्मीर : ३. ११, ३८. ५१. ५२. ६३. ६४. ६७. ७२ (भीमबाहुबलोत्पिष्टे विनष्टे राक्षसे ततः)।

चार्वाक : १२. ३८, २२. ३३. ३५; ३९, २. ५. १०।

जटासुर : १. २, १८०; ३. १५७, ३. १४. १८. २६. २९. ३०. ३४. ३५. ३८. ४०. ४३. ४७. ५१. ५४. ५५. ६७; १५८, १ (निहते); ७. १७४, ७।

दंश : १२. ३, १५।

धूम्राक्ष : ३. २८६, १२-१४।

प्रहस्त : ३. २८६, ४।

बक : १. ९५, ७३; १५९, २२; १६०, ३. १७; १६१, १४. १५; १६३, ६. ९. ११. १३. १५; १६४, १०; १६५, १. २; ७. १०८, २४।

मणिमत् : ३. १६०, ५९. ६२. ६८. ७६।

मारीच : ३. २७८, २. २०।

मूक : ३. ३९, २०. २७।

रावण : ३. १५०, १८. २०; २७९, ७; २८२, ४; २९०, १६; २९२, ११; ७. ५९, ४; ९. ३१, ११।

विरूपाक्ष : ७. १७५, २५ (घटोत्कच का सारथि); १२. १७१, ४; १७३, १।

हिडिम्ब : १. १५२, १. २५. २६. २९. ३२. ३३; १५३, ८. १२. १६. २२. २९. ४१; १५४, ५. १२. १७. १९. २७. २८; ३. १२, १०१. १०२. १०४. १०५. १०९।

२. राक्षस (वि०): १. ७३, ९. ११. १३; ९५, ६९; ३. ११, ९ (राक्षसीं मायां). १९; ३९, १६; २८३, ५३; ६. ३३, १२ (राक्षसीं... प्रकृतिं मोहिनीं); ८२, ४१ (मायां च राक्षसीं). ४३; ९४, ४७; १०८, १६; ७. १४७, ५१; १५६, १५०; १७३, ४०. ४६; १७५, ३५. ८८. ८९. ११२; १७८, १६; १७९, २४. ३३; १८८, ४१; ८. ४५, २७; १३. ४४, ८।

राक्षसपति = रावण (३. २८६, २८)।

१. राक्षसपुङ्गव = अलम्बुष (६. ९०, ७५)।

२. राक्षसपुङ्गव = अलायुध (७. १७६, १३)।

३. राक्षसपुङ्गव = अविन्ध्य (३. २८०, ५६)।

४. राक्षसपुङ्गव = घटोत्कच (३. १४५, १; ६. ९२, ३; ९३, ९; ९५, २०)।

५. राक्षसपुङ्गव = इन्द्रजित् (३. २८८, ९)।

६. राक्षसपुङ्गव = रावण (३. २७५. १०; २७८, ३४);

राक्षसमहेश्वर = रावण (३. २८१, ३०)।

१. राक्षसराज = बक (१. १६३, २०)।

२. राक्षसराज = रावण (३. २७८, ३५; ५. १०९, १२)।

१. राक्षसश्रेष्ठ = अलम्बुष (६. ९०, ६४; १००, २५; १०१, ११. १८)।

२. राक्षसश्रेष्ठ = रावण (३. २९०, ३०)।

१. राक्षसाधिप = घटोत्कच (६. ९२, ४२; ९४, ४२)।

२. राक्षसाधिप = रावण (३. २८६, २१; २९०, ५)।

३. राक्षसाधिप = विरूपाक्ष (१२. १७२, २१)।

१. राक्षसाधिपति = कुबेर (३. १६०, ४४

२. राक्षसाधिपति = मणिमत् (३. १६१, ५८)।

३. राक्षसाधिपति = रावण (२. १०, ३०

४. राक्षसाधिपति = विरूपाक्ष (१२. १७०, १५. २४)।

१. राक्षसी (बहु०) : १. १५५, ३६ (गर्भान्राक्षस्यां लभन्ते); ३. २७५, ३ (राक्षसी प्रददौ तिस्रः, अर्थात पुष्पोत्कटा, राका, मालिनी); २८०, ४४. ५३; २८१, ३१।

२. राक्षसी (एक०): १. १७१, ८. ३८; ३. ६४, १२० (दमयन्ती से पूछा गया कि वह राक्षसी तो नहीं है); ६५, २७ (दमयन्ती को राक्षसी माना गया); ४. ९, १७; ८. ४४, २५; ४४।

तुकी० अलग-अलग राक्षसियों के निम्नलिखित नाम :—

जराः २. १७, ३९. ४०. ४२. ४६. ४९. ५१; १८, १. २. १०; ७. १८१, १२. १४।

त्रिजटा : ३. २८०, ५४; २९१, ४१।

दीर्घजिह्वा : ३. २९२, ४।

शूर्पनखा : ३. २७७, ४६।

हिडिम्बा : १. १५२, १५. १७. ३१. ३३. ३४; १५४, ३६; १५५, १९. २१. ३१; ३. १२, ९४।

१. राक्षसेन्द्र = अलम्बुष : ५. १६७, ३३; ६. ८२, ४०. ४६; १००, २६. ४२; १०१, ५. १५. २६; ७. ९५, ४७; १०८, १५. ४३; १०९, १०. २१. २६. ३२; १६५, १६; १६७, ३७. ४७; १७४, ३५; ८. ५, ४६; ११. २६, ३७।

२. राक्षसेन्द्र = अलायुध : ७. १७६, १; १७७, ३. ८. २०. २७. २९. ३१. ३३. ३९. ४२; १७८, ३. ४ (राक्षसेन्द्रेण बकभ्रात्रा)।

३. राक्षसेन्द्र = घटोत्कच : ३. १४५, १०; ६. ८३, ३४. ३८; ९२, ३२; ९३, १६; ९५, १५; ७. १५६, ६६. १५३; १६६ २१. ३८. ४०; १७५, ९१; ८. ९, ४९; ११. २६, ७।

४. राक्षसेन्द्र = हिडिम्ब : १. ६१, २४; १५४, ६।

५. राक्षसेन्द्र = कुम्भकर्ण : ३. २८७, ५।

६. राक्षसेन्द्र = रावण : ३. १४७, ३३; २७४, २; २७९, ४; २८०, ५३; २८३, ४६; २८४, ७; २९०, १०; २९१, १।

७. राक्षसेन्द्र = विरूपाक्ष : १२. १७०, २०. २१. २६; १७१, १. १३. २३. २५; १७२, १२. २१. २२; १७३, २।

८. राक्षसेन्द्र (अधिकांशतः बहु०) : १. १५३, १८ (पूर्वेषां); ३. १६१, १९ (प्रवराक्षसेन्द्राणां); ७. १०८, ६ (द्वि०=घटोत्कच और अलम्बुष); १७७, १५ (द्वि०=घटोत्कच और अलायुध); १८०, ३३ (निहता राक्षसेन्द्रा हिडिम्ब-किर्मीर-बकप्रधानाः)।

१. राक्षसेश्वर = घटोत्कच : ५. १७२, ६; ७. १८२, ११।

२. राक्षसेश्वर = हिडिम्ब : १. १५३, १।

३. राक्षसेश्वर = कुबेर (३. २७५, २)।

४. राक्षसेश्वर = रावण : ३. २७८, ४; २७९, २. १२; २८१, १९।

५. राक्षसेश्वर = (द्वि०)=कुम्भकर्ण और रावण : ३. २७५, ७।

राग = शिव (सहस्रनाम)।

रागा, महर्षि अङ्गिरा की द्वितीय कन्या का नाम है। इस पर समस्त प्राणियों का अनुराग प्रकट था इसलिये इसका नाम रागा हुआ (३. २१४, ४)।

१. राघव = राम दाशरथि : ३. १४८, १. ८ (देवीं वैदेहीं राघवप्रियाम्); १५०, १९; १५१, ६; २७७, २६. ४३. ४४; २७८, २१. २९ (लक्ष्मणः प्रियराघवः). ३०. ३६; २७९. २३. ३८; २८०, ७. ५२. ५८. ७२; २८२, १. ४१; २८३, १५. १९. ३२. ३३. ४८; २८४, १० (राघवो राजन् कोसलेन्द्रो महायशाः). २२. ४१; २८५, ७. १२; २९०, १५; २९१, १७. २७. २९. ५५. ६४. ६९; ९. ३९, ९; १३. ७४, १२।

२. राघव (द्वि० °वौ)=राम और लक्ष्मण : ४. २८३, १७।

३. राघव (बहु० °वाः) : १३. १५०, ७७।

राजगृह, मगधों की राजधानी का नाम है जिसे गिरिव्रज भी कहते हैं : १. ११३, २७ (दीर्घ की राजधानी); २०४, १७ (अम्बुवीच की राजधानी); २. २१, ३४ (जरासन्ध की राजधानी); ३. ८४, १०४ (एक तीर्थ); १४. ८२, २ (मेघसन्धि की राजधानी)। तुकी० गिरिव्रज।

राजधर्मन् = नाडीजंघ, एक बकराज का नाम है : १२. १६९, १९. २० (यह कश्यप का पुत्र और ब्रह्मा का मित्र था). २३; १७०, १. २; १७१, २९ (खगोत्तमः); १७२, ५. १०. १२. १४. १५; १७३, ४. ७. ११. १४। तुकी० धर्मराज।

राजधर्मानुशासन : १. २. ७६

राजधर्मानुशासनपर्वन् — भीष्म द्वारा युधिष्ठिर को दिये गये राजधर्मानुशासन सम्बन्धी उपदेशों से युक्त यह महाभारत का ८८ वाँ अवान्तरपर्व है जो शान्तिपर्व के अन्तर्गत आता है। "पाण्डवों, धृतराष्ट्र, विदुर तथा भरतवंश की समस्त स्त्रियों द्वारा मृत सुहृदों को जलाञ्जलि देने के बाद, अनेक श्रेष्ठ ब्रह्मर्षि युधिष्ठिर के पास आये। नारदजी ने विजय के लिये युधिष्ठिर को बधाई देते हुये उनसे पूछा कि वे विजय से प्रसन्न तो हैं ? तब युधिष्ठिर ने बन्धु-बान्धवों के महान् संहार पर दुःख प्रकट किया। अपनी माता कुन्ती द्वारा कर्ण के जन्म के रहस्य को छिपा रखने पर भी उन्होंने दुःख प्रकट करते हुये नारदजी से बताया कि द्यूतक्रीड़ा के समय भी उन्हें कर्ण और माता कुन्ती के पैरों में नितान्त समानता देख कर आश्चर्य हुआ था। किन्तु उस समय इसका कारण उनकी समझ में नहीं आया। तदनन्तर उन्होंने नारदजी से पूछा कि पृथिवी ने कर्ण के रथ की पहियों को ग्रसित क्यों कर लिया था (१२. १)।

"नारदजी ने कर्ण को प्राप्त शाप का वर्णन करते हुये युधिष्ठिर को बताया : एक समय देवताओं ने यह विचार किया कि किस उपाय से भूमण्डल का क्षत्रिय समुदाय शस्त्रों के आघात से पवित्र हो स्वर्गलोक में पहुँच जाय ? यह सोच कर उन लोगों ने कुमारी कुन्ती के गर्भ से एक तेजस्वी बालक उत्पन्न कराया जो संघर्ष का जनक हुआ। वही बालक सूत-

पुत्र के रूप में प्रसिद्ध हुआ और उसने द्रोणाचार्य से धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त की। उसने बाद में अपने को भृगुवंशी ब्राह्मण बता कर परशुरामजी से भी शिक्षा ली। एक दिन वह सूतपुत्र कर्ण परशुरामजी के आश्रम के समीप समुद्रतट पर धनुष बाण लिये हुये टहल रहा था। उस समय किसी वेदपाठी ब्राह्मण की होमधेनु उधर आ निकली। कर्ण ने अनजान में हिंसक पशु समझ कर उस धेनु की हत्या कर दी। तदनन्तर ब्राह्मण को अपना अपराध बता कर वह क्षमा माँगने लगा। किन्तु ब्राह्मण ने कुपित हो कर्ण का शाप देते हुये कहा : 'तू जिसके साथ सदा ईर्ष्या रखता है और जिसे परास्त करने के लिये निरन्तर चेष्टा करता है उसके साथ युद्ध करते समय तेरे रथ के पहिये को धरती निगल लेगी। उसी समय तेरा शत्रु तेरे मस्तक को काट देगा।' कर्ण ने उस ब्राह्मण को बहुत सी गायें और रत्न आदि दे कर प्रसन्न करने की चेष्टा की किन्तु ब्राह्मणने अपने शाप को वापस नहीं लिया तथा कर्ण को अपने पाससे चले जाने के लिये कहा। इस शाप से कर्ण के मन में भय उत्पन्न हो गया और वह चिन्ता करता हुआ आश्रम लौट आया (१२. २)।

"नारद जी ने बताया : कर्ण के बाहुबल, प्रेम, इन्द्रियसंयम तथा गुरुसेवा से परशुराम जी अत्यन्त प्रसन्न हुये। उन्होंने तत्पश्चात कर्ण को प्रयोग और उपसंहार विधि सहित सम्पूर्ण ब्रह्मास्त्र की विधिपूर्वक शिक्षा दी। ब्रह्मास्त्र की शिक्षा प्राप्त करके भी कर्ण अभी आश्रम में ही रह रहा था। एक दिन थकान के कारण परशुराम जी कर्ण की गोद में सर रख कर सो गये। उसी समय एक मांसाहारी कीड़ा, जिसका स्पर्श बहुत भयंकर था, कर्ण के पास आया। उस कीड़े ने कर्ण की जाँघ में छिद्र कर दिया, किन्तु गुरु के जागने के भय से कर्ण अत्यन्त पीड़ा के विपरीत भी न तो उस कीड़े को मार सका और न उसे फेंक ही सका। वह कीड़ा बार-बार कर्ण को डंक मारने लगा किन्तु गुरु के जाग उठने की आशंका से वह उसकी उपेक्षा करता रहा। कर्ण की जाँघ से निकलने वाला रक्त जब परशुराम जी को लगा तब वे जाग उठे और कर्ण से रक्त निकलने का कारण पूछा। जब कर्ण ने कीड़े के काटने की बात बताया तब परशुराम जी ने उस कीड़े को देखा जो अलर्क के नाम से प्रसिद्ध था। परशुराम जी की दृष्टि पड़ते ही वह कीड़ा मृत्यु को प्राप्त हो गया। तदनन्तर आकाश में एक विकराल राक्षस प्रकट हुआ। उसने अपने मोक्ष के लिये परशुराम जी के प्रति आभार प्रकट किया और अपना परिचय देते हुये कहा : 'प्राचीनकाल में मैं दंश नाम से प्रसिद्ध असुर था। एक दिन मैंने महर्षि भृगु की पत्नी का बलपूर्वक हरण कर लिया जिससे महर्षि ने मुझे शाप दे दिया और मैं कीड़ा होकर पृथिवी पर गिर पड़ा। महर्षि ने यह भी कहा था कि भृगुवंशी परशुराम जी द्वारा ही इस शाप का अन्त होगा। अतः आज आप का समागम होने से मेरा उद्धार हो गया।' इस प्रकार कहकर जब वह असुर चला गया तब कर्ण के धैर्य को देखकर उसके ब्राह्मण होने पर सन्देह प्रकट करते हुये परशुराम जी ने उसकी वास्तविक जाति पूछा। कर्ण ने बताया कि वह ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों से भिन्न सूत जाति में उत्पन्न हुआ है। कर्ण ने बताया कि उसने अस्त्र के लोभ से ही अपने को ब्राह्मण बताकर परशुराम जी का शिष्यत्व प्राप्त किया था। वास्तविक बात जानकर परशुराम जी ने क्रोध में भर कर कर्ण से कहा : 'तूने ब्रह्मास्त्र के लोभ से झूठ बोलकर मेरे साथ कपटपूर्ण व्यवहार किया है। इसलिये जब तक तू संग्राम में अपने समान योद्धा के साथ युद्ध नहीं करेगा, और तेरी मृत्यु का समय निकट नहीं आ जायगा तब तक ही तुझे इस ब्रह्मास्त्र का स्मरण बना रहेगा। जो ब्राह्मण नहीं है उसके हृदय में ब्रह्मास्त्र कभी स्थिर नहीं रह सकता। अब तू यहाँ से चला जा। फिर भी मेरे आशीर्वाद से इस भूतल का कोई भी क्षत्रिय युद्ध में तेरी समता नहीं करेगा।' परशुराम जी के ऐसा कहने पर कर्ण उन्हें न्यायपूर्वक प्रणाम करके वहाँ से लौट आया और दुर्योधन के पास पहुँच कर बोला : 'मैंने सब अस्त्रों का ज्ञान प्राप्त कर लिया है।' (१२. ३)।

"नारद जी ने कहा : एक समय कलिङ्गराज चित्राङ्गद की पुत्री के स्वयंवर में अनेक बड़े-बड़े राजा एकत्र हुये। उस समय दुर्योधन ने राजकुमारी का बलपूर्वक अपहरण कर लिया। शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ कर्ण अपने रथ पर बैठकर दुर्योधन के पीछे पीछे चला। तब वहाँ उपस्थित क्रुद्ध राजाओं ने कर्ण और दुर्योधन पर आक्रमण कर दिया। परिणामस्वरूप भयंकर युद्ध आरम्भ हो गया। अपूर्व पराक्रम प्रकट करते हुये कर्ण ने आक्रमणकारी राजाओं को परास्त कर दिया। इस प्रकार कर्ण से सुरक्षित हो राजकन्या को साथ लेकर दुर्योधन सकुशल हस्तिनापुर पहुँच गया। (१२. ४)।

"कर्ण के बल की ख्याति सुनकर मगध नरेश जरासन्ध ने उसे द्वैरथ युद्ध के लिये ललकारा। परिणाम स्वरूप दोनों में युद्ध होने लगा। दोनों ही दिव्यास्त्रों के ज्ञाता थे, अतः रणभूमि में एक दूसरे पर नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा करने लगे। जब दोनों के बाण क्षीण हो गये और धनुष भी कट गये तब वे दोनों बलशाली भुजाओं द्वारा मल्लयुद्ध करने लगे। कर्ण ने बाहुकण्टक युद्ध के द्वारा जरा नामक राक्षसी के जोड़े हुये युद्धपरायण जरासन्ध के शरीर की सन्धि को चीरना आरम्भ किया। तब जरासन्ध ने अपने शरीर के विकार को देखकर वैरभाव समाप्त करते हुये कर्ण से सन्धि कर लिया और उसे अंगदेश की मालिनी नगरी दे दिया। उसी समय से कर्ण अङ्गदेश का राजा हो गया। इसके बाद दुर्योधन की अनुमति से कर्ण चम्पा नगरी का भी पालन करने लगा। इस प्रकार कर्ण अपने अस्त्रों के प्रताप से समस्त भूमण्डल में विख्यात हो गया। एक दिन देवमाया से मोहित होकर उसने अपने शरीर के साथ ही उत्पन्न हुये दोनों दिव्य कुण्डलों और कवच को भी इन्द्र को दे दिया। नारद जी ने युधिष्ठिर से कहा कि एक तो कर्ण को अग्निहोत्री ब्राह्मण तथा परशुराम से शाप मिला था; दूसरे उसने स्वयं भी कुन्ती को यह वरदान दिया था कि वह अर्जुन को छोड़कर अन्य किसी पाण्डव का वध नहीं करेगा; तीसरे इन्द्र ने उसके कवच और कुण्डल ले लिये; चौथे महारथियों की गणना करते समय भीष्म ने उसे अर्धरथी कहा था; पाँचवें शल्य ने भी निरन्तर उसके तेज को नष्ट करने का प्रयास किया, और छठें भगवान् श्रीकृष्ण की नीति भी कर्ण के प्रतिकूल कार्य कर रही थी — इन सब कारणों से ही वह पराजित हुआ, इसलिये कर्ण के लिये शोक उचित नहीं है। (१२. ५)।

"इतना कहकर नारद जी चुप हो गये, किन्तु युधिष्ठिर शोकमग्न होकर चिन्ता व्यक्त करने लगे। उनका मन अत्यन्त शोकार्त हो उठा। उनकी यह अवस्था देखकर कुन्ती भी दुःखी हो गई। फिर भी युधिष्ठिर को समझाते हुये कहा : 'मैंने कर्ण को यह बताने का प्रयत्न किया था कि पाण्डव उसके भाई हैं। उसके पिता भगवान् भुवन भास्कर ने भी ऐसा प्रयास किया था। परन्तु भगवान् सूर्य और मैं दोनों ही स्नेह का कारण दिखाकर उसे अपने पक्ष में नहीं कर सके।' माता के ऐसा कहने पर युधिष्ठिर के नेत्रों में अश्रु छलक आये। उन्होंने व्याकुल होकर कुन्ती से कहा : 'माँ! आपने इस गोपनीय बात को गुप्त रखकर मुझे अत्यधिक कष्ट दिया है।' इतना कहकर युधिष्ठिर ने संसार की स्त्रियों को यह शाप दे दिया कि 'आज से स्त्रियाँ अपने मन में कोई बात छिपा नहीं सकेंगी।' (१२. ६)

"युधिष्ठिर ने अर्जुन से आन्तरिक खेद प्रकट करते हुये राज्य छोड़कर वन में चले जाने की इच्छा व्यक्त की। (१२. ७)।

"तब युधिष्ठिर को सान्त्वना देते हुये अर्जुन ने युद्ध का औचित्य सिद्ध करते हुये बताया कि राजलक्ष्मी का परित्याग करना उचित नहीं है। अर्जुन ने कहा : राजा नहुष ने निर्धनावस्था में क्रूरतापूर्ण कर्म करके यह दुःखपूर्ण उद्गार प्रकट किया था कि 'इस जगत् में निर्धनता को धिक्कार है। सर्वस्व को त्यागकर निर्धन या अकिञ्चन हो जाना मुनियों का ही धर्म है राजाओं का नहीं।' जिसे राजाओं का धर्म कहा गया है वह तो धन से ही सम्पन्न होता है। धन से ही धर्म, काम और स्वर्ग की सिद्धि होती है। वेद-शास्त्रों में भी विद्वानों ने राजा के लिये यही निर्णय किया है कि 'राजा प्रतिदिन वेदों का स्वाध्याय करे, विद्वान बने, सब प्रकार से संग्रह कर धन ले आवे और यत्नपूर्वक यज्ञ का अनुष्ठान करे।' प्राचीन काल में जो राजर्षि हो गये हैं उनके मत से भी राजधर्म की ऐसी ही व्याख्या की गई है। पहले यह पृथिवी बारी-बारी से दिलीप, नृग, नहुष, अम्बरीष और मान्धाता के अधिकार में

रही। वही इस समय 'आप के अधीन हो गई है। अतः आप के समक्ष सर्वस्व की दक्षिणा देकर द्रव्यमय यज्ञ के अनुष्ठान का अवसर प्राप्त हुआ है। यदि आप यज्ञ नहीं करेंगे तो आपके सारे राज्य को पाप लगेगा। सम्पूर्ण विश्व जिनका स्वरूप है, उन महादेव जी ने सर्वमेध नामक महायज्ञ में सम्पूर्ण भूतों की तथा स्वयं अपनी भी आहुति दे दी थी। यही क्षत्रियों के लिये कल्याण का सनातन मार्ग है जिस पर दस रथ चलते हैं। अतः आप किसी कुत्सित मार्ग का आश्रय न लें।' (१२. ८)।

"अर्जुन की बातों को सुनकर भी युधिष्ठिर अपने निश्चय से विचलित नहीं हुये। उन्होंने वानप्रस्थ एवं संन्यासी के अनुसार जीवन व्यतीत करने का ही निश्चय किया। (१२. ९)।

"भीमसेन ने राजा के लिये संन्यास का विरोध करते हुये अपने कर्तव्य के ही पालन पर जोर देते हुये युधिष्ठिर से क्षत्रियोचित कर्तव्य का पालन करने का निवेदन किया। भीम ने कहा कि जो कर्मों को छोड़ देता है उसे कभी सिद्धि नहीं मिलती। (१२. १०)।

"अर्जुन ने पक्षिरूपधारी शक्र (इन्द्र) और ऋषिबालकों के संवाद का उल्लेख करते हुये गृहस्थधर्म के पालन पर जोर दिया। (१२. ११)।

"नकुल ने राजा के लिये संन्यास का अनौचित्य बताते हुये युधिष्ठिर से गृहस्थ-धर्म की प्रशंसा की और उन्हें अपने निर्णय से विरत होने के लिये कहा। (१२. १२)।

"सहदेव ने युधिष्ठिर को ममता और आसक्ति से रहित हो कर कर्म करने का परामर्श दिया। (१२. १३)।

"द्रौपदी ने भी युधिष्ठिर को राजदण्ड धारणपूर्वक पृथिवी का शासन करने के लिये प्रेरित किया। (१२. १४)।

"राजदण्ड की महत्ता का प्रतिपादन करते हुये अर्जुन ने युधिष्ठिर से से कहा : 'विद्वान पुरुषों ने दण्ड को ही राजा का धर्म माना है। इन्द्र वृत्रासुर का वध करने से ही महेन्द्र हो गये। जो देवता दूसरों का वध करनेवाले हैं उन्हीं की संसार अधिक पूजा करता है। रुद्र, स्कन्द, इन्द्र, अग्नि, वरुण, यम, काल, वायु आदि सभी देवता दूसरों का वध करते हैं। इनके प्रताप के सम्मुख नत-मस्तक होकर सब लोग इन्हें नमस्कार करते हैं। परन्तु ब्रह्मा, धाता, और पूषा की कोई किसी प्रकार की भी पूजा-अर्चा नहीं करता क्योंकि ये लोग सम्पूर्ण प्राणियों के प्रति समभाव रखने के कारण मध्यस्थ, जितेन्द्रिय एवं शान्तिपरायण हैं। जो शान्त स्वभाव के मनुष्य हैं वे ही समस्त कर्मों में इन ब्रह्मा, धाता आदि की पूजा करते हैं। अतः आप भी प्राचीन धर्म का आचरण कीजिये। शत्रुओं का वध करते समय आपके मन में दीनता नहीं आनी चाहिये। समस्त प्राणियों का अन्तरात्मा अवध्य है। जब आत्मा का वध हो ही नहीं सकता तब वह किसी का वध्य कैसे हो सकता है। जैसे मनुष्य बार-बार नये घर में प्रवेश करता है उसी प्रकार जीव भिन्न-भिन्न शरीरों को ग्रहण करता है। इसी को तत्व-दर्शी मनुष्य मृत्यु का मुख बताते हैं।' (१२. १५)।

"भीमसेन ने राजा को भुक्त दुःखों की स्मृति कराते हुये मोह छोड़कर मन पर वशपूर्वक राज्यशासन और यज्ञ करने का औचित्य बताकर युधिष्ठिर को कर्म करने के लिये प्रेरित किया (१२. १६)।

"युधिष्ठिर ने भीमसेन की बातों का विरोध करते हुये मुनिवृत्ति की और ज्ञानी महात्माओं की प्रशंसा की। युधिष्ठिर ने कहा : इस जगत में ममता और आसक्ति के बन्धन को आमिष कहा है। जो इन दोनों आमिष-स्वरूप पापों से मुक्त हो गया है वही परमपद को प्राप्त होता है। राजा जनक ने भी कहा था कि 'दूसरों की दृष्टि में मेरे पास बहुत धन है; परन्तु उसमें से कुछ भी मेरा नहीं है। सारी मिथिला में आग लग जाय तो भी मेरा कुछ नहीं जलेगा।' (१२. १७)।

"अर्जुन ने राजा जनक और उनकी रानी का दृष्टान्त देते हुये युधिष्ठिर को संन्यास ग्रहण करने से रोकने का प्रयास किया (१२. १८)।

"युधिष्ठिर ने अपने मत का प्रतिपादन करते हुये धन-सम्पत्ति की निःसारता सिद्ध करने का प्रयास किया। उन्होंने कहा कि तत्ववेत्ता पुरुष तपस्या द्वारा ही महान पद प्राप्त कर लेता है, ज्ञानयोग से उस परमतत्व को उपलब्ध कर लेता है, और स्वार्थत्याग के द्वारा सदा नित्य सुख का अनुभव करता रहता है (१२. १९)।

"युधिष्ठिर की बात सुनकर मुनिवर देवस्थान ने कहा कि अभी संसार को छोड़कर वन में जाने का समय नहीं आया है। अतः देवस्थान ने युधिष्ठिर को यज्ञानुष्ठान के लिये प्रेरित किया (१२. २०)।

"मुनिवर देवस्थान ने बृहस्पति द्वारा इन्द्र को दिये गये उपदेश का उल्लेख किया और युधिष्ठिर को उत्तम धर्म का तथा यज्ञादि करने का उपदेश देते हुये कहा : सन्तोष ही सर्वश्रेष्ठ सुख है। जब मनुष्य किसी से भय नहीं मानता, तथा जब वह रागादि और द्वेष पर विजय प्राप्त कर लेता है तब अपने आत्मस्वरूप का साक्षात्कार कर लेता है। किसी भी प्राणी से द्रोह न करके जिस धर्म का पालन होता है उसे ही साधु पुरुषों ने उत्तम धर्म कहा है। जो क्षत्रिय नरेश राज्यसिंहासन पर स्थित हो अपनी सम्पूर्ण इन्द्रियों को सदा अपने अधीन रखता है, दुष्टों का दमन और साधु पुरुषों का पालन करता है, समस्त प्रजा को धर्म के मार्ग में स्थापित करके स्वयं भी धर्मानुकूल व्यवहार करता है, वृद्धावस्था में राजलक्ष्मी को पुत्र के अधीन करके संन्यास ले लेता है, उसका यह लोक और परलोक दोनों सफल हो जाता है। इस प्रकार धर्म का अनुसरण करनेवाले नरेशों ने उत्तम गति प्राप्त की है। रुद्र, वसु, आदित्य, साध्य तथा राजर्षि समूहों ने भी इस धर्म का आश्रय लिया है। (१२. २१)।

"अर्जुन ने पुनः क्षत्रियधर्म की प्रशंसा की तथा युधिष्ठिर को समझाते हुये कहा कि तप और त्याग ब्राह्मणों के धर्म हैं। क्षत्रियों के लिये संग्राम में प्राप्त हुई मृत्यु ही परलौकिक पुण्यफल की प्राप्ति करनेवाली है। इन्द्र ब्राह्मण के पुत्र हैं किन्तु कर्म से क्षत्रिय हो गये हैं। उन्होंने पाप में प्रवृत्त हुये अपने ही भाई-बन्धुओं में से आठ सौ दस व्यक्तियों को मार डाला। उनका वह कर्म पूजनीय और प्रशंसा के योग्य माना गया है। अपने उसी कर्म से उन्हें देवेन्द्र का पद भी प्राप्त हुआ। (१२. २२)।

"व्यासजी ने शंख और लिखित की कथा सुनाते हुये राजा सुद्युम्न के दण्डधर्मपालन का महत्त्व बताया तथा युधिष्ठिर को राजधर्म में ही दृढ़ रहने की आज्ञा दी। उन्होंने अर्जुन की बातों का अनुमोदन किया। बृहस्पति के इस गाथा का उद्धरण भी व्यास जी ने दिया : 'जैसे सर्प बिलवासी चूहे आदि जीवों को निगल जाता है उसी प्रकार विरोध न करनेवाले राजा और परदेश न जानेवाले ब्राह्मण, दोनों को ही भूमि निगल जाती है। राजर्षि सुद्युम्न ने दण्डधारण के द्वारा ही प्रचेताकुमार दक्ष के समान परम सिद्धि प्राप्त कर ली।' इस विषय का इतिहास बताते हुये व्यास जी ने कहा कि शङ्ख और लिखित नामक दो भाई थे जो बाहुदा नदी के तट पर अलग-अलग आश्रमों में निवास करते थे। एक बार जब शङ्ख आश्रम से बाहर निकल गये थे तब लिखित उनके आश्रम पर आये और उन्होंने वहाँ के वृक्षों से अनेक पके फलों को खा लिया। इतने में शङ्ख आश्रम पर लौट आये और अपने भाई लिखित से पूछा कि उन्होंने फल कहाँ से प्राप्त किये हैं। लिखित ने भाई को प्रणाम करके बताया कि उन्होंने उसी आश्रम से फल तोड़े हैं। तब शंख ने रोषपूर्वक कहा कि बिना आज्ञा फल तोड़ना चोरी है। शंख ने लिखित को राजा के पास जाकर अपने व्यवहार को बताने के लिये कहा। भाई के आदेश पर लिखित ने राजा सुद्युम्न के पास जाकर बताया कि उन्होंने बिना आज्ञा बड़े भाई के बगीचे के फल तोड़कर खा लिये हैं। इस पापकर्म के लिये उन्होंने राजा से दण्ड देने का निवेदन किया। राजा ने कहा कि दण्ड देने की ही भाँति क्षमा करना भी राजा की अधिकार सीमा में आता है, अतः उन्होंने लिखित को क्षमा करना चाहा; किन्तु लिखित ने बिना दण्ड प्राप्त किये वापस लौटना स्वीकार नहीं किया। तब राजा ने लिखित के दोनों हाथ कटवा दिये। दण्ड पाकर लिखित वहाँ से लौट आये। अपने भाई शंख के पास आकर उन्होंने दण्ड प्राप्त लेने की सूचना दी और अपने अपराध के लिये पुनः क्षमा माँगा। शंख ने अपने भाई से कहा : 'मैं तुम पर कुपित नहीं हूँ। तुमने धर्म का उल्लंघन किया था अतः उसी का

प्रायश्चित्त करने का मैंने आदेश दिया था। अब तुम बाहुदा नदी के तट पर जाकर देवताओं, ऋषियों और पितरों का तर्पण करो। भविष्य में पुनः कभी अधर्म की ओर प्रवृत्त मत होना।' भाई की आज्ञानुसार लिखित ने बाहुदा नदी में स्नान करने के बाद विधिवत तर्पण किया। उनके इस धर्माचरण से उनके दोनों हाथ पुनः प्राप्त हो गये। लिखित को दण्ड देने के अपने कर्म से राजा सुद्युम्न ने उच्चतम पदों को प्राप्त कर लिया। (१२. २३)।

"व्यास जी ने युधिष्ठिर को राजा हयग्रीव का चरित्र सुनाकर भाइयों की इच्छा पूर्ण करने तथा राजोचित कर्तव्य का पालन करने के लिये कहा (१२. २४)।

"व्यास जी की बात सुनकर और अर्जुन के कुपित हो जाने पर युधिष्ठिर ने कहा: 'भूतल का राज्य और ये विभिन्न प्रकार के भोग मेरे मन को प्रसन्नता नहीं प्रदान कर रहे हैं। पति और पुत्रों से हीन हुई युवतियों का करुण क्रन्दन सुनकर मुझे शान्ति नहीं मिल रही है।' व्यास जी ने तब काल की महत्ता बताते हुये युधिष्ठिर को प्राचीनकाल के राजा सेनजित् का इतिहास सुनाते हुये कहा: एक समय शोक से आतुर राजा सेनजित् ने मन ही मन कहा कि 'यह दुःसह कालचक्र सभी मनुष्यों पर अपना प्रभाव डालता है। एक न एक दिन सभी भूपाल काल से परिपक्व हो कर मृत्यु के अधीन हो जाते हैं। फिरभी यह मरना-मारना लौकिक संज्ञा मात्र हैं। वास्तव में न कोई मरता है और न मारा ही जाता है। यह शरीर भी अपना नहीं है और सम्पूर्ण पृथिवी भी अपनी नहीं है। यह जिस प्रकार मेरी है, उसी प्रकार दूसरों की भी है। ऐसी दृष्टि रखनेवाला पुरुष कभी मोह में नहीं पड़ता।' सेनजित् के इस प्रकार के उद्गारों का उल्लेख करने के बाद व्यास जी ने युधिष्ठिर से कहा: 'राजा के लिये संग्राम में जूझना ही यज्ञ की दीक्षा लेना बताया गया है। राज्य की रक्षा करते हुये दण्डनीति में भली भाँति प्रतिष्ठित होना ही उसके लिये योगसाधन है; तथा यज्ञ में दक्षिणा स्वरूप धन का त्याग एवं उत्तम रीति से दान ही राजा के लिये त्याग है। ये तीनों कर्म राजा को पवित्र करनेवाले हैं। स्वर्गलोक में रहने पर भी जिसके चरित्र को नगर और जनपद के मनुष्य एवं मन्त्री मस्तक झुकाते हैं वही राजा नरपतियों में सबसे श्रेष्ठ है।' (१२. २५)।

"इसी प्रसङ्ग में राजा युधिष्ठिर ने अर्जुन से कहा: 'तुम जो यह समझते हो कि धन से बढ़ कर कोई वस्तु नहीं है, तथा निर्धन को स्वर्ग, सुख और अर्थ की प्राप्ति नहीं हो सकती, यह ठीक नहीं है। सम्पूर्ण धर्मों को जाननेवाले जो लोग ब्रह्मचर्य आश्रम में स्थित हो ऋषियों की स्वाध्याय परम्परा की रक्षा सदैव करते हैं उन्हें ही देवता लोग ब्राह्मण कहते हैं। अज, पृश्नि, सिकत, अरुण और केतु नाम के ऋषिगणों ने तो स्वाध्याय के द्वारा ही स्वर्ग प्राप्त कर लिया था। वास्तव में सन्तोष ही सर्वश्रेष्ठ स्वर्ग है और सन्तोष ही सर्वश्रेष्ठ सुख है। दान, अध्ययन, यज्ञ और निग्रह — ये सभी कर्म अत्यन्त कठिन हैं। इन वेदोक्त कर्मों का आश्रय लेकर लोग सूर्य के दक्षिण मार्ग से स्वर्ग में जाते हैं। सूर्य के उत्तर दिशा में स्थित जो मार्ग है, जिसे तुम नियम के प्रभाव से देख रहे हो, वहाँ प्रकाशित होनेवाले सनातन लोक निष्काम कर्म करने वालों को प्राप्त होते हैं।' इस प्रसङ्ग में युधिष्ठिर ने राजा ययाति की इस उक्ति का उद्धरण दिया कि 'जब यह पुरुष किसी से नहीं डरता, जब इससे भी किसी को भय नहीं रहता, तथा जब यह न तो किसी को चाहता है और न उससे द्वेष रखता है, तब ब्रह्मभाव को प्राप्त हो जाता है।' (१२. २६)।

"युधिष्ठिर ने व्यास जी से कहा: इस युद्ध में बालक अभिमन्यु, द्रौपदी के पाँच पुत्र, धृष्टद्युम्न तथा अनेक देशों के नरेश और निवासी वीरगति को प्राप्त हुये हैं। मैं अपने जाति के लोगों और बन्धु-बान्धवों का घातक, राज्य का लोभी, अत्यन्त क्रूर और अपने वंश का विनाश करनेवाला हूँ। यही सब सोचकर मैं उद्विग्न तथा शोकातुर हो रहा हूँ। मैं जिसकी गोद में खेलता था उन्हीं पितामह भीष्म को मैंने राज्य के लोभ से मरवा डाला। जिन वीर पितामह ने बहुत दिनों तक परशुराम से युद्ध किया था, जिन्होंने एक मात्र रथ की सहायता से वाराणसी में एकत्र क्षत्रिय नरेशों को ललकारा था, तथा जिन्होंने दुर्जेय राजा उग्रायुध को अपने अस्त्रों के प्रताप से दग्ध कर दिया था उन्हीं को मैंने मरवा डाला।' व्यास जी ने इन सब घटनाओं को प्रारब्ध का ही खेल बताकर युधिष्ठिर को सान्त्वना दी और उनसे कहा: 'विधाता ने जैसे कर्मों के लिये तुम्हारी सृष्टि की है, तुम उन्हीं का अनुष्ठान करो। उन्हीं से तुम्हें सिद्धि मिलेगी। तुम कर्मों के फल के स्वामी या नियन्ता नहीं हो।' (१२. २७)।

"अश्मा ऋषि और जनक के संवादरूपी प्रारब्ध की प्रबलता बता कर व्यासजी ने युधिष्ठिर को समझाते हुये कहा: एक समय दुःख-शोक में डूबे हुये विदेहराज जनक ने अश्मा ऋषि से पूछा कि कुटुम्बीजनों और धन की उत्पत्ति या विनाश होने पर कल्याणाकांक्षी पुरुष को कैसा व्यवहार करना चाहिये। अश्मा ने राजा जनक से कहा: मनुष्य का यह शरीर जब जन्म ग्रहण करता है तब उसके साथ ही सुख और दुःख भी उसके पीछे लग जाते हैं। इन दोनों में एक न एक की प्राप्ति तो होती ही है, अतः जो भी सुख या दुःख उपस्थित होता है वही मनुष्य के ज्ञान का उसी प्रकार हरण कर लेता है जिस प्रकार वायु मेघों को उड़ा ले जाती है। प्राणियों के निकट जो सुख या दुःख उपस्थित होता है वह सब उन्हें विवश होकर सहन करना पड़ता है क्योंकि उसके निवारण का कोई उपाय नहीं है। प्राणियों की उत्पत्ति, देहावसान, लाभ और हानि—ये सब प्रारब्ध के ही आधार पर स्थित हैं। काल के प्रभाव से समस्त प्राणी इष्ट और अनिष्ट पदार्थों को प्राप्त करते रहते हैं। यद्यपि विद्वान पुरुष कहते हैं कि परलोक न तो आँखों के सामने है और न पहले ही देखा हुआ है, तथापि अपने कल्याण की इच्छा रखनेवाले पुरुष को शास्त्रों की आज्ञा का उल्लंघन न करके उसकी बातों पर विश्वास करना चाहिये। कोई भी मनुष्य यहीं से स्थूल नेत्रों द्वारा स्वर्ग और नरक को नहीं देख सकता। उन्हें देखने के लिये सत्पुरुषों के पास शास्त्र ही एकमात्र नेत्र हैं। अतः यहाँ शास्त्र के अनुसार ही आचरण करना चाहिये।' व्यासजी ने युधिष्ठिर से कहा कि निर्मल बुद्धिवाले जनक अश्मा का युक्तिपूर्ण उपदेश सुन कर शोकरहित हो गये। अतः व्यासजी ने युधिष्ठर से शोक का त्याग करके हृदय में हर्ष धारण करने तथा क्षत्रिय-धर्म के अनुसार पृथिवी का पालन करने के लिये कहा। (१२. २८)।

"सब के समझाने पर भी जब युधिष्ठर मौन ही रह गये तब अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा: 'माधव! धर्मपुत्र युधिष्ठिर बन्धु-बान्धवों के शोक से सन्तप्त हो शोकसागर में डूब गये हैं। आप ही अब इनके शोक का नाश कीजिये।' धर्मराज युधिष्ठिर भगवान् श्रीकृष्ण की आज्ञा का कभी उल्लंघन नहीं करते थे क्योंकि श्रीकृष्ण बाल्यावस्था से ही उन्हें अर्जुन से भी अधिक प्रिय थे। अर्जुन के उक्त वचन को सुन कर श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर का हाथ अपने हाथ में लेकर इस प्रकार कहा: 'तुम शोक न करो। इस समराङ्गण में जो वीर मारे गये हैं वे पुनः मिल सकें यह सम्भव नहीं है। सभी मृत वीर महायुद्ध में संग्राम करते हुये अपने प्राणों का परित्याग करके अस्त्र-शस्त्रों से पवित्र हो स्वर्ग में गये हैं, अतः तुम्हें उनके लिये शोक नहीं करना चाहिये।' इस प्रकार कह कर श्रीकृष्ण ने देवर्षि नारद और पुत्रशोक से पीड़ित राजा सृञ्जय के संवादरूप षोडशराजोपाख्यान का वर्णन कियाजिसको नारद जी से सुनने के बाद राजा सृञ्जय का शोक दूर हो गया था। श्रीकृष्ण ने बताया कि पुत्रशोक से रहित होने पर नारद जी ने सृञ्जय से कहा: 'तुम्हारे यहाँ जो सुवर्णष्ठीवी नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था और जिसे पर्वत ने तुम्हें दिया था वह तो चला गया है। अब मैं तुम्हें एक हिरण्यनाभ नामक पुत्र प्रदान कर रहा हूँ जिसकी आयु सहस्र वर्ष की होगी।' (१२. २९)।

"युधिष्ठिर के निवेदन पर श्रीकृष्ण ने उन्हें नारदपर्वतोपाख्यान सुनाया। (१२. ३०)। इसके बाद नारद जी ने युधिष्ठिर को सुवर्णष्ठीविसम्भवोपाख्यान सुनाया। (१२. ३१)। व्यास जी ने युधिष्ठिर से शोक का परित्याग करके राजाओं के कर्तव्य का पालन करने का उपदेश दिया; किन्तु युधिष्ठिर ने व्यास जी से कहा: 'आप जो बात कह रहे हैं उस पर मुझे लेश

मात्र भी सन्देह नहीं है। परन्तु मैंने तो इस राज्य के लिये अनेक अवध्य पुरुषों का भी वध कर दिया है। मेरे वे ही कर्म मुझे दग्ध और त्रस्त कर रहे हैं।' व्यास जी ने अन्यान्य युक्तियों से युधिष्ठिर को पुनः समझाने का प्रयास किया (१२. ३२)।

"इतना समझाने पर भी जब युधिष्ठिर का शोक दूर नहीं हुआ तब व्यास जी ने उनसे पुनः काल की प्रबलता का प्रतिपादन करते हुये कहा: 'तुम क्षत्रिय धर्म का बारंबार स्मरण करते हुये विषाद न करो क्योंकि ये सभी क्षत्रिय अपने धर्म के अनुसार ही मारे गये हैं। काल ने ही अपने नियम के अनुसार उन सभी देहधारियों के प्राण लिये हैं। काल के माता पिता नहीं हैं। उसका किसी पर भी अनुग्रह नहीं होता। काल ने ही इस युद्ध को निमित्त बनाकर प्राणियों का वध किया है। काल जीव के पाप और पुण्य कर्मों का साक्षी है। वही समयानुसार कर्मों का फल देता है। प्राणी किसी व्यक्त कारण के बिना ही दैवात् उत्पन्न होता है और दैवेच्छा से ही अकस्मात उसका विनाश हो जाता है। यह देखकर शोक अथवा हर्ष करना व्यर्थ है। तथापि तुम्हारे चित्त में जो यहाँ उन सब को मरवाने के कारण झूठे ही चिन्ता और पीड़ा हो रही है उसकी निवृत्ति के लिये प्रायश्चित्त कर देना उचित है। यह बात सुनी जाती है कि पूर्वकाल में देवासुर संग्राम के अवसर पर बड़े भाई असुर और छोटे भाई देवता आपस में लड़ गये थे। उनमें भी राजलक्ष्मी के लिये ही बत्तीस सहस्र वर्षों तक अत्यन्त भीषण संग्राम हुआ था। देवताओं ने रक्तसिञ्चित इस पृथिवी को एकार्णव में निमग्न करके दैत्यों का संहार कर डाला और स्वर्गलोक पर अधिकार कर लिया। इस पृथिवी को भी अपने अधीन करके देवताओं ने शालावृक नामक ८८,००० ब्राह्मणों का भी वध कर डाला जो वेदों के पारङ्गत विद्वान थे किन्तु अभिमान से मोहित होकर दानवों से जा मिले थे। पाण्डुनन्दन! तुम वेद-शास्त्रों के ज्ञाता हो इसलिये अपने हृदय को स्थिर करो। तुमने तो उसी मार्ग का अनुसरण किया है जिस पर देवगण पहले चल चुके हैं। तुम्हारे जैसे लोग नरक में नहीं जाते। तुम अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान करो और पापरहित हो जाओ। मरुद्गणों सहित भगवान् पाकशासन इन्द्र ने शत्रुओं को जीतकर सौ बार अश्वमेध यज्ञ किया था जिससे वे शतक्रतु नाम से विख्यात हैं। स्वर्गलोक में अप्सराओं द्वारा पूजित इन्द्र की सम्पूर्ण देवता और महर्षि भी उपासना करते हैं। तुमने क्षत्रिय-धर्म का पालन किया है और इस समय तुम्हें यह निष्कण्टक राज्य मिला है। अब तुम उस धर्म की रक्षा करो जो मृत्यु के बाद सबका कल्याण करनेवाला है।' (१२. ३३)।

"व्यास जी ने प्रायश्चित्त पर उपदेश देते हुये उन कर्मों का उल्लेख किया जिनके करने या न करने से कर्ता प्रायश्चित्त का भागी होता या नहीं होता। इस सम्बन्ध में उन्होंने उन उद्दालक मुनि का उल्लेख किया जिन्होंने अपने पुत्र श्वेतकेतु को शिष्य द्वारा उत्पन्न कराया था। इत्यादि। (१२. ३४)।

"व्यास जी ने बताया कि मनुष्य तप से, यज्ञ आदि सत्कर्मों से तथा दान के द्वारा पापों को नष्ट करके अपने को पवित्र कर लेता है। किन्तु ऐसा तभी सम्भव होता है जब वह पुनः पाप में प्रवृत्त न हो। तदनन्तर उन्होंने विभिन्न प्रकार के पापों के लिये विभिन्न प्रकार के प्रायश्चित्तों का उल्लेख किया। (१२. ३५)।

"युधिष्ठिर के पूछने पर व्यास जी ने स्वायम्भुव मनु के कथनानुसार धर्म के स्वरूप, पाप से शुद्धि के लिये प्रायश्चित्त, अभक्ष्य वस्तुओं का वर्णन तथा दान के अधिकारी एवं अनधिकारी का विवेचन किया (१२. ३६)।

"युधिष्ठिर ने व्यास जी से चारों वर्णों के सम्पूर्ण धर्मों का तथा राजधर्म का भी विस्तारपूर्वक वर्णन सुनने की इच्छा प्रकट की। व्यास जी ने तब नारद जी की ओर देखकर युधिष्ठिर से कहा कि यदि वे धर्म का पूर्ण रूप से विवेचन सुनना चाहते हैं तो पितामह भीष्म के पास जाँय। भीष्म जी की विद्वत्ता की प्रशंसा करते हुये व्यास जी ने कहा: जिन्हें दिव्य नदी त्रिपथगा गङ्गा ने जन्म दिया है और जिन शक्तिशाली भीष्म ने बृहस्पति आदि देवर्षियों को बारंबार अपनी सेवा द्वारा सन्तुष्ट करके राजनीति का अध्ययन किया है, वे भीष्म शुक्राचार्य और देवगुरु बृहस्पति को ज्ञात सम्पूर्ण शास्त्रों के ज्ञाता हैं। भीष्म ने भृगुवंशी च्यवन तथा वसिष्ठ से वेदाङ्गों सहित वेदों का अध्ययन किया है और सनत्कुमार से अध्यात्मज्ञान की भी शिक्षा ली है। उन्होंने मार्कण्डेय जी के मुख से यतिधर्म की और परशुराम तथा इन्द्र से अस्त्र-शस्त्रों की शिक्षा प्राप्त की है। सन्तानहीन होने पर भी उनको प्राप्त होनेवाले पुण्यलोक देवलोक में विख्यात हैं। पुण्यात्मा ब्रह्मर्षि सदा उनके सभासद रहे हैं। ज्ञानयज्ञ में कोई भी ऐसी बात नहीं है जिसका उन्हें ज्ञान न हो। व्यास जी की बात सुनकर युधिष्ठिर ने कहा: 'मैंने इस सम्पूर्ण भूमण्डल का विनाश किया है। भीष्मजी सरलतापूर्वक युद्ध करनेवाले थे, किन्तु मैंने उन्हें छल से मरवा डाला। अतः अब मैं किस हेतु से उन्हें अपना मुँह दिखा सकता हूँ?' युधिष्ठिर की बात सुनकर श्रीकृष्ण ने उनसे कहा: 'अब अपने शोक को त्याग कर व्यास जी की आज्ञानुसार हम सुहृदों और द्रौपदी का प्रिय कीजिये। अब आप सम्पूर्ण जगत् के हितसाधन में लग जाइये।' श्रीकृष्ण के इस प्रकार कहने पर युधिष्ठिर ने मानसिक दुःख और संताप को त्याग दिया। तदनन्तर वे अपने भाइयों तथा अन्य उपस्थित राजाओं के साथ धृतराष्ट्र को आगे करके हस्तिनापुर के लिये प्रस्थित हुये — युधिष्ठिर के दल की शोभा का वर्णन। (१२. ३७)।

"हस्तिनापुर पहुँचने पर पुरवासियों ने युधिष्ठिर, द्रौपदी तथा साथ के लोगों का हार्दिक स्वागत किया। धौम्य तथा धृतराष्ट्र के साथ सभाभवन में प्रवेश किया जहाँ ब्राह्मणों ने तो इन लोगों को आशीर्वाद दिया किन्तु ब्राह्मण के वेश में वहाँ उपस्थित चार्वाक नामक एक राक्षस ने, जो दुर्योधन का मित्र था, युधिष्ठिर को शाप दिया जिसपर क्रुद्ध ब्राह्मणों ने हुंकार मात्र से चार्वाक का वध कर दिया (१२. ३८)।

"श्रीकृष्ण ने चार्वाक को प्राप्त वर आदि का उल्लेख करते हुये कहा: कृतयुग में राक्षस चार्वाक ने बदरिकाश्रम में तपस्या की थी। उसकी तपस्या से ब्रह्माजी प्रसन्न हुये। तब चार्वाक ने उनसे यह वर माँगा कि उसे 'किसी प्राणी से भय न हो।' ब्रह्माजी ने उसे यह वरदान देते हुये उससे कहा कि ब्राह्मणों का अपमान न करने के अतिरिक्त अन्य कहीं किसी से भी भय नहीं रहेगा। इस प्रकार ब्रह्माजी ने उसे सम्पूर्ण प्राणियों की ओर से अभयदान दे दिया। वर प्राप्त कर वह अमित पराक्रमी राक्षस देवताओं को संताप देने लगा। उसके बल से त्रस्त हो कर सभी देवताओं ने एकत्र हो कर जब उसके वध के लिये ब्रह्माजी से प्रार्थना की तब ब्रह्माजी ने देवताओं से कहा: 'मनुष्यों में राजा दुर्योधन चार्वाक का मित्र होगा और उसी के स्नेह से बँधकर वह राक्षस ब्राह्मणों का अपमान कर बैठेगा। उसके विरुद्धाचरण से तिरस्कृत हो रोष में भरे हुये वाक्शक्ति से सम्पन्न ब्राह्मण वहीं उस पापी को जला देंगे।' इस प्रकार चार्वाक की कथा सुनाकर श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर से अपने कर्तव्य और प्रजा का पालन करने के लिये कहा। (१२. ३९)।

"युधिष्ठिर का राज्याभिषेक—राज्याभिषेक समारोह का वर्णन। राज्याभिषेक के बाद युधिष्ठिर ने ब्राह्मणों को प्रचुर दान और ब्राह्मणों ने भी उन्हें और उनके भाई पाण्डवों को आशीर्वाद दिया। (१२. ४०)।

"राजा युधिष्ठिर ने अपने वृद्ध चाचा धृतराष्ट्र के प्रति सम्मान प्रकट करते हुये उनके अधीन रहकर ही राज्य की व्यवस्था के लिये भाइयों तथा अन्य लोगों को विभिन्न कार्यों पर नियुक्त किया (१२. ४१)।

"युधिष्ठिर तथा धृतराष्ट्र ने युद्ध में मारे गये सगे-सम्बन्धियों तथा अन्य राजाओं के लिये श्राद्धकर्म सम्पन्न कराया। तदनन्तर युधिष्ठिर ने युद्ध में योद्धाओं के मारे जाने से विधवा हुई स्त्रियों, दीन-दुखियों और अन्धों के पालन-पोषण और भोजन-वस्त्र की व्यवस्था की। (१२. ४२)।

"श्रीकृष्ण की स्तुति करते हुये युधिष्ठिर ने उनसे कहा: 'आप की कृपा, नीति, बल, बुद्धि और पराक्रम से ही मुझे अपना यह पैतृक राज्य प्राप्त हुआ है। आप ही इस जगत् के आदि कारण हैं और आप ही इसके प्रलय-स्थान हैं। यह सम्पूर्ण विश्व आपके ही अधीन है। आप को बारंबार

नमस्कार।' इस प्रकार युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण की उनके सौ नामों से स्तुति की और बार-बार नमस्कार किया। (१२. ४३)।

"तदनन्तर युधिष्ठिर ने अपने सभी भाइयों के लिये विभिन्न भवनों का निर्धारण किया। तब सब भाइयों ने अपने-अपने भवनों में जा कर रात्रि-विश्राम किया। (१२. ४४)।

"जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायनजी ने बताया कि राज्य पाने के बाद युधिष्ठिर ने सर्वप्रथम चारों वर्णों को योग्यतानुसार अपने-अपने स्थानों में स्थित किया। तत्पश्चात् स्नातक ब्राह्मणों में से प्रत्येक को एक-एक सहस्र सुवर्ण मुद्रायें दान कीं। इसी तरह जिनकी जीविका का भार उन्हीं के ऊपर था उन भृत्यों, शरणागतों तथा अतिथियों को उन्होंने इच्छानुसार भोग्य-पदार्थ देकर सन्तुष्ट किया। पुरोहित धौम्य को उन्होंने दस सहस्र गायें, धन, सुवर्ण, आदि नाना प्रकार की सामग्रियाँ दे कर सन्तुष्ट किया। उन्होंने युयुत्सु और धृतराष्ट्र का भी विशेष रूप से सत्कार किया। यहाँ तक कि धृतराष्ट्र, गान्धरी, तथा विदुरजी की सेवा में अपना सम्पूर्ण राज्य समर्पित करके राजा युधिष्ठिर ने अत्यन्त सुख का अनुभव किया। इस प्रकार सम्पूर्ण नगर की प्रजा को प्रसन्न करने के बाद युधिष्ठिर हाथ जोड़ कर श्रीकृष्ण के पास आये। उन्होंने देखा कि श्रीकृष्ण के वक्षःस्थल पर कौस्तुभ मणि सुशोभित हो रही है। युधिष्ठिर ने भगवान के समीप जा कर उनकी पुनः स्तुति की। युधिष्ठिर इस प्रकार स्तुति तो कर रहे थे किन्तु भगवान् श्रीकृष्ण ने उन्हें कोई उत्तर नहीं दिया क्योंकि वे उस समय ध्यानमग्न थे। (१२. ४५)।

"युधिष्ठिर ने हाथ जोड़ कर श्रीकृष्ण की स्तुति की जिसे सुन कर श्रीकृष्ण का ध्यान भंग हुआ। युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण से कहा: 'पुरुषोत्तम! आप ही इस जगत् के स्रष्टा हैं। आप ही क्षर और अक्षर पुरुष हैं। आप ही सबके आदि कारण हैं। कृपा कर आप अपने ध्यान का यथार्थ तत्व मुझे बताइये।' युधिष्ठिर की यह प्रार्थना सुन कर श्रीकृष्ण ने मुस्कराते हुये कहा: 'बाण शय्या पर पड़े हुये पुरुषसिंह भीष्म इस समय मेरा ध्यान कर रहे हैं। इसलिये मेरा मन भी उन्हीं में लगा हुआ है।' तदनन्तर श्रीकृष्ण ने भीष्मजी की प्रशंसा की और युधिष्ठिर से भीष्म के पास चलने के लिये कहा। युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण का आदेश स्वीकार करते हुये उनसे निवेदन किया कि वे अपने दिव्य रूप में भीष्मजी को दर्शन देने की कृपा करें। धर्मराज का यह वचन सुन कर श्रीकृष्ण ने सात्यकि से अपना रथ तैयार करने के लिये कहा। सात्यकि ने भी इस आज्ञा का पालन करते हुये दारुक से रथ तैयार करने के लिये कहा। (१२. ४६)।

"जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायनजी ने भीष्मजी की बाणशय्या का तथा उनके देहत्याग का वृत्तान्त सुनाते हुये कहा: जब दक्षिणायन समाप्त हुआ और सूर्य उत्तरायण में आ गये तब माघमास के शुक्लपक्ष की अष्टमी तिथि को रोहिणी नक्षत्र में मध्याह्न के समय भीष्मजी ने ध्यानमग्न हो कर अपने मन को परमात्मा में लगा दिया। ध्यान करते-करते वे मधुसूदन की स्तुति (भीष्म स्तवराज) करने लगे। उस समय भीष्म का मन श्रीकृष्ण में ही लगा हुआ था। उन्होंने अपना स्तव समाप्त करने के बाद 'नमः श्रीकृष्णाय' कह कर उन्हें प्रणाम किया। भगवान् श्रीकृष्ण भी अपने योगबल से भीष्म की भक्ति को जान कर उनके निकट गये और उन्हें तीनों लोकों की बातों का बोध करानेवाला दिव्य ज्ञान देकर लौट आये। जब भीष्मजी का बोलना बन्द हो गया तब वहाँ बैठे ब्रह्मवादी महर्षियों ने गद्गद कण्ठ से भीष्म की भूरि-भूरि प्रशंसा की। इधर श्रीकृष्ण भीष्म के भक्तियोग को जान कर सहसा अपने आसन से उठे और अत्यन्त हर्ष के साथ रथ पर जा बैठे। एक रथ से सात्यकि और श्रीकृष्ण चले और दूसरे रथ से युधिष्ठिर और अर्जुन। भीमसेन और नकुल-सहदेव तीसरे रथ पर सवार हुये। चौथे रथ पर कृपाचार्य, युयुत्सु और सञ्जय चले। भीष्म ने जिस स्तवराज से श्रीकृष्ण की स्तुति की वह बड़े-बड़े पापों का नाश करनेवाला है। (१२. ४७)।

"श्रीकृष्ण, युधिष्ठिर, कृपाचार्य आदि सब लोग शीघ्रतापूर्वक कुरुक्षेत्र आये (कुरुक्षेत्र का वर्णन)। युधिष्ठिर के पूछने पर श्रीकृष्ण ने रामह्रद के नाम से विख्यात पाँच सरोवरों का वर्णन किया। ह्रदों में परशुरामजी ने क्षत्रियों के रक्त से अपने पितरों का तर्पण किया था। (१२. ४८)।

"युधिष्ठिर के पूछने पर श्रीकृष्ण ने परशुरामोपाख्यान सुनाया और उसके बाद शीघ्रतापूर्वक सब लोग अपने-अपने रथों पर आगे चल पड़े। (१२. ४९)।

"परशुरामजी का चरित्र सुन कर युधिष्ठिर ने उनके पराक्रम की सराहना की। युधिष्ठिर और श्रीकृष्ण इस प्रकार वार्तालाप करते हुये उस स्थान पर जा पहुँचे जहाँ ओघवती नदी के तट पर भीष्मजी बाणशय्या पर पड़े थे। उनलोगों ने देखा कि भीष्म शरशय्या पर पड़े हुये सायंकालिक सूर्य के समान प्रकाशित हो रहे हैं। श्रीकृष्ण, युधिष्ठिर, अन्य पाण्डव तथा कृपाचार्य आदि सब लोग भीष्म को देखते ही अपने-अपने रथों से उतर गये और वहाँ बैठे हुये महामुनियों की सेवा में उपस्थित हुये। श्रीकृष्ण, सात्यकि, तथा अन्य राजाओं ने व्यास आदि महर्षियों को प्रणाम करके भीष्म को मस्तक झुकाया। भीष्म को मृत्यु के अत्यन्त समीप देख कर श्रीकृष्ण ने उनकी प्रशंसा करते हुये कहा कि देवता, गन्धर्व, असुर, यक्ष, राक्षस सभी को भीष्म एकमात्र रथ की सहायता से पराजित कर सकते हैं। वे वसुओं में इन्द्र के समान और आठ वसुओं के अंश से उत्पन्न नवें वसु हैं। तदनन्तर श्रीकृष्ण ने भीष्म से कहा: 'आप से यह निवेदन है कि ये ज्येष्ठ पाण्डव अपने कुटुम्बीजनों के वध से बहुत संतप्त हैं। आप इनका शोक दूर कीजिये। शास्त्रों में चारों वर्णों और आश्रमों के लिये जो-जो धर्म बताये गये हैं वे सब आप को विदित हैं। चारों विद्याओं में जिन धर्मों का प्रतिपादन किया गया है तथा चारों होताओं के जो कर्तव्य बताये गये हैं वे भी आपको ज्ञात हैं। संसार में जो कोई भी संदेहग्रस्त विषय हैं उसका समाधान करने वाला आप के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं है। अतः युधिष्ठिर के शोक को आप दूर कीजिये।' (१२. ५०)।

"भीष्म ने श्रीकृष्ण की स्तुति की और श्रीकृष्ण के दिव्य रूप का दर्शन किया। श्रीकृष्ण ने भीष्मजी से कहा: 'मुझमें आपकी परमभक्ति है, इसीलिये मैंने आपको अपने दिव्य स्वरूप का दर्शन कराया है। आपके लिये दिव्य लोक प्रस्तुत हैं जहाँ से पुनः इस लोक में नहीं आना पड़ता। अब आपके जीवन के कुल छप्पन दिन ही शेष हैं। तेजस्वी देवता और वसुगण विमानों में बैठ कर आकाश में अदृश्य रूप से सूर्य के उत्तरायण होने और आपके आने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। जब सूर्य उत्तरायण के मार्ग पर आयेंगे उसी समय आप दिव्य लोक में जाइयेगा। आपके परलोक जाते ही सारे ज्ञान लुप्त हो जायँगे। अतः ये सब लोग आपके पास धर्म का विवेचन कराने के लिये उपस्थित हुये हैं। अब योग और अर्थ से युक्त बातें सुनाकर आप इनका शोक दूर कीजिये।' (१२.५१)

"श्रीकृष्ण की बातें सुन कर भीष्मजी ने उनसे कहा: 'लोक में कहीं भी जो कुछ कर्तव्य किया जाता है वह सब आप बुद्धिमान परमेश्वर से ही प्रकट हुआ है। जो मनुष्य देवराज इन्द्र के निकट देवलोक का वृत्तान्त बताने का साहस कर सके वही आपके सामने धर्म, अर्थ काम और मोक्ष की बात कह सकता है। इन बाणों के शरीर में गड़े होने से मेरे मन में अत्यन्त व्यथा है। सारा शरीर पीड़ा के कारण शिथिल हो गया है और मेरी बुद्धि कुछ काम नहीं दे रही है। अतः मेरा चित्त भ्रान्त हो गया है। न तो मुझे दिशाओं का ज्ञान है और न आकाश एवं पृथिवी का ही भान हो रहा है। मैं केवल आपके प्रभाव मात्र से जीवित हूँ।' तब श्रीकृष्ण ने भीष्मजी से कहा: 'आपका यह कथन सर्वथा युक्तिसंगत है। बाणों के आघात से होने वाली पीड़ा के विषय में जो आपने कहा है उसके लिये मैं आपको प्रसन्नता से यह वर देता हूँ कि अब आपको न ग्लानि होगी, न मूर्च्छा आयेगी, न कोई दाह होगा, न कोई रोग होगा, और न आपको भूख प्यास का ही कष्ट होगा। आपके अन्तःकरण में सम्पूर्ण ज्ञान प्रकाशित हो उठेंगे और आपकी बुद्धि किसी भी विषय में कुण्ठित नहीं रहेगी। ज्ञान दृष्टि से सम्पन्न होकर आप संसार बन्धन में पड़नेवाले सम्पूर्ण जीवसमुदाय को उसी तरह

यथार्थ रूप से देख सकेंगे जैसे मत्स्य निर्मल जल में सब कुछ देखता है।' वैशम्पायनजी ने बताया कि इसके बाद व्यास सहित सम्पूर्ण महर्षियों ने ऋक्, यजु, तथा साम मन्त्रों से श्रीकृष्ण का पूजन किया। जहाँ भीष्म, युधिष्ठिर और श्रीकृष्ण विराजमान थे वहाँ आकाश से दिव्य पुष्पों की वर्षा होने लगी। सब प्रकार के बाजे बजने लगे। अप्सराओं के समुदाय गीत गाने लगे। शीतल, सुखद, मन्द, एवं सुगन्धयुक्त वायु चलने लगी। सन्ध्या होते ही सभी महर्षियों ने उठ कर श्रीकृष्ण, भीष्म तथा युधिष्ठिर से विदा माँगी, इसके बाद पाण्डवों सहित श्रीकृष्ण, सात्यकि, सञ्जय आदि ने सब को प्रणाम किया और सब लोग अपने-अपने स्थान को चले गये। श्रीकृष्ण और पाण्डव भी हस्तिनापुर लौट आये। (१२. ५२)।

"मधुसूदन श्रीकृष्ण सुन्दर शय्या का आश्रय ले कर सो गये। जब आधा प्रहर रात व्यतीत होना शेष रह गई तब वह जाग कर उठ बैठे और ध्यानमार्ग में स्थित होकर अपने सनातन ब्रह्मस्वरूप का चिन्तन करने लगे। इसी समय सूत-मागध और बन्दीजन वासुदेव की स्तुति करने लगे। (श्रीकृष्ण की प्रातश्चर्या का विवरण)। प्रातश्चर्या समाप्त करने के बाद श्रीकृष्ण ने सात्यकि से यह पता लगाने लिये कहा कि युधिष्ठिर भीष्म के दर्शन के लिये तैयार हो गये हैं या नहीं। तब सात्यकि ने शीघ्र ही युधिष्ठिर से कहा कि श्रीकृष्ण का रथ तैयार है और वे भीष्म के पास जाने के सम्बन्ध में उनकी सम्मति जानना चाहते हैं। युधिष्ठिर ने तत्काल अर्जुन से अपना रथ तैयार कराने के लिये कहा। उन्होंने अर्जुन से यह भी कहा कि सैनिकों आदि को साथ ले जाने की आवश्यकता नहीं है। अर्जुन द्वारा रथ तैयार करा देने पर युधिष्ठिर अपने भाइयों के साथ श्रीकृष्ण के निवास स्थान पर आये। वहाँ श्रीकृष्ण भी एक ही रथ पर बैठ कर सब शीघ्र ही उस स्थान पर आये जहाँ महर्षियों से घिरे भीष्म बाणशय्या पर सो रहे थे। भाइयों के साथ युधिष्ठिर रथ से उतर कर भीष्म के पास आये और शर-शय्या पर पड़े पितामह का दर्शन करके भय से काँप उठे। (१२. ५३)।

"जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन जी ने बताया कि भीष्म जी जब बाण-शय्या पर सो रहे थे तब वहाँ नारद आदि सिद्ध महर्षि भी पधारे थे। नारद जी ने उस समय पाण्डवों तथा उपस्थित भूपालों से कहा कि सब लोगों को चाहिये कि वे भीष्म जी से धर्म और ब्रह्म के विषय में प्रश्न करें क्योंकि अब वे सूर्य के समान शीघ्र अस्त होनेवाले हैं। नारद जी के ऐसा कहने पर सभी नरेश भीष्म के निकट आ गये। किन्तु किसी को भी भीष्म से कोई प्रश्न पूछने का साहस नहीं हुआ। तब युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण से कहा: 'आपको छोड़कर कोई ऐसा नहीं है जो पितामह से प्रश्न कर सके।' तब श्रीकृष्ण ने भीष्म से कुशल-क्षेम पूछने के बाद कहा: "अब आपके अन्तःकरण में सब प्रकार के ज्ञान प्रकाशित तो हो रहे हैं? आपके हृदय में ग्लानि तथा मन में व्याकुलता तो नहीं है?' भीष्म जी ने प्रसन्नता-पूर्वक श्रीकृष्ण से कहा: 'आपकी कृपा से मेरे शरीर की जलन, मन का मोह, थकावट, विकलता, ग्लानि तथा रोग — ये सब तत्काल दूर हो गये हैं। आपके प्रसाद से अब मैं कल्याणकारी उपदेश देने में समर्थ हूँ। तो भी मैं यह जानना चाहता हूँ कि आप स्वयं ही युधिष्ठिर को कल्याणकारी उपदेश क्यों नहीं देते? इस विषय में आपका क्या आदेश है यह शीघ्र बताइये।' श्रीकृष्ण ने तब भीष्म से कहा: 'मुझे इस जगत में आपके महान् यश की प्रतिष्ठा करनी है इसलिये मैंने अपनी विशाल बुद्धि आपको समर्पित की है। आपने देवताओं और ऋषियों की सदा उपासना की है इसलिये आपको अवश्य ही सम्पूर्ण धर्मों का उपदेश देना चाहिये।' (१२. ५४)।

"भीष्म ने युधिष्ठिर के गुणों की चर्चा और उन्हें धर्म आदि विषयक प्रश्न पूछने का आदेश दिया। श्रीकृष्ण ने भीष्म जी से कहा: 'युधिष्ठिर अत्यन्त लज्जित हैं और भय के कारण आपके निकट नहीं आ रहे हैं। जगत का संहार करने के कारण युधिष्ठिर भय से त्रस्त हो उठे हैं।' तब भीष्म ने युधिष्ठिर को सान्त्वना देते हुये कहा कि उन्हें लज्जित नहीं होना चाहिये क्योंकि उन्होंने जो कुछ किया है वह क्षत्रिय-धर्म के अनुकूल ही है। तब युधिष्ठिर ने विनम्रतापूर्वक पितामह के निकट आकर उनका चरण-स्पर्श किया। भीष्म ने युधिष्ठिर का माथा चूमने के बाद उन्हें बैठने तथा भयरहित होकर प्रश्न पूछने का आदेश दिया। (१२. ५५)।

"युधिष्ठिर ने भीष्म से कहा: 'धर्मज्ञ विद्वानों की यह मान्यता है कि राजाओं का धर्म श्रेष्ठ है किन्तु मैं इसे बहुत बड़ा भार मानता हूँ। अतः आप मुझे राजधर्म का उपदेश दीजिये। सम्पूर्ण मोक्षधर्म भी राजधर्म में निहित है। इसलिये आप सर्वप्रथम राजधर्मों के सम्बन्ध में ही उपदेश दीजिये।' तब भीष्म ने धर्म को, विधाता भगवान् श्रीकृष्ण को और सब ब्राह्मणों को नमस्कार करके सनातन धर्मों का वर्णन करते हुये कहा: राजा को सर्व-प्रथम प्रजा का रंजन करना चाहिये। देवताओं और ब्राह्मणों का पूजन करके राजा धर्म के ऋण से मुक्त होता है। राजा के लिये सत्य ही ऐसा साधन है जो उसके प्रति प्रजा का विश्वास उत्पन्न करता है। राजा को कठोरता और कोमलता दोनों का आश्रय लेना चाहिये। मनु ने अपने धर्मशास्त्रों में कहा है कि अग्नि जल से, क्षत्रिय ब्राह्मण से, और लोहा पत्थर से प्रकट हुआ है। इनका तेज अन्य सब स्थानों पर तो अपना प्रभाव दिखाता है परन्तु अपने को उत्पन्न करनेवाले कारण से टक्कर होने पर ये स्वयं ही शान्त हो जाते हैं। जब लोहा पत्थर पर चोट करता है, अग्नि जल को नष्ट करने लगती है, और क्षत्रिय ब्राह्मण से द्वेष करने लगता है तब ये तीनों ही दुःख उठाते हैं। बार्हस्पत्यशास्त्र का उद्धरण देते हुये भीष्म ने कहा कि नीच मनुष्य क्षमाशील राजा का तिरस्कार करते हैं। अतः राजा को न तो बहुत कोमल होना चाहिये और न अधिक कठोर ही। प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान और आगम — इन चारों प्रमाणों के द्वारा अपने-पराये की सदा पहचान करते रहना चाहिये। (१२. ५६)।

"राजा को सदा उद्योगशील होना चाहिये। इस विषय में शुक्राचार्य के एक श्लोक का उदाहरण देते हुये भीष्म ने कहा कि जैसे साँप बिलवासी चूहों को निगल जाता है उसी प्रकार दूसरों से युद्ध न करनेवाला राजा तथा विद्याध्ययन आदि के लिये घर छोड़कर अन्यत्र न जानेवाले ब्राह्मण को पृथिवी निगल जाती है। जो सन्धि करने के योग्य हों उन्हीं से सन्धि करनी चाहिये। जो विरोध के पात्र हैं उनका विरोध दृढ़तापूर्वक करना चाहिये। राजा, मन्त्री, मित्र, कोष, देश, दुर्ग और सेना — इन सात अङ्गों से युक्त राज्य के विपरीत जो आचरण करे वह चाहे गुरु हो या मित्र मार डालने के योग्य है। मरुत्त ने बृहस्पति के अनुसार राजा के अधिकार के विषय में कहा है कि घमण्ड में भरकर कर्तव्य और अकर्तव्य का ज्ञान न रखनेवाला तथा कुमार्ग पर चलने-वाला मनुष्य यदि अपना गुरु हो तो उसे भी दण्ड देने का सनातन विधान है। बाहु के पुत्र राजा सगरने तो पुरवासियों के हित की इच्छा से अपने ज्येष्ठ पुत्र असमञ्जा का भी त्याग कर दिया था। असमञ्जा पुरवासियों के बालकों को पकड़कर सरयू नदी में डुबा दिया करता था अतः उसके पिता ने उसे घर से बाहर निकाल दिया था। उद्दालक ने अपने पुत्र श्वेतकेतु को इसलिये त्याग दिया था कि वह ब्राह्मणों के प्रति मिथ्या और कटपपूर्ण व्यवहार किया करता था। राजा को चारों वर्णों के धर्मों की रक्षा करनी चाहिये। उसे न्याय करने में यमराज और धन-संग्रह करने में कुबेर के समान होना चाहिये। पूर्वकाल में राजा के कर्तव्य के सम्बन्ध में भार्गव ने कहा था कि 'मनुष्य पहले राजा को प्राप्त करे। उसके बाद पत्नी का परिग्रह और धन संग्रह करे। राजा के न होने पर भार्या कैसे सुरक्षित रहेगी और धन की किस प्रकार रक्षा होगी।' मनुष्य को चाहिये कि उपदेश न देनेवाले आचार्य, वेदमन्त्रों का उच्चारण न करनेवाले ऋत्विज, रक्षा न कर सकने वाले राजा, कटुवचन बोलनेवाली स्त्री, गाँव में रहने की इच्छा रखने वाले ग्वाले और जङ्गल में रहने की कामना करनेवाले नाई — इन छः व्यक्तियों का त्याग कर दे। (१२. ५७)।

"राज्यरक्षा के साधनों का वर्णन करते हुये भीष्म ने बताया कि गुप्तचर रखना, दूसरे राष्ट्रों में अपना प्रतिनिधि नियुक्त करना, सेवकों को उनके प्रति ईर्ष्या न रखते हुये समय पर वेतन और भत्ता देना, युक्ति से कर लेना, अन्याय से प्रजा के धन को न हड़पना, सत्पुरुषों का संग्रह करना, शूरता, कार्यदक्षता, सत्यभाषण, प्रजा का हितचिन्तन आदि सभी राज्य की रक्षा के

साधन हैं। देवराज इन्द्र ने उद्योग से ही अमृत प्राप्त किया था, उद्योग से ही असुरों का संहार किया था तथा उद्योग से ही देवलोक तथा इहलोक में श्रेष्ठता प्राप्त की थी। भीष्म का यह वक्तव्य सुनकर व्यास, देवस्थान, अश्म, श्रीकृष्ण, कृपाचार्य, सात्यकि आदि अत्यन्त प्रसन्न हुये और हर्षोत्फुल्ल हो भीष्म की प्रशंसा करने लगे। संध्या होने पर युधिष्ठिर आदि सब ने भीष्म जी से विदा ली और अपने अपने रथों पर आरूढ़ हो गये। उन सब ने दृषद्वती में स्नान किया और सन्ध्या, तर्पण तथा तप आदि सम्पन्न करके हस्तिनापुर में प्रवेश किया (१२. ५८)।

"दूसरे दिन, प्रातःकाल उठकर पाण्डव और यदुवंशी वीर पूर्वाह्नकाल के नित्य-कर्म पूर्ण करने के अनन्तर नगराकार विशाल रथों पर बैठकर भीष्म जी के पास पहुँचे। रात बीतने का समाचार पूछकर और व्यास आदि महर्षियों को प्रणाम करके उन सबके द्वारा अभिनन्दित हो सभी भीष्म को सब ओर से घेरकर बैठ गये। युधिष्ठिर ने भीष्म जी से राजा शब्द की उत्पत्ति के विषय में प्रश्न किया। भीष्म जी ने कहा : पहले न तो कोई राज्य था, न राजा था, और न दण्ड या दण्ड देनेवाला ही। समस्त प्रजा धर्म के द्वारा ही एक दूसरे की रक्षा करती थी। कुछ दिनों बाद सब लोग पारस्परिक संरक्षण के कार्य में महान् कष्ट का अनुभव करने लगे और उन सब पर मोह छा गया। जब सारे मनुष्य मोह के वशीभूत हो गये तब कर्तव्याकर्तव्य के ज्ञान से शून्य होने के कारण उनके धर्म का नाश हो गया। तदनन्तर सब मोह के वशीभूत लोग लोभ के अधीन हो गये। इतने में वहाँ काम नामक दूसरे दोष ने उन्हें घेर लिया। काम के वशीभूत लोगों पर राग नामक शत्रु ने आक्रमण किया जिससे सबके कर्तव्याकर्तव्य का विवेक लुप्त हो गया। इस प्रकार मनुष्यलोक में धर्म का विप्लव हो जाने पर वैदिक ज्ञान का भी लोप हो गया। तब देवताओं के मन में भय समा गया और उन लोगों ने ब्रह्मा से कल्याण का उपाय करने के लिये कहा। ब्रह्मा जी ने अपनी बुद्धि से एक लाख अध्यायों का एक ऐसा नीतिशास्त्र रचा जिसमें धर्म, अर्थ और काम का विस्तार से वर्णन है। जिसमें इन वर्गों का वर्णन हुआ वह प्रकरण त्रिवर्ग के नाम से विख्यात है। चौथा वर्ग मोक्ष है जिसके प्रयोजन और गुण इन तीनों वर्गों से भिन्न हैं (ब्रह्मा की नीति का वर्णन)। अपने शास्त्र का निर्माण करके ब्रह्मा अत्यन्त प्रसन्न हुये और उन्होंने इन्द्रादि सब देवताओं से कहा कि सम्पूर्ण जगत के उपकार तथा धर्म, अर्थ एवं काम की स्थापना के लिये दण्डविधान से युक्त उनका शास्त्र जगत की रक्षा करनेवाला है। तदनन्तर शंकर ने इस नीतिशास्त्र को ग्रहण किया और प्रजावर्ग की आयु का ह्रास होता जानकर उन्होंने ब्रह्मा के शास्त्र को संक्षिप्त किया जिससे इसका नाम वैशालाक्ष हो गया। फिर इसे इन्द्र ने ग्रहण किया। इन्द्र ने जब इसका अध्ययन किया तब इसमें १०,००० अध्याय थे। फिर उन्होंने भी इसका संक्षेप किया जिससे यह ५,००० अध्यायों का ग्रन्थ होकर बाहुदन्तक नामक नीतिशास्त्र के रूप में विख्यात हुआ। इसके बाद बृहस्पति ने इसका और संक्षेप किया। तब से इसमें ३,००० अध्याय रह गये जो बार्हस्पत्य नामक नीतिशास्त्र कहलाता है। तदनन्तर शुक्राचार्य ने १,००० अध्यायों में इसका पुनः संक्षेप किया। इस प्रकार मनुष्यों की आयु का ह्रास होता जानकर जगत् के हित के लिये महर्षियों ने इस शास्त्र का संक्षेप किया है। देवताओं ने विष्णु के पास जाकर एक सर्वश्रेष्ठ पद प्राप्त करने के अधिकारी व्यक्ति का नाम पूछा। विष्णु ने भली भाँति विचार कर अपने तेज से एक मानस पुत्र की सृष्टि की जो विरजा के नाम से विख्यात हुआ। विरजा ने संन्यास लेने का निश्चय किया। विरजा के कीर्तिमान नामक एक पुत्र हुआ जो मोक्षमार्ग का ही अवलम्बन करने लगा। कीर्तिमान के पुत्र कर्दम हुये जो तपस्या में लग गये। कर्दम के पुत्र का नाम अनङ्ग था जो प्रजा का संरक्षण करने और दण्डनीति में निपुण हुआ। अनङ्ग के पुत्र का नाम अतिबल था जो नीतिशास्त्र का ज्ञाता था। मृत्यु की एक मानसिक कन्या थी जिसका नाम सुनीता था। सुनीता ने वेन को जन्म दिया। वेन प्रजाओं पर अत्याचार करने लगा। तब ऋषियों ने मन्त्रपूत कुशों द्वारा उसे मार डाला। फिर उन ऋषियों ने ही मन्त्रोच्चार-पूर्वक वेन की दाहिनी जाँघ का मन्थन किया जिससे एक बेडौल और नाटे कद का मनुष्य उत्पन्न हुआ। उसे देखकर महर्षियों ने 'निषीद', अर्थात 'बैठ जाओ' कहा। उसी मनुष्य से निषादों, म्लेच्छों आदि का प्रादुर्भाव हुआ। तदनन्तर महर्षियों ने वेन के दाहिने हाथ का मन्थन किया जिससे एक इन्द्र के समान पुरुष प्रकट हुआ। उसे वेद-वेदान्त आदि तथा धनुर्वेद का भी पूर्ण ज्ञान था। उस वेनकुमार को दण्डनीति का स्वतः ज्ञान हो गया। ऋषियों ने उससे समस्त प्राणियों के प्रति सम-भाव रखने तथा धर्मानुकूल प्रजापालन करने के लिये कहा। उस वेनकुमार ने महर्षियों के आदेशानुसार कार्य करने की प्रतिज्ञा की। वेन के पुत्र पृथु हुये (पृथुवैन्य के कार्यों का वर्णन)। अन्त में भीष्म जी ने बताया कि पुण्य का क्षय होने पर मनुष्य स्वर्गलोक से पृथिवी पर आता है और दण्डनीति विशारद राजा के रूप में जन्म लेता है।(१२. ५९)।

"युधिष्ठिर के पूछने पर भीष्म जी ने वर्णधर्म का वर्णन करते हुये कहा कि किसी पर क्रोध न करना, सत्य बोलना, धन को बाँट कर भोगना, क्षमाभाव रखना, अपनी ही पत्नी के गर्भ से सन्तान उत्पन्न करना, बाहर-भीतर से पवित्र रहना, किसी से द्रोह न करना, सरल भाव रखना, और भरण-पोषण योग्य व्यक्ति का पालन करना — ये नौ सभी धर्मों के लिये उपयोगी धर्म हैं। तदनन्तर उन्होंने चारों वर्णों के लोगों के धर्मों का अलग-अलग विवेचन किया। उन्होंने बताया कि शूद्र के यज्ञ में स्वाहाकार, वषट्कार, तथा वैदिक मन्त्रों का प्रयोग नहीं होता। अतः शूद्र वैदिक व्रतों की दीक्षा न लेकर पाकयज्ञों द्वारा यजन करे। पैजवन नामक एक शूद्र ने ऐन्द्राग्नि यज्ञ की विधि से मन्त्रहीन यज्ञ का अनुष्ठान करके उसकी दक्षिणा के रूप में १,००,००० पूर्णपात्र दान किये थे। ब्राह्मण आदि तीनों वर्णों का जो यज्ञ है वह सब सेवा कार्य करने के कारण शूद्र का भी है। सम्पूर्ण यज्ञों में पहले श्रद्धा रूप यज्ञ का ही विधान है क्योंकि श्रद्धा सबसे बड़ा देवता है। ब्राह्मण साक्षात् यज्ञ कराने के कारण परम देवता माने गये हैं। शूद्र ऋक्, यजु और साम के ज्ञान से शून्य होता है तो भी वह प्राजापत्य कहा गया है। मानसिक संकल्प द्वारा जो भावात्मक यज्ञ होता है उसमें सभी वर्णों का अधिकार है। वैखानस मुनियों के अनुसार 'सूर्य के उदय होने पर अथवा सूर्योदय से पूर्व ही श्रद्धालु एवं जितेन्द्रिय मनुष्य जो धर्म के अनुसार अग्नि में आहुति देता है उसमें श्रद्धा ही प्रधान हेतु है। होता का किया हुआ जो हवन वायुदेवता के उद्देश्य से होता है वह स्कन्नसंज्ञक होम प्रथम है और उससे भिन्न जो स्कन्न होम है वह अन्तिम या सर्वोत्कृष्ट है।' तीनों लोकों में यज्ञ के समान कुछ भी नहीं है (१२. ६०)।

"तदनन्तर भीष्म जी ने आश्रमधर्म का वर्णन करते हुये बताया कि नारायण के एक श्लोक के अनुसार गृहस्थ-पुरुष इस लोक में सत्य, सरलता, अतिथिसत्कार, धर्म, अर्थ, अपनी पत्नी के प्रति अनुराग, तथा सुख का सेवन करे। ऐसा होने पर ही उसे परलोक में भी सुख प्राप्त होते हैं। (१२. ६१)।

"भीष्म जी ने बताया कि चारों आश्रम ब्राह्मण के लिये ही विहित हैं। अन्य तीनों वर्णों के लोग उन सभी आश्रमों का अनुसरण नहीं करते। तदनन्तर उन्होंने ब्राह्मणों के कर्तव्याकर्तव्य का वर्णन किया (१२. ६२)।

वर्णाश्रमधर्म का वर्णन करते हुये भीष्मजी ने राजधर्म की श्रेष्ठता का प्रतिपादन किया। उन्होंने कहा : धर्म के ज्ञाता आर्य पुरुषों का कथन है कि अन्य समस्त धर्मों का आश्रय तो अल्प है, फल भी अल्प होता है, परन्तु क्षात्रधर्म का आश्रय भी महान है और उसके फल भी बहुसंख्यक एवं परम कल्याणरूप हैं, अतः इसके समान दूसरा कोई धर्म नहीं है। धर्मात्मा पुरुष यदि राजधर्म से रहित हो जायँ तो धर्म का अनुसन्धान करते हुये भी वे चोर-डाकुओं के उत्पात से स्वधर्म के प्रति आदर का भाव नहीं रख पाते और इस प्रकार जगत की हानि के कारण बन जाते हैं। अतः राजधर्म ही सर्वश्रेष्ठ है। (१२. ६३)।

"राजधर्म की श्रेष्ठता का वर्णन करते हुये भीष्मजी ने इन्द्र रूपधारी

विष्णु और मान्धाता के संवाद का उल्लेख किया और कहा : पहले यह सारा जगत दानवता के सागर में निमग्न हो कर उच्छृङ्खल हो चला था। उन्हीं दिनों मान्धता नामक एक पराक्रमी नरेश हुये थे जिन्होंने भगवान विष्णु का दर्शन पाने की इच्छा से एक यज्ञ का अनुष्ठान किया था। जिस समय उस यज्ञ में मान्धाता ने पृथिवी पर मस्तक रख कर विष्णु के चरणों में प्रणाम किया उस समय श्रीहरि ने इन्द्र का रूप धारण करके उन्हें दर्शन दिया। उन इन्द्र रूपधारी भगवान् का राजा ने पूजन किया। तदनन्तर उनके और इन्द्र के बीच विष्णु के विषय में संवाद आरम्भ हुआ। इन्द्र ने राजा से पूछा कि वे विष्णु का दर्शन क्यों करना चाहते हैं। उन्हें तो साक्षात् ब्रह्माजी तक नहीं देख पाते। इन्द्र ने कहा कि वे राजा की सम्पूर्ण इच्छायें पूर्ण कर सकते हैं। तब मान्धाता ने कहा : 'मैं आपकी दया से विष्णु का दर्शन अवश्य प्राप्त कर लूँगा। विशाल एवं अप्रमेय क्षात्र-धर्म के प्रभाव से मैंने उत्तम लोक प्राप्त किये हैं परन्तु आदिदेव विष्णु से जिस धर्म की प्रवृत्ति हुई है उसका आचरण करना मैं नहीं जानता।' इन्द्र ने कहा : 'राजन्! विष्णु से तो पहले राजधर्म ही प्रवृत्त हुआ है। अन्य सभी धर्म उसी के अंग हैं। क्षात्र-धर्म ही सबसे श्रेष्ठ है। पूर्वकाल में विष्णु ने क्षात्रधर्म का आश्रय लेकर शत्रुओं का दमन करके महर्षियों आदि की रक्षा की थी। इस संसार में क्षात्रधर्म ही सबसे श्रेष्ठ, सनातन, नित्य, अविनाशी, मोक्ष तक पहुँचाने वाला और सर्वतोमुखी है।' (१२. ६४)।

"इन्द्ररूपी विष्णु और मान्धाता का संवाद : इन्द्र ने कहा : 'प्राचीन-काल में विष्णु ने ही राजधर्म को प्रचलित किया था और सत्पुरुषों द्वारा वह भलीभाँति आचरण में लाया गया। अन्यायपूर्वक क्षत्रियधर्म की अव-हेलना करने से प्रवृत्ति और निवृत्ति धर्म भी उसी प्रकार बीच में नष्ट हो जाते हैं जैसे अन्धा मनुष्य मार्ग में नष्ट हो जाता है।' इस संवाद का उदाहरण देकर भीष्मजी ने युधिष्ठिर को भी राजधर्म का पालन करने के लिये प्रेरित किया। (१२. ६५)।

"युधिष्ठिर के पूछने पर भीष्मजी ने राजधर्म के पालन से चारों आश्रमों के धर्म का फल मिलने का उल्लेख किया (१२. ६६)।

"युधिष्ठिर ने पूछा कि समूचे राष्ट्र और उस राष्ट्र में निवास करने-वाले प्रत्येक नागरिक का मुख्य कर्तव्य क्या है। भीष्मजी ने कहा : 'राष्ट्र अथवा राष्ट्रवासी प्रजावर्ग का सबसे प्रधान कार्य योग्य राजा का अभिषेक करना है क्योंकि राजा के बिना राष्ट्र निर्बल होता है। श्रुति कहती है कि प्रजा, जो राजा का वरण करती है, वह मानों इन्द्र का ही वरण करती है। पूर्वकाल में राजा के न रहने पर प्रजावर्ग के लोग परस्पर एक दूसरे को लूटते हुये नष्ट हो गये थे। तब सब ने मिल कर आपस में नियम बनाया कि प्रजावर्ग में जो भी निष्ठुर बोलनेवाला, भयानक दण्ड देनेवाला, परस्त्रीगामी तथा दूसरे के धर्म का अपहरण करनेवाला हो उसे सब को मिल कर समाज से बहिष्कृत कर देना चाहिये। इस नियम को बना कर लोग सुख से रहने लगे। कुछ दिनों तक तो इससे काम चलता रहा किन्तु पुनः अव्यवस्था फैल गई। तब सम्पूर्ण प्रजा ने मिल कर ब्रह्मा से अपनी रक्षा का निवेदन किया। ब्रह्माजी ने मनु को राजा होने की आज्ञा दी परन्तु मनु ने उन प्रजाओं को स्वीकार नहीं किया।' तब समस्त प्रजाओं ने मनु से कहा कि वे सब उसी प्रकार मनु का अनुसरण करेंगे जिस प्रकार देवता लोग इन्द्र का करते हैं। प्रजा के लोगों ने मनु से कहा : 'प्रजा का सहयोग पा कर आप एक प्रबल, दुर्जय और प्रतापी राजा होंगे। आप जैसे राजा द्वारा सुरक्षित हुई प्रजायें जो-जो धर्म करेंगी उसका चतुर्थ भाग आपको मिलता रहेगा।' प्रजा के द्वारा आश्वस्त हो कर मनु ने उनका राजा होना स्वीकार कर लिया। भीष्मजी ने बताया कि इस प्रकार की सहायता प्राप्त करके राजा दुर्धर्ष एवं प्रजा की रक्षा करने में समर्थ हो जाता है। राजा को उपकार करनेवालों के प्रति कृतज्ञ और अपने भक्तों पर सुदृढ़ स्नेह रखने वाला होना चाहिये। उसे इन्द्रियों को वश में रखना चाहिये तथा स्वभाव से मृदुभाषी, मधुर और सरल होना चाहिये। (१२. ६७)।

"युधिष्ठिर ने जानना चाहा कि जो मनुष्यों का अधिपति है उस राजा को ब्राह्मणलोग देवस्वरूप क्यों बताते हैं। भीष्म ने इस विषय में राजा वसुमना और बृहस्पति के संवाद का उल्लेख करते हुये कहा कि पूर्वसमय में कोसलराज वसुमना के पूछने पर बृहस्पति ने राजाविहीन अराजकता के दुर्गुणों की चर्चा करते हुये प्रजा की रक्षा के लिये राजा का होना आवश्यक बताया। बृहस्पति ने कहा था कि राजा प्रजा का गुरुतर हृदय, गति, प्रतिष्ठा और उत्तम सुख है। राजा का आश्रय लेनेवाले मनुष्य इस लोक और परलोक पर भी पूर्णतः विजय प्राप्त कर लेते हैं। राजा भी इन्द्रिय-संयम, सत्य और सौहार्द के साथ इस पृथिवी का भली भाँति शासन करके बड़े-बड़े यज्ञों के अनुष्ठान द्वारा महान यश का भागी हो कर स्वर्गलोक में सनातन स्थान प्राप्त कर लेता है। बृहस्पति के ऐसा कहने पर कोसल नरेश वसुमना अपनी प्रजाओं का प्रयत्नपूर्वक पालन करने लगे (१२. ६८)।

"भीष्मजीने राजा के प्रधान कर्तव्यों का तथा जब कोई शत्रु राज्य पर आक्रमण करे तब राजा के कर्तव्य आदि का वर्णन करते हुये दण्डनीति के द्वारा युगों के निर्माण का भी वर्णन किया। इस सम्बन्ध में उन्होंने बृहस्पति के इन श्लोकों का उल्लेख किया; 'सम्पूर्ण कर्तव्यों को पूरा करके पृथिवी का अच्छी तरह पालन तथा नगर एवं राष्ट्र की प्रजा का संरक्षण करने से राजा परलोक में सुख पाता है। जिस राजा ने प्रजा का अच्छी तरह से पालन किया है उसे तपस्या से क्या प्रयोजन। उसे यज्ञों के अनुष्ठान की भी क्या आवश्यकता है। वह तो स्वयं ही सम्पूर्ण धर्मों का ज्ञाता है।' दण्डनीति से युगों के निर्माण की चर्चा करते हुये भीष्मजी ने कहा कि राजा ही काल का कारण होता है। जिस समय राजा दण्डनीति का पूरा-पूरा प्रयोग करता है उस समय पृथिवी पर पूर्णरूप से सत्ययुग का आरम्भ हो जाता है। इस प्रकार राजा से प्रभावित हुआ समय ही सत्ययुग की सृष्टि कर देता है। जब राजा दण्डनीति के एक-चौथाई भाग को छोड़ कर केवल तीन अंशों का पालन करता है तब त्रेता युग प्रारम्भ हो जाता है। जब राजा दण्डनीति के आधे भाग का त्याग कर देता है तब द्वापर और जब सम्पूर्ण दण्डनीति का त्याग कर देता है तब कलियुग का आरम्भ होता है। (१२. ६९)।

"राजा को इहलोक और परलोक में सुख की प्राप्ति करानेवाले छत्तीस गुणों का वर्णन किया। भीष्म का यह उपदेश सुन कर पाण्डवों से और प्रधान राजाओं से घिरे राजा युधिष्ठिर ने भीष्मजी को प्रणाम किया और उन्होंने जैसा बताया था वैसा ही आचरण करने लगे। (१२. ७०)।

"युधिष्ठिर के पूछने पर भीष्म ने बताया कि धर्मपूर्वक प्रजा का पालन ही राजा का महान् धर्म है। (१२. ७१)। तदनन्तर उन्होंने बताया कि राजा को चाहिये कि वह एक ऐसे विद्वान ब्राह्मण को अपना पुरोहित बनाये जो उसके सत्कर्मों की रक्षा करे और उसे असत् कर्म से दूर रक्खे। इस विषय में उन्होंने पुरूरवा तथा वायु के संवाद का उल्लेख किया। पुरूरवा ने वायु से ब्राह्मण आदि तीनों वर्णों की उत्पत्ति के विषय में बताने का अनुरोध किया। मातरिश्वा (वायु) ने बताया कि ब्रह्मा ने मुख से ब्राह्मण, दोनों भुजाओं से क्षत्रिय तथा दो ऊरुओं से वैश्य की सृष्टि की थी। इसके बाद तीनों वर्णों की सेवा के लिये ब्रह्माजी ने अपने दोनों पाँवों से चौथे वर्ण शूद्र की रचना की थी। पुरूरवा ने यह जानना चाहा कि यह पृथिवी ब्राह्मण की है अथवा क्षत्रिय की। तब वायुदेव मातरिश्वा ने बताया कि इस पृथिवी पर जो कुछ है वह ब्राह्मण का है। ब्राह्मण के बाद ही पृथिवी क्षत्रिय का पतिरूप में वरण करती है। क्षत्रियधर्म में तत्पर रहनेवाला, अहंकारशून्य तथा पुरोहित की बात सुनने के लिये उत्सुक उतने ही सम्मान को प्राप्त हुआ विद्वान नरेश चिरकाल तक यशस्वी बना रहता है; तथा राजपुरोहित उसके सम्पूर्ण धर्म का भागीदार होता है। इस प्रकार राजा के आश्रय में रहकर सारी प्रजा सदाचार-परायण, अपने-अपने धर्म में तत्पर और सब ओर से निर्भय हो जाती है (१२. ७२)।

"भीष्म ने बताया कि राजा को अविलम्ब एक विद्वान एवं बहुश्रुत ब्राह्मण को पुरोहित बना लेना चाहिये। जिस राजा का पुरोहित धर्मात्मा एवं परामर्श देने में कुशल होता है, और जो राजा स्वयं भी ऐसे ही गुणों

से सम्पन्न होता है उसकी प्रजा का सब ओर से भला होता है। वेदवेत्ता विद्वानों का मत है कि सबसे पहले ब्राह्मण की ही सृष्टि हुई है, अतः ज्येष्ठ तथा उत्तम कुल में उत्पन्न होने के कारण प्रत्येक उत्कृष्ट वस्तु पर पहले ब्राह्मण का ही अधिकार होता है। ब्राह्मण क्षत्रिय को बढ़ाता है और क्षत्रिय से ब्राह्मण की उन्नति होती है अतः राजा को विशेषरूप से सदा ही ब्राह्मणों की पूजा करनी चाहिये। (१२. ७३)।

"राष्ट्र का योगक्षेम राजा के अधीन बताया जाता है, परन्तु राजा का योगक्षेम पुरोहित के अधीन है। इस विषय में भीष्म ने राजा मुचुकुन्द और कुबेर के संवाद का उल्लेख किया। राजा मुचुकुन्द ने इस पृथिवी को जीतकर अपने बल की परीक्षा लेने के लिये कुबेर पर चढ़ाई की। कुबेर ने उनका सामना करने के लिये राक्षसों की सेना भेजी जो मुचुकुन्द की सेना को कुचलने लगी। राजा मुचुकुन्द ने अपने पुरोहित को इसके लिये उलाहना दिया। तब वसिष्ठ जी ने अपनी तपस्या द्वारा उन राक्षसों का विनाश कर डाला। कुबेर ने अपनी सेना के नष्ट होने पर मुचुकुन्द से कहा कि उन्होंने अपने बाहुबल से नहीं बल्कि ब्राह्मणबल से उनकी सेना को क्यों नष्ट कराया। तब राजा मुचुकुन्द ने कहा कि ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों का उत्पत्तिस्थान एक ही है। दोनों के बल तथा प्रयत्न यदि अलग-अलग हो जाँय तो संसार की रक्षा नहीं हो सकती। जो धर्मज्ञ राजा पहले ब्राह्मण का आश्रय लेकर उसकी सहायता से राज्य-कार्य में प्रवृत्त होता है वह बिना जीती हुई पृथिवी को भी जीतकर महान् यश का भागी होता है (१२. ७४)।

"भीष्म जी ने बताया कि राजा को सदा ही दानशील, यज्ञशील उपवास और तपस्या में तत्पर एवं प्रजापालन में संलग्न रहना चाहिये। परन्तु केवल दया एवं कोमलता से ही राज्य का शासन नहीं किया जा सकता। जो राजा निर्भय, शूरवीर, प्रहार में कुशल, दयालु, जितेन्द्रिय, प्रजावत्सल, और दानी होता है उसी का आश्रय लेकर मनुष्य जीवन-निर्वाह करते हैं। (१२. ७५)।

"उत्तम और अधम ब्राह्मणों के साथ राजा के व्यवहार की चर्चा करते हुये बताया कि जो विद्वान् उत्तम लक्षणों से सम्पन्न तथा सर्वत्र समान दृष्टि रखनेवाले हैं ऐसे ब्राह्मण ब्रह्मा के समान कहे गये हैं। जो अपने जातीय कर्म से हीन हो कुत्सित कर्मों में लगकर ब्रह्मणत्व से भ्रष्ट हो चुके हैं, ऐसे लोग ब्राह्मणों में शूद्र के समान होते हैं (१२. ७६)।

"ब्राह्मण के सिवा अन्य सभी वर्णों के धन का स्वामी राजा होता है। इनमें भी जो ब्राह्मणों अपने वर्ण के विपरीत कर्म करते हैं उनके धनपर राजा का ही अधिकार होता है। इस विषय में भीष्म ने राक्षस के द्वारा अपहृत होते समय केकयराज द्वारा प्रकट उद्गारों का वर्णन किया। एक समय केकयराज वन में रहकर तप और स्वाध्याय में रत थे। उस समय एक दिन एक राक्षस ने उन्हें पकड़ लिया। यह देखकर केकयराज ने राक्षस से कहा : 'मेरे राज्य में एक भी चोर, कंजूस, शराबी अथवा अग्निहोत्र और यज्ञ का त्याग करनेवाला नहीं है तो भी तुम्हारा मेरे शरीर में प्रवेश कैसे हो गया। मेरे राज्य में चारों वर्गों के लोग अपने-अपने वर्णधर्म का पालन करते रहते हैं। मैं भी देवता, पितर तथा अतिथि को उनका भाग दिये बिना कभी भोजन नहीं करता। राज्यसिंहासन पर स्थित हो कर भी मैंने सारा राज्यकर्म कर्तव्य-पालन की दृष्टि से ही किया है और कभी सत्य से विचलित नहीं हुआ। मेरे शरीर में दो अंगुल भी ऐसा स्थान नहीं है जो धर्म के लिये युद्ध करते समय अस्त्र-शस्त्रों से घायल न हुआ हो। इन सबके विपरीत भी तुमने मेरे भीतर प्रवेश कैसे किया।' तब राक्षस ने राजा को सभी अवस्थाओं में धर्म पर ही दृष्टि रखनेवाला देखकर उन्हें मुक्त कर दिया। इस संवाद का उल्लेख करके भीष्म जी ने कहा कि ब्राह्मणों की सदा रक्षा करनी चाहिये। ठीक-ठीक व्यवहार करनेवाले राजाओं को ब्रह्मणों का आशीर्वाद प्राप्त होता है। जो राजा अपने नगर और राष्ट्र की प्रजा के साथ धर्मपूर्ण व्यवहार करता है वह इस लोक में सुख भोगकर अन्त में इन्द्रलोक प्राप्त कर लेता है (१२. ७७)।

"भीष्म ने कहा कि आपत्तिकाल में ब्राह्मण के लिये वैश्यवृत्ति से निर्वाह करने की छूट, तथा लुटेरों से अपनी और दूसरों की रक्षा करने के लिये सभी जातियों को शस्त्र धारण करने का अधिकार है (१२. ७८)। तदनन्तर भीष्म ने ऋत्विजों के लक्षण, यज्ञ और दक्षिणा के महत्त्व तथा तप की श्रेष्ठता का वर्णन किया। (१२. ७९)। उन्होंने राजा के लिये मित्र और अमित्र की पहचान के आधार बताते हुये उन सब के साथ नीतिपूर्ण व्यवहार और मन्त्रियों के लक्षणों का भी विस्तार से वर्णन किया (१२. ८०)।

"युधिष्ठिर ने पूछा : 'यदि सजातीय बन्धुओं और सगे सम्बन्धियों के समुदाय को पारस्परिक स्पर्धा के कारण वश में करना असम्भव हो जाय, कुटम्बीजनों में ही यदि दो दल हों तो एक का आदर करने से दूसरा दल रुष्ट हो जाय, तो ऐसी परिस्थिति में उन सब के चित्त को किस प्रकार वश में किया जा सकता है।' भीष्म ने कहा : इस विषय में मनीषि पुरुष देवर्षि नारद और श्रीकृष्ण के संवादरूप इतिहास का उदाहरण दिया करते हैं। एक समय भगवान् श्रीकृष्ण ने नारद से कहा : 'जो व्यक्ति सुहृद न हो, जो सुहृद तो हो किन्तु पण्डित न हो, तथा जो सुहृद और पण्डित तो हो किन्तु अपने मन को वश में न कर सकता हो — ये तीनों ही परम मन्त्रणाओं को सुनने या जानने के अधिकारी नहीं हैं। मेरे बड़े भाई बलराम में असीम बल है और वे उसी में मस्त रहते हैं। छोटे भाई गद में सुकुमारता है, और बेटा प्रद्युम्न अपने रूप-सौन्दर्य के अभिमान से ही मतवाला बना रहता है। इस प्रकार इन सहायकों के होते हुये भी मैं असहाय हूँ। आहुक और अक्रूर ने आपस में वैमनस्य रखकर मुझे इस प्रकार अवरुद्ध कर दिया है कि मैं इनमें से किसी एक का पक्ष नहीं ले सकता। इस प्रकार मैं सदा उभय पक्ष का हित चाहने के कारण दोनों ओर से कष्ट पाता रहता हूँ। अतः मेरा और जाति-भाइयों का जिस प्रकार कल्याण हो वह उपाय बताने की कृपा करें।' तब नारदजी ने कहा : आपत्तियाँ दो प्रकार की होती हैं — एक बाह्य और दूसरी आभ्यान्तर। ये दोनों भी स्वकृत और परकृत भेद से दो-दो प्रकार की होती हैं। आप एक ऐसे कोमल शस्त्र से, जो लोहे का बना हुआ न होने पर भी हृदय को छेद डालने में समर्थ है, परिमार्जन और अनुमार्जन करके कलहप्रिय कुटुम्बियों को मूक बना सकते हैं। अपनी शक्ति के अनुसार सदा अन्नदान करना, सहनशीलता, सरलता, कोमलता और यथायोग्य आदर-सत्कार ही बिना लोहे का बना हुआ शस्त्र है। जब सजातीय बन्धु कड़वी तथा ओछी बात कहें तब मधुर वचन बोलकर उनके हृदय, वाणी तथा मन को शान्त करना चाहिये। बुद्धि, क्षमा और इन्द्रिय-निग्रह के बिना तथा धन वैभव के त्याग किये बिना कोई गण अथवा संघ किसी बुद्धिमान् पुरुष की आज्ञा के अधीन नहीं रह सकता। सन्धि, निग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव, और समाश्रय — इन छहों गुणों के यथासमय प्रयोग से तथा शत्रु पर चढ़ाई करने के लिये यात्रा करने पर वर्तमान या भविष्य में सफलता प्राप्त की जा सकती है।' (१२. ८१)।

"भीष्म ने कहा : जो कोई मनुष्य राजा के धन की वृद्धि करे उसकी राजा को सदा रक्षा करनी चाहिये। इस विषय पर कालकवृक्षीय मुनि द्वारा कोसलराज को दिये गये उपदेश का उदाहरण देते हुये भीष्म ने बताया कि राजा क्षेमदर्शी कोसल प्रदेश के राजा थे। उन्हीं दिनों कालकवृक्षीय मुनि उस राज्य में पधारे। उन्होंने क्षेमदर्शी के सम्पूर्ण राज्य में एक कौवे को पिंजड़े में बाँधकर सावधानी से चारों ओर चक्कर लगाया। वे सबसे कहते थे कि 'तुमलोग मुझसे वायसी विद्या सीखो। मैंने इसे सीखा है, इसलिये कौवा मुझसे भूत, भविष्य और वर्तमान की सब बातें बता देता है।' यह कहते हुये वे मुनि सारे राज्य में घूमते और राजकार्य में लगे हुये कर्मचारियों के दुष्कर्मों को अपनी आँखों देखते रहे। इस प्रकार कर्मचारियों द्वारा राजा की सम्पत्ति के अपहरण होने की सारी घटनाओं का पता लगाकर वह महर्षि अपने को सर्वज्ञ घोषित करते हुये कौए के साथ राजा से मिलने के लिये आये। उन्होंने कौवे के कथन का हवाला देते हुये राजा के विभिन्न दोषों को बताया। इसी प्रकार राजा के खजाने से चोरी करनेवाले कर्मचारियों को भी बताया। मुनि द्वारा तिरस्कृत कर्मचारियों ने उनके कौए को बाणों से

मार डाला। तब उन्होंने राजा से अभय की याचना करके कर्मचारियों के दुष्कर्मों से राजा को सतर्क किया। उन्होंने राजधर्म सम्बन्धी उपदेश देते हुये राजा से कहा कि वे अपराधियों को दण्ड दें और उनके कर्मानुसार उनका वध भी करें इस प्रकार कालकवृक्षीय मुनि ने अपने बुद्धिबल से यशस्वी कोसलराज को भूमण्डल का एकच्छत्र सम्राट बना दिया और उनके द्वारा अनेक उत्तम यज्ञों को सम्पन्न कराया। (१२. ८२)।

"भीष्मजी ने सभासदों आदि के लक्षणों, गुप्त सलाह सुनने के अधिकारियों और अनधिकारियों, तथा गुप्तमन्त्रणा की विधि एवं स्थान का निर्देश करते हुये युधिष्ठिर से कहा कि लज्जाशील, जितेन्द्रिय, सत्यवादी, सरल, और किसी विषय पर अच्छी तरह प्रवचन करने में समर्थ लोगों को ही सभासद बनाना चाहिये। उन्होंने विश्वासपात्र व्यक्तियों, परामर्शदाताओं आदि की प्रकृति पर भी प्रकाश डाला। (१२. ८३)। तदनन्तर उन्होंने इन्द्र और बृहस्पति के संवाद में सान्त्वनापूर्ण मधुर वचन बोलने के महत्व का प्रतिपादन किया। (१२. ८४)। उन्होंने राजा की व्यावहारिक नीति, मन्त्रिमण्डल के संगठन, दण्ड के औचित्य तथा दूत, द्वारपाल, शिरोरक्षक, मन्त्री और सेनापति के गुणों की चर्चा की। (१२. ८५)। उन्होंने राजा के निवासयोग्य नगर एवं दुर्ग का वर्णन करते हुये प्रजापालन-सम्बन्धी व्यवहार तथा तपस्वीजनों के समादर का निर्देश किया (१२. ८६)। तदनन्तर उन्होंने राष्ट्र की रक्षा तथा वृद्धि के उपाय बताये (१२. ८७)। प्रजा से कर लेने तथा कोश संग्रह करने के प्रकारों पर प्रकाश (१२. ८८)। राजा के कर्तव्यों का वर्णन करते हुये भीष्मजी ने ब्राह्मणों को सर्वप्रमुख स्थान देने पर बल दिया। (१२. ८९)।

"भीष्म ने उतथ्य द्वारा मान्धाता को दिये गये उपदेशों का वर्णन करते हुये कहा : राजा का धर्म पालन और प्रचार करने के लिये होता है, विषय-सुखों का उपभोग करने के लिये नहीं। परम धर्मात्मा और श्रीसम्पन्न राजा धर्म का साक्षात् स्वरूप कहलाता है। लोक और परलोक दोनों को दृष्टि में रख कर महर्षियों ने राजा नामक महान शक्तिशाली मनुष्य की सृष्टि की है। जिसमें धर्म विराज रहा हो उसी को राजा कहते हैं और जिसमें धर्म का लय हो गया हो उसे देवता लोग वृषल मानते हैं। वृष नाम भगवान धर्म का है। जो धर्म के विषय में 'अलम्' कह देता है उसे 'वृषल' समझा जाता है। अतः धर्म की सदा वृद्धि करनी चाहिये। धर्म का मूल है ब्राह्मण। अतः ब्राह्मणों का सदा सम्मान करना चाहिये। राजा को दर्प और अधर्म से बचना चाहिये। मतवाले, प्रमादी, बालक तथा विशेषतः पागलों से राजा को बचना चाहिये। जो राजा अपनी रक्षा नहीं कर सकता वह प्रजा की भी रक्षा नहीं कर सकता। जब राजा धर्म को छोड़कर प्रमाद में पड़ जाता है तब मनुष्यों में से एक भी अपने धन को अपना समझ कर स्थिर नहीं रह सकता। (१२. ९०)।

"उतथ्य ने उपदेश देते हुये आगे कहा कि राजा को धर्म का आचरण करना चाहिये और मेघ को समय पर वर्षा करते रहना चाहिये। जब राजा प्रमादी हो जाता है तब गार्हपत्य, आहवनीय और दक्षिणाग्नि—ये तीन अग्नि; ऋक्, यजु और साम—ये तीन वेद एवं दक्षिणाओं के साथ सम्पूर्ण यज्ञ भी विकृत हो जाते हैं। धर्मात्मा राजा प्रजा का जीवनदाता और पापात्मा उसका विनाश करनेवाला होता है। जैसे यमराज सभी प्राणियों पर समान रूप से शासन करते हैं। उसी प्रकार राजा को भी बिना किसी भेदभाव के समस्त प्रजाओं पर विधिपूर्वक नियन्त्रण रखना चाहिये। देवता, ऋषि, पितर और गन्धर्व इहलोक और परलोक में भी धर्मपरायण राजा के यश का गान करते हैं। उतथ्य के इस प्रकार उपदेश देने पर मान्धाता ने निःशंक होकर उनकी आज्ञा का पालन किया और सम्पूर्ण पृथिवी का एकछत्र राज्य प्राप्त कर लिया। (१२. ९१)।

"राजा के धर्माचरण के विषय में भीष्म ने वामदेवजी द्वारा वसुमना को दिये गये उपदेश का वर्णन करते हुये कहा : राजा वसुमना से वामदेवजी ने कहा कि जो राजा धर्म को अर्थसिद्धि की अपेक्षा श्रेष्ठ मानता है वही धर्म के कारण अत्यधिक शोभा पाता है। जो दुष्ट एवं पापिष्ठ मन्त्रियों की सहायता से धर्म को हानि पहुँचाता है वह सब लोगों का वध्य हो जाता है। राजा को चाहिये कि वह सदा धर्म, अर्थ, काम, बुद्धि और मित्रों से सम्पन्न होने पर भी अपने को पूर्ण न माने—सादा अपने संग्रह को बढ़ाने की चेष्टा करे। जो राजा धर्म के विषय में गुरु को प्रधान मान कर उनके उपदेश के अनुसार चलता है, जो अर्थ सम्बन्धी सारे कार्यों को स्वयं ही देखता है, तथा सब प्रकार के लाभों में धर्म को ही प्रधान लाभ समझता है वह चिरकाल तक सुख का उपभोग करता है (१२. ९२)।

"तदनन्तर वामदेवजी ने राजोचित व्यवहारों का वर्णन किया (१२. ९३)। वामदेव के उपदेश में राजा और राज्य के लिये हितकर व्यवहारों की चर्चा। (१२. ९४)। विजयाभिलाषी राजा के धर्मानुकूल व्यवहार तथा युद्धनीति का वर्णन (१२. ९५)।

"भीष्मजी ने वामदेवजी के उक्त उपदेशों की चर्चा करने के बाद राजा के छलरहित और धर्मयुक्त व्यवहारों की प्रशंसा करते हुये कहा : किसी भी भूपाल को अधर्म के द्वारा पृथिवी पर विजय प्राप्त करने की इच्छा कभी नहीं करनी चाहिये। जो राजा ऋत्विज, पुरोहित, आचार्य तथा अन्यान्य पूजा के पात्र शास्त्रों का सत्कार करता है वही लोकगति को जाननेवाला कहा जाता है। इसी व्यवहार से देवराज इन्द्र ने राज्य पाया था और इसी से भूपालगण स्वर्ग पर विजय कर सकते हैं। पूर्वकाल में राजा प्रतर्दन महासमर में विजय प्राप्त करके पराजित राजा की भूमि को छोड़ कर शेष सारा धन, अन्न और ओषध अपनी राजधानी में ले आये। राजा दिवोदास अग्निहोत्र, यज्ञ का अङ्गभूत हविष्य तथा भोजन भी हर लाये थे। इसी से वे तिरस्कृत हुये। जिस राजा को अपना वैभव बढ़ाने की इच्छा हो, वह सम्पूर्ण विद्याओं के उत्कर्ष द्वारा विजय पाने की इच्छा करे; दम्भ या पाषण्ड द्वारा नहीं। (१२. ९६)।

"युधिष्ठिर ने यह जानना चाहा कि राजा को किस प्रकार कर्म से पुण्यलोक की प्राप्ति होती है। भीष्म ने कहा : पापियों को दण्ड देने और सत्पुरुषों को आदरपूर्वक अपनाने से तथा यज्ञों का अनुष्ठान और दान करने से राजा लोग सब प्रकार के दोषों से छूटकर निर्मल और शुद्ध हो जाते हैं। युद्ध में बाणों से पीड़ित हुआ क्षत्रिय जो-जो दुःख सहता है उस-उस कष्ट के द्वारा उसके तप की ही उत्तरोत्तर वृद्धि होती है। वीर क्षत्रियों का घर में मरण होना प्रशंसा की बात नहीं है। क्षत्रियों को तो चाहिये कि अपने सजातीय बन्धुओं से घिरकर समराङ्गण में महान् संहार करता हुआ शस्त्रों से अत्यन्त पीड़ित होकर प्राणों का परित्याग करे। ऐसा शूरवीर इन्द्र के समान लोक का अधिकारी होता है। (१२. ९७)।

"इन्द्र और अम्बरीष के संवाद में नदी और यज्ञ के रूपकों का वर्णन तथा समरभूमि में जूझते हुये मारे जानेवाले वीरों को उत्तम लोकों की प्राप्ति का उल्लेख करते हुये भीष्म जी ने कहा : 'नाभागपुत्र अम्बरीष ने अत्यन्त दुर्लभ स्वर्गलोक में जाकर देखा कि उनका सेनापति देवलोक में इन्द्र के साथ विराजमान है। अपने सेनापति को अपने से भी ऊपर होकर जाते देखकर अम्बरीष ने इन्द्र से इसका कारण पूछा। तब इन्द्र ने अम्बरीष से कहा : 'नरेश्वर ! पूर्वकाल में जब आप पृथिवी का पालन कर रहे थे तब आपके सेनापति सुदेव ने जो पराक्रम किया था उससे आप परिचित हैं। उन दिनों आपके तीन शत्रु थे — संयम, वियम, और सुयम। उन शक्तिशाली शत्रुओं को सुदेव ने ही पराजित किया था। जब आप अश्वमेध यज्ञ कर रहे थे उन्हीं दिनों उक्त तीनों शत्रुराक्षसों ने आपकी समस्त प्रजा को बन्दी बना लिया था। उस समय सुदेव ने राक्षसों की प्रबल सेना को देखकर आपकी सेना को वापस करके रुद्रदेव का स्तवन किया था। वह रुद्रदेव की सेवा में अपना मस्तक काटकर ज्योंही अर्पित करने को हुआ त्योंही रुद्र ने प्रकट होकर सुदेव की हितसाधना के लिये धनुर्वेद को बुलाकर रथ, हाथी और घोड़ों से भरी सेना का आवाहन किया। उन्होंने उस रथ को भी वहाँ बुला दिया जिस बैठकर त्रिपुर का नाश किया था। अपने अस्त्र-शस्त्र भी सुदेव को देकर उन्होंने सुदेव से कहा: 'तुम इस रथ के द्वारा देवताओं और असुरों के लिये भी दुर्जेय हो गये हो। परन्तु किसी माया

से मोहित होकर अपना पैर भूमि पर न रखना। यदि तुम इस पर बैठे रहोगे तो शत्रु पर विजय प्राप्त कर लोगे।' तत्पश्चात सुदेव ने उस रथ के द्वारा समस्त राक्षसों को जीतकर प्रजाओं को भी मुक्त करा दिया। अन्त में विपम के साथ बाहुयुद्ध करते समय वह स्वयं भी मारा गया किन्तु साथ ही विपम को भी मार डाला। इसी से उसने इतनी उच्चगति प्राप्त की है।' इन्द्र का यह वचन सुनकर राजा अम्बरीष यह मान गये कि योद्धाओं को स्वतः सिद्धि प्राप्त होती है। (१२. ९८)।

भीष्म जी ने शूरवीरों को स्वर्ग और कायरों को नरक की प्राप्ति के विषय में मिथिलेश्वर जनक के इतिहास का उल्लेख करके युधिष्ठिर से कहा कि तीनों लोकों में शूरवीरता से बढ़कर दूसरी कोई वस्तु नहीं है। शूरवीर सबका पालन करता है और सारा जगत उसी के आधार पर टिका हुआ है। (१२. ९९)।

"सैन्य-संचालन की रीति-नीति का वर्णन करते हुये भीष्म ने बताया कि जो लोग सेना के आगे हों उनसे गर्जन-तर्जन करते और किलकारियाँ भरते हुये क्रकच, नरसिंहे, भेरी, मृदङ्ग और ढोल आदि बाजे बजवाने चाहिये। अपनी सेना उत्कृष्ट अवस्था में हो अथवा निकृष्ट अवस्था में, बात सच हो या झूठ, किन्तु हाथ ऊपर उठाकर जोर-जोर से कहे कि 'वह देखो शत्रु भाग रहे हैं, हमारी मित्रसेना आ गई है, अब निर्भय होकर प्रहार करो।' इस प्रकार कहते हुये धैर्यवान और शक्तिशाली वीरों को भयंकर सिंहनाद करते हुये शत्रुओं पर टूट पड़ना चाहिये। (१२. १००)।

"भीष्म जी ने भिन्न-भिन्न देशों के योद्धाओं के स्वभाव, रूप, बल, आचरण और लक्षण का वर्णन करते हुये कहा कि गान्धार योद्धा सर्वश्रेष्ठ युद्ध करते हैं। उशीनर-सैनिक अत्यन्त बलवान तथा सभी प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों के संचालन में निपुण होते हैं। प्राच्यगण हाथियों पर बैठकर युद्ध करने में और कूटयुद्ध में विशेष प्रवीण होते हैं। दाक्षिणात्य योद्धा हाथ में तलवार लेकर युद्ध करने में कुशल होते हैं। तदनन्तर भीष्म जी ने साहस के लक्षणों पर प्रकाश डाला। (१२. १०१)।

"विजयसूचक शुभाशुभ लक्षणों का तथा उत्साही और बलवान सैनिकों का वर्णन एवं राजा को युद्ध सम्बन्धी निर्देश के सम्बन्ध में बताया। (१२. १०२)।

शत्रु को वश में करने के लिये राजा को किस नीति से काम लेना चाहिये इस विषय में भीष्म ने इन्द्र और बृहस्पति के संवाद का उल्लेख करते हुये बताया कि बृहस्पति जी ने इन्द्र से कहा था कि शत्रु के वध की इच्छा रखनेवाले राजा को चाहिये कि वह क्रोध, भय, तथा ईर्ष्या को अपने मन में ही रोक ले और शत्रु को सावधान न करे। जब शत्रु की स्थिति कुछ डाँवाडोल हो जाय तब उस पर प्रहार करे और विश्वासपात्र पुरुषों को भेज कर शत्रु सेना में फूट डलवा दे। भीष्म ने बताया कि बृहस्पतिजी के परामर्श पर चलते हुये इन्द्र ने समस्त शत्रुओं को अपने अधीन कर लिया। (१२. १०३)।

"राज्य, कोश, और सेना आदि से वंचित हुये असहाय क्षेमदर्शी राजा को कालकवृक्षीय मुनि का वैराग्यपूर्ण उपदेश (१२. १०४)। तदनन्तर कालकवृक्षीय मुनि ने हारे हुये राज्य की पुनः प्राप्ति के विभिन्न उपायों का वर्णन किया (१२. १०५)। कालकवृक्षीय मुनि ने विदेहराज तथा कोसल राजकुमार में मेल कराया, तथा विदेहराज ने कोसलराज को अपना जामाता बनाया। (१२. १०६)। गणतन्त्र राज्य का वर्णन और उसकी नीतियों का वर्णन (१२. १०७)। माता-पिता तथा गुरु की सेवा का महत्व। (१२. १०८)।

"सत्य-असत्य का विवेचन, धर्म का लक्षण तथा व्यावहारिक नीति का वर्णन करते हुये भीष्म ने कहा : सत्य बोलना अच्छा है। सत्य से बढ़कर कोई दूसरा धर्म नहीं है। परन्तु जहाँ झूठ ही सत्य का काम करे अथवा सत्य ही झूठ बन जाय (अर्थात किसी के जीवन को संकट में डाल दे) — तो ऐसे अवसरों पर सत्य नहीं बोलना चाहिये। वहाँ झूठ बोलना ही उचित है। जिससे धारण और पोषण होता है वही धर्म है। जो मनुष्य जिसके साथ जैसा व्यवहार करे उसके साथ भी उसे वैसा ही व्यवहार करना चाहिये — यही धर्म है। (१२. १०९)।

"सदाचार और ईश्वरभक्ति द्वारा दुःखों से छूटने का उपाय बताते हुये भीष्म ने कहा : जो द्विज अपने मन को वश में करके शास्त्रोक्त चारों आश्रमों में रहते हुये उनके अनुसार ठीक-ठीक व्यवहार करते हैं वे दुःखों से पार हो जाते हैं। विष्णु, इन्द्र, शिव, तथा लोकपितामह ब्रह्मा नाना प्रकार के स्तोत्रों द्वारा जिनकी स्तुति करते हैं उन देवाधिदेव परमेश्वर की जो सदा अराधना करते हैं वे दुर्गम संकटों से पार हो जाते हैं (१२. ११०)।

"मनुष्य के स्वभाव की पहचान करने के सम्बन्ध में भीष्मजी ने व्याघ्र और शृगाल की कथा का उल्लेख करते हुये कहा : पूर्वकाल में पुरिका नगरी में पौरिक नामक एक प्रसिद्ध राजा राज्य करता था। वह अत्यन्त क्रूर स्वभाव-वाला नराधम था और प्राणियों की हिंसा में ही उसका मन लगा रहता था। आयु समाप्त होने पर अपने पूर्वकर्मों के कारण वह दूसरे जन्म में गोमायु (गीदड़) हो गया। तब पूर्व जन्म के वैभव का स्मरण करके उस गोमायु को खेद और वैराग्य हो गया। फलस्वरूप वह दूसरों के द्वारा दिये हुये मांस को भी नहीं खाता था। उसने जीवहिंसा छोड़ दी और सत्य बोलने का व्रत ले लिया। वह केवल समय प्राप्त कर पेड़ों से गिरे पके फल ही खाता था। वह श्मशान भूमि में ही उत्पन्न हुआ था और वहीं रहता था। उसका यह सदाचरण उसके जाति के अन्य पशुओं के लिये असह्य हो उठा और उन सबने प्रेम और विनयपूर्ण बातों से उसके मनको विचलित करना आरम्भ किया। तब उसने अपने जाति के पशुओं को सदाचार विषयक उपदेश दिया। उस गीदड़ के पवित्र-आचार विचार की चर्चा चारों ओर फैल जाने से एक व्याघ्र ने उसके पास आकर स्वयं ही उसका अपने मन्त्री के रूप में वरण किया। तब उस गीदड़ ने व्याघ्र से कहा : 'आपको चाहिये कि जिनका आपके प्रति अनुराग हो, जो नीति के जानकार, सद्भाव-सम्पन्न, गुटबन्दी से रहित, विजय की अभिलाषा से युक्त, लोभरहित, और मनस्वी हों उन्हें ही अपना सचिव या सहायक बना कर पिता और गुरु के समान उनका सम्मान करें। मुझे तो सन्तोष के सिवा अन्य कुछ रुचता नहीं। मैं सुख-भोग और उसके आधारभूत ऐश्वर्य को नहीं चाहता।' ऐसा कहकर उस गीदड़ ने व्याघ्र को मनुष्यों के स्वभाव को पहचानने के विषय पर उपदेश दिया। तदनन्तर उसने व्याघ्र से कहा : 'यदि आप मुझसे मन्त्रित्व का कार्य लेना चाहते हैं तो उसके लिये मेरी यह शर्त है कि आपको मेरे आत्मीयजनों का सम्मान करना होगा। मेरी कही हितकर बातें आपको सुननी होंगी। मैं आपके अन्य मन्त्रियों के साथ बैठकर कोई परामर्श नहीं करूँगा। मैं एकान्त में आपके हित की बात बताऊँगा। मुझसे परामर्श लेने के बाद यदि आपके पहले के मन्त्रियों की भूल प्रमाणित हो जाय तो भी आप उन्हें प्राणदण्ड न दीजियेगा।' शृगाल की शर्तों को मान कर व्याघ्र ने उसे अपना मन्त्री बना लिया। इस प्रकार उसे सम्मानित देख अन्य राज-सेवक उससे द्वेष करने लगे। एक दिन उन सेवकों ने व्याघ्र के लिये जो मांस तैयार करके रक्खा गया था उसे उसके स्थान से हटा कर शृगाल के घर में रख दिया। जिन लोगों ने यह कुचक्र किया उन सब का शृगाल को पता चल गया किन्तु उसने चुप-चाप सब कुछ सहन कर लिया। जब व्याघ्र अपने भोजन के लिये आया तब उसके खाने के लिये जो मांस दिया जाने वाला था वह उसे नहीं मिला। जब उसने अपने सेवकों से चोर का पता लगाने के लिये कहा तब उन सबने व्याघ्र को सूचित किया कि शृगाल-मन्त्री ने उस मांस को चुरा लिया है। इस पर व्याघ्र क्रुद्ध हो उठा। सेवकों ने भी शृगाल के विरुद्ध और अनेक आक्षेप लगा कर उसके क्रोध को उद्दीप्त कर दिया। तदनन्तर उन सेवकों ने शृगाल के घर से मांस को लाकर व्याघ्र के समक्ष अपने आक्षेपों को पुष्ट कर दिया। यह देख कर उस व्याघ्र ने शृगाल को प्राण-दण्ड देने की आज्ञा दे दी। व्याघ्र की माता ने इसमें षडयन्त्र का आभास देख कर अपने पुत्र को समझाने का प्रयास किया। व्याघ्र के एक गुप्तचर ने भी आकर शृगालके प्रति किये गये षडयन्त्र को

व्याघ्र से कह सुनाया। शृगाल की सच्चरित्रता का पता लगाने पर व्याघ्र ने उसे गले से लगाया और उसे अभियोग मुक्त कर दिया। किन्तु शृगाल ने इस प्रकार पहले विश्वासपात्र बनने किन्तु बाद में अपमानित होने के कारण मन्त्रिपद पर बने रहना अस्वीकार करते हुये धर्म, अर्थ, काम और युक्तियों से युक्त अनेक सान्त्वनापूर्ण वचन कह कर व्याघ्र को प्रसन्न किया और उसकी अनुमति लेकर वन में चला गया। वह शृगाल अत्यन्त बुद्धिमान था अतः व्याघ्र की अनुनय-विनय को न मान कर मृत्युपर्यन्त निराहार रहने का व्रत ले एक स्थान पर बैठ गया और अन्त में शरीर त्याग कर स्वर्ग चला गया (१२. १११)।

"युधिष्ठिर द्वारा राजा के कर्तव्य के सम्बन्ध में पूछने पर भीष्मजी ने एक तपस्वी ऊँट की कथा का उल्लेख किया: एक ऊँट को उसके पूर्व जन्म की बातों का स्मरण था। उसने कठोर व्रत लेकर घोर तपस्या आरम्भ की। उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर ब्रह्मा ने वर माँगने के लिये कहा। ऊँट ने यह वर माँगा कि उसकी गर्दन बहुत बड़ी हो जाय जिससे वह सौ योजन दूर तक की खाद्य वस्तुयें भी ग्रहण कर सके। ब्रह्मा ने उसे यह वर दे दिया। तब ऊँट वन में चला आया। वह वरदान पाकर आलस्य से ग्रसित हो गया और कहीं आना जाना नहीं चाहता था। एक दिन वह अपनी सौ योजन गर्दन फैला कर चर रहा था। इतने में प्रचण्ड वायु चलने लगा। ऊँट उस समय एक गुफा में गर्दन डाल कर चर रहा था। तभी वर्षा से भीगता हुआ शृगाल का जोड़ा उसी गुहा में आ घुसा। वह शृगाल जल से पीड़ित और भूखा था अतः वह ऊँट की लम्बी गर्दन का मांस काट-काट कर खाने लगा। जब ऊँट को इस बात का पता लगा तब वह अपनी गर्दन समेटने का प्रयत्न करने लगा किन्तु इतने में अपनी स्त्री सहित शृगाल ने उसे काट कर खा लिया। इस प्रकार ऊँट को मार कर खा जाने के पश्चात आँधी वर्षा बन्द होते ही वह गीदड़ गुहा से बाहर निकल गया। इस प्रकार आलस्य से ग्रसित ऊँट की मृत्यु हो गई। इस कथा को बता कर भीष्मजी ने युधिष्ठिर से कहा कि राजा को आलस्य का त्याग करके इन्द्रियों को वश में रखते हुये बुद्धिपूर्वक कार्य करना चाहिये। उन्होंने मनु के इस कथन का कि 'विजय का मूल बुद्धि ही है' उद्धरण भी दिया। (१२. ११२)।

"सरिताओं और समुद्र के संवाद का उल्लेख करके भीष्मजी ने बताया। कि शक्तिशाली शत्रु के सामने बेंत की भाँति झुक जाना चाहिये (१२. ११३)। उन्होंने यह भी कहा कि यदि कोई उद्दण्ड या मूर्ख मधुर या तीखे शब्दों में भरी सभा के बीच किसी विद्वान पुरुष की निन्दा करे तब विशुद्ध चित्त वाले पुरुष को उस मूर्ख की बात सहन कर लेना चाहिये। (१२. ११४)।

"भीष्मजी ने बताया कि कोई भी बिना सहायकों के अकेले ही राज्य नहीं चला सकता। अतः सेवकों का होना आवश्यक है। किन्तु सेवकों को ज्ञान-विज्ञान में कुशल, हितैषी, कुलीन और स्नेही होना चाहिये। जो राजा राजधर्म को जानता है और अपने यहाँ अच्छे लोगों को एकत्र कर रखता है वह अवसर के अनुसार सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव एवं समाश्रय नामक छः गुणों का उपभोग करता है। (१२. ११५)।

"युधिष्ठिर ने यह जानना चाहा कि जहाँ राजा के पास उच्चकुल में उत्पन्न सहायक उपलब्ध न हों तो वह नीच कुल के मनुष्यों को सहायक बना सकता है या नहीं। भीष्म ने इस विषय में एक महर्षि और कुत्ते का दृष्टान्त दिया। पूर्वसमय में एक पवित्र और शुद्ध हृदयवाले महर्षि थे जिनके पास वन के अन्यान्य पशुओं के साथ एक कुत्ता भी आता था। वह कुत्ता मुनि का भक्त हो गया जिससे प्रसन्न हो कर मुनि ने उसे एक चीता, और फिर व्याघ्र बना दिया जिससे वह हिंसकपशुओं से अपनी रक्षा कर सके। वह कुत्ता इस रूप को प्राप्त करने के बाद मांसभोजी हो गया। (१२. ११६)।

"तदनन्तर मुनि ने उस व्याघ्र रूपी कुत्ते को उत्तरोत्तर और बड़े पशुओं से अपनी रक्षा करते रहने के लिये क्रमशः एक हाथी फिर सिंह और उसके बाद आठ पैरों वाला ऐसा शरभ बना दिया जिसके नेत्र ऊपर की ओर स्थित थे। वह शरभ प्रतिदिन मुनि के पास ही रहने लगा। एक दिन रक्त की प्रबल प्यास से पीड़ित हो कर वह कुत्ता रूपी शरभ मुनि को ही मार डालने की इच्छा करने लगा। तब अपनी तपःशक्ति से उन मुनीराज ने उस शरभ के मनोभाव को जान लिया और उससे कहा: 'तू नीच कुल में उत्पन्न हुआ था तो भी मेरे मन में तेरे प्रति कभी पाप का भाव नहीं हुआ। किन्तु अब तू मेरी ही हत्या करना चाहता है। अतः तू अपनी पूर्व योनि प्राप्त कर पुनः कुत्ता हो जा।' (१२.११७)।

"इस प्रकार अपनी योनि में आकर वह कुत्ता अत्यन्त दीन दशा को पहुँच गया। भीष्म ने कहा कि इसी प्रकार बुद्धिमान राजा को चाहिये कि वह पहले अपने सेवकों की सत्यता, शुद्धता, सरलता, स्वभाव, शास्त्रज्ञान, सदाचार, कुलीनता, जितेन्द्रियता, दया, बल, पराक्रम, प्रभाव, विनय तथा क्षमा आदि का पता लगा कर ही उसे अपना सेवक बनावे (१२. ११८)।

"उस कुत्ते की कथा का उदाहरण दे कर भीष्मजी ने कहा कि राजा को गुणवान भृत्यों को ही सेवक बनाना चाहिये। कुलीन और सत्पुरुषों का संग्रह करने, कोष में वृद्धि करने तथा प्रजावर्ग की देख-भाल करने की दिशा में राजा को सदैव प्रयत्नशील रहना चाहिये। (१२. ११९)।

"राजधर्म के सारतत्त्व का वर्णन करते हुये भीष्म ने बताया कि जिस प्रकार साँप को खानेवाला मोर विचित्र पंख धारण करता है उसी प्रकार धर्मज्ञ राजा को समय-समय पर अपना अनेक रूप प्रकट करना चाहिये। राजा मध्यस्थ भाव से रह कर तीक्ष्णता, कुटिल नीति, भय, दान, सत्य, सरलता तथा श्रेष्ठ भाव का अवलम्बन करके सुख का भागी होता है। (१२. १२०)।

"भीष्म ने दण्ड के स्वरूप, नाम, लक्षण, प्रभाव और प्रयोग का वर्णन करते हुये कहा: इस संसार में सब कुछ जिसके अधीन है वही अद्वितीय पदार्थ यहाँ दण्ड कहलाता है। धर्म का ही दूसरा नाम व्यवहार है। लोक में सतत सावधान रहनेवाले पुरुष के धर्म का किसी प्रकार लोप न हो इसीलिये दण्ड की आवश्यकता है और वही उस व्यवहार का व्यवहारत्व है। पूर्वकाल में मनु ने यह उपदेश दिया था कि जो राजा प्रिय और अप्रिय के प्रति समान भाव रखकर और किसी के प्रति पक्षपात न कर दण्ड का ठीक-ठीक उपयोग करते हुये प्रजा की भली भाँति रक्षा करता है उसका वह कार्य केवल धर्म है। दण्ड एक महान देवता है। इसके शरीर की कान्ति नीलकमल के समान श्याम है। इसके चार दाढें और और चार भुजायें हैं, आठ पैर और अनेक नेत्र हैं। इनके कान खूँटे के समान हैं और रोएँ ऊपर की ओर उठे हैं। इसके सर पर जटा, मुख में दो जिह्वायें और मुख का रंग ताँबे के समान है। शरीर को ढँकने के लिये यह व्याघ्र चर्म धारण कर रखता है। इस प्रकार दुर्धर्ष दण्ड सदा भयंकर रूप धारण किये रहता है। असि, विशसन, धर्म, तीक्ष्णवर्मा, दुराधर, श्रीगर्भ, विजय, शास्ता, व्यवहार, सनातन, शास्त्र, ब्राह्मण, मन्त्र प्राग्दन्तावर, धर्मपाल, अक्षर, देव, सत्यग, नित्यग, अग्रज, असङ्ग, रुद्रतनय, मनु, ज्येष्ठ और शिवंकर—ये दण्ड के नाम हैं (दण्ड के अनेक अन्य नामों और रूपों का उल्लेख)। माता, पिता, भाई स्त्री तथा पुरोहित कोई भी क्यों न हो, जो अपने धर्म में स्थिर नहीं रहता उसे राजा अवश्य दण्ड दे। राजा के लिये कोई भी अदण्डनीय नहीं है। (१२. १२१)।

"दण्ड की उत्पत्ति तथा उसके क्षत्रियों के हाथ में आने की परम्परा का वर्णन करते हुये भीष्म ने कहा: इस दण्ड की उत्पत्ति के विषय में एक प्राचीन इतिहास का उदाहरण दिया जाता है। अङ्गदेश में वसुहोम नामक एक तेजस्वी राजा थे। एक समय वे अपनी पत्नी के साथ मुञ्जपृष्ठ नामक तीर्थस्थान में आये। यह तीर्थ हिमालय के शिखर पर स्थित है जहाँ मुञ्जावट में परशुराम ने अपनी जटायें बाँधने का आदेश दिया था। उसी समय से इस तीर्थ को मुञ्जपृष्ठ कहते हैं। राजा वसुहोम वहाँ तपस्या करने लगे। एक दिन राजा मान्धाता उनके दर्शन के लिये आये। वसुहोम ने मान्धाता को पाद्य और अर्घ्य निवेदन किया और उनका कुशल समाचार पूछा। उनके आतिथ्य से प्रसन्न हो कर मान्धाता ने वसुहोम से दण्ड की उत्पत्ति के सम्बन्ध में बताने के लिये कहा। वसुहोम ने कहा: दण्ड सम्पूर्ण

जगत को नियम में रखने वाला और धर्म का सनातन स्वरूप है। दण्ड की उत्पत्ति बताते हुये वसुहोम ने कहा कि एक समय ब्रह्माने यज्ञ करने का निश्चय किया किन्तु उन्हें कोई ऋत्विज नहीं दिखाई दिया। तब उन्होंने बहुत वर्षों तक अपने मस्तक पर एक गर्भ धारण किया। एक सहस्र वर्ष बीतने पर ब्रह्मा को छींक आई और वह गर्भ नीचे गिर पड़ा। उससे जो बालक प्रकट हुआ उसका नाम क्षुप रक्खा गया। ब्रह्मा के यज्ञ में वह क्षुप ही ऋत्विज हुये। यज्ञ आरम्भ होते ही वहाँ यज्ञ की प्रधानता होने से ब्रह्मा का दण्ड अन्तर्धान हो गया। दण्ड के लुप्त होते ही प्रजा में वर्णसंकरता फैलने लगी। कर्तव्याकर्तव्य, भक्ष्याभक्ष्य और पेयापेय का विचार भी समाप्त हो गया। सभी लोग अपना और पराया धन एक समान समझने लगे। तब ब्रह्मा ने विष्णु का पूजन कर के वरदायक देवता महादेवजी से कोई ऐसा उपाय करने के लिये कहा जिससे वर्णसंकरता न फैले। तब कुछ विचार करके महादेवजी ने अपने को ही दण्ड के रूप में प्रकट किया। उससे धर्माचरण होता देख कर नीतिस्वरूपा सरस्वती ने दण्डनीति की रचना की। भगवान् शूलपाणि ने पुनः चिरकाल तक चिन्तन करके भिन्न-भिन्न समूहों का एक-एक राजा बनाया। उन्होने इन्द्र को देवेश्वर और सूर्यपुत्र यम को पितरों का राजा बनाया। इसी प्रकार कुवेर, सुमेरु, महासागर, वरुण, मृत्यु और अग्निदेव को भी भिन्न-भिन्न समूहों का राजा बना कर स्वयं अपने को रुद्रों का अधीश्वर बनाया। ब्रह्मा के छोटे पुत्र को समस्त प्रजाओं का अधिपति बनाया। तदनन्तर जब ब्रह्मा का यज्ञ समाप्त हो गया तब महादेव ने विष्णु का सत्कार करके उन्हें वह दण्ड समर्पित कर दिया। विष्णु ने उस दण्ड को अङ्गिरा को और उनसे इन्द्र→मरीचि→भृगु→ऋषियों→लोकपालों→क्षुप→मनु (श्राद्धदेव) से होता हुआ सूक्ष्म धर्म तथा अर्थ की रक्षा के लिये श्राद्धदेव के पुत्रों को प्राप्त हुआ। अतः धर्म के अनुसार न्याय-अन्याय का विचार करके ही दण्ड का विधान करना चाहिये। दुष्टों का दमन ही दण्ड का मुख्य उद्देश्य है। मनु ने प्रजा की रक्षा के लिये ही दण्ड को अपने पुत्रों के हाथ में सौंपा था। वहीं से उत्तरोत्तर अधिकारियों के हाथ में आकर प्रजा का पालन करता हुआ वह जागता रहा। सभी दिव्य राजा दण्ड के विधान में सदा जागरूक रहते हैं। प्रजापति से दण्ड ग्रहण करके धर्म और धर्म से उसे लेकर ब्रह्मपुत्र सनातन व्यवसाय दण्ड लेकर लोक रक्षा के लिये जागरूक रहते हैं। व्यवसाय से दण्ड को तेज ने लिया; तेज से ओषधियों→पर्वत→रस→निर्ऋति→ज्योतियाँ उस दण्ड को हस्तगत करके लोकरक्षा के लिये जागरूक बनी रहती हैं। ज्योतियों से दण्ड ग्रहण करके वेद→भगवान्→हयग्रीव-ब्रह्मा→शिव→विश्वेदेवता→ऋषि→सोम→देवगण→ब्राह्मण उस दण्ड को लेकर लोकरक्षा के लिये सदा जाग्रत रहते हैं। तदनन्तर ब्राह्मणों से दण्ड धारण का अधिकार प्राप्त कर क्षत्रिय धर्मानुसार सम्पूर्ण लोकों की रक्षा करते हैं। इस लोक में प्रजा जागती है। और प्रजाओं में दण्ड जागता है। ब्रह्मा के समान तेजस्वी वह दण्ड सबको मर्यादा के भीतर रखता है। यह दण्ड महादेव का स्वरूप और प्रजापालक है। इस कथा का वर्णन करने के बाद भीष्मजी ने युधिष्ठिर से कहा : जो नरेश इस वसुहोम के बताये मत को सुनता और इसके अनुसार व्यवहार करता है वह सम्पूर्ण कामनाओं को प्राप्त कर लेता है। (१२. १२२)।

"युधिष्ठिर ने धर्म, अर्थ और काम के सम्बन्ध में भीष्म जी का मत जानना चाहा। तब भीष्म जी ने त्रिवर्ग के विचार तथा पाप के कारण पदच्युत हुये राजा के पुनरुत्थान के विषय में आङ्गरिष्ठ और कामकन्द के संवाद का उल्लेख किया (१२. १२३)।

"युधिष्ठिर ने शील के सम्बन्ध में जानना चाहा। तब भीष्म जी ने कहा : 'पहले इन्द्रप्रस्थ में तुम्हारी श्री-सम्पत्ति, उत्तम सभा और समृद्धि देखकर संतप्त हुआ दुर्योधन जब चिन्तित और व्यथित हो उठा तब धृतराष्ट्र ने उससे और कर्ण से जो कुछ कहा था उसे सुनो।' धृतराष्ट्र ने दुर्योधन को समझाते हुये कहा : 'तुम क्यों व्यथित हो। तुम्हारे पास भी हर प्रकार का ऐश्वर्य है।' तब दुर्योधन ने युधिष्ठिर और उनकी समृद्धि की चर्चा करते हुये उसे ही अपने शोक का कारण बताया। धृतराष्ट्र ने दुर्योधन से कहा कि यदि वह युधिष्ठिर के समान सम्पत्ति प्राप्त करना चाहता है तो उसे शीलवान बनना होगा। शीलवानों के लिये संसार में कुछ भी असाध्य नहीं है। मान्धाता ने एक दिन में, जनमेजय ने तीन दिन में और नाभाग ने सात दिन में ही इस पृथिवी का राज्य प्राप्त कर लिया था। ये सभी राजा शीलवान् थे अतः उनके गुणों के कारण यह पृथिवी स्वयं ही उनके पास आई थी। दुर्योधन ने तब अपने पिता से इस शील को प्राप्त करने के उपाय के सम्बन्ध में पूछा। धृतराष्ट्र ने इस विषय में नारदजी द्वारा उल्लिखित प्रह्लाद की कथा का उदाहरण देते हुये कहा : दैत्यराज प्रह्लाद ने शील का ही आश्रय लेकर महेन्द्र के राज्य का हरण किया और तीनों लोकों को भी अपने वश में कर लिया था। उस परिस्थिति में इन्द्र ने बृहस्पति से अपने कल्याण का उपाय जानना चाहा। बृहस्पति जी ने जब इन्द्र को उपदेश दे दिया तब इन्द्र ने यह जानना चाहा कि उपदेश में विशेष बात क्या है। बृहस्पति ने इन्द्र को शुक्राचार्य के पास जाकर और विशेष बात का उपदेश लेने के लिये कहा। इन्द्र ने तदनुसार शुक्राचार्य जी से भी उपदेश लिया किन्तु उसके बाद उससे भी और विशेष बात जानना चाहा। शुक्र ने तब इन्द्र को विशेष श्रेय का उपदेश लेने के लिये प्रह्लाद के पास जाने के लिये कहा। फलस्वरूप एक ब्राह्मण का रूप धारण करके इन्द्र प्रह्लाद के पास आये और उनसे श्रेय के सम्बन्ध में जानने की इच्छा प्रकट की। राज्य-व्यवस्था में विशेष रूप से संलग्न होने के कारण प्रह्लाद ने समयाभाव की बात कहकर उपदेश देना अस्वीकार किया, किन्तु ब्राह्मण वेशधारी इन्द्र ने कहा कि जब अवसर मिले तभी उपदेश दें। प्रह्लाद ने इसकी सहमति दे दी और ब्राह्मण वहीं रहकर उनकी सेवा करने लगा। ब्राह्मण के अनेक बार यह पूछने पर कि प्रह्लाद को त्रिलोकी का राज्य कैसे प्राप्त हुआ, अन्ततः एक दिन प्रह्लाद ने इस प्रकार कहा : 'मैं राजा हूँ' इस अभिमान में आकर मैं ब्राह्मणों की कभी निन्दा नहीं करता। जब वे मुझे शुक्रनीति का उपदेश देते हैं तब मैं उसे संयमपूर्वक सुनकर शिरोधार्य करता हूँ। मैं सदा यथाशक्ति शुक्राचार्य के बताये नीतिमार्ग पर चलता हूँ, ब्राह्मणों की सेवा करता हूँ, किसी का दोष नहीं देखता और धर्म में मन लगाता हूँ। क्रोध को जीतकर मैंने इन्द्रियों को वश में कर लिया है। ब्राह्मणों के मुख में जो शुक्राचार्य की नीतिवाक्य है वही इस भूतल पर अमृत है। इतना ही श्रेय है।' इन बातों को सुनकर ब्राह्मण ने कुछ समय तक प्रह्लाद की और सेवा की जिससे प्रसन्न होकर उन्होंने ब्राह्मण से वर माँगने के लिये कहा। प्रह्लाद के बहुत आग्रह करने पर उसने यह वर माँगा; 'मुझे आपका ही शील चाहिये।' तब प्रह्लाद को यह भान हुआ कि वह साधारण ब्राह्मण नहीं है। उन्होंने वह वर तो दे दिया किन्तु तब उन्हें अत्यधिक चिन्ता होने लगी। शील चले जाने से उनके तेज ने भी उनको त्याग दिया और कहा कि अब वह ब्राह्मण के शरीर में निवास करेगा। इसी प्रकार धर्म, सत्य, सदाचार, बल, और लक्ष्मी ने भी क्रमशः प्रह्लाद को त्याग कर ब्राह्मण का आश्रय ले लिया। प्रह्लाद ने जब लक्ष्मी से पूछा तब उन्होंने प्रह्लाद से कहा : 'जिस ब्राह्मण को तुमने उपदेश दिया था वह साक्षात् इन्द्र थे। तुमने शील के द्वारा ही तीनों लोकों पर विजय प्राप्त की थी। यही जानकर इन्द्र ने तुम्हारे शील का हरण कर लिया है। धर्म, सत्य, सदाचार, बल, और सब शील के ही आधार पर ही स्थित हैं।' यों कहकर लक्ष्मी सहित वे सभी गुण इन्द्र के पास चले गये। यह कथा सुनकर दुर्योधन ने अपने पिता से शील प्राप्त करने का उपाय पूछा। तब धृतराष्ट्र ने कहा : 'मन, वाणी और क्रिया द्वारा किसी भी प्राणी से द्रोह न करना, सब पर दया करना, और यथाशक्ति दान देना शील कहलाता है। अतः यदि तुम शील प्राप्त करना चाहते हो तो इस उपदेश के अनुसार आचरण करो।' यह कथा बताकर भीष्म ने युधिष्ठिर से भी शील को ग्रहण कर ही व्यवहार करने के लिये कहा। (१२. १२४)।

"युधिष्ठिर ने आशा की उत्पत्ति के विषय में जानना चाहा। तब भीष्म ने राजा सुमित्र और ऋषभ नामक ऋषि के इतिहास का वर्णन आरम्भ किया। उन्होंने बताया कि हैहयवंशी राजा सुमित्र ने एक मृग को अपने बाण से

घायल करके उसका पीछा किया। बहुत दूर तक पीछा करने के बाद राजा ने एक दूसरा भयंकर बाण चलाया किन्तु मृग उसकी मार से दूर निकल गया। राजा का बाण भूमि पर गिर पड़ा और मृग भी भागकर वन में चला गया। किन्तु राजा ने उस समय भी उसका पीछा नहीं छोड़ा। (१२. १२५)।

"मृग का पीछा करते हुये राजा सुमित्र एक मुनि के आश्रम पर पहुँचे और उन मुनि से आशा के विषय में प्रश्न किया (१२. १२६)।

"उन महर्षि ऋषभ ने कहा : पूर्वसमय में मैं सब तीर्थों में भ्रमण करता हुआ नर-नारायण के आश्रम, बदरीतीर्थ में गया। वहाँ एक वैहायस कुण्ड है और अश्वशिर (हयग्रीव) वहीं वेदों का पाठ करते हैं। वैहायस कुण्ड में स्नान करके मैंने विधिपूर्वक देवताओं और पितरों का तर्पण किया। उसके बाद उस आश्रम में प्रवेश किया जहाँ नर और नारायण नित्य निवास करते हैं। वहाँ से निकट ही एक दूसरे आश्रम में मैं ठहरने गया जहाँ तनु नामक एक बहुत ऊँचे किन्तु दुर्बल शरीरवाले ऋषि दिखाई दिये। तनु का शरीर अन्य मनुष्यों से आठ गुना लम्बा किन्तु कनिष्ठिका अँगुली के समान पतला था। मैंने उन्हें प्रणाम करके अपना परिचय दिया और निकट ही एक आसन पर बैठ गया। तब तनु ऋषि हम लोगों के बीच में बैठकर कह रहे थे। कि इतने में ही एक नरेश वहाँ आये। उन नरेश का नाम वीरद्युम्न था और उनका भूरिद्युम्न नामक पुत्र वन में कहीं खो गया था। वे राजा अपने पुत्र की खोज में ही वन में फिर रहे थे। उन्हें आशा थी कि वह पुत्र अवश्य मिलेगा। राजा की बात सुनकर तनु ने आँख बन्द करके विचार कियाऔर फिर कुछ दुखी होकर चुपचाप बैठ गये। राजा ने उनके दुःख का कारण जानना चाहा। तब तनु ने राजा को बताया कि उनके उस पुत्र ने अपने दुर्भाग्य के कारण एक महर्षि का अपमान कर दिया है। मुनि की बात सुनकर राजा वीरद्युम्न शिथिल होकर बैठ गये। तदनन्तर वहाँ उपस्थित सब मुनि राजा को घेर कर बैठ गये और राजा के आश्रम पर पधारने का कारण पूछने लगे।' (१२. १२७)।

"राजा वीरद्युम्न ने बताया कि वह अपने पुत्र भूरिद्युम्न की खोज के लिये वन में आये हैं। राजा के ऐसा कहने पर मुनि नीचे मुँह किये चुपचाप बैठे रह गये। पूर्वकाल में कभी इसी राजा ने इन्हीं मुनि का विशेष आदर नहीं किया था। उनकी आशा भंग कर दी थी जिसके परिणामस्वरूप उन मुनि ने किसी भी राजा से किसी भी प्रकार का दान न लेने की प्रतिज्ञा करके दीर्घकाल तक तपस्या की थी। तनु को इस प्रकार चुपचाप बैठा देखकर वीरद्युम्न ने उनसे यह बात बताने का निवेदन किया कि आशा से बढ़कर दुर्बलता क्या है, और इस पृथिवी पर सबसे दुर्लभ क्या है ? तब मुनि ने राजा से कहा कि आशा या आशावान की दुर्बलता के समान और किसी की दुर्बलता नहीं है। जिस वस्तु की आशा की जाती है उसकी दुर्लभता के कारण ही मनुष्य को याचना करनी पड़ती है। राजा ने मुनि की बात का यह आशय निकाला कि जो आशा से बँधा हुआ है वह दुर्बल है और जिसने आशा को जीत लिया है वह पुष्ट है। राजा के यह पूछने पर कि अत्यन्त दुर्लभ क्या है, मुनि ने बताया कि जो याचक धैर्य धारण कर सके, अर्थात किसी वस्तु की आवश्यकता होने पर भी उसके लिये किसी से याचना न करे यह दुर्लभ है; एवं जो याचना करनेवाले याचक की अवहेलना न करे, आदरपूर्वक उसकी इच्छापूर्ण करे ऐसा पुरुष संसार में अत्यन्त दुर्लभ है। मुनि की बातें सुनकर राजा ने अपनी रानी सहित मुनि के चरणों में मस्तक रख दिया। तब तनु ने हँसकर अपनी तपस्या के प्रभाव से राजकुमार भूरिद्युम्न को वहीं बुला दिया। तदनन्तर अपने दिव्य स्वरूप का राजा को दर्शन कराकर तनु मुनि निकटवर्ती वन में चले गये। यह कथा कहकर ऋषभ ने सुमित्र से मृगविषयक दुराशा को त्याग देने के लिये कहा। ऋषभ का वचन सुनकर सुमित्र ने अपनी आशा को तत्कालत्याग दिया। यह कथा सुनाकर भीष्म जी ने युधिष्ठिर से आशा का त्याग कर हिमालय के समान स्थिर हो जाने के लिये कहा। (१२. १२८)।

"भीष्म जी ने यम और गौतम के प्राचीन संवाद का उदाहरण देते हुये बताया कि पारियात्र पर्वत पर महर्षि गौतम का महान् आश्रम था जहाँ उन्होंने ६०,००० वर्षों तक तपस्या की थी। एक दिन तपस्यारत गौतम के पास लोकपाल यम स्वयं आये और गौतम को सत्यविषयक उपदेश दिया। (१२. १२९)।

"भीष्म जी ने यह उपदेश दिया कि अत्यन्त संकट और आपत्ति के समय, जब मित्र भी उसका साथ छोड़ दें तब राजा का क्या धर्म होना चाहिये। (१२. १३०)।"

राजन् (बहु० °जानः) = यक्ष : ५. १२९, १४; ७. १४०, १२ (राजवर, अर्थात राक्षस अलम्बुष)।

राजनी, एक नदी का नाम है (६. ९, २१)।

राजन्यमहाभाग्यम् (क्षत्रियोंकी महानता): "युधिष्ठिर ने मार्कण्डेय मुनि से क्षत्रिय नरेशों की महत्ता का वर्णन करने का निवेदन किया। तब मार्कण्डेय ने कहा : विश्वामित्र के पुत्र अष्टक के अश्वमेध यज्ञ में सब राजा पधारे थे। अष्टक के तीन भाई प्रतर्दन, वसुमना, तथा उशीनर पुत्र शिबी भी उस यज्ञ में आये थे। यज्ञ समाप्त होनें पर एक दिन अष्टक अपने भाइयों के साथ रथ पर अरुढ़ हो स्वर्ग की ओर जा रहे थे। मार्ग में उन लोगों से नारदजी मिले। तब भाइयों ने उन्हें प्रणाम कर अपने रथ पर ही आ जाने के लिये उनसे निवेदन किया। नारदजी 'तथास्तु' कहकर उस रथ पर बैठ गये। अष्टक आदि तीनों भाइयों में से एक ने नारद जी से पूछा : 'हमलोगों को स्वर्ग में जाना है, किन्तु वहाँ से सर्वप्रथम कौन भूतल पर उतरेगा।' देवर्षि ने बताया कि अष्टक पहले उतरेंगे। इसका कारण पूछने पर नारद जी ने कहा कि एक दिन उनके पूछने पर अष्टक अपने द्वारा दान की गई गायों का उल्लेख करके आत्मश्लाघा के दोषी हो गये हैं अतः सबसे पहले उन्हें स्वर्ग से उतरना पड़ेगा। तब पुनः प्रश्न करने पर नारद जी ने बताया कि अष्टक के बाद प्रतर्दन को आना पड़ेगा क्योंकि उन्होंने दान तो दिया था किन्तु ब्राह्मणों की निन्दा भी की थी। पुनः पूछने पर नारद जी ने बताया कि प्रतर्दन के बाद वसुमना को स्वर्ग से उतरना पड़ेगा क्योंकि उन्होंने अपना रथ दान में देने के सम्बन्ध में छल किया था। जब उन लोगों ने पुनः पूछा कि यदि एक मात्र शिबि को आपके साथ स्वर्ग जाना पड़े तो वहाँ से पहले कौन उतरेगा, तब नारद जी ने कहा : 'शिबि जायेंगे और मैं उतरूँगा क्योंकि मैं राजा शिबि के समान नहीं हूँ।' ऐसा कहकर इसका कारण बताते हुए नारद जी ने कहा : एक दिन एक ब्राह्मण ने शिबि के पास आकर भोजन की इच्छा प्रकट की। शिबि के पूछने पर कि वह क्या खाना पसन्द करेंगे, उस ब्राह्मण ने कहा कि शिबि पुत्र बृहद्गर्भ को मार कर उसका दाह संस्कार करने के बाद वे भोजन तैयार करके उनकी (ब्राह्मण की)प्रतीक्षा करें। ब्राह्मण की बात सुनकर शिबि ने अपने पुत्र को मरवाकर उसका दाह-संस्कार कर दिया और फिर वे भोजन तैयार कराकर भोजन का बर्तन सर पर रख उस ब्राह्मण की खोज करने लगे। इस प्रकार ब्राह्मण को खोज कर रहे राजा से किसी ने आकर कहा कि वह ब्राह्मण उनके अन्तःपुर, अश्वशाला, और गजशाला में कुपित होकर आग लगा रहा है। यह सब सुनकर भी राजा शिबि की मुखकान्ति पूर्ववत् बनी रही। ब्राह्मण के पास आकर उन्होंने भोजन तैयार होने की सूचना दी। वह ब्राह्मण तब कुछ नहीं बोला और आश्चर्य से मुँह नीचा किये देखता रहा। शिबि के अनेक बार अनुनय करने पर ब्राह्मण ने कहा : 'तुम्हीं यह सब खा जाओ।' तब शिबि ने ब्राह्मण की आज्ञा शिरोधार्य करके बर्तन का ढक्कन खोला और खाने की इच्छा की। तब ब्राह्मण ने कहा कि 'राजन्, तुम्हारे पास कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो तुम ब्राह्मण को न दे सको। तुमने क्रोध को जीत लिया है।' ऐसा कहकर ब्राह्मण ने राजा का समादर किया। राजा शिबि ने जब आँख उठाकर देखा तब उनका पुत्र सामने खड़ा था। ब्राह्मण देवता सब बातें यथापूर्व करके अन्तर्धान हो गये। नारद जी ने बताया कि साक्षात् विधाता ने ही ब्राह्मण के वेश में शिबि की परीक्षा ली थी। अपने मन्त्रियों के पूछने पर शिबि ने कहा : मैं यश के लिये दान नहीं देता। धन के लिये अथवा भोग की लिप्सा से भी दान नहीं करता।

यह धर्मात्माओं का मार्ग है ! पापी मनुष्य इस मार्ग पर नहीं चल सकते।' इस प्रकार नारद जी ने राजा शिवि की महिमा का वर्णन किया। (३. १९८)।"

१. राजपुर, काम्बोजों के प्रसिद्ध नगर का नाम है जहाँ कर्ण ने काम्बोजों पर विजय प्राप्त की थी (७. ४,५)।

२. राजपुर, कलिङ्गराज चित्राङ्गद का नाम है : १२. ४,३ (श्रीमद्राजपुरं नाम नगरं)।

१. राजराज = कुबेर : ३. १५३, ८; १६१, १६; २७४, १७; २७५, ३; २८९, ९; १५. २०, ३३।

२. राजराज = शिव : १२. १२२, ३४; १३. १७, १५० (सहस्रनाम)।

राजराजन् = कुबेर (३. २८१, २३)

राजसूयस्य आरम्भः (राजसूय यज्ञ का आरम्भ) : २. २, १३३।

राजसूयारम्भपर्वन्, महभारत के २२ वें अवान्तर पर्व का नाम है जो सभापर्व के अन्तर्गत आता है : "राजसूय यज्ञ करने का निश्चय कर लेने के बाद युधिष्ठिर ने अपने भाइयों, मन्त्रियों, ऋत्विजों तथा धौम्य और व्यास आदि महर्षियों के साथ इस विषय पर पुनः विचार किया। महाराज युधिष्ठिर सबको आत्मीयजनों की भाँति अपनाते, भीमसेन सबकी रक्षा करते, अर्जुन शत्रुओं के संहार में लगे रहते, सहदेव सबको धर्म का उपदेश दिया करते थे और नकुल सबके साथ विनयपूर्ण व्यवहार करते थे। इससे युधिष्ठिर के राज्य में सभी जनपद कलहशून्य, निर्भय, स्वधर्मपरायण तथा उन्नतिशील थे। राजसूय के सम्बन्ध में परामर्श करने पर उनके मन्त्रियों ने कहा कि राजसूय यज्ञ का समय क्षत्रसम्पत्ति, अर्थात सेना आदि के अधीन है। उसमें उत्तम व्रत का आचरण करनेवाले ब्राह्मण सामवेद के मन्त्रों द्वारा अग्नि की स्थापना के लिये छः अग्निवेदियों का निर्माण करते हैं। जो इस यज्ञ का अनुष्ठान करता है वह दर्वीहोम से ले कर समस्त यज्ञों के फल को प्राप्त कर लेता है एवं यज्ञ के अन्त में जो अभिषेक होता है उससे यज्ञकर्ता नरेश 'सर्वजित् सम्राट' कहलाने लगता है। मन्त्रियों ने यह भी कहा कि युधिष्ठिर यज्ञ के सम्पादन में पूर्णतः समर्थ हैं। अन्य लोगों ने भी इसी प्रकार अपनी सम्मति दी। तब युधिष्ठिर ने विचार किया कि अपनी शक्ति और साधनों को देख कर तथा देश, काल, आय, और व्यय को भलिभाँति समझ कर कार्य आरम्भ करनेवाला कष्ट में नहीं पड़ता। अतः उन्होंने इस कार्य के विषय में पूर्ण निर्णय करने के लिये श्रीकृष्ण को ही सर्वश्रेष्ठ मान कर उनको निमन्त्रित करने के लिये एक दूत भेजा। समाचार पाते ही श्रीकृष्ण इन्द्रप्रस्थ नगर में आये। तब युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण से यज्ञ करने के विषय में उनकी सम्मति माँगी। (२. १३)।

"युधिष्ठिर के पूछने पर श्रीकृष्ण ने राजसूय के सम्बन्ध में इस प्रकार कहा : परशुराम ने पूर्वकाल में जब क्षत्रियों का संहार किया था उस समय जो क्षत्रिय इधर-उधर छिप कर बच रहे वे पूर्ववर्ती क्षत्रियों की अपेक्षा निम्नकोटि के थे। इसलिये इस समय संसार में नाम मात्र को ही क्षत्रिय रह गये हैं। इन क्षत्रियों ने पूर्वजों के कथनानुसार यह नियम बना लिया है कि इनमें से जो समस्त क्षत्रियों को जीत लेगा वही सम्राट होगा। इस समय सभी राजा और क्षत्रिय अपने को सम्राट पुरूरवा तथा इक्ष्वाकु की सन्तान कहते हैं। किन्तु पुरूरवा और इक्ष्वाकु के वंश में जो नरेश आज कल हैं उनके एक सौ कुल विद्यमान हैं। आजकल राजा ययाति के कुल में गुण की वृद्धि से भोजवंशियों का ही अधिक विस्तार हुआ है। अभी-अभी जरासन्ध उन समस्त क्षत्रियकुलों की राजलक्ष्मी को लाँघकर सम्राट के पद पर अभिषिक्त हुआ है और अपने बल पराक्रम से सब का सिरमौर बन गया है। इस समय सारा जगत जरासन्ध के ही वश में है। राजा शिशुपाल सब प्रकार से जरासन्ध का आश्रय ले कर उसका सेनापति बन गया है। मायायुद्ध करनेवाल दन्तवक्र भी जरासन्ध के सामने शिष्य की भाँति हाथ जोड़ कर खड़ा रहता है। हंस, डिम्भक, करूष, मेघवाहन आदि ने भी जरासन्ध की अधीनता स्वीकार करली है। मुर और नरक नामक नरेश, जिन्हे पश्चिम दिशा के अधिपति कहते हैं, तथा यवनाधिपति भगदत्त भी जरासन्ध के समक्ष नतमस्तक हैं। फिर भी भगदत्त आदि पाण्डु के मित्र, होने के कारण पाण्डवों के प्रति वात्सल्य भाव रखते हैं। इसी प्रकार कुन्तिभोजकुलवर्द्धक पुरुजित भी पाण्डवों के प्रति आदर का भाव रखते हैं। वङ्ग, पुण्ड्र, पौण्ड्रक आदि जरासन्ध से मिल गये हैं। जो पृथिवी के एक चौथाई भाग के स्वामी हैं, इन्द्र के सखा हैं, बलवान हैं, जिन्होंने अस्त्र-विद्या के बल से पाण्ड्य, क्रथ और कौशिक देशों पर विजय प्राप्त की है, जिनका भाई आकृति जमदग्निनन्दन परशुराम के समान शौर्यसम्पन्न है वे भोजवंशी राजा भीष्मक भी मगधराज जरासन्ध के भक्त हैं। इसी प्रकार उत्तर दिशा में निवास करनेवाले भोजवंशियों के अट्ठारह कुल जरासन्ध के भय से भाग कर पश्चिम दिशा में रहने लगे हैं। शूरसेन, भद्रकार, बोध, शाल्व, पटच्चर, सुस्थल, सुकुट्ट, कुलिन्द, कुन्ति तथा शाल्वायन आदि राजा भी भाइयों तथा सेवकों के साथ दक्षिण दिशा में भाग गये हैं। जो लोग दक्षिण पाञ्चाल एवं पूर्वी कुन्तिप्रदेश में रहते थे वे सभी क्षत्रिय तथा कोसल, मत्स्य, संन्यस्तपाद आदि राजपूत भी जरासन्ध के भय से उत्तर दिशा को छोड़ कर दक्षिण दिशा का आश्रय ले चुके हैं। कुछसमय पूर्व कंस ने समस्त यादवों को कुचल कर जरासन्ध की दो पुत्रियों के साथ विवाह किया था। उन जरासन्ध-पुत्रियों के नाम अस्ति और प्राप्ति थे। वे दोनों सहदेव की छोटी बहने थीं। जरासन्ध की सहायता से ही कंस अपने जाति-भाइयों को अपमानित करके उन सब का प्रधान बन बैठा है। उस दुरात्मा से पीड़ित हो भोजराज के वंश के लोगों ने रक्षा के लिये हमसे प्रार्थना की थी। तब मैंने आहुक की पुत्री सुतनु का विवाह अक्रूर से करा दिया। तदनन्तर मैंने और बलरामजी ने कंस और सुनामा को मार डाला। इससे कंस का भय तो जाता रहा किन्तु जरासन्ध क्रुद्ध होकर हमसे बदला लेने के लिये उद्यत हो गया। उस समय भोजवंश के अट्ठारह कुलों ने यह विचार किया था कि यदि वे सब मिल कर बड़े बड़े अस्त्रों द्वारा निरन्तर आघात करते रहे तो भी तीन सौ वर्षों में भी जरासन्ध की सेना का विनाश नहीं कर सकेंगे। मेरे विचार से तो जरासन्ध, हंस और डिम्भक—ये तीनों मिल कर तीनों लोकों का सामना करने के लिये पर्याप्त हैं। जरासन्ध के साथ जब सत्रहवीं बार युद्ध हो रहा था तब उसमें हंस नामक एक दूसरा राजा भी युद्ध के लिये आया था और बलरामजी के हाथों मारा गया। यह देख सैनिक चिल्लाने लगे कि 'हंस मारा गया'। यह सुन कर अपने भाई को मारा गया जान डिम्भक ने यमुना में कूद कर जान दे दी। हंस को जब यह समाचार मिला तब भाई के शोक में उसने भी यमुना में ही कूद कर अपनी जान दे दी। उन दोनों की मृत्यु से अत्यन्त हताश हो कर जरासन्ध अपनी राजधानी लौट गया। कंस की मृत्यु के बाद उसकी भार्या ने अपने पिता जरासन्ध को बार-बार उत्तेजित करते हुये कंस को मारनेवाले का वध करने का आग्रह किया। यह सुन कर हम सब ने मथुरा से भाग कर पश्चिम दिशा की शरण ली और रैवतक पर्वत से सुशोभित रमणीय कुशस्थली पुरी में जा कर निवास करने लगे (रैवतक दुर्ग का वर्णन)। हमारे कुल में १८,००० भाई हैं। आहुक के सौ पुत्र हैं जो सब देवताओं के समान पराक्रमी हैं। अपने भाई के साथ चारुदेष्ण, चक्रदेव, सात्यकि, मैं, बलरामजी, साम्ब और प्रद्युम्न—ये सात अतिरथी वीर हैं। कृतवर्मा, अनाधृष्टि, समीक, समितिञ्जय, कङ्क, शंकु और कुन्ति—ये सात महारथी हैं। अन्धक भोज के दो पुत्रों और वृद्ध राजा उग्रसेन को भी सम्मिलित कर लेने पर महारथियों की संख्या दस हो जाती है। विदूरथ, झल्लि, बभ्रु, उद्धव, विदूरथ, वसुदेव तथा उग्रसेन—ये सात मुख्य मन्त्री हैं। प्रसेनजित और सत्राजित कुबेरोपम सद्गुणों से सुशोभित हैं। उनके पास की स्यमन्तक मणि से प्रचुर मात्रा में सुवर्ण झरता है। इस प्रकार वर्णन करने के बाद श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर से कहा : 'आप सदा ही सम्राट बनने के गुणों से युक्त हैं। परन्तु दुर्योधन, भीष्म, द्रोण, अश्वत्थामा, कृपाचार्य, कर्ण, शिशुपाल, रुक्मी, एकलव्य, द्रुम, श्वेत, शैब्य तथा शकुनि—इन सब को संग्राम में जीते बिना आप यह यज्ञ कैसे कर सकते हैं ? मेरी सम्मति यह है कि जब तक महाबली जरासन्ध जीवित है तब तक आप राजसूय यज्ञ पूर्ण नहीं कर

सकते। जरासन्ध ने महादेवजी की उग्र तपस्या करके एक विशेष प्रकार की शक्ति प्राप्त करली है, इसीलिये उक्त सभी नरेश उससे परास्त हो गये हैं। हम भी उसके भय से मथुरा छोड़ कर द्वारका चले गये हैं। अतः यदि आप इस यज्ञ को पूर्ण रूप से सम्पन्न करना चाहते हैं तो जरासन्ध को मारने और उसके द्वारा बन्दी राजाओं को छुड़ाने का प्रयत्न कीजिये। मेरा मत तो यही है, आप जैसा उचित समझें करें। ऐसी दशा में स्वयं हेतु और युक्तियों द्वारा कुछ निश्चय कर के मुझे बताइये।' (२. १४)।

"युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण की बात सुनकर राजसूय यज्ञ करने के सम्बन्ध में अपनी शंका इस प्रकार व्यक्त की : 'मैं तो मन और इन्द्रियों के संयम को ही सबसे उत्तम मानता हूँ। राजसूय यज्ञ का आरम्भ करने पर भी उसके फलस्वरूप ब्रह्मलोक की प्राप्ति अपने लिये असम्भव है। हम भी जरासन्ध के भय से तथा उसकी दुष्टता से सशंकित रहते हैं। मैं तो आपके बाहुबल का ही भरोसा रखता था किन्तु जब आप भी जरासन्ध से शंकित हैं तब तो मैं अपने को उसके सामने कदापि बलवान् नहीं मान सकता।' युधिष्ठिर की यह बात सुनकर भीमसेन ने उनसे इस प्रकार कहा : 'जो राजा उद्योग नहीं करता तथा जो दुर्बल होकर भी उचित उपाय अथवा युक्ति से काम नहीं लेता वह दीमकों के बनाये हुये मिट्टी के समान नष्ट हो जाता है। श्रीकृष्ण में नीति है, मुझमें बल है और अर्जुन में विजय की शक्ति है। हम तीनों मिलकर जरासन्ध के वध का कार्य पूर्ण कर लेंगे। तदनन्तर श्रीकृष्ण ने कहा : 'सम्राज्य-प्राप्ति के पाँच गुण हैं शत्रुविजय, प्रजापालन, तपःशक्ति, धनसमृद्धि और उत्तम नीति। इन सबसे आप सम्पन्न हैं, किन्तु आपके मार्ग में जरासन्ध बाधक है। आजकल वह प्रधान पुरुष बनकर मूर्धाभिषिक्त राजा को बलपूर्वक बन्दी बना लेता है। उसने सौ में छियासी राजाओं को कैद कर लिया है। केवल चौदह प्रतिशत राजा ही शेष हैं। वह उन्हें भी बन्दी बनाने के प्रयास में लगा हुआ है। (२. १५)।

"युधिष्ठिर ने पुनः कुछ आपत्ति करते हुये श्रीकृष्ण से कहा : 'भीमसेन और अर्जुन मेरे नेत्र हैं और आपको मैं अपना मन मानता हूँ। जरासन्ध की सेना को जीतना अत्यन्त कठिन है। अतः मैं आप लोगों को उसके पास नहीं भेजना चाहता।' युधिष्ठिर की बात सुनकर उन्हें उत्साहित करते हुये अर्जुन बोले : 'धनुष, शस्त्र, बाण, पराक्रम, श्रेष्ठ सहायक, भूमि, यश और बल की प्राप्ति अत्यन्त कठिन है किन्तु ये सभी दुर्लभ वस्तुयें मुझे प्राप्त हैं। बलवान् पुरुष में दीनता का होना बहुत बड़ा दोष है। यदि हम राजसूय यज्ञ की सिद्धि के लिये जरासन्ध का विनाश तथा बन्दी राजाओं की रक्षा कर सकें तो इससे उत्तम और कुछ नहीं। हमलोग सम्राज्य को प्राप्त करने में समर्थ हैं अतः शत्रुओं से युद्ध अवश्य करेंगे। (२. १६)।

"श्रीकृष्ण ने अर्जुन की बातों का अनुमोदन करते हुये कहा कि जरासन्ध के विनाश के लिये हमलोगों को अवश्य प्रयत्न करना चाहिये। युधिष्ठिर ने यह जानना चाहा कि जरासन्ध कौन है और उसकी उत्पत्ति कैसे हुई है ? श्रीकृष्ण ने कहा : 'मगध देश में बृहद्रथ नामक राजा राज्य करते थे। उनका विवाह काशिराज की दो जुड़वा कन्याओं के साथ हुआ था। बहुत दिन व्यतीत होने पर भी बृहद्रथ को कोई सन्तान नहीं हुई। एक दिन मुनि चण्डकौशिक उनकी राजधानी में पधारे। तब राजा ने मुनि को प्रसन्न करके उनसे एक पुत्र प्रदान करने की प्रार्थना। मुनि उस समय एक आम के वृक्ष के नीचे बैठे थे। तब सहसा मुनि की गोद में एक आम गिरा। मुनि ने उस आम को मन्त्रों से अभिमन्त्रित करके पुत्र की प्राप्ति कराने के लिये राजा को देते हुये कहा : 'यह फल तुम्हें पुत्र प्राप्त करायेगा। मैं तुम्हारे पुत्र के लिये आठ वर भी देता हूँ। वह ब्राह्मणभक्त होगा, युद्ध में अजेय होगा, युद्ध विषयक उसकी रुचि कभी कम नहीं होगी, वह अतिथि प्रेमी होगा, दीन-दुखियों पर कृपादृष्टि रक्खेगा, उसका बल महान होगा, प्रजाजनों पर उसका सदा स्नेह बना रहेगा और इस सम्पूर्ण लोक में उसकी कीर्ति का विस्तार होगा।' तदनन्तर घर आकर राजा बृहद्रथ ने अपनी दोनों पत्नियों को वह फल दे दिया। उन दोनों रानियों ने उस के दो टुकड़े करके खा लिया। प्रसवकाल पूर्ण होने पर दोनों ने अपने-अपने गर्भ से शरीर का आधा-आधा भाग पैदा किया जिनमें प्राण और जीव विद्यमान था। उन अर्धशरीरों को देखकर दोनों रानियाँ भयभीत हो उठीं। उनकी धायों ने दोनों टुकड़ों को बाहर फेंक दिया। तब जरा नामक राक्षसी ने उन टुकड़ों को उठा लिया और ले जाने की सुविधायोग्य बनाने के लिये उन्हें जोड़ दिया। दोनों टुकड़ों का संयोग होते ही एक पूर्ण बालक बन गया : राक्षसी को वह शिशु वज्र के सारतत्व से बना प्रतीत हुआ और वह उसे उठाकर ले जाने में असमर्थ हो गई। वह शिशु तब जोर-जोर से रोने लगा। उसकी रोने की आवाज सुनकर राजा बृहद्रथ अपनी रानियों के साथ बाहर निकले। तब राक्षसी ने सोचा कि 'मैं इस राजा के राज्य में रहती हूँ। यह पुत्र की इच्छा रखता है अतः इस राजा के पुत्र की हत्या करना मेरे लिये उचित नहीं है।' तब वह शिशु को गोद में लेकर राजा से बोली : 'यह आपका पुत्र है। ब्रह्मर्षि के वरदान से तुम्हारी दोनों पत्नियों के गर्भ से इसका जन्म हुआ है। धायों ने इसे घर से बाहर फेंक दिया था, किन्तु मैंने इसकी रक्षा की है।' राजा ने उस पुत्र को ग्रहण करके रानियों को दे दिया और जरा का परिचय पूछा। (२. १७)।

"जरा ने कहा : 'मैं इच्छानुसार रूपधारण करनेवाली राक्षसी जरा हूँ और तुम्हारे घर में पूजित हो सुखपूर्वक रहती आई हूँ। कहने को तो मैं राक्षसी हूँ किन्तु पूर्वकाल में ब्रह्मा जी ने गृहदेवी नाम से मेरी सृष्टि की थी। जो अपने घर की दीवार पर मुझे अनेक पुत्रों सहित युवती स्त्री के रूप में अंकित करता है उसके घर में सदा वृद्धि होती है। मैंने तुम्हारे पुत्र के दोनों टुकड़ों को देखकर जोड़ दिया जिससे यह राजकुमार प्रकट हो गया। अब इस बालक के लिये जो आवश्यक संस्कार हों उन्हें पूर्ण करो।' श्रीकृष्ण ने बताया कि ऐसा कह जरा राक्षसी वहीं अन्तर्धान हो गई और शिशु को लेकर राजा महल में चले गये। बृहद्रथ ने उस बालक का नाम जरासन्ध रक्खा क्योंकि जरा ने ही उसे सन्धित किया था। (२. १८)।

"कुछ काल के पश्चात् चण्डकौशिक मुनि पुनः मगध आये। उनको आया जानकर राजा अपने पुत्र सहित मुनि की सेवा में उपस्थित हुये। मुनि ने राजा से प्रसन्न हो उनके पुत्र का भविष्य बताते हुये कहा : 'इस बालक में रूप, बल, सत्व और ओज का विशेष आविर्भाव होगा। इसमें सन्देह नहीं कि यह पुत्र सम्राज्य लक्ष्मी से सम्पन्न होगा। जो लोग इससे शत्रुता करेंगे वे नष्ट हो जायेंगे। देवताओं के छोड़े हुये अस्त्र-शस्त्र भी इसे चोट नहीं पहुँचा सकेंगे। जिनके मस्तक पर अभिषेक हुआ है उन सभी राजाओं के ऊपर रहकर अपने तेज से प्रकाशित होगा। यह मगध का राजा होकर सम्पूर्ण लोकों में अत्यन्त बलवान होगा और महादेव रुद्र का प्रत्यक्ष दर्शन प्राप्त करेगा।' इस प्रकार भविष्य बताकर मुनि ने राजा को विदा कर दिया। शीघ्र ही बृहद्रथ ने जरासन्ध का राज्याभिषेक करके रानियों सहित संन्यास ले लिया। इधर जरासन्ध मुनि के कथनानुसार भगवान् शंकर से वर प्राप्त करके राज्य की रक्षा करने लगा। अपने जामाता के मारे जाने पर जरासन्ध श्रीकृष्ण से अत्यधिक वैरभाव रखने लगा। उसी वैर के कारण जरासन्ध ने अपनी गदा ९९ बार घुमाकर गिरिव्रज से मथुरा की ओर फेंका था जो ९९ योजन दूर मथुरा में जाकर गिरी थी। मथुरा के समीप जहाँ यह गदा गिरी थी उसका नाम गदावसान पड़ गया। जरासन्ध को परामर्श देने के लिये बुद्धिमानों में श्रेष्ठ तथा नीतिशास्त्र में निपुण दो मन्त्री थे जिनका नाम हंस और डिम्भक था। ये दोनों किसी भी शस्त्र से मरनेवाले नहीं थे। इस प्रकार जरासन्ध, हंस और डिम्भक तीनों मिलकर तीनों लोकों का सामना करने के लिये पर्याप्त थे। (२. १९)।

राजसूयपर्वन् से उस पर्व का तात्पर्य है जिसमें राजसूय यज्ञ के आरम्भ का वर्णन है (१. २, १३३)। यह महाभारत का २५ वाँ अवान्तर पर्व है जो सभापर्व के अन्तर्गत आता है : "वैशम्पायन जी ने बताया कि इस प्रकार पृथिवी को जीतकर अपने धर्म के अनुसार व्यवहार करते हुये पाँचो पण्डव भाई इस भूमण्डल का शासन करने लगे। युधिष्ठिर के शासन में सम्पूर्ण प्रजा प्रसन्न और सुखी थी। उनका राज्यकोष भी प्रचुर धनराशि से परिपूर्ण था। तब उनके हितैषियों ने युधिष्ठिर को राजसूय यज्ञ करने का

परामर्श दिया। उसी समय श्रीकृष्ण भी उनके पास आ गये। वे वसुदेव जी (आनकदुन्दुभि) को द्वारका की सेना के आधिपत्य पर स्थापित करके आये थे। युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण से कहा : 'मैं आपके साथ तथा अपने छोटे भाइयों के साथ यज्ञ करना चाहता हूँ अतः इसके लिये आप आज्ञा दें। आप स्वयं यज्ञ की दीक्षा ग्रहण कीजिये, अथवा मुझे इन छोटे भाइयों के साथ दीक्षा ग्रहण करने की आज्ञा दीजिये।' तब श्रीकृष्ण ने राजसूय यज्ञ के गुणों का विस्तार से वर्णन करने के बाद कहा : 'आप स्वयं इस यज्ञ की दीक्षा ग्रहण कीजिये जिससे हम सबलोग कृतकृत्य हो जायँ। मुझे आप जिस कार्य में लगायें मैं आपकी सब आज्ञाओं का पालन करूँगा।' श्रीकृष्ण की आज्ञा लेकर युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ को सम्पन्न करने के लिये साधन जुटाना आरम्भ कर दिया। उन्होंने भाइयों और मन्त्रियों को सम्पूर्ण तैयारी करने की आज्ञा दी। धौम्य तथा अन्य ब्राह्मणों द्वारा बताये अनुसार सब प्रकार की मांगलिक वस्तुओं को जैसे भी हो प्राप्त करने के लिये कहा। इन्द्रसेन, विशोक और अर्जुन के सारथि पूरु को अन्न संग्रह करने के काम पर लगाया गया। महर्षि द्वैपायन व्यासजी ने उस यज्ञ के लिये ब्रह्मन् का कार्य स्वयं सँभाला तथा सुसामा को सामगान के लिये, याज्ञवल्क्य को अध्वर्यु और धौम्य के साथ वसुपुत्र पैल को होता बनाया। इनके पुत्र और शिष्यवर्ग के लोग होत्रग हुये। इन सब ने पुण्याहवाचन कराकर उस विधि का ऊहन कराया और शास्त्रोक्त विधि से उस महान यज्ञस्थान का पूजन सम्पन्न किया। तदनन्तर युधिष्ठिर ने मन्त्री सहदेव को सब राजाओं तथा ब्राह्मणों, वैश्यों और माननीय शूद्रों को आमन्त्रित करने के लिये दूत भेजने की आज्ञा दी। तदनन्तर वहाँ आये सब ब्राह्मणों ने ठीक समय पर कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर को राजसूय यज्ञ की दीक्षा दी। यज्ञ की दीक्षा लेकर युधिष्ठिर सहस्रों ब्राह्मणों से घिरे हुये यज्ञमण्डप में आये। उन्होंने एक लाख गायें, उतनी ही शय्यायें, एक लाख सुवर्ण मुद्रायें तथा इतनी ही अविवाहित युवतियाँ पृथक्-पृथक् ब्राह्मणों को दान की। युधिष्ठिर ने भीष्म, द्रोणाचार्य, धृतराष्ट्र, विदुर, कृपाचार्य तथा दुर्योधन आदि सब भाइयों को बुलाने के लिये नकुल को हस्तिनापुर भेजा। (२. ३३)।

"युधिष्ठिर के यज्ञ में पधारे राजाओं का उल्लेख, एवं कौरवों तथा यादवों का आगमन, और सबके भोजन-विश्राम आदि की सुव्यवस्था का वर्णन (२. ३४)।

"राजसूय यज्ञ का वर्णन : पितामह भीष्म तथा गुरु द्रोणाचार्य आदि का स्वागत करके युधिष्ठिर ने उनके चरणों में प्रणाम किया और इन लोगों से यज्ञ में हर प्रकार का अनुग्रह करने का निवेदन किया। भक्ष्य-भोज्य आदि सामग्री की देख-रेख तथा उसके बाँटने आदि की व्यवस्था का उन्होंने दुःशासन को अधिकार दिया। ब्राह्मणों के स्वागत-सत्कार का कार्य अश्वत्थामा को, राजाओं की सेवा और सत्कार का कार्य सञ्जय को और कौन काम हुआ है तथा क्या नहीं इसकी देख-रेख का कार्य भीष्म तथा द्रोणाचार्य को सौंप दिया। उत्तम वर्ण के स्वर्ण तथा रत्नों को परखने, रखने, और दक्षिणा देने के कार्य में कृपाचार्य की नियुक्ति की। विदुर धन को व्यय करने तथा दुर्योधन कर देनेवाले राजाओं से सब प्रकार की भेंट स्वीकार करने और व्यवस्थापूर्वक रखने का कार्य सँभालने लगे। श्रीकृष्ण सबको सन्तुष्ट करने की इच्छा से स्वयं ही ब्राह्मणों के चरण पखारने में लगे थे। युधिष्ठिर ने यज्ञ में छः अग्नियों (आरम्भणीय, क्षत्र, धृति, व्युष्टि, द्विरात्र और दशपेय) की स्थापना करके पर्याप्त दक्षिणा दे कर भगवान् का यजन किया। (२.३५)।

"युधिष्ठिर ने महर्षियों से कहा : 'आप लोगों के प्रभाव से यह राजसूय यज्ञ सम्पन्न हुआ।' वैशम्पायनजी ने बताया कि इस प्रकार यज्ञ-समाप्ति के बाद युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण, बलदेव और कुरुश्रेष्ठ भीष्म आदि का पूजन किया। तदनन्तर सभी राजाओं ने विधिवत विदा ली। अन्त में श्रीकृष्ण ने भी द्वारका लौटने की आज्ञा चाही। तब युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण से कहा : 'आपकी कृपा से मैंने यह यज्ञ पूर्ण किया है। सारा क्षत्रिय मण्डल भी आपके प्रसाद से मेरे अधीन हुआ है। आपको जाने के लिये मेरी वाणी कैसे कह सकती है। आपके बिना मैं कभी प्रसन्न नहीं रह सकूँगा।' फिर भी भारी मन से श्रीकृष्ण सबसे मिल कर विदा हुये। उन्होंने दारुक द्वारा सुसज्जित रथ को उपस्थित देख कर उसकी दक्षिणावर्त प्रदक्षिणा की और उस पर आरूढ़ हो कर द्वारका के लिये प्रस्थित हुये। तदनन्तर युधिष्ठिर तथा सभी पाण्डव श्रीकृष्ण के रथ के पीछे-पीछे पैदल ही चलने लगे। अन्त में वे सब लोग श्रीकृष्ण के आग्रह पर लौटे। श्रीकृष्ण के द्वारका चले जाने पर भी राजा दुर्योधन तथा शकुनि उस दिव्य सभावन में ही रहे। (२. ४५, ३९-४५)।"

राजोपरिचर = वसु उपरिचर (१२. ३३७, २१)।

राज्ञामागमन = (राजसूय के लिये राजाओं का आगमन) : १. २, १३५।

राज्यलम्भ = राज्यलाभ (१. २, ४५. ८७)।

राज्यलाभपर्वन्, महाभारत के १५ वें अवान्तर पर्व का नाम है जो आदि पर्व के अन्तर्गत आता है (तुकी राज्यलम्भ): "द्रुपद की आज्ञा प्राप्त कर पाण्डव, श्रीकृष्ण, कृष्णा (द्रौपदी) और कुन्ती आदि एक साथ आमोद-प्रमोद करते हुये हस्तिनापुर की ओर चले। पाण्डवों के आगमन का समाचार सुन कर धृतराष्ट्र ने विकर्ण, चित्रसेन, द्रोण और कृप को उनकी अगवानी के लिये भेजा। पाण्डवों और उनके चचेरे भाई दुर्योधन आदि के बीच फिर कोई कलह न उत्पन्न हो जाय इसलिये धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर आदि से आधा राज्य लेकर खाण्डवप्रस्थ में रहने के लिये कहा। तत्पश्चात् पवित्र एवं कल्याणमय प्रदेश में शान्ति कर्म करा पाण्डवों ने व्यासजी को अगुआ बना कर नगर बसाने के लिये भूमि का नाप करा कर नगर बसाया। उस स्थान के चारों ओर अगाधजल से भरी खाइयाँ बनी थीं। इस प्रकार पाण्डवों का वह नगर अत्यन्त सुन्दर प्रतीत हो रहा था। उस नगर का नाम इन्द्रप्रस्थ रक्खा गया। इस प्रकार नगर को बसा कर पाण्डवगण वहाँ निवास करने लगे तब बलरामजी के साथ श्रीकृष्ण पाण्डवों की अनुमति ले कर द्वारका चले गये (१. २०७)।

"जब पाण्डवगण इन्द्रप्रस्थ में सुखपूर्वक निवास कर रहे थे तब एक दिन उनके पास देवर्षि नारदजी आये। नारदजी ने बताया कि किस प्रकार तिलोत्तमा के लिये सुन्द और उपसुन्द ने एक दूसरे का वध कर दिया था। इस कथा को सुनाकर नारदजी ने पाँचों पाण्डवों की भार्या द्रौपदी के सम्बन्ध में एक नियम बना लेने का पाण्डवों को परामर्श दिया। तब युधिष्ठिर ने नारदजी से यह बताने के लिये के लिये कहा कि उक्त असुर कौन थे और तिलोत्तमा भी कहाँ की रहनेवाली थी (१. २०८)।

"तब पाण्डवों ने देवर्षि के सामने ही द्रौपदी के सम्बन्ध में यह नियम बनाया : 'हममें से प्रत्येक के घर में द्रौपदी एक-एक वर्ष निवास करे। द्रौपदी के साथ एकान्त में बैठे हुये हममें से एक भाई को यदि दूसरा देख ले तो वह बारह वर्षों तक ब्रह्मचर्यपूर्वक वन में निवास करे।' पाण्डवों द्वारा यह नियम स्वीकार कर लिये जाने पर नारदजी प्रसन्न होकर अभीष्ट स्थान को चले गये। (१. २१२, २८-३०)।"

रात्रि (मूर्तिमान् रात्रि): १. ७४, ३०; ५. १३, २५ (शची ने अपनी मनोकामना-पूर्ति के लिये इनकी आराधना की); ९.४५, १५ (स्कन्द के अभिषेक के अवसर पर ये मूर्तिमान् हो कर उपस्थित हुई थीं)। तुकी० निशा।

राधा, अधिरथ सूत की पत्नी का नाम है जिसकी गोद में अधिरथ ने बालक कर्ण को दे दिया था : १. ६७, १४० राधायाः कल्पयामास पुत्रं सोऽधिरथस्तदा): १११, २३; ३. ३०९, २. १०. ११ (अधिरथ और राधा ने कर्णको पाकर उसे गोद ले लिया); ५. १४१, ५. ६ (कर्ण का अपने पुत्र के रूप में पालन-पोषण किया)।

राधात्मज = कर्ण (देखिये वस्था०)।

राधाभर्तृ = अधिरथ (१. ६७, १४०; १११, २३)।

राधासुत, राधेय = कर्ण (देखिये वस्था०)।

१. राम, जमदग्नि और रेणुका के पुत्र का नाम है जिन्हें परशुराम भी कहते हैं, यद्यपि 'परशुराम' नाम महाभारत में नहीं आता। इनको अन्य नामों से भी सम्बोधित किया गया है जैसे भार्गव और जामदग्न्य : १. २, ३ (शस्त्रभृतां वरः, त्रेता और द्वापर के सन्धिकाल में राम ने अनेक बार क्षत्रिय राजाओं का संहार किया था). ६. ८ (इन्होंने अपने पितरों से यह वर माँगा कि वे क्षत्रिय वध के पाप से मुक्त हो जाँय और इनके द्वारा निर्मित समन्तपञ्चक के पाँचो सरोवर पवित्र तीर्थ बन जाँय). १६८; ५५, १६ (रामो यथा शास्त्रविदस्त्रविद् च); ६४, ४ (पूर्वकाल में इन्होंने इक्कीस बार पृथिवी को क्षत्रियरहित करके महेन्द्र पर्वत पर तपस्या की थी) ५; ६६, ४८ (ये जमदग्नि के चार पुत्रों में सबसे छोटे, सर्वशस्त्रों में कुशल तथा क्षत्रियों का अन्त करनेवाले थे); ६७, ७६; १००, ३८. ३९ (यदस्त्रं वेद रामश्च); १०४, १. ४ (अपने पिता के वध से क्रुद्ध होकर जब राम जामदग्न्य ने परशु द्वारा हैहयराज अर्जुन का वध करके इक्कीस बार पृथिवी को क्षत्रिय-विहीन कर दिया तब क्षत्रिय-जातीय स्त्रियों ने ब्राह्मणों से समागम करके पुनः क्षत्रिय जाति की वृद्धि की थी); १२३, ४३; १३०, ५०. ५२. ५५. ५७. ५९. ६१. ६५. ६६ (इन्होंने द्रोण को अपने समस्त अस्त्र-शस्त्रों और धनुर्वेद की शिक्षा दी); १६६, ८-१०. १२. १३ (द्रोण ने इनसे अस्त्र और ब्रह्मास्त्र प्राप्त किया); १६७, २७ (क्षत्रोच्छेदाय विहितो जामदग्न्य इवास्थितः); १८८, १४; १९०, १७. २०. ३२; २. ८, १९ (यम की सभा में); १४, २ (इन्होंने कुछ क्षत्रियों का वध नहीं किया). २२; ३७, १५ (जामदग्न्यस्य दयितः शिष्यः, कर्ण); ५३, १३ (युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित); ७८, १५ (भृगुतुङ्ग पर युधिष्ठिर को उपदेश दिया); ३. १२, ५१ (श्रीकृष्ण की प्रशंसा की); २६, २२ (युधिष्ठिर की सेवा में); ८३, २५. २७. २९. ३१. ३४. ३९-४१ (इन्होंने क्षत्रियों के रक्त से पाँच ह्रद बनाये जो बाद में कुरुक्षेत्र के अन्तर्गत तीर्थ बन गये); ८५, २ (लौहित्य तीर्थ बनाया). १६ (महेन्द्रं'''जामदग्न्यनिषेवितम्). ४३ (शूर्पारकं'''जामदग्न्यनिषेवितम्); ८७, २२; ९९, ३५. ३६ (भृगुतीर्थ में स्नान करके इन्होंने अपनी शक्ति पुनः प्राप्त किया). ३९. ४२। "पूर्वकाल में राजा दशरथ के यहाँ साक्षात् भगवान् विष्णु ने रावण का वध करने के लिये राम के रूप में अवतार लिया था। लोमश जी ने बताया कि वे अयोध्या में श्रीराम का उनके जन्म के समय दर्शन कर चुके हैं। श्रीराम का पराक्रम सुनकर भृगु तथा ऋचीक के वंशज रेणुकानन्दन परशुराम उन्हें देखने के लिये उत्सुक होकर क्षत्रियसंहारक दिव्य धनुष लेकर अयोध्या आये। परशुराम के आगमन का उद्देश्य श्रीराम दाशरथि के बल-पराक्रम की परीक्षा लेना था। जब परशुराम के आगमन का समाचार दशरथ ने सुना तब उन्होंने अपने पुत्र राम को परशुराम जी की अगवानी के लिये भेजा। राम दाशरथि को अपने सामने धनुष-बाण लिये उपस्थित देखकर राम जामदग्न्य ने उनसे इस प्रकार कहा : 'यदि तुममें शक्ति हो तो यत्नपूर्वक इस धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ाओ। यह वह धनुष है जिसके द्वारा मैंने क्षत्रियों संहार किया है।' उनके ऐसा कहने पर राम दाशरथि ने रोष पूर्वक परशुराम का दिव्य धनुष हाथमें लेकर लीलापूर्वक उसकी प्रत्यञ्चा चढ़ा दी। तदनन्तर उन्होंने परशुराम से पूछा कि वे उनका और कौन सा कार्य करें। तब परशुराम जी ने राम दाशरथि को एक दिव्य बाण दिया और उसे धनुष पर चढ़ाकर कान तक खींचने के लिये कहा। राम दाशरथि ने क्रोधपूर्वक परशुराम को फटकारते हुये उन्हें दिव्य दृष्टि प्रदान की। तब राम जामदग्न्य ने श्रीरामचन्द्र के शरीर में बारह आदित्य, आठ वसु, ग्यारह रुद्र, साध्य देवता, उनचास मरुद्गण, पितृगण, अग्निदेव, नक्षत्र, आदि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड तथा धनुर्वेद आदि सभी को चेतनरूप धारण किये हुये देखा। तदनन्तर श्रीरामचन्द्र ने उस बाण को छोड़ा जिससे प्रकृति में असमय ही भयानक उत्पात प्रकट हो गये। वह बाण परशुराम को व्याकुल करके केवल उनके तेज को छीनकर पुनः लौट आया। परशुरामजी एक बार मूर्च्छित होकर जब पुनः चेतन हुये तब मरकर जीवित हो उठे मनुष्य की भाँति उन्होंने विष्णुतेज धारण करनेवाले श्रीरामचन्द्र को नमस्कार किया। तत्पश्चात् श्रीरामचन्द्र की आज्ञा लेकर वे पुनः महेन्द्र पर्वत पर लौट आये। वहाँ भयभीत और लज्जित हो परशुराम तपस्या में संलग्न हो गये। एक वर्ष व्यतीत होने पर तेजहीन और अभिमानशून्य परशुराम को उनके पितरों ने देखा और उन्हें वधूसर नामक पुण्य नदी के तीर्थों में स्नान करके अपना तेज पुनः प्राप्त करने के लिये कहा। पितरों के कहने से परशुराम जी ने वैसा ही किया और इस प्रकार अपना तेज पुनः प्राप्त कर लिया (३. ९९, ३९-७१)।" ३. ९९, ४३-४६. ४९. ५०. ५२. ५३. ५४. ५६. ६३. ६४. ६६. ६९. ७१; ११५, ३. ४. ५ (ये तपस्वियों को प्रत्येक चतुर्दशी और अष्टमी को दर्शन देते हैं). ६-८ (रामेण निर्जिताः'''क्षत्रियाः). १०. ११ (इन्होंने हैहयवंशी कार्तवीर्य अर्जुन का वध किया था); ११६, ४ (ये जमदग्नि और रेणुका के पाँचवें पुत्र थे). १३. १४ (पिता की आज्ञा से इन्होंने परशु से अपनी माता का सर काट दिया किन्तु पिता से माता को पुनः जीवित करने का निवेदन किया). २२. २३. २५-२९ (इन्होंने कार्तवीर्य अर्जुन का वध कर दिया। तब कार्तवीर्य के भृत्यों ने जमदग्नि का वध कर दिया); ११७, १-१८ (इन्होंने पिता के लिये विलाप करने के बाद उनका प्रेतकर्म सम्पन्न किया। तदनन्तर इन्होंने सम्पूर्ण क्षत्रियों के वध की प्रतिज्ञा की। अत्यन्त बलवान और पराक्रमी परशुराम ने अकेले ही कार्तवीर्य के सब पुत्रों को मार डाला। जिन-जिन क्षत्रियों ने अर्जुन-पुत्रों का साथ दिया उनका भी परशुराम ने वध कर दिया। इसके बाद परशुराम ने इक्कीस बार पृथिवी को क्षत्रियविहीन करके उनके रक्त से समन्तपञ्चक क्षेत्र में पाँच रुधिरह्रद भर दिये। उन ह्रदों में जब इन्होंने पितरों का तर्पण किया तब महर्षि ऋचीक साक्षात् प्रकट हुये और उन्होंने इन्हें उस घोर कर्म से रोका। तदुपरान्त परशुराम ने एक यज्ञ करके इन्द्र को तृप्त किया और ऋत्विजों को भूमि दान में दी। कश्यप जी को एक सुवर्ण वेदिका प्रदान की जिसकी लम्बाई-चौड़ाई दस-दस व्याम और ऊँचाई ९ व्याम थी। उस समय कश्यप जी की आज्ञा से ब्राह्मणों ने उस स्वर्णवेदिका को खण्ड-खण्ड करके आपस में बाँट लिया अतः वे खाण्डवायन नाम से प्रसिद्ध हुये। इस प्रकार सम्पूर्ण पृथिवी कश्यप जी को देकर परशुराम जी महेन्द्र पर्वत पर निवास करने लगे। पाण्डवों ने महेन्द्र पर्वत पर परशुराम जी की उपासना की और चतुर्दशी तिथि को उनका दर्शन प्राप्त किया); ११७, १. ६. १०. ११. १५. १६. १८; १३०, १२ (पर्वत के मध्य में एक वर्ष की रचना की); २१४, १३; ३०२, ९ (इन्होंने कर्ण को शास्त्रों की शिक्षा दी थी); ३०९, १८ (कर्ण ने इनसे अस्त्र प्राप्त किया था); ४. ४८, १८; ५१, १०; ५. ४९, २७ (इन्होंने कर्ण को शाप दिया); ५५, ५४; ६१, ४; ६२ २ (कर्ण ने ब्राह्मण बनकर इनसे अस्त्रों की शिक्षा ली किन्तु भेद खुल जाने पर इन्होंने कर्ण को शाप दिया); ८३, ६५ (श्रीकृष्ण की सेवा में); ९६, ३. २४. २८ (दुर्योधन को दम्भोद्भवोपाख्यान सुनाया); ९७, १; १२५, १६; १४७, २४ (इनके साथ भीष्म का युद्ध); १५१, २६. ३०; १६८, ६ (कर्ण को शाप दिया था). ३३; १७६, २५. २६. २९-३१. ३३. ३४ (जमदग्निसुतो वीरः). ३५. ३९-४१. ५९; १७७, २. ३. १०. १६. १९-२४. २६. २८-३२. ३५. ३७. ३९. ४०. ४२; १७८, १. ६-११. १३. १५. १६. २२. २७. २८. ३३. ३६. ३७. ३९. ४३. ४४. ५५-५८. ६०-६२. ६४. ७१. ७२. ८१. ८२. ८५. ८७-८९. ९१. ९२; १७९, २. ३. ५. ६. ९-११. १३-१५. २५. २८. ३०-३२. ३४. ३५. ३८; १८०, ३-५. ७. ९. ११-१४. १६-१८. २०-२५. २८. ३०. ३२. ३६; १८१, १. ५. ७. १०. ११. १६; १८२, २. १. ५-७. ९. १०. १८-२१. २५-२८; १८३, ३-५. १०. १२. १४. १५. १८; १८४, ३. ७. ८. १२. १५. १७; १८५, २. ४. ८. ९. ११. १४. १६. १९. २१. २८-३१. ३३-३५. ३७; १८६, १. ५. ९. ११ (परशुराम ने अम्बा से कहा : 'मैंने पूरी शक्ति लगाकर युद्ध किया किन्तु भीष्म से अपनी अधिक विशिष्टता नहीं दिखा सका अतः अब तू भीष्म की ही शरण ले।' भीष्म और परशुराम जी का युद्ध तेइस दिनों तक चला था और अन्त में परशुराम ने पराजय स्वीकार कर लिया। तब ऋषि और पितरों ने दोनों के बीच शान्ति स्थापित की); ६. १३, ७; १४, २१. ४७. ४९. ५०; २३, २७; ३४,

३१ (रामः शस्त्रभृतामहम्); ४९, ११; ६१, २७ (इन्होंने श्रीकृष्ण की स्तुति की थी); १०८, ४१; ११८, २० (ये भीष्म के अस्त्र-गुरु रह चुके थे); १२०, ६; ७. १, ४६ (इन्होंने कर्ण को अस्त्रविद्या की शिक्षा दी थी); ३, २४ (भीष्म ने इन्हें पराजित किया था); १०, ३७ (रामेण समरेषु); २३, ७० (पाण्ड्यराज सारङ्गध्वज ने इनसे अस्त्र प्राप्त किये थे); ३४, ४; ४०, ३० (कर्ण इनका शिष्य था)। "नारदजी ने कहा : महातपस्वी परशुराम भी अतृप्त अवस्था में ही मृत्यु के ग्रास बनेंगे। परशुराम जी ने इस पृथिवी को सुखमय बनाते हुये आदि युग के धर्म का निरन्तर प्रचार किया था और सदा विकाररहित रहे। उन्होंने चौसठ करोड़ क्षत्रियों को एकमात्र धनुष के द्वारा जीत लिया था। इसी युद्ध में उन्होंने चौदह सहस्र ब्रह्मद्रोहियों को और दन्तकूर नामक राजा को भी मार डाला था। उन्होंने १,००० क्षत्रियों को मूसल से, १,००० को तलवार से, और १,००० को पानी में डुबोकर, और १,००० को फाँसी पर लटका कर मार डाला था (परशुराम द्वारा मारे गये विभिन्न देशों के क्षत्रियों का विवरण)। इस प्रकार लाखों कोटि क्षत्रियों का वध करके उनके रक्त से उन्होंने कितने ही सरोवर भर दिये और समस्त अट्ठारह द्वीपों को अपने वश में करके उत्तम दक्षिणाओं से युक्त सौ पवित्र यज्ञों का अनुष्ठान किया था। उस यज्ञ में बत्तीस हाथ ऊँची सोने की वेदी का निर्माण किया गया था जो सब प्रकार के रत्नों से परिपूर्ण और १०० पताकाओं से सुशोभित थी। परशुराम जी की उस वेदी को और इस पृथिवी को भी कश्यपजी ने दक्षिणा के रूप में ग्रहण किया था। परशुराम जी ने इक्कीस बार पृथिवी को क्षत्रियविहीन करके इस वसुधा को ब्राह्मणों के अधिकार में दे दिया था। जब महर्षि कश्यप ने सात द्वीपों से युक्त इस पृथिवी को दान में लिया तब उन्होंने परशुराम जी से कहा : 'अब तू मेरी आज्ञा से इस पृथिवी से निकल जा।' कश्यप जी के इस आदेश से परशुराम ने, जितनी दूर बाण फेंका जा सकता है, समुद्र को उतनी दूर पीछे हटाकर ब्राह्मण की आज्ञा का पालन करते हुये गिरिश्रेष्ठ महेन्द्र पर निवास किया। ऐसे परशुराम जी भी एक-न-एक दिन मृत्यु को प्राप्त होंगे। (७. ७०)।" ७. ७०, १. ९-११. १३. १५. १८. १९. २१. २४; ९८, ४१; ११९, १८; १८१, १८; १९४, ४ (द्रोण ने परशुराम से ही धनुर्वेद प्राप्त किया था). ८; ८. २, १३ (भार्गवः प्रददौ यस्मै परमास्त्रं महाहवे। साक्षाद्रामेण यो बाल्ये धनुर्वेद उपाकृतः ॥); ५, ५५ (कार्तवीर्यश्च रामेण भार्गवेण यथा हतः); ८, ४ (चित्तमोहमिवायुक्तं भार्गवस्य महामतेः); ९, ४५ (इन्होंने कर्ण को महाघोर ब्रह्मास्त्र की शिक्षा दी थी); ३१, ४४ (इन्होंने विजय नामक धनुष इन्द्र से प्राप्त करके उसे कर्ण को दिया). ४६ (धनुर्घोरं रामदत्तं). ४७। "भार्गववंश में महर्षि जमदग्नि प्रकट हुये थे जिनके पुत्र परशुराम के नाम से विख्यात हैं। परशुराम ने अस्त्रप्राप्ति के लिये तपस्या करके भगवान शंकर को प्रसन्न किया। उनकी भक्ति से सन्तुष्ट होकर शंकर जी ने दर्शन देकर उनसे कहा : 'जब तुम पवित्र हो जाओगे तब मैं तुम्हें अपने अस्त्र दूँगा। अपात्र और असमर्थ पुरुष को ये अस्त्र जलाकर भस्म कर देते हैं।' तब परशुराम ने पुनः घोर तपस्या करते हुये शिव की आराधना की जिससे प्रसन्न होकर शिव ने पार्वतीजी और देवताओं तथा पितरों के समक्ष परशुराम के तप और श्रेष्ठ गुणों की बार-बार प्रशंसा की। इन्हीं दिनों दैत्यलोग महान् बल से सम्पन्न हो गये। दैत्यों से त्रस्त देवताओं ने एकत्र हो दैत्यों का वध करने का निश्चय किया परन्तु देवगण उन्हें जीत नहीं सके। तब देवतालोग शिव की शरण में आये। शिव ने परशुराम को बुलाकर उनसे दैत्यों का वध करने के लिये कहा। शिव की आज्ञा शिरोधार्य करके परशुराम ने दानवों का वध कर दिया। साथ ही दानवों ने भी परशुराम का शरीर क्षत-विक्षत कर दिया, परन्तु महादेव के स्पर्श से परशुराम के सारे घाव तत्काल समाप्त हो गये। परशुराम के दानव विजय से शिव अत्यन्त प्रसन्न हुये और उन्होंने परशुराम को अनेक वर तथा अपने दिव्यास्त्र भी प्रदान किये (८. ३४)। ८. ३४, १२८. १३१. १३२. १३३. १३६. १३७. १४२. १४३. १४४. १४७. १४९. १५०. १५२. १५३. १५६. १५८. १६३; ३७, २७ (इन्होंने कर्ण को उत्कृष्ट घोड़ों वाला एक श्रेष्ठ रथ दिया); ४०, ५० (या गतिर्गुरुणा प्रोक्ता पुरा रामेणतां स्मरे); ४१, ७८ (पुनः प्रभावः पार्थस्य पौराणः केशवस्य च'''कथितः कर्ण रामेण सभायां राजसंसदि); ४२, ३. ४ (कर्ण को शाप दिया था); ६६, ४ (अनुज्ञातं महावीर्यं रामेणास्त्रं सुदुर्जयम्). २४; ७३, ११६ (कर्ण ने इनसे अस्त्र प्राप्त किया था); ९०, ४ (रामादुपात्तेन महामहिम्ना ह्याथर्वणेनारिविनाशनेन). ८२. ८४ (कर्ण इनके शाप के कारण इनसे प्राप्त ब्रह्मास्त्र को भूल गया); ९. २४, ४३; ४९, ७ (इन्होंने रामतीर्थ में एक यज्ञ किया और कश्यप को पृथिवी दक्षिणा में दान कर दिया); ११. २, १३; २१, ११ (आचार्यशापः); १२. २, १४. १६. १८. २९; ३, १. ४. ५. ९. १०. १२. १४. १६. १८. २२. २४. २६-२९. ३३ (कर्ण ने ब्राह्मण के वेश में छलपूर्वक इनसे ब्रह्मास्त्र प्राप्त किया किन्तु दंश नामक राक्षस के मोक्ष के पश्चात कर्ण का भेद खुल जाने से इन्होंने उसे शाप दिया कि मृत्यु का समय निकट आने पर उसे ब्रह्मास्त्र का स्मरण नहीं रहेगा); ४, १; ५, ११ (शापेन रामस्य); २७, ८; ३७, १३ (भीष्म ने इनसे अस्त्र प्राप्त किये थे); ४६, १४. १८ (भीष्म इनके शिष्य थे); ४७, ९ (भीष्म को घेरकर खड़े ऋषियों में ये भी थे); ४८, ७. ८-१२ (इन्होंने इक्कीस बार पृथिवी को क्षत्रिय-विहीन किया); ४९, १. २. ३२. ४३. ४८. ५१. ५२. ५४. ५८. ६०. ६६. ६७. ८६; ५०, १-३; ११६, २; १२२, ३ (तत्र शृंगे हिमवतो मेरौ कनकपर्वते। यत्र मुञ्जावटे रामो जटाहरणमादिशत्); १४३, ६. ७. ८ (मुचुकुन्द को कपोतलुब्धकसंवाद सुनाया); २०७, ३; २३४, २६ (इन्होंने पृथिवी ब्राह्मणो को दान कर दी); २९२, १५; ३३९, ८४ (त्रेतायुग में विष्णु परशुराम का अवतार लेकर क्षत्रियों का संहार करेंगे). १०४ (विष्णु के सातवें अवतार); ३६०, १६ .१७ (इन्होंने कार्तवीर्य अर्जुन और उनके पुत्रों का वध किया); ३६५, ६; १३. ६, ३३ (अश्वत्थामा च रामश्च मुनिपुत्रौ धनुर्धरौ न गच्छतः स्वर्गलोकं सुकृतेनेह कर्मणा); १४, २७१ (जिस तीक्ष्ण परशु से इन्होंने कार्तवीर्य अर्जुन का वध किया था उसे शिव ने इन्हें दिया था). २७३ (इक्कीस बार क्षत्रियों का उन्मूलन किया था); २६, ८ (भीष्म को देखने आये ऋषियों में यह भी थे); ५२, २. ३. ५; ५६, २१; ६२, ३४; ८४, ३०. ३१. ३४. ३५. ३७. ३९. ४१. ४४. ४८ (क्षत्रियों का वध करने के बाद इन्होंने ऋषियों से अपने को पापमुक्त करने का उपाय पूछा). ५१. ५९. ६०. ६१. ६३. ७६; ८५, २१. ३०. ३५. ३६. ३७. ४६. ७०. ८७. ८८. १०१. १४८. १५३. १६२. १६३. १६६ (वसिष्ठ ने इन्हें ब्रह्मदर्शन की कथा सुनाया। तदनन्तर इन्होंने स्वर्ण का दान करके अपने को पवित्र किया); ८६, ३४. ३५ (वसिष्ठ ने इन्हें तारकावधोपाख्यान सुनाया। इसके बाद ये सुवर्ण दान करके समस्त पापों से पवित्र हो गये); १३७, १२ (इन्होंने कश्यप को पृथिवी दान करके अक्षय लोक प्राप्त किया); १५०, ४२; १६५, ४५; १६८, २४. २८; १४. २९, ८-१४. १७-१९. २१ (कार्तवीर्य अर्जुन का वध करने के बाद इन्होंने उसकी सेना को ध्वस्त किया। तदनन्तर इन्होंने बार बार क्षत्रियों का उन्मूलन किया। इक्कीस बार सन्ततिविहीन क्षत्रिय स्त्रियों ने ब्राह्मणों से सन्तान उत्पन्न की किन्तु हर बार उनकी सन्तानों का ये वध करते रहे। तब एक आकाशवाणी ने इन्हें हत्या के काम से निवृत्त होने के लिये कहा। उस समय इनके पितरों ने भी इन्हें समझाते हुये और अधिक वधकार्य न करने का अनुरोध किया। तब इन्होंने पितरों से कहा : 'आप लोगों को मुझे इस कार्य से रोकना नहीं चाहिये); ३०, ३२. ३३ (तब पितरों ने इनसे अलर्क की कथा बताने के बाद कहा : 'क्षत्रियों का विनाश मत करो। घोर तपस्या में लग जाओ।' इस प्रकार पितरों के आदेश पर इन्होंने घोर तपस्या करके दुर्लभ सिद्धि प्राप्त की)।

२. राम दाशरथि, अयोध्यापति दशरथ के पुत्र और देवी सीता के पति थे : १. १, २२८; २, २०० (रामेण निहतो रावणः); २०५ (रामोदाशरथिः); २. ८, १८ (यम की सभा में); ७६, ५; ३. २५, ६. ८; ८४,

७१. ७३; ८५, ६५ (शृङ्गवेरपुर में गङ्गा पार किया). १२६; ९९, ४० (विष्णु के अवतार). ४२. ४४. ४५. ५०. ५२. ५३. ५६. ६३ (इन्होंने अपनी दिव्य शक्ति दिखा कर परशुराम को लज्जित किया); १४७, १२. ३१ (दाशरथिर्वीरो रामो नाम महाबलः); १४८, १०. ११. १४. १६. १७. १९; १५०, १४; १५१, ७ (राघवं रामाभिधानं विष्णुं); २७४, १. ३-५. ७ (दाशरथ के ज्येष्ठ पुत्र). ८ (रामस्य माता कौसल्या). ९ (सीता'''रामस्य महिषीम्). ९; २७७, १. २ (दाशरथी वीरौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ). ६ (ज्येष्ठो रामः). ८ (अभिषेकाय रामस्य). १४. १५. २६. २८. ३० (वनं गते रामे राजा). ३१. ३२ (वनस्थौ रामलक्ष्मणौ). ३५. ३७-३९ (इनके पिता दशरथ ने इन्हें वनवास दिया जिसके बाद लक्ष्मण और सीता के साथ ये चित्रकूट चले आये। पिता दशरथ के स्वर्गवास के बाद इनके छोटे भाई भरत ने इनके नाम से ही राजकाज सँभाला). ४०. ४२. ५२. ५६ (जनस्थान में उन्होंने खर, दूषण आदि राक्षसों का वध किया); २७८, ५. ६. १२. १५. १८. २०-२२. २४. २५. २८. ३०. ४३ (जब ये मायामृग के पीछे गये तब रावणने सीता का अपहरण कर लिया); २७९, ६. १३. १६. १८. २० (रामलक्ष्मणौ). २७ (रामः सौमित्रिणा सह). ३१. ३७. ४१. ४८ (अपने भाई लक्ष्मण सहित इन्होंने विश्वावसु को मुक्त किया । तब विश्वावसु ने इन्हें ऋष्यमूक पर्वत पर जाकर वानरराज सुग्रीव से मिलने के लिये कहा); २८०, १ (सीताहरणदुःखार्तः पम्पा रामः समासदत्). ८. ११. १३. २१. २४. २८. ३५. ३७. ४० (इन्होंने वालि के विरुद्ध सुग्रीव की सहायता की). ५६. ५७. ६९ (रामस्याक्षेण पृथिवी परिक्षिप्ता ससागरा); २८१, २९; २८२, १५. २०. २२. २४. ३०-३४. ३७. ५३. ६२-६४. ७१ (इन्हें हनुमान ने सीता की खोज का समाचार दिया); २८३, १. २. ९. २६. ३५. ३८. ३९. ४३. ४५. ४७. ५३ (इन्होंने सागर पर सेतु बनवा कर वानरी सेना के साथ लंका के लिये प्रस्थान किया); २८४, ९. ३९ (लंका पर आक्रमण); २८५, ८. १२ (राम-रावण युद्ध आरम्भ हुआ); २८६, ९. २३. २७; २८७, २. २८; २८८; २. ५. २१. २६; २८९, १. ८. १२. २७; २९०, २. ७-१२. २०. २१. २३. २६. २८. २९. ३१ (निहतं रावणम्); २९१, १. ३-५. १०. १६. २१. ३७. ३८. ४२. ४५. ४७. ५०. ५१. ५७-५९ (श्रीराम ने रावण के यहाँ रही सीता को पुनः ग्रहण करना अस्वीकार कर दिया किन्तु देवों ने सीता के सतीत्व की पुष्टि की तब सीता सहित राम अयोध्या लौटे और अयोध्या के राजा हुये); २९२, ११ (रामेण वैदेही पुनराहृता); ४. २१, १३ (रक्षसा निग्रहं प्राप्य रामस्य महिषी प्रिया); ५. ११७, १७ (वैदेह्यां च यथा रामो) । "नारदजी ने बताया : भगवान् श्रीराम भी परमधाम को चले गये । श्रीराम के राज्य में समस्त प्रजा अत्यन्त सुखी थी । श्रीराम में असंख्य गुण विद्यमान थे । वे लक्ष्मण के बड़े भाई थे और पिता की आज्ञा से चौदह वर्ष तक पत्नी सीता और लक्ष्मण के साथ वन में रहे । उन्होंने जनस्थान में तपस्वी मुनियों की रक्षा के लिये १४,००० राक्षसों का वध किया था । वहीं रहते समय लक्ष्मण सहित राम को मोह में डाल कर रावण ने उनकी पत्नी सीता का हरण कर लिया था । जटायु के मुख से रावण द्वारा सीताहरण की बात सुनकर ये अत्यन्त शोकसंतप्त होकर सुग्रीव के पास आये । तदनन्तर वानरों की सहायता से सागर पर सेतु बना कर इन्होंने रावण तथा उसके बन्धु-बान्धवों का वध किया । तत्पश्चात् विभीषण को लंका का राजा बना कर ये सीता सहित अयोध्या लौट कर राजा हुये । इसके बाद सुग्रीव, और अङ्गद आदि को विदा करके अपने वीर भ्राता लक्ष्मण, भरत शत्रुघ्न का आदर करते हुये इन्होंने चारों समुद्रों तक की सम्पूर्ण पृथिवी का शासन किया । इन्होंने राजसूय और अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान किया तथा अनेक अन्य यज्ञ भी सम्पन्न किये । श्रीराम ने भूख और प्यास को जीत लिया था । इनके शासनकाल में ऋषि, देवता, और मनुष्य सभी एक साथ इस पृथिवी पर निवास करते थे (रामराज्य का वर्णन) । श्रीराम ने ११,००० वर्षों तक राज्य किया था । फिर समयानुसार अपने भाइयों के अंशभूत दो-दो पुत्रों द्वारा आठ प्रकार के राजवंशों की स्थापना करके इन्होंने चारों वर्णों की प्रजा को अपने धाम भेजने के बाद स्वयं भी परमधाम के लिये प्रस्थान किया (७. ५९)।" ७. ५९, १. ५. ११. १२-१४, २२. २३; ९६, २८ (पुरा वृत्तं रामरावणयोर्मृधे); १०६, १७; १०७, २८ (यथा दाशरथी रामः खरं हत्वा); १९४, १२; १९६, ३६; ८. ५, ५४; ९. ३१, ११; ३९, ५. ९ (राघवेण); ५५, ३१; १२. २९, ५१-५८. ६१; १५३, ६७ (श्रूयते शम्बुके शूद्रे हते ब्राह्मदारकः । जीवितो धर्ममासाद्य रामात्सत्यपराक्रमात्); ३३९, ८५ (श्रीकृष्ण कहते हैं : सन्ध्यांशे समनुप्राप्ते त्रेता या द्वापरस्य च । अहं दाशरथी रामो भविष्यामि जगत्पतिः). १०४ (ये विष्णु के आठवें अवतार थे); ३६०, १५; १३. ७४, ११ (इन्होंने लक्ष्मण को ब्रह्मा और इन्द्र का संवाद सुनाया); ७६, २६; ११५, ७३ (ये कार्तिक मास में मांसभक्षण नहीं करते थे); १३७, १४ (इन्होंने यज्ञ और दानादि द्वारा स्वर्ग प्राप्त किया); १६५, ५१; १४. ३, ९ (रामो दाशरथिर्यथा)।

तुकी० इनके नामों के निम्नलिखित पर्याय :

अयोध्यापति : १२. २९, ६१ ।

इक्ष्वाकुनन्दन, काकुत्स्थ, कोसलेन्द्र, कौसल्यानन्दिवर्धन, कौसल्यामातृ — देखिये वस्था० ।

दशरथस्य पुत्रः : ३. ९९, ४० ।

दशरथात्मज : ३. २८०, २१ ।

दाशरथि : १. १, २२८; ५५, ५; २०५, ६; २. ८, १८; ३. २५, ८. १०; ८५, ६५; ९९, ४१. ४२. ४४. ५०. ५२; १४७, ३१; १५२, २; २८३, २३; ७. ५९, १-१२; १०७, २८; १५७, १७; १९४, १२; ८. ८७, २६; १२. २९, ५१; ३३९, ८५. १०४; १३. ७६, २६; १३७, १४; १४. ३, ९ ।

राघव — देखिये वस्था० ।

लक्ष्मणाग्रज : ७. ५९, ३ ।

३. राम (बलराम): १. २, ११५. २८६. ३५६. ३५९; १८७, १०; २०५, २०; २०७, ४. ५२; २२०, २५; २२१, २७. ३८. ४०. ५५. ६२; २. १४, ३४; १५, ९; ३४, १५; ४३, १६; ३. १२, १३५; ५१, ११. २८. ४३; ११८, १८. २०; ११९, ४; १२०, १-४. ९; २३५, १५; ५. १, ३; ८०, १२; ९०, ८८; १४५, १०; १५७, ३५; ६. १२१ ३६; ७. ११, ३१; २३, ९५; ११०, ५९; ८. २, ७; ४१, ७८; ९. १२, ६; ३४, २. ४. ५. १३. १४. १९; ३५, १. ३. ४. १६. ३६; ३७, ५८; ३९, १. ३; ४०, ३०. ३२; ४७, ३२; ४८, १; ५२, २८; ५३, १. ३. ४; ५४, ४. १८. २१. ३०. ३२. ३४: ३७; ५५, २. ३. ५. २९. ४४; ६०, ३. २६. ३१; १०. ९, २६; १२, ३३; १२. १२२, ३; १३. १४, ४२; १४७, ६०; १६. १, ८. २०. २९. ३१; २, ११; ३, ६. १६. ४७; ४, १. ७. ८. १०. १२; ५, १०; ६, २५; ७, ३१; ८, ८; १७. १, १० ।

४. राम = विष्णु (सहस्रनाम) ।

रामचरित एक काव्य का नाम है : १२. ५७, ४० (श्लोकश्चार्थं पुरा गीतो भार्गवेण महात्मना । आख्याते रामचरिते नृपतिं भारत ॥) ।

रामतीर्थ, अनेक तीर्थों का नाम है : ३. ८४, ७३ (गोमती पर); ८५, १७ (महेन्द्र के निकट). ४३ (शूर्पारक के पास) । "बलरामजी उस रामतीर्थ में आये जहाँ परशुरामजी ने बारंबार क्षत्रिय नरेशों का संहार करके इस पृथिवी को जीतने के बाद कश्यपजी को आचार्य के रूप में आगे रख कर वाजपेय तथा एक सौ अश्वमेध यज्ञ द्वारा भगवान् का पूजन किया था और दक्षिणारूप में समुद्रों सहित सम्पूर्ण पृथिवी, नाना प्रकार के रत्न, गायें, हाथी, दास-दासियाँ, तथा अन्यान्य प्रकार का दान ब्राह्मणों को दिया था तथा इस प्रकार दान देकर स्वयं वन में चले गये (९. ४९, ६-१०) ।

रामराज्याभिषेक — "मार्कण्डेयजी ने बताया : रावण वध के पश्चात् देवताओं, महर्षियों और गन्धर्वों ने श्रीराम को जययुक्त आशीर्वाद दिया । श्रीराम ने लंका का राज्य विभीषण को दे दिया । इसके बाद वृद्ध मन्त्री अविन्ध्य, विभीषण सहित भगवती सीता को आगे करके लंकापुरी से बाहर निकले और श्रीराम से बोले : 'सदाचार से सुशोभित जनक किशोरी सीता

को ग्रहण कीजिये।' शोक से दुर्बल सीता को देखकर श्रीराम के मन में यह विचार आया कि परपुरुष के स्पर्श से सीता अपवित्र तो नहीं हो गई हैं। यह विचार कर श्रीराम ने सीता को ग्रहण करने से अस्वीकार कर दिया। श्रीराम के निश्चय को सुनकर समस्त वानर तथा लक्ष्मण आदि सभी शोक सागर में डूब गये। इसी समय ब्रह्मा ने विमान द्वारा वहाँ आकर रामचन्द्र का दर्शन किया। इन्द्र, अग्नि, वायु, यम, वरुण, कुबेर और सप्तर्षिगण भी वहाँ आ गये। इनके अतिरिक्त एक तेजस्वी विमान में दिव्यरूप धारण किये महाराज दशरथ भी वहाँ आये। उन सबके सामने देवी सीता ने विभिन्न देवों को साक्षी मानते हुये शपथपूर्वक अपने को पवित्र बताया। सभी देवताओं और दशरथ जी ने सीता के पवित्रता की घोषणा की। इन साक्ष्यों के बाद श्रीराम सीतासहित अयोध्या लौटने के लिये सहमत हुये। उन्होंने अविन्ध्य तथा राक्षसों को वरदान दिया। तदनन्तर देवताओं सहित ब्रह्मा ने श्रीराम को वर माँगने के लिये प्रेरित किया। तब राम ने यह वर माँगा : 'मेरी धर्म में सदा रुचि रहे। शत्रुओं से कभी पराजय न हो तथा राक्षसों द्वारा मारे गये वानर पुनः जीवित हो जाँय।' सीता ने हनुमान को यह वर दिया कि जब तक इस धरातल पर श्रीराम की कीर्ति बनी रहेगी तब तक उनका जीवन भी स्थिर रहेगा। श्रीरामने लंका की सुरक्षा का प्रबन्ध किया और फिर सीता तथा वानरप्रमुखों के साथ पुष्पक विमान से किष्किन्धा आये और वहाँ अङ्गद को युवराज के पद पर अभिषिक्त किया। इसके बाद लक्ष्मण, सुग्रीव और सीता के साथ श्रीराम जिस मार्ग से आये थे उसी के द्वारा अयोध्या की ओर चले। अयोध्या के निकट पहुँचकर उन्होंने हनुमान को दूत बनाकर भरत के पास भेजा। हनुमान के लौटने पर श्रीराम नन्दिग्राम आये जहाँ चीरवस्त्र धारण किये चरणपादुका को आगे रखकर भरत जी कुशासन पर बैठे थे। फिर भरत जी प्रसन्नता के साथ अयोध्या आये और श्रीराम को राज्य समर्पित कर दिया। श्रवण नक्षत्र आने पर वसिष्ठ और वामदेव ने मिलकर भगवान् राम का राज्याभिषेक किया। तत्पश्चात श्रीराम ने सुहृदों सहित सुग्रीव तथा विभीषण को अपने घर लौटने की आज्ञा दी। पुष्पक विमान का पूजन करने के बाद उसे भी कुबेर को लौटा दिया। देवर्षियों सहित गोमती नदी के तट पर जाकर श्रीराम ने दस अश्वमेध यज्ञ किये। (३. २९१)।"

रामठ (बहु० °ठाः) एक असभ्य जातिके लोगों का नाम है (२. ३२, १२)। इस जाति के लोगों को युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय बुलाया गया था (३. ५१, २५)। वर्बर और असभ्य जातियों के अन्तर्गत इनकी गणना (१२. ६५, १४)।

राम-रावणयुद्ध — अनेक राक्षसों और पिशाचों के साथ अदृश्यरूप से रावण वानरी सेना में घुस गया। तब विभीषण ने उसकी माया को भंग करके उन सबको प्रकट किया जिससे सभी राक्षस दिखाई पड़ने लगे। रावण ने तब औशनस व्यूह का निर्माण किया। श्रीराम ने रावण की सेना को बार्हस्पत्य विधि से विसर्जित किया। तब राम-रावण युद्ध आरम्भ हुआ जिसमें भयंकर दिव्यास्त्रों का प्रयोग होने लगा। (३. २८५)।

१. रामह्रद (बहु० °दाः) — "रामह्रदों से परशुराम द्वारा क्षत्रियों के रक्त से निर्मित पाँच ह्रदों का तात्पर्य है। इन ह्रदों को परशुराम ने रक्त से भर दिया और उसी रक्त से पितरों का तर्पण किया। उससे प्रसन्न हो पितरों ने परशुराम से वर माँगने के लिये कहा। तब परशुराम ने यह वर माँगा : 'मैं आपका अनुग्रहपात्र होऊँ और मेरी तपस्या पूर्ण हो। क्षत्रियकुल के संहार के पाप से मैं मुक्त हो जाऊँ तथा मेरे ये ह्रद भूमण्डल में विख्यात तीर्थस्वरूप हो जाँय।' पितरों ने परशुराम को ये वर दिये। पितरों ने कहा कि इन ह्रदों में जो स्नान करेगा उसके लिये मनोवाञ्छित कामना और सनातन स्वर्गलोक सुलभ होंगे। (३. ८३, २६-३८)। ३. ८३, २७. ४०. २०८ (तरन्तुकारन्तुकयोर्यदन्तरं रामह्रदानां च मचक्रुकस्य च। एतत् कुरुक्षेत्रसमन्तपञ्चकं पितामहस्योत्तरवेदिरुच्यते ।।); १२९, ६; ९. ५३, २४; १२. ४८, ८ (जामदग्न्यस्य विक्रमम् अमी रामह्रदाः पञ्च दृश्यन्ते··· दूरतः)।

२. रामह्रद (एक०) : ५. १८६, २८ (यहाँ अम्बा ने तपस्या की थी); १३. २५, ४७ (रामह्रद में स्नान और विपाशा में तर्पण करके बारह दिनों तक निराहार रहनेवाला पुरुष सब पापों से मुक्त हो जाता है)।

१. रामानुज = बलराम के अनुज अर्थात श्रीकृष्ण (५. ७५, २)।

२. रामानुज, श्रीराम दाशरथि के अनुज अर्थात लक्ष्मण (७. १४२, १०)।

रामायण, महर्षि वाल्मीकि के सुप्रसिद्ध महाकाव्य का द्योतक है : ३. १४७, ११ (रामायणेऽतिविख्यातः); १८. ६, ९३ (वेदे रामायणे पुण्ये भारते भरतर्षभ। आदौ चान्ते च मध्ये च हरिः सर्वत्र गीयते)।

रामायणमुपाख्यानं, से राम दाशरथि के उपाख्यान का तात्पर्य है : १. २, २०० ।

१. रामोपाख्यान : १. २, ५६।

२. रामोपाख्यान, से राम जामदग्न्य का तात्पर्य है : "जह्नु → अज → बलाकाश्व → कुशिक, जिन्होंने पुत्र प्राप्ति के लिये तपस्या की। तब इन्द्र इनके पुत्र हुये। कुशिक के वह पुत्र गाधि नाम से विख्यात हुये :

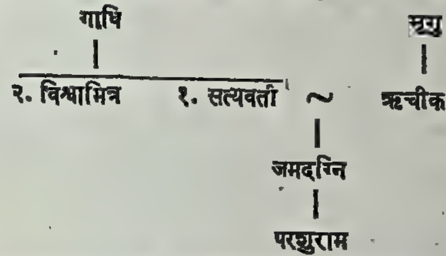

सत्यवती अत्यन्त शुद्ध आचार-विचार से रहती थी। उससे प्रसन्न होकर ऋचीक मुनि ने उसे तथा गाधि को भी एक पुत्र देने के लिये एक चरु तैयार किया। फिर उन्होंने सत्यवती से कहा : 'यह चरु तुम खा लेना और यह दूसरा अपनी माता को खिला देना। तुम्हारी माता का जो पुत्र होगा वह क्षत्रिय शिरोमणि होगा। तुम्हें जो चरु दिया है उससे तुम्हें एक तपस्या-परायण ब्राह्मण पुत्र प्राप्त होगा। उस चरु को लेकर सत्यवती अपने माता के पास गई और बड़े हर्ष के साथ अपने पति ऋचीक की बातों का वर्णन किया। सत्यवती की माता ने अज्ञानवश अपना चरु तो पुत्री को दे दिया और उसका चरु स्वयं खा लिया। तदनन्तर सत्यवती ने एक ऐसा गर्भ धारण किया जो क्षत्रियों का विनाश करनेवाला और देखने में भयंकर जान पड़ता था। सत्यवती के गर्भगत बालक को देखकर ऋचीक ने अपनी पत्नी से कहा : 'तुम्हारी माता ने चरु को बदलकर तुम्हें ठग लिया है। तुम्हारा पुत्र अत्यन्त क्रोधी और क्रूरकर्मा होगा। परन्तु तुम्हारी माता से उत्पन्न तुम्हारा भाई तपस्यापरायण और ब्राह्मण स्वरूप होगा।' सत्यवती ने अपने पति से अनुनय-विनय करके शान्त एवं सरल स्वभाव का पुत्र प्रदान करने के लिये कहा परन्तु ऋचीक ने कहा कि उन्होंने जो कहा है उसे अब बदलना कठिन है। फिर भी उन्होंने सत्यवती के इस कथन को स्वीकार कर लिया कि उसका पुत्र शान्त स्वभाववाला किन्तु पौत्र क्षत्रिय-संहारक उग्र होगा। तदनन्तर सत्यवती ने शान्त, संयम परायण और तपस्वी जमदग्नि को उत्पन्न किया। गाधि ने विश्वामित्र नामक पुत्र प्राप्त किया जो ब्रह्मणोचित गुणों से सम्पन्न और ब्रह्मर्षि की उपाधि से विभूषित हुये। जमदग्नि ने तदनन्तर एक उग्र स्वभाव वाले पुत्र को उत्पन्न किया। वही सम्पूर्ण विद्याओं तथा धनुर्वेद के पारङ्गत विद्वान्, प्रज्वलित अग्नि के समान तेजस्वी और क्षत्रियहन्ता परशुराम हुये। परशुराम ने गन्धमादन पर्वत पर महादेव जी को सन्तुष्ट करके उनसे अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्र और अत्यन्त तेजस्वी परशु प्राप्त किया। उस परशु की धार कभी कुण्ठित नहीं होती थी और वह सदैव प्रज्वलित अग्नि के समान प्रतीत होती थी। इसी समय अर्जुन कार्तवीर्य हैहयवंश का राजा हुआ। दत्तात्रेय की कृपा से अर्जुन ने एक सहस्र भुजायें प्राप्त कर लीं। एक समय भूखे-प्यासे अग्निदेव ने सहस्रबाहु अर्जुन से भिक्षा माँगी और अर्जुन ने अग्नि को वह भिक्षा दे दी। तब कार्तवीर्य अर्जुन के प्रभाव से अग्नि ने ग्रामों, नगरों, राष्ट्रों और

पर्वतों आदि को दग्ध करना आरम्भ किया। हवा का सहारा पाकर अग्नि ने आपव मुनि के आश्रम को भी भस्म कर दिया। तब आपव ने अर्जुन को यह शाप दिया कि उसकी भुजायें परशुराम जी काटेंगे। अर्जुन नित्य शान्तिप्रिय, ब्राह्मण-भक्त और शूरवीर था, अतः उसने मुनि के शाप पर ध्यान नहीं दिया किन्तु उसके पुत्र ही उसके वध में कारण बन गये। आपव के शाप के कारण अर्जुन के पुत्र एक दिन जमदग्नि की होमधेनु के बछड़े को चुरा लाये। यह बात अर्जुन कार्तवीर्य को मालूम नहीं थी। फिर भी इसी के कारण परशुराम और अर्जुन में युद्ध हुआ जिसमें परशुराम ने अर्जुन की भुजाओं को काट डाला और अपने बछड़े को आश्रम ले आये। अर्जुन के मूर्ख पुत्रों ने तब संगठित होकर जमदग्नि के मस्तक को काट दिया। उस समय परशुराम समिधा आदि लाने के लिये आश्रम से दूर चले गये थे। आश्रम लौटकर परशुराम ने पिता को मृत देखकर सम्पूर्ण पृथिवी को ही क्षत्रियविहीन कर देने की भीषण प्रतिज्ञा करके शस्त्र ग्रहण किया। उन्होंने कार्तवीर्य के सभी पुत्र-पौत्रों का शीघ्र ही संहार कर डाला। सहस्रों हैहयों का वध करके परशुराम ने सम्पूर्ण पृथिवी को रक्तरंजित कर दिया। इस प्रकार पृथिवी को क्षत्रियविहीन करके परशुराम दया से द्रवित होकर वन में चले गये। कई सहस्र वर्ष व्यतीत होने पर एक दिन वहाँ स्वभाव से क्रोधी परशुराम पर आक्षेप किया गया। विश्वामित्र के पौत्र तथा रैभ्य के पुत्र परावसु ने भरी सभा में आक्षेप करते हुये कहा : 'राजा ययाति के स्वर्ग से गिरने के समय जो प्रतर्दन आदि सज्जन पुरुष यज्ञ में एकत्र हुये थे वे क्या क्षत्रिय नहीं थे? तुम्हारी प्रतिज्ञा झूठी है। मैं तो समझता हूँ कि तुमने क्षत्रियों के भय से ही पर्वतों की शरण ली है।' परावसु की बात सुन कर परशुराम ने पुनः शस्त्र उठा लिया और सभी क्षत्रियों का उनके वंश सहित वध कर दिया। उन्होंने एक-एक गर्भ के उत्पन्न होने पर पुनः उनका वध करते हुये इक्कीस बार पृथिवी को क्षत्रियों से रहित कर दिया। तदनन्तर अश्वमेध यज्ञ करके उन्होंने सम्पूर्ण पृथिवी दक्षिणा के रूप में कश्यपजी को दे दी। तब कश्यपजी ने कुछ क्षत्रियों को बचाये रखने की इच्छा से परशुराम से कहा : 'अब तुम दक्षिण समुद्र के तट पर चले जाओ। अब मेरे राज्य में कभी निवास न करना।' यह सुन कर परशुरामजी चले गये। सागर ने उनके लिये जगह खाली करके शूर्पारक देश का निर्माण किया जिसे अपरान्त भूमि भी कहते हैं। कालक्रम से दुरात्मा मनुष्य अपने अत्याचारों से पृथिवी को पीड़ित करने लगे। इस उथल-पुथल से पृथिवी रसातल में प्रवेश करने लगी क्योंकि उस समय धर्मरक्षक क्षत्रियों द्वारा विधिपूर्वक पृथिवी की रक्षा नहीं हो रही थी। भय से पृथिवी को रसातल की ओर भागती देख कर कश्यप ने अपने ऊरुओं का सहारा देकर उसे रोक दिया। कश्यपजी ने ऊरु से इस पृथिवी को धारण किया इसलिये यह उर्वी नाम से प्रसिद्ध हुई। पृथिवी ने कश्यपजी से एक भूपाल प्रदान करने के लिये निवेदन करते हुये कहा : 'मैंने स्त्रियों में अनेक क्षत्रिय शिरोमणि छिपा रक्खे हैं। वे सब हैहयकुल में उत्पन्न हुये हैं और मेरी रक्षा कर सकते हैं। इनके अतिरिक्त पूरुवंशी विदूरथ का भी एक पुत्र जीवित है जिसे ऋक्षवान पर्वत पर रीछों ने पालकर बड़ा किया है। इसी प्रकार पराशर ने दयावश सौदास के पुत्र की जान बचाई है। वह राजकुमार द्विज हो कर भी शूद्रों के समान सब कर्म करता है इसलिये 'सर्वकर्मा' नाम से विख्यात है। वह राजा होकर मेरी रक्षा करे। शिवि का एक पुत्र गोपति है वह भी मेरी रक्षा करे।' इसी प्रकार पृथिवी ने प्रतर्दन के पुत्र वत्स, दधिवाहन-पौत्र, बृहद्रथ, तथा महाराज मरुत्त के वंश में सुरक्षित अनेक बालकों का उल्लेख कर कश्यपजी से कहा : 'यदि उक्त सभी क्षत्रिय मेरी रक्षा करें तो मैं अविचल भाव से स्थिर हो सकूँगी।' श्रीकृष्ण ने कहा कि पृथिवी के बताये हुये सभी पराक्रमी भूपालों को बुलाकर कश्यपजी ने उनका भिन्न-भिन्न राज्यों पर अभिषेक कर दिया। उन्हीं के पुत्र-पौत्र बढ़े जिनके वंश इस समय पृथिवी पर प्रतिष्ठित हैं (१२. ४९)।"

२. रामोपाख्यानपर्वन् से राम दाशरथि की कथा का तात्पर्य है। यह महाभारत का ४८ वाँ अवान्तर पर्व है जो वनपर्व के अन्तर्गत आता है। "युधिष्ठिर ने मार्कण्डेयजी से पूछा : "क्या संसार में मेरे जैसा मन्दभाग्य मनुष्य कोई और भी है?' (३. २७३)।"

"मार्कण्डेयजी ने कहा : श्रीरामचन्द्र को भी वनवास तथा पत्नीवियोग का दुःसह दुःख सहन करना पड़ा था। रावण ने उनकी पत्नी सीता का वेगपूर्वक हरण कर लिया था। श्रीराम ने वानरराज सुग्रीव की सेना की सहायता ले कर सागर पर सेतु बाँधा और लंकापति रावण का वध करके सीता को वापस लाये। युधिष्ठिर के पूछने पर श्रीराम के वंश का वर्णन करते हुये मार्कण्डेयजी ने बताया : इक्ष्वाकुल में अज नामक एक राजा हुये थे। उनके पुत्र दशरथ हुये। दशरथ के चार पुत्र — राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न हुये, राम की माता का नाम कौसल्या था। भरत की माता कैकेयी थी और लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न सुमित्रा के गर्भ से उत्पन्न हुये थे। विदेहराज जनक की पुत्री सीता श्रीराम की पत्नी हुईं। रावण के वंश का परिचय देते हुये मार्कण्डेयजी ने बताया कि ब्रह्मा ही उसके पितामह थे। ब्रह्मा के मानस पुत्र पुलस्त्य थे। पुलस्त्य की गौ नामक पत्नी से वैश्रवण नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। वैश्रवण अपने पिता को छोड़ कर पितामह की सेवा में ही रहने लगे। तब उन पर क्रोधकर के उनके पिता पुलस्त्य ने स्वयं अपने को ही दूसरे रूप में प्रकट किया। पुलस्त्य के आधे शरीर से जो दूसरा द्विज प्रकट हुआ। उसका नाम विश्रवा हुआ। विश्रवा वैश्रवण पर सदा कुपित रहा करते थे। किन्तु पितामह ब्रह्मा ने वैश्रवण को अमरत्व प्रदान करते हुये उन्हें लोकपाल तथा धन का स्वामी बना दिया। पितामह ने उन वैश्रवण को नलकूबर नामक पुत्र दे कर, उन्हें लंका का राजा बनाया। उन्हें एक पुष्पक नामक विमान भी दिया। (३. ७४)।

"पुलस्त्य के क्रोध से उनके आधे शरीर से जो विश्रवा नामक मुनि प्रकट हुये थे वे कुबेर को कुपित दृष्टि से देखने लगे। कुबेर को जब इस बात का पता चला तब वे विश्रवा को प्रसन्न करने का प्रयास करने लगे। कुबेर मनुष्यों द्वारा ढोई जानेवाली पालकी पर चलते थे इसलिये उन्हें नरवाहन भी कहते थे। उन्होंने अपने पिता विश्रवा की सेवा के लिये तीन राक्षस कन्यायें नियुक्त कर दीं। इन कन्याओं के नाम पुष्पोत्कटा, राका और मालिनी थे। विश्रवा इन तीनों की सेवा से प्रसन्न हो गये और तीनों को उनकी इच्छानुसार लोकपालों के समान पराक्रमी पुत्र होने का वरदान दिया। पुष्पोत्कटा के दो पुत्र हुये — रावण और कुम्भकर्ण। मालिनी ने एक ही विभीषण नामक पुत्र उत्पन्न किया। राका को एक शूर्पणखा नामक पुत्री और खर नामक पुत्र प्राप्त हुआ। इन सभी में विभीषण सर्वाधिक रूपवान, सौभाग्यशाली, धर्मरक्षक और कर्तव्यपरायण थे। रावण के दस मस्तक थे। वही सबमें ज्येष्ठ तथा राक्षसों का स्वामी था। बल और पराक्रम में भी वह महान था कुम्भकर्ण शारीरिक बल में सर्वश्रेष्ठ, मायावी, रणकुशल और भयंकर था। खर धनुर्विद्या में विशेष कुशल था। शूर्पणखा की आकृति अत्यन्त भयानक थी। ये सभी बालक वेदवेत्ता, शूरवीर तथा ब्रह्मचर्य का पालन करते हुये अपने पिता के साथ गन्धमादन पर्वत पर निवास करते थे। नरवाहन के ऐश्वर्य को देखकर रावण आदि के मन में ईर्ष्या उत्पन्न हुई। अतः उन सब ने तपस्या का निश्चय करके ब्रह्मा को सन्तुष्ट कर लिया। रावण सहस्रों वर्षों तक एक पैर पर खड़ा होकर पञ्चाग्नि सेवन करते हुये वायु पी कर तप करता रहा। कुम्भकर्ण ने भी आहार का संयम किया तथा विभीषण केवल एक सूखा पत्ता खा कर रहते थे। एक सहस्र वर्ष व्यतीत होने पर दशानन रावण ने अपना मस्तक काट कर अग्नि में उसकी आहुति दे दी। उसके इस अद्भुत कर्म से ब्रह्मा प्रसन्न हुये और प्रकट हो कर वर माँगने के लिये कहा। रावण ने यह वर माँगा कि गन्धर्व, देवता, असुर, यक्ष, राक्षस, सर्प, किन्नर तथा भूतों से उसकी पराजय न हो। ब्रह्मा ने उसे यह वर देते हुये कहा कि जिन लोगों के प्रति अभय का वरदान उसने माँगा है वह वैसे ही होगा किन्तु मनुष्य से भय बना रहेगा। ब्रह्मा के ऐसा कहने पर रावण प्रसन्न हो गया। वह दुर्बुद्धि राक्षस मनुष्यों की अवहेलना करता था। कुम्भकर्ण ने यह वर माँगा कि वह अधिक काल तक सोता रहे। ब्रह्मा ने उसे भी यह वर देने के बाद विभीषण से वर माँगने के लिये कहा। तब विभीषण ने कहा : 'बहुत बड़ा संकट आने पर भी मेरे मन में कभी

पाप का विचार न उठे तथा बिना सीखे ही मेरे हृदय में ब्रह्मास्त्र के प्रयोग और उपसंहार की विधि स्फुरित हो जाय।' ब्रह्माजीने यह वर देते हुये अत्यन्त प्रसन्न होकर विभीषण को अमरत्व भी प्रदान किया। इस प्रकार वर प्राप्त करने के बाद रावण ने सर्वप्रथम अपने भाई कुबेर को परास्त किया और लंका का राज्य छीन कर वहाँ से उन्हें बहिष्कृत कर दिया। तब कुबेर गन्धर्व, यक्ष, राक्षस तथा किम्पुरुषों के साथ गन्धमादन पर्वत पर ही रहने लगे। रावण ने कुबेर का पुष्पक विमान भी छीन लिया जिस पर कुबेर ने उसे शाप देते हुये कहा : 'यह विमान तेरी सवारी में नहीं आ सकेगा। युद्धमें तुझे जो मार डालेगा उसीका यह वाहन होगा। तेरा अत्यन्त शीघ्र नाश हो जायेगा।' विभीषण धर्मात्मा थे अतः उन्होंने सत्पुरुषों के मार्ग का अनुसरण किया। रावण लंका में राक्षसों तथा पिशाचों का राजा हुआ। वह इच्छानुसार रूप धारण करने और आकाश में भी चलने में समर्थ था। उसने दैत्यों और देवताओं पर आक्रमण करके उनकी सम्पूर्ण सम्पत्ति का अपहरण कर लिया। उसका बल उसकी इच्छानुसार बढ़ता रहता था अतः देवता सदा उससे भयभीत रहते थे। (३. २७५)।

"देवताओं ने ब्रह्मा जी के पास जाकर रावण के अत्याचार से बचाने के लिये प्रार्थना की। उनकी प्रार्थना सुनकर ब्रह्मा जी ने इन्द्र आदि सभी देवताओं से पृथिवी पर रीछों और वानरों की सन्तान के रूप में जन्म लेने के लिये कहा। ब्रह्मा जी ने दुन्दुभी नामक गन्धर्वी को भी देवताओं का कार्य सिद्ध करने के लिये भूतल पर जन्म ग्रहण करने की आज्ञा दी। वही गन्धर्वी मनुष्यलोक में मन्थरा के रूप में उत्पन्न हुई। इन्द्र आदि देवता भी ब्रह्मा की आज्ञा से रीछों और वानरों की स्त्रियों से ऐसे पुत्र उत्पन्न करने लगे जो यश और बल में अपने पिता देवताओं के समान हुये। वे सभी पर्वतों के शिखरों को तोड़ डालने की शक्ति रखते थे और युद्धकला में भी दक्ष थे। इस प्रकार सारी व्यवस्था करके ब्रह्मा जी ने मन्थरा बनी हुई दुन्दुभि को जो-जो कार्य जैसे-जैसे करने थे वह सब समझा दिया। तब वह इधर उधर घूमकर वैर की अग्नि प्रज्वलित करने लगी। (३. २७६)।

"युधिष्ठिर के पूछने पर मार्कण्डेय जी ने कहा : दशरथ के पुत्र वेद और धनुर्वेद में पारङ्गत थे। राम का पराक्रम इन्द्र से कम नहीं था। वे समस्त धर्मों के विद्वान और बृहस्पति के समान बुद्धिमान थे। राम को देखकर दशरथ अत्यन्त प्रसन्न होते थे। एक दिन उन्होंने अपने पुरोहित से कहा : 'आज पुष्य नक्षत्र है। रात में इसे परम पवित्र योग प्राप्त होनेवाला है। अतः श्रीराम के राज्याभिषेक की तैयारी कीजिये और राम को भी इसकी सूचना दे दीजिये।' राजा की यह बात मन्थरा ने सुन लिया और जाकर कैकेयी की ईर्ष्या को प्रज्वलित कर दिया। कैकेयी ने दशरथ जी से दो वर माँगते हुये कहा कि उसके पुत्र भरत को राजा बनाया जाय तथा राम को १४ वर्ष के लिये दण्डक वन में रहने के लिये निर्वासित कर दिया जाय। श्रीराम पिता की आज्ञा मानकर अपनी पत्नी सीता और भाई लक्ष्मण के साथ वन में चले गये। पुत्रशोक में दशरथ स्वर्गवासी हुये। घर लौटकर भरत ने अपनी माता को फटकारते हुये राजा बनना अस्वीकार कर दिया। तदनन्तर माता कौसल्या, सुमित्रा और कैकेयी, शत्रुघ्न, वसिष्ठ, वामदेव तथा प्रजाजनों के साथ भरत चित्रकूट आकर श्रीराम से मिले तथा उन्हें घर लौटने के लिये कहा किन्तु श्रीराम ने पिता की आज्ञा का उल्लंघन करके वापस लौटना स्वीकार नहीं किया। तब भरत जी श्रीराम की चरणपादुका लेकर वापस आये और उसे ही सिंहासन पर रखकर स्वयं नन्दिग्राम में रहकर श्रीराम की ओर से ही राज-काज का संचालन करने लगे। तदनन्तर नगर और जनपद के लोगों के निरन्तर आने-जाने की आशंका से श्रीराम शरभङ्ग मुनि के आश्रम के पास विशाल वन में चले गये। वहाँ से भी वे दण्डकारण्य में चले गये और सुरम्य गोदावरी के तट का आश्रय लेकर रहने लगे। वहाँ रहते हुये शूर्पणखा के कारण श्रीराम का जनस्थान निवासी खर नामक राक्षस से वैर हो गया। तब श्रीराम ने तपस्वी मुनियों की रक्षा के लिये खर और दूषण को मारकर जनस्थान के अन्य चौदह सहस्र राक्षसों का भी वध कर दिया। शूर्पणखा ने तब लंका जाकर अपनी दुर्दशा दिखाते हुये अपने भाई रावण को श्रीराम के उस पराक्रम तथा खर-दूषण सहित समस्त राक्षसों के संहार का सम्पूर्ण वृत्तान्त बताया। तब क्रुद्ध होकर रावण अपने भूतपूर्व मन्त्री मारीच से मिला। (३. २७७)। रावण ने माया मृग के रूप में मारीच की सहायता से सीता का अपहरण किया। राम ने मारीच का वध कर दिया (३. २७८)। रावण द्वारा जटायु का वध, श्रीराम द्वारा जटायु की अन्त्येष्टि, कबन्ध का वध तथा उसके दिव्यस्वरूप से श्रीराम का वार्तालाप (३. २७९)। श्रीराम और सुग्रीव की मित्रता; वालि और सुग्रीव का युद्ध तथा श्रीराम द्वारा वालि का वध; लंका की अशोक-वाटिका में राक्षसियों द्वारा डराई गई सीता को त्रिजटा का आश्वासन (३. २८०)। रावण और सीता का संवाद (३. २८१)। श्रीराम ने सुग्रीव की शिथिलता पर क्रोध प्रकट किया; सुग्रीव ने तब सीता की खोज के लिये वानरों को विभिन्न दिशाओं में भेजा। हनुमान जी ने लंका में सीता को खोजकर उन्हें आश्वस्त किया और लंकादहन के बाद श्रीराम को सीता तथा लंका का वृत्तान्त बताया (३. २८२)। वानरी सेना का संगठन, सागर पर सेतु का निर्माण, विभीषण का अभिषेक, तथा लंका की सीमा में श्रीराम का प्रवेश। तब श्रीराम ने अङ्गद को दूत बनाकर रावण के पास भेजा (३. २८३)। रावण को श्रीराम का संदेश सुनाकर अङ्गद वापस आये। राक्षसों और वानरों का घोर संग्राम आरम्भ हुआ (३. २८४)। राम-रावण की सेनाओं का द्वन्द्व युद्ध (३. २८५)। प्रहस्त और धूम्राक्ष का वध। दुःखी रावण ने कुम्भकर्ण को जगाकर युद्ध के लिये भेजा। (३. २८६। कुम्भकर्ण, वज्रवेग और प्रमाथी का वध (३. २८७)। इन्द्रजित का मायामय युद्ध तथा श्रीराम और लक्ष्मण की मूर्च्छा (३. २८८)। श्रीराम और लक्ष्मण का पुनः सचेत होना। सबने कुबेर द्वारा भेजे अभिमन्त्रित जल से नेत्र धोये। लक्ष्मण ने इन्द्रजीत का वध किया। सीता के वध के लिये उद्यत रावण को अविन्ध्य ने समझाकर रोका (३. २८९)। श्रीराम ने रावण के साथ युद्ध करते हुये उसका वध किया (३. २९०)। श्रीराम ने सीता के प्रति सन्देह व्यक्त किया किन्तु देवताओं द्वारा सीता की पवित्रता का साक्ष्य प्रस्तुत करने पर श्रीराम ने उन्हें ग्रहण किया। तब श्रीराम अपने दल के साथ किष्किन्धा होते हुये अयोध्या आये और भरत से मिलकर राज्य पर अभिषिक्त हुये (३. २९१)। देखिये रावणगमन, सीता-हरण, विश्वावसुमोक्षण, सीतासान्त्वना, सीता-रावणसंवाद, हनूमत-प्रत्यागमन, सेतुबन्धन, राम-रावणयुद्ध कुम्भकर्णगमन कुम्भकर्णादिवध, इन्द्रजिद्युध, इन्द्रजिद्वध, रावणवध, रामाभिषेक, और युधिष्ठिराश्वास, आदि शब्दों की वस्था०।

रावण, विश्रवा के पुत्र, और लंका में राक्षसों के राजा का नाम है जिसे दशग्रीव भी कहते थे : १. २, २००; ३. ९९, ४१ (इसका वध करने के लिये ही विष्णु ने राम दाशरथि के रूप में अवतार लिया था); १४७, ४३ (सीता का छल से अपहरण किया था); १४८, ५. ८. १२; १५०, १४. १६. १९; २७४, २. ४. १०. ११ (ब्रह्मा का पौत्र और विश्रवा का पुत्र); २७५, ७ (यह विश्रवा और पुष्पोत्कटा का पुत्र था). १० (दशग्रीवस्तु... राक्षसपुङ्गव). १६ (अतिष्ठदेकपादेन सहस्रं परिवत्सरान्। वायुभक्षो दशग्रीवः पञ्चाग्निः सुसमाहितः). २५ (ब्रह्मा ने इसकी तपस्या से प्रसन्न हो इसके मस्तकों को, जिन्हें काटकर इसने ब्रह्मा को समर्पित कर दिया था, पुनः लौटाकर इसे यह वर दिया कि देवता, गन्धर्व, किन्नर, यक्ष राक्षस, असुर, नाग और भूतों से इसे भय नहीं रहेगा किन्तु मनुष्य से भय बना रहेगा). ३४ (इसने कुबेर को पराजित करके लंका का राज्य तथा पुष्पक विमान छीन लिया था जिससे कुबेर ने इसे शाप दिया). ४० (रावयामास लोकान् यत् तस्माद्रावण उच्यते); २७७, ४५. ४७ (शूर्पणखा ने इसे राम दाशरथि से प्रतिशोध लेने के लिये उत्तेजित किया। तब रावण ने मारीच की सहायता ली); २७८, १. ५. ६. ८. १५. १६. ३१. ३५. ४२ (एक भिक्षुक के रूप में इसने सीता का अपहरण किया); २७९, २ (इसने जटायु का वध किया). २२. २३. ४३ (रावणेन हृता सीता राज्ञा लङ्काधिवासिना). ४७; २८०, ५. ४१. ५९ (इसने रम्भा के साथ बलात्कार

किया जिससे क्रुद्ध होकर नलकूवर ने इसे शाप दिया कि किसी स्त्री की इच्छा के बिना यदि यह उस स्त्री के साथ बलात्कार का प्रयास करेगा तब इसका मस्तक फट जायगा); २८१, २ (इसने देवों, दानवों, गन्धर्वों, यक्षों किम्पुरुषों आदि को पराजित कर दिया था और इन्द्र के कल्पवृक्ष के समान प्रतीत होता था। जब इसने रोहिणी के निकट आने का प्रयास किया तब शनि के समान प्रतीत होता था। इसने देवों, गन्धर्वों, दानवों और दैत्यों की अनेक कन्याओंको अपने अधिकार में कर लिया। यह १४,००,००,००० पिशाचों तथा इसकी द्विगुणित संख्या में मानवभक्षी राक्षसों का शासक था। इसके मदिरापान गृह में गन्धर्व और अप्सरायें इसकी उसी प्रकार सेवा करते थे जैसे कुबेर की करते हैं। यह विश्रवा का पुत्र था और इसकी रानी का नाम मन्दोदरी था). २६; २८२, २४. ५६. ६०; २८३, ५२. ५४; २८४, २ (इसने लंका की सुदृढ़ रक्षाव्यवस्था की). १७; २८५, १. ५. ८. १२ (श्रीराम दाशरथि के साथ युद्ध किया); २८६, ९. १७. १८ (इसने अपने भाई कुम्भकर्ण को जगाकर युद्ध के लिये भेजा); २८८, २ (इन्द्रजित् का पिता था); २८९, २५. २६. ३२ (इसके पुत्र इन्द्रजित का वध हुआ); २९०, ५. १५. १६ (माया…रावणस्य). १८. २९. ३१ (श्रीराम ने इसका वध किया): २९१, १ (हत्वा रावणं क्षुद्रं राक्षसेन्द्रं सुरद्विषम्); ५. १०९, १२ (राक्षसराजेन पौलस्त्येन महात्मना। रावणेन तपश्चीर्त्वा सुरेभ्योऽमरता वृता ॥); ७. २३, ९०; ५९, ४; ९६, २८; १०६, १७; १८१, २३; ८. ५, ५४; ९. ३१, ११ (पौलस्त्यतनयो रावणो नाम राक्षसः। रामेण निहतो राजन् सानुबन्धः सहानुगः); ५५, ३१; १२. ३३९, ८९ (ततो रक्षःपतिं घोरं पुलस्त्यकुलपांसनम्। हरिष्ये रावणं रौद्रं सगणं लोककण्टकम्)।

तुकी० इसके नाम के निम्नलिखित पर्याय :

दशकन्धर : ३. २९०, १९।

दशग्रीव : ३. २७५, ७. १०. १६. २७. ३२. ३९. ४०; २७६, २; २७८, ११; २८३, ३६; २८६, २२; २९०, १. ४. १८. ३२. ३४; २९१, १. ५; २९२, ११; ३१५, २०; ७. १५६, ९८; १२. ३६०, १५।

दशानन : ३. २७५, २०; २७७, ५५. ५६; २८५, ७; २९०, ८।

दशास्य : ३. १५१, ७।

पौलस्त्य, पौलस्त्यतनय – देखिये वस्था०।

रक्षस, राक्षस, राक्षसपति, राक्षसपुङ्गव, राक्षसमहेश्वर, राक्षसराज, राक्षसश्रेष्ठ, राक्षसाधिप, राक्षसाधिपति, राक्षसेन्द्र, राक्षसेश्वर -- देखिये वस्था०।

रावणगमन – "नारद और जनपद के लोगों के बराबर आने-जाने की आशंका से श्रीराम ने शरभङ्ग मुनि के आश्रम के पार्श्व विशाल वन में प्रवेश किया और वहाँ से भी दण्डकारण्य में चले गये। वहाँ गोदावरी के निकट आश्रम बना कर रहते हुये शूर्पणखा नामक राक्षसी की नाक और कान काट देने के कारण श्रीराम का जनस्थान निवासी खर नामक राक्षस के साथ युद्ध हुआ। इस युद्ध में श्रीराम ने खर, दूषण सहित १४,००० राक्षसों का वध कर दिया। तब शूर्पणखा ने अपने भाई रावण के पास जा कर अपनी दुर्गति का वृत्तान्त बताया और रावण को श्रीराम से प्रतिशोध लेने के लिये उत्तेजित करने लगी। शूर्पणखा की दशा देख कर रावण ने अत्यन्त क्रुद्ध हो अपने कर्तव्य का निश्चय किया। त्रिकूट और कलिपर्वत को लाँघकर वह गोकर्ण तीर्थ में गया जो शूलपाणि शिव का प्रिय एवं अविचल स्थान है। वहाँ रावण अपने भूतपूर्व मन्त्री मारीच से मिला जो श्रीरामचन्द्र के भय से उस स्थान में आकर तपस्या कर रहा था (३. २७७, ४०-५६)।

रावणवध – "अपनी राक्षसी सेना सहित रावण ने श्रीराम और वानरों पर आक्रमण किया। रावण ने अपने शरीर से सहस्रों राक्षस उत्पन्न किये जिनका श्रीराम ने दिव्यास्त्रों से वध कर दिया। तब रावण ने श्रीराम और लक्ष्मण के समान दिखाई पड़नेवाले राक्षसों को उत्पन्न किया किन्तु श्रीराम ने उनका भी वध कर दिया। इन्द्र का रथ लेकर मातलि श्रीराम के पास आये। आरम्भ में श्रीराम ने इसे भी रावण की माया समझा किन्तु विभीषण के आश्वास्त करने पर श्रीराम ने उस रथ पर आरूढ़ होकर एक मन्त्रों से अभिषिक्त ब्रह्मास्त्र से रावण का वध कर दिया। रावण वध हो जाने पर देव, गन्धर्व, इन्द्र, दानव, किन्नर और चारण आदि सभी हर्षोन्मत्त हो उठे। (३. २९०)।"

रावणात्मज = इन्द्रजित् (३. २८८, १५. १९)।

रावणि = इन्द्रजित् : ३. २८८, १२. २३. २६; २८९, १. १९; ७. १०८, १३; १४२, १०।

राहु, एक असुर का नाम है जो चन्द्रमा आदि को ग्रसित करके ग्रहण उत्पन्न करता है : १. १९, ४. ९ (इसने देवता का रूप धारण कर के अमृतपान का प्रयास किया किन्तु चन्द्रमा तथा सूर्य ने इसे पहचान लिया जिस पर नारायण ने इसका सर काट दिया। उसी वैर के कारण यह चन्द्र और सूर्य को समय-समय पर ग्रसित करता रता है); २४, ६ (चन्द्रादित्यैर्यदा राहुराख्यातो ह्यमृतं पिबन्। वैरानुबन्धं कृतवांश्चन्द्रादित्ये तदाऽनघ). ८ (सूर्य को ग्रसित करता है); ६२, २०; ६५, ३१ (सिंहिका सुषुवे पुत्रं राहुं चन्द्रार्कमर्दनम्। सुचन्द्रं चन्द्रहर्तारं तथा चन्द्रप्रमर्दनम्); २. ११, २९ (ब्रह्मा की सभा में बृहस्पति आदि ग्रहों के साथ); ८१, २३; ३. ६८, १४ (पौर्णमासीमिव निशां राहुग्रस्तनिशाकराम्); ८३, १९२. १९६; १९०, ८२ (अपर्वणि महाराज सूर्यं राहुरुपैष्यति); २००, १२६; २४७, ९ (उपप्लुतं यथा सोमं राहुणा रात्रिसंक्षये); ५. १४३. ११; ६. ३, ११; ११, ३; १२, ४०-४१ (राहुग्रह मण्डलाकार है। उसका व्यासगत विस्तार बारह सहस्र योजन है और परिधि का विस्तार छत्तीस सहस्र योजन है। उसकी मोटाई छः हजार योजन है). ४६; १०१, ४४ (राहुः रवे शशिनं यथा). ५५ (ग्रस्तं राहुणेव निशाकरम्); ११०, ३७ (पर्वणीव सुसंक्रुद्धो राहुः पूर्णं निशाकरम्); ७. ३९, २३ (यथा राहुर्दिवाकरम्); १०१, ५ (यथा राहोरास्यान्मुक्तौ प्रभाकरौ); ११०, १४ (ग्रस्यते…भानुमानिव राहुणा); ११६, २६; १७९, १७; ८. ८७, ९२ (राहुकेतू यथाऽऽकाशे उदितौ जगतः क्षये); ८९, ७२ (राहोर्विमुक्तं…चन्द्रं यथा); ९. ५६, २०; १२. १९०, ८; १९३, २९; २०३, २२ (यथा चन्द्रार्कानर्मुक्तः स राहुर्नोपलभ्यते); २८४, १७३ (प्रविश्य वदनं राहोर्यः सोमं पिबते निशि); १३. १२५, ४९, १५८, १३ (कृष्ण को इसके साथ समीकृत किया गया है); १६५, १७; १४. ७७, १५ (राहुरग्रसदादित्यं युगपत्सोममेव च); १६. २, १९ (चतुर्दशी पञ्चदशी कृतेयं राहुणा पुनः)। तुकी० दैत्य, दानव, ग्रह, स्वर्भानु।

रिष्ट एक प्राचीन राजा का नाम है (२. ८, १४)।

रुक्म, एक राजा का नाम है : १. १८८, १९। तुकी० रुक्माङ्गद।

१. रुक्मरथ, शल्य के पुत्र का नाम है : १. १८६, १४ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित); ६. ४७, ४८; ७. ४५, ९. १४ (अभिमन्यु ने इसका वध किया); ८. ५, २७।

२. रुक्मरथ = द्रोण : ४. ५८, २; ७. ८, ३०. ३२; ९, ८. १९. २३; १३, २३; १४, २; ११७, २८; १९३, ९. १९; ८. ५, ५।

३. रुक्मरथ = सुशर्मा : ४. ३२, २३; ७. ११५, १५।

४. रुक्मरथ = विराट : ५. २७, १८।

५. रुक्मरथ (बहु० °थाः) ७. ११२, २०।

रुक्मवाहन = द्रोण (७. १९३, ५०)।

रुक्माङ्गद, सम्भवतः शल्य के पुत्र का नाम है : १. १८६, १४ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित); ७. ११६, ९ (सात्यकि के साथ युद्ध किया)।

रुक्मिणी, रुक्मी की बहन, श्रीकृष्ण की रानी और प्रद्युम्न की माता का नाम है : १. ६७, ५६ (श्रियस्तु भागः संजज्ञे रत्यर्थं पृथिवीतले। भीष्मकस्य कुले साध्वी रुक्मिणी नाम नामतः); २. २, ३६; ४५, १५. १८ (यद्यपि इसका शिशुपाल के साथ विवाह निश्चित हुआ था, तथापि श्रीकृष्ण ने इसका हरण किया); ३. १२, ११५ (जितां कृष्ण रुक्मिणी भीष्मकात्मजा); १२०, १८; २६३, १८ (पार्श्वस्थां शयने त्यक्त्वा रुक्मिणीं केशवः प्रभुः); ५. ४८, ७४ (यो रुक्मिणीमेकरथेन भोजानुत्साद्य राजः

समरे प्रसह्य । उवाह भार्यां यशसा ज्वलन्ती यस्यां जज्ञे रौक्मिणेयो महात्मा); ११७, १७; १५८, ११; १०. १२, ३१; १३. ११, २ (रुक्मिणी और श्री का संवाद); १४, २९. ३२. ३४; १४८, २० (प्रद्युम्न की माता); १५९, २९. ३४. ४५; १६. ५, १३; ७, ७३ (जब श्रीकृष्ण का शवदाह किया गया तब उनकी रुक्मिणी आदि रानियाँ भी सती हो गईं) तुकी० भीष्मकात्मजा, भोज्या ।

रुक्मिणीनन्दन = प्रद्युम्न (देखिये वस्था०) ।

रुक्मिन्, भीष्मक के पुत्र और रुक्मिणी के भ्राता का नाम है : १. ६७, ६२(यह क्रोधवशगण के अंश से उत्पन्न हुआ था); २. ३१, ६३ (सहदेव ने इसे युधिष्ठिर को कर देने के लिये विवश किया); ३७, १४; ४४, १८; ३. १२, ३१; २५४, १२. १४ (कर्ण ने अपनी दिग्विजय के समय इसे पराजित किया था); ५. ४, १६ (इसे भी पाण्डवों की ओर से रण-निमन्त्रण भेजने का निश्चय किया गया); ५०, ३२ (यह बल में सहदेव के बराबर था) । "वैशम्पायनजी ने कहा : सम्पूर्ण दिशाओं में विख्यात रुक्मी पाण्डवों के पास आया । गन्धमादन निवासी किम्पुरुष द्रुम का शिष्य होकर इसने चारों पादों से युक्त सम्पूर्ण धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त की थी । इसने गाण्डीव धनुष के तेज के समान ही विजय नामक धनुष इन्द्र से प्राप्त किया था । इसने द्रुम से विजय नामक धनुष प्राप्त किया । तदनन्तर यह पाण्डवों के पास आया । जब श्रीकृष्ण ने रुक्मिणी का अपहरण किया तब इसने यह प्रतिज्ञा की कि श्रीकृष्ण को मारे बिना अपने नगर नहीं लौटेगा । किन्तु यह श्रीकृष्ण से पराजित हो गया । तब जिस स्थान पर यह पराजित हुआ था उसी स्थान पर इसने भोजकट नगर बसाया । (५. १५८, १-२४) । ५. १५८, २. ७. ११. ३६. ३८ (अर्जुन और दुर्योधन दोनों द्वारा अस्वीकृत हो जाने से इसने महाभारत युद्ध में भाग नहीं लिया); ७. २३, ७०; १२. ४, ६ (कलिङ्गराज की पुत्री चित्राङ्गदा के स्वयंवर में आया) ।

१. **रुचि**, एक अप्सरा का नाम है जिसने अष्टावक्र के स्वागत में कुबेर की सभा में नृत्य किया था (१३. १९, ४४) ।

२. **रुचि**, महर्षि देवशर्मा की पत्नी का नाम है : १३. ४०, १७. २२. ३९. ४५; ४१, ४; ४२, ४. ७. ९. ११. ३०; ४३, २ (विपुल ने इसकी इन्द्र से रक्षा की) ।

रुचिपर्वन्, एक पाण्डव योद्धा का नाम है : ७. २३, ५१. ५२ ।

रुचिप्रभ एक दैत्य का नाम है जो प्राचीन काल में इस पृथिवी का शासक था (१२. २२७, ५२)

रुचिराङ्गद = विष्णु (सहस्रनाम) ।

रुद्रपद, एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, १००) ।

१. **रुद्र** (बहु० °द्राः) देवों के एक वर्ग का नाम है : १. ३०, ३३; ३२, १६; ६५, ५४; ६६, ३ (मृगव्याध सर्पश्च निर्ऋतिश्च महायशाः । अजैकपादहिर्बुध्न्यः पिनाकी च परंतप ॥ दहनोऽथेश्वरश्चैव कपाली च महाद्युतिः । स्थाणुर्भगश्च भगवान्रुद्रा एकादश स्मृताः). ३८; ६७, ७३ (कर्ण रुद्रगणों के अंश से उत्पन्न हुआ था); १२३, ६९ (सभी रुद्र अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उपस्थित हुये); १८७, ६ (द्रौपदी के स्वयंवर के समय उपस्थित); १९७, ३. ४०; २२७, ३७ (श्रीकृष्ण और अर्जुन से युद्ध किया); २. ११, ४४ (ब्रह्मा की सभा में); ३. २, ८१; ३, ४० (सूर्य की उपासना करते हैं). ६० सूर्य को इनके साथ समीकृत किया गया है); ३७, ३४; ३९, ४०; ४३, १३; ४६, २४; ६२, २४; ८२, २२ (पुष्कर में). ९१ (वडवा क्षेत्र में श्रीकृष्ण की उपासना की). १२२ (शिव ने मुनियों के हितार्थ अपने से एक कोटि रुद्र रूपों को प्रकट किया था); ८४, १२४ (आदित्या वसवो रुद्रा जनार्दनमुपासते); ९९, ५७ (परशुराम ने राम दाशरथि के शरीर में इन्हें भी देखा); १३४, १८ (एकादशोक्ता'''रुद्राः); १९८, ५२; १८८, ११९ (नारायण के शरीर में मार्कण्डेय जी ने इन्हें भी देखा); २३१, ३६; २३७, ११; ३०८, १४; ३१३, ३१; ३१४, ३; ४. २, २१; ५. २९, १५; ८६, ४; १२८, ४३; १३१, ३; १६९, १६; ६. ३४, २३; ३५, ६. २२; ७. ६, ५; २३, ६०; ३५, ३०; ७९, ४; ८. १५, ३२; ८७, ४६; ९. ४४, ३०; ४५, ६ (स्कन्द के अभिषेक में सम्मिलित हुये). ५३ (स्कन्द को उपहार दिये); ५०, ४०; १२. २१, २०; ६४, १० (ये क्षात्र धर्म का पालन करते हैं); १२२, ३०. ३४ (रुद्राणां शूलपाणिरिति); १६६, २२; १९८, ६; २०७, २३; २०८, १९ (यहाँ अजैकपाद, अहिर्बुध्न्य, विरूपाक्ष, रैवत, हर, बहुरूप, त्र्यम्बक, सुरेश्वर, सावित्र, जयन्त, पिनाकी आदि नामों से सम्भवतः रुद्रों का ही तात्पर्य है); २२७, ९ (इन्द्र के साथ गये). ७६ (बलि द्वारा पराजित हुये थे); २८४, ७ (दक्ष के यज्ञ में उपस्थित). २० (रुद्राः शूलहस्ताः कपर्दिनः एकादशस्थानगताः). १८१; २९५, १६; ३२३, १८; ३२९, ५१ (ललाटाक्षैव मे रुद्रो'''एकादश मे रुद्रान्दक्षिणं पार्श्वमास्थितान्); ३४०, १०२; १३. १४, १४०. ३१७. ३९० (एकादशशतान्येवं रुद्राणां वृषवाहनम्); १७, २८ (रुद्राणामपि यो रुद्रः). १७६ (इन लोगों ने मृत्यु से शिवसहस्रनाम का उपदेश ग्रहण किया और फिर उसे तण्डिन् को बताया); १८, ७१; ८४, ८०; ८५, ११४ (आदित्यों के साथ ये भी अग्नि की ज्वाला से प्रकट हुये); १०७, ५३. १२७; १३४, ५; १५०, १२-१४ (यहाँ ग्यारह रुद्रों के पूर्वोल्लिखित नामों को पुनः दोहराया गया है); १५८, ३४; १६५, १६; १४. ८, ४ (ये मुञ्जवत् पर शिव की उपासना करते हैं); १६. ४, २५ (श्रीकृष्ण का स्वर्ग में स्वागत किया); १८. ३, ८ ।

२. **रुद्र** = शिव (देखिये वस्था०) ।

३. **रुद्र** = सूर्य (३. ३, १८) ।

४. **रुद्र** = विष्णु (सहस्रनाम) ।

रुद्रकोटि, एक तीर्थ का नाम है । शिव के दर्शन की अभिलाषा से यहाँ करोड़ों मुनि एकत्र हुये थे और उन पर प्रसन्न होकर शिव ने करोड़ों शिव-लिङ्गों के रूप में उन्हें दर्शन दिया था : ३. ८२, ११८-१२४ (यहाँ स्नान करने से अश्वमेध का फल प्राप्त होता है और कुल का उद्धार होता है); ८३, ७७ ।

रुद्रगर्भ = अग्नि (देखिये वस्था०) ।

रुद्रज = अश्वत्थामा (१५. ३१, १६) ।

रुद्रपत्नी = उमा (३. ८३, १७०) ।

रुद्रपद, एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, १००) ।

रुद्रमार्ग, एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, १८१) ।

रुद्ररोमा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ७) ।

रुद्रलोक से रुद्रों अथवा रुद्र के लोक का तात्पर्य है : ३. ८३, १७३ (स्थाणुवट में स्नान करने से व्यक्ति यह लोक प्राप्त करता है); ७. २०२, १५० (शतरुद्रिय के श्रवण से यह लोक प्राप्त होता है); १३. १०७, १०० ।

रुद्रसुनु = स्कन्द (३. २२९, २७. २९-३१) ।

रुद्रसेन्, युधिष्ठिर के सम्बन्धी और सहायक एक राजा का नाम है (७. १५८, ३९) ।

रुद्रस्यतीर्थम्, एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, १०५) ।

रुद्राणी = उमा (देखिये वस्था०) ।

रुद्राणीरुद्र एक तीर्थ का नाम है (१३. २९, ३१) ।

रुद्रात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ८१) ।

रुद्रावर्त, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, ३७) ।

रुद्रास्त्र, शिव के अस्त्र का नाम है : १०. ८, ३४ (अश्वत्थामा ने इसी से पाञ्चालों का वध किया था) ।

रुमण्वत्, रेणुका के गर्भ से उत्पन्न जमदग्नि के ज्येष्ठ पुत्र का नाम है : ३. ११६, १०-१२ (इन्होंने अपनी माता का वध करने के लिये दी गई पिता की आज्ञा की अवहेलना की जिससे इनके पिता ने इन्हें शाप दे दिया) ।

रुरु, घृताची नामक अप्सरा के गर्भ से उत्पन्न प्रमति के पुत्र का नाम है : १. ५, ९. १० (इन्होंने प्रमद्वरा के गर्भ से शुनक नामक पुत्र उत्पन्न किया था); ८, २. ३. १४. १६. २७; ९, १. ६. १०-१२. १४-१७ (जब

सर्पदंशसे प्रमद्वरा की मृत्यु होगई तब इन्हने उसे अपना आधाजीवन दे दिया जिससे वह पुनः जीवित हो गई). २१; १०, १. ५. ६. ८; ११, १०. ११. १३. १७; १२, १. ३. ४. ६ (तदनन्तर इन्हें जो भी सर्प मिलता था उसका ये वध कर देते थे। सहस्रपाद ऋषि से इन्होंने जनमेजय के सर्पसत्र तथा आस्तीक की कथा बताने का निवेदन किया। तब सहस्रपाद ने कहा : 'तुम कथावाचक ब्राह्मणों के मुख से इस कथा को सुनोगे।' तदनन्तर सहस्रपाद के अन्तर्धान हो जाने पर ये घर लौट आये। वहाँ इनके पिता ने आस्तीक की कथा सुनाकर इनकी जिज्ञासा शान्त की); ३४, ५ (प्रमति ने इन्हें आस्तीक की कथा सुनाया); ५८, ३०; १३. ३०, ६५ (ये वीतहव्य के वंश में उत्पन्न हुये थे; इनके माता और पिता का नाम क्रमशः प्रमति और घृताची था। इन्होंने प्रमद्वरा के गर्भ से शुनक को उत्पन्न किया)। तुकी ० भृगुनन्दन।

रुषंगु, एक मुनि का नाम है। वृद्ध ब्राह्मण रुषंगु सदा तपस्या में तत्पर रहते थे। एक समय उन महामुनि रुषंगु ने शरीर त्याग देने का विचार कर अपने सभी पुत्रों को बुलाया और अपने को पृथूदक तीर्थ में ले चलने के लिये कहा। तब उन पुत्रों ने अपने पिता रुषंगु को सरस्वती के उत्तम पृथूदक तीर्थ में पहुँचा दिया। यह तीर्थ ब्राह्मण समूहों से सेवित तथा सैकड़ों तीर्थों से सुशोभित था। रुषंगु ने तब अपने पुत्रों से कहा : 'जो सरस्वती के उत्तर तट पर पृथूदक तीर्थ में जप करते हुये अपने शरीर का परित्याग करता है उसे भविष्य में पुनः मृत्यु का कष्ट नहीं भोगना पड़ता।' (९. ३९, २४. ३३)। ९. ३९, २४. २७. ३०।

रुषद्गु एक प्राचीन राजा का नाम है : २. ८, १३ (यम की सभा में)।

रुषर्द्धिक, सुराष्ट्रवंशी एक कुलाङ्गार राजा का नाम है (५. ७४, १४)।

रूप, मूर्तिमान 'रूप' का द्योतक है : २. ११, २१ (ब्रह्मा की सभा में)।

रूपवाहिक (बहु० °काः) एक जनपद के निवासियों का द्योतक है (६. ९, ४३)।

रूपिण, अजमीढ के द्वारा केशिनी के गर्भ से उत्पन्न पुत्र का नाम है (१. ९४, ३२. ३४)।

रेणुक एक नाग का नाम है : १. ३२, १८ (इसका गरुड से युद्ध); १३. १३२, २. ४. ६. १७ (देवताओं द्वारा भेजे जाने पर इसने दिग्गजों के पास जाकर धर्मविषयक प्रश्न किये)।

रेणुका, मुनिवर जमदग्नि की पत्नी एवं परशुराम की माता का नाम है : ३. ९९, ४२ (परशुराम इसके पुत्र थे); ११६, २ (यह प्रसेनजित की पुत्री थीं). ३. ५. ६. ७ (यह पाँच पुत्रों की माता थीं। परशुराम इसके सबसे छोटे पुत्र थे। यह चित्ररथ के प्रति अनुरक्त हो गई अतः जमदग्नि ने अपने पुत्रों से इसका वध कर देने के लिये कहा। पुत्रों द्वारा इस आज्ञा का पालन करना अस्वीकार कर देने पर सबसे छोटे पुत्र परशुराम ने अपने परशु से इसका सर काट दिया। तदनन्तर परशुराम के निवेदन पर ही जमदग्नि ने इसे पुनरुज्जीवित कर किया); ५. ११७, १३; १३. ९५, ७. १०. ९५. १६. १८ (सूर्य ने इसके लिये जमदग्नि को एक छत्र और पादत्राण दिया)।

रेणुकातीर्थ, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १५९)।

रेणुकायास्तीर्थम् एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, ८२)।

रेणुकासुत = राम जामदग्न्य (३. ९९, ४२)।

१. रेवत, शाकद्वीप के एक पर्वत (?) का नाम है : ५. ११, २६ (= रैवतक : ५. ११, १८)।

२. रेवत (वि०) — देखिये रैवत।

१. रेवती, बलराम की पत्नी का नाम है (१. २१९, ७)।

२. रेवती एक पिशाची का नाम है : ३. २३०, २९ (= अदिति; रेवती से ही रैवत ग्रह उत्पन्न हुआ)।

३. रेवती एक नक्षत्र का नाम है : ५. ८३, ६-७; ६. ११, १८ (इसे रेवतक पर्वत पर स्थित किया गया); १३. ६४, ३३ (इस नक्षत्र में दान का फल); ८९, १४ (इस नक्षत्र में श्राद्ध करने का फल); ११०, ५ (चान्द्रव्रत का वर्णन)।

रेवतीसुत = स्कन्द (३. २३२, ६)।

रैभ्य, एक ऋषि का नाम है : १. २, ७६; २. ४, १६ (युधिष्ठिर की सेवा में); ३. १३५, ९ (इनके आश्रम में ही यवक्रीत भारद्वाज का नाश हुआ था). १२ (ये भरद्वाज के मित्र थे). १३ (अर्वावसु और परावसु के पिता). १४. १५. ५७-५९; १३६, १. ४. ५. ८. ९. ११. २०; १३७, ६. १२. १४. १५ (यवक्रीत भारद्वाज ने इनकी पुत्रवधू के साथ बलात्कार किया। तब इन्होंने एक राक्षस उत्पन्न कर उस राक्षस से यवक्रीत का वध करा दिया। भरद्वाज ने इन्हें शाप दिया कि ये अपने ज्येष्ठ पुत्र के हाथों मारे जायंगे); १३८, १. २ (अर्वावसु और परावसु इनके पुत्र थे). २४ (इनके ज्येष्ठ पुत्र परावसु ने धोखे से इनका वध कर दिया किन्तु बाद में ये पुनरुज्जीवित हुये); १२. २०८, २६ (ये पूर्व दिशा का आश्रय लेकर निवास करनेवाले ऋषि थे); ३३६, ७ (वसु उपरिचर के यज्ञ में सदस्य बने); ३४८, ४२ (मुनथे); १३. २६, ६ (भीष्म को देखने आये); १५०, ३० (पूर्व के सात महेन्द्रगुरुवो में से एक); १६५, ३७ (पूर्व के एक ऋषि)।

रैभ्यपुत्र = परावसु (१२. ४९, ५६)।

१. रैवत, द्वारका के निकट स्थित एक पर्वत का नाम है : १. २२०, ६ (शैलेन्द्रं); २. १४, ५० (कुशस्थलीं पुरीं रम्यां रैवतेनोपशोभिताम्)। तुकी० रैवतक।

२. रैवत, एक व्याधिग्रह का नाम है : ३. २३०, २९ (अदितिं रेवतीं प्राहुर्ग्रहस्तस्यास्तु रैवतः)।

३. रैवत एक प्राचीन राजा का नाम है : ५. १०९, १० (अत्र सामानि गाथाभिः श्रुत्वा गीतानि रैवतः। गतदारो गतामात्यो गतराज्यो वनं गतः); १२. १६६, ७७ (इन्होंने मरुत्त से एक तलवार प्राप्त की जो इनसे युवनाश्व को प्राप्त हुई); १३. ११५, ७२ (ये कार्तिक मास में मांस भक्षण नहीं करते थे); १६५, ५३।

४. रैवत, एक रुद्र का नाम है (१२. २०८, १९)।

५. रैवत (वि०): १३. १३६, १७. २४।

१. रैवतक एक पर्वत का नाम है (= रैवत): १. २१८, ८; २१९, १. १२; २२०, १; २. ४५, ८; १४. ५९, ४।

२. रैवतक, शाकद्वीप के एक पर्वत का नाम है : ६. ११, १८ (रेवती नक्षत्र को स्थायी रूप से इसके ऊपर स्थित किया गया है)।

रोचनामुख, एक दैत्य का नाम है : ५. १०५, १२ (गरुड ने इसका वध किया था)।

१. रोचमान, अनेक राजाओं का नाम है : १. ६७, १८ (यह अश्वग्रीव नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था); १८६, १० (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित); २. २७, १९ (अर्जुन ने उत्तर में इसे पराजित किया था); २९, ८ (पूर्व में भीमसेन द्वारा पराजित); ५. ४, १२ (इन्हें भी पाण्डवों की ओर से रणनिमन्त्रण भेजने का विचार किया गया); १७२, १ (ये पाण्डवपक्ष के एक महारथी वीर थे); ७. २३, ४७ (द्रोण के विरुद्ध युद्ध के लिये गये). ६७; ८. ५६, ४५. ४९ (एक पाञ्चाल जिसका कर्ण ने वध किया)।

२. रोचमान (द्वि०) : ८. ६, २०-२१ (इस नाम के दो भाइयों का द्रोण ने वध किया)।

रोचमाना, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २९)।

रोमक (बहु० °काः) एक जाति के लोगों का नाम है (२. ५१, १७)।

रोमन् (बहु० °मानः) एक जाति का नाम है (६. ९, ५६)।

रोमश (बहु० °शाः) एक जाति के लोगों का नाम है : २. ५१, १० (ये युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये)।

रोमहर्ष = लोमहर्ष : १२. ३१८, २१ (रोमहर्षेण पुराणमवधारितम्)।

रोष, मूर्तिमान रोष का द्योतक है : ५. १११, १० (पूर्व में)।

१. रोहिणी, क्रोधवशा-कुमारी सुरभि का नाम है : १. ६६, ६७. ६८ (रोहिण्या जज्ञे गावो)।

२. रोहिणी, प्रजापति दक्ष की पुत्री और सोम की पत्नी का नाम है : १. १४५, ३४ (एक नक्षत्र); १९९,५; २. ५८, २८ (संवृतां शशधाराभिरिव रोहिणीम्); ३. ६८, २२; ९६, २७ रोहिणीव दिवि प्रभा); ११३, २२ (रोहिणी सोममिवानुकूला); २३०, ८ (अभिजित् स्पर्धमाना तु रोहिण्या कन्यसी स्वसा). १० (धनिष्ठादिस्तदा कालो ब्रह्मणा परिकल्पितः । रोहिणी ह्यभवत् पूर्वमेव संख्या समाभवत्); २८१, ६ (रोहिणीमेत्य शनैश्चर इव ग्रहः); ४. ९, १५; ५. ११७, ९; ६. २, ३२ (रोहिणीं पीडयन्नेष स्थितो राजन् शनैश्चरः); ३, १७ (रोहिणीं पीडयत्येवमुभौ च शशिभास्करौ); ८. ९४, ५१ (बृहस्पतिः संपरिवार्य रोहिणीं); ९. ३५, ४७. ४९. ५०. ५५. ५८. ६० (सोम से विवाहित दक्ष की सत्ताइस पुत्रियों में यह सबसे अधिक सुन्दर थी, अतः सोम बहुत समय तक इसी के पास रहे। तब सोम की अन्य पत्नियों ने पिता दक्ष से सोम के व्यवहार की शिकायत की जिस पर दक्ष ने सोम को शाप दिया); १२. १६६, ८२; ३४२, ५७; १३. ६४, ६ (इस नक्षत्र में दान का महत्त्व); ८९, ३ (इस नक्षत्र में श्राद्ध करने का फल); ११०, ३ (चान्द्रव्रत का वर्णन); १२६, ४८; १४६, ५ (रोहिणी शशिनः साध्वी)।

३. रोहिणी, वसुदेव की भार्या का नाम है : १. १९७, ३३ (विष्णु के एक श्वेत केश ने रोहिणी के गर्भ से बलराम के रूप में जन्म लिया); १६. ७, १८ (वसुदेव की मृत्यु के बाद उनकी अन्य पत्नियों के साथ ये भी चिता में भस्म हो गईं)।

४. रोहिणी, हिरण्यकशिपु की पुत्री का नाम है (३. २२१, १८)।

रोहिणीनन्दन = बलराम (८. १८१, १०)।

रोहिणीसुत = बलराम : ७. २३, ९५; ९. ३७, १०।

१. रोहित = शिव (सहस्रनाम)।

२. रोहित = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. रोहितक, एक देश का नाम है : २. ३२, ४ (नकुल ने पश्चिम में इसे जीता था)।

२. रोहितक (बहु० °काः) एक जाति का नाम है जिसे कर्ण ने अपनी दिग्विजय के समय पराजित किया था (३. २५४, २०)।

रोहितकारण्य, एक वन का नाम है जो कौरवों की विशाल सेना से घिर गया था (५. १९, ३०)।

रोही, एक नदी का नाम है (६. ९, ३०)।

रौक्मिणेय = प्रद्युम्न (देखिये वस्था०)।

१. रौद्र = स्कन्द : १. १३७, १३; ३. २३२, ५।

२. रौद्र = शिव (१४. ८, ३०)।

३. रौद्र = अश्वत्थामा (७. २०१, ८८)।

४. रौद्र, शुक्र के पुत्र का नाम है (१. ६५, ३७)।

५. रौद्र (वि०) : १. १५४, २२; ३. १६७, ५१ (महास्त्र, जिसे शिव ने अर्जुन को दिया); १७३, ४१. ४३ (अर्जुन ने रौद्रास्त्र का प्रयोग किया); २२४, १२; २३१, ४० (छत्रं रौद्रं); २७२, ४७ (सृज्यते ब्रह्ममूर्तिस्तु रक्षते पौरुषी तनुः । रौद्रीभावेन शमयेत् तिस्रोऽवस्थाः प्रजापतेः; ४. ६१. ३१ (अस्त्रं, जिसे अर्जुन ने शिव से प्राप्त किया); ५. १३८, ८ (अस्त्रं); १६९, २१; ७. २३, ९४. ९५ (धनुर्वरं, जिसे अभिमन्यु ने बलराम से प्राप्त किया था); ८८, ३ (मुहूर्ते); २०२, ६९ (रुद्र रौद्रा भविष्यन्ति पशवः); ८. ८२, १३; ८९, ८७; ९०, ८० (महास्त्रसंभृतं). १०४ (अर्जुन ने इस अस्त्र का प्रयोग किया); ९४, २७ (मुहूर्ते); ९. ४६, ३६; १३. ७७, २१; ८५, ११३ (रौद्रं लोहितमित्याहुर्लोहितारकनकं स्मृतम्); १६०, २७ (रुद्र रौद्रा भविष्यन्ति पशवः)।

६. रौद्र, एक जाति के लोगों का नाम है (१४. ८३, ११)।

रौद्रकर्मन्, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७, १०४; ११७, १२; ७. १२७, ३५ (भीमसेन पर आक्रमण किया). ६२ (भीमसेन ने इसका वध किया)।

रौद्ररूप = शिव (सहस्रनाम)।

रौद्राश्व, पूरु के द्वारा पौष्टी के गर्भ से उत्पन्न पुत्र का नाम है : १. ९४, ५. ८ (इन्होंने मिश्रकेशी के गर्भ से दस पुत्र उत्पन्न किये)।

रौद्रास्त्र, एक अस्त्र का नाम है जिसका अर्जुन ने प्रयोग किया : ३. १७३, ५७। तुकी० रौद्र (वि०)।

रौप्या, एक तीर्थ का नाम है जहाँ जमदग्नि ने तपस्या की थी (३. १२९, ७)।

रौम्य (बहु० °म्याः) गणेश्वरों के एक वर्ग का नाम है जिसे वीरभद्र ने अपने रोमकूपों से उत्पन्न किया था (१२. २८४, ३५)।

रौरव एक नरक का नाम है (१३. १०१, १३)।

रौहिणिनन्दन — देखिये रोहिणीनन्दन।

रौहिणेय = बलराम : १. १९१, १८. २१; २. १४, ५७; ३. १२०, १०; ५. १, ४; ७, २५; १५७, २४; १५८, ३८; ७. १८१, ८; ९. ३४, ११. १३. १८; ३५, ११. ३५. २७; ५१, ५३ (केशवपूर्वजः); ५४, २३. २६; ५५, २८ (दुर्योधन और भीमसेन ने इनसे गदायुद्ध की शिक्षा ली थी); ६०, २. ३०।

ल

लंबुषा, एक अप्सरा का नाम है जिसने अर्जुन के जन्मोत्सव के समय नृत्य किया था (१. १२३, ६२)।

१. लक्ष्मण, सुमित्रा से उत्पन्न दशरथ के पुत्र का नाम है। ये श्रीराम के छोटे भाई थे : २. ८, १८ (यम की सभा में); ३. २५, ९ (ये श्रीराम के साथ वन गये); ३. २७४, ७ (दशरथ के चार पुत्रों में से एक). ८ (लक्ष्मण और शत्रुघ्न सुमित्रा के गर्भ से उत्पन्न हुये थे); २७७, २. २९ (श्रीराम के वनवास के समय भी उनके साथ गये). ३२. ३८; २७८, १९. २३-२५. २९. ३१ (सीता ने इन्हें श्रीराम की सहायता के लिये भेजा और जब ये चले गये तब रावण ने सीता का अपहरण कर लिया); २७९, १३. १६. १७. १९. २०. ३०. ३५. ३९. ४८ (कबन्ध ने इन्हें पकड़ लिया। श्रीराम ने कबन्ध का वध किया); २८०, ७. ८. २२ (सुग्रीव का मिलन). ५७. ७०; २८२, ४. ५. ८. १२. १६. १७. २१ (श्रीराम ने इन्हें सुग्रीव के पास भेजा). ३१. ३३. ६३; २८३, ४९; २८४, २४ (इन्होंने लङ्का के दक्षिणी फाटक पर आक्रमण किया); २८५, ८. १३ (रावण के पुत्र इन्द्रजित् के साथ युद्ध किया); २८७, १३ (ब्रह्मास्त्र से कुम्भकर्ण का वध किया). २३ (प्रमाथिन् और वज्रवेग से युद्ध किया); २८८, २. ५. ९. १०. १६ २२ (इन्द्रजित् से युद्ध). २३. २६; २८९, १. १२. १७. २० (इन्द्रजित का वध किया); २९०, ८; २९१, १६; ७. १०८, ११; १४२, १०; १३. ७४, १२ (दूसरों की गाय चुराने, देने या बेचने के दोष से सम्बद्ध उपदेश श्रीराम ने अपने पिता से प्राप्त किया। तदनन्तर श्रीराम ने यह उपदेश लक्ष्मण को और लक्ष्मण ने वनवास के समय ऋषियों को दिया)।

तुकी० इनके निम्नलिखित पर्याय भी :—

इक्ष्वाकुनन्दन : ३. २९०, १०।

काकुत्स्थ : ३. २८२, ११ ।

राघव : ३. २८३, १७ ।

रामानुज : ७. १४२, १० ।

सौमित्रि : ३. २७९, २७. ३०. ३८; २८०, ३. २२. ३७. ६१; २८२, १. १५. ६४; २८३, १६. ३२; २८४, ४०; २८५, १३; २८७, २. १२. १५. १७. १८. २१. २२. २५; २८८, १३; २८९, १६. १९-२१; २९०, १०; २९१, १. ५१. ५९. ६४ ।

२. लक्ष्मण, धृतराष्ट्र के पौत्र और दुर्योधन के पुत्र का नाम है : ५. १६६, १४; ६. ५५, ८ (अभिमन्यु से युद्ध किया). ११; ७३, ३२ (अभिमन्यु से युद्ध किया). ३३-३६; १०४, २७ (बाह्लीक इसके रथ पर चढ़ गये); ७. १४, ४९ (क्षत्रदेव से युद्ध किया); २५, ३४. ३५ (पटच्चरहन्ता से युद्ध किया); ३४, १८ (द्रोण के चक्रव्यूह में शीर्षभाग में स्थित); ४६, ८ (अभिमन्यु पर आक्रमण किया). ११. १३. १७. १८ (अभिमन्यु ने इसका वध किया); ८. ६, ११ (इसने अम्बष्ठ के पुत्र का वध किया था). २७ (शिखण्डी के पुत्र क्षत्रदेव का वध किया था); ९. ४, १२; ६४, ३४; ११. २०, ३५; २५, २७ (पुत्रः पितरमन्वगात्। दुर्योधनं··· लक्ष्मणः); २६, ३२ (इसका शवदाह); १५. ३२, ११ (व्यासजी के आवाहन पर गङ्गा से प्रकट होनेवाले मृत योद्धाओं में यह भी था)। तुकी० दुर्योधनसुत, कुरुशार्दूल ।

लक्ष्मणमातृ = दुर्योधन की भार्या (९. ६४, ३७; ११. १७, २५; १८, ६)।

लक्ष्मणाग्रज = लक्ष्मण के ज्येष्ठ भ्राता, अर्थात श्रीराम दाशरथि (७. ५९, ३)।

१. लक्ष्मी (सौन्दर्य और समृद्धि की देवी) = श्री जो विष्णु की पत्नी हैं : १. १८, ४४ (अमृत और लक्ष्मी के लिये असुरों ने देवों से युद्ध किया था); ६६, १४ (दक्ष की पुत्री और धर्म की पत्नी). ५१ (ब्रह्मा की पुत्री और धाता तथा विधाता की बहन। व्योमचारी अश्व इनके मानस पुत्र हैं); १९७, ३५ (इन्होंने द्रौपदी के रूप में अवतार लिया); १९९, ६ (यथा नारायणे लक्ष्मीस्तथा त्वं भव भर्तृषु); २. ७, ४ (इन्द्र की सभा में महेन्द्राणी और श्री के साथ); १०, १९ (कुबेर की सभा में); ११, ४१ (ब्रह्मा की सभा में); ३. ३, ६४; ३७, ३३ (द्रौपदी ने अर्जुन के प्रति शुभकामना प्रकट करते हुये कहा कि लक्ष्मी उनका हित करेंगी); १८८, ९५; २. २९, ५१ (स्कन्द के पास आईं); ४. १४, १६; ७१, १७; ५. १०२, १२ (समुद्रमन्थन के समय ये वारुणी और अमृत के साथ सागर से प्रकट हुईं); ११७, १०; १३५, ३१; ७. ९४, ४४; ९. ४६, ६४ (व्यवसायो जये धर्मः सिद्धिर्लक्ष्मीर्धृतिः स्मृतिः। महासेनस्य सैन्यानामग्रे जग्मुर्नराधिप); १२. १२१, २४; २२५, ८. २०; २२८, २२. ८८ (लक्ष्मीसहितमासीनं मघवन्तं); ३४७, ८७; १३. ११, ६; १५. २९, ९ । तुकी० श्री ।

२. लक्ष्मी = देवसेना (३. २२९, ५१)।

३. लक्ष्मी = विष्णु (सहस्रनाम)।

लक्ष्मीवत् = विष्णु (सहस्रनाम)।

लक्ष्म्यावास = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

लङ्का, रावण की राजधानी का नाम है जो पहले कुबेर की राजधानी थी : ३. ५१, २३ (लंकानिवासिनः); १४८, ९ (जब हनुमान ने लंका में सीता को खोज लिया तब उन्होंने सम्पूर्ण लंकापुरी में आग लगा दी). १३ (रावण की मृत्यु के बाद विभीषण को लंका का राजा बनाया गया); १५०, १५; २७४, ३. १६ (ब्रह्मा ने इसे कुबेर को दिया था); २७५, ३ (कुबेर का निवासस्थान). ३२ (रावण ने कुबेर से लंकापुरी जीत लिया). ३३; २७७, ४५ (रावण का निवासस्थान); २७८, ३५ (लंकापुरी नाम्ना रम्या पारे महोदधेः); २७९, १० (रावण सीता का हरण करके उन्हें लंका लाया). ४३ (रावणेन हृता सीता राक्षसा लंकाधिवासिना); २८०, ४१; २८२, ५६ (रावणो विदितो मह्यं लंका चास्य महापुरी। द्रष्टा पारे समुद्रस्य त्रिकूटगिरिकन्दरे); २८३, ५१ (राम तथा उनके अनुगामियों ने लंका के उद्यानों को नष्ट कर दिया); २८४, २ (रावणः संविधं चक्रे लंकायां शास्त्रनिर्मिताम्। प्रकृत्यैव दुराधर्षा दृढप्राकारतोरणा). ७ (श्रीराम ने अपने दूत के रूप में अंगद को लंका भेजा). २१. २३. २५ (श्रीराम ने इसके प्राकारों को तोड़कर इस पर आक्रमण किया). ३१. ३९. ४१; २८६, १६; २८९, २५; २९१, ५ (रावणवध के बाद श्रीराम ने विभीषण को लंका का राज्य दे दिया). ५२ ।

लङ्काप्रवेश – "रावण की लंका शास्त्रोक्त प्रकार से निर्मित थी। उसकी प्राचीरें और द्वार आदि अत्यन्त सुदृढ़ थे (लंका की सुदृढ़ रक्षा-व्यवस्था का वर्णन)। श्रीराम ने पहले अङ्गद को दूत बनाकर रावण के पास भेजा। अङ्गद के समझाने पर भी रावण ने सीता को लौटाना स्वीकार नहीं किया। अङ्गद के कठोर वचन को सुनकर रावण क्रुद्ध हो उठा। उसके संकेत पर चार राक्षसों ने अङ्गद को पकड़ने का प्रयास किया किन्तु अङ्गद उनको लिये दिये उछल कर महल की छतपर चढ़ गये। उनके उछलते समय वे राक्षस भूमि पर गिर गये जिससे उन सबका वक्ष विदर्ण हो गया। अङ्गद ने लौटकर श्रीराम को रावण का उत्तर सुनाया। तब श्रीराम, लक्ष्मण, विभीषण, जाम्बवान तथा सम्पूर्ण वानर सेना ने लंका पर घोर आक्रमण कर दिया। उनलोगों ने लंका की प्राचीरों को ध्वस्तकर दिया। तब रावण ने राक्षसी सेना को युद्ध के लिये भेजा। दोनों पक्षों में घोर युद्ध हुआ। श्रीराम, लक्ष्मण और उनकी सेनाने राक्षसों का भीषण संहार किया। इस प्रकार लंका में भयंकर मार-काट मचाने के बाद वानर सैनिक लक्ष्यसिद्धिपूर्वक विजय प्राप्त करके श्रीराम की आज्ञा से युद्ध बन्द करके शिविर की ओर लौट पड़े (३. २८४)।

लंकेशवनारि = हनुमान (४. ३९, १०)।

लङ्गती, एक नदी का नाम है : २. ९, २३ (वरुण की सभा में)।

लघिमन्, एक सिद्धि का नाम है : १२. ३०२, १६ (शिव का एक गुण); ३१२, १३ ।

लघु = शिव (सहस्रनाम)।

लज्जा, मूर्तिमान लज्जा का द्योतक है : १. ६६, १५ (दक्ष की पुत्री और धर्म की भार्या)।

लता, एक अप्सरा का नाम है : १. २१६, २० (एक ब्राह्मण के शाप से मकर बन गई पाँच अप्सराओं में से एक। अर्जुन ने इन सब को मुक्त कराया); २. १०, १२ (कुबेर की सभा में)।

लताः = शिव (सहस्रनाम)।

लपिता, मन्दपाल ऋषि की दूसरी भार्या का नाम है : १. २२९, १७. १८. २१; २३३, २. ७. २५ ।

लपेटिका, एक तीर्थ का नाम है (३. ८५, १५)।

लम्पाक (बहु० °काः) एक जाति के लोगों का नाम है : ७. १२१, ४३ (सात्यकि पर आक्रमण किया)।

लम्बन = शिव (सहस्रनाम)।

लम्बपयोधरा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २१)।

लम्बा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १८)।

लम्बितोष्ठ = शिव (सहस्रनाम)।

लम्बिनी, एक मातृका का नाम है ९. ४६, १८)।

लम्बोदरशरीर = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ७९)।

लम्बोदर शरीरिन् = शिव (सहस्रनाम)।

लय = शिव (सहस्रनाम)।

१. ललाटाक्ष = शिव : ३. ३९, ७७; १३. १७, १५१ (शिव सहस्रनाम)।

२. ललाटाक्ष, एक जाति के लोगों का द्योतक है : २. ५१, १७ (यहाँ के राजा युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये)।

ललाम, अश्वों की एक जाति का नाम है (७. २३, १३)।

ललितक, एक तीर्थ का नाम है : ३. ८४, ३४ (इसे शान्तनु का तीर्थ भी कहते हैं)।

ललित्थ (बहु० °त्थाः) एक देश के निवासियों का द्योतक है : ७. १७, २०; १९, १६ (अर्जुन द्वारा पीड़ित किये गये); ३७, २६ (यहाँ के राजा ने अभिमन्यु पर बाणवर्षा की); ९१, ३९ (इन्होंने अर्जुन पर आक्रमण किया); ८. ५, ४७ (अर्जुन ने इनका वध किया था)।

१. लवण एक असुर का नाम है : १. २७, २ (रमणीयक द्वीप में नागों ने इसे देखा था)।

२. लवण, एक राक्षस का नाम है जिसका शिव के शूल से मान्धाता ने वध किया था (१३. १४, २६८)।

३. लवण = शिव (सहस्रनाम)।

लवणजल से समुद्र के खारे पानी का तात्पर्य है : १. २, ३९६; १९, २९ (लवणजलं च सागरं)। तुकी० ६. ५, १५; ११, ६।

लवणाम्भस : १. २, ३५४; १८, २०; १९, ११; ३. १८७, ४२; २८२, ४३; १७. १, ४४।

लवणाश्व एक ऋषि का नाम है : ३. २६, २३ (युधिष्ठिर की सेवा में)।

लवाः (बहु०) = शिव (सहस्रनाम)।

लाङ्गलधारिन, लाङ्गलध्वज, लाङ्गलिन् = बलराम (देखिये ·वस्था०)।

लाङ्गली, एक नदी का नाम है : (२. ९ २२)।

लाट (बहु० °टाः) एक देश के निवासियों का द्योतक है : १३. ३५, १७ (ब्राह्मणों के साथ ईर्ष्या रखने के कारण ये शूद्रत्व को प्राप्त हो गये थे)।

लिखित एक प्राचीन मुनि का नाम है : २. ७, ११ (इन्द्र की सभा में); १२. २३, १८. २०. २१. २८. २९. ३६. ४०. ४३ (इनके दण्डित किये जाने का वर्णन); १३. ६६, १२ (तिलदान द्वारा स्वर्ग प्राप्त किया); १३७, १९ (इन्हें दण्ड देने के कारण राजा सुद्युम्न ने श्रेष्ठलोक प्राप्त किया था)। तुकी० ब्रह्मर्षि।

लिङ्ग = शिव के प्रतीक का द्योतक है : ७. २०१, ९२. ९३. ९६; २०२, २४. २५. ३३. ४०; १०. १७, २१. २३; १३. १४, २३५ (!); १७, १४२ (शिव सहस्रनाम); १६१. ११. १५-१७;

लिङ्गाध्यक्ष = शिव (सहस्रनाम)।

लीलाख्य, विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (१३. ४, ५३)।

लीलायुध — देखिये नीलायुध।

लुब्ध = शिव (सहस्रनाम)।

लेख (बहु० °खाः) देवों के एक वर्ग का नाम है : १३. १८, ७४ (गणा देवानामूष्मपाः सोमपाश्च लेखाः सुयामास्तुषिता ब्रह्मकायाः)।

लेलिहान = शिव (१४. ८, १९)।

१. लोक = शिव (सहस्रनाम)।

२. लोक (बहु० °काः) देवों के एक वर्ग का नाम है : १३. १८, ७४ (केवल कलकत्ता संस्करण में)।

१. लोककर्तृ = ब्रह्मा : १. ६४, ४०; ३. ११०, ३६; ३४०, ९३।

२. लोककर्तृ = श्रीकृष्ण (विष्णु) : ३. २०३, ११. १३; ७. १४९, २०; १२. ५२, १३; ३३५, २१।

३. लोककर्तृ = शिव (सहस्रनाम)।

१. लोककृत = ब्रह्मा : ७. ५३, १३; १२. १८७, २२; ३०६, २३; १३. १६, ६६।

२. लोककृत् = श्रीकृष्ण (विष्णु) : (१२. ३४१, २५)।

१. लोकगुरु = ब्रह्मा : १. १, ५७; १९७, ४; ३. १८८, ७; २०३, १५; ९. ४३, ३९; ३४०, ५२. ७७; १३. ८५, १९; १४१, १२।

२. लोकगुरु = शिव : १०. १७, २४; १२. २८१, २५ (लोकगुरुस्त्र्यक्षः)।

३. लोकगुरु = दक्ष (९. ३५, ७२)।

४. लोकगुरु = श्रीकृष्ण (विष्णु) : ६. ५९, ९५।

५. लोकगुरु का दुर्योधन के लिये प्रयोग हुआ है : ९. ६५, १९।

लोकत्रयाश्रय = विष्णु (सहस्रनाम)।

लोकत्रयेश = इन्द्र : १. ३, १४९।

लोकत्रयेश्वर = शिव : ७. २०१, ७५।

१. लोकधातृ = ब्रह्मा : ८. ३४, ११९।

२. लोकधातृ = शिव (सहस्रनाम)।

१. लोकनाथ = ब्रह्मा : १३. १०३, १३. ३५।

२. लोकनाथ = शिव : ७. २०२, ९८; १३. १४, ३३७।

३. लोकनाथ = श्रीकृष्ण (विष्णु) : २. १, ९; ३. १२, १०; ६. ५९, ९७; ७. १०, ७६; १२. ५२, २; ३४८, ५२; १३. १४९, ७ (सहस्रनाम). ९१; १४. ६९, १३; १६. ५, ५।

४. लोकनाथ = स्कन्द : ३. २३२, १९।

५. लोकनाथ, विभिन्न राजाओं के लिये प्रयुक्त : ९. २, ३० (भीष्म); १२. ५५, १२ (युधिष्ठिर)।

६. लोकनाथ (द्वि० °थौ) = नर और नारायण : १२. ३३४, ११।

लोकप (बहु० °पाः); १. ९२, ७।

लोकपति = ब्रह्मा : १. ८९, १७।

लोकपरायण = श्रीकृष्ण : १२. ४६, १।

१. लोकपाल (बहु० °लाः) : १. २, १५८; २२५, ३; २. ११, २८; ३. १२, ५८; ३६, ३४; ४१, १७ (वरुण, कुबेर, यम और इन्द्र). ४६ (अर्जुन को अस्त्र दिये). ४७; ४२, १; ५४, २४ (ये लोग दमयन्ती के स्वयंवर में जाने के लिये प्रस्थित हुये). २९; ५६, ५. १२. २१. २३; ५७, २१. ३४; ५८, १. १०; ६३, ६; ८५, ७०; १६१, ८; १६८, ५ (सवैवस्वतादिभिः). ३३; १७४, १३; १७५, १५; २३३, ५; २४४, ८; २७२, ३०; २७५, ६; २८१, २३; ५. १६, २७ (कुबेर, यम, सोम और वरुण); १७, १; ५०, २८; १२१, १३; १३१, ६; १९३, ३; ६. ७६, १२; ७. ११४, ९; १८१, ७; ८. ७९, ६२; ९०, २३; ९. ६१, ६५; १२. १२२, ३८; १६६, ६७; १९८, ५; २००, ९; ३२३, १७; ३२४, १६; ३२७, ७; १३. १४०, १४; १५१, १६; १५८, ३१; १५. ९, १२; २३, १; १८. ६, ६।

२. लोकपाल (एक०) : १. २२९, २३ (अग्नि); २३३, १० (अग्नि)।

३. लोकपाल (एक०) विभिन्न लोकपालों का द्योतक है :

अग्नि : १. २२९, २३; २३३, १०।

कुबेर : १. २१६, १७; ३. २७४, १५; ५. १६, २९; ९. ४७, २९।

यम : ७. ५४, ३५; १२. १२९, ६।

वरुण : ५. ९८, ६; १३. १५४, १।

३. लोकपाल = शिव (सहस्रनाम)।

४. लोकपाल = स्कन्द : ३. २३२, १३।

लोकपालसभाख्यानं : १. २. १३३

लोकपालसभाख्यानपर्वन् से उस पर्व का तात्पर्य है जिसमें विभिन्न लोकपालों की सभाओं का वर्णन है। यह महाभारत का २१वाँ अवान्तर पर्व है जो सभापर्वके अन्तर्गत आता है : 'एकदिन पाण्डव उस सभामें अन्यान्य महापुरुषों तथा गन्धर्वों आदि के साथ बैठे थे। उसी समय देवर्षि नारद (नारद के गुणों की विस्तृत चर्चा की गई है : श्लोक २-१२) विभिन्न लोकों का भ्रमण करते हुये महर्षि पारिजात, रैवत, सुमुख और सौम्य आदि के साथ वहाँ आये। नारद जी ने युधिष्ठिर से धर्म, सुख-समृद्धि आदि के सम्बन्ध में प्रश्न करते हुये उन्हें उपदेश दिये। नारदजी के परामर्श और उपदेश के अनुसार आचरण करते हुये युधिष्ठिर ने समुद्र-पर्यन्त पृथिवी का राज्य प्राप्त कर लिया (२. ५)।" "युधिष्ठिर ने नारदजी के प्रश्नों का उत्तर देते हुये उन्हें बताया कि वे सभी नियमों का यथावत् पालन करते हैं। तदनन्तर युधिष्ठिर ने नारदजी से पूछा कि क्या उन्होंने उनकी (युधिष्ठिर की) सभा के समान अन्य कोई सभा देखी है। नारदजी ने बताया कि मनुष्यों में तो किसी भी अन्य की सभा उनके समान नहीं है किन्तु यम, वरुण, इन्द्र,

कुबेर, ब्रह्मा आदि की सभायें श्रेष्ठ हैं जिनका वर्णन करने का उन्होंने युधिष्ठिर को आश्वासन दिया (२. ६)।" इन्द्रसभा का वर्णन (देखिये शक्रसभा वर्णन): २. ७। यमसभावर्णन : २. ८। वरुणसभावर्णन : २. ९। वैश्रवणसभावर्णन : २. १०। ब्रह्मसभावर्णन : २. ११। (देखिये ये सभी वस्था०)। "युधिष्ठिर ने नारदजी से कहा ; जैसा आपने वर्णन किया है उसके अनुसार यम की सभा में अधिकांशतः राजा; वरुण की सभा में नदियाँ, दैत्य और सागर; कुबेर की सभा में यक्ष, गुह्यक, राक्षस, गन्धर्व, अप्सरायें और शिव; ब्रह्मा की सभा में महर्षि, देवता और शास्त्र; तथा शक्र की सभा में गन्धर्व तथा विभिन्न ऋषिगण और केवल एक राजर्षि हरिश्चन्द्र ही स्थित हैं।' तब नारदजी ने इन सबकी विभिन्न सभाओं में उपस्थिति की व्याख्या करते हुये युधिष्ठिर से कहा : 'तुम्हारे पिता पाण्डु ने हरिश्चन्द्र की सम्पत्ति देखकर तुमसे कहने के लिये यह सन्देश दिया है कि तुम भी सम्पूर्ण पृथिवी को जीतने में समर्थ हो, अतः तुम राजसूय नामक श्रेष्ठ यज्ञ करो जिससे पाण्डु तथा उनके पूर्वज भी इन्द्रलोक में चले जायेंगे।' नारद जी ने यह भी बताया कि राजसूय यज्ञ में ब्रह्मराक्षस छिद्र ढूँढते हैं, तथा इसका अनुष्ठान होने पर कोई एक ऐसा निमित्त बन जाता है जिससे पृथिवी पर विनाशकारी युद्ध उपस्थित हो जाता है। तदनन्तर नारदजी जिन ऋषियों के साथ आये थे उन्हीं के साथ द्वारका नगरी जाने के लिये प्रस्थित हुये। (२. १२)।"

लोकपितरः, सप्तर्षियों के लिये प्रयुक्त हुआ है : १२. ३३५, ५३।

१. लोकपितामह = ब्रह्मा (देखिये वस्था०)।

२. लोकपितामह = दक्ष : १. ७५, ५।

लोकप्रधान = विष्णु (सहस्रनाम)।

लोकबन्धु = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. लोकभावन = अग्नि : ३. २१७, १३; ९. ४७, १६।

२. लोकभावन = ब्रह्मा : १. २११, ३२; ३. २७६, १५; ५. ११८, ४२; ९. ४६, ५३; १३. १४, २००; १४. ४९, १७।

३. लोकभावन = शिव : १. २२३, ५०; ३. ३९, ४४।

४. लोकभावन = श्रीकृष्ण (विष्णु) : ३. १४२, ६०; १२. ३४२, ६७।

५. लोकभावन (वि०) : ९. ५१, २१. ३३।

लोकभावनभावज्ञ = श्रीकृष्ण : ६. ६८, २।

लोकयज्ञ : १०. १८, ५. ६।

लोकयोनि = श्रीकृष्ण (विष्णु) : १२. ३४६, २२।

लोकसम्भव = ब्रह्मा : १३. १४, ३४७।

१. लोकसाक्षिन् = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

२. लोकसाक्षिन् = श्रीकृष्ण (विष्णु): १२. ३४२, ९०; ३४६, २१।

लोकस्याधिपति = शिव : १२. २८४, १८९।

१. लोकस्रष्टा = ब्रह्मा : ८. ३४, ७६।

२. लोकस्रष्टा = शिव : ८. ३४, ११८।

लोकहित = विष्णु (सहस्रनाम)।

लोकात्मन् = श्रीकृष्ण (विष्णु) : १२. ४७, ६८; ३४६, ७ (आत्मा लोकस्य)।

लोकादिकर्तृ = ब्रह्मा : १२. ६४, २४।

लोकादिधनेश्वर = ब्रह्मा : ७. ५३, २०।

लोकाद्य = विष्णु : १२. ३४७, ३८।

लोकाधिपति = इन्द्र : १४. १०, ४।

लोकाधिष्ठान = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. लोकाध्यक्ष = ब्रह्मा : १२. ३३९, ६१।

२. लोकाध्यक्ष = विष्णु (सहस्रनाम)।

लोकानां कीर्तिवर्धनः = विष्णु (सहस्रनाम)।

लोकानां पतिः = शिव : ७. २०२, ४२।

लोकानां मातरः : १३. १२५, ६२।

लोकालोक : ९. ४७, १४ (लोकालोकविनाशे); १३. १४, २११. २२५ (लोकालोकान्तकारणम्)।

१. लोकेश = अग्नि : १. ७, २०।

२. लोकेश = ब्रह्मा : १२. २५८, १३; २८२, ५०. ५२।

३. लोकेश = शिव : ८. ३४, ५; १२. ३२३, १७; १३. ८४, ६६।

१. लोकेश्वर = ब्रह्मा : ३. ११४, १९; ११. २, २।

२. लोकेश्वर = शिव : ८. ३४, १११।

३. लोकेश्वर = सूर्य : ३. ३००, ३३।

४. लोकेश्वर (बहु० °राः) : ८. ३४, ३२।

१. लोकेश्वरेश्वर = ब्रह्मा : १२. २५७, ११।

२. लोकेश्वरेश्वर इन्द्र : १२. ४९, ६।

लोकोद्धार, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ४५)।

लोपामुद्रा, विदर्भराज की पुत्री और अगस्त्य की पत्नी का नाम है : १. २, १६७; ३. ९६, २४ (महर्षि अगस्त्य ने अपनी पत्नी बनाने के लिये एक सुन्दर कन्या का निर्माण किया और पुत्र के लिये तपस्या कर रहे विदर्भराज के हाथमें उसे दे दिया); ९७, २. ५. ७. ८. १३ (अगस्त्य के साथ इसका विवाह हुआ). २०. २१. २३; ९९, १८. १९. २२ (यह दृढस्यु अथवा इध्मवाह की माता बनीं); ११३, २३; १३०, ६ (एतस्मिन्यामहत्तीर्थं यत्रागस्त्यमरिन्दम। लोपामुद्रा समागम्य भर्तारमवृणीत वै); ४. २१, १४ (लोपामुद्रा तथा भीरुवयोरूपसमन्विता। अगस्तिमन्वयाद्धित्वा कामान् सर्वानमानुषान्)। तुकी० वैदर्भी।

लोम = शिव (सहस्रनाम)।

लोमपाद, अङ्गराज का नाम है जो शान्ता के पिता थे : ३. ९३, ८; ११०, २५. २६ (अपनी पुत्री शान्ता ऋष्यशृङ्ग को प्रदान किया). ३०. ४१; ११३. ११ (अङ्ग देश में भीषण अकाल के समय इन्होंने ऋष्यशृङ्ग को बुलाया। तब वर्षा हुई और इन्होंने अपनी पुत्री शान्ता ऋष्यशृङ्ग को प्रदान कर दी); १२. २३४, ३४ (लोमपादश्च राजर्षिः शान्तां दत्त्वा सुतां प्रभुः। ऋष्यशृङ्गाय विपुलैः सर्वकामैरयुज्यत); १३. १३७, २५। तुकी० अङ्गाधिपति, अङ्गपति, अङ्गराज। देखिये अङ्ग (बहु०) भी।

१. लोमश, एक ऋषि का नाम है : १. २, १६२. १६३; ३. ३१, १३; ४७, १ (इन्होंने अर्जुन को इन्द्र के निवास पर देखा). ६. ३२ (इन्द्र ने इन्हें पाण्डवों के साथ तीर्थयात्रा में जाने के लिये कहा). ३४; ८५, १२३; ९१, १ (ये पाण्डवों के पास आये). २४; ९२, १. १८. २७; ९३, २. १४. १५. १७. २५; ९४, २. ३; ९६ २ (पाण्डवों के साथ ये विभिन्न तीर्थों में गये और उन तीर्थों का महत्त्व तथा उनसे सम्बद्ध कथायें पाण्डवों को सुनाते रहे). ४; ९७, १; ९८, १. ५. १०. १६. २०; ९९, १. २३. ४०. ५४; १००, २; १०१, १; १०२, १; १०४, २; १०५, १; १०६, १. ७; १०७, १. ४०; १०८, १. २१; १०९, १; ११०, ६. ७. २२. ३३; १११, १. १४; ११४, ४. १४. १६; ११५, २; ११८, १६; १२०, ३१; १२१, १. १७. १९; १२२, १. २६; १२३, १; १२४, १. १३; १२५, १; १२६, ४. ४७; १२७, २; १२८, २. १८; १२९, १. १८. २०; १३०, १; १३१, २६; १३२, १. ८; १३४, ७. २०. ३२. ३७; १३५, १. १२. २३. २९. ४१. ६०; १३६, १; १३७, १. १९; १३८, १. ११. १४. १९. २७; १३९, १. १८; १४०, ६. २२; १४२, १. ११. १४.३४. ६२; १४३, १६; १४५, ९; १५५, २२. ३१; १५६, ११; १५७, ८; १५८, १४. ३५; १६०, १०; १७६, २२ (पाण्डवों से विदा लेकर स्वर्ग गये); ३००, १; ११. २६, २० (इन्होंने युधिष्ठिर को दिव्यचक्षु प्रदान किया); १२. ४७, ७ (बाणशय्या पर पड़े भीष्म को घेर कर खड़े ऋषियों में ये भी थे); १३. १२९, १; १५१, ४२; १६५, ४६ (ये उत्तर दिशा के ऋषि थे)। तुकी० ब्रह्मर्षि, देवर्षि।

२. लोमश, एक बिलाव का नाम है : १२. १३८, २२ (लोमशो नाम मार्जारः). ६७. ७६. ९९. १०१. ११४. ११५. १२३. १२५. १३६, १७६. १८५।

लोमहर्षण, उग्रश्रवा के पिता, एक सूत का नाम है : १. १, ७

(शिष्यो व्यासस्य); २. ४, १२ (युधिष्ठिर की सेवा में); १३. १६५, ४६ (उत्तर के एक ऋषि)। तुकी० सूत।

लोमहर्षणपुत्र = उग्रश्रवा (देखिये वस्था०)।

लोह (बहु० °हाः) एक जाति के लोगों का नाम है जिन्हें उत्तर दिग्विजय के समय अर्जुन ने पराजित किया था (२. २७, २५)।

लोहजंघ (बहु० °घाः) एक जाति के लोगों का नाम है : २. ५०, २० (युधिष्ठिर की सभा में)।

लोहमेखला, एक मातृका का नाम है : ९. ४६, १८. २१।

लोहाजवक्त्र, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है : ९. ४५, ७५

१. लोहित, एक नाग का नाम है : २. ९, ८ (वरुण की सभा में)।

२. लोहित, एक देश का नाम है जिसे उत्तर दिग्विजय के समय अर्जुन ने जीता था (२. २७. १७)।

३. लोहित, एक नदी का नाम है : १३. १६५, २१ (महानदः)।

४. लोहित (:) उदधि (:), एक रक्तवर्ण सागर, सम्भवतः लालसागर का द्योतक है : ३. २२६, २८ (लोहितस्योदधेः कन्या क्रूरा लोहितभोजना); २३०, ४० (लोहितस्योदधेः कन्या धात्री स्कन्दस्य सा स्मृता। लोहितायनिरित्येवं कदम्बे सा हि पूज्यते)। तुकी० ३. २२४, १३ (लोहितोदं''वरुणालयम्); २३१, ११ (लोहितोदे)।

लोहितारिणी, एक नदी का नाम है। (९. ९, १८)।

१. लोहितांग = मङ्गल ग्रह : ६. ३, १८ (ब्रह्मराशिं समावृत्य लोहिताङ्गो व्यवस्थितः); ७. १६६, १२ (निपपात रथोत्तमात्। लोहिताङ्ग इवाकाशादीप्तरश्मिर्यदृच्छया)।

२. लोहिताङ्ग = सूर्य : ७. १९२, ६९; ९. ५५, ३६।

१. लोहिताक्ष एक सूत का नाम है : १. ५८, १२। तुकी० सूत।

२. लोहिताक्ष, ब्रह्मा द्वारा स्कन्द को दिया गया एक पार्षदः ९. ४५, २४-२५।

३. लोहिताक्ष = शिव (सहस्रनाम)(

४. लोहिताक्ष = विष्णु (सहस्रनाम)।

लोहिताक्षी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २२. २४)।

लोहितान्तर्गता दृष्टिः = शिव (सहस्रनाम)।

लोहितायनि, लालसागर की कन्या जो स्कन्द की धाय थी। इसकी कदम्ब के वृक्ष में पूजा होती है (३. २३०, ४०)।

लोहित्या, एक नदी का नाम है (६. ९, ३५)। तुकी० लोहित, लौहित्य।

१. लौहित्य, एक सागर (लालसागर) का नाम है : १. २. ३६६ (सागरम्); १७. १, ३३ (अर्जुन ने अपना गाण्डीव धनुष इस सागर में फेंक दिया)।

२. लौहित्य, एक नदी (वर्तमान ब्रह्मपुत्र) का नाम है : २. ९, २२ (वरुण की सभा में); ३०, २६ (पूर्व में); ५२, ८ (लौहित्यं पर्वत—नीलकण्ठी)।

३. लौहित्य, एक तीर्थ का नाम है : ३. ८५, २; १३. २५, ४६।

व

वंक्षु, एक नदी का नाम है : २. ५१, २० (इसके तट पर उत्पन्न हुये रासभ अत्यन्त सुन्दर और बल आदि गुणों में विख्यात होते हैं। अनेक म्लेच्छ राजा युधिष्ठिर के राजसूय में ऐसे रासभों को भेंट देने के लिये लाये थे)।

वंश = शिव (सहस्रनाम)।

वंशकर = शिव (सहस्रनाम)।

वंशगुल्म, एक तीर्थ का नाम है (३. ८५, ९)।

वंशनाद = शिव (सहस्रनाम)।

वंशमूलक, कुरुक्षेत्र की सीमा में स्थित एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से मनुष्य अपने वंशका उद्धार कर देता है (३. ८३, ४१-४२)।

वंशवर्धन = विष्णु (सहस्रनाम)।

वंशा, कश्यप द्वारा प्राधा के गर्भ से उत्पन्न हुई पुत्री का नाम है (१. ६५, ४५)।

वक्र, एक अथवा अधिक राजाओं का नाम है : १. १८७, १५; १८८, १९; २. १४, १२; ५. १३०, ४८ (श्रीकृष्ण ने इसका वध किया था); १२. ४, ६ (कलिङ्गराज की कन्या के स्वयंवर में उपस्थित हुआ)।

वक्रदन्त = २. १४, १३

वक्रग्रीव, विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ४, ५३)।

१. वङ्ग, एक राजा का नाम है : १. १०४, ५३।

२. वङ्ग, अतीत के एक वङ्गराज का नाम है (२. २१, ७)।

३. वङ्ग, युधिष्ठिर के समकालीन वङ्गराज का द्योतक है : २. ४, २४ (युधिष्ठिर की सेवा में). २५; ३४, ११ (युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित हुये); ६. ९२, ९।

४. वङ्ग, वङ्गदेश का द्योतक है : १. १०४, ५३।

५. वङ्ग (बहु० °ङ्गाः) एक जाति के लोगों का द्योतक है : १. २१५, ९; २. १४, २०; ३०, २३; ४४, ९; ५२, १६ (युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये). १८; ३. ५१, २२ (युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित); २५४, ८ (अपनी दिग्विजय के समय कर्ण के इन्हें पराजित किया था); ६. ९, ४६; ९१, ११; ९२, ७ (घटोत्कच से युद्ध किया). १२; ७.११, १५ (कृष्ण इन्हें पराजित कर चुके थे); २४, ७ (ये दुर्योधन के पक्ष में सम्मिलित हुये); ७०, १२; १६१, ३; ८. ८, १९ (कर्ण ने इन्हें पराजित करके दुर्योधन का करद बनाया); १७, १२; २२, २; ७०, ९; १४. ८२, २९ (यज्ञाश्व की रक्षा करते समय अर्जुन ने इन्हें पराजित किया था)।

वङ्गराज : २. ३०, २३ (भीमसेन ने दिग्विजय के समय इन्हें पराजित किया था)।

वङ्गाधिप, वङ्गों के राजा का द्योतक है (१. १८७, १६)।

१. वज्र, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५२)।

२. वज्र, एक यादव राजा का नाम है : १६. ७, ११. २७. ३८. ७२. ७५ (इन्द्रप्रस्थ में राजा बनाया गया); १७. १, ८. ९ (यादवः)।

३. वज्र, इन्द्र के प्रसिद्ध अस्त्र का नाम है जिसे महर्षि दधीच की अस्थियों से विश्वकर्मा ने बनाया था : १. १३७, १२; १७०, ५०-५३ (पूर्वकाल में वृत्रासुर का संहार करने के निमित्त इन्द्र के लिये जिस वज्र का निर्माण किया गया था उससे जब इन्द्र ने वृत्र के मस्तक पर प्रहार किया तब वृत्र के मस्तक पर पड़ते ही उसके दस बड़े और १०० छोटे टुकड़े हो गये थे। तबसे अनेक भागों में बँटे हुये उस वज्र के प्रत्येक भाग की देवगण उपासना करते हैं। लोक में उत्कृष्ट धन और यश आदि जो कुछ भी वस्तु है उसे वज्र का स्वरूप माना गया है। ब्राह्मण का दाहिना हाथ वज्र है। क्षत्रिय का रथ वज्र है। वैश्य जो दान करते हैं वह भी वज्र है और शूद्र की सेवा भी वज्र है। क्षत्रिय के रथरूपी वज्र का विशिष्ट अंग होने से घोड़ों को भी अवध्य बताया गया है); ३. १००, २४; १२. ३१, २७-२९ (इसने इन्द्र की प्रेरणा से व्याघ्र बनकर सुवर्णष्ठीवी को मार डाला था); ३४२, २४।

४. वज्र = शिव (सहस्रनाम)।

५. वज्र, एक व्यूह का नाम है : ६. १९, ३४; ८१, २३। तुकी०

वज्राख्य ।

वज्रदत्त, भगदत्त के पुत्र और प्राग्ज्योतिषपुर के राजा का नाम है : १४. ७५, २. १३. १७; ७६, २. ५. ६. ९. १०. २० (यज्ञाश्व की रक्षा करते हुये अर्जुन ने इसे पराजित किया था)। तुकी० भगदत्तज, भगदत्तसुत, भगदत्तात्मज, प्राग्ज्योतिषाधिप।

वज्रधर = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

वज्रधरात्मज, अर्थात् इन्द्र के पुत्र = अर्जुन १. २१५, १; १४. ७९, ३१।

वज्रधारिन्, वज्रधृक् = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

१. वज्रनाभ, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६३)।

२. वज्रनाभ (वि०) श्रीकृष्ण के चक्र के लिये प्रयुक्त हुआ है : १. २२५, २३; ८. ७६, ३३; १०. १२, २०; १६. ३, ४।

वज्रनिष्कम्भ — देखिये वज्रविष्कम्भ (वस्था०)।

वज्रपाणि = इन्द्र (देखिये वस्था०) : ६. ४८, ३६।

वज्रबाहु, एक वानर का नाम है : ३. २८७, ६ (कुम्भकर्ण ने इसका भक्षण कर लिया।

वज्रविष्कम्भ, गरुड की प्रमुख सन्तानों में से एक का नाम है : ५. १०१, १०।

वज्रवेग, दूषण नामक राक्षस के छोटे भाई का नाम है : ३. २८६, २७. २८; २८७, २२. २५. २६ (हनुमान ने इसका वध किया)। तुकी० दूषणानुज (द्वि०), दूषणावरज (द्वि०), रक्षस।

वज्रशीर्ष, प्रजापति भृगु के सात व्यापक पुत्रों में से एक का नाम है : १३. ८५, १२८।

वज्रसंघात = शिव (सहस्रनाम)।

१. वज्रहस्त = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

२. वज्रहस्त = शिव (सहस्रनाम)।

वज्रहस्तात्मजात्मज = अभिमन्यु (७. ४०, २९)।

वज्रायुध = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

वज्राख्य, एक व्यूह का नाम है (देखिये ५. वज्र)।

१. वज्रिन् = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

२. वज्रिन् = शिव : १३. १४, ३८७; १७, १३२. १४९।

वट, अंश द्वारा स्कन्द को दिये गये पाँच अनुचरों में से एक का नाम है (९. ४५, ३४)।

१. वडवा, अश्वा की माता का नाम है : १. १७०, ५३।

२. वडवा, एक त्रिभुवनविख्यात तीर्थ का नाम है जहाँ सायं-सन्ध्या के समय विधिपूर्वक स्नान करके अग्निदेव को चरु निवेदन करने का विधान है। यहाँ पितरों को दिया हुआ दान अक्षय होता है। यहाँ ऋषियों, पितरों, देवों, गन्धर्वों, यक्षों, सिद्धों, अप्सराओं, गुह्यकों, विद्याधरों, किन्नरों, राक्षसों और दैत्यों ने विष्णु को प्रसन्न करने के लिये १००० वर्षों तक तपस्या की। तदनन्तर उनलोगों ने चरु पकाया और सभीने सात-सात ऋचाओं से केशव की स्तुति की। तब केशव ने सबको अष्टैश्वर्य प्रदान किया। इसी से यह तीर्थ सप्तचरु के नाम से विख्यात हुआ (३. ८२, ९२-९९)।

३. वडवा, एक नदी का नाम है जो अग्नि की माताओं में से एक है : ३. २२२, २४।

वडवाग्नि = १. वडवामुख : ३. २१९, २०।

१. वडवामुख, समुद्र के भीतर रहनेवाली एक अग्नि का नाम है। इस अग्नि के मुख में समुद्र अपने जलरूपी हविष्य की आहुति देता रहता है : १. २१, १६; ४. ५०, २६ (अग्निर्वडवामुखः); १०. ६, ११; १२. ३३८, ४ (९१ = महापुरुष)। तुकी० वडवावक्त्र।

२. वडवामुख = शिव (सहस्रनाम)।

३. वडवामुख, एक ऋषि का नाम है : १२. ३४२, ६० (ये नारायण के अवतार थे। इन्होंने समुद्र के जल को खारा कर दिया और कहा कि उसका जल केवल वडवामुख के ही पान करने योग्य रहेगा)।

वडवामुखम् : ५. १६०, १२२ (काम्बोजवडवामुखम्); १६१, ४०; ७. १३५, २२ (वडवामुखमध्यस्थो); २०२, ११६ (तस्य देवस्य यदक्रं समुद्रे तदधिष्ठितम्। वडवामुखेति विख्यातं पिबतोयमयं हविः); १२. ३०१, ७१ (वडवामुखसागरम्); ३४२, ६० (समुद्र का जल पीता है); १३. ३८, २९; १६१, २९ (शिव का मुख)। तुकी० वडवावक्त्रम्।

वडवावक्त्र, एक अग्नि का नाम है = १. वडवामुख : ३. १८९ १२।

वडवावक्त्रम् = वडवामुखम् : १३. ५६, ६ (जहाँ यहाँ अपनी क्रोधाग्नि को सागर में प्रक्षिप्त करेंगे)। तुकी० और्वोपाख्यान।

वणिज = शिव (सहस्रनाम)।

१. वत्स, काशिराज प्रतर्दन के पुत्र, एक राजा का नाम है : १२. ४९, ८०।

२. वत्स, हैहय और तालजंघ के पिता का नाम है (१३. ३०, ७)।

३. वत्स (बहु० °त्साः) एक जाति के लोगों का नाम है : ५. १८६, २४; ६. ५०, ५३ (युधिष्ठिर की सेना में); ८. ८, २० (कर्ण ने इन्हें पराजित किया था)। तुकी० वात्स्य (बहु०)।

वत्सभूमि, वत्सों के निवासस्थान का द्योतक है : २. ३०, १० (भीमसेन ने पूर्व-दिग्विजय के समय इसे जीता था); ३. २५४, ९ (कर्ण ने इसे जीता था); ५. ५३, २ (युधिष्ठिर की सेना में); १८६, २४. ३९. ४० (अम्बा वत्सदेश की भूमि में 'अम्बा' नामक नदी बनकर प्रतिष्ठित हुई)।

वत्सर = विष्णु (सहस्रनाम)।

वत्सराज, वत्सों के राजा का नाम है जो द्रौपदी के स्वयंवर में आये (१. १८६, २२)।

१. वत्सल = विष्णु (सहस्रनाम)।

२. वत्सल, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७२)।

वत्सिन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

वदान्य, एक ऋषि का नाम है (१३. १९, ११)।

वध = शिव (सहस्रनाम)।

वधूसरा, च्यवन मुनि के आश्रम के समीप बहनेवाली एक नदी का नाम है जो भृगुपत्नी पुलोमा के अश्रुओं से प्रकट हुई है। यह वधू (पुलोमा) का अनुसरण करती थी इसी कारण ब्रह्मा ने इसका नाम वधूसरा रख दिया : १. ६, ८; ३. ९९, ६८ (इसमें स्नान करने से परशुराम को उनका तेज पुनः प्राप्त हो गया)।

वध्या = ब्रह्मवध्या (मूर्तिमान) : १२. २८२, १७।

वध्र (बहु०) एक स्थान के निवासियों का द्योतक है : ६. ९, ५५।

वध्र्यश्व, एक प्राचीन राजा का नाम है : २. ८, १२ (यम की सभा में)।

वनपर्व, महाभारत के तीसरे प्रमुख पर्व का नाम है।

१. वनमालिन् = बलराम : १. २२०, २०; ३. ११९, ४; ७. ११, ३१ (वनमाली हली रामस्तत्र यत्र जनार्दनः); ९. ४९, १७।

२. वनमालिन् = शिव (८. ३३, ५५)।

३. वनमालिन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

वनवासिक (बहु०) एक स्थान के निवासियों का नाम है (६. ९, ५८)।

वनस्पति = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

१. वनायु, एक असुर का नाम है जो दनु के पुत्रों में से एक था (१, ६५, ३०)।

२. वनायु, पुरूरवा द्वारा उर्वशी के गर्भ से उत्पन्न पुत्रों में से एक का नाम है (१. ७५, २५)।

३. वनायु, एक जनपद का नाम है (६. ९, ५६)।

वनायुज (वि०) : ६. ९, ४ (वनायुजानां...वाजिनाम्); ७. ३६, ३६; १२१, २७ (वनायुजान्...हयवरान्); ८. ७, ११; ८४, २२।

वनेयु, रौद्राश्व द्वारा मिश्रकेशी के गर्भ से उत्पन्न पाँचवे पुत्र का नाम

है (१. ९४, १०)।

वन्दना, एक नदी का नाम है (६. ९, १८)।

१. वन्दि, वन्दिन्, वरुण-पुत्र एक सूत का नाम है : १. २, १७५; ३. १३२, ४. ५. १५; १३३, ५. १३. १४. १८-२२. ३०; १३४, १. २. ६-८. १०. १२. १४. १६. १८. २०. २३. २४. २९. ३०. ३१. ३७ (यह अनेक ब्राह्मणों को शास्त्रार्थ में पराजित करके उन्हें जल में डुबो देता था, किन्तु अन्त में अष्टावक्र ने इसे पराजित कर दिया। तब राजा जनक ने इसे भी जल में डुबा देने की आज्ञा दी। इस आज्ञा को सुनकर इसने कहा : 'मैं वरुण का पुत्र हूँ अतः जल में डुबाये जाने से मुझे कोई भय नहीं है।' इसके इस कथन के बाद जल में डुबाये गये सभी ब्राह्मण जीवित ही प्रकट हो गये। वे सभी ब्राह्मण वरुण द्वारा पूजित होकर अधिक तेजस्वी रूपसे प्रकट हुये थे। तब राजा की आज्ञा लेकर यह स्वयं ही जल में समा गया)। तुकी० सौति।

२. वन्दिन् से सूतों का तात्पर्य है : १. ७४, १२०; ७८, ९; २२३, ६२; ५. १९५, १८; ६. ८६, ५५; ७. ७, ८; ७२, ४१; ७८, ८; ८. १, १३; १०, ४९; ३२, ४९; ३४, ६०; ९. ६१, १५; ११. १६, ३२. ४१; २३, ३३; १२. ३७, ३३; ५९, ११२; १३. ४८, १२; ५३, ६६; ११८, १६; १४. १५, ३१; ६४, २; ७०, १९; १५. २३, ७।

वपु, एक अप्सरा का नाम है : १. १२३, ६३ (अर्जुन के जन्मोत्सव में नृत्य किया)।

वपुष्टमा, जनमेजय पारिक्षित की पत्नी का नाम है : १. ४४, ८ (काशिराज सुवर्णवर्मा की पुत्री). ९ (जनमेजय के साथ विवाह हुआ). ११; ९५, ८६ (जनमेजय से यह शतानीक और शंकुकर्ण की माता बनी)।

वपुष्मती, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ११)

वपुस् = शिव (सहस्रनाम)।

वर = शिव : १२. २८४, ९९ (सहस्रनाम); १३. १७, ३१ (सहस्रनाम). ३८. ९७. १३८. १३९; १४. ८, १८. ३१।

१. वरद (वि० विभिन्न देवों के लिये प्रयुक्त) = शिव (सहस्रनाम)। = इन्द्र : १२. ३४२, ४८। = सूर्य : ३. ३, २४। = विष्णु (सहस्रनाम)। = उमा : ६. २४, १९।

२. वरद, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६४)।

वरदा, एक नदी का नाम है (३. ८५, ३५)।

वरदान, एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, ६३. ६४)।

वरप्रद = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

वरमाल्यगन्धवस्त्र = शिव (सहस्रनाम)।

वरयु, महौजावंशी एक कुलाङ्गार राजा का नाम है (५. ७४, १५)।

वरवर्णिनी = दुर्गा (उमा) : ६. २३, ५।

वरा, एक नदी का नाम है (६. ९, २६)।

वराङ्ग = विष्णु (सहस्रनाम)।

वराङ्गी, सोमवंशी राजा संयाति की पत्नी का नाम है : १. ९५, १४ (इसके पिता का नाम दृषद्वान् था)।

वराणसी, एक नदी का नाम है (६. ९, ३१)।

वरातिवरदा = शिव (सहस्रनाम)।

वरारोह = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. वराह एक प्राचीन मुनि का नाम है (२. ४, १७)।

२. वराह मगध की राजधानी गिरिव्रज के समीप स्थित एक पर्वत का नाम है (२. २१, २)।

३. वराह, एक असुर का नाम है : १२. २२७, ५२। यहाँ वराहाश्व पाठ है।

४. वराह, भगवान विष्णु के एक अवतार का नाम है : १. २१, १२ (वराहरूपिणा); ३. १४२, २९ (वाराहेणैकशृङ्गिणा). ४५ (वराहावतार की कथा का वर्णन); ३१०, २८; ६. ६७, १७; १२. ४३, ८; ४७, ४७ (यज्ञाङ्गो यो वराहो); २०९, २४. १८; ३४०, १०६; ३४७, २ (महावराह); १३. १२६, ४. ९; १४७, ५२।

५. वराह = शिव (सहस्रनाम)।

वराहक, धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग का नाम है जो जनमेजय के सर्पसत्र में जल गया था (१. ५७, १८)।

वराहकर्ण, एक यक्ष का नाम है (२. १०, १६)।

वराहध्वज = जयद्रथ : ७. १४६, ५६। तुकी० ६. ९२, ३९।

वराहावतार — "युधिष्ठिर के पूछने पर लोमशजी ने बताया : कृतयुग में एक समय अत्यन्त भयंकर परिस्थिति उत्पन्न हो गई थी। उस समय आदिदेव पुरातन पुरुष श्रीहरि ही यमराज का कार्य भी कर रहे थे। तब किसी भी प्राणी की मृत्यु नहीं होती थी परन्तु उत्पत्ति का कार्य पूर्ववत् चलता था। फलस्वरूप प्राणियों की वृद्धि होने से पृथिवी सैकड़ों योजन नीचे चली गई। पृथिवी देवी के सम्पूर्ण अङ्गों में पीड़ा हो रही थी और उनकी चेतना भी लुप्त होती जा रही थी। तब वे भगवान् नारायण की शरण में गईं। नारायण ने पृथिवी का भार हलका करने का आश्वासन देकर वराहरूप धारण कर लिया। उस समय उनके एक ही दाँत था। वाराहरूपी विष्णु ने अपने एक ही दाँत से पृथिवी को सौ योजन ऊपर उठा दिया। पृथिवी का उद्धार करते समय ही सब लोकों में हलचल मच गई। सम्पूर्ण देवता तथा ऋषि क्षुब्ध हो कर ब्रह्मा की शरण में आये। तब ब्रह्माजी ने उन लोगों को हलचल का कारण समझाते हुये नन्दन वन में भगवान् नारायण के पास जाने के लिये कहा। तदनन्तर देवताओं ने नन्दन वन जाकर वाराहरूपधारी विष्णु का दर्शन किया। (३. १४२, ३३-६३)।"

वराहाश्व, एक दानव का नाम है (१२. २२७, ५२)।

वरिताक्ष — देखिये वरीताक्ष।

वरिन् , एक सनातन विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३३)।

१. वरिष्ठ = श्रीकृष्ण (१२. ४३, ९)।

२. वरिष्ठ, चाक्षुष मनु के पुत्र का नाम है (१३. १८, २०)।

वरीताक्ष, एक असुर का नाम है जो पूर्वकाल में पृथिवी का शासक था (१२. २२७, ५२)।

१. वरुण, जलदेवता और एक लोकपाल का नाम है जो अपने हाथ में पाश धारण करते हैं : १. २, १७५ (वन्दिन इनका पुत्र था); ५, ८; २१, ६ (सर्वरत्नानामालयं वरुणस्य च); २२, ८; ३९, ३ (इनके निवासस्थान सागर का मन्थन किया गया); ५५, १ (वरुणस्य यज्ञः). ११ (जनमेजय की इनसे तुलना की गई); ६५, १५ (ये आदित्यों में पाँचवे हैं); ६६, ५२ (शुक्र की पुत्री देवी के पति और बल तथा सुरा के पिता); ७४, ८५; ८२, १२; ९९, ५ (वसिष्ठ के पिता); १०५, ४१ (मित्रावरुणयोः समान्); १२३, ६६ (अर्जुन के जन्मोत्सव में सम्मिलित); १८०, २१ (वरुणालये, और्व ने अपनी क्रोधाग्नि को इसमें फेंका); १९७, ३; २२५, १ (वरुणं लोकपालम् : ये अदिति के पुत्र, जलेश्वर और जल में निवास करनेवाले हैं). ६. २८ (इन्होंने अर्जुन को गाण्डीव धनुष, दो अक्षय तरकस, तथा अश्वों से युक्त रथ प्रदान किया); २२७, ३२ (अर्जुन और श्रीकृष्ण से युद्ध करनेवाले देवताओं में ये भी थे और हाथ में पाश तथा अशनि धारण किये हुये थे); २३२, १८ (इदं वै सप्त तिग्मांशो वरुणस्य परायणम्); २. ६, ११ (सभां'''वरुणस्य); ८, ४१ (इनकी सभा); ९, १. ५. ६ (वरुणो वारुण्या च समन्वितः). ७ (वरुणं जलेश्वरम्). ११. १७ (धर्मपाशधरं). २७ (इनकी सभा का वर्णन); ११, ५१; १२, २; १४, १४; ३२, २० (ये पश्चिम दिशा के पालक हैं); ३५, १६; ४९, ३५; ३. ३६. ३२; ४०, १६ (ये ब्रह्मशिरस् नहीं जानते); ४१, ६. २७. २८ (तारकासुर के साथ युद्ध में इन्होंने सहस्रों दैत्यों को अपने पाश में बाँध लिया था). ३३ (अपना पाश अर्जुन को दिया); ४५, १२; ५५, ६. २३; ५६, १२; ८४, १३५; ८५, ४९; ९०, १५ (विशाखयूप में तपस्या की); ९१, १३ (अर्जुन ने इनसे शस्त्र प्राप्त किये थे); १०१, २३ (दानवों ने इनके स्थान, अर्थात सागर में शरण लिया); १०३, ८; १०५, २ (अगस्त्य ने सागर का पान कर लिया); १०७, ६३; १०९, १८; ११५, २७ (इन्होंने ऋचीक

को १,००० अश्व दिये); १२५, २३; १३४, २४. २५. ३०-३२ (इनके पुत्र बन्दी ने ब्राह्मणों को शास्त्रार्थ में पराजित कर उन्हें जल में डुबा दिया जिससे वे सभी ब्राह्मण वरुण के यज्ञ को सम्पन्न करायें); १३९, २४; १६३, ११; १६०, १४ (लोकपालों में से एक). २९; १९२,४८ (मा त्वा वधीद्वरुणो घोरपाशैः); २०१, १८ (विष्णु की स्तुति करते हैं); २२४, १३; २३१, ३८; २३३, ५६; २६५, ३; २८२, ४४; २८३, ३८; २९१, १८. २९; ३०८, १२; ४. ४३, ६ (इन्होंने १०० वर्षों तक गाण्डीव धारण किया था). ७ (अर्जुन को गाण्डीव धनुष दिया); ४५, ४०; ५६, ११; ६१, ३१; ५. १६, २७. ३४ (इन्द्र ने इन्हें जल का स्वामी बनाया); १८, २; ९८, १. ८. १०. ११; १००, ४; १०८, १२; ११०, १. ३. ४. १७; ११७, ९; ११९, ६; १२८, ४५-४७ (धर्म ने दैत्यों और दानवों को बाँध कर इन्हें दे दिया और तब से ये दैत्यों-दानवों को सागर के गर्भ में रखते हैं); १३०, ४९ (इन्हें श्रीकृष्ण पराजित कर चुके थे); १५८, ३२; १६२; २६ (सागरो वरुणालयः); ६. ३४, २९; ३५, ३९ (श्रीकृष्ण को इनके साथ समीकृत किया गया है); ५०, ७; ८३, ४१; १०७, १७. ७४; ११२, ४१; ७. १०, ४१; ११, १९ (समुद्र में श्रीकृष्ण ने इन्हें पराजित किया था); ७२, ४५; ७६, १३; ८८, १६; ९२, ४४-४६. ४९ (इन्होंने श्रुतायुध को एक गदा दी और उसके संचालन की विधि बताया). ५८; १२७; १; १५५, ४५; १८०, १६; २०२, १०३. १३७; ८. ३७, ३१; ४२, ३६; ४५, ३२ (प्रतीचीं वरुणः पाति पालयानः सुरान्बली); ४६, ३९. ७६; ८७, ४९ (अर्जुन का पक्ष लिया); ९. ४५, ५. २२. ४६ (इन्होंने स्कन्द को दो अनुचर प्रदान किये); ४६, ५३ (स्कन्द को एक नाग दिया). १०५; ४७, ६. ९-११ (कृतयुग में सम्पूर्ण देवताओं ने इनके पास आकर कहा : 'जैसे इन्द्र हम लोगों की रक्षा करते हैं उसी प्रकार आप भी समस्त सरिताओं के अधिपति हो कर हमारी रक्षा कीजिये। मकरालय समुद्र में आपका सदा निवासस्थान होगा और नदीपति समुद्र सदा आपके वश में रहेगा। चन्द्रमा के साथ आपकी भी हानि और वृद्धि होगी।' तब वरुण ने देवताओं की बात स्वीकार कर लिया। तदनन्तर सब देवताओं ने एकत्र होकर इन्हें शास्त्रीय विधि से जल का राजा बनाया। इस प्रकार जन्तुओं के स्वामी जलेश्वर वरुण का अभिषेक करके सम्पूर्ण देवता अपने-अपने स्थानों को चले गये। देवताओं द्वारा अभिषिक्त वरुण देवताओं के रक्षक इन्द्र के समान सरिताओं, सागरों, नदों, और सरोवरों का विधिपूर्वक पालन करने लगे); ४९, १२ (पुत्रोऽदितेः). १३ (यमुना तीर्थ में एक राजसूय यज्ञ किया); ५०, ३९; ५४, १४; ५५, २९; १२. ५, १३; १५, १६; २९, १९ (मरुत्त के यज्ञ में आये); ७८, ६ (वरुणो मेषः); ९१, ५६; १२२, २९. ४३; १५५, १०; २०७, ३६ (यदासामसृजन्नार्थं वरुणं च जलेश्वरम्); २०८, १५. २९; २२३, ५ (बलि को इनके साथ समीकृत किया गया है); २६२, ४१ (वरुणो मेषः); २८०, २८; २८४, ३८; ३००, ५९; ३१८, २८. ३९; १३. ४, १३. १५; १४, ४०८ (शिव को इनके साथ समीकृत किया गया है); १६, २२; १८, ७१; १९, ९१; ३१, ६; ६२, ४८; ८१, ३१; ८४, ४७; ८५, ९५. ९८ (शिव ने इनका रूप धारण करके एक यज्ञ किया). ११६. ११८. १२३. १३६; ८६, २५ (स्कन्द को उपहार दिये); ९१, २३. २६; ९६, ९; ९७, ११ (इनके लिये पश्चिम दिशा में बलि देना चाहिये); १०२, ३५; १४६, ५; १५०, १४. ३५. ३७; १५४, १३. १७. २०-२२. ३० (इन्होंने सोम की पुत्री और उतथ्य की भार्या का अपहरण किया किन्तु उसे पुनः लौटा देने के लिये विवश हुये); १६०, ४०; १६५, ११. ४०; १४. ८, ४ (मुञ्जवत् पर शिव की उपासना करते हैं); ४२, ६५; ४३, ७; ६०, १५; १६. ४, १६ (बलराम के शरीर से निकलनेवाले नाग का सागर में स्वागत किया); १७. १, ४१ (गाण्डीव इन्हीं का था और इन्हें ही लौटा दिया गया); १८. ५, २९ (वरुणस्य लोकान्)।

तुकी० इनके निम्नलिखित पर्याय :

अदितेः पुत्रः – देखिये वस्था०।

अपां पतिः : १. १८, १०; ३. ५५, ४; ५८, ३८; ११४, २९; ११८, १२; ५. १६, ३१; ९८, ६; ९. ४६, १०५; ४७, ४. १०।

अम्बुप : ८. ९०, ३५।

अम्बुपति : ७. ८४, २१; १५५, ३६; ८. ३४, ३२।

उदकपति – देखिये वस्था०।

गोपति – देखिये वस्था०।

जलाधिप : १३. १५४, ३१।

जलेश्वर : १. २२५, २. ३; २. ९, ७; ३. ४१, ५. २८; ५. १२८, ४७; ९२, ५०; १८०, १६; १८५, २५; ९. ४५, २२; ४७, ११; १२. १५५, १०; २०७, ३६; १३. १५०, १४; १५४, १४. १६. १९।

देवदेव – देखिये वस्था०।

यादसां पति : ९. ४७, १०; १३. ८५, १२३।

यादसां भर्ता : ३. ४१, ६।

लोकपाल – देखिये वस्था०।

वारिप – देखिये वस्था०।

सलिलराज, सलिलेश – देखिये वस्था०।

२. वरुण, मुनिपुत्र देवगन्धर्वों में से एक गन्धर्व का नाम है : १. ६५, ४२।

३. वरुण = सूर्य : ३. ३, १८।

४. वरुण = विष्णु (सहस्रनाम)।

वरुणलोक – "गौतम ने कहा कि सूर्यलोक के बाद वरुण के लोक अत्यन्त प्रकाशित हैं। वहाँ पवित्र गन्ध व्याप्त रहती है। वहाँ न तो रजोगुण है और न शोक ही। धृतराष्ट्र ने कहा : जो लोग सदा चातुर्मास्य याग करते हैं, सहस्रों इष्टियों का अनुष्ठान करते हैं; तथा जो ब्राह्मण तीन वर्षों तक वैदिक विधि के अनुसार प्रतिदिन श्रद्धापूर्वक अग्निहोत्र करते हैं, धर्म का भार अच्छी तरह वहन करते हैं, वेदोक्त मार्गपर भली-भाँति स्थित होते हैं, वे ही धर्मात्मा महात्मा ब्राह्मण वरुणलोक में जाते हैं (१३. १०२, ३५-३७)।

वरुणस्रोतस, दक्षिण के एक पर्वत का नाम है : ३. ८८ १०।

वरुणसभावर्णनम् – 'वरुण की सभा का विश्वकर्मा ने जल के भीतर रहकर निर्माण किया है। वह फल-फूल देनेवाले दिव्य रत्नमय वृक्षों से शोभित है। उसका रंग श्वेत है और उसमें दिव्य रत्नों तथा वस्त्रों को धारण करनेवाले वरुण देव वारुणी देवी के साथ विराजमान होते हैं। उस सभा में दिव्यहार और अङ्गराग धारण करनेवाले आदित्यगण वरुण की उपासना करते हैं। नाग, दैत्य, दानव, चारों समुद, नदियाँ, सरोवर आदि सभी मूर्तिमान होकर वरुण की उपासना करते हैं। सभी गन्धर्व और अप्सराओं के समुदाय भी गीत गाते हुये वहाँ वरुण की सेवा में उपस्थित रहते हैं। वरुण का मन्त्री सुनाभ अपने पुत्र-पौत्रों से घिरा हुआ गौ तथा पुष्कर नामवाले तीर्थ के साथ वरुणदेव की उपासना करता है। (२. ९)।

वरुणास्त्र, वरुण के अस्त्र का द्योतक है : १. १३२, १८; ७. १४५, ९१; २००, २. १२। तुकी० वारुण (वि०)।

वरूथिनी, एक अप्सरा का नाम है : ३. ४३, २९)।

१. वरेण्य = शिव (सहस्रनाम)।

२. वरेण्य प्रजापति भृगु के सात व्यापक पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ८५, १२९)। तुकी० विभु।

वर्गा, एक अप्सरा का नाम है : १. २१६, १५. १६; २१७, १. १२ (मुनिशाप से यह मकर हो गई थी किन्तु अर्जुन ने इसका उद्धार किया); २. १०, १२ (कुबेर की सभा में)।

१. वर्चस्, सोम के पुत्र का नाम है : १. ६६, २२; ६७, ११२ (यह अभिमन्यु के रूप में अवतरित हुआ). ११५; १८. ५, १८। तुकी० सोमपुत्र।

२. वर्चस् = सुवर्चस् : ३. २२०, ९।

३. वर्चस्, सुचेता नामक ब्राह्मण के पुत्र जो विहव्य के पिता थे (१३. ३०, ६१)।

१. वर्चस्विन्, वर्चा (१) के पुत्र का नाम है: १. ६६, २२।

२. वर्चस्विन् = शिव (सहस्रनाम)।

वर्णकर = शिव (सहस्रनाम)।

वर्णधर = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

वर्णवराः = शिव (सहस्रनाम)।

वर्णविभाविन् = शिव (सहस्रनाम)।

वर्णात्मन् = श्रीकृष्ण : १२. ४७, ६७।

वर्णाश्रमाणां विधिवत्पृथक्कर्मणिवर्ती = शिव (सहस्रनाम)।

वर्धकिन् = शिव (सहस्रनाम)।

१. वर्धन स्कन्द के एक पार्षद का नाम है : ९. ४५, ३८ (इसे अश्विनीकुमारों ने दिया था)।

२. वर्धन = शिव (सहस्रनाम)।

३. वर्धन = विष्णु (सहस्रनाम)।

वर्धमानद्वार, हस्तिनापुर नगर के प्रधान द्वार का नाम है (१५. १६, ३)।

वर्धमानपुरद्वार, हस्तिनापुर नगर के द्वार का नाम है : १. १२६, ९; ३. १, १०।

वर्मक (बहु० °काः) पूर्व की एक जाति का नाम है जिसे भीमसेन ने जीता था (२. ३०, १३)।

वल्कल (बहु० °लाः) एक जाति के लोगों का नाम है : ६. ९, ६२।

वल्कलाजिनधारिन्, वल्कलाजिनवासस् = शिव (सहस्रनाम)।

वल्गुजंघ, विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ४, ५२)।

१. वल्लभ, बलाकाश्व के पुत्र, एक प्राचीन राजा का नाम है जो कुशिक का पिता था (१३. ४, ५)।

२. वल्लभ (बहु० °भाः) एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ६२)।

वल्लयः (बहु०) = शिव (सहस्रनाम)।

वशकर = शिव (सहस्रनाम)।

वशवर्तिन् = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

वशातल (बहु० °लाः) एक जाति के लोगों का नाम है (२. ५२, १५)।

वशाति, वशातिक, वशातीय — देखिये वसा°।

वशीकर = शिव (सहस्रनाम)।

वश्य = शिव (सहस्रनाम)।

१. वषट्कार (यज्ञ के समय उच्चरित एक शब्द : १. ७, १३; ८. ३४, ३५. ४६; १०. १८, ७; १२. ३०३, २८; १३. १४०, २७; १४५, ६३) = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

२. वषट्कार = विष्णु (सहस्रनाम)।

वसन्त, मूर्तिमान वसन्त ऋतु का द्योतक है : ३. २८१, ४।

वसा, एक नदी का नाम है (६. ९, ३१)।

१. वसाति, सोमवंशी महाराज कुरु के वंशज राजा जनमेजय के आठवें पुत्र का नाम है (१. ९४, ५७)।

२. वसाति, एक जाति का द्योतक है : २. ५२, १५; ५. ३०, २३; १९५, ७ (दुर्योधन की सेना में); ६. १८, १२; ५१, १४; ५९, ७६; १०६, ८; ११७, ३४; ७. २०, ११; ९१, ३८; ९३, २; १५०, ३४; १९२, ३३; ८. ५, ३७; ४४, ४७; ७३, १७।

वसातिक : ७, १५७, २९।

१. वसातीय, कौरव पक्षीय एक योद्धा का नाम है जिसका अभिमन्यु ने वध किया था (७. ४४, ८. ११)।

२. वसातीय : ७. ४९, ८।

वसात्य (बहु०) = वसाति (बहु०): ८. ५६, ७०।

१. वसिष्ठ एक ऋषि का नाम है जो मित्र-वरुण के पुत्र और सप्तर्षियों में से एक थे। इनकी पत्नी का नाम अरुन्धती था। ये शक्ति के पिता और पराशर के पितामह थे। कहीं इन्हें प्रजापति और ब्रह्मा का मानस पुत्र भी कहा गया है : १. ५५, १४; ६७, ७४; ७१, २९; ९४, ४२. ४५; ९६, १३. १४; ९८, १९ (वसिष्ठशापदोषेण मनुषत्वमुपागताः); ९९, ५ (वसिष्ठनामा स मुनिः ख्यात आपवः); १००, ३५ (भीष्म ने अङ्गों सहित वेद का ज्ञान इनसे प्राप्त किया था); १२२, २ (मदयन्ती जगामर्षिं वसिष्ठमिति'''तस्माल्लेभे च सा पुत्रमश्मकं नाम); १२३, ५१ (अर्जुन के जन्म के समय उपस्थित सात महर्षियों में ये भी थे); १७३, १३. १८. २१. २२. २६. २७. २९. ३१. ३२. ३४. ३६. ४४ (संवरण के पुरोहित थे। इन्होंने तपती का विवाह संवरण से करने के लिये सूर्य को प्रेरित किया); १७४, २. ३. ५ (ब्रह्मणो मानसः पुत्रो वसिष्ठोऽरुन्धतीपतिः). ६ (इन्द्रियाणां वशकरो वसिष्ठ इति चोच्यते). ११; १७५, १. ३. ७. ९. १७. २०. २३. २४. २६. २९. ३१. ३२ (इनके और विश्वामित्र के बीच शत्रुता); १७६, ६. १५. १७ (ऋषेः पुत्रं वसिष्ठस्य वसिष्ठमिव तेजसा). ४१-४३। "विश्वामित्र और वसिष्ठ में वैर था। उस समय विश्वामित्र राजा कल्माषपाद के पास आये। विश्वामित्र राजा को यजमान बनाना चाहते थे। एक बार कल्माषपाद एक ऐसे मार्ग से आ रहे थे जिस पर केवल एक ही व्यक्ति चल सकता था। उसी समय उसी मार्ग पर सामने से वसिष्ठ के सौ पुत्रों में सबसे ज्येष्ठ शक्ति आ गये। शक्ति को देख कर राजा ने उनसे मार्ग से हटने के लिये कहा। तब शक्ति ने राजा को समझाते हुये कहा कि मार्ग तो पहले ब्राह्मण को देना राजा का धर्म है। परन्तु राजा ने यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया। फलस्वरूप दोनों में विवाद होने लगा। तब राजा ने मोहवश शक्ति पर कोड़े से आघात कर दिया। उस आघात से त्रस्त शक्ति मुनि ने राजा को नरभक्षी राक्षस हो जाने का शाप दे दिया। जब दोनों के बीच विवाद चल ही रहा था तब विश्वामित्र राजा के समीप आये। राजा भी शक्ति को पहचान कर उनकी स्तुति करने लगे। उसी समय विश्वामित्र ने एक राक्षस को राजा के भीतर प्रवेश करने की आज्ञा दी। जब राक्षस ने राजा को आविष्ट कर लिया तब विश्वामित्र उस स्थान से चले गये। एक दिन राक्षस से आविष्ट राजा से एक भूखे ब्राह्मण ने मांस माँगा। राजा ने उस ब्राह्मण को थोड़ी देर ठहरने के लिये कहा और घर आये। उन्होंने अपने रसोइये से ब्राह्मण के पास नरमांस भेजा जिससे क्रुद्ध हो ब्राह्मण ने राजा को नरमांस-भक्षी होने का शाप दे दिया। तदनन्तर राजा ने वसिष्ठ के सभी पुत्रों का भक्षण कर लिया। इससे दुखी वसिष्ठ ने अपने शरीर का त्याग कर देने का विचार किया। उन्होंने मेरु पर्वत के शिखर से अपने को एक शिला पर गिराया परन्तु उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ जैसे वे रूई के ढेर पर गिरे हों। तब वसिष्ठ वन में जाकर दावानल में प्रविष्ट हो गये किन्तु वहाँ भी अग्नि उनके लिये शीतल हो गई। इस प्रकार भी जब वसिष्ठ को मृत्यु प्राप्त नहीं हुई तब वे अपने गले में एक शिला बाँधकर समुद्र में कूद पड़े परन्तु इस बार भी सागर की लहरों ने उन्हें किनारे पर ला दिया। (१. १७६)।" "वसिष्ठ जी पुनः आत्महत्या के लिये चल पड़े। उन्होंने अनेक प्रयास किये किन्तु हर बार बच गये। एक बार जब वे पुनः चले तब उनकी पुत्रवधू भी उनके पीछे चल पड़ी। वसिष्ठ को उस समय पीछे की ओर से संगतिपूर्वक छहों अंगों से अलंकृत तथा स्फुट अर्थों से युक्त वेदपाठ का शब्द सुन पड़ा। जब वसिष्ठ ने अपनी पुत्रवधू से पूछा तब उसने बताया कि वह ध्वनि उसके उदर से निकल रही है। तब वसिष्ठ, यह सोचकर कि उनकी वंशपरम्परा लुप्त नहीं हुई है, अपने आत्महत्या के निश्चय से विरत हो गये। तदनन्तर वसिष्ठ ने कल्माषपाद के शाप का भी विमोचन करके रानी मदयन्ती को एक अश्मक नामक पुत्र प्रदान किया (१. १७७)।" १. १७७, १४. १६. १९. २३. २५. २७. ३१. ३५. ३६. ३८. ४३. ४४; १७८, ३ (पराशर के पितामह). ४. ५. ११; १७९, ७; १८०, २१ (इन्होंने पराशर को और्व की कथा सुनाया); १८१, १. ४. ७. १८. १९. २१; १८२,

२. ४. २०. २३. २६ (एक शाप से ग्रस्त कल्माषपाद की रानी से इन्होंने एक पुत्र उत्पन्न किया); १९९, ६; २१५, २; २३३, २८ (इनकी पत्नी अरुन्धती इनसे ईर्ष्या करने लगीं); २. ११, १९ (ब्रह्मा की सभा में प्रजापतियों के साथ उपस्थित); ३. ३१, १२; ६४, ६२; ८२, ५६; ८३, १७९ (बादरीपाचन में इनका आश्रम); ८४, १४०; ८५, १२०; १०२, ३; ११३, २३; १३०, ९ (वै पुत्रशोकेन वसिष्ठो…निपतितो विपाशः पुनरुत्थितः). १७ (उज्जानक में शान्ति प्राप्त की); १६३, १५ (सप्त देवर्षयस्तात वसिष्ठप्रमुखास्तथा); २२४, २६; २७७, ३७; २९१, ६६ (इन्होंने रामदाशरथि का अभिषेक सम्पन्न कराया); ५. ८३, २७; १०६, ८ (धर्म ने इनका रूप धारण किया); १०८, १३ (अत्र पूर्वं वसिष्ठस्य पौराणस्य द्विजर्षभ । सुतिश्चैव प्रतिष्ठा च निधनं च प्रकाशते); ११७, ११; ६. २, ३१ (सप्तर्षि तारापुञ्ज में एक ये भी हैं); ७. ६, ६; ९४, ४५; १९०, ३३; ९. ३८, २७ (कुरु के लिये कुरुक्षेत्र में एक यज्ञ किया); ४०, १८. १९. २०; ४२, १. ३. ४. ८-१०. १२. १७. १९-२१. २३. २४. २६. ३५-३७ (विश्वामित्र ने इन्हें लाने के लिये सरस्वतीको आदेश दिया जिससे वे इनका वध कर सकें); ४८, ६. ७ (इन्द्र ने इनका रूप धारण किया); १२. ३७, ११ (ये भीष्म के गुरु थे); ४६, १६; ४७, ७ (भीष्म को घेरकर खड़े ऋषियों में ये भी थे); ७४, ७ (मुचुकुन्द के पुरोहित); १२२, ३१; १६६, १६ (ब्रह्मा के मानस पुत्रों में एक). २३; २०८, ४ (ब्रह्मा के सात पुत्रों में सातवें). ३२ (उत्तर के ऋषियों में द्वितीय); २३४, १७ (रन्तिदेव ने इन्हें उष्ण जल दिया). २७ (अवर्षति च पर्जन्ये सर्वभूतानि भूतकृत । वसिष्ठो जीवयामास प्रजातिरिव प्रजाः). ३० (भित्रसह कल्माषपाद ने अपनी पत्नी को इनके पास भेजा); २८१, २१ (रथन्तर सामन् से इन्होंने इन्द्र की मूर्च्छा दूर की). २२. २७. ३२; २९२, १६; २९६, १७ (चार मूल गोत्रों में से एक के प्रवर्तक); ३०२, ७. ८. १३; ३०३, १; ३२४, १; ३०५, ११; ३०६, ६; ३०७, १; ३०८, १ (इनका और करालजनक का संवाद). ४५ (इन्होंने हिरण्यगर्भ से श्रेयस्कर ज्ञान प्राप्त करके उसका नारद को उपदेश दिया); ३३४, ३६ (इक्कीस प्रजापतियों में से एक); ३३५, ३० (चित्रशिखण्डी नामक सप्तर्षियों में से एक); ३४०, ३४ (अष्ट प्रकृतियों में से एक). ६९ (ब्रह्मा के मानस पुत्र); ३४२, ३१ (हिरण्यकशिपु को शाप दिया); ३४९, ६. ४९. ५९; १३. ३, ३. १२. १३; ६, २. ३ (वसिष्ठ और ब्रह्मा का संवाद); १४, ३२०. ३९७; २४, ३; २६, ४ भीष्म को देखने आये); ७८, १ (सुदास के पुरोहित); ७९, १; ८०, १ (सुदास को दानधर्म का उपदेश दिया); ८४, ३८. ४४; ८५, ८७. १६६; ८६, ३४ (तारकावधोपाख्यान सुनाया); ९२, २०; ९३, २१. ४३. ६५. ८८ (वसिष्ठोऽस्मि वरिष्ठोऽस्मि वसे वासगृहेष्वपि । वसिष्ठत्वाच्च वासाच्च वसिष्ठ इति विद्धि माम्). ११८; ९४, ४. १७; १०६, ६९; १२६, ४२. ४३; १३०, २; १३७, ६. १३. १५; १५०, १०. ३८ (उत्तर के धनेश्वर गुरुओं में से एक). ७९. ८१ ।" "भीष्म ने कहा : एक समय देवताओं ने वसिष्ठ मुनि के गौरव को जानकर मन-ही-मन उनकी शरण ली और मानसरोवर के तट पर यज्ञ आरम्भ किया । यज्ञ की दीक्षा लेकर दुबले हो रहे देवताओं को देखकर 'खली' नामक दानवों ने उन सब को मार डालने का विचार किया । फलस्वरूप दोनों दलों में संघर्ष आरम्भ हो गया । उनके समीप ही मानसरोवर था जिसके लिये ब्रह्माजी के द्वारा दैत्यों को यह वरदान प्राप्त था कि उसमें डुबकी लगाने से उन्हें नूतन जीवन प्राप्त हो जायगा । अतः उस समय दानवों में जो हताहत होते थे उन्हें अन्य दानव मानसरोवर में फेंक देते थे और उसके जल में डुबकी लगाते ही वे जीवित हो उठते थे । उन दानवों की संख्या १०,००० थी । उन सब ने जब देवताओं को बहुत पीड़ित किया तब वे लोग इन्द्र की शरण में गये । इन्द्र को भी उन दानवों से युद्ध करते हुये महान क्लेश उठाना पड़ा अतः वे वसिष्ठ की शरण में गये । तब वसिष्ठ ने देवताओं को अभय दान दे दिया और बिना किसी प्रयत्न के ही अपने तेज से समस्त खली दानवों को दग्ध कर डाला । इतना ही नहीं वे मुनि कैलास की ओर प्रस्थित हुई गङ्गा नदी को उस दिव्य सरोवर में ले आये । उसमें आते ही गङ्गा ने उस सरोवर का बाँध तोड़ डाला । गङ्गा से उस सरोवर का भेदन होने पर जो जलस्रोत निकला वही सरयू नदी के नाम से प्रसिद्ध है । जिस स्थान पर वे खली नामक दानव मारे गये थे वह खलिन् नाम से विख्यात हुआ । इस प्रकार वसिष्ठ ने इन्द्र सहित देवताओं की रक्षा की और ब्रह्मा के वर से वर्द्धित दानवों तक का संहार कर डाला (१३. १५५) ।" १३. १५५, १५. १६. २५. २६; १५८, १९ (स कुम्भे रेतः ससृजे सुराणां यत्रोत्पन्नमृषिमाहुर्वसिष्ठं); १६५, ४४ (उत्तर के ऋषियों में से एक); १४. ११, १९ (रथन्तर साम से इन्द्र की मूर्च्छा दूर की); २७, १८; ३५, २६ ।

तुकी० इनके निम्नलिखित पर्याय :
अरुन्धतीपति : १. १७४, ५ ।
आपव – देखिये वस्था० ।
देवर्षि, ब्रह्मर्षि – देखिये वस्था० ।
मैत्रावारुणी – देखिये वस्था० ।
वारुणि – देखिये वस्था० ।
हैरण्यगर्भ : १२. ३४२, ३१ ।

वसिष्ठापवाह, एक तीर्थ का नाम है ; ९. ४१, ४० । "वैशम्पायन जी ने बताया : तपस्या में प्रतिस्पर्धा के कारण विश्वामित्र और वसिष्ठ में अत्यधिक वैर होगया । सरस्वतीके पूर्वतट पर स्थाणुतीर्थ में वसिष्ठ का विशाल आश्रम था और पश्चिम तट पर विश्वामित्र का आश्रम स्थित था । इसी स्थाणुतीर्थ में स्कन्द का देव सेनापति के पद पर अभिषेक किया गया था । वहाँ विश्वामित्र ने अपनी उग्र तपस्या से वसिष्ठ मुनि को विचलित कर दिया । विश्वामित्र और वसिष्ठ दोनों तपस्या के धनी थे और प्रतिदिन प्रतिस्पर्धा के साथ कठोर तप किया करते थे । विश्वामित्र को ही अधिक संताप होता था क्योंकि वसिष्ठ के तेज से उन्हें चिंता होती थी । एक दिन विश्वामित्र के मन में यह विचार उठा कि सरस्वती नदी वसिष्ठ को अपने जल के वेग से तत्काल उनके निकट ला सकती है और वे इस प्रकार वसिष्ठ का वध करने में सफल हो सकते हैं । यह विचार आते ही उन्होंने सरस्वती को बुलाकर कहा : 'वसिष्ठ को शीघ्र यहाँ बहाकर ले आओ जिससे मैं आज ही उनका वध कर डालूँ ।' यह सुनकर सरस्वती नदी व्यथित हो उठी । उसने भयभीत होकर वसिष्ठ के पास जाकर विश्वामित्र की बात बताया । तब वसिष्ठ ने सरस्वती को उदास और चिन्तित देखकर उससे कहा 'तुम शीघ्र गति से प्रवाहित होकर मुझे बहा ले चलो और इस प्रकार विश्वामित्र के शाप से अपनी रक्षा करो ।' सरस्वती के मन में तब यह विचार उठा कि 'वसिष्ठ ने मुझ पर बहुत दया की है । अतः मुझे उनके हित में कार्य करना चाहिये ।' तदनन्तर विश्वामित्र को अपने तट पर जप और होम करते देख सरस्वती ने इसे उपयुक्त अवसर माना तथा प्रचण्ड वेग से पूर्वी तट को तोड़ते हुये प्रवाहित होना आरम्भ किया । तट के टूटने से वसिष्ठ जी भी नदी में बहने लगे । बहते समय वसिष्ठ ने सरस्वती की स्तुति की । महर्षि के मुख से इस प्रकार स्तुति सुनती हुई सरस्वती ने अपने वेग से विश्वामित्र के आश्रम पर पहुँचा दिया और विश्वामित्र से कहा कि 'वसिष्ठ उपस्थित हैं ।' वसिष्ठ को देखकर कुपित हुये विश्वामित्र उनके वध के लिये कोई शस्त्र खोजने लगे । तब सरस्वती नदी ब्रह्महत्या के भय से दोनों मुनियों की आज्ञा का पालन करते हुये विश्वामित्र के साथ छल करके वसिष्ठ को पुनः पूर्व दिशा की ओर बहा ले गई । वसिष्ठ को पुनः अपने से दूर बहाया गया देखकर विश्वामित्र ने सरस्वती को जल के स्थान पर रक्त बहाने का शाप दे दिया जो राक्षसों को अधिक प्रिय होगा । इस शाप के कारण सरस्वती नदी एक वर्ष तक रक्तमिश्रित जल बहाती रही । इससे ऋषि, देवता और गन्धर्व आदि अत्यन्त दुखी हो गये । इस प्रकार वह स्थान जगत में वसिष्ठापवाह के नाम से विख्यात हुआ । वसिष्ठ जी को बहाने के पश्चात सरस्वती पुनः अपने पूर्व मार्ग पर ही बहने लग गई । (९. ४२) ।

वसिष्ठोपाख्यान् – "अर्जुन ने गन्धर्वराज से पूछा : 'किस कारण राजा कल्माषपाद ने वसिष्ठ के साथ अपनी पत्नी का नियोग कराया, और

उत्तम धर्म के ज्ञाता महर्षि वसिष्ठ ने यह परस्त्रीगमन का पाप कैसे किया ?' गन्धर्व ने कहा : 'वसिष्ठपुत्र महात्मा शक्ति ने राजा कल्माषपाद को शाप दिया था। तब राजा शापग्रस्त हो अपनी पत्नी के साथ नगर के बाहर निकल गये और भयंकर जीवों से व्याप्त वनों में भ्रमण करने लगे। एक दिन भूख-प्यास से व्याकुल हो वे भोजन ढूँढ़ रहे थे। बहुत क्लेश उठाने के बाद उन्होंने देखा कि उस वन के एक निर्जन प्रदेश में एक ब्राह्मण ब्राह्मणी मैथुन के लिये एकत्र हुये हैं। वे अपनी इच्छा अभी पूर्ण भी नहीं कर पाये थे कि राक्षसाविष्ट कल्माषपाद को देखकर भय से वहाँ से भाग चले। उन भागते हुये दम्पत्ति में से ब्राह्मण को राजा ने बलपूर्वक पकड़ लिया। तब ब्राह्मणी बोली : 'राजन् आप का जन्म यद्यपि सूर्यवंश में हुआ है, तथापि इस समय आप शापग्रस्त हैं, फिरभी आपको पापकर्म नहीं करना चाहिये। मैं सन्तान की इच्छा से पति के पास आई थी और मेरी इच्छा अभी पूर्ण भी नहीं हुई थी कि आपने हमें भयभीत कर दिया। अतः आप मुझपर प्रसन्न हो कर मेरे पति को छोड़ दीजिये।' इस विनम्र निवेदन को सुनकर भी राक्षसाविष्ट राजा ने उस ब्राह्मण का भक्षण कर लिया। उस समय क्रोध से पीड़ित हुई ब्राह्मणी की आँखों से जो आँसुओं की बूँदें भूमि पर गिरीं वे सब प्रज्वलित अग्नि बन गईं और उस स्थान को जलाकर भस्म कर दिया। उस ब्राह्मणी ने कल्माषपाद को शाप दे दिया कि यदि वे अपनी पत्नी के साथ समागम करेंगे तो उनकी मृत्यु हो जायगी। उसने यह भी शाप दिया कि जिन मुनि वसिष्ठ के पुत्रों का राजा ने संहार किया है उन्हीं वसिष्ठ के साथ समागम करके राजा की पत्नी ऐसा पुत्र उत्पन्न करेगी जो राजा का वंश चलानेवाला होगा। इस प्रकार शाप देकर वह साध्वी आङ्गिरसी ब्राह्मणी राजा कल्माषपाद के समीप ही अग्नि में प्रवेश कर गई। वसिष्ठ जी अपनी तपस्या और ज्ञानयोग से ये सब बातें जानते थे। दीर्घकाल के बाद जब राजा शापमुक्त हुये तब भी ब्राह्मणी के शाप के कारण उन्होंने अपनी पत्नी का वसिष्ठ के साथ नियोग कराया। (१. १८२)।"

१. वसु चेदिराज का नाम है जिन्हें वसु उपरिचर भी कहते थे। इन्होंने इन्द्र के कहने से चेदिदेश का राज्य स्वीकार किया था। एक समय इन्होंने अस्त्र-शस्त्रों का त्याग करके आश्रम में निवास करते हुये तपस्या करना आरम्भ किया। उस समय इन्द्र आदि देवता, यह सोच कर कि ये तपस्या से इन्द्रपद प्राप्त करना चाहते हैं, इनके समीप आये और इन्हें दर्शन देकर शान्तिपूर्वक समझाया तथा तपस्या निवृत्त कर दिया। तब इन्द्र ने इन्हें चेदियों का राजा बनकर धर्मपूर्वक प्रजा पालन के लिये कहा और इन्हें स्फटिक मणि का बना हुआ एक दिव्य आकाशचारी विमान दिया। इन्द्र ने एक वैजयन्ती माला भी दिया जिसमें पिरोये कमल कभी कुम्हलाते नहीं थे। उस माला को धारण कर लेने पर संग्राम में भी वह अस्त्र-शस्त्रों के आघात से राजा की रक्षा करती थी। वह इन्द्रमाला के नाम से विख्यात हो कर इस जगत् में राजा की पहचान कराने के लिये परम धन्य चिह्न हो गई। इन्द्र ने इन्हें एक बाँस की छड़ी भी दी जो शिष्ट पुरुषों की रक्षा करने वाली थी। तदनन्तर एक वर्ष व्यतीत होने पर इन्होंने इन्द्र की पूजा के लिये उस छड़ी को भूमि में गाड़ दिया। तबसे लेकर आज तक श्रेष्ठ राजाओं द्वारा छड़ी धरती में गाड़ी जाती है। दूसरे दिन, अर्थात् नवीन संवत्सर के प्रथम दिन प्रतिपदा को उस छड़ी को ऊँचे स्थान पर रख कर कपड़े की पेटी, चन्दन, माला और आभूषणों से उसे सजाया जाता है। तत्पश्चात उस छड़ी पर देवेश्वर इन्द्र का हंसरूप से पूजन किया जाता है। इन्द्र ने वसु के प्रेमवश हंस का रूप धारण करके वह पूजा स्वयं ग्रहण की। इन्द्र ने सन्तुष्ट होकर कहा : 'जो मनुष्य वसु उपरिचर की भाँति मेरी पूजा करेंगे और मेरे उत्सव का आयोजन करेंगे उनको और उनके सम्पूर्ण राष्ट्र को लक्ष्मी और विजय की प्राप्ति होगी। इतना ही नहीं उनका सारा जनपद उत्तरोत्तर उन्नतिशील और प्रसन्न होगा।' (१. ६३, १-२५)।" "इन्द्र के द्वारा सम्मानित हो कर राजा वसु उपरिचर ने इस पृथिवी का धर्मपूर्वक पालन किया। उन्होंने अपने पुत्रों को विभिन्न राज्यों पर अभिषिक्त किया। इनमें से महारथी बृहद्रथ मगध देश का विख्यात राजा हुआ। वसु उपरिचर के दूसरे पुत्रों का नाम क्रमशः प्रत्यग्रह, कुशाम्ब (मणिवाहन के भी नाम से विख्यात), मावेल्ल और यदु था। इन सभी पुत्रों ने अपने अपने नाम से विभिन्न नगर और देश बसाये तथा पृथक्-पृथक् अपनी सनातन वंश परम्परायें चलाया। स्वयं चेदिराज वसु इन्द्र के दिये हुये स्फटिक मणिमय विमान में रहते हुये आकाश में ही निवास करते थे। उस समय इनकी सेवा में गन्धर्व और अप्सरायें रहती थीं। सदा ऊपर ही ऊपर चलने के कारण इनका नाम राजा उपरिचर के रूप में विख्यात हो गया। इनकी राजधानी के समीप शुक्तिमती नदी बहती थी। एक समय कोलाहल नामक सचेतन पर्वत ने कामवश उस दिव्यरूपिणी नदी को रोक लिया। यह देख कर वसु ने कोलाहल पर्वत पर अपने पैर से प्रहार किया जिससे उसमें एक दरार पड़ गई और उसी में हो कर वह नदी पूर्ववत् बहने लगी। उस पर्वत ने उस नदी के गर्भ से एक पुत्र और एक कन्या के रूप में दो यमज सन्तान उत्पन्न की थी। वसु से प्रसन्न हो कर उस नदी ने अपनी दोनों सन्तानें वसु को ही समर्पित कर दीं। उनमें से जो पुरुष था उसे वसु ने अपना सेनापति बना दिया और जो कन्या थी उसे उन्होंने अपनी पत्नी बना लिया। उस कन्या का नाम गिरिका था। एक समय गिरिकाने राजासे समागम की इच्छा प्रकट की किन्तु उस समय उन्हें पितरों की आज्ञा से हिंसक पशुओं का वध करने के लिये वन में जाना पड़ा। इस प्रकार शिकार करते हुये राजा चैत्ररथ नामक वन में गये। उस समय वसन्त ऋतु थी अतः वहाँ कामातुर राजा का वीर्य स्खलित हो गया। तब उन्होंने उस वीर्य को मन्त्रों द्वारा अभिमन्त्रित करके श्येन पक्षी द्वारा उसे अपनी रानी गिरिका के पास भेजा किन्तु मार्ग में एक दूसरे पक्षी से संघर्ष के कारण वह वीर्य नीचे यमुना नदी में गिर पड़ा। वहाँ अद्रिका नामक एक अप्सरा ब्रह्मा के शाप से मछली बन कर रहती थी। वसु के नदी में गिरे उस वीर्य को मत्स्यरूपिणि अद्रिका ने निगल लिया। तत्पश्चात दसवें महीने मछुवों ने उस मछली को पकड़ कर उसका पेट चीरकर उसमें से एक कन्या और एक पुरुष निकला। उन दोनों का नाम क्रमशः सत्यवती और मत्स्य पड़ा। जब वसु को यह आश्चर्यजनक समाचार मिला तब उन्होंने मत्स्य नामक पुरुष को ग्रहण कर लिया जो बाद में मत्स्य नामक धर्मात्मा राजा हुआ। सत्यवती के शरीर से मछली की गन्ध आती थी, अतः राजा ने उसे मछुओं को ही दे दिया। (१. ६३, २८-६८)।" १. ६३, १. २. २२. २३. २६. २८. २९. ३४. ३६. ३८. ३९. ५९; २. २४, २८ (वसु ने इन्द्र से जो विमान प्राप्त किया था वह उनसे बृहद्रथ को और फिर बृहद्रथ से जरासन्ध को मिला); १२. ३३५, ४७. ५०; ३३६, ३. ४. १७; ३३७, १. ६ ७. ९-११. १३. १५. १८. २९. ३३. ३६ (अपने सन्देह का समाधान करने का ब्रह्मर्षियों ने इनसे निवेदन किया। परन्तु इनके देवताओं का पक्ष लेकर भ्रामक निर्णय देने के कारण उन ब्रह्मर्षियों ने इन्हें आकाश से नीचे गिर कर पाताल में प्रवेश करने का शाप दे दिया। शाप के परिणामस्वरूप ये तत्काल भूमि में प्रविष्ट हो गये किन्तु नारायण की कृपा से इनकी स्मरणशक्ति नष्ट नहीं हुई। देवताओं ने इनका हित करने की दृष्टि से इनसे कहा : 'तुम जितने समय तक पृथिवी के विवर में रहोगे तब तक तुम्हें ब्राह्मणों द्वारा दी हुई वसुधारा की आहुति प्राप्त होगी और भगवान श्रीहरि प्रसन्न हो तुम्हें ब्रह्मलोक ले जायेंगे।' तब इन्होंने भगवान् नारायण को प्रसन्न करके ब्रह्मलोक प्राप्त किया); १३. ६, ३४ (वसुर्यशतैरिष्ट्वा द्वितीय इव वासवः। मिथ्याभिधानेनैकेन रसातलतलं गतः): ११५, ५७ (मांसभक्षण सम्बन्धी ऋषियों के एक प्रश्न का पक्षपातपूर्ण उत्तर देने के कारण इन्हें रसातल में गिरना पड़ा). ७२ (कार्तिक मास में मांसभक्षण न करने वाले राजाओं में से एक); १४. ९१, २० (यज्ञविषयक ऋषियों के प्रश्न का गलत उत्तर देने के कारण इन्हें रसातल में जाना पड़ा)। तुकी० चेदिप, चेदिपति, पौरवनन्दन, राजोपरिचर, उपरिचर।

२. वसु, एक राजा का नाम है जो दुष्यन्त के भाई थे (१. ९४, १०)।

३. वसु, पैल के पिता एक ब्राह्मण नाम है (२. ३३, ३५)।

४. वसु, जमदग्नि के एक पुत्र का नाम है (३. ११६, १०)।

५. वसु, एक राजा का नाम है (५. ७४, १३)।

६. वसु, एक ऋषि का नाम है (१३. १५०, ६१)।

७. वसु = शिव (सहस्रनाम)।

८. वसु = विष्णु (सहस्रनाम)।

९. वसु (अधिकांशतः बहु० °सवः), देवों के एक वर्ग का नाम है : १. १, ३४ (दिव्याण्ड से उत्पन्न); २, ९७ (वसूनां पुनरुत्पत्तिः); २८, १५; ३०, ३३; ३२, १६; ५५, १५; ६३, ९१ (भीष्म इनके एक अंश से उत्पन्न हुये); ६६, १७-२८ (पितामह के स्तन से उत्पन्न मुनि (धर्मदेव) उनके पुत्र माने गये हैं। प्रजापति दक्ष भी ब्रह्मा के पुत्र हैं। दक्ष की कन्याओं के गर्भ से धर्म के आठ पुत्र उत्पन्न हुये जिन्हें वसुगण कहते हैं। इन अष्टवसुओं के नाम धर, ध्रुव, सोम, अहह, अनिल, अनल, प्रत्यूष, और प्रभास हैं। धर के दो पुत्र हुये द्रविण और हुतहव्यवह। काल ध्रुव के पुत्र हैं। सोम की मनोहरा नामक स्त्री के गर्भ से वर्चा, शिशिर, प्राण तथा रमण नामक पुत्र हुये। अहह के चार पुत्रों का नाम ज्योति, शम, शान्त तथा मुनि है। अनल के पुत्र श्रीमान स्कन्द (कुमार) हुये। शाख, विशाख और नैगमेय कुमार के छोटे भाई हैं। मनोजव और अविज्ञातगति अनिल के पुत्र हैं। देवल को प्रत्यूष का पुत्र कहा जाता है। विश्वकर्मा आठवें वसु प्रभास के पुत्र थे। बृहस्पति की बहन इनकी माता थी); ६७, ७४ (जज्ञिरे वसवस्त्वष्टौ गङ्गायां शान्तनोः सुताः); ६९, १०; ७६, ४७; ८७, १; ९६, ११.१५.१६.१७.१९-२१.२३ (आपव अर्थात वसिष्ठ के शाप से पीड़ित वसुओं ने गङ्गा से कहा कि वह शान्तनु की भार्या बन कर वसुओं को उत्पन्न करें और अन्तिम आठवें गर्भ को छोड़ कर अन्य सातों को जन्म लेते ही गङ्गा में फेंकती जाँय); ९८, १. १९ (इमेऽष्टौ वसवो देवा). २१. २२ (गङ्गा ने अपने सात पुत्रों को गङ्गा नदी में फेंका किन्तु आठवाँ छोड़ दिया); ९९, १. ३. ११ (पृथवाद्या वसवः सर्वेदेवा). १३. १६, ३१-३४. ३६. ४२ (वसुओं में से एक, द्यौस ने वसिष्ठ की होमधेनु का अपहरण कर लिया जिससे क्रुद्ध होकर वसिष्ठ ने आठों वसुओं को पृथिवी पर जन्म लेने का शाप देते हुये कहा कि केवल आठवें द्यौस को ही पृथिवी पर दीर्घकाल तक निवास करना होगा); १००, २१ (द्यौस ने देवव्रत भीष्म के रूप में जन्म लिया); १२३, ७० (आठो वसु अर्जुन के जन्म के समय उपस्थित हुये); १८७, ६ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित); १९७, ३. ४०; २२७, ३७ (श्रीकृष्ण और अर्जुन से युद्ध करनेवाले देवों में ये भी थे); २. ११, ३१. ४४ (ब्रह्मा की सभा में); ३. २, ८१; ३, ४४; ३७, ३४; ४१, १९; ४६, २४; ६२, २४; ८२, २२. ७८ (सरः पुण्यं वसूनां); ८४, १२४; ८५. १०५. ११२; ९०, ३३; ९९, ५७ (श्रीराम के शरीर में परशुराम ने इन्हें भी देखा); ११८, ११; १३४, १५; १३९, १५; १६२, ५; १६८, २९. ५२; १८६, १३; १८८, ११९ (नारायणके उदर में); २३१, ७३; ३०८, २४; ३१३, ३१; ३१४, ३; ४. २, २१. २३; ५. २९, १५; ४९, २; ७०, ३ (वसनात्सर्वभूतानां वसुत्वाद्देवयोनितः वासुदेवस्ततो वेद्यो); ८६, ४; ११६, १७ (वसुमना नाम वसुम्यो वसुमत्तरः); १२८, ४३; १३१, ३. ६ (श्रीकृष्ण के शरीर में); १४६, १२; १५६, १३; १८५, १८; ६. ३४, २३; ३५, ६. २२; ६८, ५; ९६, १६; ११९, ३६; ७. २, ७ (वसुप्रभावे वसुवीर्यसम्भवे गते वसूनेव वसुन्धराधिपे। वसूनि पुत्रांश्च); ६, ५ (वसूनामिव पावक); ७६, ४; १५६, १३६; ८. ८७, ४६. ८३; ९. ४४, २९ (स्कन्द को देखने आये); ४५, ६. ५३ (स्कन्द को पार्षद दिये); ५०, ४०; १२. १५, १७; २१, २०; ५०, २६ (स त्वं भीष्म महाबाहो वसूनां वासवोपमः। नित्यं विप्रैः समाख्यातो नवमोऽनवमो गणैः); ५१, १५; ६४, १०; १२२, ३१; १६६, २२; १९८, ६; २०७, २३; २०८, २०; २२७, ९. ७६; २८३, ७; २८४, ७; २९५, १६; ३१७, २ (यदि प्राण का निष्क्रमण जाँघों से होता है तो मनुष्य इनका लोक प्राप्त करता है); ३२३, १७; ३३९, ५२; ३४०, १०२; ३६५, ६ (भीष्म को उञ्छवृत्त्युपाख्यान सुनाया); १३. १, ५५; १४, ३२२. ३९१; १८, ७१; ५७, ३०. ३४; ७९, १९; ८४, ८०; ८५, ११३ (अग्निधूम से उत्पन्न हुये); ८६, १६; १०७, ९८. १११. १२६; १३४, ६; १४०, १४; १५०, १७ (धरो ध्रुवश्च सोमश्च सावित्रोथानिलोऽनलः प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवोऽष्टौ प्रकीर्तिताः). ३२. ७९; १५८, ३४; १६५, १६; १६७, ४६; १६८, ३१. ३५; १४. ८, ४ (मुञ्जवत पर शिव की उपासना करते हैं); १०, ६; ५४, २; ८१, १२. १३. १६. १९ (भीष्मवध के कारण वसुओं ने अर्जुन को शाप दिया); १५. ३१, १६; १६. ४, २५; १८. ३, ७; ४, २१; ५, ११ (मृत्यु के बाद भीष्म पुनः वसु हो गये)।

वसुचन्द्र, युधिष्ठिरपक्षीय एक राजा का नाम है (७. १५८, ४०)।

वसुद = विष्णु (सहस्रनाम)।

वसुदान, पंशुराष्ट्र के राजा का नाम है : २. ४, २७; ५२, २७ (युधिष्ठिर को अनेक उपहार दिये); ५३, ७; ५. १५१, ६३ (युधिष्ठिर की सेना में); १७१, २७ (ये अतिरथी वीर थे); १९६, २८; ६. ५१, २०; ९३, १३; ९५, २४; ७. २१, ४९. ५५; २३, ४१ (इनके अश्वों का वर्णन); ११३, ३; १९०, ३० (द्रोण ने इनका वध किया); ८. ६, २४ (युद्ध में इनके पुत्र ने काशिराज का वध किया था). ३८ (द्रोण ने इनका वध किया था)। तुकी० पांशुराष्ट्राधिप।

वसुदामा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ५)।

वसुदेव, शूर के पुत्र का नाम है जो देवकी के पति और श्रीकृष्ण के पिता थे : १. ६३, ९९ (इनकी पत्नी के गर्भ से विष्णु ने श्रीकृष्ण के रूप में जन्म लिया); १५१, २४; २१९, १८; २. ३७, ६; ३. ३०३, २४; १४४, ७. १० (देवकी के स्वयंवर में शिनि ने देवकी को इनके लिये प्राप्त किया); १२. ४७, २९; १३. १४७, ३२ (शूर के पुत्र और श्रीकृष्ण के पिता); १४. ६०, १; ६१, २. ३. ५. ७ (श्रीकृष्ण ने इन्हें युद्ध की घटनायें बताया); ८३, १६; १६. ६, ५; ७, १. १५. १६ (इनकी मृत्यु पर इनकी विधवाओं द्वारा विलाप); १८. ५, १७ (मृत्यु के बाद ये भी देवों में प्रवेश कर गये)।

तुकी० इनके नामों के निम्नलिखित पर्याय :—

आनकदुन्दुभि : २. ३३, १२; ३. २०, ७; ११. १४७, ३२; १६. ६; १. ३।

यदूद्वाह — देखिये वस्था०।

शूरपुत्र, शूरसुत, शूरसूनु, शूरात्मज, शौरि — देखिये वस्था०।

वसुदेवपितृ = शूर : १. ६७, १२९; १११, १।

वसुदेवपुत्र = श्रीकृष्ण (देखिये वस्था०)।

वसुदेवसुत = श्रीकृष्ण (देखिये वस्था०)।

वसुदेवसुता = सुभद्रा : १. २१९, १४।

वसुदेवात्मज = श्रीकृष्ण (देखिये वस्था०)।

वसुधा = मूर्तिमान पृथिवी देवी (७. ६९, १४. १५)।

वसुधाधर = शेष (१३. १४७, ६०)।

वसुनन्दिनी : १. ९९, १६।

१. वसुप्रद = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

२. वसुप्रद = विष्णु (सहस्रनाम)।

वसुप्रभ, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६३)।

१. वसुमत् = १. वसुमनस् : १. ८६, ५; ९२, १९; ९३, १. ३. ५ (जब ययाति स्वर्ग से गिरने लगे तब उनकी पुत्री के पुत्र वसुमना ने उन्हें अपना स्थान देने का प्रस्ताव किया। तब ययाति अपने सभी कुटुम्बियों सहित स्वर्गलोक गये)। तुकी० औषदश्वि।

२. वसुमत्, युधिष्ठिर के समकालीन एक राजा का नाम है : २. ४, ३२ (युधिष्ठिर की सेवा में); ५. ४, २१।

३. वसुमत् : २, ११, ३० (मन्त्रो रथन्तरं चैव हरिमान्वसुमानपि, ब्रह्मा की सभा में)

४. वसुमत् एक अग्नि का नाम है : ३. २२१, २७ (वसुमतेऽनये)।

५. वसुमत्, जनक के पुत्र, एक राजा का नाम है (१२. ३०९, २)।

वसुमती = पृथिवी : ३. १४२, ३९; १२. २९, २६; १३. ९५, ७९।

१. वसुमनस् , एक प्राचीन नरेश का नाम है। ये अयोध्या नरेश हर्यश्व द्वारा ययातिकन्या माधवी के गर्भ से उत्पन्न हुये थे और ययाति के पौत्र थे : २. ८, १३ (यम की सभा में); ३. ९४, १८ (इन्होंने तपस्या किया और तीर्थों में गये); १९८, २. १२ (नारदजी ने यद्यपि इनके रथ की प्रशंसा की तथापि इन्होंने वह रथ नारद जी को नहीं दिया); ४. ५६, ९ (ये स्वर्ग से युद्ध देखने आये); ५. १२१, १०; १२२, ३; १२. ६८, २. ३. ६ (बृहस्पति के साथ इनका संवाद); ९२, ३ (वामदेव ने इन्हें उपदेश दिया)। तुकी० वसुमत्, कौसल्य।

२. वसुमनस् = विष्णु (सहस्रनाम)।

वसुमित्र, एक राजा का नाम है जो दनायुपुत्र विक्षर नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ४१)।

१. वसुरेतस् = अग्नि : १. १३, १३; ५८, ३; २२६, ११; २२८, ३६।

२. वसुरेतस् = शिव : ७. ८०, ५९;

३. वसुरेतस् = विष्णु (सहस्रनाम)।

वसुवेग = शिव (सहस्रनाम)।

वसुश्री, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १४)।

वसुश्रेष्ठ = शिव (सहस्रनाम)।

वसुषेण = कर्ण (देखिये वस्था०)।

वसुसम्भव = भीष्म (८. २, ११)।

वसुहोम, अङ्ग देश के एक राजा का नाम है : १२. १२२, १. ७-१०. १४ (मुञ्जवत पर्वत पर मान्धाता को दण्ड विषयक उपदेश दिया)।

१. वसोर्धारा, एक तीर्थ का नाम है : ३. ८२, ७६।

२. वसोर्धारा = मन्दाकिनी : १३. ८०, ५ (वसोर्धारा मन्दाकिनी-नील०)।

३. वसोर्धारा, घृत में डाली जानेवाली आहुतियों का नाम है : १. २२३, ७२ (वसोर्धाराहुतं हविः); १२. ३३७, २५-२७; १३. २, ३५।

वस्त्रप, एक जाति का नाम है : २. ५२, १५-१७ (युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये)।

वस्वोकसारा, कुबेर के निवासस्थान का नाम है : ७. ६७, १६ (वस्वोकसारा सलोप आर्षः। कनकमयानि ओकांसि सारो यस्याः सा तथा—नील०)।

वस्वौकसारा, गङ्गा की सात धाराओं में से एक का नाम है (६. ६. ४८)।

वहि, विपाशा में रहनेवाले एक पिशाच का नाम है जो हीक का साथी था। इन्हीं दोनों की सन्तानो को वाहीक कहते हैं जो प्रजापति की सृष्टि नहीं हैं (८. ४४, ४१-४२)।

वह्निःसर्वभूतानां = (शिव सहस्रनाम)।

वहीनर, एक प्राचीन राजा का नाम है (२. ८, १५)।

१. वह्नि = अग्नि (देखिये वस्था०)।

२. वह्नि, एक प्राचीन राजा (एक असुर ?) का नाम है जो पूर्वकाल में पृथिवी का शासक था (१२. २२७, ५२)।

३. वह्नि = विष्णु (सहस्रनाम)।

वह्निदैवत (वि०): १. २२१, ८५; ३. २३०, ११।

वह्निनन्दन = स्कन्द : ६. २३१, ११२।

वह्निलोक : १३. १४२, ५२।

वाक (बहु० °काः)—'यं वाकेष्वनुवाकेषु निषत्सूपनिषत्सु च गृणन्ति)।

वागात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ४६)।

वागिन्द्र, गृत्समदवंशी प्रकाश के पुत्र का नाम है। यह प्रमिति का पिता था (१३. ३०, ६३)।

१. वाग्मिन् राजा पूरु के पौत्र मनस्यु के द्वारा सौवीरी के गर्भ से उत्पन्न तीन पुत्रों में से एक का नाम है (१. ९४, ७)।

२. वाग्मिन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. वाच् = सरस्वती (१२. २३९, ८)।

२. वाच् = शिव (सहस्रनाम)।

१. वाचस्पति (वाणी के अधिपति) : १२. ५२, १०; १३. ३१, ७; १४. २१, ९ (ततो वाचस्पतिर्जज्ञे तं मनः पर्यवेक्षते)।

२. वाचस्पति = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

३. वाचस्पति = विष्णु (सहस्रनाम)।

वाचस्पत्य = शिव (सहस्रनाम)।

वाचाविरुद्धा, देवों के एक वर्ग का नाम है (१३. १८, ७५)।

वाचिक (वि०) ब्रह्मा के एक जन्म का द्योतक है : १२. ३४७, ४१ (ब्रह्मा का तीसरा जन्म वाचिक था); ३४८, १९।

वाजपेय, एक प्रकार के यज्ञ का नाम है : २. ५, ९९; ३. ८२, ८९. ९१; ८३, ७८; १३४, १०; ५. १२१, ११; १२२, १३; १३. १०३, २२।

१. वाजसन = शिव (सहस्रनाम)।

२. वाजसन = विष्णु (सहस्रसनाम)।

वाजसनि = श्रीकृष्ण (१२. ४३, ९)।

वाजिग्रीव = हयग्रीव : १२. २४, २५. २८-३०. ३२।

वाजिन्, गन्धर्वों की सन्तानों का द्योतक है : १. ६६, ६८।

१. वाटधान, एक क्षत्रिय राजा का नाम है जो क्रोधवशसंज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था : १. ६७, ६३; ५. ४, २३।

२. वाटधान, एक देश का नाम है : ५. १९, ३१ (यह धन-धान्य से सम्पन्न देश कौरवों की सेना से घिर गया था)।

३. वाटधान, एक जाति के लोगों का नाम है : २. ३२, ८ (नकुल ने दिग्विजय के समय इसे जीता था); ४९, २४; ५१, ६; ६. ९, ४७; ५६, ४ (दुर्योधन की सेना में); ७. ११, १७ (पूर्व समय में श्रीकृष्ण ने इन्हें पराजित किया था); ८. ७३, १७ (अर्जुन ने इनका वध किया था)।

१. वाणी, एक नदी का नाम है (६. ९, २०)।

२. वाणी = सरस्वती : २. ११, ३४; ९. ४२, ३२ (सरस्वती नदी को सरस्वती देवी से समीकृत किया गया है); ४४, २२।

१. वात = वायु (देखिये वस्था०)।

२. वात = शिव (सहस्रनाम)।

वातघ्न, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है : १३. ४, ५४)।

वातज (बहु० °जाः) एक स्थान के निवासियों का द्योतक है (६. ९, ५४)।

वातपति, एक वृष्णि राजा का नाम है जो द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुआ था (१. १८६, २०)।

वातरंहस् = शिव (सहस्रनाम)।

१. वातवेग धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७, १०२; ११७, १०; १८६, २ (वायुवेग पाठ है); ८. ८४, ३ (भीमसेन ने इसका वध किया)।

२. वातवेग, गरुड की प्रमुख सन्तानों में से से एक का नाम है (५. १०१, १०)।

वातसारथि = अग्नि (देखिये वस्था०): ३. १३३, २७।

वातस्कन्ध, एक ऋषि का नाम है (२. ७, १४)।

वातात्मज = भीमसेन : ५. १६२, ५; ८. ८९, ३६।

वाताधिप एक राजा का नाम है : २. ३१, १५ (सहदेव ने दिग्विजय के समय दक्षिण में इसे पराजित किया था)।

वातापि, इल्वल के छोटे भाई, एक असुर का नाम है : १. २, १६७; ६५, २९ (दनुके पुत्रों में से एक); ३. ९६, २. ४. ८. १०. १२ (महासुरः); ९९, २. ३. ६. ८. ३० (इल्वल इसका वध कर के इसका मांस ब्राह्मणों को खिला देता था और फिर इसका नाम लेकर जब वह पुकारता था तब यह ब्राह्मणों का उदर-भेदन कर के पुनः जीवित निकल आता था। किन्तु एक बार अगस्त्यजी ने इसका भक्षण करके इसे पचा लिया); १०९, २१ (वातापिश्च यथा नीतः क्षयं स महाद्युतिः प्रभो); २०६, २७ (अगस्त्यमृषिमासाद्य जीर्णः क्रूरो महासुरः); ९. ३१, १३; १२. १४१, ७१। तुकी०

असुर, दैत्य, दितिनन्दन, प्राह्लादि।

१. वातिक, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६७)।

२. वातिक (बहु० °काः) एक प्रकार के प्राणियों का नाम है ; ७. १६०, ४५ (सिद्धचारणवातिकाः); ९. ५५, १३ (अन्तरिक्षचरा''वातिकाश्चारणा); ५८, ६२ (वातिकचारणाः)।

वातिकखण्ड, एक स्थान का नाम है : ३. १३०, १३।

१. वात्स्य, एक अथवा अधिक ब्राह्मणों का नाम है : १. ५३. ९ (जनमेजय के सर्पसत्र के सदस्यों में से एक); १२. ४७, ५ (भीष्म को घेरकर खड़े लोगों में ये भी थे)।

२. वात्स्य = वत्स देश के निवासी : ७. ११, १५; १३. ३०, १२।

वादान्य, एक ऋषि का नाम है (१३. १९, ११)।

वादुलि – देखिये वाद्रुलि।

वानर : १. ६६, ७ (पुलस्त्य की सन्तानों में से एक). ६४ (हरी की सन्तानों में से एक)।

वानरकेतन, वानरकेतु, वानरध्वज = अर्जुन (देखिये वस्था) : तुकी० ६. ८२, ९ (भीमवानरकेतुना)।

वानरप्रवरध्वज = अर्जुन (७. १८, २१)।

वानरवर्यकेतन = अर्जुन (१४. ५२, ५६)।

वानरर्षभलक्षण = अर्जुन (७. १२६, ६)।

वानव (बहु० °वाः) एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ५४)।

वानेय (बहु०) मुनियों के एक वर्ग का द्योतक है (९. ३७, ६५)।

१. वाम : १२. ३४२, १०२ (वामादेशितमार्गेण)।

२. वाम = शिव (सहस्रनाम)।

वामक, एक जाति का नाम है (१३. ४९, १०)।

१. वामदेव, एक ऋषि का नाम है : २. ७, १७ (इन्द्र की सभा में); ३. १९२, ४१. ४२. ४७-५०. ५२-५४. ५६-५८. ६०-६४. ६६-७० (इस सम्पूर्ण अध्याय में परीक्षित-पुत्रों द्वारा वामदेव के अश्वों को न लौटाने तथा अन्ततः वामदेव द्वारा अपने अश्व पुनः प्राप्त कर लेने की कथा है। देखिये वामदेवचरित); २७७, ३७; २९१, ६६; ५. ८३. २७; १२. ९२, २ (इतिहासं पुरातनम् गीतं दृष्टार्थं तत्त्वेन वामदेवेन धीमता). ३. ५. ६; ९३, १; ९४, १. १३ (वसुमनस् को उपदेश दिया)।

२. वामदेव, एक राजा का नाम है जिसे उत्तर दिग्विजय के समय अर्जुन ने पराजित किया था (२. २७ ११)।

३. वामदेव शिव (सहस्रनाम)।

वामदेव-उपाख्यान, से वामदेव की कथा का तात्पर्य है जो वनपर्व के १९२वें अध्याय में वर्णित है (१. २, ६२)।

वामदेवचरितम् – वामदेव का चरित्र : "युधिष्ठिर ने मार्कण्डेय जी से ब्राह्मणों की महिमा का वर्णन करने के लिये कहा। तब मार्कण्डेय जी ने कहा : अयोध्यापुरी में इक्ष्वाकुकुल के वीर राजा परीक्षित राज्य करते थे। एक दिन शिकार खेलते हुये वे वन में बहुत दूर निकल गये। भूख-प्यास से व्याकुल राजा परीक्षित को नीले रङ्ग का एक घना जङ्गल दिखाई पड़ा। उसके मध्यभाग में एक सरोवर था। उसमें जल पीने के बाद राजा उसी के तट पर लेट गये। उसी समय उन्हें गीत का स्वर सुन पड़ा और उनकी दृष्टि एक कन्या पर पड़ी। वह कन्या राजा के समीप आ गई। राजा के पूछने पर उसने अपने को अविवाहित बताया और कहा कि राजा यदि जल का दर्शन कभी न करायें तो उसे प्राप्त कर सकते हैं। राजा ने यह शर्त मान कर उसके साथ गन्धर्व विवाह कर लिया और अपने नगर वापस आकर उस कन्या के साथ एकान्तवास करने लगे। उस समय कोई भी राजा का दर्शन नहीं कर सकता था। मन्त्री ने सारी बातों का पता लगा एक उद्यान बनवाया जिसमें प्रत्यक्षरूप से कहीं जलाशय नहीं था। किन्तु एक किनारे एक बावली थी जिसे लताओं आदि से ढँक दिया गया था। तब मन्त्री ने राजा से उसी उद्यान में विहार करने के लिये कहा। राजा अपनी नवविवाहिता पत्नी के साथ उस उद्यान में विहार करने लगे। एक दिन लताओं से घिरे मण्डप को देखकर राजा ने अपनी प्रिया सहित उसमें प्रवेश करके स्वच्छ जल से बने सरोवर को देखकर अपनी उस रानी से उस जल में प्रवेश करने के लिये कहा। तब रानी उस सरोवर में कूद पड़ी किन्तु फिर बाहर नहीं निकली। राजा ने उसका सम्पूर्ण जल बाहर निकलवाया किन्तु फिर भी रानी का पता नहीं लगा। अन्त में सारा जल निकाल देने पर वहाँ एक मेढक मिला। तब राजा ने सारे मेढकों का वध करने का आदेश दे दिया। इस भीषण संहार से त्रस्त होकर माण्डूकराज ने एक तपस्वी का रूप धारण कर राजा को इस माण्डूक संहार से विरत होने का निवेदन करते हुये इस सम्बन्ध में दो श्लोकों का उद्धरण दिया (३. १९२, २८-२९)। किन्तु राजा ने इस पर भी मेढकों का संहार बन्द करना स्वीकार नहीं किया। तब माण्डूकराज ने अपने को मेढकों का राजा बताते हुये राजा से कहा कि उनकी जल में लुप्त रानी वास्तव में उसी की पुत्री सुशोभना थी। आयु ने कहा : 'वह सुशोभना आप को छोड़कर चली गई यह उसकी दुष्टता है। उसने पहले भी बहुत से राजाओं के साथ इसी प्रकार छल किया था।' राजा ने आयु से सुशोभना को समर्पित करने के लिये कहा। तब माण्डूकराज आयु ने सुशोभना को राजा को समर्पित करते हुये उसे समझाया कि वह निष्ठा के साथ राजा की सेवा करे। तत्पश्चात माण्डूकराज विदा हुआ और राजा सुशोभना के साथ विहार करने लगे। कुछ काल के पश्चात राजा ने उसके गर्भ से तीन पुत्र उत्पन्न किये जिनके नाम शल, दल और बल रक्खे गये। समय आने पर राजा परीक्षित ने ज्येष्ठ पुत्र शल का राज्याभिषेक कर दिया और स्वयं तपस्या करने के लिये वन में चले गये। तदनन्तर एक दिन महाराज शल शिकार खेलने गये। वहाँ उन्होंने एक हिंसक पशु का अपने रथ से पीछा किया किन्तु वह पशु आँख से ओझल हो गया। उनके सारथि ने बताया कि उनके रथ के वे घोड़े उस पशु को नहीं पकड़ सकते। उसे पकड़ने के लिये वाम्य घोड़े चाहिये जो वामदेव के पास हैं। तब राजा ने वामदेव मुनि से उनके वाम्य घोड़े उधार लेकर उस पशु को पकड़ लिया, किन्तु वे घोड़े उन्होंने वामदेव को नहीं लौटाये। एक मास व्यतीत होने पर वामदेव ने अपने शिष्य आत्रेय को राजा के पास भेजा किन्तु जब राजाने घोड़े नहीं लौटाये तब वामदेव स्वयं ही आये। राजा ने घोड़े को लौटाना अस्वीकार करते हुये कहा कि वे घोड़े तपस्वियों के पास रहने योग्य नहीं हैं। अतः उनके बदले उन्होंने मुनि को दो बैल, चार गदहे और चार खच्चर देते हुये कहा कि यदि वे इन्हें स्वीकार नहीं करेंगे तो उनका वध कर दिया जायगा। तब वामदेव ने ब्राह्मण को अवध्य बताते हुये चार राक्षस प्रकट किये जिन्होंने त्रिशूलों से राजा शल का वध कर दिया। तदनन्तर शल के छोटे भाई दल राजा हुये और उन्होंने भी वामदेव को घोड़े वापस करना अस्वीकार करते हुये एक विषमय बाण से वामदेव का वध कर देने की धमकी दी। परन्तु वामदेव के शाप से राजा के उस बाण ने उन्हीं के पुत्र श्येनजित का वध कर दिया। राजा दल ने एक दूसरा बाण चलाना चाहा किन्तु स्तम्भित हो गये। तब राजा ने अपनी पराजय स्वीकार करते हुये महर्षि वामदेव के दीर्घायु हो कर जीवित रहने की कामना प्रकट की। महर्षि वामदेव ने तब राजा से कहा कि वे अपने उस बाण द्वारा रानी का स्पर्श करके ब्रह्महत्या के पाप से मुक्त हो सकते हैं। राजा ने तदनुसार कार्य किया। उनकी रानी ने महर्षि से कहा : 'मैं अपने स्वामी को नित्य मीठे वचन बोलने का परामर्श देती रहती हूँ और स्वयं भी ब्राह्मणों की सेवा का अवसर ढूँढती हूँ जिससे पुण्यलोक की प्राप्ति हो।' तब वामदेवजी ने रानी से कहा : 'तुमने अपने राजकुल को ब्राह्मण के कोप से बचा लिया है। तुम मुझसे कोई वर माँगो।' रानी ने यह वर माँगा कि उसके पति सब पापों से मुक्त हो जाँय तथा वे सब बन्धु-बान्धवों सहित सुखी रहें। वामदेवजी ने रानी तथा राजा को तदनुरूप वर दिया जिससे प्रसन्न हो कर उन लोगों ने वामदेव के घोड़े लौटा दिये तथा उन महर्षि को आदरपूर्वक आश्रम भेज दिया। (३. १९२)।"

१. वामन, एक नाग का नाम है : १. ३५, ६; ५. १०३, १०. २३

(ऐरावत कुले जातः सुमुखो नाम नागराट्। आर्यकस्य मतः पौत्रो दौहित्रो वामनस्य च)।

२. वामन एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, १३०)।

३. वामन, गरुडपुत्र एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, १०)।

४. वामन एक दिग्गज का नाम है : ५. ९९, १५ (सुप्रतीक के वंश में उत्पन्न); ६. १२, ३३ (चत्वारो लोकसम्मताः दिग्गजा'''वामनैरावताद्या); ६४, ५७ (घटोत्कच ने माया से इसे उत्पन्न किया); ७. १२१, २५)।

५. वामन, क्रौञ्चद्वीप के एक पर्वत का नाम है (६. १२, १८. २१ (क्रौञ्चस्य कुशलो देशो वामनस्य मनोनुगः)।

६. वामन, बलि के साथ छल करने के लिये विष्णु द्वारा लिये गये एक अवतार का नाम है : ३. ८३, १०३; २७२, ६३ (वामना कृतिः). ६५. ६६ (वामन-अवतार की कथा का वर्णन); ३१५, १५ (प्राप्यवामनरूपेण प्रच्छन्नं ब्राह्मरूपिणा। बलेर्यथा हृतं राज्यं विक्रमैस्तच्च ते श्रुतम्); १२. ४३, १२; २०७, २६; ३३९, १०४ (विष्णु का छठवाँ अवतार); १३. १०९, १०; १२६, ४. ९; १४९, ३० (सहस्रनाम)।

७. वामन = शिव : १३. १७, ७१ (सहस्रनाम); १४. ८, १४।

८. वामन (वि०) : ३. १०२, २३; २७२, ७०; १२. ३४९, ३७; १३. १२६, १२ (रूपम्)।

१. वामनक एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १०३)।

२. वामनक = ५ वामन (६. १२, १८)।

वामनिका, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २३)।

वामा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १२. १७)।

वाम्य (द्वि०), वामदेव के प्रसिद्ध अश्वों का नाम है : ३. १९२, ४१. ४३. ४६. ४८. ५१. ५४. ५८. ६१. ७२।

वायव (वि०, स्त्री० °वी): ९. ४६, ३७।

वायव्य (वि०): १. १३५, १९; २२७, १६ (इन्द्र के मेघों के विरुद्ध अर्जुन ने वायव्यास्त्र का प्रयोग किया); २३४, १२; ३. १६४, १८; १६७, ३० (महास्त्रम); ४. ५८, ५२ (अस्त्रेण); ६१, ३१(मातरिश्वन् से अर्जुन ने वायव्यास्त्र प्राप्त किया); ६४, २३; ५. १८०, ११ (भीष्म ने इस अस्त्र का प्रयोग किया); ६. १०२, १९; १२१, ४०; ७. २३, ९१ (भीमसेन के पास वायव्य धनुष था); १५६, १०९ (अश्वत्थामा ने इस अस्त्र का प्रयोग किया); १७५, ७६; १८८, ३१ (द्रोण ने इस अस्त्र का प्रयोग किया)।

वायव्यास्त्र, वायुदेवता के अस्त्र का द्योतक है : ६. १०२, २०; ७. १९, २२; १५७, ३३. ४३; १६१, १०; १६२, ४३; ८. ८९, २२। तुकी० वायव्य (वि०)।

१. वायु, वायुदेवता का द्योतक है : १. १, ११४. १८६; २५, १० (इन्द्र को इनके साथ समीकृत किया गया है); ३२, ८. ९; ७१, ४२; १२३, ११. १२ (कुन्ती ने वायु देवता का आवाहन करके उनसे भीमसेन को उत्पन्न किया); १७०, ६५; १९७, २७ (जब पाँच इन्द्र पाण्डवों के रूप में जन्म लेंगे तब उनमें से एक इनके अंश से उत्पन्न होंगे); २११, ४; २. ११, २० (ब्रह्मा की सभा में); ३१, ४५ (वायुः प्राणं ददातु मे); ३. १२, २२; ४०, १६ (ये ब्रह्मशिरस् नहीं जानते); ७६, ३६. ४०; १४७, २७ (हनुमान के पिता); १५०, २१; १५५, १८; १६२, १६ (भीमसेन इनके पुत्र थे); १६८, २९ (अर्जुन ने इनसे वायव्यास्त्र प्राप्त किया); १९१, १६ (वायुप्रोक्तं'''पुराणम्); २२०, ७; २३१, ४७; २९१, १८. २७ (सीता की पवित्रता को प्रमाणित किया); ५. ६१, ६. १८; १०५, ३५; ११४, १; ६. ३५, ३९ (श्रीकृष्ण को इनके साथ समीकृत किया गया है); ७. १९, २३. २४; ७. २०२, ७७ (ये शिव के शर के पंख बने). १०२ (शिव को इनके साथ समीकृत किया गया है). १३९; ८. २६, २६ (जैत्रेण विधिनाऽऽहूतं वायुरिन्द्रमिवाध्वरे); ९. ४४, ४०; ४५, ४५; १२. १५, १७; ४७, ९ (भीष्म को घेर कर खड़े ऋषियों में ये भी थे). ३१. ६५. ८९ (सप्तमार्गा निरुद्धास्ते वायोरमिततेजसः); ५१, ६; ७२, ९. १० (पुरुरवा के साथ इनका संवाद); १५६, ६; १५७, ५ (शाल्मलि के साथ इनका संवाद); २५८, ४० (वायुर्देवदेवो विशिष्टः); ३४०, ११; ३४८, २३ (इन्होंने सुपर्ण से नारायणधर्म का उपदेश ग्रहण करके उसे ऋषियों को बताया); १३. ३१, ६; ८५, १५६; १०७, १००; १२८, १, १५२, २३. २६. २८; १५३, १. १९; १५४, १; १५५, १. १५; १५६, १. १५. २१ (वायु और अर्जुन कार्तवीर्य का संवाद); १५७, २७; १५८, ३५; १६०, ३९ (शिव को इनके साथ समीकृत किया गया है); १६५, १०; १८. ४, ८ (वायोर्मूर्तिमतः)।

तुकी० इनके निम्नलिखित पर्याय :—

अनलसख : ५. ११०, १९; १२. २२८, ८६।

अनिल : १. ६६, २५ (वसुओं में से एक, शिवा के पति); २२९, ३१ (अग्नि को इनके साथ समीकृत किया गया है); ३. १४७, २९ (प्रीतिरनिलस्याग्निना यथा); ५. १६०, ९९; १६१, १७; ८. ९६, ६०; १२. १५५, १. ५।

आशावह — देखिये वस्था०।

देवदेव — देखिये वस्था०।

पवन : १. २३, १७ (गरुड को इनके साथ समीकृत किया गया है); ५. ११०, १९ (पवनस्य निवेशनम्); ६. ३४, ३१; ८. ८७, ४७; १२. ४९, ४१; १५४, ४. १३. १४. १६; १५६, १. १०. ११. १३. १९; ३१३, १०; १३. १५२, २; १५४, ९; १५७, १।

प्रभञ्जन : १२. १५५, ८।

मरुत् : १२. १५५, १०।

मातरिश्वन् : १. १२६, २४ (मातरिश्वा ददौ पुत्रं भीमं नाम महाबलम्); २. २४, ४; ३. १६०, ३४ (पार्थमात्मजं मातरिश्वनः); ४. ६१, ३१; ५. ७५, ३; ९०, २४; १७९, ४; ९. ३८, ५९ (सुकन्या के पति और मंकणक के पिता); १२. ९, २८; ७२, २. ४; १५५, १८; १५६, १५; २४०, ३१; ३२७, २; १३. १५८, २० (श्रीकृष्ण के साथ समीकृत); १४. १७, २८।

मारुत : १. ६, १; २८, १४; ३२, ८; ६३, ११६; ७१, ४१; ७२, ३. ४; ९५, ६१; ९६, ४; १४९, ४; १५१, ५; २. ३, ३६; ५. १८०, १९; ७. २३, ८८; ४०, १८; १६२, ४; ९. २३, १०; ४६, ९७; ४८, ६२; १२. १५४, १२; १५५, २. ६; १५६, १६; १८२, १४. २९. ३०; १८३, ५. १०. १५; १८४, १८. ४४; १८७, १०. ११; २४०, २३; २५२, २. ४; २९५, १६; ३२१, ३७. ३८; ३२४, १७; ३३२, ११; ३३३, १९; ३३७, ३६; १३. ६, १४; १८, ७२; ८१, ३१; १०७, ८०; १५२, ३६; १५७, २६; १५८, ४०; १४. १०, १६; ४२, १९. ४२; ७७, १५।

वात : १. ६७, १११; १५१, २७; ३. १५४, १९; १६५, १२; ९. ६, २०।

श्वसन — देखिये वस्था०।

समीरण : ३. ११९, २१; २३६, १५; ८. ५७, १५; १२. १५५, ८; १५६, ५. १८. १९।

२. वायु = सूर्य (३. ३, १७)।

३. वायु = स्कन्द (३. २३२, १६)।

४. वायु = शिव (सहस्रनाम)।

५. वायु = विष्णु (सहस्रनाम)।

वायुचक्र, मङ्कणक मुनि के कलश में रक्खे हुये वीर्य से उत्पन्न एक ऋषि का नाम है (९. ३८, ३७)।

वायुज्वाल, मङ्कणक मुनि के कलश में रक्खे हुये वीर्य से उत्पन्न एक ऋषि का नाम है (९. ३८, ३७)।

१. वायुतनय = भीमसेन (३. १४७, २)।

२. वायुतनय = हनुमान (देखिये वस्था०)।

१. वायुपुत्र = भीमसेन : ३. १४७, ४; ५. १०५, ३४ ७. १३४,

१९; ८. ७७, २५।

२. वायुपुत्र = हनुमान (देखिये वस्था०)।

वायुबल, मङ्कणक मुनि के कलश में रक्खे हुये वीर्य से उत्पन्न एक ऋषि का नाम है (९. ३८, ३६)।

वायुभक्ष, एक प्राचीन ऋषि का नाम है : २. ४, १३; ५. ८३, ६४ के बाद दा० पा० गीप्रे० सं० : (हस्तिनापुर जाते समय श्रीकृष्ण से मार्ग में ये भी मिले थे)।

वायुमण्डल, मङ्कणक मुनि के कलश में रक्खे गये वीर्य से उत्पन्न एक ऋषि का नाम है (९. ३८, ३६)।

वायुरेतस्, मङ्कणक मुनि के कलश में रक्खे गये वीर्य से उत्पन्न एक ऋषि का नाम है (९. ३८, ३७)।

वायुलोक, वायुदेव के स्थान का द्योतक है (१३. ७९, १५)।

१. वायुवाहन = शिव (सहस्रनाम)।

२. वायुवाहन = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. वायुवेग, एक राजा का नाम है जो क्रोधवशगण संज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ६३)। इन्हें पाण्डवों की ओर से रण-निमन्त्रण भेजने का निश्चय किया गया (५. ४, १७)।

२. वायुवेग, मङ्कणक मुनि के कलश में रक्खे गये वीर्य से उत्पन्न एक ऋषि का नाम है (९. ३८, ३६)।

३. वायुवेग, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम (?) है जो द्रौपदी के स्वयंवर में आया (१. १८६, २)।

वायुसुत = भीमसेन : ३. १४६, २७. ४७; १७६, ६।

वायुहन्, मङ्कणक मुनि के कलश में रक्खे गये वीर्य से उत्पन्न एक ऋषि का नाम है (९. ३८, ३६)।

वाय्वात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ६५)।

वारण, एक प्रदेश का नाम है जो कौरवों से घिर गया था (५. १९, ३१)।

वारणसाह्वय (वि०) = हस्तिनापुर : १. १२८, ३; ३. १५१, ९; २०९, १६; ९. ५६, २०; १३. १६६, १७; १४. ५२, २४; ६६, १; ७१, ३; ८२, १।

वारणावत, एक नगर का नाम है : १. २, १०२; ६१, २०; ९५, ७० १४१, १३; १४२, ४. १४. २३; १४३, २. ३. ५.७. ८. १५. १९; १४४, ६. ७. १५; १४५, ४. ३४; १४६, १. ५; १५०, १२. १९; १५१, २३ (यहाँ लाक्षागृह को जलाया जाना); १६२, १६; २. ७८ १४ (यहाँ व्यासजी ने युधिष्ठिर को उपदेश दिया था); ३. १२, ८६; ५. ३१, १९ (पाँच ग्राम जो पाण्डवों ने माँगा था उनमें से एक यह भी था); ५०, २३; ७२, १५; ८२, ७; १२८, १३; ७. १०, ५८ (यहाँ युयुत्सु ने अनेक राजाओं से युद्ध किया था); ८. ९१, ६; ९. ३३, ४३; ५६, ३०; १०. ११, २४।

वारणावतक (वि०): १. १४६, ३; १४८, १७।

वारणाह्वय (वि०) = हस्तिनापुर : ३. २४९, १४; ५. १७५, २७; १५. ३९, २१।

वारवत्या, एक नदी का नाम है : २. ९, २२ (वरुण की सभा में)।

१. वाराणसी, एक नदी का नाम है (६. ९, ३१)।

२. वाराणसी, काशिराज के नगर का नाम है : १. १०२, ४ (अम्बा के पिता का निवासस्थान); ३. ८४, ७८; ५. ४८, ७६ (श्रीकृष्ण ने इसे जला दिया); ५०, ४१; ७. १०, ५८ (यहाँ धृष्टद्युम्न ने काशिराज के पुत्र को पराजित किया था); १२. २७, ९ (यहाँ उपस्थित सभी राजाओं से भीष्म ने युद्ध किया); २६१, ८. ११. ४३. ४५ (तुलाधार का निवासस्थान); १३. १४, २०५ (इन्द्र ने यहाँ शिव की उपासना की); १८, ३७ (यहाँ शिव ने जैगीषव्य को वर दिये); ३०, १६ (दिवोदास ने इसे निर्मित कराया था); १२०, ३; १४. ६, २२ (शिव का निवास). २७। तुकी० काशिनगर, काशिपुर, काशिपुरी।

१. वाराह — देखिये ४. वराह : (३. १४२, २९)।

२. वाराह, एकाधिक तीर्थों का नाम है : ३. ८३, १८; ८८, ७ (पयोष्णी पर स्थित इस तीर्थ में नृग ने तपस्या की थी)।

३. वाराह (वि०) : ३. ८३, १८; १०२, २१; १८९, ११; २७२, ५२; ९. ४६, ३८; १२. २०९, १६. ३०; ३४२, ८९; ३४५, १२; ३४९, ३७; १३. १२६, १२।

वाराहपर्वत, एक पर्वत का नाम है : १२. ३४५, २४।

वारिप = वरुण : १३. १५४, २८।

वारिसेन, एक राजा का नाम है : २. ८, २० (यम की सभा में)।

१. वारुण, एक तीर्थ का नाम है : ३. ८८, १३ (पाण्ड्य देश में स्थित)।

२. वारुण = भृगु (१३. ८५, १२५)।

३. वारुण = विष्णु (सहस्रनाम)।

४. वारुण (अधिकांशतः बहु० °णाः) से वरुण के वंशजों का तात्पर्य है : १३. ८५, १२९. १३० (अष्टौ चाङ्गिरसः पुत्राः वारुणाः). १३२ (कवेः पुत्रा वारुणाः···अष्टौ). १३६ (कविं तात भृगुं···तस्मात्तौ वारुणौ स्मृतौ)।

५. वारुण, वि० (स्त्री० °णी) : १. १८, २१ (भूतानि); १०२, ४७; १३५, १९; २. ३, ८ (महाशंखो देवदत्तः); ९, २८. ३० (सभा); १३, २१ (येनाभिषिक्तो नृपतिर्वारुणं गुणमृच्छति। तेन राजाऽपि तं कृत्स्नं संम्राड्गुणमभीप्सति); ४९, २६; ५३, १५ (सागर ने युधिष्ठिर को एक शंख दिया); ६८, ७४. ७५ (पाशान्); ७८, १९ (संयमे); ३. ४१ २९; ८२, ६९ (लोकं); ८३, १६४ (तैजसं वारुणं तीर्थं); १०२, १ (समुद्रं ···वरुणं निधिमम्भसः); १६४, १८ (अर्जुन ने इनका अस्त्र प्राप्त किया); २५४, १८ (वारुणीं दिशम्); ४. ६१, ३१ (अस्त्रं); ६४, २३; ५. ९८, १८ (वारुणे ह्रदे); १०२, ९ (पश्चिमावारुणी दिक्); १५८, ५ (वारुणं गाण्डिवं); १६९, २१; १८०, १२ (परशुराम ने वरुणास्त्र का प्रयोग किया); ६. ८५, २९ (शिखण्डी ने वरुणास्त्र का प्रयोग किया); १२१, ४०; ७. ९८, ५१ (अस्त्रं, सात्यकि ने प्रयोग किया). ५२; १५७, ३४ (द्रोण ने वरुणास्त्र का प्रयोग किया); १८८, ३१; १९४, २; २००, १; २०१, ७३ (कर्म); ८. ८९, १९; ९१, २३; ९. ४६, ३७; १२. ९५, २०; १८३, ४ (पृथिवी पर्वता मेघा मूर्तिमन्तश्च ये परे। सर्वं तद्वारुणं ज्ञेयमापस्तस्तंभिरे यतः); २२७, १८. ८९; ३१८, ३९; १३. १४, २६१; ६२, ७५; ७८, २० (दिशम्); ७९, १४; ८५, ८८. ११६. १४६ (वारुणीं बिभ्रतस्तनुम्); ८६, २५ (वरुणो वारुणान्दिव्यान्सगजान्); ८९, १२; १०७, ७९ (स्थानं); १४२, ४९ (लोकं)।

१. वारुणि, एक वैनतेय का नाम है : १. ६५, ४० (आरुणिर्वारुणि-वैनतेयाः))

२. वारुणि = वसिष्ठ : १. ९९, ७. ९. १८. २९।

३. वारुणि = अगस्त्य : ३. १०३, १३; १०४, १४; १०५, १।

वारुणी, एक देवी, सम्भवतः वरुण की पत्नी का नाम है : २. ९, ६; ४. ९, १६; ५. १०२, १२ (सागर मन्थन से प्रकट हुई)। तुकी० सुरा।

वारुण्य (वि०) : ५. ९८, १४ (भवनं पश्य वारुण्यं···यत्प्राप्य सुरतां प्राप्ताः सुराः)।

वार्क्षी, कण्डु मुनि की पुत्री का नाम है जो दस प्रचेताओं की पत्नी हुई (१. १९६, १५)।

वार्त, एक राजा का नाम है : २. ८, १० (यम की सभा में)।

वार्धक्षत्रि = जयद्रथ, देखिये वस्था०)।

वार्धक्षेमि, एक वृष्णिवंशी का नाम है : १. १८६, ९ (द्रौपदी के स्वयंवर में आये); ५. १७१, १७ (युधिष्ठिरपक्ष के एक महारथी); ७. १०, ५५; २१, ६२; २३, ३५ (इनके अश्वों का वर्णन); २५, ५१ (कृपाचार्य से युद्ध किया); ८. ६, २८ (इनका वध)। तुकी० वार्ष्णेय।

वार्षगण्य, एक ऋषि का नाम है : १२. ३१८, ५९ (विश्वावसु को

उपदेश दिया)।

वार्षपर्वणी = शर्मिष्ठा (देखिये वस्था०)।

१. वार्ष्णेय, राजा नल के सारथि का नाम है : ३. ६०, १०-१२. २१; ६१, १; ६७, ७ (वार्ष्णेयजीवलो); ७१, २२ (सूतं). २५. ३४. ३५; ७२, ४. १५. १७; ७३, १८. ३०. ३३. ३४; ७४, १३।

२. वार्ष्णेय = अभिमन्यु : १४. ६१, २१

३. वार्ष्णेय = बलराम : ५. ५८, ३८; १०. ९, ३० (दुर्योधन के गुरु थे)।

४. वार्ष्णेय = चेकितान : ६. ८४, २०।

५. वार्ष्णेय = श्रीकृष्ण : १. २०२, १५; २१८, ७. १५; २२२, १९; २२३, २ (वार्ष्णेयपार्थौ); २२८. १०; २. २, ७; १५, ९; २०, २१; २१ १३; ३३, १८; ३६, २७. ३०; ३७, २; ३८, १०; ४५, ३२; ५२, ३०; ३. १२, ३८; २२, २१; १८३, ४१; १८९, ५४; ५. ५, ११; ७, १०; ७८, १५. १९; ८०, ८; ८४, ११; ८६, २१; ८७, १०; ८९, १५; ९०, ३. २७. ३८; ९१, ८. ११. ३६; १२४, ७; १३०, ६; १३७, ७; १४१, १. १५. २९. ५४. ५६; १४३, ७. १०; १५४, १; १५८, १२. १३; ६. २५, ४१; २७, ३६; ४८, ११९; ४९, ९; ५०, ३. १२; ५२. १२. १३; ५९, ६४; ८१, ३४; ८४, ४७; १०७, २१. ४८. ५२. ५९; ११२, ३१; ७. ११, ३४; ८२, ३४; ८३, १३; ९२, २४; ९३, १७; ९५, १; १४७, २७; १४८, ३४; १७८, ४; १८२, २२; १८३, ३४. ३५; १९२, ५८; ८. ३२, ८. २८; ३५, ११; ४१, ८२; ४६, ७२; ५८, ७; ७४, ६; ८७, ११५; ९. ७, २४; २४, ४८; २७, २६; ३१, ६०; ६०, ३१. ३७; ६३, १८; १०. ९, ३०; ११. १७, ६. २२; १८, १२; १२. ४८, १५; ५०, २; ५२, २३; ५४, १७; ८१, १३; ३४२, ११७; १३. १७, १७९; ३१, २६; १४. १७, ५; ५२, ३८; ५३, १. २; ५९, १८; ६०, १; ६१, ९; ६६, २७; ६७, ६; ६८, ८. १३।

६. वार्ष्णेय = सात्यकि : १. १, १९६; ५. १६४, ७; ६. ५८, ८; ७२, २८; ७४, २७; ८२, ४२; १०१, ४८. ५६; १०४, ३१. ३२. ३३; ७. ९६, १४. १६; ११०, ४५. ६३. ८३. ९०; ११९, १८. २४; १२६, १४; १४२, ६५; १४३, १३. ५८; १४७, ३७; १९१, ४८; १९८, ५५।

७. वार्ष्णेय = वार्धक्षेमि : ७. २५, ५१. ५२।

८. वार्ष्णेय (द्वि० °यौ) = कृतवर्मा और सात्यकि (९. १७, ७१)।

९. वार्ष्णेय (वि०): १२. २१०, ११. १३ (

१०. वार्ष्णेय (बहु० °याः): वृष्णि वंशियों का द्योतक है : २. ५१, २४ (युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये); ५. २८, ११; ६. १११, १५; १६. ५, २।

१. वार्ष्णेयी : १. १११, २१; ५. १४४, २९; १४. ६१, ३९।

२. वार्ष्णेयी = सुभद्रा : १. २१९, १९; ७. ७२, २७; ७७, १२; १२. १, १६; १४. ६१, ३२।

१. वालखिल्य (बहु० °ल्याः), ऋषियों के एक वर्ग का द्योतक है : १. ३०, २. ९. १५. १६. ४०। "शौनक ने सौति से पूछा कि वालखिल्य मुनियों की तपस्या से गरुड की उत्पत्ति कैसे हुई। तब सौति ने कहा : एक समय कश्यपजी पुत्र की कामना से यज्ञ कर रहे थे जिसमें ऋषि, देवताओं तथा गन्धर्वों ने उनकी अत्यधिक सहायता की। उस यज्ञ में कश्यपजी ने इन्द्र को समिधा लाने के कार्य पर नियुक्त किया था। वालखिल्य मुनियों तथा अन्य देवगणों को भी यही कार्य सौंपा गया था। इन्द्र शक्तिशाली थे अतः उन्होंने समिधा का एक पर्वताकार बोझ उठा लिया और ले आये। मार्ग में उन्होंने अंगूठे के मध्यभाग के बराबर आकार वाले मुनियों को देखा जो पलाश की एक छोटी सी टहनी उठा कर ला रहे थे। इन लघुकाय मुनियों ने आहार छोड़ रक्खा था। तपस्या ही इनका धन था। पानी से भरे गोष्पदों को भी लाँघने में उन्हें बहुत कष्ट होता था। इन्द्र ने आश्चर्यचकित हो कर उन छोटे मुनियों को देख कर उन सब का उपहास किया और उन्हें लाँघ कर शीघ्रतापूर्वक चले आये। इन्द्र के इस व्यवहार से वालखिल्य मुनियों को अत्यधिक क्रोध आया, अतः उन लोगों ने एक ऐसे महान कर्म का अनुष्ठान किया जिसका परिणाम इन्द्र के लिये अत्यन्त भयंकर था। अग्नि में आहुति डालते समय वे वालखिल्यगण यह संकल्प करते थे कि 'सम्पूर्ण देवताओं के लिये कोई दूसरा इन्द्र उत्पन्न हो जो वर्तमान इन्द्र के लिये भयकारक, इच्छानुसार काम करनेवाला और अपनी रुचि के अनुसार चलने की शक्ति रखनेवाला हो। शौर्य और वीर्य में वह वर्तमान इन्द्र से सौ गुना बढ़ कर हो।' उनका संकल्प सुन कर इन्द्र को अत्यधिक संताप हुआ और वे कश्यपजी की शरण में गये। देवराज से सारा समाचार जान कर कश्यपजी ने वालखिल्यों से उनके कर्म की सिद्धि के सम्बन्ध में प्रश्न किया। तब वालखिल्यों ने अपने कर्म की सिद्धि का प्रतिपादन किया। यह सुन कर कश्यपजी ने उन्हें समझाते हुये कहा : 'ब्रह्माजी की आज्ञा से इन्द्र तीनों लोकों के इन्द्र बनाये गये हैं और इधर आप लोग दूसरे इन्द्र की उत्पत्ति के लिये प्रयत्नशील हैं। आप ब्रह्मा के वचन को मिथ्या न करें। साथ ही आप के द्वारा किया हुआ अभीष्ट संकल्प भी मिथ्या न हो। अतः आपके तप से जो बल और सत्वगुण से सम्पन्न पुत्र उत्पन्न हो वह पक्षियों का इन्द्र हो। देवराज इन्द्र आपके पास याचक बनकर आये हैं आप उन पर कृपा करें।' कश्यपजी की बात सुनकर वालखिल्यों ने उनसे कहा : 'आप जिसमें सब का हित हो वैसा ही करें।' इसी समय दक्ष कन्या विनता भी पुत्र की कामना से स्वामी कश्यप के पास आई। कश्यपजी ने विनता को बताया कि उसके दो पुत्र उत्पन्न होंगे जो तीनों लोकों पर शासन करनेवाले होंगे। वालखिल्यों की तपस्या और कश्यप जी के संकल्प से विनता ने अरुण और गरुड नामक दो पुत्र उत्पन्न किये। कश्यप जी ने इन्द्र को उनके पद पर बने रहने का आश्वासन देते हुये उनसे ब्रह्मवादियों और मुनियों का अपमान न करने के लिये कहा (१. ३१)।" १. ३१, १. ६. १६. २१. २२. २७; ७०, २०; ७१, ३९; २११, ५; २.११, २०. ५३ (ब्रह्मा की सभा में); ३. ३, ४४; ९०, १० (सरस्वती तट पर यज्ञ किया); ९९, ५८; १२५, १७; १४२, ५; ७. १९०, ३४; ९. ३७, ४८; ४५, ८; १२. ५९, १११; १६६, २४; २४४, २०; ३४८, १८; १३. १०, १०; १४, ९१ (इन्द्र के द्वारा अपमानित होने पर इन लोगों ने शिव की उपासना करके यह वर प्राप्त किया कि इनके द्वारा उत्पन्न पक्षी इन्द्र के पास से अमृत ले आयेगा). १२३; ८५, १०८ (इनकी उत्पत्ति); ९४, ५. ३९; ११५, ११; १४१, ८९. ९०; १६५, १३।

२. वालखिल्य = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

१. वालिन्, एक असुर का नाम है : २. ९, १२ (वरुण की सभा में)।

२. वालिन्, सुग्रीव के ज्येष्ठ भ्राता, एक वानरराज का नाम है : ३. ११, ४८; १४७, २८; १५७, ५९; २७९, ४५; २८०, १४. १६. १८. ३०. ३५-३७. ३९ (इसने सुग्रीव का राज्य और उसकी पत्नी तारा को छीन लिया था। राम की सहायता से सुग्रीव ने इससे द्वन्द्व युद्ध किया जिसमें श्रीराम ने इसका वध कर दिया); २८२, ७. १०. २७; २८३, २; २८८, १७; ४. २२, ५५; ७. १७८, २८; १९६, ३३; ९. ५५, ३१। तुकी० शक्रपुत्र।

वालिपुत्र = अङ्गद (३. २८२, २८)।

वालिशिख, कश्यप द्वारा कद्रू के गर्भ से उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ३५, ८)।

वालिसुत = अङ्गद (३. २८८, १४)।

वाल्मीक, एक ऋषि का नाम है : ५. ८३, २७ (इन्होंने हस्तिनापुर जाते हुये श्रीकृष्ण की परिक्रमा करके उनका पूजन किया)।

१. वाल्मीकि, एक ऋषि का नाम है : १. ५५, १४; २. ७, २६ (इन्द्र की सभा में); ३. ८५, ११९; ७. १४३, ६७ (पुरा गीतः श्लोको वाल्मीकिना); १२. ४७, ८; २०७, ४; १३. १८, ८ (ब्रह्महत्या के पाप से इन्होंने शिव की उपासना करके मुक्ति प्राप्त की)। तुकी० भार्गव।

२. वाल्मीकि, गरुडपुत्र एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१ ११)।

वाशिष्ठ — देखिये वासिष्ठ।

वाष्कल, हिरण्यकशिपु के पाँचवें पुत्र का नाम है (१. ६५, १८)।

१. वासव = इन्द्र (देखिये वस्था०) : ६. ४५, ३७।

२. वासव = (शिव (सहस्रनाम)।

३. वासव (वि०) : १. ६३, ५९ (वसु उपरिचर से सम्बद्ध)।

४. वासव (वि० इन्द्र से सम्बद्ध) : ३. ८२, ८८; ३१०, ३४; ७. १४७, ३५; १७३, ३८; १८३, ९. १०. ६१ (वासवीं शक्ति). ६२; ९. ११, ५३; १२. ६४, १४; १३. १०७, २१ (लोकम्)।

५. वासव (बहु० °वाः) उपरिचर वसु के पुत्रों का द्योतक है : १. ६३, ३३ (वासवाः पञ्च राजानः पृथग्वंशाश्च शाश्वताः)।

वासवगुरु = बृहस्पति : २. ५०, ९ (देवर्षिर्वासवगुरुर्देवराजाय धीमते)।

वासवज = अर्जुन (४. ५४, १५)।

वासवनन्दन = अर्जुन (७. १४६, ११९)।

वासवानन्तरज, वासवानुज, वासवावरज = विष्णु (देखिये वस्था०)।

वासवि = अर्जुन : ७. १८, २४; ७९, १२; ९२, ४१; १००, ६; ८. ५३, ३५।

वासवी = सत्यवती : १. ६३, ७१; ७. २७, १५।

वासवेय = व्यास (१. १, ५९)।

१. वासिष्ठ = वसिष्ठ के पुत्र शक्ति : १. १७६, ४. १२; १८२, ५; ५. ११७, ११।

२. वासिष्ठ, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, ४८)। तुकी० वासिष्ठी।

३. वासिष्ठ, एक अग्नि का नाम है (३. २२०, १)।

४. वासिष्ठ से वसिष्ठ के वंशजों का तात्पर्य है : ३. २६, ७ (बहु०); ११५, २।

५. वासिष्ठ (वि०) : १. २. ११२ (आख्यानम्); १७५, २. ४२ (सैनिकाः); ५. १०१, १५; १०९, १६।

वासिष्ठम्, से वसिष्ठ की कथा का तात्पर्य है : १. २, ११२ (वासिष्ठमाख्यानम्)। "अर्जुन ने वसिष्ठ के सम्बन्ध में जानना चाहा। तब गन्धर्व ने उनसे कहा : वसिष्ठजी ब्रह्मा के मानसपुत्र हैं। उनकी पत्नी का नाम अरुन्धती है। वसिष्ठ को देवता भी कभी नहीं जीत सके। काम और क्रोध नामक दोनों शत्रु उनकी तपस्या से सदा के लिये पराभूत हो चुके थे। इन्द्रियों को वश में कर लेने के कारण ही वे वसिष्ठ कहलाते हैं। विश्वामित्र द्वारा अपने शक्ति आदि सौ पुत्रों के मारे जाने से वे सन्तप्त रहते थे। उनमें प्रतिशोध लेने की शक्ति तो थी किन्तु उन्होंने विश्वामित्र का विनाश करने के लिये कोई दारुण कर्म नहीं किया। वे अपने मृत पुत्रों को यमलोक से वापस ला सकते थे परन्तु वे यमराज की मर्यादा का उल्लंघन करने के लिये उद्यत नहीं हुये। वसिष्ठ को पुरोहित रूप से प्राप्त करके इक्ष्वाकुकुल के भूपालों ने दीर्घकाल तक इस पृथिवी पर शासन किया था। वसिष्ठ ने उन राजाओं के अनेक यज्ञ भी सम्पन्न कराये थे। पृथिवी को जीतने की इच्छा रखनेवाले राजा को उचित है कि वह जितेन्द्रिय, गुणवान, वेदाभ्यासी, विद्वान तथा धर्म-अर्थ-काम के तत्त्वज्ञ ब्राह्मण को अपना पुरोहित बनाये। वसिष्ठ का इस प्रकार वर्णन करके गन्धर्व ने अर्जुन को भी एक श्रेष्ठ पुरोहित बनाने का परामर्श दिया (१. १७४)।"

"अर्जुन यह जानना चाहा कि विश्वामित्र और वसिष्ठ में वैर कैसे हुआ। गन्धर्व ने कहा : कान्यकुब्ज देश में एक गाधि नामक विख्यात राजा थे। उन्हीं के पुत्र विश्वामित्र थे जो सेना और वाहनों से सम्पन्न हो कर शत्रुओं का मानमर्दन किया करते थे। एक समय मध्य प्रदेश के सुरम्य वनों में उन्होंने एक हिंसक पशु का पीछा किया। उस समय वे प्यास से पीड़ित हो कर महर्षि वसिष्ठ के आश्रम में आये। उन्हें आया देख कर वसिष्ठ ने उनका सत्कार करते हुये आतिथ्य ग्रहण करने के लिये उन्हें आमन्त्रित किया। पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, स्वागत-भाषण तथा हविष्य आदि से उन्होंने विश्वामित्र का सत्कार किया। वसिष्ठ के पास एक कामधेनु थी जो याचित सभी मनोरथों को पूर्ण कर दिया करती थी। हर प्रकार के फल, अन्न, षड्रस भोजन, अमृत के समान मधुर रसायन तथा भाँति-भाँति के रत्न और वस्त्र आदि सब सामग्रियाँ वह कामधेनु प्रस्तुत कर देती थी। राजा विश्वामित्र अपनी सेना और मन्त्रियों के साथ वसिष्ठ के सत्कार से अत्यन्त सन्तुष्ट हुये। कामधेनु का मस्तक, उसकी जाँघे, ग्रीवा, गलकम्बल, पूँछ और थन—ये छः अङ्ग बहुत सुन्दर थे। वह पाँच पृथुल अङ्गों से सुशोभित थी (कामधेनु की सुन्दरता का विस्तृत वर्णन)। विश्वामित्र ने वसिष्ठ से अपने राज्य के बदले में उस नन्दिनी नामक कामधेनु की वसिष्ठ से याचना की परन्तु वसिष्ठ ने उसे किसी प्रकार देना स्वीकार नहीं किया। तब विश्वामित्र ने कहा कि वे क्षात्र धर्म का आश्रय लेकर बलपूर्वक उस धेनु को ले जायँगे। वसिष्ठ ने विश्वामित्र से कहा कि वह जो चाहें करें। तब विश्वामित्र ने हंस और चन्द्रमा के समान श्वेत रंगवाली उस नन्दिनी का अपहरण कर लिया। उस समय वह धेनु वसिष्ठ की ओर देखती हुई खड़ी हो गई। उस पर जोर-जोर से मार पड़ रही थी तो भी वह आश्रम से बाहर नहीं गई। वह धेनु विश्वामित्र के भय से उद्विग्न हो कर वसिष्ठ की शरण में गई और कहा : 'विश्वामित्र के सैनिक मुझे कोड़ों और डण्डों से मार रहे हैं, मैं अनाथ की भाँति क्रन्दन कर रही हूँ। आप मेरी क्यों उपेक्षा कर रहे हैं।'

नन्दिनी के इस आर्तनाद को सुन कर भी वसिष्ठ न तो क्षुब्ध हुये और न धैर्य से विचलित हुये। गाय ने वसिष्ठ से कहा : 'यदि आपने मेरा त्याग नहीं किया है तो बलपूर्वक मुझे कोई नहीं ले जा सकता।' वसिष्ठ ने कहा : 'मैंने तुम्हारा त्याग नहीं किया है। यदि तुम रह सको तो यहीं रहो।' 'यहीं रहो' वसिष्ठ का यह वचन सुन कर क्रुद्ध हो उस धेनु ने विश्वामित्र के सैनिकों को खदेड़ना आरम्भ किया। क्रोध के कारण वह सूर्य की भाँति उद्भासित हो उठी। उसने अपनी पूँछ से ही पह्लवों की सृष्टि की। उसके थन से द्रविड और शक, योनि देश से यवन, और गोबर से असंख्य शबर उत्पन्न हो गये। उसके पार्श्व भाग से पौण्ड्र, किरात, यवन, सिंहल, बर्बर और खसों की सृष्टि हुई। उस धेनु द्वारा रचित इन नाना प्रकार के म्लेच्छ-गणों की विशाल सेनायें अनेक प्रकार के कवच आदि से आच्छादित थीं। उन सब ने विश्वामित्र की सम्पूर्ण सेना को तितरबितर कर दिया। उनके एक सैनिक को धेनु द्वारा उत्पन्न म्लेच्छ सेना के पाँच-पाँच, सात-सात योद्धाओं ने घेर रक्खा था। अत्यन्त क्रुद्ध होने पर भी वसिष्ठ की धेनु से उत्पन्न ये योद्धा विश्वामित्र के किसी सैनिक का प्राण नहीं लेते थे। इस प्रकार नन्दिनी ने विश्वामित्र के सैनिकों को दूर तक भगा दिया। क्रुद्ध होकर विश्वामित्र ने उन पर भयंकर नाराच, क्षुर और भल्ल नामक बाणों की वर्षा की परन्तु वसिष्ठ ने उन सब का केवल बाँस की एक छड़ी से निवारण कर दिया। तब विश्वामित्र ने वसिष्ठ पर दिव्यास्त्रों से प्रहार आरम्भ किया किन्तु वसिष्ठ ने अपनी छड़ी से इन सब अस्त्रों को भी निरुद्ध कर दिया। तदन्तर वसिष्ठ ने विश्वामित्र से अपना पराक्रम दिखाने के लिये कहा परन्तु विश्वामित्र लज्जित हो कर कोई भी उत्तर न दे सके। ब्रह्मतेज का यह अत्यन्त आश्चर्यजनक चमत्कार देख कर विश्वामित्र ने क्षत्रियत्व से खिन्न एवं उदासीन होकर ब्रह्मबल की श्रेष्ठता स्वीकार की। इस प्रकार बलाबल का विचार करके उन्होंने तपस्या को ही सर्वोत्तम बल मानते हुये समृद्धिशाली राज्यलक्ष्मी को छोड़ कर तपस्या में मन लगाया। अपनी घोर तपस्या से सिद्धि को प्राप्त हो विश्वामित्र ने अपने प्रभाव से सम्पूर्ण लोकोंको स्तब्ध एवं संतप्त कर दिया और इस प्रकार अन्ततोगत्वा ब्राह्मणत्व प्राप्त कर लिया। फिर वे इन्द्र के साथ सोमपान करने लगे (१. १७५)।"

"वसिष्ठ के पुत्र शक्ति के शाप से राक्षस हुये कल्माषपाद (देखिये वस्था०) ने शक्ति सहित वसिष्ठ के सभी पुत्रों का भक्षण कर लिया। कल्माषपाद में राक्षसत्व उत्पन्न करने में भी विश्वामित्र का हाथ था और उन्हीं की प्रेरणा से राक्षसाविष्ट कल्माषपाद ने वसिष्ठ के पुत्रों का भक्षण कर लिया था। वसिष्ठ ने यह सुन कर भी कि विश्वामित्र ने उनके पुत्रों को मरवा डाला है, अपने शोक के वेग को उसी प्रकार धारण कर लिया जिस

प्रकार महान् पर्वत सुमेरु इस पृथिवी को धारण करता है। उस समय अपनी पुत्रवधुओं के दुःख से संतप्त हो वसिष्ठ ने विश्वामित्र का मूलोच्छेद करने की अपेक्षा अपने शरीर को ही त्याग देने के विचार से आत्महत्या के अनेक प्रयास किये किन्तु हर बार बच गये (१. १७६)।"

"तदनन्तर वसिष्ठ अपने आश्रम को अपने पुत्रों से सूना देखकर पुनः शोकार्त हो अपने शरीर का त्याग करने के लिये निकल पड़े। उन्होंने वर्षा के जल से भरी नदी को देखकर अपने शरीर को पाशों से भलीभाँति बाँध लिया और फिर उस नदी में कूद पड़े। किन्तु उस नदी ने उन्हें पाशरहित करके पुनः स्थल पर पहुँचा दिया। तब पाशमुक्त हो वसिष्ठ ने उस नदी का नाम विपाशा रख दिया। अत्यन्त शोक से संतप्त वसिष्ठ उस समय एक स्थान में नहीं ठहरते थे। वे इधर-उधर भ्रमण ही किया करते थे। एक बार पुनः हिमालय से निकली एक भयंकर नदी को देखकर वे उसमें कूद पड़े। वह नदी वसिष्ठ को अग्नि के सामान तेजस्वी जानकर शताधिक धाराओं में विभक्त होकर इधर-उधर भाग चली और इस कारण वह शतद्रु नाम से विख्यात हुई। इस बार भी मृत्यु प्राप्त करने में असफल हो वसिष्ठजी अपने आश्रम पर लौट आये। किन्तु जब वह पुनः आश्रम से चले तो उनकी पुत्रवधू अदृश्यन्ती भी उनके पीछे चल पड़ी। उस समय मुनि को पीछे की ओर से संगतिपूर्वक छहों अङ्गों से अलंकृत तथा स्फुट अर्थों से युक्त वेदमन्त्रों के अध्ययन का शब्द सुन पड़ा। तब उन्होंने पीछे चल रही अपनी पुत्रवधू को देखकर उस वेदध्वनि के सम्बन्ध में पूछा। अदृश्यन्ती ने बताया कि वह ध्वनि उसके उदर से निकल रही है। यह सुनकर वसिष्ठ अत्यन्त प्रसन्न हुये और अपनी वंशपरम्परा का लोप न हुआ जानकर मरने से विरत हो गये और पुत्रवधू के साथ आश्रम पर लौटने लगे। इतने में ही राक्षस से अविष्ट राजा कल्माषपाद वसिष्ठ को देखकर उनका भक्षण करने के लिये उद्यत हुये। उस भयानक राक्षस को एक बहुत बड़ी लकड़ी लेकर अपनी ओर आता देखकर भयभीत अदृश्यन्ती ने वसिष्ठ से उस राक्षस के वेग को रोकने का निवेदन किया। वसिष्ठ ने उस राक्षस को पहचान कर अपनी पुत्रवधू के भय का निवारण करते हुये बताया कि वह राजा कल्माषपाद है। तदनन्तर वसिष्ठ ने हुंकार मात्र से ही उसे रोक दिया और फिर मन्त्रपूत जल का छींटा देकर अपने योग के प्रभाव से राजा को शापमुक्त कर दिया। फिर तो राजा ने उस महान वन को अपने तेज से अनुरंजित कर दिया। तदनन्तर सचेत होने पर राजा ने हाथ जोड़कर वसिष्ठ से कहा : 'मैं आपका यजमान सौदास हूँ। इस समय मैं आपकी क्या सेवा करूँ।' वसिष्ठ ने राजा से कहा कि वे अपना राज्य सम्हालें और भविष्य में कभी किसी ब्राह्मण का अपमान न करें। राजा ने वसिष्ठ से एक पुत्र प्राप्त करने की इच्छा प्रकट की। वसिष्ठ ने राजा की बात मानकर उन्हें एक श्रेष्ठ और वंशप्रवर्तक पुत्र प्रदान करने का वचन दिया। यह सुनकर राजा अत्यन्त प्रसन्न हुये और बहुत समय के बाद अपने पुरोहित वसिष्ठ के साथ अयोध्या नगरी में प्रवेश किया। राजा के लौटने से सम्पूर्ण अयोध्या में प्रसन्नता छा गई। तदनन्तर राजा की आज्ञा से रानी मदयन्ती वसिष्ठ के समीप गई। वसिष्ठ ने ऋतुकाल में शास्त्र की अलौकिक विधि के अनुसार महारानी के साथ नियोग किया जिससे उनकी कुक्षि में गर्भ स्थापित हो गया। बहुत समय व्यतीत होने पर भी जब वह गर्भ रानी की कुक्षी से बाहर नहीं निकला तब उन्होंने अश्म (पत्थर) से अपने गर्भाशय पर प्रहार किया। तदनन्तर बारहवें वर्ष में बालक का जन्म हुआ। वही बालक आगे चलकर अश्मक के नाम से प्रसिद्ध हुआ और पौदन्य नामक नगर बसाया (१. १७७)।" तुकी० पराशर।

वासिष्ठी एक नदी का नाम है (३. ८४, ४८)।

वासुकि, नागों के राजा का नाम है : १. १४, ३. ६ (नागों की रक्षा के लिये इन्होंने अपनी जरत्कारु नामक बहन को जरत्कारु ऋषि को उनकी पत्नी के रूप में समर्पित कर दिया); १८, १३ (समुद्र मन्थन के समय इसे मन्थनदण्ड का रज्जु बनाया गया); ३५, ५; ३७, १-३४ (माता के शाप से बचने के लिये इसने अपने भाइयों से परामर्श किया। विभिन्न नागों ने इसके लिये अनेक युक्तियों का परामर्श दिया किन्तु इसने सबको अस्वीकृत कर दिया); ३८, १-१९ (एलापत्र नामक नाग ने कहा : 'मैंने देवताओं से ब्रह्माजी को यह कहते सुना है कि केवल उन्हीं सर्पों का विनाश होगा जो प्रायः लोगों को डँसते रहते हैं, क्षुद्र स्वभाव के हैं और पापाचारी तथा प्रचण्ड विष वाले हैं। ब्रह्माजी ने यह भी कहा था कि यायावर कुल में जरत्कारु नाम से विख्यात एक महर्षि होंगे। उन्हीं के आस्तीक नामक एक महातपस्वी पुत्र उत्पन्न होगा जो जनमेजय के सर्पसत्र को समाप्त कराकर नागों की रक्षा करेगा। वे जरत्कारु नामक द्विजश्रेष्ठ जरत्कारु नामक कन्या को पत्नीरूप में प्राप्त करके उसके गर्भ से आस्तीक को उत्पन्न करेंगे।' इस प्रकार कहकर एलापत्र ने वासुकि को बहन जरत्कारु का महर्षि जरत्कारु से विवाह कर देने का परामर्श दिया); ३९, १-१४ (वासुकि ने अपनी बहन जरत्कारु का सावधानी से पालन पोषण किया। समुद्रमन्थन के बाद वासुकि ने नागों की रक्षा के सम्बन्ध में एलापत्र की बातों की ब्रह्मा जी से चर्चा की। ब्रह्मा ने उन बातों की पुष्टि की। तब वासुकि ने अपनी बहन को जरत्कारु को समर्पित कर दिया)। १. ३७, १. ३. ३०; ३८, १. १६ (वासुकेः सर्पराजस्य जरत्कारुः स्वसा किल). १८; ३९, २. ४ (नागो वासुकिर्बलिनां वरः). ५. १२; ४०, ४ (जरत्कारुरिति ब्रह्मन्वासुकेर्भगिनी तथा). ७; ४६, १९. २१. २३; ४७, १. १२ (वासुकि ने अपनी बहन जरत्कारु को जरत्कारु मुनि को दिया). १६. २८. ३७; ४८, ३. ९. १४ आस्तीक का वासुकि के घर में ही पालन-पोषण हुआ); ५३, १९. २०; ५४, १. ९. ११. १२. १४. १७. १८. २३. २६ (आस्तीक ने नागों की शाप से रक्षा करने का वासुकि को वचन दिया); ५७, ४ (सर्पसत्र में दग्ध हुये इनके वंशजों का उल्लेख). ७; ६५, ४१ (कद्रू के पुत्र); १२३, ७१ (अर्जुन के जन्म के समय उपस्थित); १२८, ६०. ६३. ६५. ६७. ६९; २. ९, ८ (वरुण की सभा में); ३. ८५, ३४. ८६ (भोगवती नाम वासुकेस्तीर्थमुत्तमम्); ४. २, १४ (अर्जुन ने इसकी बहन का हरण किया था); ५. १०३, १ (भोगवती नाम पुरी वासुकिपालिता). ९; १०९, १९; ११७, १७; ६. ३४, २८ (श्रीकृष्ण ने अपने को सर्पों में वासुकि बताया); ७. २०२, ७६ (शिव ने इसे अपनी धनुष की प्रत्यञ्चा बनाया); ८. ३४, २२ (शिव के रथ का कूबर बना); ८७, ४३ (अर्जुन का पक्ष लिया); ९. ३७, ३०. ३२ (इन्हें पन्नगों का राजा बनाया गया); ४५, १६. ५३ (स्कन्द को दो नागपार्षद प्रदान किया); १३. १५०, ६१ (सात धरणीधरों में से एक); १४. ५८, ५०. ५८; १६. ४, १५। तुकी० नागराज्, नागराज, नागेन्द्र, पन्नग, पन्नगराज, पन्नगराजन् पन्नगेश्वर, पन्नगेन्द्र, सर्पराज, सर्पराजन्।

१. वासुदेव = श्रीकृष्ण (देखिये वस्था०)।

२. वासुदेव = बलराम : ४. ७२, २१।

३. वासुदेव, पुण्ड्रों के राजा का नाम है : १. १८६, १२ (द्रौपदी के स्वयंवर में आये); २. १४, २०; ३०, २२ (दिग्विजय के समय भीमसेन ने इन्हें पराजित किया था); ३४, ११ (युधिष्ठिर के राजसूय में सम्मिलित हुये)। तुकी० पौण्ड्रक पुण्ड्राधिप।

वासुदेवप्रिय = स्कन्द (३. २३२, ९)।

वासुदेवसहोदरा = सुभद्रा (९. ५, २०)।

१. वाहिनी, कुरु की पत्नी का नाम है (१. ९४, ५१)।

२. वाहिनी, एक नदी का नाम है (६. ९, ३४)।

विंश, इक्ष्वाकु के पुत्र और विविंश के पिता का नाम है (१४. ४, ४)।

१. विकट, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७, ९६; ११७, ५; १८६, ३ (द्रौपदी के स्वयंवर में गया); ६. ६४, २९ (उन चौदह धार्तराष्ट्रों में यह भी था जिन्होंने भीमसेन को आहत कर दिया); ८. ५१, ७. १६ (भीमसेन ने इसका वध किया था)। तुकी० विकटानन।

२. विकट, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ५९)।

विकटानन, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, ५) तुकी० विकट।

१. विकर्ण, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६३, ११९; ६७, ९४ (धृतराष्ट्र-पुत्रों का उल्लेख); ९५, ५७ (धृतराष्ट्रस्य पुत्राणां चत्वारः प्रधाना'''दुर्योधनो दुःशासनो विकर्णश्चित्रसेनश्चेति); ११७, ४; १३८, ६. १९. २१ (द्रोणाचार्य के उन शिष्यों में यह भी था जिन्होंने द्रुपद को पराजित करने में उनकी सहायता की थी); १८६, १ (द्रौपदी के स्वयंवर में आया); २०४, १०; २०७, १३; २. ३८, ११. १८. २५. २७. ३८. ६२ (इसने भी द्रौपदी को जूये के दाँव पर लगाने को अनुचित बताया था); ७४, २६; ३. १२०, ११; २४१, १८; ४. ३५, ३; ३८, १३; ४७, १६; ५४, ९. १० (अर्जुन ने इसे परास्त किया); ६१, ३७ (अर्जुन पर आक्रमण किया). ४१; ६५, ६. १०. १२; ६९, ५; ५. २७, २५; ४७, ६; ५५, ६५; ५७, १५ (इसे अर्जुन के साथ युद्ध करने के लिये भेजना निश्चित किया गया). ५९; ६५, १२; ६६, ६; ९५, १९; १३१, ४०; ६. १७, २२; १८, ११; २५, ८; ४४, १६; ४५, ५८. ५९ (श्रुतसोम से युद्ध किया); ४८, ६४; ५१, २. ८; ५२, १४. २६. २८. ४०; ५९, ७५; ६२, १६; ६५, १३. ३२; ७१, २१ (सहदेव से युद्ध किया); ७२, २; ७६, १८; ७७, ७; ७८, २१. २२. २४ (अभिमन्यु ने इसे परास्त किया); ७९, २८. ३०-३३ (अभिमन्यु के साथ युद्ध); ८१, २. २८; ८४, ४०; ८६, १; ९२, २४. ३५ (घटोत्कच ने इसे आहत किया); ९४, १४; ९५, १४; १०८, ५७; ११०, १२; १११, ३४. ३५ (नकुल से युद्ध किया); ११३, २. ५. २३; ११४, ३; ११७, ४५. ४६; ११८, ६; ७. ७, ११; २५, ३६ (शिखण्डी का युद्ध में सामना किया); ७४, १६; ८५, ११. ३४; ८७, २१; ९५, ३५; ९६, ३१; १०६, १२; १०७, ३० (नकुल ने इसे पराजित किया); ११६, ३. ७; १२७, ३४; १३७, ३० (भीमसेन ने इसका वध किया). ३२. ५१; १४४, १; १५८, ६५; ८. ५, ८ (भीमसेन द्वारा इसके वध का उल्लेख); ६, १७ (इसने चित्रायुध और चित्रयोधिन् का वध किया था); ९. २, ५१; २४, २४; ११. १९, १. २. ५; २५, ३१। तुकी० भरतर्षभ, भरतसत्तम, धार्तराष्ट्र, धार्तराष्ट्रज, दुर्योधनावर, कुरुप्रवीर, कुरुवर्धन (द्वि०)।

२. विकर्ण, एक ऋषि का नाम है जो शिवभक्त थे (१३. १४, ९९)।

३. विकर्ण (बहु०) एक जाति के लोगों का नाम है : ६. ५१, १५ (दुर्योधन की सेना में)।

विकर्तन : ५. ५५, ६३ (द्रौणिविकर्तनः)।

विकर्तृ = विष्णु (सहस्रनाम)।

विकल्प, एक स्थान के निवासियों का नाम है (६. ९, ५९)।

विकाशिनी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १८)।

विकुञ्ज (बहु०) एक जाति के लोगों का नाम है जो दुर्योधन की सेना में सम्मिलित हुये थे (६. ५६, ९)।

विकुण्ठ = विष्णु (श्रीकृष्ण) : ६. २१, १५। तुकी० वैकुण्ठ।

विकुण्ठन, एक राजा का नाम है : १. ९५, ३५-३६ (ये सुदेवा के पति तथा अजमीढ के पिता थे)।

विकुर्वण = शिव (सहस्रनाम)।

१. विकृत – काम ने यह रूप धारण करके राजा इक्ष्वाकु के साथ वार्ता की : १२. १९९, ८८. ८९. ९१. ९३. १००. १०२ (काम और क्रोध ने विकृत और विरूप नाम धारण किया। दोनों का इक्ष्वाकु के साथ संवाद)।

२. विकृत = शिव (सहस्रनाम)।

विकृतवक्त्र = शिव (सहस्रनाम)।

विकृति = श्रीकृष्ण (१२. ४३, ९)।

१. विक्रम, स्कन्द के एक पार्षद का नाम है (९. ४५, ३७)।

२. विक्रम = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. विक्रमिन्, एक प्राचीन राजा का नाम है : १. १, २३२ (संजय द्वारा वर्णित प्राचीन राजाओं की सूची में)।

२. विक्रमिन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

विक्रीत, एक प्रजापति का नाम है (१२. ३३४, ३६)।

१ विक्षर, दनायु के पुत्र एक असुर का नाम है : १. ६५, ३३; ६७, ४१. ४२ (विक्षरो नाम तेजस्वी वसुमित्रो नृपः'''द्वितीयो विक्षराख्यस्तु नराधिप महासुरः)। तुकी० असुर।

२. विक्षर = विष्णु (सहस्रनाम)।

विक्षित् : १३. १३७, १६ (करन्धमस्य पौत्रस्तु मरुत्तोऽविक्षितः सुतः)। तुकी० अविक्षित्।

विख्यात = शिव (सहस्रनाम)।

विगाहन, एक कुलाङ्गार राजा का नाम है (५. ७४, १६)।

विग्रह, स्कन्द के एक पार्षद का नाम है : ९. ४५, ५० (समुद्र ने इसे स्कन्द को दिया था)।

विघ्नेश = गणेश : १. १, ७६. ७८।

विचख्नु, एक प्राचीन राजा का नाम है (१२. २६५, १ (इतिहासं पुरातनं'''गीतं राज्ञा विचख्नुना)।

विचारविद् = शिव (सहस्रनाम)।

विचित्र, क्रोधवशसंज्ञकगण के अंश से उत्पन्न एक राजा का नाम है (१. ६७, ६१)।

विचित्ररूप = हिरण्यगर्भ (१२. ३०२, १९)।

विचित्रवीर्य, सत्यवती के गर्भ से शान्तनु द्वारा उत्पन्न पुत्र का नाम है : १. १, ९४ (क्षेत्रे विचित्रवीर्यस्य कृष्णद्वैपायनः पुरा); २, १०० (विचित्रवीर्यस्य'''राज्ये सम्प्रतिपादनम्); ६३, ११३ (कृष्णद्वैपायनाज्जज्ञे धृतराष्ट्रो'''क्षेत्रे विचित्रवीर्यस्य); ९५, ५० (ये और चित्राङ्गद शान्तनु और सत्यवती के पुत्र थे). ५१ (अम्बिका और अम्बालिका के साथ इनका विवाह हुआ). ५२ (इनकी विधवाओं से व्यास ने पुत्र उत्पन्न किये); १०१, ३. १२ (चित्राङ्गद की मृत्यु के बाद इन्हें बाल्यकाल में ही राजगद्दी पर बैठना पड़ा);१०२, ५३. ५८. ६५. ६६. ६८. ७०. ७३ (अम्बा और अम्बालिका के साथ इनका विवाह हुआ किन्तु ये शीघ्र ही यक्ष्माग्रसित होने के कारण मृत्यु को प्राप्त हुये); १०५, २. १९. ३३. ३४ (व्यासजी ने इनकी विधवाओं, अम्बिका और अम्बालिका से धृतराष्ट्र और पाण्डु को तथा दासी अम्बिका से विदुर को उत्पन्न किया); १४५, १; १५१, २५; १९२, १८; २. ४१, २३; ३. ११९, १२; ५. १४७, २१. २२; १७२, १८; १७३, ६. ७; १७४, २; १७६, ४९; १३. ४४, ३८; १५. ९, १। तुकी० कौरव, कौरव्य, कुरुकुलोद्वह।

विचित्रवीर्यसुतोत्पत्ति – "विचित्रवीर्य की माता सत्यवती ने कुछ संकोच से हँसते हुये भीष्म से कहा : 'मैं महाराज वसु के वीर्य से उत्पन्न हुई हूँ। एक समय महर्षि पराशर मेरी नाव पर बैठे। मुझे देख कर कामपीडित पराशर ने दुर्लभ वर दे कर मेरे साथ समागम किया। तदनन्तर उन्होंने कहा कि मैं अपने गर्भ को त्याग कर पुनः कन्या हो जाऊँगी। महर्षि द्वैपायन व्यास मेरे वही पराशर द्वारा उत्पन्न पुत्र हैं। शरीर का रंग साँवला होने से ही उन्हें लोग कृष्ण कहते हैं। मेरे आग्रह और तुम्हारे अनुरोध पर वे अपने भाई विचित्रवीर्य के क्षेत्र से अवश्य पुत्र उत्पन्न कर देंगे।' सत्यवती की बात सुन कर भीष्म ने अपनी सहमति दे दिया। तब सत्यवती ने व्यास का चिन्तन किया और क्षण भर में व्यासजी वहाँ प्रकट हो गये। माता सत्यवती ने उनका कुशल क्षेम पूछने के बाद उन्हें बताया कि उनके भाई विचित्रवीर्य की दोनों अनुपम सुन्दरी पत्नियाँ निःसन्तान हैं। अतः सत्यवती ने अपनी उन दोनों पुत्रवधुओं से सन्तान उत्पन्न करने का व्यासजी से निवेदन किया। तब व्यासजी ने कहा कि वे सत्यवती की आज्ञा का पालन करेंगे किन्तु केवल धर्म को ही ध्यान में रखकर (काम के वश में न हो कर) ही विचित्रवीर्य की पत्नियों से पुत्र उत्पन्न करेंगे। उन्होंने यह भी कहा कि उनके असुन्दर रूप को देख कर उन विचित्रवीर्य की पत्नियों को भयभीत नहीं होना चाहिये। यदि अम्बिका उनके गन्ध, रूप, वेष और शरीर को सहन कर ले तो वह एक उत्तम बालक उत्पन्न कर सकती है। तदनन्तर व्यासजी ने माता सत्यवती से कहा कि ऋतु स्नान के बाद कौसल्या (अम्बिका) शुद्ध वस्त्र और शृङ्गार धारण करके शय्या पर मिलन की प्रतीक्षा करे। ऐसा कह कर व्यासजी अन्तर्धान हो

गये। तब सत्यवती ने अपनी पुत्रवधू कौसल्या को व्यासजी के साथ समागम के लिये तैयार किया (१. १०५)।"

"सत्यवती ने अपनी पुत्रवधू कौसल्या (अम्बिका) को व्यासजी के साथ समागम करके एक श्रेष्ठ पुत्र उत्पन्न करने के लिये कहा। यथासमय उसके देवर व्यासजी उसके पास आये। व्यासजी का रंग काला तथा जटायें पिङ्गलवर्ण की थीं। उनकी आँखें भी चमक रही थीं उनके भयानक स्वरूप को देख कर काशिराजकुमारी कौसल्या ने भय से आँखें बन्द कर लीं। उसके साथ समागम करने के बाद व्यास ने अपनी माता से कहा कि उनके समागम के फलस्वरूप जो पुत्र उत्पन्न होगा वह दससहस्र हाथियों के बल से युक्त, सौभाग्यशाली एवं विद्वान् होगा। किन्तु माता के दोष से वह अन्धा होगा। तब माता ने कुरुवंश का संरक्षक होने योग्य एक दूसरा पुत्र उत्पन्न करने के लिये व्यास से निवेदन किया। तब व्यास ने विचित्रवीर्य की दूसरी पुत्रवधू, अम्बालिका के साथ समागम किया। समागम के समय व्यास के भयंकर स्वरूप को देखकर अम्बालिका भी कान्तिहीन और पाण्डुवर्ण हो गई थी। फलस्वरूप व्यास ने कहा कि उसका पुत्र पाण्डुवर्ण होगा। तदनन्तर व्यासजी ने माता से पाण्डु के उत्पन्न होने की वार्ता दी। इसके बाद ऋतुकाल आने पर सत्यवती ने अपनी बड़ी पुत्रवधू अम्बिका को पुनः व्यासजी से मिलने के लिये नियुक्त किया परन्तु सुन्दरी अम्बिका ने व्यासजी के भयंकर स्वरूप और उनके शरीर की कुत्सित गन्ध का चिन्तन करके सत्यवती की आज्ञा न मान कर अपनी अम्बिका नामक सुन्दर दासी को ही व्यासजी के पास भेज दिया। महर्षि व्यास के आने पर उस दासी ने उनका स्वागत किया और उनके साथ शय्या पर लेटी। व्यासजी ने उसके साथ समागम से सन्तुष्ट होकर कहा 'तू अब दासी नहीं रहेगी। तेरे उदर से एक श्रेष्ठ, धर्मात्मा तथा समस्त बुद्धिमानों में श्रेष्ठ पुत्र उत्पन्न होगा।' उस दासी से उत्पन्न बालक ही विदुर हुये। महात्मा माण्डव्य के शाप से साक्षात् धर्मराज ही विदुर के रूप में उत्पन्न हुये। विदुर अर्थतत्त्व के ज्ञाता और काम-क्रोध से रहित थे। श्रीकृष्ण द्वैपायन व्यास ने सत्यवती को ये सभी बातें बता दीं। इस प्रकार व्यासजी माँ के धर्म से उऋण हो कर वहीं अन्तर्धान हो गये (१. १०६)।"

विचित्रवीर्योपरम (: से विचित्रवीर्य की मृत्यु का तात्पर्य है। "जब विचित्रवीर्य युवावस्था को प्राप्त हुये तब भीष्मने काशिराज की तीन कन्याओं के लिये आयोजित स्वयंवर में जा कर उन कन्याओं का विचित्रवीर्य से विवाह करने के लिये कहा। तदनन्तर भीष्म वहाँ उपस्थित राजाओं के साथ युद्ध करके बलात् ही उन कन्याओं को ले आये। उस युद्ध में भीष्म ने अत्यन्त पराक्रम दिखाया और शाल्व को वारुण और ऐन्द्रास्त्रों से पराजित किया था। उन कन्याओं में अम्बा सबसे ज्येष्ठ थी। उसने भीष्म को बताया कि उसने मन से सौभराज शाल्व का वरण कर रक्खा है। शाल्व ने भी उसे स्वीकार करने का वचन दिया है। यह सुन कर भीष्म ने उसे मुक्त कर दिया। अन्य दो कन्याओं, अम्बिका और अम्बालिका को ला कर भीष्म ने विचित्रवीर्य से विवाह करा दिया। विवाह के सात वर्ष के बाद ही विचित्रवीर्य यक्ष्मा से ग्रस्त हो कर मृत्यु को प्राप्त हो गये (१. १०२)।

१. विजय, एक प्राचीन राजा का नाम है : १, १. २३३ (संजय द्वारा वर्णित प्राचीन राजाओं की सूची में)।

२. विजय = अर्जुन (देखिये वस्था०)।

३. विजय, भगवान् शंकर के त्रिशूल का नाम है : २. १०, ३५ (कुबेर की सभा में); ३. २३१, ३८ (विजयो नाम रुद्रस्य'''शूलः). ३९ (वियस्यापि'''रुद्रस्य पट्टिशः)।

४. विजय, एक दिव्य धनुष का नाम है : ५. १५८, ५ (माहेन्द्रं विजयं धनुः). ७. ९ (महेन्द्र के इस धनुष को रुक्मिन् ने प्राप्त किया और उनसे द्रुम को मिला); ८. ३१, ४२-४७ (कर्ण ने कहा कि 'मेरे धनुष का नाम विजय है। यह समस्त आयुधों में श्रेष्ठ है। इसे इन्द्र के लिये विश्वकर्मा ने बनाया था। इन्द्र ने जिसके द्वारा दैत्यों को जीता था, जिसकी टङ्कार से दैत्यों को दसों दिशाओं के पहचानने में भ्रम हो जाता था उसी धनुष को इन्द्रने परशुराम को दिया था और परशुरामजी से मुझे प्राप्त हुआ था। उसी धनुष से मैं अर्जुन से युद्ध करूँगा। वह धनुष गाण्डीव से श्रेष्ठ है और उसी के द्वारा परशुरामजी ने इक्कीस बार पृथिवी पर विजय प्राप्त की थी). ५३ (विजयं च महद्दिव्यं'''धनुरुत्तमम्); ४२, ३८; ४९, २६; ५९, ८. ६१; ६४, ४६।

५. विजय, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : ७. २५, ४५; ११६, ८; १५६, १२२।

६. विजय = शिव (सहस्रनाम)।

७. विजय = विष्णु (सहस्रनाम)।

विजयकालविद् = शिव (सहस्रनाम)।

१. विजया, दशार्हराज की पुत्री और भुमन्यु की पत्नी का नाम है : १. ९५, ३३ (इसने सुहोत्र नामक पुत्र को जन्म दिया)।

२. विजया = दुर्गा (उमा) : २. १०. ३५ (कुबेर की सभा में); ४. ६, १६; ६. २३, ६।

३. विजया, मद्रनरेश द्युतिमान् की पुत्री थी जिसने स्वयंवर में पाण्डु पुत्र सहदेव का वरण किया और सहदेव से सुहोत्र नामक पुत्र उत्पन्न किया (१. ९५, ८०)।

४. विजया, श्रीकृष्ण की माला का नाम है : ८. ७६, ३५ (आज्वल्यमानं विजयां स्रजं च)

विजयात् = शिव (सहस्रनाम)।

विजितात्मन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

विटभूत, एक असुर का नाम है : २. ९, ६५ (वरुण की सभा में)।

वितत्य, गृत्समदवंशी विहव्य के पुत्र का नाम है : १३. ३०, ६२ (सत्य के पिता)।

वितर्क, महाराज कुरु के वंशज धृतराष्ट्र के पुत्र थे (१. ९४, ५८)।

वितस्ता, एक नदी का नाम है : २. ९, १९ (वरुण की सभा में); ३. ८२, ८९. ९० (काश्मीरेष्वेव नागस्य भवनं'''वितस्ताख्यमिति ख्यातं); १३०, २०; १८८, १०५ (नारायण के उदर में); ५. ११९, ८; ६. ९, १६; ८. ४४, ३२; १३. २५, ७; १४६, १८; १६५, २५।

वित्तगोप्तृ = कुबेर (देखिये वस्था०)।

वित्तदा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २८)।

वित्तपति, वित्तानां पतिः, वित्तेश = कुबेर (देखिये वस्था०)।

विदण्ड, एक राजा का नाम है जो अपने पुत्र दण्ड के साथ द्रौपदी के स्वयंवर में आया था (१. १८६, १२)।

विदभ (बहु० °भाः) एक स्थान के निवासियों का नाम है (६. ९, ६४)।

१. विदर्भ (बहु० °र्भाः) विदर्भ देश के निवासियों का द्योतक है : ३. ५३, ५ (यहाँ के शासक भीम थे). २२. २३; ५४, २६; ६०, ३३; ६१, २३. ३२. ३५; ६४, ४७. ७६; ६८, १३; ६९, २१. २४; ७१, २. १०. १७; ७२, १९. ४२; ७३, १; ६. ९, ४३; ५१, १३ (दुर्योधन की सेना में); १२. २७२, ३। तुकी० दशी-विदर्भ (बहु०)।

२. विदर्भ = भीम : ३. ५३, ३२ (विदर्भ विशांपते)।

विदर्भतनया = दमयन्ती (३. ६४, १२)।

विदर्भपति = भीम (३. ५४, ५; ७३, २१)।

विदर्भराज = भीम (३. ६४, १२५)।

१. विदर्भराज = भीम (३. ६१, ३६; ६९, १)।

२. विदर्भराज, लोपामुद्रा के पिता का द्योतक है (३. ९६, २१)।

३. विदर्भराज, एक राजा का द्योतक है : ३. १२०, ११ (विदर्भराजोपचितां सुतीर्थाम्)।

विदर्भराजतनया = दमयन्ती (३. ६४, ३३)।

विदर्भराजन् = भीम (३. ५४, २१)।

विदर्भा, विदर्भों की राजधानी का नाम है : ३. ६९, २१; ७१, २; ७२, १९; ७३, १। तुकी० कुण्डिन)।

विदर्भाधिपति = भीम (३. ६४, ४४; ६९, ३५)।

विदर्भाधिपनन्दिनी = दमयन्ती (३. ६४, ९)।

विदारण = विष्णु (सहस्रनाम)।

विदिग्भानु = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

विदिशः = विष्णु (सहस्रनाम)।

विदिशा, एक नदी का नाम है : २. ९, १८ (वरुण की सभा में उपस्थित नदियों में से एक); ६. ९, २८।

विदुर, विचित्रवीर्य की अम्बिका नामक विधवा की अम्बिका नामक दासी के गर्भ से व्यास द्वारा उत्पन्न पुत्र का नाम है जो साक्षात् धर्मराज के अवतार थे : १. १, ९५. १४०. १५३; २, १०३. १०४. ११८. २२८. ३१५. ३४६. ३४९; ६०, ६ (व्यास ने इन्हें उत्पन्न किया था); ६१, १४. १५. २२; ६३, ९७ (धर्म ने विदुर के रूप में जन्म लिया). १४ (विदुरः शूद्रयोनौ तु जज्ञे द्वैपायनादपि); ६७, ८६ (अत्रिपुत्र, अर्थात् धर्म के अवतार); ९५, ५५. ६६. ७१; १०६, २८ (अम्बिका नामक दासी के गर्भ से उत्पन्न). २९ (धर्मो विदुररूपेण शापात्तस्य महात्मनः); १०८, १८ (धर्मो विदुररूपेण शूद्रयोनावजायत); १०९, १७. २२. २५. २६; ११०, ७. ८; ११४, २. १३. १४ (राजा देवक की पुत्री पारसवी के साथ इनका विवाह हुआ); ११५, २६. ३०. ३४ (जब दुर्योधन का जन्म हुआ तब इन्होंने उसका परित्याग कर देने के लिये धृतराष्ट्र को परामर्श दिया किन्तु धृतराष्ट्र ने इनकी बातों को स्वीकार नहीं किया); ११९, २४ (क्षत्ता); १२६, १७; १२७, १. ५. १६. २८. २९ (इन्होंने पाण्डु और माद्रीकी अन्त्येष्टि सम्पन्न किया); १२९, १७. १९. ३६. ४१; १३४, २. ८. ३५; १३५, १४. १६; १३६, २८; १४१, ३. ९. १२. २२; १४३, १२; १४५, २. ५. १९. २७-२९. ३२. ३३; १४७, १-३. ६. ७. १४. २०; १४९, १. ३. ४. ८. १२. १३; १५०, ५. १८ (इन्होंने युधिष्ठिर को दुर्योधन के कुचक्रों के प्रति सतर्क किया और अपने एक विश्वासपात्र को भेजकर लाक्षागृह से पाण्डवों की रक्षा कराई); २००, १६. १८. २१. २६. २८; २०१, १. २; २०२, २४; २०५, १; २०६, ७. १०. १६ (पाण्डवों को काम्पिल्य से वापस लाने के लिये इन्हें भेजा गया); २०७, १. १०; २. ३३, ५५; ३४, ५ (युधिष्ठिर के राजसूय में सम्मिलित हुये); ३५, ९ (व्यय करने का कार्य इन्हें सौंपा गया); ४९, ४६. ५०-५२. ५४. ५९. ६० (यद्यपि इन्होंने धृतराष्ट्र के प्रस्ताव की पुष्टि नहीं की तथापि उनकी आज्ञा से पाण्डवों को जूये के लिये निमन्त्रित करने गये); ५०, ६-८. १० (ये देवगुरु बृहस्पति द्वारा इन्द्र को उपदेशित सम्पूर्ण शास्त्र के ज्ञाता थे और कुरुवों में उसी प्रकार मेधावी थे जिस प्रकार वृष्णियों में उद्धव); ५६, ६. ७. १६. २१ (धृतराष्ट्र की आज्ञा से इन्होंने पाण्डवों को जूये के लिये निमन्त्रित किया); ५७, २. ३. ५ (इन्होंने जूये के आयोजन को उचित नहीं माना); ५८, १. ४. ६. ११-१३. १५. १७; ६०, २; ६२, १. २ (कव्य के कथन का उद्धरण देकर इन्होंने धृतराष्ट्र को दुर्योधन के परित्याग का परामर्श दिया); ६३, १; ६४, १. ६. ७. ११. १२; ६५, ४२; ६६, २ (इन्होंने दुर्योधन को चेतावनी दिया); ६८, १३. ५८. ५९ (विरोचन और सुधन्वा के कलह की कथा सुनाया). ८८. ८९; ७०, १८; ७१, १६. २३. २४; ७३, १५ (मन्त्री); ७४, २५; ७८, २. ५. ९ (इन्होंने कुन्ती को अपने घर में रक्खा और युधिष्ठिर को सान्त्वना दी); ७९, ३१. ३६; ८०, १. ४. ९. १०. ३२ (धृतराष्ट्र के साथ संवाद); ८१, ६. २७. २९; ३. १, १२. ३५; ४, १. ३. १८. २१ (धृतराष्ट्र द्वारा निवृत्त कर दिये जाने पर ये पाण्डवों के पास गये); ५, ५. ६. ७. १०-१२; ६, १-३. ७. ८. १३. १८. २१. २२. २५ (धृतराष्ट्र ने इन्हें वापस बुला लिया); ७, १. ३ (मन्त्री धृतराष्ट्रस्य धीमतः विदुरः). ४; ८, ६. १२; ९, २. २९; १०, २.३८; ११, २. २८. ६९ (किर्मीरवध का समाचार दिया); २९, ४७; ५१, ४५; २४९, १५; २५६, १. ५. २१. २३; २५७, ८; ३१४, २२ (धर्म ने इन्हें अपना अंशज बताया); ४. ४, ५२; ५०, १३; ५. २, ५; ३, ११; ६, ६. ९; २०, १; २६; १२. १३. १६. १९; ३०, ६. ३१; ३१, ११; ३३, १. ३-५. ७-९. १३. १६; ३४, २. ४ (धृतराष्ट्र को उपदेश दिया); ३५, २. १२. २२. ३९ (इन्होंने विरोचन और सुधन्वा के बीच कलह की कथा सुनाया); ३६, १. २२. २३. ५१; ३७, २. १०; ३८, १; ३९, २. १०; ४०, १ (धृतराष्ट्र को और अधिक उपदेश दिया); ४१, १. २. ४. ५. ७-९ (इन्होंने सनत्सुजात को धृतराष्ट्र को उपदेश देने के लिये प्रेरित किया); ४२, १; ४७, १. ७; ४८, १०९; ५०, ११; ५१, ५२ (विक्रुष्टं विदुरेणादौ···भयं); ५४, २१; ५५, ९; ६३, ९; ६४, १. ८ (धृतराष्ट्र को परामर्श दिया); ६७, ८; ७३, ११; ८०, १६. १८; ८३, ४८ (कुरूणां मन्त्रधारिणम्). ६९; ८५, २; ८७, १; ८८, १; ८९, २२. २५ (श्रीकृष्ण इनके घर के अतिथि बने); ९०, १; ९१, ३४. ३५. ४१; ९२, १; ९३, ३. १२ (श्रीकृष्ण के साथ इनका वार्तालाप); ९४, २. १६. ३३. ५०; १२४, ५. १७; १२५, ७. १८; १२८, १९. २६; १२९, १. ६; १३०, १३. १७. २३. ३०. ४०. ४१ (श्रीकृष्ण की प्रशस्ति की); १३१, १. १४; १३९, १०; १४७, ४२; १४८, ६. ८. ९. ११. १७. १८. २७. ३१. ३५; १५०, १. ६. १५. १६; १५४, ४. ८. ११. २४; १६०, ४८ (सत्यागो विदुरस्य); ६. ४९, १० (वार्यमाणो मया नित्यं गान्धार्या विदुरेण च); ६५, ३. २५; ७६, २४ (उक्तं हि विदुरेणाहं क्षितं); ८८, ४०; ८९, ६. १२; ९६, २ (दृष्टवान् पुरा···क्षयं घोरं); १२१, ३६ (वाक्यं··· विदुरेण); ७. ८५, २७ (इन्होंने जूये को अनुचित बताया). ४६; ११४, ८८; १५१, ११. १२; ८. २, ६; ४, ८ (धृतराष्ट्र को सान्त्वना दी); ६९, ३०; ९६, ५६; ९. १, २३. ४०. ५०; २, ६०. ६२; २४, ३५. ३९. ४१. ४२. ४८; २९, २९. ८८. ९६. १०१. १०४ (ये युयुत्सु से मिले); ६१, २०; ६३, ४६; १०. १, १४; २, ३३; ११. १, २८. ४४; २, १. २; ३, २; ४, २; ५, २; ६, ४; ७, २; ८, १. २. १८; ९, ९ (इन्होंने धृतराष्ट्र को पुनः सान्त्वना दी); १०, १. ३; १३, ४; १५, ४२; १७, २०; २५, ३५; २६, २५; १२. १, १; ७, २८; ३७, ४१; ४०, ५; ४१, १०. १७; ४२, ९; ४४, १४; ४५, ८. ११; १६७, १. ४. ५; १३. १६७, १०; १६८, ११. १२; १४. १, १०. ११. १८; २, ५; ५२, २६. ५४. ५६.५७; ५३, १७; ६०, ३४; ६६, ६. ७; ७०, १७; ७१, ७; १५. १, ५. १२. १५. १६; २, २८; ३, २०. ७६; ४, २०; ५, ३. ६; ७, २१; ८, २; ११, १. ६. ८. २५; १२, ३. ७; १३, १. १३. १५; १४, १; १५, ८; १६, ४ (धृतराष्ट्र के साथ ये भी वन गये); १८, ४. १९. २१; १९, १. ५; २०, २० (धर्म के एक अंश से उत्पन्न होने के कारण मृत्यु के पश्चात् ये युधिष्ठिर में प्रवेश कर जायेंगे); २१, ६. ९; २६, १५. १६. २१. २२. २४-२८. ३२ (विदुर संज्ञकं···कलेवरमिहैवं ते धर्म एष सनातनम्); २८, ११. १२ (माडव्यशापाद्धि···धर्मो विदुरतां गतः). २१; २९, २; ३१, ९ (धर्मस्यांशोऽभवत्क्षत्ता); ३५, ३; १८. ५, २२ (धर्म में प्रवेश किया)।

तुळी० निम्नलिखित पर्याय :—

आजमीढ — देखिये वस्था०।

कुरुनन्दन — देखिये वस्था०।

कौरव — देखिये वस्था०।

क्षत्त : १. १, १००; २, ११८. १४५; ६१, १९; ११९, २४; १२६, १५; १२९, १३; १३४, ७; १३५, १५; १४१, १६; १४२, १७. २२; १४५, ३०; १४७, १५; १४९, ८; २००, १७. २५. २९; २०६, ४; २. ३५, ९; ४९, ४३. ४५. ५५; ५७, ४; ५८, ५. १०. १९; ६४, १-४. ७. ११; ६६, १; ६७, २. ४१; ७५, २; ७९, ३५; ८०, ३. ५२; ८१, ३८; ३. ५, ७; ६, १६; ११, १; २९, ४७; ५१, ४६; २३८, ६; २५६, २२; ५. २६, १७; २९, ३९. ४०; ३३, २. ६; ८६, १; ८१, २७; ९०, ५३. ५४; ९१, ३२. ३८. ३९; ९४, ४. ८; १२५, १८; १२७, ४; १२९, १६. २०; १३०, ३२. ४३; १३१, ३६. ४०; १४४, १; १४७, ९; १४८, ४ (पाण्डु के छोटे भाई). ३२; ६. ८८, ३३; ८९, ९; ७. २४, १२; १३६, २३; १३७, ४१. ४८; १४७, १३; १५१, २०; ८. ६९, ३०; ७३, १०१; ९. १, ५५. ५२. ५५; १९, १७; २८, ३५; २९, २८; ११. ८, २; १०, ६; २६, २७; १२. ११५, ९; १४. ५२, २१; १५. ३१, ९; १८. ५, २२।

विदुरपरिणय — भीष्म ने राजा देवक की पुत्री पारसवी का विदुर

के साथ विवाह कराया। विदुर ने अपनी पत्नी से अपने समान ही उत्कृष्ट अनेक पुत्र उत्पन्न किये (१. ११४)।"

विदुरागमन, से विदुरागमनपर्व का तात्पर्य है : १. २, ४५. ८७।

विदुरागमनपर्व, महाभारत के चौदहवें अवान्तर पर्व का नाम है जो आदिपर्व के अन्तर्गत आता है : "सब राजाओं को अपने-अपने गुप्तचरों द्वारा यह यथार्थ समाचार मिल गया कि द्रौपदी का विवाह पाँचों पाण्डवों के साथ हुआ है। उन्होंने पहले यह सुन रक्खा था कि कुन्ती अपने पुत्रों सहित लाक्षागृह में जल गई। अब उन्हें जीवित सुनकर राजा लोग यह मानने लगे कि पाण्डवों का पुनर्जन्म हुआ है। वे सभी राजा तब अपने अपने राज्यों को चले गये। पाण्डवों के आग से बच जाने और राजा द्रुपद के सम्बन्धी हो जाने से कौरव अत्यन्त भयभीत हो उठे। विदुर ने जब यह सुना कि पाण्डवों ने द्रौपदी को प्राप्त कर लिया है और धृतराष्ट्र पुत्र अभिमान चूर्ण हो जाने से लज्जित होकर लौट आये हैं, तब वे मन-ही-मन अत्यन्त प्रसन्न हो उठे। विदुर की प्रसन्नता से धृतराष्ट्र ने यह समझा कि द्रुपदकन्या ने दुर्योधन का वरण कर लिया है। इस कल्पना से वे भी प्रसन्न हो उठे किन्तु विदुर ने जब उन्हें सत्यता से अवगत किया तब वे दिखावटी प्रसन्नता दिखाने लगे। धृतराष्ट्र ने विदुर से कहा : 'वे वीर पाण्डव कुशलपूर्वक जीवित बच गये हैं और उन्हें मित्रों का सहयोग भी प्राप्त हो गया है। कौन ऐसा राजा है जो द्रुपद को मित्ररूप में प्राप्त कर जीवित नहीं रहना चाहेगा।' विदुर जी ने यह आशा प्रकट की कि धृतराष्ट्र की बुद्धि सौ वर्षों तक ऐसी ही बनी रहे। तदनन्तर विदुर जी अपने घर चले गये। उनके जाने के बाद कर्ण और दुर्योधन ने धृतराष्ट्र के पास आकर कहा : 'इस समय जैसा अवसर उपस्थित है उसमें हमें क्या करना चाहिये। हमें सोच-विचार कर यह निश्चय करना है कि किसी प्रकार पाण्डव सेनासहित हमारा सर्वनाश न कर बैठें।' (१. २००)।

"धृतराष्ट्र ने दुर्योधन से शत्रुओं को वश में करने के उपाय के सम्बन्ध में विचार-विमर्श किया। उन्होंने यह भी कहा कि वे दुर्योधन से सहमत हैं किन्तु अपना यह मत वे विदुर पर प्रकट करना नहीं चाहते। इसी कारण उन्होंने विदुर के सामने पाण्डवों की प्रशंसा की थी। तब दुर्योधन ने पाण्डवों पर विजय प्राप्त करने के अनेक उपाय बताये (१. २०१)।

"कर्ण ने कहा कि दुर्योधन के कूटनीतिक प्रयास सफल नहीं होंगे। कर्ण ने कहा कि पाण्डव अभी जब तक बहुत शक्तिशाली नहीं हो पाये हैं तब तक उन्हें शक्ति प्रयोग द्वारा वशीभूत कर लेना चाहिये। धृतराष्ट्र ने भीष्म, द्रोण और विदुर को बुलाकर इस सम्बन्ध में विचार-विमर्श किया। (१. २०२)।

"भीष्म ने कहा कि पाण्डवों को आधा राज्य दे देना चाहिये (१. २०३)।

"द्रोणाचार्य ने भीष्म के विचारों का अनुमोदन किया और यह कहा कि उपहारों के साथ राजा द्रुपद के पास एक दूत भेजना चाहिये और उनको यह समाचार देना चाहिये कि राजा धृतराष्ट्र उनको अपना सम्बन्धी बना कर अत्यधिक प्रसन्न हैं। द्रोण ने द्रुपद को यह भी सूचित करने का परामर्श दिया कि धृतराष्ट्र पाण्डवों को हस्तिनापुर बुलाकर उनका राज्याभिषेक कर देंगे। कर्ण ने भीष्म और द्रोण के विचारों का तीव्र विरोध करते हुये कहा कि सुख और शान्ति भाग्य के अनुसार मिलती है। मित्रों से इस दिशा में कोई सहायता नहीं मिल सकती। कर्ण ने इस सम्बन्ध में मगधराज अम्बुवीच का उदाहरण दिया (१. २०४)।

"भीष्म और द्रोण के विचारों का अनुमोदन करते हुये विदुर ने कहा पाण्डवगण अजेय हैं क्योंकि उनकी सहायता स्वयं जनार्दन, बलराम और सात्यकि करते हैं (१. २०५)।

"धृतराष्ट्र ने भीष्म, द्रोण और विदुर के विचारों से सहमति प्रकट की और विदुर को आज्ञा देते हुये कहा : 'तुम स्वयं जाकर पाण्डवों, उनकी माता कुन्ती तथा देवरूपिणी वधू कृष्णा को सत्कारपूर्वक ले आओ।' धृतराष्ट्र की आज्ञा से विदुरजी द्रौपदी, पाण्डव तथा महाराज यज्ञसेन के लिये नाना प्रकार के धन-रत्नों की भेंट लेकर राजा द्रुपद और पाण्डवों के पास गये। वहाँ जाकर वे न्याय के अनुसार बड़े-छोटे क्रम से द्रुपद और अन्य लोगों के साथ हृदय से लगकर नमस्कार आदि पूर्वक मिले। विदुर जी ने पाण्डवों, कुन्ती, द्रौपदी, तथा द्रुपद के पुत्रों के लिये रत्नादि भेंट करने के बाद द्रुपद से कहा : 'भीष्म, धृतराष्ट्र आदि ने आपको और पाण्डवों को शुभकामनायें भेजी हैं। सभी लोग पाण्डवों से मिलने के लिये अत्यन्त व्यग्र हैं। अतः आप द्रौपदी सहित पाण्डवों को हस्तिनापुर चलने की शीघ्र आज्ञा दें। आप जब आज्ञा दे देंगे तब मैं यहाँ से राजा धृतराष्ट्र के पास शीघ्रगामी दूत भेजकर यह कहला दूँगा कि कुन्ती तथा कृष्णा के साथ समस्त पाण्डव शीघ्र हस्तिनापुर पहुँचेंगे।' (१. २०६)।"

विदुला, सौवीरराज सञ्जय की माता का नाम है : १. २, २३४ (विदुलायाश्च पुत्रस्य प्रोक्तं चाप्यनुशासनम्); ५. १३३, १ (विदुलायाश्च संवादं पुत्रस्य), ३-५; १३४, १ (कुन्ती ने श्रीकृष्ण से कहा कि वे युधिष्ठिर को विदुला द्वारा अपने पुत्र को प्रोत्साहित करने का वृत्तान्त बतायें); १५; १६, २०; १७, १४. १८ (वासुदेवमचूचुदम् विदुलायाः प्रलापैस्तैं पालनार्थं च तत्कृतम्)।

विदुलापुत्रशासन से विदुला द्वारा अपने पुत्र को दिये गये शासनात्मक उपदेश का तात्पर्य है (१. २, ६३)। "कुन्ती ने बताया कि एक समय विदुला का पुत्र सिन्धुराज से पराजित हो अत्यन्त दीनभाव से घर आकर सो रहा था। राजरानी विदुला ने अपने उस औरस पुत्र को इस दशा में देखकर उसकी निन्दा की। विदुला ने कहा : 'तू सर्वथा क्रोधशून्य है। तुझे क्षत्रिय नहीं कहा जा सकता। क्या तू नपुंसक हो गया है ? अपने को दुर्बल मानकर स्वयं अपनी अवहेलना न कर। अपने मन को शुभसंकल्पों से सम्पन्न करके निडर हो जा, भय को सर्वथा त्याग दे। दो घड़ी भी प्रज्वलित रहना अच्छा है किन्तु दीर्घकाल तक सुलगते रहना अच्छा नहीं है। जिसके महान् और अद्भुत पुरुषार्थ एवं चरित्र की सब लोग चर्चा नहीं करते वह मनुष्य अपने द्वारा जनसंख्या की वृद्धिमात्र करनेवाला है। ऐसा मनुष्य न तो पुरुष है और न तो स्त्री ही। तुझे हिंजड़ों, कापालिकों, क्रूर मनुष्यों तथा कायरों के लिये उचित भिक्षा आदि निन्दनीय वृत्ति का आश्रय कभी नहीं लेना चाहिये। जिस क्षत्रिय के हृदय में अमर्ष है और जो शत्रुओं के प्रति क्षमाभाव धारण नहीं करता वही पुरुष कहलाता है (५. १३३)।

"विदुला ने पुत्र से कहा : यदि तू पौरुष को छोड़ देने की इच्छा करता है तो शीघ्र ही नीच पुरुषों के मार्ग पर जा पहुँचेगा। तेरा नाम सञ्जय है। युद्ध में विजय प्राप्त करके अपना नाम सार्थक कर। जहाँ आज के लिये और कल सवेरे के लिये भोजन नहीं दिखाई पड़ता उससे बढ़कर महान् पापपूर्ण कोई दूसरी अवस्था नहीं है — ऐसा शम्बरासुर का कथन है। एक शत्रु का वध करने से ही शूरवीर पुरुष विश्व में विख्यात हो जाता है। वीर पुरुष युद्ध में अपना नाम सुनाकर शत्रुसेना को खदेड़ कर अथवा किसी प्रमुख शत्रु का वध करके ही उत्तम यश प्राप्त कर लेता है। हमारे कुल में कभी कोई ऐसा पुरुष उत्पन्न नहीं हुआ जो दूसरे के पीछे-पीछे चलता रहा हो। स्वयं विधाता ने जिसकी सृष्टि की है, प्राचीन और अत्यन्त प्राचीन पुरुषों ने जिसका वर्णन किया है, परवर्ती अतिपरवर्ती सत्पुरुष जिसका वर्णन करेंगे, तथा जो चिरन्तन एवं अविनाशी है, उस सनातन और उत्तम क्षत्रिय-हृदय को जानती हूँ। इस जगत में जो कोई भी क्षत्रिय उत्पन्न हुआ है और क्षत्रिय-धर्म को जाननेवाला है वह भय से अथवा आजीविका की ओर दृष्टि रखकर भी किसी के सामने नतमस्तक नहीं हो सकता। महामनस्वी क्षत्रिय मदमत्त हाथी के समान सर्वत्र निर्भय विचरण करे और सदा ब्राह्मणों को तथा धर्म को ही नमस्कार करे। क्षत्रिय ससहाय अथवा असहाय हो, वह अन्य वर्णों के लोगों को वश में रखता है और समस्त पापियों को दण्ड देता हुआ जीवन भर वैसा ही उद्यमशील बना रहता है (५. १३४)।

"विदुला के पुत्र ने अपनी माता से कहा : 'तेरा हृदय ऐसा प्रतीत होता है मानो काले लोहपिण्ड से बना है। क्षत्रिय के आचार-विचार कैसे आश्चर्यजनक हैं जिसमें स्थिर होकर तू मुझे इस प्रकार युद्ध में लगा रही है।'

माता विदुला ने पुत्रको उत्तर देतेहुये कहा : 'यदि तू अपने कर्तव्यका पालन नहीं करेगा और तुझसे जैसी सम्भावना थी उसके विपरीत स्वभावका परिचय देकर शत्रुओंके प्रति क्रूरतापूर्ण व्यवहार नहीं करता तो तेरा अपयश सब ओर फैल जायगा। ऐसा अवसर आने पर भी यदिमैं तुझे कुछ नहीं कहूँ तो मेरा वह वात्सल्य गदही के स्नेह के समान शक्तिहीन तथा निरर्थक होगा। धर्म, अर्थ और गुणों से युक्त, देवलोक तथा मनुष्यलोक में भी उपयोगी और सत्पुरुषों द्वारा आचरण में लाये हुये सत्कर्म से ही तू मेरा प्रिय हो सकता है (५. १३५)।

"विदुला ने पुत्र से कहा : 'अभी हम लोगों के पास बड़ा भारी खजाना है जिसका तुम्हें पता नहीं है। अभी तुम्हारे सैकड़ों सुहृद हैं जो सुख-दुःख में तुम्हारे साथ रहेंगे।' कुन्ती ने श्रीकृष्ण को बताया कि माता की बात सुन कर दुर्बल-हृदय सञ्जय ने चाबुक से मार खाये अच्छे घोड़े के समान माता के उस समस्त उपदेश का यथावत् पालन किया और अपने सभी अभीष्टों को सिद्ध कर लिया। इस सम्पूर्ण इतिहास का नाम 'जय' है और वियज की इच्छा रखने वाले पुरुष को इसका श्रवण करना चाहिये। कुन्ती ने श्रीकृष्ण से निवेदन किया कि वे इस इतिहास का वर्णन करके युधिष्ठिर को प्रोत्साहित करें (५. १३६)।"

विदूर – देखिये १. विदूरथ (बरधा०)।

१. विदूरथ, महाराज कुरु के द्वारा दशार्हकुलोत्पन्न शुभाङ्गी के गर्भ से उत्पन्न हुये पुत्र का नाम है : १. ९५, ३९. ४० (यहाँ विदूर पाठ है)।

२. विदूरथ, एक वृष्णिवंशी राजा का नाम है : १. १८६, १९ (ये द्रौपदी के स्वयंवर में गये); २१९, १०; ७. ११, २७; १८. ५, १६ (मृत्यु के बाद देवों में प्रविष्ट होने वाले राजाओं में से एक)।

विदूरथसुत, एक पूरुवंशी क्षत्रिय नरेश का नाम है जिसके पुत्र को ऋक्षवान पर्वत पर रीछों ने पाल कर बड़ा किया था। यह परशुराम के क्षत्रिय संहार से बच गया था (१२. ४९, ७६)।

१. विदेह (बहु० °हाः) एक स्थान के निवासियों का द्योतक है : २. ११३, २८ (दिग्विजय के समय मिथिला में पाण्डु ने इन्हें पराजित किया था); २. २९, ४ (पूर्वदिग्विजय के समय भीमसेन ने इन्हें पराजित किया था); ५. ७४, १५ (हयग्रीवो विदेहानां); ६. ११७, ३२ (अर्जुन पर आक्रमण किया); ७. ४, ६ (कर्ण ने इन्हें भी पराजित किया था); ७०, १२ (राम जामदग्न्य ने इनका वध किया था);८. ३, १९ (युधिष्ठिर की सेना में। कर्ण ने इनका संहार किया); ८, १९ (कर्ण इन्हें पहले पराजित करके दुर्योधन का करद बना चुका था); ९, ३४; १२. ३१८, ९७ (जनक देवराति इनके शासक थे); ३२०, ११; ३२५, १९. २२ (जनक द्वारा शासित)।

२. विदेह, विदेहों के देश का नाम है : ३. १३०, १३ (द्वारं विदेहादुत्तरं)।

१. विदेहराज, युधिष्ठिरकालीन एक राजा का नाम है : १. १८७, १६ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित)।

२. विदेहराज = जनक : ३. १३२, ४; २७४, ९ (सीता के पिता); १२. १८, ३ (°महिषी); २८, ५८; १७८, १ (जनक); २७६, ३ (अत्राप्युदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम्। गीतं विदेहराजेन माण्डव्ययानुपृच्छते); २९७, ४१; ३२६, १०; १३. ४५, ६ (सुक्रतुर्वाक्यमब्रवीत्... विदेहराजस्य जनकस्य महात्मनः)।

विदेहराजदुहितृ- से विदेह राजकी पुत्री का तात्पर्य है : १३. ४६, १२ (इसके द्वारा गाये एक श्लोक का उद्धरण)।

विदेहराजन् = जनक (१२. १८, २)।

विद्या, मूर्तिमान विद्यादेवी के लिये प्रयुक्त हुआ है : २. ११, २०; ३. २३१, ४८।

विद्यातीर्थ, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, ५३)।

विद्याधर, एक प्रकार के अर्धदेवताओं का नाम है : १. ५६, ९; २२८, ३३ (गणाः); ३. ३, ४२; ८२, ९४; १०८, ११; १४५, १४; १५८, ३९; १५९, १९; ७. ९८, ३४; १३९, ५५; १६३, १३; ९. ३७, २१; ४५, ११; ४६, ८८; १२. २८३, १३; ३३३, १५; १३. १४, ३६५. ४०१; १८. ६, ७।

विद्याधराधिप = शक्रधर्मा (२. १०, २७)।

विद्याधरी – द्रौपदी से यह पूछा गया कि वह विद्याधरी तो नहीं है (४. ९, १५)।

विद्याधरेन्द्र = जाम्बवान् (१३. १४ ४२)।

विद्यावास = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

विद्युज्जिह्व, एक राक्षस का नाम है जिसका दुर्योधन ने वध किया था (६. ९१, २०)।

विद्युज्जिह्वा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ८)।

विद्युता, एक अप्सरा का नाम है जिसने अष्टावक्र के स्वागत में कुबेर-भवन में नृत्य किया था (१३. १९, ४५)।

विद्युताक्ष, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६२)।

विद्युत्पर्णा एक अप्सरा का नाम है : १. ६५, ४९ (यह कश्यप द्वारा प्राधा के गर्भ से उत्पन्न हुई थी); १२३, ६२ (अर्जुन के जन्मोत्सव के समय नृत्य किया था)।

१. विद्युत्प्रभ. एक दानव का नाम है। रुद्रदेव की कृपा से इसे एक लाख वर्षों तक तीनों लोकों का आधिपत्य, नित्य पार्षद पद, एक करोड़ पुत्र और कुशद्वीप का राज्य प्राप्त करने का वरदान मिला था (१३. १४, ८२-८४)।

२. विद्युत्प्रभ एक ऋषि का नाम है : १३. १२५, ४४. ५१ (इन्द्र को उपदेश दिया)।

विद्युत्प्रभा (बहु० °भाः) उत्तर दिशा की दस अप्सराओं का नाम है (५. ११९, २१)।

विद्युत्स्तनितगर्जित = शिव (सहस्रनाम)।

विद्युद्वर्चस् एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३३)।

विद्युन्मालिन् एक असुर का नाम है : ७. २०२, ६४-६५ (यह लौहपुर का अधिपति था); ८. ३३, ५ (तारक का पुत्र). २२ (लौहपुर का अधिपति था)।

विद्योता, एक अप्सरा का नाम है जिसने अष्टावक्र के स्वागत में कुबेर-भवन में नृत्य किया था (१३. १९, ४५)।

विद्वत् = शिव (सहस्रनाम)।

विद्वत्तम = विष्णु (सहस्रनाम)।

विधर्म = श्रीकृष्ण (१२. ४३, १०)।

१. विधातृ का बहुधा धातृ (धाता) के साथ उल्लेख मिलता है। कहीं कहीं यह ब्रह्मा का भी द्योतक है : १. १, २४७ (विधातृविहितं मार्गं); ३, १६६ (उत्तङ्क ने नागलोक में धाता और विधाता को दो स्त्रियों के रूप में देखा); १६, २५; २३, १७ (गरुड के साथ समीकृत); ६६, ५० (ब्रह्मा के पुत्र); १९१, १४ (रूपं पाञ्चाल्या विधात्रा विहितं स्वयम्); २. ७, १४ (इन्द्र की सभा में); ३. २५, १६; ३०, १ (नमो धात्रे विधात्रे च यौ मोहं चक्रतुस्तव); ३२, ७; ४८, १८ (सृष्टोन्तकः सर्वहरो विधात्रा); १२५, २३ (धाता विधाता च।वरुणश्चोर्ध्वमागताः); १३४, ९; १८९, ४. ६. ५५; १९८, २५ (ब्राह्मण के रूप में इन्होंने शिबि की परीक्षा ली); २०७, २१; २६५, ४; ४. ५६ ११ (अर्जुन का युद्ध देखने आये); ५. २३, १७; २८, ५ (प्रायश्चित्तं विहितं यद्विधात्रा); ५२, १९ (सृष्टोऽन्तकः सर्वहरो विधात्रा); १५१, ३६; १६१, २७; ७. ९४, ४६; २०२, १०५ (शिव के साथ समीकृत); ९. ४५, ४ (स्कन्द के अभिषेक के समय उपस्थित थे). ४३ (स्कन्द को दो पार्षद दिये); १२. १५, ३५ (दण्डो विधात्रा विहितो); २५, ५; २२५, १० (नो धाता न विधाता मां विदधाति कथञ्चन); २५९, २६; २८०, ६३ (विष्णु के साथ समीकृत); १३. १४, ४०८ (शिव के साथ समीकृत); १०३, ४२ १६, २२; १८, २८; ३८, ३० (लोका विहिता विधात्रा); १४५, ३१ (धर्मो मया प्रोक्तो विधात्रा (= ब्रह्मा और भगीरथ का संवाद); १४५, ३१ (धर्मो मया प्रोक्तो विधात्रा स्वयमीरितः); १६०, ४१ (शिव के साथ समीकृत); १४. ४२, ६६ (स

हि धाता विधाता च स प्रभुः सर्वतोमुखः। हृदयं सर्वभूतानां महानात्मा प्रकाशते)।

२. विधातृ = शिव (सहस्रनाम)।

३. विधातृ = विष्णु (सहस्रनाम)।

विधान : १. ८१, १२; २. १७, ४०; ४८, २; १२. २८, १८. २०; १८१, ८. ११; ३२२, ८. ११।

विधि, मूर्तिमान विधि-विधान अर्थात् भाग्य का द्योतक है : १. ६६, ४४; १०६, १४; ३. ९, १; १०, ३२; ६५, ३१; ७१, ३१; २०८, २. ३; २५२, १४ (दैवाच्च विधिनिर्मितात्); २७३, ६; २७८, १८ (विधिचोदिता); ३०८, २७; ५. ८, ५२; २९, २९; ८२, ४६; ११८, १०; ११. ८, ४३. ४७; १२. २८, २४; ३३, २१; ३४, २८; १६७, ४७; १७९, २७. ३०; २०९, ३५ (= विष्णु); २२४, २१; २३५, १३; २७९, २२; २८०, ५३ (स्वं स्वं विधिं यान्ति विपर्ययेण); १३. ६, ४९ (विधिना कर्मणाचैव स्वर्गमार्गमवाप्नुयात्); ११५, ५० (प्रमाणं विधिनिर्मितम्)।

विधेयात्मन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

विनत = शिव (सहस्रनाम)।

विनता, दक्ष की पुत्री, कश्यप की पत्नी तथा वैनतेयों, अर्थात् गरुड आदि की माता का नाम है : १. १६; ६. ९-११. १४. १६. १७. २२. २४ (अरुण और गरुड की माता); २०; २. ३ (विनता और कद्रू ने उच्चैःश्रवा के रंग के सम्बन्ध में शर्त लगाया); २१, १; २२, ५ (कद्रूश्च विनताचैव दाक्षायण्यौ); २३, १. ३. ४ (शर्त हार जाने से यह कद्रू की दासी बनी); २५, २. ३; २७, १२. १३; २८, २. १०. १३. १४ (यदि इसके पुत्र गरुड नागों के लिये अमृत ला दें तो यह दासी भाव से मुक्त हो सकती है। तब इसने गरुड को अमृत लाने का आदेश दिया); ३०, ४१; ३१, २४. ३३; ३४, २५; ३५, १. २; ३६, १०; ५४, ६; ६५, १२ (दक्ष की पुत्री और कश्यप की पत्नी). ४० (इनके पुत्रों की संख्या छः है); ६६, ७१ (द्वौ पुत्रौ विनतायास्तु विख्यातौ गरुडारुणौ); २. ११, ३९ (ब्रह्मा की सभा में); ३. २३०, १२ (ये स्कन्द की माता बनीं). २६ (= शकुनिग्रह); ५. १०१, ३ (विनताकुलकर्तृभिः)। तुकी० दाक्षायणी (एक० और द्वि०)।

विनतात्मज = गरुड : ५. १०७, १६; ११२, १. १४. १९; ११८, २१।

विनतानन्दवर्धन = गरुड : १. २३, १२।

विनतासुत = गरुड : १. ३०, १९; ३२, २०; ३३, १५; ५. २०५, २६; ११४, १०; १२. ३३७, ३७।

विनतासूनु = गरुड : ५. ११२, ४।

विनदी, एक नदी का नाम है : ६. ९, २७।

विनशन, एक तीर्थ का नाम है : ३. ८२, १११ (यहाँ सरस्वती अदृश्य भाव से बहती है); ८४, ११२ (एक अन्य तीर्थ जो पूर्व में स्थित है); १३०, ३ (यह निषादों के राष्ट्र का द्वार है अतः निषादों से घृणा के कारण सरस्वती यहाँ अदृश्य भाव से बहती है); ९. ३६, ५४; ३७, १ (शूद्राभीरान्प्रतिद्वेषाद्यत्र नष्टा सरस्वती). २ (तस्मात्तु ऋषयो नित्यं प्राहुर्विनशनेति च)।

विनायक (बहु० ° काः) एक प्रकार के गणदेवता का नाम है : १. २८४, २०२; १३. १५०, २५ (गणेश्वर विनायकाः)।

विनयितृ = विष्णु (सहस्रनाम)।

विनाशन, काला नामक कश्यपपत्नी के गर्भ से उत्पन्न एक दानव का नाम है : १. ६५, ३५; तुकी० ६७, ३८ (विनाशनस्तु चन्द्रस्य)।

विनीतात्मन्, एक प्राचीन राजा का नाम है (१. १, २३५)।

१. विन्द, अवन्ती के एक राजा का नाम है जो अनुविन्द का भ्राता था : २. ३१, १० (दिग्विजय के समय सहदेव ने इसे पराजित किया था); ४४, २०; ५. ६६, ६; १६६, ६; १९५, ५; ६. १६, १५; १७, ३७; ४५, ७२. ७५; ४७, ४९; ४९, ३१; ५१, १७; ५६, ७; ५९, ७६; ८१, ३. २७; ८३, १८; ८६, ३३. ३७ (धृष्टद्युम्न पर और फिर युधिष्ठिर पर आक्रमण किया); १०२, २४; १०८, ५८; ११३, १. ६ (भीमसेन से युद्ध किया). १०. २२; ११४, २२ (अर्जुन से युद्ध किया); ७. २०, ९; २५, २० (विराट से युद्ध किया); ३२, ३९; ७४, २७; ८५, १६; ९५, ३६. ४३; ९९, २६ (अर्जुन ने इसका वध किया); ८. ५, १०; ७२, १९; ११. २५, २८ (इसके प्रति शोक)। तुकी० आवन्त्यौ, अगला शब्द।

२. विन्द, कैकेयराज का नाम है जो अनुविन्द का भाई था; ८. १३, ६ (सात्यकि ने इसका वध किया)। तुकी० कैकेय (एक० और द्वि०) तथा कैकेय (एक० और द्वि०)।

३. विन्द, धृतराष्ट्र के एक पुत्र और अनुविन्द के भाई का नाम है (१. विन्द भी यही व्यक्ति हो सकता है ?) : १. ६७, ९४; ११७, ३; ३. २४२, ८ (गन्धर्वों ने इसे भी बन्दी बना लिया); ७. १२७, ३४. ६ (भीम ने इसका वध किया)।

विन्ध्य, भारत के एक प्रमुख पर्वत का नाम है : १. २०९, ७. १०; २१२, ६; २२१, ८१ (प्रतिविन्ध्य के नाम की उत्पत्ति); २. १०, ३१ (कुबेर की सभा में उपस्थित); ३. ६१, २२; १०३, १६। "लोमश जी ने युधिष्ठिर को बताया कि सूर्यदेव प्रतिदिन उदय और अस्त के समय गिरिराज मेरु की परिक्रमा करते हैं। यह देखकर विन्ध्यगिरि ने सूर्य देव से अपनी परिक्रमा करने के लिये भी कहा। तब सूर्य ने विन्ध्य को बताया कि वे अपनी इच्छा से मेरुगिरि की परिक्रमा नहीं करते। स्वयं विधाता ने ही उनके लिये यह मार्ग निश्चित किया है। सूर्य के उत्तर से क्रुद्ध होकर विन्ध्य सूर्य और चन्द्रमा का मार्ग अवरुद्ध करने की इच्छा से बढ़ने लगा। यह देख कर सब देवताओं ने एक साथ मिलकर विन्ध्य को उसके निश्चय से विरत करने का प्रयास किया किन्तु उसने देवों के अनुरोध को स्वीकार नहीं किया। तब देवताओं ने मुनिवर अगस्त्य के आश्रम पर आकर अपना प्रयोजन बताया। देवताओं की बात सुनकर अगस्त्य जी अपनी पत्नी लोपामुद्रा के साथ विन्ध्य पर्वत के पास आकर बोले : 'मैं किसी कार्य से दक्षिण दिशा की ओर जा रहा हूँ। तुम मुझे मार्ग प्रदान करो। जब तक मैं पुनः लौट कर न आऊँ तब तक मेरी प्रतीक्षा करते रहो। मेरे लौटने के बाद तुम पुनः अपनी इच्छानुसार बढ़ते रहना।' विन्ध्य के साथ ऐसा नियम करके अगस्त्य जी दक्षिण चले गये और फिर नहीं लौटे। इस प्रकार महर्षि के प्रभाव से ही विन्ध्य पर्वत अपना बढ़ना रोक कर उनके लौटने की प्रतीक्षा में स्थिर है (३. १०४, १-१५)।" ३. १०४, १. ३. ७. ९. १२. १४. १५; १५०, १०; १८८, ११४ (मार्कण्डेय जी ने इसे भी नारायण के शरीर में देखा); ३१३, ३२; ४. ६, १७ (विन्ध्ये चैव नगश्रेष्ठे); ६. ९, ११ (भारतवर्ष के कुल पर्वतों में से एक); ७. ९२, ५३; १७९, ५५ (विन्ध्यतुल्यप्रमाणम्); २०२, ७१ (शिव ने विन्ध्य और गन्धमादन को अपने रथ का वंशध्वज बनाया); ८. ३४, २२ (शिव ने हिमवत् और विन्ध्य को अपने रथ का अपस्कर और अधिष्ठान बनाया); ९. ४५, १४ (मूर्तिमान). ५० (इसने स्कन्द को दो पार्षद दिये); १२. ५९, ९७ (निलया म्लेच्छाः); १३. २५, ४९ (एक तीर्थ); १६५, ३१; १४. ४३, ४; १८. २, २० (विन्ध्यशैलोपमैः प्रेतैः)।

विन्ध्यचुलिक (बहु०) एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ६२)।

विपण = शिव (सहस्रनाम)।

विपाट, कर्ण के छोटे भाई का नाम है जिसका अर्जुन ने वध किया था (७. ३२, ६२-६३)।

विपाठ, एक बाण विशेष का नाम है जो अन्य बाणों से आकार में बड़ा होता है (१. १३९, ६)।

विपाप, एक अग्नि का नाम है : ३. २१९, १३ (विपापोऽग्निः)।

विपापा, एक नदी का नाम है (६. ९, १५)।

विपाप्मन्, एक सनातन विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३०)।

विपाशा, एक नदी का नाम है : १. १७७, ५ (वसिष्ठ को पाशरहित कर इसने उन्हें पुनः धरती पर फेंक दिया था इसी से वसिष्ठ ने इसका नाम विपाशा रख दिया); २. ९, १९ (वरुण की सभा में); ३. १३०,

८ (इसमें ही वसिष्ठ पाशरहित हो गये थे); १८८, १०१ (मार्कण्डेय जी ने इसे भी नारायण के उदर में देखा); ६. ९, १५; ८. ४४, ३२. ४१ (बहि और हीक नामक पिशाच इसी में निवास करते थे); १३. ३, १२-१३ (वसिष्ठ इसमें पाश सहित कूद पड़े किन्तु इसने उन्हें पाशरहित करके पुनः बाहर फेंक दिया। इसी कारण वसिष्ठ ने इसका नाम विपाशा कर दिया); २५, २४. ४७; १०२, ४६; १४६, १८; १६५, १९।

१. विपुल सौवीर देश के राजा का नाम है : १. १३९, २२ (अर्जुन के हाथों मारा गया)।

२. विपुल, मगध की राजधानी गिरिव्रज के समीप के एक पर्वत का नाम है (२. २१, २)।

३. विपुल, एक भृगुवंशी ऋषि का नाम है : १३. ४०, २. १६. २२. २४. २६. २७. ३६. ३९. ४१. ५४. ५६. ५७. ५९; ४१, ३. ६. ९. १०. १४. १९. २०. २७. २९-३३; ४२, १. १२. १३. २०-२२. २४. २६. २७. २८. ३२; ४३, २. ३. १७. २७ (इन्होंने अपने गुरु देवशर्मा की पत्नी रुचि की इन्द्र से रक्षा की); १६५, ४५ (ये उत्तर दिशा के ऋषि थे)। तुकी० भार्गव, भृगुसत्तम, भृगूद्वह, भृगूत्तम, विप्रर्षि।

विपुलोपाख्यान—"भीष्म ने बताया : प्राचीन काल में देवशर्मा नामक एक ऋषि थे। उनके रुचि नामवाली एक अद्वितीय स्त्री थी। रुचि का रूप देखकर देवता, गन्धर्व, दानव, सभी मतवाले हो जाते थे। इन्द्र उस पर विशेष रूप से आसक्त थे। देवशर्मा नारियों के चरित्र को जानते थे, अतः वे यथाशक्ति उसकी रक्षा करते थे। एक समय देवशर्मा ने यज्ञ करने का निश्चय किया और इस सम्बन्ध में उन्हें कुछ समय के लिये बाहर जाना पड़ा। उन्होंने अपने प्रिय शिष्य भृगुवंशी विपुल को बुला कर कहा : 'मैं यज्ञ करने के लिए जाऊँगा। तुम मेरी इस पत्नी रुचि की यत्नपूर्वक रक्षा करना क्योंकि देवराज इन्द्र सदा इसे प्राप्त करने की चेष्टा में लगे रहते हैं। तुम्हें इन्द्र की ओर से सदा सावधान रहना चाहिये क्योंकि वह अनेक प्रकार के रूप धारण करता है।' कठोर व्रती विपुल ने अपने गुरु की बात को स्वीकार करते हुये यह जानना चाहा कि जब इन्द्र आता है तब उसके कौन-कौन से रूप होते हैं और उस समय उसका शरीर और तेज कैसा होता है। देवशर्मा ने तब इन्द्र के विभिन्न रूपों आदि के सम्बन्ध में विपुल को बताया। गुरु की बातें सुन कर विपुल ने अपनी योगशक्ति से रुचि के शरीर में प्रवेश कर लिया। विपुल के शरीर के सभी अंगों ने तदनुसार रुचि के अंगों में प्रवेश कर उन पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया (१३. ४०)।

"तदनन्तर किसी समय देवराज इन्द्र रुचि को प्राप्त करने की इच्छा से उचित अवसर देखकर दिव्य शरीर धारण किये उस आश्रम में आये। वहाँ पहुँचकर उन्होंने देखा कि विपुल का शरीर निःश्चेष्ट पड़ा है। दूसरी ओर स्थूल नितम्बा एवं पीन पयोधरों से सुशोभित, विकसित कमलदल के समान विशाल नेत्र एवं मनोहर कटाक्षवाली पूर्णचन्द्रानना रुचि बैठी हुई दिखाई दी। देवराज ने अपना परिचय देते हुए रुचि से अपना अभिप्राय बताया। उस समय रुचि के शरीर में स्थित विपुल ने इन्द्र का अभिप्राय समझ कर रुचि को काम विकार से रहित और उसकी सम्पूर्ण इन्द्रियों को योगबल से बाँध लिया था। उन्होंने रुचि की वाणी से इन्द्र को इस प्रकार सम्बोधित कराया : 'भोःकिमागमने कृत्यमिति तस्यांस्तु निःसृता।' उसके मुख से ऐसी संस्कारभूषणा वाणी निःसृत हुई देखकर इन्द्र आश्चर्यचकित हो गये। उन्होंने अपनी दिव्य दृष्टि से रुचि के शरीर के भीतर स्थित विपुल को देख लिया। तब वे शाप के भय से थर-थर काँपने लगे। इसी समय गुरुपत्नी को छोड़ कर विपुल अपने शरीर में आ गये और भयभीत इन्द्र से बोले : 'पुरन्दर! तुम्हारी बुद्धि अत्यन्त खोटी है। क्या तुम महर्षि गौतम के शाप को भूल गये जिससे तुम्हारे शरीर में सहस्र भग बन गये थे। मैं अपने तेज से तुझे भस्म कर सकता हूँ।' महात्मा विपुल का वह कथन सुनकर इन्द्र अत्यन्त लज्जित हुये और बिना उत्तर दिये वहीं अन्तर्धान हो गये। उनके अन्तर्धान हुये अभी एक मुहूर्त भी नहीं व्यतीत हुआ था कि महर्षि देवशर्मा यज्ञ पूर्ण करके आश्रम लौट आये। तब विपुल ने उनकी भार्या उन्हें सौंप दिया। जब गुरु देवशर्मा शान्तचित्त होकर बैठे तब विपुल ने इन्द्र का सम्पूर्ण वृत्तान्त उन्हें बता दिया। इससे देवशर्मा विपुल के सदाचार और शील से अत्यन्त सन्तुष्ट हुये और उनसे वर माँगने के लिये कहा। गुरुवत्सल विपुल ने यही वर माँगा कि उनकी धर्म में निरन्तर स्थिति बनी रहे। तदनन्तर गुरु आज्ञा से विपुल ने तपस्या आरम्भ की और देवशर्मा भी इन्द्र से निर्भय होकर पत्नी सहित उस निर्जन वन में विचरण करने लगे (१३. ४१)।

"विपुल ने गुरु की आज्ञा का पालन करके बड़ी कठोर तपस्या की। इससे उनकी शक्ति में अत्यधिक वृद्धि हो गई और वे अपने को बहुत बड़ा तपस्वी मानने लगे। वे मन ही मन गर्व का अनुभव करते हुये दूसरों से स्पर्धा रखने लगे। कुछ समय व्यतीत होने पर रुचि की बड़ी बहन के घर विवाहोत्सव का अवसर उपस्थित हुआ। उन्हीं दिनों एक दिव्यांगना जब आकाशमार्ग से कहीं जा रही थी तब उसके शरीर से कुछ दिव्य पुष्प देवशर्मा के आश्रम के समीप पृथिवी पर गिर पड़े और रुचि ने उन पुष्पों को ले लिया। इतने में ही अङ्गदेश से उसका शीघ्र ही बुलावा आ गया। रुचि की बड़ी बहन प्रभावती अङ्गराज चित्ररथ से विवाहित थी। रुचि उक्त दिव्य पुष्पों को अपने केशों में गूँथ कर अङ्गराज के घर गई। वहाँ उसकी बहन प्रभावती ने उन पुष्पों के सौन्दर्य से मुग्ध होकर अपनी बहन से वैसे ही और पुष्प मँगवा देने का अनुरोध किया। आश्रम लौट कर रुचि ने अपने पति देवशर्मा से वैसे ही पुष्प मँगवाने के लिये कहा। तब देवशर्मा ने विपुल को वैसे पुष्प लाने की आज्ञा दी। गुरु आज्ञा से विपुल उस स्थान की ओर चल दिये जहाँ आकाश से वे पुष्प गिरे थे। वहाँ और भी अनेक पुष्प पड़े थे जो कुम्हलाये नहीं थे। विपुल ने उन पुष्पों को उठा लिया और प्रसन्नतापूर्वक चम्पा नगरी की ओर चल पड़े। एक निर्जन स्थान में आने पर उन्होंने स्त्री-पुरुष के एक युगल को देखा जो एक दूसरे का हाथ पकड़ कर कुम्हार के चाक की भाँति घूम रहे थे और दोनों एक दूसरे पर, 'तुम जल्दी-जल्दी चलते हो' ऐसा दोषारोपण भी कर रहे थे। उसी समय विपुल को लक्ष्य करके वे दोनों बोले कि 'हम लोगों में से जो भी झूठ बोलता है उसकी वही गति होगी जो परलोक में ब्राह्मण विपुल के लिये नियत हुई है।' यह सुनकर विपुल विषादमग्न हो गये। उन्होंने विचार किया कि किस पाप से उनकी वैसी दुर्गति होगी। जब विपुल इस प्रकार अपने किसी दुष्कर्म का स्मरण करने का प्रयास कर रहे थे तब उन्हें छः पुरुष दिखाई पड़े जो सोने-चाँदी के पासों से जूआ खेल रहे थे। उन लोगों ने भी विपुल को लक्ष्य करके कहा कि जो लोभ का आश्रय लेकर बेइमानी करने का साहस करेगा उसको वही गति प्राप्त होगी जो परलोक में विपुल को प्राप्त होनेवाली है। यह सुन कर विपुल ने जन्म से लेकर वर्तमान समय तक के अपने समस्त कर्मों का स्मरण किया किन्तु उन्हें कोई अवसर स्मरण नहीं हुआ जब धर्म के साथ पाप का भी मिश्रण हो। फिर भी उक्त शापों को सुन कर वे अत्यन्त चिन्तामग्न हो गये। अनेक रातें इसी प्रकार चिन्ता करते हुये विपुल को स्मरण आया कि गुरुपत्नी की रक्षा करते समय जब उन्होंने रुचिको अपने अंगों से संयुक्त किया था तब उनकी लक्षणेन्द्रिय रुचि की लक्षणेन्द्रियसे और उनका मुख उसके मुखसे संयुक्त हुआ था। उन्होंने विचार किया ऐसा अनुचित कार्य करने पर भी उन्होंने गुरु को यह सब नहीं बताया। विपुल ने अपने उस कर्म को ही पाप माना और निःसन्देह बात भी ऐसी ही थी। तदनन्तर चम्पा नगरी आकार उन्होंने अपने गुरु को वे पुष्प समर्पित करके उनका विधिपूर्वक पूजन किया (१३. ४२)।

"विपुल को उपस्थित देखकर देवशर्मा ने उनसे बताया : 'वन में जो लोग तुमसे मिले थे और जो बाते उन्होंने कहीं थीं वह सब मुझे पता है।' तब विपुल के पूछने पर देवशर्मा ने बताया : तुमने जो स्त्रीपुरुष का युगल देखा था वह रात और दिन थे तथा जूआ खेलनेवाले छः पुरुष छः ऋतुयें थे।' तदनन्तर देवशर्मा ने रुचि की रक्षा के समय किये गये व्यवहार की चर्चा करते हुये विपुल को सर्वथा निर्दोष बताया। विपुल को अनेक प्रकार से

समझाने के बाद देवशर्मा अपनी पत्नी और शिष्य के साथ स्वर्ग चले गये (१३. ४३)''

१. विपृथु, एक वृष्णिवंशी क्षत्रिय का नाम है : १. १८६, १८ (द्रौपदी के स्वयंवर में आया); २१९, १०; २२१, ३२; २. ४, ३०; ७. ११, २८।

२. विपृथु, एक प्राचीन नरेश का नाम है जो सप्तर्षियों के बाद भूमण्डल के सम्राट हुये (१२. २९४, २०)। तुकी० पृथु।

विप्रचित्ति, एक असुर का नाम है जो दनु के चौंतीस पुत्रों में से एक था : १. ६५, २२ (यह दनु का ज्येष्ठ पुत्र था); ६७, ४ (वही जरासन्ध के रूप में उत्पन्न हुआ था); २. ९, १२ (वरुण की सभा में); ६. ९४, ३१ (यथा शक्रो'''पुरा विव्याध दानवम्। विप्रचित्तिं दुराधर्षं देवतानां भयङ्करम्); १०८, ३८-३९ (प्रेक्षन्त पितरं तव युध्यमानं रणे शूरं विप्रचित्तिमिवामराः); ९. ३१, १३ (इसका वध); १२. ९८, ५० (इन्द्र ने इसका वध किया था); १६६, २७; २०७, २८ (प्रधानांश्च दानवान); २२७, ५०। तुकी० दैतेय, दानव, दानवर्षभ।

१. विप्रर्षि (बहु०) = ब्रह्मर्षि : १. ६८, २ (°गण); ८६, ७; ३. १८९, ४३; ५. १०९, ९ (°सदनेषु); १२. १६२, १; १३. ८४, ३७; १४. ५१, ४०।

२. विप्रर्षि (एक०), सामान्यतया विप्रर्षियों का द्योतक है : १२. ३६१, ९; ३६२, ५; ३६४, ५; १३. २, ५७; १४. ३५, १०; ९०, ५८।

तुकी० निम्नलिखित विप्रर्षि :–

अकृतव्रण : ५. १७६, ४६।
अगस्त्य : ३. ९७, १९।
अणिमाण्डव्य : १. १०७, १४।
अत्रि : ३. १८५, ६. ३३. ३५।
अरिष्टनेमि : ३. १८४, ११।
अष्टावक्र : १. २, १७४; १३. १९, ८१; २१, १०।
उत्तङ्क : १. ३, १४३; ३. २०१. ३४; १४. ५६, १५; ५७, १३; ५८, २०. २९।
उपमन्यु : १३. १४, ३३९।
ऋचीक : १३. ४, ४४।
ऋषभ : १२. १२७, १।
और्व : १. १७९, ८।
कश्यप : १२. १८०, ४१।
कौशिक : ३. २०७, २८. ३२; २१२, ६; २१५, १०।
गालव : ५, १०८, ७; १११, २३; ११२, २०; ११५, ७।
गृत्समद : १३. ३०, ६०।
चर्मिन् : १३. ६८, २६।
च्यवन : ३. १२२, ११; १२५, ४; १३. ५१, २५; ५३, २७. ३४।
जमदग्नि : १३. ९५, २८; ९६, ४. ७।
जाजलि : १२. २६१, ४; २६२, ८)
दुर्वासा : ३. २६३, ३१; ७. ११, ९।
द्रोण : १. १३१, ३१. ७९।
नारद : १२. ३३४, ४५; ३५२, ८; १५. २०, २६।
पराशर : १. १८१, १; १२. ३१८, ५९।
पुलस्त्य : ३. ८२, ७।
पैप्पलादि : १२. १९९, ११।
भरद्वाज : ९. ४८, ६४; १२. २३१, ४।
भृगु : १२. १८९, १।
मन्दपाल : १. २२९, २२।
मार्कण्डेय : ३. १८८, ६; ११; १८९, २. ४५, ४७; २०५, ३।
मुद्गल : ३. २६०, ३२।
यवक्रीत : ३. १३५, २२।
याज्ञवल्क्य : १२. ३१०, ५; ३१८, ४।
रामजामदग्न्य : १३. ८४, ४२. ४९. ५८. ७१।
लिखित : १२. २३, ३१।
वसिष्ठ : १. १७३, १४; १७८, ५; ९. ४८, ६।
विपुल : १३. ४०, २८।
विभाण्डक : ३. ११०, ३२।
विश्रवा : ३. २८१, १४।
विश्वामित्र : ५. १०६, १७; ९. ४२, ३; १२. १४१, ५६।
वैशम्पायन : १. ११६, ५; ११. ९, १; १३. ६, ३७; ।
व्यास : ६. ४, ८; १२. ३२८, १८; ३३३, ३६; १५. ३०, १७।
शक्ति : १. १७६, २१।
शर्मिन् : १३. ६८, २६।
शुनक : १३. ३०, ६५।
शौनक : १. ८, ६।
संवर्तः ३. ८५, ३१।
सारस्वत : ९. ५१, ५१. ५२।

विशुध = शिव (सहस्रनाम)।

विबुधद्विष् (बहु० °षाः) = असुर : ३. २२, १; ९. ४६, ९४; ५१, २७; ६३, १७।

विबुधलोक = देवलोक (११. १९, १०)।

विबुधविद्विष (बहु०) : १. १२३, ४५।

१. विबुधश्रेष्ठ = ब्रह्मा (१२. १६६, १३); शिव (३. १०८, २३); इन्द्र (१३. ६२, ५७); सूर्य (३. ३००, २७); विष्णु (१२. ३४६, ७; ३४७, ६)।

२. विबुधश्रेष्ठ (द्वि०) = ब्रह्मा और शिव (१२. ३४१, १९)।

विबुधसत्तम = स्कन्द (९. ४६, ६१)।

विबुधाधिप, विबुधाधिपति = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

विबुधारिघ्न = श्रीकृष्ण (२. ३६, १४)।

विबुधेश्वर : १२. २५७, ६ (ब्रह्मा); ३. १६४, १७ (इन्द्र); १२. ३३, ४१ (इन्द्र)।

विभक्त = स्कन्द (३. २३२, ६)।

विभाग, विभागज्ञ = शिव (सहस्रनाम)।

विभाण्ड, एक प्राचीन ऋषि का नाम है (१२. ४७, ११)।

विभाण्डक, एक ऋषि का नाम है, जो ऋष्यशृङ्ग के पिता थे : ३. ११०, ३२; १११, २०. २१ (ये सर से पैरों के नखों तक रोमावलियों से भरे हुये थे); ११३, १. ५. १०. १२. २०। तुकी० कश्यप।

१. विभावसु, एक ऋषि का नाम है जो महर्षि सुप्रतीक के भाई थे : १. २९, १५. १७. २३. २४ (ये सुप्रतीक के शाप से कछुआ बन गये और उस कछुवे को गरुड़ ने निगल लिया)।

२. विभावसु, एक ऋषि का नाम है ३. २६, २४ (युधिष्ठिर की उपासना की)।

३. विभावसु = अग्नि : १. २३, ९; ५५, १०; १९९, ५; २२३, ७६; २२४, ८; २. ३१, ३४. ४३; ३. २५, १७; ६८, ९; २७६, ४; ६. ३१, ९; ९. ४४, ४०; ४६, ९; १२. ४७, ५६; १२२, ४३; १३. २, ३१; ८५, १९. २६. ६४. ९४. १२२; १४६, ५।

४. विभावसु = सूर्य : १. १, ४२; १९, २१; १७३, २२; ३. ३, २१; ८३, १८४; ३००, ६. २५. ३३; ३०३, ३; ३०६, २४; ३०७; ३; ३०८, १६; ६. १२, ४५; १२. ३१८, १३; १३. १२७, १; १३०, १७. ३४।

विभिन्न = शिव (सहस्रनाम)।

विभीतक, एक वृक्ष-विशेष जिसके फल के बीजों का पासों के रूप में प्रयोग होता था : ३. ६४, ५; ७२, ६ (इसका वर्णन); १५८, ४७।

१. विभीषण, एक राक्षस राजा का नाम है जो कुबेर और रावण का भाई था : २. १०, ३१ (कुबेर की सभा में); ३१, ७१ (पौलस्त्याय महात्मने विभीषणाय धर्मात्मा); ३. १४८, १३ (रावण के वध के बाद इसे लङ्का का

राजा बनाया गया); २७५, ८ (मालिनी के गर्भ से उत्पन्न विश्रवा का पुत्र था). ९ (यह सब भाइयों में सुन्दर और धर्मात्मा था). १७ (इसने केवल सूखे पत्ते खाकर १,००० वर्ष तक तपस्या की थी). २९. ३० (इसने ब्रह्मा से यह वर माँगा कि इसकी धर्म में सदैव प्रवृत्ति बनी रहे और बिना सीखे ही इसे प्रयोग और उपसंहार की विधि के साथ ब्रह्मास्त्र का ज्ञान प्राप्त हो जाय। ब्रह्मा ने इसे ये याचित वर देकर अमरत्व भी प्रदान किया). ३६; २८०, ६७; २८३, ४६-४७ (माता वै राक्षसेन्द्रस्य चतुर्भिः सचिवैः सह प्रतिजग्राह रामस्तंस्वागतेन महामनाः). ४९ (श्रीराम ने इसे राक्षसों का राजा तथा लक्ष्मण का मित्र बनाकर अपने सचिव के रूप में नियुक्त किया). ५०. ५२; २८४, २४; २८५, ३. १४ (प्रहस्त से युद्ध किया); २८६, १. ३ (प्रहस्त का वध किया); २८९, ५. ८. १४. १६; २९०, १६. १७; २९१, ५ (श्रीराम ने इसे लङ्का का राजा बनाया). ६. ५२. ५७. ६७। तुकी० पौलस्त्य।

२. विभीषण = शिव (सहस्रनाम)।

३. विभीषण, एक यक्ष का नाम है (२. १०, १७)।

विभीषणा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २२)।

१. विभु, काशिराज के भाई का नाम है : ५. १५१, ६३; १९६, २८ (पुत्रः काश्यस्य वा विभुः); ६. ५१, २०; ९३, १३; ७. २३, ४१; ८५, ४१। तुकी० अभिभू भी।

२. विभु, भृगु के छठवें पुत्र का नाम है (१३. ८५, १२९)। तुकी० वरेण्य।

३. विभु = शिव : १. १९७, २२; ७. ८०, ५७; २०२, ११; १०. ७, ४; १३. १७, ४७ (सहस्रनाम). ५४. १०६. ११४. १५५; १८, २८।

४. विभु = स्कन्द (३. २३२, १४)।

५. विभु = विष्णु (श्रीकृष्ण) : ३. २६५, ४; २७२, ४; ६. ८, १७; २९, १५; १२. ४३, ७. ११. १४; ३४२, ९०; १३. १४७, ४४; १४९. ३९ (सहस्रनाम). १०७।

विभूति, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५७)।

विभूरसि, अर्जुन नामक अग्नि के पुत्र का नाम है (३. २२२, २६)।

विमर्ष = शिव (सहस्रनाम)।

विमल, एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, ८७-८८)।

विमलं सरस, एक तीर्थ का नाम है (१३. १६५, २३)।

विमलपिण्डक, कश्यप द्वारा कद्रू के गर्भ से उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ३५, ८)।

विमला, सुरभि की पुत्री का नाम है (१. ६६, ६८)।

विमलाशोक, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, ६९)।

विमलोदका, हिमालय पर ब्रह्मा के यज्ञ में प्रकट हुई सरस्वती का नाम है : ९. ३८, २९ (विमलोदा पाठ है)।

विमलोदा — देखिये पिछला शब्द।

विमुक्त = शिव (सहस्रनाम)।

विमुक्तात्मन् = (विष्णु (सहस्रनाम)।

विमुच, एक ऋषि का नाम है (१२. २०८, २९)।

१. विमोचन एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १६१)।

२. विमोचन = शिव (सहस्रनाम)।

१. विरज एक तीर्थ का नाम है (३. ८५, ६)।

२. विरज = शिव (सहस्रनाम)।

३. विरज = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. विरजस्, एक नाग का नाम है : (१. ३५, १४; ५. १०३, १६)।

२. विरजस्, धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक का नाम है : १. ११७, १४; ७. १५७, १८ (भीमसेन द्वारा धृतराष्ट्र के जिन सात पुत्रों का वध किया गया उनमें एक यह भी था)।

३. विरजस् भगवान् नारायण के तेज से उत्पन्न एक मानस पुत्र का नाम है : १२. ५९, ८८ (इसके पुत्र का नाम कीर्तिमान् था)।

४. विरजस्, कवि के एक पुत्र का नाम है (१३. ८५, १३३)।

विरस, एक नाग का नाम है (५. १०३, १६)।

१. विराज्, एक पुरातन पुरुष का नाम है जिसे शिव और विष्णु के साथ समीकृत किया गया है : १२. ४३, ११ (= श्रीकृष्ण); २८४, १५४ (= शिव सहस्रनाम); ३४१, १९ (पुराणः पुरुषो विराट् अनिरुद्ध इति प्रोक्तो लोकानां); ३४७, १२ (नारायणः); ३५०, २२ (पुरुषः). २३; १३. १६७, ३८ (= श्रीकृष्ण)।

२. विराज् (स्त्री०) = पृथिवी : ७. ६९, २४. २७; १२. ७८, ६ (पृथिवी विराट); २६२, ४१। = सरस्वती : ३. १३३, ८।

विराज, अविक्षित के पुत्र का नाम है (१. ९४, ५२)।

१. विराट मत्स्यों के राजा, सुदेष्णा के पति तथा शङ्ख, उत्तर और उत्तरा के पिता का नाम है : १. १, १६९. १७०; २, २१०. २१२. २६४; ६७, ८२ (मरुद्गणों के अंश से उत्पन्न); ९५, ८३ (विराटस्य...दुहितरं...उत्तरां); १८६, ८ (विराटः सह पुत्राभ्यां शंखेनैवोत्तरेण); २. ३४, १३ (अपने पुत्र के साथ युधिष्ठिर के राजसूय में आये); ४४, २०; ४५, ४७; ५२, २६ (युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये); ३. ५१, १७; ४. १, १७. २३. २६. २८; २, १. २९. ३२; ३, ३. ८; ५, ६; ७, १. ४. ८. १२. १३. १५. १८; ८; ६. ७. ८. ११. १३; ९, २५. ३०. ३६ (सुदेष्णा इनकी भार्या थी); १०, १. ७.१२५; ११, २. १०. १२; १२, १. ५. ९. १२ (पाण्डव और द्रौपदी इनके यहाँ विभिन्न पदों पर नियुक्त हुये); १३, ४. ६. १२. ३७. ४१. ४२. ४४. ४६; १४, ४ (कीचकस्तु महाबलस्य...सेनापतिर्विराटस्य). ७; १५, ३; १६, ३०. ३५; १८, ७ (राज्ञो विराटस्य कीचको नाम भारत). २८; १९, ३ (सूपकारं विराटस्य वल्लवं). ४. १४ (विराटस्य कन्यानां नर्तको युवा). २३. ३०. ३६. ४२. ४४; २०, २५; २१, २. ३५ (कीचको नाम सारथिः);२३, ७. ३१; २४, ६. १७. २७; ३०, ६ (इनके गायों का हरण करने के लिये कौरवों और त्रिगर्तों ने विराटनगर पर आक्रमण कया); ३१, २. ३. ७. १२ (प्रियो भ्राता शतानीको). १६ विराटस्य सुतो ज्येष्ठो वीरः शङ्खः). २७. ३०. ३४. ३५; ३२, २२ (त्रिगर्तराज सुशर्मा के साथ द्वन्द्व युद्ध किया); ३३, ७. १०. २४. २८. ४१. ५२. ६१ (ये बन्दी बना लिये गये किन्तु पाण्डवों ने त्रिगर्तों को पराजित कर के इन्हें मुक्त कराया); ३४, ३. ४. ९. १९; ३५, १. ४; ३७, ४; ३८, ३६. ४१; ५४, ६; ५७, ४२; ६६, १६; ६७, १. ७; ६८, १. ५ (वाहिनीपतिः). ९. १३. १५. २१. २८ (पुराद्विराटस्य महाबलस्य). ३२. ४५. ५२. ५६. ६०. ६२. ६६; ६९, १२. १५; ७०, ३. ४. ८; ७१, १. २५. २८. ३१; ७२, १. १०. १३. १४ (उपप्लव्यं विराटस्य समपद्यन्त सर्वशः) (विराट की कन्या उत्तरा का अभिमन्यु के साथ विवाह हुआ); ५. १, १. ३. ५; ३, १६; ५, ११-१३; ७, २६; १९, १२ (वाहिनीपतिः, ये अपनी सेना के साथ युधिष्ठिर के पास आये); २२, १९ (ये युधिष्ठिर के मित्र थे). ३९; २५, १. २; २७, १८ (रुक्मरथः); ४८, ३७ (यदा विराटः परवीरघाती ममत्तरे शत्रुचमूं...सार्धमनूशंसरूपैस्तदा युद्धंधार्तराष्ट्रोऽन्वतप्स्यत); ५०, ४०; ५७, ६१(सह पुत्राभ्यां शंखेनैवोत्तरेण च). १२; १२६, ८; १४१, २७; १४७, ३; १५१, ४. १०. ४७. ६५; १५३, २. ५. १२; १५७, ११ (युधिष्ठिर की सेना के सात सेनानायकों में से एक). २३; १६०, ७३. ८९. ११५; १६१, ५. ८. ३३; १६२, ८; १६३, ४१. ५३; १७०, ८; १९४, १९; १९६, ३. ११. १६; ६. १९; १६. २५; २५, ४. १७; ४५, ४९-५१ (भगदत्त से युद्ध किया) ;४७, ३०.६७ ; ४९, २५; ५०, २८. ५६; ५१, २७; ५२, ८. २९; ५३, ३९; ५६, १२; ५९, ११८; ७२, १; ७३, १; ७५, ८; ८२, १५. २४ (द्रोण ने इन्हें पराजित किया); ८७, २१; ८९, १७; ९९, १०; १०३, ४. ५ ९; १०८, ८; ११०, ५. १६; १११, २२. २४. २६; ११५, २८ (जयद्रथ पर आक्रमण किया); ११६, ४२. ४३ (जयद्रथ से युद्ध); ११८, २७. ४१. ४५; ११९, १०. २१; ७. १०, ७१ (विराटस्य स्थानीकं मत्स्यस्य); १४, ८३; १६, ३३; २३, १७; २५, ३० (विन्द और

अनुविन्द पर आक्रमण किया); ३५, ४; ४०, १५; ४२, ३; ४३, ७; ७२, १५; ८३, ४; ८५, ४१; ९५, ४३ (विन्द और अनुविन्द ने इन पर आक्रमण किया); ९६, ४.५; ९८, ५४; १११, ४५; ११४, ६४; १२४, ३३; १५३, २३; १५४, १०; १५५, ४४; १५६, ३६; १५८, ४२; १६५, १४; १६७, २३. २५. ३१. ३३. ३४ (शल्य ने इन्हें पराजित किया); १८४, ७; १८६, ३१. ३६. ३७. ३९. ४३ (द्रोण ने इनका और द्रुपद का वध किया); ८. ७९, ६३; ८३, ४७; १०. ८, ६६ (यच्च शिष्टं विराटस्य बलं); १६, २ (विराटस्य सुतां पूर्वं स्नुषां गाण्डीवधन्वनः); ११. २०, ३१. ३२; २६, ३३ (इनका शवदाह किया गया); १२. २७, ३; ४२, ४ (इनका श्राद्ध किया गया); १५. २५, १५; ३२, ८; १८. २, २५; ५, २. १५ (मृत्यु के बाद जिन लोगों ने देवों में प्रवेश किया उनमें से ये भी एक थे)। तुकी० मत्स्य, मत्स्यपति, मत्स्यराज्, मत्स्यराज, मत्स्यराजन्।

२. **विराट** = विराटपर्वन् (१. २, ८९)।

विराटजा = उत्तरा (१४. ६२, ८)।

विराटतनया = उत्तरा (४. ७२, ३३)।

विराटदुहितृ = उत्तरा (४. ६९, १५; १०. १६, ७; ११. २०, ४. ५)।

विराटनगर : १. २, २०६; ३. ३१४, १८; ४. १, २. ४. १८. २०; ३, ५. ६; ६, १. ३४; १३, ३. १२; १४, १२; ३०, १८. २३; ६७, १९; ६८, १७; ५. २०, ११; ५९, २७. २८; ६४, २५; ६५, १४; १२४, ५४; १३८, ७; १६०, ६५. ११४; १६१, ३२; १६६, ९; ६. ९८, ९; १०६, ३५; ७. १३२, १२; १५८, १७; ८. ४१, ७३; ५०, २२; ९. ५६, ३२; १०. ११, २५।

विराटनृपति — देखिये विराट।

विराटपर्वन्, महाभारत के चौथे प्रमुख पर्व का नाम है। इसमें अज्ञातवास के समय विराट नगर में निवास करते समय पाण्डवों की गतिविधियों का वर्णन है : १८. ६, ६१। तुकी० वैराट।

१. **विराटपुत्र** = बभ्रु (५. ५७, ३३)।

२. **विराटपुत्र** = शंख (५. ४८, ३८; ८. ६, ३७)।

३. **विराटपुत्र** = उत्तर (४. ५४, २०; ६६, १५)।

विराटराज्, विराटराज, विराटराजन् — देखिये विराट (वस्था०)।

१. **विराम** = शिव (सहस्रनाम)।

२. **विराम** = विष्णु (सहस्रनाम)।

विराव, एक अश्व का नाम है : ३. ९९, १७ (इल्वल ने विराव और सुराव नामक दो घोड़ों से संयुक्त एक रथ अगस्त्य जी को दिया था)।

विरिञ्च = ब्रह्मा : १२. ३४२, ९४ (विरिञ्च इति यत्प्रोक्तं कापिलं ज्ञानचिन्तकैः, इन्हें नारायण के साथ समीकृत किया गया है)। तुकी० अगला शब्द।

विरिञ्चि = ब्रह्मा : १. ३८, १७; १२. ३०२, १८ (= हिरण्यगर्भ)।

१. **विरूप**, एक असुर का नाम है : २. ९, १४ (वरुण की सभा में)।

२. **विरूप** — काम और क्रोध विरूप और विकृत के रूप में उपस्थित हुये : १२. १९९, ८८-९१. १०३. ११५।

३. **विरूप**, अङ्गिरस् के पुत्र का नाम है (१३. ८५, १३१)।

४. **विरूप** = शिव (सहस्रनाम)।

विरूपक, एक असुर का नाम है : १२. २२७, ५१ (यह पूर्वकाल में पृथिवी का शासक रह चुका था)।

१. **विरूपाक्ष** = शिव (देखिये वस्था० भी) : १३. १४, १२७; १८, ६७. ४५; १६५, १०; १४. ८, २१. ३०. ३१।

२. **विरूपाक्ष** एक असुर का नाम है : १. ६५, २५; ६७, २२ (दैतेयः महासुरः, चित्रधर्मा के रूप में उत्पन्न हुआ)।

३. **विरूपाक्ष**, अनेक राक्षसों का नाम है : ३. २८५, ९ (यह रावण का अनुचर था और सुग्रीव से युद्ध किया); ७. १७५, १५ (घटोत्कच का सारथि); १२. १७०, १५. २४; १७१, १२. २१; १७२, ५; १७३, ५. ६. ७। तुकी० राक्षस, राक्षसाधिप, राक्षसाधिपति, राक्षसेन्द्र।

४. **विरूपाक्ष**, एक रुद्र का नाम है (१२. २०८, १९)।

विरूपाक्षी = दुर्गा (उमा) : ६. २३, ९।

विरूपाश्व, एक प्राचीन राजा का नाम है : १३. ११५, ७३ (ये कार्त्तिक मास में मांसभक्षण नहीं करते थे)।

१. **विरोचन**, एक असुर का नाम है : १. ६५, १९. २० (प्रह्लाद के पुत्र और बलि के पिता); २. ६८, ६६ (प्रह्लाद का पुत्र). ८६ (सुन्धवा के साथ विवाद); ५. ३५, ५-३८ (एक समय केशिनी के स्वयंवर में सुन्धवा और विरोचन दोनों ने अपने अपने को श्रेष्ठ प्रमाणित करने के लिये प्राणों की बाजी लगा दी। तब इस विवाद का निर्णय करने के लिये दोनों प्रह्लाद के पास आये)। ५. ३५, ५. ७-११. १३. १५. १८-२०. २२. २४. २५. २७. ३५. ३६. ३८; ७. २६, ६७; ६९, २० (जब असुरों ने पृथिवी का दोहन किया तब यह बछड़ा बना); ९. ५८, ५ (शक्रेण मायया निर्जितः); १२. ९८, ४९ (इन्द्र ने इसका वध किया); १६६, २७; २२५, ७; २२७, ५० (पृथिवी के प्राचीन शासकों में से एक); ३३९, ७९। तुकी० दैतेय, दैत्येन्द्र, प्राह्लादि।

२. **विरोचन**, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. १८६; २ (द्रौपदी के स्वयंवर में गया)।

३. **विरोचन** = सूर्य : ३. ३, ६३; ५. १५४, ४। = सोम (चन्द्रमा) : ९. ३५, ५७ = विष्णु (सहस्रनाम)।

विरोचना, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ३०)।

विरोहण, एक तक्षकवंशी नाग का नाम है (१. ५७, ९)।

विलोहित = शिव : ७. ८०, ५८; १०. ७, ६; १२. २८४, ८५ (सहस्रनाम); १४. ८, २३।

विवर्धन, एक राजा का नाम है : २. ४, २१ (युधिष्ठिर की सभा में)।

१. **विवस्वत्**, आदित्यों में से एक का नाम है (कभी-कभी यह सूर्य की उपाधि मात्र के रूप में प्रयुक्त हुआ है) : १. १, ४३; ३, ५८; ६५, १५ (आदित्यों में आठवें); ७५, ११. १२ (कश्यपस्त्वरयामादित्यान्समजीजनत। इन्द्रन्वीर्यसम्पन्नान्विवस्वन्तमथापि च। विवस्वतः सुतो जज्ञे यमो वैवस्वतः प्रभुः); ९५, ७ (अदिति के पुत्र और मनु के पिता); १११, १० (= सूर्य, जो कर्ण के पिता थे); १२३, ६७ (आदित्यों में आठवें); १७१, ७ (सुता विवस्वतो वै देवस्य (सावित्र्यवरजा); १७३, १९. २१ (सूर्य, तपती के पिता); ३. ३, १८ (सूर्य के १०८ नामों में से एक). ६१ (= सूर्य). ७१; ८७, ७ (शमित्रं च विवस्वतः); १८७, २ (मनु वैवस्वत के पिता); २९४, १५; २९७, ४१; ३१५, १९ (पृथिवी पर प्रच्छन्न रूप से रहते हुये अन्ततः इन्होंने अपने समस्त शत्रुओं को जला डाला); ५. १०९, १ (अपने गुरु को इन्होंने दक्षिण दिशा दक्षिणा में दिया); ६. २८, १ (श्रीकृष्ण ने इन्हें योग का उपदेश दिया और इन्होंने उसे मनु को दिया); ४; ८. ६५, १९; ९४, ३०; ९. ४५, ५; १२. २०८, १५. १७ (मार्तण्ड, अश्विनों के पिता); ३२४, ३६ (इक्कीस प्रजापतियों में से एक); ३४२, ५६ (विवस्वतो द्वितीयजन्मन्यण्डसंज्ञितस्य अण्डं मातुरदित्या मारितं सा मार्तण्डो विवस्वानभवच्छ्राद्धदेवः); ३४८, ५० (इन्होंने आदित्य से नारायणधर्म प्राप्त करके उसे मनु को दिया); ३५९, ३; ३६२, १. १५; १३. ८२, ७; १५०, १८ (मार्तण्ड, अश्विनों के पिता। इनकी पत्नी संज्ञा की नासिका से अश्विनों की उत्पत्ति)।

तुकी० इनके निम्नलिखित पर्याय :—

मार्तण्ड : १. ७५, १२ (मनु के पिता); ३. ३, ६२; ४२, ११ (द्वितीय इव मार्तण्डो युगान्ते); १२. २०८, १७ (अश्विनावपि मार्तण्डस्यात्मजौ); ३४२, ५६ (नाम की व्युत्पत्ति); १३. १५०, १८ (अश्विन इनके आत्मज थे)।

२. **विवस्वत्**, एक दैत्य का नाम है जिसका गरुड ने वध किया था (५. १०५, १२)।

३. विवस्वत एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३१)।

४. विवस्वत = विष्णु (सहस्रनाम)।

विवह, एक अत्यन्त वेगशाली वायु का नाम है जो रूक्षभाव से वेगपूर्वक महान् शब्द के साथ बहते हुये बड़े-बड़े वृक्षों को तोड़ देता है। इसके द्वारा संगठित प्रलयकालीन मेघों का नाम बलाहक है। इस वायु का संचरण भयानक उत्पात लानेवाले होता है और आकाश में अपने साथ में मेघों की घटा लेकर चलता है (१२. ३२८, ४४-४५)।

विवित्सु, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७, ९६; ११७, ५; ६. ६४, २९; ८. ५१, ७. १२ (भीमसेन ने इनका वध किया)।

विविक्त = विष्णु (सहस्रनाम)।

विविंश, सूर्यवंशी विंश के पुत्र का नाम है : १४. ४, ५-७ (इनके खनीनेत्र आदि पन्द्रह पुत्र थे)।

विविंशति धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६३, ११९; ६७, ९४; ११७, ४; १८६, १ (द्रौपदी के स्वयंवर में आया); २. ५८, १३; ३. २४२, ८ (गन्धर्वों द्वारा बन्दी बनाया गया); ४. ३५, ३; ३८, १३; ६१, ३७. ४३ (विराटनगर में अर्जुन से पराजित होकर पलायन किया); ६२, १; ६५, १०; ६६, ५; ५. २७, २५; ४७, ८; ५५, ६४; ६६, ५; ९४, ४८; ९५, १९; १२४, १८; १६०, १२१; १६१, ३९; ६. १७, २१; १८, ११; ४४, १६; ४७, २; ४८, ६४; ६०, २३; ६२, १६. २७; ८१, ४; ८७, ३; ९२, २४. ३८; ९४, १५; ९८, ४२; ११७, ४४. ४६; ७. ७, १३; १४, २७. २८ (भीमसेन से युद्ध किया); २५, २४. २५ (सुतसोम से युद्ध किया); ३७, १७. २५; ७४, १५; ८५, ११; ९५, ३५; ९६, ३१; १२०, १०; १२७, ३३; १५८, ६०; ८. ५, ७ (इसका वध); ११. १९, १४. १५. १७ (इसके प्रति शोक प्रकट किया गया)।

विविंशु, एक कौरव-योद्धा का नाम है (८. २५, १७)।

विविन्ध्य, एक दानव का नाम है जो शाल्व का अनुयायी था : ३. १६, २२. २३. २७ (चारुदेष्ण ने पराजित कर के इसका वध किया)। तुकी० दानव।

१. विशल्या, एक नदी का नाम है : २. ९, २० (वरुण की सभा में); ३. ८४, ११४ (एक तीर्थ); १८८, १०५ (मार्कण्डेयजी ने इसे नारायण के उदर में देखा); १३. १६५, २०।

२. विशल्या, एक ओषधि का नाम है जिससे शरीर में धँसे बाणों की पीड़ा से मुक्ति मिल जाती है : ३. २८९, ५-६ विशल्यया महौषध्या दिव्यमन्त्रप्रयुक्तया। तो लब्धसंज्ञौ नृवरौ विशल्यावुदतिष्ठताम्)।

१. विशाख, कुमार कार्तिकेय के एक अनुज का नाम है : १. ६६, २४; ३. २२७, १६-१७ (वज्र का प्रहार होने पर स्कन्द के दक्षिण पार्श्व से एकवीर पुरुष प्रकट हुआ जो युवक था। उसने कवच धारण कर रक्खा था तथा उसके हाथ में शक्ति, कानों में दिव्य कुण्डल थे और वज्र के प्रविष्ट होने से ही उसकी उत्पत्ति हुई थी। इसीलिये उसका नाम विशाख हुआ); २२८, ३; २३१, १९ (इसने ऐरावत का एक घण्टा प्राप्त किया। इसकी और स्कन्द की पताका लाल रंग की थी); २३२, ७ (यह स्कन्द के ५१ नामों में से ३८ वाँ है); ९. ४४, ३८ (स्कन्द का एक रूप). ३९; १३. १६५, १०।

२. विशाख, एक ऋषि का नाम है : २. ७, १४ (इन्द्र की सभा में)।

३. विशाख = शिव (सहस्रनाम)।

विशाखयूप एक पुण्यप्रद स्थान का नाम है : ३. ९०, १५ (यहाँ देवों, वरुण, इन्द्र आदि ने तपस्या की थी); १७७, १६ (सुबाहु की राजधानी से चल कर पाण्डवों ने यहाँ एक वर्ष तक निवास किया था); १२. १२, ३।

विशाखा, एक नक्षत्र का नाम है : ३. ३०१, १२ (विशाखयोर्मध्यगतः शशीव विमले दिवि); ६. ३, २७ (विशाखायाः समीपस्थौ बृहस्पति-शनैश्चरौ); ८. २०, ४८; १३. ६४, १९ (जो इस नक्षत्र में गाड़ी में चलनेवाले बैल, दूध देनेवाली गायें, धान्य, वस्त्र, और प्रासङ्ग सहित शकट दान करता है वह देवताओं और पितरों को तृप्त कर देता है); ८९, ८ (इस नक्षत्र में श्राद्ध करने का फल); ११०, ६ चान्द्र व्रत का वर्णन)।

विशारद = शिव (सहस्रनाम)।

१. विशाल = सूर्य (३. ३, २४)।

२. विशाल = शिव (सहस्रनाम)

विशालक, एक यक्ष का नाम है : २. १०, १६ (कुबेर की सभा में)।

विशालशाख = शिव (सहस्रनाम)।

१. विशाला, सोमवंशी महाराज अजमीढ की पत्नी का नाम है (१. ९५, ३७)।

२. विशाला = बदरिकाश्रम : ३. ९०, २५; १३९, ११ (देखिये नीलकण्ठी); १२. ३४४, २०; १३. २५, ४४।

३. विशाला, एक अथवा अधिक नदियों का नाम है : ९. ३८, ४. २१ (राजा गय के यज्ञ में प्रकट हुई सरस्वती का नाम); १३. २५, ४४ (करवीरपुरे स्नात्वा विशालायां कृतोदकः। देवह्रद उपस्पृश्य ब्रह्मभूतो विराजते)।

१. विशालाक्ष, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७, १०१; ११७, १०; ६. ८८, १५ (धृतराष्ट्र के उन छः पुत्रों में यह भी एक था जिन्होंने भीमसेन पर आक्रमण किया). १८. २६ (भीमसेन ने इसका वध किया।

२. विशालाक्ष, एक मत्स्य योद्धा का नाम है (४. ३२, १९)।

३. विशालाक्ष, गरुड की सन्तानों में से एक का नाम है (५. १०१, ९)।

४. विशालाक्ष = शिव (देखिये वस्त्रा०)।

विशालाक्षी एक मातृका का नाम है (९. ४६, ३)।

विशाम्पति = शिव (सहस्रनाम)।

विशिरा एक मातृका का नाम है (९. ४६, २९)।

विशिष्ट = विष्णु (सहस्रनाम)।

विशुण्डि, एक कश्यपवंशी नाग का नाम है (५. १०३, १६)।

विशुद्धात्मन = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. विशोक, भीमसेन के सारथि का नाम है ; २. ३३, ३०; ३. १७७, १४; ६. ६४, ९. ११. १६. १८; ७७, १९. २१. २६; ९५, ७६; ११३, २६; ७. १५५, २२; १५६. ४९; ८. ७६, १२. १६. २४. २७. २८. ४०

२. विशोक, एक केकय राजकुमार का नाम है (८. ८२, ३)।

३. विशोक = विष्णु (सहस्रनाम)।

विशोका, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ५)।

विशोधन = विष्णु (सहस्रनाम)।

विशोषण, एक दिव्यास्त्र का नाम है (३. १७१, ८)।

विश्रवस्, एक ऋषि का नाम है : ३. ८९, ५; २७४, १४ (वैश्रवण के पिता पुलस्त्य अपने आधे भाग से विश्रवा हुये); २७५, १ (ये रावण, कुम्भकर्ण, विभीषण, खर और शूर्पणखा के पिता थे); २७६, २; २८३, १४ (विप्रर्षेः साक्षाद्विश्रवसो मुनेः)१३. १६५. १२ (महान्नृषिः)।

विश्राम = विष्णु (सहस्रनाम)।

विश्रुतात्मन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. विश्व एक राजा का नाम है : १. ६७, ३६ (क्रोधवशसंज्ञक गण के अंश से उत्पन्न हुआ था)।

२. विश्व = विश्वकर्मा (५. १८३, १२)।

३. विश्व = शिव : १३. १४, ३१६; १७, १४७ (सहस्रनाम)।

४. विश्व : १२. ३०२, १६ (विश्वं शम्भुं स्वयंभुवः); ३१२, १३ (विश्वं शम्भुं प्रजापतिः). १५ (महात्मा विश्वमीश्वरः)।

५. विश्व = विष्णु : १. ६३, २०१; ६. ६५, ४८; १२. ३३८. २; ३४१, १२; ३५१, २; १३. १४९, १४ (विष्णु सहस्रनाम)।

विश्वकर्तृ = शिव (सहस्रनाम)।

विश्वकर्मकृत् = शिव (७. २०२, १०५)।

१. विश्वकर्मन् देवशिल्पकार का नाम है जिन्हें कहीं कहीं ब्रह्मा और त्वष्टा से भी समीकृत किया गया है : १. २७. २ (द्वीपं···विहितं); ६६, २८ (शिल्पप्रजापतिः). ३०; २११, १०. ११. १५ (इन्होंने तिलोत्तमा का सृजन किया); २. ७, १४ (इन्द्र की सभा में); ८, १ (इन्होंने यम की सभा का निर्माण किया था). ३४; ९, २ (वरुण की सभा का निर्माण किया था); १०, ३१ (ब्रह्मा की सभा में); ५३, १५;३. ११४, १७ (इन्होंने एक यज्ञ करके कश्यप को पृथिवी दान की); १२१, १२ (हिरण्मयीभिर्गोभिश्च कृताभिर्विश्वकर्मणा); १६१, ३७ (पुष्पक का निर्माण किया था); २२९, २५; २७९, १२ (ददर्शाथ पुरीं रम्यां···निर्मितां विश्वकर्मणा); २८३, ४१ (त्वष्टुर्देवस्य तनयो बलवान् विश्वकर्मणः); ३१२, ४४; ४. ४६, ३ (देवीं मायां रथे युक्तां विहितां विश्वकर्मणा); ६. ५०, ४३ (अर्जुन की ध्वजा का निर्माण किया था); ६६, १७; ७. ७९, ३८; ८२, २४; ८. ३१, ४२ (विजय नामक धनुष का निर्माण किया था); ३४, १७ (शिव के रथ का निर्माण किया था); ५३, ८ (अर्जुन की ध्वजा के वानर का निर्माण किया था); १०. १३, ४। तुकी० भौमन, प्रजापति, विश्व, विश्वकृत्।

२. विश्वकर्मन् = मय : २. १, ५ (विश्वकर्मा वै दानवानां). १८; ३, २६; ५. १००, २; ८. ३३, १६ (मयं···विश्वकर्माणमजरं दैत्यदानवपूजितम्) (

३. विश्वकर्मन् = विष्णु : १. ६३, १०३; ६. ६५, ४७; १२. ४३, ४; ४७, ८४; ५१, ३; ५३, ३; १३. १४९, १९ (सहस्रनाम); १५८, १४; १४. ५२, ८; ५४, ११; ५५, ७।

४. विश्वकर्मन् = शिव : ७. ८०, ४४; १२. २८४, ५९; १३. १६०, ४१।

विश्वकर्ममति = शिव (सहस्रनाम)।

१. विश्वकृत् = ब्रह्मा : १. ७, १८; ३. १८८, ९; १३. ४०, १४. ३७।

२. विश्वकृत = शिव (सहस्रनाम)।

३. विश्वकृत = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

४. विश्वकृत् = विष्णु (श्रीकृष्ण): ७. २०१, ५७; १२. ३४३, ६०; १३. १५८, २९।

५. विश्वकृत् एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३६)।

विश्वकर्ता वरेण्यः = शिव (सहस्रनाम)।

विश्वक्षेत्र = शिव (सहस्रनाम)।

विश्वक्सेन — देखिये विष्वक्सेन।

विश्वगुप्त = विष्णु (३. ११४, २६)।

१. विश्वजित् , एक अग्नि का नाम है (३. २१९, १६)।

२. विश्वजित् , एक असुर का नाम है : १२. २२७, ५३ (पूर्वकाल में पृथिवी का शासक था)।

३. विश्वजित् = श्रीकृष्ण (विष्णु): ७. ३६, ७; १३. १५८, १४)।

१. विश्वतोमुख = सूर्य (३. ३, २७)।

२. विश्वतोमुख = शिव (सहस्रनाम)।

विश्वदक्षिण = विष्णु (सहस्रनाम)।

विश्वदंष्ट्र, एक असुर (?) का नाम है जो पूर्वकाल में पृथिवी का शासक था (१२. २२७, ५२)।

१. विश्वदेव = शिव : १३. १४, ३११; १७, १०२ (सहस्रनाम). १५१ (सहस्रनाम)।

२ विश्वदेव (बहु० °वाः) = विश्वेदेवाः (बहु०) : ७. ७६, ४; १२. १९८, ५।

विश्वदृश = विष्णु (सहस्रनाम)।

विश्वनर = शिव (७. २०२, १४)।

विश्वपति, मनु नामक अग्नि के द्वितीय पुत्र का नाम है (३. २२१, १७-१८)।

विश्वपर = विष्णु (३. ११४, २६)।

विश्वबाहु = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

विश्वभावन = विष्णु (श्रीकृष्ण) : २. ६८, ४३।

१. विश्वभुज, पाण्डवों के रूप में उत्पन्न होनेवाले पाँच इन्द्रों में से एक का नाम है (१. १९७, २९)।

२. विश्वभुज, एक अग्नि का नाम है (३. २१९, १७)।

३. विश्वभुज् = इन्द्र (६. २१, १७)।

४. विश्वभुज् = विष्णु (श्रीकृष्ण) : १२. ३४७, ३९; १३. १४९, १४० (सहस्रनाम); १५८, १४।

विश्वभू = विष्णु (श्रीकृष्ण) : १२. ३४४, ६।

१. विश्वमूर्ति = शिव : ७. २०२, १३; १३. १६०, ४२।

२. विश्वमूर्ति = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

३. विश्वमूर्ति = विष्णु (श्रीकृष्ण) : ६. ६५, ४७; १२. ३३९, १५; १३. १४९, ९०।

१. विश्वयोनि = ब्रह्मा (?) : ६. ४८, ९८।

२. विश्वयोनि = विष्णु (श्रीकृष्ण) : १२. ४३, १६; १३. १४९, २६ (सहस्रनाम). २९।

विश्वरुचि, एक गन्धर्व का नाम है जो पृथिवी के दोहन के समय दोग्धा बने थे (७. ६९, २५)।

१. विश्वरूप, एक असुर का नाम है : २. ९, १४ (वरुण की सभा में)।

२. विश्वरूप, त्वष्टा के पुत्र का नाम है जिन्हें त्रिशिरा भी कहते हैं। ये देवों के पुरोहित थे और असुरों के भानजे लगते थे अतः देवताओं को प्रत्यक्ष और असुरों को परोक्षरूप से यज्ञभाग दिया करते थे जिसके कारण इन्द्र ने अपने वज्र से इनका वध कर दिया : ५. ९, ३-४; १०, ३; १२. २०८, १८; ३४२, २८. २९. ३०. ३२. ३४. ३५; १४. ५, २३। तुकी० त्रिशिरस्, त्वष्टृपुत्र, त्वाष्ट्र।

३. विश्वरूप = शिव : ७. २०२, १२९ (विश्वेदेवाश्च यत्तस्मिन्विश्वरूपस्ततः स्मृत); १०. ७, ३; १२. ८, ३६; २८४, १६४ (सहस्रनाम); ३१८, ६२; १३. १४, २. १८. १३७. ३१५; १७, १२. ३५ (सहस्रनाम). ४१; १६१, २. १२; १४. ८, २९. ३१।

४. विश्वरूप = हिरण्यगर्भ : १२. ३०२, २०।

५. विश्वरूप = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

६. विश्वरूप श्रीकृष्ण (विष्णु) : १२. ६४, १७; ३४०, १०१; १३. १५८, १४. ३५. ३७।

१. विश्वरूपधृक् = विष्णु (१२. ३३९, १)।

२. विश्वरूपधृक् = वृत्र (५. १०, ११)।

विश्वरेतस = विष्णु (सहस्रनाम)।

विश्वसत्तम = श्रीकृष्ण (१४. ५२, ८)।

१. विश्वसम्भव = शिव (१३. १४, ३२८)।

२. विश्वसम्भव = श्रीकृष्ण (१२. ४३, ५; ४७, ८४; ५१, ३; १४. ५५, ७)।

१. विश्वसृज् = शिव : ७. ८०, ६१; २०२, १३।

२. विश्वसृज् = श्रीकृष्ण : ७. ३३, १२; १३. १५८, १४।

३. विश्वसृज् (बहु०) : ७. ५५, ४०; १२. २९, २०; ४७, ४५ (यः सहस्रसमे सत्रे जज्ञे विश्वसृजामृषि); १४. ५१, १२. १३।

विश्वसेन, एक गन्धर्व का नाम है : १२. २८४, ७।

विश्वा, दक्ष प्रजापति की एक पुत्री का नाम है (१. ६५, १२)।

विश्वाङ्ग = श्रीकृष्ण (११. ४७, २२)।

विश्वाची, एक अप्सरा का नाम है : १. ७४, ६८ (छः प्रमुख अप्सराओं में से एक); ७५, ४८ (ययाति ने इसके साथ विहार किया);

८५, ९; १२३, ६५ (अर्जुन के जन्मोत्सव के समय गान किया); २. १०, ११ (कुबेर की सभा में); १३. १६५, १४।

१. विश्वात्मन् = ब्रह्मा (२. ११, ५८)।

२. विश्वात्मन् = शिव : ७. ८०, ६१; २०२, ११. १०५; १०. ७, ५७।

३. विश्वात्मन् = हिरण्यगर्भ : १२. ३०२, १९।

४. विश्वात्मन् = सूर्य (३. ३, २७)।

५. विश्वात्मन् = विष्णु (श्रीकृष्ण); २. ६८, ४३; ३. १८९, ३४. ४१; २६३, ९. १४. १५; २७२, ३१; १२. ४३, ५; ४७, ६९. ८४; ५१, ३; ३३४, ८; ३४२, १५; १३. १४९, ३७ (सहस्रनाम); १४. ५२, ८; ५५, ७।

६. विश्वात्मन् = वृत्र (१२. १८२, ३४)।

१. विश्वामित्र, गाधि के पुत्र का नाम है : १. १, २२७। "पहले की बात है, महर्षि विश्वामित्र बड़ी भारी तपस्या कर रहे थे। उस तपस्या से उन्होंने देवराज इन्द्र को अत्यन्त सन्ताप में डाल दिया। इन्द्र ने तब मेनका नामक अप्सरा को विश्वामित्र का तपभङ्ग करने के लिये भेजा। मेनका महर्षि विश्वामित्र के स्वभाव से परिचित थी, अतः उसने इन्द्र से कहा : 'विश्वामित्र बहुत तेजस्वी और महान् तपस्वी हैं। वे क्रोधी भी बहुत हैं। जिनके तेज और तप से आप भी उद्विग्न हैं उन्हें कैसे मैं तप से विचलित कर सकूँगी। विश्वामित्र ने महर्षि वसिष्ठ के सभी पुत्रों का वध करा दिया है। वे पहले क्षत्रियकुल में उत्पन्न हुये थे किन्तु तपस्या के बल से उन्होंने ब्राह्मणत्व प्राप्त कर लिया। उन्होंने अपने शौच-स्नान की सुविधा के लिये एक अगाध जल से भरी हुई नदी का निर्माण कर दिया था। उस नदी का नाम कौशिकी है। उनकी पत्नी का पूर्वकाल में संकट के समय शापवश व्याध धर्मात्मा राजर्षि मतङ्ग ने भरण-पोषण किया था। दुर्भिक्ष व्यतीत हो जाने पर विश्वामित्र ने उक्त नदी का नाम 'पारा' रख दिया। उन्होंने मतङ्ग मुनि के उपकार से प्रसन्न होकर स्वयं पुरोहित बनकर उनका यज्ञ कराया जिसमें भय से सोम पान करने के लिये आप भी पधारे थे। विश्वामित्र ने कुपित होकर दूसरे लोक की सृष्टि की और नक्षत्र-सम्पत्ति से रुठकर प्रतिश्रवण आदि नूतन नक्षत्रों का निर्माण किया था। उन्होंने ही गुरुशाप से हीनावस्था में पड़े हुये राजा त्रिशंकु को भी शरण दी थी। उस समय यह सोचकर कि 'विश्वामित्र वसिष्ठ के शाप को कैसे छुड़ा लेंगे' देवताओं ने उनकी अवहेलना करके त्रिशंकु के यज्ञ की सम्पूर्ण सामग्री नष्ट कर दी। परन्तु विश्वामित्र ने दूसरी यज्ञ-सामग्रियों की सृष्टि कर ली और त्रिशंकु को स्वर्ग में पहुँचा दिया। ऐसे महान् कर्म करनेवाले विश्वामित्र से मैं डरती हूँ कि कहीं वे मुझे भस्म न कर दें। वे अपने तेज से सम्पूर्ण लोकों को भस्म कर सकते हैं; पैर के आघात से पृथिवी को कँपा सकते हैं, मेरुपर्वत को छोटा बना सकते हैं और सम्पूर्ण दिशाओं में उलट-फेर कर सकते हैं। अग्नि जिनका मुख है, सूर्य और चन्द्रमा जिनकी आँखों के तारे हैं और काल जिनकी जिह्वा है, उन महर्षि विश्वामित्र का मेरे जैसी नारी कैसे स्पर्श कर सकती है। यमराज, चन्द्रमा, साध्यगण, विश्वेदेव तथा सम्पूर्ण वालखिल्य ऋषि तक जिन विश्वामित्र के प्रभाव से उद्विग्न रहते हैं उन्हें मैं कैसे स्पर्श करूँगी। अतः आप ऐसी व्यवस्था करें जिससे मैं सुरक्षित रह सकूँ। जब मैं वहाँ जा कर क्रीड़ा में निमग्न हो जाऊँ उस समय वायुदेवता आवश्यकता समझकर मेरा वस्त्र उड़ा दें और इस कार्य में कामदेव भी मेरे सहायक रहें।' मेनका के इस कथन को सुन कर इन्द्र ने तदनुसार व्यवस्था कर दी। तब मेनका विश्वामित्र के आश्रम पर गई (१. ७१)।" १. ७१, २०. २३. २४; ७२, २. ५; ७४, ६९ (मेनका ने विश्वामित्र के संयोग से शकुन्तला को उत्पन्न किया). ७५ (शकुन्तला के पिता); १२३, ५१ (अर्जुन के जन्म के समय उपस्थित सात महर्षियों में से एक); १३७, १४ (क्षत्रियेभ्यश्च ये जाता ब्राह्मणास्ते च ते श्रुताः। विश्वामित्रप्रभृतयः प्राप्ता ब्रह्म त्वमव्ययम्); १७४, ७. ८; १७५, १ (वैरं विश्वामित्रवसिष्ठयोः). ४. ७. १८. २१. २५. २६. २७. ३१. ४०. ४१-४३. ४५; १७६, ४, १५. १६. १८. २०-२२. ४१. ४३; १८१, १७; ३. ८३, १३९ (एक तीर्थ जहाँ स्नान करने से व्यक्ति ब्राह्मण बन जाता है); ८४, १४३ (कौशिकस्य मुनेर्ह्रदम्। यत्र सिद्धिं परां प्राप्तो विश्वामित्रोऽथ कौशिकः); ८५, ११९; ८७, १३ (कौशिकी तीर्थ में इन्होंने ब्राह्मणत्व प्राप्त किया). १५ (उत्पलावन में तपस्या की). १६; ११०, २०. २२ (युधिष्ठिर इनके आश्रम पर आये); २२६, १० (अग्नि द्वारा स्वाहा से स्कन्द की उत्पत्ति को इन्होंने देखा था). १२ (इन्होंने स्कन्द के सम्पूर्ण तेरह मंगल कर्म सम्पन्न कराये). १५; ५. १०६, ८. १०. ११. १६. १८. १९. २१. २४-२६ (वसिष्ठ के रूप में धर्म ने इनकी परीक्षा ली जिसके बाद ये ब्राह्मण हो गये। अपने शिष्य गालव से इन्होंने ८०० अश्वों की दक्षिणा माँगा); १०७, १; ११३, १९. २२; ११४, ११. १५; ११७, १३ (कौशिकः); ११९, १०. ११. १५. १८ (माधवी से अष्टक को उत्पन्न किया); ७. ९४, ४५; १९०, ३३; ९. ३९, २५. ३७; ४०, २। "कुशिक-वंशी विश्वामित्र ने सरस्वतीतीर्थ में घोर तपस्या करके ब्राह्मणत्व प्राप्त किया था। इस भूतल पर गाधि नाम से विख्यात क्षत्रिय राजा राज्य करते थे। गाधि अत्यन्त महान तपस्वी और योगी थे। उन्होंने अपने पुत्र विश्वामित्र कोराज्य पर अभि-षिक्त करके शरीर त्याग देने का विचार किया। उन्होंने प्रजाजनों को आश्वस्त किया कि उनके पुत्र विश्वामित्र भी उत्कृष्ट रूप से प्रजापालन करेंगे। तत्पश्चात गाधि के स्वर्ग चले जाने के बाद विश्वामित्र राजा हुये। एक दिन विश्वामित्र ने सुना कि उनकी प्रजा को राक्षसों से महान् भय प्राप्त हुआ है। तब वे अपनी सेना सहित निकल पड़े और बहुत दूर जाने के बाद वसिष्ठ के आश्रम पर पहुँच गये। उनके सैनिकों ने उस आश्रम पर अनेक अन्याय एवं अत्याचार किये। वसिष्ठ ने आश्रम पर आकर उसे उजड़ा देखा। तब वे विश्वामित्र पर कुपित हो उठे। उन्होंने अपनी गाय नन्दिनी से भयंकर भील जाति को उत्पन्न करने के लिये कहा। नन्दिनी ने तब अत्यन्त भयङ्कर भील जाति के सैनिकों की सृष्टि की। उन सैनिकों ने विश्वामित्र की सेना पर आक्रमण करके उसे मार भगाया। विश्वामित्र ने जब यह सुना कि उनकी सेना भाग गई है तब उन्होंने तप को अधिक प्रबल मानकर घोर तपस्या आरम्भ की। वे सरस्वती के श्रेष्ठ तीर्थ में चित्त को एकाग्र करके कभी जल और कभी वायु को ही आहार बनाकर तपस्या करने लगे। देवों ने उनके व्रत में बार-बार विघ्न डाला परन्तु उनकी बुद्धि तप से विचलित नहीं हुई। अनेक प्रकार की तपस्या करके विश्वामित्र अपने तेज से सूर्य के समान प्रकाशित होने लगे। उनकी तपस्या से ब्रह्मा ने उनसे वर माँगने के लिये कहा। तब विश्वामित्र ने ब्राह्मण हो जाने का वर माँगा। इस प्रकार सफल मनोरथ होकर विश्वामित्र समस्त भूमण्डल में विचरने लगे (९. ४०)।" ९. ४०, १२. १३. १६. २२. २७; ४२, ३. ४. ८-२०. २३. १५. २१. २४. ३४. ३८. ३९; ४३, १ (इन्होंने सरस्वती नदी को यह आज्ञा दी कि वह वसिष्ठ को इनके समीप बहा लाये जिससे ये वसिष्ठ का वध कर दें। सरस्वती नदी तदनुसार वसिष्ठ को बहा लाई किन्तु जब ये उनके वध के लिये कोई शस्त्र खोजने लगे तब सरस्वती ने वसिष्ठ को पुनः विपरीत दिशा में बहाकर उनके आश्रम पहुँचा दिया। इस पर क्रुद्ध होकर इन्होंने सरस्वती नदी को शाप दे दिया); १२. ४७, ७ (कौशिक, भीष्म को घेर कर खड़े ऋषियों में ये भी थे); ४९, ३० (यहाँ इनके ब्राह्मणत्व प्राप्त करने की कथा तथा इनके ब्राह्मणों के गुणों से युक्त होकर जन्म लेने की कथा है). ५६; १४१, १२. २६. ३३. ४२. ४६. ४७. ५०. ६१. ६९. ७१. ७३. ७५. ७७. ७९. ८२. ८४. ८६. ८८. ९०. ९२. ९८. (चाण्डाल और इनका संवाद); २०८, ३३ (उत्तरके ऋषियों में से एक); २९२, १३. १६; ३४२, २३ (कौशिक); १३. ३, २ (इन्होंने ब्राह्मणत्व प्राप्त किया था). ७. १० (इनके कर्मों का उल्लेख); ४, १. ४७. ४८ (विश्वामित्रो महातपाः'''ब्रह्मवंशविवर्धनाः). ६० (इनके ब्रह्मवादी पुत्रों का उल्लेख); १८, १६ (शिव की कृपा से ब्राह्मण हुये). ५२ (गालव के गुरु थे); २६, ५ (भीष्म को देखने आये); ३०, २ (इन्होंने पूर्वकाल में ब्राह्मणत्व प्राप्त किया था); ५२, ५; ५५, ३१ (कौशिको द्विजः); ५६, १२ (क्षत्रियं विप्रकर्माणं बृहस्पतिमिवौजसा। विश्वामित्रं तव कुले गाधेः पुत्रं सुधार्मिकम्).

२१; ९३, २१. ४७. ६६. ९६ (विश्वेदेवाश्च मे मित्रं मित्रमस्मि गवां तथा। विश्वामित्रमिति ख्यातं यातुधानि निबोध मां). १२८; ९४, ४. ३३; १०६, ६८ (१,००० दिव्य वर्षों तक केवल एक समय आहार ग्रहण करते हुये तपस्या करके ब्राह्मणत्व प्राप्त किया); १२६, ३५; १५०, ३८ (अत्रिर्वसिष्ठो ...विश्वामित्रोऽथ कौशिकः...धनेश्वरस्य गुरवः); १६५, ४४ (उत्तर के ऋषियों में से एक); १४. ३५, २६; ९१, ३४. ३५ (विश्वामित्रोऽसितश्चैव... चान्ये च बहवः सिद्धिं परमिकां गताः); १६. १, १५ (शाम्ब आदि को शाप दिया)। तुकी० ब्रह्मर्षि, गाधिज, गाधिनन्दन, कौशिक विप्रर्षि।

विश्वामित्रा, एक नदी का नाम है (६. ९, २६)।

विश्वामित्रदुहितृ = शकुन्तला (१. ९५, २९)।

विश्वामित्रनदी, पश्चिम की एक नदी का नाम है (३. ८९, ९)।

विश्वामित्रोपाख्यान — भीष्म ने कहा : भरतवंश में अजमीढ नाम से प्रसिद्ध एक राजा हो गये हैं। उनके पुत्र जह्नु हुये। जह्नु के समीप आकर गङ्गा पुत्री भाव को प्राप्त हुई। जह्नु से → सिन्धुद्वीप → बलाकाश्व → वल्लभ → कुशिक हुये जो इन्द्र के समान तेजस्वी थे। कुशिक के पुत्र गाधि हुये जो दीर्घकाल तक पुत्रहीन रहे। वे सन्तान की इच्छा से वन में रहने लगे। वहाँ रहते समय सोमयाग करने से उन्हें सत्यवती नामक कन्या प्राप्त हुई। उन दिनों च्यवन के पुत्र ऋचीक विख्यात तपस्वी थे। उन्होंने राजा गाधि से उनकी कन्या माँगा किन्तु गाधि ने उन्हें दरिद्र समझकर अपनी कन्या उन्हें नहीं दी। गाधि के इस प्रकार नकारात्मक उत्तर देने पर जब महर्षि ऋचीक लौटने लगे तब गाधि ने उनसे कहा : 'यदि आप शुल्क दीजिये तो मैं आपको अपनी पुत्री दे सकता हूँ।' ऋचीक ने यह जानना चाहा कि वे क्या शुल्क दें। तब गाधि ने कहा : 'आप मुझे १,००० ऐसे अश्व ला कर दीजिये जो चन्द्रमा के समान कान्तिमान और वायु के समान वेगवान हों तथा जिनका एक-एक कान श्याम रङ्ग का हो।' ऋचीक ने तब वरुण देव से ऐसे घोड़े प्रदान करने के लिये कहा। वरुण के कहने पर ऋचीक के चिन्तन करते ही गङ्गा के जल से वैसे अश्व प्रकट हो गये। कन्नौज के पास ही गङ्गा का वह उत्तम तट आज भी अश्वतीर्थ के नाम से विख्यात है। ऋचीक ने वे घोड़े गाधि को देकर उनकी कन्या प्राप्त कर लिया। ऋचीक जैसे तेजस्वी पति को प्राप्त कर सत्यवती को आपार हर्ष हुआ। अपनी उस पत्नी के उत्कृष्ट व्यवहार से मुनि अत्यन्त प्रसन्न हुये और उससे वर माँगने के लिये कहा। सत्यवती ने अपनी माता को एक श्रेष्ठ पुत्र प्रदान करने के लिये कहा। ऋचीक ने अपनी पत्नी से कहा : तुम्हारी माता ऋतुस्नान के बाद पीपल के वृक्ष का आलिङ्गन करे और तुम गूलर के वृक्ष का। इससे तुम दोनों को अभीष्ट पुत्रों की प्राप्ति होगी। मैंने ये दो मन्त्रपूत चरु तैयार किये हैं। इनमें से एक को तुम खा लो और दूसरे को तुम्हारी माता।' तब सत्यवती ने उन दोनों चरुओं के सम्बन्ध में अपनी माता से कहा। उसकी माता ने अपना चरु सत्यवती से बदल लिया। साथ ही ऋचीक ने जिसे जिस वृक्ष का आलिङ्गन करने के लिये कहा था उसे भी दोनों माता-पुत्री ने परस्पर बदल लिया। इस प्रकार परस्पर परामर्श करके दोनों ने दोनों वस्तुओं को बदल लिया। फिर दोनों गर्भवती हो गईं। अपनी पत्नी के गर्भवती होने पर ऋचीक ने यह बात जान ली कि उसने अपनी माता से अपना चरु बदल लिया है। ऋचीक ने बताया कि उन्होंने एक चरु को ब्रह्मतेज से और दूसरे को क्षत्रियतेज से अभिमन्त्रित किया था किन्तु चरु के बदल जाने से सत्यवती के गर्भ से क्षत्रिय उत्पन्न होगा जब कि उसकी माता ब्राह्मण को उत्पन्न करेगी। ऋचीक ने चरुओं के इस प्रकार बिना पूछे बदल लेने पर अपनी अप्रसन्नता भी प्रकट की। अपने पति की बात सुनकर सत्यवती शोक से मूर्च्छित हो गई। पुनः चेतना लौटने पर उसने ऋचीक मुनि से कहा : 'मैं आपका कृपाप्रसाद चाहती हूँ। मुझे क्षत्रिय पुत्र न उत्पन्न हो। मेरा पौत्र चाहे उग्रकर्मा क्षत्रिय-स्वभाव का हो जाय, परन्तु मेरा पुत्र वैसा न हो।' ऋचीक ने अपनी पत्नी को तदनुसार आश्वासन दे दिया। तदनन्तर उसने जमदग्नि नामक पुत्र को जन्म दिया। साथ ही ऋचीक की ही कृपा से सत्यवती की माता, गाधिपत्नी ने ब्रह्मवादी विश्वामित्र को उत्पन्न किया। इसलिये महातपस्वी विश्वामित्र क्षत्रिय होकर भी ब्राह्मणत्व को प्राप्त करके ब्राह्मणवंश के प्रवर्तक हुये। इस प्रकार, भीष्म ने युधिष्ठिर को बताया कि विश्वामित्र यद्यपि क्षत्रिय थे, तथापि ऋचीक मुनि ने उनमें परम उत्कृष्ट ब्रह्मतेज का आधान किया था जिससे उन्होंने ब्राह्मणत्व प्राप्त कर लिया। विश्वामित्र ने अनेक ब्रह्मवादी पुत्र उत्पन्न किये (१३. ४)।"

विश्वायु, एक सनातन विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३४)।

विश्वावती = गङ्गा (१३. २६, ९१)।

१. विश्वावसु, एक गन्धर्वराज का नाम है : १. ८, ६ (इन्होंने मेनका के गर्भ से प्रमद्वरा को उत्पन्न किया); ६५, ४७ (ये कश्यप द्वारा प्राधा के गर्भ से उत्पन्न हुये थे); १२३, ५८ (अर्जुन के जन्म के अवसर पर उपस्थित देवगन्धर्वों में ये भी थे); १७०, ४३ (इन्होंने सोम से चाक्षुषी विद्या सीख कर उसे चित्ररथ को बताया); १८७, ७ (द्रौपदी का स्वयंवर देखने आये); २. ७, २२ (इन्द्र की सभा में); १०, २५ (कुबेर की सभा में); ३. ४३, १८; ९०, १८ (इनके द्वारा गाये गये एक श्लोक का वर्णन); ९१, १४; १६८, ५७; २७९, ४२ (ये शापवश कबन्ध नामक राक्षस हो गये थे और श्रीराम दाशरथि द्वारा शापमुक्त हुये); ५. ११, १५; ६. ६, २० (मेरु पर); ७. ६१, ७ (राजा दिलीप के यज्ञ में ये वीणा बजाया करते थे); ९. ३७, १०; १२. २९, ७६ (दिलीप के यज्ञ में वीणा बजाया); २००, ११; २८३, ११; २८४, ७; ३१८, २७. ३६. ४८. ५८. ८३ (याज्ञवल्क्य ने इन्हें उपदेश दिया); ३२३, १९; ३२४, २१; १३. १६, १३ (विश्वावसुर्हिरण्याक्षः पुरुहूतनमस्कृतः); ८३, ९; १६५, १३; १५. २९, ९। तुकी० गन्धर्व, गन्धर्वराज, गन्धर्वेन्द्र, काश्यप।

२. विश्वावसु, जमदग्नि के पुत्र का नाम है (३. ११६, १०)।

३. विश्वावसु = श्रीकृष्ण (६. ६५, ४७)।

विश्वावसुमोक्षण — "सम्पाति के भाई और राम दाशरथि के मित्र अरुणपुत्र जटायु ने सीता का हरण करके ले जाते हुये रावण पर आक्रमण किया। उस युद्ध में रावण ने जटायु के पंख काट दिये। तदनन्तर सीता सहित रावण विश्वकर्मा द्वारा निर्मित अपनी लङ्कापुरी में चला आया। सीता को खोजते हुये श्रीराम और लक्ष्मण को आहत जटायु ने बताया कि रावण दक्षिण की ओर गया है। इतना बताकर ही जटायु मृत्यु को प्राप्त हुआ। श्रीराम ने जटायु की विधिवत अन्त्येष्टि की और फिर सीता की खोज में आगे बढ़े। मार्ग में श्रीराम और लक्ष्मण ने कबन्धनामक भयंकर राक्षस का वध किया। तब कबन्ध के शरीर से एक दिव्य गन्धर्वराज प्रकट होकर आकाश में स्थित हुआ। उस गन्धर्वराज ने अपना नाम विश्वावसु बताया और कहा कि एक ब्राह्मण के शापवश उसे राक्षसयोनि में आना पड़ा। श्रीराम के हाथों अपने राक्षसत्व से मुक्त होकर विश्वावसु ने श्रीराम और लक्ष्मण को सुग्रीव से मिलने के लिये कहा। विश्वावसु ने बताया कि वालि के छोटे भाई सुग्रीव पम्पा सरोवर के निकट ऋष्यमूक पर्वत पर अपने चार मन्त्रियों के साथ रहते हैं। इतना कहकर गन्धर्वराज विश्वावसु अन्तर्धान हो गया (३. २७९)।"

विश्वावास = श्रीकृष्ण (६. ६५, ५२; १३. १५८, ३९)।

विश्वेदेव (बहु० °वाः): १. ६६, ३८; ३. ३७, ३५; ९. ४५, ६; १२. ३१७, ५; १३. ९७, १४।

विश्वेदेवाः, देवों के एक वर्ग का नाम है, यद्यपि कहीं-कहीं सभी देवों का भी द्योतक है : १. १, ३४; ३, ६२; ६७, १२७ (द्रौपदेयों के रूप में जन्म लिया); ७१, ३९; १२३, ७० (अर्जुन के जन्म के समय उपस्थित); २२७, ३८ (अर्जुन और कृष्ण से युद्ध किया); २. ७, २२; ११, ४४ (ब्रह्मा की सभा में); ३. ४३, १३ (इन्द्रलोक में); २६१; ६; ३०८, १४; ४. ५६, ३ (विश्वाश्विमरुतां गणैः); ५. २९, १५; १०९, ३; १३१, ७; ६. ३५, २२; ७. ५५, ४४ (मरुत्त के सभासद); ७६, ४; २०१, ६६. ७७; २०२, १३२; ८. ८७ ४६; ९. ४४, २९; ४९, १९; ५१, २७; १२. १५, १७; २९, २२; ६४, १०; १२२, ४८; १६५, २६; १७१,

१५; २००, १०; २०७, २३; २०८, २३; २९५, १६; ३००, ६०; १३. २४, ३९१; १६, १५. ६८; १८, ७१; ९१, २४ (विश्वेदेवाश्च ये नित्यं पितृभिः सह गोचराः). २९ (इनकी संख्या चौसठ बताई गई है और इनके नामों का यहाँ उल्लेख है). ३३; ९३, ९६ (विश्वामित्र के नाम की व्युत्पत्ति); १३४, ५; १४०, २४; १५०, २०; १५८, ३४; १६१, १२ (विश्वरूप के नाम की व्युत्पत्ति); १६५, ३४; १४. ८, ४ (मुञ्जवत् पर्वत पर शिव की उपासना करते हैं); १०, ६; १६. ४, २५; १८. ५, १८ (विश्वेषां देवतानां) । तुकी० विश्वदेव (बहु०), विश्वेदेव (बहु०) ।

१. विश्वेश = ब्रह्मा (५. ४९, ४) । = शिव (३. ४०, १९; ८. ३४, ९२; १२. ३४२, १२५. १४१; १३. १४, ३११) । = श्रीकृष्ण (विष्णु) : ६. ६५, ४७; १२. ३४७, ५४ ।

१. विश्वेश्वर = ब्रह्मा (१३. १५०, २४) ।

२. विश्वेश्वर = शिव (३. ८३, १७१; ८४, १३५; ७. २०१, ६१; २०२, १४. १५२; १२. १९०, १०; १३. १४, १८२; १४. ८, २९) ।

३. विश्वेश्वर = श्रीकृष्ण (विष्णु) : ६. ३५, १६; ६५, ४७; १२. ३४३, १८; १३. १५०, २४ ।

४. विश्वेश्वर = महापुरुष (महापुरुषस्तव) ।

५. विश्वेश्वर = (द्वि० ०री) = ब्रह्मा और शिव : ७. ५३, १९; १२. २५७, १७ ।

विश्वेश्वरस्थान, एक तीर्थ का नाम है : १३. २६५, २३ ।

विश्वोपाख्यान – देखिये श्वेतोपाख्यान (वस्था०) ।

विषण्णाङ्ग = शिव (सहस्रनाम) ।

विषप्रस्थ, एक पर्वत का नाम है (३. ९५, ३) ।

विषम = विष्णु (सहस्रनाम) ।

विषयगोप्तृ = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ७०) ।

विषाग्निपा, विषाग्रपाद, विष्कम्भिन् = शिव (सहस्रनाम) ।

विष्कर, एक दैत्य, दानव अथवा राक्षस का नाम है जो पूर्वकाल में पृथिवी का शासक रह चुका था (१२. २२७, ५३) ।

विष्टरश्रवस् = श्रीकृष्ण (१२. ३७, २७; १४. १४, २) ।

१. विष्णु, आदित्यों में से एक, जिन्हें हरि भी कहते हैं । इन्हें परमेश्वर नारायण के साथ समीकृत किया गया है । ये लक्ष्मी (श्री, पद्मा) के पति हैं और महाभारत में इनके अवतार श्रीकृष्ण वासुदेव सर्वप्रमुख पात्र हैं : १. १, २४ (हृषीकेशं हरिम् ; २, ८२ (शिशोश्चर्या विष्णोः); १७, ११ (नारायणो देवः); १८, ४. ६. ३१. ३२. ३६ (कौस्तुभः"'श्रीमन्नारायण उरोगतः); १९, २ (इन्होंने स्त्रीरूप धारण करके दानवों से अमृत लेकर देवों को दिया). ३. २० (अपने सुदर्शन चक्र से असुरों को पराजित किया); २१, १२ (गां विन्दता"'गोविन्देनामितौजसा । वराहरूपिणा चान्तर्विक्षोभितजलाविलम्). १४ (अध्यात्मयोगनिद्रां"'विष्णोरमिततेजसः); २३, १७ (गरुड को इनके साथ समीकृत किया गया है); २५, १३ (इन्द्र को इनके साथ समीकृत किया गया है); ३३, १२. १६ (गरुड इनके वाहन बने); ३४, १४ (देवदेवं"'हरिम्); ६१, ४७; ६३, ९९ (अनुग्रहार्थं लोकानां विष्णुर्लोकनमस्कृतः । वसुदेवात्तु देवक्यां प्रादुर्भूतो महायशाः); ६४, ५१ (नारायणममित्रघ्नं वैकुण्ठमुपचक्रमुः); ६५, १ (ये अपने एक अंश से अवतार लेते हैं). १६ (ये बारह आदित्यों में सबसे छोटे किन्तु सबसे श्रेष्ठ हैं); ६६, ३६; ६७, १५१ (इनके एक अंश ने श्रीकृष्ण के रूप में अवतार लिया); ६८, १३; ८२, १२; ८३, ९; ८८, ९; १२३, ३९. ४३. ६७ (बारहवें आदित्य); १९०, १७; १९७, ३१. ३२ (हरिनारायण के एक श्वेत और श्याम केश ने बलराम और श्रीकृष्ण के रूप में जन्म लिया था); २. ११, ५२ (ब्रह्मा की सभा में); २४, १७ (शक्रविष्णू हि संग्रामे चेरतुस्तारकामये तेन रथेन). ३६ (हृषीकेश); ३३, १० (हरिः); ३६, १३. १४. १६ (नारायणः शम्भुर्भगवान्भूतभावनः); ६८, ४५ (श्रीकृष्ण, द्रौपदी ने इनका आवाहन किया); ३. १२, १०. २५. ४६. ५१; ३९, ७६ (शिवाय विष्णुरूपाय विष्णवे शिवरूपिणे); ४०, २; ४१, २५. ३४ (अजितेन = श्रीकृष्ण); ४७, १३. १८ (भूमिगतः श्रीमान्विष्णुर्मधुनिषूदनः । कपिलो नाम देवोसौ भगवानजितो हरिः); ८०, २ आदित्यानां यथा विष्णुः); ८२, ६४ (वरदान तीर्थ में दुर्वासा से एक वरदान प्राप्त किया). ७५ (विष्णुना"'पुरा शौचं कृतं"'हत्वा दैत्यदानवान्). ९६ (वडवा तीर्थ में देवताओं ने इनकी उपासना की). १२६ (केशवं); ८३, १० (विष्णु-स्थान नामक तीर्थ). १८ (वराहतीर्थ में इन्होंने वराहरूप धारण किया था). ४४ (लोकोद्धार तीर्थ में इन्होंने लोकों का उद्धार किया था). १०३ (विष्णुपद तीर्थ में वामन की अर्चना का विधान). १६९.१७२ (नारायणं"'पद्मनाभं); ८४, १९. १२१ (कछुये के रूप में एक असुर द्वारा अपहृत एक कोटि तीर्थों का इन्होंने उद्धार किया). १२३. १२४ (शालग्राम इति ख्यातो). १२५. १३१ (वामन तीर्थ में हरिका पूजन करने का विधान). १४७; ८५, ४९ (हरिर्नारायणः).७३ (हरिः); ८८, २६ (पुण्डरीकाक्षो देवदेवः). २७ (हरिः"'मधुसूदनः); ९०, २४ (नारायणः"'पुरुषोत्तमः); ९९, ४१ (रावण के वधार्थ राम दाशरथि के रूप में अवतार लिया). ६१. ६५. ६७. ७१; १०१, ९-१२ (इन्होंने इन्द्र को अपनी शक्ति से सम्पन्न किया). १५ (यथा महाशैलवरः पुरस्तात्स मन्दरो विष्णुकराद्विमुक्तः); १०२, १९-२५ (इन्द्र आदि सब देवताओं ने मिल कर भय से मुक्त होने के लिये मन्त्रणा की और फिर वे समस्त देवता सबको शरण देनेवाले, शरणागतवत्सल, अजन्मा एवं सर्वव्यापी, अपराजित वैकुण्ठनाथ भगवान् नारायण देव की शरण में गये और नमस्कार करके उन मधुसूदन से बोले : आप ही हमारे स्रष्टा और पालक हैं । आप ही सम्पूर्ण जगत का संहार करनेवाले हैं । इस स्थावर-जङ्गम जगत की सृष्टि आपने ही की है । पूर्वकाल में आपने ही वराहरूप धारण करके लोकों के हितार्थ सागर के गर्भ से इस पृथिवी का उद्धार किया था । प्राचीनकाल में आपने ही नृसिंह शरीर धारण करके हिरण्यकशिपु का वध किया था । महादैत्य बलि को भी आपने ही वामन रूप धारण करके त्रिलोकी के राज्य से वंचित किया था । यज्ञों का विनाश करने वाले जम्भ नामक असुर को भी आपने ही मारा था । ऐसे ऐसे आपके अनेक कर्म हैं जिनकी कोई संख्या नहीं है । हे मधुसूदन ! हम भयभीत देवताओं के एकमात्र आश्रय आप ही हैं); १०३, ६. १२ (जब कालेय नामक दैत्यों ने समुद्र में आश्रय ले लिया तब इन्होंने देवताओं को अगस्त्यजी की शरण में जाने का परामर्श दिया जिससे अगस्त्य समुद्र का शोषण कर लें); १०५, १९ (समुद्र को पुनः पूर्ण करने के लिये ब्रह्मा से निवेदन किया); ११४, २७. २८ (रेतोधा विष्णोः); ११५, १५ (राम जामदग्न्य के रूप में अवतार लिया); ११८, ११ (युधिष्ठिर इनके पास आये); १२६, २. ३५ (व्यजयल्लोकांल्लीन्विष्णुरिव); १४२, १७ (पुरातनेन देवेन विष्णुना). २१. २३ (देवगणेश्वर). २५. २७ (नरकासुर का वध किया). २८. ४४; १४७, ३१ (दाशरथिर्वीरो रामो"'विष्णुर्मानुषरूपेण); १४९, १७ (सत्ययुग में नारायण का वर्ण श्वेत होता है). २४ (त्रेता में इनका वर्ण लाल होता है). २७ (द्वापर में ये पीले रंग के होते हैं). ३४ (कृष्णं भवति केशवः, कलियुग में ये कृष्ण वर्ण होते हैं); १५१, ७ (रामाभिधानं विष्णुं); १६३, १७ (अनादिनिधनं देवं प्रभुं नारायणं परम्). १९ (स्थानं विष्णोः). २ (मेरु के निकट नारायण के स्थान का वर्णन); १८८, ९. १७ (= श्रीकृष्ण, एक महायुग के व्यतीत होने और दूसरे के आरम्भ होने पर नारायण विष्णु के स्वरूप का वर्णन); १८९, ५ (मार्कण्डेयजी से अपने स्वरूप का वर्णन करते हुये नारायण ने कहा : अहं विष्णुरहं ब्रह्मा शक्रश्चाहं, इत्यादि । देखिये श्लोक ५-४९). ५६ (आदिदेवमयं जिष्णुं पुरुषं पीतवाससम्); २०१, १२. २५. २६. ३४ (उत्तंक ने विष्णु की स्तुति की और यह वर प्राप्त किया कि कुवलाश्व के हाथों धुन्धु का वध होगा); २०२, २८; २०३, ११. १२ (युगारम्भ के समय मधु और कैटभ का वध किया था); २०४, ५. ६. १३ (कुवलाश्व को अपनी शक्ति से संयुक्त किया). ३६. ४४; २४९, २६; २५५, २० (दुर्योधन के पहले केवल विष्णु ने ही वैष्णव यज्ञ किया था); २६१, ३७ (ब्रह्मणः सदनादूर्ध्वं तद्विष्णोः परमं पदम्); २६३, २५.

३३। "जयद्रथ को भगवान् विष्णु की महिमा बताते हुये महादेवजी ने कहा : भगवान् नारायण देवताओं के भी देवता, अनन्तस्वरूप, सर्वव्यापी, देवगुरु, सर्वसमर्थ, प्रकृति-पुरुषरूप, अव्यक्त, विश्वात्मा एवं विश्वरूप हैं। प्रलयकाल उपस्थित होने पर वे विष्णु ही कालाग्नि रूप से प्रकट हो कर पर्वत, समुद्र, द्वीप, शैल, वन आदि सहित सम्पूर्ण जगत को दग्ध कर देते हैं। वे नागलोक को भी भस्म कर डालते हैं। सब कुछ भस्म हो जाने पर आकाश में अनेक रंग के मेघों की घटा घिर आती है। वे मेघ वर्षा करके प्रलयाग्नि को बुझा देते हैं। संवर्तक अग्नि का नियन्त्रण करनेवाले वे महामेघ सर्पों के समान मोटी धाराओं से जल गिराते हुये सबको डुबा देते हैं। उस समय सब ओर जल भर जाने से केवल जलमय समुद्र ही दृष्टिगोचर होता है। उस एकार्णव के जल में समस्त चराचर जगत, चन्द्रमा, सूर्य, और वायु भी विलीन हो जाते हैं। एक सहस्र चतुर्युगी समाप्त होने पर उस एकार्णव जल में यह पृथ्वी डूब जाती है। तत्पश्चात नारायण नाम से प्रसिद्ध भगवान् श्रीहरि उस एकार्णव जल में शयन करने के लिये महारात्रि का निर्माण करते हैं। उन भगवान के सहस्रों नेत्र, सहस्रों चरण और सहस्रों मस्तक हैं। उस समय शयन करने के लिये वे शेषनाग को अपना पर्यङ्क बनाते हैं। तत्पश्चात सृष्टिकाल में सत्वगुण के आधिक्य से भगवान् योगनिद्रा से जाग उठते हैं। तब उन्हें समस्त लोक सूना दिखाई देता है। जल भगवान का शरीर है इसलिये उनका नाम 'नार' है। वह नार ही उनका 'अयन' है अथवा उसके साथ एक होकर वे रहते हैं इसलिये उन्हें 'नारायण' कहा गया है। तत्पश्चात प्रजासृष्टि के लिये भगवान ने चिन्तन किया जिससे उनकी नाभि से सनातन कमल प्रकट हुआ। उस नाभिकमल से चतुर्मुख ब्रह्मा का प्रादुर्भाव हुआ। उन ब्रह्मा जी ने सम्पूर्ण जगत को शून्य देखकर मरीचि आदि नौ मानसपुत्र उत्पन्न किया। उन मानसपुत्र महर्षियों ने स्थावरजङ्गम सम्पूर्ण भूतों की तथा यक्ष, राक्षस, भूत, पिशाच, नाग और मनुष्यों की सृष्टि की। ब्रह्मा के रूप से भगवान सृष्टि करते हैं। नारायण रूप से इसकी रक्षा करते हैं और रुद्रस्वरूप से सबका संहार करते हैं। इस प्रकार प्रजापालक भगवान् की ये तीन अवस्थायें हैं। जल में डूबी पृथिवी का उद्धार करने के लिये उन्होंने वराहरूप धारण किया। उनका यह विशाल पर्वताकार शरीर १०० योजन लम्बा और १० योजन चौड़ा था। इस वराह रूप से जल के भीतर प्रवेश करके उन्होंने अपने दाँतों से पृथिवी को ऊपर उठाकर पुनः स्थापित कर दिया। तदनन्तर नृसिंह रूप धारण कर उन्होंने दैत्यराज हिरण्यकशिपु का वध किया। लोकों के हित के लिये वे भगवान् श्रीहरि अन्य रूपों में प्रकट हुये हैं। एक समय वे कश्यप के पुत्र हुये और अदिति देवी ने उन्हें १००० वर्षों तक गर्भ में धारण किया। तदनन्तर उन्होंने वामनाकार भगवान को जन्म दिया। वे वामन दण्ड, कमण्डलु धारण किये वक्षःस्थल पर श्रीवत्स चिह्न से विभूषित थे। वे बाल-वामन रूपधारी भगवान बलि की यज्ञशाला के समीप गये। बृहस्पति की सहायता से उनका बलि के उस यज्ञमण्डप में प्रवेश हुआ। बलि ने वामनरूपी भगवान का पूजन करके पूछा कि वह क्या सेवा करे। तब वामन ने तीन पग भूमि की याचना की जिसे बलि ने सहर्ष देना स्वीकार कर लिया। तब भूमि को नापते समय उन अक्षोभ्य सनातन विष्णु ने तीन पग द्वारा सारी वसुधा नाप ली और देवराज इन्द्र को समर्पित कर दिया। वे ही भगवान् विष्णु अब यदुकुल में श्रीकृष्ण के रूप में उत्पन्न हुये हैं। वे अनादि, अजन्मा, दिव्य स्वरूप, सर्वसमर्थ और विश्ववन्दित हैं। उन्हीं शङ्ख-चक्र-गदाधारी, पीताम्बर विभूषित श्रीवत्सधारी श्रीकृष्ण के द्वारा सुरक्षित होने के कारण अर्जुन को कोई भी जीत नहीं सकता (३. २७२)।" ३. २७२, ३१. ४८. ६९. ७२ (विष्णुः कृष्णेति परिकीर्त्यते); २७६, ५ (राम दाशरथि के रूप में अवतार लेकर रावण का वध किया). ७; ३१०, २८ (वराहमपराजितम् नारायणचिन्त्यं च तेन कृष्णेन); ३१५, १४-२० (दैत्यों का वध करने के लिये विष्णु ने हयग्रीव रूप धारण करके अज्ञातभाव से अदिति के गर्भ में दीर्घकाल तक निवास किया। उन्होंने ही वामनरूप में राजा बलि के राज्य को लेकर इन्द्र को दिया। उन्होंने शत्रुओं के विनाश के लिये प्रच्छन्न रूप से इन्द्र के वज्र में भी प्रवेश किया था। भयंकर पराक्रमी विष्णु ने श्रीराम रूप से दशरथ के घर में छिपे रहकर युद्ध में दशमुख रावण का वध किया था); ४. ९, ८ (पद्मा नारायणपरिग्रहः); ७१, १६; ५. ९, ५९; १०, ४-८ (देवताओं ने इनकी स्तुति करते हुये इनसे कहा : आपने पूर्वकाल में अपने तीन पगों से सम्पूर्ण त्रिलोकी को नाप लिया था। आपने ही मोहिनी रूप में दैत्यों से अमृत छीना और उनका संहार किया तथा महादैत्य बलि को बाँधकर इन्द्र को देवताओं का राजा बनाया था। आप ही सम्पूर्ण देवताओं के स्वामी हैं। आप ही विश्ववन्दित देवता हैं). १०. ३७. ३९. ४३ (वृत्रासुर के भय से त्रस्त हो इन्द्रादि देवताओं ने इनसे सहायता माँगी। तब इन्होंने इन्द्र के वज्र में प्रवेश करने का वचन दिया); १३, १०. १३. १६ (ब्रह्महत्या के पाप का वितरण किया); १५, १२; १६, १६; २२, ३२. ३३; ४८, ८४. ८८; ५९, ११; ६८, १४ (हरिः); ७०, ३. ५. १३; ७१, ५ (हरिम्); ९७, ३; ९९, ५ (हयशिरा); १००, ५ (असुराः कालखञ्जाश्च तथा विष्णुपदोद्भवा); १०१, ७. ८ (सुपर्णों ने इनकी उपासना की); १०४, २३. २४. २६. २७; १०५, ९. २६. ३२. ३५. ३७ (सुमुख को बचाने के लिये इन्होंने गरुड का मानमर्दन किया); १०७, १४. १८ (वासवावरजः); ११०, १८; १११, ७ (विष्णुः सहस्राक्षः सहस्रचरणोऽव्ययः। सहस्रशिरसः श्रीमानेकः पश्यति मायया). २१ (विष्णुपदं नाम क्रमता विष्णुना कृतम्); ११३, ९; ११७, १०; ६. ८, १५-१८ (क्षीरोदस्य समुद्रस्य तथैवोत्तरतः''' हरिर्वसति वैकुण्ठः शकटे कलकामये। अष्टचक्रं हि तद्यानं भूतयुक्त मनोजवम् : "क्षीर सागर के उत्तर तट पर भगवान विष्णु निवास करते हैं। वहाँ वे सुवर्णमय रथ पर विराजमान हैं। उस रथ में आठ पहिये लगे हैं। उसका वेग मन के समान है। वह समस्त भूतों से युक्त, अग्नि के समान कान्तिमान, परम तेजस्वी, तथा जाम्बूनद नामक सुवर्ण से विभूषित है। वे सर्वशक्तिमान सर्वव्यापी विष्णु ही सब प्राणियों का संकोच और विस्तार करते हैं। वे ही कर्ता और कारयिता हैं। पृथिवी, जल, तेज, वायु और आकाश सब कुछ वे ही हैं। वे ही सब प्राणियों के लिये यज्ञरूप हैं और अग्नि उनका मुख है); १२, ९ (हरि, क्रौञ्चद्वीप में गोमन्त पर्वत पर); २१, १५; ३४, २०; ३५, ८. ९. २४. ३०; ४२, ७७ (हरि); ५०, ४२; ५९, ८०. ९९-१०१; ६५, ६३. ७१ (ब्रह्मा ने विष्णु की स्तुति करते हुये उनसे श्रीकृष्ण के रूप में अवतार लेने का निवेदन किया); ६७, ३. १६. १७ (मधुसूदनमित्याहुर्ऋषयश्च जनार्दनम। वाराहश्चैव सिंहश्च त्रिविक्रमगतिः प्रभुः); ६८, ४. ११; ७. ४, ४; १३, १२; १४, ४९; २१, ३७; ३६, ७. ४०; ४९, १; ५२, ३४; ७९, ९ (विष्णुर्जिष्णुप्रियङ्करः); ८१, २५; ८३, १८ (देवदेवेश सनातन विशातन। विष्णो जिष्णो हरे कृष्ण वैकुण्ठ पुरुषोत्तम); ९४, ५२. ७० (हिरण्यगर्भेण यथा बद्धं विष्णोः पुरा रणे); १४९, २४ (माधव); १७०, ६१; १७४, ३६; १९१, ३६; १९२, ५०; १९७, २३ (हरि); २०१, ९७ (नारायणः'''विश्वकृत्); २०२, ७७ (शिव के शर बने). ८३ (शरं कालाग्निसंयुक्तं विष्णुसोमसमायुतम्). १०८ (शिव के साथ समीकृत); ८. ३, १५; १०, ३५; २०, ५१; ३१, १९ (कर्णस्य भुजयोर्वीर्ये शक्रविष्णुसमम्); ३४, १८ (विष्णु, सोम और अग्नि शिव के बाण बने). ५०. ५६. ७९. १००. १०१ (इन्होंने वृष के रूप में शिव के रथ को उठाया); ३७, १४. २०; ४५, ३४; ५१, ५४; ६५, १९ (हते महासुरे जम्भे शक्रविष्णु यथा गुरुः); ६८, १३; ७३, ५७. ५८; ७७, ५; ७९, ६६; ८७, २६. ७४; ९४, ५७; ९६, ६०. ६२. ६४; ९. ३३, २७; ३४, १८; ४४, १०; ४५, ४. २८. ३७ (स्कन्द को तीन पार्षद दिया); ४६, ४९ (स्कन्द को वैजयन्ती नामक माला दी); ४९, २२ (पूर्वकाल में मधु और कैटभ नामक असुरों का वध करने के बाद विष्णु ने आदित्य तीर्थ में स्नान किया); ५१, २६; ५४, ५; ११. ७, २५; ८, २५ (इन्होंने पृथिवी को आश्वासन दिया कि कुरुक्षेत्र में युद्ध करके दुर्योधन पृथिवी का भार हलका करेगा); १२. ४३, ५ (विश्वकर्मन्नमस्तेऽस्तु विश्वात्मन्विश्वसम्भव। विष्णो जिष्णो हरे कृष्ण वैकुण्ठ पुरुषोत्तम). ८ (वराहः'''उरुक्रमः). १२ (वामनः); ४५, १६; ४७, १५. ८६. ९५. ९६. ९८ (भीष्म ने विविध

नामों से विष्णु की स्तुति की); ५९, ८७. ८८ विरजा की सृष्टि की); ५९, ११६. १२७. १२८ (पृथु के शरीर में प्रवेश किया). १३१ (इनके मस्तक पर एक सुवर्ण कमल प्रकट हुआ जिससे श्री उत्पन्न हुई); ६३, ९; ६४, ७. १४. १५. २३; ६५, ३२ (इन्द्र के रूप में इन्होंने मान्धाता को उपदेश दिया); ९८, ४३; ११०, २४. २८ (नारायणं हरिम्); १२०, ४६; १२१, २३ (दण्डो हि भगवान्विष्णुर्दण्डो नारायणः प्रभुः); १२२, २२. २४. २६ (शूलवरायुधः). ३६ (इन्होंने शिव से दण्ड प्राप्त कर उसे अङ्गिरस को दे दिया). ४७; १५३, ७६; १६६, ६६ (रुद्र से तलवार प्राप्त कर उसे मरीचि को दे दिया); १८२, १५ (पद्मं सृष्टं स्वयंभुवा). २०; २००, १३; २०६, १२; २०७, १. २ (श्रीकृष्ण ही परमेश्वर विष्णु हैं). २६ आदित्यों में से एक जिन्होंने वामन रूप में जन्म लिया); २०८, १६ (ये बारहवें आदित्य हैं); २०९, १३. १६. २५. ३०; २१०, १०. १२; २१३, २; २१६, ५ (योगेश्वरोहरिः); २१७, ३२. ३३; २२७, ८;२३९, ८;) २६५, १०; २७९, २९ (हरिनारायण के नामों का उल्लेख); २८०, २. ५-७. २७. ५०. ५८ (सनत्कुमार ने वृत्र को विष्णु की महानता का उपदेश दिया); २८१, १ (वृत्र विष्णुभक्त था). २. ४. २३. ३१ (वज्र में प्रवेश किया); २८२, ११; २८३, ६०. ६१; २८४, २२; २९२, १७ (ऋषियों की प्रार्थना पर उन्हें सफलता का वरदान दिया); २९६, २८; ३००, ५८. ६२ (योगी'''नारायणात्मा); ३०१, २०. २३. ५९. ७७. ९६; ३०२, ३७; ३१३, १ (पैरों के अधिदेवता); ३२७, ८ (इन्होंने पुत्र की कामना से हिमवत पर तपस्या की थी). १३ (स्कन्द के प्रति आदर के कारण इन्होंने उनके बाण को केवल हिला दिया यद्यपि ये उसे उठा सकते थे). १५; ३२८, ३०. ५५; ३३४-३४० (भगवान नारायणने नारदजी के पूछने पर परमदेव परमात्मा को सर्वश्रेष्ठ बताया। तब नारजी ने श्वेतद्वीप में जा कर भगवान का दर्शन प्राप्त किया और दो सौ नामों द्वारा उनकी स्तुति की। व्यासजी ने अपने शिष्यों को भगवान् द्वारा ब्रह्मादि देवताओं से कहे हुये प्रवृत्ति और निवृत्ति रूप धर्म के उपदेश का रहस्य बताया। यह सभी वृत्तान्त शान्तिपर्व के ३३४-३४० अध्यायों में वर्णित है); ३४१, २९. ३२. ४३; ३४२, १५. २६ (नारायणहस्तग्रहणान्नील-कण्ठत्वम्). ३३. ४१. ५२. ५४. ६० (नारायणो लोकहितार्थं वडवामुखो नाम पुरा). १०७ (नरनारायणौ पूर्वं तपस्तेपतुः). ११३. ११५. ११८. १२७, १३० (नारायणं प्रभुम्); ३४३; २०; ३४५, २७; ३४६, ६. ८; ३४७, ३ (इन्होंने वराह का रूप धारण कर वेदों का उद्धार और मधु-कैटभ का वध किया). ९४; ३४९-३५१ (अनेक स्थानों पर नारायण आता है); १३. १, ५५; ६, १८ (येन लोकास्त्रयः सृष्टा दैत्याः सर्वाश्च देवताः। स एव भगवान्विष्णुः समुद्रे तप्यते तपः). ३५ (बलिर्वैरोचनिर्बद्धो धर्मपाशेन दैवतैः। विष्णोः पुरुषकारेण पातालसदनः कृतः); ११, ३; १४, ४. ९. १८. ३८ (हरिः). ७५. १४०. २०४. २३२. २६४. २६७ (नारायणः'''वैनतेयं समारुह्य शंखचक्र गदाधरम्). २८३. २८४. ३२२. ३४७ (शिव के वामपार्श्व से प्रकट हुये). ३९२. ४०५; १६, १५. २२ (शिव के साथ समीकृत). ६८; १८, ७१; २६, ९३; ३१, ६; ६२, ४८; ८२, ७; ८३, २६; १०९, ७ (चैत्र मास में विष्णु की श्रीकृष्ण के रूप में उपासना करने का फल). १७ (विष्णु के उन बारह नामों का उल्लेख जिनसे श्रीकृष्ण की उपासना करना चाहिये); १२५, १४ (नारायणः प्रभुः); १२६, २. ११. ३९; १३२, १० (यदा नारायणः श्रीमानुज्जहार वसुन्धराम्); १३४, ८; १३९, ८. १९. २०; १४७, २. ४८. ६०; १४८, २३ (त्रिविक्रमः); १४९, ६. १२. १४ (विष्णु सहस्रनाम; भीष्म ने श्रीकृष्ण की विष्णु सहस्रनाम से उपासना की); १५०, १५ (द्वादशो विष्णुरुच्यते). २८; १५८, ३८. ४६ (नारायन); १६०, २८ (शिव ने इन्हें अपना शर बनाया); १६५, ९; १४. ४, २४; २१, ४; ४०, २. १२; ४२, २५ (पैरों के अधिदेवता). ६५; ४३, ९. १२ (भूतं परतं मत्तो विष्णोर्वाऽपि न विद्यते). १३ (ब्रह्ममयो महान्); ४४, १२. १६; ५४, १४; ५५, ६; ५६, १; ८७, ७; १५. २५, ८; ३१, १२; १६. ३, १२ (हरिः); ४, २६ (नारायण); ८, २४; १७. १, १२. ३८ (नारायण); १८. ५, २४ (नारायणो नाम देवदेवः सनातनः। तस्यांशो वासुदेवः); ६, ४८. ९३. ९४ (विष्णु कथा)।

तुकी० कृष्ण (पर्यायों सहित), नारायण, तथा निम्नलिखित पर्याय :

अज — देखिये वस्था०।

अजितः ३. ४१, ३४; ४७, १८।

अचिन्त्य ३. ३१०, २८; ७. ३६, ४०; १२. २००, १३; २०७ ४९।

अच्युत — देखिये वस्था०।

अतिभू : १२. ४३, ११।

अदितिनन्दन : १३. १४, ३९२ (शतक्रतुश्च भगवान विष्णुश्चादितिनन्दनौ)।

अनन्त : १. ६३, १०२; १९७, ३१; ३. १८९, ३५; ६. ३५, ३७. १२. ४७, ७५; १८२, २०. ३३; ३४२, ९२; १३. १४९, ४ (सहस्रनाम). ८३. ११३; १८. ५, २३।

अनादि : १. ६३, १०३; ६. ३४, ३; १२. ४७, ६९; १३. १४९, ११४ (सहस्रनाम)।

अनादिनिधन : १. ६३, १००; २. ७९, २४; ३. १६३, १७; १८८, २०; २११, १७; ५. ११०, १८; ७. १४९, २०; १२. ४७, ३७; ३२९, ५३; ३६२, १०; १३. १४९, ६. १८ (सहस्रनाम)।

अनादिमध्यपर्यन्त : १२. ४७, ३५।

अनादिमध्यान्त : ६. ३५, १९; ६५, ७५।

अनाद्य : १२. ३४२, ९०।

असम्य १२. ३४२, ९०।

अरविन्दाक्ष, अव्यक्त, अव्यय, अश्वशिरस्, असुरसूदन, आदिकर, आदित्यपति, आदिदेव — देखिये वस्था०।

आविर्भूः : ३. १८९, ३५।

इन्द्रानुज : १. १३५, ७; ५. ७१, ७; ६. ४९, १६; ५९, १०३।

इन्द्रावरज : १. १८८, २०; ८. १८, १६; ९०, ७०; ९. १७, ३८।

ईशान, ईश्वर — देखिये वस्था०।

उपेन्द्र, उरुक्रम, एकशृङ्ग - देखिये वस्था०।

कपर्दिन, कपिलकेशव, क्षेत्रज्ञ, गुह्य, गोविन्द, चक्रगदापाणि, चक्रधर, चक्रपाणि, चक्रायुध — देखिये कृष्ण तथा वस्था०।

चतुर्भुज : ३. २७६, ५; ५. ६६, १५; १०४, २३; १३. १४८, २२; १४९, २८।

चतुर्मूर्तिधृत् — देखिये वस्था०।

जगत्पति, जगत्प्रभु, जगन्नाथ, जनार्दन, जिष्णु—देखिये वस्था०।

त्रिदशवरावरज (इन्द्र के छोटे भाई) : ८. ३०, ९।

त्रिभुवनश्रेष्ठ, त्रिभुवनेश्वर, त्रिलोकेश, त्रिलोकेश्वर, त्रिवर्त्मन्, त्रिविक्रम, त्रिविक्रमगति — देखिये वस्था०।

देवदेव, देवदेवेश्वर, देवश्रेष्ठ, देवाधिदेव, देवेश, निष्क्रिय — देखिये वस्था०।

पद्मनाभ, पद्मलोचन, परमात्मन्, परमेश्वर, परमेष्ठिन्, पीतवासस्, पुण्डरीकाक्ष, पुरुष, पुरुषवर, पुरुषोत्तम, पुष्कराक्ष, पुष्करेक्षण, प्रजापति, प्रजापतिपति, प्रभु — देखिये वस्था०।

भगवत्, भूतराज (१२. २०९, २७); भूताचार्य —देखिये वस्था०।

मधुकैटभहन्; मधुनिसूदन, मधुनिहन्, मधुसूदन, मधुहन्, महादेव, महापुरुष, महाभूताधिपति, महावराह — देखिये वस्था०।

महेन्द्रावरज : ६. ५९, ९०. ९३।

महेश्वर, मुञ्जकेश, मुञ्जकेशवत्, मुञ्जकेशिन् — देखिये वस्था०।

यज्ञपति, योगिन्, योगीश, योगीश्वर, योगेश्वर — देखिये वस्था०।

रथचक्रभृत् — देखिये वस्था०।

लोककर्तृ – देखिये वस्था० ।

वरद, वराह, वरेण्य, वामन, वाराह, वासवानन्तरज – देखिये वस्था० ।

वासवानन्तरज : ६. ५९, ८२ ।

वासवानुज :५. ८३, २८; १३०, २०; १२. ४६, १०; ४८, १५; १३. १४९, ४८ (सहस्रनाम) ।

वासवावरज, विकुण्ठ विबुधश्रेष्ठ, विभु, विराज्, विरिञ्च, विश्व, विश्वकर्मन्, विश्वकृत्, विश्वगुप्त, विश्वधर, विश्वभुज्, विश्वभू, विश्वमूर्ति, विश्वरूपधृक्, विश्वात्मन्, विश्वेश, विश्वेश्वर, विष्वक्सेन, वैकुण्ठ – देखिये वस्था० ।

शक्रानुज : ७. १४९, १२ ।

शङ्खचक्रगदाधर, शम्भु, शालग्राम, शिपिविष्ट, शूलवरायुध, श्रीधर, श्वेत – देखिये वस्था० ।

सर्वदेवेश, सर्वभूतपितामह, सर्वभूतेश्वर, सर्वलोकेश्वर, सहस्र शिरस, सहस्रशीर्ष, सहस्राक्ष, साध्य, सिंह, सुरगणश्रेष्ठ, सुरगुरु, सुरपति, सुरवरोत्तम, सुरश्रेष्ठ, सुरारिघ्न; सुरासुरगुरु, सुरेश, स्वयम्भू – देखिये वस्था० ।

हरि – देखिये वस्था० ।

विष्णु के सहस्रनाम १३. १४९, १४-१२० तक आते हैं। महान् आत्मस्वरूप विष्णु के जो नाम गुण के कारण प्रवृत्त हुये हैं उनमें से जो-जो प्रसिद्ध हैं और मन्त्रों के द्रष्टा मुनियों द्वारा जो सर्वत्र गाये गये हैं वे समस्त १००० नाम इस प्रकार हैं : १३. १४९, १४ (१ विश्वम्, २ विष्णु, ३ वषट्कार, ४ भूतभव्यभवत्प्रभु, ५ भूतकृत, ६ भूतभृत्, ७ भावः, ८ भूतात्मा, ९ भूतभावनः). १५ (१० पूतात्मा, ११ परमात्मा, १२ मुक्तानां परमागतिः, १३ अव्यय, १४ पुरुषः, १५ साक्षी, १६ क्षेत्रज्ञ, १७ अक्षर). १६ (१८ योग, १९ योगविदां नेता, २० प्रधान पुरुषेश्वर, २१ नारसिंहवपु, २२ श्रीमान्, २३ केशव, २४ पुरुषोत्तम). १७ (२५ सर्व, २६ शर्व, २७ शिव, २८ स्थाणु, २९ भूतादि, ३० निधिरव्यय, ३१ सम्भव, ३२ भावन, ३३ भर्ता, ३४ प्रभव, ३५ प्रभु, ३६ ईश्वर). १८ (३७ स्वयम्भू, ३८ शम्भु, ३९ आदित्य, ४० पुष्कराक्ष, ४१ महास्वन, ४२ अनादिनिधन, ४३ धाता, ४४ विधाता, ४५ धातुरुत्तम). १९ (४६ अप्रमेय, ४७ हृषीकेश, ४८ पद्मनाभ; ४९ अमरप्रभु, ५० विश्वकर्मा, ५१ मनु, ५२ त्वष्टा, ५३ स्थविष्ठ, ५४ स्थविरो ध्रुव). २२ (५५ अग्राह्य, ५६ शाश्वत, ५७ कृष्ण, ५८ लोहिताक्ष, ५९ प्रतर्दन, ६० प्रभूत, ६१ त्रिककुब्धाम, ६२ पवित्रम्, ६३ मङ्गलं परम्) २१ (६४ ईशान, ६५ प्राणद, ६६ प्राण, ६७ ज्येष्ठ, ६८ श्रेष्ठ, ६९ प्रजापति, ७० हिरण्यगर्भ, ७१ भूगर्भ, ७२ माधव, ७३ मधुसूदन). २२ (७४ ईश्वर, ७५ विक्रमी, ७६ धन्वी, ७७ मेधावी, ७८ विक्रम, ७९ क्रम, ८० अनुत्तम, ८१ दुराधर्ष, ८२ कृतज्ञ, ८३ कृति, ८४ आत्मवान्). २३ (८५ सुरेश, ८६ शरणम्, ८७ शर्म, ८८ विश्वरेता, ८९ प्रजाभव, ९० अहः, ९१ संवत्सर, ९२ व्याल, ९३ प्रत्यय, ९४ सर्वदर्शन). २४ (९५ अज, ९६ सर्वेश्वर, ९७ सिद्ध, ९८ सिद्धि, ९९ सर्वादि, १०० अच्युत, १०१ वृषाकपि, १०२ अमेयात्मा, १०३ सर्वयोगविनिःसृतः). २५. (१०४ वसु, १०५ वसुमना, १०६ सत्य, १०७ समात्मा, १०८ असम्मित, १०९ सम, ११० अमोघ, १११ पुण्डरीकाक्ष, ११२ वृषकर्मा, ११३ वृषाकृति). २६ (११४ रुद्र, ११५ बहुशिरा, ११६ बभ्रु, ११७ विश्वयोनि, ११८ शुचिश्रवा, ११९ अमृत, १२० शाश्वतस्थाणु, १२१ वरारोह, १२२ महातपा). २७ (१२३ सर्वग, १२४ सर्वविद्भानु, १२५ विष्वक्सेन, १२६ जनार्दन, १२७ वेद, १२८ वेदवित्, १२९ अव्यङ्ग, १३० वेदाङ्ग, १३१ वेदवित, १३२ कवि). २८ (१३३ लोकाध्यक्ष, १३४ सुराध्यक्ष, १३५ धर्माध्यक्ष, १३६ कृताकृत, १३७ चतुरात्मा, १३८ चतुर्व्यूह, १३९ चतुर्दंष्ट्र, १४० चतुर्भुज). २९ (१४१ भ्राजिष्णु, १४२ भोजनम्, १४३ भोक्ता, १४४ सहिष्णु, १४५ जगदादिज, १४६ अनघ, १४७ विजय, १४८ जेता, १४९ विश्वयोनि, १५० पुनर्वसु). ३० (१५१ उपेन्द्र, १५२ वामन, १५३ प्रांशु, १५४ अमोघ, १५५ शुचि, १५६ ऊर्जित, १५७ अतीन्द्र, १५८ संग्रह, १५९ सर्ग, १६० धृतात्मा, १६१ नियम, १६२यम). ३१ (१६३ वेद्य, १६५ वैद्य, १६४ सदायोगी, १६६ वीरहा, १६७ माधव, १६८ मधु, १६९ अतीन्द्रिय, १७० महामाय, १७१ महोत्साह, १७२ महाबल). ३२ (१७३ महाबुद्धि, १७४ महावीर्य, १७५ महाशक्ति, १७६ महाद्युति, १७७ अनिर्देश्यवपु, १७८ श्रीमान्, १७९ अमेयात्मा, १८० महाद्रिधृक). ३३ (१८१ महेष्वास, १८२ महीभर्ता, १८३ श्रीनिवास, १८४ सतां गति, १८५ अनिरुद्ध, १८६ सुरानन्द, १८७ गोविन्द, १८८ गोविन्दां पति). ३४ (१८९ मरीचि, १९० दमन, १९१ हंस, १९२ सुपर्ण, १९३ भुजगोत्तम, १९४ हिरण्यनाभ, १९५ सुतपा, १९६ पद्मनाभ, १९७ प्रजापति). ३५ (१९८ अमृत्यु, १९९ सर्वदृक, २०० सिंह, २०१ संधाता, २०२ सन्धिमान्, २०३ स्थिर, २०४ अज, २०५ दुर्मर्षण, २०६ शास्ता, २०७ विश्रुतात्मा, २०८ सुरारिहा). ३६ (२०९ गुरु, २१० गुरुतम, २११ धाम, २१२ सत्य, २१३ सत्यपराक्रम, २१४ निमिष, २१५ अनिमिष, २१६ स्रग्वी, २१७ वाचस्पतिरुदारधी). ३७ (२१८ अग्रणी, २१९ ग्रामणी, २२० श्रीमान्, २२१ न्याय, २२२ नेता, २२३ समीरण, २२४ सहस्रमूर्धा, २२५ विश्वात्मा, २२६ सहस्राक्ष, २२७ सहस्रपात्). ३८ (२२८ आवर्तन, २२९ निवृत्तात्मा, २३० संवृत, २३१ सम्प्रमर्दन, २३२ अहः संवर्तक, २३३ वह्नि, २३४ अनिल, २३५ धरणीधर). ३९ (२३६ सुप्रसाद, २३७ प्रसन्नात्मा, २३८ विश्वधृक्, २३९ विश्वभुक्, २४० विभुः, २४१ सत्कर्ता, २४२ सत्कृत, २४३ साधु, २४४ जह्नु, २४५ नारायण, २४६ नर). ४० (२४७ असंख्येय, २४८ अप्रमेयात्मा, २४९ विशिष्ट, २५० शिष्टकृत्, २५१ शुचि, २५२ सिद्धार्थ, २५३ सिद्धसंकल्प, २५४ सिद्धदः, २५५ सिद्धिसाधन). ४१ (२५६ वृषाही, २५७ वृषभ, २५८ विष्णु, २५९ वृषपर्वा, २६० वृषोदर, २६१ वर्धन, २६२ वर्धमान, २६३ विविक्त, २६४ श्रुतिसागर). ४२ (२६५ सुभुज, २६६ दुर्धर, २६७ वाग्मी, २६८ महेन्द्र, २६९ वसुद, २७० वसु, २७१ नैकरूप, २७२ बृहद्रूप, २७३ शिपिविष्ट, २७४ प्रकाशन). ४३ (२७५ ओजस्तेजोद्युतिधर, २७६ प्रकाशात्मा, २७७ प्रतापन, २७८ ऋद्ध, २७९ स्पष्टाक्षर, २८० मन्त्र, २८१ चन्द्रांशु, २८२ भास्करद्युति). ४४ (२८३ अमृतांशूद्भव, २८४ भानु, २८५ शशबिन्दु, २८६ सुरेश्वर, २८७ औषधम्, २८८ जगतः सेतु, २८९ सत्यधर्म पराक्रम). ४५ (२९० भूतभव्यभवन्नाथ, २९१ पवन, २९२ पावन, २९३ अनल, २९४ कामहा, २९५ कामकृत, २९६ कान्तः, २९७ काम, २९८ कामप्रद, २९९ प्रभु). ४६ ३०० युगादिकृत्, ३०१ युगावर्त, ३०२ नैकमाय, ३०३ महाशन, ३०४ अदृश्य, ३०५ अव्यक्तरूप, ३०६ सहस्रजित्, ३०७ अनन्तजित्). ४७ ३०८ इष्ट, ३०९ अविशिष्ट, ३१० शिष्टेष्ट, ३११ शिखण्डी, ३१२ नहुष, ३१३ वृष, ३१४ क्रोधहा, ३१५ क्रोधकृत्कर्ता, ३१६ विश्वबाहु, ३१७ महीधर). ४८ (३१८ अच्युत, ३१९ प्रथित, ३२० प्राण, ३२१ प्राणद, ३२२ वासवानुज, ३२३ अपांनिधि, ३२४ अधिष्ठानम्, ३२५ अप्रमत्त, ३२६ प्रतिष्ठित). ४९ (३२७ स्कन्द, ३२८ स्कन्दधर, ३२९ धुर्य, ३३० वरद, ३३१ वायुवाहन, ३३२ वासुदेव, ३३३ बृहद्भानु, ३३४ आदिदेव, ३३५ पुरन्दर). ५० (३३६ अशोक, ३३७ तारण, ३३८ तार, ३३९ शूर, ३४० शौरि, ३४१ जनेश्वर, ३४२ अनुकूल, ३४३ शतावर्त, ३४४ पद्मी, ३४५ पद्मनिभेक्षण). ५१ (३४६ पद्मनाभ, ३४७ अरविन्दाक्ष, ३४८ पद्मगर्भ, ३४९ शरीरभृत, ३५० महर्द्धि, ३५१ ऋद्ध, ३५२ वृद्धात्मा, ३५३ महाक्ष, ३५४ गरुडध्वज). ५२ (३५५ अतुल, ३५६ शरभ, ३५७ भीम, ३५८ समयज्ञ, ३५९ हविर्हरि, ३६० सर्वलक्षणलक्षण्य, ३६१ लक्ष्मीवान्, ३६२ समितिञ्जय). ५३ (३६३ विक्षर, ३६४ रोहित, ३६५ मार्ग, ३६६ हेतु, ३६७ दामोदर, ३६८ सह, ३६९ महीधर, ३७० महाभाग, ३७१ वेगवान्, ३७२ अमिताशन). ५४ (३७३ उद्भव, ३७४ क्षोभण, ३७५ देव, ३७६ श्रीगर्भ, ३७७ परमेश्वर, ३७८ करणम्, ३७९ कारणम्, ३८० कर्ता, ३८१ विकर्ता, ३८२ गहन, ३८३ गुह). ५५ (३८४ व्यवसाय, ३८५ व्यवस्थान, ३८६ संस्थान, ३८७ स्थानद, ३८८ ध्रुव, ३८९ परर्द्धि, ३९० परमस्पष्ट, ३९१ तुष्ट, ३९२ पुष्ट, ३९३ शुभेक्षण). ५६ (३९४ राम, ३९५ विराम, ३९६ विरज, ३९७ मार्ग, ३९८ नेय,

३९९ नय, ४०० अनय, ४०१ वीर, ४०२ शक्तिमतां श्रेष्ठ, ४०३ धर्म, ४०४ धर्मविदुत्तम). ५७ (४०५ वैकुण्ठ, ४०६ पुरुष, ४०७ प्राण, ४०८ प्राणद, ४०९ प्रणव, ४१० पृथु, ४११ हिरण्यगर्भ, ४१२ शत्रुघ्न, ४१३ व्याप्त, ४१४ वायु, ४१५ अधोक्षज). ५८ (४१६ ऋतु, ४१७ सुदर्शन, ४१८ काल, ४१९ परमेष्ठी, ४२० परिग्रह, ४२१ उग्र, ४२२ संवत्सर, ४२३ दक्ष, ४२४ विश्राम, ४२५ विश्वदक्षिण). ५९ (४२६ विस्तार, ४२७ स्थावरस्थाणु, ४२८ प्रमाणम्, ४२९ बीजमव्ययम्, ४३० अर्थ, ४३१ अनर्थ, ४३२ महाकोश, ४३३ महाभोग, ४३४ महाधन). ६० (४३५ अनिर्विण्ण, ४३६ स्थविष्ठ, ४३७ अभू, ४३८ धर्मयूप, ४३९ महामख, ४४० नक्षत्रनेमि, ४४१ नक्षत्री, ४४२ क्षम, ४४३ क्षाम, ४४४ समीहन). ६१ (४४५ यज्ञ, ४४६ इज्य, ४४७ महेज्य, ४४८ क्रतु, ४४९ सत्रम्, ४५० सतां गति, ४५१ सर्वदर्शी, ४५२ विमुक्तात्मा, ४५३ सर्वज्ञ, ४५४ ज्ञानमुत्तमम्). ६२ (४५५ सुव्रत, ४५६ सुमुख, ४५७ सूक्ष्म, ४५८ सुघोष, ४५९ सुखद, ४६० सुहृत्, ४६१ मनोहर, ४६२ जितक्रोध, ४६३ वीरबाहु, ४६४ विदारण). ६३ (४६५ स्वापन, ४६६ स्ववश, ४६७ व्यापी, ४६८ नैकात्मा, ४६९ नैककर्मकृत्, ४७० वत्सर, ४७१ वत्सल, ४७२ वत्सी, ४७३ रत्नगर्भ, ४७४ धनेश्वर). ६४ (४७५ धर्मगुप्, ४७६ धर्मकृत्, ४७७ धर्मी, ४७८ सत्, ४७९ असत्, ४८० क्षरम्, ४८१ अक्षरम्, ४८२ अविज्ञाता, ४८३ सहस्रांशु, ४८४ विधाता, ४८५ कृतलक्षण,). ६५ (४८६ गभस्तिनेमि, ४८७ सत्त्वस्थ, ४८८ सिंह, ४८९ भूतमहेश्वर, ४९० आदिदेव, ४९१ महादेव, ४९२ देवेश, ४९३ देवभृद्गुरु). ६६ (४९४ उत्तर, ४९५ गोपति, ४९६ गोप्ता, ४९७ ज्ञानगम्य, ४९८ पुरातन, ४९९ शरीरभूतभृत्, ५०० भोक्ता, ५०१ कपीन्द्र, ५०२ भूरिदक्षिण). ६७ (५०३ सोमप, ५०४ अमृतप, ५०५ सोम, ५०६ पुरुजित्, ५०७ पुरुसत्तम, ५०८ विनय, ५०९ जय, ५१० सत्य संध, ५११ दाशार्ह, ५१२ सात्वतां पति). ६८ (५१३ जीव, ५१४ विनयितासाक्षी, ५१५ मुकुन्द, ५१६ अमितविक्रम, ५१७ अम्भोनिधि, ५१८ अनन्तात्मा, ५१९ महोदधिशय, ५२० अन्तक). ६९ (५२१ अज, ५२२ महार्ह, ५२३ स्वाभाव्य, ५२४ जितामित्र, ५२५ प्रमोदन, ५२६ आनन्द, ५२७ नन्दन, ५२८ नन्द, ५२९ सत्यधर्मा, ५३० त्रिविक्रम). ७० (५३१ महर्षि कपिलाचार्य, ५३२ कृतज्ञ, ५३३ मेदिनीपति, ५३४ त्रिपद, ५३५ त्रिदशाध्यक्ष, ५३६ महाशृङ्ग, ५३७ कृतान्तकृत्). ७१ (५३८ महावराह, ५३९ गोविन्द, ५४० सुषेण, ५४१ कनकाङ्गदी, ५४२ गुह्य, ५४३ गभीर, ५४४ गहन, ५४५ गुप्त, ५४६ चक्रगदाधर). ७२ (५४७ वेधा, ५४८ स्वाङ्ग, ५४९ अजित, ५५० कृष्ण, ५५१ दृढ, ५५२ सङ्कर्षणोऽच्युत, ५५३ वरुण, ५५४ वारुण, ५५५ वृक्ष, ५५६ पुष्कराक्ष, ५५७ महामना). ७३ (५५८ भगवान्, ५५९ भगहा, ५६० आनन्दी, ५६१ वनमाली, ५६२ हलायुध, ५६३ आदित्य, ५६४ ज्योतिरादित्य, ५६५ सहिष्णु, ५६६ गतिसत्तम). ७४ (५६७ सुधन्वा, ५६८ खण्डपरशु, ५६९ दारुण, ५७० द्रविणप्रद, ५७१ दिविस्पृक्, ५७२ सर्वदृग् व्यास, ५७३ वाचस्पतिरयोनिज). ७५ (५७४ त्रिसामा, ५७५ सामग, ५७६ साम, ५७७ निर्वाणम्, ५७८ भेषजम्, ५७९ भिषक्, ५८० संन्यासकृत्, ५८१ शम, ५८२ शान्त, ५८३ निष्ठा, ५८४ शान्ति, ५८५ परायणम्). ७६ (५८६ शुभाङ्ग, ५८७ शान्तिद, ५८८ स्रष्टा, ५८९ कुमुद, ५९० कुवलेशय, ५९१ गोहित, ५९२ गोपति, ५९३ गोप्ता, ५९४ वृषभाक्ष, ५९५ वृषप्रिय). ७७ (५९६ अनिवर्ती, ५९७ निवृत्तात्मा, ५९८ संक्षेप्ता, ५९९ क्षेमकृत्, ६०० शिव, ६०१ श्रीवत्सवक्षा, ६०२ श्रीवास, ६०३ श्रीपति ६०४ श्रीमतां वर). ७८ ६०५ श्रीद, ६०६ श्रीश, ६०७ श्रीनिवास, ६०८ श्रीनिधि, ६०९ श्रीविभावन, ६१० श्रीधर, ६११ श्रीकर, ६१२ श्रेय, ६१३ श्रीमान्, ६१४ लोकत्रयाश्रय). ७९ (६१५ स्वक्ष, ६१६ स्वङ्ग, ६१६ शतानन्द, ६१८ नन्दि, ६१९ ज्योतिर्गणेश्वर, ६२० विजितात्मा, ६२१ अविधेयात्मा, ६२२ सत्कीर्ति, ६२३ छिन्नसंशय). ८० (६२४ उदीर्ण, ६२५ सर्वतश्चक्षु, ६२६ अनीश, ६२७ शाश्वतस्थिर, ६२८ भूशय, ६२९ भूषण, ६३० भूति, ६३१ विशोक, ६३२ शोकनाशन). ८१ (६३३ अर्चिष्मान्, ६३४ अर्चित, ६३५ कुम्भ, ६३६ विशुद्धात्मा, ६३७ विशोधन, ६३८ अनिरुद्ध, ६३९ अप्रतिरथ, ६४० प्रद्युम्न, ६४१ अमितविक्रम). ८२ (६४२ कालनेमिनिहा, ६४३, वीर, ६४४ शौरि, ६४५ शूरजनेश्वर, ६४६ त्रिलोकात्मा, ६४७ त्रिलोकेश, ६४८ केशव, ६४९ केशिहा, ६५० हरि). ८३ (६५१ कामदेव, ६५२ कामपाल, ६५३ कामी, ६५४ कान्त, ६५५ कृतागम, ६५६ अनिर्देश्यवपु, ६५७ विष्णु, ६५८ वीर, ६५९ अनन्त, ६६० धनञ्जय). ८४ (६६१ ब्रह्मण्य, ६६२ ब्रह्मकृत्, ६६३ ब्रह्मा, ६६४ ब्रह्म, ६६५ ब्रह्मविवर्धन, ६६६ ब्रह्मवित्, ६६७ ब्राह्मण, ६६८ ब्रह्मी, ६६९ ब्रह्मज्ञ, ६७० ब्राह्मणप्रिय). ८५ (६७१ महाक्रम, ६७२ महाकर्मा, ६७३ महातेजा, ६७४ महोरग ६७५ महाक्रतु, ६७६ महायज्वा, ६७७ महायज्ञ, ६७८ महाहवि). ८६ (६७९ स्तव्य, ६८० स्तवप्रिय, ६८१ स्तोत्रम्, ६८२ स्तुति, ६८३ स्तोता, ६८४ रणप्रिय, ६८५ पूर्ण, ६८६ पूरयिता, ६८७ पुण्य, ६८८ पुण्यकीर्ति, ६८९ अनामय). ८७ (६९० मनोजव, ६९१ तीर्थकर, ६९२ वसुरेता, ६९३ वसुप्रद, ६९४ वसुप्रद, ६९५ वासुदेव, ६९६ वसु, ६९७ वसुमना, ६९८ हवि). ८८ (६९९ सद्गति, ७०० सत्कृति, ७०१ सत्ता, ७०२ सद्भूति, ७०३ सत्परायण, ७०४ शूरसेन, ७०५ यदुश्रेष्ठ, ७०६ सन्निवास, ७०७ सुयामुन). ८९ (७०८ भूतावास, ७०९ वासुदेव, ७१० सर्वासुनिलय, ७११ अनल, ७१२ दर्पहा, ७१३ दर्पद, ७१४ दृप्त, ७१५ दुर्धर, ७१६ अपराजित). ९० (७१७ विश्वमूर्ति, ७१८ महामूर्ति, ७१९ दीप्तमूर्ति, ७२० अमूर्तिमान्, ७२१ अनेकमूर्ति, ७२२ अव्यक्त, ७२३ शतमूर्ति, ७२४ शतानन). ९१ (७२५ एक, ७२६ नैक, ७२७ सव, ७२८ क, ७२९ किम्, ७३० यत्, ७३१ तत्, ७३२ पदमनुत्तमम्, ७३३ लोकबन्धु, ७३४ लोकनाथ, ७३५ माधव, ७३६ भक्तवत्सल). ९२ (७३७ सुवर्णवर्ण, ७३८ हेमाङ्ग, ७३९ वराङ्ग, ७४० चन्दनाङ्गदी, ७४१ वीरहा, ७४२ विषम, ७४३ शून्य, ७४४ घृताशी, ७४५ अचल, ७४६ चल). ९३ (७४७ अमानी, ७४८ मानद, ७४९ मान्य, ७५० लोकस्वामी ७५१ त्रिलोकधृक्, ७५२ सुमेधा, ७५३ मेधज, ७५४ धन्य, ७५५ सत्यमेधा, ७५६ धराधर). ९४ (७५७ तेजोवृष, ७५८ द्युतिधर, ७५९ सर्वशस्त्रभृतां वर, ७६० प्रग्रह, ७६१ निग्रह, ७६२ व्यग्र, ७६३ नैकशृङ्ग, ७६४ गदाग्रज). ९५ (७६५ चतुर्मूर्ति, ७६६ चतुर्बाहु, ७६७ चतुर्व्यूह, ७६८ चतुर्गति, ७६९ चतुरात्मा, ७७० चतुर्भाव, ७७१ चतुर्वेदवित्, ७७२ एकपात्). ९६ (७७३ समावर्त, ७७४ अनिवृत्तात्मा, ७७५ दुर्जय, ७७६ दुरतिक्रम, ७७७ दुर्लभ, ७७८ दुर्गम, ७७९ दुर्ग, ७८० दुरावास, ७८१ दुरारिहा). ९७ (७८२ शुभाङ्ग, ७८३ लोकसारङ्ग, ७८४ सुतंतु, ७८५ तंतु वर्धन, ७८६ इन्द्रकर्मा, ७८७ महाकर्मा ७८८ कृतकर्मा, ७८९ कृतागम). ९८ (७९० उद्भव, ७९१ सुन्दर, ७९२ सुन्द, ७९३ रत्नाभ, ७९४ सुलोचन, ७९५ अर्क, ७९६ वाजसन, ७९७ शृङ्गी, ७९८ जयन्त, ७९९ सर्वविज्जयी). ९९ (८०० सुवर्णबिन्दु, ८०१ अक्षोभ्य, ८०२ सर्ववागीश्वरेश्वर, ८०३ महाह्रद, ८०४ महागर्त, ८०५ महाभूत, ८०६ महानिधि). १०० (८०७ कुमुद, ८०८ कुन्दर, ८०९ कुन्द, ८१० पर्जन्य, ८११ पावन, ८१२ अनिल, ८१३ अमृताश, ८१४ अमृतवपु, ८१५ सर्वज्ञ, ८१६ सर्वतोमुख). १०१ (८१७ सुलभ, ८१८ सुव्रत, ८१९ सिद्ध, ८२० शत्रुजित्, ८२१ शत्रुतापन, ८२२ न्यग्रोध, ८२३ उदुम्बर, ८२४ अश्वत्थ, ८२५ चाणूरान्ध्र निषूदन). १०२ (८२६ सहस्रार्चि, ८२७ सप्तजिह्व, ८२८ सप्तैधा, ८२९ सप्तवाहन, ८३० अमूर्ति, ८३१ अनघ, ८३२ अचिन्त्य, ८३३ भयकृत्, ८३४ भयनाशन). १०३ (८३५ अणु, ८३६ बृहत्, ८३७ कृश, ८३८ स्थूल, ८३९ गुणभृत्, ८४० निर्गुण, ८४१ महान्, ८४२ अधृत, ८४३ स्वधृत, ८४४ स्वास्य, ८४५ प्राग्वंश, ८४६ वंशवर्धन). १०४ (८४७ भारभृत्, ८४८ कथित ८४९ योगी, ८५० योगीश, ८५१ सर्वकामद, ८५२ आश्रम, ८५३ श्रमण, ८५४ क्षाम, ८५५ सुपर्ण, ८५६ वायुवाहन). १०५ (८५७ धनुर्धर, ८५८ धनुर्वेद, ८५९ दण्ड, ८६० दमयिता, ८६१ दम, ८६२ अपराजित, ८६३ सर्वसह, ८६४ नियन्ता, ८६५ अनियम, ८६६ अयम). १०६ (८६७ सत्त्ववान्, ८६८ सात्त्विक, ८६९ सत्य, ८७० सत्यधर्मपरायण, ८७१ अभिप्राय, ८७२ प्रियार्ह, ८७३ अर्ह, ८७४ प्रियकृत्, ८७५ प्रीतिवर्धन). १०७ (८७६ विहायसगति, ८७७ ज्योति, ८७८ सुरुचि, ८७९ हुतभुक्, ८८० विभु, ८८१ रवि, ८८२ विरोचन, ८८३ सूर्य, ८८४ सविता, ८८५ रविलोचन). १०८ (८८६

अनन्त, ८७७ हुतभुक्, ८८८ भोक्ता, ८८९ सुखद, ८९० नैकज, ८९१ अग्रज, ८९२ अनिर्विण्ण, ८९३ सदामर्षी, ८९४ लोकाधिष्ठानम्, ८९५ अद्भुत). १०९ (८९६ सनात्, ८९७ सनातनतम, ८९८ कपिल, ८९९ कपि, ९०० अव्यय, ९०१ स्वस्तिद, ९०२ स्वस्तिकृत्, ९०३ स्वस्ति, ९०४ स्वस्तिभुक् ९०५ स्वास्तिदक्षिण). ११० (९०६ अरौद्र, ९०७ कुण्डली, ९०८ चक्री, ९०९ विक्रमी, ९१० ऊर्जितशासन, ९११ शब्दातिग, ९१२ शब्दसह, ९१३ शिशिर, ९१४ शर्वरीकर). १११ (९१५ अक्रूर, ९१६ पेशल, ९१७ दक्ष, ९१८ दक्षिण, ९१९ क्षमिणां वर, ९२० विद्वत्तम, ९२१ वीतभय, ९२२ पुण्यश्रवणकीर्तन). ११२ (९२३ उत्तारण, ९२४ दुष्कृतिहा, ९२५ पुण्य, ९२६ दुःस्वप्ननाशन, ९२७ वीरहा, ९२८ रक्षण, ९२९ सन्त, ९३० जीवन, ९३१ पर्यवस्थित). ११३ (९३२ अनन्तरूप, ९३३ अनन्तश्री, ९३४ जितमन्यु, ९३५ भयापह, ९३६ चतुरस्र, ९३७ गभीरात्मा, ९३८ विदिश, ९३९ व्यादिश, ९४० दिश). ११४ (९४१ अनादि, ९४२ भूर्भुव, ९४३ लक्ष्मी, ९४४ सुवीर, ९४५ रुचिराङ्गद, ९४६ जनन, ९४७ जनजन्मादि, ९४८ भीम, ९४९ भीमपराक्रम). ११५ (९५० आधारनिलय, ९५१ अधाता, ९५२ पुष्पहास, ९५३ प्रजागर, ९५४ ऊर्ध्वग, ९५५ सत्पथाचार, ९५६ प्राणद, ९५७ प्रणव, ९५८ पण). ११६ (९५९ प्रमाणम्, ९६० प्राणनिलय, ९६१ प्राणभृत्, ९६२ प्राणजीवन, ९६३ तत्त्वम्, ९६४ तत्त्ववित्, ९६५ एकात्मा, ९६६ जन्ममृत्युजरातिग). ११७ (९६७ भूर्भुवःस्वस्तरु, ९६८ तार, ९६९ सविता, ९७० प्रपितामह, ९७१ यज्ञ, ९७२ यज्ञपति, ९७३ यज्वा, ९७४ यज्ञाङ्ग, ९७५ यज्ञवाहन). ११८ (९७६ यज्ञभृत्, ९७७ यज्ञकृत्, ९७८ यज्ञी, ९७९ यज्ञभुक्, ९८० यज्ञसाधन, ९८१ यज्ञान्तकृत्, ९८२ यज्ञगुह्यम्, ९८३ अन्नम्, ९८४ अन्नाद). ११९ (९८५ आत्मयोनि, ९८६ स्वयंजात, ९८७ वैखान, ९८८ सामगायन).९८९ देवकीनन्दन, ९९० स्रष्टा, ९९१ क्षितीश, ९९२ पापनाशन). १२० (९९३ शङ्खभृत्, ९९४ नन्दकी, ९९५ चक्री, ९९६ शार्ङ्गधन्वा, ९९७ गदाधर, ९९८ रथाङ्गपाणि, ९९९ अक्षोभ्य, १००० सर्वप्रहरणायुध)।

२. विष्णु एक अग्नि का नाम है : ३. २२१, १२। तुकी० अङ्गिरस।

३. विष्णु = सूर्य (३. ३, १८. ६०)।

४. विष्णु = शिव (सहस्रनाम)।

विष्णुधर्मन् एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, १३)।

विष्णुपद अनेक स्थानों का नाम है : ३. ८३, १०३ (एक तीर्थ); १३०, ८; ५. १११, २१ (अत्र विष्णुपद नाम क्रमता विष्णुना कृतम्); ७. ८०, ३६ (शिव के स्थान को जाते समय अर्जुन और श्रीकृष्ण को मार्ग में यह स्थान भी मिला था); १२. २९, ३५ (एक पर्वत का नाम है जहाँ अङ्गराज ने यज्ञ किया था); १३, १२६, ३९।

विष्णुपदी = गङ्गा (१३. २६, ९३)।

विष्णुपर्वन्, हरिवंश के एक खण्ड का नाम है (१. २, ८२)।

विष्णुप्रसादित = शिव (सहस्रनाम)।

विष्णुयशस् = कल्किन : ३. १९०, ९३ (कल्की विष्णुयशा नाम द्विजः)।

विष्णुलोक : ३. ८२, ७७; ८३, ११. १०४. १७२; ८४, १११. १२२. १२५. १३९; १८. ६, ५२।

१. विष्वक्सेन एक ऋषि का नाम है (२. ७, १८ (इन्द्र की सभा में)।

२. विष्वक्सेन = श्रीकृष्ण : ५. ८४, १८; ६. ६५, ४७; ११९, ३३; ७. ७, २६; १०, २८; ८५, ४४; १९१, ४८. ४९; ८. २७, २१; १२. ३३७, २९; ३४७, १९; १३. १४९, २७ (सहस्रनाम); १३. १५८, ३०. ३२. ३३. ४३. ४४।

३. विष्वक्सेन एक प्राचीन राजा का नाम है : १३. ११५, ६९ (ये कार्तिक मास में मांसभक्षण नहीं करते थे)।

४. विष्वक्सेन = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

५. विष्वक्सेन = शिव (सहस्रनाम)।

१. विष्वगश्व, एक प्राचीन नरेश का नाम है : १. १, २३२; ३. २०२, ३ (पृथु के पुत्र, अद्रि के पिता और अयोध्या के राजा); १३. ७६, २५; ११५, ६९।

२. विष्वगश्व, युधिष्ठिर के समकालीन एक राजा का नाम है : २. २७, १४ (अर्जुन ने दिग्विजय के समय इन्हें पराजित किया था)।

विसर्ग = शिव (सहस्रनाम)।

विस्तर = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

विस्तार = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

विहङ्ग, ऐरावतवंशी एक नाग का नाम है जो जनमेजय के सर्पसत्र में जल मरा था (१. ५७, ११)।

विहङ्गम = सूर्य : १. १७३, २३; ३. ३०७, २३।

विहव्य, एक ब्राह्मण का नाम है : १३. ३०, ६१ (वर्चा के पुत्र और वितत्य के पिता)।

विहायसगति = विष्णु (सहस्रनाम)।

विहृष्ट = शिव (सहस्रनाम)।

वीतभय = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. वीतहव्य एक राजा (= हैहय) का नाम है : १३. ३०; ३. ५ (वीतहव्यो महायशः राजर्षिर्दुर्लभं प्राप्तो ब्राह्मण्यं). ११. ४४. ४५. ५० (काशिराज प्रतर्दन द्वारा पराजित). ५८ (गृत्समद के पिता). ६६ (विप्रत्वमगमद्वीतहव्यो नराधिपौ।

२. वीतहव्य (बहु०) एक जाति अथवा वीतहव्य के वंशजों का द्योतक है : १३. ३०, १४. २९ (वीतहव्यसहस्राणि). ३८ (वीतहव्यानां पुरीं); ३४, १७ (भरद्वाज ने पराजित किया था)। तुकी० हैहय (बहु०)।

वीतहव्योपाख्यान — "भीष्म ने युधिष्ठिर से कहा : पूर्वकाल में मनु के शर्याति नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। शर्याति के वंश में दो विख्यात राजा हुये जिनके नाम हैहय और तालजंघ थे। ये दोनों राजा वत्सके पुत्र थे। इन दोनों में से हैहय, जिसका दूसरा नाम वीतहव्य भी था, दस स्त्रियों का पति था। उन स्त्रियों के गर्भ से १०० शूरवीर पुत्र उत्पन्न हुये। उन्हीं दिनों काशी में हर्यश्व नाम के राजा राज्य करते थे। वीतहव्य के पुत्रों ने हर्यश्व के राज्य पर आक्रमण कर दिया और उस युद्ध में हर्यश्व का वध करके अपने पुरी को लौट आये। हर्यश्व के पुत्र सुदेव, जो देवताओं के समान तेजस्वी और धर्मराज के समान न्यायशील थे, पिता की मृत्यु के बाद काशिराज के पद पर अभिषिक्त हुये। तदनन्तर वीतहव्य के पुत्रों ने आक्रमण करके युद्ध में सुदेव को भी परास्त कर उनका वध कर दिया। तत्पश्चात् सुदेव के पुत्र दिवोदास काशिराज के पद पर अभिषिक्त हुये। दिवोदास ने इन्द्र की आज्ञा से वाराणसी नामक नगर बसाया (वाराणसी पुरी का वर्णन)। इस वाराणसी नगरी में निवास करनेवाले दिवोदास पर हैहय राजकुमारों ने पुनः आक्रमण कर दिया। तब काशिराज ने एक सहस्र दिनों तक शत्रुओं के साथ युद्ध किया। इस युद्ध में दिवोदास के अनेक सैनिक मारे गये और उनका कोश भी रिक्त हो गया अतः वे राजधानी छोड़कर भाग गये। दिवोदास ने तब भरद्वाज की शरण ग्रहण की। भरद्वाज राजा दिवोदास के पुरोहित थे अतः उन्होंने दिवोदास से अपने पास आने का कारण पूछा। तब दिवोदास ने बताया कि हैहय राजकुमारों ने उनके कुल का विनाश कर डाला है जिससे भाग कर वे मुनि की शरण में आये हैं। अपने यजमान राजा दिवोदास की विपत्ति का हाल सुनकर मुनि भरद्वाज ने राजा को आश्वस्त करते हुये कहा : 'तुम डरो नहीं। तुम्हारा भय दूर हो जायगा। मैं तुम्हें ऐसे पुत्र की प्राप्ति कराने के लिये यज्ञ करूँगा जो सहस्रों वीतहव्यों का वध कर डालेगा।' तब भरद्वाज जी ने राजा दिवोदास से पुत्रेष्टि यज्ञ कराया जिसके परिणामस्वरूप उन्हें प्रतर्दन नामक पुत्र प्राप्त हुआ। जन्म लेते ही प्रतर्दन इतना बढ़ गया कि तत्काल १३ वर्षकी अवस्था जैसा दिखाई पड़ने लगा। उसी समय उसने अपने मुख से सम्पूर्ण वेद और धनुर्वेद का गान किया। भरद्वाज मुनि ने उसे योगशक्ति से सम्पन्न कर दिया और उसके शरीर में सम्पूर्ण जगत् का तेज भर दिया। तदनन्तर राजकुमार प्रतर्दन ने कवच धारण किया और धनुष आदि लेकर रथ पर बैठ गया। उसे देखकर राजा

दिवोदास को अत्यधिक हर्ष हुआ। उन्होंने अपने पुत्र को युवराज के पद पर अभिषिक्त करके आनन्द और संतोष का अनुभव किया। इसके बाद राजा दिवोदास ने अपने पुत्र प्रतर्दन को वीतहव्य-पुत्रों का वध करने के लिये भेजा। पिता की आज्ञा पाकर प्रतर्दन गङ्गा को पारकर वीतहव्य-पुत्रों की राजधानी की ओर चल पड़ा। प्रतर्दन को उपस्थित हुआ देखकर वीतहव्य-पुत्रों ने उसपर आक्रमण किया। दोनों पक्षों में घोर संग्राम होने लगा जिसमें अनेक भयंकर और विनाशकारी अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग हुआ। भीषण पराक्रम प्रकट करते हुये प्रतर्दन ने सम्पूर्ण वीतहव्य-पुत्रों का वध कर दिया। तब राजा वीतहव्य अपना नगर छोड़कर महर्षि भृगु के आश्रम में आये और उन महर्षि की शरण ली। भृगु ने वीतहव्य को अभयदान दे दिया। इतने में प्रतर्दन भी वहाँ आ पहुँचे। प्रतर्दन को आया देखकर भृगु ने उनका स्वागत-सत्कार किया। प्रतर्दन ने भृगु के पूछने पर अपने आगमन का कारण बताते हुये कहा : 'ब्रह्मन्! राजा वीतहव्य को आप आश्रम से बाहर निकाल दीजिये। उनके पुत्रों ने मेरे सम्पूर्ण कुल का विनाश कर डाला है। मैंने उनके सौ पुत्रों का वध कर डाला है और अब उनका वध करके पितृ-ऋण से उऋण हो जाना चाहता हूँ।' तब भृगु ने कहा मेरे आश्रम में कोई क्षत्रिय नहीं है। यहाँ सब ब्राह्मण हैं।' महर्षि की बात सुनकर प्रतर्दन अत्यन्त प्रसन्न हुये। उन्होंने भृगु से कहा 'मैंने अपने पराक्रम से राजा वीतहव्य को अपनी जाति का त्याग कर देने के लिये विवश कर दिया है।' ऐसा कहकर प्रतर्दन ने भृगु जी से विदा ली। इस प्रकार राजा वीतहव्य भृगु जी के कथन मात्र से ब्रह्मर्षि और ब्रह्मवादी हो गये। वीतहव्य की वंश परम्परा इस प्रकार अग्रसर हुई : वीतहव्य → गृत्समद → सुतेजा → वर्चा → विहव्य → वितत्य → सत्य → सन्त → श्रवा → तम → प्रकाश → वागीन्द्र → प्रमिति (वेदों और वेदाङ्गों के पारङ्गत विद्वान)→ रुरु (घृताची नामक अप्सरा से उत्पन्न) → शुनक (प्रमद्वरा के गर्भ से उत्पन्न) → शौनक। (१३. ३०)।"

वीति एक अग्नि का नाम है। जब दक्षिणाग्नि का गार्हपत्य और आहवनीय—इन दो अग्नियों से संसर्ग हो जाय तब मिट्टी के आठ पात्रों में संस्कारपूर्वक तैयार किये हुये पुरोडाश द्वारा इस अग्नि में आहुति देनी चाहिये (३. २२१, २५)।

१. वीतिहोत्र एक प्राचीन नरेश का नाम है (१. १, २३३)।

२. वीतिहोत्र (बहु० °त्राः) एक देश के निवासियों का नाम है : ७. ७०, १२ (परशुराम ने इनका संहार किया था)।

१. वीर, कश्यप-पत्नी दनायु के गर्भ से उत्पन्न एक असुर का नाम है (१. ६५, ३३)।

२. वीर, धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक का नाम है (१. ६७, १०३)।

३. वीर, एक नरेश का नाम है (१. १८६, २०)।

४. वीर, भरद्वाज नामक अग्नि के द्वारा वीरा के गर्भ से उत्पन्न पुत्र का नाम है। इन्हें रथप्रभु, रथध्वान, और कुम्भरेता भी कहते हैं। सोम देवता के साथ द्वितीय आज्यभाग इन्हीं को प्राप्त होता है। इनके द्वारा सरयू नामक पत्नी के गर्भ से सिद्धि नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (३. २१९, ९-११)।

५. वीर, पाञ्चजन्य नामक अग्नि के पुत्र का नाम है। इनकी गणना विनायकों में होती है (३. २२०, १३-१४)।

६. वीर, एक राजा का नाम है (१२. ४, ७)।

७. वीर = विष्णु (सहस्रनाम)।

वीरक (बहु०) एक जाति का नाम है (८. ४४, ४३)।

वीरकरा, भारत की एक प्रमुख नदी का नाम है (६. ९, २६)।

वीरकेतु, पाञ्चालराज द्रुपद के एक पुत्र का नाम है : ७. १२२, ३९ (द्रोणने इसका वध किया था)। तुक्री० पाञ्चालकुलनन्दन, पाञ्चालपुत्र, पाञ्चाल्य।

वीरण, एक प्रजपाति का नाम है : १२. ३४८, ४१-४२ (इन्होंने सनत्कुमार से नारायणधर्म प्राप्त कर उसका रैभ्य मुनि को उपदेश दिया था)।

वीरणक धृतराष्ट्रवंशीय एक नाग का नाम है (१. ५७, १८)।

वीरद्युम्न, एक राजा का नाम है जो भूरिद्युम्न के पिता थे : १२. १२७, १४; १२८, १. ६ (धर्म ने इनकी परीक्षा ली)।

वीरधन्वन्, एक त्रिगर्त योद्धा का नाम है : ७. १०६, १०; १०७, ९. १४. १६. १८ (धृष्टकेतु ने इस त्रिगर्त महारथी का वध किया)।

वीरधर्मन्, एक राजा का नाम है (५. ४, १६)।

वीरप्रमोच, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, ५१।

१. वीरबाहु, धृतराष्ट्र के पुत्रों में से एक का नाम है : १. ६७, १०३; ११७, १२; ६. ४५, ७७; ६४, २९. ३५ (भीमसेन ने इसका वध किया।

२. वीरबाहु चेदिदेश के एक राजा का नाम है : ३. ६९, १५ (दशार्णराज सुदामन् की पुत्री से विवाह किया)।

३. वीरबाहु = विष्णु (सहस्रनाम)।

वीरभद्र शिव के एक पार्षद का नाम है, यह शङ्कर का मूर्तिमान क्रोध था : १२. २८४. ३४ शिव के क्रोध से उत्पन्न). ५१. ५३. ५६ (इसने अपने रोमकूपों से रैभ्य नामवाले गणेश्वरों को प्रकट किया जिन्होंने दक्ष यज्ञ का विध्वंस कर दिया। दक्ष आदि के पूछने पर इसने अपना परिचय दिया)।।

वीरमती भारत की एक नदी का नाम है (६. ९, २५)।

वीरसेन, निषधराज का नाम है जो नल के पिता थे : ३. ५२, ५५; ६४, ४८; १३. ११५, ७४ (ये कार्तिक मास में मांसभक्षण नहीं करते थे)।

वीरसेनसुत = नल (देखिये वस्था०)।

वीरहन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. वीरा, शंयुपुत्र भरद्वाज नामक अग्नि की भार्या का नाम है (३. २१९, ९)।

२. वीरा, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, २२)।

वीराविन्, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७, १०४; ११७, १३।

वीराश्रम, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, १४५)।

वीरिणी, प्राचेतस दक्ष की पत्नी का नाम है : १. ७५, ६-८ (इनके गर्भ से एक सहस्र पुत्र और पचास कन्यायें उत्पन्न हुई)।

वीरिन् एक कुल का नाम है (२. ८,२३)।

वीर्यवत्, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३१)।

वीर्यवती, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ८)।

वीर्यात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ७५)।

१. वृक, एक राजा का नाम है : १. १८६, १० (द्रौपदी के स्वयंवर में आया)।

२. वृक, एक पाण्डव-योद्धा का नाम है : ७. २१, १६ (द्रोण ने इसका वध किया था)।

३. वृक एक कौरव-योद्धा का नाम है (८. ८५, ३. १७)।

४. वृक एक प्राचीन नरेश का नाम है : १३. ११५, ७२ (इन्होंने कभी मांसभक्षण नहीं किया)।

वृकरथ, कर्ण के भ्राता का नाम है : ७. १५७, २१ (वृकरथो नाम भ्राता कर्णस्य)।

वृकस्थल एक ग्राम का नाम है : ५. ३१, १९ (उन पाँच ग्रामों में से एक जिनकी युधिष्ठिर ने कौरवों से याचना की); ७२, १५; ८२, ७; ८४, २० (उपप्लव से हस्तिनापुर जाते समय श्रीकृष्ण यहाँ भी रुके थे); ८५, १६; ८६, १; ८९ २।

१. वृकोदर = भीम पाण्डव (देखिये वस्था०)।

२. वृकोदर स्कन्द के सैनिकों के एक वर्ग का नाम है : ९. ४५, १०५ (वृकोदरनिभाः)।

१. वृष = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

२. वृक्ष (बहु० °क्षाः) मूर्तिमान वृक्षों का द्योतक है (९. ४५, १३)।

वृक्षकर्णस्थिति, वृक्षकेतु = शिव (सहस्रनाम)।

वृक्षवासी एक यक्ष का नाम है : २. १०, १८ (कुबेर की सभा में)।

वृक्षाकार = शिव (सहस्रनाम)।

वृक्षाणां कन्ददः = शिव (सहस्रनाम)।

वृक्षाणां पतिः = शिव (७. २०२, ३४)।

वृजिनीवत् एक राजा का नाम है : १३. १४७, २८-२९ (क्रोष्टा के पुत्र और उषंगु के पिता)।

वृत्त, कश्यप द्वारा कद्रू के गर्भ से उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ३५, १०; ५. १०३, १४)।

वृत्तसंवर्तक – देखिये वृत्त।

वृत्तावृत्तकर = शिव (सहस्रनाम)।

वृत्ति = मूर्तिमान् नैतिकता, अर्थात् नीति (१२. १२१, २४)।

वृत्र, एक असुर का नाम है जिसका इन्द्र ने वध किया था : १. ३, १४८; ६५, ३३ (दनायु का पुत्र); ६७, ४४ (राजा मणिमत् इसके अंश से उत्पन्न हुये थे); १७०, ५० (इसके मस्तक पर पड़ते ही इन्द्र का वज्र टूटकर एक सहस्र भागों में विभक्त हो गया); २. २३, २५; ३. १२, १०८; १६, २३; ३७, १४ (इसके भय से त्रस्त देवताओं ने अपने अपने बलों से इन्द्र को संवर्द्धित किया); ३९, ५८; १००, ४. ५. ७. ११ (इसके नेतृत्व में कालकेयों ने देवताओं को पराजित किया। तब त्वष्टा ने इन्द्र के लिये वज्र का निर्माण किया); १०२, १. ८. १३. १७ (इन्द्र ने वज्र से इसका वध किया); १०३, ७. ८; १२०, ६ (जहि···वृत्रं यथा देवपतिः); १३५, २; १६८, ८१; १७१, १९; २८७, २०; २९२, ४; ४. १३, ३१; २२, ३२; ५८, ४४; ५९, २; ५. ९, ४६. ४८. ५०-५३. ५५. ५६. ५९; १०, १. ६. ९. १३. १६. १७. १९. २०. ३१. ३२. ३५. ३६. ३८-४०. ४३ (इन्द्र ने इसका विश्वासपात्र बनकर छल से इसका वध किया); १३, १२; १६, १६. २०. २८; १७, ३; १८, १२; १०९, १३; १३४, २४ (इन्द्रो वृत्रवधेनैव महेन्द्रः समपद्यत); १७७, ४२ (जहि···यथा वृत्रं पुरन्दरः); ६. ४५, ३७; ४८, ५१; ८४, २६; ९०, ५९; १००, २४. ५१; ११०, ४८; १११, ४४; ७. ३, ५ (शतक्रतुमिवाचिन्त्यं पुरा वृत्रेण निर्जितम्); ३०, ९; ८४, १९; ९४, ४९. ५०. ५३. ५४. ५६. ६३. ६४. ६६ (पूर्व समय में वृत्रासुर ने देवताओं को पराजित किया था। तब इन्द्रादि देवता ब्रह्मा की शरण में आये। ब्रह्मा जी इन्द्र और देवताओं को साथ लेकर विष्णु के पास आये। तब विष्णु ने ब्रह्मा आदि देवताओं को बताया कि पूर्वकाल में त्वष्टा ने दस लाख वर्षों तक तपस्या करके शिव की आज्ञा से एक वज्र का निर्माण किया है। तदनन्तर विष्णु ने देवताओं को शिव के पास जाने के लिये कहा। तब देवताओं ने शिव के पास जाकर उनका कवच आदि प्राप्त कर इन्द्र को दिया जिससे इन्द्र ने वृत्र का वध किया); १०२, १०; ११८, ७; १२४, ४०; १५३, ३७; १५९, ४८; १७९, ६४; १९६, १०; २००, ३६; ८. ५, ५४; १४, ३९; ३६, ४८; ६७, १९; ६८, २७; ७१, ४०; ७३, ४२; ८३, ५२; ८७, १९. ३५; ८९, ७; ९१, ५०; ९४, ५४; ९६, २; ९. १७, ९१; ३३, ३७; ४६, ९१; ५५, ५१; ५६, २८; ५७, २४. ३८; ५८, ६; ६१, ८; १२. १५, १५; ९८, ४९; २७९, १३. १५. १६. २४; २८०, ५७. ५९. ६०. ६५ (सनत्कुमार ने इसे विष्णु की महिमा का उपदेश दिया था); २८१, १. ४. ५. ७. ९. १०. १२. १३. १८ (वृत्रो धर्मभृतां वरः). १९-२१. २९-३१. ३४; २८२, १. ५. ९-११. ५१. ६० (इसके रक्त से शिखण्डों की उत्पत्ति हुई). ६२. ६५ (इस सम्पूर्ण अध्याय में इन्द्र द्वारा वृत्रवध का वर्णन है); २८३, १. २. ५८. ५९. ६२ (जब वृत्र ज्वराक्रान्त हो गया तब इन्द्र ने अपने वज्र से उसका वध कर दिया। तब वृत्र विष्णुलोक चला गया); ३४२, ४१ (वृत्रवध का उल्लेख); १३. १, ३२; १४. १, २८; ११, ७-२० ("प्राचीनकाल में वृत्रासुर ने सम्पूर्ण पृथिवी पर अधिकार कर लिया था। इन्द्र ने जब देखा कि पृथिवी पर अधिकार करने के साथ वृत्रासुर ने गन्ध के विषय का भी अपहरण कर लिया है जिससे सब ओर दुर्गन्ध का प्रसार हो गया है, तब क्रुद्ध होकर इन्द्र ने वृत्रासुर पर वज्र का प्रहार किया जिससे त्रस्त हो वह सहसा जल में प्रवेश करके उसके विषयभूत रस को ग्रहण करने लगा। जब जल पर भी उस असुर का अधिकार हो गया तथा रसरूपी विषय का भी अपहरण होने लगा तब इन्द्र ने जल में भी उस वज्र का प्रहार किया। तब वह असुर तेज में प्रविष्ट होकर उसके विषय का अपहरण करने लगा। शक्र ने वहाँ भी उस पर प्रहार किया जिससे त्रस्त वृत्रासुर वायु में प्रविष्ट होकर उसके स्पर्श नामक विषय का अपहरण करने लगा। इस पर क्रुद्ध हो शतक्रतु ने वहाँ भी उस पर वज्र का प्रहार किया जिससे पीड़ित हो वह असुर आकाश में छिपकर उसके शब्दरूपी विषय का अपहरण करने लगा। जब इन्द्र ने वहाँ भी उसपर वज्र का प्रहार किया तब वह असुर इन्द्र में ही समाकर उनके विषय को ग्रहण करने लगा। वृत्रासुर से गृहीत होने पर इन्द्र के मन पर महान् मोह छा गया। तब वसिष्ठ ने रथन्तर साम द्वारा इन्द्र को पुनः प्रकृतस्थ किया। तत्पश्चात शतक्रतु इन्द्र ने अपने शरीर में प्रविष्ट वृत्रासुर को अदृश्य वज्र द्वारा मार डाला। यह धर्म-सम्मत-रहस्य इन्द्र ने महर्षियों को और महर्षियों ने भी भीष्म को सुनाया था)।" १४. ११, ६. ७. ९. १०. १२. १४. १६. १८. १९; ७६, १। तुकी० असुर, असुरश्रेष्ठ, असुरेन्द्र, दैत्य, दैत्यपति, दैत्येन्द्र, दानव, दानवेन्द्र, दितिज, सुरारि, त्वाष्ट्र, विश्वात्मन्।

वृत्रनिसूदन = इन्द्र (देखिये वस्या०)।

वृत्रवध – "भीष्म ने युधिष्ठिर से कहा : प्राचीनकाल में इन्द्र रथ पर आरूढ हो देवताओं को साथ ले वृत्रासुर से युद्ध करने के लिये चले। उन्होंने अपने सामने खड़े हुये पर्वत के समान विशालकाय वृत्र को देखा। वह पाँच योजन ऊँचा था और तीन सौ योजन से कुछ अधिक ही उसकी मोटाई थी। उस असुर का वह रूप तीनों लोकों के लिये भी दुर्जय था। देवतागण उसके उस स्वरूप को देखकर भयभीत हो उठे। इन्द्र की भी भय से सहसा दोनों जाँघें अकड़ गईं। तदनन्तर असुरों और देवों में युद्ध आरम्भ हुआ। इन्द्र को सामने उपस्थित देखकर भी वृत्रासुर के मन में न घबराहट हुई न कोई भय हुआ, और न इन्द्र के प्रति उसकी कोई युद्धविषयक चेष्टा ही हुई। देवताओं और दानवों के बीच होनेवाले उस युद्ध में अनेक प्रकार के भयंकर अस्त्र शस्त्रों का प्रयोग होने लगा जिससे सारा आकाश व्याप्त हो गया। ब्रह्मा आदि समस्त देवता, ऋषि, साध्य तथा अप्सराओं सहित गन्धर्व आकाश में स्थित होकर वह आश्चर्यजनक युद्ध देखने लगे। वृत्रासुर ने इन्द्र पर बड़ी-बड़ी पाषाण शिलाओं से प्रहार किया और मायामय युद्ध करते हुये इन्द्र को मोहित कर दिया। वसिष्ठ जी ने रथन्तर साम से इन्द्र को पुनः प्रबुद्ध किया। तब इन्द्र का बल बहुत बढ़ गया। उन्होंने वृत्र की माया को नष्ट कर दिया। बृहस्पति ने वृत्र के पराक्रम को देखकर शिव के पास आकर लोकहित की कामना से वृत्रासुर के विनाश का उपाय करने का निवेदन किया। तब शिव का तेज रौद्र ज्वर हो कर वृत्र में समा गया। इधर विष्णु ने इन्द्र के वज्र में प्रवेश किया। तब शिव ने इन्द्र को सम्बोधित करते हुये कहा : 'महान् वृत्रासुर विशाल सेना के साथ तुम्हारे सामने खड़ा है। ज्ञाननिष्ठ होने के कारण यह सम्पूर्ण विश्व का आत्मा है। उसमें सर्वत्र गमन करने की शक्ति है। उसने बल की प्राप्ति के लिये साठ हजार वर्षों तक तपस्या कर ब्रह्माजी से मनोवाञ्छित वर प्राप्त किया है। ब्रह्माजी ने उसे योगियों की महिमा, महामायावीपन, महान बल-पराक्रम, तथा सर्वश्रेष्ठ तेज प्रदान किया है। अब यह मेरा तेज तुम्हारे शरीर में प्रवेश कर रहा है। इस समय असुरराज वृत्र ज्वर के कारण बहुत व्यग्र है। इसी अवस्था में तुम उसका वध कर डालो।' इन्द्र ने महादेवजी को आश्वासन दिया कि वे वृत्र का वध अवश्य करेंगे। वृत्र के ज्वराक्रान्त होने पर देवता प्रसन्नता से हर्ष नाद करने लगे। उधर समस्त असुरों की स्मरण-शक्ति का लोप हो गया। उनकी माया भी नष्ट हो गई। सब देवगण इन्द्र की स्तुति करते हुये उन्हें वृत्रवध के लिये प्रेरणा देने लगे। उस समय इन्द्र के तेजस्वी रूप को देख

पाना भी अत्यन्त कठिन प्रतीत होता था (१२. २८१)।"

"भीष्म ने कहा : ज्वर से आविष्ट वृत्रासुर के मुख में विशेष जलन होने लगी और उसकी आकृति अत्यन्त भयानक हो गई। उसका शरीर काँपने लगा, अङ्गकान्ति मलिन हो गई और श्वास तीव्र गति से चलने लगी। गीदड़ के रूप में उसकी स्मरण शक्ति भी बाहर निकल पड़ी। (अन्यान्य प्राकृतिक उत्पातों का वर्णन)। तीव्र ज्वर से पीड़ित हो उस महान असुर ने बारम्बार जम्हाई ली। उसी समय इन्द्र ने उसके ऊपर वज्र का प्रहार किया जिससे वह महाकाय दैत्य धराशायी हो गया। तदनन्तर वृत्रासुर के मृत शरीर से महाघोर एवं क्रूर स्वभाववाली ब्रह्महत्या प्रकट हुई (ब्रह्महत्या के स्वरूप का वर्णन)। वह ब्रह्महत्या उस असुर के शरीर से निकल कर इन्द्र को खोजने लगी। इन्द्र उस समय स्वर्गलोक जा रहे थे किन्तु शीघ्र ही ब्रह्महत्या उनके निकट पहुँच गई और उनके शरीर से चिपक गई। उससे बचने के लिये इन्द्र कमल नाल के भीतर प्रवेश कर बहुत वर्षों तक छिपे रहे। किन्तु ब्रह्महत्या ने उन्हें वहाँ भी जा पकड़ा जिससे वे अत्यन्त निस्तेज हो गये। तब उससे बन्दी बनाये गये इन्द्र उसी दशा में ब्रह्मा के पास आये। ब्रह्माजी ने तब इन्द्र को छोड़ने के लिये ब्रह्महत्या से निवेदन किया। ब्रह्महत्या ने अपने लिये निवासस्थान का प्रबन्ध करने के लिये ब्रह्मा से कहा। तदनन्तर ब्रह्माजी ने ब्रह्महत्या को चार भागों में विभक्त करके एक भाग अग्नि को दिया। ब्रह्माजी ने अग्नि देव से कहा : 'यदि किसी स्थान पर तुम प्रज्वलित हो रहे हो और वहाँ पहुँच कर कोई अधिकारी मानव तमोगुण से आवृत होने के कारण बीज, ओषधि अथवा रसों से स्वयं ही तुम्हारा पूजन नहीं करेगा तो उसी पर तत्काल यह ब्रह्महत्या तुम्हें छोड़ कर चली जायगी और उसी में निवास करने लगेगी।' एक भाग इस प्रकार अग्नि को देने के पश्चात् ब्रह्माजी ने वृक्ष, तृण और ओषधियों को बुलाकर उन्हें भी हत्या के एक भाग को ग्रहण करने के लिये कहा। साथ ही ब्रह्माजी ने इन सब को आश्वस्त करते हुये कहा : 'संक्रान्ति, ग्रहण, पूर्णिमा, अमावस्या आदि पर्वकाल प्राप्त होने पर जो मनुष्य मोहवश तुम लोगों का भेदन-छेदन करेगा उसी के पीछे यह ब्रह्महत्या लग जायगी।' इस प्रकार आश्वस्त होने पर वृक्ष, तृण और ओषधियों ने ब्रह्महत्या के एक भाग को ग्रहण कर लिया। तदनन्तर ब्रह्माजी ने अप्सराओं को बुला कर उन्हें एक भाग दे कर मोक्ष का उपाय भी बता दिया। इस प्रकार तीन भागों का वितरण करने के बाद ब्रह्माजी ने शेष एक भाग को जल को देते हुये उसे इस प्रकार आश्वस्त किया : 'जो मनुष्य बुद्धि-मन्दता के कारण तुम्हारे भीतर मल-मूत्र आदि डालेगा उसी में यह ब्रह्महत्या प्रविष्ट हो जायगी।' तदनन्तर ब्रह्माजी की आज्ञा से इन्द्र ने अश्वमेधयज्ञ करके अपने को शुद्ध किया और अपनी राजलक्ष्मी पुनः प्राप्त करने में सफल हुये। वृत्र के रक्त से अनेक छत्रक उत्पन्न हुये जो ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्यों के लिये तथा यज्ञ की दीक्षा लेनेवालों के लिये अभक्ष्णीय हैं। जो प्रत्येक पर्व के दिन ब्राह्मणों की सभा में इस दिव्य कथा का प्रवचन करेंगे उन्हें किसी प्रकार का पाप नहीं प्राप्त होगा (१२. २८२)।"

वृत्रशत्रु, वृत्रहन्, वृत्रहन्तृ — देखिये इन्द्र (वस्था०)।

वृद्ध = शिव (सहस्रनाम)।

वृद्धकन्या, से वृद्ध अविवाहित कन्या का तात्पर्य है : ९. ५१, ५३; ५२, २५।" प्राचीन काल में कुणिगर्ग ऋषि ने बहुत भारी तपस्या करके अपने मन से एक सुन्दरी कन्या उत्पन्न की। उस कन्या को देखकर मुनि अत्यन्त प्रसन्न हुये और कुछ समय बाद अपना शरीर छोड़कर स्वर्ग चले गये। तदनन्तर वह साध्वी कन्या अपने लिये एक आश्रम बनाकर कठोर तपस्या और उपवास करती हुई वहाँ रहने लगी। उसके पिता ऋषि कुणिगर्ग ने अपने जीवनकाल में उस कन्या का विवाह करना चाहा था किन्तु उस कन्या ने विवाह की इच्छा नहीं की। वह उग्र तपस्या द्वारा अपने शरीर को पीड़ा देती हुई निर्जन वन में पितरों और देवताओं के पूजन में तत्पर हो गई। धीरे-धीरे वृद्धावस्था और तपस्या ने उसे दुर्बल बना दिया। तब उसने परलोक में जाने का विचार किया। उसकी देहत्याग की इच्छा देख कर नारदजी ने उसे बताया कि विवाह संस्कार न होने से उसे पुण्यलोक नहीं प्राप्त हो सकता। नारदजी ने यह भी बताया कि उसने यद्यपि घोर तपस्या की है तथापि पुण्यलोकों पर उसने अभी अधिकार नहीं प्राप्त किया है। तब वह कन्या ऋषियों की सभा में उपस्थित होकर बोली : 'आप में से जो मेरा पाणिग्रहण करेगा उसे मैं अपनी तपस्या का आधा भाग दे दूँगी।' उसकी बात सुनकर गालवपुत्र शृङ्गवान् ने उसका पाणिग्रहण करने की इच्छा प्रकट करते हुये कहा : 'विवाह के बाद एक रात तुम्हें मेरे साथ रहना होगा। यदि यह बात स्वीकार हो तो मैं तुम्हारा पाणिग्रहण करने के लिये तैयार हूँ।' उस कन्या ने शृङ्गवान् की बात मान ली। तब दोनों का विवाह संस्कार सम्पन्न हुआ। रात्रि के समय वह कन्या दिव्य वस्त्राभूषणों से विभूषित और दिव्य अङ्गराग से अलंकृत परम सुन्दरी तरुणी हो गई। तब गालव कुमार ने प्रसन्न होकर एक रात उसके साथ निवास किया। प्रातःकाल होने पर कन्या ने मुनि से कहा कि उसने उनकी शर्त पूरी कर दी है। अतः उसने मुनि से विदा माँगी। इस प्रकार कहकर वह कन्या वहाँ से चल दी। जाते जाते उसने कहा कि जो 'अपने चित्त को एकाग्र करके इस तीर्थ में स्नान और देवताओं का तर्पण कर एक रात निवास करेगा उसे ५८ वर्षों तक विधिपूर्वक ब्रह्मचर्य पालन का फल मिलेगा।' ऐसा कहकर देहत्याग कर वह साध्वी तपस्विनी स्वर्ग चली गई। उसके देहत्याग से दुःखी गालवकुमार शृङ्गवान ने अत्यन्त कष्ट के साथ ही उस साध्वी की तपस्या का आधा भाग स्वीकार किया। तदनन्तर शीघ्र ही अपना शरीर त्याग कर उसी के पथ पर चले गये (९. ५२)।"

१. वृद्धक्षत्र, सिन्धुराज जयद्रथ के पिता का नाम है : ३. २६४, ६ (सिन्धूनां वार्धक्षत्रिर्महायशाः); ६. ११५, २८; ७. १४, ६७; १४६, १०६-११३ (सिन्धुराज के पिता वृद्धक्षत्र इस जगत में विख्यात हैं। दीर्घकाल के बाद उन्होंने पुत्ररूप में जयद्रथ को प्राप्त किया था। जयद्रथ के जन्म के समय एक आकाशवाणी ने यह घोषणा की कि जयद्रथ अपने कुल और शील आदि गुणों के अनुरूप होगा किन्तु अन्त समय संग्रामभूमि में युद्ध करते समय कोई क्षत्रिय शिरोमणि वीर उसका शत्रु होकर उसका मस्तक काट डालेगा। इस आकाशवाणी को सुनकर वृद्धक्षत्र ने यह कहा कि जो कोई उनके पुत्र का मस्तक काटकर भूमि पर गिरा देगा उसके सर के भी सैकड़ों टुकड़े हो जायेंगे। ऐसा कहकर वृद्धक्षत्र जयद्रथ को राजसिंहासन पर स्थापित करके स्वयं वन में जाकर तपस्या करने लगे). ११६. १२६. १२९ (जब अर्जुन ने जयद्रथ का सर काट दिया तब श्रीकृष्ण ने उसे वृद्धक्षत्र की गोद में गिरा दिया। तब जब वृद्धक्षत्र घबराकर सहसा खड़े हुये तो उनके गोद से जयद्रथ का सर भूमि पर गिर पड़ा जिससे उन्हीं के शाप से उनका (वृद्धक्षत्र का) मस्तक फट कर टुकड़े-टुकड़े हो गया); १४८, २६ (विनिहतः पापो वृद्धक्षत्रः सहात्मजः)। तुल० बृहत्क्षत्र, सैन्धव, सिन्धुपति।

२. वृद्धक्षत्र, एक पौरव राजा का नाम है : ७. २००, ७२ (वृद्धक्षत्रश्च पौरवः)।

वृद्धक्षेम, त्रिगर्तदेश के राजा का नाम है जो सुशर्मा के पिता थे : १. १८६, ९ (वार्धक्षेमिः सुशर्मा)

वृद्धगार्ग्य, एक ऋषि का नाम है जिन्होंने पितरों से नीलवृषभ छोड़ने, वर्षा-ऋतु में दीपदान करने और अमावस्या को तिल मिश्रित जल द्वारा तर्पण करने से प्राप्त होनेवाले फल के विषय में प्रश्न किया और पितरों ने इन्हें इन बातों का उपदेश दिया (१३. १२५, ७७-८३)।

वृद्धशर्मन्, आयु के द्वारा स्वर्भानुकुमारी के गर्भ से उत्पन्न पाँच पुत्रों में से एक का नाम है (१. ७५, २५)।

वृद्धात्मन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

वृद्धिका (बहु० °काः) मनुष्य का मांस-भक्षण करनेवाली नारियों के एक वर्ग का नाम है जो वृक्षों पर पतित हुये शिव के वीर्य से उत्पन्न हुई थीं : ३. २३१, १६ (सन्तान की इच्छा रखनेवालों को इनके सामने मस्तक झुकाना चाहिये)।

१. वृन्दारक, धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक का नाम है : १. ११७,

८; ७. ३७, २६ (अभिमन्यु पर आक्रमण किया); १२७, ३५ (अपने अनेक भ्राताओं के साथ इसने भीमसेन पर आक्रमण किया). ६१ (भीमसेन ने इसका वध किया)।

२. वृन्दारक एक कौरव-पक्षीय योद्धा का नाम है जिसका अभिमन्यु ने वध किया था (७. ४७, १२)।

१. वृष = कर्ण (देखिये वस्था०)।

२. वृष, एक कौरव-योद्धा का नाम है : ७. २०, १३ (द्रोण के गारुड व्यूह में)। तुकी० २. क्राथ।

३. वृष, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६४)।

४. वृष एक असुर का नाम है जो पूर्वकाल में पृथिवी का शासक था (१२. २२७, ५१)।

५. वृष = शिव : २. ४६, १५; १२. २८४, ९८ (सहस्रनाम); १४. ८, २०।

६. वृष = धर्म : ७. २०२, ३६; १२. ९०, १५।

७. वृष = श्रीकृष्ण (विष्णु) : १२. ४३, ९; १२. ३४२, ८८ (नाम की व्युत्पत्ति); १३. १४९, ४७ (सहस्रनाम). ९४ (सहस्रनाम)।

१. वृषक, गन्धर्वराज सुबल के पुत्र, एक गन्धर्व का नाम है जो अचल और शकुनि का भाई तथा धृतराष्ट्र का साला था : १. १८६, ५ (द्रौपदी के स्वयंवर में आया); २. ३४, ७ (युधिष्ठिर के राजसूय में आया); ५. १६८, १ (भीष्म ने इसे दुर्योधन की सेना का एक दुर्धर्ष रथी बताया); ६. ८२, ६१; ७. ३०, २. ४. ८ (भ्रातरौ वृषकाचलौ). ९. ११ (अर्जुन ने इसका वध किया); ८. ५, ४१ (अर्जुन द्वारा इसके वध का उल्लेख); ९. २६, ३५ (इसका शवदाह किया गया); १५. ३२, १२ (व्यास द्वारा मृतात्माओं के आवाहन पर यह भी गङ्गा से प्रकट हुआ)। तुकी० गान्धार (द्वि०), गान्धारमुख्य (द्वि०)।

२. वृषक, कलिङ्गराज के भ्राता, एक राजकुमार का नाम है : ८. ५, ३४ (इसका वध)।

वृषकर्मन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

वृषकाह्वया, एक नदी का नाम है (६. ९, ३५)।

वृषकेतन = शिव (देखिये वस्था०)।

वृषक्राथ = २. वृष।

वृषण = शिव (सहस्रनाम)।

वृषदंश, मन्दराचल के निकट स्थित एक पर्वत का नाम है जो स्वप्न में श्रीकृष्ण-सहित शिव के पास जाते समय अर्जुन को मिला था (७. ८०, ३३)।

वृषदर्प = शिव (७. २०२, ३९)।

१. वृषदर्भ एक प्राचीन राजर्षि का नाम है : २. ८, २६ (यम की सभा में); ३. १९६, २. ३. ७. ८; १३. ३२, ४. ३१. ३९ (काशी या काशी जनपद के राजा उशीनर जिन्होंने शरणागत कपोत की रक्षा की थी। किन्तु अन्यत्र ऐसी ही कथा को शिवि, देखिये वस्था०, से सम्बद्ध किया गया है)।

२. वृषदर्भ = श्रीकृष्ण (१२. ४३, १०)।

१. वृषध्वज, प्रवीरवंशी एक कुलाङ्गार राजा का नाम है (५. ७४ १६)।

२. वृषध्वज = शिव (देखिये वस्था०)।

वृषनाभ = शिव (७. २०२, ३९)।

वृषपति = शिव (७. २०२, ३९)।

१. वृषपर्वन्, एक राजा का नाम है : १. २, १८०; ३. १५६, १५ (इनका आश्रम सिद्धों और चारणों से सेवित था); १५८, २०. २१. २३. २४. २६. २८. २९. (हिमवद्-स्थित इनके आश्रम में पाण्डव आये। इन्होंने पाण्डवों को श्वेतपर्वत का मार्ग दिखाया). ३३. ९६; १७७, ६ (पाण्डवगण लौटकर इनके आश्रम पर आये). ७ (देवता और महर्षि इनके आश्रम पर आते रहते हैं); १७८, ४।

२. वृषपर्वन्, एक असुर का नाम है जो कश्यप द्वारा दनु के गर्भ से उत्पन्न हुआ था : १. ६५, २४; ६७, १५ (राजा दीर्घप्रज्ञ इसी के अंश से उत्पन्न हुये थे). १६ (अजक का बड़ा भाई); ७६, ३. १३ (शुक्र इसके पुरोहित थे); ७८, ६ (शर्मिष्ठा'''दुहिता वृषपर्वणः). २६. २८. ३२. ३५. ३८; ७९, १२; ८०, १. ५. ७. ११. १३ (महाकविः). १५. १७. २५; ८१, १० (जब शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी की इसने उपेक्षा की तब इसके पिता वृषपर्वा ने देवयानी और शुक्राचार्य को प्रसन्न करके अपनी पुत्री शर्मिष्ठा को देवयानी की दासी बना दिया); ८२, २; ८३, २८; ९५, ८; २. ३, ३. १८ (उत्तर में स्थित इनके भवन से मय, युधिष्ठिर की सभा के निर्माण के लिये, अनेक बहुमूल्य सामग्रियाँ लाया); ५. १४९, ५ (शर्मिष्ठया संप्रयुक्तो दुहित्रा वृषपर्वणः)। तुकी० असुर, दैत्य, दानवेन्द्र।

३. वृषपर्वन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

वृषप्रिय = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. वृषभ, गिरिव्रज के निकट स्थित एक पर्वत का नाम है (२. २१, २)।

२. वृषभ, गान्धारराज सुबल के पुत्र का नाम है : ६. ९०, २७ (शकुनि के छः भाइयों ने, जिनमें यह भी था, इरावत् से युद्ध किया). ४७ (एकमात्र यही युद्ध में बचा रहा)।

३. वृषभ = शिव (७. २०२, ४०)।

४. वृषभ = श्रीकृष्ण (विष्णु) : १२. ४३, ८; १३. १४९, ४१ (सहस्रनाम)।

वृषभध्वज = शिव (देखिये वस्था०)।

वृषभवाहन = शिव (देखिये वस्था०)।

वृषभा, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, ३२)।

वृषभाङ्क = शिव (देखिये वस्था०)।

वृषभूत, वृषभेक्षण, वृषभोदार = शिव (७. २०२, ४०)।

वृषरूप = शिव (सहस्रनाम)।

वृषर्षभ = शिव (७. २०२, ३९)।

वृषवाहन = शिव (देखिये वस्था०)।

वृषवर्मन्, एक कौरव योद्धा का नाम है जिसका भीमसेन ने वध किया था (८. ५, ३५)।

वृषशार = शिव (७. २०२, ४०)।

वृषशृङ्ग = शिव (७. २०२, ३९)।

वृषसाह्वया, एक नदी का नाम है (६. ९, ३५)।

१. वृषसेन, एक प्राचीन राजा का नाम है : २. ८, १३ (यम की सभा में)।

२. वृषसेन, युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित एक अभिमानी नरेश का नाम है (२. ४४, २१)।

३. वृषसेन, कर्ण के एक पुत्र का नाम है : ५. १६७, २३ (कर्णपुत्रो महारथः); ७. १६, १. २. ७ (द्रौपदेयों से युद्ध किया); २५, ५७ (पाण्ड्यराज से युद्ध किया); ३७, ६ (अभिमन्यु को युद्ध में रोका); ४४, ७ (अभिमन्यु ने इसे पराजित किया); ७४, १५; ७५, २६; ८७, १२; ९५, ५०; १०४, ४. २५. २७. ३० (अर्जुन से युद्ध किया); १०५, १६-१७ (वृषसेन का मणिरत्नविभूषित सुवर्णमय ध्वज मयूर-चिह्न से युक्त था। वह मयूर सेना के अग्रभाग की शोभा बढ़ाता हुआ इस प्रकार खड़ा था मानो बोल देगा); १२९, ३३ (कर्ण इसके रथ पर बैठ गया); १४३, ५३; १४५, ९. ४२. ५४. ८७. ८९ (अर्जुन से युद्ध किया); १४६, ७५. ९५. ९८; १४७, ६६; १४८, २० (अर्जुन ने इसका वध कर देने का वचन दिया); १५६, १२०; १५७, २० (कर्णस्य दयितं पुत्रम्); १५८, ६०; १६५, १३ (द्रुपद से युद्ध किया); १६८, १३. १५. १९. २१. २४. ३२; १७०, ३८. ३९. ४१; १७२, १२; १९३, १६; २००, ५२. ५८ (सात्यकि ने इसके साथ के अनेक महारथियों का वध किया); ८. ५, २४ (अर्जुन ने

इसका वध किया); ९, ७३: ४६, ३४; ४८, १९. ४१. ४४. ४६; ६१, १२. ३६. ३७; ६६, ३; ७५, १०; ८४, १६. १८. २९. ३७. ३९. ४२; ८०, २७. २८. ३१. ३३. ३५ (अर्जुन ने इसका वध किया); ८७, १; ९. ६४, ३२; ११. १५, १३; २१, १०; १३. ३२, १० (व्यास द्वारा मृत योद्धाओं का आवाहन करने पर यह भी गङ्गा से प्रकट हुआ)। तुकी० कर्णपुत्र, कर्णसुत, कर्णात्मज, कार्णि।

वृषस्कन्ध = शिव (सहस्रनाम)।

वृषा, भारत की एक नदी का नाम है (६. ९, ३५)।

१. वृषाकपि एक ऋषि का नाम है (१३. ६६, २३)।

२. वृषाकपि, ग्यारह रुद्रों में से एक का नाम है (१३. १५०, १३)।

३. वृषाकपि = शिव : ७. २०२, १३६ (वृषिश्रेष्ठः इति प्रोक्तो धर्मस्य वृष उच्यते। स देवदेवो भगवान्कीर्त्यतेऽतो वृषाकपिः)।

४. वृषाकपि = इन्द्र (१२. २२७, ११८)।

५. वृषाकपि = श्रीकृष्ण (विष्णु) : १२. ४३, १०; ३४२, ८९ (कपिर्वराहः श्रेष्ठश्च धर्मश्च वृष उच्यते। तस्माद् वृषाकपिं प्राह कश्यपो मां प्रजापतिः); ३४५, १८. २३; १४९, २४ (सहस्रनाम)।

६. वृषाकपि = सूर्य (३. ३, ६१)।

वृषाकृति = विष्णु (सहस्रनाम)।

वृषाङ्क = शिव (देखिये वस्था०)।

वृषाण्ड, एक दैत्य अथवा दानव का नाम है जो पूर्वकाल में पृथिवी का शासक रह चुका था (१२. २२७, ५३)।

वृषादर्भि, एक राजा का नाम है : १२. १५९, १३; २३४, २५ (रत्नों का दान किया); १३. ९३, २० (सप्तर्षियों के साथ इनका संवाद). २९. ३०. ५५. ५८. ५९. ७८. १४१ (शिविपुत्र वृषादर्भि और सप्तर्षियों की कथा); १३७, १० (ब्राह्मणों को रत्नादि का दान करके स्वर्ग प्राप्त किया)। तुकी० शैव्य, शिविसुत।

वृषामित्र, एक ब्राह्मण का नाम है (३. २६, २४)।

वृषायुध = शिव (७. २०२, ४०)।

वृषावर्त = शिव (७. २०२, ३९)।

वृषाहिन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

वृषोदर = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. वृष्णि (बहु० °ष्णयः) यादवों की एक जाति का नाम है जिन्हें अक्सर अन्धकों और भोजों के साथ सम्बद्ध किया गया है : १. २, १५०. २६९. ३५१. ३५७. ३५९. ३६१; ६३, १०४; १३२, ११ (द्रोणाचार्य के शिष्य हुये); १८६, २ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित वृष्णियों का उल्लेख); १८७, ८; २१८, १८. १९; २१९, १. २. ५. ८; २२०, १२. १६. ३२; २२१, १. १४. २७. २९. ३३. ३५. ३८. ४२. ५८. ५९. ६०. ६२; २. ४, २९. ३४; १४, ५१. ६०; १९, २८; ३३, १२; ३४, १७; ३६, १७; ३७, २३; ३९, १२; ५०, ११; ५२, ४९; ३. १२, १. ६४; १४, ७. ८; १५, १३. १९; १६, ८; १८, १. ५. १३. १५. १६. २१. २८; १९, २. २७; २०, ४. ८; २२, १३. २५; ३३, ८९; ५१, ९. ११; ११८, १८-२०; ११९, १-३; १२०, ५. २०; १८३, २६; २३५, १५; २५४, १७; २६८, १६; ३०२, २३; ४. ६८, ७१; ७२, २५; ५. ७, ३; २७, २; ४८, ७८; ४९, २२; ५१, ३९; ५७, २; ६५, ७; ७२, ४; ८२, २५; ८६, ३. ४; ८८, १४; ९३, २२; ९४, १५. १८. ३४; १२८, ४०; १३१, ३. ९. ३०; १४०, १०. १३. २४; १५३, २; १५७, १८; १७०, ४; १९६, २४; ६. २०, १४; ३४, ३७; ५९, ९८; १०७, १०; ७. १०, ३७. ५४; ११, २९; ७४, ३१; ७८, ९. १२; ८३, १६; ८६, ७; १०४, १; ११०, ६०. ९२; ११५, ६८; ११६, ७; १४२, २६. २८. ५३. ५६; १४३, १५; १४४, २३. २५. २८. २९; १५६, ४; १५८, ११; १६२, २०; १६५, ३४; १७०, ३६; १९१, ५२; १९८, १२. ३५. ५४. ५६; १९९, २६; २००, ६५; ८. ८, १५; ४०, ११; ७३, ७४; ९६. ४९ (सात्यकिः···वृष्णीनां प्रवरो रथः); ९. २१, १२ (सात्यकि और कृतवर्मा); ३५. १ (= बलराम); १०. १२, ११. ३४; ११. २५, ४८. ४९ (गान्धारी ने इन्हें शाप दिया था); १२. ७, ३; ३३, ८; ८१, ८. २९; २०८, १३; १४. १५, २०; ५२, २४. ४८; ५९, १४. १८. २०; ६०, ३६; ६६, १. ८. २४; ७०, १०. १४; ७१, २. १२; ८३, १३; ८६, ४; ८९, ३७; १५. ३६, ३४; १६. १, ७. ९. १२-१४. १९. २३. २६. २९; २, १. २. ४. ६. ८. १०. १७; ३, २. ४. ७. ८. १२. १३. ३७ (इन लोगों ने आपस में ही एक-दूसरे का वध किया); ४, १९ (इनका नाश); ५, १ (उपसंहृतान्). ४ (°निलयम्). ८. ११; ६, ७. ९ (°नाशम्). २०; ७, ५. ६. १०. २७. २८ (विनष्टा). ३३. ३४. ३७. ३९. ४०. ४४. ४९. ५७. ६०. ६३. ६८ (इनकी बची हुई स्त्रियों और बच्चों को अर्जुन द्वारका से अपने साथ लाये); ८, ८. १०. १६. २६. ३८; १७. १, १. २. २४; १८. ४, १८ (स्वर्ग में)। तुकी० वार्ष्णेय (बहु०)।

२. वृष्णि (एक०) = कृतवर्मा (८. ५४, ३२)। = सात्यकि (७. ११७, ३४; १७०, ५७)।

३. वृष्णि = शिव (१४. ८, १९)।

वृष्णिकुलश्रेष्ठ = श्रीकृष्ण (३. २२, २५)।

वृष्णिकुलोद्वह = शाम्ब (३. १६, १८)। = श्रीकृष्ण (२. १५, ४; १४. ११, ३; ५२, ६)। = सात्यकि (१. ६७, ७९)।

वृष्णिनन्दन = श्रीकृष्ण : ३. १४, १; २१, १३; ५. ७६, ५; ११. २३, ९)।

वृष्णिपति = श्रीकृष्ण (५. ६२, १२)।

१. वृष्णिपुङ्गव = श्रीकृष्ण (१४. ५२, ११)। = सात्यकि (७. ११९, १)।

वृष्णिपुर = द्वारका (३. १८३, २६)।

वृष्णिप्रवर = श्रीकृष्ण (३. १८९, ५६; ८. ६५, १२)। = बलराम (९. ३९, २४; ४८, ६८)।

१. वृष्णिप्रवीर = श्रीकृष्ण : १. १९१, १८; ७. १२७, २१; १४. ६९, ६; १६. ७, २।

२. वृष्णिप्रवीर = प्रद्युम्न (३. १७, ११)।

३. वृष्णिप्रवीर = सात्यकि : ७. ९८, १; १४२, ५६; ८. ३५, १९।

वृष्णिवर = सात्यकि : ६. ६३, ३०; ७. ११०, १४।

१. वृष्णिवीर = श्रीकृष्ण : ५. २२, ३३; ७. ११, ३०; ७२, २६; १०३, ३८; ८. १७, २३; ६९, ७३; ९०, ९४; १४. ६२, १६।

२. वृष्णिवीर = सात्यकि : ५. ५०, ३९; ७. ८५, ३९; ११५, ३८; १२३, २५; १२६, १६. १८; १४०, ८. २०; १४३, ४२।

३. वृष्णिवीर (द्वि०) = बलराम और कृष्ण (१. २. १५१)।

१. वृष्णिशार्दूल = श्रीकृष्ण : ३. १९, ६; ४. ७२, २५; ७. १७३, ३३; ११. १६, ४२; १३. ३१, ८. ३५; १४. ६७, १३; ८७, १०।

२. वृष्णिशार्दूल = सात्यकि (७. १२०, ३४)।

वृष्णिश्रेष्ठ = श्रीकृष्ण (५. ७१, ४)।

१. वृष्णिसिंह = श्रीकृष्ण : २. ४०, ८; ५. २२, १८. ३१; ४८, ४३. ४९. १००; ७. १३९, १११। = सात्यकि : ७. १४६, १३७ (?)।

२. वृष्णिसिंह (द्वि०) = सात्यकि और कृतवर्मा : ९. १७, ७३; २१, १४।

वृष्ण्यन्धकपति = श्रीकृष्ण (१४. ८६, १३)। = उग्रसेन (१४. ८३, १५)।

वृष्ण्यन्धकपुर = द्वारका (३. १५, १९; १२. ७, ३)।

वृष्ण्यन्धकप्रवीर = सात्यकि (७. १२४, ५)।

वृष्ण्यन्धकव्याघ्र = सात्यकि (७. १४२, ५३. ६४)।

वृष्ण्यन्धकोत्तम = श्रीकृष्ण (७. १०४, १)।

वृष्य = शिव (सहस्रनाम)।

वृहक, बृहत्त्वन, गन्धर्वों के नाम हैं (१. १२३, ५७)।

१. वेगवत्, धृतराष्ट्रकुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है : १. ५७, १७।

२. वेगवत्, एक दानव का नाम है जो दनु का पुत्र था : १. ६५, २४; ६७, १०-११ (केकयराजकुमार के रूप में पृथिवी पर उत्पन्न हुआ)।

३. वेगवत्, एक दैत्य का नाम है जो शाल्व का अनुयायी था : ३. १६, १७-२० (शाम्ब ने वध किया)।

४. वेगवत्, एक राक्षस का नाम है : ६. ९१, २० (दुर्योधन ने वध किया)

वेगवाहिनी, एक नदी का नाम है : २. ९, १८ (वरुण की सभा में)।

वेणा, एक नदी का नाम है : २. ९, १८ (वरुण की सभा में); ३, ८५, ३२. ३४; ८८, ३ (दक्षिण में); १८८, १०४; २२२, २४-२६ (अग्नि की माताओं में से एक); ६. ९, २०. २७; १३, १६५, २०. २२ (यहाँ वेण्या पाठ है)।

वेणातट, एक प्रदेश का नाम है जिसे दक्षिण दिग्विजय के समय सहदेव ने जीता था (२. ३१, १२)।

वेणिका, शाकद्वीप की एक पवित्र नदी का नाम है (६. ११, ३२)।

वेणिन्, कौरव्य कुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ५७, १३)।

वेणीस्कन्ध, कौरव्यकुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ५७, १३)।

वेणुजंघ, एक प्राचीन ऋषि का नाम है : (२. ४, १८)।

वेणुदारिसुत, एक यादव का नाम है जिसे कर्ण ने दिग्विजय के समय परास्त किया था (३. २५४, १५-१६)।

वेणुप, (बहु० °पाः) एक जाति के लोगों का नाम है (५. १४०, २६)।

वेणुमण्डल, कुशद्वीप के सात वर्षों में से दूसरे वर्ष का नाम है (६. १२, १२)।

वेणुवीणाधरा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २१)।

वेण्या, एक नदी का नाम है (१३. १६५, २२)।

वेतसक, एक स्थान का नाम है जहाँ मृत्यु ने तपस्या की थी (७. ५४, २३)।

वेतसिका, एक तीर्थ का नाम है जहाँ जाने से व्यक्ति अश्वमेध का फल और शुक्राचार्य का लोक प्राप्त करता है (३. ८४, ५६)।

वेतालजननी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १३)।

वेत्रकीयगृह, एकचक्रा नगरी के समीपवर्ती एक स्थान विशेष का नाम है जहाँ उस प्रदेश के राजा का निवासस्थान था (१. १६०, ९)।

वेत्रकीयवन, एक वन का नाम है जहाँ भीमसेन ने बकासुर को मारा था (३. ११, ३१)।

वेत्रवती एक नदी का नाम है : ३. १८८, १०२ (मार्कण्डेय जी ने इसे भी नारायण के उदर में देखा); २२२, २३ (उन नदियों में से एक जिन्हें अग्नि की मातायें कहा गया है); ६. ९, १६. १९; १३. १६५, २१।

वेत्रिक (बहु० °काः) एक स्थान के निवासियों का द्योतक है (६. ५१, ७)।

१. वेद, एक ब्राह्मण का नाम है : १. ३, २३ (आयोद धौम्य के शिष्य थे). ७८. ८०. ८४. ८८ (आयोद धौम्य के तीसरे शिष्य का नाम वेद था। उन्हें धौम्य ने आज्ञा देते हुये कहा : 'तुम कुछ काल तक यहाँ निवास करते हुये सदा सुश्रुषा में लगे रहो। इससे तुम्हारा कल्याण होगा।' वेद ने गुरु के इस आदेश को स्वीकार करते हुये दीर्घकाल तक गुरुसेवा की। गुरु उन्हें भारी बोझ ढोने में सदा बैल की तरह लगाये रहते थे और वेद भी भूख-प्यास सहन करते हुये सदा गुरु के अनुकूल रहते थे। इस प्रकार बहुत दिन व्यतीत होने पर गुरु उन पर पूर्ण सन्तुष्ट हुये जिससे उन्होंने (वेद ने) सर्वज्ञता प्राप्त कर ली। तदनन्तर उपाध्याय की आज्ञा लेकर वेद समावर्तन संस्कार के बाद स्नातक हो गुरुगृह से लौट कर अपने घर में रहने लगे। गुरुगृह में अत्यधिक कष्ट सहन करने का अनुभव होने से वेद अपने शिष्यों को कभी क्लेशदायक कार्य में नहीं लगाते थे। कुछ समय बाद वेद जनमेजय और पौष्य के उपाध्याय नियुक्त हुये); १२. २९६, १४।

२. वेद, (अधिकांशतः बहु० °दाः), आर्यों के सर्वप्रधान और सर्वमान्य धार्मिक ग्रन्थों का नाम है जो अप्रतिम ज्ञान के भण्डार हैं : १. १, १८ (°दार्थैः). २१ (चतुर्भिः). ४८. ५४. ६२. ६६. १०९ (सर्ववेदविदां वरः). १२४. २६५. २६७. २६८ (कार्ष्णो). २७१ (चतुरः). २७२ (चतुर्भ्यः सरहस्येभ्यः) २७४ (सब पापों से मोक्ष दिलानेवाला). २७५ (वेदविधिर्न कल्कः); २, ३९. ४०. २१७. २५३. ३८२. ३९५; ३; ३२ (सर्वे). ७७; ५, १०. ३३; ७, ७; ११, १५. १६. १९; १५, ४; २९, ३६; ४५, १९; ४७, ४२; ४८, १८ (साङ्गान्); ५१, ११; ५३, ५. १०. २६; ५६, २७; ५९, ५ (वेदाश्रयाः कथाः); ६०, ३ (साङ्गान्सेतिहासान्). ४. ५ (विव्यासैकं चतुर्धा यो वेदं वेदविदां वरः). ७; ६१, ३. २६; ६२, १६. १८. ३२. ४९; ६३, ८८. ८९. ९२; ६४, २९. २०; ६६, ६; ६७, ७१. ७५. १०८; ७०, ४२; ७४, ६२. (वेद के सूक्तों का उद्धरण). १०४; ७५, १५ (सांगं); ८१, १४; ८३, ३; ८९, ७; ९५, ८८. ९०; १००, ३५; १०२, ६४; १०४, ६. १२ (षडङ्गम्). २३. २५; १०५, १५ (यो व्यस्य वेदांश्चतुरः). २४; १०९, १९. २०; ११७, १६; १२२, २८; १२८, १४; १२९, ४३ (वेदशास्त्रार्थपारगम्); १३०, ३. ४. २७. ३८. ४५; १५६, ५ (भ्रातां वेदमधीयाना वेदाङ्गानि च सर्वशः); १५८, १६; १६२, ६; १६६, ५. ५९. ६४. ७५ (षडङ्गे); १७४, १३; १७७, १२. १४. १५. २१. ३३; १७८, १२; १७९, ४ (षडङ्गश्चाखिलः); १८०, २२; १८१, २; १८३, १. ७. १०; १९५, २८; १९६, ६. ७; १९८, ११. १२; २०७, ३८; २१४, १. २; २२१, ७२-८८; २२२, ५. ७; २२३, ६२; २. ४, १९; ५, २ १६. ११०-११२; ६, १३; २१, २२; ३१, ४२; ३३, ३३. ३६; ३६, ८; ३८, १९. २७ (अग्निहोत्रमुखाः); ४५, १५; ५०, ४; ५३, १ (°दान्तावभृथप्लुताः). ११; ६०, ५; ३. १, ३१; २, ७४; ३, २. ३९; २६, १९; २९, ३६; ३१, ८. ९. १९ (°शास्त्रार्थनिन्दकः); ३३, ४६; ३६, ३७. ४४; ४३, ५; ४५, ८ (साङ्गोपनिषदान्'''चतुरास्यान्); ५२, २४. २५. ३३; ५३, ३; ५८, ९; ६४, १७. ५०. ८१; ६५, ४४; ७९, ९; ८१, ५; ८५, ४७ (जब वेद नष्ट हो गये तब सारस्वत ने उनकी मुनियों को पुनः शिक्षा दी). ७७. ८३; ८६, ९; ८८, २५; ९०, १४; ९१, १५; ९५, १६; ९९, २६. ५९; ११५, ४४; ११६, १; १२६, ३३; १३३, ६. ८. २० (°शीलैः); १३४, १२. १३; १३५, १६. १९. २१. २६. ३८. ४१. ४३. ५४; १३७, १०; १३८, २२. २५; १४५, ४०; १४८, १४; १४९, २०. २७-२८ (चतुर्धा वेद एव च'''चतुर्वेदास्त्रिवेदाश्च तथापरे'''द्विवेदाश्चैकवेदाश्चाप्यनृचश्च तथापरे). ३०. ३४; १५०, २८. २९; १७५, १०; १८०, ३५; १८१, १; १८६, २७; १८८, २१; १८९, ९. १४ (ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद); १९०, २६; १९६, ४; १९७, ८; २००, ७. १३. १९. ८८ (दुर्वेदा वा सुवेदा वा प्राकृताः संस्कृतास्तथा). ११३. ११५. ११६; २०१, १५; २०६, १. २; २०७, ६७.८३ (वेदोक्तः परमो धर्मः); २१४, २२; २१५, ८. २२; २२१, ५; २२२, २१. ३०; २३३, ४५; २३६, ३; २५१, २५; २५५, ९; २७२, ४८. ५३; २७५, १३; २७७, ४ (सरहस्येषु); २९८, ११; ३००, ९; ३०५, १५; ३१०, २८; ३१३, १०५; ३१५, २८; ४. ५०, ५; ५१, ८. १०; ५८, ६; ७२, १८; ५. ६, १६; ९, ५. ४०; १८, ७. १६; २७, ७; २९, २४; ३०, १२; ३३, ६२; ३४, ३४. ३८; ३६, २५. ५३; ३७, ९; ३८, २४; ३९, ६६. ७९; ४०, २६; ४२, १७. १८. २९; ४३, २. ३. ६. ७. १३.४१-४४. ५०-५५. ५८. ६३; ४५, २१; ४६, २६; ९१, ४०; ९६, ११; १०८, १०; १०९, १८. १९; १४०, ६. ७; १४४, २७; १५२, ६; १६०, ४३. ९७ (भ्राक्षेधनुषि चाचार्यं वेदयोरन्तगं द्वयोः); १६१, १५; १७६, ३१. ४०; १७९, ३. ४. ९. २४; १९२, २५; १९४, १७; ६. १, ४; २, १; ३, ५४; ४, १६; १४, ४४; २३, १०; २६, ४२; ३२, ११; ३४, २२; ३५, ४८. ५३; ३९, १. १५. १८; ४९, १७; ६५, ६१; ६६, ३०; ७. ७, १; ९, २९. ३६; २३, ३९; ५२, २४; ५५, २०. ४३; ५७, ३; ५९,

१५; ६२, १७; ६३, ८; ६५, ३; ६६, ३; ६७, ३; ७३, २९; ७४, २९; ८१, १३; ८२, १५. १६; १०१, ४; १४९, २२; १८४, ३५; १९०, ३७; १९४, १२; १९८, १; २०१, ४८. १००; २०२, ७४. १०७. १०९. १२०. १४८. १५६; ८. ३४, ७०; ४४, ४६; ४५, ४; ८७, ४२. ५५ (वेदविदः पितरश्च); ८९, ५०; ९०, ११४; ९६, ६३; ९. ५, २८; ६, १४; ३६, २२; ३८, ६. १६. १७; ४०, ४-६; ४४, २१; ४५, ११; ४९, ३; ५१, ३ (जब ऋषिगण वेदों को भूल गये तब सारस्वतने उन्हें फिर से वेद पढ़ाया). २३. ४१. ४२. ५१. ५२; ६५, २८; १०. ३, १९; १६, १३; १८, १; ११. १, २३; ९, १९; १३, २; २३, ३२; १२. १, ५; ३, २८; ८, २६. २८; १०, २०; १२, ५. ६. ११; १४, १; १५, ३३; १९, १७; २३, ७. ११; २५, ४. ३५; २६, ८; २९, १२; ३२, ३; ३३, २८; ३४, ९. १७. १८; ३५, ५; ३६, १२. २०; ३७, ५. ११; ३८, २०. ३२; ४०, १९; ४६, १७; ४७, ५; ५०, २३. ३५; ५३, ८; ५४, १९. २९; ५६, २९; ५९, ९९. १४१; ६१, ३. १०. १५. १९; ६३, ५. १०. १६. २०. २४; ६४, १; ६५, ९. १८; ६६, १४. ४०; ६८, २६; ६९, ३१; ७३, ९; ७६, १३; ७८, १५; ७९, ७. ९-११. १९; ९०, १२; ९१, ७; ९८, ७. ४०; १०८, ६; ११०, १४; १२१, ५१. ५३. ५४. ५६. ५७; १२२, ४७; १२७, ३; १२८, १०; १३९, ६१; १४१, ८९; १४२, ३०; १५१, ६. १३; १५२, ७; १६१, २; १६५, १. ४. १८. २२; १६६, २१; १६७. ३१; १६८, ८. ४०. ४७. ५०; १७५, ६; १८०, ४२. ४७; १८२, १५; १८९, २. ५. ६. ७; १९१, ८. ९; १९६, ७; १९९, ५. ६५. ६६. ६८; २००, ११; २०१, १. १९; २०७, ३४; २१०, ७. १०. १६. १९. २०; २१२, २; २१४, ३; २१७, ३०; २१८, ४२; २२१, २; २२५, १९. २५; २२७, ६०; २२९, ६६. ७४; २३०, १२; २३१, ७. २६; २३२, २४-२६. २८. ३५. ३६. ३८. ४३; २३४, २. ३; २३५, १. २. १५; २३६, ६. ३१. ३३; २३७, १७-१९; २३८, ३. ११. १४. १५. १७. १८. २१; २३९, २२; २४१, १. ६; २४२, ३. १०. २८; २४३, ८. २७; २४५, ३०; २४६, १३. १७; २५१, २. ३. ११. १८; २५९, ३; २६०, ७. ९; २६३, ६. १९; २६५, ७. ९. ११; २६८, ९. ११. १२. ३३. ३६. ४०; २६९, १६-१९. ३९. ४३. ६४. ६७; २७०, १. २. १६. ४२. ४३. ४५; २७१, १; २७७, ६; २८४, १२६. १९२; २८७, २१; २९०, १५; २९२, २०; २९६, १६; २९७, ३०. ४०; २९९, १३. २४; ३०१, १२. ४६. १०८; ३०२, ३; ३०५, ६. ७. ११-१३; ३०६, २४; ३०७, ४६; ३०८, ३२; ३०९, १४; ३११, ५. ६; ३१६, ७; ३१८, १०. १९. २७. ४८. ४९. ५०. ५२; ३१९, ४; ३२०, ५. ६. ९८; ३२४, २२ (सरहस्याः ससंग्रहाः). २३; ३२६, १४. १६. २१; ३२७, २६. ३४. ३५. ४१. ४२. ४४. ४९. ५०; ३२८, ४. १४. १६. २०-२३. २९. ५६; ३२९, १; ३३२, २२; ३३४, २५. ४३; ३३५, ३. १२. २८; ३३९, ८. ५४. ५६. १०५. १११ (महोपनिषदं चतुर्वेदसमन्वितम्). ११८. १४०; ३४०, १. १७. २१. २२. ३५. ४६. ४८. ५५. ६२. ६३. ६६. ७०. ८८. ९२. १०९. १११. ११५; ३४१, ६. ४५. ५५; ३४२, २०. ८३. ८५. ९७. १२०; ३४३, ८. १३. ६१; ३४४, १२ (सद्भूतोत्पादकं नाम तत्स्थानं वेदसंज्ञितम्); ३४५, ९; ३४७, ८ (पुराणं वेदसंमितम्). २८-३४. ४५. ४७. ४८. ५६. ५८. ५९ (हयशिरस् विष्णु ने वेदों का उद्धार किया). ६१. ६७. ७१. ७२. ७८. ८०. ८१; ३४८, ५. ८१; ३४९, १. ४ (महानिधानम्). ९. १३. १४. १५. ४१. ४२. ४६. ५०. ६६. ७३; ३५०, ५; ३५१, २१; ३५३, २. ६; ३५४, १४; ३५९, ५; १३. २, ८. १७. ३५. ५१; ७, २०; १०, ३८; १४, ६२. ११२. ३२३. ४११. ४१७; १६, ४३. ६५; १७, २. ३. १५. १८१; १८, ४३. ५३. ७२. ८१; १९, ७; २२, १२. १७. ३१. ३६; २३, ४७. ७२; २५, ६३. ६७; २६, २३; ३०, ९. ६८; ३१, ८. १३. १८. ३०; ३६, १५; ३७, ११. १२; ४०, ५४; ४४, ६; ५०, २१; ५६, ९; ५९, ३१; ६०, ११; ६१, ७; ६२, ३६. ३८. ४६; ६४, २५; ६६, ४७. ५०; ६८, ३३; ६९, ३; ७१, ४३. ५०; ७३, २८; ७५, ३. १९. २५. २८; ७६, २०; ८१, ४३; ८४, ५. १७. २४. ३६. ३७; ८५, ४. ९२. १११. १४०. १४८; ९०, २५. २८. ३६. ५३; ९३, २. ६. १२६; ९४, ११. २७. ४४; ९५, २२; १०२, ३४. ३९. ६०; १०३, २१; १०४, ३६. ७४. ११०. १३७. १४६; १०६, ६५; १११, ४६; ११२, १६. १८. २१. २८; ११४, २; ११५, १८. ५०. ५२; ११६, १४; १२०, ९. ११. १७. १९; १२२, ४. ५; १३०, १९. २९; १४१, ५१. ६५. ८८; १४२, १४. २९; १४३, ४५; १४५, ४७. ५८; १४९, २७ (विष्णु सहस्रनाम). १२३. १३९; १५०, १०. ८०; १५७, ९; १५८, २२. २३. ३० ३६; १६०, २९; १६१, ३. २३; १६२, १८; १६५, ४७ (देव पाठ है ?); १६७, ३१; १४. १३, १०. १५; ३२, १६; ३५, १६; ४४, ६; ४५, १७; ४६, ५०; ४७, २; ५४, ८; ६४, ८; ७३, १८; ८६, १; ८८, १९; १५. ४, ९; १०, ३९; १५, २; १८, १७; २१, १०; २९, १६; ३०, २०; ३६, ७; १८. ५, ४१. ४५. ४६. ५७. ६६. ६८; ६, ९३ (वेदे रामायणे पुण्ये भारते भरतर्षभ। आदौ चान्ते च मध्ये च हरिः सर्वत्र गीयते)।

वेदकर्तृ = सूर्य (३. ३, १९)।

वेदकार = शिव (सहस्रनाम)।

वेददेव = बृहस्पति (१३. ७६, २९)।

वेदभू = विष्णु (१३. १६५, ९)।

वेदमातृ = गायत्री : ३. २००, ८३। = सावित्री : ६. २३, १२ (यहाँ दुर्गा को सावित्री के साथ समीकृत किया गया है); १२. १९९, ८।

वेदयज्ञाधिपति = विष्णु (१२. ३४०, १०३)।

वेदवती, एक नदी का नाम है : ६. ९, १७; १३. १६५, २५।

वेदवाहन = सूर्य (३. ३, १९)।

वेदविद् = विष्णु (सहस्रनाम)।

वेदव्यास — देखिये व्यास।

वेदशिरस् एक प्राचीन ऋषि का नाम है जो उपरिचर वसु के यज्ञ में सदस्य बने थे (१२. ३३६, ८)।

वेदस्मृता, एक नदी का नाम है (६. ९, १७)।

वेदस्मृति, एक नदी का नाम है (१५. १६५, २५)।

१. वेदाङ्ग (बहु० °ङ्गानि) : १. ११, १९; १५, ४; २५, १७; ४५, १९; ४७, ४२; ६०, ७; ६७, १४२; १०३, ५; १०४, २५; १०९, २०; ११०, ३८. ४५; १५६, ५; १६६, ५; २१४, २; २. ४, १९; ११, ३३; ३३, ३६; ३८, १९; ३. ३६, ३७; ६४, ८१; ७९, ९; १४५, ४०; १८१, १; २१५, २२; २५१, २५; ६. १४, ४४; ७. ५५, २०; ६२, १७; १९०, ३७; १२. २९, १२; ५९, ९९; ६९, ३१; २१०, २०; ३११, ६; ३२४, २३; ३४०, १. ३५. ४८; १३. २, १७; १४, ६२. ११२; १६, ५६; १७, २; ३०, ६४; १४. ६४, ८; १५. ३६, ७। तुकी० अङ्ग।

२. वेदाङ्ग = सूर्य (३. ३, १९)।

३. वेदाङ्ग = विष्णु (सहस्रनाम)।

वेदाङ्गपति = विष्णु (१२. ३४०, १०३)।

वेदात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ३३, १०; १२. ४७, ४१)।

वेदाध्वरपति = शिव (१२. २५६, १९)।

वेदान्त (अधिकांशतः बहु० °न्ताः) मुख्यतः उपनिषद् और वेदान्त दर्शन का द्योतक है : ४. ५१, १० (द्रोणाचार्य इसके विद्वान थे); ६. ३०, १५; १२. ५४, १९; १९६, ७; २३८, ११; २४६, २१; २८७, २१; ३०१, ७१; ३१८, २७; १३. १६, ४३; ६९, २०; १४. १३, १५)। एक० = दुर्गा (६. २३, १२)।

वेदाश्वा, एक नदी का नाम है (६. ९, २८)।

१. वेदी, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, ४७)।

२. वेदी, ब्रह्मा की भार्या का नाम है (५. ११७, १०)। देखिये वेदी भी।

वेदीतीर्थ, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ९९)।

वेदीप्रजापतेः, एक तीर्थ का नाम है (३. ९५, ६)।

वेद्य = विष्णु (सहस्रनाम)।

वेधस = शिव (३. ३९, ७८; १७३, ५६; ७. ८०, ५७; १४. ८, १२)। = धर्म (५. ९०, ६७)। = श्रीकृष्ण (१२. ५६, १०; ६०, ६)। = (बहु०) प्रजापति (३. १८८, ८)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

वेन, एक अथवा अधिक प्राचीन राजाओं का नाम है : १. १, २३४; ७५, १५ (वैवस्वत मनु के पुत्र); २. ८, २० (यम की सभा में); १२. ५९, ९३ (मृत्यु की मानसी कन्या सुनीथा के गर्भ से अतिबल द्वारा उत्पन्न हुये। वेन राग-द्वेष के वशीभूत हो कर प्रजाओं पर अत्याचार करने लगे। तब वेदवादी ऋषियों ने मन्त्रपूत कुशों द्वारा उसे मार दिया। फिर वे ही ऋषि वेन की दाहिनी जाँघ का मन्थन करने लगे जिसमे इस पृथिवी पर एक नाटे कद का मनुष्य उत्पन्न हुआ। उसकी आकृति बेडौल थी और वह एक जले हुये खम्भे की भाँति जान पड़ता था। उसकी आँखें लाल और बाल काले थे। महर्षियों ने उसे देख कर 'निषीद' कहा। उसी से पर्वतों और वनों में रहनेवाले निषादों का जन्म हुआ। तदनन्तर महर्षियों ने वेन के दाहिने हाथ का मन्थन किया जिससे देवराज इन्द्र के समान एक अन्य पुरुष प्रकट हुआ। वह वेदों और वेदान्त का ज्ञाता था। उसी का नाम पृथु हुआ।

वेहत, एक पुष्टिकरी ओषधि का नाम है (३. १९७, १७)।

वैकर्तन — देखिये कर्ण।

वैकुण्ठ = विष्णु (श्रीकृष्ण) : १. ६४, ५१; ३. १०२, १९; ६. ८, २२; ७. ८३, १८; १२. ४३, ५; ४७, ६३; ११०, २७; २७९, २९; ३३८, ४ (महापुरुषस्तव); ३४२, ८०; ३४५, ५; १३. १४९, ५७ (सहस्रनाम); १६७, ३९।

२. वैखान = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. वैखानस (बहु० °साः) ऋषियों के एक वर्ग का द्योतक है : १. २११, ५; ३. ८९, १६; ११४, १५; १२५, १८ (वायुभोजनाः); ५. १११, ११ (वैखानसाश्रमः); ९. ४५, ८; १२. २०, ६ (इनके एक वाक्य का उद्धरण); २६, ६; ६०, ४८; २४४, १४. २०; ३४८, १५ (फेनपों से नारायण धर्म ग्रहण कर उसका सोम को उपदेश दिया); १३. ८५, १०९ (यज्ञभस्म से उत्पन्न); ९०, ५३।

२. वैखानस = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

वैचित्रवीर्य = धृतराष्ट्र (देखिये वरुथा०)।

वैचित्रवीर्यक (वि०) : १५. २८, १५ (वैचित्रवीर्यके क्षेत्रे जातः ; अर्थात् विदुर)।

वैचित्रवीर्यिन् = धृतराष्ट्र (९. ४१, २)।

१. वैजयन्त, इन्द्र की ध्वजा का नाम है : २. २२, १९; ३. ४२, ८।

२. वैजयन्त, एक पर्वत का नाम है : १२. ३५०, ९ (क्षीरसागर के मध्य में स्थित। यहाँ आध्यात्मगति का चिन्तन करने के लिये ब्रह्मा जी प्रतिदिन आते हैं)।

१. वैजयन्ती (वि०) माला के लिये प्रयुक्त हुआ है : १. ६३, १५; ७. २९, १९; ९. ४६ ४९।

२. वैजयन्ती (द्वि०) ऐरावत के दो घण्टों का नाम है जिन्हें इन्द्र ने स्कन्द को दिया (३. २३१, १८)।

१. वैतरणी, भागीरथीगङ्गा जब पितृलोक में बहती हैं तब उनका नाम वैतरणी होता (१. १७०, २२)।

२. वैतरणी, एक नदी का नाम है : २. ९, २० (वरुण की सभा में); ३. ८३, ८४; ८५, ६। "यह कलिङ्ग देश में बहती है। यहाँ धर्म ने देवताओं की शरण में जाकर यज्ञ किया था। वैतरणी के जिस उत्तर तटपर यज्ञ का आयोजन किया गया था वहाँ अन्यान्य ब्राह्मण और ऋषि सदा निवास करते हैं। स्वर्गलोक की प्राप्ति करनेवाले पुण्यात्माओं के लिये यह स्थान देवयान के समान है। प्राचीन काल में ऋषियों तथा अन्य लोगों ने भी यहाँ अनेक यज्ञों का अनुष्ठान किया था। यहीं रुद्रदेव ने यज्ञ में पशु को ग्रहण कर लिया था। उसे ग्रहण करके उन्होंने उसे 'अपना भाग' बताया। तब देवताओं ने रुद्र से कहा : 'आप दूसरों के धन से द्रोह न करें।' यों कहकर देवताओं ने कल्याणमय वचनों द्वारा रुद्र का स्तवन किया और इष्टियों द्वारा उन्हें तृप्त करके उस समय उनका विशेष सम्मान किया। तब रुद्र उस पशु को छोड़कर देवयान मार्ग से चले गये। देवताओं ने तब रुद्रदेव के भय से उनके लिये शीघ्र सब भागों की अपेक्षा उत्तम एवं सनातन भाग देने का संकल्प किया। जो यहाँ इस गाथा का गान करते हुये वैतरणी के जल का स्पर्श करता है उसकी दृष्टि में देवयान मार्ग प्रकाशित हो जाता है।" (३. ११४, ४-१२)।" ३. ११४, १३ (द्रौपदी ने इसके जल में उतर कर पितरों का तर्पण किया); ५. १०९, २४; ६. ९, ३४; ५९, १२७; १०३, ३८ (यथा वैतरणी प्रेतान् प्रेतराजपुरं प्रति); ७. ५०, १२ (भयावहा वैतरणीव दुस्तरा); १४६, ३७ (महाप्रतिमयां रौद्रां घोरां वैतरणीमिव); १७१, ५१ (यथा वैतरणी···यमराजपुरं प्रति); ८. ७७, ४५ (यथा वैतरणीमुग्रां दुस्तरामकृतात्मभिः); ८०, ८; ९४, ६; १२. ३०१, ३१ (यमक्षये); ३२१, ३२; १६. ५, १०; १८. ३, ४।

वैतहव्य (बहु० °व्याः) वीतहव्य के पुत्रों का द्योतक है : १३. ३०, २६. ३५. ३७. ३९ (काशिराज सुदेव और दिवोदास से युद्ध किया)।

वैतालिक : १. १८४, १६; २. ४, ६; ४. ७२, २९; ७. ८२, २; १२. ३७, ४३।

वैतालिन्, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६७)।

वैत्तपाल्य (वि०) : ७. २०१, ७३ (कर्म)।

वैदम्भ = शिव (सहस्रनाम)।

वैदर्भ, विदर्भराज का नाम है जो लोपामुद्रा के पिता थे : ३. ९६, २३; ९७, १।

वैदर्भि, लोपामुद्रा के पिता का नाम है : १३. १३७, ११ (अपनी पुत्री अगस्त्य को प्रदान किया)।

१. वैदर्भी = सुश्रवा (१. ९५, १७)।

२. वैदर्भी = मर्यादा (१. ९५, १८)।

३. वैदर्भी = दमयन्ती : ३. ५५, १२. २२; ५६, ५. २२; ५७, ११. १३; ५९, ८; ६२, ५. १९; ६४, १०; ६५, ३७; ६७, ९; ६८, ७. २४. २८; ७०, १९; ७१, ५; ७३, ३३; ७४, ७. २१. २२; ७६, ५. ४७. ५०; ७७, १; ७८, २१; ७९, ३।

४. वैदर्भी = लोपामुद्रा : ३. ८५, ३०; ५. ११७, १२।

५. वैदर्भी, सगर की पत्नी का नाम है : ३. १०६, ९. १९ (इसने अपने गर्भ से एक तुम्बी उत्पन्न की जिससे ६०,००० पुत्र उत्पन्न हुये)।

वैदिक : १. १२६, २८; १२. ११, १३; ६९, ८२. ९४; ७६, १०; ७७, २; ७९, ९. १३; २६८, १५; २७०, २५; ३०१, १३; ३३७, ४; ३५१, १९; १३. ११३, १; १४. १३, १०; ३६, २८; ५४, ६।

वैदूर्यपर्वत, दक्षिण के एक पर्वत का नाम है : ३. ८८, १८; १२१, १६. १९ (नर्मदा के निकट स्थित जहाँ युधिष्ठिर पधारे थे)।

वैदूर्यशिखर पश्चिम में स्थित : ३. ८९, ६। देखिये पिछला शब्द भी।

१. वैदेह, युधिष्ठिर के समकालीन एक विदेहराज का नाम है (२. ४, २७)।

२. वैदेह = जनक : १२. २८, ३; १०५, ७; १०६, ९. २७; २९६, १६; २९७, १७; ३०७, १७; ३१९, ४. ६।

३. वैदेह = निमि (१२. २३४, २६)।

४. वैदेह (बहु० °हाः) विदेह देश के निवासियों का द्योतक है : २. ३०, १५ (दिग्विजय के समय भीमसेन ने इन्हें पराजित किया था); ६. ९, ५७; ८. ७९, ४६ (युद्ध में अर्जुन ने इन्हें पराजित किया)।

५. वैदेह एक वर्णसंकर जाति का नाम है : १३. ४८, २०. २७।

१. वैदेहक, एक वर्णसंकर जाति का नाम है : १२. २९६, ८; १३. ४८, १०. २२. २५।

२. वैदेहक (वि०) : २. ३०, १३ (वैदेहकं राजानं जनकं जगतीपतिम्)।

१. वैदेही = मर्यादा : १. ९५, २३।

२. वैदेही शतानीक की पत्नी का नाम है (१. ९५, ८६)।

३. वैदेही = सीता : ३. १४८, ८ (देवीं…राघवप्रियाम्); २७७, २९ (जनकात्मजा); २९८, १७. २३. ३४; २७९, ८. १३. १४. १६. १७. २६. ३३; २८०, ५. १४. ५४. ७२; २८१, १७. १९. ३१; २८२, २४. ३६. ५७. ६९; २८९, २६; २९१, १०. २१. ५८. ६५; २९२, ११; ४. २१, १२; ५. ११७, १७; ७. ५९, ५।

१. वैद्य : १. १५८, १; २. १६, ८; ३. १५९, ७; ५. २८, ६; ३९, ४६; ९६, ९; १३२, २७; १२. १७, २२; ७५, ३२; ७७, २३; ८५, ७; २४३, १५; २६२, २०; १३. २२, ९. ३५; १२०, २७।

२. वैद्य (बहुधा बहु०) चिकित्सकों का द्योतक है : ३. २, २४; २०९, १५; ५. ६, २; १५१, ५८; १५२, १२; ६. १२०, ५५. ५७. ६०; १०. ३, ९; १२. २८, २२. ४५; ६९, ५९; ३३१, ३१।

३. वैद्य, एक जाति का नाम है (१३. ४९, ९)।

४. वैन्य – देखिये रैभ्य।

५. वैद्य = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. वैनतेय = गरुड : १. २५, ६; ३२, १४; ३३, ९. १०; ३६, १०. २५; ६६, ३९; २१०, १७; २. १९, ८ (पततो वैनतेयस्य गतिमन्वे यथा खगाः); ३. १२, ९० (यथा पक्षी गरुत्मान्पततां वरः); १५५, १९; २८२, ४७; ५. १०१, २ (इनके छः पुत्रों का उल्लेख); १०३, २४; १०४, १६. २६; १०५, ३२; ११३, १९; ११५, ९; ११९. १. २; ६. ३, ८४; ३४, ३०; ९३, ५; ७. ११, २२; १४, ७९; ३२, ६३; ७९, ३७; १९१, ३५; ८. ३९, २३; १०. १३, ५ (श्रीकृष्ण की ध्वजा पर); १२. ३३२, ११; १३. १४, २७७ (विष्णु का वाहन). ३२२।

२. वैनतेय, गरुडपुत्र, एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, १०)।

३. वैनतेय, विनता के वंशजों का द्योतक है : १. ६५, ४० (यहाँ प्रमुख वैनतेयों का उल्लेख है); १२३, ५० (अर्जुन के जन्म के समय उपस्थित). ७३ (इनकी गणना कराई गई है); ६. ३, ५ (शकुन): ८. ८७, ४१ (अर्जुन का पक्ष लिया); १३. १६५, १८।

वैन्य = वेनपुत्र पृथु : १. २, १९१ (पृथोर्वैन्यस्य…आख्यानम्); २. ८, २०; ५३, २२; ३. ३, ११; १८५, १. ५. ८. ११. १२. २०; ६. ९, ६; ७. ६९, ३. ४. १३. २८; १२. २९, १३७. १३९. १४०; ५९, १०१. ११०. १११. ११३. ११५. १२१; २६६, ८६; १३. १५०, ४७; १६५, ५५।

वैन्योपाख्यान से वैन्य की उत्पत्ति की कथा का तात्पर्य है (१. २, ६२)।

१. वैमानिक एक तीर्थ का नाम है जहाँ स्नान करने से मनुष्य अप्सराओं के दिव्यलोक में जाता है और इच्छानुसार विचरण की शक्ति प्राप्त कर लेता है (१३. २, २३)।

२. वैमानिक (वि०) : ३. ३, ४१ (वैमानिका गणाः)।

वैमित्रा शिशु की सप्तमातृकाओं में से एक का नाम है (३. २२८, १०)।

वैयमक, एक जाति का नाम है (२. ५२, १३१ ?)।

१. वैयाघ्रपद्य = उपमन्यु (१३. १४, ४५)।

२. वैयाघ्रपद्य = कङ्क : ४. ७, १२ (अज्ञातवास के समय विराटनगर में युधिष्ठिर द्वारा धारण किया गया नाम); ३४, १२।

वैयासकि = शुक : १२. २३१, ८; ३२१, १; ३२६, ९; ३३२, ४।

१. वैराज (बहु० °जाः) पितरों के एक वर्ग का नाम है : २. ११, ४६ (ब्रह्मा की सभा में)।

२. वराज (वि०) : १२. ३५०, १०. १८ (वैराजसदने)।

१. वैराट, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है जिसका भीमसेन ने वध किया (६. ९६, २६ ।

२. वैराट (वि०) महाभारत के विराटपर्व का द्योतक है : १. २, ५८. २०६. २१५ (श्लोकानां द्वेसहस्रे तु श्लोकाः पञ्चाशदेव तु)।

१. वैराटि = शङ्ख : ४. ३३, ३२। = श्वेत : ६. ४७, ४३; ४८, ४९. ५५. ८८. ८९।

२. वैराटि = उत्तर : ४. ३८, १. ९. ५०; ४०, १; ४१, ६; ४३, ९. १२; ४४, ८. २३; ४५, ९; ४६, १९; ५३, १४. १५; ५४, ३; ५५, ३९. ६०; ५७, १. ३. ७; ५८, १०; ६१, १६. ३२. ३३. ३८; ६७, २३; ७१, ११. १८; ५. ५७, ३२; १७०, १; ६. ४५, ७७; ४७, ३५।

वैराटी = उत्तरा : १. १, २१५; २, ५८; ७. ७८, ३६; १४. ६१, २९. ३९. ४०; ६६, २३; ६८, ९; ६९, ४; १५. २१, १६।

वैराम, एक जाति का नाम है (२. ५१, १२)।

वैरोचन (विरोचन पुत्र) = बलि : १. १३८, ४६; २. ९, १२; ३. २८, १; ७. २१, ४; १७४, २९; ८. ८७, ५; ८९, ५; १२. ९०, २३; २२३, २; २२४, ३०; २२५, ७; २२७, २०; १३. ९८, ११।

वैरोचनि = बलि : ३. २६, १३; १६८, ७७; १७१, १९; ५. १३०, ५; ७. ९४, ७५; १३६, ३४; १२. २२७, ११; १३. ६, ३५।

१. वैवस्वत = मनु : १. ७५, १; ३. १८७, १. १०. ११. ५५; ६. ९, ५; १३. १७, १७७।

२. वैवस्वत = यम : १. ४१, १९; ७४, ३१; ७५, ११; १९७, १. ७. ८; २. ६, १७; ८, १. ८. २८; १२, १; ७७, ४४; ३. ४१, १०; ९५, ११; ९६, ९; १०८, १७; ११८, ११; १६८, ५; २९७, ४१. ५५; ५. १६, २७. ३४; ३५, ७१; ५५, ३६; ५८, १४. १९; १६७, २८; ६. ७७, ७०; ७. २६, ५३; ४५, १८; ५१, ७; ६९, २६; ७२, ४५; ११९, २६; १५०, १८; १५९, ४१; १८३, ११; १८७, २४; १९८, ३८; २०२, ७७; ८. ९, १०. ३३. ३४. ४०. ४३; ६, ५. १२. २२. ३१. ३५. ३७; १०, १७; १७, ५; ४२, ३६; ९२, १३; ९. ३२, ५०; ११. २५, १६; १२. ७, १२. १८; १२२, २७; १५१, ३; १५६, ४; १९९, २९; २९९, २७; ३२८, ४९; १३. १७, १७७; २५, ५३; ७१, १६. २७. ३६. ५७; १०१, १३; १०२, १४; १६०, २९।

३. वैवस्वत (वि०) : ६. १२१, ४२ (सावितुर्वैवस्वतम); ९. ११, ५२; १२. २८४, १ (अन्तरे); ३३६, ५६ (अन्तरे); १३. ७१, १५; १०२, १६ (संयमनी); १५. ३३, १५ (लोकं)।

वैवस्वतस्य तीर्थम् , एक तीर्थ का नाम है (१३. २५, ३९)।

१. वैवस्वती (विवस्वत की पुत्री) = तपती (१. ९५, ३८; १७३, ४९)।

२. वैवस्वती = श्रद्धा : १२, २६४, ८ (श्रद्धा…सूर्यस्य दुहिता)।

वैवस्तोपाख्यान (मनुवैवस्वत की कथा) – "युधिष्ठिर के पूछने पर मार्कण्डेयजी ने बताया : विवस्वान (सूर्य) के एक अत्यन्त प्रतापी पुत्र हुआ जो प्रजापति के समाम कान्तिमान और महान् ऋषि था। वह बालक मनु ओज, तेज, कान्ति और विशेषतः तपस्या द्वारा अपने पिता सूर्य और पितामह कश्यप से भी आगे था। उसने बदरिकाश्रम में आकर दोनों बाहें ऊपर कर एक पाँव पर खड़े हो दस सहस्र वर्ष तक उग्र तपस्या की। उस समय उसका सर नीचे की ओर झुका हुआ था और वह एक टक नेत्रों से निरन्तर देखता रहता था। वही बालक वैवस्वत मनु के नाम से विख्यात हुआ। एक दिन मनु चीरिणी नदी के तट पर तपस्या कर रहे थे। उस समय एक मत्स्य ने आकर उनसे कहा - 'मैं एक छोटा मत्स्य हूँ। मुझे बलवान् मत्स्यों से भय बना रहता है। अतः आप मेरी रक्षा कीजिये। आपके इस उपकार के बदले मैं भी आपका प्रत्युपकार करूँगा।' उसकी बात सुन कर दयावश मनु ने उसे हाथ में उठा लिया और लाकर एक मटके में डाल दिया। वहाँ रहते हुये वह मत्स्य जब बड़ा हो गया तब उसने मनु से किसी अन्य उपयुक्त स्थान की व्यवस्था करने के लिये कहा। मनु ने उसे एक बड़ी बावली में डाल दिया। जबवह इतना बड़ा हो गया कि बावली में भी रहना कठिन हो गया तब उसने मनु से कहा कि वे उसे गङ्गा में डाल दें। मनु ने वैसा ही किया। कुछ काल के पश्चात वह मत्स्य इतना बढ़ गया कि गङ्गा में रहना भी कठिन हो गया। उसने मनु से निवेदन किया कि वे उसे समुद्र में छोड़ दें। तदनुसार जब मनु ने उसे सागर में डाल

दिया तब उस मत्स्य ने मुस्कराते हुये मनु से कहा : 'आपने मनोयोग से मेरी रक्षा की है। अब आप के लिये जिस कार्य का अवसर प्राप्त हुआ है वह बताता हूँ। यह सम्पूर्ण चराचर जगत अब शीघ्र ही नष्ट होने वाला है। शीघ्र ही सब लोकों के सम्प्रक्षालन का समय आने वाला है। सम्पूर्ण स्थावर-जङ्गम प्राणियों के लिये अत्यन्त भयंकर समय आ गया है। आप एक सुदृढ़ नाव बनवा कर उसमें एक मजबूत रस्सी लगायें। फिर आप सप्तर्षियों के साथ उस नाव पर बैठ जाँय। पूर्वकाल में ब्राह्मणों ने जो सब प्रकार के बीज बताये हैं उनका अलग-अलग संग्रह कर के उन्हें भी सुरक्षित रूप से नौका में रख लें। तदनन्तर उस नौका में बैठ कर मेरी प्रतीक्षा कीजिये। मैं अपने मस्तक पर एक सींग धारण कर आऊँगा। आप उसी से मुझे पहचान लीजियेगा। उस जलराशि को आप लोग मेरी सहायता के बिना पार नहीं कर सकेंगे।' इसप्रकार कह कर वह मत्स्य चला गया। तदनन्तर मनु एक नौका पर सब बीजों को रख कर उस एकर्णव के जल पर तैरने लगे। उन्होंने शीघ्र ही मत्स्य का चिन्तन किया। तब मत्स्य रूपधारी भगवान एक शृङ्ग धारण किये वहाँ आ पहुँचे। मनु ने उस मत्स्य के शृङ्ग में अपने नाव की रस्सी बाँध दी। तब वह मत्स्य उस नौका को खींचता हुआ अनेक वर्षों के बाद हिमालय के सर्वोच्च शिखर पर लाया। उस नौका पर केवल सप्तर्षि और मनु थे। इस प्रकार सप्तर्षियों, आठवें मनु और नवें मत्स्य को छोड़ कर उस प्रलय समुद्र में अन्य कोई प्राणी जीवित नहीं बचा। हिमालय के शृङ्ग पर पहुँचते ही मनु ने अपनी नौका उसी में बाँध दी। तभी से हिमालय का यह शृङ्ग 'नौबन्धन' के नाम से विख्यात हुआ। इस प्रकार सुरक्षित स्थान पर पहुँचा देने के पश्चात मत्स्य भगवान ने मनु आदि ऋषियों से कहा : 'मैं प्रजापति ब्रह्मा हूँ। मैंने मत्स्य रूप धारण कर तुम लोगों की रक्षा की है। अब मनु को चाहिये कि वे देवता, असुर, और मनुष्य आदि समस्त प्रजा की, सब लोकों की और सम्पूर्ण चराचर की सृष्टि करें। तीव्र तपस्या द्वारा इन्हें प्रजासृष्टि करने की प्रतिभा प्राप्त हो जायगी। मेरी कृपा से प्रजा की सृष्टि करते समय इन्हें मोह नहीं होगा।' इस प्रकार कह कर मत्स्य भगवान क्षण भर में अदृश्य हो गये। तदनन्तर वैवस्वत मनु को प्रजासृष्टि करने की इच्छा हुई किन्तु उनकी बुद्धि मोहाछन्न हो गई। तब उन्होंने महान तपस्या करने के बाद तपोबल से सम्पन्न होकर सृष्टि का कार्य आरम्भ किया। (३. १८७)।"

वैवाहिक (वि०) : १. २, ४४।

१. वैवाहिकपर्वन् से पाण्डवों से द्रौपदी के विवाह से सम्बद्ध पर्व का तात्पर्य है। यह महाभारत का १३वाँ अवान्तर पर्व है जो आदिपर्व के अन्तर्गत आता है : "दूत ने पाण्डवों को राजमहल में पधारने के लिये आमन्त्रित किया। तब वे सभी पाण्डव पुरोहित को विदा कर विशाल रथों पर आरूढ़ हो राजभवन की ओर चले। उस समय कुन्ती और कृष्णा एक साथ एक ही रथ पर बैठी थीं धर्मराज युधिष्ठिर ने जो बातें कहीं थीं उन्हें सुनकर पाण्डवों की परीक्षा के लिये राजा द्रुपद ने अनेक प्रकार की वस्तुओं का संग्रह किया था। विविध प्रकार के फल, पुष्प, आसन, आयुध, अश्व, गज आदि सब द्रुपद ने संग्रह करके रक्खा था। कृष्णा को लेकर कुन्ती देवी द्रुपद के रनिवास में गईं जहाँ उनका अत्यधिक आदर-सत्कार किया गया। पाण्डवों की चाल-ढाल सिंह के समान पराक्रमसूचक थी। उनकी आँखें बड़ी-बड़ी थीं (पाण्डवों के शारीरिक सौदर्न्य का वर्णन)। महल में लगे आसनों पर सभी पाण्डव बड़े-छोटे क्रम से बैठे। विविध प्रकार के सुस्वादु भोजनों से उनका सत्कार किया गया। तदनन्तर वे सभी उस स्थान पर गये जहाँ युद्ध की सामग्रियाँ रक्खी गई थीं। यह सब देखकर राजा द्रुपद, उनके राजकुमार और प्रधान मन्त्री आदि अत्यन्त प्रसन्न हुये और उन सबको विश्वास हो गया कि वे सभी कुन्ती के पुत्र पाण्डवगण ही हैं (१. १९३)।

"कुन्ती, द्रौपदी और पाण्डवों को राजा द्रुपद के महल में ले जाया गया। वहाँ आदर-सत्कार के पश्चात द्रुपद ने युधिष्ठिर को अपने पास बुला कर पूछा : 'हमें कैसे ज्ञात हो कि आप लोग किस वर्ण के हैं। हम आप को क्षत्रिय, ब्राह्मण, वैश्य अथवा शूद्र में से क्या समझें। आप सच बतायें क्योंकि आप सबके सम्बन्ध में हमें अत्यधिक सन्देह हो रहा है। आपका उत्तर सुनने के बाद मैं विधिपूर्वक विवाह की तैयारी करूँगा।' तब युधिष्ठिर ने अपने को क्षत्रिय बताते हुये अपने सभी भाइयों का परिचय दिया। युधिष्ठिर की बात सुनकर राजा द्रुपद हर्षगद्गद हो गये। उन्होंने युधिष्ठिर से यह जानना चाहा कि वे लोग वारणावत नगर के लाक्षागृह से किस प्रकार निकले। युधिष्ठिर ने उन्हें सब बातें बता दीं। युधिष्ठिर ने यह भी कहा कि द्रौपदी का विवाह सभी भाइयों से होगा। द्रुपद ने शास्त्रों का आश्रय लेकर इस प्रकार अपनी पुत्री का पाँच व्यक्तियों के साथ विवाह करने को अनुचित बताया। युधिष्ठिर ने उन्हें समझाया जिस पर द्रुपद ने कहा : 'आप, कुन्ती-देवी, और मेरा पुत्र धृष्टद्युम्न—ये सब लोग मिलकर जो निश्चय करेंगे उसी के अनुसार मैं कार्य करूँगा।' तदनन्तर वे सब लोग वहाँ परस्पर विचार-विमर्श करने लगे। इतने में भगवान् वेदव्यास वहाँ अकस्मात आ पहुँचे (१. १९४)।

"पाण्डवों तथा द्रुपद ने व्यास जी का स्वागत किया। तदन्तर द्रुपद ने व्यास जी से द्रौपदी का विवाह पाँचों पाण्डवों से करने के औचित्य के सम्बन्ध में प्रश्न किया। तब व्यासजी ने वहाँ उपस्थित लोगों से अपना-अपना मत बताने के लिये कहा। द्रुपद ने इसे अधर्म कहा। धृष्टद्युम्न ने भी पाँच पतियों की एक ही पत्नी होने को अनुचित बताया। युधिष्ठिर ने इसे नहीं माना। उन्होंने पुराणों में वर्णित जटिला नामक गौतम गोत्रीय स्त्री का उदाहरण दिया जो सात ऋषियों की पत्नी थी। इसी प्रकार कण्डुपुत्री वार्क्षी का भी दस प्रचेताओं के साथ, जो भाई थे, विवाह हुआ था। अतः इस प्रकार के विवाह को युधिष्ठिर ने धर्मसम्मत बताया। कुन्तीदेवी ने युधिष्ठिर की बात का समर्थन किया। व्यासजी ने इस विवाह को धर्मसम्मत बताते हुये द्रुपद से एकान्त में बात करने का प्रस्ताव किया। तदनन्तर व्यासजी द्रुपद के साथ राजभवन के भीतर चले गये और पाण्डव, कुन्तीदेवी तथा द्रुपदकुमार धृष्टद्युम्न बाहर प्रतीक्षा करने लगे। व्यासजी ने पाञ्चाल-नरेश को तब वह कथा सुनाई जिसके अनुसार बहुत से पुरुषों का एक ही पत्नी से विवाह करना धर्मसम्मत माना गया है (१. १९५)।

"व्यासजी ने द्रुपद को पाण्डवों और द्रौपदी के पूर्वजन्म की कथा सुनाते हुये कहा : पूर्वकाल में देवताओं ने नैमिषारण्य में यज्ञ किया जिसमें सूर्यपुत्र यम शामित्र-कार्य करते थे। उस यज्ञ की दीक्षा लेने के कारण यम ने मानवप्रजा की मृत्यु का काम बन्द कर दिया था जिससे प्रजा अमर होकर दिन प्रतिदिन बढ़ने लगी। तब देवताओं ने मनुष्यों के अमर हो जाने के कारण भयभीत होकर ब्रह्मा जी की शरण ग्रहण किया। ब्रह्मा ने देवताओं को बताया कि यज्ञकार्य से मुक्त होने पर यमराज पुनः मनुष्यों की मृत्यु का कार्य करने लगेंगे। इस प्रकार आश्वस्त होकर देवगण गङ्गा में स्नान करने गये। तब गङ्गा में एक स्वर्ण कमल को देखकर देवता चकित हुये। इन्द्र उस कमल का पता लगाने की दृष्टि से गङ्गा के मूलस्रोत पर गये। वहाँ उन्होंने एक युवती को देखा जो गङ्गा की धारा में खड़ी हो कर रो रही थी। उसके जो अश्रुबिन्दु गङ्गा की धारा में गिरते थे वे ही सुवर्णमयकमल बन जाते थे। इन्द्र द्वारा परिचय पूछने पर वह महिला इन्द्र को हिमालय के एक शृङ्ग पर ले गई जहाँ एक पुरुष और एक युवती बैठी थी। वे दोनों अपनी क्रीड़ा में तन्मय थे, अतः उन्होंने इन्द्र की ओर ध्यान नहीं दिया। तब इन्द्र ने अपना परिचय देते हुये उन पुरुष का ध्यान आकर्षित करना चाहा किन्तु उनकी दृष्टि पड़ते ही इन्द्र का सारा शरीर स्तम्भित हो उठा। वे पुरुष स्वयं भगवान रुद्र थे और पार्वती देवी के साथ क्रीड़ा कर रहे थे। इन्द्र का दर्प चूर्ण करने के बाद रुद्र ने इन्द्र को पास की एक गुफा में प्रवेश करने के लिये कहा। उसमें जाकर इन्द्र ने वहाँ चार अपने से पूर्ववर्ती इन्द्रों को भी देखा। इन्द्र ने भगवान रुद्र की स्तुति की किन्तु रुद्रदेव ने वर्तमान तथा चार पूर्ववर्ती इन्द्रों से कहा : 'तुम पाँचों इन्द्र मनुष्य योनि में प्रवेश करके बहुतों को मौत के घाट उतार कर अपने शुभ कर्मों द्वारा पुनः

इन्द्रलोक में आ जाओगे।' व्यासजी ने बताया कि पाँचों पाण्डव उन्हीं पाँचों इन्द्र के अवतार हैं। भगवान रुद्र की ही आज्ञा से उस युवती ने, जिसने इन्द्र को रुद्रदेव तक पहुँचाया था, और जो साक्षात लक्ष्मी थीं, भूतल पर द्रौपदी के रूपमें जन्म लिया है। भगवान रुद्र ने उसे पाचों इन्द्ररूपी पाण्डवों की पत्नी बनने की आज्ञा दी थी। इस कथा को बताने के बाद व्यासजी ने अपनी तपस्या के प्रभाव से द्रुपद को दिव्यदृष्टि प्रदान की जिससे उन्होंने समस्त पाण्डवों को पूर्व शरीरों से सम्पन्न वास्तविक रूप में देखा (इन्द्रों के रूप में पाण्डवों की शोभा का वर्णन)। द्रुपद ने अपनी पुत्री को भी दिव्य नारी के रूप में देखा। यह महान आश्चर्य देखकर उन्होंने व्यासजी के चरण पकड़ लिये। तदनन्तर व्यासजी ने द्रौपदी के एक और जन्म की कथा सुनाया। व्यासजी ने बताया कि उस जन्म में एक रूपवती कन्या होने पर भी पति न प्राप्त होने के कारण उसने तपस्या करके शिव को प्रसन्न किया और जब उनसे पाँच बार 'पति दीजिये' वाक्य को दोहराया' तब शिव ने उसे यह वरदान दिया कि दूसरे शरीर में प्रवेश करने पर उसे पति मिलेगा और यतः उसने पाँच बार पति प्राप्त करने का वाक्य दोहराया है अतः उसे पाँच पति प्राप्त होंगे। व्यासजी से यह सब वृत्तान्त सुनकर द्रुपद अपनी पुत्री द्रौपदी का पाँचों पाण्डवों के साथ विवाह करने के लिये सहमत हो गये। (१. १९६)।

द्रुपद की सहमति मिलने पर व्यासजी ने शुभ अवसर देखकर उसी दिन पाण्डवों को द्रौपदी से विवाह करने का निर्देश दिया। द्रौपदी ने भी इसे विधि का विधान मानकर अपनी सहमति दे दी। तब पुरोहित धौम्य ने पाण्डवों के विवाहकर्म को सम्पन्न कराया। द्रुपद ने भी अपनी ओर से पाण्डवों को पर्याप्त धन-रत्न आदि प्रदान किये (१. १९७)।

"पाण्डवों से सम्बन्ध हो जाने पर राजा द्रुपद को देवताओं से भी भय नहीं रहा। कुन्तीदेवी ने द्रौपदी को उपदेश और आशीर्वाद दिया तथा भगवान श्रीकृष्ण ने भी पाण्डवों को इस अवसर पर विविध उपहार भेजे। (१. १९८)।"

२. **वैवाहिकपर्वन्** में अभिमन्यु और उत्तरा के विवाह का वर्णन है। यह महाभारत का ५६ वाँ अवान्तर पर्व है जो विराट पर्व के अन्तर्गत आता है। "नियत समय तक अपनी अज्ञातवास सम्बन्धी प्रतिज्ञा पूर्ण करने के तीसरे दिन स्नान करके श्वेत वस्त्र धारण करके और रुचोचित आभूषणों से विभूषित हो पाण्डवगण विराट की सभा में राजाओं के लिये नियत आसन पर विराजमान हुये। तब महाराज विराट ने कुपित हो कर कङ्क (युधिष्ठिर) से पूछा कि वे राजसिंहासन पर कैसे बैठ गये। विराट की बात सुन कर अर्जुन ने कहा कि युधिष्ठिर तो इन्द्र के आधे सिंहासन पर बैठने के अधिकारी हैं। तदन्तर अर्जुन ने युधिष्ठिर के गुणों की विस्तार से चर्चा करते हुये कहा कि उनके गुणों की गणना सम्भव नहीं हैं। अतः वे राजोचित आसन के अधिकारी क्यों नहीं हैं? (४. ७०)।

"महाराज विराट ने तब युधिष्ठिर का परिचय प्राप्त कर लेने पर अन्य पाण्डवों को पहचानना चाहा। तब अर्जुन ने क्रम से भीमसेन, नकुल, सहदेव तथा द्रौपदी का परिचय दिया और सब के गुण-पराक्रमों का भी उल्लेख किया। तदनन्तर विराटकुमार उत्तर ने अर्जुन का पराक्रम बताते हुये अन्य पाण्डवों के गुणों की चर्चा की। उत्तर ने गोहरण के समय कौरवों के विरुद्ध अर्जुन द्वारा प्रकट किये गये पराक्रम की विशेष रूप से चर्चा की। उत्तर ने बताया कि अर्जुन ने कौरव पक्ष के सभी महारथियों को परजित किया था तथा एक बाण से ही विकर्ण के विशाल गजराज को धराशायी कर दिया। अर्जुन ने ही कौरवों को परास्त कर गायों को पुनः वापस लिया था। अर्जुन के शंख की गम्भीर ध्वनि सुन कर उत्तर के कान बहरे हो गये थे। उत्तर की बातों को सुन कर मत्स्य नरेश विराट ने अपने पुत्र से कहा कि पाण्डवों को प्रसन्न करने के लिये राजकुमारी उत्तरा का विवाह अर्जुन से कर देना चाहिये। अनजान में युधिष्ठिर के प्रति कहे अपने अनुचित वचनों के लिये भी विराट ने क्षमा माँगा। तदनन्तर अपने पुत्र से परामर्श कर विराट ने दण्ड, कोश और नगर आदि सहित अपना सम्पूर्ण राज्य युधिष्ठिर को समर्पित कर दिया। उन्होंने अन्य पाण्डवों को भी हृदय से लगाया। युधिष्ठिर के संकेत पर अर्जुन ने विराटपुत्री उत्तरा को अपनी पुत्रवधू के रूप में ही स्वीकार करने का प्रस्ताव करते हुये कहा कि मत्स्य और भरत वंश का यह परिचय सर्वथा उचित है (४. ७१)।

"विराट ने यह जानना चाहा कि स्वयं अर्जुन उनकी कन्या को पत्नी के रूप में क्यों नहीं स्वीकार कर रहे हैं। तब अर्जुन ने कहा: "मैं बहुत समय तक आपके रनिवास में रहा हूँ और उत्तरा को एकान्त में तथा सबके सामने भी पुत्री भाव से ही देखता रहा हूँ। उसने भी मुझ पर पिता के समान ही विश्वास किया है। अब यदि मैं उससे विवाह करूँ तो आपको अथवा अन्य लोगों को भी मेरे चरित्र के विषय में अवश्य सन्देह होगा। उसे पुत्रवधू के रूप में ग्रहण करने पर मैं शुद्ध चरित्र तथा जितेन्द्रिय समझा जाऊँगा। साथ ही इससे आपकी कन्या के चरित्र की शुद्धि भी स्पष्ट हो जायगी।' इस प्रकार कह कर अर्जुन ने अपने पुत्र अभिमन्यु के गुणों का उल्लेख किया। विराट ने अर्जुन के विचारों की उत्कृष्टता को स्वीकार करते हुये कहा कि जिसके सम्बन्धी अर्जुन हो रहे हों उसकी कौन सी कामना अपूर्ण रह सकती है। युधिष्ठिर ने भी अर्जुन और विराट की बातों का अनुमोदन किया। तदनन्तर पाण्डवों और विराट ने अपने-अपने सम्बन्धियों को यथाविधि निमन्त्रण भेजा। भगवान वासुदेव को भी निमन्त्रण भेजा गया। तेरहवाँ वर्ष पूरा हो जाने के कारण पाण्डवगण विराट के उपप्लव नगर में आकर रहने लगे और वहीं भगवान श्रीकृष्ण तथा दशार्हवंश के अपने अन्य सम्बन्धियों को भी बुला लिया। काशिराज और शैब्य एक-एक अक्षौहिणी सेना के साथ उपप्लव नगर में आये। महाराज द्रुपद भी एक अक्षौहिणी सेना के साथ पधारे। विराट ने सब अतिथियों का विधिवत स्वागत-सत्कार किया। श्रीकृष्ण, बलराम, सात्यकि, कृतवर्मा, अनाधृति, आदि सभी वीर पुरुष अभिमन्यु और उनकी माता सुभद्रा के साथ वहाँ आये। श्रीकृष्ण अपने साथ दस हजार हाथी, इससे दूने घोड़े, दस हजार रथ, और दस लाख पैदल सेना लाये। विराट ने सभी के लिये सुस्वादु भोजन और सुन्दर निवास की व्यवस्था की थी। विराट के रनिवास की स्त्रियाँ रानी सुदेष्णा को आगे कर द्रौपदी के पास आईं। उत्तरा को सुन्दर आभूषणों से सुसज्जित कर वहाँ लाया गया। तदनन्तर अर्जुन ने उसे अपनी पुत्रवधू के रूप में ग्रहण किया। युधिष्ठिर ने भी उत्तरा को आशीर्वाद दिया। इस प्रकार पार्थ ने उत्तरा को ग्रहण करके भगवान श्रीकृष्ण के सामने अभिमन्यु के साथ उसका विवाह सम्पन्न कराया। विवाह के बाद विराट ने वरपक्ष को प्रचुर उपहार दिये। इतना ही नहीं उन्होंने अपना राज्य, कोश एवं अपने को भी पाण्डवों की सेवा में समर्पित कर दिया। युधिष्ठिर ने भी ब्राह्मणों को पर्याप्त धन दिया। (४. ७२)।"

वैशम्पायन, एक ऋषि का नाम है जो व्यास के शिष्य थे। इन्होंने ही सर्पसत्र के समय महाराज जनमेजय को महाभारत की कथा सुनाया था: १. १, ११. २०. ९८. १०८ (मानुषे लोके वैशम्पायन उक्तवान्); ५, ४ (द्विजश्रेष्ठः); ६०, २१ (व्यासजी ने अपने शिष्य वैशम्पायन को महाभारत सुनाने की आज्ञा दी); ६१, १ (अपने गुरु तथा अन्य विशिष्ट जनों को नमस्कार करने के बाद इन्होंने महाभारत कथा का वर्णन आरम्भ करने का उपक्रम किया); ६२, १२; ६३, १. ९० (व्यास के शिष्य); ६४, ३. ४७; ६५, १. ९; ६७, ३. ९३; ६८, ३; ६९, ३; ७०, १; ७१, १. १०; ७३, १८. २२. ३४; ७४, १. १०९. ११८; ७५, १. ५७; ७६, ३. २२. ४९. ६१. ६५; ७७, १. २१; ७८, १. १२. २२. २६. ४१; ८०, १. १३. १८. २१. २५. २७; ८१, १. २८. ३६; ८२, १. २४; ८३, १. ८. १४. १६. २३. ३७; ८४, १. १६. ३०; ८५, १. ३८. ३२; ८६, १. १०; ८७, १; ८८, ६; ८९, १३; ९३, १६. २०. २८; ९४, ४; ९५, ६; ९६, १. ८; ९७, १. १६. २४; ९८, १; ९९, ४; १००, १. ४०. ५७. ७२. ८५. ९७. १००; १०१, १; १०२, १. १०; १०३, १. १२; १०५, ३. २०. २३. ४८; १०६, १; १०७, २; १०८, १. १८; १०९. १; ११०, ९; १११, १. १५; ११२, १; ११३, १; ११४, १; ११५, १. ७. २०; ११६, ६; ११७, २; ११८, ५. ३४; ११९, १. २३. ३८; १२०, १. ८. २६; १२१,

१; १२२, १. ३२. ४४; १२३, १. ३५; १२४, १. ९. १५; १२५, १. ३१; १२६, १. ५. ३४; १२७, ५; १२८, १. १४; १२९, १. १९; १३०, २. २४. ३३; १३१, १. १२. २९. ३१. ३५. ३६. ७६; १३२, १. ७. २८. ४६. ५०. ५६. ७१; १३३, १; १३४, १; १३५, १. ५. १८; १३६ १. १७; २१. ३४. ३७; १३७ १; १३८, १. १२. ३५. ६२. ७२; १३९, १; १४०, १. ४. ९३; १४१, १. १९; १४२, १; १४३, १. ११; १४४, १; १४५, १. ३४; १४६, १; १४७, १; १४८, १. १७; १४९, १; १५०, १; १५१, १; १५२, १; १५३, १. २२. ३८; १५४, १. १३. २४. ३०; १५५, ४. १९. २१. ४४; १५६, १. ११. १७; १५७, २. १७; १५८, ३८; १५९, १. १९; १६२, १; १६३, ४; १६४, १; १६५, २. १२; १६८, १. १०; १६९, १; १७०, १. २५. ३१; १७१, ३; १७४, १; १८३, ३; १८४, १; १८५, १. १२; १८७, १; १८८, १; १८९, १; १९०, १. २२. ३८; १९१, १. ६. ११. १७; १९२, १; १९३, १; १९४, ३; १९५, १. १३. २१. ३३; १९६, १. २१; १९७, ३८; १९८, ५; १९९, १. १३; २००, १. २६; २०२, २२; २०६, ७; २०७, ६. १०. २६; २०८, ५; २१२, २८; २१३, १. २१. ३५; २१४, १. ३३; २१५ १; २१६, १. ८; २१७, ७. २१; २१८, १; २१९, १; २२०, १; २२१, १; २२२, १. १७; २२३, १. १५; २२४, १; २२५, १; २२६, १. १७; २२७, १; २२८, १. ४६; २२९, ४. १५; २३०, १. १२; २३१, १६; २३२, ६. २०. २५; २३३, १. १७. ३२; २३४, ४; २. १, २. १४; २, १. ३१; ३, १; ४, १; ५, १. १३; ६, १. ५. ९; १३, १. १९. ३१; १६, ६; १९, १०; २०, ८. २१; २१, १२; २२, ३१; २३, १; २४, १; २५, १. ५; २६, २; २७, १; २८, १; २९, १; ३०, १; ३१, १. २७. ५०; ३२, १; ३३, १. २३. ४२; ३४, १; ३५, १; ३६, १. २७; ३८, १; ३९, १. १०; ४०, १. १५; ४२, ९; ४४, ५. ३३; ४५, १. १६; ४६, १. ९. १८; ४७, १; ४९, १. ४१. ४७; ५०, ५; ५६, १७; ५७, १; ५८, १. १७; ५९, १; ६०, १. ९; ६१, ३. ७. ११. १४. १८. २१. २४. २८. ३१; ६२, १; ६५, ५. ७, ९. ११. १४. १६. २२. २६. २९. ३१. ४०; ६७, १. ३. ९. १३. १८. ३५. ४२. ५३; ६८, ११. ४१. ५४. ८९; ६९, ३; ७०, १. ७. १८; ७१, ६. ८. २२; ७२, ४; ७३ १७; ७४, २. २५; ७५, १; ७६, १. ५. १८; ७७, १. १९. २३. ३७. ४६; ७८, ४. २४; ७९, १. ३०; ८०, १. ३२. ३६; ८१, १; ३. १, ९. १९. ३९; २, १. १४; ३, १. ४. १४. ३२. ७०. ७४. ८०; ४, १. २२; ५, १. १०; ६, १. १८. २५; ७, १. १४; १०, ७. १८. २८. ३७; ११, २५. ७५; १२, १. ८. ४४. ४८. १२८. १३६; २२, ४४; २३, १; २४, १. १३; २५, १. १९; २६, १. २१; २७, १; ३३, १; ३४, १; ३६, १. २१. ३८; ३७, १. १६. ३६; ३८, ९. ३५; ३९, १. ७२. ८३; ४०, १९; ४१, १. २६. ३३; ४२, १. १९; ४३, १; ४४, १; ४५, १; ४६, १. ३६. ४८; ४७, १. ३४; ४८, २; ५०, ४; ५१, १; ५२, २. ३६. ५३; ८०, ४; ८१, १; ८६, १; ८७, १; ९१, १; ९२, १८. २५; ९३, १; ९५, १; ९६, १; १०६, ६; ११०, १. २१; ११४, १. १३. ३०; ११५, १; ११७, १६; ११८, १; ११९, ३; १२१, १६; १२६, ४७; १२९, १८; १४०, २१. २४; १४२, ६३; १४३, १; १४४, १. ८. १५. २५; १४५, ३; १४६, १; १४७, १. १५; १४९, १; १५०, २. १०. १७; १५१, १. १२; १५२, १; १५३, १; १५४, १३; १५५, १; १५६, १. १३; १५७, १; १५८, १; १५९, १; १६०, ७; १६१, १. १३. ४७; १६२, २७; १६३, १; १६४, १; १६५, १; १६६, १; १६७, १; १७५, १. २४; १७७, १; १७८, ४; १७९, १. ८; १८०, १; १८१, ४४; १८२, १; १८३, १. ४१. ४७. ५३; १८४, १; १८८, १; १८९, ५८; १९०, १; १९१, २१. २३; १९२, १; १९३, १; १९४, १; १९६, १; १९८, १; १९९, १; २००, १. ४३. ११९; २०१, १. ८; २०५, १; २१७, १; २३२, २; २३३, १; २३५, १; २३६, २; २३७, १. ३३; २३८, १; २३९, १. २२; २४०, १; २४१, १; २४२, १; २४३, २०; २४४, १; २४५, १; २४६, १. १२. २४; २४७, ५. १६; २४९, २२; २५०, १३; २५१, १. १०. १८; २५२, २७; २५३, ३; २५४, १; २५५, १. ४; २५६, १; २५७, १; २५८, २; २५९, १; २६१, ५१; २६२, ५. १७. २८; २६३, १. १७. ३६. ४५; २६४, १; २६६, १; २६७, १. ७. २१; २६८, १. २३. २८; २६९, १. २४; २७०, १. २१; २७१, १. ३९. ४४; २७२, १. ७८; २७३, २; २९९, १६; ३००, ४; ३०२, १८; ३०३, ३; ३०५, १९; ३०६, १. २१; ३०७, १. ६. १३. २६; ३०८, १; ३०९, १; ३१०, १. ७. १३. २०. ३५. ४२; ३११, २; ३१२, ५; ३१३, १. ३७; ३१४, १. १४. १६. २६; ३१५, १. ९; ४. १, ४; ३, १; ४, ६. ५४; ५, १. ८. १७. २८; ६, १; ७, १. १८; ८, १. १३; ९, १. ३६; १०, १. १६; ११, १. ११; १२, १. १२; १३, २; १४, १. ३८; १५, १. ३. ७. १९; १६, ७. ३४. ३६. ३९. ४६; १७, १. ८; २०, २७; २१, ४९; २२, ६. १८. ३८. ४९; २३, १. १५. १७. ३२; २४, १. ११. १७. २६; २५, १; २६, १; २७, १; २८, १; २९, १; ३०, १. १९; ३१, १; ३२, १; ३३, १. १७. २२; ३४, १. ७; ३५, १. २२; ३६, १०. १४; ३७, १. ६. २३. ३२; ३८, १. १६. २८. ३०. ३९. ४५; ३९, १. १७; ४०, १; ४१, ६; ४४, २३; ४५, ५. २५; ४६, १. २१; ४७ १; ५१, १७; ५२, २०; ५३, १. १५; ५४, १; ५५, १; ५६, १; ५७, १. ३; ५८, १. १०; ५९, १; ६०, १७; ६१, १. १६. ३३; ६२, १; ६३, १; ६४, १. २६; ६५, १; ६६, १. २३; ६७, १. ६. १२. १६. २१; ६८, १. ९. १५. १७. २१. २९. ३६. ४६. ५७. ६२. ६६; ६९, १५; ७०, १. ८; ७१, ११. १८. २२. २८; ७२, १२; ५. १, १; २, १५; ५, ११; ६, १८; ७, १. २१. ३१. ३९; ८, १. १९. ३९; १८, २५; १९, १; २०, १; २१, १. १८; २३, १; ३२, १. ७; ३३, १. ७; ४१, ८; ४२, १; ४७, १; ४९, १. १०. ३३; ५०, १०. १४; ५८, २९; ६०, १; ६१, १; ६२, १. १४; ६६, १; ६७, १. ८; ७२, १. ७९; ७५, १; ७६, १; ८१, ८; ८२, १. ३३; ८३, ६. ५४; ८४, १. ४; ८५, १; ८८, ७. १६; ८९, १; ९०, १. ५५. ९०. १०५; ९१, १. १६. २३; ९२, १; ९३, २२; ९४, १; ९५, १. ६३; ९६, १; १०६, ४; १२४, २; १२५, १. १८; १२६, १; १२७, १; १२८, १. २२; १२९, १. ९. १६; १३०, १; १३१, १. ३६; १३२, १; १३७, २५; १३८, १; १३९, १; १४४, १; १४६, १; १४७, १; १५१, १. ११. ३९. ४९; १५२, १; १५३, ८; १५४, १. १६; १५५, १; १५६, १. २६; १५७, ६. ११; १५८, २; १५९, २; १६५, ५; १६९, २७; १९२, ७०; १९४, १; १९५, १; १९६, १; ६. १, २; २, १. ८. १५; ३, ४७. ५०; ४, १; ६, २; १३, १; ४३, १; ७. १, ५. ४८; १०, १; ८. १, १. २१; ४, १; ५, १; ९६, ५४; ९. १, ४. ३९; २, १. ५३; ३५, ५. ४०. ४५; ३६, १. ७; ३७, १. ४१; ३८, ३; ३९, १. ९; ४०, ३; ४१, १; ४२, ३; ४३, १. ४६; ४४, ४; ४५, १; ४६, १; ४७, ५; ४८, १. ६४; ४९, १; ५०, १. ४८. ५१; ५१, १. ५; ५२, ३; ५४, १. ३५; ५५, १; ५६, १; ६३, ७; १०. ९, ६३; १०, १; ११, १; १२, १; १३, १; १४, १; १५, १. ३५; १६, १. २०. २३; १७, १; ११. १, ४. ९. २२. ४४; २, १; ८, १. ५०; ९, ४. ८; १०, १; ११, १; १२, १; १३, १. १२; १४, १; १५, १. २४. ४०; १६, १; १७, १; २५, ३७. ४७; २६, ६. २४; २७, १; १२. १, १; २, १; ६, १; ७, १; ८, १; १२, १; १४, १; १५, १; १६, १; १८, १; २०, १; २२, १; २३, १; २४, १; २५, १; २६, १; २७, २७; २८, १; २९, १. ४; ३१, १; ३२, १; ३३, १३; ३५, ५१; ३७, ५. २०. २६; ३८, १. ३१. ३५; ३९, १; ४०, १; ४१, १; ४२, १; ४३, १; ४४, १; ४५, ३; ४६, ३१; ४७, २. १००; ४८, १. १६; ४९, ९०; ५०, १; ५१, १; ५२, १. २२; ५३, १. १७; ५४, ४. ११; ५५, १. २०; ५६, १; ५८, २५; ५९, १; ६०, १; ७०, १४; १६६, १. ७; १६७, १. १०. २१. २८. ४९; १७३, २६; २८४, ३; ३२८, २७ (व्यास के शिष्य); ३३६, ९ (तैत्तिरिश्च वैशम्पायनपूर्वजः); ३३९, १३३; ३४०, १७. ११०; ३४१, ३; ३४३, २९; ३४४, २५; ३४५, १; ३४६, १; ३४७, ११; ३४८, ८. ६८. ८०; ३४९, ३. ९. ६३; ३५०, २; १३. १, ८३; ६, ३७ (अज्ञानाद् ब्राह्मणं हत्वा स्पृष्टो बालवधेन च । वैशम्पायनविप्रर्षिः किं

दैवेन न वारितः); ७, २७; १४, १७. २५; १८, १. ५९; २६, १. १७. १०५; २९, २१; ५७, ६. ४२; ७७, १. ३. ३४; ११३, ११; ११४, १; १२५, ३; १३९, ७; १४८, ६२; १४९, १; १६२, १; १६५, १. ३; १६६, ४; १६७, १. २४. ३६. ४८; १६८, १. ३६; १४. १, २; २, १; १०, ३७; ११, १; १४, १; १५, २; १६, २. ८; ५१, ५१; ५२, १; ५३, १; ५५, ४. १०; ५६, २. २८; ५७, १. १५. १९; ५८, १. १७. ३१. ३४; ५९, २; ६०, ५; ६१, १; ६२, १; ६३, ३; ६४, १; ६६, १; ६७, १; ६८, १; ६९, १; ७०, १; ७१, १. १७; ७२, १. ७. १४. २५; ७३, १; ७४, १; ७५, १; ७७, १; ७९, १; ८०, १. १९. ४१; ८२, १; ८३, १; ८४, १; ८५, १. २७; ८६, १; ८८, १; ८९, १; ९०, २. ११८; ९१, ७; ९२, ४. ४०; १५. १, ४; २, १. १५; ३, १. ५८. ६७. ७४; ४, ६. ९. १८; ५, १; ८, ४. १०; १०, १. ६. ५०; ११, १; १२, ६; १३, १; १४, १; १५, १; १६, १. १७; १८, १; १९, १; २०, १. २१. २३. ३७; २२, १; २३, १; २४, १; २५, १. १८; २६, १०. १६; २७, १; २८, १; २९, ६; ३१, २०; ३२, १; ३३, १; ३४, ४; ३५, १; ३६, २. २३. २७; ३७, १. ३९; ३९, १०; १६. १, १. १३. १५; २, १; ३, १; ४, १; ५, १; ६, १; ७, १; ८, १. ३७; १७. १, २; २, १. ७. ११. २३; ३, १. १७. २३; १८. १, ३; २, १४; ३, १; ४, १; ५, ८. ३५; ६. ३। तुल० ब्रह्मर्षि, व्यासशिष्य।

वैशाख, एक मास का नाम है : १३, १०६, २४; १०९. ८।

वैशाखी, वैशाख पूर्णिमा का द्योतक है (१३. ६८, १९)।

वैशालाक्ष = शिव द्वारा निर्मित एक शास्त्र का द्योतक है : १२. ५९, ८२ (सङ्क्षिप्तं ततः शास्त्रं महार्थं ब्रह्मणा कृतम्। वैशालाक्षमिति प्रोक्तं तदिन्द्रः प्रत्यपद्यत।)।

वैशाली, विशाला नगरी के राजा की पुत्री भद्रा का नाम है (२. ४५, ११)।

वैशालेय, नागों के एक कुल का द्योतक है : ८. ८७, ४४ (अर्जुन का पक्ष लिया)।

वैशेषिक, षड्दर्शनों में से एक का नाम है : १२. ४७, ७०।

वैश्याः (बहु०) = शिव (सहस्रनाम)।

वैश्यापुत्र, वेश्या से उत्पन्न पुत्र का द्योतक है = युयुत्सु (देखिये वस्था०)।

१. वैश्रवण = कुबेर (देखिये वस्था०)।

२. वैश्रवण = शिव (सहस्रनाम)।

३. वैश्रवण (वि०): २. १०, १; १२. १२४, १३ (ऋद्धिं 'वैश्रवणीं' शुभाम्)।

वैश्रवणसभावर्णनम् – "वैश्रवण कुबेर की सभा सौ योजन लम्बी और सत्तर योजन चौड़ी है। कुबेर ने अपनी तपस्या से उस सभा को प्राप्त किया है। वह सभा अपनी धवलकान्ति से चन्द्रमा की चाँदनी को भी तिरस्कृत कर देती है और देखने में कैलाश-शिखर के समान प्रतीत होती है। गुह्यकगण जब उस सभा को उठाकर ले चलते हैं उस समय वह आकाश में सटी हुई सी सुशोभित होती है। महान रत्नों से उस सभा का निर्माण हुआ है। उस दिव्य सभा में राजा वैश्रवण सहस्रों स्त्रियों से घिरे हुये बैठते हैं। मन्दार वृक्षों के वनों को आन्दोलित करता तथा सौगन्धिक कानन, अलका नामक पुष्करिणी और नन्दन वन की सुगन्ध का भार वहन करता हुआ हृदय को आनन्द प्रदान करनेवाला गन्धवाही शीतल समीर उस सभा में कुबेर की सेवा करता है। देवता और गन्धर्व अप्सराओं के साथ उस सभा में आकर दिव्य तानों से युक्त गीत गाते हैं। धन की अधिष्ठात्री देवी लक्ष्मी तथा अनेक ऋषि-मुनी उस सभा में उपस्थित होते हैं। महाबली पशुपत, शूलधारी, भगदेवता के नेत्र नष्ट करनेवाले तथा त्रिलोचन भगवान् शिव भी पार्वती और अनेक भयंकर भूत-प्रेतादिकों के साथ उस सभा में विराजमान होते हैं। इनके अतिरिक्त, अनेक गन्धर्वपति विश्वावसु आदि उस सभा में उपस्थित रहते हैं। भगदत्त आदि राजा भी उस सभा में बैठते हैं। महेन्द्र, गन्धमादन एवं धर्मनिष्ठ विभीषण भी यक्षों, गन्धर्वों और निशाचरों के साथ उस सभा में कुबेर की उपासना करते हैं। हिमवान, पारियात्र, विन्ध्य, कैलास, मन्दराचल, आदि अन्यान्य पर्वत भी कुबेर की उपासना करते हुये उस सभा में उपस्थित होते हैं। नन्दीश्वर, महाकाल तथा शंकुकर्ण आदि भगवान शिव के पार्षद भी वहाँ उपस्थित रहते हैं। गणों से घिरे हुये भगवान् शिव जब उस सभा में पधारते हैं तब कुबेर उनके चरणों में मस्तक रख कर प्रणाम करते हैं और उनकी आज्ञा लेकर उन्हीं के निकट बैठ जाते हैं। श्रेष्ठ निधियों में प्रमुख और धन के अधीश्वर शंख तथा पद्म—ये दोनों मूर्तिमान हो कर अन्य निधियों के साथ धनाध्यक्ष कुबेर की उपासना करते हैं। कुबेर की यह रमणीय सभा आकाश में विचरने वाली है (२. १०)।"

१. वैश्वदेव (वि०): १२. २४३, १८; ३०१, ८; १३. ६०, १७; ७९, १८; १४. १०, ३०; ४२, २८।

२. वैश्वदेव (क्ली०): ३. २, ५९; ३०, १४; १३. २२, २३; ९७, ९. १०. १७. २३।

१. वैश्वानर = अग्नि (देखिये वस्था०): ७. ५२, १७; ८. ४६, ३८।

२. वैश्वानर, एक मुनि का नाम है : २. ७, १८ (इन्द्र की सभा में)।

३. वैश्वानर, ऋषियों के एक वर्ग का नाम है (१२. १६६. २४)।

वैश्वानरमुख = शिव (१४. ८, २२)।

वैश्वानरी का पृथिवी के लिये प्रयोग हुआ है : १३. ६२, ३८।

वैश्वामित्र = अष्टक (३. १९८, १)।

वैष्णव (वि०): ३. १६४, १८ (अस्त्रम); १६८, ३० (अस्त्राणि); २००, १२८ (भूर्वैष्णवी); २०२, २९; २५५, १९; २७२, ७० (वैष्णवान् चोच्यते जगत्); २९१, ६६ (नक्षत्रे); ५. ९८, १८ (चक्रम्); १५८, ५ (शार्ङ्ग); ६. १२१, ४० (अस्त्रं); ७. २३, ९३ (अस्त्रं); ८. ३४, ४९ (जगत); ९. ४६, ३८; १२. ५९, १३४ (महत्वेन); २२८, १३ (पदम्); ३१७, १ (स्थानम्); ३४०, ५५; ३४२, ५२; १३. ७६, १५. १८; ९१, २५; १३९, ३०; १४. ५५, ४. ६; १८. ६, ९७. ९८. १०३।

वैष्णवास्त्र : ७. २९, १७ (भगदत्त ने इस अस्त्र का प्रयोग किया). ३१. ३२ (एक बार पृथिवी ने अपने पुत्र नरकासुर के लिये वर माँगते हुये विष्णु से उनका वैष्णवास्त्र माँगा। अपने इस अस्त्र की महिमा का वर्णन करते हुये श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा : 'मैं चार स्वरूप धारण करके सम्पूर्ण लोकों की रक्षा के लिये सदा उद्यत रहता हूँ। मेरी एक मूर्ति इस भूमण्डल पर बदरिकाश्रम में स्थित हो तपश्चर्या करती है। दूसरी शुभाशुभ कर्म करनेवाले जगत् को साक्षी रूप से देखती है। तीसरी मूर्ति मैं स्वयं हूँ जो मनुष्यलोक का आश्रय ले कर नाना प्रकार के कर्म करती है और चौथी मूर्ति वह है जो सहस्र युगों तक एकार्णव के जल में शयन करती है। सहस्र-युग के पश्चात् चौथा रूप जब योगनिद्रा से उठता है तब वर पाने के योग्य श्रेष्ठ भक्तों को उत्तम वर प्रदान करता है। एक बार जब वही समय प्राप्त था तब पृथिवी देवी ने अपने पुत्र नरकासुर के लिये मुझसे मेरा वैष्णवास्त्र माँगा था जिससे नरकासुर देवताओं और दानवों के लिये भी अवध्य हो जाय। तब मैंने अपने अस्त्र को नरकासुर के लिये पृथिवी को दे दिया। वही अस्त्र नरकासुर से प्राग्ज्योतिषपुर के राजा भगदत्त को प्राप्त हुआ। यह अस्त्र इन्द्र और रुद्र का वध कर सकता है। (७. २९, १७-३६)।

१. वैहायस (बहु०) ऋषियों के एक वर्ग का नाम है (३. १४२, ५)।

२. वैहायस, नर-नारायण के आश्रम के समीप स्थित एक कुण्ड का नाम है (१२. १२७, ३)।

वैहार, गिरिव्रज के चतुर्दिक स्थित चार पर्वतों में से एक का नाम है (२. २१, २)।

व्यक्त = शिव (सहस्रनाम)।

व्यक्तस्थ = श्रीकृष्ण (१२. ४७, १२)।

व्यक्ताव्यक्त = सूर्य (२. ३, २१)। = शिव (सहस्रनाम)।

व्यक्ताव्यक्तकर = विष्णु (१२. ३४७, ३९)।

व्यग्र = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. व्यवसाय मूर्तिमान विधि का नाम है : .९ ४६, ६४; १२. १२२, ४४. ४५।

२. व्यवसाय = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

व्यवस्थानं = विष्णु (सहस्रनाम)।

व्यश्व, दो प्राचीन राजाओं का नाम है : २. ८, १२. १७ (यम की सभा में)।

व्याकरण : १२. २०१, ८; १३, ९०, ३४।

व्याकरणोत्तर = शिव (सहस्रनाम)।

१. व्याघ्र = शिव (सहस्रनाम)।

२. व्याघ्र (बहु० °घ्राः) एक हिंसक पशु विशेष : १. ६६, ७ (पुलह की सन्तान). ६५ (शार्दूली की सन्तान)।

व्याघ्रकेतु एक पाण्डवपक्षीय पाञ्चाल योद्धा का नाम है : ८. ५६, ४७ (कर्ण ने इसका वध किया)।

१. व्याघ्रदत्त, एक अथवा अधिक पाण्डव-योद्धाओं का नाम है : ५. १७१, १९; ७. १६, ३२. ३४. ३७ (द्रोण ने वध किया); २३, ५४ (गदहे के समान मलिन, और अरुणवर्णवाले तथा पृष्ठ भाग में चूहे के समान श्याम-मलिन कान्तिवाले विनीत घोड़े इसे युद्धक्षेत्र में ले गये); ८. ६, १६। तुकी० पाञ्चाल्य।

२. व्याघ्रदत्त, एक कौरव योद्धा का नाम है : ७. १०६, १४; १०७, ३१ (सात्यकि ने वध किया). ३२ (मागधस्य सते प्रभो)।

व्याघ्रपाद, कृतयुग के एक प्राचीन ऋषि का नाम है जो उपमन्यु के पिता थे (१३. १४, ४५)।

व्याघ्राक्ष, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ५९)।

व्यादिशः (बहु०) = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. व्याध = धर्मव्याध : ३. २०६, ४५; २०७, ३. १३. ६०. ६२; २०९, २. २६. ३०; २१०, २. १४; २११, ३; २१२, ३; २१३, २. ३; २१४, ३. १८; २१५, १. ३. ५. १२. २१; २१६, १. १७. ३५।

२. व्याध = शिव : ७. ८०, ५९।

१. व्याधि मूर्तिमान व्याधियों का द्योतक है (७. ५४, ३५)।

२. व्याधि = शिव (सहस्रनाम)।

व्याधिनाम् आगमः = शिव (सहस्रनाम)।

व्याधिहन् = शिव (सहस्रनाम)।

१. व्यान, पाँच प्राण-वायुओं में से एक का नाम है : ३. २१३, ९; १२. १८४, २४; १८५, ८ (सन्धिष्वपि च सर्वेषु सन्निविष्टस्तथाऽनिलः। शरीरेषु मनुष्याणां व्यान इत्युपदिश्यते); २००, १७; २१३, १७; ३०१, २७; ३२८, ३३ (उदान का पुत्र; इससे अपान उत्पन्न हुआ); १४. २०, १४. १६; २१, २५; २३, २. ४. ५. १२. १३. १५. १६. २०. २१ (पाँचों वायुओं में अपनी अपनी श्रेष्ठता के सम्बन्ध में प्रतिस्पर्धा); २४, २. ८. ९. १२. १६. १७; ४२, ८।

व्यापिन् , **व्याप्त** = विष्णु (सहस्रनाम)।

व्याल = विष्णु (सहस्रनाम)।

व्यालयज्ञोपवीतिन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ८१)। = शिव (सहस्रनाम)।

व्यालरूप = शिव (सहस्रनाम)।

१. व्यास, एक ऋषि का नाम है। ये सत्यवती के गर्भ से पराशर द्वारा उत्पन्न हुये थे। इनके पुत्र का नाम शुक था। इन्होंने विचित्रवीर्य की विधवाओं से धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुर को उत्पन्न किया था। इनका नाम कृष्ण था और एक द्वीप में उत्पन्न होने के कारण इन्हें द्वैपायन भी कहा जाता था। इस प्रकार इनका नाम कृष्ण द्वैपायन था। इन्होंने वेदों का विभाजन करके उनकी पुनर्व्यवस्था की थी इसी से इन्हें व्यास और वेद व्यास भी कहते थे। इन्होंने ही महाभारत की रचना की थी : १. १, १० (कृष्ण द्वैपायनप्रोक्ताः···कथाः). १७ (द्वैपायनेन यत्प्रोक्तं पुराणं परमर्षिणा). २० (द्वैपायन). २१. २५. ५४ (व्यस्य वेदं सनातनम्। इतिहासमिमं चक्रे पुण्यं सत्यवतीसुतः). ५५. ५६. ५९. ६०. ७५ (सत्यवतीसुतः). ७६. ७९. ८० (मुनिः). ८३ (इनके बोलने पर गणेशजी ने महाभारत लिखा था). ९४. १००. १०४ (अपने शिष्यों और पुत्र शुक को महाभारत का उपदेश दिया). १०८. १०९. २१५. २२३. २५३ (मन्त्रोपनिषदं पुण्यां···कृष्णद्वैपायनोऽब्रवीत्); २, ८३. ९३. १०१. १०७. १०९. १३०. १४८. १५६. १५७. २४४. २५३. २६६. २७०. ३०८. ३२२. ३२४. ३४८. ३६२. ३७६. ३८२. ३९२; १३, ७ (नैमिषारण्यवासिषु). ८ (लोमहर्षण इनके शिष्य थे); ५३, ७ (जनमेजय के सर्पयज्ञ में सदस्य बने); ५५, ७. ९ (ऋत्विक समो नास्ति···द्वैपायनेन); ५९, २. ५. ६. ९; ६०, १. १३. १४. २१. २२ (जनमेजय के यज्ञसत्र में इन्होंने अपने शिष्य वैशम्पायन को महाभारत सुनाने की आज्ञा दी); ६१, २; ६२, १२. १३. १४. २३. २७. ४१. ४३. ५२; ६३, ६९-८५ (सत्यवती जब अपने पिता के लिये नाव चलाया करती थी तब एक दिन तीर्थयात्रा के उद्देश्य से महर्षि पराशर ने वहाँ आकर उसे देखा और उसके रूप-सौन्दर्य पर मोहित होकर उसके साथ समागम की इच्छा प्रकट की। पराशरने वहाँ चारों ओर कुहरे की सृष्टि करके सत्यवती को यह आश्वासन दिया कि उसका कन्याभाव समागम के बाद भी बना रहेगा। तब सत्यवती ने अपनी सहमति देते हुये अपने शरीर में सुन्दर सुगन्ध होने का वर भी माँगा। पराशर ने उसे तदनुसार वर दिया जिससे उसके शरीर से एक योजन दूर तक सुगन्ध फैलने लगी। इसी कारण उसका नाम गन्धवती अथवा योजनगन्धा भी पड़ा। तदनन्तर पराशर के साथ समागम के फलस्वरूप सत्यवती ने तत्काल ही एक शिशु को जन्म दिया। इस प्रकार यमुना के उस द्वीप में व्यास का जन्म हुआ। व्यास ने माता से यह कहा : 'आवश्यकता पड़ने पर तुम मेरा स्मरण करना। मैं अवश्य आऊँगा।' इतना कह कर माता की आज्ञा से व्यास ने तपस्या में मन लगाया); ६३, ८४-८६ (एवं द्वैपायनो जज्ञे सत्यवत्यां पराशरात्। न्यस्तो द्वीपे स यद्बालस्तस्माद् द्वैपायनः). ८७ (व्यासजी ने देखा कि प्रत्येक युग में धर्म का एक पाद लुप्त होता जा रहा है। अतः उन्होंने वेदों का विस्तार किया। इसी से उनका नाम व्यास पड़ा). ८९-९० (व्यासजी ने चारों वेदों तथा पाँचवें वेद महाभारत का अध्ययन सुमन्तु, जैमिनि, पैल, पुत्र शुकदेव तथा शिष्य वैशम्पायन को कराया। फिर इन सब ने पृथक-पृथक महाभारत की संहितायें प्रकाशित कीं). ११३-११४ (राजा विचित्रवीर्य की क्षेत्रभूता अम्बिका और अम्बालिका के गर्भ से व्यास ने धृतराष्ट्र और पाण्डु को तथा अम्बिका की दासी से विदुर को उत्पन्न किया); ६७, ८४ (धृतराष्ट्र इनके आत्मज थे); ७०, ४५; ९५, ६. ४९ (पराशर और सत्यवती के पुत्र). ५३. ५६. ८९ (भ.रतं···व्यासेन प्रोक्तं); १०५, १४. १५ (नाम की व्युत्पत्ति). २४. २७. ३९. ४६; १०६, ८. १६. २८. ३०. ३२; ११०, ३; ११५, ७. १३. १७. २४(इन्होंने गान्धारी को सौ पुत्र और एक पुत्री होने का वरदान दिया); ११६, ३. १४. १६; ११९, ४; १२२, २४; १२८, ५ (पाण्डु के श्राद्ध के बाद सब लोगों को दुखी देख कर व्यासजी ने दुःख-शोक से आतुर एवं मोह में पड़ी माता सत्यवती से कहा : 'अब सुख के दिन व्यतीत हो गये। अत्यन्त भयंकर समय उपस्थित होने वाला है। कौरव कुल का संहार निकट है अतः तुम वन में जा कर योग का आश्रय ले तपस्या करो।' तब अपनी दोनों पुत्रवधुओं, अम्बिका और अम्बालिका को लेकर सत्यवती वन में चली गईं और तपस्या करती हुई मृत्यु को प्राप्त हुईं); १३४, २; १५६, ६. ७. ११. १२. १७. १९ (इन्होंने पाण्डवों और कुन्ती को एकचक्रा जाने के लिये कहा); १६२, २६; १६९, १. ६ (द्रौपदी के पूर्वजन्म का वृत्तान्त बताकर पाण्डवों से द्रौपदी-स्वयंवर में जाने के लिये कहा); १७०, १ (गते). २२ (गङ्गा के सम्बन्ध में इनकी एक उक्ति का उद्धरण); १८५, २; १९०, ४५ (मतं जातं व्यासस्यापि महात्मनः); १९१, १५; १९५, ३३; १९६, १. ३. ६. १९. २१. २३ (द्रुपद ने इनसे पाँचों पाण्डवों के साथ द्रौपदी के विवाह के सम्बन्ध में पूछा); १९७, १. ९. १४. २८. ३८

(द्रुपद को पञ्चेन्द्रोपाख्यान सुनाया). ४४ (द्रौपदी के पूर्वजन्म का वृत्तान्त सुनाया); २०७, २९; २. १, १ (नमस्कार श्लोक); ४, ११; १३, २९ (मन्त्रयामास मन्त्रवित्); ३३, १७. ३३. ३४ (युधिष्ठिर के राजसूय में ब्रह्मन् पुरोहित बने); ३७, ९; ४६, १. ४. ६. १०. १८. २१. २५ (इन्होंने १३ वर्ष बाद कुरुकुल के विनाश की भविष्यवाणी की); ५१, १० (युधिष्ठिर के अभिषेक के समय उपस्थित); ७८, १४ (वारणावत में इन्होंने युधिष्ठिर को उपदेश दिया था); ३. १, १; ७, २३ (दुर्योधन को चेतावनी दी); ८, १ (धृतराष्ट्र को चेतावनी दी); ९, ४. १७ (इन्द्र और सुरभि के संवाद का वर्णन किया); १०, ४. ७; १२, १६; २४, ६; २६, २२; २९, ४८; ३१, १२; ३६, २२. २४. २८. ३९. ४१ (युधिष्ठिर को प्रतिस्मृति विद्या का उपदेश दिया); ३७, १०; ४८, २ (इन्होंने इन्द्र के भवन में अर्जुन के आने की धृतराष्ट्र को सूचना दी थी); ८३, ९२ (मिश्रक तीर्थ में सभी तीर्थों का मिश्रण किया था). ९६ (अपने पुत्र के शोक में इन्होंने अपना प्राणान्त कर देने का निश्चय किया किन्तु देवताओं ने इन्हें पुनरुज्जीवित किया). १४७ (पृथूदक तीर्थ की प्रशंसा की); ८१, १२१ (युधिष्ठिर की प्रतीक्षा कर रहे ऋषियों में ये भी थे); ८६, ४ (ये श्रीकृष्ण और अर्जुन के वास्तविक स्वरूप को जानते थे); ९३, २५ (काम्यकवन में पाण्डवों के पास आये); २५९, ८ (वन में पाण्डवों के पास आये थे). ११. २८; २६०, ३; २६१, ४१. ५१ (युधिष्ठिर को मुद्गल की कथा सुनाया); ५१, २१; ६१, ४; ६७, ८. ९. १० (धृतराष्ट्र को श्रीकृष्ण और अर्जुन की शक्ति का विवरण बताने के लिये सञ्जय को आदेश दिया); ६९, ११ (धृतराष्ट्र को चेतावनी दी); १४७, ३७; १८६, १७ (भीष्म ने इनसे परामर्श किया); ६. २, १. ४. ८ (सञ्जय को दिव्यदृष्टि प्रदान की); ३, १. ६३. ६५; ४, १. ८; १५, ७; १७, १; २३, २५. २७; ३४, १३. ३७; ४२, ७५; ४९, ११; ६६, २७ (भीष्म ने इन्हीं से श्रीकृष्ण की महानता के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त किया था); ६८, ५; १२२, १० (इन्होंने भीष्म से यह बता दिया था कि कर्ण कुन्ती का पुत्र है); ७. ५२, १. ८. ९. २०; ५४, ५१ (युधिष्ठिर को अकम्पन की कथा सुनाया); ५५, ५ (युधिष्ठिर को सृञ्जय की कथा सुनाया); ७१, १. ९. २४ (युधिष्ठिर को सान्त्वना दी); १४९, २७; १८३, ५८. ५९. ६७; १८४, १; १९२, ७३ (ऋष्येः प्रसादात्कृष्णस्य सत्यवत्याः सुतस्य च); २०१, ४८ (वेदव्यासं). ५६. ७९ (अश्वत्थामा को नारायण के सम्बन्ध में बताया); २०२, ३. ९. ९९. १५४ (अर्जुन को शिव की महिमा बताया); ८. ९६, २९ (इन्होंने अनेक बार कहा था कि अर्जुन और कृष्ण क्रमशः नर और नारायण हैं); ९. २९, ३९. ४०. ४५. ४८ (इन्होंने सञ्जय को सात्यकि से मुक्त करा दिया।); ४९, २०. २३ (आदित्यतीर्थ में स्नान किया); ६२, ३१. ४२; ६३, २९. ३६. ७२; १०. १३, १५; १५, १२. १९. ३४. ३५; १६, १७. २४ (इन्होंने पाण्डवों के गर्भस्थ शिशुओं पर ऐषीकास्त्र गिरा देने की अश्वत्थामा को स्वीकृति दी); ११. १, १३. ३०; ८, २. १२. १३. ५०. ५३; ९, १; १४, ३; १६, ३ (गान्धारी को दिव्य दृष्टि प्रदान की); १२. १, ४. ९; २३, १. २. १८. २५. ४५ (युधिष्ठिर को उपदेश दिया); २४, १; २५, १. ४ (योगविदां वरः). ५; २७, २७. २८; २८, १. २ (अश्मन् द्वारा जनक को दिये गये उपदेश का वर्णन किया); ३१, ४६ (यथा त्वां केशवः प्राह व्यासश्च सुमहातपाः); ३२, १. २. १२; ३३, १३. १४; ३४, २; ३५, १; ३६, २ (युधिष्ठिर को उपदेश दिया); ३७, ५ (इन्होंने युधिष्ठिर को भीष्म से परामर्श करने का आदेश दिया). १७. २१. २४. २७; ४७, ५ (भीष्म को घेर कर खड़े ऋषियों में ये भी थे); ५०, १०; ५२, २२; ५८, २५; ५९, ३; २०७, ३; २३१, ६. ८. ११; २३२, १; २३३, १; २३४, १; २३५, १; २३६, १; २३७, १. ३; २३८, १; २३९, ५; २४०, १; २४१, ३; २४२, ५. १२; २४३, १; २४४, ४; २४५, २; २४६, १; २४७, २. ८; २४८, १; २४९, १; २५०, २; २५१, १; २५२, १; २५३, १; २५४, १; २५५, १ (अपने पुत्र शुक को उपदेश दिया); २८४, २०८ (शिव सहस्रनाम के पाठ का फल बताया); ३२१, ४. ९४; ३२३, १. २. १२. २५. २७; ३२४, १. ३. ४. (महादेवजी से उत्तम वर प्राप्त कर व्यासजी अग्नि प्रकट करने के लिये अरणी का मन्थन करने लगे। इसी समय घृताची नामक अप्सरा को देख कर व्यासजी कामातुर हो गये। तब घृताची एक शुकी के रूप में व्यास के पास आई। उस अप्सरा को देख कर इनका वीर्य अरणी काष्ठ पर ही गिर पड़ा फिर भी ये मन्थन कार्य में लगे रहे। अरणी के साथ शुक्र का भी मन्थन होने से अरणी के गर्भ से ही शुक का जन्म हुआ। इसीलिये शुक को शुक आरणेय भी कहते हैं); ३२५, ५ (इन्होंने शुक को जनक के पास जाने के लिये कहा); ३२७, २६ (इनके सुमन्तु आदि चार शिष्यों का उल्लेख). २७. २९. ३३. ३५. ४२; ३२८, १. ५. ७. १०. १६. २२. २५. २७. ५७ (अपने शिष्यों और पुत्र शुक को उपदेश दिया); ३३१, ६२; ३३२, १; ३३३, २०. ३१. ४१ (अपने पुत्र के लिये शोक करने लगे। तब शिव ने इन्हें सान्त्वना दी); ३३९, १३५ (वैशम्पायनजी के गुरु); ३४०, ५. १९. २४. ९०. ११०. ११२ (शुक तथा अपने शिष्यों को नारायण-विषयक उपदेश दिया); ३४१, १; ३४३, ८. २९; ३४६, ८ (गन्धवतीसुतः). १२ (ये नारायण के अवतार थे); ३४७, ९; ३४८, ६४ (वैशम्पायन के गुरु). ८५ (इन्होंने नारद से नारायण धर्म सीख कर उसका युधिष्ठिर को उपदेश दिया था); ३४९, ४ (नारायणस्यांशजमेकपुत्रं द्वैपायनं वेद महानिधानम्). ५ (अजं पुराणं). ७. ८. ६३ (व्यासजी नारायण के एक अंश के अवतार थे); ३५०, ४. ७; १३. ९, १७; १४, २०. ९०; १८, १ (पुत्रप्राप्ति के लिये तपस्या करते समय इन्होंने शिव सहस्रनाम का पाठ किया था). ४१. ४२ (सावर्ण मनु के समय ये एक सप्तर्षि हो जायेंगे); २४, २. ४ (पराशरशरीरजः); २६, ५; ८१, ७. ११. १२ (शुक को उपदेश दिया); ११७, ६. ७. ९; ११८, १. १९; ११९, २. ३. ८. ९. १४ (व्यास और कीट की कथा); १२०, २. ३. ५. ६. ९; १२१, ३ (मैत्रेय द्वारा व्यासजी को भोजन कराना। दान विषयक मैत्रेय और व्यास का संवाद); १२५; ४; १३४, १५ (इन्होंने भीष्म को धर्म विषयक उपदेश दिये थे, अध्याय १२५-१३४); १३९, ११; १४८, ४३. ५६ (श्रीकृष्ण और अर्जुन की महानता के सम्बन्ध में भीष्म ने इनसे ही सुना था); १४९, १४१ (स्तवं भगवतो विष्णोर्व्यासेन कीर्तितम्); १५०, ४ (व्यास प्रोक्तं, अर्थात् श्लोक १०-११). ४२; १६५, १३; १६६, ५. ८; १६७, १३. १६. ३२. ४४ (यह बात बता दिया था कि श्रीकृष्ण और अर्जुन नारायण और नर हैं); १६८, ३. ६. १९. ३६; १४. २, ५. १४; ३, १. १९. २३ (इन्होंने युधिष्ठिर से कहा कि वे मरुत्त द्वारा हिमालय पर छोड़े हुये सुवर्ण को लाकर अश्वमेध यज्ञ करें); ४, १. २; ५, ३; ६, १. १०. १७. २७; ७, ६; ९, १०. २०; १०, ३. ९. २६ (युधिष्ठिर को संवर्त्त-मरुत्तीय सुनाया); ११, १; १४, २. ६; ५२, १५ (अर्जुन ने इनसे श्रीकृष्ण की महानता के सम्बन्ध में सुना था); ६२, १०. १३. २०. २१; ६३, १. ३. ५. ६. ९. १२; ६५, ११. २२ (इनके आदेश से युधिष्ठिर हिमालय से मरुत्त का सुवर्ण लाये); ७१, १०. १५. १८; ७२, १. ३. ९; ७३, ३ (इन्होंने युधिष्ठिर को अश्वमेध की दीक्षा दी और यज्ञाश्व को छोड़ा); ८८, ११. १७. ३८; ८९, ७. ८. १६. १९. २१. २८ (अश्वमेध पूर्ण हुआ); १५. १, १४; ३, २०. ८७; ४, १. ६. १९. २० (इन्होंने युधिष्ठिर से धृतराष्ट्र को वन में जाने की अनुमति देने के सम्बन्ध में पूछा); ८, ७. १८; १०, ४. १७; १९, ११. १३; २०, २. १६; २६, ३०; २७, २२. २४. २९. २६; २८, १ (इन्होंने धृतराष्ट्र को बताया कि विदुर धर्म के अंश से उत्पन्न हुये थे); २९, ३. ७. ८. १५. २२. ५०. ५१; ३०, २० (व्यासो वेदविदां वरः); ३१, १. २० (युद्ध में भाग लेनेवाले विभिन्न लोग जिन-जिन देवों के अंश से उत्पन्न हुये थे उसकी व्याख्या की); ३२, १. ४. १७ (इनके आवाहन पर युद्ध में मृत योद्धा गङ्गा से प्रकट हुये); ३३, २५; ३५, ३. ४. ६. १२ (इन्होंने जनमेजय को उनके पिता परिक्षित् का दर्शन कराया); ३६, ५. १३; १६. ७, ७६; ८, १. ३. ४. २६. ३७ (अर्जुन को सान्त्वना दी); १७. १, १२; १८. १, २; ५, ७. ८. ३५. ३६ (कृष्णेन मुनिना...निर्मितम्, अर्थात् महाभारत). ४८. ५३. ५७. ६७।

२. व्यास = शिव (सहस्रनाम)।

३ व्यास = विष्णु (सहस्रनाम)।

व्यासवन, कुरुक्षेत्र की सीमा में स्थित एक वन का नाम है (३. ८३, ९३)।

व्यासशिष्य = वैशम्पायनः १. २, ३३; २. ५०, ४; १५. ३४, ३।

व्यासस्थली, कुरुक्षेत्र की सीमा के अन्तर्गत स्थित एक प्रसिद्ध तीर्थ का नाम है जहाँ पुत्रशोक से संतप्त हो व्यास ने शरीर त्याग देने का विचार किया था (३. ८३, ९६)।

व्यासात्मज = शुक (१२. ३४९, ११)।

व्युषिताश्व, पूरुवंशी एक प्राचीन राजा का नाम है : "पूर्वकाल में व्युषिताश्व नामक राजा हो गये हैं। एक समय वे जब यज्ञ कर रहे थे तब इन्द्र आदि देवता देवर्षियों के साथ उस यज्ञ में पधारे थे। उसमें देवराज इन्द्र सोमपान करके उन्मत्त हो उठे तथा ब्राह्मण भी पर्याप्त दक्षिणा पाकर हर्षोन्मत्त हो गये। उस यज्ञ में देवता और ब्रह्मर्षि स्वयं सब कार्य कर रहे थे। इससे व्युषिताश्व सब मनुष्यों से ऊँची स्थिति में पहुँच कर शोभित हो रहे थे। व्युषिताश्व ने अश्वमेध यज्ञ करके चारों दिशाओं के राजाओं को अपने वश में कर लिया था। व्युषिताश्व में दस हाथियों का बल था। इनकी यशोगाथा का उद्धरण। राजा कक्षीवान की पुत्री भद्रा इनकी पत्नी थी। दोनों पति-पत्नी एक दूसरे से अत्यधिक प्रेम करते थे। पत्नी के प्रति अत्यासक्ति के कारण ये राजयक्ष्मा से पीड़ित हो निःसन्तान ही स्वर्गवासी हो गये। भद्रा इनके वियोग को सहन नहीं कर सकी और विलाप करने लगी। भद्रा ने बार-बार विलाप करते हुये स्वयं भी पति के मार्ग का अनुसरण करने की इच्छा की। उसी समय एक आकाशवाणी हुई जिसने भद्रा से कहा : 'मैं तुम्हारे गर्भ से एक पुत्र को जन्म दूँगा। तुम ऋतुस्नान होने पर चतुर्दशी या अष्टमी की रात में अपनी शय्या पर मेरे इस शव के साथ सो जाना।' आकाशवाणी के इस कथन के आधार पर भद्रा ने तदनुसार कार्य किया। इस प्रकार भद्रा ने उस शव के द्वारा सात पुत्र उत्पन्न किये जिनमें तीन शाल्व देश के और चार मद्र देश के शासक हुये (१. १२१)।" १. १२१, ७. ९. १०. १२. १४; १२२, २।

व्यूक एक जाति का नाम है (६. ९, ६१)।

व्यूढोरस्क, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (६. ९६, २३)।

व्यूढोरु, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७, १०५; ११७, १४।

व्यूहशास्त्र, व्यूहनिर्माण करने की विद्या का द्योतक है : ६. ८७, २०।

व्योमकेश = शिव (७. २०२, १३४)।

व्योमगङ्गा = आकाशगङ्गा (१२. ३२८, ५७)।

व्योमन् = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

व्योमारि एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३५)।

व्रजन, अजमीढ द्वारा केशिनी के गर्भ से उत्पन्न तीन पुत्रों में से एक का नाम है (१. ९४, ३२. ३४)।

व्रजनाथ = श्रीकृष्ण (२. ६८, ४२)।

व्रतवत् = शिव (१०. ७, ७)।

व्रताधिप = शिव (सहस्रनाम)।

व्रतावास = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

व्रतिन् = शिव (८. ३३, ५९)।

व्रतेश = शिव (१३. १४, २४)।

व्रात्य (बहु० और एक०), जातिबहिष्कृत व्यक्ति का द्योतक है : ४. ३५, ४९ (एक०); ७. १४३, १५ (वृष्णि और अन्धकों के लिये प्रयुक्त); ८. ४४, १५ (स्त्री० बहु०). २२ (वाहीकेषु). ३३. ४६; ४५, २०; १२. २९६, ९ (बहु०, एक० मिश्रित जाति विशेष); १३. ४९, ९ (चाण्डालो व्रात्यवैद्यौ)।

व्रीहिद्रौणिकपर्वन्, महाभारत के ४४ वें आवन्तर पर्व का नाम है जो वनपर्व के अन्तर्गत आता है। "वन में रहते हुये पाण्डवों ने अत्यन्त कष्टपूर्वक ग्यारह वर्ष व्यतीत कर लिये। राजा युधिष्ठिर को सदा अपने भाइयों और द्रौपदी के वनवास सम्बन्धी कष्टों के प्रति अत्यधिक चिन्ता रहती थी। एक दिन व्यासजी पाण्डवों के पास आये। अपने पौत्रों को वनवास के कष्ट से दुर्बल देख कर व्यासजी दया से द्रवीभूत हो गये। तब पाण्डवों को सान्त्वना देते हुये व्यासजी ने उन्हें दान धर्म की महत्ता पर उपदेश दिये (३. २५९)।

"युधिष्ठिर के पूछने पर व्यासजी ने दुर्वासा द्वारा महर्षि मुद्गल के दानधर्म एवं धैर्य की परीक्षा तथा मुद्गल के पास देवदूतों के आगमन की कथा सुनाया (३. २६०)।

"देवदूत द्वारा स्वर्गलोक के गुण-दोषों का तथा दोषरहित विष्णुधाम का वर्णन सुन कर मुद्गल ने देवदूत को लौटा दिया। इस कथा का वर्णन करने के बाद व्यासजी युधिष्ठिर को विविध प्रकार से समझा कर अपने आश्रम लौट आये (३. २६१)।"

व्रीहिद्रौणिकमाख्यानम् : १. २, ५१. १९७।

श

१. शंकर = शिव (देखिये वस्था०)।

२. शंकर एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३५)।

शंकरश्वसुर = हिमवत् (१३. २५, ६२)।

शंकु एक वृष्णिवंशी क्षत्रिय का नाम है : १. १८६, १९ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित); २२१, ३१ (सुभद्रा और अर्जुन के विवाह के समय अनेक वृष्णिवंशियों के साथ यह भी दहेज ले कर खाण्डवप्रस्थ आया था); २. १४, ५९ (यह एक महारथी वीर था)।

१. शंकुकर्ण एक धृतराष्ट्र वंशी नाग का नाम है (१. ५७, १५)।

२. शंकुकर्ण, जनमेजय और वपुष्टमा के पुत्र का नाम है (१. ९५, ८६)।

३. शंकुकर्ण, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है : ९. ४५, ४१ (पार्वती ने इसे स्कन्द को दिया था). ५६।

४. शंकुकर्ण = शिव (सहस्रनाम)।

५. शंकुकर्ण, शिव के एक दिव्य पार्षद का नाम है जो कुबेर की सभा में उपस्थित होता था (२. १०, ३४)।

शंकुकर्णेश्वर एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, ७०)।

१. शंख, मत्स्यराज विराट के पुत्र और उत्तर के भ्राता का नाम है : १. १८६, ८ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था); ४. ३१, १६ (विराटस्य सुतो ज्येष्ठः) ५. ५७, ६ (युधिष्ठिर की सेना में); १४१, २७; १७१, १५ (पाण्डवों के रथियों में से एक); १९४, १९; ६. ४५, ३५. ३६ (सौमदत्ति से युद्ध किया); ४९, २६. ३३. ३५; ८२, २१ (द्रोणाचार्य ने इसका वध किया); ८. ६, ३७; १८. ५, १. १७ (मृत्यु के बाद यह देवों में प्रविष्ट हुआ)।

२. शंख, एक प्राचीन ऋषि जो लिखित के भ्राता थे : ३. ७, ११; १२. २३, १८. २०-२३. २५-३७. ३८. ४०. ४२. ४४; १३. ६६, १२ (तिल का दान कर स्वर्ग प्राप्त किया)।

३. शंख, एक दैत्य का नाम है : २. ९, १३ (वरुण की सभा में)।

४. शंख, एक श्रेष्ठ निधि का नाम है : २. १०, ३९ (कुबेर की सभा

में); १२, २३४, २९ (ब्रह्मदत्त ने ब्राह्मणों को उत्तम शंखनिधि का दान किया था); १३. १३७, १७: १४. ६५, १२ (शंखादींश्च निधीन्)।

५. शंख, एक राजा का नाम है (२. ४४, २१)।

६. शंख, कश्यप द्वारा कद्रू के गर्भ से उत्पन्न एक नाग का नाम है : १. ३५, ८; ५. १०३, १२ (नारदजी ने मातलि को इसका परिचय दिया था); १६. ४, १७ (बलराम जी के परमधाम पधारते समय उनके स्वागतार्थ यह भी उपस्थित था)।

शंखकुम्भश्रवस् एक मातृका का नाम है (९. ४६, २६)।

शंखचक्रगदाधर = श्रीकृष्ण (विष्णु), देखिये वस्था०।

शंखचक्रगदाहस्त = श्रीकृष्ण, देखिये वस्था०।

शंखतीर्थ, सरस्वती के तट पर स्थित एक तीर्थ का नाम है। यहाँ आकर बलरामजी ने महाशंख नामक एक वृक्ष देखा जो महान मेरु पर्वत के समान ऊँचा और श्वेताचल के समान उज्ज्वल था। उसके नीचे ऋषियों के समूह निवास करते थे। वह वृक्ष सरस्वती के तट पर ही उत्पन्न हुआ था। उसके निकट यक्ष, विद्याधर, तथा सिद्धगण सहस्रों की संख्या में निवास करते थे और उस वृक्ष का ही फल खाया करते थे। वही लोकविख्यात वृक्ष सरस्वती का लोकविख्यात तीर्थ है (९. ३७, २०-२६)।

शंखपद, स्वारोचिष मनु के पुत्र का नाम है : १२. ३४८, ३७. ३८ (इन्हें अपने पिता से नारायण द्वारा प्रतिपादित सात्वत धर्म का उपदेश प्राप्त हुआ था)।

शंखपिण्ड, कश्यप द्वारा कद्रू के गर्भ से उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ३५, २३)।

शंखभृत् = विष्णु (सहस्रनाम)।

शंखमुख, कश्यप द्वारा कद्रू के गर्भ से उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ३५, ११)।

शंखमेखला एक ऋषि का नाम है : १. ८, २४ (सर्पदंश से मृत हुई प्रमद्वरा को देखने के लिये स्थूलकेश के आश्रम के निकटवर्ती वन में पधारे थे)।

शंखलिका एक मातृका का नाम है (९. ४४, १५)।

शंखशिरस् एक नाग का नाम है। (१. ३५, १२)।

शंखशीर्ष, एक नाग, सम्भवतः शंखशिरा का ही नाम है (५. १०३, १५)।

शंखश्रवा एक मातृका का नाम है (९. ४६, २६)।

शंखिनी एक तीर्थ का नाम है : ३. ८३, ५१ (कुरुक्षेत्र की सीमा में स्थित)।

शंयु, एक अग्नि का नाम है : ३. २१९, २ (बृहस्पति के प्रथम पुत्र). ४ (इनकी पत्नी का नाम सत्या था). ६ (इनके पुत्र)।

शक (बहु० °काः) एक जाति का नाम है : १. १७५, ३६ (इनकी उत्पत्ति); २. ३०, १४ (पूर्व में भीमसेन ने इन्हें पराजित किया था); ३२, १७ (पश्चिम में नकुल ने इन्हें पराजित किया था); ५१, २३. ३० (युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये); ५२, १६; ३. ५१, २४ (युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित थे); १८८, ३५ (कलियुग में शासन करनेवाली बर्बर जातियों में से एक); ५. ४, १५ (इनके राजा को पाण्डवों की ओर से रणनिमन्त्रण भेजने का निश्चय किया गया); १९, २१ (काम्बोजराज सुदक्षिण का अनुसरण किया); १६०, १०३ (दुर्योधन की सेना में); १६१, २१; १९५, ७; ६. ९, ४५. ५१ (भारतवर्ष में); २०, १३; ५६, ७ (भीष्म के गारुडव्यूह में); ७५, २१ (भीष्म के क्रौञ्चव्यूह में); ११७, ३४ (अर्जुन पर आक्रमण किया); ७. ७, २४; ११, १८ (कृष्ण ने इन्हें पराजित किया था); २०, ७ (द्रोण के गारुडव्यूह में); ९३, ४२ (अर्जुन पर आक्रमण किया); ११२, ५० (शक्रतुल्यपराक्रमैः); ११९, १५. २१ (सात्यकि ने अनेक शकों का वध किया था). ४५. ५३; १२१, १३ (सात्यकि पर आक्रमण किया); ८. ८, १८ (कर्ण पहले इन्हें परास्त कर चुके थे); ४६, १५ (कर्ण के व्यूह में); ५६, ११५; ७३, १९ (अर्जुन से पराजित हुये थे); ८८, १७; ९. १; २७; २, १८ (दुर्योधन के लिये शस्त्र धारण किया था); ८, २६ (कृप के साथ शल्य के व्यूह के दाहिने पार्श्व में स्थित); १२. ६५, १३ (निम्न जातियों के साथ इनकी गणना); १३. ३३, २१ (उन जातियों में से एक जो क्षत्रिय से च्युत हो कर शूद्र हो गई थीं)।

शकुन (बहु० °नाः) एक जाति का नाम है : ७. २०, ११ (द्रोण के गारुडव्यूह के पृष्ठ भाग में स्थित)।

१. शकुनि, गान्धारराज सुबल के पुत्र और धृतराष्ट्र के साले का नाम है। यह दुर्योधन का मामा लगता था : १. १, ११०. १४१; २, १३७ (जूये के खेल में युधिष्ठिर को पराजित किया). १५१. २८२ (शकुनेश्च वधोऽत्रैव सहदेवेन संयुगे); ६३, ११२ (यह द्वापर के अंश से उत्पन्न हुआ था); ११०, १५ (इसने अपनी बहन गान्धारी का धृतराष्ट्र के साथ विवाह कराया); १२९, ४०: १४१, २१; १४२, २; १४९, ९; १६२, ८; १८६, ५ (शकुनिः सौबलश्चैव वृषकोऽथ बृहद्बलः। एते गान्धारराजस्य सुताः सर्वे समागताः); २०५, २९; २. ३४, ६ (युधिष्ठिर के राजसूय में आया); ४४, २०; ४५, ६८ (जब युधिष्ठिर अतिथियों को विदा करने गये तब दुर्योधन के साथ यह युधिष्ठिर के महल में रह गया); ४६, ३३; ४७, १. २१; ४८, १. १५. १९; ४९, २. ३. ४. ७. ३७. ४१; ५६, १. १३; ५८, १३. १६; ५९, ३. ४. ६. ७. १२. १४. २०; ६०, ९; ६१, १. ३. ७. ११. १४. १८. २१. २४. २८. ३१; ६३, १० (सौबलस्य'''पार्वतीयः); ६५, १. २. ५. ७. ९. ११. १३. १४. १६. १९. २२. २३. २६. २७. २९. ३०. ३२ (युधिष्ठिर अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति, अपने भाइयों और यहाँ तक कि पत्नी द्रौपदी को भी जूये में हार गये); ६७, ४५. ४९; ७४, ५. २१; ७६, ६. ९. २०. २१. २४ (दूसरी बार जूये का आयोजन हुआ और इस बार भी शकुनि जीत गया); ७७, २६ (सहदेव इसका वध करेंगे). ३१; ८०, ३६; ३. ४, ८. १५; ५, ८; ७, ७; ३४, ५; ४४, १०; १७४, ३; २३६, २१; २३७, १. २३; २३८, २१; २३९, ३. १८. २२; २४०, ३; २४१, १७. २७ (घोषयात्रा के समय दुर्योधन के साथ यह भी गया जहाँ गन्धर्वों ने इसे भी बन्दी बना लिया); २५१, १. २; २५३, २; २५४, ३६; २६२, ४; ३१२, ४; ४. २१, ६; ५०, २३; ५. २, १२; ३, १९; ६, ६; २१, १०; २६, १८; २९, ४६. ५२; ३०, २९; ३५, ७६; ४७, ८; ४९, २८; ५८, ९; ६६, ५; ७९, ८; ९१, ५; ९४, ७. १७. ४९; १२७, ७; १२८, ४८; १३०, २. ३; १४३, ३; १५३, ८; १५४, ३. १३; १५५, ३३; १६०, ३. १२३; १६१, ४१; १५२, ३५. ३६ (सहदेव द्वारा इसका और इसके पुत्र उलूक का वध करने का आश्वासन); १६३, ५४; १६४, ८; १६७, १; १९५, ७; ६. ९, ३; १४, ६९; १६, १५; २०, ८ (शकुनिः पार्वतीयैः सार्धं गान्धारैर्याति गान्धारराजः); ४५, ६३. ६५ (प्रतिविन्ध्य से युद्ध किया); ५१, १४; ५७, ३१ (सौबलः); ७१, २२; ७२, ५ (शकुनि-मुलूकं च महारथम् पितापुत्रौ); ८२, ५४; ८४, ३४; ९०, १. २८ (इसके छः भाई थे जिनमें से पाँच का इरावत् ने वध कर दिया); ९६, ७; ९७, १; ९८, ४२; ९९, २ (भीष्म के सर्वतोभद्रव्यूह में); ७. ७, १२ (द्रोण के व्यूह के दाहिने पंख भाग में); १४, २२ (सहदेव से युद्ध किया); ३०, १५ (यह मायायुद्ध में पारङ्गत था); ३७, १८ (अभिमन्यु से युद्ध किया); ३९, ५; ८५, ४३; ८६, ९; ९५, ४२ (सहदेव से युद्ध किया); ९६, २१ (नकुल और सहदेव ने इस पर आक्रमण किया). २४; १२०, ११. ३३ (सात्यकि से युद्ध किया); १३०, १७, १८; १५१, १०. १९; १५५, ३१; १५६, २२ (पुत्रपौत्रैः परिवृतो); १५७, २४ (इसके पाँच भाइयों का भीमसेन ने वध कर दिया); १५८, ५९; १६५, ९; १६९, ११. १२ (नकुल से युद्ध किया); १७०, १६ (धृष्टद्युम्न से युद्ध किया); १७१, २५ (अर्जुन से युद्ध किया). ३५. ३७; १८०, २०. ३५; १८३, १; १८५, २२; १८६, १४. ४८; १९३, ९; २००, ५९; ८. १, ५; ४, ११; ७, ८०; ११, १५ (कर्ण के मकरव्यूह के नेऋभाग में अपने पुत्र उलूक के साथ स्थित); २५, १८. २०. २७ (सुतसोम से युद्ध किया); ३२, ९; ४६, १२

(शकुनिरुलूकश्च महारथः'''पार्वतीयैश्च दुर्जयैः); ४७, १६; ४८, १०; ५०, ३; ५१, ५५ (शकुनिनिर्दिष्टाः सादिनः'''त्रिसाहस्राः); ६१, १३. ४५. ४८; ६४, ३५; ७७, ४७. ५१ (भीमसेन से युद्ध किया). ५४; ७८, ६२; ८३, ४७; ८५, १९ (कुलिन्द राजकुमार से युद्ध किया); ९१, २. ३. ११; ९३, ३० (नकुल, सहदेव और सात्यकि ने इस पर आक्रमण किया); ९५, ६ (गान्धाराणां सहस्रेण शकुनिः परिवारितः); ९. १, २६ (इसका वध हुआ); २, १७. ४१; ३, ३१ (नकुल और सहदेव ने इस पर आक्रमण किया था); ६, २; ८, ३३; ११, ३५. ३८; १६, ५. ३७; १८, १८. २२; १९, ३१. ६१; २२, २३. २६; २३, २६. ३६. ३७. ३९. ५९. ६२. ६५; २४, ३. ६. ८; २७, १५. १७. ३१; २८, १. २१. २७. २८. ३०. ३४. ३७. ४७. ५६. ५८. ६५ (इसका वध हुआ). ६७; ३१, ३१. ५५; ३२, २१; ३३, ८. ३६ (यह जूये में पारङ्गत था). ४४ (द्यूते तद्विजितो राजा शकुनेर्बुद्धिनिश्चयात्). ४७ (निहतः); ५६, २७. ३४; ६०, ४५; ६४, ८. ३२; ११. १, २७; ८, ३१; १४, १६; १८, २३; २४, २३ (गान्धारराजः शकुनिर्बलवान्सत्यविक्रमः निहतः सहदेवेन भागिनेयेन मातुलः). २७; २६, ३५ (इसका शवदाह); १३. १४८, ६१; १४. १, १४; ६०, २५. २६; ८४, १. २ (इसके वध का प्रतिशोध लेने के लिये गान्धारों ने अर्जुन पर आक्रमण किया). ९. २०; १५. ३१; १० (यह द्वापर के अंश से उत्पन्न हुआ था); ३२, ९ (व्यास के आवाहन पर गङ्गा से प्रकट होनेवाले मृत योद्धाओं में यह भी था); १८. ५, २. २१ (मृत्यु के बाद द्वापर में समा गया)।

तुकी० इसके निम्नलिखित पर्याय :

कितव — देखिये वस्था०।

गान्धार, गान्धारपति, गान्धारराज, गान्धारराजपुत्र, गान्धारराजस्यपुत्रः, गान्धारराजस्यसुतः — देखिये वस्था०।

पार्वतीय : २. ६३, १०; ३. ३४, ४; ५. ३०, २९।

सुबलज : २. ४७, २०।

सुबलपुत्र : १. १४१, १; ८. ५१, ५८; ९. २३, ३५।

सुबलस्यपुत्रः : ३. ३४, ३।

सुबलस्यसुतः : ९. २२, २४।

सुबलात्मज : ५. ५७, २२; ६. १०५, ८; ८. ७७, ५९।

सौबल : १. १, १५९. २०८ (हतं संग्रामे सहदेवेन); ६१, ८. ५०; ६३, ११२; ६७, ११०; १२९, ४०; १४१, २१; १४२, २; १५१, ३९; १८६, ५; २०५, २९; २. ४५, ६८; ४६, ३३; ४७, ३७; ४८, २३; ४९, २; ५९, ३; ६१, १५; ६२, २०; ६५, २. ६. ३९. ४५; ६८, २४. २५. ३७; ७४, ५; ७६, २४; ७७, ७. ३८. ४१; ८०, ३६; ३. ५, ८; ७, १५; २३, १०; ४४, १०; ४९, २३; ५२, १०. १८; २३६, ३१; २३८, ६. १३. १५; २३९, २४; २४१, १७. २७; २४९, २३; २५१, १; २५२, ५०; २५३, ११; २५४, ३६; २५५, २२; २५६, २७; ३१५, ६; ४. २१, ६; ३५, २; ५०, २७; ७०, २६; ५. १, १०; २, ११; ४, २; २०, ८; ३३, ११-४; ४७, ८; ४९, २८; ५८, ९; ६६, ५; ८३, १३; ९१, ५; ९४, ७; १३०, ३; १४४, ६; १५०, १२; १५४, ३. १२; १६०, ३; ६. ९, ३; १४, ६९; १६, १५; ४५, ६४; ४९, १२; ५७, ३१. ३९; ५८, ७. ८; ७१, १६; ७६, १८; ७७, १७; ७९, ६; ९०, १. २५; ९६, ७; ९७, १; १०२, २६; १०८, २४; ७. १४, २३. २४; ३०, ४. ५. २६; ३७, ५; ४६, ६; ४८, १६; ७४, १७; ८५, ४३. ५२; ९६; २६; १२०, ३६; १५६, १८. ११९. १२६; १५९, २४; १६३, ११; १६५, ९; १६९, १. ३. १२; १७०, ६१. ६८; १७१, २८. ३८; १७२, १२; १८३, १; १८६, १४. ४८; १८७, २७; ८. १, ५; ४, ११; ९, ८०; २५, २५. ३३. ३४. ४०. ४२. ४३; ३१, २५; ३२, ९; ४६, ३४; ४७, १६; ५०, ३; ५१, ६८; ५४, १; ६१, ४५. ४६. ६१; ६६, ४५; ७४, १५; ७७, ५४. ५६. ६१. ६५. ७२; ७८, १; ८८, १४; ९१, २; ९. १, २६; २, १७. ४१; ८, ७. २७; ११, ३५; १२, ३४; १९, २४; २२, २४; २३; ३६. ४०-४२. ५८. ६३. ६५. ८५; २४, १. ६; २५, २४. ४२. ४८. ६३; २७, १५. २२. ३०; २८, १. २३. २५. २७. ३७. ३९. ४१. ४३. ४४. ४९. ५७; २९, १ (सहदेव ने इसका वध किया); ३१, ३१; ३२, २१; ५६, ३१. ३४; ६१, ४४; ६४, ३२; ११. १४, १६; २६, ३५; १२. ७, २७; १५. १०, २८. ३५; १८. ५, २।

सौबलक : ३. ४९, १७

सौबलेय : ३. १, १४; ४, ५; ७, २; ५१, ३०; २५१, १२; ६. ५८, १०; ८. २५, ४३; ६४, ३५; ७७, ४९. ५६; ९. २८, १७।

२. शकुनि, धृतराष्ट्र-कुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ५७, १६)।

३. शकुनि : ३. २३०, ३३ (शकुनिस्तामथास्याय सह भुंक्ते शिशून् भुवि)।

४. शकुनि = शिव (सहस्रनाम)।

शकुनिका एक मातृका का नाम है (९. ४६, १५)।

शकुनिग्रह = विनता (३. २३०, २६)।

शकुनिपुत्र : १४. ८३, २० (अर्जुन ने इसे पराजित किया था)।

शकुनिसुत = उलूक (८. ८५, ३)।

शकुन्त, विश्वामित्र के पुत्र का नाम है (१३. ४, ५०)।

शकुन्तला, विश्वामित्र द्वारा मेनका के गर्भ से उत्पन्न पुत्री का नाम है। यह दुष्यन्त की पत्नी और भरत की माता थी : १. २, ९६; ६९, १. २ (दुष्यन्त ने शकुन्तला को महर्षि कण्व के आश्रम में देखा); ७१, ९. १८; ७२, ९ (विश्वामित्र और मेनका के गर्भ से उत्पन्न). १६ (निर्जने तु वने यस्माच्छकुन्तैः परिवारिता। शकुन्तलेति नामास्याः कृतं चापि ततो मया). १७. १८; ७३, ५. १५. २४. २८. ३२. ३४; ७४, १. १०. ११. १३. १६. ७३. ८२. १०९. १११-११४ (दुष्यन्त ने शकुन्तला के साथ गान्धर्व विवाह किया। तदनन्तर वे अपनी राजधानी लौट आये। शकुन्तला तब दुष्यन्त से उत्पन्न अपने पुत्र भरत को लेकर दुष्यन्त के पास आई किन्तु दुष्यन्त ने उसे और पुत्र भरत को नहीं पहचाना। बाद में जब आकाशवाणी ने शकुन्तला के कथन की सत्यता को प्रमाणित किया तब दुष्यन्त को विश्वास हुआ); ९५, २९-३१; ५. ११७, १५।

१. शक्त, राजा पूरु के पौत्र एवं मनस्यु के पुत्र जो सौवीरी के गर्भ से उत्पन्न हुये थे (१. ९४, ७)।

२. शक्त = शिव (सहस्रनाम)।

१. शक्ति, महर्षि वसिष्ठ के पुत्र और पराशर के पिता का नाम है : १. १७६, ६ (वसिष्ठकुलवर्धनम् ज्येष्ठं पुत्रं पुत्रशताद्वसिष्ठस्य). १४. १९. ३६. ३८. ४०-४२ (अपरान्पुत्रान्वसिष्ठस्य — इन्होंने राजा कल्माषपाद को राक्षस हो जाने का शाप दिया जिसके बाद राक्षस हुये कल्माषपाद ने वसिष्ठ के सभी पुत्रों का भक्षण कर लिया); १७७, १३. १४. १५ (इनके पुत्र पराशर का इनकी मृत्यु के बाद जन्म हुआ); १७८, १ (पराशर का जन्म); १८१, २. ३. ६; १८२, ५; १२. ३४९, ६ (वसिष्ठ के पुत्र, पराशर के पिता और व्यास के पितामह); १३. १६५, ४४ (उत्तर के ऋषियों में से एक)। तुकी० वासिष्ठ।

२. शक्ति = दुर्गा : ३. २२६, १४ (शक्त्या देव्याः साधनं)।

शक्तिज = पराशर (१. १८१, ६)।

शक्तिधर = स्कन्द (३. २३२, १०)

शक्तिपुत्र = पराशर (१२. ३४९, ६)।

शक्तिमतां श्रेष्ठः = विष्णु (सहस्रनाम)

शाक्तेय = पराशर (९. १८१, २१)।

शक्तेःपुत्रः = पराशर (१. ६०, २)।

१. शक्र = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

२. शक्र = शिव (सहस्रनाम)।

शक्रज = अर्जुन (देखिये वस्था०)।

शक्रदेव एक कलिङ्ग राजकुमार का नाम है : ६. ५४, १९ (भीमसेन से युद्ध किया). २०. २२. २४ (भीमसेन ने इसका वध किया). १२१।

शक्रनन्दन = अर्जुन (देखिये वस्था०)।

शक्रनमुचिसंवाद – भीष्म ने बताया कि दैत्यराज नमुचि राजलक्ष्मी से च्युत हो गये तब भी वे क्षोभरहित बने रहे। वे कालक्रम से होनेवाले प्राणियों के अभ्युदय और पराभव के तत्व को जाननेवाले थे। तब एक दिन शक्र (इन्द्र) ने उनके पास आकर इस प्रकार कहा : 'नमुचे ! तुम रस्सियों से बँधे, राज्य से भ्रष्ट हुये, शत्रुओं के वश में पड़े और धन-सम्पत्ति से वंचित हो गये। तुम्हें अपनी इस दुरावस्था पर शोक होता है या नहीं।' नमुचि ने इन्द्र से कहा : 'मैं शोक नहीं करता क्योंकि यह सम्पूर्ण वैभव नाशवान है। मुझे जो यह अवस्था प्राप्त हुई है वह ऐसी ही होनहार थी। गौतम मुनि भी अत्यन्त कष्टजनक विपत्ति में पड़कर और पदच्युत होकर भी मोहित नहीं हुये। मनुष्य को प्रारब्ध के विधान से जो कुछ पाना है उसीको वह पाता है। यह जान कर जो मनुष्य मोहित नहीं होता वह सब प्रकार के दुःखों में सकुशल रहता है और वही हर प्रकार से धनवान् है।' (१२. २२६)।"

शक्रपुत्र = वालिन् (३. १४७, २८)।

शक्रपुरी = इन्द्रप्रस्थ (देखिये वस्था०)।

शक्रप्रस्थ = इन्द्रप्रस्थ (देखिये वस्था०)।

शक्रभवन : ३. ४७, १ (इन्द्र से मिलने की इच्छा से लोमश शक्रभवन में आये); ५. १३५, १४।

शक्रलोक (इन्द्रलोक): १. १, १६५; ३. ४८, २; ५२, १ (अस्त्र-हेतोर्गते पार्थे शक्रलोकम्). २; ८३, १८२; ८४, १३९-१४० (ये तु दानं प्रयच्छन्ति निर्वीरासंगमे नराः। ते यान्ति नर शार्दूल शक्रलोकमनामयम्). १५३. १५९ (नन्दा में स्नान करने से यह लोक प्राप्त होता है); १६२, २६; २३६, २८ (अर्जुन शस्त्रों के लिये यहाँ आये); ५. १०, २०; ९. ३२, ५७; ११. ११, ३ (मृत्यु के बाद दुर्योधन शक्रलोक गया); १३. ९६, १९ (जो शतशलाका युक्त छत्र ब्राह्मण को दान करता है वह शक्रलोक प्राप्त करता है); १०२, ३९; १०७, ९४; १४२, ५६. ५९; १५०, ३३ (महेन्द्रगुरवः सप्त प्राची···शक्रलोके महीयते)।

शक्रवापिन् , गिरिव्रज के समीपस्थ गौतम के आश्रम के निकटवर्ती वन में रहनेवाले एक नाग का नाम है (२. २१, ९)।

शक्रशारथि – देखिये मातलि।

शक्रसुत = अर्जुन (देखिये वस्था०)।

शक्रसूनु = अर्जुन (देखिये वस्था०)।

शक्रस्य तीर्थम् : ३. ८२, ८१ (यहाँ स्नान करने से इन्द्रलोक प्राप्त होता है); ९. ४९, १ (इन्द्रतीर्थ)।

शक्राणी = शची (देखिये वस्था०)।

शक्रात्मज = अर्जुन (देखिये वस्था०)।

शक्रात्मजात्मज = अभिमन्यु (७. ३७, ३२)।

शक्रावर्त, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, २९)।

शची, देवराज इन्द्र की पत्नी का नाम है। यह पुलोमा की पुत्री और जयन्त की माता थी : १. ६१, ४४; ६७, १५७ (द्रौपदी इनके एक अंश से उत्पन्न हुई थी); १७३, ४८; २. ७, ४ (इन्द्र की सभा में); ११, ४२ (ब्रह्मा की सभा में); ३. ४६, ३८. ४६; ५३, ११; ५७, ४३; ११३, २३; ११५, १७; १६८, १२; ५. ११, १९ (नहुष के भय से बृहस्पति की शरण में गई); १२, २२. २३; १३, २३; १४, १३; १५, १; ५५, ५५ (इन्हें प्रसन्न करने के लिये इन्द्र ने कर्ण से उसके कुण्डल माँग लिये); १०४, ९; ११७, ८; ७. ९४, ४४; ९. ४५, १३ (स्कन्द के अभिषेक के समय उपस्थित); १२. ३४२, ४६; १३. १४६, ४।

तुकी० इनके निम्नलिखित पर्याय :–

इन्द्राणी : १. १९९, १; ३. ४६, ३८; ४. ९, १६; ५. १२, ९. १०. १२. १६. २२. २५. २८. ३१; १३, ६; १४, २. ५. १३; १५, ९; १२. ३४२, ५०।

पौलोमी : १. ११४, ४; २२१, ६४; ३. १८३, ७; २९१, ४०।

महेन्द्राणी : ३. ४१, १३; ५. १८, ४।

शक्राणी : ५. ११, २३. २६।

शचीपति = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

शठ, एक असुर का नाम है (१. ६५, १९)।

शतकुम्भा, एक नदी का नाम है : ३. ८४, १०-११; २२२, २२ (अग्नि की माताओं में से एक); ६. ९. १९ (भारतवर्ष में)।

१. शतक्रतु = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

२. शतक्रतु = शिव (सहस्रनाम)।

शतक्रतुप्रस्थ = इन्द्रप्रस्थ (३. २३, ११)।

१. शतघण्टा, एक शक्ति का नाम है जिसमें सौ घण्टे लगे थे (३. २८६, ३)।

२. शतघण्टा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ११)।

शतघ्निन् = शिव (सहस्रनाम)।

शतघ्नीपाशशक्तिमत् = शिव (सहस्रनाम)।

शतचन्द्र एक कौरवपक्षीय योद्धा का नाम है जिसका भीमसेन ने वध किया था (७. १५७, २३)।

शतजिह्व = शिव (सहस्रनाम)।

शतज्योति, शुभ्राट् के तीन पुत्रों में से एक का नाम है। इसके एक लाख पुत्र हुये (१. १, ४४-४५)।

शतद्युम्न, एक प्राचीन राजा का नाम है : १२. २३४, ३२ (ब्राह्मणों को सोने का गृह प्रदान करके स्वर्ग प्राप्त किया); १३. १३७, २१।

शतद्रु (°द्रू), आधुनिक सतलज नदी का प्राचीन नाम है : १. १७७. ९ (इसके नाम की व्युत्पत्ति); २. ९, १९ (वरुण की सभा में); ३. १८८, १०२ (मार्कण्डेयजी ने इसे भी नारायण के उदर में देखा); ६. ९, १५; ८. ४४, ३२; १३. १४६, १८ (उमा के पास आनेवाली नदियों में से एक); १६५, १९। अगला शब्द भी देखिये।

शतद्रुका = शतद्रु (८. ४४, १७)।

शतधन्वन् , एक राजा का नाम है : ३. १२, ३० (श्रीकृष्ण ने इसे परास्त किया था); १२. ४, ७ (कलिङ्गराज की पुत्री चित्राङ्गदा के स्वयंवर में आया)।

शतपथ = शतपथ ब्राह्मण : १२. ३१८, ११ (कृत्स्नं शतपथं चैव प्रणेष्यसि). १६. २३ (याज्ञवल्क्य ने इसकी रचना की थी); ३४२, ११ (शतपथे हि ब्राह्मणमुखे भवति)।

शतपर्वा, शुक्र की भार्या का नाम है (५. ११७, १३)।

शतबला, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, २०)।

शतभिषा, एक नक्षत्र का नाम है : १३. ६४, ३० (इस नक्षत्र में दान देने का फल); ११०, ८ (चान्द्रव्रत में इस नक्षत्र को चन्द्रदेव का 'हास' मानकर उसी भाव से पूजा करनी चाहिये)।

शतमन्यु = इन्द्र (८. ७०, ६)।

शतमाय एक असुर का नाम है (१२. ९८, ४९)।

शतमुख, एक महान असुर का नाम है। इसने सौ से अधिक वर्षों तक अपने मांस की आहुति दी थी जिससे सन्तुष्ट हो भगवान शङ्कर ने इसे वरदान दिया (१३. १४, ८४)।

शतमूर्ति = विष्णु (सहस्रनाम)।

शतयूप एक केकय राजर्षि जो अपने पुत्र को राज्य देकर कुरुक्षेत्र के वन में तपस्या करने चले गये थे : १५. १९, ९. १२ (धृतराष्ट्र आदि इन्हीं के आश्रम में आये थे। इन्होंने धृतराष्ट्र को आरण्यक विधि का उपदेश दिया था); २०, २. ६ (इनके पितामह का नाम सहस्रचित्य था). २१; २३, १७; २७, २१. १४।

शतरथ एक प्राचीन राजा का नाम है : १. १, २३३; २. ८, २६ (यम की सभा में)।

शतरुद्र = वेद का शतरुद्रिय-प्रकरण जिसमें रुद्रदेव के १०० नामों का उल्लेख है (१३. २५०, १४)।

शतरुद्रिय, यजुर्वेद के एक सूक्त का और महाभारत में आनेवाले कुछ श्लोकों का नाम है : ७. ८१, १३ (श्रीकृष्ण और अर्जुन ने इसका पाठ किया); २०२, १२० (वेदे चास्य समाम्नातं शतरुद्रियमुत्तमम्). १४८ (धन्यं यशस्यमायुष्यं पुण्यं वेदैश्च संमितम्। देवदेवस्य ते पार्थ व्याख्यातं शतरुद्रियम्), १५१; १२. २८४, १३८ (शिव सहस्रनाम); १३. १४, २८४. ३२१; १६०, २२; १६१, २३ (वेदे चास्य विदुर्विप्राः शतरुद्रीयमुत्तमम्। व्यासेनोक्तं च यच्चापि उपस्थानं महात्मनः)।

शतलोचन, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६०)।

शतशीर्षा, नागराज वासुकि की पत्नी का नाम है (५. ११७, १७)।

शतशृङ्ग एक पर्वत का नाम है : १. ११९, ५० (यहाँ पाण्डु ने तपस्या की थी); १२०, ८ (स्वर्ग पहुँचने के उद्देश्य से पाण्डु ने यहाँ से उत्तर दिशा की ओर प्रस्थान किया); १२३, ४८ (अर्जुन के जन्म के अवसर पर यहाँ के निवासियों ने हर्ष प्रकट किया); १२४, १९ (पाण्डु के पुत्रों का यहाँ के निवासियों ने नामकरण किया). २४; १२६, २२; २. ७९, १७ (पाण्डु की मृत्यु के बाद कुन्ती, शतशृङ्ग से हस्तिनापुर आई); ७. ८०, ३२ (स्वप्नावस्था में श्रीकृष्ण के साथ शिवधाम जाते समय अर्जुन को मार्ग में यह पर्वत भी मिला था); ८. ६८, १५ (अर्जुन के जन्म के समय इसके ऊपर से आकाशवाणी हुई); १२. ३२०, १८२ (सुलभा के पूर्वजों के यज्ञ में देवराज इन्द्र के सहयोग से द्रोण, शतशृङ्ग और चक्रद्वार नामक पर्वतों को ईंटों के स्थान पर चुना गया था)।

शतसहस्रक, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १५७)।

शतसहस्रांशु = सोम (१. १८, ३४)।

शतसाहस्रक एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, ७४)।

शतानन = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. शतानन्द एक ऋषि का नाम है : १३. २६, ८ (भीष्म को देखने आये)।

२. शतानन्द = विष्णु (सहस्रनाम)।

शतानन्दा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ११)।

१. शतानीक, द्रौपदी से उत्पन्न नकुल के पुत्र का नाम है : १. ६३, १२३; ६७, १२८ (द्रौपदी के पुत्र विश्वेदेवों के अंश से उत्पन्न हुये थे); ९५, ७५; २२१, ८४ (इनका जन्म। एक राजर्षि के आधार पर इनका यह नाम रक्खा गया); ३. २३५, १०; ६. ७९, ४२. ४५. ४७. ५३; ८४, ३९; ७. १६, ७ (वृषसेन पर आक्रमण किया); २३, ३० (इसके घोड़ों का वर्णन); २५, २२ (द्रोण की ओर बढे); ८८, ८ (पाण्डवसेना का व्यूहन किया); १०८, ३; १६५, १५; १६८, १. ३. ९ (धृतराष्ट्रपुत्र चित्रसेन से युद्ध किया); ८. २५, १३. १४. १७ (धृतराष्ट्रपुत्र श्रुतकर्मा से युद्ध किया); ४६, ३५; ४८, ४८; ५५, १४. १७ (अश्वत्थामा से युद्ध किया); ६०, २६; ७३, १०३; ७५, १०; ८२, २; ८५, ११. १९. २२; ९. २५, १७; १०. ८, ५७. ५८ (अश्वत्थामा ने इसका वध किया)।

तुकी० इसके निम्नलिखित पर्याय :

नकुलदायाद : ७. २५, २३।

नकुलस्यसुतः : ७. १६८, ११।

नकुलात्मज : ८. ८५, २१।

नाकुलि : १. ६३, १२३; ६७, १२८; २२१, ७९; ३. १२, ७३; २३५, १०; ६. ७९, ४६; ७. १६, ७; २३, ३०; ८८, ८; १०८, ३. ९; १६५, १५; १६८, २. ६. ८. १०; ८. ५६, ६५; ७३, १०३; ७५, १०; ८५, २१; ९. २५, १७; १०. ८, ५७।

२. शतानीक, परीक्षितपुत्र जनमेजय की पत्नी वपुष्टमा के गर्भ से उत्पन्न पुत्र का नाम है। इनका विवाह विदेह राजकुमारी के साथ हुआ था। इनके पुत्र का नाम अश्वमेधदत्त था (१. ९५, ८६)।

३. शतानीक, कुरुकुल के एक प्राचीन राजर्षि का नाम है : १. २२१, ८४ (इन्हीं के नाम के आधार पर नकुल ने अपने पुत्र का नाम भी शतानीक रक्खा था)।

४. शतानीक, मत्स्यराज विराट के भाई का नाम है : ४. ३१, १२. १३. २०. २४; ३२, १९; ६. ७५, ११ (?); ११८, २७ (भीष्म ने इसका वध किया); ७. २१, २५ (द्रोण पर आक्रमण किया); १६७, २९. ३०।

१. शतायुस्, पुरूरवा द्वारा उर्वशी के गर्भ से उत्पन्न छठवें पुत्र का नाम है. (१. ७५, २४-२५)।

२. शतायुस्, एक कौरव पक्षी योद्धा का नाम है : ६. ५१, १८ (दुर्योधन की सेना में); ७५, २२; ९. २, १९ (मारे गये योद्धाओं के साथ इसका उल्लेख)।

१. शतावर्त = शिव (सहस्रनाम)।

२. शतावर्त = विष्णु (सहस्रनाम)।

शतोदर = शिव (सहस्रनाम)।

शतोदरी एक मातृका का नाम है (९. ४६, १५)।

शतोलूखलमेखला, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १०)।

१. शत्रुघ्न, अयोध्यापति राजा दशरथ के पुत्र का नाम है : ३. २७४, ७. ८ (ये और लक्ष्मण सुमित्रा के गर्भ से उत्पन्न हुये थे); २९१, ६३।

२. शत्रुघ्न = विष्णु (सहस्रनाम)।

शत्रुजित् = विष्णु (सहस्रनाम)।

शत्रुजेतृ = स्कन्द (३. २३२, १४)।

१. शत्रुञ्जय, जयद्रथ के एक ध्वजवाहक का नाम है (३. २६५, १०)।

२. शत्रुञ्जय, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : ६. ५१, ८; ७९, ५६; ७. १३७, ३० (भीमसेन ने जिन सात धृतराष्ट्रपुत्रों का वध किया था उनमें यह भी एक था)।

३. शत्रुञ्जय, कर्ण के भ्राता का नाम है : ७. ३२, ६१ (अर्जुन ने इसका वध किया था)।

४. शत्रुञ्जय, एक कौरव योद्धा का नाम है जिसका अभिमन्यु ने वध किया था (७. ४८, २५)।

५. शत्रुञ्जय, द्रुपद के एक पुत्र का नाम है : ७. १५६, १८१ (अश्वत्थामा ने इसका वध किया था)।

६. शत्रुञ्जय, एक कौरव योद्धा का नाम है : ८. २७, ९. ११. १२ (अर्जुन के हाथों मारा गया)।

७. शत्रुञ्जय, एक सौवीर नरेश का नाम है : १२. १४०, ३. ४ (सौवीरेषु)।

शत्रुञ्जया, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ६)।

शत्रुतपन, एक दानव का नाम है (१. ६५, २९)।

शत्रुतापन = विष्णु (सहस्रनाम)।

शत्रुन्तप, कौरव पक्षीय एक योद्धा का नाम है : ४. ५४, ११. १२ (अर्जुन ने इसका वध किया था)।

शत्रुन्दम = शिव (सहस्रनाम)।

शत्रुविनाशन = शिव (सहस्रनाम)।

शत्रुसह, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : ४. ५४, ७; ६. ७९, ५६; ७. १३७, २९-३० (भीमसेन द्वारा मारे गये धृतराष्ट्र के पुत्रों में एक यह भी था)।

शत्रुहन् = शिव (सहस्रनाम)।

शनि = शिव (सहस्रनाम)।

१. शनैश्चर, शनिग्रह का नाम है जो सूर्य का पुत्र था : २. ११, २९ (ब्रह्मा की सभा में उपस्थित ग्रहों के साथ); ३. २८१, ६ (रोहिणीमेत्य शनैश्चर इव ग्रहः); ५. १४३, ९ (प्राजापत्यं हि नक्षत्रं ग्रहस्तीक्ष्णो महाद्युतिः। शनैश्चरः पीडयति पीडयन् प्राणिनोऽधिकम्); ६. २, ३२ (शकुनों के सन्दर्भ में इसका उल्लेख); ३, २७ (विशाखायाः समीपस्थौ बृहस्पतिशनैश्चरौ); १०४, २१ (समागतौ तौ तु रणे महामात्रौ व्यरोचताम्। यथा दिवि महाघोरौ राजन्बुधशनैश्चरौ); ९. ११, १० (चन्द्रमसोऽभ्याशे शनैश्चर इव ग्रहः); १२. ३४९, ५५ (सूर्यपुत्रो भविष्यति मनुर्महान्);

१३. १६५, १७। तुकी० सूर्यपुत्र।

२. शनैश्चर = सूर्य (३. ३, १८)।

शपथविधि — "भीष्म ने बताया : पूर्वकाल में कुछ राजर्षि और ब्रह्मर्षियों ने पश्चिम समुद्र के तट पर प्रभासतीर्थ में एकत्र हो कर सम्पूर्ण पृथिवी के तीर्थों की यात्रा का निश्चय किया। ऐसा निश्चय कर के शुक्र, अङ्गिरा, अगस्त्य, आदि अन्यान्य ऋषि तथा दिलीप, नहुष, ययाति आदि राजर्षि तीर्थों में भ्रमण करते हुये माघ मास की पूर्णिमा को पुण्यसलिला कौशिकी नदी के तट पर आये। वहाँ स्नान करके सभी लोग ब्रह्मसर तीर्थ में आये। जहाँ उन लोगों ने स्नान करने के बाद कमल के पुष्पों का आहार किया। कुछ ऋषि वहाँ कमल खोदने लगे तथा कुछ ब्राह्मण मृणाल उखाड़ने लगे। इसी बीच अगस्त्यजी के उस सरोवर से जितना कमल उखाड़ कर किनारे रक्खा था वह सब सहसा गायब हो गया। तब अगस्त्यजी ने यह जानना चाहा कि वे कमल किसने चुराये हैं। अगस्त्यजी ने वहाँ उपस्थित लोगों से कहा : "जब तक सभी श्रेष्ठ मनुष्य महान् पुरुषों की नीचों के समान अवहेलना नहीं करते तथा इस संसार में अज्ञानजनित तमोगुण का बाहुल्य नहीं हो जाता है उसके पूर्व ही मैं चिरकाल के लिये परलोक चला जाना चाहता हूँ क्योंकि इस जीव-जगत् की ऐसी दुरवस्था में नहीं देख सकता।" अगस्त्यजी की बात सुन कर ऋषिगण घबरा उठे और सबने शपथपूर्वक कमल न चुराने की बात कही। सभी ऋषियों ने निर्दोषिता प्रमाणित करने के लिये कठोर शपथ खाई। परन्तु इन्द्र ने कमल चुराने वाले के प्रति अभिशाप के बदले आशीर्वादात्मक शपथ खाई और स्वीकार किया कि कमल उन्होंने चुराये हैं। परन्तु इन्द्र ने कहा कि उन्होंने लोभवश नहीं बल्कि ऋषियों के मुख से धर्म की बातें सुनने की इच्छा से कमलों का अपहरण किया था। इन्द्र की बात सुन कर अगस्त्यजी ने उन्हें क्षमा कर दिया। तदनन्तर सभी लोग अन्य तीर्थों में जाने के लिये प्रस्थित हुये (१३. ९४)।

शबर (बहु० °राः) एक बर्बर और म्लेच्छ जाति का नाम है १. १७५, ३६ (वसिष्ठ की धेनु से इनकी उत्पत्ति का उल्लेख). ३७; ६. ५०, ५३ (युधिष्ठिर के क्रौञ्चव्यूह में); ७. ११९, ४६ (सात्यकि ने सहस्रों शबरों का वध किया); ९. ४०, २१ (वसिष्ठ की धेनु से उत्पन्न); १२. ६५, १३; १५२, ८; १६८, ३५ (शबरालये); १७१, ५; १७३, १६; २०७, ४२ (दक्षिण में); १३. १४, १४१ (शिवने किरात और शबर का रूप धारण किया); ३५, १५ (ये क्षत्रिय थे जो शूद्रत्व को प्राप्त हो गये थे); १४. २९, १६ (वृषलत्वं परिगताः)।

शबल, कश्यप द्वारा कद्रू के गर्भ से उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ३५, ७)।

शबलाक्ष, एक दिव्य महर्षि का नाम है जो बाण-शय्या पर पड़े भीष्म को देखने आये (१३. २६, ७)।

शबलाश्व, महाराज कुरु के पौत्र तथा अविक्षित के पुत्र का नाम है (१. ९४, ५२)।

शब्द, मूर्तिमान शब्द का नाम है : २. ११, २१ (ब्रह्मा की सभा में)।

शब्दसह, शब्दातिग = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. शम, अहः नामक वसु के चार पुत्रों में से एक का नाम है (१. ६६, २३)।

२. शम, धर्म के एक पुत्र और प्राप्ति के पति का नाम है (१. ६६, ३२)।

३. शम, एक कुलाङ्गार राजा का नाम है (५. ७४, १७)।

४. शम = विष्णु (सहस्रनाम)।

शमठ, एक विद्वान् ब्राह्मण का नाम है : ३. ९५, १७. १८ (इन्होंने युधिष्ठिर को अमूर्तरया के पुत्र राजा गय के यज्ञ का वृत्तान्त सुनाया)।

शमन = शिव (सहस्रनाम)।

शमशम, शमशम = शिव (सहस्रनाम)।

१. शमीक, एक मुनि का नाम है जो शृङ्गी के पिता थे; १. ४१, १०; ४२, ३. १७. २५ (इनका अपमान करने के कारण परीक्षितको इनके पुत्र शृङ्गी ने शाप दिया); २. ७, १६ (इन्द्र की सभा में); १५. ३५, ८।

२. शमीक, एक वृष्णिवंशीय वीर का नाम है : १. १८६, १९(द्रौपदी के स्वयंवर में आये); २. १४, ५८ (ये द्वारका के सात महारथियों में से एक थे); ७. ११, २८। (इसका शुद्ध पाठ समीक है)।

शम्पाक, एक परम शान्त, त्यागी और जीवनमुक्त ब्राह्मण का नाम है : १२. १७६, २. २३ (हस्तिनपुरे ब्राह्मणेनोपवर्णितम्। शम्पाकेन पुरा मह्यं)।

शम्बर एक दानव का नाम है : १. ६५, २२ (दनु के पुत्रों में द्वितीय); १३८, ४३; ३. १२०, १४ (शाम्ब ने इसकी सेना का संहार किया था); १६८, ८१ (इन्द्र ने इसे पराजित किया था); १७१, १८ (इसके विरुद्ध युद्ध में मातलि इन्द्र के सारथि थे); ५. १६, १४ (इन्द्र ने इसका वध किया था); ६८, ४ (श्रीकृष्ण ने इसे पराजित किया था); ७२, २२; १३४, १२; ६. १००, ५४; ७. २५, ६२-९६, ३०; १०६, ९; १०९, २; १६९, २४; १७५, २५; ८. १३, २२; ७४ ४८ (हत्वा कर्णं रणे कृष्ण शम्बरं मघवानिव); ८७, २५. ९१; ८४, ९; ९. ७, ३५; १५, ३२; १०. ११, २३; १२. ९८, ५० (इन्द्र ने इसका वध किया था); १०२, ३१ (इसके एक वाक्य का उद्धरण); १३०, ३३ (अत्रैतच्छम्बररयाहुर्महामायस्य दर्शनम्); १६६, २७; २२७, ४९ (यह पूर्वकाल में पृथिवी का शासक रह चुका था); १३. १४, २८ (शाम्बरे निहते पूर्वं रौक्मिणेयेन धीमता); ३६, १ (शक्रशम्बरसंवाद). २-४; ३९, ६। तुकी० दैत्य, दानवेन्द्र (१३. ३६, १९)।

शम्बर-पाकहन् — देखिये इन्द्र (वस्था०)।

शम्बरहन् — देखिये इन्द्र (वस्था०)।

शम्बुक, स्वधर्म को छोड़ कर परधर्म को अपनानेवाले एक शूद्र का नाम है। सुना जाता है कि श्रीराम द्वारा इसके मारे जाने पर एक मृत ब्राह्मणपुत्र पुनः जीवित हो उठा था (१२. १५३, ६७)।

शम्बूक, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७६)।

१. शम्भु, एक प्राचीन राजा का नाम है : १. १, २३४; १३. ११५, ७४।

२. शम्भु = ब्रह्मा : १. ६४, ४५; १२. ३०२, १६; ३१२, १३।

३. शम्भु = विष्णु (नारायण, कृष्ण): २. ३६, १६ (नारायण = श्रीकृष्ण); १२. ४३, ७; १३. १४९, १८ (सहस्रनाम); १४. ४०, २ (महानात्मा)।

४. शम्भु = शिव : ३. १२, ४० (हरि के मस्तक से उत्पन्न हुये); ३९, ७९; ९९, ३३; ५. १८८, ७; ७. २०१, ६३; २०२, १४. ९०; १२. २५६, २१; १३. १४, १. ४१६।

५. शम्भु, एक अग्नि का नाम है जिन्हें वेदों के विद्वान् ब्राह्मण अत्यन्त देदीप्यमान और तेजःपुञ्ज से सम्पन्न बताते हैं (३. २२१, ५)।

६. शम्भु, ग्यारह रुद्रों में से एक का नाम हैं (१३. १५० १२-१३)।

७. शम्भु, श्रीकृष्ण द्वारा रुक्मिणी से उत्पन्न एक पुत्र का नाम है (१३. १४, ३३)।

शम्यानिपात — भूमि या दूरी के नाप के लिये प्रयुक्त एक डण्डे को शम्या कहते हैं। एक बलवान् पुरुष डण्डे को पूरी शक्ति से यदि फेंके तो जहाँ डण्डा गिरेगा उतनी दूरी के स्थान को शम्यानिपात कहते हैं (३. ८४, ९)।

शम्यापात, भूमि या दूरी के नाप का बोधक है (१२. २९, ९५)। देखिये पिछला शब्द भी।

शयमान, शयित, शर = शिव (सहस्रनाम)।

१. शरण = विष्णु (सहस्रनाम)।

२. शरण, वासुकि-वंश में उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ५७, ६)।

१. शरण्य = शिव (सहस्रनाम) (१३. १७, १३३; १४. ८, ३२)।

२. शरण्य = सूर्य (३. ३, ६२)।

१. शरद्वत्, एक ऋषि का नाम है : १. ६३, १०७ (कृप और कृपी

के पिता)। "जनमेजय ने यह जानना चाहा कि कृपाचार्य का जन्म किस प्रकार हुआ। वैशम्पायन ने कहा : महर्षि गौतम के एक शरद्वान नामक पुत्र थे जो सरकण्डों के साथ उत्पन्न हुये थे। उनकी बुद्धि धनुर्वेद में अधिक लगती थी। उन्होंने तपस्यायुक्त हो कर सम्पूर्ण अस्त्र-शस्त्र प्राप्त किये। धनुर्वेद में उनकी उच्च गति को देखकर इन्द्र चिन्तित हो गये और उन्होंने जानपदी नामक एक कन्या को शरद्वान की तपस्या में विघ्न उत्पन्न करने के लिये कहा। उस देवकन्या ने इन्द्र के आदेशानुसार शरद्वान के आश्रम में आकर उन्हें लुभाना आरम्भ किया। उस कन्या को देख कर शरद्वान यद्यपि विचलित हुये तथापि अत्यन्त धैर्यपूर्वक अपनी मर्यादा में स्थित रहे। किन्तु उनके मन में सहसा जो विकार देखा गया उससे उनका वीर्य स्खलित हो गया यद्यपि उन्हें इसका आभास नहीं हुआ। तदनन्तर वे मुनि शरद्वान् अपना आश्रम और उस अप्सरा को छोड़ कर चल दिये। उनका वीर्य सरकण्डे के समुदाय पर गिर पड़ा और दो भागों में विभक्त हो गया। उनके उसी वीर्य से एक पुत्र और एक कन्या की उत्पत्ति हुई। उसी दिन राजा शन्तनु वन में शिकार खेलने आये थे। उनके किसी सैनिक ने उस युगल सन्तान को देखा। उन शिशुओं के पास ही धनुष-बाण और मृग चर्म आदि देख कर उन लोगों ने यह अनुमान किया कि वे दोनों शिशु किसी धनुर्वेद के पारङ्गत विद्वान ब्राह्मण की सन्तान हैं। शन्तनु उन बालकों को देखते ही कृपा से वशीभूत हो अपने साथ लाये और पालन-पोषण करने लगे। शन्तनु ने यह सोच कर कि उन्होंने दोनों शिशुओं को कृपापूर्वक पाला है, उनका नाम 'कृप' और 'कृपी' रख दिया। शरद्वान् ने अपने तपोबल से यह जान लिया कि शन्तनु के यहाँ उनकी सन्तान का पालन-पोषण हो रहा है। शरद्वान् ने तब गुप्त रूप से वहाँ आकर अपने पुत्र कृप को गोत्र आदि सब बातों का पूरा परिचय दे दिया। चार प्रकार के धनुर्वेद, नाना प्रकार के शस्त्र तथा सब के गूढ़ रहस्य का भी पूर्ण रूप से उसको उपदेश दिया। इस प्रकार कृप थोड़े ही दिनों में धनुर्वेद के आचार्य हो गये। धृतराष्ट्र और पाण्डु के पुत्रों तथा यदुवंशियों ने कृपाचार्य से ही धनुर्वेद की शिक्षा ग्रहण की थी।" (१. १३०)। १. १३०, २. ७. १४ (गौतमस्य); ५. १६६, २० (कृपः शरद्वतो). २१ (गौतमस्य महर्षेर्य आचार्यस्य शरद्वतः। कार्तिकेय इवाजेयः शरस्तम्बात्सुतोऽभवत्)। तुकी० गौतम।

२. शरद्वत् = कृप : १. १९०, ३३ (कृपात्); ५. १६५, २१ (कृपस्य); ११. १, २९ (कृपस्य)।

३. शरद्वत् (बहु०) : ५. ५७, ५८ (स वाह्लिकान् कुरून् ब्रूयाः प्रातिपेयान् शरद्वतः)।

१. शरभ, तक्षकवंशी एक नाग का नाम है (१. ५७, ९)।

२. शरभ, ऐरावत कुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ५७, ११)।

३. शरभ, कश्यप और दनु के विख्यात चौंतीस पुत्रों में से एक दानव का नाम है : १. ६५, २६; ६७, २७ (दैतेयानां महासुरः, जो राजर्षि पौरव के रूप में उत्पन्न हुआ)।

४. शरभ, एक ऋषि का नाम है : २. ८. १४ (यम की सभा में)।

५. शरभ, शिशुपाल के पुत्र का नाम है : ५. ५०, ४७ (चेदिराज धृष्टकेतु के अनुज जो पाण्डव-पक्ष में सम्मिलित हुये); १४. ८३, ३ (अश्वमेधीय अश्व की रक्षा कर रहे अर्जुन से युद्ध किया किन्तु अर्जुन ने इसे पराजित कर दिया)। तुकी० शिशुपालसुत।

६. शरभ, शकुनि के भ्राता का नाम है जिसका भीमसेन ने वध किया (७. १५७, २४-२६)।

७. शरभ = विष्णु (सहस्रनाम)।

८. शरभ, प्राचीनकाल के एक वनवासी और हिंसक पशु का नाम है जिसके आठ पैर और ऊपर की ओर नेत्र होते थे। इससे सिंह भी भयभीत रहते थे (१२. ११७, १२-१३)।

९. शरभङ्ग, एक प्राचीन ऋषि का नाम है जिनका उत्तराखण्ड में विख्यात आश्रम था : ३. ८४, ४२ (°आश्रमम्); ९०, ९ (आश्रमः); २७७, ४०. ४१ (रामदाशरथि ने इनका पूजन किया)।

शरवणालय = स्कन्द (१. ६६, २३)।

शरवणोद्भव = स्कन्द (३. २३२, ८)।

शरस्तम्ब, एक प्राचीन तीर्थ का नाम है : १३. २५, २८ (यहाँ के जलप्रपात में स्नान करनेवाला अप्सराओं द्वारा सेवित होता है)।

शरावती, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, २०)।

शरासन, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ११७, ४; ७. १३६, २०-२२ (भीमसेन द्वारा मारे गये धृतराष्ट्र के सात पुत्रों में एक यह भी था)।

शरिन् = शिव (सहस्रनाम)।

शरीरभूतभृत्, शरीरभृत = विष्णु (सहस्रनाम)।

शरु, एक देवगन्धर्व का नाम है : १. १२३, ५८ (अर्जुन के जन्मोत्सव में सम्मिलित हुआ)।

शर्मक (बहु० °काः) पूर्वोत्तर भारत की एक जाति का नाम है जिसे भीमसेन ने दिग्विजय के समय पराजित किया था (२. ३०, १३)।

शर्मन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

शर्मिन्, एक ब्राह्मण का नाम है : १३. ६८, ६ (अगस्त्यं गोत्रतश्चापि नामतश्चापि शर्मिणम्)।

शर्मिष्ठा, दानवराज वृषपर्वा की पुत्री का नाम है जो ययाति की दूसरी पत्नी थी : १. ७५, ३४. ३५ (द्रुह्यु, अनु और पूरु की माता); ७८, ६ (दुहिता वृषपर्वणः). ७. ९. १३. २८. ३२. ३३. ३५. ३६; ८०, १६-१८. २०. २२. २४; ८१, २. ५. ७. १०. १७. ३५. ३७; ८२. ३. ६. १०-१२. १६. १९. २१. २४-२६; ८३, १-३. ६. १०. १५. १७. २०. २८. ३५; ८४, १६; ८५, २१; ९१, ८. ९ (ययाति से इसने तीन पुत्र उत्पन्न किये); ५. १४९, ५ (पूरु की माता); ७. ६३, ६।

तुकी० इसके निम्नलिखित पर्याय :—

असुरेन्द्रसुता : १. ८१, ११।

असुरी : १. ७८, ८।

वार्षपर्वणी : १. ७८, ३३; ८१, ३५; ८२, ३. ६. १५; ८३, १०; ९५, ९।

शर्याति, वैवस्वत मनु के पुत्र एक प्राचीन नरेश का नाम है : १. १, २२६; २, १७०; ७५, १६ (वैवस्वत मनु के सातवें पुत्र); २. ८, १४ (यम की सभा में); ३. १२१, २१ (इनके यज्ञ में इन्द्र ने अश्विनों के साथ सोमपान किया था। इनके यज्ञ में ही च्यवन ने इन्द्र को स्तम्भित किया था और यहीं उन्होंने सुकन्या को भी प्राप्त किया); १२२, ५. १४. २१. २६ (इन्होंने अपनी पुत्री का च्यवन मुनि से विवाह किया); १२३, ४; १२४, १. २. ५. ६ (इनके यज्ञ का वर्णन); ७. ८४, १८; १३. ३०, ६ (इनके वंश में हैहय और तालजङ्घ नामक दो विख्यात राजा हुये थे); १४. ९, ३१।

शर्यातितनया = सुकन्या (३. १२३, ४)।

शर्यातिवन, एक पवित्र वन का नाम है जो स्वप्न में श्रीकृष्ण के साथ शिव के पास जाते समय अर्जुन को मार्ग में मिला था (७. ८०, २२)।

१. शर्व = शिव (देखिये वस्था०)।

२. शर्व = विष्णु (सहस्रनाम)।

शर्वरीकर = विष्णु (सहस्रनाम)।

शर्वाणी = उमा (१३. १५, ४)।

१. शल, वासुकि-वंश में उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ५७, ५)।

२. शल धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ११७, ४; ७. १२७, ३४ (अन्य भाइयों के साथ इसने भीमसेन को घेर कर उनसे युद्ध किया); ८. ५१, ८ (भीमसेन पर आक्रमण करनेवाले बीस धृतराष्ट्रपुत्रों में यह भी था)।

३. शल, कुरुवंशी राजा सोमदत्त के पुत्र और भूरिश्रवा के भ्राता का

नाम है : १. १८६, १५ (द्रौपदी के स्वयंवर में सम्मिलित हुये); २. ३४, ८ (युधिष्ठिर के राजसूय में आये); ३. ३६, ९; ५. २३, १०; ५५, ६५ (दुर्योधन की सेना के प्रमुख योद्धाओं में से एक); ५८, ७; ६१, २८; ६६, ५; १६०, १२३ (दुर्योध की सेना में); १६४, ८ (इसे चेकितान के समान योद्धा माना गया); १९५, १०; ६. १८, ११ (भीष्म की रक्षा की); २०, १०; ५१, १७ (भीष्म के व्यूह के बायें भाग में स्थित); ५६, ५; ५९, १३७; ८५, १८; १०२, २६; ११९, १५; ७. ३७, ५. २४ (अभिमन्यु पर आक्रमण किया); ७४, १५ (ये जयद्रथ की रक्षा करेंगे); ९५, ५०; १०४, ४; १०५, २४ (इनकी ध्वजा पर एक स्वर्ण का हाथी बना था और उसके चारों ओर सोने के ही मोर सुशोभित हो रहे थे); १५६, १५; १५८, ६६; ८. ७, १९; ११. २४, ९ (इनका वध हो गया था); २६, ३१ (इनका शवदाह किया गया); १५. ३२, १० (व्यासजी के आवाहन पर गङ्गाजी से प्रकट होनेवाले मृत योद्धाओं में ये भी थे); १८. ५, १६ (मृत्यु के बाद देवताओं में प्रविष्ट होने वालों में ये भी एक थे)।

४. शल, इक्ष्वाकुवंशी राजा परीक्षित के पुत्र का नाम है। इनकी माता माण्डूकराज की पुत्री सुशोभना थी। इनके दल और बल नामक दो भाई थे (३. १९२, ३८)।

शलकर, तक्षककुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ५७, ९)।

१. शलभ, दनु के चौंतीस पुत्रों में से एक का नाम है। इसने बाह्लीकराज प्रह्लाद के रूप में जन्म लिया (१. ६७, ३०)।

२. शलभ, पाण्डवपक्ष के एक महारथी योद्धा का नाम है : ८. ५६, ४९-५० (कर्ण ने इसका वध किया)।

३. शलभ (बहु० ॰भाः) एक पंखदार कीट का नाम है : १. ६६, ८ (पुलह की एक सन्तान)।

शलभी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २६)।

शलाग्रज = भूरिश्रवा (देखिये वस्था०)।

शल्य, पाण्डु-पत्नी माद्री के भ्राता और रुक्मरथ के पिता मद्रराज का नाम है : १. २, ३१ (ये महाभारत युद्ध के अट्ठारहवें दिन के पूर्वार्ध में कौरव सेना के सेनापति थे). ११४. २२३. २७२. २७९. २८२ (शल्यस्य निधनं); ६७, ६ (वाह्लीकपुङ्गवः, ये संह्राद नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुये थे); ११३, १३. १४. १६ (भीष्म से बहुमूल्य उपहार ग्रहण करने के बाद इन्होंने अपनी बहन माद्री का पाण्डु के साथ विवाह कर दिया); १८६, १३ (मद्रराजस्तथा शल्यः सह पुत्रो महारथः रुक्माङ्गदेन वीरेण तथा रुक्मरथेन च); १८७, १५. २८; १८८, ४. १९; १९०, ८. २३. २८. ३०. ३४ (द्रौपदी के स्वयंवर में ब्राह्मणों के वेष में उपस्थित पाण्डवों ने जब द्रौपदी को जीत लिया तब अनेक अन्य राजाओं के साथ शल्य ने पाण्डवों से युद्ध किया); २. ३२, १५ (मद्र देश के शाकल नामक नगर में आकर नकुल ने अपने मामा शल्य को युधिष्ठिर का प्रभुत्व स्वीकार करने के लिये विवश किया); ३४. ७ (युधिष्ठिर के राजसूय के समय उपस्थित हुये); ३७, १४ (भीष्म द्वारा अर्घा के समय उपेक्षित जिन राजाओं के नामों का शिशुपाल ने उल्लेख किया उनमें ये भी थे); ४४, २२; ५३, ९ (युधिष्ठिर की सेवा करनेवाले राजाओं के अन्तर्गत इनका उल्लेख); ५८, २४ (जूये के खेल के समय उपस्थित थे); ५. ४, ८ (पाण्डवों की ओर से इन्हें रणनिमन्त्रण भेजने का निश्चय किया गया); ८, १. १६. १९. २०. २३-२६. २८. ४५ (ये एक अक्षौहिणी सेना ले कर पाण्डवों के पास आ रहे थे किन्तु मार्ग में दुर्योधन के आतिथ्य-सत्कार से प्रसन्न होकर इन्होंने दुर्योधन का सेनापति बनना स्वीकार कर लिया। युधिष्ठिर को इन्होंने यह वचन दिया कि कर्ण का सारथि बनने पर ये कर्ण को हतोत्साहित करते रहेंगे); ९, २ (इन्होंने युधिष्ठिर को इन्द्र विजयोपाख्यान सुनाया). १५. ३८; १०, ५. १४. २७; ११, १; १२, १. १०. २४. २७; १३, १; १४, १; १५. १. १५. २१; १६, १०. २७. ३३; १७, १. ५. २०; १८, १. २१. २२. २४. २५; १९, १६ (एक अक्षौहिणी सेना के साथ दुर्योधन की सेना में सम्मिलित हुये); २५, ११; २७, २५; ४७, ६; ५५, ४३. ६३; ५७, ५०; ६०, १७; ६१, २८; १५५, ३२ (एक अक्षौहिणी सेना के सेनापति): १६०, ९५. १२२-१२३; १६१, १३; १६४, ६; १६५, २६ (एक अतिरथी वीर थे). २७ (भागिनेयान्निराँस्त्यक्त्वा); १९५, १०; ६. १६, १५; १७, २२. २७; ४३, २२. ७७. ७९. ८५-८७ (इन्होंने कर्ण के मनोबल को क्षीण करते रहने का युधिष्ठिर को आश्वासन दिया); ४५, २८ (युधिष्ठिर से युद्ध किया); ४७, २. १०, १९. ३६ (उत्तर के साथ युद्ध किया). ६२. ६३; ४८, १. ६३. ९५. १०१; ४९. २५. २८. ३९ (शङ्ख ने इनपर आक्रमण किया); ५०, ३७; ५१, २. १७; ५२, १४; ५५, २. ४. ६. ७; ५६, ५; ५९, १३७; ६०, २३; ६१, १. ८. १०. ११. ३६; ६२, ८. ९. ११. ३०; ६४, २७; ६५, ३१; ६९, २५; ७१, २१ (युधिष्ठिर से युद्ध किया); ७५, २८; ८१, २६ (नकुल और सहदेव ने इन पर आक्रमण किया); ८३, ४३ (मद्रेश्वर). ४९. ५१. ५२. ५५ (नकुल और सहदेव से युद्ध किया); ८५, १८. २७ (शिखण्डी से युद्ध किया); ८६, ५०; ९२, २३. ४३; ९४, १३; ९५, १३; ९७, ४; ९८, ४२; ९९, ४ (भीष्म के सर्वतोभद्र व्यूह के दाहिने पार्श्व में स्थित); १०३, ४३; १०५, २८. २९ (युधिष्ठिर पर आक्रमण किया): ११३, १. ४. ९. २४. २५. ३४. ३९ (भीमसेन से युद्ध किया); ११४, १. ६. २६; ११६, ४०. ४१ (मद्रराज); ११७, ४५. ४६; ११८, ५; ११९, १५; ७. १४, ३१ (नकुल से युद्ध किया). ७८. ८१. ८२ (अभिमन्यु से युद्ध किया); १५, ४. ६. ७. १४. १५. १७. ३० (भीमसेन से युद्ध); २०, ८ (द्रोण के गारुडव्यूह के दाहिने भाग में); ३२, ३९; ३४, २३; ३७, २५. ३३. ३४ (अभिमन्यु ने इन्हें पराजित किया); ३८, ३ (जब ये पराजित हो गये तब इनके छोटे भाई ने अभिमन्यु पर आक्रमण किया, किन्तु उसका वध हो गया); ३९, ५; ४५, १४; ४८, १३; ७४, ७ (मद्रेश). १५; ७५, २६ (मद्रराज); ९५, २८. ३४; ८७, १२; ९५, ३९. ५०; ९६, २९; १०४, २५. २६. ३१ (अर्जुन से युद्ध); १०५, १८ (इनकी ध्वजा के शीर्ष पर सीता की सुवर्ण प्रतिमा थी। यहाँ सीता से हल की रेखा का तात्पर्य है). २४; ११९, १९ (मद्रेश्वर); १४५, २०. २३. ५५. ८५. ८८; १४६, ५४. ९५. ९८; १४७, ६६; १४९, ५७; १५१, २२; १५६, १२२; १५८, ६०; १५९, ४६; १६०, ४; १६३, ११; १६४, २१; १६५, १४; १६७, ३६. ३७ (विराट की सेना का संहार किया); १७०, १६; १८७, २८; १९३, ११; १९८, ४१; ८. २, २१; ७, १० (तेजोवधं सूतपुत्रस्य संख्ये प्रतिश्रुत्याजातशत्रोः पुरस्तात्); ९, ८४; ११, १९; १३, १०; ३१, ५८. ५९, (कर्ण ने इन्हें अपना सारथि बनाना चाहा). ६१. ६२. ६४ (हयज्ञान में कोई इनके समान नहीं था); ३२, १७. २५. ३०-३२. ५२. ५४. ५९ (शल्यभूतस्तु शत्रूणां यस्मात्त्वं युधि मानद। तस्माच्छल्यो हि ते नाम कथ्यते पृथिवीतले). ६०. ६३; ३४, १२३. १२७. १६० (दुर्योधन ने इन्हें त्रिपुराख्यान और परशुराम की कथा सुनाया); ३५, ५. २३ (सर्वास्त्रविद्वीरः सर्वविद्यास्त्रपारगः। बाहुवीर्येण ते तुल्यः पृथिव्यां नास्तिकश्चन। शल्यभूतः शत्रूणामविषह्यः पराक्रमे). २८ (इन्होंने कर्ण का सारथि बनना स्वीकार कर लिया). ३२. ३४. ३६. ३७. ४०. ४१. ४५; ३६, २. ६. ११. १४. २४. २५. २७; ३७, १२. २४. २८. ३३. ४३. ४४; ३८, २६; ३९, १. ११ (कर्ण के सारथि बन जाने पर ये कर्ण को हतोत्साहित करने के लिये अर्जुन की प्रशंसा करते थे); ४०, १-६. १०. १३. २१ (कर्ण ने मद्रकों के दूषित आचारविचार की चर्चा की). ५३; ४१, १. ५६; ४२, १. २. ४. ७. १०. ११. २६. ३७. ४०.४३; ४३, २. ७-९; ४४, १. ३८; ४५, १. १०. १७. २२. ३७. ४०. ४७. ४८; ४६, ४०. ७५. ७६; ४९, ३०. ५३; ५०, ५. ६.१५. १९. २८. ३०. ३२; ५१, २१; ५७, १; ६३, २०. २९. ३०; ६४, ४३; ७३, १४. ६१ (मद्रजनाधिपम्).९८; ७८, ८. ११; ७९, ११. ४९. ५३. ६४. ६८. ७०; ८४, ८. १७; ८६, २; ८७, १६. ९०. ९९-१०३. १०६. १०८; ८९, ६३. ८४; ९०, २६; ९२, १; ९४, १. २. ३४; ९५, ४. ११; ९. १, ८. १०. २६; २, १६. ५०; ६, २. ५. १९. २२. २७ (इन्हें दुर्योधन की सेना का सेनापति चुना गया); ७, ९. २१. २५. ३५. ४०; ८, ६. ७. १४. १७. ३०. ३१; ९, ४०; १०, ५. ६; ११, ८. २०. २५. २६ २८. ३२. ३४. ३६. ४३. ४८. ५८.

५१. ६२; १२, १. १०. १३. १७. २६ (मद्राणामृषभं). ४७. ५३. ५९. ६२; १३, २. ४ (शल्यभूतं पराक्रमे). ८. १३. १७. २२. २४. २९. ३१. ३३. ४१. ४८; १५, ९. ११. १५. २०. ३०. ४३; १६, ७. ९. १०. १३. १८. २१. २६. ३२. ५३. ५४. ५६,६०. ६१. ६२; १७, २०. २२. २३. २९. ३७. ३८. ४९. ६१ (इन्होंने महाभारत युद्ध के अट्ठारहवें दिन केवल आधे दिन दुर्योधन की सेना के सेनापतित्व का भार वहन किया था। उसी दिन युधिष्ठिर ने इनका वध कर दिया). १०; १८, १ (निहते). ५; १९, ५ (हते). ७. १०; २४, २७; २७, १५ (मद्राजो हतः); ३२, ११; ३३, ४७; ५२, २६. २७; ५४, ३०; ५६, ३४; ६४, ८. ३१; ११. १, २८; १६, २१; २३, १. ४. ६. ८. ९; २६, ३१ (इनका शवदाह); १२. ५, १२; १४. ६०, ३. २५; १५. ३२, १० (व्यासजी के आवाहन पर गङ्गा से प्रकट हुये मृत योद्धाओं में ये भी थे।

तुक० इनके निम्नलिखित पर्याय भी :

आर्तायनि : ६. ६२, १४; ७. १४, ८७; १५, ३; ८. ७, ९; ३२, ५६ (ऋतमेव हि पूर्वास्ते वदन्ति पुरुषोत्तमाः। तस्मादार्तायनिः प्रोक्तो भवानिति मतिर्मम); ९. ७, २७; ११, ३३।

बाह्लीकपुङ्गव — देखिये वस्था०।

मद्रक : ८. ४३, ६।

मद्रकाधम (मद्रकों में अधम): ८. ४०, ५३ (कर्ण ने इन्हें फटकारा)।

मद्रकाधिप : ९. १६, १८।

मद्रकेश्वर : ६. ४३, ८८; ८. ४२, ४३।

मद्रजनाधिप : ८. ४४, ३; ७१, ६१; ९. १७, १२।

मद्रजनेश्वर : ८. ५०, २०; ९. ७, ३९।

मद्रप : १. ११३, ८; ८. ३७, ४१; ४०, ५१; ९. १२, २७; १७, १५।

मद्रपति : १. ११३, २; ८, ३७, ४१; ९२, १५; ९४, १; ९. १६, ६७; १७, १।

मद्रराज् : ६. ४३, ७६; ७. २५, १६; १४५, ९. ४२; ८. ३७, ३४; ९. ११, ४२; १३, २३; १७, ५३।

मद्रराज : १. १, १९८. २०७; २, २२२. २७१; ११३, ५; १८६, १३; २००, ३; ५. ८, १७. २७; १८, २२; ६०, १७; १६५, २६; ६. ४७, ४२. ६५; ४९, २९; ६२, १३; ८३, ४९. ५१. ५२; १०५, २६. ३०. ३२. ३४; ११३, २६; ११५, २९; ७. १५, ८. १९. २५; ३७, ५; ३९, ५; ७५, २६; १०४, ४. २८; १०५, १८; १०३, ४३; १३५, ७; १३७, १५; १४५, २०. ८५. ८८; १५८, ६०; १५९, १४; १६५, १४; १६७, २३. २५. ३०. ३२; १८७, २८; १९८, ४१; ८. २, २१; ९, ८४. ८८; ३१, ६३. ७३; ३२, १. १८. ६६; ३५, १३. ३५. ३६. ४४; ३६, १. ३-५. १०. ३३; ३८, २६; ४०, ५४; ४३, १; ५०, ४; ५१, २१; ५७, १; ६३, १५. १८. ३१; ६४, ४३; ७८, १०; ७९, १८; ९०, २५; ९१, ६५; ९. २, ६५. ६६; ७, १. २२. २५. २९. ३२. ३४. ३८; ८, ६. ११. १८. २१. २४. ४२; ९, ३९; १०, १. ४. ७. ५३. ५६; ११, २०. ११; १२, १२. १५. ३५. ५१. ५९; २३, १. २३. ३४. ३५. ३६. ३९. ४२. ४३; १५, १६. २१. २३. २४. २६. २८. २९. ३३. ३४. ४२; १६, १. ५. १४. १५. २९. ३१. ५६. ५७; १७, ३५. ४०. ७९; १८, १. ६. १५. २४. २७. २९. ३६. ३९; १९, १. २. ८. २३, २७; २३, २९; २७, १५; ३२, २१; ५४, २६; ११. २३, २. ६ (कुलाङ्गनाः). ७।

मद्रराजन् : ६. ४५, २८; ८१, २६; ११६, ४०; ७. ९६, २९; ८. ३५, ३१; ४०, ५६; ७३, १४; ९. १३, ३०; १४. ६०, २४।

मद्रराजेश्वरात्मज : ८. ३२, ६२।

मद्राणामधिपः : ७. १५, ३२; ८. ९, ८५ (सौवीरः); ९. ७, १२; १३, १९; १५, ३०. ३२।

मद्राणामीश्वर : १. १९०, ८; ७. ९५, ३९; १९३, ११; ८. ५०, १४. १८।

मद्राणामृषभः : ६. ७१, २०; ९. १२, २५।

मद्राधिप : २. ३७, १४; ५. २८, २५; ५७, १३; ६. ४९, २७; ५९, ११२; ६२, १४. १७; ८५, १४; ७. १५, ११. १२. २६. ३४; १४७, ६६; १६७, २७. ३१; ८. ३५, ४०; ४२, १; ४४, २; ५०, ५. ४८; ७३, ५५; ९२, ९; ९. १, २६; १२, ६. ७; १३, ३२; १६, ५९. ६६; १७, १०. १३. २५. २६. २९. ३९. ४१।

मद्राधिपति : १. १९०, ३४; ६. ४७, ३५; ६२, ८; ८. ९४, ६३; ९. ७, ६; १०, ५९; १७, ११. १७. १८. ३६. ४७।

मद्रेश : ७. २५, १६; ३७, १८; ३८, ३; ७४, ७; १४५, २३; ८. ३२, २२; ३३, १; ३४, १२४; ३७, ४३; ४६, ७४; ९. ११, २७. २८; १५, २२; १६, २८. ४७. ५३; १७, ५८; १४. ६०, २२।

मद्रेश्वर : १. २, २८०; ६. ४५, ३०; ८३, ४३. ५५; ११३, ३०; ११४, २८; ११६, ४१; ७. ११९, १९; ८. ३२, २. ४. ८. ५५; ३९, १३; ८६, ७; ९. ७, ३६; १३, ५. २८; १५, २०।

सौवीर — देखिये वस्था०।

१. शल्यपर्वन्, महाभारत के ९ वें प्रमुख पर्व का ना है : १. १, ९०; २, २७९. २८१; १८. ६, ६५ (इस पर्व के पाठ के समय दान में दी जानेवाली वस्तुओं का उल्लेख)।

२. शल्यपर्वन्, महाभारत के ८० वें अवान्तर पर्व का नाम है (१. २. ७१)। "जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायनजी ने बताया कि कर्ण के मारे जाने पर दुर्योधन अत्यधिक दुःखी और निराश हो गया। फिर भी दैव और भवितव्यता को प्रबल मान कर उसने संग्राम करते रहने का ही निश्चय किया। उसने शल्य को विधिपूर्वक सेनापति बनाया। शल्य ने युद्ध में भीषण संहार किया और मध्याह्न काल में धर्मराज युधिष्ठिर के हाथों मारे गये। तब दुर्योधन समराङ्गण से दूर जा कर शत्रु के भय से तालाब में छिप गया किन्तु उसी दिन अपराह्न काल में दुर्योधन पर घेरा डाल कर भीमसेन ने उसका वध कर दिया। दुर्योधन के मारे जाने पर बचे हुये तीन रथी, कृपाचार्य, कृतवर्मा और और अश्वत्थामा ने रात में सोते हुये पाञ्चालों और सोमकों को रोषपूर्वक मार डाला। तत्पश्चात् दुःख और शोक से आर्त संजय ने शिविर से आकर दीनभाव से हस्तिनापुर में प्रवेश किया। हस्तिनापुर की जनता सञ्जय को महान् क्लेश से युक्त देख कर अत्यन्त उद्विग्न हो उठी। तदनन्तर सञ्जय ने धृतराष्ट्र को दुर्योधन के वध का समाचार सुनाया। उस समय धृतराष्ट्र अपनी पुत्रवधुओं और पत्नी गान्धारी के साथ बैठे थे। सञ्जय द्वारा युद्ध में हत वीरों का समाचार जानकर धृतराष्ट्र मूर्च्छित हो कर भूमि पर गिर पड़े। वहाँ उपस्थित विदुरजी तथा कुरुकुल की स्त्रियाँ भी शोक से मूर्च्छित हो गईं। थोड़ी देर के बाद चेतना लौटने पर धृतराष्ट्र पुत्रशोक से चिन्तामग्न हो गये। धृतराष्ट्र ने अपने चतुर्दिक विलाप करती हुई स्त्रियों को अपने पास से अलग चले जाने के लिये कहा। स्त्रियों के चले जाने पर विदुर ने धृतराष्ट्र को सान्त्वना दी (९. १)।

"विलाप करते हुये धृतराष्ट्र ने सञ्जय से युद्ध का वृत्तान्त विस्तार से बताने के लिये कहा। उन्होंने यह जानना चाहा कि कर्ण की मृत्यु के बाद दुर्योधन तथा अन्य धार्तराष्ट्रों ने क्या किया। उन्होंने यह भी जानना चाहा कि अन्य योद्धा किस प्रकार मारे गये। (९. २)।

"सञ्जय ने बताया कि अर्जुन द्वारा कर्ण का वध कर दिये जाने पर सम्पूर्ण कौरव सेना इधर उधर भागने लगी। अनेक धृतराष्ट्र पुत्र भी युद्ध भूमि से पलायन करने लगे। किन्तु उस समय दुर्योधन ने साहस नहीं छोड़ा और अकेले ही भीम, अर्जुन, श्रीकृष्ण, तथा बचे हुये शत्रुओं से युद्ध करने का निश्चय करके अपनी सेना को उत्साहित किया। तब भयंकर युद्ध होने लगा जिसमें भीमसेन और धृष्टद्युम्न ने भीषण संहार किया। अर्जुन ने रथसेना पर आक्रमण किया। नकुल-सहदेव तथा सात्यकि शकुनि पर टूट पड़े। पाण्डव वीरों के इस प्रबल आक्रमण के फलस्वरूप कौरव सेना पराजित हो कर इधर-उधर भागने लगी। असंख्य शत्रुओं का वध करके चेकितान, शिखण्डी तथा, द्रौपदी के पाँचों पुत्र अपने-अपने शङ्ख बजाने

लगे। अर्जुन ने शेष कौरवसेना पर आक्रमण किया जिससे सभी सैनिक भाग चले। तब दुर्योधन ने अपनी सेना को पुनः संगठित करके अर्जुन तथा अन्य पाण्डवों से युद्ध करना आरम्भ किया। (९. ३)।

"कृपाचार्य ने कौरव सेना के भीषण संहार और आसन्न पराजय को देखते हुये दुर्योधन को सन्धि के लिये समझाया (९. ४) किन्तु दुर्योधन ने कृपाचार्य की बात स्वीकार नहीं किया। उसने अपनी सेना को पुनः प्रोत्साहित किया जिसके परिणामस्वरूप सम्पूर्ण सैनिकों के हृदय में पुनः युद्ध करने का उत्साह भर गया। तत्पश्चात सब योद्धाओं ने अपने-अपने वाहनों को विश्राम दे कर युद्ध का अभिनन्दन किया और आठ कोस से कुछ कम दूरी पर जा कर डेरा डाला। आकाश के नीचे हिमालय के शिखर की सुन्दर, पवित्र एवं चौरस वृक्षरहित भूमि पर अरुणसलिला सरस्वती के निकट जाकर उन सबने स्नान और जलपान किया। तदनन्तर वे सभी कालप्रेरित क्षत्रिय दुर्योधन के प्रोत्साहन पर पुनः रणभूमि की ओर लौट पड़े (९. ५)।

"हिमालय के ऊपर की चौरस भूमि में डेरा डालकर युद्ध का अभिनन्दन करनेवाले सभी महान योद्धा वहाँ एकत्र हुये और दुर्योधन से नवीन सेनापति की नियुक्ति करने के लिये कहा। अश्वत्थामा ने शल्य को सेनापति बनाने का प्रस्ताव किया। दुर्योधन ने इस प्रस्ताव को स्वीकार करके शल्य से तदनुसार निवेदन किया। शल्य ने भी सेनापति बनना स्वीकार कर लिया (९. ६)।

"शल्य ने शत्रुओं के संहार का वचन दिया। सेनापति के पद पर शल्य का अभिषेक किया गया जिससे सम्पूर्ण सेना में हर्ष व्याप्त हो गया। शल्य ने यह निश्चय व्यक्त किया कि वे या तो शत्रुओं का संहार कर डालेंगे अथवा स्वयं अपने प्राणों की आहुति दे डालेंगे। शल्य का नेतृत्व प्राप्त हो जाने पर सेना ने कर्ण की अनुपस्थिति के दुःख का त्याग कर दिया। उस रात सब ने शान्तिपूर्वक विश्राम और अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव किया। युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण से परामर्श किया। श्रीकृष्ण ने शल्य की प्रशंसा करते हुये उन्हें भीष्म के समान और शिखण्डी से श्रेष्ठ बताया। श्रीकृष्ण के विचार से केवल युधिष्ठिर ही शल्य की बराबरी कर सकते थे। अतः उन्होंने युधिष्ठिर से शल्य का वध करने के लिये कहा। श्रीकृष्ण के चले जाने पर युधिष्ठिर ने अपने भ्राताओं और सोमकों को विदा करके प्रसन्नतापूर्वक रात्रिविश्राम किया। कर्ण की मृत्यु से प्रसन्न पाण्डव और पाञ्चाल योद्धाओं ने भी रात सुखपूर्वक व्यतीत की। (९. ७)।

अठारहवें दिन के पूर्वाह्न का युद्ध : रात बीत जाने पर दुर्योधन ने अपनी सेना को तैयार होने का आदेश दिया। शल्य के नेतृत्व में कौरव सेना अनेक भागों में विभक्त हो कर भिन्न-भिन्न दलों में खड़ी हो गई। कृपाचार्य, कृतवर्मा, अश्वत्थामा, शल्य, शकुनि तथा बचे हुये अन्य नरेशों ने यह नियम बनाया कि सभी योद्धा संगठित रूप से युद्ध करेंगे। यदि कोई अकेला पाण्डवों के साथ युद्ध करेगा, अथवा जो पाण्डवों के साथ युद्ध करते हुये वीर को अकेला छोड़ देगा वह पाँच पातकों तथा उपपातकों से युक्त होगा। ऐसा नियम बना कर शल्य के नेतृत्व में कौरव सेना ने शत्रुओं पर आक्रमण कर दिया। सञ्जय ने धृतराष्ट्र को बताया कि द्रोण, भीष्म और कर्ण के मारे जाने पर भी दुर्योधन यह समझता था कि शल्य रणभूमि में सम्पूर्ण कुन्तीकुमारों का वध कर डालेंगे। शल्य ने भी सब को विजय का आश्वासन दे कर सर्वतोभद्र व्यूह का निर्माण किया और सिन्धी घोड़ों से जुते श्रेष्ठ रथ पर बैठ कर अपने धनुष को कँपाते हुये अपने व्यूह के मुखस्थान में स्थित हुये। उनके साथ मद्रदेशीय सैनिक तथा कर्ण के दुर्जय पुत्र भी थे (व्यूह के विभिन्न भागों में स्थित वीरों का वर्णन)। पाण्डवों ने भी अपनी सेना का व्यूहन कर तीन भागों में विभक्त हो कौरवों पर आक्रमण किया। युधिष्ठिर ने शल्य को मार डालने की इच्छा से उन पर आक्रमण किया। अर्जुन ने कृतवर्मा और संशप्तकों पर आक्रमण किया। भीमसेन ने सोमकों और कृपाचार्य पर तथा नकुल सहदेव ने शकुनी और उलूक से युद्ध किया। उस समय कौरवों के पास ग्यारह सहस्र रथ, दस सहस्र सात सौ हाथी, दो लाख घोड़े और तीन करोड़ पैदल सेना थी। इसके विपरीत पाण्डवों के पास छः हजार रथ, छः हजार हाथी, दस हजार घोड़े और दो करोड़ पैदल सैनिक थे। दोनों पक्षों की सेना ने युद्ध की इच्छा से एक दूसरे पर प्रबल आक्रमण आरम्भ कर दिया (९. ८)।

"दोनों पक्षों में घमासान युद्ध होने लगा। भीषण नरसंहार हुआ। अर्जुन और भीमसेन ने कौरव सेना को मूर्छित कर दिया। धृष्टद्युम्न और शिखण्डी ने भी युधिष्ठिर को आगे करके शल्य पर धावा किया। नकुल-सहदेव भी शल्य पर चढ़ आये। पाण्डव सेना द्वारा कौरवों का भयंकर संहार हुआ जिससे त्रस्त हो कर दुर्योधन की सेना भाग चली (९. ९)।

"अपनी सेना के पलायन को देख कर मद्रराज शल्य युधिष्ठिर के साथ युद्ध करने के लिये आगे बढ़े। उन्होंने पाण्डवों की विशाल सेना को रोक दिया। उनके पराक्रम को देख कर भागते हुये कौरव सैनिक पुनः लौट आये। नकुल ने कर्ण के तीन पुत्रों का वध कर दिया। शल्य ने अपनी सेना पुनः संगठित करके भीषण युद्ध किया। कौरव भी शल्य को चारों ओर से घेर कर युद्ध करने लगे। संशप्तकों का वध करके अर्जुन तथा धृष्टद्युम्न भी वहाँ आ गये। परिणामस्वरूप दोनों पक्षों में भीषण युद्ध होने लगा (९. १०)।

"युधिष्ठिर की सेना के विरुद्ध शल्य ने महान पराक्रम दिखाते हुये युद्ध किया। उस समय अनेक अशुभसूचक निमित्त प्रकट होने लगे। शल्य और युधिष्ठिर का युद्ध हुआ जिसमें दोनों पक्ष के बहुत से सैनिक हताहत हुये। पाण्डव सेना भाग कर युधिष्ठिर के पास चली आई। कृतवर्मा↔भीमसेन. कृप↔धृष्टद्युम्न, शकुनि↔द्रौपदेय, अश्वत्थामा↔नकुल-सहदेव, दुर्योधन↔श्रीकृष्ण और अर्जुन, के बीच भयंकर युद्ध होने लगा। भोजराज ने भीमसेन के और शल्य ने सहदेव के घोड़ों का वध कर दिया। सहदेव ने शल्य के पुत्र का वध किया। भीमसेन ने कृतवर्मा के रथ और घोड़ों को नष्ट कर दिया जिससे कृतवर्मा युद्धभूमि से भाग गये। शल्य और युधिष्ठिर के बीच घोर संग्राम होने लगा। भीम अपनी गदा लेकर शल्य पर टूट पड़े (९. ११)।

"शल्य और भीमसेन में गदा युद्ध होने लगा। संसार में शल्य अथवा बलरामजी के अतिरिक्त अन्य कोई ऐसा योद्धा नहीं था जो गदायुद्ध में भीमसेन के वेग को सहन कर सके। इसी प्रकार भीमसेन के अतिरिक्त अन्य कोई भी शल्य का सामना नहीं कर सकता था। कृपाचार्य शल्य को अपने रथ पर बैठाकर दूर हटा ले गये। शल्य के प्रहार से भीमसेन भी अचेत हो गये थे। दुर्योधन के नेतृत्व में कौरव सेना पाण्डवों से युद्ध करने लगी। दुर्योधन↔चेकितान, कृप↔युधिष्ठिर, दुर्योधन↔धृष्टद्युम्न, दुर्योधन द्वारा भेजे ३,००० रथियों के साथ अश्वत्थामा↔अर्जुन; शल्य+चन्द्रसेन+द्रुमसेन↔युधिष्ठिर+२५ चेदिवीरों, आदि का भीषण संग्राम हुआ जिसमें युधिष्ठिर को शल्य ने अपने बाणप्रहार से अत्यधिक पीड़ित कर दिया (९. १२)।

"सात्यकि, भीमसेन+युधिष्ठिर के साथ शल्य का अभूतपूर्व संग्राम हुआ जिसमें शल्य के पराक्रम को देख कर सिद्ध और महर्षि भी आश्चर्य प्रकट करने लगे। दुर्योधन ने तो पाण्डवों, पाञ्चालों और सृञ्जयों को मारा गया ही मान लिया। सभी पाण्डव-वीरों ने शल्य पर आक्रमण किया किन्तु उन्होंने अपूर्व पराक्रम प्रकट करते हुये पाण्डवों को अत्यधिक पीड़ित कर दिया। शल्य की बाणवर्षा से पाण्डव सैनिकों को विचलित होते देख कर देवता, गन्धर्व और दानव भी अत्यन्त आश्चर्यचकित हो उठे। पाण्डवों के कोई भी महारथी उस युद्ध में शल्य की ओर आगे बढ़ने में समर्थ नहीं हो सके। फिर भी युधिष्ठिर को आगे रखकर भीमसेन आदि महारथी समरभूमि में डटे रहे (९. १३)।

"अर्जुन ने अश्वत्थामा और त्रिगर्तों से युद्ध करते हुये २,००० रथों को नष्ट कर दिया। अश्वत्थामा ने पाञ्चालों से युद्ध करते हुये सुरथ का वध कर दिया। तदनन्तर संशप्तकों को लेकर अश्वत्थामा ने अर्जुन से युद्ध किया। (९. १४)।

"दुर्योधन↔धृष्टद्युम्न; शिखण्डी+प्रभद्रक↔कृतवर्मा+कृप; शल्य↔

भीम+अन्य पाण्डव+सात्यकि; नकुल+युधिष्ठिर↔शल्य; युधिष्ठिरआदि↔शल्य; भीमसेन+ सात्यकि↔शल्य जिसमें शल्य ने सात्यकि को रथविहीन कर दिया; दूसरे रथ पर बैठे सात्यकि↔शल्य, के बीच घोर युद्ध हुआ (९. १५)।

"संख्या में अधिक होने के कारण कौरव सैनिकों ने पाण्डव सेना को त्रस्त कर दिया। कौरवों की मार खा कर पाण्डव योद्धा श्रीकृष्ण और अर्जुन के देखते देखते भीमसेन के रोकने पर भी वहाँ ठहर नहीं सके। दूसरी ओर अर्जुन ने कृपाचार्य और कृतवर्मा को बाणसमूहों से ढँक दिया। सहदेव ने शकुनि को बाणों से आच्छादित कर दिया। द्रौपदी के पाँचों पुत्रों ने अनेक राजाओं को तथा शिखण्डी ने अश्वत्थामा की प्रगति रोक दिया। इसी प्रकार भीमसेन ने दुर्योधन को और युधिष्ठिर ने शल्य को रोका। शल्य के अस्त्रविद्या का ज्ञान देख कर कौरव और पाण्डव दोनों पक्ष के सैनिक उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा कर रहे थे। युधिष्ठिर ने शल्य का वध करने के निश्चय से युद्ध आरम्भ किया। उन्होंने नकुल और सहदेव को अपना चक्ररक्षक बनाया। सात्यकि और धृष्टद्युम्न को भी उन्होंने चक्ररक्षक के कार्य पर नियुक्त किया। अर्जुन को उन्होंने अपने पृष्ठ भाग की रक्षा का भार सौंपा और भीमसेन से अपने आगे-आगे चलने के लिये कहा। ऐसी व्यवस्था करके युधिष्ठिर ने अपने को शल्य से अधिक शक्तिशाली माना। तदनन्तर युधिष्ठिर ने शल्य पर आक्रमण किया। दोनों पक्षों के बीच तब घोर संग्राम छिड़ गया। दुर्योधन ने भीमसेन की ध्वजा को काट कर उनका धनुष भी काट दिया। भीम ने दुर्योधन के वक्ष पर प्रहार किया जिससे दुर्योधन रथ के पिछले भाग में मूर्च्छित होकर बैठ गया। भीम ने उसके सारथि का भी वध कर दिया। युधिष्ठिर ने भी शल्य पर घोर बाणवर्षा आरम्भ की। युधिष्ठिर ने शल्य के पार्श्वरक्षकों को मार कर उनकी ध्वजा को भी काट दिया। भयभीत हो कर दुर्योधन की सेना वहाँ से भाग खड़ी हुई। अश्वत्थामा दौड़कर शल्य की रक्षा के लिये आये और शल्य को अपने रथ पर बैठाकर दूर भाग गये। युधिष्ठिर ने दो घड़ी तक उनका पीछा किया। तत्पश्चात शल्य एक दूसरे रथ पर बैठ गये (९. १६)।

"शल्य एक दूसरा अत्यन्त वेगशाली धनुष हाथ में लेकर युधिष्ठिर को आहत करके गर्जना करने लगे। उन्होंने सात्यकि, भीम तथा सहदेव को बाणों से पीड़ित किया। इस प्रकार पराक्रम दिखाते हुये शल्य ने पाण्डवों की सेना का भीषण संहार किया। पाण्डवों ने भी पाञ्चाल और सोमक योद्धाओं के साथ मिल कर शल्य को चारों ओर से घेर दिया। युधिष्ठिर ने भीम, सहदेव तथा सात्यकि से सुरक्षित हो कर शल्य पर बाणप्रहार आरम्भ किया। शल्य
ने भी प्रत्याक्रमण किया जिससे दोनों पक्षों में तुमुल युद्ध होने लगा। शल्य
ने युधिष्ठिर के सारथि और घोड़ों को मार डाला। भीम ने अभूतपूर्व पराक्रम
दिखाते हुये शल्य के धनुष को काट कर उनके सारथि का भी वध कर दिया।
युधिष्ठिर ने मणि और सुवर्णमय दण्ड से युक्त शक्ति हाथ में ली और मन ही
मन कुपित हो सहसा रोष से जलती हुई आँखों से मद्रराज शल्य की ओर
देखा। फिर भी शल्य जल कर भस्म नहीं हुये यह अद्भुत बात प्रतीत हुई।
युधिष्ठिर ने तदनन्तर अपनी शक्ति का शल्य पर प्रहार किया। पाण्डवों ने यत्न-
पूर्वक उस शक्ति की पूजा की थी और शङ्कर के लिये विश्वकर्मा ने उसका निर्माण
किया था। युधिष्ठिर द्वारा प्रयुक्त वह शक्ति शल्य के मर्मस्थानों को विदीर्ण
करके धरती में समा गई। विशालकाय शल्य पर्वत शिखर की भाँति रथ से
पृथिवी पर गिर पड़े। उनके सारे अङ्ग विदीर्ण हो गये थे फिर भी लक्ष्मी
मद्रराज को छोड़ नहीं रही थी। शल्य के मारे जाने पर उनका छोटा भाई
युधिष्ठिर से युद्ध करने के लिये उपस्थित हुआ परन्तु युधिष्ठिर ने उसका वध
कर दिया। तब सम्पूर्ण कौरव हाहाकार करते हुये भागने लगे। सात्यकि ने
इन भागते हुये कौरवों का पीछा किया। कृतवर्मा ने सात्यकि से युद्ध करना
आरम्भ किया। सात्यकि ने कृतवर्मा के घोड़ों और सारथि का वध करके कृत-
वर्मा को भी आहत किया। तब कृपाचार्य उन्हें अपने रथ पर बैठा कर रणभूमि
से दूर हटा ले गये। कौरव सेना के इस पलायन को देख कर दुर्योधन ने

अकेले ही पाण्डव योद्धाओं को रोकना आरम्भ किया। कृतवर्मा भी एक दूसरे रथ में बैठ कर दुर्योधन की सहायता के लिये आ गये। युधिष्ठिर द्वारा शल्य का वध कर देने के पश्चात सभी पाण्डव हर्ष से भर गये और युधिष्ठिर की स्तुति करने लगे। (९. १७)।

"लगभग १,७०० मद्रकों ने राजा शल्य की मृत्यु का प्रतिशोध लेने का निश्चय किया। जब शल्य के ये अनुगामी युद्ध के लिये निकलने लगे तब दुर्योधन ने इन्हें रोका वरन्तु बार-बार रोकने पर भी ये मद्रक वीर युधिष्ठिर के वध की इच्छा से पाण्डवों की सेना में जा घुसे। युधिष्ठिर पर किये गये इस आक्रमण का समाचार सुन कर अर्जुन वहाँ आ गये। भीमसेन, नकुल-सहदेव, द्रौपदी के पाँचों पुत्र, धृष्टद्युम्न, शिखण्डी तथा पाञ्चाल और सोमक वीरोंने भी वहाँ आ कर आक्रामक मद्रकों को घेर कर उनका वध कर दिया। प्रकृति में अनेक अपशकुन प्रकट हुये। मद्रराज शल्य पहले ही मारे जा चुके थे। उनकी सेना का भी इस प्रकार वध हो जाने पर कौरव सेना पुनः भाग खड़ी हुई (९. १८)।

"शल्य के मारे जाने के बाद कौरव सैनिक और धृतराष्ट्रपुत्र भी संग्राम से विमुख हो गये। भीष्म, द्रोण, कर्ण आदि के मारे जाने का जितना दुःख नहीं हुआ उससे कहीं अधिक दुःख शल्य की मृत्यु पर हुआ। उन्हें सभी कौरव प्रायः हताश हो कर दोपहर में युद्ध विमुख हो गये। उन्हें हतोत्साह, पराजित और हताश हो कर भागते देख पाञ्चाल और पाण्डव उनका पीछा करते हुये आपस में युधिष्ठिर की विजय पर प्रसन्नता प्रकट करने लगे। इसी समय अर्जुन ने कौरवों की रथ सेना पर और नकुल-सहदेव एवं सात्यकि ने शकुनि पर आक्रमण कर दिया। तब दुर्योधन ने वीरोचित भाषण द्वारा अपने वीरों को पुनः युद्ध के लिये सन्नद्ध किया। २१,०० पैदल सेना एकत्र कर और जीवन का मोह छोड़ कर दुर्योधन ने पाण्डवों से युद्ध आरम्भ किया। भयंकर संग्राम हुआ और भीमसेन ने अपनी गदा से उन २१,००० पैदल सैनिकों को मार डाला। तत्पश्चात युधिष्ठिर आदि महारथी वीर दुर्योधन की ओर दौड़े किन्तु दुर्योधन ने उन सब को रोक दिया। उसने भागते सैनिकों को पुनः उत्साहित करने का प्रयास किया जिससे सब सैनिक पुनः लौट आये। तब अर्जुन, सात्यकि, नकुल-सहदेव, आदि सभी उत्साह में भर कर कौरव सेना पर टूट पड़े (९. १९)।

"जब कौरव पक्ष का जनसमूह पुनः युद्ध के लिये लौट आया उस समय म्लेच्छराज शाल्व एक विशाल गजराज पर बैठ कर पाण्डवों का सामना करने आये। उन्होंने अपने हाथी पर बैठ कर बाणों द्वारा पाण्डवों पर प्रहार आरम्भ कर दिया। उनके हाथी ने बहुत से सैनिकों को कुचल कर मार डाला। शाल्व के इस प्रहार से पाण्डवसेना में भगदड़ मच गई। तब पाण्डवों के महारथी वीर धृष्टद्युम्न शाल्व का सामना करने के लिये आये। उन्होंने शाल्व के गजराज को नाराचों द्वारा आहत कर दिया जिससे वह युद्ध से मुँह मोड़ कर वेगपूर्व भागने लगा। शाल्व ने हाथी को पुनः युद्धस्थल में लौटाया और तब उसने धृष्टद्युम्न के रथ को ध्वस्त कर उसके सारथि को भी कुचल कर मार डाला। धृष्टद्युम्न के इस संकट को देख कर भीमसेन, सात्यकि, और शिखण्डी उनकी सहायता के लिये आ गये। शाल्व ने अत्यन्त वीरतापूर्वक युद्ध करते हुये पाण्डवों की प्रगति को रोक दिया। परन्तु धृष्टद्युम्न ने गदाप्रहार द्वारा शाल्व के गजराज का कुम्भस्थल विदीर्ण कर दिया जिससे वह भूमि पर गिर कर मृत्यु को प्राप्त हो गया। सात्यकि ने एक तीक्ष्ण भाले से शाल्व का सर भी काट दिया। इस प्रकार शाल्व और उनके गजराज, दोनों का वध हो गया (९. २०)।

"शाल्व की मृत्यु के बाद कृतवर्मा ने युद्ध करते हुये पाण्डवों को रोकने का प्रयास किया। सात्यकि ने कृतवर्मा से घोर युद्ध करते हुये उन्हें पराजित किया। क्षेमधूर्ति का भी सात्यकि ने वध कर दिया। इस प्रकार कृतवर्मा के पराजित हो जाने पर कौरव सेना ने पुनः पलायन किया (९. २१)।

"अपनी सेना को पलायन करता देख दुर्योधन ने अपूर्व पराक्रम प्रकट करते हुये पाण्डवों से युद्ध आरम्भ किया। दोनों पक्ष की सेनाओं का परस्पर घोर संग्राम होने लगा (९. २२)।

जब इस प्रकार भयानक संग्राम होने लगा उस समय पाण्डवों ने कौरव सेना के पाँव उखाड़ दिये। उन लोगों ने कौरव पक्ष के सात सौ रथियों का वध कर दिया। तदनन्तर दोनों पक्षों में घोर संग्राम होने लगा। यह युद्ध सब ओर से मर्यादाशून्य और औचित्य की सीमा का उल्लंघन करनेवाला था। चारों ओर विनाश की सूचना देनेवाले अति दारुण उत्पात प्रकट होने लगे। शकुनि ने कूटयुद्ध का आश्रय लेकर पाण्डव सेना पर पीछे से आक्रमण किया। दोनों पक्ष के योद्धा परस्पर विजय के लिये पिता, भ्राता, मित्र और पुत्रों का भी वध करने लगे जिसके परिणामस्वरूप भयंकर नरसंहार हुआ (९. २३)।

"शकुनि ने अपने ७०० अश्वों की सेना को साथ लेकर दुर्योधन से पाण्डवों पर आक्रमण करने के लिये कहा। श्रीकृष्ण के सम्मुख अर्जुन ने दुर्योधन के दुराग्रह की निन्दा की और उसके बाद उन्होंने कौरवों की रथसेना का भीषण संहार किया (९. २४)।

"अर्जुन और भीमसेन ने कौरवों की रथसेना एवं गजसेना का संहार किया। दूसरी ओर धृष्टद्युम्न ने समराङ्गण में दुर्योधन को पराजित कर दिया जिससे वह भाग गया। तब दुर्योधन को न देख कर अश्वत्थामा, कृपाचार्य और कृतवर्मा उसे खोजने लगे। सम्पूर्ण कौरव सेना पराजित हो कर पलायन करने लगी। सात्यकि ने सञ्जय की युद्ध सामग्री ध्वस्त करके उन्हें जीवित ही बन्दी बना लिया। सभी कौरव योद्धा दुर्योधन को न देखने के कारण उद्विग्न हो उठे (९. २५)।

"भीमसेन ने धृतराष्ट्र के ग्यारह पुत्रों और कौरवों की बहुत-सी चतुरङ्गिणी सेना का वध कर दिया (९. २६)।

"इस युद्ध में दुर्योधन और सुदर्शन—यही दो धृतराष्ट्र के पुत्र बच रहे थे। दुर्योधन को अश्वारोही सेना के बीच खड़ा देख कर अर्जुन ने श्रीकृष्ण ने कौरवों के अधिकांश वीरों का वध हो जाने के सम्बन्ध में बातचीत की। तदनन्तर अर्जुन ने सत्यकर्मा, सत्येषु तथा सुशर्मा का वध कर दिया। इतना ही नहीं उन्होंने सुशर्मा के पैंतालीस महारथी पुत्रों का भी वध कर दिया। दूसरी ओर भीमसेन ने क्षुरप्र द्वारा सुदर्शन का मस्तक काट कर उसका वध कर दिया (९. २७)।

"सहदेव और शकुनि, उलूक और भीमसेन का युद्ध हुआ। भीमसेन और सहदेव के सम्मिलित प्रहार से शकुनि रणक्षेत्र से भाग गया किन्तु दुर्योधन ने उसे पुनः वापस भेजा। तब सहदेव, भीमसेन और नकुल ने शकुनि तथा उलूक पर आक्रमण किया। सहदेव ने उलूक का वध कर दिया। विदुर के शब्दों का स्मरण करके शकुनि ने सहदेव से युद्ध किया किन्तु पराजित हो कर अपनी सेना सहित भाग गया। सहदेव ने तब उसका पीछा करके उसका वध कर दिया। शकुनि और उलूक के वध के बाद अपनी बची हुई सेना को लेकर दुर्योधन समराङ्गण से भाग गया (९. २८)।"

शल्यपुत्र = रुक्मरथ (देखिये वस्था०)।

शल्यभ्रातृ, शल्य के भ्राता का द्योतक है जिसका अभिमन्यु ने वध किया था (७. ३८, १०)। तुकी० शल्यादवरजः (७. ३८, ३)।

शल्यस्यपुत्रः = रुक्मरथ (देखिये वस्था०)।

शल्यानुज, शल्य के छोटे भाई का नाम है जिसका युधिष्ठिर ने वध किया (९. १७, ६१)। तुकी० मद्रराजानुज।

शवल, शवलाच, शवलाश्व — देखिये शवल, शवलाक्ष, शवलाश्व।

शश = शिव (सहस्रनाम)।

शशक, एक जाति का नाम है जिसे कर्ण ने पराजित किया था (३. २५४, २१)।

१. शशविन्दव (बहु०) : ७. ६५, ४।

२. शशविन्दव (वि०): १२. २०८, १३ (प्रजामाचक्षते विप्राः पुराणाः शाशबिन्दवीम्)।

१. शशबिन्दु, चित्ररथ के पुत्र एक प्राचीन राजा का नाम है : १. १, २२८ (अतीत के ३४ राजाओं की तालिका में); ५५, ४ (यज्ञः शशबिन्दोश्च राज्ञः); २. ८, १७ (यम की सभा में); ७. ६५; १२. ८. ११ (इनके एक लाख स्त्रियाँ थीं और प्रत्येक के गर्भ से एक-एक हजार पुत्र उत्पन्न हुये थे। ये सभी राजकुमार अत्यन्त पराक्रमी और वेदों के पारङ्गत विद्वान थे। राजा होने पर ये दस लाख यज्ञ करने का संकल्प और प्रधान यज्ञों का अनुष्ठान कर चुके थे। ये सभी उत्तम धनुर्धर थे और यज्ञों का अनुष्ठान कर चुके थे। शशबिन्दु ने अश्वमेध यज्ञ में सोने के यूप बनवाये थे और इतना प्रचुर भक्ष्य भोज्य पदार्थों का संग्रह किया था कि यज्ञ के बाद भी अन्न के तेरह पर्वत बच रहे थे। शशबिन्दु के राज्यकाल में पृथिवी के मनुष्य स्वस्थ और प्रसन्न थे। दीर्घकाल तक वसुधा का उपभोग करके शशबिन्दु ने स्वर्ग प्राप्त किया था); १२. २९, १०५. १०६; २०८, ११ (प्रजापतियों में से एक); १३. ८९, १. १५ (यम ने इन्हें श्राद्ध के सम्बन्ध में उपदेश दिया); ११५, ६९ (ये कार्तिक मास में मांस-भक्षण नहीं करते थे); १६५, ५१।

२. शशबिन्दु = विष्णु (सहस्रनाम)।

३. शशबिन्दु (बहु० °न्दवः), शशबिन्दु के वंशजों का द्योतक है : २. ८, २७ (यम की सभा में); १२. २९, १०६ (सहस्रं तु सहस्राणां)।

शशयान, एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, ११४)।

शशलक्षण = सोम (चन्द्रमा) (देखिये वस्था०)।

शशलोमन् एक प्राचीन राजा का नाम है जिन्होंने तपस्या द्वारा स्वर्गलोक प्राप्त किया था (१५. २०, १५)।

१. शशाङ्क = सोम : ६. ३५, ३९ (श्रीकृष्ण के साथ समीकृत)।

२. शशाङ्क = शिव (सहस्रनाम)।

शशाद अयोध्या के एक प्राचीन राजा का नाम है : ३. २०२, १ (इक्ष्वाकु के उत्तराधिकारी). २ (ककुत्स्थ के पिता)।

शशिक, एक जाति का नाम है (६. ९, ४६)।

शशिज = बुधग्रह (९. ११, १५)।

१. शशिन् = सोम (देखिये वस्था०)।

२. शशिन् = शिव (सहस्रनाम)।

शशोलूकमुखी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २२)।

शाक, शाकद्वीप के एक वृक्ष का नाम है (६. ११, २८)।

शाकद्वीप, शाकवृक्ष के आधार पर शाकद्वीप नाम से विख्यात एक द्वीप का नाम है : ६, ११, २. ८. ११. १२. ४०। "विस्तार की दृष्टि से यह शाकद्वीप जम्बूद्वीप (देखिये स्था०) के परिमाण का दूना है। इसका समुद्र भी विभागपूर्वक उससे दूना है। शाकद्वीप के समुद्र का नाम क्षीरसागर है जिसने उसे सब ओर से घेर रक्खा है। यहाँ निवास करनेवाले लोगों की मृत्यु नहीं होती। यहाँ दुर्भिक्ष आदि भी नहीं होते। यहाँ मणियों से विभूषित सात पर्वत हैं। यहाँ का सब कुछ परम पवित्र और गुणकारी है। यहाँ का प्रधान पर्वत मेरु देवर्षियों और गन्धर्वों से सेवित है। यहाँ के दूसरे पर्वत का नाम मलय है जो पूर्व से पश्चिम की ओर फैला है। इसी पर्वत से मेघ उत्पन्न होते हैं। इसके बाद जलधार नामक महान पर्वत है। इसी द्वीप में रैवतक पर्वत भी है जहाँ आकाश में रेवती नामक नक्षत्र नित्य प्रतिष्ठित है, ऐसा ब्रह्माजी का रचा हुआ विधान है। इसके उत्तर भाग में श्याम नामक महान पर्वत है जो नूतन मेघ के समान श्याम शोभा से युक्त है। इसके निकट रहने से यहाँ की प्रजा श्यामता को प्राप्त हुई है। यहाँ भगवान श्रीकृष्ण निवास करते हैं और उन्हीं की कान्ति से यह स्थान श्यामता को प्राप्त हुआ है। इस श्यामगिरि के बाद बहुत ऊँचा दुर्गशैल है। इसके बाद केसर पर्वत है जिससे होकर आनेवाली वायु केसर की सुगन्ध लिये बहती है। इन सब पर्वतों का विस्तार क्रमशः दूना होता गया है। इन पर्वतों के समीप सात वर्ष हैं। महामेरु के समीप महाकाश वर्ष, जलद या मलय के निकट कुमुदोत्तर वर्ष है। जलधार गिरि का पार्श्ववर्ती वर्ष सुकुमार बताया गया है। रैवतक पर्वत का कुमारवर्ष और श्यामगिरि का मणिकाञ्चन वर्ष बताया गया है। इनके आगे महापुमान् नामक एक पर्वत है जो उस द्वीप की लम्बाई और चौड़ाई सब को घेरकर खड़ा है। उसके बीच में शाक नामक एक विशाल वृक्ष है जो जम्बूद्वीप के समान ही विशाल है। यहाँ की प्रजा उस शाक वृक्ष के ही आश्रित रहती

है। इसी द्वीप में भगवान शङ्कर की आराधना की जाती है। इस द्वीप में सिद्ध, चारण और देवता जाते हैं। यहाँ की चारो वर्णों की प्रजा अत्यन्त धार्मिक तथा जरा-मृत्यु से रहित है। अनेक पवित्र नदियों से सिंचित इस द्वीप में गङ्गा भी अनेक धाराओं में विभक्त देखी जाती है। यहाँ की नदियों के नाम हैं सुकुमारी, कुमारी, शीताशी, वेणिका, महानदी, मणिजला और चतुर्वर्धनिका। इनके अतिरिक्त यहाँ लाखों ऐसी नदियाँ हैं जिनसे जल ले कर इन्द्र वर्षा करते हैं। यहाँ मङ्ग, मशक, मानस तथा मन्दग नामक चार पवित्र जनपद हैं। इन जनपदों क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र निवास करते हैं। यहाँ न कोई राजा है, न दण्ड है और न दण्ड देनेवाला है। इस महान् तेजोमय शाकद्वीप के सम्बन्ध में इतना ही कहा जा सकता है और इतना ही सुनना चाहिये (६. ११)।" १२. १४, २३. २४ (यह मेरु के पूर्व में स्थित है। युधिष्ठिर ने इस पर अपना आधिपत्य स्थापित किया)।

शाकम्भरी, एक तीर्थ का नाम है। शाकम्भरी (= दुर्गा) देवी के आधार पर इसका नामकरण किया गया है : ३. ८४, १३. १६ (ततः शाकम्भरीत्येव नाम तस्याः प्रतिष्ठितम्। शाकम्भरीं समासाद्य ब्रह्मचारी समाहितः); ६. २३, ९।

१. शाकल, मद्रदेश की राजधानी का नाम है : २. ३२, १४ (यह पश्चिम में स्थित शल्य की नगरी थी); ८. ४४, १०. २६।

२. शाकल (बहु० °ला:) शाकल नगर के निवासियों का द्योतक है (८. ४४, २९)।

शाकलद्वीप, एक देश का नाम है जहाँ के राजा प्रतिविन्ध्य को अर्जुन ने पराजित किया था (२. २६, ५)।

शाकलः द्वीपः, उत्तर के एक स्थान का नाम है : २. २६, ६ (शाकलद्वीपवासाश्च सप्तद्वीपेषु ये नृपाः। अर्जुनस्य च सैन्यैस्तैर्विग्रहस्तुमुलोऽभवत्)।

शाकल्य, एक शिवभक्त ऋषि का नाम है : १३. १४, २०० (इन्होंने मनोमय यज्ञ के द्वारा नौ सौ वर्षों तक शिव की उपासना की थी)।

शाकवक्त्र, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७६)।

शाकुनि (शकुनिपुत्र) = उलूक (८. २५, ५)।

शाकुन्तल (शकुन्तला के पुत्र) = भरत : १. ७४, ११३. ११४. १२६; ९४, १९; ७. ६८, ११; १२. २९, ४५; १४. ३, १०।

शाकुन्तलोपाख्यानम् आदिपर्वान्तर्गत सम्भवपर्व के ६८ से ७४ अध्यायों में वर्णित शकुन्तला-दुष्यन्त की कथा का द्योतक है : राजा दुष्यन्त की अद्भुत शक्ति तथा राज्यशासन की क्षमता का वर्णन (१. ६८)। दुष्यन्त का शिकार के लिये वन में जाना तथा विविध हिंसक वन्य जीवों का वध (१. ६९)। तपोवन और कण्व के आश्रम का वर्णन तथा राजा दुष्यन्त का कण्व के आश्रम में प्रवेश (१. ७०)। राजा दुष्यन्त का शकुन्तला के साथ वार्तालाप; शकुन्तला द्वारा अपने जन्म का कारण बताना तथा उसी प्रसङ्ग में विश्वामित्र की तपस्या से इन्द्र का चिन्तित हो कर मेनका को विश्वामित्र का तप भङ्ग करने के लिये भेजना (१. ७१)। मेनका-विश्वामित्र मिलन, कन्या उत्पत्ति, शकुन्त पक्षियों द्वारा उस नवजात कन्या की रक्षा, और कण्व द्वारा उसे अपने आश्रम पर लाकर उसका पालन-पोषण करना तथा शकुन्तला नाम रखना (१. ७२)। "जब दुष्यन्त ने शकुन्तला से विवाह का प्रस्ताव किया तब उसने महर्षि कण्व के आश्रम लौटने तक प्रतीक्षा करने के लिये कहा। शकुन्तला ने कहा : 'मैं अपने तपस्वी पिता की अवहेलना करके अधर्मपूर्वक पति का वरण कैसे कर सकती हूँ ?' तब दुष्यन्त ने मनु के कथनानुसार आठ प्रकार के विवाहों को धर्मानुकूल बताया और शकुन्तला से गान्धर्व विवाह करने का प्रस्ताव किया। शकुन्तला ने कहा : 'यदि यह गान्धर्व-विवाह धर्म का मार्ग है, यदि आत्मा स्वयं ही अपना दान करने में समर्थ है तो मैं इसके लिये सहमत हूँ। मेरे गर्भ से आप द्वारा जो पुत्र उत्पन्न हो वही आपके बाद युवराज हो। यदि आप को यह बात स्वीकार हो तो मेरे साथ समागम हो सकता है ;' शकुन्तला की बात सुन कर दुष्यन्त ने बिना कुछ सोचे विचारे ही स्वीकृति दे कर उसके साथ गान्धर्व विवाह कर लिया। तदनन्तर समागम के बाद अपनी राजधानी लौटते समय दुष्यन्त ने शकुन्तला को आश्वासन देते हुये कहा : 'शीघ्र ही मैं तुम्हारे लिये चतुरङ्गिणी सेना भेजूँगा और उसी के साथ मैं तुम्हें राजभवन में बुलाऊँगा।' ऐसा कह कर दुष्यन्त ने अपनी राजधानी के लिये प्रस्थान किया। उनके जाने के थोड़ी देर बाद कण्व भी आश्रम में लौट आये। कण्व को देख कर शकुन्तला अत्यन्त लज्जित हुई और उनसे कुछ कह नहीं सकी। शकुन्तला के संकोच और लज्जा को देखकर कर महर्षि कण्व ने आश्वस्त करते हुये उससे सब कुछ निःसकोच बताने के लिये कहा। महातपस्वी कण्व अपने दिव्य ज्ञान से शकुन्तला की तात्कालिक अवस्था को जान गये; अतः प्रसन्न हो कर बोले : 'तुमने मेरी आज्ञा के बिना भी जो एक अन्य पुरुष से सम्बन्ध स्थापित किया है उससे तुम्हारे धर्म का नाश नहीं हुआ है। क्षत्रिय के लिये गान्धर्व विवाह श्रेष्ठ कहा गया है। महाराज दुष्यन्त धर्मात्मा और श्रेष्ठ पुरुष हैं। तुमने योग्य पति के साथ जो सम्बन्ध स्थापित किया है उससे तुम्हारे गर्भ से एक महाबली और महात्मा पुत्र उत्पन्न होगा जो सम्पूर्ण पृथिवी का उपभोग करेगा। उस चक्रवर्ती नरेश की गति को कोई रोक नहीं सकेगा।' शकुन्तला ने अपने पति दुष्यन्त के लिये कण्व से यह वर माँगा कि वे सदा धर्म में स्थिर रहें और कभी राज्य से भ्रष्ट न हों। कण्व ने उसे यह वर देने के बाद कहा : 'आज से तू दुष्यन्त की महारानी है। अतः पतिव्रता स्त्रियों के आचार-व्यवहार का निरन्तर पालन कर।' (१. ७३)।

"दुष्यन्त के चले जाने के बाद शकुन्तला के गर्भ का शिशु धीरे-धीरे बढ़ने लगा। शकुन्तला निरन्तर दुष्यन्त के सम्बन्ध में चिन्तन करती हुई उनके आश्वासन के अनुसार चतुरङ्गिणी सेना के आगमन की प्रतीक्षा करती रहती थी। इस प्रकार प्रतीक्षा करते हुये तीन वर्ष व्यतीत हो गये। तब एक दिन उसने एक तेजस्वी पुत्र को जन्म दिया। उस समय आकाश से उस बालक के ऊपर पुष्पवर्षा हुई और देवदुन्दुभियाँ बजने लगीं। देवताओं सहित स्वयं इन्द्र ने वहाँ आकर शकुन्तला से कहा : 'तुम्हारा पुत्र चक्रवर्ती सम्राट होगा। पृथिवी पर कोई भी इसके बल, तेज और रूप की समानता नहीं कर सकता। यह पूरुवंश का रत्न सौ अश्वमेध यज्ञ करके ब्राह्मणों को अमित दक्षिणा देगा।' महर्षि कण्व ने ब्राह्मणों को बुला कर उस बालक का जातकर्म आदि संस्कार कराया। शनैः शनैः वह बालक कण्व के आश्रम में ही बढ़ने लगा (बालक के रूप-सौन्दर्य का वर्णन)। छः वर्ष की अवस्था में ही वह बालक सिंहों, व्याघ्रों, वराहों, भैंसों और हाथियों को पकड़कर खींच लाता और आश्रम के समीपवर्ती वृक्षों में उन्हें बाँध देता था। वह राक्षस और पिशाच आदि शत्रुओं को युद्ध में परास्त करके वह राजकुमार ऋषि-मुनियों की आराधना में लगा रहता था। एक दिन उसने एक अत्यन्त विशाल दैत्य का वध कर दिया। उसके इन पराक्रमों को देख कर आश्रम के ऋषियों ने उसको 'सर्वदमन' नाम से विभूषित किया। बहुत दिनों तक जब राजा दुष्यन्त ने शकुन्तला और उसके पुत्र को बुलाने के लिये किसी को नहीं भेजा तब एक दिन महर्षि कण्व ने शकुन्तला से कहा : 'तुम्हें अब दुष्यन्त के पास जाना चाहिए।' तदनन्तर कण्व ने शकुन्तला के पुत्र को गले से लगा कर उससे दुष्यन्त के सम्बन्ध में बताया। इस प्रकार शकुन्तला और उसके पुत्र को समझाने के बाद कण्व ने अपने शिष्यों से कहा : 'तुम लोग मेरी इस पुत्री शकुन्तला और उसके पुत्र को दुष्यन्त के पास पहुँचा दो।' तब शकुन्तला ने अपने पिता कण्व और आश्रमवासियों से विदा ले कर पति के पास जाने के लिये प्रस्थान किया। कण्व के शिष्यों ने शकुन्तला को महाराज दुष्यन्त के पास पहुँचा दिया, परन्तु दुष्यन्त ने शकुन्तला और अपने पुत्र को नहीं पहचाना। शकुन्तला ने अनेक प्रकार से दुष्यन्त को स्मरण दिलाने का प्रयास किया किन्तु जब दुष्यन्त ने उसे किसी भी प्रकार ग्रहण नहीं किया तब क्रोध और अमर्ष से शकुन्तला की आँखें लाल हो गईं। उसने दो घड़ी तक विचार करने के बाद क्रोधपूर्वक दुष्यन्त से कहा : 'आप जान-बूझ कर निम्नकोटि के मनुष्यों के समान बातें क्यों कह रहे हैं ? इस विषय में क्या सच है और क्या झूठ इस बात को आप का हृदय ही जानता होगा। उसीको साक्षी बना का हृदय पर हाथ रख कर आप सत्य बात कहिये। आप समक्ष

रहे हैं कि मेरे साथ गान्धर्व विवाह के समय कोई देखनेवाला नहीं था परन्तु आपको पता नहीं है कि वह सनातन मुनि (परमात्मा) सबके हृदय में अन्तर्यामी रूप से विद्यमान है। वह सब के पाप-पुण्य को जानता है। सूर्य, चन्द्रमा, वायु, अग्नि, अन्तरिक्ष, पृथिवी, जल, हृदय, यमराज, दिन-रात, दोनों सन्ध्यायें और धर्म, ये सभी मनुष्य के भले बुरे आचार व्यवहार को जानते हैं। जिस पर हृदय में स्थित कर्मसाक्षी क्षेत्रज्ञ परमात्मा सन्तुष्ट रहते हैं उसके पापों को यमराज नष्ट कर देते हैं। परन्तु जिस दुरात्मा पर अन्तर्यामी सन्तुष्ट नहीं होते उसके पापों का यमराज स्वयं दण्ड देते हैं। पति ही पत्नी के भीतर गर्भरूप से प्रवेश करके पुत्ररूप से जन्म लेता है। यही जाया का जायत्व है जिसे पुराणवेत्ता विद्वान् जानते हैं। शास्त्र के ज्ञाता पुरुष के इस प्रकार जो सन्तान उत्पन्न होती है वह सन्तति की परम्परा द्वारा अपने पहले के मृत पितामहों का उद्धार कर देती है। पुत्र 'पुत्' नामक नरक से पिता का त्राण करता है इसीलिये साक्षात् ब्रह्मा ने उसे 'पुत्र' कहा है।'''ऋषियों में भी यह शक्ति नहीं है कि वे बिना स्त्री के सन्तान उत्पन्न कर सकें। आपका यह पुत्र भी आपके पास आया है। इसके जन्म लेते ही आकाशवाणी हुई थी कि यह सौ अश्वमेध यज्ञों का अनुष्ठान करेगा। आज से कुछ वर्ष पूर्व आपने वन में कण्व ऋषि के आश्रम में मुझसे गान्धर्व विवाह करके इस पुत्र को उत्पन्न किया था। उर्वशी, पूर्वचित्ति, सहजन्या, मेनका, विश्वाची और घृताची—ये छः अप्सरायें अन्य सब अप्सराओं से श्रेष्ठ हैं। इन सब में भी मेनका नामवाली अप्सरा सर्वश्रेष्ठ है। उसी ने स्वर्ग से भूतल पर आकर विश्वामित्र के द्वारा मुझे उत्पन्न किया था।'''आपके द्वारा स्वेच्छा से त्याग दी जाने पर मैं अपने आश्रम लौट जाऊँगी किन्तु अपने नन्हें से पुत्र का त्याग आपको नहीं करना चाहिये।' शकुन्तला के इस प्रकार से सारा वृतान्त बताने पर भी जब दुष्यन्त ने उसे नहीं पहचाना तब शकुन्तला ने दुष्यन्त के कटुवचनों का क्रोधपूर्वक उत्तर देते हुये अपने कुल को श्रेष्ठ बताया और दुष्यन्त से कहा : 'आप केवल पृथिवी पर ही विचरण कर सकते हैं किन्तु मैं, इन्द्र, कुबेर, यम और वरुण आदि सभी के लोकों में आने-जाने की शक्ति रखती हूँ'। इस प्रकार कह कर शकुन्तला ने दुष्यन्त के समक्ष लम्बा उपदेशात्मक भाषण दिया और फिर दुष्यन्त के दरबार से चलने को उद्यत हुई। इतने में ही ऋत्विज, पुरोहित, आचार्य और मन्त्रियों से घिरे हुये दुष्यन्त को सम्बोधित करते हुये एक आकाशवाणी ने कहा : 'पौरव! यह बालक शकुन्तला से उत्पन्न तुम्हारा पुत्र है। हम देवताओं के कहने से तुम इसका भरण-पोषण करोगे अत तुम्हारे इस पुत्र का नाम भरत होगा।' राजा दुष्यन्त देवताओं की यह बात सुन कर अत्यन्त प्रसन्न हुये। उन्होंने अपने मन्त्रियों और पुरोहित से कहा : 'आप लोग इस देवदूत के कथन को भलीभाँति सुन लें। मैं अपने इस पुत्र को इसी रूप में जानता हूँ। फिर भी यदि केवल शकुन्तला के कहने मात्र से मैं इसे ग्रहण कर लेता तो सब लोग इसपर सन्देह करते।' इस प्रकार देवदूत के वचन से उस बालक की शुद्धता प्रमाणित करके दुष्यन्त ने हर्षपूर्वक अपने पुत्र को ग्रहण कर लिया। उन्होंने अपनी पत्नी शकुन्तला को भी ग्रहण कर लिया। दुष्यन्त ने अपने पुत्र का नाम भरत रख कर उसका युवराज पद पर अभिषेक कर दिया। कालान्तर में राजा हो कर भरत ने सब राजाओं को जीत कर अपने अधीन कर लिया। महर्षि कण्व ने आचार्य हो कर भरत से 'गोवितत' नामक अश्वमेध यज्ञ कराया। भरत से ही इस भूखण्ड का नाम भारत हुआ। उन्हीं से कौरववंश भरत वंश के नाम से प्रसिद्ध हुआ। (१. ७४)।"

शाकुलोपाख्यानम्, शकुल-मत्स्यों के उपाख्यान का द्योतक है : "एक तालाब में, जो अधिक गहरा नहीं था, बहुत सी मछलियाँ रहती थीं। उसी जलाशय में तीन कार्यकुशल मत्स्य भी रहते थे जो सदा साथ-साथ विचरने वाले और एक दूसरे के सुहृद थे। इन तीनों मत्स्यों में एक अनागतविधाता था जो आनेवाले दीर्घकालतक की बात सोच लेता था। दूसरा प्रत्युत्पन्नमति था जिसकी प्रतिभा ठीक समय पर ही काम देती थी, और तीसरा दीर्घसूत्री था जो प्रत्येक कार्य में अनावश्यक विलम्ब करता था। एक दिन कुछ मछुओं ने उस जलाशय के पानी को निचली भूमि की ओर निकालने के लिये उसमें कई नालियाँ बना दीं। जलाशय का पानी घटता देख कर दूर तक की बातें सोचनेवाले मत्स्य ने अन्य मत्स्यों से संकट आने के पहले ही कहीं अन्यत्र चले जाने का प्रस्ताव किया। तब दीर्घसूत्रीय मत्स्य ने उसकी बात का औचित्य बताते हुये भी जल्दी न करने की बात कहा। प्रत्युत्पन्नमति मत्स्य ने कहा कि समय आने पर उसकी बुद्धि न्यायतः कोई युक्ति ढूँढ़ लेती है। यह सब सुन कर अनागतविधाता मत्स्य उस तालाब से निकलकर एक नाली के रास्ते गहरे जलाशय में चला गया। तदनन्तर जब जलाशय का पानी निकल गया तब मछुओं ने उसकी सभी मछलियों को फँसा लिया। मछुओं के जाल में दीर्घसूत्री और प्रत्युत्पन्नमति नामक मत्स्य भी फँस गये। प्रत्युत्पन्नमति मत्स्य ने अन्य मछलियों की भाँति ही जाल के तन्तुओं को पकड़ रक्खा था। जब वे मछुये उन मछलियों को ले जाकर एक दूसरे अगाध जलवाले जलाशय के समीप मछलियों को धोने लगे तब प्रत्युत्पन्नमति नामक मत्स्य अपने दाँतों से जाल को छोड़ कर उसके बन्धन से मुक्त हो कर जल में समा गया। परन्तु दीर्घसूत्री आलसी मत्स्य मृत्यु को प्राप्त हुआ। अतः जो व्यक्ति सर पर आई विपत्ति को समय से नहीं पहचानता वह दीर्घसूत्री मत्स्य के समान मृत्यु को प्राप्त होता है। जो व्यक्ति अपने को बहुत कार्यकुशल समझ कर पहले से अपने कल्याण का उपाय नहीं करता वह प्रत्युत्पन्नमति के समान प्राणसंशय की स्थिति में पड़ जाता है किन्तु जो संकट आने से पूर्व ही बचाव का उपाय कर लेता है उसकी अनागतविधाता की भाँति समय रहते ही प्राणरक्षा हो जाती है। काष्ठा, कला, मुहूर्त, दिन, रात, लव, मास, पक्ष, षड्ऋतुयें, संवत्सर और कल्प--इन्हें काल कहते हैं तथा पृथिवी को देश कहा जाता है। इनमें से देश का तो दर्शन होता है किन्तु काल दिखाई नहीं पड़ता। ऋषियों, ने धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र तथा मोक्ष शास्त्र में इस देश और काल को ही कार्य की सिद्धि का प्रधान उपाय बताया है। जो पुरुष सोच-समझ कर या जान बूझ कर काम करने वाला तथा सतत सावधान रहने वाला है वह अभीष्ट देश और काल का ठीक ठीक उपयोग करता और उनके सहयोग से इच्छानुसार फल प्राप्त कर लेता है (१२. १३७)।

शाक्त (शक्तिपुत्र) = पराशर (१. १८१, २१)।

शाक्तेःपुत्रः — देखिये शक्ति।

शाक्र (वि०) एक अस्त्र का द्योतक है जिसका अर्जुन ने आवाहन किया (७. ९३, २१)।

शाख, अनल नामक वसु के पुत्र का नाम है। ये कुमार कार्तिकेय के छोटे भाई थे : १. ६६, २४; ९. ४४, ३८. ४० (शाखो यवौ'''वायुमतिं-विभावसु'''कुमारः पावकप्रभः)।

१. शाण्डिली, एक देवी का नाम है : १. ६६, २० (प्रजापति की पत्नी और वसु अनल की माता); ६. ८, १० (स्वयंप्रभा देवी नित्यं वसति शाण्डिली)।

२. शाण्डिली, ऋषभ पर्वत पर रहनेवाली एक तपस्विनी का नाम है (५. ११३, १. १८)।

३. शाण्डिली, देवलोक में रहनेवाली एक पतिव्रता देवी का नाम है जो सम्पूर्ण तत्त्वों को जाननेवाली थी। इसने केकयराजकुमारी सुमना को पातिव्रतधर्म का उपदेश दिया था (१३. १२३, ७)।

शाण्डिल्य एक प्राचीन ऋषि का नाम है : २. ४, १७ (युधिष्ठिर की सभा में); ९. ५४, ७ (इनकी पुत्री ने तपस्या से स्वर्ग प्राप्त किया था); १२. ४७, ६ (शरशय्या पर पड़े भीष्म को देखने आये); २५३, १४ (समाधौ योगमेवैतच्छाण्डिल्यः शममब्रवीत); १३. ६५, १९ (प्रदानं सर्वदानानां शकटस्य विशाम्पते। एवमाह महाभागः शाण्डिल्यो भगवानृषिः); १३७, २२ (इन्हें भोजन दान दे कर मुमन्यु ने स्वर्ग प्राप्त किया)।

शानवत्य (बहु० °त्याः) युधिष्ठिर के लिये उपहार लानेवाली एक जाति के लोगों का द्योतक है (२. ५२, १६ : यहाँ शाणवत्या पाठ है)।

१. शान्त, अहः वसु के पुत्र का नाम है (१. ६६, २३)।

२. शान्त = शिव (सहस्रनाम)।

३. शान्त = विष्णु : १२. ३४०, १०४; १३. १४९, ७५ (सहस्रनाम)।

शान्ततम = शिव (सहस्रनाम) :

१. शान्तनव — देखिये भीष्म (वस्था०)।

२. शान्तनव = चित्राङ्गद : १. १०१, २; १४५, ११।

३. शान्तनव, शान्तनु के वंशजों का द्योतक है : २. ६३, २. ७।

शान्तनु, प्रतीप के पुत्र और भीष्म, चित्राङ्गद और विचित्रवीर्य के पिता का नाम है : १. २, ९७; ६०, ६; ६७, ७४ (जज्ञिरे वनवरस्त्वष्टौ गङ्गायां शान्तनोः सुताः); ९४, ६१ (प्रतीपस्य त्रयः पुत्रा जज्ञिरे भरतर्षभ। देवापिः शान्तनुश्चैव बाह्लीकश्च महारथाः). ६२ (प्रतीप के वन चले जाने के बाद ये राजा हुये); ९५, ४४ (प्रतीप और सुनन्दा के पुत्र). ४५. ४६ (अत्रानुवंशश्लोको भवति यं यं कराभ्यां स्पृशति जीर्णं स सुखमश्नुते पुनर्युवाच भवति तस्मात्तं शान्तनुं विदुः। इति तदस्य शान्तनुत्वम्). ४७ (गङ्गा से विवाह किया और उनसे देवव्रत तथा भीष्म नामक दो पुत्र उत्पन्न किये). ४९ (सत्यवती से विवाह करके चित्राङ्गद और विचित्रवीर्य नामक दो पुत्र उत्पन्न किये); ९६, १७ (ये वसुओं के पिता होंगे); ९७, १९. २०. २४. २५; ९८, ६ (गङ्गा से विवाह किया). ९. १४ (इन्होंने गङ्गा के गर्भ से आठ पुत्र उत्पन्न किये किन्तु इनमें से प्रथम सात को गङ्गा जन्म लेते ही गङ्गा नदी में फेंकती गई किन्तु आठवें पुत्र को इन्होने बचा लिया); ९९, १. ४. ४७. ४८ (वसुओं की कथा सुना कर गङ्गा अपने आठवें पुत्र भीष्म को छोड़कर इनके पास से चली गईं); १००, १. २. ६. १०. १५. १६. २३. २४. २८. ३०. ३२. ४०. ४३ (शान्तनु ने अपनी राजधानी में आ कर भीष्म को युवराज के पद पर अभिषिक्त किया). ५० (सत्यवती को देखा). ५५. ५७. ५९. ६२. ७७. ८९. १००. १०२ (सत्यवती से विवाह किया। भीष्म ने आजीवन ब्रह्मचर्य पालन का व्रत लिया। शान्तनु ने भीष्म को स्वेच्छामरण का वरदान दिया); १०१, १. ४.५ (चित्राङ्गद और विचित्रवीर्य को उत्पन्न करने के बाद ये मृत्यु को प्राप्त हुये); १०२, ५४; १०३, ३. २५; १०९, २३; ११२, ३७; १३०, १४ (कृप और कृपी को अपने साथ लाये); २२१, ७; २. ८, २५ (यम की सभा में); ३. ८४, ३४ (शान्तनोस्तीर्थम्); १२५, १९ (इन्होंने आर्चीक पर्वत पर सनातन लोक प्राप्त किया था); १६२, २३. २६ (अधिराजः स राजंस्त्वां शान्तनुः प्रपितामहः); ५. ३१, ९; ५५, ४६ (पितामहोऽपि गाङ्गेयः शान्तनोरपि); १४७, १७. २६. ३४; १४८, २; १४९, १६. २०. २८ (लोकविश्रुतः); १७३, ४; ६. १४, ४३ (भीष्म के जन्म लेते ही ये चिन्ता और शोक से मुक्त हो गये); १२०, १४ (पितरमाशाय कामार्तं शन्तनुं पुरा। ऊर्ध्वरेतसमात्मानं चकार); ९. ५६, २५; १२. ५०, १५ (वरदानात्पितुः कामं छन्दमृत्युरसि प्रभो। शान्तनो धर्मनित्यस्य); ३३९, १२३; १३. ८, १४ (तेन सत्येन गच्छेयं लोकान्यत्र स शान्तनुः); ५९, ३९; ८४, ११ (भीष्म ने इनका श्राद्ध किया था); १६५, ५८ (उन राजाओं में ये भी एक हैं जिनका नामस्मरण पुण्यप्रद माना गया है); १९. ९, १; १०, १९। तुकी० भारत, भारतसत्तम, भारतगोप्तृ कौरव्य, कुरुसत्तम, प्रातीप।

शान्तनुज — देखिये भीष्म (वस्था०)।

शान्तनुनन्दन — देखिये भीष्म (वस्था०)।

शान्तनुसुत — देखिये भीष्म (वस्था०)।

शान्तनूपाख्यान — "एक बार राजा प्रतीप गङ्गाद्वार में जा कर बहुत वर्षों तक तप करते रहे। उस समय गङ्गा एक सुन्दर युवती का रूप धारण करके प्रतीप की दाहिनी जाँघ पर बैठ गई और प्रतीप से कहा कि वे उन्हें अपनी पत्नी बना लें। गङ्गा ने अनेक प्रकार से प्रतीप से अनुनय-विनय की किन्तु प्रतीप ने उन्हें अपनी पत्नी बनाना स्वीकार नहीं किया। प्रतीप ने गङ्गा से कहा : 'तुम मेरी दाहिनी जाँघ पर बैठी हो जो पुत्र, पुत्री तथा पुत्रवधू का आसन है। अतः तुम मेरी पुत्रवधू हो जाओ।' तब गङ्गा ने प्रतीप की पुत्रवधू बनना स्वीकार कर लिया परन्तु उन्होंने एक शर्त के साथ ही ऐसा प्रस्ताव स्वीकार किया। गङ्गा ने प्रतीप से कहा : 'मैं जो कुछ भी आचरण करूँ वह सब आपके पुत्र को स्वीकार होना चाहिये।' राजा प्रतीप ने गङ्गा की यह शर्त स्वीकार कर ली। तदनन्तर राजा प्रतीप अपनी पत्नी के साथ पुत्रप्राप्ति के लिये तपस्या करने लगे। कुछ काल पश्चात् उनकी महारानी ने एक देवोपम पुत्र को जन्म दिया। वास्तव में पूर्ववर्ती राजा महाभिष ने ही प्रतीप के पुत्र के रूप में जन्म लिया था। प्रतीप ने उस पुत्र का नाम शान्तनु रक्खा। धीरे-धीरे शान्तनु युवावस्था को प्राप्त हुये। तब एक दिन प्रतीप ने शान्तनु से कहा: 'पूर्वकाल में मेरे पास एक दिव्य नारी आई थी। यदि वह सुन्दरी कभी तुम्हारे पास एकान्त में आये और तुमसे पुत्र प्राप्त करने की इच्छा रखती हो तो तुम उसका परिचय आदि न पूछना। वह जो कार्य करे उसके सम्बन्ध में भी तुम कोई प्रश्न न करना। यदि वह तुम्हें चाहे तो तुम उसे अपनी पत्नी बना लेना।' ऐसा आदेश देने के बाद प्रतीप ने पुत्र शान्तनु का राज्याभिषेक कर दिया और स्वयं वन में चले गये। राजा शान्तनु गङ्गातट पर अकेले ही विचरण करते थे। एक दिन उन्होंने एक परम सुन्दरी नारी देखी। उसके दिव्य रूप को देख कर शान्तनु उसके प्रति आकर्षित हो उठे। वह नारी भी शान्तनु पर मुग्ध हो गई। तब राजा शान्तनु ने उससे कहा : 'तुम देवी, दानवी, गन्धर्वी, या अप्सरा जो कुछ भी हो मैं तुमसे याचना करता हूँ कि तुम मेरी पत्नी हो जाओ।' (१. ९७)। इस आख्यान के आगे के भाग के लिये देखिये भीष्मोत्पत्ति।

शान्तनोः पुत्रः, शान्तनोः सुतः — देखिये भीष्म (वस्था०)।

शान्तभय, एक प्राचीन राजा का नाम है (१. १, २३६)।

शान्ता, राजा लोमपाद की गोद ली हुई पुत्री का नाम है; ३. ११०, २६ (ऋष्यशृङ्ग के साथ विवाह हुआ) २९ (राजपुत्री); ११३, ११. १९. २०. २२. २४ (ऋष्यशृङ्ग के साथ विवाह हुआ); १२. २३४, ३४ (महर्षि ऋष्यशृङ्ग को शान्ता का दान करने से राजा लोमपाद सभी प्रकार के भोगों से सम्पन्न हो गये); १३. १३७, २५ (लोमपादश्च राजर्षिः शान्तां दत्वा सुतां प्रभुः। ऋष्यशृङ्गाय विपुलैः सर्वैः कामैरयुज्यतः)।

शान्तात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ८२)।

१. शान्ति, भूतपूर्व चौथे इन्द्र का नाम है (१. १९७, २९)।

२. शान्ति, एक प्राचीन ऋषि का नाम है जो वसु उपरिचर के यज्ञ में सदस्य बने (१२. ३३६, ८)।

३. शान्ति, अङ्गिरा के चौथे पुत्र का नाम है (१३. ८५. १३०-१३१)।

४. शान्ति = विष्णु (सहस्रनाम)।

शान्तिद = विष्णु (सहस्रनाम)।

शान्तिपर्वन, महाभारत के बारहवें प्रमुख पर्व का नाम है : १. २, ९० (शान्तिपर्वमहाफलः); २, ७६ (यत्र राजधर्मानुशासनम् आपद्धर्मश्च पर्वोक्तं मोक्षधर्मस्ततः परम्). ३२५. ३२६; १८. ६, ९८।

शारदण्डायनी, एक क्षत्रिय पत्नी का नाम है। अपने पति द्वारा पुत्र उत्पन्न करने के लिये नियुक्त किये जाने पर यह एक रात ऐसे स्थान पर आई जहाँ चार मार्ग मिलते थे। वहाँ प्रतीक्षा करते हुये पुंसवन आदि संस्कार करने के बाद इसने एक ब्राह्मण द्वारा तीन पुत्र उत्पन्न किये (१. १२०, ३८ और बाद)। गीप्रे० संस्करण में ये श्लोक नहीं हैं।

शारद्वत = कृप (देखिये वस्था०)।

शारद्वतसूनु : ८. ८८, १४ (ततस्तु दुर्योधनभोजसौबलः कृपेण शारद्वतसूनुनासह)।

१. शारद्वती एक अप्सरा का नाम है : १. १२३, ६४ (अर्जुन के जन्मोत्सव के समय नृत्य किया)।

२. शारद्वती = कृपी (१. १३०, २०)।

शारद्वतीपुत्र = अश्वत्थामा : ७. १५६, १३२; १९४, ७।

शारद्वतीसुत = अश्वत्थामा : ७. १४५, ४९; १५६, ७४. ९१; १९०, ५२; ८. १, २।

शार्ङ्गकोपाख्यानम् — "जनमेजय ने यह जानना चाहा कि सम्पूर्ण वन को भस्म कर देने पर भी अग्निदेव ने चारों शार्ङ्गकों को क्यों दग्ध नहीं किया। वैशम्पायनजी ने बताया : मन्दपाल के नामसे विख्यात एक विद्वान महर्षि थे जो ब्रह्मचर्य का आश्रय लेकर स्वाध्याय में संलग्न और धर्मपालन

में तत्पर रहते थे। वे अपनी तपस्या पूर्ण करके शरीर का त्याग करने पर जब पितृलोक गये तब वहाँ उन्हें उनके तप एवं सत्कर्मों का फल नहीं मिला। उन्होंने जब देवताओं से इसका कारण जानना चाहा तब देवों ने उनको बताया कि सारे सत्कर्म करने पर भी उन्होंने सन्तान उत्पन्न नहीं किया है। अतः सन्तान के लिये ही उनके लोक ढँके हुये हैं। देवताओं का यह वचन सुन कर मन्दपाल अधिक बच्चे उत्पन्न करने वाले पक्षियों के यहाँ आये और शार्ङ्गक बनकर जरिता नामक शार्ङ्गिका से सम्बन्ध स्थापित कर लिया। उन्होंने जरिता से चार ब्रह्मवादी पुत्रों को उत्पन्न किया। उसके बाद बच्चों को माता सहित वहीं छोड़कर मन्दपाल लपिता के पास चले गये। मन्दपाल के इस प्रकार चले जाने पर जरिता को अपनी सन्तान के प्रति अत्यधिक चिन्ता होने लगी। वह अपनी वृत्ति द्वारा अपने नवजात शिशुओं का भरण-पोषण करती रही। उधर वन में लपिता के साथ विचरण करते हुये मन्दपाल मुनि ने अग्निदेव को खाण्डववन का दाह करने के लिये आते देखा। अग्निदेव के संकल्प को जान कर और जरिता के साथ खाण्डव वन में रह रहे अपने पुत्रों की बाल्यावस्था का विचार करके मन्दपाल भयभीत हो अग्निदेव से अपने पुत्रों की रक्षा के लिये निवेदन करने लगे (मन्दपाल द्वारा अग्निस्तुति : श्लोक २३-३०)। उनके इस प्रकार स्तुति करने पर अग्निदेव उन पर अत्यन्त प्रसन्न हुये और उन्होंने खाण्डवदाह के समय मन्दपाल के पुत्रों को दग्ध न करने का वचन दिया (१. २२९)।

"तदनन्तर जब अग्नि प्रज्वलित हुई तब शार्ङ्गक शिशु अत्यन्त दुखी और उद्विग्न हो गये। अपने को छोटा जान कर उनकी माता जरिता भी शोक से विलाप करने लगी। माता के विलाप को सुन कर उसके बच्चों ने माता से सुरक्षित स्थान में उड़ कर चले जाने लिये कहा जिससे वह पुनः सन्तान उत्पन्न कर सके। जरिता ने अपने बच्चों को समीप के एक वृक्ष के पास चूहे के बिवर में चले जाने के लिये कहा जिससे वे अग्नि में दग्ध होने से बच जायँ, परन्तु बच्चों ने कहा : ' चूहा मांसभक्षी जीव है अतः उसके बिवर में हम लोगों की रक्षा नहीं हो सकती। हमें यदि चूहों ने भक्षण कर लिया तो हमारी निन्दित मृत्यु होगी। इसके विपरीत अग्नि में जल कर शरीर का परित्याग करने के लिये शिष्ट पुरुषों की आज्ञा है। (१. २३०)।

"जरिता ने अपने बच्चों को बिवर में शरण लेने का पुनः परामर्श देते हुये कहा कि उस बिवर से एक चूहा निकला था जिसे बाज पक्षी उठा ले गया। परन्तु बच्चों ने कहा कि बिवर में अन्य चूहे भी हो सकते हैं, अतः उनका भक्ष्य बनने की अपेक्षा अग्नि में दग्ध हो कर ही मरना अधिक श्रेयस्कर है। बच्चों ने यह भी कहा कि यदि वे आग में जलने से बच गये तो उनकी माता उन्हें पुनः मिल सकती है। बच्चों के इस वचन को सुनकर जरिता वहाँ बच्चों को छोड़ कर सुरक्षित स्थान को चली गई। तदनन्तर अग्निदेव उस स्थान पर आ गये जहाँ मन्दपाल के पुत्र उपस्थित थे। प्रज्वलित अग्नि को देख कर वे बालक आपस में बातचीत करने लगे (१. २३१)।

"आपस में बातचीत करने के बाद वे चारों शार्ङ्गक पुत्र एकाग्रचित्त हो कर अग्निदेव की स्तुति करने लगे (चारों पुत्रों—जरितारि, सारिसृक्क, स्तम्बमित्र, और द्रोण द्वारा अग्निदेव की स्तुति)। द्रोण की स्तुति से प्रसन्न हुये अग्नि ने उनसे कहा : 'ऐसा प्रतीत होता है कि तुम द्रोण ऋषि हो क्यों कि तुमने ब्रह्म का ही प्रतिपादन किया है। मन्दपाल मुनि ने पहले ही मुझसे तुम लोगों की रक्षा के विषय में निवेदन किया था। अतः तुम्हारे पिता का वचन, और तुमने मेरे लिये यहाँ जो कुछ कहा है वह सब मेरे लिये गौरव की वस्तु है। अब मैं तुम्हारा क्या प्रिय कार्य करूँ।' तब द्रोण ने अग्नि देव से कहा : 'यहाँ के बिलाव हमें प्रतिदिन उद्विग्न करते हैं। आप इन्हें बन्धु-बान्धवों सहित भस्म कर डालिये।' तब अग्निदेव ने वैसा ही किया और उसके बाद प्रज्वलित हो कर खाण्डव वन को जलाने लगे। (१. २३२)।

"वैशम्पायनजी ने कहा : मन्दपाल भी अपने पुत्रों की चिन्ता कर रहे थे। उन्होंने अपनी पत्नी लपिता से अपने पुत्रों की असहायावस्था की चर्चा की और अपने प्रत्येक पुत्र का नाम ले-लेकर उनके कष्ट का उल्लेख किया। तब लपिता ने मन्दपाल से कहा : 'तुम्हें पुत्रों के देखने की चिन्ता नहीं है। तुमने जिन ऋषियों के नाम लिये हैं वे तेजस्वी और शक्तिशाली हैं। उन्हें अग्नि से लेशमात्र भी भय नहीं है। अग्निदेव ने भी उनकी रक्षा का वचन दिया है। अतः तुम्हारा मन अपने पुत्रों के प्रति चिन्तित नहीं है। तुम तो मेरी शत्रु उसी जरिता के लिये चिन्ता से सन्तप्त हो। अतः तुम उस जरिता के पास ही जाओ। मैं भी दुष्ट पुरुष के आश्रय में पड़ी हुई स्त्री की भाँति अकेले ही विचरूँगी। तब मन्दपाल ने लपिता के वचनों की भर्त्सना की। इधर जब अग्निदेव उस स्थान से हट गये तब जरिता शीघ्रता से अपने बच्चों के पास आई। उसने देखा कि उसके सभी बच्चे अग्नि से बच गये हैं। तब वह अत्यन्त प्रेमपूर्वक अपने बच्चों से मिली। इतने में मन्दपाल मुनि भी वहाँ आ गये किन्तु उनके बच्चों में से किसी ने भी उनका अभिनन्दन नहीं किया। उन्होंने प्रत्येक बच्चे से बात करना चाहा किन्तु उन बच्चों ने भला या बुरा मुनि से कुछ नहीं कहा। तब उन्होंने जरिता से बच्चों का परिचय पूछते हुये कहा : 'यद्यपि मैंने तुम्हें त्याग दिया था तो भी यहाँ से जा कर मुझे शान्ति नहीं मिली थी।' तब जरिता ने आक्षेपपूर्वक मुनि से लपिता के पास ही वापस जाने के लिये कहा। मन्दपाल ने जरिता की बात सुन कर सौतियाडाह विषय पर उसे उपदेश दिया। तदनन्तर उनके सभी पुत्र यथोचितरूप से अपने पिता के पास आ बैठे। मन्दपाल भी उन पुत्रों को आश्वासन देने के लिये उद्यत हुये (१. २३३)।

"मन्दपाल ने पुत्रों को बताया कि उन्होंने अग्निदेव से पुत्रों की रक्षा करने की प्रार्थना की थी। उन्होंने कहा : 'अग्नि के दिये वचन का स्मरण करके, तुम्हारी माता की धर्मज्ञता को जान कर और तुम लोगों में भी शक्ति है इस बात को समझ कर ही मैं यहाँ पहले नहीं आया। तुम सब को मेरे प्रति अपने हृदय में सन्ताप नहीं करना चाहिये। तुम लोग ऋषि हो इस बात को अग्निदेव भी जानते हैं।' वैशम्पायनजी ने बताया कि इस प्रकार आश्वस्त किये हुये अपने पुत्रों और पत्नी जरिता को साथ लेकर द्विज मन्दपाल उस देश से दूसरे देश में चले गये (१. २३४)।

शार्ङ्गरव, एक ऋषि का नाम है : १. ५३, ६ (ये जनमेजय के सर्पसत्र में अध्वर्यु बने थे)।

शार्ङ्गगदापाणि = श्रीकृष्ण (देखिये वस्था०)।

शार्ङ्गचक्रगदाधर, शार्ङ्गचक्रगदापाणि, शार्ङ्गधनुर्धर, १. शार्ङ्गधन्वन्= श्रीकृष्ण (देखिये वस्था०)।

२. शार्ङ्गधन्वन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

शार्दूली, क्रोधवशा की पुत्री का नाम है जिसने सिंहों, बाघों और चीतों को उत्पन्न किया था (१. ६६, ६१. ६५)।

शालकटङ्कट, राक्षस अलम्बुष का नामान्तर है (७. १०९, ३१)।

शालग्राम = विष्णु (३. ८४, १२४)।

शालिपिण्ड, एक नाग का नाम है (१. ३५, १४)।

शालिशिरस्, एक देवगन्धर्व का नाम है : १. ६५, ४४ (मुनि के पुत्र); १२३, ५६ (अर्जुन के जन्मोत्सव में सम्मिलित हुये)।

शालिसूर्य, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १०७)।

शालिहोत्र एक ऋषि का नाम है (३. ७१, २७)।

शालिहोत्रपितृ = कपिल (१२. ३३६. ८)।

शालिहोत्रस्य तीर्थम् एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १०७)।

शालूकिनी, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १३)।

१. शाल्मलि, सोमवंशी महाराज कुरु के पौत्र और अविक्षित् के पुत्र का नाम है (१. ९४, ५२)।

२. शाल्मलि, सप्तद्वीपों में से एक का नाम है : ६. ११, ३; १२, ६ (इस द्वीप में शाल्मलि वृक्ष की पूजा होती थी और इसी आधार पर इसका यह नाम रक्खा गया था)।

शाल्मलिकः द्वीपः — देखिये पिछला शब्द (६. १२, ६)।

१. शाल्व — व्युषिताश्वपत्नी भद्रा ने अपने मृत पति के शव के साथ शयन कर के तीन 'शाल्व' और चार 'मद्र' उत्पन्न किये थे (१. १२१,

३२-३६)।

२. शाल्व (बहु० °ल्वाः), शाल्व देश के निवासियों का द्योतक है : २. १४, २६ (ये जरासन्ध के भय से भाग गये थे); ३. २९४, ७ (प्राचीन काल में शाल्वों पर द्युमत्सेन नामक एक धर्मात्मा क्षत्रिय नरेश शासन करते थे किन्तु भाग्य के विपरीत होने से वे राज्य-विहीन हो गये); २९९, ३ (इन्हें इनका राज्य वापस मिल गया); ४. १, १२; ५. १६०, १०३ (दुर्योधन की सेना में); १६१, २१; ६. ९, ३९ (ये लोग भारतवर्ष के निवासी थे), १८, १३ (दुर्योधन की सेना में); २०, १२; ७२, ८; ११७, ३४; ११९; ८२; ७. १५४, ११ (मत्स्यों के साथ इन लोगों ने द्रोणाचार्य पर आक्रमण किया); ८. २७, २; ४५, १४ (ये शाश्वत धर्म के ज्ञाता थे). ३५ (कृत्स्नानुशासनाः)।

३. शाल्व, एक अथवा अधिक राजाओं का नाम है : १. ६७, १७ (अजक नामक असुर के अंश से उत्पन्न); १८७, १५; १८८, १९ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था); २. ३४, ९ (युधिष्ठिर के राजसूय में सम्मिलित हुये); ७. २५, २६ (धृतराष्ट्रपुत्र भीमरथ ने इनका वध किया); ९. २०, १. १६. २२. २६ (सात्यकि ने वध किया); २१, १ (निहत); २४, २७। यहाँ उद्धृत कुछ स्थलों पर ४. ५ शाल्व का भी तात्पर्य हो सकता है।

४. शाल्व, सौभराज का नाम है : १. १०२, ३४. ३७. ३९. ६२ (अम्बा ने स्वयंवर में इनका वरण करने का निश्चय किया था और इन्होंने भी अम्बा से विवाह करने की इच्छा की थी। इस बात को जानने के बाद भीष्म ने अम्बा को मुक्त कर दिया और उसकी अन्य बहनों को लाकर विचित्रवीर्य से विवाह कर दिया); ५. १७५, २. १६. १७. १९. २०. २३-२५. २७. २८. ३०. ३२. ३७. ४३ (भीष्म द्वारा मुक्त कर दिये जाने पर अम्बा इनके पास आई किन्तु तब इन्होंने उसे अङ्गीकार नहीं किया); १७६, ५३. ५५; १७७, ५. ११; १७८, ३. ३०. ३३। तुकी० शाल्वपति, शाल्वराज, सौभपति, सौभराज, तथा अगला शब्द।

५. शाल्व, एक दैत्य जिसका श्रीकृष्ण ने वध किया था : ३. १२, ३२; १४, २. ५. २० (शिशुपाल के वध का समाचार सुन कर इसने द्वारका पर आक्रमण कर दिया); १५, २. ३. १३; १६, १. ११ (साम्ब से युद्ध किया). १७; १७, ७-११ (प्रद्युम्न के साथ इसका युद्ध). १४. १७. २०. २३; १८, १. ६. ७. २५; १९, ४. ६. ११. १९ (धाता ने श्रीकृष्ण को इसका संहारक नियत किया था). २६ (प्रद्युम्न से पराजित हो कर यह द्वारका से वापस चला आया); २०, ५. ९. १०. १६. १७. २२. ३२ (श्रीकृष्ण ने इसका पीछा करते हुये इसकी राजधानी मार्तिकावत के लिये प्रस्थान किया। तब यह सागर के मध्य में रुक गया। श्रीकृष्ण और इसके बीच घोर संग्राम होने लगा); २१, १. २. ५. ९. १३. २१; २२, २१. २२. ३६. ३७ (श्रीकृष्ण ने अपने चक्र से इसका वध किया). ४१; ७. ११, १४ (सौभं दैत्यपुरं खस्थं शाल्वगुप्तं दुरासदम्। समुद्रकुक्षौ विक्रम्य पातयामास माधवः)। तुकी० दैतेयापसद (३. २०, २०); मार्तिकावतको नृपः (३. १४, १६); सौभ, सौभाधिपति, सौभपति, सौभराज।

१. शाल्वक (वि०): ५. ३०, २३ (दुर्योधनकी सेना में)।

२. शाल्वक (बहु० °काः) : ५. ५७, १८ (दुर्योधन की सेना में। इनके वध के लिये केकय राजकुमारों को नियुक्त किया गया)।

१. शाल्वपति = ४. शाल्व ; ५. १७४, ६; १७५, २. ५. १२. १६. २०. २३; १७६, ३. ५१; १७७, ३४।

२. शाल्वपति = ५. शाल्व (३. १६, ८)।

शाल्वपुत्र; शाल्व के पुत्र, एक राजकुमार का नाम है : ५. ४, २३ (पाण्डवों की ओर से इसे रण निमन्त्रण भेजने का निश्चय किया गया)।

१. शाल्वराज = शाल्व : ८. ५. ४२ (महाभारत युद्ध में भीम ने इसका वध किया)।

२. शाल्वराज = ४. शाल्व : १. १०२, ३४. ४२. ४७; ५. १७४, ९; १७५, ३२; १०७, ७. ११. ३५।

३. शाल्वराज = ५. शाल्व : ३. १६, ९. १०; १७, १९; १९, २२; २०, ६. ९; २१, १; २२, २. २७; ५. ४८, ७९ (खस्थं खेचरं विभीषणं निर्मयं शतघ्नी शक्तिं शाल्वेन क्षिप्तां दोर्भ्यां पाणिभ्यां कन्दुकवत् प्रत्यगृ-ह्णात्—नील०)।

४. शाल्वराज = द्युमत्सेन : १२. २३४, ३३; १३. १३७; २३।

शाल्वसेनि (बहु० °नयः) एक दक्षिणभारतीय जाति का नाम है (६. ९, ६१)।

शाल्वायन, एक प्राचीन राजा का नाम है : २. १४, २७ (जरासन्ध के भय से अपने भाइयों तथा सेवकों के साथ ये दक्षिण दिशा को भाग गये)।

शाल्वेय, शाल्व देश के निवासियों का द्योतक है : ३. २६४, ६ (विवाह की इच्छा से सिन्धुराज जयद्रथ शाल्वेयों के पास आया); ५. ५४, १८ (युधिष्ठिर का पक्ष लिया); ७. ९८, ५५। तुकी० शाल्व (बहु०) और अगला शब्द।

शाल्वेयक एक जाति का द्योतक है : ४. ३०, २ (शाल्वेयकों और मत्स्यों के साथ कीचक ने त्रिगर्तराज सुशर्मा को पराजित किया था); ५. १६३, १० (भीष्म ने शाल्वेयकों और सृञ्जयो का वध करने का वचन दिया)।

१. शाश्वत = सूर्य (३. ३, २१)।

२. शाश्वत = शिव (सहस्रनाम)(

३. शाश्वत = विष्णु (सहस्रनाम)।

शास्तृ = विष्णु (सहस्रनाम)।

शिक्षक, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७६)।

शिखण्डितनय = क्षत्रदेव (८. ६, २६)।

१. शिखण्डिन्, पाञ्चालराज द्रुपद के पुत्र (मूलतः पुत्री) का नाम है। इसके पुत्र का नाम क्षत्रदेव था : १. १, १८४; २, २५०; ६३, १२५ (शिखण्डी द्रुपदाज्जज्ञे कन्या पुत्रत्वमागता); ६७, १२६ (यह एक राक्षस के अंश से उत्पन्न हुआ था); १६५, ८; २००, १५; ३. १२, १३४ (यह भीष्म का वध करेगा); ४. ७२, १७ (उपप्लव नगर में अभिमन्यु और उत्तरा के विवाहोत्सव में सम्मिलित हुआ था); ५. ४८, ९. ३९ (भीष्म का वध करेगा). ४०; ५०, ३६ (यह अम्बा का ही दूसरा जन्म था); ५७, ५. १२ (भीष्म'''भागः क्लृप्तः शिखण्डिनः). ३२ (युधिष्ठिर की सेना में.); ८३, ३१; १२६, ८; १४०, २३; १४१, २६; १५१, ४. २९ (भीष्म के विनाश के लिये ही इसका जन्म हुआ था). ३१. ३२. ६३; १५३, ६; १५७, १२; १६०, ७८; १६२, १४; १६३, ४२. ५३; १६४, ७ (शिखण्डिनं च भीष्माय प्रमुखे समकल्पयत्): १७१, १ (पाञ्चालराजस्य सुतः): १७२, १६. २० (भीष्म इसका वध नहीं करेंगे क्योंकि यह पहले स्त्री था); १७३, १. ३; १८८, १. १९ (द्रुपद की पुत्री के रूप में इसका जन्म हुआ था); १८९, ८. १० (हिरण्यवर्मा की पुत्री से इसका विवाह हुआ). १३. १७; १९०, ९. १३. १५. २०; १९१, १. २२. २६. २७; १९२, १. ६. ९. १०. १९. २८. २९. ३१. ४६. ५२. ५४ (इसके स्त्री होने का पता चल जाने पर हिरण्यवर्मा ने द्रुपद से युद्ध की तैयारी की, किन्तु इसने स्थूणाकर्ण नामक यक्ष का पुरुषत्व प्राप्त कर लिया). ५७. ५९-६१. ६३. ६४ (यह अम्बा का ही पुनर्जन्म था). ६७. ६८; १९४, १८; १९६, ३; ६. १३, ५ (शेते निहतो राजन् संख्ये भीष्मः शिखण्डिना). ७; १४, १. २०. २४. ५०. ५१; १५, १५ (शिखण्डिनम् श्रूयते स्त्री ह्यसौ पूर्वं तस्माद्वर्ज्यो रणे मम). १६. १८. १९; १९, १९; २२, ३; २५, १७; ४५, ४६. ४७ (अश्वत्थामा से युद्ध किया); ४८, ४ (श्वेत को बचाने का प्रयास किया). ११९; ५०, ३० (भीष्मस्य निधनं किल); ५१, २७; ५४, ९२; ५६. १४; ६३, १०; ६९, ८. २७. २९ (शिखण्डिनं समासाद्य भरतानां पितामहः। अवर्जयत संग्रामं स्त्रीत्वं तस्यानुसंस्मरन्). ३१; ७१, २१ (चित्रसेन से युद्ध किया); ७२, १; ७५, १२; ८१, २५; ८२, २६. २८. ३५. ३७. ३८; ८५, ९. १९. २७; ८६, २५. २६; ८९, १६; ९८, १९. २१ (पूर्वं हि स्त्री समुत्पन्ना). ३४. ३७ (स्त्रीपूर्वकः). ४१. ४८. ५१ (भीष्म इसका वध नहीं करेंगे); ९९, ११; १०३, ४. ७. ९ (भीष्म पर

आक्रमण किया); १०७. ८१. ८२ (भीष्म ने अर्जुन को यह परामर्श दिया कि वे शिखण्डी को अपने आगे करके युद्ध करें). १०३-१०५; १०८, १. ३ (पाण्डवों की सेना में). ४. १८. ४०-४४ (भीष्म पर आक्रमण किया); १०९, १. २. ४; ११०, १. ३. १८; १११, २१; ११२, १८; ११३, ४८ (भीष्मस्य निधनाकांक्षी पुरस्कृत्य शिखण्डिनम्); ११४, ४०-४२; ११५, २०. २२. २५. २६. ३२; ११६. ६०. ६२. ६५. ८० (शिखण्डिनं च समरे पाञ्चाल्यममितौजसम्); ११७, १. २. ४. ७. २२. ६३; ११८, ४१. ४३. ५०. ५४; ११९, २. १२. १४. २३. ३४ (स्त्रीभावाच्च). ४३. ४९. ५१. ५९. ६२-६५ (शिखण्डी को आगे करके युद्ध करते हुये अर्जुन ने भीष्म को धराशायी कर दिया); १२०, ७ (हतो द्रौपदेयेन पाञ्चाल्येन शिखण्डिना); ७. २, १ (भीष्म का वध किया था); १०, ४५ (याज्ञसेनि). ६३; १४, ४३. ४५ (भूरिश्रवा से युद्ध किया). ८३; १६, २७; २१, ४९. ५५. ६२: २३, १४. २० (इसके अश्वों का वर्णन). २१. २५ (क्षत्त्रदेव इसका पुत्र था); २५, ३६ (विकर्ण से युद्ध किया); ४०, १९; ४२, ३; ४३, ८; ८३, ५; ८५, ४०; ९५, ४४ (बाह्लीक से युद्ध किया); १११, ४५; ११४, ६४ (कृतवर्मा से युद्ध किया). ८१. ८२. ८७. ८८. ९७. ९८; १२४, ३३; १५०, ११; १५१, ७. २६; १५३, २३; १५४, १४ (प्रभद्रकों का नेता); १५६, ३५; १५८, ३९; १६५, १०; १६९, २१. २२. २७. २९. ३१. ३२; १७१, ५२; १७७, ३४; १७८, ९; १७९, ४; १८३, ५३; १८४, ५; १९३, २६; १९५, ३०; १९८, १९ (चापिसृष्टः पित्रा ते भीष्मस्यान्तकरः किल); ८. २, १२ (यज्ञसेनस्य पुत्रेणेह शिखण्डिना); ९, ३७; १०, २७ (हतो भीष्मः पितामहः शिखण्डिनं पुरस्कृत्य फाल्गुनेन महाहवे); १२, १४; १३, ९; २२, ९. २७; २६, २१. २२. ३१; ३०, २६; ४६, ३६; ४८, २०. ४८. ५४; ४९, ३३; ५४, ५-८. ११. १२. १७. २३; ५६, ६५; ६०, २५; ६१, ७. ११. १६-१८. २२. २३; ६६, ११; ७०; १५; ७३, ११. ४०. १०३; ७४, ५१; ७५, ८. १५. १६; ७८, १६. १८. ६४; ७९, ३५. ९३; ८२, ८. ९. १६. २१; ९६, ५०; ९. १, ३०; २, ३१; ३, ४०; ५, १६; ७, १६. ३१; ८, २९; ९, ३९; ११, २२; १५, ७; १६, ६; १७, ३१; १८, ८. १४; १९, २६; २०, १९; २१, ३४; २३, १२; २५, १६; ३०, ५२; ६१, ३१; ६२, ३; १०. ५, २१ (भीष्मो न्यस्तशस्त्रो निरायुधः । शिखण्डिनं पुरस्कृत्य हतो गाण्डीवधन्वना); ८, ५०. ६५ (अश्वत्थामा ने इसका वध किया); ९, ५५; ११. २६, ३४ (इसका शवदाह किया गया); १२. २७, ५. ११; १३. १४८, २५. २८. २९. ३३; १४. ६०, ९. ११; ८१, १०; १५. ३१, १५ (व्यास ने बताया कि यह एक राक्षस के अंश से उत्पन्न हुआ था); ३२, ११; १६. ३, २५; १८. १, २६ ।

तुकी० इसके निम्नलिखित पर्याय :—

द्रुपदात्मज, द्रौपदेय, पाञ्चाल्य — देखिये वस्था० ।

भीष्मनिहन्तृ : १०. ८, ६३ ।

भीष्महन्तृ : ८. ६१, १६ ।

याज्ञसेनि — देखिये वस्था० ।

शिखण्डिनी (स्त्री के रूप में शिखण्डी का नाम): ५. १८९, १२. १४. १५; १९०, ७. १८; १९१, १. २. १७; १९२, ३३. ४०; ६. ९८, २१. २२. ३७; १०८, ४३ ।

२. शिखण्डिन् = श्रीकृष्ण (१२. ४३, १३) ।

३. शिखण्डिन् = शिव (सहस्रनाम) : १३. १८, २५ ।

४. शिखण्डिन् = विष्णु (सहस्रनाम) ।

शिखण्डिनी = देखिये १. शिखण्डिन् ।

शिखाप्रोक्त, पञ्चशिख के लिये प्रयुक्त हुआ है : १२. ३२०, ३४ ।

शिखावत् , एक ऋषि का नाम है (२. ४, १४) ।

१. शिखिन् = अग्नि (देखिये वस्था०) ।

२. शिखिन् , एक नाग का नाम है (५. १०३, १२) ।

३. शिखिन् = शिव : ७. २०२, ११; १३. १७, ५८ (सहस्रनाम) ।

शित, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५४) ।

शिता, एक नदी का नाम है (देखिये सीता) ।

१. शितिकण्ठ = शिव (देखिये वस्था०) ।

२. शितिकण्ठ, एक नाग का नाम है (१६. ४, १६) ।

शितिकेश, स्कन्द के एक सैनिक नाम है (९. ४५, ६१) ।

शितिप्रभ = विष्णु (१. ६४, ५२) ।

१. शिनि, सत्यक के पिता और सात्यकि के पितामह का नाम है : महर्षि के पुत्र सोम हुये । सोम के पुत्र बुध→ पुरूरवा→आयु→नहुष→ ययाति→यदु (देवयानी से)··· →देवमीढ→शूर (कार्तवीर्य के समान) →वसुदेव । शूर के वंश में ही शिनि का जन्म हुआ था । इसी समय देवक की पुत्री देवकी के स्वयंवर में शिनि ने समस्त राजाओं को जीत कर देवकी को रथ में बैठा लिया । सोमदत्त ने शिनि के इस व्यवहार को सहन नहीं किया और शिनि से युद्ध करने लगे । तब शिनि ने सोमदत्त को बलपूर्वक पृथिवी पर पटक दिया और तलवार उठाकर उनकी चुटिया पकड़ ली तथा उनपर पाँव सेप्रहार किया । जब शिनि ने सोमदत्त की ऐसी दुर्दशा कर दी तब उन्होंने आराधना द्वारा महादेवजी को प्रसन्न किया । तदनन्तर उन्होंने महादेवजी से ऐसा पुत्र प्राप्त करने का वर माँगा जो शिनि के पुत्र को सहस्रों राजाओं के बीच युद्ध में पृथिवी पर गिरा कर पैर से मारे । महादेव ने कहा कि उनका पुत्र शिनि के पौत्र के साथ ही उक्त व्यवहार कर सकेगा । इसी वरदान के कारण सोमदत्त ने भूरिश्रवा को पुत्ररूप में प्राप्त किया और उसने शिनि के पौत्र सात्यकि को समरभूमि में पृथिवी पर गिरा दिया । (७. १४४, ८. १०. ११. १३. १७. १९) ।

२. शिनि (बहु० °नयः) शिनि के वंशजों का द्योतक है : ५. ४८, ४६ (शिनीनामधिपो); ७. ११४, ४२; १४०, ३; ८. ८२, ७. २४ ।

शिनिप्रवर, शिनिप्रवीर, शिनिवीर, शिनिपुत्र, शिनेः नप्तृ, शिनेःपुत्रः, शिनेः पौत्रः. शिनेः सुत :— देखिये सात्यकि ।

शिपिविष्ट = श्रीकृष्ण (नारायण, विष्णु): १२. ४३, ८; ३४२, ७१-७३ (शिपिविष्ट इति चास्माद्गुह्यनामधरो ह्यहम् । स्तुत्वा मां शिपिविष्टेति यास्क ऋषिरुदाराधीः); १३ १४९, ४२ (विष्णु सहस्रनाम) ।

१. शिवि, उशीनर के पुत्र एक राजा का नाम है : १. ८६, ६; ९३, ६. ८. ९. १७ (औशीनरः). १८. १९ (ययाति जब स्वर्ग से गिरने लगे तब उनकी बहन के पुत्र शिवि आदि ने अपने अपने लोक ययाति को समर्पित किये किन्तु उन्होंने स्वीकार नहीं किया । तदनन्तर सभी लोग स्वर्ग चले गये); १८६, १६ (कृष्णा के स्वयंवर के समय उपस्थित थे); २. ८, १० (यम की सभा में); ३. ९४, १७ । "पाण्डवों के पूछने पर मार्कण्डेयजी ने क्षत्रियों के माहात्म्य का वर्णन करते हुये कहा : एक दिन कुरुवंशी राजा सुहोत्र महर्षियों का सत्सङ्ग करके जब लौट रहे थे तब उन्होंने अपने सामने ही रथ पर बैठे हुये राजा शिवि को देखा । निकट आने पर उन दोनों ने अवस्था के अनुसार एक दूसरे का सम्मान किया परन्तु गुणों में अपने को बराबर समझकर एक ने दूसरे को राह नहीं दी । इतने में ही वहाँ देवर्षि नारद प्रकट हो गये और पूछ बैठे कि 'यह क्या बात है कि तुम दोनों इस प्रकार एक- दूसरे का मार्ग रोक कर खड़े हो ।' तब उन दोनों ने नारदजी से कहा : 'पूर्व के धर्मव्यवस्थापकों ने यह उपदेश दिया है कि जो अपने से सभी बातों में बढ़ा चढ़ा हो या अधिक शक्तिशाली हो उसीको मार्ग देना चाहिये । विचार करने पर भी हम यह निर्णय नहीं कर पा रहे हैं कि हम दोनों में से कौन अत्यन्त श्रेष्ठ है ।' उनके ऐसा कहने पर नारदजी ने तीन श्लोक पढ़े जिनका सारांश यह है कि अपने साथ कोमलता का व्यवहार करनेवाले के लिये क्रूर मनुष्य भी कोमल बन जाता है । परन्तु साधु पुरुष दुष्टों के प्रति भी साधुता का ही व्यवहार करता है । मनुष्य चाहे तो वह अपने ऊपर किये उपकार का बदला सौगुना करके चुका सकता है । उशीनरपुत्र राजा शिवि का शील-स्वभाव तुमसे (सुहोत्र से) कहीं अच्छा है । यहाँ तुम दोनों ही उदार हो अतः जो अधिक उदार हो वह मार्ग छोड़ कर हट जाय । ऐसा कह कर नारदजी चुप हो गये । तब कुरुवंशी राजा सुहोत्र ने शिवि को अपनी दायीं ओर करके मार्ग दे दिया और उनके अनेक सत्कर्मों

का उल्लेख करते हुये अपनी राजधानी चले गये। (३. १९४)।" "मार्कण्डेयजी ने कहा : एक समय देवताओं ने पृथिवी पर आकर राजा शिवि की श्रेष्ठता की परीक्षा करने का निश्चय किया। इस प्रकार निश्चय करके इन्द्र और अग्नि को परीक्षा लेने के लिये कहा गया। तब अग्निदेव ने एक कबूतर का रूप धारण करके मानो अपने प्राण बचाने के लिये शिवि की गोद में शरण लिया। इन्द्र ने बाज बन कर मांस के लिये उस कबूतर का पीछा किया। जब कबूतर बाज के भय से राजा की गोद में आ गिरा तब पुरोहित ने कहा 'इस प्रकार कबूतर का आकर गिरना भयंकर अनिष्ट का सूचक है। आपकी मृत्यु निकट प्रतीत हो रही है।' तदनन्तर कबूतर ने राजा से अपनी प्राणरक्षा करने का निवेदन किया। इसके विपरीत बाज ने कबूतर को छोड़ देने के लिये राजा शिवि से कहा। शिवि ने बाज को ऋषभकन्द का गूदा देने का प्रस्ताव किया किन्तु उसने कबूतर के बराबर मांस ही पाने पर जोर दिया। उसने शिवि से कबूतर के बराबर उनकी जांघ का मांस माँगा। शिवि ने तब अपनी दाहिनी जाँघ से मांस काट कर एक तराजू के पलड़े पर रख कर दूसरे पलड़े पर कबूतर को रक्खा। किन्तु उनका मांस कबूतर से हलका पड़ गया। राजा ने पुनः पुनः अपने अंगों का मांस काट कर तराजू पर चढ़ाया किन्तु कबूतर ही भारी रहा। तब राजा स्वयं ही तराजू पर बैठ गये। यह घटना देख कर बाज ने कहा : 'हो गई कबूतर की प्राणरक्षा।' ऐसा कह कर वह वहीं अन्तर्धान हो गया। तब राजा शिवि ने कपोत से उसका और बाज का परिचय पूछा। कपोत ने कहा : 'मैं धूममयी ध्वजा से विभूषित वैश्वानर अग्नि हूँ और उस बाज के रूप में साक्षात् इन्द्र थे। हम लोग तुम्हारी श्रेष्ठता की परीक्षा के लिये आये थे। मैं तुम्हारे अंगों के घाव को अभी अच्छा कर देता हूँ। तुम्हारे कटे अंगों की त्वचा का रंग सुनहला हो जायगा और उससे पवित्र सुगन्ध फैलती रहेगी। यही तुम्हारा राजचिह्न होगा। तुम्हारे दक्षिण पार्श्व से एक पुत्र उत्पन्न होगा जिसका नाम कपोतरोमा होगा।' इतना कह कर अग्निदेव अन्तर्धान हो गये (३. १९७)" "युधिष्ठिर ने मार्कण्डेयजी से क्षत्रियों के माहात्म्य का और अधिक वर्णन करने के लिये कहा। मार्कण्डेयजी ने कहा : विश्वामित्र-पुत्र अष्टक के अश्वमेध में सब राजा पधारे थे। अष्टक के तीन भाई प्रतर्दन, वसुमना तथा उशीनरपुत्र शिवि भी उस यज्ञ में आये थे। यज्ञ समाप्त होने पर एक दिन अष्टक अपने भाइयों के साथ रथ पर आरूढ़ हो स्वर्ग की ओर जा रहे थे। उसी समय मार्ग में नारदजी को देख उन तीनों ने उन्हें भी अपने रथ पर बैठा लिया। जब नारदजी रथ पर बैठ गये तब उनमें से एक ने पूछा कि हम सब स्वर्ग जा रहे हैं किन्तु वहाँ से सब से पहले कौन भूतल पर उतरेगा। इस प्रश्न के उत्तर में नारदजी ने बताया कि पहले अष्टक उतरेंगे। नारदजी ने इसका कारण अष्टक की आत्मश्लाघा बताया। तदनन्तर पूछने पर नारदजी ने बताया कि उसके बाद प्रतर्दन उतरेगा और उसके बाद वसुमना। फिर नारदजी से उन लोगों ने यह प्रश्न किया कि यदि नारदजी के साथ एकमात्र शिवि ही स्वर्ग जाँय तब इन दोनों में से पहले कौन उतरेगा। इसके उत्तर में नारदजी ने बताया कि शिवि स्वर्ग जाँयगे और वे (नारद) स्वयं उतरेंगे। ऐसा कह कर नारदजी ने शिवि की महिमा का वर्णन किया (३. १९८)।" ३. १९४, २. ७; १९७, १; १९८, २. २०-२२. २६. २७ (एक ब्राह्मण के वेश में विधाता ने शिवि से अपने पुत्र बृहद्गर्भ का मांस पकाने के लिये कहा और शिवि ने निःसंकोच ऐसा किया); २०८, ७ (आत्ममांसप्रसादेन शिविरौशीनरो नृपः स्वर्गं सुदुर्गमं प्राप्तः क्षमावान्); २९४, १७; ४. ५६, १० (भीष्म और अर्जुन का युद्ध देखने आये); ५. ९०, १९; ११८, २० (उशीनर द्वारा ययाति की पुत्री माधवी के गर्भ से उत्पन्न); १२१, १०; १२२, ८; ६. ९, ७; ७. ५८, १. २. ६. ७. १४; १४३, ४७; १२. २९, ३९. ४२; १४३, ३ (शिविप्रभृतयो राजन् राजानः शरणागतान् । परिपाल्य महात्मानः संसिद्धिं परमां गताः); १६६, ८० (वसुओं से खड्ग प्राप्त किया जो इनसे प्रतर्दन को मिला); २३४, १९ (शिविरौशीनरोऽङ्गानि सुतं च प्रियमौरसम् । ब्राह्मणार्थमुपाहृत्य नाकपृष्ठमितो गतः); १३. ३२, २९; ६७, १०; ९४, ५. २६; ११५, ७० (कार्तिक मास में मांसभक्षण नहीं करते थे); १३७, ४ (शिविरौशीनरः प्राणान् प्रियस्यतन-यस्य च ब्राह्मणार्थमुपाकृत्य नाकपृष्ठमितोगतः); १४. ९०, १०० । तुकी० औशीनर, शैब्य ।

२. शिवि = उशीनर (१. २, १७३)।

३. शिवि, एक दैत्य का नाम है : १. ६५, १८ (हिरण्यकशिपु का चौथा पुत्र); ६७, १ (द्रुम नामक राजा के रूप में पृथिवी पर उत्पन्न हुआ)।

४. शिवि, भूतपूर्व पाँच इन्द्रों में से तीसरे का नाम है (१. १९७, २९)।

५. शिवि, एक राजा का नाम है : १. १८६, १६; ७. ८, २५ (युधिष्ठिर की सेना में सम्मिलित हो कर द्रोणाचार्य से युद्ध किया); १६, ३२; १५५, १६. १८ (द्रोणाचार्य ने इसका वध किया था)।

६. शिवि (बहु०) एक जाति का नाम है : २. ३२, ७ (पश्चिम में नकुल ने इन्हें पराजित किया था); ५२, १४ (ये युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये); ३. १३१, २१; १९७, २५. २९. २४ (शिवि इनके शासक थे); २६६, १; २६७, ११ (जयद्रथ द्वारा शासित); २७१, ३. २८ (जयद्रथ के नेतृत्व में युद्ध कर रहे शिवियों का अर्जुन ने संहार किया); ५. २३, २५ (नकुल ने इन्हें पराजित किया था); १९५, ७ (दुर्योधन की सेना में); ६. १८, १२; ५१, १४; ११७, ३४ (अर्जुन पर आक्रमण किया); ११९, ८२; ७. ७, १५; ७०, १३; ९१, ३८ (कर्ण भी इन्हें पराजित कर चुका था); ९३, २; १५०, ३४; १५७, २८; १६१, ३; १९२, ३३; ८. ५, ३८ (इनका संहार); २७, २; ४५, ३५ (कर्ण ने इन्हें मूर्ख बताया)।

शिविपुत्र = गोपति (१२. ४९, ७९)।

शिविसुत = वृषादर्भ (१३. ९३, २५)।

शिरीषक, एक कश्यप वंशी नाग का नाम है (५. १०३, १४)।

शिरोहारिन् = शिव (सहस्रनाम)।

शिलाधारिन = शिव (सहस्रनाम)।

शिलायूप, विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक का नाम (१३. ४, ५४)।

शिलिन् , तक्षक वंशी एक नाग का नाम है (१. ५७, ९)।

शिल्पिक = शिव (सहस्रनाम)।

शिल्पिनां श्रेष्ठः = शिव (सहस्रनाम)।

१. शिव (महादेव, रुद्र), उमापति भगवान महादेव : १. १, ३२ (स्थाणु); १८, ४२ (सागर मन्थन से उत्पन्न कालकूट का पान कर लिया इसलिये इनका नीलकण्ठ नाम पड़ा); ६६, १ (स्थाणु, ये एकादश रुद्रों के पिता हुये); ६७, ७२ (महादेव, अन्तक, काम और क्रोध के संयोग से अश्वत्थामा का जन्म हुआ था); ११०, ९-१० (इन्होंने गान्धारी को १०० पुत्र प्राप्त करने का वरदान दिया था); १२३, ३८ (शिवतुल्यपराक्रमः); १४३, ३ (पशुपति अर्थात शिव); १६९, ८ (पूर्व जन्म में द्रौपदी ने इनसे पतिप्राप्ति के लिये पाँच बार प्रार्थना की थी इसलिये उसे पाँच पति मिले); १९७, १-५३ (इन्होंने पाँच इन्द्रों को एक गुहा में बन्दी बना दिया); २११, १-३२ (इनके द्वारा चार मुख प्राप्त करने की कथा); २१५, १-२७ (प्रभञ्जन को वरदान देने की कथा); २२३, १-८३ (श्वेतकि ने तपस्या करके इनको प्रसन्न किया और दुर्वासा को ऋत्विज के रूप में प्राप्त किया जो शिव के एक अंश से उत्पन्न हुये थे); २. ३, १५ (इन्होंने बिन्दुसरोवर पर तपस्या की थी); १०, ३७ (उमा और अपने विभिन्न गणों के साथ ये कुबेर की सभा में विराजमान होते हैं), १४, ६४ (जरासन्ध ने महादेव शिव की उपासना की थी); १५, २३ (जरासन्ध ने इनके मन्दिर में अनेक राजाओं को बन्दी बना कर इनको बलि देने के लिये रख छोड़ा था); ४६, १३ (इनके वृषभध्वज आदि नाम); ३. १२, ३१ और बाद श्रीकृष्ण की स्तुति करते हुये अर्जुन ने उन्हें शिव, रुद्र आदि बताया), ५० और बाद

(द्रौपदी ने भी श्रीकृष्ण को रुद्र आदि का अधीश्वर बताया); ३७, ७७ (भूतेशं त्र्यक्षं शूलधरं शिवम्); ३८-३९ अध्याय (किरात रूपी शिव से अर्जुन का युद्ध); ३९ अध्याय (अर्जुन द्वारा शिव की स्तुति); ४०, २७ (अर्जुन को पाशुपत अस्त्र और गाण्डीव धनुष दिया); ८२, १८-२२ (रुद्रकोटि तीर्थ में एक करोड़ मुनियों के एकत्र होने पर इन्होंने एक करोड़ रूप धारण करके मुनियों को दर्शन दिया); ८३, ११९. १२४. १३० (मङ्कणक मुनि का महादेव के साथ सम्बन्ध); १०६, १२ (इन्होंने सगर को उनकी एक पत्नी से ६०,००० और दूसरी से केवल एक पुत्र होने का वरदान दिया); १०८-१०९ अध्याय (भगीरथ की तपस्या से प्रसन्न होकर इन्होंने गङ्गा को धारण किया); ११४ अध्याय (इनके द्वारा यज्ञ का सर्वश्रेष्ठ भाग प्राप्त करने की कथा); १६५, १२ (अर्जुन ने इनसे दिव्यास्त्र प्राप्त किये थे); १६७-१६८ अध्याय (किरात-अर्जुन की कथा); १८९,६ (नारायण के साथ समीकृत); २२०, ७ पाञ्चजन्य की नाभि से उत्पन्न); २२९ अध्याय (रुद्र को अग्नि के साथ समीकृत किया गया है और स्कन्द को अग्नि का पुत्र बताया गया है); २३० अध्याय (रुद्र द्वारा मिञ्जिक और मिञ्जिका को उत्पन्न करने की कथा); २३१ अध्याय (महिष ने जब शिव पर आक्रमण किया तब स्कन्द ने शिव की रक्षा करते हुये महिष का वध कर दिया); २७२ अध्याय (जयद्रथ ने इनकी शरण ग्रहण की); ४. १३, १५ (समाजे ब्रह्मणो राजन् तथा पशुपतेरिव); ५. १११, ५. ८. ९ (महेश्वर शिव हिमवत् पर निवास करते हैं। यहीं शिव ने गङ्गा को मस्तक पर धारण किया। यहीं इन्हें प्राप्त करने के लिये उमा देवी ने तपस्या की थी); १२४, ५५; १३१, ५ (श्रीकृष्ण के वक्ष पर प्रकट हुये); १८७, ७ (इन्होने अम्बा को यह वरदान दिया कि अगले जन्म में वह पुरुष होकर भीष्म का वध करेगी); १८८, ७ (इन्होंने द्रुपद को यह वरदान दिया कि उन्हें एक पुत्री प्राप्त होगी जो अम्बा का ही पुनर्जन्म होगी। वह पुत्री बाद में पुरुष हो जायगी); ६. ६, १९ (मेरु पर्वत पर तपस्या की). २५ (उमा के साथ ये मेरु पर निवास करते हैं). ४६ (विन्दुसरोवर पर तपस्या की); ११, २८ (शाकद्वीप में शंकर की उपासना की जाती है); ७. ५२, ४३ (इन्होंने ब्रह्मा से निवेदन किया कि वह प्राणियों को नष्ट न करें); ६९, २४ (जब पुण्यजनों ने पृथिवी का दोहन किया तब ये बछड़ा बने); ८०-८१ अध्याय (रात में स्वप्न में अर्जुन श्रीकृष्ण के साथ इनके पास आये। उस समय इन्होंने अर्जुन को पाशुपतास्त्र दिया); ९४ अध्याय (इन्होंने वृत्रवध के समय इन्द्र को एक कवच दिया था); १४४, १५. १६ (इन्होंने सोमदत्त को एक पुत्र प्राप्त होने का वरदान दिया); २०१ अध्याय (जब अश्वत्थामा के आग्नेयास्त्र के प्रयोग से श्रीकृष्ण और अर्जुन अप्रभावित रहे तब चिन्तित अश्वत्थामा को व्यासजी ने शिव और श्रीकृष्ण की महिमा बताया); २०२, १०. १२. २७ (व्यासजी ने इनके द्वारा दक्षयज्ञ के विध्वंस की कथा बताने के बाद कहा कि ये अर्जुन की रक्षा करते हैं). ७८. १०२ (इनकी प्रशंसा करते हुये व्यासजी ने अर्जुन से इनके कुछ नामों का वर्णन किया). १२३-१५१ (इनके विभिन्न नामों की व्याख्या); ८. ३३-३४ (त्रिपुरविनाश की कथा); ३४ अध्याय (इन्होंने राम जामदग्न्य को दिव्यास्त्र देकर दानवों से युद्ध करने के लिये भेजा); ८६, १४; ८७, ५७ (भव-कर्ण और अर्जुन का युद्ध देखने आये); ९. ३८ (मङ्कणक मुनि की कथा के प्रसंग में इनका उल्लेख); ९. ४४-४६ (स्कन्दोत्पत्ति की कथा); ४८ अध्याय (अरुन्धती के साथ इनका सम्बन्ध); १०. ७, २ (अश्वत्थामा की स्तुति से प्रसन्न होकर इन्होंने अश्वत्थामा को एक तलवार दी और फिर उनके शरीर में प्रवेश किया); १७-१८ अध्याय (श्रीकृष्ण द्वारा शिव की महिमा का वर्णन। शिव के कोप से देवता, यज्ञ और जगत की दुरवस्था तथा उनके प्रसाद से सब के स्वस्थ होने की कथा); १२. ८, ३६ (विश्वरूपो महादेवः सर्वमेधे महामखे। जुहाव सर्वभूतानि तथैवात्मानमात्मना); २०, १२ (महादेवः सर्वयज्ञे महात्मा हुत्वाऽऽत्मानं देवदेवो बभूव); ४९, ३३ (इन्होंने राम जामदग्न्य को एक परशु दिया); ५९, ८०. ८१ (ब्रह्मा से दण्डनीति प्राप्त कर १०,००० अध्यायों में उस वैशालाक्ष नामक शास्त्र को संक्षिप्त करके इन्द्र को दिया); १२२, ३० (इन्हें रुद्रों का प्रधान बनाया गया). ४८. ५३ (देवदेवः); १५३ अध्याय (एक मृत बालक को इनके द्वारा पुनरुज्जीवित कर दिये जाने की कथा); १६६, ६४ (इन्होंने ब्रह्मा द्वारा निर्मित खड्ग से दानवों का वध करके उस खड्ग को विष्णु को दे दिया); २५६, १९. २० (इन्होंने ब्रह्मा से प्राणियों का विनाश न करने के लिये कहा); २८१, २३ (जगत्पतिः); २८३ अध्याय (शिवद्वारा दक्षयज्ञ के विध्वंस के समय उनके क्रोध से ज्वर की उत्पत्ति और ज्वर के विविध रूपों का वर्णन); २८४ अध्याय (पार्वती के रोष एवं खेद का निवारण करने के लिये शिव द्वारा दक्षयज्ञ का विध्वंस और दक्ष द्वारा शिवसहस्रनाम स्तुति से प्रसन्न होकर उन्हें वरदान देना); २८४, ८६ (शिव सहस्रनाम का उच्चारण करके दक्ष ने इनसे वरदान प्राप्त किये); २८९, ११ (उशना के साथ इनका सम्बन्ध); २९४, १५ (इन्होंने तीनों असुरों और उनके पुरों को नष्ट किया); ३२३-३२४ अध्याय (पुत्र प्राप्ति के लिये व्यासजी की तपस्या तथा शिव से वर प्राप्ति); ३३३ अध्याय (शुकदेव द्वारा परमपद प्राप्ति के बाद पुत्र शोक से व्याकुल व्यास को इन्होंने सान्त्वना दी); ३४१, २४; ३४२, २६ (इनके नीलकण्ठ होने का वर्णन). ६२ (हिमवान् ने अपनी पुत्री उमा का इनके साथ विवाह कर दिया इस पर क्रुद्ध हो भृगुजी ने इन्हें शाप दे दिया). १०७-१४२ (नर-नारायण के साथ इनका युद्ध); ३४९, ६७ (उमापतिर्भूतपतिः श्रीकण्ठो ब्रह्मणः सुतः। उक्तवानिदमव्यग्रो ज्ञानं पाशुपतं शिवः); ३५०, ११; ३५१ अध्याय (ब्रह्मा के साथ इनका संवाद); १३. १४, १२ (बदरीतीर्थ में श्रीकृष्ण ने इन्हें प्रसन्न किया था). १८ ३६. ६० (इनकी कृपा से एक पुत्र प्राप्ति के लिये श्रीकृष्ण हिमालय पर स्थित उपमन्यु के आश्रम में आये). ८१ (इनके द्वारा हिरण्यकशिपु को दिये गये वरदानों का उपमन्यु द्वारा उल्लेख). १२६. २०२. २२९. २८५. ३१८. ३३१ (उपमन्यु ने शिवस्तुति द्वारा वरदान प्राप्त किये थे). ३८२ और बाद (श्रीकृष्ण द्वारा इनका दर्शन और इनकी महिमा का वर्णन); १५ अध्याय (शिव और पार्वती द्वारा श्रीकृष्ण को वरदान देना); १६, ६८ (तण्डिन् ने इनका दर्शन और तदनन्तर स्वर्ग प्राप्त किया); १७, २८ (उपमन्यु ने श्रीकृष्ण को शिव सहस्रनाम का उपदेश दिया). १५६; १८, ६५. ६८; २६, ९० (दिवश्च्युता शिरसाऽऽत्ता शिवेन गङ्गाऽवनीध्रान्त्रिदिवस्य माता); ७७, २९ (दक्ष ने इन्हें एक वृषभ दिया। इन्होंने उस वृषभ को अपना वाहन और ध्वज बनाया। अतः इन्हें वृषभध्वज भी कहते हैं। तदनन्तर देवों ने इन्हें पशुपति बनाया); ८४, ६०-७२ (उमादेवी के साथ विवाह के बाद जब ये साथ समागम का सुख प्राप्त कर रहे थे तब देवाओं ने इनके पास आकर इनसे अपने तेज को अपने भीतर ही रोक लेने के लिये कहा। देवताओं के इस निवेदन पर इन्होंने अपने रेतस् अर्थात् वीर्य को ऊपर चढ़ा लिया। तभी से ये ऊर्ध्वरेता नाम से विख्यात हैं); ८५, ९२. ९५ (इन्होंने वरुण का रूप धारण करके एक यज्ञ किया जिसमें ब्रह्मा के वीर्य से भृगु, अङ्गिरस और कवि उत्पन्न हुये); १४०-१४८ अध्याय (उमा और शिव का संवाद); १६०-१६१ अध्याय (श्रीकृष्ण द्वारा भगवान शङ्कर के माहात्म्य का वर्णन); १६०, ३९; १६१, २. १०; १४. ८, १४. २९. ३० (इनके शर्व आदि नामों का वर्णन); ४३, ९ (पशूनामीश्वरः); १८. ६, ४९ (शिवस्य भवने)।

तुकी० इनके निम्नलिखित पर्याय :—

अज — देखिये वस्था०।

अथर्व : १३. १४, ३०९।

अनङ्गाङ्गहर : १४. ८, ३२।

अनन्त : ७. २०२, १२०; १०. ७, ७।

अन्धकघातिन् : ७. ८०, ५६; १३. १४, २१४. ३१६।

अन्धकनिपातिन् : ७. २०१, ७१।

अम्बिकाभर्तृ : ७. ८०, ५९।

ईश, ईशान, ईश्वर — देखिये वस्था०।

उग्र : १. १९७, १३; २. ४६, १४; ७. २०२, ३६; ८. ८६, २३; १०. ७, २; १२. २८४, ९५ (सहस्रनाम); १३. १७, १०० (सहस्रनाम); १४. ८, १९. ३० ।

उग्रेश : ३. १०६, १२ ।

उमापति : १. २१५, २१; २. १०, २२. ३७; १४, ६४; ४६, १४; ३. ३८, ३२; ४०, २१; ८२, ५०; ८३, १७१; ८५, २६; १०६, २२; २३१, १०८; २७२, २५. ७८; ५. ५०, २७; १८७, ७. १०; ७. २०२, २८. ३८: ८. ३३, ५०; ९. ४४, २३; १०. ६, ३३; ७, ३; १२, २७; १२. ५९, ८०; १२२, ५३; १९०, १०; २८४, ५५; २८९, १९; ३२३, १६; ३४२, १४१; ३४९, ६७; १३. १७, ४१ (सहस्रनाम). १३७; १६०, ३५; १६५, १०; १४. ८, १. ६. १९. ३१ ।

ऋषभकेतु : १२. १६६, ४५ ।

एकाक्ष : १३. १६१, २ ।

कपर्दिन् : ३. ३९, ७४; ४९, ५; २१८, ५; ५. १८७, १६; ७. ८०, ५५; २०१, ६३; २०२, २९. ३९; ८. ३४, ७६; ८६, १३; १०. ६, ३३; १८, ६; १२. १२२, ५३; ३४०, १०६ (नारायण के साथ समीकृत); ३४१, २०; ३४२, १३९; १३. १४, २१. २६; १७, ४६ (सहस्रनाम); १४८, ८; १६०, ३; १४. ८, १३; ६३, १४ ।

कपालिन् : २. ४६, १३ ।

कामाङ्गनाश : १३. १४, ३१४ ।

काल – देखिये वस्था० ।

किरात – देखिये वस्था०

कुमारपितृ : ८. ३३, ६०; १०. ७, ९ ।

कृत्तिवासस् : २. ४६, १४; ८. ३३, ५९; ३४, ५२; १०. ७, ६; १८, ४; १३. १७, १७०; १८, ५१; १४. ८, २३ ।

खट्वाङ्गधारिन् : १०. ७, ४ ।

गणाध्यक्ष : १०. ७, ८ ।

गणेश : ३. ३९, ७९ ।

गिरिश : १. १९७, २१; ३. ३९, ७२; ४०, २७; ५. ५०, २७; ७. २०२, ३३; १०. ६, ३४; १७, ७. १३; १४. ८, १७ ।

गिरीश : १३. १४०, ११; १४८, ८; १४. ७६, १३; ६५, २ ।

गोवृषध्वज : ३. १६७, ४४. ५५; २२९, २७ ।

गोवृषभाङ्क : १३. १४८, ३३ ।

गोवृषोत्तमवाहन : १०. ७, ९ ।

गौरीश : १४. ८, ३० ।

गौरीहृदयवल्लभ : १०. ७, ८ ।

चक्रिन्, चन्द्रमौलिविभूषण, चर्मवासस् , चीरवासस् (७. २०२, ३३. ४३); चेकितान् -- देखिये वस्था० ।

जटाधर : ३. ३९, ७४ ।

जटिन् : ७. ५२, ४३; ८०, ६०; १३. १७, ३२ (सहस्रनाम). ५८ ।

जटिल : ७. ८०, ३९; २०१, ६५; १०. ७, ४; १२. २८४, ९२ (सहस्रनाम). १७० ।

त्रिदशपुङ्गव, त्रिदशेश्वर -- देखिये वस्था० ।

त्रिनयन : ९. ४८, ३८; १२. ३५०, १२; १४. ८, २८ ।

त्रिनेत्र : ३. १७३, ४४; ७. ८०, ५९; १२. २८४, ८३ (सहस्रनाम) ।

त्रिपुरघातिन् : १०. ७, ५ ।

त्रिपुरघ्न : ३. ८४, २०; १७३, ५६; २२५, २१; २२९, २६; ७. २०५, १६; २०२, ४७; १२. २८४, ८३; १३. १८, १०; १४. ८, २८ ।

त्रिपुरनाशन : १३. १४२, ३७ ।

त्रिपुरमर्दन : ३. १०६, ११ ।

त्रिपुरहर्त : १३. १४, ३१४ ।

त्रिपुरान्तक : २. ४६, १३ ।

त्रिपुरान्तकर ; २. १९, १५ ।

त्रिपुरार्दन : ३. २३१, ८; २७२, ७८

त्रिलोचन : ३. १२, ४०; २७२, २६; ७. २०२, ७२; १३. १७, १२८ (सहस्रनाम) ।

त्रिशूलपाणि : ३. ८२, १०३; ७. २०२, ४२ ।

त्रिशूलहस्त : १४. ८, २७ ।

त्र्यक्ष : १. १९७, ४०; २. ४३, ११; ३. ३७, ५७; ४०, २१: १०६, ११; ७. २०२, ११. ४९. १३८ (इन्होंने अपने माथे पर एक तीसरे नेत्र का सृजन किया); ८. ३३, ६०; ३४, ११५; ८६, १३; १२. २८४, ७५ (सहस्रनाम) ।

त्र्यम्बक : १. १, १६२; २. १०, २२ (कुबेर की सभा में) ३. ३८, १०; ३९, ७५; ४०, २५. २६; ४१, ३; १०६, १२; १६७, ५०; १६८, १; २३१, १०; २७२, ८०; ७. ३, २२; ३३, १२; ३६, ४१; ४९, ११; ५९, ६; ८०, ५६; ८१, २; ८४, ६; २००, ३१; २०२, ७३. १३० (तिस्रो देवीर्यदा चैव भजते भुवनेश्वरः । द्यामपः पृथिवीं चैव त्र्यम्बकश्च ततः स्मृतः). १५२; ८. २०, १९; ३३, ५४. ६२; ३४, १४४; ९. ६, १५; १०. १८, १६; १२. ४७, ८०; २८४, ८३. १६०; ३२३, ३७; ३५०, ८ (ब्रह्मा के साथ इनका संवाद); १३. १४, ९४; १६१, २; १४. ८, २४. २७; ६५, १ ।

दक्षक्रतुहर, दक्षयज्ञनिबर्हण, दक्षयज्ञविनाश, दक्षयज्ञविनाशन, दण्डपाणि, दण्डिन् --देखिये वस्था० ।

दिग्वासस् : १३. १४, १०५. १६२. २१७. ३०६; १७, ४२ (सहस्रनाम ।

दिव्यगोवृषभध्वज : १४. ८, ३० ।

दुर्वासस् , देवदेव, देवदेवेश, देववर, देवश्रेष्ठ देवाधिदेव, देवेश-देखिये वस्था० ।

धनाध्यक्ष : १०. ७, ८ ।

धर्धुर, धतुस् --देखिये वस्था० ।

धन्वन्तर : ७. २०२, ४५ ।

धन्वाचार्य --देखिये वस्था० ।

धन्विन् : ७. २०२, ३५. ४४; ८. ३३, ५५; १२. २८४, ८७; १३. १७, ४३ (सहस्रनाम); १४. ८, १८. २१ ।

धूर्जटि : ७. २०२, १२९; १३. १६१, ९ ।

ध्रुव : १३. १४, २१ ।

नन्दीश्वर : १२. २८४, २०६; १३. १७, ७६; २५, ६१; १५०, २५ ।

निशाचरपति : ७. ५२, ४३ ।

नीलकण्ठ : १. १८, ४३ (दधार भगवान्कण्ठे मन्त्रमूर्तिर्महेश्वरः । तदा प्रभृति देवस्तु नीलकण्ठ इति श्रुतिः); २. ४६, १३; ७. २०१, ७९; २०२, ५०; १२. ३४२, २६ (पूर्वं च मन्वन्तरे स्वायंभुवे नारायणहस्तग्रहणान्नीलकण्ठत्वमेव च); १३. १४, २५० । तुकी० शितिकण्ठ ।

नीलग्रीव : ३. ३९, ७४; ७. ८०, ५७; ८. ३३, ५७; १२. २८४, ८५ (सहस्रनाम) । तुकी० पिछला शब्द ।

नीललोहित : ८. ३४, ५२; १३. १४, ३१७; १६, ४७ ।

परमेश्वर – देखिये वस्था० ।

पशुपति : १. १४३, ३ (वारणावत में इनसे सम्बद्ध एक उत्सव); २. १०, २२ (कुबेर की सभा में); १५, २३ (जरासन्ध ने राजाओं को इनके मन्दिर में वन्दी बना रक्खा था); ४६, १४; ३. २३१, ३१; २७२, ७८; ४. १३, १५; ५. १९४, १३; ६. ६, २५; ७. २०२, १२३ (नाम की व्युत्पत्ति); ९, ४६, ४६ (इन्होंने स्कन्द को धनञ्जया नामक भूतों की एक सेना दी); १०. ८, १२९; १२. २८३, १३. २२. ३०; २८९, ३४; ३४३, ६१; १३. १४, १०९. १८०. १८९; ७७, २९; ८५, ९६. ९८. १४७; १६१, १४; १४. ८, २९ ।

पशुभर्तृ : ९. ४३, १५; १२. २८४, १९; १३. १४, ३२ ।

पिङ्गल : १३. १४, २८८ ।

पितामह — देखिये वस्था० ।

पिनाकगोप्तृ : ३. ३९, ७८

पिनाकधृक् : १. २१५, २०; ३. ३९, ३७; ९५, १३; १६७, ५. ४४; ४. २२, ८२; ६. ६, ३१; ६२, ५६; ७. २०१, ७९; २०२, ७२. १४५; १२. २८३, ३३. ५०; १३. १७, ७५ (पिनाकवान्). १३७; ८५, ९३; १४०, ५०; १४४, २८; १६०, १०; १४. ७८, ४७ ।

पिनाकपाणि : ३. ३९, १; ४. ४५, ४१; ८. ३४, ६९. १०. ३, ३०; १३. १४, २८९; १४१, २० ।

पिनाकहस्त : १२. ३३३, ३२ ।

पिनाकिन् : १. ३२, २०; २. ४६, १४; ३. ३८, २८; ३९, ४१. ६५; ४१, १. ३; १०६, १२; १३०, १५; २३१, ४६; ४. ६१,२०; ५. १७१, ५; ६. ६२, ५६; ७. ८०, ५०; ९४, ५७; २०१, ६५; २०२, ४२; ८. ७०, ३०; ९. ४४, ३४; १२. १५३, ११५; २८९, २७; १३. १४, ७८. १८७; १४७, २ ।

पूष्णो दन्तभिद् : १४. ८, १४ ।

पूष्णो दन्तविनाश : : ७, २०२, ४९ ।

प्रजापति — देखिये वस्था० ।

प्रजापतिमखघ्न : ८. ३३, ४२ ।

बभ्रु : १३. १४, २; १७, १५० (सहस्रनाम) ।

बहुरूप : १. १९७, २३; २. १०, ३७; ३. १०६, १२; १६७, ४४; ७. २०२, ३२. ३६. ४६. १२७ (व्युत्पत्ति); १०. ७, ३. ८; १२. ५९, ८०; ३२३, १६; १४. ८, ६. ३१ ।

ब्रह्मचारिन् , **ब्रह्मशिरोपहर्तृ** — देखिये वस्था०

भगघ्न : ७. २०२, ४७ ।

भगनेत्रघ्न, भगनेत्रनिपातन् ,भगनेत्रहन् , भगनेत्रहर, भगहारिन् भगाक्षिहन् — देखिये वस्था ।

भव : १. १९७, २३; २. १०, ३८; ४६, १३; ३. ३८, ५; ३९, ६८; ४०, १५. २७; १०६, १२; ११८, १२; ७. ८०, २२. ४९. ५५. ६५; ८१, १३. १८. २०. २१. २४. २५; २०१, ९३. ९६; २०२, ९७. १०३. १३५ (भूतं भव्यं भविष्यं च सर्वं जगदशेषतः । भव एव ततो यस्माद्भुतभव्यभवोद्भवः); ८. ३०, १३; ३१, ४; ३३, ४७; ३४, ९६. १२९. १५५; ३५, ६ (चक्रे सारथ्यं भवस्य प्रपितामहः); ३७, ३५; ८७, २६. ५७ (कृष्ण और अर्जुन का युद्ध देखने आये); ८९, ५०; ९६, ६२; १०. ७, ४६; १७, २६; १२. २८३, ५०; २८४, ७१. ८२ (सहस्रनाम). १८९; २८९, ३३. ३६; ३००, ५८; ३६३, ३; १३. १४, १७. ७८. ९७. १००. १०६. १४०. १४७. २१२. २१४. २५५. २८२. ३१५. ४०१. ४०८. ४२४; १६, २२. ३८; १७, ६. ३१ (सहस्रनाम). ११४. १६३. १६५; १८, ४. १३; ७७, २०; ९१, ३५ (६४ विश्वेदेवों में से एक); १४६, ६१; १४८, ११; १५०, २८; १४. ८, १८. २९ ।

भवघ्न : १३. १४, ३१६

भार्गव — देखिये वस्था० ।

भीम : ७. ८०, ५६; ८. ८६, १३; १३. १७, ३१ (सहस्रनाम) ।

भूतपति, भूतेश — देखिये वस्था० ।

महागणपति : १०. ७, ४ ।

महादेव : १. २, १५८; ३, १७; ६७, ७२ (अश्वत्थामा इनके एक अंश से उत्पन्न हुये थे); १२३, ४४ (एष युद्धे महादेवं तोषयिष्यति शङ्करम्); २११, ४. २८ (इनके चार मुख प्राप्त करने की कथा); २२३, ३७. ५६; २३४, १०; २. १०, ३८ (कुबेर की सभा में); ११, ५१ (ब्रह्मा की सभा में); १४, ६४; १९, १५; ४६, १४; ३. ३८, २९. ३२; ३९, ६१. ७२. ७४. ८२; ४०, १०; ४१, २. २४; ४९, २१; ८२, ५१. १००. १२३; ८३, १०२. ११९. १२४. १३०. १३४. १७१; ८४, २४. १२७; ८५, १९. ४९. ६२. ६८; ९५, १३; १०६, २३; १६७, ७. ५२; १६८, ३. ४; १७५, १५; २३१, ८. ५५; ४. ३९, १३; ५. ५०, २७; १११, ८ (गङ्गां महादेवः पतन्तीं गगनाच्च्युताम् । प्रतिगृह्य ददौ लोके मानुषे ब्रह्मवित्तम); ११३, ९; १२४, ५५; १८७, १२. १६; १८८, ४. ७; ७. ५३, ४; ८०, ५६. ६५; १४४, १५. १६; १५९, ६; २०२, ११. १२. ५०. ६९. ९७. १०३. ११०. १३२ (व्युत्पत्ति). १४५; ८. ३४, १३ (देवों की आधी शक्ति से युक्त होने के बाद ये महादेव कहे जाने लगे). १४. ५८. ८८. १३०. १३६; ७९, ६१; ८६, १४; ९. ३८, ४२. ४३. ४७. ४९. ५४; ४३, १५; ४८, ३८. ४०; १०. ६, ३२. ४८. ५७. ६१; १७, ७. ८; १८, ८. २६; १२. ८, ३६; २०, १२ (सर्वयज्ञ में अपनी बलि दी); ४९, ३३ (राम जामदग्न्य को अस्त्र दिये); १२२, ३० (ये रुद्रों के अधिपति बनाये गये). ३६. ४८. ५२; १६६, ५० (तलवार से असुरों का वध किया); २५७, ४; २८३, १३. १८. २५. ४४. ४६; २८४, १४. ५७. १८६. १९६; २८९, ३०; ३२३, ११. १६. २० (व्यास को शुक नामक पुत्र प्रदान किया); ३२७. २४. २५ (आदित्यपर्वत पर तपस्या की); ३३३, ३३ (शुक की मृत्यु पर व्यास को सान्त्वना दी); ३३४, २४; १३. १४, ३. ७४. ९०. ९३. ९६. १०७. १३०. १३४. १४६. १६६. १६७. १७१. १७८. २०४. २०६. २४५. २६२. २७२. २८२. २८७. ३३४. ३४१. ३५०. ३७१, ३७२. ३७८. ४०४; १६, २. ६७; १७, १०२ (सहस्रनाम). १५९; १८, १२. ३०. ३२. ३५. ५५. ६९; २५, २५; ७७, २३. २८ (दक्ष द्वारा प्रदत्त वृषभ को अपना वाहन और ध्वज बनाया). २९; ८४, ६२; ८५, ११६ (वरुण का रूप धारण करके एक यज्ञ किया); १०३; २७ (गङ्गायाश्च दुरुत्सहाम् मूर्ध्ना धरां महादेवः शिरसा यामधारयत); १०७, ५२; १४१, ९४; १४६, १; १४८, २४ (श्रीकृष्ण के साथ समीकृत); १५०, ५१; १६०, ६. ४४; १६१, २. ८ (व्युत्पत्ति); १४. ८, २४. २७. ३२; ६५, २१ ।

महादेवसहस्रनामस्तोत्र (= शिव) ब्रह्मप्रोक्त महादेव (शिव) के १००८ नामों से युक्त स्तोत्र का द्योतक है जिसका बाद में तण्डिन ने उपदेश दिया था । यह अनुशासन पर्व के १७ वें अध्याय के ३१-१५३ श्लोकों में आता है। यहाँ सभी नामों को श्लोकों में उल्लिखित क्रम से प्रस्तुत किया गया है और जितने नाम एक श्लोक में आते हैं उनके बाद श्लोक संख्या भी दे दी गई है : १३. १७, ३१ (१ स्थिर, २ स्थाणु, ३ प्रभु, ४ भीम, ५ प्रवर, ६ वरद, ७ वर, ८ सर्वात्मा, ९ सर्वविख्यात, १० सर्व, ११ सर्वकरः, १२ भव). ३२ (१३ जटी, १४ चर्मी, १५ शिखण्डी, १६ सर्वाङ्ग, १७ सर्वभावन, १८ हर, १९ हरिणाक्ष, २० सर्वभूतहर, २१ प्रभु,). ३३ (२२ प्रवृत्ति, २३ निवृत्ति, २४ नियत, २५ शाश्वत, २६ ध्रुव, २७ श्मशानवासी, २८ भगवान् , २९ खचर, ३० गोचर, ३१ अर्दन). ३४ (३२ अभिवाद्य, ३३ महाकर्मा, ३४ तपस्वी, ३५ भूतभावन, ३६ उन्मत्तवेषप्रच्छन्न, ३७ सर्वलोकप्रजापति). ३५ (३८ महारूप, ३९ महाकाय, ४० वृषरूप, ४१ महायशा, ४२ महात्मा, ४३ सर्वभूतात्मा, ४४ विश्वरूप, ४५ महाहनु). ३६ ४६ लोकपाल, ४७ अन्तर्हितात्मा, ४८ प्रसाद, ४९ हयगर्दभि, ५० पवित्रम् , ५१ महान, ५२ नियम, ५३ नियमाश्रित). ३७ (५४ सर्वकर्मा, ५५ स्वम्भूत, ५६ आदि, ५७ आदिकर, ५८ निधि, ५९ सहस्राक्ष, ६० विशालाक्ष, ६१ सोम, ६२ नक्षत्रसाधक). ३८ (६३ चन्द्र, ६४ सूर्य, ६५ शनि, ६६ केतु, ६७ ग्रह, ६८ ग्रहपति, ६९ वर, ७० अत्रि, ७१ अत्र्या नमस्कर्ता, ७२ मृगबाणार्पण, ७३ अनघ). ३९ (७४ महातपा, ७५ घोरतपा, ७६ अदीन, ७७ दीनसाधक, ७८ संवत्सरकर, ७९ मन्त्र, ८० प्रमाणम् , ८१ परमंतप). ४० (८२ योगी, ८३ योज्य, ८४ महाबीज, ८५ महारेता, ८६ महाबल, ८७ सुवर्णरेता, ८८ सर्वज्ञ, ८९ सुबीज, ९० बीजवाहन). ४१ (९१ दशाबाहु, ९२ अनिमिष, ९३ नीलकण्ठ, ९४ उमापति, ९५ विश्वरूप, ९६ स्वयंश्रेष्ठ, ९७ बलवीर, ९८ अबलोगण). ४२ (९९ गणकर्ता, १०० गणपति, १०१ दिग्वासा, १०२ काम, १०३ मन्त्रवित् , १०४ परमोमन्त्र, १०५ सर्वभावकर, १०६ हर). ४३ (१०७ कमण्डलुधर, १०८ धन्वी, १०९ बाणहस्त, ११० कपालवान् , १११ अशनी, ११२ शतघ्नी, ११३ खड्गी, ११४ पट्टिशी, ११५ आयुधी ११६ महान्). ४४ (११७ स्रुवहस्त, ११८ सुरूप, ११९ तेज, १२० तेजस्करो निधि, १२१ उष्णीषी, १२२ सुवक्त्र, १२३ उदग्र, १२४ विनत).

४५ (१२५ दीर्घ, १२६ हरिकेश, १२७ सुतीर्थ, १२८ कृष्ण, १२९ शृगाल-रूप, १३० सिद्धार्थ, १३१ मुण्ड, १३२ सर्वशुभंकर). ४६ (१३३ अज, १३४ बहुरूप, १३५, गन्धधारी, १३६ कपर्दी, १३७ ऊर्ध्वरेत, १३८ ऊर्ध्वलिङ्ग १३९ उर्ध्वशायी, १४० नभःस्थल). ४७ (१४१ त्रिजटी, १४२ चीरवासा, १४३ रुद्र, १४४ सेनापति, १४५ विभु, १४६ अहश्चर, १४७ नक्तंचर, १४८ तिग्ममन्यु, १४९ सुवर्चस). ४८ (१५० गजहा, १५१ दैत्यहा, १५२ काल, १५३ लोकधाता, १५४ गुणाकर, १५५ सिंहशार्दूलरूप, १५६ आर्द्रचर्माम्बरावृत). ४९ (१५७ कालयोगी, १५८ महानाद, १५९ सर्वकाम, १६० चतुष्पथ, १६१ निशाचर, १६२ प्रेतचारी, १६३ भूतचारी १६४ महेश्वर). ५० (१६५ बहुभूत, १६६ बहुधर, १६७ स्वर्भानु, १६८ अमित १६९ गति, १७० नृत्यप्रिय; १७१ नित्यनर्त, १७२ नर्तक, १७३ सर्वलालस). ५१ (१७४ घोर, १७५ महातपा, १७६ पाश, १७७ नित्य, १७८ गिरिरुह, १७९ नभ, १८० सहस्रहस्त, १८१ विजय, १८२ व्यवसाय, १८३ अतन्द्रित). ५२ (१८४ अधर्षण, १८५ धर्षणात्मा, १८६ यज्ञहा, १८७ कामनाशक, १८८ दक्षयागापहारी, १८९ सुसह, १९० मध्यम). ५३ (१९१ तेजोपहारी, १९२ बलहा, १९३ मुदित, १९४ अर्थ, १९५ अजित, १९६ अवर, १९७ गम्भीर-घोष, १९८ गम्भीर, १९९ गम्भीरबलवाहन). ५४ (२०० न्यग्रोधरूप, २०१ न्यग्रोध, २०२ वृक्षकर्णस्थिति, २०३ विभु, २०४ सुतीक्ष्णदशन, २०५ महाकाय, २०६ महानन). ५५ (२०७ विष्वक्सेन, २०८ हरि, २०९ यज्ञ, २१० संयुगापीडवाहन, २११ तीक्ष्णताप, २१२ हर्यश्व, २१३ सहाय, २१४ कर्मकालवित्). ५६ (२१५ विष्णुप्रसादित, २१६ यज्ञ, २१७ समुद्र, २१८ वडवामुख, २१९ हुताशनसहाय, २२० प्रशान्तात्मा, २२१ हुताशन). ५७ (२२२ उग्रतेजा, २२३ महातेजा, २२४ जन्य, २२५ विजयकालवित् , २२६ ज्योतिषामयनम् , २२७ सिद्धि, २२८ सर्वविग्रह). ५८ (२२९ शिखी, २३० मुण्डी, २३१ जटी, २३२ ज्वाली, २३३ मूर्तिज, २३४ मूर्द्धग, २३५ बली, २३६ वेणवी, २३७ पणवी, २३८ ताली, २३९ खली, २४० कालकटंकट). ५९ (२४१ नक्षत्रविग्रहमति, २४२ गुणबुद्धि, २४३ लय, २४४ अगम, २४५ प्रजापति, २४६ विश्वबाहु, २४७ विभाग, २४८ सर्वग, २४९ अमुख). ६० (२५० विमोचन, २५१ सुसरण, २५२ हिरण्यकवचोद्भव, २५३ मेढ्रज, २५४ बलचारी, २५५ महीचारी, २५६ स्रुत, २५७ सर्वतूर्यनिनादी, २५८ सर्वातोद्यपरिग्रह, २५९ व्यालरूप, २६० गुहावासी, २६१ गुह, २६२ माली, २६३ तरङ्गवित्). ६२ (२६४ त्रिदश, २६५ त्रिकालधृक् , २६६ कर्मसर्वबन्धविमोचन, २६७ असुरेन्द्राणां बन्धन, २६८ युधिशत्रुविनाशन). ६३ (२६९ सांख्यप्रसाद, २७० दुर्वासा २७१ सर्वसाधुनिषेवित, २७२ प्रस्कन्दन, २७३ विभागज्ञ, २७४ अतुल्य, २७५ यज्ञविभागवित्). ६४ (२७६ सर्वावास, २७७ सर्वचारी, २७८ दुर्वासा, २७९ वासव, २८० अमर, २८१ हैम, २८२ हेमकर, २८३ अयज्ञ, २८४ सर्वधारी, २८५ धरोत्तम). ६५ (२८६ लोहिताक्ष, २८७ महाक्ष, २८८ विजयाक्ष, २८९ विशारद, २९० संग्रह, २९१ निग्रह, २९२ कर्ता, २९३ सर्पचीरनिवासन). ६६. ६७ (२९४ मुख्य, २९५ अमुख्य, २९६ देह, २९७ काहलि, २९८ सर्वकामद, २९९ सर्वकालप्रसाद, ३०० सुबल, ३०१ बलरूपधृक् ,३०२ सर्वकामवर, ३०३ सर्वद, ३०४ सर्वतोमुख, ३०५ आकाशनिर्विरूप, ३०६ निपाती, ३०७ अवश, ३०८ खग). ६८ (३०९ रौद्ररूप, ३१० अंशु, ३११ आदित्य, ३१२ बहुरश्मि, ३१३ सुवर्चसी, ३१४ वसुवेग, ३१५ महावेग, ३१६ मनोवेग, ३१७ निशाचर). ६९ (३१८ सर्ववासी, ३१९ श्रियावासी, ३२० उपदेशकर, ३२१ अकर, ३२२ मुनि, ३२३ आत्मनिरालोक, ३२४ सम्भग्न, ३२५ सहस्रद). ७० (३२६ पक्षी, ३२७ पक्षरूप, ३२८ अतिदीप्त, ३२९ विशाम्पति, ३३० उन्माद, ३३१ मदन, ३३२ काम, ३३३ अश्वत्थ, ३३४ अर्थकर, ३३५ यश). ७१ (३३६ वामदेव, ३३७ वाम, ३३८ प्राक् , ३३९ दक्षिण, ३४० वामन, ३४१ सिद्धयोगी, ३४२ महर्षि, ३४३ सिद्धार्थ, ३४४ सिद्धसाधक). ७२ (३४५ भिक्षु, ३४६ भिक्षुरूप, ३४७ विपण, ३४८ मृदु, ३४९ अव्यय, ३५० महासेन, ३५१ विशाख, ३५२ षष्टिभाग, ३५३ गवाम्पति). ७३ (३५४ वज्रहस्त, ३५५ विष्कम्भी, ३५६ चमूस्तम्भन, ३५७ वृत्तावृत्तकर, ३५८ ताल, ३५९मधु, ३६० मधुकलोचन,). ७४ (३६१ वाचस्पत्य, ३६२ वाजसन, ३६३ नित्यमाश्रमपूजित, ३६४ ब्रह्मचारी, ३६५ लोकचारी, ३६६ सर्वचारी, ३६७ विचारवित्). ७५ (३६८ ईशान, ३६९ ईश्वर, ३७० काल, ३७१ निशाचारी, ३७२ पिनाकवान् , ३७३ निमित्तस्थ, ३७४ निमित्तम् , ३७५ नन्दि ३७६ नन्दिकर, ३७७ हरि,). ७६ (३७८ नन्दीश्वर, ३७९ नन्दी, ३८० नन्दन, ३८१ नन्दिवर्धन, ३८२ भागहारी, ३८३ निहन्ता, ३८४ काल, ३८५ ब्रह्मा, ३८६ पितामह). ७७ (३८७ चतुर्मुख, ३८८ महालिङ्ग, ३८९ चारुलिङ्ग, ३९० लिङ्गाध्यक्ष, ३९१ सुराध्यक्ष, ३९२ योगाध्यक्ष ३९३ युगावह,). ७८ (३९४ बीजाध्यक्ष, ३९५ बीजकर्ता, ३९६ अध्यात्मा-नुगत, ३९७ बल, ३९८ इतिहास, ३९९ सकल्प, ४०० गौतम, ४०१ निशाकर). ७९ (४०२ दम्भ, ४०३ अदम्भ, ४०४ वैदम्भ, ४०५ वश्य, ४०६ वशकर, ४०७ कलि, ४०८ लोककर्ता, ४०९ पशुपति, ४१० महाकर्ता, ४११ अनौषध). ८० (४१२ अक्षरम् , ४१३ परमंब्रह्म, ४१४ बलवत् , ४१५ शक्र, ४१६ नीति, ४१७ अनीति, ४१८ शुद्धात्मा, ४१९ शुद्ध, ४२० मान्य, ४२१ गतागत). ८१ (४२२ बहुप्रसाद, ४२३ सुस्वप्न, ४२४ दर्पण, ४२५ अमित्रजित् , ४२६ वेदकार, ४२७ मन्त्रकार, ४२८ विद्वान, ४२९ समरमर्दन). ८२ (४३० महामेघनिवासी, ४३१ महाघोर ४३२ वशी, ४३३ कर, ४३४ अग्निज्वाल, ४३५ महाज्वाल, ४३६ अतिधूम्र, ४३७ हुत, ४३८ हवि). ८३ (४३९ वृषण, ४४० शङ्कर, ४४१ नित्यं वर्चस्वी, ४४२ धूमकेतन, ४४३ नील, ४४४ अङ्गलुब्ध, ४४५ शोभन, ४४६ निरवग्रह). ८४ (४४७ स्वस्तिद, ४४८ स्वस्तिभाव, ४४९ भागी, ४५० भागकर, ४५१ लघु, ४५२ उत्सङ्ग, ४५३ महाङ्ग, ४५४ महागर्भपरायण). ८५ (४५५ कृष्णवर्ण, ४५६ सुवर्ण, ४५७ सर्वदेहिनाम् इन्द्रियम् , ४५८ महापाद, ४५९ महाहस्त, ४६० महाकाय, ४६१ महायशा). ८६ (४६२ महामूर्धा, ४६३ महामात्र, ४६४ महानेत्र, ४६५ निशालय, ४६६ महान्तक, ४६७ महाकर्ण, ४६८ महोष्ठ, ४६९ महाहनु). ८७ (४७० महानास, ४७१ महाकम्बु, ४७२ महाग्रीव, ४७३ श्मशानभाक् , ४७४ महावक्षा, ४७५ महोरस्क, ४७६ अन्तरात्मा, ४७७ मृगालय). ८८ (४७८ लम्बन, ४७९ लम्बितोष्ठ, ४८० महामाय, ४८१ पयोनिधि, ४८२ महादन्त, ४८३ महादंष्ट्र, ४८४ महाजिह्व, ४८५ महामुख). ८९ (४८६ महानख, ४८७ महारोमा, ४८८ महाकोश, ४८९ महाजट, ४९० प्रसन्न, ४९१ प्रसाद, ४९२ प्रत्यय, ४९३ गिरिसाधन). ९० (४९४ स्नेहन, ४९५ अस्नेहन, ४९६ अजित, ४९७ महामुनि, ४९८ वृक्षाकार, ४९९ वृक्षकेतु, ५०० अनल, ५०१ वायुवाहन). ९१ (५०२ गण्डली, ५०३ मेरुधामा, ५०४ देवाधिपति, ५०५ अथर्वशीर्ष, ५०६ सामास्य, ५०७ ऋक्सहस्रामितेक्षण). ९२ (५०८ यजुःपादभुज, ५०९ गुह्य, ५१० प्रकाश, ५११ जङ्गम, ५१२ अमोघार्थ, ५१३ प्रसाद, ५१४ अभिगम्य, ५१५ सुदर्शन). ९३ (५१६ उपकार, ५१७ प्रिय, ५१८ सर्व, ५१९ कनक, ५२० काञ्चनच्छवि, ५२१ नाभि, ५२२ नन्दिकर, ५२३ भाव, ५२४ पुष्करस्थपति, ५२५ स्थिर). ९४ (५२६ द्वादश, ५२७ त्रासन, ५२८ आद्य, ५२९ यज्ञ, ५३० यज्ञसमाहित, ५३१ नक्तम् , ५३२ कलि, ५३३ काल, ५३४ मकर, ५३५ कालपूजित). ९५ (५३६ सगण, ५३७ गणकार, ५३८ भूतवाहनसारथि, ५३९ भस्मशय, ५४० भस्मगोप्ता, ५४१ भस्मभूत, ५४२ तरु, ५४३ गण). ९६ (५४४ लोकपाल, ५४५ अलोक, ५४६ महात्मा, ५४७ सर्वपूजित, ५४८ शुक्ल, ५४९ त्रिशुक्ल, ५५० सम्पन्न, ५५१ शुचि, ५५२ भूतनिषेवित). ९७ (५५३ आश्रमस्थ, ५५४ क्रियावस्थ, ५५५ विश्वकर्ममति, ५५६ वर, ५५७ विशालशाख, ५५८ ताम्रोष्ठ, ५५९ अम्बुजाल, ५६० सुनिश्चल). ९८ (५६१ कपिल, ५६२ कपिश, ५६३ शुक्ल, ५६४ आयु, ५६५ पर, ५६६ अपर, ५६७ गन्धर्व, ५६८ अदिति, ५६९ तार्क्ष्य, ५७० सुविज्ञेय, ५७१ सुशारद). ९९ (५७२ परश्वधायुध, ५७३ देव, ५७४ अनुकारी, ५७५ सुबान्धव, ५७६ तुम्बवीण, ५७७ महाक्रोध, ५७८ ऊर्ध्वरेता, ५७९ जलेशय). १०० (५८० उग्र, ५८१ वंशकर, ५८२ वंश, ५८३ वंशनाद, ५८४ अनिन्दित, ५८५ सर्वाङ्गरूप, ५८६ मायावी, ५८७ सुहृद, ५८८ अनिल, ५८९ अनल). १०१ (५९० बन्धन, ५९१ बन्धकर्ता, ५९२ सुबन्धनविमोचन, ५९३ सयज्ञारि,

५९४ सकामारि, ५९५ महादंष्ट्र, ५९६ महायुध). १०२ (५९७ बहुधा निन्दित, ५९८ शर्व, ५९९ शङ्कर, ६०० शंकर, ६०१ अधन, ६०२ अमरेश, ६०३ महादेव, ६०४ विश्वदेव, ६०५ सुरारिहा). १०३ (६०६ अहिर्बुध्न्य, ६०७ अनिलाभ, ६०८ चेकितान, ६०९ हवि, ६१० अजैकपाद् , ६११ कापाली, ६१२ त्रिशंकु, ६१३ अजित, ६१४ शिव). १०४ (६१५ धन्वन्तरि, ६१६ धूमकेतु, ६१७ स्कन्द, ६१८ वैश्रवण, ६१९ धाता, ६२० शक्र, ६२१ विष्णु, ६२२ मित्र, ६२३ त्वष्टा, ६२४ ध्रुव, ६२५ धर). १०५ (६२६ प्रभाव, ६२७ सर्वगो, वायु, ६२८ अर्यमा, ६२९ सविता, ६३० रवि, ६३१ उषङ्गु, ६३२ विधाता, ६३३ मान्धाता, ६३४ भूतभावन). १०६ (६३५ विभु, ६३६ वर्णविभावी, ६३७ सर्वकामगुणावह, ६३८ पद्मनाभ, ६३९ महागर्भ, ६४० चन्द्रवक्त्र, ६४१ अनिल, ६४२ अनल). १०७ (६४३ बलवान् , ६४४ उपशान्त, ६४५ पुराण, ६४६ पुण्यचञ्चु, ६४७ ई, ६४८ कुरुकर्ता, ६४९ कुरुवासी, ६५० कुरुभूत, ६५१ गुणौषध). १०८ (६५२ सर्वाशय, ६५३ दर्भचारी, ६५४ सर्वेषां प्राणिनां पति, ६५५ देवदेव, ६५६ सुखासक्त, ६५७ सत् , ६५८ असत् , ६५९ सर्वरत्नवित्). १०९ (६६० कैलासगिरिवासी, ६६१ हिमवद्गिरिसंश्रय, ६६२ कूलहारी, ६६३ कूलकर्ता ६६४ बहुविध, ६६५ बहुप्रद). ११० (६६६ वणिजो, ६६७ वर्धकी, ६६८ वृक्ष, ६६९ वकुल, ६७० चन्दन, ६७१ छद, ६७२ सारग्रीव, ६७३ महाजत्रु, ६७४ अलोल, ६७५ महौषध). १११ (६७६ सिद्धर्थकारी, ६७७ सिद्धार्थ, ६७८ सिंहनाद, ६७९ सिंहदंष्ट्र, ६८० सिंहग, ६८१ सिंहवाहन). ११२ (६८२ प्रभावात्मा, ६८३ जगत् , ६८४ लोकहित, ६८५ तरु, ६८६ सारङ्ग, ६८७ नवचक्राङ्ग, ६८८ केतुमाली, ६८९ सभावन). ११३ (६९० भूतालय, ६९१ भूतपति, ६९२ अहोरात्रम् , ६९३ अनिन्दित). ११४ (६९४ सर्वभूतानां वाहिता, ६९५ सर्वभूतानां निलय, ६९६ विभु, ६९७ भव, ६९८ अमोघ, ६९९ संयत, ७०० अश्व, ७०१ भोजन, ७०२ प्राणधारण). ११५ (७०३ धृतिमान् ७०४ मतिमान् , ७०५ दक्ष, ७०६ सत्कृत, ७०७ युगाधिप, ७०८ गोपालि ७०९ गोपति, ७१० ग्राम, ७११ गोचर्मवसन, ७१२ हरि). ११२ (७१३ हिरण्यबाहु, ७१४ गुहापाल प्रवेशिनाम्, ७१५ प्रकृष्टारि, ७१६ महाहर्ष, ७१७ जितकाम, ७१८ जितेन्द्रिय). ११७ (७१९ गान्धार, ७२० सुवास, ७२१ तपःसक्त, ७२२ रति, ७२३ नर, ७२४ महागीत, ७२५ महानृत्य, ७२६ अप्सरोगणसेवित,), ११८ (७२७ महाकेतु, ७२८ महाधातु, ७२९ नैकसानुचर, ७३० चल, ७३१ आवेदनीय, ७३२ आदेश, ७३३ सर्वगन्धसुखावह). ११९ (७३४ तोरण, ७३५ तारण, ७३६ वात, ७३७ परिधी, ७३८ पतिखेचर ७३९ वर्धन संयोग, ७४० वृद्ध, ७४१ अतिवृद्ध ७४२ गुणाधिक). १२० ७४३ नित्य आत्मसहाय, ७४४ देवासुरपति, ७४५ पति, ७४६ युक्त, ७४७ युक्तबाहु, ७४८ देवो दिविसुपर्वण). १२१ (७४९ आषाढ, ७५० सुषाढ, ७५१ ध्रुव, ७५२ हरिण, ७५३ हर, ७५४ आवर्तमानेभ्यो वपु, ७५५ वसुश्रेष्ठ, ७५६ महापथ). १२२ (७५७ विमर्श शिरोहारी, ७५८ सर्वलक्षणलक्षित, ७५९ अक्ष रथयोगी, ७६० सर्वयोगी, ७६१ महाबल). १२३ (७६२ समाम्नाय, ७६३ असमाम्नाय, ७६४ तीर्थदेव, ७६५ महारथ, ७६६ निर्जीव ७६७ जीवन, ७६८ मन्त्र, ७६९ शुभाक्ष, ७७० बहुकर्कश). १२४ (७७१ रत्नप्रभूत, ७७२ रत्नाङ्ग, ७७३ महार्णवनिपानवित् , ७७४ मूलम् , ७७५ विशाल, ७७६ अमृत, ७७७ व्यक्ताव्यक्त, ७७८ तपोनिधि). १२५ (७७९ आरोहण, ७८० अधिरोह, ७८१ शीलधारी ७८२ महायशा, ७८३ सेनाकल्प, ७८४ महाकल्प, ७८५ योग, ७८६ युगकर, ७८७ हरि). १२६ (७८८ युगरूप, ७८९ महारूप, ७९० महानागहन, ७९१ अवध, ७९२ न्यायनिर्वपण, ७९३ पाद, ७९४ पण्डित ७९५ अचलोपम). १२७ (७९६ बहुमाल, ७९७ (महामाल, ७९८ शशी हरसुलोचन, ७९९ विस्तारो लवण कूप, ८०० त्रियुग, ८०१ सफलोदय). १२८ (८०२ त्रिलोचन, ८०३ विषण्णाङ्ग, ८०४ मणिविद्ध, ८०५ जटाधर, ८०६ बिन्दु, ८०७ विसर्ग, ८०८ सुमुख, ८०९ शर, ८१० सर्वायुध, ८११ सह). १२९ (८१२ निवेदन, ८१३ सुखाजात, ८१४ सुगन्धार, ८१५ महाधनु, ८१६ भगवान् गन्धपाली, ८१७ सर्वकर्मणामुत्थान). १३० (८१८ मन्थानो बहुलो वायु, ८१९ सकल, ८२० सर्वलोचन, ८२१ तलस्ताल, ८२२ करस्थाली, ८२३ ऊर्ध्वसंहनन, ८२४ महान्). १३१ (८२५ छत्रम् , ८२६ सुच्छत्र, ८२७ विख्यातो लोक, ८२८ सर्वाश्रयक्रम, ८२९ मुण्ड, ८३० विरूप, ८३१ विकृत, ८३२ दण्डी ८३३ कुण्डी, ८३४ विकुर्वण). १३२ (८३५ हर्यक्ष, ८३६ ककुभ, ८३७ वज्री, ८३८ शतजिह्व, ८३९ सहस्रपात् सहस्रमूर्धा, ८४० देवेन्द्र, ८४१ सर्वदेवमय, ८४२ गुरु). १३३ (८४३ सहस्रबाहु, ८४४ सर्वाङ्ग, ८४५ शरण्य,८४६ सर्वलोककृत् , ८४७ पवित्रम् , ८४८ त्रिककुन्मन्त्र, ८४९ कनिष्ठ, ८५० कृष्णपिङ्गल). १३४ (८५१ ब्रह्मदण्डविनिर्माता, ८५२ शतघ्नीपाशशक्तिमान् , ८५३ पद्मगर्भ ८५४ महागर्भ, ८५५ ब्रह्मगर्भ, ८५६ जलोद्भव). १३५ (८५७ गभस्ति ८५८ ब्रह्मकृत् , ८५९ ब्रह्मी, ८६० ब्रह्मवित् , ८६१ ब्राह्मण, ८६२ गति, ८६३ अनन्तरूप, ८६४ नैकात्मा, ८६५ तिग्मतेजा स्वयम्भुव). १३६ (८६६ ऊर्ध्वगात्मा, ८६७ पशुपति, ८६८ वातरंहा, ८६९ मनोजव, ८७० चन्दनी, ८७१ पद्मनालाग्र, ८७२ सुरभ्युत्तरण, ८७३ नर). १३७ (८७४ कर्णिकारमहास्रग्वी, ८७५ नीलमौलि, ८७६ पिनाकधृत् , ८७७ उमापति, ८७८ उमाकान्त, ८७९ जाह्नवीधृत् , ८८० उमाधव). १३८ (८८१ वरोवराह, ८८२ वरद, ८८३ वरेण्य, ८८४ सुमहास्वन, ८८५ महाप्रसाद, ८८६ दमन, ८८७ शत्रुहा, ८८८ श्वेतपिङ्गल). १३९ (८८९ पीतात्मा, ८९० परमात्मा, ८९१ प्रयतात्मा, ८९२ प्रधानधृत्, ८९३ सर्वपार्श्वमुख, ८९४ त्र्यक्ष, ८९५ धर्मसाधारणोवर). १४० (८९६ चराचरात्मा, ८९७ सूक्ष्मात्मा, ८९८ अमृतो गोवृषेश्वर, ८९९ साध्यर्षि, ९०० आदित्यो वसु, ९०१ विवस्वान् सवितामृत). १४१ (९०२ व्यास, ९०३ सर्ग सुसंक्षेपो विस्तर, ९०४ पर्ययो नर, ९०५ ऋतु, ९०६ संवत्सर, ९०७ मास, ९०८ पक्ष, ९०९ संख्यासमापन). १४२ (९१० कला, ९११ काष्ठा, ९१२ लवा, ९१३ मात्रा, ९१४ मुहूर्ताह क्षपा, ९१५ क्षणा, ९१६ विश्वक्षेत्रम्, ९१७ प्रजाबीजम्, ९१८ लिङ्गम्, ९१९ आद्यो निर्गम). १४३ (९२० सत्, ९२१ असत्, ९२२ व्यक्तम्, ९२३ अव्यक्तम्, ९२४ पिता, ९२५ माता, ९२६ पितामह, ९२७ स्वर्गद्वारम् ९२८ प्रजाद्वारम्, ९२९ मोक्षद्वारम्, ९३० त्रिविष्टपम्), १४४ (९३१ निर्वाणम्, ९३२ ह्लादन, ९३३ ब्रह्मलोक, ९३४ परा गति, ९३५ देवासुरविनिर्माता, ९३६ देवासुरपरायण). १४५ (९३७ देवासुरगुरु, ९३८ देव, ९३९ देवासुरनमस्कृत, ९४० देवासुरमहामात्र, ९४१ देवासुरगणाश्रय). १४६ (९४२ देवासुरगणाध्यक्ष, ९४३ देवासुरगणाग्रणी, ९४४ देवातिदेव, ९४५ देवर्षि, ९४६ देवासुरवरप्रद). १४७ (९४७ देवासुरेश्वर, ९४८ विश्व, ९४९ देवासुरमहेश्वर, ९५० सर्वदेवमय, ९५१ अचिन्त्य, ९५२ देवतात्मा, ९५३ आत्मसम्भव). १४८ (९५४ उद्भित्, ९५५ त्रिविक्रम, ९५६ वैद्य, ९५७ विरज, ९५८ नीरज, ९५९ अमर, ९६० ईड्य, ९६१ हस्तीश्वर, ९६२ व्याघ्र, ९६३ देवसिंह, ९६४ नरर्षभ). १४९ (९६५ विबुध, ९६६ अग्रवर, ९६७ सूक्ष्म, ९६८ सर्वदेव, ९६९ तपोमय, ९७० सुयुक्त, ९७१ शोभन, ९७२ वज्री, ९७३ प्रासानां प्रभव, ९७४ अव्यय). १५० (९७५ गुह, ९७६ कान्त, ९७७ निज सर्ग, ९७८ पवित्रम्, ९७९ सर्वपावन, ९८० शृङ्गी, ९८१ शृङ्गप्रिय, ९८२ बभ्रु, ९८३ राजराज, ९८४ निरामय). १५१ (९८५ अभिराम, ९८६ सुरगण, ९८७ विराम, ९८८ सर्वसाधन, ९८९ ललाटाक्ष,९९० विश्वदेव, ९९१ हरिण, ९९२ ब्रह्मवर्चस). १५२ (९९३ स्थावराणां पति, ९९४ नियमेन्द्रियवर्धन, ९९५ सिद्धार्थ, ९९६ सिद्धभूतार्थ, ९९७ अचिन्त्य, ९९८ सत्यव्रत, ९९९ शुचि). १५३ (१००० व्रताधिप, १००१ परम्, १००२ ब्रह्म, १००३ भक्तानां परमा गति, १००४ विमुक्त, १००५ मुक्ततेजा, १००६ श्रीमान्, १००७ श्रीवर्धन, १००८ जगत्) ।

महायोगिन् : १४. ८, २७ ।

महिषघ्न : १३. १४, ३१३ ।

महेश्वर : १. १८, ४३; २११, २३; २२३, ४९; २. १०, ३६; ३. २२, ३५ (°शरोद्धतं पपात त्रिपुरं यथा); ४९, ८ (अष्टमूर्तिना); ८२, ७२. १०३; १०७, ५७; १०८, २३; २३०, ४६. ५९ (न स्पृशन्ति ग्रहा भक्तान् नरान् देवं महेश्वरम्); २३१, १३. ५४ (शिवमित्येव यं प्राहुरीशं रुद्रं पितामहम् । भवैस्तु विविधाकारैः पूजयन्ति महेश्वरम्). ५८. १०३. १०४; २५२, ६; २८१, २३; ५. ५१, १४; ९०, २४; १११, ५. ९; १९२, १२;

६. ६, २७; ७. ७५, २१; ८०, १९ (पाशुपतास्त्र से दैत्यों का वध किया था); ८१, २३; ९४, ५४. ६०; १५६, ९० (जघानाञ्जनपर्वाणं महेश्वर इवान्धकम्). १३५; १५९, ८९; १७५, ८९; २०२, २१. ५४. ६१. ७४. ७५. ९९. ९२. ९५. १०९. ११५. १२४. १२६. १३८; ८. ३२, ७; ३४, १०. ११०. ११४. ११८. १३१. १४१. १४५; ९. ४६, ९९; ५३, २६; १०. ७, ४६; १२. १६६, ८५ (प्रणीतश्च पुराणे निश्चयं गतः); २८१, २९. ३४; २८३, २४. २६; २८४, २०. ३०. ५६. ५९. १५१ (सहस्रनाम); २८९, १३. १६; ३२३, २३ (इन्होंने व्यास को शुक नामक पुत्र प्राप्त करने का वरदान दिया); ३३९, ९३; ३४९, ४८; १३. १४, ११. १३. ११०. १३७. १६४. १७९. १८७. २१०. २१५. २३१. २३७. २६३. ३१९. ३३१. ३५५. ३७३. ३८५; १६, ४४; १७, ४९ (सहस्रनाम). १६८; १८, १. २६. ४१. ५१; २५, १५ (यत्र भागीरथी गङ्गा पतते दिशमुत्तराम्। महेश्वरस्य त्रिस्थाने यो नरस्त्वभिषिच्यते); २६, ७२ (गङ्गा को अपने मस्तक पर धारण किया); ६६, ३८; १३३, १ (गोदान विषयक उपदेश); १४१, ३९. ४३; १४२, १०. १६. २५. ३०. ३५. ६२. ९३; १४२, ४. २२. ३८; १४३, ६; १४४, ४१; १४५, २. ४७. ५५. ६१; १४६, ५६; १४८, ४४. ४८; १६०, १३. २२; १६१, २. ६ (शब्द की व्युत्पत्ति). १८. २९; १४. ६, २२ (वाराणसी में); ८, ३. २९; ६३, १९ (सुरश्रेष्ठं)।

मीढ्वस : ३. ३९, ७७; ७. २०२, ३२; १४. ८. १६।

मुनीन्द्र : १३. १४, २९४।

मृगव्याध : १४. ८, १८।

यति : १४. ८, १७।

याम्य : ७. २०२, ३०; १४. ८, १४।

योगिन्, योगेश्वर—देखिये वस्था०।

राजराज—देखिये वस्था०।

रुद्र : १. २, २६६ (रुद्रमहात्म्यमुत्तमम्). २९९; ४०, १४ (यथैव भगवान्रुद्रो विध्वा यज्ञमृगं दिवि। अन्वगच्छद्धनुष्पाणिः पर्यन्वेष्टुमिरततः); ६५, २१ (रुद्रस्यानुचरः श्रीमान्महाकालः); २२१, ९; २२३, ४७. ४८. ५४. ५५. ५७. ५८; २. १९, १५; २२, ९ (जरासन्ध ने पराजित राजाओं को रुद्र के लिये बलि दी); ४६, १४; ३. १२, २२ (श्रीकृष्ण के साथ समीकृत); ३६, ३१. ३४; ३९, ४२; ८२, ७३ (दामीतीर्थ में इनकी उपासना करनी चाहिये). ११८. ११९; ८३, १२६; ८४, १९ (सुवर्णाख्य तीर्थ में विष्णु ने इनकी उपासना की). १२४ (शालग्राम में); ९१, १० (ब्रह्मशिरस अस्त्र प्राप्त करके उसे अर्जुन को दिया). ११; १०६, १७; १०७, ४; ११४, ७. ९-११; ११८, १२ (तीर्थयात्रा के समय युधिष्ठिर इनके पास आये); १६७, ४; १७३, ४० (देवदेवाय रुद्राय); २१७, ४; २२८, ५ (रुद्रमग्निमुखां); २२९, २७ (रुद्रमग्निं द्विजाः प्राहू रुद्रसूनुस्तस्तु सः). २८ (रुद्रेण शुक्रमुत्सृष्टं तच्छ्वेतः पर्वतोऽभवत्). २९. ३० (स्कन्दो रुद्रसूनुरततोऽभवत्). ३१; २३०, ४१ (पुरुषेषु यथा रुद्रस्तथाऽऽर्या प्रभदारवपि); २३१, ९. १०. १५ (मिञ्जिकामिञ्जिकं चैव मिथुनं रुद्रसम्भवम्). ३८. ३९. ४२. ४५. ५१. ५३. ५७. ८७. ८८. ९१. १११; २७८, २० (अन्वधान्वमृगं रामा रुद्रस्तारामृगं यथा); ४. ४९, ७; ६१, ३१ (इन्होंने अर्जुन को रौद्रास्त्र दिया था); ६२, १४; ५. २५, १२; ११७, १०; १५८, ३२; १६२, २७; १६९, ७; १८७, ९; ६. ६, १९; ६२, ६२ (पिनाकमिव रुद्रस्य); ६३, १८; १०२, ३७; ७. १२, २१; १९, ३. ३२ (आक्रीडनमिव रुद्रस्य); २९, ३६; ४२, १६; ५३, ६; ५८, १२ (इन्होंने शिबि को अक्षय सम्पत्ति प्रदान किया); ७३, ९ (जयद्रथ. वरदानेन रुद्रस्य); ७६, १३; ८०, ५५; ९९, ११; १२४, ४४; १४३, ६; १४६, २८ (आक्रीडमिव रुद्रस्य). ८३; १४८, ३०; १५५, ४१; १५६, ८२; १५८, २४; १७५, ४९. ९६; १८८, ४४; १९२, ७ (रुद्रस्येव हि क्रुद्धस्य निघ्नतस्तान्पशून्पुरा); २०१, ६३. ७१. ९५. ९९; २०२, ११. २७. २९. ६२. ६६. ६९. १००. १०२. १२०. १४४ (यन्निर्दहति यत्तीक्ष्णो यदुग्रो यत्प्रतापवान्। मांसशोणितमज्जादो यत्ततो रुद्र उच्यते); ८. ५, ५७; ३०, ४४; ३३, ५७; ३४, ४३. ४८. १०३. १०४. १०६. १०७. ११९. १२०. १२२; ३५, १. ४. ९; ४७, १५; ५६, ५१; ६१, ७४; ७३, ३४; ८९, ८७; ९. ४, २; १४, १९; १६, ५२; १७, ४८; २२, १; ३८, ५०; ४४, ३९. ४३; ४५, ५; ४६, ४८; ४७, २९ (कुबेर के मित्र); १०. ३, ३०; ६, ३४; ७, २. ४. ५५; १७, २१; १८, ३. २४; ११. १६, १३; १२. ५, १३; १५, १६; ७३, १७-१९; १२१, २२; १२२, ४. ५३; १५३, ७६; १६६, १६ (ब्रह्मा के आठवें पुत्र). ४५. ४६. ५३. ५६. ६३. ६५. ८२; २८४, १२. ३५. ४७. ४८. ५१; २८९, ११; ३१७, ४ (यदि व्यक्ति की आत्मा का निष्क्रमण वक्ष भाग से होता है तो व्यक्ति इनका लोक प्राप्त करता है); ३१८, ६२; ३२३, २०; ३३३, ३९; ३३५, ४१; ३३९, ५१; ३४०, १०. ३७ (दस अन्य रुद्रों का सृजन किया). ७९ (ब्रह्मा के ललाट से उत्पन्न); ३४१, १२. १८. २१. २४. २७. २८. ३०; ३४२, २५ (दक्ष ने इनके ललाट में एक तृतीय नेत्र प्रकट किया). ६२. १०९ (नर-नारायण के साथ इनका युद्ध). ११४. ११५. ११८. १२४. १३०. १३१. १३४. १३९; ३४८, १७; ३५०, १७. २३; १३. १४, १०. ९२. ९८. १०४. १९०. २२७. २७१. ३४८. ४०८; १७, १६६. १७४; १८, ६५. ८२; १९, १६. ३१; ७७, २८ (दक्ष द्वारा प्रदत्त वृषभ को इन्होंने अपना वाहन और ध्वज बनाया). ३१; ८४, ६० (शूलपणिः). ६२. ६३. ७७; ८५, ११ (रुद्रस्य तेजः प्रस्कन्नमग्नौ, जिससे स्कन्द का जन्म हुआ). ६९. ८८. ९५. १४७ (अग्नि के साथ समीकृत); १०७, ४२; १२५, ५४; १५०, ३२, ४६; १६०, १८. २०. २१. २३. २६. २७. ३१. ३६. ३९; १६१, १. ७ (नाम की व्युत्पत्ति); १४. ८, १३; ४२, ३१; ६५, १०।

ललाटाक्ष : ३. ३९, ७७।

लेलिहान : १४. ८, १९।

लोकगुरु, लोकनाथ, लोकभावन, लोकेश, लोकेश्वर—देखिये वस्था०।

विभु—देखिये वस्था०।

विरूपाक्ष : १. २, २९९; २२१, ८; ३. २७२, २५; ७. २०१, ७२; २०२, ३८; १२. २०७, ३४ (भूतमातृगणाध्यक्षं); २८४, ७० (हरः). ७५ (सहस्रनाम)।

विलोहित : ७. ८०, ५८; ८. ३३, ५७; १०. ७, ६; १२. २८४, ८५ (सहस्रनाम); १४. ८, २३।

विशालाक्ष : १२. ५८, २; ५९, ८० (वैशालाक्षशास्त्र की रचना की); १२२, ३०; १३. १४, १६२; १७, ३७ (सहस्रनाम)।

विश्व, विश्वकर्मन्, विश्वभू, तिविश्वरूप, विश्वसम्भव, विश्वसृज्, विश्वेश, विश्वेश्वर—देखिये वस्था०।

वृष — देखिये वस्था०।

वृषकेतन : ३. २३१, ४८।

वृषध्वज : २. १२, ३; ४६, १३; ३. ४०, ८; ८३, ७५. ८५. १६३; ८४, २०. ७८. ९१. १२९; ८५, १९; २७२, २६; ५. १८७, ११. १२; ७. ६९, २४ (जब पुण्यजनों ने पृथिवी का दोहन किया तब ये बछड़ा बने); ८०, ६०; ८१, १२; २०२, ३९. १०१; १२. ३२७, २०; १३. १४, ३३४. ३३६; १३९, ३५; १४०, ४९।

वृषभ — देखिये वस्था०।

वृषभध्वज : ३. ३९, ८३. ८४; ८२, १२०; २३१, ३४; ५. १८७, १६; ७. ८०, २०. ३८; ८१, १; २०१, ९६; ८. ८७, ७३; १२. २८४, ७१; २८९, २४; १३. ७७, २९ (व्युत्पत्ति); १४०. २०; १४८, ५२; १५०, २५; १४. ६३, १६।

वृषभवाहन : १३. ८४, ७२।

वृषभाङ्क : १३. ७७, २९; १४०, २. ८. २३।

वेधस् — देखिये वस्था०।

शङ्कर : १. १२३, ४४ (महादेवं तोषयिष्यति शङ्करम्); १६९, ८. ९; १९७, ४५. ४७. ४८; १९८, ४; २२३, ४०; २. २२, ११; ३. १२,

५४; ३८, ११ (देवदेवं); ३९, ११. ३६. ८०. ८२: ४१, ३९ (शङ्करेण त्रिपुरं निहतं); १०६, १२; १०८, २६; १६७, ९; १६८, १६; २३१, ६३; ५. १८८, ३; ६. ११, २८; ३४, २३ (श्रीकृष्ण अपने को रुद्र और शङ्कर बताते हैं); ६२, ६० (नृत्यन्तमिव शङ्करम्); ७. ८०, ६२; ८१, २०; ९४, ५५; १५६, १६०; २०२, १०. ३०. ५९. ७१. १२६; ८. २१, २ (सर्वभूतेष्वनुज्ञातः शङ्करेण); ३३, ५३; ३४, १. ४. १३. ४२. १३०. १४२; १०. १२, २७; १२. ५९, ८०; १२२, ५३; १५३, ११०. १११. ११९. १२०; २८४, २१; २८९, २५; ३३३, ३२; ३४२, ११३; १३. १४, २. ८५. ९१. १२८. १६८. १८५. १८६. २७९. ३३८. ३७०, ३७७. ४२७; १५, ३; १७, ८३ (सहस्रनाम). १०२. १७१. १७३; १९, २० (उमा ने शंकर को पति रूप में प्राप्त करने के लिये हिमालय पर तपस्या की थी); २५, ६२ (हिमालय इनके श्वसुर थे); ८६, ३१; १४०, १; १४२, ३; १४६, २२; १४७, १; १४८, ५. ५१; १६०, २०; १४. ८, १४. २९ ।

शम्भु -- देखिये वस्था० ।

शर्व : ३. ३८, ३५; १०९, ५; १३०, १४ (प्रत्येक युग के अन्त में इसका वातिकषण्ड में :दर्शन होता है); १६७, ४९; १७३, ४४; ७. ४२, १४. १६; ९४, ६१; ८. ३१, ३; ३४, १०६. १२६; ८६, १३; १०. ७, २; १७, २३; १२. १२२, ५३; २८४, ८२ (सहस्रनाम); १३. १४, ७३. १३६. १९२. ३१५. ३३८. ४०३; १७, १०२ (सहस्रनाम); १४०, ३७; १४. ८, १२. २९. ३० । तुकी० सर्व भी ।

शिखण्डिन् , शिखिन् – देखिये वस्था० ।

शितिकण्ठ : ७. २०२, २९; १०. ७, ३; १२, २७; १८, १८; १२. १६६, ४५; ३४१, ३६; ३४२, ११५ (तत एनं समुद्भूतं कण्ठे जग्राह पाणिना । नारायणः स विश्वात्मा तेनास्य शितिकण्ठता); १४. ८, १३. ३१ ।

शिव (सहस्रनाम) – देखिये अगला शब्द

शिवसहस्रनामस्तोत्र—दक्ष ने शिव की सहस्रनामों से स्तुति की । यह स्तुति ही दक्षप्रोक्तशिवसहस्रनामस्तोत्र के रूप में प्रसिद्ध है और महाभारत के शान्तिपर्व के २८४ अध्याय के श्लोक ७३ से १४९ तक में उल्लिखित है । इस स्तोत्र में आनेवाले शिव के सभी नाम प्रस्तुत कोश में अपने वर्णक्रम स्थान पर दिये गये हैं ।

शुक्र : १०. ७, ३; १४. ८, ३१ ।

शूलधर : ३. ३७, ५७ ।

शूलधृक् : ३. ८३. १२७; ८. ३४, ९८; ९. ३८, ५० ।

शूलपाणि : १. ४८, २२; २२३, ४९; ३. १२, ४०; ३९, ४४. ७२; ८३, ८५ (वैतरणी में इनकी अर्चना करनी चाहिये); १०६, १२; १६७, ४५; २७७, ५५; ४. ४५, १३; ५. ५०, २७; १८७, ७; १८९, ४; ७. ८८, १६; २०१, ६५ (दण्डपाणिम्); ९. ३२, ४१; १०. ६, ३४; १२. १२२, ३४ (रुद्रों के प्रधान नियुक्त हुये); १६६, ५; २९४, १७; १३. १४, २६६. ३३६. ३८७; ६२, ४७; ८४, ६०; १४१, ४०; १८. ४, १३ ।

शूलभृत् : २. १०, २२; ६. ६२, ६५ ।

शूलहस्त : ९. ४४, ३४ ।

शूलाङ्क : १०. ७, ४६ ।

शूलिन् : २. ४६, १४; ३. ८८, ८; ७. ८०, ३९. ५८; ८. ३३, ५७. १३३. १५२; ८६, १५; १३. १, ३२; १४, २६५. २७४; १४. ८, ३ ।

श्मशानवासिन् : १०. ७, ४ ।

श्रीकण्ठ : १२. ३४२, १३४ (अद्यप्रभृति श्रीवत्सः शूलाङ्को मे भवत्वयम् । मम पाण्यंकितश्चापि श्रीकण्ठस्त्वं भविष्यसि); ३४९, ६७; १३. १४१, ८ (नाम का आरम्भ) ।

सर्वदेवेश, सर्वदेवेश्वर, सर्वभूतगुरु, सर्वभूतपति, सर्वभूतमहेश्वर, सर्वभूतेश—देखिये वस्था० ।

सर्वयोगेश्वर : १२. २८३, ३२ ।

सर्वलोकपितामह, सर्वलोकेश्वर, सर्वलोकेश्वरेश्वर, सुरवर, सुरश्रेष्ठ, सुरसत्तम, सुरासुरगुरु, सुरेश, सुरेश्वर—देखिये वस्था० ।

स्थाणु : १. १, ३२ (दिव्याणु से उत्पन्न); ६६, १ (ग्यारह रुद्रों के पिता); २११, २४. २८; २. ३, १५ (बिंदुसरोवर पर); ७, १७; ४६, १३; ३. ३८, ३; ४९, ४; ८२, ५०; ८३, २२ (मुञ्जवटं नाम स्थाणोः स्थानं). १७८; १०७, ३५; १२५, १४ (पुष्करतीर्थ में स्थाणुमन्त्रों का पाठ करना चाहिये); १७४, १२; ६. ६, ४५; ७. ५२, ४३. ४४. ४५; ५३, १; २०१, ९४; २०२, ११. ३०. ४६. ७९. १३३ (महत्पूर्वं स्थितो यच्च प्राणोत्पत्तिस्थितश्च यत् । स्थितलिङ्गश्च यन्नित्यं तस्मात्स्थाणुरिति स्मृतः); ८. ३३, ४४. ४५; ३४, ६. ५४. ७९. ८०. ९८. ११६. १५१; ८६, १५; ८९, ३८; ९. ६, ९; ४२, ५. ६; ४५, २५; १०. ७, २; १७, १४; १८, ३; १२. ५९, ८०; १२२, ५३; २५६, १९. २०; २५७, १. ६. १३. १५६ (सहस्रनाम); ३३४, ३५; १३. १४, १२७. २४९. २५० (अष्टादशभुजं). ४०६; १७, ३१ (सहस्रनाम); ३१, ६; १२५, ५३; १४८, ५४; १६१, २. ११; १४. ८, १५. ३० ।

स्वयम्भुव, स्वयम्भू – देखिये वस्था० ।

हंस –देखिये वस्था० ।

हर : १. ११०, ९ (गान्धारी को १०० पुत्र प्राप्त करने का वरदान दिया); २२१, ८; २. १९, १५; ४६, १४;. ३. ३९, १. ६७. ७३. ७९. ८४; ४१, ३; १०६, १४; १०८, २४; १०९, ९. १६; २३१, २८; २७२, ७८; ५. १७८, ८९; ७. ४२, १५; ५२, ४३; ९४, ५५; १५५, ४४; १८४, ४८; २०१, ६३; २०२, १२. ७१. ९१. १३७ (ब्रह्माणमिन्द्रं वरुणं यमं धनदमेव च । निगृह्य हरते यस्मात्तस्माद्धर इति स्मृतः); ८. ३४, ५०. ५३. ७०; ९. ४५, १०; ४८, ४६; १०. ६, ३४;७, ३. ४१. ४३; १२. २३२, ४०; २८४, ७०. १८२; ३४२, १४१; १३. १४, ८१. ८३. ८४. ८८. २३४; १७, ३०. ३२ (सहस्रनाम). ४२. १२१; २६, ८९; १४०, २४. २५, २६. ३१. ३३; १५०, २८; १४. ८, ३२ ।

हरिरुद्र – देखिये वस्था० ।

हर्यक्ष : ९. १२, ३ ।

२. शिव, एक लाक्षागृह का नाम है (५. १४६, ११) ।

३. शिव एक अग्नि का नाम है (३. २२१, २) ।

४. शिव = श्रीकृष्ण (६. ६६, ३८; १२. ५२, २) ।

५. शिव (बहु० °वाः) : ३. १२, ५३; ५. १०९, १८ ।

शिवपुरः ३. ८८, ८ (पयोष्णी तीर्थ में शिवदर्शन से मनुष्य शिव की पुरी को प्राप्त होता है)

१. शिवा, अनिल नामक वसु की भार्या का नाम है : १. ६६, २५ (यह मनोजव और अविज्ञातगति की माता थी) ।

२. शिवा, अङ्गिरा की भार्या का नाम है : ३. २२५ ,१ (स्वाहा ने इनका रूप धारण किया था). ३. ५. ७ (इनके रूप में स्वाहा ने अग्नि के साथ रमण किया) ।

३. शिवा, एक ब्राह्मणी का नाम है (५. १०९, १८) ।

४. शिवा, एक नदी का नाम है (६. ९, २५) ।

शिवोद्भेद एक तीर्थ का नाम है जहाँ सरस्वती का दर्शन होता है (३. ८२, ११२-११३) ।

१. शिशिर, सोम नामक वसु द्वारा मनोहरा के गर्भ से उत्पन्न चार पुत्रों में से एक का नाम है (१. ६६, २२) ।

२. शिशिर = विष्णु (सहस्रनाम) ।

१. शिशु : ३. २२८, १० (काकी च हलिमा चैव मालिनी बृहता तथा । आर्या पलाला वैमित्रा सप्तैताः शिशुमातरः) ।

२. शिशु = स्कन्द (३. २३२, ४)

शिशुपाल, दमघोष के पुत्र और चेदियों के राजा का नाम है : १. ६७, ५ (यह हिरण्यकशिपु नामक दैत्य का ही पुनर्जन्म था); १८६, २३ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था); १८७, २४-२५ (चेदिनामधिपो वीरो बलवानन्तकोपमः । दमघोषसुतो धीरः शिशुपालो महामतिः); २. ४, २९ (युधिष्ठिर के मयनिर्मित सभाभवन में उपस्थित); १४, १०-११ (जरा-

सन्ध का आश्रय लेकर उसका प्रधान सेनापति बन गया था); २९, ११ (दिग्विजय के समय भीमसेन ने इसे पराजित किया था); ३४, १४ (युधिष्ठिर के राजसूय में आया); ३६, ३१; ३७, १. ३१; ३८, १. ३०. ३३ (इसने श्रीकृष्ण को अर्घ्य से सम्मानित होने के लिये आयोग्य बताया); ४०, १०. ११; ४१, १; ४२, १. १६ (श्रीकृष्ण को रोका); ४३, २३. २५ (इसका पूर्व-इतिहास); ४४, ६; ४५, १७ (श्रीकृष्ण ने इसका वध करके इसके पुत्र धृष्टकेतु का चेदियों के राजा के रूप में अभिषेक किया); ४७, २५; ५०, २८; ३: १२, ३०; १४, ३. १२. १३ (शाल्व इसकी हत्या का प्रतिशोध लेंगे); ५. ,,२२, २५-२८ (युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में चेदि और करूष देश के भूपाल सब प्रकार से सन्नद्ध होकर आये थे। इन सबके मध्य चेदिराज शिशुपाल तपते हुये सूर्य के समान प्रकाशित हो रहा था। युद्ध में उसके वेग को रोकना असम्भव था। यह सब समझ कर और पाण्डवों के यश तथा मान की वृद्धि के उद्देश्य से श्रीकृष्ण ने शिशुपाल का वध कर दिया। उस समय रथासीन श्रीकृष्ण को असह्य मानकर चेदिराज के अन्य मित्र भूपाल उसका साथ छोड़कर भाग गये थे); १३०, ४८; ७. २३, २१; ८. ६, ३३ (इसके पुत्र सुकेतु का द्रोण ने वध किया); ४९, ३४; १२. ४, ६ (चित्राङ्गदा के स्वयंवर में आया); ३३९, ९८।

तुकी० इसके निम्नलिखित पर्याय :—

चेदिप, चेदिपति, चेदिपुङ्गव, चेदिराज,चेदिराज, चेदिवृष, चेदीनामधिपः, चैद्य — देखिये वस्था०।

दमघोषसुत : १. १८७, २४-२५।

दमघोषात्मज : २. ४५, ३५।

श्रौतश्रव : ३. १५, २

शिशुपालवध : १. २, ४८. १३५।

शिशुपालवधपर्वन्, महाभारत के २७ वें अवान्तरपर्व का नाम है : "युधिष्ठिर राजाओं के समुदाय को देखकर जब अपने यज्ञ की सफलता के सम्बन्ध में चिन्ता करने लगे तब भीष्म जी ने श्रीकृष्ण को अपराजेय बताते हुये युधिष्ठिर को सान्त्वना दी (२. ४०)।" "शिशुपाल ने भीष्म और श्रीकृष्ण की निन्दा की। भीष्म की तुलना पूर्वकाल के एक वृद्ध हंस के साथ करते हुये शिशुपाल ने कहा : 'पूर्वकाल में समुद्र के निकट एक वृद्ध हंस रहता था जो यद्यपि धर्म की बात तो करता था तथापि उसका आचरण सर्वथा धर्म के विपरीत था। समुद्र के जल में विचरनेवाले पक्षी उसे धर्मात्मा समझ कर उसके लिये भोज्य सामग्री दिया करते थे। उस पर विश्वास हो जाने पर सब पक्षी अपने अण्डे भी उसी के पास रखते थे। किन्तु वह पापी हंस उन पक्षियों के अण्डे खा जाता था। तदनन्तर जब पक्षियों ने उस हंस के धर्मविरुद्ध आचरण को देख लिया तब उसे मार डाला।' यह कथा सुनाकर शिशुपाल ने भीष्म से कहा कि वहाँ उपस्थित सभी नरेश कुपित होकर भीष्म का उसी प्रकार वध कर देंगे जैसे पक्षियों ने हंस का वध कर दिया था (२. ४१)।

"शिशुपाल ने जरासन्ध के प्रति किये गये व्यवहार के लिये श्रीकृष्ण की निन्दा की जिस पर क्रुद्ध हो भीमसेन शिशुपाल की ओर झपटे परन्तु भीष्म ने उन्हें रोक दिया। शिशुपाल अपनी वीरता के सम्बन्ध में दर्पोक्ति करता रहा (२. ४२)।

"शिशुपाल के जन्म का वृत्तान्त बताते हुये भीष्म ने कहा : जन्म के समय शिशुपाल को तीन आँखें और चार भुजायें थी। रोने के स्थान पर उसने गदहे के रेंकने की भाँति शब्द किया। उस समय उसने इतने जोर से गर्जना की कि उसके माता-पिता और सभी बन्धु-बान्धव भय से काँप उठे और शिशुपाल की विकराल आकृति देखकर उसे त्याग देने का निश्चय किया। उस समय यह आकाशवाणी हुई कि यह पुत्र श्रीसम्पन्न और महाबली है। अतः शान्तिपूर्वक उसका पालन-पोषण किया जाना चाहिये। इस आकाशवाणी को सुनकर शिशुपाल की माता ने अपने इस पुत्र की मृत्यु के निमित्त को जानना चाहा। तब अदृश्य आकाशवाणी ने पुनः उत्तर दिया : 'जिसके द्वारा गोद में लिये जाने पर पाँच सिर वाले दो साँपों की भाँति इसकी पाँचों उँगलियों से युक्त दो अधिक भुजायें पृथिवी पर गिर जायँगी और जिसे देख कर इसका ललाटवर्ती तीसरा नेत्र भी ललाट में लीन हो जायगा वही इसकी मृत्यु में निमित्त बनेगा।'-इस अद्भुत बालक को देखने के लिये भूमण्डल के सभी नरेश आये। चेदिराज ने अपने शिशु को प्रत्येक अतिथि की गोद में रक्खा परन्तु उसकी मृत्यु का सूचक लक्षण कहीं प्राप्त नहीं हुआ। उसके जन्म का वृत्तान्त सुनकर द्वारका से श्रीकृष्ण और बलरामजी भी आये। शिशुपाल की माता ने अपने शिशु को तब श्रीकृष्ण की गोद में डाल दिया। श्रीकृष्ण की गोद में आते ही शिशु की अतिरिक्त भुजायें गिर गईं और ललाटवर्ती नेत्र भी विलीन हो गया। यह देखकर बालक की माता ने भयभीत होकर श्रीकृष्ण से यह वरदान माँगा : 'मुझे अपने पुत्र की जीवन रक्षा का वरदान दो।' अपनी बूआ का निवेदन सुनकर श्रीकृष्ण ने उन्हें आश्वस्त करते हुये उनका मनोरथ जानने की इच्छा प्रकट की। शिशुपाल की माता ने कहा : 'तुम शिशुपाल के सब अपराध को क्षमा कर देना। यही मेरा इच्छित वर समझो।' तब श्रीकृष्ण ने कहा : 'तुम्हारा पुत्र अपने दोषों के कारण यदि मेरे वध के योग्य होगा तो भी मैं इसके १०० अपराध क्षमा करूँगा। तुम अपने मन में शोक मत करो।' तदनन्तर भीष्म ने बताया कि श्रीकृष्ण के उसी वरदान से उन्मत्त होकर शिशुपाल सब को युद्ध के लिये ललकार रहा है। (२. ४३)।

"भीष्म की बातों से चिढ़े हुये शिशुपाल ने भीष्म को पुनः फटकारा। तब भीष्म ने वहाँ उपस्थित समस्त राजाओं को श्रीकृष्ण से युद्ध करने के लिये ललकारा (२. ४४)।

"भीष्म के आवाहन को सुनकर शिशुपाल ने श्रीकृष्ण को युद्ध के लिये चुनौती दी। तब श्रीकृष्ण ने वहाँ उपस्थित राजाओं को शिशुपाल के दुष्कर्मों से अवगत कराया। श्रीकृष्ण की बात सुनकर वहाँ उपस्थित राजाओं ने शिशुपाल को धिक्कारा और उसकी निन्दा की। शिशुपाल यह सब सुनकर और अधिक प्रलाप करने लगा। तब श्रीकृष्ण ने बताया कि उन्होंने शिशुपाल की माता को शिशुपाल के १०० अपराध क्षमा कर देने का वचन दिया था जिसके कारण वे उसके अपराध सहन करते रहे। तदनन्तर १०० अपराध पूरा हो जाने पर श्रीकृष्ण ने चक्र से शिशुपाल का वध कर दिया। शिशुपाल के धराशायी हो जाने के बाद उसके शरीर से एक उत्कृष्ट तेज निकल कर श्रीकृष्ण में प्रविष्ट हो गया। शिशुपाल की मृत्यु के बाद अनेक अपशकुन प्रकट हुये। युधिष्ठिर ने दमघोष के पुत्र वीर राजा शिशुपाल की अन्त्येष्टि और उसके पुत्र धृष्टकेतु का चेदिराज के पद पर अभिषेक कराया। तदनन्तर युधिष्ठिर का वह सम्पूर्ण समृद्धियों से भरा पूरा राजसूय-यज्ञ अनुपम शोभा पाने लगा (२. ४५)।"

१. शिशुपालसुत = धृष्टकेतु (५. १७१, ८)।

२. शिशुपालसुत = शरभ (१४. ८३, ३)।

शिशुपालात्मज = धृष्टकेतु (३. ५१, २९)।

शिशुमार, एक नक्षत्र का नाम है (१. १८५, १६)।

शिशुमारमुखी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २२)।

शिशुरोमन्, तक्षक-कुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ५७, १०)।

शिष्टकृत = विष्णु (सहस्रनाम)।

शिष्टेष्ट = विष्णु (सहस्रनाम)।

शीघ्र = स्कन्द (३. २३२, ४)।

शीघ्रग = सूर्य (३. ३, २५)।

शीघ्रा, भारत की एक प्रमुख नदी का नाम है (६. ९, २९)।

शीतपूतना, भयङ्कर आकारवाली एक पिशाची का नाम है जो मानव स्त्रियों के गर्भ का हरण करती है (३. २३०, २८)।

शीतरश्मि — सोम (देखिये वस्था०)।

शीतवन — देखिये सीतवन।

शीतांशु = सोम (देखिये वस्था०)।

शीताशी, शाकद्वीप की एक पवित्र नदी का नाम है (६. ११, ३२)।

शीतोष्णक्षुत्तृड्शमक् = शिव (सहस्रनाम)।

शीर्षिन, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५९)।

१. शुक, श्रीकृष्ण द्वैपायन व्यास के पुत्र का नाम है : १. १, ८ (ये महाभारत के ८, ८०० श्लोकों का ज्ञान रखते थे). १०४ (व्यास जी ने इन्हें महाभारत के अनुक्रमणिकाध्याय की शिक्षा दी). १०८ (इन्होंने गन्धर्वों आदि को महाभारत के १४,००,००० श्लोकों का उपदेश दिया); ६३, ८९ (वेदव्यास ने इन्हें और अपने शिष्यों को वेदों तथा पञ्चम वेद महाभारत की शिक्षा दी थी); २. ४, ११ (युधिष्ठिर द्वारा अपने सभाभवन में प्रवेश करने के समय अन्य मुनियों के साथ ये भी उपस्थित थे); ३. ३१, १२; ९. ४९, २० (आदित्य तीर्थ में निवास करते हैं); १२. २३१, ८. ९ (व्यास जी से उपदेश ग्रहण किया); २३७, २; २३९, २; २४१, १; २४२, १. १०; २४५, १; २४७, १. ७; २५०, १; ३१८, ६० (विश्वावसु को उपदेश दिया); ३२१, ९४ (शुक्रो गतः परित्यज्य पितरं मोक्षदैषिकम्); ३२३, १. २. ५. १०; ३२४, ९. ११. १४. १६ (शिव को प्रसन्न करके व्यास ने पुत्रप्राप्ति का वरदान प्राप्त किया। तदनन्तर घृताची नामक अप्सरा को एक शुकी के रूप में देखकर व्यास का वीर्य स्खलित होकर अरणिकाष्ठ पर गिर गया जिससे शुक की उत्पत्ति हुई); ३२५, १. ४. २६. २८. २९. ३२. ४१; ३२६, ४. ८. १०. २० (मिथिला के राजा जनक से उपदेश ग्रहण किया); ३२७, ३२; ३२८, २३. २५. २७ (व्यास के पास लौट आये); ३२९, १. २. ४ (नारदजीने इन्हें उपदेश दिया); ३३१, ४६. ६२-६४; ३३२, ५. ८. ९. २५. ३०; ३३३, १. १०. १३. १६-१९. २१-२३. २६. ४० (इन्होंने मोक्ष प्राप्त किया। तब शोक सन्तप्त व्यास जी को शिव ने सान्त्वना दी); ३४०, २०. ११०; ३४९, ११; १३. ८१, ७. ४७; १८. ५, ५६ (गन्धर्वों और यक्षों को महाभारत सुनाया).६०। तुकी० आरणेय, अरणीसुत, द्वैपायनात्मज, वैयासिक, व्यासात्मज।

२. शुक, रावण के मन्त्री एक राक्षस का नाम है (३. २८३, ५२)।

३. शुक एक अश्व का नाम है (५. ९६, ४२)।

४. शुक, गान्धारराज सुबल के पुत्र का नाम है : ६. ९०, २६-३२ (शकुनि के भाई इरावान् ने इसका वध किया)।

५. शुक (बहु० °काः), शुकी की सन्तानों का द्योतक है (१. ६६, ५९)।

शुककृति (:) से शुक की कृतियों का तात्पर्य है : "व्यास जी ने अपने पुत्र से कहा : 'तुम मोक्ष तथा अन्यान्य विविध धर्मों का अध्ययन करो।' इस आज्ञा का पालन करते हुये शुक ने सम्पूर्ण योगशास्त्र तथा समस्त सांख्य का अध्ययन किया। तदनन्तर व्यास जी ने शुक को मिथिला जाकर राजा जनक से मोक्षशास्त्र का उपदेश ग्रहण करने के लिये कहा। व्यासजी ने यह भी कहा कि योगशक्ति का आश्रय लेकर आकाशमार्ग से यात्रा करने की अपेक्षा वे उसी मार्ग से यात्रा करें जिससे साधारण मनुष्य यात्रा करते हैं। व्यास जी ने शुक से कहा : 'राजा जनक मेरे यजमान हैं ऐसा समझकर उनके प्रति अहंकार न प्रकट करना तथा सब प्रकार से उनकी आज्ञा के अधीन रहना।' पिता के इन आदेशों को ग्रहण करके शुक मिथिला के लिये चल पड़े। उन्हें मार्ग में अनेक पर्वत, नदी, तीर्थ और सरोवर पार करने पड़े। मेरुवर्ष, हरिवर्ष और हैमवत वर्ष को पार करके शुक भारतवर्ष आये। इस प्रकार चीन और हूण जाति के लोगों से सेवित नाना प्रकार के देशों का दर्शन करते हुये शुकदेव आर्यावर्त देश में और उसके बाद विदेह प्रान्त में जा पहुँचे। तदनन्तर विदेह को लाँघकर वे मिथिला के रमणीक उपवन के पास आये। नगरद्वार पर पहुँचकर जब वे उसके भीतर प्रवेश करने लगे तब द्वारपालों ने उन्हें रोक दिया। शुकदेव तब वहीं खड़े हो गये। उनके मन में किसी प्रकार का खेद या क्रोध नहीं उत्पन्न हुआ। रास्ते की थकावट और सूर्य की धूप से भी उन्हें सन्ताप नहीं पहुँचा था। अपने व्यवहार से द्वारपालों में से एक को बड़ा दुःख हुआ। अतः उसने शुक को राजभवन की दूसरी कक्षा में पहुँचा दिया। थोड़ी देर में राजमन्त्री ने उन्हें महल की तीसरी ड्योढी पर पहुँचाया। वहाँ अन्तःपुर से सटा हुआ एक चैत्ररथ वन के समान मनोहर उपवन था। वहाँ पहुँचा कर जब राजमन्त्री चले गये तब पचास प्रमुख वराङ्गनाओं ने शुक के पास आकर उन्हें अर्घ्य आदि निवेदन करने के बाद स्वादिष्ट भोजन से तृप्त किया। उन वराङ्गनाओं को देखकर भी शुकदेव का अन्तःकरण पूर्णतः शुद्ध रहा। शुकदेव जी ने अपने आसन पर ही शयन किया और फिर ब्राह्ममुहूर्त में उठकर परमात्मा के ध्यान में निमग्न हो गये (१२. ३२५)।

"तदनन्तर मन्त्रियों सहित राजा जनक ने आकर अपने गुरुपुत्र शुक का स्वागत किया। जनक की पूजा आदि स्वीकार करने के पश्चात् शुकदेव जी ने मोक्षधर्म विषयक उपदेश देने के लिये जनक जी से निवेदन किया। जनक जी ने तब उपदेश देते हुये कहा कि सामान्यतया मोक्षधर्म को समझने के पूर्व चारों आश्रमों सहित वर्णधर्मों का पालन आवश्यक है। फिर भी अनेक जन्मों से कर्म करते-करते जब सम्पूर्ण इन्द्रियाँ पवित्र हो जाती हैं तब मनुष्य प्रथम ब्रह्मचर्याश्रम में ही मोक्षरूप ज्ञान प्राप्त कर सकता है। ऐसे व्यक्ति को अन्य तीन आश्रमों में जाने की आवश्यकता नहीं होती। तदनन्तर पूर्वकाल में राजा ययाति द्वारा गायी गई गाथाओं को सुनाने के बाद जनक जी ने शुक से कहा : 'आप मोक्षधर्म का उपदेश प्राप्त करने के लिये सभी आवश्यक गुणों से सम्पन्न हैं आप अपने पिताजी की कृपा और उन्हीं से प्राप्त शिक्षा द्वारा विषयों से परे हो चुके हैं। उन्हीं गुरुदेव जी की कृपा से मुझे भी यह दिव्य ज्ञान प्राप्त हुआ है। आपको सब ज्ञान प्राप्त हो चुका है। आपकी बुद्धि भी स्थिर है। परन्तु विशुद्ध निश्चय के बिना कोई परमात्म-भाव को प्राप्त नहीं होता। अतः मैं तथा अन्य मनीषि पुरुष भी आपको अक्षय एवं अनामय परम मार्ग मोक्ष में स्थित मानते हैं। (१२. ३२६)।"

शुककृत्य (अ) ; "राजा जनक की उक्त बातें सुनकर शुकदेव जी अपनी बुद्धि के द्वारा आत्मा में स्थित होकर स्वयं अपने आत्मस्वरूप का साक्षात्कार करके कृतार्थ हो गये। तदनन्तर वे अत्यन्त शान्ति का अनुभव करते हुये हिमालय पर्वत को लक्ष्य करके चुपचाप तीव्र वेग से उत्तर दिशा की ओर चल दिये। इसी समय नारद हिमालय पर्वत का दर्शन करने के लिये आये (हिमालय की शोभा का वर्णन)। हिमालय की पूर्व दिशा का आश्रय लेकर पर्वत के एकान्त तटप्रान्त में व्यास जी अपने शिष्यों को वेद की शिक्षा देते थे। शुकदेव ने अपने पिता व्यास जी के आश्रम का दर्शन किया और तीव्र गति से आकर पिता के चरणों में नमस्कार किया। तदनन्तर उन्होंने राजा जनक के साथ हुये अपने वार्तालाप का अपने पिता को वर्णन सुनाया। एक दिन व्यास जी के शिष्यों ने व्यास जी से वरदान माँगते हुये कहा : 'हमें यह वरदान दें कि आपका कोई छठवाँ शिष्य प्रसिद्ध न हो। हम चार आपके शिष्य हैं और पाँचवें आपके पुत्र शुकदेव हैं। इन पाँचों में ही आपके पढ़ाये हुये वेद प्रतिष्ठित हों।' शिष्यों की बात सुन कर व्यास जी ने उनसे कहा : 'जो ब्रह्मलोक में अटल निवास चाहता है उसका कर्तव्य है कि वह पढ़ने की इच्छा से आये हुये ब्राह्मण को सदा ही वेद पढ़ाये। तुमलोग बहुसंख्यक हो जाओ और इस वेद का विस्तार करो। जिसका मन वश में न हो, जो ब्रह्मचर्यव्रत का पालन न करता हो तथा जो शिष्यभाव से पढ़ने न आया हो उसे वेदाध्ययन नहीं करना चाहिये।' तदनन्तर व्यास जी ने अपने शिष्यों को वेदाध्ययन सम्बन्धी नियमों का विस्तार से उपदेश दिया (१२. ३२७)।

"अपने गुरु के उपदेशों को सुनकर सभी व्यास-शिष्यों ने वेदों के अनेक विभाग कर उनका प्रचार करने के लिये पृथिवी पर जाने की आज्ञा माँगी। व्यास जी की अनुमति से उन शिष्यों ने पृथिवी पर उतर कर चातुर्होत्र कर्म का प्रचार किया और गृहस्थाश्रम में प्रवेश करके ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्यों के यज्ञ कराते हुये द्विजातियों से पूजित हो आनन्दपूर्वक रहने लगे। शिष्यों के पृथिवी पर आ जाने पर व्यास जी के पास केवल उनके पुत्र शुकदेव ही रह गये। उस समय नारद जी ने वहाँ आकर यह जानना चाहा कि व्यास जी के आश्रम में वेदमन्त्रों की ध्वनि क्यों नहीं हो रही है। नारद जी ने

व्यास से कहा : 'वेदध्वनि न होने के कारण हिमालय श्रीहीन हो रहा है। यहाँ के ऋषि, देवता, और महाबली गन्धर्व भी ब्रह्मघोष से विमुक्त हो पहले की भाँति शोभा नहीं प्राप्त कर रहे हैं। वेद पढ़कर उसका अभ्यास न करना वेदाध्ययन का दूषण है। अतः आप अपने पुत्र शुकदेव के साथ वेदों का स्वाध्याय करते रहें।' नारदजी की बात सुनकर व्यास जी ने अपने पुत्र शुकदेव के साथ शिक्षा के नियमों के अनुसार उच्च स्वर से तीनों लोकों को परिपूर्ण करते हुये वेद की आवृत्ति आरम्भ कर दी। जब पुत्र सहित व्यास जी वेदों का अभ्यास कर रहे थे तब समुद्री हवा से प्रेरित हो तीव्र वेग से आँधी चलने लगी। तब अनध्याय काल बताकर व्यास जी ने अपने पुत्र को वेद पढ़ने से रोक दिया। शुकदेव जी ने उस प्रबल वायु की उत्पत्ति के सम्बन्ध में पिता से जानना चाहा। व्यास जी ने कहा : 'मनुष्यों के लिये दो मार्ग हैं, एक देवयान और दूसरा पितृयान। पृथिवी पर जो हवा चलती है उसके सात मार्ग हैं।' तदनन्तर व्यास जी ने प्रवह, आवह, उद्वह, संवह, विवह, परिवह, और परावह नामक सात वायुओं का वर्णन करने के बाद बताया कि उस समय जो प्रबल वायु चल रहा है वह विष्णु का निःश्वास है। जब कभी वह निःश्वास वेग से निकल पड़ता है उस समय सम्पूर्ण जगत काँप उठता है। इसलिये आँधी चलने पर वेद का पाठ नहीं करना चाहिये क्योंकि वेद भी भगवान का निःश्वास ही है। (१२. ३२८)।" आगे की कथा के लिये देखिये शुक-नारद-संवाद।

शुक-नारद-संवाद – "अपने आश्रम में नारद जी को उपस्थित देखकर शुकदेव जी ने उनका पूजन किया। तदनन्तर शुकदेव जी ने नारद से उपदेश देने के लिये निवेदन किया। तब नारदजी ने वैराग्य और ज्ञान का उपदेश देते हुये पूर्वकाल में कुछ ऋषियों को उपदेश देने के सन्दर्भ में सनत्कुमार के इस वचन का उल्लेख किया कि विद्या के समान कोई नेत्र नहीं है। सत्य के समान कोई तप नहीं है। राग के समान कोई दुःख नहीं है और त्याग के समान कोई सुख नहीं है। पापकर्मों से दूर रहना, सदा पुण्यकर्मों का अनुष्ठान करना और श्रेष्ठ पुरुषों के प्रति सदाचार का पालन करना ही सर्वोत्तम श्रेय का साधन है। बहुत से ज्ञानी पुरुष संयम् और तपस्या के बल से नवीन बन्धनों का उच्छेद करके अनन्त सुख प्रदान करनेवाली अबाध सिद्धि को प्राप्त हो चुके हैं। इस प्रकार कहकर नारद जी ने शुकदेव को सदाचार और आध्यात्म-विषयक उपदेश दिये (१२. ३२९-३३०)। आगे की कथा के लिये देखिये शुकाभिपतन।

शुकप्रश्नाभिगमन (१. २, ७७) से शान्तिपर्व के ३३१ और बाद के अध्यायों में आनेवाले विषयों का तात्पर्य है।

शुकस्याश्रम एक तीर्थ का नाम है (३. ८५, ४२)।

शुकाभिपतन – "नारदजी से कर्मफल-प्राप्ति और परतन्त्रताविषयक उपदेश सुनकर परम् बुद्धिमान् और धीरचित्त शुकदेव जी मन ही मन विचार करने लगे कि स्त्री-पुत्रों के प्रपञ्च में पड़ने से महान क्लेश होता है। विद्याभ्यास में भी बहुत अधिक परिश्रम करना पड़ता है। इस प्रकार विचार करके शुकदेव ने निश्चय किया कि वे सब प्रकार की उपाधियों से मुक्त होकर उत्तम गति को प्राप्त करें जिससे फिर संसार में न आना पड़े। उन्होंने विचार किया कि 'जहाँ जाने पर पुनरावृत्ति नहीं होती मैं उसी परम भाव को प्राप्त करना चाहता हूँ। परन्तु योग के बिना उस परम गति को नहीं प्राप्त किया जा सकता। अतः मैं योग का आश्रय ले इस देहगेह का परित्याग करके वायुरूप हो तेजोराशिमय सूर्यमण्डल में प्रवेश करूँगा। सूर्य सब स्थान से तेज को स्वयं ग्रहण करते हैं इसलिये उनका मण्डल सदा अक्षय बना रहता है। अतः आदित्यमण्डल में जाना ही अधिक अच्छा प्रतीत होता है। वहाँ मेरा पराभव करना किसी के लिये भी कठिन होगा। इस शरीर को सूर्यलोक में छोड़कर मैं ऋषियों के साथ सूर्यदेव के अत्यन्त दुःसह तेज में प्रवेश कर जाऊँगा। इसके लिये मैं नग-नाग, पर्वत, पृथिवी, दिशा, द्युलोक, देव, दानव, गन्धर्व, पिशाच, सर्प और राक्षसों से आज्ञा माँगता हूँ। अब मैं निःसन्देह जगत के सम्पूर्ण भूतों में प्रवेश करूँगा। समस्त देवता और ऋषि मेरी योग शक्ति का प्रभाव देखें।' ऐसा निश्चय करके शुकदेवजी नारद जी से आज्ञा लेकर पिता व्यास जी के पास आये। उन्होंने पिता से भी जाने की आज्ञा माँगा। तब व्यास जी ने शुकदेव को एक दिन अपने पास ही रहने के लिये कहा जिससे वे उन्हें कुछ समय तक देखकर अपने नेत्रों को तृप्त कर सकें। परन्तु शुकदेव स्नेह का बन्धन छोड़कर निरपेक्ष हो गये। उन्होंने बारम्बार मोक्ष का चिन्तन करते हुये वहाँ से भी जाने का विचार किया। तदनन्तर पिता व्यास जी को वहीं छोड़कर शुकदेव जी कैलास-शिखर पर चले गये। (१२. ३३१)।

"कैलास शिखर पर पहुँच कर शुकदेव योगाभ्यास में निमग्न हो गये (योग का वर्णन)। तदनन्तर नारद जी से अनुमति लेकर वे योग में स्थित हो आकाश में प्रविष्ट हुये। कैलास शिखर से उछलकर वे तत्काल आकाश में जा पहुँचे। सुनिश्चित ज्ञान प्राप्त कर और वायु का रूप धारणकर वे अन्तरिक्ष में विचरण करने लगे। उन्हें निर्भय होकर शान्त और एकाग्रचित्त ऊपर जाते देखकर समस्त गन्धर्व, अप्सरायें तथा सिद्ध ऋषि-मुनि आश्चर्य में पड़ गये। पञ्चचूडा आदि अप्सराओं के नेत्र विस्मय से अत्यन्त खिल उठे थे। कुछ ही देर में शुकदेव जी मलय नामक पर्वत पर जा पहुँचे जहाँ उर्वशी और पूर्वचित्ति सदा निवास करती हैं। शुकदेव को देखकर इन दोनों अप्सराओं को भी महान आश्चर्य हुआ। उस समय शुकदेव जी ने सम्पूर्ण दिशाओं की ओर देखा। आकाश, पर्वत, वन और काननों सहित पृथिवी की ओर भी उनकी दृष्टि पड़ी। इन सब की अधिष्ठात्री देवियों ने सब ओर से बड़े आदर-पूर्वक शुकदेव जी को देखा। तब परम धर्मज्ञ शुकदेव जी ने उन सबसे कहा : 'देवियों! यदि मेरे पिता व्यास जी मेरा नाम लेकर पुकारते हुये इधर आ जाँय तो आपलोग सावधान होकर मेरी ओर से उत्तर देना।' सभी अधिष्ठात्री देवियों ने शुकदेव के निवेदन को स्वीकार किया। (१२. ३३२)।

"तदनन्तर शुकदेव जी ने चार प्रकार के दोषों का, आठ प्रकार के तमोगुण तथा पाँच प्रकार के रजोगुण का परित्याग करके सत्त्वगुण को भी त्याग दिया। तत्पश्चात् वे नित्य, निर्गुण एवं लिङ्गरहित ब्रह्मपद में स्थित हो गये। उस समय प्रकृति में अनेक उत्पात प्रकट हुये। आगे बढ़ने पर शुकदेव ने हिमालय और मेरुपर्वत के शिखर देखे और निःशङ्क मन से उनके ऊपर चढ़ गये। उनके चढ़ते ही दोनों पर्वत शिखर दो भागों में बँटकर बीच से फटे हुये से दिखाई पड़ने लगे। तपश्चात वे उन पर्वत शिखरों से आगे निकल गये। वे पर्वत शुकदेव जी की गति को रोक नहीं सके इसे देखकर सम्पूर्ण, देवता, गन्धर्व, ऋषि तथा इन पर्वतों पर निवास करनेवाले अन्य लोग आश्चर्यचकित हो गये। ऊर्ध्वलोक में जाते समय शुकदेव ने पुष्पित वृक्षों और वनों से सुशोभित मन्दाकिनी का दर्शन किया। उसमें स्नान कर रहीं अनेक अप्सराओं ने यद्यपि नंगे होने पर भी शुकदेव को शून्याकार देखकर अपने शरीर को ढकने या छिपाने का प्रयत्न नहीं किया। शुकदेव जी को इस प्रकार सिद्धि के लिये उत्क्रमण करते जानकर उनके पिता व्यास जी स्नेह वश उत्तम गति का आश्रय लेकर तत्काल महाभूत हो गये। व्यास जी महायोग-सम्बन्धिनी गति का आश्रय लेकर उस स्थान पर पहुँचे जहाँ उक्त पर्वत शिखरों को दो भाग में विदीर्ण करके शुकदेव जी आगे बढ़े थे। वह स्थान शुकाभिपतन के नाम से प्रसिद्ध हो गया था। वहाँ के ऋषियों ने जब व्यास जी को उनके पुत्र का अलौकिक कर्म बताया तब व्यास जी फूट-फूट कर रोने लगे। जब व्यास जी ने तीनों लोकों को गुँजाते हुये अपने पुत्र को पुकारा तब धर्मात्मा शुक ने 'भो' शब्द से पिता को उत्तर दिया। उसी के साथ-साथ सम्पूर्ण चराचर जगत् ने उच्चस्वर से 'भो' इस एकाक्षर शब्द का उच्चारण किया। तभी से जब पर्वत शिखरों अथवा गुफाओं के निकट आवाज दी जाती है तब वहाँ के चराचर निवासी प्रतिध्वनि के रूप में उसका उत्तर देते हैं। इस प्रकार अपना प्रभाव दिखाकर शुकदेव जी अन्तर्धान हो परम पद को प्राप्त हुये। अपने अमित तेजस्वी पुत्र की महिमा देखकर व्यास जी चिन्तन करते हुये उस पर्वत शिखर पर बैठ गये। इसी समय भगवान् शंकर वहाँ आये और शोक सन्तप्त व्यास जी को सान्त्वना देने लगे। शिव जी ने व्यास से कहा : पुत्र ने ऐसी उत्तम गति प्राप्त की है जो अजितेन्द्रिय पुरुष तथा देवताओं के लिये दुर्लभ है। मेरे प्रसाद से इस जगत में तुम सदा अपने पुत्र

सदृश छाया का दर्शन करते रहोगे। वह सब ओर दिखाई देगा और कभी तुम्हारी आँखों से ओझल नहीं होगा।' शिव के इस प्रकार आश्वासन देने पर व्यास जी सर्वत्र अपने पुत्र की छाया देखते हुये अपने आश्रम पर लौट आये। भीष्म जी ने बताया कि शुकदेव के जन्म और परम पद-प्राप्ति की यह कथा उन्हें नारद जी ने सुनाया था। (१२. ३३३)।

१. शुकी, ताम्रा की पुत्री का नाम है जिसने शुकों (तोतों) को उत्पन्न किया (१. ६६, ५६. ५९)।

२. शुकी, अनला की पुत्री का नाम है (१. ६, ६९)।

शुकोत्पत्ति : युधिष्ठिर के पूछने पर भीष्म ने बताया : कोई अधिक वर्षों की अवस्था हो जाने से, बाल पक जाने से, अधिक धन होने से तथा बन्धु-बान्धवों की संख्या अधिक हो जाने से ही महान नहीं हो जाता। ऋषियों ने यह नियम बनाया है कि जो वेदों का प्रवचन कर सकेगा वही महान् कहा जायगा। सम्पूर्ण श्रेष्ठता का मूल तपस्या है। इन्द्रियों का संयम करने से ही तपस्या की सिद्धि होती है। पूर्वकाल में मेरु पर्वत के शिखर पर भगवान शंकर भयानक भूतगणों के साथ विहार करते थे। उन्हीं दिनों पुत्र प्राप्ति के उद्देश्य से व्यास जी भी वहाँ तपस्या कर रहे थे। व्यास जी ने इस संकल्प के साथ तपस्या आरम्भ की थी कि उन्हें अग्नि, भूमि, जल, वायु अथवा प्रकाश के समान धैर्यशाली पुत्र प्राप्त हो। व्यास जी केवल वायुभक्षण करते हुये अनेक वर्षों तक महादेव जी की अराधना में लगे रहे वहाँ सम्पूर्ण ब्रह्मर्षि, सभी राजर्षि, लोकपाल, अनुचरों सहित साध्य, आदित्य, रुद्र, सूर्य, चन्द्रमा, वसुगण, मरुद्गण, समुद्र, सरितायें, गन्धर्व, पर्वत आदि भी शिव की आराधना करते थे। योगयुक्त हुये अमित तेजस्वी व्यास जी की जटाएँ अग्नि की ज्वालाओं के समान प्रज्वलित होती थीं। भीष्म ने बताया कि उन्होंने मार्कण्डेय जी से यहवृत्तान्त सुना था। व्यासजी की तपस्या को देखकर शिव उनके समक्ष उपस्थित हुये और उन्होंने व्यास को मनोवाञ्छित पुत्र प्राप्त करने का वरदान दिया। शिव जी ने व्यास से कहा : 'तुम्हारा पुत्र भगवद्भाव में रँगा होगा। भगवान में ही उसकी बुद्धि रहेगी और एकमात्र भगवान को ही अपना आश्रय समझेगा। उसके तेज से तीनों लोक व्याप्त हो जाँयगे और तुम्हारा वह पुत्र महान् यश प्राप्त करेगा। (१२. ३२३)।

"महादेव जी से उत्तम वरदान प्राप्त करने के बाद व्यास जी अग्नि प्रकट करने के लिये अरणीकाष्ठ लेकर उसका मन्थन करने लगे। उसी समय व्यास जी ने वहाँ आयी हुई घृताची नामक अप्सरा को देखा और काम से मोहित हो गये। उनका हृदय व्याकुल देखकर घताची एक शुकी का रूप धारण करके व्यास के पास चली आई। उस अप्सरा को दूसरे रूप में छिपी देखकर व्यास के सम्पूर्ण शरीर में कामवेदना व्याप्त हो गई परन्तु वे अपने कामवेग को रोकने लगे। अग्नि प्रकट करने की इच्छा से अपने कामवेग को रोकने पर भी उनका वीर्य सहसा अरणी पर गिर पड़ा। उस समय वे अरणियों के मन्थन में ही लगे रहे। अरणी के साथ शुक्र का भी मन्थन होने से तब शुकदेव का अरणी के गर्भ से जन्म हुआ। अपने पिता के समान परम उत्तम रूपकान्ति धारण किये पवित्रात्मा शुकदेव धूमरहित अग्नि के समान देदीप्यमान हो रहे थे। उसी समय गङ्गाजी ने मूर्तिमान होकर अपने जल से शुकदेव को तृप्त किया। दण्ड और काला मृगचर्म आकाश से शुकदेव के लिये पृथिवी पर गिरा। अन्यान्य गन्धर्व शुकदेव के जन्म की बधाई का गायन करने लगे। इन्द्रादि सम्पूर्ण देवता और देवर्षि भी वहाँ आ गये। चर और अचर सारा संसार हर्ष से खिल उठा। स्वयं भगवान शंकर ने पार्वती सहित पधार कर उस नवजात का उपनयन संस्कार सम्पन्न किया। इन्द्र ने शुक को अद्भुत कमण्डल और देवोचित वस्त्र प्रदान किये। सहस्रों हंस, शतपत्र, सारस, शुक और नीलकण्ठ आदि पक्षी उनकी प्रदक्षिणा करने लगे। तदनन्तर ब्रह्मचर्य की दीक्षा लेकर वे वहीं रहने लगे। उनके जन्म लेते ही रहस्य और संग्रह सहित सम्पूर्ण वेद उनकी उसी प्रकार सेवा में उपस्थित रहने लगे जिस प्रकार उनके पिता व्यास की सेवा में उपस्थित रहते थे। उन्होंने धर्म का विचार करके बृहस्पति को अपना गुरु बनाया और एकाग्रचित्त होकर तपस्या प्रारम्भ की। वे सदा मोक्षधर्म पर ही दृष्टि रखते थे (१२. ३२४)।" आगे की कथा के लिये देखिये शुकक्रृति।

शुक्तिमत् एक पर्वत का नाम है : २. ३०, ५ (पूर्वदिग्विजय के समय भीमसेन ने इसे जीता था); ६. ९, ११ (यह भारतवर्ष के सात कुलपर्वतों में से एक है)।

१. शुक्तिमती एक नदी का नाम है : १. ६३, ३५ (यह उपरिचर वसु की राजधानी के निकट बहती थी। कोलाहल पर्वत ने कामवश इस दिव्यरूपधारिणी नदी का अवरोध कर लिया था, किन्तु राजा वसु उपरिचर के पाद-प्रहार से पर्वत में दरार पड़ गई और उसी मार्ग से यह नदी पुनः प्रवाहित होने लगी। इसके गर्भ से कोलाहल पर्वत द्वारा जुड़वा सन्तान उत्पन्न हुई जिन्हें इसने राजा वसु उपरिचर को समर्पित कर दिया। राजा ने पुत्र को अपना सेनापति बनाया और गिरिका नामक पुत्री को अपनी पत्नी बना लिया); ६. ९, ३५ (भारत की प्रमुख नदियों में से एक)।

२. शुक्तमती, चेदिराज धृष्टकेतु की राजधानी का नाम है (३. २२, ५०)।

शुक्तिसाह्वय : १४. ८३, २ (पुरीं रम्यां चेदिनां शुक्तिसाह्वयाम्)।

१. शुक्र, असुरों के गुरु का नाम है जिन्हें उशना भी कहते हैं : १. ६५, ३६ (इनके चार पुत्रों का उल्लेख); ६६, ४२-४३ (ये महर्षि भृगु के पौत्र और कवि के पुत्र थे। ये ही ग्रह होकर तीनों लोकों के जीवन की रक्षा के लिये वृष्टि, अनावृष्टि, भय एवं अभय उत्पन्न करते हैं। ब्रह्मा की प्रेरणा से ये समस्त लोकों का चक्कर लगाते रहते हैं। ये योग के आचार्य तथा दैत्यों के गुरु हुये। ये ही बृहस्पति के रूप में प्रकट होकर देवताओं के भी गुरु हुये). ५२ (वरुणपत्नी देवी के पिता); ७६, ३. १३. १८. २१. २२. २४. ४६. ५६. ५८; ७७, ८ (असुरों ने, जिनके शासक वृषपर्वा थे, इन्हें अपना पुरोहित बनाया। इन्होंने अपनी संजीवनी विद्या से मृत असुरों को पुनः जीवित कर दिया। इनसे यह संजीविनी विद्या सीखने के लिये बृहस्पति-पुत्र कच इनके शिष्य बन गये। कच ने इनकी पुत्री देवयानी को प्रसन्न करके इनसे यह विद्या प्राप्त की); ७८, २०. ३७; ७९, १; ८०, ९. १२. २०; ८१, ९. २९. ३१. ३३. ३६. ३८ (असुरराज वृषपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा ने इनकी पुत्री देवयानी को एक कुएँ में ढकेल दिया। तब इन्होंने असुरों का परित्याग कर देने की धमकी दी। इनकी पुत्री को प्रसन्न करने के लिये शर्मिष्ठा को उसकी दासी बना दिया गया। ययाति ने देवयानी के साथ विवाह किया); ८३, ३१. ३६. ३९. ४१ (ययाति ने जब शर्मिष्ठा को अपनी दूसरी पत्नी के रूप में ग्रहण कर लिया तब इन्होंने ययाति को शाप दे दिया); ८५, २०. २८ (काव्येनोशनसा स्वयम्). ३१; १०३, ६; २. ७, २२ (इन्द्र की सभा में). २८; ११, २९ (अन्य ग्रहों के साथ ब्रह्मा की सभा में); ३. १८५, २६ (राजा की सम्मानजनक उपाधियों में से एक); ५. ६, ४ (द्रुपद के पुरोहित); ४९, २ (उशना); ८३, २७; ९८, २२; १४४, ३; ११७, १३; १४९, ६ (देवयानी के पिता और यदु के पितामह); ६. ३, १५ (शुक्रग्रह, सम्बद्ध शकुन); ६, २२ (उशना); ४५, ५७; १०१, ५९; ७. ५, १८; ८४, २०; ८. १७, १; १२. ४७, ८ (शरशय्या पर पड़े भीष्म को घेर कर खड़े ऋषियों में ये भी थे). ८९; ५९, ८५. १११ (पृथु-वैन्य के पुरोहित); १००, २०; १२४, २६ (इन्होंने इन्द्र को उपदेश देते हुये कहा कि उस विषय का प्रह्लाद को अधिक ज्ञान है); १४२, ३४ (इनकी एक उक्ति का उद्धरण); १९८, ५; २७२, ८; २७९-२८०। ये वृत्र को विष्णु के सम्बन्ध में उपदेश देनेवाले थे); २८९, ४. ३२ (कुबेर के शरीर में प्रविष्ट होकर उनकी सम्पत्ति का हरण किया। कुबेर इनसे त्रस्त होकर जब शिव की शरण में आये तब शिव ने इन्हें निगल लिया और अपनी शुक्रेन्द्रिय से इन्हें बाहर निकल जाने दिया। इसी से इनका नाम शुक्र पड़ा और ये आकाश के मध्यभाग में नहीं आ पाते। देवी उमा ने इनका वध करने से शिव को रोका और इन्हें अपना पुत्र बनाया); २९२, १४; ३१८, ६१ (विश्वावसु को उपदेश दिया); ३२४, २६ (त्रिपुरयुद्ध के लिये उद्यत शिव पर इन्होंने अपनी जटा से उखाड़कर एक केश द्वारा प्रहार किया जिससे उत्पन्न होकर सर्पों ने शिव के कण्ठ में काट लिया। उसी से शिव का कण्ठ

नीला पड़ गया); १३. १४, २१४; १७, १७७ (तण्डिन् ने इन्हें शिव सहस्रनाम का उपदेश दिया। तदनन्तर इन्होंने गौतम को उसका उपदेश दिया); १८, ७१; ८५, १२९ (भृगु के सात पुत्रों में से पाँचवें). ३३ (उशना); ९४, ४. २४; ९८, १०. ११ (भृगुकुलोद्वह). १६; १०३, ३९ (इन्द्रेण गुह्यं निहितं वै गुहायां यद्भार्गवस्तपसेहाभ्यविन्दत। जाज्वल्यमानमुशनस्तेजसेह); १६५, १७; १५. २८, १३ (विदुर जी बुद्धि में इनसे भी आगे थे)।

तुकी० इनके निम्नलिखित पर्याय :—

उशनस् : १. ६५, ३६; ७५, ४१; ७६, ६. ११. २२. ३६; ८२, १५; ८३, २६. ३७; ८४, २. २८; ८५, २८; ९५, ८; १००, ३६; ३. १५०, २९; २५१, २३; २८५, ६; ४. ५८, ६; ४. ४९, २; १५६, ११; ६. ६, २२; ३४, ३७; ७. ६, ७; ९, १५; ८. ३१, १३; ३७, २०; ९. ६, १०; ५८, १४; ६१, ४८; १२. ३७, १०; ५६, २८; ५७, २; १३८, ३२. १९३; १३९, ७०; १४२, २२; २७९, १५. २३; २८०, १. ४. ५; २८३, ९; २८९, २. ४. १२. १४. १६. २०. २१. २७. २९. ३७; २९२, १४; ३३५, ४५ (उशना बृहस्पतिश्चैव यदोत्पन्नौ भविष्यतः। तदा प्रवक्ष्यतः शास्त्रं युष्मन्मतिभिरुद्धृतम्); ३४२, २६; १३. २४, ५; ३९, ८; ८५, १३३; १०३, ३९; १०७, ८०. १००; १५. ७, १५।

कविपुत्र : १. ७६, २२।

कविसुत : १. ६६, ४२।

काव्य : १. ७६, ६. ८. १०. ५१. ५५. ६६; ७७, १३; ७८, २७. २८. २९; ८०, १; ८२, २९; ८२, १५; ८३, २४. २६; ८४, २. २८. ३४; ८५, २८; २. ६२, १२; ५. १४९, ६; ६. ६, २२; १२. ५८, २; ५९, ८५; २४४, १७ (स्वर्ग गये); २८९, २; १३. ८५, १३३; ९८, ६५; १४. ६०, १३।

भार्गव, भार्गवदायाद, भृगुकुलोद्वह, भृगुनन्दन, भृगुश्रेष्ठ, भृगुसूनु, भृगूद्वह – देखिये वस्था०।

२. शुक्र, एक मास का नाम है : १. १५१, २; २. ४७, २४; ८. ७९, ७८. ८१। देखिये २. शुचि।

३. शुक्र = अग्नि : १. २३२, १७. २४; ५. ११४, ३।

४. शुक्र = सूर्य : ३. ३, १७; १२. ३६२, ७।

५. शुक्र = शिव : १०. ७, ३; १४. ८, ३१।

६. शुक्र, एक असुर का नाम है (१३. १४, २१४)।

शुक्रतनया = देवयानी (१. ७६, १)।

१. शुक्ल, एक या दो पाण्डव योद्धाओं का नाम है : ७. २३, ५९ (इसके अश्वों का वर्णन); ८. ५६, ४५ (उन आठ पाञ्चालों में यह भी एक था जिन पर कर्ण ने आक्रमण किया)।

२. शुक्ल = शिव (सहस्रनाम)।

शुक्लध्वजपताकिन् = शिव (सहस्रनाम)।

१. शुचि, एक व्यापारी का नाम है जो वन में भटकती हुई दमयन्ती से मिला था (३. ६४, १२७)।

२. शुचि, एक मास का नाम है : १. १५१, २; २. ४७, २४; ८. ७९, ७८. ८१।

३. शुचि एक ऋषि का नाम है : २. ८, १४ (यम की सभा में)।

४. शुचि एक अग्नि का नाम है : ३. २२१, २४. २६ (वायु चलने से अग्नियों का परस्पर सम्पर्क हो जाने पर अष्टाकपाल पुरोडाश द्वारा इस अग्नि में आहुति डाली जाती है)।

५. शुचि = सूर्य (३. ३, १८)।

६. शुचि = स्कन्द (३. २३२, ४)।

७. शुचि = श्रीकृष्ण (१२. ४७, १७)।

८. शुचि, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५४)।

९. शुचि = शिव (सहस्रनाम)।

१०. शुचि, भृगु के सात पुत्रों में से तीसरे का नाम है (१३. ८५, १२८)।

११. शुचि = विष्णु (सहस्रनाम)।

शुचिका, एक अप्सरा का नाम है : १. १२३, ६२ (अर्जुन के जन्मोत्सव के समय नृत्य किया था)।

शुचिपद = श्रीकृष्ण (१२. ४७, १७)।

शुचिव्रत, एक प्राचीन राजा का नाम है (१. १, २३६)।

शुचिश्रवस् = श्रीकृष्ण : १२. ४३, ७; ३४२, ९१ (शुचीनि श्रवणीयानि शृणोमीह धनञ्जय। न च पापानि गृह्णामि ततोऽहं वै शुचिश्रवाः)।

शुचिस्मिता एक अप्सरा का नाम है : २. १०, १० (कुबेर की सभा में)।

शुचिश्रवस् = विष्णु (सहस्रनाम)।

शुण्डिक (बहु० °काः) एक स्थान के निवासियों का नाम है : २. २५४, ८ (दिग्विजय के समय कर्ण ने इन्हें पराजित किया था)।

१. शुद्ध = शिव (सहस्रनाम)।

२. शुद्ध (बहु० °द्धाः) देवों के एक वर्ग का नाम है (१३. १८ ७५)।

शुद्धात्मन् = शिव (सहस्रनाम)।

१. शुनक एक ऋषि का नाम है : १. ५, १० (प्रमद्वरा के गर्भ से रुरु द्वारा उत्पन्न हुये। ये शौनक के प्रपितामह थे); ८, २; २. ४, १०. १७ (युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित मुनियों में ये भी थे); १३. ३०, ६५ (वीतहव्यवंशी रुरु के पुत्र और शौनक के पिता)।

२. शुनक एक राजर्षि का नाम है : १. ६७, ३८ (चन्द्रहन्ता नामक असुर के अंश से उत्पन्न); ३. १२५, १८-१९ (चन्द्र तीर्थ में इन्हें परमधाम की प्राप्ति हुई); १२. १६६, ७९ (हरिणाश्व से एक खड्ग प्राप्त किया था जो इनसे उशीनर को प्राप्त हुआ)।

शुनःशेप, ऋचीक मुनि के पुत्र का नाम है : १३. ३, ६-८ (इन्हें राजा हरिश्चन्द्र के यज्ञ में यज्ञपशु बनाकर लाया गया था। विश्वामित्र ने देवताओं को सन्तुष्ट करके इन्हें मुक्त करा लिया अतः ये विश्वामित्र के पुत्रभाव को प्राप्त हुये। देवताओं द्वारा प्रदत्त होने से इनका नाम देवरात हुआ और इन्हें विश्वामित्र का ज्येष्ठ पुत्र माना गया)।

शुनःसख, सन्यासी के वेश में कुत्ते के साथ विचरनेवाले इन्द्र का नाम है : १३. ९३, १०८. ११०. १३६-१३८; ९४, ४०।

शुभकर्मन्, स्कन्द के एक पार्षद का नाम : ९. ४५, ४२ (विधाता ने स्कन्द को दिया था)।

शुभवक्त्रा एक मातृका का नाम है (९. ४६, ७)।

शुभा – देखिये सुभा।

शुभाक्ष = शिव (सहस्रनाम)।

शुभाङ्ग = विष्णु (सहस्रनाम)।

शुभाङ्गद एक राजा का नाम है : १. १८६, २२ (ये द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित थे)।

शुभाङ्गी, दशार्हकुल की एक कन्या का नाम है जो सोमवंशी कुरु की पत्नी थी। १. ९५, ३९ (इनके गर्भ से विदुर का जन्म हुआ)।

शुभानन = स्कन्द (३. २३२, ४)।

शुभेक्षण = विष्णु (सहस्रनाम)।

शूकर, एक स्थान के निवासियों का द्योतक है : २. ५२, २५ (इनके राजा ने युधिष्ठिर को १०० हाथियों का उपहार दिया)।

१. शूद्र (बहु० °द्राः) एक जाति का नाम है जिसका बहुधा अभीरों के साथ उल्लेख मिलता है : २. ३२, १० (नकुल ने दिग्विजय के समय इन्हें पराजित किया था); ६. ९, ६७; ३३, ३२; ७. ७, १५; ९. ३७, १।

२. शूद्र = शिव (सहस्रनाम)।

शून्य = विष्णु (सहस्रनाम)।

शून्यपाक, दिव्यलोक के एक ऋषि का नाम है (१२. २४४, १८)।

१. शूर, एक प्राचीन नरेश का नाम है (१. १, २३२)।

२. शूर, वसुदेव और कुन्ती के पिता, एक यादव का नाम है : १. ६७, १२९. १३१; १११, १. ३; ३. ३०३, २३; ५. ९०, ९१; ७. १४४, ७ (देवमीढ के पुत्र). ८ (शिनि के पूर्वज); १३. १४७, ३०. ३१।

३. शूर, ईलिन के पुत्र का नाम है (१. ९४, १८)।

४. शूर = स्कन्द (३. २३२, ८)।

५. शूर सौवीर देश के एक राजकुमार का नाम है जो जयद्रथ का ध्वजवाहक था (३. २६५, १०)।

६. शूर, एक राजा का नाम है : ५. ४, १२ (पाण्डवों की ओर से इसे रणनिमन्त्रण भेजने का निश्चय किया गया)।

७. शूर = विष्णु (सहस्रनाम)।

८. शूर (बहु०) एक जाति के लोगों का नाम है : २. ५२, १३ (ये लोग युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये); ३. १२०, १९; ८. ४५, ३६ (सर्वशा ववना राजञ्शूराश्चैव विशेषतः)।

शूरजनेश्वर = विष्णु (सहस्रनाम)।

शूरपुत्र = वसुदेव (१४. ७, २४)।

शूरसुत = वसुदेव : ३. २१, १३. २०; १४. ५२, ४४।

शूरसूनु : वसुदेव (१४. १५, २०)।

१. शूरसेन (बहु० °ना :) : २. १४, २६ (ये लोग जरासन्ध के भय से भाग गये); ३१, २ (सहदेव ने इन्हें पराजित किया था): ४. १, ११; ५, ४ (पाण्डवगण इनके देश से होते हुये मत्स्य देश गये); ५, ५४, १८ (दुर्योधन की उपेक्षा की); ६. ९, ३९. ५२; १८, १२ (दुर्योधन की सेना में); ५१, ७; ५२, १९; ५६, ७ (भीष्म के गरुडव्यूह के पुच्छभाग में); १०६, ८; ११७, ३४; ११९, ८२; ७. ७, १५; ९१, ३८; ९३, २; १४१, ९; १५०, ३४; १५७, २८ (युधिष्ठिर ने इनका वध किया था); १६१, ४ (भीमसेन ने इनका वध किया); ८. ५, ३७; ४५, २८; ४७, १८ (युधिष्ठिर की सेना के शूरसेनों पर शकुनि और कृप ने आक्रमण किया); १३. १४७, ३६। देखिये शूरसेनराज।

२. शूरसेन, एक कौरवपक्षीय योद्धा का नाम है (६. ७५, २८)।

३. शूरसेन एक पाञ्चाल योद्धा का नाम है (८. ४८, १५)।

४. शूरसेन = विष्णु (सहस्रनाम)।

शूरसेनराज् = सुनामन् (७. ११, ८,)।

शूरसेनी, राजा पूरु के पुत्र प्रवीर की पत्नी का नाम है : १. ९४, ६ (इनके गर्भ से मनस्यु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ)।

शूरात्मज = वसुदेव (१४. ६२, १)

शूर्पणखा, एक राक्षसी का नाम है : ३. २७५, ८ (राका के गर्भ से विश्रवा द्वारा उत्पन्न). १९; २७७, ४२. ४५ (जब श्रीराम और लक्ष्मण ने खर-दूषण का वध कर दिया तब यह अपने भाई रावण के पास जाकर उसे श्रीराम से प्रतिशोध लेने के लिये उत्तेजित करने लगी)।

शूर्पारक एक स्थान का नाम है : २. ३१, ६५ (सहदेव ने इस पर विजय प्राप्त की); ३. ८५, ४३; ८८, १२ (इस क्षेत्र में जमदग्नि की वेदी है। यहीं पाषाणतीर्थ और पुनश्चन्द्रा नामक तीर्थ भी है); ११८, ८ (युधिष्ठिर ने इस पुण्यमय तीर्थ का दर्शन किया). १४; १२. ४९, ६७ समुद्र ने परशुरामजी के लिये स्थान रिक्त करके इस देश का निर्माण किया था। इसे अपरान्त क्षेत्र भी कहते हैं); १३. २५, ५०।

शूलधृक्, **शूलपाणि** — देखिये शिव।

१. शूलभृत् — देखिये शिव।

२. शूलभृत् = श्रीकृष्ण (१३. १५८, १४)।

शूलवरायुध = विष्णु (१२. १२२, २४. २६)।

शूलहस्त, **शूलांक** — देखिये शिव।

१. शूलिन् — देखिये शिव।

२. शूलिन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ८१)।

शृगाल, स्त्रीराज्य के स्वामी एक राजा का नाम है (१२. ४, ७)।

शृगालरूप = शिव (सहस्रनाम)।

शृङ्ग, एक पर्वत का नाम है : ६. ६, ५; ८, ८. १० (उत्तरेण तु शृङ्गस्य समुद्रान्ते जनाधिप। वर्षमैरावतं नाम तस्माच्छृङ्गमतः परम्); १३. १६५, ३२ (प्रातःस्मरणीय पर्वतों में से एक)।

शृङ्गप्रिय = शिव (सहस्रनाम)।

शृङ्गवत् एक पर्वत का नाम है। देखिये ऊपर शृङ्ग।

शृङ्गवेरपुर एक नगर का नाम है : ३. ८५, ६५-६६ (यहीं श्रीराम दाशरथि ने वन जाते समय गङ्गा पार किया था)।

१. शृङ्गिन्, शमीक ऋषि के तरुण पुत्र का नाम है : १. ४०, २५. २९; ४१, १. ४. ९. १२. १५; ४२, १ (शमीक का अपमान करने के कारण इन्होंने परिक्षित को शाप दिया था); ५०, २ (ये एक गाय से उत्पन्न हुये थे). ३. ४९; १५. ३५, ८ (स्वर्ग से इनका आवाहन करके व्यासजी ने जनमेजय को इनका और इनके पिता शमीक का दर्शन कराया)।

२. शृङ्गिन् = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

शेष, अनन्त नामक नागराज का नाम है जो पृथिवी को धारण करते हैं : १. ३५, ५; ३६, २. ६. ८. १३. १५. १७-२१. २३ (इन्होंने अपनी माता को छोड़ कर गन्धमादन, बदरी, गोकर्ण, पुष्कर, हिमवत आदि स्थानों पर घोर तपस्या की जिससे ये अपने शरीर से मुक्त हो कर अपने भाइयों से भी अलग हो जाँय। ब्रह्माजी ने इन्हें एक विवर से जाकर पृथिवी को धारण करने के लिये कहा। इनकी सहायता के लिये ब्रह्माजी ने सुपर्ण को भी नियुक्त किया); ६५, ४१; ६७, १५२ (बलरामजी इन्हीं के एक अंश से उत्पन्न हुये थे); ३. १८९, ११; २०३, १२; २७२, ३८ (नारायण इनकी शय्या पर विश्राम करते हैं); ५. १०३, २ (अपनी तपस्या के प्रभाव से ये पृथिवी को धारण करते हैं। इनके १,००० फन हैं और इनकी जिह्वायें अग्नि की ज्वालाओं के समान हैं। ये अपार बल से युक्त हैं); ६. ६७, १२ (शेषं चाकल्पयद्देवमनन्तं विश्वरूपिणम्। यो धारयति भूतानि धरां चेमां सपर्वताम्); ७. ९४, ४८; २०२, ७२ (त्रिपुरवध के समय शिव के रथ के अक्ष बने); १२. २८०, ५८; ३३९, ७२; १३. १४७, ५९ (= बलराम)। तुकी० अनन्त।

शैखण्डि (शिखण्डिन् का पुत्र) = क्षत्रदेव (७. २३, ६)।

शैखावत्य, एक तपस्वी ब्राह्मण का नाम है : ५. १७५, ३८. ३९ (अम्बा को सान्त्वना दी)।

१. शैनेय = सात्यकि (देखिये वस्था०)।

२. शैनेय (बहु० °याः) शिनि के वंशजों का द्योतक है (१६. ३, ३५)।

शैनेयनन्दन = सात्यकि (देखिये वस्था०)।

१. शैब्य, एक प्राचीन राजा का नाम है (१. १, २२५)।

२. शैब्य = गोवासन ; १. ९५, ७ (ये युधिष्ठिर के श्वसुर थे); ६. १७, २० (दुर्योधन की सेना में); ७. ९५, ३८ (काशिराज के पुत्र के साथ युद्ध किया); ९६, ११।

३. शैब्य श्रीकृष्ण के एक अश्व का नाम है : १. २२०, ३; ३. २०, १३; २२, ४८; १८३, ६; ४. ४५, २२; ५. ८३, १९; १३१, २९; ७. ७९, ३८; १४७, ४७; १०. १३, ३ (श्रीकृष्ण के रथ का वर्णन); १२. ३७, ३९; ४६, ३५; ५३, २१।

४. शैब्य एक राजा का नाम है जिसका श्रीकृष्ण ने वध किया (३. १२, ३०)।

५. शैब्य एक वृष्णि राजा का नाम है : २. ४, ३५ (इसने अर्जुन से धनुर्वेद की शिक्षा ली थी)।

६. शैब्य = कोटिकास्य : ३. २६६, ४. ५. ९; २६७, २. ५।

७. शैब्य, युधिष्ठिर के समकालीन विभिन्न राजाओं का नाम है : २. ४, २५ (= शैब्य गोवासन ?); ५. १६४, ६ (कृतवर्मा के विरुद्ध नियुक्त किया गया); ६. २५, ५; ५०, ५७; ५१, २७; ९१, २; ७. १०, ६९ (शिवि औशीनर का पौत्र जिसने द्रोणाचार्य पर आक्रमण किया); २३, ६१ (द्रोण से युद्ध करने आया। इसके अश्वों का वर्णन)।

८. शैव्य = शिवि औशीनर : २. १२०, २; ७. १०, ६९; १२. २९, ४३; २९२, ८।

९. शैव्य = वृषादर्भि (१३. ९३, २५. २९)।

१०. शैव्य, सृञ्जय के पिता का नाम है (७. ५५, ५)।

शैव्य-सुग्रीववाहन = श्रीकृष्ण : २. २, १५; ५. ८३, ५८; ९. ६२, ४४।

१. शैव्या = सुनन्दा : १. ९५, ४४ (प्रतीप की पत्नी)।

२. शैव्या, राजा सगर की पत्नी का नाम है : ३. १०६, ९. २०; १०७, ३९ (असमञ्ज की माता)।

३. शैव्या, द्युमत्सेन की पत्नी का नाम है : ३. २९८ २. २६; २९९, १०।

४. शैव्या, श्रीकृष्ण की पत्नी का नाम है (१६. ७, ७३)।

५. शैव्या, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, २४)।

शैव्यात्मज : ७. ८, २५।

शैरीषक एक देश का नाम है जिसे दिग्विजय के समय नकुल ने जीता था (२. ३२, ६)।

१ शैल : ५. १११, १०

२. शैल एक दिव्यास्त्र का नाम है : ३. १७१, १० (महास्त्रेण); ६. १०२, २१ (अर्जुन ने इसका प्रयोग किया)।

शैलकम्पिन्, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६३)।

शैलगुरु = हिमवत् (देखिये वस्था०)।

शैलपुत्री = उमा (देखिये वस्था)।

शैलराज्, शैलराज = हिमवत् (देखिये वस्था०)।

१. शैलराजसुता = गङ्गा (३. १०९, ४)।

२. शैलराजसुता = उमा (देखिये वस्था०)।

शैलसुता = गङ्गा (३. १३९, १७)।

शैलाः, मूर्तिमान पर्वतों का द्योतक है (१२. ३३२, ३०)।

शैलाभ, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३२)।

शैलालय एक प्राचीन राजा का नाम है : १५. २०, १० (इन्होंने तपस्या से इन्द्रलोक प्राप्त किया था)।

शैलूष, एक गन्धर्व का नाम है : २. १०, २६ (कुबेर की सभा में)।

१. शैलेन्द्र = विन्ध्य (३. १०४, १३)।

२. शैलेन्द्र = हिमवत् (देखिये वस्था०)।

शैलोदा, मेरु और मन्दराचल की मध्यवर्तिनी एक नदी का नाम है : २. ५२, २-४ (इसके तटों पर रहनेवाले खसों आदि म्लेच्छों ने युधिष्ठिर को पिपीलक नामक सुवर्ण भेंट किया)।

शैवाल (बहु० °लाः) एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ५४)।

शैव्य : १. १, २२५; ७. ५५, ५।

शैशव, एक स्थान का नाम है : २. ५२, १८ (यहाँ के लोग युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये)।

शैशिर एक पर्वत का नाम है : ३. १६७, १५; १६८, ८. ३५; ७. १९९, ४९; १२. ३२७, २।

शैशुपालि = धृष्टकेतु : ३. २५४, १६; ५. ५०, ४४; १२६, ८; ७. ३५, ५; १२५, २३. २९।

शोकनाशन = विष्णु (सहस्रनाम)।

शोण एक नदी का नाम है : २. ९, २१ (वरुण की सभा में); २०, २७ (इन्द्रप्रस्थ से राजगृह जाते समय श्रीकृष्ण ने इसे पार किया था); ३. ८५, ८. ९; १८८, १०५ (मार्कण्डेय ने इसे भी नारायण के उदर में देखा); २२२, २५ (इसे भी अग्नि की उत्पत्ति का स्थान माना गया है); ६. ९, २९ (इसे भारतवर्ष की एक प्रमुख नदी माना गया है)।

शोणितभृत् = श्रीकृष्ण (१३. १५८, १४)।

शोणितोद एक यक्ष का नाम है : २. १०, १७ (कुबेर की सभा में)।

शोभन = शिव (सहस्रनाम)।

शोभना, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ६)।

शौण्डिक (बहु० °काः) एक जाति के लोगों का नाम है : १३. ३५, १७-१८ (इन्हें शूद्रत्व प्राप्त हो गया था)।

१. शौनक, भृगु के एक वंशज का नाम है : १. १, १ (इनके यज्ञसत्र में उग्रश्रवा ने महाभारत का प्रवचन किया था); २, ३३; ४, १. ४. १२; ५, १. १२ (इनके पूर्वजों का उल्लेख); १३, १. ५. ९; १६, १; १७, ४; ३१, १; ३४, ६; ३५, १; ३६, १; ४०, १. ५. ६; ४३, ३१; ४६, ११; ४९, १; ५३, १; ५७, १; ५८, ४; ५९, १. ६; १२. ३३९, १४०; ३४०, १; ३४३, १. ८; ३४६, १६; ३४७, १; १८. ५, ५८। तुकी० भार्गव, भार्गवोत्तम, भृगुशार्दूल, भृगुद्वह, भृगुकुलोद्वह, भृगुनन्दन।

२ शौनक एक ऋषि का नाम है : ३. २, १४ (योगे सांख्ये च कुशलः), ६४ (युधिष्ठिर को उपदेश दिया); ३, १; २६, २३; ८५, १२१।

३. शौनक = इन्द्रोत : १२. १५०, २. ८; १५१, ४. ९. १०. १५. १६; १५२, १. ३८।

४. शौनक, शुनक के पुत्र और वीतहव्यवंशी रुरु के पौत्र का नाम है : १३. ३०, ६५। तुकी० १. शौनक।

शौनकोत्तम = १. शौनक (१२. ३४०, ५)।

१. शौरि (शूर के पुत्र) = वसुदेव : १. ५, ३५८; ७. १४४, ७; १६. ७, १५. १९।

२. शौरि = श्रीकृष्ण वासुदेव (देखिये वस्था०)।

३. शौरि = बलराम (५. ७, २५)।

४. शौरि = सात्यकि (८. १३, १६)।

५. शौरि = सूर्य (३. ३, १८)।

६. शौरि = विष्णु (सहस्रनाम)।

श्मशानभाज = शिव (सहस्रनाम)।

श्मशानवासिन् = शिव : १०. ७. ४; १३. १७, ३३ (सहस्रनाम)।

श्याम शाकद्वीप के एक पर्वत का नाम है (६. ११, १९. २६)।

श्यामा = द्रौपदी (५. ९०, ८६; १३७, १८)।

श्यामायाआश्रमः एक तीर्थ का नाम है (१३. २५, ३०)।

श्यामायन विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५५)।

१. श्येन एक ऋषि का नाम है : २. ७, ११ (इन्द्र की सभा में)।

२. श्येन (बहु० °नाः) श्येनी की सन्तानों का द्योतक है (१. ६६, ५६. ५७)।

श्येन-कपोताख्यान – "भीष्म ने कहा : शरणागत की रक्षा करने से महान फल प्राप्त होता है। एक समय एक बाज किसी सुन्दर कबूतर को मार रहा था। वह कबूतर उस बाज के भय से भाग कर राजा वृषदर्भ (उशीनर) की शरण में आया। महाराज वृषदर्भ ने उस कबूतर की रक्षा करते हुये अपने शरीर का सारा मांस दे दिया। उनके इस कार्य को देख कर देवतागण आकाश में स्थित हो कर दुन्दुभियाँ बजाने लगे। देवताओं ने वृषदर्भ को अमृत से नहलाया और उन पर दिव्य पुष्पों की वर्षा की। इतने ही में एक दिव्य विमान वहाँ उपस्थित हुआ जिस पर बैठ कर राजर्षि उशीनर अपने पुण्यकर्म के प्रभाव से सनातन दिव्यलोक को चले गये (१३. ३२)।"

श्येन-कपोतीयम् : १. २, १७३। "एक बाज के रूप में इन्द्र और कबूतर के रूप में अग्नि ने राजा उशीनर की धर्मपरायणता की परीक्षा ली (३. १३०)।" "जब बाज के भय से कबूतर उशीनर की गोद में आ गिरा तब राजा ने बाज को कबूतर के बराबर कोई भी मांस देने का प्रस्ताव किया परन्तु बाज ने इसे स्वीकार नहीं किया। तब राजा ने शरणागत की रक्षा को एक उत्कृष्ट पुण्यकर्म बताते हुये बाज को अपना सम्पूर्ण राज्य देने का प्रस्ताव किया। बाज ने इसे भी स्वीकार नहीं किया। अन्त में वह बाज कबूतर के बराबर राजा के शरीर का मांस लेने के लिये सहमत हुआ। तब

राजा ने क्रमशः अपने शरीर का मांस काट-काट कर तराजू पर रखना आरम्भ किया किन्तु जब उनका सम्पूर्ण मांस भी कबूतर के भार के बराबर नहीं हुआ तब राजा स्वयं तराजू पर बैठ गये। यह देख कर बाज रूपी इन्द्र ने राजा को अक्षय कीर्ति और अक्षय लोक प्राप्त करने का वरदान दिया। ऐसा कह कर इन्द्र चले गये। तदनन्तर राजा उशीनर भी तीनों लोकों को अपने पुण्यकर्मों से व्याप्त करते हुये दिव्य विमान में बैठ कर स्वर्ग गये ; (३. १३१)।"

श्येनचित्र एक प्राचीन राजा का नाम है : १३. ११५, ६३ (ये कार्तिकमास में मांसभक्षण नहीं करते थे)।

१. श्येनजित् , इक्ष्वाकुवंशी राजा दल के पुत्र का नाम है (३. १९२, ६३)।

२. श्येनजित् , पाण्डवपक्ष के एक महारथी राजा का नाम है : ५. १४१, २७ (ये भीमसेन के मामा थे।

श्येनी, ताम्रा की पुत्री का नाम है : १. ६६, ५६-५७ (यह श्येन पक्षियों की माता थी). ६९. ७० (इसके गर्भ से संपाति और जटायु नामक वीर पुत्र उत्पन्न हुये)।

१. श्रद्धा, दक्ष प्रजापति की पुत्री और धर्म की पत्नी का नाम है (१. ६६, १४)।

२. श्रद्धा, विवस्वान की पुत्री का नाम है : १२, २६४, ८ (इसे वैवस्वती, सावित्री तथा प्रसवित्री भी कहते हैं)।

श्रमण = विष्णु (सहस्रनाम)।

श्रवण एक नक्षत्र का नाम है : ६. ३, १४ (वक्रः श्रवणे च बृहस्पतिः). १८ (वक्रानुवक्रं कृत्वा च श्रवणं पावकप्रभः। ब्रह्मराशिं समावृत्य लोहिताङ्गो व्यवस्थितः); ९. ३४, ६; १३. ६४, २८ (इस नक्षत्र में दान का फल); ८९, ११ (इस नक्षत्र में श्राद्ध करने का फल); ११०, ७ (चान्द्रव्रत का वर्णन); १४. ४४, २ (श्रवणादीनि ऋक्षाणि ऋतवः)।

श्रवणज (श्रवणेन्द्रिय से उत्पन्न) ब्रह्मा के एक जन्म का नाम है (१२. ३४८, २५)।

श्रवस् , गृत्समदवंशी महर्षि रुन्त के पुत्र और तम के पिता का नाम है (१३. ३०, ६३)।।

१. श्राद्धदेव = मनु (१२. १२२, ३९)।

२. श्राद्धदेव = विवस्वत् (१२. ३४२, ५६)।

श्राद्धपर्वन् , महाभारत के ८७ वें अवान्तर पर्व का नाम है (१. २, ७४)। "श्रीकृष्ण ने विलाप कर रही गान्धारी से कहा : 'तुम्हारे अपराधों से ही कौरवों का विनाश हुआ है। तुम्हारा पुत्र दुर्योधन दुष्कर्मपरायण, निष्ठुर और बड़ों की आज्ञा का उल्लंघन करनेवाला था। ब्राह्मणी तप के लिये, गाय बोझ ढोने के लिये और घोड़ा वेग से दौड़ने के लिये, शूद्रा सेवाके लिये, वैश्यकन्या पशुपालन करने के लिये, तथा तुम जैसी राजपुत्री युद्ध में लड़कर मरने के लिये पुत्र उत्पन्न करती हैं।' श्रीकृष्ण का कहा हुआ यह प्रिय वचन सुन कर गान्धारी चुप हो गई। उस समय धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर से यह बताने के लिये कहा कि कितने परिजनों का महाभारत युद्ध में वध हुआ है। युधिष्ठिर ने कहा : 'इस युद्ध में एक अरब छः करोड़ बीस हजार योद्धा मारे गये हैं। इनके अतिरिक्त चौबीस हजार एक सौ पैंसठ सैनिक लापता हैं। जिन लोगों ने इस युद्ध में हर्ष और उत्साह के साथ अपना प्राण दिया है वे सभी इन्द्र के समान लोकों को गये हैं। जिन्होंने अप्रसन्न मन से मरने का निश्चय किया था वे गन्धर्वों के साथ जा मिले हैं। जो अपने प्राणों की भीख माँगते हुये युद्ध से विमुख हो गये थे उनमें से जो शस्त्रों द्वारा मारे गये थे वे गुह्यक लोक में गये हैं। जिन महामनस्वी पुरुषों को शत्रुओं ने गिरा दिया था, जिनके पास युद्ध करने का कोई साधन नहीं रह गया था, जो शस्त्रहीन हो गये थे···ऐसे धर्मपरायण पुरुष ब्रह्मलोक में गये है। जो लोग इस युद्ध की सीमा के भीतर किसी भी प्रकार मार डाले गये हैं वे उत्तर कुरु देश में जन्म धारण करेंगे।' धृतराष्ट्र के पूछने पर युधिष्ठिर ने उन्हें बताया : 'मैंने वनवास के समय तीर्थयात्रा करते हुये देवर्षि लोमश का दर्शन करके उनसे अनुस्मृतिविद्या प्राप्त की थी। इसके अतिरिक्त ज्ञानयोग के प्रभाव से मुझे दिव्य दृष्टि भी प्राप्त हो गई है।' तदनन्तर धृतराष्ट्र की आज्ञा पा कर युधिष्ठिर ने सुधर्मा आदि से मृत बन्धु-बान्धवों का अग्नि-संस्कार आदि करने के लिये कहा। तब सभी योद्धाओं के शवों का विधिवत दाहसंस्कार किया गया। किन्हीं महामनस्वी वीरोंके लिये पितृमेध भी आरम्भ कर दिये गये। वहाँ सामवेदीय मन्त्रों तथा ऋचाओं के घोष और स्त्रियों के विलाप की आवाज से रात में सभी प्राणियों को अत्यन्त कष्ट हुआ। इस प्रकार सब का दाहकर्म कराकर युधिष्ठिर महाराज धृतराष्ट्र को आगे कर के गङ्गाजी की ओर चले गये। (११. २६)।

"गङ्गाजी के जल में सभी स्त्री-पुरुषों ने अपने सम्बन्धियों को जलाञ्जलि दी। अत्यन्त शोक से कातर कुन्तीदेवी ने अपने पुत्रों पर यह रहस्य प्रकट कि कर्ण भी उन्हीं का पुत्र था। यह सत्य जानकर सभी पाण्डव शोकग्रस्त हो गये। कर्ण को अपना ज्येष्ठ भ्राता जान कर युधिष्ठिर जोर जोर से विलाप करने लगे। तदनन्तर उन्होंने कर्ण की पत्नियों को अपने साथ लेकर कर्ण के लिये जलाञ्जलि दी और उसके सभी प्रेतकर्म सम्पन्न कराये। (११. २७)।"

श्राव, अयोध्या के एक राजा का नाम है : ३. २०२, ३ (युवनाश्व के पुत्र और श्रावस्तक के पिता)।

श्रावण एक मास का नाम है : १३. १०६, २७; १०९, ११।

श्रावस्तक, अयोध्या के एक राजा का नाम है : ३. २०२, ४ (श्राव के पुत्र और बृहद्रथ के पिता, जिन्होंने श्रावस्ती नगरी बसाया)।

श्रावस्ती एक नगरी का नाम है : ३. २०२, ४ (श्रावस्तक ने इसे बसाया था)।

श्री, समृद्धि और सौन्दर्य की देवी का नाम है : १. १८, ३५ (क्षीरसागर के मन्थन से उत्पन्न हुई). ३७; ६१, ४४ (श्रीकृष्ण की पत्नी); ६३, ४२; ६७, ५६ (इनके एक अंश से रुक्मिणी का जन्म हुआ); ७१, ३; ९७, २७; १७१, २५; १९७, ३० (पाण्डवों के रूप में जन्म ग्रहण करने वाले पाँच इन्द्रों की पत्नी होने के लिये शिव ने इन्हें नियुक्त किया जिसके फलस्वरूप ये द्रौपदी के रूप में उत्पन्न हुईं). ५२ (स्वर्गश्रीः पाण्डवार्थं तु समुत्पन्ना महामखे); २११, १७; २. ७, ४ (इन्द्र की सभा में); ११, ४१ (ब्रह्मा की सभा में); ६५, ३४ (रूपेण श्रीसमानया); ३. ३७, ३३; ५३, १३ (अतीव रूपसम्पन्ना श्रीरिव); ६५, ५१; ६८, १०; १५८, ८२; २२९, ३; २९३, २५. २९; ४. ९, १३; १४, १६; ५. ३९, ६४. ६६; ९८, १३; ७. ५५, १० (नारदजी ने पूछा कि क्या सृञ्जय की पुत्री श्री है); ९. ४५, १३ (स्कन्द के अभिषेक के समय उपस्थित हुई); १२. २०, १३ (मरुत्त के यज्ञ में पधारी); ५९, १३२ (विष्णु के ललाटकमल से उत्पन्न; धर्म को विवाहित और अर्थ की माता); ९०, २३. २४ (बलि को त्याग कर इन्द्र के पास आ गई). २६ (दर्पोनाम श्रियः पुत्रो जज्ञेऽधर्मादिति श्रुतिः); १२४, ५७. ६०. ६३ (प्रह्लाद को त्याग दिया); २२५, १ (बलि का त्याग किया). ७. १०. १२. १७. १९. २२. २४. २६. २८; २२८, ३. १५. १८. २०-२२. २९. ९०. ९५; ३३९, ५५; ३४७, ८७; १३. ११, १. ३. ५. ६ (इनका और रुक्मिणी का संवाद); ८२, २. ३. ६. १०. १३. १९. २३. २४. २६; १२५, ६; १२७, ६; १४७, १४; १५७, १०; १४. ५२, १२ (प्रसादे चापि पद्मा श्रीनित्यं त्वयि); १८. ४, १२ (द्रौपदी के रूप में अवतार लिया)। तुकी० लक्ष्मी, पद्मा।

श्रीकण्ठ = शिव (१२. ३४२, १३३; ३४९, ६७)।

श्रीकर = विष्णु (सहस्रनाम)।

श्रीकुञ्ज एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १०८)।

श्रीकुण्ड एक तीर्थ का नाम है (३. ८२, ८६)।

श्रीगर्भ = विष्णु (सहस्रनाम)।

श्रीतीर्थ एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ४६)।

श्रीद = विष्णु (सहस्रनाम)।

श्रीधर = विष्णु : १३. १०९, ११; १४९, ७८ (सहस्रनाम)।

श्रीनिधि, श्रीनिवास = विष्णु (सहस्रनाम)।

श्रीपञ्चमी, एक पवित्र तिथि का नाम है (३. २२९, ५२)।

श्रीपति = विष्णु (सहस्रनाम)।

श्रीपद्म = श्रीकृष्ण (१२. ४३, १४)।

श्रीपर्वत, एक पवित्र पर्वत का नाम है : ३. ८५, १८. १९ (महादेव का निवासस्थान)।

१. श्रीमत् निमि के पुत्र का नाम है (१२. ९१, ५-६)।

२. श्रीमत् = विष्णु (सहस्रनाम)। = शिव (सहस्रनाम)।

श्रीमतां वर = विष्णु (सहस्रनाम)।

श्रीमती एक मातृका का नाम है (९. ४६, ३)।

श्रीमद्राजपुर, कलिङ्गराज चित्राङ्गद की राजधानी का नाम है (१२. ४, ३)।

श्रीयावासिन् = शिव (सहस्रनाम)।

श्रीवत्स, भगवान नारायण के वक्षःस्थल पर भगवान् शंकर के त्रिशूल से बने चिह्न का नाम है : १. ६४, ५३; ३. १४२, ६१; १८८, ९५. ९६; २७२, ६३. ७४; ५. ८३, ३६; १०१, ५; ६. ६६, २१; १२. ३४२, १३४ (शिव के त्रिशूल से बना था); ३४३, ३५; १३. १४७, ३।

श्रीवत्सवक्षस् = विष्णु (सहस्रनाम)।

श्रीवर्धन = शिव (सहस्रनाम)।

श्रीवह, कश्यप द्वारा कद्रू के गर्भ से उत्पन्न एक नाग का है (१. ३५, १३)।

श्रीवास = महापुरुष (महापुरुषस्तव)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

श्री-वासव-संवाद (श्री और इन्द्र का संवाद) "भीष्मजी ने कहा : नारदजी अपनी तपस्या के प्रभाव से ऊँचे और नीचे दोनों प्रकार के लोक देख सकते थे। एक दिन प्रातःकाल उठ कर वे स्नानार्थ गङ्गाजी में प्रविष्ट हुये। इसी समय इन्द्र भी गङ्गा के उसी तट पर आये। स्नान के बाद वे दोनों गङ्गातट पर आ कर देवर्षियों और महर्षियों के मुख से सुनी हुई कथायें कहने-सुनने लगे। इसी समय सूर्योदय होने पर दोनों ने सूर्य का उपस्थान किया। उदित हुये सूर्य के पास ही आकाश में उन लोगों को द्वितीय सूर्य के समान एक दूसरी ज्योति दिखाई दी जो क्रमशः उन लोगों के निकट आती प्रतीत हुई। वह प्रभापुञ्ज भगवान विष्णु का एक विमान था जो उसी मार्ग से चल रहा था जिस पर सूर्य और गरुड चलते हैं। उन दोनों ने उस विमान पर लक्ष्मी को विराजमान देखा जो पद्मा के नाम से प्रसिद्ध हैं। उन्हें घेर कर अनेक अप्सरायें स्थित थीं। अपने विमान से उतर कर लक्ष्मीदेवी नारदजी के पास आईं। नारदजी और उनके पीछे इन्द्र ने भी उन देवी को आत्मसमर्पण किया। तदनन्तर इन्द्र ने लक्ष्मी से उनका परिचय पूछा। लक्ष्मीने इन्द्र को अपना परिचय देते हुये कहा : 'सत्य और धर्म से बँध कर मैं पहले असुरों के पास रहती थी किन्तु अब उन्हें धर्म के विपरीत देख मैंने तुम्हारे पास रहने का निश्चय किया है (असुरों की धर्मपरायणता का और उनके धर्मच्युत होने का विस्तार से वर्णन)। जहाँ मैं रहूँगी वहाँ अन्य सात देवियाँ भी निवास करेंगी। उन सब के आगे आठवीं जया देवी भी रहेंगी। ये आठों देवियाँ मुझे अत्यन्त प्रिय हैं। इन देवियों के नाम आशा, श्रद्धा, धृति, शान्ति, विजिति, संनति, क्षमा और आठवीं जया (वृत्ति) है। यह आठवीं देवी जया अन्य सात की अग्रगामिनी हैं। ये सब देवियाँ असुरों को त्याग कर तुम्हारे राज्य में आई हैं।' भीष्मजी ने बताया कि लक्ष्मी देवी के इस प्रकार कहने पर नारद तथा इन्द्र ने उनका अभिनन्दन किया। इस समय अग्नि देवता के मित्र वायुदेव मन्दगति से प्रवाहित होने लगे। राजलक्ष्मी सहित इन्द्र का दर्शन करने के लिये वहाँ सभी देवता उपस्थित हो गये। आकाश मण्डल ब्रह्माजी के भवन में अमृत की वर्षा करने लगा। लक्ष्मी के साथ स्वर्ग में पधारने पर इन्द्र समय पर वर्षा करने लगे। उन दिनों कोई भी अपने धर्म की मर्यादा से च्युत नहीं होता था। देवता, किन्नर, यक्ष, राक्षस, और मनुष्य समृद्धिशाली हो गये।" (१२. २२८)।

श्रीविभावन, श्रीश = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. श्रुतकर्मन्, द्रौपदी के गर्भ से उत्पन्न सहदेव के पुत्र का नाम है : १. ९५, ७५; ३. १२, ७४; ६. ४५, ६६. ६८; ७९, ३५. ३७; ७. २३, ३१ (इनके अश्वों का वर्णन); २५, २७; ८. १३, ७; १४, १. २. ९. १०. १२. १९; ५५, १३. १६ (अश्वत्थामा से युद्ध किया); १०. ८, ५९. ६० (अश्वत्थामा ने इनका वध किया)। तुकी० ३. श्रुतसेन, द्रौपदेय।

२. श्रुतकर्मन्, द्रौपदी से उत्पन्न अर्जुन के पुत्र का नाम है : १. २२१, ७९. ८३ (श्रुतं कर्म महत्कृत्वा निवृत्तेन किरीटिना); ३. २३५, १०। तुकी० श्रुतकीर्ति।

३. श्रुतकर्मन्, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : ८. २५, १३ (शतानीक से युद्ध किया)।

श्रुतकीर्ति द्रौपदी से उत्पन्न अर्जुन के पुत्र का नाम है : १. ६३, १२३; ६७, १२८ (द्रौपदी के सभी पुत्र विश्वेदेवों के अंश से उत्पन्न हुये थे); ९५, ७५; ३. १२, ७३; ६. ७९, ४०. ४१ (जयत्सेन से युद्ध किया); ७. २३, ३२ (इनके अश्वों का वर्णन); २५, ३२ (दुःशासन के पुत्र से युद्ध किया); ८. १३, १०; १४, ५; २५, ४०; ४९, ६५; ५५, १३. १६. १८; १०. ८, ६१ (अश्वत्थामा ने इनका वध किया)। तुकी० आर्जुनि, श्रुतकर्मन्, द्रौपदेय।

श्रुतध्वज, पाण्डव पक्ष के एक वीर का नाम है (७. १५८, ४१)।

१. श्रुतर्वन् एक प्राचीन नरेश का नाम है (३. ९८, १. ७. १२)।

२. श्रुतर्वन्, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : ८. ५१, ७; ९. २६, ६ (जिन ११ धृतराष्ट्रपुत्रों ने भीमसेन पर आक्रमण किया उनमें यह भी एक था). १३. २१. २७. ३१ (भीमसेन ने इसका वध किया)।

१. श्रुतश्रवस्, एक ऋषि का नाम है : १. ३, १३ (सोमश्रवा के पिता और जनमेजय के पुरोहित); ५३, ९ (जनमेजय के सर्पसत्र में सदस्य बने); १२. २९२, १६।

२. श्रुतश्रवस् एक राजर्षि का नाम है : २. ८, ९ (यम की सभा में)।

श्रुतश्री, एक दैत्य का नाम है : ५. १०५, १२ (गरुड ने इसका वध किया)।

१. श्रुतसेन, जनमेजय पारिक्षित के भ्राता का नाम है (१. ३, १)।

२. श्रुतसेन, एक नाग का नाम है : १. ३, १४१-१४२ (यह तक्षक नाग का छोटा भाई था)।

३. श्रुतसेन, द्रौपदी से उत्पन्न सहदेव के पुत्र का नाम है : १. ६३, १२४ (ये विश्वेदेव के अंश से उत्पन्न हुये थे); २२१, ८०. ८५ (नाम का कारण); ३. २३५, ११। तुकी० १. श्रुतकर्मन्।

४. श्रुतसेन, एक दैत्य का नाम है : ५. १०५, १२ (गरुड ने इसका वध किया)।

५. श्रुतसेन, एक कौरव योद्धा का नाम है (८. २७, ११)।

श्रुतानीक, विराट के भाई का नाम है : ७. १५८, ४१ (ये पाण्डवों के रक्षक और सहायक थे)।

श्रुतान्त, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम : ९. २६, ४-११ (भीमसेन पर आक्रमण किया। भीमसेन के हाथों मारा गया)।

१. श्रुतायु, एक राजा का नाम है : १. २, २६३; ६७, ६४ (यह क्रोधवशगण के अंश से उत्पन्न राजाओं में से एक थे); १८६, २१ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित); २. ४. २६ (युधिष्ठिर की सभा में); ५. ४, २४ (पाण्डवों की ओर से इन्हें भी रणनिमन्त्रण भेजने का निश्चय किया गया); ५५, ६४ (दुर्योधन की सेना में); ६. १६, १६; ४५, ६९. ७१; ५१, १८; ५९, ७६ (अम्बष्ठपतिः). ११३; ७५, २२; ८१, ३२: ८४, १. २. ७. १४. १७ (युधिष्ठिर से पराजित); ९९, ७; १०२, २५; ७. ९१, ३७; ९३, ६० (अर्जुन ने इनका वध किया); ९४, २९; ८. ५, १८. २६; ९. २४, २६। तुकी० अम्बष्ठ, अम्बष्ठपति।

२. श्रुतायु = कलिङ्गराज श्रुतायुध : ६. ५४, ६ (इन्होंने भीमसेन पर आक्रमण किया। भीमसेन ने इनके पुत्र शक्रदेव का वध किया). ६८.

७२ (भीमसेन ने इनका वध किया)। तुकी० २. श्रुतायु।

३. श्रुतायु, अच्युतायु के भाई (?) का नाम है : ७. ९३, ७. ११. २५ (अच्युतायु और इसका भीमसेन ने वध किया). २७; ९४, २९; ८. ७२, २०।

४. श्रुतायु, एक पाण्डव योद्धा का नाम है : ७. १५६, ८२ (यहाँ श्रुताह्वय पाठ है)।

५. श्रुतायु एक कौरव योद्धा का नाम है (८. ७, २०)।

१. श्रुतायुध, कलिङ्ग राज का नाम है : २. ४, २६ (युधिष्ठिर की सभा में); ६. १६, १६; १७, २१। तुकी० २. श्रुतायु, कलिङ्ग, कालिङ्ग, कलिङ्गाधिपति, कलिङ्गक।

२. श्रुतायुध एक राजा का नाम है : ७. ९२, ३५ (अर्जुन से युद्ध किया). ४१. ४३. ४४. ५० (यह पर्णाशा नदी से उत्पन्न वरुण का पुत्र था पर्णाशा के निवेदन पर वरुण ने इसे एक गदा और एक मन्त्र दिया जिसके प्रभाव से यह युद्ध में दुर्जेय बना रहेगा। किन्तु यदि यह युद्ध न कर रहे व्यक्ति पर उस गदा से प्रहार करेगा तो वह गदा लौट कर इसी को मार डालेगी). ५२. ५४ (इसने युद्ध न कर रहे श्रीकृष्ण पर गदा से प्रहार किया जिसके परिणामस्वरूप यह स्वयं मारा गया). ५५. ५७. ६०. ७६; ९३, १; ९४, २. ३०; २४, २६।

श्रुतावती, भरद्वाज की पुत्री का नाम है : ९. ४८, २. ६० (घृताची नामक अप्सरा को देख कर भरद्वाज के स्खलित हुये वीर्य से उत्पन्न हुई थी। इसने घोर तपस्या करके इन्द्र को पति रूप में प्राप्त किया था). ६७ (इसे अपने आश्रम में छोड़ कर भरद्वाजजी वन गये)।

श्रुति एक प्राचीन नरेश का नाम है (१. १, २३८)।

श्रुतिवर्मन्, एक कौरव योद्धा का नाम है (८. ७, १८)।

श्रुतिसागर = विष्णु (सहस्रनाम)

श्रेणिमत्, एक राजा का नाम है : १. ६७, ५१ (ये कालेय-संज्ञक दैत्यों में से चौथे दैत्य के अंश से उत्पन्न हुये थे); १८६, ११ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित); २. ३०, १ (दिग्विजय के समय भीमसेन ने इन्हें पराजित किया था); ३१, ५ (दक्षिण दिग्विजय के समय सहदेव ने इन्हें पराजित किया था); ५. ४, २१ (पाण्डवों की ओर से इन्हें भी रण निमन्त्रण भेजनने का निश्चय किया गया); १५१, ६३-६४ (युधिष्ठिर की सेना में); १७१, २७; १९६, २८ (युधिष्ठिर का अनुसरण किया); ६. ९३, १३; ७. २३, ३७. ४२; ८. ६, ३५ (इनका वध)।

श्रेयस् = विष्णु (सहस्रनाम)।

श्रेष्ठः श्रेयसां = श्रीकृष्ण (१२. ४७, २५)।

१. श्रेष्ठ = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

श्रौतश्रव = शिशुपाल (३. १५, २)।

श्वसन = वायु : १. ३२, १९; ६६, १९ (श्वास के पुत्र); ३. १९, २१; ८. ३४, ५७।

श्वाविल्लोमापह, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ६१)।

श्वासा : १. ६६, १८ (वायु की माता)।

१. श्वेत, एक अथवा अधिक प्राचीन राजाओं का नाम है : १. १, २३३; १२. १५३, ६८ (इन्होंने अपने मरे हुये पुत्र को पुनः जीवित कर दिया); १३. ११५, ६६ (ये कार्तिक मास में मांस-भक्षण नहीं करते थे); १५०, ५२ (ये एक प्रातःस्मरणीय राजर्षि हैं); १६५, ५५ (राजर्षिसत्तमः)।

२. श्वेत, एक मुनि का नाम है (१. ८, २५)।

३. श्वेत, दिशा गजों में से एक का नाम है (१. ६६, ६६)।

४. श्वेत, एक राजा का नाम है (२. ४४, २०)।

५. श्वेत एक पर्वत का नाम है : ३. १३९, १ (पाण्डव इसे लाँघ कर गये). ५; १५८, ४. १७; १८८, ११२ (मार्कण्डेयजी ने इसे भी नारायण के उदर में देखा); २२५, १० (स्वाहा ने अग्नि के वीर्य को इसी पर्वत के निकट एक सुवर्ण सरोवर में डाल दिया था). ३२. ३६ (स्कन्द ने इसके शिखर को विभक्त कर दिया जिससे यह भयभीत हो कर भाग गया); २२९, २८ (रुद्रेण शुक्रमुत्सृष्टं तच्छ्वेतः पर्वतोऽभवत। पावकस्येन्द्रियं श्वेते कृत्तिकाभिः कृतं नगे); २८९, ९; ५. ४८, ७२; ६. ६, ४; ९. ६०, १०; ११. २९, २१; १३. १६५, ३१; १४. ४३, ५ (भारतवर्ष के प्रमुख पर्वतों में से एक)। तुकी० श्वेताचल, श्वेतपर्वत।

६. श्वेत = श्वेतग्रह : ५. ३७, ४३; ६. ३, १२. १६।

७. श्वेत, एक वर्ष का नाम है : ६. ६, ३७ (नील पर्वत के उत्तर में स्थित)।

८. श्वेत, पाण्डव-पक्षीय एक योद्धा का नाम है : ६. ४७, ४४. ५१. ५४. ५६. ५८. ६१; ४८, १. ३. २७. ३१. ४०. ४३ (भीष्म से युद्ध किया). ४४. ४८. ५२. ५३. ५६. ५९. ६१. ६५. ६८. ७०. ७१. ७३. ७६. ८०. ८१. ८५. ९२. ९६. ९९. १०३. १०६. १०७. १११. ११५. ११७; ४९, १. १३. २५।

९. श्वेत, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६४)।

१०. श्वेत, एक द्वीप का नाम है : १२. ३३५, ८ (क्षीरोदधेरुत्तरतो हि द्वीपः श्वेतः ···विशालः); ३३६, ३० (एकत , द्वित और त्रित यहाँ आये); ३३७, ४१; ३३८, १ (नारदजी ने यहाँ नारायण का दर्शन किया); ३३९, १२९ (महाद्वीपम्); ३४३, ३० । तुकी० श्वेतद्वीप।

११. श्वेत = विष्णु (१२. ३४७, ६३; ३४८, ६६)।

१२. श्वेत (बहु० °ताः) श्वेतद्वीप के निवासियों का द्योतक है (१२. ३४८, ८५)।

श्वेतकि, एक प्राचीन राजा का नाम है : १. २२३, १७. ३६. ३९. ४८. ५०. ५७ (अपना यज्ञ पूरा करने के लिये इन्हें कोई ऋत्विज नहीं मिला। इससे खिन्न हो कर इन्होंने शिव की शरण ली। शिव ने इन्हें बारह वर्ष तक अग्नि में घृत की आहुति देने का निर्देश देते हुये दुर्वासा से इनका यज्ञ सम्पन्न कराने के लिये कहा। बारह वर्ष तक निरन्तर घृत की आहुति देने से अग्नि को अजीर्णता का कष्ट होने लगा। अपना यज्ञ पूर्ण करने के बाद ये स्वर्ग गये)। तुकी० श्वेतकेतु।

१. श्वेतकेतु, उद्दालक के पुत्र, एक मुनि का नाम है : १. ५३, ७ (ये जनमेजय के सर्पसत्र में सदस्य बने); १२२, १०-२१ (उद्दालकपुत्र श्वेतकेतु मुनि ने यह मर्यादा स्थापित की कि व्यभिचार भी भ्रूणहत्या के समान पाप है। ऐसा इन्होंने क्रोध के कारण किया था क्योंकि एक दिन एक ब्राह्मण ने आकर इनकी माता को पकड़ कर उनका अपहरण कर लिया। किन्तु उद्दालक ने इस अपहरण को इसलिये क्षमा कर दिया क्योंकि प्राचीन काल से ऐसा होता आया था); २. ७, १२ (इन्द्र की सभा में); ३. १३२, १-३. १२. १७-२० (ये मन्त्रशास्त्र में निपुण थे। अपने आश्रम में इन्होंने सरस्वती का प्रत्यक्ष-दर्शन किया था। श्वेतकेतु और अष्टावक्र दोनों वेदवेत्ताओं में श्रेष्ठ और आपस में मामा-भानजे थे। ये दोनों राजा जनक के यज्ञ में उपस्थित हुये); १२. ३४, २२ (उद्दालक ने इन्हें अपने एक शिष्य द्वारा उत्पन्न कराया था); ५७, १० (ब्राह्मणों के साथ छल करने के कारण उद्दालक ने इनका परित्याग किया); १३. १६५, ४५ (औद्दालकिः, उत्तर दिशा के ऋषि थे)।

२. श्वेतकेतु = श्वेतकि (१. २२३, ६९)।

श्वेतग्रह = ६. श्वेत (६. ८२, १२)।

श्वेतद्वीप = १०. श्वेत : १२. ३३५, १४; ३३६, २७. ३०; ३४३, ९. २४. २६. २८. ४१. ४७. ५७; ३४४, २३।

श्वेतपर्वत = ५. श्वेत : २. २७, २९; २८, १ (दिग्विजय के समय अर्जुन ने इसे पार किया था); ३. २३१, २७; २८०, ६७. ६८; ५. ११, १२; ६. ६, ५२ (देवों और असुरों का निवासस्थान); ७. ८०, २६ (स्वप्न में शिव के पास जाते समय श्रीकृष्ण और अर्जुन ने इसे पार किया); ९. ३७, २०; ११. १०, २०।

श्वेतपिङ्गल, श्वेतपिङ्गलनेत्र = शिव (सहस्रनाम)।

श्वेतभद्र, एक यक्ष का नाम है : २. १०, १५ (कुबेर की सभा में)।

श्वेतवक्त्र, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७३)।

श्वेतवाह, श्वेतवाहन = अर्जुन (देखिये वस्था०)।

श्वेतसिद्ध, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६८)।

श्वेतहय = अर्जुन (देखिये वस्था०)।

१. श्वेता, क्रोधवशा की पुत्री का नाम है : १. ६६, ६१. ६६ (श्वेत की माता)।

२. श्वेता = उमा (६. २३, ९)।

३. श्वेता, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २२)।

श्वेताचल = ५. श्वेत (५. १०२, ३)।

श्वेताश्व = अर्जुन (देखिये वस्था०)।

श्वैत्य = सृञ्जय : ७. ५५, ५०; ५६, १२; ५७, १३; ५८, १५; ५९, २५; ६०, १४; ६१, १२; ६२, २०; ६३, १२; ६४, १७; ६५, १२; ६६, २२; ६७, २१; ६८, १७; ६९, ३३; १२. ३०, १०।

ष

षट्कर्मतुष्ट = शिव (सहस्रनाम)।

षडङ्गनिधान = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

षडर्चिस् = स्कन्द (३. २३२, १२)।

षड्वक्त्र = स्कन्द (३. २२६, १४)।

षडानन = स्कन्द (३. २३२, १०; १२. ३००, ५८; १३. ८६, १८)।

षण्ढ, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (८. ८४, ३)।

षण्मुख = स्कन्द (३. २३२, १६; ७. ९४, ४६; १६६, २६)।

षष्टिप्रिय = स्कन्द (३. २३२, ६)।

षष्टिभाग = शिव (सहस्रनाम)।

षष्टिह्रद, एक तीर्थ का नाम है (१३. २५, ३६)।

षष्ठी एक देवी का नाम है : २. ११, ४१ (ब्रह्मा की सभा में); ३. २२९, ५०।

षोडशराजकम : १. २, ६२

षोडशराजिकम् :से सोलह राजाओं की कथा का तात्पर्य है। नारदजी ने सृञ्जय को निम्नलिखित राजाओं की कथा सुनाया : १) मरुत्त (७. ५५); २) सुहोत्र (७. ५६); ३ पौरव (७. ५७); ४)शिबि (७. ५८); ५) राम दाशरथि (७. ५९); ६) भगीरथ (७. ६०); ७) दिलीप (७. ६१); ८) मान्धातृ (७. ६२); ९) ययाति (७. ६३); १०) अम्बरीष (७. ६४); ११) शशबिन्दु (७. ६५); १२) गय (७. ६६); १३) रन्तिदेव (७. ६७); १४) भरत दौष्मन्ति (७. ६८); १५) पृथु वैन्य (७. ६९); १६) राम जामदग्न्य (७. ७०)। देखिये सभी नाम (वस्था०)।

षोडशराजोपाख्यान से उपरोक्त १६ राजाओं की कथा का तात्पर्य है : १२. २९ (अन्तर इतना ही है कि पौरव के स्थान पर यहाँ बृहद्रथ के नाम का प्रयोग हुआ है और राम जामदग्न्य की कथा के स्थान पर सगर की कथा का वर्णन है)।

स

१. संकर्षण = बलराम (देखिये वस्था०), जिन्हें शेष के साथ समीकृत किया गया है। इन्हें श्रीकृष्ण (पुरुषोत्तम) का एक रूप और जीवात्मा भी कहा गया है : १. १३९, ४ (भीमसेन को गदायुद्ध की शिक्षा दी); १८९, २०; २. १४, ३४; ४३, १५; ३. १४१, २०; ४. ६, ९; ५. ५५, ३५; १३१, ८; ६. ६५, ७०; ६६, ४०; ६७, ११; ७. ११०, ९३; १२. ४७, ३२; ८१, ७; २०७, १० (अग्रजं सर्वभूतानां); ३३९, ३६. ४०. ४१ (संकर्षणाच्च प्रद्युम्नो मनोभूतः); ३४४, १६; १३. १५८, ३९ (जीवभूतं)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

संकर्षणानुज = श्रीकृष्ण : ५. १५७, १६।

संकल्प = मूर्तिमान संकल्प (१३. १६५, १२)।

संकल्पज = काम (१. १८७, ३)।

संकृति, एक प्राचीन नरेश का नाम है (१. १, २३४)।

संकोच, एक दैत्य का नाम है : १२. २२७, ५२ (यह पूर्वकाल में पृथिवी का शासक था)।

संक्रम, भगवान विष्णु द्वारा स्कन्द को प्रदत्त एक पार्षद का नाम है (९. ४५, ३७)।

संक्षेप्तृ = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. संग्रह, समुद्र द्वारा स्कन्द को प्रदत्त एक पार्षद का नाम है (९. ४५, ५०)। = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

संग्रहाध्याय (१. १, ८८)।

१. संग्रामजित्, एक राजा का नाम है : २. ४, २१ (युधिष्ठिर की सभा में)।

२. संग्रामजित्, कर्ण के भ्राता का नाम है : ४. ५४, १८ (विराट के गोहरण के समय अर्जुन ने इसका वध किया था)।

संघ = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

संज्ञा, विवस्वान् की पत्नी का नाम है : १३. १५०, १७-१८ (इन्होंने अपनी नासिका से दोनों अश्विनीकुमारों को उत्पन्न किया था)।

संतर्जन, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ५८)।

संतापितृ = शिव (सहस्रनाम)।

संन्यासकृत् = विष्णु (सहस्रनाम)।

संम्राज = श्रीकृष्ण (१२. ४३, ११)।

संयत = शिव (सहस्रनाम)।

संयमन, यम की राजधानी का नाम है (३. १६३, ९)।

संयमनी, यम की पुरी का नाम है : ७. ७२, ४४; ११९, २४; १४२, १०; १३. १०२, १६।

१. संयाति, राजा नहुष के तीसरे पुत्र का नाम है (१. ७५, ३०)।

२. संयाति, एक राजा का नाम है : १. ९५, १३. १४ (ये प्राचीन्वान के पुत्र थे। इनकी माता का वराङ्गी और पुत्र का अहंयाति नाम था)।

संयुगपीडवाहन, संयोग = शिव (सहस्रनाम)।

संवत्सर = स्कन्द (३. २३२, १२)। = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

संवत्सरकर = शिव (सहस्रनाम)।

संवत्सरकरोऽध्यर्थ = सूर्य (३. ३, २१)।

संवरण, सोमवंशी अजमीढ के पौत्र तथा ऋक्ष के पुत्र का नाम है : १. ९४, ३४ (जब ये इस पृथिवी का शासन कर रहे थे उस समय प्रजा का बहुत संहार हुआ था। सब को भूख, मृत्यु, अनावृष्टि और व्याधि आदि के कष्ट सताने लगे। पाञ्चाल नरेश ने इन पर आक्रमण करके इनकी सारी भूमि पर अपना अधिकार कर इन्हें भी परास्त कर दिया। तदनन्तर स्त्री, पुत्र, सुहृद और मन्त्रियों के साथ ये वहाँ से भाग गये और सिन्धु नदी के तटवर्ती निकुञ्जों में एक दुर्ग का आश्रय लेकर एक सहस्र वर्ष तक रहे। एक दिन महर्षि वसिष्ठ के आने पर इन्होंने उनका अपने पुरोहित के रूप में वरण किया। वसिष्ठजी ने इनके आग्रह को स्वीकार करते हुये इन पूरुवंशी संवरण को समस्त क्षत्रियों के सम्राट के पद पर अभिषिक्त करा दिया। तत्पश्चात इन्होंने अपनी प्राचीन राजधानी को अपने अधिकार में ले लिया और समस्त राजाओं को जीत कर अपना करद बना दिया); ९४, ३४. ३५. ३९. ४८ (सूर्यपुत्री सौरी इनकी पत्नी थी। इन्होंने कुरु नामक पुत्र उत्पन्न किया); ९५, ३७. ३८ (अजमीढ के पुत्र, तपती वैवस्वती के पति और कुरु के पिता); १७१, १२. (ऋक्षपुत्रः). १५. १७. १८. ३३; १७३, १३. २२. २३. २५. ३२. ५० (ये तपती पर आसक्त हुये। तदनन्तर इन्होंने वसिष्ठजी की सहायता से तपती को पत्नी रूप में प्राप्त किया। तपती से इन्होंने कुरु नामक पुत्र उत्पन्न किया); १३. १६५, ५४; १५. १०, २४। तुकी० अजमीढ, आर्क्ष, पौरव, पौरवनन्दन, ऋक्षपुत्र।

१. संवर्त, महर्षि अङ्गिरा के तृतीय पुत्र का नाम है : १. ६६, ५; २. ७, १९ (इन्द्र की सभा में); ११, १२ (ब्रह्मा की सभा में); ३. ८५, ३१; १२९, १७ (इन्होंने प्लक्षावतरण तीर्थ में मरुत्त का यज्ञ कराया); ७. ५५, ३८; १२. २९, २१ (बृहस्पती के छोटे भाई); ४७, ९ (शरशय्या पर पड़े भीष्म को घेर कर खड़े ऋषियों में ये भी थे); १३. २६, ५; ८५, १३१; १५०, ४४; १४. ५, ४ (अङ्गिरस के पुत्र और बृहस्पति के भ्राता). ५; ६, १८-२०. २३. २५. ३०. ३२. ३३; ७, २. ४. ६. १३. १९. २४; ८, १. ३७; ९, ४. ५. ७. १६. १९. २२. २५. ३७; १०, २. ७. ९. १२. १७. १९. २२. २५. ३२ (मरुत्त का यज्ञ किया); तुकी० आङ्गिरस. विप्रर्षि।

२. संवर्त = शिव (सहस्रनाम)।

१. संवर्तक : ६. १८८, ६९. ७२ (अनलः); १८९, १७ (वह्नि''' अनलः). १८ (सूर्यः); ६. ९५, ५४; ७. १५६, १५१; २०१, ३२; ८. ३४, २९; १३. १४, २४६. ३४९; १४९, ३८। प्रलयाग्नि का द्योतकः ३. २०४, २६; ६. ७, २८ (संवर्तको नाम कालाग्नि मंतरप्रभ); १२. २८४, ६५। = सूर्य : ३. ३, २३। एक नाग : १. ३५, १०।

संवर्तकाग्नि = सूर्य (३. ३, ५७)।

संवर्तवलाहक = शिव (सहस्रनाम)।

संवर्त-मरुत्तीय — "व्यासजी ने युधिष्ठिर को संवर्त और मरुत्त की कथा सुनाते हुये बताया : 'सत्ययुग में राजदण्ड धारण करनेवाले शक्तिशाली वैवस्वत मनु एक प्रसिद्ध राजा थे। उनके पुत्र प्रसन्धि→क्षुप→इक्ष्वाकु→विंश (इक्ष्वाकु के १०० पुत्रों में ज्येष्ठ और धनुर्धर वीरों के आदर्श)→विविंश→खनीनेत्र→सुवर्चा→करन्धम → अविक्षित→ कारन्धम→मरुत्त। मरुत्त गुणों में अपने पिता से भी बढ़ कर थे। इनमें दस सहस्र हाथियों का बल था और ये साक्षात विष्णु के समान प्रतीत होते थे। ये जब यज्ञ करने को उद्यत हुये तब इन्होंने हिमालय पर्वत के उत्तर भाग में स्थित मेरु पर्वत के निकट एक यज्ञशाला बनवा कर यज्ञकार्य आरम्भ किया। इनकी आज्ञा से अनेक स्वर्णकारों ने सुवर्णमय कुण्ड, सोने के बर्तन, थाली और आसन आदि तैयार किये। इन सब वस्तुओं की गणना असम्भव है। जब सब सामग्री तैयार हो गई तब राजा मरुत्त ने सब प्रजापालों के साथ विधिपूर्वक यज्ञ किया (१४. ४)।

"युधिष्ठिर के पूछने पर व्यासजी ने बताया कि प्रजापति दक्ष के देवता और असुर नामक बहुत सी संतानें थीं जो आपस में स्पर्धा रखती थीं। इसी प्रकार महर्षि अङ्गिरा को दो पुत्र हुये जिनमें से एक बृहस्पति और दूसरे संवर्त थे। ये दोनों भाई भी एक दूसरे से अलग रहते और आपस में स्पर्धा रखते थे। बृहस्पति अपने छोटे भाई संवर्त को बहुत त्रस्त करते थे जिसके कारण संवर्त घर छोड़कर दिगम्बररूप से वन में रहने लगे। इसी समय इन्द्र ने असुरों को पराजित करके त्रिभुवन का राज्य प्राप्त कर लिया और बृहस्पति को अपना पुरोहित बनाया। इसके पूर्व अङ्गिरा के यजमान राजा करन्धम थे। करन्धम के पुत्र अविक्षित हुये जो ययाति के समान धर्मज्ञ थे। अविक्षित के पुत्र मरुत्त हुये जो देवराज इन्द्र से स्पर्धा रखने लगे। मरुत्त से गुणों में बढ़ने के लिये इन्द्र यद्यपि सदैव प्रयत्नशील रहते थे तथापि बढ़ नहीं पाते थे। तब इन्द्र ने बृहस्पति से कहा कि वे मरुत्त का यज्ञ तथा श्राद्धकर्म कदापि न करायें। बृहस्पति ने इन्द्र की बात मान कर मरुत्त के यज्ञ आदि कर्म न करने का आश्वासन देते हुये कहा कि वे अपने इस आश्वासन पर सदैव अटल रहेंगे। बृहस्पति की बात सुन कर इन्द्र का मात्सर्य दूर हो गया और वे आश्वस्त हो कर अपने लोक चले गये (१४. ५)।

"व्यासजी ने इस प्रसंग में बृहस्पति और मरुत्त के संवादरूपी इतिहास का उल्लेख करते हुये कहा : राजा मरुत्त ने जब यह सुना कि बृहस्पति ने मनुष्यों का यज्ञ न कराने की प्रतिज्ञा कर ली है तब उन्होंने एक महान यज्ञ का आयोजन किया और बृहस्पति के पास जाकर उनसे अपना यज्ञ कराने का निवेदन किया। मरुत्त ने अनेक प्रकार से विनम्रतापूर्वक अपना यज्ञ कराने का बृहस्पति से निवेदन किया किन्तु जब वे किसी भी प्रकार इसके लिये सहमत नहीं हुये तब राजा मरुत्त अत्यन्त खिन्न होकर वापस आये। मार्ग में उन्हें देवर्षि नारदजी के दर्शन हुये। नारदजी द्वारा खिन्नता का कारण पूछने पर मरुत्त ने उनसे सम्पूर्ण वृत्तान्त बता दिया। तब नारदजी ने मरुत्त से कहा : 'अङ्गिरा के दूसरे पुत्र संवर्त अत्यन्त धार्मिक हैं। अतः तुम संवर्त को अपना पुरोहित बना कर अपना यज्ञ सम्पन्न कराओ। इस समय संवर्त वाराणसी में विश्वनाथ के दर्शन की इच्छा से पागलों के समान वेश बना कर इधर-उधर घूम रहे हैं। तुम वाराणसी के प्रवेशद्वार पर कहीं से एक शव ला कर रख देना। जो उस शव को देख कर सहसा पीछे की ओर लौट पड़े उसे ही संवर्त समझना और फिर वे शक्तिशाली मुनि संवर्त जहाँ कहीं जाँय तुम उनके पीछे-पीछे चले जाना। जब वे किसी एकान्त स्थान में पहुँचे तब उनसे यह बताना कि तुम्हें नारदजी ने उनका पता बताया है। यदि वे तुमसे मेरे पास आने का पता पूछें तो बता देना कि नारदजी अग्नि में समा गये हैं।' नारदजी की बात सुन कर मरुत्त ने उन्हें अनेकशः धन्यवाद देने के पश्चात वाराणसी पुरी के लिये प्रस्थान किया। वाराणसी आकर मरुत्त ने एक शव ला कर नगर के प्रवेशद्वार पर रख दिया। उसी समय विप्रवर संवर्त भी पुरी के द्वार पर आये किन्तु उस शव को देखकर सहसा पीछे की ओर लौट पड़े। राजा मरुत्त भी तब संवर्त से शिक्षा लेने के लिये उनके पीछे-पीछे गये। एकान्त में पहुँचने पर राजा को अपने पीछे-पीछे आते देख कर संवर्त ने उन पर धूल फेंका, कीचड़ उछाला तथा थूक और खखार डाल दिया। संवर्त के इस प्रकार त्रस्त करने पर भी राजा मरुत्त हाथ जोड़ कर उन्हें प्रसन्न करने के उद्देश्य से उनके पीछे चलते गये। तब संवर्त लौट कर एक सघन वटवृक्ष के नीचे थक कर बैठ गये (१४. ६)।

"संवर्त ने मरुत्त से पूछा : 'तुमने मुझे कैसे पहचाना। यदि सत्य बोलोगे तो तुम्हारे सब मनोरथ पूर्ण होंगे अन्यथा तुम्हारे मस्तक के सैकड़ों टुकड़े हो जायेंगे।' मरुत्त ने बताया कि नारदजी ने ही उन्हें संवर्त का पता बताया था और इस प्रकार कह कर नारदजी स्वयं अग्नि में प्रवेश कर गये। मरुत्तकी बात सुन कर संवर्त ने उनको बृहस्पति के पास जाने के लिये कहा। किन्तु उन्होंने यह भी कहा कि उनके अस्वीकार करने पर वे मरुत्त का यज्ञ करा देंगे। मरुत्त ने संवर्त को बताया कि पहले वे बृहस्पति के पास ही गये थे परन्तु इन्द्र को ही स्थाई रूप से अपना यजमान बना लेने के कारण उन्होंने मनुष्यों का यज्ञ करना अस्वीकार कर दिया। मरुत्त ने संवर्त से कहा : 'मैं अत्यन्त प्रेम से बृहस्पतिजी के पास

गया था किन्तु देवराज इन्द्र का आश्रय ले कर वे अब मुझे अपना यजमान नहीं बनाना चाहते। अतः मेरी इच्छा है कि अब मैं सर्वस्व दे कर भी आपसे ही अपना यज्ञ सम्पन्न कराऊँ और आप द्वारा सम्पादित गुणों के प्रभाव से इन्द्र को भी मात कर दूँ।' राजा की बात सुन कर संवर्त ने कहा : 'जब मैं तुम्हारा यज्ञ कराने लगूँगा तब बृहस्पति और इन्द्र दोनों ही क्रोधपूर्वक मेरे साथ द्वेष करेंगे। उस समय तुम्हें मेरे पक्ष का समर्थन करना होगा। अतः मुझे तुम विश्वास दिलाओ कि तुम मेरा साथ दोगे।' तब राजा ने संवर्त का सदा साथ देने की प्रतिज्ञा की। राजा की बात सुन कर संवर्त ने यज्ञ कराने का आश्वासन देते हुये कहा : 'मैं तुम्हें इन्द्र की बराबरी में बैठाऊँगा और तुम्हारा प्रिय करूँगा।' (१४. ७)।

"संवर्त ने कहा : 'हिमालय के पृष्ठभाग में मुञ्जवान नामक एक पर्वत है जहाँ उमावल्लभ भगवान् शिव सदा तपस्या करते रहते हैं (शिव के स्वरूप और उनकी सेवा में उपस्थित रहनेवाले देवताओं आदि का वर्णन)। वहाँ जा कर तुम मेरे द्वारा बताई गई स्तुति से शिव की स्तुति करना। वहाँ शिव को प्रसन्न करने के बाद तुम्हें शीघ्र हाथी-घोड़े, और सुवर्ण आदि सब प्राप्त हो जायँगे।' राजा मरुत्त ने तब तदनुसार कार्य कर के सुवर्ण आदि प्राप्त कर लिया। इससे बृहस्पति इस समाचार से अत्यन्त चिन्तित हो उठे। इन्द्र ने जब सुना कि बृहस्पति चिन्ता से दुर्बल हो रहे हैं तब वे देवताओं को साथ ले कर उनके पास आये। (१४. ८)।

"अपनी चिन्ता का कारण बताते हुये बृहस्पति ने इन्द्र से कहा : 'मरुत्त उत्तम दक्षिणाओं से युक्त एक यज्ञ करने जा रहे हैं। उस यज्ञ में संवर्त पुरोहित होंगे, परन्तु मेरी इच्छा है कि संवर्त उस यज्ञ को न करायें। संवर्त मेरे शत्रु हैं और शत्रुओं की समृद्धि दुःख का कारण होती है। अतः तुम सभी सम्भव उपायों द्वारा संवर्त और मरुत्त को बन्दी बना लो।' देवगुरु की बात सुनकर इन्द्र ने अग्नि देव से मरुत्त के पास यह सन्देश ले जाने के लिये कहा कि बृहस्पति ही उनका यज्ञ करायेंगे और उन्हें अमर भी बना देंगे। अग्निदेव तदनुसार सन्देश लेकर मरुत्त के यज्ञस्थल पर आये और इन्द्र का सन्देश सुनाया। राजा ने संवर्त से ही अपना यज्ञ कराने का निश्चय प्रकट किया। संवर्त ने भी अग्निदेव को फटकारते हुये पुनः उस स्थल पर न आने के लिये कहा। संवर्त के शाप से भयभीत हो अग्निदेव पुनः इन्द्र के पास लौट आये और राजा मरुत्त तथा संवर्त की बातों से देवराज को अवगत कराया। इन्द्र ने अग्निदेव को एक बार पुनः मरुत्त के पास जाने के लिये कहा किन्तु अग्नि ने गन्धर्वराज को भेजने का प्रस्ताव करते हुये पुनः संवर्त के सामने जाने में अपनी असमर्थता प्रकट की। इन्द्र ने अनेक तर्कों से अग्नि को समझाते हुये अपनी वीरता और शक्ति का भी उल्लेख किया किन्तु अग्नि ने कहा कि देवराज भी अतीत में अनेक बार असुरों से पराजित हो चुके हैं। (१४. ९)।

"इन्द्र ने तब गन्धर्वराज से मरुत्त के पास यह सन्देश भेजा कि वे बृहस्पति से ही अपना यज्ञ करायें अन्यथा इन्द्र वज्र से मरुत पर प्रहार कर देंगे। तब गन्धर्वराज धृतराष्ट्र ने मरुत्त के पास आ कर इन्द्र का संदेश सुनाया। उन्होंने मरुत्त को अनेक प्रकार का भय दिखा कर इन्द्र की बात मानने का आग्रह किया। फिर भी राजा मरुत्त संवर्त से ही अपना यज्ञ कराने के अपने निश्चय पर दृढ़ रहे। उसी समय आकाश में गर्जन करते हुये वज्रधारी इन्द्र का शब्द सुन पड़ा। तब राजा ने अपने पुरोहित संवर्त को इन्द्र के आगमन की सूचना दी। राजा को भय का परित्याग करने के लिये कहते हुये संवर्त ने अपने मन्त्रबल से सम्पूर्ण देवताओं का आवाहन किया जिससे देवताओं सहित इन्द्र भी राजा की यज्ञशाला में खिंच कर चले आये। इन्द्र को आता देख कर संवर्त सहित मरुत्त ने उनकी अगवानी की और उन्हें सोमपान के लिये आमन्त्रित किया। मरुत्त ने इन्द्र से कहा : 'आपको नमस्कार है। आप मुझे कल्याणमयी दृष्टि से देखिये। आपके पदार्पण से मेरा यज्ञ और जीवन सफल हो गया। ये संवर्त जी मेरा यज्ञ सम्पन्न करा रहे हैं।' तब इन्द्र ने संवर्त की शक्ति की चर्चा करते हुये राजा से कहा: 'मैं आप पर प्रसन्न हूँ और मेरा सारा क्रोध दूर हो गया है।' तदनन्तर इन्द्र ने देवताओं को मरुत्त के लिये अत्यन्त समृद्ध एवं चित्र-विचित्र रूपवाले सहस्रों सभाभवन और रंगमण्डप आदि बनाने की आज्ञा दी। इन्द्र की आज्ञा मान कर देवों ने तदनुसार निर्माण किया। इन्द्र ने तब राजा से कहा : "मैं यहाँ आकर तुमसे मिला हूँ। तुम्हारे अन्यान्य पूर्वज और देवतागण भी प्रसन्नतापूर्वक यहाँ पधारे हैं। ये सभी लोग तुम्हारा दिया हुआ हविष्य ग्रहण करेंगे।' तदनन्तर राजा मरुत्त के यज्ञ का कार्य आगे बढ़ा। सभी देवता तथा इन्द्र भी उसमें सदस्य बने। इन्द्र और अन्य देवों ने सोमपान किया और सभी अपने अपने स्थानों को लौट आये। मरुत्त ने भी ब्राह्मणों को प्रचुर धन और सुवर्ण आदि दान किया और फिर अपने गुरु संवर्त को ले कर राजधानी लौट कर पृथिवी का राज्य करने लगे। (१४. १०)।'"

संवर्तवात, से प्रलयवायु का तात्पर्य है : २. ४०, १ (संवर्तवाताभिहतं भीमं क्षुब्धमिवार्णवम्)।

संवर्ताग्नि, प्रलयाग्नि का द्योतक है (८. ४९, १७)।

संवह एक वायु का नाम है। जो देवताओं के आकाशमार्ग से जानेवाले विमानों को स्वयं ही वहन करता है वह पर्वतों का मानमर्दन करने वाला चतुर्थ वायु संवह नाम से प्रसिद्ध है (१२. ३२८, ४१-४३)।

संविभागप्रिय = शिव (सहस्रनाम)।

संवृत = विष्णु (सहस्रनाम)।

संवृत्त, एक कश्यपवंशी नाग का नाम है (५. १०३, १४)।

संवृत्ति एक देवी का नाम है : २. ११, ४३ (ब्रह्मा की सभा में)।

संवेद्य, एक तीर्थ का नाम है (३. ८५, १)।

संशप्तक (बहु० °का :) कौरव सेना में उपस्थित एक वर्ग के लोगों का नाम है : १. १, १८९; २, २५६. २६१; ३. २५२, २३. ३२. ३५ (अर्जुन का वध करने के लिये कुछ राक्षस गण संशप्तकों के रूप में जन्म लेंगे); ५. ५५, ५८; ५७, १८; ६. २०, १५; ७. १७, ३९ (इस अध्याय में उन त्रिगर्त वीरों का उल्लेख है जिन्होंने अर्जुन को मारने अथवा स्वयं मर जाने की प्रतिज्ञा की); १८, १. ९. ३१ (अर्जुन से युद्ध किया); १९, १. २ (अर्जुन ने इनका वध किया); २०, २; २६, २; २७, १०. १४. १८. ३०. ३१; २८, ४. ५ (सुशर्मा और उसके भ्राता); ३१, २९; ३२, ४२. ४४. ४५; ३३, १६ (अर्जुन से युद्ध किया); ७२, २; ७३, १; १२१, १२; १२३, १४; १९३, १८; ८. २, १८; ५, ४०; ९, ५०; १३, ८ (अर्जुन ने इनका वध किया); १६, १. ४. २४. ४०. ४७. ५१; १७, ७. २६; १८, ४. २५; १९, १. २३. २४ (अर्जुन से युद्ध किया); २७, २. २४. २६. ४२; ४६, १४. ७३. ७४; ४७, १. ७. ८. १४; ५३, २. ३. ६. २०. २३. ४१. ४५ (अर्जुन से युद्ध किया); ५६, ५. ८२. ८३. ९७. १०१. १४५ (अर्जुन ने इन्हें परास्त किया); ५९, ३. ६६; ६०, ९०; ६५, ९-११; ६७, २; ७०, ३४; ७५, १२; ८१, २. ४ (९० संशप्तकों ने अर्जुन पर आक्रमण किया); ९५, ९; ९. १, २७; २, ३८; ८, ३१; १०, ६२ (अर्जुन ने इनका वध किया); १४, ४५; ६२, २९; १४. ६१, १९ (समाहूते च संग्रामात्पार्थे संशप्तकैस्तदा)।

संशप्तकनिसूदन = अर्जुन (१४. ७४, ३२)।

संशप्तकनिहन्तृ = अर्जुन (१४. ७७, ९)।

संशप्तकवध, से संशप्तकों के वध से सम्बद्ध पर्व का तात्पर्य है (१. २, ६८)।

संशप्तकवधपर्वन्, महाभारत के ७२ वें अवान्तर पर्व का नाम है "द्रोणाचार्य ने अर्जुन से रक्षित युधिष्ठिर को पकड़ पाने में अपनी असमर्थता प्रकट की। त्रिगर्तराज ने कहा कि अर्जुन ने सदैव ही त्रिगर्तों को त्रस्त किया है। अतः उन्होंने यह प्रतिज्ञा कि या तो त्रिगर्तगण अर्जुन को मार डालेंगे अथवा अपने प्राणों की आहुति दे डालेंगे। सत्यरथ आदि पाँच भाइयों ने अपने १०,००० रथियों और मालवराज आदि के साथ उक्त प्रतिज्ञा की। तदनन्तर वीर संशप्तकगण अर्जुन को ललकारते हुये युद्धस्थल में दक्षिण दिशा की ओर जा कर खड़े हो गये। अर्जुन ने तब युधिष्ठिर

की रक्षा का भार सत्यजित् को देकर त्रिगर्तों और संशप्तकों से युद्ध करने के लिये प्रस्थान किया (७. १७)।

"युद्ध का बारहवाँ दिन : संशप्तकगण अर्जुन को अपनी ओर आते देख कर हर्षपूर्वक गर्जना करने लगे। अर्जुन ने उन सब को हर्ष में भरा हुआ देख कर किञ्चित मुसकराते हुये श्रीकृष्ण से कहा : 'आज युद्धस्थल में त्रिगर्त-देशीय सुशर्मा आदि को जहाँ रोना चाहिये वहाँ वे हर्ष से उछल रहे हैं।' ऐसा कह कर अर्जुन ने अपना शंख बजाया। उस शंखनाद से भयभीत हो वह संशप्तक सेना लोहे की प्रतिमा के समान निश्चेष्ट खड़ी हो गई। सुबाहु और सुशर्मा से अर्जुन ने घोर युद्ध किया। अर्जुन से परास्त हो कर संशप्तक सेना भाग गई किन्तु त्रिगर्तराज के प्रोत्साहित करने पर संशप्तकगण और नारायणी सेना के ग्वाले मृत्यु को ही युद्ध से निवृत्ति का अवसर मान कर पुनः युद्धभूमि में लौट आये। (७. १८)।

"शत्रु को पुनः उपस्थित देखकर अर्जुन ने श्रीकृष्ण से अपना रथ शत्रुओं की ओर बढ़ाने के लिये कहा। नारायणी सेना से अर्जुन और श्रीकृष्ण का युद्ध। अर्जुन ने अपना शंख बजा कर त्वाष्ट्रास्त्र से शत्रुओं पर प्रहार किया जिससे वे सभी शत्रु मोहित हो आपस में ही एक दूसरे पर आघात करने लगे। तत्पश्चात अर्जुन ने ललित्थ, मालव, और मावेल्लक आदि सैनिकों पर बाण वर्षा करके उन्हें त्रस्त किया। शत्रुओं ने भी अर्जुन पर घोर बाण वर्षा की जिससे अर्जुन ढक गये। श्रीकृष्ण भी अर्जुन को देख नहीं पा रहे थे। तब अर्जुन ने वायव्यास्त्र का प्रयोग करके शत्रुओं की बाणवर्षा को नष्ट कर दिया। भगवान वायुदेव ने घोड़े, हाथी और रथादि सहित संशप्तक समूहों को वहाँ से सूखे पत्तों के ढेर की भाँति उड़ाना आरम्भ किया। उस समय अर्जुन ने अपने बाणों से सहस्रों शत्रुओं का वध किया। इधर जब अर्जुन इस युद्ध में लिप्त थे तब द्रोणाचार्य ने व्यूह बना कर युधिष्ठिर पर आक्रमण किया (७. १९)।

"संशप्तकों का वध करने के लिये जब अर्जुन दूर निकल गये तब गरुडव्यूह की रचना करके द्रोणाचार्य ने युधिष्ठिर के नेतृत्व में उपस्थित पाण्डव-सेना पर आक्रमण किया। गरुडव्यूह के मुख स्थान पर द्रोण, शिरोभाग में भाइयों सहित दुर्योधन, दोनों नेत्र-स्थान में कृप और कृतवर्मा, ग्रीवा में भूतशर्मा, दाहिने पंखभाग में भूरिश्रवा, बायें पंख भाग में अश्वत्थामा, पृष्ठभाग में कलिङ्ग सैनिक, पुच्छभाग में पुत्रों सहित कर्ण, वक्षस्थान में जयद्रथ और केन्द्र में प्राग्ज्योतिषराज स्थित थे। युधिष्ठिर ने अपनी सेना का मण्डलार्ध व्यूह बनाया। द्रोणाचार्य और धृतराष्ट्रपुत्र दुर्मुख के साथ धृष्टद्युम्न का घोर युद्ध हुआ। जब दोनों पक्षों में घोर युद्ध होने लगा तभी द्रोणाचार्य ने युधिष्ठिर पर आक्रमण कर दिया (७. २०)।

"युधिष्ठिर, सत्यजित् तथा वृक के साथ द्रोण का युद्ध जिसमें द्रोण ने सत्यजित् का वध कर दिया। तब युधिष्ठिर युद्ध से भाग गये। पाञ्चालों आदि ने द्रोणाचार्य पर आक्रमण किया किन्तु द्रोण से पराजित हो गये। द्रोण ने शतानीक, दृढसेन, क्षेम, वसुदान तथा पाञ्चाल राजकुमार आदि का वध किया। सात्यकि आदि सम्पूर्ण पाण्डव सेना पराजित हो गई (७. २१)।

"द्रोणाचार्य ने जब पाण्डवों तथा पाञ्चालों को मार भगाया तब दुर्योधन ने द्रोण के पराक्रम की कर्ण से प्रशंसा की। उसने कहा कि भीमसेन भी पाण्डवों और सृञ्जयों से रहित कौरवों से घिर गये हैं। कर्ण ने दुर्योधन से कहा : 'भीमसेन प्राण रहते कभी युद्ध से विरत नहीं हो सकते। पाण्डव शूरवीर, बलवान्, अस्त्रविद्या में निपुण तथा उन्मत्त हो कर युद्ध करने वाले हैं। वे रणभूमि से कभी भाग नहीं सकते। यह मेरा विश्वास है।' ऐसा कह कर कर्ण ने दुर्योधन से द्रोण की सहायता करने के लिये कहा। तब सब भाइयों के साथ दुर्योधन द्रोणाचार्य के रथ की ओर चल दिया। (७. २२)।

"धृतराष्ट्र के पूछने पर सञ्जय ने भीमसेन के अश्वों का वर्णन किया। सञ्जय ने विशेषरूप से वृहन्त का उल्लेख करते हुये द्रोण की ध्वजा तथा युधिष्ठिर के धनुष आदि का भी वर्णन किया (७. २३)। धृतराष्ट्र ने भीम आदि का उल्लेख करके अपना खेद प्रकाशित किया और सञ्जय से युद्ध का विवरण बताने के लिये कहा (७. २४)।

"सञ्जय ने बताया : जब पाण्डव सैनिकों ने लौट कर पुनः युद्ध आरम्भ किया तब उन्होंने घोर बाण वर्षा द्वारा द्रोणाचार्य को आच्छादित कर दिया। इससे कौरव अत्यन्त भयभीत हो उठे। दुर्योधन ने अपनी सेना को उत्साहित किया। तब कौरवों और पाण्डवों की सेना में द्वन्द्व युद्ध होने लगा (७. २५)। भीमसेन ने भगदत्त के हाथी के साथ युद्ध किया। इस युद्ध में भगदत्त और उनके हाथी ने भयानक पराक्रम प्रकट किया (७. २६)। दूसरी ओर अर्जुन ने संशप्तक-सेना के साथ भयंकर युद्ध करते हुये उसके अधिकांश भाग का वध कर दिया (७. २७)। संशप्तकों का संहार करके अर्जुन ने कौरव सेना पर आक्रमण किया। भगदत्त और उनके हाथी ने अपूर्व पराक्रम दिखाते हुये युद्ध किया (७. २८)। अर्जुन और भगदत्त के बीच घोर युद्ध हुआ जिसमें भगदत्त के वैष्णवास्त्र से श्रीकृष्ण ने अर्जुन की रक्षा की तथा अर्जुन ने हाथी सहित भगदत्त का वध कर दिया (७. २९)। अर्जुन ने वृषक और अचल का वध किया। शकुनि ने माया युद्ध आरम्भ किया किन्तु पराजित हो कर कौरव सेना सहित युद्धस्थल से भाग (७. ३०)। कौरवों और पाण्डवों की सेनाओं का घमासान युद्ध होने लगा जिसमें अश्वत्थामा ने राजा नील का वध कर दिया (७. ३१)। कौरव-पाण्डव सेनाओं का घमासान युद्ध, भीमसेन का कौरव महारथियों के साथ संग्राम, भयंकर नरसंहार, पाण्डवों का द्रोणाचार्य पर आक्रमण, अर्जुन और कर्ण का युद्ध, कर्ण के भाइयों का वध तथा कर्ण और सात्यकि का घोर संग्राम (७. ३२)।"

संस्कृति = श्रीकृष्ण (१२. ४३, ९)।

१. संस्थान (बहु० °नाः) एक जाति के लोगों का नाम है : ६, ५१, ७ (दुर्योधन की सेना में)।

२. संस्थान = विष्णु (सहस्रनाम)।

संहतापन, ऐरावत कुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ५७, ११-१२)।

संहनन, मनस्यु के तीसरे पुत्र का नाम है (१. ९४, ७)।

संहिता से वैदिक संहिताओं का तात्पर्य है : १. ७०, ४०; १६७, ८; ३. २००, ७६; १२. १९६, १६. १७; १९९, ६. ११३. ११९।

संहृष्ट = शिव (सहस्रनाम)।

संह्लाद, एक असुर का नाम है : २. ९. १२ (वरुण की सभा में)।

संह्राद, एक असुर का नाम है : १. ६५, १८ (हिरण्यकशिपु का दूसरा पुत्र); ६७, ६ (वाह्लीक देश के राजा शल्य इसी के अंश से उत्पन्न हुये थे)।

सकृद्ग्रह (बहु० °हाः) एक जाति के लोगों का नाम है (६. ९, ६६)।

सकल = शिव (सहस्रनाम)।

सगण = शिव (सहस्रनाम)।

सगर, अयोध्या के एक प्राचीन राजा का नाम है : १. १, २३४; २. ८, १९ (यम की सभा में); ३. ४७, १९। "युधिष्ठिर के पूछने पर लोमशजी ने बताया : इक्ष्वाकु वंशी राजा सगर रूप, धैर्य और बल से सम्पन्न होते हुये भी संतानहीन थे। राजा सगर अपनी दोनों पत्नियों के साथ कैलास पर्वत पर जा कर पुत्र की इच्छा से कठोर तपस्या करने लगे। तब उन्हें भगवान शिव का दर्शन प्राप्त हुआ। राजा ने शिव से पुत्रप्राप्ति के लिये वरदान माँगा। शिव ने वर देते हुये राजा से कहा : 'तुम्हारी एक पत्नी के गर्भ से अत्यन्त अभिमानी साठ हजार शूरवीर पुत्र होंगे परन्तु वे सब के सब एक साथ ही नष्ट हो जायेंगे। तुम्हारी दूसरी पत्नी से एक ही शूरवीर और वंशधर पुत्र उत्पन्न होगा।' ऐसा कह कर शिव वहीं अन्तर्धान हो गये। तदनन्तर अपने निवासस्थान पर लौटने पर राजा की वैदर्भी नामक पत्नी ने एक तूँबी को जन्म दिया। उनकी दूसरी पत्नी शैब्या ने एक सुन्दर पुत्र उत्पन्न किया। राजा उस तूँबी को फेंकने वाले थे कि यह

आकाशवाणी हुई : 'इस तूँबी के एक-एक बीज को निकाल कर घी से भरे घड़ों में अलग-अलग रख कर उनकी रक्षा करो। ऐसा करने से तुम्हें साठ हजार पुत्र प्राप्त होंगे।' (३. १०६)। तदनन्तर राजा के साठ हजार पुत्र उत्पन्न हुये परन्तु ये सभी पुत्र यज्ञ के अश्व की रक्षा करते हुये महर्षि कपिल की क्रोधाग्नि से भस्म हो गये। सगर का दूसरा पुत्र असमञ्ज भी बाल्य-काल में ऋषिमुनियों और पुरवासियों के दुर्बल बालकों को पकड़ कर नदी में फेंक देता था जिसके कारण सगर ने उसका भी परित्याग कर दिया था। साठ हजार पुत्रों के भस्म हो जाने पर नारदजी के कहने से राजा ने असमञ्ज के पुत्र अंशुमान को बुला कर अपना यज्ञ पूरा किया। अंशुमान के पुत्र दिलीप और दिलीप के पुत्र भगीरथ हुये। (३. १०७)।" ३. १०६, ६. ७. १७; १०७, ११. २१. २३. २८. ३४. ३८. ३९. ४१ (अपने पुत्र असमञ्ज का परित्याग किया). ४६. ४७. ४९. ५५. ५८. ५९. ६१. ६२ (इनके कहने पर अंशुमान ने महर्षि कपिल के आश्रम पर जाकर यज्ञाश्व को वापस प्राप्त करते हुये कपिल से वरदान भी प्राप्त किये); १०८, २०; २०४, २८; ४. ५६, १०; ५. १०९, १८; १२. २९, ३० (इन्हें साठ हजार पुत्र प्राप्त हुये। इन्होंने १,००० अश्वमेध यज्ञ किये। इनके पुत्रों ने पृथिवी को खोद कर सागर का निर्माण किया। इन्हीं के नाम पर समुद्र का सागर नाम पड़ा); ५७, ८; २८८, २. ३; १३. २६, ८०; ११५, ७४; १५०, ५२; १६५, ४९; १४. ८७, २० । तुकी० ऐक्ष्वाकु।

सञ्चारक, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७४)।

१. सञ्जय, गवल्गण नामक सूत के पुत्र का नाम है। ये मुनियों के समान ज्ञानी और धर्मात्मा थे : १. १, ८१. १४२. १४८. १५०-२१४. २१९. २२०. २२२ (धृतराष्ट्र को सान्त्वना दी); २, २२६. २३०. २४५. ३५० (विद्वान्गावल्गणिर्वशी); ६३, ९७; २. ३५, ६ (युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित); ७८, ३; ८१, २. ३. ५. १९. २६ (धृतराष्ट्र को फटकारा); ३. ६, ४. ७. ८. १०-११. १४-१६ (विदुरजी को वापस बुलाने के लिये धृतराष्ट्र ने इन्हें भेजा); २९, ४७; ४८, २; ४९, १. २१ (धृतराष्ट्र के साथ संवाद); ५१, २. ८. १७ (इन्होंने धृतराष्ट्र को बताया कि किस प्रकार राजाओं ने युधिष्ठिर को सहायता का वचन दिया है); २४९, १५; ५. २१, २०. २१; २२, १-३. ३०. ३२. ३६. ४०; २३, १. ३. ६. ७. ११. १५. २५. २८; २४, १; २५, २; २६, १. २. ११. १५. १६. २७. २८; २७, १; २८, १. ३-५. ८; २९, १-४. ८. १७. २२. ३१. ३३. ३५. ४७. ५३. ५६; ३०, १. ३. ४. ७. १४. १६-१९. २१. ३२-३४. ३६. ३७. ४८; ३१, १. ७. २०. २३; ३१, १. ३. ५. ६. ८. १०. ११ (धृतराष्ट्र ने इन्हें दूत बना कर पाण्डवों के पास भेजा); ३३, ९. १२; ४७, १५; ४८, १. २; ४९, ४७; ५०, ४. ९. १२-१५; ५१, १५. १७. ३५. ३६. ४१. ५०. ५३. ५९; ५२, १४; ५३, ७; ५४, १; ५५, ६९; ५६, १.२.५.७; ५७,१. २.३५. ४३. ४५. ४७; ५८, ६. १०. २९; ५९, २; ६०, १; ६१, २९; ६६, १-४. ९. १०; ६७, २. ५. ६. ९. १०; ६८, १; ६९, १. २. ५. ६. ११. १६. १७; ७०, १ (इन्होंने पाण्डवों का समाचार-धृतराष्ट्र को देते हुये श्रीकृष्ण की प्रशंसा की). २; ७२, १. ६; ७३, १; ८२, ६; ८५, २; १२४, १८; १३१, १५; १४०, १. ३. ४; १४२, १; १४३, १. ५०; १५९, २. ३. ७. ८ (धृतराष्ट्र ने इनसे घटनाओं का वर्णन करने के लिये कहा); १६०, १. ८. ५९; १६१, १; १६२, १; १६३, १; १६४, १; १६५, ५. ६; १९३, १. १५; ६. २, ८-१० (व्यासजी ने इन्हें दिव्य दृष्टि प्रदान की जिससे ये धृतराष्ट्र को युद्ध का विवरण बता सकें); ४, २. ३. ५. ७. ९; ५, १-३; ६, १. ३; ७, १. २; ८, १. २. १९; ९, ३; १०, २. ३ (इन्होंने धृतराष्ट्र को पृथिवी का वर्णन सुनाया); ११, १. २. ४. १२. १३. २०. २१; १२, १. ३८. ३९; १३, ३ (इन्होंने धृतराष्ट्र को युद्ध का वर्णन सुनाना आरम्भ किया); १४, २. ५. ९. १८. २२-२४. ३३. ३६. ३७. ३९. ४०. ५३. ५५. ५७. ६१-६३. ६६. ६९. ७३. ७५. ७७; १५, १; १६, १; १७, १; १८, १; १९, २. ३; २०, १. ३; २१, १; २२, १; २३, १. ३. १७; २४, १. २. ४; २५, १. २. २४. ४७; २६, १. ९; ३५, ९. ३५. ५०; ४२, ७४; ४३, ६. २०. ४९. ६७. ७४. ८८. ९३. १००; ४४, २; ४५, १; ४६, १; ४७. १; ४८, २. ३; ४९, ३. ७. ९. ११. १३. १९. २१. २२; ५०, १; ५१, १; ५२, २; ५३, १-४; ५४, ३; ५५, २; ५६, १; ५७, १; ५८, १; ५९, २. ३; ६०, १; ६१, १; ६२, १. ३. ६. ७; ६३, १; ६४, १; ६५, १-३. ८. ११. १४. १५; ६८, १३; ६९, १; ७०, १; ७१, १; ७२, १; ७३, १; ७४, १; ७५, १; ७६, १. २०. २२. २३. २६; ७७, १; ७८, १; ७९, १; ८०, १; ८१ १; ८२, १; ८३, १. २. ४; ८४, १; ८५, १; ८६, १; ८७, १; ८८, १; ८९, १. २. ९; ९०, १; ९१, १. २; ९२, १; ९३, १; ९४, १; ९५, १; ९६, १; ९७, १; ९८, १; ९९, १; १००, १; १०१, १. ४. ५; १०२, २. ४; १०३, १; १०४, १; १०५, १; १०६, १. ३५; १०७, १. ५२. ८९; १०८, १. २. २४. २६. ४९; १०९, ५; ११०, १; १११, १; ११२, १; ११३, १; ११४, १; ११५, १. ३; ११६, १; ११७, १; ११८, १; ११९, १; १२०, १. ४. ७. ३९. ५५; १२१, १. ३६. ५७; १२२, १. ३९; ७. १, ११. १३. १४. ४८; २, १. ८. ३४; ३, १; ५, १; ६, १. १२; ७, ५. १०; ८, १; ९, ९. ३७. ४३. ४५; १०, ७४; ११, १. २. १७. २४. २६. ३२. ३३. ४६; १२, १. २९; १३, १. १५; १५, १. ४; १६, १; १७, १. ११. ४६; १८, १; १९, १; २०, १. २४; २१, १; २२, ६. ७. २९; २३. १. २; २४, १. १५. १९; २५, १; २६, २. ३; २७, १; २८, १; २९, २; ३०, १; ३१, १-३; ३२, १; ३३, १. २२. २५. २६; ३४, १. १२; ३५, १. ३१; ३६, १; ३७, १; ३८, २; ३९, १. ३; ४०, १; ४१, १; ४२, ३. ९. १२; ४३, १; ४४, १; ४६, ४; ४७, ३; ४८, १; ४९, १; ५०, १; ५१, १; ५२, १. ८. १९; ५५, १; ७२, १. ८. १७. ६५; ७४, १. २१; ७५, १; ७६, २६; ७७, १; ७८, १; ७९, १; ८०, १. ६५; ८१, १; ८२, १; ८३, १; ८४, १; ८५, ५. ९. २८. ४९, ५३. ५४; ८६, १; ८७, १; ८८, १; ८९, २; ९०, ३; ९१, १. ७. ३५; ९२, १; ९३, १; ९४, १. ३९. ६९; ९५, १; ९६, १; ९७, १; ९८, १. ३; ९९, १. ४१; १००, १; १०१, १; १०२, १९; १०३, १. २१; १०४, १; १०५, १. २; १०६, १. २; १०७, १; १०८, १; १०९, १; ११०, १. ३; १११, १; ११२, १. ५३; ११३, १. ३४; ११४, १. १७. २१. २४. २७. ४३. ४६. ४७; ११५, १; ११६, १; ११७, १; ११८, १; ११९, १. ३७; १२०, १; १२१, १. ४. ७. ११; १२२, १; १२३, १; १२४, ७. ८. २९; १२५, १; १२६, १; १२७, ३; १२८, १; १२९, ३. ९, १०; १३०, १; १३१, १. १८. १९; १३२. ३. ५; १३३, ३. ७. १५. १६; १३४, १; १३५, ८. १३. १८. २५; १३६, १; १३७, १; १३८, १-४; १३९, १; १४०, १. ६. ८. ९; १४१, १; १४२, १; १४३, १.;३३. ४९. ६९; १४४, २; १४५, १. २; १४६, १; १४७, १. २. ३८. ३९. ८०. ८१; १४८, १. २. ५८; १४९, १; १५०, १; १५१, २. ३; १५२, १. ३५; १५३, १; १५४, ८; १५५, १२. १३; १५६. १. ९५. ११९. १२२; १५७, १; १५८, १. १२. ४८; १५९, १. १०. १६. १९. ५१; १६०, १; १६१, १; १६२, १; १६३, १. ९. १०; १६४, १. १९; १६५, १; १६६, १; १६७, १; १६८, १; १६९, १; १७०, १; १७१, १; १७२, १. ३४; १७३, १; ५९. ६६; १७४, १; १७५, ४. ५; १७६, १; १७७, १; १७८, १; १७९, १. १८. २०. २१; १८०, १; १८२, ४. ११. २०. ३३. ४७; १८३, ३. ४. १७. १९; १८४, १; १८५, १. ९. २१; १८६, १. १२; १८७, १; १८८, १; १८९, १. ३०; १९०, १; १९१, १; १९२, १; १९३, १. ६८; १९४, १; १९५, १; १९६, १. ८. ९; १९७, १; १९८, ५. ४५; १९९, १; २००, १. २०. ३४; २०१, १. ८. १०. ९९; २०२, २. १५४; ८. १, १७; २, ५. १०. २१. २३. २५; ३, १. १७; ४, ६. १३. १४; ५, १. ४; ६, १. २; ७, १. ४. ६. २६; ८, १०. २९. ३१; ९, १. ७. २०. १२. १४. २८. २९.३३. ३६. ३९. ६७. ८३. ८६. ८७. ८८. ९२. ९६; १०, १. १०. ३८. ४२; ११, २. ३; १२, १; १३, १; १४, १; १५, १; १६, २. ३; १७, १; १८, १;

१९, १; २०, १. ३; २१, १. ३. ४; २२, १; २३, १; २४,१; २५, १; २६, १; २७, १; २८, १; २९, १. ४. ५; ३०, १; ३१, ६. १८. २५. २६. २८. ७०. ७३; ३२, १. ३०. ५२. ६६; ३५, १२. ३१. ४०; ३६, ४. ३३; ३७, १. ३२. ४१. ४३; ३८, १; ३९, १३; ४०, १; ४१, १; ४२, १; ४३, १; ४४, २; ४५, ४७; ४६, १. ५. ६. १०. ३७; ४७, १. ३; ४८, १. ३; ४९, १; ५०, १. १८. ३२; ५१, १. ४; ५२, १; ५३, १; ५४, १; ५५, १; ५६, १; ५७, १; ५८, १; ५९, १; ६०, १. ८९; ६१, २. ३; ६२, १; ६३, १; ६४, १; ६५, १. १४. २१; ६७, १; ६८, १; ६९, १. १५; ७०, १. २२. ३८; ७१, १. ३२. ३९; ७२, १; ७३, १; ७४, १; ७५, २; ७६, १; ७७, १; ७८, १. ५. ७; ७९, १; ८०, १; ८१, १; ८२, १; ८३, १; ८४, १; ८५, १; ८६, १; ८७, १. १०४; ८८, १; ८९, १; ९०, १. ५४; ९१, १. १५; ९२, १; ९३, २. ६०; ९४, १; ९५, १; ९६, १. २४. ४७. ५६; ९. १, १४. १८. २५, ४९. ५५; २, ५. ४४. ४७. ५०. ६६. ७०; ३, १; ४, १; ५, १; ६, १; ७, १. २१; ८, १.१४.१५. ३६. ३७; ९, १; १०, १; ११, १; १२, १; १३, १; १४, १; १५, १; १६, १; १७, १; १८, १; १९, १; २०, १; २१, १;२२ १; २३, १; २४, १. ५०; २५, १; २६, १; २७, १. ३; २८, १; २९, १. २१. २२. ३९ (सात्यकि ने इन्हें मुक्त कर दिया). ४०. ५०. ५१. ५७. ५८; ३०, १. ३. १९; ३१, १. १६. ३७. ५४; ३२, ४. ६. ७. ३५. ४८. ६३; ३३, १. २२; ३४, १; ५५, २. ३; ५६, ५. ६; ५७, १; ५८, १; ५९, १. ३१; ६०,२. ३. २६. ३९; ६१, १. २. ५४; ६२, १; ६४, १. ३. १७-१९; ६५, १; १०. १, १. ७. ८. १०. १२-१७; ३, १; ५, ३०; ६, १. २; ७, १; ८, ४. ५. १५४; ९, १. १८. ४७ (दुर्योधन की मृत्यु के बाद इनकी दिव्य दृष्टि समाप्त हो गई और इस कारण इन्होंने युद्ध का विवरण बताना बन्द कर दिया); ११. १, ३. ५. १७. २२. ४४ (धृतराष्ट्र को सान्त्वना दी); ८, ३; ९, ३-५. ८ (धृतराष्ट्र को बताया कि कौरव मारे जा चुके हैं); १३, ४; २६, २४. २७; १२. ४०, ६; ४१, ११. १७ (इन्हें वित्तसम्बन्धी कार्यों का अध्यक्ष बनाया गया); ४४, १४; ४७, १०६; ५२, २८; ५८, २५; १४. ६०, ३४; १५. १, ५. १२; ३, २१. ५९; ४, २१; ५, ३; ८, २; १५, ८; १६, ४; १८, १९; १९, १८; २०, २० (स्वर्गमवाप्स्यति); २५, ४. ५; २६, १५; ३७, ७. ११. १४. १६. १७. २३. २४. २६. २८. २९. ३२. ३४ (धृतराष्ट्र आदि की मृत्यु के बाद ये हिमालय पर्वत पर चले गये) ।

तुकी० इनके निम्नलिखित पर्याय भी :

गावल्गणि : १. १, २२२. २५२; २. ३५०; २. ८१, ३९; ५. २२, ३०; २३, ३. ६; २५, १; २६, १८; ३१, ४; ४८, १०७; ५०, १०; ६७, ४; ६९, ४; ६. २, १२; ११, ३; १३, १; ७. १, ६; १०, ६; ३३, २४; ३९,२; १८२, १९; ८. २, १. २२; ४, १२; ९. २, ५६. ६३; १०. १, ९; ११. १२, २०; १५. १६, ४; २१, ६ .

सूत, सूतनन्दन, सूतपुत्र, सौति – देखिये वस्था० ।

२. सञ्जय, जयद्रथ के एक ध्वजवाहक का नाम है (३. २६५, १०) ।

३. सञ्जय, विमला के पुत्र, एक सौवीर राजकुमार का नाम है : ५. १३३, ३०. ४३; १३४, ७. ११. १६. ४०; १३५, ५. ७. १३; १३६, ८. १० (इसे सिन्धुराज ने पराजित कर दिया । इसकी माता विदुला ने तब इसे अपना राज्य पुनः प्राप्त करने के लिये प्रोत्साहित किया) ।

सञ्जयन्ती, दक्षिण भारत की एक नगरी का नाम है जिसे सहदेव ने दिग्विजय के समय जीता था (२. ३१, ७०) ।

सञ्जययान, से सञ्जय का दूत के रूप में पाण्डवों के पास आने का तात्पर्य है (१. २, ५९) ।

सञ्जययानपर्व, महाभारत के ५८ वें अवान्तर पर्व का नाम है : "धृतराष्ट्र ने द्रुपद के पुरोहित का सत्कार किया । तदनन्तर पुरोहित ने

५. सत्य = श्रीकृष्ण (विष्णु) : १२. ४३, ९; ४७, २६; १३. १४९, २५ (सहस्रनाम). ३६ ।

धृतराष्ट्र को राजा द्रुपद और पाण्डवों का समाचार दिया (५. २०) ।" "भीष्म ने द्रुपद के पुरोहित की बातों का समर्थन करते हुये अर्जुन की प्रशंसा की परन्तु कर्ण ने भीष्म के प्रति आक्षेपपूर्ण वचन कहे । धृतराष्ट्र ने भीष्म की बात का समर्थन करते हुये द्रुपद के पुरोहित को सम्मानित करके विदा किया (५. २१) ।" "धृतराष्ट्र ने सञ्जय से पाण्डवों के प्रभाव और प्रतिभा का वर्णन करने के बाद अपना संदेश देकर सञ्जय को पाण्डवों के पास भेजा (५. २२) ।" "धृतराष्ट्र के दूत के रूप में आकर सञ्जय ने युधिष्ठिर का कुशल-क्षेम पूछा । युधिष्ठिर ने भी कौरव-पक्ष का कुशल समाचार पूछते हुये सञ्जय से सारगर्भित प्रश्न किये (५. २३) ।" "सञ्जय ने युधिष्ठिर को उनके प्रश्नों का उत्तर देते हुये उन्हें राजा धृतराष्ट्र का संदेश सुनाने की प्रतिज्ञा की (५. २४) ।" "सञ्जय ने युधिष्ठिर को राजा धृतराष्ट्र का संदेश सुना कर अपनी ओर से भी शान्ति के लिये उनसे प्रार्थना की (५. २५) ।" "युधिष्ठिर ने सञ्जय को बताया कि कौरवों द्वारा इन्द्रप्रस्थ लौटाने से ही शान्ति सम्भव हो सकती है (५. २६) ।" "सञ्जय ने युद्ध के दोष और दुष्परिणाम बता कर युधिष्ठिर को युद्ध से उपरत करने का प्रयास किया (५. २७) ।" "युधिष्ठिर ने सञ्जय को अपना उत्तर दिया (५. २८) ।" "सञ्जय की बातों का प्रत्युत्तर देते हुये श्रीकृष्ण ने धृतराष्ट्र के लिये चेतावनी दी (५. २९) ।" "सञ्जय को विदा करते हुये युधिष्ठिर ने कौरव पक्ष के सभी व्यक्तियों के लिये शुभकामना का सन्देश दिया (५. ३०-३१) ।" "अर्जुन ने भी कौरवों के लिये सञ्जय से संदेश भेजा । हस्तिनापुर लौट कर सञ्जय ने धृतराष्ट्र से युधिष्ठिर आदि का कुशल-समाचार सुनाते हुये धृतराष्ट्र के कार्यों की निन्दा की (५. ३२) ।"

सञ्जीवन एक मणि का नाम है : १४. ८०, ४२ (यह नागों के जीवन की आधरभूत है । बभ्रुवाहन द्वारा आहत अर्जुन के अचेत हो जाने पर उलूपी ने इस मणि का स्मरण करके इसे हस्तगत कियां । उलूपी की आज्ञा से बभ्रुवाहन ने इस मणि को लेकर अर्जुन के वक्ष पर रक्खा जिससे अर्जुन जीवित हो उठे) ।

सञ्जीवनी एक विद्या का नाम है : १. ७६, १०. ३३. ७० (कच ने इसे शुक्राचार्य से प्राप्त किया) ।

सण्ड (बहु० °ण्डाः) एक स्थान के निवासियों का द्योतक है (६. ९, ४३) ।

सतां गतिः = विष्णु (सहस्रनाम) ।

सत् = शिव (सहस्रनाम) । = विष्णु (सहस्रनाम) ।

सत्कर्तृ, सत्कीर्ति = विष्णु (सहस्रनाम) ।

सत्कृत = शिव (सहस्रनाम) । = विष्णु (सहस्रनाम) ।

सत्कृति = विष्णु (सहस्रनाम) ।

सत्ता = विष्णु (सहस्रनाम) ।

सत्त्वं = शिव (सहस्रनाम) ।

सत्त्व, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, ४) ।

सत्त्वस्थ = श्रीकृष्ण : १२. ४७, २७; १३. १४९, ६५ (सहस्रनाम) ।

सत्त्र, सत्पथाचार, सत्परायण = विष्णु (सहस्रनाम) ।

सत्यं = शिव (सहस्रनाम) ।

१. सत्य एक अथवा अधिक ब्राह्मणों का नाम है : २. ४, १० (युधिष्ठिर की सभा में); १२. २७२, ६. ९. १३; १३. ३०, ६२ (वितत्य के पुत्र और सन्त के पिता) ।

२. सत्य, एक अग्नि का नाम है । ये निश्च्यवन नामक अग्नि के पुत्र थे । वेदना से पीड़ित प्राणियों को कष्ट से निष्कृति दिलाने के कारण इनका दूसरा नाम निष्कृति है (३. २१९, १३-१५) ।

३. सत्य एक कालिङ्ग सैनिक का नाम है जो कलिङ्गराज श्रुतायु का चक्ररक्षक था : ६. ५४, ७६ (भीमसेन ने इसका ने वध किया था) ।

४. सत्य = शिव (७, ८०, ५७) ।

सत्यक, सात्यकि के पिता का नाम है : १. ६३, १०५; २१९, ११; २२१, ३१; २. ४, ३०; १४. ६२, ६ । तुकीं० शिनेः सुतः ।

१. सत्यकर्मन् त्रिगर्तराज सुशर्मा के भाई का नाम है। इसने अर्जुन को मारने की प्रतिज्ञा की थी। यह संशप्तक योद्धा था : ७. १७, १७-१८; ९. २७, ३८-४० (अर्जुन ने इसका वध किया)।

२. सत्यकर्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, २६)।

सत्यजित्, द्रुपद के पुत्र का नाम है : १. १३८, ४२. ४५. ४७. ४९. ५०. ५३ (दोणाचार्य के साथ जब अर्जुन आदि पाण्डवों ने द्रुपद पर आक्रमण किया तब पाञ्चालराज द्रुपद की ओर से इसने भी युद्ध किया); ५. ५७, ४; १७१, ११ (युधिष्ठिर की सेना में). २४; ७. १७, ४४. ४५ (युधिष्ठिर की रक्षा की); २१, ३. ५. १०. १२. १६. १७. २१ (दोण ने इसका वध किया); १९९, ३४; ८. ६, ४; १८. ५, २। तुकी० पाञ्चाल, पाञ्चाल्य।

सत्यदेव, एक कौरव योद्धा का नाम है : ६. ५४, ७६ (भीमसेन ने इसका वध किया था)।

१. सत्यधर्मन् एक सोमकवंशी राजकुमार का नाम है : ५. १४१, २५ (युधिष्ठिर के पक्ष में)।

२. सत्यधर्मन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

सत्यधर्मपराक्रम, सत्यधर्मपरायण = विष्णु (सहस्रनाम)।

सत्यधृति, एक अथवा अधिक राजाओं का नाम है : १. १८६, १० (द्रौपदी के स्वयंर में उपस्थित); ५. १७१, १८ (पाण्डव पक्ष के महारथी); १९६, २८ (युधिष्ठिर की सेना में); ६. ९३, १३; ९५, २३; ७. २३, ३९. ४१ (सौचित्तिः); ८. ६, ३१. ३४ (

सत्यपराक्रम = विष्णु (सहस्रनाम)।

सत्यपाल एक ऋषि का नाम है : २. ४, १४ (युधिष्ठिर की सभा में)।

सत्यभामा, सत्राजित् की पुत्री और श्रीकृष्ण वासुदेव की पत्नी का नाम है : १. २, ५४ (द्रौपदी के साथ इनका संवाद). १९४; ३. १८३, ७. ११. ४५; २३३, १. ३. ९. १८ (दौपदी और सत्यभामा का संवाद); २३५, ३. १८; ४. ९, १९ (श्रीकृष्ण की प्रिय महिषी); ५. ५९, ४; १६. ३, २४; ५, १३; ७, ७४ (श्रीकृष्ण की मृत्यु के बाद सत्यभामा आदि उनकी पत्नियों ने वन में प्रवेश किया)। तुकी० सात्राजिती, सत्या।

सत्यमेधस् = विष्णु (सहस्रनाम)।

सत्यरथ, त्रिगर्तराज सुशर्मा के भाई का नाम है जो पाँच रथी वन्धुओं में प्रधान था : ५. १६६, ११; ७. १७, १७-१८ (अपने चार वन्धुओं सहित संशप्तकों में)।

सत्यलोक एक लोक का नाम है : ११. १६, ३६ (शिव के लिये प्रयुक्त)।

१. सत्यवती, वसु की पुत्री जो अद्रिका नामक अप्सरा के गर्भ से उत्पन्न हुई थी। पराशर के द्वारा इसने व्यास को उत्पन्न किया। शान्तनु के साथ विवाहित होने पर इसने चित्राङ्गद और विचित्रवीर्य नामक दो पुत्र उत्पन्न किये : १. ५५, ७; ६३, ६८ (वसु के वीर्य से अद्रिका नामक अप्सरा से मत्स्य और सत्यवती का जन्म हुआ था। सत्यवती का पालन-पोषण एक मल्लाह ने किया था और इसके शरीर से मछली की गन्ध निकलती थी). ७५. ८३. ८६ (पाराशर द्वारा इसने कन्यावस्था में ही व्यास को उत्पन्न किया फिर भी पराशर की कृपा से इसका कन्यत्व खण्डित नहीं हुआ और पराशर के आशीर्वाद से ही इसके शरीर से सुगन्ध निकलने लगी जो एक योजन दूर तक फैलती रहती थी। इस कारण इसका गन्धवती अथवा योजनगन्धा नाम भी प्रसिद्ध हुआ); ९५, ४८ (पहले यह व्यासजी को उत्पन्न कर चुकी थी। शान्तनु के साथ विवाह हो जाने पर यह चित्राङ्गद और विचित्रवीर्य की माता बनी). ५२; १००, ७९. ८०. ८१. ९१ (शान्तनु ने इसे पत्नी रूप में प्राप्त किया); १०१, ३. ५ (चित्राङ्गद और विचित्रवीर्य की माता बनी); १०२, ६०. ७३; १०३, १. १४. १९; १०५, ३. ३१. ३९. ४३. ४८; १०६, १. ३० (इसके निवेदन पर व्यासजी ने विचित्रवीर्य की विधवाओं से पुत्र उत्पन्न किये); ११०, ३; ११४, २. ३; ११९, २४; १२६, १६; १२८, १२ (अपनी पुत्रवधू के साथ वन चली गई); १९७, ४३; ५. १७३, ६. २३; १७४, ३. ४; १७६, ४९. ५२; १७८, ७२; १८६, १२; ७. १९२, ७३ (ऋषेः प्रसादात्कृष्णस्य सत्यवत्याः सुतस्य च); १२. ३४९, ३; १४. १०, ३७। तुकी० दाशेयी, गन्धकाली; गन्धवती (१. ६३, ८२; ५. १७५, २; १२. २४२, १२); काली, सत्या, वासवी, योजनगन्धा।

२. सत्यवती, गाधि की पुत्री और ऋचीक की पत्नी का नाम है : ३. ११५, २८. ३९ (जमदग्नि की माता); ५. ११७, १४; ११९, ४; १२. ४९, ७. १४. १६. २१. २४. २७. २९ (ऋचीक से विवाह और जमदग्नि की उत्पत्ति); १३. ४, ७. २९. ३०. ३५. ३६. ४२। तुकी० गाधेयी, गाधिसुता।

३. सत्यवती, नारद की पत्नी का नाम है (५. ११७, १५)।

सत्यवतीपुत्र = व्यास (देखिये वस्था०)।

सत्यवतीलाभोपाख्यान, से शान्तनु और सत्यवतीसे सम्बद्ध कथा का तात्पर्य है : "राजा शान्तनु अत्यन्त बुद्धिमान, सत्यवादी तथा सभी सद्गुणों से सम्पन्न थे (शान्तनु तथा उनके शासन का विस्तृत वर्णन)। राजा शान्तनु छत्तीस वर्ष तक स्त्रीविषयक अनुराग का अनुभव न करते हुये वन में रहे। वसु के अवतारभूत गाङ्गेय इनके पुत्र हुये जिनका नाम देवव्रत था। एक समय शान्तनु ने गङ्गा के तट पर आकर देखा कि गङ्गा में बहुत थोड़ा जल रह गया है। इसके कारण का पता लगाने के लिये जब शान्तनु आगे बढ़े तब उन्होंने देखा कि एक परम सुन्दर और इन्द्र के समान तेजस्वी बालक दिव्यास्त्रों का अभ्यास करते हुये अपने बाणों से गङ्गा की धारा को रोक कर खड़ा है। शान्तनु ने अपने पुत्र को पहले पैदा होते समय नहीं देखा था अतः वे अपने उस पुत्र को पहचान नहीं सके। उस आश्चर्यजनक बालक को देख कर शान्तनु को सन्देह हुआ और उन्होंने गङ्गा से अपने पुत्र को दिखाने को कहा। तब गङ्गा ने अपने पुत्र देवव्रत को शान्तनु को दिखाया और कहा : 'पूर्वकाल में आपने जिस आठवे पुत्र को मेरे गर्भ से प्राप्त किया था वह यही है। अब आप इसे घर ले जाइये। आपका यह पुत्र छहो अंगो सहित वेदों का अध्ययन कर चुका है और अस्त्रविद्या में भी निपुण है (गङ्गा द्वारा देवव्रत भीष्म के गुणों की प्रशंसा)।' गङ्गा से अपने पुत्र को प्राप्त कर के शान्तनु अपने घर लाये। चार वर्ष पश्चात शान्तनु एक दिन यमुना नदी के तटवर्ती वन में गये। वहाँ उन्हें एक परम उत्तम सुगन्ध का अनुभव हुआ। उस सुगन्ध के स्रोत का पता लगाते हुये जब वे आगे बढ़े तब उन्हें एक सुन्दर कन्या दिखाई पड़ी। शान्तनु ने उस निषाद कन्या का वरण करने के बाद उसके पिता के पास जा उसे पत्नी के रूप में माँगा। उस कन्या के पिता निषाद ने इस शर्त पर वह कन्या देना स्वीकार किया कि उसके गर्भ से उत्पन्न हुआ पुत्र ही शान्तनु के बाद राजा हो। प्रचण्ड कामाग्नि से पीड़ित शान्तुन को आरम्भ में निषाद को यह आश्वासन देने में संकोच हुआ। तदनन्तर राजा शान्तनु अक्सर चिन्तित रहने लगे। एक दिन उनके पुत्र देवव्रत ने उनकी चिन्ता का कारण पूछा। शान्तनु ने अपनी वंशपरम्परा को आगे चलते रहने के सम्बन्ध में अपनी चिन्ता बताया। देवव्रत भीष्म को इससे सन्तोष नहीं हुआ। तब उन्होंने पिता के मन्त्री, सारथि आदि से वास्तविक स्थिति का ज्ञान प्राप्त किया। सब पता चल जाने पर भीष्म ने स्वयं उक्त निषाद के पास जा कर अपने पिता के लिये उस की कन्या की माँग की। निषाद ने इसे अपना सौभाग्य बताते हुये पुनः अपनी यह शर्त दोहराया कि उसकी कन्या से उत्पन्न सन्तान ही शान्तनु के बाद राजगद्दी पर बैठे। निषाद की बात सुन कर भीष्म ने अपनी प्रसिद्ध प्रतिज्ञा की। सम्पूर्ण देवताओं, अन्तरिक्ष के प्राणियों आदि सब को साक्षी करके भीष्म ने निषाद से कहा 'आज से मैं अखण्ड ब्रह्मचर्य व्रत में प्रतिष्ठित रहूँगा। जब तक मेरे शरीर में प्राण रहेगा मैं सन्तान उत्पन्न नहीं करूँगा। तुम मेरे पिता के लिये अपनी कन्या दो। उसी कन्या के गर्भ से जो पुत्र उत्पन्न होगा वही मेरे पिता के बाद राजा होगा।' इस प्रकार भीष्म ने

निषाद से उसकी कन्या प्राप्त कर अपने पिता को सौंप दिया। भीष्म के इस दुष्कर कर्म की सब राजाओं ने एकत्र होकर प्रशंसा की। राजा शान्तनु भी अपने पुत्र के कार्य से अत्यन्त सन्तुष्ट हुये और उन्होंने भीष्म को स्वच्छन्द मृत्यु का वरदान दिया। शान्तनु ने भीष्म से कहा: 'तुम जब तक जीवित रहना चाहोगे तब तक जीवित रहोगे। तुमसे आज्ञा लेकर ही मृत्यु तुम पर अपना प्रभाव प्रकट करेगी। (१. १००)।" इस उपाख्यान के आगे के अंश के लिये देखिये चित्राङ्गदोपाख्यान।

सत्यवतीसुत = व्यास (देखिये वस्था०)।

१. सत्यवत्, द्युमत्सेन के पुत्र और सावित्री के पति का नाम है: ३. २९४, १०-१२. १४. १६. २३. ३०; २९५, ७. १२. १७; २९६, १. २०. २२. २८. ३१; २९७, ३. ९. १३. १७. ३१. ३७. ४५. ५२. ५४. ५८. ६५. ६८. ७७. ८२. १००. १०४. १०८; २९८, ४. १०. १३-२१. २६. ३०. ४१ (इनका सावित्री के साथ विवाह हुआ। जब यम इनको लेने आये तब सावित्री भी यम के पीछे-पीछे गई और उनसे वरदान तथा इनका जीवन भी वापस प्राप्त कर लिया); ४. २१, १५ (द्युमत्सेनसुतं वीरं); ५. ११७, १२; १२. १५२, २५ (इनकी कुछ गाथाओं का उल्लेख); २६७, २. ५. ७. २३. ३५ (द्युमत्सेन के साथ संवाद); १३. ४४, ४८. ५०; १६५, ४९। तुकी० चित्राश्व, द्युमत्सेनसुत।

२. सत्यवत्, एक कौरव योद्धा का नाम है: ५. १६७, ३० (ये दुर्योधन की सेना के एक महारथी थे)।

सत्यवत्यात्मज = व्यास (देखिये वस्था०)।

सत्यवर्मन् एक त्रिगर्त राजकुमार का नाम है: ७. १७, १७-१८ (यह उन पाँच बन्धुओं में से एक था जिन सबने अर्जुन को मारने की प्रतिज्ञा की थी)।

१. सत्यवाच एक देवगन्धर्व का नाम है: १. ६५, ४३ (यह मुनि के चौथे पुत्र थे)।

२. सत्यवाच् = शान्तनु (१. १००, १)। = स्कन्द (३. २३२, ४)।

सत्यवादिन् = कौशिक (८. ६९, ४७)।

१. सत्यव्रत एक प्राचीन नरेश का नाम है (१. १, २३६)।

२. सत्यव्रत, त्रिगर्तराज के भाई और एक संशप्तक योद्धा का नाम है (७. १७, १७-१८)।

३. सत्यव्रत, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है: १. ६३, १२०; २ ५८, १३; ५. ५८, ७. ११; ६. १८, ११; ६२, १७. २८; ७३, २५. २६; ७. ७४, १६; ११६, ८; ८. ७, १९।

४. सत्यव्रत = शिव (सहस्रनाम)।

सत्यश्रवस् एक कौरव योद्धा का नाम है: ५. १६७, २१; ७. ४५, ३. ४ (अभिमन्यु ने इसे बन्दी बनाया)।

१. सत्यसन्ध, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है: १. ६७, १००; ११७, ९।

२. सत्यसन्ध एक कौरव योद्धा का नाम है: ५. २३, १० (= भूरि ?)।

३. सत्यसन्ध, कर्ण के एक पुत्र का नाम है (८. ७, १७)।

४. सत्यसन्ध = भीष्म (देखिये वस्था०)।

५. सत्यसन्ध, स्कन्द के एक पार्षद का नाम है: ९. ४५, ४१ (मित्र ने स्कन्द को प्रदान किया था)।

६. सत्यसन्ध = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. सत्यसेन, कौरव पक्ष के विभिन्न योद्धाओं का नाम है: ८. २७, ३. ८. १०. १५. १९-२१ (अर्जुन द्वारा मारे गये संशप्तकों में यह भी था)।

२. सत्यसेन, कर्ण के एक पुत्र का नाम है: ८. ४८, १८; ४९, २९; ९. १०, २२. २८-३०. ३३. ३७ (नकुल ने इसका और सुषेण का वध किया)।

१. सत्या = सत्यवती (१. १०६, १४. १९)।

२. सत्या सत्यभामा: ३. २३३, १०. ५८. ६०; २३४, २. ७; २३५, २; ५. ५९, ७; १६. ५, १३।

३. सत्या, शंयु नामक अग्नि की पत्नी का नाम है (३. २१९, ४)।

सत्यात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ४९)।

सत्येयु, रौद्राश्व द्वारा मिश्रकेशी नामक अप्सरा के गर्भ से उत्पन्न एक महाधनुर्धर पुत्र का नाम है (१. ९४, ११)।

१. सत्येषु, एक त्रिगर्तराजकुमार का नाम है: ७. १७, १७ (यह अपने चार बन्धुओं के साथ संशप्तकों के साथ); ९. २७, ४० (अर्जुन ने इसका वध किया था)।

२. सत्येषु, एक असुर का नाम है: १२. २२७, ५१ (पूर्वकाल में यह पृथिवी का शासक रह चुका था)।

सत्राजित्, एक वृष्णि राजा का नाम है: १६. ३, २३ (इसके पास स्यमन्तक मणि थी)।

सद, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, ९)।

सदश्व, एक प्राचीन राजा का नाम है: २. ८, १२ (यम की सभा में)।

सदश्वोर्मि, एक प्राचीन राजा का नाम है: २. ८, ११ (यम की सभा में)

सदसतोः परं = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ३५)।

सदसत्पति = शिव (१३. १७, १७०)।

सदसद्व्यक्ताव्यक्त = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

सदस्योर्मि एक प्राचीन नरेश का नाम है (२. ८, ११)

सदाकान्ता, एक नदी का नाम है (६. ९, २५)।

सदाप्रिय = शिव (सहस्रनाम)।

सदानिरामया, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, ३३)।

सदानीरा, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है: २. २०, २७ (इन्द्रप्रस्थ से गिरिव्रज जाते समय श्रीकृष्ण आदि ने इसे पार किया था); ६. ९, २५।

सदाभूति, सदामर्षिन्, सदायोगिन्, सद्गति = विष्णु (सहस्रनाम)।

सद्भूतोत्पादक, नारायण के निवासगृह के लिये प्रयुक्त (१२. ३४४, १२)।

सद्यस्कार (वि०): १२. ३४४, २३।

सद्वृत्त = शिव (१४. ८, १४)।

द्वशक्ति = देवसेना (३. २२९, ५०)।

सन, ब्रह्मा के एक मानस पुत्र का नाम है (१२. ३४०, ७२)।

सनक ब्रह्मा के एक मानस पुत्र का नाम है (१२. ३४०, ७२)।

सनत्कुमार, ब्रह्मा के पुत्र, एक ऋषि का नाम है; १. ६७, १५२ (प्रद्युम्न के रूप में उत्पन्न हुये); ७५, २१ (ब्रह्मलोक से आकर पुरूरवा को समझाया); २. ११, २३ (ब्रह्मा की सभा में); ३. ८३, १४७ (पृथूदक तीर्थ की प्रशंसा की थी); ८५, ७१; ९०, २२ (गङ्गाद्वार की प्रशंसा की); १३५, ६; १८५, २४. २५ (कुछ मुनियों को उपदेश दिया); ६. ६८, ११; ९. ४६, ९८ (कुछ लोग इन्हें स्कन्द के साथ भी समीकृत करते हैं); १०. १२, ३१; १२. ४७, ८ (भीष्म को घेर कर खड़े ऋषियों में ये भी थे); २८०, ३. ६. ६० (विष्णु तथा मोक्षधर्म के सम्बन्ध में वृत्र के साथ संवाद); २८३, १०; ३१८, ६१ विश्वावसु को उपदेश दिया था); ३२९, ५; ३३९, ३७; ३४०, ७२; ३४२, १६; ३४८, ४१ (इन्होंने वीरण को नारायण धर्म का उपदेश दिया); १३. १४, ३२३. ३६६; ८८, ११; १४७, ४५; १८. ५, १३ (स्वर्ग जाने पर प्रद्युम्न इनके स्वरूप में प्रविष्ट हुये)। तुकी० ब्रह्मयोनि, कुमार, पितामहसुत।

सनत्सनातनतम = विष्णु (सहस्रनाम)।

सनत्सुजात, एक ऋषि का नाम है: १. २, २२९; ५. ४१, २; ४२, २. ३. १८. २०. २३. २७; ४३, २. ४. ७. १२. १४. १५. ४३; ४४, १. २. ४. ६. २६; ४५. १; ४६, १ (धृतराष्ट्र को उपदेश दिया); ४७, १;

१२. ३४०, ७२ (ब्रह्मा के द्वितीय मानस पुत्र)।

सनत्सुजातपर्वन्, महाभारत के ६० वें अवान्तर पर्व का नाम है। धृतराष्ट्र ने मृत्यु के सम्बन्ध में और अधिक जानना चाहा। विदुर ने सनत्सुजात ऋषि का स्मरण किया। इन ऋषि ने आकर धृतराष्ट्र को उपदेश दिया (५. ४२-४६)।

सनन्दन, एक प्राचीन ऋषि का नाम है जो ब्रह्मा के मानस पुत्र थे (१२. ३४०, ७२)।

१. सनातन, एक मुनि का नाम है : २. ४, १६ (युधिष्ठिर की सभा में)

२. सनातन, ब्रह्मा के एक मानस पुत्र का नाम है (१२. ३४०. ७२)।

३. सनातन = सूर्य (३. ३, २१)।

४. सनातन = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

५. सनातन = श्रीकृष्ण : १२. ४७, ३७; २०९, २७ (व्युत्पत्ति); २१०, १०; ३४३, ४८; ३४५, ४; १३. १६७, ३८।

६. सनातन = हिरण्यगर्भ (ब्रह्मा) : १२. ३४७, २२।

सनातनानामपि शाश्वतः = स्कन्द (३. २३२, १७)

सनीप (बहु० °पाः) एक स्थान के निवासियों का द्योतक है (६. ९, ६३)।

सन्त, सत्य के पुत्र और श्रवा के पिता का नाम है (१३. ३०, ६२-६३।

सन्तान, एक अस्त्र का नाम है जिसका अर्जुन प्रयोग करेंगे (५. ९६, ४२)।

सन्तानक (वि०) : ३. २३१, २३; ५. १११, १३; १३. ८१, २३।

सन्तानिका, एक मातृका का नाम है (९. ४६, ९)।

सन्धातृ = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

सन्धिपर्वन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ४६)।

सन्धिमत् = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. सन्ध्या, एक नदी का नाम है : २. ९, २३ (वरुण की सभा में)।

२. सन्ध्या, सन्ध्या की अधिष्ठात्री देवी का नाम है जो पुलस्त्य की पत्नी थीं (५. ११७, १६)।

सन्ध्याराग = शिव (सहस्रनाम)।

सन्नतेयु, रौद्राश्व के दसवें पुत्र का नाम है (१. ९४, ११)।

सन्निवास = विष्णु (सहस्रनाम)।

सन्निहत्या एक तीर्थ का नाम है : ३. ८३, १९०. १९२. १९४. १९५)

सन्निहित एक अग्नि का नाम है (३. २२१, १९)।

सन्न्यस्तपाद (बहु० °दाः) एक स्थान के निवासियों का नाम है : २. १४, २८ (जरासन्ध के भय से भाग गये)।

सप्तकृत्, एक सनातन विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३६)।

सप्तगङ्ग, एक प्राचीन तीर्थ का नाम है : ३. ८४, २९; १३. २५, १६ (यहाँ पितरों का तर्पण करने वाला मनुष्य यदि जन्म लेता है तो अमृत भोजी देवता होता है)।

सप्तगोदावरी एक तीर्थ का नाम है (३. ८५, ४४)।

सप्तचरु, एक तीर्थ का नाम है : ३. ८२, ९६-९९ (इस नाम की व्युत्पत्ति)।

सप्तजिह्व = विष्णु (सहस्रनाम)।

सप्ततन्तु = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ४२)।

सप्तदश = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ५३)।

सप्तपाल, एक मुनि का नाम है (२. ४, १४)।

सप्तमहाभाग = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

सप्तराव, गरुड के पुत्र, एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, ११)।

१. सप्तर्षि (बहु० °र्षयः), से सात प्रसिद्ध ऋषियों का तात्पर्य है : १. १२३, ५०-५१ (सप्त त्वैव महर्षयः भरद्वाजः कश्यपो गौतमश्च विश्वामित्रो जमदग्निर्वसिष्ठः⋯अत्रिः); २३३; २९; २. ७, १९ (इन्द्र की सभा में); ५३, १२; ३. २५, १४; १३४, १४; १६३, १५;१८७, ३१ (मनु के साथ प्रलय के समय नौका में बैठे). ४६; २२४, ४१ (सप्तर्षिपत्नीनां); २२५, ४. १३ (अग्निदेव सप्तर्षियों की पत्नियों के प्रति मोहित हुये। स्वाहा ने सप्तर्षियों में से छः की पत्नियों का रूप धारण कर क्रमशः अग्नि के साथ रमण किया); २२६, ५. ८ (सप्तर्षियों ने अपनी पत्नियों को त्याग दिया). ९. १०; २३०, १ (अरुन्धती को छोड़ कर अन्य छः ऋषियों की पत्नियाँ कृत्तिकायें हो गईं); २९१, १८; ५. १५, २०; ४९, ३; १०६, ९; ६. ३, २६; ६, २१ (प्रत्येक पर्व के दिनों में ये मेरु पर्वत पर जाते हैं); ७. ६९, १०. २३ (जब इन लोगों ने पृथिवी से वेदों का दोहन किया तब बृहस्पति बछड़ा बने थे); ८. ३४, २४ (ये शिव के रथ के परिष्कार बने); ९. ४८, ३४. ५०. ५३; १२. २००, १९; १२७, २५; २०८, २८; २४४, १६; २९४, १९. २० (इन्होंने मनुष्यों पर शासन किया था। इनके बाद विपृथु शासक हुये); ३०१, २९; ३३५, २८. २९ (मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलह, क्रतु, पुलस्त्य, वसिष्ठ को ब्रह्मा के मानस पुत्र और सप्तचित्रशिखण्डिनः कहा गया है); ३३९, ५३; १३. १६, ५२ (शिव के साथ समीकृत); १८, ७३; ९३, २० (यहाँ कश्यप, अत्रि, वसिष्ठ, भरद्वाज, गौतम, विश्वामित्र और जमदग्नि का उल्लेख है). ५९; १०७, १८; ११५, ११; १२६, ४२; १५०, ७५; १५८, ३४; १४. २६, ३; २७, १८; ७७, १७. २४; ८८, ३०। तुकी० महर्षि (बहु०), ऋषि (बहु०)।

२. सप्तर्षि (एक०): १३. १८, ४३ (सावर्ण मनु के मन्वन्तर में व्यासजी सप्तर्षियों में से एक होंगे)।

सप्तर्षिकुण्ड एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ७२)।

सप्तवाहन = विष्णु (सहस्रनाम)।

सप्तसप्ति = सूर्य (३. ३, ६३; ८. १२, ३३)।

सप्तसारस्वत, कुरुक्षेत्र की सीमा के अन्तर्गत स्थित एक तीर्थ का नाम है : ३. ८३, ११५ (यहाँ मंखणक ने तपस्या से सिद्धि प्राप्त की थी). १३३; ९. ३७, ६६; ३८, १. ३१. ३२. ५७ (इस तीर्थ का माहात्म्य। यहाँ महान् तपस्वी मंखणक मुनि रहते थे जिनका वीर्य सरस्वती नदी में गिर जाने से सप्तर्षियों का जन्म हुआ था)।

सप्तार्चिस् = अग्नि (देखिये वस्था० भी): १७. १, ३६।

सप्तौधस् = विष्णु (सहस्रनाम)।

सफलोदय = शिव (सहस्रनाम)।

सभद्रक (बहु०) — देखिये प्रभद्रक (बहु०)।

सभा से सभापर्व का तात्पर्य है (१. १, ८८)।

सभाक्रिया से सभानिर्माण का तात्पर्य है (१. २, १३२)।

सभाक्रियापर्वन्, महाभारत के २० वें अवान्तर पर्व का नाम है : भगवान श्रीकृष्ण की आज्ञा के अनुसार मयासुर द्वारा युधिष्ठिर के लिये सभाभवन का निर्माण करने की तैयारी (२. १)। श्रीकृष्ण की द्वारका-यात्रा (२. २)। मयासुर का भीमसेन और अर्जुन को गदा तथा शंख ला कर देना और एक अद्भुत सभा का निर्माण (२. ३)। मय द्वारा निर्मित सभाभवन में धर्मराज युधिष्ठिर का प्रवेश तथा सभा में स्थित महर्षियों और नरेशों आदि का वर्णन (२. ४)।

१. सभापति = भूतकर्मा : ७. २५, २२ (शतानीक ने इनका वध किया था)।

२. सभापति एक कौरव योद्धा का नाम है : ८. ८९, ६४ (अर्जुन ने इसका वध किया)।

सभापर्वन्, महाभारत के दूसरे प्रमुख पर्व का नाम है : १. २, ४७. १३२. १४० (इसके श्लोकों की संख्या २,५०० बताई गई है ;) १८. ६, ५८। तुकी० सभा।

सभावन = शिव (सहस्रनाम)।

१. सम, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७, ९६; ११७, २;

६. ६४, २९ (भीमसेन पर आक्रमण किया); ८. ५१, ७-१६ (भीमसेन ने इसका वध किया)।

२. सम = विष्णु (सहस्रनाम)।

समकर्ण = शिव (सहस्रनाम)।

१. समङ्ग एक ग्वाले का नाम है (३. २३९, २)।

२. समङ्ग (बहु० °ङ्गाः) एक स्थान के निवासियों का द्योतक है (६. ९, ६०)।

३. समङ्ग, एक ऋषि का नाम है : १२. २८६, २. ५ के (नारद के साथ इनका संवाद)।

समङ्गा, एक नदी का नाम है : ३. १३४, ३९. ४० (इसमें स्नान करने से अष्टावक्र के शरीर की वक्रता समाप्त हो गई। तभी से इसे समङ्गा अर्थात् अंगों में समानता लाने वाली कहा जाने लगा); १३५, १. २ (पहले इसका नाम मधुविला था)

समन्तपञ्चक, एक क्षेत्र का नाम है (= कुरुक्षेत्र): १. १, १२ (कौरवों और पाण्डवों के बीच महाभारत युद्ध यहीं हुआ था); २, १. २. ४ (यहाँ परशुरामजी ने क्षत्रियों के रक्त से पाँच सरोवर भर दिये थे). ११ (ये पाँचो सरोवर पवित्र तीर्थ बन गये). १३; ३. ११७, ९; ६. १, ६; ७, ७७, २०; ९. ३७, ४५; ४४, ५२; ५२, २८; ५३, १. २४; ५५, ९. ११; ६४, ३९ (दुर्योधन की मृत्यु इसी क्षेत्र में हुई थी)।

समन्तर (बहु० °राः) एक जाति का नाम है (६. ९, ५०)।

समयज्ञ = विष्णु (सहस्रनाम)।

समयपालनपर्वन्, विराटपर्व के एक अवान्तर पर्व का नाम है : "जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायनजी ने बताया : "तृणविन्दु और धर्म के प्रसाद से पाण्डवगण विराट नगर में अज्ञातवास के दिन पूरे कर रहे थे। धर्मराज युधिष्ठिर जूए में धन जीत कर अपने भाइयों को यथायोग्य बाँट देते थे। तदनन्तर चौथा मास आरम्भ होने पर मत्स्य देश में ब्रह्माजी की पूजा का महान् उत्सव आरम्भ हुआ। इस अवसर पर चारों दिशाओं से सहस्रों मल्ल एकत्र होने लगे। जीमूत नामक एक अत्यन्त बलवान मल्ल योद्धा भी वहाँ आया था। विराट की प्रेरणा से भीमसेन ने जीमूत नामक उस पहलवान से मल्ल युद्ध करते हुये उसका वध कर दिया। विराट इससे अत्यन्त प्रसन्न हुये। उनकी आज्ञा से भीमसेन ने अनेक अन्य पहलवानों और महाबली पुरुषों को मार कर प्रशंसा प्राप्त की। तदनन्तर राजा विराट को प्रसन्न करने के लिये भीमसेन सिंहों और हाथियों से भी लड़ा करते थे। इसी प्रकार अर्जुन, नकुल और सहदेव ने भी अपने-अपने कौशलों से विराट को प्रसन्न किया (४. १३)।

समरमर्दन = शिव (सहस्रनाम)।

समरथ, राज विराट के भाई का नाम है जो पाण्डवों के सहायक थे (७. १५८, ४२)।

समवेगवश (बहु० °शाः) एक जाति का नाम है (६. ९, ६१)।

समसौरभ, एक ब्राह्मण का नाम है : १. ५३, ९ (ये जनमेजय के सर्पसत्र में सदस्य थे)।

समयस्य पालनम् (देखिये समयपालनपर्व): १. २, ५७ (समयपालन पर्व का द्योतक है)।

समा, पुष्करद्वीप के आगे बसी हुई एक चौकोर वस्ती का नाम है जिसमें तैंतीस मण्डल हैं। यहाँ वामन, ऐरावत, सुप्रतीक और अञ्जन नामक चार दिग्गज रहते हैं। इन गजराजों के मुख से मुक्त होकर बहने वाली वायु द्वारा यहाँ की प्रजा जीवन धारण करती है (६. १२, ३२-३८)।

समात्मन = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. समान, प्राण वायुओं में से एक का नाम है : ३. २१३, ६ (इसका वर्णन). १२; ७. ५९, १४; १२. १८४, २४; १८५, ५ (समान वायु के कारण ही प्रत्येक ज्ञानेंद्रिय अपना कार्य करती है). ९ (यह प्राणियों की शरीरस्थ धातुओं में व्याप्त अग्नि को संचालित करती है। यह समान वायु ही शरीरगत रसों, धातुओं, और दोषों का संचालन करती हुई सम्पूर्ण शरीर में स्थित है); २००, १७; २१३, १७; ३०१, २७; ३२८, ३२-३५ (पृथिवी और आकाश में जो महाबली और महान भूत-स्वरूप साध्य नामक देवगण अदृश्यभाव से रहते हैं उनके दुर्जय पुत्र का नाम समान है। समान का पुत्र उदान, उदान का पुत्र व्यान, और व्यान का पुत्र अपान है। अपान से प्राण की उत्पत्ति हुई और प्राण के कोई सन्तान नहीं हुई। वायु देवता प्राणियों की पृथक-पृथक समस्त चेष्टाओं का सम्पादन और सम्पूर्ण भूतों को अनुप्राणित करते हैं); १४. २०, १४. १५; २१, २६; २३, २. ५. ९. १५. १६. १८. २० (पाँचों प्राणवायुओं में अपनी-अपनी श्रेष्ठता का प्रतिपादन करने की प्रतिस्पर्धा); २४, २. ८. ९. १२. १६; ४२, ८।

२. समान = शिव (सहस्रनाम)।

समाम्नाय = शिव (सहस्रनाम)।

समावर्त = विष्णु (सहस्रनाम)।

समाश्वास, एक अग्नि (?) का नाम है : ३. २१९, २५ (महावाचं त्वजनयत् समाश्वासं हियं विदुः)।

समास्य = शिव (सहस्रनाम)।

१. समितिञ्जय, सात वृष्णि महारथियों में से एक का नाम है (२. १४, ५८)।

२. समितिञ्जय = विष्णु (सहस्रनाम)।

समीक, सात वृष्णि महारथियों में से एक का नाम है (२. १४, ५८)।

समीची एक अप्सरा का नाम है : १. २१६, २० (उन पाँच अप्सराओं में से एक जिनका अर्जुन ने उद्धार किया था); २. १०, ११ (कुबेर की सभा में)।

समीरण = वायु (देखिये वस्था०)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

समीहन = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. समुद्र, मूर्तिमान समुद्र तथा सागर का द्योतक है : १. १८, ९. २८. ३४ (समुद्रमन्थन): २१, १-१८ (समुद्र का विस्तार से वर्णन : सरिताओं का स्वामी समुद्र सम्पूर्ण रत्नों की खान, वरुण देव का निवास-स्थान और नागों का रमणीय गृह है। पाताल की अग्नि, वड़वानल का निवास भी यहीं है। असुरों को यह जलनिधि शरण देनेवाला है। अमृत की खान होने से इसे दिव्य एवं शुभ माना गया है। इसी ने पाञ्चजन्य शंख को जन्म दिया है। भगवान गोविन्द ने पृथिवी को उपलब्ध करते समय इसे भीतर से मथ डाला था जिसके कारण यह मलिन सा दिखाई पड़ने लगा था। अग्नि ने इसके तल का अन्वेषण करते हुये सौ वर्षों तक चेष्टा करके भी उसका पता नहीं पाया। समुद्र भगवान विष्णु का युगान्त से लेकर युगादि तक का शयनागार बना रहता है। वज्रपात से भयभीत मैनाक पर्वत को इसीने अभयदान दिया था। वड़वानल के प्रज्वलित मुख में यह सदा अपने जलरूपी हविष्य की आहुति देता रहता है और जगत के लिये कल्याणकारी है); २१, ३; २२, ५; ९. ४५, ५० (स्कन्द को दो पार्षद दिये); १२. ४९, ८३ (मरुत्त के वंशजों की रक्षा की); ५०, ३। तुकी० सागर, उदधि।

२. समुद्र = शिव (सहस्रनाम)

३. समुद्र (बहु० °द्राः) मूर्तिमान् समुद्र देवता का नाम है : ९. ४५, १२ (स्कन्द को देखने आये); १२. ३३२, ३०। = शिव (सहस्रनाम)

समुद्रदर्शनम् – देखिये आदिपर्व के अध्याय २१. २२।

समुद्रनिष्कुट (बहु० °टाः) एक जाति का नाम है (६. ९, ४९)।

समुद्रमहिषी = गङ्गा (३. ९९, ३३)।

समुद्रवेग, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६३)।

समुद्रसेन, एक राजा का नाम है : १. ६७, ५४ (सातवें कालेय संज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न); २. ३०, २४ (पूर्व दिग्विजय के समय भीमसेन ने इसे पराजित किया था); ५. ४, २२ (इसे भी पाण्डवों की ओर से रणनिमन्त्रण भेजने का निश्चय किया गया); ८. ६, १५-१६ (दुर्योधन की सेना में सम्मिलित हुआ और चित्रसेन सामुद्र का वध

किया)।

समुद्रसेनपुत्र = चन्द्रसेन : १. १८६, ११; ७. २३, ६०।

समुद्राधिवास = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

समुद्राम्बरसन्निभ = शिव (सहस्रनाम)।

समुद्रोन्मादन, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६८)।

समूह, एक विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३०)।

समृद्ध, धृतराष्ट्रवंशी एक नाग का नाम है जो जनमेजय के सर्पसत्र में भस्म हो गया (१. ५७, १८)।

समेढी, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १३)।

सम्पन्न = शिव (सहस्रनाम)।

१. सम्पाति, जटायु के भाई एक गृध्रराज का नाम है : १. ६३, ७०-७१ (अरुण और श्येनी के पुत्र); ३. १४८, ५; २७९, १; २८२, ४९. ५२ (इन्होंने हनुमान को लङ्का का पता बताया)।

२. सम्पाति, एक कौरव पक्षीय योद्धा का नाम है : ७. २०, १२ (द्रोण के गारुड व्यूह के कुक्षिभाग में स्थित)।

सम्प्रतर्दन = विष्णु (सहस्रनाम)।

सम्प्रवर्तक = शिव (सहस्रनाम)।

सम्प्रिया, मधुवंश की कन्या तथा महाराज विदुर की पत्नी का नाम है : १. ९५, ४० (इनके गर्भ से अनश्वा नामक पुत्र उत्पन्न हुआ)।

सम्बोधन, एक अस्त्र का नाम है (५. १८३, १६)।

सम्भग्न = शिव (सहस्रनाम)।

सम्भलग्राम एक नगर का नाम है : ३. १९०, ९४ (कल्किन् का जन्मस्थल)।

१. सम्भव से सम्भवपर्व का तात्पर्य है (१. १, ८८)।

२. सम्भव = विष्णु (सहस्रनाम)।

सम्भवपर्वन्, महाभारत के सातवें अवान्तरपर्व का नाम है (१. २, ४२)। यह आदिपर्व के ६५ से १४० अध्यायों तक आता है।

सम्भिन्न = शिव (सहस्रनाम)।

सम्मित = विष्णु (सहस्रनाम)।

सम्मोहन एक अस्त्र का नाम है : ४. ६६, ८ (अर्जुन ने इसका प्रयोग किया)।

सरक, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ७५. ७६. ८१)।

सरमा, देवलोक की कुतिया का नाम है : १. ३, ७. १० (इसने जनमेजय और उनके भाइयों को शाप दिया); २. ११, ४० (ब्रह्मा की सभा में); ३. २३०, ३४।

१. सरयू, भारत की एक प्रमुख नदी का नाम है : १. १७०, २०; २. ९, २२ (वरुण की सभा में); २०, २८ (इन्द्रप्रस्थ से गिरिव्रज जाते समय श्रीकृष्ण आदि ने इसे पार किया था); ३. ८४, ७०; २२२, २२ (अग्नि की माताओं में से एक); ६. ९, १९; ७. १७, ४९; १२. ५७, ९ (असमञ्ज बालकों को पकड़ कर इसमें डुबो देता था); १३. १०३, ३८; १५५, २४ (इसकी उत्पत्ति); १६५, २१,

२. सरयू, वीर नामक अग्नि की पत्नी का नाम है जिसने सिद्धि नामक पुत्र को जन्म दिया (३. २१९, ११)।

१. सरस्वती, एक प्राचीन पवित्र नदी का नाम है : १. २, २८६ (सरस्वत्याश्च तीर्थानां पुण्यता परिकीर्तिता); ९५, २६ (मतिनार की पत्नी और तंसु की माता). २७; १०१, ८; १७०, २० (प्लक्षजाताम्); २१३, ३ (परमप्रीता नागैरिव सरस्वती); २. ९, १९ (वरुण की सभा में); ३२, १०; ३. ५, २. ३; १२, १४ (श्रीकृष्ण ने इसके तट पर यज्ञ किया था); २५, १; ३६, ४१ (काम्यकवन इसके तट पर स्थित है); ८२, ६० (सागर के साथ :इसके संगम का उल्लेख). १११ (मेरुपृष्ठे सरस्वती चमसेथ शिवोद्भेदे नागोद्भेदे च दृश्यते). ११५. १२६; ८३, ४. ५. ५२. १०८. ११०. १४५ (पुण्यमाहुः कुरुक्षेत्रं कुरुक्षेत्रात्सरस्वती। सरस्वत्याश्च तीर्थानि तीर्थेभ्यश्च पृथूदकम्). १५१. २०४; ८४, ७. ३८. ६६. १६०; ९०, ३. १० (वालखिल्य ने इसके तट पर यज्ञ किया); १००, १३ (दधीच का आश्रम इसी के तट पर स्थित था); १२९, २१; १३०, ३-५ (निषादों के प्रति घृणा के कारण ये विनशन में अदृश्य होकर चमसोद्भेद में पुनः प्रकट हो जाती हैं); १५६, ८; १७७, २१. २३. २४ (यक्षों, गन्धर्वों और महर्षियों को अत्यन्त प्रिय); १८२, १४. १५; १८८, १०२ (मार्कण्डेयजी ने इसे भी नारायण के उदर में देखा); २२२, २२ (अग्नि की माताओं में से एक); ५. १५७, ३४ (बलरामजी इसके तटवर्ती तीर्थों में आये); ६. ६, ४८ (गङ्गाजी ने अपनी धाराओं को विभक्त कर जिन नदियों को उत्पन्न किया उनमें से एक यह भी है). ५०; ९, १४. ३६; ७. ६८, ८ (भरत ने इसके तट पर यज्ञ किया); ८. ३४, २४; ४४, ६; ९. ५, ५१; ३५, १३. १९. २१. ३७. ७५. ७७. ७८. ९०; ३६, २५. ४७; ३७, १. ३. ८. १६. २१. २५. २९. ३६. ३९. ४४. ५३. ५५. ५८ (ऋषियों के लिये इन्होंने अपनी धारा को बदल कर अनेक कुञ्जों का निर्माण किया तथा पुनः पश्चिमाभिमुख हो कर बहने लगीं). ६१ (सप्तसारस्वत तीर्थ). ६२; ३८, ३. ४. १२-१५. १७. १९. २४. २७. २८ (यज्ञ के समय इनका आवाहन होने पर ये अलग-अलग नामों से सात भिन्न स्थानों पर प्रकट हुईं). ३४ (मङ्कणक का वीर्य इसी में गिर पड़ा था जिससे सात ऋषियों का जन्म हुआ); ३९, १६. ३०. ३३; ४०, २३; ४१, १२. २२. ३३ (ययाति के यज्ञ में इन्होंने दूध और घी उत्पन्न किया); ४२, ६. ११. १५. २७. २९. ३०. ३३. ३५. ३९. ४१ (वसिष्ठजी ने इनकी स्तुति की); ४३, ४. ७. ८. १३. १५. १६. १७ (विश्वामित्र के शाप के कारण इनके जल में रुधिर प्रवाहित होने लगा किन्तु कुछ मुनियों ने इनका उद्धार किया जिसके बाद से यह अरुणा नदी हो गईं). ४२. ४३; ४४, १. ५२ (हैमवती देवी). ५३; ४५, २०. ४६. १०१; ४९, २१; ५१, ८. ९. १७. २३. ३८ (इन्होंने दधीच से सारस्वत को उत्पन्न किया); ५४, ११. ३८-४०; ५५, १७ (भीमसेन और दुर्योधन का युद्ध यहीं हुआ); १२. २९, ४६; १५२, ११. १३; २९७, ३७; ३४७, ५० (गङ्गा और सरस्वती नारायण के कूल्हे बनीं); १३. १८, ३८; १००, १५; १०२, ४७; १४६, १७; १४५, २७ (उतथ्य के आदेश से ये अदृश्य हो कर मरुभूमि में चली गईं); १६५, १९. २८; १६. ७, ७१; १८. ५, २५ (श्रीकृष्ण की १६,००० पत्नियाँ सरस्वती में कूद पड़ीं)। तुकी० प्लक्ष, प्लक्षजाता, प्लक्षवती।

२. सरस्वती, वाग्देवी का नाम है : १. १, १; २, १९२ (ताक्ष्य के साथ इनका संवाद); २. १, १; ७, १९ (इन्द्र की सभा में); ३. १, १; ३७, ३३; ११८, १३; १३२, २ (श्वेतकेतु ने इनका एक मानवी के रूप में दर्शन किया); १८६, १. ४. ५. १८. २२. २४. २७ (ताक्ष्य के साथ इनका संवाद); ४. १, १; ५. १, १; ११७, १४; ६. १, १; २३, १२ (दुर्गा के साथ समीकृत); ६५, ६१; ६७; ६; ७. १, १; २०१, ४८; ८. १, १; ३४, ३४ (शिव के रथ की परिरथ्या बनी); ९. १, १; ४५, १३; १०. १, १; ११. १, १; १२. १, १; १२०, ४६; १२१, २४; १२२, २५ (विष्णु से इन्होंने दण्डनीति का निर्माण किया); १९९, ६८; २००, ११; २३९, ८; ३१८, ६. ७. १३. १४. १५. ३२. ३३; ३३५, ३५; ३४२, ७५; ३४९, ३९; १३. १, १; ३१, ७; ६९, ४. ५; १४. १, १; २२, १५. १८. २४; १५. १, १; १६. १, १; १७. १, १; १८. १, १; ६, २३. ९२। तुकी० वाच्, वाणी।

३. सरस्वती = शिव (सहस्रनाम)।

४. सरस्वती = वाणी : ३. १३३, ८; १२. ५९, ७६; ७२, १६; १८३, ११; १८८, १५; ३३९, १३५; १३. ८५, ३१; १०७, ३३।

५. सरस्वती (बहु०): ९. ३८, ३ (राजन्सप्त सरस्वत्यो याभिर्व्याप्तमिदं जगत्। आहूता बलवद्भिर्हि तत्र तत्र सरस्वती). ३१; १२. २६, ४० (सर्वा नद्यः सरस्वत्यः सर्वे पुण्याः शिलोच्चयाः); १३. ७६, १२।

सरस्वती-ताक्ष्य-संवाद वनपर्व के १८६ वें अध्याय में आता है जहाँ सरस्वती देवी ने ताक्ष्य को उपदेश दिया है।

सरांसि (बहु०) = शिव (सहस्रनाम)।

१. सरितः (बहु०) मूर्तिमान् नदियों का द्योतक है : ९. ४५, ११. ५४; १२. ११३ १ (विभिन्न सरिताओं और सागर का संवाद); ३२३, १८; ३३२, ३० ।

२. सरितः = शिव (सहस्रनाम) ।

सरित्पति = समुद्र (१. २१, १६) ।

सरिद्वरासुत = भीष्म (१२. १६७, ५१) ।

१. सर्ग = शिव (सहस्रनाम) ।

२. सर्ग = विष्णु (सहस्रनाम) ।

१. सर्प (अधिकांशतः बहु०): १. २, ९४; ३, १३४. १३८; ८, २०. २२; ११, ४. १८. १९; १३, १; १५, ६; २०, १०. १४; २५, ८; २७, ३. १२. १३. १४. १६; २८, १; २९, १०; ३४, १७. २०-२४; ३७, ९; ३८, १; ४०, २१; ४१, ८; ४२, १८; ४९, ३०. ३१; ५०, ४. १०. २०; ५२, ३. ४; ५७, १; ५८, २३. २५. २६. २९; ६१, १३; ८१, २३; १२८, ५७; २. ९, ११; ५५, १४; ३. १२, ८४. ८५; २७, २८; २८, २१; १२०, ९; १७८, २२; १८८, ११९; २०४, ३; २३३, १२; २३६, १३; २७५, २५; ४. २, १४; ४३, १२; ४८, ६; ५६, ८; ५७, २८; ५. १७, १७; ३२, १५; ३३, ५३; ३७, ५७. ५९; ४६, २१; ७३, २७; १२८, १५; १३५, ३६; १७९, ३३; १८४, ८; ६. ६, ५१ (निपध पर्वत पर); २३, २२; ३४, २८; ९२, ३१; ७. ९८, १९; १२५, १६. ३६; १२६, ३४; १३९, ९३; १९८, ४७. ६५; २०१, ५२; ८. २३, ७: ३९, २१; ६९, ९; ८४, ३३; ८७, ४३. ४५; ९०, ५९. ८०; ९. ४५, ९; १०. १, ३३; ६, ५; ७, ३०. ३१; ११. १८, २६: १२. २३, १५; ५७, ३; १८०, १८; १८१, ५; ३०१, ९०; १३. १४, १४३; १४. २६, ९. ११; १५. ३५, १३ । तुल्नी० नाग, पन्नग ।

२. सर्प (एक०) = कर्कोटक (१. १२३, ७१) ।

२. सर्प (एक०) = नहुप : ३. १७९, १. २. ११. २४. २५; १८०, १. ६. ११. १८. २०. २२. २३. २६. २८-३१. ३७. ३८; १८१, २-४. ८. ९. १६. १८. २५. ३०. ३७; ५. १७, २२; १२. ३४२, ५१; १३. १००, २५ ।

३. सर्प (एक०) सुमुख (५. १०५, ३१) ।

सर्पदेवी एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १४) ।

सर्पनामकथन : शौनक के पूछने पर सौति ने प्रमुख सर्पों के नामों का उल्लेख किया (१. ३५) ।

सर्पमातृ = कद्रू (१. २५, ५) ।

सर्पमालिन्, एक मुनि का नाम है (५. ८३, ६४ के वाद दा० पा० गीप्रे० सं) ।

सर्पराज = नहुप (३. १८०, १९) । = वासुकि (१. ३८, २; ४. २, १४) ।

सर्पराजन् = वासुकि (१. १२८, ६०) ।

सर्पशीरनिवासन = शिव (सहस्रनाम) ।

१. सर्पसत्र से जनमेजय द्वारा आयोजित सर्पयज्ञ का तात्पर्य है जिसमें अनेक सर्प दग्ध हो गये थे : १. १, ९; २, ९१; ३, १८३; ११, १९; १३, १. ३; १५, ५; २०, ८; ३७, १६. १८; ४८, ४; ५१, १. ६. १३; ५२, १; ५३, १-३. ११. १६; ५७, १; ५८, १२. २४. २८; ५९, ३; ६०, १; १८. ५, ३५ ।

२. सर्पसत्र (म्) से जनमेजय के सर्पयज्ञ का तात्पर्य है जिसका वर्णन आदिपर्व के ५१ से ५८ अध्यायों में मिलता है : जनमेजय ने सर्पसत्र का उपक्रम आरम्भ किया (१. ५१) । सर्पसत्र का आरम्भ और उसमें सर्पों का विनाश (१. ५२) । सर्पयज्ञ के ऋत्विजों की नामावली, सर्पों का भयंकर विनाश, तक्षक का इन्द्र की शरण में जाना तथा वासुकि का अपनी बहन से आस्तीक को यज्ञ में भेजने के लिये कहना (१. ५३) । माता की आज्ञा से मामा को सान्त्वना देकर आस्तीक का सर्पयज्ञ में आना (१. ५४) । आस्तीक के द्वारा यजमान, यज्ञ, ऋत्विज, सदस्यगण और अग्निदेव की स्तुति तथा प्रशंसा (१. ५५) । राजा जनमेजय का आस्तीक को वर देने के लिये तैयार होना, तक्षक नाग की व्याकुलता तथा आस्तीक का वर माँगना (१. ५६) । सर्पयज्ञ में दग्ध हुये प्रधान सर्पों के नाम (१. ५७) । यज्ञ की समाप्ति एवं आस्तीक का सर्पों से वर प्राप्त करना (१. ५८)।

सर्पान्त, गरुड के वंश में उत्पन्न एक पक्षी का नाम है (५.१०१, २२) ।

सर्पी, एक सर्पिणी का नाम है (१. ३, १६) ।

१. सर्व = शिव (देखिये वस्था०) ।

२. सर्व = श्रीकृष्ण (विष्णु) : ६. ३५, ४०; १२. ४७, २८; १३. १४९, १७ (विष्णु सहस्रनाम) ।

सर्वकर = शिव (सहस्रनाम) ।

१. सर्वकर्मन्, सौदस के एक पुत्र का नाम है जिसकी परशुराम द्वारा क्षत्रिसंहार के समय पराशर मुनि ने रक्षा की थी (१२. ४९, ७६-७७) ।

२. सर्वकर्मन् सर्वकर्मा, सर्वकामगुणावह = शिव (सहस्रनाम) ।

१. सर्वकामद = श्रीकृष्ण (विष्णु): १२. ४७, ३३; १३. १४९, १०४ (विष्णु सहस्रनाम) ।

२. सर्वकामद = शिव (सहस्रनाम) ।

सर्वकामदुघा, एक गाय का नाम है (५. १०२, १०) ।

सर्वकामवर, सर्वकालप्रसाद = शिव (सहस्रनाम) ।

सर्वकाशीश = ययाति (५. ११५, २) ।

सर्वकुरूत्तम = अर्जुन (८. ९०, ७३) । = भीष्म (२. ४१, २) ।

सर्वग, भीमसेन के द्वारा वलन्धरा के गर्भ से उत्पन्न पुत्र का नाम है (१. ९५, ७७) । = शिव (सहस्रनाम) । = विष्णु (सहस्रनाम) ।

सर्वगति = महापुरुष (महापुरुषस्तव) ।

सर्वगन्धसुखावह, सर्वघ्न, सर्वचारिन् = शिव (सहस्रनाम)।

सर्वछन्दक = महापुरुष (महापुरुषस्तव) ।

सर्वज्ञ = श्रीकृष्ण (विष्णु): १२. ४७, २८; १३. १४९, ६१. १०० (विष्णु सहस्रनाम) । = शिव (सहस्रनाम) ।

सर्वतःपाणिपादान्त, सर्वतः श्रुतिमांल्लोके = शिव (सहस्रनाम) ।

सर्वतश्चक्षुस् = विष्णु (सहस्रनाम) ।

सर्वतूर्यनिनादिन्, सर्वतोऽक्षिशिरोमुख, सर्वतोद्यपरिग्रह = शिव (सहस्रनाम) ।

सर्वतोभद्र, एक व्यूह का नाम है : ६. ९९, १ (भीष्मने अपनी सेना को इस व्यूह में व्यवस्थित किया); ९. ८, ८. २१ (शल्य ने अपनी सेना को इस रूप में व्यवथित किया) । २. जलेश्वर वरुण देवता के निवासस्थान का भी नाम है (५. ९८, १०) ।

सर्वतोमुख = श्रीकृष्ण (विष्णु) : ३. २६३, १४; १२. ३४७, ४६ (पुरुषः); १३. १४९, १०० (सहस्रनाम) । = शिव (सहस्रनाम) । = सूर्य (३. ३, २४) ।

सर्वतोवृत्तः = महापुरुष (महापुरुषस्तव) ।

सर्वद = शिव (सहस्रनाम) ।

सर्वदण्डधर = शिव (१४. ८, १७) ।

सर्वदमन, शकुन्तला के गर्भ से दुष्यन्त द्वारा उत्पन्न भरत नामक पुत्र का दूसरा नाम है (१. ७४, ८) ।

सर्वदर्शन = विष्णु (सहस्रनाम) ।

सर्वदर्शिन = विष्णु (सहस्रनाम) । = महापुरुष (महापुरुषस्तव) ।

सर्वदानवनिसूदन = इन्द्र (१०. ४, १६) ।

सर्वदाशार्हभर्तृ = श्रीकृष्ण (६. ५९, ८३) ।

सर्वदृश् = विष्णु (सहस्रनाम) ।

सर्वदेव = शिव : १२. १२२, ३४; १३. १७, १४७ (सहस्रनाम) ।

सर्वदेवमय = शिव : १३. १७, १३२ (सहस्रनाम) ।

सर्वदेवानां तीर्थम्, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ८८)। बहु० (३. ८३, १७३)।

सर्वदेवेश = इन्द्र (१. २५, ७)। = शिव (३. ३९, ७४; ४९, ५)। = विष्णु (५. २०, ८)।

सर्वदेवेश्वर = शिव (१२. २८४, ४५)।

सर्वधर्मज्ञ = विष्णु (सहस्रनाम)।

सर्वधातुनिषेचितृ = सूर्य (३. ३, २४)।

सर्वधारिन् = शिव (सहस्रनाम)

सर्वनागरिपुध्वज = श्रीकृष्ण (१३. १४७, १५)।

सर्वपार्श्वमुख, सर्वपावन = शिव (सहस्रनाम)।

सर्वपितृ = श्रीकृष्ण (७. ११, ३२)।

सर्वपूजित = शिव (सहस्रनाम)

सर्वप्रहरणायुध = विष्णु (सहस्रनाम)।

सर्वप्राणिषु नित्यस्थः = अग्नि (देखिये वस्था०)।

सर्वबन्धविमोचन, सर्वभच, सर्वभावकर = शिव (सहस्रनाम)।

सर्वभावन = श्रीकृष्ण (११. ४७, २८)। = शिव (सहस्रनाम)।

सर्वभूतकर = शिव (सहस्रनाम)।

सर्वभूतगुरु = शिव (१३. १४, १९९)।

सर्वभूतपति = शिव (१२. २८४, १८२)

सर्वभूतपितामह = ब्रह्मा (देखिये वस्था०)। = श्रीकृष्ण (विष्णु): १. ६३, १०३; १२. २७९, २९।

सर्वभूतभवोद्भव = विष्णु (सहस्रनाम)।

सर्वभूतमहेश्वर= शिव (३. ३९, ७८; ५. ९९, १२)।

सर्वभूतहर = शिव (सहस्रनाम)।

सर्वभूतात्मन् (श्रीकृष्ण, नारायण, विष्णु के लिये प्रयुक्त): १. २२८, १२; ३. २१३, ५; १०. १४, १२; १२. ४७, ८२; १८२, १६. २०; १८५, ४ (= ३. २१३, ५); १९४, ४६; २०७, ३५; २१०, ३५; २१४, ३; २१६, १४; २३९, २३; २४८, १९; २६२, ३२; २६९, २२. ३३; ३३९, ३३; ३४३, १४; १३. १७, ३५ (= शिव); ३१, २४; ११३, ७; ११५, ६७; १४२, २८; १५८, ३७।

सर्वभूतादि = श्रीकृष्ण (१२. २०९, ३६)।

सर्वभूतानामन्तरात्मन् = विष्णु (१२. ३४७, ३९)।

सर्वभूतान्तरात्मन् = शिव : १२. २८४, ८९ (सहस्रनाम). १८२।

सर्वभूताश्रय = शिव (१०. ७, ५९)।

सर्वभूतेश = ब्रह्मा (देखिये वस्था०) : ३. १८८, १४। = शिव : ७. ९५, ५७; १३. १४०, ३९; १४१, २०; १४२, २०; १४४, १। = धर्म : ४. १, १५। = श्रीकृष्ण : १२. २१०, १४।

सर्वभूतेश्वर = धातृ : ५. १०५, ४। = श्रीकृष्ण (विष्णु): १२. ६४, ८; २०७, ९; २०९, ३२।

सर्वमावृत्य तिष्ठसि = शिव (सहस्रनाम)

सर्वमेध, एक प्रकार के यज्ञ का नाम है : ९. ५०, ३७; १२. ८, ३६; १२, २७; २४, ७; १३. १०३, ३६; १०७, ५६; १४. ३, ८

सर्वज्ञ, एक यज्ञ का नाम है (१२. २०, १२)।

सर्वयादवनन्दन = श्रीकृष्ण : ५. ९४, १५; १३७, ३०; १०. १३, १; १२. ४८, ७ (स वै यादवनन्दन)।

सर्वयोगविनिःसृत = विष्णु (सहस्रनाम)

सर्वयोगिन् = शिव (सहस्रनाम)

सर्वयोगेश्वर = शिव (१२. २८३, ३२)।

सर्वरत्नविद् = शिव (सहस्रनाम)।

सर्वलक्षणलक्षण्य = विष्णु (सहस्रनाम)।

सर्वलक्षणलक्षित, सर्वलालस = शिव (सहस्रनाम)।

सर्वलोककृत् = ब्रह्मा (देखिये वस्था०)। = श्रीकृष्ण (विष्णु); १२. ३४२, ९४। = शिव (सहस्रनाम)।

सर्वलोकगुरु = श्रीकृष्ण (७. १४९, १०; ८. ८६, १७)।

सर्वलोकनमस्कृत = सूर्य (३. ३, २३))

सर्वलोकपति = मनु स्वारोचिष (१२.३४८, ३७)।

सर्वलोकपितामह = ब्रह्मा (देखिये वस्था०)। = शिव : १३. १३९, ३४। = श्रीकृष्ण : ६. ६७, २१; १३. १४७, ५२।

सर्वलोकप्रजापति = शिव (सहस्रनाम);

सर्वलोकमहेश्वर = श्रीकृष्ण (विष्णु): ३. २०३, ११; ५. ६९, १; ६. २९, २९; ६६, १३; १३. १४९, ६ (सहस्रनाम)।

सर्वलोकामर = इन्द्र (१४. २६, ४)।

१.सर्वलोकेश्वर = बलराम : १३. १४७, ५६। = ब्रह्मा : ६. १४, ३९; ८. ३३, ११; १२. २८२, २७। = शिव : ७. २०२, ९. ८६. ९४; १३. १४, १७१। = श्रीकृष्ण) : ६, ६७, ४; ७. ११४, ५३; १७१, २३; १२. ३४४, १०।

सर्वलोकेश्वरेश्वर = शिव (७. २०२, १५)।

सर्वलोचन, सर्ववरिष्ठ = शिव (सहस्रनाम)।

सर्ववाच् = विष्णु (सहस्रनाम्)।

सर्ववास = महापुरुष (महापुरुषस्तव)। = शिव (सहस्रनाम)।

सर्ववासिन् ,सर्वविख्यात, सर्वविग्रह = शिव (सहस्रनाम)।

सर्वविद् = शिव : ७. २०२, १०२; १३. १६०, ४१। = श्रीकृष्ण (विष्णु): १२. ४७, २८; १३. १४९, २७ (सहस्रनाम). ९८ (सहस्रनाम)।

सर्वशस्त्रभृतां वरः = विष्णु (सहस्रनाम)।

सर्वशिल्पप्रवर्तक, सर्वशुभङ्कर = शिव (सहस्रनाम)।

सर्वसह = विष्णु (सहस्रनाम)।

सर्वसाधन, सर्वसाधुनिषेवित = शिव (सहस्रनाम)।

सर्वसारङ्ग, एक धृतराष्ट्रवंशी नाग का नाम है (१. ५०, १८)।

सर्वसुरप्रवीर = स्कन्द (३. २३२. १९)।

सर्वसूक्ष्म = श्रीकृष्ण (१२. ४३, १४)।

सर्वस्यादिः = सूर्य (३. ३, २३)।

सर्वह्रद, एक तीर्थ का नाम है (३. ८५, ३९)।

सर्वा, एक नदी का नाम है (६. ९, ३६)।

सर्वाङ्ग, सर्वाङ्गरूप = शिव (सहस्रनाम)।

सर्वात्मन् = शिव : ८. ३३, ४८; १३. १७, ३१ (सहस्रनाम)। = श्रीकृष्ण (विष्णु): १२. ४७, १८. २८. ८३; ३४५, २८; ३५१, १४।

सर्वादि = विष्णु (सहस्रनाम)।

सर्वायुध, सर्वाशय, सर्वाश्रय = शिव (सहस्रनाम)।

सर्वासुनिलय = विष्णु (सहस्रनाम)

सर्वेश = श्रीकृष्ण : ७. ८३, १२। = शिव : ७. २०२, २७।

सर्वेश्वर = विष्णु (श्रीकृष्ण) : ६. १८, १५; १३. १४९, २४ (सहस्रनाम)।

सर्वेषां प्राणिनां पतिः = शिव (सहस्रनाम)।

सलिलपति = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

सलिलराज = वरुण : ३. ८२, ६२. ६८; ५. ९८, २२. २३; ११०, २।

सलिलास्त्र, एक अस्त्र का नाम है : ३. १७१, १० (अर्जुन ने इसका प्रयोग किया)।

सलिलेश = वरुण (५. ९८, ४)।

सलिलेश्वर = वरुण : ३. २३१, ३८; ३०८, १२; १३. १५४, २४।

सव = विष्णु (सहस्रनाम)।

सवन, महर्षि भृगु के सात पुत्रों में से एक का नाम है (१३. ८५, १२९)।

१. सवितृ, आदित्यों में से एक का नाम है। कभी-कभी इन्हें मूर्तिमान् सूर्य के साथ समीकृत किया गया हैं : १. १, ४२ (विवस्वत् के पुत्र या एक स्वरूप); २४, १९ (अरुण को अपना सारथि बनाया); ६५, १५ (आदित्यों में दसवें); ६६, ३५ (त्वाष्ट्री के पति और अश्विनों के पिता);

१२६, ६७; १७२, ३६ (तपती के पिता); २२७, ३६ (श्रीकृष्ण और अर्जुन से युद्ध किया); २. ७, २१ (शक्र की सभा में); ३. ३, ५. १६ (सूर्य के १०८ नामों में से एक). ६१ (सूर्य के साथ समीकृत); ११०, २६; ११८, ११; १६३, १०. ३१ (सूर्य, अर्थात् सविता के भ्रमण पथ का उल्लेख); १६४, १९; २६५, ४; ५. १०८, १०; १०. १८, १६. २२ (रुद्र ने इनका हाथ तोड़ दिया); १२. २०८, १५ (आदित्यों में छठवें); १२. ३४८, ५०; १३. १४, ३८; १६, २२ (शिव को इनके साथ समीकृत किया गया है); १५६, ७. १२; १५८, २० (श्रीकृष्ण को इनके साथ समीकृत किया गया है); १६७, ३८ ।

२. सवितृ, सूर्य की एक उपाधि मात्र : १. ४३, ३२; ४७, १५; २३२, ८; ३. ३३, ७१; ७५, १३; ११२, २; १३३, १९; ५. २७, ६; ४६, ३; ७५, १२; १०८, ३; ६. ४८, ३४; ८६, २८; ७. ३८, १८; ८०, १६; १९९, ४७; ८. ३७, ४४; ४९, ४२; ९४, ४८; ९. २०, ४; १२. ५८, २८; १६९, २३; २०३, ९; २०४, १३; १३. ९, २४; १५८, ४; १४. ८, ११ ।

३. सवितृ =शिव (सहस्रनाम) ।= विष्णु (सहस्रनाम) ।

सव्यसाचिन् = अर्जुन (देखिये वस्था०) ।

१. सह, धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक का नाम है : १. ११७, २; १८६, १ (द्रौपदी के स्वयंवर में आया); ८. ५१, ८ (भीमसेन पर आक्रमण किया). १६; ८४, ३ (भीमसेन ने इसका वध किया) ।

२. सह, एक अग्नि का नाम है : ३. २२२, १ (ये समुद्र में छिप गये) ।

३. सह = शिव (सहस्रनाम) ।= विष्णु (सहस्रनाम) ।

सहज, चेदि-मत्स्य देश के एक कुलाङ्गार राजा का नाम है (५. ७४, १६) ।

सहजन्या एक अप्सरा का नाम है : २. ७४, ६८ (यह छः श्रेष्ठ अप्सराओं में से एक थी); १२३, ६५ (अर्जुन के जन्मोत्सव के समय गायन किया); २. १०, ११ (कुबेर की सभा में); ३. ४३, ३० (इन्द्र भवन में) ।

१. सहदेव, एक पाण्डव का नाम है : १. १, २०८; २, २८२; ६१, ३८ (दक्षिणी देशों पर विजय प्राप्त की); ६३, ११७ (ये और नकुल अश्विनीकुमारों के पुत्र थे). १२४ (श्रुतसेन के पिता); ६७, ११२ (ये और नकुल अश्विनीकुमारों के अंश से उत्पन्न हुये थे); ९५, ६३ (माद्री ने इन्हें और नकुल को अश्विनीकुमारों से उत्पन्न किया था). ७५. ८० (मद्रराज द्युतिमान् की पुत्री विजया से विवाह करके उससे सुहोत्र नामक पुत्र उत्पन्न किया); १२४, १७. २१; १३२, ६२ (यमजावुभौ); १३९, १८ (इन्होंने बृहस्पति से सम्पूर्ण नीतिशास्त्र का अध्ययन किया था); १५४, १३. १९; १९१, ९; १९२, ८ (पाण्डवों ने स्वयंवर में द्रौपदी को प्राप्त किया); २२१, ८० (द्रौपदी से श्रुतसेन को उत्पन्न किया). ८५; २. १३, ११; २५, १०; ३१, १. ८. १९. २२. २४. २६. ४०. ४१. ५१. ५४. ५९. ७६ (इन्होंने दक्षिण दिशा पर विजय प्राप्त की); ३३, २७. ३२. ३९ (युधिष्ठिर के राजसूय के समय मन्त्री का कार्य किया); ३६, ३० (इन्होंने श्रीकृष्ण को प्रथम अर्घ्य समर्पित किया); ३९, १. ६. १०; ४५, ४८ (द्रोण और उनके पुत्र के साथ गये); ४८, १५; ५०, ३४; ६५, १५ (युधिष्ठिर इन्हें भी जूए के दाँव पर हार गये); ६८, ६; ७०, ३; ७१, ४; ७४, १४; ७७, २६. ३७. ३९. ४२; ७८, ११; ७९, ८. २८; ८०, ५ (ये अपने मुख पर मिट्टी पोत कर वन चले जिससे कोई इन्हें पहचान न सके); ३. २७, ३३; ३५, १४. २७; ५१, ५ (देवपुत्री'''नकुलः सहदेवश्च); ८०, २७; ११९, १८; १४०, ४. १०. १३. २३; १४३, १५; १४४, ८; १४६, ३४; १५५, ३२; १५७, १०. ३०. ३५. ३८ (इन्हें जटासुर उठा ले गया); १६१, ३५; १७९, ३७. ४८; २३५, ११; २६३, २६. २७. ३७; २७०, १५. १८; १७२, ११. १५ (युधिष्ठिर इनके रथ पर बैठ गये और द्रौपदी को भी उसी पर बैठा लिया); ३१२, ४. १६. १९. ३४ (यक्ष ने इन्हें भी मार डाला किन्तु ये पुनः जीवित हो गये); ४. ३, ७. ८ (विराट के यहाँ इन्होंने अज्ञातवास के समय तन्तिपाल नाम धारण किया); ५, २६ (इन्होंने दक्षिणदिग्विजय की थी। अपने शस्त्र छिपाये); १०, १ (इन्होंने अपने को एक वैश्य बता कर विराट की गोशाला में कार्य आरम्भ किया); १३, ९ (गोपानां वेषमास्थाय). ४४ (ये अपने भाइयों को दूध, दही और मक्खन देते थे); १९, ३२-३४. ३७ (जब ये वनवास के लिये चले तब विलाप करती हुई कुन्ती ने इनको गले से लगाते हुये इन्हें अपना प्रिय पुत्र कहा था). ४१; ३१, २५ (तन्तिपाल के रूप में ये विराट के साथ त्रिगर्तों के विरुद्ध युद्ध करने गये); ३३, ३४ (भीमसेन के रथ के पहियों की रक्षा की); ४३, ११. १७. २३; ४४, २. ६; ५०, १०; ७१, २. ६; ५. २३, २४ (माद्रीपुत्रः सहदेवः कलिङ्गान्समागतान जयद्दन्तकूरे। वामेनास्यन् दक्षिणेनैव यो वै महाबलं कच्चिदेनं स्मरन्ति); २६, २६; ४८, २८. ३०; ५०, ३१. ३३ (इन्होंने काशि, अङ्ग, मगध और कलिङ्ग देश पर विजय प्राप्त की थी); ५६, १५ (कल्माषाङ्गास्तित्तिरिचित्रपृष्ठा भ्रात्रा दत्ताः प्रीयता फाल्गुनेन। भ्रातुर्वीरस्य स्वैस्तुरङ्गैर्विशिष्टा मुदा युक्ताः सहदेवं वहन्ति); ५७, २२ (महाभारत युद्ध में इन्होंने युद्ध के लिये शकुनि को अपना भाग माना). ३१; ८०, १२; ८१, १. ५; ८२, २; ९०, ३६. ३७. ३८; १२६, ७; १३८, ६; १४०, २३; १४१, २४. ३६ (माद्रीपुत्रः यशस्विनः); १४३, ३९; १५१, ८. ९. ११; १६०, ७२; १६२, ३०. ३६; १६३, ३९. ५३; १६४, ८ (शकुनि से युद्ध के लिये खड़े हुये); १६६, ५ (इन्होंने दक्षिण दिग्विजय के समय नील को पराजित किया था); १९६, १४; ६. १९, १५; २५, १६ (मणिपुष्पक नामक शंख बजाया); ४३, १९. २८; ४४, १८; ४५, २५. २६ (दुर्मुख से युद्ध किया); ५०, ५३; ५१, २६; ६२, ४०; ७१, २१ (विकर्ण से युद्ध किया); ७२, ५ (शकुनि और उलूक पर आक्रमण किया); ७५, ६ (मकर व्यूह के एक नेत्र के स्थान पर); ८१, २६ (शल्य पर आक्रमण किया); ८३, ४४. ५१ (शल्य के साथ युद्ध); ८९, ३२; ९९, ९; १०१, ४. ६; १०५, १०. ३१; १०६, २; १०८, २०; ११०, ६. १२; १११, २८; ११६, २६ (धृष्टकेतु की रक्षा की); १२१, ४९; ७. १०, ३१; १४, २२ (शकुनि से युद्ध किया); १६, २७; २३, ९ (इनके अश्वों का वर्णन). ८७ (इनकी ध्वजा पर चाँदी का एक सुन्दर हंस बना था). ९३ (आश्विन नामक धनुष धारण किया); ३२, ७२; ३४, ७. १०; ३९, १२; ९८, ५४; १०६, १३ (दुर्मुख ने इन पर आक्रमण किया). ४७ (युधिष्ठिर को युद्धस्थल से दूर हटा ले गये); १०७, १९. २१. २४. २६ (निरमित्र का वध किया). २८; १०९, १४. १६; १११, ४६; १२४, १५; १४३, ४६; १५४, १०; १५६, ३५; १६५, ७ (द्रोण ने इन्हें बाण से आहत किया); १६७, १. २. ६. ८. ९. १०. १५. १६. २१ (कर्ण ने इन्हें पराजित किया); १७०, ६४; १७७, ३५; १७८, ७. ११; १८३, ३३; १८४, ६; १८८ १. ३. ७ (दुःशासन के साथ युद्ध किया); १९८, ५३. ५९ (सात्यकि को शान्त किया); ८. ५, २६ (इन्होंने रुक्मरथ का वध किया था); ९, ४७ (कर्ण ने इन्हें पराजित किया था); ११, ३०; १३, १० (दुःशासन पर आक्रमण किया); २२, १५. १६. २५ (अङ्गों आदि से युद्ध किया); २३, १. ४-६. ८. ११. १२. १७ (दुःशासन से युद्ध); ४६, ३४ (शकुनि के विरुद्ध युद्ध के लिये गये). ८३; ४८, ४०. ४७; ५४, १५; ५६, ८. ९. ६५; ५९, ५७ (धृष्टद्युम्न को युद्धस्थल से दूर हटा ले गये); ६१, १२. ४२. ४३ (उलूक से युद्ध); ६२, ७. १३; ६३, ९. १४. ३२. ३७; ७३, २०४; ७५, ९ (शकुनि पर आक्रमण किया); ७८, १६. १९. २४; ७९, ३६; ९६, ४९; ९. ११, ३३ (शल्य पर आक्रमण किया). ४२. ४३ (शल्यपुत्र रुक्मरथ का वध किया); १३, ६. ९. १०. २२. २६. ३३ (शल्य से युद्ध किया); १५, १६. १९. २२; १६, ५ (शकुनि को रोका); १७, ३. २५; २२, ९. ११. २५ (युधिष्ठिर को रणस्थल से दूर हटा ले गये); २३, ३४. ३८. ६४; २७, ४. २९. ३२-३४ (दुर्योधन से युद्ध किया); २८, १. २. ४. ७. १७. १८. २६. २९. ३१-३३ (उलूक का वध किया). ३६-३८. ४०. ४२. ४७. ४८. ५४. ५५. ५७-५९. ६८ (शकुनि का वध किया); २९, २. ३; ३२, ६६; ३३, २. १३; ११. १४,

१७; १८, २२; २४, २३; १२. १३, १; ४०, ४; ४१, १५; ४४, १३; १६७, २१. २२; १३. २, ३३; १४. १४, ३; ५२, ४७; ६०, २५; ६६, १९; ७२, २०. २६, (अश्वमेध के समय अतिथियों की सेवा का कार्य किया); ८५, ५; १५. १६, १०; १७, ८; २२, ९. १४; २४, ८. १०; ३६, ३६. ४१; ३८, १८; १६. ७, ३; १७. २, ८. ११. १२ (महाप्रस्थान के समय ये इसलिये गिर पड़े क्योंकि ये किसी अन्य को अपने से अधिक बुद्धिमान् नहीं समझते); १८. २, ४१; ४, ९ (स्वर्ग में)। तुकी० आश्विनेय (एक० और द्वि०), अश्विनीसुत (द्वि०), अश्विसुत (द्वि०), भरतश्रेष्ठ (द्वि०), भरतर्षभ, भरतसत्तम, कौरव्य, कुरुनन्दन, माद्रवतीपुत्र (एक० और द्वि०), माद्रवतीसुत (एक० और द्वि०), माद्रेय, माद्रिनन्दन, माद्रीनन्दनक (सभी एक० और द्वि०), माद्रीनन्दकर, माद्रीपुत्र, माद्रीतनूज, नकुलानुज, पाण्डव, पाण्डुनन्दन, पाण्डुपुत्र, पाण्डुसुत तन्तिपाल, यम, यमज (सभी शब्द बहुधा द्वि०)।

२. सहदेव, मगधराज जरासन्ध के पुत्र का नाम है : १. १८६, ८ (द्रौपदी के स्वयंवर में आये); २. १४, ३१ (जरासन्ध के पुत्र और अस्ति तथा प्राप्ति के भाई); २२, ३१ (जरासन्ध ने इनके मगधराज के पद पर अभिषेक की स्वीकृति दी); २४, ४२. ४३; ५. ५०, ४८; १५७, ११-१४; ७. २३, ४८ (इनके अश्वों का वर्णन); १२५, ४५ (द्रोण ने इनका वध किया)। तुकी० जरासन्धसुत, जरासन्धात्मज, जारासन्धि, मागध।

३. सहदेव, एक ऋषि का नाम है : २. ७, १६ (इन्द्र की सभा में)।

४. सहदेव, एक प्राचीन राजा का नाम है : २. ८, १७ (यम की सभा में); ३. ९०, ५-७ (अग्निशिरस् तीर्थ में एक यज्ञ किया)।

सहदेवज = मेघसन्धि (१४. ८२, २८)।

सहदेवसूनु = श्रुतकर्मा (श्रुतसेन): ८. ८५, १८।

सहदेवात्मज = मेघसन्धि (१४. ८२, ३)।

सहस्रचरण = शिव : ७. २०२, ३७; १२. २८४, १०८ (सहस्रनाम); १४. ८, २६। = विष्णु : ५. १११, ७।

सहस्रचरणेक्षण = श्रीकृष्ण (१२. ४७, २३)।

१. सहस्रचित्य, एक प्राचीन नरेश का नाम है : १३. १३७, २० (एक ब्राह्मण के लिये अपना जीवन देकर उत्तम लोक प्राप्त किया)। अगला शब्द और सहस्रजित् भी देखिये।

२. सहस्रचित्य, केकय देश के राजा का नाम है। ये राजर्षि शतयूप के पितामह थे। अपने परम धर्मात्मा ज्येष्ठ पुत्र को राज्य सौंप कर वन में तपस्या करने चले गये और तपस्या पूर्ण करके इन्द्रलोक को प्राप्त हुये (१५. २०, ६-९)।

१. सहस्रजित्, एक महायशस्वी राजर्षि का नाम है जिन्होंने ब्राह्मण के लिये अपना जीवन दे कर उत्तम लोक प्राप्त किया (१२. २३४, ३१)। तुकी १. सहस्रचित्य।

२. सहस्रजित् = विष्णु (सहस्रनाम)।

सहस्रज्योतिस् सुभ्राट के तीन पुत्रों में से एक का नाम है। इनके १०,००,००० पुत्र उत्पन्न हुये (१. १, ४४)।

सहस्रतुष्टि = स्कन्द (३. २३२, १४)।

सहस्रद = शिव (सहस्रनाम)।

सहस्रदृश् = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

सहस्रनयन = इन्द्र (देखिये वस्था०)। = शिव : ७. २०२, ३६; १२. २८४, १०९।

सहस्रनाम = विष्णु (१३. १५०, ११)।

सस्रनेत्र= इन्द्र (देखिये वस्था०)।

सहस्रनेत्रपाद = शिव (७. ८०, ६४)।

१. सहस्रपात्, एक ऋषि का नाम है : "एक दिन सर्पविनाश के अपने निश्चय के कारण रुरु एक वृद्ध डुन्डुभ का वध करनेवाले थे। तब उसने कहा कि उसने रुरु का कोई अपराध नहीं किया है। उसने यह भी बताया कि पूर्वजन्म में वह एक ऋषि था और एक ब्राह्मण के शाप के कारण सर्प हो गया है (१. ९-१० अध्याय)। १. १०, ७। इनकी आत्मकथा (१. ११)। तुकी० उरग।

२. सहस्रपात् एक ब्राह्मण का नाम है : ३. २६, २२ (युधिष्ठिर की सेवा की)। तुकी० पिछला शब्द।

३. सहस्रबाहु = शिव (सहस्रनाम)। = स्कन्द : ३. २३२, १५। = विष्णु : ३. २७२, ३७; १३. १४९, ३८ (सहस्रनाम)।

सहस्रबाहु स्कन्द के एक सैनिक का नाम है : ९. ४५, ५९। = स्कन्द : ३. २३२, १३। = शिव : ७. २०२, ३७; १३. १७, १३३ (सहस्रनाम)।

सहस्रबाहुमुकुट = श्रीकृष्ण (१२. ४७, २३)।

सहस्रभुज् = स्कन्द (३. २३२, १४)।

सहस्रभू = स्कन्द (३. २३२, १४)।

सहस्रमूर्धन् = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

सहस्ररश्मि = सूर्य (३. ३, ६२)।

सहस्रलोचन = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

सहस्रवक्त्र = स्कन्द (३. २३२, १३)।

सहस्रवदनोज्ज्वल = श्रीकृष्ण (१२. ४७, २३)।

सहस्रवाच्, धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक का नाम है (१, ६७ १००)।

सहस्रशिरस् = शिव : ७. ८०, ६३; १४. ८, २६। = श्रीकृष्ण : १२. ४७, २३. ५९।

सहस्रशिरस = विष्णु (५. १११, ७)।

सहस्रशीर्ष = शिव : १२. २८४, १०८ (सहस्रनाम); १३. १५०, ११। = स्कन्द : ३. २३२, १५। = विष्णु : ३. २७२, ३८; ५. ७१, ६; १२. २००, १३।

सहस्रसूर्यप्रतिम = शिव (सहस्रनाम)

सहस्रहस्त = शिव (सहस्रनाम)।

सहस्रांशु = सूर्य (देखिये वस्था०)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

सहस्राक्ष = इन्द्र (देखिये वस्था०)। = शिव : १२. २८४, ७५ (सहस्रनाम); १३. १४, १७२ (सहस्रनाम); १६१, १३; १४. ८, १६। = विष्णु (श्रीकृष्ण) : ३. २७२, ३७; ५. १११, ७; १३. १४७. १८; १४९, ३७ (सहस्रनाम)।

सहस्रार्चिस् = विष्णु (सहस्रनाम)।

सहस्राध्मातघण्ट = शिव (सहस्रनाम)।

सहस्रोद्यतशूल = शिव (सहस्रनाम)।

सहा, एक अप्सरा का नाम है : ३. ४३, ३० (इन्द्र की सभा में)।

सहाय = शिव (सहस्रनाम)।

सहिष्णु = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. सह्य एक पर्वत का नाम है : ३. २८२, ४३ (सीता की खोज में निकले हनुमान आदि वानर यहाँ आये); ५. ११, १२; ६. ९, ११ (भारतवर्ष के कुलपर्वतों में से एक); १४. ४३, ४।

सांकाश्य, एक प्राचीन राजर्षि का नाम है : २. ८, १० (यम की सभा में)।

१. सांकृति, एक या अधिक ऋषियों का नाम है : १२. २३४, २२; २४४, १७।

२. सांकृति = रन्तिदेव : २. ८, १० (?); ३. २९४, १७; ७. ६७, १. १६; १२. २९, १२७; २३४, २२; २४४, १७।

सांकृत्य = रन्तिदेव : १२. २९, १२०; २३४, १७; १३. १३७, ६।

१. सांख्य, भारतीय दर्शन के एक प्रमुख अंग का नाम है : २. ७५, ७ (नारदजी ने दक्ष के पुत्रों को सांख्य का ज्ञान प्रदान किया); २. ५, ७ (नारदजी इसके ज्ञाता थे); ३. २, १५; २२१, २१ (अग्निः स कपिलो नाम सांख्ययोगप्रवर्तकः); ६. २६, ३१; २९, ४; ३७, २४; ४२, १३;

७. १९२, ४९ (परमं सांख्यमास्थितः); १२. ५०, ३३; १९६, ४. ७. ८; २. १८, २०; २३६, २८. २९; २३९, ३; २४०, १; २७५, ३८; २८४, १९२; ३००, १. २. ५; ३०१, २. १३. १००. १०५. १०८-११२. ११४ (सांख्य दर्शन का संक्षिप्त विवेचन); ३०२, १९; ३०५, १९. ३३; ३०६ ५. २६. ३०. ४२; ३०७, १. ३. ४४; ३०८, २७; ३१३, ४; ३१४, १८; ३१५, १९; ३१६, १. २. ४; ३१७, २०; ३१८, १२. ६७. ८६. ९८; ३२०, २५. ७९; ३३९, ६८. ११२; ३४०, ७४; ३४१, ९; ३४७, ८०. ८७; ३४८, ७४. ८१; ३४९, १. ६४. ६५. ७३; ३५०, २; ३५१, ७. २३; १३. १०, ३९; १४, १९८. ३२३; १८, ७७; २२, १२; ७५, २४; १४९, १३९; १५०, ५४; १८. ५, ३८।

२. सांख्य (बहु० °ख्याः) सांख्यमत के अनुगामियों का द्योतक है : ३. ३, ३७; ६. २७, ३; २९, ५; १२. ४७, ५३; २१८, ९ (यमाहुः कपिलं सांख्याः परमर्षिं प्रजापतिम्); २३५, ३३. ३९; ३००, २. ४. ७; ३०१, ३. ३६. ५४. ६१. ७३. १०५. १०८. १११. ११२; ३०५, १८. १९. ३१; ३०६, ४२. ४३; ३०७, ४५. ४७; ३१०, ८; ३१५, १९; ३१६, ४; ३१८, ५७. ७१. ७९. ८६. १०१; ३२०, २७; ३४०, २८; ३४२, ९५; ३४४, १७; ३४६, २२; ३४७, ३८. ९२; १३. १४, ३२३; १६, ४. २५. ४२; १७, १७३।

३. सांख्य (एक०) = शिव : १२. २८४, ११४ (सहस्रनाम); १३. १४, ३१८ (सहस्रनाम)। = एक ऋषि : १३. १५०, ४५।

सांख्यप्रसाद, सांख्यमुख्य = शिव (सहस्रनाम)।

सांख्यमूर्ति = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

सांख्ययोग = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

सांख्ययोगनिधि = विष्णु (१२. ३४७, ३८)।

सांख्ययोगप्रवर्तिन् = शिव (सहस्रनाम)।

सांख्यर्षि = कपिल (१३. १८, ४)।

सांख्यात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ५३)।

सांख्यासमापन = शिव (सहस्रनाम)।

सांयमनि, एक कौरव योद्धा का नाम है : ६. ६१, १, (अभिमन्यु पर आक्रमण किया). ८. ११. २१. २४. ३३. ३५।

सांवर्तकाग्नि, एक अग्नि का नाम है : (९. १७, ४४)।

साक्षिन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. सागर मूर्तिमान सागर का द्योतक है : ३. २८३, ३३; १२. ११३, २। (बहु०) : ९. ४५, ५४।

२. सागर = सूर्य (३. ३, २२)।

३. सागर : १३. १५०, ५२ (सागरस्यात्मजा)।

४. सागर (बहु०) : ३. १०७, ७. ९. १३. २४. २५ (कपिल मुनि ने सगर-पुत्रों अर्थात सागराः को भस्म कर दिया). ५६-५८. ६०; १०८, १७. १९ (गङ्गा ने सगरपुत्रों के शवों को अपने जल से पवित्र किया)।

सागरक (बहु० °काः) एक जाति का नाम है : २. ५२, १८ (युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये)।

सागरगासुत = भीष्म : ५. १९३, २०; ६. १०७, ५३।

सागरानूपक (बहु० °का:) एक जाति का नाम है : ३. ५१, २३ (युधिष्ठिर के राजसूय के समय उपस्थित हुये)।

सगरालय = वरुण (९. ४७, ९)।

सागरोदक, एक तीर्थ का नाम है (१३. २५, ९)।

सात्त्विक = विष्णु (सहस्रनाम)।

सात्यकि, सत्यक के पुत्र, एक वृष्णिवंशी का नाम है जिनका वास्तविक नाम युयुधान था। ये शिनि के पौत्र थे : १. ६३, १०५ (सात्यकिः कृतवर्मा च नारायणमनुव्रती); ६७, ७९ (वृष्णिकुलोद्वह : ये मरुतों के पक्ष से उत्पन्न हुये थे); १८६, १८ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित थे); २०५, २० (पाण्डवों के पक्षधर थे); २१९, ११; २२१, ३१ (अर्जुन और सुभद्रा के विवाह में सम्मिलित हुये); २. ४, ३५ (अर्जुन ने इन्हें धनुर्वेद की शिक्षा दी); १४, ५७ (वृष्णियों के सात अतिरथियों में से एक); ५३, १३ (राजसूय के समय युधिष्ठिर का छत्र पकड़े हुये थे). १९; ३. १३, १५ (श्रीकृष्ण को जूये के परिणाम की सूचना दी); १८, १९ (शिनिनप्ता). २८; २१, १६. १८; ५१, ४३ (युयुधानभीमौ); ५२, ७; ११८, २० (प्रभासक्षेत्र में युधिष्ठिर के पास आये); १२०, १. २८; १७६, १५; ४. ७२, २१ (उत्तरा और अभिमन्यु के विवाह के समय उपस्थित हुये); ५. २, १५; ३, १. १४; १९, १ (सेना सहित युधिष्ठिर के पास आये); २०, १७ (युधिष्ठिर की सेना में); २२, ९. २४; २५, १०; २७, १७; २८, ११; ३०, २; ४८, ९. ४४. ५०; ५०, ३९; ५३, ४; ५५, ६१; ५७, २. २१ (ये कृतवर्मा से युद्ध करेंगे); ५८, २१; ६१, २५; ८०, १३; ८१, ५; ८२, २; ८३, ११. २२; ९४, १८. ३३. ४७; ९५, २१; १३०, १०. १७ (श्रीकृष्ण को वन्दी बना लेने की योजना का पता लगया); १३१, २४; १३७, २६; १४१, २५. ४२; १४३, ३९. ५२; १५१, ५ (युधिष्ठिर की सेना के सात प्रमुख नायकों में से एक). ४६. ६७; १५२, ६; १५७, ११; १६२, १४; १६४, ७; १७०, ४; १९४, १८. २०; १९६, ३. २४; ६. १९, २०; २२, ४; २५, ४. १७; ४५, ११ (कृतवर्मा पर आक्रमण किया). १२; ४७, ३०. ३१. ६६; ४८, १९०. १०९; ५०, २७. ५०; ५१, २७; ५२, २९; ५४, १००. १०७. ११९. १२० (भीम और धृष्टद्युम्न की सहायता की); ५६, १६; ५७, ३३. ३९; ५८, ७. ९ (गान्धारों से युद्ध किया). ३८; ५९, ७९. ८१. ८४. ८६; ६३, २७. ३३; ६४, १. २. ४ (भूरिश्रवा के साथ युद्ध); ६९, ९. २१. २४; ७१, २२; ७२, ८. २६ (भीष्म ने इनके सारथि का वध कर दिया); ७४, १. ६. १०. ११. ३०. (इन्होंने भूरिश्रवा से युद्ध किया। इस युद्ध में भूरिश्रवा ने इनके दस पुत्रों का वध कर दिया); ७५, ८; ८१, ३० (अलम्बुष ने इन पर आक्रमण किया); ८२, ३९. ४५. ४७ (इनका अलम्बुष के साथ युद्ध); ८६, २९. ३५. ५१; ८७, १८; ८९, १६; ९६, १८; ९९, १०; १०१, ४. ४०. ५४ (द्रोण से युद्ध किया). ५७; १०३, १३; १०४, १६. २८. ३६ (भीष्म ने इन्हें वाणों से बींध दिया); १०६, २. ५; १०८, ६. २०; १०९, २०; ११०, १४ (दुर्योधन से युद्ध किया); १११, १. ५. १३ (अलम्बुष और भगदत्त से युद्ध किया); ११२, ३७; ११५, २७ (अश्वत्थामा से युद्ध किया); ११६, ९. ११; ११८, ४०. ४५; ११९, ९. २०; ७. २, १७. ३१; ८, ५. २५. २८; १०, ३४ (सौवीरराज की सेना को पराजित करके इन्होंने भोजकन्या को अपनी पत्नी बनाया। युद्ध में ये वासुदेव के समान थे। अर्जुन से धनुर्वेद की शिक्षा पाने के कारण ये स्वयं अर्जुन के समान प्रवीण हो गये थे। शक्ति में ये बलराम के समान और ब्रह्मास्त्र के ज्ञाता थे); १४, ३५. ८३; १६, १५. २८. ३२; २१, ५०. ५७. ६२; २२, २३; २३, २ (इनके अश्वों का वर्णन); २५, ९; २६, ४३; ३१, ५; ३२, ८. ५५. ६७. ७०. ७२; ३५, २. २२; ४०, १९; ४२, ३; ४३, ७. १४; ८३, ४; ८४, ३५ (अर्जुन ने इनसे युधिष्ठिर की रक्षा करने के लिये कहा); ८५, ३९. ४७; ८६, १९. २०; ९५, ४०; ९६, १४. १५; ९७, ३२. ३५ (धृष्टद्युम्न को बचाया); ९८, ३६. ३८. ४०; ९९, १४. १५; ९७, ३२. ३५ (धृष्टद्युम्न को बचाया); १०७, ४४. ४६. ५४; १०६, १४ (व्याघ्रदत्त ने इन पर आक्रमण किया); १०७, ३५ (मधराज के पुत्र व्याघ्रदत्त का वध किया). ३९; ११०, ३. ४. ८. १०. १४. १५. १९. ४२. ४३. ४९. ९५ (द्रोण से युद्ध किया। इस युद्ध में युधिष्ठिर ने इनकी रक्षा की); १११, २; ११२, ३. ६८. ७०. ७३. ८० (युधिष्ठिर के आदेश पर ये अर्जुन की रक्षा के लिये गये); ११३, ४. ११. २१. २२. २४. २६. ३२. ४४-४६. ४८. ५०. ५२. ५४. ५६. ६०. ६२. ६३ (कृतवर्मा इत्यादि से युद्ध किया); ११४, २९. ३७; ११५, ३. ७. ८. १०. ११. (कृतवर्मा तथा गजसेना के नायक रुक्मरथ से युद्ध किया). ५१. ५३. ६०. ६१ (जलसन्ध का वध किया); ११६, ९. १२. १७. १९. २६. ३८. ४२. ४३ (द्रोण के साथ युद्ध; कृतवर्मा को पराजित किया); ११७, १२. १६. १८. २५. २८. ३२ (द्रोण के साथ युद्ध); ११८, ६. ९. ११ (सुदर्शन का वध किया); ११९, १. २६. ३८. ३९. ४३. ५३ (यवनों और काम्बोजों को पराजित

किया); १२०, १०. १२. १९. २१. २५. २९. ३०. ३२. ३४. ३६. ३८. ३९. ४०. ४२. ४५. ४७; १२१; ३. १९. २७. ३१. ३२. ४०. ४३. ५०. ५५. ५७; संशप्तकों और म्लेच्छों आदि को पराजित किया); १२२, ६. १६. २६-२८; १२३, २. ५. ७. १२. १५. १७. १८. २३. २६. २८. ३०. ३७; १२४, १. ३. २३; १२६, ७. १०. ११. १४. ४७-४९; १२८, २९. ४१; १३०, ४. ७. १६; १३५, २३; १३६, ३९; १३७, १५; १३९, ११५; १४०, १२. १५. २४ (अलम्बुष का वध किया); १४१, ४. १५. २६. ३०. ३३. ३५. (त्रिगर्तों को पराजित करके अर्जुन के पास गये); १४२, २१. २३. २५. ३०. ५१. ५४. ५८. ६५. ६८ (भूरिश्रवा ने इन्हें पराजित किया); १४३, ३. २०. २३. ३०. ३१. ५०. ५४. ५५ (जब भूरिश्रवा प्राय में स्थित थे तब इन्होंने उनका वध कर दिया). ५९. ६०; १४४, ३. १७. १९; १४७, २९ (कर्ण की ओर दौड़े). ३०. ३८. ४०. ४४. ५७. ६७. ७१. ७४. ७६. ७८. ७९ (कर्ण आदि से युद्ध किया); १४९, ५२. ५४. ६१; १५०, २२; १५४, ८; १५६, १. ३. १०. २५, २८. ३०. ३४. ५४. ५५ (सोमदत्त आदि से युद्ध); १५७, ३. ८; १६२, १. ७.८ . १७. १८. २२. २३. २८ (सोमदत्त का वध किया); १६५, ६ (भूरि ने इन पर आक्रमण किया); १६६, २. ११. १४ (भूरि का वध किया); १७०, २९-३४. ३७. ३८. ४०. ५३. ५५. ५८. ५९. ६९ (कर्ण); १७१, ४. ६ (दुर्योधन से युद्ध किया). ५२; १७२, ९. ११. १३. २४; १७३, ६०. ६१ (घटोत्कच को बचाया); १७७, ३५; १७८, ७. ११; १७९, ५; १८२, ३३. ४७ (कर्ण के बाण के सम्बन्ध में श्रीकृष्ण से पूछा); १८४, ७; १८७, २७; १८९, १९. २२. ३३. ३७. ३८ ४०. ४१. ४२. ४३ (दुःशासन से युद्ध); १९१, ४४. ४५. ४७. ५१-५३ (धृष्टद्युम्न को बचाया); १९२, १. २. ४. ५; १९५, ३०; १९८, ८. २५. ३१. ४०. ४६. ६५; १९९, २६; २००, ५२. ५५. ५७. ५८. ६० (अश्वत्थामा से युद्ध किया); २०१, ११; ८. ५, २७ (भूरिश्रवा का वध किया था). ४५.(जलसन्ध का वध किया था); १२, १४; १३, ६. ११. १३. १४. १७. २४- २७. ३३. ३७ (युद्ध में विन्द और अनुविन्द नामक केकय राजकुमारों का वध किया); २१, २५; २२, ९. १२. १३ (अंगराज के हाथी और उस पर आरूढ़ योद्धा का वध किया). २७; ३०, ७. ९. १०. ११. २३. २५; ३५, १९ (कर्ण इन्हें पराजित कर चुका था); ३७, २२; ४६, ३५. ८६; ४७, २०; ४८, २०. ४१. ४४ (वृषसेन को पराजित किया तथा दुःशासन से युद्ध किया). ६४; ४९, ४. ३३. ६१. ९०; ५०, ८ (युधिष्ठिर की रक्षा की); ५१, ६३ (कर्ण पर आक्रमण किया); ५५, ८. ११. १२. १५. २२ (अश्वत्थामा से युद्ध किया); ५६, ३७. ६५; ५९, १६. ३८; ६०, २५. ५९; ६१, १३. ४५. ४७ (शकुनि को पराजित किया). ५०; ६३, २५; ६६, १०; ६७, १७; ७३, १०४; ७४, ४९. ५१; ७५, ८; ७८, १६. १७. २२ (कर्ण से युद्ध किया); ७९, ३५; ८२, ३ (कर्ण ने इनके अश्वों को मार डाला). ६ (प्रसेन का वध किया). २६; ८५, २; ९३, ३०. ३९; ९६, १०. ४९ (वृष्णिनां प्रवरो रथः); ९. १, ३६ (महाभारत के रात्रिकालीन युद्ध के बाद युधिष्ठिर की सेना के सात बचे योद्धाओं में से एक); २, २३; ३, ३१ (शकुनि पर आक्रमण किया). ३९; ४, ३७; ७, १५; ८, २९; १०, ५७; ११, २२; १२, ५४. ६०; १३, १, ५. ८. १२. १८-२०. २४. २८. ३३ (शल्य से युद्ध किया); १५, ९. १६. १९. २३. २४. २६. २९. ३२-३४; १६, २४. ३७; १७, ३. ८. ३१. ७०. ७२. ७४ (कृतवर्मा को पराजित किया); १८, ८. १३. १५; १९, २५. ३१. ६९; २०, १९. २६ (शाल्व का वध किया); २१, ७ (क्षेमकीर्ति का वध किया). १७. २६; २२, १०. १४. ३१; २५, ५५. ५७ (सञ्जय को बन्दी बनाया); २७, ३; २९, ३८ (व्यासजी के कहने पर इन्होंने सञ्जय को मुक्त कर दिया); ३०, ५३; ३३, २९; ३४, १६; ३५, १५; ६१, ३५; ६२, २. ३६. ३८ (इन्होंने पाण्डवों के साथ शिविर के बाहर ही रात्रि व्यतीत की); १०. ५, २२; ८, १५५ (रात्रियुद्ध के समय अनुपस्थित थे); ९, ४९ (पाण्डव सेना के सात बचे योद्धाओं में से एक); १०, ८; ११. १२, ३; २३ २६; २४, १. २. ११. १४; १२. ३७, ३९ (श्रीकृष्ण के साथ गये); ४०, २; ४४, १५; ४६, ३१-३३; ४७, १०५; ५०, १०; ५२, २८; ५३, ९. ११. २५; ५८, २५; १३. १६७, १० (युधिष्ठिर के साथ); १४. ५२, ५६. ५७ (श्रीकृष्ण के साथ गये); ५९, २. १७; ६०, ३२; ६१, ३३; ६२, ६; ६६, ३. ११; ८६, ५; १५. १०, ३१; १६. ३, २५. ३४ (कृतवर्मा का वध किया और स्वयं भी मारे गये); ६, ८. ९; ७, ७१ (यौयुधानिं सरस्वत्यां पुत्रं सात्यकिनः प्रियम्); १८. १, २४; ४, १८ (मृत्यु के बाद साध्यों में मिल गये)।

तुलना० इनके निम्नलिखित पर्याय :–

आनर्त : ९. १७, ८४।

दाशार्ह : ७. ११०, ९९; १४२, ४; १७०, २९; १८९, ४४।

मधूद्वह, माधव, माधवसिंह, माधवाग्र्य, माधवोत्तम : देखिये वस्था०।

यदुवीर, यदूत्तम यदूद्वह, यादव : देखिये वस्था०।

युयुधान, सात्यकि का वास्तविक नाम है : १. १, १९६; २. ४, ३५; ३. १३, १५; ५१, ४३; ४. ७२, २१; ५. ३, १४; १९, १; २२, ३९; २५, १; २७, १७; ५०, ३९; ५०, २. २१; ५८, २१; ८१, ८; १४४, ३; १५१, ४६; १५२, ६; १६४, ७; १९४, १८; १९६, ३. ९; ६. १९, २०; २२, ४; २५, ४; ७२, ३१; ७४, ८. १२; ७. १०, ३४; २६, ४३. ४४; ३२, ८; ८३, ८; ८४, ९. १०. १८. २७; ९८, १. ५. ३३. ४१. ४४. ५०; १०७, ३३. ३७; ११०, १-३. ५. ८, ११. १७. १८. २०. ५८; ११३, १. २. ६. २२. २३. २५, २७. २९. ४४. ६०. ६३; ११४, १६; ११५, २९. ६०; ११६, १. २९; ११७, ४. ८. १०. १३. २६; ११९, ३८. ५१; १२०, १. २९; १२१, ७. ९. ३४. ४६. ५०. ५७; १२३, १२. १८; १२६, १३; १३०, १६; १४१, १२; १४२, १४; १४३, ३३; १४७, ५७; १४८, १०; १४९, ६१; १५६, ३०; १५७, २; १६२, ४. ३४; १७०, ४१. ४३; १७१, १. ९. ११. १३. १४. ५३; १७७. ३५; १७८, ७; १८२, ४५; १९१, ४४; २००, ६२; ८. २१, २५; ४८, ४३. ४७. ५३; ६६, १०; ९६, १०; ९. १८, १५; २१, २५; ३२, १५; ३५ १५; १०. ५, २२; ११. १२, ३; २४, १. २; १३. १६७, १०; १४. ५९, ४; ६०, ३२; ६६, ३. ११; ८६, ५; १५. १०, ३१; १६. ३, १६. १७. १९. २९. ३२; ६, ८।

वार्ष्णेय, वृष्णि, वृष्णिकुलोद्वह, वृष्णिपुङ्गव, वृष्णिप्रवीर, वृष्णिवर, वृष्णिवीर, वृष्णिशार्दूल, वृष्णिसिंह, वृष्ण्यन्धकप्रवीर, वृष्ण्यन्धकव्याघ्र : देखिये वस्था०।

शिनिपुङ्गव : ५. १५७, ११; ६. ५८, २४; १११, ३; ७. ८४, २७; ९७, ३३; ११०, ४१. ४३. ९९; १११, २; ११२, १; ११६, ४५; ११७, ७; ११८, ३. ८; १२०, १३. ३३. ३८; १२१, ३७; १४०, १४; १४१, ३४; १४२, २. २४; १६२, ३०; १७२, ११; १८२, ३९; १८९, २४. २८; १९१, ४५; १९८, ५१. ५८; ८. ४६, ३५; ९. १७, ७५; २१, ९. १३. १८. २१. २३. २९; २७, ३।

शिनिपुत्र : ८. ३०, ७।

शिनिप्रवीर : ३. १२०, २८; ५. १, ४; २, १५; ६. ५९, ७९. ८१. ८४; ६३, २७; ७. ११८, १. १४; १४०, ९; ८. ३०, ९; ८२, ६. २७; ९. २०, २६; १४. ५२, ५८।

शिनिवीर : ७. ११५, २४।

शिनिवृषभ : ८. ३०, १०. ११।

शिनीनां प्रवरो रथः, शिनीनामधिपः, शिनिनामृषभः – देखिये शिनि (बहु०)।

शिनेः पुत्रः : ७. ११३, ७।

शिनेः पौत्रः : ३. ११८, २०; ७. २५, ८; २६, ४३; ९७, ३५; ९८, २; ११५, ३७; ११६, ३५; ११७, ३. २२; १२०, २३. ३०; १४७, ४७. ५८. ६२; १९८, ६०।

शिनेः सुतः : ७. १४४, १७. १९; १६. ३, ३३।

शिनेर्नप्ता : ३. १८, १९; १७६, १५; ५. ४८, ४४. ४५; ८३, ११;

६. ५४, १२३; ६३. २९; ११५, २७; ७. ८, २५; ११८, १३; १२१, १०; १४०, १७; ८. ५६, ६५; ९. १७, ८. ७०; २०, १९; २१, ७; २९, ३८. ४० ।

शैनेय : ५. २८, ११; ४८, ९; ५३, ४; ५८, २२; ८१, ९; १९४, २०; ६. ५४, १०१; ५८, २५; ५९, ८४. ८६; ६१, २३; ८२, ४१. ४६; १०१, ४२. ४४. ४९. ५३. ५५; १११, ४. ८. १८; ११६, १०; ७. ८, २८(शैनेयभीमार्जुनवाहिनीशम्); १४, ३६; २३, २; २५, ९; ३२, ६७; ८५, ४७; ९८, ८. १२. १६; ११०, ४१. ४२. ४९. ६१. ६५. ६९. ७१. ९८; १११, ५१; ११३, ३४; ११४, २६; ११५, ३. ७.८. ११. ३५. ४१. ४८. ६०; ११६, ४. २४. ३२; ११७, १. २१. ३५; ११९, ४७; १२०, २६. ३६; १२१, १. २. ४. १५. १६. १८. २८. ३३. ५६; १२३, १. १७. २४. ३५; १२४, ७; १२६,९. १०; १४०, २३; १४१, ६. १३. २९; १४२, २१; १४३, ४९; १४४, ३ (उत्पत्ति शैनेयस्य); १४७, ५१. ५६. ५९. ६६. ७७. ८६; १५६, ५६; १६२, ६. १९. ३२; १६५, ६; १६६, १. ३. ७. १३. १५; १७०, ३५; १७१, ५. १६. १८. २०. २१. २४; १७२, ९. १३; १९२, १. २. ४. ५; १९८, ५८; २००, ४५. ६१. ६३; ८. १३, १५. २३. ३५. ३६; २२, २७; ४८, ४४. ५०; ५५, १. २४. २५; ५६, ३८; ५९, १५. १७. १९; ६०, ५९; ६१, ४९. ५१; ६७, १७; ७४, ४९; ७९, ९३ (शिखण्डिशैनेययमाः); ८२, ६. ७; ८५, २ (द्रुपददुहितृपुत्राः…शैनेयपष्ठाः); ९. ११, २२; १३, २७; १६, २४; १८, १३; २१, १८. ३०; २२, ३१; ६१, ३५ (भूरिश्रवा का वध किया था); १२. ५३, १०. १९; १६. ३, ३०. ३३. ३५ (इनका वध हुआ); ६, ९ ।

शैनेयनन्दन : ७. १२६, १६ ।

शौरि – देखिये वस्था० ।

सात्यक : ५. २२, ९; ६. ४७, ६६; ५४, ९५. ११४; ९०, ८८; १०१, ५२; १११, १६; ७. १६, १५; ३२, ७०; १६३, ३; ८. ४७, २०; ७४, ५१ ।

सात्वत, सात्वतप्रवर, सात्वतमुख्य, सात्वतश्रेष्ठ, सात्वर्षभ, सात्वताउय – देखिये वस्था ।

सात्राजिती (सत्राजित् की पुत्री) = सत्याभामा जो श्रीकृष्ण की पत्नी थीं : ३. २३३, ४; १६. ५. १३ ।

१. सात्वत् (बहु०): ५. ७२, १ (सर्वसात्वताम्); ८६, २(पुरोगः सर्वसात्वताम्): ९४, ५ (ऋषभः सर्वसात्वताम). ३१; १३०, ७; ७. ९८, ४२; ८. ३५, १९; ४६, ८६; ९. ६२, ४६; ६३, ३०; १०. १६, ५; १२. ४३, ४; ४७, २७; २०७, १६ (ऋषभं सर्वसात्वताम्) ।

२. सात्वत् (वि०): ६. ६६, ४०; ७. १९१, ३९; १२. ३३५, १९. २४; ३४८, २९. ३४. ८४ ।

३. सात्वत् (बहु० °ताः) एक जातिका नाम है जो सात्वत् अर्थात् श्रीकृष्ण की भक्त थी : १. २२१, ३; २. ४५, ६ (सात्वतानां नृशंसात्मा न हितोनपकारिणाम्); ३. १२०, २०; ५. १९, १; ७. ८५, १४ (कुरुपाण्डवसात्वतैः); १२१, ४८; १४०, २३; १५७; ४७, ८. ७, ८; ९, ८० (कृतवर्मा महेष्वासः सात्वतानां महारथः); ३५, २४; १२. ३३९, १०१ (सर्वसात्वतमुख्यानां द्वारकायाश्च सत्तम); ३४२, ७८; ३४८, ५५ । तुकी० सत्वत् (बहु०) ।

१. सात्वत = बलराम (९. ५४, १) ।

२. सात्वत = चेकितान (६. ८४, २३. २५) ।

३. सात्वत = श्रीकृष्ण : १. २१८, १२; २२३, १ (वासुदेवं); ३. ४९, २३; ५. ७०, ५. ७; ७१, ३; १२. ३३९, १०४ (विष्णु के नवें अवतार); ३४२, ७८ (व्युत्पत्ति); १४. १५, १०; ५२, ४९ ।

४. सात्वत = कृतवर्मा : १. २२१, ३१; ५. १४३, ४२; ६. १६, १६; ५१, १९; ५६, ३; ८१, २; ८२, ५८; ८६, ५०; ९०, २; ९५, १३; ११३, ३२; ७. ९१, ३७; ९२, १९; ११४, ८१; ८. ४६, ११; ९. ६, २; २१, ६. ५. १०; २५, ४०. ६१; २७, १७; ३०, ९; ६४, २९; ६५, २; १०. ४, ३. १०; ५, ३८; ९, ७ ।

५. सात्वत = सात्यकि : २. २, ३०; ६. ५९, ८४. ८५; १०३, १३; ११६, १२; ७. १०, ३८; २५, ४७; ८४, ३३; ८७,३६; ९८, १६; १०७, ३८; ११०, ९. ४१. ९३. १०३; ११३, ७. २०. ४९; ११४, १७. ३२. ४१; ११५, १९. २३. ५४. ५६. ६१; ११६, १३. ३४. ४१; ११७, २. ११. ३३; ११९, ५०; १२०, ३१; १२१, ६. ३५; १२२, १३; १२३, ३१; १२४, ४७; १२६,१२. १६. २३-२५. ४१. ४३. ४९; १२७, ८. २५; १२९, ८; १३०, १. ८; १३३, ५; १४१, २७; १४२, १. ९; १४२, ४८. ६१. ६३; १४३, २८; १४४, २१ (न हि शक्यो रणे जेतुं सात्वतो मनुजर्षभैः); १४५, ४०. ६१; १४७, ३४. ३६. ६८. ९१; १५०, ३; १५३, २४; १५६, २. ४. ७. २७; १५७, ५. ६. ९. १२; १५८, २९. ३२; १६२, ५. २०. २४. २५. ३३; १६६, ९. १०; १७०, ५३. ६८; १७३, ६२; १८२, ४४; १८९, २६. ३६; १९२. १; १९८, २४. ४४; ८. १३, ३२; ६०, ७; ९. ७, ३१; १५, ३५; २०, २७; २१, ३. ५. १०. २४ ।

सात्वतपुङ्गव = सात्यकि (७. १४२, ४६) ।

सात्वतप्रवर = श्रीकृष्ण (२. ४५, ६७) । = सात्यकि (७. १४२, ५९) ।

सात्वतमुख्य = श्रीकृष्ण (२. ४७, २५) । = प्रद्युम्न (३. १९, ५) । = सात्यकि (७. ११८. ८) ।

सात्वतर्षभ = सात्यकि (७. १४७, ३४) ।

सात्वतश्रेष्ठ = श्रीकृष्ण (६. १०६, ६५) । = सात्यकि (७. १४२, ६७) ।

सात्वतां पति = विष्णु (सहस्रनाम) ।

सात्वताउय = सात्यकि (६. २२, ४) ।

सात्वतात्मजा = सुभद्रा (१. २२१, १७) ।

सात्वती = सुभद्रा : १. २२१, ६८; १४. ६९, १२; १५. १, २३; १०, ४६; १५, १०; २९, १३ ।

सात्वतीपुत्र = अभिमन्यु : ६. ७३, ३२; ७. ३९, २०; ७३, ८ । = श्रीकृष्ण (२. ३८, ८) ।

सात्वतीसुत = शिशुपाल (२. ४५, ६) ।

सदस्योर्मि – देखिये सदश्वोर्मि ।

साद्यस्क, एक प्रकार के राजर्षि-यज्ञ का नाम है जो एक ही दिन में समाप्त होता है : ३. १३४, १३ (षट् चैवेमे ऋतवः कालचक्रम् । षडिन्द्रियाण्युत षट् कृत्तिकाश्च षट्साद्यस्काः सर्ववेदेषु दृष्टाः); २४०, १६ (राजर्षियज्ञेन साद्यस्केन); ५. ३३, ७१; १२. २४४, २५; १३. १०३, २८ ।

साद्यस्कार (वि०): १२. २४४, २३ (साद्यस्कारां निरूप्येष्टिं ।

१. साध्य, देवों के एक वर्ग का नाम है : १. १, ३५ (ये विराट् अण्ड से प्रकट हुये); ३२, १६ (गरुड को देख कर भाग गये); ६६, ३८; ७१, ३२ (विश्वामित्र की तपस्या से भयभीत हुये); ८७, १ (पूजितश्चिदशैः साध्यैः): १२३, ७० (अर्जुन के जन्म के समय उपस्थित); १८७, ६ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित थे); १९७, ३ (देवताओं द्वारा आयोजित यज्ञ में ये भी नैमिषारण्य में उपस्थित थे); २२७, ३८ (खाण्डवदाह के समय श्रीकृष्ण और अर्जुन से युद्ध करने के लिये ये लोग भी नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित हो कर आये); २. ६, १३ (ब्रह्मा की सभा में); ७, ७ (इन्द्र की सभा में). २२; ११, ४४ (ब्रह्माजी की सभा में); ३. २, ८१ (ये योगशक्ति द्वारा प्राणियों पर शासन करते हैं); ३, ४४ (सूर्य की उपासना करते हैं); १२, ५३; ३७, ३५; ४१, ६ (वरुण के साथ); ४३, १३; ८२, २२ (पुष्कर में निवास करते हैं); ९९, ८५, ७० (प्रयाग में). १०५; ९०, ३३ (तीर्थों का पूजन करते हैं); ११८, ५७ (परशुराम ने श्रीराम दाशरथि के शरीर में इन्हें भी देखा); १६३, १२ (युधिष्ठिर इनके पास आये); १४२, ७ (इन्द्र की सेवा में); १६३, ७ (उदित होते सूर्य की उपासना करते हैं); १६८, ५२ (अमरावती में); १८८, ११९ (मार्कण्डेयजी ने इन्हें भी नारायण के उदर में देखा);

२३१, ७३ (दानवों से युद्ध किया); २६१, ६ (इनके लोक का वर्णन); ३०८, १४; ५. ३६, १-३ (आत्रेय के साथ इनका संवाद); ४९, ३; १०८, ३; १३१, ६ (श्रीकृष्ण के शरीर में); ६. ३५, २२ (श्रीकृष्ण के स्वरूप को देखकर विस्मित हुये); ६८, २; ७. ३५, ३०; ७६, ४; ८. ८७, ४६ (अर्जुन का पक्ष लिया); ९. ४४, २९ (स्कन्द को देखने आये); ४५, ६. ५३ (स्कन्द को सेनानायक दिये); १२. १५, १७; २१, २०; २९, २३ (मरुत्त के यज्ञ में उपस्थित हुये); ६४, १०; १२२, २; १६५, १६; १६६, २२; १९८, ५; २००, १०; २०७, २३ (दक्षपुत्री और धर्म के पुत्र); २०८, २२; २२७, ७६ (बलि ने इन्हें पराजित किया था); २८०, ६६; २८४, ७ (दक्ष के यज्ञ में उपस्थित); २९५, १६; २९९, २-४. ३९. ४१. ४३. ४५ (हंस के रूप में प्रजापति और साध्यों का संवाद); ३१७, २ (यदि घुटनों से प्राणों का निष्क्रमण होता है तो व्यक्ति साध्यों का लोक प्राप्त करता है); ३२३, १७; ३२८, ३२ (समान के पिता); १३. १४, ३९१ (शिव की स्तुति की); १८, ७१; ७९, २०; ८४, ८० (तारक से त्रस्त); ८६, १६ (स्कन्द को देखने आये); १०७, १२६; १३४, ५; १४०, १४; १५८, ३४; १४. ८, ४ (मुञ्जवत् पर्वत पर शिव की उपासना करते हैं); १६. ४, २७ (स्वर्ग में श्रीकृष्ण का स्वागत किया); १८. १, ५; ३, ८; ४, १७; ६, ६ ।

२. साध्य = नारायण (१३. १७, १७८) ।

३. साध्य (वि०); ३. १९८, ३० (अर्थ) ।

साध्यर्षि = शिव (सहस्रनाम) ।

सानत्सुजात (वि०) से सनत्सुजातपर्व का तात्पर्य है (१. २, ६०) ।

सामग = महापुरुष (महापुरुषस्तव) । = विष्णु (सहस्रनाम) ।

सामगायन = विष्णु (सहस्रनाम) ।

१. सामन् (अधिकांशतः बहु०): १. १, ६६; २९, ३५; ७०, ३८. ४०; २. ११, २३; ३३, ३४; ८०, ८. २२. २३; ३. २६, ३; ४३, १८. २८; ९९, ६०; १००, १४; १३४, ३६; १४२, ६; १४९, १४ (सत्ययुग में इसका अस्तित्व नहीं था); १५८, ९७; १५९, २९; ३१३, ५३. ५४; ५. ४३, ३; ४४, २८; १०९, १०; ६. ३३, १७; ३४, ३५ (बृहत्साम तथा साम्नां); ९. ३६, ३४; ११. २३, ३८ (त्रीणि सामानि सामगाः). ४१; २६, ३९. ४०; १२. ४७, २६; ५२, २२; ६०, ४४. ४७; ७६, ३; ७९, २; ९८, २३; २०१. ८; २०६, १६. १८; २३२, ३३; २३५, १; २३८, ८; २५१, २; २६८, २६. ३७; २८४, २६. १२४; ३०९, १५; ३३५, ४०; ३४१, ८; ३४२, ९७ (सहस्रशाखं यत्साम); १३. १४, ५३. ३९२; १६, ४८; १८, २१; ८५, ९०; १५८, १६; १६८, १६; १४. २५, १७; १६. ७, २६ ।

२. सामन् = विष्णु (सहस्रनाम) । = शिव (सहस्रनाम) ।

सामवेद : २. ११, ३२ (ब्रह्मा की सभा में); ३. १८९, १४ (नारायण से उत्पन्न हुआ); ५. ४३, ३; ६. ३४, २२; ८. ३४, ४४ (ऋग्वेदः सामवेदश्च पुराणं च पुरःसराः); १२. ३४८, १०. ४६; १३. १४, ३२३ । तुकी० सामन् (बहु०) ।

सामुद्र = चित्रसेन (८, ६. २५) ।

सामुद्रक, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, ४१-४२) ।

साम्ब, जाम्बवती से उत्पन्न श्रीकृष्ण के पुत्र का नाम है : १. १८६, १७ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित थे); २१९, ९; २२१, ३१ (सुभद्रा और अर्जुन के विवाह के अवसर पर उपस्थित); २. २, ३५ (द्वारका लौटने पर श्रीकृष्ण का स्वागत किया); ४, ३५ (अर्जुन से धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त की); १४, ५७ (वृष्णियों के सात अतिरथियों में से एक); ३४, १६ (युधिष्ठिर के राजसूय में आये); ३. १५, ९; १६, ९. ११. १४-१६. १८. १९ (वेगवत् से युद्ध किया); १८, १९; २१, १९; ५१, २८. ४३ (युद्ध में पाण्डवों की सहायता करेंगे); ११८, २० (प्रभास क्षेत्र में पाण्डव इनसे मिले); १२०, १२ (बाल्यावस्था में ही इन्होंने शम्बरासुर अश्वचक्र को पराजित किया था); २३४, १०; ४. ७२, २२ (अभिमन्यु और उत्तरा के विवाह के समय उपस्थित); ५. १, ५; ३, १९; १५७, १७; ७. ११, २७; ११०, ६०; १०. १२, ३३; १३. १४, २७ (इन्हें पुत्ररूप में प्राप्त करने के लिये श्रीकृष्ण ने तपस्या की थी); १५, ४ (शिव ने प्रसन्न होकर इन्हें श्रीकृष्ण को पुत्ररूप में प्रदान किया); १४. ६६, ३; ८६, ५; १६. १, १६. १९. २५; ३, ४४ (निहतं); १८. ५, १६ (मृत्यु के पश्चात देवों में सम्मिलित हुये) । तुकी० जाम्बवतीसुत (३. १२०, १३) । जाम्बवत्याः सुतः (३. १६, १२) ।

सारग्रीव = शिव (सहस्रनाम) ।

सारङ्ग = शिव (सहस्रनाम) ।

१. सारण, एक यदुवंशी क्षत्रिय का नाम है जो वसुदेव के द्वारा देवकी के गर्भ से उत्पन्न हुये थे : १. २१९, १०. १६ (सुभद्रा के भ्राता); २२१, ३२ (अर्जुन और सुभद्रा के विवाह के समय उपस्थित हुये); २. ४, ३० (युधिष्ठिर की सेवा में); ३४, १५ (युधिष्ठिर के राजसूय में सम्मिलित); ३. १८, २०; १२०, १९; ७. ११, २७; ११०, ६०; १४. ६६, ४; १६. १, १५ (स्त्रीरूप में इन्हें विश्वामित्र आदि ऋषियों के समक्ष प्रस्तुत करने के कारण ऋषियों ने इन्हें शाप दिया) ।

२. सारण, रावण के एक मन्त्री का नाम है (३. २८३, ५२-५३) ।

सारथि = महापुरुष (महापुरुषस्तव) ।

सारमेय (बहुधा बहु० °याः) कश्यप की पत्नी सरमा के पुत्र, एक कुत्ते का नाम है : १. ३, १ (एक०); ११. ४, ६; १२. ११४, १४; १२२, २१ ।

सारस, गरुड-पुत्र एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, ११) ।

१ सारस्वत, एक प्राचीन ऋषि का नाम है जो दधीच के वीर्य और सरस्वती नदी के गर्भ से उत्पन्न हुये थे : ३. ८३, १८८; ५८, ४९ (जब वेद लुप्त हो गये तब इन्होंने मुनियों को वेदों की शिक्षा दी); ९. ५१, २-४ (अनावृष्टि के बारह वर्षों की अवधि में इन्होंने मुनियों को वेद पढ़ाया). २१-२३. ३८. ४३. ४४. ४६. ५२ ।

२. सारस्वत, अत्रि के पुत्र एक ऋषि का नाम है : १२. २०८, ३१ (पश्चिम दिशा के ऋषि थे); १३. १५०, ३७; १६५, ४३ ।

३. सारस्वत = अपान्तरतमा (१२. ३४९, ३९. ५८) ।

४. सारस्वत (वि०): ३. ८३, १३४; ८४, ६६; ९०, ४; १२९, १४. २१; ५. ५७, २३; ९. ३५, ३८; ३८, ५८; ४२, ८ ।

सारस्वतपर्व से सरस्वती से सम्बद्ध उल्लेखों का तात्पर्य है (१. २, ७२) ।

सारस्वत्य (वि०) : १२. ५९, १११ (पृथु वैन्य के मन्त्रियों में से एक) ।

सारिक एक मुनि का नाम है : २. ४, १३ (युधिष्ठिर की सभा में) ।

सारिमेजय, एक राजा का नाम है : १. १८६, १९ (द्रौपदी के स्वयंवर में आये) ।

सारिसृक्क एक शार्ङ्गिक का नाम है जो पक्षिरूपधारी मन्दपाल के पुत्र थे : १. २३०, ९; २३२, ३. ९; २३३, ६ ।

सार्थ व्यापारियों के एक दल का नाम है : ३. ६४, १११; ६५, २५ ।

१. सार्वभौम, सोमवंशी राजा अहंयाति द्वारा भानुमती के गर्भ से उत्पन्न एक राजा का नाम है : १. ९५, १५. १६ (ये सुनन्दा के पति और जयत्सेन के पिता थे) ।

२. सार्वभौम, दिग्गजकुल में उत्पन्न एक हाथी का नाम है (७. १२१, २६) ।

सार्वसेनी, भरत की पत्नी सुनन्दा का नाम है (१. ९५, ३२) ।

सालंकायन, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५२) ।

सावर्ण, एक मनु अथवा ऋषि का नाम है : २. ४, १५ (युधिष्ठिर की सेवा में); १३. १८, ४३ (सावर्ण मनु के शासनकाल में व्यासजी सप्तर्षियों में से एक होंगे) ।

सावर्णि, एक ऋषि अथवा मनु का नाम है : २. ७, १० (इन्द्र की सभा में). १२; ५. १०९, ११ (सावर्णिना नैव यवक्रीतात्मजेन च । मर्यादा स्थापिता ब्रह्मन् यां सूर्यो नातिवर्तते); १३. १४; १०२ (कृतयुग में शिव को प्रसन्न किया था)।

१. सावित्र (सविता के पुत्र) = कर्ण : १. १३६, ८; १३. १३७, ९ (सावित्रः कुण्डलं दिव्यं यानं च जनमेजयः । ब्राह्मणायाय च गां दत्वा गतो लोकाननुत्तमान्)। तुकी० सावित्रिन्।

२. सावित्र, ग्यारह रुद्रों में से एक का नाम है (१२. २०८, २०)।

३. सावित्र, आठ वसुओं में से एक का नाम है (१३. १५०, १६-१७)।

४. सावित्र (वि०): ७. १५७, ३४ (अस्त्र, जिसका द्रोणने प्रयोग किया); १२. २८३, ५ (मेरोर्महाराज शृंगं त्रैलोक्यपूजितम् । ज्योतिष्कं नाम सावित्रं सर्वरत्नविभूषितम्); १३. १०४, ६० ।

५. सावित्र (स्र) एक नक्षत्र = हस्त का नाम है : १. १३५, ३० (पञ्चतारेण संयुक्तः सावित्रेणैव चन्द्रमा :)।

६. सावित्र (स्र): १. २, ६२ ।

सावित्रिन् = कर्ण : १२. २३४, २४ (सावित्री कुण्डले दिव्ये शरीरं''' ब्राह्मणार्थे परित्यज्य जग्मतुर्लोकमुत्तमम्) तुकी० सावित्र ।

१. सावित्री, अश्वपति की पुत्री और सत्यवान् की पत्नी का नाम है : १. २, ५६ (पतिव्रताया माहात्म्यं सावित्र्यः). २०१; ३. २९३, २४ (देवी सावित्री द्वारा प्रदत्त होने से सावित्री नाम पड़ा);२९४, ७. ११. २४. २६. २९. ३२; २९५, ८. २३; २९६, २. ४. ६. ८. ९. १२. १३. १७-१९. २१. २७. ३१; २९७, ४. ६. ११. १२. १४. १९-२१. २७. २९. ३२. ३४. ३८. ४०. ४५. ४७. ५२. ५५. ६१. ६२. ६४. ६६. ७३. ७८. ९८. १००. १०३. १०५; २९८, ४. १०. १५-१७. २१. २३. २६. ३०. ३४-३६; २९९, २. १०. १२. १४. १५. १७ (सावित्री का सत्यवान् के साथ विवाह हुआ । जब यमराज सत्यवान् को ले जाने लगे तब सावित्री ने अनेक वरदान सहित अपने पति सत्यवान् का जीवन भी यम से प्राप्त कर लिया); ४. २१, १५; ११७, १२ ।

२. सावित्री, एक मन्त्र का नाम है : २. ११, ३४ (ब्रह्मा की सभा में); ३. ८१, ५; ८४, ९३; ८५, ३१; ११०, २६; १८०, ३४; २३१, ४९; २९३, ९. १०. १२. १६. १९. २०. २४; ५. १०८, १०; ६. २३, १२ (वेदमाता). १५ (दुर्गा के साथ समीकृत); ७. २०२, ७५ (शिव ने गायत्री और सावित्री को अपनी लगाम बनाया); ८. ३४,३६ (शिव के धनुष की प्रत्यञ्चा बनी); १२. ३५, ३७; १९९, ११; २६४, ८ (श्रद्धा वैवस्वती सेयं सूर्यस्य दुहिता द्विज । सावित्री प्रसवित्री च बहिर्वामनसी ततः); २७२, ११ (साक्षात्तं संन्यमन्त्रयत्); ३३९, ७; १३. १४, ३९; २३, २४. २७; ६७, ७; ८५, ९२; १३६, ४. ९. १७. २४; १४६, ४, १५०, ४. ६८. ७०. ७२. ७७. ७९. ८२; १६०, २९ (शिव के धनुष की प्रात्यञ्चा बनी); १६५, ९; १४. ४४, ५ (सावित्री सर्वविद्यानां देवतानां प्रजापतिः). ६ (यदस्मिन्नियतं लोके सर्वं सावित्रिरुच्यते); १८. ५, ६४ (भारत सावित्री)। तुकी ० देवी ।

सावित्रीपुत्रक (बहु० °काः), एक जाति का नाम है (८. ५, ४९)।

सावित्र्यवरजा, सावित्री की छोटी बहन अर्थात् तपती का द्योतक है : १. १७१, ७; १७३, २२

साश्व, एक प्राचीन नरेश का नाम है (२. ८, २७)।

१. साहदेवि = सोमक (३. १२५, २६)।

२. साहदेवि = श्रुतकर्मा : ६. ४५, ६७; ७. १०८, १० ।

साहस्रक, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १५८-१५९)।

१. सिंह = विष्णु : ६. ६७, १७; १३. १४९, ३५ (सहस्रनाम). ६५ (सहस्रनाम)।

२. सिंह (बहु० °हा): १. ६६, ८ (पुलह की सन्तान).६५ शार्दूली की सन्तान)।

१. सिंहकेतु = बृहद्दल (६. ११५, ३१)।

२. सिंहकेतु, एक पाण्डवन्योद्धा का नाम है : ८. ५६, ४९ (कर्ण ने इसका वध किया)।

सिंहग = शिव (सहस्रनाम)।

सिंहग्रीव = अश्वत्थामा (५. १६७, ११)।

सिंहचन्द्र, एक पाण्डवयोद्धा का नाम (७. १५८, ४०)।

सिंहदंष्ट्र, सिंहनाद = शिव (सहस्रनाम)।

सिंहपुर- उत्तर के एक नगर का नाम है जिसे अर्जुन ने जीता था (२. २७, २०)।

सिंहल (बहु० °लाः) एक देश के निवासियों का नाम है : १. १७५, ३७ (वसिष्ठ की धेनु से उत्पन्न बर्बर जातियों में से एक); २. ३४, १२ (युधिष्ठिर के राजसूय में आये); ५२, ३५. ३६ (युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये); ३. ५१, २३; ७. २०, ६ (द्रोण के गरुडव्यूह के ग्रीवाभाग में स्थित)।

सिंहलांगूलकेतन, सिंहलांगूलकेतु, सिंहलांगूलचपन्, सिंहवाहन, सिंहशार्दूलरूप = शिव (सहस्रनाम)।

१. सिंहसेन एक पाण्डव योद्धा का नाम है जो द्रोण के हाथों मारा गया था (७. ३२, ३५. ३७)।

२. सिंहसेन, पाण्डवपक्ष के एक पाञ्चाल योद्धा का नाम है : ७. २३, ५०; ८. ५६, ४५ (कर्ण से युद्ध किया)।

सिंहिका, दक्षपुत्री का नाम है जो कश्यप की पत्नी थी : १. ६५, १२. ३१ (राहु आदि की माता बनी); ६७, ४० ।

सिंहिकातनय, से सिंहिकपुत्रों का तात्पर्य है जो असुर थे : ३. १८८, १२१ (मार्कण्डेयजी ने इन्हें भी नारायण के उदर में देखा)।

सिकत (बहु० °ताः) ऋषियों के एक वर्ग का नाम है : ७. १९०, ३४; १२. २६, ७; १६६, २४ ।

सिकताक्ष, एक तीर्थ का नाम है (३. १२५, १२)।

१. सित, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६९)।

२. सित = बलराम : ९. ६०, १२ (सितासितै यदुवीरौ)।

सिताश्व = अर्जुन (३. १६४, १६)।

१. सिद्ध, एक देवगन्धर्व का नाम है : १. ६५, ४६ (प्राधा के गर्भ से उत्पन्न)।

२. सिद्ध एक प्राचीन राजा का नाम है : २. ८, ९ (यम की सभा में)।

३. सिद्ध = शिव (१४. ८, १७)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

५. सिद्ध (बहु० °द्धा :), देवों के एक वर्ग का नाम है जिनका बहुधा चारणों के साथ उल्लेख मिलता है : १. ६३, ६६. ७०; ७०, १५; ८९, १; ९७, २६; १२०, १; १२६, ३५; १८७, १३; २. ७, ७ (इन्द्र की सभा में); ८, २९ (यम की सभा में); ३. ३, ४०. ४४; २४, २०; ३८, १५; ४३, १. ३१; ४६, १४. २५; ४७, १३; ८२, ८१. ८२. ९४; ८३, ५. ६८; ८४, ५. ४६. ५७. ५९. ११६; ८५, २६. ३३. ७२; ८९, ४. १६; ९०, ३१; ११८, १३; १४३, ६; १४५, ९; १४७, २४; १४९, ८; १५५, २०; १५६, १०. १२. १५; १५७, १५; १५८, ३८; १५९, २८; १६३, ७; १६९, २३; १७७, ९; १७८, ६; २३०, ४९ (अवमन्यति यः सिद्धान् क्रुद्धांश्चापि शपन्ति यम् । उन्मादयति स तु क्षिप्रं ज्ञेयः सिद्धग्रहस्तु सः); ४. ६८, १६; ५. ६४, १७; १११, ६. १३; १२१, ५; १५१, २९; १७८, ६८; १८६, २४; ६. ६, ५; ७, २. १५. २०; ११, ७. २९; १२, २३; २३, १६; ३५, २१. २२. ३६; ४३, ९; ४५, ८५; १२०, १५; ७. ३७, ३७; ८०, २४; ८७, ३२; ९८, ३४. ४५; १००, ३; १०७, १३; १३८, २६; १३९, ५५; १४३, ५६; १४५, ७८; १४७, ४३; १५६, १९०; १५९, ९६; १६०, ४५; १६३, ३४; १८८, ३८. ४१; १९१, ५३; ८. १५, २७. ३३. ३४; १६, १७; २५, २६; ५६, १२६; ६१, ३२; ७८, ३२; ८१, ६ (अपतन्त हता बाणैर्नानारूपैः किरीटिना । सविमाना यथा सिद्धाः स्वर्गात्पुण्यक्षये

तथा); ८७, २८. ४१; ८८, १; ९. ७, १७; ११, ३; १८, ३५ (गगनात्प्रच्युताः सिद्धाः पुण्यानामिव संक्षये); २२, २८; २३, ९० (विमानेभ्यो दिवो भ्रष्टाः सिद्धाः पुण्यक्षयादिव); २४, ४४; ३७, २२; ४४, ३०. ३२; ४८, १. ५१; ५०, २५. ४५. ४८. ४९. ५१; ५४, १६; ५८, ६२; ६१, ५६; १२. ४७, २९. ३६; ६४, १०; १४९, १३; १८२, २२; २००, १२; २०८, २२; २२७, १०; २८० ७०; २८१, १७; २८३, १३; २८४, ३; २९५, १७; ३२३, १९; ३२७, ३; ३३१, ४५; ३३९, ११८; ३४०, २२; ३४३, ६२; १३. १०, ७; १४, १५०. २०९. ३६५; २९, १६. २७; २५, ६२; १३०, ११; १४०, २. १३; १६८, ८; १४. १५, ३१; १६, २३; ३५, २३; १५. २०, ३८; २४, २०; ३१, ६; १६. ४, २५. २७; १७. ३, २४. ३५; १८. ३, ८; ६, ७।

३ सिद्ध (बहु० °द्धाः) एक जाति का नाम है (६. ९, ५७)।

सिद्धग्रह एक ग्रह का द्योतक है। तिरस्कृत हुये सिद्ध पुरुषों के शाप से यदि पागलपन आदि व्याधियाँ हों तो उन्हें सिद्धग्रहबाधा करते हैं (३. २३०, ४९)।

सिद्धपात्र, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६६)।

सिद्धभूतार्थ = शिव (सहस्रनाम)।

सिद्धमन्त्र = शिव (१४. ८, १८. १९)।

सिद्धयोगिन् = शिव (सहस्रनाम)।

सिद्धसंकल्प = विष्णु (सहस्रनाम)।

सिद्धसाधक = शिव (सहस्रनाम)।

सिसेनानी = दुर्गा (उमा): ६. २३, ४।

१. सिद्धार्थ, एक राजा का नाम है : १. ६७, ६० (क्रोधवश संज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न)।

२. सिद्धार्थ, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है। (९. ४५, ६४)।

३. सिद्धार्थ = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

सिद्धार्थकारिन् = शिव (सहस्रनाम)।

सिद्धान्त : १. ७०, ४४; १२. २३६, ३१।

१. सिद्धि : १. ६७, १६० (कुन्ती के रूप में उत्पन्न); ९. ४२, ३२ (सरस्वती नदी को इनके साथ समीकृत किया गया है); ४६, ६४; १२. ३००, ५९ (देवी वरुणस्य पत्नी)।

२. सिद्धि एक अग्नि का नाम है : ३. २१९, ११। = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

सिद्धिक्षेत्र : ३. ८५, ९७ (सिद्धिक्षेत्रं'''गङ्गातीरसमाश्रितम्)।

सिद्धिद, सिद्धिसाधन = विष्णु (सहस्रनाम)।

सिनीवाली, अङ्गिरा की तृतीय पुत्री का नाम है जो चतुर्दशीयुक्ता अमावस्या है : ३. २१८, ५; २२९, ५० (देवसेना को इसके साथ समीकृत किया गया है); ८. ३४, ३२. ३३ (शिव के रथ की योक्त्र बनी); ९. ४५, १३ (स्कन्द के जन्म के समय उन्हें देखने आईं)।

१. सिन्धु, भारत की एक प्रसिद्ध नदी का नाम है : १. ९४, ४० (पराजित संवरण यहीं रहने लगे); २. ९, १९ (वरुण की सभा में); ३२, ९; ५१, ११; ६५, ६ (यत्किंचिदनुपर्णाशं प्राक्सिन्धोरपि); ३. ८२, ५३ (दक्षिण में). ६८; ८४, ४६; ११९, १८; १३०, ६; १८८, १०३ (मार्कण्डेयजी ने इसे भी नारायण के उदर में देखा); २२२, २२ (अग्नि की माताओं में से एक); २२४, १८; ५. ८४, ६; ६. ६, ४८ (गङ्गा ने अपने को जिन सात धाराओं में विभाजित किया उनमें एक यह भी थी); ९, १४. २१; ७. १०१, २८; ८. ३४, २४; ४४, ७. ३२; १३. २५, ८; १४६, १८ (उमा के पास आने वाली नदियों में यह भी थी); १६५, १९।

२. सिन्धु, सिन्धु नदी के तटवर्ती देश का नाम है : ५. १९, १९ (जयद्रथमुखाः); ६. २०, १०।

३. सिन्धु = श्रीकृष्ण (१२. ४३, १०)।

४. सिन्धु (बहु०) एक जाति = सैन्धव (बहु०): ३. २६४, ६. ११ (वार्धक्षत्रिर्महायशाः'''जयद्रथः); २६७, ८. ११. २०; २७१, ३ (शिविसौवीरसिन्धूनां). ५०; ६. ९, ४०. ५३; ५१, १४; ५६, ५ (भीष्म के गारुडव्यूह में यहाँ के सैनिक भी ग्रीवाभाग में उपस्थित थे); ७९, १७; ७. ७५, ११; ११०, ७४; १३८, १२; १३९, १३; ८. ५, ११; ४०, ४२ (धर्म के ज्ञान से रहित); १२. २०१, ३।

सिन्धुज (वि०) से सिन्धु देश में उत्पन्न लोगों का तात्पर्य है : ३. ७१, १४; ६. ९०, ३।

सिन्धुद्वीप, जह्नु के पुत्र एक प्राचीन राजा का नाम है : ९. ३९, ३७ (इन्होंने ब्राह्मणत्व प्राप्त किया); ४०, १. १०; १३. ४, ४ (ये जह्नु के पुत्र और बलाकाश्व के पिता थे); १४. ९१, ३५ (उच्च गति प्राप्त की)।

१. सिन्धुपति = जयद्रथ : ३. २७२, ४८; ६. १७, ३१; ७. २५, ११; ९४, १५. १६; १४६, ७१. ११६, ९. ५४, २५।

२. सिन्धुपति = वृद्धक्षत्र (७. ४२, १५।

सिन्धुराज् = जयद्रथ : ७. ७५, २८; १४६, ६४।

१. सिन्धुराज = जयद्रथ : ५. १३३, ४ विदुला के पुत्र सञ्जय को पराजित किया); १३४, ४।

२. सिन्धुराज = जयद्रथ : १. ६७, १०९; ३. २६७, २१; २६९, २८; २७१, ३२; ५. ५०, २२; ५५, ४३; १६५, ३०; ६. ८५, ३४; ११३, २३; ७. १४, ७३. ७७; ३४, २२. २४; ४२, १६; ४३, १. १५; ७५, २. ५; ७६, ३. ६; ७७, २६; ७९, ११. १६; ८७, १६. २१; ९१, १; ९४, १; १००, २८; १०१, ११. १४. १८. ३२. ३६. ४१; १०५, २०; ११२, ३९; ११४, १८. ४६; १३०, ५. १२; १४०, ५; १४५, ८७; १४६, ६० (वराहः). ७०. ९४. ११०. १२३. १२७. १३२; १४९, ३९; १५१, १. २१. २३. २७. ३०; १५२, ११. १२; १८३, १८; २०२, १४६; १४. ७७, ११।

सिन्धुराजन् = जयद्रथ (६. ९२, ३९; ७. ९१, ६)।

सिन्धुसौवीरभर्तृ = जयद्रथ (११. २२, ९. ११)।

सिन्धूत्तम, एक तीर्थ का नाम है : ३. ८२, ७९; १३. १६५, २४।

सीतवन, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ५९-६०)।

१. सीता, विदेहराज जनक की पुत्री और श्रीराम की पत्नी का नाम है : ३. १४८, ३ (रावण ने इनका हरण किया). ५. ७. १८; १५०, २०; १५१, ७; २७४, ९ (जनक की पुत्री और श्रीराम की पत्नी). १०; २७७, २९ (श्रीराम के साथ वन गईं); २७८, ११. १३. २३. ३५ (रावण ने इनका हरण किया); २७९, २. ७. १२ (रावण इन्हें लंका ले गया); २२. ४३ (रावणेन हृता); २८०, १. ४१. ४६. ५५. ५७. ७२ (त्रिजटा ने सान्त्वना दी); २८१, ८. २४. २७ (रावण के साथ वार्तालाप); २८२, ४. १७. ३२. ५३. ६०-६२. ६४. ६६. ६८ (हनुमान ने इनका पता लगाया); २८४, १२ (सीतामाहरता बलात्). १६ (जानकी); २८६, २४ (मया त्वपहृता भार्या सीता नामास्य जानकी); २९१, ६ (रावण की मृत्यु के बाद राम ने इन्हें पुनः प्राप्त कर लिया). ८. ३३ (जब देवों ने इनकी पवित्रता को प्रमाणित कर दिया तभी श्रीराम ने इन्हें स्वीकार किया). ४४ (इन्होंने हनुमान को एक वरदान दिया). ५१; ४. २१, १२ (दुहिता जनकस्यापि वैदेही यदि ते श्रुता। पतिमन्वचरत् सीता महारण्यनिवासिनम् रक्षसां निग्रहं प्राप्य रामस्य महिषी प्रिया। क्लिश्यमानाऽपि सुश्रोणि राममेवान्वपद्यत)।

तुकी० इनके निम्नलिखित पर्याय भी :

जनकात्मजा : ३. २२७, २९: २७८, ३३; २८२, ३५।

जानकी : ३. २७४, १; २७८, ३७; २७९, ४७; २८२, ३७. ६९; २८४, १६; २८६. २४; २९१, ७. ४७।

मैथिली : ३. २७७, २; २७९, ३; २८२, ३०; २९१, ११. २७-२९।

वैदेही — देखिये वस्था०।

२. सीता एक देवी का नाम है : ७. १०५, १९ (सा सीता भ्राजते तस्य रथमास्थाय मारिष। सर्वबीजविरूढेव यथा सीता श्रिया वृता)।

३. सीता, एक अथवा अधिक नदियों का नाम है : ३. १४७, ५०; १८८, १०२ (मार्कण्डेय ने इसे भी नारायण के उदर में देखा); ६. ६, ४८ (गङ्गा ने अपने को जिन सात धाराओं में विभक्त किया उनमें यह भी एक थी); १२. ८२, ४४ (सीता नाम नदी राजन्प्लवो यस्यां निमज्जति)।

सीताङ्ग = शिव (सहस्रनाम)।

सीता-रावणसंवाद से लङ्का में रावण द्वारा अपहृत सीता और रावण के बीच संवाद का तात्पर्य है (३. २८१)।

सीता-सान्त्वन — लङ्का में रावण ने सीता को नन्दनवन के समान सुन्दर वाटिका में रख कर राक्षसों और पिशाचों को उनकी रक्षा के लिये नियुक्त कर दिया। राक्षसी त्रिजटा ने सीता को बताया कि राक्षस अविन्ध्य के अनुसार श्रीराम और लक्ष्मण ने सुग्रीव से मित्रता कर ली है। उसने यह भी बताया कि नलकूबर के शाप के कारण रावण सीता के साथ दुर्व्यवहार नहीं कर सकता। त्रिजटा ने रावण के विनाश सम्बन्धी अपने स्वप्न की चर्चा करते हुये बताया कि रावण दक्षिण दिशा में भागता हुआ तथा सीता सहित श्रीराम और लक्ष्मण उत्तर दिशा में जाते हुये दिखाई पड़े थे (३. २८०)।

सीताहरण से वनवास की अवधि में रावण द्वारा सीता के हरण की कथा का तात्पर्य है (३. २७८)।

सीरभृत् = बलराम (९. ६०, २०)।

सुकन्दक (बहु० °काः) एक जाति का नाम है (६. ९, ५३)।

१. सुकन्या राजा शर्याति की पुत्री और च्यवन की पत्नी का नाम है : १. ८, १ (च्यवन से प्रमति नामक पुत्र उत्पन्न किया); ३. १२१, २२; १२२, ६. १२. २०. २८; १२३, १. ४. ११. २४; १२४, २; १२५, ६. ११; ३०४, ९; ४. २१, १० (पुरा सुकन्या भार्या च भार्गवं च्यवनं वने। वल्मीकभूतं शाम्यन्तमन्वपद्यत भामिनी); ५. ११७, ११। तुकी० शर्यातितनया।

२. सुकन्या, मातरिश्वा की पत्नी का नाम है : ९. ३८, ५९ (इसके गर्भ से मंकणक का जन्म हुआ)।

सुकन्योपाख्यान से सुकन्या की कथा का तात्पर्य है : च्यवन को सुकन्या की प्राप्ति (३. १२२)। अश्वनीकुमारों की कृपा से महर्षि च्यवन को सुन्दर रूप और युवावस्था की प्राप्ति (३. १२३)। शर्याति के यज्ञ में च्यवन का इन्द्र पर कोप करके वज्र को स्तम्भित करना और उनको मारने के लिये मदासुर को उत्पन्न करना (३. १२४)। अश्विनीकुमारों का यज्ञ में भाग स्वीकार कर लेने पर इन्द्र का संकट-मुक्त होना (३. १२५, १-११)।

सुकर्मन्, एक राजा का नाम है : २. ४, २७ (युधिष्ठिर की सेवा में)।

सुकुट्ट (बहु० °ट्टाः) एक जाति का नाम है (२. १४, २६)।

सुकुण्डल, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९८)।

१. सुकुमार, एक तक्षकवंशी नाग का नाम है (१. ५७, ९)।

२. सुकुमार, एक अथवा अधिक राजाओं का नाम है : १. १८६, १० (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित); २. २९, १० (भीमसेन ने इन्हें पराजित किया था); ३१, ४ (सहदेव ने पराजित किया)।

३. सुकुमार, युधिष्ठिर की सेना के एक रथी राजा का नाम है (५. १७१, १५; ७. २३, २७)।

४. सुकुमार, शाकद्वीप के जलधारगिरि के पास के एक वर्ष का नाम है (६. ११, २५)।

१. सुकुमारी, शाकद्वीप की एक नदी का नाम है (६. ११, ३२)।

२. सुकुमारी, राजा सञ्जय की पुत्री और नारद की पत्नी का नाम है: १२. ३०, १४. २३. २५. ३१. ३२. ४० (नारद के साथ विवाह हुआ)। तुकी० ७. ५५, ५ और बाद।

सुकुसुमा एक मातृका का नाम है (९. ४६, २४)।

१. सुकेतु एक राजा का नाम है : १. १८६, ९ (ये अपने सुनामा और सुवर्चा नामक पुत्रों के साथ द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुये)।

२. सुकेतु, शिशुपाल के एक पुत्र का नाम है : ८. ६, ३३ (द्रोणाचार्य के हाथों मारा गया था)।

३. सुकेतु, राजा चित्रकेतु के पुत्र का नाम है : ८. ५४, २१. २४. २६ (कर्ण ने इसका वध किया)।

सुकेशी, एक अप्सरा का नाम है : १३. १९, ४५ (कुबेर की सभा में)।

१. सुक्रतु एक प्राचीन नरेश का नाम है (१. १, २३५)।

२. सुक्रतु एक राजा का नाम है : १३. ४५, ६ (इनके कुछ श्लोकों का उद्धरण)।

सुक्षत्र, कोसलराज के पुत्र का नाम है : ७. २३, ५७ (द्रोण से युद्ध के लिये आये। इनके अश्वों का वर्णन)।

सुखद = विष्णु (सहस्रनाम)

सुखदा एक मातृका नाम है (९. ४६, २८)।

सुखप्रद = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

सुखप्रदा = देवसेना (३. २२९, ५०)।

सुखजात, सुखासक्त = शिव (सहस्रनाम)।

सुगणा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २७)।

सुगन्ध, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, ३६)।

१. सुगन्धा, एक अप्सरा का नाम है : १. १२३, ६३ (अर्जुन के जन्मोत्सव के समय नृत्य किया)।

२. सुगन्धा एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, १०)।

सुगन्धार = शिव (सहस्रनाम)।

सुगोप्तृ एक सनातन विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३७)।

१. सुग्रीव, श्रीकृष्ण के एक अश्व का नाम है : १. २२०, ३ (सुग्रीवयुक्तेन, रथेन); ३. २०, १३; २२, ४८; १८३, ६; ४. ४५, २० (उत्तर का एक अश्व); ५. २२, २८; ४८, ६८; ८३, १९ (शैब्यसुग्रीव-मेघपुष्प बलाहकैः); १३१, २९; ७. ७९, ३८; १४७, ४७; १०. १३, ३ (श्रीकृष्ण के रथ का वर्णन); १२. ३७, ३९; ४६, ३५; ५३, २१; १०१, १७। तुकी० शैव्य-सुग्रीववाहन (= श्रीकृष्ण)।

२. सुग्रीव, वालि के भाई और किष्किन्धा के एक वानरराज का नाम है : ३. ११, ४८; १४७, २८-३०; १४८, १-३; १५७, ६०; २७४, ३; २७९, ४३ (ये पम्पा में रहते थे); २८०, ६. १०. ११. १३. १४. १६. १७ २१. २३. २५. २६. २८. ३०. ३३. ३५. ३९. ४० (वालि ने इनके राज्य और इनकी पत्नी तारा का हरण कर लिया। इन्होंने श्रीराम दाशरथि से मित्रता की। तदनन्तर वालि के साथ द्वन्द्व युद्ध करने गये। उसी युद्ध में श्रीरामने एक बाण द्वारा वालि का वध कर दिया। इस प्रकार इन्हें इनका राज्य और इनकी पत्नी पुनः प्राप्त हो गये). ६१; २८२, १. १४ (प्लवगाधिपः). १६ (वानराधिपः). २१ (वानरेन्द्रेण). २२. २६. ३३. ६४ (सर्वशाखामृगेन्द्रेण). ६५. ६८ (इन्होंने सीता की खोज में वानरों को भेजा); २८३, १. १३. १५. २३. ४७ (वानरों की एक विशाल सेना लेकर ये श्रीराम के साथ लङ्काविजय के लिये गये); २८५, ९ (विरूपाक्ष से युद्ध किया); २८७, ८. १०. ११ (कुम्भकर्ण से युद्ध किया); २८८, २. ५; २८९, ३. ६. १३; २९१, ५२. ५७ (सुग्रीव सहितो रामः किष्किन्धां पुनरागमत्). ६७ (कपिश्रेष्ठं); ४. २२, ५५; ७. १७८, २८; ९. ५५, ३१ (भीमसेन और दुर्योधन के गदायुद्ध की वालि और सुग्रीव के युद्ध के साथ तुलना)। तुकी० सूर्यपुत्र।

१. सुघोष, नकुल के शंख का नाम है : ६. २५, १६; ५१, २६।

२ सुघोष = विष्णु (सहस्रनाम)।

सुचक्र, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ५९)।

१. सुचन्द्र, एक असुर का नाम है जो सिंहिका का पुत्र था (१. ६५, ३१)।

२. सुचन्द्र, एक देवगन्धर्व का नाम है : १. ६५, ४७ (यह प्राधा

का दसवाँ पुत्र था); १२३, ५८ (अर्जुन के जन्म के समय उपस्थित)।

१. सुचारु, रुक्मिणी से उत्पन्न श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम है (१३. १४, ३३)।

२. सुचारु धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (६. ७९, २२)।

१. सुचित्र धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (६. ७९, २२)।

२. सुचित्र, धृतराष्ट्रवंशी एक नाग का नाम है (१. ५७, १८)।

३. सुचित्र एक अथवा अधिक राजाओं का नाम है : १. १८६, १० (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित); ८. ६, २७-२८ (द्रोण ने इसका वध किया)।

सुचेतस्, गृत्समद के पुत्र, एक ब्राह्मण का नाम है (१३. ३०, ६१)।

सुछत्र = शिव (सहस्रनाम)।

सुजात, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : ९. २६, ५ (इसने अपने १० भाइयों के साथ भीमसेन पर आक्रमण किया किन्तु भीमसेन ने इसका वध कर दिया)।

सुजाता, उद्दालक की पुत्री, कहोड की पत्नी और अष्टावक्र की माता का नाम है (३. १३२, ९. १३. १६. २०)।

सुतञ्जय, एक कौरव योद्धा का नाम है (८. २७, १३)।

सुतनु, आहुक की पुत्री का नाम है : २. १४, ३३ (अक्रूर के साथ इसका विवाह हुआ)।

सुतसोम, द्रौपदी से उत्पन्न भीमसेन के पुत्र का नाम है : १. ६३, १२३; ६७, १२८; ९५, ७५; २२१, ७९. ८२ (नाम की व्युत्पत्ति); २. १२, ७३ (द्रौपदी से उत्पन्न पाण्डवों के पुत्रों का उल्लेख); २३५, १०; ६. ४५, ५८. ५९ (विकर्ण से युद्ध किया); ७९, ३९ (श्रुतकर्मा की रक्षा की); ७. २३, २८ (इसके अश्वों का वर्णन). २९ (नाम की उत्पत्ति); २५, २४. २५ (विविंशति से युद्ध किया); १६८, ४५; ८. २५, १८. १९. २१. २७. ३०. ३४. ३८. ४० (शकुनि से युद्ध किया); ५५, १४. १६ (अश्वत्थामा से युद्ध किया); ८२, २. ९; ९. १०, ४४. ४७; १०. ८, ५५. ५६ (अश्वत्थामा ने इसका वध किया)। तुकी० द्रौपदेय एक० और बहु०।

सुतसोममातृ = द्रौपदी (३. १६५, ११)।

सुतन्तु, सुतपस = विष्णु (सहस्रनाम)।

सुतीक्ष्णदशन = शिव (सहस्रनाम)।

सुतीर्थ = शिव : ७. २०२ ३१; १३. १७, ४५ (सहस्रनाम); १४. ८, १६ (सहस्रनाम)।

सुतीर्थक एक तीर्थ का नाम है : ३. ८३, ५४. ५६ (अम्बुमती पर स्थित)।

सुतेजन, एक पाण्डवपक्षी योद्धा का नाम है (७. १५८, ४०)।

सुतेजस = सुचेतस (१३. ३०, ६१)।

१. सुदक्षिण, काम्बोज देश के एक राजा का नाम है : १. १८६, १५ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित); ५. १९, २१ (यह एक अक्षौहिणी सेना के साथ दुर्योधन की सहायता के लिये आये); ५. ९५, २०; १५५, ३२; १६६, १ (दुर्योधन की सेना के एक रथी); ६. १६, १५; १७, २६; ४५, ६६. ६७ (सहदेव के पुत्र श्रुतकर्मा से युद्ध किया); ५१, १८ (भीष्म के क्रौञ्चव्यूह में); ५९, ७६; ६५, ३१; ९९, २; १०२, २४; १०८, १४. ५८; ११०, १५; १११, २०; ७. ७, १४; २०, ९; ७४, १६; ९२, १७. ६१. ६६. ७०. ७४. ७६; ९३, १ (हते); ९४, २ (काम्बोजस्य च दायादे हते). ३०; १५८, ६५; ८. ५, २०; ५६, ११०. ११३ अर्जुन ने इनके छोटे भाई का वध किया); ७२, १९; ९. २, १८. ३५; २४, २९; ११. २०, ३४। तुकी० काम्बोज, काम्बोजराज।

२. सुदक्षिण, एक पाण्डव-योद्धा का नाम है : ७. २१, ५६ (द्रोण ने इसे आहत किया था)।

१. सुदर्श एक कौरव योद्धा का नाम है (८. ७, १८)।

२. सुदर्श धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (९. २७, १)।

१. सुदर्शन, श्रीकृष्ण (विष्णु) के चक्र का नाम है : १. १९, २१. २९; २२५, २३ (अग्नि ने श्रीकृष्ण को एक चक्र दिया जिसका मध्य भाग वज्र के समान था। अग्नि ने श्रीकृष्ण को बताया कि इस चक्र से वे अमानवीय प्राणियों को भी जीत सकेंगे। देवता, राक्षस, पिशाच, दैत्य और नाग आदि सभी इस चक्र से पराजित हो जाँयगे); २. २२, २९-३३ (श्रीकृष्ण ने एक क्षण में सुबाहु को इससे काट दिया); ५. ५४, १२; ६. ५९, ९१; ७. ७, ३०; १८०, १७; ८. ८९, ४६; १३. १४, ७६-७९ (पूर्वकाल में जल के भीतर रहनेवाले एक दैत्य को मार कर भगवान शङ्कर ने यह चक्र विष्णु को दिया था। इस चक्र को स्वयं वृषभध्वज ने उत्पन्न किया था। उस समय शिव के अतिरिक्त अन्य कोई इसे देख नहीं सकता था। तब शिव ने ही इसे देखने में सुगम बनाया था। तभी से यह सुदर्शन नाम से विख्यात हुआ है)। तुकी० चक्र और ३. ३, ४८; ५. ६८, २; ६. ५९, ८८; १०. १२, २०।

२. सुदर्शन : २. ४, २८ (एक राजा का नाम अथवा अन्य राजाओं का विशेषण मात्र हो सकता है)।

३. सुदर्शन इन्द्र के रथ का नाम या विशेषण है (४. ५६, ३)।

४. सुदर्शन, एक राजा का नाम है : ५. ४८, ७५ (नग्नजित ने बन्दी बना लिया)।

५. सुदर्शन, जम्बूद्वीप का एक नामान्तर (६. ५, १३. १६)।

६. सुदर्शन, मेरु पर स्थित एक जामुन के वृक्ष का नाम है (६. ७, १९)।

७. सुदर्शन, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : ६. ७७, ७; ७. १२७, ३४ (भीमसेन पर आक्रमण करने वाले अनेक धृतराष्ट्रपुत्रों में यह भी था). ६७ (भीमसेन ने इसका वध किया); १५६, १२३ (?)।

८. सुदर्शन एक कौरव योद्धा का नाम है : ७. ११८, ६. ८-१०. १३. १४ (सात्यकि ने इसका वध किया); ११९, १ निहत्य)।

९. सुदर्शन एक मालव राजा का नाम है : ७. २००, ७३ (अश्वत्थामा पर आक्रमण किया). ८३ (अश्वत्थामा ने इसका वध किया); २०१, १०। तुकी० मालव।

१०. सुदर्शन, सुदर्शना के गर्भ से उत्पन्न अग्नि के एक पुत्र का नाम है : १३. २, ३६. ३९ (ओघवती से इसका विवाह हुआ). ४८. ४९. ६२. ६४. ६८. ९६ (एक ब्राह्मण के रूप में धर्म ने इसकी परीक्षा ली)। तुकी० आग्नेय, अग्निपुत्र, पावकसुत, पावकि।

११. सुदर्शन = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. सुदर्शना, महिष्मती नरेश दुर्योधन की पुत्री और नर्मदा नदी का नाम है : १३. २, २१. २२. ३४ (अग्नि से विवाहित और सुदर्शन नामक पुत्र की माता)। देखिये २. ३१, २८. ३३ भी। तुकी० दुर्योधनसुता।

२. सुदर्शना = सुदर्शन नामक जम्बू वृक्ष (१३. १०२, २०)।

सुदर्शनोपाख्यान, से सुदर्शन की कथा का तात्पर्य है : भीष्म ने कहा : प्रजापति मनु के इक्ष्वाकु नामक पुत्र हुआ। इक्ष्वाकु के १०० पुत्र हुये जिनमें से दसवें का नाम दशाश्व था। दशाश्व महिष्मती में राज्य करता था। दशाश्व का पुत्र→मदिराश्व→द्युतिमान→सुवीर→सुदुर्जय→राजर्षि दुर्योधन हुये। दुर्योधन वेद और वेदान्त के परम विद्वान थे। उन्होंने नर्मदा नदी से एक सुन्दर सुदर्शना नामक कन्या उत्पन्न की। एक ब्राह्मण का रूप धारण अग्निदेव ने राजा दुर्योधन से सुदर्शना को माँगा किन्तु राजा ने अस्वीकार कर दिया। तब अग्निदेव रुष्ट हो कर राजा के आरम्भ हुये यज्ञ से अदृश्य हो गये। इससे दुःखी हो कर राजा ने ब्राह्मणों से इसका कारण पूछा। तब ब्राह्मणों ने अग्निदेव की शरण ली। अग्निदेव ने साक्षात् प्रकट हो कर ब्राह्मणों को राजा की पुत्री सुदर्शना से विवाह की इच्छा का उल्लेख किया। ब्राह्मणों ने अग्नि की बात सुन कर राजा से निवेदन किया तब राजा ने अग्नि का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। अपनी कन्या अग्नि को समर्पित करके राजा ने अग्नि से सदा अपने नगर में निवास करने का निवेदन किया। तभी से महिष्मती में अग्नि का निवास बना हुआ है। सहदेव ने

भी दक्षिण दिग्विजय के समय वहाँ अग्नि का साक्षात दर्शन किया था। सुदर्शना से विवाह के पश्चात अग्निदेव ने उसके गर्भ से सुदर्शन नामक पुत्र उत्पन्न किया जिसे बाल्यकाल में ही सर्वस्वरूप सनातन परब्रह्म का ज्ञान हो गया। सुदर्शन ने राजा ओघवत् की ओघवती नामक कन्या से विवाह किया और कुरुक्षेत्र में निवास करने लगे। राजा सुदर्शन ने गृहस्थ धर्म का पालन करते हुये ही मृत्यु को जीत लेने की प्रतिज्ञा की। उन्होंने अपनी पत्नी ओघवती से कहा कि वह अतिथि सेवा में तत्पर रहे और यदि इसमें उसे अपना शरीर भी देना पड़े तो उसे दे दे। एक दिन जब सुदर्शन समिधा लाने गये थे तब एक ब्राह्मण ने आकर ओघवती का आतिथ्य ग्रहण करते हुये उससे उसका शरीर माँगा। अपने पति के वचन को स्मरण करके ओघवती ने ब्राह्मण की बात स्वीकार कर लिया। तब ब्राह्मण ओघवती के साथ शयनकक्ष में चला गया। इतने में राजा सुदर्शन समिधा ले कर लौटे और अपनी पत्नी को पुकारने लगे। किन्तु ब्राह्मण के स्पर्श से अपवित्र हुई ओघवती ने लज्जावश अपने पति को उत्तर नहीं दिया। इधर मृत्यु भी अत्यन्त तत्परता से सुदर्शन में छिद्र ढूँढती हुई उनके पीछे लगी थी। सुदर्शन ने घर में आकर कोई क्रोध नहीं दिखाया। वह ब्राह्मण भी छद्मवेश में स्वयं धर्म थे जो सुदर्शन से अत्यन्त प्रसन्न हुये और उनसे कहा : 'तुमने मृत्यु पर विजय प्राप्त कर ली है। ओघवती भी तुम्हारे पुण्य और अपने सतीत्व के कारण अपवित्र नहीं हुई है। कोई भी ओघवती का पराभव नहीं कर सकेगा। जो बात तुम्हारे मुख से निकलेगी वह सदैव सत्य होगी। अपने तपोबल से युक्त यह ब्रह्मवादिनी नारी संसार को पवित्र करने के लिये अपने आधे शरीर से ओघवती नामक नदी होगी और आधे शरीर से तुम्हारी सेवा में रहेगी। योग सदा इसके वश में रहेगा। तुम भी सनातन लोक प्राप्त करोगे। इसी शरीर से उन दिव्य लोकों में जाओगे क्योंकि तुमने मृत्यु पर विजय प्राप्त कर ली है। अपने पराक्रम से तुम पञ्चभूतों को लाँघकर मन के समान वेगवान् हो गये हो।' भीष्म ने कहा कि तदनन्तर इन्द्रदेव श्वेत रंग का एक हजार घोड़ों से युक्त उत्तम रथ लेकर वहाँ आये। (१३.२)।

१. सुदामन् एक राजा का नाम है : २. २७, ११ (उत्तर दिग्विजय के समय अर्जुन ने इन्हें पराजित किया था); ७. २३, ४९

२. सुदामन्, दशार्ण के एक राजा का नाम है : ३. ६९, १४ (इनकी एक पुत्री का विदर्भ नरेश भीम से और दूसरी का चेदिराज वीरबाहु के साथ विवाह हुआ था)।

३. सुदामन् (बहु०) एक जाति का नाम है (६. ९, ५५)।

४. सुदामन्, पाण्डवपक्ष के एक योद्धा का नाम है : ७. २३, ४९ (इनके अश्वों का वर्णन्)।

सुदामा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १०)।

सुदास, कोसल देश के एक राजा का नाम है (१३. १६५, ५७)।

सुदिन, कुरुक्षेत्र की सीमा में स्थित एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १००)।

सुदिवातपिंड एक वानप्रस्थी ऋषि का नाम है जो वानप्रस्थधर्म का पालन करते हुये स्वर्गलोक को प्राप्त हुये (१२. २४४, १७-१८)।

सुदुर्जय महिष्मती के एक राजा (= दुर्जय) का नाम है : १३. २, १२ (सुवीर के पुत्र और दुर्योधन के पिता)। तुकी० दुर्जय।

सुदुश्चर = स्कन्द (३. २३२, ७)।

सुदृढ, एक स्थान का नाम है (६. ९, ५१)।

१. सुदेव, एक ब्राह्मण का नाम है : ३. ६८, ७. १०. २८. ३१-३३. ३६. ३९; ६९, १. १०. २७ (चेदिराज के महल में इन्होंने दमयन्ती को पहचान लिया); ७०, १५. १७. २२. २३. २७; ७१, १।

२. सुदेव, महाराज अम्बरीष के सेनापति का नाम है : १२. ९८, ५. १०. १२।

३. सुदेव, काशिराज हर्यश्व के पुत्र और दिवोदास के पिता का नाम है (१३. ३०, १३-२५)।

सुदेवतनय = दिवोदास (१३. ३०, ३५)।

१. सुदेवा, अङ्गराज की पुत्री का नाम है : १. ९५, २४ (अरिह की पत्नी)।

२. सुदेवा, दशार्हकुल की राजकुमारी का नाम है : १. ९५, ३६ (विकुण्ठन की पत्नी)।

सुदेष्ण, एक जातिका नाम है (६. ९, ४६)।

१. सुदेष्णा अङ्गराज बलि की भार्या का नाम है : १. १०४, ४५. ५०. ५१ (अङ्ग, वङ्ग, कलिङ्ग, पुण्ड्र और सुह्म की माता)।

२. सुदेष्णा, विराट की भार्या का नाम है : ४. ३, २१; ९, ९. २१. २२. ३५ (सैरन्ध्री के रूप में द्रौपदी इनकी सेवा में नियुक्त हुई); १४, २. ३. ६. ११; १५, १. २. ४. ९. १०. १६; १६, ४०. ४६. ४८. ५०; २०, १. २१. २२; २४, ८. २६ (इसका भाई कीचक द्रौपदी पर आसक्त हुआ किन्तु भीम के हाथों मारा गया); ७२, ३०। तुकी० कैकेयी।

सुद्युम्न, मनु वैवस्वत के पुत्र एक प्राचीन राजा का नाम है : २. ८, १६ (यम की सभा में); १२. २३, १६.१७. २८. २९. ३१. ३३ (लिखित के प्रति इनका न्याय); १३. १३७, १९ (लिखित के प्रति न्याय करने के कारण इन्होंने उत्तम लोक प्राप्त किया); १४७, २६ (मनु के वंश में इला ही सुद्युम्न हुई)।

सुद्दष्ट एक जाति का नाम है (६. ९, ५१)।

सुधनुस् एक कौरव योद्धा का नाम है : ७. १८, २० (अर्जुन पर आक्रमण करनेवाले संशप्तकों में यह भी था)।

१. सुधन्वन्, अङ्गिरा के वंश के एक ब्राह्मण का नाम है : २. ६८, ६६. ६९. ७१. ८६. ८७ (केशिनी के कारण इसकी विरोचन के साथ प्रतिद्वंद्विता); ५. ३३, १०३; ३५, ५. ८. १०-१६. १८-२२. २४-२७. २९-३१. ३५-३७ (केशिनी को लेकर विरोचन के साथ इसकी प्रतिद्वन्द्विता); १३. २६, ७ (यह (?) भीष्म को घेर कर खड़े ऋषियों के साथ था); ८५, १३१ (अङ्गिरा का आठवाँ पुत्र); ८६, २४ (स्कन्द को एक रथ और वाहन दिया (?)। तुकी० आङ्गिरस)।

२. सुधन्वन् एक कौरव योद्धा का नाम है : ७. १८, २२ (अर्जुन द्वारा मारे गये संशप्तकों में यह भी था)। तुकी० सुधनुस्।

३. सुधन्वन् एक पाञ्चाल राजकुमार का नाम है : ७. २३, ५५ (इसके अश्वों का वर्णन); १२२, ४३ (पाञ्चाल राजकुमार वीरकेतु के भाइयों में से एक। द्रोण पर आक्रमण किया)। तुकी० पाञ्चाल्य।

४. सुधन्वन्, एक प्राचीन राजा का नाम है : ७. ६२, १० (मान्धता ने इसे पराजित किया था)।

५. सुधन्वन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. सुधर्मन्, एक वृष्णि वंशी राजकुमार का नाम है : २. ४, २८ (युधिष्ठिर की सभा में). ३५ (इसने अर्जुन से धनुर्वेद की शिक्षा ग्रहण की थी)

२. सुधर्मन् दशार्ण देश के एक राजा का नाम है : २. २९, ५ (पूर्व दिग्विजय के समय भीमसेन ने इसे पराजित किया था)।

३. सुधर्मन् एक कौरव योद्धा का नाम है (७. १८, २०)।

४. सुधर्मन् एक पाण्डव योद्धा का नाम है (८. ७३, १०४)।

५. सुधर्मन् दुर्योधन के पुरोहित (नीलकण्ठी के अनुसार) का नाम है : ११. २६, २४. २७; १२. ४०, ५; ४४, १४।

१. सुधर्मा, मातलि की पत्नी का नाम है (५. ९७, १९. २१)।

२. सुधर्मा, यादवों की सभा का नाम है जो पहले देवताओं की थी किन्तु उनसे श्रीकृष्ण को प्राप्त हुई : १. २२०, १०; २. ३, २७ (दाशार्ही); १६. ७, ७।

सुधा, एक स्वादिष्ट पेय का नाम है : १. २२८, ३८; ३. १९२, १७. २०; ५. १०२, १३; १३. २५, १७; २६, ४९; ३१, २३; ६७, १२. १४; १०७, ८३. ९८. १०९. १२८।

१. सुनन्दा, राजा सार्वभौम की पत्नी का नाम है : १. ९५, १६ (कैकेयी)।

२. सुनन्दा, काशिराज सर्वसेन की पुत्री का नाम है : १. ९५, ३२ (यह भरत की पत्नी थी)।

३. सुनन्दा, प्रतीप की पत्नी का नाम है : १. ९५, ४४ (इसके पुत्रों का नाम देवापि, शान्तनु और बाह्लीक था)। तुकी० शैब्या

४. सुनन्दा चेदिराज सुबाहु की बहन का नाम है : ३. ६५, ७३. ७५; ६८, ८. ३३; ६९, १२।

सुनय (बहु०) एक जाति का द्योतक है (६. ९, ६४)।

सुनसा एक नदी का नाम है (६. ९, ३१)।

१. सुनाभ, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ११७, ५; ६. ८८, १२ (भीमसेन ने इसका वध किया था)।

२. सुनाभ, वरुण के मन्त्री का नाम है (२. ९, २८)।

३. सुनाभ एक पर्वत का नाम है : २. १०, ३२ (कुबेर की सभा में)।

१. सुनामन्, सुकेतु के पुत्र का नाम है : १. १८६, ९ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था)।

२. सुनामन्, कंस के भाई का नाम है (२. १४, ३४; ७. ११, ७)।

३. सुनामन्, गरुडपुत्र एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, २)।

४. सुनामन् स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ५९)।

सुनिश्चल = शिव (सहस्रनाम)।

१. सुनीथ, नीलकण्ठी के अनुसार एक मन्त्र का नाम है : १. ५८, २३-२६ (इस मन्त्र का स्मरण करने पर सर्पों का भय नहीं रहता)।

२ सुनीथ = शिशुपाल : १. १८७, १५; १८८, १९; २. ३९, ११. १४ (प्रमुखा गणाः); ५३, ६ (?)।

३. सुनीथ एक प्राचीन ऋषि का नाम है : २. ७, १६ (इन्द्र की सभा में)

४. सुनीथ दो भिन्न-भिन्न प्राचीन राजाओं का नाम है : २. ८, ११. १५ (यम की सभा में)।

५. सुनीथ, श्रीकृष्ण और जाम्बवती के पुत्र का नाम है (३. १८३. २८)।

सुनीथा, मृत्यु की मानसी कन्या, जो अपने रूप और गुण के लिये तीनों लोकों में विख्यात थी); १२. ५९, ९३ (अतिबल की पत्नी).।

१. सुनेत्र, सोमवंशी महाराज कुरु के वंशज धृतराष्ट्र के बारह पुत्रों में से एक का नाम है : (१. ९४, ५९-६०)

२. सुनेत्र गरुड पुत्र एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, २)।

१. सुन्द, उपसुन्द के भाई एक असुर का नाम है : १. २, १२०; २०८, १९. २२; २०९, ३ (यह निकुम्भ का पुत्र था). १८. २४; २१०, २६; २११, ७. २०; २१२, १३. १६ (सुन्द-उपसुन्द की कथा); ९. ३१, १४; ५५, ३० । तुकी० असुर, दैत्य (द्वि०); दैत्येन्द्र (द्वि०)।

२. सुन्द = विष्णु (सहस्रनाम)।

सुन्दर = विष्णु (सहस्रनाम)।

सुन्दरवंश (बहु०) एक जाति का नाम है (५. ७४, १५)।

सुन्दरिका एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, ५६)।

सुन्दरिकाह्लद एक तीर्थ का नाम है (१३. २५, २१)। देखिये पिछला शब्द भी।

सुन्दोपसुन्दोपाख्यान : नारदजी ने कहा : प्राचीन काल में निकुम्भ नामक एक प्रसिद्ध दैत्यराज हो चुका है। उसके दो महाबली और भयंकर पराक्रमी दो पुत्र हुये जिनका नाम सुन्द और उपसुन्द था। इन दोनों का एक ही निश्चय होता था तथा एक ही कार्य के लिये वे सदा सहमत रहते थे। उनके सुख और दुःख भी सदा एक ही प्रकार के थे और दोनों सदा साथ रहते थे। किसी समय तीनों लोकों पर विजय पाने की इच्छा से दोनों ने विन्ध्य पर्वत पर कठोर तपस्या आरम्भ की। इन दोनों की तपस्या के प्रभाव से दीर्घकाल तक संतप्त होने के कारण विन्ध्य पर्वत धूआँ छोड़ने लगा। देवताओं ने अनेक बार सुन्द और उपसुन्द की तपस्या को भंग करने का प्रयास किया किन्तु वे सफल नहीं हुये। देवों ने बार-बार रत्नों के ढेर तथा सुन्दरी स्त्रियों को भेज-भेज कर दोनों दैत्यों को प्रलोभन में डालने की चेष्टा की किन्तु उनका तप भंग नहीं हुआ। तत्पश्चात देवों ने उनके समक्ष माया का प्रयोग किया। उनकी माया से निर्मित बहनें, मातायें पत्नियाँ तथा अन्य आत्मीयजन राक्षसों से त्रस्त हो कर वहाँ आतीं और सुन्द तथा उपसुन्द से रक्षा की याचना करतीं किन्तु इस माया ने भी दोनों की तपस्या भंग करने में सफलता नहीं प्राप्त की। तब साक्षात् ब्रह्मा ने उन दैत्यों के समक्ष प्रकट होकर वर माँगने के लिये कहा। दैत्यों ने अमरत्व प्रदान करने का वर माँगा। ब्रह्माजी ने जब यह वरदान देना अस्वीकार कर दिया तब दूसरा वर माँगते हुये सुन्द और उपसुन्द बोले : 'हम दोनों में से एक दूसरे को छोड़ कर तीनों लोकों में जो कोई भी चर अथवा अचर भूत हैं उनसे हमें मृत्यु का भय न हो।' ब्रह्माजी ने इसे स्वीकार करते हुये दोनों को यह वरदान दे दिया। इस प्रकार वरदान प्राप्त कर दोनों दैत्य अपने नगर में आ कर सुखपूर्वक रहने लगे। दानों ने बहुमूल्य आभूषण और निर्मल वस्त्र धारण करके ऐसा प्रकाश फैलाया मानों असमय में ही चन्द्रमा निकल कर चाँदनी बिखेर रहे हों। इस प्रकार उनके राज्य में सदा दिन-रात एक जैसे प्रकाश रहने लगे (१. २०९)।

"अपने क्रूरतापूर्ण कर्म से सुन्द और उपसुन्द ने त्रिलोकी पर विजय प्राप्त कर ली। उनसे त्रस्त हो कर देवों ने ब्रह्मलोक में शरण ली तथा इन्द्रलोक पर दैत्यों का आधिपत्य हो गया। दैत्यों ने यक्षों राक्षसों, खेचरों, नागों और सागरों में निवास करनेवाले म्लेच्छों को भी पराजित कर दिया। देवताओं का बलवर्धन करने के लिये जो यज्ञ आदि कर रहे थे उनका भी दैत्यों ने वध कर दिया। सुन्द और उपसुन्द के इस भयानक कर्म को देख कर सूर्य, चन्द्रमा, ग्रह-नक्षत्र आदि सब अत्यन्त त्रस्त हो उठे। सभी दिशाओं को जीत कर ये दैत्य कुरुक्षेत्र में निवास करने लगे (१. २१०)।

"सम्पूर्ण देवर्षि, सिद्ध और महर्षि इस महान हत्याकाण्ड को देख कर अत्यन्त दुखी हुये और ब्रह्मा के धाम में गये। वहाँ उन लोगों ने ब्रह्माजी को देवताओं, सिद्धों और महर्षियों से सब ओर से घिरे हुये बैठे देखा। भगवान् महादेव, अग्नि, वायु, चन्द्रमा, सूर्य, इन्द्र, वैखानस, वालखिल्य, वानप्रस्थ, मरीचिप, अजन्मा, अविमूढ, तथा तेजोगर्भ आदि नाना प्रकार के तपस्वी मुनि भी ब्रह्मा के निकट उपस्थित थे। सभी ने दीन भाव से सुन्द और उपसुन्द के अत्याचार की कथा ब्रह्माजी को सुनाया। तब ब्रह्माजी ने तिलोत्तमा नामक अप्सरा को सुन्द और उपसुन्द के पास भेजा (१. २११)।

"एक दिन वे दोनों दैत्य जब विन्ध्य पर्वत पर विहार कर रहे थे तब तिलोत्तमा वहाँ उपस्थित हुई। तिलोत्तमा के देखते ही दोनों दैत्य काम-वेदना से व्यथित हो उठे। तब उस अप्सरा की एक बाँह सुन्द ने और दूसरी उपसुन्द ने पकड़ लिया। परिणामस्वरूप उन दोनों ने आपस में ही एक दूसरे पर क्रुद्ध हो कर गदाओं से युद्ध करना आरम्भ किया। इस युद्ध में गदाओं के परस्पर प्रहार से दोनों दैत्य आहत होकर पृथिवी पर गिर पड़े। इस प्रकार दोनों के मारे जाने पर भगवान् ब्रह्मा ने वहाँ आकर तिलोत्तमा को वर दिया कि जहाँ तक सूर्य की गति है उन सभी लोकों में वह विचरण कर सकेगी। ब्रह्मा ने इन्द्र का राज्य पुनः उन्हें सौंप दिया और अपने लोक वापस चले आये। (१. २१२)।

१. सुपर्ण = गरुड : १. ३, ५९; २३, २७; २४, १. २; २७, १. ३. १०; ३३, ८. २४ (नाम की व्युत्पत्ति); ३४, १६. २५; ३६, २५; २२७, २० (श्रीकृष्ण और अर्जुन से युद्ध किया); ३. १३१, १४; १४२, ५९; १६०, १५. २०; २६९, ५; ५. ७१, ५ (श्रीकृष्ण के साथ समीकृत); १०४, १७. २०; १०५, २; १०८, १; १०९, १; ११०, १; १११, १; ११२, १; ११३, २. ४. ८. १२. २२; ११४, १; ११५, १; ११९, ३. ११. २१. २४ (पन्नगाशनम्); १५६, १३; ६. ३, ८४; ६, १४ (सुमुखो··· सुपर्णस्यात्मजः); ९०, ८. २१ (सुपर्ण पतने यथा); ७. ७३, ७; ७६, ५; १२८, १० (इव वेगेन); १३४, ३३; १४७, ४६; ८. ३९, २३; ४१,६४; ७६, ३७; ८६, २०; १०. १, ३८; १२. २२८, १३; १३. १४, ९३; ८६,

२१; १४७, ५८ (कश्यपात्मजः); १५०, २६ (पतगेश्वरः); १६. ३, ६ (श्रीकृष्ण की ध्वजा पर)।

२. सुपर्ण दो देवगन्धर्वों का नाम है : १. ६५, ४२ (मुनि के पुत्र). ४७ (प्राधा के पुत्र)।

३. सुपर्ण एक असुर का नाम है : १. ६७, ३६ (राजा कालकीर्ति के रूप में जन्म लिया)।

४. सुपर्ण = सूर्य (३. ३, २५)।

५. सुपर्ण एक यजुस का नाम है : १२. ४७, ४४ (सुपर्ण यजुर्नामच्छन्दोगात्रस्त्रिवृच्छिराः)।

६. सुपर्ण एक ऋषि का नाम है : १२. ३४८, २०-२२ (इन्होंने स्वयं नारायण से नारायणधर्म की शिक्षा प्राप्त की थी)।

७. सुपर्ण = विष्णु (सहस्रनाम)।

८. सुपर्ण एक व्यूह का नाम है (७. २०, ४)।

९. सुपर्ण (बहु० °र्णाः) गरुड़वंशी पक्षियों का द्योतक है : १. ३, ५९; ६५, ५४; १८७, ७. १३; २२७, २० (?, अर्जुन तथा श्रीकृष्ण से युद्ध किया); २. ११, ५० (ब्रह्मा की सभा में). ५६; ३. ८५, ७२; १३९, १२; १५९, १९; १८८, १९; ५. १०१, १ (गरुडपुत्रों, सुपर्णों का उल्लेख); ७. १३७, २७; १५६, १९०; २०१, ७६. ८२; ५३, ३१ (भक्षयन्तः भुजङ्गमान्); ८८, १; ११. १६, २७; २६, २३; १२. ५२, ३१; ३४३, ६२; १३. १८, ७६; ८३, ८। तुकी० गरुड (बहु०)।

सुपर्णकेतु = श्रीकृष्ण (३. १७६, १५)।

सुपर्णी, स्वाहा के लिये प्रयुक्त हुआ है (३. २२५, १०; २२६, ७)।

सुपर्वण = शिव : १३. १७, १२० (सहस्रनाम)।

सुपार्श्व, युधिष्ठिर के समकालीन एक अथवा अधिक राजाओं का नाम है : १. ६७, २९ (कुपथ नामक असुर के अंश से उत्पन्न); २. ३०, ७ (दिग्विजय के समय पूर्व में भीमसेन द्वारा पराजित); ५. ४, १४।

सुप्रजा, भानु नामक अग्नि की एक पत्नी का नाम है (३. २२१, ९)।

सुप्रजापति = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

सुप्रतर्दन एक प्राचीन नरेश का नाम है : ४. ५६, ९. १० (अर्जुन और कृपाचार्य का युद्ध देखने के लिये इन्द्र के विमान में बैठ कर आये)।

सुप्रतिम एक प्राचीन राजा का नाम है (१. १, २३५)।

सुप्रतिष्ठा एक मातृका का नाम है (९. ४६, २९)।

१. सुप्रतीक एक प्राचीन राजा का नाम है (१. १, २३५)।

२. सुप्रतीक भगदत्त के एक गजराज का नाम है : १. २, २५७; ६. ९५, २४. ३४. ४५; ७. २६, २६।

३. सुप्रतीक, विभावसु के भाई एक महर्षि का नाम है। ये अपने भाई से धन बाँटने का आग्रह करते थे। अपने भाई के शाप से ये एक हाथी हो गये। इनके शाप से इनके भाई भी कछुआ हुये। अपने हाथी और कछुये के रूप में भी दोनों भाई आपस में संघर्ष करते रहे (१. २९)। १. २९, १६. १७. २२. २३। इन हाथी और कछुये दोनों को पकड़ कर गरुड ने भक्षण कर लिया (१. २९-३०)।

४. सुप्रतीक, दिग्गजों में से एक का नाम है : ५. ९९, १५ (इनके वंश में ऐरावण, वामन, कुमुद, और अञ्जन उत्पन्न हुये थे); ६. १२, ३४; ७. १२१, २५।

१. सुप्रभा एक नदी का नाम है : ९. ३८, ४. १३ (सप्तसरस्वतियों में से एक जो ब्रह्माजी द्वारा आहूत होने पर पुष्कर में प्रकट हुई)।

२. सुप्रभा एक मातृका का नाम है (९. ४६, १०)।

३. सुप्रभा वदान्य की पुत्री का नाम है : १३. १९, १२ (इसका अष्टावक्र के साथ विवाह हुआ था)। देखिये १३. २१, १८ भी।

सुप्रयोगा एक नदी का नाम है : ३. २२२, २५ (अग्नि की माताओं में से एक); ६. ९, २१।

सुप्रवृद्ध जयद्रथ के एक ध्वजवाहक का नाम है (३. २६५, १०)।

१. सुप्रसाद स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७१)।

२. सुप्रसाद = विष्णु (सहस्रनाम)।

सुप्रसादा एक मातृका का नाम है (९. ४६, १३)।

सुप्रिया एक अप्सरा का नाम है : १. ६५, ५१ (प्राधा की पुत्री); १२३, ६३ (अर्जुन के जन्मोत्सव के समय नृत्य किया)।

सुबन्धनविमोचन = शिव (सहस्रनाम)।

सुबभ्रु = श्रीकृष्ण (१२. ४३, १३)।

१. सुबल, एक प्राचीन राजा का नाम है (१. १, २३६)।

२. सुबल, शकुनि और गान्धारी के पिता गान्धाराज का नाम है : १. ६३, ११; ११०, ५. ११ (इन्होंने धृतराष्ट्र को विवाह में अपनी पुत्री प्रदान की); २. ३४, ६ (युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित हुये); ४५, ४९ (नकुल के साथ गये); ३. ३४, ३; ५. १४८, २८; ६. ९०, ३४. ३९; ९. २२, २४; २८, ५९. ६२; २९, ३४। तुकी० गान्धारराज।

३. सुबल, गरुडपुत्र एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, ३)।

४. सुबल = शिव (सहस्रनाम)।

सुबलदायाद = कालिकेय (७. ४९, ७)।

सुबलात्मज से सुबल के पुत्रों का तात्पर्य है : ६. ९०, ३९ (अर्थात गज, गवाक्षक, वृषभ, चर्मवत्, आर्जव, और शुक्र). ४१ (इरावत ने वृषभ को छोड़ कर अन्य सब का वध कर दिया)।

सुबान्धव = शिव (सहस्रनाम)।

१. सुबाहु एक नाग का नाम है (१. ३५, १४; ५. १०३, १६)।

२. सुबाहु एक अप्सरा का नाम है : १. ६५, ५० (प्राधा की पुत्री); १२३, ६३ (अर्जुन के जन्मोत्सव में नृत्य किया)।

३. सुबाहु युधिष्ठिर के समकालीन विभिन्न राजाओं का नाम है : १. ६७, २३-२४ (हर नामक असुर के अंश से उत्पन्न). ६० (क्रोधवशगण के अंश से उत्पन्न); ५. ४, १४ पाण्डवों की ओर से इसे रणनिमन्त्रण भेजने का निश्चय किया गया)।

४. सुबाहु, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७, ९४; ११७, ३; १३८, १९; ६. ९६, २६-२७ (भीष्म द्वारा पराजित धार्तराष्ट्रों में से एक); ७. २५, १३; ७४, १७; १७०, ६३; ८. ५१, ८ (भीमसेन पर आक्रमण करनेवाले बीस धृतराष्ट्रपुत्रों में यह भी था)।

५. सुबाहु काशी के एक राजा का नाम है : २. ३०, ६-७ (भीमसेन ने दिग्विजय के समय इन्हें पराजित किया था)।

६. सुबाहु नल के समकालीन चेदिराज का नाम है : ३. ६४, १३२; ६५, ४५। तुकी० चेदिपति, चेदिराज।

७. सुबाहु कुलिन्दराज का नाम है : ३. १४०, २४. २५; १७७, ११-१४। तुकी० किरातराजन्, कुलिन्दाधिपति।

८. सुबाहु एक कौरव योद्धा का नाम है : ७. १८, १७. १९. २० (अर्जुन से युद्ध करनेवाले संशप्तकों में यह भी था); ९. २, २०।

९. सुबाहु एक पाण्डव योद्धा का नाम है (७. ८३, ६)।

१०. सुबाहु स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७३)।

११. सुबाहु एक प्राचीन राजा का नाम है : १३. ११५, ६६ (ये कार्तिक मास में मांसभक्षण नहीं करते थे)।

सुबीज = शिव (सहस्रनाम)।

सुभग, शकुनि के भाई का नाम है (७. १५७, २६)।

१. सुभगा, एक अप्सरा का नाम है : १. ६५, ४६ (प्राधा की पुत्री)।

२. सुभगा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, १८)।

सुभद्र एक स्थान का नाम है (८. ४४, ८।

१. सुभद्रा, वसुदेव की पुत्री, श्रीकृष्ण की बहन, अर्जुन की पत्नी और अभिमन्यु की माता का नाम है : १. १, १५१; २, १२५. १२६. १५३; ६१, ४४ (अनुजा वासुदेवस्य). ४५; ६३, १२१ (अभिमन्युः सुभद्रायामर्जुनादभ्यजायत); ९५, ७८; २१९, १७ (सारणस्य सहोदरा); २२०, ६. ७. ९. २९ (अर्जुन ने इनका हरण किया); २२१, ६. १९. ४४

(अर्जुन और सुभद्रा का विवाह). ६५. ६६; २२२, २३; २. २, ५; २४, ५५; ४५, ५९; ३. २२, ४७ (श्रीकृष्ण इन्हें और इनके पुत्र अभिमन्यु को द्वारका लाये); ८०, २८; १८३, १४. २७; २३५, १२; ४. ४९, ६; ७. ३५, २७; ५१, ८. १० (अभिमन्यु का वध हुआ); ७२, २५. ५२. ५६. ५७; ७७, ९ (श्रीकृष्ण ने इन्हें सान्त्वना दी); ७८, १. ३६. ४०; १२७, २४; १४३, ६१; ११. २०, १५; १४. ५२, २८. ५५ (श्रीकृष्ण के साथ द्वारका गईं); ६१, ४. १०. २४. ३३. ४१; ६६, ४. १३. १८; ६७, १; ७०, ६; ८८, ३. ४; १५. १, ९; २१, १५; २९, १९. ३६. ४२; १७ १, ७।

तुकी० इनके निम्नलिखित पर्याय :—

अभिमन्युजननी : ८. ८७, ११६।

भद्रा : १. २१९, १४; २२१, २१. २२. २४; २. २, ५; ८. ३१, २; १५. १६, ३०।

माधवी, यदुनन्दनी, यादवी, वसुदेवसुता वार्ष्णेयी वासुदेव-सहोदरा, सात्वतात्मजा, सात्वती — देखिये वस्था०।

२. सुभद्रा एक गाय का नाम है (५. १०२, ९)।

सुभद्राहरण : १. २, ४५. ४६. ८८।

सुभद्राहरणपर्व, महाभारत के १७ वें अवान्तर पर्व का नाम है : कुछ समय बीतने पर रैवत पवत पर वृष्णि और अन्धकवंश के लोगों का एक भारी उत्सव हुआ (पर्वत और उत्सव की शोभा का वर्णन)। बलराम जी वहाँ रेवती के साथ हर्षोन्मत्त होकर विचर रहे थे और उनके पीछे गन्धर्व गायक चल रहे थे। अपनी १,००० पत्नियों सहित उग्रसेन, रौक्मिणेय, शाम्ब, अक्रूर, सारण, गद, बभ्रु, विदूरथ, निशठ, चारुदेष्ण, पृथु, विपृथु, सत्यक, सात्यकि, हार्दिक्य, उद्धव आदि भी वहाँ उपस्थित थे। उस समय अर्जुन भी भगवान् श्रीकृष्ण के साथ विचरण कर रहे थे। सुन्दर वस्त्रों से अलंकृत सुभद्रा को देख कर अर्जुन मोहित हो गये। सुभद्रा श्रीकृष्ण की बहन और वसुदेव की पुत्री थी। अर्जुन की इच्छा को जान कर श्रीकृष्ण ने उनसे सुभद्रा का हरण कर लेने का प्रस्ताव किया क्योंकि स्वयंवर के आयोजन की कोई सम्भावना नहीं प्रतीत हो रही थी। अर्जुन ने युधिष्ठिर के पास एक दूत भेज कर सुभद्राहरण की अनुमति माँगी (१. २१९)।

"युधिष्ठिर की आज्ञा मिल जाने पर अर्जुन अपने शैब्य और सुग्रीव आदि अश्वों से जुते रथ पर बैठ कर रैवतक पर्वत पर शिकार खेलने के बहाने गये। जब सुभद्रा रैवत पवत से लौट रही थी तब अर्जुन ने उसे बलपूर्वक रथ पर बैठा लिया और इन्द्रप्रस्थ की ओर चल पड़े। सुभद्रा का हरण होते देख कर उसके साथ के सेवकगण शोर मचाते हुये द्वारका की ओर दौड़ पड़े। उन लोगों ने सुधर्मा नामक सभा में आकर सभापाल को अर्जुन द्वारा सुभद्रा के हरण का समाचर सुनाया। उनकी बात सुन कर सभापाल ने सबको युद्ध के लिये तैयार होने की सूचना देने के उद्देश्य से नगाड़ा बजाया जिसे सुन कर वृष्णि, अन्धक, तथा भोज वंश के वीर क्षुब्ध हो कर चारों ओर से दौड़ पड़े। जब सभी लोग एकत्र हो कर गर्जना करने लगे तब बलरामजी ने सब को शान्त करते हुये इस सम्बन्ध में श्रीकृष्ण का विचार जानने का परामर्श दिया। बलरामजी के इस प्रस्ताव पर जब श्रीकृष्ण मौन हो गये तब क्रुद्ध हो कर बलरामजी अर्जुन के कृत्य की भर्त्सना करने लगे (१. २२०)।

सुभव : ३. २६५, ९ (इक्ष्वाकुराड्सुभवस्य पुत्रः)।

सुभा महर्षि अङ्गिरा की पत्नी का नाम है : ३. २१८, १-२ (इसके गर्भ से बृहत्कीर्ति आदि सात पुत्र उत्पन्न हुये)।

सुभीम, तप नामक पाञ्चजन्य अग्नि के पुत्र का नाम है : ३. २२०, ११ (ये यज्ञ में विघ्न डालनेवाले पन्द्रह उत्तरदेवों में से एक हैं)।

सुभुज = विष्णु (सहस्रनाम)

सुभूमिक, सरस्वी-तटवर्ती एक प्राचीन तीर्थ का नाम है (९. ३७, २-८)।

सुभूमिका — देखिये सुभूमिक।

सुभ्राज , देवभ्राज् के पुत्र का नाम है : १. १, ४३ (दशज्योति, शतज्योति और सहस्रज्योति के पिता।

सुभ्राज स्कन्द के एक पार्षद का नाम है : ९. ४५, ३१ (सूर्य ने स्कन्द को दिया था)।

सुभ्रू एक मातृका का नाम है (९. ४६, ८)।

सुमंगला एक मातृका का नाम है (९. ४६, १२)।

सुमणि, चन्द्रमा द्वारा स्कन्द को प्रदान किये गये दो पार्षदों में से एक का नाम है (९. ४५, ३२)।

सुमण्डल एक राजा का नाम है : २. २६, ४ (उत्तर दिग्विजय के समय अर्जुन ने पराजित किया था)॥

१. सुमति एक असुर का नाम है : २. ९, १३ (वरुण की सभा में)।

२. सुमति एक ऋषि का नाम है जो शरशय्या पर पड़े भीष्म के देखने आये (१३. २६, ४)।

सुमन एक गन्धर्व (?) का नाम है : २. ७, २२ (इन्द्र की सभा में)।

१. सुमानस् एक राजा का नाम है : २. ४, २५ (युधिष्ठिर की सभा में)।

२. सुमनस् , एक प्राचीन राजा का नाम है : २. ८, १२ (यम की सभा में)।

३. सुमनस् एक असुर का नाम है : २. ९, १३ (वरुण की सभा में)।

सुमना, देवलोक-निवासिनी केकयराज की पुत्री का नाम है जिसने शाण्डिलीदेवी से उनकी साधना के विषय में प्रश्न पूछा था (१३. १२३, ३-६)।

सुमनाख्य एक नाग का नाम है (१. ३५, ८)।

सुमनोमुख एक कश्यपवंशी नाग का नाम है (५. १०३, १२)।

सुमन्तु, महर्षि व्यास के शिष्य एक ऋषि का नाम है : १. ६३, ८९ (व्यासजी ने इन्हें सम्पूर्ण वेदों और पाँचवें वेद महाभारत का अध्यन कराया); २. ४, ११ (युधिष्ठिर की सभा में); १२. ४७, ५ (भीष्म को देखने आये); ३१८, २०; ३२७, २७; ३४०, १९; ३४९, ११।

सुमन्यु एक प्राचीन नरेश का नाम है (१३. १३७, २२)।

सुमल्लिक (बहु०) एक जाति का नाम है (६. ९, ५५)।

सुमहाबल, एक प्राचीन राजा का नाम है : २. ८, १३ (यम की सभा में)।

सुमहास्वन = शिव (सहस्रनाम)।

१. सुमित्र एक प्राचीन राजा का नाम है (१. १, २३६)।

२. सुमित्र युधिष्ठिर के समकालीन एक अथवा अधिक राजाओं का नाम है : १. ६७. ६३ (क्रोधवशगण संज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न); १३९, २३ (दत्तमित्र के नाम से भी विख्यात। अर्जुन ने पराजित किया); २. ४, २५ (युधिष्ठिर की सभा में); २९, १० (भीमसेन ने दिग्विजय के समय इन्हें पराजित किया); ३१, ४ (सहदेव ने पराजित किया)।

३. सुमित्र एक मुनि का नाम है : २. ४, १० (युधिष्ठिर की सभा में)

४. सुमित्र, पाञ्चजन्य नामक अग्नि के पुत्र का नाम है : ३. २२०, १२ (ये यज्ञ में विघ्न डालनेवाले पन्द्रह उत्तरदेवों में से एक थे)।

५. सुमित्र अभिमन्यु के सारथि का नाम है : ७. ३५, ३१; ३६, १०। तुकी० सूतज।

६. सुमित्र, हैहयवंशी एक नरेश का नाम है : १२. १२५, ८. ९; १२६, ८; १२८, २५ (ऋषभ ने इसे उपदेश दिया)।

सुमित्रा, महाराज दशरथ की एक रानी का नाम है : ३. २७४, ८ (लक्ष्मण और शत्रुघ्न का की माता नाम है); २७७, ३६ (ये भरत के साथ श्रीरामको लौटाने चित्रकूट गयीं।

सुमीढ, सुहोत्र के द्वितीय पुत्र का नाम है (१. ९४, ३०)।

१. सुमुख एक नाग का नाम है : १. ३५, १४; ५. १०३, २३

(ऐरावत वंश में उत्पन्न, आर्यक का पौत्र और चिकुर का पुत्र); १०४, ६. ११. १८. २१. २२. २५ (गुणकेशी से विवाह किया । यह गरुड का भक्ष्य था और इन्द्र ने इसे दीर्घायु बनाया); १०५, ३१ (भगवान् विष्णु ने इसे पैर के अँगूठे से उठा कर गरुड की छाती पर रख दिया था । तभी से गरुड इसे सदा लिये रहते हैं) ।

२. सुमुख, गरुड के पुत्र-पौत्रों में से एक या अधिक सुपर्णों का नाम १ : ५. १०१, २. १२; ६. ६, १४ ।

३. सुमुख एक ऋषि का नाम है : २. ५, ११ (नारद के साथ) ।

४. सुमुख धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (७. १२७, ३४) ।

५. सुमुख = शिव (सहस्रनाम) । = विष्णु (सहस्रनाम) ।

१. सुमुखी एक अप्सरा का नाम है (१३. १९, ४५) ।

२. सुमुखी, कर्ण के सर्पमुख बाण में प्रविष्ट अश्वसेन नामक नाग की माता का नाम है (८. ९०; ४२) ।

सुमीढ़, सुहोत्र के द्वितीय पुत्र का नाम है (१. ९४, ३०) ।

सुमेधस् = विष्णु (सहस्रनाम) ।

सुमेरु = मेरु (६. ५०, ४६) ।

सुयजुस् , भुमन्यु के पुत्र का नाम है (१. ९४, २४) ।

सुयज्ञा एक राजकुमारी का नाम है : १. ९५, २० (प्रसेनजित् की पुत्री और महाभौम की पत्नी) ।

सुयशा, बाहुदराज की पुत्री का नाम है : १. ९५, ४१. ४२ (अनाश्व-पुत्र परीक्षित के साथ विवाहित । इसके गर्भ से भीमसेन का जन्म हुआ) ।

सुयाम (बहु०) देवताओं के एक वर्ग का नाम है (१३. १८, ७४) ।

सुयामुन = विष्णु (सहस्रनाम) ।

सुयुक्त = शिव (सहस्रनाम) ।

सुयोधन — देखिये दुर्योधन ।

१. सुर (अधिकांशतः बहु० °राः) देवताओं का द्योतक है : १. १, १७. २७२; २, २६०. ३७६; १७, ९. १२; १८, ९. ११. १६. १८. १९. २७. ३७; १९, ५. ११. २५. २९. ३०; २३, २३; २४, ८; ३०, ४८. ५०-५२; ३२, २. १०; ४८, ४; ५४, १०. ११; ६४, ४४; ६५, १. ९. ३८; ६६, ३४. ४३. ५२; ६७, ११३. ११५. ११९; ७४, १७; ७६, ५. ८. ९; ८९, १. २१; ९६, ३. ५; ९७, ३२; १००, ३६. ३७; १०१, ७; १०५, ३७; १०६, २३; ११८, २३; १२७, ४; १५४, ३; १६७, ४९; १८१, २८; २१०, ६; २२५, ३०; २२७, ३०. ३१. ४२; २२८, १३. २०. २१. २६; २. ५, २. ७; २०, २; ३६, १८; ३. ३, २९; २५, ५; ३६, ३२; ३९, ४०; ४१, १३; ४६, २९; ४७, १२. १६; ४९, १९; ५४, १३; ५५, २५; ५६, २८. २९; ७५, २५; ८०, २०; ८२, ३४; ८३, ११९. १२०. १२७. १२९; ९१, १७; ९४, ७; १००, ४. ६. २०. २१. २२, १०१, १७; १०३, ६. १५; १०४, ८. ११. १६; १०५, ७. १८; १०७, ९; ११२, १; ११५, २९. ३२; ११८, ३. ९; ११९, २१; १२३, ११. २४; १२४, २०; १२८, १५; १३४, ६; १३५, १९. ४८; १४६, २१; १४८, ७; १५८, ७; १६१, ४५; १६५, १३; १६७, ५६; १६८, १६. १७. ४८. ४९. ६३; १७१, १७; १७२, २८. ३२; १७३, ९. १६. ५९. ६०; १७५, १७. १८; १७७, ९; १८३, ८५. ९३; १८९, २८. ४६; २०१, १४; २२२, १८; २२४, ६; २२७, ९; २३१, ३३. ८५. १०९; २३२, ७. १३. १७. १९; २४६, ८; २७६, ११; २९२, ३; ३०६, २०; ३०८, १५; ४. १२, १०; ३९, ११; ४३, ८; ५६, ३. १८; ६८, ४४; ७१, १७; ५. १, १४; ९, ५५; १०, १३; १२, १८. २३. २६. ३०; १३, १७; ४७, १०; ४९, २०; ५२, ११; ७८, ७; ९८, १४. १६; ९९, ४. १; १०७, १५; १०८, ७. ८. ११; १०९, १२; ११२, ३; ११५, ११; १२४, ५०; १५६, २०; ६. २१, १५. १६; २६, ८; ३४, २; ३५, २१; ६५, ४२. ५९; ६६, २४. १८. २३. ४१; ८३, ५; ८५, ३०; १०७, ७५. ७६; ७. ७, ६; १२, २८; १६, १६; २१, ३७; २९, २४; ३३, ११; ३७, ३७; ४८, ३०; ४९, २; ५१, २१; ५९, ६; ६०, ९; ७३, ४८; ७७, २६; ९६, ३६. ४९. ५२; १०२, ९; ११०, ८४; १११, ३०; १४०, २; १४३, ४८; १५५, ४४; १५६, ३३. १९०; १५८, ६०; १५९, ७; १६३, ३४. ३६; १७३, ४०; १७५, ९९; १८१, ७. २१. २२; १८२, ३८; १८५, ७. १९. २६; २०१, ७२; २०२, ५१. ५४. ५५. ६१. ६६. ८०. ८४. ८७. ९१. १००; ८. ३०, ७; ३१, ६९; ३३, २४. ३२; ३४, २३. ११७; ३७, ३६; ४२, १७; ४५, ३२; ४६, ७७; ७२, ३६; ७३, ८; ७४, ५५; ८२, २८; ८६, १; ८८, ५. ९. १८; ८९, ५०; ९०, ३६; ९१, २८; ९४, ५३; ९. ५, ४०; ७, ३. ११; ३६, ३९; ३८, ४१. ४३. ५४; ४०, ३०; ४२, ७; ४५, ९६; ४६, ५५. १०४. १०५; ४७, ४. १५. २९; ५१, २७. २८; ५३, १६. २३; १०. १८, १५; १२. ४७, ३६; ५९, २८; ६४, १८; १२१, ४. ५८; १५२, ३२; १६२, ४३. ४४; १६९, १५; १७३, १७; १४२, २६; २०८, १८. २१; २०९, १५. ३४; २११, ५; २१५, १०; २२८, ८९; २८३, २६. २७. ४५; २८४, ४७. ४८; २८९, २. ३. ७; ३३१, ५४; ३३४, १२. १७; ३३६, १६. ५७; ३३७, १५; ३३९, ५२. ६३. ६५. ७९. ८८. १२४. १२७; ३४०, ७. ६१. ८१. ८३. ८९. ९६; ३४२, २२. ९०; ३४३, ४. १५; ३४४, २१; ३४५, १०; ३४९, ३२; ३५०, २०; ३६०. ३; १३. ३, १०; १४, ८१. ११८. २१२. २२३. २३०, २३१. २८२. ३३६. ३६८. ४०६. ४२५; १७. ८; २६, ४९. ६५; ६६, २५; ७३, ५१; ८४, ७४; ८५, १. ४. ८. २०. २७; ९२, ६; १००, ३५; १३९, १५; १४१, १०२; १४४, १; १४६, ११. ३२; १४७, १०. ५१; १४८, २१. २५; १४९, १३५; १५५, ११; १५६, १९. २३; १५८, १२. १९; १६०, १०. १३. १४. ३६; १६५, २९; १६७, ३७; १४. ३, ६. ७; ५, १९; १५. २५, ९; ३१, ५; १८. १, १४; २, ७. १२ । तुकी० सुरशत्रु इत्यादि ।

सुरकृत् , विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५७) ।

सुरगण = शिव (सहस्रनाम) ।

सुरगणश्रेष्ठ = विष्णु (५. १३, १३) ।

सुरगणेश्वर — देखिये इन्द्र ।

१. सुरगुरु = ब्रह्मा : १. १, ३२ (?); ६४, ५० ।

२. सुरगुरु = बृहस्पति : ७. १३७, ३५; १३. ११३, ११ ।

३. सुरगुरु = : ३. २७२, ३१; ७. १४९, १९ ।

सुरघातिन् = वृत्र (७. ९४, ६३) ।

सुरजा एक अप्सरा का नाम है : १. ६५, ५० (प्राधा की पुत्री ।

सुरता, एक अप्सरा का नाम है : १. ६५, ५० (प्रधा की पुत्री) ।

१. सुरथ एक राजा का नाम है : १. ६७, ६२ (क्रोधवश संज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न) ।

२. सुरथ एक प्राचीन राजा का नाम है : २. ८, ११ (यम की सभा में) ।

३. सुरथ, कोटिकास्य के पिता का नाम है : ३. २६५, ६; २६६, ४ ।

४. सुरथ जयद्रथ के एक अनुचर, त्रिगर्त देश के राजा का नाम है : ३. २७१, १८. २० (नकुल ने इसका वध किया) ।

५. सुरथ एक कौरव योद्धा का नाम है : ७. १८, २० (अर्जुन से युद्ध करनेवाले संशप्तकों में से एक) ।

६. सुरथ द्रुपद के एक पुत्र का नाम है : ७. १५६, १८० (अश्वत्थामा ने इसका वध किया था) ।

७. सुरथ, पाण्डवपक्ष के एक पाञ्चाल योद्धा का नाम है : ९. १४, ३६. ३७. ३९. ४१ (अश्वत्थामा ने इसका वध किया) ।

८. सुरथ जयद्रथ के एक पुत्र का नाम है : १४. ७८, २३ (दुःशला के गर्भ से उत्पन्न). ३६ (अर्जुन के सिन्धु देश में पहुंचने का समाचार सुन कर प्राण त्याग दिया) ।

सुरथाकार कुशद्वीप के तीसरे वर्ष का नाम है (६. १२, १३) ।

सुरद्विष (बहु० °षाः) : = असुर : १. ७६, ४८; ३. १७३, १७. ७९. ८३; १२. १६६, ४४ । एक० : ३. २९१, १९; ७. २९, ३८ (भगदत्त) ।

सुरनदी = गङ्गा (६. ८३, ५)।

सुरनाथ = विष्णु (नारायण) : १. ६४, ५३ ।

सुरपति = इन्द्र (देखिये वस्था०) । = नहुष (देखिये वस्था०) । = विष्णु : १२. ३३७, ३० ।

सुरपुङ्गव = इन्द्र (देखिये वस्था०) ।

सुरपुर : १२. ५२, ३४

सुरप्रवीर पाञ्चजन्य नामक अग्नि के पुत्र का नाम है : ३. २२०, १३ (यज्ञ में विघ्न डालनेवाले पन्द्रह उत्तरदेवों में से एक) ।

१. सुरभि अथवा सुरभी एक दिव्य गाय का नाम है : १. ६६, ६२ (क्रोधवशा की पुत्री). ६७ (रोहिणी, गान्धर्वी, विमला और अनला की माता); ९९, ८ (कश्यप से इसने नन्दिनी नामक गाय को उत्पन्न किया जो वसिष्ठ की होमधेनु बनी); २. ११, ४० (ब्रह्मा की सभा में); ३. ९, ४. ७. ९. १६. १७ (इन्द्र के साथ इसका संवाद); ३. २३०, ३३ (गवां माता तु या प्राज्ञैः कथ्यते सुरभिर्नृप । शकुनिस्तामथारुह्य सह भुंक्ते शिशून् भुवि); ५. १०२, १ (माता गवाममृतसंभवा). १३ (क्षरते पयः); ११०, १० (क्षरते पयः); १२. १७३, ३ (देवी दाक्षायणी शुभा'''पयस्विनी); १३. १४, १२५; ७७, १७. १८ (सौरभेय नामक गायों की माता); ८३, २८ (दक्षस्य दुहिता देवी सुरभी). ३४. ३५ (तपस्या की); ९४, ४१; १४१, १०; १६५, १२ । तुकी० दाक्षायणी । बहु० : १३. ७८, २३; ८३, २४ ।

२. सुरभि = शिव (सहस्रनाम)

सुरभिमत् एक अग्नि का नाम है (३. २२१, २८) ।

सुरभीपट्टन एक नगर का नाम है : २. ३१, ६८ (दक्षिण दिग्विजय के समय सहदेव ने इसे जीता था) ।

सुरभ्याख्यान से सुरभि की कथा का तात्पर्य है : १. २, १४८ (३. ९ में यह आख्यान मिलता है) ।

सुरराज् = इन्द्र (देखिये वस्था०) : ७. २, ३७ ।

सुरराज = इन्द्र (देखिये वस्था०) । = श्रीकृष्ण (१२. ४३, ११) ।

सुरराजपुत्र = अर्जुन (८. ७०, २३) ।

सुरर्षभ = इन्द्र : १२. १२४, २४; २२८, ८९ । = शिव : १२. २८१, ३९ । = स्कन्द : ३. २३०, १७ ।

सुरर्षि (बहु० °यः) = देवर्षि : १. ८८, ४; ३. १२९, २१; १६८, ४३; १९७, २७; ६. ९४, ३१; १२. १६६, २९; २८३, १८; ३४०, ३८; १३. १६, २७. ७२; २३, १; ३०, ३३; ८५, ३; १११, १३३; १४. ९०. ८४ । एक० = नारद : १. १. २३०; २, १८७; ३. १९८, ३; १२. ४७, ५; ८१, २; ३४३, ९ ।

सुरलोक : १. ८९, १; ६. ६६, ४१; १२. ९८, ३; १३. ६६, २८; ९४, १०; १०३, ५; १३७, ८ ।

सुरवर = शिव (७. २०२, ४५) ।

सुरवरोत्तम = विष्णु (३. २०३, ३१) ।

सुरवर्चस् पाञ्चजन्य नामक अग्नि के पुत्र : ३. २२०, १३ (यज्ञ में विघ्न डालनेवाले पन्द्रह उत्तरदेवों में से एक) ।

सुरविद्विप (बहु० °षाः) = असुर (३. १०४, १८) ।

सुरवीथि इन्द्रलोक में प्रसिद्ध नक्षत्रमार्ग का नाम है (३. ४३, १२) ।

सुरशत्रु (बहु० °त्रवः) = असुर : १. २, १८५; ३. १८८, १२१; ८. ३४, ९७; ९. ४६, १०२; १३. ८५, १० । एक० : ३. २०४, ३३, (धुन्धु); ९. ४६, ८३ (बाण) ।

सुरश्रेष्ठ = ब्रह्मा : ७. ९४, ५१ । = शिव : १२. २८४, १२५. १६० (सहस्रनाम); १४. ६३, १९ । = इन्द्र : १. ७१, ३८; ३. ९१, १६; १४२, ७; ९. ४८, ३०; १३. ६२, ७८ । = नारायण (विष्णु): १२. ३४१, ३१ । = स्कन्द : ३. २२९, ३१ । = सूर्य : ३. ३०२, १० ।

सुरश्रेष्ठा = दुर्गा (४. ६, १५) ।

सुरस एक नाग का नाम है : ५. १०३, १६ (कश्यपवंश में उत्पन्न) ।

सुरसत्तम = ब्रह्मा : १४. ४९, १३ । = शिव : १२. २८९, १०; १३. १४, ३५३; १८, ४२; ८४, ७० । = गरुड : १. २३, १७ (विष्णु) । = इन्द्र : ५. १४, ५; १२. २९, ६४; १०३, ५३; १३. १४, २०८ (इन्द्र के रूप में शिव); ८३, २४ । = विष्णु : १. २३, १७; ३. २०३, ३२ ।

१. सुरसा, क्रोधवशा की क्रोधजनित कन्या और नागपन्नगों की माता का नाम है : १. ६६, ६१. ७०; २. ११, ३९ (ब्रह्मा की सभा में); ५. १०३, ४ ।

२. सुरसा, एक अप्सरा का नाम है : १. १२३, ६३ (अर्जुन के जन्मोत्सव के समय नृत्य किया) ।

सुरसूनु = अर्जुन (३. ८९, ७) ।

सुरा, एक देवी का नाम है : १. १८, ३५ (समुद्रमन्थन के समय समुद्र से प्रकट हुई). ३७; ६६, ५२ (ये वरुण के द्वारा देवी के गर्भ से उत्पन्न हुई थीं); २. ११, ४२ (ब्रह्मा की सभा में)

सुराधिप = इन्द्र (देखिये वस्था०) । = नहुष (देखिये वस्था०) । बहु० : १२. २२७, ३९ ।

सुराध्यक्ष = शिव (सहस्रनाम) । = विष्णु (सहस्रनाम) ।

सुरानन्द = विष्णु (सहस्रनाम) ।

सुरानां पतिः = इन्द्र (८. ३४, ३२) ।

सुरानां हन्तृ, पाञ्चजन्य नामक अग्नि के पुत्र का नाम है : ३. २२०, १३ (यज्ञ में विघ्न डालनेवाले पन्द्रह उत्तरदेवों में से एक) ।

१. सुरारि एक राजा का नाम है (५. ४, १५) ।

२. सुरारि (बहु०) = असुर (बहु०): ३. २२५, २१; ९. ४२, ७; ४५, २६; १२. ११३, ३; ३४९, ३८; १३. १४, ३१२ । एक० : ३. १००, २४ (वृष); २७२, ५७ (हिरण्यकशिपु) ।

सुरारिघ्न = विष्णु : १. ६४, ५२; ३. २२५, २५ ।

सुरारिहन् = इन्द्र (देखिये वस्था०) । = शिव (सहस्रनाम) । = विष्णु (सहस्रनाम) ।

सुराव एक अश्व का नाम है : ३. ९९, १७ (इल्वल ने अगस्त्यजी को दिया) ।

सुराष्ट्र (बहु०) : २. ३१, ६१ (सौराष्ट्र देश पर सहदेव ने विजय प्राप्त की); ३. ८८, १९ (धौम्य ने इस देश के तीर्थों का वर्णन किया); ४. १, १२; ५. ७४, १४; ८. ४५, २८; १४. ८३, १२ ।

सुराष्ट्रक = सुराष्ट्र (बहु०): ६. २०, १४ ।

सुराष्ट्राधिपति = आकृति : २. ३१, ६२

सुरासुर : ३. ८३, १२७; ९. ३८, ५०; १८. ६, ९ । तुकी० देवासुर ।

सुरासुरगुरु = (शिव : १३. १४, २. १८२. २१६. ३४३ । = श्रीकृष्ण (विष्णु): १२. ३३७, २१ (नारायण); १३. १४, १८ ।

सुरासुरपति = ब्रह्मा (५. ८३, ६५) ।

सुरासुरेश = शिव (१३. १४, ३११) ।

सुरुच , गरुडपुत्र एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, ३) ।

सुरुचि = विष्णु (सहस्रनाम) ।

सुरूप = शिव : १३. १७, ४४ (सहस्रनाम) ।

सुरूपा, सुरभि की एक धेनुस्वरूपा पुत्री का नाम है : ५. १०२, ८ (यह पूर्व दिशा को धारण करनेवाली है) ।

सुरेणु, एक नदी का नाम है : ९. ३८, ४. २६. २९ (दक्षयज्ञ के समय गङ्गाद्वार में प्रकट हुई) ।

सुरेतर = असुर : ८. ३३, ३९. ४५ ।

सुरेन्द्र = इन्द्र (देखिये वस्था०) । = नहुष (देखिये वस्था०)= शिव : १३. १४, २९४ ।

सुरेन्द्रलोक = इन्द्रलोक (६. ३३, २०) ।

सुरेश = अग्नि : २. ३१, ४३ । = ब्रह्मा : १३. १०३, ३५ । = शिव : ७. २०२, ४३; १२. २८३, ३७ । = इन्द्र : ३. ४६, ३२; ७. ५१, १०;

१४९, १५; ८. ८९, ५; ९४, ६८; १३. १४, ४. २२९ (इन्द्र के रूप में शिव)। = विष्णु : ३. १४२, ३०; १३. १४९, २३ (सहस्रनाम)। = यम : ३. २९७, २९। = विश्वेदेव : १३. ९१, ३५।

सुरेश्वर = अग्नि : २. ३१, ४६। = शिव : १. २२३, ४४; १३. १४, १९९. ३५२; १४०, २ (वृषभांकः)। = इन्द्र : १. ७१, ३३; १३०, ६; २२६, १८; ३. ३८, १०; ९१, ५; १७३, ६०; २०४, १६; २२७, ३; २२९, ८. ९; २४४, १५; २४६, ५; ३०१, १३; ५. २२१, ११; १४७, २५; ६. ६, १९; ७. ९४, ६३; १८५, १५; ८. ९०, ३५; १२. ६५, १६; १७३, ११; २२६, ६; २२७, ४४; २८१, ३५. ३७; १३. १२, ५; ४०, २२; ७३, १६; १५६, १९; १७. ३, ३। = नहुष : ५. १२, ३. ९; १३, ४; १३. ९९, ९। = नर : ३. २७२, २९। = विष्णु : ५. १३, २० (?); १३. १४९, ४४ (सहस्रनाम)। = रुद्र : १२. २०८, १९।

सुरेश्वरी = दुर्गा (उमा): ४. ६, २५।

सुरोचना एक मातृका का नाम है (९. ४६, २९)।

सुरोत्तम = ब्रह्मा : ७. ५४, ५८। इन्द्र ; १. २५, १२; १२. ९६, १९; १०३, २४. ३२। = श्रीकृष्ण (विष्णु) : ३. २०३, २५; १२. ४७, ९७; ५१, ९; १३. १४, १३३। = स्कन्द : ३. २२९, ७. ४६। = वायु : १. १२३, १३। द्वि० = अश्विनीकुमार : ३. १२३, ४।

सुरोमन् एक नाग का नाम है : १. ५७, १० (तक्षक के कुल में उत्पन्न)।

सुलभ = विष्णु (सहस्रनाम)।

सुलभा, एक कुमारी संन्यसिनी का नाम है : १२. ३२०, ३. ७. १६. ७६. ७७. ७८. १८१ (जनक और सुलभा का संवाद)।

सुलभा-जनकसंवाद – "भीष्म ने युधिष्ठिर से कहा : प्राचीनकाल में मिथिलापुरी में एक राजा जनक रहते थे जो धर्मध्वज के नाम से प्रसिद्ध थे। उन्हें गृहस्थाश्रम में रहते हुये भी संन्यास का सम्यग्ज्ञानरूप फल प्राप्त हो चुका था उन्होंने मोक्षशास्त्र तथा दण्डनीति में भी अत्यकि पधरिश्रम किया था। वेदों के ज्ञाता विद्वान् पुरुष उनकी साधुवृत्ति का समाचार सुन कर उन्हीं के समान सज्जन होने की इच्छा रखते थे। उन दिनों सुलभा नामवाली एक संन्यासिनी योगधर्म के अनुष्ठान द्वारा सिद्धि प्राप्त करके अकेली ही इस पृथिवी पर विचरण करती थी। जब सुलभा ने मोक्षतत्व के ज्ञान के सम्बन्ध में राजा जनक की प्रशंसा सुनी तो उसके मन में संदेह का उदय हुआ। फलतः उसने मन में राजा जनक के दर्शन का संकल्प किया। योगशक्ति से उसने अपना पहला शरीर छोड़कर दूसरा परम सुन्दर रूप धारण कर लिया। इस प्रकार सुन्दर रूप धारण करके उसने मिथिलापुरी में पहुँच कर भिक्षा लेने के बहाने राजा जनका का दर्शन किया। उसे देख कर राजा जनक भी चकित हो विचार करने लगे। तदनन्तर उसका स्वागत करके राजा ने उसे सुन्दर आसन समर्पित किया और उत्तमोत्तम अन्न दे कर तृप्त किया। इस प्रकार सन्तुष्ट हो सुलभा ने मन्त्रियों और विद्वानों के बीच में विराजमान राजा जनक से प्रश्न पूछने का निश्चय किया। उसके मन में यह सन्देह था कि राजा जनक विदेह हैं या नहीं। योगशक्ति का आश्रय लेकर तब सुलभा अपनी सूक्ष्म बुद्धि द्वारा राजा की बुद्धि में प्रविष्ट हो गई। अपने नेत्रों की किरणों द्वारा जनक के नेत्रों की किरणों को संयत करके उसने योगबल से उनके चित्त को बाँध कर उन्हें अपने वश में कर लिया। राजा जनक ने भी सुलभा के अभिप्राय जो जान कर अपने भाव द्वारा उसके भाव को ग्रहण किया। फिर छत्र आदि राजचिह्नों से रहित हुये राजा जनक और त्रिदण्डरूप संन्यासचिह्न से मुक्त सुलभा का एक ही शरीर में रह कर संवाद होने लगा। राजा जनक ने बताया कि वे पराशरवंशी पञ्चशिख के शिष्य तथा सांख्य और योग्य के पूर्ण ज्ञाता हैं। उन्होंने यह भी बताया कि वर्षा ऋतु में पञ्चशिख उनके पास चार मास तक रहे थे। सुलभा ने जनक की बातें सुन कर कहा कि वाणी और बुद्धि को दूषित करने-वाले जो नौ-नौ दोष हैं उनसे रहित अट्ठारह गुणों से सम्पन्न और युक्तिसंगत अर्थ से युक्त पदसमूह को वाक्य कहते हैं। उस वाक्य में सौक्ष्म्य, सांख्य, क्रम, निर्णय, और प्रयोजन ये पाँच प्रकार के अर्थ रहने चाहिये। अपना परिचय देते हुये सुलभा ने कहा : 'मैं क्षत्रिय हूँ। मेरा जन्म शुद्ध वंश में हुआ है और मैंने अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन किया है। मैं प्रधान नामक राजर्षि के कुल में उत्पन्न हुई हूँ और मेरा नाम सुलभा है। मेरे पूर्वजों के यज्ञ में इन्द्र के सहयोग से द्रोण, शतशृङ्ग और चक्रद्वार नामक पर्वत यज्ञवेदी में ईंटों के स्थान चुने गये थे। योग्य पति न मिलने पर मैंने मोक्षधर्म की शिक्षा ली तथा मुनिव्रत धारण करके अकेली विचरण करती हूँ। मैंने सुना था कि आपकी बुद्धि मोक्षधर्म में लगीहु ई, है। अतः इस मोक्षधर्म का मर्म जानने के लिये मैं यहाँ आई हूँ। जैसे नगर के किसी सूने घर में संन्यासी एक रात निवास कर लेता है उसी प्रकार मैं आपके इस शरीर में आज की रात रहूँगी। आपने मुझे सम्मान दिया है। प्रातःकाल मैं यहाँ से चली जाऊंगी सुलभा के युक्तियुक्त वचन सुन कर राजा जनक चुप हो गये (१२. ३२०)।"

१. सुलोचन धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७, ९४; ११७, ४; १३८, ६; ६. ६४, २८. ३७ (भीमसेन पर आक्रमण करनेवाले १४ धृतराष्ट्रपुत्रों में यह भी था। भीमसेन ने इसका वध कर दिया)।

२. सुलोचन = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. सुवक्त्र, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७३)।

२. सुवक्त्र = शिव : १३. १७, ४४ (सहस्रनाम)।

सुवपुस् = शिव (१४. ८, २३)।

सुवर्चला, सूर्य की पत्नी का नाम है (१३. १४६, ५)।

१. सुवर्चस् धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७, १०२; ११७, १०; १८६, ३ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित); ८. ५१, ८; ८४, ३ (भीमसेन ने इसका वध किया)।

२. सुवर्चस् , राजा सुकेतु के एक पुत्र का नाम है : १. १८६, ९ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुआ)।

३. सुवर्चस् एक ब्राह्मण का नाम है (३. २९८, १०)।

४. सुवर्चस् गरुडपुत्र एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, २)

५. सुवर्चस् पाण्डव पक्ष के एक योद्धा का नाम है (७. २१, ६२)।

६. सुवर्चस् एक कौरव योद्धा का नाम है जिसका अभिमन्यु ने वध किया था (७. ४८, १५)।

७. सुवर्चस् , हिमवान् द्वारा स्कन्द को दिये एक पार्षद का नाम है (९. ४५, ४६)।

८. सुवर्चस् खनीनेत्र के पुत्र करन्धम का एक नाम है : १४. ४, ९. १५-१६ (इनका करन्धम नाम पड़ने का कारण); ५, ८।

९. सुवर्चस् = शिव (१४. ८, १३)।

सुवर्चस, सुवर्चसिन = शिव (सहस्रनाम)।

१. सुवर्ण एक देवगन्धर्व का नाम है : १. १२३, ५८ (अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित)।

२. सुवर्ण एक ऋषि का नाम है : १३. ९८, २. ३. ८. ६५ (मनु और सुवर्ण का संवाद)।

३. सुवर्ण = शिव (सहस्रनाम)।

सुवर्णकोशप्राप्ति : १. २, ३३९ (देखिये १. ६३-६५ तथा अनुगीता-पर्व)।

सुवर्णचूड , गरुडपुत्र एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, ९)।

सुवर्णनाभ, सुवर्णप्रिय = शिव (सहस्रनाम)।

सुवर्णबिन्दु = विष्णु (सहस्रनाम)।

सुवर्णमुकुट, सुवर्णरेता = शिव (१४. ८, २४)।

सुवर्णवर्ण = विष्णु (सहस्रनाम)।

सुवर्णवर्मन् काशि के एक राजा का नाम है : १. ४४, ८ (जनमेजय पारिक्षित की पत्नी वपुष्टमा के पिता)।

सुवर्णशिरस् , पश्चिमदिशा के एक ऋषि का नाम है (५. ११०, १२)।

सुवर्णष्ठीवि-सम्भवोपाख्यान – नारद के आग्रह पर पर्वत ने राजा

सृञ्जय को एक पुत्र प्राप्ति का वरदान दिया किन्तु यह भी कहा : 'तुम्हारा यह पुत्र दीर्घायु नहीं होगा क्योंकि इन्द्र को पराजित करने के लिये तुम्हारे मन में संकल्प उठा है। तुम्हारा पुत्र सुवर्णष्ठीवि के नाम से विख्यात होगा और तुम्हें देवराज से सदा उसकी रक्षा करनी होगी।' राजा ने पर्वत से ऐसा न होने देने का निवेदन किया किन्तु इन्द्र का ध्यान करके पर्वत मुनि कुछ नहीं बोले। तब नारदजी ने राजा से कहा : 'राजन्! चिन्ता मत करो। मैं तुम्हारे पुत्र को तुमसे मिला दूँगा। यमराज के वश में पड़े हुये तुम्हारे पुत्र को मैं पुनः जीवित कर के तुम्हें दे दूँगा।' तदनन्तर नारद और पर्वत राजा के पास से चले गये। कालान्तर में राजा सृञ्जय को एक पुत्र प्राप्त हुआ जिसका नाम सुवर्णष्ठीवी रक्खा गया। वह पुत्र पाँच वर्ष की अवस्था में ही अत्यन्त पराक्रमी हो गया। एक दिन देवराज इन्द्र के आदेश से उनके वज्र ने बाघ का रूप धारण करके उस बालक सुवर्णष्ठीवी का वध कर दिया। तब शोकार्त राजा सृञ्जय ने नारद का स्मरण किया। नारदजी ने वहाँ आकर इन्द्र की अनुमति से राजा के मृत पुत्र को पुनरुज्जीवित कर दिया। उस बालक सुवर्णष्ठीवी ने पिता के स्वर्गवास के बाद ग्यारह सौ वर्षों तक राज्य किया। प्रचुर दक्षिणा दे कर उसने अनेक महायज्ञों का अनुष्ठान किया तथा उनके द्वारा देवताओं और पितरों को तृप्त किया। अनेक वंश-प्रवर्तक पुत्र उत्पन्न करने के बाद वह कालधर्म को प्राप्त हुआ (१२. ३१)।"

सुवर्णष्ठीविन्, राजा सृञ्जय के पुत्र का नाम है : ७. ५५, २४. ३० (नारद की कृपा से सृञ्जय ने इस पुत्र को प्राप्त किया। इसका पुरीष, मूत्र, क्लेद, स्वेद यह सब सुवर्ण होता था। कुछ दस्युओं ने इसका वध कर दिया किन्तु नारदजी ने इसे पुनरुज्जीवित किया); १२. २९, १४९ (इसकी मृत्यु और पुनरुज्जीवन); ३०, १ (काञ्चनष्ठीवि). ३; ३१. १. २. १७ (इसके जन्म, मृत्यु, और पुनरुज्जीवन की कथा)। तुकी० काञ्चनष्ठीविन्, स्वर्णष्ठीविन्।

सुवर्णा, इक्ष्वाकु की पुत्री का नाम है : (१. ९५, ३४)। तुकी० ऐक्ष्वाकी।

सुवर्णाक्ष = शिव (१३. १४, ११; १८, ३०)।

१. सुवर्णाख्य एक तीर्थ का नाम है : ३. ८४, १८ (यहाँ पूर्वकाल में विष्णु ने रुद्र को प्रसन्न करने के लिए आराधना की थी)।

२. सुवर्णाख्य एक स्थान का नाम है : ५. ९९, ५ (अत्रादित्यो हयशिराः काले पर्वणि पर्वणि। उत्तिष्ठति सुवर्णाख्यं वाग्भिरापूरयन् जगत्)।

सुवर्णाभ, स्वारोचिष मनु के पौत्र एवं शंखपद के पुत्र का नाम है : १२. ३४८, ३८ (इन्होंने शंखपद से नारायणधर्म सीखा था)।

सुवर्णोत्पत्ति – "भीष्मजी ने सुवर्ण की उत्पत्ति के कारण के सम्बन्ध में बताते हुये कहा : जब मेरे पिता की देहान्त हो गया तब मैंने गङ्गाद्वार में जाकर पिता का श्राद्धकर्म आरम्भ किया। शास्त्रोक्त विधि से पिण्डदान के लिये जो कुश बिछाये गये थे उन्हें भेद कर उस समय एक अत्यन्त सुन्दर बाँह बाहर निकली जिसे देख कर मुझे आश्चर्य हुआ। साक्षात मेरे पिता ही थे जो पिण्डदान लेने के लिये उपस्थित हुये थे। किन्तु जब मैंने शास्त्रीय विधि पर विचार किया तो मुझे स्मरण हुआ कि हाथ पर पिण्ड देने का वेद में विधान नहीं है। शास्त्र की आज्ञानुसार कुशों पर ही पिण्डदान करना उचित है। अतः पिता के हाथों का आदर न करते हुये मैंने कुशों पर ही पिण्डदान किया। तदनन्तर स्वप्न में दर्शन देकर पितरों ने मेरे शास्त्र ज्ञान की प्रशंसा की। साथ ही उन लोगों ने मुझे सुवर्णदान करने का भी आदेश दिया। तब मैंने सुवर्ण दान का निश्चय किया। सुवर्ण की उत्पत्ति और उसके माहात्म्य के विषय में एक प्राचीन इतिहास है। पूर्वकाल में परशुरामजी ने इक्कीस बार पृथिवी को क्षत्रियों से रहित करके जब अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान किया तब उसके फल से भी वे सर्वथा पापमुक्त नहीं हो सके। उपस्थित ऋषियों से पवित्र करने वाले साधन के सम्बन्ध में प्रश्न करने पर ऋषियों ने परशुरामजी को बताया कि सुवर्णदान करने से व्यक्ति सर्वथा पवित्र हो जाता है। तदनन्तर वसिष्ठजी ने सुवर्णोत्पत्ति के सम्बन्ध में बताते हुये कहा : सुवर्ण सोमरूप है। सम्पूर्ण जगत् का मन्थन करके जो तेज की राशि प्रकट हुई है, वही सुवर्ण है (माहात्म्य)। पूर्वकाल में भगवान शङ्कर ने पार्वती के साथ संम्भोग के समय जब अपना वीर्य ऊपर की ओर रोक लिया था तब भी उनका वीर्य किञ्चित स्खलित हो कर वहीं पृथिवी पर गिर पड़ा था। वह वीर्य अग्नि में पड़ कर बढ़ने और ऊपर को उठने लगा। तेज से संयुक्त हुआ वह तेज एक स्वयंभू पुरुष के रूप में अभिव्यक्त होने लगा। इसी समय तारका नामक एक असुर उत्पन्न हुआ जिससे त्रस्त हो कर देवगण ब्रह्माजी की शरण में गये (१३. ८४)।

"ब्रह्माजी ने देवों को बताया कि अग्निदेव की सन्तान ही तारकासुर का वध करेगी। जब देवगण अग्नि की खोज करने लगे तब एक मेढक ने अग्निदेव के पाताल में होने का देवताओं को समाचार दिया। इससे क्रुद्ध हो अग्नि ने मेढक को रस का अनुभव न होने का शाप देकर अन्य स्थान में रहना आरम्भ किया। तदनन्तर एक विशालकाय गजराज ने देवताओं को बताया कि अश्वत्थ अग्निरूप है। यह सुन कर अग्नि ने हाथियों को जिह्वा उलटी हो जाने का शाप दे दिया। इसके बाद एक तोते ने देवताओं को बताया कि अग्निदेव शमी के भीतर निवास करते हैं। अग्नि ने तोते को भी शाप दिया कि वह वाणी रहित होगा। तब देवताओं ने शमी के गर्भ में अग्नि का दर्शन किया और शमी को ही अग्नि का स्थान नियत किया। देवताओं ने अग्निदेव से एक ऐसा पराक्रमी पुत्र उत्पन्न करने का निवेदन किया जो तारका का वध कर सके। देवों की प्रार्थना स्वीकार कर के अग्निदेव तत्काल गङ्गा के तट पर गये। गङ्गाजी ने उस समय भगवान शङ्कर के उक्त तेज को गर्भ रूपसे धारण किया। गङ्गा उस अग्नि द्वारा स्थापित गर्भ को सहन नहीं कर सकीं। उसी समय एक असुर के गर्जन से भयभीत गङ्गा ने उस गर्भ को मेरु के शिखर पर छोड़ दिया। तत्पश्चात अग्नि ने गङ्गा का दर्शन करके उस गर्भ के सम्बन्ध में जानना चाहा। गङ्गाजी ने बताया कि वह गर्भ नहीं सुवर्ण है और तेज में अग्नि के समान है। उस गर्भ से वहाँ उस पर्वत पर स्थित जिस किसी द्रव्य का स्पर्श हुआ वह सब सुवर्णमय दिखाई पड़ने लगा। ऐसा कह कर गङ्गा वहीं अन्तर्धान हो गईं और अग्निदेव भी देवताओं का कार्य सिद्ध करके अभीष्ट देश को चले गये। इस प्रकार अग्नि से सन्तानरूप सुवर्ण की उत्पत्ति हुई। इसमें भी जाम्बूनद नामक सुवर्ण सर्वश्रेष्ठ है। जो सुवर्ण है वही भगवान अग्नि हैं, वही ईश्वर और प्रजापति हैं। सुवर्ण सम्पूर्ण वस्तुओं में अतिशय पवित्र है और सोमरूप बताया गया है (सुवर्ण दान के माहात्म्य का प्रतिपादन)। (१३. ८५)। आगे के आख्यान के लिये देखिये तारकवधोपाख्यान।

सुवर्मन् धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७, ९७; ११७, ६; ६. ७७, ८; ७. १२७, ६६ (भीमसेन ने इसका वध किया)।

सुवस्ता एक नदी का नाम है (६. ९, २५)।

सुवाच एक ब्राह्मण का नाम है : २. २६, २४ (युधिष्ठिर की सभा में)।

सुवामा एक नदी का नाम है (६. ९, २८)।

सुवास = शिव (सहस्रनाम)।

सुवासस् = शिव (७. २०२, ४४)।

सुवास्तुक, एक राजा का नाम है (५. ४, १३)।

सुवाह स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६६)।

सुविज्ञेय = शिव (सहस्रनाम)।

१. सुवीर (बहु० °राः) एक जाति का नाम है : ३. २७१, ९ (जयद्रथ के अनुगामी थे); ५. ७४, १४। तुकी० सौवीर (बहु०)।

२. सुवीर एक राजा का नाम है जो क्रोधवशसंज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (१. ६७, ६०)।

३. सुवीर = जयद्रथ (३. २६८, ३)।

४. सुवीर राजा द्युतिमान के पुत्र और दुर्जय के पिता का नाम है (१३. २, १०-१२)।

५. सुवीर = स्कन्द (३. २३२, १०)।

६. सुवीर = विष्णु (सहस्रनाम)

सुवीरराष्ट्रप = जयद्रथ : ३. २६८, १। = शत्रुञ्जय : १२. १४०, ७१।

सुवेणा एक नदी का नाम है : ३. १८८, १०४ (मार्कण्डेयजी ने इसे भी नारायण के उदर में देखा था)।

१. सुव्रत स्कन्द के दो सैनिकों का नाम है : ९. ४४, ४१ (मित्र ने स्कन्द को दो सैनिक दिये जिनमें से एक यह था). ४२ (विधाता द्वारा स्कन्द को दिये दो सैनिकों में से एक यह भी था)।

२. सुव्रत = स्कन्द (३. २३२, ७)।

३. सुव्रत = शिव (७. २०२, ४४)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. सुशर्मन् त्रिगर्त देश के राजा का नाम है : १. १८६, ९ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित हुआ); ४. ३०, १. २४. ३१. २६; ३१, ४; ३२, २३. २५. २८. २९; ३३, ४. ७. ९. १२. २४. २५. २६. २९. ३०. ३५. ३७. ३९. ४१. ४५. ४६. ४८. ५१. ५७. ५८ (इसके नेतृत्व में त्रिगर्तों ने विराट के पशुओं का हरण किया जिसके परिणामस्वरूप एक भयंकर युद्ध हुआ। अन्त में भीमसेन ने सुशर्मा को बन्दी बना लिया किन्तु युधिष्ठिर ने इसे मुक्त करा दिया); ५. ४, २०; ६. ४५, ६०-६२ (चेकितान से युद्ध किया); ५१, १८ (दुर्योधन की सेना में); ७५, ३; ८२, १. ४; ८४, ४९. ५२ (अर्जुन से युद्ध किया); ८६, ४६; ९६, १७; १०२, ९; १०४, १. २. ८; १०८, १५; ११३, ५०. ५१; ११४, २. ९. ३७ (अर्जुन ने इसे पराजित किया); ७. १४, ३७ (धृष्टद्युम्न से युद्ध किया); १७, १९ (जिन संशप्तकों ने अर्जुन को मारने या स्वयं प्राण दे देने की शपथ ली उनमें यह भी था). ४०; २८, २. ३. ९. १० (अर्जुन से युद्ध किया); १९३, १८ (द्रोण के गिर जाने पर संशप्तकों के साथ यह भी भाग गया); ८. २७, ४ (त्रिगर्तराजः). ९. १२. २६ (अर्जुन से युद्ध करते हुये आहत हुआ); ५३, ५. ७. ३० (सौपर्णास्त्र का प्रयोग किया). ३५; ९५, ९; ९. २७, ३१. ४१. ४५-४७ (अर्जुन ने इसका वध किया)। तुकी० प्रस्थलाधिप, प्रस्थलाधिपति, रुक्मरथ, त्रैगर्त, त्रिगर्त, त्रिगर्ताधिपति, त्रिगर्तराज्, त्रिगर्तराज त्रिगर्तराजन्।

२. सुशर्मा, पाण्डवपक्ष के एक योद्धा का नाम है : ६. ११६, २७. २८ (चित्रसेन से युद्ध किया); ११८, ४१। तुकी० अगला शब्द।

३. सुशर्मा, एक पाञ्चाल राजकुमार का नाम है : ८. ५६, ४४ (कर्ण ने इस पर आक्रमण किया)।

सुशान्त = शिव (७. २०२, २८)।

सुशारद = शिव (सहस्रनाम)।

सुशोभन, माण्डूक राज की कन्या का नाम है : ३. १९२, ३२ (अयोध्यापति परिक्षित् की पत्नी)।

सुश्रवा, विदर्भराज की पुत्री का नाम है : १. ९५, १७ (जयत्सेन की पत्नी)।

सुश्रुत, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५५)।

सुषाढ = शिव (सहस्रनाम)।

१. सुषेण, एक धृतराष्ट्रवंशी नाग का नाम है (१. ५७, १६)।

२. सुषेण धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक का नाम है : १. ६७, ९७; ११७, ७; ५. १६०, १२३; ६. ६४, २८. ३४ (भीमसेन ने इसका वध किया); ७. १२७, ३५. ६० (भीमसेन ने इसका वध किया); ८. ७, १७। तुकी० ७. सुषेण भी।

३. सुषेण, पूरुवंशीय राजा अविक्षित के पौत्र और परीक्षित के पुत्र का नाम है (१. ९४, ५५)।

४. सुषेण एक राजा का नाम है जो द्रौपदी के स्वयंवर से उपस्थित था (१. १८६, १६)।

५. सुषेण जमदग्नि के एक पुत्र का नाम है (३. ११६, १०)।

६. सुषेण एक वानर का नाम है : ३. २८३, २ (ये वालि के श्वसुर थे और एक करोड़ वानरी सेना के साथ श्रीराम दाशरथि के पास आये); २८९, ४।

७. सुषेण विभिन्न कौरव योद्धाओं का नाम है : ७. ३७, २५. ३० (अभिमन्यु ने इसका वध किया); ८. ११, २० (कर्ण के मकरव्यूह में); ९. ६, ३।

८. सुषेण कर्ण के पुत्र का नाम है : ८. ४८, १८. २४. ३१. ३२. ३४. ३६-३९ (भीमसेन और नकुल से युद्ध किया); ४९, २९; ६६, ३ (कर्ण की रक्षा की); ७५, ९. १४ (उत्तमौजा ने इसका सर काट दिया;); ९. १०; २२. ३०. ३१. ३३. ३६. ४१. ४५. ४७। तुकी० कर्णपुत्र, कर्णात्मज।

९. सुषेण = श्रीकृष्ण (१२. ४३, १३)।

१०. सुषेण = विष्णु (सहस्रनाम)।

सुषेणमातृ से कर्ण की पत्नी का तात्पर्य है (११. २१, १२)।

सुसंकुल एक राजा का नाम है : २. २७, ११ (अर्जुन ने दिग्विजय के समय इसे जीता था)।

सुसंक्षेप,सुसरण, सुसह = शिव (सहस्रनाम)।

सुसामन्, धनञ्जयगोत्रीय एक ब्राह्मण का नाम है जो युधिष्ठिर के राजसूय में सामगान करते थे (२. ३३, ३४)।

सुस्थल (बहु० °लाः) एक जाति का नाम है : २. १४, १६ (ये लोग जरासन्ध के भय से भाग गये थे)।

सुस्नात = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

सुस्वप्न = शिव (सहस्रनाम)।

सुस्वर गरुडपुत्र एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, १४)।

सुहनु एक असुर का नाम है : २. ९, १३ (वरुण की सभा में)।

सुहविस्, भुमन्यु के पुत्र का नाम है : १. ९४, २५ (पुष्करिणी के गर्भ से उत्पन्न)।

सुहस्त धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७, १०२; ११७, १०: ७. १५७, १८ (भीमसेन ने धृतराष्ट्र के जिन दस पुत्रों का वध किया उनमें यह भी था)।

सुहृद् = विष्णु (सहस्रनाम)।

सुहृद = शिव (सहस्रनाम)।

सुहोतृ भुमन्यु के पुत्र का नाम है जो पुष्करिणी के गर्भ से उत्पन्न हुआ था (१. ९४, २४)।

१. सुहोत्र, एक प्राचीन राजा का नाम है : १. १, २२६ (भुमन्यु के पुत्र); ९४, २४-२६. २८. ३० (ऐक्ष्वाकी के पति और अजमीढ, सुमीढ तथा पुरुमीढ के पति तथा हस्ति पिता थे)। "इनकी, दानशीलता और पराक्रम आदि का विशेष वर्णन (७. ५६)।" ७. ५६, १. ३; १९. २९, २६ (इनकी कथा)।

२. सुहोत्र सहदेव के पुत्र का नाम है : १. ९५, ८० (सहदेव द्वारा द्युतिमान् की पुत्री विजया के गर्भ से उत्पन्न)।

३. सुहोत्र एक ब्राह्मण का नाम है : ३. २६, २४ (ये युधिष्ठिर की सेवा करते थे)।

४. सुहोत्र एक कुरुवंशी नरेश का नाम है (३. १९४, २)। तुकी० कौरव, कौरव्य।

५. सुहोत्र, पृथिवी के प्राचीन शासकों में से एक दैत्य का नाम है (१२. २२७, ५१)।

१. सुह्म, एक राजा का नाम है : १. १०४, ५३ (दीर्घतमा और बलिपत्नी सुदेष्णा के पुत्र का नाम है). ५५।

२. सुह्म (बहु० °ह्माः) एक जाति का नाम है : १. १०४, ५५ (सुह्म के नाम के आधार पर ये सुह्माः कहे जाते हैं); ११३, २८ (दिग्विजय के समय पाण्डु ने इन्हें पराजित किया था); २. २७, २१; ३०, १६. २५ (भीमसेन ने इन्हें पराजित किया था); ८. ८, १९ (कर्ण ने इन्हें दुर्योधन का करद बनाया था)।

सूक्ष्मं तपस्तत्परमं = स्कन्द (३. २३२, १८)।

१. सूक्ष्म एक असुर का नाम है : १. ६५, २५ (दनु का पुत्र);

६७, १८. १९ (यह पृथिवी पर बृहद्रथ के रूप में उत्पन्न हुआ) । = शिव (सहस्रनाम) । = विष्णु (सहस्रनाम) ।

सूक्ष्मात्मन् = सूर्य (३. ३, २७) । = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ७४) । = शिव (सहस्रनाम) ।

सूची एक व्यूह का नाम है : ७. ७५, २७; ८७, २४. २५. २८; ११. १००, ४७ ।

सूचीमुख एक व्यूह का नाम है : ६. १९, ५; ७७, ५९; १२. १००, ४७ । देखिये पिछला शब्द भी ।

सूचीरोमन = शिव (सहस्रनाम) ।

सूचीवक्त्र, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७२) ।

१. सूत, सूतों के पूर्वज का द्योतक है : १२. ५९, ११२ (राजा पृथु वैन्य की प्रशस्ति करनेवाले). ११३ ।

२. सूत एक ऋषि का नाम है : १२. ४७, १२ (भीष्म को घेर कर खड़े लोगों में यह भी थे) ।

३. सूत विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५७) ।

४. सूत = अधिरथ : ३. ३०८, २६; ३०९, १. ५. ८. २५; ५. १४१, ८; ६. १२२, २४ ।

५. सूत = वन्दिन (३. १३२, १६) ।

६. सूत = : १. १८७, २२. २३; ४. ५०, १३; ७. १५९, ६. ८; ८. ३९, ४; ४२, ७. ८. ४७; ६२, ३१; ७०, ३७; ७७, २१; ९१, १३; १२. ३, २६ ।

७. सूत = कीचक : ४. १५, २१; २१, ३०. ३२; २५, २०; ३०, २ ।

८. सूत = लोहिताक्ष : १. ५६, ६; ५८, ८. १२ ।

९. सूत = लोमहर्षण (१. १३, ७) ।

१०. सूत = सञ्जय : १. १, २०७. २१८. २५२; ६३, ९७; ३. ४८, ३; ४९, १४; ५१, २. ३. ४६; ५. २२, ३५. ३८; २३, ७. १४; २६, १. १७. १८. २६. २७; २९, १. १६; ३०, ५. २२. २४. २९. ४६; ४७, २; ४८, ४. २६. १०८; ५०, २. ११; ५७, ५७; ५९, १९; ६. १०, १; ६५, ११; ८३, ३; ७. १०, ६; ११, ४८; २४, ८. १२; ३४, ११; ४६, १; ८५, १४. २२. ३८; १२४, २६; १३१, ११; १३३, ५; १३५, ४. २४; १३८, १; १५९, ४९. ५१; १८२, १८; ८. ४, १२. १३. १५; ५, १; ८, ३०; ९, ११. २२; २९, २; ३१, ५. १७; ५१, २; ९. १, १५. २१. २५; २, ३. २८. ४४. ५६; २९, २०; ११. १२, २०; २६, २४. २७; १२. ४७, १०६; १५. १६, ४ ।

११. सूत (अधिकांशतः बहु० °ताः) एक जाति का नाम है : १. ५१, १५; ६७, १४९; १८४, १६; १८८, २४; २१४, २; २. ४, ७; ६७, ३ (एक० = प्रातिकामिन्). ११. १३. १७. २३. २४; ३. २३६, १०; २५७, १; ३०९, २१; ४. १८, १९; ६८, २८; ७०, २०; ५. ३६, ५५; ९०, १६; ९४, ४; १४१, १४; १४५, २; १९५, १८; ६, ९७, ३०; ७. ७, ८; ७२, ४१; ७८, ८; ८२, २. २८; ८४, २३; ८५, ७; ८. १, १२; ३२, ४८; ३४, ५८. ६०; ८७, ४८; १२. ३, २६; ३७, ४३; ८५, ९ (एक० = पुराणिकं); २९६, ८; १३. ४८, १०; ११८, १६; १५. २३, ७ ।

१२. सूत (बहु०) : ४. २३, ८. ११. १४. १६. २२. २४; २४, २. ६. १९ (सभी स्थानों पर कीचक का तात्पर्य है) ।

सूतज = कर्ण : ३. ७, २१; २५४, १२. ३३; २५५, ६; ३१०, २५; ५. १६८, ३१. ३२; १९४, १४; ६. १२२, २३; ७. १२९, २६; १३१, १०; १३३, १४; १३५, ११; १३९, ५६; १४७, ६७; १४८, १३; १५८, १९. ३३. ४७; १७३, ६७; १७८, ११; १८२, २५; ८. ९, ५१. ६२; २४८. ४२; ३१, १८; ३५, ४८; ३७, ४०; ४१, ४८; ४९, ३. ३०; ६१, ४०; ६३, १२; ६८, १९; ७०, ५४; ७२, ३२; ७४, ५३; ८१, ४५; ८५, २५. ३८; ८६, ११; ८८, १६; ९०, ३३. ६९. ७२; १२. २, १ ।

२. सूतज = उग्रश्रवा : १. ३१, १; ५३, ३; ५७, १; १२. ३४३, ५ ।

३. सूतज विभिन्न सारथियों (सूतों) के लिये प्रयुक्त हुआ है : ३. १८, २५ (दारुक); ७. ३६, ७ (सुमित्र । प्रातिकामिन् के लिये प्रयुक्त : २. ६७, ७. ८) । तुकी० सूत (बहु०) ।

सूततनय = कर्ण : ७. १३१, ५. १४. १६ ।

१. सूतनन्दन = अधिरथ (१. १११, २३) ।

२. सूतनन्दन = : १. २०९, २३; ३. २४१, १४; २५४, १६. २१; ६. १२२, १२; ७. १३३, २३; १३६, १८; १३९, ९१; १५८,१५; १६७, १२; १७५, ८९; १८३, ६०; ८. २४, ५. ५६; ५०, ४८; ७९, ४५; ९६, ५० (निहते) ।

३. सूतनन्दन = सञ्जय (३. ५१, ११) ।

४. सूतनन्दन = उग्रश्रवा : १. १, २; २, १. १७; ३५, १; ४०, १; ५९, २ ।

१ सूतपुत्र = वन्दिन (३. १३४, २१) ।

२. सूतपुत्र = कर्ण : १. १, २००; १३२, ११. १२; १३७, ५. ६; ३. ४, १५; ३६, २०; ४०, १३; ८६, ९; १२०, २२; २३६, २१; २४१, १५. २९. ३२; २५३, ७. ८; २५५, १; २५७, ९. २२. २६; २५९, ५; ३०९, १४; ३१०, ४०; ३१२, ३; ४. ५२, २३; ५४, ५. १९. ३४; ६९, ४; ५. २, ५; ८, ४५. ५०; २६, १८; २९, ४२; ४८, ४; ४९, २८. ३५. ४०; ५७, ५८; ६२, १५; ७९, ८; १२९. ४८; १४०, २; १४५, १२; १५६, २४; १६०, ९५; १६१, १३; १६२, २१; १६३, २१; १६४, ५; १९३, २०; ६. ३५, २६; ४३, ८६; ९७, १. ३. ७; ९८, ८; ७. १, ३४. ४९; २, १; ७, १६; १४, ३९; ३२, ६३. ६८; ९५, ४९; ११३, ४१; १२९, २७; १३१, ७. ११. १२. १५. १७. २४. २८. ३३. ३८. ५४; १३२, २५. ४१; १३३, २५; १३४, ९. ११. १८. २५. २६. ३२; १३५, ३९; १३६, ६. १२. १५. २६. २७; १३७, १९; १३९, २. ५. ७. ८. १७. १८. २५. २६. ४६. ५८. ६२. ७१. ११२. ११४; १४५, ६२. ६४. ६६. ६९; १४८, ८; १५८, १२. २०; १५९, १. १३. २५. २८. २९. ३५. ४४-४६. ५५. ५८; १७०, ३४. ४५. ६८; १७२, २६; १७३, ११. १९. ३७. ३८. ५०. ५१. ६४; १७४, १; १७५, ४४. ४५. ४९. ५७. ६०. ६७. ७६. ९४-९६. १०१; १७९, २३. ४४. ५३; १८१, ५; १८२, ३. १०. ३४; १८३, ३९. ४८. ४९. ५५. ५७. ६२; १८४, २; १८९, ५६; १९२, ८१; १९३, १०; ८. १, ५; २, ९; ५, ४७; ७, १०; ९, १३. ८९; १०, ३९; ११, ९. ३४; १३, ५; २१, ९; २४, ९. ३१. ३२. ३५. ५२. ५३. ७०. ७५. ७८; ३१, २६; ३२, ५०; ३५, १०; ३६, २७; ३७, १०; ३८, २३; ३९, १५. १८. १९; ४१, ८७; ४६, १६; ४८, ५५. ६७; ४९, ११. १५. १६. १९; ५०, २४. २८. ३८. ४०. ४३. ४७; ५१, ४. २०; ५४, १; ५६, ४. ४७. ५५. ६२. ८०. ८७; ५९, १. ३७; ६०, ३१ (हस्तिकक्ष्यां···केतु मतां वर). ५५; ६१, ३. १९; ६२, १७. १८; ६३, ६. १०; ६४, ३८. ४५. ५७. ५८. ६२; ६६, २२. ३०-३२. ४४. ४५. ४८; ६७, १५. १९. २०; ६८, ३; ६९, ७६. ८८; ७०, ३५. ४१; ७१, ८; ७२, १. ४. ३५. ३६; ७३; ४५; ७४, २१. २२. २६; ७८, ७. २८. ३०. ५७; ७९, १. ७. १०. ११; ८०, २; ८१, ५७; ८२, १. ३; ८४, ७; ८७, ३८. १०१; ८९, १. १३. १६. २९-३१. ४२. ४७. ७५. ७८. ७९; ९०, २३. २६; ९१, २६. २८. ३९. ६३; ९२, २ (वलं··· हतसूतपुत्रम्); ९३, ६. ८. १३; ९४, ३५. ३७; ९६, २०. २१; ९. १, ६; २, ५६. ५९; ३, २. ६ (हते). ९. १४; ४, ३०; ७, २०. ४६; ८, १७; १९, ५; २४, २५; ११. २७, ८; १२. १, २३; २, ५ (सूतपुत्रस्त्वमागतः) ।

३. सूतपुत्र = कीचक : ४. १४, ३४. ४७; १६, ५. २२-२६. २८; १७, १; २१, ३०. ३२; २२, २७. २८. ४२; २३, ६ ।

४. सूतपुत्र = सञ्जय : ५. २३, २. ९; २५, १; ३०, ४५; ३२, ७. ३२; ४७, १३; ६. ८, २०; ११, २१; ७. १०, १; ८. २, ९ ।

५. सूतपुत्र = उग्रश्रवा : १. २, ८४; ४, ११; ५, १२ ।

६. सूतपुत्र विभिन्न सारथियों (सूतों) के लिये प्रयुक्त हुआ है : ३. १८, ३२ (दारुक); १९, १ (दारुक); ७३, ३३ (वार्ष्णेय); ७. २, २६ (कर्ण के सारथि) । = प्रातिकामिन् : २. ६७, २५; ८१, ७ ।

७. सूतपुत्र (बहु० °त्राः) = कीचक (बहु०) : ४. २३, ४. ११. १२. १४; २४, १. ११ । = कर्ण के भ्रातागण (८. ४, १६) ।

सूतसुत = कर्ण : ८. ७४, १७; ८२, २२; ८८, २०; ८९, १९ ।

सूतसूनु = कर्ण : ७. १३१, १५; ८. ६७, ११ । = सञ्जय : ५. २३, ३ ।

सूतात्मज = कर्ण : ७. १५९, १२. १८; १८२, १; ८. ८९, ३७. ४०; ९०, ९; ९२, ७ ।

१. सूर्य, सूर्यदेव का नाम है और इन्हें सविता, विवस्वान् तथा आदित्य भी कहा गया है : १. १, ४२-४३ (विवस्वान् के बारह पुत्र सूर्य के ही रूप प्रतीत होते हैं). १८७ (यदा वायुश्चन्द्रसूर्यौ च युक्तौ कौन्तेयानामनुलोमा जयाय); २, १४४ (रवेः). १४५ (तिग्मांशु); १९, ५. ९ (राहु चन्द्रमा और सूर्य को ग्रसित करता है क्योंकि इन दोनों देवों ने अमृतपान के समय राहु को पहचान लिया था); २३, १६ (गरुड को इनके साथ समीकृत किया गया है); २४, ५. १० (अरुण को इनका सारथि बनाया गया); ६३, ९८ (कर्ण के पिता); ६५, २६ (इसी नाम के दानवों से भिन्न हैं); ६७, १३६ (कर्ण को उत्पन्न किया । यहाँ अर्क नाम है). १५० (दिवाकर); १११, १३ (कुन्ती से कर्ण को उत्पन्न किया); १३६, ३ (भास्कर). २४; १७१, १२. १५; १७३, १२ (संवरण से अपनी पुत्री तपती का विवाह किया); २११, ४; २. ११, १० (ये नारद जी को ब्रह्मलोक ले गये); ३. ३, १६. ६२. ७०. ७१. ८४ (इन्होंने युधिष्ठिर को एक अक्षय पात्र दिया); १२, २१ (श्रीकृष्ण सूर्य हो जाते हैं); ३९, ७८ (शिव के नामों में से एक); ८५, ७४ (तपनस्य सुता··· यमुना); १०३, १६ (भास्करस्य नगोत्तमः); १०४, ३. ४. ६. ९ (विन्ध्य ने इनसे अपनी परिक्रमा करने के लिये कहा); ११८, १२; १३८, १८ (रहस्यवेदं कृतवान्सूर्यस्य द्विजसत्तमः); १४२, ८; १६३, २७ (मेरु की परिक्रमा करते हैं); २००, १२८ (सूर्यसुताश्च गावः); २२१, ७ (गवां पतिः); २६२, २ (दत्ताक्षयान्नेन); २६३, २१; ३००, ६. ९; ३०१, १; ३०२, ११. १८. २० (स्वप्न में इन्होने कर्ण को अपना स्वरूप दिखाया और कर्ण को इन्द्र के प्रति सतर्क रहने तथा इन्द्र से उनकी शक्ति माँगने के लिये कहा); ३०३, १६; ३०६, १३. १४. २२. २५; ३०७, १२. १८. २१. २४. २५. २६; ३०९; २१; ३१०, १८ (कर्ण के जन्म की कथा); ४. १५, १९ (इन्होंने द्रौपदी की रक्षा के लिये एक राक्षस नियुक्त किया); १६, ११ (अर्केण); ५. १०८, ११ (इन्होंने याज्ञवल्क्य को यजुर्वेद दिया); १०९, ११ (सावर्णि ने दक्षिण में एक सीमा निर्धारित की जिसका ये उल्लंघन नहीं करते). १७ (चक्रधनुस् नामक ऋषि इनसे उत्पन्न हुये थे); ११०, १३ (इन्होंने ध्वजवती को आकाश में ही रुक जाने का आदेश दिया); ११७, ८; १४१, ३; १४५, ४ (तपनः); १४६, १ (इन्होंने यह घोषणा की कि ये कर्ण के पिता हैं); ६. ११, ३ (सोमार्कयोः); १२, ४० (इनका व्यास १०,००० योजन और वृत्त ३५,००० योजन है); ७. २०१, ६७ (शिव के साथ समीकृत); २०२, १०३ (शिव के साथ समीकृत); ८. ३२, २४. २५. २६; ६८, १३; ८७, ५८. ६० (इन्होंने यह इच्छा की कि कर्ण अर्जुन को पराजित करे); ९. ४५, ४ (स्कन्द के अभिषेक के समय उपस्थित हुये). ३१ (स्कन्द को दो पार्षद दिये); ११. २७, १२ कर्ण के पिता). १३ दिवाकर); १२. ६, ५. ६ दिवाकर). ७ (भानु); ७८, ६ (अश्व के साथ समीकृत); १२२, ३१ (इन्हें सभी तेजस्वी पदार्थों का अधिपति बनाया गया); २६४, ८ (श्रद्धा वैवस्वती···सूर्यस्य दुहिता); २९२, ८ (माठरम् , शैब्य ने इन्हें प्रसन्न किया); ३१३, ६ (नेत्र के अधिदेवता); ३१८, ३. २२ (याज्ञवल्क्य ने यजुर्वेद और शतपथ ब्राह्मण आदि इनसे प्राप्त किया). २९; ३२३, १८ (दिवाकर); ३३५, १९ (सात्वतंविधिमास्थाय प्राक्सूर्यमुखनिःसृतम्); ३३९, ११९. १२१ (इन्होंने ऋषियों से नारायण-माहात्म्य का वर्णन किया); ३४०, ११; ३६२, १७. १८; ३६३, १. ६; १३. २०, ८ (सहस्रांशुं, अष्टावक्र ने इनकी उपासना की); ८४, ४७ (अश्व के साथ समीकृत); ९५, ६. १८- २१. २८; ९६, ३. ४. ६-८. १३. १४ (जब इनकी किरणों से रेणुका दग्ध हो गईं तब जमदग्नि क्रुद्ध हो उठे । उस समय इन्दोंने जमदग्नि से क्षमा याचना करके, उन्हें एक जूता और छाता दिया). १४६, ५; १४७, २६ (दाक्षायण्यास्तथाऽऽदित्यः); १५६, ९ (जब स्वर्भानु ने इन्हें और चन्द्रमा को आहत कर दिया तब अत्रि ने इनका रूप धारण किया); १६०, ४० (शिव के साथ समीकृत); १५. ३०, ८. ९. १२ (दिवाकर, सहस्रांसु, तिग्मांशु, कर्ण को उत्पन्न किया था) ।

तुकी० विवस्वत् , सवितृ, और इनके निम्नलिखित पर्याय भी :—

अंशुमत : १. ६५, १४; ३. ५७, ४३; ७. १७९, १७ ।

अर्क : १. ८८, ९; १११, १६; २. ३, २४; ३. ३, ४५; ४. १६, ११; ५. १४४, २४ ।

आदित्य – देखिये वस्था० ।

उष्णरश्मि – देखिये वस्था० ।

गवां पतिः : ३. ३, ६२; २२१, ७ ।

गोपति – देखिये वस्था० ।

तपन : १. २३, १६; १११, १८; १७१, २०; १७६, २६; ३. ३, ६२; ८५, ७४; ३०८, १३; ५. १४५, ४ ।

तमिस्रघ्नु, तमोघ्न, तिग्मांशु, दाक्षायण्य – देखिये वस्था० ।

दिवाकर : १. २३, २१; ६७, १५०; १७३, २४; २. ११, ८; ३. ३, ३३. ६३. ७०. ८४; ८३, १९२; ११८, १२; १३८, १८; ३०६, ८; ३०९, २३; ९. २२, ४४; १०. १, २४; १२. ६, ६; ३२३, १८; १५. ३०, ८ ।

दीप्तांशु, पतङ्ग – देखिये वस्था० ।

प्रकाशकर्मन् : ५. १४५, ४ ।

प्रकाशकर्तृ : १. ६७, १३७; १११, १८ ।

भानु : ३. ३, ३६; ४१, १; १०४, २; ३०२, २०; ३०६, ५; ३०८, १६; ५. १४६, ३; ८. ९६, ६० ।

भानुमत : १. १७३, २१; ३. ३०९, २३ ।

भास्कर : १. ३१, ३४; १११, ९; १३६, २४; १७३, १७; २. ३, २९; ११, ५२; १२, २७; १०३, १६; १०४, ४; १३३, २१; २६३, २१; ३०२, ३. ८; ५. १४१, ३; १४६, १; ७. ३४, २१; २०२, १०८ (शिव के साथ समीकृत) ।

मरीचिन् – देखिये वस्था० ।

रवि : १. १, ४२; २, १४४; २४, १७; ३. ३, ६२. ७५; ५४, २९; ९२, ६; ३१०, १८; ५. ११७, ८; १८. ५, २० ।

रश्मिवत् : ३. ३००, ८ ।

लोकेश्वर, विबुधश्रेष्ठ, विभावसु, विरोचन, विहङ्गम, शुक्र – देखिये वस्था० ।

सहस्रकिरण : १३. ९, २४ ।

सहस्रांशु : १. १७३, १८; २. ११, ८; ३. ३००, २२; ३०१, १८; ३०७, १; १३. २०, ८; १५. ३०, ९ ।\

सुरश्रेष्ठ, स्वर्भानुशत्रु, स्वर्भानुसूदन – देखिये वस्था० । [टिप्पणी : इन पर्यायों के अतिरिक्त सूर्य की अनेक अन्य उपाधियाँ भी ३. ३, ३६; ६९ में मिलती हैं ।

सूर्य के १०८ नाम जो ३. ३, १६-२७ में आते हैं, नीलकण्ठी के अनुसार इस प्रकार हैं : १६ (१ सूर्य, २ अर्यमा, ३ भग, ४ त्वष्टा, ५ पूषा, ६ अर्क, ७ सविता, ८ रवि, ९ गभस्तिमान, १० अज, ११ काल, १२ मृत्यु, १३ धाता, १४ प्रभाकर). १७ (१५ पृथिवी, १६ आप, १७ तेज, १८ ख (आकाश), १९ वायु, २० परायण, २१ सोम, २२ बृहस्पति, २३ शुक्र,

२४ बुध, २५ अङ्गारक). १८ (२६ इन्द्र, २७ विवस्वान् , २८ दीप्तांशु, २९ शुचि, ३० शौरि, ३१ शनैश्चर, ३२ ब्रह्मा, ३३ विष्णु, ३४ रुद्र, ३५ स्कन्द, ३६ वरुण, ३७ यम). १९ (३८ वैद्युताग्नि, ३९ जाठराग्नि, ४० ऐन्धाग्नि, ४१ तेजःपति, ४२ धर्मध्वज, ४३ वेदकर्ता, ४४ वेदाङ्ग ४५ वेदवाहन). २० (४६ कृत, ४७ त्रेता, ४८ द्वापर, ४९ सर्वमलाश्रयकलि, ५० कला-काष्ठ-मुहूर्तरूप समय, ५१ क्षपा (रात्रि), ५२ याम, ५३ क्षण). २१ (५४ संवत्सर, ५५ अश्वत्थ, ५६ कालचक्र प्रवर्तक विभावसु, ५७ शाश्वत पुरुष, ५८ योगी, ५९ व्यक्ताव्यक्त, ६० सनातन). २२ (६१ कालाध्यक्ष, ६२ प्रजाध्यक्ष, ६३ विश्वकर्मा, ६४ तमोनुद, ६५ वरुण, ६६ सागर, ६७ अंशु ६८ जीमूत, ६९ जीवन, ७० अरिहा). २३ (७१ भूताश्रय, ७२ भूतपति, ७३ सर्वलोकनमस्कृत, ७४ स्रष्टा, ७५ संवर्तक, ७६ वह्नि, ७७ सर्वादि, ७८ अलोलुप). २४ (७९ अनन्त, ८० कपिल, ८१ भानु, ८२ कामद, ८३ सर्वतोमुख, ८४ जय, ८५ विशाल, ८६ वरद, ८७ सर्वधातुनिषेचित). २५ (८८ मनःसुपर्ण, ८९ भूतादि, ९० शीघ्रग, ९१ प्राणधारक, ९२ धन्वन्तरि, ९३ धूमकेतु, ९४ आदिदेव, ९५ आदितिसुत). २६ (९६ द्वादशात्मा, ९७ अरविन्दाक्ष, ९८ पिता-माता-पितामह, ९९ स्वर्गद्वार, १०० मोक्षद्वार त्रिविष्टप). २७ (१०१ देहकर्ता, १०२ प्रशान्तात्मा, १०३ विश्वात्मा, १०४ विश्वतोमुख, १०५ चराचरात्मा, १०६ सूक्ष्मात्मा, १०७ मैत्रेय, १०८ करुणान्वित)।

२. सूर्य एक असुर का नाम है : १. ६५, २६. २७ (दनु के पुत्र); ६७, ५८ (राजा दरद के रूप में पृथिवी पर उत्पन्न हुये थे)। तुकी० असुर।

३. सूर्य = महापुरुष (महापुरुषस्तव)। = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

सूर्यज = कर्ण : ६. १२२, ९; १२. १, २२; २, १९; ३, ८; १५. १६, १२-१४; १८. २, ९।

सूर्यजा = बृहन्नासा (३. २२१, ९)।

सूर्यतीर्थ एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, ४८-४९)।

सूर्यदत्त विराट के भाई का नाम है : ४. ३१, १५; ३२, २१; ५. ५७, ६; १७१, १५ (युधिष्ठिर की सेना में); ७. १५८, ४१; ८. ६, ३४।

सूर्यध्वज, एक राजा का नाम है जो द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (१. १८६, १०)।

सूर्यध्वजपताकिन् = शिव (सहस्रनाम)।

सूर्यनेत्र, गरुडपुत्र एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, १३)।

१. सूर्यपुत्र = शनैश्चर ग्रह : ६. ३, १४; १२. ३४९, ५५।

२. सूर्यपुत्र = मनु वैवस्वत (१२. १२२, ४२; १६६, ६८)।

३. सूर्यपुत्र = सुग्रीव नामक वानरराज (३. १४७, २८)।

४. सूर्यपुत्र = यम (१२. १९९, २. ३३)।

५. सूर्यपुत्र (द्वि०) = अश्विनद्वय (१३. १५६, १९)।

सूर्यभास एक कौरव पक्षीय योद्धा का नाम है : ७. ४८, १५-१६ (अभिमन्यु ने इसका वध किया था)।

सूर्यमाल = शिव (सहस्रनाम)।

सूर्यलोक : ३. ३, ७९ (शिवस्तोत्र के पाठ से मनुष्य सूर्यलोक प्राप्त करता है); ८३, ४९. १००; ८४, ११३; १८६, ८; १३. ७९, ९; १०२, ३२-३४)।

सूर्यवर्चस् एक देवगन्धर्व का नाम है : १. ६५, ४२ (कश्यप द्वारा मुनि के गर्भ से उत्पन्न); १२३, ५५ (अर्जुन के जन्मोत्सव में सम्मिलित हुआ था)।

सूर्यवर्मन् एक त्रिगर्त देशीय राजा का नाम है : १४. ७४, ९. ११ (अर्जुन ने इसे पराजित किया)।

सूर्यश्री एक सनातन विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३३)।

सूर्यसम्भव = कर्ण (३. ३०९, २१)।

सूर्यसावित्र एक सनातन विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३४)।

सूर्याक्ष, क्रथ नामक असुर के अंश से उत्पन्न एक राजा का नाम है (१. ६७, ५७)।

१. सृञ्जय, एक अथवा अधिक राजाओं का नाम है : १. १, २२५; २. ८, १५ (यम की सभा में)।

२. सृञ्जय, सुवर्णष्ठीवि के पिता का नाम है। इनकी कथा द्रोणपर्व के ५५-७० अध्यायों में आती है : ७. ५५, ५ (शैब्यस्य पुत्रः). ७. ११. १३. २१. ३६. ३७. ४९; ५६, १. ११; ५७, १. १२; ५८, १. १४; ५९; १. २४; ६०, १. १३; ६१, १. ११; ६२, १. १९; ६३, १. ११; ६४, १. १७; ६५, १. १२; ६६, १. २१; ६७, १. २०; ६८, १. १६; ६९, १. ३२; ७०, २५; ७१, १. ७. ९; ७१, १. २२ (सृञ्जयस्य तु तं पुत्रं मृतं सञ्जीवितं पुनः); ११. १, २४; १२. २९, १४. १८. २४. २५. ३०. ३१. ३८. ३९. ४३. ४४. ४५. ५०. ५१. ६२. ६३. ७०. ७१. ८०. ८१. ९३. ९४. ९९. १००. १०४. १०५. ११०. १११. ११९. १२०. १२९. १३०. १३६. १३७. १४४. १४५. १४६; ३०, २. २. १०. ३० (नारद ने इनकी पुत्री से विवाह किया); ३१, ४. १०. १३. १५. १८. २२. २२. २८. ३०. ३८; १३. ११५, ७२ (ये कार्तिक मास में मांस भक्षण नहीं करते थे)। तुकी० श्वैत्य।

३. सृञ्जय = होत्रवाहन : ५. १७६, ३६. ४१. ५७; १७७, ४. १७. २०. २६।

४. सृञ्जय = उत्तमौजा (८. ७५, ९)।

५. सृञ्जय : ८. ५६, ५६।

६. सृञ्जय (बहु० °याः) पाञ्चालों के अन्तर्गत एक जाति अथवा वंश का द्योतक है। कभी-कभी इनका पाञ्चालों के साथ एक पृथक जाति के रूप में भी उल्लेख मिलता है : ३. ३३, १२. ८९; ३५, १५; ५. २२, ९. ३९; २४, ९; २५, १. १४; २६, १९; २८, ११; ४८, ६. ४१. ९९; ५७, ३३ (युधिष्ठिर के पक्षधर थे); ७१, २; ७२, ८१; ८२, ११. १४. १९; ९३, ८; १२७, ११; १६१, ४; १६२, ८; १६३, १०; १६७, १५; ६. १४, २८. ३६; १५, १४; १६, २४; ४५, २; ५९, २३; ६०, २९; ७२, १५; ७३, ४१; ६४, ३९; ७५, ३३; ८६, ३. २६. २७; ८८, ३; ८९, २२. २३. ८३; ९८, १८; १०७, ८. १०; १०८, २३. २६. २९; १०९, ३. ३८; ११४, ४१; ११५, १. १५. १६. २०; ११८, १८. २०; ११९, ४; ७. २, ३१; ७, ४४. ४७. ५२; ९, १; १२, १; १३, २०. २४; १४, २; १६, ११. ५१; २१, २९. ३०. ४१. ६१; २२, ७. १६; ३५, ५. १०; ४०, २०; ७८, १३; ९५, २३; ९७, ३५; १०८, ३५; ११०, २१. २७. ३२; १११, ४६; ११४, १००; १२२, ७२; १२५, ५३. ७२; १३०, २४; १५१, ३३. ४०. ४१; १५४, २२. ३९; १५५, १; १५६, ५१; १५७, ४७; १६०, ५७; १६१, ४४; १६४, २७. २८. ३४; १६६, ३४. ६३; १७३, १९; १७७, ३१; १८२, २. ३८; १८३, १३. १५; १८६, ३४; १९०, ३. ३१; १९२, १५. ७४; १९९, २०; ८. ३, १९; ५, ३; १०, ३६; २१, ५. २४; २४. ७५; २५, १२; ३१, १९; ३२, २६; ३५, २०; ३७, २२. २३; ४७, १५. २३; ५१, २; ५४, ४. १६; ५६, २. ४. ६०. ८४; ५७, १२; ५८, ८. ४६. ४९; ५९, १; ६०, ३४. ३६. ३८. ५९; ६१, १; ६४, ५८; ६६, ४०; ६७, १७; ७३, ५. ३८. ३९. १२०. १२१; ७५, १; ७९, १३. ९४; ८५, ९; ९२, ७; ९३, १; ९४, ११; ९६, ५०; ९. ७, १२; ९, १. ३२; १३, ३१; २०, ११. २२; २१, ३४; २९, १५; ३२, ३२; ३३, ३१. ५६; ३४, १४; ५५, ४५; ५७, ५८; ५९, ९; ६१, १. ३. २०; १०. ८, ८०. १४९ (अश्वत्थामा ने इनका वध किया); ११. २६, ३ (इनका शवदाह)।

सृष्टि एक देवी का नाम है : २. ११, ४७ (ब्रह्मा की सभा में)।

सृष्टिकृत् = ब्रह्मा (१. २०, १६)।

सेक (बहु० °काः) दक्षिण की एक जाति का नाम है जिसे सहदेव ने जीता था (२. ३१, ९)।

सेतुबन्धन से श्रीराम दाशरथि द्वारा वानरों की सहायता से सागर पर सेतु बनाने का तात्पर्य है। इस कथा के लिये देखिये ३. २८३।

सेदुक एक राजा का नाम है (३. १९६, २-५. ११)।

सेनाकाल्प शिव (सहस्रनाम)।

सेनजित् एक अथवा अधिक राजाओं का नाम है : ५. ४, १३ (युधिष्ठिर के समकालीन); १२. २५, १३. २९; १७४, ८. १२. ६३ (एक ब्राह्मण के साथ इनका संवाद)।

सेनाधिपति = स्कन्द (३. २३२, १४)।

१. सेनानी धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ११७, ९)। तुकी० सेनापति।

२. सेनानी = शिव (१४. ८, २०)। = स्कन्द (५. १६५, ७)।

१. सेनापति, धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है : १. ६७, ९७; ६. ६४, २८. ३२ (भीमसेन ने इसका वध किया था)। तुकी० १. सेनानी।

२. सेनापति = शिव (सहस्रनाम)।

१. सेनाबिन्दु एक अथवा अधिक राजाओं जा नाम है : १. ६७, २० (तुहुण्ड नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था); १८६, ९ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित); २. २७, १०. १३ (अर्जुन द्वारा पराजित); ५. ४, १३; १७१, २० (पाण्डवों का एक रथी); ७. २१, ६२; २३, २६ (इसके अश्वों का वर्णन); ८. ६, २९. ३२।

२. सेनाबिन्दु एक पाञ्चाल योद्धा का नाम है जिसका कर्ण ने वध किया (८. ४८, १५)।

सेयन विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५८)।

सैकत (बहु० °ताः) ऋषियों के एक वर्ग का नाम है (१२. २४४, १०)।

१. सैन्धव (सिन्धु देश के राजा) = जयद्रथ : १. १, १९२. १९३. १९८; १८६, २१; २. ३४, ८; ३. २६७, २२; २७१, १. ४. ४२. ४३.; ४५. ४७. ५३. ५५. ५७. ६०; २९२, ९; ३१०, ४२; ४. ५, २३; ८, ४ ५. ५७, १५; ६६, ७; ९५, २०; १४२ १२; १५५, ३२; १६४, ७; १९५, ६; ६. ४५, ५५; ५२, २१; ५७, ३१; ५९, १३७; ७१, २०; ७२, ३; ८५, ११; ९१, २९; ९४, १४; ९९, २; १००, १६; १०८, ५७; ११३, १. ६. १२. १५. १७. २०; ११४, २. २२; ११६, ४२. ४३. ४४; ११९, १५; ७. ७, ११; १४, ६४; २५, १०. १२; ४१, १०; ४२, ७. ९. २२; ४३, १७-१९; ४४, १; ४६, २१; ४७, ५; ५२, ५; ७४, ३. १९-२१. ३४; ७५, २. ६. १८; ७६, ९. १४. १६. १८; ७७, १८. २०; ७९, १५; ८०, १२. १४. १८; ८३, २८; ८४, २१. २९. ३२; ८५, ६; ८७, १५; ९४, १८; ९५, ४८. ४९. ५१; ९९, ३. ३४. ३६; १००, २९. ३१; १०१, १६. ३४. ३५; १०३, ४१; १०४, ३२; १०६, १; ११०, ३७. ७९; १११ १५. १७; ११२, १३. ३३. ६७; ११४, २८; ११९, १२; १२२, २; १२६,, ३८; १२७, ७; १२८, ३१. ५०; १३०, १. १५. १६. २१-२३; १३१, ४९ १४०, ४. ६; १४१, २९. ३०; १४२, ७०; १४३, ५३; १४५, ९. १४.; २१. २८. ३०. ४०. ४३. ४५. ५०. ५२. ६०. ८९; १४६, ४९. ५४. ५५. ५८. ६२. ६३. ७५. १०४. १०६. १२१. १३४. १३८. १४१ (निहते). १४२. १४३; १४७, १. २. २८. ३७ (निपातिते); १४९, १. ७ (निहतः पापः सैन्धवः); १५०, १. ६; १५१, २२. २९; १५२, ४. ७. २४; १५३, १२; १५४, ८; १७२, ३; १८२, ३५; ८. ७३, १४. ४९; ९. ६४, ३३; १०. ३, ३३; ९, ४५; ११. २५, ३१; १२. १६, २०; १४. १२, ११; ५२, २०; ७७, ९; १५. ११, ६ (सैन्धवापसदस्य)।

२. सैन्धव = वृद्धक्षत्र (७. ४२, ७)।

३. सैन्धव (बहु०) सिन्धु देश के निवासियों का द्योतक है : ३. ५१, २५ (युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित); २७१, ७. २८. ३६; ५. १३४, ३२; १३५, २१; ७. १११, २८; १५९, ४५; ८. ५६, ७०; १४. ७७, १. २२. २८-३०; ७८, २. १०. १४. १७. ४६ (जयद्रथ के वध का स्मरण करके इन लोगों ने अर्जुन से घोर युद्ध किया किन्तु पराजित हो गये)।

४. सैन्धव (वि०) : ३. २६९, ६ (वाजिभिः); २७३, १० (बलम्); ५. ४७, १४ (साधुवाहिभिः); ७. ९, १६; २३, २४ (हयोत्तमाः); २६, ४४; ४३, २; ८७, १८; १०४, ८; ११२, ६७; ११६, ३४; १४०, २१; १६२, ३ (तुरङ्गमान्); १७३, १२; ८. ७, ११; ९. ८, २२।

सैन्धवक (वि०) : ३. २७१, ४२; ६. ४५, ५६; ७. ७३, ९; ७६, १७; ८४, २८; १२८, ५१; १४५, १९। सभी स्थानों पर यह सिन्धुराज का द्योतक है।

सैन्धवायन विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५१)।

सैन्धवारण्य एक वन का नाम है : ३. ८९, १५ (पश्चिम में); १२५, १३ (सैन्धवारण्यमासाद्य कुल्यानां कुरु दर्शनम्)।

सैन्यनिर्याण से सेनाओं के निकलने का तात्पर्य है (१. २, ६३)।

सैन्यनिर्याणपर्वन, महभारत के ६३ वें अवान्तर पर्व का नाम है : "पाण्डवपक्ष के सेनापति का चुनाव तथा पाण्डवसेना का कुरुक्षेत्र में प्रवेश (५. १५१)। कुरुक्षेत्र में पाण्डवसेना का पड़ाव और शिबिर-निर्माण (५. १५२)। दुर्योधन का सेना को सुसज्जित होने और शिविर-निर्माण के लिये आज्ञा देना तथा सैनिकों की रणयात्रा की तैयारी (५. १५३)। युधिष्ठिर का भगवान् श्रीकृष्ण से अपने समयोचित कर्तव्य के विषय में पूछना; श्रीकृष्ण का युद्ध को ही कर्तव्य बताना; इस विषय में युधिष्ठिर का संताप तथा अर्जुन द्वारा श्रीकृष्ण के वचनों का समर्थन (५. १५४)। दुर्योधन द्वारा सेनाओं का विभाजन और अलग-अलग अक्षौहिणियों के सेनापतियों का अभिषेक (५. १५५)। दुर्योधन द्वारा भीष्मजी का प्रधान सेनापति के पद पर अभिषेक और कुरुक्षेत्र में पहुँच कर शिविर का निर्माण (५. १५६)। युधिष्ठिर द्वारा अपने सेनापतियों का अभिषेक; यदुवंशियों सहित बलरामजी का आगमन; पाण्डवों से विदा लेकर बलरामजी का तीर्थयात्रा के लिये प्रस्थान (५. १५७)। रुक्मी का सहायता देने के लिये आना परन्तु पाण्डवों और कौरवों दोनों द्वारा उसकी सहायता की अस्वीकृति पर उसका वापस लौट जाना (५. १५८)। धृतराष्ट्र और सञ्जय का संवाद (५. १५९)।

सैन्योद्योगपर्व, महाभारत के ५७ वें अवान्तर पर्व का नाम है जो उद्योगपर्व के १ से १९ अध्यायों तक आता है : राजा विराट की सभा में श्रीकृष्ण का भाषण (५. १)। बलरामजी का भाषण (५. २)। सात्यकि के वीरोचित उद्गार (५. ३)। राजा द्रुपद की सम्मति (५. ४)। श्रीकृष्ण का द्वारकागमन; विराट और द्रुपद के संदेश से राजाओं का पाण्डवपक्ष की ओर से युद्ध के लिये आगमन (५. ४)। द्रुपद का पुरोहित को दौत्यकर्म के लिये अनुमति देना तथा पुरोहित का हस्तिनापुर के लिये प्रस्थान (५. ६)। श्रीकृष्ण का दुर्योधन तथा अर्जुन दोनों को सहायता देना (५. ७)। शल्य का दुर्योधन के सत्कार से प्रसन्न हो उसे वर देना तथा युधिष्ठिर से भी मिलकर उन्हें आश्वासन देना (५. ८)। इन्द्र द्वारा त्रिशिरा का वध, वृत्रासुर की उत्पत्ति तथा वृत्र का इन्द्र और देवताओं को पराजित करना (५. ९)। इन्द्र सहित देवताओं का विष्णु की शरण में जाना और इन्द्र का विष्णु की आज्ञा से वृत्रासुर से सन्धि करने के बाद अवसर पाकर उसे मारना और ब्रह्महत्या के भय से जल में छिपना (५. १०)। देवताओं तथा ऋषियों के अनुरोध से राजा नहुष का इन्द्र के पद पर अभिषेक और उनका इन्द्रपत्नी पर आसक्त होना; चिन्तित इन्द्राणी को बृहस्पति का आश्वासन (५. ११)। देवता-नहुष संवाद; बृहस्पति द्वारा इन्द्राणी की रक्षा तथा इन्द्राणी का नहुष के पास कुछ समय की अवधि माँगने के लिये जाना (५. १२)। नहुष द्वारा इन्द्राणी को कुछ काल की अवधि देना; इन्द्र का ब्रह्महत्या से उद्धार तथा शची द्वारा रात्रिदेवी की उपासना (५. १३)। उपश्रुत देवी की सहायता से इन्द्र से इन्द्राणी शची का मिलन (५. १४)। इन्द्र की आज्ञा से इन्द्राणी के अनुरोध पर नहुष का ऋषियों को अपना वाहन बनाना तथा बृहस्पति और अग्नि का संवाद (५. १५)। बृहस्पति द्वारा अग्नि और इन्द्र का स्तवन तथा बृहस्पति और लोकपालों की इन्द्र से बात-चीत (५. १६)। अगस्त्यजी का इन्द्र से नहुष के पतन का वृत्तान्त बताना (५. १७)। स्वर्ग में जा कर पुनः अपना राज्य प्राप्त करना ; शल्य का युधिष्ठिर को आश्वासन देना और विदा लेकर दुर्योधन के पास जाना (५. १८)। युधिष्ठिर और दुर्योधन के पास सहायता के

लिये आई हुई सेनाओं का संक्षिप्त विवरण (५. १९)।

१. सैरन्ध्री, से इस जाति की स्त्रियों का तात्पर्य है : ४. ३, १७; १३. ४८, १९।

२. सैरन्ध्री, दमयन्ती के लिये प्रयुक्त : ३. ६५, ५५. ७१; ६८, ३४।

३. सैरन्ध्री, द्रौपदी के लिये प्रयुक्त : ४. ३, १८; ९, ३. ४. ८. १७; १४, ३४. ३८. ४७; १५, २. ९. १०. ११. १८; १६, ४०. ४३-४५. ५१; १७, ७; १८, ८; १९, १. १०; २०, १; २१, २४; २२, १९; २३, ८. १६. २५; २४, ३-५. ८. ९. १९-२२. २७. २९; ३६, २०. २३; ३७, १०. १७; ३८, २४. २५; ४४, ६; ६८, ३०. ५८; ७१, ८।

१. सोम, मूलतः सोम नामक दिव्य पेय का द्योतक है जिसे सामान्यतया चन्द्रमा के साथ समीकृत किया गया है : १. १८, ३४ (शतसहस्रांशुः शीतांशुः, समुद्रमन्थन के समय समुद्र से प्रकट हुये). ३७ (श्रीः सुरा चैव सोमश्च तुरगश्च मनोजवः); १९, ४८ (सूर्य और चन्द्रमा ने राहु को अमृतपान के समय पहचान लिया जिसके परिणामस्वरूप विष्णु ने अपने चक्र से राहु का सर काट दिया। उसी वैर के कारण राहु चन्द्रमा और सूर्य को ग्रहण के समय ग्रसित कर लेता है); २५, १३ (इन्द्र को सोम के साथ समीकृत किया गया है); ५५, १; ६६, १३ (दक्ष ने अपनी २७ कन्याओं का सोम के साथ विवाह कर दिया). १६. १८ (वसुओं में से एक). १९. २२ (वर्चस् के पिता); ६७, ११२. १२४ (इन्होंने अपने पुत्र, वर्चा को अभिमन्यु के रूप में जन्म लेने की अनुमति दी); ७१, ३९ (विश्वामित्र से भयभीत); ७५, ९ (दक्ष ने अपनी २७ कन्याओं को इन्हें पत्नीरूप में प्रदान किया); ८२, १२; १७०, ४३ (इन्होंने मनु से चाक्षुषी विद्या सीख कर उस विद्या को विश्वावसु को सिखाया); १९७, ३; १९९, ५; २११, ४ (ब्रह्मसदन में); २२५, ४ (वरुण ने जो गाण्डीव धनुष और अक्षय तरकस अर्जुन को दिया था वह इनके पास भी रह चुका था). १३; २२९,३१ (अग्नि को इनके साथ समीकृत किया गया है); २. ३, २३; ११, ४८; ३. ३, ७ (ओषधीपति). ८; १२, २१; ६८, २२; ११३, २२; ११८, १२; १४२, ८; १६३, २७ (मेरु की परिक्रमा करते हैं). ३२ (नक्षत्रैःसह); १८०, ११; १८९, ६ (नारायण के साथ समीकृत); २०१, १८ (विष्णु की उपासना करते हैं); २१९, ९. १०; २२१, १५; २२४,११. १५. १९. २०; २३१, ४६ (स्कन्द के ऊपर एक श्वेत छत्र लेकर खड़े हुये); २३२, १६ (स्कन्द को इनके साथ समीकृत किया गया है); २४७, ९; २६५, ३; ४. ४३, ६ (इन्होंने ५०० वर्षों तक गाण्डीव धारण किया था); ५६, ११; ५. १६, २७; १०८, ११; १११, ८; ११७, ९; १४९, ३; ६. ११, ३; १२, ४२ (इनका व्यास ११,००० योजन और वृत्त ३८,९०० योजन है). ४३; १७, २; ३९, १३; ७. २३, २८; ६६, १०; ६९, २३ (जब सप्तर्षियों ने पृथिवी का दोहन किया तब ये बछड़ा बने); ९८, ३३ (द्रोण और सात्यकि का युद्ध देखने के लिये आये); ११६, २६; १३७, २२; १४४, ४ (अत्रि के पुत्र और बुध के पिता); २०२, ८३. १४१ (शिव के शरीर के अर्धांश); ८. ३४, १८ (शिव के रथ के मल्ल बने). ४९. ५६. ७९. १००; ४२, ४२; ४५, ३२ (ब्राह्मणों के साथ ये उत्तर दिशा की रक्षा करते हैं); ४६, ३८ (अर्जुन के रथ के अश्वों में से एक); ८७, ४७ (अर्जुन का पक्ष लिया); ९४, ४९; ९६, ६० (अग्न्यनिलेन्दुमानवः); ९. ३५, ४१ (उडुराट्). ४३. ४५. ४६. ४९. ५०. ५२. ५४. ५६. ५७. ५९. ६१. ६२. ६४. ७०. ७६. ७८. ८०. ८१ (इन्होंने दक्ष की सत्ताइस कन्याओं के साथ विवाह किया किन्तु रोहिणी के प्रति अधिक अनुरक्त रहने के कारण अन्य पत्नियों ने दक्ष से इनकी शिकायत की। तब क्रुद्ध हो दक्ष ने इन्हें यक्ष्मा रोग हो जाने का शाप दे दिया। सोम ने प्रायश्चित्तस्वरूप प्रभासक्षेत्र में स्नान करके अपनी उज्ज्वलता पुनः प्राप्त कर ली); ४३, ४६. ४७; ४५, ४. ३२ (स्कन्द को दो पार्षद दिये); ४७, ८; ५०, ६९; ५१, १ (उडुपतिः); १२. १२२, ३१ (निशाकर, इन्हें नक्षत्रों का अधिपति बनाया गया). ४९; १८२, १८; २०७, २४ (दक्ष की सत्ताइस पुत्रियों से विवाह किया); २०८, ९ (अत्रि के पुत्र); २८१, २३; २८८, ३३; ३११, ११ (मानस के अधिदेवता); ३२३, १८ (दिवाकरनिशाकरौ); ३३४, ३६ (इक्कीस प्रजापतियों में से एक); ३४०, ११ (ताराधिपः); ३४१, ५८. ५९; ३४२, १. ९. ३४. ३५. ४६; ३४८, १५ (इन्होंने वैखानसों से नारायण धर्म प्राप्त किया). १६ (ब्रह्मा को नारायणधर्म प्रदान किया); १३. १४, २९७ (शिव के साथ समीकृत). ३९७; ३४, १; ३६, १३. १८; ६२, ४८; ६३. ४०; ६७, १२; ८२, ७; ८४, ४८; ८५, ८६. १५६; ८६; २३; ९१, २३. २६; ९२, ४-७. १५; ९७, १२ (इनके लिये उत्तर में बलि देनी चाहिये); १०२, २९. ५४; १०७, ७५; १२३, ४ (ताराधिपः); १४६, ५ (रोहिणी शशिनः साध्वी); १५०, १६. ७७; १५४, १०. १९ (अपनी पुत्री भद्रा को उतथ्य को प्रदान किया); १५६, २. ९; १५८, १३ (श्रीकृष्ण के साथ समीकृत); १५९, ७; १४. २०, १०; ४३, ९. १०; १५. ३१, १३; १८. ४, १९ (सोमेन सहितं'''अभिमन्युं); ५, १८ (मृत्यु के बाद अभिमन्यु ने सोम में प्रवेश किया)।

तुकी० इनके निम्नलिखित पर्याय भी :

अंशुमत् : १२. १२२, ३२।

इन्दु : १. ६६, १३ (दक्ष की २७ कन्याओं से विवाह किया); ७५, ९; ८. ४६, ३८; ९६, ६०; १३. १६, २२ (शिव के साथ समीकृत)।

उडुप, उडुपति उडुराज् — देखिये वस्था०

ओषधिपति — देखिये वस्था०

कुमुदनाथ : ७. १८४, ४६।

ग्रहगणेश्वर, ग्रहपति — देखिये वस्था०।

चन्द्र : १९, ५. ९; २११, ४; ३. ३, ८; ११८, १२; ५. ११, ९; ७. २०२, १०३ (शिव के साथ समीकृत); ९. ३५, ४३; १३. ७६, १८; १५६, ५; १६५, १०।

चन्द्रमस् : १. ६५, २६; ६६, १९; १३५, ३०; २२७, २; ३. ८२, ८३; १४२, ८; ५. ११९, ८; १४०, २८; ६. १२, ४२; १००, ३८; ७. २०२, १०३ (शिव के साथ समीकृत). १०८; ९. ६, १२; १६, १०; ३५, ५३. ६०. ८६; ४५, ४; १२. ३१३, ११; ३३८, ४ (९८ = महापुरुष); १३. ३१, ७; ८६, २३ (स्कन्द को एक मेष दिया); १२५, ४९; १६०, ४० (शिव के साथ समीकृत)।

तारकाराज ,ताराधिप, तारापति — देखिये वस्था०।

नक्षत्रपति, नक्षत्रराज, नक्षत्रराज् — देखिये वस्था०।

निशाकर : ३. ६८, २४; ६९, ११; ६. ११०, ३७; ९. ३४, २०; ३५, ४८. ६३. ६६. ८४; ५५, ४९; १२. १२२, ३१; ३२३, १८; १३. ३६, १२।

प्रजापति, विरोचन — देखिये वस्था०।

शतसहस्रांशु : १. १८, ३४।

शशलक्षण : ३. २८२, २; ६. ६, २; ९. ३५, ६८. ७५. ८५।

शशांक : ६. ३५, ३९ (श्रीकृष्ण के साथ समीकृत); ८. ६८, १३।

शशिन् : ३. ६८, २२; ७. ६७; ९. ३५, ४४. ५८. ६२. ७४; १२. ११, १४; १३. १४६, ५;

शीतरश्मि : ६. १२, ४३; १३. ५०, ५।

शीतांशु : १. १८, ३४; १०३, १७; ३. ७६, ५३; २४९, ३१; ९. ३५, ५४. ७९।

२. सोम = सूर्य (३. ३, १७)। = स्कन्द (३. २३२, १६)। = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. सोमक पाञ्चाल देश के एक प्राचीन राजा का नाम है जो सहदेव के पुत्र थे : १. २, १७२; २. ८, ८ (यम की सभा में); ३. १२५, २६ (यमुनातट पर यज्ञ किये); १२६, ४७; १२७, १. २. १०. १७. १८; १२८, १. ७. १०. १५ (१०० पुत्र प्राप्त करने के लिये इन्होंने अपने जन्तु नामक पुत्र की बलि दे दी। इस कारण इनके पुरोहित को नरक जाना पड़ा। तब राजा सोमक ने भी अपने पुरोहित के ही समान नरकवास

की इच्छा की); ६. ९, ८; १३. ७६, २५ (इन्होंने गोदान से स्वर्ग प्राप्त किया); ११५, ७२ (कार्तिक मास में मांस भक्षण नहीं करते थे)।

२. सोमक (बहु० °काः), पाञ्चालों के साथ अथवा उनके अन्तर्गत उल्लिखित एक जाति या वंश का नाम है : १. २, १८५; १२३, ४०; १८५, ३१; १९३, १; ५. ५, १; २२, १८; ४८, ४३; ५०, ९; १३०, ८; १६० ६, ११; १७३, २; ६. १, २-४. २६. ३३; १५, १४; ५२, ३१; ५९, ७०; ७२, ३२ (भीष्म ने इनका वध किया); ७५, १२; ७७, ४९; ८८, ३. ४; ८९, १७. २२; ९७, ९. ३९. ४०; ९८, १९. २७; १०३, १; १०७, ४. १०८, २५; ११६, ६८. ७७; ११८, १८; ११९, ११७; ७. ७, ४; ११०; ३५; ११८, ७; १२५, १; १२६, १; १२७, ३२; १४६, १४०; १५१, ३५; १५५, १३; १५९, ९१. ९२. ९८; १६०, १३. १५. १६. २२. २३; १६१, १५; १६४, २४. २७; १६५, २; १६८, २३. ३०. ३३; १६५, ३४; १७२, १४, ३१; १७३, १०; १८६, ५; १९३, ३८; २००, ६५; २०१, ३; ८. २२, २२; २४, २६ (कर्ण से युद्ध किया); ७८, ७. ६० (कर्ण ने इनका वध किया); ७९, १०; ८२, १५; ८९, १०. ३०. ७७; ९०, ७. १६; ९१, १४. ५७; ९२, ७; ९. १, १३; ७, ४. १२. ४३; ८, ३२; ११, २४. ४८; १६, २७; १७, ७; १८,८ ; २०, ७; २१, ३४; ३०, २० (अश्वत्थामा ने इनके वध का वचन दिया था). ४९; ५६, ४२; ५७, ३५. ५२; ५९, २. १३; १०. ८, ३. ४७. १५०. १५९ (अश्वत्थामा ने इनका वध किया)।

३. सोमक = पाञ्चालराज जनमेजय (८. ८२, २१)।

सोमकीर्त्ति धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम है (१. ६७, ९९; ११७, ८)।

सोमकुल : ३. १२६, ४३।

सोमगिरि एक पर्वत का नाम है (१३. १६५, ३३)।

सोमतीर्थ, विभिन्न तीर्थों का नाम है : ३. ८३, १९. ११४. १८५।

सोमदत्त, कुरुवंशी महाराज प्रतीप के पौत्र और वाह्लीक के पुत्र का नाम है। इनके भूरि, भूरिश्रवा और शल नामक तीन पुत्र हुये : १. १२६, १५; १३४, २; १४३, १२; १८६, १४ (द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित); २. ३४, ८; ३५, ८; ५८, २४; ७४, २५; ७८, १; ८१, २६; ३. २९, ४८; १२०, १६; २५२, ५१; ४. ३८, १३; ५. ३०, २०; ४७, ६; ५५, ६३; ५७, २१ (चेकितान इससे युद्ध करेंगे). ३७; ५८, ७; ६६, ५; ८३, ४७; ८९, १४. १७; ९०, ५२; ९५, १९; १२४, १७; १२८, २६; ६. ५१, १८ (सौमदत्तिः); ६३, ३२ (इनके पुत्र भूरिश्रवा का उल्लेख); ८१, २ (देखिये नीलकण्ठी); ९२, २३. ३३ (घटोत्कच ने इनके ध्वज को गिरा दिया); ९४, १२; ९९, ५ (सर्वतोभद्रव्यूह के बायें पंख में); ७. २०, ८ (द्रोण के गरुडव्यूह में); ३७, २५; ८५, १९. ३४; १४४, ११. १३. १५. १८ (इन्हें शिनि ने पराजित किया था। शिव ने इन्हें यह वरदान दिया कि इनका पुत्र शिनि के पुत्र के साथ वही व्यवहार करेगा जो शिनि ने इनके साथ किया था। फलस्वरूप इनके पुत्र भूरिश्रवा ने शिनिपुत्र सात्यकि को पराजित कर के उनका अपमान किया); १५५, ३८; १५६, १. ९. १०. २२. २४. २७. ३० (अपने पुत्र भूरिश्रवा के मारे जाने पर क्रुद्ध होकर इन्होंने सात्यकि पर आक्रमण किया किन्तु पराजित हो गये); १५७, ३. ६. ९-११ (सात्यकि से एक बार फिर युद्ध किया); १५८, ६०; १६२, १. ५. ८. १५. १७. २२-२५. २८. ३३. ३४ (एक बार फिर सात्यकि से युद्ध किया परन्तु सात्यकि ने इनका वध कर दिया); ८. १ २२; ९. २, १६. ३३; २४, २८; ६३, ४६; ६४, ३३; १०. ९, ४५; ११ २४, २; २५, ३१; २६, ३३ (इनका शवदाह); १५. ११, ५. १७. २३; १४, ५; २९, ४४; ३२, १२ (व्यासजी द्वारा आवाहन करने पर गङ्गा से प्रकट होनेवाले मृत योद्धाओं में यह भी था)। तुकी० वाह्लीक, बाह्लीकात्मज, कौरव, कौरवेय, कौरव्य, कुरुपुङ्गव।

सोमदत्तसुत = भूरिश्रवा (११. २४, १)। तुकी० सोमदत्त (७. १५७, ३)।

सोमदत्ति (१. २, २६४) – देखिये सोमदत्त।

सोमधेय, पूर्व की एक जाति का नाम है जिसे भीमसेन ने पराजित किया था (२. ३०, १०)।

१. सोमप स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७०)।

२. सोमप, एक सनातन विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१ ३४)।

३. सोमप = विष्णु (सहस्रनाम)।

सोमपद एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, ११९)।

सोमपा = शिव (सहस्रनाम)।

सोमपाः, सात पितरों में से एक का नाम है। इनके तृप्त होने से सोमदेवता की तृप्ति होती है : २. ११, ४७; १२. १६६, २४; २८४, ८; ३४७, ५२; १३. १८, ७४; १४१, १०५।

सोमपीथिन् : १३. १०२, ५४।

सोमपुत्र = वर्चा : १. ६७, ११२; १८. ५, १८।

सोमपुत्री = ज्योत्स्नाकाली (५. ९८, १२)।

सोमपुर : ५. ११९, २०।

सोमलोक : ३. ८३, ११५. १८६; ८४, ४३. ८८. ११२; ९. ५०, २९; १३. २५, ४०; ७९, १०; १०२, २९; १०९, ६. ८; १२५, ८०; १४१, १०३; १४२, १८।

सोमवंश : १२. ३४२, ४६ (नहुष)।

सोमवंशीय = भीमसेन (३. १४७, ३)।

सोमवक्त्र = शिव (१४. ८, १८)।

सोमवर्चस्, एक सनातन विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३३. ३६)।

सोमवायव्याः, ऋषियों के एक वर्ग का नाम है (१२. १६६, २४)।

सोमश्रवस्, श्रुतश्रवा के पुत्र का नाम है : १. ३, १३ (ये एक सर्पिणी के गर्भ से उत्पन्न हुये थे, और जनमेजय पारिक्षित के पुरोहित बने)।

सोमश्रायण एक तीर्थ का नाम है : १. १७०, ३ (पाण्डव यहाँ आये)।

सोमसूनु = अभिमन्यु (७. ५४, ५७)।

सोमात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ३९)।

सोमान्वय : ५. ११४, ६; १२. ३५३, २। तुकी० सोमकुल, सोमवंश।

सोमाश्रम एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, १५७)।

सौकन्याख्यान : १. २, १७०।

सौगन्ध : १३. ४८, २२ (एक जाति का नाम है)।

सौगन्धिकवन एक स्थान का नाम है : २. १०, ७; ३. ८४, ४; १५०, २२; १५२, ३. १३; ५. १११, १२ (नैर्ऋतों द्वारा रक्षित और उत्तर में स्थित)।

सौगन्धिकाहरण से सुगन्धित कमलपुष्प लाने की कथा का तात्पर्य है : "हनुमानजी के आलिङ्गन का स्पर्श प्राप्त कर भीमसेन की थकान जाती रही। तदनन्तर भीमसेन को आश्वासन देकर हनुमानजी अन्तर्धान हो गये (३. १५१)। भीमसेन का सौगन्धिक वन में पहुँचना (३. १५२)। क्रोधवश नामक राक्षसों का भीमसेन से सरोवर के निकट आने का कारण पूछना (३. १५३)। भीमसेन द्वारा क्रोधवश नामक राक्षसों की पराजय और भीमसेन द्वारा सौगन्धिक कमलपुष्पों का संग्रह (३. १५४)। भयंकर उत्पात देखकर युधिष्ठिर आदि की भीमसेन के लिये चिन्ता और सबका गन्धमादन पर्वत पर स्थित सौगन्धिकवन में भीमसेन के पास पहुँचना (३. १५५)। पाण्डवों का आकाशवाणी के आदेश से पुनः नरनारायणाश्रम में वापस लौटना (३. १५६)।

सौचित्ति एक राजा का नाम है : ५. १९६, २८ (सत्यधृतिः); ६. ९३, १३ (सत्यधृतिः); ७. २३, ३६. ४१ (सत्यधृतिः)।

१. सौति = उग्रश्रवा : १. १, १ (लोमहर्षणपुत्र उग्रश्रवाः). ७. ९. २२. ७४. ९३. २१९. २२१. २५२; २, २. १९; ३, १. ७५. ७७. ८६; ४. १ (लोमहर्षणपुत्र उग्रश्रवाः). ६. ९; ५, ४. १३. २६. ३०; ६, १.

२४; ७, १. १२. २६; ८, १; ९, १. १३. १६; १०, ५; १२, ४; १३, २. ४. ६; १४, १; १५, १; १६, १. ४. १३; १७, ५; १८, १. ६; १९, १; २०, १. ५; २१, १; २२, १; २३,१; २४, १. ३; २५, १; २६, १; २७, १. १६; २८, १. १७; २९, १. ५. ३३; ३०, १. १६. १८. ४३; ३१, ४. २४; ३२, १; ३३, १; ३४, ६. १२; ३५, ४; ३६, २. २२. २४; ३७, १. १०; ३८, १; ३९, १. १२; ४०, ३. ७; ४१, १. १०. १५; ४२, १३. २३; ४३, ४. ७. १८. २२. २५; ४४. १; ४५, १; ४६, १. ११; ४७, १. ४; ४८, १. १४; ४९, २. ५. २१; ५०, ३२. ४४; ५१, १; ५२, १; ५३, ४. १८; ५४, १. ४. १७. २६; ५५, १७; ५६, ३. १२. २०. २५; ५७, २; ५८, १. ५. १९. २७; ५९, १. ४. ५. ९; ६०, १. २१; २. ५०, ४; १२. ३३९, ३८; ३४०, ५; ३४३, १. २. ७; ३४६, १५; ३४७, ८; १५. ३४, १; ३५, ६. १७; १८. ५, ७. ३१। तुकी० सूत भी।

२. सौति = सञ्जय (१. १, १४९)।

३. सौति = दारुकि : ३. १८, ५.६. ७. १२. १६. २९. ३१।

४. सौति = बन्दिन् (३. १३४, ३८)।

५. सौति (अधिरथ सूत का पुत्र) = कर्ण : ५. ८, ४४; ७. १८२, २९; ८. ७२, ३७; ८९, ४८. ५०; १४. ६०, २१।

सौत्रामणि एक यज्ञ का नाम है : ९. ५०, ३७; १३. १०९, १२।

सौदास = कल्माषपाद (मित्रसह) : १. १२२, २१; १७७, ३०; ३. २०८, १६; १२. ४९, ७७; १३. ६, ३२; ७८, १. ३; १४. ५६, २९. ३१; ५७, ११. १३. १८. २०; ५८, २. ५. ११. १५।

सौदेव = दिवोदास (१३. ३०, १४. २८)।

सौद्युम्नि = युवनाश्व (३. १२६, १०. १२)।

सौपर्ण (वि०) : ६. ९०, ७५; ८. ५३, ३०।

सौपाक एक जाति का नाम है (१३. ४८, २७)।

सौप्तिक से रात्रियुद्ध का तात्पर्य है : १. २, ७२. २९१. ३१०. ३१२; १६. ३, २६।

सौप्तिकपर्व, महाभारत के १० वें प्रमुख पर्व का नाम है जिसके अन्तर्गत ८३ वें और ८४ वें अवान्तर पर्व आते हैं : "दुर्योधन की आज्ञानुसार कृपाचार्य द्वारा अश्वत्थामा का सेनापति के पद पर अभिषेक कर दिये जाने के बाद कृपाचार्य, अश्वत्थामा और कृतवर्मा ने एक वन में विश्राम किया। वहाँ कौओं पर उल्लुओं के आक्रमण को देखकर अश्वत्थामा के मन में एक क्रूरसंकल्प का उदय हुआ तथा उन्होंने कृपाचार्य और कृतवर्मा से उसके सम्बन्ध में परामर्श किया। (१०. १)।

कृपाचार्य ने अश्वत्थामा को दैव की प्रबलता बताते हुये कर्तव्य के विषय में सत्पुरुषों से परामर्श लेने की प्रेरणा दी (१०. २)। अश्वत्थामा ने कृपाचार्य और कृतवर्मा को उत्तर देते हुये अपने क्रूरतापूर्ण निश्चय से अवगत कराया (१०. ३)। कृपाचार्य ने दूसरे दिन प्रातःकाल युद्ध करने का परामर्श दिया किन्तु अश्वत्थामा ने रात में सोते हुये लोगों को मार डालने का आग्रह प्रकट किया (१०. ४)। अश्वत्थामा और कृपाचार्य का संवाद तथा तीनों महारथियों का पाण्डवों के शिविर की ओर प्रस्थान (१०. ५)। अश्वत्थामा ने पाण्डवों के शिविर-द्वार पर एक अद्भुत पुरुष को देख कर उस पर अस्त्रों का प्रहार किया और अस्त्रों के अभाव में चिन्तित हो कर वे भगवान शिव की शरण में गये (१०. ६)। अश्वत्थामा द्वारा शिव की स्तुति, उनके सामने एक अग्निवेदी तथा भूतगणों का प्रकट होना, उनका आत्मसमर्पण करके भगवान शिव से एक खड्ग प्राप्त करना (१०. ७)। अश्वत्थामा द्वारा रात में सोये हुये पाञ्चाल आदि समस्त वीरों का संहार तथा शिविर के फाटक से निकल कर भागते हुये योद्धाओं का कृपाचार्य और कृतवर्मा द्वारा वध (१०. ८)। दुर्योधन की दशा देख कर कृपाचार्य और अश्वत्थामा का विलाप तथा उनके मुख से पाञ्चालों के वध का वृत्तान्त सुन कर दुर्योधन का प्रसन्न होकर प्राणत्याग करना (१०. ९)। धृष्टद्युम्न के सारथि के मुख से पुत्रों और पाञ्चालों के वध का वृत्तान्त सुन कर युधिष्ठिर का विलाप, द्रौपदी को बुलाने के लिये नकुल को भेजना, सुहृदों के शिविर में जाना तथा मारे गये पुत्रादि को देख कर भाइयों सहित उनका शोकातुर होना (१०. १०)। युधिष्ठिर का शोक में व्याकुल होना, द्रौपदी का विलाप तथा तथा द्रोणकुमार के वध के लिये आग्रह करना; भीमसेन का अश्वत्थामा को मारने के लिये प्रस्थान (१०. ११)। श्रीकृष्ण का अश्वत्थामा की चपलता एवं क्रूरता के प्रसङ्ग में सुदर्शन चक्र माँगने की बात सुनाते हुये उसे भीमसेन की रक्षा के लिये प्रयत्न करने का आदेश देना (१०. १२)। श्रीकृष्ण, अर्जुन और युधिष्ठिर का भीमसेन के पीछे जाना; भीमसेन का गङ्गातट पर पहुँच कर अश्वत्थामा को ललकारना और अश्वत्थामा द्वारा ब्रह्मास्त्र का प्रयोग (१०. १३)। अश्वत्थामा के अस्त्र का निवारण करने के लिये अर्जुन द्वारा ब्रह्मास्त्र का प्रयोग एवं वेदव्यास और देवर्षि नारद का प्रकट होना (१०. १४)। वेदव्यास की आज्ञा से अर्जुन द्वारा अपने अस्त्र का उपसंहार तथा अश्वत्थामा का अपनी मणि देकर पाण्डवों के गर्भों पर अपना दिव्यास्त्र छोड़ना (१०. १५)। श्रीकृष्ण से शाप पा कर अश्वत्थामा का वन को प्रस्थान तथा पाण्डवों का मणि देकर द्रौपदी को शान्त करना (१०. १६)। अपने समस्त पुत्रों और सैनिकों के मारे जाने के विषय में युधिष्ठिर का श्रीकृष्ण से पूछना और उत्तर में श्रीकृष्ण द्वारा महादेवजी की महिमा का प्रतिपादन (१०. १७)। महादेवजी के कोप से देवता, यज्ञ, और जगत की दुरवस्था तथा उनके प्रसाद से सबका स्वस्थ होना (१०. १८)।"

१. सौबल (बहु० °लाः) : ६. ९०, ४०। तुकी० सुबलात्मज (बहु०)।

२. सौबल (वि०) : ६. ५८, २३।

सौबलक (बहु० °काः); ६. ५८, ७ (शूराः)।

सौबली — देखिये गान्धारी।

सौबलेय — देखिये शकुनि।

सौबलेयी — देखिये गान्धारी

१. सौभ शाल्व की अन्तरिक्ष में स्थित नगरी का नाम है : २. १२, ३२; १४, २. ६. १५; १६, २७. ३०. ३१; १७, ४; १९, २७; २०, १०. १६. १७. २६. २९; २१, १७. २२. २९; २२, १. ३. ९. २७. ३२. ३४. ३५ (श्रीकृष्ण ने इसको ध्वस्त किया). ३६. ४१; ५. ४८, ७९; १३०, ४१ (सौभद्वार पर द्विविद नामक वानर ने श्रीकृष्ण को पत्थरों की बौछार करके आच्छादित कर दिया); ७. ११, १४ (दैत्यपुरं खस्थं); १२. ३३९, ९५ (यह भविष्यवाणी हुई कि श्रीकृष्ण इसका विध्वंस करेंगे)।

२. सौभ = शाल्व : ३. १४, १९; १५, १. १९; ५. ४८, ७९ (शाल्वराजं)।

१. सौभद्र (सुभद्रा के पुत्र) = अभिमन्यु : १. १, १९०; २, २१४; ४९, १५ (सौभद्रस्यात्मजः = परिक्षित); २२१, ६५. ७४; २. ४५, ४९; ४. ७२, ३३. ३५; ५. ३, १८; ४८, ३३; ५६, १७; ५७, १९ (युद्ध के लिये बृहद्बल को इनका भाग नियत किया गया); १४०, १२; १४१, ३२; १५१, ५५; १६४, ९; ६. २५, ६. १८; ४४, १८; ४५, १६; ४७, २५. २६. २८. ६६; ५२, ८; ५५, ५. ८. ९. १२. १७; ५८, २४; ६०, २६; ६१, १. ६; ६२, ४०. ४६. ४७. ५८; ६९, ११; ७२, ८; ७३, २४. ३१. ३४-३६; ७५, ७; ७७, ५५; ७९, २५. ३३; ८४, ४०; ९६, ३९-४२; १००, २. ५. ८. १५. २५; १०१, २. ५. २१. ३१; १०४, २२; १०८, ५; ११०, ४; ११५, ३१; ११६, ८. ३०. ३२; ११८, ४०; ७. ८, ४. २८; १०, ५०; १४, ५०. ५२. ५३. ५६. ८१. ८५. ८७; १५, ३. ६; २३, ९५ (बलरामजी ने इन्हें एक रौद्र धनुष दिया); २६, ५३; ३२, ७१; ३३, २०. २१ (निहते). २५. २६; ३४, ११; ३५, १२. २९; ३६, १. ४२; ३७, १. २. ६. ८. १२. २३. ३५; ३८, ३. १४; ३९, १. ७. ८. ११. २३. २४. २७. २९; ४०, १५. १७. २५. २७. ३०. ३२. ३७; ४१, ६. ११. १४. २२; ४३, १७; ४४, ३. १०. १२; ४५, ११. १४. १७. २७; ४६, २. ३. ७. १३. १६. २५; ४७, ६. ७. २४; ४८, ५. २२; ४९, ६. १३. १४. २८.

३४; ५१, १. २. ८; ५२, ३. ४; ७२, १६. १८. २०. २२. ७८; ७३, ५. १०; १४८, १७; १७०, ५६; १८३, ४५; १९१, ४२; १९९, ३१; ८. ५, १३ (इन्होंने दुर्योधन के पुत्र का वध किया था). २१ (वृहद्दल का वध किया था). २३ (शल्य के पुत्र का वध किया था). ३१ (मगधराज जयत्सेन का वध किया था); ६, १०; ९, ४६; ७३, ७२. ७५. ७७; १०. ११, ११; ११. १५, ३७; २०, ६. २८; १२. १, १५; १४. ६१, ५; ६६, २५; १५. २९, ४२; ३१, २. १३ (यह सोम के अंश से उत्पन्न हुये थे); ३२, ८; ३३, ४; १८. ४, १९ ।

२. सौभद्र एक तीर्थ का नाम है : १. २१६, ३ (दक्षिण के तीर्थों में से एक). ९ (पाँच नारीतीर्थों में से एक) ।

सौभपति = शाल्व : ३. १२, ३२; १६, १. ३१; १७, २०; २०, ३२; २२, २१; ५. १७६, ५३; १७७, २ ।

सौभर, पाञ्चजन्य नामक पितरों के लिये वर्चा के अंश से उत्पन्न एक अग्नि का नाम है (३. २२०, ९) ।

सौभराज = शाल्व : ३. १४, ११; १६, ३२; १७, १५; १९, १२. १४. १६; ५. १७७, २६ ।

सौभवधोपाख्यान – "श्रीकृष्ण ने बताया : शिशुपाल के वध के समाचार को सुन कर प्रचण्ड रोष में भर कर शाल्व ने द्वारका पर आक्रमण करके वृष्णिवंशी श्रेष्ठ कुमारों के साथ उसने युद्ध आरम्भ किया । शाल्व इच्छानुसार चलनेवाले सौभ नामक विमान पर बैठ कर आया था और क्रूरतापूर्वक यादवों की हत्या करने लगा । उस समय उसने मेरा वध करने की सौगन्ध खाई थी । तब मेरा मन रोष से भर उठा और मन ही मन निश्चय करके मैंने शाल्व के वध का विचार किया । मैंने सब ओर उसकी खोज की तो वह मुझे समुद्र के एक द्वीप में दिखाई पड़ा । मैंने पाञ्चजन्य शंख बजाकर शाल्व को समरभूमि में बुलाया । वहाँ सौभ नवासी दानवों के साथ मेरा दो घड़ी तक युद्ध हुआ और मैंने सब को वश में करके पृथिवी पर मार गिराया । इसी कारण मैं हस्तिनापुर में जूआ होने के समय उपस्थित नहीं हो सका (३. १४) । सौभनाश की विस्तृत कथा के प्रसंग में द्वारका में युद्धसम्बन्धी रक्षात्मक तैयारियों का वर्णन (३. १५) । शाल्व की विशाल सेना के आक्रमण का यादवसेना द्वारा प्रतिरोध; शाम्ब द्वारा क्षेमवृद्धि की पराजय, वेगवान् का वध तथा चारुदेष्ण द्वारा विविन्ध्य नामक दैत्य का वध; प्रद्युम्न द्वारा सेना का आश्वासन (३. १६) । प्रद्युम्न और शाल्व का घोर युद्ध (३. १७) । मूर्च्छावस्था में सारथि के द्वारा रणभूमि से बाहर लाये जाने पर प्रद्युम्न का अनुताप और इसके लिये सारथि को उपालम्भ देना (३. १८) । प्रद्युम्न द्वारा शाल्व की पराजय (३. १९) । श्रीकृष्ण और शाल्व का भीषण युद्ध (३, २०) । श्रीकृष्ण का शाल्व की माया से मोहित होकर पुनः प्रबुद्ध होना (३. २१) । शाल्ववधोपाख्यान की समाप्ति और युधिष्ठिर की आज्ञा ले कर श्रीकृष्ण, धृष्टद्युम्न तथा अन्य सब राजाओं का अपने-अपने नगर को प्रस्थान (३. २२) । इस आख्यान की आगे की कथा के लिये देखिये द्वैतवनप्रवेश ।

सौभाधिपति = शाल्व (३. १८३, ३४) ।

१. सौमकि (सोमकों के राजा अथवा सोमक के वंशज) = द्रुपद : १. १३१, ६०; १६३, २५; १९८, १७; २. ४, ३१; ७७, १० ।

२ सौमकि (सोमक के वंशज) = सत्यधर्मा (५. १४१, २५) ।

३. सौमकि = धृष्टद्युम्न अथवा शिखण्डिन् (५. १५१, ६५) ।

४. सोमकि = क्षत्रधर्मा (७. ८५, ४०) ।

१. सोमदत्ति (सोमदत्त के पुत्र) = भूरिश्रवा : १. २, २६४; २. ४८, १२; ३. २४९, १५; ५. २७, २५; ३०, २१; १२४, ४९; १६०, १२१; १६१, ३९; १६५, २९; ६. २५, ८; ४४, १६; ४५, ३६; ५१, २. १८; ६०, २३; ६१, ९; ६३, ३२, ६४, ३; ७४, २२; ७५, २२; ८४, ३५. ३६; ८९, ४; ९५, १३; ९७, ४; १०८, ५९; ११०, ११; १११, ४५. ४८. ४९; ७. १४, ४३. ४५; २५, ५३. ५४; ३९, ५; ८५, १९; ८७, १२; ९५, ५०; १०४, ३१; १०५, २२. २३; ११२, ३९; १४२, २२. २३. ३०. ५३. ६४; १४३, ४९; १४४, २९; १४७, ३२. ४०; १५०, ३४; १५३, ५५; १८३, १४; १९८, ३३ (हतः); ८. ७३, १३; ११. २४, १० (यूपकेतोर्महात्मनः) ।

२. सौमदत्ति = शल (?) : ७. १०६, २५; १०८; १. ३. ४. ८. १२ (द्रौपदेयों के विरुद्ध युद्ध किया और सहदेव के पुत्र ने इनका वध किया) ।

१. सौमित्रि = लक्ष्मण (देखिये वस्था०) ।

१. सौम्य एक ऋषि का नाम है : २. ५, ११ (नारद के साथ गये) ।

२. सौम्य = श्रीकृष्ण (६. ६५, ४९; ११. १९, १०) ।

सौरथ (बहु०) एक जाति का नाम है (३. १९७, २८) ।

सौरथेय = शिवि (३. १९७, २५) ।

सौरभी, सुरभि नामक गाय की पुत्री का द्योतक है : १. १५७, ५८; ५. १०२, ८ ।

सौरभेय (अधिकांशतः बहु० °याः) : १. १०४, २६ (सौरभेयात् कामधेनुपुत्राः, नील०); ७. ६, ९; ८. ८७, ४४; १२. २८३, ५६; ३६०, ३ ।

१. सौरभेयी एक अप्सरा का नाम है : १. २१६, २० (अर्जुन ने जिन पाँच अप्सराओं को शाप से मुक्त कराया उनमें यह भी एक थी); २. १०, ११ (वरुण की सभा में) ।

२ सौरभेयी (बहुधा बहु०), सुरभि की पुत्रियों का द्योतक है : १३. १८, ७३; ७७, १८; ७८, २३ ।

सौरी (सूर्यपुत्री) = तपती (१. ९४, ४८) ।

सौर्य (वि०) : १३. ७६, ११ ।

१. सौवीर (सौवीरों के राजा) : १. १३९, २० ।

२. सौवीर = विपुल (१. १३९, २२) ।

३. सौवीर = सुमित्र (१.१३९, २३)

४. सौवीर = जयद्रथ (३. २६७, ६; २७१, ८) ।

५. सौवीर = शल्य (८. ९, ८५) ।

६. सौवीर (बहु० °राः) एक जाति का द्योतक है (देखिये सुवीर बहु०) : २. ४५, १०; ३. २६५, १३; २६७, ७. ८. ११. २०; २७१, ३. २७ (जयद्रथ के बारह ध्वजवाहक). ५०; ५. १९, १९; १३४, ३२; ६. ९, ५३ (भारतवर्ष की एक जाति); १८, १३ (दुर्योधन की सेना में); २०, १०; ५१, १४; ५२, २१; ५६, ५ (भीष्म के गरुडव्यूह के ग्रीवा भाग में); ५९, ७६ (अर्जुन पर आक्रमण किया). १३५; ७१, १४; ७५, १९; १०६, ७; ११७, ३३; ११९, ८१; ७. ७, १६; ७५, ११; ९५, ४५; ११०, ७४; १३८, ११; १३९, २३; ८. ६०, ४२; ४४, ४७; १२. १०१, ३; १४०, ४ (राजा शत्रुञ्जयो नाम सौवीरेषु महारथः) ।

१. सौवीरक = जयद्रथ (३. २६२, २) ।

२. सौवीरक (वि०): ३. २६५, ९ (जयद्रथ के ध्वजवाहक) ।

सौवीरराज : ७. १०, ३३ (सात्यकि ने इन्हें पराजित किया था) । = जयद्रथ : ३. २६५, १२; २६८, १२. १३ ।

सौवीरी (सौवीरराज की पुत्री): १. ९४, ७ (मनस्यु की पत्नी) ।

सौश्रुति एक कौरव योद्धा का नाम है जिसका अर्जुन ने वध किया था (८. २७, ३. ९. १०. १३) ।

सौहृद (बहु०) दक्षिण की एक जाति का नाम है (६. ९, ५९) ।

१. स्कन्द, अग्नि और स्वाहा के पुत्र का नाम है जिन्हें कृत्तिकाओं ने पाला था । ये शक्ति धारण करते हैं और इनका वाहन मयूर है । ये देवों के सेनापति हैं और इनका नाम कार्तिकेय भी है : १. ६२, ३४ (अनेकजननो यत्र); ६६, २३ (अग्नेः पुत्रः कुमारस्तु श्रीमाञ्छरवणालयः । तस्य शाखो विशाखश्च नैगमेयश्च पृष्ठजः । कृत्तिकाभ्युपपत्तेश्च कार्त्तिकेय इति स्मृतः); १३७, १३ (आग्नेयः कृत्तिकापुत्रो रौद्रो गाङ्गेय इत्यपि । श्रूयते भगवान्देवः सर्वगुह्यमयो गुहः); २२७, ३३ (स्कन्दः शक्तिं समादाय तस्थौ मेरुरिवाचलः); ३. ८३, १६५ (तैजसतीर्थ में इनका देवसेनापति के पद

पर अभिषेक हुआ था); २१७, ४ (कुमारश्च यथोत्पन्नो यथा चाग्नेः सुतोऽभवत् । यथा रुद्राच्च सम्भूतो गङ्गायां कृत्तिकासु च); २२३, १ (जन्म कार्तिकेयस्य); २२५, १७. १८. ३८. ३९ (सप्तर्षियों में से छः की पत्नियों का रूप धारण करके स्वाहाने अग्नि के साथ समागम किया । तदनन्तर उसने अग्नि के शुक्र को श्वेत पर्वत पर फेंक दिया जहाँ वह कृत्तिकाओं द्वारा पोषित हो कर षडानन कुमारस्कन्द के रूप में विकसित हुआ । इन कुमार ने क्रौञ्च पर्वत को विदीर्ण किया); २२६, ७ (विश्वामित्रजी ने इनके जातकर्मादि संस्कार सम्पन्न किये). १७. १८. २१. २७ (मातृकाओं ने इन्हें अपना पुत्र बनाया); २२७, ३. १४. १५. १६. १८ (इन्द्र के नेतृत्ववाली देवों की सेना को पराजित किया); २२८, १. ५ (ततः कुमारपितरं स्कन्दमाहुर्जना भुवि । रुद्रमग्निमुखां स्वाहां प्रदेशेषु महाबलम्). ७. ९. ११. १२ (वीराष्टकः प्रोक्तः स्कन्दमातृगणोद्भवः). १३ (छागमयं वक्त्रं स्कन्दस्यैवेति विश्रुतम् । पट्शिरोऽभ्यन्तरं राजन्नित्यं मातृगणार्चितम्); २२९, १. ५. ८. १४. १९. २१. २२. ३० (रुद्रसूनुं ततः). ३१ (रुद्रस्य वह्नेः स्वाहायाः षण्णां स्त्रीणां च भारत । जातः स्कन्दः सुरश्रेष्ठो रुद्रसूनुस्ततोऽभवत्). ३७. ४४. ४६. ४९. ५१. ५२ (इन्होंने जब इन्द्र का पद स्वीकार नहीं किया तब इन्हें देवों का सेनापति बनाया गया और देवसेना के साथ इनका विवाह हुआ); २३०, ६. ७. ९. १२-२५. १८. २०-२२ (कृत्तिकाओं और विनता को इनकी मातायें माना गया है). २४. २६ (इनसे स्कन्दापस्मार उत्पन्न हुआ). १३ (कुमाराश्च कुमार्यश्च ये प्रोक्ताः स्कन्दसम्भवाः). ४० (लोहितस्योदधेः कन्या धात्री स्कन्दस्य सा स्मृता). ४२ (आर्या माता कुमारस्य). ४४; २३१, १. २. ५. ७. ८ (महासेनं, इन्हें महादेव और उमा का पुत्र कहा गया है). २७. ५६. ५८. ९०. ९९. १००. १०२. १०४. १०५. १११ (दैत्यों के विरुद्ध युद्ध करते हुये इन्होंने महिष का वध किया). ११३; २३२, ३ (यहाँ से इनके ५१ नामों का वर्णन आरम्भ होता है). २१ (मार्कण्डेय ने स्तुति की); ६. ३४, २४; १११, ४७; ७. ७, ६; ३६, ४३; ३९, २; १०५, १८; १७३, ६२; ८. ५, ५७; १०, ३३. ४३. ५६; ९. ६, २१. २९; १७, ५१; ४२, ७; ४३, ४८. ४९ (ये सोमतीर्थ में नित्य निवास करते हैं); ४४, ३ । "जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायनजी ने कुमार कार्तिकेय के प्राकट्य और उनके अभिषेक की तैयारी का विस्तार से वर्णन किया (९. ४४) । स्कन्द का अभिषेक और उनके महापार्षदों के नाम, रूपादि का विस्तृत वर्णन (९. ४५) । मातृकाओं का परिचय, स्कन्द की रणयात्रा, और उनके द्वारा तारकासुर, महिषासुर, आदि दैत्यों का सेना सहित संहार (९. ४६) । ९. ४४, ३९; ४५, २६. ३५. ३७. ३८. ४०. ५५. ११५; ४६, ५३. ६८. ७०. ७९. १०६. १०९; ११. २३, १८; १२. १५, १६ (हन्ता रुद्रस्तथा स्कन्दः); १२२, ३२ (इन्हें भूतों का अधिपति बनाया गया); १५३, ७६ (कुमारः); २८४, २०६ (गुहस्य); ३००, ५८ (षडानन); ३२७, ९. १०. १४ (पावकि). १७ (इनका आदर करने के लिये विष्णु ने इनकी शक्ति को केवल हिला कर छोड़ दिया यद्यपि वे उसे उखाड़ सकते थे). १८ (वीर्यं कुमारस्य); ३३९, ९३ (महेश्वरमहासेनौ बाणप्रियहितैषिणौ); १३. १४, २७८ (स्कन्दो मयूरमास्थाय स्थितो देव्याः समीपतः । शक्तिघण्टे समादाय द्वितीय इव पावकः); १६, २२ (शिव को इनके साथ समीकृत किया गया है); ३१, ६; ८५, १३ (पावकिः). ८१ (नाम की उत्पत्ति). ८२. १६२. १६३ (इनकी उत्पत्ति रुद्र के अग्नि में पतित हुये शुक्र से हुई थी, कृत्तिकाओं ने इनका पालन किया, और ये देवों के सेनापति बने); ८६, १४ (नाम की उत्पत्ति). ३१ (देवों द्वारा इन्हें विभिन्न उपहार प्रदान करना, इनके द्वारा तारकासुर का वध); १३४, १; १५०, २८; १६५, १० ।

तुकी० इनके निम्नलिखित पर्याय भी :—

अग्निज : ८. ९०, ६८ ।

अग्निदायाद : ३. २२५, २४ ।

अग्निपुत्र, अग्निसुत — देखिये वस्था० ।

अनलपुत्र : ९. ४५, ३६ ।

अनलसूनु : ९. ४६, ७२

अनलात्मज : ९. ४४, ११

आग्नेय — देखिये वस्था० ।

कार्तिकेय : १. ६२, ३४; ६६, २४; १८९, ३३; २. ३२, ४; ३. ८३, १३६ (औशनस तीर्थ में विद्यमान). १४२; २२३, १; २२७, ८; २३१, १९; २३२, ९; ५. १६६, २१; ६. ५०, ३३; १२२, ३; ७. ५, २१; ९४, ४६; १५९, ४३; १८०, १३; ९. ४३, ४९; ४४; १४. ४४; ४५, ३१. ४३-४६. ११४; ४६, ८१. ८३. ८४. १०१; १३. ८५, ८२. १६२. १६३; ८६, १४ (नाम की उत्पत्ति). ३३ ।

कुमार : १. ६६, २३; ३. ८४, १४५; २१६, ४; २२५, १८; २२६, १२. १५; २२७, ६; २३०, ४२; ५. १५६, १३; १६५, ७; ९. ४३, ४९; ४४, १. ५. १६. ३१. ४०. ५१; ४५, १८. २१. ४२. ७८; ४६, १. ५०. ५९. ७७. ९०. १०२; ४७, १. ३; १२. १२२, ३२ (द्वादशभुजं); १५३, ७६; ३२७, ९. १८; १३. ८६, १७. १८. ३०. ३२ (देवानां सेनापत्यमवाप्तवान्) ।

कुमारपितृ — देखिये वस्था०

कृत्तिकापुत्र : १. १३७, १३; ३. २३१, १०३ ।

कृत्तिकासुत : ३. २३१, ५४ ।

गाङ्गेय — देखिये वस्था० ।

गुह : १. १३७, १३; ३. ८३, १६५; ८४, ७७; ८५, ६०; १८३, १३; २२५, १९; २२७, ९; २२९, २९; २३१, १८; २३२, २०; ९. ४६, ४५; १२. २८४, २०६; १३. २६, ९२; ८५, ८२ (सुवर्ण के साथ समीकृत); ८६, १४ (नाम की व्युत्पत्ति). २९ ।

छागवक्त्र, ज्वलनसूनु, ज्वलनात्मज, देवसेनापति, नैगमेय, पविकात्मज, पावकि, पृष्ठज, ब्रह्मण्य, भद्रशाख — देखिये वस्था० ।

महासेन : २. ११, ५२; ४२, १३; ३. ८५, ६०; २२५, २७; २२६, १. १२. २५. २६. २८; २२७, २. ४; २२९, ४१; २३०, १; २३१, ८. १३. २०. ५५. ९२. ९५. ९९. १०४. ११०; ९. ६, २०; ४३, ४९; ४६, ६०. ६३. ६४. ७३. ८३; १२. ३३९, ९३ ।

रुद्रसूनु, रौद्र, वह्निनन्दन, विशाख, शक्तिधर — देखिये वस्था० ।

शक्तिधृक् : ३. २२७, १६ ।

शक्तिपाणि : ५. १६५, ७ ।

शर्वणालय, शाख, षड्वक्त्र, षडानन, षण्मुख, सेनानी, स्कन्दराज हुताशनसुत — देखिये वस्था० ।

स्कन्द — युधिष्ठिर के पूछने पर मार्कण्डेयजी ने स्कन्द के निम्नलिखित नामों का उल्लेख किया : 'आग्नेय, स्कन्द, दीप्तकीर्ति, अनामय, मयूरकेतु, धर्मात्मा, भूतेश, महिषमर्दन, कामजित्, कामद, कान्त, सत्यवाक, भुवनेश्वर, शीघ्र, शिशु, शुचि, चण्ड, दीप्तवर्ण, शुभानन, अमोघ, अनघ, रौद्र, प्रिय, चन्द्रानन, दीप्तशक्ति, प्रशान्तात्मा, भद्रकृत, कूटमोहन, षष्ठीप्रिय, धर्मात्मा, पवित्र, मातृवत्सल, कन्याभर्त्ता, विभक्त, स्वाहेय, रेवतीसुत, प्रभु, नेता, विशाख, नैगमेय, सुदुश्चर, सुव्रत, ललित, बालक्रीडनप्रिय, आकाशचारी, ब्रह्मचारी, शूर, शरवणोद्भव, विश्वामित्रप्रिय, देवसेनाप्रिय, वासुदेवप्रिय, प्रिय और प्रियकृत ।' मार्कण्डेयजी ने बताया कि इन दिव्य नामों के पाठ से धनकीर्त्ति और स्वर्ग प्राप्त होता है (३. २३२, ३-९) । इनके अतिरिक्त मार्कण्डेयजी द्वारा स्कन्द की स्तुति में स्कन्द के निम्नलिखित नाम आते हैं : ब्रह्मण्य, ब्रह्मज, ब्रह्मविद्, ब्रह्मेशय, ब्रह्मवतां वरिष्ठः, ब्रह्मप्रिय, ब्राह्मणसव्रतिन्, ब्रह्मज्ञ, ब्रह्माणां नेतृ, स्वाहा, स्वधा, परमं पवित्रम्, मन्त्रस्तुत, प्रथितः षडर्चिस्, संवत्सर, षड् मासार्धमासायनं दिशश्च, पुष्कराक्ष, अरविन्दवक्त्र, सहस्रवक्त्र, सहस्रबाहु, लोकपाल, परमं हविस्, भावन, सेनाधिपति, प्रचण्ड, प्रभु, विभु, शत्रुजेतृ, सहस्रभू, धरणी, सहस्रतुष्टि, सहस्रभुक्, सहस्रशीर्ष, अनन्तरूप, सहस्रपद्, गुह, शक्तिधर, गङ्गासुत, स्वाहासुत, षण्मुख, दीक्षा, सोम मरुत्, धर्म, वायु, अचलेन्द्र, इन्द्र, सनातन, प्रभु, उग्रधन्वा, ऋतस्यकर्त्ता, दितिजान्तक, जेता रिपूणां, प्रवरः सुराणां, सूक्ष्मं तपस्तत्परं, परावर, परावरज्ञ,

धर्म, सर्वसुरप्रवीर, द्वादशनेत्र बाहु। (३. २३२, ११-१९)।

२. स्कन्द = सूर्य (३. ३, १८)।

३. स्कन्द = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)

स्कन्दधर = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्कन्दमातृ = दुर्गा (उमा) : ६. २३, ११।

स्कन्दयुद्ध से असुरों के साथ स्कन्द के युद्ध का तात्पर्य है। इसका वर्णन ३. २३१ में विस्तार से मिलता है। इसी स्थान पर स्कन्द द्वारा स्वाहा देवी के सत्कार, रुद्र देव के साथ स्कन्द और देवताओं की भद्रवट यात्रा, देवासुर-संग्राम, महिषासुर वध, तथा स्कन्द की प्रशंसा आदि विषयों का भी वर्णन है (देखिये ३. २३१)।

स्कन्दराज = स्कन्द (१२. ३२७, १०)।

स्कन्दविशाख = शिव (१३. १४, ३१५)।

स्कन्द-शक्र-समागम, से इन्द्र के साथ स्कन्द के युद्ध की कथा का तात्पर्य है। इस युद्ध में इन्द्र और देवताओं को स्कन्द ने पराजित कर दिया। तब देवताओं सहित इन्द्र स्कन्द की शरण में आये और स्कन्द ने उन सब को अभयदान दिया (३. २२७)।

स्कन्दापस्मार स्कन्द के शरीर से उत्पन्न हुये एक दैत्य का नाम है (३. २३०, २६)।

स्कन्दोत्पत्ति से स्कन्द की उत्पत्ति की मार्कण्डेय द्वारा वर्णित कथा का तात्पर्य है : युधिष्ठिर ने मार्कण्डेयजी से पूछा : 'कुमार स्कन्द का जन्म कैसे हुआ ? वे अग्नि के पुत्र किस प्रकार हुये ? भगवान् शिव से उनकी उत्पत्ति किस प्रकार हुई ? वे गङ्गा और ६ कृत्तिकाओं के गर्भ से कैसे प्रकट हुये ?' युधिष्ठिर के प्रश्नों का उत्तर देते हुये मार्कण्डेयजी ने स्कन्दोत्पत्ति की कथा का विस्तार से वर्णन आरम्भ किया : "इन्द्र के द्वारा केशी के हाथ से देवसेना का उद्धार (३. २२३)। इन्द्र का देवसेना के साथ ब्रह्माजी के पास तथा ब्रह्मर्षियों के आश्रम पर जाना; अग्नि का मोह और वनगमन (३. २२४)। स्वाहा का मुनिपत्नियों के रूप में अग्नि के साथ समागम, स्कन्द की उत्पत्ति तथा उनके द्वारा क्रौञ्च आदि पर्वतों का विदारण (३. २२५)। विश्वामित्र द्वारा स्कन्द के जातिकर्मादि संस्कार सम्पन्न करना और विश्वामित्र के समझाने पर भी ऋषियों का अपनी पत्नियों को स्वीकार न करना तथा अग्निदेव आदि द्वारा बालक स्कन्द की रक्षा करना (३. २२६)।"

स्कन्दोपाख्यान से स्कन्द की कथा का तात्पर्य है : "स्कन्द के पार्षदों का वर्णन (३. २२८)। स्कन्द का इन्द्र के साथ वार्तालाप, देवसेनापति के पद पर अभिषेक तथा देवसेना के साथ उनका विवाह (३. २२९)।

स्कन्ध, धृतराष्ट्रवंशी एक नाग का नाम है (१. ५७, १८)।

स्कन्धाक्ष, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६०)।

स्तनकुण्ड, एक तीर्थ का नाम है (३. ८४, १५२)।

स्तनपोषिक, उत्तरपूर्व की एक जाति का नाम है (६. ९, ६८)।

स्तनबाला (बहु०) एक दक्षिण भारतीय जाति का नाम है (६. ९, ६३)।

स्तम्बमित्र, मन्दपाल और जरिता से उत्पन्न एक शार्ङ्गक का नाम है : १. २३०, १०; २३२, ४. १२।

स्तवप्रिय = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्तवराज से शिवसहस्रनाम स्तोत्र का तात्पर्य है : १३. १७, २२. २३; १८, ८२।

स्तव्य = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्तुत = शिव : १०. ७, ६; १२. २८४, ८९ (सहस्रनाम)।

स्तुति = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्तुतिशास्त्र (°स्त्राणि) : २. ११, ३५।

स्तुत्य = शिव : १०. ७, ६; १२. २८४, ८९ (सहस्रनाम)।

स्तूयमान = शिव : १०. ७, ६; १२. २८४, ८९ (सहस्रनाम)।

स्तुभ, भानु नामक अग्नि के ६ पुत्रों में से एक का नाम है (३. २२१, १४)।

स्तेन (बहु० °नाः), चोरों का द्योतक है (१२. २९६, ८)।

स्तोतृ, स्तोत्र = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्तोत्रात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ४४)।

स्तोम : १२. १९९, ६८ (वेदाःस्तोभामन्त्राः); २००, ११; २६८, ३७ (ऋचो युजूंषि सामानि स्तोभाश्च विधिचोदिताः); १३. १४, ३७; ८५, ९१।

स्त्री = शिव (सहस्रनाम)

स्त्रीपर्वन्, महाभारत के ११ वें प्रमुख पर्व का नाम है : १. १, ९०; २, २१२; १८. ६, ६७।

स्त्रीराज्य, प्राचीनकाल के एक राजा का नाम है (३. ५१, २५)।

स्त्रीज्याधिपति = सृगाल (?) : १२. ४, ७।

स्त्रीविलाप : १. २, ७३ (स्त्रविलापपर्व का द्योतक है)।

स्त्रीविलापपर्व, महाभारत के ८६ वें अवान्तरपर्व का नाम है जो स्त्रीपर्व के अन्तर्गत आता है : वेदव्यासजी के वरदान से दिव्यदृष्टि-सम्पन्न गान्धारी का युद्धस्थल में मारे गये योद्धाओं तथा रोती हुई वधुओं को देखकर श्रीकृष्ण के सम्मुख विलाप (११. १६)। मरे हुये दुर्योधन तथा उसके पास रोती हुई अपनी पुत्रवधू को देखकर गान्धारी का श्रीकृष्ण के सम्मुख विलाप (११. १७)। अपने अन्य मृत पुत्रों तथा मृत दुःशासन को देखकर गान्धारी का श्रीकृष्ण के सम्मुख विलाप (११. १८)। विकर्ण, दुर्मुख, चित्रसेन, विविंशति, तथा दुःसह को देखकर गान्धारी का श्रीकृष्ण के सम्मुख विलाप (११. १९)। गान्धारी द्वारा श्रीकृष्ण के प्रति उत्तरा और विराटकुल की स्त्रियों के शोक एवं विलाप का वर्णन (११. २०)। गान्धारी द्वारा कर्ण को देख कर उसके शौर्य तथा उसकी स्त्री के विलाप का श्रीकृष्ण के सम्मुख वर्णन (११. २१)। अपनी-अपनी स्त्रियों से घिरे हुये अवन्ती नरेश और जयद्रथ को देख कर तथा दुःशला पर दृष्टिपात करके गान्धारी का श्रीकृष्ण के सम्मुख विलाप (११. २२)। शल्य, भगदत्त, भीष्म, और द्रोण को देखकर श्रीकृष्ण के सम्मुख गान्धारी का विलाप (११. २३)। भूरिश्रवा के पास उनकी पत्नियों को विलाप करते देख तथा शकुनि को देख कर गान्धारी का श्रीकृष्ण के सम्मुख शोकोद्गार (११. २४)। अन्यान्य वीरों को मरा हुआ देख कर गान्धारी का शोकातुर होकर विलाप करना और क्रोधपूर्वक श्रीकृष्ण को यदुवंश-विनाश विषयक शाप देना (११. २५)।"

स्थण्डिलेयु, पुरु के तीसरे पुत्र रौद्राश्व द्वारा मिश्रकेशी नामक अप्सरा के गर्भ से उत्पन्न एक महाधनुर्धर पुत्र का नाम है (१. ९४, १०)

स्थविर = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्थविष्ठ = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्थविष्ठः स्थवीयसां = श्रीकृष्ण (१२. ४७, २५)।

१. स्थाणु, रुद्र का एक नाम है : १. ६६, २ (स्थाणु अर्थात शिव के पुत्र, ग्यारह रुद्रों में से एक); १२३, ६९।

२. स्थाणु = शिव (देखिये वस्था०)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्थाणुतीर्थ एक तीर्थ का नाम है : ९. ४२, ३ (वसिष्ठ का आश्रम यहीं था और यहीं स्थाणु ने तपस्या की थी). ६।

स्थाणुवट एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १७८)।

स्थानद, स्थावर = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्थावराणां पतिः = शिव (सहस्रनाम)।

स्थिर मेरु द्वारा स्कन्द को दिये गये दो पार्षदों में से एक का नाम है (९. ४५, ४८)।

१. स्थूण, एक यक्ष का नाम है ; १. ६३, १२५; ५. १९१, २१. २३; १९२, ९. ३३. ३४. ३८. ४२. ४८. ५०. ५२. ५३, ५७ (इसी यक्ष ने शिखण्डी को अपना पुरुषत्व दिया था)। तुकी० स्थूणाकर्ण।

२. स्थूण, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५१)।

स्थूणकर्ण एक ब्राह्मण का नाम है (३. २६, २३)।

१. स्थूणाकर्ण एक अस्त्र का नाम है : ३. १६७, ३३ (अर्जुन ने इसका प्रयोग किया। देखिये नीलकण्ठी की व्याख्या); २४५, १७ (अर्जुन

ने प्रयोग किया); ५. १४१, ३१; ७. १८१, १०. १४; ८. ६०, २२ (धार्तराष्ट्रों ने प्रयोग किया)।

२. स्थूणाकर्ण = १. स्थूण (५. १९१, २०. २६)।

स्थूल = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्थूलकेश एक ऋषि का नाम है (१. ८, ५. ७. १०. १२. १५)।

स्थूलजीर्णाङ्गजटिल = शिव (सहस्रनाम)।

स्थूलवालुका एक नदी का नाम है : ६. ९, २५; १३. १०२, ४६ एक तीर्थ)।

स्थूलशिरस् एक ऋषि का नाम है : २. ४, ११ (युधिष्ठिर की सेवा में); ३. १३५, ८; १२. ३४२, ५९ (वृक्षों पर रुष्ट होकर इन्होंने यह शाप दिया कि वृक्ष बारहो मास पुष्पित नहीं हो सकते); १३. २६, ५ (भीष्म को देखने आये)।

स्थित = (सहस्रनाम)

१. स्थिर = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

२. स्थिर, मेरु द्वारा स्कन्द को प्रदत्त एक पार्षद का नाम है (९. ४५, ४८)।

स्नेहन = शिव (सहस्रनाम)।

स्पर्श, मूर्तिमान स्पर्श का द्योतक है : २. ११, २१ (ब्रह्मा की सभा में)।

स्पर्शाशन (बहु० °नाः) देवों के एक वर्ग का नाम है (१३. १८, ७५)।

स्पष्टाक्षर = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्फोटन = शिव (सहस्रनाम)।

स्मर = काम (७. १८४, ४८)।

स्मृति : ९. ४६, ६४।

स्यमन्तक एक मणि का नाम है : १६. ३, २३ (पहले यह सत्राजित् के पास थी)।

स्यूमरश्मि, एक ऋषि का नाम है : १२. २६८, ९. १८; २६९, ५. ३९. ४१. ५७; २७०, ३३. ३६ (कपिल के साथ इनका संवाद)।

स्रग्विन् = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्रज, एक सनातन विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१, ३३)।

स्रष्टा = सूर्य : ३. ३, २३। = श्रीकृष्ण (विष्णु): ३. १२, २२; १३. १४९, ७६ (सहस्रनाम). ११९।

स्रुवहस्त = शिव : १३. १७, ४४ (सहस्रनाम); १४. ८, २१।

१. स्वक्ष (बहु० °क्षाः) एक जाति का नाम है (६. ९, ४५)।

२. स्वक्ष = विष्णु (सहस्रनाम)

स्वङ्ग = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्वधा, पितरों को समर्पित अन्न का द्योतक है : १. ७, १३; १२८, १; ३. ३०, ११; ५. १०२, १३; १३२, २५; ७. ५९, १८; ६९, २६; ९४, ४४; ८. २०, ५०; ८७, ५५; १२. १२, ३३; २९, ११६; ९०, ११; ९८, ८; २६८, ३५; २८७, ५१; १३. २६, ४९, ६७, १४; ११५, २७; १५५, २; १४. २, ३। स्वधा के साथ समीकृत विभिन्न देवगण : शिव (१२. २८४, १४९); श्री (१२. २२८, २६); दुर्गा, उमा (६. २३, १२); श्रीकृष्ण (६. ३३, १६; १२. ४३, १५); स्कन्द (३. २३२, १२। एक सांस्कारिक सम्बोधन : १३. २३, २५; १४. ३७, १०; १३. ४७, १०।

स्वधास्वरूप = शिव (१४. ८, २६)।

स्वधृत = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्वन, एक अग्नि का नाम है (३. २१९, १५)।

स्वयंभु (कहीं-कहीं स्वयंभू भी) = ब्रह्मा : १. ५, ७; ६४, ३. ४३; ६५, ९; ६६, १५. ४२; ७४, ३९; ७८, ३९; ११३, १२; १२०, ७; १९७, ५३; २. ११, ३. ५८; १८, २; ३. ३, २८ (सूर्य के १०८ नाम बताये); ३०, ३६; ११४, १८ (= विश्वकर्मा); १७२, ३०; १७३, ८; १८८, ८५ (पद्मालय = विष्णु); १९१, २; २२९, ४७; २७४, ११; २९३, १७; ४. ५०, ४; ५. ५५, २९; ६३, १२; १३२, ७; १८५, २०; ८. ३५, ९; ६९, ४४; ८७, ६३. ६५. ६६; ९०, ३४; ९६, ६२; ९. ४४, ३०; ११. ५, २; १२. ५९, २८. ३०. ६०; ७४, १३; ९०, १८; २००, २७; २०८, ३. ४; २०९, १२; २१०, १९; २२०, ७; २२५, ३५; २२७, ९; २२८, ९१; २३२, २४; २३७, २५; २३९, ६; २८२, २९; २९३, १०; ३२१, ३०; ३२८, ५०; ३५०, २३; १३. ४७, ५८; ६६, ७; ७७, ११; ८५, ९८; ९१, २१. २२. २४. २७. २८; ९२. ६. ९; १०९, २; १२५, ६२; १४१, ६४; १४३, २; १४. ९१, २४; १८. ६, ७। = शिव : ७. २०२, १४। = विष्णु (श्रीकृष्ण, नारायण) : २. ३६, १९; ३. १६३, २५; १८८, १७; १२. १८२, १५; ३४७, ३९; १३. १४९, १८ (सहस्रनाम); १४. ४०, १२; ४४, १२।

स्वयंवर : १. २, ४४. ८६।

स्वयंवरपर्वन् , महाभारत के १२ वें अवान्तरपर्व का नाम है जिसमें द्रौपदी के स्वयंवर का वर्णन है : पाण्डवों की पाञ्चालयात्रा और मार्ग में ब्राह्मणों से वार्तालाप (१. १८४)। पाण्डवों का द्रुपद की राजधानी में जाकर कुम्हार के घर पर रहना; स्वयंवर की सभा का वर्णन तथा धृष्टद्युम्न की घोषणा (१. ८५)। धृष्टद्युम्न का द्रौपदी को स्वयंवर में आये हुये राजाओं का परिचय देना (१. ८६)। राजाओं का लक्ष्यवेध के लिये उद्योग और असफल होना (१. ८७)। अर्जुन का लक्ष्यवेध करके द्रौपदी को प्राप्त करना (१. ८८)। द्रुपद को मारने के लिये उद्यत हुये राजाओं का सामना करने के लिये भीम और अर्जुन का उद्यत होना और उनके विषय में भगवान् श्रीकृष्ण का बलरामजी से वर्तालाप (१. ८९)। अर्जुन और भीमसेन द्वारा कर्ण तथा शल्य की पराजय और द्रौपदी को साथ लेकर भीम तथा अर्जुन का अपने घर जाना (१. ९०)। कुन्ती, अर्जुन, और युधिष्ठिर की बातचीत; पाँचों पाण्डवों का द्रौपदी के साथ विवाह का विचार तथा बलराम और श्रीकृष्ण की पाण्डवों से भेंट (१. ९१)। धृष्टद्युम्न का गुप्तरूप से वहाँ का सब हाल देखकर राजा द्रुपद के पास आना तथा द्रौपदी के विषय में द्रुपद का प्रश्न (१. ९२)।

स्वयंश्रेष्ठ = शिव (सहस्रनाम)।

स्वयञ्जात = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्वयम्प्रभा, एक अप्सरा का नाम है : ३. ४३, २९ (इन्द्र की सभा में)।

स्वयम्भुभवन : १३. १०२, ५१ (वर्णन)।

स्वयम्भुव (= स्वयंभू) = ब्रह्मा : १२. ३०२, १६। = शिव : १३. १४, ४१६; १७, १३५ (सहस्रनाम)। = विष्णु (श्रीकृष्ण) : १२. ३३४, ९; ३४७, ४४।

स्वयम्भूत = शिव (सहस्रनाम)।

स्वर् = स्वर्ग : १४. ९१, ३२ (स्वर्यान्ति धार्मिकाः)। अधिकांशतः यौगिक रूप में : १. १, २७१ (स्वर्गति); ८६, ३ (स्वर्निवास); ९५, ५४ (स्वर्यातो); ३. १८५, २८ (स्वर्गता)। = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्वक्षयञ्जनमूपग = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ४६)।

स्वराज = श्रीकृष्ण (१२. ४३, ११)।

स्वराष्ट्र, एक स्थान का नाम है (६. ९, ४८)।

स्वरूप, एक असुर का नाम है : २. ९, १४ (वरुण की सभा में)।

स्वर्ग, पुण्यकर्मों से प्राप्त होनेवाले एक लोक का नाम है : १. २, १६२; २. १७, १०; ३. २१, २३; ४. ६९, ७; ५. १२, २०; ६. ३, ५८; ७. ?, ४०; ८. १२, ७; ९. ३, ५७; १०. ४, १९; ११. २, १४; १२. २, ४; १३. ६, १३; १६, २० (शिव के साथ समीकृत); १४४, ५; १४. २, ७; ४६, १६; १५. ७, १९; १७. ३, ३; १८. १, १। इन सन्दर्भों के अतिरिक्त भी यह शब्द महाभारत के सभी पर्वों में प्रायः सर्वत्र मिलता है।

स्वर्गतीर्थ एक तीर्थ का नाम है : १३. २५, ३३ (नैमिषारण्य में)।

स्वर्गद्वार एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १६७)। = शिव

(सहस्रनाम)।

स्वर्गद्वारं प्रजाद्वारं = सूर्य (३. ३, २६)।

स्वर्गपर्वन् = स्वर्गारोहणपर्वन् : १. २, ३७०; १८. ६, ७१।

स्वर्गमार्ग एक तीर्थ का नाम है (१३. २५, ६१)।

स्वर्गलोक = स्वर्ग : १. ८९, १३; २. ५२, ३२; ३. ४२, ४२; ८२, ६१; ५. ३५, ४; ३७, ४८; ६. ३३, २१; ७. ५४, ५६; ७३, १६; १२. ११, २६; २४, २६; ७१, ३२; १३. ६, ३३; १४. १६, १५; १८. ६, ४६। इन सन्दर्भों के अतिरिक्त भी यह शब्द अन्यान्य स्थानों पर मिलता है।

स्वर्गारोहणपर्व, महाभारत के १८ वें और अन्तिम प्रमुख पर्व का नाम है : "स्वर्ग में नारद और युधिष्ठिर का वार्तालाप (१८. १)। देवदूत का युधिष्ठिर को नरक का दर्शन कराना तथा भाइयों का करुणक्रन्दन सुनकर उनका वहाँ रहने का निश्चय करना (१८. २)। इन्द्र और धर्म का युधिष्ठिर को सान्त्वना देना तथा युधिष्ठिर का शरीर त्याग कर दिव्यलोक को जाना (१८. ३)। दिव्यलोक में युधिष्ठिर का श्रीकृष्ण, अर्जुन आदि का दर्शन करना (१८. ४)। भीष्म आदि वीरों का अपने-अपने मूलस्वरूपों में मिलना; महाभारत का उपसंहार और माहात्म्य (१८. ५)। महाभारत श्रवणविधि (१८. ६)।

१. स्वर्गारोहणिकंपर्व = स्वर्गारोहणपर्व (१. २, ८१)।

२. स्वर्गारोहणिकंपर्व, महाभारत के ९२ वें अवान्तर पर्व का नाम है जिसमें भीष्म के स्वर्गारोहण का उल्लेख है : १. २, ७८। "भीष्म के अन्त्येष्टिसंस्कार की सामग्री लेकर युधिष्ठिर आदि का उनके पास आना और भीष्म का श्रीकृष्ण आदि से देहत्याग की अनुमति लेते हुये धृतराष्ट्र और युधिष्ठिर को कर्त्तव्य का उपदेश देना (१३. १६८)। भीष्मजी का प्राणत्याग, धृतराष्ट्र आदि द्वारा उनका शवदाह संस्कार, कौरवों का गङ्गाजल से भीष्म को जलाञ्जलि देना; गङ्गाजी का प्रकट होकर पुत्र के लिये शोक करना और श्रीकृष्ण का उन्हें समझाना (१३. १६९)।

स्वर्णकेश = शिव (७. २०२, ५०)।

स्वर्णग्रीव = स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७५)।

स्वर्णबिन्दु एक तीर्थ का नाम है (१३. २५, ९)।

स्वर्णष्ठीविन् = सुवर्णष्ठीविन् : १२. ३१, १४१; ३१, ४२।

स्वर्भानवी, स्वर्भानु की पुत्री का नाम है : १. ७५, २६ (पुरूरवा के पुत्र, आयु की पत्नी, और नहुष आदि पाँच पुत्रों की माता)।

स्वर्भानु, एक असुर का नाम है; १. ६५, २४; ६७, १२ (पृथिवी पर राजा उग्रसेन के रूप में उत्पन्न हुआ); ३. ११, ५२; ५. ११०, ११; १८२, २२; ६. १२, ४०; २०१, ३६; ७. १५६, ८०; १७४, ३१; १७५, ४९; १२. २२७, ५० (पृथिवी के प्राचीन शासकों में से एक); २८४, १७३; १३. १५६, २ (अविध्यत शरैस्तत्र स्वर्भानुः सोमभास्करौ)। तुकी० असुर, राहु। = शिव (सहस्रनाम)।

स्वर्भानुशत्रु = सूर्य (३. ३०७, २३)।

स्वर्भानुसूदन = सूर्य (३. ३०२, २०)।

स्वर्लोक : ३. १०३, १५; २६१, २; १२. २३४, २५; २८४, ५; १३. ७२, ६; ७५, ४१; ८५, १५३।

स्ववश, स्वरित = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. स्वस्तिक, एक (नाग का नाम है : २. २१, ९ गिरिव्रज में)।

२. स्वस्तिक, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६५)।

स्वस्तिकृत् = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्वस्तिद = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्वस्तिदक्षिण = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्वस्तिपुर, एक तीर्थ का नाम है (३. ८३, १७४)।

स्वस्तिभाव = शिव (सहस्रनाम)।

स्वस्तिभुज् = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्वस्तिमती एक मातृका का नाम है (९. ४६, १२)।

स्वस्त्यस्वात्रेय एक ऋषि का नाम है : १. ८, २४; १२. २०८, २८ (दक्षिण दिशा के ऋषि); १३. १५०, ३४ (धर्मराज के ऋत्विजों में से एक); १६५, ३९।

स्वाङ्ग = विष्णु (सहस्रनाम)।

स्वादुकार एक जाति का नाम है (१३. ४८, २१)।

स्वाप्न, स्वाभाव्य = विष्णु (सहस्रनाम)।

१. स्वायम्भुव (ब्रह्मा के पुत्र) = मनुः १. ७३, ३; १२०, ३६; ३. १८०, ३५; ५. ३७, १; ७. ६९, २१; १२. २१, १२; ३६, ५; ९५, १४; २६७, ३६; ३३५, ३०. ४४; ३४०, ३४; १३. १४, २८०; ९८, ८; ११५, १२।

२. स्वायम्भुव = अत्रि (१३. ९१, ४)।

३. स्वायम्भुव (वि०) ब्रह्मा से सम्बद्धः १२. ३३५, ४६; १३. १४, ८७; २६, ५२; ६६, ५७; १०७, ५२। मनु स्वायम्भुव से सम्बद्ध : १२. ३३४, ९; ३४२, २६; ३४९, ४२।

स्वायम्भुवो वनम् — एक समय स्वायम्भुव-वन में यज्ञ करने के बाद विश्वकर्मा ने यह पृथिवी कश्यप को दान कर दी। इस प्रकार एक मनुष्य को दान में दिये जाने से पृथिवी कुपित होकर रसातल में जाने लगी। तब कश्यपजी ने पृथिवी को प्रसन्न किया जिससे वह पुनः जल से ऊपर उठ कर वेदी के रूप में स्थित हो गई। मनुष्य के स्पर्श से यह वेदी पुनः समुद्र में प्रवेश कर जाती है (३. ११४, १७-२५)।

स्वारोचिष = मनु (१२. ३४८, ३६. ३७)।

स्वास्य = विष्णु (सहस्रनाम)

स्वाहा दक्ष की पुत्री और अग्नि की पत्नी का नाम है; १. ७. १३; ३. २३१, ५; ५. १३२, २५; १२. २६८, ३५; २८७, ५१; १३. ११५, २७। १. १९९, ५; २. ११, ४२ (ब्रह्मा की सभा में); ३. २१९, २३ (नील० के अनुसार बृहस्पति की पुत्री); २२४, ३९; २२५, १६ (इसने सप्तर्षियों में से ६ ऋषि-पत्नियों का रूप धारण करके बारी-बारी से अग्नि के साथ समागम किया जिससे स्कन्द उत्पन्न हुये); २२६, ६. ९. १६; २२८, ५ (रुद्रमग्निमुखां स्वाहां प्रदेशेषु महाबलम्); २२९, ३१; २३१; १. ३. ७. ९ (स्कन्द ने इसे अग्नि का सहचरत्व प्रदान किया और कहा कि अग्नि में कोई भी आहुति डालने के साथ स्वाहा का उच्चारण आवश्यक होगा); २३२, १५; ५. ११७, ८; ७. ९४, ४४; ९. ४५, १३ (स्कन्द के अभिषेक के समय उपस्थित थी); १३. १४६, ५। विभिन्न देवों को इसके साथ समीकृत किया गया है = शिव : १२. २८४, १४९ (सहस्रनाम)। = श्री : १२. २२८, २३। = स्कन्द : ३. २३२, १२।

१. स्वाहाकार (सांस्कृतिक क्रियाओं के समय का सम्बोधन : ३. ३०, ११; १२. ६०, ३८; १३. ५१, २९; ७८, ७; १४. ३७, १०। = दुर्गा (उमा): ६. २३, १२।

स्वाहेय = स्कन्द (३. २३२, ६)।

१. स्विष्टकृत् एक अग्नि का नाम है : ३. २१९, २१; २२१ १८ (देखिये ८. रोहिणी)।

२. स्विष्टकृत् = श्रीकृष्ण (१२. ४३, १२)।

स्वेदजाः = शिव (सहस्रनाम)।

ह

१. हंस परमात्मा का नाम है : १. ६३, १०२ (देवं हंसं नारायणं प्रभुम्); १२. ४३, ७ (= श्रीकृष्ण); ४७, १७; २३९, ३२-३४ (नाम की व्युत्पत्ति); २९९, २. ३ (प्रजापति ने एक सुवर्णहंस का रूप धारण किया). ७. ४०. ४२. ४४; ३३८, ३ (७४. महापुरुष); ३३९, १०३ (विष्णु का प्रथम अवतार); १३. १४९, ३४ विष्णु (सहस्रनाम)।

२. हंस, अरिष्ट के पुत्र, एक गन्धर्वराज का नाम है (१. ६७, ८३)।

३. हंस, जरासन्ध के एक अनुगामी का नाम है : २. १४, १३. ३७. ४० (बलराम ने इसे परास्त किया). ४१-४३; १९, २६; २०, १; २२, ३३ (जरासन्ध का सेनापति कौशिक सम्भवतः यही है)।

४. हंस = सूर्य (३. ३, ६१)।

५. हंस (बहु० °साः), धृतराष्ट्र की सन्तानों का नाम है (१. ६६, ५८)।

हंसकाकीयाख्यान = हंसकाकीयोपाख्यान (८. २, २७२)।

हंसकाकीयोपाख्यान — कर्ण के सारथि बन कर शल्य ने कर्ण को हंस और एक कौए का उपाख्यान सुना कर उसे श्रीकृष्ण और अर्जुन की शरण में जाने का परामर्श दिया (८. ४१, १०-७१)।

हंसकायन (बहु० °नाः) एक जाति का नाम है : २. ५२, १४ (युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये)।

हंसकूट, उत्तर के एक पर्वत का नाम है जिसे पाण्डु ने पार किया था (१. ११९, ५०)।

हंसचूड, एक यक्ष का नाम है : २. १०, १७ (कुबेर की सभा में)।

हंसज, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६८)।

हंसपथ (बहु० °थाः) एक जाति का नाम है : ७. २०, ७ (दुर्योधन की सेना में)।

हंसप्रपतन एक तीर्थ का नाम है (३. ८५, ८७)।

हंसवक्त्र स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ७५)।

हंसात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ४५)।

हंसिका, सुरभि की पुत्री, एक दिव्य गाय का नाम है : ५. १०२, ७-८ (यह दक्षिण दिशा को धारण करने वाली है)।

हंसी, राजा भगीरथ की यशस्विनी कन्या का नाम है : १३. १३७, २६ (कौत्स मुनि के साथ विवाहित)।

हनुमत्, हनूमत्, वायुपुत्र एक वानर का नाम है : १. २, १७८ ३. १४६, ६५ (हनुमान्कपिः). ६९ (महाकायो…वानरः). ८६. ८७; १४७, ४ (वायुतनयो वायुपुत्रमसापत). ५. ७. ९. १०. ११ (भीमसेन ने इन्हें अपना भ्राता बताया). १५. १६. १७ (भीमसेन इनकी पूँछ भी हिला नहीं सके). २६. २७ (इन्होंने भीमसेन को अपनी कथा सुनाया। इन्होंने बताया कि इन्हें केसरी की पत्नी से वायु ने उत्पन्न किया था); १४८, १; १४९, २. ११ (भीमसेन को विभिन्न युगों के सम्बन्ध में बताया); १५०, ८ (भीमसेन को अपना पूर्वरूप दिखाया). १० (तदद्भुतं महाद्रिं विन्ध्यपर्वतसंनिभम्…पवनात्मजः). ११. १७ (प्लवगोत्तमः); १५१, १२. १३ (अर्जुन की ध्वजा पर स्थित होने का वचन दिया). १८; २८०, १० (वानरराज सुग्रीव के मन्त्री). २३. ३३; २८२, ३१ (सीता की खोज के लिये भेजे गये). ३३. ६७ (लंका पहुँच कर सीता को सान्त्वना दी); २८३, १६; २८६, ७. ११. १४ (धूम्राक्ष नामक राक्षस का वध किया); २८७ २६ (वज्रवेग का वध किया); २८९, ४. १३; २९०, ३; २९१, ४४ (सीता ने इन्हें तब तक जीवित रहने का वरदान दिया जब तक श्रीराम का यश रहेगा). ६१ (श्रीराम ने इन्हें दूत बनाकर भरत के पास भेजा); ५. ५६, ९ (इन्होंने अर्जुन की ध्वजा पर स्थित होने का भीमसेन को वचन दिया था); ७. १३९, ८६ (इव पर्वतम्)।

तुकी० इनके निम्नलिखित पर्याय भीः

अनिलात्मज : ३. २८०, २३; २८२, ३७।

पवनात्मज : १. २. १७७; २८२, २७; २८६, ८. ११।

मरुतात्मज : ३. १५०, १६; २८२, ६२; २८३, १६; २८६, ७. १४; २८७, २६; ५. ५६, ९।

वायुतनय : ३. १४७, ४।

वायुपुत्र : ३. २९१, ६२।

हनुमद्-भीम-संवाद, वनपर्व के १४७-१५० अध्यायों में आता है। हनुमान भीम का मिलन और वार्तालाप (३. १४७)। हनुमानजी का भीमसेन को संक्षेप में श्रीराम का चरित्र सुनाना (३. १४८)। हनुमान द्वारा चारों युगों के धर्मों का वर्णन (३. १४९)। हनुमानजी द्वारा भीमसेन को अपने विशाल रूप का प्रदर्शन और चारों वर्णों के धर्मों का प्रतिपादन (३. १५०)।

हनूमत्प्रत्यागमन — "राज्य प्राप्ति के बाद सुग्रीव जब श्रीराम के कार्य को भूल गये तब श्रीराम सुग्रीव पर क्रुद्ध हो उठे और लक्ष्मण को सुग्रीव के पास भेजा। इससे भयभीत होकर सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये सभी दिशाओं में वानरों को भेजा। उस समय हनुमानजी को दक्षिण दिशा में भेजा गया। सागर पार कर हनुमान लंका पहुँचे और वहाँ सीता से मिल कर वापस लौटे। तदनन्तर हनुमान ने अपनी लंकायात्रा का वृत्तान्त श्रीराम को सुनाया (३. २८२)।"

हन्यमान (बहु०) एक जाति का नाम है (६. ९, ६९)।

हय (बहु० °याः) एक वंश का है : २. ८, २२. २४ (यम की सभा में)।

हयगर्धभि = शिव (सहस्रनाम)।

१. हयग्रीव, विदेह के एक कुलाङ्गार राजा का नाम है (५. ७४, १५)।

२. हयग्रीव एक असुर का नाम है : ५. १३०, ५० (अपने एक बाद के जन्म में यह श्रीकृष्ण द्वारा मारा गया था)।

३. हयग्रीव, एक प्राचीन राजर्षि जो शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर चुकने के बाद, असहाय होने के कारण मारे गये। युद्ध से उत्तम कीर्तिलाभ करके इन्होंने स्वर्ग प्राप्त किया (१२. २४, २३-३४)।

हयज्ञान : ३. ७७, १७।

हयमुख = विष्णु : १. २३, १६ (गरुड को इनके साथ समीकृत किया गया है)।

हयराज - ७. ११, ३ (श्रीकृष्ण ने इसका वध किया था)।

हयशास्त्र : ५. १७८, ७५।

१. हयशिरस्, विष्णु के एक स्वरूप का नाम है : ५. ९९, ५; १२. १२२, ४७; ३३९, ५९; ३४०, ९७; ३४२, १०१; ३४७, ४. ४८ (जब मधु-कैटभ ने वेदों का हरण कर लिया तब विष्णु ने हयशिरस् अवतार लिया). ५९ (विष्णु ने अपने हयशीर्ष को सागर के उत्तर-पूर्वी क्षेत्र में स्थापित किया). ७४. ७७. ७८। तुकी० अश्वशिरस्, हयमुख, बड़वामुख।

२. हयशिरस् = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

हयशिरोधर = विष्णु : १२. ३४७, १०. ५७. ७७। तुकी० १. हयशिरस्।

१. हर एक दानव का नाम है : १. ६५, २५; ६७, २३ (राजा सुबाहु के रूप में पृथिवी पर जन्म लिया)।

२. हर = शिव (देखिये वस्था०)।

३. हर एक रुद्र का नाम है (१२. २०८, १९)।

हरणाहरण से हरणाहरणपर्व का तात्पर्य है (१. २, ८८)।

हरणाहरणपर्व आदिपर्व के २२१ वें अध्याय में आनेवाले महाभारत के १७ वें अवान्तरपर्व का नाम है। इसमें श्रीकृष्ण के परामर्श से अर्जुन द्वारा सुभद्रा के हरण, तथा अर्जुन के साथ उनके विवाह का वर्णन है। अर्जुन ने सुभद्रा से अभिमन्यु नामक पुत्र उत्पन्न किया था (१. २२१)।

हरणाहारिक = हरणाहरणपर्व (१. २. ४६)।

हरसुलोचन = शिव (सहस्रनाम)।

हराहर एक दानव का नाम है (१. ६५, २५)। देखिये १. हर भी।

१. हरि = विष्णु : १. १, २४; २, १५१. २३७; १९, १०; ३४, १४; ६४, ५४; १९७, ३२; १९९, १३; २२८, ३५; २. १३, ३७; ३३, १०; ३६, १३. १८. २०; ३८, २७; ४४, ३; ४५, ५७; ६७, ३३; ६८, ४१. ४४. ४६; ३. १२, २१. ३९. ४६; १८, २४; ४७, १८; ४९, २०; ५१, १९; ८३, १०. ११; ८४, १३१; ८५, ४९. ७३; ८८, २७; १६३, २३; १८३, ४; १८९, ५४; २०१, २५; २०३, १३. १७; २६३, २५. ३३; २७२, ६८; ३१५, १७; ५. ६८, १४; ७१, ५; ६. ८, १५; १२, ९; २१, १५; ३५, ९; ४२, ७७; ४३, २; ५९, ९९. १०१; ६७, १७; ६८, ११; ७. ८३, १८; १०४, ३३; १४६, ६८; १४९, ३५; १९७, २३; ८. ५८, ७; ७३, ५८; ७९, १५; ११. १२, १५. १६; १२. १, १६;

४३, ५; ४७, १८. २३. ३७. ९५. १०१; ११०, २८; २१६, ५; २१७, ३३: २४५, २३; २७९, २८; २८०, १९; ३३४, ९. १८; ३३५, १७. ३४; ३३६, १६. ३७. ४६; ३३७, २१. ३१. ४०; ३३९, ८; ३४०, १०४. १०९; ३४१, २. ३; ३४२, ६. ६८ (नाम की व्युत्पत्ति). ११२; ३४३, ५. १८. २४. ३०. ६६; ३४६, २. ७. ११. १९; ३४७, ५. १९. ३७. ५८. ६८. ७२. ७३. ७४. ८०. ९०. ९१; ३४८, १. ४. २६. ३५. ३९. ४४. ४७. ४८. ५३. ५८. ७३. ७७; ३४९, २०. २३. २६. २७. ४२. ५९. ७१. ७२; १३. १४, १४. ३८; १२६, १; १३९, २९; १४७, २. ४६. ५७; १४८, २९; १४९, ५२ (सहस्रनाम). ८२; १४. ४३, १३; १६. ३, १२; १७. १, १२; १८. ६, ९३ ।

२. हरि एक राक्षस का नाम है (३. २८५, १-२)।

३. हरि, गरुड पुत्र एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, १३)।

४. हरि, राजा अकम्पन के पुत्र का नाम है (७. ५२, २७; १२. २५६, ८)।

५. हरि, तारकाक्ष के पुत्र, एक असुर का नाम है (८. ३३, २७. २९))

६. हरि एक पाण्डव योद्धा का नाम है जिसका कर्ण ने वध किया था (८. ५६, ४९-५०)।

७. हरि स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६१)।

८. हरि = इन्द्र (८. ९०, ७२)।

९. हरि = शिव (सहस्रनाम)।

१०. हरि (बहु० °रयः) इन्द्र के अश्वों का द्योतक है : ३. १६६, ५; १६८, १२; १७३, १८; १२. २२८, ८९; १४. १०, १९. २०. ३१; ५८, ३० ।

१. हरिकेश = श्रीकृष्ण (६. ६५, ५२)।

२. हरिकेश = शिव : १०. १७, ११; १२. २८४, ११६ (सहस्रनाम); १३. १७, ४५ (सहस्रनाम); १४. ८, १५ ।

हरिगिरि, कुशद्वीप के एक पर्वत का नाम है (६. १२, ११)।

१. हरिण, ऐरावत के कुल में उत्पन्न एक नाग का नाम है (१. ५७, ११)।

२. हरिण, बिडालोपाख्यान में आनेवाले एक नेवले का नाम है (१२. १३८, ३१)।

३. हरिण = शिव (सहस्रनाम)।

हरिणाश्व हरित = शिव (सहस्रनाम)।

हरिणाश्व एक प्राचीन नरेश का नाम है : १२. १६६, ७८-७९ (इन्होंने रघु से एक खड्ग प्राप्त किया जो इनके पास से शुनक को मिला)।

हरिद्रक, कश्यपवंशी एक नाग का नाम है (१. ३५, १२)।

हरिनेत्र = शिव (७. २०२, ३०; १४. ८, १५)।

हरिपिण्डा, एक मातृका का नाम है (९. ४६, २४)।

हरिबभ्रु एक मुनि का नाम है (२. ४, १६)।

१. हरिमत्, एक मूर्तिमान सांस्कृतिक कृत्य का नाम है : २. ११, ३० (ब्रह्मा की सभा)।

२. हरिमत् = इन्द्र (१४. १०, ३१)।

हरिमेध = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

१. हरिमेधस् एक प्राचीन राजा का नाम है : १. ५५, ३; ५. ११०, १३ ।

२. हरिमेधस् = विष्णु : १२. ३३६, १३; ३४७, ९; ३४८, ३०; ३४९, ५८ ।

हरिरुद्र, शिव के लिये प्रयुक्त हुआ है (३. ३९, ७७)।

हरिवंश महाभारत के खिलभाग का नाम है : १. २, ८२. ३७९. ३८० (दशश्लोकसहस्राणि विंशच्छ्लोकशतानि च खिलेषु हरिवंशे); १८. ६, ७१. ७४ ।

हरिवर्ष, एक वर्ष का नाम है : २. २८, ७ (दिग्विजय के समय अर्जुन यहाँ आये); ६. ६, ८ (हेमकूट पर्वत के उत्तर में स्थित); १०, २. १५ ।

हरिवास = श्रीकृष्ण (६. ६५, ५२)।

हरिवाहन = इन्द्र (देखिये वस्था०)।

हरिश्चन्द्र, एक प्राचीन राजा का नाम है : २. ७, १३ (इन्द्र की सभा में); १२, ६. १०. १८. १९ (यह एकमात्र ऐसे राजा हैं जो इन्द्रसदन में निवास करते हैं। इनके पराक्रमों का वर्णन). २३. २६ (पाण्डु को इन्हीं के समान लोक प्राप्त कराने के लिये युधिष्ठिर को राजसूय यज्ञ करना चाहिये): १३, ३; १२. २०, १४; १३. ३, ७; ६५, २; ११५, ७०. ७१ (चरति वै दिवि सत्येन चन्द्रवत्); १६५, ५२; १८. ३, २६ (युधिष्ठिर ने इनके समान लोक प्राप्त किया)।

१ हरिश्मश्रु एक ऋषि का नाम है जिन्होंने विष्णु की स्तुति करके महान सफलता प्राप्त की थी (१२. २९२, १६)।

२. हरिश्मश्रु = इन्द्र (१२. ३४२, २३)।

३. हरिश्मश्रु = शिव (सहस्रनाम)।

हरिश्रावा एक नदी का नाम है (६. ९, २८)।

हरिहय = इन्द्र (देखिये वस्था०)। = महापुरुष (महापुरुषस्तव)।

हरी क्रोधवशा की पुत्री का नाम है (१. ६६, ६०. ६४)।

हरीन्द्र (वानरों का राजा): ८. ५१, ३५

हर्यक्ष = शिव : ९. १२, ३; १३. १७, १३२ ।

हर्यश्वन् = शिव (१४. ८, १३)।

१. हर्यश्व, अयोध्या के एक राजा का नाम है : ५. ११५, १८. २०. २१; ११६, १. ७. १४. १५. २० (गालव को २०० गायें देकर माधवी को प्राप्त किया और उससे वसुमना नामक पुत्र उत्पन्न किया); १३. ११५, ७५ (कार्तिक मास में मांसभक्षण नहीं करते थे)।

२. हर्यश्व काशिराज सुदेव के पिता का नाम है। इनके पौत्र का नाम दिवोदास था (१३. ३०, १०. १३)।

३. हर्यश्व = शिव (सहस्रनाम)।

हर्ष, धर्म के तीसरे पुत्र का नाम है (१. ६६, ३२. ३३)।

हलधर = बलरामः १. २१९, ७; २२१, ५५; ९. ३५, १३; ३७, ११; ३९, २७ ।

हलधरानुज = श्रीकृष्ण (२. २२, ३६)।

हलभृत् = बलराम (९. ३५, ३४; ५०, ६९)।

१. हलायुध = बलराम : १. १८७, ८; १८९, १९. २४; ३. १८३, ३३; ४. ७२, २१; ५. ७, ३१; १५७, १७. २२. २३; ९. ३४, २. ८. ९; ३५, ८८; ३६, १. ५२; ३७, २. २७. ६६; ३९, १. ३४; ५२, २६; ५३, २२; ५४, ४. १२; ६०, ४; १६. १, २१ ।

२. हलायुध = विष्णु (सहस्रनाम)।

हलिक एक नाग का नाम है (१. ३५, १५)।

हलिन् = बलराम : ३. ११९, ४; ५. १३१, ८; ७. ११, ३१; ९. ३४, १५; १३. १४७, ५४ ।

हलिमा, एक मातृका का नाम है (३. २२८, १०)।

हलीमक, वासुकिवंशीय एक नाग का नाम है (१. ५७, ५)।

हवन, ग्यारह रुद्रों में से एक का नाम है (१३. १५०, १३)।

हविघ्न, एक प्राचीन नरेश का नाम है (१३. १६५, ५८)।

हविर्धामन्, अन्तर्धामा के पुत्र और प्राचीनबर्हि के पिता का नाम है (१३. १४७, २४)।

हविःश्रवस्, महाराज कुरु के वंशज धृतराष्ट्र के छठवें पुत्र का नाम है (१. ९४, ५९)।

हविष्मत् एक ऋषि का नाम है : २. ७, १३ (इन्द्र की सभा में)।

हविष्मती, अङ्गिरा की पाँचवी कन्या का नाम है (३. २१८, ६)।

हविस = शिव (सहस्रनाम)। = विष्णु (सहस्रनाम)।

हव्यकव्यभुज् = विष्णु (१२. ३४४, १२)। = अग्नि (देखिये

वस्था०)।

हव्यवह, हव्यवाह, हव्यवाहन = अग्नि (देखिये वस्था०)।

हसन, स्कन्द के एक सैनिक का नाम है (९. ४५, ६७)।

हसिनी, एक अप्सरा का नाम है (१३. १९, ४५)।

हस्त एक नक्षत्र का नाम है : १३. ८९, ६ (इस नक्षत्र में श्राद्ध का फल): ११०, ६ (चान्द्रव्रत का वर्णन)। तुकी० सावित्र।

हस्तिकाश्यप एक ऋषि का नाम है : १३. १३९, ११; १६५, ४६ (यह उत्तर दिशा के ऋषि हैं)।

हस्तिकूट से हाथी के अपहरण की कथा का तात्पर्य है जो धृतराष्ट्र के इन्द्र और गौतम नामक ब्राह्मण के साथ संवाद में मिलती है। देखिये १३. १०२।

१. हस्तिन्, सुवर्णा से उत्पन्न सुहोत्र के पुत्र का नाम है (१. ९५, ३४-३५)।

२. हस्तिन्, सोमवंशी महाराज कुरु के वंशज धृतराष्ट्र के पुत्र का नाम है (१. ९४, ५८)।

हस्तिनापुर, गङ्गा के तट पर स्थित कौरवों की राजधानी का नाम है : १. २, २३७. २३९; ३, ११ (राजा जनमेजय की राजधानी). १७०. १७१; ६१, ३१; ९५, ३४ (सुहोत्र के हस्तिन् नामक पुत्र ने इसकी स्थापना की थी अतः उन्हीं के नाम पर इसको हस्तिनापुर कहते हैं). ६६; १००, १२. ५८. १००; १०२, ५३; १४३, १०; २००, १३; २०७, १४; २. ३३, ५४; ३४, १; ५८, २२; ३. १४, २३; ५१, ३०; २४७, ३; २५३, ३; २५६, २७; ४. ४७, १८; ५०, १; ६७, २६; ६९, ६; ५. १९, २८; ३२, २; ८४, १०; १४७, १; १५६, ३६; १७३, २२; १९५, १२; ८. २, २; ९. २९, ८८. ९५; ३५, ६; ६३, ३३. ७८; ११. ११, २१; १२. १७६, २३; १५. १८, १४; ३६, ५३; १८. १, ९। तुकी० गजाह्वय, गजपुर, गजसाह्वय, नागाह्वय, नागपुर, नागसाह्वय, वारणाह्वय, वारणसाह्वय।

हस्तिपिण्ड एक काश्यपवंशी नाग का नाम है (१. ३५, १४)।

हस्तिभद्र, एक काश्यपवंशी नाग का नाम है (५. १०३, १३)।

हस्तिसोमा, भारतवर्ष की एक नदी का नाम है (६. ९, १९)।

हस्तीश्वर = शिव (सहस्रनाम)।

हाटक एक देश का नाम है जिसे अर्जुन ने जीता था : २. २८, ३. ५ (यहाँ के निवासी)।

हायि हायिहुवा होयि हुवा होयि तथाऽसकृद् गायन्तिस्त्वं सामगा ब्रह्मवादिनः = शिव (सहस्रनाम)।

हारहूण (बहु० °णाः) पश्चिम की एक जाति का नाम है जिसे नकुल ने दिग्विजय के समय जीता था : २. ३२, १२; ५१, २४; ३. ५१, २५ (युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित थे)।

हारित एक मुनि का नाम है (१२. २७८, २१)। देखिये अगला शब्द भी।

हारीत एक मुनि का नाम है : ३. २६, २३; १२. ४७, ७ (शर-शय्या पर पड़े भीष्म को देखने आये)।

१. हार्दिक्य = कृतवर्मा (देखिये वस्था०)।

२. हार्दिक्य एक राजा का नाम है : १. ६७, २५; ५. ४, २२ (पाण्डवों की ओर से इन्हें भी रणनिमन्त्रण भेजने का निश्चय किया गया)।

हार्दिक्यतनय कृतवर्मा के पुत्र का नाम है जिसे मार्त्तिकावत का राजा बनाया गया (१६. ७, ६९)।

हाहा एक गन्धर्व का नाम है जिसका सदैव हूहू के साथ उल्लेख मिलता है : १. ६५, ५१; १२३, ५९ (अर्जुन के जन्मोत्सव में सम्मिलित हुये); २. १०, २५ (कुबेर की सभा में); ३. ४३, १४; ६. ६, २०; १२. २००, ११; २८४, ६; ३२४, १६; १३. ८३, ९; १६५, १३।

हिडिम्ब एक राक्षस का नाम है जिसका भीमसेन ने वध किया था : १. २, ८६. १०६; ६१, २४; ९५, ७३; १५२, १. १५ (हिडिम्बा का भाई). २५; १५३, १. ११. ३०. ३३. ३४. ४३; १५४, ५. ३३ (भीमसेन ने इसका वध किया); १६२, १५; ३. १०, २३; ११, ३२ (किर्मीर का मित्र था). ६६; १२, ९३. १०८. ११३; १५७, ४६; ४. २२, ३३; ५. ५०, २१; ९०, २३; ७. १७६, ७; १८०, ३३; १८१, २३; १०. ११, २५।

हिडिम्बवधपर्वन्, महाभारत के ९ वें अवान्तर पर्व का नाम है जो आदिपर्व के अन्तर्गत आता है : हिडिम्ब के भेजने पर उसकी बहन हिडिम्बा नामक राक्षसी का पाण्डवों के पास आना और भीमसेन से उसका वार्तालाप (१. १५२)। हिडिम्ब का आना, हिडिम्बा का उससे भयभीत होना और भीमसेन तथा हिडिम्ब का युद्ध (१. १५३)। हिडिम्बा का कुन्ती आदि से अपना मनोभाव प्रकट करना तथा भीम द्वारा हिडिम्ब का वध (१. १५४)। युधिष्ठिर का भीमसेन को हिडिम्बा के वध से रोकना; हिडिम्बा की भीमसेन के लिये प्रार्थना; भीमसेन और हिडिम्बा का मिलन तथा घटोत्कच की उत्पत्ति (१. १५५)। हिडिम्ब वध के बाद पाण्डवों को व्यासजी का दर्शन तथा एकचक्रा नगरी में प्रवेश (१. १५६)।

हिडिम्बा, हिडिम्ब नामक राक्षस की बहन, एक राक्षसी का नाम है। भीमसेन ने इससे घटोत्कच को उत्पन्न किया था : १. २, १०५; ६१, २५; ६३, १२४ (भीमसेन ने इससे घटोत्कच को उत्पन्न किया); ९५, ८१; १५२, १५ (भीमसेन पर मुग्ध हुई); १५३, ३. ११. २०. ४५; १५४, १. ५. ३६; १५५, १. ४. १६. २१. ४० (भीमसेन से घटोत्कच को उत्पन्न किया); ३. १२, ९४. १०२. ११०; ७. १७६, ७।

हिमवत्, भारतवर्ष की उत्तरी सीमा पर स्थित हिमालयपर्वत का नाम है : १. ३०, १८ (वालखिल्यगण तपस्या के लिये यहाँ आये); ३६, ३ (शेषने यहाँ तपस्या की थी); ७२, १० (मेनका ने शकुन्तला को यहाँ जन्म दिया था); ७४, ७०. ७४; ११४, ८; ११५, २४; ११९, ४८; १५५, २६; १७०, १६. १९; १७८, २१; १८१, २२ (सर्पयज्ञ के लिये पराशर ने जो अग्नि प्रज्वलित की थी उसे उन्होंने इसके उत्तर में फेंक दिया); १८५, २२; १८८, ९; २१५, १; २. १०, ३१ (कुबेर की सभा में उपस्थित होनेवाले पर्वतों में से एक); ११, ९; २७, २९ (दिग्विजय के समय अर्जुन ने इसे जीता था); ३०, ४ (भीमसेन ने इसे जीता था); ३४, २४; ४४, २८; ५०, २१; ५२, ५; ७७, ३५; ७८, १४; ३. १२, १३०; १६, १३; ३२, १०; ३५, २३; ३८, १३. १८. २९; ३९, ३९ (किरातवेशी शिव और अर्जुन का युद्ध यहीं हुआ था); १०८, ३. ४ (किन्नरों, अप्सराओं और विद्याधरों का निवासस्थान). १२; १०९, ३. ८ (शिव ने गङ्गा को अपनी जटा में यहीं धारण किया था); १४०, २५. २७; १४६, ८३; १५६, ९; १५८, १८. १९; १६०, ९; १७७, १२; १७८, ६ (सिद्धों और देवर्षियों से सेवित); १७९, ३०; १८७, ४७. ४९; १८८, ११२ (मार्कण्डेयजी ने इसे भी नारायण के उदर में देखा); १९९, ४; २२५, ३३; २४९, ३२; २५४, ५ (दिग्विजय के समय कर्ण ने इस पर विजय प्राप्त की थी); २८०, १०; २८६, २; ३०८, २२; ३१३, ३२; ४. २, २३; ३९, १३; ४४, १६; ५. ११, १२; १४, ६; ५५, ३९; ७६, १०; ८२, ४८; ११०, ९; १११, ५; १५७, २; ६. ३, ३७; ६, ४ (जम्बूद्वीप के महापर्वतों में से एक). ५१ (राक्षसों का निवास); १३, ८; ११९, ९७; १२१, ३५; ७. २१, ३६; २४, २५; ५५, ३९; ७५, २१; ८०, २४; ९१, २०; ८. १९, ८; ३४, २२; ४२, २२; ४४, ६; ४५, ३. ३३ (राक्षस और पिशाच इसकी रक्षा करते हैं); ९. ५, ५१; ६, ४; ९, १२; ३३, ५३; ३८, २२; ४४, ८ (गङ्गा ने अग्नि के गर्भ को इस पर फेंक दिया और उसी से स्कन्द की उत्पत्ति हुई); ४५, २. १४. ४७ (स्कन्द को दो पार्षद दिये); ४८, ३४. ३५. ४७. ६७; ५४, ९; ५८, ३४; १०. १२, ३० (श्रीकृष्ण ने यहाँ बारह वर्ष तक तपस्या की); ११. २१, ८; १२. ५७, २९; ५९. ११८; १२२, ३; १२६, १३; १२८, २६; १५४, ५; १५६, २; १६६, ३२; १९२, ८; १९९, ५; २०३, ६; २२६, १५; २५८, २३; २८४, ३ (दक्ष ने यहाँ यज्ञ किया था); ३२७, ३ सिद्ध, चारण, अप्सरा, किन्नर, विभिन्न पक्षी, गरुड, लोकपाल, देव, ऋषि, आदि से सेवित). ३३; ३३३, ५. ८ (शुक ने इन्हें विदीर्ण किया);

३४२, ६२; ३४६, ३; ३४९, ९. १२; १३. १०, ६; १४, ४३. ३२५; १९, १६. २७. २८; २५, ६२ (शिव के श्वसुर); ३०, ४१; ३५, २०; ६६, २५; ८४, ९० (रुद्र ने यहाँ उमा से विवाह किया); १०३, २७; १३९, ४८; १४०, २. २५. ३५. ३८ (शिव ने इसे दग्ध करने के बाद इसे पुनः यथावत् कर दिया); १४८, ३३; १५०, २७; १६५, ३०; १४. ३, २० (यहाँ यज्ञ करने के बाद मरुत्त ने बहुत सा सुवर्ण छोड़ दिया था); ४, २०. २५; ८, १; १४, ९; ४३, ४; ७८, १; १५. ३७, ३४; १७. २, १ (स्वर्गारोहण के लिये जाते समय द्रौपदी सहित पाण्डवों ने इसे पार किया); १८. ५, ६५ ।

तुकी० इसके निम्नलिखित पर्याय भी :—

गिरिराज : ६. ७८, ७ ।

गिरिराज : ८. ८५, १७ ।

शैलगुरु : ९. ५१, ३४ ।

शैलराज : ९. ५५, २० ।

शैलराज : १. १२०, ९. १४; ३. ८४, १४८ (?); १२. ३२७, २०. २५; १४. ८, २ ।

शैलेन्द्र : ९. ४४, ५१ ।

हिमालय देखिये वस्था० ।

हिमवत्पर्वतात्मजा = उमा (१३. १४६, २) ।

हिमवत्सुत = अर्बुद (३. ८२, ५५) ।

हिमवद्गिरिसंश्रय = शिव (सहस्रनाम) ।

हिमालय = हिमवत् (६. ३४, २५) ।

१. हिरण्मय एक ऋषि का नाम है : २. ७, १८ (इन्द्र की सभा में) ।

२. हिरण्मय, एक वर्ष का नाम है (६. ८, ५ ।

३. हिरण्मय = शिव (१. ४८, २२) ।

४. हिरण्मय = महापुरुष (महापुरुषस्तव) ।

हिरण्यकवच = शिव : १०. ७, ११; १२. २८४, ८८ (सहस्रनाम) ।

हिरण्यकवचोद्भव = शिव (सहस्रनाम) ।

हिरयकशिपु एक असुर का नाम है : १. ६५, १७-१८ (दिति का पुत्र तथा प्रह्लाद आदि पाँच पुत्रों का पिता); ६७, ५ (इस भूतल पर शिशुपाल के रूप में जन्म लिया); २०९, २; ३. १०२, २२ (नृसिंहरूप में विष्णु ने इसका वध किया था); २२१, १८; २७२, ५८; ७. १९१, ३६; १९७, २३; ९. ३१, १०; १२. १६६, २७; २२७, ५३ (पृथिवी के प्राचीन शासकों में से एक); ३२७, २०; ३३९, ७८; ३४२, २९. ३०. ३१ (वसिष्ठ द्वारा अभिशप्त और नृसिंहरूपी विष्णु के हाथों मृत्यु को प्राप्त हुआ); १३. १४, ७३ (इतना बलवान था कि मेरु को हिला सकता था । इसके पुत्र का नाम मन्दार था) । तुकी० दैतेय, दैत्येन्द्र, दानव, दितिज, दितिनन्दन ।

हिरण्यकृत् = अग्नि (देखिये वस्था०) ।

हिरण्यकृतचूड = शिव (सहस्रनाम) ।

१. हिरण्यगर्भ = ब्रह्म : १. १, ५९; ७. ९४, ७०; १२. ४३, १५; ३०२, १८ (विभिन्न दर्शनों में विभिन्न नाम); ३०८, ४० (वसिष्ठ को उपदेश दिया). ४५; ३३९, ५०. ६९ (भगवानेषच्छन्दसि सुष्टुतः); ३४२, ९६ (द्युतिमान्य एव च्छन्दसि स्तुतः । योगैः संपूज्यते नित्यं स एवाहं भुवि स्मृतः); ३४७, २१ (अनिरुद्ध के नाभिकमल से उत्पन्न); ३४९, ६५ (योगस्य वेत्ता नान्यः पुरातनः); १३. १४, २२ (ब्रह्ममुखा देवाः) ।

२. हिरण्यगर्भ = शिव (सहस्रनाम) । = विष्णु (सहस्रनाम) ।

हिरण्यधनुस, निषादों के एक राजा का नाम है (१. १३२, ३१. ४५) ।

हिरण्यनाभ = विष्णु (सहस्रनाम) ।

हिरण्यपक्षः शकुनिः = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ४५) ।

हिरण्यपति = शिव (सहस्रनाम) ।

हिरण्यपुर असुरों के नगर का नाम है : १. २, १८४; ३. १७३, १३ (यह आकाश में स्थित था और कालिकेय तथा पौलोम नामक दैत्य यहाँ निवास करते थे). १८. ६७. ६९, (अर्जुन ने इसे ध्वस्त किया); ४. ६१, २७; ५. ४९, १६; १००, १ (मय और विश्वकर्मा ने इसका निर्माण किया था); १६९, २२; ७. ५१, १७; ७५, २२; १८५, १९ । तुकी० दानवपुर ।

१. हिरण्यबाहु, वासुकिवंशीय एक नाग का नाम है (१. ५७, ६) ।

२. हिरण्यबाहु = शिव : १३. १७, ११६ (सहस्रनाम); १४. ८, १९ ।

हिरण्यबिन्दु एक तीर्थ का नाम है : १. २१५, ४; ३. ८७, २१; १३ २५, १० ।

हिरण्यरेतस् = शिव (सहस्रनाम) । = अग्नि (देखिये वस्था०) ।

हिरण्यरोमन् = भीष्मक (५. १५८, १) ।

हिरण्यवर्ण = शिव (७. ८०, ६४) ।

हिरण्यवर्णः गर्भः = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ३८) ।

१. हिरण्यवर्मन, दशार्णों के राजा का नाम है : ५. १८९, १०. ११. १४ (इनकी पुत्री का विवाह शिखण्डी के साथ हुआ किन्तु उसने शिखण्डी को एक स्त्री पाया). १८; १९०, ६. १४ (सेना लेकर द्रुपद पर आक्रमण किया); १९२, ७ (हेमवर्मणि). २० (काञ्चनवर्मणा). २५. ३२ (हेमवर्मणि) । तुकी० दशार्ण, दाशार्ण, दशार्णाधिप्रति, दशार्णक, दशार्णनृप, दशार्णपति, दशार्णराज, दाशार्णराज, हेमवर्मन् , काञ्चनवर्मन् ।

२. हिरण्यवर्मन् = शिव (७. २०१, ६४) ।

हिरण्यशिखर एक पर्वत का नाम है (३. १४५, ४४) ।

हिरण्यशृङ्ग एक पर्वत का नाम है : २. ३, १० (मैनाक के निकट); ६. ६, ४२ । देखिये पिछला शब्द भी ।

हिरण्यसरस् एक तीर्थ का नाम है (१२. ३४२, ५७) ।

हिरण्यहस्त, एक ब्राह्मण का नाम है : १२. २३४, ३५ (राजा मदिराश्व ने इन्हें अपनी कन्या का दान किया) ।

१. हिरण्याक्ष विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१३. ४, ५७) ।

२. हिरण्याक्ष एक असुर का नाम है ; ७. १४, ४९; १९३, ४; ९. ३१, ९; १२. १६६, २७; ३३९, ७८; १३. १२६, १२ (वराहरूप में विष्णु ने इसका वध किया था) ।

हिरण्याक्षी = दुर्गा (उमा) : ६. २३, ९ ।

हिरण्यात्मन् = श्रीकृष्ण (१३. १६७, ३८) ।

हिरण्येशय = महापुरुष (महापुरुषस्तव) ।

हिरण्वती, एक नदी का नाम है : ५. १५२, ७ (कुरुक्षेत्र से होकर प्रवाहित); १६०, १; ६. ९, २५ ।

हीक, एक पिशाच का नाम है : ८. ४४, ४१-४२ (विपाशा में इसका निवासस्थान था और यह वहि नामक निशाचर का साथी था । इन्हीं दोनों की सन्तान वाहीक नाम से विख्यात हुई) ।

हुण्ड (बहु० ण्डाः) एक जाति का नाम है (६. ५०, ५२) ।

हुत = शिव (सहस्रनाम) ।

हुतभुज् = विष्णु (सहस्रनाम) । = अग्नि (देखिये वस्था०) ।

हुतवह, हुतहव्यवह, हुताश = अग्नि (देखिये वस्था०) ।

हुताशन = शिव (सहस्रनाम) । = अग्नि (देखिये वस्था०) ।

हुताशनसहाय = शिव (सहस्रनाम) ।

हुताशनसुत = स्कन्द (९. ४५, ४७) ।

हुंहुंहुंकारपार, हुंहुंकारप्रिय = शिव (सहस्रनाम) ।

हूण (बहु० णाः) एक जाति का नाम है : १. १७५, ३८ (वसिष्ठ की धेनु के मुख से उत्पन्न बर्बर जातियों में से एक); ६. ९, ६६ (उत्तर में); १२. ३२५, १५ (अर्यावर्त की विरोधी चीन आदि जातियों के साथ उल्लेख मिलता है । देखिये हाहा वस्था० ।

हूहू एक गन्धर्व का नाम है जिसका सदैव हाहा नामक गन्धर्व के साथ ही उल्लेख मिलता है । देखिये हाहा वस्था० ।

१. हृदिक कृतवर्मा के पिता का नाम है (१. ६३, १०५)।
२. हृदिक (बहु०) कृतवर्मा के कुटुम्ब का द्योतक है (८. २६, २२)।
हृदिकसुत, हृदिकात्मज = कृतवर्मा देखिये वस्था०)।
हृच्छय = काम (१. ५, १६. १८)।
हृद्य एक प्राचीन ऋषि का नाम है (२. ७, १३)।
१. हृषीकेश = श्रीकृष्ण (देखिये वस्था०)।
२. हृषीकेश (बहु०) एक प्रकार के प्राणियों का नाम है : १०. ६, ९ (प्रादुरासन् हृषीकेशाः शतशोऽथ सहस्रशः)।
हेतु = विष्णु (सहस्रनाम)।
हेत्वात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ६१)।
हेमकम्पन एक कौरव योद्धा का नाम है (७. १५६, १२२)।
हेमकर = शिव (सहस्रनाम)।
हेमकूट एक पर्वत का नाम है : ३. ११०, २ (तीर्थयात्रा के समय युधिष्ठिर यहाँ आये); १८८, ११२ (मार्कण्डेयजी ने इसे भी नारायण के उदर में देखा); ६. ६, ४ (जम्बूद्वीप के छः वर्षपर्वतों में दूसरा). ८ (इसके बाद हरिवर्ष स्थित है). ४१. ५१ (गुह्यक यहाँ निवास करते हैं)।
हेमगुह, एक नाग का नाम है (१. ३५, ९)।
हेमनेत्र, एक यक्ष का नाम है ; २. १०, १७ (कुबेर की सभा में)।
हेममाली द्रुपद के एक पुत्र का नाम है जिसका अश्वत्थामा ने वध किया (७. १५६, १८२)।
१. हेमवर्ण, गरुडपुत्र एक सुपर्ण का नाम है (५. १०१, १४)।
२. हेमवर्ण रोचमान के एक पुत्र का नाम है : ७. २३, ६७ (इनके अश्वों का वर्णन
हेमवर्मन् = हिरण्यवर्मन् (५. १९२, ७. ३२)।
हेमश्रृङ्ग एक पर्वत का नाम है (१. १७०, १९)।
हेमा एक नदी का नाम है (६. ९, २३)(
हेमाङ्ग = (विष्णु (सहस्रनाम)।
हेरम्ब = गणेश (१. १, ७५)।
हेरम्बक (बहु०) एक जाति का नाम है : २. ३१, १३ (सहदेव ने दक्षिण में इन्हें पराजित किया था)।
१. हैडिम्ब (वि०): १. २, ४३।
२. हैडिम्ब = घटोत्कच (देखिये वस्था०)।
हैडिम्बसूनु= अञ्जपर्वन (७. १५६, ८५)।
हैडिम्बि = घटोत्कच (देखिये वस्था०)।
१. हैम एक पर्वत का नाम है जिसे अष्टावक्र ने पार किया था (१३. १९, ५४)।
२. हैम = शिव (सहस्रनाम)।
१. हैमवतः ६. ६, ७; १०, १. १५; १२. ३२५, १४।
२. हैमवत (वि०) : १. १२४, ३१; १७७, ८ (= शुतुद्रु); १८७; २; २. २१, २८; ७७, १५; ३. ३७, ३९; १६०, ४; २६७, ५; ४. ५४, १६; ५. १११, २४; ८. ८५, ५; ८९, २; ९. ६, १; ३८, ३०; ४४. ५२; १२. ८२, ३९।
३. हैमवत (बह °ताः) एक जातिका नाम है : २. ५१, २४ (युधिष्ठिर के लिये उपहार लाये)।
हैमवतिक (बहु०) हिमवत के निवासियों का द्योतक है (३. २५४, ६)।
१. हैमवती = गङ्गा (३. १०८, १६)।
२. हैमवती, कुशिक की पत्नी का नाम है (५. ११७, १३)।
३. हैमवती, श्रीकृष्ण की पत्नियों में से एक जो उनकी मृत्यु के बाद उनकी चिता में कूद पड़ी (१६. ७, ७३)।
हैरण्यक, हिरण्मयवर्ष का द्योतक है : ६. ६, ३७ (श्वेत वर्ष के उत्तर में)।
हैरण्यगर्भ = वसिष्ठ (१२. ३४२, २१)।
हैरण्वती एक नदी का नाम है : ६. ८, ५ (हिरण्मयवर्ष में)।
१. हैहय (बहु० °याः) : एक जाति का नाम है : १. २, १६९; ३. १०६, ८; १८४, ३; ५. ७४, १३; १५६, ४ (अमितौजसः); ७. ७०, ८-९; १२. ४९, ५३; १२६, ८; १३. ३०, १२. १९।
२. हैहय वत्स के पुत्र का नाम है : १३. ३०, ७. ८ (इसके दस पत्नियाँ और १०० पुत्र थे)।
३. हैहय = अर्जुन कार्तवीर्य : १२. ४९, ४१; १३. १५२, ४; १५४, २९।
४. हैहय = सुमित्र (१२. १२५, ९)।
हैहयर्षभ = अर्जुन कार्तवीर्य (१३. १५५, ३)।
हैहयश्रेष्ठ = अर्जुन कार्तवीर्य (१३. १५६, २)।
हैहयाधिपति = अर्जुन कार्तवीर्य (३. १०४, १; ३. ११५, १०. ११. १६)।
हैहयेन्द्र = अर्जुन कार्तवीर्य (१२. ४९, ४७)।
हैहयेशप्रमाथिन् = राम जामदग्न्य (५. १८१, १२)।
होतृ = शिव : १२. २८४, ९० (सहस्रनाम). ११८; १३. १४, २१।
होत्रम् = शिव (सहस्रनाम)।
१. होत्रवाहन एक ब्रह्मर्षि का नाम है (३. २६, २४)।
२. होत्रवाहन, एक राजर्षि का नाम है : ५. १७६, १५. १९. २८. ३०. ३५. ३६. ३९. ४४. ५७ (सृञ्जय)।
होमात्मन् = श्रीकृष्ण (१२. ४७, ४३)।
होम्यम् = शिव (सहस्रनाम)।
ह्रद (बहु०) : ९. ४५, १२ (मूर्तिमान ह्रद)।
ह्रदप्रवेशन से दुर्योधन के ह्रदप्रवेश का तात्पर्य है (१. २. ७१)।
ह्रदप्रवेशपर्वन् महाभारत के ८१ वें अवान्तरपर्व का नाम है : बची हुई समस्त कौरव सेना का वध, बन्दी सञ्जय का मुक्त होना, दुर्योधन का भयभीत होकर सरोवर में प्रवेश, तथा युयुत्सु का राजमहिलाओं के साथ हस्तिनापुर जाना (९. २९)। अश्वत्थामा, कृतवर्मा और कृपाचार्य का सरोवर पर जा कर दुर्योधन से युद्ध करने के विषय में वार्तालाप; व्याधों से दुर्योधन का पता पाकर युधिष्ठिर का सेनासहित सरोवर पर जाना तथा कृपाचार्य आदि का दूर हट जाना (९. ३०)। पाण्डवों का द्वैपायन सरोवर पर जाना, युधिष्ठिर और श्रीकृष्ण का वार्तालाप, तथा सरोवर में छिपे दुर्योधन के साथ युधिष्ठिर का संवाद (९. ३१)।
ह्रदोदर एक दैत्य का नाम है (९. ४६, ७५)।
ह्राद एक नाग का नाम है (१६. ४, १६)।
ह्री एक देवी का नाम है : २. ११, ४२ (ब्रह्मा की सभा में); ३. ३७, ३३; ९. ४५, १३ (स्कन्द के अभिषेक में आईं)।
ह्रीनिषेव, पृथिवी के प्राचीन शासकों में से एक दैत्य का नाम है (१२. २२७, ५१)।
ह्रीमत् एक सनातन विश्वेदेव का नाम है (१३. ९१ ३१)।
ह्लादनस् = शिव (सहस्रनाम)।